❀ ओ३म् ❀

वैदिककोषः

सङ्ग्रहीता सम्पादकश्च
राजवीरः शास्त्री

॥ ओ३म् ॥

वैदिककोषः

महर्षेर्दयानन्दस्य वेदभाष्ये ग्रन्थान्तरेषु चोपलभ्यमानवैदिकपदार्थानां
सङ्ग्रहरूप. । तत्र तत्र च व्याकरणनिरुक्तब्राह्मणोपनिषदां
प्रकृतिप्रत्ययविभागेनार्थोद्धृतिभिश्च सवलितया

विमर्शटीकया सहितः

सङ्ग्रहीता सम्पादकश्च

राजवीरः शास्त्री

प्रकाशक

आर्ष साहित्य प्रचार ट्रस्ट

प्रकाशक
आर्य साहित्य प्रचार ट्रस्ट
२ एफ, कमलानगर, दिल्ली-७
दूरभाष २२६५४७

❁

दयानन्दाब्द १५१
विक्रमाब्द २०३२
सृष्टि-संवत् १,९६,०८,५३,०७५

❁

विक्रय केन्द्र
हरकरनदास दीपचन्द
४५५, खारी बावली, दिल्ली-६
दूरभाष २६८३६०

❁

मूल्य १०० ०० रुपये

❁

प्रथम संस्करण, दिसम्बर १९७५
(शताब्दी संस्करण)

❁

मुद्रक
आर० के० प्रिण्टर्स
८० डी, कमलानगर, दिल्ली-७

प्रकाशकीय

वेद ईश्वरीय ज्ञान व स्वत प्रमाण है और सब सत्य विद्याओ का मूल है। अत वेदो का बडा भारी महत्त्व है। वेदमन्त्रो के अर्थो को बिना जाने केवल पाठ मात्र से विशेष लाभ नही। सत्य वेदार्थ का जानना अत्यावश्यक है। प्राचीन समय मे केवल वेदो का पठन-पाठन एव उनके सत्य अर्थों का ही प्रचार था। महाभारत के काल के पश्चात् शनै शनै वेदो का प्रचार ह्रास को प्राप्त हुआ। स्त्री और शूद्रो को वेद पढने से निषेध किया जाने लगा। इस प्रकार मानव जाति का बडा भाग विद्याहीन हो गया। पुन माता के अशिक्षित होने से सब ही अशिक्षित हो गये। ब्राह्मणो तक ने वेद का पठन-पाठन बन्द कर दिया। वर्ण-व्यवस्था जो गुण, कर्म, स्वभावानुसार थी जन्म पर आधारित हो गई। वाममार्ग आदि घृणित मत भी प्रचलित हुए। सायण, महीधर आदि अक्षरी-अक्षरी लोग वेद-भाष्यकार बन गये और वेदो के मिथ्या घृणित अर्थ कर डाले जिससे वेदो का अत्यन्त अपमान हुआ। महाभारत के लगभग पाच सहस्र वर्षों के पश्चात् वेद के सूर्य महर्षि दयानन्द सरस्वती का आविर्भाव हुआ। जिन्होंने लुप्त हुए सत्य वेदार्थ विज्ञान को परमेश्वर के अनुग्रह, गुरु विरजानन्द की शिक्षा, अनुपम तपोबल और विद्याबल से समझ कर अन्यो को समझाया। वेद पर लगे लाञ्छनों को सत्यवेदार्थ करके दूर किया। देखिये महर्षि अपने वेदभाष्य के विषय मे क्या लिखते हैं

"परमात्मा की कृपा से मेरा शरीर बना रहा और कुशलता मे वह दिन देखने को मिला कि वेदभाष्य पूर्ण हो जाये तो निस्सन्देह आर्यावर्त्त देश मे सूर्य का सा प्रकाश हो जायेगा कि जिसके मेटने और झंपने को किसी का सामर्थ्य न होगा क्यो कि सत्य का मूल ऐसा नही जिसको कोई सुगमता से उखाड सके और कभी भानु के समान ग्रहण मे भी आ जावे तो थोडे ही काल मे फिर उग्रह अर्थात् निर्मल हो जायेगा।" —भ्रान्तिनिवारण

मैंने महर्षि के अतिरिक्त अन्यो के मन्त्रार्थो को भी देखा बहुत स्थानो पर महर्षि के अर्थो मे उनको मिलाया जिससे अनार्ष अर्थो पर अश्रद्धा उत्पन्न हो गई। उन अनार्ष अर्थो मे बहुत दोष दृष्टि पडे और अनार्ष अर्थों को पूर्णत पढना ही छोड दिया। क्योकि जब तक आर्ष अर्थों मे मिलाया नही जाये उन अर्थो मे सदेह बना रहता है। महर्षि के ग्रन्थो के स्वाध्याय से इस निष्कर्ष पर पहुँचा कि वेदो का अर्थ करने वाले विद्वानो की योग्यता का मापदण्ड आवश्यक है। महर्षि ने ऋग्वेदादिभाष्यभूमिका के पठन-पाठन विषय मे सीधा वेदार्थ जानने के लिए जितनी योग्यता का होना आवश्यक बताया है। वर्तमान समय मे उसके अनुसार वेदार्थ करने वाले विद्वानो की भी योग्यता नही है। अत ऋषि के आदेशानुसार उनको भी उतनी योग्यता वालो से किये भाष्य को पढना चाहिये। इस समय मन्त्र का क्रमश भाष्य केवल महर्षि दयानन्द का ही ऐसा मिलता है। महर्षि दयानन्द तथा अन्य ऋषियो द्वारा निर्धारित योग्यता का मापदण्ड मिथ्या नहीं हो सकता। इस समय तो योग्यता का मापदण्ड कुछ भी नही रहा है। बहुत ही साधारण सस्कृत मात्र जानने वाला व्यक्ति चाहे जिस मन्त्र की व्याख्या अपनी इच्छानुसार करता हुआ दृष्टिगोचर हो रहा है। महर्षि ने बरेली के लिखित शास्त्रार्थ मे कहा था—"वेदो मे पाप का क्षमा होना नही लिखा। आश्चर्य यह है कि अग्रेजी जानने वाले भी वेदार्थ का निर्णय करें।"

आज कल आर्यों और अनार्यों के किये कपोल-कल्पित वेदो के व्याख्यानो का बहुत प्राबल्य है। प्रत्येक अपने विचारो को वेद मन्त्रो से सिद्ध करने का प्रयत्न कर रहा है। वास्तविकता यह है कि जब तक प्रामाणिक वेदार्थ सामने न हो तब तक वैदिक सिद्धान्तो का निर्णय नही हो सकता। यदि सिद्धान्त को पहले निर्धारित कर लिया और फिर तदनुसार वेदार्थ किया तो उस वेदार्थ की आवश्यकता ही क्या है? तथ्य तो यह है कि प्रामाणिक वेदार्थ से सिद्धान्त का निर्णय किया जाता है। जब शास्त्रार्थ मे वेदभाष्य की प्रामाणिकता का प्रश्न आता है। तब अनार्ष वेदभाष्य मैदान छोड़कर भाग जाते हैं। केवल महर्षि दयानन्द सरस्वती कृत वेदभाष्य ही मैदान मे डटा रहता है।

जिन लोगो का ऐसा विचार है कि महर्षि ने तो वेदभाष्य पद्धति को एक उदार एव विस्तृत शैली प्रदान की है उनकी सेवा मे निवेदन है कि यदि महर्षि का उद्देश्य केवल शैली बतलाना ही था तो सब वेदो का भाष्य करने के लिए कमर कसने की क्या आवश्यकता थी ? एक विशाल ग्रन्थ के रूप मे चारो वेदो की भूमिका (ऋग्वेदादिभाष्य-भूमिका) लिखने की भी कोई आवश्यकता नही थी। शैली तो दो-चार मन्त्रो के उदाहरण से भी बतलाई जा सकती है। आर्य विद्वानो की इन मिथ्या कल्पनाओ ने महर्षि के सत्य वेदार्थ के प्रति घोर अनर्थ किया है। 'महर्षि ने कही भी नही लिखा कि मैं एक उदार वेदार्थ शैली समझाने के लिए यह वेद-भाष्य प्रस्तुत कर रहा हूँ।

देखिये महर्षि क्या लिखते है —

"मेरा भाष्य उन ऐतरेय आदि ब्राह्मण ग्रन्थो के प्रमाणो से युक्त होगा जिनमे ऋषि, मुनि, महर्षि, महामुनि आर्यों ने वेद का सत्यार्थ परमात्मा की कृपा से लिखा है, क्यो कि बिना सत्यार्थप्रकाश के देखे मनुष्यो की भ्रम निवृत्ति कभी नही हो सकती"। (ऋग्वेदादि० प्रतिज्ञा०)

महर्षि के इस लेख के प्रकाश मे कौन कह सकता है कि उन्होने एक शैली मात्र दर्शाने के लिए वेदभाष्य किया है। वास्तविकता तो यह है कि प्राचीन ऋषि-मुनियो ने वेद का जो सत्यार्थ परमात्मा की कृपा से प्राप्त किया था महर्षि दयानन्द उसी सत्य वेदामृत का सबको पान कराना चाहते है। आज कल के विद्वान् तो अपने कपोल-कल्पित नये अर्थ करने को एक महत्त्व समझते है।

ऋषि कृत वेदार्थ ही प्रामाणिक होता है। अनार्ष वेदार्थ तो सदेह युक्त ही होते है। इस आर्ष कोष मे वेदो के अधिकतर पद आ गये हे, यह कोष सत्यवेदार्थ जानने मे पूरा सहायक होगा। अनुसन्धान कर्त्ताओ के लिए अमूल्य निधि सिद्ध होगा। यह कोष अन्य वेदो मे आये पदार्थो को समझने मे भी सहायक है। देखिये महर्षि क्या लिखते है—

"(प्र०) वेदो के चार विभाग क्यो किये है ? (उ०)... (द्रुत, मध्यम, विलम्बित एव तीनो का मिलना) इस (गान विद्या के) लिये वेदो के चार विभाग हुए है तथा कही-कही एक मन्त्र का चार वेदो मे पाठ करने का यही प्रयोजन है कि वह पूर्वोक्त चारो प्रकार की गान विद्या मे गाया जाये तथा प्रकरण भेद से कुछ-कुछ अर्थ भेद भी होता है इसलिये कितने ही मन्त्रो का पाठ चार वेदो मे किया जाता है।" ऋग्वेदादिभाष्यभूमिका प्रश्नोत्तर विषय

ऋषि दयानन्द कृत वेदभाष्य एव उनके समस्त ग्रन्थो मे वेदो के जिन पदो का अर्थ मिला वह इस कोष मे दिया गया है। इसके अतिरिक्त चारो वेदो के जिन पदो का अर्थ इस कोष मे नही आया है। उन पदो का अर्थ द्वितीय भाग मे प्रकाशित किया जायेगा। अर्थ वेदाङ्गो एव ब्राह्मण ग्रन्थो आदि से दिये जायेगे।

आर्ष अर्थो से युक्त वेदो का कोई भी कोष इस समय उपलब्ध नही था। अत योग्य विद्वानो से सम्पादन कराके इस भारी कमी को दूर किया गया है। यह कोष आर्यसमाज स्थापना शताब्दी उत्सव पर उपहार रूप मे भेंट करने की बहुत वर्षो से प्रबल इच्छा थी। समय पर तैयार कराने के लिए बहुत पुरुषार्थ करना पडा है, तब ठीक समय पर यह कोष भेंट किया जा रहा है।

इस कोष का सम्पादन प० राजवीर जी शास्त्री ने श्री वेदपाल शास्त्री के सहयोग से किया है। श्री प० राजवीर जी शास्त्री की व्याकरण शास्त्र मे विशेष रूप से बहुत बडी योग्यता है। दोनो विद्वानो ने इस कार्य को बडी योग्यता और पुरुषार्थ से किया है। मैं उक्त दोनो विद्वानो का एव इस कोष के प्रकाशन मे सब सहयोगियो का हार्दिक धन्यवाद करता हूँ।

ऋषि-चरणो का अनुचर
दीपचन्द आर्य
प्रधान, आर्ष साहित्य प्रचार ट्रस्ट

२ एफ, कमला नगर,
दिल्ली-७

भू

मि

का

वेदों का महत्त्व

विश्व धरातल पर सृष्टि के प्रारम्भ मे ही परमपिता परमात्मा ने अग्नि ऋषि को ऋग्वेद, वायु ऋषि को यजुर्वेद, आदित्य ऋषि को सामवेद तथा अङ्गिरा ऋषि को अथर्ववेद का ज्ञान दिया। अथर्ववेद मे लिखा है—

यस्माद् ऋचो अपातक्षन् यजुर्यस्मादपाकषन् ।
सामानि यस्य लोमान्यथर्वाङ्गिरसो मुखम् ।
स्कम्भ त ब्रूहि कतमः स्विदेव स । अथर्व० १० २३ ४ २०

अर्थात् सब जगत् के कर्त्ता धर्त्ता परमेश्वर से ऋग्वेद, यजुर्वेद, सामवेद और अथर्ववेद उत्पन्न हुए।

(प्रश्न) वेद ईश्वर कृत है मनुष्य कृत नही, इसमे अवैदिक मतावलम्बी मनुष्यो के लिये क्या प्रमाण है ? (उत्तर)—प्रथम तो यह सभी विद्वान् स्वीकार करते है कि मनुष्य बिना सिखाये कुछ भी नही सीख सकता। अत परमेश्वर ही आदि गुरु है जिसकी अपार अनुकम्पा से मानव को ज्ञान मिला। और वह ज्ञान वेद ही है। मानव का स्वाभाविक ज्ञान वेद और विद्वानो की शिक्षा के ग्रहण मे साधन मात्र ही है। वह धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष विद्या का साधन स्वतत्रता मे कभी नही कर सकता। ज्ञान दो प्रकार का होता है—एक स्वाभाविक और दूसरा नैमित्तिक। विद्या का बोध स्वाभाविक ज्ञान से कदापि सम्भव नही है। वेद-विद्या का बोध निमित्त से होता है। वेद मे सब विद्याओ का मूल रूप मे प्रकाश है। आज भी मनुष्य छोटी से छोटी विद्याओ को दूसरो से सीखता है। अत स्पष्ट है कि वेद ज्ञान ईश्वर प्रदत्त ही है। महर्षि कृष्णद्वैपायन व्यास ने वेदान्तदर्शन मे स्पष्ट लिखा है—'शास्त्रयोनित्वात्।' (वेदान्त० १ १ ३) अर्थात् वह परब्रह्म ही ऋग्वेदादि चारो वेदो का बनाने वाला है। महर्षि पतञ्जलि लिखते है—'स एष पूर्वेषामपि गुरु कालेनानवच्छेदात्।' (योग० १ २६) अर्थात् वह परमेश्वर सृष्टि के आदि मे उत्पन्न हुए अग्नि, वायु, आदित्य और अंगिरादि का भी गुरु है। महर्षि कणाद लिखते हैं—'बुद्धिपूर्वा वाक्य-कृतिर्वेदे।' (वै० ६ १ १) अर्थात् वेद मे सब रचना बुद्धि पूर्वक है और 'तद्वचनादाम्नायस्य प्रामाण्यम्।' (वै० १ १ ३) वेदो को इसलिए प्रामाणिक मानता हूँ कि उनमे सब सत्य विद्या और पक्षपात रहित धर्म का ही प्रतिपादन है।

अत चारो वेद ईश्वरोक्त होने से स्वत प्रमाण है। महर्षि दयानन्द लिखते हैं—'वेद ईश्वर के रचे हुए हैं और ईश्वर सर्वज्ञ, सर्वविद्यायुक्त तथा सर्वशक्ति वाला है। इस कारण से उसका कथन भी निर्भ्रम और स्वत प्रमाण के योग्य है।' (ऋ० भू० ग्रन्थप्रामाण्य०) 'किञ्च—परमेश्वर के बनाये वेदो के पढने, विचारने और उसी के अनुग्रह से मनुष्यो को यथाशक्ति विद्या का बोध होता है, अन्यथा नही।' (ऋ० भू० वेद नित्य०)

वेद ईश्वरीय ज्ञान है इसमे इतिहास भी साक्षी है क्योकि सृष्टि के प्रारम्भ से लेकर आज तक इसे ईश्वर का ज्ञान ही माना गया है। और वेद की पुस्तको पर आज तक किसी व्यक्ति विशेष का नाम नही मिलता। इसका कारण भी ईश्वरीय ज्ञान ही है। इसका नाम श्रुति भी इसलिए पडा है कि यह ज्ञान सुनते-सुनते ही प्राप्त किया जाता रहा। परन्तु कुरान बाइबिलादि के विषय मे ऐसा कोई इतिहास नही है। जब सृष्टि को बने दो अर्ब के लगभग समय बीत गया

है तो क्या परमपिता परमात्मा अपने पुत्रों को अपने ज्ञान से वञ्चित रख सकता है? क्योंकि कुरान बाइबिलादि ग्रन्थों का निर्माण दो हजार वर्ष पूर्व ही माना गया है।

'जैसे सूर्य और दीपक अपने ही प्रकाश से प्रकाशमान होके सब क्रिया वाले द्रव्यों को प्रकाशित कर देते हैं वैसे ही वेद भी अपने प्रकाश से प्रकाशित हो के अन्य ग्रन्थों का भी प्रकाश करते हैं। इससे यह सिद्ध हुआ कि जो-जो ग्रन्थ वेद से विरुद्ध हैं वे कभी प्रमाण स्वीकार करने के योग्य नहीं होते।' (ऋ० भू० ग्रन्थप्रामाण्य०)

जैसे माता-पिता अपने सन्तानों पर कृपादृष्टि कर उन्नति चाहते हैं, वैसे ही परमात्मा ने सब मनुष्यों पर कृपा करके वेदों को प्रकाशित किया है। जिससे मनुष्य अविद्यान्धकार, भ्रमजाल से छूटकर विद्याविज्ञान रूप सूर्य को प्राप्त होकर अत्यानन्द मे रहे और विद्या तथा सुखों की वृद्धि करते जायें। (सत्यार्थ० सप्तम समु०)

ऐसे परम पवित्र स्वत प्रमाण वेदों के आगे ब्रह्मा से लेकर जैमिनी पर्यन्त सभी ऋषि-मुनि नतमस्तक रहे हैं। भगवान् मनु ने वेद का स्वाध्याय न करने वालों की घोर निन्दा करते हुए लिखा है—

'योऽनधीत्य द्विजो वेदमन्यत्र कुरुते श्रमम्।
स जीवन्नेव शूद्रत्वमाशु गच्छति सान्वयः॥ (मनु० २ १६८.)

अर्थात् जो द्विज वेद को न पढ़ कर अन्य वेदविरुद्ध अनार्ष ग्रन्थों मे पुरुषार्थ करता है वह इसी जीवन में शूद्रभाव को प्राप्त होता है। दूसरे स्थान पर तो मनु ने 'नास्तिको वेदनिन्दकः' वेद के निन्दक को नास्तिक कहकर घोर निन्दा की है। महर्षि पतञ्जलि ने तो महाभाष्य मे लिखा है—

ब्राह्मणस्य निष्कारणो धर्मः षडङ्गो वेदोऽध्येयो ज्ञेयश्च। (महाभा० पस्पशाह्निक)

विद्वान् ब्राह्मण (ब्रह्म के ज्ञाता) का यह परम धर्म है कि वह लौकिक प्रयोजनों से पराङ्मुख होकर अङ्गों सहित वेदों को पढ़े और उनको जाने।

वेदों के विषय में कुछ ऐसी भ्रान्त धारणाएं भी फैली हुई हैं जिनका निवारण करना परमावश्यक है। उनमें से एक यह है—वेदों में जो मन्त्रों के साथ ऋषियों के नाम लिखे हुए हैं, वे ही उन-उन मन्त्रों के कर्त्ता हैं। परन्तु यह ठीक नहीं। जिस-जिस मन्त्रार्थ का दर्शन जिस-जिस ऋषि को हुआ, जिसने पहले उस मन्त्र का अर्थ किसी को प्रकाशित नहीं किया था, उस-उस का नाम उसी-उसी मन्त्र के साथ स्मरणार्थ लिखा गया है। क्योंकि ऋषि शब्द का अर्थ महर्षि यास्क ने 'ऋषिर्दर्शनात्' कहकर मन्त्रार्थ के द्रष्टा को ऋषि कहा है। अत जो कोई ऋषियों को मन्त्रकर्त्ता बतलाता है वह मिथ्यावादी ही है। इसी प्रकार 'मन्त्रब्राह्मणयोर्वेदनामधेयम्' इत्यादि वचनों को कहकर ब्राह्मणों को वेद कहने लगे, किन्तु यह कथन स्वयं ब्राह्मण ग्रन्थों के भी विरुद्ध होने से मान्य नहीं है। ब्राह्मण ग्रन्थों के बनाने वाले भिन्न-भिन्न ऋषियों के नाम ब्राह्मण ग्रन्थों पर अंकित हैं और ब्राह्मण ग्रन्थों मे याज्ञवल्क्य, मैत्रेयी, गार्गी और जनकादि लौकिक, ऐतिहासिक पुरुषों का उल्लेख है। परन्तु वेदों मे न तो लौकिक इतिहास है और न किसी व्यक्ति विशेष का नाम ही अंकित है। ब्राह्मण शब्द से भी स्पष्ट होता है कि इन पुस्तकों का नाम ब्राह्मण इसलिए रखा गया है कि ब्रह्म अर्थात् वेद का व्याख्यान होने के कारण ब्राह्मण नाम प्रसिद्ध हुआ। महर्षि पाणिनि ने 'छन्दोब्राह्मणानि च तद्विषयाणि' सूत्र में ब्राह्मण का छन्द से पृथक् निर्देश करके मन्त्र और ब्राह्मण को पृथक् माना है। महर्षि पतञ्जलि ने महाभाष्य के प्रारम्भ में वैदिक शब्दों के उदाहरणों मे चारों वेदों के ही मन्त्र दिये हैं। ब्राह्मणों का नाम यदि वेद होता तो वैदिक शब्दों मे कोई उदाहरण ब्राह्मणों का अवश्य देते। निरुक्तकार भी 'इत्यपि निगमो भवति। इति ब्राह्मणम्, लिखकर मन्त्रों को निगम और ब्राह्मण-वाक्यों को ब्राह्मण शब्द से ही लिखते हैं। अन्यथा कहीं तो ऐसा मिलता कि ब्राह्मण वाक्यों को नैगम कह देते और नैगम उद्धरणों को ब्राह्मण कहते। परन्तु ऐसा कहीं भी विपर्यय देखने मे नहीं आता। अत स्पष्ट है कि मन्त्र भाग का ही नाम वेद है, ब्राह्मणों का नहीं। महर्षि दयानन्द लिखते हैं—

'ब्राह्मण पुस्तकों मे बहुत से ऋषि, महर्षि और राजादि के इतिहास लिखे हैं और इतिहास जिसका हो उसके जन्म के पश्चात् लिखा जाता है। वह ग्रन्थ भी उसके जन्मे पश्चात् होता है। वेदों मे किसी का इतिहास नहीं किन्तु विशेष जिस-जिस शब्द से विद्या का बोध होवे, उस-उस शब्द का प्रयोग किया है। किसी मनुष्य की संज्ञा या विशेष कथा का प्रसंग वेदों मे नहीं है।' (सत्यार्थ० सप्तम समु०)

अत वेद भाष्यकार सायरण तथा उनके अनुयायी पाश्चात्य विद्वान् एव कतिपय भारतीय विद्वानो की यह धारणा बिलकुल मिथ्या तथा परस्पर विरोधी है कि ब्राह्मणो का नाम भी वेद है ।

इसी प्रकार वेदो की एक हजार एक सौ सत्ताइस (११२७) शाखाए है। वेदो का व्याख्यान होने से ही उन ग्रन्थो का नाम शाखा पडा । जो विद्वान् मानते है कि वेदो के अवयवभूत विभाग होने से शाखा नाम प्रसिद्ध हुआ, वह ठीक नही । क्योकि जितनी भी आश्वलायनादि शाखाए उपलब्ध होती है, वे उन उनके बनाने वाले महर्षियो के नाम से प्रसिद्ध है और सब शाखाओ मे मन्त्रो के प्रतीक धरके ही व्याख्या की गई है । अत ईश्वरोक्त चारो वेद ही मूलवृक्ष और आश्वलायनादि शाखाए ऋषि मुनि कृत है । अत' इस कोष मे चार वेदो के पदो का ही अर्थ दिया गया है । यही इसकी विशेषता है, क्योकि इन्ही चार वेदो को ऋषियो ने स्वत प्रमाण माना है एव समस्त आप्तो ने इनका प्रमाण स्वीकार किया है । जैसा कि न्यायदर्शन मे महर्षि गौतम ने लिखा है—

"मन्त्रायुर्वेदप्रामाण्यवच्च तत्प्रामाण्यमाप्तप्रामाण्यात् ।" न्याय० २ १ ६

अर्थ—सृष्टि के आरम्भ से लेकर आज पर्यन्त ब्रह्मादि जितने आप्त पुरुष होते आये हैं वे सब वेदो को प्रामाणिक मानते आये है । वे आप्त प्रामाणिक है, क्योकि आप्त लोग वे होते है जो धर्मात्मा, छल-कपट, आदि दोषो से रहित, सब विद्याओ से युक्त, महायोगी और सब मनुष्यो के लिए सत्य का उपदेश करने वाले है । जिनमे लेश मात्र भी पक्षपात वा मिथ्याचार नही होता, उन्होने वेदों का यथावत् प्रमाण किया है । (ऋग्वेदादिभाष्यभूमिका वेदनित्यत्व विचार) उक्त लेखानुसार वेदो का बडा भारी महत्त्व है ।

महर्षि दयानन्द के भाष्य की विशेषताएँ

महाभारत-महायुद्ध के पश्चात् वेद-ज्योति मिथ्या मतो की घनघोर घटाओ से आच्छन्न होने के कारण लुप्तप्राय हो गई थी । वेदो के सत्यार्थ न जानने के कारण पाश्चात्त्य विद्वान् वेदो को गडरियो के गीत कहने लगे थे । वेदो का पठन-पाठन न होने से वेदो के नाम से मिथ्यावादी, प्रपञ्ची, छली, कपटी लोगो ने अपने मायाजाल मे लोगो को फसाने के लिए नये नये मन्त्र घढ रक्खे थे । ऐसे घोर-अन्धेरे मे मतान्ध दैत्यो से पीडित भ्रान्त, पथ-भ्रष्ट लोगो को पाच हजार वर्षों के बाद महर्षि दयानन्द का इस पावन ऋषियो की भूमि पर आविर्भाव हुआ । जिन्होने घोर-तपस्या, ब्रह्मचर्य तथा परमेश्वर की अनवरत आराधना से और वेदो के प्रति प्रबल आस्था तथा ऋषि-मुनियो के बनाये ग्रन्थो पर अनन्य श्रद्धालु गुरु विरजानन्द दण्डी की शिक्षाओ से वेदो के सत्यार्थ को जाना और एक कुशल चिकित्सक बनकर रोगाक्रान्त भारतीय जनता तथा उनके यमराज सदृश मायावी वैद्यो को पहचाना । उन्होने वेद-ज्योति की प्रबल मशाल हाथ मे लेकर मिथ्याडम्बरो की पोल खोली और अपने अमित प्रभाव से जनता का मनोबल उन्नत किया । और लुप्त वेद-ज्योति को पुनर्जीवित किया । महर्षि दयानन्द ने प्राचीन महर्षियो के किये समस्त वेदव्याख्यानो का बडा ही सम्मान किया है और उन्ही के अनुकूल वेद-भाष्य की रचना की । उन्होने अपने वेद-भाष्य सम्बन्धी विचारो को इस प्रकार स्पष्ट किया है—'(प्रश्न) क्यो जी तुम यह वेदो का भाष्य बनाते हो वह पूर्वाचार्यों के भाष्य के समान बनाते हो वा नवीन ? यदि पूर्वरचित भाष्यो के समान है तब तो व्यर्थ है क्योकि वे तो पहले ही से बने बनाये है और जो नया बनाते हो तो उसको कोई भी न मानेगा, क्यो कि जो बिना प्रमाण के केवल अपनी ही कल्पना मे बनाना है, यह बात कब ठीक हो सकती है ?

(उत्तर) यह भाष्य प्राचीन आचार्यों के भाष्य के अनुकूल बनाया जाता है, परन्तु जो रावण, उवट, सायण और महीधरादि के भाष्य बनाए है वे सब मूलमन्त्र और ऋषिकृत व्याख्यानो से विरुद्ध है । मैं वैसा भाष्य नही बनाता क्योकि उन्होने वेदो की सत्यार्थता और अपूर्वता कुछ भी नही जानी । और जो यह मेरा भाष्य बनता है वह वेदाङ्ग, ऐतरेय, शतपथब्राह्मणादि ग्रन्थो के अनुसार है, क्योकि जो जो वेदो के सनातन व्याख्यान है उनके प्रमाणो से युक्त बनाया जाता है । यही इसमे अपूर्वता है । .... और दूसरा इसके अपूर्व होने का कारण यह भी है कि इसमे कोई बात अप्रमाण वा अपनी रीति से नही लिखी जाती । और जो जो भाष्य उवट, सायण, महीधरादि के बनाए हैं वे सब

मूलार्थ और सनातन वेद-व्याख्यानों से विरुद्ध है तथा जो-जो इन नवीन भाष्यों के अनुसार अंग्रेजी, जर्मनी, दक्षिणी और बंगाली आदि भाषाओं में वेद-व्याख्यान बने हैं वे भी अशुद्ध हैं।" (ऋ० भू० भाष्यकरण शका०)

'मेरा भाष्य उन ऐतरेयादि ब्राह्मणग्रन्थों के प्रमाणों से युक्त होगा, जिनमें ऋषि, मुनि, महर्षि, महामुनि आर्यों ने वेद का सत्यार्थ परमात्मा की कृपा से लिखा है क्योंकि बिना सत्यार्थ प्रकाश के देखे मनुष्यों की भ्रम-निवृत्ति कभी नहीं हो सकती।' (ऋ० भू० प्रतिज्ञा०)

महर्षि दयानन्द ने अपने वेद-भाष्य के स्वरूप को जनाने के लिए अपनी 'ऋग्वेदादिभाष्यभूमिका' नामक पुस्तक के अन्त में एक पद्य लिखा है जिससे उनके भाष्य की विशेषताओं पर पर्याप्त प्रकाश पड़ता है। पद्य का अर्थ इस प्रकार है—

"इस मन्त्र-भाष्य में इस प्रकार का क्रम रहेगा कि प्रथम तो मन्त्र में परमेश्वर ने जिस बात का प्रकाश किया है, फिर मूलमन्त्र, उसका पदच्छेद, क्रम से प्रमाण सहित मन्त्र के पदों का अर्थ, अन्वय अर्थात् पदों की सम्बन्ध पूर्वक योजना और छठा भावार्थ अर्थात् मन्त्र का जो मुख्य प्रयोजन है। इस क्रम से मन्त्र-भाष्य बनाया जाता है।" (ऋ० भू०)

महर्षि ने सर्वप्रथम अपनी दिव्य-दृष्टि से सर्वत्र मन्त्रों के ऊपर मन्त्रों के प्रतिपाद्य विषय का उल्लेख किया है। जिसको महर्षि ने मन्त्रार्थ-भूमिका नाम दिया है। इससे वेद के अध्येता को सरलता से प्रथम ही बोध हो जाता है कि मन्त्र का प्रतिपाद्य विषय क्या है। विषय का प्रथम ज्ञान होने पर मन्त्रार्थ के समझने में बड़ी सहायता मिलती है।

महर्षि का वेद-भाष्य मन्त्र के देवता के अनुरूप है। मन्त्र में विद्यमान विशेषणों के आधार पर मन्त्र के देवतार्थ को बड़ा ही स्पष्ट किया है। महर्षि ने मन्त्र के प्रतिपाद्य देवता का कहीं भी (मन्त्रार्थभूमिका, पदार्थ, अन्वय तथा भावार्थादि में) परित्याग नहीं किया है।

महर्षि ने वेदों के सत्यार्थ को प्रकाशित करने के लिए स्थान-स्थान पर सायणादि भाष्यकारों की व्याकरण, छन्द तथा प्रकरणादि से विरुद्ध त्रुटियों का भी दिग्दर्शन कराया है। जिससे पाठक सत्यासत्य का निर्णय करने में स्वयं ऊहा कर सकता है, क्योंकि सत्य कभी दो नहीं होते।

महर्षि ने अपने भाष्य में व्याकरण, निरुक्त तथा ब्राह्मणादि के अनुसार मन्त्रार्थ किया है। निरुक्तकार ने स्पष्ट लिखा है कि वैदिक पद आख्यातज हैं, रूढ़ नहीं। इस नियम का पालन सायणादि भाष्यकार नहीं कर सके। यदि वे इस नियम का पालन करते तो वेदों में प्रकरण-विरुद्ध, ऐतिहासिक कल्पित अर्थ नहीं कर सकते थे। महर्षि ने पद-पद पर इस बात का विशेष ध्यान रक्खा है कि मन्त्र का पदार्थ प्रकरणानुकूल हो।

महर्षि ने भाष्य में लौकिक कोषों का आश्रय न लेकर वैदिककोष निघण्टु के आश्रय से अर्थ किये हैं। लौकिक तथा वैदिककोषों में बड़ा अन्तर है। जैसे वैदिककोष में विष्णु का अर्थ सूर्य तथा समुद्र का अर्थ अन्तरिक्ष है। सूर्य अन्तरिक्ष में विचरता है किन्तु सायणादि भाष्यकारों ने लौकिक अर्थों के आश्रय से पौराणिक अर्थों की कल्पना कर ली कि विष्णु समुद्र में शयन करता है। इसी प्रकार वेद में शत, सहस्र शब्द बहुत्ववाची नामों में पढ़े हैं, परन्तु लोक में सौ तथा हजार के वाचक हैं। इस रहस्य को न समझ कर पुरुष-सूक्त के सहस्राक्षादि शब्दों के अनर्थ किये गए हैं। इसी प्रकार देवराज इन्द्र और अहल्या की कथा बना रखी है कि देवलोक में इन्द्र ने गोतम ऋषि की स्त्री अहल्या के साथ जारकर्म किया। यह भी निरुक्तादि के न समझने के कारण कल्पना की गई, क्यों कि निरुक्त में इन्द्र का अर्थ सूर्य है और गोतम चन्द्र का नाम है और अहल्या रात्रि का नाम है। रात्रि और चन्द्र का स्त्री पुरुष के समान रूपकालङ्कार है। चन्द्रमा अपनी स्त्री रात्रि से सब प्राणियों को आनन्द कराता है और उस रात्रि का जार आदित्य है अर्थात् सूर्य के उदय होने से रात्रि का अन्तर्धान हो जाता है। ऐसे सत्य-शास्त्रों को न जानकर स्वकल्पित अर्थ कर दिये गये। इसी प्रकार ब्राह्मण ग्रन्थों की उपेक्षा करके अनेक कथाएं कल्पित की गईं। जैसे गया में श्राद्ध करने से पितरों की मुक्ति हो जाती है। परन्तु 'प्राणा वै गया' (श० १४.८.१६) के अनुसार प्राणों का नाम गया है। प्राणादि में श्रद्धा से परमेश्वर की उपासना करने में जीव की मुक्ति हो जाती है। इस प्रकार महर्षि का भाष्य वैदिककोष निरुक्त

तथा ब्राह्मणग्रन्थो के अनुसार किया गया है। परन्तु सायणादि भाष्यकारो ने इसके विरुद्ध स्वकल्पित अर्थ करके वेदो को ऐतिहासिक ग्रन्थ ही बना दिया, जो कि स्वय उनकी प्रतिज्ञा के भी विरुद्ध था।

इस प्रकार महर्षि दयानन्द का वेदभाष्य सर्वांगपूर्ण, ऋषि-महर्षियो की शैली के अनुकूल, व्याकरण-निरुक्त ब्राह्मणग्रन्थो से सम्मत तथा परस्पर सुसगत होने से आज तक कोई विद्वान् उनके भाष्य को त्रुटिपूर्ण सिद्ध नही कर सका है। और इस प्राचीन-पद्धति का आश्रय करके कोई भी वेदभाष्यकार वेदो मे इतिहास सिद्ध नही कर सकता, अपने कल्पित अर्थो के लोको मे नही घूम सकता, और नही मूर्त्ति-पूजा, मृतकश्राद्ध, अवतारवादादि अवैदिक मन्तव्यो को सिद्ध कर सकता है।

महर्षि दयानन्द ने सर्व प्रथम ऋग्वेद के प्रथम सूक्त का भाष्य नमूने के रूप मे बनाया था। जिसका पण्डित महेशचन्द्र न्यायरत्न आदि ने खण्डन किया। जिसका महर्षि ने 'भ्रान्तिनिवारण' पुस्तक मे उत्तर दिया और उनके सब खण्डन भ्रम ही सिद्ध किये। इसके पश्चात् वेदभाष्य के प्रकार को ऋषि ने बदल दिया जिसकी सूचना ऋग्वेदादिभाष्यभूमिका की समाप्ति पर दी, क्योकि ऋग्वेदादिभाष्यभूमिका के प्राक्कथन मे वेदभाष्य के नमूने अनुसार लिखा गया था। प० महेशचन्द्र न्यायरत्न का लेख उक्त प्राक्कथन के पश्चात् लिखा गया था। वर्तमान वेदभाष्य का रूप ऋग्वेदादिभाष्यभूमिका के अन्त मे लिखे गये श्लोकानुसार है। जिसके अनुसार महर्षि ने पदार्थ को मन्त्रपद के क्रम से किया और पश्चात् अन्वय पृथक् लिखा एव भावार्थ अलग से पृथक् लिखा। पदार्थ सप्रमाण ब्राह्मण ग्रन्थ और वेदाङ्गादि के अनुकूल किया है एव अन्वय मे वाक्य के मध्य कही भी कोई काल्पनिक शब्दार्थ नही बढाया है। किन्तु सायणाचार्य आदिको ने अपने काल्पनिक विचारो को वेद मे घुसेडने के लिए बहुत स्थानो पर काल्पनिक शब्दार्थों को बढाया है, एव उन्हे अशुद्ध काल्पनिक अर्थो का प्रकाश करना पडा है। ऋषि दयानन्द प्राचीन ऋषियो के भाष्यो के तुल्य अर्थ करते हुए मूल मे अप्राप्त शब्दो की कल्पना नही करते। मूल मे प्राप्त पदो की ही व्याख्या करके समझाने का पूरा प्रयास करते हैं। जिस प्रकार कि प्राचीन ऋषियो का योगदर्शन पर व्यासभाष्य एव न्याय दर्शन पर वात्स्यायन भाष्य मिलता है। उनमे भी मूल से प्राप्त पदो को खोलकर समझाया गया है। नये पदो की कल्पना करके काल्पनिक अर्थ नही किया गया। इस प्रकार ऋषि दयानन्द का वेदभाष्य बहुत महत्त्वपूर्ण है।

ऋषि दयानन्द को भी ईश्वर साक्षात्कार था उन्होंने सत्यार्थप्रकाश के प्रारम्भ मे लिखा है—

"त्वमेव प्रत्यक्ष ब्रह्मासि त्वामेव प्रत्यक्ष ब्रह्म वादिष्यामि।"

अर्थ—आप ही अन्तर्यामी रूप से प्रत्यक्ष ब्रह्म हो मैं आप ही को प्रत्यक्ष ब्रह्म कहूँगा क्योकि आप सब जगह मे व्याप्त होके सब को नित्य ही प्राप्त है। एव सत्यार्थप्रकाश के अन्त मे लिखा है।

"त्वमेव प्रत्यक्ष ब्रह्मासि त्वामेव प्रत्यक्ष ब्रह्मावादिषम्।"

अर्थ—आप ही अन्तर्यामी रूप से प्रत्यक्ष ब्रह्म हो मैंने आपको प्रत्यक्ष ब्रह्म कहा है। इस प्रकार परमात्मा के सत्यस्वरूप का पूरे ग्रन्थ मे प्रतिपादन किया और जहां तहा अन्य पुस्तको मे ईश्वर के मिथ्या स्वरूप का कथन था उनकी सत्यार्थप्रकाश मे समालोचना की। ऋषि दयानन्द को ईश्वर का साक्षात्कार था अत वह वेदार्थ ज्ञान के अधिकारी थे। परमात्मा से अनभिज्ञ लोग सत्यवेदार्थ कभी नही कर सकते, क्योकि वेदो का मुख्य तात्पर्य भी ईश्वर मे है।

स्वय महर्षि दयानन्द की भी यह जीवन घटना प्रसिद्ध है कि जब महाराज जी पण्डितो से वेदभाष्य लिखवाया करते थे उस समय जब कभी किसी मन्त्र का उन्हे अर्थ स्पष्ट नही होता था तब महर्षि एकान्त मे जा, समाधिस्थ होकर अभीष्ट मन्त्र का अर्थ अपने आचार्य परमात्मा से समझ आते थे और पण्डितो को लिखवाया करते थे। महर्षि दयानन्द को परमात्मा का साक्षात्कार था। यह बात उनके जीवन तथा उनके अद्भुत लेखो से सिद्ध है। उन्होंने सत्यार्थप्रकाश के आरम्भ और समाप्ति पर ब्रह्म का प्रत्यक्ष स्वय स्वीकार किया है। महर्षि वेद-विद्या मे पारङ्गत, परम तपस्वी, धार्मिक योगी विद्वान् थे। परमात्मा के साक्षात्कार से युक्त ऋषि थे। महर्षि के अपने जीवन तथा उनके सत्यार्थप्रकाश के उक्त लेख से यह तथ्य सर्वथा स्पष्ट हो जाता है कि वेदो का भाष्य तथा वेदमन्त्रो का व्याख्यान करने

का अधिकार उन्ही को है जिन्हे परमात्मा का साक्षात्कार हो एव जो धार्मिक योगी विद्वान् हो। जो समाधि मे स्थित होकर परमात्मा से वेदो के अर्थों को जान सके।

अब प्रश्न उपस्थित होता है कि जिन्हे परमात्मा का साक्षात्कार नहीं अर्थात् जो योगी नही ऐसे विद्वान् क्या करे ? उत्तर—अत्यन्त स्पष्ट है ऐसे विद्वान् प्राचीन तथा अर्वाचीन ऋषियो के किये वेदभाष्यो का स्वाध्याय करे तथा उन्ही के किये अर्थो का प्रचार एव प्रसार करे।

वेदार्थ ज्ञान के १६ ग्रन्थ—परमात्मा के साक्षात्कार की बात तो बहुत दूर की है। आधुनिक वेद-व्याख्याता विद्वान् तो विद्या-अध्ययन की दृष्टि से भी अधूरे है। देखिये महर्षि दयानन्द वेदार्थ ज्ञान के लिए ऋग्वेदादि-भाष्यभूमिका (पठन-पाठन विषय) मे कितने ग्रन्थो के अध्ययन का निर्देश करते है—"मनुष्य लोग वेदार्थ जानने के लिये अर्थयोजना सहित व्याकरण—अष्टाध्यायी, धातुपाठ, उणादिगण, गणपाठ और महाभाष्य, शिक्षा, कल्प, निघण्टु-निरुक्त, छन्द और ज्योतिष ये छ वेदो के अङ्ग, मीमासा, वैशेषिक, न्याय, योग, साख्य और वेदान्त ये छ शास्त्र जो वेदो के उपाङ्ग अर्थात् जिनसे वेदार्थ ठीक-ठीक जाना जाता है, तथा ऐतरेय, शतपथ, साम और गोपथ ये चार ब्राह्मण, इन सब ग्रन्थो को क्रम से पढके अथवा जिन्होने इन सम्पूर्ण ग्रन्थो को पढ के जो सत्य-सत्य वेद-व्याख्यान किये हो उनको देख के वेद का अर्थ यथावत् जान लेवे।" **(ऋग्वेदादि० पठनपाठन०)**

यहाँ महर्षि दयानन्द ने वेदार्थ ज्ञान के लिए ६ वेदाग, ६ उपाग और ४ ब्राह्मण अर्थात् १६ ग्रन्थो का उल्लेख किया है। जबकि आधुनिक वेद का व्याख्यान करने वाले विद्वान् एक विषय का भी पूर्ण ज्ञान नही रखते। साधारण व्याकरण के धातु-प्रत्यय विषयक ज्ञान के बल पर वेदार्थ मे प्रवृत्त हो रहे है। इससे वेदार्थ का बडा अनर्थ दृष्टिगोचर हो रहा है। अत सभी विद्वानो से निवेदन है कि वे वेदार्थ के लिए महर्षि दयानन्द द्वारा प्रदर्शित पथ पर चल कर वेदार्थ के गौरव को बढावे। अपना मनोवाञ्छित वेदार्थ तुरन्त बन्द कर प्राचीन महर्षियो द्वारा तथा महर्षि दयानन्द द्वारा किये वेदार्थ का ही सर्वत्र उपयोग करे। उसी का प्रचार एव प्रसार करे। स्वय वेदार्थ करने के लिए ईश्वर का साक्षात्कार एव उक्त १६ ग्रन्थो का पूर्ण ज्ञान प्राप्त करे।

महर्षि ने 'वेदविरुद्धमतखण्डन' ग्रन्थ मे मनुस्मृति के 'अर्थकामेष्वसक्ताना धर्मज्ञान विधीयते' श्लोक का प्रमाण देते हुए लिखा है—"सत्योपदेष्टा गुरु तुम मे इससे नही हो सकते कि आप लोगो मे वेदोक्त और ब्रह्मज्ञानी जन नही है। यदि कहो है तो तुम्हारा कहना असङ्गत है क्योकि तुम लोगो की प्रीति विषयो की सेवा मे प्रसिद्ध दीखती है। धर्मशास्त्रो मे कहा है कि अर्थ और काम मे जो आसक्त नही उनके लिए ही धर्म-ज्ञान का विधान है।" इस उल्लिखित ऋषियो के वचन से यह स्पष्ट है कि अर्थ और काम मे न फसा हुआ विद्वान् ही वेदवेत्ता हो सकता है। साक्षात्कृतधर्मा विद्वान् ही वेदार्थ को यथार्थ रूप मे समझकर अन्यो को समझा सकता है।

आजकल पाश्चात्त्य सभ्यता से प्रभावित विद्वान् भाषा-विज्ञान को भी वेदार्थ मे सहायक मानने लगे है। वर्तमान मे जो भाषा-विज्ञान हमारे सामने उपस्थित है, इसका आविर्भाव बहुत प्राचीन नही है। यदि भाषा-विज्ञान वेदार्थ मे सहायक है, तो भाषा-विज्ञान के प्रसार से पूर्व जिन भारतीय विद्वानो ने वेद भाष्य किये हैं, क्या वे सब अधूरे ही कहलायेगे ? और हमारे प्राचीन शास्त्रकारो ने कही भी वेदार्थ करने के लिए भाषा-विज्ञान को सहायक नही माना है। भाषा-विज्ञान का यदि यह अभिप्राय है कि विभिन्न भाषाओं के शब्दो के जानने से वेदार्थ होता है तो यह कदापि ठीक नही है। महर्षि दयानन्द ने और प्राचीन ऋषि मुनियो ने ऐसा कभी भी स्वीकार नही किया। और यह एक अद्भुत तथा असगत बात ही है कि अन्य भाषा के शब्दो से अन्य भाषा का बोध होना। कुछ ऐसे आर्य विद्वान् भी वेदार्थ मे भाषा-विज्ञान को सहायक मानने लगे है। इनके विचार मे भाषागत शब्दो की दूसरी भाषा के शब्दो से समता होने से अर्थबोध होता है किन्तु यह बिलकुल असम्भव तथा मिथ्या धारणा है। जैसे ईसा शब्द की समता लेकर 'ईशावास्यमिद सर्वम्०' मन्त्र का कैसे अर्थ होगा ? क्या कभी सकल-शकल शश-षष को जो एक ही भाषा के शब्द है, समानार्थक माना जा सकता है। अत भाषा-विज्ञान के सिद्धान्त अभी परिपक्व नही है। कालान्तर मे इसकी परीक्षा अच्छी प्रकार हो जायेगी। ऐसे ही कुछ भाषा-विज्ञान के विद्वान् यह भी कहते है कि ऋग्वेद का दशम मण्डल प्राचीन नही है। यह

बाद मे बनाकर मिलाया गया है। उनसे कोई पूछे कि इसमे कोई प्रमाण भी है तो निरुत्तर ही रह जाते है। इस भाषा-विज्ञान की कपोल-कल्पनाओ से हमारा सम्पूर्ण वैदिक वाङ्मय मिथ्या नही हो सकता। हमारे सभी शास्त्रकारो का एक ही मत है कि वेदार्थ मे सहायक वेदाङ्ग और ब्राह्मण ग्रन्थ है और चारो वेद सृष्टि के प्रारम्भ में परमेश्वर से अग्न्यादि ऋषियो को प्राप्त हुए।

एक मिथ्या धारणा वेदार्थ करने के लिए यह भी सुनने मे तथा पढने मे आती है कि मन्त्रो के ऊपर जो ऋषियो के नाम लिखे हुए है, वे मन्त्रार्थ मे सहायक होते हैं। परन्तु उनकी इस मान्यता मे कोई प्रमाण नही है। ऋषि का अर्थ करते हुए निरुक्त मे एक ही अर्थ बताया है कि—'ऋषिर्दर्शनात्' अर्थात् जिसने मन्त्रार्थ का साक्षात्कार किया है वह ऋषि होता है। जिन ऋषियो ने सर्वप्रथम मन्त्रार्थ को जाना, उन उन ऋषियो के नाम मन्त्रो के प्रारम्भ मे लिखे हुए है। ऐसा ही महर्षि दयानन्द का मन्तव्य है। महर्षि लिखते है—

"जिस-जिस मन्त्र का अर्थ जिस-जिस ऋषि ने प्रकाशित किया उस उस का नाम उसी उसी मन्त्र के साथ स्मरण के लिए लिखा गया है।" (ऋ० भा० भू० प्रश्नोत्तर०)

इससे स्पष्ट है कि मन्त्रो के प्रारम्भ मे लिखे ऋषि ऐतिहासिक व्यक्ति हैं। इनका मन्त्रार्थ जानने मे कोई सहयोग नही प्राप्त हो सकता। महर्षि दयानन्द ने अपने पूरे भाष्य मे वेदार्थ मे मन्त्रो के ऊपर लिखे ऋषि शब्दो से कोई सहायता नही ली है। और न ही कोई प्राचीन प्रमाण है जिससे स्पष्ट हो सके कि ये ऋषि मन्त्रार्थ मे सहायक होते है। यह वास्तव मे एक काल्पनिक धारणा ही है।

दयानन्द-वैदिककोष की विशेषताएँ

(१) महर्षि दयानन्द के वेद-भाष्य की उपर्युक्त विशेषताओ को ध्यान मे रखकर चिरकाल से एक इच्छा बनी हुई थी कि महर्षिकृत अर्थो से युक्त वैदिक पदो का अकारादि क्रम से एक ऐसे कोष का निर्माण होना चाहिये, जिससे वेद के अध्येता तथा अनुसन्धान कर्त्ताओ को पदार्थ देखने मे सरलता तथा सुगमता हो सके। प्रकरण-भेद से मन्त्रो मे पठित पदो के विभिन्न अर्थो का एक सन्दर्भ मे पूर्ण चित्र उपस्थित करने मे यह कोष पाठको को विशेष सहायक सिद्ध होगा। महर्षि के वेद-भाष्य तथा उनके अन्य ग्रन्थो मे जहाँ कही भी वैदिक पदो के अर्थ उपलब्ध होते हे, उन सबका सग्रह इसमे किया गया हे। वेद भाष्य का हिन्दी भाषार्थ महर्षि का नही है, पण्डितो का किया हुआ है। अत हमने वेदभाष्य मे से सस्कृत से ही पदार्थ छांटा है। कुछ विद्वान् वेदभाष्य के भाषार्थ को भी महर्षि का मानते है, परन्तु यह उनकी मिथ्या धारणा है। इसमे प्रथम कारण यह हे कि ऋग्वेदादिभाष्यभूमिका के अन्त मे महर्षि ने वेदार्थ करने का एक क्रम पदच्छेदादि का लिखा है उसमे भाषार्थ का कोई नाम नही हे। और उस श्लोक मे छ नाम गिनाए है उनमे भाषार्थ के बिना उनकी पूर्त्ति हो जाती है। दूसरा कारण यह है कि महर्षि के पत्र-व्यवहार से भी स्पष्ट पता लगता है कि महर्षि ने भाषार्थ करने के लिए प० भीमसेनादि को लगाया था और उनकी अशुद्धियाँ बताकर उन्हे यदा कदा धमकाया भी है। तीसरा कारण यह है कि ऋषि निर्वाण के पश्चात् परोपकारिणी-सभा मे यह रिपोर्ट पेश की गई थी कि महर्षि के भाष्य का भाषार्थ कराने के लिए प० भीमसेन और ज्वालादत्त को ही तीस रुपया मासिक पारिश्रमिक देकर भाषार्थ के लिए नियुक्त किया था। कारण यह भी है कि महर्षि का भाषार्थ करने का ढग भिन्न है। वे केवल अनुवाद मात्र ही नही करते अपितु कही उनका अर्थ विस्तृत होता है और कही सक्षिप्त। जैसा कि ऋग्वेदादिभाष्यभूमिका मे किया है। परन्तु वेद-भाष्य मे भाषार्थ अनुवाद मात्र किया गया है। जिससे स्पष्ट हो जाता है कि यह महर्षि का भाषार्थ नही है। यदि कोई महर्षि का भाषार्थ देखना चाहे तो महर्षि का सर्वप्रथम 'वेदभाष्य के नमूने का अक' को पढकर विचार करे कि महर्षि के भाषार्थ की शैली क्या है? अत आज कल के विद्वानो की यह धारणा बिल्कुल मिथ्या तथा स्वकल्पित ही हे कि वेदभाष्य का भाषार्थ महर्षि का है। और आजकल उसी भाषार्थ को महर्षि के नाम से छापकर लोगो को धोखे मे रक्खा जा रहा है। इस विषय मे 'यजुर्वेद-भाष्य-भास्कर' की भूमिका मे पर्याप्त लिखा गया है, जिसका आजतक विद्वानो का कोई उत्तर नही प्राप्त हुआ है और न उनके पास कोई समाधान है। अत हमने भाषार्थ के पदार्थ को अपने कोष मे कोई स्थान नही दिया है।

(२) यद्यपि गुरुकुल कागडी के आचार्य श्री प० चमूपति जी की देख रेख मे 'वेदार्थ कोष' तीन भागो मे

पहले भी प्रकाशित हुआ था। उनका प्रथम प्रयास अत्यन्त उपयोगी तथा श्लाघनीय था। और हमारे कोष के कार्य मे वह मार्ग-प्रदर्शक भी बना। एतदर्थ हम उनका हृदय मे आभार मानते है। परन्तु वह कोष आजकल किसी कीमत पर उपलब्ध न होने के कारण विद्वानो को इसका अभाव खटक रहा था। और उस कोष मे कई न्यूनताएँ रह गई थी, उन सबका निराकरण करके बहुत ही परिश्रम से इस कोष का निर्माण किया गया है। मिलान करने मे यह भी पता लगा कि वेदार्थ कोष मे बहुत अधिक पद और अर्थ छूटे हुए हैं।

(३) 'वेदार्थ कोष' मे जिन पदो का अर्थ था, उनका वाच्यार्थ अथवा विशेषण-विशेष्य भाव का पता न होने से पाठक सशय-ग्रस्त ही रह जाता था। वाच्यार्थ दिखाने के लिए हमारे सामने एक बडी कठिनाई आई कि महर्षि-भाष्य मे पदार्थ मे अन्वय नही है और अन्वय मे पदार्थ नही है। अत वाच्यार्थ का पता लगाना सुगम नही था। अत हमारे सहपाठी श्री पण्डित सुदर्शनदेव जी के परामर्श एव देख-रेख मे श्री पण्डित वेदपाल जी शास्त्री ने महर्षि के समस्त वेदभाष्य का सपदार्थान्वय तैयार किया, तभी हम कोष मे वाच्यार्थ दिखा पाये है। वाच्यार्थ के बिना पदो के विभिन्नार्थों का स्पष्ट करना बहुत कठिन था। महर्षि के पदार्थ मे बहुत कम वाच्यार्थ का पता लगता है। वेदार्थ कोष ने वाच्यार्थ की बिल्कुल उपेक्षा की और इसने विद्वानो मे एक बडी भ्रांति उत्पन्न हो गई कि महर्षि के पदार्थ मे त्रिविध प्रक्रिया है। जो कि बहुत बडी भ्रान्ति का कारण बनी। इस विषय मे 'यजुर्वेद-भाष्य-भास्कर' की भूमिका मे पर्याप्त विचार किया है, जिसका भी विद्वान् अभी तक कोई उत्तर नही दे सके है। महर्षि ने प्रकरणानुसार मन्त्र मे आए पद का क्या अर्थ है, यह अन्वय मे स्पष्ट किया है।

अत समस्त महर्षि वेद-भाष्य की सपदार्थान्वय से वाच्यार्थ सहित चिटें बनवाई और फिर अकारादिक्रम से वर्गीकरण करके कोष का निर्माण किया गया है। जिससे पदार्थ को पाठक सुगमता से हृदयगम कर सके।

महान् आश्चर्य तो यह है कि आजकल महर्षि के अनुयायी विद्वान् भी मन्त्रो की त्रिविध-प्रक्रिया मानने लगे है और वेद के मर्मज्ञ बनने का दम्भ भी करते है। उनसे विनम्र निवेदन है कि वे वेदार्थ की कुञ्जी निरुक्त को उठाकर देखें—

'तास्त्रिविधा ऋच परोक्षकृता प्रत्यक्षकृता आध्यात्मिक्यश्च।' (नि० दैवत० १ १.)

'परोक्षकृता प्रत्यक्षकृताश्च मन्त्रा भूयिष्ठा, अल्पश आध्यात्मिका.।' (नि० दैवत० १ ३)

यहाँ वेदमन्त्रो के तीन विभाग किये हैं और उनकी पहचान भी बताई गई है। यदि सभी मन्त्रो के त्रिविध प्रकार से अर्थ सम्भव होते तो महर्षि यास्क का लक्षण— परोक्षकृत ऋचाओ मे प्रथमपुरुष का प्रयोग, प्रत्यक्षकृत ऋचाओ मे मध्यमपुरुष का प्रयोग तथा आध्यात्मिकी ऋचाओ मे उत्तमपुरुष का प्रयोग इत्यादि कैसे सगत हो सकता है। और आध्यात्मिक कम मन्त्र है, परोक्षकृत तथा प्रत्यक्षकृत मन्त्र अधिक हैं यह कथन निरर्थक ही हो जायेगा। और कोई भी विद्वान् मन्त्रो के त्रिविध अर्थ आज तक नही कर सका है। हो भी कैसे सकते हैं? प्रत्येक पदार्थ के दर्शनो के अनुसार कुछ सामान्य गुण होते है कुछ विशेष। सामान्य गुणो को तो दिखाया जा सकता है किन्तु विशेष गुण त्रिविध प्रक्रिया मे कैसे सगत होगे? वही प्रकृति मे भी घट जाये, वही जीव और परमात्मा मे भी घट जाए? कैसी विचित्र कल्पना है? कोई भी विद्वान् जो त्रिविध प्रक्रिया का दम्भ भरता हो वह—'स पर्यगाच्छुक्रमकायमव्रणम्०' इस मन्त्र के त्रिविध अर्थ करके तो दिखाए? इस प्रकार के अनेक मन्त्र उपस्थित किये जा सकते है। महर्षि की मान्यता कितनी स्पष्ट तथा सुन्दर है—

'जहाँ-जहाँ सर्वज्ञादि विशेषण हो वहाँ-वहाँ परमात्मा और जहा-जहाँ इच्छा, द्वेष, प्रयत्न, सुख, दुःख और अल्पज्ञादि विशेषण हो, वहाँ-वहा जीव का ग्रहण होता है।' (स० प्र० प्र० समु०)

इससे विपरीत कोई कैसे कर सकता है कि सर्वज्ञादि विशेषण होने पर भी जीव-परक अथवा प्रकृति-परक अर्थ कर सके। अत. त्रिविध प्रक्रिया की मान्यता निरर्थक तथा मिथ्या ही है। आज तक त्रिविध प्रक्रिया मानने वाले प्रक्रिया की सख्या भी निश्चित नही कर सके हैं। कोई त्रिविध मन्त्रार्थ मानता है तो कोई आधियाज्ञिक और जोड़ कर चार सख्या करता है और न इनकी परिभाषा ही बताते है।

इस अनर्थ मूलिका त्रिविधप्रक्रिया को देखकर कोष के लिए अधिक प्रेरणा मिली। यास्क तथा महर्षि दयानन्द

दोनों इस बात से सहमत है कि प्रकरणानुसार मन्त्रो के अर्थ होने चाहिएँ, तब धातु के विभिन्न अर्थ होते हुए भी प्रकरण के अनुकूल ही अर्थ लगाया जा सकता है, भिन्न नही। अत वाच्यार्थ-सहित चिटें बनाकर वेदार्प कोष से मिलान किया। जो पद उसमे छूट गए थे अथवा हमारी चिटो से रह गये थे, उन सब त्रुटियो का बहुत ध्यान करके निराकरण किया है और कोष को सर्वाङ्गपूर्ण बनाने का पूरा प्रयास किया गया है।

(४) महर्षि दयानन्द ने वेदभाष्य मे जो पदार्थ किया है उसको प्रमाणित करने के लिए महर्षि ने पदार्थ के आगे कहीं-कहीं प्रमाण-भाग भी दिए है उन प्रमाणो को इस कोष मे यथास्थान अक्षुण्ण ही रखा गया है।

(५) इस कोष मे सर्वनाम-पदो को छोड दिया गया है, क्योकि सर्वनामपद सब के वाचक होते हैं। अत उनका सामान्यार्थ ही होता हे विशेष नही।

(६) इस मे यह भी ध्यान रक्खा गया हे कि जिन पदो मे संहिता (सन्धि) के कारण दीर्घत्व, षत्वादि कार्य हो जाते हैं, वे पद-पाठ मे नही रहते। अत पदो का मूलरूप ही रक्खा गया है।

(७) विभक्ति-भेद से आये विभिन्न सुबन्त पदो को एक ही सन्दर्भ मे दिखाने का पूरा प्रयास किया गया है।

(८) सुबन्त-पदो की तरह ही तिङन्तरूपो मे भी यह ध्यान रक्खा गया है कि जिस धातु के एक ही लकार मे विभिन्न रूप आए हैं, अथवा अन्य लकारो मे उसी क्रिया के रूप है, तो उन सबको एक ही सन्दर्भ मे दिखाया गया है।

(९) पदार्थ लिखते समय यह भी ध्यान रक्खा गया है कि उपसर्ग को क्रिया के साथ ही रक्खा जाए। क्योकि वेद-मन्त्रो मे उपसर्ग क्रिया से अन्यत्र भी पढे होते हैं। 'उपसर्गा क्रियायोगे' इस पाणिनीय सूत्र के अनुसार भी क्रिया के योग मे ही उपसर्ग सज्ञा का विधान है। वेदार्ष-कोष मे सोपसर्ग क्रिया के अर्थ पर ध्यान नही दिया गया था। उपसर्ग का अर्थ क्रिया के साथ ही सगत होता है।

(१०) इस कोष मे सर्वाधिक परिश्रमसाध्य काम व्याकरण-प्रक्रिया का किया गया है। कुछ अनावश्यक दोषदर्शी महर्षि के वेद-भाष्य के विषय मे अनेक बार यह कहते भी सुने गए कि महर्षि ने स्वेच्छा से मन्त्रो के अर्थ किए है। उन्होने व्याकरणादि का कोई ध्यान नही रक्खा है। यह मिथ्या धारणा कण्टकवत् मर्मभेदी बनकर पीडा पहुँचा रही थी। अत प्रत्येक पद का व्याकरणानुसार प्रकृति-प्रत्यय विभाग, निरुक्त के अनुसार निरुक्ति और ब्राह्मणग्रन्थो के पाठो से सुग्रथित करके कोष को तैयार किया गया है। इससे विद्वानो के लिए पदार्थ हृदयगम करने मे पर्याप्त सहायता और पण्डितमन्यो को स्वत ही निरुत्तर होना पडेगा।

व्याकरण वेद का मुख्य अग है, व्याकरण के बिना पदार्थ-ज्ञान हृदयगम कदापि नही हो सकता। महर्षि यास्क का यह सिद्धान्त कि वेद के सभी पद आख्यातज है, तब तक अधूरा ही है जब तक व्याकरण का बोध न हो। महाभाष्य मे महर्षि पतञ्जलि ने व्याकरणाध्ययन के प्रयोजनो मे लिखा है—'वाङ् नो विवृणुयादात्मानमित्यध्येय व्याकरणम्।' (महाभा० पस्पशा०) अर्थात् व्याकरण पढने से वाणी के स्वरूप का अच्छी प्रकार बोध हो जाता है, अन्यथा नही। 'महता देवेन न साम्य यथा स्यादित्यध्येय व्याकरणम्।' (महा० पस्पशा०) अर्थात् महान् देव शब्द के साथ साम्य-भाव प्राप्त करने के लिए व्याकरण पढना चाहिये। इससे स्पष्ट है बिना व्याकरण के पदार्थ के अन्तर्निहित अर्थ को नही जान सकते। उदाहरण स्वरूप—मित्र के लिए 'सखा' तथा 'वयस्य' शब्द आते हैं। परन्तु दोनो मे बडा अन्तर है। समान आयु वाला वयस्य होता है और समान विचारो वाला सखा होता है। इस रहस्य का बोध व्याकरणादि के द्वारा ही सम्भव है। केवल पर्यायवाची शब्द से शब्दार्थ के अन्तर्निहित अर्थ का बोध नही होता।

अत प्रत्येक पद के साथ-साथ कोष्ठान्तर्गत उस पद का व्याकरण, निरुक्त, तथा ब्राह्मणग्रन्थो का अर्थ 'विमर्श-टीका' के नाम से मैंने दिया है।

(११) इस कोष मे पदो के अर्थ महर्षि भाष्य से पदार्थ के अतिरिक्त अन्वय से भी छाटे गये है। अन्वय मे अर्थ बहुत स्थानो पर है एव भावार्थ मे भी लिये हैं। वेदार्ष-कोष मे केवल पदार्थ मे लिये गये थे।

(१२) उपर्युक्त विशेषताओ के साथ-साथ यह कोष सुन्दर कागज, सुन्दर छपाई एव नये टाइप भरवाकर छापा गया है।

(१३) आर्यसमाज की स्थापना शताब्दी के पावन-अवसर पर वैदिक-विद्वानो के लिए यह अमूल्य उपहार है।

ग्रन्थ-संकेत सूची

अ०	अष्टाध्यायी	तै० आ०	तैत्तिरीयारण्यक
अथर्व०	अथर्ववेद	तै० उ०	तैत्तिरीयोपनिषद्
आर्याभि०	आर्याभिविनय	तै० स०	तैत्तिरीयसहिता
उ०	उणादिकोष	दै०	दैवतब्राह्मणम्
ऋ० भू०	ऋग्वेदादि भाष्यभूमिका	नि०	निरुक्तम्
ऐ०	ऐतरेयब्राह्मण	निघ०	निघण्टु
ऐ० आ०	ऐतरेयारण्यक	प० वि०	पचमहायज्ञविधि
क०	कपिष्ठलकठसहिता	म०	मन्त्रब्राह्मणम्
कौ०	कौषीतकिब्राह्मणम्	मै०	मैत्रायणी सहिता
गो० पू०	गोपथ ब्राह्मणम् (पूर्वभाग)	वे० भा०न०	वेदभाष्य के नमूने का अक
गो० उ०	,, (उत्तरभाग)	श०	शतपथब्राह्मणम्
जै०	जैमिनीयब्राह्मण	ष०	षड्विंशब्राह्मणम्
जै० उ०	जैमिनीयोपनिषद् ब्राह्मण	स० वि०	सस्कारविधि
ता०	ताण्ड्यमहाब्राह्मणम्	स० प्र०	सत्यार्थप्रकाश
तै०	तैत्तिरीयब्राह्मणम्	सा०	सामविधानब्राह्मणम्

विशेषः—(क) जहाँ पदो के आगे तीन अङ्को से निर्देश किया है, वहाँ ऋग्वेद की क्रमश मण्डल, सूक्त तथा मन्त्र की सख्याएँ जाननी चाहियें। और जहाँ दो अङ्को से निर्देश किया गया है वहाँ यजुर्वेद की अध्याय तथा मन्त्र की सख्याएँ जाननी चाहिये।

(ख) ऋग्वेदादिभाष्यभूमिका, सस्कार विधि और सत्यार्थप्रकाश की जो पृष्ठो की सख्याएँ दी गई हैं, वे आर्ष साहित्य प्रचार ट्रस्ट द्वारा प्रकाशित ऋषि दयानन्द के जीवनकाल मे छपे प्रामाणिक सस्करणो की पृष्ठ सख्याएँ हैं।

(ग) इस कोष मे पदार्थ के पश्चात् [ ] कोष्ठान्तर्गतव्याकरण निरुक्त तथा ब्राह्मण ग्रन्थो के उद्धरण 'विमर्श-टीका' नाम से जानना चाहिए।

(घ) ( ) इस चिह्न से अङ्कित कोष्ठक के अन्तर्गत पदो का विशेष्य दिया गया है और यदि अग्नि इन्द्रादि पद विशेष्य मे ऐसे है जो अनेकार्थक हैं तो उनके उस उस मन्त्र मे उस उस पद का क्या अर्थ महर्षि ने किया है यह भी = लगाकर समझाया गया है।

इस कोष मे सत्यार्थप्रकाश व सस्कारविधि के द्वितीय (प्रामाणिक) सस्करण तथा ऋग्वेदादिभाष्यभूमिका के प्रथम सस्करण का उपयोग किया है। अत जिन सज्जनो के पास ये सस्करण नहीं है उनकी सुविधार्थ इन पुस्तको के समुल्लास वा प्रकरण पृष्ठाको सहित दिये जाते है—

सत्यार्थप्रकाश

संस्कारविधि

ऋग्वेदादिभाष्यभूमिका विषय

आभार-प्रदर्शन

ऐसे विशालकाय और परिश्रम साध्य कोषों के प्रकाशन करने के कार्य मे बहुत साधन तथा विद्वानों की अपेक्षा होती है पुनरपि इस कोष कार्य को मैंने श्री वेदपाल शास्त्री के सहयोग से पूर्ण किया है। सर्वप्रथम मैं 'आर्ष-साहित्य-प्रचार ट्रस्ट' के अधिकारियों को हृदय से धन्यवाद अवश्य करूंगा। जिनके सत्प्रयास तथा प्रेरणाओं से इस शुभ कार्य का प्रारम्भ किया गया। और इस कोष के सम्पूर्ण-व्यय को वहन किया। हमें एक अप्राप्य ग्रन्थ को विद्वत्समाज के कर-कमलों में समर्पण करते हुए बड़ी प्रसन्नता है। इस कोष की प्रेस कापी तैयार करने मे तथा वाच्यार्थ लिखने में श्री प० वेदपाल शास्त्री जी ने जिस तन्मयता एवं परिश्रम से कार्य किया है, एतदर्थ वे बहुत ही श्लाघनीय हैं। अकारादि क्रम से चिटों के लगाने मे और विशेष रूप से प्रूफ-रीडिंग करने मे, जो कि सबसे अधिक कठिन कार्य था, श्री प० विश्वदेव जी शास्त्री, श्री कर्मवीर जी शर्मा और अपने प्रिय शिष्य श्री धर्मपाल जी का मैं अत्यन्त ही कृतज्ञ हूं कि उन्होंने इस कार्य मे अपना पूरा समय देकर रात-दिन एक करके इस कार्य को सफल बनाया है। इसके साथ-साथ ही मैं श्री प० रामहौसला मिश्र आदि प्रेस कर्मचारियों का भी धन्यवाद किये बिना नहीं रह सकता, जिन्होंने पूरे पुरुषार्थ से हमे इस शुभ कार्य मे पूर्ण सहयोग दिया है।

उपसंहार

आज हम उस महर्षि के लगाये आर्यसमाज रूपी पवित्र पौधे की शताब्दी मना रहे हैं। हम सब महर्षि के भक्त तथा उनके बताये मार्ग के अनुयायी है। हम सब हृदय से चाहते भी हैं कि यह महर्षि का पौधा उत्तरोत्तर फले फूले और चहुँमुखी उन्नति करे। परन्तु एक बार हमे इस पवित्रावसर पर आत्मनिरीक्षण भी करना होगा, अपने अतीत का सिंहावलोकन भी करना होगा कि हमारे कार्यों मे क्या-क्या त्रुटियां रह गई है? उनको दूर करके हम फिर नवीन उमग तथा उत्साह के साथ आगे बढ सकें। धर्म-प्रेमी आर्यो! महर्षि के पास एक ही सर्वोपरि बल था वह शारीरिक नहीं, और न धन तथा पद का था। वह था सत्य-ज्ञान का स्रोत वेद की ज्योति। जिससे वे न कभी घबराये और नहीं हतोत्साह हुए। अपने वैदिक मतावलम्बी आर्यो को अमर सन्देश दे गये कि—

वेद सब सत्यविद्याओं का पुस्तक है। वेद का पढना-पढाना और सुनना-सुनाना सब आर्यो का परमधर्म है।

महर्षि के हृदय से निकले इन उद्‌गारो मे ही हमारा कल्याण सुनिहित है। इनका पालन करने से ही हम आर्य कहला सकेंगे। और अपने जीवन मार्ग को प्रशस्त कर के विश्वजनीन वैदिक धर्म को जन-मानस तक पहुँचा सकेंगे। अतः हम आज एक सद्‌व्रत का सकल्प लें कि हम महर्षि के वेदभाष्य की विशेषताओं को ध्यान मे रखकर अवैदिक विचारधाराओं को दूर करने मे भगीरथ श्रम करेंगे।

इस 'दयानन्द-वैदिक-कोष' मे महर्षि के वेद-भाष्य से पदार्थ-रूपी मोतियों की माला सुग्रथित की गई है। यह निःसन्देह महर्षि से छूटे हुए वेद-भाग के भाष्य करने मे भी अत्यन्त उपयोगी एवं सहायक होगी। ऐसी उदात्त भावनाओं को लेकर ही यह प्रयास किया गया है। पुनरपि विद्वद्‌गण से यही प्रार्थना है—

गच्छतः स्खलनं क्वापि भवत्येव प्रमादतः। हसन्ति दुर्जनास्तत्र समादधति सज्जनाः॥

इस कोष के सम्पादन मे मैं अपने को अयोग्य ही समझता हूँ। पुनरपि अपनी अल्पमति के अनुसार निर्दोष बनने का प्रयास किया है। इसमे जो भी अच्छाई दिखाई देती है वह परब्रह्म की अनुकम्पा, महर्षि की दया और गुरुजनो की कृपा का फल है और जहाँ जितने भी दोष रह गये हैं, वे सब मेरी अल्पज्ञता के परिणाम हैं। आशा है गुण गृह्य विद्वद्‌गण दोषों के लिए क्षमा करेंगे।

स्वामी श्रद्धानन्द-बलिदानदिवस
पौष-कृष्णा पञ्चमी स० २०३२ वि०
दिनाक २३-१२-७५ मगलवार
स्थानम् नरेला
(दिल्ली-४०)

विदुषां वशंवद —
राजवीर शास्त्री

ओ३म्

अथ दयानन्दवैदिककोषः

अकनिष्ठासः कनिष्ठभावमप्राप्ता (भ्रातर = बन्धव) ५ ६० ५ अविद्यमाना कनिष्ठा येषान्ते (मर्या = मनुष्या) ५ ५९ ६ [नञ्+युवन्+इष्ठन्, 'आज्जसेरसुग्' इत्यसुगागम]।

अकरम् कुर्य्याम्। अन्वये—निष्पादयेयम्। १६ ८ करोमि १ ११४ ९ **अकर्त्त**=कुर्यात् कुरुत ४ ३५ ५ कुर्वन्ति। प्र०—अत्र लुडर्थे लुड् 'मन्त्रे घस०' इति च्लेर्लुक्। वचन-व्यत्ययेन भस्य स्थाने त, छन्दस्युभयथा०, इत्यार्धधातुक मत्वा गुणादेशश्च १ २० ६ **अकर्म्म** कुर्य्याम्। ४ १६ २० अकार्ष्म, कुर्य्याम। प्रमाणम्—अत्र डुकृञ् धातोर्लुडि 'मन्त्रे घस०' अ० २ ४ ८० इत्यादिना च्लेर्लुक् ८ १८ [अकरम्=डुकृञ् करणे धातोर्लुङ् कृमृदृरुहिभ्य०' अ० ३ १ ५९ सूत्रेण च्ले स्थाने अङ् प्रत्यय। अकर्त्त अकर्म्म इत्यनयोर् डुकृञ् धातोर्लुङ् च्लेर्लुक् च]

अकल्पयत् रचितवान् पञ्चमहा० बनाता था, अब बनाए हैं और आगे भी वैसे ही बनायेगा स० प्र० २९९ रचे थे, रचे हैं, बनाए गए हैं स० प्र० २३१। १.१९० ३ **अकल्पयन्**=कथयन्ति ३१ १३ [कृपू सामर्थ्ये (भ्वादि.) धातोर्णिजन्तात् लङ् सामान्यकाले 'छन्दसि लुङ्लङ्लिट्' इति सूत्रेण]

अकल्पः कल्पैरन्यै समर्थैरसदृशोऽन्येभ्योऽधिक इति (इन्द्र =सेनापति) १ १०२ ६ [कृपू सामर्थ्ये भ्वादि० अच् प्रत्यय) कल्पते अर्चति कर्मा निघ० ३ १४]

अकवाभिः प्रशसिताभि (ऊती=रक्षाभि) १.१५८ १ अनिन्दितृभि (ऊती=रक्षाभि) ६ ३३ ४ [अकवा = अशब्दायमाना (वायव) ५ ५८ ५ अकवैभि =असख्यै राधोभि =धनै) ६ ६० ३ अकवै =अकुत्सितै कर्मभि। ३ ५४ १६ (नञ्+कुशब्दे अदादि० 'ऋदोरवित्यप्' प्रत्यय) कवते गतिकर्मा निघ० २ १४]

अकवऽअरिम् न विद्यन्ते कवा शब्दायमाना अरयो यस्य तम् (इन्द्र=राजानम्) ६ १९ ११ अविद्यमानशत्रुम् (इन्द्र=राजानम्) ३ ४७ ५ [कौति धर्ममुपदिशतीति कवो, न कवो ऽकवोऽधर्मात्मा, तस्यारि शत्रुस्तम् (इन्द्रम्= राजानम्) ७ ३९. कु शब्दे धातो अच् प्रत्यये कव, कवारयो समासे नञ्समास]

अकविषु अक्रान्तप्रज्ञेषु (अविद्वत्सु) ७ ४ ४ [नञ्+कु शब्दे 'अच इ' उणादि ४ १३९ सूत्रेण 'इ' प्रत्यय। कवि =मेधाविनाम निघ० ३ १५]

अकः कुरु ८ २३ करोति १ १२३ ७ कुर्य्यात् १७ ६३ कुर्य्या ५ ८३ १० [कृतवान् प्र० अत्र मन्त्रे घसह्वरणश० इति च्नेर्लुक्) १ २४ ८ (कृधातो छन्दसि लुङ्लङ्लिट' इति सामान्ये लुङ्)]

अकानिषम् प्रदीपयेयम्, अन्वये—कामयेयम् ४ २४ ९. [कनी दीप्तिकान्तिगतिषु भ्वादि०, कानिषत्=कान्तिकर्मा निघ० २ ६ तत सामान्ये लङ्]

अकामऽकर्शनः योऽकामानलसान् कृशति तनूकरोति स (इन =राजा) १ ५३ २ [अकाम.=नञ्+कमु कान्तौ घञ् (बहुव्रीहिसमास) कर्शन =कृश् तनूकरणे, मण्ड-नार्थत्वात् कर्त्तरि युच् प्रत्यय]

अकायम् स्थूल-सूक्ष्म-कारणशरीरत्रयसम्बन्धरहितम् (ब्रह्म) ऋ० भू० ३९। (जो कभी शरीर-धारण वा जन्म नही लेता वह (ब्रह्म=ईश्वर) स० प्र० २४४। यो न कदाचिज्जन्मना शरीरधारणेन सावयवो भवति (ब्रह्म= ईश्वर) प० वि०। जो कभी शरीर-धारण=अवतार नही करता क्योकि जो अखण्ड, अनन्त और निर्विकार है, इससे देह-धारण कभी नही करता, जिससे अधिक कोई पदार्थ नही है इसी से जिसका शरीर-धारण करना कभी नही बन

सकता वह (ब्रह्म=ईश्वर) आर्याभि० २ २ [नञ्+चिञ्+घञ्, 'निवासचितिशरीरो०' अ० ३ ३ ४१ सूत्रेण शरीरार्थे घञ् प्रत्यय । आदेश्च ककारादेश । वियोगार्थे नञ्समास]

अकारि क्रियते प्र०—अत्र लडर्थे लुङ् १ १०४ १ अकारिषम्=कुर्य्याम् ४ २९ ६. किये गये ४ १६ २१ **अकारीत्**=करोति ४ ३९ ३ [डुकृञ् करणे धातो कर्मणि लुङ् अकारीत्=डुकृञ्+लुङ् कर्त्तरि]

अकितवम् अद्यूतकारिणम् (जनम्) ३० ८ [कितव=कि तवास्तीति शब्दानुकृति निरु० ५ २२]

अकिरत् किरति विक्षिपति १ ३२ १३ [कॄ विक्षेपे तुदादि० लेटि प्रयोग]

अकुत्र अविषये १ १२० ८ [नञ्+किम्+त्रल्, 'कुतिहोरि' ति किम कुरादेश]

अकुमारः पञ्चविंशतिवर्षातीत (युवा) १ १५५ ६ [कुमार क्रीडायां चुरादि० कर्त्तरि अच् प्रत्यय, तत्प्रतिषेध]

अकूपारस्य अकुत्सित पारो यस्य तस्य (धर्मविद्या-प्रकाशस्य) ५ ३९ २ समुद्रस्य २४ ३५ प्र०-अकूपारस्य··· अकुपरणस्य नि० ४ १८ १ आदित्योऽप्यकूपार उच्यतेऽकूपारो भवति दूरपार, समुद्रोऽपि अकूपार उच्यतेऽकूपारो भवति महापार, कच्छपोऽप्यकूपार उच्यतेऽकूपारो न कूपमृच्छति निरु० ४ १८ २. [नञ्+कु+पॄ पूरणे (चुरादि०) धातोर्घञ् 'अन्येषामपि दृश्यते' अ० ६ ३ १३७ सूत्रेण दीर्घादेश कूपोपपदाद्वा ऋच्छतेर्धातोरण् प्रत्यय]

अकृणुत कुरुत १ ११० ३ **अकृणुतम्**=कुरुतम् १ ११६ १० कुर्यातम् ६ ६९ ५ **अकृणुध्वम्**=कुरुत ४.३५ ६ **अकृणोत्**=करोति । प्र०—अत्र लडर्थे लङ् १ १६४ २८ कुर्यात् ५ ४२ १३ **अकृणोत**=कुरुत ४ ३५ ३ **अकृणोतन** कुरुत १ ११० ८ **अकृणोः**=कुर्या. ४.२८ ४ कुरु १७ २४ करोति २ १३ ३ **अकृण्वत**=कुर्वन्तु ३ ११ ४ **कृण्वन्ति**= कुर्वन्ति । अत्र लडर्थे लङ्, व्यत्ययेनात्मनेपदञ्च १ ३६ ५ **अकृण्वन्**=कुर्युः २ ४० १ कुर्वन्ति ४ १ १० [डुकृञ् करणे धातोर्लङ् । विकरणव्यत्ययेन श्नु]

अकृत करोति ५ ३४ ८ कुर्यात् ३ २९ ८ [डुकृञ् करणे धातोरात्मनेपदे लुङ् 'ह्रस्वादङ्गात्' इति सूत्रेण सिचो लोप]

अकृता अकृतानि (कर्त्वानि=कर्त्तव्यानि) ४ १८ २ **अकृते**=अनिष्पादिते (योनौ=निमित्ते) १ १० ७. **अकृतम्**=अभ्रियमाण कर्म ६ १८ १५ **अकृतः**=कृन्तसि १ ६३ ४ **अकृथाः**=कुर्या ५ ३० ८ [नञ्+डुकृञ् करणे तत क्त, कृती छेदने धातोर्वा]

अकृप्रन् कल्पन्ते ४ २ १८. [कृपू सामर्थ्ये सामान्ये लङ्) 'बहुल छन्दसि' अ० ७ १ ८ सूत्रेण रुडागम]

अकृष्टपच्याः या अकृष्टेषु जङ्गलादिषु पच्यन्ते ता (ओषधय=अन्नादय) १८ ४४ [कृष्टपच्या=कृष्टे पच्यन्ते कृष्टपच्या । 'राजसूयसूर्य०' अ० ३ १४४ सूत्रेण क्यप् प्रत्ययान्तो कर्मकर्त्तरि निपात्यते]

अकृष्णः अविद्यान्धकाररहित (ब्रह्मा=चतुर्वेद-विद्विद्वान्) २३ १३ [कृष विलेखने विलेखनमाकर्षणम्, तस्मादुणादिर्नक् प्रत्यय, तत्प्रतिषेध]

अकेतवे अविद्यमानप्रज्ञाय (जनाय) २९ ३७ अज्ञानान्धकारविनाशाय १ ६ ३ अज्ञाननाशाय ऋ० भू० ३०८ [चायृ पूजानिशामनयो+उणादिस्तु प्रत्यय, की आदेशश्च तत्प्रतिषेधस्तस्मै । केतु=प्रज्ञानाम निघ० ३ ९]

अक्तम् सम्बन्धम् (कलश=कुम्भम्) ४ २७ ५. युक्तम् (बर्हि=उदकम्) २ ३ ४ प्रकट व्यक्त वस्तु सुख वा २ १६ प्रसिद्धम् (स्योन=सुखकारक स्थानम्) २०.३९ **अक्तः** रात्रि ६ ५ ६ प्रसिद्ध (सूर्य) ६ ४.६ [शुभ-गुणैर्युक्त (अग्नि=विद्युदिव राजा) ४.३ १० **अक्तौ**= घृतेनाक्त चित्तौ यज्ञकर्त्ता यज्ञकारयिता च]६ ११ **अक्ता**= अनक्त्यञ्जनवत् पदार्थानाच्छादयति सा रात्रि १ ६२.८ [अञ्जू व्यक्तिम्रक्षणकान्तिगतिषु धातो क्त प्रत्यय]

अक्तुः व्यक्तीकर्त्तु (सूर्यस्य) २ ३० १ रात्रि १ १४३ ३ **अक्तुना**=रात्र्या २ १० ३ **अक्तुभिः**= प्रसिद्धै कर्मभिर्मार्गै प्रसिद्धाभी रात्रिभिर्वा १ ९४ ५ अञ्जन्ति मृत्यु नयन्ति यैस्तै शस्त्रै, प्र०—अत्र अञ्जु-धातोर्बाहुलकादौणादिकस्तु प्रत्यय १ ३६ १६ **अक्तून्**= व्यक्तान् प्राप्तव्यान् पदार्थान् १ ६८ १ प्रसिद्धान् (लोकान्) ५ ५४ ५ **अक्तोः**=रात्रेर्मध्ये ४ १० ५ अक्तौ=रात्रौ ६ ४९ १० [अक्तून्=अन्धकारान् ११ ४३ (अञ्जू व्यक्ति-म्रक्षणकान्तिगतिषु धातोस्तु प्रत्यय) अक्तो=रात्र्या निरु० ५ २८ १ अक्तुभी रात्रिभि निरु० १२. २३]

अक्रः दुष्टान् क्राम्यति १ १८९ ७ अन्यैरक्रान्त. (विद्वज्जन) प्र०—अत्र पृषोदरादिनेष्टसिद्धि १ १४३ ७. केनाऽपि प्रकारेण क्रमितुमयोग्य (राजपुरुष) ३ १ १२. अक्रमिता (सूर्य) ४ ६ ३ [अक्र=पदनाम निघ० ४ ३ अक्र अक्रमणात् निरु० ६ १७ ५ । क्रमुपादविक्षेपे धातो सामान्ये लुङ्]

अक्रत कुर्वते ५.२१३ कुर्वन्ति, प्र०—अत्र लडर्थे लुङ् 'मन्त्रे घस०' इति च्लेर्लुक् १२०४ कुरुत ३५१८ कारयन्ति प्र०—अत्र णिलोप १६२१ **अक्रन्**=कुर्युः १६१।१६ कुर्वन्तु १२४५ कुर्युः कुर्वन्ति वा २३६८ अक्रान्= कुर्वन्ति २११८ [अक्रत=अक्रपत निरु० ४६ अक्रान् अत्यक्रमीत् निरु० १४२६ अत्र 'मन्त्रे घसह्वर०' इति च्लेर्लुक्]

अक्रतून् निर्बुद्धीन् (अविदुषो जनान्) ७६३ [क्रतु=प्रज्ञानाम नित्र० ३ ६]

अक्रन्दत् प्राप्नोति १२६ गमयति १२२१ विजानाति १२३३ **अक्रन्दयः**=आह्वय १५४१ **अक्रन्दः** शब्दायसे ११६३१ [क्रदि आह्वाने रोदने च भ्वादि०, तत सामान्ये लङ्]

अक्रपिष्ट कल्पते ७२०६ [क्रप कृपायां गतौ भ्वादि० ततो लुङ् सामान्यकाले]

अक्रमीत् क्राम्यति, प्र०—अत्र लडर्थे लुङ् ३६ क्रामति ६५६६ क्रमते ३३६३ उत्तमतया क्रमण कुर्यात् ११२२ **अक्रमुः**=क्राम्यन्ति १२८४ **अक्रंस्त**= क्रमते २२५ गच्छति २२५ **अक्रामत**=व्याप्नोति ३१४ [क्रमु पादविक्षेपे ततो लुङ्]

अक्रविहस्ता अहिंसाहस्तौ दानशीलहस्तौ वा (राजानौ=राजाऽमात्यौ) ५६२६

अक्रौ=अकर्त्तरि (मर्त्ते=मनुष्ये), प्र०—अत्र नञ्युपपदात्कृधातो 'इक् कृष्यादिभ्य' इति बहुलवचनात् कर्त्तरीक् ११२०२

अक्षम् धू १३०१४ अश्यन्ते व्याप्यन्ते प्रशस्ता व्यवहारा येन तम् (वेदज्ञानम्), १३०१५ व्याप्तम् (तत्त्वम्) ७३३४ **अक्षः**=व्याप्तविद्य (आचार्य) ३५३१६ पुरो भाग ११६४१३ इन्द्रियछिद्रम् ३५३१७ रथ्यो भाग ११६६६ 'धुरी' इति भाषायाम्, ६२४३ [अशूङ् व्याप्तौ सघाते च, तत 'अशेर्देवने' उणादिसूत्रेण स प्रत्यय । अक्षा अश्नुवत एतानिति वाभ्यश्नुवत एभिरिति वा निरु० ६७२ अक्षा अश्नोरित्येवमेके क्षियतिनिगम ... क्षरति निगम ... इत्येके निरु० ५३१

अक्षण्वान् विज्ञानी (सज्जन) ११६४१६ [अक्षि+मतुप्, छन्दस्यपि दृश्यते अ० ७१७६ सूत्रेणानङ् आदेश, 'अनो नुट्' अ० ८२१६ सूत्रेण नुडागमे सति अक्षण्वान् रूपम्) अक्षण्वन्त अक्षिमन्त निरु० १६१]

अक्षतः क्षतवर्जित (कुमार) ५७८.६ [क्षणु हिंसायां तनादि० तत क्त, तत्प्रतिषेध]

अक्षन् शुभगुणान् प्राप्नुवन्तु १८२२ भुञ्जीरन् २१६० अदन्तु, प्र०—योऽद् धातो स्थाने घस्लृ-आदेशस्तस्य लुङि रूपम् १६३६ अदन्ति, प्र०—अत्र लडर्थे लुङ् 'मन्त्रे घस०' इति च्लेर्लुक् 'गमहन०,' इत्युपधालोप 'शासिवसिघसीनां च,' इति षत्व 'खरि च' इति चर्त्वम् ३५१ भोजनाच्छादनादिक कुर्वीरन् ऋ० भू० २६६ [अद्‌भक्षणे धातो लुङ् । अद्‌धातो स्थाने घस्लादेश । अक्षू व्याप्तौ (भ्वादि०) धातोर्वा लङ् सामान्ये । आडभावश्च]

अक्षभिः चक्षुभि २५२१ इन्द्रियै ११३६२. प्राणै १३६२ वाह्यान्तरैर्नेत्रै, प्र०—अत्र 'छन्दस्यपि दृश्यते' अ० ७१७६ इत्यनेन सूत्रेणाऽक्षिशब्दस्य भिस्यनङादेश १८६८ आखो से, आर्याभि० २२७. [अक्षि+भिस् । अक्षि चष्टे, अनक्तेरित्याग्रायण तस्मादेते व्यक्ततरे इव भवत इति विज्ञायते निरु० १६]

अक्षरत् क्षरति १११२११ **अक्षरन्**=प्राप्नुवन्ति ११८८५ क्षरन्ति १११२११ सञ्चलन्ति, प्र०—अत्र लडर्थे लङ् १३३११ चालयन्ति १.८४४ [क्षर सञ्चलने भ्वादि० तस्य लङि रूपम्]

अक्षरपङ्क्तिः असौ लोक. १५४ [असौ वै लोकोऽक्षरपङ्क्तिश्छन्द श० ८५२४ एष वै यज्ञोऽक्षरपङ्क्ति. ऐ० २२४]

अक्षरम् अक्षयस्वभावम् (उपदेशम्) ११६४४२ महतत्तत्त्वारयम् ३५५१ **अक्षरा**=अक्षराण्यकारादीनि ७१५६ उदकानि, प्र०—अत्राऽऽकारादेश 'अक्षरम् इत्युदकनामसु पठितम् (निघ० ११२) ७११४ अविनाशिनी सकलविद्याव्यापिनी (वाक्) ७३६७ **अक्षराणाम्**= वर्णानाम् ३३१६ **अक्षराणि**=भा०—जलादीनि वस्तूनि व्यवहारसाधकानि २३५८ **अक्षरे**=अविनाशिनि स्वरूपे कारणे जीवे वा ६१६३५ विनाशरहिते ब्रह्मणि ऋ० भू० ३१६। नाशरहित परमात्मा मे स० प्र० २१५ [अशूङ् व्याप्तौ धातो 'अशे सरन्' इत्युणादिना सरन् प्रत्यय. । अक्षर वाङ् नाम निघ० १११ उदकनाम निघ० ११२ निरु० ११४१ अक्षर न क्षरति, न क्षीयते वाऽक्षर भवति, वाचोऽक्ष इति वा निरु० १३१२ तद् यदक्षरत्तस्मादक्षरम् श० ६११३६ यदक्षरदेव तस्मादक्षरम् जै० उ० १२४१ यद्वेवाक्षर नाक्षीयत तस्माक्षयम् । अक्षय ह वै नामैतत् । तदक्षरमिति परोक्षमाचक्षते जै० उ० ११४२ कतमत् तदक्षरमिति

यत्क्षरन्नाक्षीयतेति । इन्द्र इति जै० उ० १ ४ ३ ४ विराजो वा एतद्रूप यदक्षरम् ता० ८ ६ १४ अक्षरेणैव यज्ञस्य छिद्रमपिदधाति ता० ८ ६ १३]

अक्षराजाय येऽक्षै क्रीडन्ति तेषा राजा तस्मै ३० १८ [अक्षो व्याख्यात । अक्षराजन्शब्दयोस्तत्पुरुषसमासे 'राजाहस्सखि०' अ० ५ ४ ९१ सूत्रेण समासान्तष्टच् प्रत्यय]

अक्षाणि इन्द्रियाणि ७ ५५ ६ [अक्षो व्याख्यात]

अक्षिणाः क्षयन्ति हन्ति ४ १८ १२ [क्षिणु हिंसायाम्, विकरणव्यत्ययेन शप स्थाने उ न । लडर्थे लङि रूपम्]

अक्षितम् यन्न कदाचित् क्षीयते सदैव वर्त्तमान तत् (श्रव =सुवर्णादिधनम्) १ ९ ७ क्षयरहितम् (बीजम्) ५ ५३ १३ **अक्षिता**=क्षयरहितानि (द्युम्नानि=यशासि जलान्यन्नानि धनानि वा) ३ ४० ७ **अक्षिते**=नाश से रहित (लोके=द्रष्टव्य अपने स्वरुप मे) स० वि० १९६ [क्षिणु हिंसाया, तत क्तोऽनुनासिकलोप । नञ्समास । अक्षिताम् अनुपक्षीणाम् । निरु० ११ ११]

अक्षितोतिः क्षयरहिता ऊतिर्ज्ञान यस्य स (इन्द्र = परमेश्वर) १ ५ ९ नित्यरक्ष (राजा) ६ २४ १ अक्षीणा ऊती रक्षा यस्य स (इन्द्र =राजा) ४ १७ १६. [अक्षित व्याख्यातम्, ऊति =अवधातो 'ऊतिजूति०' सूत्रेण क्तिनि रूपसिद्धि]

अक्षितिः अविद्यमाना क्षिति क्षयो यस्य तत् १ ४० ४ **अक्षित्यै**=परिपूर्ण होने के लिए ६ २८ [क्षि क्षये, तत क्तिन्, तत्प्रतिषेध । श्रद्धैव सकृद् इष्टस्याक्षिति. स य श्रद्दधानो यजते तस्येष्ट न क्षीयते । कौ० ७ ४ पुरुषो वाऽक्षिति शत० १४ ४ ७ आपोऽक्षितिर्या इमा एषु लोकेषु याश्चेमा अध्यात्मन् कौ० ७ ४. क्षिप प्रेरणे लडर्थे लङि रूपम्]

अक्षिपत् क्षिपति ६ १६ १८

अक्षिभुवः यदक्षिणि भवति प्रत्यक्ष तस्य (प्रत्यक्षस्य द्रव्यस्य), भा०—प्रत्यक्षादिप्रमाणस्य २३ २६. [अक्षि+भू+क्विप्]

अक्षियन्तम् न निवसन्तम् (शत्रुम्) ४ १७ १३. [क्षि निवासगत्योस् तत शतृ । क्षियन्तम्=निवसन्तम् नि० १० १२]

अक्षी अश्नुवते व्याप्नुवन्ति याभ्या बाह्याभ्यन्तरविद्यायुक्ताभ्यान्ते (नेत्रे) १ ७२ १० रूपप्रकाशके नेत्रे इव (अश्विनौ=अध्यापकोपदेष्टारौ) १ १२० ६ चक्षुषी १.११६.१६ अक्षिणी २.३९ ५ [अक्षभि पदे व्याख्यातम् ।' 'ई च द्विवचने' 'अ० ७ १ ७७ सूत्रेण ईकारादेश । स एप एवेन्द्र । योऽय दक्षिणेऽक्षन्पुरुषोऽथेयमिन्द्राणी श० १० ५ २ ९]

अक्षीयमाणम् विद्याविज्ञानाऽगाधमक्षीणविद्यम् (विपश्चित=विद्वासम्) ३ २९ ९ क्षयरहितम् (पदम्) १ १५४ ४ क्षेतुमनर्हम् (सत्यकलत्रम्) १७ ३ **अक्षीयमाणा**=क्षयरहितानि (वस्तूनि) १ १५४ ४ **अक्षीयमाणाः**=क्षेतुमनर्हा (धेनव) १७ ३ [क्षि क्षये तत कर्मणि शानच्, तत्प्रतिषेध]

अक्षुत् क्षुधो राहित्यम् १८ १० [क्षुध् बुभुक्षाया दिवादि० तत क्विप्, तत्प्रतिषेध]

अक्ष्णुः व्याप्तु शील (जूर्ण =रोगी जन) १ १८० ५ [अक्षू व्याप्तौ भ्वादि०]

अक्षेत्रवित् य क्षत्र रेखागणित न वेत्ति स (मुग्ध = अविद्वान्) ५ ४० ५ [क्षेत्र+विद् ज्ञाने+क्विप्, तत्प्रतिषेध]

अक्षोदयत् सञ्चूर्णयति ४ १९ ४ [क्षुदिर् सपेषणे, स्वार्थे णिच्, ततो लङ्]

अक्ष्णयाऽध्रुक् कुटिलया रीत्या द्रुह्यति स (दुर्जन) १ १२२ ९ [अक्ष्णया+द्रुह जिघासायाम्+क्विप्, समासे विभक्तेरलुक् च]

अक्ष्णः दर्शनसाधकस्य ४ ३२. अक्ष्यो =अक्ष्णो २१ ४८ [अक्षिशब्दात् षष्ठी । उपधालोपश्च]

अखनन् खनन्ति १२ ९८ [खनु अवदारणे भ्वादि०, ततो लडर्थे लङ्]

अखर्वम् अनल्प पूर्णम् (मन्त्र=गूढ विचारम्) ७ ३२ १३ [खर्व गतौ भ्वादि०, ततोऽच्]

अखिद्रयामभिः अच्छिन्नानि निरन्तराणि निगमनानि येषान्तै (मेधाविजनै) प्र० 'स्फायितञ्चि' उ०—२ १३ इति रक् सर्वधातुभ्यो मनिन्, इति करणे मनिश्च १ ३८.११ [खिद् दैन्ये+रक् तत्करोतीति णिच्, ततो मनिन्, तत्प्रतिषेध]

अख्यत प्रख्यापयत १ १६१ १३ **अख्यत्**=प्रकटयति ५ ३० ९ प्रकाशते ४ १४ १ प्रख्यापयेत् ४ २४ ८ धर्म्यानुपदेशान् प्रकथये १२ ३३ ख्याति १२ २१ प्रख्यातो भवति ११ १७ प्रसिद्धतया प्रकाशेत १ ४६ १० **अख्यन्**=ख्याता भवन्ति १ ३५ ५ उपदिशन्तु ४ १ १८ **अख्यम्**=अन्यान् प्रति कथयेयम् १ १०९ १ कथनीयम् (अनीक=सैन्यम्) ५ ४८.४. **अख्ये**=प्रकथयामि, प्र०—अत्र व्यत्ययेनात्मने-

पद लडर्थे लुङ्च ४ २३ **अख्य:**=प्रकाशयति ७ १३ ३. [ख्याप्रकथने धातोर्लुङ्, 'अस्यतिवक्ति०' अ० ३ १.५२. सूत्रेण च्ले स्थानेऽङ्, चक्षिङ् व्यक्तायां वाचि धातोर्वा ख्याञ् आदेश']

अगच्छत=आगच्छत १ ११० २ प्राप्नुत १ १६१ ६. **अगच्छत्**=प्राप्नुयात् ३ ३१ ७ गच्छति प्राप्नोति, प्र०—अत्र वर्त्तमाने लङ् १ ३२ १४ **अगच्छतम्**=प्राप्नुताम् १ ११६ ८ आगच्छतम् (आगो) १ ११७ १६ गच्छतम् ५ ७८ ४ **अगच्छन्त**=प्राप्नुवन्ति १७ ३० [गम्लृ गतौ ततो लङ्]

अगथा: गच्छसि प्राप्नोषि वा, प्र०—अत्र पक्षे व्यत्यय, वर्त्तमाने लुङ्, 'मन्त्रे घस०' इति च्लेर्लुक् ३ १६ **अगन्**=समन्तात्प्राप्ता १ १६४ ३७ प्राप्नुवन्ति, प्र०—अत्र लडर्थे लुङ् ३ ३७ १० गच्छन्तु प्राप्नुवन्तु, प्र०—अत्र गम् धातोर्लोडर्थे लुङ् 'मन्त्रे घस०' इति च्लेर्लुगनुनासिकलोपश्च ८ ५६ गच्छति, प्र०—अत्र लङि प्रथमैकवचने 'बहुल छन्दसि' इति शपो लुक् सयोगत्वेन तलोपे 'मो नो धातो' इति मस्य नकारादेश १ १२३ २ आगच्छतु ४ ५३ ७ प्राप्नोतु ७ २० ६. प्राप्नोति, प्र०—अत्र लडर्थे लङ् 'मन्त्रे घस०' इति च्लेर्लुक् 'मो नो धातो' इति मकारस्य नकार ४ १५ आगच्छति १ १७६ ४ **अगन्म**=गच्छाम १ ११३ १६ गच्छेम १२ ७३ प्राप्त हो आर्याभि० २ १३ विजानीयाम ३५ १४ प्राप्त हुए ४५ १२ प्राप्नुयाम, प्र०—अत्र लिङर्थे लुङ् 'मन्त्रे घस०' इति च्लेर्लुक् 'म्वोश्च' ८ २ ६५ इति मकारस्य नकार ३ ३१ १४ **अगन्महि**=गच्छेम ६ ५१ १६ प्राप्नुम प्र०—अत्र गम्धातोर्लुङि उत्तमबहुवचने 'मन्त्रे घस०' इति च्लेर्लुक् 'म्वोश्च' इत्यनेन मकारस्य नकारदेश, लडर्थे लुङ् २ २४ प्राप्नुयाम, प्र०—अत्र गम्लृधातोर्लिडर्थे लुङ् ८ १४ अगन् गतिकर्मसु निघ० २ १४ **अगमन्**=प्राप्नुवन्तु २५ २० **अगमम्**=प्राप्नुयाम् १ १६१ २ [अत्र गम्लृ धातो सामान्ये लुङ्]

अगदम्=रोगरहितम्, भा०—अरोगम् (देहम्) १२ ७६

अगनीगन् प्राप्नुवन्ति २३ ७ [गम्लृ धातोर्लङि व्यत्ययेन श्लु, अभ्यासस्य चुत्वाऽभावो नीक् चागमो 'दाधर्ति''''''आगनीगन्तीति च' अ० ७ ४ ६५ सूत्रेण निपात्यते]

अगव्यूति=क्रोशद्वयपरिमाणरहितम् (क्षेत्र=देशम्) ६ ४७ २० [गोशब्दस्य यूतौ परतो वान्तादेशो 'अध्वपरिमाणे च' वा० सूत्रेण भवति, तत्प्रतिषेध]

अगस्त्य: ये धर्मादन्यत्र न गच्छन्ति तेऽगस्तयस्तेषु साधु (सत्पुरुष) १ १७६ ६ अस्तदोप (सज्जन) ७ ३३ १० अगस्तौ विज्ञाने साधु (विद्वज्जन) १ १७० ३ अगमपराधमस्यन्ति प्रक्षिपन्ति तेषु साधु (विद्वज्जन) १ १८० ८ अगस्तिषु ज्ञातव्येषु व्यवहारेषु साधूनि कर्माणि यस्य, प्र०—अत्र अगधातोरौणादिकस्ति प्रत्ययोऽसुडागमश्च १ ११७ ११ अपराधरहितो मार्ग १ १८४ ५ [अगस् प्राति० 'तत्र साधु' इति यत् प्रत्यय । अगधातोर्वा तिर् असुगागमश्च]

अगस्महि सङ्गच्छामहे, प्र०—अत्र लडर्थे लुङ् 'मन्त्रे घस०' इति च्लेर्लुक्, वर्णव्यत्ययेन मकारस्थाने सकारादेशश्च १ २३ २३ [गम्लृ गतौ धातोर्लुङ् सामान्यकाले]

अगात् प्राप्नुयात् ३ ३० १३ एति प्राप्नोति, प्र०—अत्र लडर्थे लुङ् 'इणो गा लुङि अ० २ ४ ४५' इति गाऽऽदेश १ ३५ ८ प्राप्तमस्ति १ ११५ १. व्याप्नोति १ ५० १३ व्याप्तोऽस्ति ४० ८ गच्छति १ ११३ १६ गच्छन्ति १ १६३ १३ गच्छतु प्राप्नोतु १ ६२ ७ गच्छेत् १ १२६ ३ आगच्छति २ ३८ ४ आगच्छेत् ३ ८ ४ उदितोऽस्ति १३ ४६ **अगाम्**=प्राप्नुयाम् १७ ६७ **अगा:**=गच्छे ३ २१ ४ गच्छ ५ ३६ **अगाम**=जानीयाम प्राप्नुयाम वा, प्र०—अत्रेण् धातोर्लिङर्थे लुङ् १ ३१ ६ **अगामि**=गम्यते ६ १६ १६ **अगु:**=प्राप्तवन्त १ ८८ ४ प्राप्नुवन्तु ३ ४२ ३ व्याप्नुवन्तु- १ १८१ ६ आगच्छन्ति ३ ५६ २ अगमन् ६ ७ [अत्र इण् गतौ धातोर्लुङ्, इणो गा लुङि, इति सूत्रेण गादेश 'गातिस्था०, इति सूत्रेण सिचो लुक्]

अगिरौकस: (अगिराऽओकस) अविद्यमानया गिरा सहौको गृह येषान्ते, प्र०—अत्र तृतीयाया अलुक् १ १३५ ६

अगूहत् सवृणोति २ २४ ३ [गुहू सवरणे, ततो लङ् । 'ऊदुपधाया गोह' इति सूत्रेण ऊकारादेश]

अगृभीतशोचिषम् न गृहीत शोचिर्यस्मिंस्तम् (नाकम्=अविद्यमानदु खम्) ५ ५४ १२ **अगृभीतशोचिष:** न गृहीत शोचिस्तेजो यैस्ते (मेघगतय) ५ ५४ ५ [ग्रह उपादाने धातो क्त, हकारस्य भकार इटो दीर्घश्च । शुच् दीप्तौ तत औणादिक इसि प्रत्यय तयो समासे नञ्समास]

अगृभीषत गृह्णन्तु २१ ६० **अगृभ्णत्**=गृह्णन्ति

यत्क्षरन्नाक्षीयतेति । इन्द्र इति जै० उ० १.४३४ विराजो वा एतद्रूप यदक्षरम् ता० ८ ६ १४ अक्षरेणैव यज्ञस्य छिद्रमपिदधाति ता० ८ ६ १३]

अक्षराजाय येऽक्षै क्रीडन्ति तेषा राजा तस्मै ३० १८ [अक्षो व्याख्यात । अक्षराजन्शब्दयोस्तत्पुरुषसमासे 'राजाहस्सखि०' अ० ५ ४ ९१ सूत्रेण समासान्तष्टच् प्रत्यय]

अक्षाणि इन्द्रियाणि ७ ५५ ६ [अक्षो व्याख्यात]

अक्षिणाः क्षयन्ति हन्ति ४ १८ १२ [क्षिणु हिंसायाम्, विकरणव्यत्ययेन शप स्थाने उ न । लडर्थे लङि रूपम्]

अक्षितम् यन्न कदाचित् क्षीयते सदैव वर्त्तमान तत् (श्रव =सुवर्णादिधनम्) १ ९ ७ क्षयरहितम् (वीजम्) ५ ५३ १३ **अक्षिता**=क्षयरहितानि (द्युम्नानि=यशासि जलान्यन्नानि धनानि वा) ३ ४० ७ **अक्षिते**=नाश से रहित (लोके=द्रष्टव्य अपने स्वरूप मे) स० वि० १९६ [क्षिणु हिसाया, तत क्तोऽनुनासिकलोप । नञ्समास. । अक्षिताम् अनुपक्षीणाम् । निरु० ११ ११]

अक्षितोतिः क्षयरहिता ऊतिर्ज्ञान यस्य स (इन्द्र = परमेश्वर) १ ५ ९ नित्यरक्ष (राजा) ६ २४ १ अक्षीणा ऊती रक्षा यस्य स (इन्द्र =राजा) ४ १७ १६. [अक्षित व्याख्यातम्, ऊति =अवधातो. 'ऊतिजूति०' सूत्रेण क्तिनि रूपसिद्धि]

अक्षितिः अविद्यमाना क्षिति क्षयो यस्य तत् १.४० ४ **अक्षित्यै**=परिपूर्ण होने के लिए ६.२८ [क्षि क्षये, तत क्तिन्, तत्प्रतिषेध. । श्रद्धैव सकृद् इष्टस्याक्षिति स य श्रद्दधानो यजते तस्येष्ट न क्षीयते । कौ० ७४. पुरुषो वाऽक्षिति शत० १४४७ आपोऽक्षितिर्या इमा एषु लोकेषु याश्चेमा अध्यात्मन् कौ० ७४ क्षिप प्रेरणे लडर्थे लङि रूपम्]

अक्षिपत् क्षिपति ६ १६ १८.

अक्षिभुवः यदक्षिणि भवति प्रत्यक्ष तस्य (प्रत्यक्षस्य द्रव्यस्य), भा०—प्रत्यक्षादिप्रमाणस्य २३.२९. [अक्षि+भू+क्विप्]

अक्षियन्तम् न निवसन्तम् (शत्रुम्) ४ १७ १३. [क्षि निवासगत्योस् ततः शतृ । क्षियन्तम्=निवसन्तम् नि० १० १२]

अक्षी अश्नुवते व्याप्नुवन्ति याभ्या बाह्याभ्यन्तरविद्यायुक्ताभ्यान्ते (नेत्रे) १.७२ १० रूपप्रकाशके नेत्रे इव (अश्विनौ=अध्यापकोपदेष्टारौ) १ १२०.६ चक्षुषी १.११६.१६. अक्षिणी २.३९ ५ [अक्षभि. पदे व्याख्यातम् ।' 'ई च द्विवचने' 'अ० ७ १ ७७ सूत्रेण ईकारादेश । स एष एवेन्द्र । योऽय दक्षिणेऽक्षन्पुरुपोऽथेयमिन्द्राणी श० १० ५.२ ९]

अक्षीयमाणम् विद्याविज्ञानाऽगाधमक्षीणविद्यम् (विपश्चित=विद्वासम्) ३ २९ ९. क्षयरहितम् (पदम्) १ १५४ ४ क्षेतुमनर्हम् (सत्यकलत्रम्) १७ ३ **अक्षीयमाणा**=क्षयरहितानि (वस्तूनि) १.१५४ ४ **अक्षीयमाणाः**=क्षेतुमनर्हा (धेनव) १७ ३ [क्षि क्षये तत कर्मणि शानच्, तत्प्रतिषेध]

अक्षुत् क्षुधो राहित्यम् १८ १० [क्षुध् बुभुक्षाया दिवादि० तत क्विप्, तत्प्रतिषेध]

अक्षुः व्याप्तु शील (जूर्ण =रोगी जन) १ १८० ५ [अक्षू व्याप्तौ भ्वादि०]

अक्षेत्रवित् य क्षत्र रेखागणित न वेत्ति स (मुग्ध = अविद्वान्) ५ ४० ५ [क्षेत्र+विद् ज्ञाने+क्विप्, तत्प्रतिषेध.]

अक्षोदयत् सञ्चूर्णयति ४ १९ ४ [क्षुदिर् सपेषणे, स्वार्थे णिच्, ततो लङ्]

अक्ष्णयाऽध्रुक् कुटिलया रीत्या द्रुह्यति स (दुर्जन) १ १२२ ९ [अक्ष्णया+द्रुह जिघासायाम्+क्विप्, समासे विभक्तेरलुक् च]

अक्ष्णः दर्शनसाधकस्य ४ ३२ अक्ष्यो =अक्ष्णो २१ ४८ [अक्षिशब्दात् षष्ठी । उपधालोपश्च]

अखनन् खनन्ति १२ ९८ [खनु अवदारणे भ्वादि०, ततो लडर्थे लङ्]

अखर्वम् अनल्प पूर्णम् (मन्त्र=गूढ विचारम्) ७ ३२ १३ [खर्व गतौ भ्वादि०, ततोऽच्]

अखिद्रयामभिः अछिन्नानि निरन्तराणि निगमनानि येषान्तै (मेधाविजनै) प्र० 'स्फायितञ्चि' उ०—२ १३ इति रक् सर्वधातुभ्यो मनिन्, इति करणे मनिश्च १ ३८ ११ [खिद् दैन्ये+रक् तत्करोतीति णिच्, ततो मनिन्, तत्प्रतिषेध]

अख्यत प्रख्यापयत १ १९१.१३ **अख्यत्**=प्रकटयति ५ ३० ९ प्रकाशते ४ १४ १ प्रख्यापयेत् ४ २४ ८ धर्म्यानुपदेशान् प्रकथये. १२ ३३ ख्याति १२ २१ प्रख्यातो भवति ११ १७. प्रसिद्धतया प्रकाशेत १ ४६ १० **अख्यन्**=ख्याता भवन्ति १ ३५ ५ उपदिशन्तु ४ १ १८ **अख्यम्**=अन्यान् प्रति कथयेयम् १ १०९ १ कथनीयम् (अनीक=सैन्यम्) ५ ४८.४ **अख्ये**=प्रकथयामि, प्र०—अत्र व्यत्ययेनात्मने-

पद लडर्थे लुड्च ४ २३ **अख्यः**=प्रकाशयति ७ १३ ३. [ख्याप्रकथने धातोर्लुड्, 'अस्यतिवक्ति०' अ० ३ १.५२. सूत्रेण च्ले. स्थानेऽङ्, चक्षिङ् व्यक्तायां वाचि धातोर्वा ख्याञ् आदेश']

अगच्छत=आगच्छत १ ११० २ प्राप्नुत १ १६१ ६. **अगच्छत्**=प्राप्नुयात् ३ ३१ ७ गच्छति प्राप्नोति, प्र०—अत्र वर्त्तमाने लङ् १ ३२ १४ **अगच्छतम्**=प्राप्नुताम् १ ११६ ८ आगच्छतम् (आयो) १ ११७ १६ गच्छतम् ५.७८ ४ **अगच्छन्त**=प्राप्नुवन्ति १७ ३० [गम्लृ गतौ ततो लङ्]

अगथाः गच्छसि प्राप्नोषि वा, प्र०—अत्र पक्षे व्यत्यय, वर्त्तमाने लुङ्, 'मन्त्रे घस०' इति च्लेर्लुक् ३ १६ **अगन्**=समन्तात्प्राप्ता १ १६४ ३७ प्राप्नुवन्ति, प्र०—अत्र लडर्थे लुङ् ३ ३७ १० गच्छन्तु प्राप्नुवन्तु, प्र०—अत्र गम् धातोर्लोडर्थे लुङ् 'मन्त्रे घस०' इति च्लेर्लुगनुनासिकलोपश्च ८ ५६ गच्छति, प्र०—अत्र लडि प्रथमैकवचने 'बहुल छन्दसि' इति शपो लुक् सयोगत्वेन तलोपे 'मो नो धातो' इति मस्य नकारादेश १ १२३.२ आगच्छतु ४५ ३ ७ प्राप्नोतु ७ २० ६ प्राप्नोति, प्र०—अत्र लडर्थे लङ् 'मन्त्रे घस०' इति च्लेर्लुक् 'मो नो धातो' इति मकारस्य नकार ४ १५ आगच्छति १ १७६ ४ **अगन्म**=गच्छाम १ ११३ १६ गच्छेम १२ ७३ प्राप्त हो आर्याभि० २ १३ विजानीयाम ३५ १४ प्राप्त हुए ४ ५ १२ प्राप्नुयाम, प्र०—अत्र लिडर्थे लुङ् 'मन्त्रे घस०' इति च्लेर्लुक् 'म्वोश्च' ८ २ ६५ इति मकारस्य नकार ३ ३१ १४ **अगन्महि**=गच्छेम ६ ५१ १६ प्राप्नुम प्र०—अत्र गम्धातोर्लुङि उत्तमबहुवचने 'मन्त्रे घस०' इति च्लेर्लुक् 'म्वोश्च' इत्यनेन मकारस्य नकारदेश, लडर्थे लुङ् २ २४ प्राप्नुयाम, प्र०—अत्र गम्लृधातोर्लिडर्थे लुङ् ८ १४ अगन् गतिकर्मसु निघ० २ १४ अगमन्=प्राप्नुवन्तु २५ २० **अगमम्**=प्राप्नुयाम् १ १६१.२ [अत्र गम्लृ धातो सामान्ये लुङ्]

अगदम्=रोगरहितम्, भा०—अरोगम् (देहम्) १२ ७६

अगनीगन् प्राप्नुवन्ति २३ ७ [गम्लृ धातोर्लङि व्यत्ययेन श्लु, अभ्यासस्य चुत्वाऽभावो नीक् चागमो 'दाधर्ति······आगनीगन्तीति च' अ० ७ ४ ६५ सूत्रेण निपात्यते]

अगव्यूति=क्रोशद्वयपरिमाणरहितम् (क्षेत्र=देशम्) ६ ४७.२० [गोगव्दस्य यूतौ परतो वान्तादेशो 'अव्वपरिमाणे च' वा० सूत्रेण भवति, तत्प्रतिषेध]

अगस्त्यः ये धर्मादन्यत्र न गच्छन्ति तेऽगस्तयस्तेषु साधु (सत्पुरुष) १ १७६ ६. अस्तदोष. (सज्जन) ७ ३३ १० अगस्तौ विज्ञाने साधु (विद्वज्जन) १ १७० ३ अगमपराधमस्यन्ति प्रक्षिपन्ति तेषु साधु (विद्वज्जन) १ १८० ८ अगस्तिषु ज्ञातव्येषु व्यवहारेषु साधूनि कर्माणि यस्य, प्र०—अत्र अगधातोरौणादिकस्ति प्रत्ययोऽसुडागमश्च १ ११७.११ अपराधरहितो मार्ग १ १८४ ५ [अगस् प्राति० 'तत्र साधु' इति यत् प्रत्यय । अगधातोर्वा तिर् असुगागमश्च]

अगस्महि सङ्गच्छामहे, प्र०—अत्र लडर्थे लुङ् 'मन्त्रे घस०' इति च्लेर्लुक्, वर्णव्यत्ययेन मकारस्थाने सकारादेशश्च १ २३ २३ [गम्लृ गतौ धातोर्लुङ् सामान्यकाले]

अगात् प्राप्नुयात् ३ ३० १३ एति प्राप्नोति, प्र०—अत्र लडर्थे लुङ् 'इणो गा लुङि अ० २ ४ ४५' इति गाऽऽदेश' १ ३५ ८ प्राप्तमस्ति १ ११५ १ व्याप्नोति १ ५० १३ व्याप्तोऽस्ति ४० ८ गच्छति १ ११३ १६ गच्छन्ति १ १६३ १३ गच्छतु प्राप्नोतु १ ६२ ७ गच्छेत् १ १२६ ३ आगच्छति २ ३८.४ आगच्छेत् ३ ८ ४. उदितोऽस्ति १३ ४६ **अगाम्**=प्राप्नुयाम् १७ ६७ **अगाः**=गच्छे ३ २१ ४ गच्छ ५ ३६ **अगाम**=जानीयाम प्राप्नुयाम वा, प्र०—प्रत्रेण धातोर्लिडर्ये लुङ् १ ३१ ६ **अगामि**=गम्यते ६ १६ १६ **अगुः**=प्राप्तवन्त १ ८८ ४ प्राप्नुवन्तु ३ ४२ ३ व्याप्नुवन्तु-१ १८१ ६ आगच्छन्ति ३ ५६ २ अगमन् ६ ७ [अत्र इण् गतौ धातोर्लुङ्, इणो गा लुङि, इति सूत्रेण गादेश 'गातिस्था०, इति सूत्रेण सिचो लुक्]

अगिरौकसः (अगिराऽओकस) अविद्यमानया गिरा सहौको गृह येषान्ते, प्र०—अत्र तृतीयाया अलुक् १ १३५ ६

अगूहत् सवृणोति २ २४ ३ [गुह् सवरणे, ततो लङ् । 'ऊदुपधाया गोह' इति सूत्रेण ऊकारादेश]

अगृभीतशोचिषम् न गृहीत शोचिर्यस्मिंस्तम् (नाकम्=अविद्यमानदु खम्) ५ ५४ १२ **अगृभीतशोचिषः** न गृहीत शोचिस्तेजो यैस्ते (मेघगतय) ५ ५४ ५ [ग्रह उपादाने धातो क्त, हकारस्य भकार इटो दीर्घश्च । शुच् दीप्तौ तत औणादिक इसि प्रत्यय तयो समासे नञ्समास]

अगृभीषत गृह्णन्तु २१ ६० **अगृभ्णत्**=गृह्णन्ति

६.८४. **अगृभ्णत**=गृह्णन्तु ३ ९ ६ **अगृभ्णन्**=गृह्णीत १० १. गृह्णीयु २२ २ **अगृभ्णात्**=गृह्णीयात् १ १६ ३ २. **अगृभ्णाः**=गृहाण ५.३१ ७ **अगृभन्**=गृह्णन्ति ५ २ ४ [ग्रह उपादाने क्र्यादि०, तत सामान्ये लुङ्। 'हृग्रहोर्भश्छन्दसि' वा० सूत्रेण हकारस्य भकारादेश। 'अगृभ्णत=अगृह्णत' इति नि० ७ २६]

अगोतायै इन्द्रियविकलतायै ३१८५ [इन्द्रियार्थक-गोशब्दात् भावे तल् प्रत्यये गोता, ततो नञ्समास.]

अगोपाः अविद्यमानो गोपो यासा ता (गाव = धेनव) ७.१८ १० पालकरहित (पशु) २ ४ ७ [गो+पा+क, तत्प्रतिषेध.]

अगोह्य अरक्ष्य (दुर्जन) १ १६१ १३ **अगोह्यम्**= गोप्तुमनर्हम् (अमृतत्व=मोक्षभावम्) १ ११० ३ गोहितु रक्षितुमनर्हं (परपदार्थम्) १ १६१ ११ **अगोह्यस्य**= असवृतस्य (प्रकाशितविद्यस्य जनस्य) ४.३३ ७ [गुह सवरणे, तत 'ऋहलोर्ण्यत्' सूत्रेण ण्यत् तत्प्रतिषेध। 'अगोह्य आदित्योऽगूहनीय' नि० ११ १६]

अग्नय: श्वैत्येन युक्ता पावका १४.२७. आहव-नीयादय पावका १८ ६७ सूर्यविद्युत्प्रसिद्धाग्नय ८ ४० पावका इव वर्त्तमाना (जना) ३ २२ ४ विद्युदादय. ३ ३ १ पावक इव कालविदो विद्वास १३ २५ प्रज्वलिता वह्नय १ ५० ३ नेतारो नयन्ति श्रेष्ठान् पदार्थान् (विद्वज्जना) ५ ३४ सभाध्यक्षादय ५ ३४ वहिस्था (पावका) १४ १६ शरीरस्था (पावका) १४ १६ आहवनीया-द्यग्न्याधानकरणम् 'ऋ० भू० २०३ वह्नय इव वर्त्तमाना विद्वास १२ ५० सूर्यादय इव ज्ञानप्रकाशका (विद्वज्जना) १ ५६ १ विद्युत इव १ १२७ ५

अग्नये अग्निविद्यासम्पादनाय, भा०—सकलविद्या-सिद्धये १ १० अङ्गति सर्वान् पदार्थान् दग्ध्वा देशान्तरे प्रापयति तस्मै (भौतिकाय) २ २६ परमेश्वराय भौतिकाय वा २ २० रूपदाहप्रकाशच्छेदनादिगुणस्वभावाय ३ २ विज्ञानस्वरूपायान्तर्यामिणे जगदीश्वराय ३ ११ विज्ञान-मयाय न्यायव्यवहाराय ८ ३८ अग्नि मे 'स० प्र०' ३६५ पावकाय १ १४० १ विदुषे सभाध्यक्षाय १ ७८ ५ अग्निवत्प्रकाशमानाय जनाय, भा०—विद्याशिक्षायुक्ताय जनाय २० ७८ अग्निरिव विद्यादिशुभगुणै प्रकाशमानाय (यतये=सन्यासिने) ७ १३ १ अग्निसम्बन्धे स्थापनाय ११ ५६ पावक इव वर्त्तमानाय सेनापतये २४ १६ विज्ञानस्वरूपाय (वैश्वानराय=जगदीश्वराय) ११ ६६ अग्निवद्वर्त्तमानाय (विदुषे) ३ १३ १ विज्ञानाग्निगुण-प्रकाशाय (सेनापतये) २९ ५८ विद्युद्रूपाय २९ ६० हवनार्थाय २ १. विज्ञापकाय (विदुषे) १ ७७ १ अग्निवद्वर्त्त-मानाय (वेधसे=मेधाविजनाय) प्रभा०—अत्र तादर्थ्ये चतुर्थी ६ १६ २२ गजे ५ २५ ७. पावकवर्द्धनाय (जनाय) ५ १. अग्निवत्तीव्रबुद्धये (विद्यार्थिने) १ १४३ १. विज्ञानाय १४ ७ सुशिक्षाप्रकाशाय १४ ७ शास्त्रविज्ञानाय १४.७ पूर्णाय विज्ञानाय ॥ १४.७ अग्निरिव वर्त्तमानाय (गृह-पतये=गृहपालकाय जनाय) २४ २४ जाठराग्नये २२ २७. विद्युत इव प्रकाशमानाय (उपदेशकाय) १ २७ १० विद्युदादिविद्यायै ५ ५ ११ अग्निप्रदीपनाय ४ ७ विद्युद्विद्याग्रहणाय ४ ७ जाठराग्निशोधनाय ४ ७ कारण-रूपाय ४ ७ अग्निविद्याप्राप्तये ४ ८ ५ विद्युद्रूपाय ५ १६ १. विज्ञानवते (विदुषे) १ ७६ १०. धर्मविज्ञाना-ऽऽढ्याय (गृहपतये=गृहाश्रमस्वामिने) १० २३ पावके होमाय ७ ४१ पावकवत् पवित्राय (यतिरूपायाऽतिथये) ७ १५ ४ अग्निरिव वर्त्तमानाय नृपाय ६ ३ २ विद्यया प्रकाशमानाय विदुषे २३ १३ अग्नय इव वर्त्तमानाय (सभाध्यक्षाय) १ १२७ ४. वह्निवद्वर्त्तमानाय विदुषे राजे ४ ५ १ अग्ना=अग्नौ। प्र०—अत्र 'सुपा सुलुग्०' इति डादेश १२ २७ विद्युदिव वर्त्तमाने (पदार्थे) १.५६ ३ अग्नौ विद्युति ४ ८ ६ **अग्निभ्य.**=पावकपरमाणुभ्य ७ १ ४ **अग्निम्**=परमेश्वर भौतिक वा १ १ १

प्र०—'इन्द्र मित्र वरुणमग्नि०' ऋ० १ १६४ ४६ अनेनैकस्य सत परब्रह्मण इन्द्रादीनि बहुधा नामानि सन्तीति वेदितव्यम्। 'तदेवाग्निस्तदादित्य०' यजु० ३२ १ यत्सच्चिदानन्दादिलक्षण ब्रह्म, तदेवात्राऽग्न्यादिनामवाच्य-मिति बोध्यम् 'ब्रह्म ह्यग्नि' शत० १ ४ २ ११ 'आत्मा वा अग्नि' श० १ २ ३ २ अत्राऽग्निर्ब्रह्मात्मनोर्वाचकोऽस्ति। 'अय वा अग्नि प्रजाश्च प्रजापतिश्च, श० ६ १ २ ४२ अत्र प्रजाशब्देन भौतिक प्रजापतिशब्देनेश्वरश्चाग्निर्ग्राह्य। "अग्निर्वै देवाना व्रतपति', एतद्ध वै देवा व्रत चरन्ति यत्सत्यम्" श० १ १ १ २ ५ सत्याचारनियमपालन व्रत तत्पतिरीश्वर। 'त्रिभि. पवित्रैरपुपो०' ऋ० ३ २६ ८ अत्राग्निशब्दस्यानुवृत्ते प्रजानन्निति ज्ञानवत्त्वात् पर्य्यपश्य-दिति सर्वज्ञत्वादीश्वरो ग्राह्य। यास्कमुनिरत्रोभयार्थ-करणायाग्निशब्दपुर सरमेतन्मन्त्रमेव व्याचष्टे—"अग्नि कस्मात्? अग्रणीर्भवत्यग्र यज्ञेषु०··· ··तस्यैषा भवतीति अग्निमीळेऽग्नि याच मीलिरध्येषणा कर्मा पूजाकर्मावा······ धनाना दातृतमम्" निरु० ७ १४-१५ अग्रणी सर्वोत्तम.

सर्वेषु यज्ञेषु पूर्वमीश्वरस्यैव प्रतिपादनात्तस्याऽत्र ग्रहणम् । दग्वादिति विशेषणाद्भौतिकस्यापि च । 'प्रशासितार सर्वेषाम्०,.........'एतमेके वदन्त्यग्निं०, मनु० अ० १२ १२२-१२३ अत्राप्यग्न्यादीनि परमेश्वरस्य नामानि सन्तीति । 'ईले अग्निं विपश्चितं०, ऋ० ३ २७ २ विपश्चितमीले इति विशेषणादग्निशब्देनात्रेश्वरो गृह्यते, अनन्तविद्यावत्त्वाच्चेतनस्वरूपत्वाच्च ।

अथ केवल भौतिकार्थग्रहणाय प्रमाणानि—'यदश्व त पुरस्तादुदश्रयस्तस्याभये०' श० २ १ ४ १६ 'वृषो अग्नि' 'अश्वो ह वा एष भूत्वा देवेभ्यो यज्ञ वहति' श० १ ३ ३ २९-३० वृषवद्यानाना वोढृत्वाद् वृषोऽग्नि । तथाऽयमग्निराशुगमयितृत्वेनाऽश्वो भूत्वा कलायन्त्रै प्रेरित सन् देवेभ्यो विद्वद्भ्य शिल्पविद्याविद्भ्यो मनुष्येभ्यो विमानादियानसाधनसङ्गत यान वहति प्रापयतीति । 'तूर्णिर्हव्यवाडिति, श० १ ३ ४ १२ अयमग्निर्हव्यानां यानानां प्रापकत्वेन शीघ्रतया गमकत्वाद्धव्यवाट् तूर्णिश्चेति । 'अग्निर्वै योनिर्यज्ञस्य' श० १ ४ ३.११ इत्याद्यनेकप्रमाणैरश्वनाम्ना भौतिकोऽग्निर्वाऽत्र गृह्यते, आशुगमनहेतुत्वादश्वोऽग्निर्विज्ञेय । 'वृषो अग्नि समिध्यते०' ऋ० ३ २७ १४. यदा शिल्पिभिरयमग्निर्यन्त्रकलाभिर्यानेषु प्रदीप्यते तदा देववाहनो देवान् यानस्थान् विदुष शीघ्र देशान्तरेऽश्व इव वृष इव च प्रापयति, ते हविष्मन्तो मनुष्या वेगादिगुणवन्तमश्वमग्निमीडते, कार्य्याऽर्थमधीच्छन्तीति वेद्यम् १ १ १ तेजस्विनम् (होतार जनम्) २८ ४६ पावकमिव प्रकाशमान (पुरोहितम्) ५ ११ २ शुभगुणै प्रकाशमानम् (भौतिकाग्निम्) ७ २४ पावकवच्छत्रुदाहक योद्धारम् १९ ३३. वन्द्य, ज्ञानस्वरूप ईश्वर को 'आर्या०' १ २ अन्तरिक्षे वाय्वादिस्थम्. भा०—अग्न्यादिपदार्थविद्याम् ११ १६ अग्निविद्याम् ११ १९ पावकमिव तेजस्विन (सन्तानम्) ३ ११ ४ विद्युद्वद्वर्त्तमान (सेनापतिम्) ११ ७६ परमविद्वांस भा०—पदार्थविद्या, वहनकर्म, ब्रह्मोपासन, ब्रह्मज्ञानम् १३ १. उपदेशक विद्वांसम् १२ ३० योगाऽभ्यासजनिता विद्युतम् ११ ६६ भौम पावकम् ३ ३१ १५ अग्निमिवाऽन्यान् परितापक (न्यायाधीशम्) ३५ १९ सर्वपदार्थच्छेदकम् १.१२ १ अग्निहोत्र को स० वि० १५२ पावकमिव वर्त्तमान (विपश्चित=पण्डितम्) ३ २७ २ पावकमाग्नेयाऽस्त्र वा १ ८४ १८ विद्युदादिरूप वह्निम् ३ २६ २. पावक इव दुष्टाना दाहकम् (विद्वांसमुपदेशकम्) ३ १२ ३ विद्युत भा०—विद्युद्रूपेणाऽभिव्याप्त व्याप्त सूर्यादि कारणम् १२ २ व्यापक विद्युदाख्यम् ११ २२ प्रसिद्ध विद्युत वा ११ १३ पवित्र स्वप्रकाशं परमात्मान पावकमग्निं वा । भा०—परमेश्वरोपासनमग्निहोत्र वा ३४.३४ ज्ञातार दाहक वा । अन्व०—परमेश्वर भौतिक वा १.१२ ७ सर्वसुखप्रापकमीश्वर सुखहेतु भौतिक वा १ १२.९ भा०—अग्निविद्याम् १५ ३२ अग्निमिव वर्त्तमानं वीर्यम् ११ ५७. भा०—अग्न्यादिपदार्थविज्ञानम् ११.४८ सूर्यादिरूपं ज्ञानवन्त वा १ १० ६ १ भा०—विद्युदादिपदार्थम् १५ ४९.

अग्निषु=अग्न्यादिपदार्थेषु ५ ६ ८ कलायन्त्रेषु १ १० ८ ४

अग्नौ=इन्द्राग्नी वायुविद्युतौ ६ ६० १

अग्नि:=भौतिक । प्रमा०—'अग्निरिति पदनामसु पठितम् निघ० ५ ४, अनेनाऽग्नेर्गत्यर्थत्वेन ज्ञानस्वरूपत्वादीश्वर , प्राप्तिहेतुत्वाद् भौतिकोऽर्थो वा गृह्यते ३ ९ सर्वविद्योपदेष्टा जगदीश्वर ३ ९ अग्निरिव विद्यासु प्रकाशमान, भा०—ब्रह्मचर्येण पूर्णविद्यो (विद्वान्) १९ ६५ सर्वस्वामिन्नीश्वर प्रकाशादिगुणवान् भौतिको वा, भा०—विद्युज्जाठरादिरूप ३ १२ विजयप्रदो भगवान् १ ७४ ३ सेनेश १२.३४ अग्निरिव तेजस्वी (आप्तो जन) ६ ४९ १ सब जगत् का कारण एक परमेश्वर । प्रमा०—'ब्रह्म ह्यग्नि' शतपथे आर्याभि० २ ४ चाक्षुष (भौतिकोऽग्नि) १३ ४५ अत्युष्णतायुक्त होने से अग्निसञ्ज्ञक (पति) स० प्र० १५३ प्रसिद्धो रूपवान् दहनशील पृथिवीस्थ सूर्यलोकस्थश्च १ १२ ६ पावकवद् वर्त्तमानो (विद्वान्) । भा०—यथा सूर्यो दूरदेशात् स्वप्रकाशेन दूरस्थान् पदार्थान् प्रकाशयति तथा विद्वान् स्वसूपदेशेन दूरस्थान् जिज्ञासून् प्रकाशयति २९ ८ विज्ञानानन्दस्वरूप परमेश्वर ऋ० भू० २०३ सूर्यरूपेण परिणत ५ ७६ १ सद्विद्याया वेत्ता विज्ञापयिता वा (विद्वज्जन) १ १० ५ १४ स्वय प्रकाशमानोऽग्निरिव पापिना दग्धा (ईश्वर) ५ ३७ भा०—अग्निवच्छत्रुदाहको (राजा) १८ ३८ वह्निरिव (पुत्र) ४ ६ ७ सब जगत् मे प्रकाशित (ईश्वर) आर्या० १ ५ सब मनुष्यो के स्तुति करने योग्य ईश्वर 'आर्याभि० १ ४ भास्वर ३ ४ ८ पावक इव गृहस्थो विद्वान् १८ ६४ सूर्याख्य ३३ ९२ उत्कृष्टगुणविज्ञान. (सभाध्यक्ष) १ ७७ ४ भा०—सूर्यवद् गुणकर्मस्वभावो (राजा) १३ १४ स्वप्रकाश ,परमात्मेव राजा ४ ११० विज्ञानस्वरूपो जगदीश्वर १ ९९ १ प्रसिद्धो भौतिको, न्यायमार्गे गमयिता विद्वान्वा १ १०७ ३ पावक इव पवित्र सभाध्यक्ष १ ६९ ३ अग्निरिव ज्ञानप्रकाशको (राजा) १ ६९ २ सूर्य इव स्वप्रकाश सर्वद्योतक (परमात्मा) १ ५९ ७ सूर्यादिरूपेण पावक ५ २ ९ अरुणतरुणतापस्तीव्रप्रतापो

वा १ १२४ ११ अग्निरिव सर्वासु विद्यासु देदीप्यमानो विद्वान् २०१४ विद्युदादिकार्यकारणस्य स्वरूप २ ६ १ अभिधायक ४११ वाचक ४११ सूर्य इव सुशील-प्रकाशितो (विद्वान्) १.१४१ १३ यथा सर्वसुखदात्री विद्युत् १ ७० ३ ज्ञानादिगुणवान् (अर्य) १ ७० १ यथा परमेश्वरस्तथा विद्वान् १ ७६ १२ अविद्यान्धकारदाहको (गृहपति = गृहस्थो जन) ८ १७ विद्युदिव (राजप्रजाजन) १० २६ पावक इव पवित्रोपचितो मुनि ६ १४ ५. महा-बलिष्ठो वीरपुरुष ६ १४ ४ पावक इव विद्यादिशुभगुण-प्रकाशितो (विद्वज्जन) ७ ३६ ७ पावक इव प्रकाशितयशा (दार.) ७ ४० ७ नियन्त्री विद्युदिव १ ५६ २ कारणाख्य. पावक १२ १ जाठरस्थ २ ११ प्रत्यक्षो भौतिक २ ३ ज्ञानस्वरूपत्वात् स्वप्रकाशत्वाच्चेश्वर ३ २ १ अग्निमय आर्त्तव और वीर्य स० वि० १३८ अन्तस्थो विज्ञानस्वरूपो वा (विद्युदीश्वरो वा) ४ १५ युद्धजन्यक्रोधाग्नि ६ १८ भौतिको यज्ञसम्बन्धी शरीरस्थो वा १ २२ सर्वविद्या प्राप्तो विद्वान् ६.१६

अग्निना विद्युता, भा०—आग्नेयास्त्रादिना १७ ६५ क्रोधरूपेण १ १६ २ ११. पावकेनेव ब्रह्मचर्येण ५ ४३ ७ महादाता ईश्वर की कृपा से 'आर्याभि० १ ३. परमेश्व-रेणाऽग्निहोत्रादियज्ञाऽनुष्ठानेन च 'ऋ० भू० २१६ अन्त करणरूपेण तेजसा २६ १० अग्निभि =अग्निवद्वर्त्तमानै-र्वीरै ६ ११ ६

अग्ने हे विज्ञानस्वरूप ईश्वर ! 'आर्या० २ १५ अग्निरिव स्वच्छात्मन् (मात, पित आचार्य वा) १२ ५२ देहान्तप्रापक जीव १२ ३७ विज्ञानसुखद (विद्वज्जन) १ ७६ ६ भा०—विद्वन्मात, पित १२ ४० सत्याऽसत्य-विभाजक (सज्जन) १७ ६ भा०—सर्वत्र मूर्त्तद्रव्येषु विद्युद्रूपो व्याप्त सर्वप्रकाशोऽग्नि ३ २२ विज्ञातरीश्वर कार्यप्रापकोऽग्निर्वा ३ १८ परमेश्वर धनुर्वेदविद्वान्वा १ १७ विवेकप्राप्तोपकारक प्रकाशक (राजन्) १३ ४६ विज्ञानस्वरूपेश्वर अग्नि वा प्र०—अत्र 'सर्वत्रार्थाद् विभक्ते-र्विपरिणाम, इति परिभाषया साधुत्व विज्ञेयम् १ १२ ८ स्तोतुमर्हेश्वर भौतिकोऽग्निर्वा। अन्व०—वन्दनीयेश्वर १ १२ ३ दृढविद्य (सभापते राजन्) २७ ६ विनयप्रकाशित (राजन्) २७ ४ सुपरीक्षक (शिल्पिजन) ३ २३ ५ वह्निवद् दुष्टाना दाहक (राजन्) ३ २४ १ तीव्रबुद्धे (मनुष्य) ३ ११७ ज्ञानप्रद (विद्वन्) १ ७६ ५ शान्तिप्रद (विद्वज्जन) १ ७६ १ विश्वोपकारक (परमेश्वर विद्वन्वा) १ ७६ २ हे स्वप्रकाशस्वरूप सब दु:खो के नाशक (देव = ईश्वर) स० वि० २१४ विज्ञानस्वरूपेश्वरप्राप्ति-हेतुर्भौतिकोऽग्निर्वा १.१४.२ अग्नी प्र०—अत्र व्यत्यय. ११४८ शुभगुणप्रदात (परमेश्वर) ६.१५.१२. सर्वप्रजा-पीडानिवारक (परमेश्वर) ६ १५.१४. विद्युद्वद्वर्त्तमान जीव १ ५८ ४ कृपामय विद्वन् ३ १८ १ पावकवद्वर्त्तमान वैद्यराज विद्वन् ३.१८.४ सुसङ्गृहीनराजनीते (राजन्) २७ ७ वेदविदध्यापकोपदेशक (विद्वज्जन) २५ ४७ प्रकाशमान (अर्य = वैश्य) १५ ३० वीरपुरुष ५ २३ १ प्रकाशात्मन् (राजन्) ५ ५ ३ धर्मिष्ठ राजन् ५ ४ ६. शूरवीर विद्वन् १ १२७ ६ त्रिदोषदाहक (विद्वन्) ५ २ ८ बहुश्रुत सज्जन १ ४५ ७ विद्याविज्ञापक सभासेनाशालाध्यक्ष १ ६४ ६ जीवनैश्वर्यप्रद परमेश्वर, रोगनिवारणायौषधप्रद वैद्यराज वा १ ६४ १६ अत्यन्तविद्यायोगेनाऽनूचान (विद्वन्, १ ७५ ४ न्यायप्रकाशक (राजन्)। भा०—पक्षपात विहाय न्यायाधीश २७ ५ विशिष्टज्ञानयुक्त (विद्वन्) १ ४४ ७ नीतिज्ञ विद्वन् १ ४४ ६ राजविद्याविचक्षण (सज्जन) १ ४४ २ कृतब्रह्मचर्यगृहाश्रमिन् (विद्वन्) ५ ८ १ सूर्यवत् सुखप्रदातो (राजन्) २ १.७ शत्रुदाहक। अन्व०—सभेश १७ ६६ पावक इव वर्त्तमान। अन्व०—पालक (मनुष्य) १७ ८७ योगाभ्यासेन प्रकाशितात्मन् (योगिजन) १७ ७३ पावक इव प्रकाशमय भा०—तप आदिसाधनैर्योगबल प्राप्य योगिराज १७ ७१ योगसंस्कारेण दुष्टकर्मदाहक। भा०—योगसंस्कारयुक्त (योगिन्) १७ ७५ पूजनीयतम (जगदीश्वर) १ १४ ११ अग्नि प्रत्यक्षोऽप्रत्यक्ष १ १४ १० अग्नि से स वि० १६४ अव्यापकाऽव्यापिके वा २६ २० पालकवत् पवित्राचरण (राजन्) ४ १० ८ परमविद्वन् ४ ११ ६ विद्वन् पित ! पितामह ! प्रपितामह १६ ३८ पावकवत् पवित्रगुरुपार्थिन् (विद्वन्) ३ २७ ३. विद्युदिव गुप्तप्रतापिन् (विद्वज्जन) ७ ३ ३ हे विज्ञान-धनाढ्यविद्वन् (गृहपते) ८ १६ प्रदात प्रदानहेतुर्वा (सभाध्यक्ष) १ ७६ ८ विद्या जिघृक्षो (विद्यार्थिन्) ५ ११ ६ परमविद्वन्नुपदेशक २ २ १२ सूर्यवद् वर्त्तमान (महाविद्वन्) २ १ ३ अग्निरिव दाहकृत् (राजन् ! शिष्य) २ १ ६ विद्याप्रकाशितसभ्यजन ४४ ७ पावक इव तेज-स्विन् (राजकर्मस्थजन) ४४ ५ विद्वन् विदुषि वा १५ ५६ शिल्पविद्याविद्विद्वन् ६ १६ ४३ न्यायाधीश ६ १६ ३१ अग्निरिव विद्यया प्रकाशमान (धार्मिक जन) ६ १६ २७ पावकवद् वर्त्तमान (विद्यार्थिन्) ५ ११ ३ गृहस्थजन ५ ८ २ दुष्टशासकविद्वन् १ १८६ ७. सर्वा-धारेश्वर १ ५६ १ अध्यापकजन १.७३ ७ पापिप्रतापक

(राजन्) ६ ६० ३ सकलविद्याविद् (विद्वन्=राजन्) ६ ३७ हे अनन्तविद्यातेजयुक्त (ईश्वर) आर्या० २ ३३ पदार्थविद्यावेत्तर्विद्वन् १ २२ १० अग्निवत्प्राप्तपुरुषार्थ (सज्जन) १२ १०९ प्राप्तशिल्पविद्य (विद्वन्) १ १४० १२ हे सर्वशत्रुदाहक परमेश्वर 'आर्या० १ १२' जगदीश्वर अग्निर्वा ४ १६ विज्ञानस्वरूपेश्वरव्यवहारप्राप्तिहेतुर्भौतिको वा ३ १६ सर्वविद्यामयेश्वर विद्याहेतुर्भौतिको वा ३ १७ सर्वाभिरक्षकेश्वर रक्षाहेतुर्भौतिको वा ३ १७ कामाना प्रपूरकेश्वर कामपूर्त्तिहेतुर्भौतिको वा ३ १७ भा०—सत्य-धर्मोपदेशकेश्वर १ ५ अग्निर्भौतिको, भा०—यज्ञस्य मुख्य-साधनम् २ ७ ज्ञानस्वरूपेश्वरस्य प्राप्तिहेतु भौतिकमग्निं वा २ ४ प्रकाशमय (सेनापते) १७ ५० विद्वन् पुरोहित १७ ५२ विद्याविनयप्रकाशक (राजन्) २७ ५ भा०—पावक इव मनुष्यजन्मप्राप्त (जन) १३ ४७ स्वप्रकाश-स्वरूप जगदीश्वर २० २४ विज्ञापक (विद्वन्) १ ७९ ११ पदार्थविद्यावित् (अङ्गिर=विद्यारसयुक्त विद्वन्) १२ ८ हे सच्चिदानन्द स्वप्रकाशस्वरूपेश्वर आर्या० २ ४७ वह्निरिव तेजस्विनि विदुषि (स्त्रि) १७ ६ विज्ञान स्वरूपेश्वर विज्ञापको भौतिको वा ३ ३८. सर्वगुणवर (विद्वन्) ६ २६ सकलविद्याविज्ञात (विद्वन्) १ १०५ १३ दुष्टप्रशासक सभाध्यक्ष १ ७३ ३ सर्वत्र व्याप्तेश्वर भौतिको वा। प्र०—अत्राऽन्त्यपक्षे व्यत्यय १ १४ १. अग्निर्व्यावहारिक १ १६ ६ स्वय प्रकाशेश्वर सर्वलोक-प्रकाशकोऽग्निर्वा १ १६ ३ अविद्याऽन्धकारविनाशक (परमेश्वर) ६ १५ ११ पावकवद् विद्यया प्रकाशमान विद्वन् ३ ११ ६ अविद्यादोषप्रदाहक परात्मन् (जगदीश्वर) ३ १० २ अग्प्रिवज्ज्ञानेन प्रकाशमय (विद्वन्) ३ ६ ६ पावक इव प्रकाशात्मन् विद्वन् ३ २० २ विद्युदिव सकल-विद्यासु व्यापिन् (महाविद्वन्) ३ १६ ४ अग्निरिव प्रदीप्त-विद्य (विद्वन्) ३ १८ ३ विज्ञानस्वरूप परब्रह्मन् विद्युद्वा ५ ६ अग्निरिव प्रतापवन् (पदार्थ विद्याविज्जन) ३ १४ ४ सर्वनेत परमात्मन् ५ ३६ आप्ताऽनूचानाऽध्यापक १ ६७ ४ कृतविद्याभ्यास (राजन्) ५ ३ १ दुष्टप्रदाहक (राजन्) ५ ४ ४ हे प्रकाशितप्रज्ञ (विद्वन्) २६ १३ अग्निरिव वर्त्तमाने । अन्व०—विदुष्यध्यापिके स्त्रि १३ २२ परमेश्वर विद्वन् वा १८ ४६ विद्यया सुप्रकाशिते स्त्रि पुरुष वा १५ ५४ विद्युदिव राजविद्याव्याप्त (उत्तम-राजन्) ७ ७ २ सन्मार्ग प्रकाशक (राजन्) ७ ८ ७ युद्धविद्यावित् सेनेश १८ ७४ वह्निवत् सर्वदोषप्रणाशक (परमेश्वर) ७ ५.६ विद्युदादे १ ११५ १ हे तेजोमय (सभापते) ८ ३८ प्रसिद्धाग्निवत्कार्यसाधक विद्वज्जन) ७ ३.३ हे स्वप्रकाश ज्ञानस्वरूप सब जगत् के प्रकाश करने हारे परमात्मन् स० वि० ७ विद्युद्वद् व्यतिरिक्त (अध्यापको-पदेशक) २ ११५ विद्यादिगुणैर्विख्यात (विद्वन्) १ ६४ १ **अग्ने**=पृथिव्यादिस्थाया विद्युत । भा०—प्रकाशमानस्य सूर्यादे १ ११ आग्नेयाऽस्त्रादियोगात् १७ ६६ सद्विदुष ८ ५० विद्युदादिरूपात् २ ३८ ५ विद्युदाख्यात् १३ ४५ अग्निवद् देदीप्यमानस्य (पत्यु) ११ ४६ अग्नितुल्येन (भ्राजसा=तेजसा) १० १७ उष्णत्वनिमित्तस्य १३.२५ आग्नेयाऽस्त्रादे सिद्धिकरस्य पावकस्य ५ २ ऊष्मण १४ १५ भौतिकस्य पाचकस्य २ ११ विद्यादिगुणप्रकाशि-तस्य सभ्यजनस्य ६ २४.

[गत्यर्थक 'अगि' धातो 'अङ्गेर्नलोपश्च' उणादि० ४ ५० सूत्रेण नि प्रत्ययो नकारलोपश्च]

अग्नि कस्मादग्रणीर्भवति । अग्र यज्ञेषु प्रणीयते । अङ्ग नयति सन्नममान । अक्नोपनो भवतीति स्थौलाष्ठीविर्न क्नोपयति न स्नेहयति । त्रिभ्य आख्यातेभ्यो जायत इति शाकपूणि । इतादक्ताद्दग्धाद्वानीतात् । स खल्वेतेरकार-मादत्ते गकारमनक्तेर्वा दहतेर्वा नी पर नि० ७ १४. विराडग्नि श० ६ २.२.३४ यो वै रुद्र सो ऽग्नि श० ५ २ ४ १३. अग्निरेप यत्पशव श० ६ ३ २ ६ अग्निर्हि देवाना पशु ऐ० १ १५ अग्निर्वै देवाना वसिष्ठ ऐ० १ २८ शिर एवाग्नि श० १० १ २ ४ अग्नि. सर्वा देवता ऐ० २ ३ अग्निर्वै सर्वेपा देवानामात्मा श० १४ ३ २ ५ आत्मैवाग्नि श० ६ ७ १ २० अग्निर्वै देवताना मुख प्रजनयिता स प्रजापति श० ३ ६ १ ६ अन्नादोऽग्नि श० २ १ ४ २८ अग्निर्देवाना जठरम् तै० २ ७ १२.३ अय वै लोकोऽग्नि श० १४ ६ १ १४ सवत्सर एपोऽग्नि श० ६ ७ १ १८ वागेवाग्नि श० ३ २ २.१३. तेजो वाऽअग्नि श० २ ५ ४ ८ अग्निर्वै रक्षसामपहन्ता कौ० ८ ४ १० ३ तपो वाऽअग्नि श० ३ ४ ३ २ अग्निर्वै देवाना व्रतपति श० १ १ १ २ अग्निर्वै मृत्यु श० १४ ६ २ १० पुरुपोऽग्नि श० १० ४ १ ६. मन एवाग्नि श० १० १ २ ३ प्राणो वा अग्नि श० ६ ५ १ ६८ वीर्य वा अग्नि तै० १ ७ २ २ गायत्री श० ३ ४ १ ६ अग्निरेव ब्रह्म अग्निर्वै श० १० ४ १ ५ पर्जन्यो वा अग्नि श० १४ ६ ११ ३ आयुर्वाऽग्नि श० ६ ७ ३ ७ अग्निमतिथि जनानाम् तै० २ ४ ३.६ अमृतो ह्यग्नि श० १ ६ २ २० असौ वा आदित्य एपोऽग्नि श० ३ ४ १ १. अग्निर्वैश्वानर ता०

१३ ११ २३ अनूचानमाहुरग्निकल्प इति मुख ह्येतद-ग्नेर्यद् ब्रह्म श० ६ १ १ १० अग्निर्वै धर्म श० ११ ६ २ २ अग्निर्वैद्रष्टा गो० उ० २ १९. प्रजा-पतिरग्नि श० ६ २ १ २३ अग्निर्वैयम श० ७ २ १ १०. अग्निर्वाव पुरोहित ऐ० ८ २७ प्राण अग्नि श० ६ ३ १ २१ अग्निर्वै यज्ञ श० ३ ४.३.१९ यजमानोऽग्नि श० ६ ३ ३ २१ अग्निर् ऋषि मैं० १ ६ १ अग्नि पशुरासीत् तमालभन्त तेनायजन्त इति च ब्राह्मणम् नि० १२ ४१]

अग्ना ३ इ सर्वसुखप्रापक (गृहपते=गृहस्वामिन्) ८ १० [अग्निशब्दस्य सम्बोधने रूपम्। 'एचोऽप्रगृह्यस्य०' अ० ८ २ १०७ सूत्रेण एच पूर्वस्यार्धस्य आकारादेश' स च प्लुत । उत्तरस्येकारादेश]

अग्नायी अग्ने पावकवद्वर्त्तमानस्य पत्नी ५ ४६ ८.

अग्नायीम् ययाऽग्नेरिव ज्वालाऽस्ति तादृशी (स्त्रियम्)। प्र०—वृषाकप्यग्नि० अ० ४ १ ३७. अग्ने डीप् प्रत्यय ऐकारादेशश्च १ २२ १२ [अग्नायी अग्ने पत्नी नि० ९.३३]

अग्निजिह्वा: अग्निरिव सुप्रकाशिता जिह्वा वाणी येषान्ते (देवा=विद्वास)। प्र०—जिह्वेति वाङ्नाम० (निघ० १ ११) २५ २० अग्निर्जिह्वावद् येषान्ते (विद्वास) ३३ ५३ अग्निरिव तीव्रा प्रज्वलिता जिह्वा येषा ते (सत्यवादिनो विद्वास) ६ २१ ११ अग्निवद् विद्याशब्द प्रकाशिका जिह्वा येषान्ते (मरुत=विद्वास) १ ४४ १४. अग्निर्जिह्वा ह्यमानो येषान्ते (देवा) १ ८९ ७ अग्निरिव प्रकाशमाना सत्योपदेशा जिह्वा येषान्ते (कवय=मेधाविनो जना) ३ ५४ १० अग्निना सदृशेन सुप्रकाशिता जिह्वा येषान्ते (देवा=विद्वास) ६ ५२ १३ अग्निरिव सत्य-विद्यया सुप्रकाशिता जिह्वा येषान्ते ६ ५० २ अग्निर्जिह्वावद् येषान्ते (सज्जना) ३३ ५३

अग्नित् पावक प्रदीप्तकर (अग्निविद्याविज्ञातृविद्वान्) २ १ २

अग्निऽतप: येऽग्निना तापयन्ति ते (विद्वास) ५ ६१.४ [अग्नि+तप्+णिच्+अच् 'पर्णशुषिवण्णिलुक् भविष्यति' (महा० ७४६५) यथा पर्णानि शोषयन्ति पर्णशुषो वाता इत्यादौ क्विपि 'बहुलमन्यत्रापि सज्ञाछन्दसो' रिति णिलुक् भवत्येवम् 'अग्निऽतप' इत्यादावपि]

अग्निनेत्रा: अग्नौ विद्युदादौ नेत्र नयन विज्ञान येषान्ते (विद्वास) ९ ३६ **अग्निनेत्रेभ्य:**=अग्ने प्रकाश इव नेत्र नयन येषान्तेभ्य (सज्जनेभ्य) ९ ३५

अग्निऽभ्राजस. अग्निरिव प्रकाशमाना (वीरजना) ५ ५४ ११

अग्निमग्निम् प्रत्यग्निम् ६ १५ ६ [नित्यवीप्सयो (अ० ८ १ ४) सूत्रेण वीप्साया द्विर्वचनम्]

अग्निमिन्ध अग्निप्रदीपक (होतृजन) १ १६२ ५ [भ्राष्ट्राग्न्योरिन्धेर्मुम् वक्तव्य (अ० ६ ३.७०) वार्तिकेन पूर्वपदस्य, मुम् आगम]

अग्निशालम् अग्निहोत्र के स्थान को स० वि० १६६. [विभाषा सेनासुरा० (अ० २.४ २५) सूत्रेण नपुसकत्वे ह्रस्व]

अग्निश्रिय: अग्निना श्री=शोभा, धन येषान्ते (मरुत=वायव) ३ २६ ५ [अग्निश्रीशब्दयो समास]

अग्निष्वात्तान् सुष्ठु गृहीताऽग्निविद्यान्, भा०—पदार्थविद्याविद (पितृन्=विद्यावयोवृद्धान् पित्रादीन्) १९ ६१ **अग्निष्वात्तानाम्**=सुष्ठु गृहीताग्निविद्यानाम् (शतरुद्रियाणा=विद्वदविष्ठातृजनानाम्) २१ ४४ अग्निना जाठराग्निना सुष्ठुगृहीताऽन्नानाम् (अवत्तानाम्=उदार—चेतोजनानाम्) २१ ४५ गृहीताऽग्निविद्याना (पितृणा=जनकजननीनाम्) २४ १८ अग्नि सुष्ठ्वात्तो गृहीतो यैस्तेषा (जनानाम्) २१ ४३ [अग्नि+सु+आ+दा+क्त। 'पूर्व-पदात्' (अ० ८ ३ १०६) सूत्रेण मूर्धन्यादेश]

अग्निष्वात्ता: अग्निविद्यायुक्ता (पितर) ऋ० भू० २६२ अग्नि परमेश्वरोऽभ्युदयाय सुष्ठुतयाऽऽत्तो गृहीतो यैस्ते (पितर) ऋ० भू० २५४ सम्यग्गृहीताऽग्निविद्या, भा०—येऽग्न्यादिपदार्थविद्या विज्ञाय प्रवर्त्तयन्ति ते विद्वास १९ ६० अधीताऽग्निविद्या (पितर=पालका विद्वास उपदेशका) १७ ५९ [यदग्निष्वात्तान् (यजति) गृहमेधि-नस्तत् मैं० १ १० १८ का० ३६ १३]

अग्निहुत: अग्नौ हुत=प्रक्षिप्त येन स (विद्वान्) ३८ २८ [अग्नि+हु दानादानयो+क्त]

अग्नीत् सम्प्रेषित (योगी) ७ १५

अग्नीन्द्राभ्याम् सकलराज्यकर्मविचारविचक्षणा-भ्यामग्नीन्द्रगुणयुक्ताभ्या (राजपण्डिताभ्याम्) ७ ३२

अग्नीपर्जन्यौ विद्युन्मेघौ ६ ५२ १६ ['पर्जन्य' इति पदनाम निघ० ५ ४ अग्निपर्जन्ययो समासे पूर्वपदस्य दीर्घत्वम्]

अग्नीषोमयो: अग्निश्च सोमश्च तयो प्रसिद्धाग्नि-

चन्द्रलोकयो । प्र०—अत्र 'ईदग्ने सोमवरुणयो अ० ६ ३ २७ अनेन देवताद्वन्द्वसमासेऽग्नेरीकारादेश । भा०— अग्निजलयो २ १५ शीतोष्णकारकयोर्जलाऽग्न्यो २५ ५. **अग्नीषोमा**=अग्निषोमौ प्रसिद्धौ वाय्वग्नी । प्र०—अत्र 'सुपा सुलुग्०' इति आकारादेश १ १३ ७ अध्यापक-परीक्षकौ १ ६३ २ यज्ञफलसाधकौ (वाय्वग्नी) १.६३ १ **अग्नीषोमीयाः**=सोमाग्निदेवताका (वामना अनड्वाह पशव) २४ ८ **अग्नीषोमौ**=विद्युत्पवनौ १ १३ १० विद्यया सम्यक्=सयोजितौ (अग्निचन्द्रलोकौ) २ १५ तेजश्चन्द्राविव विज्ञानसौम्यगुणावध्यापकपरीक्षकौ १ ६३ १ सर्वमूर्त्तद्रव्यसयोगिनौ (अग्निवायू) १ ६३ ११ अग्नि-षोमाभ्याम्=तेज शान्तिगुणाभ्याम् ६ ६ [अग्नि-सोम-शब्दयो समासे 'ईदग्ने०' अ० ६ ३ २७ सूत्रेण ईकारा-देश । 'अग्ने स्तुतस्तोमसोमा' इति मूर्धन्यादेश प्राणा-पानावग्निषोमौ । ऐ० १ ८ अहोरात्रे वा अग्नीषोमौ कौ० १० ३ चक्षुषी अग्निषोमौ । ऐ० १ ८. राजानौ वा एतौ देवताना यदग्नीषोमौ तैं स० २ ६ २ १-२. दार्शपौर्णमासिके वा एते देवते कौ० ५ २ यच्छुष्क तदाग्नेय यदार्द्र तत्सौम्यम् श० १ ६ ३ २३ सूर्य एवाग्नेय । चन्द्रमा सौम्योऽहरेवाग्नेय रात्रि सोम्या य एवापूर्यतेऽर्धमास स आग्नेयो, योऽपक्षीयते स सौम्य. श० १ ६ ३ २४ यच्छुक्ल तदाग्नेय यत्कृष्ण तत्सौम्य यदि वेतरथा यदेवकृष्ण तदाग्नेय यच्छुक्ल तत्सौम्य (रूप) यदेव वीक्षते तदाग्नेय रूप शुष्केऽव हि वीक्षमाणस्याक्षिणी भवत श० १ ६ ३ ४१]

अग्न्येधम् अग्निश्चैधश्च तत् ३०.१२

अग्मत गच्छत १ ११६ ३ प्राप्नुवन्ति, प्र०—अत्र लडर्थे लुङ् 'मन्त्रे घसहर०' इति च्लेर्लुक् 'गमहन०' इत्युपधा-लोप 'समोगम्यृच्छिभ्याम्' अ० १ ३ २६ इत्यात्मने-पदञ्च १ २० ५ **अग्मन्**=प्राप्नुत ४ २४ ३ प्राप्नुवन्तु ४ ४१ ६ प्राप्नुवन्ति ६ ६३ ८ आगच्छन्ति ६ २८ १ गच्छन्ति ४ २ १७ गच्छेयु १ १२७ ३ [गम्लृधातोर्लङ् सामान्यकाले]

अग्रजिह्वम् जिह्वाया अग्रम् २५ १ '[राजदन्तादिषु परम्' अ० २ २ ३१. सूत्रेण जिह्वाया परनिपात । जिह्वेति वाङ्नाम निघ० १ ११]

अग्रणीतिम् अग्रा श्रेष्ठा चाऽसौ नीतिश्च ताम् २ ११ १४ [अग्र+णीञ्+क्तिन् । अग्रनीतिपदयो समास]

अग्रतः सृष्टे प्राक् ३१ ६ [सार्वविभक्तिकम् तसि प्रत्यय]

अग्रभणे न विद्यते ग्रहण यस्मिन् (समुद्रे=अन्तरिक्षे सागरे वा), प्र०—अत्र हृस्य भ १ ११६ ५ हस्ता-ऽवलम्बनाऽविद्यमाने (समुद्रे) ऋ० भू० १६३ [ग्रह उपादाने धातोर्ल्युट्, तत्प्रतिषेध, 'हृग्रहोर्भश्छन्दसी' ति हकारस्य भकार]

अग्रभम् गृह्णीयाम् १ १६१ १३ **अग्रभीत्**=गृह्णाति १ १४५ २ ग्रहण करता हू, ग्रहण कर चुका हू स० वि० १२१ [ग्रह उपादाने धातोर्लङ्, विकरणव्यत्ययेन शप्, हृस्य च भकार]

अग्रभीष्म गृह्णीयाम् ५ ३० १२ अतिगृह्णीयाम् ५ ३० १५ [ग्रह धातोर्लुङि उत्तमपुरुषवहुवचने रूपम् । हृस्य च भकार]

अग्रम् उपरिभावम् (यश) ४ १३ १ मुख्यश्रियम्, भा०—अग्रचा श्रियम् २३ २४ उत्तमविजयम् १ ११२ १८ सर्वेषा मध्य केन्द्र स्थानमुपरिस्थम् ३ ५५ ७ उत्तम (रसम्) ४ ६१.१ उत्तम सुखम् १३ ५१ उपरिभागम् ३ ५५ पुर ३३ ५६ अग्रभागम् ३ ३० १७ प्रथमम् ४ २७ ५ पूर्वम् ११ १७ **अग्रे**=आदौ २ १७ ३ पुरत. ५ ८० २ विद्याराजलक्ष्म्याम् ३३ २५ प्रात समये २६.२६ प्राक् ३१ १७ सन्मुखे १२ २२ सृष्टे प्राक् १ १६४ ८ पुरस्तात् पुरस्सरत्वे क्रियासम्बन्धे वा १ १२ पुरस्सरम् ७ ४४ ४ **अग्रमग्रम्**=पुर पुर १ १२३ ४ **अग्रेण**= पुरस्सरेण २८ २० पुरस्तात् ६ २ [अगि (गत्यर्थक) धातो 'ऋजेन्द्राग्रवज्र०' उणादि० २ २८ सूत्रेण रन् प्रत्यय । 'वाहु०' च नुमोऽभाव]

अग्रवः उत्तम स्त्री पुरुष स० वि० १४० अथर्व० १४ २ ७२ [अग्रु+जस्]

अग्राऽअद्वाना येऽपदन्ति तद्विभाजकौ (इन्द्राविष्णू= वायुसूर्यौ) ६ ६६ ६

अग्राः अग्रगण्या (प्रजा) ७ ३३ ७ पहिली (ज्योतियाँ) स० वि० १३८

अग्रिमा अतिश्रेष्ठ (विद्वानुपदेशक) ५ ४४ ६ [अग्रप्राति० 'अग्रपश्चाड्डिमच्' वा० ४ ३ २३ इति डिमच् प्रत्यय]

अग्रियम् अग्रे भवम् (अग्नि=पावकम्) ६ ६ ४८ सुखम् । अन्व०—पुरुषार्थम् ४ ३७ ४. सर्वेषा वस्तूना

साधनाना वाऽग्रे भवम् (त्वष्टार=परमेश्वर/भौतिकमग्निम्)। प्र०—अत्र 'घच्छौ च' अ० ४ ४ ११८ इति सूत्रेण अग्र-शब्दाद् भवार्थे घ प्रत्यय ११३१० **अग्रियः**=अग्रे भवोऽत्युत्तम (स्तोम=गुणप्रकाशसमूहक्रिय) ११६७ **अग्रियाः**=अग्रेभवा [वाजा=सत्कर्मसु वेगा ४ ३४ ३. अग्रिया=अग्रगमनेनेति वा ऽग्रगरणेनेति वा ऽग्रसम्पादिन इति वा। अपि वा ऽग्रमित्येतदनर्थकमुपबन्धमाददीत निरु० ६ १५ १]

अग्रुवः अग्र गच्छन्त्य सेना ७ २ ५ अग्रसरा (प्रजाजना) ४ ३० १६ अग्रगामिन्यो नद्य। प्र०—अग्रुव इति नदीनाम० निघ० ११३ या अग्रे गच्छन्ति ता (स्वसार=अङ्गुलय) ३ २९ १३ अग्रगण्या (स्त्रिय) ११४० ८

अग्रुः अग्रगन्ता (जनित्रान्=विद्वान्) ५ ४४ ७

अग्रेगाः योऽग्रे गच्छति स (विद्वान्) २७ ३१ [अग्रे उपपदे गम्लृ गतौ धातो 'जनमन०' सूत्रेण विट् प्रत्ययोऽनुनासिकस्य चाकारादेश]

अग्रेगुवः अग्रे समुद्रेऽन्तरिक्षे गच्छन्तीति ता (आप=जलानि) ११२ [ता (आप) यत्समुद्र गच्छन्ति तेनाग्रेगुव. श० ११३७]

अग्रेणीः यथाध्यापक शिष्यान्, पिता स्वसन्तानान् वा पुरस्तादेव सुशिक्षया विद्या प्रापयति तथा ६ २ [अग्रे+णीञ् प्रापणे+क्विप् प्रत्यय]

अग्रेपाभिः येऽग्रे पान्ति रक्षन्ति तै (मरुद्भि=मनुष्यै) ४.३४ ७ **अग्रेपाः**=पुरस्ताद्रक्षका (ऋभव=विपश्चित) ४ ३४ १० [अग्रे+पा रक्षणे+क प्रत्यय, तत स्त्रिया टाप् प्रत्यय]

अग्रेपुवः प्रथमा पृथिवीस्थसोमौषधि सेविका। भा०—या मेघस्थास्ता द्वितीया (आप=जलानि) ११२ [अग्रे+पूङ् पवने+क्विन्, तत प्रथमाबहुवचने रूपम्। ता (आप) यत्प्रथमा सोमस्य राज्ञो भक्षयन्ति तेनाग्रेपुव २७ ११३७]

अग्रेवधाय योऽग्रे पुर शत्रून् बध्नाति हन्ति वा तस्मै (जनाय) १६ ४० [अग्रे+वधसयमने (चुरादि०)+अच् प्रत्यय, तस्मै]

अग्र्याय अग्रे भवाय सत्कर्मसु पुरस्सराय (सज्जनाय) १६ ३० [अग्रप्राति० 'अग्राद् यत्' अ० ४ ४ ११६ सूत्रेण तत्र भवार्थे यत् प्रत्यय]

अघम् किल्बिषम् ५.३ ७ रोगालस्यपाप, मनोवाक्-छरीरजन्य पापम् १ ९७ १ दारिद्र्यम् १.९७ ५ भा०—पापाऽऽचरणम् ३५ ६ अपराधम् ६ ६ २८ [पापम् २ ४१ ११ अघ हन्तेर्निर्ह्रसितोपसर्ग आहन्तीति नि० ६ ११]

अघशंसम् अघस्य शसितार स्तेनम् ६ ८ ५ **अघशंसः**=योऽघ पाप शसति स दस्यु २ ४२ ३ योऽघ पाप कर्त्तुं शसति स स्तेन १३.११ योऽघानि पापानि कर्माणि शसति स (रिपु=शत्रु) ३ ३२ पाप-प्रशसी स्तेन, भा०—दुष्टाचारी जन २९ ४७ अघस्य पापस्य स्तोता चोर, भा०—पीडाप्रदो दुर्जन ३३ ६९ पापप्रशसकस्तेन ४ ४ ३ हिंस्र पापकृत् (स्तेन=चोर) ६ २८ ७ दुष्ट स्तेन ३३ ८४ [अघोपपदात् शसु (स्तुतौ) धातोरच् प्रत्यय। शसतीत्यर्चतिकर्मा निघ० ३ १४ अघशसम्=अघस्य शसितारम् निरु० ६ ११ १ अघशस इति स्तेन-नाम निघ० ३ २४]

अघस्तम् भुञ्जीयाताम् २८ ४६ [घस्लृ अदने धातोर्लुङ् व्यत्ययेन आत्मनेपदम्, 'स स्यार्धधातुके' इति तत्वे 'झलो झलि०' इति सिचोलोप]

अघः अहन्तव्य (राजा) ५ २९ ८ अघ पाप विद्यते यस्मिन् स (दुर्जन) १ ४२ २

अघा अन्धकाररूपा (भा०—रात्रि) २८ १५

अघायतः आत्मनोऽघमिच्छतो दोषकारिण पुस १ ९१ ८ आत्मनोऽघमिच्छत सङ्गात् (दुर्जनसमागमात्) ७ १५ १५ आत्मनोऽघमाचरतो (मनुष्यान्) ५ २४ ३ पापी और पाप के इच्छुक (प्राणी का) आ० वि० १ २० य परस्याऽघमिच्छन्यवायति तत (दुर्जनात्), प्र०—आचार्यप्रवृत्तिर्ज्ञापयति भवत्यघशब्दात् 'छन्दसि' परेच्छाया क्यच्, इति यद्वयम् 'अश्वाघस्यात्, इति क्यचि प्रकृते ईत्वबाधनार्थमाकार शास्ति अ० ३ १ ८ सूत्रेऽस्मिन् भाष्यकारस्य व्याख्यानाशयेनेद सिध्यति इति बोध्यम् ३ २६ [अघ+क्यच्+शतृ]

अघायति आत्मनोऽघमिच्छति ११३१ ७ [अघ+क्यच्+लट्]

अघायते आत्मनोऽघमिच्छते (दुर्जनाय) ६ ५१ ६ [अघ+आत्मनेच्छाया क्यच्+शतृ। ततश्चतुर्थी]

अघायवः आत्मनोऽघेन पापेनाऽऽयुरिच्छव (भा०—पापाचारा पुरुषा) ११ ७९ [आत्मनोऽघ—पापमिच्छव] (पापिनो मनुष्या) ४ ३४ **अघायुः**=आत्मनोऽघमिच्छु (दुर्जन) ११४७ ४ **अघायोः**=आत्मनोऽन्यायाचरणेना-ऽघमिच्छत (वृकात्=स्तेनात्) ११२० ७ पापिनो

(जनस्य) ४ २ १०. आत्मनोऽघमिच्छोर्दुष्टाचारिणो (जनस्य) १६.५०. [अघ सुबन्ताद् इच्छायामर्थे क्यच्। 'क्याच्छन्दसी' ति क्यजन्ताद् उ. प्रत्यय]

अघाश्वाय हन्तुमयोग्याय शीघ्र गमयित्रे (वैश्याय) १ ११६ ६ शीघ्रगमनाय ऋ० भू० १६३

अघाः हन्या ६ ४८ १६ हिंस्या ६ ५६ ८ [हन हिंसागत्योर् धातो रूपम्]

अघुक्षत् अपशब्दयेत् ५ ४० ८ ['घुषिरविशब्दने' धातु शब्दार्थे मन्यन्ते चन्द्रादय । तस्य लुङि् रूपम्]

अघोरऽचक्षुः प्रियदृष्टि (ईश्वर) स० वि० ११४

अघोरा अविद्यमानो घोर उपद्रवो यया सा (तनू = विस्तृतोपदेशनीति) १६ २ [घुर भीमार्थशब्दयो, तत पचाद्यचि कृते घोर, तत्प्रतिषेधोऽघोर स्त्रियामघोरा]

अघ्नता अहिंसकेन (विदुषा) ५ ५१ १५ **अघ्नतः**= अहिंसकस्य (राज्ञ) ७ २० ८ [हन्+शतृ प्रत्यय नञ्समासश्च]

अघ्नन्त निरय घ्नन्ति अथर्व० ११ ५ १६ [हन् हिंसागत्योर्धातोर्लङि झोऽदादेशश्छान्दस]

अघ्न्यम् हन्तुमयोग्यमघ्न्याभ्यो गोभ्यो हित वा 'अघ्न्यादयश्च उ० ४ ११२ अनेनाऽस्य सिद्ध 'अघ्न्या इति गोनामसु पठितम्' निघ० २ ११.१ ३७ ५ **अघ्न्यस्य**=हन्तु विनाशयितुमनर्हस्य यानस्य १ ३ १६ **अघ्न्या**=हन्तुमयोग्या (गौ) १ १६४ २७ हनन न करने योग्य गाय स० वि० १४१ **अघ्न्याः**=हन्तुमयोग्या (गाव) ६ २२ वर्धयितुमर्हा हन्तुमनर्हा गाव 'इन्द्रियाणि' पृथिव्यादय पशवश्च, प्र०—'अघ्न्या इति गोनाम निघ० २ ११ अघ्न्या अहन्तव्या भवति अघघ्नीति वा निरु० ११ ४३ ३ **अघ्न्यायाः**=हन्तुमयोग्याया (धेनो =वाण्या गोर्वा) ४ १ ६ **अघ्न्ये**=गौरिव वर्त्तमाने (विदुषि स्त्रि) १ १६४.४० हे हन्तु तिरस्कर्त्तुमयोग्ये (पत्नि) ८ ४३ **अघ्न्यौ**=हन्तुमनर्हे सत्यौ (स्त्रीपुरुषौ) ३.३३ १३ नञ्युपपदे [हन्+यक् प्रत्यये धातोरुपधालोपो हस्य घत्व च उणादि ४ ११२ सूत्रेण निपातनाद् अघ्न्या सिद्धयति । अथवा अघ्न्याप्राति० हितार्थे यत् प्रत्यय]

अङ्कसम् लक्षणान्वित मार्गम् ६ १५ लक्षणम् ४ ४० ३

अङ्कांसि लक्षणानि ६ १४ चिह्नानि ४ ४० ४

अङ्काः लक्षणानि १ १६२ ३ प्र० [अञ्चु गति पूजनयो' धातो 'अञ्च्यञ्जियुजि०' उणादि० ४ ११६ सूत्रेण असुन् प्रत्यय. कुत्वञ्च । अङ्कति गच्छति येन तद् अङ्क अङ्कासि कुटिलानि, अङ्कोऽञ्जते नि० २ २८]

अङ्काऽङ्कम् गणितविद्या १५ ५ प्र०—आपो वा अङ्काऽङ्क छन्द शत० ८.५ २ ६.

अङ्कीव यथाऽङ्कुशी तथा ३.४५ ४ [अङ्कोऽस्यास्तीति विग्रह मत्वर्थे तनि प्रत्यय]

अङ्कुपम् अङ्कूनि कुटिलानि गमनानि पाति रक्षति तज्जलम् १५ ४ (अङ्कु+पा+क प्रत्यय । आपो वा ऽङ्कूप छन्द ॥ श० ८ ५ २ ६)

अङ्कूयन्तम् यस्मिन्नङ्कूनि प्रसिद्धानि चिह्नानि प्राप्नुवन्ति तम् (अग्नि=विद्युतम्) प्र०—अत्र 'सहितायाम्' इति दीर्घ ६ १५ १७ [अङ्कु+या+शतृ । पूर्वपदस्य दीर्घत्वम्]

अङ्क्ताम् सयोजयतु प्रकट सयोजयतीति वा २ २२ [अञ्जू व्यक्तिम्रक्षणकान्तिगतिषु धातोर्लोटिरूपम् । व्यत्येनात्मनेपदम्]

अङ्क्ते प्रसिद्धो भवति ५ १ ३. प्रकाशयति १ १२४ ८ [व्यक्ति म्रक्षणाद्यर्थकाञ्जूधातो रूपम्, व्यत्ययेनात्मनेपदम्]

अङ्ग योऽङ्गति जानाति तत्सम्बुद्धौ (राजन्) १०.३२ क्षिप्रकारिन् सर्वसुहृद् (इन्द्र=सभाद्यध्यक्ष) १ ८४ ६ मित्र (मनुष्य) १ ८४ ७ सखे (परीक्षक मनुष्य) ६ ५२ ३ सुहृत् (जिज्ञासो जन) ७ ५६ २ सम्बोधने (इन्द्र=सभापते) ६ ३७ शीघ्रकारिन् (इन्द्र= सभाद्यध्यक्ष) १ ८४ ८ अङ्गवद् वर्त्तमान (इन्द्र= पूर्णविद्य राजन्) ६ ४४ १० सर्वमित्र (परमेश्वर) १ १ ६ मित्र जीव ऋ० भू० ११७ प्रिय (ईश्वर) १ १६४ ७ **अङ्गेन**=कमनीयेन (अणुना) २३ ५० अङ्गेभि =विविधाङ्गै ३ ७ ४ अङ्गै ११४१ १८ शिर आदिभिर्ब्रह्मचर्यादिभिर्वा ६ ८६ ८.

अङ्गमङ्गम् प्रत्यवयवम् १२ ८६ [वीप्सायामर्थे द्वित्वम् । अङ्गेति क्षिप्रनाम, अङ्कितमेवाञ्चित भवति निरु० ५ १७ अङ्गम्=अङ्गनादञ्चनाद्वा निरु० ४ ३ २ अङ्गानि होत्रका ऐ० ६ ८ अङ्गानि वाव होत्रा गो० ३.६ ६ अङ्गानि वै होत्रा शङ्खिन कौ० १७ ७ २६ ८. अगानि वै विश्वानि धामानि श० ३ ३ ४ १४ वैश्वदेव्यानि ह्यङ्गानि ऐ० ३ २]

अङ्गदङ्गात् प्रत्यङ्गात् २२ ४३ अङ्ग अङ्ग से उत्पन्न हुए वीर्य से स० ५० १२

अङ्गानि अङ्कितानि व्यञ्जकानि वा । प्र०—अङ्गाङ्गेति क्षिप्रनामाङ्कितमेवाङ्कित भवति निरु०

५ १७. श्रोत्रादीनि १२४. अवयवा २०८ शिर आदीनि २०६ योगाङ्गानि १६ ६३. सेनाऽवयवान् १७४४ **अङ्गेषु** राज्याऽवयवेषु २० १०

अङ्गे अङ्गे=प्रत्यङ्गम् ।।६ २०

अङ्गिर: प्राणप्रिय (जगदीश्वर) २ २३ १८ अङ्गाना मध्ये रसरूप (विद्वन्) ६ २ १० अङ्गेषु रममाण (विद्वान्) ५ ८ ४ अङ्गति प्रापयति य स (भौतिको ऽग्नि) ३ ३ प्र०—अङ्गाराऽअङ्कनाप्र० अञ्चना निरु० ३ १७ अङ्गारस्थ (प्रसिद्धोऽग्नि) ५ ६ अञ्चिता (अग्नेसूर्यरूप) ५ ६ अङ्गाना रस (भौतिकोऽग्नि) ५ ६ **अङ्गिरे** प्राणवत्प्रिये पत्यौ ४ ५१ ४ [गत्यर्थक 'अगि' धातोर्बाहुलकात् किरच् प्रत्यय]

अङ्गिरस्तम अङ्गति गच्छति जानाति सोऽतिशयितस्तत्सम्बुद्धौ (विद्वन्) १ ७५.२ अतिशयेन सारग्राहिन् (अग्ने=राजन्) १२ ११६

अङ्गिरस्तम: अतिशयेन प्राणवद् वर्त्तमान (इन्द्र= परमेश्वर सभाध्यक्षो वा) १ १०० ४ अतिप्रशस्त (इन्द्र= ईश्वर) १ १३० ३ अतिशयेनाङ्गिरा अङ्गिरास्तम जीवात्प्राणादन्य मनुष्यादत्यन्तोत्कृष्ट (ईश्वर) १ ३१ २ [अङ्गिरस् प्राति० आतिशयिकस् तमप् प्रत्यय]

अङ्गिरस्वत् योऽङ्गाना रस प्राणस्तद्वत् १ ४५ ३ अङ्गिरसा प्राणेन तुल्यस्य (अग्ने=विद्युदादे) ११ ११ अङ्गिरसा सूर्येण तुल्यम् (अग्नि=भूमिस्थ विद्युत वा) ११ १६ अङ्गिरोभिरङ्गारैस्तुल्यम् (विद्वासम्) ११ ६ अङ्गिरोभि प्राणैस्तुल्यम् (अग्नि=विद्युदादिस्वरूपम्) ११ ६ अङ्गैस्तुल्यम् (अग्नि=विद्युदादिस्वरूपम्) ११ ६ प्राणाना बलमिव १ ६२ १ प्रशस्तप्राणवत् (विद्वासम्) १ ७८.३ अङ्गिरसा प्राणेन तुल्य (स्वरूपम्) २ १७ १ अग्निवत् ११ ६१ प्राणवत् ११ ६१ आदित्यवत् ११ ६१ आकाशवत् १४ १६ सूत्रात्मवायुवत् १४ १२ अङ्गिरसो विद्वासो विद्यन्ते यस्त तत्सम्बुद्धौ (राजन्) ३ ३१.१६ प्रशस्ता अङ्गिरसो वायवस्तद्वत् (मरुत= जगद्धितैषिणो जना) ६ ४६ ११ अग्निवत् ११ ६५ समस्तौषधिरसवत् ११ ६५ सूर्यवत् ११ ६५ अङ्गाना रस कारण तद्वत् १४ ६ कारणवत् १३.१६ विद्युद्वत् ११ ६१ ब्रह्माण्डस्थ-शुद्धवायुवत् ११ ६०. विज्ञानवत् ११ ६० ओषधिरसवत् ११ ६१ आकाशवत् ११ ५८ सूत्रात्मप्राणवत् (विद्वान् जिज्ञासुर्वा) २७ ४५ हिरण्यगर्भवत् १२ ५३ [अङ्गिरस्वत्······अग्निवत् श० ६ ३.३.३ अङ्गिरस् प्राति० 'तेन तुल्य क्रिया चेद् वति' अ० ५ १ ११५ सूत्रेण तुल्यार्थे वति प्रत्यय । 'नभोऽङ्गिरोमनुषा वत्युपसंख्यानम्' वा० १.४ १८ वार्तिकेन भसञ्ज्ञकत्वेन पदसञ्ज्ञाया बाधिताया रुत्व न भवति । प्राणो वै यमोऽङ्गिरस्वान् पितृमान् तै० आ० ५ ७ ११]

अङ्गिरस्वान् अङ्गिरसो वायो सम्बन्धो विद्यते यस्य स (इन्द्र=विद्युत्) २ ११ २० बहुविधा प्राणा विद्यन्ते यस्मिन् स (विद्वान्) ६ १७ ६ **अङ्गिरस्वते**=विद्युदादिविद्या यस्मिन् विद्यते तस्मै प्राणवते (यमाय=न्यायाधीशाय) [अङ्गिरस् प्राति० मतुप्, 'तसौ मत्वर्थे' सूत्रेण भत्वाद् रुत्व न भवति]

अङ्गिरा: पृथिव्यादीना ब्रह्माण्डस्याङ्गाना प्राणरूपेण शरीरावयवाना चाऽन्तर्यामिरूपेण रसरूपोऽङ्गिरास्तत्सम्बुद्धौ । (अग्ने=परमेश्वर) प्र०—'प्राणो वा अङ्गिरा. शत० ६ ३ ७ ३ "देहेऽङ्गारेष्वङ्गिरा अङ्गारा अङ्कना अञ्चना निरु० ३ १७ अत्राप्युत्तमानामङ्गाना मध्येऽन्तर्यामी प्राणाख्योऽथो गृह्यते १ १ ६ प्राणप्रिय (ईश्वर) १ ६ अङ्गति प्रापयति य सोऽङ्गिर (अग्नि=अङ्गिरा) "अङ्गारा अङ्कना अञ्चना" निरु० ३ १७ ३ ३ प्राणाना रसभूत परमेश्वर १ १ ६ विद्यारसयुक्त (अग्ने=विद्वन्) १२ ८. अङ्गाना रसरूप (विद्वन् पुत्र) १ ७५ ५ प्राण इव प्रिय (सन्तान) ११ ४५ प्राण इव वर्त्तमान (अग्ने= विद्वन्राजन्) ४ ३ १५. अङ्गेषु रममाणो (विद्वान्) ५ ८ ४ अङ्गति जानाति यो विद्वांस्तत्सम्बुद्धौ १ ११२ १८ [भृगूणामङ्गिरसा तपसा तप्यध्वम् तै० स० १ १ ७ २. वीरा वैतदजायन्त यदङ्गिरस जै० ३ २६४ तान् हादित्यानङ्गिरसो याजयाञ्चक्रु गो० २ ६ १४ अङ्गिरसो न पितरो नवग्वा अथर्वाणो भृगव सोम्यास तै० स० २ ६ १२ ६. अङ्गारेष्वङ्गिरा (सम्बभूव) नि० ३ १७ १ ये अङ्गारा आसस्तेऽङ्गिरसो ऽभवन् ऐ० ३ ३४ अङ्गारेभ्यो ऽङ्गिरस (समभवन्) श० ४ ५.१ ८ ये अङ्गिरस स रस गो० पू० १ ६ अङ्गिरा उ ह्यग्नि श० १४.१.२५. अङ्गिरा वा ऽअग्नि श० ६ ४ ४ ४. प्राणो वा अङ्गिरा श० ६ १.२ २८ आदित्याश्चैवाङ्गिरसश्च श० ३ ५ १ १३ ते हादित्या. पूर्वे स्वर्ग लोक जग्मु पश्चेवाङ्गिरस. षष्ट्या वा वर्षेषु ऐ० ४ २७ अङ्गिरस स्वर्ग लोक यतो रक्षास्यन्वसचन्त ता० ८ ६ ५ अङ्गिरसा वा एकोऽग्नि ऐ० ६ ३४ त हाङ्गिरा उद्गीथमुपासाचक्रिरे । अङ्गिरस मन्यन्ते अङ्गानाना यद्रस. छा० १ २ १०

अङ्गिरस: येऽङ्गेषु रसभूतस्य प्राणाख्यस्य परमेश्वरस्य

ज्ञातार (पितर) ऋ० भू० २५८ वायव इव ६ ६५ ५. प्रकाशिका किरणा. ऋ० भू० ५ प्राणा इव विद्यासु व्याप्ता जना. (योगिन) ५ ११ ६ वायव १ ७१ २ सर्वविद्या सिद्धान्तविद (पितर —पालका पित्रादय) १ ६ ५० प्राणा इव बलिष्ठा (वीरा —व्याप्तयुद्धविद्याजना) ३ ५३ ७ सर्वस्या सृष्टेर्विद्याङ्गविद (पितर —पालका ज्ञानिन) ३४ १७ प्राणा इव सद्विद्यासु व्याप्ता (विद्वास) ७ ४२ १ प्राणा इव (जना) ७ ५२ ३ **अङ्गिरसाम्**=प्राणानामङ्गाराणा वा। प्र०—'प्राणो वै अङ्गिरा' शत० ६ ५ २ ३, 'अङ्गारेश्वङ्गिरा अङ्गारा अङ्कना अञ्चना, निरु० ३ १७ १ १८. विद्याधर्मराज्यप्राप्तिमता विदुषाम् प्र०—अङ्गिरस इति पदनामसुपठितम् निघ० ५ ५ १ ६२ ३ प्राणविद्याविदाम् (विदुषाम्) १ १०७ २ प्राणिनाम् १ १२७ २ प्राप्तविद्यासिद्धान्तरसाना (विद्वज्जनानाम्) १ १२१ १ अङ्गाना रसप्राणवत्प्रियाणा (विशा—प्रजानाम्) १ १२१ ३.

अङ्गिराः पृथिव्यादीना ब्रह्माण्डस्य शिव आदीना शरीरस्य रसोऽन्तर्यामिरूपेणाऽवस्थित (पुरुष —ईश्वर) ३१ १. अङ्गाना रसरूप. प्राण इव ५ ४५ ७ अङ्गेषु रसवद्वर्त्तमान. (अतिमेधाविजन) ३ ३१.७ प्राण इव प्रियो वत्स १ ८३ ४ अङ्गाना रस इव वर्त्तमानो यद्वाऽङ्गिभ्यो जीवात्मभ्यो सुख राति ददाति स (परमेश्वरो विद्वान्वा) ३४ १२ प्राणविद्यावित् (कण्व —मेधाविजन) १ १३९ ६ **अङ्गिरोभिः**=प्राणैर्बलै १ ६२ ५ वायुभि ६ १८ ५ अङ्गेषु रसभूतै प्राणै सह १ १००.४ अङ्ग सदृशै किरणै २ १५ ८ **अङ्गिरोभ्यः**=प्राणेभ्य इव विद्वद्भ्य. १ १३२ ४ प्राणविद्याविद्भ्यो (देवेभ्यो—विद्वद्भ्य) १ १३९ ७ प्राणरूपेभ्यो वायुभ्य, प्र०—'प्राणो वा अङ्गिरा, शत० ६.१ २ २८ १ १५१ ३ [गत्यर्थक 'अगि' धातो 'अङ्गेरसि' उणा० ४ २३६ सूत्रेणासि प्रत्यय, इरुडागमश्च]

अङ्गुलयः अङ्गन्ति प्राप्नुवन्ति याभिस्ता १८.२२. **अङ्गुलीः**=करचरणाऽवयवा २० ६ [गत्यर्थक 'अगि' धातोर् औणादिक उलि प्रत्यय। अङ्गुलय कस्माद्—अग्रगामिन्यो भवन्तीति वाग्रगालिन्यो भवन्तीति वाग्रकारिण्यो भवन्तीति वाग्रसारिण्यो भवन्तीति वाङ्कना भवन्तीति वाञ्चना भवन्तीति वापि वाभ्यञ्चनादेव स्यु ॥ नि० ३ ८ नानावीर्या अङ्गुलय ॥ तैम० ६ १ ९ ५]

अङ्गेन कमनीयेन (अणुना) २३ ५० **अङ्गैभिः**=विविधाऽङ्गै ३ ७४ **अङ्गेषु**=राज्याऽवयवेषु २० १०.

अङ्गैः=शिर आदिभिर्हृच्चर्यादिभिर्वा १ ८९ ८ श्रोत्रादि इन्द्रियो, अङ्गयो तथा सेनादि उपाङ्गो से आर्या० २ २७ योगाङ्गै १९ ९३ अवयवै ३ १५ अञ्जू [व्यक्तिम्रक्षणकान्तिगतिषु] धातोर्भावे घञ्प्रत्यये रूपम्]

अङ्घि शोधय १३ ४१ [गत्यर्थक 'अगि' धातोर्लोट्. बहुल छन्दसीति शपो लुक्]

अङ्ग्याः अङ्गेषु भवा (सूचीका—वृश्चिकादय) १ १९१ ७ [अङ्गप्राति० 'भवे छन्दसि' (अ० ४ ४ ११०) सूत्रेण यत् प्रत्यय]

अङ्घारिः अङ्घस्य कुटिलगामिनो जीवास्याऽरि. शत्रु (भगवान्) ५.३२ स्वभक्तो का जो अघ पाप उसके अरि शत्रु होकर उस समस्त पाप के नाशक (ईश्वर) आ० वि० २ १७ **अङ्घारे**=अङ्घस्य छलस्याऽरिरितरसम्बुद्धौ (सज्जन) ४ २७ [अघि गत्याक्षेपे भ्वादि, तत पचाद्यच् प्रत्ययेऽङ्घ:, तस्यारि। अङ्घारिरसि बम्भारि मै० १ २ १२]

अङ्घ्रिणा गमनसाधनेनाऽग्निना २ ८. [अघि गत्याक्षेपे (भ्वादि०) धातो औणादिक क्रिन् प्रत्यय]

अच ऊर्ध्व गच्छति ५ ८३ ८ **अचथः**=गच्छथ ५.७८ ६ [अञ्चु गतौ याचने च। अचु इत्येके धातोर्लोट् लडर्थे]

अचक्रत् करोति ४ १८ १२.

अचक्रया अविद्यमानचक्राकारया (गत्या) ४ २६ ४ **अचक्रे**=अप्रतिहते १ १२१ ४ **अचक्रेभिः**=अविद्यमानचक्रै. (दण्डसाधनै) ५ ४२ १०. [चक तृप्तौ प्रतिघाते च, डुकृञ् करणे धातोर्वा क प्रत्य०। 'कृञादीना के द्वे भवत' (अ० ६ १ १२) वार्ति० द्वित्वे चक्रम् (चक्र चकतेर्वा निरु० ४ २७]

अचक्षयत् दर्शयति २ २४ ३ **अचचक्षम्**=कथयेयम् ५ ३० २. [चक्षिङ् व्यक्ताया वाचि, अय दर्शनेऽपि (अदादि०) तस्य णिचि रूपम्]

अचरत् चरति ४ ३.१० आचरेत् ३ ४८ ३ **अचारिषम्**=चरितवान् २ २८ अनुतिष्ठामि, प्र०—अत्र लडर्थे लुङ् १ २३ २३ चरेयम् २० २२ [चर गतो भक्षणे च (भ्वादि०)]

अचरन् स्थिर (ईश्वर) ३ ५६ २ [चर गतौ धातो शतृ प्रत्यय, तत्प्रतिषेध]

अचरती इतस्तत. स्वकक्षा विहाय गतिरहिते (द्यावापृथिवी) १ १८५ २ [चर गतौ, तत शतृ+ङीप्, छान्दसत्वान् नुमोऽभाव]

अचरमाः नाऽन्याऽऽदयवा (वायव) ५ ५८ ५ [न चरमा अचरमा इति नञ्समास]

अचष्ट उपदिशति, प्रकाशितवान्, प्रख्यापयेत् ४.१८ ३ [चक्षिङ् व्यक्तायां वाचि, दर्शनेऽपि (अदादि०) धातो सामान्ये लुङ्]

अचिकित्वान् अविद्वान् (जन) १ १६४ ६ [कित निवासे रोगापनयने च, ततो लिट स्थाने क्वसु चिकित्वाश्चेतनवान् निरु० ३ ११]

अचिक्रदत् शब्द कुर्वन् (विद्युद्रूपोऽग्नि) ३८ २२ भृशमाक्रन्दति ४ २४ ८ विकलयति १ ५८ २ आह्वयेत् ७ २० ६ आह्वयति ७ ३६ ३ [क्रदि आह्वाने रोदने च। क्रद इत्यपरे तस्य णिचि लुडि रूपम्]

अचित्तम् चेतनरहित (छर्दि=गृहम्) ६ ४६ १२ चेतनतारहितम् (वस्तु) ४ २ ११ **अचित्तात्**=अविद्यमान चित्त यत्र तस्मात् (तनयित्नो=विद्युत) ४ ३ १ **अचित्तान्**=प्राप्तदारिद्र्याऽवस्थान् (जनान्) ३ १८ २ [चिती सज्ञाने (भ्वादि०) तत वत प्रत्यय चितामिति प्रज्ञा नाम निघ० ३ ६ चित्त चेतते निरु० १ ६]

अचित्तिम् अकृतचयना (क्रियाम्) ४ २ ११ अज्ञानम् २७ ६ **अचित्तिभिः**=अचेतनाभि (अज्ञानादिभि) ४ १२ ४ **अचित्ती**=अचित्या अविद्यया ४ ५४ ३ [चिती सज्ञाने तत क्तिन्। चित्तिभि=कर्मभि निरु० २ ६]

अचित्रम् अनद्भुत (सत्कर्म) ६ ४६ ११ **अचित्रे**=अनाऽऽश्चर्ये (विमध्ये=विशेषाऽन्धकारे) ४ ५१ ३ [चिञ् चयने धातो 'अभिचिमि०' उणा० ४ १६४ सूत्रेण क्त प्रत्यय। चित्रम्=चायनीयम् (धनम्) निरु० ४ ४]

अचिध्वम्=प्राप्नुत गच्छथ ५ ५५ ७ सञ्चिनुत १ ८६ २ [अञ्चु गतौ याचने च, अचु इत्येके, अथवा चिञ् चयने धातोर्लुडि रूपम्]

अचिष्टु.=गमनकर्त्ता (त्वष्टा=विद्युत्) २० ४४ [गत्यर्थक 'अचु' धातो ताच्छील्ये तृन् प्रत्यय षुगागमश्च]

अचुक्रुधत् भृश क्रोधयति ५ ३४ ७ [क्रुध कोपे, ततो णिजन्ताल् लुङ्]

अचुच्यवीतन प्रेरयन्ति प्राप्नुवन्ति वा, प्र०—अत्र लडर्थे लुङ् 'बहुल छन्दसीति शप श्लु 'बहुल छन्दसीतीडागम' 'तपतनप्०' इति तनवादेश, पुरुषव्यत्यय, सायणाचार्येणेद भ्रान्त्या लुङन्त व्याख्याय 'बहुल छन्दसि' इति शप शलुरिति सूत्र योजित, तत्र च्लेरपवादत्वाच्छ्वेव नाऽस्ति, 'कुत श्लु कस्य लुक्? तस्मादशुद्धमेव १ ३७ १२ **अचुच्यवुः** च्यावयन्ति नाशयन्ति १२ ८४ प्राप्नुवन्ति, प्र०—अत्र व्यत्ययेन परस्मैपदम् १ १६८ ४ च्यावयेयु ५ ५३ ६ च्यवन्ता प्राप्नुवन्तु १ ४५ ८. [च्युङ् गतौ ततो णिजन्ताल् लुङ्]

अचेत् चेतयति ४ २४ ८ **अचेतयत्**=चेतयेत् सञ्ज्ञापयेत् ३ ३४ ५ **अचेति**=सञ्ज्ञाप्यते। प्र०—अत्र 'चिती सञ्ज्ञाने' इत्यस्माल्लुडि कर्मणि चिण् १ ८८ ५ सम्यग् विज्ञायताम् १ ११३ ४ चेतयति ६ २७ ४ सञ्ज्ञायते १ ३६.४ **अचैत्**=चिनुयात् ६ ४४ ७.

अचेतसम् अज्ञानिनम् (दुर्जनम्) ७ ६० ६ जडबुद्धिम् (जनम्) ७ ६० ७ **अचेतसः**=निर्बुद्धय (भाग्यहीना जना) ७ १८ ८ **अचेतानस्य**=चेतनता रहितस्य मूर्खस्य ७ ४.७ **अचेताः**=ज्ञानरहिता (जना) १ १२० २ ['चेत' इति प्रज्ञानाम निघ० ३ ६ अचेतानस्य=अचेतयमानस्य तत्प्रमत्तस्य भवति निरु० ३ २ १]

अचोदते अप्रेरकाय (हिंसकाय जनाय) ५ ४४ २ [प्रेरणार्थक चुद धातो शतृ]

अचोदयः धर्मे प्रेरये, प्र०—अत्र लिडर्थे लङ् १ ४२ ५ **अचोदयत्**=प्रेरयति ५ ३१ ३ [प्रेरणार्थकचुद (चुरादि०) धातो रूपाणि]

अच्छ=श्रेष्ठार्थे ३ २५ सम्यग्रीत्या ४ २० सुष्ठु १ १०४ ५ श्रैष्ठ्ये ३ ५७ ३ यथाक्रमम् २ १६ ३ उत्तमरीत्या १ १२३ ४ निश्शेषार्थे १ १३० १ शोभनतया १ १२६ ५ उत्तमेन प्रकारेण १ ४४ ४ सुष्ठुरीत्या २० ४६ शोभने ३३ ५५ सम्यक् ३ ११ अन्व०—प्रशस्तम् १ ६ ६ साक्षात् १ २ २ [अच्छाभेराप्तमिति शाकपूणि निरु० ५ २८ २]

अच्छान् यच्छन्तु प्रददतु। प्र०—अत्र 'छान्दसो वर्ण-लोपो वा' इति यलोप ६ २८ ५ [यमु उपरमे धातो सामान्ये लङ्। यच्छादेश]

अच्छान्तः विद्ययाऽऽच्छादयन्त (विद्वास) १ १६५ १२ [छद अपवारणे धातोर्णिजन्तान् छतृ प्रत्यय। छन्दसो दकारलोपश्च]

अच्छिद्यमानया छेत्तुमनर्हया (सूच्या=सीवनसाधनया) २ ३२ ४ [छिदिर् द्वैधीकरणे कर्मणि शानच्]

अच्छिद्रम् छिद्रवर्जितम् (शर्म=गृहम्) ५ ६२ ६ छेदरहित (सङ्गम्) ६ ४६ ७ **अच्छिद्रस्य**=अखण्डितस्य (दृते=मेघस्य) ६ ४८ १८ **अच्छिद्रा**=अच्छिन्नानि (शर्म=गृहाणि) ३ १५ ५ छिद्ररहितानि भा०—रोगरहितानि (गात्रा=गात्राणि) २५ ४७ द्विधाभाव-रहितानि (गात्रा=अङ्गानि) १ १६२ १८ अच्छिद्राणि

(शर्माणि) १ ५८ ८ अच्छिन्ना (पदार्था) १३ १५ ५ **अच्छिद्राः**=छिद्ररहिता (पदार्था) ११५२१ **अच्छिद्रेण**=न विद्यते छिद्र छेदन यस्मिंस्तेन (यज्ञेन) १ ३१ छिद्ररहितेन एकरसेन (पाणिना=किरणसमूहेन व्यवहारेण) ११६ छिद्ररहितं (रश्मिभि=किरणैः) ११२ निरन्तरेण व्यापकेन प्रकाशेन वा (पाणिना=स्तुतिसमूहेन) १२० निरन्तरेण (यज्ञेन) १३१ अविनाशिना विज्ञानेन ४४ अविच्छिन्नेन निरन्तरेण (पवित्रेण=व्यवहारेण) १०६ **अच्छिद्रे**=अदोषे (विद्युदन्तरिक्षे) ११ ३० [छिदिर द्वैधीकरणे तत, स्फायितञ्चि० इत्युणादिना रक्, तत्रनिषेध]

अच्छिद्रोतिः अच्छिद्राऽच्छिन्ना द्वैधीभूता ऊतीरक्षणादिक्रिया यस्मात् स (शिशु) ११४५ ३ [अच्छिद्रा+रक्षणाद्यर्थक-अवधातो क्तिनि 'ऊतियूति०' निपातनात्साधु]

अच्छिन्नपत्राः अविच्छिन्नानि पत्राणि कर्मसाधनानि यासा ता (देवी=विदुषा स्त्रिय) १२२११ अच्छिन्नानि पत्राणि यासा ता (प्रजा) १३ ३० अखण्डितानि पत्राणि वस्त्राणि यानानि वा यासा ता (देवी=दिव्यगुणप्रदा स्त्रिय) ११६१ **अच्छिन्नम्** छेदभेदरहितम् [अच्छिन्नम्=नञ्+छिद्+क्त । पत्रम्=पत्लृगतौ धातो 'दाम्नीशस०' (अ० ३ २ १८२) सूत्रेण करणे ष्ट्रन् प्रत्यय] (इन्द्र=विद्युतम्) २०४३ **अच्छिन्नस्य**=अखण्डितस्य (द्रव्यस्य) ७ १४ [नञ्+छिद्+क्त]

अच्छेत अच्छ निर्मल स्वरूपमित प्राप्त (विश्वकर्मा=सभापति) ८ ५४ [अच्छ+इण् गतौ+क्त]

अच्छेदि छिद्येत् १११६ १५ [छिदिर् द्वैधीकरणे धातो कर्मणि लुङ्]

अच्छोक्तिभि. अच्छ श्रेष्ठा उक्तयो वचनानि यासु स्तुतिषु ताभि १६१ ३ शोभनैर्वचोभि ११८४२ **अच्छोक्तौ**=सत्योक्तौ सम्यग्वचने वा ५ ४११६ [अच्छ+वच्+क्तिन् । वकारस्योकार सम्प्रसारणेन]

अच्यत सम्यक् प्राप्नुत ५ ५४ १२ [अचु गतौ धातो रूपम्]

अच्यवयत् निपातयति २ ४४ २ [च्युङ् गतौ, ततो णिजन्ताल् लङ्]

अच्युतच्युत् योऽच्युतेषु च्यवते नाऽच्यावयति (इन्द्र=परमेश्वरो विद्युद्वा) २१२ ६ योऽच्युतमचलन्त च्यावयति (सूर्य) ६ १८ ५ [अत्र पर्णगुपिवत् णिलुक् । अच्युत=च्युङ् गतौ+क्त, तत्रनिषेध । च्युत्=च्युङ् णिच्+क्विप् । एतयो समास]

अच्युतम् कारणरूपेण प्रवाहरूपेण वाऽविनाशि (रज= पृथिव्यादिलोकम्) १५६ ५ नाशरहितम् (विद्युज्ज्योति) ६ १५ १ अविनाशिनम् ७ ३ ३ **अच्युतः**=अक्षय (इन्द्र) १ ५२ २ नाशरहित (गन्ध) २० २३ **अच्युता**=नाशरहितानि (सम्भरणि=अभ्राणि) २ २४ २ अविनाशिना (प्रेम्णा) ६ २२ ६ क्षेतुमशक्येन (ओजसा) १ ८५ ४ क्षयरहितानि (जन्तुविशेषाणि) ६ ३१ २

अच्युतानाम् कारणजीवानाम् ७ २५ **अच्युतानि**=अक्षीणानि शत्रुसैन्यानि ३ ३० ४ [अग्निरच्युत ऋ० १६१६]

अच्युतक्षित् योऽच्युतान् नाशरहितान् पदार्थान् क्षियति निवासयति स (ईश्वर) ५ १३

अच्युतक्षित्तमः योऽच्युत क्षियति निवासयति सोऽतिशयित (ईश्वर) ७ २५ [अच्युतोपपदात् 'क्षि निवासगत्यो' धातो क्विप् । अच्युतक्षिदसि दिव दृह (अन्तरिक्ष स्थान) तै स० १ २ १२ ३]

अज जानीहि १ १७४ ३ अजति प्रकाश प्रक्षिप्य द्योतयति, प्र०—अत्र व्यत्ययो लडर्थे लोडन्तगतो ण्यर्थश्च १२३ १३ प्रक्षिप १ ४२ ३ समन्ताद् दूरे प्रक्षिप ६ ४७ ३१ विज्ञापय ६ ५५ ६ [अजगतिक्षेपणयोर् धातोर्लोट्]

अजकावम् योऽजान् जीवान् कावयति पीडयति तम् (रोग पापाचरण वा) ७ ५० १ [कुशब्दे धातोर्णिजन्तात् 'कर्मण्यण्' (अ० ३ २ १) सूत्रेणाण् प्रत्यय । अनेकार्थत्वाद् धातूनामत्र पीडनार्थे कु धातु]

अजगन् गच्छेत् । प्र०—अत्र लङि तिपि 'बहुल छन्दसि' इति शप श्लु 'मो नो धातो' इति मस्य न ११३० ६ गच्छन्ति ११८३ ७ गमयत ५ ३११० पुन पुन प्राप्नोति ११६१४ प्राप्नुया ३ ६ ७ गच्छतु ८ १८ ७ [अजगन्=गतिकर्मा निघ० २ १४]

अजगरः महान् सर्प २४ ३८

अजतम् प्रापयत २ ३६ ७ **अजति**=गच्छति ५ ३७ ४ प्राप्नोति ५ ३४ ८ जानाति प्रक्षिपति वा ११६११० प्रक्षिपति ६ ६६ ७ प्राप्य रक्षति १३३ ३ **अजतु**=ददातु प्राप्नोतु वा ६ ५४ १० **अजते**=क्षिपति प्र०—अत्र व्यत्ययेनात्मनेपदम् । १.६५ ७ **अजथ**=गच्छथ ५ ५४ ४ **अजध्वम्**=प्राप्नुत ६ ४८ ११ [अज गतिक्षेपणयोर् धातो रूपाणि]

अजनत् जनयन्ति ४ ५ ५ **अजनन्**=जनयन्ति

२ १३ ५ **अजनयत्**=जनयति १२ १ **अजनयतु**=प्रसिद्ध करे स० वि० १३४ **अजनयन्**=जनयन्ति १ ६६.२ उत्पादयन्तु २०.३० **अजनयन्त**=जनयन्ति ४ १ १२. उत्पादयन्ति १ १६८ ६ प्रकटयन्ति १ ५६ २ **अजनयः**= जनयसि, प्र०—अत्र लडर्थेलङ् १ ६१ २२ जनये ३४ २२ **अजनि**=जनयेत् २ ३४ २ जनयति १ ७४ ३ जायेत १ १४४ ४ जायते २ ५ ४ **अजन**=जनयति २ १३ ७ **अजनिष्ट**=जायते १ १२३ ६ जनितवान् १७ ३२ जनयति ५ ३२ ३ जात १५ २७ जनयेत् २.५ १ जायते १ १३३ १ जनयति ५ ३२ ३ [जनी प्रादुर्भावे धातो रूपाणि । पर्णाङ्गुपिवण्णोर्लुक् । छान्दसत्वात् शप श्यन् न भवति]

अजयत् बढाते हो ९ ३२ जयति २३ १७ जयेत् ४ ७ ११ जयेदुत्कर्षेत् ९ ३१ **अजयः**=जय १९ ७१. जयति १ ३२ १२ **अजयताम्**=उत्तम करो ९ ३१ [जि जये धातो रूपाणि]

अजनयन् अप्रकटयन् (जन) २ १० ३ [जनी प्रादुर्भावे+णिच्+शतृ । नञ्समास]

अजनयः अजायमाना (मरुत =वायव) १ १३४ ४ [नञ्+जनी प्रादुर्भावे+इण् (उणादि) प्रत्यय]

अजपालम् अजाना रक्षकम् (जनम्) ३० ११ [अज+ पा रक्षणे धातोर् णिजन्तात्+अण् प्रत्यय]

अजभर्त्तन धारण करो स० वि० १९८ [डुभृञ् धारणपोषणयोर् धातो रूपम्]

अजरन्तीम्=वयोहानिरहिताम् (मही=भूमिम्) २१ ५ [जरन्तीम्=जॄष् वयोहानो धातो शतृ+ङीप् । नञ्समास]

अजर ! जरादोषरहित (अग्ने=विद्वज्जन) १ १२७ ९ योऽजे जन्मरहित ईश्वरे रमते तत्सम्बुद्धो (अग्ने=विद्वज्जन) प्र०—अत्र 'वाच्छन्दसि' इत्यविहितो ड १ १२७ ९ स्वय जरादोषरहित (अग्ने=ईश्वर) १ ५८ ४ जरारोगरहित (ब्रह्म) ६ २ ९ **अजरम्**=जरारहितम् (अग्निम्=ईश्वरम्) ५ ६ ४ जरादिरोगरहितम् (चक्रम्) १ १६४ २ वयो नाश-हीनम् (श्रव =यश) १.१२६ २ जरारहित शरीरम् ६ २१ १ हानिरहितम् (इन्द्र=विद्युतम्) ६ ३८ ३ जराव्याधिरहितम् (रुद्र=परमात्मानम्) ६ ४९ १० सनातन नाशरहित (राष्ट्रम्) ऋ० भू० २२३ जरादोषरहित (चक्रम्) १ १६४ १४ अक्षय (ब्रह्म=महद्धनम्) ३ ८ २ नाशरहित (क्षत्र=राज्य धन वा) ७ १८ २५ **अजरः**=जरारोगरहित (सूर्यो जीवात्मा परमात्मा वा) ६ ६८ ९ स्वस्वरूपेण जीर्णाऽवस्थारहित (ईश्वर) १ ५८ २. जरारहित (राजा) ६ ४८ ३ वृद्धावस्थारहित (राजा) ५ ४४ ३ नाशरहित (पावक) ५ ७ ४ अवृद्धः (राजा) ५ ४ २ हानिरहित (सूर्य) १ १४५ २ नित्य (अग्नि =पावक) ३ २३ १ जरादोषरहित (परमेश्वर) ६ ४ ३ **अजरा** वयोहानिरहिता (उषा) १ ११३ १३ जरारहिता (रात्रि) ५ ३४ १ **अजरासः**=वयोहानि-रहिता (अग्न्यादय पदार्था) ३३ १ जरारोगरहिता (मनुष्या) ७ ५४ २ **अजराः**=जन्मजरामृत्युधर्मादि-रहितत्वात् कारणरूपेण नित्या (रुद्रा) १ ६४ ३ वयोहानि-रहिता (प्रजाजना) १ १२७ ५ जरारोगरहिता (सज्जना) ३ १८ २ व्ययरहिता (अग्नय) ७ ३ ३ हानिरहिता. (त्विषा =विद्यासुशीलप्रकाशा) १ १४३ ३ **अजरे**=अजीर्णे (द्यावापृथिवी=भूमिसूर्यौ) ६ ७० १ जीर्णाऽवस्थारहिते अहोरात्रे ३ ६ ४ स्वस्वरूपेण जरानाशरहिते (द्यावापृथिवी =सूर्यभूमी) ३४ ४५ **अजरेभिः**=जराऽऽदिरोगरहितै (ज्ञानै) ६ ६ २ अजरैर्हानिरहितै (प्रबन्धै) १ १६० ४. जरारहितै (अश्विना=सभासेनाध्यक्षौ) १ ११२ ६ अविनाशिनौ (पक्षौ=परिग्रहो कार्यकारणरूपौ) १८ ५२ [जॄष् वयोहानौ धातो पचाद्यच् प्रत्यये जर, न जरोऽजर । अजरम्=अजरणधर्माणम् निरु० ४ २७]

अजरयू जरादिदोषरहितौ (सूर्याचन्द्रमसौ) १ ११६ २० ['अजर' सुबन्तादाचारेऽर्थे क्यच् । 'क्याच्छन्दसि' (अ० ३ २ १७०) सूत्रेण उ प्रत्यय । 'न छन्दस्यपुत्रस्य' इति प्रतिषेधान्न दीर्घो न चेकारादेश]

अजलः पक्षिविशेष २४ ३४

अजवसः वेगरहित (इन्द्र =सूर्य) २ १५ ६. जु वेगिताया गतौ, ['जुरिति सौत्रो धातु' जवति गतिकर्मा निघ० २ १४ 'ऋदोरप्'इत्यप् प्रत्यय । "जवसवी छन्दसि०" वा० ३.३ ५६ इति वा अच् प्रत्यय । तत्प्रतिषेध]

अजस्य अनुत्पन्नस्याऽनादेर्जीवस्याऽव्यक्तस्य वा १७ ३० प्रकृतेर्जीवस्य वा १ १६४ ६ [जनी प्रादुर्भावे, ततो नञ्पूर्वात् ड प्रत्यय । ब्रह्म वाऽअज श० ६ ४-४ १५ आजा ह वै नामैषा यदजैतया ह्येन (सोम) अन्तत आजति तामेतत् परोऽक्षमजेत्याचक्षते श० ३ ३ ३ ९. प्रजापतेर्वै शोकादजा समभवन् श० ६ ५ ४ १६ यज्ञस्य शीर्षच्छिन्नस्य शुगुदक्रामत्ततोऽजा समभवत् श० १४ १ २ २३ तपसो ह वा एषा प्रजापते सम्भूता यदजा तस्मादाह तपसस्तनूरसीति श० ३ ३ ३ ८ आग्नेयी वा एषा यदजा तै० ३ ७ ३ १ अजा ह सर्वा ओषधीरत्ति श० ६ ५ ४ १६ सा (अजा) यत् त्रि सवत्सरस्य

विजायते तेन परम पशु श० ३ ३ ३ ८ सा (अजा) यत् त्रि सवत्सरस्य विजायते ते प्रजापतेर्वर्ण श० ३ ३ ३ ८ वाचोऽजम् श० ७ ५ २ ६

अजस्रम् सततम् १ १०० १४ निरन्तरव्यापक (ज्योति = तेज) स० वि० १६६ निरन्तरम् २६ ६ भा०—नित्यम् १२ १८ **अजस्रया**=निरन्तरया क्रियया ७ १ ३ अनुपक्षीणया (सूर्म्या=ऐश्वर्येण) १७ ७६ **अजस्रः**=अजस्र गमन विद्यते यस्य स (घर्म =यज्ञ) प्र०—अत्र 'अर्शआदिभ्योऽच्' इत्यच् १८ ६६ बहुरजस्र प्रकाशो निरन्तर विद्यते यस्मिन् स (भानु =सूर्य) ११ ५४ निरन्तर (जीव) ३ १ २१ निरन्तर गन्ता (घर्म =सूर्य) ३ २६ ७ **अजस्राः**=अहिसका (आप्ता विद्वास) ४ ५५ २ (जमु मोक्षणे) दिवादि०, जमु हिसाया-मिति चुरादि०, जमु ताडने चुरादि०, ततो नञ्पूर्वात्। 'नमिकम्पिस्म्यजस०' अ० ३ २ १६७ इति सूत्रेण र प्रत्यय। स्वभावादय क्रियासातत्ये। 'अग्निरजस्र' श० ६ ७ ४ ३)

अजहात् जह्यात् १६ ७२ जहाति त्यजति ४ २६ ७ [ओहाक् त्यागे सामान्ये लङ्]

अजुह्वत स्पर्द्धन्ते १ ५१ ५ **अजुह्वत**=स्पर्द्धन्ते १ ५१ ५ [ह्वेञ् स्पर्धाया शब्दे च, विकरणव्यत्ययेन श्लु, लङि रुपम्]

अज. न जायते य ः (विद्वज्जन) १ १६२ २ प्राप्तव्यश्छाग १ १६२ ४ जन्मरहित (अर्वा=अग्न्यश्व.) १ १६३ १२ य कदाचिन्न जायते स ईश्वर ६ ५० १४ न जायते कदाचित् स (अहि =मेघ) २ ३१ ६ जिसका जन्म कभी न हो वह (ईश्वर) आर्याभि० २ १८ छागजाति-विशेष २४ ३२ क्षेपणशील (अर्वा=गन्ताऽश्व) २६ २३ जन्म-मरण से रहित (परमेश्वर) स० प्र० ४२८ अजर-अमर आत्मा स० वि० १८६ पशुविशेष २५ २७ जन्मादिरहित (जीव) २५ २५ प्राप्तव्यो मेष २१ २६ प्रेरक (इन्द्र =सूर्य) ३ ४५ २ [नञ्+जनी+ड प्रत्यय]

अजा जन्मरहिता प्रकृति २३ ५६ पशुविशेष (छाग) ६ ४६ १२ **अजा इव**=यथाऽजौ २ ३६ २ [गतिक्षेपणार्थकाद् अजधातो पचाद्यच् स्त्रियाम् अजादि-पाठाट्टाप्]

अजातशत्रुम् न जाता शत्रवो यस्य तम् (सत्पुरुषम्) ५ ३४ १ [जातशत्रुपदयोर्बहुव्रीहौ 'निष्ठा' अ० २ २ ३६ सूत्रेण जातशब्दस्य पूर्वनिपात]

अजातान् अप्रकटान्, भा०—अप्रसिद्धान् (अन्व०—शत्रून्) १५ १ युद्धेऽप्रकटान् शत्रुमेविनोऽमित्रान् (राजद्रोहिजनान्) १५ २ [जनी प्रादुर्भावे तत क्त प्रत्यय आकारश्चान्तादेश, तत्प्रतिषेध]

अजाति समन्ताज्जातिर्जनन यस्मिन् कुले तत् ५ २ ५ प्राप्नुयात् ५ २ १२ [जनी प्रादुर्भावे तत. स्त्रिया क्तिन् प्रत्यय]

अजानन् जानन्ति १ ७२ ८ **जानीयुः** १ ७२ १० [ज्ञा अवबोधने, सामान्ये लङ् जादेशश्च]

अजानाम् जानीयाम् १ १६३ ६ **जानामि** २६ १७ **अजानि**=जानीयाम् २३ १६ दूर फेंकू आर्याभि० २ ४६। ['अजगतिक्षेपणयो' धातोर्लङ्]

अजामयः सपत्न्य इव शत्रव ६ २५ ३ **अजामिम्**= भोजन-रहित स्थानम्। प्र०—अत्र जमुधातोर्वपादिभ्य इतीञ् १३ १३ अभार्याम् १ १२४ ६ अप्रसिद्ध वैरिणम्। १ १११ ३ अन्यामसम्बन्धाम् (प्रजाम्) ६ ४४ १७ अभोगम् ४ ४ ५ **अजामिभिः**=अबन्धुवर्गै शत्रुभि १ १०० ११ **अजामीन्**=असम्बन्धिनो दुष्टान् ६ १६ ८ [जमु अदने धातोर् इञ् प्रत्यय। याधातोर्वा बाहुलकात् मि प्रत्यय आदेश्च जकारादेश। जमतेर्गति-कर्मण नि० ३ ६ जाम्यतिरेकनाम, बालिशस्य वा निरु० ४ २० तत्प्रतिषेध]

अजामि प्राप्नोमि ५ १६ ४ **अजाव**=प्राप्नुयाव १ १७६ ३ अज [गतिक्षेपणयो धातोर्लेटि लोटि च रूपाणि]

अजायत जात ३१ १२ **जायते** ३१ ५ उत्पन्नो-ऽस्ति १ १११ ४ **जायेत** १ १२८ ४ **अजायथाः**= एतद्विद्याप्राप्त्या प्रकटो भव, अन्व०—प्रसिद्धो भव प्र०—अत्र लोडर्थे लङ् १ ६ ३ प्रादुर्भूतो भव १ ५ ६ जायेथा १ १४१ ६ **अजायन्त**=उत्पन्ना ३१ ८ जायन्ते प्र०—अत्र लडर्थे लङ् ३४ १२ प्रादुर्भवन्ति १ ३७ २

अजायमानः स्वस्वरूपेणाऽनुत्पन्न सन्, भा०—स्वयमनुत्पन्न (ईश्वर) ३१ १६ अनुत्पन्नोऽज ऋ० भू० १३२ [जनी प्रादुर्भावे कर्मणि शानच्, तत्प्रतिषेध]

अजावयः अजाश्चावयश्च ते ३१ ८ बकरी, भेड आदि दूध देने वाले पशु स० वि० १४७ बकरी, भेड तथा उपलक्षण मे अन्य सुखदायक पशु आर्याभि० २ ४६ [अजावि आलभते भूम्ने तै० म० ५ १ ६ २ तस्मादेता (अजावय) त्रि सवत्सरस्य विजायमाना द्वौ त्रीनिति जनयन्ति श० ४ ५ ५ ६

अजाऽश्व । अजोऽनुत्पन्नो विद्युदश्वो यस्य तत्सम्बुद्धौ

(विद्वज्जन) ६ ५५ ३ अजा अश्वाश्च विद्यन्ते यस्य तत्सम्बुद्धौ (विद्वन्) १ १३८ ४ **अजाऽश्वम्**=अजाऽश्वाश्वाश्चाऽस्मिँस्तम् (आदित्यम्) ६ ५५ ४ **अजाश्व**:=अजा अश्वाश्च यस्य स (देव=विद्वान्) ६ ५८ २ [अजागोतिपूषणमाह । अजाश्च अजा अजना निरु० ४ २५]

अजासः पुष्टिकर्त्तुरश्वा ६ ५५ ६ अस्त्राऽस्त्र-प्रक्षेपका (राजादयो जना) ७ १८.१९ [अज गति-क्षेपणयो पचाद्यच्, प्रथमाबहुवचने जसि असुग् आगम]

अजासि प्राप्नुया २३ १६ [अज गतिक्षेपणयोर्धातो सामान्ये लट्]

अजाः नित्या (वह्नय=वोढार) ६ ५७ ३ [न जायन्त इत्यजा, नञ्युपपदे जनेर्ड]

अजिगात् प्राप्नोति, प्र०—अत्र लडर्थे लङ् 'जिगातीति गतिकर्मसु पठितम् निघ० २ १४ १ ३३ १३

अजिघांसत् हन्तुमिच्छति ४ १८ १२ [हन् हिसागत्योर्धातोरिच्छाया सन्, ततो लडि रूपम्]

अजिनसन्धम् जेतुमयोग्यान् य सन्दधाति तम् (नरम्) । प्र०—अत्र जिधातो कर्मणि नक् उणा० ३ २,३० १५ [नञ्+'जि जये' धातो 'इण्सिञ्०' उणादि० ३ २ सूत्रेण नक् प्र०—सन्ध=सम्युपपदे डुधाञ् धातो 'आतश्चोपसर्गे' सूत्रेण कर्तरि क प्रत्यय । तयो समास]

अजिन्वतम् प्रीणितम् १ ११२ ९ **अजिन्वत्**=जिन्वेत् १ १५६ ५ [जिवि प्रीणनार्थे भ्वादि०, ततो लङ् । जिन्वति गतिकर्मा निघ० २ १४ पदनाम निघ० ४ ३]

अजिरम् विषयादिषु प्रक्षेपक जराद्यवस्थारहित वा (मन) ३४ २ गन्तार प्रक्षेप्तारम् (विद्युदाख्य वह्निम्) ३ ९ ८ ज्ञानवन्तम् (विद्वासम्) १ १३८ २ प्राप्तव्य प्रक्षेपक वा (शस्त्राऽस्त्रम्), ४ ४३ ६ गतिमान् (मन=मन को) स० प्र० २४७ **अजिर**:=य शीघ्र न गच्छति स (शूर) ६ ६४ ३ **अजिरा**=गन्तारौ ५ ५६ ६ यानाना प्रक्षेप्तारौ (हरी=अश्वौ) ३ ३५ २ **अजिराः**=अजिराणि क्षेप्तु गमयितुमनर्हाणि (वस्तूनि) १ १३४ ३ **अजिराय**=अश्ववार प्रक्षेप्त्रे (अश्वाय) १६ ३१ **अजिरासः**=प्राप्तशीला (कृपीवला) १ १४० ४ वेगवन्त (परमाणव) ५ ४७ २ [अज गतिक्षेपणयोर्धातो 'अजिरशिशिर' उणादि० १ ५३ सूत्रेण किरच् । निपातनात् 'वी'रादेशो न भवति । अजिरमिति क्षिप्रनाम । निघ० २ १५ अजिरा इति नदीनाम । निघ० १ १३

एष वै मृत्युर्यद्वायुरजिर एव नाम । जै० १ २९]

अजिहीत प्राप्नोति २ २३ १८ [ओहाङ् गतौ जुहोत्यादि० ततो लङ्]

अजीगः भृश प्राप्नुयात् १ १६३ ७ भृश गिरति ५ १ ३ जागरयति ६ ६५ १ प्राप्नोति ३ ५८ १ स्वव्याप्त्या निगरतीव १ ११३ ४ प्रगल्भान् करोषि १ ११३ ९ गच्छति प्राप्नोति ६ ४७ ३ जागरयति ७ १० १ अन्धकार निगरति । प्र०—गृ निगरणे इत्यस्माद् 'बहुल छन्दसि' इति शप स्थाने श्लु 'तुजादीनाम्०, इति दीर्घश्च १ ९२ ६ [गृ निगरणे धातोर्णिजन्ताद्वा लुङ् 'अजीग' इति पदनाम निघ० ४ ३]

अजीगमम् सम्यक् प्राप्नुयाम् ८.२९ [गम्लृ गतौ धातो 'बहुल छन्दसि' इति शप स्थाने श्लु]

अजीजनत् जनयन्ति ३ २३ ३ जनयति ४ ५३ २ **अजीजनन्**=जनयन्ति ३ २९ १३ **अजीजनः**=जनयति २२ १८ जनय ५ ८३ १० [जनी प्रादुर्भावे ततो णिजन्तात् सामान्ये लुङ् । अजीजनन्=अजनयन् । निरु० ७ २८]

अजीजपत जापयत ९ १२ उत्कर्षयत ९ १२ सम्यग् प्रापयत ९ १२ [जि जये धातोर्णिजन्तात् लुङ् 'क्रीङ्जीनाणौ' अ० ६ १ ४८ सूत्रेणाकारादेशे । पुगागमे च रूपम्]

अजुर्यम् यदजूर्षु हानिरहितेषु साधु तत् (पदम्) १ १४६ ४ जीर्णाऽवस्थारहितम् (त्वाष्ट्र=सूर्यस्येद तेज) ३ ७ ४ अजीर्णम् (इन्द्र=शत्रुविदारक राजानम्) ६ १७ १३ युद्धविद्यासङ्गतम् (व्यवहारम्) १ ६७ १ हानिरहितम् (श्रव=श्रवणम्) ३ ५३ १५ **अजुर्य**:=अजीर्णो युवा (इन्द्र=राजा) ६ ३० १ अजीर्णेषु भव (विद्वान् श्रीमज्जन) २ ८ २ **अजुर्या**=अजीर्णौ (जलाग्नी) २ ३९ ५ **अजुर्याः**=शरीरात्मजीर्णाऽवस्थारहिता (देवा=विद्वास) ३ ७ ७ अजीर्णा (उषस=प्रातर्वेला) ४ ५१ ६ ज्वररहितेषु साध्वी (पतिव्रता स्त्रिय) २ ३५ **अजुर्य**=अजीर्ण (जन) ६ २२ ९ [नञ् उपपदे 'जृ वयोहानौ' धातो क्विपि अजुर्, 'बहुल छन्दसीति उकारादेश' 'तत्र साधुरिति' यत्]

अजुर्यमुश्च प्रक्षिपेयुर्नियच्छेयुश्च ५ ६ १० [अजु०=अजगतिक्षेपणयो धातो रूपम् । यमु=यमु उपरमे धातो रूपम्]

अजुषन्त जुषन्ते ४ ३३ ६ प्रीतवन्त सेवितवन्त (जना) ४ १ **अजुष्टम्**=सेवेध्वम् ५ ७७ २ **अजुषन्**=

सेवन्ते, प्र० अत्र 'बहुलं छन्दसीति रुडागम १ ७१ १ अजुषत=प्रसन्न रहो २ ३७ ४ [जुष प्रीतिसेवनयोर्धातो रूपाणि । जुषते कान्तिकर्मा निघ० २ ६]

अजुष्टा असेविनौ (चन्द्रौषधिगणौ) २ ४० २ **अजुष्टात्**=धर्ममसेवमानात् (दुर्जनात्) ७ १ १३ [नञ्+जुष प्रीतिसेवनयोर्धातो क्त प्रत्यय]

अजुष्टि असेवनम् ६ ३ २ अजुष्टो=अप्रतीताव-सेवने १ ६३ ५ [नञ् + जुष प्रीतिसेवनयोर्धातोर्भावे क्तिन्]

अजूर्यत: अप्राप्तजीर्णावस्थस्य (राज्ञ) ५ ४२ ६ अजीर्णस्य (राज्ञ) ३ ४६ १ **अजूर्यन्**=वृद्धा जायन्ते १ १५२ २ [जॄष् वयोहानौ धातो जूरी हिंसावयोहान्यो (दिवादि०) धातोर्वा रूपम्]

अजेत प्रक्षिपेत् । प्र०—अत्र व्यत्ययेनाऽऽत्मनेपदम् १ १२९ ६ [अज गतिक्षेपणयोर्धातोर्लिङि रूपम्]

अजेव यथाऽजौ २ ३९ २ [अजा+इवेति विग्रह अजा पशुविशेष]

अजोषा: जुषसे । प्र०—अत्र 'छन्दस्युभयथा' इत्या-र्धधातुकसञ्ज्ञाश्रयणाल्लघूपधगुण 'छान्दसो वर्णलोपो वा' इति थासस्थकारस्य लोपेनेद सिध्यति १ ६ ४

अजोष्य. असेवनीय (पदार्थ) १ ३८ ५ [जुष् प्रीति-सेवनयोर्धातोर्ण्यत् प्रत्यय]

अजोहवीत् पुन पुन स्पर्द्धेत् १ ११७ १५ भृशमा-ह्वयेत् १ ११७ १६ भृश गृह्णीयात् १ ११६ १३ भृश-माह्वयति ५ ७८ ४ [ह्वेञ् स्पर्द्धाया शब्दे च, धातोर्णि-जन्ताल् लुङ्, आदानार्थकजुहोतेर्वा]

अज्ञातकेता: अज्ञात केत प्रज्ञा यैस्ते मूढा (चोरा) ५ ३ ११ ['केत' इति प्रज्ञानाम । निघ० ३ ६]

अज्ञाता: न ज्ञाता (शत्रुसेना) ४ २३ ७ [नञ्+ज्ञा अवबोधने+क्त प्रत्यय]

अज्ञायि ज्ञायते ६ ६५ १ [ज्ञा अवबोधने तस्य कर्मणि लुङि रूपम्]

अज्म अजन्ति प्रक्षिपन्ति शत्रून् येन यस्मिन् वा । प्र०—अत्र 'सुपा सुलुग्०' इति विभक्तेर्लुक् 'अज्मेति सङ्ग्रामनाम०, निघ० २ १७,१७ ३८ विजय प्राप्नुम ऋ० भू० २२४ प्राप्तव्यम् (अज्ञम्=अत्तव्य द्रव्यम्) ६ ४४ बलम् १ १५८ ३ **अज्मन्**=अजन्ति प्रक्षिपन्ति शत्रून् यस्मिन्नत्र (सङ्ग्रामे) १ ११२ १७ मार्गे ६ ३१ २ **अज्मनि**=पथि १ १६६ ५ **अज्मम्**=अजन्ति गच्छन्ति यस्मिन् मार्गे तत् (मार्गम्) ३ २ १२ गमनाऽधिकरण मार्गम् १ १६३ १० अजन्ति गच्छन्ति यस्मिंस्त मार्गम् ७९ २१ **अज्मस्य**=अन्तरिक्षे प्रक्षिप्तस्य (भुवनस्य) ४ ५३ ४ **अज्मेषु**=सङ्ग्रामेषु । १ ८७ ३ अजन्ति गच्छन्ति येषु सङ्ग्रामेषु ५ ८७ ७ प्रापकक्षेपकादिगुणेषु सत्सु १ ३७ ८ [अज गतिक्षेपणयोर्धातोर् औणादिको 'म' प्रत्यय, बाहुलकात् 'वी' भावो न भवति । 'अज्म' इति गृहनाम निघ० ३ ४ अज्मम् अजिनमाजिम् । निरु० ४ १३]

अज्यताम् मयुज्यताम् १२ ७०

अज्यते प्रक्षिप्यते ३ १७ १ व्यज्यते १ १८८ २ प्राप्यते, भा०—गृह्यते ३३ ८२ [गतिक्षेपणार्थकाद् अजधातो कर्मणि रूपाणि]

अज्यमान: चाल्यमान (अश्व) ५ ३० १४ [अज गतिक्षेपणयोर्धातो कर्मणि शानच्]

अज्यसे गम्यसे ६ २ ८ प्राप्यसे ३ ४० ६ [अज धातो कर्मणि लट्]

अज्येष्ठास: ज्येष्ठभावरहिता (भ्रातर =बन्धव) ५ ६० ५ **अज्येष्ठा:**=अविद्यमानो ज्येष्ठो येषान्ते (मर्या =मनुष्या) ५ ५९ ६ [ज्येष्ठ =वृद्धशब्दाद् आति-शयिक इष्ठन्, ज्यादेशश्च, तत्प्रतिषेध]

अज्राणाम् प्राप्तव्यानाम् (पदार्थानाम्) २१ ४३ कमनीयानाम् (जनानाम्) २१ ४४ **अज्रान्**=येऽजन्ति नित्य गच्छन्ति तान् (राजसेवकान्) ४ १९ ७ जगति प्रक्षिप्तान् (व्याप्तान् पदार्थान्) ४ १ १७ सततगामिन (लोकान्) ५ ५४ ४ **अज्रा:**=प्रक्षेप्तार (गिरय =मेघा) ६ २४ ८ सततगामिन ५ ५४ ४ [गतिक्षेपणार्थकाद् अज धातोर्बाहुलकाद् उणादि 'रक्' प्रत्यय । 'अज्रा' इति क्षिप्रनाम । निघ० २ १५]

अञ्च प्राप्नुहि २७ ४५ [अञ्चु गतियाचनयो, तस्य लोटि रूपम्]

अञ्जते प्रापयन्ति १ ९२ १ कामयन्ते १ १५१ ८ गच्छन्ति व्यक्ति कुर्वन्ति ७ ५७ ३ गच्छन्ति ७ २ ५ अञ्जन्ति गच्छन्ति १ ९२ ५ प्रकटीकुर्वन् (विद्वज्जन) २ ३ २ प्रकटीकुर्यु ३ ३८ ३ **अञ्जन्ति**=कामयन्ते प्रकटयन्ति वा ५ ४३ ७ कामयन्ते ३ ८ १ सुप्रकटयन्ति ६ ११ ४ व्यक्तीकुर्वन्ति ५ ३ २ प्रकटयन्ति ३ १४ ३ **अञ्जन्तु**=प्रकटीकुर्वन्तु ६ ६९ ३ कामयन्ताम् २३ ८ **अञ्जत:**=कामयेयाम् २ ३ ७ **अञ्जाते**=प्रसिध्यत

२ ६ १ प्रकाशयत २१ ३५ **अञ्जाथे**=प्रकट करो ३३ ३३ **अञ्जे**=कामये, प्र०—अत्र विकरणालुक् व्यत्ययेनात्मनेपदञ्च १ ६१ ५ स्वेच्छया गृह्णामि १ ६४ १ [अञ्जू व्यक्तिक्षणकान्तिगतिषु, ततो व्यत्ययेनात्मनेपद शप् च]

अञ्जन् व्यक्तो भवन् (अग्नि) २६ १ [अञ्जू व्यक्तिम्रक्षणकान्तिगतिषु, धातो शतृ प्रत्यय]

अञ्जयः प्रसिद्ध-प्रशसा (जना) १ १६६ १० [अञ्जू धातोर् औणादिक इनुप्रत्यय]

अञ्जसा शीघ्रम् १ १३६ ४

अञ्जसा व्यक्तेन शत्रूणा म्लेच्छनेन कान्त्या ज्ञापनेन वा ५ ५ साक्षात् ६ ५४ १ स्वच्छन्देन वेगवत्त्वेन ६ १६ ३ **अञ्जसि**=प्रकटे १ १३२ २ कामयमाने (सेनापतौ) १ १३२ २ **अञ्जसी**=प्रसिद्धा (वीरपत्नी) १ १०४ ४ **अञ्ज.**=सर्वैं कमनीय (विद्वज्जन) १ १६० २ व्यक्तागमनशील, प्र०—'अञ्जू व्यक्तिकरण' इत्यस्य प्रयोग १ ३२ २

अञ्जान प्रसिद्धो, दिव्यान् गुणान् प्रकटीकुर्वन् (अग्नि =पावक) ३ १० ४ **अञ्जानाः**=ज्ञापयन्त (कन्या =कुमार्य्य) १७ ६७ प्रकटयन्त्य (कन्या =कुमार्य्य) ४ ५८ ६

अञ्जि व्यक्त रूपम् १ १२४ ८ कमनीय रूपम् १७ ६७ व्यक्त सुलक्षणम् ४ ५८ ६ गमनम् ७ ५७ ३ **अञ्जिभि**=प्रकटै (प्रकाशादिभि) २ ३४ १३. व्यक्तै रक्षणविज्ञानादिभि १ ८७ १ व्यक्तीकरणादिधर्मै १ ६४ ४ व्यक्तैर्विज्ञानादिगुणनिमित्तै १ ८५ ३ प्रकटीकरणैर्गुणै १ ११३ १४ विद्याशुभगुणप्रकटकारकै (सूरिभि =विद्वद्भि) ५ ५२ १५ साधनानि प्रकटयद्भि (सज्जनै), प्र०—सर्वधातुभ्य इन् उ० ४ १२३ इति कर्त्तरीन् प्रत्यय १ ३६ १३ **अञ्जिम्**=प्रसिद्धन्यायम्, भा०—तीव्रदण्डम् २३ २१ **अञ्जिषु**=प्रकटेषु व्यवहारेषु ५ ५३ ४ कामयमानेषु (जनेषु) २ ३६ [रश्मयो वाऽएतस्य (आदित्यस्य) अञ्जयो वाघत शत० ६ ४ ३ १० छन्दासि वा अञ्जयो वाघत० ऐ० २ २ समञ्जते भानुना० निरु० १२ ७]

अञ्जिमन्त: प्रकृष्टा अञ्जय कामना विद्यन्ते येषान्ते (विद्वज्जना) ५ ५७ ५ [अत्र अञ्जिप्रातिपदिकात् प्रशसार्थे मतुप्]

अञ्जिसक्थः अञ्जीनि प्रसिद्धानि सक्थीनि यस्य स (पशु पक्षी वा) २४ ४ [अञ्जिसक्थिपदयोर्बहुव्रीहिसमासे 'बहुव्रीहौ सक्थ्यक्ष्णो० अ० ५ ४ १ ३३ इति सूत्रेण समासान्तषच् प्रत्यये टिलोपे च रूपम्]

अणवः सूक्ष्मतण्डुला १८ १२ [अत्र अण्-शब्दार्थे (भ्वादि०) ततो 'धान्ये नित्' उणादि १ ६ सूत्रेण उ प्रत्यय [अणुरनु स्थवीयासमुपसर्गो लुप्तनामकरणो यथा सम्प्रति निरु० ६.२२ 'प्रियङ्गवश्च मेऽणवश्च' मे तै० स० ४ ७ ४ ३]

अणीयः सूक्ष्मम् (द्रव्यम्) ऋ० भू० ११६ [अत्र 'अणु-प्रातिपदिकात् आतिशयिक ईयसुन्]

अण्वीभि कारणैं, प्रकाशाऽवयवैं, किरणैरङ्गुतिभिर्वा, सूर्यपक्षे—किरणकारणाऽवयवैं, प्र०—अत्र 'वोतो गुणवचनात्, अ० ४ १ ४४. अनेन ङीपि प्राप्ते व्यत्ययेन ङीन् १ ३ ४ अङ्गुलिभि २० ८७ ['अण्व्य' इत्यङ्गुलिनामसु पठितम् निघ० २ ५]

अतक्षत् तनूकरोति १ ६२ १३ **अतक्षत**=अवस्तृणीत १ १६१ ७ अतिसूक्ष्मा धिय कुर्वन्ति १ ८६ ३ **अतक्षन्**=तनूकुर्वन्ति २ ३१ ७ कुर्वन्ति ७ ७ ६ **अतक्षम्**=तनूकुर्याम् १ १०६ १ निर्ममे ५ २ ११ प्राप्नुयाम् ५ २६ १५ **अतक्षिषुः**=सूक्ष्मधिय सम्पादयन्तु १ १३० ६ सवृणुयु, प्र०—तक्ष त्वचने, त्वचन सवरण-मिति १ १३० ६ [तक्षू तनूकरणे, तक्ष त्वचने च भ्वादी]

अतयाः इव प्रतिकूल इव, प्र०—अत्राऽऽचारे क्विप् तदन्ताच्च प्रत्यय १ ८२ १ [नञ्युपपदे तथा शब्दात् आचारेऽर्थे 'सर्वप्रातिपदिकेभ्य इत्येके' वा० ३ १ ११ वार्तिकेन क्विप् प्रत्यय]

अतन् व्याप्नुवन् (सूर्य) ६ ६१ ६ [अत्र 'अत सातत्यगमने' धातो शतृप्रत्यय । अतति गतिकर्मा निघ० २ १४]

अतन्द्रः अनलस (विद्वज्जन) १ ७२ ७ [नञ्तन्द्रा-शब्दयोर्बहुव्रीहि]

अतन्द्रासः नियतरूपत्वादनालस्यादियुक्ता (युवतय) १ ६ ५२ अनलसा (राजभृत्या) ४ ४ १२

अतन्वत विस्तृत कृतवन्त, कुर्वन्ति करिष्यन्ति च ऋ० भू० १२७ तन्वते, विस्तृणन्ति, भा०—विस्तारयेयु ३१ १४ विस्तृत कुरुत १६ १२ **अतनोत्**=विस्तृणाति २ १७ ४ [अत्र 'तनु विस्तारे' धातोर्लङ् सामान्य-काले]

अतपत् तपति ३ ३१ १० [तप् सतापे धातोर्लङ्]

अतप्ततनूः ब्रह्मचर्य, सत्यभाषण, शम दम, योगाऽभ्यास, जितेन्द्रियता, सत्सङ्ग आदि तपश्चर्या से रहित अपरिपक्व आत्माऽन्त करणयुक्त (मनुष्य) स० प्र० ४२३

अतप्यमाने सन्तापरहिते (द्यावापृथिवी) १ १३५ ४ [नञ्+तप सन्तापे धातो कर्मणि शानच्]

अतमानम् अतत सतत प्राप्तम् (दिनम्) प्र०—अत्र व्यत्ययेनाऽऽत्मनेपदम् २ ३८ ३ **अतमानाः**=अतन्त (वीरजना) प्र०—अत्र व्यत्ययेनात्मनेपदम् ६ ६ २ [अत सातत्यगमने भ्वादि० । व्यत्ययेनात्मनेपदत्वेन शानच्]

अतमेरुः न ताम्यति येन यज्ञेन स (यज्ञसम्पादक मुसन्तान) प्र०—तमुधातोर्बाहुलकादेरु प्रत्यय १ २३ न ताम्यति य स यज्ञकर्त्ता मनुष्य १ २३ [तमु काक्षायाम् दिवादि । बाहु० कर्त्तरि एरु प्रत्यय । नञ्समास]

अतरत् तरेत् ४ २७ २ तरति ७ १८ ६ **अतरन्**=तरन्ति ४ ४५ ११ प्लावयन्ति, प्र०—अत्र लडर्थे लङ् १ ३६ ८ **अतरः**=तरति १ ३२ १४ [तॄ प्लवनसन्तरणयो (भ्वादि०) धातोर्लङ्]

अतर्पयः तर्पय ४ १६ ५ [तृप तृप्तौ (चुरादि०) धातोर्लङ्]

अतव्यान् यतमान ५ ३३ २ [अतव्यान्=(अमहान्) तवस इति महतो नामधेयम्]

अतष्ट तनूकुरुत १ ५४ १२ निष्पादयत ४ ३५ ५ तक्षेरन् १ १६३ २ तक्ष्णोति तनूकरोति २६ १३ [तक्षू तनूकरणे भ्वादि०, ततो लुङ् सामान्ये]

अतसम् काष्ठम् १३ १२ कूपम् ४ ४ **अतसस्य**=व्याप्तस्य (मेघस्य) ३ ७ ३ **अतसानि**=नैरन्तर्येण गन्त्रीणि त्रसरेण्वादीनि २ ४ ७ **अतसेषु**=विस्तृतेष्वाकाशपवनादिषु पदार्थेषु १ ५८ २ वृक्षादिषु ४ ७ १० व्याप्तव्येषु तृणकाष्ठ-भूमिजलादिषु १ ५८ ४ **अतसे**=निरन्तर आकाशे १ १६६ ३ [अत सातत्यगमने धातोर् औणादिकोऽसच् प्रत्यय । अतसा अतसानि नि० ५ १२]

अतसि=निरन्तर गच्छति, प्रापयति, प्र०—अत्र व्यत्यय १ ३० ५ [अत सातत्यगमने ततो लट्]

अतसाय्यः परोपकारे निरन्तर वर्त्तमान (इन्द्र=दातृ-सज्जन) २ १६ ४ **अतसाय्या**=अतन्ति निरन्तर सुखानि गच्छन्ति यया सा (ऊति=रक्षणक्रिया । प्र० अत्र 'अतधातोर्बाहुलकादौणादिक' आय्य प्रत्ययोऽसुगागमश्च । [सायणाचार्येणेद पदमतधातोराय्यप्रत्यय वर्जयित्वा साय्यप्रत्ययान्तर कल्पितवाऽडागमेन व्याख्यात तदशुद्धम् १ ६३ ६]

अतंसयत् तसयत्यलङ्करोति, भा०—भूषयति २३ २४ [तसि अलङ्कारे (चुरादि०) धातोर्लङ् ।]

अतः हेत्वर्थे १ २३ १२ अस्मात् (शिक्षणात्) १ २६ बन्धनात् १ २५ बन्धनादुपदेशाद्वा १ २६ कारणात् १ १०१ ८ स्थानात् ४ २६ ५ अन्व०—अधर्मात् १२ ४५ अन्व०—पृथिवीस्थानात् १ ६ ६ [इदम सर्वनाम्न पञ्चम्यन्तात् तसिल्तद्धितप्रत्यय]

अतान् अतेयु प्रकाशयेयु ६ ६७ ६ [अत सातत्यगमने भ्वादि० । अतति गतिकर्मा निघ० २ १४]

अतारिषुः तरन्तु ३ ३३ १२ **अतारिष्म**=तरेम १ १८३ ६ सन्तरेम प्लवेमहि वा १ ६२ ६ **अतारीत्**=तारयति ७ ४ ५ तरत्युल्लङ्घयति वा, प्र०—अत्र वर्त्तमाने लुङ् १ ३२ ६ [तॄ प्लवनसन्तरणयोर् धातोर्लुङ् ।]

अति अन्तिके २ २७ १६ अतिक्रमणे २७ ६ अतिशये २७ ६ अत्यन्ते ५ ४२ पृथक् करके आर्याभि० १ ३३ उल्लङ्घने १ ६७ ७ व्याप्तिम् ६ ४ ५ [अति इत्यभिपूजितार्थे निरु० १ ३]

अतिकुल्वम् लोमरहितम् (पदार्थम्) ३० २२

अतिकृशम् बहुत पतली (वस्तु) ३० २२

अतिकृष्णम् बहुत काली (वस्तु) ३० २२

अतिक्रमिष्टम् अतिक्रमणम् १ ८२ ३ **अतिक्रमे**=अतिक्रमितुमुल्लङ्घितुम् १ १०५ १६ **अतिक्रामेम**=उल्लङ्घयेम १ १०५ ६ [क्रमु पादविक्षेपे (भ्वादि०) धातो रूपाणि]

अतिक्रुष्टाय अत्यन्त निन्दकाय (दुर्जनाय) ३० ५ [अति+क्रुश आह्वाने रोदने च, ततो वर्त्तमाने क्त प्रत्यय]

अतिक्षरति अतिवर्षन्ति ५ ६६ ५ [क्षर सचलने भ्वादि०]

अतिख्यः उपदेशोल्लङ्घन कुर्या १ ४ ३ [ख्या प्रकथने (अदादि०) अतिशब्दोऽतिक्रमणेऽर्थे]

अतिगाहेमहि उल्लङ्घ्य मित्रभाव प्राप्नुयाम २ ७ ३ [अतिशब्दोऽतिक्रमणे, गाहू विलोडने धातु । व्यत्ययेन परस्मैपदम्]

अतिचितयेम चिति सञ्ज्ञानमाचक्ष्महि ४ ३६ ८. [अति+चित सञ्चेतनने चुरादि, ततो विधिलिङ्]

अतिच्छन्दसम् अतिजगत्यादिप्रतिपादितम् २८ ३४

अतिछन्दसा=अतिजगत्यादिना २८ ४५ **अति-छन्दसे**=अतिजगत्यादिछन्दोऽर्थाय २४ १३ [एषा वै सर्वाणि छन्दांसि यदतिच्छन्दा श० ३ ३ २ ११]

अतिजुगुर्यात् अत्युद्यच्छेत् १ १७३ २ (अति+गुरी उद्यमने तुदादि, ततो लिङ्, व्यत्ययेन शप्रत्ययस्य स्थाने श्लु]

अतितरेम उल्लङ्घ्य पार गच्छेम ३ २७ ३ [अति+तृ+विधिलिङ्]

अतितस्थौ अतिशयेन तिष्ठति १ ६४ १३ [अति+स्था गतिनिवृत्तौ+यङ् लुङन्ताल् लिट्]

अतितुतुर्याम अतिविनाशयेम ५ ४५ ११ [अति+तूरी गतित्वरणहिंसनयोर् धातोर्लिङ् । व्यत्ययेन श्लु]

अतितृण्णम् अतिहिंसित व्याकुलत्वम् ३६ २ मन्द-त्वादिविकार आर्याभि० २ ३६ [उतृदिर् हिंसाऽनादरयो रुधादि, ततो निष्ठा (क्त)]

अतितृषाम अतितृष्णायुक्तान् कुर्याम ४ ३४ ११ [ञितृष् पिपासायाम्, व्यत्ययेन शप्]

अतित्विषन्त अतिप्रदीपयत, अतिप्रकाशिता भवत ५ ५४ १२ [अति+त्विष् दीप्तौ भ्वादि०]

अतिथयः अतिथिरूप (सज्जन लोग) स० वि० २०६ [अत सातत्यगमने धातोर् औणादिक इथिन् प्रत्यय]

अतिथिग्वम् योऽतिथीन् गच्छति तम् (राजादिजनम्) ६ १८ १३ अतिथीन् प्राप्नुवन्तम् (सेनापतिम्) १ ११२ १४ योऽतिथीन् गच्छति गमयति वा तम् (विद्वज्जनम्) ४ २६ ३ **अतिथिग्वस्य**=अतिथीन् गच्छत (प्रजाजनस्य) २ १४ ७ योऽतिथीनागच्छति तस्य (प्रजाजनस्य) ६ ४७ २२ अतिथीन् गच्छति गमयति येन वा तस्य १ ५३ ८ **अतिथिग्वाय**=अतिथीन् गच्छते (विद्वज्जनाय) १ १३० ७ अतिथीना गमनाय ॥ प्र०—अत्राऽतिथ्युपपदाद् गम्धातोर्बाहुलकादौ-णादिको ड्व प्रत्यय १ ५१ ६ अतिथीन् गच्छते १ १३० ७ योऽतिथीन् गच्छति तस्मै ६ २६ ३ [अतिथि+गम्लृ गतौ+ड्व प्रत्यय) **अतिथिपतिः**=अतिथियो का पालन करने वाला (गृहस्थजन) स० वि० २०६ [अतिथि+पा रक्षणे+डति प्रत्यय]

अतिथिम् अविद्यमाना तिथिर्यस्य तम्, भा० उत्तम-गुणम् (सज्जनम्) ३ १ न विद्यते नियता तिथिर्यस्य तम् (सत्पुरुषम्) १ ५८ ६ नित्य भ्रमणशील सेवितुमर्हम् (अग्निवद् विद्याप्रकाशप्रद जनम्) १.४४ ४ सत्योपदेशकम् (सत्पुरुषम्) ४ २ ७ अतिथिमिव पूजनीयम् (पतिं=स्वर्गमनम्) १ १२७ ८ सर्वदोपदेशाय भ्रमन्तम् ५ ८ २ अविद्यमाना तिथिर्गमनाऽऽगमनयोर्यस्य तम् (सज्जनम्) ७ ८.४ पूजनीयमनित्यस्थितिं विद्वांसम् (जनम्) ३ २६ २ अतिथिमिव वर्त्तमानम् (विद्वांस जनम्) ६ १५ १ पूजनीयम् (राजानम्) ६ ७ १ अतिथिवद् वर्त्तमानम् (अग्नि=विद्याप्रकाशित विद्वांसम्) १ ८६ ३ अनियत-स्थितिमुपदेशकम् १० ३० अतिथिवत् सत्कर्त्तव्यम् (चेतन=परमात्मानम्) ३ ३ ८ [अत सातत्यगमने धातोर् औणा० इथिन् प्रत्यय । अथवा नञ्तिथ्योर्बहु-व्रीहि]

अतिथि: जिसकी कोई नियत तिथि नही वह (सन्यासी जन) स० वि० २०६ जो विद्वान्, धार्मिक, निष्कपटी, सबकी उन्नति चाहने वाला, जगत् मे भ्रमण करता हुआ सत्य उपदेश से सब को सुखी करता है वह चौथा (सन्यासी जन) स० प्र०—४३६ अनियततिथि (जीवात्मा) ४ ४० ५ अविद्यमान नियततिथि (सत्पुरुष) ५ १ ८ महाविद्वान् भ्रमणशील उपदेष्टा परोपकारी मनुष्य १ ७३ १ सतत गन्ता (अग्नि) ३ २ २ पूजनीय, भा०—मान्य (राजा) ३३ १६ सर्वत्र भ्रमणकर्त्ता ५ १ ६ अभ्यागत इव वर्त्तमान (अग्नि=विद्वज्जन) ४ १ २० अकस्मादागत (विद्वज्जन) ५ ४ ५ पूजनीय आप्तो विद्वान् (जन) ५ १८ १ नित्य भ्रमणकर्त्ता विद्वान् (जन) १२ ३४ अविद्यमाना तिथिर्यस्य तद्वन्मान्य (परमेश्वर) १० २४ आप्तो विद्वानिव (सत्पुरुष) ७ ६ ३ सत्योपदेशक (विद्वान् जन) ७ ४२ ४ महाविद्वान् भ्रमणशील उपदेष्टा परोपकारी मनुष्य १ ७३ १ अविद्यमाना तिथिर्यस्य स राज्यरक्षणाय यथासमय भ्रमणकर्त्ता (महाविद्वान्) १२ १४ पूजनीय (राजा) ५ ३ ५ पूजनीयोऽविद्यमानतिथि (राजा, विद्वान् जनो वा) २ २ ८ **अतिथीन्**=अतिथियो के प्रति स० वि० २०६ अनियततिथीन् (विदुष) ५ ५० ३ **अतिथीनाम्**=अतिथि अर्थात् उत्तम सन्यासियो का स० वि० २१० **अतिथे:**=सन्यासी से स० वि० २१० अविद्यमानतिथेर्विदुष ५ १ [अत सातत्यगमने धातोर् इथिन् प्रत्यय । अतिथिरभ्यतितो गृहान् भवति । अभ्येति तिथिषु परकुलानीति वा, गृहाणीति वा नि० ४ ५ अतति गतिकर्मा निघ० २ १४ पूर्व हि अतिथिमाशयन्ति काठकस० १२ ब्राह्मणायातिथये सर्पिष्वन्त पचति काठ० १६ १२ यो वै भवति य श्रेष्ठतामश्नुते स वा अतिथि-भवति ऐ० आ० १ १ १ अतिथिर्दुर्भरणमत् काठ ३४ १४ अतिथय आगताय सर्पिष्वदातिथ्य क्रियते तै स० ५.२ २ ४.

अतिदीर्घम् अतिशयेन दीर्घम्, भा०—महत्पदार्थम् ३० २२ [दीर्घं द्राघते निरु० २ १६]

अतिद्रुतः अत्यन्त शीघ्रकारी (सोम =निष्पादितौ-षधिरस), योऽतिद्रवति स (सोम =सोमलताद्योषधिगण) १९ ३ [अति+द्रु गतौ भ्वादि०+क्त प्रत्यय]

अतिधक् अतिदहति २ ११ २१ अतिदहेत् २ १६ ६ अतिदह्यात् २ १५ १० अतिदहे २ १६ ६ **अतिधक्तम्**=अतिदहतम् ११८३ ४ [अति+दह भस्मीकरणे भ्वादि० धातोर् लङ् प्रत्यय। हकारस्य घकार, भष्भावेन दकारस्य धकार, अवसाने च चर्भावेन ककार। अतिधक्=अतिहाय दा नि० १ ७]

अतिधन्वेव महेष्वासा इव (वीरजन इव) २० ५३ [अति+धनधान्ये+वन् प्रत्यय]

अतिनिष्टतन्युः अतिविस्तृणीयु ११४१ १३ [अति निस्+तनु विस्तारे धातोर्लिटि रूपम्]

अतिनेनीयमानः भृश न्यायव्यवस्था प्रापयन् (इन्द्र =राजा) ६ ४७ १६ [अति+णीञ् प्रापणे+यङ्, तत कर्मणि शानच्]

अतिनेषि अतिनयसि। प्र०—अत्र विकरणाभाव ३१५ ३ [अति+णीञ् प्रापणे+लट्। 'बहुल छन्दसी' ति शपो लुक्]

अतिपर्षत् उल्लङ्घ्य पार प्रापयतु ३ २० ४ अतिपारयेत् ५ २५ ६ **अतिपर्षथः**=अतिसिञ्चथ ५ ७३ ८ **अतिपर्षन्**=उल्लङ्घयेयु ७ ४० ४ **अतिपर्षि**= अतिपारयसि ५ ४ ६ अत्यन्त पालयसि ५ ३ ११ अतिपूरयसि ७ २३ २ [अति+पृपु सेचने (भ्वादि०) पॄ पूरणे (चुरादि०) धातोर्वा लेटि रूपम्]

अतिपारय उल्लङ्घ्य पार प्रापय १ ६७ ७ [अतिरतिक्रमणे+पार कर्मसमाप्तौ (चुरादि०) धातोर्लोट्]

अतिपारयः योऽत्यन्त पारयति स (इन्द्र =राजा) ६ ४७ ७ [अति+पार कर्मसमाप्तौ धातो कर्त्तरि 'अनुपसर्गाल् लिम्पविन्दधारिपारि' अ० ३ १ १३८ सूत्रेण श प्रत्यय]

अतिप्रसस्रे अतिप्राप्नोति ६ १८ ७ [अति+प्र+सृ गतौ (भ्वादि०) धातोर्लिट्। व्यत्ययेनात्मनेपदम्]

अतिबद्बधे अतिशयेन बीभत्सने १ ८१ ५ [अति+बध बन्धने (भ्वादि०) बध संयमने धातोर्वा लिटि रूपम् बद्बधानान्=बावध्यमानान् निरु० १० ६]

अतिमतिम् अतिशयिता चाऽसौ मतिश्च नाम् (प्रशस्तबुद्धिम्) ११२९ ५ [अति+मनु अवबोधने (दिवादि०)+क्तिन् स्त्रियाम्]

अतिमन्ये अतिमान कुर्याम् ११३८ ४ [अति+मन ज्ञाने (दिवादि० धातोर्लट्]

अतिमृत्युम् मृत्युमतिक्रान्त मृत्यो पृथग्भूत मोक्षाख्यमानन्दम् ऋ० भू० १३१ [अति+मृङ् प्राणत्यागे धातोर् औणादिक त्युक् प्रत्यय]

अतियाजस्य योऽतिशयेन यष्टु योग्यस्य यज्ञस्य ६ ५२ १ [अति+यज देवपूजासंगतिकरणदानेपु धातो क्रियाया क्रियार्थायामुपपदे घञ् प्रत्यय]

अतियाथः अत्यन्त गच्छत ५ ७७ ३ [अति या प्रापणे (अदादि०) धातोर्लट्]

अतिरत् सन्तरति प्लावयति, प्र०—अत्र विकरण-व्यत्ययेन श० १ ३३ १३ सन्तारयति २ १७ २ उल्लङ्घयतु ३ ३४ १ सन्तरेत् ३ ३४ ५ तरति ६ ६ १ **अतिरतम्**= तमो हिस्त, प्र०—अवतिरतिरिति वधकर्मा निघ० २ १६/१ ६३ ४ तरेतम् ११११६ १० उल्लङ्घयतम् ११५२ १ **अतिरन्त**=तरन्ति ७ ७ ६ **अतिरम्**= सन्तरेयमुल्लङ्घेयम् ११८२ **अतिरः**=शत्रुबल प्लावयति, प्र०—अत्र लडर्थे लुङ्, विकरणव्यत्ययेन शप स्थाने श्न ११ १७ हन्या ४ ३० ३ हसि ४ ३० ७ [तॄप्लवनसन्तरणयोर् धातो रूपाणि। विकरण-व्यत्ययेन शप स्थाने श, तस्य च ङित्वात् गुणाऽभावे 'ऋत इद्धातो' इतीत्वे च रपरत्वे च रूपाणि। निघण्टो च वधार्थे पाठाद् हिंसार्थेऽपि]

अतिरुग्भ्याम् अतिरुचीच्छाभ्याम् २५ ३ [अति+रुच् दीप्तावभिप्रीतौ च+क्विप्]

अतिरोहति अतिरिक्त है स० प्र० २८२ व्यतिरिक्त सन् जन्मादिरहितोऽस्ति ऋ० भू० १२० अत्यन्त वर्धते ३१ २ [अति रुह बीजजन्मनि प्रादुर्भावे च धातोर्लट्]

अतिलोमशम् अतिशयेन लोमयुक्तम् (पदार्थम्) ३० २२ [अति+लोमप्राति० 'लोमादिपामादि०' सूत्रेण मत्वर्थ श प्रत्यय]

अतिवक्षत् अतिवहेत् प्रापयेत् ६ २२ ७ [अति+वह प्रापणे धातोर्लेटि रूपम्। 'सिब्बहुल लेटी' ति सिप् प्रत्यय]

अतिविधे अतिवेद्धु योग्यौ (मित्रावरुणौ=राजा-ऽमात्यौ) ५ ६२ ६ [अति+विध विधाने (तुदादि०) तत 'इगुपधज्ञा०' अ० ३ १ १३५ सूत्रेण क प्रत्यय]

अतिविध्यति अतिशयेन ताडयति ४ ८ ८ [अति व्यध ताडने दिवादि, ततो लट्]

अतिवेति अतिप्राप्नोति ५ ४४ ७ [अति+वी गतिप्रजनकान्त्यसनखादनेषु अदादि, ततो लट्]

अतिव्याधी अतिशयेन व्यद्धु शत्रूंस्ताडयितु शील यस्य स (राजन्य =राजपुत्र) २२ २२ [अति+व्यध् ताडने धातोस्ताच्छील्ये णिनि प्रत्यय]

अतिव्रजद्भिः अतिशयेन गमयितृभिर्द्रव्यै (रथै) १ ११६ ४ अत्यन्त वेगवद्भि (रथै) ऋ० भू० १६० [अति+व्रज गतौ भ्वादि, ततश्शतृप्रत्यय]

अतिशुक्लम् अतिश्वेत (वस्तु) ३० २२

अतिष्कद्वरीम् अतिशयेन या स्कन्दति जानाति ताम् (स्त्रीम्) ३० १५ [अति+स्कन्दिर् गतिशोषणयोर्भ्वादि, तत क्वरप् प्रत्यय]

अत्यतिष्ठत् उल्लङ्घ्य तिष्ठति, भा०—यत्र जगन्नास्ति तत्रापि पूर्णोऽस्ति ३१ १ [अति+स्था गतिनिवृत्तौ धातोर्लङ्]

अतिष्ठत् उत्तिष्ठति ४ १८ ८ तिष्ठतु १ ११६ १७ तिष्ठेत् १ १६३ २ तिष्ठति १ १६४ ६ महातप को करता हुआ स० वि० ६३ **अतिष्ठन्**=तिष्ठन्ति प्र०—अत्र वर्त्तमाने लङ् १ ३२ ११ **अतिष्ठन्त**=स्थिरा भवेयु, प्र०—अत्र लिङर्थे लङ् १ ११६ १ ३२ १० **अध्यतिष्ठत**=अधिष्ठातृत्वेन वर्त्तते १७ २० उपरि तिष्ठति २६ १३ [स्था गतिनिवृत्तौ धातो रूपाणि]

अतिष्ठन्तीनाम् चलन्तीनाम् (नदीनाम्) १ ३२ १० [अति+स्था गतिनिवृत्तौ+शतृ प्रत्यये स्त्रिया रूपम्। अतिष्ठन्तीनाम्=अस्थावराणाम् नि० २ १६]

अतिस्थिपः सस्थापये १ ५६ ५ [अति+स्था-धातोर्णिजन्तस्य रूपम्]

अतिस्थूलम् बहुत मोटी (वस्तु) ३० २२

अतिसर्पति अतिशयेन गच्छति ११ ७४ [अति+सृप्लृ गतौ भ्वादि, ततो लट्। सर्पति गतिकर्मा निघ० २ १४]

अतिसश्चतः समवेता (प्रजा) ३ ६ ४ [सश्चति गतिकर्मा निघ० २ १४]

अतिसूदयन्तु अतिक्षरयन्तु दूरीकुर्वन्तु ४ ३६ १ [अति+षूद क्षरणे चुरादि, ततो लोट्]

अतिसस्रेम अतिगच्छेम ६ ११ ६ [अति+सृ गतौ जुहोत्यादि, ततो लिङ्]

अतिस्रिधः उल्लङ्घनत्वेन विद्यादिसद्व्यवहारविरोधिन (अविद्यादिकुसस्कारान्) ३ १० ७ अतिसहनशीला (प्रजा) ३ ६ ४

अतिस्रुतः अत्यन्तज्ञानवान् (राजप्रजाजन) १० ३१ [अति+स्रु गतौ+वर्त्तमाने क्त प्रत्यय]

अतिहाय अतिशयेन त्यक्त्वा १ १६२ २० अत्यन्त त्यक्त्वा २५ ४३ [अति+ओहाक् त्यागे+क्त्वा। समासे क्त्वो ल्यप्]

अतिह्रस्वम् अतिशयेन ह्रस्वम् (भा०—सूक्ष्मपदार्थम्) ३० २२

अतीत्वरीम् अतिगमनशीला (स्त्रीम्) ३० १५ [अति+इण् गतौ (अदादि०) धातोस्ताच्छील्ये 'इण्नश०' अ० ३ २ १६३ सूत्रेण क्वरप्, ङीप्]

अतीतृपन्त अतिशयेन तर्पयत १६ ३६ **अतीतृपाम**=तर्पयाम ७ २६ [अति+तृप प्रीणने (दिवादि०) धातोश्शतृप्रत्ययोऽन्यत्र च लोट् सहितायामति शब्दस्य दीर्घ]

अतीतृषाम अतितृष्णायुक्तान् कुर्याम ४ ३४ ११ [अति+ञितृषा पिपासायाम् (दिवादि०) धातोर्लोट्। विकरणव्यत्ययेन च श्यन् न भवति]

अतीयाम उल्लङ्घेम त्यजेम ५ ५३ १४ [अति+इण् गतौ (अदादि०) धातोर्लिङ्]

अतीरज्यसि अतिशयतया ऐश्वर्य प्राप्नोषि १ ५५ ३ [अति+रञ्ज रागे (दिवादि०) धातोर्लट्। 'अनिदिताम' इति न लोप]

अतीहि अतिगच्छ ३ ४५ १ सर्वत प्राप्नुहि, प्र०—अभिपूजितार्थे निरु० १ ३ अतिक्रम्योल्लङ्घ्य, अन्व०—तस्मात्पार गमय ३ ६१ [अति+इण् गतौ (अदादि) धातोर्लोट्]

अतुष्टवम् प्रशसेयम् ३ ५३ १२ [ष्टुञ् स्तुतौ (अदादि०) धातोर्लङ्। 'बहुल छन्दसी' ति शप श्लु]

अतूतुजिम् भृशमहिस्रम् (वीरपुरुषम्) ७ २८ ३ [नञ्+तुज हिसायाम् (भ्वादि०) धातोर्यङ्, तत औणादिक इक् प्रत्यय। 'तुजादीनाम्०' इत्यभ्यासस्य दीर्घश्च]

अतूर्त्तपन्थाः अतूर्त्तोऽहिसित पन्था यस्य स (मेघ) ५ ४२ १ [अतूर्त्तपन्था=अत्वरमाणपन्था नि० ११ २०]

अतूर्त्तम् अहिसितम् (पुत्रम्) ५ २५ ५ **अतूर्त्तः**=अहिसित (राजा) १ १२६ १ (अतूर्त्त=अतूर्ण इति वा ऽत्वरमाण इति वा नि० ६ १०. अतूर्त्तो होतेत्याह न ह्येत

(अग्निम्) कश्चन तरति तै० स० २ ५ ९ २ ३ अय वा अग्निरतूर्त्तो होतेम ह न कश्चन तिर्यञ्च तरति ऐ० २ ३४ न ह्येत रक्षासि तरन्ति तम्मादाहातूर्त्तो होतेति श० १४ २ १२)

अतृणत् हिनस्ति ४ १ १९ सन्तारयति, प्र०—अत्र व्यत्ययेन श्ना २ १५ ३ [तृणेलिह वधकर्मा निघ० २ १९ उतृदिर् हिंसानादरयो (रुधादि०) धातोर्लङ्]

अतृन्दन् हिस्यु ३ ३१ ५ [उतृदिर् हिसानादरयो (रुधादि०) धातोर्लङ्]

अतृपास. अतृप्ता सन्त (श्रोतृजना) ४ ५ १४ [नञ्+तृप प्रीणने धातो 'इगुपधज्ञा०' सूत्रेण क प्रत्यय]

अतृष्णुवन्तम् भोगेष्वतृप्तम् (अधार्मिक जनम्) ४ १९ ३ [नञ्+तृप् प्रीणने धातोर् औणा० नु प्रत्यय, ततो मतुप्]

अतृष्यन्तीः तृष्णादिदोषरहिता (कुमार्य) १ ७१ ३ [नञ्+ञितृषा पिपासायाम् धातो शतृप्रत्यय । स्त्रिया रूपम्]

अत्कम् अतति व्याप्नोति त वायुम् ४ १६ १३ व्याप्तम् (वस्त्र=रूपम्) ५ ७४ ५ व्याप्तिशील वस्त्रम् ६ २९ ३ निरन्तरम् १ ९५ ७ कूपमिव १ १२२ २ कूपम् ४ १८ ५ **अत्कान्**=व्यक्तान् (अश्वान्=अग्न्यादीन्) ५ ५५ ६. **अत्कैः**=अत्तुमर्हैं (गुणकर्मस्वभावै) २ ३५ १४ अश्वै ६ ३३ ३ [अत सातत्यगमने धातो 'इण्भी०' उणादि० ३ ४३ सूत्रेण कन् प्रत्यय । अतति गतिकर्मा निघ० २ १४ अत्क वज्रनाम निघ० २ २० अश्वनाम निघ० १ १४]

अत्त भक्षयत २३ ८ **अत्ति**=भक्षयति १ ९५ ४ भुङ्क्ते २ ३५ ७ **अत्तु**=भुङ्क्ताम्, प्राप्नोतु १९ ५१ [अद् भक्षणे (अदादि०) धातोर्लोट्]

अत्तवे आनन्दभोगाय ऋ० भू० २९५ अत्तु भोक्तुम् १९ ७० [अद् भक्षणे धातो 'तुमर्थे सेसेन०' अ० ३ ४ ९ सूत्रेण तवेन्प्रत्यय]

अत्ता हवींषि प्रयत्नयुक्तानि कर्माणि देययोग्यानि उत्तमानि अन्नानि वा ऋ० भू० २९२

अत्नत प्रयतध्वम् १ ८० १६ निरन्तर गच्छत ५ ४८ २ तन्वते, प्र०—अत्र लङर्थे लुङ् 'बहुल छन्दसि' इति विकरणाऽभाव 'तनिपत्योश्छन्दसि' अ० ६ ४ ९९ अनेनोपधालोप १ ३७ १० [तनु विस्तारे धातोर्लङ् । बहुल छन्दसीति विकरणलुक् । अत्नत=अतनिपन निरु० १२ ३४]

अत्यक्रमुः उल्लङ्घ्य क्राम्यन्ति, भा०=उल्लङ्घ्य पलायन्ते १२ ८४ [अति+क्रमुपादविक्षेपे धातोर्लुङ्]

अत्यनयन् प्राप्नुवन्ति १० १ [अति+णीञ् प्रापणे धातोर्लङ्]

अत्यम् व्याप्तिशीलम् (अश्वम्) १ १२९ २ अतन्तमश्वम् १ १३५ ५. अतति व्याप्नोत्यध्वानमश्वम् ५ २५ ६ वेगवन्त वाजिनम् ७ ३ ५ अतितु व्याप्तु योग्यम् (अश्वम्) १२ ४७ व्यापक शीघ्रगामिन वायुम् ३ २२ १ अतति व्याप्नोति तत्रभवम् (हवि=होतव्य द्रव्यम्) ५ ४४ ३. व्याप्तिशीलम् (वाजिनम्=विज्ञानवन्त जनम्) १ १२९ २ **अत्यमिव**=यथाऽश्वम् १ १३० ६. **अत्यस्य**=अश्वस्य १ १८० २ **अत्यः**=अतति व्याप्नोतीति (पदार्थविद्याविद्विद्वान्) १ १४९ ३ साधुरश्व १ ६५.३ सतत गन्ता (वाजी=सुशिक्षितस्तुरङ्ग) ३ ३८ १ अश्व १ ५८ २ व्याप्तिशीलोऽश्व (अग्नि=पावक) ३ २ ७ योऽनति व्याप्नोत्यध्वान सोऽश्व, भा०—यानादीना सद्यो गमयिता (अग्नि) ३३ ७५ योऽतति सतत गच्छति स (भौ० अग्नि=सूर्यरूप) २२ १९ अतति व्याप्नोति मार्ग स (अश्व) ५ ३० १४ **अत्या**=यावततोऽध्वान व्याप्नुतस्तौ (वाय्वग्नी) ४ २ ३ **अत्या इव**=अश्ववत् ५ ५९ ३ **अत्यान्**=येऽतन्ति मार्गान् व्याप्नुवन्ति तान् (अश्वान्) १ १२९ ४ सुशिक्षयाऽश्वान् ३ ३४ ९ **अत्यानिव**=यथाऽश्वा सतत सद्यो गच्छन्ति तथा २ ३४ ३ **अत्याय**=सर्वविद्याव्यापनशीलाय विद्वज्जनाय) ३ ७ ८ **अत्यासः**=येऽनन्ति अध्वान व्याप्नुवन्ति ते (मर्या=मनुष्या) ७ ५९ १९ **अत्या.**=अतन्ति सर्वत्र व्याप्नुवन्ति त आकाशादय ३ ५९ २ सतत गामिनोऽश्वा ५ ३१ ९ सकलशुभगुणकर्मव्यापिन (राज्यकर्माऽधिकारिजना) ६ ४४.१९ सततगमना (विद्युदादय) १ १८१ २ अतितु शीला (अश्वा=अग्न्यादय) १ १६३ १० नितरा गमनशीला अश्वा १ १७७ २ **अत्येन**=अश्वेनेव वेगेन २ ३४ १३ **अत्यैः**=अश्वैरिव वेगवद्भि (यानै) ६ ३२ ५ (अत्य अश्वनाम निघ० १ १४ अत्या अतना निघ० ४ १३ (हे ऽश्व त्वम्) अत्योऽसि ता० १ ७ १ तस्मादश्व पशूनत्येति तस्मादश्व पशूना श्रैष्ठ्य गच्छति श० १३ १ ६ १ अत्योऽसीत्याह तस्मादश्व सर्वान् पशूनत्येति तस्मादश्व सर्वेषा पशूना श्रैष्ठ्य गच्छति तै० ३ ८ ९ १]

अत्यंहाः अतिक्रान्तमहो दुष्कृत येन स (अश्व=ईश्वर) १७ ८० [अति+हन् धातोरसुन् प्रत्यय, हन्तेश्च

स्थानेऽह आदेश । अहश्चाहश्च हन्तेर्निरूढोपधाद् विपरीतात् निरु० ४ २५]

अत्यरिच्यत अतिरिक्तो भवति, भा०—तस्माद् (जगत) पृथग्भूतस्तत्कारणाख्यतो व्याप्तोऽपीश्वरो भवति ३१५ परमेश्वर सर्वेभ्यो भूतेभ्योऽतिरिक्तो पृथग्भूतोऽस्ति ऋ० भू० १२२ (अति+रिचिर् विरेचने (रुधादि०) धातोर्लङ् । विकरणव्यत्ययेन श्यन्]

अत्यायातम् देशान्तरं क्रमणाऽऽगच्छतम् ५ ७५ २ **अत्यायाहि**=अतिवेगेनागच्छोल्लङ्घ्य वा ३ ३५ ५ [अति+आ+या प्रापणे (अदादि) धातोर्लोट्]

अत्यावृणीत अत्यावृणुयात ७ ३३ २ [अति+आ+वृञ् वरणे (स्वादि०) धातोर्लिङ्]

अत्येतवे एतु प्राप्तुम् ५.८३ १० [अति+इण् गतौ धातो 'तुमर्थे सेसेन०' सूत्रेण तवे प्रत्यय]

अत्येति व्याप्ति गच्छति ६ ४५ उल्लङ्घ्य गच्छति, भा०—पृथग् भवितु शक्नोति ३११८ उल्लङ्घन कर सकता है आर्याभि० २ ८ [अति+इण् गतौ धातोर्लट्]

अत्र अस्माक सत्कारसयुक्ते व्यवहारे स्थाने वा २ ३१ अस्या प्रजायाम् ४४१ ६ अस्मिन् समये १२४५ अस्मिन् ब्रह्मणि विज्ञानव्यवहारे वा ३ ५५ २ अस्मिन् राजव्यवहारे ३ ३८ ६ अस्मिन् ससारे समये वा ३५ १०. अस्मिन् जगति व्यवहारे वा ४ १ १३ इस गृहस्थाश्रम मे स० वि० १०५ अस्यामस्यु भूमौ वा १ ३३ १५ विद्वत्प्रचारिते रक्षिते व्यवहारे १४१४ अस्या विद्यायाम् १४८४ अस्मिन् १ ६७ २ अस्मिन् गृहाश्रमे १ १२३ ३ अस्मिन् विद्यायोगाभ्यामव्यवहारे १ १६३ ७ अस्मिन् जन्मनि १ १६४ ३३ आसु १ १७३ १२ राज्यप्रबन्धे २ १५ ६ अस्मिन् राज्ये ४ २२ ७ अस्मिञ्छिल्पविद्याकर्मणि ५ ३१ १० येषु ६ ३ अस्मिन् सैन्ये २६ १६ अस्मिन् राज्यपालनव्यवहारे ३३ ६४ [इदम् सर्वनाम्न सप्तम्यन्तात् त्रल् तद्धितप्रत्यय । 'तद्धितश्चासर्वविभक्तिरि' त्यव्ययसज्ञा]

अत्रम् योऽनति सर्वत्र व्याप्नोति तम् (मेघम्) ५ ३२ ८ **अत्रैः**=अनन्तीत्यातनायिनस्तान् गच्छन्तीत्यत्रा शत्रवस्तै १ १२६ ८ [अत्र 'अत सातत्यगमने' धातोरौणादिको रक् प्रत्यय कर्त्तरि]

अत्रयः अविद्यमानास्त्रिविधगुणाना दोषा येषु ते (गिर=वाण्य) ५ ३६ ५ अविद्यमानत्रिविधदु खा (गिर=वाण्य) ५ ३६ ५ त्रिभि कामक्रोधलोभदोषै रहिता (उपदेशका) ५ २२ ४ विद्याविशाला (विद्वज्जना) ५ ४० ६ **अत्रये**=अविद्यमानत्रिविधदु खाय (कण्वाय=मेधाविने जनाय) १ ११८ ७ अविद्यमानान्याध्यात्मिकादीनि त्रीणि दु खानि यस्मिँस्तस्मै सुखाय १ ११६ ६ अविद्यमानानि त्रीण्याध्यात्मिकाधिभौतिकाधिदैविकानि दु खानि यस्मिन् व्यवहारे तस्मै १ ११२ ७ न सन्ति त्रीणि भूतभविष्यद्वर्त्तमानकालजानि दु खानि यस्य तस्मै सर्वदा सुखसम्पन्नाय (विद्वुषे जनाय) १ १८० ४ अविद्यमाना आत्मिक-वाचिक-शारीरिक दोषा यस्मिँस्तस्मै (मनवे=राज्ञे) १ ११२ १६ अविद्यमानानि त्रीणि दु खान्याध्यात्मिकाधिभौतिकाधिदैविकानि यस्मिन् तस्मिन् सुखे १ ५१ ३ अविद्यमानानि त्रीणि दु खानि यस्मिन् व्यवहारे तस्मै १ ११२ ७ **अत्रिभ्यः**=व्याप्तविद्येभ्य (विद्वज्जनेभ्य) ५ ६७ ५ **अत्रिम्**=अत्तारम् (सर्वगण= लोकम्), प्र०—'अदेस्त्रिनिश्च, उ० ४ ६६ अत्र चकारात् त्रिवनुवर्त्तते, तेनाऽद्धातोस्त्रिप् १ ११६ ८ अविद्यमानान्यात्म-मन-शरीरदु खानि येन तम् (ऋषि= वेदपारगमव्यापकम्) १ ११७ ३ **अत्रिः**=सुखानामत्ता भोक्ता (कण्व=मेधावी जन), प्र०—अत्राऽद्धातोरौणादिकस्त्रिप् प्रत्यय १ ३६ ६ सतत पुरुषार्थी (राजा) ५.७ १० अविद्यमानत्रिविधदु खम् (यज्ञ= अध्ययनाऽध्यापनम्) ५ ७३ ६ आप्तविद्य (विद्वज्जन) ५ ७४ १ सकलविद्याव्यापक (विद्वज्जन) ५ ४० ८ अविद्यमानत्रिविधदु ख (विद्वज्जन) ५ ७८ ४ सतत गामी (गोतम=नौकादियानयायी जन) १ १८३ ५ **अत्रिवारम्** (व्यवहारम्) ५ ७३ ७ **अत्रेः**=अविद्यमानत्रिविधदु खस्य (विद्वज्जनस्य) ५ २ ६ **अत्रे**=अविद्यमानत्रिविधदु ख (राजन्) ५ ४० ७ ['अद् भक्षणे' धातो 'अदेस्त्रिनिश्च' उ० ४ ६८ सूत्रेण चकारात् त्रिप् प्रत्यय । 'अत सातत्यगमने' धातोर्वा । अत्रैव तृतीयमृच्छतेत्यूचुस्तस्मादत्रिर्नैत्रय इति निरु० ३ १७ अत्रिम् अग्निरन्तरौपधिवनस्पतिष्वप्सु तम् निरु० ६ ३६ वागेवात्रिर्वाचा ह्यन्नमद्यतेऽत्तिर्ह वै नामैतद् यदत्रिरिति शत० १४ ५ २ ६ तद्धैतद्देवा । रेत (वाच सकाशात् पतित गर्भम्) चर्मन्वा यस्मिन्वा बभ्रुस्तद्ध स्म पृच्छन्त्यत्रैव त्या३दिति ततोऽत्रि सम्बभूव शत० १ ४ ५ १३]

अत्रिणम्=परस्वाऽपहारकम् (दुर्जनम्) ६ ५१ १४ अत्तु भोक्तु योग्यम् भा०— शुष्कमशुष्क तृणादिकम् १७ १६ परसुखमत्तारम् (शत्रुम्) प्र०—अदेस्त्रिनिश्च उ० ४ ६६ अनेन सूत्रेणाऽद्धातोस्त्रिनि प्रत्यय १ ८६ १० शत्रुम् ६ १६ २८ काम, क्रोध आदि शत्रु को आर्याभि०

११६ अत्ति भक्षयत्यन्यायेन य स शत्रुस्तम् १ ३६ १४ परपदार्थापहर्त्तार शत्रुम् १ ३६ २० **अत्रिण:**=शत्रव १ २१ ५ ['अद भक्षणे' धातो 'अदेस्त्रिनिश्च' सूत्रेण त्रिनि प्रत्यय । 'रक्षासि वै पाप्मात्रिण' ऐ० २ २ अत्रिणो वै रक्षासि, प० ३ १ 'पाप्मानोऽत्रिण' प० ३ १]

अत्रिवत् न विद्यन्ते त्रय आध्यात्मिकाऽऽधिभौतिकाऽऽधिदैविकास्तापा यस्य तद्वत् (मुक्ताऽऽत्मवत्) १ ४५ ३ अविद्यमान त्रिविधदु खेन तुल्यम् (मित्रवत्) ५ ७२ १ व्यापकविद्यवत् (विद्वज्जनवत्) ५ २२ १ सतत गन्तारो विद्यन्ते यस्य तत्सम्बुद्धौ (अग्ने=राजन्) ५ ४ ९ व्यापकवत् विद्युदग्नि ५ ५१ ८ [अत्रि प्राति० तुल्यार्थे वति प्रत्यय]

अथ अनन्तरार्थे १ ९२ १५ इसके बाद स० वि० १३८ आनन्तर्ये १ ४७ ३ पुन २ ३ ९ पश्चात् १२ १२ अनन्तरम् १२ ५२

अथो अनन्तरम् १६ ८ आनन्तर्ये ११ ८२ इसके अनन्तर स० वि० १६६ और आर्याभि० २ ४९ तथा म० प्र० ३१६

अथर्य! सशय-रहित, थर्वति सशेते य स थर्यो, न थर्योऽथर्यस्तत्सम्बुद्धौ (परमेश्वर !), प्र०—थर्वतिश्चरतिकर्मा निरु० ११ १८ अत्र वर्णव्यत्ययेन वकारस्थाने यकार: ३ ३७ हे व्यापक ईश्वर ! आर्या भि० २ ३७ हे अहिसक दयालो स्वामिन् स० वि० १४६ **अथर्य:**=अहिसिता स्त्रिय ४ ६ ८. [अथर्य इत्यङ्गुलिनाम निघ० २ ५ निरुक्ते थर्वतिश्चरत्यर्थे, चर धातुश्च सशये चुरा०]

अथर्युम् अहिसा कामयमानम् (गृहपति=गृहस्वामिनम्) ७ १ १ [अथर्युम्=अतनवन्तम् निरु० ५ ९ मतुबर्थे यु प्रत्ययश्छान्दस अथर्यति गतिकर्मा निघ० २ १४]

अथर्ववत् यथाऽथर्ववेदे मन्थन विहितम् ६ १५ १७ [अथर्वन् प्राति० वति प्रत्ययस्तुल्यार्थे]

अथर्वण: अहिसकस्य विदुष ११ ३३ अथर्वाणोऽथर्ववन्त । थर्वतिश्चरतिकर्मा तत्प्रतिषेध ॥ निरु० ११ १९ अथर्वा, अथर्वाण पदनामानौ निघ० ५ ६, ५ ५]

अथर्वभ्य. अहिसकेभ्य (जनेभ्य) ३० १५ **अथर्वाण:**=अथर्ववेदविदो धनुर्वेदविदश्च ऋ० २ ५ ८ अहिसका (जना) १९ ५० **अथर्वा**=अहिसक (वाघत=मेधावि विद्वान्) १५ २२ अहिसनीय (इन्द्र=विद्युत्) ८ ५९ अथर्ववेद म० प्र० २७३ हिंसादिदोपरहित (अध्यापक) १८ ० १९ [अथर्वाणोऽथर्वणवन्त थर्वतिश्चरतिकर्मा, तत्प्रतिषेध नि० ११ २७ प्राणो वा ऽअथर्वा श० ६ ४ २ १ प्राणोऽथर्वा श० ६ ४ २ २ अथर्वा वै प्रजापति गो० पू० १ ४ येऽथर्वाणस्तदभेषजम् श० १ ३ ४ अथर्वाणो वै ब्रह्मण समान काठ ऊ० ४ तद्यदब्रवीदथर्वाङ्गेनमेतास्वेवाप्स्वन्विच्छेति तदथर्वाऽभवत् तदथर्वणोऽथर्वत्वम् गो० १ १.४]

अथर्व्यम् अहिसनीया स्वमेनाम् १ ११२ १०

आथर्वण: अथर्वणोऽहिसकस्याऽपत्यम् (विद्वज्जन) १ ११६ १२ [अथर्वन् प्राति० अपत्यार्थे अण् प्रत्यय]

अथर्वाऽङ्गिरस: अथर्ववेद, ऋग्वेदा० भा० भू०, अथर्व० १० ७ २० [अथर्वणामेक पर्व व्याचक्षाण इवानुद्रवेत् श० १३ ४ ३ ७ अङ्गिरसामेक पर्व व्याचक्षाण इवानुद्रवेत् श० १३ ४ ३ ८ मेद आहुतयो ह वाऽएता देवानाम् । यदथर्वाङ्गिरस श० ११ ५ ६ ७]

अथो अनन्तरे १ २८ ६ आनन्तर्ये ३ ४३ [इदानीम् नि० ११ ४०]

अदते बिना दातो वाले दुष्ट के लिए १ १८९.५ [न विद्यन्ते दन्ता यस्येति बहुव्रीहौ 'छन्दसि च' अ० ५ ४.१४२ सूत्रेण दन्तस्य दतृ० आदेश]

अदत्त ददाति, प्र०—अत्र वर्त्तमाने लड् १ ३२ ३ गृह्णीयात् १ १४५ ३ आदद्यात् २० ७१ **अदत्तन**=दद्यात् १ ११३९ ७ **अदत्तम्**=दद्यातम् १ ११७ ७ **अददन्त**=दद्यु ७ ३३ ११ **अददात्**=ददाति ५ ३० ११ **अददाम्**=ददामि ४ २६ २ **अददा**=देहि १ ५१ १३ **अददु**=ददतु ६ ५८ ४ [डुदाञ् दाने (जुहो०) धातो रूपाणि । अददन्त=अधारयन्त नि० ५ १४]

अदत्रया अत्तु योग्यान्यन्नादीनि ५ ४९ ३

अदद्दहन्त वर्धेरन्, प्र०—अत्र दृह धातोर्लेटि भादेशे कृते शप श्लुस्ततो द्वित्वम् १७.२५ [दृह दृहि वृद्धौ (भ्वादि०) धातो रूपम्]

अदधात् दधाति प्र०—अत्र लडर्थे लङ् ६ ४४ २३ धारण करता है स० वि० १८७ धत्तवान्, दधाति वा ४ ३१ विधत्ते, विहितवान् ऋ० भू० ३२० सिद्ध करे म० वि० १४८ अथर्व० १४ १ ५३ **अदधात**=धर्त ७ ३३ ४ **अदधा:**=धेहि १ ८३ ३ दध्या ३ ३० ७ **अदधु:**=दधतु ६ ३९ ३ दधीरन् ३ २९ ७ धरन्ति २ ४ २ स्थापन करते है ३ २ ९ दध्यु. ३ ४७ ३ दधतु ६ ३९ ३ दधति ६ ६७ ५ अनेकविध तस्य परमात्मपुरुषस्य व्याख्यान

कृतवन्त, कुर्वन्ति, करिष्यन्ति च ऋ० भू० १२५/३१ १० [डुधाञ् धारणपोषणयो (जुहो०) धातोर्लड्]

अदन्ति भुञ्जते १ ६४ ३ विच्छिद्य भक्षयन्ति १ १०५ ८. **अदन्तु**=भुञ्जताम् २६ ११ [अद भक्षणे (अदादि०) धातोर्लट्]

अदब्धधीतीन्=अहिंसिताऽध्ययनान् (सज्जनान्) ६ ५१ ३ [दभ्नोति वधकर्मा निघ० २ १९ तत क्त = दब्ध, तत्प्रतिषेध । धीतिम्=कर्माणि ॥ नि० १३ १४]

अदब्धम् अहिंसितम् (यानम्) ६ ५१ १ **अदब्धः**= अहिंसित (ईश्वर) १ ८९ ५ अहिंसक (अग्नि =विद्वान् राजा) ४ ४ ३ निरालस। (ईश्वर) आर्याभि० १ १० अस्माभिरहिंसितोऽतिरस्कृत (परमेश्वरो विद्वान् वा) १ ७६ २ हिंसारहित (परमेश्वर) आर्या भि० २ ५० अहिंसनीय (धर्म) ५ १९ ४ हिंसितुमनर्ह (अग्नि = अन्तस्थो विज्ञानस्वरूपो वा) ४ १५ अनलस सन् पालन-कर्त्ता (परमेश्वर) ऋ० भू० ८८ दम्भादिदोषरहित (सत्पुरुष) ऋ० भू० २१३. **अदब्धाः**=अहिंसितौ (सभासेनेशौ) ३ ५४ १६ **अदब्धान्**=अहिंसितानहिंसकान् (राज्ञ =नृपान्) ६ ५१ ४ **अदब्धानि**=अहिंसनीयानि १ २४ १० **अदब्धासः**=दम्भाऽहङ्काररहिता अनुपहिं-सिता (जना), प्र०—अत्र 'आज्जसेरसुक्' इत्य-सुगागम 'हिनस्ति दभ्नोतीति वधकर्मसु पठितम् निघ० २ १९ ३ १८ अहिंसनीया (देवा) १ ८९ १. अहिंसिता (ऋतव =यज्ञा प्रज्ञा वा) २५ १४ अहिंसिता अहिंसका वा (देवास =आप्ता विद्वास) ६ ६७ ५ **अदब्धाः**= अहिंसनीया (कवय =विपश्चित) ४ २ १२ अहिंसनीया सत्कर्त्तव्या (युवतय =प्राप्तयौवना स्त्रिय) ३ १ ६ हिंसितुमयोग्या (धेनव =गाव) १ १७३ १ अहिंसका (अदिते पुत्रा) ७ ६० ५ **अदब्धे**=अहिंसिते (अहनी= रात्रिदिने) ४ ५५ ३ **अदब्धेन**=सुखयुक्तेन (चक्षुषा= विज्ञानेन प्रत्यक्षप्रमाणेन) नेत्रेण १ ३० **अदब्धेभि.**= केनाऽपि हिंसितुमशक्यै (पायुभि =रक्षणै) १ ९५ ६ अहिंसनीयै (पायुभि =रक्षणोपायै) ३३ ८४ अहिंसकै (विद्वद्भि) १ १४३ ८ अहिंसितै (पायुभि =रक्षणै) ३३ ६९ **अदब्धैः**=अहिंसनै (शुभगुणै) ६ ४८ १० **अदभा**=अहिंसकौ (इन्द्राग्नी=नरेशसेनापती) ५ ८६ ५ (दभ्नोति वधकर्मा निघ० २ १९, तत क्तप्रत्यये दब्धम्, तत्प्रतिषेध । दम्भुदम्भने (स्वादि०) धातोर्वा क्त प्रत्यय]

अदब्धव्रतप्रमति अदब्धेन अहिंसितेन व्रतेन शीलेन प्रमति प्रज्ञान यस्य स (अग्नि =विद्युदादिकार्यकारणस्य स्वरूप) २ ९ १ अदब्धैरहिंसनीयैर्व्रतैर्धर्माचरणै प्रकृष्टा मतिर्मेधा यस्य स (सत्पुरुष) ११ ३६ [नञ्+ दभ्नोति वधकर्मा+क्त=अदब्ध । व्रतम्=शीलम् । प्र+ मनु अवबोधने धातो क्तिन्=प्रमति । एतेषा समास]

अदब्धायो ! अदब्धमहिंसितमायुर्यस्मात् तत्सम्बुद्धौ, अदब्धायुर्वा (अग्ने=जगदीश्वर भौतिकोऽग्निर्वा) २ २० [नञ्+दभ् (वधकर्मा)+क्त=अदब्ध । आयु =इण् गतौ धातो 'छन्दसीण' उणादि १ २ सूत्रेण उण् प्रत्यय । एनयो समासे सम्बुद्धौ रूपम्]

अदमयः दमय ६ १८ ३ [दमु उपशमने दिवादि, ततो णिचि लटि रूपम्]

अदम्भः दम्भादिदोषरहित परमेश्वर ऋ० भू० २०३ [दम्भु दम्भने (स्वादि०) ततोऽच् कर्त्तरि, तत्प्रतिषेध]

अदयः अविद्यमाना दया करुणा यस्य स, भा०— दुष्टेषु निर्दय (इन्द्र =सेनापति) १७ ३९ [दय दानगति-रक्षणहिंसादनेषु भ्वादि, 'षिद्भिदादिभ्योऽङ्' इत्यङ् प्रत्यये स्त्रिया दया रूपम् । ततो नञ्बहुव्रीहि]

अदर्दः विदृणाति ५ ३२ १ पुन पुनर्भृश विदारयति २ २४ २ **अदर्दृतम्**=भृश विदारयतम् ४ २८ ५ **अदर्धः**=भृश, विदारयति, प्र०—अत्र वर्णव्यत्ययेन दस्य स्थाने ध. २.३८ ४ **अदः**=विदृणीहि, प्र०—अत्र विकरणस्याऽलुक् लङ्प्रयोग १ १२१ १० [दॄ विदारणे क्र्यादि, तत क्रियासमभिहारे यङन्ताल् लङ् । अदर्द अदृणा निरु० १० ९]

अदर्शि दृश्यते ५ १.२ दृश्यताम् १ ४६ ११ [दृशिर् प्रेक्षणे भ्वादि, तत कर्मणि लुङ्]

अदहत् दहति भस्मीकरोति ४ २८ ३ **अदह.**=दह १ ३३ ७ दहति ७ १ ७ [दह भस्मीकरणे (भ्वादि०) धातोर्लङ्]

अदात् दद्यात् ६ ४७ २४ दिया है स० वि० १२१ अथर्व० १४ १ ५२ दत्तवान्, ददाति दास्यति वा प्र०— अत्र 'छन्दसि लुङ्लङ्लिट, इति सामान्यकाले लुङ् १ ३० १६ दूरीकुर्यात् ६ २७ ७ **अदाः**=प्रदेहि १९ ६६ [डुदाञ् दाने (जुहो०) धातो सामान्ये लुङ् । दाति दानकर्मा निघ० ३ २० दैप् शोधने धातोर्वा रूपम्]

अदानम् दानस्याऽकर्त्तारम् (राजपुत्रम्) ४ १९ ६ [डुदाञ् धातो 'कृत्यल्युटो बहुलम्' इति कर्त्तरि ल्युट् । तत्प्रतिषेध]

अदाभ्यः अहिंसनीय (राजन्) ७ १५ १५ दभितु

हिंसितु योग्यानि दाभ्यानि तान्यविद्यमानानि यस्य तत्सम्बुद्धौ, (अग्ने=सभाध्यक्ष) प्र०—अत्र 'दभेश्चेति वक्तव्यम्' अ० ३ १ **अदाभ्यम्**=अहिंसनीय सत्कर्त्तव्यम् १ २४ इत्यनेन वार्तिकेन दभ इति सौत्राद्धातोर्ण्यत् १ ३१ १० (बृहस्पति=राजानम्) ३ ६२ ६ **अदाभ्यः**=निष्कपट (मेधाविजन) ५ ५ २ अविनाशित्वान्नैव केनापि हिंसितु शक्य (विष्णु=विश्वान्तर्यामीश्वर) १ २२ १८ हिंसितुमनर्ह (विद्वान्) ३ ११ ५ उपक्षयरहित (अधिपति=अधिष्ठातृजन) १८ १६ अहिंसकत्वाद् दयालु (ईश्वर) ३४ ४३ अहिंसनीय (देव=परमेश्वर) ४ ५३ ४ उपक्षयरहित (परमेश्वर) १८ १६ **अदाभ्या**=हिंसितुमयोग्यौ (अध्यापकोपदेशकौ १ १५५ १ अहिंसनीयौ (स्त्रीपुरुषौ) ५ ७५ ७ **अदाभ्याः**=अहिंसनीया २ ३४ १० हिंसितुमनर्हा ३ २६ ४ [दभ्नोति वधकर्मा निघ० २ १६, तत कर्मणि ण्यत्, 'कृत्यल्युटो बहुलमिति' वा कर्त्तरि ण्यत् प्रत्यय । तत्प्रतिषेध । ते (देवा) होचु । अदभाम वाऽएनान् (असुरान्) इति तस्माददाभ्यो न वै (असुरा) नोऽदभन्निति तस्माददाभ्यो वाग्वाऽअदाभ्य श० ११ ५ ६ ४ वागेवादाभ्य श० ११ ५ ६ १]

अदामानः निर्बन्धना (प्रजा) ६ २४ ४ अदातार (प्रजाजना) ६ ४४ १२. [डुदाञ् दाने धातो 'अन्येभ्योऽपि दृश्यन्ते' अ० ३.२ ७५ सूत्रेणानुपपदेऽपि मनिन् प्रत्यय, तत्प्रतिषेध]

अदाशत् ददाति ४ ४२ ६ **अदाशन्**=ददति ७ १६ ६ [दाशति दानकर्मा निघ० ३ २० दाशृ दाने भ्वादि०, ततो लङ्]

अदाशुषः अदातु (प्रजाजनस्य) ७ १६ १ **अदाशुषाम्**=अदातॄणाम् (दुर्जनानाम्) १ ८१ ६ [दाशृदाने (भ्वादि०) धातो क्वसु प्रत्यय । तत्प्रतिषेध । दाशुषे=दत्तवते नि० ११ ११]

अदाशून्=अदातॄन् (शत्रून्) १ १७४ ६ [दाशृ दाने धातो कर्त्तरि ओणादि० उण् प्रत्ययो बाहुलकात्]

अदिक्षि आदिशामि ५ ४३ ६ [दिश अतिसर्जने (तुदादि०) धातोर्लुङ् । 'शल इगुपधात्०' इति च्ले स्थाने क्सादेश]

अदितयः अखण्डिता (मनुष्या) १ ५२ १ **अदितये**=मात्राद्याय ५ ८२ ६ पृथिवी मे न० प्र० ३३०/१ २४ २ अविनाशिने (आत्मने) २६ २६ अविनष्टायाऽन्तरिक्षाय ४ ३ ८ इस ससार मे म० प्र० ३३० १ २४ १ पृथिवीराज्याय प्र०—अदितिरिति पृथिवीनाम निघ० १ १ १२ १२ कारणरूपेण नाशरहिताया पृथिव्याम्, प्र०—अत्र सप्तम्यर्थे चतुर्थी १ २४ १ अखण्डितसुखाय १ २४ १५ **अदितिम्**=कारणरूपेण नित्याम् (मही=महती भूमिम्) १८ ३० अखण्डिता नीतिम् ६ ५१ ४ अमातरम् (देवी=विदुषीम्) ६ ५० १ अखिण्डता विद्या प्रकृति वा ६ ५१ ३ दिवम् १ १३६ ३ अखण्डिताम् (मही=भूमिम्) २१ ५ पृथिवीम् ४ ५५ ३ अविनाशिका विद्याम् १ १५२ ६ मातर पितर पुत्र, जात सकल जगत्, तत्कारण जनित्व वा १ १०६ १ आकाश भूमि वा ५ ४२ १ अविनाशिका प्रज्ञाम् २५ २ अन्तरिक्षम् ३३ ४६ अखिण्डतप्रज्ञम् (अश्विना=अध्यापकमुपदेशक च) २५ १६ सर्वविद्याप्रकाशवन्तम् (विद्वज्जनम्) १ ८६ ३ अविनाशिकारणम् ५ ६२ ८. अविनाशिन पदार्थम् १० १६ जनित्व कामम् (स्त्र्यासक्तिम्) ७ १८ ८ अखण्डिता कालविद्याम् ७ १०.४ अखिण्डनीया गाम्, अन्व०—धेनुम् ३३ ४६ अखण्डितबोधाम् (विदुषी स्त्रीम्) ५ ६६ ३ अखण्डिता विद्या पृथिवी वा ६ ५१ ३ नाशरहिता क्रियाम् ४ २ ११ कारणरूपेण नित्याम् (प्रकृतिम्) १८ ३० **अदिति**=स्वस्वरूपेणाऽखण्डिता (देवी=विदुषी स्त्री) ७ ४० २ पृथिवी ३४ ३० अविनाशि (अन्तरिक्षम्) २५ २३ अध्यापिका ११ ६१ कारणरूपेण नाशरहिता (देवा=पृथिव्यादय) २५ २३ विनाशरहिता (माता=प्रकृति) २५ २३ अखण्डिता (द्यौ=कारणरूपेण प्रकाश) २५ २३ अखण्डिता (विद्या) ५ ५१ ११ उत्पत्ति-नाशरहिता (कारणरूपा प्रकृति) विदुषी माता, भा०—सती विदुषी माता १० ६ चेतन ब्रह्म, ईश्वर के रचे लोक और नाम भी अविनाशी आर्याभि० १ १७ अविनाशिनी (प्रकृति) ४ १६ कारणरूपेणाविनाशिनी भूमि २५ ४५ स्वात्मरूपेण नित्यम्, भा०—स्वरूपेण नित्यम् (पञ्चजना=मनुष्या प्राणा वा) २५ २३ कारणरूपेण नित्यम्, भा०—अदृष्टकारणम् २५ २३ द्यौरिव विद्यागुणप्रकाशक (अग्नि=अध्यापक) २ १ ११ मातेव (विद्वान्) ३ ५४ १८ माता २८ २५ जननी ११ ५८ माता पिता वा ४ ३६ ३ अखण्डितैश्वर्यमन्तरिक्षमिवाक्षुब्धा (राजमहिषी) १३ १८ मातेव पालिका भूमि १४ २६ अन्तरिक्षम् ३३ ४२ अखिण्डतबुद्धि, भा०—गम्भीरबुद्धि (राजा) ३३ १६ अविनश्वरविनाशरहित (ब्रह्म) आ० वि० १ १७. अविकृत विकार को न प्राप्त

ईश्वर आर्याभि० १ १७ माता राजसभा च १ ४३ २ उत्पन्न वस्तुमात्र जनित्व कारण वा १ ६४ १६ प्रकाशमयी विद्या १ १०६ ७ विद्वत्पिता सूर्यदीप्तिर्वा १ १०७ २. अखण्डसुखप्रदा (माता) ५ ४२ २ अखण्डितमन्तरिक्षम् ४ १ २० अखण्डिता सभासदलङ्कृता सभा १७ ४८ अखण्डिता (धेनु=गौ) १ १५३ ३ नाशरहितो जगदीश्वर, प्र०—अदितिरिति पदनामसु पठितम् निघ० ५ ५ अनेन ज्ञानस्वरूपोऽर्थो गृह्यतेऽन्तरिक्ष वा १ १४ यज्ञस्यानुष्ठाता यजमान, अन्व०—नाशरहित, प्र०—पदनामसु पठितत्वादत्र यज्ञस्य ज्ञाता पालकोऽर्थो गृह्यते १ १६ अखण्डितज्ञाना (देवी=विदुषी माता) ४ ५५ ७ प्रकाशवन्नित्या (द्यौ), प्र०—अत्र 'अदितिर्द्यौरिति, प्रकाशकारकोऽर्थो गृह्यते ४ २१ पुत्र पुत्री वा, अन्व०—विद्या ११ ५६ अखण्डित (अग्नि=परमेश्वर) १ १६२ २२ अदीना देवमाता निरु० ४ २२/१ १६ ६ अविद्यमानखण्डन (विद्वज्जन) ५ ४६ ६ अखण्डिता नीति ७ ५१ २ नाशरहिता (विद्युत्) २६ ४ माता, प्र०—अत्रादितिर्द्यौरित्यादिना माता गृह्यते १ ४३ २ पितेव वर्त्तमान ७ ६ ३ नाशरहितो जगदीश्वर १ १४ अविद्यमाना दितिर्नाशो यस्या सा राजपत्नी ६ ३४ अध्यापिका ११ ६१ **अदिते !**=अखण्डितविद्य (विद्वज्जन) ५ ५१ १५ अखण्डितानन्ददे (स्त्रि) भा०—ब्रह्मचर्य ३८ २ अखण्डितज्ञानैश्वर्ये (मान) ६ ५१ ५ अखण्डिताऽऽनन्दे (सती स्त्रि) ११.५६ अविनाशिन् जगदीश्वर ४ ५५ १ भा०—सर्वसुखप्रापिके नाशरहिते राजनीति, प्र०—अदितिरिति पदनामसु पठितम् निघ० ४ १ अनेनाऽत्र प्राप्त्यर्थो गृह्यते ३ २७ अखण्डितस्वरूपविज्ञाने विदुषि स्त्रि) २ २७ १४ विनाशरहित (जगदीश्वर विद्वन्वा) १ ६४ १५ विदुषि मात २ २६ ३ आत्मस्वरूपेणाऽविनाशिनि (पत्नि) ८ ४३ **अदिते**=हे आत्मस्वरूपेणाऽविनाशिनि (पत्नि) ८ ४३ विदुषी मात २ २६ ३ विनाशरहित (जगदीश्वर) १.६४ १५ अखण्डितस्वरूपविज्ञाने (विदुषि स्त्रि) २ ७ १४ अखण्डितविद्य (विद्वन्) ५ ५१ १४ अखण्डितज्ञानैश्वर्ये (विदुषि स्त्रि) ६ ५१ ५ नाशरहिता राजनीति, प्र०—अदितिरिति पदनामसु पठितम् निघ० ४ १ अनेनाऽत्र प्राप्त्यर्थो गृह्यते ३ २७ अखण्डितानन्दे (विदुषि स्त्रि) ११ ५६ अखण्डितानन्ददे (विदुषि स्त्रि) ३८ २ **अदितेः**=ज्ञानस्याऽपत्यस्य, प्र०—अदितिर्जातमिति मन्त्रप्रमाणात् १ १३६ १६ अखण्डिताया कारणाख्यो ३ ३३ अन्तरिक्ष के स० वि० १५६/७ ४१ २ अखण्डितस्य विज्ञानस्य २ २८ ३ पृथिव्या सूर्यस्य वा १ १८५ ३ अखण्डितस्याऽन्तरिक्षस्य ४ ४२ ४ अविनाशिन कारणस्येव मातु ३४ ३५. पृथिव्या ४ १२ ४ अन्तरिक्षस्थाया भूमे प्रकाशस्य वा ७ ४१ २ **अदित्या**=विज्ञानदीप्तेर्वेदवाच सकाशादन्तरिक्षे मेघमण्डलस्य मध्ये, भा०—पृथिव्या, अन्व०—अन्तरिक्षस्य, प्र०—अदितिर्द्यौरदितिरन्तरिक्षमिति मन्त्रप्रामाण्यात् 'अदितिरिति वाङ्नामसु पठितम् निघ० १ ११, पदनामसु च निघ० ४ १ ११ पृथिव्या, भा०—शुद्धाया सर्वतोऽवकाशयुक्ताया पृथिव्या, प्र०—अदितिरिति पृथिवीनामसु पठितम् निघ० १ १ पृथिव्यादे ४ ३० प्रकाशस्य भा०—सूर्यप्रकाशस्य, अन्व०—अन्तरिक्षस्य पृथिव्याश्च १ १६ **अदित्यै**=पृथिव्यै, प्र०—अदितिरिति पृथिवीना० निघ० १ १२२ २० पृथिव्या अन्तरिक्षस्य वा, प्र०—अत्र षष्ठ्यर्थे चतुर्थी, अदितिरिति पृथिवीनामसु, पठितम् निघ० १ १ पदनामसु च निघ० ४ १ अनेन गमनाऽऽगमनव्यवहारप्राप्तिहेतुरवकाशोऽन्तरिक्ष गृह्यते १ ३० नाशरहितायै (मह्यै=वाचे) २२ २०. पृथिव्या, प्र०—अत्र 'चतुर्थ्यर्थे बहुल छन्दसि अ० २ ३ ६२ इति षष्ठ्यर्थे चतुर्थी २२ नित्यविज्ञानम् प्र०—अत्र कर्मणि चतुर्थी ३८ ३ नाशरहितायै नीत्यै ३८ १ अन्तरिक्षस्य २५ ४ दिवे प्रकाशाय, प्र०—अदितिर्द्यौरिति प्रमाणात् २५ ८ पृथिव्यादिसृष्टये ४ ३०

अखण्डितायाः अन्तरिक्षरूपायै (विष्णुपत्न्यै) २६ ६० जनन्यै २२ २० दिवे विद्याप्रकाशाय ११ ५६ अखण्डितायै जनित्वक्रियायै, प्र०—अदितिर्जनित्वमिति मन्त्रप्रामाण्याद्त्रादितिशब्देन गृह्यते, भा०—प्रजननाय २४ ६ प्रकाशस्य १४ २५ पृथिव्यादिसृष्टये ४ ३० नाशरहितायै जनन्यै २२ २० [अदिति शब्दो निघण्टौ पृथिवी, वाक् गो, पद, द्यावापृथिवीनामसु पठित । दो अवखण्डने धातो क्तिन् । 'द्यतिस्यति०' अ० ७ ४ ४० सूत्रेण इकारादेश । तत्प्रतिषध । दातु=छेत्तुम् अयोग्या अदिति । अदीना देवमाता नि० ४ २२ अग्निरप्यदितिरुच्यते नि० ११ २१ इय (पृथिवी) वाऽअदितिर्मही श० ६ ५ १ १० इय (पृथिवी) वै देव्यदितिर्विश्वरूपी तै० १ ७ ६ ७ अदित्यै पुनर्वसू तै० १ ५ १ १ एका न देव्यदितिरनर्वा विश्वस्य भर्त्री जगत प्रतिष्ठा । पुनर्वसू हविषा वर्धयन्ती । प्रिय देवानामप्येतु पाथ तै० ३ १ १ ४ अदितिर्वै प्रजाकामौदनमपचत्तत उच्छिष्टमश्नात् सा गर्भमधत्त तत आदित्या अजायन्त गो० पू० २ १५

सर्वं वा अत्तीति तददितेरदितित्वम् श० १० ६ ५.५ इय (पृथिवी) वाऽदितिरिय हीद सर्वं ददते श० ७ ४ २ ७ इय (पृथिवी) वा अदिति कौ० ७ ६ इय वै पृथिव्यदिति श० ११ ४ ५. इय वै पृथिव्यदिति सेय देवाना पत्नी श० ५ ३ १ ४ अदितिर्हि गौ श० २ ३ ४ ३४ मा गामनागामदिति वधिष्ट म० २ ८ १५ वाग्वाऽदिति श० ६ ५ २ २० आदित्या (अदितेरुत्पन्ना) वा इमा प्रजा ता० १३ ९ ५ अथ यत् प्रायणीयेन यजन्ते 'अदितिमेव देवता यजन्ते श० १२ १ ३ २ सा (अदिति) ऊर्ध्वा दिश प्राजानात् कौ० ७ ६ अदितिरच्छिन्नपत्रा काठ० १ ११, क० १ ११ अदिति सोमस्य योनि मै० ३ ७ ८ ९ १ प्रतिष्ठा वा अदिति प्रतिष्ठा पूपा० तै० ५ ३ ४ ४ यत् तदादत्त तद् अदिति काठ० ८ २]

अदितित्वे अखण्डितत्वे (कार्ये) ७ ५१ १. [अदिति प्राति० भावे त्व प्रत्यय]

अदित्यवाहः दितौ खण्डने भवा दित्या, न दित्या अदित्यास्तान् ये वहन्ति प्रापयन्ति ते अदित्यवाह (पशुपालका) २४ १२ [अदित्योपपदात् वह प्रापणे धातो. 'वहश्च' सूत्रेण ण्वि प्रत्यये अदित्यवाट्, तस्य बहुवचने रूपम्]

अदित्सन्तम् राजकर दातुमनिच्छन्तम् (पुरुषम्) ६ २४ दातुमनिच्छन्तम् (अदातृजनम्) ६ ५३ ३ [डुदाञ् दाने धातोरिच्छायामर्थे सन् । 'सनि घुमा०' इति सूत्रेणाच स्थाने 'इस्' आदेशोऽभ्यासलोपश्च । दित्स धातो शतृप्रत्ययस्ततो नञ्समास]

अदिद्युतत् प्रकाशितवान् प्रकाशयति वा ४ २५ द्योतते ६ ११ ४ [द्युत् दीप्तौ (भ्वादि०) ततो णिचि लुङि 'णिश्रि०' अ० ३ १ ४८ सूत्रेण च्ले स्थाने चङ् । 'द्युतिस्वाप्यो सम्प्रसारणम्' अ० ७ ४ ६७ सूत्रेणाभ्यासस्य सम्प्रसारणम्]

अदिष्ट दिशेत् ५ ३६ ६ [दिश अतिसर्जने धातोर्लुङ् । छान्दसत्वात् च्ले स्थाने क्सादेशो न भवति]

अदीदेत् प्रदीप्येत्, प्र०—दीदयतीति ज्वलतिकर्मसु पठितम् निघ० १ १६, अत्र दीदिर्धातोर्लेडि प्रथमैकवचने शपो लुक् १ ११२ १७ **अदीदेः**=प्रकाशये ७ ५ ३ [ज्वलनार्थकदीदधातोर्लिङ्]

अदीधयुः दृश्यन्ते, प्र०—अत्र व्यत्ययेन परस्मैपदम् ५ ४० ५ दीपयेयु ७ ३३ ५ [दीधीङ दीप्तिदेवनयो (अदादि०) धातो सामान्ये लुङ् । अदीधेत् =अन्वध्यायत् निरु० २ १२]

अदीनाः दीनतारहिता, भा०—अपराधीना, आत्मवशा (सज्जना) ३६ २४ स्वतन्त्रा (जना) प० वि० कभी पराधीन नही आर्याभि० २ ३७ ३६ २४ [दीङ् क्षये दिवादि, तत 'इणसिञ्' उणादि० ३ २. सूत्रेण नक् प्रत्यय । ततो नञ्समास]

अदीमहि क्षाययेम, नाशयेम, प्र०—अत्र दीङ् क्षय इत्यस्माल्लिङर्थे लङ् 'बहुल छन्दसि' इति श्यनो लुक् ३ ५८
अदीयम्=नि सरेयम् ४ २७ १ [अदीयम्—दीयति गतिकर्मा निघ० २ १४]

अदुग्धा इव दुग्धरहिता इव (धेनव =गाव इव) ७ ३२ २२ अविद्यमानपयस इव (धेनव =गाव इव प्रजा) २७ ३५ [दुह प्रपूरणे अदादि, तत क्त प्रत्यय । ततो नञ्समास]

अदुद्रोत् द्रवयति २ ३० ३ [द्रु गतौ भ्वादि, ततो णिजन्तात् सामान्ये लुङ्]

अदुवः अपरिचारका (कृतघ्ना जना) ७ ४ ६ [दुवस्यति परिचरणकर्मा निघ० ३ ५ ततो क्विप् कर्त्तरि, ततो नञ्समास]

अदुष्कृतौ अदुष्टाचारिणौ (स्त्रीपुरुषौ) ३ ३३ १३ [नञ्+दुस्+कृ+क्विप् । दुष्कृत =पापकृत नि० १० १२]

अदुहत् परिपूरयति, भा०=एधते १७ ७४ [दुह प्रपूरणे अदादि, ततो लङ्]

अदुः ददति २१ ६१ देवे स० वि० १३४, १०.८५ ४३ देते है स० वि० १२१, १० ८५ ३६ [डुदाञ् दाने (जुहो०) धातो सामान्ये लुङ्]

अदृक्षत दृश्यन्ते १ ४८ १३ [दृशिर् प्रेक्षणे धातोर्लुङ् कर्मणि]

अदृपिताय अमोहिताय (देवाय=नृपाय) ४ ३ ३
अदृपितेभिः=मोहादिदोषरहितै (विद्वज्जनै) १ १४३ ८

अदृप्तः मोहरहित (सज्जन) १ ६९ २

अदृप्यता हर्षमोहरहितेन (सज्जनेन) १ १५१ ८ [दृप हर्षणमोहनयो (दिवादि०) धातो क्त । ततो नञ्समास । 'रधादिभ्यश्च' तीड्विकल्प]

अदृप्तक्रतुम् अमोहितप्रज्ञम् (राजानमधिकारिण वा) ६ ४९ २ ['अदृप्तम्' अमोहितम् । क्रतुशब्द प्रज्ञानाम

निघ० ३ ६ कर्मनाम निघ० २ १ तयो समास]

अदृश्रन् पश्यन्ति ५ ३ ११ दृश्यन्ते १ १६१ ५. समीक्षेरन्, पश्येयु १ ६ ७ **अदृश्रम्**=प्रेक्षेयम् १ ५० ३ पश्येयम्, प्र०—अत्र लिङर्थे लुङ्, उत्तमैकवचनप्रयोगो 'वहुल छन्दसि' इति रुडागम 'ऋदृशोऽङि गुण' इति प्राप्तौ गुणाऽभावश्च ८ ४० [दृशिर् प्रेक्षणे (भ्वादि०) धातोर्लुङ् । 'इरितो वेति' अङ्प्रत्यय]

अदृष्टहा योऽदृष्टमन्धकार हन्ति स (सूर्य) १ १९१ ८ यो गुप्तान् विषान् हन्ति स (वैद्य) १ १९१ ९ [नञ्+दृष्ट+हन्+ड प्रत्यय 'अन्येष्वपि दृश्यते' अ० ३ २ १०१ सूत्रेण]

अदृष्टा: ये न दृश्यन्ते ते (सर्पादय) १ १९१ ५ ये न दृश्यन्ते ते विषधारिणो जीवा १ १९१ १. दृष्टिपथमनागता विषधरा विषा वा (सर्पादय) १ १९१ ४ अदृश्यमाना (विषधरा प्राणिन) १ १९१ ७ **अदृष्टान्**=दृष्टिपथमनागतान् (रोगान्) १ १९१ २ [दृशिर् प्रेक्षणे धातो क्त प्रत्यये नञ्समास]

अदृंहत् धरति २ १२.२ **अदृंहीत्**=धरेत् २८ २०. **अदृंही:**=प्राप्य वर्द्धस्व ६ २ [दृहि वृद्धौ (भ्वादि०) धातोर्लङ् । अदृंहीत्=दृहिधातोर् लुङ्]

अदेदिष्ट भृशमुपदिशत ३ ३१ २१ [दिश अतिसर्जने (तुदादि०) धातोर् यङ्लुक्, ततो लुङ्]

अदेवत्रात् देवान् त्रायते यस्मात्तद्विरुद्धात् (अराधस =अधनात्) ५ ६१ ६ [नञ्+देव+त्रैङ् पालने धातो क प्रत्यय]

अदेवम् अविद्यमानो देव प्रकाशो यस्मिँस्तम् (सर्वसामर्थ्यम्) प्र०—अत्राऽन्येपामपि दृश्यते, २ २२ ४ इत्यकारस्य दीर्घत्वम् प्रकाशरहितमविद्वास दुष्ट वा ३ ३२ ६ **अदेवयो:**=न देवौ अदेवौ तयोरदेवयो (अविदुषोरध्यापकोपदेशकयो) १ १५० २ **अदेवस्य**=असुरस्य शत्रुगणस्य १ १७४ ८ **अदेव:**=अविद्वान् (जन) ६ १८ ११ प्रकाशरहित (विद्याहीनो जन) ६ १७ ८ **अदेवान्**=अविदुष (जनान्) ३ १ १६ **अदेवानि**=अशुद्धानि (हेळासि=अनादराणि) ६ ४८ १० **अदेवेन**=अशुद्धेन (मनसा) २ २३ १२ [दिवु क्रीडा विजिगीषाव्यवहारद्युतिस्तुतिमोदमदस्वप्नकान्तिगतिषु (दिवादि०) धातो पचादिषु देवडिति पाठाद् इगुपधलक्षण क बाधित्वा अच् प्रत्यय । 'देवा' इति पदनाम निघ० ५ ६ देवो दानाद्वा दीपनाद्वा द्योतनाद्वा द्युस्थानो भवतीति वा नि० ७ १५]

अदेवी: असुरस्य दुष्टस्य नगरी १ १७४ ८ विद्यारहिता (विश =प्रजा) ६ ४९ १५ अशुद्धा (प्रज्ञा) ५ २.९ अप्रमदा क्रिया ५ २ १० अदिव्या (मिथती =हिंसती शत्रुसेना) ६ २५ ९ अविदुषी स्त्रिय ३ ३१ १९ अदिव्या अशुद्धा (माया =कपटछलयुक्ता प्रज्ञा) ७ १ १० समन्ताद् देदीप्यमाना विदुषी ६ ४९ १५ [दिवु+अच्=देव, स्त्रिया देवी, ततो नञ्समास.]

अदेवयन्तम् आत्मानमदेवमिच्छन्तम् (विद्वज्जनम्) २ २६ १ [देवाद् आत्मन इच्छाया क्यच्, 'न छन्दस्यपुत्रस्ये' ति ईत्वप्रतिषेध, ततो नञ्समास । देवयन्त =देवान् कामयमाना नि० ८ १८]

अदेवृघ्नि ! हे देवरसेविके (पत्नि) ऋ० भू० २१४ हे देवर को दुख न देने वाली स्त्रि स० प्र० १५३, अथर्व० १४ २ १८ [नञ्+देवृ+हन् हिंसागत्यो +टक्प्रत्ययश्छान्दस, स्त्रिया ङीप्, तत्सम्बुद्धौ रूपम्]

अद्धा साक्षात् ३ ५४ ५ प्रसिद्धम् ३३ ३९ [अद्धा इति सत्यनाम निघ० ३ १०)

अद्धि भुङ्क्ष्व १२ ६५ अशान १ १६४ ४० भक्ष ३ ५२ ७ [अद भक्षणे (अदादि०) धातोर्लोट्]

अद्भि: प्राणै १ ६५ ८ जलादिभि ६ ४९ १४ जलै १ १२२ ६ ससाधितैर्जलै १८ ३५ **अद्भ्य:**=जलाशयेभ्य १७ १ जलेभ्य ३१ १७ सुसस्कृतेभ्यो जलेभ्य १९ ७४ जलेभ्य प्रजाभ्यो वा १ ८० २ अप्सु गमनाय ३९ २ जलेभ्य प्राणेभ्यो वा ७ २१ [अप्+भिस 'अपो भि' इति तकारादेश]

अद्भुत. ! आश्चर्योत्तमगुणकर्मस्वभाव (अध्यापकोपदेशक) ५ १० २ आश्चर्यकर्मन्, भा०—आश्चर्यगुण (वायो=विद्वज्जन) २७ ३४ महाशय (विद्वज्जन), प्र०—अद्भुतमिति महन्नाम निघ० ३ ३ **अद्भुतम्**=आश्चर्यगुणकर्मस्वभावम्, भा०—सर्वशक्तिमन्त परमात्मानम् ३२ १३ आश्चर्यगुणकर्मस्वभावस्वरूपम् (परमेश्वरम्), प्र०—'अदि भुवो डुतच्' उ० ५ १ अनेन भू धातोरद्युपपदे डुतच् प्रत्यय १ १८ ६ अद्भुत, आश्चर्य, शक्तिमय ईश्वर को आर्याभि० २ ५२,३२ १३ आश्चर्यभूतमिव वर्त्तमानम् (परमेश्वरम्) १ १७० १ आश्चर्यस्वरूपम् (धनम्) १ १४२ १० आश्चर्यभूत रायस्पोषम् २७ २० **अद्भुतस्य**=आश्चर्यगुणयुक्तस्य (विज्ञानस्य) १ १२० ४ आश्चर्यगुणकर्मयुक्तस्य सैन्यस्य १ ७७ ३ **अद्भुत:**=आश्चर्ययुक्त (हेळ =अनादर) १ ९४ १२ आश्चर्यगुणकर्मस्वभावक (ईश्वर

सभाध्यक्षो वा) १ ६४ १३. आश्चर्यगुणकर्मस्वभाव (राजा) ५ २३ २ अत्यन्त आश्चर्यरूप ईश्वर आर्याभि० १४८ भा०—पवित्रस्वभाव (पति) ११७० आश्चर्य-स्वरूप (सवितादिलोक) ऋ० भू० १४१ आश्चर्ययुक्त (हेळ=अनादर) १ ६४ १२ **अद्भुता**=आश्चर्यरूपाणि (काव्या=कवीना कर्माणि) प्र०—अत्र 'शेश्छन्दसि०' इति लोप ५ ६६ ४, १ २५ ११ **अद्भुतान्**=आश्चर्यगुण-कर्मस्वभावान् (कवीन्=अध्यापकोपदेशकान्) ४ २ १२ ['अदि 'उपपदे भूधातोर्डुतच् प्रत्यय औणादिक । (अद्भुतम् इति महन्नाम निघ० ३ ३ अद्भुतम्=अभूतम् नि० १ ६ महत्सम्भृतम् नि० ६ २१]

अद्भुतक्रतू अद्भुता क्रतु प्रज्ञा कर्म्म वा ययोस्तौ (अध्यापकोपदेशकौ) ५ ७० ४ [अद्भुतम्=अभूतम्, क्रतु-शब्दो निघण्टौ प्रज्ञावाची कर्मवाची च । तयो समास]

अद्भुतैनसाम् अद्भुतानि महान्त्येनासि पापानि येषान्तेषाम् (दुष्टाना जनानाम्) ५ ८७ ७ [अद्भुतो व्याख्यात । एनस्=इण् गतौ धातो 'इण आगसि नुट् च' उणादि० ४ १९८ सूत्रेण असुन्प्रत्ययान्त]

अद्मन अत्तुमर्ह कर्मफलम् १ ५८ २. (अद भक्षणे धातो 'अन्येभ्योऽपि दृश्यते' अ० ३ २ ७५ सूत्रेण मनिन् । अद्म=अन्न भवति नि० ४ १६]

अद्मसत् योऽद्मानि सादयति परिपचति स (अग्नि) १ १२४ ४ [अत्र पर्णशुपिवण् णिलुक् । अद्मोपपदात् पद्लृ विशरणगत्यवसादनेपु धातो क्विप् । अद्मसादिनीति वान्नासनिनीति वा नि० ४ १६)

अद्मसदः येऽद्मसु अत्तव्येपु सीदन्ति ते (पर्वता=मेघा) ६ ३० ३ **अद्मसद्वा**=योऽद्मसु भोक्तव्येपु सीदति (अग्नि) पावक ६ ४ ४ [अद्म+पद्लृ+क्विप्]

अद्य अस्मिन्नहनि ८ ४५ इदानीम् ५ ५८ ३ इसी वर्त्तमान समय मे स० प्र० २४६,३२ १४ अस्मिन् दिने, प्र०—अत्र 'सद्य परुत्परार्यैषम० ५ ३ २२, अनेनाऽय निपातित १ २३ २३ अस्मिन् वर्त्तमाने समये १५ ४४ भा०—सदैव ३३ ५१ अस्मिन् वर्त्तमाने दिने १ ४७ ३ अधुना ६ ३७ १ अस्मिन् दिवसे ३३ १७ इसी समय मे आर्याभि० २५३,३२ १४ [अस्मिन्नहनि अद्य । इदमो ऽश्भावो द्यश्च प्रत्ययोऽह्नि । अद्य=अस्मिन् द्यवि नि० १ ६]

अद्यत अत्ति २८ २३ [अद् भक्षणे धातो रूपम्]

अद्यः अत्तु योग्य (पदार्थ) २ १३ ६ **अद्याय**=अत्तु-महीय (इष्टभोगाय) ७ ११ ५ [अद भक्षणे धातो क्यप् प्रत्ययश्छान्दस]

अद्युतः अप्रकाशकान् भूम्यादीन् ६ ३६ ३ **अद्युम्**=प्रकाशरहित व्यवहारम् ७ ३४ १२ [द्युत् दीप्तौ धातो क्विप् । ततो नञ्समास । द्युरित्यह्नो नामधेय द्योतत इति सत नि० १ ६]

अद्यूत्ये द्यूते भवो व्यवहारो द्यूत्यश्छलादिदूषितस्तद्भिन्ने (सद्व्यवहारे) १ ११२ २४. अविद्यमानानि द्यूतानि यस्मिँस्तस्मिन् भवे (अवसे=रक्षणाय) ३४ २९ [द्यूत प्राति० भवार्थे यत् प्रत्यय, ततो नञ् समास]

अद्यौत् द्योतयति १ १२३.७ प्रकाशयति १ १२२ १५ प्रकाशते ४ ५ १५ विद्योतयति प्रकाशते १ ११३ १४ द्योतते ३ ५ ९ [द्युत् दीप्तौ धातो रूपम्]

अद्रयः मेघा ४ १९ ५ मेघा पर्वता वा ३ ३२ १६. **अद्रिणा**=मेघेन सह १ १६८ ६ **अद्रिभिः**=शिलाखण्डा-दिभि १ १३० २ शैलाऽवयवैरुलूखलादिभि १ १३५ ५ प्रस्तरैर्मेघैर्वा १.१३७ ३ मेघै, प्र०—अद्रिरिति मेघना० १.१०,२०.३१ मेघै शैलैर्वा १ १२१ ८ **अद्रिम्**=मेघम्, प्र०—अद्रिरिति मेघना० १ १०, १ ७ ३ मेघमिव ४ २१ ६ पर्वताकारम् (मेघम्) १ ६१ ७ मेघमिव शत्रुम् ४ २ १५. पर्वतमिव १ ८८ ३ **अद्रिः**=मेघ, प्र०—अद्रिरिति मेघ-नामसु पठितम् निघ० १ १०, १ १४ **अद्री**=मेघविद्युतौ ७ ४२ १ आनन्दितौ पत्नीयजमानौ ७ ३९ १ यौ न द्रवतो विनश्यत कदाचित्तौ (इन्द्राग्नी=विद्युद्भौतिकाग्नी) १ १०९ ३ **अद्रेः**=मेघात् १ ९३ ६ **अद्रेः**=शैलस्य १ ११७ १६. मेघस्य ३ ३१ ६ **अद्रौ**=शैलादौ घने पदार्थे १ ७० २ मेघे ५ ८५ २ मेघे शैले वा ४ ३१ [अद भक्षणे (अदादि०) धातो 'अदिशदि०' उणादि० ३ ६५ सूत्रेण क्रिन् प्रत्यय । अद्रि मेघनाम निघ० १ १०. अद्रिरादृणात्येतेन अपि वाऽत्ते स्यात् नि० ४ ४ अद्रय आदरणीया नि० ६ ८ गिरिर्वाऽद्रि श० ७ ५ २ १८. ग्रावाणो वा अद्रय तै० स० ६ १ ११ ४ अद्रिरसि श्लोककृत् काठ० १ ५]

अद्रिजाः यो मेघपर्वत वृक्षादीन् जनयति स (परमेश्वर) १० २४ योऽद्रीन् मेघान् जनयति (ब्रह्म जीवश्च) १२ १४ योऽद्रेर्मेघाज्जात (जीवात्मा) ४ ४० ५. [अद्रि+जनी प्रादुर्भावे (दिवादि०) धातो 'जनसनखन०' अ० ३ २ ६७ सूत्रेण विट् प्रत्यय । 'विड्वनोरनुनासि-कस्यात्, अ० ६ ४ ४१ सूत्रेणाकारादेश । अथवा अद्रि-

आचारे क्विप्, तत गतृ प्रत्यय]

अद्वयाविनम् यो द्वयोर्न विद्यते त सरलगामिनम् (वह्निम्) २ २ १५ अद्वन्द्वभावरहितम् (विद्यार्थिनम्) ५ ७५ ५ **अद्वयाविनः**=न विद्यते द्वितीयो यस्मिँस्तस्य (पुत्रस्य) १ १५६ ३ **अद्वयावी**=छलकपटादिरहित (राजादिजन) ७ ५६ १८ [द्वयप्राति० मत्वर्थे 'छन्दसि विनिप्रकरणेऽष्ट्रामेखलाद्वयोभय०' अ० ५ २ १२२ वा० सूत्रेण विनि प्रत्ययो दीर्घत्वम् च नञ्समासे रूपम्]

अद्वयाः अविद्यमान द्वय यस्मिन् स (ईश्वर) १ १८७ ३ [नञ्+द्वि+तयप् । तयप्स्थाने अयजादेश]

अद्विषेण्यः अद्वेष्टा (ईश्वर) १ १८७ ३ [द्विष अप्रीतौ (अदादि०) धातो छान्दसत्वात् कर्त्तरि केन्य प्रत्यय । नञ्समासश्च]

अद्वेषः अविद्यमानो द्वेपो यस्मिन् स (ईश्वर) १ २४ ४ द्वेपभावरहिता (विद्वज्जना) १ १८६ १० द्वेपरहितान् (मनुष्यान्) ५ ८७ ८ **अद्वेषे**=द्वेष्टुमनर्हे प्रीतिविषये १२ २९ [द्विष अप्रीतौ धातोर्भावे घञ्]

अध अनन्तरे प्र०—अत्र पृषोदरादित्वात् थस्य ध ८ ५ अथ, प्र०—अत्र वर्णव्यत्ययेन थस्य ध १९ ६६ अथ, प्र०—अत्रापि वर्णव्यत्ययेन धकार. १ १० १ ६ अनन्तरम्, प्र०—अथेत्यस्यार्थे शब्दारम्भेऽधेत्यव्ययम् १ ७२ १० आनन्तर्ये ४ २ १६ निश्चयार्थे १ १५ १० मङ्गले, प्र०—अत्र वर्णव्यत्ययेन थस्य ध १५ ४५ [अधा=अथ इनि नि० ३ २]

अधत्त दधाति २ २२ २ धरति ६ ८ ३ **अधत्तम्**= दध्यातम् १ १८० ३ पोषयेतम् १ ११६ ८ धत्त, धारयत १ ६३ ५ भरतम् १ ११६ १५ पुष्येतम् १ ११६ १६ **अधत्थाः**=दध्या ५ ३२ २ [डुधाञ् धारणपोषणयो (जु०) धातो सामान्ये लङ्]

अधमम् निकृष्टम् (पाश=वन्धनम्) १२ १२ नीच तमोऽन्धकारम् ६ १६ **अधमान्**=पापाचारान् (नीचजनान्) ४ २८ ४ **अधमानि**=निकृष्टानि (वन्धनानि) १ २५ २१]

अधमत् धमति निराकरोति ४ ५० ४ धमति ३३ ६५ **अधमः**=धम कम्पय १ ५१ ५ शब्दै शिक्षय १ ३३ ५ शिक्षय, अग्निना सयोजयति वा, प्र०—अत्र लोडर्थे लडर्थे वा लुट् १ ३३ ६ [ध्मा शब्दअग्निसयोगयो (भ्वा०) धातोर्लङ् सामान्ये । 'पाघ्रा०' इत्यादिना सूत्रेण धमादेश । धमन्तिर्गतिकर्मा नि० ६ २]

अधयत् पिवति ५ १ ३. धयति पिवति ३ १ १०. [धेट् पाने (भ्वा०) धातोर्लङ्]

अधरकण्ठेन अधरस्थेन कण्ठेन २५ २

अधरम् अधोगतिम् (तम=अन्धकार कारागृहम्) १८ ७० निम्नम् (देशम्) २ १२ ४ **अधरः**=नीच (दुष्ट-कर्मैव द्वेष्यो जन) ३ ५३ २१ **अधरा**=नीचानि (पाप-फलानि) १ ३३ १५ **अधरान्**=अध पतितान् (दुर्जनान् शत्रून्) १७.६३ नीचान् (जनान्) १.१०१ ५ **अधरात्**= नीचे से ६ १९ ९ **अधरः**=अधस्थ (मेघ) १ ३२ ९ नीच (दुर्जन) ३ ५३ २१ **अधरेण**=मुखादधस्थेन (ओष्ठेन) २५ ५ [अधर=अधोर नि० ३ ११]

अधराक् दक्षिणस्या (दिश) ६ ३६ अधस्तात् १० १९ [अधराची+अस्ताति प्रत्यय । 'अञ्चेर्लुक्' अ० ५ ३ ३० सूत्रेणास्तातेर्लुक् 'लुक्तद्धितलुकि' सूत्रेण स्त्री-प्रत्ययस्यापि लुक्]

अधराचीनम् योऽधोऽञ्चति तम् (मेघम्) २ १७ ५ **अधराचीः**=या अधरान् नीचानञ्चन्ति ता (औषधय (स्त्रियो वा) १९ ५ [अधराच् प्राति० 'विभाषाञ्चेरदिक् स्त्रियामि' ति सूत्रेण ख-प्रत्यय स्वार्थे]

अधर्माय=धर्माचरणरहिताय (दुर्जनाय) ३० १० [धृञ् धारणे धातो 'अर्त्तिस्तु०' उणादि० १ १४० सूत्रेण मन् प्रत्यय । ततो नञ्समास]

अधवन्त धुन्वन्ति ७ १८ १५ [धूञ् कम्पने (क्र्या०) धातो लङ् । विकरणव्यत्ययेन श्ना न भवति]

अधस्तात् अधो निपात्य ३ ३० १६. [अधर प्राति० अस्ताति प्रत्यय । 'अस्ताति च' अ० ५ ३ ४० सूत्रेण अधरस्थाने अध् आदेश]

अधस्पदम् नीचाऽधिकारम् (पृतन्युम्—शत्रुम्) १५ ५१ [अधस्+पदम् 'अध शिरसी पदे' अ० ८ ३ ४७ सूत्रेण सकारादेश]

अधः अनन्तरम् १ १८० ७ अधोगामिन (जना) १६ ५७ अर्वाक् ३३ ७४ हीनताम् ७ ३८ ६ [अध=न धावतीत्यूर्ध्वगति प्रतिषिद्धा नि० ३ ११]

अधाक् दहति २ १५ ४ [दह भस्मीकरणे (अदा०) धातोर्लुङ् । 'मन्त्रे घसह्वर०' अ० २ ४ ८० सूत्रेण लेर्लुक्]

अधात् दधाति ४ ३४ १ दध्यात् ५ ४० ८ समा-दधाति १९ ९३ **अधातम्**=धारण करो २० ६६ **अधाताम्**=दध्याताम् २० ५७ डुधाञ् धारणपोषणयो धातोर्लुङ् । 'गातिस्थाघु०' इति सूत्रेण सिचो लुक्]

अधायि ध्रियते १ १६२ ७ धृता १ ११९ २ धीय-

ताम् १ १०४ ७ धीयते १ ६०.४ ध्रियेत ७ ३४ १४. [डुधाञ् धारणपोषणयो (जु०) धातो: कर्मणि लुङ्। अधायि=अध्यायि नि० ६ २२]

अधारयत् धारयेत्, धारयतु १३ २४ धारयति २ १७ ५ **अधारयतम्**=धारयतम् ५ ६२ ३ **अधारयन्**=धारयन्तु ३ २ ७ धारयन्ति ३३ ७५ **अधारयन्त**=धारयन्ति प्र०—अत्र लडर्थे लङ् १ २० ८ धृतवन्त १ १०३ १ **अधारयः**=धारय १ ५२ ८ धरति २ १३ ७ धारयसि ६ १७ ७ धरितवानसि ऋ० भू० १४४, ८ १२ ३० [धृञ् धारणे (भ्वा०) धातोर्णिजन्ताल् लुङ्]

अधारयः अधारयन् सन् (सूर्य) प्र०—अत्र नञुपपदात् 'धारिपारीति' श प्रत्यय १ ५१ ४ [नञ्+धारि+श । 'अनुसर्गाल् लिम्पविन्दधारि०' अ० ३.१ १३८ सूत्रेण कर्त्तरि श प्रत्यय]

अधि उपरिभावे, अधिष्ठातृभावे ३१ ५. उपरिभावे १६ ५४ उपरान्तसमये १ ४८ ७. उपरि विराजमाने १७ १४ उपरिभागे १ १६ ६ अधिकार्थे १ ६ १० अधीत्युपरिभावमैश्वर्यं वा प्राह निरु० १ ३, १ २२ अधिष्ठातृत्वेन सर्वोपरि विराजमाने १७ ३० उपरि ४ १८ १२ उपरित १ ६ ६ अव्यक्षतया १ ८४ १७. आधेयत्वे १ ८८ ३ आधाराऽर्थे १ १२६ १ अनन्तराऽर्थे २ ३० ३ उत्कृष्टे ३ १६ ५ मध्ये ४ ३० १२ अधिकार-योगे स० वि० १६५ १० ८५ ४६ [अधीत्युपरिभावम् ऐश्वर्यं वा नि० १ ३]

अधिकल्पिनम् अधिगतसामर्थ्ययुक्तम् (जनम्) ३० १८ [अधि+कृपु सामर्थ्ये धातोर्भावे घञ्, ततो मत्वर्थे इनि]

अधिकिरते विकिरति ४ ३८ ७ [कॄ विक्षेपे (तुदादि०) धातोर्लट्]

अधिकृण्वन्ते आधेयत्व कुर्वन्ति तदाचरणायाधिकार ददति, प्र०—व्यत्ययेनाऽत्रात्मनेपदम् १ ८८ ३ [अधि+डुकृञ्करणे धातोर्लट् । विकरणव्यत्ययश्च । कृण्वन्ति=कुर्वन्ति नि० ६ ३२]

अधिक्षियन्ति निवसन्ति ५ २० आधाररूपेण निवसन्ति १ १५४ २ [अधि क्षि निवासगत्यो धातोर्लट्]

अधिगमेम उपरिभावेन गच्छेम, भा०—आप्नुयाम, प्र०—अत्र 'बहुल छन्दसि, इति शपो लुक् १८ ५१. [अधि+गम्लृ गतौ धातो लिङ् । शपो लुक् च ।]

अधिगर्त्यस्य अधिकगुन्दरे गर्त्ते गृहे भवस्य (मद्य = मधुरादिपदार्थस्य) ५ ६२ ७. [अधि+गर्त्त प्राति० भवार्थे यत् प्रत्यय]

अधिचक्रिरे=उपरि कुर्वन्ति १.८५.२ [अधि+कृञ्+लिट्]

अधिजिगाति अधिगच्छति ५ ८७ ४ [अधि+जिगाति । जिगाति गतिकर्मा निघ० २ १४]

अधिजज्ञिरे अधिजायन्ते भा०—जाता ३२ २ अधिजज्ञे+प्रादुर्भवति १३ ३४ [अधि+जनी प्रादुर्भावे धातोर्लिट्]

अधिजातः उपरिजात (विद्वान्) ३५ २२. [अधि+जनीप्रादुर्भावे धातो क्त । नकारस्याकारादेश]

अधिजायसे उत्पन्न होता है म० प्र० १५६ [अधि+जनी प्रादुर्भावे धातोर्लट् । जनेर्जादेश]

अधित दधाति १ १४४ ५ दध्यात् २१ ४६. [डुधाञ् धारणपोषणयोर्धातोर्लुङ् । 'स्थाघ्वोरिच्च' सूत्रेणेकारादेश कित्वञ्च]

अधितस्थुः तिष्ठन्ति १ १६४ २ [अधि+ष्ठा गतिनिवृत्तौ धातोर्लिट् । अधितस्थु +अभिसन्तिष्ठन्ते नि० ४ २७]

अधितिष्ठति उपरि तिष्ठतु १ ८२ ४ ईश्वरत्वे नोपरिभावत्वेन प्रवर्त्तते १ ५१ ११ **अधितिष्ठन्**=उपरि स्थित सन् (इन्द्र +शिल्पविद्यैश्वर्ययुक्तो जन) ३ ३५ ४ **अधितिष्ठसि**=उपरि तिष्ठसि १८ ५५ [अधि+ष्ठा गतिनिवृत्तौ धातोर्लट्]

अधिथाः धारयेथा ४ १७.६. दध्या ६ ३१ १ [अधि+डुधाञ् धारणपोषणयो धातोर्लुङ । 'स्थाघ्वोरिच्च' सूत्रेणेकारादेश कित्वञ्च]

अधिधत्त अधिधरत १७ १ [अधि+डुधाञ्+लोट्]

अधिधायि उपरि ध्रियते ४ २८ २ **अधिधाः**=उपरि धेहि १ ५४ ११ **अधिधेहि**=उत्कृष्टतया स्थापय ३ १६ ५

अधिनिदधुः अधिकतया निनरा धरन्ति १ ७२ १० उपरि नितरा धरन्तु १ ७३ ४ [अधि+नि+डुधाञ्+लिट्]

अधिनिषेद उपरि निषीदन्ति, प्र०—अत्र वचनव्यत्ययेनैकवचनम् ४ ३५ ८. **अधिनिषेदुः**=स्थित है स० प्र०

२३६, १ १६४ ३६ स्थित हुए और होते है स० वि० २१५, १ १६४ ३६ अधिनिषीदन्ति १ १६४ ३६ [अधि+नि+षद्लृ विशरणगत्यवसादनेषु धातोर्लिट्]

अधिपतयः अधिष्ठातार (वसव+अग्न्याद्या) १५ १० स्वामिन १५ १२ अधिष्ठातार पालका (मन्यासिनो ब्रह्मचारिण) १६ ५६ उपरिष्टात्पालका (रुद्रा=बलवन्ता वायव) १५ ११ **अधिपतये**=सर्वाधिष्ठात्रे, भा०+प्रजाधिपतये (राज्ञे) २२ ३२ सर्वाधिष्ठातृणामुपरिवर्त्तमानाय (विद्वज्जनाय) ६ २० पतीना पालकानामधिष्ठात्रे, (राजपुरुषाय) १८ २८ सर्वस्वामिने राज्ञे २२ ३० **अधिपतिना**=अधिष्ठात्रा, भा०—अध्यक्षेण १५ ६ **अधिपतिः**=उपरिष्टात् पालक (पति) १५ १० स्वामी (पति) १३ २४ अधिष्ठाता (सोम=ओषधिराज) १४ ३१ द्योतकानामधिष्ठाता (सूर्य) १५ ११ अन्व०=सर्वस्य स्वामीश्वर, पत्यु पति (ईश्वर) १४ २८ [अधि+पति+जस्। प्रजापतिर्वाऽधिपति श० ८ २ ३ १२]

अधिपत्नीम् अधिष्ठातृत्वेन पालयिकाम्, अन्व०—सूर्य्याम् (स्त्रीम्) १४ ५ **अधिपत्नी**=अधिष्ठात्र्यौ (अहोरात्रे) १४ ३० अधिपतिना महिता (अदिति=भूमि) १४ २६ सर्वासा दिशामुपरि वर्त्तमाना (दिक्) १५ १४ गृहेऽधिकृता स्त्री १४ १३ [अधि+पति प्राति० 'पत्युर्नो यज्ञसयोगे' सूत्रेण ङीप् नकारादेशश्च]

अधिपतात् उपरि गच्छेत् १ ११६ ३ (अधि+पत्लृ गतौ धातोर्लेट्। 'लेटोऽडाटौ' सूत्रेणाडागम]

अधिपाः अधिक पालक [अग्नि=उपदेशक आचार्य) १२ ५८ (अधि+पा रक्षणे धातोर् अच् प्रत्यय]

अधिपिपिशे उपरिभावेनाऽऽश्रीयते ५ ५७ ६ [अधि+पिश अवयवे (तुदा०) धातोर्लिट्]

अधिपूरुषः अधि उपरि, पश्चाद् ब्रह्माण्डतत्त्वावयवै पुरुष सर्वप्राणिना जीवाऽधिकरणो देह ऋ० भू० १२२ [अधि+पुरुष। 'अन्येषामपि दृश्यते' इति दीर्घत्वम्]

अधिप्रभरे स्वीयचित्ते धरे १ १२६ १ [अधि+प्र+भृञ् भरणे (भ्वादि०) धातोर्लेट्]

अधिप्रवोचत् अधिप्रवदेत् १ १६४ १८ [अधि+प्र+वच परिभाषणे (अदादि०) धातोर्लुङ् सामान्ये। 'बहुल छन्द०' इत्यड् अभाव। 'अस्यति०' इत्यड् 'वच उम्' इति उम्]

अधिबुध्यमानौ सन्तानोत्पत्ति आदि की क्रिया को अच्छी प्रकार से जानने हारे (स्त्री पुरुष) स० वि० १४०, १४ २ ४३ [अधि+बुध अवगमने धातो कर्मणि शानच्]

अधिब्रवत् अध्यक्षतया ब्रूयात् १ ८४ १७. **अधिब्रवीतु**=उपरिभावेनोपदिशतु ६ ७५ १२ **अधिब्रुवन्**=अधिक ब्रुवन्तु, भा०—सत्यमुपदिशेयु १७ ५२. **अधिब्रुवन्तु**=अधिक ब्रुवन्तु १६ ५७. अधिष्ठातृभावेनोपदिशन्त्वध्यापयन्तु वा १६ ५८ **अधिब्रूहि**=अधिकतयाऽऽज्ञापय १ ११४ १० अधिकमुपदिश १५ १ उपरिभावेनोपदिश ३४ २७ विजयविधिमुपदिश १५ २ [अधि+ब्रूञ् व्यक्ताया वाचि (अदादि०) धातोर् लेट्]

अधि भव उपरि भव ४४ ५ अधिकारयुक्त हो अर्थात् सब से अविरोधपूर्वक प्रीति से वर्त्ता कर स० वि० १३५, १० ८५ ४६ [अधि भू सत्तायाम् (भ्वादि०) धातोर्लोट्]

अधिभोजना अधिकानि भोजनानि ६ ४७ २३ [अधि+भुज पालनाभ्यवहारयो (रुधादि०) धातो 'ल्युट् च' अ० ३ ३.११५ सूत्रेण ल्युट्। योर् अनादेश]

अधिभ्रशत् अधिक नष्ट स्यात् १२ ११ [अधि+भृशु अध पतने (दिवादि०) धातोर् लेट्]

अधिमन्थनम् उपरिस्थ मन्थनम् ३ २६ १. [अधि+मन्थ विलोडने (भ्वादि०) धातोर्ल्युट् भावे]

अधियेतिरे उपरि प्रयतन्ते १ ६४ ४ (अधि+यती प्रयत्ने (भ्वादि०) धातोर्लिट्। 'अत एकहल्मध्ये०' इति सूत्रेणेत्वाभ्यासलोपौ]

अधिराजम् सर्वेषामुपरि राजमानम् ३४ ४६ **अधिराजः** सर्वोपरिविराजमान (सभापति राजा) स० वि० १८३ राजाऽधिराज ऋ० भू० १४५ ('राजनि अधि' इति विभक्त्यर्थेऽव्ययीभावसमासे 'अनश्च' अ० ५ ४ १०८ सूत्रेण टच् समासान्त प्रत्यय]

अधिरोचने उपरि प्रकाशे १ १५५ ३ [अधि+रुच दीप्तावभिप्रीतौ च (भ्वादि०) धातोर्भावे ल्युट्]

अधिरोहय सन्तानो से अधिकाधिक बढा स० वि० १३६ अथर्व० १४ २ ३७ **अधिरोह**=उपरिभावेन रोह १ ५६ २ [अधि+रुह बीजजन्मनि प्रादुर्भावे च (भ्वा०) धातोर्णिजन्ताल् लोट्]

अधिवक्ता अधिक वदतीति स (इन्द्र =विद्वान्) १ १०० १६ सर्वेषामुपर्य्यधिष्ठातृत्वेन वर्त्तमान सन् वैद्यकशास्त्रस्याऽध्यापक, भा०—सर्वेषामधिष्ठाता (भिषग् =वैद्य) १६ ५ यथावदनुशासिता १ १०२ ११ **अधिवक्तारम्**=सर्वेषामुपरि उपदेशकम् २ ३८ ८ [अधि+ब्रूञ् व्यक्तायां वाचि धातोस्तृच् कर्त्तरि। 'ब्रुवो वचि' इति वचिरादेश]

अधिवपते उपरि स्थापयति १ ६२ ४ [अधि+डुवप् बीजसन्ताने छेदने च (भ्वा०) धातोर्लट्। 'अनेकार्था अपि धातवो भवन्ति' इति महाभाष्यवचनात् स्थापनार्थे ऽपि]

अधिवर्धत् उपरिभावेन वर्धयेत् ५ ६२ ५ **अधिवर्धताम्**=उपरिभाव वर्धताम् २७ ४ [अधि+वृधुवृद्धौ (भ्वा०) धातोर्लोट्]

अधिवासम् उपरि स्थापनीयम् (वस्त्रम्) २५.३६ [अधि+वस आच्छादने (अदादि०) धातोर्घञ् प्रत्यय]

अधिविक्षरन्ति अक्षराण्यधिवर्षन्ति १ १६४ ४२. [अधि+वि+क्षर सञ्चलने (भ्वा०) धातोर्लट्]

अधिविरप्शते उपरि विशेषेण राजते ४ ४५ १ विरप्शी महन्नाम निघ० ३ ३]

अधिविराजतः अधिक देदीप्येते १ १८८ ६ [अधि+वि+राजृ दीप्तौ (भ्वा०) धातोर्लट्]

अधिवोच उपरिभावेनोपदिश १ १३२ १ **अधिवोचत**=प्रवदत २ २७ ६ **अधिवोचः**=अधिकतया उच्याः। प्र०—अत्र लिडर्थे लुङ्। 'छन्दस्यमाङ्योगेऽपि' अ० ६ ४ ७५ इत्यडभाव ६ ३३. [अधि+ब्रूञ् व्यक्तायां वाचि धातोर्लुङ् सामान्ये। 'ब्रुवो वचि' रिति वचि। 'अस्यतिवक्ति०' इत्यङ् 'वच उम्' इत्युमागम। अडभावश्च]

अधिश्रितम् उपरि स्थितम् (भुवन=जगत्) ४ ५८ ११ अधिश्रित =प्रकाशित होता है स० प्र० ३१४ आश्रित सन् प्रकाशित (चन्द्र) ऋ० भू० १४३ [अधि+श्रिञ् सेवायाम् (भ्वा०) धातो क्त]

अधिश्रियः अधिका लक्ष्म्य १ १३६ ३ [अधि+श्री]

अधिषन्ति उपरि सन्ति १८ ६७ [अधि+अस भुवि अदादि०) धातोर्लट्। 'उपसर्गप्रादुर्भ्याम्०' अ० ८ ३ ८७ सूत्रेण मूर्धन्यादेश]

अधिषवणे सोमलताद्योपधिसाधके (मुशलोलूखले) १८ ११ [अधि+षुञ् अभिषवे (स्वा०) धातो, करणे ल्युट्। जिह्वाधिषवणम् मै० ३ ८ ८, ४.५ ६ त्वगधिषवण चर्म काठ० २५ ६]

अधिषवण्ये अधिगत सुवन्ति याभ्यान्तेऽधिषवणी तयोर्भवे (भक्ष्यपदार्थे), प्र०—अत्र 'भवेच्छन्दसि' इति यत् १ २८ २.

अधिष्ठः उपरिस्थ (सभाध्यक्ष) १ ४७ ७. [अधि+ष्ठा गतिनिवृत्तौ (भ्वा०) धातो 'सुपि स्थ' अ० ३ २ ४ सूत्रेण क]

अधिष्ठानम् अधितिष्ठन्ति यस्मिंस्तत् १७ १८ इस ससार की रचना करने वाला (ब्रह्म) आर्याभि० २ ३२ आधार इव (ब्रह्म) ७ १८ [अधि+ष्ठा गतिनिवृत्तौ धातोरधिकरणे ल्युट्]

अधिष्ठाम अधितिष्ठेम १ १३६ ४ [अधि+ष्ठा गतिनिवृत्तौ धातोर्लट्। छान्दसत्वात् तिष्ठादेशो न भवति]

अधिसन्दधुः अधिसन्दध्यु ३ ३ ३ [अधि+सम्+डुधाञ् धारणपोषणयो (जु०) धातोर्लिट्]

अधिसमोताः अधिकता से निवास और मित्रता करने वाले (सब दिव्य गुण और विद्वान्) स० वि० ८० अथर्व० ११ ५ २४.

अधिसादयामि उपरि स्थापयामि १३ १३. [अधि+षद्लृ विशरणगत्यवसादनेषु (भ्वा०) धातोर्णिजन्ताल्लट्]

अधिसीदत उपर्युपरिस्थिता भवत १५ ५४ उपरिभावेन सीदत १७ ७३ उपरिभावेन तिष्ठत १८ ६१ **अधिसीदन्**=उपरि गच्छन् (शिल्पविद्यावित्) १ ८५ ७ [अधि+षद्लृ विशरणगत्यवसादनेषु (भ्वा०) धातोर्लोट्। पाघ्रा०' इत्यादिसूत्रेण सीदादेश शिति]

अधीतम् पठन-पाठन आर्याभि० २ १ [अधि+इङ् अध्ययने (अदादि०) 'नपुसके भावे क्त' इति सूत्रेण क्त प्रत्यय]

अधीतौ अध्ययने २ ४ ८ [अधि+इङ् अध्ययने+क्तिन् स्त्रियाम्]

अधीत्य स्वर और पाठ मात्र को पढकर स० प्र० ६६ [अधि+इङ् अध्ययने+क्त्वा। क्त्वास्थाने ल्यप् च]

अधीथ स्मरण करो ७ ५६ १५ [अधि+इक् स्मरणे (अदादि०) धातोर्लट्]

अधीमसि सर्वोपरि विराजमान प्राप्नुम १८० १५ **अधीमहि**=प्राप्नुयाम ४ ३२ १६ **अधीयन्त**=

अधीयताम् १४ २८ [अधि+इण् गतौ (अदादि०) धातोर्लेट् । 'इदन्तो मसि' अ० ७ १.४६ सूत्रेण 'मसि' इकारान्तो भवति]

अधीरा धैर्यरहिता (स्त्री) १ १७९ ४ [धीर = धीमान् नि० ३ १२ धीरा प्रज्ञानवन्तो ध्यानवन्त नि० ४ ६]

अधीवासम् अधीवासमिव घासादिकम् १ १४० ६ अधि उपरि वास आच्छादन यस्य तम् (विद्युदग्निम्) १ १६२ १६ उपरि स्थापनीयम् २५ ३९ [अधि+वस आच्छादने (अदादि०) धातोर्घञ् । पूर्वपदस्य च दीर्घत्वम्]

अधीहि उपरि स्मर १ ७१ १० [अधि+इक् स्मरणे (अदादि०) धातोर्लोट्]

अधुक्षन् प्रपूरयन्तु २ ३६ १ **अधुक्षत्** प्रपिपूर्द्धि, प्र०—अत्र लोडर्थे लुङ् १ ३ [दुह प्रपूरणे (अदादि०) धातो सामान्ये लुङ् । 'शल इगुपधात्०' इति च्ले क्सादेश । 'हो ढ' 'पढो क सि' इति ढत्वकत्वे]

अधुक्षः दोग्धुमिच्छसि, भा०—प्रपूरयसि वा प्रपूरयितुमिच्छसि १ ३ प्र०—अत्र लडर्थे लुङ् [दुहप्रपूरणे (अदादि०) धातो सामान्ये लुङ्]

अधुः दध्यासु २ ६४ आच्छादयन्ति ४ १३ ४ [डुधाञ् धारणपोषणयो (जु०) धातोर्लुङ् । 'गातिस्थाघु०' सूत्रेण सिचो लुक्]

अधूनुतम् कम्पाती हैं ३ १२ ६ **अधूनोत्** कम्पयति १ ५९ ६ [धूञ् कम्पने (क्र्यादि०) धातो सामान्ये लङ्]

अधूर्षत् हिसन्तु ५ १२ ५ [धूरी हिसायाम् (दिवादि) धातोर्लुङ्]

अधूषत दुष्टान् दोषाश्च कम्पयन्ति, अन्व०—धुन्वन्ति प्र०—अत्र लडर्थे लुङ् ३ ५१ दूरीकुरुत १ ८२ २ [धू विधूनने (तुदादि०) धातोर्लुङ्]

अधृष्टम् अधर्षितम् (छर्दि = गृहम्) ६ ६७ २ **अधृष्टाः [अधृष्टासः]** अधर्षणीया (गिर = सुशिक्षिता वाच) ७ ३ ८ धृष्टतारहिता अप्रगलभा (वसव = जिज्ञासवो विद्यार्थिन) ६ ५० १५ अप्रगलभा (वसव = विद्वास) ६ ५० ४ शत्रुभिरधर्षणीया (मरुत = शूरवीरा जना) ६ ६६ १० [जिधृषा प्रागल्भ्ये (स्वा०) धातो क्त]

अधेनुम् अदोहयित्रीम् (गा = पृथिवीम्) १ ११७ २० [धेनुर्धयनेर्वा धिनोतेर्वा नि० ११ ४२ तत्प्रतिषेध]

अधेन्वा अविद्वान् ऋ० भू० ३१७ सुशिक्षा शब्द, अर्थ और सम्बन्ध के बोध से रहित वाणी प० वि० ॥ [अधेन्वा = नास्मै कामान् दुग्धे नि० १ २० धेनुरिति वाङ्नाम निघ० १ ११ धेना वाङ्नाम १ ११]

अधोअक्षाः अधोऽर्वाचीना अक्षा इन्द्रियाणि येषान्ते (विद्वज्जना), प्र०—अक्षा इति पदनाम० निघ० ५ ३, ३ ३३ ९

अधोक् प्रायात् ४ १९ ७

अधोरामः अध क्रीडी (पक्षी) २९ ५८ **अधोरामौ** अधोभागे श्वेतवर्णौ (पशू) २९ ५९ अधोरमण ययोस्तौ (अश्विनौ = पशू) २४ १ [अधोराम सावित्र इति पशु समाम्नाये विज्ञायते, कस्मात् सामान्याद् इत्यधस्तात् तद्वेलाया तमो भवति, एतस्मात् सामान्याद् अधस्ताद् राम = अधस्तात् कृष्ण । नि० १२ १४]

अध्यक्षः स्वामी (परमात्मा) स० प्र० २८१, १० १२९ ७ **अध्यक्षाय** अधिरुपरिभावेऽन्वेषणेऽक्षाण्यक्षिणी वा यस्य यस्माद्वा तस्मै (सभाध्यक्षाय) ४ १९. [अधि अक्षिपदयोर्बहुव्रीहिसमासे 'बहुव्रीहौ सक्थ्यक्ष्णो०' अ० ५ ४ ११३ सूत्रेण समासान्त षच्]

अध्यजायत अधिजायते १३ ४५ उत्पन्नम् प० वि० ॥ [अधि+जनी प्रादुर्भावे (दिवा०) धातोर्लङ् । 'ज्ञाजनोर्जा' इति जादेश]

अध्यतिष्ठत् अधिष्ठातृभावेन वर्त्तते १७ २० अधिष्ठाता भवति १ १६३ ९ सब के ऊपर विराजमान हो रहा है आर्याभि० २ ३६ १७ २० उपरि तिष्ठेत् २९ २० [अधि+ष्ठा गतिनिवृत्तौ (भ्वा०) धातो सामान्ये लङ्]

अध्यधत्तम् उपरि धरतम् १ ११७ ८ [अधि+डुधाञ् धारणपोषणयोर्धातो सामान्ये लङ्]

अध्यधारयः उपरि धरति २ १३ ७ [अधि+धृञ् धारणे धातोर्णिजन्ताल् लङ्]

अध्यवधीः अधिहन्या ४ ३० १५ [अधि+हन हिसागत्यो (अदादि०) धातो सामान्ये लुङ् । 'लुङि च' इति सूत्रेण वधादेश]

अध्यवोचत् उपदिशेत् १६ ५ [अधि+ब्रूञ् व्यक्ताया वाचि धातो सामान्ये लुङ् । 'ब्रुवो वचि' रिति वचिरादेश । अङ् उमागमश्च]

अध्यस्थात् अधितिष्ठेत् १७ ५४ अधितिष्ठति ५ ३१ १ [अधि+ष्ठा गतिनिवृत्तौ+लुङ् । 'गातिस्था०' सूत्रेण सिचो लुक्]

अध्यस्थाः अध्युपरि तिष्ठन्तीत्यध्यस्था (प्राणिन) १ ४६ २

अध्यागहि उपरितो गमयत्यागमयति वा, प्र०—अत्र लडर्थे लोट्, पुरुषव्यत्ययेन गमेर्मध्यमपुरुषैकवचने 'बहुल छन्दसि' इति शपो लुक्, हेर्ङित्वादनुनासिकलोपश्च १ ६ ९ [अधि+आ+गम्लृ गतौ+लोट् । शपो लुक् । अनुनासिक-लोपश्च]

अध्याभरत् स्वात्मनि परमात्मान धारितवान् ऋ० भू० १५६ [अधि+आ+भृञ् भरणे धातोर्लङ्]

अध्यारुहाम उपर्य्युत्कृष्टतया समन्तात् प्रादुर्भवेम, प्र०—अत्र विकरणव्यत्यय ८ ५२ [अधि+आ+रुह बीजजन्मनि प्रादुर्भावे च धातोर्लङ् । विकरणव्यत्ययेन शप स्थाने श]

अध्यालोहकर्णाः अधिगत च तल्लोह च सुवर्ण तद्वद्वर्णो यस्य स (पशु पक्षी वा), प्र०—लोहमिति हिरण्यनाम निघ० १ २, २४ ४

अध्यावक्षत् अध्यावहेत् ३ ५ ९ [अधि+आ+वह प्रापणे (भ्वा०) धातोर्लेट् । 'सिब्बहुल लेटि' सूत्रेण सिप्, हस्य ढत्वकत्वे]

अध्याशत उपरि व्याप्नुवन्ति १ ८५ २ [अधि+आ+अशू व्याप्तौ सघाते च (स्वा०) धातोर्लङ् । वहुल छन्दसी' ति विकरणलुक्]

अध्यासते उपरिभागे सन्ति १ ११ ६ [अधि=आस् उपवेशने (अदादि०) धातोर्लट्]

अध्युत्तरस्मिन् परलोके द्वितीये जन्मनि च ऋ० भू० ३०५ [अधिउत्तरपदयो समासे सप्तमी विभक्ति]

अध्युदितः उपर्युदय प्राप्त (सूर =सूर्य) ३२ ७ [अधि+उत्+इण् गतौ (अदादि०) धातो क्त प्रत्यय]

अध्येति स्मरण करता है स० वि० १४६, ३ ४२ स्मरति ४ १७ १२ **अध्येमि**=सर्वत स्मरामि ३ ४९ ९ [अधि+इक् स्मरणे धातोर्लट्]

अध्येधे प्रकाशयति ७ ३६ १ [अधि=एध वृद्धौ (भ्वा०) धातोर्लट्]

अध्यैरयन्त स्वेच्छापूर्वक विचरते है स० वि० ७, ३२ १० सर्वत्र स्वेच्छया विचरन्ति ३२ १० स्वच्छन्द स्वेच्छा से वर्त्तने है आर्याभि० २ ६ [अधि=ईर गतौ कम्पने च धातोर्णिजन्ताल् लङ् सामान्ये]

अध्रजन् धावन्ति १ १६६ ४. [ध्रज गतौ (भ्वा०) धातोर्लङ् । ध्रजत गतिकर्मा निघ० २ १४]

अध्रिगवे शत्रुभिरधृयोऽसहमाना वीराम्तान् गच्छति प्राप्नोति तस्मै (इन्द्राय=) १ ६१ १ **अध्रिगुम्**=इन्द्र परमैश्वर्यवन्तम्, प्र०—इन्द्रोऽप्यध्रिगुरुच्यते निरु० ५ ११, १ ११२ २० **अध्रिगुः**=सत्यगति (राजा) ६ ४५ २० **अध्रिगू**=अधिकगन्तारौ (वायुविद्युतौ) ५ ७३ २ **अध्रिगो**=योऽधृन् धारकान् गच्छन्ति तत्सम्बुद्धौ (विद्वज्जन) ५ १० १ योऽधृन् मन्त्रान् गच्छति जानाति तत्सम्बुद्धौ (अग्ने=सत्पुरुष) ३ २१ ४ [धृङ् अनवस्थाने (भ्वा०) धातोर्बाहुलकाद् औणादिकक्रिन्प्रत्यये ध्रि । न ध्रि =अध्रि । गाङ् गतौ (भ्वा०) धातोर् औणादिके कु प्रत्यये गु । तयो समास । अधिगुर्मन्त्रो भवति गव्यधिकृतत्वात् । अपि वा प्रशासनमेवाभिप्रेत स्यात् तच्छब्द-वत्त्वात् । अग्निरप्यध्रिगुरुच्यते अधृतगमनकर्मवन् । इन्द्रो-ऽप्यध्रिगुरुच्यते निघ० ५ ११ शमीध्व सुशमि शमीध्व शमीध्वमध्रिगवित्ति । अध्रिगुर्वै देवाना शमिता ऐत० ब्रा० २ १ ७ अध्रिगुश्चापापश्च । उभौ देवाना शमितारौ तै० ३ ६ ६ ४]

अध्रिगावः अधृता गावो रश्मयो यैस्ते (रुद्रा = वायव) १ ६४ ३ [अध्रिगोशब्दयो समास]

अध्रिजः अध्रिषु धारकेपु जात (राजा) ५ ७ १० [अध्रि+जनी प्रादुर्भावे धातोर्ड प्रत्यय]

अध्रुक् यो न द्रुह्यति (महाविद्वान्) ६ ५ १. द्रोह-रहित (भ्राता=बन्धु) ६ ५१ ५ य कदाचिन्न द्रोग्धि (अग्नि =परोपकारी विद्वज्जन) ६ ११ २ [द्रुह अभिकाक्षायाम् धातो कर्त्तरि क्विप् । नञ्समास]

अध्वन् अध्वनि ६ ५१ १५ **अध्वनः**=सन्मार्गान् १ १०४ २ शत्रोर्मार्गान् ९ १३ मार्गात् १ ७१ ९ मार्गान् १ ७२ ७ अन्व०—व्यवहारपरमार्थसिद्धिकरस्य मार्गस्य मध्ये ४ १९ मार्गस्य १ १४६ ३ **अध्वनाम्**=विद्याधर्म-शिल्पमार्गाणाम् ५ ३३ परमार्थ और व्यवहार मार्गो के आर्याभि० २ १८, ५ ३३ **अध्वनि**=मार्गे ६ ४६ १३ **अध्वभिः**=मार्गैं १ २३ १६ **अध्वसु**=मार्गेषु ३ ३२ **अध्वा**=मार्ग १ ११३ ३ सन्मार्गरूप १ १७३ ११ **अध्वानम्**=धर्म-मार्गम् १ ३१ १६ [अद भक्षणे (अदादि०) धातो 'अदेर्ध च' उणा० ४ ११६ सूत्रेण क्वनिप्-धकारादेशश्च अध्वन् अन्तरिक्षनाम निघ० १ ३ योजनशो हि मिमाना अध्वान धावन्ति श० ५ १ ५ १७]

अध्वपते धर्मव्यवहार-मार्गपालयित (विद्वज्जन)

५.३३ [अव्वा=मार्गस्तस्य पतिस्तत्सम्बुद्धौ]

अध्वनयत् धुनयति ६.१८.१० [ध्वन शब्दे (चुरा०) धातोर्लङ्]

अध्वरकृतम् अध्वरं करोति येन सामग्रीसमूहेन तम्, प्र०—अत्र 'कृतो बहुलम्' इति वार्तिकेन करणे क्विप् 'अध्वरो वै यज्ञो यज्ञकृतम्' शत० १.२.४.५, १.२४ [अध्वरोपपदे डुकृञ् करणे धातो क्विप्]

अध्वरम् हिंसाऽधर्मादिदोषरहितम् (यज्ञ=प्रथम-मन्त्रोक्त महिमान कर्म वा), प्र०—'ध्वरति हिंसाकर्मा तत्प्रतिषेधो निपात', निरु० १.८, १.१४ क्रियाजन्य जगत् १.१८.८ अहिंसनीय सुखरूप यज्ञम् १.२३.१७ अग्नि-होत्रादिकमिव विद्याविज्ञानवर्द्धक यज्ञम् १.७४.४ अहिंसादिलक्षण धर्मम्, यज्ञम् १.१३५.७ राज्यपालनाख्य यज्ञम् १.१३५.३ न्यायव्यवहारम् ४.६.७ पालनाख्य व्यवहारम् ५.४.८ अध्ययनाऽध्यापनाख्यमहिंसनीय यज्ञम् १.१०१.८ अहिंसनीय यज्ञम् १.४४.१३ अहिंसादि-व्यवहारयुक्त यज्ञम् ३.२४.२ अहिंसादिलक्षण धर्म्य व्यवहारम् ३.२८.५ अहिंसनीयराज्यव्यवहारम्, भा०—यथार्थं न्यायम् ३.३.१५ अहिंसनीय शिल्पसाध्य व्यवहारम् २.२.५ अहिंसनीय (यज्ञ=सङ्गमनीय व्यवहारम्) भा०—अहिंसाऽऽख्य धर्मम् २.६.२६ अहिंसनीय न्यायव्यवहारम् ६.५२.१२ पालक व्यवहारम् ३.५४.१२ अहिंसनीय सुखहेतुम् १.१४.११ अहिंसामय यज्ञम्, भा०—विद्या-धर्मदानम् ३.७.१६ क्रियामय यज्ञम्, भा०—यज्ञाऽनुष्ठानम् ३.११ अहिंसाधर्मयुक्तं व्यवहारम् १.१५१.३ अहिंसादि-गुणयुक्त व्यवहारम् ३.१७.५. सत्कर्तव्यं व्यवहारम् ४.१५.२ व्यवहारयज्ञम् १.६३.१२ अहिंसक (विचारम्) १.७४.१ उपदेशाख्य यज्ञम् ७.४२.५ अहिंसनीय सुखहेतुम् १.१४.११ क्रियाजन्य जगत् १.१८.८ त्रिविध यज्ञम् १.२६.१ अहिंसनीय गृहाश्रमादिव्यवहारम् ७.२.७ गृहाश्रमक्रियासिद्धिकर यज्ञम् ६.२४ अविनश्वर यज्ञम् ६.२५ निष्कौटिल्यम् ६.३० **अध्वरस्य**=अहिंसनीयस्य धर्म्यस्य व्यवहारस्य ४.६.१ अहिंसनीयस्य वर्धितु योग्यस्य यज्ञस्य १२.११० अहिंसामयस्य शिल्पव्यवहारस्य ३.२३.१ अहिंसामयस्य न्यायव्यवहारस्य ७.७.१ अहिंसनीयस्य (शिल्पिनो जनस्य) ४.७.८ अहिंसनीयस्य राज्यस्य ४.३.१ हिंसितुमनर्हस्य (यज्ञस्य) १.१२८.४ अहिंसनी-यस्य धर्मस्य व्यवहारस्य ४.६.१ अहिंसामयस्य यज्ञस्य ५.४१.४ सर्वव्यवहारस्य ७.११.१ यज्ञस्य मध्ये ७.१४.२

अध्वरः=अहिंसनीयो व्यवहार १५.३८ यज्ञ २८. **अध्वरा**=अहिंसनीयान् यज्ञान् २१.४७ **अध्वराणाम्**=अग्निहोत्राद्यश्वमेधान्ताना शिल्पविद्यासाध्याना वा सर्वथा रक्षणीया यज्ञानाम् ३.२३ यज्ञों और युद्धों के मध्य में आर्याभि० १.२६ यज्ञानाम् १.४४.६ अहिंसनीयाना यज्ञानाम् १.४४.२ अहिंसनीय-व्यवहाराख्यकर्मणाम् १.४५.४ अग्निष्टोमादियज्ञाना तत्कर्तॄणा धर्मात्मना मानवानाञ्च ऋ० भा० नमू० ८ पूर्वोक्ताना यज्ञाना धार्मिकाणा मनुष्याणा वा १.१.८ राज्यपालनाग्निहोत्रादि-शिल्पान्ताना यज्ञानाम् १.२७.१ **अध्वरान्**=अहिंसनी-यान् गृहाश्रमव्यवहारान् १.४८.११ अहिंसकान् (जनान्) १.१३५.५ **अध्वराय**=हिंसारहिताय धर्म्याय व्यवहाराय ७.४१.६ अहिंसाख्याय शिल्पमयाय यज्ञाय ३३.७५. अहिंसारूपयज्ञाय ३.२७ अहिंसनीयाय व्यवहाराय ४.७.७ **अध्वरे**=अहिंसनीये (दमे=दान्ते गृहे) ४.६.४ अहिंस-नीये धर्म्ये व्यवहारे ३.१०.१ अविद्यमानो ध्वरो हिंसन यस्मिन् रक्षणे १.१२१.७ अहिंसनीये प्रजापालनाख्ये व्यवहारे १.१२१.१ अहिंसनीये शिल्पव्यवहारे ७.३.१ अहिंसादिलक्षणे धर्माचरणे ७.१६.५ सङ्गते संसारे ३.२७.१२ सत्ये व्यवहारे ४.५५.१. अहिंसनीयेऽध्ययना-ऽध्यापनीये व्यवहारे ३.५३.१० अनुष्ठानव्ये क्रियासाध्ये यज्ञे १.१५.७ उपासनीये कर्त्तव्ये वा यज्ञे १.१२.७ उपासनाक्रियासाध्ये यज्ञे १.१६.३ अध्ययनाऽध्यापनराज्य-पालनादिव्यवहारे ३.८.१ ज्ञानादियज्ञ मे आर्याभि० १.४८ शिल्पादिव्यवहारे ५.५८.६ अहिंसायुक्ते व्यवहारे ५.४४.५ अहिंसनीयेऽहातव्य उपासनाख्ये कर्त्तव्ये सङ्ग्रामे वा १.६४.१३ अहिंसायज्ञे ५.२६.३ सङ्गते शिल्प-क्रियासिद्धे याने १.४७.२ सर्वथाऽनुष्ठानव्ये धर्म्ये व्यवहारे ६.१६.२ मित्रभावैरहिंसनीये यज्ञे वा २.४ अहिंसनीये विद्याप्राप्तिव्यवहारे ६.५०.६ व्यवहारे ४.१५.१ अहिंसादि-लक्षणे योगे ६.१६.४६ अहिंसनीये कर्त्तव्ये वा यज्ञे १.१२.७ अहिंसनीये धर्म्ये यज्ञे १.५७.३ दयामये व्यवहारे ३.२८.३ सङ्गन्तव्ये व्यवहारे ३.५७.८ सत्ये व्यवहारे ४.५५.१ **अध्वरेषु**=अहिंसनीयेषु विद्याप्राप्तिकर्मसु ३.६२.५ मित्रत्वादिगुणयुक्तव्यवहारेषु विधियज्ञेषु वा ३.२७.८ अग्निहोत्रादिक्रियामयव्यवहारेषु ७.१०.५ अहिंसनीयेषु यज्ञेषु २५.४०. राज्यपालनादिषु व्यवहारेषु ५.२८.४ उपासनाऽग्निहोत्राद्यश्वमेधान्तेषु शिल्पविद्या-ऽन्तर्गतेषु वा यज्ञेषु ३.१५ अनुष्ठानव्येषु क्रियामयेषु यज्ञेषु १.५८.७ सङ्गमनीयेषु व्यवहारेषु ३.२६.७ गृहाश्रम-

व्यवहारानुष्ठानेषु ४ ५ १ २ अहिंसनीयेषु प्रजापालनन्यायव्यवहारेषु ५ ४ १ अहिंसनीयेषु धर्म्येषु व्यवहारेषु ५ १४ २ अहिंसायुक्तेषु सङ्ग्रामादिव्यवहारेषु ७ १ १६ [ध्वरति वधकर्मा नि० २ १९ अध्वर इति यज्ञनाम ३ १७ अध्वरमिनिरन्तरिक्षनाम निघ० १ ३ अध्वरे यज्ञे नि० ६ १३ अध्वरेषु यज्ञेषु नि० १० १९ अध्वर इति यज्ञनाम, ध्वरति हिंसाकर्मा, तत्प्रतिषेध नि० १ ७ अध्वरम् यज्ञम् नि० ८ ६ अध्वरो वै यज्ञ श० १ २ ४ ५, ४ १ ३८ ३९, ५ ३ ४ १०, ३ ५ ३ १७, ६. २ ११ यज्ञो वा अध्वर काठ० ३१ ११ प्राणोऽध्वर श० ७.३ १ ५ रसोऽध्वर श० ७ ३ १ ६ ते स्मुरा अपक्रामन्तोऽनुवन्न वा इमे ध्वर्तवा अभवन्निति । तदध्वस्याध्वरत्वम् क० ३६ ४ देवान्ह वै यज्ञेन यजमानान्त्सपत्ना असुरा दुधूर्षाञ्चक्रु । ते दुधूर्षन्त एव न शेकुर्धूर्वितु ते पराबभूवुस्तस्माद् यज्ञोऽध्वरो नाम श० १ ४ १ ४०]

अध्वरश्रियः या अध्वरस्याऽहिंसनीयस्य चक्रवर्त्तिराज्यस्य लक्ष्मीस्ता १ ४७ ८ **अध्वरश्रियम्**= याऽध्वराणामहिंसनीयाना यज्ञाना श्री शोभा ताम् १ ४४ ३

अध्वरस्येव अहिंसामयस्य यज्ञस्येव ६ ६६ १० [अत्र 'इवेन सह समासो विभक्त्यलोपा०' अ० २ २ १८ वार्त्तिकेन समासो विभक्तेरलोपश्च]

अध्वराऽइव अहिंसनीयौ यज्ञाविव ३ ६ १०. [ध्वरति हिंसाकर्मा, तत्प्रतिषेधोऽध्वर नि० १ ७]

अध्वरीयताम् आत्मनोऽध्वरमिच्छतामस्माकम् (जनानाम्) प्र०—अत्र 'न छन्दस्यपुत्रस्य, अ० ७ ४ ३५ इत्यस्य 'अपुत्रादीनामिति वक्तव्यम्, इति वचनादीकारनिषेधो न भवति 'वाच्छन्दसि सर्वे विधयो भवन्ति, इति नियमात् 'कव्यध्वरपृतनस्यर्चि लोप ' अ० ७ ४ ३९ इत्यकारलोपोऽपि न भवति १ २३ १६ य आत्मनोऽध्वरमहिंसायज्ञ कर्त्तु मिच्छन्ति तेषा (जनाना=मनुष्याणाम्) ४ ६ ५ आत्मनोऽध्वरमिच्छताम् (विशा=प्रजानाम्) ६ २ १० [अध्वर सुबन्ताद् आत्मनेच्छायाम् क्यच् । 'क्यचि च' ईत्वम् क्यजन्ताच्छतृप्रत्यय]

अध्वर्यन्तः आत्मनोऽध्वरमिच्छन्त (देवा= विद्वज्जना) १७ ५६. **अध्वर्यन्ता**=आत्मनो ऽध्वरमिच्छन्तौ (अध्यापकोपदेशकौ) १ १८१.१ [अध्वर+क्यच् आत्मनेच्छायाम् । तत शतृ प्रत्यय । 'न छन्दस्य०' इति सूत्रेणेत्व न भवति]

अध्वर्यवम् य आत्मनोऽध्वरमिच्छति तम् (पुरुषम्) प्र०—अत्र 'वाच्छन्दसि' इत्यस्याऽपि गुणावादेशौ, (पुरुषम्) २८ १९ **अध्वर्यवः**=आत्मनोऽध्वरमहिंसा कामयमाना (विद्वज्जना) ३ ४६ ५ युद्धयज्ञमिद्धिकरा (सज्जना) २ १४ ६ सर्वस्य प्रियाचरणा (विद्वास) २ १४ ४ राजसम्बन्धिन (विद्वज्जना) २ १४ ११ महौषधिनिष्पादका (महावैद्या जना) २ १४ १० पुरुषार्थिन (जना) २ १४ ९ यज्ञसम्पादका (सज्जना) २ १४ ३ आत्मनोऽध्वर कामयमाना (सज्जना) २ १४ १ आत्मनोऽहिंसाख्ययज्ञमिच्छन्त , (भा०—अध्यापकोपदेशकाऽनिथय) २३ ४२ अध्वरमहिंसाधर्मकाममिच्छव (विद्वास) १ १५३ १ विद्यायज्ञसम्पादका (विद्वास) ५ ३१ १२ सर्वस्य प्रियाचरणा (सत्पुरुषा) २ १४ ४ **अध्वर्युभिः**=आत्मनो हिंसामनिच्छुभि (जनै) २ ३७ २ अध्वर यज्ञमिच्छद्भि (सत्पुरुषै) १ १३५ ६ हिंसाऽन्यायवर्जितै सह (प्रजाजनै सह) ३३ ७० य आत्मानमध्वरमिच्छन्ति तै (प्रजाजनै) १ १३५ ३ अध्वर निष्पादकै (होत्रध्वर्यूद्गातृब्रह्मसभ्यैर्ऋत्विग्भि) ३ ७ ७ **अध्वर्युः**= आत्मनोऽध्वरमहिंसाव्यवहार कामयमान (सज्जन) ६ ४१ २ अध्वर शिल्पविद्या कामयमान (विद्वान् शिल्पी) ५ ३७ २. अहिंसायज्ञमिच्छु (विद्वान्) २५ २८ अध्वरस्य योजको नेता कामयिता वा (परमेश्वर) प्र०— अत्राऽध्वरशब्दोपपदाद् युज्धातोर्बाहुलकात् क्यु प्रत्यय टिलोपश्च 'अध्वर्युरध्वरयु=अध्वर युनक्ति० नि० १ ८, १ ९४ ६ आत्मनोऽध्वरमहिसाधर्ममिच्छु (मित्र = सुहृज्जन) ३ ५ ४ य आत्मनोऽध्वरमहिंसनीय व्यवहार कर्त्तुमिच्छु (अग्नि=सूर्य) ४ ६ ४ यज्ञकर्त्ता (सज्जन) २ ५ ६ आत्मनोऽध्वरमहिंसनमिच्छु (सत्पुरुष) १ १६२ ५ **अध्वर्यू**=आत्मनोऽध्वरमहिंसामिच्छन्तौ (विद्वज्जनौ) ३३ ७३ आत्मनोऽध्वरमहिंसनीय गृहाश्रमादिक यज्ञमिच्छू (अश्विना=अध्यापकोपदेशकौ) १४ ७ **अध्वर्यो**!= योऽध्वरमिवाचरति तत्सम्बुद्धौ (राजन्) २३ २३ अहिंसक (राजप्रजाजन) ३ ५३ ३ योऽध्वर यज्ञ युनक्ति तत्सम्बुद्धौ (वैद्यराज) २० ३१ [अध्वर्यु=अध्वरयु । अध्वर युनक्ति अध्वरस्य नेता अध्वर कामयते वा । अपि वाऽधीयाने युरुपबन्ध नि० १ ७ पूर्वार्धो वै यज्ञस्याध्वर्यु जघनार्ध पत्नी श० १ ९ २ ३ प्रतिष्ठा वा एषा यज्ञस्य यदध्वर्यु तै० ३ ३ ८ १० वायुर्वा अध्वर्युर् अधिदैव प्राणोऽध्यात्मम् गो० १ ४.५ वह्निरध्वर्यु तै० १ १ ६ १० राज्य वा अध्वर्यु तै० ३ ८ ५ १ मनो-

ऽध्वर्यु श० १ ५ १ २ १ प्राणो यज्ञस्याध्वर्यु जै० १ ८५ प्राणापानावेवाध्वर्यू गो० १ २ १० श० ५ ५ १ ११ द्यौरध्वर्यु मै० १ ९.१ चक्षुरध्वर्यु कौ० १७ ७ आश्विनौ वाऽध्वर्यू काठ० २८ ५ आदित्यो मे ऽध्वर्यु ष० २ ५ अपानो मेऽध्वर्यु ष० २ ७ अश्विनौ हि देवानामध्वर्यु तै० ३ २ २ १ अध्वर्युरेव मह गो० पू० ५ १५ तमेतमग्निरित्यध्वर्यव उपासते श० १० ५ २ २० प्रतीचऽध्वर्यो श० १३ ५ ४ २४ पर्णमयेनाध्वर्युरभिषिञ्चति तै० १ ७ ८ ७]

अध्वरीयसि आत्मनोऽध्वरमहिंसामिच्छसि २ १ २ [अध्वरसुबन्ताद् आत्मनेच्छाया क्यच् । 'क्यचि चे' तीत्वम् । 'वा छन्दसि सर्वे विधयो विकल्प्यन्ते' इति वचनाद् 'न छन्दस्य०' इतीत्वप्रतिषेधो न भवति क्यजन्ताद्धातोर्लट्]

अध्वस्मभिः अपतनशीलैर्गुणकर्मस्वभावै २ ३५ १४ अध्वस्तै (पथिभि =मार्गै) २ ३४ ५ **अध्वस्मानः**= ये नाऽध पतन्ति ते (जना), प्र०—'ध्वसु अध पतने, १ १३९ ४ [नञ्+ध्वसु अवस्रसने (भ्वा०) धातोर्मनिन् प्रत्यय । छान्दसो नकारलोप]

अध्वानयत् धुनयति ६ १८ १० [ध्वन शब्दे धातोर्णिजन्ताल् लङ्]

अनक्ति कामयते ४ ६ ३ **अनक्तु**=सयुनक्तु ३७ ११. कामयताम् ७ ४३ ३ प्रकट करे २ ३ २ सिञ्चतु ६ २ [अञ्जू व्यक्तिम्रक्षणकान्तिगतिषु (रुधादि०) धातोर्लट्]

अनग्नाः सर्वतो वस्त्रभूषणादिभिराच्छादिता (युवतय =प्राप्तयौवना स्त्रिय ३ १ ६ [नञ्+नग्न-पदयो समास]

अनक् प्रकटीकरोति २ १५ ७ **अनक्ति**=कामयते १ १५३ २ **अनक्तु**=कामयताम् ७ ४३ ३ प्रकट करे २ ३ २ सिञ्चतु ६ २ सयुनक्तु ३७ ११ [अञ्जू व्यक्ति-म्रक्षणकान्तिगतिषु (रुधा०) धातोर्लङि लोटि लटि च रूपाणि]

अनग्नित्राः अविद्यमानज्वरेण रक्षका (रोगा) १ १८९ ३ [नञ्+अग्नि+त्रैङ् पालने धातो क प्रत्यय]

अनग्निष्वात्ताः अविद्यमानाऽग्निविद्याग्रहणा ज्ञान-निष्ठा पितर १९ ६० वायुजलभूगर्भादिविद्यानिष्ठा (पितर) ऋ० भू० २६२, १९ ६० [नञ्+अग्निष्वात्ता । अग्निष्वात्ता=अग्नि+सु+आ+दाञ् दाने (जु०) धातो क्त]

अनज उच्चरतोपदिशत, प्र०—अत्र व्यत्ययेनैकवचनम् ५ ५४ १ **अनजन्**=कामयेरन् ३ १९ ५

अनकुत्सु गवादिषु ३ ५३ १८ **अनड्वान्**= वृषभ (पशु) २९ ५९ हलशकटादिवहनसमर्थ (वृषभ) १८ २७ **अनड्वाहः**=शकटवहनसमर्था (पशव = (वृषभा २४ १३ **अनड्वाहम्**=योऽनासि शकटानि वहति तद्वद्वर्त्तमानम् (वह्नि कृषीवल वा) ३५ १३ शकटवाहकम् (गाम्=वृषभम्) २८ ३० [अनडुह् प्राति-पदिकस्य रूपाणि । सप्तम्या 'वसुस्र सु०' अ० ८ २ ७२ सूत्रेण दकारादेश । प्रथमाया चामागमे नुमि सयोगान्त-लोपे च रूपम् । अग्निरेष यदनड्वान् श० ७ ३ २ १ आग्नेयो वा ऽनड्वान् । श० ७ ३ २ १९, १३ ८ ४ ६ वह्निर्वा अनड्वान् तै० १ १ ६ १०, १ ८ २ ५ वोढा ऽनड्वान् तै० स० ७ ५ १८ १ अनड्वान् वै सर्वाणि वयासि पशूनाम् मै० ३ ७ ४ अनड्वान् वय पङ्क्ति-श्छन्द तै० स० ४ ३ ५ १]

अनत् प्राणत् १ १६४ ३० [अन प्राणने धातोर्लेट् । अनिति गतिकर्मा निघ० २ १४]

अनदतीः अविद्यमाना अतीव सूक्ष्मा दन्ता यासान्ता (युवतय =प्राप्तयौवना स्त्रिय) ३ १ ६ [नञ्+दन्त-पदयोर्वहुव्रीहौ 'छन्दसि चे' ति सूत्रेण दतृ-आदेशे ङीपि च रूपम् । अनजादावपि छान्दसत्वान्नुट्]

अननुदः योऽनुगत न ददाति तस्य १ ५३ ८. अप्रेरित (इन्द्र =विद्वान्) २ २१ ४. येऽनुददति तेऽनुदा, न विद्यन्तेऽनुदा यस्य स (विद्वज्जन) २ २३ ११ [अनु+दा+क, ततो नञ्समास । अथवा णुदप्रेरणे धातोर् इगुपधलक्षण क प्रत्यय, ततो नञ्समास]

अननुभूतीः अनुभवरहितान् (जनान्) ६ ४७ १७ [अनु+भू सत्तायाम्+क्तिन् भावे स्त्रियाम् । ततो नञ् वहुव्रीहि]

अनन्तम् देशकालवस्तुपरिच्छेदशून्यम् (ब्रह्म) १ ११५ ५ अविद्यमानोऽन्तो यस्य तत् (भा०—ब्रह्म) ३३ ३८ **अनन्तः**=अविद्यमानाऽन्त आकाश १ ११३ ३ नि सीम (त्वेष =प्रकाश) ६ ६१ ८ **अनन्ते**= देशकालवस्त्वपरिच्छिन्ने (अश्मनि=मेघे) १ १३० ३. परमात्मन्याकाशे वा ४ १ ७ **अनन्तैः**=अविद्यमान-सीमभि (वधै) १ १२१ ९ [अनन्तमिति वहुव्रीहिसमास अनन्ते द्यावापृथिव्यो कौ० नि० ९०]

अनन्तासः अविद्यमानोऽन्तो येषान्ते (परमाणव)

५ ४७ २ (नञ्+अन्तयोर्बहुव्रीहि]

अनन्तशुष्माः अनन्त शुष्म बल येषान्ते (नर) १ ६४ १० [शुष्मम् बलनाम निघ० २ ९ अनन्तशुष्मयोर्बहुव्रीहि]

अनपच्युतम् ह्रासरहितम् (सहा=बलम्) ५ ४४ ६. अपचयरहितम् (पुरुषम्) ४ १७ ४ **अनपच्युतः**=अपचयरहित (रथ=) विमानादियानविशेष) ४ ३१ १४ [अप+च्युङ् गतौ (भ्वा०) क्त । नञ्समास]

अनपत्यानि अविद्यमानान्यपत्यानि येषु तानि (अधर्म्यकर्माणि) ३ ५४ १८ [अपत्य कस्मात् । अपतत भवति । नानेन पततीति वा नि० ३ २ ततो नञ्बहुव्रीहि]

अनपवृज्यान् अपवर्जितुमनर्हान् (मार्गान्) १ १४६ ३ [अप+वृजी वर्जने (अदा०) धातोर् ण्यत् प्रत्यय । नञ्समास]

अनपवृत् यो नाऽपवृणोति ६ ३२ ५ [अप+वृञ् वरणे (स्वा०) धातो क्विप् । नञ्समास]

अनपव्ययन्तः अपव्ययमप्राप्नुवन्त (अश्वा=तुरङ्गा बल्वादयो वा) ६ ७५ ७ अपव्ययमाप्रापयन्त (योद्धृजना) २९ ४४ [अप+व्यय गतौ (भ्वा०) धातो शतृप्रत्यय नञ्समासश्च]

अनपस्फुरन्तीम् दृढा निश्चला प्रज्ञा सम्पादयन्तीम् (धेनु=वाचम्) ४ ४२ १० विज्ञापयित्रीमिव योगविद्याजन्या वाचम् ७ १० [अप+स्फुर सचलने (तुदा०) धातो शतृङीप्प्रत्ययौ । नञ्समासश्च]

अनपस्फुराम् निश्चला दृढाम् (धेनु=वाचम्) ६ ४८ ११ [अप+स्फुर सचलने (तुदा०) धातोरिगुपधलक्षण क प्रत्यय । नञ्समासश्च]

अनपावृत् यो नाऽपवृणोति (इन्द्र=राजा) ६ ३२ ५ [अप+वृञ् वरणे (स्वा०) धातो क्विप् । तुगागम । 'नहिवृति०' अ० ६ ३ ११६ सूत्रेणोत्तरपदे दीर्घ । नञ्समासश्च]

अनपिनद्धम् अनाच्छादितम् (जलप्रवाहम्) ६ ७२ ४ [अपि+णह बन्धने (दिवा०) धातो क्त प्रत्यय । 'नहो ध' इति हकारस्य धकार । नञ्समासश्च]

अनपेताः नाऽपेता पृथग्भूता (धारा=प्रवाहा) १८ ६५ [अप+इण् गतौ (अदा०) धातो क्त प्रत्यय । नञ्समासश्च]

अनप्नस. अविद्यमानमप्न कर्म यासान्ता क्रिया २ २३ ९ [निघण्टौ अप्न कर्मनामसु, अपत्यनामसु, रूपनामसु, पदनामसु च पठित तेन नञ्बहुव्रीहि । अनप्नस अप्न इति रूप नाम आप्नोतीति सत नि० ३ ११]

अनभिद्रुहा द्रोहकर्मरहितौ (मित्रावरुणा=राजप्रधानपुरुषौ) २ ४१ ५ [अभि+द्रुह जिघासायाम् धातो कर्त्तरि इगुपधलक्षण क । नञ्समास]

अनभिम्लातवर्णः न विद्यतेऽभितो म्लातो हर्षक्षीणो वर्णो यस्य स) (नपात्=अपत्यम्) २ ३५ १३ [अभि+म्लै हर्षक्षये (भ्वा०) धातो क्त प्रत्यय । नञ्बहुव्रीहिश्च समास]

अनभिशस्ति यन्नाभिशस्यतेऽभिहिस्यते तत् (सत्य=यथार्थम्) ५ ५ [अनभिशस्ति प्रशस्यनाम निघ० ३ ८. [अभि+शसु हिसायाम् (भ्वा०) धातोस्स्त्रिया क्तिन् । नञ्समासश्च]

अनभिशस्तेन्यम् यदनभिशस्तेऽविद्यमानहिसने नयति तत् (सत्य=यथार्थम्) ५ ५

अनभीशुः अविद्यमानावभीशू बलयुक्तौ बाहू यस्य स (वीरजन), प्र०—अभीशू इति बाहुनाम निघ० २ ४, ६ ६६ ७ नियामकरश्मिरहित (सूर्य) १.१५२.५ अप्रतिग्रह (रथ=यानविशेष) ४ ३६ १ [अभि+अशूङ् व्याप्तौ+उ प्रत्यय, बाहु० अकारस्येकार । अभीशवोऽभ्यश्नुवते कर्माणि नि० ३ ९ ततो नञ्बहुव्रीहि]

अनमत् नमति ६ १७ ९ नमतु २ २४ २ **अनमम्**=नमामि १ १६५ ६ **अनमन्त**=नमन्ते, प्र०—अत्र लडर्थे लुङ् ८ ४६ नमन्तु १७ २४ [णम प्रह्वत्वे शब्दे (भ्वा०) धातोर्लङ् । अनमन्त प्रयोगे व्यत्ययेनात्मनेपदम्]

अनमयत् दुष्टान्नम्रान् कारयेत् ७ ६ ५ [णम प्रह्वत्वे शब्दे (भ्वा०) धातोर्णिजन्ताल् लङ्]

अनमस्यन् प्रह्वीभूता भवन्ति ६ ९ ७ [नमस्करोतीति विग्रहे नमस् शब्दात् 'नमोवरिवश्चित्रङ क्यच्' अ० ३ १ १९ सूत्रेण क्यच् । तत शतृ । नञ्समास]

अनमित्रम् अविद्यमानशत्रु १८ ६ [डुमिञ् प्रक्षेपणे (स्वा०) अनेकार्थत्वादत्र मानार्थे, धातो 'अमिचिमि०' उणा० ४ १६४ सूत्रेण क्त्र । नञ्बहुव्रीहि]

अनमीवस्य रोगरहितस्य सुखकरस्य, भा०—आरोग्यकारकस्य (अन्नस्य) ११ ८३ **अनमीवः**=अरोग (जन) ३३ ८६ अविद्यमानरोग (जन) ७ ४६ २ **अनमीवाः**=अमीवो व्याधिर्न विद्यते यासु ता. (अघ्न्या=गाव) (११ अविद्यमानोऽमीवा ज्वरादिरोग-

समूहो याभ्यस्ता, भा०—रोगविच्छेदका (आप = जलानि) ४ १२ नीरोगा (इप =अन्नादीनोपधिगणान्) ३ ६२ १४ प्र०—अमरोगे, इत्यस्माद्वाहुलकादौणादिक ईवन् प्रत्यय [अमीवा पदनाम निघ० ४ ३ (अमीवा= अभ्यमनेन व्याख्यात नि० ६ १२. नञ्समास) अनमीवस्य शुष्मिण इत्याहायक्ष्मस्येति वावैतदाह तै० स० ५ २ २]

अनमीवासः शरीरात्मरोगरहिता (ब्रह्मचारिणो जना) ३ ५६ ३ [पूर्वपदे व्याख्यातम्]

अनम्नत नम्रता को धारण करे १ १३१ १

अनयत् नयति ६ ५७.४ प्राप्त करावे ६ ४५ १ **अनयन्**=नयन्ति ६ १५ १७ प्राप्नुवन्ति १० १ **अनयन्त**= नयन्ति ४ ३३ ७. प्राप्नुयु ३ ७ ६ **अनयम्**=प्रापयेयम् ४ २६ २ **अनयः**=उन्नेय २ १३ १२ नयसि ६ १.७ [णीञ् प्रापणे (भ्वा०) धातोर्लङ्]

अनर्वन् अनर्वणेऽविद्यमानज्ञानाय (अविदुपे), प्र०— अत्र 'सुपा सुलुग्०' इति विभक्ति-लुक् १ ११६ १६. **अनर्वम्**=प्राकृताऽश्वयोजनरहितम् (चक्रम्) १ १६४ २ अविद्यमानाऽश्वम् (दात्र=दानम्) १ १८५ ३ **अनर्वा**= अश्वहीन (विद्वज्जन) ६ १२ अविद्यमाना अश्वा यस्या सा (अदिति =माता) २ ४० ६ अविद्यमानाऽश्वगमनेव (मैत्री) ७ ४० ४ अविद्यमानाऽश्वो रथ इव (अग्नि +विद्वान्) १ ९४ २ **अनर्वाणम्**=अविद्यमानाऽश्व पदातिम् (अतिथिम्) १ १९० १ अग्न्याद्यश्वसहित पश्वाद्यश्वरहितम् (रथम्) १ ५१ १२ द्वेपादिदोषरहितम् (मर्त्त=मनुष्यम्) १ १३६ ५ अविद्यमानोऽर्वाणोऽश्वा यस्मिँस्तम् ( ) प्र०—अर्वेत्यश्वनामसु पठितम् निघ० १ १४, १ ३७ **अनर्वाणः**=अविद्यमानाऽर्वधर्मादन्यत्र गमन येषान्ते (विद्वज्जना) १ १९० ६ अनर्वण =अनश्वस्य (रथस्य) [अर्व हिंसायाम् (भ्वा०) धातो वाहुलकात् कनिन् । अथवा ऋ गतिप्रापणयो (भ्वा०) धातो 'अन्येभ्योऽपि दृश्यन्ते' अ० ३ २ ७५ सूत्रेण वनिप् प्रत्यय । अर्वा हिंसको ज्ञानी वा । नञ्समासेऽनर्वा अनर्वा पदनाम निघ० ४ ३ अनर्वम्= अप्रत्यृतमन्यस्मिन् नि० ६.२३ अनर्वम्=अप्रत्यृतमन्यस्मिन् नि० ४ २७ अनर्वा प्रेहीति । असपत्नेन प्रेहीत्येवैतदाह ॥ श० ३ ८ २ ३]

अनर्विशे अनस्सु शकटेपु विट् प्रवेशस्तस्मै (पश्विपे= पशूनामिपे वृद्धीच्छायै) प्र०—अत्र 'वाछन्दसि, इति पत्वाऽभाव १ १२१ ७. [अन शकटवाची निरुक्ते, विश प्रवेशे धातो क्विपि विश् । एनयो समास]

अनवद्य प्रशसित (विद्वज्जन), प्रशसितगुणयुक्त (विद्वन्) १ १२९ १ न विद्यतेऽवद्यं निन्द्यं कर्म यस्मिँस्त-त्सम्बुद्धौ (विद्वज्जन), प्र०–'अवद्यपर्ण्यवर्या०, अ० ३ १ १०१ अनेन गर्ह्येऽवद्यशब्दो निपातित १.३१ ६ **अनवद्यम्**= अनिन्दितम् (युवानम्) १ ७१ ८ सर्वदोपरहितम् (रेत.) ३३ ११ **अनवद्या**=विद्यासौन्दर्यादिशुभगुणयुक्ता (नारी) १ ७३ ३ अत्यन्तउत्तमगुणयुक्त (नारी) आर्याभि० १ ४६ **अनवद्याभिः**=प्रशसनीयाभि (ऊतिभि =रक्षादिभि.) ४ ३२ ५ **अनवद्याः**=अनिन्द्या (गिर =विविधविद्या-युक्ता वाण्य) ३ ३१ १३ अनिन्दिता (जना) १ १२३.८ प्रशसनीया (आशा पुरुपा) ६ १६ ४ **अनवद्यै**=निर्दोपै (गणै =किरणैर्मरुद्भिर्वा) १ ६ ८ [नञ्+वद व्यक्ताया वाचि (भ्वा०) धातोर् 'अवद्यपण्य०' अ० ३ १ १०१ सूत्रेण गर्ह्यार्थे निपातनात् साधु । तद्विपरीतमनवद्यम् अनवद्य = प्रशस्यनाम निघ० ३ ८]

अनवद्यासः अनिन्द्या धर्माचारा (मरुत =मनुष्या) ७ ५७.५ [इष्ट० अनवद्य]

अनवन्त स्तुवन्तु ५ ३० १०. [णु स्तुतौ (अदा०) धातोर्लङ् । वहुल छन्दसीति शपो लुक् न । व्यत्ययेनात्मने-पदञ्च]

अनवपृग्णा सम्पर्करहितानि (तेजासि) १ १५२ ४ [अव+पृची सम्पर्चने (अदादि०) धातो क्त ।नञ्समासश्च]

अनवभ्रराधसः न विद्यतेऽवभ्रो धननाशो येपान्ते (विद्वज्जना) ५ ५७ ५ अनवभ्रमविनाशि राधो येपान्ते (गन्तार =वायव) ३ २६ ६ अनवभ्रोऽपतित राधो येपान्ते (प्राज्ञा राजजना) २ ३४ ४. अविनष्टधना १ १६६ ७ [वभ्र गत्यर्थे (भ्वा०) धातोरच् । न वभ्रो-ऽवभ्र । राधो धननामसु निघ० २ १० ततो नञ्बहुव्रीहि]

अनवसः अविद्यमानमवोऽन्न यस्य स (वीरजन), प्र०—अव इत्यन्ननाम निघ० २ ७

अनवस्यन्तः अपरिचरन्त कुर्वन्त (जना) ४ १३ ३

अनवह्वरम् सरल (मार्गम्) २ ४१ ६ अव+ह्वृ कौटिल्ये (भ्वा०) धातो ['ऋदोरप्' सूत्रेणाप् प्रत्यय । तद्विपरीतम्]

अनवः मनुष्या, प्र०—अनव इति मनुष्यनाम निघ० २ ३,७ १८ १४

अनशनम् अविद्यमानमशन भोजन यस्मिँस्तत् पृथि-व्यादिक च यज्जड जीवसम्वन्धरहित जगत् ऋ० भू० १२२ [अश भोजने (क्रया०) धातोर्ल्युट् भावे । नञ्बहुव्रीहिश्च ।

तपो नाऽनशनात् परम् तै० आ० १० ६२]

अनश्नन् उक्तभोगमकुर्वन् (परमेश्वर) १ १६४ २० कर्मों के फलों को न भोगता हुआ (परमात्मा) स० प्र० २८३, १ १६४ २० [नञ्+अश भोजने+शतृप्रत्यय]

अनश्वः अव्यापिनो (धूर्षाहौ=सूर्यविद्वांसौ) ४ ३३ [अशू व्याप्तौ (स्वा०) धातोर् डुनुप्रत्ययो रुडागमो नञ्समासश्च]

अनश्वदाम् अविद्यमाना अश्वा यस्या ता गतिम् ५ ५४ ५ [अश्व+दा+क । स्त्रियां टाप् । नञ्बहुव्रीहि]

अनश्वम् अविद्यमाना अश्वास्तुरङ्गादयो यस्मिन् त (रथम्) १ ११२ १२ **अनश्वः**=अविद्यमानतुरङ्ग (सूर्य) १ १५२ ५ अविद्यमाना अश्वा यस्मिन् स (रथ=यानविशेष) ४ ३६ १ अविद्यमाना अश्वा यस्य स (जन) ६ ६६ ७ [अशू व्याप्तौ (स्वा०) धातो 'अशूप्रुषि०' इत्युणादिना क्वन् प्रत्यय । नञ्बहुव्रीहि]

अनश्वासः अविद्यमाना अश्वा येषु ते (पवय=चक्राणि) ५ ३१ ५ [नञ् अश्वपदयोर्बहुव्रीहि]

अनष्टवेदसम् अनष्टविज्ञानधनम् (परीक्षक जनम्) ६ ५४ ८ [वेद धननामसु निघ० २ १० नष्टवेदस्पदयोर्नञ्बहुव्रीहि]

अनष्टाम् प्रसिद्धाम् (वीर-भुजाम्) ७ ४५ २ [णश अदर्शने (दिवा०) धातो क्त । नञ्तत्पुरुष]

अनसः शकटस्य ४ ३० १० **अनसा**=शकटेन ३ ३३ ९ [अन प्राणने धातो ऽसुन् प्रत्ययो बाहुलकात् । अनो वा वायुरनिते, अपि वोपमार्थे स्याद्, अनस इव शकटादिव, अन शकटम् आनद्धमस्मिँश्चीवरम्, अनितेर्वा स्याज्जीवनकर्मण उपजीवन्त्येनन मेघोऽप्यन एतस्मादेव नि० ११ ४७ भूमा वा अन श० १ १ २ ६ यज्ञो वा अन श० १ १ २ ७ ३ ६ ३ ३ अन्तरिक्षरूपमिव वा एतद् यदन श० ४ ३ ४ १ यज्ञो वाऽअन श० १ १ २ ७]

अनस्था अस्थिरहित (देही) १ १६४ ४ [नञ्युपपदे अस्थिप्राति० सु प्रत्यय । 'सुपां सुलुगि०' ति सुस्थाने डादेशे टिलोपे रूपम्]

अनस्वन्तः बहून्यनांसि शकटानि विद्यन्ते येषान्ते (वणिग्जना) १ १२६ ५ **अनस्वन्ता**=उत्तमशकटादियुक्त (विद्वान्) ५ २७ १ [अन शकटम् नि० ११ ४७ अनस् प्राति० अतिशायने मतुप् । 'मादुपधायाश्च०' अ० ८ २ ९० सूत्रेण मकारस्य वकारादेश]

अनः शकटम् २ १५ ६ शकटमिव ४ ३० ११.

अना प्राणाऽऽत्मकानि (अह्ना=दिनानि) ४ ३० ३ [अन प्राणने (अदा०) धातो 'घञर्थे कविधानम्' इति वार्ति० भावे क]

अनाकृतः न आकृतो न निवारित (विद्वान्) १ १४१ ७ [नञ्+आ+कृ+क्त । धातूनामनेकार्थत्वान् निवारणेऽपि कृ धातु]

अनागसम् अविद्यमानाऽपराधाम् (नावम्) २ १ ५ निर्माणदोषरहिताम्, भा०—सुपरीक्षिताम् (सुनावम्) २१ ७ अनपराधम् (मनुष्यम्) ४ ३९ ३ **अनागसः**=न विद्यतेऽग पाप दोषो यासु ता निर्दोषा, भा०—सुपरीक्षिता शोधिता सस्कृता (आप=प्राणा जलानि वा) ४ १२ अनपराधिन (जनान्) १ १२३ ३ **अनागाः**=न विद्यते आगोऽपराधो यस्मिन् स (राजपुरुष) ५ ८३ २ अनपराधिन (जना), प्र०—अत्र 'सुपा सुलुग्०' इति जस स्थाने सु ३३ १७ अधर्माचरणरहित (सविता=राजा) ३३ २० अनपराध (सूर्य=जगदीश्वर) ७ ६० १ [इण् गतौ (अदादि०) धातो 'इण आगोऽपराधे च' उणादि ४ २१२ सूत्रेण असुन् प्रत्ययो धातो स्थाने चागादेश । नञ्समास । अनागा अनपराध नि० १० ११]

अनागान् अनपराधिन (प्रजाजनान्) ३ ५४ १९ अनपराधान् (प्रजाजनान्) ४ १२ ४ [आग पूर्वपदे व्याख्यातम् । सकारलोपश्छान्दस । नञ्समास]

अनागास्त्वम् अनपराधत्वम् २५ ४५ निष्पापस्य भावम् १ १६२ २२ निष्पापत्वम्, प्र०—इण आग अपराधे च उ० ४ २१९ अत्र नञ्पूर्वादाग शब्दात्त्वे प्रत्यये 'अन्येषामपि दृश्यते' इत्युपधाया दीर्घत्वम् १ ९४ १५ **अनागास्त्वे**=निष्पापभावे प्र०—अत्र वर्णव्यत्ययेनाऽकारस्य स्थाने आकार १ १०४ ६ अनपराधित्वे ६ ५० २ [आग पापम्, तस्माद्भावे त्वप्रत्यय । नञ्समास । अनागास्त्वनमपराधत्वम् नि० ११ २१]

अनाततायः अविद्यमान आततो विस्तारो यस्य तस्मै (सभेशाय) १६ १४ [नञ्+आङ्+तनु विस्तारे (तना०) धातो क्त । अनुनासिकलोपश्च]

अनातुरम् दुःखवर्जितम् (विश्व=सम्पूर्ण जीवादिकम्) १ ११४ १ रोगेणाऽऽतुरतारहितम्, भा०—रोगकष्टमप्राप्तम् (सर्वप्राणिसमूहम्) १२ ९५ अदुःखितम्, भा०—रोगरहितम् (जगत्) १६ ४८ [अत सातत्यगमने (भ्वा०) धातोर्बाहुलकाद् उरच । धातोरादौ दीर्घ । नञ्समासश्च]

अनाधृष्टम् यन्न धृष्यते तेजस्तत् ५ ५. प्रौढम् (तेज) ५ ६ यन्न समन्ताद् धृष्यत इत्यनाधृष्टम् (ब्रह्मयज्ञो वा) १ ३१ धार्ष्टचम् (छन्द =वलम्) १४ ६. यत्समन्तान्न धृष्यते तत्तेज, प्रगल्भगुणसहित (भौतिकाग्निम्) ५ ६ **अनाधृष्टः** =केनाऽप्यार्धर्षितुमयोग्य (पति =राजा) ७ १५ १४ **अनाधृष्टा**=परैर्धर्पणरहिता (स्त्री) ३७ १२ अधर्षणीया निर्भया (प्रजा) ७ १७ समन्ताद् धर्षितुमनर्हा (योगिनो वीरता) ७ १२ **अनाधृष्टाभिः**=शत्रुभिर्धर्षितु-मयोग्याभि (ऊतिभि =रक्षादिभि) ४ ३२ ५ **अनाधृष्टाः**=धर्षितु निवारयितुमनर्हा (वायव) १ १६ ४ शत्रुभिरधर्पिता (मधुमती =ओषध्य) १० ४ [आङ्युप-पदे ञिधृषा प्रागल्भ्ये (स्वा०) धातो क्त । 'धृषिशसी वैयात्ये' अ० ७ २ १९ सूत्रेणेण्निषेध । नञ्समास । अथ वा अग्निरनाधृष्ट कौ० २७ ५ विराड् वाऽनाधृष्ट छन्द श० ८ २ ४ ४]

अनाधृष्यम् प्रगल्भम् (वृषभम्) ४ १८.१० न केनाऽपि धर्षितु योग्यम् ५ ५ **अनाधृष्यः**=अन्यैर्धर्षितुम-योग्य, भा०—न्यायप्रिय (अग्नि =राजा) २७ ७ **अनाधृष्याय**=भयधर्षणराहित्याय (वाताय=औषधिस्थ-वायुविज्ञानाय ३७ ७ **अनाधृष्या**=शत्रुभिर्धर्षितुमयोग्या (नर + नायका सेनास्था जना) १७ ४६ [आङ्युपपदे ञिधृषा प्रागल्भ्ये (स्वा०) धातो 'ऋदुपधाच्च०' अ० ३ १ ११० सूत्रेण क्यप् प्रत्यय । नञ्समासश्च । अनाधृष्या तदग्नि ऐ० ५ २५ असावादित्योऽनाधृष्य । कौ० २७ ५]

अनानत ! नम्रतारहित (शत्रूणा समीपे प्रजास्वामिन् राजन्) ६ ४५ ६ अनानतम्—नम्रीभूतम् (राजानम्) ७ ६ ४. **अनानताः**=शत्रूणामभिमुखे खल्वनम्रा (नृत-मास =नायका जना) १ ८७ १ [नञ्युपपदे णम प्रह्वत्वे शब्दे (भ्वा०) धातो क्त ।]

अनानुदः अप्रेरित (इन्द्र =विद्याप्रकाशको जन) २ २१ ४ येऽनुददति तेऽनुदा, न विद्यन्तेऽनुदा यस्य स (विद्वान्राजा) २ २३ ११ [आङ्+णुद प्रेरणे (तुदादि०) धातोर् इगुपधलक्षण क । नञ्समासश्च]

अनानुभूतीः अनुभवरहितान् (अनभिज्ञान् सखीन्), प्र०—अत्र 'अन्येषामपि दृश्यते' इति दीर्घ ६ ४७ १७ [अनु+भू+क्तिन् भावे । नञ्बहुव्रीहि]

अनाप्तः मूर्ख शत्रुभिरप्राप्त (परमेश्वर सभाध्यक्षो वा) १ १०० २ [नञ्+आप्लृ व्याप्तौ (स्वा०) धातो क्त । अनाप्ता तत्पृथिवी । ऐ० ५ २५]

अनाभुवः ये समन्ताद्धर्माचरणे भवन्ति त आभुव, नाऽऽभुवोऽनाभुवस्तान् (पापिजनान्) १ ५१ ६. [नञ्+आङ्+भू सत्तायाम् (भ्वा०) धातो क्विप् प्रत्यय]

अनामयत् रोगादिरहितम् (आयु) १८ ६ [आङ्+अम रोगे (चुरा०) धातोर्बाहुलकात् कयन् प्रत्यय । नञ्समास । नपुसकेऽदडादेशश्छान्दस]

अनामि नम्येत ६ ८ ६ नम्यते ३ ६२ ५. [णम प्रह्वत्वे शब्दे (भ्वा०) धातो कर्मणि लुङ् सामान्ये]

अनामृणः अविद्यमाना समन्तान्मृणा हिंसका यस्य स (परमेश्वर) १.३३ १ [आङ्+मृण हिंसायाम् (तुदा०) धातोर् इगुपधलक्षण क । नञ् बहुव्रीहि]

अनायतः इतस्ततोऽगच्छन्त्सन्निहित (सूर्य) ४ १३ ५ अदूरभवः (जीवात्मा) ४ १४ ५ [आङ्+इण् गतौ (अदा०) धातो शतृ । नञ्समासश्च]

अनायुधासः अविद्यमानाऽऽयुधा (योद्धृजना) ४ ५ १४ (आङ्+युध सम्प्रहारे (दिवा०) धातोर् इगुपधलक्षण क । नञ्बहुव्रीहि । जसोऽसुगागम]

अनारम्भणे आलम्बनरहिते (समुद्रे) ऋ० भू० १६३ अविद्यमानमारम्भण यस्य तस्मिन् (तमसि=अन्धकारे) १ १८२ ६ अविद्यमानमारम्भण यस्मिँस्तस्मिन् (अन्तरिक्षे सागरे वा) १ ११६ ५ [आङ्+रभ राभस्ये (भ्वा०) धातोर्भावे ल्युट् । 'रभेरशब्लिटोरि' ति नुमि परसवर्णे च रूपम्]

अनाविद्धया अप्राप्तक्षतया (तन्वा =शरीरेण) २९ ३८ शस्त्राऽस्त्ररहितया (तन्वा=शरीरेण) ६ ७५ १ [आङ्+व्यध ताडने (दिवा०) धातो क्त । सम्प्रसारणे पररूपे स्त्रिया टाप् । नञ्समासश्च]

अनाशवः अव्याप्ता (वीरजना) १ १३५ ६ [अशू व्याप्तौ (स्वा०) धातो 'कृवापाजिमि०' उणा० १ १ सूत्रेण उण् प्रत्यय । नञ्समास]

अनाशस्ता इव अप्रशस्तगुणसामर्थ्या इव (मनुष्या) १ २९.१. [शसु हिंसायाम् (भ्वा०) धातो क्त. । 'धृषिशसी वैयात्ये' इतीड्निषेध । न शस्तोऽशस्त =प्रशस्त । नञ्समास]

अनाशुना अनश्वेनाऽचिरेण गन्त्रा (अर्वता=अश्वेन) ६ ४५ २ [अशू व्याप्तौ (स्वा०) धातो 'कृवापाजि०' इत्युणादिना उण प्रत्यय । न आशुना=अनाशुना]

अनासः अविद्यमानाऽऽस्यान् (दस्यून्) ५ २९ १० [असु क्षेपणे (दिवा०) धातो 'अकर्त्तरि च कारके०' सूत्रेण करणे घञ । नञ्बहुव्रीहि]

अनास्थाने अविद्यमान स्थित्यधिकरण यस्मिन् [समुद्रे=अन्तरिक्षे सागरे वा) १ ११६ ५. स्थातुमशक्ये (समुद्रे) ऋ० भू० १९३, १ ११६ ५ [आङ्+ष्ठा गतिनिवृत्तौ धातोर्ल्युट् अधिकरणे । नञ्बहुव्रीहि]

अनिःशस्ताः निर्गत शस्त प्रशसन येभ्यस्तद्विरुद्धा (ऋभव=मेधाविन) ४ ३४ ११ [निर्+शसु स्तुतौ (भ्वा०) धातो क्त । 'यस्य विभाषा' सूत्रेणेण्निषेध । नञ्समास]

अनितभा अप्राप्तदीप्ति. (रसा=पृथिवी) ५.५३ ९ [अनित=नञ्+इण्गतौ धातो क्त । भा दीप्तौ (अदा०) धातो घञर्थे क प्रत्यय, स्त्रिया टाप् । तत समास]

अनिध्मः अदीप्यमान (विद्वज्जन) २ ३५ ४ बाहर अप्रकाशमान और भीतर सुप्रकाशित रहता हुआ स्त्री-पुरुष के हृदय मे प्रेम स० वि० १०४, २ ३५ ४ [ञिइन्धी दीप्तौ (रुधा०) धातो 'इषियुधीन्धि०' उणा० १ १४५ सूत्रेण मक् प्रत्यय । नञ्समास]

अनिनस्य यत् प्रशस्त प्राणनिमित्त तस्य (धनिनो जनस्य) १ १५० २ [अन प्राणने धातोर्भावे 'घञर्थे कविधानमि' ति क प्रत्यय) तत मत्वर्थे इनच् प्रत्यय]

अनिन्दिषुः निन्देयु १ १६१ ५ [णिदि कुत्सायाम् (भ्वा०) धातो सामान्ये लुङ्]

अनिन्द्या निन्दितुमनर्हौ (अश्विनौ=स्त्रीपुरुषौ) १ १८० ७ [नञ्+णिदि कुत्सायाम् (भ्वा०) धातोर्ण्यत् प्रत्यय]

अनिन्द्रम् अनैश्वर्यम् ७ १८ १६ **अनिन्द्राम्**=अनीश्वरी गतिम् ४ २३ ७ **अनिन्द्राः**=अविद्यमाना इन्द्रा राजानो यासु ता (मही=पृथिवी) १ १३३ १. अनैश्वर्या (दरिद्रा जना) ५ २ ३ [इदि परमैश्वर्ये (भ्वा०) धातो 'ऋज्रेन्द्राग्रवज्र०' उणा० २ २८ सूत्रेण 'इन्द्र' शब्दो रन् प्रत्ययान्तो निपातित । नञ्समास । य इन्द्र न विविदु, इन्द्रो ह्यहमस्मि, अनिन्द्रा इतर इति वा । नि० ३ १०]

अनिपद्यमानम् यो मन आदीनीन्द्रियाणि न निपद्यते प्राप्नोति तम् (परमेश्वरम्) १ १६४ ३ अपदनशीलमचलम् (गोपाम्=परमेश्वरम् ३७ १७ [नि+पद गतौ (दिवा०) धातो शानच् । नञ्समासश्च]

अनिबद्धः न कस्याऽप्याकर्षणेण निबद्ध (सूर्य) ४ १३ ५ परवदेकत्र न स्थित (जीवात्मा) ४ १४ ५ [नि+बन्ध बन्धने (क्र्या०) धातो क्त । नञ्समास]

अनिबाधे निर्विघ्ने मनि (कार्ये) ५.४२ १७ व्यवहारे ५ ४३ १६ बाधारहिते (उरौ=बाहौ) ३ १ ११ [नि+बाधृ लोडने (भ्वा०) धातोर्भावे घञ् प्रत्यय । तत्प्रतिषेध]

अनिभृष्टम् नित्य भृष्ट पतिरहितमाचरितवान् (तत्प्रतिषेध) (सभेशो राजा) १० ६ [नि+भ्रस्ज पाके (तुदा०) धातो क्त । तत्प्रतिषेध]

अनिभृष्टतविषिः न निभृष्टा प्रदग्धा तविषी सेना यस्य स (मेधावी राजा) ५ ७ ७ न नितरा भृष्टा तविषी सेना यस्य स (ब्रह्मणस्पति=अन्नस्य पालको राजा) २ २५ ४ [नञ्+नि+भ्रस्ज पाके+क्त=अनिभृष्ट । [तव इति सौत्रो धातुस्तत 'तवेर्णिद्वा' उणा० १ ४८ सूत्रेण टिषच् प्रत्यये तविषी । तविषी बलनाम निघ० ३ ३ एनयो समास]

अनिमानः अपरिमाण (इन्द्र=परमैश्वर्यवान् जगदीश्वर) ६ २२ ७ अविद्यमान निमान परिमाण यस्य स (भौतिकाग्नि) १ २७ ११ [नि+माङ् माने (दिवा०) धातोर्ल्युट् । नञ्बहुव्रीहि]

अनिमिषम् अहर्निशम् ५ १९ २ निरन्तरम् १ २४ ६ **अनिमिषः**=अहर्निश प्रयतमान (इन्द्र=सेनेश) १७ ३३ **अनिमिषा**=अहर्निशजन्यया क्रियया ३ ५९ १ नैरन्तर्येण ७ ६० ७ **अनिमिषाः**=निमेषालस्यवर्जिता (जगत्कल्याणकरा जना) २ २७ ९ [अनिमिषा अनिमिषन् नि० ३ २२]

अनिमिषद्भिः नैरन्तर्येणालस्यरहितै (सज्जनै) १ १४३ ८ [नञ्+नि+मिष स्पर्द्धायाम्+शतृ]

अनिमिष्येण निरन्तर प्रयतमानेन (इन्द्रेण=सेनापतिना) १७ ३४ [निमिष प्राति० भवार्थे यत् । तत्प्रतिषेध]

अनिमेषम् निरन्तरम् ३४ १३ प्रतिक्षणम् १ ३१ १२ [अनिमेषम्=अनिमिषन्त नि० ३ १२ नञ्+नि+मिष स्पर्द्धायाम्+घञ्]

अनिराम् अविद्यमाना इराऽन्नभुक्तिर्यस्या ताम् (अमीवाम्=पीडाम्) १२ १०५ **अनिराः**=नितरा दातुमयोग्या (अमीवा=रोगपीडा) ११ ४७ [इरा अन्ननाम निघ० २ ७ ततो नञ्बहुव्रीहि । अथवा नि+रा दाने (अदा०) भावे घञ् । तत्प्रतिषेध]

अनिरेण रमणीयेन (वचसा=वचनेन) ४ ५ १४

अनिलम् कारणरूप वायुम् ४० १५ [अन प्राणने धातो 'सलिकल्यनि०' उणा० १ ५४ सूत्रेण इलच्]

अनिविशमानाः या कुत्रचिन्न निविशन्ते ता (आप=जलानि) ७ ४९ १ [नञ्+नि+विश प्रवेशे (तुदा०) धातो शानच् । 'नेर्विश' इत्यात्मनेपदम्]

अनिवृतः निरन्तर (अग्नि) ३ २९ ६ [नि+वृञ् वरणे (स्वा०)+क्त । तत्प्रतिषेध]

अनिवेशनानाम् अविद्यमान निवेशनमेकत्र स्थानं यासा तासाम् (काष्ठाना=जलानाम्) १ ३२.१० [नि+विश प्रवेशे (तुदा०) धातोरधिकरणे ल्युट् । नञ्बहुव्रीहि । अनिवेशनानाम्=अनिविशमानानाम् नि० २ २९]

अनिशितम् अतीक्ष्णम् (योनि=कारण वह्निम्) २ ३८ ८ **अनिशितः**=न विद्यते नितरा शिता तीव्रा क्रिया यस्मिन् स सङ्ग्रामो यज्ञपात्र वा १ २९ **अनिशिता**=अतिविरतीर्णा सेना कार्या वेदिर्वा १ २९. [नि+शिञ् निशाने (स्वा०) धातो क्त । तत्प्रतिषेध]

अनिषङ्गाय अविद्यमानो नितरा सङ्ग पक्षपातो यस्य तस्मै (यज्यवे=शिल्पविद्याविदे) १ ३१ १३ [नि+षञ्ज सङ्गे (भ्वा०) धातोर्घञ् । घित्वात् कुत्वम् । तत्प्रतिषेध]

अनिष्टृतः दुःखात्पृथग्भूत (अग्नि=राजा) २७ ७ अनुपहिंसित, भा०—विघ्नविरह (अग्नि=विनयप्रकाशितो राजा) २७ ४

अनिःशस्ताः निर्गत शस्त प्रशसन येभ्यस्तद्विरुद्धा (ऋभव=मेधाविनो जना) ४ ३४.११ [निर्+शसु स्तुतौ+क्त तत्प्रतिषेध]

अनीकम् वल सैन्यम् ५ २ १ सैन्यम् २९ ५४ सर्वदुःखनाशार्थं कामक्रोधादिशत्रुविनाशार्थं वलम् (ब्रह्म) प० वि० ॥ सैन्यमिव ४ ५ ९ सैन्यमिव ज्वालासमूहम् ८ २४ सैन्यमिव कार्यसिद्धिप्रापक (यानम्) ६ ५१ १ सैन्यमिव समूहम् १ १२४ ११ सेनेव किरणसमूहम् १३ ४६ सैन्यमिव तेज २ ३५ ११ चक्षुरादीन्द्रियैरप्राप्तम् (चक्षु=वलम्) १ ११५ १ सैन्यवद्रक्षयित्री (स्त्री) १ ११३ १९ विजयमान सैन्यम् ४ १२ २ वलवत्तर सैन्यमिव प्रसिद्धम् अनिति जीवयति सर्वान् प्राणिन स (सूर्य=परमेश्वर), प्र०—अनिहृषिभ्या किच्च उ० ४ १६. अनेन सूत्रेण ईकन् प्रत्यय ७ ४२ **अनीका**=शत्रुभि प्राप्तुमनर्हाणि सैन्यानि ४ २३ ७ **अनीके**=सैन्ये ४ ५८ ११ **अनीकेन**=सेनासमूहेन सह २.९.६ सैन्येन ५ ३४ **अनीकैः**=शत्रुभिर्दुष्टैर्दस्युभिर्नेतुमशक्यै सैन्यै ४ १० ३. भा०—सुशिक्षितैर्वलाढ्यै सैन्यैरिव १५ ४६ [अन प्राणने धातो 'अनिहृषिभ्या किच्च' उणा० ४ १७ सूत्रेण ईकन् प्रत्यय । सेनाया वै सेनानीरनीकम् श० ५ ३ १ १ णीञ् प्रापणे धातो 'अजियुधुनीभ्यो दीर्घश्च' उ० ३ ४७ सूत्रेण कन् प्रत्यये नीक । तत्प्रतिषेध]

अनीकवते प्रशस्तसेनायुक्ताय (अग्नये=सेनापतये) २९ ५९. प्रशसितसेनाय (अग्नये=सेनापतये) २४ १६ [अनीक प्राति० मतुप् प्रशसार्थे]

अनीताम् प्रापयेताम् १ १२१ ५ [णीञ् प्रापणे (भ्वा०) धातो सामान्ये लङ् । 'वहुल छन्दसी' ति शपो लुक्]

अनु पश्चाद् भावे ५ २९ सद्य ३ ५५ ४ पश्चादर्थे १ ६.५ आनुकूल्ये १ ५२ ११ क्रियाऽर्थे १ १० १२ वीप्सायाम् १ ६ ४ अनुगमाऽर्थे १ २५ १६ अर्वागर्थे १ ८२ ३ अनुक्रमे १ ३७ ९ आनुपूर्व्ये १ ५२ ४ अनुयोगे १ ५२ १४ अनुलक्ष्ये १ १९१ १५ [अन्विति सादृश्यापरभावम् नि० १ ३]

अनुकामम् काम काममनु १ १७ ३ इच्छा के अनुकूल स्वतन्त्र स० वि० १९७, ९ ११३ ९ **अनुकामः**=धर्माऽनुकूला कामना १८.८ [कमु कान्तौ धातोर्घञ् । ततोऽनुना सहाव्ययीभाव]

अनुक्थाः अविद्वास (जना) ५ २ ३ (वच परिभाषणे (अदा०) धातो । 'पातृतुदिवचि०' उ० २ ७ सूत्रेण थक्प्रत्यये सम्प्रसारणे चोक्थरूपम् । तत्प्रतिषेध]

अनुक्रामाम अनुक्रमेण गच्छेम ३८.१९ **अनुक्रामेम**=उल्लङ्घेम ५ ५३ ११ [अनु+क्रमु पादविक्षेपे (भ्वा०) धातोर्लोट् । 'क्रम परस्मैपदेषु' अ० ७ ३ ७६ सूत्रेण दीर्घत्वम्]

अनुक्रोशन्ति रुदन्ति ४ ३८ ५ [अनु+क्रुश आह्वाने रोदने च (भ्वा०) धातोर्लट्]

अनुक्षत्तारम् सारथ्यनुकूलम् ३० ११. धर्मात्मा के अनुकूलवर्त्ती (जन) को ३० १३ [क्षद सवृताविति सौत्रो धातु, तत 'तृन्तृचौ शसिक्षदादिभ्य ०' उ० २ ९४ सूत्रेण तृचि क्षत्ता । ततोऽनुना समास]

अनुगमन्तु अनुगच्छन्तु ४ ३५ १ **अनुगमाणि**=अनुगच्छेयम् ४ १८ ३ [अनु गम्लृ गतौ (भ्वा०) धातोर्लोट् । 'वहुल छन्दसीति शपो लुक् ।]

अनुगानि अनुगच्छेयम् ४ १८ ३ [अनु+गम्लृ गतौ

धातोर्लोट् । छान्दसो वर्णलोप इति मकारलोप [बहुल छन्दसी' ति शपो लुक्]

अनुगुः पश्चाद् गच्छन्ति १ ६५ २ अनुगच्छेयु ३ ७ ७ [अनु+गम्लृ गतौ धातोर्लिङ् । छान्दसत्वाद् रूपसिद्धि]

अनुग्मन् अनुगच्छन्ति ६ १ २ पश्चात्प्राप्नुवन्ति १ ६५ १ [अनु+गम्लृ गती धातोर् लङ्, शपो लुक् उपधालोप , अड्अभावश्च छान्दस]

अनुग्मन् अनुकूल गच्छन् (इन्द्र =विद्युत्) ३ ३६.५. [अनु+गम्लृ गतौ+शतृ । शपो लुग् उपधालोपश्च छान्दस]

अनुगृणाति पश्चात् स्तौति १ १४७ २ पश्चात् स्तुयात् १२ ४२ [अनु+गृ शब्दे (क्र्या०) धातोर्लट्]

अनुगृभाय अनुगृह्लीया २ २८.६ [अनु+ग्रह उपादाने (क्र्या०) धातोर् लोट् । 'छन्दसि शायजपि' अ० ३ १ ८५ सूत्रेण श्न शायजादेश]

अनुग्रः अतेजस्वी (जन) ७ ३८ ६ [न उग्र इति नञ्समास । उग्रशब्द 'ऋज्रेन्द्र०' उणादिसूत्रे निपातित]

अनुघुष्य आनुकूल्येन घोषयित्वा २५ ४१. आनुकूल्येन शब्दयित्वा १ १६२ १८ [अनु+घुषिर् विशब्दने (चुरा०) धातो क्त्वा । समासे क्त्वो ल्यप्]

अनुचरेम अनुगच्छेम ५ ५१ १५. [अनु+चर गतौ (भ्वा०) धातोर्लिङ्]

अनुचरम् सेवक को ३० १३. [अनु+चर गतौ+अच् कर्त्तरि]

अनुचस्कन्द प्राप्नोति १३ ५ [अनु+स्कन्दिर् गतिशोषणयो (भ्वा०) धातोर्लिट् सामान्ये]

अनुचेतथः ज्ञापयथ ४ ४५ ६ [अनु+चिती सञ्ज्ञाने (भ्वा०) धातोर्लट्]

अनुचेति विज्ञायते ४ ३७ ४ [अनु+चिती सञ्ज्ञाने (भ्वा०) धातोर्लट । छान्दसस्तकारलोप शप्लुक् च]

अनुजिहाताम् प्राप्नुत ७ ३४ २४ [अनु+ओहाड् गतौ (जु०) धातोर्लोट्]

अनुजुहोमि अनुगृह्णामि १३ ५ [अनु+हुदानादानयो (जु०) धातोर्लट्]

अनुतस्थुः आनुपूर्व्येण वर्त्तन्ते १ ५२ ४

अनुतिष्ठाति=अनुतिष्ठेत् ४ २० २ [अनु+ष्ठा गतिनिवृत्तौ+लिट् । अपरत्र च लेट्]

अनुतृन्धि हिन्धि ५ १२ २ [अनु+उतृदिर् हिंसानादरयो (रुधा०) धातोर्लोट्]

अनुत्तम् अप्रेरितम् (वस्तु) १ १६५ ९ अप्रेरित स्वाभाविक (वीर्यम्) १ ८० ७ अप्रेरितम् (स्वरूपम्), प्र०—'नसत्तनिपत्तानुत्त०' अ० ८ २ ६१ इति निपातनम् ३३ ७६ अनुकूल शत्रुभिरबाधितम् (क्षत्र=धन राज्य वा) ७ ३४ ११. **अनुत्ताः**=आनुकूल्येन वृता (गिर = विविधविद्यायुक्ता वाण्य) ३ ३१ १३. [नञ्+णुद् प्रेरणे (तुदा०) धातो. क्त । अथवा अनु+दा+क्त । 'अच उपसर्गात्त ' इति दकारस्य तकार]

अनुत्तमन्युम् न नुत्त प्रेरितो मन्यु क्रोधो यस्य तम् जितेन्द्रिय राजानम्) ७ ३१ १२ [अनुत्त =नञ्+णुद प्रेरणे+क्त । [मन्यु =मन ज्ञाने (दिवा०) धातो 'यजिमनि०' उ० ३ २० सूत्रेण युच् प्रत्यय । एनयो समास]

अनुदकाः जलरहिता (नद्य) ७ ५० ४ [नञ्उदकपदयोर्बहुव्रीहि]

अनुदक्षि अनुदहसि, प्र०—अत्र 'बहुल छन्दसि, इति शपो लुक् २ १ १० [अनु+दह भस्मीकरणे (भ्वा०) धातोर्लट् शप्लुक् च]

अनुददन्ते भा०—अनुमोदन्ते २७ १६ [अनु+दद दाने (भ्वा०) धातोर्लट्]

अनुददाति अनुकूलता से देता है २ १२ १० [अनु+डुदाञ् दाने (जु०) धातोर्लट्]

अनुदधिरे अनुकूलतया धरन्ति १ ८५.३ [अनु+दध धारणे (भ्वा०) धातोर्लिट्]

अनुदायि अनुदीयते ६ २५ ८ अनुदीयते २ २० ८ [अनु+डुदाञ् दाने (जु०) धातो कर्मणि लुङ् । अडभावश्च छान्दस]

अनुदिताम् ईश्वरोक्ताम् (वेदवाणीम्) ऋ० भू० २०३ अथर्व० ५.१ १ २ [णुद प्रेरणे धातो क्त । छान्दस इडागम । नञ्समासे टापि च रूपम् । अप्रेरितामित्यर्थ, सा च वेदवाणी]

अनुदिशामि उपदिशामि १३ ४८ [अनु+दिश अतिसर्जने (तुदा०) धातोर्लट्]

अनुदिश्य प्राप्तु शोधयितुमनुलक्ष्य १ २८ [अनु+दिश अतिसर्जने (तुदा०) धातो क्त्वा । समासे क्त्वो ल्यप्]

अनुदुद्रुहे पश्चात् प्रपूरयन्ति, प्र०—अत्र वर्त्तमाने लिट् 'इरयो रे' अ० ६ ४ ७६ अनेनेरेजित्यस्य स्थाने रे

आदेश ३ १६ [अनु+दुह प्रपूरणे (अदा०) धातोर्लिट्। इरेच् स्थाने रे आदेश]

अनुदुः अनुदद्यु, प्र०—अत्र लुड्यडभाव १ १२७ ४ [अनु+डुदाञ् दाने (जु०) धातोर्लुड्। अडभावश्छान्दस 'गातिस्था०' सूत्रेण सिचो लुक्]

अनुदृश्य आनुकूल्येन दृष्ट्वा ३४ ४६ [अनु+दृशिर् प्रेक्षणे (भ्वा०) धातो क्त्वा। समासे क्त्वो ल्यप्]

अनुदेथाम् प्रेरयेथाम् १ ११६ ६ [णुद प्रेरणे (तुदा०) धातोर्लङ्]

अनुदेयम् अनुदातु योग्य (नववास्त्व=नवीन निवासम्) ६ २० ११ [अनु+डुदाञ् दाने (जु०) धातो 'अचो यत्' सूत्रेण यत्। 'ईद्यती' ति ईकारादेश]

अनुद्यून् दिनान्यनु ५ ८६ ५ दिवसान् १ १२१ ७ वीप्सया दिवसान् १ ७१ ६. प्रतिदिनम् २ १४ १२. अनुकूलान् दिवसान् ३.२३ २ [द्युरित्यहर्नाम निघ० १ ६ द्युरित्यह्नो नामधेय द्योतत इति सत । नि० १ ६ तस्यानुना अव्ययीभावसमास]

अनुद्यावापृथिवी सूर्यपृथिव्योर्मध्ये ऋ० भू० १३८ [पृथिव्यामुत्तरपदे दिव स्थाने 'दिवसश्च पृथिव्याम्' अ० ६ ३ ३० सूत्रेण द्यावादेश । ततो अनुना समास]

अनुधूपितासः अनुकूलै सुगन्धै सम्कृता (पदार्था) २ ३० १०

अनुनेषथ अनुनयथ ५ ५४ ६ **अनुनेषि**=प्रापयसि, प्र०—अत्र नी धातोर्लटि 'बहुल छन्दसि' इति शपो लुक्, अत्राऽन्तर्गतो ण्यर्थ १ ६१ १. [अनु+णीञ् प्रापणे (भ्वा०)धातोर्लेट्। 'सिब् बहुल लेटीति' सिप्। अपरत्र शपो लुक्]

अनुपक्षितम् यद् व्ययेनाऽपि नोपक्षीयते तत् (वसु=विद्यासुवर्णादिधनम्) ३ १३ ७ [उप+क्षि क्षये (भ्वा०) धातो. क्त' नञ्समासश्च]

अनुपत् अनु पश्चात् प्राप्यते या सा (शोभा) १५ ८ [अनु+पद गतौ (दिवा०) धातो स्त्रिया 'सपदादिभ्य क्विप्' इति क्विप्]

अनुपथाः अनुकूल पन्था येषान्ते (मनुष्या) ५ ५२ १० ['अनु+पथिन्' पदयो समासे 'ऋक्पूरब्धू पथाम्०' सूत्रेणाकारप्रत्यये टिलोपे च रूपम्]

अनुपदे पश्चात् प्राप्तव्याय (शोभायै) १५ ८ [अनु+पद गतौ (दिवा०) धातो क्विप्]

अनुपश्यतः अनुकूलेन योगाऽभ्यासेन साक्षाद् द्रष्टु (सन्यासिन), अनुकूल देखने वाले सन्यासी को स० वि० २१५, ४० ७. [अनु+दृशिर् प्रेक्षणे (भ्वा०) धातो. शतृ। शिति पश्यादेशश्च]

अनुपश्यति विद्याधर्मयोगाऽभ्यासाऽनन्तर समीक्षते, अनुकूलता से देखता है स० वि० २१४, ४० ६

अनुपश्यसि=पश्चात् सम्प्रेक्षसे १ ५० ६ [अनु+दृशिर् प्रेक्षणे (भ्वा०) धातोर्लट्। शिति धातो पश्यादेश]

अनुपूर्वम् अनुकूला पूर्वे वेदोक्ता आप्तसिद्धान्ता यस्य तम् (ऋषि=वेदपारगाऽध्यापकम्) १ ११७ ३ आनुकूल्यमनतिक्रम्य २३ ३८ क्रमश १० ३२ अनुकूल प्रथमम् १६ ६

अनुप्रथन्ताम् अनुप्रख्यान्तु ८ ३० [अनु+प्रथ प्रख्याने (भ्वा० उ०) धातोर्लोट्]

अनुप्रमुचः अनुप्रमोचय ४ २२ ७ [अनु+प्र+मुच्लृ मोचने (तुदा०) धातोर्लोट्। छान्दसो नुमो नकारलोप]

अनुप्रयन्ति प्राप्नुवन्ति ५ ५३ १० [अनु+प्र+इण् गतौ (अदा०) धातोर्लट्। 'इणो यण्' इति यणादेश]

अनुप्राणन्तु आयुर्भुञ्जताम् ४ २५ **अनुप्राणिहि**=जीवितोऽनुजीवन धर धरति वा ४ २५ [अनु+प्र+अन प्राणने (अदा०) धातोर्लोट्]

अनुप्रेत आनुकूल्येन प्राप्नुत १८ ५८ **अनुप्रेहि**=प्राप्नुहि १७ ६६ [अनु+प्र+इण् गतौ (अदा०) धातोर्लोट्]

अनुब्रुवाणः पठित्वाऽनूपदिशन् (विद्वज्जन) ५ ४४.१३ [अनु+ब्रूञ् व्यक्ताया वाचि (अदा०) धातो शानच्]

अनुभक्षयामि पश्चात् पालयामि ८ ३७ [अनु+भक्ष अदने (चुरा०) धातोर्लट्। धातूनामनेकार्थत्वात् पालनेऽपि]

अनुभरामि पश्चाद् धारयामि, प्र०—अन्विति साङ्ग्यापरभाव प्राह निरु० १ ३, २ १७ [अनु+भृञ् भरणे (भ्वा०) धातोर्लट्]

अनुभर्त्री अनुगतसुखधारणस्वभावा (वाणी) १ ८८ ६ [अनु+भृञ् भरणे (भ्वा०) धातो कर्त्तरि तृच्। स्त्रिया ङीप्]

अनुभासि आनुकूल्येन प्रकाशयसि ३ ६ ७ [अनु+भा दीप्तौ (अदा०) धातोर्लट्]

अनुभुवन् अनुभवन्ति ७ ३१ ६ [अनु+भू+शतृ प्रत्यय । विकरणव्यत्ययेन शप स्थाने श उवङ्डादेशे च रूपम्]

अनुभ्राजन्तः पश्चात् प्रकाशमाना (रश्मय) १ ५० ३ [अनु+भ्राजृ दीप्तौ (भ्वा०) धातो शतृप्रत्यय । व्यत्ययेन परस्मैपदम्]

अनुमता अनुज्ञापिता (सीता=काष्ठपट्टिका) १२ ७० [अनु+मन ज्ञाने (दिवा०) धातो क्त । अनुनासिकलोपश्च]

अनुमतिः अनुकूल विज्ञानम् ३४ ६ **अनुमते**=हे अनुमन्त परमेश्वर ! ऋ० भू० २०२, १० ५९ ६ अनुकूला मतिर्यस्य तत्सम्बुद्धौ (अन्व०—सभापते विद्वन्वा) ३४.८ **अनुमत्यै**=याऽनुमन्यते तस्यै (विष्णुपत्न्यै=अन्तरिक्षरूपायै) २९ ६० अनुमति के लिए २४ ३२ [अनु+मन ज्ञाने (दिवा०) धातो 'मन्त्रे वृषेषपचमन०' अ० ३ ३ ९६ सूत्रेण भावे स्त्रिया क्तिन् उदात्तश्च अनुमती राकेति देवपत्न्याविति नैरुक्ता, पौर्णमास्याविति याज्ञिका, या पूर्वा पौर्णमासी साऽनुमतिर्योत्तरा सा राकेति विज्ञायते । अनुमतिरनुमननात् नि० ११ ३०]

अनुमदन्ति आनुकूल्येनाऽऽनन्दयन्ति ३ ४७ ४ आनुकूल्येन हृष्यन्ति ३३ ८० अनुकूल हर्षन्ति १ ८४ १० **अनुमदन्तु**=पश्चादानन्दन्तु २७ ८ अनुहर्षन्तु ६ २० उत्साहयन्तु, भा०— प्रोत्साहयन्तु, अनुमोदयन्तु च १७ ४९ **अनुमदाम**=अनुहृष्येम, प्र०—अत्र विकरणव्यत्ययेन शप् १ १०२ ३ **अनुमदेम**=आनन्दिता भवेम, प्र०—अत्रापि विकरणव्यत्ययेन श्यन स्थाने शप् १ ९१ २१ [अनु+मदी हर्षे (दिवा०) धातोर्लट् । विकरणव्यत्ययेन शप स्थाने श्यन् न भवति]

अनुमन्यत अनुमन्यसे ४ १७ १ **अनुमन्यताम्**=पश्चाद् विज्ञापयतु स्वीकुरुता वा ४ २० पश्चात् स्वीकरोतु स्वीकारयति वा ५ ९ **अनुमन्यासै**=अनुमन्यस्व ३४ ८ [अनु+मन ज्ञाने (दिवा०) धातो सामान्ये लङ् । अड् अभावश्च अन्यत्र लोट्]

अनुममिरे निर्मिमते १ १६३ ८ [अनु+मा माने (अदा०) धातोर्लिट्]

अनुमम्नाते अन्वभ्यासाते ७ ३३ ७ [अनु+म्ना अभ्यासे (भ्वा०) धातोर्लिट्]

अनुमंसते अनुमन्यताम् ५ ४६ ४ [अनु+मन ज्ञाने (दिवा०) धातोर्लेट् । 'सिब्बहुल लेटी' ति सिप्]

अनुमाद्यस्य अनुहर्षितुं योग्यस्य (पुस=पुरुषस्य) ७ ६ १ **अनुमाद्यः**=अनुहर्षितु योग्य (इन्द्र=परमैश्वर्यदाता राजा) ६ ३४ २ **अनुमाद्यासः**=अनुमोदकारकगुणैन प्रशसनीया (विद्वज्जना) १ ११५ ३ [अनु+मदी हर्षे (दिवा०) धातोर्ण्यत्]

अनुमार्ष्टु पुन पुन शुन्धतु, भा०—सम्पूरयन्तु ८ १४ [अनु+मृजूष् शुद्धौ (अदा०) धातोर्लोट् 'मृजेर्वृद्धिरिति वृद्धि]

अनुमृक्षीष्ट अनुशोधयतु १ १४७ ४ [अनु+मृजूष् शुद्धौ (अदा०) धातोर्लिङ् । व्यत्ययेनात्मनेपदम्]

अनुम्लोचन्ती अनुम्लोचयन्ती दीप्ति १५ १७ [अनु म्लुचु गत्यर्थे (भ्वा०) धातो शतृ, स्त्रिया ङीप् च]

अनुयच्छतु अनुगृह्णातु ४ ५७ ७ **अनुयच्छन्ति**=निगृह्णन्तु ६ ७५ ६. [अनु+यम उपरमे (भ्वा०) धातोर्लोट् । 'इपुगमियमाम्' सूत्रेण छकारादेश शिति]

अनुयच्छमाना अनुकूलतया प्राप्ता (पत्नी) १ १२३ १३. **अनुयच्छमानाः**=आनुकूल्येन नियन्तार (मनुष्या) प्र०—अत्र व्यत्ययेनाऽऽत्मनेपदम् १ १०९ ३ [अनु+यम उपरमे (भ्वा०) धातो शानच्+टाप् । व्यत्ययेनात्मनेपदम्]

अनुयतम् आनुकूल्येन यतन्तम् (मर्त्त=मनुष्यम्) ५ ४१ १३ [अनु+यती प्रयत्ने (भ्वा०) धातो क्विप्]

अनुया याऽनुयाति तया (गव्या=रात्रिविद्यया) १ ५ ६ [अनु+या प्रापणे (अदा०) धातोरच् स्त्रिया टाप्]

अनुयाजान् अनुकूलान् यज्ञपदार्थान् १९ १९ [अनु+यज देवपूजासगतिकरणदानेषु (भ्वा०) धातोर्घञ् प्रत्यय । 'प्रयाजानुयाजौ यज्ञाङ्गे' अ० ७ ३ ६२ सूत्रेण निपातनात् कुत्व न भवति । अपाना अनुयाजा काठ० १२ २ श० ११ २ ७ २७ कौ० ७ १ १० ३ अशनिरेव प्रथमोऽनुयाज श० ११ २ ७ २१ एकादश अनुयाजा । मै० १ १० ८ छन्दासि वाऽनुयाजा श० १ ८ २ ८ तद्यत्तासु सर्वास्वष्टासु (देवतासु) अथैतत् पश्चेवानुयजति तस्मादनुयाजा नाम श० १ ८.२ ७ त्रयोऽनुयाजा । इमा ऽएवास्य ते ऽवाञ्चस्त्रय प्राणा श० ११ २ ६ ६ प्रजाऽनुयाजा तै० स० २ ६ १ ६. रेतोधेयम् अनुयाजा श० ३ ८ ४ ८ आत्मा वै प्राणानामेकादश ......अथ यदेकादशानुयाजा, प्राणानस्मिन् दधाति । मै० ३ ९ ८ पशवो वा ऽनुयाजा । श० ३ ८ ४ ८ अथ किन्देवता प्रयाजानुयाजा ? आग्नेया इत्येके । छन्दोदेवता इत्यपरम् । ऋतदेवता इत्यपरम् । पशुदेवता इत्यपरम् । प्राणदेवता इत्यपरम् । आत्मदेवता इत्यपरम् । आग्नेया इति स्थिति । भक्तिमात्रमितरत् नि० ८ २१]

अनुयाति अनुगच्छति ६ ६ २ **अनुयासि**=प्राप्नोषि ३ १ १७ [अनु+या प्रापणे (प्रापणमिह गति) अदा० धातोर्लट्]

अनुयेमाते नियमेन गच्छत ४ ४८ ३ **अनुयेमुः**=नियच्छन्ति ६ २१ ६. [अनु+यम उपरमे (भ्वा०) धातोर्लिट्]

अनुयोज अर्वाग् योजय १ ८२ ३. पश्चाद् योजय युङ्क्ते वा ३ ५२ [अनु+युजिर् योगे (रुधा०) धातोर्लोट्। विकरणव्यत्ययेन शप श्नम् न भवति]

अनुरुत् योऽनुरौति उपदिशति (परमात्मा) ३ ५५ ५. [अनु+रु शब्दे (अदा०) धातो क्विप्]

अनुरुधम् योऽनुरुणद्धि तम् ३० ६ [अनु+रुधिर् आवरणे (रुधा०) धातो क्विप्]

अनुरूपः अनुकूल (यज्ञ) १६ २४ [रूपम् रोचते नि० ३ १३ स योऽय (पुरुष) चक्षुष्येपो ऽनुरूपो नाम। अन्वङ् ह्येष सर्वाणि रूपाणि। जै० उ० १ २७ ४ पूर्वमु चैव तद्रूपमपरेण रूपेणानुवदति यत्पूर्व रूपमपरेण रूपेणापनुवदति तदनुरूपस्यानुरूपत्वमनुरूप एन पुत्रो जायते य एव वेद। ता० १२ १ ५, १२ ७ ७, १३ १ ६, १३ ७ ७ प्रजा अनुरूप। गो० उ० ३ २१ प्रजा वा अनुरूप। ऐ० ३ २४ अग्निरनुरूप जै० उ० ३ ४ २]

अनुरोहते अनुवर्द्धते २ ५ ४ [अनु+रुह बीजजन्मनि प्रादुर्भावे च (भ्वा०) धातोर्लट्। व्यत्ययेनात्रात्मनेपदम्]

अनुवक्षः प्राप्नुहि ५ ३३ २ **अनुववक्ष**=अनुवहति, प्र०—अत्र वर्तमाने लिटि 'वाच्छन्दसि' इति सुडागम ३ ७ ६ [अनु+वह प्रापणे (भ्वा०) धातोर्लिट्। सुडागम पूर्वत्र द्विर्वचनप्रकरणे छन्दसि वेति वक्तव्यम्' (अ० ६ १ ८) वा० सूत्रेण द्वित्व न भवति]

अनुवनथ. पश्चात् सम्भजेथाम् १ ४६ १४ [अनु+वन सभक्तौ (भ्वा०) धातोर्लट्]

अनुवर्त्मानः अनुकूलाऽऽचरणा, अनुकूलो वर्त्मा मार्गो येषान्ते (विश, मरुत=प्रजा, ऋत्विजो विद्वास) १७ ८६

अनुवर्द्धसे शमादिषु स्वात्मानमुन्नयसि ७ १२ **अनुवावृधे**=अनुवर्द्धयन्ति २ ८ ५ [अनु+वृधु वृद्धौ (भ्वा०) धातोर्लट् लिट् च। तुजादीनामित्यभ्यासदीर्घ]

अनुवव्ने पश्चाद् याचते १ ६१ १५ [अनु+वनु याचने (तना०) धातोर्लिट्। अकारलोपश्छान्दस। 'न शसददवादिगुणानामि' ति एत्वाभ्यासलोपौ न भवत]

अनुवष्टि प्रकाशते १५ ४७ कामयेत १ १२७ १ [अनु+वश कान्तौ (अदा०) धातोर्लट्। वष्टि वश्मि-कान्तिकर्मा निघ० २ ६]

अनुवस्ताम् अनुच्छादयतु ६ ७५ १८ पश्चादाच्छादयताम् १७ ४६ [अनु+वस आच्छादने (अदा०) धातोर्लोट्]

अनुवाति अनुगच्छति ४ ४० ३ पीछे चलता हैं ४ ७ १०. [अनु+वा गतौ (अदा०) धातोर्लट्]

अनुवावृतुः अनुवर्त्तेरन्, प्र०—अत्र 'तुजादीनाम्०' इत्यभ्यासदैर्घ्यम् ४ ३० २ [अनु+वृतु वर्त्तने (भ्वा०) धातोर्लिट्। अभ्यासस्य दीर्घत्व तुजादित्वात्]

अनुविक्रमते अनुकूलता मे क्रिया करता है स० वि० २१० अथर्व० ६ ६ २ २ **अनुविक्रमस्व**=अनुव्यवहर, प्रयतस्व १२ ५ [अनु+वि+क्रमु पादविक्षेपे (भ्वा०) धातोर्लट् 'वे पादविहरणे' अ० १ ३ ४१ सूत्रेणात्मनेपदम्]

अनुवित्तः अनुलब्ध (पन्था=मार्ग) ४ १८ १ [अनु+विद्लृ लाभे (तुदा०) धातो क्त। 'वित्तो भोगप्रत्यययो' इति सूत्रेण निष्ठानत्वनिषेध]

अनुविदधौ अनुकूल विदधाति १ ६५ ३ [अनु+वि+डुधाञ् धारणपोषणयो (जु०) धातोर्लिट्]

अनुविदे अनुवेद्मि, प्र०—अत्र व्यत्ययेनाऽऽत्मनेपदम् **अनुविदेत्**=अनुकूल प्राप्नुयात् ५ ६ **अनुवेद**=विद्यापठनाऽनन्तर जानाति १६४ १८ [अनु+विद ज्ञाने (अदा०) धातोर्लट्। व्यत्ययेनात्मनेपदम्। अन्यत्र 'विदो लटो वे' ति तिपो णलादेश]

अनुविध्य ताडय १३ ६ [अनु+व्यध ताडने (भ्वा०) धातोर्लोट्]

अनुविराजति प्रकाशते १२ ३ [अनु+वि+राजृ दीप्तौ (भ्वा० उ०) धातोर्लट्]

अनुवीक्षस्व आनुकूल्येन विशेषत सम्प्रेक्षस्व १३ ३० [अनु+वि+ईक्ष दर्शने (भ्वा०) धातोर्लोट्]

अनुवीरयध्वम् पश्चाद् विक्रमयध्वम् १७ ३८ [अनु+वीर विक्रान्तौ (चुरा०) धातोर्लोट्]

अनुवोचत् पुनरुपदिशेत् २ ५ ३ [अनु+वच परिभाषणे (अदा०) धातोर्लुङ्। अडभाव। 'अस्यतिवक्ति०' सूत्रेणाङ्। 'वच उम' इत्युम्]

अनुव्यचः अनुयोगेन व्याप्ते १ ५२ १४ [अनु+व्यच व्याजीकरणे (तुदा०) धातोर्लोट्। विकरणव्यत्ययेन शप्। हेरभावश्छान्दस]

अनुव्यस्थिरन् आनुकूल्येन विशेषेण तिष्ठन्ति १ ८० ८

[अनु+वि+ष्ठा गतिनिवृत्तौ धातोश्छान्दसं रूपम्। 'समवप्रविभ्य स्थ' इत्यात्मनेपदम्]

अनुव्यायन् अनुकूलतयोत्पादिता १४ ३० [अनु+वि+इण् गतौ (अदा०) धातोर्लङ्]

अनुव्रतः अनुकूल आचरणयुक्त (पुत्र) स० वि० १४१. अथ० ३ ३० २ **अनुव्रताय**=अनुगतानि धर्म्याणि व्रतानि यस्य तस्मै (सज्जनाय) १ ५१.६ [व्रतमिति कर्म नाम वृणोतीति सत । इदमपीतरद् व्रतमेतस्मादेव निवृत्तिकर्म वारयतीति सत । अन्नमपि व्रतमुच्यते यदावृणोति शरीरम्। नि० २ १३ व्रतस्यानुना समास.]

अनुशसे अनुशासनाय ५ ५० २ [अनु+शासु अनुशिष्टौ भावे क्विप्। आकारलोपश्च छान्दस]

अनुशासता अनुशासितारौ (अध्यापकोपदेशकौ) ११३६ ४ [अनु+शासु अनुशिष्टौ (अदा०) धातो रूपम्]

अनुशासति अनुशासन करोति, प्र०—अत्र 'बहुलं छन्दसि' इति शपो लुङ् न ६ ५४ १ [अनु+शासु अनुशिष्टौ (अदा०) धातोर्लट् शपो लुङ् न]

अनुशिश्रथः अनुश्रथ्नाति, भा०—आलस्य करोति ४ ३२ २२

अनुशिष्टः प्राप्तशिक्ष. (जन) ५ २ २८. [अनु+शासु अनुशिष्टौ (अदा०) धातो क्त । 'शास इदङ्हलोरिति' इत्वम्। 'शासिवसि०' इति षत्वञ्च]

अनुषत्यम् सत्यस्याऽनुकूलम् ३ २६ १ [सत्य कस्मात्? सत्सु तायते सत्प्रभव भवतीति वा । नि० ३ १३ सत्यस्यानुना सह समास]

अनुषु प्राणप्रदेषु (पूरुषु=मनुष्येषु) १ १०८ ८ [अन प्राणने (अदा०) धातोर्बाहुलकाद् उ प्रत्यय]

अनुष्टवे अनुस्तौमि ५ ७३ ४ [अनु+ष्टु स्तुतौ (अदा०) धातोर्लट्। व्यत्ययेनात्मनेपदम्]

अनुष्टु अनुतिष्ठन्ति यस्मिँस्तत् १ ६५ ३

अनुष्टुप् ययानुष्टोभते सा (छन्दोऽर्थविज्ञानम्) २३.३३ यया पठित्वा पुन सर्वा विद्या अन्येभ्य स्तुवन्ति सा (छन्द) १० १३ अनुष्टोभते स्तभ्नात्यज्ञान य (अध्यापक) ८ ४७ सुखानामनुष्टम्भनम् १४ १८ अनुस्तौति यया सा (छन्द=सुखसाधकम्) १४ १० श्रुत्वा पश्चात् स्तुभ्नाति जानाति शास्त्राणि यया मननक्रियया सा १५ ५ अनुस्तौति यया सा (छन्द) १४ १० अनुष्टुप् छन्द २१ १४ **अनुष्टुभम्**=अनुस्तुम्भकम् छन्द=(स्वातन्त्र्यम्) २८ २६ **अनुष्टुभा**=भा०—प्रीत्या, व्यवस्थया, धर्मव्यवस्थया २८ ३७ अनुष्टुप् मन्त्र द्वारा सिद्ध हुई विद्या से १३ ३४ **अनुष्टुभे**=अनुस्तम्भाय २४ १२ **अनुष्टुभेन**=अनुष्टुब्विहितार्थयुक्तेन (छन्दसा) ११ ११ [अनुष्टुप् वाङ्नाम निघ० १ ११ अनुष्टुबनुष्टोभनात् नि० ७ १२ अन्वस्तौदिति हि ब्राह्मणम् दै० ३ ८ अनुष्टुबनुष्टोभनात् दै० ३ ७ यस्याष्टौ ता अनुष्टुभम् कौ० ६ २. गायत्री वै सा यानुष्टुप् कौ० १० ५ वागेवासौ प्रथमानुष्टुप् कौ० १५ ३ अनुष्टुप् सोमस्य छन्द कौ० १५ २ आपो वा अनुष्टुप् कौ० २४.४ आनुष्टभ वै चतुर्थमह कौ० २२ ७ द्वात्रिंशदक्षरानुष्टुप् कौ० २६.१. तै० १ ७ ५ ५ ता० १० ३ १३ वागनुष्टुप् सर्वाणि छन्दांसि तै० १ ७ ५ ५ आनुष्टुभ प्रजापति तै० ३.३ २ १ आनुष्टुभो राजन्य तै० १ ८.८ ता० १८ ८ १४ वागनुष्टुप् ता० ५ ७ १ श० १० ३ १ १ ज्यैष्ठ्य वा अनुष्टुप् ता० ८ १० १० आनुष्टुभि छन्दसा योनि ता० ११ ५ १७ अन्तो वा अनुष्टुप् छन्दसाम् ता० १६ १२ ८. इय (पृथिवी) वा ऽनुष्टुप् ता० ८ ७ २ श० १ ३ २ १६ प्रजापतिर्वा अनुष्टुप् ता० ४ ८.६. आनुष्टुभो वै प्रजापति. ता० ४ ५ ७ आनुष्टभी वै वृष्टि ता० १२ ८ ८ पादावनुष्टुप् ष० २.३ अनुष्टुबेव सर्वम् गो पू० ५ १५ अनुष्टुब् वै परमा परावत ऐ० ३ १५ या कुहू साऽनुष्टुप्) ऐ० ३ ४७ यस्य ते (प्रजापते) ऽह (अनुष्टुप्) स्व छन्दोऽस्मि ऐ० ३ १३ वाग्वा अनुष्टुप् ऐ० १ २८ वास्त्वनुष्टुप् श० १ ७ ३ १८ सक्थ्यावनुष्टुभ श० ८.६ २ ६ आनुष्टुभैषा (उत्तरा) दिक् श० १३.२ २ १६ अनुष्टुबुदीची (दिक्) श० ८.३ १ १२ आनुष्टुभो वाऽअश्व श० १३ २ २ १६ परम वा ऽएतच्छन्दो यदनुष्टुप् १३ ३ ३ १. एषा वै प्रत्यक्षमनुष्टुब् यद् यज्ञायज्ञीयम् (साम) ता० १५.६ १५ सत्यानृते वा अनुष्टुप् तै० १ ७.१० ४ वृषा वै त्रिष्टुब् योषानुष्टुप् ऐ० आ० १ ३ ५ विश्वेदेवा अनुष्टुभ समभरन् जै उ० १ ४ ४ ७]

अनुष्ठाः या अनुतिष्ठन्ति (नद्य) १ ५४ १० [अनु+ष्ठा गतिनिवृत्तौ धातो क प्रत्यय । स्त्रिया टाप्]

अनुष्ठु अनुतिष्ठन्ति यस्मिँस्तत् (अहोरात्र) ६६५ ३

अनुष्ठया आनुकूल्येन ४ ४ १४

अनुष्यदे आनुकूल्येन किञ्चित् प्रस्रवणाय २ १३ २ [अनु+स्यन्दू प्रस्रवणे धातो क्विप्]

अनुष्याम अनुभवेम १ १८५ ४ (अनु+अस भुवि (अदा०) धातोर्लिङ्]

अनुष्वधम् अनुकूल स्वधा अन्न विद्यते यस्मिंस्तम् (सोम=महौषधिरसम्) ३ ४७ १ स्वधाऽन्नस्याऽनुकूलम् (अग्निम्) १७ ८८ अन्वन्नम् ३ ६ ६ स्वधाऽनुगत द्रव्यम् २ ३ ११ स्वधामन्नमनुकूलम् १ ८१.४ स्वधामन्नमनुवर्त्तमानम् (श्रव=श्रवणम्) ५ ५२ १ सर्वेषु पक्वाऽन्नेष्वनुकूलम्, प्र०—अत्र विभक्त्यर्थेऽव्ययीभाव समास ७ ३८ अनुकूल स्वधाऽन्न विद्यते यस्मिंस्तम् (सोमम्) ३ ४७ १ [अनुष्वधम् अन्वन्नम् नि० ४ ८ स्वधा अन्ननाम निघ० २ ७]

अनुसस्रु: प्राप्नुवन्ति ५ ५३ २ [अनु+सृ गतौ धातोर्लिट्]

अनुसंरमध्वम् युद्धाऽऽरम्भ कुरुत ऋ० भू० २२४ आनुकूल्येन सम्यग् युद्धारम्भ कुरुत १७ ३८ [अनु+सम्+रमु क्रीडायाम् (भ्वा०) धातोर्लोट्]

अनुसृष्टान् अनुपङ्क्तिण (पशून्) २४ १६ [अनु+सृज विसर्गे (तुदा०) धातो क्त प्रत्यय]

अनुसेषिधत् पुन पुनरनुकूलान् प्रापयेत्, अन्व—पुन पुनरनुगत प्रापयेत्, प्र०—अत्र यङ्लुगन्ताल्लेट् 'सेधते गतौ, अ० ८ ३ ११३ इत्यभ्यासस्य षत्वप्रतिषेध 'उपसर्गादिति वक्तव्य, किं प्रयोजनम् ? उपसर्गाद् या प्राप्तिस्तस्या प्रतिषेधो यथा स्याद्, अनभ्यासाद् या प्राप्तिस्तस्या प्रतिषेधो मा भूदिति 'स्तम्भुसिवु०' अ० ८ ३ ११६ इत्यत्र महाभाष्यकारेणोक्तम् । सायणाऽऽचार्येणेदमज्ञानान्न बुद्धमिति १ २३ १५ [अनु+षिधू गत्याम् (भ्वा०) धातोर्यङ्लुक् । ततो लेटि रूपम्]

अनुस्तवन्त अनुस्तुवन्ति ४ २२ ७ प्रशसन्ति ३३ ६७ [अनु+ष्टुञ् स्तुतौ (अदा०) धातो शतृ प्रत्यय]

अनुस्थाति अनुतिष्ठति २.३१ ३ [अनु+ष्ठा गतिनिवृत्तौ (भ्वा०) धातोर्लट् । 'बहुल छन्दसी' ति शपो लुक्]

अनुस्पृश अनुगतो भव १३ १० [अनु+स्पृश सस्पर्शने (तुदा०) धातोर्लोट्]

अनुस्रयाम्णे योऽनुस्र शीत देश याति तस्मै (जनाय) ४ ३२ २४ [अनुस्र+या प्रापणे (अदा०) धातोर्मनिन् प्रत्यय]

अनुहर्षध्वम् अनुमोदध्वम् ऋ० भू० २२४ [अनु+हृष तुष्टौ (दिवा०) धातोर्लोट् व्यत्ययेन शप् आत्मनेपद च]

अनुहृषितम् जातहर्ष (सेनाऽध्यक्षम् १ १०३ ७ [अनु+हृष तुष्टौ (दिवा०) धातो. क्त]

अनुह्वय निमन्त्रय ५ ५३ १६ [अनु+ह्वेञ् स्पर्द्धाया शब्दे च (भ्वा०) धातोर्लोट्]

अनूकाशेन अनुप्रकाशेन (अङ्गेन) २५ २ [अनु+काशृ दीप्तौ (भ्वा०) धातोर्भावे घञ् । 'इक काशे' अ० ६ ३ १२३. सूत्रेण पूर्वपदस्य दीर्घत्वम्]

अनूक्यम् अनुकूलता से कहने के योग्य (वचन) स० वि० २०८ अथर्व० ६ ६ १ [अनु+वच् परिभाषणे (अदा०) धातो 'अघ्न्यादयश्च' उ० ४.११२ सूत्रेण यक् । किति सम्प्रसारणे पूर्वरूपे च 'न्यङ्क्वादीना चे' ति कुत्वम्]

अनूच: कपटेनाऽनुकूलान् (शत्रून्) ३ ३० ६ [अनु+अञ्चुगतिपूजनयो (भ्वा०) धातो 'ऋत्विग्दधृक्०' अ० ३ २.५९ सूत्रेण क्विन् 'अनिदिताम्' इति नलोपे शसि भसज्ञायाम् 'अच.' इत्यकारलोपे 'चौ' इति दीर्घत्वे रूपम्]

अनूची अन्योऽन्यवर्त्तमाने (रात्र्युषसौ) १ ११३ २ [अनूच्वत् सिद्धि द्विवचने 'नपुसकाच्च' अ० ७ १ १९ सूत्रेण शीभावे रूपम् अनूची अनूच्यौ इतरेतरमभिप्रेत्य नि० २ २०]

अनूचीना यान्यनुचरन्ति तानि (जीविता=जीवनानि) ४ ५४ २. यैरन्वञ्चन्ति जानन्ति तानि (जीविता=कर्माणि) ३३ ५४ [अनूच् प्राति० 'विभाषाञ्चेर्०' अ० ५ ४ ८ सूत्रेण स्वार्थे ख । खस्येनादेश]

अनूज्जेषम् पश्चादुत्कृष्टतया जय कुर्याम्, प्र०—अत्र लिङर्थे लुङडभावो वृद्ध्यभावश्च, अनुगतमुत्कर्षं प्राप्नुयाम् २ १५ [अनु+उत्+जि जये (भ्वा०) धातोर्लुङ् अड्-वृद्ध्यभावौ छान्दसौ]

अनूती अरक्षया ६ २९ ६ [अव रक्षणादिषु (भ्वा०) धातो, 'ऊतियूति०' अ० ३ ३ ९७ सूत्रेण स्त्रिया क्तिन् 'ज्वरत्वर०' सूत्रेण ऊठ् वकारस्योपधायाश्च स्थाने नञ्समास ऊति पदनाम निघ० ४ २]

अनूनम् हीनतारहितम् (अग्नि=विद्वासम्) १ १४६ १. पुष्कलम् (सुश्चन्द्र=ब्रह्मचर्यम्) ४ २ १९ ऊनतारहितम् (सज्जनम्) ६ १७ ४ **अनूना**=पूर्णा (दक्षिणा) ७ २७ ४ **अनूना:**=न विद्यते ऊनमूनता यासु ता (श्रिय.=शोभा धनानि वा) ३ १ ५ **अनूनेन**=न्यूनतारहितेन रोधेण ४ ५ १. [अव रक्षणादिषु (भ्वा०) धातो 'इण्सिञ्जि०' उ० ३ २ सूत्रेण नक् प्रत्यय. । 'ज्वरत्वर०'

अनृतुपाः य ऋतून् पाति स ऋतुपा, न ऋतुपा अनृतुपा (तत्त्वस्वरूपविद् विद्वान्) ३ ५३ ८ [ऋ गतिप्रापणयो (भ्वा०) धातो 'अर्त्तेश्च तु' ३० १ ७२ सूत्रेण उ प्रत्यय किच्च ऋतूपपदे+पा रक्षणे धातोरच् नञ्समासश्च]

अनेजत् न एजते कम्पते तदचलत् स्वाऽवस्थायाश्च्युति कम्पन तद्रहितम् (ब्रह्म=परमेश्वर) ४० ४ [एजृ कम्पने (भ्वा०) धातोर्लेट्। तत्प्रतिषेध। एजति गतिकर्मा निघं० २ १४]

अनेद्यः अनिन्दनीय (मनुष्याणा गण) ५ ६१ १३ प्रशस्य (श्रव=शास्त्रम्, प्र०—अनेद्य इति प्रशस्यनाम निघ ३ ८, १ १६५ १२ प्रशस्य (सेनापति) १ ८७ ४ **अनेद्याः**=अनिन्दनीया (आप्ता पुरुषा) ६ १६ ४ [णिदि कुत्सायाम् (भ्वा०) धातोर्ण्यत् छान्दसो नकारलोप नञ्समासश्च अनेद्य प्रशस्यनाम निघ० ३ ८]

अनेनः अविद्यमानमेन पाप यस्मिँस्तत् (कर्म) ६ ६६ ७ **अनेनाः**=अविद्यमानमेन पाप यस्य स. (विद्वज्जन) १ १२६ ५ निष्पाप (इन्द्र=सज्जन) ७ २८ ४ [इण् गतौ (अदा०) धातो 'इण आगसि' उ० ४ १६८ सूत्रेण असुन् नुडागमश्च नञ्बहुव्रीहि एन एते नि० ११ २४]

अनेशन् नश्ययेयु, प्र०—अत्र 'णश' अदर्शने इत्यस्य धातोर्लुङि रूप 'नशिमन्योरलिट्येत्व वक्तव्यम्, अनेन वार्त्तिकेनाऽत्वम् १६ १० [णश् अदर्शने (दिवा०) धातोर्लुङ् पुषादित्वाद् अङ्। 'नशिमन्योरलिट्येत्व वक्तव्यम्' (वा० ६ ४ १२०) वा० सूत्रेणैकारादेशश्छन्दसि]

अनेषत् स्वीकार करो ३५ १८ [णीञ् प्रापणे (भ्वा०) धातोरात्मनेपदे लेट्]

अनेहसम् अविद्यमानानि एहासि हननानि यस्मिँस्त (पन्था=मार्गम्) ४ २६ अहन्तव्याम् (नावम्), प्र०—अत्र 'नञि हन एह च, उ० ४ २२४ इति नञ्पूर्वस्य हन्धातो प्रयोग २१ ६ अहन्तव्यम् (पन्था=मार्गम्) ६ ५१ १६ निष्पाप निरुपद्रव स्थिर दृढ सुख रूप भद्र को आर्याभि० १ २६ अहन्तारम् (देव=विद्वासमुपदेशकम्) ३ ६ १ अहिसनीय सर्वदा रक्षणीय निर्दोषम् (मन्त्रम्=श्रुतिसमूहम्) १ ४० ६ **अनेहसः**=अहिंसका सन्त (मनुष्या) ५ ६५ ५ अहन्तव्यस्य (वसो=धनस्य) ३ ५१ ३ **अनेहसा**=अहिसामयेन धर्मेण १ १२६ ६ अहिंसके (द्यावापृथिवी=सूर्यभूमी) ६ ७५ १० अविनाशिनौ (द्यावापृथिवी=प्रकाशभूमी) २६ ४७ **अनेहः**=अहन्तव्य (दात्र=दानम्) १ १८५ ३ अहन्तव्य सतत रक्षणीय व्यवहारम् ६ ५० ३ [नञ्युपपदे हन् हिंसागत्यो (अदा०) धातो 'नञि हन एह च' उ० ४ २२४ सूत्रेण असुन् प्रत्यय धातोश्च स्थाने एहादेश]

अनोनवुः स्तुवत १ ८० ६ [णु स्तुतौ (अदा०) धातोर्यङ्लुक् तत सामान्ये लङ्]

अन्तकम् दु खनाशकर्त्तारम् (भुज्यु=पालक जनम्) १ ११२ ६ **अन्तकाय**=योऽन्त करोति तस्मै (मृगयवे=व्याधाय) ३० ७. नाशाय ३० १८ नाशकाय कालाय ३६ १३ [एष (सवत्सर) हि मर्त्यानामहोरात्राभ्यामायुषोऽन्त गच्छत्यथ म्रियन्ते तस्मादेष एवान्तक श० १० ४ ३ २]

अन्तम् सीमानम् १ १०० १५ अवसानस्थम् (उत्तमौषधिरसम्) ६ ४३ २ व्याप्ति का परिच्छेद, इयत्ता, परिमाण आदि अन्त को आर्याभि० १ १५ प्रान्तम् १.३७ ६ नाशम् ७ २१ ६ [अम गत्यादिषु (भ्वा०) धातो 'हसिमृगि०' उ० ३ ८६ सूत्रेण तन् प्रत्यय अन्तो वै क्षय ऐ० आ० १ ५ ३]

अन्तमस्य समीपस्थस्य (योद्धृजनस्य) ३ ५५ ८ सर्वेषा दु खानामन्त मिमीते येन युद्धेन तस्य १ २७ ५ **अन्तम्**=समीपस्थ (पावक=विद्वज्जन) ३ १० ८ निकटस्थ (स्तोम=प्रशसामयो व्यवहार) ६ ४५ ३०. अतिशयेनाऽन्तिक (विद्वज्जन), प्र०—अन्तमानामित्यन्तिक नाम० निघ० २ १६, १५ ४८ य आत्माऽन्तस्थाऽनिति जीवयति सोऽतिशयित (अग्नि=सर्वाऽभिरक्षकेश्वर) प्र०—स उ प्राणस्य प्राण केनोप० ख० १ म० २ अनेनाऽऽत्माऽन्तस्थोऽन्तर्यामी गृह्यते ३ २५ **अन्तमा**=समीपस्थानि (दुर्वासि=परिचरणानि) ७.२२ ४ **अन्तमानाम्**=अन्त सामीप्यमेषामस्ति तेऽन्तिका, अतिशयेनाऽन्तिका अन्तमास्तेषा समागमेन, अन्व०—अर्थात् त्वा ज्ञात्वा त्वन्निकटे त्वदाज्ञाया च स्थितानाम् (सुमतीनाम्=आप्तविद्वज्जनानाम्), प्र०—अत्रान्तिकशब्दात्तमपि कृते पृषोदरादित्वात्तकार लोप १ ४ ३ **अन्तमाः**=समीपस्था (मनुष्या) ६ ५२ १४ **अन्तमेभि**=समीपस्थै. (विद्वज्जनै) १ १६५ ५ [अन्त-प्राति० अतिशयिकस् तमप्। पृषोदरादित्वात् तकार-अकारयोर्लोप अन्तमानाम् अन्तिकनाम निघ० २ १६]

अन्तरम् यदन्ते समीपे रमते तत् (ब्रह्म=परमेश्वरम्) ६ ७५ १६. [अन्तोपपदे रमु क्रीडायाम् (भ्वा०) धातोर्ड; प्रत्यय]

अन्तरम् अन्त शोधनमाभ्यन्तर वा, अन्व०—शुद्धमन्त करणम् (स्तोम=स्तुतिसमूहम्) १ १० ९ मध्यस्थम् (पेशसादिकम्) १९ ८२ मध्ये स्थितमपि दूरस्थमिव (ब्रह्म) १७ ३१. मध्यस्थमाभ्यन्तरम् २५ २ जीव ब्रह्म के भेद को आर्याभि० २.४४, १७ ३१ **अन्तरः**=भिन्न (जन) ६ ५ ४ मध्यस्थ (मर्त्य=मनुष्य) २० ८२ योऽनिति प्राणिति स (भिषक्=वैद्य) १९ १६ **अन्तरा**=मध्ये १४ १६ द्वयोर्मध्ये १७ ५९ व्यवधाने ३ ४०.९ आभ्यन्तरे १४ २७ सबमे भिन्न १९ ४१. भिन्न-भिन्न स० वि० २०३, अथर्व० ६ ३ १५ अन्तरौ २९ ६ **अन्तरान्**=भिन्नान् (अमित्रान्=शत्रून्) ३ १८.२. **अन्तराम्**=मध्ये पृथग्वा १ १०४ ६ [अन्तरम्=सर्वनाम अन्तरा इति स्वरादिगणे पाठादव्ययम्]

अन्तरिक्ष अन्तरिक्षस्थो यज्ञ ४ ७ **अन्तरिक्षम्**=द्वयोर्लोकयोर्मध्यमाकाशम् प० वि०, १० १९० ३ अनेकेषा लोकाना मध्येऽवकाशरूप वर्त्तमानमाकाशम् १ ५२.१३ पुष्कल अवकाश को स० वि० १६७, अथर्व० ९ २ ३.१५ अन्तरक्षय कारणाख्यम् ६ ४७ ४. अक्षयमाकाशकम् (आकाशम्) १८ १८ मध्यवर्त्याकाशम् ३ १ १३ मध्यस्थ लोक और उसमे स्थित वायु आदि पदार्थ को आर्याभि० २ २५, ३२.१७ सब के अधिष्ठाता (ईश्वर) को आर्याभि० १.१७, ऋ० १ ६ १६ १० अवकाशम् २८ २०. आकाश तत्रस्थप्राणिवर्ग च, अत्र तात्स्थ्योपाधिना प्राणिनामपि ग्रहणम् ५ २७ भूमिसूर्ययोर्मध्यस्थमाकाशम् ६ ६९ ५ उदकम्, प्र०—अन्तरिक्षमित्युदकनाम निघ० १ १२, ३ ३४ १० अवकाश सुखेन निवासार्थम् १ ११ सुखसाधनार्थमवकाशम् १ ७ आकाशस्थान् पदार्थान्, अन्तरात्मस्थमक्षय ज्ञान वा भा०—वेदविद्याम्, प्र०—अन्तरिक्ष कस्मादन्तरा क्षान्त भवत्यन्तरेमे इति वा शरीरेष्वन्तरक्षयमिति वा निरु० २ १०, १ १८. उभयोर्लोकयोर्मध्यस्थमाकाशम् ३६ १७ जलम् १४ १२ प्रशस्त शोधितमुदकम्, मधुरादिगुणयुक्त रोगनाशकमुदकम् १४ १२ अक्षयप्रेमयुक्ता (स्त्री) ११ ५८ जलमाकाश वा ३४ २२ अन्तरक्षयमाकाशम् ४ ५३ ५ अन्तर क्षयमन्त करणे क्षयरहित विज्ञानम् ८ ९ मेघमण्डलम् ८ ६० आकाश इवाऽक्षयोऽक्षोभ ११ २० अन्तरालमवकाशम् ७ ५ आकाशमिवाऽक्षोभता ३ ५४ १९ आकाशस्थ पदार्थसमूहम् ५ १३. धर्मप्रचारस्याऽवकाशम् ६ २ सर्वनिर्गतमनन्तमाकाशम् ७ ४२ क्षयरहितमन्तर्यामिस्वाभाविक ब्रह्मविज्ञानम् ७ ५ **अन्तरिक्षस्य**=अन्तरक्षयविज्ञानस्य १४ ५ आकाशस्य १४ १२ जलस्य १४ १४ **अन्तरिक्षा**=अन्तरिक्षेण सहचराणि (वस्तूनि) ६ २२ ८ **अन्तरिक्षाणि**=अन्तरिक्षस्थानि सर्वाणि भुवनानि १ ३५ ७ **अन्तरिक्षात्**=उपरिष्टात् १.४८ १२ सूक्ष्मादाकाशात् १ ६१ ९ सूर्यपृथिव्योर्मध्ये वर्त्तमानादाकाशात् ४ ६ मध्यस्थादवकाशात् ३ ३०.११ **अन्तरिक्षाय**=आकाशे गमनाय ५ २६ आकाशाय २२ २९ **अन्तरिक्षे**=अवकाशे २ २५ मध्यवर्त्तिन्याकाशे ३२.६ अन्तरिक्षय आकाशे १९ ५५ आकाशे १५ ११ सूर्यपृथिव्योर्मध्ये १८ ३७ आकाश मे म० वि० ६, ३२ ६ स्वव्याप्तिरूपे ब्रह्माण्डे १ ३५ ११ अन्तराल आकाशे ६ ३३ [अन्तरिक्ष अन्तरिक्षनाम निघ० १ ३ अन्तरिक्ष कस्मात् ? अन्तरा क्षान्त भवति, अन्तरा इमे इति वा, शरीरेष्वन्त. अक्षयमिति वा नि० २ १० अन्तरिक्ष वै नभासि तस्य रुद्रा अधिपतय तै० ३.८ १८ १ अन्तरिक्ष वै मध्यमा चिति श० ८ ७ २ १८ अन्तरिक्ष वै मातरिश्वनो घर्म मै० ४ १ ३ तै० ३ २ ३ २ अन्तरिक्ष वै माध्यन्दिन सवनम् श० १२ ८.२ ९. अन्तरिक्ष वै यजुषामायतनम् गो० १.२ २४. अन्तरिक्ष वै यज्ञ (पशव) मै० ३ ६ ८ अन्तरिक्ष वै सर्वेषा देवानामायतनम् श० १४ ३ २ ६ अन्तरिक्ष समित् मै० ४.९ २३ अन्तरिक्ष सावित्री गो० १ १ ३३. अन्तरिक्ष एव मह गो० १ ५ १५ अन्तरिक्ष गौ (गार्हपत्य) काठ० ८ ६ अन्तरिक्ष त्रिष्टुप् मै० ३ १ २ काठ० १९ १. तद्यदस्मिन्निद सर्वमन्तस्तस्मादन्तर्यक्षम् अन्तर्यक्ष ह वै नामैतत् तदन्तरिक्षमिति । परोक्षमाचक्षते जै० उ० १ २० ४ अन्तरेव वा इदमिति तदन्तरिक्षस्यान्तरिक्षत्वम् ता० २० १४ २. अन्तरिक्षायतना हि प्रजा ता० ४.८ १३ छिद्रमिवेदमन्तरिक्षम् ता० ३ १० २. अन्तरिक्षेणेद सर्व पूर्णम् ता० १५ १२ ५ अय मध्यमो लोक अन्तरिक्षम् ता० ७ ३.९. अन्तरिक्षम् वै वामदेव्य (साम) ता० १५.१२ ५ सह हैवेमावग्रे लोकावासतुर्तयोर्वियतोर्योऽन्तरेणाकाश आसीत्तदन्तरिक्षमभवद ईक्ष हैतन्नाम तत पुरान्तरा वा इदमीक्षमभूदिति तस्मादन्तरिक्षम् श० ७.१ २ २३ मध्य वा ऽन्तरिक्षम् श० ७ ५ १ २६ अन्तरिक्ष वा ऽअवर सधस्थम् श० ९ २ ३ ३९ अन्तरिक्ष वा ऽअपा सधस्थम् श० ७ ५ २ ५७. यान्येव बभ्रूणीव हरीणि (लोमानि) तान्यन्तरिक्षस्य रूपम् श० ३ २ १ ३ अथ यत् कपालमासीत्तदन्तरिक्षमभवत् श० ६ १ २ २ बृहन्मन्तरिक्षस्य (रूपम्) श० ७ ५ १ ३ अन्तरिक्षलोको वै प्रमा अन्तरिक्षलोको ह्यस्माल्लोकात्प्रमित इव श० ८ ३ ३ ५ अन्तरिक्षमेव विश्व वायुर्नर श० ९ ३ १ ३ अन्तरिक्ष नाराशस श०

१८.२.१२ अन्तरिक्ष वा आग्नीध्रम् श० ९ २ ३ १५ अन्तरिक्ष वा ऽउलूखलम् श० ७ ५.१.२६ अन्तरिक्ष ह्येष उद्धि श० ६ ५ २ ४. अथ यया विद्ध शयित्वा जीवति वा म्रियते वा सा द्वितीया (इषु) तदिदमन्तरिक्षꣳ सैषा रुजा नाम (इषु) श० ५ ३ ५ २६ अन्तरिक्षमेवोपाꣳशुसवन श० ४ १ २ २७ अयमन्तरिक्ष लोको निरुक्त सन्ननिरुक्त श० ४ ६ ७ १७. मनोऽन्तरिक्षलोक श० १४ ४ ३ ११ अन्तरिक्ष वै वरिवश्छन्द श० ८ ५ २ ३ अन्तरिक्ष वै विवधश्छन्द श० ८ ५ २.५ अन्तरिक्षलोक मह श० १२ ३ ४ ७. अन्तरिक्ष महाव्रतम् श० १० १ २ २ अन्तरिक्ष वै तृतीया चिति श० ८ ४ ११ ये वधकास्तेऽन्तरिक्षस्य रूपम् श० ५ ४ ५ १४ अन्तरिक्षमु वै त्रिष्टप् श० १ ८ २ १२ भुव इत्यन्तरिक्षलोक श० ८ ७ ४ ५ अन्तरिक्षलोको वै मारुतो मरुता गण श० ९ ४ २ ६ अन्तरिक्षदेवत्या खलु वै पशव तै० ३ २ १ ३. अवरिष्ट इव वा अयम् मध्यमो लोक ता० ७ ३ १८ तस्मादेषा लोकानामन्तरिक्षलोकस्तनिष्ठ श० ७ १ २ २० महद् हीदमन्तरिक्षम् कौ० २६ ११ रजता (पुरी) अन्तरिक्षम् गो० उ० २ ७ अन्तरिक्ष पृथिव्याम् ऐ० ३ ६ गो० उ० ३ २ अन्तरिक्षमस्यग्नौ श्रितम् वायो प्रतिष्ठा तै० ३ ११ १ ८ य एवायम्पवते (वायु) एतदेवान्तरिक्षम् जै० उ० १ २० २ तद् (ब्रह्म) इदमन्तरिक्षम् जै० उ० २ ९ ६ अन्तरिक्ष वै प्र, अन्तरिक्ष हीमानि सर्वाणि भूतान्यनुपयन्ति तै० २ ४१ इय (पृथिवी) अन्तरिक्षम् ऐ० ३ ३१ अन्तरिक्ष विश्वव्यचा तै० ३ २.३ ७ अन्तरिक्ष सावित्री गो० पू० १ ३३ अन्तरिक्ष पुरोधाता ऐ० ८ २७ अन्तरिक्षमाग्नीध्रम् तै० २ १ ५ १ अन्तरिक्षमुपभृत् तै० ३ ३ १ २ ३ ३ ६ ११ वागित्यन्तरिक्षम् जै० उ० ४ २२ ११ महद्वा अन्तरिक्षम् ऐ० ५ १८ १९ अन्तरिक्षलोको माध्यन्दिन सवनम् गो० उ० ४ ४ अन्तरिक्षम्प्रगाथ जै० उ० ३.४ २ अन्तरिक्षदेवत्यो हि सोम गो० उ० २ ४ वसुरन्तरिक्षसत् श० ५ ४ ३ २२ अन्तरिक्षलोको यजुर्वेद प० १ ५ अन्तरिक्ष वै यजुषामायतनम् गो० पू० २ २४ अन्तरिक्ष त्रिष्टुप् जै० उ० १ ५५ ३ त्रैष्टुभन्तरिक्षम् श० ८ ३ ४ ११. त्रैष्टुभोऽन्तरिक्षलोक कौ० ८ ९ (प्रजापति) भुव इत्येव यजुर्वेदस्य रसमादत्त तदिदमन्तरिक्षमभवत् तस्य यो रस प्राणेदत् स वायुरभवद्रसस्य रस जै० उ० १ १ ४ भुवरिति यजुर्भ्यो ऽक्षरत् । मो ऽन्तरिक्षलोकोऽभवत् ष० १ ५ स भुव इति व्याहरत् सो ऽन्तरिक्षमसृजत । चातुर्मास्यानि सामानि तै० २ २ ४.२ अन्तरिक्ष दक्षिणाग्नि का० ७ ९ अन्तरिक्ष मरीचय श० १० १ २ २ अन्तरेव वा इदमिति तदन्तरिक्षस्यान्तरिक्षत्वम् ता० २० १४ २. अय वाव समुद्रो ऽनारम्भणो यदिदमन्तरिक्षम् जै० १ १६५ आत्माऽन्तरिक्षम् काठ० १९ २ इन्द्रोऽन्तरिक्षम् काठ० २९.७ ऊधर्वा अन्तरिक्षम् ता० २४ १ ६ सन्धिरित्यन्तरिक्षम् तै स० ५ ३ ६ १]

अन्तरिक्षप्राम् स्वतेजसाऽन्तरिक्ष प्राप्य प्राति पिपर्त्ति तम् (इन्द्रम्=सेनापतिम्) १ ५१ २ **अन्तरिक्षप्राः**= योऽन्तरिक्ष प्राति व्याप्नोति स (सूर्य) ७ ४५ १ [अन्तरिक्षोपपदात् प्रा पूरणे (अदा०) धातो क प्रत्यय स्त्रिया टाप्]

अन्तरिक्षप्रुद्भिः अवकाशे गच्छन्तीभि (नौभि) १ ११६ ३ अन्तरिक्ष प्रति गन्तृभिर्विमानाख्ययानै ऋ० भू० १६०, १ ११६ ३ [अन्तरिक्षोपपदात् प्रुङ् गतौ (भ्वा०) धातो क्विप् । तुगागम]

अन्तरिक्षसत् योऽन्तरिक्ष आकाशे वा सीदति (जीवात्मा) ४ ४० ५ यो धर्माऽवकाशे सीदति (ब्रह्म जीवो वा) १२ १४ योऽन्तरिक्षेऽवकाशे सीदति (परमेश्वर) १० २४ **अन्तरिक्षसदम्**=अवकाशे गमकम् (इन्द्र=सम्राजम्) ९ २ [अन्तरिक्षोपपदात् सद्लृ विशरणगत्यवसादनेपु (भ्वा०) धातो 'सत्सूद्विषद्रुहदुह' अ० ३ २ ६१ सूत्रेण क्विप्]

अन्तरिक्ष्याः अन्तरिक्षे भवा (पर्वता=मेघा) ५.५४ ९ [अन्तरिक्षप्राति० 'भवे छन्दसि' अ० ४ ४ ११० सूत्रेण यन् प्रत्यय]

अन्तरेति अन्तर्गच्छति ३४ १ [अन्तर् उपपदे इण् गतौ (अदा०) धातो लट्]

अन्तर्यामः योऽन्तर्मध्ये याति स वायु १८ १९ अन्तर्मध्ये यामा प्रहरा यस्मिन् समये स १३ ५५ **अन्तर्यामे**=यमनामय याम, अन्तश्चाऽसौ यामश्च तस्मिन् ७ ५ [अन्तरोपपदे या प्रापणे (अदा०) धातो 'अर्त्तिस्तुसु०' उ० १ १४० सूत्रेण मन् प्रत्यय]

अन्तर्वतीः अन्तर्मध्ये कारण विद्यते यासु ता (प्रजा) ३.५५ ५ [अन्तर् प्राति० मतुप् अन्तर् शब्दोऽधिकरणप्रधान प्रथमासमर्थता न सम्भवति अत 'अन्तर्वत्पतिवतोर्नुक्' अ० ४ १ ३२ सूत्रेण निपातनात् मतुप् ङीप् च 'वा छन्दसि तु नुग्विधि' इति नुङ् न भवति]

अन्तर्वावत् योऽन्तर्भृश वाति गच्छति (वैश्वानर = सूर्य) ६ ८ ३ [अन्तरोपपदे वा गतौ (अदा०) धातोर्यङ्लुगन्तात् क्विप्]

अन्तर्विद्वान् योऽन्तर्वेत्ति स (परमेश्वर) १ ७२ ७ [अन्तरोपपदे विद् ज्ञाने (अदा०) धातो शतृ 'विदे शतुर्वसु' रिति वसु 'वसो, सम्प्रसारणम्' इति सम्प्रसारणे नुमि दीर्घे च रूपम्]

अन्तस्पथा अन्तराभ्यन्तरे पन्था येषान्ते (विद्याधर्ममार्गा) ५ ५२.१० [अन्तर्पथिन्शब्दयोर्बहुव्रीहौ समासे 'ऋक्पूरब्धू पथाम्०' अ० ५.४ ७४ सूत्रेण समासान्तोऽकार । टिलोपे च रूपम्]

अन्तः पारम् १ ५४ १ हृदि ३१ १६ मध्ये ५ ६२ ५ आभ्यन्तरे १ १६३ ४ समीपे १० ७ शरीराऽभ्यन्तरे ७ ५ आकाशाऽभ्यन्तर इव ७ ५ आभ्यन्तरस्थान् प्राणादीन् ७ ४ भीतर आर्याभि० २ १२, ४० ५ सर्वस्य मध्ये १ ६६ ५ बीच मे स० वि० १६८, अथर्व० ९ २ ३ २२ अन्त करणम् ८ २५ शरीराऽन्तर्व्यवस्थितेन, भा०—शरीरस्थेन (मनसा) १७ ६४ सीमा ६ २६ ५ ब्रह्माण्डशरीरयोर्मध्ये ३ ७ सभामध्ये १२ ११ अभ्यन्तराकाश ७ ५ [अम गत्यादिषु (भ्वा०) धातो 'अमेस्तुट् च' उ० ५ ६० सूत्रेण अरन् प्रत्ययस्तुडागमश्च स्वरादित्वाद् अव्ययम् अन्तर् = अभ्यन्तरम् नि० १० १६]

अन्तःपर्शव्येन अन्त पार्श्वावयवभावेन ३९ ८ [अन्तर् उपपदे पर्शुप्राति० अवयवार्थे यत् प्रत्यय पर्शु = स्पृश धातो 'स्पृशे श्वण्शुनौ पृ च' उ०५ २७ सूत्रेण शुन् प्रत्यय धातोश्च पृ आदेश]

अन्तःपार्श्व्यम् अन्त पार्श्वे भवम् (शरीराङ्गविशेषम्) ३९ ९. [अन्तरोपपदे पार्श्व प्राति० भवार्थे 'शरीरावयवाच्च' अ ४.३.५५ सूत्रेण यत् प्रत्यय]

अन्तःश्लेषः मध्यस्पर्श १४ १६ मध्ये स्पर्शो यस्य (श्रावणो भाद्रपदो वा मास.) १४ १५. मध्य आलिङ्गनम् १४.६ मध्यप्रवेश (ईश्वर) १५ ५७ आभ्यन्तरे सम्बन्ध १३ २५ [श्लिष आलिङ्गने धातोर्घञ्प्रत्यये श्लेष ततोऽन्तर् शब्देन बहुव्रीहि]

अन्तःहृदा अन्त स्थितेनाऽऽत्मना ४ ५८.६ [अन्त स्थितेन हृदयेनेति विग्रहे शाकपार्थिवत्वादुत्तरपदलोपे शस्प्रभृतिषु परत 'पद्दन्नोमास्०' अ० ६ १ ६३ सूत्रेण हृदयस्य स्थाने हृदादेश]

अन्ता अन्ते समीपे ४ १.११ **अन्तात्** = समीपात् ३ ६१ ४ **अन्तान्** = समीपस्थान् (पदार्थान्) १ ९२ ११. समीपान् (भूगोलान्) ४ ५० १ **अन्ताय** = समीपाय ससीमाय वा (जनाय) ३० १९ **अन्ताः** = अन्ताऽवयवा. १७ २५ **अन्ते** = समीपे ४ १६.२. **अन्तेभ्यः** = समीपेभ्योऽहोरात्रेभ्य १ ४९ ३

अन्ति अन्तिके, प्र० अत्र परस्य लोप २ २७ ३ समीपे, प्र० अत्र 'सुपा सुलुग्०' इति डिविभक्तेर्लुक् 'छान्दसो वर्णलोपो वा' इति कलोपश्च १ ७९ ११ निकटे १३ ११ अन्तिके १.९४ ६ अनन्ति जीवन्ति विद्यादिसुखसाधनैर्येतेऽन्त्य प्र० अत्रान धातोरौणादिकस्तिन् प्रत्यय. सुपा सुलुगिति जसो लुक् च १ ८९ ९ **अन्तौ** = समीपे ५ ४७ ३ बन्धने १७ ६०

अन्तिके अत्यन्त निकट आर्याभि० २ २२, ४०५ [अन्तिक कस्मात् ? आनीत भवति निघ० ३ ६]

अन्तितः समीपात् ३ ५९ २ समीपत २ २७ १३ [अन प्राणने (अदा०) धातोरौणादिकस्तिन् प्रत्यय तत सार्वविभक्तिकस्तसि प्रत्यय]

अन्तिदेवम् अन्तिषु विद्वत्सु विद्वासम् १ १८० ७ [अन प्राणने (अदा) धातो रौणादिके तिन् प्रत्यये अन्ति अनन्ति जीवन्ति विद्यादिसुखसाधनैर्ये तेऽन्त्यो देवा = विद्वास तेषु देवम्]

अन्तिमित्रः अन्तौ समीपे मित्रा सहायकारिणो यस्य स, भा०—मित्रसेवी (गण = गणनीयो विद्वज्जन) १७ ८३

अन्त्याय अन्तेभवाय (जीवाय) ६ २० [अन्तप्राति० भवार्थे 'दिगादिभ्यो यत्' (अ० ४ ३ ५४) सूत्रेण यत्]

अन्त्यूतिम् अन्ति निकट ऊती रक्षणाद्या क्रिया यस्य तम् (विद्वज्जनम्) १ १३८ १ [अन्ति ऊति व्याख्यातौ, तयोर्बहुव्रीहि]

अन्धसः अन्नस्य रसान् ५ ५१ ५ अन्नानि पृथिव्यादीनि, अन्व०—अन्नाना पृथिव्यादीना प्रकाशेन, प्र०—अन्ध इत्यन्ननामसु पठितम् निघ० २ ७, १ ९ १ अन्नादेर्मध्ये २६ २४ शुद्धाऽन्नस्येच्छाहेतुम् ऋ० भू० ३०६ अन्नस्य १.८०.६ अन्नानि १ ८५ ६. अन्नादे सकाशात् ३६ ५ द्रवीभूतस्याऽन्नादे १ १५५ १ संस्कृतस्याऽन्नादे १९ ७९ अन्नादियोगात् १९ ७३ सुसंस्कृतस्याऽन्नस्य १९ ७४ अन्नात् २७.४० अन्नादे ३३ २३ **अन्धसा** = अन्नाद्येन

४ २० ४ अन्नादिनोदकादिना वा १.५२ ५ **अन्धः**=अन्नम् २ १४ १ अन्नम् भा०—वीर्यवान् वृक्षौषध्यादिः पदार्थ, प्र०—अन्ध इत्यन्ननामसु पठितम् निघ० २ ७ 'अदेर्नुम् धौ च' उ० ४ २०६ अनेनाऽदेरसुन्प्रत्ययो नुमागमो धकाराऽऽदेशश्च 'वा शर्प्रकरणे खर्परे लोपो वक्तव्य इति' विसर्जनीयलोप ३ २० प्राप्तु योग्यो रस, भा०—वीर्यकरमन्नम्, प्र०—अन्ध इति पदनामसु पठितम् निघ० ४ २ अनेन प्राप्तव्यो रसो गृह्यते ३ २० अद्यते यत्तदन्धोऽन्नम् प्र०—अदेर्नुम् धौ च उ० ४ २०६ अनेनादधातोरसुनि नुम् धश्च 'अन्ध' इत्यन्ननाम निघ० २ ७ उपलक्षणेन चाऽन्येषा पदार्थानाम् ८ ५४ सुसंस्कृतमन्नम् ३ ३५ १ अन्नादिकम् ५ ४५ ६ रसम् ६ ६३ २ **अन्धांसि**=अन्नपानादीनि ७ ५६ ५ **अन्धांसीव**=यथाऽन्नादीनि ५ ५१ ३ [अद भक्षणे (अदा०) धातो 'अदेर्नुम् धौ च' उणादि० ४ २०६ सूत्रेण असुन् प्रत्ययो नुमागमो धकारादेशश्च अन्ध अन्ननाम निघ० २ ७ अन्धासि अन्नानि नि० ६ ३४ अन्धसोऽन्नस्य नि० ११ ६ अन्धस =मन्त्रपूतस्य वाचा स्तुतस्य नि० १३ ६ अन्धस्पत इति सोमस्य पते इत्येतत् श० ६ ११ २४ अहर्व्वा अन्ध ता० १२ ३ ३ अन्धो रात्रि ता० ६ १ ७ अन्न वा अन्ध जै० १ ३ ३]

अन्धा अन्धकाररूपाणि (तमासि=रात्री) ४ १६ ४ **अन्धे**=अन्धकारके (तमसि) १ १०० ८ **अन्धेन**=आवरकेण (तमसा=रात्र्यन्धकारेण) १७ ४४ **अन्धाय**=दृष्टिनिरुद्धायेवाऽज्ञानिने (जनाय) १ ११७ १७ चक्षुर्हीनाय (पुरुषाय) १ ११७ १८ **अन्धाः**=ज्ञानदृष्टिहीना (दुर्जना) १ १४ ३ ५ **अन्धः**=ज्ञानशून्य (जीवात्मा) १ १६४ १६ नेत्रहीन (जन) १ ६४ ७ अन्धकारकृत् (सूर्य) ४ १६ ६ **अन्धम्**=अविद्यान्धकारयुक्तम् (पुरुषम्) १ ११२ ८ अविद्यायुक्तम् (अपत्यम्) १ १४७ ३ चक्षुर्विहीनम् (जनम्) १ ११६ १६ चक्षुर्विज्ञानविकलम् (जनम्) ४ ३० १६ आवरकम् (अविद्यान्धकारम्) ४० १६ दृष्ट्यावरकम् (अन्धकारम्) ४० १२ नेत्ररहितमिव (जनमिव) ४ ४.१३ **अन्धस्य**=अन्धकाररूपस्याऽन्यायस्य १६ ७५ अधर्माचरणस्य, आवरणस्य १६ ७६ [अन्ध पदनाम निघ० ४ २ तमोऽप्यन्ध उच्यते, नास्मिन् ध्यान भवति, न दर्शनम्, अयमपीतरोऽन्ध एतस्मादेव निघ० ५ २]

अन्धाऽहीन् अन्धान् सर्पान् २५.७

अन्नपते अन्नाना पालक अन्व०—यजमान पुरोहित वा सज्जन) ११ ८३ [वरुणोऽन्नपति श० १२ ७ २ २०]

अन्नभाग. खान-पान स० वि० १४२,अथर्व० ३ ३० ६

अन्नम् उत्तम चावलादि अन्न उसका उत्तम संस्कार स० वि० १४५ अथर्व० १२ ५ १० अन्नादि उत्तम पदार्थ को स० वि० १०४, २ ३५ ५ अत्तु योग्यमत्तुमर्ह वा (वस्तु) २ ३५ ७ भोज्यम् (वस्तु) १६ ५ सुशोधित भोक्तुमर्हम् (वस्तु) २ ३५ ११ अत्तव्यम् (वस्तु) ४ ११ १ अत्तु योग्यम् (वस्तु) ३ ४८.३ तण्डुलादिकमत्तव्यमिव १६ ६६ **अन्नस्य**=अत्तुमर्हस्योदनादे ३६ ४. प्राणधारणस्य निरन्तरसुखस्य च हेतो (पदार्थस्य) प्र०—'कृवृ०' उ० ३ १० इत्यनधातोर्न प्रत्यय 'धापृवस्यज्य०' उ० ३ ६ इत्यतधातोर्न प्रत्यय ३ ४३ अन्नादि पदार्थो के स० वि० १४७, ३ ४३ सर्वरोगनाशक ओषधि के आर्याभि० २.४६, ३ ४३ **अन्ना**=अत्तुमर्हाण्यन्नानि १ १२७ ४ सुसंस्कृतान्यन्नानि ११२२ १३ अन्नानि १ ६१ ७ अत्तव्यानि (अन्नानि) ४ ७ १० अन्नादीनि ४ ७ ११ **अन्नात्**=यवाऽऽदे. १६ ७५ अत्तु योग्यात् २ २५ **अन्नानाम्**=गोधूमादीनाम् १६ १८ **अन्नेन**=पृथिव्यादिना जगता सह ऋ० भू० १२० पृथिव्यादि जड से स० प्र० २८२, ३१ २ पृथिव्यादिना ३१ २ **अन्नेषु**=अत्तव्येषु पदार्थेषु १६ ६२ **अन्नैः**=सुसंस्कृतैरन्नादिभि २ ३५ १२ पृथिव्यादिभि २ १० ४ यवादिभि ११ २३ [अन प्राणने (अदा०) धातो 'कृवृ०' उ० ३ १० सूत्रेण न प्रत्यय । अद भक्षणे धातोर्वा क्त 'अन्नाण्ण' इति निपातनात् सज्ञाया न जग्ध्यादेश । अन्नम् उदकनाम निघ० १ १२ अन्न कस्मात् ? आनतम्भूतेभ्य, अत्तेर्वा नि० ३ ६ अर्को वै देवानामन्नम् श० १२ ८ १ २ तै० ११ ८.५ अन्न वै देवा अर्क इति वदन्ति ता० १५ ३ २३ अन्न वा अर्क ता० ५ १.६, १४ ११ ६, १५ ३ ३४. गो० उ० ४ २ अन्नमर्क श० ६ १ १ ४ अन्न वै वाज ता० १३ ६, १३ २१ १५ ११ १२ १८ ६८ त्रेधा विहितꣳ ह्यन्नम् श० ८ ५ ३ ३ त्रिवृद्ध्यन्नम् श० ३ २ ११२, ३ ७ १ २० त्रिवृद्धाऽन्न कृपिर्वृष्टिर्बीजम् श० ८ ६ २ २ विरूप (नानारूपम्) अन्नम् ता० १४ ६ ८ पाङ्क्त ह्यन्नम्। ता० ५ २ ७ सप्त वा अन्नानि तै० १.३ ८ १ सर्व वैतदन्न यदविमधुघृतम् श० ६ २ १ ११ एतदुपरममन्न यद्दधिमधुघृतम् श० ६ २ १ १२ शान्तिर्वा अन्नम् ऐ० ५ २७ ७ ३ अन्न वै सर्वेषा भूतानामात्मा गो० उ० १ ३ वैश्वदेव वा अन्नम् तै० १ ६ १ १० अन्न वा आयतनम् श० ६ २.१ १४ अन्नजीवनꣳ हीदꣳ सर्वम् श० ७ ५ १ २० अन्न प्राणमन्नमपानमाहु अन्न मृत्यु तमु जीवातुमाहु अन्न ब्राह्मणो जरस वदन्ति अन्नमाहु

प्रजननं प्रजानाम् तै० २८८३ अन्नमेव ग्रह. । अन्नेन हीद ꣳ सर्व गृहीतम् श० ४६५४ तस्मात्प्राणोऽन्नेन गृहीतो यो ह्येवान्नमत्ति स प्राणिति श० ७५११६ तस्मात् प्राणेनान्न गृहीत यो ह्येव प्राणिति सोऽन्नमत्ति श० ७५.११७ अन्न प्राण तै० ३२३४ अन्नꣳ हि प्राण श० ३८४८, ४३४२५ ता० (प्रजा) अन्नादेव सम्भवन्ति तस्मादन्नमेव प्रजा श० २५११६ अन्न पशव ऐ० ५१९ रेतो वा अन्नम् गो० पू० ३.२३ अन्नमु श्री श० ८६२१ अन्न वै ब्रह्मण पुरोधा ता० १२८६, १३९२७, १४९३८. अन्नमशीतय श० ९११२१ अन्नमशीति श० ८५२१७ अन्न वै चन्द्रमा तै० ३२३४ अन्न वा अपा पाथ श० ७५२६० अन्न वै प्रजापति श० ५१३७ अन्न वाऽअय प्रजापति श० ७१२४ यत्तदन्नमेप स विष्णुर्देवता श० ७५१२१ अन्न वै व्यन्ने हीमानि सर्वाणि भूतानि विष्टानि श० १४८.१३३ अन्न वै पूषा कौ० १२८ तै० १७३६, ३८३३२ अन्न वाज श० ५१११६, ८११९ अन्न वै वाज तै० १३६ २६,१३८५ श० ५.१४३, ६३२४ अन्न वै वाजा श० १४१९ अन्न वै वाजपेय तै० १३.२४ अन्न नम श० ६३११७ अन्नꣳ हि स्वाहाकार श० ६६३१७ अन्न वै स्वाहाकार श० ९१११३. अन्नꣳ श्रुष्टि श० ७२२५ अन्नꣳ रश्मि श० ८५३३ अन्न वै नृम्णम् कौ० २७४. भर्गो देवस्य कवयोऽन्नमाहु गो० पू० १३२ अन्न वै भद्रम् तै० १३३६. (मेघ) मेधाय इत्यन्नाये येतत् श० ७५२३२. अन्न प्रेति श० ८५३३. अन्न वै पितु श० १९२. २०, ७२११५ अथर्वपितु मे गोपायेत्याह अन्नमेवैतेन स्पृणोति तै० १.१.१०४ अन्न वै पितु ऐ० ११३ अन्न वै देवा पृश्नीति वदन्ति ता० १२१०२४. न अन्न वै पृश्नि तै० २२६१ श० ८७३.२१. अन्न वै रूपम् श० ९२११२ अन्न वै सुरूपम् कौ० १६३ अथ यत् कृष्ण तदपा रूपमन्नस्य मनसो यजुष जै० उ० १२५९ अन्न वै वयश्छन्द श० ८५२.६ अन्न वै गिरश्छन्द श० ८५२५ अन्न प्रच्छच्छन्द श० ८५२४ अन्न केत. श० ६३११६ अन्न पुरीषम् श० ८१४५, ८७३२ अन्न वै पुरीषम् श० ८५४४, ८६.१.२१, १४३१२३. अन्न वै कम् ऐ० ६२१ गो० उ० ६३ तदन्न वै विश्वम्प्राणो मित्रम् जै० उ० ३३६ अन्न व्रतम् ता० २३२३२ अन्नꣳ हि व्रतम् श० ६६४५ अन्न वै व्रतम् ता० २२४५ श० ७५१२५ अन्न भुजिष्या श० ७५१२१ अन्न हि गौ श० ४३४२५ जै० उ० ३३१३ अन्न वै गौ तै० ३९८३ अन्न पशव श० ६२.११५, ७५२४२ आपो वै सूदोऽन्न दोह श० ८७३२१ अन्न सोम कौ० ९६ ता० ६६१. अन्नꣳ सोम. श० ३३४३८ अन्न वै सोम श० ३९.१८, ७२२११ एष वै सोमो राजा देवानामन्न यच्चन्द्रमा श० १६४५ २४२७, ११ १४४ अन्नꣳ सुरा तै० १३३५ अन्न विश श० २१३८ अन्न वै विश. श० ४३३१२, ५१३३, ६७३७ अन्न वै श्रीर्विराट् गो० पू० ५४ गो० उ० ११९ अन्न विराट् कौ० ९६१२ ? तै० १६३४, १८२.२ ता० ४.८४. अन्न विराट् तस्माद् यस्यैवेह भूयिष्ठमन्न भवति स एव भूयिष्ठ लोके विराजति तद्विराजो विराट्त्वम् ऐ० १५ अन्न वै विराट् ऐ० १५, ४११, ५१९, ६२० श० ७५२१९ अन्न वै पङ्क्ति गो० उ० ६२ पङ्क्तिर्वा अन्नम् ऐ० ६२० पाङ्क्तमन्नम् ता० १२१९ पाङ्क्तꣳ (पञ्चविधम्) ह्यन्नम् (अश्य खाद्य चोष्य लेह्य पेयमिति सायण) ता० ५.२७ अन्न वा इडा ऐ० ८२६ कौ० ३७ अन्न वा आप श० २११३, ७४२३७, ८.२३६ तै० ३८२१, ३८१७५ अन्न वृष्टि गो० पू० ४४५ सप्तदशꣳ ह्यन्नम् श० ८४४७ अन्न वै सप्तदश ता० २७७, १७९२, १९ ११४, २०.१०१, २५६३ अन्न सावित्री गो० पू० १३३ अन्न वै० स्वयमातृण्णा (इष्टका) श० ७४२१ अन्नꣳ समिष्टयजु श० ११२.७३० अन्न वै यजुष्मत्य इष्टका श० ८७२८ अन्नमेव यजु श० १०३५६. अन्न याज्या कौ० १५३१६.४. गो० उ० ३२१ अन्न वै याज्या गो० उ० ३२२६८. अथो अन्न निविद इत्याहु कौ० १५३४. अन्नमुक्थानि कौ० ११८,१७७ अन्न वा उक्थ्यम् गो० पू० ४२०. अन्न वा ऽउक्थ्य श० १२२२७ अन्न वै स्तोमा श० ९३३६ अन्न पृष्ठानि ता० १९९४ अन्न न्यूङ्ख ' कौ० २२६८, २५१३, ३०५ अन्न वै न्यूङ्ख ऐ० ५३, ६२९, ३०३६. गो० उ० ६८१२ तस्मादाहु सामैवान्नमिति सा० सा० १.१३. साम देवानामन्नम् ता० ६४१३ एतद्वै साक्षादन्न यद्राजन (साम) पञ्चविध भवति पाङ्क्त ह्यन्नम् ता० ५२७ अन्न वै रथन्तरम् ऐ० ८१ अन्न वै मरुत तै० १७३५, १७५२, १७७३ अन्न वै गार्हपत्य श० ८६३५ एते हि साक्षादन्न यद्रूपा तै०

१ ३ ७ ६ अन्न वा ऊर्गुदुम्बर । श० ३ २.१ ३३, ३ ३ ४ २७. अन्नꣳ सम्मार्जनानि तै० ३ ३ १ ५ वरुणोऽन्नपतिः । श० १२ ७.२.२० अन्न ब्रह्मेति व्यजानात् तै० आ० ६ २ तै० उ० ३ २ अन्न वै पूषा तै० म० २ १ ६ १ श० ८ ५ ४ ४ अन्न वै पावकम् तै० सं० ५ ४ ४ ४ अन्न वा आदित्या तै० स० ५ ३ ४ ३ अन्न वा आप श० ६ २ १ १४

अन्नादम् योऽन्न यवादिक सर्वमत्ति तम् (अग्नि=भौतिकम् ३ ५ [अन्नोपपदे अद भक्षणे (अदा०) धातोर् अण् प्रत्यय. । अन्नादो अग्नि श० २ १ ४ २८ प्रजापतिर्वै देवानामन्नादो वीर्यवान् तै० ३ ८ ७ १ स यो हैवमेत वृत्रमन्नाद वेदान्नादो हैव भवति श० १ ६ ३.१७ ऋग्भिरन्नाद (इन्द्र) ज्योतिश्च वायुश्चान्नादमेताभ्या हीद सर्वमन्नमत्ति ऐ० आ० २ ३ १]

अन्नाद्यम् खाने के योग्य पदार्थ स० वि० १४५, अथर्व० १२ ५ १० **अन्नाद्याय**=अत्तु योग्यमाद्य, अन्नञ्च तदाद्यञ्च तस्मै यद्वाऽन्नमोदनादिक भोज्य यस्मिँस्तस्मै (सुप्रजास्त्वाय) ३ ६३ अत्तु योग्यायाऽन्नाद्याय २० ३. अत्तु योग्यमद्य, अन्नञ्च तदद्यञ्चाऽन्नाद्य तस्मै (अन्नाय) ३ ५ **अन्नाद्येन**=अन्नादिराज्यैश्वर्येण ऋ० भू० १६१, अथर्व० १३ ४ ५६ [अन्नोपपदे अद भक्षणे (अदा०) धातोर्ण्यत् प्रत्यय । एतद्वै परममन्नाद्य यत्सोम । कौ० १३ ७ यश उ वै सोमो राजान्नाद्यम् कौ० ६ ६ श्रीर्विराडन्नाद्यम् कौ० १ १ २ ३ श्रीर्वै विराड् यशोऽन्नाद्यम् गो० पू० ५ २० गो उ० ६ १५ विराडन्नाद्यम् ऐ० ४ १६ ८ ४ एतद्वै कृत्स्नमन्नाद्य यद्विराट् कौ० १४ २ सो-(प्रजापति) ऽब्रवीदेक वावेदमन्नाद्यमसृक्षि सामैव जै० उ० ३ १ ११ अन्नाद्य वा अमृतम् काठ० सक० ४६ ६ ५० १ आपो वा अन्नाद्यम् काठ० सक० ४६ ७ ऊर्ग्वा अन्नाद्य-मुदुम्बर ऐ० ५ २४ ८ ८ एतद्धि देवाना प्रत्यक्षमन्नाद्य यच्चन्द्रमा जै० १ २४६ वाग्वा अन्नाद्यम् ऐ० ४ १६ ८ ४ हिङ्कारेण ह्येव देवेभ्योऽन्ततोऽन्नाद्य प्रदीयते जै० १ २४६]

अन्नियते अदता नियते निश्चिते समये ४ २ ७.

अन्यकृतम् अन्येन कृतम् (एन =अपराधम्) ६ ५१ ७ **अन्यकृतेभ्यः**=यथाऽन्यैर्यानि क्रियन्ते तेभ्य (पापिभ्यो जनेभ्य) ४ ३५ [अन्योपपदे डुकृञ् करणे धातो क्त]

अन्यःजातम् अन्येनाऽन्यस्माद्वा समुत्पन्नम् (रेक्ण = धनम्) ७ ४.७ अन्यस्मादुत्पन्नम् (एन =पापम्) ७ ५२ २ [अन्योपपदे जनी प्रादुर्भावे धातो क्त. नकारस्याकारादेश]

अन्यत् द्वितीय भिन्नम् १ ५२ १४. द्वितीयम् १ ३० १९. भिन्नम् १ ११५ ५ अन्य ५ ३१.२ अपने से भिन्न आर्याभि० १ १५ कार्यकारणजीवेभ्यो भिन्नं ब्रह्म १७ ३१ अस्मद्भिन्नम् (ब्रह्म) ३३ ३८ वेद और युक्ति मे कभी सिद्ध न हो सकने वाली ब्रह्म से एकता आर्याभि० २ ४४, १७ ३१ **अन्यदन्यत्**=पृथक्-पृथक् ३ ३८ ७ [अन्यो नानेय नि० १ ६ अन्ये सपत्ना नि० १० २६]

अन्यतः भिन्नात् (देशात्) १ ४ ५ [अन्यप्राति० सार्वविभक्तिकस्तसि]

अन्यतः एन्यः या अन्यतो यन्ति प्राप्नुवन्ति ता (मैत्र्य =पशवो गाव) २४ ८ [अन्यतस् उपपदे इण् गतौ (अदा०) धातो केन्य. कृत् प्रत्यय । स च कृत्यार्थेऽपि सन् कर्त्तरि छान्दसत्वाद् भवति]

अन्यतः शितिबाहुः अन्यत शितयो बाह्वोर्यस्य स (पशु) २४ २ [अन्यतस् उपपदे शिति-बाह्वो बहुव्रीहि । शिति कृष्ण शुक्लवर्णो वा]

अन्यतःशितिरन्ध्रः अन्यतोऽन्यस्मिन् रन्ध्राणीव शितयो यस्य स (पशु), समन्ततो रन्ध्राणीव शितय श्वेत-चिह्नानि यस्य स (पशु) २४ २ [अन्यतस् उपपदे शिति-रन्ध्रयो समास । रन्ध्रशब्दस्य परनिपात]

अन्यतोऽरण्याय अन्यतोऽरण्यानि यस्मिन् देशे तद्विनाशाय ३०.१९ [अन्यतस् व्याख्यात, अरण्यम्= ऋ गतौ धातो 'अर्त्तेर्निच्च' उ० ३ १०२. सूत्रेण अन्य. प्रत्यय । तयोर्बहुव्रीहि]

अन्यत्र अन्य स्थान मे ७ ५९ ५ [अन्यप्राति० 'सप्तम्यास्त्रल्' अ० ५ ३ १० सूत्रेण त्रल् । 'तद्धितश्चासर्व०' इत्यव्ययत्वम्]

अन्यथा उल्टा पापरूप स० वि० १४५, ४ २ [अन्यप्राति० 'प्रकारवचने थाल्' इति थाल् प्रत्यय । तद्धितश्चासर्व०' इत्यव्ययसज्ञा]

अन्यवापः कोकिलाख्य पक्षिविशेष २४ ३७. [अन्यै काकादिभिर् उप्यन्ते सन्तानानि क्रियन्ते यस्येति बहुव्रीहि]

अन्यव्रतस्य धर्मविरुद्धाऽऽचरणस्य ५ २० २. अन्येषा पालने व्रत शील यस्य तस्य (विद्वज्जनस्येश्वरस्य वा) ३८ २० ईश्वर और उसकी आज्ञा से भिन्न को लेशमात्र भी ईश्वर न मानने रूप व्रत का आर्याभि० २ ४१, ३८ २०

[अन्यत् व्रत ,कर्म यस्य, अन्येषां पालने व्रत यस्मेति वा बहुव्रीहि । व्रतमिति कर्मनाम । नि० २ १३.]

अन्यान् शत्रून् ३ ४६ २.

अन्याऽन्या भिन्ना भिन्ना पृथक्-पृथक् सयुक्ते च (अहोरात्रे) प्र०—अत्र वीप्साया द्विर्वचनम् १ ६२ ८ भिन्ना भिन्ना एकैका कालभेदेन ३३ ५ परस्पर वर्त्तमाना (अहोरात्रे) १ ६५ १

अन्यादृङ् अन्येन समान (पुरुष) १७ ८१ [अन्योपपदे दृशिर् प्रेक्षणे धातो 'समानान्ययोश्चेति वक्तव्यम्' (अ० ३ २ ६०) वार्त्तिकेन क्विन् । 'क्विन्प्रत्ययस्य कु' रिति कुत्वम् । 'आ सर्वनाम्न ' इत्याकारादेश']

अन्योदर्य्यः अन्योदराज्जात (अन्यगोत्रजोऽनौरसो वा पुत्र) ७ ४ ८ [उदरप्राति० जातार्थे यत् प्रत्ययश्छान्दस । ततोऽन्येन सह समास]

अन्योऽन्यम् एक दूसरे से स० वि० १४१, अथर्व० ३ ३० १ ['कर्मव्यतिहारे सर्वनाम्नो द्वे भवत, समासवच्च बहुलम्' अ० ८ १ १२ वा० द्वित्वम् । बहुलवचनात् समासवन्न । उत्तरपदस्य चाम्]

अन्वचष्ट अनुख्यापयेत् ४ १८ ३ [अनु+चक्षिङ् व्यक्ताया वाचि (अदा०) धातो सामान्ये लङ् । 'स्को सयोगाद्यो' रिति सकारलोप]

अन्वचारिषम् धरेयम् २० २२ पश्चादनुतिष्ठामि, अन्व०—कर्माऽनुचरामि, प्र०—अत्र लडर्थे लुङ् १.२३ २३. [अनु+चर गतौ (भ्वा०) धातो. सामान्ये लुङ्]

अन्वजायथाः अनुजायेथा १ १४१ ६ [अनु+जनी प्रादुर्भावे धातो सामान्ये लङ् । 'ज्ञाजनोर्जा' इति धातोर्जादेश]

अन्वतक्षत् पश्चादतिसूक्ष्मा धिय कुर्वन्ति १.८६ ३ [अनु+तक्षू तनूकरणे (भ्वा०) धातो सामान्ये लङ् । 'तनूकरणे तक्ष' इति विकल्पेन श्नुविधानात् पक्षे शप्]

अन्वददुः अनुददति ५ २६ ५ [अनु+डुदाञ् दाने (जु०) धातो सामान्ये लङ् । 'आत' इति नित्य भेर्जुस्]

अन्वनयन्त प्राप्नुयु ३ ७ ६ [अनु+णीञ् प्रापणे (भ्वा०) धातोर्लङ् सामान्ये]

अन्वनोनवुः अनुकूलतया स्तुवत १ ८० ६ [अनु+णु स्तुतौ (अदा०) धातोर्यङ्लुगन्तात् लङ्]

अन्वपश्यत् अनुपश्यति १ १६४.६. [अनु+दृशिर् प्रेक्षणे (भ्वा०) धातोर्लट् । शिति पश्यादेश.]

अन्वमदन् अनुमदन्ति अनुहर्षन्ति ७ १८ १२ आनुकूल्येन हर्षन्ति १ ५२ ६ अनुहर्षयन्ति १ १०३ ७ अनुहृष्येयुरनुहर्षयेयुर्वा १ १०२ १. आनुकूल्येनाऽऽनन्देयु भा०—सत्यानुकूला सन्त स्वयमानन्दिता भूत्वाऽन्यानानन्दयन्ति ३३ २६ [अनु+मदी हर्षे (दिवा०) धातो सामान्ये लङ् । विकरणव्यत्ययेन शप्]

अन्वमन्यन्त पश्चाद् मन्यन्ताम् १ ११६ १७ (अनु+मन ज्ञाने (दिवा०) धातो सामान्ये लङ्]

अन्वमंसाताम् अनुकूल मन्येताम् ३८ १३

अन्वमंस्त=पश्चात् मन्यते ५ ४०. [अनु+मन ज्ञाने (दिवा०) धातो सामान्ये लुङ्]

अन्वरुहत् अनुवर्धयति १ १४१ ५ [अनु+रुह बीजजन्मनि प्रादुर्भावे च (भ्वा०) धातोर्लङ् । विकरणव्यत्ययेन श प्रत्यय]

अन्वर्चन् आनुकूल्येन सत्कुर्वन् (इन्द्र=सभाध्यक्ष) १ ८० ४ पश्चात् पूजयन् (सभापति) १ ८० १ [अनु+अर्च पूजायाम् (भ्वा०) धातो. शतृप्रत्यय]

अन्वविन्दत् अनुलभते २ १२.११. **अन्वविन्दन्**=अनुलभेरन् ५ ४० ६ अनुलभन्ते १७ ६२ प्राप्नुयु, भा०—सेवन्ताम् १५ २८ [अनु+विद्लृ लाभे (तुदा०) धातोर्लङ् । 'शे मुचादीनामि' ति नुमागम.]

अन्वविष्टन् व्याप्नुत ७ १८ २५ [अनु+विष्लृ व्याप्तौ (जु०) धातो रूपम् । 'बहुल छन्दसी' ति श्लुर्न । छान्दसत्वात्साधु]

अन्ववृत्सत अनुवर्त्तन्ते ५ ५१ १. [अनु+वृतु वर्त्तने (भ्वा०) धातोर् लुङ् । छन्दसि सर्वविधीना विकल्पेन इड् न भवति]

अन्ववेदम् पश्चाद्विजानामि ४ २७ १ [अनु+विद ज्ञाने (अदा०) धातो सामान्ये लङ्]

अन्वश्नोति पश्चाद् व्याप्नोति २ १६ ३ [अनु+अशू व्याप्तौ (स्वा०) धातोर्लट् । व्यत्ययेन परस्मैपदम्]

अन्वसत् अनुयोगेन भवेत् १ ५७ २ [अनु+अस भुवि (अदा०) धातोर्लङ् । 'बहुल छन्दसी' ति शपो लुङ् न । आडभावश्च]

अन्वागन्ता धर्ममन्वागच्छति य स (विद्वज्जन) १८ ५६ [अनु+आङ्+गम्लृ गतौ (भ्वा०) धातो कर्त्तरि तृच्]

अन्वागात् अन्वागच्छेत् १ १२६ ३ [अनु+आङ्+इण् गतौ (अदा०) धातोर्लुङ् सामान्ये । 'इणो गा लुङी' ति गादेश । 'गातिस्था०' इति सिचो लुक् च]

अन्वाततान आच्छाद्य विस्तारयति ८ ६२. [अनु+आङ्+तनु विस्तारे (तना०) धातोर्लिट् सामान्ये]

अन्वातांसीत् पश्चात् समन्तात्तनुताम्, प्र०—अत्र वचनव्यत्ययेन द्विर्वचनस्थाने एकवचनम् १५ ५३ [अनु+तनु विस्तारे (तना०) धातो सामान्ये लुङ्। छन्दसि सर्व-विधीना विकल्पेन इडागमो न भवति। हलन्तलक्षणा वृद्धि]

अन्वानशे आनुकूल्येन व्याप्नोति १ ८४ ६ [अनु+अशू व्याप्तौ (स्वा०) धातो सामान्ये लिट्। 'अत आदे'-रित्यभ्यासस्य दीर्घत्वे 'अश्नोतेश्चे' ति नुडागम]

अन्वापनीफणत् पश्चादत्यन्त गच्छति ४ ४० ४ [अनु+आङ्+फण+गतौ (भ्वा०) धातोर्णिचि लुङि च रूपम्। छान्दसोऽभ्यासस्य नीगागम]

अन्वापनीफणत् पश्चादतिशयेन गच्छन् (दधिक्रा = अश्व) ६ १४ [अनु+आङ्+फण गतौ (भ्वा०) धातो. यङन्तात् शतृ। नीगभ्यासस्य]

अन्वाभज अनुकूल समन्तात् स्थापय ४ २८ [अनु+आङ्+भज सेवायाम् (भ्वा०) धातो लोट्]

अन्वायन् प्राप्नुवन्ति ४ २६ २ **अन्वायम्**=प्राप्नुयाम् ५.३० २ **अन्वायातु**=आनुकूल्येन प्राप्नोतु २० ४६ [अनु+इण् गतौ (अदा०) धातोर्लङि लोटि च रूपाणि]

अन्वारभामहे हम आरम्भ करे, भा०—वर्द्धयामहे ६ २६ यानानि रचयित्वा तत्र स्थापयेम ३५ १३ [अनु+आङ्+रभ राभस्ये (भ्वा०) धातोर्लट्। धातूनामनेकार्थत्वा-दत्र वर्धनेऽपि]

अन्वालेभिरे अनुलभन्ते ३४ ४६ [अनु+आङ्+डुलभस् प्राप्तौ (भ्वा०) धातोर्लिट् 'अत एकहल्मध्ये०' इत्येत्वाभ्यासलोपौ]

अन्वावर्त्ते अनुगतेन समन्ताद्वर्त्तमानो भवेयम्.२ २७ पश्चादाभिमुख्येन वर्त्तमानो भवेयम् २ २६ [अनु+आङ्+वृतु वर्त्तने (भ्वा०) धातोर्लिङर्थे लट्]

अन्वित्या अन्वेषणेन १५ ६. [अनु+इण् गतौ (अदा०) धातोर्भावे स्त्रियां क्तिन्। धातूनामनेकार्थत्वा-दत्रान्वेषणार्थेऽपि। अन्नमन्विति श० ८ ५ ३ ३.]

अन्वियाय अनुप्राप्नोतु ४ ४ ११ [अनु+इण् गतौ (अदा०) धातोर्लिट्। 'अभ्यासस्यासवर्णे' इत्यभ्यासस्य इयङ्]

अन्विहि अनुगच्छ १२ ६२ [अनु+इण् गतौ (अदा०) धातोर्लोट्]

अन्वीयतुः अनुगच्छत ३३.६७ **अन्वीयुः**=प्राप्नुयु १.१६३ ८. [अनु+इण् गतौ)अदा०) धातोर्लिटि द्विवचन-बहुवचनयो रूपाणि]

अन्वूह्याते देशान्तर गम्येते ११२० ११ [अनु+ऊह वितर्के (भ्वा०) धातो कर्मणि लट्। छान्दसत्वाद् 'आतो ङित' इत्येत्व न]

अन्वेति आनुकूल्येन प्राप्नोति १११३ १० पुन प्राप्नोति १११३ ८ **अन्वेमि**=अनुगच्छामि ७ २. [अनु+इण् गतौ (अदा०) धातोर्लट्]

अन्वेतवे अन्वेतु विज्ञातुं प्राप्तु गन्तु वा ७.३३.८. [अनु+इण् गतौ (अदा०) धातोस्तुमर्थे तवेन् प्रत्यय]

अन्वेतवै अनुक्रमेण गन्तुम् ८.२३ अन्वेतुमनुगन्तुम् ७ ४४ ५ [अनु+इण् गतौ (अदा०) धातोस्तुमर्थे 'तुमर्थे सेसेनसेअसेन्०' अ० ३ ४ ६ सूत्रेण तवै प्रत्यय.]

अप क्रियायोगे १११.५ धात्वर्थे १.१०.७ दूरी-करणे ३४ २५. निवारणे ६ ३.१३६. दूरीकरणे वर्जने निषेधाऽर्थे वा २ १५ दूरार्थे ३ २१ पृथग्भावे १ ५०.२. विरुद्धाऽर्थे १ ८५ ३ अपराधे १ ४८ ८ [समित्येकीभावम् अपेत्येतस्य प्रातिलोम्यम् (पृथग्भावम्) नि० १ ३]

अपकामम् अपगतश्चाऽसौ कामश्च तम् (शत्रुम्=अरिम्) २६ ३६ काममविनाशनम् ६ ७५ २ [अप+कमु कान्तौ (भ्वा०) धातोर्घञ्]

अपगमत दूर गच्छति ६ ४५ २४ [अप+गम्लृ गतौ (भ्वा०) धातोर्लुङ्। 'पुषादिद्युताद्यॢदित०' इति च्ले स्थाने अङ् प्रत्यय। मध्यमबहुवचने]

अपगल्भम् प्रगल्भतारहितम् (जनम्) ३० १७ अपगतं दूरीकृत गल्भ धाष्टर्यं येन तस्मै (पुरुषाय) १६.३२. [अप+गल्भ धाष्टर्ये (भ्वा०) धातोर्भावे घञ्]

अपगात् दूर गच्छन्तु, भा०—दूरे भवत, प्र०—अत्र लोडर्थे लङ्, पुरुषव्यत्ययश्च ३ २१ [अप+इण् गतौ (अदा०) धातोर्लुङ्। 'इणो गा लुङि' ति गादेश। 'गातिस्था०' इति सिचो लुक्]

अपगूहळम् गुप्तम् (पद=पादचिह्नम्) ४ ५.३. [अप+गुहू संवरणे (भ्वा०) धातो क्त प्रत्यय.। छान्दसं रूपम्]

अपगूढम् अपगतश्चाऽसौ गूढश्च तम् (राजान=प्राण जीव वा) १ २३.१४ अपगत संवरणमाच्छादनं यस्मात्तत् (कर्म) १.११६ ११ **अपगूढा**=आच्छादितानि (द्रव्याणि) १.१२३.६ **अपगोहम्**=आच्छादकम् (अन्धकारम्) २ १५ ७ [अप+गुहू संवरणे (भ्वा०) धातोर्भूते क्त।

'हो ढ' इति ढत्वे धत्वे ष्टुत्वे च 'ढो ढे लोप' इति पूर्व-ढकारलोपे 'ढ्लोपे पूर्वस्य दीर्घ०' इति उकारस्य दीर्घत्वम्]

अपगूर्यम् उद्यम्य ५ ३२ ६ [अप+गुरी उद्यमने (तुदा०) धातो क्त्वा। समासे क्त्वो ल्यप्]

अपचत पचति ५ २६ ७ **अपचन्त**=पचन्ति १ १६४.४३. [डुपचष् पाके (भ्वा०) धातो सामान्ये लङ्। पच धातुरुभयपदी]

अपचितिम् सत्कृतिम् २१ ५८. सत्कारम् ४ २८ ४. **अपचितिः**=प्रजाजनकम् (भसत्=भगेन्द्रियम्) २० ८ [चायृ पूजानिशामनयो (भ्वा०) धातो स्त्रियां क्तिन्। 'क्तिनि नित्यमिति वक्तव्यम्' (वा० ७ २.३०) अनेन धातोरनिट्त्व चिभावश्च निपात्यते। अपपूर्वाद्वा चिञ् चयने (स्वा०) धातो क्तिन्]

अपचेतयातै दूर चेतयेत्, प्र०—'चिती सञ्ज्ञाने' इति ण्यन्तस्य लेट प्रथमपुरुषस्यैकवचने प्रयोगोऽयम् २ १७ [अप+चिती सञ्ज्ञाने (भ्वा०) धातोर् णिजन्ताल्लेट्। 'लेटोऽडाटौ' इत्याट् 'एत ऐ' इत्यैकारादेशश्च]

अपच्यवम् त्यागम् १ २८ ३. [अप+च्युङ् (भ्वा०) धातो 'ऋदोरप्' इत्यप् प्रत्यय]

अपजर्गुराणः आच्छादनात् पृथक् कुर्वन् (राजा) ५ २९ ४ [अप+गुरी उद्यमने (तुदा०) धातोर्यङ्लुगन्तात् शानच्]

अपजहि दूर नाशय, अ०—दूरीकुरु १२ ४७ हिंसय १ १७ [अप+हन हिंसागत्यो (अदा०) धातोर्लोट्। 'हन्तेर्ज' इति जादेश]

अपतिघ्नि! विवाहितपतिसेविके (स्त्रि) ऋ० भू० २१४ **अपतिघ्नी**=पति को दुख न देने वाली (स्त्री) स० प्र० १५२, अथर्व० १४ २ १८ [पत्युपपदे हन् हिंसागत्यो (अदा०) धातो। 'कृत्यल्युटो बहुलम्' इति बहुलवचनाट् टक् प्रत्यय.। स्त्रियां टिड्ढाण्०' इति ङीप्। नञ् समासश्च]

अपत्यम् सन्तानम् १ १७४ ६ **अपत्याय**=सन्तानाय १३ ३५ **अपत्ये**=सन्ताने=१ ६८ ४ [अपत्य कस्मात्? अपतत भवति नानेन पततीति वा नि० ३ १ अपत्यम्=अपत्यनाम निघ० २.२]

अपत्यसाचम् यदपत्ये सचति व्याप्नोति तत् (शरीरात्मबलम्) ६ ७२ ५ पुत्रपौत्रादिसमेतम् (पुरुषम्) १ ११७ २३. उत्तमाऽपत्यसंयुक्तम् (रयिं=धनम्) २ ३० ११ [अपत्योपपदे षच समवाये (भ्वा०) धातोरण् प्रत्यय]

अपदी अविद्यमानपादे (द्यावापृथिवी) १ १८५ २ [नञ्-पादपदयोर्बहुव्रीहौ 'कुम्भपदीषु च' सूत्रेण समासान्तलोप। 'पादोऽन्यतरस्याम्' इति ङीप्। 'पाद पत्' इति पदादेश]

अपदे न विद्यन्ते पदानि चिह्नानि यस्मिँस्तस्मिन्नन्तरिक्षे १ २४ ८. चौरादिनिष्पादितेऽप्रसिद्धे व्यवहारे ८ २३ [पद गतौ (दिवा०) धातोरधिकरणे घ प्रत्यय। ततो नञ्-बहुव्रीहि]

अपद्यहि प्राप्नुयाम् ४ २६ **अपद्यन्त**=प्राप्त होते हैं स० वि० १७०, १४ २ ३२ [पद गतौ (दिवा०) धातोर्लङ्। 'बहुल छन्दसी' ति श्यनो लुक्। द्वितीयप्रयोगे लुक् न]

अपद्रन् अपद्रवन्ति ६ २० ४ [अप+द्रु गतौ (भ्वा०) धातोर्लङ्। छान्दसो वकारलोप]

अपद्वेषः दूरीकर्त्तुं द्विषन्ति ये शत्रवस्ते १ ४८ ८ द्वेषरहित (ईश्वर) आर्याभि० २ ४१, ३८ २० [अप+द्विष अप्रीतौ (अदा०) धातो कर्त्तरि भावेऽपि विहितो घञ् बहुलवचनात् कर्त्तरि]

अपधमन्तः दूरीकुर्वन्त (मरुत=विद्वज्जना) २.३४ १ [अप+धम+शतृप्रत्यय। धमतिर्गतिकर्मा निघ० २ १४]

अपधा योऽपदधाति स (इन्द्र=सूर्यलोक) प्र०—अत्र 'सुपां सुलुग्०' इति विभक्तेर्डादेश २ १२ ३ [अप+डुधाञ् धारणपोषणयो (जु०) धातो 'आतश्चोपसर्गे' अ० ३ १ १३६ सूत्रेण क प्रत्यय। विभक्तेश्च स्थाने डादेश]

अपनुदताम् दूर प्रेरयत, प्र०—अत्र लडर्थे लोट् न प्रेरयत प्र०—अत्रापि लडर्थे लोट् २ १५ **अपनुदन्ताम्**=अपप्रेरयन्तु २८ १३ **अपनुदस्व**=दूरीकुरु ६ २१ ७ [अप+णुद प्रेरणे (तुदा०) धातोर्लोट्]

अपन्नगृहस्य अप्राप्तगृहस्य कुमारब्रह्मचारिण ६ २४. [पदगतौ धातो क्तप्रत्यये पन्न। न पन्नोऽपन्न=अप्राप्त। ग्रह उपादाने धातो 'गेहे क' इति कप्रत्यये गृहम्। ततस्तयो. समास]

अपपादि अपपाद्येत ६ २०.५ [अप+पद गतौ (दिवा०) धातो कर्मणि लुङ्। अडभावश्च]

अपपित्वम् अपचयम् ३ ५३ २४ [अपोपपदे पि गतौ (तुदा०) धातो कृत्यार्थे त्वन् प्रत्यय। अथवा अप+पद गतौ धातोर्बाहु० इत्वन् प्रत्ययो डिच्च]

अपप्तत् उदय होता है १ १६१ ३. **अपप्तन्**=उड्डी-

यन्ते ६ ६४ ६ पतन्ति गच्छन्ति ६ ६४ २ पतन्ति ७ ५९ ७ गच्छन्ति ६ ६४ २ [पत्लृ गतौ (भ्वा०) धातोर्लुङ् । 'पुषादि-द्युताद्यलृदित परस्मैपदेषु' इति च्लेर् अङ् । 'पत पुम्' इत्यङि पुमागम]

अपप्रोथ जेतु पर्याप्तो भव, शत्रूनसमर्थान् कुरु ६ ४७ ३०. [अप+प्रोथृ पर्याप्तौ (भ्वा०) धातोर्लोट्]

अपबाधताम् निवारयतु ७ ५० २ **अपबाधते**= दूरीकरोति ३४ २५ **अपबाधन्ते**=विरुद्धतया बाधन्ते १ ८५ ३ [अप+बाधृ लोडने (भ्वा०) धातोर्लोट् लट् च]

अपबाधमान अपबाधते स (बृहस्पति =सेनापति) १७ ३६ **अपबाधमाना**=निवारयन्ती (उषा) ५ ८० ५ **अपबाधमानाः**=निवर्त्तयन्त (विद्वज्जना) १९ ८४ [अप+बाधृ लोडने (प्रतिघाते) (भ्वा०) धातो शानच्]

अपभर्त्ता अपबिभर्त्ति दूरीकरोतीति (भेषज = भिषग्जन) २ ३३ ७ [अप+डुभृञ् धारणपोषणयो (जु०) धातो कर्त्तरि तृच्]

अपभवन्तु दूरीभवन्तु ३४ ४६ **अपभूत**=अपमान-युक्ता भवत ४ ३५ १ **अपभूतु**=अपभवतु १ ११३ १७ [अप+भू सत्तायाम् (भ्वा०) धातोर्लोट् । 'अपभूत' 'अपभूतु' इत्येनयो 'बहुल छन्दसी' ति शपो लुक् । 'भूसुवोस्तिङी' ति गुणप्रतिषेध]

अपभूतन विरुद्धा भवत ७ ५९.१० [अप+भू सत्तायाम् (भ्वा०) धातोर्लोट् । शपो लुक् । 'तप्तनप्त-नथनाश्च' इति तस्य तनादेश]

अपमृष्टः अपमृज्यते दूरीक्रियतेऽविद्यादिक्लेशै य स शुद्ध (योगिजन) ७ १२ दूरीकृत (मर्क =अनीति) ७ १७ [अप+मृजूष् शुद्धौ (अदा०) धातो क्त । 'क्विङति चे' ति मृजेर्वृद्धिर्न भवति]

अपयन्ति पृथक्त्वेन यन्ति १ ५० २ **अपयन्तु**= दूर गच्छन्तु ३५ १ [अप+इण् गतौ (अदा०) धातोर्लट् लोट् च]

अपयुयोति निवारयितु मिश्रयति १ ९२ ११. [अप+ यु मिश्रणेऽमिश्रणे च (अदा०) धातोर्यङ्लुक् । ततो लट् । गुणाऽभावश्च छान्दस]

अपरजाय अपरे जाताय ज्येष्ठाऽनुजायाऽन्त्यजाय वा १६ ३२ [अपरोपपदे जनी प्रादुर्भावे धातोर्ड प्रत्यय]

अपरम् भविष्यति काले ३३ ९४ अन्यम् (भयम्) १ १८९ ४ पश्चात् १ १८४ १. पश्चिमम् (दुष्टजनम्) ६ ४७ १५ द्वितीयम् २ २८ ८ श्वो दिन प्रति १ ३६ ६

अपरः=अन्यो (देशो) अन्य (शिल्पी वा) १.७४ ८. अन्य ३५ १५ **अपरा**=अपरौ १ १८५ १ अन्य कोई पीछे उत्पन्न हुई (छोटी बहिन) १ १२४ ६ **अपरा** =या जनिष्यन्ते (प्रजा) ३ ५५ ५ अन्या (अप =जलानि) ५.४८ २.

अपरासः पश्चाद् भूता (विद्वज्जना.) ५ ४२.६

अपराजितम् यो न केनाऽपि पराजेतु शक्यते तम् (इन्द्रम्=ईश्वर सभाऽध्यक्ष वा) १ ११.२ अन्यै पराजेतु-मशक्यम् (इन्द्र=परमैश्वर्यकारक राजानम्) २८ २ **अपराजिता**=शत्रुभि पराजेतुमशक्यौ (इन्द्राग्नी= सभासेनेशौ) ३ १२ ४ [परा+जि जये (भ्वा०) धातो. क्त । नञ्समास]

अपरितासः अन्यैरव्याप्ता (क्रतव.=यज्ञा प्रज्ञा वा) २५ १४

अपरिविष्टम् परिवेषरहितम् (कर्म्म) २ १३ ८. [परि+विष्लृ व्याप्तौ (जु०) धातो क्त. । नञ्समास]

अपरिह्वृतः परित सर्वतोऽनावृत. (अग्नि =विद्युत्) २ १०.३ [परि+वृञ् वरणे (स्वा०) धातो क्त । नञ्समास]

अपरिह्वृताः सर्वतोऽकुटिला ऋजवो भूत्वा (मनुष्या) प्र०—अत्र 'अपरिहवृताश्च' अ० ७ २.२३ इत्यनेन निपातना-च्छन्दसि प्राप्तो ह्वुभावो निषिध्यते १ १०० १९. अपरिवर्जिता (मनुष्या) १ १०२ ११ [परि+ह्वृ कौटिल्ये (भ्वा०) धातो क्त प्रत्यय । 'अपरिह्वृताश्च' (अ० ७ २ ३२) सूत्रेण 'हृ' आदेशाभावो निपात्यते । नञ्-समास]

अपरीतः अवर्जित (राजा) ५.२९ ४. **अपरीताः**= अवर्जिता (पन्थास) १ १०० ३ [परि+इण् गतौ धातो क्त । नञ्समास ।]

अपरीतासः अवर्जनीया (देवा) १ ८९.१ अन्यैर-व्याप्ता (क्रतव =यज्ञा प्रज्ञा वा) २५ १४. [नञ्+ परि+इण् गतौ (अदा०)+क्त]

अपरीभ्यः अपूर्णाभ्य सेनाक्रियाभ्य, प्र०—अत्र पृधातो 'अच इ' उ० ४ १४४ अनेन सूत्रेण इ प्रत्यय 'कृदिकारादक्तिन' अ० ४ १ ४५ इत्यनेन वार्तिकेन ङीप् प्रत्यय १ ३२ १३ **अपरीषु**=आगामिनीषूपस्सु १ ११३ ११ (पृ पालनपूरणयो) (जु०) धातो 'अच इ.' उ० ४ १४४ सूत्रेण इ प्रत्यय । स्त्रिया ङीष् नञ्-समास]

अपर्वन् अपर्वणि पर्वरहिते समये ४.१९.३.

[पृ पालनपूरणयो (जु०) धातो 'स्नामदि०' उ० ४ ११३. सूत्रेण वनिप्। नञ्समास। 'सुपा सुलुक्' इति डेर्लुक्]

अपवक्ता मिथ्यावादी (प्रजापुरुष) ८ २३ [अप+वच परिभाषणे (अदा०) धातो कर्त्तरि तृच्]

अपवध्यासम् हन्याम् १ २६ [अप+हन हिंसागत्यो (अदा०) धातोर्लिङ् 'हनो वध लिङि' (अ० २ ४ ४२) सूत्रेण वधादेश]

अपवर्त्तय दूरीकुरु २ २३ ७ [अप+वृतु वर्त्तने (भ्वा०) धातोर्णिजन्ताल्लोट्]

अपववर्थ अपवर्त्तते ३ ४३ ७ [वृञ् वरणे (स्वा०) धातोर्लिट्। 'बभूथाततन्थजगृम्भववर्थेति निगमे' इतीडभावो निपात्यते]

अपवः अपवृणुयात् १ १२१ ४ अपवृणोति २ १४ ३. [अप+वृञ् वरणे (स्वा०) वृङ् धातोर्वा लुङ्। 'मन्त्रे घसह्वरणशवृदह०' इति सूत्रेण लेर्लुक्। अडभावश्च]

अपव्रन् अपवृण्वन्ति ५ २९.१२ अपवृणोति ४ ५ ८. अपवृणुयु ४ २ १६ दूरीकुर्वन्तु १९ ६९ अपवृण्वन्ति ४ ५५ ६ [अप+वृञ् वरणे धातोर्लुङ् प्रथमा वहुवचने 'मन्त्रे घसह्वरणश०' सूत्रेण लेर्लुक् अडभावश्च]

अपवर्त्ता अपवारयिता (इन्द्र =राजा), प्र०—अत्र तृन् प्रत्यय ४ २० ८ [अप+वृञ् वरणे (स्वा०) धातोर्णिजन्तात् तृन् तच्छीलादिपु। णेर्लुक् च]

अपवाति अपगत वाति गच्छति १ १६२.१० अपगच्छति २५ ३३ [अप+वा गतिगन्धनयो (अदा०) धातोर्लट्]

अपवृधि अपवृणु, अपवृणोति वा, प्र०—अत्र पक्षान्तरे सूर्यस्य प्रत्यक्षत्वात् प्रथमाऽर्थे मध्यम 'श्रुशृणुपृकृवृभ्यश्छन्दसि' अ० ६ ४ १०२ अनेन सूत्रेण हेर्धि १ १० ७ दूरीकुरु ७ २७ २ [अप+वृञ् वरणे (स्वा०) धातोर्लोट्। 'श्रुशृणु०' इत्यादिना छन्दसि हेर्धिरादेश]

अपवेत्ति नश्यति ५ ६१ ८ [अप+विद ज्ञाने (अदा०) धातोर्लट्। धातूनामनेकार्थत्वादत्र विनाशे]

अपव्रतान् ब्रह्मचर्यसत्यभाषणादिव्रताऽऽचरणरहितान् (अविद्वज्जनान्) ५ ४२ ९ अपगतानि दुष्टानि मिथ्याभाषणादीनि व्रतान् कर्माणि येपा तान् दस्यून् १ ५१ ९. **अपव्रतेन**=अन्यथा वर्त्तमानेन (ब्रह्मणा=धनेन) ५ ४० ६ अनियमेन परुषकर्मणा १७ ४७ [अप-व्रतयोर्वहुव्रीहि। व्रतमिति कर्मनाम निघ० २ १]

अपशोशुचत् दूरीकुर्यात् १ ९७ १ दूरीकर्त्तु शोशुच्यात् १ ९७ ५. भृश शोपयतु, भा०—पृथक् कारयति ३५ ६ सव नष्ट हो जाये आर्याभि० १.३९, ऋ० १ ७ ५.६ [अप+शुच शोके (भ्वा०) ईशुचिर् पूतीभावे (दिवा०) धातोर्वा यङ्लुकि रूपम्। शोचतिर्ज्वलतिकर्मा निघ० १.१६]

अपश्चाद्दध्वने उत्तमेपु व्यवहारेष्वग्रगामिने (विदुषे=आप्ताय विपश्चिते) ६ ४२ १ [दघ पालने (स्वा०) धातोर्वाहुलकात् वनिप्। दघ्नोति गतिकर्मा नि० २ १४ 'पश्चात्' अ० ५ ३ ३२ सूत्रेणापरस्य पश्च भावो निपात्यते। पश्चात्=अपरम्। तद्विपरीतोऽग्रगामी]

अपश्यत् पश्यति ३ २ १२ पश्येत् ३ २६ ८ **अपश्यताम्**=पश्यत. ७ ३३.१०. **अपश्यन्**=पश्येयु १ ११३.११ **अपश्यन्त**=पश्यन्ति १.१४६ ४ **अपश्यम्**=पश्यामि प्र०—अत्र लडर्थे लङ् १ १८ ९ पश्येयम् ३७ १७. **अपश्याम**=सम्प्रेक्षेमहि १ १३९ २ (दृशिर् प्रेक्षणे (भ्वा०) धातोर्लङि रूपाणि शिति पश्यादेश। 'अपश्यन्त' प्रयोगे व्यत्ययेनात्मनेपदम्]

अपश्याः ये न पश्यन्ति ते (अन्धा जना) १.१४८ ५ [दृशिर् प्रेक्षणे (भ्वा०) धातो 'पाघ्राध्माधेट्दृश श' अ० ३ १ १३७ सूत्रेण कर्तरि श प्रत्यय। शिति पश्यादेश। तत्प्रतिषेध]

अपश्रितम् आसेवितम् (शिर=उत्तमाऽङ्गम्) १ ८४.१४ **अपश्रितः**=योऽपश्रयति स (सूर्य) ५.६१ १९ [अप श्रिञ् सेवायाम् (भ्वा०) धातो क्त। 'आदिकर्मणि क्त कर्त्तरि चे' ति कर्त्तर्यपि क्त]

अपसम् कर्म, प्र०—अप इति कर्मनामसु पठितम् निघ० २.१. 'व्यत्ययो वहुलम्', इति लिङ्गव्यत्यय, इदमपि सायणाचार्येण न बुद्धम् १ २९. **अपसः**=कर्माणि, भा०—अनेकविधानि कर्माणि ३३ ७५. अप कर्म तद्वन्त सदा कर्मनिष्ठा (धीरा जना) ३४ २ उत्तमानि कर्माणि १ ९२ ३ सुकर्म्माण (वरा जना) ५ ४२ १२ कर्म करने वाले लोग स० प्र० २४६,३४२ कर्मवन्त, भा०—कर्मसाधनानि (त्रिधातव.=जीवा), अत्र विन् प्रत्ययलुक् २१ ३७ कर्मठा (त्रय=अध्यापकोपदेशकवैद्या.) २८ ८. **अपसा**=कर्मणा ४ २ १४ **अपसाम्**=जलानाम् १ ९५ ४ कर्म्मणाम् १ १६ ४४ कर्मकर्तॄणाम् (सज्जनानाम्) ६ ६१ १३ **अपसि**=कर्म्मणि ३ १ ३ **अपः**=अन्तरिक्ष प्रति ३ ३२ ५ कर्माणि कर्त्तुम् १ १० ८ जलानीव व्याप्तविद्या (विद्वज्जना) ३ ३१ १९ व्याप्तान् प्रकाशान्

२३ १७. मुकर्म ७ ४० ४ जलानि प्राणान्वा १०.१. कर्म १.११० १. प्राणान् कर्म्माणि वा १ ६४.१ प्राणान् जलान्यन्तरिक्षाऽवयवान् १ ६४ ६ बलानि जलानि वा १ ६१ २२ कर्माणि जलानि वा १ १०३ ५ जलानि प्राणवती प्रजा वा १ १०५ १ प्राणान् वायून्वा ४.२६ २. विमानादिनिर्माणसाधक कर्म्म ४.३३.६ जलान्यन्तरिक्ष वा ४ ४२ ४. कर्म्माणि ४ १६ ६ अन्तरिक्षलोक और जल आर्याभि० १ १३, ऋ० १४.१४ १२ सुसंस्कृतानि जलानि अन्व०—प्राणान् ४ १३ या आप्नुवन्ति सर्वान् पदार्थान् ता (जलानि) १ २३ १८ जलानि वायून्वा १२ १०२ जलानीव कर्माणि ५ ३१ ८ जलानीव शत्रुप्राणान् ५.३१ ६ प्राणा इव वर्त्तमाना (प्रजा) १ १३१ ४ अन्तरिक्षम् ५ १४ ४ अपासि कर्माणि ५ ४१.१४ प्राणान् १४ ८ जलानि १ ५६ ६ उदकानि ६ ६० २ **अप इव**= जलानीव प्राणान् १ ५१ १ [अप इत्युदकनाम निघ० १ १२. कर्मनाम निघ० २ १ अपो यत्कर्म नि० ७.२७. अप प्रजननकर्म नि० ११ ३१ आप्यते सुखे येन तद् अप =अपस्य सुकर्म वा (उ० द० भा०) आप्लृ व्याप्तौ (स्वा०) धातो 'आप कर्माख्यायां ह्रस्वो नुट् च वा' उ० ४ २०८ सूत्रेण असुन् प्रत्यय]

अपसश्चिम दूरे प्राप्नुयाम गमयेम वा ३८ २०. [अप+सश्चति' गतिकर्मा निघ० २ १४ धातोर्लोट् लिडर्थे]

अपसुव दूर प्रापय, दूरीकुरु प्रेरय ३३ ११ [अप+ पु प्रसवैश्वर्ययो (भ्वा०) धातोर्लोट् विकरणव्यत्ययेन श प्रत्यय],

अपसेध अपनय ६ ४७ २६ [अप+षिधु गत्याम् (भ्वा०) धातोर्लोट्]

अपसेधन् दूरीकुर्वन्, भा०—तिरस्कुर्वन् (देव = सूर्य) ३४ २६. निवारयन् (सभापति) १ ३५ १० [अप+ षिधु गत्याम् (भ्वा०) धातो शतृ]

अपस्तमः अतिशयेन क्रियावान् (ईश्वर) १.१६०.४ **अपस्तमा**=अतिशयेन कर्मकर्त्री (सरस्वती=वाक्) ६ ६१ १३ [अपस् इति कर्मनाम निघ० २ १. तत आतिशयिकस्तमप् प्रत्यय। स्त्रियां टाप्]

अपस्पृधेथाम् स्पर्द्धेथाम् ६ ६९ ८ [स्पर्द्ध संघर्षे (भ्वा०) धातोर् लङि आथामि द्विवचन रेफस्य सम्प्रसारणमकारलोपश्च' 'अपस्पृधेथामानृचु०' अ० ६ १ ३६ सूत्रेण निपात्यते। अथवा—अप+स्पर्धेर्लङि आथामि सम्प्रसारणमकारलोपश्च निपात्यते छन्दसि]

अपस्फरीः अवृद्ध मा कुर्या ६.६१.१४.

अपस्यया आत्मन कर्मेच्छया ५ ४४.८ **अपस्यः**= अपस्सु कर्मसु साध्व्य (विदुष्य स्त्रिय) प्र०—अत्र 'सुपा सुलुग्०' इति शस स्थाने सु १० ७ **अपस्याम्**=आत्मन कर्मेच्छाम् ७ ४५ २. [कर्मवाचिनोऽपस्सुबन्तादात्मन इच्छायामर्थे क्यच्। 'अ प्रत्ययादि' ति क्यजन्तात् स्त्रियाम् 'अ' प्रत्यय.। ततष्टाप्]

अपस्यात् आत्मनोऽपासि कर्माणीच्छेत् १ १२१ ७ [अपस्+क्यच्। 'सनाद्यन्ता धातव' इति धातुसंज्ञाया लिङ्]

अपस्युवः आत्मनोऽपासि कर्माणीच्छन्त (कन्या.) १ ७९ १ [अपस्+क्यच् आत्मन इच्छायाम्। 'क्याच्छन्दसि' (अ० ३ २ १७०) सूत्रेण तच्छीलादिष्वर्थेषु 'उ' प्रत्यय। तत प्रथमाबहुवचने रूपम्]

अपहतम् नाशयतम् १ १३२ ६ [अप+हन हिंसागत्यो (अदा०) धातोर्लोट्]

अपहतम् विनाशितम् (रक्ष =दुर्गन्धादिदु खजातम्) १ ६ अपहन्यते यत्तत् (रक्ष =दस्युस्वभाव) १.१६. **अपहताः**=अपहिंसिता (असुरा =दुष्टस्वभावा प्राणिन) २ २६. [अप+हन हिंसागत्यो (अदा०) धातो क्त प्रत्यय]

अपहंसि दूरे प्रक्षिपसि १८ ५२ [अप+हन हिंसागत्यो (अदा०) धातोर्लट्। अत्र गत्यर्थे प्रयोग]

अपह्नुवे आच्छादयेयम् १.१३८ ४. [अप+ह्नुङ् अपनयने (अदा०) धातोर्लटि रूपम्]

अपह्वरः चलन कम्पन रहित हो आर्याभि० २.४१. ३८.२० [अप+ह्वृ कौटिल्ये (भ्वा०) धातोर्लङि मध्यमैकवचने रूपम्। अडभावश्छान्दस.]

अपाक् पश्चिमत. ३ ५३.११ पश्चिमाया ६.३६ [अपाची+अस्ताति। 'अञ्चेर्लुक्' इति अस्तातेर्लुक्। 'लुक्तद्धितलुकी' ति स्त्रीप्रत्ययस्यापि लुक्]

अपाकषन् प्रादुर्भूतोऽस्ति ऋ० भू० ६. प्रकाशित हुए है स० प्र० २७३, अथर्व० १० २३ ४ २० [अप+कष हिंसार्थे (भ्वा०) धातोर्लङ्। धातूनामनेकार्थत्वादत्र प्रादुर्भावेऽपि]

अपाकः अपरिपक्व (जन) ६ ११ ४ अप्रशस्य. (त्वष्टा=विद्युत्) प्र०—पाक इति प्रशस्यनाम निघं० ३ ८, २० ४४. **अपाकाः**=अपगतमविद्याजन्य दु खं यस्य

तम् (विद्वज्जनम्) १ १२६ १ **अपाकाः**=वर्जितपाकयज्ञा यतय १ ११० २ **अपाके**=अपरिपक्वे (राजनि) ६.१२ २. [पाक प्रशस्यनाम निघ० ३ ८ पाक पक्तव्यो भवति 'विपक्व प्राज्ञ आदित्य' इत्युपनिपद्वर्णो भवतीत्यधिदैवतम्। पाक पक्तव्यो भवति विपक्वप्रज्ञ आत्मेत्यात्मगतिमाचष्टे नि० ३ १२.]

अपाका अपगतमविद्याजन्य दुख यस्य तम् १ १२६ १. [अप+अकयोर्बहुव्रीहि। कम् इति सुखनाम निघ० ३ ६ तत्प्रतिपेधम् अकम्=दु खम्]

अपाऽघुक्षत् अपशब्दयेत् ५ ४० ८. [अप+घुपिर् अविशब्दने (भ्वा०) धातोर्लुङ् अनित्यमागमशासनमितीटोऽभावे 'शल इगुपधात्०' इति क्सादेशे रूपम्]

अपाङ् अपाऽञ्चतीति (जीव) १ १६४ ३८ [अपोपपदे 'अञ्चु' धातो 'ऋत्विग्दधृक्०' अ० ३ २ ५६ सूत्रेण क्विन्। 'अनिदिताम्०' इत्यादिना नलोपे नुमागमे हल्ङ्यादिसयोगान्तलोपयो' 'क्विन् प्रत्ययस्य कु' इति कुत्वे ङकारे रूपम्]

अपाचीने योऽधोऽञ्चति तस्मिन् (तमसि=अन्धकारे) ७ ६ ४ [अपाच्प्राति० 'विभाषाञ्चेर्०' अ० ५ ४ ८. सूत्रेण ख प्रत्यय खस्येनादेश]

अपाचीः या अधोऽञ्चन्ति (अप) ५ ४८ २. [अप+अञ्चु गतिपूजनयो धातो क्विन् 'अञ्चतेश्चो'-पसख्यानम्' इति ङीप्। अनिदितामिति नकारलोपे भसञ्ज्ञायाम् 'अच' इत्यकारलोपे 'चौ' इति पूर्वपदस्य दीर्घत्वे रूपम्]

अपात् पिवेत् २ ३७ ४ [पा पाने (भ्वा०) धातोर्लुङ् 'गातिस्थाघुपा०' इति सिचो लुक्]

अपात् अविद्यमाना पादा यस्या सा विद्या १ १५२ ३. पादरहिता (विद्युत्) ६ ५६ ६ अविद्यमानौ पादौ यस्या सा, भा०—वेगवती, पादशिर आद्यवयवरहिता (उषा) ३३ ६३ अविद्यमानौ पादौ यस्य स (वृत्र=मेघ) १ ३२ ७ पादरहित (अग्नि=परमात्मा) ४ १ ११ **अपादम्**=अविद्यमानपादम् (मेघम्) ५ ३२ ८ पादेन्द्रिय-रहितम् (वृत्र=मेघम्) १८ ६६ पादरहितम् (वृत्र=मेघम्) ३ ३० ८ (नञ्-पादयोर्बहुव्रीहौ छान्दसत्वात् समासान्तलोपे रूपम्]

अपातक्षन् उत्पन्नोऽस्ति ऋ० भू० ६ प्रकाशित हुए है स० प्र० २७३, अथर्व० २३ ४ २० [अप+आङ्+तक्षू तनूकरणे (भ्वा०) धातोर्लङ्]

अपाताम् रक्षेतम् ३८ १३ [पा रक्षणे (अदा०) धातोर्लङि प्रथमद्विवचने रूपम्]

अपादयत् विनाशयेत् २ ११ १० [पद गतौ (दिवा०) धातोर्णिचि लङि रूपम्। धातूनामनेकार्थत्वादत्र विनाशार्थे पदधातु]

अपाधमत् दूर धमति ३३ ६५ **अपाधमः**=दूरं धम कम्पय १ ५१ ५ [अप+ध्मा शब्दाग्निसयोगयो (भ्वा०) धातोर्लङ्। 'पाघ्रा०' इत्यादिना धमादेश शिति। धमति-र्गतिकर्मा। निघ० २ १४]

अपानती अपानमधोगमनशील वायु निष्पादयन्ती विद्युत् ३.७ [अप+अन प्राणने (अदा०) धातो शतृ-प्रत्यय स्त्रिया ङीप्]

अपानदाः या अपान दु खदूरीकरणसाधन प्रयच्छन्ति ता (हेतय=शस्त्राऽस्त्रोन्नतय) १७ १५ [अपानोपपदे डुदाञ् दाने धातो क प्रत्यय]

अपानपाः योऽपान पाति (विद्वज्जन) २० ३४ [अपानोपपदे पा रक्षणे (अदा०) क प्रत्यय वचनव्यत्ययेन वहुवचनम्]

अपानम् यो नाभेरर्वाग्गच्छति तम् (प्राणवायुम्) १४ ८ **अपानश्च**=सव दु ख दूर करने का उपाय और उसकी सामग्री स० वि० १४५, अथर्व० १२ ५ ६ **अपानः**=नाभेरधोगामी वात १८ २ अपानयति दु ख येन स (वायु) २२ ३३ वाह्याद् देशाच्छरीर प्रविशति स वायुरपान ऋ० भू० १०४, अथर्व० १२ ५ ६ **अपानाय**=अपानिति दु ख येन तस्मै (दु खनिवृत्तिहेतवे) १३ २४ दु खनिवारणाय १३ १६ यो वहिर्देशादाभ्यन्तर गच्छति तस्मै (वायवे) २२ २३ दु ख-निवृत्तये १५ ६४ [अप+अन प्राणने (अदा०) धातो 'हलश्चे' ति करणे घञ्। 'भुव इत्यपान तै० अ० ७.५ ३ तै उ० १ ५ ३ अपानो वा एतवान् श० १४ ३ ३. अपाना अनुयाजा श० ११ २ ७ २७ अन्तर्ह्यपान। ता० ७ ६ १४ अन्तर्यामौ अपान एव कौ० १२ ४ अग्निर-पान जै० ३ ४ २२ ६ अपानो वरुण श० ८ ४ २ ६ वरुणस्य साय (काल) आसवोऽपान तै० १ ५ ३ १ अपान प्रस्तोता कौ० १७ ७ गो० उ० ५ ४ अपान-स्त्रिष्टुप् ता० ७ ३ ८ अपानो रथन्तरम् ता० ७ ६ १४ अपानो याज्या श० १४ ६ १ १२ अपानो वै यन्ताऽपानेन ह्यय यत प्राणो न पराङ् भवति ऐ० २.४० अर्वाङपान तै० स० ६ ३ १ ५ अहरेव प्राणो रात्रिरपान ऐ० आ० २ १ १५ उपरिष्टाद् अपान तै० स० ३ ४ १ ४ एत्यपानस्त्वदसौ लोक जै० उ० २ ३ ३.४

ऐन्द्रोऽपान तै० स० ६ ३.११ २ घोपीव ह्ययमपान प० २ २ नाभ्या अपान, अपानान्मृत्यु ऐ० आ० २ ४ १ ऐ० उ० १ १ ४ मनसा ह्यपानो धृत काठ० २७ २]

अपापकाशिनी अपापान् सत्यधर्मान् काशितु शील-मस्या सा (तनू =विस्तृतोपदेशनीति) १६ २ [अपा-पोपपदे काशृ दीप्तौ (भ्वा०) धातोस्ताच्छील्ये णिनि स्त्रिया ङीप्

अपादधीत् अपहन्ति ५ ८ [अपपूर्वाद् हन्तेर्लुङ् । 'लुङि च' इति वधादेश]

अपापविद्धम् यत् पापयुक्त पापकारि पापप्रिय कदाचिन्न भवति तद् (ब्रह्म) ४० ८ नैव तद् ब्रह्म पापयुक्त पापकारि च कदाचिद् भवति ऋ० भू० ३६, ४० ८ जिससे पापाचरण का अभाव होने से क्लेश, दुख, अज्ञान कभी नही होता वह (ब्रह्म=परमेश्वर) स० प्र० २४४, ४० ८ परमात्मा कभी अन्याय नही करता क्योकि वह न्यायकारी ही हे आर्याभि० २ २, ४० ८ [अपाप+व्यध ताडने (दिवा०) धातो क्त । किति 'ग्रहिज्या०' इत्यादिना सम्प्रसारणम्]

अपापोहति दूरीकर्त्तु वितर्कयति ५ ३४ ३ [अप+ऊह वितर्के (भ्वा०) धातोर्लट् 'उपसर्गादस्यत्यूह्योर्वा वचनम्' इति वा परस्मैपदम् । अप शब्दस्य द्वित्वम्]

अपाऽभरत् अपभरति १ १६१ १० [अप+भृञ् भरणे (भ्वा०) धातोर्लङ्]

अपाऽभिचुच्यवत् अपाभिच्यावयति २ ४१ १० (अप+अभि+च्युङ् गतौ (भ्वा०) धातोर्णिचि लुङि रूपम् । अडभावश्च]

अपाऽभूत तिरस्कृता भवत ४ ३४ ११ [अप+भू सत्तायाम् (भ्वा०) धातोर्लुङि मध्यमवहुवचने रूपम् 'गाति-स्थाघुपाभूभ्य ०' इति सिचो लुक्]

अपाम आप्नुयाम १० २१ [पा पाने (भ्वा०) धातो-र्लुङि रूपम् 'गातिस्था०' इति सिचो लुक् । अनेकार्थत्वाद् धातूनामत्राप्नोत्यर्थे]

अपाम् प्राणिना जलानामिव ५ ४१ १० प्राणाना जलाना वा १ ६७ ५ व्यापकाना प्राणाना जलाना वा १३ २ प्राप्ताना मित्रशत्रूदासीनाना पुरुषाणाम् १ १०० ११. प्राणाना जलाना वा प्र०—आप इति पदनामसु पठितम् निघ० ५ ३ अनेन चेष्टादिव्यवहारप्रापका प्राणा गृह्यन्ते 'आप इत्युदकनामसु पठितम् निघ० १ २, ३ १२ ये व्याप्नुवन्ति सर्वान् पदार्थानन्तरिक्षादयस्तेपाम् १ २२ १६ अन्तरिक्षस्य जलस्य प्राणाना वा २ ४ २ आप्नुवन्ति याभिस्ता-सामुदकानाम् ८ २४ अन्तरिक्षस्य, प्र०—आप इत्यन्त-रिक्षनाम निघ० १ ३, १ १६४ ५२ विद्याविज्ञानयोगव्या-पिनाम् (सन्यासिनाम्) १ १५८ ६ व्याप्नुवता विद्युदादीनाम् १३ ५३. प्राप्तव्याना पदार्थानाम् १३ ५३. उदकानाम् १ ८५ ६ जलानाम् ७ १६ [आप =अन्तरिक्षनाम नि० १ ३ उदकनाम निघ० १.१२ पदनाम निघ० ५.३. आप्लृ व्याप्तौ (स्वा०) धातो 'आप्नोतेर्ह्रस्वश्च' उ० २ ५८ सूत्रेण रूपसिद्धि] तद्या एताश्चान्द्रमस्य आगामिन्य आपो भवन्ति रश्मयस्ता नि० ५ ४२ आप आयना (आयनानि वा) नि० १२ ३५ आप तद्यदब्रवीत् (ब्रह्म) आभिर्वा अहमिद सर्वमप्स्यामि यदिद किं चेति तस्मादापोऽभवप्त-दपामप्त्वमाप्नोति वै स सर्वान् कामान् यान् कामयते गो० पू० १ २ सेद सर्वमाप्नोद् यदिद कि च यदाप्नोत्तस्मादाप श० ६ १ १ ६ अद्भिर्वा इद सर्वमाप्तम् श० १ १ १ १४ आपो ह वा इदमग्रे सलिलमेवास ता अकामयन्त कथ नु प्रजायेमहीति श० ११ १ ६ १. प्राणा वा ऽआप तै० ३ २ ५ २ ता० ६ ६ ४ आपो वै प्राणा श० ३ ८ २ ४ प्राणो ह्याप जै० उ० ३ १० ६ अमृत वा आप श० १ ६ ३ ७, ४ ४ ३ १५ अमृतत्व वा आप कौ० १२.१ शान्तिराप श० १ २ २ ११ शान्तिर्वा आप ऐ० ७ ५ आपो हि शान्ति ता० ८ ७ ८ शान्तिर्वै भेषजमाप कौ० ३ ६ ७ ८ ६ गो० उ० १ २५ आपो ह वा ऽओपधीना रस श० ३ ६ १ ७ रसो वाऽआप. श० ३.३ ३ १८, ३ ६ ४ ७ आपो वै सर्वस्य शान्ति प्रतिष्ठा ष० ३ १ आपो वाऽअस्य सर्वस्य प्रतिष्ठा श० ४ ५ २ १४ आप सत्ये (प्रतिष्ठिता) ऐ० ३ ६ गो० उ० ३ २ श्रद्धा वा आप. तै० ३ २ ४ १ मेध्या वा आप श० १ १.१ १, ३.१ २ १० आपो वै क्षीररसा आसन् ता० १३ ४.८ ऊर्वा आपो रस कौ० १२ १. अन्न वा ऽआप श० २ १ १ ३, ७ ४ २ ३७ अन्नमाप कौ० १२ ३ ८. आपोऽन्नम् ऐ० ६ ३० आपो वै रक्षोघ्नी तै० ३ २ ३ १२ वज्रो वाऽआप श० १ १ १ १७ वीर्य वाऽआप श० ५ ३ ४ १ आपो वा ऽअर्क श० १० ६ ५ २ आपो वा ऽअवका श० ७ ५ १ ११ देव्यो ह्याप श० १ १ ३ ७ यज्ञो वा आप कौ० १२१ श० १ १ १.१२. आपो वै यज्ञ ऐ० २ २० आपो रेत श० ३ ८ ४ ११. पशवो वा एते यदाप ऐ० १ ८ आपो वै सर्वा देवता ऐ० २.१६ आपो वै सर्वे कामा श० १०.५ ४ १५ आपो वै सर्वे देवा श० १० ५ ४ १४ आपो वै देवाना प्रिय धाम तै० ३ २ ४ २. सौम्या ह्याप ऐ० १ ७ आपो वरुणस्य पत्न्य आसन् तै० १ १ ३ ८ अग्निना वाऽआप सुपत्न्य श० ६ ८ २.३.

अस्ति वै चतुर्थो देवलोक आप कौ० १८ २ अप्सु पृथिवी (प्रतिष्ठिता) जै० उ० १ १० २ आप स्थ समुद्रे श्रिता'। पृथिव्या प्रतिष्ठा तै० ३ ११ १ ५ प्रात सवनरूपा ह्याप. कौ० १२ ३. अथ यद्यप शूद्राणा म भक्ष ऐ० ७ २९ योषा वा ऽआपो वृषाग्नि. श० १ १ १ १८, २ १ १ ४ आपो वै सरिरम् श० ७ ५ २ १८ आपो वा इदमग्रे सलिलमासीत् तै० १ १ ३ ५ आपो वा इदमग्रे महत्सलिलमासीत् जै० उ० १.५६ १ आप एष वै रयिर्वैश्वानर श० १० ६ १ ५ आपो व्यान जै० उ० ४ २२ ९ शुक्रा ह्याप तै० १ ७ ६ ३ चन्द्रा ह्याप तै० १ ७ ६ ३ आपस्सावित्री जै० उ० ४ २७ ३ आपो वै पुष्करम् श० ६ ४.२ २, ७ ४ १ ८ आपो वै पुष्करपर्णम् श० ७ ३ १ ६ आपो वै प्रजापति परमेष्ठी यजु० १४ ९ आपो हि पय कौ० ५ ४ गो० उ० १ २२ अपामेष ओषधीना रसो यत्पय श० १२ ८.२ १३ आपो ह्येतस्य (सोमस्य) लोक श० ४ ४ ५ २१. आपो हि रेत ता० ८ ७ ९ आपो रेत प्रजननम् तै० ३ ३ १० ३. घर्मे ह्याप श० ११ १ ६ २४ आप प्रोक्षण्य ऐ० ५ २८ आपो वै सूदोऽन्न दोह. श० ८ ७ ३१ आप स्वरसमान कौ० २४.४ रेवत्य आप श० १ २ २ २ आपो वै रेवती तै० ३.२ ८ २ वज्रो वाऽआप. श० १ ७ १.२० आप इति तत् प्रथम वज्ररूपम् कौ० १२ २. आप वै विवा श० ८.२.२ ८. आपो वै द्यौ श० ६ ४ १ ९ आपो दिव ऊध श० ६ ७ ४ ५ आपो वै दिव्य नभ. श० ३.८.५ ३ आपो वै वरेण्यम् जै० उ० ४ २८ आपो वै सव. श० ६ १.३.११ आप एव सर्वम् गो० पू० ५ १५ आपो वै मरुत ऐ० ६ ३०. कौ० १२.८ अन्न वाऽअपा पाय श० ७ ५ २.६० आपो वै सहस्रियो वाज श० ७ १.१ २२ गिरिवुष्ना उ वा आप. श० ७ ५ २ १८ वै राजीर्वा आप कौ० १२ ३]

अपामतिम् अज्ञानम् १७.५४. [अप+आङ्+मन ज्ञाने (अदा०) धातो स्त्रियां भावे क्तिन् 'मन्त्रे वृषेष०' अ० ३ ३.९६ सूत्रेण निपात्यते]

अपामार्ग रोगनिवारकोऽपामार्ग ओषधिरिव पापदूरीकर्त्त (सत्पुरुष !) ३५ ११ [अप+मृजूष् शुद्धौ (अदा०) धातो. 'हलश्चे' ति सज्ञाया घञ् 'उपसर्गस्य घञ्यमनुष्ये०' इत्युपसर्गस्य दीर्घत्वम्। प्रतीचीनफलो वा अपामार्ग श० ५ २ ४.२०]

अपायि पाति ६ ४४ ८ पिबति ६ ४४ १६. पान किया २ १९ १ [पा पाने (भ्वा०) पा रक्षणे वा (अदा०) धातो कर्मणि लुङि चिणि रूपम्]

अपारम् अपारविद्यम्, गम्भीराऽऽशयम् (इन्द्र= राजानम्) ४ १७ ८ **अपार:**=पाररहित (महिमा) ५ ८७.६. **अपाराम्**=पाररहिताम् (भूमिम्) ३.३०.९. **अपारे**=पाररहितेऽपरिमिते (रजनी=द्यावापृथिव्यौ) ४.४२ ९ अगाधे द्यावापृथिव्यौ, प्र०—अपारे इति द्यावापृथिवीनाम निघ० ३ ३०, ३.१.१४ अविद्यमानाऽवधी (रोदसी=द्यावापृथिव्यौ) ३.३० ५. [अपारे द्यावापृथिवी नाम निघ० ३ ३० दूरपारे नि० ६ १]

अपारयत् दुःखात् पारयेत ४ ३० १७ [पारकर्मसमाप्तौ (चु०) धातोर्लङ्]

अपाऽवधीत् अपहन्ति, प्र०—अत्र क्रियापदे लडर्थे लुङ् 'व्यपेत्येतस्य प्रातिलोम्य प्राह नि० १ ३, ५ ८ पृथक्करणतया हन्ति ५ ८ [अप+हन हिंसागत्यो (अदा०) धातोर्लुङ् 'लुङि चे' ति हन्तेर्वधादेश]

अपावपत् अधो वपति २ १४ ९ **अपाऽवप:**=दूरे प्रक्षिप १ १३३ ४ [अप+डुवप् बीजसन्ताने (भ्वा०) धातोर्लङ्]

अपाऽऽव: आवृणोति ३ ५ १. दूरीकरोत्युद्घाटयति, प्र०—अत्र पुरुषव्यत्यय लडर्थे लुङ् 'बहुल छन्दसि' इत्याडभावश्च १ ११ ५. निवारयति १.११३ १४ **अपावृणोत्**=दूरीकरोति ३ ४४ ५ अपवृणोति १ १३० ३ आच्छादयति ४.२८ १ **अपावृणो:**=दूरीकर्त्तु वृणु १ ५१.३ अपवृणुया १ १३२ ४. दूर वृणुया १ ५१ ४ **अपावृत**=दूरीकुर्वन्ति ५ ४५ १ [अप+वृञ् वरणे (स्वा०) धातो सामान्ये लुङ्। 'मन्त्रे घसह्वरणशवृ०' सूत्रेण लेर्लुक् छान्दस आडागम अपावृणोत्=अप+वृञ् वरणे+लङ् अपावृत अप+वृञ् वरणे+लुङ्]

अपावृतम् दानाय भोगाय वा प्रसिद्धम् (राध =धनम्) १.५७ १ [अप+आङ्+वृञ् वरणे धातो क्त प्रत्यय]

अपाऽसेधत् अपसेधते ६ ४७ २१ **अपाऽसेध:**= निवारयतु ५ ३१ ७ [अप+षिधु गत्याम् (भ्वा०) धातोर्लुङ्]

अपाऽस्य दूरीकुरु ३ २४ १ [अप+असु क्षेपणे (दिवा०) धातोर्लोटि मध्यमैकवचने रूपम्]

अपांसि व्याप्यानि कर्माणि १.६८ ३ [अपस् इति कर्मनाम, तस्य प्रथमाद्वितीययोर्बहुवचने रूपम्]

अपा: पिब ३ ५३ ६. **अपिबत्**=पिबति, प्र०—अत्र लडर्थे लङ् १ ३२ ३. पिबेत् ३ ४८.४ गृह्णीयात् १९ ७५. **अपिब:**=पिब ५ २९.११ पिब ४ ३५ ७ पिबसि ३ ३२ १० पिबति ३ ३२ ९ ,पी चुके हो ७ ३५

अपु:=पिबन्ति १ १६४ ७. पिबन्तु २१.६०. [पा पाने (भ्वा०) धातोर्लुङ् । सिचो लुक् 'गातिस्थाघु०' इत्यादि-सूत्रेण । 'अपिबत्, अपिब.' इत्येनयोर्लङ्]

अपा: पाहि ६ ६६ १ [पा रक्षणे (अदा०) धातोर्लुङ् छान्दसत्वात् सिचो लुक्]

अपि निश्चयार्थे १ १४०.७ पदार्थसम्भावनायाम् ७ ३८ ३ निश्चय करके स० वि० ११०, १.१७६.१ भी स० वि० १६८, १४ २ २६, १ १२१ १३ कुछ भी प० वि० [अपीति ससर्गम् नि० १ ३]

अपिकक्षे पार्श्वे ४ ४० ४ निश्रितपार्श्वाऽवयवे ६ १४ [अपि+कष हिसार्थे (भ्वा०) धातो 'वृत्-कपिभ्य' उ० ३.६२ सूत्रेण स प्रत्यये रूपम् । कक्षो गाहते क्स इति नामकरण । ख्यातेर्वाऽनर्थकोऽभ्याम । किमस्मिन् ख्यान-मिति वा । कषतेर्वा तत्सामान्यान्मनुष्य कक्षो वाहुमूल-सामान्यादश्वस्य नि० २ २]

अपिकक्ष्यम् कक्षासु विद्याप्रदेशेषु भवा बोधा कक्ष्या-स्तान् प्रति वर्त्तते तत् (त्वाष्ट्रम्=विज्ञानम्) १ ११७ २२. [कक्ष्या रज्जुरश्वस्य नि० २ २ कक्ष्या प्रकाशयन्ति कर्माणि नि० ३ ६ अपि+कक्षाप्राति० भवार्थे यत्]

अपिकर्णे आच्छादितश्रोत्रे ६ ४८ १६. [अपिहितौ कर्णौ यस्येति बहुव्रीहौ 'प्रादिभ्यो धातुजस्य०' अ० २ २.२४ वार्त्तिकेनोत्तरपदलोप]

अपिजाय निश्चयेन जायमानाय (विजयाय) ६ २० स्वीकाराय १८ २८ उत्पन्नाय (गृहाय) २२ ३२ [अपि+जनी प्रादुर्भावे (दिवा०) धातोर्ड. प्रत्यय]

अपिजुवा प्रेरके (उपासानक्ता=अहोरात्रे) २.३१ ५ [अपि+जु गतौ (सौत्रो धातु) धातो. 'क्विप् वचिप्रच्छि-श्रि०' उ० २ ५७ सूत्रेण क्विप्]

अपिदधामि प्रक्षिपामि ११.७७ [अपि+डुधाञ् धारणपोषणयो (जु०) धातोर्लट्]

अपिधानवन्तम् आच्छादनयुक्तम् (विद्यैश्वर्यवन्त विद्वज्जनम्) ५ २६ १२ [अपि+डुधाञ् धारण-पोषणयोर्धातोर्ल्युट् । ततो मतुप्]

अपिधाना अपिधानानि मुखाच्छादनानि १ १६२ १३ आवरणानि १.५१ ४ आच्छादनानि (पात्राणि) २५ ३६. [अपि+डुधाञ् धारणपोषणयो (जु०) धातो करणे ल्युट्]

अपिधीन् सद्गुणधारकान् दु.खाऽऽच्छादकान् (विद्वज्जनान्) १ १२७ ७ [अपि+डुधाञ् धारणपोषणयो (जु०) धातो 'उपसर्गे घो किरि' ति कि प्रत्यये आल्लोपे रूपम्]

अपिन्वत् सेवते १ ६२ ६ सेवेत सिञ्चेत वा ४.१६ ७ **अपिन्वतम्** जलादिभि. सिञ्चतम् १ ११७ २० सेवन करो १ ११८ ८. **अपिन्वम्** सेवे ४ ४२ ४ **अपिन्व:** पिन्व २ ११ २. [पिवि सेवने (भ्वा०) धातोर्लङ्]

अपिन्वत् सिञ्चति सेवते वा ३ ५५ १३ विद्या और उपदेश से सयुक्त किया करो स० वि० १६८, १० ७२ ७ [पिवि सेवने (भ्वा०) धातोर्लङ् । व्यत्ययेनात्मनेपदम्]

अपिप्रत पूरयेत् ५ ३४ २ [पृ पालनपूरणयो (जु०) धातोर्णिचि लुङि रूपम्]

अपिप्राणी निश्चितप्राणबलप्रदा (वेदविद्या) १ १८६. ११ [अपि+प्र+अन प्राणने (अदा०) धातो 'हलश्च' इति करणे घञ् ततो मत्वर्थे 'छन्दसीवनिपावि' ति ईकार-प्रत्यय]

अपिप्रियम् प्रीणामि प्र०—ण्यन्तात्लुङ् प्रयोगोऽयम् २६ ७ [प्रीञ् तर्पणे कान्तौ (क्र्या०) धातोर्णिचि लुङि च्लेश्चङि रूपम्]

अपिमृष्ठा: अपिसहे प्र०—अत्र व्यत्ययेनाऽऽत्मनेपदम् ३ ३३.८. [अपि+मृष तितिक्षायाम् (दिवा०) धातोर्लङ् विकरणव्यत्ययेन श्यनो लुक् अडभावश्च]

अपियन्तम् म्रियमाणम् (विद्वज्जनम्) १ १६२ २०. योऽप्येतितम् (आत्मानम्=स्वस्वरूपम्) २५ ४३. [पि गतौ (तुदा०) धातो शतृ तत्प्रतिषेधेऽगतिशीलम् अथवा अपि+इण् गतौ धातो शतृ]

अपियन्ति प्राप्नुवन्ति ३४ ११ [अपि+इण् गतौ (अदा०) धातोर्लटि-प्रथमबहुवचने रूपम्]

अपिरिप्ताय सकलविद्योपचयनाय (कण्वाय=मेधाविने), प्र०—अत्र लिपधातोर्निष्ठा, कपिल-कादित्वाल्लत्वविकल्प १ ११८ ७ [अपि+लिप उपदेहे (तुदा०) धातो क्त प्रत्यय लकारस्य रेफ]

अपिवातयन्त: शीघ्र गमयन्त (विद्वज्जना) १.१६५.१३. [अपि+वात करोतीति विग्रहे 'तत्करोति०' वार्त्तिकेन णिच् ततश्शतृप्रत्यय]

अपिवृतम् सुखबलैर्युक्तम् (अनीक=सैन्यम्) १.१२१ ४. आच्छादितम् २ ११ ५ [अपि+वृञ् आवरणे (चु०) धातो: क्त णेर्लुक् च]

अपिशर्वरे निश्चिते रात्रावन्धकारे ३.६ ७ [अपि+शॄ हिंसायाम् (क्र्या०) धातो. 'कॄगॄशॄवॄ०' उ० २ १२१.

सूत्रेण ष्वरच् प्रत्यय शृणाति हिनस्ति प्रकाशमिति विग्रह द्वादशस्तोत्राण्यपि शर्वराणि ऐ० ४ ६ अपि शर्वराणि खलु वा एतानि छन्दांसि ऐ० ४ ५ तद्यदपि शर्वर्या अपि स्मसीत्यब्रुवस्तदपि शर्वराणामपि शर्वरत्वम् गो० २ ५ १ शर्वरी वै नाम रात्रि जै० १ २०६]

अपिस्थितम् स्थिर हुए (विद्वान्) को १ १४५ ४ [अपि+ष्ठा गतिनिवृत्तौ (भ्वा०) धातो क्त 'द्यतिस्यति०' इतीकारादेश]

अपिहितम् आच्छादितम् (विल=गर्त्तम्) १ ३२ ११ **अपिहितानि**=आच्छादितानि (अश्वा=भोक्तव्यानि वस्तूनि) ४ २८ ५ **अपिहितेव**=आच्छादितानीव (खानि=इन्द्रियाणीव) ४ २८ १ [अपि+डुधाञ् धारणपोषणयो (जु०) धातो क्त 'दधातेर्हिरि' ति धातोर्हिरादेश]

अपिंशत् अवयवयति २६ ३४ **अपिंशत**=अवयवीकुरुत १ ११० ८ विभक्तान् कुरुत १ १६१ ६ अवयवयन्ति, प्र०—अत्र 'बहुल छन्दसि' इति शविकरणेऽपि ३.६० २ **अपिंशन्**=साऽवयवान् कुर्वन्ति ४ ३३ ४ [पिश अवयवे (तुदा०) धातोर्लङ् मुचादित्वान् नुमागम अपिशत् अकरोत् नि० ८ १४]

अपीच्यम् येऽप्यञ्चन्ति प्राप्नुवन्ति तेषु साधुम् (प्रकाशरूप व्यवहारम्) १ ८४ १५ स्वगुणैर्निश्चितम् (नाम=आख्या), प्र०—अपीच्यमिति निर्णयाऽन्तर्हितनाम निघ० ३ २५, २ ३५ ११ **अपीच्येन**=येनाऽप्यमञ्चति तत्र भवेन (सहसा=बलेन) ७ ६० १० [अपीच्यमिति निर्णीतान्तर्हितनाम निघ० ३ २५ अपीच्यमपचित, अपगतम्, अपहितम् अन्तर्हित वा नि० ४ २४]

अपीजुवा प्रेरके (उपासानक्ता=प्रत्यूपरात्र्यौ) २.३१.५ [अपि+जु गतो (सौत्रो धातु) धातो क्विप् दीर्घश्च 'क्विप् वचिप्रच्छ्या०' वार्त्तिकेन]

अपीतम् अपि सयोगे इत प्राप्तम् (पाथ=अन्नम्), प्र०—अपीति ससर्ग प्राह निरु० १ ३, २ १७ [अपि+इण् गतौ+क्त]

अपीतेः विनाशनात् १ १२१ १० [अपि+इण् गतौ (अदा०) धातो स्त्रिया क्तिन्]

अपीत्य निश्चयेन प्राप्य २ ४३ २ निश्चय से प्राप्त होके आर्याभि० १ ५२ [अपि+इण् गतौ धातो क्त्वा। क्त्वो ल्यप् समासे]

अपीपयन्त प्याययन्ति ७ ३६ ३ [ओप्यायी वृद्धौ (भ्वा०) धातोर्यङ् 'लिड्यङोश्च' अ० ६ १ २९ सूत्रेण पी आदेशे लङि रूपम्]

अपीव समुच्चिता इव ३ ३८ ८ अतीव ७ १८.६ [अपि+इव]

अपीवृतम् आच्छादितम् (अहिं=मेघम्) २ ११ ५ [अपि+वृञ् आवरणे (चु०) धातो क्विप् 'नहिवृतिवृषि०' अ० ६ ३.११६ सूत्रेण दीर्घ]

अपीवृताः ये निश्चयेन वर्त्तन्ते (विद्वज्जना) १ १६० ६ [अपि+वृञ् वरणे (स्वा०) धातो क्त प्रत्यय 'अन्येषामपि दृश्यते' इति पूर्वपदस्य दीर्घ]

अपीहि निश्चयेन प्राप्नुहि जानीहि वा ८ ५० [अपि+इण् गतौ (अदा०) धातोर्लोट् 'सेर्ह्यपिच्चे' ति हिरादेश]

अपुपोत् पवित्र कुर्यात् ३ २६ ८ [पूञ् पवने (क्र्या०) धातोर्यङ्लुकि, अभ्यासस्यागुणत्वे रूपम्]

अपुनन् पवित्र करती है ३२ ६ [पूञ् पवने (स्वा०) धातोर्लङ् 'प्वादीना ह्रस्व' इति ह्रस्व]

अपुरुषघ्नः य पुरुषान् न हन्ति स (शूरो जन.) १.१३३ ६ [पुरुष+हन हिंसागत्यो (अदा०) धातो 'कृत्यल्युटो बहुलम्' इति बहुलवचनात् टक् नञ्समास]

अपुष्पाम् कर्मोपासनाऽनुष्ठानाऽऽचार-विद्यारहिताम् (वाचम्) ऋ० भू० ३१७, १० ७१ ५ साधनरूप पुष्पो से रहित (वाणी) प० वि० । **अपुष्पा**=पुष्परहिता (ओषधय.) १२ ८९ [अपुष्पाम्=अपुष्पा वाग् भवतीति वा, किञ्चित् पुष्पफलेति वा अर्थ वाच पुष्पफलमाह याज्ञदैवते पुष्पफले देवताध्यात्मे वा नि० १ २०]

अपूपम् पुआ ३.५२ ७. [नञ्उपपदे पूञ् पवने (क्र्या०) धातोर्बाहुलकात् प प्रत्यय इन्द्रियमपूप ऐ० २ २४]

अपूपवन्तम् प्रशस्ता अपूपा विद्यन्ते यस्य तम् (आप्त विद्वासम्) ३ ५२ १ सुष्ठु सम्पादिताऽपूपसहितम् (अन्नरसादिकम्) २० २९. [अपूपप्राति० प्रशसार्थे मतुप्]

अपूर्वम् अनुत्तमगुणकर्मस्वभावम् (मन) ३४ २. अपूर्वसामर्थ्ययुक्त (मन) स० प्र० २४६, ३४ २

अपूर्व्यम् अपूर्वेषु दिव्येषु गुणेषु कुशलम् (राजानम्) ३ १३ ५ अपूर्वे भवम् (उदकम्) ५ ५६ ५ **अपूर्व्यः**=पूर्वै कृत पूर्व्यो न पूर्व्योऽपूर्व्य (सभेश) १ १३४ ६ **अपूर्व्या**=न पूर्वै कृता (उपा), प्र०—अत्र 'पूर्वै कृतमिनियौ च, अ० ४ ४ १३४ अनेनाऽय सिद्ध १ ४६ १ न विद्यते पूर्वो यस्मात् सोऽपूर्वस्तत्र भवानि (वचासि=वचनानि) ६ ३२ १ [पूर्व-

प्राति० कृतार्थे 'पूर्वै कृतमिनियौ च' अ० ४ ४ १३४ सूत्रेण य प्रत्यय नञ्समास]

अपृच्छत पृच्छन्तु १ १६१ ४ **अपृच्छम्**=पृच्छेयम् ५ ३० २ [प्रच्छ ज्ञीप्सायाम् (तुदा०) धातोर्लङ्]

अपृच्यन्त पृच्यन्ति १ ११० ४ पृची सम्पर्चने (अदा०) धातोर्लङ्, विकरणव्यत्ययेन श्यन्]

अपृणक् तर्पयेत् ४ १६ ७ **अपृणत्**=तर्पयति २ २२ २ पृणाति व्याप्नोति ३३ ७५ पूरयति ३ २ ७ प्रपूरयेत् ३ ३४ १ [पृची सम्पर्के (रुधा०) धातोर्लङ् धातूनामनेकार्थत्वात् तर्पणपूरणयोरपि]

अपृणः पुष्णीया ३ ३ १० **अपृणाः**=पिपर्त्ति ३.६२ पूरय ७ १३ २ **अपृणात्**=पृणाति पालयति ४ १८ ५ [पॄ पालनपूरणयो (क्र्या०) धातोर्लङ् 'प्वादीना ह्रस्व' इति ह्रस्व]

अपृणतः अपालयत (दुष्टान् जनान्) ५ ७ १० दु खदातुर्दुर्जनात् ६ ४४ ११ [नञ्युपपदे पॄ पालनपूरणयो (क्र्या०) धातो शतरि द्वितीयाबहुवचने]

अपृणन्तम् धर्मेणाऽपुष्यन्तमन्यानपोपयन्तम् (जनम्) १ १२५ ७ **अपृणन्तः**=अपूर्णा अपालयन्तो वा (अविद्वज्जना) ५ ४२ ६ [नञ्युपपदे पॄ पालनपूरणयो (क्र्या०) धातो शतृप्रत्यय]

अपृतन्यत् आत्मन पृतना युद्धमिच्छतीति (मेघ), प्र०—अत्र 'कव्यध्वरपृतनस्य०' अ० ७ ४ ३९. इत्याकारलोप १.३२ ७ [पृतना मनुष्यनाम निघ० २ ३ सग्रामनाम-निघ० २ १७ तत आत्मन इच्छाया क्यच् । 'कव्यध्वर पृतनस्य०' अ० ७ ४ ३९ सूत्रेणाकारलोप ततो लङ्]

अपेक्षन्ते समालोकन्ते १७ ६८ [अप+ईक्ष दर्शने (भ्वा०) धातोर्लट्]

अपेजते कम्पते ५ ४८ २ [अप+एजृ कम्पने (भ्वा०) धातोर्लट् एजति गतिकर्मा निघ० २ १४]

अपेत त्यजत १२ ४५ [अप+इण् गतौ (अदा०) धातोर्लोटि मध्यमबहुवचने]

अपेशसे अविद्यमान पेश सुवर्ण यस्य तस्मै नराय २९ ३७. दारिद्र्यविनाशाय ऋ० भू० ३०८ निर्धनता-दारिद्र्यादिदोषविनाशाय १ ६ ३ [पिश अवयवे (तुदा०) धातोरसुन् प्रत्यय । पेश हिरण्यनाम निघ० १ २ पेश रूपनाम निघ० ३ ७ पेश इति रूपनाम, पिशतेर्विपिशित भवति निघ० ८ ११ ततो नञ्बहुव्रीहि]

अपैति दूर गच्छति १ १२४ ८. प्राप्नोति १ १२३ ७ [अप+इण् गतौ (अदा०) धातोर्लट्]

अपो दूरीकरणे ३५ ११.

अपोच्छत् अपराद्ध विवासयति १ ४८ ८ [अप+उच्छी विवासे (भ्वा०) धातोर्लट्]

अपोदकाभिः अपगत उदकप्रवेशो यासु ताभि (नौभि) १ ११६ ३ अपगत दूरीकृतं जललेपो यासा ताभि. सचिवकणाभि (नौभि) ऋ० भू० १९० [अप-उदकपदयोर्बहुव्रीहि 'प्रादिभ्यो धातुजस्य०' वार्त्तिकेनोत्तरपदलोपश्च]

अपोर्णु दूरमाच्छादय १९ ५३ **अपोर्णोत्**=दूरीकर्त्तुमाच्छादयति १ ६२ ४ उद्घाटयति, प्रकाशयति, आच्छादकमन्धकार निवारयति १ १५६ ४ आच्छादयति २ ३४ १२. [अप+ऊर्णुञ् आच्छादने (अदा०) धातोर्लोटि लटि च रूपाणि हेर्लोपश्छान्दस]

अपोर्णुवन्तः निवारयन्त (सूर्यकिरणा) ४ ४५ २. अविद्यादिदोषैरनावरन्त (विद्वज्जना) १ १६० ६ [अप+ऊर्णुञ् आच्छादने (अदा०) धातो शतृप्रत्यय]

अपोवसानाः जलपात्राच्छादिता. (हरय =अग्न्यादयोऽश्वा) ऋ० भू० १९८ [अप जलनाम निघ० १ १२ वस आच्छादने (अदा०) धातो शानचि वसान तत समास]

अपोसुव दूर प्रेरय ३५ ११ [अपो=दूरीकरणे पुप्रसवैश्वर्ययो (भ्वा०) धातोर्लोट् व्यत्ययेन श प्रत्यय]

अपोहते अपसा सुवर्णेन प्राप्ते, भा०—सुवर्णादियुक्ते गृहे, प्र०—आप इति हिरण्यनाम निघ० १ २, २६ २६ [आप =हिरण्यम् हन हिंसागत्यो (अदा०) धातोर्गत्यर्थात् क्त-प्रत्यये हतम् तत समास]

अपोहामि दूर विविधतर्केण क्षिपामि २ १५ वर्जनतया विविधा शिक्षा करोमि २ १५ [अप+ऊह वितर्के धातोर्लट् 'उपसर्गादस्यत्यूह्योर्वा वचनम्' इति वा परस्मैपदम्]

अप्तुरम् योऽप प्राणान् जलानि वा तोरयति प्रेरयति तम् (अग्नि=विद्वज्जनम्) ३ २७ ११ प्राणप्रेरकम् (इन्द्र=राजानम्) ३ ५१ २. **अप्तुरः**=मनुष्याणामप प्राणान् तुतुरति विद्यादिबलानि प्राप्नुवन्ति प्रापयन्ति च ते (विश्वेदेवा =समस्ता विद्वज्जना), प्र०—अप शीघ्रार्थस्य तुरे क्विबन्त प्रयोग १ ३ ८ अप्स्वन्तरिक्षे त्वरन्ति ते (आशव =अश्वा) १ ११८ ४ प्राप्नुवन्त (मनीषिणो-जना) २ २१ १५ [अप इति निघण्टौ कर्मनाम, उदकनाम च, तस्मिन्नुपपदे तुर त्वरणे (जु०) धातोर्णिजन्तात् क्विप् णेर्लोप पर्णशुपिवत्]

अप्तुः व्यापक (मनुष्य) ५ ३५. [आप्नोति व्याप्नोति

सर्वान् पदार्थान् इति विग्रहे आप्लृ व्याप्तौ धातो 'आप्नोतेर्ह्रस्वश्च' उ० १ ७५ सूत्रेण तु प्रत्ययो धातोर् ह्रस्वश्च प्रजा वा अप्तुरित्याहु गो० उ० ५ ६]

अप्तूर्यम् कर्माऽनुष्ठानाय त्वरितव्यम् (अविरोधनम्) ३ १२ ८ [अप इति कर्मनाम। निघ० २ १. तुर त्वरणे (जु०) धातोर् ण्यत् 'हलि चे' ति दीर्घ]

अप्तूर्ये अपोभि कर्मभि प्रेरयितव्ये (व्यवहारे) ३ ५१ ६ ['अप्तूर्यम्' पदवत्]

अप्त्यस्य अप्तौ विस्तीर्णे ससारे भवस्य (किरणसमूहस्य) १.१२४ ५ [आप्लृ व्याप्तौ धातो 'आप्नोतेर्ह्रस्वश्च' उ० १ ७५ सूत्रेण तु प्रत्ययो ह्रस्वश्च। ततो भवार्थे यत् उकारलोपश्छान्दस]

अप्नवानः येऽप्नान् विद्यासन्तानान् कुर्वन्ति ते (अन्व०—विद्वांस) प्र०—अत्र अप्न इत्यस्मात् 'तत्करोति तदाचष्टे' अ० ३.१ २६ इत्यनेन वार्तिकेन करोत्यर्थे णिच्, ततो 'अन्येभ्योऽपि दृश्यन्ते, इति वनिप् 'अप्न' इति अपत्यनामसु पठितम् निघ० २ २, ३ १५ रूपवन्त (विद्वज्जना), प्र०—अत्र 'छान्दसो वर्णलोप' इति मतोस्तलोप: 'अप्न इति रूपनाम' निघ० ३ ५, १५ २६ पुत्रपौत्रादियुक्ता (भृगव = मनुष्या) ४ ७ १ सुसन्तानयुक्ता सुशिष्या ३३ ६ [आप्लृव्याप्तौ धातो' 'आप कर्माख्याया ह्रस्वो नुट् च वा' उ० ४ २०८ सूत्रेणासुन् प्रत्यये 'अप्न.' रूपम् आप्यते सुख येनेति विग्रह। अप्न कर्मनाम निघ० २.१ अपत्यनाम निघ० २ २ रूप नाम निघ० ३ ७ अप्न प्राति० 'तत्करोति' वार्तिकेन णिच् ततो वनिप् प्रत्यये प्रथमाबहुवचने रूपम् अथवा अप्नप्राति० मतुप् तकारलोपश्च अप्नवाना बाहुनाम निघ० २.४]

अप्नःस्थः अपत्यस्य (विद्याशिक्षासुबोध) ६.६७ ३. [अप्न इत्यपत्यनाम निघ० २ २. तस्मिन्नुपपदे 'सुपि स्थ.' इति क. प्रत्यय]

अप्नस्वतिषु प्रशस्तमप्नोऽपत्य विद्यते यासा तासु (वाणीषु) १ १२७ ६ **अप्नस्वतीम्**=प्रशस्ताऽपत्ययुक्ताम् (वाचम्=वाणीम्) १ ११२.२४ प्रशस्तान्यपासि कर्माणि विद्यन्ते यस्यास्ताम् (वाणी प्रज्ञा वा) ३४ २६ [अपत्यार्थक-अप्नस् प्राति० मतुप् 'मादुपधायाश्च०' अ० ८ २ ९ सूत्रेण मकारस्य वकार 'तसौ मत्वर्थे' इति भसज्ञाया पदसज्ञाबाधनाद् रुत्व न स्त्रिया ङीप् ह्रस्वश्च]

अप्नः अपत्यम् १ ११३ २० [अप्न पदनाम निघ० ४ ३ अप्न इति रूपनाम आप्नोतीति मत निघ० ३ ११. अपत्यनाम निघ० २ २]

अप्यम् अप्सु प्राणेषु भवाम् [भागम्=अशम्) २ ३८.७

अप्य: अप्सु सत्कर्मसु भव (सत्पुत्र) ६ ६७ ९. योऽपोऽर्हति (विद्यार्थी) १ १४५ ५ **अप्यानि**=अप्सु भवानि (पुरीषाणि=उदकानि) ६ ४९ ६ **अप्या:**=अप्सु भवा नौयायिनो मुक्ताद्या पदार्था वा ७ ३५ ११ अप्सु अन्तरिक्षे भवा (दिव:=ज्योतीषि) ३ ५६ ५ अप्सु भवा. (पदार्था) ६.५०.११ **अप्येभिः**=अप्सु भवै (मेघजलै) ४ ५५.६ [आप्लृ व्याप्तौ धातो 'आप कर्मा०' उ० ४ २०८ सूत्रेणासुनि 'अप.'। ततो भवार्थे यत् प्रत्यय। अप्सु भृतम् अद्भि सस्कृतमिति वा नि० ११ ३९ अप्या उदकानि निघ० ११.३६]

अप्येतु निश्चयेनैतु ८ ६१ [अपि+इण् गतौ (अदा०) धातोर्लोट्]

अप्रकेतम् रात्रिरूप मे जानने के अयोग्य (जगत्) स० प्र० २०७, १०.१२९ ३ [प्र+कि ज्ञाने धातोर्बाहुलकात् तन्। केत इति प्रज्ञानाम निघ० ३ ९ नञ्समास]

अप्रक्षितम् यन्न प्रक्षीयते तत् (वसु=धर्म) १ ५५ ८ [प्र+क्षि क्षये (भ्वा०) धातो क्त नञ् समास]

अप्रचेताः विद्याविज्ञानरहित (शत्रुजन.) १ १२० १. [चेत इति प्रज्ञानाम निघ० ३ ९ चिती सज्ञाने धातोरसुन् तत्प्रतिषेध.]

अप्रच्युतानि अविनश्वराणि (व्रतानि=सत्यभाषणादीनि) २.२८ ८ [प्र+च्युङ् गतौ (भ्वा०) धातो क्त. नञ्समास]

अप्रजाः अविद्यमाना प्रजा येषान्ते (अत्रिण = शत्रव] १.२१ ५ [प्रोपपदे जनी प्रादुर्भावे (दिवा०) धातो 'उपसर्गे च सज्ञायाम्' अ० ३ २ ९९ सूत्रेण ड प्रत्यय नञ्बहुव्रीहि]

अप्रति अप्रतीतानि यथा स्यात्तथा १ ५३ ६ अप्रत्यक्षेऽपि ७ २३ ३ **अप्रतीनि**=अप्रतीतानि (वृत्रा=मेघावयवान्) ४.१७ १९ अप्रतीतान्यपि (पुराणि=दुर्गुणानि) ६.३१ ४ अविद्यमाना प्रतीति. परिमाण येषान्तानि (धनानि) २.१९ ४]

अप्रतिधृष्टशवसम् न प्रतिधृष्यते शवो वल यस्य तम् (इन्द्र=प्रजासेनापतिम्) १ ८४ २ धृष्ट प्रगल्भ शवो वल येन तम्प्रतीति (इन्द्र=सेनारक्षकम्) ८ ३५. [प्रतिधृष्ट=प्रति+ञिधृषा प्रागल्भ्ये धातो क्त. शव इति वल-

नाम निघ० २ ६ ततो नञ्बहुव्रीहि]

अप्रतिधृष्याय अधर्षितु योग्यान् प्रति वर्त्तमानाय (वाताय=वायुवेगगतिविज्ञानाय) ३८ ७. [प्रति+ञिधृषा प्रागल्भ्ये धातो 'ऋदुपधाच्चा०' अ० ३ १ ११० सूत्रेण क्यप् नञ्समास]

अप्रतिपदम् अनिश्चितबुद्धिम् (दुष्टजनम्) ३० ८. [पद पद प्रतीति वीप्सायामव्ययीभाव । ततो नञ्समास]

अप्रतिष्कुतम् इतस्ततो लोकान्तरस्याऽभितो भ्रमण-रहितम् (अग्नि=वह्निम्) ३ २ १४ **अप्रतिष्कुतः**=सत्य-भाव-निश्चयाभ्या याचितोऽनुगृहीता स्वकक्षा विहायेतस्ततो ह्यचलितो वा (इन्द्र =ईश्वर सूर्यो वा) १ ७ ८ असञ्चलितो ऽविस्मृतो वा (इन्द्र =परमेश्वर सूर्यो वा) प्र०—यास्का-ऽऽचार्योऽस्यार्थमेवमाह—अप्रतिष्कुतो अप्रतिकृतोऽप्रति-स्खलितो वेति, निरु० ६ १६, १ ७ ६ अकम्पितो दृढ (मनुष्यगण) ५ ६ १३ इतस्तत कम्परहित (राजा) ७.३२ ६ असञ्चलित (इन्द्र.=सभाद्यध्यक्ष) १ ८४ ७ [नञ्+प्रति+कृञ् हिंसाया (स्वा०) धातो क्त सुडागमश्च स्खल सञ्चलने (भ्वा०) धातोर्वा क्त प्रत्यये धातो 'स्कु' आदेश अप्रतिष्कुतो ऽप्रतिष्कृतो ऽप्रतिस्खलितो वा। नि० ६ १६]

अप्रतिः अविद्यमाना प्रति प्रतीतिर्यस्य स (विद्वज्जन) ५ ३२ ३ [नञ्+प्रति+इण् गतौ+क्तिन् । पृषोदरा-दित्वात् तिलोप]

अप्रती अप्रतीतानि (वर्पांसि=सुन्दराणि रूपाणि) ६.४४ १४ [नञ्+प्रति+इण् गतौ+क्तिन् । पृषोदरा-दित्वात् 'ति' शब्दस्य लोप]

अप्रतीत ! यो न प्रतीयते तत्सम्बुद्धौ (शूर जन) १.१३३ ६ **अप्रतीतम्**=अदृश्यम् (अश्व=विद्युदग्निम्) १ ११७.६ अप्रज्ञातम् (सह =बलम्) ४४२ ६ यश्च-क्षुरादीन्द्रियैर्न प्रतीयते तमगोचरम् १ ३३ २ अधर्मिभिर-प्राप्तम् (बलम्) ५.३३ ७ **अप्रतीतस्य**=प्रतीत्यविषयस्य (राज्ञ) ५ ४२ ६ **अप्रतीतः**=य शत्रुभिरप्रतीयमान (महान् राजा) ६ ७३ ३ अप्रत्यक्ष (विद्युदग्नि) ५ ३२.८. शत्रुभिरपराजित (राजा=नृपति) ४ ५० ६ शत्रुभिरज्ञात (इन्द्र =राजा) ६ २०.६. प्रसिद्धिमप्राप्त. (इन्द्र =विद्युद्रूपो-ऽग्नि) ३.४६ ३ **अप्रतीता**=अप्रतीतगुणौ (होतृयजमानौ) ८.५६ [नञ्+प्रति+इण् गतौ (अदा०) धातो क्त]

अप्रथतम् प्रख्यापयतम् ६ ६६ ५ प्रथेयाथाम् ६ ७२.२ **अप्रथन्त**=प्रथयन्ति ७ ३३ ६. **अप्रथयः**= प्रथय १ ६२.५. **अप्रथिष्ट**=प्रथताम् २ ११ ७ = **अप्रथेताम्**=प्रख्याते भवेताम् १७ २५ [प्रथ प्रख्याने (भ्वा०) धातोर्लङ्]

अप्रदुग्धाः न केनाऽपि प्रकर्षतया दुग्धा (धेनव = वाच) ३ ५५ १६ जो किसी ने दुही न हो वे (धेनव = गौवे) स० प्र० ११०, ३ ५५ १६ [नञ्+प्र+दुह प्रपूरणे (अदा०) धातो क्त]

अप्रदृपितः न प्रमोहित (विद्वज्जन) १ १४५ २. [नञ्+प्र+दृप हर्पणमोहनयो (दिवा०) धातो क्त]

अप्रमादम् प्रमादरहितम् ३४ ५५ [नञ्+प्र+मदी हर्षे (दिवा०) धातोर्भावे घञ् 'प्रमदसम्मदौ हर्षे' निपातनाद् हर्षादन्यत्र घञ् । अप्रमादम्=अप्रमाद्यन्त नि० १२.३७]

अप्रमूराः मूढत्वरहिता धार्मिका (सज्जना), प्र०—अत्र वर्णव्यत्ययेन ढस्य स्थाने रेफादेश १ ६० २ [नञ्+प्र+मुह वैचित्ये, वैचित्यमविवेक तत क्त. हस्य ढत्वे धत्वे ष्टुत्वे ढलोपे पूर्वस्य दीर्घे रूपम्]

अप्रमृष्यम् अविचारणीयम् (अर्थं=द्रव्यम्) ६ ३२ ५ सोढुमनर्हम् (शत्रुम्) २ ३५ ६ अप्रसह्यम् (दात्र=दानम्) ६ २० ७ शत्रुओ को सहने के अयोग्य (ब्रह्मचर्य से प्राप्त हुए शरीरात्मबलयुक्त देह को) स० वि० १०४, २ ३५ ६ **अप्रमृष्यः**=परैर्न प्रमर्पणीय (अग्नि =विद्वान्) ४ २ ५ [नञ्+प्र+मृष तितिक्षायाम् (दिवा०) धातो 'ऋदुप-धाच्चा०' सूत्रेण क्यप्]

अप्रयावम् प्रयुवन्त्यन्याय यस्मिन् स प्रयावो, न विद्यते प्रयावो यस्मिन् गृहाश्रमे तम् ११ ७५ [प्र+यु मिश्रणे (अदा०) धातोरधिकरणे 'हलश्चे' ति घञ् । नञ्समास]

अप्रयुच्छद्भिः प्रमादरहितैर्विद्वद्भि (जनै) १ १४३ ८

अप्रयुच्छन्=प्रमादमकुर्वन् (सज्जन) ५ ८२ ८ अप्रमाद्यम्, अन्व०—प्रमाद विहाय (अग्नि =पावक इव सेनापति) १५ ५२ अप्रविवासयन् (अग्नि = विद्वज्जन) ५.४ प्रमादमकुर्वन् अप्रमाद्यन् वा (अग्नि = पावक) ४ १४ [प्र+युच्छ प्रमादे (भ्वा०) धातो शतृ-प्रत्यय]

अप्रयुत्वभिः अविभक्तै (शुभगुणै) ६ ४८ १० [प्र+युतृ भासने (भ्वा०) धातो क्वनिप् । नञ्समास धातूनामनेकार्थत्वादत्र विभागेऽपि]

अप्रवीता अगच्छन्ती (स्त्री) ४ ७ ६ **अप्रवीताः**= अव्याप्ता परिच्छिन्ना (प्रजा) ३ ५५ ५ [प्र+वी गति-प्रजनकान्त्यसनखादनेषु (अदा०) धातो क्त । नञ्समास]

अप्रशस्ता इव यथा न प्रशस्ता अप्रशस्तास्तया वर्त्तमाना वयम् (ब्रह्मचारिण्य कुमार्य) २ ४१.१६
अप्रशस्ताः=प्रशस्तसुखरहिता (विश=प्रजा) ४ २८ ४
अप्रशस्तान्=निन्द्यकर्माऽऽचारिण (दुर्जनान्) १ १६७ ८ [प्र+शसु स्तुतौ (भ्वा०) धातो क्त । नञ् समास । शसति अर्चतिकर्मा निघ० ३ १४]

अप्रहणम् योऽन्यायेन कश्चिन्न प्रहन्ति (इन्द्र=दुष्टाचारि-शत्रुविनाशक नृपम्) ६ ४४ ४ [प्र+हनहिंसागत्यो. (अदा०) धातो कर्त्तरि क्विप् नञ्समास । 'हन्तेरत्पूर्वस्य' अ० ८ ४ २२ सूत्रेण णत्वम्]

अप्रायि पूर्यन्ते ३४ ३२ [प्रा पूरणे (अदा०) धातो कर्मणि लुङ् अप्रायि आपूपुर नि० ६ २७]

अप्रायु यन्न प्रैति नश्यति तत् (रयिं=धनम्) ५ ८० ३
अप्रायुवः=न विद्यते प्रगत प्रणष्ट आयुर्बोधो येषान्ते (देवा=विद्वज्जना) प्र०—'जसादिषु छन्दसि वा वचनम्' इति गुणविकल्पात् 'यडादिप्रकरणे तन्वादीना छन्दसि बहुलमुपसङ्ख्यानम्' इति वार्त्तिकेनोवङादेश १ ८९ १. अनष्टाऽऽयुष (देवा=विद्वज्जना) २५ १४ [प्र+इण् गतौ (अदा०) धातो 'छन्दसीण' उ० १ २. सूत्रेण उण् प्रत्यय नञ्समास । अप्रायुवो ऽप्रमाद्यन्त नि० ४ १९]

अप्रायुषे य प्रैति स प्रायुट् न प्रायुड् अप्रायुट् तस्मै (प्रजाजनाय) १ १२७ ५ [प्रोपपदे इण् गतौ धातो 'एतेर्णिच्च' ० २ ११८ सूत्रेण 'उसि' प्रत्यय नञ्समास]

अप्राः प्रपूर्द्धि १ ५२ १३ व्याप्नोति १२ १३ पूरितवान् १ ११५ १ प्राति व्याप्नोति ४ ५२ ५ पिपृहि ६ २ प्राति पिपर्त्ति, प्र०—अत्र लडर्थे लुङ् ७ ४२ [प्रा पूरणे (अदा०) धातोर्लुङ् 'मन्त्रे घसह्वरणश०' अ० २ ४ ८० सूत्रेण लेर्लुक्]

अप्रियायत प्रिय इवाऽऽचरति ३ ५३ ९ ['प्रिय' इति सुबन्तात् 'कर्त्तु क्यङ् सलोपश्च' अ० ३ १ ११ सूत्रेण क्यङ् आचारेऽर्थे]

अप्वे याऽपवाति शत्रुप्राणान् हिनस्ति तत्सम्बुद्धौ (अन्व०—शूरवीरे राजस्त्रि क्षत्रिये !), प्र०—अत्र अपपूर्वाद्वाते 'अन्येभ्योऽपि दृश्यते' इति क्विप्, अकारलोपश्छान्दस १७ ४४ [अप+वा गतिगन्धनयो (अदा०) धातो क्विप् अपोऽकारलोपश्च छान्दस अप्वे अप्वा यदेनया विद्धोऽपवीयते व्याधिर्वा भय वा नि० ६ १२]

अप्सन्त प्राप्नुवन्तु, प्र०—अत्र प्साधातोर्लङि 'छन्दस्युभयथा, इत्यार्धधातुकत्वाद् 'आतोलोप इटि च' इत्याकारलोपश्च 'प्सातीति गतिकर्मा' निघ० २ १४, १ १००.८ [प्सा भक्षणे (अदा०) धातोर् लट् व्यत्ययेनात्मनेपदम् धातूनामनेकार्थत्वादत्र गत्यर्थ आकारलोपश्चार्धधातुकत्वाद्]

अप्सरसः या अन्तरिक्षे जलादौ च सरन्ति गच्छन्ति ता, भा०—चेष्टाना जनका (आप=प्राणरूपा) १८ ४१ गन्धर्वाणा स्त्रिय ऋ० भू० १३६ या अप्सु व्याप्तेषु प्राणादिपदार्थेषु सरन्ति गच्छन्ति ता (क्रिया) १८ ४३ या अप्सु प्राणेषु सरन्ति प्राप्नुवन्ति ता (दक्षिणा) १८ ४२ या अप्स्वन्तरिक्षे सरन्ति गच्छन्ति ता (मरीचय.=किरणा) १८ ३९ या अप्सु सरन्ति ता (ओषधय) १८ ३८ आकाशगता किरणा १८ ४० अन्तरिक्षस्थवाद्वायो ७ ३३ १२ **अप्सरसाम्**=किरणादीनाम् २४ ३७.
अप्सरसौ=येऽप्सु प्राणेषु सरन्त्यौ गच्छन्त्यौ ते (प्रधान दिशोपदिशे) १५ १५ [अप+सृ गतौ धातो 'सर्त्तेरप्पूर्वादसि' उ० ४ २३७ सूत्रेण असि प्रत्यय. । उपसर्गान्त्यलोपश्छान्दस अथवा 'अपस्' इति जलनाम, तेषु सरन्तीति विग्रहे=अप+सृ+असि अपोऽकारलोप अथवा न प्सान्ति भक्षयन्ति रक्षा कुर्वन्तीति विग्रहे=नञ्+प्सा भक्षणे (अदा०) धातोर् असि प्रत्यय प्रत्ययस्य रुडागमश्च, स्त्रीलिङ्गश्च अप्सरा अप्सारिणी, अपि वाऽप्स इति रूपनामाप्सातेरप्सानीय भवत्यादर्शनीय व्यापनीय वा स्पष्ट दर्शनायेति शाकपूणि 'यदप्स' इत्यभक्षस्य 'अप्सो नाम' इति व्यापिन तद्रा भवति रूपवती, तदनयात्तम् इति वा तदस्यै दत्तमिति वा नि० ५ १३ गन्ध इत्यप्सरस (उपासते) श० १० ५ २ २० तस्य (वातस्य) आपोऽप्सरस श० ९ ४.१ १०. तस्य (यज्ञस्य) दक्षिणा अप्सरस श० ९ ४ १ ११ तस्य (चन्द्रमस) नक्षत्राण्यप्सरस श० ९ ४ १ ९ तस्य (सूर्यस्य) मरीचयोऽप्सरस श० ९ ४ १ ८ तस्य (मनस) ऋक्सामान्यप्सरस श० ९ ४ १ १२ तस्य (अग्ने) ओषधयोऽप्सरस श० ९ ४ १ ७ गन्धेन च वै रूपेण च गन्धर्वाप्सरसश्चरन्ति श० ९ ४ १ ४ कि नु तेऽस्मासु (अप्सरस्सु) इति जै० उ० ३.२५ ८ सोमो वैष्णवो राजेत्याह तस्याप्सरसो विशस्ता इमा आसत इति युवतय शोभना उपसमेता भवन्ति श० १३.४ ३ ८]

अप्सवः कुरूपा (कृतघ्ना पुरुषा) ७ ४ ६ [अप्स इति रूपनाम निघ० ३ ७ ततो मत्वर्थे निन्दाया 'व प्रकरणेऽन्येभ्योऽपि दृश्यते' अ० ५ २ १९. वार्त्तिकेन व प्रत्यय]

अप्सः रूपम् प्र०—'अप्स इति रूपनाम' निघ०

३ ७, १ १२४ ७ सुरूपम् ५ ८० ७ न विद्यते परपदार्थस्याऽप्सो भक्षण यस्य स (सज्जन) १५ ३ [अप्स रूपनाम निघ० ३ ७ अप्स रूपाणि नि० ३ ५ अप्स इति रूप नामाप्सातेरप्सानीय भवत्यादर्शनीय, व्यापनीय वा, स्पष्ट दर्शनायेति शाकपूणि 'यदप्स' इत्यभक्षस्य 'अप्सो नाम' इति व्यापिन नि० ५ १३]

अप्साम् योऽप्सो जलानि सनुते तम् (सेनाद्यध्यक्षम्) १ ६१ २१ योऽप्सो जलानि प्राणान् सनोति ददाति तम् (राजान मेनापतिं वा) ३४ २० सत्कर्मणा विभक्तारम् (वीर=शूरपुरुषम्) ६ १४ ४ [अप् उपपदे षण् सम्भक्तौ धातो 'जनसनखन०' अ० ३ २ ६७ सूत्रेण विट् 'विड्वनोरनुनासिक०' अ० ६ ४ ४१ सूत्रेणाकारादेश]

अप्सु विद्याव्यापकेषु वेदादिषु १ ११७ ४ [आप्लृव्याप्तौ धातोर् 'अप्' इति तस्या सप्तमीबहुवचने]

अप्सुक्षितः येऽप्सु क्षियन्ति निवसन्ति ते (एकादश = दशेन्द्रियाणि मनश्च) १ १३९ ११ प्राणेषु क्षियन्ति निवसन्ति ते (एकादश =दशप्राणादयो जीवश्च) ७ १६ [अविति सप्तम्युपपदे क्षि निवासगत्यो (तुदा०) धातो क्विपि लुकि प्रथमबहुवचने रूपम् 'तत्पुरुषे कृति बहुलम्' इति सप्तम्या अलुक् च]

अप्सुजाः प्राणेषु जायमान (ब्रह्मा=महान् योगी विद्वज्जन) २३ १४ ['अप्सु' उपपदे जनी प्रादुर्भावे धातो 'जनसन०' इति विट् । 'विड्वनो' इत्याकारादेश । सप्तम्याश्चालुक्]

अप्सुसदम् योऽप्सु प्राणेषु जलेषु वा सीदति तम् ३ ३ ५ जलेषु गच्छन्तम् (चक्रवर्त्तिन राजानम्) ६ २ **अप्सुसदे**=यो जलेषु नौकादिषु सीदति तस्मै (नौयायिने विद्वज्जनाय) १७ १२ ['अप्सु' उपपदे 'सद्लृ विशरणगत्यवसादनेषु' धातो क्विपि द्वितीयैकवचने रूपम् सप्तम्याश्चाऽलुक्]

अफलाम् धर्म्येश्वरविज्ञानाऽऽचारविरहाम् (वाचम्) ऋ० भू० ३१७, १० ७१ ५ अर्थ, काम और मोक्ष फलो से रहित (वाणी) प० त्रि० । **अफलाः**=अविद्यमानफला (ओषधय) १२ ८६ [फलतीति फलमिति विग्रहे 'फल निष्पत्तौ' (भ्वा०) धातोरच् प्रत्यय । नञ्बहुव्रीहि अफलाम् अफलाऽस्मै वाग्भवतीति नि० १ १०८]

अवधीत् हन्ति १ १८ [हन हिसागत्यो (अदा०) धातोर्लुङ् । 'लुङि चे' ति हनो वधादेश]

अवध्नन्तो अत्यन्त दुःखयन्ती (ओषधी) १ १६१ २ [बन्ध बन्धने (क्र्या०) धातो शतृप्रत्यय । स्त्रिया ङीप्]

अवध्नन् बध्नन्ति ३१ १५ ध्यानेन बध्नन्ति ऋ० भू० १२८ बध्नीयु ३४ ५२ [बन्ध बन्धने (क्र्या०) धातोर्लङ् 'अनिदिताम्' ति नकारलोप]

अवन्धनः यो बध्नाति तद्भिन्न. (वरुण =परमात्मा) ३ ५५ ६ [बन्ध बन्धने (क्र्या०) धातोर्बहुलवचनात् कर्त्तर्यपि ल्युट् । नञ्समास नन्द्यादित्वाद्वा ल्यु.]

अबन्धुना अविद्यमाना बन्धवो मित्रा यस्य तेनाऽर्येन सह १ ५३ ६ [नञ्-बन्धुपदयोर्बहुव्रीहि.]

अवलाः अविद्यमान बल यासान्ता (सेना) ५ ३० ६. [नञ्-बलपदयोर्बहुव्रीहि]

अबाधेथाम् बाधेयाम् ४ २८.४ [बाधृ विलोडने (भ्वा०) धातोर्लङ्]

अबिभ्यत् बिभेति ६ २३ २ [ञिभी भये (जु०) धातोर्लङि रूपम्]

अबिभ्युषः बिभेति यस्मात् स बिभीवान्, न बिभीवान् अविभीवान् तस्य (बलस्य=मेघस्य) १ ११ ५ भयरहितस्य १ ११ ५. **अबिभ्युषा**=भयनिवारणहेतुना किरणसमूहेन वायुगणेन सह वा (इन्द्रेण=परमेश्वरेण सूर्येण) वा १ ६ ७ [ञिभी भये (जु०) धातो 'क्वसुश्च' अ० ३ २ १०७ सूत्रेण छन्दसि क्वसु । 'एरनेकाच०' इति यण् इति 'वसो सम्प्रसारणम्' इति सम्प्रसारणम् 'शासिवसि०' इति षत्वम् नञ्समास]

अबीभयन्त भीषयन्ते, प्र०—अत्र लडर्थे लुङ् १ ३९.६ [ञिभी भये (जु०) धातोर्णिजन्ताल्लुङ् 'णिश्रीद्रु०' इति च्लेश्चङि द्वित्वे रूपम्]

अबुध्ने अन्तरिक्षसादृश्ये स्थूलपदार्थे, प्र०—बुध्नमन्तरिक्ष बद्धा अस्मिन् धृता आप इति निरु० १० ४२ १.२४ ७ [बन्ध बन्धने धातो. 'बन्धेर्ब्रधिबुधी च' उ० ३ ५ सूत्रेण नक् धातोर्बुधादेशश्च]

अबुध्यम् बुद्धिरहितम् (अधार्मिक जनम्) ४ १६ ३ [बुध अवगमने (भ्वा०) धातोरिगुपधलक्षणे क-प्रत्यये बुध = विद्वान् ततो भवार्थे यत् । नञ्समास]

अबुध्यमानम् उपदेशेनाऽपि अजानन्तम् (अधार्मिकञ्जनम्) ४ १६ ३ **अबुध्यमानाः**=बोधरहिता (स्त्रिय) ४ ५१ ३ **अबुध्यमाने**=बोधनिवारके शरीरमनसी आलस्ये कर्मणि ये १ २९.३ [बुध अवगमने धातो कर्मणि शानच् नञ्समास]

अबुभोजीः आकर्षणेन न्यायेन वा पालयसि पालयति

ङ्गीटभाव ३ ३३ ४ [सर्ग-तक्तपदयोः समासः । सर्ग उदकनाम निघ० १ १२ तिक्त =तञ्चू सङ्कोचने (भ्वा०) धातोः क्त । अथवा तक हसने (भ्वा०) धातोः क्त]

सर्गप्रतक्तः यः सर्गमुदकं प्रतनक्ति सङ्कोचयति सः (सिन्धुः) १ ६५ ३ [सर्ग-प्रतक्तपदयोः समासः । प्रतक्त = प्र+तञ्चू सङ्कोचने (भ्वा०) धातोः क्त]

सर्गम् उदकम् ७ १८ ११ **सर्ग**.=उत्पत्ति २ ३०.१ सृष्टि १ १६० २ **सर्गा**.=उत्पद्यमाना (उदग =प्रातर्वेला) ४ ५१ ८ स्रष्टु योग्या (पदार्था) १ १५० १ सृष्टय ४ २३ ६ **सर्गे** =उत्पादुमर्हे (पवि) ६ ४६ १३. **सर्गेण**=संसर्जनीयेन (सबला बलेन) ६ ३२ ५ **सर्गेषु**= सृष्टेषु कार्येषु ८ ३ १२ **सर्गाः**=संसृष्टं (विषयैः) १ १६६ ७ [सर्गा उदकनाम निघ० १ १२ सृज विसर्गे (दिवा०) धातोर्घञ्]

सर्गमिव उदकमिव ५ ५६ ५ [सर्गम्-इवपदयोः समासः । सर्गा उदकनाम निघ० १ १२]

सर्त्तवे सर्त्तुं गन्तुम्, अ०—अत्र 'तुमर्थे सेसेन०' इति तुमर्थे तवेन् प्रत्ययः १.३२ १२ [सृ गतौ (भ्वा०) धातोस्तुमर्थे तवेन्]

सर्त्तवै सर्त्तुं ज्ञातुं गन्तुं वा १ ५५ ६ सर्त्तवे गन्तवे ३ ३२ ६ [सृ गतौ (भ्वा०) धातोस्तुमर्थे तवै.]

सर्पत गच्छत १२ ४५ **सर्पति**=गच्छति २३.५६. **सर्पामि**=चलामि १० ३० [सृप्लृ गतौ (भ्वा०) धातोर्लोट् । अन्यत्र लट् । सर्पति गतिकर्मा निघ० २ १४]

सर्पदेवजनेभ्यः सर्पाश्च देवजनाश्च तेभ्यः ३० ८. [सर्प-देवजनपदयोः समासः]

सर्पाः ये सर्पन्ति तेऽहयः १५ १७ **सर्पेभ्यः**.=ये सर्पन्ति गच्छन्ति ते सेवकास्तेभ्यः, भा०—दस्युभ्यो नागेभ्यो वा १३ ७ दुष्टप्राणिभ्यः १३ ८ ये सर्पन्ति गच्छन्ति ते लोकास्तेभ्यः १३ ६ [सृ गतौ (भ्वा०) धातोर्बाहु० औणा० प । सर्पा =इमे वै लोका सर्पास्ते ह्यनेन सर्वेण सर्पन्ति यदिदं किं च श० ७ ४ १ २५ देवा वै सर्पा । तेषामियं (पृथिवी) राज्ञी तै० २ २ २ ६ रज्जुरिव हि सर्पा कूपा इव हि सर्पाणामायतनानि, अस्ति वै मनुष्याणां च सर्पाणां च विभ्रातृव्यम् श० ४ ४ ५ ३]

सर्पिरासुतिः सर्पिषो घृतादेरासुति सवन यस्य सः (पति) ११ ७०. सर्पिरासुतिर्यस्य सः (अग्नि) २ ७.६ **सर्पिरासुते**=सर्पिषा समन्तात्प्रदीपिते (यज्ञ-कुण्डे) ५ २१.२ सर्पिभि सर्वतो जनिते (उपकारे) ५ ७६ [सर्पिष्-आसुतिपदयोः समासः । सर्पिष् उदकनाम निघ० १.१२ आसुति =आङ्+षुञ् अभिषवे (स्वा०) धातोः क्तिन्]

सर्पिषः घृतादेः ५ ६ ६ घृतस्य १५ ४३. आज्यस्य १५.४० गन्तुं प्राप्तुमर्हस्य (घृतस्य) १.१२७ १ [सृप्लृ गतौ (भ्वा०) धातोः 'अर्चिशुचिहुसृपि०' उ० २ १०८ सूत्रेण इसि । सर्पिः उदकनाम निघ० १.१२]

सर्माय गन्त्रे (मनवे) १ ८० ५ [सृ गतौ (भ्वा०) धातोर्बाहु० औणा० मन्]

सर्वगणम् सर्वे गणा गण्या प्रशंसनीया पदार्था यस्मात्तत् (अपत्यम्) १६ ४८ सर्वे गणा यस्मिँस्तत् (लोकम्) १ ११६ ८ सर्वे गणा समूहा यस्मिँस्तम् (बृहस्पतिं=विद्वज्जनम्) ५ ५१ १२. [सर्व-गणपदयोः समासः । सर्वगणम्=सर्वनामानम् नि० ६.३६]

सर्वतः सर्वस्माद्देशात् ३१ १ सर्वाभ्यो दिग्भ्य. सर्वेभ्यो देशेभ्यो वा २० ८ अन्तराभ्य (दिग्भ्य) ६ ३६ [सर्वंसर्वनाम्न प्राति० पञ्चम्यन्तात् तसिल् 'पञ्चम्यास्तसिल्' सूत्रेण]

सर्वतातये सम्पूर्णसुखसाधकाय यज्ञाय, सर्वसुखकराय वा (यज्ञाय) ६ ५६ ६ सर्वस्मै सुखाय १ १०६ २ **सर्वतातिम्**=सर्वमेव (श्लोक=वाचम्) ३.५४.११. [सर्वप्राति० स्वार्थे 'सर्वदेवात् तातिल्' अ० ४ ४ १४२. सूत्रेण तातिल् । सर्वतातिप्राति० चतुर्थ्येकवचनम्]

सर्वताता सर्वताती सर्वस्मिन् व्यवहारे, अ०—अत्र 'सर्वदेवात्तातिल्. अ० ४ ४ १४२. इति सूत्रेण सर्वशब्दात् स्वार्थे तातिल्-प्रत्यय 'सुपां सुलुक्०' इति सप्तम्या डादेश १ ६४ १५ सर्वस्मिन्नेव सङ्गन्तव्ये जगति ४ २६ ३. सर्वेषां सुखप्रदे यज्ञे ५ ६३ ३ सवतेव (अनागान्=अनपराधिप्रजाजनान्) ३ ५४ १६. राजपालनाख्ये यज्ञे ७ १८ १६ सर्वसुखकरे शिल्पमये यज्ञे ६ १५.१८ [सर्वतातिरिति पूर्वपदे व्याख्यातम् । तत 'सुपां सुलुक्०' इति सप्तम्या डादेश । सर्वताती=सर्वासु कर्मततिषु नि० ११.२४]

सर्वतातेव सर्वेषां वर्द्धको यज्ञ इव ६ १२ २ [सर्वताता-इवपदयोः समासः । सर्वताता इति व्याख्यातम्]

सर्वतोमुखः सर्वतो मुखाद्यवयवा यस्य सः (देव = ईश्वर) ३२ ४. [सर्वतस्-मुखपदयोः समासः]

सर्वधातमम् य सर्वं दधाति सोऽतिशयितस्तम् (तुर=सामर्थ्यम्) ५ ८२ १ [सर्वधाप्राति० अतिशायने

वाक् तु सरस्वती ऐ० ३ १ सरस्वती वाचमदधात् तै० १ ६ २ २. अथ यत्स्फूर्जयन् वाचमिव वदन् दहति तदस्य (अग्ने) सारस्वत रूपम् ऐ० ३ ४ सा (वाक्) ऊर्ध्वोदातनोद् यथापा धारा सततैवम् (सरस्वती=वाक्) ता० २० १४ २ जिह्वा सरस्वती श० १२ ६ १ १४ (यजु० ३८ २) सरस्वती हि गौ श० १४ २ १ ७ अमावस्या वै सरस्वती गो० उ० १ १२ मारस्वतमेपम् (आलभते) तै० १ ८ ५ ६ अविर्मल्हा (गलस्तनयुता इति सायण) सारस्वती श० ५ ५ ४ १. वर्षा शरदौ सारस्वताभ्याम् (अवरुन्धे) श० १२ ८ २ ३४ योषा वै सरस्वती वृषा पूषा श० २ ५ १ ११ सरस्वती (श्रिय) पुष्टिम् (आदत्त) श० ११ ४ ३.३ सरस्वती पुष्टि पुष्टिपत्नी तै० २ ५ ७ ४ सरस्वती पुष्टि पुष्टिपति श० ११ ४ ३ १६ सर्वे (प्रैषा) सारस्वता अन्नाद्यस्येवावरुद्धचै श० १२ ८ २ १६ एषा वा अपा पृष्ठ यत् सरस्वती तै० १ ७ ५.५ ऋक्सामे वै सारस्वतावुत्सौ तै० १ ४ ४ ९ सरस्वत्यै दधि श० ४ २ ५ २२ अन्तरिक्ष सारस्वतेन (अवरुन्धे) श० १२ ८ २ ३२. सरस्वतीति तद् द्वितीय वज्ररूपम् कौ० १२ २ अथ यत् (अक्ष्ण) कृष्ण तत्सारस्वतम् श० १२ ९ १ १२]

सरस्वतिकृतस्य विदुष्या स्त्रिया कृतस्य भा०—सुशिक्षिता-निष्पादितस्य (अन्नस्य) प्र०—अत्र 'स्वार्थेऽण् सञ्ज्ञाछन्दसोर्वहुलम्' इति पूर्वपदस्य ह्रस्व २० ३५ [सरस्वती-कृतपदयो समास]

सरस्वती सरो वहुविज्ञान विद्यते ययोस्तौ (अश्विना=वैद्यकविद्यावेत्तारौ स्त्रीपुरुषौ) २० ५९ वहुविज्ञानयुक्तौ (अध्यापकोपदेशकौ) ६ ५० १२ [सरस्वतीति व्याख्यातम् । ततो द्विवचनस्य पूर्वसवर्णदीर्घश्छान्दस]

सरस्वते समुद्राय २४ ३३ **सरस्वन्तम्**=सरास्युदकानि वहूनि विद्यन्ते यस्मिँस्तम् (सूर्यम्) १ १६४ ५२ [सर उदकनाम (निघ० १ १२) ततो भूम्न्यर्थे मतुप् । मनो वै सरस्वान् श० ७ ५ १ ३१ स्वर्गो लोक सरस्वान् ता० १६ ५ १५ पौर्णमास सरस्वान् गो० उ० १ १२]

सरः सरन्ति जलानि यस्मिँस्तडागे तत् २३ ४७ भा०—जलाशय २३ ४८ **सरांसि**=सरन्ति येपु जलानि तान्यन्तरिक्षादीनि ६ १७ ११ मेघमण्डलभूम्यन्तरिक्षस्थानानि (जलस्थानानि) ५ २९ ८ तडागान् ३० १६ **सरोभ्यः**=तडागेभ्य ३० १६ [सृ गतौ (भ्वा०) धातोरौणा० असुन् . सर उदकनाम निघ० १ १२ वाङ्नाम निघ० १ ११]

सरातय समाना रातयो दानानि येपान्ते (देवास=विद्वज्जना) ३३ ९४ [समान-रातिपदयो समासे समानस्य सादेश]

सरित् या सरति गच्छति सा (सरस्वती=वाणी) ३४ ११ **सरितः**=नद्य १३ ३८ [सरित नदीनाम निघ० १ १३ सृ गतौ (भ्वा०) धातो 'हृसृरुहि०' उ० १ ९७ सूत्रेण इति]

सरिरम् जलमिव सरलता कोमलता १५ ४ **सरिरस्य**=सलिलस्योदकस्य, प्र०—कपिलकादित्वाद्रेफ १३ ४२ अन्तरिक्षस्य १३ ४९ वहो (भा०—पूर्णसमुद्रस्य), प्र०—सरिरमिति वहुनाम निघ० ३ १, १७ ८७ **सरिराय**=कमनीयाय (उदकाय) २२ २५ **सरिरे**=वाचि १३ ५३ [पल गतौ (भ्वा०) धातो 'सलिकल्यनिमहि०' उ० १ ५४ सूत्रेण इलच् । कपिलकादित्वाद् रेफ । सरिरम् वहुनाम निघ० ३ १ सरिरम् (यजु० १३ ४२) आपो वै सरिरम् श० ७ ५ २ १८ (यजु० १३ ४९) इमे वै लोका सरिरम् श० ७ ५ २ ३४ (यजु० १३ ५३) वाग्वै सरिरम् श० ७ ५ २ ५३ (यजु० १५ ४) वाग्वै सरिर छन्द श० ८ ५ २ ४]

सरिष्यन् गमिष्यन् (पर्वत=मेघ) २ ११ ७ **सरिष्यन्तम्**=सर्वान् पदार्थानन्तरिक्ष गमिष्यन्तम् (भौतिकमग्निम्) २ ७ **सरिष्यन्तः**=प्राप्स्यन्त (वाजिन=योद्धृजना) ९ ९ [सृ गतौ (भ्वा०) धातो 'लृट सद्वा' इति शतृ]

सरी सरति जानाति य स सर, प्रशस्तो विद्यते यस्य स (विद्वज्जन) १ ११३८ ३ [सरप्राति० प्रशसायामर्थ इनि. । सर=सृ गतौ (भ्वा०) धातो पचाद्यच्]

सरीमणि गमनाख्ये व्यवहारे ३ २९ ११ [सृ गतौ (भ्वा०) धातोर्वाहु० औणा० ईमनिन्]

सरीसृपेभ्यः सर्प्पादिभ्य २२ २९ [सृप्लृ गतौ (भ्वा०) धातोर्यङन्तात् पचाद्यचि 'यङोऽचि चे' ति यङो लुकि 'न धातुलोप आर्धधातुके' सूत्रेण गुणप्रतिपेधे च रूपम्]

सरूपा समान रूप यस्या सा (नारी) ४ १९ १० **सरूपाः**=समान रूप यासान्ता (वत्सतर्य=गोवत्सा) २४ ५ [समान-रूपपदयोः समासे, स्त्रिया टापि, समानस्य सादेशे च रूपम्]

सर्गतक्तः जलस्य सङ्कोचक (सज्जन), प्र०—सर्ग इत्युदकनाम निघ० १ १२, ३ ३३ ११ य सर्ग उत्पत्तौ तक्तो हसित (प्रसव=सन्तान), प्र०—अत्र 'वाच्छन्दमि'

विद्याजनितस्य कार्यस्य ४ ३६ २ कर्मविशेषस्य ३ ५२ ५ **सवनानि**=प्रेरणानि ७ ३२ ६ **सवने**=सत्कर्मणि ४ ३३ ११ उत्पत्त्यधिकरणे जगति २७.२८ क्रियाविशेष-यज्ञे ४ १६ ७ सुन्वन्ति निष्पादयन्ति येन कर्मणा तस्मिन् ८ २६ २ भोजन-समये ५ ४० ४ सायकाले कर्त्तव्ये कर्म्मणि ३ ५२ ६ सङ्ग्रामे ६ ६ ऐश्वर्ययुक्ते राज्ये ३.६० ६ होमादिकर्मणि ३ २८ ४ [पु प्रसवैश्वर्ययो (भ्वा०) (अदा०) पुञ् अभिषवे (स्वा०) धातो करणे-ऽधिकरणे वा ल्युट्। सवनम् यज्ञनाम निघ० ३ १७ स्थानानि नि० ५ २५]

सवना ऐश्वर्ययुक्तानि वस्तूनि, प्र०—पु प्रसवैश्वर्ययो इत्यस्माद्धातोर्ल्युट्प्रत्यय ३ ३ ११४ 'शेश्छन्दसि बहुलम्' इति शेर्लुक् १ ८ २ सुन्वन्ति यैस्तानि (अध्वरकर्माणि) १ ४७ ८ सवनानि यज्ञसाधककर्मण्यैश्वर्याणि, कर्माणि प्रेरणानि वा ७ २७ ६ ओषधिनिर्माणानि ७ २२ ७ ऐश्वर्यसाधनानि (कर्म्माणि) ३ १ २० सुन्वन्ति येषु तानि (अन्ना=अन्नानि) ३ ३६ ८ प्रात सवनादीनि कर्माणि ३४ १६ [सवनमिति व्याख्यातम् । तत शेर्लोपश्छन्दसि]

सवम् प्रसूत जगत् ८ ३८ ४ ऐश्वर्यम् १ १६४ २६ **सवान्**=निष्पन्नान् पदार्थान् ४ २६ ७ ऐश्वर्ययोग्यान् (स्तोमान्=विद्याविशेषान्) १ १२६ १ **सवाय**=उत्पाद-नाय २.३८ १. **सवे**=जगदैश्वर्ये ५ ८२ ६ जगदाख्ये ऽस्मिन्नैश्वर्ये ११ २ विद्याप्रचारैश्वर्ये प्रेरणे वा ६ १० परमैश्वर्ययुक्ते प्रेरितव्ये जगति २० ११ [पु प्रसवैश्वर्ययो (भ्वा०) पुञ् अभिषवे (स्वा०) पूङ् प्राणिगर्भविमोचने (अदा०) पूङ् प्राणिप्रसवे (दिवा०) पू प्रेरणे (तुदा०) धातोर्वा 'ऋदोरप्' इति अप्]

सवयस. समान वयो येषान्ते (विद्वासो जना) १.१६५ १ [समान-वयस्पदयो समासे समानस्य सादेश-श्छान्दस]

सवयसा समानवयसौ (स्पती) १ १४४ ४ समान वयो ययोस्तौ (शिष्यौ) १ १४४ ३ [समान-वयस्पदयो' समासे द्विवचनस्याकारादेशश्छान्दस]

सवातरौ वायुना सह वर्त्तमानौ, भा०—वायुना प्रेरितौ (भौमविद्युतावग्नी) २८ ६ [सह-वातपदयो समासे सहस्य सादेश । रुगागमश्छान्दस]

सवात्यान् समानवाते भवान् (विद्यार्थिजनान्) २८ १६ [समान-वातपदयो समासे, समानस्य सादेशे च भवार्थ यत्]

सवास: उत्पन्ना: पदार्था ४ ५४.६ [सवमिति व्याख्यातम् । ततो जसोऽसुगागमश्छान्दस]

सवित: सर्वेषु जीवेष्वन्तर्यामितया सत्यप्रेरक व्यवहार-प्रेरणाहेतुर्वा (ईश्वर सूर्यो वा) १.२६. सकलैश्वर्ययुक्त (अ०—राजन्) ३३ ८४ राज्यैश्वर्यप्रद (अ०—परमात्मन्) १.२५. सर्वोत्पादकव्यवहारोत्पत्तिहेतो वा (ईश्वर सूर्यो वा) १.२६ सकलैश्वर्यविधातर्जगदीश्वर २.१२. ऐश्वर्यवन् (सभाध्यक्ष) ५ ३६ विद्यैश्वर्ययुक्त (पूर्णविद्योपदेशक) २७ ८. सकल-जगदुत्पादक जगदीश्वर ४ ५४ ७. सत्कर्मसु प्रेरकेश्वर १६ ४३ उत्तमगुणकर्मस्वभावेषु प्रेरकेश्वर ३० ३ सर्व-सिद्ध्युत्पादक (भगवन्) ११ ७ अनेकपदार्थोत्पादक तेजस्विन् विद्वन्राजन् ३३ ६६ हे सकल जगत् के उत्पत्ति-कर्ता, समग्र ऐश्वर्ययुक्त (परमेश्वर) स० वि० ४, ३० ३ सर्वैश्वर्यस्य प्रसवितरीश्वर ८ ६ सकलैश्वर्यसयुक्त सम्राट् ६ १ सवितृवदैश्वर्यप्रद (ईश्वर) ३४ २७ पृथिव्याद्युत्पादक (परमात्मन्) १ २४ ३ सत्यव्यवहारे प्रेरक (ईश्वर) ५ ८१ ५ सत्कर्मसु प्रेरक राजन् ६ ७१ ३ **सविता**= सर्वेषा प्रसविता, प्रकाशवृष्टिरसाना च प्रसविता (देव = परमेश्वर) १ ३५ २ सूर्यो धर्मकृत्येषु प्रेरको वा (जन) १.१०७ ३ विद्यैश्वर्यकारक (देव =विद्वज्जन) ५ ४२ ३. सूर्यमण्डलम् ४ १३ २ अन्त प्रेरको वृष्टिहेतुर्वा (देव = जगदीश्वर सूर्यलोको वा) १ २२ प्रसवकर्त्ता सूर्य ६ ५० १३ सर्वस्य जगतो दिव्यस्य प्रसविता उत्पादक (परमात्मा) ४ ४. वृष्टिप्रकाशद्वारा दिव्यगुणाना प्रसवहेतु (यज्ञ) १ १६ सकलैश्वर्ययोक्ता प्रभ्वैश्वर्यदाननिमित्तो वा (परमेश्वर) ४ ५३ २. सकलजगज्जनक (जगदीश्वर) ४ ५३ ७ ऐश्वर्यवान् सूर्यवत् प्रकाशमान (विद्वज्जन) ७ ४५ ३ सर्वेषा वसूनामग्निपृथिव्यादीना त्रयस्त्रिंशतो देवाना प्रसविता (देव =परमेश्वर) १ ३ सकलैश्वर्य-विधाता (ईश्वर) ५ ८१ ३. ऐश्वर्य प्रति प्रेरक (अग्नि = नृपति) २ १ ७ राजनियमै प्रेरक (राजा) ३३ २० सूर्य इव भासमान , भा०—सूर्यवद्विद्यया प्रकाशात्मा (उपदेशक) ३३ ३४ प्रसवकर्त्ता (परमात्मा) ५ ८२ ३ भास्कर ११ ४२ सर्वस्य जगतो निर्माता (ईश्वर) ११ ६ योग-पदार्थज्ञानस्य प्रसविता (उपदेष्टृजन) ११ ३ ऐश्वर्यप्रसाधक (शिल्पिजन) ११ ११ सब जगत् की उत्पत्ति का कर्त्ता (ईश्वर) स० वि० १२१, १० ८५ ३६ धर्मयुक्त मार्ग मे प्रेरक (पति) स० वि० १२१, अथर्व० १४ १ ५१ सब जगत् को उत्पन्न और धारण करने वाला (परमात्मा) प० वि० । वर्षादि का कर्त्ता सूर्य स० प्र० ११३, ३३ ४३

तमप्। सर्वधा=सर्वोपपदे डुधाञ् धारणपोषणयोः (जु०) धातोः कर्त्तरि क्विप्]

सर्वभूतेषु सर्वेषु प्रकृत्यादिषु ४० ६ सम्पूर्ण प्राणि-अप्राणियों में स वि० २१४, ४० ६ [सर्व-भूतपदयोः समासः]

सर्वरथा सर्वे रथा यानानि यस्या सः (शतक्रतु= सेनेशः) ५ ३५ ५ [सर्व-रथपदयोः समासः। सर्वरथप्राति० सु-स्थाने 'सुपां सुलुक्०' सूत्रेण डादेशः]

सर्वराट् यः सर्वस्मिन् राजते सः (सूर्यो विद्वज्जनो वा) ५ २४ [सर्वोपपदे राजृ दीप्तौ (भ्वा०) धातोः 'सत्सूद्विषद्रुह०' सूत्रेण क्विप्। सर्वराट्=स सर्वमेवेनेष्ट्वा सर्वराड् इति नामाधत्त गो० पू० ५ ८]

सर्वलोकम् सर्वेषां दर्शनम् ३१.२२. [सर्व-लोकपदयोः समासः। लोक=लोकृ दर्शने (भ्वा०) धातोर्भावे घञ्]

सर्ववीरम् सर्वे वीरा यस्मात्तत् (रयिं=धनम्) ६ २४ सर्वे वीरा प्राप्यन्ते यस्मात्तम् (रयिं) १६ ५६ **सर्ववीरः**=शरीरात्मबलसुभूपिता सर्वे वीरा यस्मात् (यज्ञ=गृहाश्रम) ८ २२ सर्वे च वीराश्च ते १ ५१ १५ [सर्व-वीरपदयोः समासः]

सर्ववीरया सर्ववीरैर्युक्तया (विशा=प्रजया) १ ११ १ २ **सर्ववीरा**=सर्वे वीरा भवन्ति यासु सतीषु ता (विदुष्य स्त्रियः) १ ११३ १८ [सर्व-वीरपदयोः समासे स्त्रियां टाप्]

सर्ववेदसम् सर्वे वेदसो वेदा विज्ञायन्ते यस्मिँस्तम् (बोधम्) १८ ६२ सर्वैर्वेदैरुक्त कर्म्म १५ ५५ गृहाश्रमस्थ-पदार्थ, मोह, यज्ञोपवीत और शिखा आदि को स० वि० २०८, अथर्व० ६ ५ १७ [सर्व वेदस्पदयोः समासः। वेदस्=विद् ज्ञाने (अदा०) धातोरौणा० असुन्। अथवा सर्वोपपदे विद ज्ञाने (अदा०) धातोः 'गतिकारकोपपदयोः०' उ० ४ २२७ सूत्रेणासि]

सर्वशासैः ये सर्व राज्य शासति तैः (राजपुरुषैः) ५ ४४ ४ [सर्वोपपदे शासु अनुशिष्टौ (अदा०) धातोः 'कर्मण्यण्' इत्यण्]

सर्वशुद्धवालः सर्वे शुद्धा वाला यस्य सः (पशुः) २४ ३ [सर्व-शुद्धवालपदानां समासः]

सर्वसेनः सर्वा सेना यस्य सः (विद्वान् जन) ५ ३० ३ [सर्वा-सेनापदयोः समासः]

सर्वसेना समग्रा सेना ययोस्तौ (सभासेनेशौ) ६ ६८ २ [सर्वा-सेनापदयोः समासे द्विवचनस्याकारादेशः]

सर्वहुतः सर्वैर्हूयते आदीयते तस्मात् (परमेश्वरात्) ३१ ६ सर्वे जुह्वति सर्वं समर्पयन्ति वा यस्मिन् तस्मात् (ईश्वरात्) ३१ ७ सर्वपूज्यात् सर्वोपास्यात् सर्वशक्तिमतः परब्रह्मणः, ऋ० भू० ६, ३१ ६ यतः सर्वमनुष्यैर्होतुमादातुं ग्रहितुं योग्या वेदास्तस्मात् (परमात्मनः) ऋ० भू० ६ ३१ ६ [सर्वोपपदे हु दानाऽदानयोः (जु०) धातोः 'कृतो बहुलं वा' इति क्विप् कर्मणि, अधिकरणे वा]

सर्वायुः सम्पूर्णजीवनम् ३८ २० [सर्व-आयुष्पदयोः समासः]

सर्सृते भृशं सरति गच्छति २ २५ १ **सर्स्राते**= प्रसरतः, प्राप्नुतः ३ ७ १ **सस्रे**=प्राप्नोति ६ १८ ७ [सृ गतौ (भ्वा०) धातोर्यङ्लुगन्ताल्लट्। व्यत्ययेनात्मनेपदम्। सस्रे प्रयोगे लिट्। सर्सृते गतिकर्मा निघ० २ १४]

सलक्ष्म समानं लक्ष्म यस्य तत् (विषुरूप=व्यापक विविधरूप वा विपश्चिज्जनम्) ६ २० [समान-लक्ष्मपदयोः समासे समानस्य सादेशश्छान्दसः। लक्ष्म=लक्ष दर्शनाङ्कनयोः (चुरा०) धातोर्बाहु० औणा० मन्]

सललूकम् सम्यग् लुब्धम् (हेति=वज्रम्) ३ ३० १७ [सललूकं सलुब्धं भवति पापकमिति नैरुक्ता। सररुकं वा स्यात् सर्त्तेरभ्यस्तात् नि० ६ ३]

सलिलम् आकाशरूप सब जगत् स० प्र० २८२, १० १२६ ३ **सलिलस्य**=अन्तरिक्षस्य ७ ४६ १ **सलिलः**=शुद्ध जल विद्यते यस्मिन् सः (सिन्धु=नदी), प्र०—अत्राऽर्शआदित्वादच् ८ ५६ **सलिलानि**=जलानीव निर्मलानि वचनानि १ १६४ ४१ [षल गतौ (भ्वा०) धातोः 'सलिकल्यनि०' उ० १ ५४ सूत्रेण इलच्। सलिलम् उदकनाम निघ० १ १२ बहुनाम निघ० ३ १ सलिलम्= आपो ह वाऽइदमग्रे सलिलमेवास श० ११ १ ६ १ वेदिर्वै सलिलम् श० ३ ६ २ ५]

सवनम् सुवन्त्यैश्वर्य प्राप्नुवन्ति येन तत् क्रियाकाण्डम् १ १६ ५ सवति प्रसूयतेऽनेन तत् (इन्द्रिय=मन आदि) ८ ३ येन सूयते तत् (धर्मपथम्) ६ ६० ६ सकलैश्वर्य-प्रापकम् (आदित्यब्रह्मचर्यम्) ४ ३५ ६ सुखैश्वर्यम् ४ ३४ ४ कार्यसिद्ध्यर्थं कर्म्म ४ ३५ ४ सकलसंस्कार-रसोपेतम् (भोजनादिकम्) ४ ३५ ७ भोजन होमादिक वा ३ ३२ १ सुन्वन्ति निष्पादयन्ति पदार्थान् येन तत् (कर्म्म) १ २१ ४. सर्वसुखसाधनम् (विश्व=जगत्) १ १६ ८ आरोग्यकर होमादिकम् यज्ञक्रियाप्रेरणम् १६ २६ **सवनस्य**=शिल्प-

सवेदसा समानेन हुतद्रव्येण युक्तौ (अग्नीषोमौ=वाय्वग्नी) १ ९३.९ [समान-वेदस्पदयोः समासे द्विवचनस्याकारादेश]

सव्यतः दक्षिणात २ ११.१८ [सव्यप्राति० तसि । सव्यम्=षुञ् अभिषवे (स्वा०) धातोः 'सुनोते' उ० ४.११० सूत्रेण य.]

सव्यः द्वितीयो वामपार्श्वस्थ. (अश्व) १.८२ ५. **सव्यान्**=वामपार्श्वान् ५ १९. **सव्येन**=सेनाया दक्षिणभागेन १ १०० ९ [षुञ् अभिषवे (स्वा०) धातो सुनोते उ० ४ ११० सूत्रेण य]

सव्या उत्तरा (दिक्) २ २७.११ [सव्य इति व्याख्यातम् । ततष्टाप् स्त्रियाम्]

सव्रता समानकर्माणि ६ ७० ३. [समान-व्रतपदयो समासे शेर्लोपश्छन्दसि । व्रतम् कर्मनाम निघं० २.१]

सव्रताः समाननियमा (अग्नय =पावका) १५ ५७ सत्यैर्नियमैं सह वर्त्तमाना. (अग्नय) १४.६. सनियमा (अग्नय) १४ ६ समानानि व्रतानि नियमा येषान्ते (देवा = विद्वज्जना) १४ १५ व्रतैं सत्यैर्व्यवहारैं सह वर्त्तमाना (देवा) १३ २५ नियमैं सहिता (जना) १४ २७. समान गुण, कर्म, स्वभाव वाले (गृहस्थ जन) स० वि० १४१, अथर्व० ३ ३० १–७ [समान-व्रतपदयो समास. । समानस्य छन्दसि०' सूत्रेण समानस्य सादेश]

सश्चत् सश्चति समवयति २.२२ २ सयोजयति, प्र०—अत्राऽडभाव २ २२ १. **सश्चत**=सेवन्ता सम्बध्नन्तु ७ २६ ४ समवयन्तु ७ १८ २५ विजानीत प्राप्नुत वा १ ६४ १२ प्राप्नुवन्ति, प्र०—अत्र व्यत्यय २७ २४. भजतु, प्र०—अत्र षच सेवने लोडर्थे लङ् । सुगागमोऽडभावश्च छान्दस । अ०—सेवते २० ७० **सश्चति**= प्राप्नोति १ १०१ ३ **सश्चसि**=जानासि प्रापयसि वा ३ ३४ प्राप्नोषि ८ २. **सश्चिम**=दूरे प्राप्नुयाम, गमयेम वा ३८ २० सदा सेवें आर्याभि० २ ४१, ३८ २० **सश्चिरे**=सज्जन्ति प्राप्नुवन्ति प्रापयन्ति वा १ ११० ६ समवयन्ति प्राप्नुवन्ति ५ ६४ ३ गच्छन्ति ५ ६७ ३. **सश्चुः**=प्राप्नुयु ६ ३६ ३ **सश्चे**=सम्वध्नामि ५ ३३ ८ [षच सेवने (भ्वा०) षच समवाये (भ्वा०) धातोर्वा लङ् । अडभावश्छान्दस सुगागमश्च । अन्यत्र लोट्, लट्, लिट् च । सश्चति गतिकर्मा निघ० २ १४ लिटि द्वित्वाऽभावश्छान्दस]

सश्चतः विज्ञानवतो विद्याधर्मप्राप्तान् (प्रजाजनान्) १ ४२ ७ समवेता (प्रजाजना) ३ ९ ४ **सश्चते**= सम्बध्नाय २ १६.४ . [षच सेवने (भ्वा०) षच समवाये (भ्वा०) धातो शतृ । सुगागमश्छान्दस । सश्चति गतिकर्मा निघ० २ १४.]

ससतः अविद्यासुप्तवन्तमानान् (विदुषो जनान्) १.१३५.७. स्वपत प्राणिन १ १२८ ४. **ससताम्**= स्वपता पुरुषाणाम १.५३ १. **ससन्तम्**=शयानम् (जीवम्) ४ ५१ ५ स्वपन्त चिन्तारहित वा (अहिं=सर्प शत्रु वा) १ १०३ ७ **ससन्तः**=शयाना (ऋभव.=मेधाविना) ४ ३३.७ [षस स्वप्ने (अदा०) धातो शतृ । ससन स्वपन. नि० ४ १६. सस्ति स्वपितिकर्मा निघ० ३ २२]

ससतीमिव यथा सुप्ताम् (पुरन्धि=बहुप्रज्ञा स्त्रीम्) १ १३४ ३ [ससतीम्-इवपदयो समास । ससतीम्=षस स्वप्ने (अदा०) धातो शत्रन्तात् ङीप्]

ससत्थ सीद ३ ३० ६ [षद्लृ विशरणगत्यवसादनेषु (भ्वा०) धातोर्लिट्]

ससाद निषीदति ६ १.६ अवसादयति १ ६७ ४. तिष्ठति, प्र०—अत्र लडर्थे लिट् 'सदे परस्य लिटि' अ० ८ ३ ११८ अनेन परसकारस्य मूर्धन्यादेशनिषेध १ २५ १० निवसेत् ७ ४ ५. निषीदेत् ५ १ ५. सीद २०.२ सीदतु १० २७ [षद्लृ विशरणगत्यवसादनेषु (भ्वा०) धातोर्लिट्]

ससन्तु शयीरन् ७ ५५ ५ स्वपन्तु १ १२४ १०. **ससस्ति**=स्वपिति, भा०—निद्रालूनलसान् कर्महीनान् करोति २ ३ १८ **सस्तु**=शयताम् ७.५५ ५ [षस स्वप्ने (अदा०) धातोर्लोट् । ससस्ति-प्रयोगे लटि शप श्लु]

ससर्ज सृजति १ १०३ २ **ससृज**=सृजति ७ १८ ४ **ससृजे**=स्वसामर्थ्यरूपकारणादुत्पादितवान् ऋ० भू० १३५, अथर्व० १० ४ ८ **ससृज्महे**=भृश सृजेम ६ १६.३७ निष्पादयेम १ ८१ ८ **ससृज्यात्**=पुन पुनर्निष्पद्येत निष्पादयेद् वा १ २४.१३ [सृज विसर्गे (तुदा०) धातोर्लिट् । ससृजे-प्रयोगे व्यत्ययेनात्मनेपदम् । अन्यत्र यङ्लुगन्ताल्लटि व्यत्ययेनात्मनेपदे च रूपम् । अथवा शप श्लौ लटि रूपम् । अन्यत्र ससृज्यात्-प्रयोगे लिङ् । प्रससर्ज प्रसृजति नि० १० ४]

ससर्परीः सुरसस्य प्रापिका (सत्यादिलक्षणोज्ज्वला वाणी) ३ ५३ १६ भृश सर्पणशीला (वाक्) ३ ५३ १५ [सृप्लृ गतौ (भ्वा०) धातोर्यङ्लुगन्ताद् वनिप् । 'वनो र च' इति ङीप् रेफश्च । प्रत्ययस्थवकारलोपश्छान्दस]

ससवान् प्रशस्तानि ससानि अन्नानि विद्यन्ते यस्य स (राजा), प्र०—ससमित्यन्ननाम निघ० २ ७, ६ ४४ ७

ऐश्वर्यवान् राजा, सूर्यलोको वायुर्वा, प्र०—सवितेति पदनामसु पठितम् निघ० ५ ४ अनेन प्राप्तिहेतोर्वायोरपि ग्रहणम् १ ३५ ४ सूर्य इव स्वप्रकाशमान ईश्वर १ १८६ १ सर्वस्य विश्वस्य जनिता (अ०—सत्यमेरको जगदीश्वर) ६ २ विद्याव्यवहारेषु प्रेरक (विद्वज्जन) १६ ८० सब जगत् का उत्पत्तिकर्त्ता और सम्पूर्ण ऐश्वर्यों को देने वाला परमात्मा स० वि० १४१, अथर्व० १४ २ ७५ **सवितारम्**=सर्वजगदन्तर्यामिनमीश्वरम् १ २२ ५ उत्पादकमैश्वर्यहेतुं वा (परमेश्वर सूर्यं वा) १ २२ ७ वेदविद्यैश्वर्योत्पादकम् (ईश्वरम्) ६ २७ सकलैश्वर्यप्रापकम् (ईश्वरम्) २२ १० मेघोत्पादकम् (सूर्यम्) ५ ४६ २. जनयितारम् (परमात्मानम्) ३० ४ देवानामग्न्यादीना रसाना वा प्रसवितारम् (ईश्वर सूर्यं वा) ४ २५ सकलपदार्थनिर्मातारम् (ईश्वरम्) ५ ८२ ७ ऐश्वर्यकारक राजानम् ३३ ४६ सर्वेषामुत्पादकम् (ईश्वरम्) ६ २१ **सवितुः**=सर्वजगदुत्पादकस्य सकलैश्वर्यप्रदातु (ईश्वरस्य) १ १० सवति सकलैश्वर्यं जनयति तस्य (ईश्वरस्य) १ २१ परमेश्वरस्य सूर्यलोकस्य वा १ ३१ सकलैश्वर्यप्रसवितु, समग्रविद्याबोधप्रसवितु, शत्रुविजयप्रसवितुर्वा (परमेश्वरस्य) ६ १० अखिलजगदुत्पादकस्येश्वरस्य ११ ४ सर्वेषामैश्वर्यव्यवस्था प्रति प्रेरकस्य (ईश्वरस्य) ११ ६ सकलैश्वर्यप्रदेश्वरस्य ३६ ३ सकलजगदुत्पादकस्य समग्रैश्वर्यस्येश्वरस्य ३ ६ ११ अन्तर्यामिणो जगदीश्वरस्य ५ ८२ १ य सुनोत्युत्पादयति सर्वं जगत्तस्य (परमेश्वरस्य) सब जगत् के उत्पादक और सब ऐश्वर्य के दाता (परमेश्वर) का स० प्र० ५१, ३६ ३ योगैश्वर्यसम्प्रदस्येश्वरस्य १७ ७४ सकलैश्वर्य प्रापयत ईश्वरस्य २ ३८ ७ सुनोति सूयते सुवति वोत्पादयति सृजति सकल जगत् स सर्वपिता सर्वेश्वर सविता परमात्मा तस्य प० वि०, ३६ ३ सकलैश्वर्यस्य प्रसवितुर्जगदीश्वरस्य ६ ३० **सवित्रा**=सर्वान्तर्यामिणा जगदीश्वरेण ३ १० विद्युद्रूपेण ४ ३४ ८ प्रसवहेतुना (देवेन=विद्वज्जनेन) ३७ १४ प्रेरकेणैश्वर्यकारकेण वा (ईश्वरेण सूर्येण वा) ३७ १५ **सवित्रे**=सवितृविद्याविदे (विद्वत्पुरुषाय) ३८ ८ सकलरसोत्पादकाय सूर्याय २ ३० २ सन्तानोत्पादकाय (गृहपतये) ८ ७ सूर्यविज्ञानाय १० ५ ऐश्वर्योत्पादकाय (पुरुषाय) २६ ६०. सूर्याय २२ ६ [सवितृशब्दस्य रूपाणि। सवितृ=पू प्रेरणे (तुदा०) पूङ् प्राणिप्रसवे (दिवा०) पूङ् प्राणिगर्भविमोचने (अदा०) पुञ् अभिषवे (स्वा०) पु प्रसवैश्वर्ययो (भ्वा०) धातोर्वा कर्त्तरि तृच्। सविता पदनाम निघ० ५ ६ निघ० ५ ४ सविता सर्वस्य प्रसविता नि० १० ३१ सविता व्याख्यात। तस्य कालो यदा द्यौरपहततमस्काकीर्णरश्मिर्भवति नि० १२ १२ सवितारम्=सर्वस्य प्रसवितार मध्यम वोत्तम वा पितरम् नि० ७ ३१ सविता-सविता वै देवाना प्रसविता श० १ १ २ १७ सविता वै प्रसविता को० ६ १४ सविता वै प्रसवानामीशे ऐ० १ ३० आदित्य एव सविता गो० पू० १ ३३ अग्निरेव सविता जै० उ० ४ २७ १ प्रजापतिर्वै सविता ता० १६ ५ १७ वरुण एव सविता जै० उ० ४ २७ ३ विद्युदेव सविता जै० उ० ४ ३३ स्तनयित्नुरेव सविता जै० उ० ४ २७ ६ वायुरेव सविता गो० पू० १ ३३ चन्द्रमा एव सविता गो० पू० १ ३३ यज्ञ एव सविता गो० पू० १ ३३ इय (पृथिवी) वै सविता श० १३ १ ४ २ अभ्रमेव सविता गो० पू० १ ३३ वेदा एव सविता गो० पू० १ ३३ अहरेव सविता गो० पू० १ ३३ पुरुष एव सविता जै० उ० ४ २७ १७ पशवो वै सविता श० ३ २ ३ ११ प्राणो वै सविता ऐ० १ १६ मनो वै सविता श० ६ ३ १ १३ यकृत् सविता श० १२ ६ १ १५ सविता राष्ट्र राष्ट्रपति तै० २.५ ७ ४ उष्णमेव सविता गो० पू० १ ३३ (सविता) रश्मिभिर्वर्प (समदवात्) गो० पू० १ ३६ तद्वै सुपूत य देव सविता पुनात् श० ३ १ ३ २२]

सवितेव यथा सूर्य आकर्षणेन भूगोलान् धरति तथा १ ६५ ७ यथा सूर्य १ १६० ३ [सविता-इवपदयो समास। सवितेति व्याख्यातम्]

सविश विशत्या सह वर्त्तमान (वर्च=दीप्ति) १४ २३ [सह-विशतिपदयो समासे सहस्य सादेश। समासान्तो डच् छान्दस]

सवीमनि महैश्वर्ये ४ ५३ ३ उत्पादिते जगति ६ ७१ २ य सूयते समारस्तस्मिन् (प्रसविते ससारे) ४ २५ आज्ञायाम् ३३ १७ [पु प्रसवैश्वर्ययो (भ्वा०) पूङ् प्राणिप्रसवे (दिवा०) धातोर्वा वाहु० औणा० ईमनिन्। सवीमनि प्रसवे नि० ६ ७]

सवीर्यः बलोपेत (देव=विद्वान् राजा) २८ ३ [सह-वीर्यपदयो समासे 'वोपसर्जनस्य' सूत्रेण सहस्य सादेश]

सवृत् य समानेन धर्मेण सह वर्त्तते तस्य बोधक (विद्वज्जन) १५ ६ **सवृते**=साधर्म्यपदार्थज्ञानाय १५ ६ [समानोपपदे वृतु वर्त्तने (भ्वा०) धातो क्विप्]

सवृधे य समानै सह वर्धते तस्मै (पुरुषाय) १६ ३० [समानोपपदे वृधु वृद्धौ (भ्वा०) धातो क्विप्]

धातोर्लट् 'दससञ्जस्वञ्जा शपि' इत्यनुनासिकलोपः]

सस्वती उपतापकेन शब्देन ७ ५८ ५ [स्वृ शब्दोपतापयो (भ्वा०) धातो कर्त्तरि तृच्। विभक्तिव्ययत्यो द्वित्वञ्च छान्दसम्]

सस्वः अन्तर्हिता (तन्व =प्राणा) ७ ५६ ७ अन्तश्चरन्त (विद्वज्जना) ७ ६० १० [सस्व निर्णीतान्तर्हितनाम निघ० ३ २५]

सस्वः उपदिशति, प्र०—अत्र स्वृधातोर्लङि प्रथमैकवचने 'बहुल छन्दसि' इति शप स्थाने श्लु 'हल्ङ्याब्भ्यो दीर्घात्०' इति तलोप १ ८८ ५ [स्वृ शब्दोपतापयो (भ्वा०) धातोर्लङ्। शप श्लुश्छन्दसि। 'हल्ङचाब्भ्य०' तलोप]

सस्वः गुप्त (पदविज्ञानम्) ५ ३० २

सह सङ्गे १ २३ १७ परस्परम् ३ १३ सङ्गाऽर्थे १ २३ २४ साकम् १२ २८ सार्द्धम् २० २५ साथ स० वि० १४२, अथर्व० ३ ३० ६ साथ ही साथ स० प्र० ३१८, ४० १४]

सहच्छन्दसः सह छन्दासि वेदाध्ययन स्वातन्त्र्य सुखभोगो वा येषान्ते (ऋषय ब्रह्मचर्येण धर्मानुष्ठानपुरस्सरमखिलान् वेदान् विज्ञातवन्तो जना) ३४ ४६ [सह-छन्दस्पदयो समास। चदि आह्लादने दीप्तौ च (भ्वा०) धातो 'चन्देरादेश्च छ' उ० ४ २१९ सूत्रेणासुन् छकारश्च धात्वादेरादेश]

सहजन्या सहोत्पन्ना (अप्सरा) १५ १६ [सहजन्यपदयो समासे स्त्रिया टाप्। जन्य =जनी प्रादुर्भावे (दिवा०) धातोर्यत् सहजन्या (यजु० ५ १६) (वायो) मेनका च सहजन्या चाप्सरसाविति दिक् चोपदिशा चेति ह स्माह माहित्थिरिमे तु ते द्यावापृथिवी श० ८ ६ १ २७]

सहजानुषाणि जनुभिर्जन्मभिर्निर्वृत्तानि जानुषाणि कर्माणि तै सह वर्त्तमानानि (भोजनानि) १ १०४ ८ सहजेनाऽनुषङ्गीणि (पात्राणि) प० वि०। सहज अनुषक्त स्वभाव से अनुकूल मित्रो को, आर्याभि० १ ४६, ऋ० १ ७ १६ ८ [सह-जानुषपदयो समास। जानुषम्= जनुष्प्राति० निर्वृत्तार्थेऽण्। जनुष्=जनी प्रादुर्भावे (दिवा०) धातो 'जनेरुसि' उ० २ ११५ सूत्रेण उसि]

सहदानुम् य सहैव ददाति तम् (वृत्र=मेघमिव) १८.६६ दानेन सह वर्त्तमानम् (वृत्रम्) ३ ३० ८ [सहदानुपदयो समास। दानु =डुदाञ् दाने (जु०) धातो 'दाभाभ्या नु' उ० ३ ३२ सूत्रेण नु]

सहदेवः देवै सह वर्त्ततेस (विद्वज्जन) १.१०० १७ [सह-देवपदयो समास]

सहध्यै सोढुम् ६ १ १ [षह मर्षणे (भ्वा०) धातोस्तुमर्थेऽध्यै प्रत्यय]

सहन्तमः अतिशयेन सहा इति सहन्तम (विद्वज्जन) १ १२७ ६ [सहस्प्राति० अतिशायने तमप्। सकारस्य नकारश्छान्दस]

सहन्तः सोढार (विद्वासो राजजना) ५ ८७ ५ [षह मर्षणे (भ्वा०) धातो शतृ]

सहन्ती सहन कुर्वती (विट्=उत्तमा प्रजा) ७ ५६ ५ [षह मर्षणे (भ्वा०) धातो शत्रन्तान् ङीप्]

सहन्त्य सहन्तेषु शान्तेषु भव (अग्ने=दात सद्गृहस्थ) ६ १६ ३३. सहनशील विद्वन् (जन) १ २७ ८ शत्रुओ के समूहो के घातक (ईश्वर) आर्याभि० १ २६, ऋ० ५ ८ ३५ २ [सहन्तप्राति० भवार्थे यत्। सहन्त= षह मर्षणे (भ्वा०) धातोर्बाहु० औणा० झच्]

सहपत्या स्वामिना सह ३७ २० [सह-पतिपदयो समास] 'वोपमर्जनस्ये' ति विकल्पेन न सादेश। छान्दसत्वात् 'पति समास एव' इति न घिसज्ञा। तेन नादेशो न भवति]

सहप्रमाः सहैव प्रमा यथार्थं प्रज्ञान येषान्ते (ऋषय =सत्याऽसत्ये विविच्य सत्य लब्ध्वाऽसत्य हातवन्तो जना) ३४ ४६ [सह-प्रमापदयो समास। प्रमा= माङ् माने शब्दे च (जु०) धातो 'आतश्चोपसर्गे' इत्यङ्]

सहमानम् य सर्व सहते तम् (विद्वज्जनम्) ५ २५ ६ शत्रूणा वेगस्य सोढारम् (राजपुरुषम्) ६ १८ १

सहमानः=य सुखदु खादिक सहते (इन्द्र =सेनापति) १७ ३७. **सहमानाय**=बलयुक्ताय (जनाय) १६ २० शत्रून् सोढु शीलाय (इन्द्राय=सभासेनेशाय) २ २१ २ शत्रून् सोढु समर्थाय (रुद्राय=शूरवीराय) ७ ४६ १ [षह मर्षणे (भ्वा०) धातो शानच्। ताच्छील्ये चानश् वा]

सहमाना बलनिमित्ता, भा०—बलवर्द्धिका (ओषधि) १२ ६६ पत्यादीन् सोढुमर्हा (पत्नी) १३ २६. [षह मर्षणे (भ्वा०) धातो शानजन्तात् स्त्रिया टाप्]

सहमूलम् मूलेन सह वर्त्तमानम् (रक्ष =दुष्टाचारम्) ३ ३० १७ [सह-मूलपदयो समास]

सहवत्सा वत्सेन सह वर्त्तमाना (धेनु =दुग्धदात्री गौ) १ ३२ ६ [सह-वत्सपदयो समासे स्त्रिया टाप्]

सहवसुम् वसुभि सह वर्त्तमानम् (नार्मरम्=

सम्भाजक (जातविद्यो जन) ३ २२ १ ददत् (जातवेदा = उत्पन्नविज्ञानविद्वज्जन) १२ ४७ [ससम् अन्ननाम निघ० २ ७ पदनाम निघ० ४ २ ससप्राति० प्रशसायामर्थे मतुप् । ससम्=स्वपनमेतन्माध्यमिक ज्योति नि० ५ ३]

ससवांसम् पापपुण्ययोर्विभक्तारम् (इन्द्र=परीक्षक विद्वज्जनम्) ३ ३४ ८ **ससवांसः**=सुशयाना इव (देवा = विद्वज्जना) ४ ४२ १० सविभक्ता (देवा =विद्वास) ७ १० ये शेरते ते (जना) ४ ८ ६ [षण सभक्तौ (भ्वा०) धातोर्लिट क्वसौ रूपम् । षस स्वप्ने (अदा०) धातोर्वा लिट क्वसु]

ससस्य शयानस्य (मनुष्यस्य) ३ ५ ६ स्वप्नस्य ४ ७ ६ कार्यस्य ५.२१.४ स्वपत (पत्यु) ४ ५ ७ [षस स्वप्ने (अदा०) धातो शतृ । तलोपश्छान्दस]

ससान विभजेत् ३ ३४ ८ सनति विभजति ३ ३१ ७ [षण सम्भक्तौ (भ्वा०) धातोर्लिट्]

ससार समन्ताद् गच्छति ४ ३० ११ [सृ गतौ (भ्वा०) धातोर्लिट्]

ससूव जनयति ४ १८ १० [षूङ् प्राणिगर्भविमोचने (अदा०) धातोर्लिटि 'ससूवेति निगमे' अ० ७ ४.७४ सूत्रेण परस्मैपद वुगागमोऽभ्यासस्य चात्व निपात्यते]

ससृजान स्रष्टा सन् (पूज्यो राजा) ७ ८ २ [सृज विसर्गे (तुदा०) धातो शानच् । व्यत्ययेनात्मनेपद प्रत्ययस्य श्लुश्च सृजधातोर्लिट कानज्वा]

ससृमाणम् भृश गच्छन्तम् (एतशम्=अश्वम्) ४ १७ १४ [सृ गतौ (भ्वा०) धातोर्यङ्लुगताच्छानच् । व्यत्ययेनात्मनेपदम्]

ससृवांसम् सर्व ज्ञानवन्त शिल्पविद्यागुणप्राप्तिमन्त वा (ईश्वर भौतिकमग्नि वा) २ १४ **ससृवांसः**=प्राप्तवन्त (राजपुरुषा) ६ १६ [सृ गतौ (भ्वा०) धातोर्लिट क्वसु]

ससृवांसमिव प्राप्नुवन्तमिव (अग्नि=पावकम्) ३.६ ५ ससृवासम्=[सृ गतौ (भ्वा०) धातोर्लिट क्वसु । ससृवासम्-इवपदयो समास]

ससेन सेनासहित सेनाध्यक्ष (राजन्) १ ५१ ३ [सह-सेनापदयो समासे 'वोपसर्जनस्य' सूत्रेण सादेश]

सस्तः शयान इन्द्र =सुखधर्त्ता राजा) ६ २० १३ [षस स्वप्ने (अदा०) धातोर्बाहु० औणा० क्त]

सस्ताम् शयाताम् पुरुषार्थनाश- प्रापयत १ २९ ३ [षस स्वप्ने (अदा०) धातोर्लोट् । व्यत्ययेनात्मनेपदम्]

सस्तु शेताम् ७ ५५ ५ [षस स्वप्ने (अदा०) धातोर्लोट्]

सस्नितमम् अतिशयेन शुद्ध शुद्धिकारक च तथा शुद्धिहेतु भौतिक वा, अथवा स्वव्याप्त्या सर्वजगद्वेष्टयितारमीश्वर, शिल्पविद्याहेतु व्यापनशील भौतिक वा, प्र०—ष्णा शौचे, अथवा ष्णा वेष्टने इत्यस्य रूपम् १ ८ [सस्निप्राति० अतिशायने तमप् । सस्नि =ष्णा शौचे (अदा०) धातो आदृगमहनजन किकिनौ लिट् च' अ० ३ २ १७१. सूत्रेण किन् । लिड्वत्त्वाद् द्वित्वम् । सस्नि सस्नात मेघम् नि० ५ १]

सस्निना शुचिना (विद्वज्जनेन) २ २३ १० **सस्निम्**= ब्रह्मचर्यव्रतविद्याग्रहणाभ्या पवित्रम् (भा०—राज्यम्) ५ ३५ १ **सस्निः**=शुद्ध (अग्नि =विद्वज्जन) ३ १५ ५ शेते यस्मिन् स (रथ) २ १८ १ [सस्निरिति पूर्वपदे व्याख्यातम् । अथवा षस स्वप्ने (अदा०) धातोर्बाहु० औणा० नि]

सस्मिन् अन्तरिक्षे ७ ३६ ३ सर्वस्मिन्, प्र०—अत्र 'छान्दसो वर्णलोपो वा' इति रेफवकारयोर्लोप १ ५२ १५ स्वस्मिन्, प्र०—अत्र वलोप १ १५२ ६. [सर्वप्राति० स्वप्राति० वा सप्तम्या पृषोदरादिना रूपसिद्धि]

सस्राणः सर्वगुणदोषान् प्राप्नुवन् (विद्वज्जन) १ १४९ २ [सृ गतौ (भ्वा०) धातो शानच् । शप श्लु । व्यत्ययेनात्मनेपदश्च]

सस्राथे प्रापयत १ १५८ १. **सस्रुः**=स्रवन्ति १ ७३ ६ गच्छन्ति १ ५२ ५ प्राप्नुवन्ति ५ ५३ २ **सस्रे**=सरति गच्छति ७ ३६ १ [सृ गतौ (अदा०) धातोर्लिट् । व्यत्ययेनात्मनेपदम्]

सस्रुतः या समान सत्य मार्ग स्रुवन्ति गच्छन्ति ता (वाच) १ १४१ १ गमनशीलान् (विद्वज्जनान्) ४ २८ १ [समानोपपदे स्रु गतौ (भ्वा०) धातो क्विप् । समानस्य सादेशश्छान्दस । सस्रुत नदीनाम निघ० २ २३]

सस्रुषीः प्राप्तव्या (भुव =भूमय) १ ८६ ५ [सृ गतौ (भ्वा०) धातोर्लिट क्वसु । तत स्त्रिया ङीप्]

सस्रोतसः समान मनोरूप स्रोत प्रवाहो यासा ता (वृत्तय) ३४ ११ [समान-स्रोतस्पदयो समास । स्रोतस्=स्रु गतौ (भ्वा०) धातो 'स्रुरिभ्या तुट् च' उ० ४ २०२ सूत्रेणासि । तुडागमश्च]

सस्वजाते स्वजेते, आश्रयत, प्र०—अत्र व्यत्ययेनाऽऽत्मनेपदम् १ १६४ २० [ष्वञ्ज परिष्वङ्गे (भ्वा०)

२ २ ११ सहसा बलेन युक्त (राजन्) ७.१६ ८ सहसि भव (विद्वज्जन) १.१४७ ५ य आत्मन सहो बलमिच्छति तत्सम्बुद्धौ (अग्ने=विद्वज्जन) ११ २६ **सहस्यः**= सहसि बले भव पौष १४ २७. [सहस् बलनाम। निघ० २ ६. ततो भवार्थे साध्वर्थे वा यत्। अथवा सहस् पदाद् इच्छायामर्थे क्यजन्ताद् अच् कर्त्तरि। सहस्प्राति० वा 'मत्वर्थे मासतन्वो' सूत्रेण यत्। सहस्य (मास.)—एतौ (सहश्च सहस्यश्च) एव हैमन्तिकौ (मासौ) स यद् हेमन्त इमा प्रजा सहसेव स्व वशमुपनयते तेनो हैतौ सहश्च सहस्यश्च श० ४ ३.१ १८]

सहस्रकेतुम् असङ्ख्यातध्वजम् (रथ=यानम्) १ ११६ १. [सहस्र-केतुपदयो समास। सहस्रम् बहुनाम निघ० ३ १ केतु प्रज्ञानाम निघ० ३ ६]

सहस्रचक्षाः सहस्र चक्षासि दर्शनानि यस्माद्यस्य वा (सूर्य) ७ ३४ १० [सहस्र-चक्षस्पदयो समास। सहस्रम्=बहुनाम निघ० ३ १ चक्षस्=चक्षिङ् व्यक्ताया वाचि, अय दर्शनेऽपि (अदा०) धातोरौणा० असुन्]

सहस्रचेताः असङ्ख्यातविज्ञानविज्ञापन (इन्द्र= सेनाद्यधिपति) १ १०० १२ सहस्रो विज्ञानादि गुणो वाला (ईश्वर) आर्याभि० १.३४, ऋ० १ ७ १०.१२. [सहस्र-चेतस्पदयो समास। चेतस्=चिती सञ्ज्ञाने (भ्वा०) धातोरौणा० असुन्]

सहस्रजित् य सहस्राणि शत्रून् जयति स (राजा) १ १८३ १ असङ्ख्यात-विजेता (पावक इव दूत) ५ २६ ६. असहाय सन् सहस्र योद्धृन् जेतु शील (अग्नि=विद्वान् राजा) ६ २८ [सहस्रोपपदे जि जये (भ्वा०) धातो कर्त्तरि क्विप्। 'ह्रस्वस्य पिति कृति तुगि' ति तुगागम]

सहस्रणीथ सहस्रै रसङ्ख्यैर्धार्मिकैर्नीथः प्राप्त (इन्द्र=राजा) ३ ६० ७ [सहस्र-नीथपदयो समास.। नीथ=णीञ् प्रापणे (भ्वा०) धातो 'हनिकुषिनीरमि०' सूत्रेण क्थन्]

सहस्रदातमम् अतिशयेनाऽसङ्ख्यदातारम् (सूरिं= विद्वास शिल्पिनम्) ६ ४५ ३३ [सहस्रदाप्राति० अतिशायने तमप्। सहस्रदा=सहस्रोपपदे डुदाञ् दाने (जु०) धातो क्विप्]

सहस्रदानः असङ्ख्यप्रद (वसिष्ठ=पूर्णविद्वज्जन) ७ ३३ १२ [सहस्रोपपदे डुदाञ् दाने (जु०) धातो 'कृत्य-ल्युटो बहुलम्' इति कर्त्तरि ल्युट्]

सहस्रदाना असङ्ख्यप्रदाना (राति=दानक्रिया) ३ ३० ७ [सहस्रदानमिति व्याख्यातम्। ततष्टाप् स्त्रियाम्]

सहस्रदाव्नाम् य सहस्रस्याऽसङ्ख्यातस्य दातॄणा मध्ये, प्र०—अत्र 'आतो मनिन्०' अ० ३ २ ७४. अनेन वनिप्-प्रत्यय १ १७ ५. [सहस्र-दावन्पदयो समास। दावन्=डुदाञ् दाने (जु०) धातो 'आतो मनिन्०' इति वनिप्]

सहस्रदाः सहस्रमसङ्ख्य सुख ददातीति (विद्वज्जन) १३ ४० [सहस्रोपपदे डुदाञ् दाने (जु०) धातो कर्त्तरि क्विप्]

सहस्रधारम् बहुविध ब्रह्माण्डं धरतीति त यज्ञम् १ ३. [सहस्रोपपदे धृञ् धारणे (भ्वा०) धातो 'कर्मण्यण्' इत्यण्]

सहस्रधारा सहस्राण्यसङ्ख्या धारा प्रवाहा यस्या वाच सा ४ ४१.५ **सहस्रधाराम्**=सहस्रमसङ्ख्यानर्थान् धरति त सर्वज्ञानप्रदाम् (सुमतिं=प्रज्ञाम्) १७ ७४ सहस्र धारा हिरण्यादयो यस्यान्ता यद्वा या सहस्रमसङ्ख्यात प्राणि-जात धरति ता, भा०—सर्वधारिकाम् (मही=भूमिम्) ३३ २८ [सहस्र-धारापदयो समास। सहस्रोपपदे वा धृञ् धारणे (भ्वा०) धातो 'कर्मण्यण्' इत्यण्। ततष्टाप् छान्दस.]

सहस्रपात् सहस्राण्यसख्याता पादा यस्मिन् स, भा०—यस्मिन् पूर्णे परमात्मन्यस्मदादीनामसङ्ख्यातानि पादादीन्यङ्गानि सन्ति स (पुरुष=परमात्मा) ३१ १ [सहस्र-पादपदयो समास। 'सख्यासुपूर्वस्य' इति पादस्य लोप समासान्त]

सहस्रपाथाः सहस्राण्यमितानि पाथास्यन्नादीनि यस्य स (अग्नि=पावक) ७ १ १४ [सहस्र-पाथस्पदयो समास। पाथस्=पा रक्षणे (अदा०)धातो 'उदके थुट् च' उ० ४ २०४ सूत्रेणासुन्]

सहस्रपोषम् असख्यातपुष्टिम्, भा० – असङ्ख्याता-मतुला पुष्टिम् ४.२६. [सहस्र-पोषपदयो समास। पोष= पुष पुष्टौ (दिवा०) धातोर्घञ्]

सहस्रपोष्यम् असङ्ख्यै पोषणीयम् (ब्रह्म=धनम्) ६ ३५ १ [सहस्र-पोष्यपदयो समास। पोष्यम्=पुष पुष्टौ (दिवा०) धातोर्ण्यत्]

सहस्रप्रधनेषु सहस्राण्यसङ्ख्यातानि प्रकृष्टानि धनानि प्राप्नुवन्ति येषु तेषु चक्रवर्त्तिराज्यसाधकेषु महायुद्धेषु १ ७ ४ [सहस्र-प्रधनपदयो समास। सहस्रम् बहुनाम निघ०

अग्निम्) २ १३ ८ [सह-वसुपदयो समास]

सहवीरम् वीरै सह वर्त्तमानम् (रयिं=धनम्) ३ ५४ १३ [सह-वीरपदयो समास]

सहवीराम् वीरैस्सह वर्त्तमाना सेनाम् २७ ६ [सह-वीरपदयो समासे स्त्रिया टाप्]

सहसः ब्रह्मचर्यबलयुक्तस्य (जनकस्य) ५ ३ ६ बलादिगुणै सह वर्त्तमानस्य (ईश्वरस्य विद्युदग्नेर्वा) १ ८८ २ विद्याबलवत (विदुष) १ १४१ १ प्रशस्तबल-युक्तस्य (जनस्य) १ ७४ ५ बलस्य बलवतो वायोर्वा ३ २८ ३ सहनशीलस्य (सज्जनस्य) ६ १२ १ बलिष्ठस्य (पुरुषस्य) १५ ४७ शरीरात्मबलवतो विदुष ६ ५० ६ सहत इति सहो वायुस्तस्य बलरूपस्य १ २६ १० **सहसा**=बलेनोत्साहेन वा ६ ६६ ६ सामर्थ्येनाऽऽकर्षणेन वा १ ५१ १० **सहसे**=बलप्रदाय मार्गशीर्षाय २२ ३१ **सहः**=उत्तम बलम् ३.३८ उदक बल वा ३ ३६ अनन्तसहनस्वरूप अनन्तसहनशक्ति वाला (ईश्वर) आर्याभि० २ ६, १६ ६ बलकारी मार्गशीर्ष १४ २७ बलवान् (परमात्मा) १० १५ यस्सहते स (विद्वज्जन) ६ १ १ सहनम् २८ ५ पराभावुक (अग्नि =सभाध्यक्ष) १ ३६ १८ निन्दा-स्तुति और स्वाऽपराधियो को सहन करने वाला (ईश्वर) स० प्र० २४६, १६ ६ सहनस्वभावम् (ब्रह्म) ऋ० भू० १६२, अथर्व० १३ ४ ५० यत सर्व सहते तस्मात् स एवैष सह (ईश्वर) ऋ० भू० ६१, अथर्व० १३ ४ १८ शारीर बलम् १८.३ [षह मर्षणे (भ्वा०) धातोरौणा० असुन् । सह उदकनाम निघ० १ १२ बलनाम निघ० २ ६ सहस बलस्य नि० ५ २५ सहस्प्राति०मत्वर्थे 'लुगकारेकाराश्च वक्तव्या' अ० ४४ १२८ वा०सूत्रेण यत् प्रत्ययस्य लुक् । सह =बल वै सह श० ६ ३ २ १४ एतौ (सहश्च सहस्यश्च) एव हैमन्तिकौ (मासौ) श० ४ ३.१.१८]

सहसस्पुत्र बलस्य पालक (अग्ने=राजन्) ५ ३ ६ बलस्योत्पादक (अग्ने=वैद्यराज विद्वन्) ३ १८ ४ **सहसस्पुत्रः**=बलिष्ठस्य वायो पुत्र इव वर्त्तमान (अग्नि) २.७ ६ [सहस्-पुत्रपदयो समासे षष्ठ्या अलुक् । अयम-प्यग्निरोजसा बलेन मथ्यमानो जायते तस्मादेनमाह सहस-स्पुत्रम् सहस सूनु सहसो यहुम् नि० ८ २]

सहसस्सूनो बलवता पुत्रदुष्टाना हिंसक (अग्ने=राजन्) ३ २४ ३ [सहस्-सूनुपदयो समासात् सम्बुद्धौ रूपम् । षष्ठ्या अलुक्]

सहसानम् य सर्व सहते तम् (राजानम्) ५ २५ ६ **सहसानः**=सहमान (इन्द्र =राजा), प्र०—अत्र वर्ण-व्यत्ययेन मस्य स ४ १७ ३ [षह मर्षणे (भ्वा०) धातो शानच् । वर्णव्यत्ययेन मकारस्य सकार । षह मर्षणे (भ्वा०) धातोर्वा 'ऋञ्जिवृधि०' उ० २ ८७ सूत्रेण असानच्]

सहसावन् सहोऽधिक बल विद्यते यस्य तत्सम्बुद्धौ (राजन्) प्र०—अत्र प्रथमाऽर्थे तृतीयाया अलुक् ३४ २३ बलेन तुल्य (विद्वज्जन) ५ २० ४ अत्यन्तबलवन् (सेना-ध्यक्ष), प्र०—सहसा इत्यव्ययम्, भूमार्थे मतुप् च १ ६१ २३ प्रशस्तबलयुक्त (अग्ने=विद्वज्जन) ३ १ २२ बहु सहो बल सहन वा विद्यते यस्य तत्सम्बुद्धौ (विद्वज्जन) १ १८६ ५ [सहस्प्राति० प्रशसार्थे भूम्न्यर्थे वा मतुप् । समासे प्रथमार्थे तृतीयाया अलुक्]

सहस्विन् बहुबलयुक्त (अग्ने=राजन्) ४ ११ १. [सहस्प्राति० भूम्न्यर्थे छान्दस इनि]

सहसूक्तवाकः ऋग्यजुरादिलक्षणै सूक्तैर्वाकै सह वर्त्तमान (यज्ञ =गृहाश्रम) ८ २२ [सूक्त-वाकपदयो समासे तत सह-पदेन समास]

सहसोमाः सोमेन श्रेष्ठगुणसमूहेन सह वर्त्तमाना इव (गृहपतय =गृहाश्रमिण) ८ ११ [सह-सोमपदयो समास]

सहस्कृत य सहसा करोति तत्सम्बुद्धौ (अग्ने=विद्वज्जन) ६ १६ ३७ सहो बल कृत येन तत्सम्बुद्धौ (अग्ने) १ ४५ ६ **सहस्कृतम्**=य सह सहन करोति कारयति वा तम् (जगदीश्वर भौतिकमग्नि वा) ३ १८ **सहस्कृतः**=सहसा बलेन निष्पन्न (राजा प्रजाजनो वा) ३३ ८३ [सहस्-कृतपदयो समास । सहस् बलनाम निघ० २ ६ बल वै सह श० ६ ३ २ १४]

सहस्तमा अतिशयेन सोढारौ (इन्द्राग्नी=वायु-विद्युतौ) ६ ६० १ [सहस्प्राति० अतिशायने तमप् । ततो द्विवचनस्याकारादेश । सहस् =षह मर्षणे (भ्वा०) धातो-रसुन् औणादिक]

सहस्तोमाः स्तोमै श्लाघाभिस्सह वर्त्तमाना यद्वा सहस्तोमा शास्त्रस्तुतयो येषान्ते (ऋषय =रागद्वेषदोषान् त्यक्तवन्त परस्परस्मिन् प्रीतिमन्तो जना) ३४ ४६ [सह-स्तोमपदयो समास । स्तोम स्तवनात् नि० ७ १२]

सहस्त्रियम् सहप्राप्ता भार्याम् १२ ४७ [सह-स्त्री-पदयो समास]

सहस्य सहसि बले साधो (अग्ने=विद्वज्जन)

वा प्र०—अत्र 'भुज पालनाऽभ्यवहारयो', इत्यस्मात् लङि सिपि 'बहुल छन्दसि' इति शप स्थाने आदिष्टस्य श्नम स्थाने श्लु 'श्लौ' इत्यद्वित्व 'बहुल छन्दसि' इतीडागमश्च १.३३ ६]

अबूबुधत् बोधयेत् १ १६१ १३ [बुध अवगमने (भ्वा०) धातोर्णिचि लुङि च रूपम् 'दीर्घो लघो' रिति दीर्घत्वम् अभ्यासस्य]

अबोधयः बोधयसि १ १०३ ७ बोधय ५ ७६ १. **अबोधि**=बोधयति १ ९२ ११ बुध्यते विज्ञायते १ १५७ १ प्रबुध्यते १५ २४ बुध्यताम् ३ ५६ ४ [बुध अवगमने (भ्वा०) धातोर्णिजन्ताल्लङ्]

अब्जाम् अप्सु जातम् (अहिं=मेघम्) ७ ३४ १६. **अब्जाः**=योऽप प्राणान् जनयति (ब्रह्म जीवो वा) १२ १४ योऽपो जनयति (ईश्वर) १० २४ योऽद्भ्यो जात (जीवात्मा) ४ ४० ५ [अप् उपपदे 'जनी प्रादुर्भावे' धातोर्विट्। नकारस्याकारश्च। अब्जाम् अप्सुजाम् नि० १० ४२ एप (सूर्य) वा अब्जा अद्भ्यो वा एप प्रातरुदेत्यप साय प्रविशति। ऐ० ४ २०]

अब्जिते योऽप्सु जयति तस्मै (इन्द्राय=विद्वत्सभासेनेशाय) २ २१ १ [अप कर्मनाम (निघ० २ १) तदुपपदे जि जये धातो क्विप् तुगागमश्च]

अब्दया येऽपो जलानि ददति ते (मरुत=मानवा) ५ ५४ ३ [अप उदक नाम (निघ० १ १२) तदुपपदे डुदाञ् दाने (जु०) धातो क प्रत्यय। 'सुपा सुलुगि' ति जस स्थाने यादेश]

अब्दः सवत्सर १२ ७४ [अप् उपपदे दा धातो क]

अब्दिमान् जलदवान् (मेघ) ५ ४२ १४ [अब्द-प्राति० मतुप् अब्दशब्दस्य अब्दिभाव]

अब्रवम् उक्तवानस्मि १ १०८ ६ ब्रूयाम् ६ ५५ ५ **अब्रवीत्**=ज्ञापयति, प्र०—अत्र लडर्थे लडन्तर्गतो ण्यर्थ, प्रसिद्धीकरण धात्वर्थश्च १ २३ २० ब्रूयादुपदिशेत् १ १६१ १२ ब्रूते १ १६१ १६ **अब्रवीत**=उपदिशत ४ ३५ ३ **अब्रवन्**=ब्रूयुरुपदिशेयु १ १६१ २ ब्रुवन्तु उपदिशन्तु ऋ० भू० १३४, ३१ २१ [ब्रूञ् व्यक्ताया वाचि (अदा० उभ०) धातोर्लङ् 'ब्रुव ईट्' इति हलादौ पितीडागम]

अब्रवीतन उपदिशेत १ १६१ १२ ब्रूयु १ १६१ ८ ब्रूयात् १ १६१ ३ [ब्रूञ् व्यक्ताया वाचि (अदा०) धातोर्लङि मध्यमबहुवचने तस्य स्थाने 'तप्तनप्तनथनाश्चे' ति तनप्। हलादौ पितीडागम]

अब्रह्मता अधनता ५ ३३ ३ वेदेश्वरनिष्ठारहितता १० २२. [ब्रह्म धननाम। निघ० २ १० ततो भावे तल् प्रत्यय नञ्समास ब्रह्म च बृहि वृद्धौ धातो 'बृहेर्नोऽच्च' उ० ४ १४६ सूत्रेण मनिन् नकारस्याकार. यणादेशश्च]

अब्रह्मा अवेदवित् (दस्यु=दुष्टस्वभावो जन) ४ १६ ६ **अब्रह्माणः**=अचतुर्वेदविद (जना) ७ २६ १ [सिद्धि पूर्वपदे द्रष्टव्या तस्य पुसि 'ब्रह्मा' रूपम् नञ्समास]

अब्राह्मणाः न ब्राह्मणा, अब्राह्मणा, (प्राजापत्याजना), अविद्यमानो ब्राह्मणो येपा ते (प्राजापत्याजना) ३० २२ [ब्रह्मन्प्राति० 'तदधीते तद्वेद' इत्यण्। ब्रह्म वेदस्तधीते वेद वेति ब्राह्मण ब्रह्मणोऽपत्यमिति विग्रहे ब्रह्मन् अण् 'अन' प्रकृतिभावाट्टिलोपो न भवति। नञ्समासश्च समानार्थौ ब्रह्मन्शब्दो ब्राह्मणश्च महाभा० ५ १ १]

अभक्तम् असेवितम् (आयु=जीवनम्) १ १२७ ५ विभागरहितम् (धनादिकम्) ३ ३० ७ [भज सेवायाम् (भ्वा०) धातो क्त। नञ्समास]

अभक्त भजेत ३ ३० १२ **अभक्षि**=सेवे ४ ३१ ५ **अभजत्**=सेवते २ ३८ १ सेवेत १ १४६ ५ भजेत् २ २४ १४ **अभजन्त**=भजन्ति १ ९१ १ भजन्तु १६ ५२ नित्यमानन्द सेवन्ते, प्र०—अत्र लडर्थे लङ् १ २०८ **अभजः**=सेवेथा ३ ३५ ६ सेवस्व ३ ४७ ३ [भज सेवायाम् (भ्वा० उभ०) धातोर्लुङ् 'झलो झलि' ति सिचो लोप 'अभजत्.' 'अभज' इत्येतयो परस्मैपदे, 'अभजन्त' प्रयोगे आत्मनेपदे च लङ्]

अभयन्त डरते है ५ ३० ५ [ञिभी भये (जु०) धातोर् लङ् 'बहुल छन्दसी' ति शप श्लुर्न भवति]

अभयम् भयरहितम् (धार्मिक जनसमूहम्) ४ २६ ३ भयराहित्यम् १८ ६ निर्भयम् (प्राणिसमूहम्) ३६ २२ अविद्यमान भय यस्य यस्माद्वा (सज्जनम्) ६ २८ ४ भयवर्जितम् (ज्योति=प्रकाशम्) २ २७ ११ **अभयानि**=अविद्यमान भय येपु तानि (राज्यप्राणिन) ११ १५ **अभये**=भयरहिते व्यवहारे ३ ३० ५ [ञिभी भये (जु०) धातो 'एरच्' भावे इत्यच् प्रत्यय नञ्समास। 'अज्विधौ भयादीनामुपसख्यानम्' इत्युपसख्यानात् नपुसके ऽप्यच् भवति स्वर्गो वै लोकोऽभयम् श० १२ ८ १ २२]

अभयसनि अभय सनति सम्भजति येन (अपत्यम्)

३ १. प्रधने सग्रामनाम निघ० २.१७]

सहस्रभरम् य सहस्रमसङ्ख्य बिभर्त्ति तम् (श्रेष्ठ विजयम्) ६ २० १ [सहस्रोपपदे डुभृञ् धारणपोषणयो (जु०) धातो पचाद्यच्]

सहस्रभृष्टिम् भृष्टयो भर्ज्जनानि दहनानि यस्मात्तम् (वध=दुर्भिक्षम्) ५ ३४ २ सहस्राणा भृज्जक छेदकम् (वज्र =शस्त्रविशेषम्) ६ १७ १० सहस्रमसख्याता भृष्टय पाका यस्मात्तम् (वज्रम्) १ ८५ ६ **सहस्र-भृष्टिः**=सहस्रमसङ्ख्याता भृष्टय पीडा दाहा वा यस्मात् स (वज्र) १ ८० १२. सहस्राणि बहूनि भृष्टय पाका यस्मात् स सूर्यस्य प्रकाश १ २४ [सहस्र-भृष्टिपदयो समास । भृष्टि =भ्रस्ज पाके(तुदा०) धातो स्त्रिया क्तिन् । 'ग्रहिज्या०' इति सम्प्रसारणम्]

सहस्रम् असङ्ख्यातगुणसम्पन्नम् (इन्द्र =सभाध्यक्षम्) १.८० ६ असङ्ख्यम् (जगत्) १ १८८ ८ असङ्ख्याता (स्तोमा =स्तुतय) १ ११ ८ ' असख्या (रुह.=नाड्य-ङ्कुरा) १२ ७६ असख्यमतुल बोधम् १८ ६२ सर्वमिद जगत्सहस्रनामकम् ऋ० भू० ११६, अथर्व० ६ ५ १७ सब ससार को स० वि० २०८, अथर्व० ६ ५.१७ असङ्ख्यगृहाश्रमव्यवहारम् १५ ५५ **सहस्रस्य**=असङ्ख्य-पदार्थयुक्तस्य जगत, असङ्ख्यपदार्थविशेषस्य, असङ्ख्यात-स्थूलवस्तुन १५ ६५. **सहस्राय**=अतुलविज्ञानाय, भा०—पुष्कलविद्यायै १३ ४० [सहस्रम् बहुनाम निघ० ३ १ सहस्रम्=सहस्वत् नि० ३ १० सहस्र—सर्व वै सहस्रम् । श० ४ ६ १ १५ भूमा वै सहस्रम् श० ३ ३ ३ ८. परम सहस्रम् ता० १६ ६ २ तदाहु कि सहस्रमितीमे लोका इमे वेदा अथो वागिति ब्रूयात् ऐ० ६ १५. आयुर्वै सहस्रम् तै० ३ ८ १५ ३ पशव सहस्रम् ता० १६ १० १२]

सहस्रमीळ्हे सहस्राणि मीळ्हानि धनानि यस्मात् तस्मिन् (आजौ=सङ्ग्रामे) १.११२ १० [सहस्र-मीळ्ह-पदयो समास । मीळ्हे सग्रामनाम निघ० २ १७]

सहस्रमुष्क असङ्ख्यवीर्य (इन्द्र=सेनापते) ६ ४६ ३ [सहस्र-मुष्कपदयो. समास । मुष्क =मुष स्तेये (क्र्या०) धातो 'सृवृभूशुषि०' उ० ३ ४१. सूत्रेण कक्]

सहस्रमूतिः सहस्रमूतयो रक्षणादीनि यस्मात् स (राजप्रजाजन) १ ५२ २ [सहस्र-ऊतिपदयो समास । ऊति =अव रक्षणगत्यादिषु (भ्वा०) धातो स्त्रिया क्तिन्]

सहस्रम्भरः सहस्रस्य जगतो धर्त्ता पोषको वा (अग्नि =विद्युदादिकार्यकारणस्य स्वरूप) २.६.१. य सहस्रमसख्य शुभगुणसमूह बिभर्त्ति स (प्राप्तमनुष्यजन्मनर) ११ ३६ [सहस्रोपपदे डुभृञ् धारणपोषणयो (जु०) धातो 'सञ्ज्ञाया भृतॄवृजि०' अ० ३ २ ४६ सूत्रेण खच् । सहस्र-म्भर=एषा ह वाऽअस्य (अग्ने) सहस्रम्भरता यदेनमेक सन्त बहुधा विहरन्ति ऐ० १ २८]

सहस्रयोजने सहस्राण्यसख्यानि चतु क्रोशपरिमितानि यस्मिन् देशे तस्मिन् १६ ५४ एतत्सख्यापरिमिते देशे १६ ६३. [सहस्र-योजनपदयो समास । सहस्रम् बहुनाम निघ० ३ १ योजनानि अङ्गुलिनाम निघ० २.५ सहस्र-योजन—(यजु० १६ ५४) अयमग्नि सहस्रयोजनम् श० ६ १ १ २६ एतद्ध परम दूर यत्सहस्रयोजनम् श० ६ १.१ २८]

सहस्ररेताः अतुलवीर्य (विविद्वान्=श्रेष्ठो विद्वज्जन) ४ ५ ३ [सहस्र-रेतस्पदयो समास]

सहस्रवत् सहस्रमसङ्ख्यपरिमाण विद्यते यस्मिँस्तत् (सुवीर्यम्) ३ १३ ७ [सहस्रप्राति० मतुप्]

सहस्रवल्शम् सहस्राण्यसख्या वल्शा अङ्कुरा इव शास्त्रबोधा यस्मिँस्त विज्ञानमय व्यवहारम् ७ ३३ ६. **सहस्रवल्शाः**=यथा बहुमूला वृक्षा रोहन्ति तथा ५ ४३ सहस्राऽङ्कुरा वनस्पतय इवाऽङ्गोपाङ्गै सह वर्त्तमाना (दूर्वादय) ३ ८ ११ [सहस्र-वल्शपदयो समास]

सहस्रवीरम् सहस्राणि वीरा यस्मिँस्तम् (बर्हि = विज्ञानम्) १ १८८ ४ [सहस्र-वीरपदयो समास]

सहस्रवीर्या असङ्ख्यातपराक्रमा, भा०—जितेन्द्रिया (स्त्री) १३ २६ [सहस्रवीर्यपदयो समासे स्त्रिया टाप्]

सहस्रशः असख्याता बहव (रुद्रा =शूरवीरा जना) १६ ६ [सहस्रप्राति० वीप्सायां शस्]

सहस्रशीर्षा सहस्राण्यसख्यातानि शिरासि यस्मिन् स (पुरुष =परमात्मा) ३१ १ [सहस्र-शिरस्पदयो समासे शिरस शीर्षन्भाव. 'शीर्षंश्छन्दसि' सूत्रेण]

सहस्रशृङ्गः सहस्राणि शृङ्गाणि तेजासि किरणा यस्य सूर्यस्य स ७.५५ ७ [सहस्र-शृङ्गपदयो समास । शृङ्गाणि ज्वलतो नाम निघ० १ १७]

सहस्रसातमम् सहस्रमसङ्ख्यात सुख सनुते ददाति येन तदतिशयितम् (द्युम्न=ज्ञानम्), प्र०—'जनसनखन-क्रमगमो विट्' अ० ३ २ ६७ अनेन सहस्रोपपदात् सनोतेर्विट् 'विड्वनोरनुनासिकस्यात्' अ० ६ ४ ४१ अनेन नकारस्या-कारादेश, ततस्तमप् १ ६ ८ असख्याना पदार्थानामतिशयेन विभक्तारम् (सूरि=विद्वास शिल्पिनम्) ६ ४५ ३३.

सहस्रसातमः=य सहस्रमसङ्ख्य सनोति ददाति सोऽतिशयित (अग्नि=महाविद्वज्जन) ३ ३ ६ अतिशयेन सहस्रस्य विभाजक (वाजी=अश्व) १ १७५ १ [सहस्रोपपदपण सम्भक्तौ (भ्वा०) धातो 'जनसनखनक्रमगमो विट्' इति विट्। 'विड्वनोरनुनासिकस्यात्' इत्यात्त्वम्। सहस्रसाप्राति० अतिशायने तमप्]

सहस्रसातमाम् सहस्राणि बहूनि धनानि सुखानि वा सनोति ददाति यया साऽतिशयिता ताम् (ऊति=रक्षा प्राप्तिमवगमञ्च), प्र०—अत्र सहस्रोपपदात् षणु दाने इत्यस्माद्धातो 'जनसन०' इत्यनेन विट् 'विड्वनोरनुनासिकस्यात्' इति नकारस्याकारादेश, ततस्तमप्, ततष्टाप् १ १० १० [सहस्रोपपदे षणु दाने (तना०) धातोर्विट्। ततोऽतिशायने तमप्। ततष्टाप् स्त्रियाम्]

सहस्रसाम् सहस्राणि कार्याणि सनति सम्भजति (यस्तम् अश्व=विद्युतम्) १ ११८ ६ सहस्र बह्वीर्विद्या सनोति तम् (ऋषि=वेदमन्त्रार्थद्रष्टार, शुभगुणोपदेष्टार, सकलविद्याप्रत्यक्षकारिण जनम्) १ १० ११ या सहस्राणि असख्यातानि कार्याणि सनोति ताम् (द्युत=कारणस्था दीप्तिम्) ३ १६ **सहस्रसाः**=य सहस्राणि सनति विभजति स (राजा) ४ ३८ १० य सहस्राणि पदार्थान् सनोति विभजति स (अग्नि) १ १८८ ३ ये सहस्र विद्याविषयान् सनन्ति ते (राजपुरुषा) ६ १७ [सहस्रोपपदे षण सम्भक्तौ (भ्वा०) षणु दाने (तना०) धातोर्वा 'जनसनखनक्रमगमो विट्' अ० ३ २ ६७ सूत्रेण विट्। 'विड्वनोरनुनासिकस्यात्' इत्यात्त्वमनुनासिकस्य]

सहस्रसावे सहस्रस्याऽसख्यस्य धनस्य साव प्रसवो यस्मिन् सङ्ग्रामे ३ ५३ ७ [सहस्र-सावपदयो समास। साव =षु प्रसवैश्वर्ययो (भ्वा०) धातोर्घञ्]

सहस्रस्थूणम् सहस्रमसख्या वा स्थूणा यस्मिँस्तज्जगत्, राज्य, यान वा ५ ६२ ६ **सहस्रस्थूणे**=सहस्राणि स्थूणा स्तम्भा यस्मिँस्तस्मिन् (सदसि=सभास्थाने) २ ४१ ५. [सहस्र-स्थूणापदयो समास। स्थूणा=तिष्ठति छादनादिकमनया सा स्थूणेति विग्रहे ष्ठा गतिनिवृत्तौ (भ्वा०) धातो 'रास्नासास्नास्थूणावीणा' उ० ३ १५ सूत्रेण न-प्रत्यय आकारस्य ऊकारादेशो निपात्यते। तत स्त्रियां टाप्]

सहस्रा सहस्राण्यसख्यातानि (अवद्विष=शत्रून्) १ १३३ ७ बहुविधा (ऊतय=रक्षा) ४.३१ १०. [सहस्रम् बहुनाम निघ० ३ १ ततश्शेर्लोपश्छन्दसि]

सहस्राक्ष सहस्रेष्वसख्यातेषु व्यवहारेष्वक्षि विज्ञान यस्य तत्सम्बुद्धौ, भा०—असख्यप्राणिशरीराणि प्रविश्यानेकनेत्रादिभिरङ्गैः दर्शनादीनि कार्याणि कर्त्तुं समर्थ (अग्ने=योगिराज) १७ ७१. सहस्रेष्वसख्यातेषु युद्धकार्येष्वक्षिणी यस्य तत्सम्बुद्धौ, भा०—सर्वतो विदितसाम-दाम-दण्ड-भेदादिराजनीत्यवयवकृत्य (सेनाध्यक्ष) १६ १३ **सहस्राक्षः**=सहस्राण्यसख्यातान्यक्षीणि यस्मिन् स (पुरुष=परमात्मा) ३१ १. असख्यदर्शन' (अग्नि=मनुष्य) १३ ४७ **सहस्राक्षाय**=सहस्रेष्वसख्यातेषु शास्त्रविषयादिष्वक्षिणी यस्य तस्मै विदुषे ब्राह्मणाय १६ २६ सहस्रेषु भृत्येषु अक्षिणी यस्य तस्मै (सेनापतये) १६ ८. [सहस्र-अक्षिपदयो समास। 'अक्ष्णोऽदर्शनात्' अ० ५ ४ ७६ सूत्रेण 'वा छन्दसि' नियमेन छन्दसि दर्शनार्थेऽपि समासान्तोऽच्]

सहस्राक्षा सहस्राण्यसख्यातानि अक्षीणि साधनानि याभ्यान्तौ (इन्द्रवायू=विद्युत्पवनौ) १ २३.३ [सहस्राक्ष इति व्याख्यातम्। ततो द्विवचनस्याकारादेश]

सहस्राक्षरा सहस्राणि असख्यातान्यक्षराणि यस्या सा (विदुषी स्त्री) १ १६४ ४१ [सहस्र-अक्षरपदयो समासे स्त्रिया टाप्। सहस्राक्षरा बहूदका नि० ११ ४०]

सहस्रिणम् सहस्रमसख्यात प्रशस्त सुख विद्यते यस्मिँस्तम् (रयि=धनसमूहम्) १ ६४ १५ सहस्रमसख्याता गुणा विद्यन्ते यस्मिँस्तम् (वाज=बोधम्) १ १२४ १३ सहस्रमसख्या पदार्था विद्यन्ते यस्मिँस्तम् (रयि=धनम्) ४ ४९ ४ सहस्रैर्योद्धृभि सयुक्तम् (वाज=सङ्ग्रामम्) ६ ८ ६ असङ्ख्य बल विद्यते यस्मिँस्तम् (वाज=वेगम्) ३ २२ १ सहस्राण्यसख्यातानि सुखानि यस्मिन् सन्ति तम् (वाज=पदार्थविज्ञानम्), प्र०—'तप सहस्राभ्या विनीनी' अ० ५ २ १०२ इति सहस्रशब्दादिनि प्रत्यय १ ५ ६ **सहस्रिणः**=असख्यातसुखाङ्गयुक्तान् (पदार्थान्) २ २ ७ असख्यपुरुषधनयुक्तस्य (वायो=राज्ञ) ४ ४८ ५ सहस्रमसङ्ख्याता वेगादयो गुणा सन्ति येषान्ते (वायुवेगा) २ ४१ १ **सहस्री**=असङ्ख्य (रयि=धनम्) ७ ४ ६ सहस्राण्यसख्याता उत्तमा मनुष्या पदार्था वा विद्यन्ते यस्य स (सम्राट्=चक्रवर्त्ती राजा) ७ ५८ ४ सहस्र सर्व सुखमस्मिन्निति स (रयि=श्री) ६ १५ १२ [सहस्रमिति बहुनाम निघ० ३ १ तत 'तप सहस्राभ्या विनीनी' अ० ५ २ १०२ सूत्रेण इनि]

सहस्रिणी सहस्राण्यसख्याता विद्याविषया विद्यन्ते

यस्या सा (वेदचतुष्टयी) ७ १५ ९ असस्या पदार्था दीयन्ते यस्या सा (राति =दानक्रिया) ६ ४५ ३२ **सहस्रिणीभिः**=सहस्राण्यसस्या वेगा विद्यन्ते यासु गतिपु ताभि २८ २८ सहस्राणि वहूनि शूरवीरसङ्घा यासु ताभि (सेनाभि) १ १३५ ३ सहस्राणि प्रशस्तानि पदार्थप्रापणानि विद्यन्ते यासु ताभि (ऊतिभि =रक्षणादिभि) प्र०—अत्र प्रशसार्थ इनि १ ३० ८ **सहस्रिणीः**=असङ्ख्याता (इप =अन्नानि) २ ६ ५ वह्वी (इप) १ १८८ २. [सहस्रप्राति० मत्वर्थे 'तप सहस्राभ्या विनीनी' सूत्रेण इनि । तत स्त्रियाम् 'ऋन्नेभ्यो ङीप्' अ० ४ १.५ सूत्रेण ङीप्]

सहस्रियम् सहस्रे पु भवम् (प्रजाजनम्) ७ ५६ १४ **सहस्रियः**=सहस्रे णाऽसख्यातेन योद्धृसमूहेन सम्मितस्तुल्य (अग्नि =पावक इव सेनापति) १५ ५२ [सहस्रप्राति० भवार्थे 'समुद्राभ्राद् घ' अ० ४ ४ ११८ सूत्रेण घ]

सहस्रियासः सहस्राणि (ऊर्म्मय =तरङ्गा) १ १६८ ८ [सहस्रियमिति व्याख्यातम् । ततो जसो ऽसुगागम]

सहस्व अभिभव, तिरस्कुरु, प्र०—सह अभिभवे इत्यस्य प्रयोग ३ २४ १ वली भव, भा०—वशे नय १२ ९९ क्षमस्व ९ ३७ **सहः**=सहसे, प्र०—लडि मध्यमैकवचनेऽडभाव १ १७४ ८ [पह मर्पणे (भ्वा०) धातोर्लोट् । अन्यत्र लड् । अटोऽभाव । व्यत्ययेन परस्मैपदञ्च]

सहस्वत् सहोऽतिशयित सहन विद्यते यस्मिन् तद्यथा स्यात्तथा, (मख =पालनशिल्पाख्यो यज्ञ) प्र०—अत्राऽतिशये मतुप् १ ६ ८ [सहस्प्राति० अतिशायने तमप् । सहस् इति व्याख्यातम्]

सहस्वतः प्रशस्त सहो वल विद्यते यस्मिँस्तस्य (अग्ने) १ ९७ ५ वलवत (सेनेशस्य) २ १३ ११ **सहस्वन्तः**=सह सहन विद्यते येपा ते (जना) प्र०—अत्र भूम्न्यर्थे मतुप् ३ १८ **सहस्वान्**=सहनकर्त्ता (विद्वज्जन) ६ ५ ६ अत्यन्तवलयुक्त (परमेश्वर) ६ २२.१ सहो वहुवल विद्यते यस्य स (इन्द्र =सेनापति) १७ ३७ **सहस्वः**=वहुवलयुक्त, सकलविद्याविद्वा (विद्वज्जन) ३ १४ २ प्रशस्त वलयुक्त (वीरपुरुप) ७ ४४ सोढु शील (वैद्यजन) १.१८९ ४ वहुसहनादिगुणयुक्त (विद्वन्) ५ ९ ७ [सहस्प्राति० प्रशसार्थे भूम्न्यर्थे वा मतुप् । सह वलनाम निघ० २ ९]

सहावा सहन कर्त्ता (राजकर्मचारी) ६ १८ २ य सहैव वनति सम्भजति (देव =विद्वज्जन) ७ ४५ ३ सोढा (भूपति) ३ ४९ ३ [सह =पह मर्पणे (भ्वा०) धातोर् घञर्थे क । सहप्राति० मत्वर्थे, वनिप् । पूर्वस्य सहितायां दीर्घ । अन्यत्र सहोपपदे वन सम्भक्तौ (भ्वा०) धातो 'अन्येभ्योऽपि दृश्यन्ते' विच् । पूर्वस्य सहिताया दीर्घ, धातोर्नकारस्यात्त्वम्]

सहावान् वलवान् (सेनेश) प्र०—अत्राऽन्येपामपि० दीर्घ १ १७५ ३ सहो वहु सहन विद्यते यस्मिन् स (ओपधिसार) १ १७५ २ [सहप्राति० भूम्न्यर्थे मतुप् । सह.=पह मर्पणे (भ्वा०) धातोरच् । सहम्प्राति० वा मतुप् । वर्णव्यत्ययेन सकारस्याकार । सह वलनाम निघ० २ ९]

सहासः सहनशीला वलवन्त (मरुत =मनुष्या) ७ ३४ २४ [सहप्राति० जसोऽसुक् । सह =पह मर्पणे (भ्वा०) धातोरच्]

सहिष्ठ अतिशयेन सोढा (राजन्) ६ १८ ४ [पह मर्पणे (भ्वा०) धातो कर्त्तरि तृजन्तात् 'तुश्छन्दसि' इष्ठन् । तृचो लोप]

सहीयस अतिशयेन वलयुक्तान् सोढ़ृन् (नॄन्=मनुष्यान्) १ १७१ ६ अतिशयेन सहनशीलान् वलिष्ठान् (सज्जनान्) ४ ५५ १ **सहीयान्**=अतिशयेन सोढा (वीरजन) १ ६१ ७ [पह मर्पणे (भ्वा०) धातो कर्त्तरि तृजन्तात् 'तुश्छन्दसि' अ० ५ ३ ५९ सूत्रेणातिशायन ईयसुन् । 'तुरिष्ठेमेयस्सु' सूत्रेण तृचो लोप]

सहीयसि याऽतिशयेन सोढ्रि (साध्वि स्त्रि) ५ ७९ २ [सहीयस् इति व्याख्यातम् । तत स्त्रिया ङीवन्तात् सम्बुद्धौ रूपम्]

सहुरिः सहनशील (जन) ७ ५८ ४ सहनस्वभाव (शमादिशुभकर्माचारिजन) २ २१ ३ **सहुरी**=सोढारौ (इन्द्राग्नी=वायुविद्युतौ) ६ ६० १ **सहुरे**=सहनशीलेन्द्र (राजन्) ४ २२ ९ [पह मर्पणे (भ्वा०) धातो 'जसिसहोरुरिन्' उ० २ ७३ सूत्रेण-उरिन्]

सहूतिभिः समाना हूतय आह्वानानि च सहूतयस्ताभि. १ ४५ १० **सहूती**—समाना हूतिराह्वान ययोस्तौ (अग्नीपोमौ=वाय्वग्नी) १ ९३ ९ [समाना-हूतिपदयो समासे समानस्य सादेश । हूति =ह्वेञ् स्पर्धाया शब्दे च (भ्वा०) धातो स्त्रिया क्तिन्]

सहूती समानप्रशसया ७ २७ ४ समानया स्पर्द्धया २ ३३ ४ [समाना-हूतिपदयो समासे समानस्य सादेश ।

हूति =ह्वेञ् स्पर्धाया शब्दे (भ्वा०) धातो स्त्रिया क्तिन्। तत 'सुपा सुलुक्' सूत्रेण टास्थाने पूर्वसवर्णदीर्घश्छान्दस]

सहृदयम् सब के समान हृदय (गृहस्थजन) स० वि० १४१, अथर्व० ३ ३० १ [समान-हृदयपदयो समासे समानस्य सादेशश्छान्दस]

सहोजाः य सहसा बलेन प्रसिद्ध (दूत =जीव) १ ५८ १ य सहसा बलेन जात (इन्द्र =सेनापति) १७ ३७ [सहस् उपपदे जनी प्रादुर्भावे (दिवा०) धातोर्ड । वचनव्यत्ययेन सो स्थाने जस् । सह बलनाम निघ० २ ९.]

सहोदाम् बलप्रदम् (इन्द्र =राजानम्) ६ १७ १३ य सहो बल ददाति तम् (इन्द्र =सम्राजम्) ७ ३६ **सहोदाः**=बलप्रदा (राजक्रिया) १.१७४.१० बलप्रद (सभेश) १ १७१ ५ [सहसुपपदे डुदाञ् दाने (जु०) धातो कर्त्तरि क्विप् । सह बलनाम निघ० २ ९]

सहोभरिः य सहो बल बिभर्त्ति स (राजा) ५ ४४ ३ [सहसुपपदे डुभृञ् धारणपोषणयो (जु०) धातो 'फलेग्रहिरात्मम्भरिश्च' अ० ३ २ २६ सूत्रे चकार-स्यानुक्तसमुच्चयार्थकत्वाद् इन्]

सहोवृधम् य सहसा बलेन वर्धते त, बलस्य वर्धक वा (आप्त विद्वज्जनम्) ३ १० ९ सहो बल वर्धयतीति सहो वृधम् (अग्नि =सर्वाभिरक्षकमीश्वरम्) १.३६ २ [सहस् उपपदे वृधु वृद्धौ (भ्वा०) धातो कर्त्तरि क्विप्]

सहौजसः ओजसा बलेन सह वर्त्तमाना (स्त्रिय) १० ४ [सह-ओजस्पदयो समास]

सह्यसः सहीयसोऽतिशयेन बलवत (विद्वज्जनस्य) १.१२० ४ [प्र०—अत्र सहधातोरसुन् ततो मतुप् । तत ईयसुनि विन्मतोर्लुगिति मतुब्लोप । टेरिति टिलोप । छान्दसो वर्णलोपो वेतीकारलोप]

सह्याः सहन कुर्या १ १५२ ७ [षह मर्षणे (भ्वा०) धातोर्लिङि मध्यमैकवचने रूपम्]

सह्याः सोढु योग्या (दीक्षय) २ ११४ [षह मर्षणे (भ्वा०) धातो 'शकिसहोश्च' अ० ३ १ ९९ सूत्रेण यत्]

सह्योः सहनशीलस्य (सज्जनस्य) ६ १८ १२ [षह मर्षणे (भ्वा०) धातोर्बाहु० औणा० युच् युन् वा]

संयक्षतः सङ्गच्छत २ ३ ७ [सम्+यज देवपूजा-सगतिकरणदानेषु (भ्वा०) धातोर्लेटि सिपि प्रथमद्विवचने रूपम्]

संयत् सङ्गति १५ १८ सयम १५ ५ **संयतः**= सयमयुक्ता (प्रजा) ५ ३४ ९ **संयता**=सयमयुक्तेन (विज्ञानेन) १ १५१ ८ सयच्छन्ति येन तेन (द्युम्नेन= धनेन यशसा वा) ६ १६ २१ [सम्+यमु उपरमे (भ्वा०) धातो सम्पदादित्वात् 'अन्येभ्योऽपि दृश्यते' इति वा क्विप्। 'गम क्वौ' अ० ६ ४ ४० इत्यत्र 'गमादीनामिति वक्तव्यम्' इत्यनुनासिकलोपे तुगागम । सयत् सग्रामनाम निघ० २ १७]

संयतम् कृतसयमम् (स्वस्ति=सुखम्) ६ २२ १० **संयतः**=सम्यङ् नियमित (अग्नि =विद्वज्जन) २ २ २ [सम्+यमु उपरमे (भ्वा०) धातो क्त । 'अनुदात्तोपदेश०' अ० ६ ४ ३७ सूत्रेणानुनासिकलोप]

संयती सम्मिलिते (योगक्षेमसाधने) ५ ३७ ५ सयमेन गच्छन्त्यौ द्यावापृथिव्यौ २ १२ ८ [सम्+इण् गतौ (अदा०) धातो शत्रन्तान् ङीप्]

संयद्वसुः यज्ञस्य सङ्गतिकरण १५ १८ [सयत्-वसुपदयो समास]

संयद्वीरम् सयता सयमयुक्ता वीरा यस्मिँस्तम् (अग्न्यादिपदार्थबोधम्) २ ४ ८ [सयत-वीरपदयो समास । पूर्वपदस्यान्त्यलोपश्छान्दस]

संयन्ति प्राप्नुवन्ति २ ३५ ३ सम्यग् गच्छन्ति १ १९० ७ **संयन्तु**=सम्यक् प्राप्नुवन्तु १ १२५ ७ [सम्+इण् गतौ (अदा०) धातोर्लट् । अन्यत्र लोट्]

संयासाय सम्यग् गमनाय ३९ ११ [सम्+यसु प्रयत्ने (दिवा०) धातोर्घञ्]

संयेमुः सम्यक्तया यच्छेयु ३ ३८ ३ [सम्+यमु उपरमे (भ्वा०) धातोर्लिट्]

संयौमि सम्यङ् मिश्रयामि, अग्नौ प्रक्षिप्य वियोजयामि वा १ २२ [सम्+यु मिश्रणेऽमिश्रणे च (अदा०) धातोर्लट्]

संरभध्वम् सम्यक् प्रारम्भ कुरुत, भा०—मङ्गलान्याचरत ३५ १० **संरभस्व**=सम्यगारम्भ कुरु २७ ५. **संरभेमहि**=सम्यक्तया शत्रुभि सह युध्येमहि १ ५३ ५ [सम्+रभ राभस्ये (भ्वा०) धातोर्लोट । अन्यत्र लिङ्]

सँरराणः सम्यग् दातृशील (प्रजापति =परमेश्वर), प्र०—अत्र व्यत्ययेनाऽऽत्मनेपदम् 'बहुल छन्दसि' अ० २ ४ ७६ इति शप स्थाने श्लु ८ ३६ सम्यक् सुखानि राति ददाति स (यम =न्यायी सयमी सन्तान) १९ ५१ सम्यग् रममाण, भा०—व्याप्त (प्रजापति =ईश्वर) ३२ ५ सर्वप्राणिभ्योऽत्यन्त सुख दत्तवान् सन् (ईश्वर) ऋ० भू० ४४, ८ ३६ सत्यविद्याया सम्यग् दानकर्त्ता (परमेश्वर) ऋ० भू० २६०, १९ ५१ [सम्+रा दाने

(अदा०) धातो शानच् । व्यत्ययेनात्मनेपदम् । शप श्लुश्च छान्दस]

संरराणे ये सम्यक् सुख रातो दत्तस्ते (द्यावापृथिव्यौ) ६ ७० ६ [सरराण इति व्याख्यातम् । तत स्त्रिया टावन्तात् प्रथमाद्विवचनम्]

संराधयन्तः परस्पर मिल के धन-धान्य राज्य-समृद्धि को प्राप्त होते हुए (गृहस्थादि मनुष्यो) स० वि० १४२, अथर्व० ३ ३० ५ [सम्+राध ससिद्धौ (स्वा०) धातोर्णिजन्ताच्छतृ]

संरायस्पोषेण प्रशस्ताना रायो धनाना भोगपुष्ट्या ३ १९ [सम् रैपदयो समासे तत पोपपदेन सह समास । समासे विभक्तेरलुक्]

संरिणीथः सम्यक्क्रया हिस्तम् १ ११७ १९ **संरिणाति**=सम्यग्गच्छति ५ ३१ ११ [सम्+रि हिंसायाम् (स्वा०) धातोर्लट् । विकरणव्यत्ययेन श्ना । रिणाति गतिकर्मा निघ० २ १४]

संरिहाणे सम्यगास्वादकर्त्र्यौ (मातरा=मातृवद्वर्त्तमानेऽध्यापिकोपदेशिके) ३ ३३ ३ [सम्+लिह आस्वादने (अदा०) धातो शानजन्तात् स्त्रिया टाप् । ततो द्विवचने रूपम् । धातोर्लस्य रेफश्छान्दस]

संरोचते एकीभावेन प्रकाशते ३७ १४ [सम्+रुच दीप्तावभिप्रीतौ च (भ्वा०) धातोर्लट्]

संवतः ससेवमान (मनुष्य) ५ १५ ३ सविभक्तान् (अवरान्=नीचाननुत्कृष्टगुणकर्मस्वभावान् नरान्) ११ ७१ विभागवत्य (विषयजन्या व्याधय) १ १९१ १५ **संवतम्**=सम्यग् विभक्ताम् (यानगतिम्) ११ १२ [सम्+वन सम्भक्तौ (भ्वा०) धातो क्त । 'अनुदात्तोपदेश०' अ० ६ ४ ३७ सूत्रेणानुनासिकलोप । सवत सग्रामनाम निघ० २ १७]

संवत्सम् सङ्गत वत्समिव, एकीभूत वात्सल्येन पालित सन्तानम् ४ ३३ ४ [सम्-वत्सपदयो समास]

संवत्सरः क्षणादिलक्षण काल, प० वि० । ऋ० ८ ८.४८ २ सवत्सर इव नियमेन वर्त्तमान (विद्वज्जनो जिज्ञासुर्वा) २७ ४५ द्वादशभिर्मासैरलङ्कृत (वर्ष) १८ २३ **संवत्सराय**=वर्षाय २४ २५ चतुर्थ्याऽनुवत्सराय, प्र०—अत्राऽनो पूर्वपदस्य लोप ३० १५ [सम्+वस निवासे (भ्वा०) धातो 'सपूर्वाच्चित्' उ० ३ ७२ सूत्रेण सरन् । 'स स्यार्धधातुके' अ० ७ ४ ४९ सूत्रेण सकारादावार्धधातुके परतस्तकारादेश । सवत्सर = सवसन्तेऽस्मिन् भूतानि नि० ४ २७ षट्त्रिंशच्च ह वै त्रीणि च शतानि सवत्सरस्याहोरात्रा इति च ब्राह्मण समासेन नि० ४ २७ स ऐक्षत प्रजापति । सर्वं वाऽअत्सारिष य इमा देवता असृक्षीति स सर्वत्सरो ऽभवत् सर्वत्सरो ह वै नामैतद् यत् सवत्सर इति श० ११ १ ६ १२ य स भूताना पति सवत्सर स श० ६ १ ३ ८ सवत्सरो वै प्रजापति श० २ ३ ३ १८ सवत्सरो वै प्रजापतिरेकशतविध. श० १० २ ६ १ सवत्सर प्रजापति ऐ० १ १ ता० १६ ४ १२ गो० उ० ३ ८ तै० १ ४ १० १० स (सवत्सर) एव प्रजापतिस्तस्य मासा एव सह दीक्षिण ता० १० ३ ६ स वै सवत्सर एव प्रजापति श० १ ६ ३ ३५ प्रजापति सवत्सर ऐ० ४ २५ स एष प्रजापतिरेव सवत्सर कौ० ६ १५ सवत्सरो यज्ञ प्रजापति श० १ २ ५ १२ सवत्सरो वै यज्ञ प्रजापति तस्यैत द् द्वार यदमावास्या चन्द्रमा एव द्वारपिधान श० ११ १ १ १ सवत्सरो यज्ञ श० ११ २ ७ १ सवत्सरसमितो वै यज्ञ पञ्च वा ऋतव सवत्सरस्य त पञ्चभिराप्नोति तस्मात्पञ्च जुहोति श० ३ १ ४ ५ सवत्सरो वै पञ्चहोता तै० २ २.३ ६ सवत्सरो वाव होता गो उ० ६ ६ सवत्सरो वै होता कौ० २९ ८ सवत्सरो वै धाता तै० १ ७ २ १ पुरुषो वै सवत्सर श० १२ २ ४ १ पुरुषो वाव सवत्सर गो० पू० ५ ३. प्राणो वै सवत्सर ता० ५ १० ३ वाक् सवत्सर ता० १२ १२ ७ बृहती हि सवत्सर श० ६ ४ २ १० तदाहुस्सवत्सर एव मामेति जै० उ० १ ३५ १ सवत्सर स्वर्गाकार तै० २ १ ५ २ अग्नि सवत्सर ता० १७ १३ १७ अग्निर्वाव सवत्सर तै० १ ४ १० १ सवत्सरोऽग्नि श० ६ ३ १ २५ ता० १० १२ ७ सवत्सर एवाग्नि श० १० ४ ५ २ सवत्सर एषोऽग्नि श० ६ ७ १ १८ सवत्सरो वा अग्नि-र्वैश्वानर तै० १ ७ २ ५ श० ६ ६ १ २० सवत्सरोऽग्नि-र्वैश्वानर ऐ० ३ ४१ सवत्सरो वैश्वानर श० ५.२ ५ १५ सवत्सरो वै वैश्वानर श० ४ २ ४ ४ सवत्सरो वै पिता वैश्वानर प्रजापति श० १ ५ १ १६ सवत्सरो वै सोमो राजा (ऋ० ४ ५३ ७) कौ० ७ १० सवत्सरो वै सोम पितृमान् तै० १ ६ ८ २ सवत्सरो वा इन्द्राशुनासीर तै० १ ७ १ १ इन्द्राय शुनासीराय=(सवत्सराय पुरोडाश द्वादशकपाल निर्वपति तै० १ ७ १ १ सवत्सरो वै शुनासीर गो० उ० १ २६ स य स सवत्सरो ऽसौ स आदित्य श० १० २ ४ ३ एष वै सवत्सरो य एष (आदित्य) तपति श० १४ १ १ २७ एष वै मृत्युर्यत्सवत्सर एष हि मर्त्याना-महोरात्राभ्यामायु क्षिणोत्यथ म्रियन्ते श० १० ४ ३ १ सवत्सरो विश्वकर्मा ऐ० ४ २२ सवत्सरो वरुण श०

४ ४ ५.१८ सवत्सरो हि वरुण श० ४ १ ४ १० व्योमा (यजु० १४ १३) हि सवत्सर श० ८ ४ १ ११ सुमेक सवत्सर स्वेको ह वै नामैतद् यत् सुमेक इति श० १ ७ २ २६ सवत्सरो वै समस्त सहस्रवास्तोकवान् पुष्टिमान् ऐ० २ ४१ सवत्सरो वै परिक्षित् । सवत्सरो हीमा प्रजा परिक्षेति सवत्सर हीमा प्रजा परिक्षियन्ति ऐ० ६ ३२ सवत्सरो वै परिक्षि । सवत्सरो हीद सर्व परिक्षियतीति गो० उ० ६ १२ सवत्सरो वै प्रवत ग्रश्वीतीरप ता० ४ ७ ६ सवत्सरो वज्र श० ३ ६ ४ १९ सवत्सरो हि वज्र श० ३ ४ ४ १५ सवत्सरो यजमान श० ११ २ ७ ३२ ग्रभ्रातृव्या तत्सवत्सर ऐ० ५ २५ कौ० २७ ५ ग्रग्निष्टोम उक्थ्योऽग्निर्ऋतु प्रजापति सवत्सर इति । एतेऽनुवाका यज्ञक्रतूनामृतूनाञ्च सवत्सरस्य च नामधेयानि तै० ३ १० ४ सवत्सरो वै देवाना जन्म श० ८ ७ ३ २१ सवत्सर खलु वै देवाना पू तै० १ ७ ७ ५ तस्य (सवत्सरस्य) वसन्त एव द्वार हेमन्तो द्वार त वा एतं सवत्सर स्वर्गं लोक प्रपद्यते श० १ ६ १ १९ सवत्सर सुवर्गो लोक तै० २ २ ३ ६ श० ८ ४ १ २४ ता० १८ २ ४ मध्ये ह सवत्सरस्य स्वर्गो लोक श० ६ ७ ४ ११ सवत्सरो वाव नाक षट्त्रिंशस्तस्य चतुर्विंशतिरर्धमासा द्वादशमासास्तद्यत्तमाह नाक इति न हि तत्र गताय कस्मै च नाक भवति श० ८ ४ १ २४ सवत्सरो वै देवाना गृहपति ता० १० ३ ६ एक वा एतद् देवानामह । यत् सवत्सर तै० ३ ९ २२ १. सद्यो वै देवाना सवत्सर ता० १६ ६ ११ इमऽउ लोका सवत्सर श० ८ २ १७ १७ सर्व वै सवत्सर श० १ ६ १ १९ सवत्सर इद सर्वम् श० ८ ७ १ १ सवत्सरो वा ऽऋतव्या (इष्टका) श० ८ ६ १.४ ऋतव सवत्सर तै० ३ ९ ६ १ ऋषभो वा एष ऋतूनाम् । यत् सवत्सर । तस्य त्रयोदशो मासो विष्टपम् तै० ३ ८ ३ ३ त्रयो वा ऽऋतव सवत्सरस्य श० ३ ४ ४ १७ त्रेधा विहितो वै सवत्सर कौ० १९ ३ पञ्चऽर्त्तव सवत्सरस्य श० १ ५ २ १६ षड् वा ऽऋतव सवत्सरस्य श० १.२ ५ १२. सप्तार्त्तव सवत्सर श० ६ ६ १ १४ द्वादश वा वै त्रयोदश वा सवत्सरस्य मासा श० २ ९ ३ २७ सवत्सरस्य प्रतिमा वै द्वादश रात्रय तै० १ १ ६ ७ त्रयोदश वै मासा सवत्सरस्य श० ३ ६ ४ २४ एतावान् वै सवत्सरो यदेष त्रयोदशो मासस्तदत्रैव सर्व सवत्सर आप्तो भवति कौ० १९ २ एतावान् वै सवत्सरो यदेष त्रयोदशो मासस्तदत्रैव सर्व सवत्सर आप्तो भवति कौ० ५ ८ स एष सवत्सर प्रजापति षोडशकल श० १८.४ ३.२१ सवत्सर सप्तदश ता० ६ २ २ सप्तदशो वै सवत्सरो द्वादशमासा पञ्चर्तव श० ६ २ २ ८ सवत्सर एव सप्तदशस्यायतन द्वादशमासा पञ्चर्त्तव एतदेव सप्तदशस्यायतनम् ता० १० १ ७ द्वादश वै मासा सवत्सरस्य पञ्चर्तव एष एव प्रजापति सप्तदश श० १.३ ५ १० सप्तदशो वै प्रजापतिर्द्वादशमासा पञ्चर्तवो हेमन्तशिशिरयो समासेन तावान्त्सवत्सर । सवत्सर प्रजापति ऐ० १ १ सवत्सरो वाव प्रतूर्त्तिरष्टादश (यजु० १४ २३) तस्य द्वादशमासा पञ्चर्तव सवत्सर एव प्रतूर्त्तिरष्टादशस्तद्यत्तमाह प्रतूर्त्तिरिति सवत्सरो हि सर्वाणि भूतानि प्रतिरति श० ८ ४ १ १३ सवत्सरो वाव तपो नवदश (यजु० १४ २३) तस्य द्वादश मासा षड् ऋतव सवत्सर एव तपो नवदशस्तद्यत्तमाह तप इति सवत्सरो हि सर्वाणि भूतानि तपति श० ८ ४ १ १४ सवत्सरो वाव वर्चो द्वाविंश (यजु० १४ २३) तस्य द्वादशमासा सप्तर्तवो द्वेऽग्रहोरात्रे सवत्सर एव वर्चो द्वाविंशस्तद् यत्तमाह वर्च इति सवत्सरो हि सर्वेषा भूताना वर्चस्वितम श० ८ ४ १ १६ सवत्सरो वाव सम्भरणस्त्रयोविंश (यजु० १४ २३) तस्य त्रयोदश मासा सप्तर्तवो द्वेऽग्रहोरात्रे सवत्सर एव सम्भरणस्त्रयोविंशस्तद् यत्तमाह सम्भरण इति सवत्सरो हि सर्वाणि भूतानि सम्भृत श० ८ ४ १ १७ चतुर्विंशो वै सवत्सर ता० ४ १० ५ चतुर्विंशत्यर्धमासो वै सवत्सर ऐ० ८ ४ सवत्सरो वाव गर्भा पञ्चविंशस्तस्य चतुर्विंशतिरर्धमासा सवत्सर एव गर्भा पञ्चविंश श० ८ ४ १ १९ सवत्सरो वाव प्रतिष्ठा त्रयस्त्रिंश (यजु० १४ २३) तस्य चतुर्विंशतिरर्धमासा षड् ऋतवो द्वे ऽहोरात्रे सवत्सर एव प्रतिष्ठा त्रयस्त्रिंशस्तद्यत्तमाह प्रतिष्ठेति सवत्सरो हि सर्वेषा भूताना प्रतिष्ठा श० ८ ४ १ २२ सवत्सरो वाव ब्रध्नस्य विष्टप चतुस्त्रिंशस्तस्य चतुर्विंशतिरर्धमासा सप्तर्त्तवो द्वे अहोरात्रे सवत्सर एव ब्रध्नस्य विष्टप चतुस्त्रिंश (यजु० १४ २३) श० ८ ४ १ २३ सवत्सरो वाव विवर्त्तोऽष्टाचत्वारिंश (यजु० १४ २३) षड्विंशतिरर्धमासास्त्रयोदशमासा सप्तर्तवो द्वे अहोरात्रे तद्यत्तमाह विवर्त इति सवत्सराद् हि सर्वाणि भूतानि विवर्त्तन्ते श० ८ ४ १ २५ त्रीणि वै षष्टि शतानि सवत्सरस्याह्नाम् कौ० ११ ७ त्रीणि च ह वै शतानि षष्टिश्च सवत्सरस्याहोरात्राणि गो० पू० ५ ५ एतावान् वै संवत्सरो यदहोरात्रे कौ० १७ ५ विरूप (नानारूप) सवत्सर ता० १४ ९ ८ यस्मादेषा समाना सती षडह विभक्तिर्नानारूपा तस्माद् विरूप सवत्सर

ता० १० ६ ७ पडहो वा उ सर्व सवत्सर कौ० १६ १० नवाहो वै गवत्सरम्य प्रतिमा प० ३ १२ सवत्सरस्य प्रतिमा या (एकाष्टकारूपा) त्वा रात्रि यजामहे म० २ २ १८ सवत्सरस्य या पत्नी (एकाष्टकारूपा) सा नो अस्तु सुमङ्गली (अथर्व० ३ १० २) म० २ २ १६ एपा वै सवत्सरस्य पत्नी यदेकाष्टका ता० ५ ६ २ मुख वा एतत् सवत्सरस्य यत्फाल्गुनी पौर्णमासी कौ० ४ ४ ता० ५ ६ ८ गो० उ० ११६ मुख (सवत्सरस्य) उत्तरे फल्गुन्यौ पुच्छ पूर्वे गो० उ० ११६ एपा ह सवत्सरस्य-प्रथमा रात्रिर्यत् फाल्गुनी पौर्णमासी श० ६ २ २ १८ एषा वै प्रथमा रात्रि सवत्सरस्य यदुत्तरे फाल्गुनी तै० ११२६ एपा वै जघन्या रात्रि सवत्सरस्य यत्पूर्वे फाल्गुनी तै० ११२६ किं नु ते मयि (सवत्सरे) इति । अयम्म आत्मा स (आत्मा) मे त्वयि (सवत्सरे) जै० उ० ३ २४ ८ आत्मा वा एप सवत्सरस्य यद् विपुवान् ता० ४ ७ १ आत्मा वै सवत्सरस्य विपुवानङ्गानि पक्षौ=(दक्षिण पक्ष उत्तर पक्षश्च) गो० पू० ४ १८ आत्मा वै सवत्सरस्य विपुवानङ्गानि मासा श० १२ २ ३ ६ अथ ह वा ऽएप महासुपर्ण एव यत् सवत्सर । तस्य यान् पुरस्ताद्विपुवत पण्मासानुपयन्ति सोऽन्यतर पक्षोऽथ यान् पडुपरिष्टात्सो-ऽन्यतर आत्मा विपुवान् श० १२ २ ३ ७ सवत्सरो वै व्रत तस्य वसन्त ऋतुर्मुख ग्रीष्मश्च वर्पाश्च पक्षौ शरन्मध्य हेमन्त पुच्छम् ता० २१ १५ २ तस्य (सवत्सरस्य) वसन्त शिर तै० ३ ११ १० २ वर्पा उत्तर (पक्ष सवत्सरस्य) तै० ३.११ १० ३ वर्पा पुच्छम् (सवत्सरस्य) तै० ३ ११ १० ४. सवत्सरे सवत्सरे वै रेत सिक्त जायते ऐ० ४ १४. सवत्सरे सवत्सरे वै रेत सिक्तिर्जायते कौ० १६ ६. सवत्सरो वै प्रजननम् गो० पू० २ १५ सवत्सर हि प्रजा पशवोऽनुप्रजायन्ते ता० १० १ ६ तस्मादु सवत्सर ऽएव स्त्री वा गौर्वावडवा वा विजायते श० ११ १ ६ २ सवत्सर ऽएव कुमारो व्याजिहीर्पति श० ११ १ ६ ३ तस्मात्सवत्सर-वेलाया प्रजा· (शिशव) वाच प्रवदन्ति श० ७ ४ २ ३८ चक्षुर्वा एतत् सवत्सरस्य यच्चित्रापूर्णमास ता० ५.६ ११ प्रजापतेर्ह वै प्रजा ससृजानस्य पर्वाणि विसस्रसु । स वै सवत्सर एव प्रजापतिस्तस्यैतानि पर्वाण्यहोरात्रयो सन्धी पौर्णमासी चामावास्या चर्त्तुमुखानि श० १ ६ ३ ३५ सवत्सरोऽसि नक्षत्रेपु श्रित । ऋतुना प्रतिष्ठा तै० ३ ११ १ १४ (नक्षत्राणि) सवत्सरस्य प्रतिष्ठा तै० ३ ११ १ १३ तस्मादाहु सवत्सर सर्वे कामा इति श० १० २ ४ १ सवत्सरो वै सर्वस्य शान्ति ता० ६ ८ १३]

संवत्सरीणम् य सवत्सर भृतस्तम् (परमात्मानम्), प्र०='सम्परिपूर्वात् ख च' अ० ५ १ ६२ इति भृतार्थे ख १७ १३ [सवत्सरप्राति० 'सपरिपूर्वात् ख च' अ० ५ १ ६२ सूत्रेण निर्वृत्त अधीष्ट-भृत-भूत-भाव्यादिपु ख । खस्येनादेश]

संवदध्वम् सम्यक् सवाद प्रश्नोत्तर प्रीति ने करो स वि० १८७, १० १६१ २ सङ्गता भूत्वा परस्पर जल्पवितण्डादिविरुद्धवाद विहाय सम्प्रीत्या प्रश्नोत्तरविधानेन सवाद कुरुत ऋ० भू० ६२, १० १६१ २ [सम्+वद व्यक्ताया वाचि (भ्वा०) धातोर्लोट्]

संवननेन सम्यक्तया धर्मकृत्य के सेवन के साथ स० वि० १४३, अथर्व० ३ ३० ७, [सम्+वन सम्भक्तौ (भ्वा०) धातोर्ल्युट् । सवननप्राति० टा]

सवपामि सम्यग् विस्तारयामि १ २१ [सम्+ डुवप बीजसन्ताने (भ्वा०) धातोर्लट्]

संवयन्ती प्रापयन्त्यौ (उपासानक्ता) २० ४१ [सम्+वय गतौ (भ्वा०) धातो शत्रन्तान् ङीप्]

संवयन्ती निर्मिमाना (उपासानक्ता=रात्रिदिने) २ ३ ६ [सम्+वेञ् तन्तु सन्ताने (भ्वा०) धातो शत्रन्तान् ङीप्]

संवरणस्य स्वीकृतस्य (राय =धनस्य) ५ ३३ १० **संवरणात्**=सम्यक् स्वीकरणात् ७ ३ २ सम्यक्तया-ऽऽच्छादनात् १५ ६२ **संवरणेषु**=आच्छादकेपु व्यवहारेपु ४ २१ ६ [सम्+वृञ् वरणे (स्वा०) वृञ् आवरणे (चुरा०) धातोर्ल्युट्]

संवर्चसा सङ्गत्या विद्याध्ययनप्रकाशनेन ३ १६ [सम्-वर्चस्पदयो समास । वर्चम्=वर्च दीप्तौ (भ्वा०)+ असुन्]

संवर्तयन्तः सम्यग् वर्त्तमाना (किरणा) ५ ४८ ३ [सम्+वृतु वर्त्तने (भ्वा०) धातोर्णिजन्ताच्छतृ]

संववृत्वत् सवरणशीलम् (तम) ५ ३१ ३ [सम्+ वृञ् वरणे (स्वा०) वृञ् आवरणे (चुरा०) धातोर्वा छान्दस रूपम्]

सवसाना. सम्यगाच्छादका (स्वसार =अङ्गुलय.) ४ ६ ८ **संवसानौ**=सम्यक् सुवस्त्रालङ्कारेणाच्छादितौ (विवाहितौ स्त्रीपुरुषौ) १२ ५७ [सम्+वस आच्छादने (अदा०) धातो शानच्]

संवाक् विनयपुरस्सरार्थयो सम्यक प्रकाशिनी वाणी, राजनीतिनिष्ठा सम्यग् वाणी, भा०—यस्य वाणी सर्वदा

सत्याऽस्ति स सम्राट् ६ १२ [सम्-वाच्पदयो समासः। वाच्=वच परिभाषणे (अदा०) धातो 'क्विब्वचिप्रच्छ्यायतस्तु०' अ० ३ २ १७८ वा०सूत्रेण क्विप् दीर्घोऽसम्प्रसारणञ्च]

संवाजेभिः श्रेष्ठतया विज्ञानादिगुणैः सङ्ग्रामैर्वा १ ५३ ५ [सम्-वाजपदयो समासे भिस ऐस् न भवति छन्दसि। वाजे सङ्ग्रामनाम निघ० २.१७]

संवाजैः सम्यग् युद्धैरन्नैर्विज्ञानैर्वा १ ४८ १६ [सम्-वाजपदयो समास। वाज अन्ननाम निघ० २ ७ बलनाम निघ० २ ९ वाजे सङ्ग्रामनाम निघ० २ १७]

संवावशन्त सम्यक्तया पुन पुन प्रकाशयन्त (नर =मनुष्या) १ ६२ ३ [सम्+वाशृ शब्दे धातोर्यङ्लुगन्ताच्छतृ। 'बहुल छन्दसीति वक्तव्यम्' अ० ७ ३ ८७ वा०सूत्रेणोपधाया ह्रस्वत्वम्। धातूनामनेकार्थकत्वादत्र प्रकाशनेऽर्थे]

संविक्थाः एकीभावेन चल, अ०—विचल, प्र०—ओविजी भयचलनयो इत्यस्माल्लोटर्थे लट्, लटि मध्यमैकवचने 'बहुल छन्दसि' इति विकरणाभावश्च १ २३ भय कम्पन च कुर्य्या ६ ३५ [सम्+ओविजी भयचलनयो (तुदा०) धातोर्लङ्। अटोऽभावो विकरणस्य लुक् च छन्दसि]

संवित् प्रतिज्ञा १८ ७ [सम्+विद ज्ञाने (अदा०) धातो सम्पदादित्वात् क्विप्]

संविदधातु समाधन विधान करोतु २ २४ [सम्+वि+डुधाञ् धारणपोषणयो (जु०) धातोर्लोट्]

संविदानः प्रतिजानन् (सुमन्तान) १९ ५४. सम्यग् विज्ञान कुर्वन् (विद्वज्जन) ७ ४४ ४ सम्यग् ज्ञाता सन् (सोम =चन्द्रलोक) ऋ० भू० १३८, ऋ० ६ ४ १३ ३ सम्यग् ज्ञापयन् (प्रजापति =परमेश्वर) १२ ६१. **संविदानाः**=सम्यक् कृतप्रतिज्ञा (अ०—विद्वासो जना) १५ १३ सम्यग् विचारशीला (विद्वज्जना) १५ ११. समाननिश्चयाः (विद्वासो जना) १५ १० सम्यग् लब्धज्ञान (विद्वज्जना) १५ १२ [सम्+विद ज्ञाने (अदा०) धातो शानच्। 'समो गमादिषु विदिप्रच्छिस्वरतीनामुपसख्यानम्' अ० १ ३ २९ वा०सूत्रेणात्मनेपदम्]

संविदाना सम्यक् कृतप्रतिज्ञा (निर्ऋति=स्त्री) १२ ६३. **संविदाने**=सम्यग् विज्ञाननिमित्ते, भा०—सविदितक्रिये (धनुर्ज्ये) २९ ४१ प्रतिज्ञापालिके (योषा=पत्न्यौ) ६ ७५ ४ सम्यग् विज्ञापिके (उषासा=प्रात. साय- वेले) २६ ६ [सविदान इति व्याख्यातम्। तत स्त्रिया टाप]

संविदुः सम्यक्तया जानन्ति ५ ४४.११. **संविद्युः**= एकीभावेन विदन्ति, प्र०—अत्र लडर्थे लिट् १ ७३.७४ **संविदाम्**=सम्यक्तया विदन्ताम्, प्र०—विद ज्ञाने इत्यस्माल्लोटि प्रथमबहुवचने 'लोपस्त आत्मनेपदेषु' अ० ७ १.४१. अनेन तकारलोपे सवर्णदीर्घे विसर्गाभाव रूपम् ६.३९ **संविदेय**—एकीभावेन विन्देय ४ २३ [सम्+विद ज्ञाने (अदा०) धातोर्लेटि 'विदो लटो वा' इति सूत्रेण निपातेन णलादय आदेशा। अन्यत्र लिट्। 'सविदाम्' प्रयोगे विद ज्ञाने (अदा०) धातो सम्पूर्वकात् लोटि 'समो गमादिषु विदिप्रच्छिस्वरतीनामुपसख्यानम्' इत्यात्मनेपदे 'लोपस्त आत्मनेपदेषु' इति तलोपे रूपम्। सविदेय=सम्+विद्लृ लाभे (तुदा०) धातोर्लिट्। नुमभावश्छान्दस]

संविविक्तः सम्यक् पृथक् कुर्वन् (परमेश्वरस्य) ३ ५४ ८ [सम्+वि+विजिर् पृथग्भावे (जु०) धातो क्त.]

संविव्यानः सम्यग् व्याप्नुवन् (राजा) ५ २९ ४. सम्यक् प्राप्नुवन् (इन्द्र =विद्वज्जन) १.१३० ४ [सम्+व्येञ् सवरणे (भ्वा०) धातो शानच्। सप. श्लुश्च छान्दस]

संविव्ये सवृणोति १.१७३ ६ **संविव्ययुः**=सन्तनुत वेष्टयतम् ६ ७२ ५ [सम्+व्येञ् सवरणे (भ्वा०) धातोर्लिट्]

संविशस्व एकीभावेन विशस्व १४ ३ [सम्+विश प्रवेशने (तुदा०) धातोर्लोट्। व्यत्ययेनात्मनेपदम्]

संविश्वतुरा सम्यक्तया यद् विश्व सर्व तुरति त्वरयति तेन (गवा) १ ४८ १६. [विश्वोपपदे तुर त्वरणे (जु०) धातो कर्त्तरि क्विप्। तत सम्पदेन समास। ततष्टा प्रत्यय]

संवृक् य सवृक्ते स (विद्वज्जन) ३८ २८ य सम्यग् वर्जयति स (इन्द्र =सूर्यलोक) २ १२ ३ [सम्+वृजी वर्जने (अदा०) धातो कर्त्तरि क्विप्]

संवेशपतये सम्यग् विशन्ति ये ते पृथिव्यादय पदार्थास्तेषा पति पालकस्तस्मै (अग्नये=परमेश्वायर भौतिकाय वा) २.२०. [सवेश-पतिपदयो समास.। सवेश =सम् विश प्रवेशने (तुदा०) धातो कर्त्तरि 'कर्मण्यण्' इत्यण्]

संव्रता सत्यभाषणादीनि १२ ५८ [सम्+व्रतपदयो समासे शेर्लोपश्छन्दसि]

संशराय सम्यग्घिसनाय ३० १७ [सम्+शॄ हिंसायाम् (क्र्या०) धातो 'ऋदोरवि' ल्यप्]

संशाय सम्यक् सूक्ष्मवलान् कृत्वा १८ ७१ [सम्+शो तनूकरणे (दिवा०) धातो क्त्वा]

संशितम् सम्यक् तीक्ष्णवुद्धिस्वभावम् (राजानम्) २७ ८ प्रशसनीयम् (ब्रह्म=वेदविज्ञानम्) ११ ८१ **संशितः**=सम्यक् सूक्ष्मीकृत (रथ) २३ १४ स्तुत (हय=अश्व) २३ १४ [सम्+शो तनूकरणे (दिवा०) धातो क्त । 'शाच्छोरन्यतरस्याम्' अ० ७ ४ ४१ सूत्रेणेकारान्तादेश]

संशिशातु सम्यक्तया क्षयतु, प्र०—अत्र शो तनूकरणे इत्यस्मात् श्यन 'वहुल छन्दसि' श्लु, तत 'श्लौ' इति द्वित्वम् १ १११ ५ **संशिशीतम्**=सम्यक् तीक्ष्णीकुर्याताम् २ ३९ ७ **संशिशीमहि**=शत्रून् सूक्ष्मान् जीर्णान् कुर्म, प्र०—अत्र शो तनूकरणे इत्यस्माल्लटि श्यन स्थाने व्यत्ययेन श्लु 'छन्दस्युभयथा' इति श्लोरार्धधातुकत्वादाकारादेश १ १०२ १० **संश्यत्**=सम्यक् तनूकरोति ११३० ४ [सम्+शो तनूकरणे (दिवा०) धातोर्लोट् । 'वहुल छन्दसीति' श्लु । 'वहुल छन्दसि' अ० ७ ४ ७८ सूत्रेणाभ्यासस्येत्वम् । सशिशीतम् प्रयोगे 'छन्दस्युभयथे' त्यार्धधातुकसञ्ज्ञाया धातोराकारादेशे 'ई हल्यघो' अ० ६ ४ ११३ सूत्रेण हलादौ सार्वधातुके क्ङिति आत ईकारादेश । सशिशीमहि प्रयोगे लटि शप श्लौ व्यत्ययेनात्मनेपदम् । 'छन्दस्युभयथा' इत्यार्धधातुकत्वादात्वम् । सार्वधातुकत्वाच्चेत्वम् । सश्यत् प्रयोगे लङ् । 'ओत श्यनि' इत्याकारलोप । अडभावश्छान्दस]

संशिशाधि सम्यक् शिक्षस्व, भा०—एतान् दुर्व्यसनेभ्यो निवर्तयेत् सुशीलान् सम्पादयेत् २७ ८ सम्यक्तया शिक्षय ६ १५ ९ [सम्+शासु अनुशिष्टौ (अदा०) धातोर्लोट् । 'वहुल छन्दसी' ति शप श्लु । अभ्यासस्येत्वम् 'वहुल छन्दसि' अ० ७ ४ ७८ सूत्रेण]

संसत् सम्राट्-सभा ४ १ ८ **संसदः**=सम्यक् सीदन्ति यासु ता (सभा) २९ १ **संसदि**=ससीदन्ति विद्वासो यस्या तस्या सभायाम् १ ९४ १ [सम्+षदलृ विशरणगत्यवसादनेषु (भ्वा०) धातोरधिकरणे क्विप् सम्पदादित्वात्]

संसनिष्यदत् सम्यक्तयाऽतिशयेन प्रस्रवन् (दधिक्रा=अश्व), प्र०—अत्र स्यन्दू-धातोर्यङ्लुक् शतृप्रत्यये ऽभ्यासस्य निक् निपात्यते ९ १४ [सम्+स्यन्दू प्रस्रवणे (भ्वा०) धातोर्यङ्लुगन्तान्छतरि 'दार्धर्त्तिदर्धर्त्ति०' अ० ७ ४ ६५ सूत्रेणाभ्यासस्य निगागमो धातो सकारस्य षत्वञ्च निपात्यते]

संसन्नः सम्यक् गच्छन् प्राप्नुवन् (प्रजापति=जीव) ३९ ५. [सम्+षद्लृ विशरण गत्यवसादनेषु (भ्वा०) धातो क्त]

संसमायुवसे सम्यक्तया मिश्रय, प्र०—अत्र विकरणाऽऽत्मनेपदव्यत्यय १५ ३० [सम्+आङ्+यु मिश्रणेऽमिश्रणे च (अदा०) धातोर्लट् । व्यत्ययेनात्मनेपद शप्रत्ययश्च । समित्यस्य द्वित्वम् 'प्रसमुपोद पादपूरणे' अ० ८ १ ६ सूत्रेण]

संसमेतु एकीभावेन प्राप्नोतु, प्र०—अत्र 'प्रसमुपोद पादपूरणे' अ० ८ १ ६ इत्यनेन समित्यस्य द्वित्वम् ६ २० [सम्+इण् गतौ (अदा०) धातोर्लोट् । समित्यस्य द्वित्वम्]

संसर्पाय य सम्यक् सर्पति गच्छति तस्मै (गुप्तचराय) २२ ३० **संसर्पेण**=सम्यक् प्रापणेन १५ ७ [सम्+सृप्लृ गतौ (भ्वा०) धातो पचाद्यच् कर्त्तरि अन्यत्र घञ्]

संसहस्रम् सम्यक् सहस्रम् (वच=वचनम्) ७ ८.६ [सम्+सहस्रपदयो समास]

संसादि सम्पाद्यते २ ११ ८ [सम्+साध ससिद्धौ (स्वा०) धातो कर्मणि लुङ् । अडभावश्छान्दस । धस्य दकारश्छान्दस]

ससिसिचे ससिञ्चति ३ ३२ १५ [सम्+षिच क्षरणे (तुदा०) धातोर्लिट् । व्यत्ययेनात्मनेपदम्]

संसीदस्व सम्यगास्व ३८ १७ [सम्+षद्लृ विशरणगत्यवसादनेषु (भ्वा०) धातोर्लोट् । शित्प्रत्यये धातो सीदादेश]

संसृक्षाथाम् ससर्ग कुरुतम् १९ ७ **संसृज**=सम्यग् योजय १७ ५० सम्यग् युङ्ग्धि १७ ५१ अ०—सयुनक्ति, प्र०—अत्र व्यत्ययो लडर्थे लोट् च १ २३ २४ एकीभावेन सम्यक् सृजति १ २३ २३ **संसृजामि**=एकीभावेन सम्बध्नामि १८ ३५ सम्यक् निष्पादयामि १९ १ **संसृजेथाम्**=सम्यङ् निष्पादयेतम् १५ ५४ अच्छे प्रकार उत्पन्न करो स० वि० १३६, अथर्व० १४ २ ३७ [सम्+सृज विसर्गे (तुदा०) धातोर्लोट् । विकरणव्यत्ययेन श्न । आत्मनेपद च व्यत्ययेन । अन्यत्र लोट् लेट् च]

संसृज्य ससर्गीभूत्वा १२ ३८ समुत्पाद्य ११ ५४ [सम्+सृज विसर्गे (तुदा०) धातो. क्त्वा । समासे क्त्वो ल्यप्]

संसृष्टजित् य समृष्टान् मिलितान्छत्रून जयति स (इन्द्र =सर्वसेनाधिपति) १७ ३५ [समृष्टोपपदे जि जये (भ्वा०) धातो क्विप् । समृष्ट =सम्+सृज विसर्गे (तुदा०) धातो क्त]

संसृष्टान् सम्यग्गुणयुक्तान् (पदार्थान्) २४ १६ [सम्+सृज विसर्गे (तुदा०) धातो क्त]

संसृष्टाम् सम्यग् सुशिक्षया निष्पादिताम् (कन्याम्) ११ ५५ [सम्+सृज विसर्गे (तुदा०) धातो क्तान्ताट् टाप्]

संस्कृतत्रम् य सम्कृत त्रायते रक्षति तम् (विद्वज्जनम्) ६ २८ ४ [सस्कृतोपपदे त्रैङ् पालने (दिवा०) धातोर्ड]

संस्कृतम् कृतसस्कारम् (पदार्थम्) ५ ७६.२ शिल्पविद्यासस्कारयुक्त) सर्वर्त्तुकम् (उत्तमयानम्) ४ ३४. [सम्+डुकृञ् करणे (तना०) धातो क्त । 'सपर्युपेभ्य करोतौ भूषणे' इति कात्पूर्व सुट्]

संस्कृतिः विद्यासुशिक्षाजनिता नीति ७ १४ [सम्+डुकृञ् करणे (तना०) धातो स्त्रिया क्तिन् । कात् पूर्व सुडागम]

संस्तिरः सम्यगाच्छादक (विद्वज्जन) १ १४० ७. [सम्+स्तृञ् आच्छादने (क्र्या०) धातोर्मूलविभुजादित्वात् कर्त्तरि क]

संस्तुतेन सङ्गत्या प्रशसितेन (वर्चसा=विद्याध्ययनप्रकाशनेन) ३ १६ [सम्+ष्टुञ् स्तुतौ (अदा०) धातो क्त]

संस्तुप् सम्यक् स्तुम्नाति शब्दार्थसम्बन्धान् यया सा वाक् १५ ५ [सम्+स्तुम्भु (सौत्रो धातु) धातो क्विप्]

संस्थाम् सम्यक् तिष्ठन्ति यस्या ताम् (सभाम्) १६ २६ [सम्+ष्ठा गतिनिवृत्ती (भ्वा०) धातोर्घञर्थे क । तत स्त्रिया टाप् । यास्सप्त सस्था या एवैतास्सप्त होत्रा प्राचीर्वषट् कुर्वन्ति ता एव ता जै० उ० १ २१ ४]

संस्थे सम्यक् तिष्ठन्ति यस्मिँस्तस्मिन् राज्ये ५ ३ ८ जगति, प्र०—अत्र 'घञर्थे कविधानम्०' अ० ३ ३ ५८ इति वार्तिकेनाधिकरणे क प्रत्यय. १ ५ ४ [सम्+ष्ठा गतिनिवृत्ती (भ्वा०) धातोर्घञर्थे क]

संस्पृशः य सस्पृशति तस्मात् (दिव =प्रकाशाद्विद्युत) ३७ १३ सम्यक् स्पर्शात् ३७ ११ [सम्+स्पृश सम्पर्शने (तुदा०) धातो क्विप्]

संस्मयमाना सम्यङ् मन्दहासयुक्ता (उषा इव युवति.) १.१२३ १० [सम्+ष्मिङ् ईषद्धसने (भ्वा०) धातोर्णिजन्ताच्छानच् । तत स्त्रिया टाप्]

संस्रवभागाः सम्यक् स्रूयन्ते ये ते सस्रवा, भज्यन्ते ये ते भागा, सस्रवा भागा येषान्ते (देवा =विद्वासो दिव्या पदार्था वा) २ १८ [सस्रव-भागपदयो समास । सस्रव =सम्+स्रु गतौ (भ्वा०) धातो 'ऋदोरप्' ल्यप् । भाग =भज सेवायाम् (भ्वा०) धातोर्घञ् । सस्रवभागा वसवो वै रुद्रा आदित्या सस्रावभागा तै० ३ ३.६ ७]

संस्रष्टा श्रेष्ठाना सनुष्याणा शस्त्रास्त्राणा वा सगर्गस्य कर्त्ता (इन्द्र =सेनापति) १७ ३५. [सम्+सृज विसर्गे (तुदा०) धातो कर्त्तरि तृन् । 'सृजिदृशोर्झल्यमकिती' ति सूत्रेणामागमे यणादेश]

संहतः एकीभूता (धेनव.=गाव) ३ १ ७. [सम्+हन हिंसागत्यो (अदा०) धातो क्त]

संहन्मः सहितानि निमीलितान्यादर्शकानि कुर्म ७ ५५ ६ [सम्+हन हिंसागत्यो (अदा०) धातोर्लट्]

संहंसि एकीभावेन नाशयसि १.५३.७. [सम्+हन हिंसागत्यो (अदा०) धातोर्लट्]

संहानाय सहन्यते यस्मिँस्तस्मै (सग्रामाय) २२ ७ [सम्+हन हिंसागत्यो (अदा०) धातोर्घञ्]

संहाय सम्यक् त्यक्त्वा २ ३८ ४. [सम्+ओहाक् त्यागे (जु०) धातो क्त्वा । तत समासे क्त्वो ल्यप्]

संहितम् कृतसाधनम् (अ०—जगत्) १.१६८ ६ [सम्+डुधाञ् धारणपोषणयो (जु०) धातो क्त । 'दधातेर्हिरि' ति हिरादेश]

संहितः दृढाङ्ग (पशु) २६ ५८ सर्वैर्भूतैर्द्रव्यैः सत्पुरुषैर्वा सह मिलित (सूर्य.=सविता) १८.३६. [सम्+हि गतौ वृद्धौ च (स्वा०) धातो क्त । (यजु० १८ ३६) असौ वा आदित्य सहित एष अहोरात्रे सदधाति श० ७ ४ १.८ सहिनाम् (साम) तद्देवा सहितेन समदधुर्यत् समदधुस्तस्मात् सहिनम् ता० ८ ४ ६. सहित भवति द्व्यक्षरनिधन प्रतिष्ठायै प्रतिष्ठायै व सत्रमासते ता० ११.५ ४. सहित भवति द्व्यक्षरणिधन प्रतिष्ठायै ता० १५.११ ३]

सँहिता सर्वपदार्थै सह वर्त्तमाना विद्युत्, सर्वव्यापक ईश्वरो वा ३ २२ [सहितमिति व्याख्यातम् । ततष्टाप् स्त्रियाम् । पर सन्निकर्ष सहिता । पदप्रकृति सहिता नि० १ १७]

सँहिनोमि सम्यक्तया वर्धयामि १ ६१ ४ [सम्+हि गतौ वृद्धौ च (स्वा०) धातोर्लट्]

१६ ४८ [अभयोपपदे षरण सभक्तौ (भ्वा०) धातोर्बाहुलकात् करणे 'इ' प्रत्यय]

अभरत् धारयति ऋ० भू० २३८, ११ ५ १६ धरेत् ४ २६ ७ भरति १ १६१ १० बिभर्ति २० ५६ **अभरन्**=धरन्ति पुष्णन्ति वा ४ ३३ ४ **अभरिष्यत्**=भरति २ ३० २ [भृञ् भरणे (भ्वा०) धातोर्लङि लृङि च रूपाणि । अभरत् अहरत् निघ० ७ २६]

अभवत् भवेत् १ ११२ ४ भवति, भा०—उत्पादयति ३१ ४ होवे स० वि० १३७, अथर्व० १४ १ ६ **अभवत**=भवन्ति ४ ३५ ८ **अभवतम्**=भवेतम् १ ११७ १४ **अभवन्**=भवन्तु ४ १७ ६ भवेयु ३ ३५ ६ **अभवम्**=अस्मि ४ २६ १ **अभवः**=भूया भवति वा, प्र०—अत्र पक्षे व्यत्यय, लिड्लटोरर्थे लङ् च १ ४ ८ भवति १ ७२ ७ भव ३ १ १७ भवसि १ ६१ २ प्रसिद्धो भवसि २ १३ १० भवे ४ १७ ६ भवति प्र०—अत्र वर्त्तमाने लङ्—व्यत्यय १ ३२ १२ [भू सत्तायाम् (भ्वा०) धातो सामान्ये लङ्]

अभासि समन्तात् प्रकाशयति १ ४६ ४ [भा दीप्तौ (अदा०) धातो सामान्ये लङ् 'इतश्चे' ति लोपो न भवति छान्दसत्वात्]

अभाः पुष्णाति धरति वा, भा०—पालयति, रक्षति १२ ६१ [डुभृञ् धारणपोषणयो । (जु०) धातोर्लङि मध्यमैकवचने रूपम् । सिचो लुक् छान्दस]

अभार्ष्टाम् दहताम् २८ १७ [भ्रस्ज पाके (तुदा०) धातोर्लुङि प्रथमद्विवचने रूपम्]

अभि अभित ३ ४० आभिमुख्यार्थे १ ११ २ सर्वतो भावे प्र०—अभीत्याभिमुख्य प्राह निरु० १ ३, १ ११ ८. सर्वत ३३ ६ अभिलक्ष्य १ १६२ ११ [अभीत्याभिमुख्यम् निघ० १ ३]

अभिऽआयंसेन्या आभिमुख्यतया समन्तात् यम्येते गृह्येते यौ तौ (अश्विना=शिल्पिनौ) प्र०—अत्र सुपा सुलुगित्याकारादेश अभ्याङ् पूर्वाद् यमधातोर्बाहुलकादौणादिक सेन्य प्रत्यय १ ३४ १ [अभि+आङ्+यमु उपरमे (भ्वा०) धातोरौणादिक सेन्य 'सुपा सुलुग्' इति डादेश]

अभिऽआवर्ती यो विजेतुमभ्यावर्त्तते स (अग्नि=राजा) ६ २७ ८ **अभिऽआवर्तिने**=अभ्यावर्त्तितु शील यस्य तस्मै (उपदेशकाय) ६ २७ ५ [अभि+आङ्+वृतु वर्त्तने (भ्वा०) धातोस्ताच्छील्ये णिनि प्रत्यय]

अभीतिम् अभयम् ७ २१ ६ [ञिभी भये (जु०) धातो क्तिन् । नञ्समास]

अभिऽइती: अभित सर्वत इत्या प्राप्त्या २ ३३ ३ [अभि+इण् गतौ (अदा०) धातो क्तिन्]

अभिऽइत्य अभित प्राप्य ४ ३२ १० [अभि+इण् गतौ (अदा०) धातो क्त्वा । क्त्वो ल्यप्]

अभिऽइद्धः सर्वत प्रदीप्त (घर्म) १ १६४ २६ [अभि+ञिइन्धी दीप्तौ धातो क्त]

अभिऽउदेत्य प्राप्य अथर्व० १५ ११ २ [अभि+उत्+इण् गतौ (अदा०) धातो क्त्वा क्त्वो ल्यप्]

अभिऽउप्य अभितो वपन कृत्वा २ १५ ६ [अभि+टुवप् बीजसन्ताने (भ्वा०) धातो क्त्वा । क्त्वो ल्यप् यजादित्वात् सम्प्रसारणम्]

अभिऽऊर्ण्वाना आभिमुख्येनार्थानाच्छादयन्ती (उर्वशी=वृद्धि) ५ ४१.१६ [अभि+ऊर्णुञ् आच्छादने (अदा०) धातो शानच् । स्त्रिया टाप्]

अभिकल्पमानाः आभिमुख्येन समर्थयन्त (देवा=दिव्यगुणा) १४ २७ सम्पादयन्त (अग्नय=पावका) १५ ५७ अभित सुखाय समर्थयन्त (देवा.) १४ १५ [अभि+कृपु सामर्थ्ये (भ्वा०) धातो शानच्]

अभिक्रतूनाम् आभिमुख्येन क्रतु=कर्म येषान्तेषा बलीयसा शत्रूणाम् ३ ३४ १० [अभि+क्रतुपदयोर्बहुव्रीहि क्रतु कर्म नाम । निघ० २ १ प्रज्ञानाम । निघ० ३ ६]

अभिक्रन् पूर्णं कुर्वन् (वैश्वानर=परमेश्वर), प्र०—अत्र 'वाच्छन्दसि' इति विकरणाऽभाव ७ ५ ७ [अभि+डुकृञ् करणे (तना०) धातो शतृ । छन्दसि विकरणाऽभावे यणादेशे रूपम्]

अभिक्रन्द आभिमुख्येन क्रन्दति, प्र०—अत्र व्यत्यय ५ ८३ ७ [अभि+क्रदि आह्वाने रोदने च (भ्वा०) धातोर्लोट् । अथवा क्रन्दसातत्ये (चुरा०) धातो रूपम्]

अभिक्रमाम अभिमुखमनुक्रमेण प्राप्नुयाम ६ ४६ १५ [अभि+क्रमु पादविक्षेपे (भ्वा०) धातोर्लट् 'क्रम परस्मैपदेपु' इति दीर्घत्व न, छन्दसि सर्वविधीना विकल्पनात्]

अभिक्रम्य सर्वत उल्लङ्घ्य १ ८० ५ [अभि+क्रमु पादविक्षेपे (भ्वा०) धातो क्त्वा । क्त्वो ल्यप् समासे]

अभिक्रोशकम् योऽभित क्रोशति आह्वयति तम् (जनम्) ३० २० [अभि+क्रुश आह्वाने रोदने च (भ्वा०) धातो कर्त्तरि ण्वुल् वो. स्थानेऽकादेश]

अभिक्षत्तारः आभिमुख्येन योगस्य कर्त्तार (देवा=विद्वज्जना) २ २६ ३ **अभिक्षत्तः**=अभित. क्षयकर्त्तु-

साधत=साध्नुवन्तु ५ ४५ ३ **साधति**=साध्नोति, प्र०—विकरणव्यत्ययेनात्र श्नो स्थाने शप् १ ९४ २ **साधथः**=साध्नुत, प्र०—अत्र व्यत्यय ४ ५६ ७ **साधन्**=साध्नुवन्ति साधयन्ति वा १ ९६ १ **साधन्ताम्**= साध्नुवन्तु ६ ५३ ४ [साध ससिद्धौ (स्वा०) धातोर्लोट्। विकरणव्यत्ययेन श शप् वा। अन्यत्र लेट्, लट्, लड्, लोट् च]

साधदिष्टिभिः साधा ससिद्धा दिष्टयश्च ताभिः (व्यवहारविद्याभि) ३ ३ ६ [साध-दिष्टिपदयो समास। साध=साध ससिद्धौ (स्वा०) धातोर्घञ्। दिष्टि=दिश अतिसर्जने (तुदा०) धातो स्त्रिया क्तिन्। सज्ञाया क्तिज् वा]

साधदिष्टिम् साध्नुवन्तीष्ट येन तम् (अग्नि=पावकम्) ३ २ ५ [साधद्-इष्टिपदयो समास। साधत्= साध ससिद्धौ (स्वा०) धातो शतरि व्यत्ययेन शप्। इष्टि=इषु इच्छायाम् (तुदा०) धातो क्तिन्]

साधन् ससाध्नुवन् (विद्वज्जन) प्र०—अत्र व्यत्ययेन शप् ३ १ १७ [साध ससिद्धौ (स्वा०) धातो शतृ। विकरणव्यत्ययेन शप्]

साधनम् साध्नोति येन तत् (विद्वज्जनम्) १ ४४ ११ सिद्धिकरम् (अग्नि=पावकम्) ३ २७.२ **साधनः**= य साध्नोति स (वाजी=वेगयुक्तोऽग्नि) ३ २७ ८ [साध ससिद्धौ (स्वा०) धातो करणे ल्युट्। कर्त्तरि वा ल्युट् 'कृत्यल्युटो वहुलम्' इति सूत्रेण। साधधातोर्वा ण्यन्तान् नन्द्यादित्वाल् ल्यु]

साधन्ता सम्यक् साधयन्तौ (मित्रावरुणा=सूर्यवायू) १ २ ७ [साध ससिद्धौ (स्वा०) धातो शत्रन्ताद् द्विवचन-स्याकारादेश। व्यत्ययेन शप्]

साधयन्ती विद्याशिक्षाभ्यामन्यान् विदुष कारयन्ती (अध्यापिका स्त्री) २ ३ ८ [साध ससिद्धौ (स्वा०) धातो-र्णिजन्ताच्छत्रन्ताच्च स्त्रिया ङीप्]

साधवः अभीष्ट साध्नुवन्त (अश्वास=तुरङ्गा) १३ ३६ साधुगतय (अश्वास=वेगादयो गुणा) ६ १६.४३ **साधवे**=परोपकार-साधकाय, भा०—साधुत्वयुक्ताय (विद्वज्जनाय) ३७ १० **साधुना**=सुशिक्षितेन (शिष्येण) १ १५५ १ **साधुभिः**=सज्जनै सह १ १३८ ४ **साधुः**= सत्कर्मसेवी (इन्द्र=योगैश्वर्ययुक्तो जन) ७ ३७ ४ परोप-कारी सन्मार्ग-स्थितो विद्वान् (जन) १ ७७ ३ य परोप-कारी परकार्याणि साध्नोति स (सभाध्यक्ष) १ ७०.६ सत्यमानी, सत्यवादी, सत्यकारी (विद्वज्जन) १ ६७ १ श्रेष्ठ (क्षय=निवास) ५ १२ ६ साध्नुवन्ति धर्म यस्मिन् स (पन्था=वेदोक्तो मार्ग.) २ २७ ६. **साधू**=शुभ-चरित्रस्थौ (विद्वासौ स्त्रीपुरुषौ) २ २७ १५ **साधोः**= सन्मार्गस्थस्य (सज्जनस्य) ४ १०.२. [साध ससिद्धौ (स्वा०) धातो 'कृवापाजिमि०' उ० १ १ सूत्रेण उण्। साधु साधयिता नि० ६ ३३ साधु (यजु० ३७ १०.) अय वै साधुर्योऽय (वायु) पवनऽएष हीमाँल्लोकान्त्सिद्धोऽनुपवते श० १४ १ २.२३]

साधारणः सामान्येन व्याप्त (इन्द्र=परमेश्वर) ४.३२ १३. [सह धारणपदयो समासे सधारण। तत. स्वार्थेऽणि साधारण]

साधारण्येव यथा साधारण्या (क्रियया) १ १६७ ४ [साधारण्या-इवपदयो समास]

साधपतिकेभ्यः अधिपतिना जीवेन सह वर्त्तमानेभ्य. (प्राणेभ्य) ३९ १ [सह-अधिपतिपदयो समासे सहस्य सादेशे समासान्त कप्]

साधिष्ठः अतिशयेन साधु (क्रतु=प्रज्ञा) ५ ३५ १ [साधुप्राति० अतिशायन इष्ठन्]

साधिष्ठेभिः अधिष्ठोऽधिष्ठानम्, समानमधिष्ठान येषान्तै (पथिभि) १ ५८ १ [समान-अधिष्ठपदयो समासे समानस्य सादेशे भिस ऐसादेशो न भवति 'बहुल छन्दसि' सूत्रेण]

साधु श्रेष्ठम् (आचरणम्) २ २७ ३ समीचीनतया ७ ४३ २ उत्तम विज्ञानम् ५ ८० ४ सम्यक् यथा स्यात्तथा १ १२४ ३ [साधुरिति व्याख्यातम्]

साधु साधूनि (अपासि=कर्माणि) २ ३ ६ [साधु-रिति व्याख्यातम्। ततो जस शे 'सुपा सुलुक्०' सूत्रेण लुक्]

साधुकर्मा धर्म्यकर्माऽनुष्ठाता (सर्वाधिपती राजा) १७ २३ साधूनि श्रेष्ठानि कर्माणि यस्य स (सभापति) ८ ४५ [साधु-कर्मन्पदयो समास]

साधुया साधुना कर्मणा १ १७० १ श्रेष्ठै कर्मभि १७ ७३ साधु सत्यम् (विद्याप्रकाशम्) २३ ४३ साधव (नर=नायका जना) ५ ११ ४ साधुना धर्मेण सह १४ १ [साधुप्राति० 'सुपा सुलुक्०' सूत्रेण याच्]

साध्यान् साद्धु योग्यान् (पदार्थान्) ३९ ९ **साध्याः**=साधनसाध्या (देवा=विद्वासो जना) २९ ११ कृतसाधना (देवा) ३१ १६ साधन योगाभ्यासादिक

सेदिम् हिंसाम्, प्र०—'सेदिमनि०' अ० ३ २ १७१ इति वार्त्तिकेनास्य सिद्धि १२ १०५ नाशमुत्पत्तिर्वा २० २६, [पद्लृ विशरणगत्यवसादनेषु (भ्वा०) धातो 'किकिनावुत्सर्गश्छन्दसि' अ० ३ २ १७१ वा०सूत्रेण कि: प्रत्ययो लिड्वच्च]

सेदुषः ज्ञानवत (मनुष्यान्) ५ १५ २ [पद्लृ विशरणगत्यवसादनेषु (भ्वा०) धातोर्लिट क्वसु]

सेध शास्त्राणि शिक्षय १ १७ साध्नुहि ६ ४४ ६ अपनय ६ ४७ २६ दूरीकुरु २६ ५५ **सेधतम्**=गमयतम् ३४ ४७ मङ्गल सुख प्राप्नुतम् १ ३४ ११ दूरीकृतम् १ १५७ ४ **सेधति**=दूरीकरोति १ ७६ १२ साधयति ७ १५ १० **सेधन्ति** =निवर्त्तयन्तु १.१०५ ११ [षिधू शास्त्रे माङ्गल्ये च (भ्वा०) धातोर्लोट् । अन्यत्र लट् चापि]

सेनजित् य सेनया जयति स (सेनापति), प्र०—अत्र 'सञ्ज्ञाछन्दसोर्बहुलम्' इति ह्रस्वत्वञ्च १५ १६. य सेना जयति सः (गण =गणनीयो विद्वज्जन) १७ ८३ [सेनोपपदे जि जये (भ्वा०) धातो कर्त्तरि क्विप् । पूर्वपदस्य ह्रस्वत्व छान्दसम् । सेनेति व्याख्यास्यते । सेनजित्—(यजु० १५ १६) तस्य (पर्जन्यस्य) सेनजिच्च, सुषेणश्च सेनानीग्रामण्याविति हेमन्तिकौ तावृतू श० ८ ६ १ २०]

सेना इव यथा सुशिक्षिता वीरपुरुषाणा विजयकर्त्री सेनास्ति तथाभूत (सेनेश) १.६६ ४ [सेना-इव-पदयो समास । सेनेति व्याख्यास्यते]

सेनाजुवा वेगेन सेना गमयितारौ (अश्विनौ=जलाग्नी) १ ११६ १ [सेनोपपदे जु वेगिताया गतौ (सौत्रो धातु) धातो 'भ्राजभासधुर्विद्युतोर्जि०' अ० ३ २.१७७ सूत्रेण क्विप् धातोर्दीर्घश्च]

सेनानिभ्यः ये सेना नयन्ति तेभ्यो नायकेभ्य प्रधानपुरुषेभ्य, प्र०—अत्र वर्णव्यत्ययेन ईकारस्य इकार १६ २६ **सेनानीः**=य सेना नयति स (सेनाधिप प्रभु) ७ २० ५ **सेनान्ये**=य सेना शिक्षा प्रापयति तस्मै (सेनापतये) १६ १७ [सेनोपपदे णीञ् प्रापणे (भ्वा०) धातो कर्त्तरि 'सत्सूद्विषद्रुह०' अ० ३ २ ६१ सूत्रेण क्विप्]

सेनानीग्रामण्यो सेनानीश्च ग्रामणीश्च ताविव १५ १५ एतद्वद्वर्त्तमानौ मार्गशीर्षपौषौ मासौ १५ १६ [सेनानी-ग्रामणीपदयो समास]

सेनाभ्यः सिन्वन्ते वध्नन्ति शत्रून् याभिस्ताभ्य १६.२६. **सेनाः**=सिन्वन्ति वध्नन्ति शत्रून् याभिस्ता १७ ३३. बलानि २ ३३ ११ [षिञ् बन्धने (क्र्या०) धातो. 'कृवृजृसिद्रू०' उ० ३.१०. सूत्रेण न । तत स्त्रिया टाप् । अथवा सह इनपदयो. समास । सेना-सेना सेश्वरा समानगतिर्वा नि० २ ११ सेना-सेनेन्द्रस्य पत्नी । गो० उ० २ ६]

सेन्यः सेनासु साधु सेनाभ्यो हितो वा (सेनापति) १ ८१ २ [सेनेति व्याख्यातम् । तत साध्वर्थे हितार्थे वा यत्]

सेपुः शपथ कुर्यु ६ २६ १ [शप आक्रोशे (भ्वा०) धातोर्लिट् । शकारस्य सकारो वर्णव्यत्ययेन । षप समवाये (भ्वा०) धातोर्वा लिट्]

सैर्या तडागादितटेषु भवास्तृणविशेषस्था (मौञ्जा=मुञ्जपादपस्था जीवा) १ १६१ ३

सैलगम् सीलाङ्गस्य दुष्टस्याऽपत्यम् ३० १८

सोतवे यवाद्योषधीना सार निष्पादयितुम् १ २८ १ [षुञ् अभिषवे (स्वा०) धातोस्तुमर्थे तवेन्]

सोता अभिषवस्य कर्त्ता (अग्नि =राजा) ४ ३ ३ **सोतुः**=अभिषवकर्त्तु (वैद्यस्य) ७ २२ १ **सोतृभिः**=अभिषवकर्तृभि (चतुर्वेदविच्छ्रोत्रियै) ४ २६ २ [षुञ् अभिषवे (स्वा०) धातो कर्त्तरि तृच्]

सोमः ऐश्वर्ययुक्त (विद्वज्जन) २६ २५ सुवति चराचर जगत्तत्सम्बुद्धौ जगदीश्वर, अथवा सूयन्ते रसा यस्मात् स सोमौषधिराज ३ ५६. सोमविद्यासम्पादक विद्वन् ४ ३७ चन्द्र इव वर्त्तमान (राजपुरुष विद्वज्जन वा) १२ ११२ ऐश्वर्यसम्पन्न (इन्द्र=राजन्) ४ २८ १ सर्वजगदुत्पादक (ईश्वर) आर्याभि० १ ३८, ऋ० १ ६ २१ १२ सोमवल्लीव सर्वरोगविनाशक (राजन्) ३४ २२ वीर्यवत्तम (विद्वज्जन) १ ६१ १६ ऐश्वर्यस्य प्रापक (विद्वज्जन) १ ६१ १८ सर्वविद्यायुक्त (सेनाध्यक्ष) १ ६१ २३ सौम्यगुणसम्पन्न, आरोग्यबलप्रापक (ईश्वर) १ ६१ २२ शुभकर्मगुणेषु प्रेरक (परमेश्वर विद्वन्वा) १ ६१ ३ सर्वसुहृत् सौहार्दप्रद वा (ईश्वर विद्वन्वा) १ ६१ ८ यवाद्योषधिरसव्यापिन (ईश्वर) १ १८७ ६ सकलैश्वर्याढ्य (राजन्) ८ ५० बहुसुखप्रभावक वायो १ ६३ ५ सकलपदार्थाना जनक प्रकाशिके वा (देव=ईश्वर विद्युद्वा) ५ ७ सन्मार्गे प्रापक (सभाध्यक्ष राजन्) ५ ३६ विज्ञातव्यगुणकर्मस्वभाव (वैद्य) १ ६१ ११ सोमवद्वर्त्तमान (अ०—सुसन्तान) १६ ५४ सर्वसुखप्रापक (सभाध्यक्ष) १ ४३ ७ सर्वसुखैश्वर्यप्रद (ईश्वर) १ ४३ ६ प्रशस्तगुण शिष्य ७.१४. प्रशस्तैश्वर्ययुक्त (सभाध्यक्ष राजन्)

सोमनेत्राः सोमलतादिष्वोषधीषु नेत्र नयन येषान्ते (देवा =आयुर्वेदविदो विद्वज्जना) ६ ३६ **सोमनेत्रेभ्यः**= सोमस्य चन्द्रस्यैश्वर्यवती नेत्र नयनमिव नीतिर्येषा तेभ्य (देवेभ्य =विद्वज्जनेभ्य) ६ ३५ [सोम-नेत्रपदयो समास । नेत्रम्=णीञ् प्रापणे (भ्वा०) धातोरौणा० ष्ट्रन्]

सोमपतिम् ऐश्वर्यणा स्वामिनम् (परमेश्वरम्) १ ७६ ३ **सोमपते**=ऐश्वर्यस्य पालक (सज्जन) ३ ३२ १ [सोम-पतिपदयो समास । सोम इति व्याख्यातम्]

सोमपरिबाधः ये सोमानुत्तमान् पदार्थान् परितः सर्वतो बाधन्ते ते (विरोधिजना) १ ४३ ८ [सोमोपपदे परिपूर्वकाद् बाधृ विलोडने (भ्वा०) धातो कर्त्तरि क्विप्]

सोमपर्वभिः सोमाना पदार्थाना पर्वाण्यवयवास्तैस्सह १ ६ १ सोमाद्योषधीनामवयवै ३३ २५ [सोम-पर्वन्पदयो समास]

सोमपा यौ सोमान् पदार्थसमूहान् रक्षतस्तौ (इन्द्राग्नी=वाय्वग्नी) १ २१ ३ यौ सोम पिबतस्तौ (इन्द्राबृहस्पती=राजाऽध्यापकौ) ४ ४६ ३ [सोमोपपदे पा रक्षणे (अदा०) धातो क । ततो द्विवचनस्याकारादेशश्छान्दस । अथवा सोमोपपदे पा पाने (भ्वा०) धातोरपि छन्दसि क]

सोमपातमम् अतिशयेन सोमपातारम् (इन्द्र= राजानम्) ६ ४२ २ **सोमपातमः**=य सोमान् पदार्थान् किरणै पाति सोऽतिशयित (इन्द्र =सूर्यलोक) १ ८ ७ [सोमप्राति० अतिशायने तमप् । सोमपा सोमोपपदे पा रक्षणे (अदा०) धातो कर्त्तरि क्विप्]

सोमपातमा सोमाना पदार्थानामतिशयेन पालकौ (इन्द्राग्नी=वायुवह्नी) १ २१ १ [सोमपातममिति व्याख्यातम् । ततो द्विवचनस्याकारादेश]

सोमपावन् य सोमान् श्रेष्ठान् रसान् पिबति तत्सम्बुद्धौ (इन्द्र=सभाद्यध्यक्ष) १ ५५ ७ **सोमपावा**= श्रेष्ठौषधिरसस्य पाता (राजा) ५ ४० ४. **सोमपाव्ने**=य सोम पिबति तस्मै (इन्द्राय=परमैश्वर्याय) ७ ३१ १ महौषधिरसस्य पात्रे (मनुष्याय) ७ ३२ ८ **सोमपाव्नाम्**= सोमाना पावानो रक्षकास्तेषाम् (सखीना=सर्वमित्राणा पुरुषाणाम्) १ [illegible] ११ [सोमोप[illegible] सुदे पा पाने (भ्वा०) पा रक्षणे (अदा०) धातोर्वा कर्त्तरि वनिप्]

सोमपाः सोमानुत्तमान् पदार्थान् पा[illegible] [illegible] य रक्षति तत्सम्बुद्धौ पदार्थाना रक्षणहेतुर्वा (इन्द्र=ईश्वर सूर्यो वा) १ १० ३ य सोममैश्वर्यं पाति स (इन्द्र =राजा) ४ ३२ १४ ऐश्वर्यपालका. (कृष्टय =मनुष्या) ३ ४६ १ पा

सर्वपदार्थरक्षक (इन्द्र =सूर्य) १ ४ २ ये वीरा सोमा द्योषधिरस पिबन्ति ते १ ५४ ८ य सोम रस पिबति स (इन्द्र =सूर्य) २.१२.१३ य सोमैर्जगत्युत्पन्नै पदार्थै मह सर्वान् पाति रक्षति तत्सम्बुद्धौ (सखे=सभाद्यध्यक्ष) १ ३० १२. **सोमपाम्**=ऐश्वर्यरक्षकम् (इन्द्र=राजाद्यध्यक्षम्) ३ ४१.५ [सोमोपपदे पा रक्षणे (अदा०) धातोः पा पाने (भ्वा०) धातोर्वा कर्त्तरि क्विप्]

सोमपित्सरु ये सोम यवाद्योषधी पालयन्ति तान् त्सरयति कुटिल गमयति य स लाङ्गलम्) १२ ७१ [सोमपि इत्युपपदे त्सर छद्मगतौ (भ्वा०) धातो 'भृमृशीतृचरित्सरि०' उ० १ ७ सूत्रेण उ । सोमपि =सोमोपपदे पा रक्षणे (अदा०) धातोर्बाहु० औणा० ड किच्च]

सोमपीतये सूयन्ते ये पदार्थास्तेषा पीति पान यस्य तस्मै विदुषे मनुष्याय, प्र०—अत्र 'सह सुपा' इति समास १ २ ३ सोमाना सुखकारकाणा पीति पान यस्माद्यज्ञात् तस्मै १ १४ १ सोमाना सुताना पदार्थाना पीति पान यस्मिन् व्यवहारे तस्मै १ १६ १ सोमाना पदार्थाना पीति रक्षण यस्मिन् व्यवहारे तस्मै १ २१ ३ सोमाना पदार्थाना पीतिर्ग्रहण यस्मिन् व्यवहारे तस्मै १ २२ ६ सोमाना सुताना पीति. पान यस्मिन्नानन्दे तस्मै १ १६ ८ सोमानामनुकूलाना सुखादिरसयुक्ताना पीति पान यस्मिन् व्यवहारे तस्मै १ २३ ४ पदार्थाना यथावद्भोगाय १ २३ १० पुष्टिशान्त्यादिगुणयुक्ताना पदार्थाना पान यस्मिन् व्यवहारे तस्मै १ ६२ १८. सोमा ओषधिरसा पीयन्ते यस्मिँस्तस्मै (रोगाय) १ ३७ ३ सोमस्य पानाय ४ ४६ ३ ऐश्वर्यपालनाय ४ ४७ ३ उत्तमरसपानाय ४ ४७ १ प्रशस्तपदार्थभोगनिमित्ताय १ २३ ७ यया सोमा विद्यैश्वर्याणि जायन्ते तस्यै (क्रियायै) २ ४१ २१ सोम पीतो यस्मिंस्तस्मै (उत्सवाय) ३ ४१ १. सोमानामैश्वर्याणा पीतिर्भोगो यस्मिँस्तस्मै (कर्मणे) १ २२ १२ [सोम-पीतिपदयो समास । पीति पा पाने (भ्वा०) पा रक्षणे (अदा०) धातोर्वा स्त्रिया क्तिन् । 'घुमास्थागापा०' इत्यादिसूत्रेणेत्व यद्यपि पा पाने (भ्वा०) धातोरेव भवति, अत्र छान्दसत्वात् पा रक्षणे (अदा०) धातोरपि भवति । सोमपीतये सोमपानाय नि० ६ ३७]

सोमपीथम् सोमपानम् १६ ५१ सोम विद्यारक्षणम् ऋ० भू० २६०, १६ ५१ **सोमपीथः**=सोम पीयते यस्मिन् स (गृहाश्रम) ८ ५ **सोमपीथाय**=सुखकारकपदार्थभोगाय १ ५१ ७ [सोम-पीथपदयो समास । पीथ [illegible] पाने (भ्वा०) पा रक्षणे (अदा०) धातोर्वा 'पातृतुदि०'

१६८२. (ऋ० ४५३७.) संवत्सरो वै सोमो राजा कौ० ७ १० प्रच्यवस्व भुवस्पतऽ इति भुवनानां ह्येष (सोम) पति श० ३ ३ ४ १४ सोमो हि प्रजापति श० ५.१ ५ २६ सोमो वैष्णवो राजेत्याह तस्याप्सरसो विश श० १३ ४ ३ ८. जुष्टा विष्णव इति । जुष्टा सोमायेत्येवैतदाह (विष्णु =सोम) श० ३ २ ४ १२. तद् यदेवेद क्रीतो विशतीव तदु ह्यस्य (सोमस्य) वैष्णवं रूपम् कौ० ८ २ सोमो वै पवमान. श० २ २ ३ २२ एष (वायु) वै सोमस्योद्गीथो यत्पवते ता० ६ ६ १८ तस्मात् सोम सर्वेभ्यो देवेभ्यो जुह्वति तस्मादाहु सोम सर्वा देवता इति श० १ ६ ३ २१ सोमो वाऽइन्द्र श० २ २ ३ २३ सोमो रात्रि श० ३ ४ ४ १५ सोम एव सवृत इति गो० उ० २ २४. सोमो वै चतुर्होता तै० २ ३ ११ सोमो वै पर्ण श० ६ ५ ११ सोमो वै पलाश कौ० २ २ पशुर्वै प्रत्यक्ष सोम श० ५.१ ३ ७ सोम एवैष प्रत्यक्ष यत्पशु कौ० १२ ६ पशव सोमो राजा तै० १ ४ ७ ६ सोमो वै दधि तै० १ ४ ७ ६. एष वै यजमानो यत्सोम तै० १ ३ ३ ५. द्यावापृथिव्योर्वा एष गर्भो यत्सोमो राजा ऐ० १ २६ क्षत्र सोम ऐ० २ ३८ यशो वै सोम श० ४ २ ४ ६ यशो (ऋ० १० ७२ १०.) वै सोमो राजा ऐ० १ १३ यश उ वै सोमो राजान्नाद्यम् कौ० ६ ६ प्रजापतेर्वाऽएतेऽअन्धसी यत्सोमश्च सुरा च श० ५ १ २ १० श० ५.१ २ १० अन्न सोम कौ० ६ ६ एतद्वै देवाना परममन्न यत्सोम तै० १ ३ ३ २ एतद्वै देवाना परममन्नाद्य यत्सोम कौ० १३ ७ हविर्वै देवाना सोम श० ३ ५ ३ २ एष ह परमाहुतिर्यत्सोमाहुति श० ६ ६ ३ ७. सोम खलु वै सान्नाय्यम् (हवि) तै० ३ २ ३ ११ प्राण सोम. श० ७ ३ १ २ सोमो वै राजपेय तै० १ ३ २ ३ एष वाऽउत्तम हविर्यत्सोम श० ३ ६ ४ ५ रेत सोम कौ० १३ ७. सोमो रेतोऽदधात् तै० १ ६ २ २ सोमो वै वृष्णो अश्वस्य रेत तै० ३ ६ ५ ५ सोमो वै बभ्रु (यजु० १२ ७५) श० ७ २ ४ २६ रस सोम श० ७ ३ १ ३ वाज्येवैन (सोम) पीत्वा भवन्ति तै० १ ३ २ ४ भद्रा तत्सोम ऐ० ५ २५ सोम शरय ऐ० १ २५ तिरो अह्न्या हि सोमा भवन्ति कौ० १८ ५ तद् यदेतत्तदमृत सोम स ६ ५ १ ८ सर्व हि सोम श० ५ ५ ४ ११ तस्मात् सोमो राजा सर्वाणि नक्षत्राण्युपैति ष० ३.१२ तृतीयस्यामितो दिवि सोम आसीत् । त गायत्र्याहरत् तै० ११.३.१० अन्तरिक्षदेवत्यो हि सोम गो० उ० २ ४ गिरिषु हि सोम श० ३ ३ ४ ७ घ्नन्ति खलु वाऽएतत्सोम यदभिषुण्वन्ति तै० २ २ ८ १ सोमो राजा मृगशीर्षेण आगन् श० ३ १ २ २ सोमवीरुधा पते तै० ३ ११ ४ १ सोमो वा अक्षपराजस्य राजा तै० १ ६ ११ १ सोम ओषधीनामधिराज गो० उ० ११७. एष वै ब्राह्मणाना सभासाह सखा (ऋ० १० ७१ १०) यत्सोमो राजा ऐ० १ १३ एष वोऽमी राजा सोमोऽस्माक ब्राह्मणाना राजेति श० ५ ४ २ ३ ब्राह्मणाना स (सोम) भक्ष ऐ० ७ २६ सोमो वै ब्राह्मण ता० २३ १६ ५ शोभन ह्येतस्य (सोमस्य) धाम श० ३ ३ २ ३ सोम पय श० १२ ७ ३.१३ आप सोम सुत श० ७ १ १ २२ आपो ह्येतस्य (सोमस्य) लोक श० ४ ४ ५ २१ तद् यदेवात्रपवस्तन् मित्रस्य सोम एव वरुणस्य श० ४ १ ४ ६ दीक्षा सोमस्य राज्ञ पत्नी गो० उ० २ ६ पुमान् वै सोम स्त्री सुरा तै० १ ३ ३ ४ रयिं सोमो रयिपतिर्दधातु तै० २ ८ १ ६ वैराज सोम कौ० ६ ६]

सोमकः सोम इव शीतलस्वभाव (कुमार =ब्रह्मचारिजन) ४ १५ ६ [सोमप्राति० इवार्थे क]

सोमकामम् अभिषुताना पदार्थाना रस कामयते यस्तम् (सभाध्यक्षम्) १ १०४ ६ [सोमोपपदे कमु कान्तौ (भ्वा०) धातो 'कर्मण्यण्' इत्यण्]

सोमक्रयणाः ये सोमानुत्तमान् पदार्थान् क्रीणन्ति ते (प्रजाजना) ४.२७ [सोमोपपदे डुक्रीञ् द्रव्यविनिमये (क्र्या०) धातो 'कृत्यल्युटो बहुलम्' इति कर्त्तरि ल्युट्]

सोमक्रयण्याम् सोमाद्योषधीना ग्रहणे ८ ५४ [सोम क्रयणमिति पूर्वपदे व्याख्यातम् । तत स्त्रिया ङीप् । सोमक्रयणी—(गौ) सा या बभ्रु पिङ्गाक्षी (गौ) सा सोमक्रयणी श० ३ ३ १ १४ वाग्वै सोमक्रयणी श० ३ २ ४ १०]

सोमगोपाः सोमानामोषधीनामैश्वर्याणा वा रक्षक (राजा) १२ २२ ऐश्वर्यपालका (प्रजाजना) १२ २६ [सोम-गोपापदयो समास । गोपा —गुपू रक्षणे (भ्वा०) धातो क्विप्]

सोमधान. सोमाद्योषधिगणा धीयन्ते यस्मिन् स (समुद्र =अन्तरिक्ष मेघो वा) ६ ६९ ६ **सोमधानाः**= सोमाना धाना येषु ते (ह्रदा =गभीरा जलाशया) ३ ३६ ८ [सोम-धानपदयो समास । धान =डुधाञ् धारणपोषणयो (जु०) धातोरधिकरणे ल्युट् । अथवा सोमोपपदे दधातेर्बा ल्युडधिकरणे]

सोमधाना सोम दधति ययोस्तौ (कलशा =कुम्भौ) ६ ६८ २ [सोमधान इति व्याख्यातम् । ततो द्विवचनस्याकारादेश]

ते पदार्था, प्र०—अत्र 'अर्त्तिस्तु-सु-हु-सृ०' उ० १ १३६ अनेन पु-धातोर्मन्-प्रत्यय 'आज्जसेरसुक्' इत्यसुक् च १ २३ १ अभिसूयन्त उत्पद्यन्ते उत्तमा व्यवहारा यैस्ते (अ०—सर्वपदार्था) १ ५५ ऐश्वर्यवन्त (मनुष्या) ४ ४२ ६ [सोम इति व्याख्यातम्। ततो जसोऽसुक्]

सोमाहुतः सोमैरैश्वर्यकारकैर्गुणै पदार्थैर्वाऽऽहुतो वर्द्धित. सन् (अग्नि) १ ६४ १४ [सोम-आहुतपदयो समास। आहुत =आङ्+हु दानादानयो (जु०) धातो क्त]

सोमांशवः सोमस्याशा १६ १३ [सोम-अशुपदयोः समास]

सोमिनः सोमा प्रशस्ता पदार्था सन्ति यस्य तस्य (गृहस्थिजनस्य), प्र०—अत्र प्रशसार्थ इनि १ २२ ४ ओषध्यादियुक्तस्यैश्वर्यवतो वा (सज्जनस्य) ७ ३२ ८ वह्वैश्वर्ययुक्तस्य (विद्वज्जनस्य) १ ५५ १ २ **सोमी**=वहुविधमैश्वर्य विद्यते यस्य स (जन) ४ २५ ५ [सोम इति व्याख्यातम्। ततो भूम्न्यर्थे प्रशसाया वार्थ इनि]

सोमेभिः ऐश्वर्य प्रेरणादिक्रियाभिः ६ २३ ६ [सोमप्राति० 'बहुल छन्दसी' ति भिस ऐस् न भवति]

सोम्यम् सोम प्रसव, सुखाना समूह, रसादानमर्हति तत् (मधु=रसम्) १ १६ ६ सोम-सम्पादनाऽर्हम् (मधु) १ १४ १० यत्सोममर्हति तत् (मधु) २ ३६ ६ सोम-गुणसम्पन्नम् (मधु=मधुरमुदकम्) २ ३६ ४. सोमे सोमलताद्योषधिगणे भवम् (मधु=मधुरविज्ञानम्) २० ६० सोम ऐश्वर्ये साधुम् (मधु=द्रव्यम्) ३ ५३ १०. सोमेष्वोपधीपु भव रसम् ३३ ३० सोमाऽर्हम् (मधु=मधुररसम्) २१.४२ ऐश्वर्य, आरोग्य, सर्वदा सुखदायक (सद=उत्तम घर) स० वि० १६७, अथर्व० ६ २ ३ १६ **सोम्यस्य**=सोम ऐश्वर्ये भवस्य (अन्धस=अन्नस्य) ३ ४८ १ सोममैश्वर्यमर्हस्य (विद्वज्जनस्य) १ १०५ ३ **सोम्यानाम्**=सोमवच्छान्त्यादिगुणयुक्तानाम् (पितृणा=जनकानाम्) ४ १७ १७ **सोम्ये**=सोम इवाऽऽनन्दकरे (सर्वार्थ ऐश्वर्ये) ७ ५६ ६ [सोमप्राति० अर्हत्यर्थे 'सोम-मर्हति य' अ० ४ ४ १३७ सूत्रेण य। अन्यत्र भवार्थे साध्वर्थे वा यत्। सोम्यम्-सोममयम् नि० १० ३७ सोम-सम्पादिन नि० ११ १८]

सोम्यासः ये सोममैश्वर्यमर्हन्ति ते (पितर=जनकादय) १६ ५७ सोमगुणानर्हा (विद्वज्जना) ६.७५ १०. सौम्यगुणसम्पन्ना (पितर) १६ ४६ सोमेष्वैश्वर्यादिषु साधव (सखाय) ३४.१८ सोम ऐश्वर्ये भवा सोमवच्छान्ता वा (पितर) १६ ३७ प्रतिष्ठार्हा (पितर), ऋ० भू० २६२, १६ ३६ [सोम्यमिति व्याख्यातम्। ततो जसो ऽसुक्]

सोसवीति भृश सुवति ३ ५६ ७ [षुञ् अभिपवे (स्वा०) धातोर्यङ्लुगन्ताल्लट्]

सौत्रामणी सूत्राणि यज्ञोपवीतादीनि मणिना ग्रन्थिना युक्तानि ध्रियन्ते यस्मिँस्तस्मिन् (यज्ञे) १६ ३१ [सूत्रमणि-पदयो समासे 'तस्येदम्' इत्यण्-प्रत्यये छान्दस रूपम्। सौत्रामणी तावश्विनौ च सरस्वती च। इन्द्रिय वीर्यं नमुचेराहृत्य तदस्मिन् पुनरदधुस्त पाप्मनोऽत्रायन्त सुत्रात वतनै पाप्मनोऽत्रास्महीति तद्भाव सौत्रामण्यभवत्तत्सौत्रामण्यै सौत्रामणीत्वम् श० १२ ७ १ १४ ते देवा अब्रुवन् सुत्रात वतैनमत्रासतामिति तस्मात् सौत्रामणी नाम कौ० १६ १० ऐन्द्रो वाऽएप यज्ञो यत्सौत्रामणी कौ० १६ १० उभय सौत्रामणीष्टिश्च पशुवन्धश्च श० १२ ७ २ २१ देव-सृष्टो वाऽएषेष्टिर्यत् सौत्रामणी श० ५ ५ ४ १४ तस्मादेप ब्राह्मणयज्ञ एव यत् सौत्रामणी श० १२ ६ १ १ सुरावान् वाऽएप वर्हिषद् यज्ञो यत् सौत्रामणी श० १२ ८ १ २. सोमो वै सौत्रामणी श० १२ ७ २ १२ पवित्र वै सौत्रामणी श० १२ ८ १ ८ स यो भ्रातृव्यवानूत्स्यात्स सौत्रामण्या यजेत् श० १२ ७ ३ ४]

सौधन्वनासः शोभनेषु धन्वसु धनुर्विद्यास्विमे कुशला (नर=नायका जना) १ ११० ८. शोभनानि धनूंषि येषु ते सुधन्वानस्तेषु कुशला सौधन्वना (मनुष्या) १ ११० २ शोभनज्ञानस्य पुत्रा (मुमुक्षवो जना) ३ ६० ३ [सु-धन्वन्-पदयो समासे कुशलार्थेऽपत्यार्थे वाण्। ततो जसोऽसुगागम]

सौधन्वनाः शोभनानि धन्वान्यन्तरिक्षस्थानि येषान्तेषामिमे(ऋभव=मेधाविजना) ४ ३५ १ शोभन धन्वाऽन्तरिक्ष येषान्ते, तेषा पुत्रा ४ ३५ ८ शोभन धन्वमन्तरिक्ष यस्य तदपत्यानि (राजपुरुषा) ३ ६० १ शोभनविज्ञाना ऋभव १ ११०.४ आप्तस्य पुत्रा (ऋभव) ३ ६० ४ शोभनेषु धनुष्षु कुशला (विद्वज्जना) १ १६१ २ सुधन्वनि कुशला (शिल्पिजना) १ १६१ ७ [सु धन्वन्-पदयो समासे 'तस्येदम्' इत्यण्। अथवा अपत्यार्थे कुशलार्थे वाऽण्। धन्वन् अन्तरिक्षनाम निघ० १ ३ पदनाम निघ० ४ २]

सौभगत्वम् शोभना भगा ऐश्वर्याणि यस्मात्पुरुषात् तस्येद सौभगम्, तस्य भाव सौभगत्वम् १ ३४ ५ **सौभग-**

उ० २ ७ सूत्रेण थक् । इन्द्रिय सोमपीथ तै० १ ३ १० २]

सोमपुरोगवः सोम ओषधिगणश्रेष ऐश्वर्ययोगो वा पुरोगामी यस्य स (ब्रह्मा = पदार्थविज्ञाता योगी) २३ १४ [सोम-पुरोगुपदयो समास । पुरोगु पुरस् उपपदे गम्लृ गतौ (भ्वा०) धातो 'डु-प्रकरणे मितद्र्वादीनामुपसख्यानम्' इति डु. । वचनव्यत्ययेन जस्]

सोमपृष्ठाय सोम पृष्ठो येन तस्मै (अग्नये = जनाय) २० ७८ [सोम-पृष्ठपदयो समास । पृष्ठ = पृषु सेचने (भ्वा०) धातोः 'तिथपृष्ठगूथयूथप्रोथा' उ० २ १२ सूत्रेण थक्प्रत्ययान्तो निपात्यते]

सोमपेयम् सोमस्य पातव्य रसम् ५ २९ ५ सोमै-रैश्वर्ययुक्तै पातु योग्य रसम् १ १२० ११. सोमश्चासौ पेयश्च तम् ३ ४३ १ सोमाना पदार्थाना पातु योग्यम् (रसम्) २ १८ ४ सोमेष्वोषधीषु य पेयो रसस्तम् २ १८ ५ **सोमपेयाय** = पेय सोमो येन तस्मै (राज्ञे) ३ ५२ ८ ऐश्वर्यप्राप्तये ३ २५ ४ य सोमो रसश्च पेय. पातु योग्यश्च तस्मै १ ४५ ९ उत्तमौषधिरसपानाय ७.२४ ३ [सोम-पेयपदयो समास । पेयम् पा पाने (भ्वा०) धातोर्यत्]

सोमभृते य सोममैश्वर्यसमूह बिभर्त्ति तस्मै (सभा-पतये राज्ञे) ६ ३२ य सोमान् बिभर्त्ति तस्मै यजमानाय ५ १ [सोमोपपदे डुभृञ् धारणपोषणयो (जु०) धातो क्विप् कर्त्तरि]

सोममादः ये सोमेन मदन्ति हर्षन्ति ते (यज्ञानुष्ठातारो जना) ७ २१ २ [सोमोपपदे मदी हर्षे (दिवा०) धातो 'कर्मण्यण्' इत्यण् । वचनव्यत्यय]

सोममिव यथा सोमवल्ल्यादि हवि १ ११६ २४ [सोमम्-इवपदयो समास]

सोमराज्ञी सोमो राजा यासा ता (ओषधी = सोमादय) १२ ९२ सोमप्रमुखा (ओषधी = ओषध्य) १२ ९३ [सोम-राजन्पदयो समासे तत स्त्रिया ङीप् । सोमराज्ञी या ओषधी सोमराज्ञी म० २ ८ ३-४]

सोमवताम् सोमगुणयुक्तानाम् (पितॄणा = जनक-जननीनाम्) २४ १८ [सोमप्राति० मतुप् । तत षष्ठ्या बहुवचनम्]

सोमवृद्ध सोमेन विद्यैश्वर्येण वृद्धस्तत्सम्बुद्धौ (इन्द्र = विद्वज्जन) ३ ३९ ७ **सोमवृद्धः** = सोमेनैश्वर्येणौषध्या वा प्रवृद्ध (धार्मिक उद्योगिजन) ६ १९ ५ [सोमवृद्धपदयो समास]

सोमसखा सोम परमेश्वर सोमविद्याविन्मनुष्यो वा सखा सुहृद्यस्या सा (विद्याप्रकाशयुक्ता वाणी) ४ २० [सोम-सखिपदयो समास]

सोमसुतः सोमा सुता येभ्यस्ते (ग्रावाण = मेघादय) १ ८९ ४ औषध्यैश्वर्योत्पादका (ग्रावाण) २५ १७

सोमसुद्भिः = ये सोममैश्वर्यमोषधिगण वा सुन्वन्ति तै (राजपुरुषै) ४ २४ ८ [सोमोपपदे षुञ् अभिषवे (स्वा०) धातो 'सोमे सुञ' अ० ३ २ ९० सूत्रेण क्विप्]

सोमसुत्वा यः सोममैश्वर्यं सवति स (विद्वज्जन) १ ११३ १८ [सोमोपपदे षु प्रसवैश्वर्ययो (भ्वा०) धातो 'सुयजोर्ड्वनिप्' अ० ३ २ १०३ सूत्रेण ड्वनिप्]

सोमा सौम्यगुणसम्पन्नौ (राजप्रजाजनौ) ४ २८ ५ [सोम इति व्याख्यानम् । ततो द्विवचनस्याकारादेश]

सोमा इव सोमलतेव ६ ८ १ [सोमा -इवपदयो समास]

सोमानम् सुनोति निष्पादयत्योषधिसारान् विद्या-सिद्धीश्च येन तम् (विद्वज्जनम्) ३ २८ य सवत्यैश्वर्य करोति त यज्ञानुष्ठातारम् (यजमानम्) १ १८ १ [षुञ् अभिषवे (स्वा०) षु प्रसवैश्वर्ययो (भ्वा०) धातोर्वा मनिन्]

सोमापूषणा प्राणापानौ २ ४० १ अग्निवायू २ ४० ३ [सोम-पूषन्पदयो समासे द्विवचनस्याकारादेश पूर्वपदस्यानङ् 'देवताद्वन्द्वे च' सूत्रेण]

सोमापूषणौ शान्ति-पुष्टिगुणवन्तौ (वायू) २ ४० ५ **सोमापूषभ्याम्** = चन्द्रौषधिगणाभ्याम् २ ४० २ [सोम-पूषन्पदयो समास । पूर्वपदस्यानङ्]

सोमारुद्रा चन्द्र-प्राणाविव राजवैद्यौ ६ ७४ १ यज्ञ-शोधितौ सोमलता-वायू इव राजवैद्यौ ६ ७४ ३ ओषधि-प्राणवत्-सुखसम्पादकौ (राजवैद्यौ) ६ ७४ २ [सोम-रुद्र-पदयो समासे द्विवचनस्याकारादेशे पूर्वपदस्यानङादेशे च रूपम्]

सोमारुद्रौ शुद्धावोषधिप्राणाविव (वैद्यराजानौ) ६ ७४ ४ [सोम-रुद्रपदयो समास । सोम-रुद्रौ व्याख्यातौ]

सोमावतीम् बहुरससहिताम् (महौषधीम्) १२ ८१ [सोमप्राति० भूम्न्यर्थे मतुवन्तात् स्त्रिया ङीप् । 'मन्त्रे सोमा-श्वेन्द्रिय०' अ० ६ ३ १३१ सूत्रेण पूर्वस्य छन्दसि दीर्घ]

सोमासः सूयन्त उत्पद्यन्ते सुखानि येभ्यस्ते (इन्दव = रसा) १ १६ ६ ऐश्वर्ययुक्ता (ओषधिरसा) १ १३५ ६ अभिषुता सुसम्पादिता पदार्था यैस्ते (ओषधिरसा) १.५३ ६ प्रेरका (जना) ७ ३२ ४ सूयन्त उत्पद्यन्ते ये

सौश्रवसानि सुश्रवसि संस्कृतेऽन्ने भवानि (वस्तूनि) ६.१.१२. सुश्रवस्सु भवान्यन्नादीनि ६ ७४.२. **सौश्रवसाय**=शोभन श्रव कीर्त्तिर्यस्य स. सुश्रवास्तस्य भावाय २५ २६. सुश्रवसो भावाय ६ ६८.८. शोभनेष्वन्नेषु भवाय (रसाय) १ १६२ १३ **सौश्रवसेषु**=भा०—पाककरणे १२.२७ [सु-श्रवस्पदयो समासे कृते भवार्थेऽण् । भावे वाऽण्]

स्कन् निस्सारयतु १ २६ [स्कन्दिर् गतिशोपणयो (भ्वा०) धातोर्लङ् । अडभाव । 'बहुल छन्दसी' ति शपो लुक्]

स्कन्दति अन्यान् प्रति गच्छति, अ०—वायुना सह सर्वत्र गच्छति ७ २६ [स्कन्दिर् गतिशोपणयो (भ्वा०) धातोर्लट्]

स्कन्धाः भुजदण्डमूलानि २५ ६. [स्कन्दिर् गतिशोषणयो (भ्वा०) धातो 'स्कन्देश्च स्वाङ्गे' उ० ४ २०७ सूत्रेणासुन् । धकारश्चान्तादेश । अत्र सलोपश्छान्दस. । स्कन्धो वृक्षस्य समास्कन्नो भवति । अयमपीतर. स्कन्ध एतस्मादेवास्कन्न काये नि० ६ १७.]

स्कन्धांसीव शरीराऽवयववाहुमूलानीव १.३२ ५. [स्कन्धासि-इवपदयो समास । स्कन्धस् इति पूर्वपदे व्याख्यातम्]

स्कन्नम् प्राप्तम् (आनन्दम्) ७.३३ ११ [स्कन्दिर् गतिशोषणयो (भ्वा०) धातो क्त । 'रदाभ्याम्०' इति निष्ठानत्वम्]

स्कभायत् विशेषेण स्कभ्नाति ५.२६.४ दधाति ६.४४ २४ [स्कम्भु स्तम्भार्थे (सौत्रो धातु) धातोर्लङ् । अडभाव । 'स्तम्भुस्तुम्भु०' इति श्ना । 'छन्दसि शायजपि' इति श्न शायच्]

स्कभिता स्तभितानि धृतानि (रजासि=लोकान्) ८ ५६. [स्कभितप्राति० शेर्लोपश्छन्दसि । स्कभित =स्कम्भु स्तम्भार्थे (सौत्रो धातु) धातो क्त]

स्कभितासः स्थापिता धारिता (पवय =कलाचक्राणि १.३४ २ सर्वकलाना स्थापनार्था (वज्रतुल्याश्चक्रसमूहा) ऋ० भू० १६४, ऋ० १ ३ ४ १ [स्कभित इति पूर्वपदे व्याख्यातम् । ततो जसोऽसुक्]

स्कभ्नुवन्तः प्रतिष्टम्भन कुर्वन्त (जना) ६ १३ [स्कम्भु स्तम्भार्थे (सौत्रो धातु) धातो शतृ । 'स्तम्भुस्तुम्भु०' इति श्नु]

स्कम्भथुः स्कम्भेतम् ६ ७२ २ [स्कम्भु स्तम्भार्थे सौत्रो धातु । ततो लिट् । द्वित्वाऽभावश्छान्दस]

स्कम्भदेष्णाः स्तम्भनदातार (जना) १.१६६ ७. [स्कम्भ-देष्णुपदयो. समास । वर्णव्यत्ययेनोकारस्याकारादेश । देष्णु.=डुदाञ् दाने (जु०) धातो 'गादाभ्यामिष्णुच्' उ० ३.१६. सूत्रेणेष्णुच्]

स्कम्भनी: स्कम्भ प्रतिवद्ध नयतीति सा (धिषणा=धारणावती द्यौ) १ १६ [स्कम्भोपपदे णीञ् प्रापणे (भ्वा०) धातो क्विप्]

स्कम्भनेन धारणेन ३ ३१ १२ [स्कम्भु स्तम्भार्थे सौत्रो धातु । ततो ल्युट्]

स्कम्भनेभिः स्तम्भनै १.१६०.४ [स्काम्भनम्=स्कम्भुधातोर्ल्युट् । ततो भिस ऐसादेशो न भवति छान्दसत्वात्]

स्कम्भम् सर्वजगद्धारकम् (परमेश्वरम्) ऋ० भू० १०, अथर्व० १० २३ ४ २० **स्कम्भः**=गृहाऽऽधारको मध्ये स्थित-स्तम्भ इव (पूर्णकामो जन) ४.१४ ५ स्तम्भ इव धारक (परमेश्वर) ४ १३ ५ [स्कम्भु स्तम्भार्थे सौत्रो धातु । तत्र कर्त्तर्यच्]

स्कम्भसर्जनी या क्रिया स्कम्भानामाधारकाणा सर्जन्युत्पादिका सा ४ ३६ [स्कम्भ-सर्जनीपदयो समास । सर्जनी—सृज विसर्गे (तुदा०)+ल्युट्+ङीप्]

स्कम्भासः धारणार्था स्तम्भविशेषा. १.३४ २. स्तम्भनार्था स्तम्भा ऋ० भू० १६४, ऋ० १ ३ ४ १ [स्कम्भमिति व्याख्यातम् । ततो जसोऽसुक्]

स्त सन्ति, प्र०—अत्र व्यत्ययो लडर्थे लोट् च ३ २१ **स्तः**=भवाम १ ६१ ८ [अस भुवि (अदा०) धातोर्लोट् । अन्यत्र लट् । पुरुषव्यत्यय]

स्तनथाः शब्दये ५ ८३ ३. **स्तनय**=गर्जति, प्र०—अत्र व्यत्यय ५ ८३ ७ **स्तनयन्ति**=शब्दयन्ति १ ७६.२ ध्वनयन्ति ४ १० ४. **स्तनिहि**=शब्दय ६ ४७ ३० विस्तृणीहि २६ ५६ [स्तन देवशब्दे (चुरा०) धातोर्लङ् । अडभाव । 'छन्दस्युभयथा' इत्यार्धधातुकत्वाद् णिचो लोप । अन्यत्र लोट् लट् च]

स्तनम् दुग्धस्याऽऽधारम् १ १६६ ४ **स्तनः**=स्तन इव वर्त्तमान शुद्धो व्यवहार १ १६४ ४६ [स्तन देवशब्दे (चुरा०) धातोरच्]

स्तनयते दिव्य शब्द कुर्वते (अग्नये) २२ २६ **स्तनयद्भिः**=शब्दायमानै (अभ्रै =मेघै) ४ १७ १२ **स्तनयन्**=शब्दयन् (पर्जन्य =मेघ) ५ ८३ २ गर्जन

त्वस्य=सुष्ठु भगानामैश्वर्याणामय समूहस्तस्य भावस्य १ ६४ १६ **सौभगत्वाय**=सन्तानोत्पत्त्यादिप्रयोजनसिद्धये, ऋ० भू० २०८, ऋ० ८ ३ २७ १ ऐश्वर्य, सुसन्तानादि सौभाग्य की वृद्धि के लिए स० वि० १२१, १० ८५ ३६. [सु-भगपदयो समासे तत 'तस्येदमि' त्यण् । तत सौभग-प्राति० भावे त्व]

सौभगम् शोभना भगा ऐश्वर्ययोगा यस्य तस्य भावस्तम् १ ३६ १७. शोभनैश्वर्यस्य भागम् (महदैश्वर्यम्) ५ ८२ ४ शोभनाना भगानामैश्वर्याणामिदम् १ ४८ ६ सुभगस्य श्रेष्ठैश्वर्यस्य भावम् ४ ५४ ६ सौभाग्य-वर्धकम् (राध = धनम्) ५ ५३ ३ **सौभगस्य**=सुष्ठ्वैश्वर्यभावस्य ४ ५५ ८. आरोग्यस्याऽऽनन्दस्य च प० वि०, अथर्व० १६ ५५ ३ ४. **सौभगानि**=उत्तमधनाद्यैश्वर्याणा भावरूपाणि (अमृता= स्वादून्युदकानि) ५ ७६ ५ श्रेष्ठानामैश्वर्याणा भावान् ६ ५ २ **सौभगाय**=शोभनस्य भगस्यैश्वर्यस्य भावाय २७ २ उत्तमैश्वर्यभावाय २७ ८ [सु-भगपदयो समासे 'तस्येदम्' इत्यर्थे भवार्थे वाऽण् । अथवा सुभगप्राति० भावे कर्मणि चार्थे 'प्राणभृज्जाति०' अ० ५ १ १२६ सूत्रेणाल् उद्गातृत्वाद्]

सौभगा सुभगस्योत्तमैश्वर्यस्य भावो येषु तानि (वस्तूनि) ७ ४ १० सुभगाना कर्माणि, प्र०—अत्रोद्गातृत्वादञ् १ ३८ ३ उत्तमैश्वर्याणा भावान् ७ ३ १० [सौभगमिति व्याख्यातम् । ततश्शेर्लोपश्छन्दसि । अथवा सुभग-प्राति० 'प्राणभृज्जातिवयोवचनोद्गात्रादिभ्योऽञ्' अ० ५ १ १२६ सूत्रेण भावे कर्मणि वाऽञ्]

सौभगा सुभगानामैश्वर्याणा सम्बन्धिनी (पुर = नगरी) ३ १५ ४ [सौभगमिति व्याख्यातम् । तत स्त्रिया टाप् छान्दस]

सौभाग्यम् उत्तमैश्वर्यस्य भाव , अ०—सौभाग्ययुक्तम् (भग , पस =ऐश्वर्यं लिङ्गम्) २० ६ [सौभगमिति व्याख्यातम् । ततो भावे ष्यञ् । छन्दसि सर्वविधीना विकल्पितत्वादत्र 'हृद्भगसिन्ध्वन्ते पूर्वपदस्य चे' ति प्राप्ता वृद्धिर्न भवति]

सौमनसः शोभन मन सुमनस्तस्याऽयमानन्द सुहृद्भाव , प्र०—अत्र 'तस्येदम्' इत्यण् ३ ४२ शोभनञ्च तन्मन सुमनस्तस्य भाव १८ ८ मन का आनन्दयुक्त शुद्ध-भाव स० वि० १४३, अथर्व० ३ ३० ७ **सौमनसाय**= धर्मे सुष्ठु प्रवृत्तमनस आह्लादनाय १ ६२ ६ मनसो निर्वैरत्वाय १ ७६ २ शोभनस्य मनसो भावाय ५ ४२ ११ अनुत्तमसुखाय १ १०८ ४ सुमनसो भावाय (सद्गुणाय) ६ ४४ १६ **सौमनसे**=सुष्ठु धर्मयुक्ते मानसे व्यवहारे ६ ४७ १३ शोभनस्य मनसो भावे ३ १ २१ सुमनसि भवे व्यवहारे ३ ५६ ४ शोभन मन सुमनस्तस्य भावे १६ ५० [सु-मनस्पदयो समासे 'तस्येदम्' इत्यण् । सुमनस्प्राति० वा भवार्थेऽण् । भावे वाऽण् ।- सौमनसे कल्याणे मनसि नि० ११ १६]

सौमापौष्णः सोमपूषदेवताक (श्याम पशु) २४ १ [सोम-पूषन्पदयो समासे 'सास्य देवता' इत्यण्]

सौम्यस्य सोमानामोषधिसराणा भावस्य १६ २३ **सौम्यः**=सोमदेवताक (बभ्रु पशु) २६ ५८ [सोम-प्राति० भावे ष्यञ् । सोमप्राति० वा 'सास्य देवते' त्यर्थे सोमाट्ट्यण्' अ० ४ २ ३० सूत्रेण ट्यण्]

सौरभेयम् सुरभ्या अपत्यम् (अ०—अग्निम्) ३५ १३ [सुरभिप्राति० अपत्यार्थे 'स्त्रीभ्यो ढग्' इति ढक् । ढस्यैयादेश]

सौरी सूर्यो देवता यस्या सा (बलाका-विशेषपक्षिणी) २४ ३३ [सूर्यप्राति० 'सास्य देवता' इत्यर्थेऽण् । तत. स्त्रिया ङीपि 'सूर्यतिष्यागस्त्यमत्स्यानाम्०' इति यलोप]

सौर्ययामौ सूर्ययमसम्बन्धिनौ (श्वेतकृष्णौ पशू) २४.१ [सौर्य-यामपदयो समास । सौर्यम्=सूर्यप्राति० 'तस्येदम्' इत्यर्थेऽण् । याम =यमप्राति० 'तस्येदमि' त्यर्थेऽण्]

सौर्याः सूर्यवत्प्रकाशमाना. (सूर्यगुणा पशव) २४ १६ [सूर्यप्राति० 'तस्येदम्' इत्यर्थेऽण्]

सौवम् स्व सुखस्येद साधनम् (श्रोत्र=कर्णम्) १३ ५७ [स्वर्प्राति० 'तस्येदम्' इत्यर्थेऽण् । 'द्वारादीना च' अ० ७ ३ ४ सूत्रेणैजागम । 'अव्ययाना भमात्रे टिलोप ' अ० ७ ३ ४ वा०सूत्रेण टिलोप]

सौवश्व्यम् शोभनेष्वश्वेषु महत्सु पदार्थेषु वा भवम् (स्व बलम्) ६ ३३ १ **सौवश्व्ये**=शोभना अश्वास्तुरङ्गा विद्यन्ते यासु सेनासु ते स्वश्वास्तेषा भावे १ ६१ १५ [सु-अश्वपदयो समासे कृते भावे ष्यञ्]

सौव्रत्येन श्रेष्ठेन कर्म्मणा ३६ ६ [सु-व्रतपदयो समासे कृते भावे कर्मणि वा ष्यञ् । व्रतम् कर्मनाम निघ० २ १]

सौश्रवसा सुश्रवसा विदुषा निर्वृत्तानि (कर्माणि) ६ १३ ५ [सौश्रवसप्राति० शेर्लोपश्छन्दसि । सौश्रवस= सु-श्रवस्पदयो समासे कृते निर्वृत्तार्थेऽण्]

शत्रूणां तिरस्कर्त्रे (इन्द्राय) २ २१ २ **अभिभूः**=दुष्टानां तिरस्कर्त्ता (ब्रह्मा=लब्धातगविर्यो राजा) १०.२८ [अभि+भूसत्तायाम् (भ्वा०) धातो क्विप्]

अभिभूति शत्रूणां तिरस्कारनिमित्तम् ४ २१ १ **अभिभूतिम्**=पराजयम् ४ ३८ १ [अभि+भू सत्तायाम् (भ्वा०) धातो क्तिन् भावे स्त्रियाम्]

अभिभूति शत्रूणामभिभवकर्तृ (क्षत्र=राज्यम्) २० ४७ **अभिभूते**=शत्रूणामभिभवन पराजयो यस्मात्तत्सम्बुद्धौ १ ५३ ३ [अभि+भू सत्तायाम् (भ्वा०) धातो 'क्तिच्क्तौ च सञ्ज्ञायामिति क्तिच्' छन्दाꣳसि वा अभिभूतय ता० ६ ४ ७]

अभिभूत्योजाः अभिभूतिपराजयकरमोजो बल यस्य स (राजा) ३ ३४ ६ **अभभूत्योजसम्**=अभिगतानि तप ऐश्वर्याण्योज पराक्रमश्च यस्मात् तम् (वज्रम्=शस्त्रम्) १ ५२ ७ [अभिभूति-ओजस्पदयो समास]

अभिभूम अभिमुख भवेम ६ २० १ [अभि+भू सत्तायाम् (भ्वा०) धातोर्लुङ् अडभावश्च]

अभिभूय तिरस्कृत्य ३ ४८ ४ [अभि+भू+क्त्वा समासे क्त्वो ल्यप्]

अभिभूः दुष्टानां तिरस्कर्त्ता (सेनापति) १ १०० १० [अभि+भू सत्तायाम् धातो क्विप्]

अभिमदत आभिमुख्यतया हर्षत १ ५१ १ **अभिमदेम**=आनन्देम ४ १६ १६ [अभि+मदी स्तुतिमोदमदस्वप्नकान्तिगतिषु (भ्वा०) धातोर्लोट् लिङ् च व्यत्ययेन परस्मैपदम् । मदी हर्षे (दिवा०) धातोर्वा व्यत्ययेन शप्]

अभिमन्त्रये धर्ममाज्ञापयामि ऋ० भू० ६४ [अभि+मन्त्रि गुप्तभाषणे (चुरा०) धातोर्लट् मन्त्रयते अर्चतिकर्मा निघ० ३ १४]

अभिमन्यमानः आभिमुख्येन जानन् (इन्द्र=राजा) ४ २० ५ [अभि+मन ज्ञाने (दिवा०) धातो कर्मणि शानच्]

अभिमंस्थाः अभिमन्येथा १ ३ ४१ [अभि+मन ज्ञाने (दिवा०) धातोर्लुङ् अडभावश्छान्दस]

अभिमाति अभिमन्यते येन (सह=बलम्) ५ २३ ४ **अभिमातयः**=अभिमानिन (मनुष्या) प्र०—अत्र 'माङ् माने' इत्यस्य रूपम् १ २५ १४ **अभिमातीः**=अभिमानहर्षयुक्ता (पृतना=वीरजनसेना) ६ ३७ अभिमानयुक्तान् दुष्टान् विघ्नकारिण (दुर्जनान्) ३ २४ १ शत्रूनिव रोगान् ३ ६२ १५ **अभिमातिषु**=अभिमानयुक्तेषु योद्धृषु ३ ३७ ७. [अभि+माङ् माने (दिवा०) धातो क्तिन् घुमास्था०' इतीत्व छान्दसत्वान्न भवति । सपत्नो वा अभिमाति: श० ३ ६ ४ ६ अभिमातिर्वै पाप्मा भ्रातृव्य' मै० २ ५ ८ ९ पाप्मा वा अभिमाति तै० स० २ १ ३ ५ काठ० १३.३]

अभिमातिघ्ने येनाऽभिमानयुक्ता शत्रवो हन्यन्ते तस्मै, (इन्द्राय=सभापतये) ६ ३२ योऽभिमानीन् शत्रून् हन्ति तस्मै, भा०—विघ्ननाशकाय (इन्द्राय=पुरुषाय) ३८ ८ [अभिमाति+हन हिंसागत्यो (अदा०) धातो 'कृत्यल्युटो बहुलमि' ति टक्]

अभिमातिजित् अभिमानजित् (अग्नि=विद्वज्जन) २७ ३ (अभिमाति+जि जये (भ्वा०) धातो क्विप्]

अभिमातिनम् शत्रुगणम् १ ८५ ३ [अभिमाति प्राति० मत्वर्थे पामादित्वान्न]

अभिमातिसहः येऽभिमात्याभिमानेन युक्तान् शत्रून् सहन्ते ते (वीरास=शूरा जना) ६ ७ ३ येऽभिमातीन् शत्रून् सहन्ते ते (आप्ता विद्वान) २ ४ ६ [अभिमाति+षहमर्षणे (भ्वा०) धातोरच् प्रत्यय]

अभिमातिसह्ये अभिमातयोऽभिमानयुक्ता शत्रव सह्या यस्मिन् सङ्ग्रामे तस्मिन् ३ ३७ ३ [अभिमाति+षहमर्षणे (भ्वा०) धातो 'शकिसहोश्च' अ० ३ १ ९९ सूत्रेण यत् स च 'कृत्यल्युटो बहुलम्' इति बहुलवचनात् कर्त्तरि]

अभिमातिषाहः येऽभिमातीनभिमानयुक्ताञ्छत्रून् सहन्ते निवारयन्ति (वाजा=धनुर्वेदबोधजा वेगा) १२ ११३ येऽभिमानयुक्तान् शत्रून् सोढु शक्नुवन्ति (वीरजना) ६ ६९ ४ [अभिमाति+षह मर्षणे (दिवा०) धातो 'छन्दसि सह' अ० ३ २ ६३ सूत्रेण ण्वि प्रत्यय । सर्वाण्यान्यभिमातिषाह इति सꣳरेताꣳसि पाप्मसह इत्येतद् श० ७ ३ १ ४६]

अभिमातिहनम् योऽभिमानयुक्त शत्रु हन्ति तम् (राजानम्) ६ ५१ ३ [अभिमाति+हन हिंसागत्यो (अदा०) धातो क्विप्]

अभिमातिहा येऽभिमिमत इत्यभिमातयस्तान् हन्ति स (विद्वान्मनुष्य) प्र०—अत्र औणादिक क्तिच् प्रत्यय ५ २४ [अभिमाति+हन हिंसागत्योर्धातो क्विप् 'सौ चे' ति दीर्घ]

अभिमृशे आभिमुख्येन मृषन्ति सहन्ते येन तस्मै (विद्युदग्नये) ११ २४ [अभि+मृष तितिक्षाया धातो क्विप्]

कुर्वन् (पर्जन्य) ५ ८३ ६ [स्तन देवशब्दे (चुरा०) धातो शतृ]

स्तनयदमाः स्तनयन्ति शब्दयन्त्यमा गृहाणि येषा ते (मरुत =मानवा) ५ ५४ ३ [स्तनयत्-अमापदयो समास'। अमा गृहनाम निघ० ३ १४]

स्तनयन्निव विद्युद्वद् गर्जयन् (अग्नि =विद्वान्राजा) १२ ३३. यथा दिव्य शब्द कुर्वन् (द्यौ =सूर्यप्रकाश) १२ ६ [स्तनयत्-इवपदयो समास]

स्तनयित्नवे स्तनयित्नुरिव दुष्टाना भयङ्कराय (भगवते) ३६ २१ **स्तनयित्नुना**=विद्युद्रूपेण ५ ८३ ६ **स्तनयित्नुम्**=शब्दनिमित्ता विद्युतम् २५ २ [स्तन देव-शब्दे (चुरा०) धातो 'स्तनिहृषिपुषिगदिमदिभ्यो णेरित्नुच्' उ० ३ २९ सूत्रेणेत्नुच्। स्तनयित्नु-कतमस्तनयित्नुरित्य-शनिरिति। श० ११.६ ३ ९ (प्रजापति) स्तनयित्नुमुद्-गीथम् (अकरोत्) जै० उ० १ १३ १ स्तनयित्नु सावित्री गो० पू० १ ३३ स्तनयित्नुरेव सविता जै० उ० ४ २७ ६]

स्तनाभुजः दुग्धयुक्तै स्तनै सवत्सान् मनुष्यादीन् पालयन्त्य (धेनव =गाव) १ १२० ८ [स्तनोपपदे भुज पालनाभ्यवहारयो (रुधा०) धातो क्विप्। पूर्वस्य दीर्घ-श्छान्दस]

स्तब्धः निष्कम्प, सर्वस्य स्थिरता कुर्वन् सन् स्थिर (परमेश्वर) ऋ० भू० ११९, नि० २ ३ [स्तम्भु स्तम्भार्थे (सौत्रो धातु) धातो क्त]

स्तभान उत्तभान ५ २७ [स्तम्भु स्तम्भार्थे (सौत्रो धातु) धातोर्लोटि 'हल श्न शानज्झौ' इति श्न शानच्]

स्तभायत् स्तभ्नाति ४ ६ २ स्तभ्नीयात् ४ ५ १ **स्तभायः**=स्तभ्नाति ६ १७ ७ [स्तम्भु स्तम्भार्थे (सौत्रो धातु) धातोर्लङि 'छन्दसि शायजपि' इति श्न शायच्। अडभाव]

स्तभायन् स्तम्भयन् (इन्द्र =राजा) ४ २१ ५ [स्तम्भु स्तम्भार्थे (सौत्रो धातु) धातो शतृ। 'छन्दसि शायजपि' इति शायच्]

स्तभितम् धृतम् (स्व =सुखम्) ३२ ६ धारण किए हुए (सुख) को स० वि० ६, ३२ ६ [स्तम्भु स्तम्भार्थे (सौत्रो धातु) धातो क्त]

स्तभूयमानम् लोकाना धारकम् (त्वाष्ट्र=सूर्यस्येद तेज) ३ ७ ४ [स्तम्भु स्तम्भार्थे (सौत्रो धातु) धातो कर्मणि शानच्]

स्तभ्नातु धरतु १५ १० गृह्णातु १५ १२ स्थिरी-करोतु १५.११ **स्तम्भीत्**=धरेत्, प्र०—अत्राऽडभाव १ १२१ २ [स्तम्भु स्तम्भार्थे (सौत्रो धातु) धातोर्लोट्। 'स्तम्भुस्तुम्भु०' इति शप श्ना। अन्यत्र लुङ्। अडभाव]

स्तरते स्तृणोत्याच्छादयति १ १२९ ४ [स्तॄञ् आच्छादने (क्र्या०) धातोर्लट्। विकरणव्यत्ययेन शप्]

स्तरीः कलायन्त्रादिसयोगेनास्तारिपत याम्ता नौका १ १२२ २ **स्तर्यः**=स्तृणन्ति याभिस्ता (गाव =किरणा ३३ १८ आच्छादिका (पत्न्य) ४ १९ ७ आच्छादिता (गाव =किरणा) ७ २३ ४ [स्तॄञ् आच्छादने (क्र्या०) धातो 'अवितॄस्तृतन्त्रिभ्य ई' उ० ३ १५८ सूत्रेण ई]

स्तरीः स्वभावाच्छादक (इन्द्र =पति) ८ २ य सुखै स्तृणाति आच्छादयति स (इन्द्र =सुखप्रद ईश्वर) ३ ३४ छलकपटाचरणरहित, सत्यभावप्रकाशक (विद्वान् पति) ८ २ [स्तॄञ् आच्छादने (क्र्या०) धातो 'अवितॄ-स्तॄ०' उ० ३ १५८ सूत्रेण ई]

स्तर्यम् स्तरीषु नौकादियानेषु साधुम् (वा =वारि) १ ११६ २२ सुखैराच्छादिकाम् (गा=पृथिवीम्) १ ११७ २० [स्तरीति पूर्वपदे व्याख्यातम्। तत साध्वर्थे यत्]

स्तव स्तवाम, प्र०—अत्र विकरणव्यत्ययेन शप्, पुरुषव्यत्ययश्च २ ११ ६ **स्तवत्**=स्तूयात् ६ ४७ १५ प्रशसेत् ६ ५९ ४ **स्तवते**=प्रशसति २ २४ १ स्तौति १ १५४ २ **स्तवथ**=प्रशसय ४ २१ २ **स्तवन्त**= स्तुवन्ति ४ २२ ७ **स्तवन्ते**=प्रशसन्ति ६ २६ ७ **स्तवान्**=स्तूयात् ६ २४ ८ **स्तवाम**=प्रशसेम २ ११.६ **स्तविष्यामि**=स्तोष्यामि १ ४४ ५ **स्तवे**=प्रशसामि, प्र०—अत्र शपो लुक् न १ ९२ ७ **स्तवेत्**=प्रशसेत् ५ १८ १ **स्तवै**=प्रशसानि ३ ३२ १४ [ष्टुञ् स्तुतौ (अदा०) धातोर्लोट्। बहुल छन्दसी'ति शपो लुङ् न। अन्यत्र लेट्, लट्, लङ्, लृट्, लिङ् च। स्तवत्-स्तौति नि० ५ २२ स्तवे स्तूयते। नि० ६ २३]

स्तवध्यै स्तोतुम् ७ ३७ ८ [ष्टुञ् स्तुतौ (अदा०) धातोस्तुमर्थेऽध्यै प्रत्यय]

स्तवमान स्तुतिकर्त्त (विद्वज्जन) १ १४७ ५ **स्तवमानः**=सर्वान् योद्धॄन् वीररसयुक्तव्याख्यानेनोत्साहयन् (इन्द्र =शत्रुविदारको सेनेश) ७ १९ ११ गुणकीर्त्तन कुर्वन् (विद्वज्जन) १ १३९ ६ [ष्टुञ् स्तुतौ (अदा०) धातो शानच्। 'बहुल छन्दसी' ति शपो लुङ् न भवति]

स्तवमानेभिः स्तुवन्ति यैस्तै (अर्कै =स्तोत्र

१ ६२ ७ [स्तवमानप्राति० भिस ऐस् न भवति छान्दस-त्वात् । स्तवमान =ष्टुञ् स्तुतौ (अदा०)धातोर्बाहु० औणा० आनच्]

स्तवसे स्तावकाय (विद्यार्थिजनाय) ५ १० ७ स्तुतये १ १६६ ८ [ष्टुञ् स्तुतौ (अदा०) धातोरौणा० असुन्]

स्तवान् स्तुती २ २० ५ [ष्टुञ् स्तुतौ (अदा०) धातो 'ऋदोरप्' त्यप् । प्राणो वै स्तव कौ० ८ ३]

स्तवान य सत्य स्तौति तत्सम्बुद्धौ (इन्द्र =राजन्) ३ ४० ३ **स्तवानः**=स्वेन प्रवृद्ध (अग्नि =राजा) ४ २ ६ प्रशसन् (विद्वज्जन) ५ १० ७ स्तुवन् (विद्वज्जन) २७ ३८ स्तोतु शील (पति), प्र०—अत्र स्वरव्यत्ययेना-द्युदात्तत्वम् १ ११३ १७ य स्तौति स (इन्द्र =मनुष्य) १ ५१ ६ स्तूयमानो गृहीतगुणो वा (अग्नि =राजा), प्र०-अत्र 'सम्यानच् स्तुव' उ० २ ८६ इति बाहुलकात् समुपपदाभावेऽपि कर्मण्यौणादिक आनच्प्रत्यय । समी०—अत्र सायणाचार्येण लट स्थाने शानचमाश्रित्य स्तूयमान-मिति व्याख्यान कृतमत इदमशुद्धम् १ १२.११ स्तावक सन् (अग्नि =राजा) ४ ११ २ [ष्टुञ् स्तुतौ (अदा०) धातोर्बाहु० औणा० आनच्]

स्तवाना सत्यप्रशसकौ (अध्यापकोपदेशकौ) ४ ५५ ४ [स्तवान इति पूर्वपदे व्याख्यातम् । ततो द्विवचनस्या-कारादेश]

स्तवानेभि सर्वविद्यास्तावकै (देवै =विद्वज्जनै.) १ १६६ ८ [स्तवान इति व्याख्यातम् । ततो भिस ऐसा-देशो 'बहुल छन्दसी' ति न भवति]

स्तवे स्तवने ७ १२ २ प्रशसनीये (दमे=गृहे) ६ १२ ४ [ष्टुञ् स्तुतौ (अदा०) धातो 'ऋदोरप्' त्यप्]

स्तामुः स्तावक (प्रजाजन) ७ २०.६. [ष्टुञ् स्तुतौ (अदा०) धातोर्बाहु० औणा० उण् । वस्य मकारश्छान्दस । स्तामु स्तोतृनाम । निघ० ३ १६]

स्तायूनाम् चौर्येण जीवताम् (प्रजाजनानाम्) १६ २१ [तायु स्तेननाम (निघ० ३ २४) सकारोपजन-श्छान्दस.]

स्तावा या स्तूयन्ते प्रशस्यन्ते ता. (दक्षिणा) १८ ४२ [ष्टुञ् स्तुतौ (अदा०) धातोर्घञ् । स्तावा —(अप्सरस यजु० १८ ४२) दक्षिणा वै स्तावा दक्षिणाभिर्हि यज्ञ स्तूयते]

स्तियानाम् सहताना स्थावरजङ्गमाना प्राण्यप्राणि-नाम् ६ ४४ २१ अपा जलानाम् ७ ५ २ [स्तियानाम्= स्त्रिया आपो भवन्ति स्त्यायनात् । नि० ६ १७. स्त्यै शब्द-सघातयो (भ्वा०) धातोर्विच् । धातोर्मध्ये इकारोपजन-श्छान्दस]

स्तीन् सहतान् मिलितान् (प्रजाजनान्) ७ १६ ११ [स्त्यै शब्दसघातयो (भ्वा०) धातो क्विपि छान्दस सम्प्रसारणम्]

स्तीर्णबर्हिषम् स्तीर्णमाच्छादित बर्हिरन्तरिक्ष येन तम् (अग्नि =विद्युदादिम्) १५ ४६ [स्तीर्ण-बर्हिष्पदयो समास । स्तीर्णम् =स्तृञ् आच्छादने (क्र्या०) धातो क्तः। बर्हि अन्तरिक्षनाम। निघ० १ ३ उदकनाम। निघ० १ १२]

स्तीर्णम् सर्वतोऽङ्गोपाङ्गैराच्छादित यानम् २६ ४ आच्छादकम् (बर्हि =अन्तरिक्षम्) २१ ५७ कार्ष्णैर्विषा चाऽऽच्छादनीयम् (हुत द्रव्यम्) २८ १२ [स्तृञ् आच्छादने (क्र्या०) धातो क्त]

स्तीर्णाः शुभगुणैराच्छादिता (धेनव =गाव) ३ १ ७ [स्तीर्णमिति व्याख्यातम् । तत स्त्रिया टाप्]

स्तुतस्तोमस्य स्तुत स्तोम सामवेदगानादिविशेषो येन तस्य (वीरगृहपते) ८ १२ [स्तुत-सोमपदयो समास]

स्तुतः प्राप्तप्रशस (इन्द्र.=राजा) ४ १६ ११ प्रशसित. (मनुष्य) ४ १६ २१ स्तुत्या लक्षित, अ०—प्रकाशितगुण सन् (इन्द्र.=जगदीश्वर सूर्यो वा) ३ ५२ प्रशसा प्राप्त (मघवा=विद्वज्जनः) १ १७१ ३ प्राप्त-प्रशसः (इन्द्र.=राजा) ४ २१ १ **स्तुताः**=स्तुतिप्रकाशका (मन्त्रा =विचारसाधका उपदेशा) ३ ४ ५३ प्राप्तस्तुतय (वसव =पृथिव्यादयो विद्वज्जना वा) २१ २३ प्रशस्ता (रुद्रा =मध्यमा विद्वास.) २१ २४ [ष्टुञ् स्तुतौ (अदा०) धातो क्त । अन्यत्रौणा० वा क्त]

स्तुतः स्तुर्ति कुर्वत्य (मातर), प्र०—क्विबन्त शब्दोऽयम् १ १६६.४ [ष्टुञ् स्तुतौ (अदा०) धातो क्विप् । 'ह्रस्वस्य पिति कृति तुक्' इति तुकि जसि च रूपम्]

स्तुतास प्राप्तप्रशसा (मनुष्या) ७ ५७ ६. प्रशसिता (विद्वज्जना) १ १७१ ३ [स्तुत =ष्टुञ् स्तुतौ (अदा०) धातो क्त । स्तुतप्राति०जसोऽसुक्]

स्तुतीः गुणस्तवनानि ८.३५ प्रशसा १ ८४ २ [ष्टुञ् स्तुतौ (अदा०) धातो स्त्रिया क्तिन्]

स्तुपः शिखा, प्र०—यज्ञो वै विष्णुस्तस्यैषमेव शिखा

स्तुप. अ० १ ३ ३ ५, २ २ **स्तुपेन**=हिंसनेन २५ २.

स्तुभः य स्तोभते स (सज्जन) ३ ५१ ३ **स्तुभा**=स्तोभते स्थिरीकरोति येन तेन (रवेण) १ ६२ ४ [स्तोभति अर्चतिकर्मा (निघ० ३ १४)। तत कर्त्तरि क्विप्। स्तुम्भु स्तम्भार्थे (सौत्रो धातु) धातोर्वा क्विप् । स्तुभ् स्तोतृनाम निघ० ३.१६]

स्तुभः स्तम्भिका (विद्यार्थिजना) १ १६० ७ [स्तोभति अर्चतिकर्मा निघ० ३ १४ । तत क्विप्। स्तुभ् स्तोतृनाम निघ० ३ १६]

स्तुभ्वा अर्चक (सज्जन) १ ६६ २ [स्तोभति अर्चतिकर्मा। निघ० ३ १६ तत. कर्त्तरि वनिप्]

स्तुमसि स्तुम ६ २३ ५ **स्तुवते**=प्रशसति २ २२ ३. स्तौमि, प्र०—अत्र श-विकरण ३ ३ ५० **स्तुवन्त**=प्रशसत ६ २६ ४ **स्तुवन्ति**=प्रशसन्ति ३३ ६७ **स्तुवीत**=प्रशसेत् ४ ५५ ६ **स्तुषे** प्रशससि १ १५६ १ तद्गुणान् प्रकाशयसि १ ४६ १ स्तौति, प्र०—अत्र व्यत्ययेन मध्यम १ १२२ ७ स्तौमि ६ ५१ ३ **स्तुहि**=प्रशस ५ ५३ ३ प्रकाशय १ १२ ७ प्रशसय १ २२ ६ [ष्टुञ् स्तुतौ (अदा०) धातोर्लट् । 'इदन्तो मसि' इति मस इदन्तत्वम् । अन्यत्र लङ्, लिङ्, लोट् च]

स्तुवतः प्रशसकान् (जनान्) ५ ५३ १६ स्तावकान् (मर्त्तान्=मनुष्यान्) ७ १८ १८ स्तुवताम्=विशाप्रशसकानाम् (सज्जनानाम्) ६ ५४ ६ **स्तुवते**=प्रशसा कुर्वते (जनाय) ५ ४२ ७ सत्यस्य स्तावकाय (सभाद्यध्यक्षाय) १ ६२ १ सत्य वदते (पुरुपाय) ४ २१ ६ धर्म्मं श्लाघमानाय (विद्वज्जनाय) १ ११६ २३ स्तुति कुर्वते (विद्यार्थिजनाय) १.११६ ७ य शास्त्रार्थान् स्तौति तस्मै (नायकाय जनाय) ३४ १६ प्रशसिताय (सत्यस्योपदेशकाय), प्र०—अत्र 'कृतो वहुलम् वा' इति कर्मणि कृत् ६ ६२ ५ सत्यवक्त्रे (राज्ञे) १ ११७ ७ **स्तुवन्**=स्तुतिं कुर्वन् (जन) ४ ५१ ७ **स्तुवन्तम्**=स्तुतिकर्त्तारम् (अध्यापकम्) १ १४७ ५ [ष्टुञ् स्तुतौ (अदा०) धातो शतृ]

स्तुषे स्तोतुम् ५ ५८ १ [ष्टुञ् स्तुतौ (अदा०) धातोस्तुमर्थे सेप्रत्यय]

स्तूपम् किरणसमूहम् १ २४ ७ **स्तूपैः**=सन्तप्तै (रश्मिभि=किरणै) ७ १ २ [ष्टुञ् स्तुतौ (अदा०)धातो 'स्तुवो दीर्घश्च' उ० ३ २५ सूत्रेण प । धातोर्दीर्घश्च । स्तूप स्त्यायते सघात नि० १० ३३]

स्तूयमाना स्तुतिं प्राप्नुवन्त (मरुत=पवन) १ १०७ २ [ष्टुञ् स्तुतौ (अदा०) धातो कर्मणि शानच्]

स्तूयसे प्रशस्यसे १२ ४७ [ष्टुञ् स्तुतौ (अदा०) धातो कर्मणि लट्]

स्तृणन्ति यन्त्रैराच्छादयन्ति ७ ३२ **स्तृणामि**=आच्छादयामि २.२. **स्तृणीत**=आच्छादयत ७ ४३ २. **स्तृणीताम्**=तनोतु ७ १७ १ **स्तृणीते**=आच्छादयति प्राप्नोति वा ६ ६७ २. **स्तृणीमहि**=आच्छादयेम ३ ४ ४ **स्तृणीषि**=आच्छादयसि १ १२६ ४ [स्तृञ् आच्छादने (क्रया०) धातोर्लट् । अन्यत्र लिङ् लोट् चापि । स्तृणाति वधकर्मा। निघ० २ १६]

स्तृणासाः आच्छादका (उद्यमिनो जना) १ १४२.५ आच्छादयन्त (सत्पुरुषा) २.११ १६ [स्तृञ् आच्छादने (स्वा०) धातोर्वाहु० औणा० नक् । ततो जसोऽसुक्]

स्तृभिः प्राप्तव्यैर्गुणै १ ६८ ५ शत्रुवलाच्छादकैर्गुणै, प्र०—स्तृञ् आच्छादने डयस्मात् क्विप् 'वाच्छन्दसि सर्वे विधयो भवन्ति' इति तुगभाव १ ८७ १ आच्छादितैर्नक्षत्रैः १ १६६.११. [स्तृञ् आच्छादने (स्वा०) धातो. क्विप् । 'ह्रस्वस्य०' इति तुगपि न भवति छान्दसत्वात् । स्तृभिस्तीर्णानीव ख्यायन्ते नि० ३ २०]

स्तेन इव यथा चोरो भित्त्यादिक तथा १२ ८४ [स्तेन-इवपदयो समास]

स्तेनम् चोरम् ६ ५१ १३ **स्तेनस्य**=अप्रसिद्धचोरस्य, भा०—स्तेनसम्वन्धिन (दुर्जनस्य) १२ ६२ स्तेनान्=परपदार्थाऽपहर्तॄन् (दुर्जनान्) ११ ७८ **स्तेनानाम्**=अन्यायेन परस्वाऽऽदायिनाम् (भा०—चोरादीनाम्) १६ २० **स्तेनाः**=सुरङ्ग दत्त्वा परपदार्थाऽपहारिण (भा०—दस्य्वादयो जना) ११ [स्तेन कस्मात् सस्त्यानमस्मिन् पापकमिति नैरुक्ता नि० ३ १६]

स्तेनहृदयम् चोरस्य हृदयमिव हृदयमस्य तम् (दुर्जनम्) ३० १३ [स्तेन-हृदयपदयो समास]

स्तेनासः गुप्ताश्चोरा, भा०—प्रसिद्धा अप्रसिद्धाश्चोरा. ११ ७६ [स्तेनम् इति व्याख्यातम्। ततो जसोऽसुक्]

स्तेयम् चोरी को म० वि० १२२, अथर्व० १४ १ ५७ [स्तेनप्राति० भावे कर्मणि वा यत् नलोपश्च 'स्तेनाद्यन्नलोपश्च' अ० ५ १ १२५ सूत्रेण]

स्तोकस्य अपत्यस्य ३४ १३ **स्तोकानाम्**=स्वल्पानाम् (अ०—स्तोकान्सूक्ष्मव्यवहारान्), प्र०—अत्र शेप-

विवक्षात कर्मणि षष्ठी ६ १६ अल्पाना पदार्थानाम् ३ २११ **स्तोकाः**=स्तावका (सज्जना) ३ २१ ३ [स्तोक-आद्यन्तविपर्यय नि० २ १ स्तोको वै द्रप्स. गो० उ० २ १२]

स्तोकासः गुणाना स्तावका (सज्जना) ३ २१ ४. [स्तोक इति व्याख्यातम् । ततो जसोऽसुक्]

स्तोतः स्तावक (भक्तजन) २३ ७ **स्तोता**=प्रशसक (राजपुरुष) ३ ५२ ५ स्तुतिकर्त्ता सभाध्यक्षो राजा १ ३८ ४ सत्यविद्याप्रकाशक (मनुष्य) ५ १८ २ **स्तोतारम्**=विद्यागुणस्तावकम् (सज्जनम्) १ ११२ ११ धर्म्मस्य स्तावकम् (विद्वज्जनम्) १ १०५ ८. ऋत्विजम् ४ १७.१३ विद्वासम् ३ ४१ ६ **स्तोतुः**=गुणप्रकाशकस्य (विद्वज्जनस्य) १ ५७ ५ **स्तोतृभ्यः**=प्रशसकेभ्यो मनुष्येभ्य ३६ ७ स्तुवन्ति जगदीश्वर सृष्टिगुणाश्च ये तेभ्यो धार्मिकेभ्यो विद्वद्भ्य १ ११ ३ सुपात्रेभ्यो विपश्चिद्भ्य ५ ६ ८ सकलविद्याऽव्यापकेभ्यो विद्वद्भ्य २ ११ ६ सकलप्रयोजनविद्भ्य (जनेभ्य) २ ३४ ७ विद्याप्रचारकेभ्य (सज्जनेभ्य) ३ १० ८ स्तावकेभ्यो विद्वद्भ्य १५ ४१ विद्यामिच्छुभ्य (जनेभ्य) २ ११ ६ य ईश्वर स्तुवन्ति तेभ्य (सज्जनेभ्य) १ ३३ ५ [ष्टुञ् स्तुतौ (अदा०) धातो कर्त्तरि तृच् । स्तोता स्तवनात् नि० ३ १६ स्तोता—वायुर्वै स्तोता श० १३ २ ६ २]

स्तोत्रम् स्तुवन्ति येन तत् (स्तवनम्) ३ ५२ ११ स्तोतुमर्हम् (अव =रक्षणादिकम्) ३ ३१ १४ **स्तोत्रस्य**=प्रशसितस्य (मत्स्यस्य) ५ ५५ ६ **स्तोत्रे**=स्तवने ३३ २६ प्रशसासाधने ६ ३५ १ स्तोतव्ये व्यवहारे १ १०२ १ [ष्टुञ् स्तुतौ (भ्वा०) धातो 'दाम्नीशसयु०' अ० ३ २ १८२ इति करणे ष्ट्रन् । स्तोत्रम्—क्षत्र वै स्तोत्रम् प० १ ४ आत्मा वै स्तोत्रम् श० ५ २ २ २०]

स्तोत्रियाः ये स्तोत्राण्यर्हन्ति ते (विद्वज्जना) १६ २४ [स्तोत्रमिति व्याख्यातम् । ततोऽर्हत्यर्थे घश्छान्दस । स्तोत्रिय —इय (पृथिवी) एव स्तोत्रिय जै० उ० ३ ४.२ आत्मैव स्तोत्रिय जै० उ० ३ ४ ३]

स्तोभत स्तम्भयत १ ८० ६ **स्तोभति**=बध्नाति १ ८८ ६ **स्तोभन्ति**=स्तुवन्ति ५ ८३ २ स्तभ्नन्ति, प्र०—अत्र व्यत्ययेन परस्मैपदम् २ १६८ ८ [स्तोभति अर्चतिकर्मा निघ० ३ १४ स्तुम्भु (सौत्रो धातु) धातोर्वा रूपाणि]

स्तोमतष्टा स्तोमैस्स्तुतिभिस्तष्टा विस्तृता (मति.=प्रज्ञा) ३ ३६ १ **स्तोमतष्टाः**=विस्तृतस्तुतय ३ ४३ २. [स्तोम-तष्टापदयो समास । तष्टा=तक्षू तनूकरणे (भ्वा०)+क्त+टाप्]

स्तोमपृष्ठा स्तोमा पृष्ठा ज्ञापयितुमिष्टा यस्या सा (स्त्री) १५ ३ स्तोमाना पृष्ठ ज्ञीप्सा यस्या सा (स्त्री) १५ ४ [स्तोम-पृष्ठापदयो समास । पृष्ठा=प्रच्छ ज्ञीप्सायाम् (तुदा०) धातो क्तान्तात् स्त्रिया टाप् । टस्य ठकारश्छान्दस]

स्तोमम् स्तूयते येनाऽसौ स्तोमस्त स्तुतिसमूहम् १ १० ६ स्तूयते गुणसमूहो यस्त यज्ञम् १ १६ ५ अतिप्रशसनीयम् (प्रमाणादिपदार्थसमूहम्) स्तोतुमर्हम् (क्रियाकौशलम्), स्तवनीयम् (अहङ्कारम्) ६ ३४ स्तोतु योग्यम् (व्यवहारम्) ६ ३३ प्रशसनीयकलाकौशलम् १ १२ १२ गुणप्रकाशम् १ २११ स्तुतिम् ५ ४२ २ विद्याप्रशसाम् ३ १५ २ स्तूयते यस्तम् (यज्ञ=विद्याधर्मसङ्गमयितार व्यवहारम्) ११ ८ श्लाघनीयम् (कर्म) ५ १ १२ श्लाघाम् ३ ६१ १ गुणकीर्त्तनम् १ ६४ १ स्तुतिविषय न्यायप्रज्ञापनम् १ ४४ १४ सकलशास्त्राध्ययनाध्यापनम् ५ ३५ ८ स्तुत्य कर्म्म १५ २५ **स्तोमः**=सामगानविशेष स्तुतिसमूह १ ८ १०. प्रश्नोत्तराख्य आलाप १ १६८ १० श्लाघनीयो मेघो वह्निर्वा ५ ४२ १६ श्लाघाविषय ५ ४२ १५ गुणप्रकाश-समूहक्रिय (वायु) १ १६ ७ स्तुति ४ ३२ १५ स्तुवन्ति येन सह (ऋचा भाग) १५ ११ स्तूयमान (ऋतुर्वसन्त) १० १० प्रशसामयो व्यवहार ६ ४५ ३० स्तोतुमर्ह ऋग्वेद १२ ४ स्तुवन्ति यस्मिन् सोऽथर्ववेद १८ २६ प्रशसाव्यवहार ७ ३४ १४. स्तुतिविषय १ १७१ २ श्लाघ्यो व्यवहार ७ २४ ५ श्लाघ्यगुणकर्मस्वभाव ६ ३८ ३ स्तुतिसाधक (सोम =चन्द्र) १५ १३ स्तोतव्य (विद्वज्जन) १४ २५ स्तुवन्ति येन स, स्तोता य स्तूयते, स्तावक (विद्वज्जन) १४ २४ **स्तोमान्**=अ०—वेदस्तुतिसमूहान् १ १० ४ स्तोतुमर्हान् विद्याविशेषान् १ १२६ १ मार्गाय समूढान् पृथिवीपर्वतादीन् १ ११६ १. स्तुत्यान् रत्नादिद्रव्यसमूहान् १ ११४ ६ **स्तोमा.**=पदार्थगुणप्रशसा १६ २८ प्रशसनीया विद्वासोऽध्येतारश्च ७ १६ १० स्तुवन्ति यैस्ते स्तुतिसमूहा १ ११ ८ वेदस्तुतिसमूहा १ ५ ८ **स्तोमे**=स्तुतिव्यवहारे २१ २५ प्रशसिते विजये ३ ५४ २ **स्तोमेन**=स्तुतियुक्तेन व्यवहारेण ३ ५३ इन्धनसमूहेन २२ १५ गुणप्रशमनेन ५ १४ १. **स्तोमेषु**=स्तुवन्ति सर्वा विद्या येषु तेषु (उक्थेषु=

वाक्येषु) २ ११ ३ **तोमैः**=प्रशसावचनै ३ ४२ ४ प्रशसितैर्व्यवहारैर्वाग्भि ५ २२ ४ विद्यास्तुतिविशेषैर्वेदभागै १५ ४४ पदार्थविद्याप्रशसनै ३३ ८१ [ष्टुञ् स्तुतौ (अदा०) धातो 'अर्त्तिस्तुसु०' उ० १.१४० सूत्रेण मन् । स्तोम स्तवनात् नि० ७ २२ स्तोम —सप्तस्तोमा. श० ९ ५ २ ८ त्रिवृत्पञ्चदश सप्तदश एकविंश एते वै स्तोमाना वीर्यवत्तमा ता० ६ ३ १५ यदु ह किं च देवा कुर्वते स्तोमेनैव तत् कुर्वते श० ८ ४ ३ २ स्तोमो वै देवेषु तरो नामासीत् ता० ८ ३ ३ स्तोमा वै परमा स्वर्गा लोका ऐ० ४ १८ स्तोमा वै त्रय स्वर्गा लोका ऐ० ४ १८ स्तोमो हि पशु ता० ५ १० ८ अन्न वै स्तोमा श० ९ ३ ३ ६ प्राणा वै स्तोमा श० ८ ४ १ ३ वीर्यं वै स्तोमा ता० २ ५ ४ वीरजनन वै स्तोम ता० २१ ९ ३. गायत्रीमात्रो वै स्तोम कौ० १९ ८ नाक्षराच्छन्दसो व्येत्येकस्मान्न द्वाभ्या न स्तोत्रियया स्तोम श० १२ २ ३ ३ देवा वा आदित्यस्य स्वर्गाल्लोकादवपातादविभयुस्तमेतै स्तोमै सप्तदशैरदृहन्यदेते स्तोमा भवन्त्यादित्यस्य धृत्यै ता० ४ ५ ६]

स्तोमवाहसः प्रशसाप्रापका (गोतमा =विद्वासो जना) ४ ३२ १२ स्तोम स्तुतिसमूहो वाह प्राप्तव्य प्रापयितव्यो येषान्ते (सखाय =विद्वासो जना) १ ५ १. [स्तोम-वाहस्पदयो समास । वाहस्=वह प्रापणे (भ्वा०) धातोर्णिजन्ताद् औणा० असुन्]

स्तोमवाहाः ये स्तोमान् वहन्ति ते (मनुष्या) ६ २३ ४ [स्तोमोपपदे वह प्रापणे (भ्वा०) धातो 'कर्मण्यण्' इत्यण्]

स्तोमासः स्तुतिकर्त्तार (विद्वज्जना) ५ ८४ २ ये स्तूयन्ते ते (सज्जना) ६ ६९ २ प्रशसिता (गुणा) ५ २९ ११ स्तावका (विद्वज्जना) ३ ५४ १४ [स्तोम इति व्याख्यातम् । ततो जसोऽसुगागम]

स्तोमेभिः वेदस्थै प्रकरणै स्तोत्रै ५ १० ३ प्रशसितै कर्मभि ३ ३२ १३ स्तुवन्ति सकला विद्या यैस्तै (गीर्भि =वाग्भि) ३ ५ २ वेदस्थै स्तुतियुक्तै त्वद्गुणप्रकाशकै स्तोत्रै १ ९ ३ [स्तोम इति व्याख्यातम् । ततो भिस ऐस् न भवति 'बहुल छन्दसी' ति सूत्रेण]

स्तोम्यः प्रशसनीय (सविता=जगदीश्वर सूर्यो वा) १ २२ ८ [स्तोम इति व्याख्यातम् । ततोऽर्हत्यर्थे 'छन्दसि च' अ० ५ १ ६७ सूत्रेण यत्]

स्तोम्या स्तोतुमर्हा (सरस्वती=सत्या वाक्) ६ ६१ १० [स्तोम्य इति व्याख्यातम् । तत स्त्रियां टाप्]

स्तोषत् स्तुयात् ५ ३६ ३ **स्तोषम्**=प्रशसेयम् १ १८७ १ स्तुवे ३४ ७ **स्तोषाम**=गुणान् कीर्त्तयेम १ ५३ ११ **स्तौतु**=स्तौति ७ ४२ ६ [ष्टुञ् स्तुतौ (अदा०) धातोर्लेट् । अन्यत्र लडपि । स्तोषम्=स्तौमि नि० ६ २५]

स्तौनाः चौरा, प्र०—अत्र वर्णव्यत्ययेनैकार-स्थान औकार. ६ ६६ ५ [स्तेन इति व्याख्यातम् । वर्णव्यत्ययेनैकारस्यौकार:]

स्तौलाभिः स्थूले भवाभि (मेनाभि), प्र०—अत्र वर्णव्यत्ययेन थस्य स्थाने त ६ ४४ ७ [स्थूलप्राति० भवार्थेऽण् । वर्णव्यत्ययेन थस्य तकार]

स्त्यायताम् सर्वतो वर्धताम्, सहता भवन्तु वा, प्र०—अत्र व्यत्ययेनाऽऽत्मनेपदम् ३८ १८ [स्त्यै ष्ट्यै शब्दसघातयो (भ्वा०) धातोर्लोट् । व्यत्ययेनात्मनेपदम्]

स्त्री भा०—याऽन्यायाचरणादपूज्यपूजनाद्विरहा पत्या माननीया सा (पत्नी) ५ ६१ ६ [स्त्यै ष्ट्यै शब्दसघातयो (भ्वा०) धातो 'स्त्यायतेर्ड्रट्' उ० ४ १६६ सूत्रेण ड्रट् । तत स्त्रियां डीप् । स्त्रिय स्त्यायतेरपत्रपणकर्मण नि० ३ २१ स्त्री सावित्री जै० उ० ४ २७ १७]

स्त्रीषखम् स्त्रिया मित्र पतिम् ३० ६ [स्त्री-सखिपदयो समासे समासान्त टच् 'राजाहस्सखिभ्य०' सूत्रेण]

स्थ सन्ति, प्र०—अत्र पुरुषव्यत्ययेन लडर्थे लोट् १ १५ २ भवथ ५ ५७ २ भवत १२ ४६ सन्तु ४ ३४ ६ तिष्ठत ५ ६१ १ सन्ति, प्र०—अत्र पुरुषव्यत्ययेन प्रथमपुरुषस्थाने मध्यमपुरुष ११ **स्थः**=भवथ १ १५७ ६ स्त, प्र०—अत्र व्यत्यय १ १७ २ वर्त्तेते १ १०८ ११ भवत स्यात वा ९ ४ भवथ, भवतो वा १ १०८ ९ तिष्ठथ ५ ७३ १ तिष्ठत ५ २१ स्याताम् १० ६ **स्थातृ**= तिष्ठति २ १५ ७ तिष्ठेत् ३ १५ ६ उपतिष्ठते २ ३ १० **स्थात**=तिष्ठत ५ ५३ ८ **स्थाः**=तिष्ठे ६ २४ ९ तिष्ठति ४ ३० १२ **स्थाति**=तिष्ठति २ ३१ ३ **स्थाथः**= भवथ ४ ४६ ४ **स्थाम्**=अवतिष्ठस्व २ २८ ११ तिष्ठेयम् २ २७ १७ **स्थाम**=तिष्ठेम १ १३९ ४ **स्थाः**= तिष्ठे ६ २४ ९ तिष्ठति ४ ३० १२ भवे १ १७४ १० **स्थुः**=तिष्ठेयु १ १६७ १ तिष्ठन्ति, प्र०—अत्र लडर्थे लुडभावश्च १ २४ ७ उपतिष्ठन्तु ७ १८ ३ **स्थेयाम**= तिष्ठेम ६ ४७ ८ [ष्ठा गतिनिवृत्तौ (भ्वा०) धातोर्लोट् । छान्दसत्वात् णिनि तिष्ठादेशो न भवति । अन्यत्र लुड, लेट्, लिङ् चापि]

स्थन तिष्ठत ५ ८७ ६ भवत १२ ८३. गन्ति १ १०५ १५ [ष्ठा गतिनिवृत्तौ (भ्वा०) धातोर्लोटि छन्दसि तिष्ठादेशाऽभावे छान्दस रूपम्]

स्थपतये तिष्ठन्ति यस्मिन्निति स्थम्, तस्य पतये पालकाय (सेनापतये) १६ १६ [स्थ-पतिपदयो समास । स्थ —ष्ठा गतिनिवृत्तौ (भ्वा०) धातोर्घञर्थे क]

स्थविरम् स्थूलम् (वज्र =विद्युद्रूपम्) ४ २० ६. स्थूल वृद्ध वा (वृषभम्) ४ १८ १० प्रवृद्धम् (क्षत्रम्) १ ५४ ८ **स्थविरस्य**=विद्याविनयाभ्या वृद्धस्य (राज्ञ.) ६ ४७ ८ विद्यया वयसा वा वृद्धस्य (राजजनस्य) ६ १८ १२ **स्थविरः**=कृतज्ञो वृद्ध (सभेशो राजा) १ १७१ ५. वृद्धो विज्ञातराजधर्मव्यवहार (इन्द्र'=सेनापति) १७ ३७ [ष्ठा गतिनिवृत्तौ (भ्वा०) धातो 'अजिरशिशिरशिथिल०' उ० १ ५३ सूत्रेण किरच्प्रत्यये धातोर्वुक् ह्रस्वत्वञ्च निपात्यते]

स्थविरा स्थूला विस्तीर्णा (गी =वाणी) १ १८१ ७ [स्थविरमिति व्याख्यातम् । तत स्त्रिया टाप्]

स्थविरेभिः स्थूलै (वाजै =सङ्ग्रामै) ६ १ ११ विद्यावयोवृद्धै (जनै) ७ २४ ४ [स्थविरमिति व्याख्यातम् । ततो भिस ऐस् न भवति 'बहुल छन्दसि' सूत्रेण]

स्थशः तिष्ठन्तीति स्थास्तानि बहूनि इति स्थश (जन्मानि) प्र०—अत्र 'बह्वल्पार्था०' इति शस् २ ३८ ८ [ष्ठा गतिनिवृत्तौ (भ्वा०) धातो क्विप् । तत शस्]

स्थाणु वृक्ष, स० प्र० ६६, नि० ११८ [ष्ठा गतिनिवृत्तौ (भ्वा०) धातो 'स्थो णु' उ० ३.३७ सूत्रेण णु । स्थाणुस् तिष्ठते नि० ११८]

स्थातः यस्तिष्ठति तत्सम्बुद्धौ (इन्द्र=नृप) ६ ४१ ३ **स्थातारः**=ये तिष्ठन्ति ते (विद्वज्जना) ५ ८७ ६ **स्थातु**=स्थिरस्य स्थावरस्य (जगत) ४ ५३ ६ कृत-स्थिते (तिष्ठतो वृक्षाऽऽदे) १ ५८ ५ तिष्ठतो जगत १ ७० ४ अवरस्य (जगत) १ १५६ ३ **स्थातॄन्**=भूम्यादिस्थावरान् (लोकान्) १ ७२ ६ **स्थात्रे**=स्थिरस्य कारणस्य मध्ये, प्र०—अत्र षष्ठ्यर्थे चतुर्थी १.१६४.१५ [ष्ठा गतिनिवृत्तौ (भ्वा०) धातो कर्त्तरि तृच्]

स्थाताम् स्थावराणाम् (वनाना=पदार्थाना रश्मीना वा), प्र०—अत्र 'वाच्छन्दसि सर्वे विधयो भवन्ति, इति तुक् १ ७० २ [ष्ठा गतिनिवृत्तौ (भ्वा०) धातो कर्त्तरि क्विप् । 'वा छन्दसी' ति तुक्]

स्थातारा स्थातारौ (अध्यापकोपदेशकौ) १ १८१ ३ ष्ठा गतिनिवृत्तौ (भ्वा०) धातोस्तृजन्ताद् द्विवचनस्या-कारादेश.]

स्थातुः स्थावरसमूहम्, प्र०—अत्र ष्ठा-धातोस्तु प्रत्यय. 'सुपा सुलुक्०' इत्यम स्थाने सुश्च १ ६८ १ [ष्ठा गतिनिवृत्तौ (भ्वा०) धातोर्गेणा० तुर्बाहुलकात्]

स्थानम् तिष्ठन्ति यस्मिंस्तत् ५.३६ ४ स्थित्यर्थम् (स्थलम्) २ ८ [ष्ठा गतिनिवृत्तौ (भ्वा०) धातोरधिकरणे ल्युट्]

स्थारश्मानः स्थिरा रश्मान किरणा इव व्यवहारा येषा ते (विद्वासो राजजना) ५ ८७ ५ [स्था-रश्मानृपदयो समास । स्था=ष्ठा गतिनिवृत्तौ (भ्वा०)+क्विप् । रश्मन् रश्मिपर्यायश्छान्दस]

स्थालीभिः यासु पदार्थान् स्थापयन्ति पाचयन्ति वा ताभि. (पात्रविशेषाभि) १६ २७ **स्थालीः**=यासु पच्यन्ते-ऽन्नानि ता (पात्रविशेषा.) १६ ८६ [ष्ठा गतिनिवृत्तौ (भ्वा०) धातो 'स्थाचतिमृजेरालच्०' उ० १ ११६ सूत्रेण आलच् । तत स्त्रिया गौरादित्वात् ङीष् । पत्नी स्थाली तै० २ १ ६ १]

स्थाः स्थावरम् (जगत्) २ २८ ४ [स्था-स्थावर नि० ५ ३]

स्थिरधन्वने स्थिर दृढ धनुर्यस्य तस्मै (रुद्राय=शूरवीराय) ७ ४६ १ [स्थिर-धन्वनृपदयो समास । स्थिरधन्वने—दृढधन्वने नि० १० ६]

स्थिरपीतम् धर्मानुष्ठानेश्वरप्राप्तिरूप मोक्षफल पीत प्राप्त येन त विद्वांसम् ऋ० भू० ३१७, १० ७१ ५ दृढविद्यायुक्तम् (विद्वज्जनम्) प० वि० । [स्थिर-पीतपदयो समास । पीतम्=पा पाने (भ्वा०) धातो क्त]

स्थिरम् ध्रुवम् (रथ=यानम्) ३ ३५ ४ निश्चलम् (बलम्) १ १२७ ३ गमनरहितम् (यानम्), दृढ बलम् १ ३९.३. [ष्ठा गतिनिवृत्तौ (भ्वा०) धातो 'अजिर-शिशिरशिथिल०' उ० १ ५३ सूत्रेण किरच्प्रत्यये धातो-राकारलोप]

स्थिरः निश्चलप्रवृत्ति (इन्द्र =सभाद्यध्यक्ष) १ १०१ ४ स्वपरिधिस्थ (इन्द्र =सूर्य) २ ४१ १० निश्चल (अर्वा=विज्ञानयुक्त सुसन्तान) ११ ४४ **स्थिरैः**=दृढै (अङ्गै) २५ २१ [स्थिरमिति व्याख्यातम्]

स्थिरा निश्चला (जनी =मातर) प्र०—अत्रा-ऽऽकारादेश १ १६७ ७ निश्चलानि (दैव्यानि वस्तूनि) १३ १३ स्थिराणि दृढानि (शवासि=बलानि) ७ ५६ ७

चिर स्थातुमर्हाणि (आयुधा=आग्नेयादि—शतघ्न्यादीनि अस्त्र-शस्त्राणि), प्र०—अत्र 'शेश्छन्दसि०' इति लोप १ ३९ २ [स्थिरमिति व्याख्यातम् । तत शेर्लोपश्छन्दसि]

स्थिरा निश्चला (मति) १६ ५० **स्थिराः**=दृढा (नेमय=कलाचक्राणि) १ ३८ १२ [स्थिरमिति व्याख्यातम् । तत स्त्रिया टाप्]

स्थिरेभिः दृढै (अङ्गै=अवयवै) २ ३३ ९ [स्थिरप्राति० 'बहुल छन्दसी' ति भिस ऐस् न भवति]

स्थूणा स्तम्भ इव दृढा नीति ५.६२ ७ [ष्ठा गतिनिवृत्तौ (भ्वा०) धातो 'रास्नासास्नास्थूणावीणा' उ० ३ १५ सूत्रेण न । आकारस्य ऊ आदेशो निपातनात् । तत स्त्रिया टाप्]

स्थूणेव [स्थूणावत् ५ ४५ २ यथा धारक स्तम्भ १ ५९ १ स्थूणा-इवपदयो समास]

स्थूरम् स्थिरम् (रत्न=रमणीय धनम्) ६ १९ १० **स्थूरयो**=स्थूलयो (गभस्त्यो=बाह्वो) प्र०—अत्र वर्णव्यत्ययेन लस्य स्थाने र ६ २९ २ **स्थूराभ्याम्**=स्थूलाभ्याम् (पदार्थाभ्याम्), प्र०—अत्र कपिलकादित्वाल्लत्वविकल्प २५ ६ [ष्ठा गतिनिवृत्तौ (भ्वा०) धातो 'स्थ किच्च' उ० ५ ४ सूत्रेण ऊरन् । स्थूर समाश्रितमात्रो महान् भवति नि० ६ २२]

स्थूलगुदया स्थूलया गुदया सह २५ ७ [स्थूलागुदापदयो समास । स्थूल स्थूरेण व्याख्यातम्]

स्थूलपृषती स्थूलानि पृषन्ति यस्या सा (भा०—चन्द्रादिगुणयुक्ता पशू) २४ २ [स्थूल-पृषत्पदयो समास । स्त्रिया ङीप् । स्थूल स्थूरेण व्याख्यातम् । पृषत्—पृषु सेचने (भ्वा०) धातो 'वर्त्तमाने पृषद्बृहत्०' २ ८४ सूत्रेणाति शतृवच्च]

स्थूलम् महत् कर्म्म २३ २८ [स्थूलमिति स्थूरेण व्याख्यातम्]

स्नातः कृतस्नान (मनुष्य) २० २० स्नानविधि को किया हुआ (ब्रह्मचारी) स० वि० ७९, अथर्व० ११ ५ २६ [ष्णा शौचे (अदा०) धातो क्त]

स्नात स्नान कुरुत १ १०४ ३ [ष्णा शौचे (अदा०) धातोर्लट् । स्नाते शुद्धचर्यस्य नि० १२ २६]

स्नाती शुद्धा (उषा) ५ ८० ५ [ष्णा शौचे (अदा०) धातो शत्रन्तात् ङीप्]

स्नावभ्यः स्थूलनाडीभ्य, सूक्ष्माभ्य सिराभ्यो वा ३९ १० [ष्णा शौचे (अदा०) धातो 'स्नामदिपद्यर्त्ति०' उ० ४.११३ सूत्रेण वनिप्]

स्नीहितीषु स्नेहकारिणीषु (कृष्टिषु=मनुष्यादिप्रजासु) १ ७४ १ [ष्णिह प्रीतौ (दिवा०) धातो क्तिन् । धातोर्दीर्घश्छान्दस]

स्नुना व्याप्तेन (सहसा=बलेन) ४ २८ २ **स्नुभिः**=इच्छावद्भि (मनुष्यै) ५ ६० ७ पवित्रैर्गुणै ५ ८७ ४ **स्नुषु**=प्रान्तेषु १७ १४ **स्नोः**=प्रकाशमानात् पुरुषार्थात् ४ २७ ४. [ष्णा शौचे (अदा०) धातोर्बाहु० औणा० कु]

स्पट् स्पष्टा (राजा) ५ ५९ १ [स्पश बाधनस्पर्शनयो (भ्वा०) धातो क्विप् कर्त्तरि]

स्पन्दने किञ्चिच्चलने ३ ५३ १९ [स्पदि किञ्चिच्चलने (भ्वा०) धातोर्ल्युट्]

स्पन्द्रा प्रचलितौ (अश्विनौ=स्त्रीपुरुषौ) १ १८० ९ [स्पदि किञ्चिच्चलने (भ्वा०) धातोरौणा० रक् । ततो द्विवचनस्याकारादेश]

स्परत् प्रीणयेत्, प्र०—अत्र लड्यडभाव १ ११९ ५ [स्पृ प्रीतिपालनयो (स्वा०) धातोर्लङ् । व्यत्ययेन शप् । अडभावश्च]

स्पर्द्धन्ते परोत्कर्ष न सहन्ते ६ १४ ३ [स्पर्द्ध सघर्षे (भ्वा०) धातोर्लट्]

स्पर्द्धमाना ईर्ष्यन्ती (सेना) १७ ४७ [स्पर्द्ध सघर्षे (भ्वा०) धातो शानजन्तात् स्त्रिया टाप्]

स्पर्द्धमानाः ईर्ष्यका (अयज्वानो जना) १ ३३ ५ [स्पर्द्ध सघर्षे (भ्वा०) धातो शानच्]

स्पशम् बन्धकम् (सूर्यम्) ४ १३ ३ दूतम् ३३ ६० **स्पशः**=स्पर्शकान् (शुभगुणान्) ४ ४ ३ अविद्यान्धकार बाधमाना विद्याप्रकाश स्पर्शन्त (देवास=आप्ता विद्वज्जना) ६ ६७ ५ स्पर्शवन्त पदार्था १ २५ १३ बाधनानि १३ ११ [स्पश बाधनस्पर्शनयो (भ्वा०) धातो रच् । औणा० वा अन्]

स्पार्हम् स्पृहा वाञ्छा तस्या इदम् १ ३१ १४ [स्पृहाप्राति० 'तस्येदम्' इत्यर्थेऽण् । स्पृहा=स्पृह ईप्सायाम् (चुरा०) धातो स्त्रियामङ् । ततष्टाप्]

स्पार्हराधाः स्पार्हं स्पृहणीय राधो धन यस्य स (राजा) ४ १९ १६ [स्पार्ह-राधस्पदयो समास । स्पार्हमिति व्याख्यातम् । राधस् धननाम निघ० २ १०]

स्पार्हवीरम् स्पार्हा अभिकाङ्क्षिता वीरा यस्मिन् तम् (रयिं=श्रियम्) ५ ५४ १४ [स्पार्ह-वीरपदयो

समास । स्पार्ह इति व्याख्यातम्]

स्पार्हः स्पर्हणीय (विद्वज्जन) ४ ४ ७ १ स्पृहणीय (अग्नि =विद्वज्जन) ४ १ १२. य स्पृहयन्ति तस्याऽयम् (देव =दिव्यगुणमम्पन्नो मनुष्य) २७ ३० **स्पार्हे**= अभीप्सनीये (वर्णे=शुक्लादिगुणे) २ १.१२ [स्पृहा-प्राति० 'तस्येदम्' इत्यर्थेऽण् । स्पृहा—स्पृह ईप्सायाम् (चुरा०) धातो स्त्रियामङ् । तनष्टाप् । स्पार्हा—स्पृहणीयानि नि० ३ ११]

स्पार्हा ईप्सितव्यानि (वस्त्रादीनि) १ १३५.२ अभिकाङ्क्षितु योग्यानि (जनिमानि =जन्मानि) ४ १ ७ स्पर्हणीयानि (कर्माणि) ४ १ ६ स्पृहणीयानि (वस्तूनि) १ १२३ ६ स्पृहणीया (श्रिय) ७ १५ ५ अभिकाङ्क्षितु-मर्हेण (शिक्षकेण) २ २३ ९ [स्पार्हप्राति० शेर्लोप-श्छन्दसि । स्पार्हमिति व्याख्यातम् । स्पार्हा स्पृहणीयानि नि० ३ ११]

स्पूर्धन् स्पर्द्धमाना (शत्रुवद् दुर्जना) ६.६७ ९. [स्पर्द्ध सघर्षे (भ्वा०) धातो शतृ । वर्णव्यत्ययेनाकारस्यो-कारादेश]

स्पूर्धसे स्पर्धायै ५ ६४ ४ [स्पर्द्ध सघर्षे (भ्वा०) धातोरौणा० असुन् । वर्णव्यत्ययेनाकारस्योकारादेश]

स्पृणवाम अभीच्छेम ५ ४४ १० [स्पृ प्रीतिसेवनयो (स्वा०) धातोर्लेट्]

स्पृतम् सेवितम् (चतुष्पात्=गवादिकम्) १४ २५. प्रीतम् (क्षत्र=राज्यकुलम्) १४ २४ **स्पृताः**=प्रीति-मन्त (सज्जना) १४ २५ प्रीता. (प्रजा) १४ २६ [स्पृ प्रीतिसेवनयो (स्वा०) धातो. क्त]

स्पृत्वा अभिव्याप्य ३ १ १ [स्पृ प्रीतिसेवनयो (स्वा०) धातो क्त्वा]

स्पृधः स्पर्द्धमाना ईर्ष्यायुक्ता शत्रुसेना ३३ ६६ स्पर्द्धन्ते येषु तान् (सङ्ग्रामान्) ६.२० ९ स्पर्द्धन्ते यासु ता सङ्ग्रामसेना ६ ५ ६ अरिसेना. ३३ ६७ या स्पर्द्धन्ते ता शत्रुसेना १ ९ ७१ या स्पर्धयन्ते ता (सेना) सङ्ग्रामा वा ५ ५५ ६ स्पर्हणीयान् सङ्ग्रामान् ६ ४५ १८. स्पर्धमानान् शत्रून् १ ८ ३ [स्पृध सङग्रामनाम निघ० २ १७. स्पर्द्ध सघर्षे (भ्वा०) धातो क्विप् । 'बहुल छन्दसि' अ० ६ १ ३४ इति सम्प्रसारणमल्लोपश्च]

स्पृधानम् स्पर्द्धमानम् (ज्योति =प्रकाशम्) ३ ३१ ४ [स्पर्द्ध सघर्षे (भ्वा०) धातो शानच् । 'बहुल छन्दसी' ति शपो लुक् । धातो सम्प्रसारणमपि 'बहुल छन्दसि' अ० ६.१.३४ इति सूत्रेण । अल्लोपश्च छान्दस]

स्पृधि अभिकाङ्क्ष ५ ३ ९. [स्पृ प्रीतिपालनयो (स्वा०) धातोर्लोट् । 'बहुल छन्दसी' ति विकरणस्य लुक्]

स्पृश अनुगतो भव १३ १० गृहाण ४ ३.१५ **स्पृशन्ति**=आलिङ्गयन्ति १ ६७ ११ सम्बध्नन्ति १ ३६ ३ [स्पृश संस्पर्शने (तुदा०) धातोर्लोट् । अन्यत्र लट्]

स्पृहयद्वर्णः स्पृहयन् वर्णो यस्य स (अग्नि = पावक) २.१० ५ य स्पृहयद्भिर्वर्ण्यते स्वीक्रियते स (अग्नि =शरीरस्था) विद्युत् ११ २४ [स्पृहयन्= वर्णपदयो. समास । स्पृहयत्=स्पृह ईप्सायाम् (चुरा०) धातो शतृ]

स्पृहयाय्यः स्पृहणीय (रयि =धनम्) ७ ४ ६ [स्पृह ईप्सायाम् (चुरा०) धातो 'स्पृहिगृहि०' अ० ३ २ १५८ सूत्रेणालुच्]

स्पृहयाय्याणि स्पृहणीयानि (वसूनि) ६ ७ ३. [स्पृह ईप्सायाम् (चुरा०) धातो 'श्रुदक्षिस्पृहिगृहिभ्य आय्य' उ० ३ ९६ सूत्रेण आय्य]

स्पृहयेत् ईप्सेत आप्तुमिच्छेत् १ ४१.९. [स्पृह ईप्सायाम् (चुरा०) धातोर्लिङ् । कथादिष्वदन्तत्वादल्लोपस्य स्थानिवद्भावेन वृद्धिगुणयोरभाव]

स्फरीः अवृद्ध मा कुर्या ६ ६१ १४ [स्फर स्फुरणे (अदा०) धातोर्लुङ् । अटोऽभाव]

स्फातिम् वृद्धिम् १ १८८ ९ [स्फायी वृद्धौ (भ्वा०) धातो स्त्रिया क्तिन्]

स्फिग्या मध्यस्थाऽवयवरूपया (पृथिव्या) ३ ३२ ११

स्फुर पुरुषार्थय ४ ३.१४ **स्फुरत्**=सञ्चालयेत् १ ८४ ८ [स्फुर सचलने (तुदा०) धातोर्लोट् । अन्यत्र लेट् । स्फुरत्—अवस्फुरिष्यति नि० ५ १७]

स्फुरान् स्फूर्तिमत (केतू किरणान्वा) ६ ६७ ११ [स्फुर सचलने (तुदा०) धातोर्घञर्थे क । ततो मत्वर्थीयस्य लुक्]

स्म स्मा एव ४ १० ७. आश्चर्यगुणप्रकाशे १ १०२ ३ हर्षे १ १०२ ५ आनन्दे १ १०४ ५ अतीतार्थे क्रियायोगे १ २८ ६ प्रकारार्थे १ १२ ५ स्पष्टार्थे १ १२ ८ प्रसिद्धौ, प्र०—अत्र 'निपातस्य च' इति दीर्घ षत्वञ्च छान्दस दृश्यते ३३ ६४ वर्त्तमाने ३ ४६ सुखार्थे १.१५ १० खलु, प्र०—अत्रा'ऽविहितलक्षणो मूर्धन्य सुषामादिषु द्रष्टव्य' अ० ८ ३ ५३ इति वार्त्तिकेन मूर्धन्यादेश १ ३७.१५

स्मत् एव ५ ८७ ८ श्रेष्ठार्थे १ ५१ १५ प्रशंसायाम् १ १८६ ६ तत्कर्मानुष्ठानोक्तम् १ १०० १३

स्मदूध्नी वहुदुग्धप्रापिका (गाव) प्र०—अत्र स्मदुपपदाद् ऊधसोऽनङ् १ ७३ ६ [स्मद्-ऊधस्पदयो समासे समासान्तोऽनङ् 'ऊधसोऽनङ्' सूत्रेण। तत स्त्रिया ङीप्]

स्मद्दिष्टय: निश्चिता दिष्टयो दर्शनानि येषान्ते (विद्वासो जना) ७ १८ २३ **स्मद्दिष्टि:**=कल्याणोपदेष्टा (इन्द्र=सम्राट्) ३ ४५ ५ **स्मद्दिष्टीन्**=प्रशसितदर्शनान् (जनान्) ६ ६३ ६ [स्मद्-दिष्टिपदयो समास। दिष्टि= दिश अतिसर्जने (तुदा०) धातो स्त्रिया क्तिन्। धातूनामनेकार्थकत्वादत्र दिश दर्शनेऽर्थे]

स्मयते आनन्दयति, प्र०—अत्रान्तर्गतो ण्यर्थ १ ६२ ६ **स्मयन्त**=ईपद्धसन्ति १ १६८ ८ **स्मयेते**= ईपद्धसत ३ ४ ६ [स्मिङ् ईपद्धसने (भ्वा०) धातोर्लट्। अन्यत्र लङ्। अडभावश्छान्दस]

स्मयमान: किञ्चिद्धसन्निव (प्रवक्तृजन) २ ४ ६ [स्मिङ् ईषद्हसने (भ्वा०) धातो शानच्]

स्मयमानाभि: किञ्चिद्धासकारिकाभि (कन्याभि) १ ७९ २ [स्मिङ् ईपद्हसने (भ्वा०)+शानच्+टाप्+ भिस्]

स्मयमानास: किञ्चिद् हासेन प्रसन्नताकारिण्य (योपा=स्त्रिय) १७ ६६ किञ्चिद्धसन्त्यो मितहासा (योपा) ४ ५८.८ [स्मयमानेति व्याख्यातम्। ततो जसो ऽसुक्]

स्मर पर्यालोचय, भा०—परमेश्वरस्याऽऽज्ञापालनमुपासनञ्च कुरु ४० १५ [स्मृ चिन्तायाम् (भ्वा०) धातोर्लोट्]

स्मरकारीम् या स्मर काम करोति ता दूतिकाम् ३० ६ [स्मरोपपदे डुकृञ् करणे (तना०) धातो 'कर्मण्यण्' इत्यण्। तत स्त्रिया ङीन्। स्मर=स्मृ आध्याने (भ्वा०)+भावेऽप्]

स्मसि स्म १ ५७ ५ भवेम १ ३७ १५ भवाम १ २६ १ [अस भुवि (अदा०) धातोर्लटि उत्तमे वहुवचनम्। 'इदन्तो मसि' इति मस इदन्तत्वम्]

स्य अन्त प्रापय ४ १६ २ **स्यतम्**=तनूकुरुतम् ६ ७४ ३ **स्यताम्**=अन्ते भवताम् २ ४० ४ **स्यतु**= प्राप्नोतु १ १४२ १० विमुञ्चत २७ २० **स्यन्ति**=कार्याणि समापयति १ ८५ ५ **स्यस्व**=विद्या पारङ्गमय ७ २ ६ अन्त कुरु ३ ४ ६ प्राप्नुहि १ १० १ १० [पोऽन्त कर्मणि (दिवा०) धातोर्लोट्। अन्यत्र लङपि। स्यस्व-प्रयोगे व्यत्ययेनात्मनेपदम्]

स्यन्दताम् प्रस्रवन्तु ५ ८३ ८. [स्यन्दू प्रस्रवणे (भ्वा०) धातोर्लोट् स्यन्दते गतिकर्मा निघ० २ १४]

स्यन्दमानाभ्य: परिस्रुताभ्य: (अद्भ्य=जलेभ्य) २२ २५ **स्यन्दमाना:**=प्रस्रवन्त्य (आप=जलानि) १ ३२ २ [स्यन्दू प्रस्रवणे (भ्वा०) धातो शानच्। तत स्त्रिया टाप्]

स्यन्दयध्यै स्यन्दयितु प्रस्रावयितुम् ४ २२ ७ [स्यन्दू प्रस्रवणे (भ्वा०) धातोर्णिजन्तात् तुमर्थेऽध्यै]

स्यन्द्र: प्रस्रावक (तायु=स्तेन) ६ १२ ५ **स्यन्द्रा:**=धैर्यगतय (नर=नायका जना) ५ ५२ ८ [स्यन्दू प्रस्रवणे (भ्वा०) धातोर्वाहु० औणा० रक्]

स्यन्द्रास: किञ्चिच्चेष्टमाना (पुरुषार्थिजना) ५ ५२ ३ प्रस्रवन्त प्रस्रावयन्तो वा (अग्नय=पावका) ५ ८७ ३ [स्यन्द्र इति व्याख्यातम्। ततो जसोऽसुक्। स्यन्द्रास वलनाम निघ० २ ६]

स्यन्ना: आशुगमना (एन्य=नद्य) ५ ५३ ७ [स्यन्दू प्रस्रवणे (भ्वा०) धातो क्त। तत स्त्रिया टाप्]

स्य असौ, प्र०—अत्र 'स्यश्छन्दसि वहुलम्' इति सोर्लोप ६ १४ [त्यद् सर्वनाम्न. सौ रूपम्। सोर्लोपश्छन्दसि]

स्यात् भवेत् ७ ३४ २१ **स्यात**=भवेयु १ १ **स्याम्**=भवेयम् ६.५० ६ **स्याम**=भवेम १ ४ ६ होवे, स० वि० १५६, ७ ४१ ५ प्रवृत्ता भवेम ५ ६५ ५ **स्या:**= भवेत् ४ १६ १८ भवे ७ १ ८ भूया ६ ३३ ५ [अस भुवि (अदा०) धातोर्लिङ्]

स्यातन भवेत १ ३८ ४ [अस भुवि (अदा०) धातोर्लिङ्। तस्य तनवादेशश्छान्दस]

स्यामि प्रविशामि १२ ६५ [पोऽन्त कर्मणि (दिवा०) धातोर्लट्। धातूनामनेकार्थकत्वादत्र प्रवेशनेऽपि]

स्यालात् स्वस्त्रीभ्रातु १ १०६ २. [स्याल आमन्त्र सयोगेनेति नैदाना। स्याल्लाजानावपतीति वा नि० ६ ६]

स्यूतम् विविधसाधनै कारुभिर्निष्पादितम् (नर= विनयाभियुक्त मनुष्यम्) १ ३१ १५ [षिवु तन्तुसन्ताने (दिवा०) धातो क्त। 'च्छ्वो शूडनुनासिके च' ति वकारस्य ऊठ्]

स्यूमगभस्ति: समूहकिरण (सूर=सूर्य) १ १२२ १५ [स्यूम-गभस्तिपदयो समास]

२ ३२ ७. [सु-अङ्गुरिपदयो समास]

स्वजन्मना स्वस्य जन्मना ७ १ १२ [स्व-जन्मन्-पदयो समास'']

स्वजाम् स्वात्मजनिताम् (मेना=वाचम्) १ १२१.२ **स्वजा:**=स्वस्मत्कारणाज्जाता (धूतय =मनुष्या) १ १६८ २ [स्वोपपदे जनी प्रादुर्भावे (दिवा०) धातोर्ड. । तत स्त्रिया टाप्]

स्वजेन्यम् स्वेन जेतु योग्यम् (व्यवहारम्) ५ ७ ५ [स्व-जेन्यपदयो समास । जेन्यम्—जि जये (भ्वा०) धातोर्यत् । नुगागमश्छान्दस]

स्वञ्चम् य सुष्ठ्वञ्चति जानाति प्रापयति वा तम् (परमात्मानम्) ६.१५ १०. सुष्ठ्वञ्चन्त प्राप्तशरीरात्मवलेन युक्तम् (युवान जनम्) ६ ५८.४ **स्वञ्च:**=ये सुष्ठ्वञ्चन्ति गच्छन्ति ते (मरुत =वलिष्ठा मनुष्या) ७ ५६ १६ याभि सुष्ठ्वञ्चन्ति गच्छन्ति प्राप्नुवन्ति वा ते (हरित =अङ्गुलय) ४ ६ ६ [सु+अञ्चु गतिपूजनयो (भ्वा०) धातो कर्त्तरि क्विप् । 'ऋत्विग्दधृक्०' इत्यादिना वा क्विन्]

स्वञ्चा: य सुष्ठ्वञ्चति स (शिल्पिजन) ५ ३७.१. [सूपपदे अञ्चु गतिपूजनयो (भ्वा०)धातोरसुन् । स्वञ्चा — स्वञ्चा सु अञ्चन । नि० ५.७]

स्वतवद्भ्य: स्वतो वासो येपान्तेभ्य (मरुद्भ्य = मनुष्येभ्य) २४ १६ **स्वतवान्**=स्वैर्गुणैर्वृद्ध. (इन्द्र = राजा) ४ २० ६ य स्वान् तौति वर्धयति स (गृहस्थो जन), प्र०—अत्र तु-धातोरौणादिक आनि प्रत्यय १७ ८५ स्वेन प्रवृद्ध (पायु =रक्षको राजा) ४ २ ६ [स्वोपपदे तु गति वृद्धिहिसासु (अदा०) धातोर्बाहु० औणा० आनि]

स्वतवस: स्वकीयवलयुक्ता (धूतय =मनुष्या) १ १६८ २ स्व स्वकीय तवो वल येपा ते (विद्वज्जना) १ १६६ २ स्वकीयवला (मरुत =विद्वज्जना) ७ ५६ ११ **स्वतव** =स्वकीय तवो वल यस्य तत्सम्बुद्धौ (इन्द्र= गृहस्थिजन) ६ २२ ६ [स्व-तवस्पदयो समास । तव वलनाम निघ० २ ६]

स्वतव: स्व स्वकीय तवो वल यस्मिँस्तत् (मन) १ १५६ २ [स्व-तवस्पदयो समास । तव वलनाम निघ० २ ६]

स्वद आस्वादय ३ १४ ७ **स्वदतु**=आभुनक्तु ६ १ आस्वादयतु ३० १ स्वदता स्वादिष्ठा करोतु प्र०—अत्र व्यत्ययेन परस्मैपदम् ११.७. **स्वदन्ताम्**=भुञ्जताम् ६ ७ **स्वदन्ति**=सुस्वादमदन्ति ७ २ २ **स्वदन्तु**=प्राप्नुवन्तु २६ ३५ सुष्ठु सेवन्ताम्, अ०—सुसेवन्ताम् ४ १२. स्वदस्व भुङ्क्ष्व ३.५४ २२ **स्वदाति**=आस्वदेत्, प्र०—अत्र लेटि व्यत्ययेन परस्मैपदम् २० ४५ [ष्वद आस्वादने (भ्वा०) धातोर्लोट् । व्यत्ययेन परस्मैपदम् । अन्यत्र लट् लेट् लोट् चापि । स्वदति अर्चतिकर्मा । निघ० ३ १४]

स्वदन्त: सुष्ठु भुञ्जाना (मर्त्तास =मनुष्या) २.१ १४ [ष्वद आस्वादने (भ्वा०) धातो शतृ । व्यत्ययेन परस्मैपदम्]

स्वदय आस्वादय २६ २६ [ष्वद आस्वादने (चुरा०) धातोर्लोट्]

स्वदितानि आस्वादितानि (हव्या=अत्तुमर्हाणि वस्तूनि २६ १० [ष्वद आस्वादने (भ्वा०) धातो क्त]

स्वधया स्वकीयया धृतया प्रज्ञया ४ ५८ ४ अन्नादिना ८ ६१. स्वस्वरूपधारणया क्रियया १ १५४ ४ अन्नादिपदार्थयुक्तया पृथिव्या सह ४ १३ ५ स्वकीयया गत्या ४ १४ ५ अन्नविद्यया, शरीरबुद्धिवलधारणेन ऋ० भू० २६२, १६.६० अमृतरूपया सेवया ऋ० भू० २५४, २ ३४. स्वकीयपदार्थधारणक्रियया १६ ६० जलेनान्नेन वा ३ ४ ७ उदकेनाऽन्नेन वा १ १०८ १२ अपने ही अन्नादि पदार्थ के धारण से स० वि० १४३, अथर्व० १२ ५ ३ **स्वधा**=या स्व दधाति सा (स्त्री) ५.३४ १ अमृतात्मकमन्नम् २ ७ स्वान् दधाति यया सा क्रिया, स्वेन धारिता सेवा वा १६ ३६ ये स्व दधति ते (मनुष्या), प्र०—अत्र विभक्तिलोप ३३ ७४. अपना ही धारण स० वि० १६७ ६ ११३ १० **स्वधाभि:**=स्वय धारितै पदार्थै १.११३ १३ द्यावापृथिवीभि १ ६५ ४ **स्वधाम्**= स्वकीया धारणशक्तिम् १ ८८ ६ सूदकम् २ ३५ ७ **स्वधायै**=स्ववस्तुधारणलक्षणायै राजनीत्यै १० २१ मोक्षविद्याप्राप्तये ऋ० भू० २५८, १६ ४५ अन्नाय, पृथिवीराज्याय, न्यायप्रकाशाय वा २ ३२ **स्वधा:**=उदकानि १ १४४ २ ये स्वयमेव दधते ते (पुत्रादय) २ ३४ [स्वोपपदे डुधाञ् धारणपोपणयो (जु०) धातो क्विप् सम्पदादित्वात् । अथवा ष्वद आस्वादने (भ्वा०) धातोर्बाहु० औणा० आ प्रत्यय । धातोर्दस्य ध । स्वधा अन्ननाम निघ० २ ७ । उदकनाम निघ० १ १२ द्यावापृथिव्योर्नाम निघ० ३ ३० स्वधा—स्वधा वै पितृणामन्नम् श० १३ ८ १ ४ स्वधा वै शरद् । श० १३ ८ १ ४]

स्वधर्मन् स्वस्य वैदिके धर्मणि ३ २१ २ [स्व-धर्मन्

अभिमृशे अभिमृशे=अभिसहे २ १० ५ [अभि+मृष तितिक्षायाम् (दिवा०) धातोर्लट् व्यत्ययेन शप्। षकारस्य शकारश्छान्दस]

अभिमित्रम् अभिमुख सखायमिव ७ १८ १० [अभि-मित्रयो समास]

अभियन्तु प्राप्नुवन्तु १२ ६६ [अभि+या प्रापणे (अदा०) धातोर्लोट्]

अभियासिषत् सम्मुख यातुमिच्छतु १ १७४ ५ [अभि+या प्रापणे (अदा०) धातोरिच्छायामर्थे सन्। ततो द्वित्वाऽभावो लेट् च]

अभियुग्वना योऽभियुज्यते वन्यते विभज्यते तेन (रथेन) ६ ४५ १५ [अभि+युजिर् योगे (रुधा०) धातो 'अन्येभ्योऽपि दृश्यन्ते' इति क्वनिप्]

अभियुग्वा योऽभियुङ्क्ते स, भा०—सयुक्त (मरण प्राप्तो जीव) ३९ ७ [अभि+युजिर् योगे (रुधा०) धातो क्वनिप्]

अभियुजः या आभिमुख्येन युज्यन्ते ता प्रजा ३ ११ ६ योऽभियुङ्क्ते तस्य (तन्यतो =विद्युत) ४ ३८ ८ या आभिमुख्येन युञ्जते ता शत्रुसेना ५ ४५ या अभियुञ्जते ता (विश =प्रजा) ६ २५ २ [अभि+युजिर् योगे (रुधा०) धातो 'सत्सूद्विष०' अ० ३ २ ६१ सूत्रेण क्विप्]

अभियुध्य अभिमुख युध्यस्व, प्र०—अत्र व्यत्ययेन परस्मैपदम् १ ९१ २३ आभिमुख्येन योधय गमय, प्र०—अत्र अन्तर्भाविण्यर्थ युध्यतिर्गतिकर्मा निघ० २ १४, ३४ २३ [अभि+युध सम्प्रहारे (दिवा०) धातोर्लोट् व्यत्ययेन परस्मैपदम्]

अभियोधिष्टम् अभिमुख युध्येयाताम् ६ ६० २ [अभि+युध सम्प्रहारे (दिवा०) धातोर्लुङ् अडभावश्च]

अभिरक्षति सब ओर से रक्षा करता है ३३ ३०

अभिरक्षन्ति=सर्वत पालयन्ति १ १६३ ५ [अभि+रक्ष पालने (भ्वा०) धातोर्लट्]

अभिरुरुहुः अभिवर्धन्ते ५ ७ ५ [अभि+रुह बीजजन्मनि प्रादुर्भावे च धातोर्लिट्]

अभिवक्षसि आभिमुख्येन वदसि ३ १५ ५ [अभि+वच परिभाषणे (अदा०) धातोर्लेट् 'सिब्बहुल लेटि' इति सिप्]

अभिवक्षि प्रापय ६ २१ १२ [अभि+वह प्रापणे (भ्वा०) धातोर्लुङि उत्तमैकवचने रुपम् अडभावो पुरुषव्यत्ययश्च]

अभिवदति दूसरे के साथ सवाद या दूसरे को अभिवादन करता है स० वि० २०९ अथ० ६ ६ १.४ [अभि+वद व्यक्तायां वाचि (भ्वा०) धातोर्लट्। वदति गतिकर्मा निघ० २ १४]

अभिवर्षतु अभिमुख वर्षतु ३९ १० सब ओर से बरसे आर्याभि० २ २२, ३९ १० [अभि+वृषु सेचने (भ्वा०) धातोर्लट्]

अभिववक्षे अभिसहन्ति, प्र०—अत्र 'वक्ष सङ्घाते' इत्यस्य प्रयोग १ १४९ २ [अभि+वक्ष रोषे सङ्घाते इत्येके (भ्वा०) धातोर्लिट्। व्यत्ययेन परस्मैपदम्]

अभिवव्रे अभिमुख वृणोति ४ १ १३ [अभि+वृञ् वरणे (स्वा०) धातोर्लिट्]

अभिवष्टि अभित कामयते ४ १ ८ [अभि+वश कान्तौ (अदा०) धातोर्लट्। वष्टि कान्तिकर्मा निघ० २ ६]

अभिवहन्ति प्रापयन्ति १ ११८ ४ [अभि+वह प्रापणे (भ्वा०) धातोर्लट्]

अभिवावशाना अभिमुख भृश कामयमाना (गौ = पृथिवी) १ १६४ २८ [अभि+वश कान्तौ (अदा०) धातो 'लिट कानज्वा' अ० ३ २ १०६ सूत्रेण कानच् वावशान पदनाम निघ० ४ २]

अभिवावशे अभिमुख भृश कामयते २ १४ ९ [अभि+वश कान्तौ (अदा०) धातोर्यङ्लुक् व्यत्ययेनात्मनेपदम्]

अभिवाहि आभिमुख्येन प्राप्नुहि १८ ४५ [अभि+वा गतिगन्धनयो (अदा०) धातोर्लोट्]

अभिविक्त सर्वतो विजानीत २५ ३७ सर्वतो विञ्ज्यात् पृथक् कुर्यात् १ १६२ १५ [अभि+विजिर् पृथक् भावे (रुधा०) धातोर्लुङ् अडभावश्च]

अभिविख्येषम् अभित सर्वतो विविध पश्येयम्, प्र०—अत्राऽभिव्योरुपपदे चक्षिङ् इत्यस्याऽऽशीर्लिङ्यार्धधातुकसंज्ञामाश्रित्य ख्याञ्-आदेश, 'लिङ्याशिष्यङ्' इत्यङ्, सार्वधातुकसंज्ञामाश्रित्य च या इत्यस्य इय्-आदेश, सकारलोपाऽभाव इति १ ११]

अभिविद्यौत् अभिविद्योतयेत् ४ ४ ६ [अभि+वि+द्युत दीप्तौ (भ्वा०) धातोर्लुङ्। अडभाव। 'द्युद्भ्यो लुङि' इति परस्मैपदम्। च्लेर्लुक् च]

अभिविनश्यति सर्वतोऽदृष्ट भवति १ १७० १ [अभि+वि+णश अदर्शने (दिवा०) धातोर्लट्]

सुलुक्०' सूत्रेण जस. स्थान आकारादेश । अन्यत्र प्रथमा-द्विवचनस्याकार]

स्वध्वरासः सुष्ठ्वध्वरा क्रियायोगसिद्धयो येभ्यस्ते (अग्नय =पावका) ४ ४५ ५ [सु-अध्वरपदयो समासे जसोऽसुक्]

स्वनः शब्द १ १४३ ५ [स्वन शब्दे (भ्वा०) धातो 'स्वनहसोर्वा' इत्यप् । स्वनः वाङ्नाम निघ० १ ११.]

स्वनयेन स्वस्य नयन यस्य दातुरतेन (दातृजनेन) १.१२६.३. [स्व-नयपदयो समास । नय.—णीञ् प्रापणे (भ्वा०) धातो 'एरच्' इत्यच्]

स्वनीक शोभनमनीक सेना यस्य तत्सम्बुद्धौ (सेनापते) २ १ ८. उत्तमसैन्य (अग्ने=राजन्) ४ ६.६. शोभनान्य-नीकानि सैन्यानि यस्य तत्सम्बुद्धौ (अग्ने=विद्वआर्जन्) ६ १५ १६ [सु-अनीकपदयो' समास । अनीकम्=अन प्राणने (अदा०) धातो 'अनिहृपिभ्या किच्च' उ० ४ १७ सूत्रेण ईकन्]

स्वप शेध्व ७.५५ २ [ञिष्वप् शये (अदा०) धातो-र्लोट् । 'वहुल छन्दसी' ति शपो लुङ् न]

स्वपतः शयन प्राप्तस्य (लोकस्य=जीवस्य) ३४ ५५. **स्वपते**=प्राप्तसुषुप्तये (जनाय) २२ ७ **स्वपन्**=शयान. सन् (भा०—उत्तमपुरुप) ५.४४.१३ [ञिष्वप् शये (अदा०) धातो' शतृ]

स्वपत्यम् सुष्ठ्वपत्ययुक्तम् (रयिं=श्रियम्) २ ४ ८ शोभनान्यपत्यानि सन्ताना यस्मात्तम् (रयिम्) ७ १ ५. शोभन सन्तानम् १ ११६ १९ **स्वपत्यस्य**=शोभनान्य-पत्यानि विद्यार्थिनो वा यस्य तस्य (शिक्षो =शिक्षकजनस्य) ३.१९.३ शोभनापत्यसहितस्य (राय =धनस्य) २ २ १२. **स्वपत्यानि**=शोभनानि च तान्यपत्यानि २७.२३ शोभन-शिक्षायुक्तान् पुत्रादीन् १ ७२ ६. सुष्ठु शिक्षयोत्तमानि चाऽपत्यानि च तानि ४ ३४ ६ **स्वपत्ये**=स्वकीये सन्ताने ३ ३.७ [सु-अपत्यपदयो. समास । अपत्यम् अपत्यनाम निघ० २ २. अपत्य कस्मात् ? अपतत भवति । नानेन पततीति वा नि० ३.१]

स्वपत्यै शोभनान्यपत्यानि यस्या तस्यै (इगे=अन्न-रूपायै राज्यलक्ष्म्यै) १ ५४ ११. [सु-अपत्यपदयो समासे स्त्रिया टापि चतुर्थ्येकवचने छान्दस रूपम्]

स्वपनम् निद्राम् ३० १७ [ञिष्वप् शये (अदा०) धातोर्ल्युट्]

स्वपसः शोभनानि धर्म्याणि कर्माणि येषान्ते (विद्वज्जना) १ १६१ ६ सुष्ठ्वपो धर्म्यं कर्म कुर्वाणाः (विद्वज्जना) ४ २ १९ सुष्ठ्वपासि कर्माणि येभ्यस्ते (पितर.) १.१५९ ३ **स्वपसा**=सुष्ठु कर्मणा २५ ३ **स्वपाः**=शोभनानि धर्म्याण्यपासि कर्माणि यस्य स (विद्वज्जन) १.१३०.६. सत्यभापणादिकर्मा (योगिजन.) ५ २९ १५. शोभनान्यपासि कर्माणि यस्य तद्वन् (अग्ने= सभापते राजन्) ८ ३८. सुष्ठुकर्मा (विद्वज्जन) ५ २ १० श्रेष्ठकर्मानुष्ठान' (पिता) ५ ६० ५ [सु-अपसृपदयो. समास । अप कर्मनाम निघ० २ १ स्वपस. सुकर्माणः नि० ८.१३]

स्वपस्तमम् अतिशयेन शोभनान्यपासि कर्माणि यस्मात्तम् (वज्र =किरणसमूहम्) १ ६१ ६ **स्वपस्तमः**= शोभनान्यपासि कर्माणि यस्य सोऽतिशयित. (राजसन्तानः) ४.१७ ४. [स्वपम् इति व्याख्यातम् । ततोऽतिशायने तमप्]

स्वपस्यमानः शोभनानि चाऽपासि कर्माणि च स्वपासि, तान्याचरतीव स (सूनु) १ ६२ ६ [स्वपस् इति व्याख्यातम् । तत आचारेऽर्थे क्यङन्ताच्छानच्]

स्वपस्यया आत्मन. सुष्ठ्वपस. कर्मण इच्छया १ १६१ ११ सुष्ठ्वपासि कर्माणि तान्यात्मन इच्छया ४ ३५.२. शोभनान्यपासि कर्माणि यस्या तया क्रियया १ ११० ८ **स्वपस्या**=सुष्ठु धर्म्यकर्मेच्छया ४.३५ ६. [स्वपम् इति व्याख्यातम् । तत आत्मन इच्छायामर्थे क्यजन्तात् स्त्रियाम् 'अ प्रत्ययात्' इत्यकार ततष्टाप्]

स्वपस्याय शोभनान्यपासि कर्माणि यस्य तस्मै (इन्द्राय=ऐश्वर्ययुक्ताय जनाय) २४ १ [सु-अपसृपदयो समासे कृते मत्वर्थे यत् छान्दस]

स्वपाक सुष्ठ्वपरिपक्वज्ञान (अग्ने=राजन्) ४ ३ २. [सु-अपाकपदयो समास । अपाक —नञ्-पाकयो समास । पाक =डुपचष् पाके (भ्वा०) धातोर्घञ्]

स्वपिवात वायुरिव वर्त्तमान (राजन्) ७ ४६.३ [स्वपिवात स्वाप्तवचन नि० १० ६]

स्वपूभिः शयानै., स्वकीयै पवित्राचरणै सह ७ ५६ ३ [ञिष्वप् शये (अदा०) धातोर्बाहु० औणा० ऊ । अथवा स्वोपपदे पूञ् पवने (क्र्या०) धातो क्विप्]

स्वप्नस्य निद्राया १ १२० १२ **स्वप्नेन**=शयनेन २.१५ ६ [ञिष्वप् शये (अदा०) धातो 'स्वपो नन्' इति नन्]

स्वभानवः स्वकीया भानुर्दीप्ति प्रकाशो येषान्ते (विप्रा =मेधाविजना) ३ ५१ वायुवत् स्वभानवो ज्ञान-

पदयो समासे 'सुपा सुलुक्०' इति सप्तम्या लुक्]

स्वधापते अन्नादीना स्वामिन् (इन्द्र=महैश्वर्ययुक्त प्रजाजन) ६ ४४ २ स्वकीयपदार्थाना धर्त्त (इन्द्र=राजन्) ६ ४४ ३ अन्नस्वामिन् (इन्द्र=राजादिजन) ६ ४४ १ [स्वधा-पतिपदयो समास । स्ववेति व्याख्यातम्]

स्वधायिभ्यः ये स्वधामुदकमन्न वैतु प्राप्तु शीलास्तेभ्य (पितृभ्य =पालकेभ्यो जनकाध्यापकेभ्य) १६ ३६ [स्वधोपपदे इण् गतौ (अदा०) धातोस्ताच्छील्ये णिनि । स्ववेति व्याख्यातम्]

स्वधावन् प्रशस्ताऽन्नयुक्त (राजन्) ५ ३ २ **स्वधावान्**=प्रशस्तस्वधा अमृतरूपा गुणा विद्यन्ते यस्मिन् स (भा०–हृद्यो महागुणी बाल, अमृतवर्षकश्चन्द्रमा) ३३ ५ बहुधनधान्ययुक्त (इन्द्र =सूर्य इव राजा) ७ २० १ स्वेन स्वकीयेन गुणेन धार्यत इति स्वधाऽमृतरूप ओषध्यादिरसस्तद्वान् (हरि =चन्द्र) १ ६५ १ स्वधा स्वकीया अवयवा प्रशस्ता विद्यन्तेऽस्मिन् स (कवि =काल) १ ६५ ४ प्रभूताऽन्नवान् (इन्द्र =पुरुषार्थिसभेश) २ २० ६ बह्वन्नाद्यैश्वर्य ४ ५ २ [स्वधाप्राति० प्रशसाया भूम्न्यर्थे वा मतुप् । स्ववेति व्याख्यातम् । स्वधावत्—अन्नवते नि० १० ६ स्वधाव अन्नवन् नि० १२ १७]

स्वधावरी बह्वन्नादिप्रदे (रोदसी=द्यावापृथिव्यौ) ७ ३१ ७ [स्वधावन् इति व्याख्यातम् । तत स्त्रिया 'वनो र च' इति ङीप्-रेफौ]

स्वधावः प्रशस्त स्वधाऽन्न विद्यते यस्य तत्सम्बुद्धौ (इन्द्र=जगदीश्वर सभाध्यक्ष वा) १ ६३ ६ बह्वन्नयुक्त (जगदीश्वर) १७ २१ प्रशस्तानि स्वधा अमृतरूपाण्यन्नानि विद्यन्ते यस्य तत्सम्बुद्धौ (अग्ने=प्रकाशात्मन् विद्वज्जन) ३ २० ३ बहुधनधान्ययुक्त (राजन्) ५ ३ ५ हे स्वसामर्थ्यादि धारण करने वाले (ईश्वर) आर्याभि० २ ३८, १७ २१ **स्वधाव्ने**=य स्व दधाति तस्मै (पत्ये) ५ ३२ १० य स्व वस्त्वेव दधाति, य स्वा धार्मिका क्रिया दधाति तस्मै (देवाय=विद्वज्जनाय) ७ ४६ १ [स्वधावन् इति व्याख्यातम् । तत सम्बुद्धौ 'मतुवसो रु सम्बुद्धौ०' अ० ८ ३ १ सूत्रेण रुत्वम्]

स्वधास्थाः सत्यविद्याभक्ति-स्वपदार्थधारिण (सर्वमनुष्या) ऋ० भू० २५४, [स्वधोपपदे ष्ठा गतिनिवृत्तौ (भ्वा०) धातो क । स्ववेति व्याख्यातम्]

स्वधितिम् वज्रम् २ ३६ ७ **स्वधितिः**=विद्युत् १ १६२ १८ वज्र इव वर्त्तमान (वैद्य) २५ ४१ अविनाशित्वाद् वज्रमय (रुद्र =उपदेशक) ३ ६३ **स्वधिते**=स्वेष्वात्मीयेषु धिति पोषण यस्यास्तत्सम्बुद्धौ (अध्यापिके स्त्रि) ६ १५ रोगनाशने स्वधितिर्वज्रवत् प्रवर्त्तमान (विद्वज्जन) ४ १ दुःखविच्छेदक (विद्वज्जन) ५ ४२ **स्वधितौ**=वज्रवद्वर्त्तमानौ (स्वरौ) २५ ३७ स्वेन धृतौ (स्वरौ=शब्दोपतापौ) १ १६२ ६ [स्व-धितिपदयो समास । धिति—डुधाञ् धारणपोषणयो (जु०) धातो स्त्रिया क्तिन् । स्वधिति वज्रनाम निघ० २ २०]

स्वधितिवान् स्वधिति प्रशस्तो वज्रो विद्यते यस्य स (विद्वान् शिल्पिजन) १ ८८ २ [स्वधितिरिति व्याख्यातम् । तत प्रशसाया मतुप्]

स्वधितीव वज्रधर इव (राजेव) ५ ७ ८ [स्वधितिइवपदयो समास । स्वधिति वज्रनाम निघ० २ २०]

स्वधृतिः स्वेषा धारणम् २२ १६ स्वेषा पदार्थाना धारणम् ८ ५१ [स्व-धृतिपदयो समास । धृति =धृञ् धारणे (भ्वा०) धातो स्त्रिया क्तिन्]

स्वध्वर शोभना अध्वरा यस्य तत्सम्बुद्धौ (विद्वज्जन) १ ४४ ८ सुष्ठ्वहिंसायुक्त (राजन्) ५ २८ ५ **स्वध्वरम्**=सुष्ठ्वहिंसनीयम् (विद्युदाख्य वह्निम्) ३ ६ ८ शोभना अध्वरा यस्मात्तम् (अग्नि=प्रकाशमानामग्निविद्याम्) ६ १६ ४०. सुष्ठ्वध्वरा अहिंसिता क्रिया यस्मात्तम् (रथ=रमणीय यानम्) ४ ४६ ४ सुष्ठ्वहिंसाधर्मप्राप्तम् (अग्निम्) ५ ६ ३ शोभना पालनीया अध्वरा यस्य तम् (जनम्) १ ४५ १ सुष्ठ्वध्वरा अहिंसनीया व्यवहारा यस्मात्तम् (अग्नि=अग्निविद्याम्) १५ ३२ शोभना अध्वरा अहिंसादयो व्यवहारा यस्य तम् (अग्नि=सत्योपदेशकम्) ७ १६ १ **स्वध्वरः**=शोभनकारित्वादहिंसनीय (पुरुष) १५ ४७ सुष्ठु यज्ञस्याऽनुष्ठाता (पति) १ १२७ १ हिंसितुमनर्ह (राजा) २ २८ **स्वध्वरे**=सुशोभमाने (यज्ञे) १ १४२ ५ शोभनेऽहिंसामये (यज्ञे) ५ १७ १ [सु-अध्वरपदयो समास । अध्वर यज्ञनाम निघ० ३ १७ अध्वर इति यज्ञनाम । ध्वरति हिंसाकर्मा तत्प्रतिषेध नि० १ ८]

स्वध्वरा सुष्ठ्वहिंस्रस्वभावयुक्तान् (विद्यार्थिजनान्) ७ १७ ४ सुष्ठ्वहिंसाधर्मयुक्तान् (सज्जनान्) ६ १० १ शोभनान्यहिंसादीनि कर्माणि येषु व्यवहारेषु तान् ३ २६ १२ शोभनोऽध्वरोऽहिंसामयो व्यवहारो येषान्तान् (देवान्=विदुषोऽध्यापकान्) ७ १७ ३ सुष्ठ्वध्वरो यज्ञो याभ्यान्तौ (सूर्यविद्युतौ) ३ ६ ६. [सु-अध्वरपदयो समासे सुपा

ततो लोट्। अन्यत्र लट्। अथवा स्वृ शब्दोपतापयो. (भ्वा०) धातोर्लोट्। अन्यत्र लट् च]

स्वरङ्कृतेन सुष्ठु पूर्णेन कृतेन (यज्ञेन) १ १६२ ५. सुष्ठ्वलङ्कृतेन (यज्ञेन), प्र०—अत्र कपिलकादित्वाद्रेफः २५.२८ [सु-अलम्-कृतपदाना समास.। कपिलकादित्वात् लस्य रेफ]

स्वरणम् य स्वरति शब्दार्थसम्बन्धानुपदिशति तम् (सोमान=यजमानम्) १ १८.१ सर्वविद्याप्रवक्तारम् (विद्वज्जनम्) ३.२८. [स्वृ शब्दोपतापयो (भ्वा०) धातो इति 'कृत्यल्युटो बहुलम्' कर्त्तरि ल्युट्। स्वरणम्=प्रकाशनवन्तम् नि० ६.१०]

स्वरवः सुस्वरान् सेवमाना (हसा पक्षिविशेषा) ३.८ ६. स्वकीयो रवो विद्याप्रज्ञापक शब्दो येषान्ते (देवास=विद्वज्जना) ३ ८ ६ प्रशसका विद्वज्जना.) ३.८ १०. प्रतापयुक्ता (उपस इव कन्या) ४ ५.१ २ **स्वरुम्**=तापकमादित्यम् १.६२ ५ **स्वरुः**=उपदेष्टा (विद्वज्जन) ४ ६ ३ भा० प्रतापयुक्त (इन्द्र=ईश्वर) ३३ २४. **स्वरूणाम्**=यज्ञशालास्तम्भ-शब्दानाम् ७ ३५ ७. [स्वृ शब्दोपतापयो (भ्वा०) धातो 'शृस्वृस्निहि०' उ० १.१०. सूत्रेण उ। स्वरु—एतस्माद् (यूपात्) वाऽएषो (शकल) ऽपच्छिद्यते तस्मै तत्स्वमेवारुर्भवति तस्मात् स्वरुर्नाम श० ३.७ १ २४]

स्वरः स्वय राजमान स्वातन्त्र्यम् १८.१ **स्वरेण**=महाशब्देन १.६२ ४ **स्वरौ**=शब्दोपतापी १ १६२ ६ [स्वोपपदे राजृ दीप्तौ (भ्वा०) धातोर्ड। अन्यय—स्वृ शब्दोपतापयो (भ्वा०) धातोरच्। स्वर वाङ्नाम। निघ० १.११. स्वर—स यदाह स्वरोऽसीति सोम वा एतदाहैष ह वै सूर्यो भूत्वाऽमुष्मिल्लोके स्वरति तद् यत् स्वरति तस्मात्स्वरस्तत् स्वरस्य स्वरत्वम्। गो० पू० ५ १४ य आदित्यस्स्वर एव स. जै० उ० ३ ३३ १ प्राण स्वर ता० ७ १ १०. पशव स्वर गो० उ० ३ २२. श्रीर्वै स्वर श० ११ ४ २ १० प्रजापति स्वर.। ष० ३ ७ यथा स्वरेण सर्वाणि व्यञ्जनानि व्याप्तान्येव सर्वान् कामानाप्नोति यश्चैव वेद। सहितो० ख० २ तस्माद् यज्ञे स्वरवन्त दिदृक्षन्तऽएव। श० १४ ४ १ २७ अनन्तो वै स्वर। ता० १७ १२ ३]

स्वराजम् य स्वेन सूर्य इव राजते तम् (सर्वाधीश राजानम्) ३ ४६ २ स्वेषा राजा स्वराजस्तम् (अग्नि=सभाध्यक्षम्) १ ३६ ७ **स्वराजः**=य स्वेन राजते तस्य (राज्ञ) ३ ४६ १ स्व' राजत इति स्वराट्, तस्य (जगत) ५.५२.१. स्वय राजमाना. (विद्युदादयोऽश्वा) १ १८१.२. ये स्व राजन्ते ते, भा० स्वाधीना. (राजपुरुषा) १० ४ **स्वराजे**=य. स्वय राजते तस्मै सर्वाधिपतये परमेश्वराय १.५१ १५ **स्वराट्**=यः सर्वेषु धर्माचरणेषु स्वय राजते स (पति) १३.२४. य स्वेनैव राजते स (इन्द्र'=सम्राट्) ३ ४५ ५ य स्वय राजतेऽसौ परमात्मा १६ ६० वृद्धि. २० ६ य. सम्यग् राजते स (कृतविवाह पुरुष) १३.३५ या स्वय राजते सा (स्त्री) १४ १३. यः स्वयं राजते प्रकाशते स्वान् राजयति प्रकाशयति वा स स्वराट् परमेश्वर ऋ० भू० २६२, १६ ६० [स्वोपपदे राजृ दीप्तौ (भ्वा०) धातो 'सत्सूद्विषद्रुह०' अ० ३ २ ६१ सूत्रेण क्विप्। स्वराट्—(यजु० १३ २४) असौ वै (द्यु-) लोक स्वराट्। श० ७ ४.२ २२ स्वराट् वै तच्छन्दो यत् किञ्च चतुस्त्रिंशदक्षरम्। कौ० १७ १ सोऽश्वमेधेनेष्ट्वा स्वराडिति नामाधत्त गो० पू० ५ ८]

स्वराज्यम् स्वस्य राज्यम् १ ८०.४. स्वकीय राज्यम् १ ८० २ स्वप्रकाशवन्तम् (अग्नि=विद्युतम्) २ ८ ५ **स्वराज्ये**=स्वकीये राष्ट्रे ५ ६६ ६ [स्व-राज्यपदयो समास'। राज्यम्—राजन्प्राति० भावकर्मणोर्यर्थयो 'पत्यन्तपुराहितादिभ्यो यक्' इति यक्]

स्वरितारः अध्यापका उपदेष्टारो वा १.१६६.११ [स्वृ-शब्दोपतापयोः (भ्वा०) धातो कर्त्तरि तृच्]

स्वरित्राम् शोभनान्यरित्राणि यस्या ताम् (नावम्) २१ ६ [सु-अरित्रपदयो समासे स्त्रिया टाप्। अरित्रम्—ऋ गतौ (भ्वा०) धातो अर्त्तिलूधूसू०' अ० ३.२.१८४ सूत्रेण करण इत्र]

स्वरिः य शोभनश्चासावरिश्च (इन्द्र=सूर्य सभाध्यक्षो वा) १ ६१ ६ [सु-अरिपदयो समास]

स्वरोचिषः स्वय रोची रोचनमेषान्ते (विद्वासो राजजना.) ५.८७ ५ **स्वरोचिः**=स्वकीय रोचिर्दीपन यस्य स (सूर्य) ३ ३८ ४ स्वकीया रोचिर्दीप्तिर्यस्य स (विद्युदग्नि) ३३ २२ [स्व-रोचिष्पदयो. समास। रोचिष्=रुच दीप्तावभिप्रीतौ च (भ्वा०) धातोर्बाहु० औणा० इसि]

स्वर्काः शोभना अर्का अन्नादय पदार्था येषान्ते (यजमाना) १६ ३२ शोभना अर्का मन्त्रा विचारा येषा ते (मरुत=मनुष्या) ७ ३५ ६ शोभनोऽर्कोऽन्नादिकमैश्वर्यं येषान्ते (अश्वा योद्धारो वा) ७ ३८. ७ सुष्ठ्वर्का अन्नानि वज्रा वा येषान्ते (विद्वज्जना) २१.१०. शोभनोऽर्कोऽन्न

दीप्तयो येषान्ते (विद्वासो जना) १ ३७ २ **स्वभानवे**=स्वकीयप्रज्ञाप्रदीप्तये ६ ४८ १२ **स्वभानो**=स्वकीयदीप्ते (विवाहितजन) ६ ६४ ४ [स्व-भानुपदयो समास । भानु अहर्नाम निघ० १ ६ भा दीप्तौ (अदा०) धातो 'दाभाभ्या नु' रिति नु]

स्वभिष्टयः शोभना अभिष्टयोऽभिप्राया येषान्ते (नर =नायका जना) १ १७३ ६ **स्वभिष्टिम्**=शोभना अभिष्टय इष्टयो यस्मात्तम् (इन्द्र=सेनेशम्), प्र० – अत्र व्यत्ययेन ह्रस्व १ ५१ २ **स्वभिष्टिः**=सुष्ठ्वभिगता सङ्गतिर्यस्य स (इन्द्र =नृप) ६ ३३ १ [सु-अभीष्टि-पदयो समासे छान्दस ह्रस्वत्वम् । अभीष्टि =अभि+इषु इच्छायाम् (तुदा०)+क्तिन्]

स्वभिष्टिसुम्नः सुष्ठ्वभिष्टि सुम्न सुख यस्य यस्माद् वा (इन्द्र =परमैश्वर्यो राजा) ६ २० ८ [स्वभिष्टिरिति व्याख्यातम् । तस्य सुम्नपदेन सह समास । सुम्नम् सुखनाम निघ० ३ ६]

स्वभूतिः अपना ऐश्वर्य आर्याभि० १ १३, ऋ० १ ४ १४ २ **स्वभूते**=स्वकीयैश्वर्ये (वायुवद्विद्वज्जन) २७ ३३ [स्व-भूतिपदयो समास]

स्वभूत्योजाः स्वकीया भूतिरैश्वर्यमोज पराक्रमो वा यस्य स (परमेश्वर) १ ५२ १२ [स्व-भूति-ओजस् पदाना समास]

स्वम् स्वकीयम् १ ४६ ६ **स्वः**=स्वयम् (ऋत्विग्) २ ५ ७

स्वमहिम्ना स्वप्रभावेण १.५६ ७. [स्व-महिमन्-पदयो समास]

स्वमीढेषु स्व सुख मिह्यते सिच्यते येषु तेषु (सङ्-ग्रामेषु) १ १३० ८ [स्वर्-मीढपदयो समासे पूर्वपदस्य रेफस्य लोपश्छान्दस । मीढ =मिह सेचने(भ्वा०)+क्त]

स्वयञ्जाः स्वय जाता (आप =जलानि) ७ ४६ २ [स्वयमुपपदे जनी प्रादुर्भावे (दिवा०) धातोर्ड । तत स्त्रिया टाप्]

स्वयतासः स्वेन बलेन नियम प्राप्ता नत्वन्येनाश्वा-दिनेति १ १६६ ४ [स्व-यतपदयो समासे जसोऽसुक् । यत =यमु उपरमे (भ्वा०)+क्त]

स्वयम्भू य स्वय भवति स, उत्पत्तिनाशरहित. (प्रथम =ईश्वर) २३ ६३ स्वयभवत्यनादिस्वरूप. (सूर्य =जगदीश्वरो विद्वान् जीवो वा) २ २६ यो निमित्तोपादानसाधारणकारणत्रयरहित (परमात्मा) ऋ० भू० ३६, ४० ८ सदा स्वसामर्थ्ययोगैकरसत्वाभ्या वर्त्त-मान (ईश्वर) प० वि० । सनातन स्वय सिद्ध परमेश्वर स० प्र० २४४, ४० ८ जिसका आदि-कारण माता, पिता, उत्पादक कोई नही, किन्तु सब का आदि कारण वह (ईश्वर) आर्याभि० २ २, ४० ८ अनादिस्वरूपो अस्य सयोगेनोत्पत्तिर्वियोगेन विनाशो, मातापितरौ, गर्भवासो, जन्म, वृद्धिक्षयौ च न विद्येते स (परमात्मा) ४० ८. [स्वयमुपपदे भू सत्तायाम् (भ्वा०) धातो क्विप् । स्वयम्भू अन्तरिक्षनाम निघ० १ ३]

स्वयशसम् स्वकीयगुणकर्मस्वभावकीर्त्तियुक्तम् (सीम्= अहोरात्रव्यवहारम्) १ ६५ २ **स्वयशसः**=स्वकीय यशो येषान्ते (जना) १ १३६ ७ **स्वयशाः**=स्वकीय यश कीर्त्तिर्यस्य स (सत्पुरुष) ७ ३७ ४. स्वकीयकीर्त्ति (अग्नि =सूर्य) १ ६५ ५ [स्व-यशस्पदयो समास । स्वयशस्—आत्मयशा नि० ८ १५]

स्वयशस्तरम् स्वकीय यश कीर्त्तिर्यस्य तदतिशयि-तम् (स्वराज्यम्) ५.८२ २ [स्व-यशस्पदयो समासे-ऽतिशायने तरप्]

स्वयशस्तरः स्वकीय यशो धन प्रशसन वा यस्य सोऽतिशयित (इन्द्र =सम्राट्) ३ ४५ ५ अतिशयेन स्वकीय यशो यस्य स (धर्मात्मजन) ५ १७ २ [स्व-यशस्पदयो समासेऽतिशायने तरप् । यश अन्ननाम निघ० २ ७ धन-नाम निघ० २.१०]

स्वयशोभिः स्वकीयाभि प्रशसाभि १ १२६.८ स्वगुणस्वभावकीर्त्तिभि १ ६५ ६ [स्व-यशस्पदयो समास]

स्वयुक्ताः स्वेनैव गच्छन्त (मरुत =वायव) १ १६८ ४ [स्व-युक्तपदयो समास । युक्त =युजिर् योगे (रुधा०) धातो क्त]

स्वयुक्तिभिः स्वा युक्तयो योजनानि यासु ताभि (नीतिभि) १ ५० ६ आत्मीय-प्रकारै १.११६ ४. [स्व-युक्तिपदयो समास । युक्ति =युजिर् योगे (रुधा०) धातो स्त्रिया क्तिन्]

स्वयुः य स्वय याति स (अग्नि =वह्नि) २ ४ ७ य स्व धन याति स (इन्द्र =सम्राट्) ३ ४५ ५ [स्वोप-पदे या प्रापणे (अदा०) धातो 'मृगय्वादयश्च' उ० १ ३७. इति कु]

स्वर जानीहि, प्राप्नुहि, प्र०—स्वरतीति गतिकर्मसु, निघ० २ १४, १ १० ४ **स्वरन्ति**=शब्दयन्ति ५ ५४ २ उच्चरन्ति ५ ५४ १२ [स्वरति गतिकर्मा निघ० २ १४

मोक्षसुखाय ऋ०भू० १५६, ११.३ [स्वर्ग-प्राति० भवार्थे यत्]

स्वर्चिः प्रशसितदीप्ति (अग्नि) २ ३ २ [सु-अर्चिप्-पदयो समास । अर्चि ज्वलतोनाम निघ० १ १७]

स्वर्जितम् स्व सुख जयत्युत्कर्पति येन तम् (यज्ञम्) ११ ८ **स्वर्जिते**=य सुखेन जयति तस्मै (इन्द्राय=सेनेशाय) २ २१ १ [स्वर् इत्युपपदे जि जये (भ्वा०) धातो क्विप्]

स्वर्जेषे सुखेन जयशीलाय (विदे=ज्ञानवते विदुपे) १ १३२ २. [स्वर् इत्युपपदे जि जये (भ्वा०) धातोस्तुमर्थे से-प्रत्यय]

स्वर्ज्योतिः यथा स्वरन्तरिक्षलोकसमूह द्योतते तथा (भगवान्) ५ ३२ [स्वर्-ज्योतिप्पदयो समास]

स्वर्णरम् य स्व सुख नयति तम् (अग्नि=पावकम्) ६.१५ ४ सुखस्य नेतारम् (अग्नि=विद्युदादिस्वरूपम्) २ २ १ स्वर्णर =ये स्व सुख नयन्ति ते (मरुत =मनुष्या) ५ ५४ १० **स्वर्णरात्**=स्वरादित्य इव नरान्नायकात् (राज्ञ) ४ २१ ३ **स्वर्णरे**=स्व सुखेन युक्ते नरे ५ १८ ४ [स्वर्-नरपदयो समास]

स्वर्थम् सुष्ठ्वर्थ प्रयोजन यस्माद्यद्वाऽनर्थसाधनरहितम् (रयि=धनम्) १ १४१ ११ **स्वर्थे**=शोभनाऽर्थे (रात्रिदिने) १.६५ १ सुष्ठ्वर्थ प्रयोजन ययोरते (स्त्रियौ) ३३.५ [सु-अर्थपदयो समास]

स्वर्दृक् य स्व सुख पश्यति स (जन) ७ ५८ २ **स्वर्दृशम्**=स्व सुख दृश्यते यस्मात्तम् (अग्नि=वह्निम्) ३ २ १४ सुख द्रष्टुम् ७ ३२ २२ य स्वरादित्येन दृश्यते तम् (विद्वज्जनम्) ५ २६ २ सुखेन द्रष्टु योग्यम् (इन्द्र=सभेश राजानम्) २७ ३५. **स्वर्दृशः**=ये सुखेन विद्याऽऽनन्द पश्यन्ति तान् (देवान्=विद्वज्जनान्) १ ४४ ६ य सुख पश्यति तस्य (ब्रह्मचारिण) १ १५५ ५ स्व सुख पश्यन्ति येभ्यस्ते (सज्जना) २ २४ ४ ये स्व सुख यन्ति ते (ऋभुक्षण =मेधाविजना) ७ ३७ २ **स्वर्दृशौ**=यौ स्व सुख दर्शयतस्तौ (राजामात्यौ) ५ ६३ २ [स्वर् इत्युपपदे दृशिर् प्रेक्षणे (भ्वा०) धातो क्विप् । स्वर्दृश —सूर्यदृश नि० १ २३ असौ (सूर्य) वाव स्वर्दृक् ऐ० ४ १०]

स्वर्देवाः सुखे प्रकाशिता (विद्वज्जना) ऋ० भू० १५४, १८ २१ [स्वर्-देवपदयो समास । स्वर् इति व्याख्यास्यते]

स्वर्भानुः य स्वरादित्य भाति स विद्युद्रूप (सूर्य्य) ५ ४० ५. आदित्येन प्रकाशित. (मेघ) ५.४० ६ **स्वर्भानोः**=आदित्यप्रकाशगम्य ५ ४० ६. स्वरादित्यस्य भानुर्दीप्तिर्यस्य तस्य (मेघस्य) ५ ४० ८ [स्वर्-भानुपदयो. समास]

स्वर्मीढस्य मुर्ने. सेचकस्य (प्रवनस्य=प्रकृष्टस्य धनस्य) १.१६९ २ **स्वर्मीढे**=स्व सुखस्य मीढ सेचन यस्मिँस्तस्मिन् (आजौ) १ ६३ ६. स्व किरणान् जलानि वा मेहयति यस्मादन्तरिक्षात्तस्मिन् १ ५६ ५ स्व सुखेन युक्ते सङ्ग्रामे ४ १६ १५ [स्वर्-मीढपदयो समास । मीढ =मिह सेचने (भ्वा०)+क्त । मीढ सग्रामनाम निघ० २ १७]

स्वर्यतः शुद्ध-भाव-प्रेम्णा ऋ० भू० १५६, ११४ [स्वर्यन्त स्वर्गच्छन्त नि० १३ ६]

स्वर्यम् स्वरेपु शब्देपु साधुम् (अश्मान=मेघम्) ५ ५६ ४ स्वरेपु विद्यासु सुशिक्षितासु वाक्षु साधु (अनीक=सैन्यम्) १ २१ ४ स्व सुखे साधुस्तम् (वृत्र=किरणसमूहम्) १ ६१ ६ स्वर्हितम् (पुरुपम्) ४ १७ ४ प्रकाशमयम् (वज्रम्) ऋ० भू० २८३, १ ३२ २ स्वरे गर्जने वाचि वा साधुस्तम् (अहि=मेघमिव शत्रुम्) प्र०—स्वरिति वाङ्नामसु पठितम् निघ० १ ११ समी०—इद पद सायणाचार्येण मिथ्यैव व्याख्यातम् १ ३२ २ **स्वर्यः**=स्वरेपु साधु (इन्द्र.=सभाद्यध्यक्ष) १.६२ ४ [स्वर वाङ्नाम निघ० १ ११. तत साध्वर्थे यत् । स्वर्प्राति० साध्वर्थे यत्]

स्वर्यवः य आत्मन स्व सुख कामयन्ते ते (विप्रा=मेधाविजना) ३ ३० २० ये सुख यावयन्ति मिश्रयन्ति ते (विप्रा) ३ ५० ४ [स्वर्प्राति० आत्मन इच्छायामर्थे क्यजन्ताद् उ । अथवा स्वर् इत्युपपदे यु मिश्रणेऽमिश्रणे च (अदा०) धातो क्विप्]

स्वर्वत् वहुसुखयुक्तम् (ज्योति =ज्ञानप्रकाशम्) ६ ४७ ८ स्व सुख सम्वद्ध यस्मिन् तत् (साम), प्र०—अत्र सम्बन्धे मतुप् १ १७३ १ स्व वहुविध सुख विद्यते यस्मिँस्तत् (द्युम्न=यशो धन वा) ६ १६ ६ सुखवत् (दात्र=दानम्) १ १८५ ३ [स्वर्प्राति० सम्वन्धे मतुप् भूम्न्यर्थे वा]

स्वर्वती विद्यमानसुखा (त्वेपा=प्रदीप्ति) १.१६८ ७ सुखवती (स्त्री) ५ ३४ १ **स्वर्वतीम्**=वहुसुखकारिकाम् (अदिति=दिवम्) १ १३६ ३ **स्वर्वतीः**=स्व सुख विद्यते यासु ता (अप =कर्माणि)

सत्कारो वा येषान्ते (वीरराजजना) ९ १६ **स्वर्कं**=शोभना अर्का मन्त्रा विचारा वा देवा विद्वासो येषु तैः (रथै) १ ८८ १ [सु-अर्कपदयो समास । अर्क अन्ननाम । निघ० २ ७ वज्रनाम निघं० २ २०. पदनाम निघ० ४ २ स्वर्कं स्वञ्चनैरिति वा स्वर्चनैरिति वा, स्वर्चिभिरिति वा । नि० ११ १४ स्वर्का—स्वञ्चना इति वा, स्वर्चना इति वा, स्वर्चिष इति वा नि० १२.४४ अर्क—अर्को देवो भवति यदेनमर्चति । अर्को मन्त्रो भवति यदनेनार्चन्ति । अर्कमन्न भवत्यर्चति भूतानि नि० ५ ४]

स्वर्गम् अत्यन्त सुख को स० वि० २०६, अथर्व० ९.६ ६ **स्वर्गान्**=स्व सुख गच्छन्ति प्राप्नुवन्ति येभ्य स्तान् (समुद्रान्=लोकान्) १३ ३१ **स्वर्गाय**=विशेष-सुखभोगाय, भा०—मुक्तिसुखाय ३५.२२ सुखविशेषाय ३० १३ सुखगमकाय पुरुपार्थाय, भा० आभ्युदय नैश्रेयसिकसुखप्राप्तये २२ ३४ **स्वर्गे**=सुखकारके (लोके) १५ ११ सुखमये (लोके) २३ २०. सुखप्रापके (लोके) १५ १० [स्वर् इत्युपपदे गम्लृ गतौ (भ्वा०) धातो 'डप्रकरणेऽन्येष्वपि दृश्यते' अ० ३ २ ४८ वा०सूत्रेण ड । स्वर्गो लोक परो वा अस्माल्लोकात्स्वर्गो लोक ऐ० ६ ३० प्रतिकूलमिव हीत स्वर्गो लोक ता० ६.७ १० एकविंशो वा इत स्वर्गो लोक तै० ३ १२ ५ ७ सहस्रसमितो वै स्वर्गो लोक श० १३ १ ३ १ सहस्राश्वीने वा इत स्वर्गो लोक ऐ० २ १७ चतुश्चत्वारिंशदाश्वीनानि सरस्वत्या विनशनात् प्लक्ष प्रास्रवणस्तावदित स्वर्गो लोक सरस्वती सम्मितेनाध्वना स्वर्गं लोक यन्ति ता० २५ १० १६ अपरिमितो वै स्वर्गो लोक ऐ० ६.२३ अनन्तोऽसौ (स्वर्ग) लोक ता० १७ १२ ३ साम्राज्य वै स्वर्गो लोक ता० ४ ६ २४ स्वर्गो लोक सरस्वान् ता० १६ ५ १५ स्तोमा वै त्रय स्वर्गा लोका ऐ० ४ १८ स्वर्गो वै लोक सूर्यो ज्योतिरुत्तमम् (यजु० २० २१) श० १२ ९ २ ८. अहर्वै स्वर्गो लोक । ऐ० ५ २४ स्वर्गो वै लोको ब्रध्नस्य विष्टपम् ऐ० ४ ४ स्वर्गो वै लोको नाक (यजु० १२ २) श० ६ ३ ३ १४ दिशो वै स नाक स्वर्गो लोक श० ८ ६ १ ४ स्वर्गो वै लोक सधस्थ (यजु० १८ ५९) श० ९ ५.१ ४६ अथ यत्पर भा (सूर्यस्य) प्रजापतिर्वा स स्वर्गो लोक श० १ ९ ३ १० असौ वै (स्वर्गो) लोको महासि तस्यादित्या अधिपतय तै० ३.८ १८ २ अग्निर्वै स्वर्गस्य लोकस्याधिपति ऐ० ३ ४२ एष वै स्वर्गो लोको यत्र पशु सञ्ज्ञपयन्ति श० १३ ५ २ २ ओमिति वै स्वर्गो लोक ऐ० ५ ३२ स्वरिति सामभ्योऽक्षरत् स्व स्वर्गलोको ऽभवत् ष० १ ५ इद वा वामदेव्य यजमानलोकोऽमृतलोक स्वर्गो लोक ऐ० ३ ४६ स्वर्गो वै लोको यज्ञायज्ञिय (साम) श० ९ ४ ४ १०. बृहद् वै स्वर्गो लोक तै० १ २ २ ४ बृहता (साम्ना) वै देवा स्वर्ग लोकमायन् । ता० १८ २ ८. स्वर्गा वै लोका स्वरसाम् कौ० १२ ५ स्वर्गा वै लोका षष्ठमह ऐ० ६ २६ स्वर्ग एव लोक षष्ठी चिति श० ८ ७ ४ १७ एकवृद् वै स्वर्गो लोक श० १३ २ १ ५ वाजो वै स्वर्गो लोक ता० १८ ७ १२ तस्मात् (भूर्लोकात्) असावेव (स्वर्गो) लोक श्रेयान् (अथर्व० ७ ६ १) ऐ० १ १३ स्वर्गो वै लोकोऽभयम् श० १२ ८ १ २२ स्वर्गो लोको देवो देवता भवति गो० पू० ४ ८ स्वर्गो वै लोको दुरोहणम् ऐ० ४.२० स्वर्गस्य हैष लोकस्य रोहो यन्निविद् ऐ० ३ १९ स्वर्गो वै लोको रोह (यजु०१३ ५१) श० ७ ५ २ ३६ मध्ये ह सवत्सरस्य स्वर्गो लोक श० ६ ७ ४ ११ तस्य (सवत्सरस्य) वसन्त एव द्वार हेमन्तो द्वार त वाऽएत सवत्सर स्वर्ग लोक प्रपद्यते श० १ ६ १६ ता वा एता पञ्च (इष्टय) स्वर्गस्य लोकस्य द्वार । अपाद्या अनुवित्तयो नाम । तप प्रथमा रक्षति । श्रद्धा द्वितीयाम् । सत्य तृतीयाम् । मनश्चतुर्थीम् । चरण पञ्चमीम् तै० ३ १२ ४.७ ता वा एता सप्त (इष्टय) स्वर्गस्य लोकस्य द्वार । दिव श्येनयोऽनुवित्तयो नाम । आशा प्रथमा रक्षति । कामो द्वितीयाम् । ब्रह्म तृतीयाम् । यज्ञश्चतुर्थीम् । आप पञ्चमीम् । अग्निर्बलिमान् षष्ठीम् । अनुवित्ति सप्तमीम् । तै० ३ १२ २ ९ एतस्या ह (उदीच्या प्राच्या) दिशि स्वर्गस्य लोकस्य द्वारम् श० ६ ६ २ ४ स्वर्गो वै लोको यज्ञ कौ० १४ १ तया ह यजमान सर्वमायुरस्मिँल्लोके एत्याप्नोत्यमृतत्वमक्षितिं स्वर्गे लोके । कौ० १३ ५ ऋतेनैवैन स्वर्ग लोक गमयन्ति ता० १८ २ ९ छन्दोभिर्हि स्वर्ग लोक गच्छन्ति श० ६ ५ ४ ७ सर्वैर्वै छन्दोभिरिष्ट्वा देवा स्वर्ग लोकमजयन् । ऐ० १ ९ छन्दोभिर्वै देवा आदित्य स्वर्गं लोकमहरन् ता० १२ १० ६ स्वर्गो वै लोको माध्यन्दिन सवनम् । गो० उ० ३ १७ अवस्तात्प्रपदनो ह स्वर्गो लोक श० ८ ६ १ २३ नव स्वर्गा लोका ऐ० ४ १६ दश स्वर्गा लोका गो० उ० ६ २ दश पुरुषे स्वर्गनरकाणि तान्येन स्वर्ग गतानि स्वर्गं गमयन्ति नरक गतानि नरक गमयन्ति जै० उ० ४ २५ ६ न वै मनुष्य स्वर्ग लोकमञ्चसा वेदाश्वो वै स्वर्ग लोकमञ्चसा वेद श० १३ २ ३ १ असमायी वै स्वर्गो लोक कश्चिद्वै स्वर्गे लोके समेतीति ऐ० ६ २६]

स्वर्ग्याय स्व सुख गच्छति येन तद्भावाय ११ २.

अ० ६ १ १५१. सूत्रेण सुडागम]

स्वश्नम् सुष्ठु मेघम् २ १४५. [सु-अश्नपदयो समास । अश्न मेघनाम निघ० १ १०]

स्वश्व: शोभना अश्वा वेगवन्तो विद्युदादयस्तुरङ्गा वा यस्मिन् स (रथ) १ ११७ २. शोभना अश्वा यस्य स (इन्द्र =नृप) ६ ३३ १. शोभनाऽश्व (मनुष्य.) ४ ४५ ७ सुष्ठ्वश्वा यस्य स. (अग्नि =विद्वज्जन) ४ २.४ **स्वश्वान्**=शोभनाश्व तेऽश्वाश्च तान् १० २२ **स्वश्वा:**= शोभना अश्वास्तुरङ्गा अग्न्यादय पदार्था वा येषान्ते (नर =नायका जना) ४ ४२ ५. शोभना अश्वास्तुरङ्गा महान्तो जना वा येषान्ते (नर =श्रेष्ठा मनुष्या.) ७ ५६ १ [सु-अश्वपदयो समास]

स्वश्वास: शोभना अश्वा येषा ते (मनुष्या) ५ ६५ ३ [सु-अश्वपदयो समासे जसोऽसुगागम]

स्वश्व्यम् शोभनेष्वश्वेषु साधुम् (रत्न=धनम्) ३ २६ ३. शोभनेष्वश्वेषु भवम् (कार्यम्) २५ ४५ शोभना अश्वा यस्मिँस्तम् (रथम्) १ १८० ६. शोभनेष्वश्वेषु विद्याव्याप्तिविषयेषु साधुम् (वीर्यम्) १ ४० २० शोभनेष्वश्वेषु अग्न्यादिषु भवम् (बलम्) २ १ ५ [सु-अश्वपदयो समासे भवार्थे साध्वर्थे वा यत्]

स्वसरम् दिनम् ६ ६८ १० **स्वसराणि**=अहानि, प्र०—स्वसराणीत्यहर्नामसु पठितम् निघ० १ ६, १ ३ ८ **स्वसरेषु**=गोष्ठेषु २ २ २ [स्वसराणि अहर्नाम निघ० १.६. गृहनाम निघ० ३ ४ पदनाम निघ० ४ २ स्वसराणि—स्वसराण्यहानि भवन्ति स्वय सारिण्यपि वा । स्वरादित्यो भवति स एनानि सारयति नि० ५ ४]

स्वसा भगिनी १ ८० २ बहिन स० वि० १४१, अथर्व० ३ ३० ३ **स्वसारम्**=भगिनीस्वरूपां रात्रिम् १ ९२ ११ **स्वसार:**=अङ्गुलय ४ ६ ८ भगिन्य कन्या २ ५ ५. भगिन्य इव सर्पादिनाशेन सुखप्रदा (मयूर्य) १ १९१ १४ भगिन्य इव वर्त्तमाना कला १ १६४ ३ अङ्गुल्य इव मैत्री भगिनित्वमाचरन्त्य (विदुष्य स्त्रिय) ४ २२.७ युवतयो भगिन्य १.७१ १ **स्वस्रा**=सुष्ठ्वस्यति प्रक्षिपति यया विद्यया क्रियया वा तया, भा०—वेदादिशब्दविद्यया, प्र०—'सावसेर्ऋन्' उ० २ ९६ अनेन स्वसृशब्द' सिध्यति ३ ५७ **स्वसु:**=भगिन्या इव वर्त्तमानाया उषस ६ ५५ ४ **स्वसृ:**=स्वसेव वर्त्तमाना (सर्वमूर्त्तद्रव्या) ६ ६१ ९ **स्वस्राम्**=स्वसृणा भगिनीनाम् १ ६५ ४ **स्वस्रो:**=भगिनीवद्वर्त्तमानयो (रात्र्युषसो) १ ११३ ३ [सु+असु क्षेपणे (दिवा०) धातो 'सावसेर्ऋन्' उ० २.९६. सूत्रेण ऋन् । स्वसार अङ्गुलिनाम निघ० २ ५. स्वसा=सु असा स्वेषु सीदतीति वा नि० ११ ३२]

स्वसिच: या स्वैर्जलैर्जलेन सिच्यन्ते ता (नाव= विमानानि) १० १९. [स्वोपपदे षिच क्षरणे (तुदा०) धातो कर्मणि क्विप्]

स्वसृत् य स्वान् सरति प्राप्नोति स (सेनापति) १ ८७ ४ **स्वसृत:**=ये स्वान् गुणान् सरन्ति प्राप्नुवन्ति ते (मरुत =मनुष्या.) १ ६४ ११ [स्वोपपदे सृ गतौ (भ्वा०) धातो कर्त्तरि क्विप् । 'ह्रस्वस्य पिति०' इति तुगागम]

स्वस्तकौ उत्तम घर वाले (स्त्री पुरुषो) सं० वि० १३७, अथर्व० १४.१.२२ सुखयुक्त (स्त्रीपुरुषो) स० वि० १४०, अथर्व० १४ २.६४

स्वस्तये सुखाय कल्याणाय च १ १ ९ निरुपद्रवाय (सुखाय), परमसुखाय ५ ५१ १२ सुखलब्धये ६ १५ १८ आनन्दाय ५ ५१ १३ अविनष्टायाऽभिपूजिताय सुखाय १ २२ १२ सर्वसुखाय ऋ० भू० ८८, ऋ० १ ६ १५ ५ निरुपद्रवता के लिए आर्याभि० २.५०, २५ १८ सब दु खो के नाश के लिए आर्याभि० २ १५, ३ २४ स्वस्थता के लिए आर्याभि० १ १०, ऋ० १ ६ १५ ५ ऐहिक-पारमार्थिक-सुखाय, वे० भा० न० । **स्वस्तिभि:**=कल्याणकरै कर्म्मभि २० ५४ स्वास्थ्यकारिकाभि सुखै कर्मभिर्वा ७ ३ १० स्वास्थ्यप्रदै सुखै, भा०—विद्याशिक्षासौभाग्यै ३४ ४०. विद्यादिदानै ७ ३५ १५ सुखै सह २७ २८ सब प्रकार के रक्षणो से आर्याभि० १ २७, ऋ० ५ ३ २७.२५ **स्वस्तिम्**=सुख शान्ति वा ६ २ ११ **स्वस्ति:**=स्वास्थ्यम् ३ ३८ ९ **स्वस्त्या**=प्रापकसुखक्रियया १३ १९ सत्क्रियया १५ ६४. [स्वस्तीत्यविनाशिनाम । अस्तिरभिपूजित सु-अस्तीति नि० ३ २२ स्वस्तये-स्वस्त्ययनाय नि० ५ २७]

स्वस्ति स्वास्थ्यम् ३ ३८ ९ शरीरसुख धातुसाम्यसुख, इन्द्रियशान्तिसुख, विद्ययाऽऽत्मसुख वा १ ८९ ६ प्राप्तव्य सुखम्, प्र०—स्वस्तीति पदनामसु पठितम् निघ० ५ ५ अनेन प्राप्तव्य सुख गृह्यते ३ १८ सुखमयम् (धनम्) ५ ४ ११ सुख सुखेन वा ४ ३३ कल्याणम् १७ ३९ शोभनमस्ति यस्मिन् प्राप्तव्ये तत्सुखम् ४ २० [सु-अस्ति-पदयो समास । स्वस्ति पदनाम निघ० ५ ५ स्वस्ति स्वपितिकर्मा निघ० ३ २२]

स्वस्तिगव्यूति: स्वस्ति सुखेन सह गव्यूतिर्मार्गो

१.१०८ स्व प्रशस्तानि सुखानि विद्यन्ते यासु ता (ऊती =रक्षणाद्या) १११६८ प्रशस्तसुखयुक्ता (अप =प्राणान्) ५ २ ११ [स्वर्प्राति० भूम्न्यर्थे मतुबन्तात् स्त्रिया ङीप्]

स्वर्वन्तः बहुमुखयुक्ता (विद्वज्जना) ६ ५० २ **स्वर्वान्**=बहु सुख विद्यते यस्मिन्त्स (परमात्मा) ६ २२ ३ स्वर्बहुसुख विद्यते यस्य स (कीरि =स्तोता विद्वज्जन) ६ ३७ १ [स्वर्प्राति० मतुप् भूम्न्यर्थे। स्वर् इति व्याख्यास्यते]

स्वर्वित् प्राप्तसुख (वैश्वानर =प्रधानपुरुष) ३ ३ १० सुखप्रापक. (मातरिश्वा=वायु) १ ६६ ४ **स्वर्विदम्**=स्व सुख वेदयति तम् (वृजन=योगवलम्) ७ १२ स्व सुख विन्दन्ति येन तम् (राजानम्) ५ ४४ १ स्वोऽन्तरिक्ष विन्दति येन तम् (रथम्) १ ५२ १ स्व सुख विन्दति यस्मात्तम् (अग्निम्) ३ ३ ५ स्वरुदक विन्दन्ति येन तम् (विद्वज्जनम्) २ २३ ३ **स्वर्विदः**=सुख को प्राप्त होने वाले (विद्वान् लोग) स० वि० १८६, अथर्व० १६ ४१.१. **स्वर्विदा**=स्व सुख विन्दति येन तेन (नाभिना=बन्धनेन) ६ ३६ ४ **स्वर्विदे**=य सुख वेत्ति तस्मै, भा०—सुखप्रापकाय (विद्वज्जनाय) १७ १२ [स्वर् इत्युपपदे विद्लृ लाभे (तुदा०) धातो क्विप्। स्वर्विदि सूर्यविदि नि० ७ २५]

स्वर्विदा यौ सुख विन्दतस्तौ (स्त्रीपुरुषौ) ११ ३१ [स्वर्विदिति व्याख्यातम्। ततो द्विवचनस्याकारादेश]

स्वर्षाता सुखस्य दाता (राजा) ६ ३३ ४ सुखाना विभाजक (अविद्यो जन) ६.१७ ८ सुखस्याऽन्त प्राप्त (राजा) ४ १६ ६. सुखाना विभागे, प्र०—अत्र 'सुपा सुलुक्०' इति ङेर्डा १ १३१ ६ [स्वर् इत्युपपदे षणु दाने (तना०) धातो क्त। षण सम्भक्तौ (भ्वा०) धातोर्वा क्त। स्वर्षातप्राति० सोर्विभक्तेर्डादेश। अथवा स्वर् इत्युपपदे षोऽन्त कर्मणि (दिवा०) धातो क्त। तत सोर्डादेश]

स्वर्षाम् य स्व सुख सनोति तम् (सेनाद्यध्यक्षम्), प्र०—अत्र 'सनोतेरन' अ० ८ ३ १०८ अनेन षत्वम् १ ६१ २१ स्व सुख सनति विभजति यया ताम् (धिय= प्रज्ञा कर्म वा) ५ ४५ १० सुखप्रापकम् (सूरि=विद्वज्जनम्) १.६१.३. य' स्व सुख सनति सम्भजति तम् (राजान सेनापति वा) ३४ २० स्व सुखानि सनन्ति भजन्ति यया ताम् (जिह्वा=वाचम्) १३ १५ स्व सुख सनोति ददाति यया ताम् (जिह्वाम्) १५ २३ **स्वर्षाः**=स्व सुखेन सनोति स (वज्र =शस्त्रास्त्रसमूह), प्र०—अत्र स्वपूर्वात् सन-धातो 'कृतो बहुलम् वा' इति करणे विच् १ १०० १३. स्व सुख सनोति येन स (मनुष्य) २ १८ १ [स्वर् इत्युपपदे षण सम्भक्तौ (भ्वा०) षणु दाने (तना०) धातोर्वा 'जनसनखन०' इति विट्। 'विड्वनोरनुनासिकस्यात्' इत्याकारादेश। 'सनोतेरन' अ० ८ ३ १०८ सूत्रेण षत्वम्]

स्ववर्त्तयः शोभन वर्त्तये ५ ३० ७ [सु+वृत्तु वर्त्तने (भ्वा०) धातोर्णिजन्ताल्लङ्]

स्ववसम् शोभनमवो रक्षणादिक यस्य तम् (गृह-पतिम्) ५.८ २ सुष्ठ्ववो रक्षण यस्मात्तम् (अग्नि= विद्युतम्) ५ ६० १ **स्ववसः**=शोभनमवो रक्षणादिक कर्म येषा ते (ऋभव =मेधाविजना) ४.३३.८ [सु-अवस्पदयो समास। अवम्=अव रक्षणादिषु (भ्वा०) धातोरसुन्]

स्ववसा सुष्ठु रक्षकौ (वाय्वग्नी) १ ६३ ७ [सु-अवस्पदयो समासे द्विवचनस्याकारादेश। अवम्= अव रक्षणगत्यादिषु (भ्वा०) धातोरसुन्]

स्ववान् प्रशस्त स्व विद्यते यस्य स (इन्द्र =सभेश) २० ५२ स्वे प्रशस्ता स्पर्शादयो गुणा विद्यन्ते यस्य स (वायु) प्र०—अत्र प्रशसार्थे मतुप् १ ३५ १०. बहव स्वे स्वकीया उत्तमा जना विद्यन्ते यस्य स (इन्द्र =राजा) २० ५१ स्वे आत्मीया बहवो विद्यन्ते यस्य स (सर्वोत्तमो राजा) ६ ६८ ५ प्रशस्ता स्वे भृत्या पदार्था वा विद्यन्ते यस्मिन् स (रथ) १ ११८ १ स्वकीयसामर्थ्ययुक्त इन्द्र =राजा) ६ ४७ १८ स्वे स्वकीया प्रकाशादयो गुणा विद्यन्ते यस्मिन् स (देव =सूर्य) ३४ २६ [स्वप्राति० प्रशसाया भूम्न्यर्थे वा मतुप्]

स्वविद्युतः स्वेन रूपेण व्याप्ता (अग्नय =पावका) ५ ८७ ३ [स्व-विद्युत्पदयो समास]

स्ववृष्टिम् स्वकीयाना घनानामिव प्रेरिताना पदार्थाना जलाना वा वर्षण प्रति १ ५२ १४ स्वस्य शस्त्राणा वा वृष्टिर्यस्य तम् (सूर्य सभाद्यध्यक्ष वा) १ ५२ ५ [स्व-वृष्टिपदयो समास]

स्वशोचिः स्व शोचिस्तेजो यस्य स (तेजस्विजन) ६ ६६ ६ [स्व-शोचिष्पदयो समास। शोचि ज्वलतो नाम निघ० १ १७]

स्वश्चन्द्रम् स्वेन प्रकाशेनाऽऽह्लादकारकेण युक्त सुवर्णम् १ ५२ ६ [स्व-चन्द्रपदयो समास। चन्द्रमिति हिरण्यनाम निघ० १ २ 'ह्रस्वाच्चन्द्रोत्तरपदे मन्त्रे'

स्वादुषसदः ये स्वादून्यन्नानि भोक्तु ससीदन्ति न्याय कर्त्तु सभाया वा ते (राजपुरुषा) ६ ७५ ६ ये स्वादुपु भोज्याद्यन्नेपु सम्यक् सीदन्ति ते (पितर =पालनक्षमा राजपुरुषा) २६ ४६ [स्वादूपपदे सम्पूर्वकात् षद्लृ विशरणगत्यवसादनेपु (भ्वा०) धातो क्विप्। राम सस्य मूर्धन्यश्छान्दस]

स्वादुः सुस्वादयुक्त (ओषधिसार) ६ ४७ १. [स्वादुरिति व्याख्यातम्। ततो मत्वर्थीयस्य लुक्]

स्वादो स्वादु (अन्नम्) १ १८७ २ [स्वादुरिति व्याख्यातम्। तत सम्बुद्धौ रूपम्]

स्वादोः स्वादयुक्तस्य (मध्व =मधुरादिगुणयुक्तस्य पदार्थस्य) १ ८४ १० स्वादिष्ठान् (मर्त्तभोजनात्) १ ११४ ६ [स्वादुरिति व्याख्यातम्]

स्वाद्म अतिस्वादुमत् (वस्तु) ३ ३० १४ स्वादिष्ठम् (मधु=रसम्) ३ ३१ ११ [स्वाद आस्वादने (भ्वा०) धातोर्बाहु० औणा० मनिन्]

स्वाद्म स्वादिष्ठानाम् (पितूनाम्=अन्नानाम्) १ ६१ २ [स्वाद आस्वादने (भ्वा०) धातोरौणा० मनिन्]

स्वाद्मानम् स्वादिष्ठ भोगम् २ २१ ६ **स्वाद्मानः**= स्वादिष्ठा पदार्था १ १८७ ५ [स्वाद आस्वादने (भ्वा०) धातोर्बाहु० औणा० मनिन्]

स्वाद्वीम् सुस्वादुयुक्ताम् (ओषधीम्) १६ १ [स्वादुरिति व्याख्यातम्। तत स्त्रिया ङीष् 'वोतो गुणवचनात्' सूत्रेण]

स्वाधीभिः शोभना आध्य सन्ति यासा ताभिर्नीतिभि ६ ३२ २ सुष्ठु-ध्यानयुक्तै (जनै) ५ १४ ६ **स्वाधीः**= सुष्ठवाधीयते येन स (सविता=परमेश्वर) ५ ८२ ८ शोभनध्यानयुक्ता प्रजा १२ १८ य सुष्ठु समन्ताच्चिन्तयति स (अग्नि =राजा) ४ ३ ४ य सुष्ठु समन्ताद् ध्यायति सर्वान् पदार्थान् स (जगदीश्वरो जीवो वा) १ ७० २ सुष्ठु समन्ताद् धीयते येन स (होतृजन) १ ६७ १ **स्वाध्यम्**=य सुष्ठु ध्यायते तम् (रेत =वीर्यकर जलम्) ३३ ११ सुष्ठु समन्ताद् विद्याऽधीयते यस्मिन् यस्या वा तम् (नृपति विद्वासम्) १ ७१ ८ **स्वाध्यः**= सुष्ठु चिन्तयन्त (सज्जना) ७ २ ५ सुष्ठु धीर्येषा ते (विद्यार्थिजना) २ २८ २ सुष्ठु आधीर्येषान्ते (विद्वज्जना) १ १५१ १ ये सुष्ठु समन्ताद् ध्यायन्ति ते (मर्त्तास = मनुष्या) ६ १६ ७ ये सुष्ठु सम्यक् सर्वेषा कल्याण ध्यायन्ति ते (विद्वज्जना) १ ७२ ८ सुष्ठु विद्याऽऽधानकर्त्तार (विद्वासो जना) ३ ८ ४ ये स्वाध्यायन्ति ते (सज्जना). प्र०—अत्र स्वाङ्पूर्वकाद् ध्यै चिन्तायाम् इत्यस्माद् 'ध्यायते सम्प्रसारणञ्च' अ० ३ २ १७८ अनेन वार्तिकेन क्विप् सम्प्रसारण च १ १६ ६. गुबुद्धियुक्त (प्रजाजन) आर्याभि० १ ३५, ऋ० ११.३१ ६ अच्छे प्रकार ध्यानयुक्त (विद्वान् लोग) ग० प्र० १०६, ३ ८.४ [सु+आङ्+ध्यै चिन्तायाम् (भ्वा०) धातो 'ध्यायते सम्प्रसारणञ्च' अ० ३ २ १७८ वा०सूत्रेण क्विप सम्प्रसारण च। अथवा सु-आधिपदयो समास। आधि —आङ्+डुधाञ् धारणपोषणयो (जु०) धातो 'उपसर्गे घो कि' इति कि]

स्वान स्वनत्सुगादिगति यस्तत्सम्बुद्धौ (मित्र=सभाध्यक्ष विद्वन्) ४ २७ **स्वानः**=शब्दायमान (रथ) ५ १० ५ शब्द कुर्वन् (गर्व =अश्व) १.१०४ १. शब्द ५.२५ ८ [स्वन शब्दे (भ्वा०) धातो 'वा छन्दसी' ति नियमेन निरुपपदादपि 'कर्मण्यण्' इत्यण्। अथवा 'स्वनहसोर्वा' ३ ३ ६२ सूत्रेण पक्षे घञ्]

स्वानासः उपदेशका (सज्जना) ५ २.१० [स्वन शब्दे (भ्वा०) धातो छन्दसि निरुपपदादपि कर्मण्यण्। ततो जसोऽसुक्]

स्वानिनः बहव स्वाना शब्दा विद्यन्ते येभ्यस्ते (मरुत =वायव) ३ २६ ५. [स्वानप्राति० भूम्न्यर्थ इनि। स्वान स्वन शब्दे (भ्वा०) धातोर्घञ्]

स्वानीत् शब्दायते २ ४ ६ [स्वन शब्दे (भ्वा०) धातोर्लुङ्। अडभावश्छान्दस]

स्वापय निवारय, प्र०—अन्तर्गतो णिच् 'अन्येपामपि०' इति दीर्घश्च १ १६ ३ [ञिष्वप् शये (अदा०) धातोर्णिजन्ताल्लोट्]

स्वापये सुखाना सुष्ठु प्राप्तये ६ २० **स्वापी**= शयानौ (राजाऽमात्यौ) ४ ४१ ७ [सु+आप्लृ व्याप्तौ (स्वा०) धातोर्बाहु० औणा इन्। अन्यत्र स्वापप्राति० मत्वर्थ इनि। द्विवचनस्य पूर्वसवर्ण दीर्घ। स्वाप = ञिष्वप् शये (अदा०) धातोर्घञ्]

स्वाभुवम् य स्वयमाभवति तम् (पदार्थम्) ५ ६ ३ **स्वाभुवः**=ये सुष्ठु समन्तात् परोपकारे भवन्ति ते (मित्रास =सखाय) १ १५१ २ ये सुष्ठु समन्तादुत्तमा भवन्ति ते (विद्यावयोवृद्धा धार्मिका जना) ७ ३० ४ ये स्वय भवन्ति ते (इन्दव =ऐश्वर्याणि) ४ ५० १० [सु+आङ्+भू सत्तायाम् (भ्वा०) धातो कर्त्तरि क्विप्]

स्वायुजः या सुष्ठु समन्ताद् युञ्जन्ति ता.

यस्य स (नृप) ११ १५ [स्वरित-गव्यूतिपदयो समास । गव्यूति —गो-यूतिपदयो समासे 'अध्वपरिमाणे च' अ० ६ १ ७९ वा०सूत्रेण वान्तादेश]

स्वस्तिगाम् सुख गच्छन्ति यस्मिँस्तम् (पन्था=मार्गम्) ६ ५१ १६ स्वस्ति सुख गच्छन्ति येन तम् (पन्था=मार्गम्) ४ २९ [स्वस्ति इति व्याख्यातम् । तदुपपदे गम्लृ गतौ (भ्वा०) धातो 'जनसनखन०' अ० ३ २ ६७ सूत्रेण विट् । 'विड्वनोरनुनासिकस्यात्' इत्यात्वम्]

स्वस्तिमत् बहुसुखयुक्तम् (छर्दि =गृहम्) ६ ४६ ९ **स्वस्तिमतः**=सुखयुक्तान् (मनुष्यान्) १ ९० ५ [स्वस्ति इति व्याख्यातम् । ततो भूम्न्यर्थे मतुप्]

स्वः यदभिव्यानयति चेष्टयति प्राणादिसकल जगत् स व्यान ईश्वर प० वि०, ३६ ३ निर्विकार, सुखस्वरूप, यस्मिन् दुःख लेशामत्रमपि नास्ति तद् आनन्दघनब्रह्म ऋ० भू० ४, अथर्व० १० २३ ४ १ स्वय सुखस्वरूप और अपने उपासकों को सुख की प्राप्ति कराने वाला (परमेश्वर) स० वि० ७५, ३६ ३ यो विविध जगद् व्यानयति व्याप्नोति स व्यान परमेश्वर, जो नानाविध जगत् मे व्यापक होके सबको धारण करता है, इसलिए उस परमेश्वर का नाम 'स्व' है स० प्र० ५१, ३६ ३ नित्य-सुख स० वि० १९६, ९ ११३ ७ सुखविशेप पदार्थ स० प्र० ३१६, १० १९० ३ मोक्षसुखम् १८ २९ सासारिक सुखम् १८ ६३ ऐन्द्रिय सुखम् १८ ६४ सर्वचेष्टानिमित्तो व्यान, प्राणाऽपानव्यानैर्युक्त सन् (मनुष्य) ३ ३७ ज्ञानविद्याम् ३६ ३ सुखमादित्य वा, प्र०—स्वरादित्यो भवति स एतानि सारयति नि० ५ ४, ४ २५ सुखमुदक वा, अ०—सुखरूप परमेश्वरम् १ ११ अन्तरिक्षम् ३३ ७५ दिनमिव सुखम् २ २१ ४ मध्यस्थ लोकम् प० वि०, १ १९० ३ सूर्य इव सुखकारी (अग्नि =राजा) ४ १० ३ सुख-सम्पादक दिग्रूपम् १३ ५७ उपतपन्नादित्य इव (सभापती राजा) ७ ४५ अन्तरिक्षमिवाऽक्षय सुखम् ६ ७३ ३ सुख-कारक (जीव) १ ७० ४ स्वर्ग, सुखसाधनम् आर्याभि० २ १३, १८ २९ सुखसाधकम् (सूर्य =जगदीश्वरम्) २७ १० प्रकाशस्थात्लोकान् २३ ८ दिवम्, प्र०—"स्वरिति दिवम्, एतावद्वा, इद सर्व यावदिमे लोका सर्वेणैवाधीयते" श० २ १ ४ ११, ३ ५ [स्वरादित्यो भवति सु अरण सु ईरण । स्वृतो रसान् । स्वृतो भास ज्योतिषाम् । स्वृतो भासेति वा । एतेन द्यौर्व्याख्याता नि० २ १४ स्वरादित्यो भवति स एतानि सारयति नि० ५ ४ स्व -साधारणनाम निघ० १ ४ स्व उदकनाम निघ० १ १२ असौ (द्यु-) लोक स्व ऐ० ६ ७ (यजु० १ ११) -यज्ञो स्वरहर्देवा सूर्य श० ११ २ ७१ देवा वै स्व श० १९ ३ १४. अन्तो वै स्व ऐ० ५ २०]

स्वाः सम्बन्धिन (लोका) २७ ६४ स्वकीया (सेना) २ २३ ६ [स्वप्राति० जस् । 'स्वमज्ञातिधनाख्यायाम्' अ० १ १ ३५ सूत्रेण जसि सर्वनामसञ्ज्ञाया विकल्प]

स्वागतम् सुष्ठु गत्या समन्ताद् गच्छतम्, प्र०—अत्र विकरणलोपश्च १ ११२ ८ [सु+आङ्+गम्लृ गतौ (भ्वा०) धातोर्लोट् । शपो लुक्]

स्वाग्रयणः शोभनश्चासावाग्रयणश्च तद्वत् (सभापति-राजा उपदेशको वा) ७ २० [सु-आग्रयणपदयो समास]

स्वाङ्कृतः स्वयसिद्धोऽनादिस्वरूप (सुभव = सुष्ठ्वैश्वर्यो योगी जन) ७ ६ स्वय कृत इव (देव = दिव्यात्मा जन) ७ ३ [स्वयम्-कृतपदयो समासे छान्दस रूपम्]

स्वात्तम् स्वेन समन्ताद् गृहीतम्, अ०—धर्मानुष्ठान-स्वीकृतम् (देवहवि =देवेभ्यो हविरिव हुतद्रव्यम्) ६ १० [सु+आङ् डुदाञ् दाने (जु०) धातो क्त । 'अच उप-सर्गात्त' इति तादेश]

स्वादिष्ठ अतिशयेन स्वादित (ईश्वर) १ १८७ ५ [स्वादुप्राति० अतिशायने इष्ठन्]

स्वादिष्ठम् अतिशयेन स्वादु (नम =अन्नम्) १ १३६ १ [स्वादुप्राति० अतिशायन इष्ठन्]

स्वादिष्ठया अतिशयेन स्वादुयुक्तया (धारया=वाचा), भा०—सर्वरोगप्रणाशकयौषध्या २६.२५. अति-शयेन मधुरादिरसयुक्तया (गिरा=वाण्या) ३ ५३ २ **स्वादिष्ठा**=अतिशयेन स्वादिता (सन्दृष्टि =सम्यग् दृष्टि प्रेक्षणम्) ४ १० ५ अतिशयेन स्वाद्वी (धीति =धी) १ ११० १ [स्वादिष्ठमिति व्याख्यातम् । ततष्टाप् स्त्रियाम्]

स्वादीयः अतिशयेन स्वादु प्रियकरम् (मर्त्तभोजनम्) १ ११४ ६ [स्वादुप्राति० अतिशायन ईयसुन्]

स्वादु स्वादिष्ठम् (फलम्) १ १६४ २२ **स्वादुना**= मधुरादिना (रसेन) १९ १ [ष्वद आस्वादने (भ्वा०) धातो 'कृवापाजिमि०' उ० १ १ सूत्रेण उण्]

स्वादुक्षद्मा स्वादूनि क्षद्मानि जलानि, अन्नानि यस्य स (मनुष्य) १ ३१ १५ [स्वादु-क्षद्मन्पदयो समास । क्षद्मन्—अन्ननाम निघ० २ ७ उदकनाम निघ० १ १२]

अभिविपश्य अभिसमीक्षस्व ३ २३ २ [अभि+वि+दृशिर् प्रेक्षणे (भ्वा०) धातोर्लोट्। शिति पश्यादेश]

अभिवियन्ति अभिमुख प्राप्नुवन्ति ६ ६ ५ [अभि+वि+इण् गतौ (अदा०) धातोर्लट 'इणो यण्' इति यणादेश]

अभिवीता अभित सर्वतो व्याप्ता अभयाख्या (दक्षिणा) ७ २७ ४ [अभि+वी गतिप्रजनादिषु (अदा०) धातो क्त । स्त्रिया टाप्]

अभिवीर: अभीष्टा वीरा यस्य स (इन्द्र =सेनापति) १७ ३७ [अभि+वीरपदयोर्बहुव्रीहि । 'प्रादिभ्यो धातुजस्ये०' ति वार्त्तिकेनोत्तरपदलोपश्च]

अभिव्यक्रामत् सर्वतो व्याप्तवान् ऋ० भू० १२२ [अभि+वि+क्रमु पादविक्षेपे (भ्वा०) धातोर्लङ् । 'क्रम परस्मैपदेषु' सूत्रेण शिति दीर्घ]

अभिव्ययस्व सर्वतो व्यय कुरु ३ ५३ १६ [अभि+व्यय गतौ (भ्वा०) धातोर्लोट्]

अभिव्रजद्भि: सर्वतो गच्छद्भि (विद्वज्जनै) १ १४४ ५ **अभिव्रजन्**=अभित सर्वतो गच्छन् (आत्मा) १ ५८ ५ [अभि+व्रज गतौ (भ्वा०) धातो शतृप्रत्यय]

अभिव्लग्य अभित सर्वत प्राप्य १ १३३ २ अभित सर्वतो लगित्वा प्र०—अत्र पृषोदरादिना वुगागम. १ १३३ १ [अभि+लगे सङ्गे (भ्वा०) धातो क्त्वा, क्त्वो ल्यप् । वुगागमश्च]

अभिव्लङ्गै: अभितो गमनाऽऽगमनै १ १३३ ४ [अभि+लगि गतौ (भ्वा०) धातो 'हलश्चे' ति घञ् अधिकरणे]

अभिशस्तये अभितो हिंसनाय ५ ३ १२ [अभि+शसु हिंसायाम् (भ्वा०) धातो स्त्रिया भावे क्तिन्]

अभिशस्तिचातन: योऽभिशस्ति हिंसा चातयति स (अग्नि =पावक) ३ ३ ६ (अभिशस्ति+चते याचने (भ्वा०) धातोर् णिचि ल्यु प्रत्यय]

अभिशस्तिपाम् अभिमुखप्रशसारक्षितारम् (परीक्षक जनम्) ६ ५२ ३ **अभिशस्तिपा:**=योऽभिशस्ते हिंसनात् पाति रक्षति (ईश्वरो विद्युद्वा) ५ ५ [अभिशास्ति+पा रक्षणे (भ्वा०) धातोर् 'आतो मनिन्०' अ० ३ २ ७४ सूत्रेण विच् प्रत्यय]

अभिशस्तिपावा प्रशसिताना पालक पवित्रकर (अग्नि =विद्वज्जन) ७ ११ ३ योऽभिशस्तेराभिमुख्याद्धिसमानात्पाति रक्षति (अग्नि =विद्वन्मनुष्य) ५ ४ योऽभिशस्तेर्हिंसाया पावा रक्षक स (सभाध्यक्ष) १ ७३ ६ [अभिशस्ति+पा रक्षणे (भ्वा०) धातो 'आतो मनिन्०' अ० ३ २ ७४ सूत्रेण वनिप् प्रत्यय]

अभिशस्तिम् अभितो हिंसाम् ३ ३० १ दुर्वचनवादम् ३४ १८ **अभिशस्ते:**=आभिमुख्येन स्वप्रशसा कुर्वतो दम्भिन (जनस्य) ७ १३ २ अभित प्रशसितस्य (शर्धत = बलस्य) ६ ४२.४ हिंसाया १ ७१ १० सर्वतोऽपराधात् २७ ६ अभितो हिंसकात् (अग्ने) १ ६३ ५ सुखहिंसकात् (कार्यात्) १ ६१ १५ **अभिशस्त्यै**=आभिमुख्यायै स्तुतये, प्र०—अत्र 'शसु स्तुतौ' इत्यस्य क्तिन् प्रत्ययान्त प्रयोग २ ५ [अभि+शसु हिंसाया, शसु स्तुतौ वा धातो क्तिन्]

अभिशस्ती: अभितो हिंसी ३३ ६५ [अभि+शसु हिंसायाम्+क्तिन्]

अभिशासति आभिमुख्ये शासन करोति ६ ५४ २ [अभि+शासु अनुशिष्टौ (अदा०) धातोर्लट्]

अभिशुम्भमाना अभित प्रकाशयन्ती (उषा) १ ६२ १० [अभि+शुम्भ भाषणे (भासने चापि) (भ्वा०) धातो शानच् व्यत्ययेनात्मनेपदम्]

अभिशूशुचन् भृश शोक कुर्य्यु ३५ ८ [अभि+शुच् शोके (भ्वा०) धातोर्णिजन्ताल् लुङ् अडभावश्च]

अभिशोची: अभित शोकयुक्ता कुर्या १२ १५ [अभि+शुच शोके (भ्वा०) धातोर्लुङ् अडभावश्च]

अभिश्रावाय य अभित शृणोति श्रावयति वा तस्मै (पुरुषाय) १ १८५ १० [अभि+श्रुश्रवणे (भ्वा०) कर्त्तरि छान्दसत्वात् अण्]

अभिश्रियम् अभित शोभकम् (सभापतिम्) ३३ २१ **अभिश्रिया**=अभित शोभायुक्ते (द्यावापृथिव्यौ) १ १४४ ६ अभित सर्वत श्री शोभा लक्ष्मीर्याभ्यान्ते (द्यावापृथिवी= सूर्यभूमी) ३४ ४५ आभिमुख्या श्रीर्याभ्यान्ते (द्यावापृथिवी= भूमिसूर्यौ) ६ ७० १ **अभिश्री:**=अभित सर्वत श्रियो यस्य स (राजा) २६ ७ सर्वथा सब का निधि (शोभाकारक ईश्वर) आर्याभि० १ ३१, ऋ० १ ७ ६ १ अभित श्रियो यस्य यस्माद्वा (ईश्वरोऽग्निर्वा) १ ६८ १ अभित शोभा यस्य स (श्वेत =वायु) २७ २३ [अभिश्रीपदयो समास । 'श्री' शब्दे श्रिञ्सेवायाम् (भ्वा०) धातो 'क्विप् वचिप्रच्छ्यया०' वार्तिकेन क्विप् दीर्घश्च । अभिश्री अभिश्रयणीय नि० ७ २१]

अभिश्रोषन्तु अभिमुख शृण्वन्तु, प्र०—अत्र विकरणव्यत्ययेन लेटि सिप् १ ८६ ५ [अभि+श्रु श्रवणे (भ्वा०)

(भानव =सूर्यकिरणा) १ ६२ २ [सु+आङ्+युजिर् योगे (रुधा०) धातो क्विप्]

स्वायुधम् उत्तमाऽऽयुधप्रक्षेपकुशलम् (इन्द्र =राजानम्) ६ १७ १३ **स्वायुधाय**=शोभनान्यायुधानि यस्य तस्मै (राजपुरुषाय) १६ ३६ **स्वायुधाः**=शोभनान्यायुधानि ५ ५७ २ [सु-आयुधपदयो समास । आयुधम्=आङ्+युध सम्प्रहारे (दिवा०) धातोर्घञर्थे क । आयुधानि उदकनाम निघ० १ १२]

स्वायुधासः स्वकीयान्यायुधानि येपान्ते (विद्वासो राजपुरुषा) ५ ८७ ५ शोभनान्यायुधानि येषा ते (युद्धविद्याकुशला जना) ७ ५६ ११ [स्व-आयुधपदयो सु-आयुधपदयोर्वा समासे जसोऽसुक्]

स्वायुषा शोभनमायुर्जीवन प्राणधारण यस्मिँस्तेन ४ २८ **स्वायुः**=शोभनश्च तदायुश्च २७ ५ [सु-आयुष्पदयो समास । आयुष्—इण् गतौ (अदा०) धातो 'एतेर्णिच्च' उ० २ ११८ सूत्रेण उसि । णित्वाद् वृद्धि]

स्वारम् तापाज्जात तेज १३ ५५ उपताप शब्द वा २ ११ ७ [स्वर—स्वृ शब्दोपतापयो (भ्वा०) धातोरच् । ततो जातार्थे स्वरप्राति० अण् । अन्यत्र स्वृधातोर्घञ्]

स्वावसुः स्वेषु यो वसति स्वान् वा वासयति स (सूर्य =विद्वज्जन) ५ ४४ ७ [स्व-वसुपदयो समासे पूर्वपदस्य सहिताया दीर्घ]

स्वावेशः स्व आवेशो यस्य स (गृहस्थो जन) ७ ५४ १ यथाऽऽप्त शोभन धर्ममाविशति तथा (नेता सभाध्यक्ष) ६ २ [स्व-आवेशपदयो समास । आवेश—आङ्+विश प्रवेशने (तुदा०)+घञ्]

स्वावेशा सुष्ठु समन्ताद् वेशो यस्या सा, भा०—सदैवाऽत्युत्तमैर्वस्त्राभूपणै ससृष्टा (स्त्री) १४ ३ [सु-आङ्-वेशपदाना समास । ततष्टाप् स्त्रियाम् । वेश—विश प्रवेशने (तुदा०) धातोर्घञ्]

स्वासम् शोभन मुखम् ४ ६ ८ [सु-आस्यपदयो समास । यलोपश्छान्दस]

स्वासस्थम् सुष्ठ्वास्ते यस्मिँस्तम् (वर्हि =अन्तरिक्षम्) २८ २१ शोभने आसे उपवेशने तिष्ठतीति तम् (यज्ञम्) २ ५ [स्वासोपपदे ष्ठा गतिनिवृत्तौ (भ्वा०) धातो क । स्वास =सु+आस उपवेशने (अदा०) धातोर्घञर्थे क]

स्वासस्थाम् सुष्ठु आसा प्रक्षिप्तारितऽऽन्ति यस्या सा वेदिस्ताम्, प्र०—अत्र 'घञर्थे कविधानम्०' अ० ३ ३ ५८ इति वार्त्तिकेन क प्रत्यय २ २ [स्वासोपपदे ष्ठा गतिनिवृत्तौ (भ्वा०) धातोर्घञर्थे क । ततष्टाप् स्त्रियाम् । स्वास—सु+असु क्षेपणे (दिवा०) धातोर्घञ्]

स्वाहा या सत्क्रिया समूहाऽस्ति तया (वाण्या) १ १३ १२ सत्यभाषणयुक्ता वाक्, यच्छोभन वचन सत्यकथन, स्वपदार्थान् प्रति ममत्ववचो, मन्त्रोच्चारणेन हवन चेति स्वाहा-शब्दार्था विज्ञेया २ २ वेदवाणी इद कर्म्म आह २ ६. सुहुत सुखकारि आहेश्वर २ ११ सु आहेत्यस्मिन्नर्थे २ १८ स्वकीय पदार्थं प्रत्याह यस्या क्रियाया सा वा २ २० स्व दधात्यनया सा स्वाहा क्रिया २.२६ वेदवाणी यज्ञक्रियामाहेत्यस्मिन्नर्थे सुष्ठु सत्यमाह यस्या वाचि सा स्वकीया हृदयस्था वाग् यदाह तदेव सत्य वाच्य नाऽनृतमित्यस्मिन्नर्थे ३ ६ शोभन देयमादेयमाह यया सा (वेदवाणी) ३ ५७ सुष्ठु जुहोति, गृह्णाति, ददाति यया क्रियया तया, सुशिक्षितया वाचा, विद्याप्रकाशिकया वाण्या, सत्यप्रियत्वादिगुणविशिष्टया वाचा ४ ६ वेदवाणीप्रचाराय, परोपकारिकायै, अध्ययनाऽध्यापनविद्यायै, सत्यवाक्प्रवृत्तये, सङ्गता प्रिया शोभना स्तुतिप्रयुक्ता वाचम् ४ ७ येभ्यो विद्यावाक् प्राप्ता भवति (विद्यायुक्ता वाणी) ४ ११ सुहित हविरन्नम् ५ ४ अध्ययनाऽध्यापनराजव्यवहारकुशला वाक्, ज्योतिश्शास्त्रसस्कारयुक्ता वाणी, व्यवहारेण धनप्रापिका दिव्यविद्यासम्पन्ना (वाणी) वा ५ १२ वेदवाणी चक्षुरिन्द्रिय वा ५ १६ सत्यकृत्यानुरूपा (वाणी), सत्कृत्यानुकूला वा (वाणी) ६ ११ युद्धाऽनुकूला शोभना वाच, तत्स्थानानुकूला शोभना वाच वा ६ १६ बृहन्नौकारचनादिविद्यासिद्धेन यानेन, खगोलप्रकाशिकया विद्यया सम्पादितेन विमानेन, वेदवाचा, सत्सङ्गसस्कृतया (वाण्या) वा, योगयुक्तया वाचा, ज्योतिर्वोधयुक्तया वाचा, वेदाङ्गादिविज्ञानसहितया वाचा, भूमियानाऽऽकाशयानरचनभूगोलभूगर्भखगोल-विद्यया, वैद्यकशास्त्र-बोधाऽर्हया वाचा, तद्बोधयुक्तया वाण्या, तद्गुणविज्ञापयित्र्या वाचा, यज्ञाऽनुष्ठानयन्त्ररचनविद्यया वा ६ २१ स्तुतियुक्ता वाग् यथा तथा ६ २६ उत्साहिकया वाचा ६ २६ सत्या क्रिया, सत्या वाच वा ७ २ सत्यया स्वकीयया वाचा वेदवाचा वा ७ ४३ वैद्यकयुद्धविद्यया, शिक्षितया वाचा वा ७ ४४ श्रेष्ठक्रियया ८ १८ शास्त्रोक्तक्रियया ८ २० धर्म्यया क्रियया ८ २१ सत्य-न्यायप्रकाशितया वाचा वा ८ २२ प्रेमोत्पादयित्र्या वाचा ८ २५ सत्या सकलविद्यायुक्ता वाच ८ ३० सत्यवाग्युक्तया क्रियया ८.६२ सत्या क्रिया, धर्म्या क्रिया,

पुरुषार्थयुक्ताऽध्ययनाऽध्यापनप्रवर्त्तिका क्रिया, कालविज्ञापिका वाणी, विज्ञानयुक्ता वाक्, चेतयित्री वाणी, नष्टकर्मनिवारिका वाणी, पदार्थ-विज्ञापिका वाक्, योगविद्याजनिता प्रज्ञा, सर्वव्यवहारविज्ञापिका वाग् वा ६ २०. सत्यया नीत्या ६ २५ सत्यविद्यायुक्ता वाणीम् ६ २६ दानक्रियाम्, उत्साहकारिका वाच, दौत्यकुशलताम्, आप्तवाणी वा ६ ३५ आन्वीक्षिकी विद्या, सर्वोपकारिणी नीति, धर्मोपधिविद्या वा ६ ३६ सुष्ठुवाचा, सत्यया नीत्यया वा २० २ न्याययुक्तया नीत्या, प्रियया वाचा, युक्तिमत्या वाचा वा १० ३ सत्यवाक्प्रियाचरणयुक्ता विद्या, वैद्यकपुरुषार्थविद्या, व्याकरणाद्यङ्गविद्या, योगव्यवहारविद्या, ब्रह्मविद्या, विवेकविद्या, तथ्योपदेशे वक्तृत्वविद्या, तत्त्वकाव्यशास्त्रादिविद्या, सूक्ष्म-पदार्थविद्या, राजनीतिविद्या वा १० ५ वैद्यकशास्त्रबोधजनिता क्रिया, योगशान्तिदा वाच, सुशिक्षायुक्ता वाचमुपदिष्टिम् १० २३ क्रियायोगरीत्या ११ ६६ सत्या क्रिया, साध्वी क्रिया, योगाभ्यासादिक्रिया, धनप्रापिका क्रिया, कालविज्ञापिका क्रिया, वैराग्ययुक्ता क्रिया, सत्योपदेशिका वाक्, सत्या वाणी, सुष्ठूपदेश, उत्तमा वाक्, राजव्यवहारसूचिका क्रिया, राजधर्मद्योतिका नीति १८ २८ सुष्ठु रक्षणक्रियया, उत्तमरीत्या, निदानादिविद्यया, सुष्ठुविद्यया वा २१ ४० सुखप्रापिका क्रिया २२ ६ विचारयुक्ता वाणी, सत्यभाषणादियुक्ता भारती, आप्तोपदेशयुक्ता गी २२ २३ शुद्धिकारिका क्रिया २२.२५ उत्तमयज्ञक्रिया, उक्ता क्रिया, तदनुरूपा क्रिया २२ २६ सद्विद्यायुक्ता प्रज्ञा २३ २ ब्रह्मचर्यक्रियया, सुशीलतायुक्तया क्रियया वा २५ १ सत्यया क्रियया वाचा वा ३२ १३ सत्याऽऽचरणया क्रियया, भा०—ईश्वराज्ञापालनेन, विदुषा सेवया सत्कारेण ३२ १६ स्वकीयया क्रियया ३६ ७ भा०—सत्या मति, सत्या वाक्, सत्या क्रिया ३६ ११ भा०—घृतेन्धनप्रक्षेप ३६ १० प्रत्यक्षलक्षणया वेदस्थया वाचा ४ ६ वाच विद्युत वा ४ १८ यया क्रियया सुहुन यजति तया ४ २२. सुहुत जुहोतीत्यर्थे ५ १५ क्रियायोगरीत्या ११ ६६ सत्येन व्यवहारेण ११ ६६ परमोत्तमया क्रियया २१ ४० हवि अर्थात् पुष्ट्यादि कारक घृतादि उत्तम पदार्थो के होम करने से स० प्र० ३६५ स्वाहया सत्यविद्यान्विनया (मेधया) प० वि०, स्वमेव पदार्थं प्रति सत्यकथनम् प० वि०, सत्यमान, सत्यभाषण सत्याचरण सत्यवचनश्रवणञ्च ऋ० भू० २४०, ३४५ वेदोक्ता वाक् ७ ३ सुष्ठ्वाहुत हवि करोत्यनया सा (वाक्) २ २१ सु आहाऽनया सा (वाणी) २ २० ईश्वरस्य स्वा वागाह ३ १० हुतामाहुतिम् ३ १० सत्यवचनरूपा क्रिया, अ०—सत्यारूढा क्रिया ७ ६ शोभन हविर्जुहोति यया क्रियया सा २ २२ शोभनाऽन्नेन सुशिक्षितया वाचा वा ३ ४ ११ जैसा हृदय मे ज्ञान वैसा वाणी मे भाषण आर्याभि० २ १३, १८ २६ प्रशमिता वाक् ३८ १८ [स्वाहा वाङ्नाम निघ० १ ११ स्वाहा—स्वाहेत्येतत् सु आहेति वा, स्वा वागाहेति वा, स्व प्राहेति वा, स्वाहुत हविर्जुहोतीति वा नि० ८ २० सु-आहपदयो समासे स्त्रिया टाप्। 'मयूरव्यसकादयश्चे' ति समास । आह—ब्रूञ् व्यक्तायां वाचि (अदा०) धातोर्लटि 'ब्रुव पञ्चानाम्०' अ० ३ ४ ८४ सूत्रेण तिपो णल् आहादेशश्च। अथवा सु+आङ्+हु दानादानयो (जु०) धातोर्डे । तत स्त्रिया टाप्। अथवा स्व दधातीति विग्रहे स्वोपपदे आङ्पूर्वाद् डुधाञ् धारणपोषणयो (जु०) धातोश्छान्दस रूपम्। स्वाहाकार —स प्रजापतिर्विदाञ्चकार स्वो वै मा महिमाहेति स स्वाहेत्येवाजुहोत्तस्मादु स्वाहेत्येव हूयते श० २ २ ४ ६ हेमन्तो वाऽऋतूना स्वाहाकारो हेमन्तो हीमा प्रजा स्व वशमुपनयते श० १ ५ ४ ५ स्वाहा वै सत्यसम्भूता ब्रह्मणो दुहिता ब्रह्मप्रकृता लातव्यसगोत्रा त्रीण्यक्षराण्येकं पद त्रयो वर्णा शुक्ल पद्म सुवर्ण इति प० ४ ७ अन्तो वै यज्ञस्य स्वाहाकार श० १ ५ ३ १३ यज्ञो वै स्वाहाकार श० ३.३ २ ७ अहुतमिवैतद् यदस्वाहाकृतम् श० ४ ५ २ १७ अनिरुक्तो वै स्वाहाकार श० २ २ १ ३ स्वाहा वै सत्यसम्भूता ब्रह्मणा प्रकृता लामगायनसगोत्रा द्वे अक्षरे एक पद त्रयश्च वर्णा शुक्ल पद्म सुवर्ण इति गो० पू० ३ १६. एष वै स्वाहाकारो य एष (सूर्य) तपति श० १४ १ ३ २६ अन्न हि स्वाहाकार श० ६ ६ ३ १७ तस्यै (वाचे) द्वौ स्तनौ उपजीवन्ति स्वाहाकार च वषट्कार च श० १४ ८ ६ १]

स्वाहाकृतम् सत्क्रियया निष्पादितम् (हव्य=ग्रहीतुमर्हं द्रव्यम्) २ ३ ११ वेदवाणीनिष्पादितम् (हव्यम्) १७ ८८ सत्येन निष्पादित कृतहोम वा (हवि =अत्तव्यमन्नादिकम्) २६ ३६ **स्वाहाकृतस्य**=सत्यक्रियानिष्पन्नस्य (घर्मस्य=यज्ञस्य) ३६ १० सत्यवाङ्निष्पन्नस्य धर्मस्य १ ११० १ **स्वाहाकृत**=सत्यक्रियया निष्पन्न (विद्वज्जन) २२ ३ **स्वाहाकृतेन**=सुष्ठु सस्कारक्रियया निष्पादितेन (हविषा=दातुमर्हेण पदार्थेन) २६ ११ [स्वाहा-कृतपदयो समास । स्वाहेति व्याख्यातम्]

स्वाहाकृतानि सत्यक्रियया निष्पादितानि (हव्यानि=ज्ञानानि) १ १४२ १३ [स्वाहा-कृतपदयो समास]

स्वाहाकृताः या क्रियया सुसंस्कृता क्रियन्ते ता (आप=जलानि) ४ १३ या स्वाहा सत्या क्रिया कुर्वन्ति ता (सभासस्त्रिय) १० २६ **स्वाहाकृते**=सत्यवाचमुपगते व्यवहारे, अ०—द्यावापृथिव्यौ ६ १६ [स्वाहा-कृतपदयो समास । अन्यत्र स्वाहोपपदे डुकृञ् करणे (तना०) धातो कर्त्तरि बाहु० औणा० क्त । तत स्त्रिया टाप्]

स्वाहाकृतीनाम् सत्यवाक्क्रियाऽनुष्ठानानाम् (भा०—सत्क्रियाणाम्) २८ ११ **स्वाहाकृतीषु**=स्वाहया कृतय क्रिया येषु व्यवहारेषु तेषु १.१८८ ११ **स्वाहाकृतीः**=वाण्यादिभि कृता क्रिया २८ ३४ [स्वाहा-कृतिपदयो समास । प्राणा वै स्वाहाकृतय कौ० १० ५ प्रतिष्ठा वै स्वाहाकृतय ऐ० २ ४]

स्वाहुत सुष्ठु सत्कृत (अग्ने=राजन्) ७ १६ ७ सुष्ठ्वादत्तविद्य (भा०—अग्न्यादिपदार्थविद्याविज्जन) ३३ १४ **स्वाहुतम्**=सुष्ठ्वाहुतम् (अग्नि=विद्युतम्) ७ १२ १ य सुष्ठ्वाहूयते तम् (अग्नि=विद्वासम्) १ ४४ ४ **स्वाहुतः**=सुष्ठु समन्ताद् हुत आदत्त सन् (भौतिकोऽग्नि) १५ ३३ सुष्ठु-मानेन कृताऽऽह्वान (अग्नि=वह्नि) ६ २७ ५ सुष्ठु निमन्त्रितो विद्वान् १५ ३४ य सुखेनाऽऽहूयते स (विद्वज्जन) १ ४४ ६ [सु-आहुतपदयो समास । आहुत—आङ्+हु दानादानयो (जु०) धातो क्त. । अथवा सु+आङ्+ह्वेञ् स्पर्धाया शब्दे च (भ्वा०) धातो क्त । 'हल' सूत्रेण प्राप्तो दीर्घो न भवति छान्दसत्वात् । छान्दस ह्रस्वत्व वा]

स्वित् प्रश्ने २३ ९ वितर्के १७ १८ अपि ३३ ७४ सवितर्कम् १७ १८

स्विते सुष्ठु ईयते प्राप्यते येन व्यवहारेण तस्मिन्, समीक्षा—इद पदमवैयाकरणेन महीधरेण लेट्-लकारस्य रूपमित्यशुद्ध व्याख्यानम् ५ ५ [सु-इतपदयो समास । इत=इण् गतौ (अदा०) धातो क्त]

स्विध्मा सुष्ठु इध्मा सुखप्राप्तिर्यया सा (वनधृति=वनाना धृति) ११ २१ ६ [सु-इध्मापदयो समास । इध्मा=ञिइन्धी दीप्तौ (रुधा०) धातो 'इषियुधीन्धि०' उ० १ १४५ सूत्रेण मक् । तत स्त्रिया टाप् । धातूनामनेकार्थकत्वादत्र प्राप्त्यर्थ इन्धी]

स्विन्नः स्वेदयुक्त (मनुष्य) २० २० [ञिष्विदा गात्रप्रक्षरणे (दिवा०) धातो क्त । 'रदाभ्याम्०' इति नत्वम्]

स्विषु शोभना इषवो यस्य स (वीरजन) ५ ४२ ११ [सु-इषुपदयो समास]

स्विष्टकृत् य शोभनमिष्ट करोति स (भगवान्) २ ६ सुष्ठु सुखकारी (इन्द्र=राजा), शोभनेष्टकारी (अग्नि=वह्नि) २१ ५८ उत्तमेष्टकारी (अग्नि) २८.२२ [स्विष्टोपपदे डुकृञ् करणे (तना०) धातो कर्त्तरि क्विप् । 'ह्रस्वस्य पिति०' इति तुक् । स्विष्टम्=सु-इष्टपदयो समास । स्विष्टकृत्—(अग्नि) तदेभ्य (देवेभ्योऽग्नि) स्विष्टमकरोत्तस्मात् (अग्नये) स्विष्टकृतऽइति (क्रियते) श० १ ७ ३ ९ अग्निर्हि स्विष्टकृत् श० १ ५ ३ २३ रुद्र स्विष्टकृत् श० १३ ३ ४ ३ रुद्रिय (=रुद्रदेवत्य) स्विष्टकृत् (याग) श० १ ७ ३ २१ क्षत्र वै स्विष्टकृत् श० १२ ८ ३ १९ तप स्विष्टकृत् श० ११ २ ७ १८ अयमेवावाङ्प्राण स्विष्टकृत् श० ११ १ ६ ३० तृतीयसवन वै स्विष्टकृत् श० १ ७ ३ १६ वास्तु स्विष्टकृत् श० १ ७ ३ १८ प्रतिष्ठा वै स्विष्टकृत् ऐ० २ १० कौ० ३ ८ एषा (उत्तरा=उदीची) हि दिक् स्विष्टकृत् श० २ ३ १ २३]

स्विष्टकृतम् स्विष्टेन कृतम्, भा०—स्वेष्ट-साधकम् (अग्निम्) २१ ४७ [स्विष्ट-कृतपदयो समास । स्विष्टम्=सु-इष्टपदयो समास । इष्टम्=इषु इच्छायाम् (तुदा०)+क्त]

स्विष्टम् शोभनञ्च तदिष्टम् (पदार्थम्), अतिशयेनाऽभीप्सितम् (कार्यम्) २८ २२ [सु-इष्टपदयो समास । इष्टम्=इषु इच्छायाम् (तुदा०) धातो क्त]

स्विष्ट. शोभनश्चाऽसाविष्टश्च स (इन्द्र=राजा) शोभनमिष्ट यस्मात् स (अग्नि=वह्नि) २१ ५८ शोभनमिष्ट येभ्यस्ते (देवा=विद्वज्जना) २१ ५८ **स्विष्टेन**=शोभनेनेष्टेन (यज्ञेन) २५ २८ [सु-इष्टपदयो समास । स्विष्टम्=यद्वै यज्ञस्यान्यूनातिरिक्त तत्स्विष्टम् । श० ११ २ ३ ९]

स्विष्टाः शोभनानीष्टानि याभ्यस्ता (योगिन्यो विदुष्य) ७ १५ [सु-इष्टपदयो समासे स्त्रिया टाप्]

स्विष्टिम् शोभना इष्टिर्यस्यास्ताम् (अग्नेर्जिह्वा=पावकस्य ज्वालाम्) २७ १८ [सु-इष्टिपदयो समास । इष्टि=यज देवपूजासगतिकरणदानेषु (भ्वा०) इषु इच्छायाम् (तुदा०) धातोर्वा स्त्रिया क्तिन्]

स्विष्टे शोभनमिष्ट याभ्या ते (अ०—सुखे) २ १९. [सु-इष्टपदयो समास]

स्वेतन सुष्ठु समन्तात् प्राप्नुत १७ ८४ [सु+आङ्+इण् गतौ (अदा०) धातोर्लोट् । तस्य तनवादेशश्छान्दस]

स्वेदम् प्रस्वेदमिव (वर्ष) ५.५८.७. **स्वेदस्य**=पुरुषार्थेन जायमानस्य (विद्वज्जनस्य) १.८६.८ [ञिष्विदा स्नेहनमोचनयो (भ्वा०) धातोर्घञ्। ञिष्विदा गात्रप्रक्षरणे (दिवा०) धातोर्वा घञ्। स्वेद तद्यदब्रवीत् महद्वै यज्ञ सुवेदमविदामहे इति तस्मात्सुवेदोऽभवत्त वा एत सुवेद सन्त स्वेद इत्याचक्षते गो० पू० १.१]

स्वेदुहव्यैः स्वानि इदूनि ऐश्वर्याणि हव्यानि दातुमादातु योग्यानि येभ्यो दुग्धादिभ्यस्तै १.१२१.६ स्वेन प्रकाशित-दानाऽऽदानै १.१७३.२ [स्व-इदु-हव्यपदाना समास.। इदु=इदि परमैश्वर्ये (भ्वा०) धातोर्बाहु० औणा० कु।नुमोऽभावश्छान्दस। हव्यम्=हुदानादानयो (जु०) धातोर्यत्]

स्त्रेषते सुष्ठु समन्तात् प्राप्नोति ५.६७.५. [सु+इष गतौ (दिवा०) धातोर्लट्। विकरणव्यत्ययेन शप्]

स्वैतवः सुष्ठु गमना (विद्वासो जना) ५.४१.९ [सु-ऐतुपदयो समास। ऐतु=इण् गतौ (अदा०) धातोर्बाहु० औणा० तुन् णिच्च]

स्वोजः सुष्ठु पराक्रमो यस्य तत्सम्बुद्धौ (इन्द्र=गृहस्थिपुरुष) ६.२२.६ **स्वोजा**=शोभनमोज पराक्रमो-ऽन्न वा यस्य स (इन्द्र=विद्युदिव राजा) ७.२०.३ [सु-ओजस्पदयो समास। ओजस् बलनाम निघ० २.९. उदकनाम निघ० १.१२.]

स्वौपशा उप समीपे श्यति तनूकरोति यया पाक-क्रियया सोपशा, तस्या इद कर्म्म औपश, तच्छोभन विद्यते यस्या सा (परिचारिका स्त्री) १.१५६ [सु-औपशपदयो. समासे स्त्रिया टाप् छान्दस। औपशम् उपशाप्राति० 'तस्येदम्' इत्यर्थेऽण्। उपशा=उप+शो तनूकरणे(दिवा०) धातो 'आतश्चोपसर्गे' इति स्त्रियामङ्]

ह किल १.११६.३ खलु १.६३.४ प्रसिद्धम् १.६३.५ एव ३.११.६ निश्चयेन १.५७.२ स्फुटम् १.३७.१३ वैसे ही स० वि० १०५, ५.४१.७ [अह इति च ह इति विनिग्रहार्थीयौ पूर्वेण सयुज्येते—अयमहेद करो-त्वयमिद ह करिष्यतीद न करिष्यति नि० १.५.]

हत घ्नन्ति, प्र०—अत्र व्यत्ययो लडर्थे लोट् च १.२३.९ **हतम्**=नाशयतम् १.१८२.४ हन्यात, विनश्यतम् ८.५.३ **हतः**=हिसत ६.६०.६. **हथ**=भग्नाऽङ्गाञ्छत्रून् कुरुथ १.३९.३ **हन्**=हसि ६.२६.५ हन्ति ५.२९.२ हन्यात् ५.२९.४ **हनति**=हन्ति, प्र०—अत्र 'बहुल छन्दसि' इति शपो लुक् न ३.३.९६ **हनन्त**=घ्नन्ति ७.५६.२२ **हन.**=हन्या. १.८१.३ **हनाम**=हिंसेम १.१६१.५ **हन्ति**=नाशयति, दूरीकरोति १.१६१.२. **हन्तु**=दूरीकुर्वन्तु ३.३३.१३ **हन्मः**=गर्हितानि निमीलितान्यदर्शकानि कुर्मः ७.५५.६. **हंसि**=नाशयसि प्राप्नोषि वा ७.१९.४. हन्ति, प्र०—अत्र पुरुषव्यत्यय ५.८३.९ [हन हिंसागत्यो. (अदा०) धातोर्लट्। अन्यत्र लट् लट् लेट् चापि। हनति गतिकर्मा निघ० २.१४]

हतम् विनष्टम् (रक्ष=राक्षस जनम्) ९.३८ **हतः**=नष्ट (पाप्मा=अपराध) ६.३५. विनष्ट. (दुर्जन) ९.३८ [हन हिंसागत्यो (अदा०) धातो क्त]

हतवृष्णीः हतो वृषा मेघो याभिः ता (आप=जलानि) ४.१७.३ [हत-वृषन्पदयो समासे स्त्रिया ङीप्। वृषन्=वृषु सेचने (भ्वा०) धातोरौणा० कनिन्]

हताऽघशंसौ हता अघशसा स्तेना याभ्या तौ, भा०—स्तेननाशकौ (देवा=वायुवह्नी) २८.१७. [हत-अघशसपदयो समास। अघशस स्तेननाम निघ० ३.२४]

हतासः नष्टा (देवश्रव=विदुषामरय) ६.५६.१. [हतप्राति० जसोऽसुक्। हत=हन हिंसागत्यो. (अदा०)+क्त]

हताः विनाशिता (अभिख्या.=शत्रव) १.१३३.१ **हते**=हिंसिते (योषे=विरुद्धे स्त्रियौ) १.१०४.३ [हत इति व्याख्यातम्। अन्यत्र हतप्राति० स्त्रिया टाप्]

हतवे हननकरणाय १.२५.२ [हन हिंसागत्यो (अदा०) धातो 'कृहनिभ्या क्त्नु' उ० ३.३० सूत्रेण क्त्नु]

हत्वी हत्वा २.२०.८ [हन हिंसागत्यो (अदा०) धातो क्त्वा। 'स्नात्व्यादयश्च' अ० ७.१.४९. इतीदन्तत्वम्]

हथैः हननै ४.३०.२१ [हन हिसागत्यो (अदा०) धातो 'हनिकुषिनी०' उ० २.२ इति क्थन्। हथ हननात् नि० ६.२७]

हनिष्ठः अतिशयेन हन्ता (इन्द्र=राजा) ६.३७.५ [हन हिंसागत्यो (अदा०) धातो कर्त्तरि तृजन्तात् 'तुश्छन्दसि' सूत्रेणातिशायन इष्ठन्। 'तुरिष्ठेमेयस्सु' इति तृचो लोप]

हनिष्यन् हनन करिष्यन् (पुन:=सन्तान) ४.१८.११ [हन हिंसागत्यो (अदा०) धातो 'लृट सद्वा' इति शतृ]

हनीयसे दुष्टानामतिशयेन हन्त्रे विनाशकाय (जनाय) १.६४० [हन्तृप्राति० 'तुश्छन्दसि' त्वतिशायन ईयसुन्। तत तृचो लोप 'तुरिष्ठेमेयस्सु' सूत्रेण]

हनुभ्याम् ओष्ठमूलाभ्याम् ११.७८. मुखैकदेशाभ्याम् २५.१ **हनू**=मुखनासिके ५.३६.२ मुखपार्श्वौ ४.१८.९

हन्वोः=मुखाऽवयवयो २४ १ [हन हिंसागत्यो (अदा०) धातो 'शृस्वृस्निहि०' उ० १ १० सूत्रेण उ । हनुर्हन्ते नि० ६ १७]

हन्तन घ्नत २ ३४ ६ [हन हिंसागत्यो (अदा०) धातोर्लोट् । तप्रत्ययस्य तनवादेशश्छान्दस]

हन्तवे हन्तुम् ३ ३७ ६ [हन हिंसागत्यो. (अदा०) धातोस्तुमर्थे तवेन्]

हन्तवै हन्तुम् ५ ३१ ४ [हन हिंसागत्यो (अदा०) धातोस्तुमर्थे तवै प्रत्यय]

हन्ता नाशक (विद्वान् पुरुप) १२ ५ शत्रूणा घातक (इन्द्र =सूर्य इव राजा) ७ २० २ **हन्त्रे**=यो दुष्टान् हन्ति तस्मै (जनाय) १६ ४० [हन् हिंसागत्यो (अदा०) धातो कर्त्तरि तृच्]

हन्तोः हन्तुम् ३ ३० १० [हन हिंसागत्यो (अदा०) धातोस्तुमर्थे तोसुन् छान्दस । हन्तो हननाद् नि० ६ २]

हन्त्वासः हन्तु योग्या (रिपव =शत्रुजना) ३ ३०.१५ [हन हिंसागत्यो (अदा०) धातोर्वाहु० औणा० त्वन् । जसोऽसुक्]

हन्मना हननेन ७ ५६ ८ हन्ति येन तेन (मनसा) १ ३३ ११. [हन हिंसागत्यो (अदा०) धातो 'कृतो वहुलम् वा' इति करणे मनिन् । 'न सयोगाद्वमन्तात्' अ० ६ ४ १३७ इत्यल्लोपो न भवति]

हन्वेव यथा हनू तथा १ १६८ ५ [हनू-इवपदयो समास]

हयन्ता गच्छन्तौ (अश्विनौ=सभासेनाधीशौ) १ १११ १८ [हयति गतिकर्मा निघ० २ १४ हय गतौ (भ्वा०) धातो शत्रन्ताद् द्विवचनस्याकारादेश]

हयः सुशिक्षितोऽश्व ५ ४६ १ हय इव शीघ्रगामी (अग्नि =सूर्यरूप) २२ १६ ज्ञानवर्धनम्, प्र०—हि गतिवृद्ध्यो इत्यस्मादौणादिकोऽसुन् प्रत्यय ७ ४७ [हि गतौ वृद्धौ च (स्वा०) धातो पचाद्यच् । अथवा हि धातोरौणा० असुन् । हय अश्वनाम निघ० १ १४ हयो भूत्वा देवानवहत् श० १० ६ ४ १ हयः—(हेऽश्व त्व हयोऽसि ता० १ ७ १]

हये सम्वोधने २ २६ ४

हर निस्सारय २५ ३५ **हरयन्त**=कामयन्ताम् ४ ३७ २ **हराणि**=प्रयच्छानि ३ ५० **हरासि**=हर, प्रयच्छ, प्र०—अय लेट्प्रयोग ३ ५० [हृञ् हरणे (भ्वा०) धातोर्लोट् अन्यत्र लेट् । हरयन्त-प्रयोगे हरतेर्णिजन्ताल्लङ् । अडभावश्छान्दस]

हरन्तः प्रापयन्त (जना) ऋ० भू० २६८, अथर्व० १६ ७ ७ [हृञ् हरणे (भ्वा०) धातो शतृ]

हरन्निव भा०—यथा सूर्यो मेघमण्डले जलभार नयन् २३.२७ [हरन्-इवपदयो समास । हरत्=हृञ् हरणे (भ्वा०)+शतृ]

हरयः हरन्ति ये ते किरणा, प्र०—'हृपिषिरुहि०, उ० ४ ११८ इति हृधातोरिन् प्रत्यय १ १६ १ हरणशीला (रश्मय) १ १६४ ४७ पुरुषार्थिनो मनुष्या ३ ५.२ सुशिक्षितास्तुरङ्गा इवाऽग्न्यादय ३ ४३ ६ अश्वा इवेन्द्रियाण्यन्त करणप्राणा ६ ४७ १८ **हरिभिः**=हरणाऽऽहरणशीलैर्वेगवद्भि किरणै १ १६ ४ प्रयत्नवद्भिर्मनुष्यैरिवाऽश्वै किरणैर्वा ३ ४५ १. उत्तमैर्वीरपुरुषै ४ २९ १ सद्गुणाकर्षकैर्मनुष्यैस्सह ७ २६.२ प्रशस्तैर्नरै सह ४ २० २ **हरिभ्याम्**=धारणाकर्षणवेगगुणैर्युक्ताभ्या तुरङ्गाभ्याम् जलाग्निभ्या वा ३४.१६ अश्वाभ्यामिव पठनाऽभ्यासाभ्याम् ४ १५ ७. धारणाकर्षणाभ्याम् १ ७६ ३ वाय्वग्नीभ्याम् ३ ४३ २ हरणशीलाभ्या हस्ताभ्याम् ५ ३६ ५ अध्यापकोपदेशकाभ्या मनुष्याभ्याम् ६ २३ ४ **हरिम्**=हयम् १ १२१ ८ हरमाणम् अद्रिबुध्न=मेघाकाशम्) १३ ४२ **हरिः**=यो हरते वहते *यथायोग्य गृहाश्रमव्यवहारान्* स (गृहपति) ८ ११ मनोहारी चन्द्रो वालो वा ३३ ५ हरणशीलो वायु ३ ४४ ३ हरत्युष्णतामिति (चन्द्र) १ ६५ १ आशुगन्ता, सर्वेभ्यो ज्येष्ठ (विद्युद्रूपोऽग्नि) ३८ २२ **हरी**=अविद्याया हन्तारौ (अध्यापकोपदेशकौ) ४ १५ ८ तुरङ्गाविवाऽग्निजले ४ ३३ १० धारणाकर्षणकर्माणौ (केतू=किरणौ) २ ११ ६ वायुविद्युतौ ४ ३५ ५ हरणशीलावाकर्षणवेगगुणौ (रथे=याने) १ ६ २ व्याप्तिहरणशीलावश्वौ १ १० ३ हरति याभ्यान्तौ कृष्णशुक्लपक्षौ वा पूर्वपक्षाऽपरपक्षौ वा १ १६ २ वलपराक्रमी धारणाकर्षणे वा ३ ५२ यानहारकौ (अश्वौ) ३ ३५ ५ सद्व्यवहारहरणशीलसेनान्यायप्रकाशौ १ ६३ २ सूर्यस्य प्रकाशाऽऽकर्षणे १ १२१ ८ यौ यानानि हरतस्तौ (अश्वौ) १ १७४ ४ धारणाकर्षणगुणौ १ १६२ २१ सयुक्तावश्वाविव राजप्रजाजनौ ६ ४० १ **हर्योः**=हरणाहरणगुणयो (इन्द्रयो = वायुसूर्ययो) १ ७ २ [हृञ् हरणे (भ्वा०) धातो 'हृपिषिरुहि०' उ० ४ ११८ सूत्रेण इन् । हरी इन्द्रस्य निघ० १ १५ हरय मनुष्यनाम निघ० २ ३ हरि सोमो हरितवर्ण । अयमपीतरो हरिरेत मादेव नि० ४ १६

हरय हरणा (आदित्यरश्मय) नि० ७ २४ हरि—(ऋ० ६ ४७ १८. युक्ता ह्यस्य (इन्द्रस्य) हरयश्शतादशेति सहस्र हैत आदित्यस्य रश्मय । तेऽस्य युक्तास्तैरिद सर्व हरति । तद् यदेतैरिद सर्वं हरति तस्माद्धय (=रश्मय.) । जै० उ० १ ४४ ५ प्राणो वै हरि: स हि हरति । कौ० १७ १. एप वै वृषा हरिर्य एष (आदित्य) तपति श० १४ ३ १ २६. हरी—(इन्द्रस्य) ऋक्सामे वा इन्द्रस्य हरी ताभ्या हीद सर्वं हरति प० १.१.]

हरसा हरति येन तेन बलेन १६ ८८ ज्वलितेन तेजसा १३ ४१ ज्वलनेन, प्र०—हर इति ज्वलतो नाम निघ० १ १७, १२ १६ **हरसे**=हरति पापानि यस्तस्मै (ईश्वराय) ३६.२०. यो दु ख हरति तस्मै (सभापतये) १७ ११ [हृ हरणे (भ्वा०) धातोरौणा० असुन् । हर. ज्वलतो नाम निघ० १ १७ क्रोधनाम निघ० २ १३ पदनाम निघ० ४ १ वीर्य वै हर इन्द्रोऽसुराणा सपत्नाना समवृङ्क्त श० ४ ५ ३ ४ हर —(यजु० १३ ४१) (=अर्चि) परिवृङ्धि हरसा माभिमस्था इति पर्येन वृङ्ध्यर्चिषा मैन हिंसीरित्येतत् । श० ७ ५ २ १७ हर =हरो हरतेर्ज्योतिर्हर उच्यते नि० ४ १९]

हरस्वती बहुहरणशीला सेना २.२३ ६ [हरस् इति पूर्वपदे व्याख्यातम् । ततो मतुवन्तात् स्त्रिया ङीप् । हरस्वत्य नदीनाम निघ० १ १३]

हरिकेशम् हरयो हरणशीला केशा रश्मयो यस्मात्तम् (अग्नि=पावकम्) ३ २ १३. **हरिकेश:**=हरणशीला हरितवर्णा केशा इव केशा प्रकाशा यस्य स (सूर्यरश्मि = सूर्यस्य किरण), प्र०—अत्र 'क्लिशेरन् लो लोपश्च' उ० ५ ५३ इत्यन् लकारलोपश्च १५ १५, हरितवर्ण (सूर्यरश्मि) १७ ५८ **हरिकेशाय**=हरिता केशा यस्य तस्मै (सेनाधीशाय) १६.१७. **हरिकेशेभ्य:**=हरयो हरणशीला सूर्यरश्मयो येषु तेभ्य (वृक्षेभ्य) १६ १७ हरयो हरिता केशा येषा तेभ्यो वृक्षेभ्य १६ ४० [हरिकेशपदयो समास । हरिरिति व्याख्यातम् । केश =क्लिश उपतापे (दिवा०) धातो 'क्लिशेरन् लो लोपश्च' उ० ५ ३३ सूत्रेणान् ललोपश्च । केशा रश्मय ।···काशनाद्वा प्रकाशनाद्वा नि० १२ २५ हरिकेश —(यजु० १५ १५) यद्धरिकेश इत्याह हरिरिव ह्यग्नि श० ८ ६ १ १६]

हरिणस्य हर्त्तु शीलस्य वीरस्य २९ १२ **हरिण:**=पशुविशेष २३ ३० [हृञ् हरणे (भ्वा०) धातो 'श्यास्त्याहृञविभ्य इनच्' उ० २ ४६. सूत्रेण इनच् । हरिण.—(यजु० २३.३०.) गाद्र हरिण: श० १३.२ ९ ८]

हरिणी: प्रशस्ता हरो हरण विद्यते यासा ता (स्त्रिय) २३ ३७ [हरप्राति० प्रशसायामर्थ इनि । तत स्त्रिया ङीप् । हर =हृञ् हरणे (भ्वा०) धातोरप् । हरितप्राति० वा स्त्रिया 'वर्णादनुदात्तात्तोपधात्तो न' अ० ४ १ ३९. सूत्रेण ङीप् तस्य नकारादेशश्च । हरिणी (सूची) ऊर्वा हरिण्य (सूच्य) । तै० ३ ९ ६ ५. हरिणी (=सुवर्णमयी) द्यौ । गो० उ० २.७ दिवो (रूप) हरिण्य (सूच्य) तै० ३.९.६ ५ हरिणीव हि द्यौ श० १४ १ ३.२९ विद् वै हरिणी तै० ३.९ ७.२.]

हरितम् कमनीयम् (विश्वम्) ३ ४४ ४ अग्न्यादिभिर्वाहितम् (रथ=रमणीय यानम्) ३.४४.१ हरित = ये हरन्त्युदकादिक ते (किरणा) ५ ४५.१० दिशो इव (देवा) ७.४२ २ रश्मीन् १ १२१ १३ हरितवर्णा किरणा ५ २९ ५ हरन्ति यास्ता ज्वाला १ १४ १२ हरणशीला दिश ३३ ३८ ह्रियन्ते पदार्था यासु ता दिश ३३ ३७. दिश इव व्याप्ता किरणा ४ १३ ३ अङ्गुलय ४ ६ ९ ये किरणै रसान् हरन्ति त आदित्यरश्मय १ ५० ८. दिशो विदिश १ १३० २ **हरितो:** हरणशीलयोर्गुणयो. ३ ४४ ३ [हरित्=हृञ् हरणे (भ्वा०) धातो- 'हसृरुहि०' उ० १ ९७. सूत्रेण इति प्रत्यय । हरित हरणानादित्यरश्मीन् हरितोऽश्वानिति वा नि० ४ ११ हरित दिङ्नाम निघ० १ ६ नदीनाम निघ० १ १३. अङ्गुलिनाम निघ० २ ५ हरित आदित्यस्य निघ० १ १५ हर्यति कान्तिकर्मा (निघ० २ ६ धातोर्वा रूपम् । हरित —दिशो वै हरित श० २ ५ १ ५.]

हरित: हरितादिवर्ण (वृष =सूर्य) ३ ४४ ४ [हृञ् हरणे (भ्वा०) धातो. 'हृश्याभ्यामितन्' उ० ३ ९३ सूत्रेण इतन्]

हरिता हरणशीलावश्वौ ६ ४७ १९ [हरित इति व्याख्यातम् । ततो द्विवचनस्याकारादेश]

हरित्याय हरितेषु सरसेषु आर्द्रेषु भवाय (भा०—हरितत्वकारकाय वायवे) १६ ४५ [हरित इति व्याख्यातम् । ततो भवार्थे यत्]

हरिधायसम् या हरीन् किरणान् दधाति ताम् (द्या=प्रकाशम्) ३ ४४ ३ [हरिरिति व्याख्यातम् । तदुपपदे डुधाञ् धारणपोषणयो (जु०) धातोरौणा० असुन् णिच्च]

हरिप्रिय यो हरीन् हरणशीलान् प्रीणाति तत्सम्बुद्धौ

(इन्द्र=ऐश्वर्ययुक्तमित्रजन) ३ ४१ ८ [हरि-प्रियपदयो समास]

हरिमाणम् हरणशील रोगम् १ ५० १२ मुखहरणशीलम् (चोरादिकम्) १.५० ११ चित्ताकर्षक व्याधिम् १ ५० १२ [हृञ् हरणे (भ्वा०) धातो 'हृमृधृसृस्तृशृभ्य इमनिच्' उ० ४ १४८. सूत्रेण इमनिच्]

हरियूपीयायाम् हरीन् मुनीनिच्छता पीयाया पानक्रियायाम् ६ २७ ५, [हरियु-पीयापदयो समास पूर्वस्य दीर्घ । हरियु—हरिपदादिच्छाया क्यजन्तात् ताच्छील्य उ । पीया=पीङ् पाने (दिवा०) धातोर्बाहु० औणा० यक् । तत स्त्रिया टाप्]

हरियोगम् हरीणामश्वादीना योगो यस्मिँस्तम् (रथम्) १ ५६ १ [हरि-योगपदयो समास]

हरियोजनाय हरीणा मनुष्याणा योजनाय समाधानाय १ ६२ १३ [हरि-योजनपदयो समास । योजनम्=युज समाधौ (दिवा०) धातोर्ल्युट् । हरय मनुष्यनाम निघ० २ ३]

हरिवते प्रशस्ताऽश्वादियुक्ताय (राज्ञे) ३ ५२ ७ **हरिवः**=प्रशस्ता हरयोऽश्वा विद्यन्ते यस्य तत्सम्बुद्धौ (इन्द्र=विद्वज्जन) २०.८६ प्रशस्तौ हरी विद्येते यस्य तत्सम्बुद्धौ (राजन्) ३४ १६. विद्वत्सङ्गप्रिय (इन्द्र=राजन्) ४ २१ ११ प्रशस्ता हरयो मनुष्या विद्यन्ते यस्य तत्सम्बुद्धौ (राजन्) ६.१६ ६ प्रशस्तमनुष्ययुक्त (इन्द्र=नृप) ६ ४१ ३ प्रशसिताऽश्व (मनुष्य) ४ १६ २१ वेगाद्यश्ववन्, हरयो हरणनिमित्ता प्रशस्ता किरणा विद्यन्ते यस्य तत्सम्बुद्धौ (इन्द्र=वायो सूर्य वा), प्र०—अत्र प्रशसाया मतुप् 'मतुवसो रु सम्बुद्धौ छन्दसि' इत्यनेन रुत्वविसर्जनीयौ 'छन्दसीर' इत्यनेन वत्वम् । हरीति इन्द्रस्य नाम निघ० १.१५, १ ३ ६ प्रशस्ता हरय किरणा इवाऽश्वा विद्यन्ते यस्य तत्सम्बुद्धौ (राजन्) ३३ ६३ प्रशस्ताऽश्वयानयुक्त (विद्वज्जन) ३ ३० २ प्रशस्तविद्यार्थियुक्त (इन्द्र=विद्वज्जन) ४ २२ ११ प्रशस्ता हरयो हरणगुणा विद्यन्ते यस्मिँस्तत्सम्बुद्धौ (विद्वज्जन) १ १६५ ३ उत्तमाऽमात्ययुक्त(राजन्) ५ ३६ ४ वहुसेनाङ्गयुक्त (इन्द्र=राजन्) ४ २० ११ धारणाकर्षणादियुक्त (इन्द्र=सज्जन) १ १६७ १ हरयोऽश्वहस्त्यादय प्रशस्ता सेनासाधका विद्यन्ते यस्य स हरिवान्, तत्सम्बुद्धौ (इन्द्र=वीरजन) १ ३३ ५ **हरिवान्**=वहुप्रशस्तमनुष्ययुक्त । (इन्द्र=राजा) ७ ३२ १२ प्रशस्ता हरयोऽश्वा विद्यन्ते यस्य स (पुरन्दर=सेनेश) २० ३८ [हरिरिति व्याख्यातम् । तत प्रशसायामर्थे (मत्वर्थे) मतुप् । 'छन्दसीर' इति मतोर्वत्वम् । हरिव-प्रयोगे हरिवत्प्राति० सम्बुद्धौ 'मतुवसो रु सम्बुद्धौ०' इति रुत्वम्]

हरिवर्पसम् हरय किरणा वर्पसो रूपस्य प्रकाशका यस्यास्ताम् (पृथिवी=भूमिम्) ३ ४४.३ [हरि-वर्पस्पदयो समास. । वर्पम्=वर्प रूपनाम निघ० ३ ७]

हरिव्रतम् हरयोऽश्वा व्रत शील यस्य तम् (अग्नि=वह्निम्) ३ ३ ५ [हरि-व्रतपदयो समास । व्रतम् कर्मनाम निघ० २ १]

हरिशया या हरिपु सूर्यकिरणेषु शेते सा (विद्युत्) ५ ८ [हरि इत्युपपदे शीङ् शये (अदा०) धातो 'अधिकरणे शेते' अ० ३ २ १५ इत्यच् । तत स्त्रिया टाप्]

हरिशिप्रः हरणशीलहनु (अग्नि) २ २ ५ [हरि-शिप्रपदयो समास । शिप्रे हनू नासिके वा नि० ६ १७]

हरिष्ठाम् हरयो मनुष्यास्तिष्ठन्ति यस्मिँस्तम् (सर्ववलाध्यक्ष राजानम्) ३ ४६ २ **हरिष्ठाः**=यो हरौ विपहरणे तिष्ठति स (वैद्य) १ १६१ १० अतिशयेन हर्त्ता (इन्द्र=राजा) ६ १७ २ [हरि इत्युपपदे ष्ठा गतिनिवृत्तौ (भ्वा०) धातो कर्त्तरि क्विप् । हरय मनुष्यनाम निघ० २ ३ अन्यत्र हर्तृ प्राति० अतिशायने 'तुश्छन्दसि' सूत्रेण इष्ठन् । 'तुरिष्ठेमेयस्सु' इति तृचो लोप । हरिष्ठप्राति० सोराकारादेशश्छान्दस]

हर्मि हरामि, प्र०—अत्र शपो लुक् १ ६१ १ [हृञ् हरणे (भ्वा०) धातोर्लट् । 'वहुल छन्दसि' इति शपो लुक्]

हर्म्यम् कमनीय गृहम् ७ ५५ ६ **हर्म्यस्य**=न्यायगृहस्य मध्ये १ १२१ १ **हर्म्ये**=प्रासादे ५ ३२ ५ [हर्म्यम् गृहनाम निघ० ३ ४]

हर्म्या उत्तमानि गृहाणि १ १६६ ४ [हर्म्यमिति व्याख्यातम् । ततश्शेर्लोपश्छन्दसि]

हर्म्येष्ठाः ये हर्म्ये तिष्ठन्ति ते (मरुत=वलिष्ठा राजजना) ७ ५६ १६ [हर्म्योपपदे ष्ठा गतिनिवृत्तौ (भ्वा०) धातो क । हर्म्यमिति व्याख्यातम्]

हर्य कामयस्व ३ ४० २ **हर्यत**=कामयध्वम् ५ ५४ १५ प्रेमपूर्वक कामना से वर्ता करो स० वि० १७२ वेदार्थे ३ ३०.१ **हर्यतम्**=प्राप्नुत १ ६३ ७ कामयेथाम् १ ६३ १ **हर्यति**=कामयते १७ ६६ **हर्यते**=कामयते ५ ५७ १ **हर्यथ**=कामयध्वम् १ १६१ ८. हर्यन्ति=कामयन्ते १ १६५ ४ [हर्यति कान्तिकर्मा निघ०

२ ६. गतिकर्मा निघ० २ १४ ततो लोट् । अन्यत्र लडपि । हर्यति हर्यतेर्वा स्यात् प्रेप्साकर्मरण नि० २ १०]

हर्य कमनीय, सर्वसुखप्रापक (इन्द्र=जगदीश्वर) १.५७ ४ **हर्याः**=कमनीया (अप=प्राणान्) ५ २ ११. [हर्यति कान्तिकर्मा निघ० २ ६. ततोऽच् । हर्य गतिकान्त्यो (भ्वा०) धातोर्वाऽच्]

हर्यय कामिताय (इन्द्राय=सभेशाय) १ १३०.२ हर्यति कान्तिकर्मा निघ० २.६ गतिकर्मा निघ० २ १४ औरणादिकोऽतच्]

हर्यक्षम् हरीणा वानराणामक्षिणी इवाऽक्षिणी यस्य तम् (जनम्) ३० २१ [हरि-अक्षिपदयो समासे समासान्तोऽच् छान्दस]

हर्यत प्रापक कमनीय वा, भा०—वायुना सह देशान्तर प्रापक (अग्ने) ३ ४ **हर्यतम्**=कमनीयम् (सोमम्=ऐश्वर्यम्) २ २१ १ **हर्यतः**=सर्वेषा सुबोध कामयमान (अध्यापक उपदेशको वा) १ ५५ ४ गमयिता कमनीयो वा (व्यवहार) १ ५७ २ [हर्य गतिकान्त्यो (भ्वा०) धातो 'भृमृदृशियजि०' उ० ३ ११० सूत्रेणानच्]

हर्यता प्रकाशवन्तौ (किरणौ, अश्वौ वा) ऋ० भू० १३६, [हर्यत इति व्याख्यातम् । ततो द्विवचनस्याकारादेश]

हर्यन् कामयमान (इन्द्र=राजा) ४ २४ ७ प्राप्नुवन् प्रापयन् वा (श्रीमज्जन) ३ ४४ २. **हर्यन्तम्**= कामयन्तम् (वज्र=किरणसमूहम्) ३ ४४ ५. [हर्य गतिकान्त्यो (भ्वा०) धातो शतृ]

हर्यमाणः कमनीय (अग्नि=सूर्यलोक) ३ ६ ४ [हर्य गतिकान्त्यो (भ्वा०) धातोस्ताच्छील्ये चानश्]

हर्यश्व हरयोऽश्वा महान्तो मनुष्या वा यस्य तत्सम्बुद्धौ (राजन्) ७ ३२ १५ हर्या कामयमाना अश्वा आशुगामिनोऽग्न्यादयस्तुरङ्गा वा यस्य तत्सम्बुद्धौ (श्रीमज्जन) ३ ४४ २ हरणशीला हरिता वाऽश्वा व्यापनस्वभावा (तुरङ्गा) यस्य तत्सम्बुद्धौ, अश्वा इवाऽग्न्यादयो विदिता येन तत्सम्बुद्धौ वा (इन्द्र=विद्वज्जन) ३ ३२ ५ हरयो वेगवन्तोऽश्वा यस्य तत्सम्बुद्धौ (इन्द्र=विद्वज्जन) ३ ३६ ९ हर्या कमनीया गमनीया वाऽश्वा यस्य तत्सम्बुद्धौ (इन्द्र=राजन्) ४ ३५ ७ सद्गुणग्रहणशीला हरयोऽश्वा महान्तो यस्य तत्सम्बुद्धौ (इन्द्र=विद्वज्जन) ७ ३७ ५ कमनीयाऽश्व (राजन्) ७ १९ ४ **हर्यश्वम्**=हरयो हरणशीला अश्वा यस्य तम् (पुरुषोत्तमम्) ३ ३६ ४ **हर्यश्वः**=हर्या कामयमाना आशुगामिनो गुणा यस्य विद्युद्रूपस्य स (वृषा=सूर्य.) ३ ४४ ४ हरयो मनुष्या अश्वा महान्त आसन् यस्य तत्सम्बुद्धौ (इन्द्र=महाशय जन) ७ २४ ४ **हर्यश्वाय**=हरणशीला आशुगामिनोऽश्वास्तुरङ्गा अग्न्यादयो वा विद्यन्ते यस्य तस्मै (राज्ञे) ३ ५२ ७ हरयो मनुष्या हरणशीला वाऽश्वा यस्य तस्मै (इन्द्राय=परमैश्वर्याय मित्राय) ७ ३१ १ प्रशसितमनुष्याऽश्वादियुक्ताय (राज्ञे) ७ ३१ १२ प्रशसितनराऽश्वाय (राज्ञे) ७ २५ ५ **हर्यश्वेन**=हरणशीला अश्वा यस्मिन् तेन (रथेष्ठेन जनेन) २ १७ ३ [हरि-अश्वपदयो समास । हरय मनुष्यनाम निघ० २ ३ अश्व —अश्व कस्मादश्नुतेऽध्वान महाशनो भवतीति वा नि० २.२७]

हर्यश्वप्रसूताः हरयो हरणशीला अश्वा किरणा यस्य तेन प्रसूता जनिता (दिश=पूर्वाद्या) ३ ३० १२ [हरि-अश्वपदयो समासे तत प्रसूतपदेन समास]

हर्षतः प्राप्तहर्षस्य (यज्ञस्य=व्यवहारस्य) १ १२७ ६ [हृष तुष्टौ (दिवा०) धातो शतृ । व्यत्ययेन शप्]

हर्षते हर्षति, प्र०—अत्र व्यत्ययेनाऽऽत्मनेपदम् १.५१ ७ **हर्षसे**=आनन्दसि ४ २१ ९ [हृष तुष्टौ (दिवा०) धातोर्लट् । व्यत्ययेन शप् आत्मनेपदश्च]

हर्षमाणः आनन्दित सन् (पूरु=मनुष्य) ४ ३८ ३ [हृष तुष्टौ (दिवा०) धातो शानच् । व्यत्ययेनात्मनेपदम्]

हर्षय उत्कर्षय १७.४२ [हृष तुष्टौ (दिवा०) धातोर्णिजन्ताल्लोट्]

हर्ष्या हर्षं जनितु योग्यानि कर्माणि १.५६ ५ [हृष तुष्टौ (दिवा०) धातोर्ण्यत् । ततश्शेर्लोपश्छन्दसि]

हलिक्ष्ण मृगेन्द्र-विशेष २४ ३१

हवते गृह्णाति, प्र०—अत्र 'बहुल छन्दसि' इति शप स्थाने श्लोरभाव १ १०५ १७ स्तौति ७ २२ ६ आदत्ते ३ २० १ स्पर्द्धते २ ३३ ५ आह्वयति ७ ५६ १८ श्रावयेत् ६ २६ २ **हवन्त**=गृह्णीत १ १२ २ **हवन्ते**=आह्वयन्तु ७ ३० २. स्तुवन्ति १ १४२ १३ गृह्णन्ति, प्र०—अत्र व्यत्ययेनाऽऽत्मनेपदम् १ २३ ३ आह्वयन्ति ७ २७ १ स्वीकुर्वन्ति ४ ४२ ५ स्पर्द्धन्त आददति वा ७ २६ २ आह्वयन्ते ३ ३२ १४ स्पर्द्धयन्ति ४ २५ ८ प्रेप्सन्ते १ ६३.६ पुकारते है स० प्र० २३८, १० ४८ १ **हवामहे**=आह्वयामहे स्पर्द्धामहे वा, प्र०—ह्वेञ्धातोरिद लेटो रूप 'बहुल छन्दसि' अ० ६ १ ३४ अनेन सम्प्रसारणम् १ ७ ५ आदद्महि ६ १९ १२ आदद्म ६ ६० ५ स्वीकुर्महे १ २१ ३ विद्यासिद्धयर्थमुपदिशाम

शृणुमश्च १ २१ ४ दधाम ३ ४२ ६ प्राप्तुमिच्छेम ५ ८६ ४ स्तुवीम १ ७ १० आदद्यामाऽऽह्वयेम वा ३४ ३४ गृह्णीयाम ३ २६ १ आह्वयाम ३३ ६१ गृह्णीम १ २३ ७ प्रशंसामहे ७ ३२ २३ अत्यन्त प्रार्थना से गद्गद होके बुलावें आर्याभि० १ ४४ ऋ० १ ७ १२ ५ होमेन विचारेण प्रशंसेम ७ ४१ १ स्तूमहे आश्रयेम ४ ३२ १३ स्वीकुर्मे २ १६ १ दद्याम ३ ४२ ६ स्तुवीम २७ ३६ ग्रहण करता हूँ आर्याभि० २ ४६, २३ १६ हम स्तुति करते है स० वि० १५५, ७ ४१ १ **हवे**=स्तौमि १ ११८ ११. **हवेते**=गृह्णीत, आदत्त २ १२ ८. [हु दानादानयो (जु०) धातोर्लट्। 'बहुल छन्दसि' सूत्रेण शप श्लुर्न भवति। ह्वेञ् स्पर्धाया शब्दे च (भ्वा०) धातोर्वा लेटि 'बहुल छन्दसि' अ० ६ १ ३४ सूत्रेण सम्प्रसारणम्। अन्यत्र लङ् लट् च]

हवनश्रुत् यो हवन दानमादान शृणोति स (रुद्र = वैद्य) २ ३३ १५ [हवनोपपदे श्रु श्रवणे (भ्वा०) धातो कर्त्तरि क्विप्। हवनम्=हु दानादानयो (जु०) धातोर्ल्युट्। हवनश्रुत —ह्वानश्रुत नि० ६ २७]

हवनश्रुतम् हवनमाह्वान शृणोतीति तम् (इन्द्र= परमेश्वरम्) १ १० १० **हवनश्रुतः**=ये हवनमध्ययन शृण्वन्ति ते (विश्वेदेवा =सर्वविद्वास) ६ ५२ १० ये हवनानि ग्राह्याणि शास्त्राणि शृण्वन्ति ते (राजपुरुषा) ६ १७ [हवनोपपदे श्रु श्रवणे (भ्वा०) धातो कर्तरि क्विपि तुगागम]

हवनश्रुता यौ हवनानि शृण्वतस्तौ (इन्द्राग्नी= विद्युद्विद्याविदौ विद्वज्जनौ) ६ ५९ १० हवन श्रुत ययोस्तौ (अश्विना=विद्याध्यापकोपदेशकौ) ५ ७५ ५. [हवनश्रुदिति व्याख्यातम्। ततो द्विवचनस्याकारादेश]

हवनस्यदम् येन हवन पन्थान स्यन्दते तम् (रथ= विमानादिकम्) १ ५२ १ [हवनोपपदे स्यन्दू प्रस्रवणे (भ्वा०) धातो 'कृतो बहुलम् वा' इति करणे क्विप्। स्यन्दते गतिकर्मा निघ० २ १४]

हवना दातुमादातुमर्हाणि (ब्रह्माणि=धनानि) ६ ६६ ४ [हु दानादानयो (जु०) धातोर्ल्युडन्ताद् द्विवचनस्याकार]

हवनानि दानादीनि कर्माणि ६ ३४ ४ दातु ग्रहीतु योग्यानि वस्तूनि ५ ५६ २ प्रार्थनावाग्दत्तानि ८ ४५ ग्राह्याणि कर्म्माणि १७ २३ **हवनाय**=आदानाय ६ ६३ २ **हवनेषु**=दानयोग्येषु कर्मसु १ १० २ १० धर्मेणादानेषु ७ १७ आदानयोग्येषु कर्मसु १ १० २ १०

[हवनमिति पूर्वपदे व्याख्यातम्]

हवम् अर्चनम् ६ २६ स्तुतिवादम् ७ ३४ स्तुतिसमूहम् ७ ६ जुहोति ददात्याददाति यस्मिँस्त होमशिल्पव्यवहारम् १ १७ २ कर्त्तव्य शब्दव्यवहारम् १ २३ ८ स्तवनम् १ २ १ आदातव्य सत्य वचनम् १ १० ६ प्रार्थनादिक कर्म्म १ ३० ८ ग्राह्य देयमध्ययनाऽध्यापनाख्य व्यवहारम् १ ४५ ३ ग्राह्य विद्याशब्दसमूहम् १ ४७ २ श्रोतव्य श्रावितव्य वा शब्दसमूहम् १ ४८ १० देय ग्राह्य विद्याशब्दार्थसम्बन्धमय वाक्यम् १ ६३ १. परीक्षितुमर्हमध्ययनाऽध्यापन वा १ ८६ २ आह्वान, प्रशसावाक्यम् १ ११४ ११ उपदेशाख्य शब्दम् १ १२२ ११ दातुमादातुमर्हं न्यायम् १ १२१ ३ आदातुमर्हं विद्याबोधम् १ १७८ ३ विद्योपदेशम् २ १० २ श्रोतुमर्हं शब्दम् १ १८१ ७ दानम् १ १८३ ५ शास्त्रबोधजन्य शब्दम् २ ११ १ आह्वानम् २ २४ १५ आदातव्य शब्दार्थसम्बन्धाऽध्ययनम् २ ४१ १३. प्रशसनीय व्यवहारम् ५ ८७ ८. शब्दार्थसम्बन्धविषयम् ४ ६ ७. सत्यप्रशसाम् ६ ५० ६ वार्त्ताम् ६ ४५ ११ श्रुताऽधीतज्ञातविषयम् ६ ५२ १३ विद्याविषय शब्दम् ६ ६२ ७ स्वाध्यायम् ६ ६६ ७ श्रोतु श्रावयितुमर्हं स्तुतिसमूह यज्ञम् ३ २६ अध्ययनाऽध्यापनजन्य बोधशब्दसमूहमर्थिप्रत्यर्थिना विवादश्च ६ १७ आह्वानरूप प्रशसावाक्यम् १ ११४ ११ प्रशसनीय वाग्व्यवहारम् ७ २८ २ वक्तव्य श्रोतव्य वा (व्यवहारम्) ५ ४३ ११ अ०—सर्व शब्दव्यवहारम् १ २ १. उच्चारितशब्दम् ६ २१ १० पठनपरीक्षाख्यम् ५ ८७ ६ पठितम् (विषयम्) ५ २४ ३ प्रशसनम् ५ ७४ १० **हवस्य**=दातुमादातुमर्हस्य (व्यवहारस्य) २ ३६ ६ हवे=प्रशसनीये धर्म्ये व्यवहारे ६ ५२ १६ **हवेषु**=सङ्ग्रामादिषु व्यवहारेषु १६ ४६ दानाऽऽदानेषु २१ १० ह्वयन्ति स्पर्द्धन्ते परस्पर येषु सङ्ग्रामेषु तेषु १७ ४३ हवनादिसत्कर्मसु ७ ३५ १२ गृह्णन्ति येषु पदार्थेषु ७ २ ७ सङ्ग्रामेषु ६ १६ [हवम्—हु दानादानयो (जु०) धातो 'ऋदोरप्' इत्यप्। अथवा ह्वेञ् स्पर्धाया शब्दे च (भ्वा०) धातो 'भावेऽनुपसर्गस्य' अ० ३ ३ ७५ सूत्रेणाप् सम्प्रसारणञ्च। अथवा ह्वेञ्धातो 'आङि युद्धे' सूत्रेण छन्दसि निरुपपदादपि अप्। हवम् ह्वानम् नि० १० २]

हवमानम् स्पर्द्धमानम् (विप्र=मेधाविजनम्) ४ २६ ४ **हवमानाय**=प्रशसमानाय (सज्जनाय) ३ १५ ७ आनन्दाय ३ २ २३ विद्या स्पर्द्धमानाय (तनयाय) १२ ५१

आददानाय (शिष्यवर्गाय) ३.५.११ [ह्वेञ् स्पर्द्धायां शब्दे च (भ्वा०) धातोः शानच् । धातोः सम्प्रसारणं छान्दसम् । हु दानादानयोः (जु०) धातोर्वा शानच्]

हवमानासः आदातुमिच्छन्तः (ब्रह्मचारिणो जना) ५.३२.११. [हवमान व्याख्यातम् । ततो जसोऽसुक्]

हवसा ग्रहणत्यागभक्षणादिकर्म्मणा १.६४.१२ आदानेन ६.६६.११. [हु दानादानयोः (जु०) धातोरसुन् । ततस्तृतीयैकवचनम्]

हवा होतुमर्हाणि वचनानि १.१२२.६ हवानि श्रुतानि (वचनानि) ७.२९.३ हवानि हवनानि २१.९ [हवमिति व्याख्यातम् । ततश्शेर्लोपश्छन्दसि]

हवासः दानाऽऽदानऽदनाख्या. (व्यवहारा) ६.७३.८ [हवमिति व्याख्यातम् ततो । जसोऽसुक्]

हविरद्यम् दातुमर्हमत्तुं योग्यञ्च, भा०—दण्ड, सत्कारश्च २९.२०. **हविरद्याय**=हविश्चाऽद्यमत्तव्यञ्च तस्मै (विद्वज्जनाय) ५.४.४ अत्तुं योग्यायाऽन्नाद्याय ५.१.११. [हविष्-अद्यपदयोः समासः । हविष्=हु दानादानयोः (जु०) 'अर्चिशुचिहु०' उ० २.१०८ इति इसि । हविः उदकनाम निघ० १.१२. अद्यम्-अद भक्षणे (अदा०) धातोर्वाहु० ओणा० यत् । ण्यति वा वृद्ध्यभावश्छान्दसः]

हविर्दे यो हवींषि दातव्यानि ददाति तस्मै (शिष्याय राजकुमारादये) ४.३.७ [हविष् इत्युपपदे डुदाञ् दाने (जु०) धातोः क्विप् । धातोराकारलोपश्छान्दसः]

हविर्धानम् हवींषि ग्राह्याणि देयानि वा संस्कृतानि वस्तूनि धीयन्ते यस्मिन् (सद =सभा) १९.१८ हविषा धानं स्थित्यधिकरणम् (ऋत्विग्) १९ होम करने के पदार्थ रखने का स्थान स० वि० १६६, अथर्व० ९.२.३.७ **हविर्धानानि**=हवि के स्थापन करने के पात्र स० वि० २०९, अथर्व० ९.६.७. **हविर्धाने**=हविषा ग्रहीतुं योग्यानां पदार्थानां धारणे ८.५६. हविषां धारणे (गायत्र्या विद्यायाम्) ३८.१८. [हविष् इत्युपपदे डुधाञ् धारणपोषणयोः (जु०) धातोरधिकरणे ल्युट् । हविर्धाने हविषां निधाने नि० ९.३६. हविर्धानम् अथ यदस्मिन्त्सोमो भवति हविर्वै देवानां सोमस्तस्माद्धविर्धानं नाम श० ३.५.३.२ वैष्णवं हि हविर्धानम् श० ३.५.३.१५ एतद्वै देवानां निष्केवल्यं यद्धविर्धानम् श० ३.६.१.२३ शिरो वा एतद् यज्ञस्य यद्धविर्धानं गो० ११.८ तस्य (पुरुषस्य) शिर एव हविर्धानं कौ० १७.७ द्यौर्हविर्धानम् । तै० २.१.५.१ द्यावापृथिवी वै देवानां हविर्धाने आस्ताम् ऐ० १.२९. वाक् च वै मनश्च हविर्धाने कौ० ९.३. अयं वै लोको दक्षिणं हविर्धानं कौ० ९.४]

हविर्भिः होतुं दातुमर्हैः पदार्थैः २१.२ आदेयैः गुणकर्मस्वभावैः सह १.७६.५ यज्ञसामग्रीभिः १.९५.६ आदातुमर्हैः साधनैः ३.११५. आदातव्यैः साधनैः ३.१४.३ होमसाधनैः. ७.१४.१ आदातुं योग्यैरुपदेशैर्द्रव्यैर्वा ४.५०.६ होतुमर्हैः संस्कृतैर्द्रव्यैः १८.४९. होतव्यैः पदार्थैरिवाऽऽत्तैः शान्तैर्निर्वृत्तादिभिः ७.४०.५ सुष्ठ्वौषधदानैः २.३३.५ **हविषः**=आदातुमर्हस्य (वस्तुन) २१.४७ होतव्यस्य (द्रव्यस्य) प्र०—अत्र कर्मणि षष्ठी ६.११. भोक्तुमर्हात् (वित्तात्=धनात्) ५.६०.६ दातुं योग्यस्य (पदार्थस्य) २१.४६. ग्रहीतुमर्हस्य (वस्तुनः) २१.४७ प्रक्षिप्तस्य घृतादेर्द्रव्यस्य १.९३.७ सङ्गन्तुमर्हस्य (व्यवहारस्य) ७.११.४ **हविषा**=ग्राह्येण दातव्येन पदार्थेन साधकेन वा ४.३७ सामग्र्या दानेन ६.४७.२७ सत्कृतेन घृतादिना १२.६६. उपादेयेन भक्तियोगेन १२.१०२ आत्माऽऽदिसर्वस्व-दानेन २३.१ भक्तिविशेषेण, भा०—उपासनेन २३.२. धारणेन, भा०—योगाभ्यासेन २७.२५ अग्नौ प्रक्षेपसामग्र्या ५.३७.२ होतव्येन विज्ञानेन धनादिना वा १.८४.१८ दानाऽऽदानेन १.१६४. दानेन ५.३.८. सद्व्यवहारग्रहणेन २.२६.३ हविर्दानेन ऋ० भू० १३८, ऋ० ८.२.१०.१ सत्येन धर्मेण ऋ० भू० ६४, ऋ० ८.८.४६.३. आदातव्येन योगाऽभ्यासेन ३२.७ साकल्यात् ३.३५.१०. आत्मादि पदार्थों के समर्पण से आर्याभि० २.२०, १३.४ होतव्येन पदार्थेन २५.१० प्रेमभक्तिभावेन ३२.६ हवनयोग्येन पदार्थेन २५.१२ यथायोग्येन ग्रहीतव्यव्यवहारेण २८.७ होतुमर्हं शुद्ध संस्कृत हविस्तेन २.२२ होतुमादातुमर्हेण (पुरुषेण=परमेश्वरेण) ३१.१४ आदानेन २९.५३ सुसंस्कृतेन हविषा १.९३.८ होतुमर्हेण सुगन्ध्यादियुक्तेन (घृतेन=आज्येन) २.१०.४ सामग्र्या सत्यप्रेमभावेन वा ४.७ आदत्तेन देहेन १.५८.१ तदाज्ञायोगाभ्यासधारणेन २७.२६ आत्मादिसामग्र्या १३.४ दानाऽऽदानेन प्राणेन वा २०.४३ सुसंस्कृतहोमसामग्र्या २०.६८ उपात्तेन पुरुषार्थेन २०.७३ सद्विद्यादानाऽऽदानेन २०.३८ सब सामर्थ्य से स० वि० ६, ३२.६ हवनेनोत्तमगुणदानेन १७.२२ आदातव्येन (वर्धनेन) १७.२४ ग्रहण करने योग्य योगाऽभ्यास, अति प्रेम से स० वि० ५, १३.४ आत्मा, अन्तःकरण से स० वि० ५, २५.१३ विद्यादानाऽऽदानाख्येन १.९१.१९. **हविषि**=दातव्येऽत्तव्ये वाऽन्नादौ

धातोर्लेटि सिपि च रूपम्]

अभिश्वसन्=सर्वत श्वसन् प्राण धरन् (मुमुक्षुर्जन) १ १४० ५ [अभि+श्वस प्राणने (अदा०) धातो शतृ-प्रत्यय]

अभिषाचम् आभिमुख्येन सचन्तम् (इन्द्र=राजानम्) ३ ५१ २ **अभिषाचः**=ये आभिमुख्येन सचन्ति ते (सहाय्या जना) ६ ६३ ६ य आभ्यन्तर आत्मनि सचन्ते सम्बध्नन्ति ते (योगिनो जना) ७.३५ ११ [अभि+षच समवाये (भ्वा०) धातो कर्त्तरि अण् प्रत्ययश्छान्दस]

अभिषाताः अभितो विभक्ता (गिर=वाच) ५ ४१ १४ [अभि+षण सभक्तौ (भ्वा०) धातो क्त प्रत्यय । 'जनसनखनाम्०' इत्यात्वे रूपम्]

अभिषिञ्चामि सर्वथा स्वीकरोमि २० ३ सुगन्ध-जलैर्मूर्धनि मार्जयामि ऋ० भू० २१८ राजधर्मपालनार्थं सर्वत स्थापयामि ऋ० भू० २१८ सर्वतो मार्जनेन स्वीकरोमि, भा०—राज्यपालनार्थमधिकरोमि २० ३ [अभि+षिच् क्षरणे (तुदा०) धातोर्लट् । 'शे मुचादीनाम्' इति नुमि परसवर्णे रूपम्]

अभिषेक्तारम् अभिषेककर्त्तारम् (पुरुषम्) ३० १२ [अभि+षिच् क्षरणे (तुदा०) धातोस्तृच् कर्त्तरि]

अभिषेणान् अभिमुख्या सेना येषान्तान् (शत्रून् जनान्) ६ ४४ १७ [अभिसेनापदयो समास । 'सुषामादिषु चे' ति मूर्धन्यादेश]

अभिष्टने अभित शब्दयुक्ते व्यवहारे १ ८० १४ [अभि+ष्टन शब्दे धातोरच् प्रत्यय]

अभिष्टय अभीप्सिता (ऊती=रक्षणाद्या) १ ११६ ८ इष्टेच्छा १ ५२ ४ इष्टय इच्छा ४ ३१ १० **अभिष्टये**=इष्टसिद्धये ५ ३८ ३ इष्टप्राप्तये १ १२६ १ अभीष्टसिद्धये, प्र०—अत्र 'एमन्नादिषु छन्दसि पररूप वाच्यम्' अ० ६ १ ९४ अनेन वार्त्तिकेन पररूपादस्य सिद्धि ४ ११ इष्टसुखाय, भा०—सर्वाभीष्टसससाधनाय ३३ ६१ अभीष्टसुखप्राप्तये ३३ ८७ इष्टसुखसिद्धये ३६ १२ अभीष्टसुखाय २ ३४ १४ **अभिष्टिभिः**=अभित सर्वतो यजन्ति सगच्छन्ति याभिस्ताभि (क्रियाभि) १ २९ ६ इष्टेच्छाभि ५ ३८ ५ या आभिमुख्येनेष्यन्ते ताभिरभीष्टाभि-रिच्छाभि १ ४७ ५ अभीष्टाभि क्रियाभि १ १२९ ६ **अभिष्टिः**=अभित सर्वतो ज्ञाता ज्ञापयिता मूर्त्तद्रव्य-प्रकाशको वा, प्र० अत्राऽभिपूर्वाद् इष गतौ, इत्यस्माद्धातो 'मन्त्रे वृषेष०' अ० ३ ३ ९६ अनेन क्तिन् । 'एमन्नादिषु छन्दसि पररूप वाच्यम्' 'एङि पररूपम्' इत्यस्योपरिस्थवार्त्ति-केनाऽभेरिकारस्य पररूपेणैद सिध्यति (इन्द्र=ईश्वर सूर्यो वा) १ ९ १ अभियष्टव्य सर्वत पूज्य (विद्वज्जन), प्र०—अत्र पृषोदरादित्वादिष्टसिद्धि ३३ २५ अभिमुखा इष्टि सङ्गतिर्यस्य स (इन्द्र=तेजस्विराज) ३ ३४ ४ अभित सर्वत इष्टयो यज्ञा यस्य स (विद्वज्जन), प्र०—अत्र 'छान्दसो वर्णलोपो वा' इतीकारलोप २० ३८ **अभिष्टौ**= आभिमुख्येन यजनक्रियायाम् ६ ६७ ११ अभित. सङ्गते कर्मणि ४ १६ ४ अभिप्रियाया सङ्गतौ ७.१९ ८ [अभि+इष गतौ धातो 'मन्त्रे वृषेष०' सूत्रेण क्तिन् । 'एमन्नादिषु छन्दसि पररूप वाच्यम्' इतीकारस्य पररूपम्]

अभिष्टिकृत् योऽभिष्टि करोति स (विद्युदादिस्वरूपो-ऽग्नि) ४ ११ ४ योऽभिष्टि सर्वत इष्ट सुख करोति स (इन्द्र=राजा) २० ४८ अभीष्टसुखकारी (इन्द्र=राजा) ४ २० १ [अभिष्टि+डुकृञ् करणे (तना०) धातो क्विप् प्रत्यय । तुगागमश्च]

अभिष्टिद्युम्नाः प्रशसितयशोधना (ब्रह्मचारिण्य) ४ ५१ ७ [अभिष्टिर् व्याख्यात । द्युम्नमिति धननाम निघ० २ १० एनयो समास]

अभिष्टिपाः योऽभिष्टि पाति स, (इन्द्र=विद्वज्जन) प्र०—अत्राऽऽकारादेश २ २० २ [अभिष्टि+पा रक्षणे (अदा०) धातो कर्त्तरि क प्रत्यय]

अभिष्टिमत् अभीष्टानि प्रशस्तानि सुखानि विद्यन्ते यस्मिँस्तत् (कर्म) १ ११६ ११ [अभिष्टिप्राति० प्रशसाया मतुप्]

अभिष्टिशवसे अभीष्टबलाय ३ ५९ ८ [अभिष्टि-र्व्याख्यात । शवस् इति बलनाम निघ० २ ९ एनयो समास]

अभिष्टुते अभित प्रशसनीये (रोदसी=द्यावापृथिव्यौ) ७ ३९ ७ [अभि+ष्टुञ् स्तुतौ (अदा०) धातो क्त प्रत्यय]

अभिष्ठित. अभित स्थितो जाज्वल्यमान (नम पाश=वज्र बन्धनम्) ८ २३ [अभि+ष्ठा गतिनिवृत्तौ (भ्वा०) धातो क्त । 'द्यतिस्यतिमास्था०' इतीकारादेश]

अभिष्णक् उपसेवयाम्, प्र०—'भिष्णज् उपसेवायाम्' इति कण्ड्वादिधातोर्लङि विकरणव्यत्ययेन यको लुक्, अन्यत्कार्यं स्पष्टम् १० ३४ उपसेवेत २० ७७ [अभि+भिष्णज् उपसेवायाम् (कण्ड्वादि०) धातोर्लङ् यको लुक्]

अभिष्याम् आभिमुख्येन भवेयम् ७ १ १३ [अभि+अस भुवि (अदा०) धातोर्विधिलिङ्]

आदत्तबहुविद्य (विद्वज्जन) १ १६७ ६ [हविष् इति व्याख्यातम्। तत प्रशसार्थे भूम्न्यर्थे वा मतुप्]

हविष्मती प्रशस्तानि हवीष्यादातुमर्हाणि विद्यन्ते यस्या सा (सरस्वती=स्त्री) २० ७४ बहूनि हवीषि ग्राह्यवस्तूनि विद्यन्ते यस्या सा (घृताची=रात्रि) ७ १ ६ **हविष्मतीः**=प्रशस्तानि हवीषि विद्यन्ते यासु ता. (समिध), प्र०—अत्र प्रशसार्थे मतुप् ३ ४ विविधविज्ञान-सहिता (भा०—प्रशस्ता विज्ञानवत्य सुमेधाश्च स्त्रिय) २८ ८ [हविष् इति व्याख्यातम्। ततः प्रशसार्थे भूम्न्यर्थे मतुबन्तात् ङीप् स्त्रियाम्]

हविष्यम् हविष्षु ग्रहणेषु साधुम् (अश्वम्) १ १६२ ४ हविर्भ्यो हितम् (अश्वम्), भा०—आहार-विहारम् २५ २७ [हविष् इति व्याख्यातम्। तत साध्वर्थे हितार्थे वा यत्। हविष्य —यो व ऊर्मिर्हविष्य इति यो ऊर्मिर्यज्ञिय इत्येवैतदाह श० ३ ६ ३ २५]

हवीमन् हवीषि दातव्यानि वस्तूनि विद्यन्ते यस्मिँ-स्तस्मिन् (धनस्वामिनि) ७ ५६ १५ होमे ६ ६३.४. [हवीमन्प्राति० 'सुपा सुलुक्०' इति सप्तम्या लुक्। हवीमन्—हु दानादानयो (जु०) धातो 'अन्येभ्योऽपि दृश्यन्ते' इति मनिन्। ईडागमश्छान्दस। औणा० वा जुहोतेर् ईमनिन्]

हवीमभिः स्तोतुमर्हैराह्वातुमर्हैर्वा कर्म्मभि १ १३१ ६ सुष्ठ्वौषधदानै २ ३३ ५ ग्रहीतु योग्यैरुपासनादिभि शिल्पसाधनैर्वा, प्र०—हु दानादानयो इत्यस्माद् 'अन्येभ्यो-ऽपि दृश्यन्ते' अ० ३ २ ७५ इति मनिन्प्रत्यय 'बहुल छन्दसि' इतीडागमश्च १ १२ २ स्तोतुमर्हैर्गुणै १ ५६ २ [हवीमन् इति हुधातो पूर्वपदे व्याख्यातम्। अथवा ह्वेञ् स्पर्धाया शब्दे च (भ्वा०) धातोर्मनिन्। धातो सम्प्रसारणमीडागमश्च छान्दस]

हवेभिः हवनै ७ १६ ६ [हवमिति व्याख्यातम्। ततो 'बहुल छन्दसि' सूत्रेण भिस ऐसादेशो न भवति]

हवे हवे सङ्ग्रामे सङ्ग्रामे ६ ४७ ११ युद्धे युद्धे २० ५० [हवे पदस्य वीप्साया द्वित्वम्। हव=ह्वेञ् स्पर्धाया शब्दे च (भ्वा०) धातो 'आङि युद्धे' इति वा छन्दसीति नियमेन निरुपपदादपि अप्]

हव्यम् आदातुमर्हम् (अध्वरम्=अहिंसनीय व्यव-हारम्) ४ ६ ६ ग्रहीतुमर्हम् (अन्नम्) ४ २६ ४ दातुमर्ह सुखम् ५ ४ ८ अत्तुमर्हम् (भागम्) ५ २६.३ होतुमादातु-मर्हं विज्ञानम् १३ ३४ अत्तव्यम् (भा०—हुत द्रव्यम्) २६ ३५ आह्वानयोग्यम् (सर्वप्रिय राजानम्) ७ ३० २ **हव्यानि**= आदातु योग्यानि युद्धकार्याणि १ १०१ १० अत्तव्यानि (वस्तूनि) १ १८८ १० दातु योग्यानि (वस्तूनि) ४ १५ ३

हव्यः होतुमादातु स्वीकर्त्तुमर्ह (शिष्य) १ १४४ ३ आहवनीय (सेनाध्यक्ष) १ १०१ ६ आह्वयितु योग्य (इन्द्र.=राजा) ६ ४५ ११ ग्राह्य (अग्नि) ऋ० भू० १६४, ऋ० १ ८.६ १ आह्वातु योग्य (इन्द्र=राजा) ४ २४ २ **हव्याय**=होतुमर्हाय यज्ञाय १ ४५ ६ हातु दातुमर्हम् (विद्वास राजान वा), प्र०—अत्र विभक्ति-व्यत्यय ३४ १५ प्रशसनीयाय (वोढवे=वाहनाय) ३ २६ ४ स्वीकर्त्तव्यमन्नादिपदार्थम्, प्र०—अत्र सुव्व्यत्य-येन द्वितीयैकवचनस्य चतुर्थ्येकवचनम् १५ ३१ **हव्येन**=ग्रहीतव्येन (राया=धनेन) ७ १० आदातु दातुमर्हेण प्रशसितेनाध्ययनेन श्रवणेन वा ६ ५२ ८ **हव्यैः**=पूजितुमर्हैं (गुणै) ५ ३ ८ होतु दातुमर्हैं (पदार्थै) ४ २ १ अत्तुमर्हैं (पदार्थै) २० ४५ [हु दाना-दानयो (जु०) धातोर्यत्। ह्वेञ् स्पर्धाया शब्दे च (भ्वा०) धातोर्वा यत्प्रत्यये सम्प्रसारणादिकार्येषु छान्दस रूपम्। हव्यानि=हवीषि नि० ८ ७ हव्य=हवनार्ह नि० १०.४२]

हव्यजुष्टिम् आदातव्यसेवाम् १ १५२ ७ [हव्य-जुष्टिपदयो समास। हव्य व्याख्यातम्। जुष्टि —जुषी प्रीतिसेवनयो (तुदा०)+क्तिन्]

हव्यदातये दातव्यदानाय ५ २६ ४ हव्यानामादातु-मर्हाणामादानाय ३३ ८७ दातव्याना दानाय, भा०—विद्यादानाय २७ ४४ **हव्यदातिम्**=हव्याना दातिर्दान येन तम् (विद्वज्जनम्) ३ २ ८ यो हव्यानि ददाति तम् (अग्निम्) ६ १ ६ होतु दातु ग्रहीतु वा योग्याना खण्डनम् ७ १६ ६ दातव्यदानक्रियाम् ६ ४७ २८ [हव्य-दातिपदयो समास। दाति—डुदाञ् दाने (जु०) धातो स्त्रिया क्तिन्। दो अवखण्डने (दिवा०) धातोर्वा क्तिन्। अथवा हव्योपपदे डुदाञ् दाने (जु०) धातोर्बाहु० औणा० ति। हव्यदाति (ऋ० ६ १६ १०) यजमानो वै हव्यदाति श० १ ४ १ २४]

हव्यवाट् यो हव्यान् दातुमर्हाणि वस्तूनि वहति प्राप्नोति स (अग्नि=विद्वज्जन) ३ ११ २ यो ग्राह्यदात-व्यान् पदार्थान् वहति प्रापयति स (विद्वज्जन) १ ६७ १ पृथिव्यादिवोढा (अग्निरिव राजा) ५ २८ ५ यो हुत द्रव्य देशान्तर वहति प्रापयति स (अग्नि) १ १२ ६ यो

६ ५२ १७ दातुमादातुमर्हे व्यवहारे १७ २१ दान और ग्रहण व्यवहार मे आर्याभि० २ ३८, १७ २१ **हविषे**=हविर्दातुमर्हम् (वस्तु), प्र०—अत्र व्यत्ययेन द्वितीयास्थाने चतुर्थी १९ ७० सद्विद्याग्रहणाय धनाद्युत्तमपदार्थदानाय वा ऋ० भू० २९५, १९ ७० **हवि:**=अन्त करणम् ६ १६ ४७ आदीयत इति (सेनाध्यक्ष) ६ १६ ग्रहीतु योग्य करम् १ ११४ ३ सस्कृत सुगन्ध्यादियुक्त द्रव्यम् १ १५ हुत द्रव्यम् १७ ६, होमम् १७ ५२ होतव्य शुद्ध सुखकरद्रव्यम् १७ ७८ दुग्धादिकम् १९ ९५ दातव्य-मादातव्यम् (वय =कमनीय मुखम्) २१ २६ ग्राह्य वस्तु २७ २२ ग्रहीतु दातुमत्तु योग्य पदार्थम् १ ४५ ८ रोग-नाशक वस्तु २१ ४५ सङ्गन्तव्य वस्तु २१ ४७ सस्कृत-मन्नादिकम् २१ ४६ क्रियाकौशलयुक्त कर्म्म १ १०१ ९ आदेय विज्ञानम् १ १०१ ८ अत्तव्य वस्तु ५ २८ २ अत्तु-मर्हमन्नम् १ ९४ ३ भा०—शोभन भोजनाऽऽच्छादनम् २१ ४३ आदातव्याऽग्नीन्धनजलकाष्ठवात्वादि २९ ४५ अत्तव्यमन्नादिकम् २९ ३६ हवनीयम् (भूमिमौषधी वा) १ २३ १८ हविषा सस्कृतद्रव्येण, प्र०—अत्र विभक्ति-व्यत्यय १८ ५७ प्रक्षेप्तव्य सुसस्कृतमन्नादिकम् २१ ४१ **हवींषि**=यज्ञार्थानि द्रव्याणि १ ९४ ४ दातुमादातु योग्यानि वस्तूनि २ ३७ ५ विज्ञानादीनि ऋ० भू० २९०, १९ ५१ [हु दानादानयो (जु०) धातो 'अर्चिशुचिहु०' उ० २ १०८ सूत्रेण इसि । हविष् उदकनाम निघ० १ १२ हवि —अक्त हि हवि श० २ ६ २ ६ हवींषि ह वाऽआत्मा यज्ञस्य श० १ ६ ३ ३९ जीव वै देवाना हविरमृतममृ-तानाम् श० १ २ १ २० मासा हवींषि श० ११ २.७ ३]

हविर्वाट् विज्ञानादिप्रापक (विद्वज्जन) १ ७२ ७. [हविष् इत्युपपदे वह प्रापणे (भ्वा०) धातो 'वहश्च' इति ण्वि]

हविष्कृत् हवि करोति अनया वेदवाण्या सा हवि-ष्कृद् वाक्, समीक्षा—अत्र यज्ञसम्पादनाय ब्राह्मणक्षत्रिय-वैश्यशूद्राणा वेदाध्ययनसस्कृता सुशिक्षिता वाग् गृह्यते १ १५ [हविष् इत्युपपदे डुकृञ्करणे (तना०) धातो क्विप् । तुगागम ।

हविष्कृतम् हविर्भि क्रियते तम् (अग्नि=भौतिकम्), प्र०—अत्र वर्त्तमानकाले कर्मण्यौणादिक. क्त प्रत्यय १.१३ ३. [हविष्-कृतपदयो समास । हविष् इति व्याख्यातम्]

हविष्कृतिम् हविषा कृति करण यस्य तम् (अध्वर=जगत्), प्र०—अत्र 'सह सुपा' इति समास १ १८ ८ हविषो होतव्यस्य पदार्थस्य कृति करणरूपाम् (आहुतिम्) १ ९३ ३ [हविष्-कृतिपदयो समास । कृति =डुकृञ् करणे (तना०) धातो स्त्रियां क्तिन्]

हविष्पतिः हविषा दातु ग्रहीतु योग्याना द्रव्याणा गुणाना वा पति पालक कर्मानुष्ठाता (मनुष्य) १ १२ ८ हविषा पालक (भा०—पुरोहितो जन) २० ७० [हविष्-पतिपदयो समास]

हविष्मतः प्रशस्तानि हवींषि विद्यन्ते यस्य तस्य (इन्द्रस्य=विद्युत) १ ५७ २ प्रशस्तानि हवींषि विद्यन्ते येषु तान् (मरुत =ऋत्विज) ३ ४६ बहुविद्यादान-सम्बन्धिन (मरुत =विद्वज्जना) १ १७३ १२ **हविष्मता**=प्रशस्तविद्यादानग्रहणयुक्तेन व्यवहारेण १ १५९ १ **हविष्मते**=प्रशस्तानि हवींषि दातव्यानि यस्य तस्मै (अग्नये=पावकाय) ३ १० ४ बहूनि हवींषि विद्यन्ते यस्य तस्मै विदुषे, प्र०—अत्र भूम्न्यर्थे मतुप् १ १३ १ **हविष्मद्भिः**=बहूनि हवीष्यादत्तानि साधनानि यैस्तै (मनुष्यै) ३ २९ २ **हविष्मन्तम्**=बहुसामग्रीयुक्तम् (भोज=भोगम्) ४ ४५ ७ **हविष्मन्तः**=बहूनि हवींषि दातुमादातु योग्यानि वस्तूनि विद्यन्ते येषान्ते (जना) १६ १६ प्रशस्तसामग्रीयुक्ता (मानुषाम =मनुष्या) ७ ११ २ हवींषि दातुमादातुमत्तु योग्यानि अतिशयितानि वस्तूनि विद्यन्ते येषान्ते (ऋत्विज), प्र०—अत्राऽतिशायने मतुप् १ १४ ५ हवींषि प्रशस्तानि जगदुपकरणानि कर्माणि विद्यन्ते येषा ते (पुरुषा) १ ११४ ८ बहूनि हवींषि देयानि वस्तूनि विद्यन्ते येषु ते (प्रजाजना) १६ १६ **हविष्मान्**=प्रशस्तानि हवींषि विद्यन्ते यस्य वायो स ६ २३ बहूनि हवींषि दानानि विद्यन्ते यस्य स (मर्त्त =मनुष्य) ६.१६ ४६ शुद्धसामग्रीयुक्त (विद्वज्जन) १ १८० ३ सम्बद्धानि हवींषि यस्मिन् स (अश्व =अग्नि) १ १६२ २२. प्रशस्तानि हवींषि गृहीतानि विद्यन्ते यस्य स (स्तोम =स्तुति) १ १२७ १० बहूनि हवींषि दातव्यानि भोक्तव्यानि विद्यन्ते येषु स (अग्नि =पुरुषार्थिजन) ६ १० ६ प्रशस्तानि हवींषि सुखदानानि यस्मिन् स (अश्व) २५ ४५ हवींषि उत्तमानि द्रव्याणि कर्माणि वा विद्यन्ते यस्य स (जन) प्र०—अत्र प्रशसार्थे मतुप् १ १२ ९ हवींषि हुतानि द्रव्याणि विद्यन्ते यस्मिन् स (सूर्य इव राजा) ६ ७३ १ बहुपदार्थहेतु (होतृजन) ४ ४१ १ प्रशसिता-देययुक्त (गोतम =नौकादियानयायी जन) १ १८३ ५

हसाय हसनाय ३० ६ [हसे हसने (भ्वा०) धातोर्घञर्थे क]

हस्कर्त्तारम् प्रकाशकर्त्तारम् (अग्निम्=ईश्वरम्) ४७.३. [हस्-कर्तृपदयो समास । हस्=हसे हसने (भ्वा०)+क्विप्]

हस्कारात् हसन हस्तत्करोति येन तस्मात् (वायो) १ २३ १२ [हस् इत्युपपदे डुकृञ् करणे (तना०) धातो 'कृतो बहुलम् वा' इति करणेऽण्। हस्=हसे हसने (भ्वा०)+क्विप्]

हस्त हसन्ति प्रसन्ना भवन्ति यस्मात्तत्सम्बुद्धौ (मित्र=विद्वन् सभाध्यक्ष) ४ २७ **हस्तम्**=हाथ को स० वि० १२१, अथर्व० १४ १ ५१ **हस्तयो:**=करयो १ ५५ ८ भुजयो १ १३५ ६ **हस्त:**=यो हसति स (अध्यापको वैद्य) २ ३३ ७ **हस्ताभ्याम्**=ग्रहणविसर्जनाभ्याम् १ १० प्राणाऽपानाभ्याम्, १ २१ ग्रहणत्यागहेतुभ्यामुदानाऽपानाभ्याम् १ २४ रोगनाशकधातुसाम्यकारकाभ्या गुणाभ्याम् ६ ३० हस्त इव वर्तमानाभ्या धारणाकर्पणाभ्याम् ६ ६ ग्रहणादानाभ्याम् ऋ० भू० २१८, २० ३ कराभ्याम् १८.३७. शोधन-सर्वाङ्गप्रापणाभ्याम् २ ११ गतिधारणाभ्यामिव कराभ्याम् ३८ १ यथा प्रवलभुजदण्डाभ्या तथा ५ २६ उत्साहपुरुषार्थाभ्याम् २० ३ **हस्तेषु**=हस्ताद्यङ्गेषु, समी०—बहुवचनादङ्गानीति ग्राह्यम् १ ३७.३ [हसे हसने (भ्वा०) धातो 'हसिमृग्रिण्वामिदमि०' उ० ३.८६ सूत्रेण तन्। हस्तो हन्ते प्राशुर्हनने नि० १ ७ हस्त हस्तो वितस्ति श० १० २ २ ८ (नक्षत्रम्) देवस्य सवितुर्हस्त तै० १ ५ १.३ हस्त एवास्य (नक्षत्रियस्य प्रजापते) हस्त । तै० १ ५ २ २]

हस्तग्राभस्य विवाहे सगृहीतहस्तस्य (पत्यु) ऋ० भू० २११, १० १८ ८ पाणिग्रहण करने वाले नियुक्त पति के स० प्र० १५२, १० १८ ८ [हस्तोपपदे ग्रह उपादाने (क्र्या०) धातो 'कर्मण्यण्' इत्यण्। 'हृग्रहोर्भश्छन्दसि' इति हस्य भकार]

हस्तघ्न: यो हस्ताभ्या हन्ति स, भा०—वाहुवल, शस्त्रास्त्रप्रक्षेपणवित् (पुमान्=पुरुपार्थी सेनापति) २९ ५१ [हस्तोपपदे हन हिसागत्यो (अदा०) धातो 'कृतो बहुल वे' ति टक्। मूलविभुजादित्वाद्वा क । हस्तघ्न हस्ते हन्यते । नि० ६ १४]

हस्तच्युती हस्तयो प्रच्युत्या भ्रामणक्रियया ७ १ १ [हस्त-च्युतिपदयो समासे 'सुपा सुलुक्०' सूत्रेण पूर्वसवर्णदीर्घ । च्युति=च्युङ् गतौ (भ्वा०) धातो. स्त्रियाक्तिन्]

हस्तयत: हस्ता यता निगृहीता वशीभूता यस्य स (विद्वज्जन) ५ ४५ ७. [हस्त-यतपदयो समास । यत=यमु उपरमे (भ्वा०) धातो क्त]

हस्ता वलवीर्यौ बाहू वा ५ १६ [हस्त इति व्याख्यातम् । ततो द्विवचनस्याकारादेश]

हस्तास: हस्तवद्वर्त्तमाना (गायत्र्यादीनि सप्त छन्दासि विभक्तय प्राणा वा) ४.५८ ३ हस्तेन्द्रियमिव (विभक्तय) १७ ९१ [हस्त इति व्याख्यातम् । ततो जसोऽसुक्]

हस्तिन: कुञ्जरान् २४ २९ प्रशस्ता हस्ता विद्यन्ते येषान्ते (सिद्धिमन्तो राजप्रजाजना) ३ ३६ ७ किरणा १ ६४ ७ **हस्तिभि:**=इभै ५ ६४ ७ [हस्त इति व्याख्यातम् । तत प्रशसायामर्थे इनि]

हस्तिपम् हस्तिना पालकम्' भा०—हस्तिरक्षकम् (प्रजाजनम् ३० ११ [हस्तिन् इत्युपपदे पा रक्षणे (अदा०) धातो क]

हस्त्यम् हस्तेषु साधुम् (पदार्थम्) २ १४.६ [हस्त इति व्याख्यातम् । ततो भवार्थे यत्]

हस्रेव हसन्ति (उषा) इव १ १२४ ७ [हस्रा-इवपदयो समास । हस्रेव=हसनेव । नि० ३ ५ । हस्रा—हसे हसने (भ्वा०) धातो 'स्फायितञ्चि०' उ० २ १३ सूत्रेण रक्। ततष्टाप् स्त्रियाम्]

हंस: पक्षिविशेष १ ६५ ५ य सहन्ति सर्वान् पदार्थान् स जगदीश्वर १० २४ दुष्टकर्महन्ता (ब्रह्म जीवो वा) १२ १४ यो हन्ति पापानि स (जीवात्मा) ४ ४० ५. यो हन्ति दुखानि स (अ०—विवेकी जन) १९ ७४ [हन हिसागत्यो (अदा०) धातो 'वृतॄवदिवचि०' उ० ३ ६२. सूत्रेण स । हसास अश्वनाम निघ० १ १४ हसा—हन्तेर्घ्नन्त्यध्वानम् नि० ४ १३ हसा सूर्यरश्मय नि० १३ ३०]

हंसा इव हसपक्षिवत् १ १६३ १० हसवद् गन्तार, भा०—हसवद् गतय (अश्वा) २९ २१ यथा पक्षिविशेषा ३.८ ९ [हसा-इवपदयो समास]

हंसास: हसा इव गमनकर्त्तार (प्राणा) ७ ५९ ७ हस इव सद्यो गन्तारोऽश्वा ४ ४५ ४ [हस इति व्याख्यातम्। ततो जसोऽसुक् । हसास अश्वनाम निघ० १ १४]

हारिद्रवेषु ये हरन्ति द्रवन्ति द्रावयन्ति च तेषामेतेषु (रोगेषु) १ ५० १२ [हरिद्रुप्राति० 'तस्येदम्' इत्यर्थेऽण्। हरिद्रु=हरि इत्युपपदे द्रु गतौ (भ्वा०) धातो 'हरिमितयो-

हव्यानि प्राप्तव्यानि वस्तूनि वहति प्रापयति स (अग्नि) ३ २७ ५ **हव्यवाहम्**=होतु दातुमत्तुमादातुञ्च योग्यानि ददाति, वा यानादीनि वस्तूनीतस्ततो वहति प्रापयति तम् (अग्निं=परमेश्वर विद्युद्रूप वा) १ १२ २. दातव्यविज्ञान-प्रापकम् (आप्त विद्वज्जनम्) ३ १० ६ धर्त्तव्यवाहकम् (विप्र=मेधाविजनम्) ६ १५ ४ यो हव्यान् दातुमादातु च योग्यान् रसान् वहति तम् (अग्निम्) २ २ १७ यो हव्यानि हुतानि द्रव्याणि वहति तद्वद्वर्त्तमानम् (अध्यापकम्) ७ १७ ६. हव्याना पदार्थाना प्रापकम् (अग्निं=विद्वज्जनम्) ३ १७.४ यो हव्य हविर्वहति तम् (अग्नि=पावकम्) ३ ५.१० **हव्यवाहः**=ये हव्य वहन्ति ते (प्रियाचारा सखाय) ३ ४३ १ [हव्योपपदे वह प्रापणे (भ्वा०) धातो कर्त्तरि 'वहश्चे' ति ण्वि । हव्यवाट्—वायुर्वै तूर्णि-र्हव्यवाड् वायुर्देवेभ्यो हव्य वहति ऐ० २ ३४ एष हि हव्यवाड् यदग्नि । श० १.४ १ ३६]

हव्यवाहन यो हव्यानि होतु दातुमर्हाणि द्रव्याणि सुखसाधकानि वहति प्रापयति तत्सम्बुद्धौ (परमेश्वर) १ ४४ ५ यो हव्यानि ग्रहीतव्यानि प्रापयति तत्सम्बुद्धौ (विद्वन्नुपदेशक) ३ ६ ६ **हव्यवाहनम्**=उत्तमपदार्थ-प्रापकम् (अग्निम्) ५ ५८ ६ यो हव्य वहति तम् (अग्निं=पावकम्) २ ४१ १६ **हव्यवाहनः**=यो हव्यानि हुतानि द्रव्याणि वहति स (अग्नि) ६ १६ २३ यो हव्यानि ग्राह्यदातव्यानि हुतानि द्रव्याणि यानानि वा वहति प्राप्नोति स (अग्नि) १ ४४ २ यो हव्यानि ग्रहीतु योग्यानि वस्तूनि वहति प्रापयति स (विद्वज्जन) ३४ ९. आदातव्यपदार्थान् देशान्तरे प्रापक (अग्नि) ५ ११.४ यथाऽग्निर्हव्यानि वहति तथा (जगदीश्वरो विद्वज्जनो वा) ५ ३१ सव हव्य उत्कृष्ट रसो के भेदक आकर्षक तथा यथावत् स्थापक (ईश्वर) आर्याभि० २ १६, ५ ३१ [हव्योपपदे वह प्रापणे (भ्वा०) धातोर्णिजन्तात् 'कृत्यल्युटो वहुलम्' इति कर्त्तरि ल्युट् । हव्यवाहन एष हि हव्यवाहनो यद् अग्नि श० १ ४ १ ३६]

हव्यवाहम् हव्यानि होतु दातुमर्हाणि प्रज्ञानानि यया ताम् (जिह्वा=वाचम्) १३ १५ [हव्योपपदे वह प्रापणे (भ्वा०) धातो 'कर्मण्यण्' इत्यण् । वहश्चेति वा ण्वि]

हव्यसूक्तीनाम् वहूनि हव्याना सूक्तानि यासु तासाम् (भा०—विद्यानाम्) २८ ११ [हव्य-सूक्तिपदयो समास । सूक्ति=सु+वच परिभाषणे (अदा०)+क्तिन्]

हव्यसूदनः यथा हव्यानि सूदने तथा (भगवान् विद्वज्जनो वा) ५ ३२ मिष्ट, सुगन्ध, रोगनाशक, पुष्टि-कारक द्रव्यों से वायु वृष्टि की शुद्धि करने कराने वाला (परमेश्वर) आर्याभि० २ १७ ५ ३२. [हव्योपपदे षूद क्षरणे (भ्वा०) धातो 'अन्येभ्योऽपि दृश्यते' अ० ३ ३ १३०. सूत्रेण युच्]

हव्यसूदः यो हव्यानि सूदयति क्षरयति स (वृहस्पति.=सूर्य) ४ ५०.५ [हव्योपपदे षूद क्षरणे (भ्वा०) धातोरच् कर्त्तरि]

हव्यसूदः या हव्यानि दुग्धादीनि क्षरन्ति ता (गाव) १ ९३ १२ [हव्योपपदे षूद क्षरणे (भ्वा०) धातो. कर्त्तरि क्विप्]

हव्या उच्चारणीया (वाक्) ६ ६१ १२ **हव्ये**= स्वीकर्त्तुमर्हे (पत्नि) ८ ४३. [हु दानादानयो (जु०) धातोर्यत् । ततष्टाप् स्त्रियाम् । ह्वेञ् स्पर्धाया शब्दे च (भ्वा०) धातोर्वा वाहु० औणा० क्यप् । ततष्टाप् स्त्रियाम्]

हव्या दातुमादातु योग्यानि वस्तूनि १ ९३ ११. [हु दानादानयो (जु०) धातोर्यत् । ततश्शेर्लोपश्छन्दसि]

हव्या अत्तुमर्हाणि (वस्तूनि) २९ १० आदातुमर्हाणि (शस्त्रास्त्राणि) १ १७१ ४ होतुमत्तुमर्हाणि (वसु= धनानि) ६ ७ होतु धर्माऽर्थकाममोक्षान् साधयितुमर्हाणि साधनानि ३ २१ १ ग्रहीतु योग्यान् (देवान्=विदुषो दिव्य-गुणान्वा) १ ७४ ६ आदातुमर्हाणि होमद्रव्याणि १ १३९.३ दातुमादातुमर्हा (इष=अन्नाद्या) ५ ७ ३ दातुमत्तुमादातु-मर्हाणि वस्तूनि, अ०—होतव्यानि द्रव्याणि, प्र०—अत्र 'शेश्छन्दसि वहुलम्' इति लोप ३ १ [हव्यप्राति० शेर्लोप-श्छन्दसि । हव्यम्—हु दानादानयो (जु०) धातोर्यत्]

हव्यात् यो हव्यान्यत्ति स (अग्नि=पावक) ७ ३४ १४ [हव्योपपदे अद भक्षणे (अदा०) धातो 'अदोऽनन्ने' अ० ३ २ ६८ सूत्रेण विट्]

हव्येभि दातुमर्हे (नमोभि.=अन्नादिभि) १ १५३ १ आदातुमर्हे (नमोभि) ४ ४२ ९ [हव्यमिति व्याख्यातम् । ततो भिस ऐस् न भवति 'वहुल 'छन्दसि' सूत्रेण]

हसामुदौ सदा हास्य और आनन्दयुक्त (स्त्री-पुरुष) सं० वि० १४०, अथर्व० १४ २ ४३ [हस-मुदपदयो समास । पूर्वस्य सहिताया दीर्घ । हस=हसे हसने (भ्वा०) धातोरच् । मुद=मुद हर्षे (भ्वा०) धातो कर्त्तरि इगुपधलक्षण क]

हित ऋ० ६.१२.१४]

हितमित्रः हिता धृता मित्रा. सुहृदो येन स (सभाध्यक्ष) १ ७३ ३ प्रियमित्रवान् (राजा) आर्याभि० १ ४६. ऋ० १ ५ १६ ३ हितानि धृतानि मित्राणि येन स राजा ३ ५५.२१ [हित-मित्रपदयो समास]

हितवान् हित विद्यते यस्य स (जन) १ १८० ७. [हित व्याख्यातम् । ततो मतुप्]

हिता हितकारिणी (रविपी=बलयुक्ता सेना) १ ५१ ७. **हिताः**=हिन्वन्ति गच्छन्ति याश्ता (नद्य) १ ५४ १०. [हित व्याख्यातम् । तत स्त्रिया टाप्]

हिता इव यथा हितसम्पादकास्तथा १.१६६ ३ [हिता -इवपदयो समास]

हितानि हितकराणि (वसूनि=द्रव्याणि) ५ ४२ ३ **हिते**=सुखवर्धके (धने) १ ११६ १५ [हितमिति व्याख्यातम्]

हितेनेव हितसाधकेन मन्त्रेणेव ४ ५७ १ [हितेन-इव पदयो समास]

हित्वा त्यक्त्वा ५ ५३ १४ [ओहाक् त्यागे (जु०) धातो क्त्वा । 'जहातेश्च क्त्वि' इति हिभाव]

हित्वी हित्वा २ ३८ ६ [ओहाक् त्यागे (जु०) धातो क्त्वा । धातोर्हिभाव 'जहातेश्च क्त्वि' सूत्रेण । 'स्नात्व्यादयश्च' सूत्रेणेत्त्वम्]

हिन जनु ६ ४८ २

हिन हिनु वर्धय, प्र०—अत्र हि गतौ वृद्धौ च इत्यस्माल्लोण्मध्यमैकवचने वर्णव्यत्ययेनोकारस्याऽकार २७ ४४. **हिनु**=वर्धयतु ६ ४५ ३०. वर्द्धय ३४ ८. **हिनुहि**=जानीहि १ १४३ ४ वर्धय ६ ४५ १४ **हिनोत**=वर्धयत ७ ३४ ५ प्रेरयत २ १४ ४ **हिनोतम्**=प्राप्नुतम् १ १८४ ४ **हिनोति**=वर्धयति १ १८ ४ **हिनोमि**=प्राप्नोमि २ ३२ ३ वर्धयामि १ ६१ ४ गमयामि ३५.१६ **हिनोषि**=वर्धयसि ६ १३ ३ **हिन्वति**=वर्धयन्ति वर्धन्ते वा, प्र०—अत्र पक्षेऽन्तर्भावितो ण्यर्थ ३ ३१ १६ **हिन्वतु**=प्रीणयतु, प्र०—अत्र लडर्थे लोडन्तर्गतो ण्यर्थ १ २७ ११ **हिन्वन्ति**=प्रेरयन्ति १ ८४ ११ प्राप्नुवन्ति वर्धयन्ति वा ७ ६ २. हित कुर्वन्ति प्रीणयन्ति १ १४४ ५ हिंसन्ति ऋ० भू० ३१७, १० ७१ ५ बढाते हैं पं० वि०, **हिन्वन्तु**=प्रीणन्तु प्रीणयन्ति सेधयन्ति, प्र०—अत्र लडर्थे लोडन्तर्गतो ण्यर्थश्च १ २३ १७ विज्ञापयन्तु वर्धयन्तु वा १ १११ ४ **हिन्विरे**=वर्धयन्ति ५ ६ ६ **हिन्वे**=गमयेय ४.७.११. [हि गतौ वृद्धौ च (स्वा०) धातोर्लिट् । वर्णव्यत्ययेनोकारस्याकार । अन्यत्र लट् लिट् च । 'हिनु वेहि' नि० ११ ३० हिनोत प्रहिणुत नि० ६ २२ हिन्वन्ति आप्नुवन्ति नि० १ २०]

हिन्वन् गमयन् (सोमलतेव व्यवहार) ५ ३६ २. [हि गतौ वृद्धौ च (स्वा०) धातो शतृ]

हिन्वानः वर्धयन् (अग्नि.=विद्युदादिपदार्थ) ७ १० १ **हिन्वानाः**=वर्धयमाना (मनीषिणो जना) २ २१ ५ [हि गतौ वृद्धौ च (स्वा०) धातो शानच् । व्यत्ययेनात्मनेपदम्]

हिन्वानासः सुख सम्पादयन्त (नरवो दुष्टमनुष्या) १ ३३ ८. [हिन्वान इति व्याख्यातम् । ततो जसोऽसुक्]

हिन्वानाः प्रीतिकारिका नद्य १ १०४ ४ [हिन्वान इति व्याख्यातम् । तत स्त्रिया टाबन्ताज्जस्]

हिमवते बहूनि हिमानि विद्यन्ते यस्य तस्मै (पर्वताय) २४ ३०. **हिमवन्तः**=हिमालयादय. पर्वता २५ १२ [हिमप्राति० भूम्न्यर्थे मतुप् । हिमम्=हन हिंसागत्यो (अदा०) धातो 'हन्तेर्हि च' उ० १ १४८ इति मक् । धातोर्हिरादेशश्च]

हिमस्य शीतस्य २३ ६ **हिमाः**=वर्षाणि ५ ५४ १५ संवत्सरान् २ ३३ २ हेमन्तर्त्तुयुक्तानि वर्षाणि ३ १८ वृद्धीर्हेमन्तानृतून् वा ६ ४८ ८ हेमन्तर्त्तव २ २७ [हिममिति पूर्वपदे व्याख्यातम् । अथवा हि गतौ वृद्धौ च (स्वा०) धातोर्बाहु० औणा० मक् । हिमम्—हिम पुनर् हन्तेर्वा हिनोतेर्वा नि० ४ २७ हिमस्य जरायु (यजु० १७ ५) यद्धै शीतस्य प्रशीन तद्धिमस्य जरायु श० ९ १.२ २६. हिमा —(यजु० २.२७) शत हिमा इति शत वर्षाणि जीव्यासमित्येवैतदाह श० १ ९ ३ १९ हिमा रात्रिनाम निघ० १ ७ हिमेन=उदकेन नि० ६ ३६]

हिम्येव हेमन्तर्त्तौ भवा महाशीतयुक्ता रात्रय इव, प्र०—'भवे च छन्दसि' इति यत् हिम्येति रात्रिनाम निघ० १ ७ 'हन्तेर्हि च' उ० १ १४४ इति हन्धातोर्मक् ह्यादेशश्च १ ३४ १ [हिम्या-इवपदयो समास । हिम्या—हिमप्राति० भवार्थे यत् । ततष्टाप् स्त्रियाम्]

हियानस्य वर्धमानस्य (दाहकस्याऽग्ने), प्र०—अत्र व्यत्ययेनात्मनेपदम् २ ४ ४. [हि गतौ वृद्धौ च (स्वा०) धातो शानच् । विकरणस्य लुक्]

हिरणिनः हिरणा सन्ति येषान्तान् (जनान्) ६.६३ ९ हिरण्यादिधनयुक्तस्य (सूरे =मेधाविजनस्य)

द्रुव' उ० १ ३४ सूत्रेण कुडिच्च]

हारियोजन यो हरीन् तुरङ्गान् अग्न्यादीन्वा युनक्ति स एव तत्सम्बुद्धौ (इन्द्र=सभाध्यक्ष) १ ६१ १६ **हारियोजनः**=हरीन् योजयति य सारथि स हरियोजन, हरियोजन एव हारियोजनस्तद्वत् (गृहपति) ८ ११ हरीणामश्वाना योजयिता तस्याऽयमनुक्रम १८ २० [हरियोजनप्राति० स्वार्थे प्रज्ञादित्वादण्। हरियोजन—हरि इत्युपपदे युजिर् योगे (रुधा०) धातो 'कृत्यल्युटो बहुलम्' ति कर्त्तरि ल्युट्। हारियोजन—(ग्रह) छन्दासि वै हरियोजन श० ४ ४ ३ २]

हारियोजनम् हरयोऽश्वा युज्यन्ते यस्मिँस्तत् (रथ=ज्ञानम्) १ ८२ ४, [हरियोजनम्—हर्युपपदे युजिर् योगे (रुधा०) धातोरधिकरणे ल्युट्। तत स्वार्थेऽण्]

हार्दि हृदयस्याऽतिशयेन प्रियम् (मन=चित्तम्) ६ २१. हृदि भव मन ३३ ५१ हृदयस्येदम् (सवनम्=ऐश्वर्यम्) ५ ४४ ९ हार्दमस्मिन्नस्ति तत् (ज्ञानम्) २ २९ ६ [हार्दप्राति० मत्वर्थ इनि। हार्दम्—हृदयप्राति० प्रियार्थे 'तस्येदम्' इत्यर्थे वाऽण्। 'हृदयस्य 'हृल्लेखयदण्लासेषु' अ० ६ ३ ५० सूत्रेण हृदयस्य हृदादेश]

हार्द्वानम् हृद वनति सम्भजति येन तदेव (घर्मम्) ३८ १२ हृदोपपदे वन सम्भक्तौ (भ्वा०) धातो 'कर्मण्यण्' इत्यण्। तत स्वार्थेऽण्]

हासमाना आनन्दमयी (पृत्सुति=वीरसेना) १ १६९ २ [हसे हसने (भ्वा०) धातो शानजन्तात् स्त्रिया टाप्। व्यत्ययेनात्मनेपदम्। हासमाने—हासति स्पर्द्धाया हर्षमाणे वा नि० ९ ३९]

हाः त्यजे ३ ५३ २० [ओहाक् त्यागे (जु०) धातोर्लङ्। अडभाव। 'बहुल छन्दसी' ति शपो लुक्]

हि सादृश्ये ७ ८ निश्चये ३ ३३ प्रसिद्धौ १२ २१ एवार्थे १ १० १० हेत्वपदेशे १ ८ १० हेत्वर्थे १ ८ ९ किल २१ ४६. खलु १८ ७५ यत ८ २० विस्मये १ १८० ७ कदाचिदर्थे १ २५ १ चाऽर्थे १ २४ ८ [हि-होत्येपोऽनेककर्मेद हि करिष्यतीति हेत्वपदेशे, कथ हि करिष्यतीत्यनुपृष्टे कथ हि करिष्यतीत्यसूयायाम् नि० १ ५]

हिङ् हिङ्कारम् १ १६४ २८

हिङ्काराय यो हिङ्करोति तस्मै (जनाय) २२ ७ [हिङ् इत्युपपदे डुकृञ् करणे (तना०) धातोरण्। हिङ्कार—तस्य (एकविंशसाम्न) त्रय्येव विद्या हिङ्कार जै० उ० १.१९ २ एष वै साम्ना रसो यद्धिङ्कार ता० ६ ८ ७ हिङ्कृत्य तदेतद् यज्ञस्याग्रे गेय यद्धिङ्कार। गो० उ० ३ ९. न वाऽअहिङ्कृत्य साम गीयते श० १ ४ १ १ हिङ्कारो वै गायत्रस्य प्रतिहार ता० ७.१ ४ श्रीर्वा एषा प्रजापति-स्साम्नो यद्धिङ्कार जै० उ० ३ १२ ३ एष वै स्तोमस्य योगो यद्धिङ्कार ता० ६ ८ ६ वज्रो वै हिङ्कार कौ० ३.२ शुक्लमेव हिङ्कार जै० उ० १ ३४ वायुरेव हिङ्कार जै० उ० १ ३६ ९ स (प्रजापति) पुरोवातमेव हिङ्कारमकरोत् जै० उ० १ १२ ९ प्राणो हि वै हिङ्कार-स्तस्मादपिगृह्य नासिके न हिङ्कर्त्तु शक्नोति श० १ ४ १ २ प्रजापतिर्वै हिङ्कार ता० ६ ८ ५ लोमैव हिङ्कार जै० उ० १ ३६ ६ स (प्रजापति) मन एव हिङ्कार-मकरोत् जै० उ० १ १ १ ५ चन्द्रमा एव हिङ्कार जै० उ० १ ३३ ५ तस्य साम्न इयमेव प्राची दिग्घिङ्कार जै० उ० १ ३१ २ यदनुदित (आदित्य:) स हिङ्कार जै० उ० १ १२ ४ रश्मय एव हिङ्कार जै० उ० १ ३३ ९ अहोरात्राणि हिङ्कार प० ३ १ स (प्रजापति) वसन्तमेव हिङ्कारमकरोत् जै० उ० १ १२ ७ वसन्तो हिंकार प० ३ १ वृषा हिंकार गो० पू० ३ २३ स (प्रजापति) यजूष्येव हिङ्कारमकरोत् जै० उ० १ १३ ३]

हिङ्कृण्वती हिङिति शब्दयन्ती (अघ्न्या=गौ) १ १६४ २७ [हिङ्पूर्वाद् डुकृञ् करणे (तना०) धातो शत्रन्तान्ङीप्। व्यत्ययेन श्नु]

हिङ्कृताय हिङ्कृत येन तस्मै (जनाय) २२ ७ [हिङ्-कृतपदयो समास]

हितम् हितकारिणम् (अग्निम्) १५ २८ स्थितम् (बलम्) ५ ५७ ६ धृत प्रसन्न वा (मन) १ १८७ ६. प्रवृद्धम् (धनम्) ६ ४५ १५ सुखकारकम् (धनम्) ६ ४५ १२ सुखकारि (धन=द्रव्यम्) ६ ४५ २ स्थापित स्थित वा (राजान=प्राण जीव वा) १ २३ १४ स्थित परमात्मानम् ५ ११ ६ सर्वाऽविरुद्धम् (सुप्रवाचनम्=अध्यापनमुपदेशन वा) १ १०५ १२ सुखसाधकम् (अविरोधनम्) ३ १२ ८ **हितः**=धृत सन् हितकारी, अ०—स्थापित (अग्नि) १ १३ ४ सर्वस्य हित दधन् (जातवेदा=तनय) १२ १०८ हितसम्पादक (विद्वज्जन) १ १२८ ७ **हितेषु**=सुखनिमित्तेषु (कार्येषु) ५ १ ५ **हिते**=हितसाधके (तनये) ४ ४१ ६ [डुधाञ् धारण-पोषणयो (जु०) धातो क्त। 'दधातेर्हि' अ० ७ ४ ४२ सूत्रेण हिरादेश अथवा हि गतौ वृद्धौ च (स्वा०) धातो क्त। हितम्—प्राणो वै हित प्राणो हि सर्वेभ्यो भूतेभ्यो

ऋतपर्णापि वोपमार्थे स्याद्धिरण्यवर्णपर्णेति । नि० ८.१९]

हिरण्यपाणिम् हिरण्यानि सूर्यादीनि तेजांसि पाणौ स्तवने यस्य तम् (सवितारम्=ईश्वरम्) २२१०. हिरण्यानि सुवर्णादीनि रत्नानि पाणौ व्यवहारे लभन्ते यस्मात्तम् (सवितार=परमात्मानम्) १२२५ **हिरण्यपाणिः**=हिरण्यं ज्योति पाणिरिव यस्य स (सूर्य) ३४२५ हिरण्यादिक सुवर्ण पाणौ यस्य स (सविता=विद्वान्राजा) ६७१४ हिरण्यानि ज्योतींपि सूर्य्यादीनि सुवर्णादीनि वा पाणौ व्यवहारे यस्य स (सुक्रतु=ईश्वर, सभास्वामी प्रजाजनो वा), प्र०—ज्योतिर्हि हिरण्यम् श० ४३४२१ इति प्रमाणेन हिरण्यशब्देन ज्योतिषो ग्रहणम् ४२५ हिरण्यं ज्योति, पाणिर्हस्त किरणव्यवहारो वा यस्य स (वायु) ११६ हिरण्यानि ज्योतींषि पाण्यो हस्तवद् ग्रहणसाधनानि यस्य स (सविता=सूर्यलोक) १३५९ हिरण्यं सुवर्णादिक पाणौ हस्ते यस्य स (दातृजन) ६५०८ हिरण्यस्याऽमृतस्य मोक्षस्य दानाय पाणिर्व्यवहारो यस्य स (सविता=जगदीश्वर), प्र०—अमृत हिरण्यम् श० ७३११५ यद्वा हिरण्य प्रकाशार्थं ज्योति पाणिर्व्यवहारो यस्य स (सविता=सूर्यलोक) १२० पाणिरिव हिरण्य तेजो यस्य स (सविता=सूर्य) ३५४११ **हिरण्यपाणे**=हिरण्य हितरमण पाणिर्व्यवहारो यस्य तत्सम्बुद्धौ (सविता=जगदीश्वर) ७३८२ [हिरण्य-पाणिपदयो समास । हिरण्यमिति व्याख्यातम् । पाणि=पण व्यवहारे स्तुतौ च (भ्वा०) धातो 'अशिपणाय्यो रुडायलुकौ च' उ० ४१३३ सूत्रेण इण् । हिरण्यपाणि—तस्मात् (सविता) हिरण्यपाणिरिति स्तुत । कौ० ६१३ गो० उ० १२]

हिरण्यपिण्डान् सुवर्णादिसमूहान् ६४७२३ [हिरण्य-पिण्डपदयो समास]

हिरण्यप्रउगम् हिरण्यस्य ज्योतिपोऽग्ने प्रउग सुखवत्-स्थान यस्मिँस्त प्रयोगाऽर्हम् (रथ=विमानादियानम्) प्र०—पृषोदरादिनाऽभीष्टरूपसिद्धि १३५५ [हिरण्य-प्रउगपदयो समास । प्रउगमिति पृषोदरादिना साधनीयम्]

हिरण्यबाहवे हिरण्य ज्योतिरिव तीव्रतेजस्कौ बाहू यस्य तस्मै (सेनाधीशाय) १६१७ **हिरण्यबाहुः**=हिरण्य बाह्वोर्दानाय यस्य स (इन्द्र=सूर्य इव राजा) ७३४४ [हिरण्य-बाहुपदयो समास]

हिरण्यम् सुवर्णम् १४१९ ज्योति सुवर्णादिकम् १४६१० तेजोमय सुवर्णादिकम्, भा०—समग्रमैश्वर्यम् ३४५० ज्योतिर्मयम् (ब्रह्मचर्यम्) ३४५१. सत्यासत्य-प्रकाश विज्ञानम् ३४५२ **हिरण्यानि**=हिरण्यैर्निर्मितान्याभूपणादीनि २५३९ **हिरण्येन**=न्यायप्रकाशेन सुवर्णादिधातुमयेन (सूर्येण) वा १३३८ **हिरण्यैः**=किरणैरिव तेजोभि २३३९ सुवर्णैस्तेजआदिभि. ५६०४ [हर्य गतिकान्त्यो (भ्वा०) धातो 'हर्यते कन्यन् हिरच्' उ० ५४४ सूत्रेण कन्यन् हिरजादेशश्च । हिरण्य कस्माद् ध्रियते आयम्यमानमिति वा ह्रियते जनाज्जनमिति वा हितरमण भवतीति वा हृदयरमण भवतीति वा हर्यतेर्वा स्यात् प्रेप्साकर्मण नि० २१० ज्योतिर्हि हिरण्यम् श०४३१२१ हिरण्यम्—तद् यदस्य (प्रजापते) एतस्या रम्याया तन्वा देवा अरमन्त तस्माद्धिरण्य ह वै तद् हिरण्यमित्याचक्षते परोऽक्षम् श० ७४११६ (अथर्व० ५२८६ त्रेधा जात जन्मनेद हिरण्यमग्निरेक प्रियतम बभूव सोमस्यैक हिंसितस्य परापतत् अपामेक वेधसा रेत आहुस्तत् ते हिरण्य त्रिवृदस्त्वायुपे) अग्निर्ह वाऽपोऽभिदध्यौ मिथुनमाभि स्यामिति ता सम्बभूव तासु रेत प्रासिञ्चत्तद्धिरण्यमभवत् तस्मादेतदग्निसकाशामग्नेर्हि रेतस्तस्मादप्सु विन्दन्त्यप्सु हि प्रासिञ्चत् श० २११५ तस्य (अग्ने) रेत परापतत् । तद्धिरण्यमभवत् तै० ११३८, अग्नेर्वाऽएतद् रेतो यद्धिरण्य नाष्ट्राणा रक्षसामपहत्यै श० १४-१३२९ समानजन्म वै अयश्च हिरण्यश्चोभय ह्यग्निरेतसम् श० ३२४८ अश्वस्य वा आलब्धस्य रेत उदक्रामत् । तत्सुवर्ण हिरण्यमभवत् तै० ३८२४ श० १३११३ रेतो हिरण्यम् तै० ३८२४ (प्रजापति) अयसो हिरण्य (असृजत) तस्मादयो बहुध्मात हिरण्यसकाशमिवैव भवति श० ६१३४ क्षत्रस्यैतद्रूप यद्धिरण्यम् श० १३२२१७ आयुर्हि हिरण्यम् श० ४३४२४ (आयुष्य वर्चस्य रायस्पोषमौद्भिदम् । इद हिरण्य वर्चस्वज्जैत्रायाविशतादु माम् यजु० ३४५० नैन रक्षासि न पिशाचा सहन्ते देवानामोज प्रथमज ह्येतत् । यो बिभर्त्ति दाक्षायण हिरण्य स जीवेषु कृणुते दीर्घमायु २ अपा तेजो ज्योतिरोजो बल च वनस्पतीनामुत वीर्याणि । इन्द्र इवेन्द्रियाण्यधिधारयामो अस्मिन् तद् दाक्षायणो बिभ्रद् हिरण्यम् ३ अथर्व० १३५२-३ यद्धिरण्य ददाति आयुस्तेन वर्षीय कुरुते गो० उ० ३१९ अमृतमायुर्हिरण्यम् श० ३८२२७ (यजु० १८५२) अमृत वै हिरण्यम् श० ९४४५ प्राणो वै हिरण्यम् श० ७५२८ सोमस्य वा अभिपूयमाणस्य प्रिया तनूरुदक्रामत् तत्सुवर्णं हिरण्यमभवत् तै० १४७४-५ वरुणस्य वा अभिषिच्यमानस्याप इन्द्रिय वीर्य निरघ्नन् ।

५ ३३ ८ [हिरणप्राति० मत्वर्थ इनि । हिरण्यप्राति० मत्वर्थ इनिप्रत्यये छान्दस रूपम्]

हिरण्मयेन ज्योतिर्मयेन (पात्रेण=रक्षकेणेश्वरेण) ४० १७ [हिरण्यप्राति० अवयवे विकारे वार्थे मयट्प्रत्यये 'दाण्डिनायनहास्तिनायन०' अ० ६ ४ १७४ सूत्रेण यादि-लोपो निपात्यते । हिरण्यम्=हर्य गतिकान्त्यो (भ्वा०) धातो 'हर्यते कन्यन् हिरच्' उ० ५ ४४ सूत्रेण कन्यन् । हिरच् चादेश । हिरण्य कस्माद् ध्रियत आयम्यमानमिति वा ह्रियते जनाज्जनमिति वा हितरमण भवतीति वा हृदयरमण भवतीति हर्यतेर्वा स्यात् प्रेप्साकर्मण नि० २ १० हिरण्यम् हिरण्यनाम निघ० १ २ ज्योतिर्हि हिरण्यम् श० ४ ३ ४ २१]

हिरण्यकर्णम् हिरण्य कर्णे यस्य तम् (अर्य=वैश्यम्) १ १२२ १४ [हिरण्य-कर्णपदयो समास.]

हिरण्यकारम् सुवर्णकार सूर्य वा ३० १७. [हिरण्यो-पपदे डुकृञ् करणे (तना०) धातो 'कर्मण्यण्' इत्यण्]

हिरण्यकेशः हिरण्यवत्तेजोवत्केशा न्यायप्रकाशा यस्य स (अहि=मेघ इव) १ ७९ १ [हिरण्य-केशपदयो समास । केशा रश्मय, काशनाद्वा प्रकाशनाद्वा नि० १२ २६]

हिरण्यगर्भः हिरण्यानि सूर्यादितेजासि गर्भे यस्य स परमात्मा २५ १० हिरण्यानि सूर्यादीनि ज्योतीपि गर्भे यस्य कारणरूपस्य स (परमेश्वर) २३ १ सूर्यविद्युदादि-पदार्थाऽधिकरण (ईश्वर) ३२ ३ हिरण्याना सूर्यादीना तेजस्विना गर्भ उत्पत्तिस्थानम् (परमेश्वर) ऋ० भू० ३००, ३२ ३ हिरण्य ज्योतिर्विज्ञान गर्भ स्वरूप यस्य स (परमेश्वर) एवञ्च ज्योति प्रकाशोऽमृत मोक्ष, आदित्यादय केशा प्रकाशलोका, यश सत्कीर्त्तिर्धन्यवाद, आत्मा, जीव, इन्द्र, सूर्योऽग्निश्चैतत् सर्वं हिरण्याख्य गर्भे सामर्थ्ये यस्य स हिरण्यगर्भ परमेश्वर ऋ० भू० ७५, ३२ ३ हिरण्यानि सूर्यादीनि तेजासि गर्भे मध्ये यस्य स (प्रजापति= परमात्मा) १३ ४ सूर्यादि तेजस्वी पदार्थों का गर्भ नाम उत्पत्तिस्थान उत्पादक (ईश्वर) आर्याभि० २ २०, १३ ४ जिसने प्रकाश करने वाले सूर्यचन्द्रमादि पदार्थ उत्पन्न किए है वह प्रकाश स्वरूप (ईश्वर) स० वि० ४, १३ ४ सब सूर्यादि तेजस्वी लोको का आधार (देव=परमात्मा) स० प्र० २८२, १० १२१ १ [हिरण्य-गर्भपदयो समास । हिरण्यमिति व्याख्यात हिरण्मयेन पदे । प्रजापतिर्वै हिरण्यगर्भ श० ६ २ २ ५ हिरण्यगर्भ—हिरण्यगर्भो हिरण्यमयो गर्भो, हिरण्यमयो गर्भोऽस्येति वा । गर्भो गृभेर्गृणात्यर्थे गिरत्यनर्थानिति वा नि० १० २३]

हिरण्यचक्रान् हिरण्यानि सूर्यादीनि तेजासि चक्रेषु येषा विमानादीना तान् (रथान्) १ ८८ ५ [हिरण्यचक्र-पदयो समास]

हिरण्यजिह्वः=हिरण्यमिव सत्येन सुप्रकाशिता वाणी यस्य स (सविता=राजा) ६ ७१ ३ हिरण्य हित-रमणीया जिह्वा वाग् यस्य स (राजा राजपुरुषो वा), प्र०—हितरमण भवतीति वा हृदयरमण भवतीति वा नि० २ १० जिह्वेति वाङ्नाम निघ० १ ११, ३३ ६६ [हिरण्य-जिह्वापदयो समास । हिरण्यमिति व्याख्यातम् जिह्वा वाङ्नाम निघ० १ ११]

हिरण्यत्वक् हिरण्य तेज सुवर्णं चैव त्वगुपरिवर्ण यस्य स (रथ=विमानादियानम्) ५ ७७ ३ [हिरण्य-त्वच्पदयो समास]

हिरण्यदन्तम् हिरण्येन सुवर्णेन तेजसा वा तुल्या दन्ता यस्य तम् (कुमारम्) ५ २ ३ [हिरण्य-दन्तपदयो समास]

हिरण्यदाः ये वायवो हिरण्य तेजो ददति ते २ ३५ १० [हिरण्योपपदे डुदाञ् दाने (जु०) धातो क]

हिरण्यनिर्णिक् य पृथिव्या हिरण्यमग्नेस्तेजश्च नितरा नेनेक्ति स (विद्वज्जन) ५ ६२ ७ या हिरण्येन निर्णेनेक्ति पुष्णाति सा (वाक्) १ १६७ ३ [हिरण्योपपदे निरुपपदे णिजिर् शौचपोषणयो (जु०) धातो कर्त्तरि क्विप्]

हिरण्यनेमयः हिरण्यस्वरूपा नेमि सीमा यासा ता (विद्युत) १ १०५ १ [हिरण्य-नेमिपदयो समास । नेमि वज्रनाम निघ० २ २० नेमि—णीञ् प्रापणे (भ्वा०) धातो 'नियो मि' उ० ४ ४३ सूत्रेण मि]

हिरण्यपक्षः हिरण्यस्य सुवर्णस्य पक्ष परिग्रहो यस्य स (विद्वान् सभेश) १८ ५३ [हिरण्य-पक्षपदयो समास]

हिरण्यपर्णम् हिरण्यानि तेजासि पर्णानि पालकानि यस्य तम् (वनस्पतिं=किरणपालक सूर्यम्) २८ ३३ **हिरण्यपर्णः**=हिरण्यानि तेजासि पर्णानि यस्य स (वनस्पति=सूर्य) २८ २० हिरण्यवर्ण तेजस्वरूप (वनस्पति) २१ ५६ **हिरण्यपर्णा.**=हिरण्यानि पर्णानि पक्षा येषा ते (हसास=अश्वा) ४ ४५ ४ [हिरण्य-पर्ण-पदयो समास । पर्ण—पॄ पालनपूरणयो (जु०) धातो 'धापॄवस्यज्यतिभ्यो न' उ० ३ ६ सूत्रेण न । हिरण्यपर्ण

प्र०—अत्र भूम्न्यर्थे मतुप् १ ३० १७ [हिरण्य व्याख्यानम् । ततो भूम्न्यर्थे मतुप्]

हिरण्यवन्धुरम् हिरण्यानि सुवर्णादीनि वन्धुराणि वन्धनानि यस्मिँस्तम् (रथ=रमणीय यानम्) ४ ४६.४ [हिरण्य-वन्धुरपदयो समास । वस्य वकारश्छान्दस । वन्धुर =वन्ध वन्धने (क्या०) धातो 'मद्गुरादयश्च' उ० १ ४१ सूत्रेण उरच्]

हिरण्यवर्ण यो हिरण्य वृणोति तत्सम्बुद्धौ (राजन्) ५ ३८ २ **हिरण्यवर्णम्**=तेजोमय शोभनस्वरूपम् (घृतम्=उदकमाज्य वा) २ ३५ ११ तेजस्विनम् (विद्वज्जनम्) ५ ४३ १२ **हिरण्यवर्ण:**=तेज स्वरूप (वनस्पति =सूर्य) २१ ५६ हिरण्य सुवर्णमिव वर्णो यस्य स (अग्नि) २ ३५ १० [हिरण्य-वर्णपदयो समास]

हिरण्यवर्णाम् तेजोमयीम् (विदुषी स्त्रीम्) ३ ६१ २ **हिरण्यवर्णा:**=हिरण्यवद् वर्णो यासा ता नद्य २ ३५ ६. [हिरण्य-वर्णपदयो समासे स्त्रिया टाप् । हिरण्यवर्णा नदीनाम निघ० १ १३]

हिरण्यवर्त्तनि. हिरण्यस्य विद्याव्यवहारस्य वर्त्तनिर्मार्गो यस्या सा (सरस्वती—वाणी) ६ ६१ ७ [हिरण्य-वर्त्तनिपदयो समास. । वर्त्तनि—वृतु वर्त्तने (भ्वा०) धातो 'वृतेश्च' उ० २ १०६ सूत्रेणानि]

हिरण्यवर्त्तनी यौ हिरण्य ज्योति सुवर्ण वा वर्त्तयतस्तौ (अश्विना=शिल्पिजनौ) ५ ७५ २ हिरण्य प्रकाश वर्त्तयन्तौ (अश्विनौ=वाय्वग्नी) १ ९२ १८ [हिरण्यवर्त्तनिरिति व्याख्यातम् । ततो द्विवचने रूपम्]

हिरण्यवाशीमत्तम हिरण्येन सत्यप्रकाशेन परमयशसा सह प्रशस्ता वाशी वाग् विद्यते यस्य सोऽतिशयितस्तत्सम्बुद्धौ (पृथिवीराज्ययुक्त सभेश) प्र०—वाशीति वाङ्नाम निघ० १ ११, १ ४२ ६ [हिरण्य-वाशीपदयो समासे प्रशसायामर्थे मतुप् । ततोऽतिशायने तमप् । वाशी वाङ्नाम निघ० १ ११]

हिरण्यशम्यम् हिरण्यानि सुवर्णान्यन्यानि वा ज्योतीषि शम्यानि शमितु योग्यानि यस्मिँस्तम् (रथम) १ ३५ ४ [हिरण्य-शम्यपदयो समास । शम्यम्=शमु उपशमे (दिवा०) धातोर्यत् 'पोरदुपधात्' सूत्रेण]

हिरण्यशिप्रा. हिरण्यमिव शिप्राणि मुखानि येषा ते (राजपुरुषा) २ ३४ ३ [हिरण्य-शिप्रपदयो समास । शिप्रे हनूनासिके वा नि० ६ १७]

हिरण्यशृङ्ग. हिरण्यानि तेजासि शृङ्गाणीव यस्य स (विद्युदग्नि) १ १६३ ९ [हिरण्य-शृङ्गपदयो समास । शृङ्गम्—शृङ्ग श्रयतेर्वा शृणातेर्वा शम्नातेर्वा शरणायोद्गतमिति वा शिरसो निर्गतमिति वा नि० २ ८]

हिरण्यसन्दृक् यो हिरण्य तेज सम्यग् दर्शयति स (अग्नि) २ ३५ १० **हिरण्यसन्दृश:**=हिरण्य तेज इव सन्दृक् समान दर्शन येषान्ते (सज्जना) ६ १६ ३८ [हिरण्योपपदे सम्पूर्वाद् दृशिर् प्रेक्षणे (भ्वा०) धातो क्विन् छान्दस]

हिरण्यस्येव यथा सुवर्णस्य १ ११७ १२ [हिरण्यस्य-इवपदयो समास]

हिरण्यहस्तम् हिरण्यानि सुवर्णादीनि हस्ते यस्य यद्वा विद्यातेजासि हस्ताविव यस्य तम् (विद्यात्रातृपुत्रम्) १ ११७ २४. हिरण्य हस्ते यस्मात् तम् (श्रुत=पठितम्) १ ११६ १३ **हिरण्यहस्त:**=हिरण्यानि ज्योतीषि हस्तवद् यस्य स (देव =सूर्य) ३४.२६ हिरण्यानि सर्वतो गमनानि हस्ता इव यस्य स (वायु), प्र०—अत्र गत्यर्थाद् हर्यगतोरौणादिक कन्यन् प्रत्यय १ ३५ १०. [हिरण्य हस्तपदयो समास]

हिरण्या सुवर्णादीनि धनानि ४ १७ ११ [हिरण्य-प्राति० शेर्लोपश्छन्दसि]

हिरण्याऽक्ष: हिरण्यानि ज्योतीषि अक्षीणि व्याप्तिशीलानि यस्य स (देव =सूर्यलोक) १ ३५ ८. हिरण्यानि ज्योतीष्यक्षीणी इव यस्य स (सूर्य्य) ३४ २४ [हिरण्य-अक्षिपदयो समासे समासान्तोऽच् छान्दस]

हिराभि: वृद्धिभि २५.८ [हि गतिवृद्धयो (भ्वा०) धातोर्बाहु० औणा० रक् । तत स्त्रिया टाप्]

हिरिशिप्र: हिरी हरिते शिप्रे हनुनासिके यस्य स (इन्द्र =ईश्वरोपासको राजा) ६ २९ ६ हरणशीलहनु (विद्वज्जन) २ २ ५ [हिरि-शिप्रपदयो समास । हिरि =हृञ् हरणे (भ्वा०) धातोरौणा० इनप्रत्यये हरि । अकारस्येकारश्छान्दस । शिप्रे हनूनासिके वा नि० ६ १७]

हिरिश्मश्रु: हिरण्यमिव श्मश्रूणि यस्य स (मेधावी राजा) ५ ७ ७ [हिरि-श्मश्रुपदयो समास । श्मश्रुलोम, श्मनि श्रित भवति नि० ३ ५]

हिरुक् पृथक् १ १६४ ३२ [हिरुक् निर्णीतान्तर्हितनाम निघ० ३ २५]

हिषे प्रहिणोमि ७ ७ १ [हि गतिवृद्धयो (भ्वा०) धातोर्लट् । विकरणस्य लुक् 'बहुल छन्दसि' सूत्रेण । व्यत्ययेनात्मनेपदम्]

तत्सुवर्णं हिरण्यमभवत् तै० ८ १ ६ १ वर्चो वै हिरण्यम् तै० १ ८ ६.१ तेजो वै हिरण्यम् तै० १ ८ ९ १ चन्द्र हिरण्यम् तै० १ ७ ६ ३ चन्द्र, ह्येतच्चन्द्रेण क्रीणाति यत्सोम हिरण्येन (चन्द्र =सोम, चन्द्र= हिरण्यम्) श० ३ ३ ३.६ शुक्र हिरण्यम् तै० १ ७ ६ ४ शुक्र ह्येतच्छुक्रेण क्रीणाति यत्सोम हिरण्येन श० ३ ३ ३ ६ ज्योतिर्वै शुक्र हिरण्यम् ऐ० ७ १२ ज्योतिर्वै हिरण्यम् ता० ६ ६ १० यशो वै हिरण्यम् ऐ० ७ १८ सत्य वै हिरण्यम् गो० उ० ३.१७ देवाना वा ऽएतद्रूप यद्धिरण्यम् श० १२ ८ १ १५ पवित्र वै हिरण्यम् तै० १ ७ २ ६ तस्माद्धिरण्य कनिष्ठ धनानाम् तै० ३ ११ ८ ७]

हिरण्यमिव यथा सुवर्णं प्रीतिकरम् १ ४३.५ [हिरण्य-इवपदयो समास]

हिरण्ययम् तेज सुवर्ण वा प्रचुर यस्मिँस्तम् (रथम्) १ ५६ १ हिरण्यप्रभूत धनम् १ १३९ २ सुवर्णादि-प्रचुर धनम् ३ ३४ ९. सुवर्णादियुक्त तेजोमय वा (चक्रम्) ६ ५६ ३. ज्योतिर्मयम् (वज्रम्) १ ८५ ९. **हिरण्ययः**= तेजस्स्वरूप (वेतस =कमनीयो मनुष्य) १७ ९३ ज्योतिर्मय (इन्द्र =सूर्यलोक), प्र०—'ऋत्व्यवास्त्व्य०' अ० ६ ४ १७५ अनेन हिरण्मयशब्दस्य मलोपो निपात्यते । 'ज्योतिर्हि हिरण्यम्' श० ४ ३ १ २१, १ ७ २ तेजोमय सुवर्णमयो वा (विद्वज्जन) ४ ५८ ५. यशस्वी (ईश्वर) १३ ३८ **हिरण्ययाः**=सुवर्णप्रचुरा (पवय =चक्राणि) १ १८० १ **हिरण्यये**=प्रभूतसुवर्णमये (रथे) १ १३९ ४ **हिरण्ययेन**=सुवर्णादिनाऽलङ्कृतेन (रथेन =विमानादि यानेन) ४.४४ ५ ज्योतिर्मयेन सुवर्णाद्यलङ्कृतेन (रथेन) ४ ४४ ४ तेजोमय वरूप के साथ स० प्र० ३१३, ३३ ४३ **हिरण्ययौ**=प्रभूतहिरण्यमय्यौ (द्यावापृथिव्यौ) १ १४४ ६ [हिरण्यमिति व्याख्यातम् । ततोऽवयवे विकारे वार्थे मयट्-प्रत्यये 'ऋत्व्यवास्त्व्य०' अ० ६ ४ १७५ सूत्रेण निपातनात् मलोप]

हिरण्यया हिरण्यादिभूषणयुक्तौ (बाहू=भुजौ) ६ ७१ १ ज्योतिष्प्रचुरे (पृथिवीसूर्यौ) ३३ ७१ हिरण्य-वत्सुदृढौ सुशोभितौ (बाहू) ६ ७१ ५ [हिरण्ययमिति व्याख्यातम् । ततो द्विवचनस्याकारादेश]

हिरण्ययासः हिरण्येन विद्युत्तेजसा प्रचुरा (मरुत = वायव) ६ ६६ २ [हिरण्यप्राति० 'तत्प्रकृतवचने मयट्' इति मयट्प्रत्यये 'ऋत्व्यवास्त्व्य०' अ० ६ ४ १७५ सूत्रेण मलोप । ततो जसोऽसुक्]

हिरण्ययी रोगरहिता शुद्धा (योनि =जन्मस्थानम्) ८ २९ **हिरण्ययीम्**=हिरण्यादिबहुधनयुक्ताम् (अमतिं= सुरूपा लक्ष्मीम्) ३ ३८ ८ तेजोमयीम् (अभ्रि=खनन-साधिका शस्त्री) ११ ११ हिरण्यादिप्रचुराम् (श्रियम्) ७ ३८ १ **हिरण्ययीः**=सुवर्णप्रचुरा (शिप्रा =उष्णीष) ५ ५४ ११ तेजोमय्य सुवर्णादिसुभूषिता (नाव) ६ ५८ ३ सुवर्णादिभिरनुलिप्ता (द्वार =द्वाराणि) २८ २८ हिरण्यप्रकारा (देवी =वाच) २८ ३१ [हिरण्य-प्राति० अवयवे विकारे वार्थे मयट्प्रत्ययान्तात् स्त्रिया ङीप्]

हिरण्ययी प्रभूतहिरण्यमय्यौ (द्यावापृथिव्यौ) १ १४४ ६ [हिरण्ययीति व्याख्यातम् । ततो द्विवचनस्य पूर्वसवर्णदीर्घ]

हिरण्ययुः हिरण्य सुवर्णं कामयमान (विद्वान्राजा-ऽध्यापक परीक्षको वा) ७ ३१ ३ [हिरण्यप्राति० आत्मन इच्छायामर्थे क्यजन्तात् 'क्याच्छन्दसी' ति उ । 'न छन्दस्यपुत्रस्य' इतीत्वप्रतिषेध]

हिरण्ययेभिः तेजोमयै. (पविभि =चक्रै) १.६४.११. [हिरण्यय इति व्याख्यातम् । ततो भिस ऐस् 'बहुल छन्दसि' इति न भवति]

हिरण्यरथम् हिरण्याना ज्योतिर्मयाना सूर्यादीना लोकाना सुवर्णादीना वा रथो देशान्तरप्रापणो यानसमूह , प्र०—अत्र रथ इति रमु क्रीडायाम् इत्यस्य रूप रम-धातो-र्वा रूपम् १.३० १६ **हिरण्यरथाः**=हिरण्य सुवर्ण रथेषु येषा ते यद्वा हिरण्य तेज इव रथा येषा ते रुद्रास = विद्वासो जना) ५ ५७ १ **हिरण्यरथः**=तेजोमय रमणीय-स्वरूप सूर्य इव रथो व्यवहारो यस्य स (अग्नि =राजा) ४ १.८ [हिरण्य-रथपदयो समास]

हिरण्यरूपम् हिरण्यस्य तेजसो रूपमिव रूप यस्य तम् (अग्नि=सूर्यमिव राजानम्) ४ ३ १ तेजस्वरूपम् अथ स्थूण=सुवर्णस्तम्भम्) ५ ६२ ८ **हिरण्यरूपौ**= ज्योति स्वरूपौ (मित्रावरुणौ=उपदेशकसेनापती) १० १६ [हिरण्य-रूपपदयो समास । हिरण्यरूप —हिरण्यवर्ण-स्येवास्य रूपम् नि० ३ १६]

हिरण्यवत् हिरण्यादिना तुल्यम् (यज्ञम्) ८ ६३ [हिरण्यप्राति० तुल्यार्थे वति]

हिरण्यवत् प्रशस्तानि हिरण्यादीनि विद्यादीनि तेजासि वा विद्यन्ते यस्मिँस्तत् (रथ =रमणयानम्) १ ९२ १६ हिरण्य सुवर्णादिक बहुविध साधन यस्य तत् (यानम्)

अभिसङ्कल्पेथाम् सर्वत ममानाभिप्राये समर्थयताम् १२ ५७ [अभि+सम्+कृपु सामर्थ्ये धातोर्लङ् अडभावश्च]

अभिसचन्ताम् अभिमुख संयुञ्जन्तु, अन्व०—अभिसयुक्ता भवन्तु १ २२ ११ **अभिसचन्ते**=अभिमुख सम्बध्नन्ति ४ ४४ २ अभित समवयन्ति १ ७१ ७ [अभि+षच् समवाये (भ्वा०) धातोर्लोट् लट् च। व्यत्ययेनात्मनेपदम्। सचन्ता=नमेव्यन्ताम् नि० ६ ३३]

अभिसञ्चरन्ति आभिमुख्येन सम्यगाचरन्ति। [अभि+सम्+चर गतौ (भ्वा०) धातोर्लट्]

अभिसञ्चरन्ती अभित सम्यक् गच्छन्ती (द्यावापृथिव्यौ) [अभि+सम्+चर गतौ (भ्वा०) धातो शतृ ततो ङीप्]

अभिसञ्चरेण्यम् अभित सम्यक् चरितु ज्ञातु योग्यम् (चित्तम्) १ १७० १ [अभि+सम्+चर गतौ भक्षणे च (भ्वा०) धातो 'कृत्यार्थे तवैकेनकेन्यत्वन' सूत्रेण केन्य प्रत्यय। अभि सञ्चरेण्यम्=अभिसञ्चारि नि० १ ६]

अभिसत्वा अभित सर्वत सत्वानो युद्धविद्वासो रक्षका भृत्या वा यस्य स (इन्द्र=सेनापति) १७ ३७]

अभिसन्दधुः अभिमुख सन्दधति १ १०१ ६ [अभि+सम्+डुधाञ् धारणपोषणयो (जु०) धातोर्लिट् सामान्ये]

अभिसर्त्तारम् अभिमुख गन्तारम् (पुरुषम्) ३० १४ [अभि+सृ गतौ (भ्वा०) धातो कर्त्तरि तृच्]

अभिसन्नवन्ते अभिमुख गच्छन्ति, प्र०—नवत इति गतिकर्मा निघ० २ १४, १.१६४.३ [अभि+सम्+नवत इति गतिकर्मा निघण्टौ, ततो लट्]

अभिसम्बभूव सर्वथा ऐसे निश्चय युक्त हो स० प्र० १५२, १० १८.८ [अभि+सम्+भू सत्तायाम् (भ्वा०) धातोर्लिट्]

अभिसश्चत सर्वत प्राप्नुत ३ १६ २ [अभि+सश्चति गतिकर्मा निघ० २ १४ धातोर्लोट्]

अभिसंयन्ति सम्मुख जाकर बडा मान्य करते है स० वि० ८०, अथ० ११ ५.३ सम्मुखे प्रसन्नतया मान्य कुर्वन्ति ऋ० भू० २३५, अथर्व० ११ ५ ३ [अभि+सम्+इण् गतौ (अदा०) धातोर्लट्]

अभिसंरभन्ते अभिमुख सम्यक् प्रवर्त्तयन्ति ३ २६.१३. [अभि+सम्+रभ राभस्ये (भ्वा०) धातोर्लट्]

अभिसंविवेश आभिमुख्येन सम्यक् प्रविशति ३२ ११ अभिमुख सम्यक् प्राप्य स एव मोक्षाख्य सुखमनुभवति ऋ० भू० ८६ ममावियोग मे सर्वथा प्रवेश किया करे स० वि० २१५, ३२ ११ परमानन्द मे सर्वथा रहना है आर्याभि० २ १० **अभिसंविशन्तु**=अभित सम्यक् प्रविशन्तु १४ ६ भा०—आभिमुख्येन विजानन्तु १५ ५७ [अभि+सम्+विश प्रवेशे (तुदा०) धातोर्लिट् लोट् च]

अभिसिञ्चामि आभिमुख्येन सुगन्धेन रसेन मार्जिम ६ ३० अभिमुखमविकरोमि १० १७ [अभि+षिच क्षरणे (तुदा०) धातोर्लट्]

अभिसृजामि आभिमुख्येन रचयामि ११६ ६ [अभि+सृज विसर्गे (तुदा०) धातोर्लट्]

अभिसृष्टः अभिमुख प्रेरित (अन्य=सुसंस्कृतमन्नम्) ३ ३५ १ [अभि+सृज विसर्गे (तुदा०) धातो क्त]

अभिस्तुते आभिमुख्येनाध्यापयन्त्यावुपदेशयन्त्यावध्यापकोपदेशिके ७ ४० ७ [अभि+ष्टुञ् स्तुतौ (अदा०) धातो क्त]

अभिस्तुहि आभिमुख्यतया प्रशस १ ५४.२ [अभि+ष्टुञ् स्तुतौ (अदा०) धातोर्लोट्]

अभिस्याम् अभिमुख भवेम १ १०५ १७ [अभि+अस भुवि (अदा०) धातोर्लिङ्]

अभिस्रवन्तु अभित सर्वत वृष्टि करोतु प० वि०। सर्वतो वर्षन्तु ३६ १२ [अभि+स्रु गतौ (भ्वा०) धातोर्लिट्]

अभिस्वर आभिमुख्येन जानीहि प्राप्नुहि, प्र०—स्वरतीति गतिकर्मसु, पठितम् निघ० २ १४, ११० ४ **अभिस्वरन्ति**=आभिमुख्येनोच्चरन्ति १.१६४ २१ [अभि+स्वृ शब्दोपतापयो (भ्वा०) धातोर्लोट्। अत्र गत्यर्थे अभिस्वरन्ति अभिप्रयन्ति नि० ३ १२.]

अभिस्वरा अभित सर्वत स्वरा वाणी तया, प्र०—अत्र 'सुपा सुलुग्०' इति डादेश 'स्वर' इति वाङ्नाम निघ० १११, २ २१५ **अभिस्वरे**=योऽभित स्वरति शब्दयति तस्मिन् (अश्वे) ३ ४५ २ [अभि+स्वृ शब्दोपतापयो (भ्वा०) धातोरच् प्रत्यय 'स्वर' इति वाङ्नाम निघण्टौ]

अभिहर्यत सर्वथा प्रेमपूर्वक कामना से वर्त्ता करो सं० वि० १४१, अथर्व० ३ ३० १ [अभि+हर्यति कान्तिकर्मा, निघ० २ ६ ततो लोट्। हर्यति गतिकर्मा निघ० २ १४]

अभिहितः कथितो धृतो वा (वह्नि=अग्नि.) ५ ५० ४ [अभि+डुधाञ् धारणपोषणयो. (जु०) धातो. क्त.। 'दधातेर्हिरि' ति धातोर्हिरादेश]

अभिह्रुताम् सर्वत. कुटिलाचरणानाम् (दुर्जनानाम्)

हिंसिषम् उच्छिन्द्याम्, प्र०—अत्र लिङर्थे लुङ् १ २५ **हिंसिष्ट**=नष्ट करे स० वि० १६०, अथर्व० १६ ४ ३ **हिंसिष्टम्**=हिंस्यातम् ५ ३ **हिंसीत्**=हिनस्तु, प्र०—अत्र लोडर्थे लुङ् १ २२ रोगैर्हिंस्यात् १२ १० २ हन्यात्, ताडयेद्, विमुख कुर्यात् ३२ ३ **हिंसीः**=हिंस्यात् अ०—हनन कुर्या, प्र०—अत्र लिङर्थे लुङ् ४ १ हिंस्या १३ ४७ हिन्धि, अ०—विचालन वा कुर्या, प्र०—अत्र लोडर्थे लुङ् ४ ६ कुशिक्षया लालनेन वा विनाशये. ६ १५ हिंसया युक्त कुर्या ३७ २० हन्या ५.४३ ताडये १८ ५३ पीडित कर स० वि० १६७, अथर्व० ६ २ ३ १६ [हिंसि हिंसायाम् (रुधा०) धातोर्लुङ्। अटोऽभाव]

हीडितस्य अनादृतस्य (राज्ञ) ७ ४६ ४ **हीडितः**=अनादृत (विद्वज्जन) १ ८० ५ [हेड् अनादरे (भ्वा०) धातो क्त । एकारस्यैकारश्छान्दस]

हीयताम् त्यज्यताम् ६ ५२ १ [ओहाक् त्यागे (जु०) धातो कर्मणि लोट्]

हुतम् वह्नौ प्रक्षिप्तम् (मधु=घृतादि) ३८ १६ शब्दित (प्रजापति=जीव) ३६ ५ [हु दानादानयो (जु०) धातो क्त । अथवा ह्वेञ् स्पर्धायां शब्दे च (भ्वा०) धातो क्त । दीर्घाऽभावश्छान्दस]

हुतास. सत्कारेण हुता (देवा=विद्वासो जना) ६ ५० १५. [हुतमिति व्याख्यातम् । ततो जसोऽसुक्]

हुरश्चितम् उत्कोचक हस्तात्परपदार्थापहर्त्तारम् (स्तेनम्) १ ४२ ३ [हुरश्चित् स्तेननाम निघ० ३ २४]

हुरः कुटिलस्य (दुर्जनस्य) ४ ३ १३ [ह्वृ कौटिल्ये (भ्वा०) धातो कर्त्तरि क्विप्। 'बहुल छन्दसि' सूत्रेणो-कारादेश]

हुवतः स्तुवत (सज्जनान्), ६ २१ १० [हु दाना-दानयो (जु०) ह्वेञ् स्पर्धाया शब्दे च (भ्वा०) धातोर्वा शतरि छान्दस रूपम्]

हुवध्यै ग्रहीतुम् ५ ४५ ४ होतुमादातुम् १ १२२ ५ आह्वातुम् ५ ४३ ८ ग्रहणाय ५ ४१ ३ [हु दानादानयो (जु०) धातो ह्वेञ् स्पर्धाया शब्दे च (भ्वा०) धातोर्वा तुमर्थ कध्यै]

हुवन्यति आत्मनो हुवन दानमादानञ्चेच्छति, प्र०—अत्र हुवनशब्दात् क्यचि 'वाच्छन्दसि' इतीत्त्वाभावेऽल्लोप १ ११६ ६ [हुवनप्राति० इच्छायामर्थे क्यजन्तात्लट्। हुवनम्=हु दानादानयो (जु०) धातोर्बाहु० औणा० क्यु]

हुवानः स्पर्धमान (तेजस्वी राजा) ७ ३० ३ आ-ददान (विद्वज्जन) ५ ४३ १३ आहूत (इन्द्र=ऐश्वर्य-कारको जन) ३ ४१ ४ स्तुवन् (प्रशस्तो जन) ७ ७ ३ ददन् (विद्वज्जन) ५ ४३ १०. **हुवानाः**=आह्वातार (देवा=विद्वज्जना) ६ ५० १४ कृताऽऽह्वाना (उस्रा=किरणा) ४ १ १३ [ह्वेञ् स्पर्धाया शब्दे च (भ्वा०) धातो शानच् । शपो लुक् । औणा० वा आनच् किच्च । अथवा हु दानादानयो (जु०) धातो शानच् । शपो लुक्। व्यत्ययेनात्मनेपदम् । हुवाना—हूयमाना नि० १२ ३३]

हुवामहे स्पर्द्धामहे ५ ५६ ८ **हुवे**=गृह्णामि, प्र०—अत्र हु दानादानयो इत्यस्माद् धातोर् 'बहुल छन्दसि' इति शपो लुक् व्यत्ययेनाऽऽत्मनेपद च ३ १३ स्पर्द्धे १ १२८ २ आह्वये १५ ३२ प्रशंसेयम् ७ ४२ २ आदधि ५ ४६ ३ आददे, प्र०—लडुत्तमस्यैकवचने रूपम् १ १७ ७ स्तुवे १ ११६ १ स्वीकरोमि १.१८१ १ आदद्याम्, प्र०—अत्र विकरणाऽभावो लिङर्थे लट् च १ २७ स्तुयाम् ३३ ४६ स्वीकुर्वे १ १८५ ३ प्रशमामि १ १८५ ६ स्तौमि ६ ४५ १६ आह्वयामि ६ ४५ ७ आददे ६ ५०.१. आदधि ६ ५ १ **हुवेम**=आदद्याम ४ ४४ १ प्रशंसेम ७ ४१ १ स्वीकुर्वीमहि ६ ३६ आह्वयेम ८ ४५ शब्दयेम ७ ४१ २ स्वीकुर्याम १७ २३ गृह्णीयाम ३४ ३४ स्तूयामहि ६ ४६ १० आह्वयाम ३३ ६१ हम स्तुति, प्रार्थना करते है स० वि० १५५, ७ ४१ १ **हूमहे**=स्पर्धामहे, प्र०—अत्र ह्वेञ् इत्यस्माल्लटि 'बहुल छन्दसि' इति शपो लुक् 'बहुल छन्दसि' अ० ६ १ ३४ इति सम्प्रसारण 'सम्प्रसार-णाच्च' इति पूर्वरूपञ्च 'हल' अ० ६ ४ २ इति दीर्घत्वम् १ १० १० स्पर्द्धमहि २५ १६ स्तुम २५ १८ स्वीकुर्महे ५ ३५ ३ आह्वयाम ६ ४६ ६ प्रशमाम ६ ४६ ३ प्रशमेम १ ८६ ३ हम अत्यन्त स्पर्द्धा करते हैं, स्पर्द्धा से आह्वान करते हैं आर्याभि० २ ५०, २५ १८ [ह्वेञ् स्पर्धाया शब्दे च (भ्वा०) धातोर्लट् । छान्दसे सम्प्रसारणे गुणेऽवादेशे चाकारस्योकारश्छान्दस । अथवा हु दानादानयो (जु०) धातोर्लटि छान्दस रूपम् । अन्यत्र लिङ् चापि। हुवे आह्वये नि० ११ ३१ हुवेम ह्वयेम नि० १० २८]

हूनः प्रशसित (कुमार=ब्रह्मचारी) ४ १५ ७ [ह्वेञ् स्पर्धाया शब्दे च (भ्वा०) धातो क्त]

हूतास. कृताऽऽह्वाना सन्त (वसव=विद्वासो जना) ६ ५० ४ [हूत इति व्याख्यातम् । ततो जसोऽसुक्]

हूयते स्पर्द्धयते १ १० १ ६ स्तूयते १ १३५ २ दीयते

१.३६ ६. क्षिप्यते दीप्यते १ ३४.१० प्रक्षिप्यते १.२६ ६. **हूयसे**=स्तूयसे ३.४०.६. अध्वरसिद्धयर्थं शब्द्यते, प्र०—अत्र व्यत्यय. १ १६ १. [ह्वेञ् स्पर्द्धाया शब्दे च (भ्वा०) हु दानादानयो (जु०) धातोर्वा कर्मणि लट्]

हूयमानम् स्पर्द्धमानम् (विद्यार्थिन राजजन वा) ४ २३ ३. **हूयमानः**=कृताऽऽह्वान (सभाध्यक्ष) १ १०४ ६ शब्द्यमान. (प्रजापति:=जीव) ३६ ५ स्वीकृत' (रुद्र =जीव) ८.५८ स्तूयमान (राजा) ४.२६ २. [ह्वेञ् स्पर्धाया शब्दे च (भ्वा०) धातो कर्मणि शानच्]

हूयमाना कृताऽऽह्वानौ प्रशसितौ (अश्विना=अध्यापकोपदेशकौ) ४ ४३.४ आहूयमानौ (मित्रावरुणा=अध्यापकोपदेशकौ) ६.६७ ३. [ह्वेञ् स्पर्धाया शब्दे च (भ्वा०) धातो कर्मणि शानजन्ताद् द्विवचनस्याकार]

हूयमानाः जुह्वाना (पतिव्रता. स्त्रिय) २ ३ ५ [हु दानादानयो (जु०) धातो कर्मणि शानच्]

हृणानस्य लज्जितस्य (कस्यचिज्जनस्य) १ २५ २ [ह्री लज्जायाम् (जु०) धातो शानच् । विकरणव्यत्ययेन श्नाधातो सम्प्रसारण छान्दसम्]

हृणायन्तम् हरतीति हृणो हरिणस्तद्वदाचरन्तम् (दुर्जनम्) १ १३२ ४ [हृणपदादाचारे क्यजन्ताच्छतृ । हृण'=हृञ् हरणे (भ्वा०) धातोर्वाहु० ओणा० नक्]

हृणीयमानः क्रोध कुर्वन् (विद्वज्जन) ५.२ ८ [हृणीङ् रोषणे लज्जाया च (कण्ड्वा०) धातो शानच् । हृणीयते क्रुध्यतिकर्मा निघ० २ १२]

हृणीषे हरसि, प्र०—अत्र विकरणव्यत्ययेन श्ना २.३३ १५ [हृञ् हरणे (भ्वा०)धातोर्लट् । व्यत्ययेन श्ना]

हृत्प्रतिष्ठम् हृदि प्रतिष्ठा स्थितिर्यस्य तत् (मन) ३४.६. हृदय मे प्रतिष्ठित (मन) स० प्र० २४७, ३४ ६. [हृद्-प्रतिष्ठापदयो समास । प्रतिष्ठा=प्रति+ष्ठा गतिनिवृत्तौ (भ्वा०) धातो स्त्रियामङ् । ततष्टाप्]

हृत्सु हृदयेषु ४.३१ **हृदः**=हृदयात् ३ ३६ १ हृद इव प्रियान् (मघोन =धनाढ्यान् जनान्) ५.३१ ६. सुहृद (मानुपास:=मनुष्या) १ ६०.३. हृदयस्य (समीपे स्थित मन्त्र=विचारम्) २ ३५ २ आत्मन १८.५८ **हृदा**=अन्त करणेन २० ७८ हृदयेन १ १०५.१५' विपयहारकेण (मनसा=शुद्धाऽन्त करणेन) १७ ६४. हृदयस्थेन विज्ञानेन १ ६७ २. हृदि=हृदय मे आर्याभि० १ ३७, ऋ० १ ६ २१ १३ **हृदे**=हृदयस्य चेतनत्वाय, भा०—आत्मशुद्धये ३७.१६ हृत्सुखाय ६ २५. **हृद्भिः**=चित्तै. १ ११६ १७. [हृदयप्राति० शस्प्रभृतिषु विभक्तिषु 'पद्दन्नोमासहृद्०' अ० ६.१ ६३ सूत्रेण हृदादेश. । हृत्सु हृदयानि नि० ६ ३३ हृदे—हृदयाय नि० १० ३५.]

हृत्स्वसः ये हृत्स्वस्यन्ति बाणान् तान् (मयोभून्=सुवीरान् जनान्) १ ८४ १६ [हृदुपपदे असु क्षेपणे (दिवा०) धातो क्विप् । विभक्तेरलुक्]

हृदयम् अन्त करणम् ११ ३६. आत्मबलं जीवनहेतुस्थानम् २०.६ **हृदयस्य**=आत्मनो मध्ये ७ ३३.६ प्राणात्मा का आर्याभि० २ ३६, ३६ २ **हृदयानि**=मानसानि (प्रेमप्रचुराणि कर्माणि) ऋ० भू० ६५, ऋ० ८ ८ ४६.४ **हृदये**=भा०—स्वाऽन्ते २१ ५३ मध्ये १५ ६३. **हृदयेन**=स्वाऽऽत्मना १६ ८५ हृदयाऽवयवेन ३६ ८ **हृदयेभ्यः**=हृद्वद्वर्त्तमानेभ्य (किरिकेभ्य =विक्षेपकेभ्यो जनेभ्य.) १६ ४६. [हृञ् हरणे (भ्वा०) धातो 'वृहो पुग्दुकौ च' उ० ४ १०० सूत्रेण कयन् दुगागमश्च । हृदयम्—तदेतत् त्र्यक्षर हृदयमिति हृ इत्येकमक्षरमभिहरन्त्यस्मै स्वाश्चान्ये च य एव वेद, द इत्येकमक्षर ददत्यस्मै स्वाश्चान्ये च य एव वेद, यमित्येकमक्षरमेति स्वर्ग लोक य एव वेद श० १४ ८ ४ १ तस्मादिद गुहेव हृदयम् श० ११ २ ६ ५. मूर्द्धा हृदये (श्रित) तै० ३ १० ८.६ आत्मा वै मनो हृदयम् श० ३ ८ ३ ८ एष प्रजापतिर्यद्धृदयम् श० १४ ८ ४.१ हृदय वै सम्राट् । परम ब्रह्म श० १४ ६ १० १८. पुत्रो हि हृदयम् तै० २ २.७ ४ असौ वाऽआदित्यो हृदयम् श० ६ १ २ ४०. प्राणो वै हृदयमतो ह्ययमूर्ध्व प्राण सञ्चरति श० ३ ८ ३ १५ परिमण्डल हृदयम् श० ६ १ २ ४० श्लक्ष्ण हृदयम् श० ६.१ २ ४० हृदय वै स्तोमभागा श० ८ ६ २ १५]

हृदयाग्रेण हृदयस्य पुरोभागेन ३६ ८ [हृदय-अग्रपदयो समास]

हृदयाविधः यो हृदयमाविध्यति स (प्रजापुरुष) ८ २३. हृदय विध्यति तस्याऽधर्मस्याऽधार्मिकस्य शत्रोर्वा, प्र०—अत्र 'नहि-वृति-वृषि-व्यधि-रुचि-सहि-तनिषु क्वौ' अ० ६.३ ११६ [हृदयोपपदे आङ्पूर्वाद् व्यध ताडने (दिवा०) धातो: कर्त्तरि क्विपि 'नहिवृतिवृषि०' अ० ६ ३ ११६ सूत्रेण पूर्वस्य दीर्घ । ग्रहिज्यादिसूत्रेण सम्प्रसारणम् । वचनव्यत्यय]

हृदयौपशेन यो हृदये आ समन्तादुपशेते स हृदयौपशो जीवस्तेन २५ ८. [हृदयोपपदे आङ्पूर्वाद् उपपूर्वाच्च शीङ् स्वप्ने (अदा०) धातोर्ड]

हृदय्याय हृदये साधवे (पुरुषाय) १६ ४४ [हृदय-प्राति० 'तत्र साधु' इत्यर्थे यत् । 'हृदयस्य हृल्लेख०' इति प्राप्तो हृदादेशो 'वा छन्दसि' नियमेन न भवति]

हृदिस्पृक् यो हृद्यन्तःकरणे सुखं स्पृशति स (स्तोम =गुणप्रकाशसमूहक्रिय) १ १६ ७. **हृदिस्पृशम्**= यो हृद्यात्मनि स्पृशति तम् (विद्याबोधम्) १५ ४४ हृदयस्य प्रियम् (मोक्षमार्गम्) ४ १० १ [हृदोपपदे स्पृश संस्पर्शने (तुदा०) धातो क्विप् । सप्तम्या अलुक् । 'हृद्द्युभ्या ङे' अ० ६ ३ ६ वा०सूत्रेण]

हृद्यम् हृदयस्य प्रियम् (सूनुम्=अपत्यम्) ५ ४२ २ **हृद्यात्**=हृदये भवात् (समुद्रात्=अन्तरिक्षात्) १७.६३ [हृदयप्राति० प्रियार्थे 'हृदयस्य प्रिय' इति यत् । भवार्थे वा यत् । 'हृदयस्य हृल्लेख०' इति हृदादेश]

हृद्रोगम् यो हृदयस्याऽज्ञानादि-ज्वरादिरोगस्तम् १.५० ११ [हृदय-रोगपदयो समासे 'वा शोकष्यञ् रोगेषु' अ० ६ ३ ५१ सूत्रेण हृदादेश]

हृषितम् जातहर्षम् (आनन्दम्) १ १०३ ७ [हृष तुष्टौ (दिवा०) धातो क्त]

हृषीवतः बह्वानन्दयुक्तस्य (यज्ञस्य=व्यवहारस्य) १ १२७ ६ **हृषीवन्तः**=बहुहर्षयुक्ता. (वय =पक्षिण) २ ३११. [हृषिप्राति० भूम्न्यर्थे मतुप् । 'छन्दसीर' इति मतोर्वत्वम् । हृषि.—हृष तुष्टौ (दिवा०) धातोरौणा० इन् किच्च]

हेडः हिड्यते विज्ञायते प्राप्यते य स (व्यवहार) १ २४ १४. हेडन्तेऽनादृता भवन्ति यस्मिन् स (अनादर-व्यवहार) ४.१४ अनादरम् १ १७१ १. भा०—असत्कार २१ ३ अनादरकर्त्ता (राजा) १६ ६. [हेडृ अनादरे (भ्वा) धातोर्घञ् । हेड क्रोधनाम निघ० २ १३]

हेडः धार्मिकाणामनादरकर्त्तृन धार्मिकाञ्जनान् १ ११४ ४ [हेडृ अनादरे (भ्वा०) धातो कर्त्तरि क्विप्]

हेडांसि अनादर-रूपाणि (कर्माणि) ६ ४८.१०. [हेडस्=हेडृ अनादरे (भ्वा०) धातोरौणा० असुन्]

हेतयः वज्रा वृद्धयो वा १७ ७ गतय १.१६०.४. वज्रवद्वर्त्तमाना शस्त्राऽस्त्रोन्नतय १७ १५ प्रबला वज्र-गतय १६ ५३. वज्रादिशस्त्रास्त्रयुक्ता सेना १७ ११. वज्र इव व्यवस्था, भा०—शासना ३६.२० **हेतिम्**= बाणम् २६ ५१ सुखवर्द्धक वज्रम् १ १०३ ३ वज्रवद् बाणम् ६ ७५.१४ **हेतिः**=वज्रघोष १५ १६. वृद्धि १५ १८. वज्रादिव पीडा २ ३३.१४. वज्रम् १६.११. वज्र इव घातुक (पौरुषेय=पुरुषाणा समूह) १५ १५ **हेतीनाम्**=विद्युताम् १५ १२ वज्राम्न्यादीनाम् १५ १० वज्रवद्वर्त्तमानाना किरणानाम् १५ १३ वृद्धानाम् (लोका-नाम्) १५ १४ **हेत्यै**=वज्रादिशस्त्रनिर्माणाय ३० ७. वृद्धयै १६ १८ [हेति वज्रनाम निघ० २ २०. हि गतौ वृद्धौ च (स्वा०) धातो, हन हिंसागत्यो (अदा०) धातोर्वा स्त्रिया क्तिन्प्रत्यये 'ऊतियूतिजूति०' अ० ३ ३ ९७ सूत्रेण निपात्यते । हेतिर्हन्ते नि० ६ ३ हेतिम्=वधात् नि० ९ १५]

हेत्वः प्रवृद्धो वेगवान् (सप्ति=अश्व) ७ ४३ १२ [हि गतौ वृद्धौ च (स्वा०) धातोर्बाहु० औणा० त्वन्]

हेमन्तः हन्त्युष्णता येन स (ऋतु) १३ ५८ **हेमन्ताय**=हेमन्तर्त्तौ कार्यसाधनाय २४ ११ **हेमन्तेन**= वर्द्धन्ते देहा यस्मिँस्तेन, भा०—सर्वरसपरिपाचकेन (ऋतुना) २१ २७ [हन हिंसागत्यो (अदा०) धातो 'हन्तेर्मुट् हि च' उ० ३ १२६ सूत्रेण झच् धातोश्च हिरादेश । हेमन्त — हिमवान् । हिम पुनर्हन्तेर्वा हिनोतेर्वा नि० ४ २७ हेमन्त —(ऋतु) एतौ (सहश्च सहस्यश्च) एव हैमन्तिकौ (मासौ) स यद्धेमन्त इमा प्रजा सहसेव स्व वशमुपनयते तेनो हैतौ सहश्च सहस्यश्च श० ४ ३ १ १८. तस्य (पर्जन्यस्य) सेनजिच्च सुषेणश्च सेनानीग्रामण्याविति हैमन्तिकौ तावृतू श० ८ ६ १ २० हेमन्तो होता तस्माद्धेमन-वषट्कृता पशव सीदन्ति श० ११ २ ७ ३२ हेमन्तो मध्यम् (संवत्सरस्य) तै० ३ ११ १० ४ तस्य (संवत्सरस्य) वसन्त एव द्वार हेमन्तो द्वार त वा एत संवत्सर स्वर्गं लोक प्रपद्यते श० १ ६ १ १९ यद् वृष्ट्योद्गृह्णाति तद्धेमन्तस्य (रूपम्) श० २ २ ३ ८ हेमन्तो निधनम् प० ३ १. अन्त ऋतूना हेमन्त श० १ ५ ३ १३. हेमन्तो वा ऽऋतूना स्वाहाकारो हेमन्तो हीमा प्रजा स्व वशमुपनयते श० १ ५ ४ ५ स्वाहाकृतिमन्त यजति हेमन्तमेव हेमन्ते वा इद सर्वं स्वाहाकृतम् कौ० ३ ४]

हेम्यावान् हेमन्युदके भवा रात्रिर्विद्यते यस्य स (अग्नि=विद्वज्जन) ४.२ ८ [हेमा उदकनाम निघ० १ १२ ततो भवार्थे यति स्त्रिया टापि च हेम्या । ततो मतुप्]

हेषक्रतवः हेषा शब्दा क्रतव प्रज्ञा क्रिया वा येषान्ते (मनुष्या) ३ २६ ५ [हेष-क्रतुपदयो समास । हेष —हेषृ अव्यक्ते शब्दे (भ्वा०) धातोर्घञ् । क्रतु कर्मनाम । निघ० २ १. प्रज्ञानाम निघ० ३.९.]

हेषन्तम् शब्द कुर्वन्तम् (स्तुत्य जनम्) ५ ८४ २ [हेषृ अव्यक्ते शब्दे (भ्वा०) धातो शतृ]

हेषस्वतः हेषा प्रसिद्धा शब्दा विद्यन्ते यस्य तस्य (विद्वज्जनस्य) ६ ३ ३ [हेषस्प्राति० मतुप्। हेषस्—हेषृ अव्यक्ते शब्दे (भ्वा०) धातोरौणा० असुन्]

हैमन्तिकौ हेमन्ते भवौ मार्गशीर्ष पौषञ्च मासौ १४ २७ [हेमन्तप्राति० भवार्थे 'हेमन्ताच्च' अ० ४ ३ २१ इति ठञ्]

हैमन्ती हेम्नो व्याख्यात्री (पङ्क्ति —छन्द) १३ ५८ [हेमन्तप्राति० व्याख्यानार्थे 'सधिवेलाद्यृतु०' इत्यण्। तत स्त्रिया ङीप्]

होत दात (जन) २३ ६४ हवनकर्त्त (अग्ने=वह्निरिव विद्वज्जन) ७ १४ २ धात (विद्वज्जन) ६ १० १ आदात (जन) २९ ६ साधनोपसाधनानामादात (विद्वज्जन) ३ २९ १६ सुखप्रदा (अग्ने=विद्वज्जन) ३ २९ ८ दातरादातर्वा (विश्वेश्वर भौतिकाऽग्ने वा) १ १३ १ युक्ताहारविहारकर्त्त (सद्वैद्य) २८ ७ यजमान (जन) २८ १. **होता**=दाता ग्रहीताऽत्ता वा (परमेश्वर) १० २४ सत्यस्य ग्रहीता ग्राहयिता वा (ब्रह्म जीवो वा) १२ १४ यज्ञसाधक (विद्वज्जन) १ १६२ ५ दाता-ऽनुग्रहीता (विद्वज्जन) १ ६७ १ आदाता धर्त्ता (अग्नि) ३ ६ १० यज्ञकर्त्ता (अग्नि =परमात्मा) ४ ६ ५ यज्ञा-ऽनुष्ठाता ४ ६ ४ सद्गुणग्रहीता (मनुष्य) १ १४४ १ आकर्षणेनाऽऽदाता (विद्युदिव विद्वज्जन) १ १४९ ४ न्यायस्य दाता (इन्द्र =राजा) ४ २१ ५ सर्वस्य जगतो विज्ञानस्य वा दाता (विद्वज्जन) १ ७७ २ अत्ता खल्वादाता (दूत =जीवात्मा) १ ५८ १ प्रशसितु योग्य (जन) २१ ३२ हुतस्य पदार्थस्य दाता (अग्नि =ईश्वरो भौतिको वा) १ १२ ३ ग्राहक (अग्नि) ३ १५ विद्याया दाता-ऽऽदाता वा (अध्यापकोऽध्येता वा) २८ ८ सुखप्रदाता (वैद्य) २८ ७ दातुमादातुमर्हा (विद्यावाणी) १ १४२ ९ सङ्गत-क्रियाकर्त्ता (प्रजाजन) ५ १ ५ दाता ग्रहीता द्योतको वा (अग्नि =परमेश्वरो भौतिको वा) १ १ ५ जगदुत्पत्ति समय मे देने और प्रलय समय मे सबको लेने वाला परमात्मा आर्याभि० २ ३०, १७ १७ यज्ञसम्पादक (विष्पति =सभाध्यक्ष) १ २६ ७ हवनकर्त्ता (जन) ५ १ २ भा०—य सद्विद्यादिपदार्थाना दान करोति स (पुरुष) २८ २४ **होतारम्**=विद्यादातारम् (विद्वास जनम्) ३ १९ ५ सर्वस्य धर्त्तार दातार वा (अग्नि=परमात्मानम्) ६ १४ २ विद्याया आदातारम् (विद्यार्थि-जनम्) ७ १६ १२ यज्ञनिष्पादकम् (विद्वास गृहपतिम्) ८ २० यानेषु वेगादिगुणदातारम् (अग्निम्) ११२ १. हवनस्य कर्त्तारम् (विद्वासम्) १ ४४ ७. दातारमादातार वा (अग्नि=परमेश्वर भौतिक वा) १ १ १ सर्वजगते सर्वपदार्थाना दातार, मोक्षसमये प्राप्तमोक्षाणामादातार ग्रहीतार, वर्त्तमानप्रलययो समये सर्वस्य जगतो ग्रहीतार-माधारभूतम् (अग्नि=परमेश्वरम्) वे० भा० न०, १ १ १ समस्त जगत् को सब योग और क्षेम के देने वाले, प्रलय समय मे कारण मे सब जगत् का होम करने वाले (ईश्वर) को आर्याभि० १ २, ऋ० १ १ १ १ **होतुः**=न्यायादि-कर्मकर्त्तु (आचार्यात्) ४ २३ १ [हु दानादानयो (जु०) धातो कर्त्तरि तृजन्तस्य रूपाणि। होतु —ह्वातव्यस्य नि० ४ २६ होतारम् ह्वातारम् निघ० ७ १५ होता—यद्वा स तत्र यथाभाजन देवता अमुमावहामुमावहेत्यावहति तदेव होतुर्होतृत्वम् ऐ० १ २ मध्य वा एतद् यज्ञस्य यद्धोता तै० ३ ३ ८ १० आत्मा वै यज्ञस्य होता कौ० ९ ६ (ऋ० ६ १६ १०, यजु० ११ ३५) अग्निर्वै होता श० १ ४ १ २४ अग्निर्वै देवाना होता ऐ० १ २८ अग्निर्वै होताऽधिदैव वागध्यात्मम् श० १२ १ १ ४ वाग्वै होता (यजु० १३ ७) कौ० १३ ९ १७ ७ वाग्वै यज्ञस्य होता श० १२ ८ २ २३ वाग्घोता पड्ढोतृणाम् तै० ३ १२.५ २ मनो होता तै० २ १ ५ ९ प्राणो वै होता ऐ० ६ ८ असौ वै होता योऽसौ (सूर्य) तपति गो० उ० ६ ६ पुरुषो वाव होता गो० उ० ६ ६ क्षत्र वै होता ऐ० ६ २१ सवत्सरो वै होता कौ० २९ ८ हेमन्तो होता तस्माद्धेमनवषट्कृता पशव सीदन्ति श० ११ २ ७ ३२ होतैव भर्ग गो० पू० ५ १५ होता हि साहस्र श० ४ ५ ८ १२ प्राची दिग् होतु श० १३ ५ ४ २४ उत्तरत आयतनो वै होता तै० ३ ९ ५ २]

होतारा विद्याया दातारौ (विद्वदुपदेशकौ) ३ ७ ८ आदातारौ (कवी=अध्यापकोपदेशकौ) १ १८८ ७ सर्वस्य सुखदातारौ (भिषजा=वैद्यौ) २० ६२ रोग निवर्त्य सुखस्य प्रदातारौ (चिकित्सकौ) २८ ७ धर्त्तारौ वायुपावकौ २८ १७ [होतृप्राति० द्विवचनस्य 'सुपा सुलुक्०' सूत्रेण आकारादेश। होतृ—हु दानादानयो (जु०) धातोस्तृच्]

होतृवूर्ये होतारो व्रियन्ते ययोस्ते (विद्युदन्तरिक्षे) ६ ७० ४ होतृणा स्वीकर्त्तव्ये १ ३१ ३ [होतृवूर्यपदयो समास। वूर्यम्=वृ वरणे (क्र्या०) धातोर्बाहु० औणा० क्यप्। 'उदोष्ठ्यपूर्वस्य' अ० ७ १ १०२ सूत्रेण ऋकार-स्योकार। 'हलि चे' ति दीर्घश्च]

होतृषदने होतृणा दातृणा सदने स्थाने वेद्या वा २ ९ १ होतृणा विदुपा स्थाने ११ ३६ [होतृ-सदनपदयो समास । होतृ इति व्याख्यातम् । सदनम्=षद्लृ विशरणगत्यवसादनेपु (भ्वा०) धातोरधिकरणे ल्युट् । होतृषदनम्—(यजु० ११ ३६) कृष्णाजिन होतृषदनम् श० ६ ४ २ ७]

होतेव यथा दाता (विद्वज्जन) ५ ४३ ३ दाता यथा ग्रहीता (सद्म=गृहवद्वर्त्तमान शरीरम्) १ ७३ १ [होता-इवपदयो समास]

होत्रम् हूयते दीयते यस्मिँस्तत् (सत्कर्म्म) २ १ २ अदनम्, भा०—पथ्य भोजनम् २८ १६ जुह्वति यस्मिन् तद्यज्ञकर्म्म २ ९ हवनीय वस्तु १ ७६ ४ हवनाऽभ्यासम् ३ १७ २ **होत्रात्**=दानात् २ ३६ १ आदानात् २ ३७ १ हवनात् २ ३७ ४ **होत्राय**=आदानाय दानाय वा ६ ११ १ **होत्राः**=आदातार, अ०—अनुग्रहीतार (प्राणादय सप्त) १३ ५ दातु ग्रहीतु शीला, भा०—युक्ताहारविहारा (विप्रा =मेधाविजना) ११ ४ ऋत्विज (सज्जना) १७ ७९ योगिनो मनुष्या ऋ० भू० १५६, ११ १ ये जुह्वत्याददति ते (विप्रा =योगिजना) ३७ २ **होत्राणि**=हवनसम्बन्धीनि कर्म्माणि ३ ४ ५ [हु दानादानयो (जु०) धातो 'हुयामाश्रुभसिभ्यस्त्रन्' उ० ४ १६७ सूत्रेण त्रन् । होत्रा —ऋतवो वाव होत्रा गो० उ० ६ ६ रश्मयो वाव होत्रा गो०उ० ६ ६ अङ्गानि वाव होत्रा गो० उ० ६ ६]

होत्रया दातुमर्हया (चितयन्त्या=बुद्धिमत्या स्त्रिया) ११२९ ७ **होत्रा**=शत्रुबलमादातु विजयश्च दातु योग्या (सेना) १.१२० १ **होत्राभि**=आदातुमर्हाभि क्रियाभि ११२२ ९ हवन-क्रियाभिर्वाग्भिर्वा, प्र०—होत्रेति वाङ्-नाम निघ० १११, ७ ६० ९ **होत्राम्**=हुतद्रव्यगतिम् (धिषणा=वाचम्) १ २२ १० **होत्राः**=आददाना (क्रिया) ४ ४८ १ हवनकर्मानुष्ठात्र्य, भा०—अग्निहोत्रादिकर्मसु निरता (पत्न्य) ६ २५ स्वीकर्त्तुमर्हा (योगिन्यो विदुष्य) ७ १५ [हु दानादानयो (जु०) धातो 'हुयामाश्रुभसिभ्यस्त्रन्' उ० ४ १६७ सूत्रेण त्रन् । तत स्त्रिया टाप् । होत्रा वाङ्नाम निघ० १११ यज्ञनाम निघ० ३ १७]

होत्रवाहम् यो होत्राणि हुतानि द्रव्याणि वहति तम् (पावकम्) ५ २६ ७ [होत्रमिति व्याख्यातम् । तदुपपदे वह प्रापणे (भ्वा०) धातो. 'कर्मण्यण्' इत्यण् । 'वहश्चे' ति वा ण्वि]

होत्रा जुह्वति येषु यानि तानि (हवनानि), प्र०—अत्र 'शेश्छन्दसि बहुलम्' इति लोप 'हुयामाश्रु०, उ० ४ १६७ अनेन हुधातोस्त्रन् प्रत्यय १ १८ ८ [होत्रमिति व्याख्यातम् । ततश्शेर्लोपश्छन्दसि]

होत्राविदम् होत्राणि हवनानि वेत्ति तम् (राजानम्) ५ ८ ३ [होत्रमिति व्याख्यातम् । तदुपपदे विद ज्ञाने (अदा०) धातो क्विप् । पूर्वस्य सहिताया दीर्घश्छान्दस]

होत्रियम् दातव्याऽऽदातव्यानामिदम् (अव =रक्षणादिकम्) १ ८३ २ [होत्रमिति व्याख्यातम् । तत 'तस्येदम्' इत्यर्थे घश्छान्दस । घस्येयादेश]

होम आह्वयाम १ ९ ९ [ह्वेञ् स्पर्धाया शब्दे च (भ्वा०) धातोर्लटि उत्तमपुरुषबहुवचने मस्प्रत्यये 'बहुल छन्दसी' ति शपो लुक् । 'छन्दस्युभयथा' इत्युभयसज्ञात्वे गुण सम्प्रसारण च भवत । 'छान्दसो वर्णलोपो वेति' सकारलोपश्च]

होम ग्रहण दान वा १ ८४ १८ **होमनि**=आदातव्ये व्यवहारे ३ ६० ७ [हु दानादानयो (जु०) धातोर्बाहु० औणा० मनिन्]

होमाय=दानायाऽऽदानाय वा ८ ५८ [हु दानादानयो (जु०) धातो 'अर्तिस्तुसुहुसृ०' उ० १ १४० सूत्रेण मक्]

होमासः दानाऽऽदानानि, भा०—व्यापारयोग्यानि साधनानि २३ ५७ [होम इति व्याख्यातम् । ततो जसोऽसुगागम]

होषि जुहोसि ६ ४४ १४ [हु दानादानयो (जु०) धातोर्लट् । 'बहुल छन्दसी' ति शपो लुक्]

ह्रदम् जलाशयम् ३ ४५ ३ [ह्रदो ह्रादते शब्दकर्मण ह्लादतेर्वा स्याच्छीतीभावकर्मण नि० १ ९]

ह्रदा इव यथा गभीरा जलाशयास्तथा (प्रसन्नात्मनो जना) ३ ३६ ८ [ह्रदा -इवपदयो समास । ह्रद इति व्याख्यातम् पूर्वपदे]

ह्रस्वाय बालकाय १६ ३० [ह्रसति शब्दयतीति विग्रहे ह्रस शब्दे (भ्वा०) धातोर्बाहु० औणा० वन् । ह्रस्व ह्रस्वनाम । निघ० ३ २]

ह्रादुनिम् ह्लादतेऽव्यक्तान् शब्दान् करोति यया वृष्ट्या ताम् (विद्युतम्), प्र०—अत्र ह्लादधातोर्बाहुलकादौणादिक उनि प्रत्यय १ ३२ १३ **ह्रादुनीभ्यः**=अव्यक्त शब्द कुर्वतीभ्य (विद्युद्भ्य) २२ २६ **ह्रादुनीः**=शब्दानामव्यक्तोच्चारणक्रिया २५ ९ [ह्राद अव्यक्ते शब्दे (भ्वा०) धातोर्बाहु० औणा० उनि.]

ह्लादुनीवृतः ये ह्लादुन्या शब्दकर्त्र्या विद्युता युक्तास्ते (मरुत =मानवा) ५ ५४ ३ [ह्लादुनिरिति व्याख्यातम्। तदुपपदे वृतु वर्त्तने (भ्वा०) धातो क्विप्]

ह्नियमाणः यो ह्रियते स (प्रजापति =जीव) ३१ ५. [हृञ् हरणे (भ्वा०) धातो कर्मणि शानच्। 'रिङ् शयग्०' इति रिङादेश]

ह्नियै लज्जायै २४ ३५ [ह्री लज्जायाम् (जु०) धातो सम्पदादित्वात् क्विप्]

ह्रुणाति कुटिल गच्छति १ १६६ १२ [ह्वृ कौटिल्ये (भ्वा०) धातोर्लट्। व्यत्ययेन श्नाप्रत्यये छान्दस सम्प्रसारणम्। रेफागमश्च]

ह्रुतः कुटिलत्व गत (अत्य =अश्व) ६ ४ ५ [ह्वृ कौटिल्ये (भ्वा०) धातो क्त। सम्प्रसारण छान्दसम्। रेफागमश्च]

ह्वय निमन्त्रय ५ ५३ १६ **ह्वयताम्**=ह्वयति, प्र०–अत्र व्यत्ययेन लडर्थे लोट् २ ११ स्पर्द्धतामुपदिशताम् १ १० **ह्वयन्ते**=प्रशसेयु ४ ३६ ५ स्पर्द्धन्ते १ १०२ ६ **ह्वयामहे**=स्पर्द्धामहे १ ४७ १० शब्दयामहे ३ ४२ स्वसुखदु खनिवेदन कुर्महे १ १११४ **ह्वयामि**=आह्वयामि ६ ४७ ११ स्पर्द्धे, स्वीकरोमि प्राप्नोमि, गृह्णामि वा १ ३५ १ आश्रयामि ऋ० भू० २२१ **ह्वये**=आह्वये १ १३ १२ उपतापये १ १३ ३ स्पर्द्धे ११३ ७ स्वीकरोमि १ १६४ २६ शब्दयेयम् ५ ५६ १ उपस्तुयाम् २२ १३ ध्यानयोगेनाऽऽह्वये २२ १०. स्तौमि ३४.२६ **ह्वामहे**=स्पर्धामहे ३ ५३ [ह्वेञ् स्पर्धाया शब्दे च (भ्वा०) धातोर्लोट्। अन्यत्र लट्। ह्वामहे प्रयोगे 'छन्दस्युभयये' त्यार्धधातुकत्वाच्छपोऽभाव आत्त्वम्। ह्वयते अर्चतिकर्मा नि० ३ १४ ह्वयति अत्तिकर्मा निघ० २ ८]

ह्वयामसि आह्वयाम ६ ४१ ५ प्रज्ञापयेम ६ २६ १ आह्वयेम ६ ३३ ४ [ह्वेञ् स्पर्धाया शब्दे च (भ्वा०) धातोर्लट्। 'इदन्तो मसि' इति मस इदन्तत्वम्]

ह्वरः कुटिलाचरणा (दुर्जना) ५ २० २ ये ह्वरन्ति कुटिल गच्छन्ति तान् (शत्रून्) ३८ २० [ह्वृ कौटिल्ये (भ्वा०) धातो अप्]

ह्वरः क्रोध २ २३ ६ [ह्वर क्रोधनाम निघ० २ १३]

ह्वरांसि अनादररूपाणि ६ ४८ १० कुटिलानि कर्माणि ६ ४८ १० [ह्वृ कौटिल्ये (भ्वा०) धातोरौणा० असुन्]

ह्वारः कुटिलता कारयन् (विद्वज्जन.) १ १४१ ७ ह्वरस्य क्रोधस्याऽय निवारक (विद्वज्जन) १ १८० ३ **ह्वारे**=ह्वरन्ति कुटिला गर्ति गच्छन्ति पदार्था यस्मिँस्तस्मिन् (अग्नौ) २० २ ४ [ह्वृ कौटिल्ये (भ्वा०) धातो 'कर्मण्यण्' इत्यण् निरुपपदादपि छन्दसि सर्वविधीना विकल्पकत्वात् अन्यत्र घञ्]

ह्वार्यः कुटिल मार्ग गन्तु योग्य (शिशु =बालक) ६ २ ८ **ह्वार्याणाम्**=कुटिलानाम् (जनानाम्) ५ ६ ४ [ह्वृ कौटिल्ये (भ्वा०) धातो 'ऋहलोर्ण्यत्' इति ण्यत्। अन्यत्र—'कृत्यल्युटो बहुलम्' इति कर्त्तरि ण्यत्। ह्वार्याणाम् अश्वनाम निघ० १ ४]

ह्वार्षीत् ह्वरतु ह्वर वा, प्र०—अत्र लोडर्थे लुङ् १ २. त्यजतु १ ६ **ह्वाः**=त्यजे, प्र०—अत्र लिडर्थे लुङ् १ ६ ह्वरतु, प्र०—अत्र लोडर्थे लुङ् १० २ [ह्वृ कौटिल्ये (भ्वा०) धातोर्लुङ्। अडभावश्छान्दस]

नेत्ररामाभ्रपक्षाब्दे पौषमासेऽसिते दले।
पञ्चम्यां मङ्गले वारे कोषः पूर्तिमगादयम्॥

इति हरयाणाप्रान्तीयगुरुकुलभज्जरेऽधीतविद्येन तत्रभवता विद्वद्वर्यविश्वप्रियाणा शिष्येनाचार्यभगवान्-
देवानामन्तेवासिना, उत्तरप्रदेशान्तर्गतमयराष्ट्रमण्डले 'फजलगढ'-नाम्निग्रामे लब्धजन्मना
श्रीमत्या मनसादेवी-गर्भजेन श्रीलशिवचरणदासतातपादाना सुतेनाचार्यो-
पाधिधारिणा राजवीरशास्त्रिणा निर्मिता कोषान्तर्गतविमर्श-
टीका कोषश्च पूर्तिमगमत्।

अभीष्टये इष्टाऽऽनन्दप्राप्तये ऋ० भू० ३०८ [अभि+इष गतौ धातो 'मन्त्रे वृषेष०' सूत्रेण क्तिन्]

अभीहि आभिमुख्येन जानीहि १ ८० ३ [अभि+इण् गतौ (अदा०) धातोर्लोट् मध्यमैकवचनम्]

अभुञ्जतः स्वयमपि भोगमकुर्वत (अदातुर्जनस्य) १ १२० १२ [भुज पालनाभ्यवहारयो (रुधा०) धातो शतृ-प्रत्यय नञ्समास]

अभुत्स्महि विजानीयाम ४ ५२.४ [बुध अवगमने (दिवा०) धातोर्लुङि उत्तमबहुवचनम्]

अभूत् भवतु ६ १२ भवति, प्र०—अत्र 'वर्त्तमाने लट्' पूर्वाऽपरभावत ८ ६ होता है स० वि० २१५, ४० ७ भवेत् १३ ३६ भवति, प्र०—लडर्थे लुङ् १४६ १० भवन्ति, प्र— अत्र वचनव्यत्ययेनैकवचनम् ४० ७ **अभूत**=भवत ४ ३४ ३ **अभूताम्**=भवेताम् २५ ४४ भवत १ १६२ २१ **अभूम**=भवेम १८ २८ **अभूवन्**=भवन्ति ५ ३ ११ प्रसिद्धा भवन्ति ६ ३७ २ [भू सत्तायाम् धातो सामान्ये लुङ् 'गातिस्थाघु०' इति सिचो लुक्। अभूत अभवत नि० ६ १६]

अभूतन भवन्ति १ १६१ ५ **अभूः**=भवे १२ ११ [भू सत्तायाम् धातोर्लुङ् मध्यमबहुवचने तकारस्य स्थाने 'तप्तनप्तनथनाश्चे' ति सूत्रेण तनप्]

अभूत्यै अनैश्वर्याय ३० १७ [भू सत्तायाम् धातो क्तिन् नञ्समास भू प्राप्तौ (चु०) धातोर्वा क्तिन्]

अभूषन् अलङ्कुर्य्यु ३ ५१ ८ भूषयेयु ३३ २२ [भूष अलङ्कारे (भ्वा० चुरा०) धातोर्लङ्]

अभूषन् अलङ्कुर्वन् (विद्वान्) ३.३८ ४ [नञ्+भूष अलङ्कारे धातो शतृ]

अभेत् भिनत्ति १ ३३ १३ [भिदिर् विदारणे (रुधा०) धातोर्लुङ्। च्लेर्लुक् च छान्दस.]

अभोग्घनः ये भोज्यन्ते ते भोजो, हन्यन्ते ते हन, भोजश्च ते हनवो भोग्घन, न भोग्घनोऽभोग्घनस्ते (रुद्रा = वायव) १ ६४ ३ [भोज =भुज पालनाभ्यवहारयोर् धातोर्घञ्। हन =हन हिंसागत्योर् धातो घ प्रत्यय। समासेऽकारलोपो भोजस्य]

अभ्यक्षरन् अभिमुख चालयन्ति १ ८४ ४ [अभि+क्षर सचलने (भ्वा०) धातोर्लङ्]

अभ्यक्षि गच्छति ६ ११ ५

अभ्यख्यत् प्रख्यापयेत् ४ २४ ८ [अभि+ख्या प्रकथने (अदा०) धातोर्लुङ्। 'अस्यतिवक्ति०' इत्यङ्]

अभ्यचष्ट प्रकाशितवान् ३ ५४ ६ [अभि+चक्षिङ् व्यक्ताया वाचि दर्शनेऽपि (अदा०) धातोर्लङ्]

अभ्यचुच्यवुः अभित च्यवन्ता प्राप्नुवन्तु १ ४५ ८ [अभि+च्युङ् गतौ धातोर्णिचि लुङि रूपम्]

अभ्यजाव प्राप्नुयाव १ १७८ ३ (अभि+अज गति-क्षेपणयो (भ्वा०) धातोर्लोटि उत्तमद्विवचनम्]

अभ्यञ्जानः सर्वत प्रकटीकुर्वन् (अग्नि) २ ८ ४ अभि+अञ्जू व्यक्तिम्रक्षणकान्तिगतिषु (रुधा०) धातो शानच्]

अभ्यनूषत् सर्वत स्तुवन्ति, प्र०—अत्र लडर्थे लुङ् १ ११ ८ अभिमुख प्रशमेयु ३ ५१ १ सर्वत. प्रशसत भा०—प्रशसा प्राप्नुत २० ६६ प्रशसन्तु ३३ ८१ [अभि+णू स्तवने (तुदा०) धातोर्लुङ् व्यत्ययेनात्मनेपदम्]

अभ्यपारयत् अभिपारयति २ १५ ५ [अभि+पार-कर्मसमाप्तौ (चुरा०) धातोर्लङ्]

अभ्यमदन् आभिमुख्येनाऽऽनन्दन्ति ३ ३१ १० [अभि+मदी हर्षग्लेपनयो (भ्वा०) धातोर्लङ्]

अभ्यमन्त अभितो रुजन्ति १ १८६ ३ [अभि०+अम रोगे (चु०) धातोर्लङ्। णिलुक् च]

अभ्यमीति प्राप्नोति २२ ५. [अभि+अम गत्यादिषु (भ्वा०) धातोर्लट्। 'तुरुस्तुशम्यम०' अ० ७ ३ ६५. सूत्रेण 'ईट्' आगम]

अभ्यमुञ्चत् आभिमुख्येन मुञ्चति १ ६१ १० [अभि+मुच्लृ मोचने (तुदा०) धातोर्लङ्। 'शे मुचादीनामि' ति नुम्]

अभ्ययष्ट अभिसङ्गच्छेत ६ ४७ २५ [अभि+यजदेवपूजासगतिकरणदानेषु (भ्वा०) धातोर्लुङ्]

अभ्ययुक्त आभिमुख्यतया युङ्क्ते १ ४८ ७ [अभि+युजिर् योगे (रुधा०) धातोर्लुङ्]

अभ्यर्च सर्वत सत्कुरु ६ ५० ६ **अभ्यर्चत**=सर्वत सत्कुरुत १.५१ १ **अभ्यर्चति**=सर्वत सत्करोति १ १०१ ७ **अभ्यर्चन्ति**=अभिमुख सत्कुर्वन्ति ६ ५० १५ **अभ्यर्चामि**=आभिमुख्येन पूजयामि ४ २५ **अभ्यर्चे**=आभिमुख्येन सत्करोमि ५ ४१ ८ [अभि+अर्च पूजायाम् (भ्वा० उभय०) धातोर्लोटि लटि च रूपाणि]

अभ्यर्धयज्वा आभिमुख्यस्यार्धे सङ्गन्ता (पूषा=मेघ) ६ ५० ५ [अभि+अर्धोपपदे यज देवपूजासङ्गतिकरणदानेषु (भ्वा०) धातो 'सुयजोर्ड्वनिप्' अ० ३ २ १०३ सूत्रेण ड्वनिप्। अभ्यर्द्धयज्वा=अभ्यर्धयन्यजति नि० ६ ६]

अभ्यर्षत सर्वत प्राप्नुत १७ ९८ [अभि+ऋषी

१८९६ [अभि+ह्वृ कौटिल्ये (भ्वा०) धातो क्त । ह्रु ह्वरेश्छन्दसि' अ० ७ २ ३१ सूत्रेण ह्रु रादेश]

अभिह्रुते अभित कुटिलात् १ १६६ ७ [अभि+ह्वृ कौटिल्ये (भ्वा०) धातो क्तिन् 'ह्रु ह्वरेश्छन्दसी' ति ह्रु रादेश]

अभिह्रुतः आभिमुख्य प्राप्तात् कुटिलात, अभित सर्वतो वक्रात् (अघात्=पापात्) १ १२८ ५ [अभि+ह्वृ कौटिल्ये धातो क्त धातोश्च स्थाने ह्रु रादेश]

अभीके सङ्ग्रामे, प्र०—अभीक इति सङ्ग्राम नाम निघ० २ १७, १ ११८ ५ कामिते व्यवहारे १ ११६ १४ समीपे ४ १२ ५ कमिते (सत्याचरणे) १ १८५ १० कमितरि (जगदीश्वरे) ३ ५६ ४ [अभीके सग्रामनाम निघ० २ १७ अभीके प्रपित्वे निघ० ३ २९ अभीके प्राप्तस्य कौ० नि० ११७ अभीके इत्यासन्नस्य, अभीकेऽभ्यक्ते नि० ३ २० अभीके उत्तराणि पदानि निघ० ३ २९]

अभीतिः अभित सर्वत इत्या प्राप्त्या २ ३३ ३ [अभि+इण् गतौ (अदा०) धातो क्तिन्]

अभीत्य अभित प्राप्य ४ ३२ १० [अभि+इण् गतौ धातो क्त्वा । समासे क्त्वो ल्यप्]

अभीद्धात् अभित सर्वत इद्धात् दीप्तात् ज्ञानमयात् (तपस) प० वि०, १० १९० १ [अभि+ञिइन्धी दीप्तौ धातो क्त]

अभीन्धताम् आभिमुख्येन प्रदीपयन्तु ११ ६१ [अभि+ञिइन्धी दीप्तौ (रुधा०) लोटि प्रथमबहुवचने रूपम्]

अभीपतः अभित उभयत आपो यस्मिँस्तस्मात् (मेघात्) १ १६४ ५२ [अभि+अप् पदयो समासे 'ऋक्पूरब्' अ० ५ ४ ७४ सूत्रेण समासान्तोऽकार । 'द्व्यन्तरुपसर्गेभ्योऽप ईत्' अ० ६ ३ ९७ सूत्रेणेकारादेश । ततस्तसि प्रत्यय]

अभीयक्षते अभितो यष्टु सत्कर्त्तुमिच्छते (इन्दवे=विद्यार्थिने) पु०—अत्र 'छान्दसो वर्णलोप' इत्यभ्यास-यकारलोप ३ ३ ६२ [अभि+यज देवपूजासगतिकरणदानेषु (भ्वा०) धातोरिच्छायामर्थे सनि द्वित्वेऽभ्यासयकारलोपे शतरि रूपम्]

अभीरवः भयरहिता (सज्जना) १ ८७ ६. **अभीरुः**=भयरहित (राजा) ४ २९ २ [ञिभी भये (जु०) धातो 'भिय क्रुक्लुकनौ' अ० ३ २ १७४ सूत्रेण क्रु प्रत्यय । नञ्समास]

अभीरुणम् निर्भय, अन्व०—निरपराधिनम् (पुरुषम्) ६ १७ [नञ्+ञिभी भये (जु०) धातो क्रु प्रत्यय । ततो मत्वर्थे न प्रत्यय]

अभीवर्त्तः य आभिमुख्येन वर्त्तते स (व्यवहार) १४ २३ [अभि+वृतुवर्त्तने धातोरच् प्रत्यय । पूर्वपदस्य दीर्घ वृषा वा एष रेतोधा यदभीवर्त्त तां० ४ ३ ८ अभीवर्त्तो ब्रह्मसाम भवत्येकाक्षराणि धन प्रतिष्ठायै तां० १५ १० ११ सवत्सरो वाऽऽभीवर्त्त सविंशस्तस्य द्वादशमासा सप्तर्त्तव. सवत्सर एवाभीवर्त्त श० ८ ४ १ १५ अभीवर्त्तेन वै देवा स्वर्ग लोकमभ्यवर्त्तन्त तां० ४ ३ २]

अभीवृतम् अभितो वृत युक्तम् (वज्र=किरण-समूहम्) ३ ४४ ५ **अभीवृता**=सर्वतो वायुनाऽऽवृता (गौ=भूमि) १ १६४ २९ **अभीवृता**=येऽभितो वर्त्तेते (द्यावापृथिवी=विद्युदन्तरिक्षे) ६ ७० ४ **अभीवृतम्**=अभित सर्वत साधनै पूर्णो वर्त्तते सोऽभिवृतम् प्र० 'नहिवृति०' अ० ६ ३ ११६ इति पूर्वस्य दीर्घत्वम् १ ३५ ४ [अभि+वृञ् आवरणे धातो क्त । अभीवृता अभिप्रवृत्ता नि० २ ९]

अभीशवः अङ्गुलय इव (विद्वास), प्र०—अभीशव इत्यङ्गुलिनाम निघ० २ ५, ५ ६१ २ अभितोऽश्नुवते व्याप्नुवन्ति मार्गान् येस्ते रश्मयो हया वा, प्र०—अत्राभि-पूर्वाद् 'अशूङ् व्याप्तौ' इत्यस्माद्धातो 'कृवापा०' उ० १ १ इत्युण् वर्णव्यत्ययेनाकारस्थाने ईकारश्च १ ३८ १२ **अभीशुभिः**=रश्मिभि , प्र०—अभीशव इति रश्मिनाम निघ० १ ५, ५ ४४ १४ रस्सियो से स० प्र० २४७, ३४६ भा०—प्रग्रहैं ३४६ **अभीशूनाम्**=बाहूनाम् ६ ७५ ६ अभित सद्यो गन्तॄणाम् (अश्वानाम्) २९ ४३ **अभीशूनिव**=रश्मीनिव ३ ५७ ६ [अभि+अशूङ् व्याप्तौ धातोर्बाहुलकाद् उ प्रत्यय । अकारस्येकार अभीशू बाहु नाम निघ० २ ४ अभीशव रश्मिनाम निघ० १ ५ अगुलिनाम निघ० २ ५ अभीशव रश्मिनामसाधारणामश्व रश्मिभि नि० २ १५ अभीशवोऽभ्यश्नुवते कर्माणि नि० ३ ९ अभीशवो वै रश्मय श० ५ ४ ३ १४]

अभीषाट् योऽभिसहेत स (औरस स्वगोत्रजो वा पुत्र) ७ ४ ८ [अभि+षह मर्षणे धातो 'छन्दसि सह ' अ० ३ २ ६३ सूत्रेण ण्वि 'सहे साड स ' अ० ८ ३ ५६ सूत्रेण मूर्धन्य 'अन्येषामपि दृश्यते' इति पूर्वपदस्य दीर्घत्वम् अभिषाट् अभिषहमाण सपत्नान् नि० ३ ३]

अभ्यायत समन्ताद् हन्ति १८०१२ [अभि+अय गतौ (भ्वा०)+लङ्]

अभ्यायातम् आगच्छतम् ११०८६ [अभि+आङ्+या प्रापणे (अदा०) धातोर्लोट्]

अभ्यारुः प्राप्नुवन्तु ३१४ [अभि+ऋ गति-प्रापणयो (भ्वा०)+लोटि प्रथमबहुवचनम्]

अभ्यावर्त् अभ्यावर्त्तते ७५९४ [अभि+आङ्+वृतु वर्त्तने (भ्वा०)+लङ्। 'बहुल छन्दसीति' शपो लुक्। व्यत्ययेन परस्मैपदम्]

अभ्यावर्त्तस्व आभिमुख्येनाऽऽवर्त्तते १२१०३ [अभि+आङ्+वृतु वर्त्तने (भ्वा०)+लोट्]

अभ्यावर्त्तिन् आभिमुख्येन वर्त्तितु शीलमस्य तत्सम्बुद्धौ (अग्ने=पुरुषार्थिन् विद्वज्जन) १२७ **अभ्यावर्त्तिने**= अभ्यावर्त्तितु शील यस्य तस्मै (सज्जनाय) ६२७५ **अभ्यावर्त्ती**=यो विजेतुमभ्यावर्त्तते स (अग्नि =राजा) ६२७८ [अभि+आङ्+वृतु वर्त्तने (भ्वा०) धातो-स्ताच्छील्ये णिनि]

अभ्याववृत्रन् अभिमुख समन्तादावृण्वन्ति ३३२१५ [अभि+आङ्+वृतु वरणे (दिवा०) धातोर्णिचि लुङि छान्दस रूपम्]

अभ्याववृत्स्व अभ्यावर्त्तय ४१३ वर्त्तिता भवतु, अन्व०—अभ्यावर्त्यताम् १२७० अभ्यावर्त्तस्व ६१९३ [अभि+आङ्+वृतु वर्त्तने (भ्वा०) धातोश्छान्दस रूपम्]

अभ्यावृत्तः आभिमुख्येनाऽङ्गीकृत (वात =वाह्यो वायु) ८५८ [अभि+आङ्+वृतु वर्त्तने (भ्वा०) धातो क्त]

अभ्युत्तरेम उल्लङ्घयेम ३५१० [अभि+उत्+तॄ प्लवनसतरणयो (भ्वा०) धातोर्लिङ्]

अभ्युदेति अभित उदय करोति ७६०२ [अभि+उत्+इण् गतौ (अदा०) धातोर्लट्]

अभ्युपप्रभरामहे आभिमुख्येन समीप धरामहे ४५६५ [अभि+उप+प्र+भृञ् भरणे (भ्वा०) धातोर्लट्]

अभ्युपयन्ति अभिमुख प्राप्नुवन्ति ६२८४ [अभि+उप+इण् गतौ (अदा०) धातोर्लट्]

अभ्युपावहरामि अभित सामीप्येनाऽर्वाक् स्थाप-यामि १०२५. [अभि+उप+अव+हृञ् हरणे (भ्वा०) धातोर्लट्]

अभ्युप्य अभितो वपन कृत्वा २१५९ [अभि+डुवप् बीजसन्ताने (भ्वा०) धातो क्त्वा। क्त्वो ल्यप् समासे]

अभ्यूर्ण्वाना आभिमुख्येनाऽर्थनाच्छादयन्ती (उर्वशी= प्रज्ञा) ५४११९ [अभि+ऊर्णुञ् आच्छादने (अदा०) धातो शानच्। स्त्रिया टाप्]

अभ्यृणोति सर्वतो गच्छति प्राप्नोति, प्र०—ऋणो-तीति गतिकर्मा निघ० २१४, ३४२५ [अभि+ऋणोति गतिकर्मा निघ० २१७ ततो लट्]

अभ्येति प्राप्नुयात् ११२४९ पश्चाद् गच्छति ११५२ [अभि+इण् गतौ (अदा०) धातोर्लट्]

अभ्यैति आभिमुख्येन सर्वत प्राप्नोति १७४७ [अभि+आङ्+इण् गतौ (अदा०) धातोर्लट्]

अभ्यैक्षेताम् अभिमुखमीक्षता पश्यत ३२७ [अभि+ईक्ष दर्शने (भ्वा०) धातोर्लङ्]

अभ्यौहिष्ट अभिमुख वितर्कयति, भा०—कुतर्कयति ६१७८ [अभि+उ वितर्के (भ्वा०) धातोर्लुङ्]

अभ्रा अभ्राणि (मेघा) ५६३६ **अभ्रेण**= घनेन ५६३४ मेघेन, प्र०—अभ्र इति मेघनाम निघ० ११०, ५८५४ **अभ्राणीव**=वायुदलानीव ६४४१२ **अभ्रे**=घने ५४८१ अभ्रस्य=घनस्य ५८४३ [अभ्रम् मेघनाम। निघ० ११० अभ्रमेव सविता गो० पू० १३३ अथ यदभ्र स्यादेतद्वा अस्य तद्रूप येन प्रजा बिभर्त्ति कौ० १८४ अग्नेर्वै धूमो जायते, धूमादभ्रम् अभ्राद् वृष्टि श० ५३५१७ अभ्र वा अपा भस्म श० ७.५२४८ [वसोर्धारायै) अभ्रमूध श० ९३३१५]

अभ्राजि प्रकाश्यते ५५४६ [भाजृ दीप्तौ (भ्वा०) धातो कर्मणि लुङ्]

अभ्राट् न केनाऽपि प्रकाशितो भवति स्वप्रकाशत्वात् (अग्नि) १.६६.३ [नञ्युपपदे भ्राजृ दीप्तौ धातो क्विप्]

अभ्राट् भ्राजते ४६५ [भ्राजृ दीप्तौ (भ्वा०) धातोर्लङ्। बहुल छन्दसीति शपो लुक्। व्यत्ययेन परस्मैपदम्]

अभ्रातरः अबन्धुरिव वर्त्तमाना (पापिनो जना) ४५५ [अभ्रातर =अभ्रातृका नि० ३४]

अभ्रातेव यथाऽबन्धुस्तथा ११२४७]

अभ्राय मेघनिमित्ताय २२२६ [अभ्र इति मेघनाम निघ० ११०]

अभ्रिम् खननसाधक शस्त्रम् ११.११ **अभ्रिः**= अयोमय खननसाधनम् १११० [वज्रो वा अभ्रि श० ६३१३९ वाग्वा अभ्रि श० ६४१५]

गतौ (तु०) धातोर्लोट्। व्यत्ययेन शप्]

अभ्यवतु सर्वतो रक्षतु १७ ३६ [अभि+अव रक्षणादिपु (भ्वा०) धातोर्लोट्]

अभ्यवधावति अभिमुख गच्छति २५ ३४ [अभि+अव+सृ गतौ (भ्वा०) धातोर्लट्। गिति 'पाघ्राध्मा०' सूत्रेण धावादेश]

अभ्यवन्वन् आभिमुख्येनाऽवन्ति रक्षणादिक कुर्वन्ति १५१२ [अभि+अव रक्षणादिपु (भ्वा०) धातोर्लङ्। विकरणव्यत्ययेन श्नु]

अभ्यवर्त्तन्त अभिवर्त्तन्ते ५ ३१ ५ [अभि+वृतु वर्त्तने (भ्वा०) धातोर्लट्]

अभ्यवहन् आभिमुख्येन प्राप्नुयु १ ५१ १० [अभि+अव+हन हिंसागत्यो (अदा०) धातोर्लङ्। अडभावश्च]

अभ्यवह्रियमाणः भुज्यमान (सलिल) ८ ५६ [अभि+अव+हृञ् हरणे (भ्वा०) धातो कर्मणि शानच्]

अभ्यवासयत् आभिमुख्यतयाऽऽच्छादयति १ १६० २ [अभि+वस आच्छादने (अदा०) धातोर्णिचि लङि च रूपम्]

अभ्यवृधत् अभिवर्धते ४ २३ १ [अभि+वृधु वृद्धौ (भ्वा०) धातोर्लुङ्। 'द्युद्भ्यो लुङी' ति परस्मैपदम्। 'पुपादिद्युतादि०' सूत्रेण च्लेरङ्]

अभ्यश्नवाम अभित प्राप्नुयाम ६ ४६ १५ **अभ्यश्नाव**=आभिमुख्यतया व्याप्नुयाव जेतु समर्थौ स्याव १ १७६ ३ **अभ्यश्नोति**=अभिमुख प्राप्नोति ३ ११ ७ **अभ्यश्याम्**=सर्वत प्राप्नुयाम् १ १५४ ५ **अभ्यश्याम**=अभिमुख प्राप्नुयाम १८ ७४ [अभि+अशूङ् व्याप्तौ (स्वा०) धातोर्लोट्। 'अभ्यश्याम्' इत्यादौ विधिलिङ् 'बहुल छन्दसी' ति श्नुविकरणस्य लुक्। अश्नुते व्याप्तिकर्मा निघ० २ १८]

अभ्यसचन्त आभिमुख्येन समवयन्ति ३ ३१ ४ [अभि+पच् समवाये (भ्वा०)+लङ् व्यत्ययेनात्मनेपदम्]

अभ्यसत् अभ्यास कुर्यात् १ १५६ २ [भ्यस भये (भ्वा०)+लङ्। धातूनामनेकार्थत्वादत्राभ्यासेऽपि]

अभ्यसि अभिमुख भवसि ४ ६ १ **अभ्यस्तु**=अभिमुखमस्तु १ ६४ ८ [अभि+अस भुवि (अदा०) धातोर्लट् लोट् च]

अभ्यसिञ्चन् अभिसिञ्चन्ति १० १ [अभि+पिच क्षरणे (तुदा०) धातोर्लङ्। 'शे मुचादीनामि' ति नुम्]

अभ्यसृक्षत अभिमुख सृजेयु १ १३५ ६ [अभि+सृज विसर्गे (तुदा०) धातोर्लुङ्। च्ले क्सादेशे रूपम्। छान्दसत्वाद् 'सृजिदृशोर्झल्यम्०' इत्यमागमो न। व्यत्ययेनात्मनेपदम्]

अभ्यसेताम् प्रक्षिप्ते भवत. २ १२ १ [अभि+असु क्षेपणे (दिवा०) धातोर्लोट्। व्यत्ययेन शप् आत्मनेपदञ्च। भ्यस भये (भ्वा०) धातोर्वा लङ्। अभ्यसेताम् भ्यसते रेजते इति भयवेपनयो नि० ३ २१ अविर्भीताम् नि० १० १०]

अभ्यस्थात् अभितिष्ठति १ १४६ ४ [अभि+ष्ठा गतिनिवृत्तौ (भ्वा०) धातोर्लुङ्। 'गातिस्था०' इति सिज्लुक्]

अभ्यहिन्वन् अभिवर्धयन्ति ३ ३१ ५ [अभि+हि गतौ वृद्धौ च (स्वा०) धातोर्लङ्]

अभ्यागन्म अभिमुख समन्तात् प्राप्नुयाम, प्र०—अत्र लिडर्थे लुङ् 'मन्त्रे घसह्वर०' इति च्लेर्लुक् 'म्वोश्च' अ० ८ २ ६५ इति मकारस्य नकार ३ ३८ [अभि+आङ्+गम्लृ गतौ (भ्वा०)+लुङ्। लेर्लुक्। 'म्वोश्चे' ति मकारस्य नकार]

अभ्यागात् अभ्यागच्छति १ १६४ २७ **अभ्यागाम्**=अभिमुख समन्तादगाम् ७ ४५ [अभि+आङ्+इण् गतौ (अदा०)+लुङ्। 'इणो गा लुङि' इति गादेश। 'गातिस्था०' इति सिचो लुक्]

अभ्यातर अभ्याप्लव ११ ७१ [अभि+आङ्+तॄ प्लवनसतरणयो (भ्वा०)+लोट्]

अभ्यादधामि होम करता हू स० प्र० १६४, २० २४. सर्वथा सब ओर से धारण करता हू म० वि० १८६, २० २४ [अभि+आङ्+डुधाञ् धारणपोषणयो (जु०)+लट्]

अभ्यानट् अभितो व्याप्नोति ३४ ४२ [अभि+आङ्+नक्षति व्याप्तिकर्मा निघ० २ १८ ततो लङ्]

अभ्यानशुः अभिमुखमश्नुवन्ति प्राप्नुवन्ति २ २४ ६ [अभि+अशूङ् व्याप्तौ (स्वा०)+लिट्। व्यत्ययेन परस्मैपदम्]

अभ्यायच्छस्व अभिमुख समन्ताद्विस्तारय विस्तारयति वा, प्र०—अत्र पक्षे लडर्थे लोट् 'आङो यमहन' अ० १ ३ २८ अनेनाऽऽत्मनेपदम् 'आङ्पूर्वको यमधातुर्विस्तारार्थे ३ ३८ अभिमुख समन्ताद् देहि आयच्छति विस्तारयति वा' प्र०=अत्र पक्षे व्यत्यय सिद्धिश्च पूर्ववत् ३ ३९ अभिमुख समन्ताद् विस्तारय ३ ४० [अभि+आङ्+यमु उपरमे (भ्वा०) धातोर्लोट्। 'आङो यमहन' इत्यात्मनेपदम्। 'इपुगमियमा छ' इति मकारस्य छकारे तुगागमे च रूपम्]

अमन्महि विजानीयाम, प्र०—अत्र 'वहुल छन्दसि' इति श्यनोर्लुक् १ ३० २१ विजानीमहि, प्र०—अत्र लिडर्थे लड् 'वहुल छन्दसि' इति विकरणलुक् ७ २६ [मन ज्ञाने (दिवा०) धातोर्लङ्युत्तमवहुवचने रूपम् । 'वहुल छन्दसी'ति श्यनो लुक्]

अमन्यत मन्यते ६ ७२ ३. **अमन्यन्त**=मन्यन्ताम् १ ११६ १७ [मन ज्ञाने (दिवा०) धातोर्लङ्]

अमन्यमानान् अज्ञानहठाग्रहयुक्तान् सूर्यप्रकाशनिरोधकान् मेघाऽवयवान्वा १.३३.६ अज्ञानिन. शठान् पापिष्ठान् २ १२ १० [नञ्युपपदे मन ज्ञाने (दिवा०) धातो शानच्]

अमन्वत मन्यन्ते १ ८४.१५ [मनु अववोधने (तना०) धातोर्लङ् । अमन्वत सममसत नि० ४ २४]

अमम् अपरिपक्वविज्ञानम् (जनम्) १ ६६ ४ **अम:**=गृहम् ५ ५६ ३ यो गच्छति (वाक्प्रकाश) ६ ६१ ८ ज्ञानस्वरूपम् (ब्रह्म) ऋ० भू० १६२, अथ० १३ ४ ५० न्यायेन प्राप्तो गृहादिपदार्थ १८ ४ गृहम्, प्र०—अमेति गृहनाम निघ० ३ ४, ६ ५१ १५ **अमा**= गृहाणि ६ ६४ ६ गृहेषु ३ ३२ समीपस्थगृहाय १ १२४ १२ गृहे ६ २४ १० गृहम् ६ ५१ १५ [अम गत्यादिषु (भ्वा०) धातोर्भावे घञ् । 'नोदात्तोपदेश०' सूत्रेण वृद्धिप्रतिषेध. । अमम्=भय वल वा । नि० १० २१. अमागृहनाम निघ० ३ ४ अमा गृहे नि० ११ ४२]

अमर्त्त: आत्मत्वेन मरणधर्मरहित (मनुष्य) ५ ३३ ६ [मृङ् प्राणत्यागे धातो 'हसिमृग्रिण्वामि०' उ० ३ ८६ सूत्रेण तन् प्रत्यय मर्त्त मनुष्य नाम निघ० २ ३ तत्प्रतिषेध]

अमर्त्य ! कीर्त्या मरणधर्मरहित (राजन्) १ १२६ १० आत्मस्वरूपेण नित्य (मनुष्य) ५ १८ २ स्वस्वरूपेण मरणधर्मरहित साधारणमनुष्यस्वभावविलक्षण (अग्ने) १ ४४ १ मर्त्यधर्मरहित (अग्नि =राजा सेनेशो वा) ७ १५ १० **अमर्त्यम्**=नाशरहितम् (अग्निम्=विद्युदग्निम्) ४ ८ १ कारणरूपेण मरणधर्मरहितम् (अग्निम्=पावकम्) २२ १५ साधारणैर्मनुष्यैरसदृशम् (इन्द्र =राजराजपुरुषम्) २८ ३ मृत्युधर्मरहितम्, भा०—उत्पत्तिनाशरहितम् (ईश्वरम्) ३३ ६० दिव्यम् (मदम्) १ ८४ ४ स्वरूपतो नित्यम् (परमात्मानम्) ५ १४ २ मरणधर्मरहितम् (राजानम्) ५ ४ १० नाशरहित (यश) १ १३६ ८ मर्त्यस्य स्वभावराहित्येन देवस्वभावम् (आप्तविद्वज्जनम्) ३ १० ६ साधारणमनुष्यस्वभावरहित स्वरूपेण नित्यम् नित्यम् (दूतम्) १ ४४ ११ आत्मना मरणधर्मरहितम् (दास=सेवकम्) २ ११ २ कारणरूपेण मरणधर्मरहितम् (अग्निम्) २२ १५ मृत्युधर्मरहितम् (इन्द्र=स्वकीय जीवस्वरूपम्) २८ २७ **अमर्त्य:**=मर्त्यस्वभावरहित (अग्नि =विद्वज्जन) ४ ६ २ मरणधर्मरहितो जीव १ १६४ ३८ मरणधर्मरहित (अध्यापक) ३.२७ ७ स्वस्वरूपेण मृत्युरहित (गौ =विद्वज्जन) २१ १४ स्वरूपेण नित्य (अग्नि =वह्नि) ३ २७ ५ आत्मत्वेन मरणधर्मरहित (अग्नि =विद्वान्) ३ २४ २ अनादित्वान्मृत्युधर्मरहित (जीव) १ १६४ ३० नाश-प्रकृतमनुष्यस्वभावरहित (अग्ने=पुरुषार्थिजन !) १२ १०६ साधारणमनुष्यस्वभावविरुद्ध (विद्वज्जन) ६ १६ ६. अविद्यमाना मर्त्या यस्मिन् स (रथ =यानम्) ५.७५ ६ मनुष्यस्वभावाद्विलक्षण (मद =ओषधिसार) १ १७५ २ स्वभावेन मरणधर्मरहित (अतिथि) ५ १८ १ मृत्युधर्मरहित (वर्त्ता=ईश्वर) ३७ १६ अविद्यमाना आकर्षका मनुष्यादय प्राणिनो यस्मिन् स (रथ) १.३० १८ नाशरहित (देव =जीवात्मा) १ ५८ ३ **अमर्त्या.**= तत्त्वस्वरूपेण नित्या (देवा =पृथिव्यादय) २१ १७ साधारणमनुष्यस्वभावाद्विलक्षणा (देवा =विद्वज्जना) ६ १८ १५. **अमर्त्ये**=मरणधर्मरहिते वह्नौ परमात्मनि वा ७ १.२३. **अमर्त्येन**=मरणधर्मरहितेन कारणेन ६ १८ ७ **अमर्त्येषु**=मरणधर्मरहितेषु पदार्थेषु १ ११० ५. [मर्त्तो व्याख्यात तत स्वार्थे 'पादार्घाभ्या च' अ० ५ ४ २५ सूत्रे चकारस्यानुक्तसमुच्चयार्थत्वात् यत् । नञ्समास । अमर्त्य आदित्यो मर्त्येन मनसा सह ... अमर्त्य आत्मा मर्त्येन मनसा सह । नि० १३ ३७ मर्त्या मनुष्यनाम निघ० २ ३]

अमर्धन्ता सर्वान् शोषयन्तौ (इन्द्रो=विद्युदग्नि, वायुश्च) ३ २५ ४ [नञ्युपपदे मृधु उन्दने (भ्वा०) धातो शतृप्रत्यय]

अमर्धन्ती: अहिंसन्त्य (धेनव =वाच) ५ ४३ १ [नञ्युपपदे मृधु उन्दने (भ्वा०) धातो शतृ । ततो ङीप् । अत्र हिंसनार्थेऽपि]

अमर्मण: अविद्यमान मर्म यस्मिँस्तस्य (वृत्रस्य= शत्रो) ३ ३२ ४ अविद्यमानानि मर्माणि यस्य तस्य (शत्रो) ५ ३२ ५ [नञ्-मर्मणोर्वहुव्रीहि]

अमवत् अम प्रशस्तो वोध सम्भागो यस्मिँस्त

अभ्रियाः अभ्राणि २ ३४ २. [अभ्रप्राति० भवार्थे समुद्राभ्राद् घ' इति घ प्रत्यय । घस्येयादेश]

अभ्रियेव यथाऽभ्रेषु भवान्युदकानि १ ११६ १ [अभ्रप्राति० तत्र भवार्थे घ]

अभ्रियाम् अभ्रेषु भवा गर्जनाम् १ १६८ ८ [अभ्रप्राति० तत्र भवार्थे घ]

अभ्वम् महत् (विश्व=जगत्) २ ३३ १० अभवन्तम् (वर्ष=शरीरम्) १ १४० ५ महान्त महिमानम् ६ ४ ३ महत्तरम् (कृष्णम्=अन्धकारम्) १ ९२ ५ महान्त न्यायम् ६ ७१ ५ उदकमिव २ ४ ५. सत्तानिषेधम्, प्र०—अत्र भूधातो क्विप् तत 'छन्दस्युभयथा' अ० ६ ४ ८६ इत्यमि परे यणादेश. १.२४ ६ अविद्यमानम् (वस्तु) १ १६८ ९ अचाक्षुषत्वेनाऽप्रसिद्ध वा कारणम् १ १९ ३ **अभ्वात्**=अमत्याचरणजन्याद् दुःखात् १ १८५ २ [भू सत्ताया धातोर्नञ्युपपदे क्विप् । छन्दस्युभयथा' अ० ६ ४.८६ सूत्रेण यणादेश । अभ्व महन्नाम निघ० ३ ३ अभ्वम् उदकनाम निघ० १ १२]

अभ्र्वपिहितम् आच्छादित था स० प्र० २८२ [अभि+अपि+डुधाञ् धारणपोषणयो (जु०) धातो क्त । 'दधातेर्हि' रिति धातोर्हिरादेश । वर्णव्यत्ययेन यकारस्य वकार]

अमतये विरुद्धप्रज्ञायै ३ १६ ५ मूढत्वाय ७ १ १९ **अमतिम्**=सुरूपा लक्ष्मीम् ३ ३८ ८ सुरूपा श्रियम् ७ ३८ १ सुखरूपाम् (पृथिवी=भूमिम्) ७ ३८ २. विरुद्धामधर्मयुक्ता प्रज्ञाम् ३ ८ २ नष्टा मतिरमतिस्ताम् १९ ८४ अविद्यमाना मतिर्विज्ञान सुख वा यस्यामविद्याया दरिद्राया वा ता सुरूप वा १ ५३ ४ सुन्दर रूपम् । प्र०—अमतिरिति रूपनाम निघ० ३ ७, ७ ४५ ३ अज्ञानम् १७ ५४ **अमतिः**=रूपम् ४ २५ सुन्दरस्वरूप (विद्वान्) १ ७३ २ **अमतेः**=निवुद्धे (प्रजाजनस्य) [मन ज्ञाने (दिवा०) धातो 'मन्त्रे वृषेषपचमन०' सूत्रेण क्तिन् । तत्प्रतिषेध अमति रूपनाम निघ० ३ ७ अमति =अमामयी मतिरात्ममयी नि० ६ १२ अशनाया वै पाप्माऽमति ऐ० २ २ अशनाया वाऽअमति श० ९ २ ३ ८]

अमत्त हृष्यतु २ ३७ ४ **अमत्सुः**=हर्षयेयु १.८४.५ **अमदत्**=हर्षयेत् १ ८० २ **अमदन्**=हृष्यन्तु १ ५३ ६ मदन्ति हर्षन्ति ७ १८ १२ हृष्येयुर्हर्षयेयुर्वा १ १०२ १ हर्षयन्ति १ १०३ ७ आनन्देयु ३३ २९ [मदी हर्षे (दिवा०) धातोर्लुङ् । व्यत्ययेनात्मनेपदम् । 'अमदन्' इत्यादिषु व्यत्ययेन शप्]

अमन्दत् आनन्दयतु १ १६५ ११ **अमन्दत**=आनन्देत् ५ ३४ २. **अमन्दन्**=आनन्देयु ३ ३६ ४. आनन्दयेयु ३ ५१ ९ आनन्दन्ति ५ ३० १० **अमन्दिषुः**=हर्षयन्तु १ ८२ ६ **अममदुः**=हर्षन्ति ७ १८.२१ **अममन्दुः**=आनन्दयेयु ५ ३० १३ [मदि स्तुतिमोदमदस्वप्नकान्तिगतिषु (भ्वा०) धातोर्लङ् । अन्यत्र लुङ्]

अमत्रम् सुपात्रम् ४ २३ ६ **अमत्रः**=ज्ञानवान् (पुरुषोत्तम.) ३ ३६ ४. ज्ञानवान् ज्ञानहेतुर्वा (इन्द्र) १ ६१ ९ **अमत्रेभिः**=पात्रै २ १४ १ उत्तमै. पात्रै ६ ४२ २ [अम गत्यादिषु (भ्वा०) धातो 'अमिनक्षि०' उ० ३ १०५ सूत्रेणात्रन् प्रत्यय । अमत्रम्=पात्रम् अमा अस्मिन्नदन्ति । अमा पुनरनिर्मित भवति नि० ५.१. अमत्र अमात्रो महान् भवति, अभ्यमितो वा नि० ६ २३ अमत्र पदनाम निघ० ४.३]

अमत्रिन् बहुबलयुक्त (राजन्) ६ २४ ८ [अमत्र व्याख्यातम् । अमत्रप्राति० मत्वर्थे इनि । तत सम्बुद्धौ रूपम्]

अमथ्नात् मथ्नाति १.९३ ६ [मन्थ विलोडने (क्र्या०) धातोर्लङ् । 'अनिदिताम्' इत्युपधाया नकारस्य लोप]

अमदः आनन्द १ ८२ ६ [मदी हर्षे (दिवा०) धातो 'मदोऽनुपसर्गे' इति सूत्रेणाप् प्रत्यय । नञ् समास]

अमध्यमासः अविद्यमानो मध्यमो येषान्ते (मर्या = मनुष्या) ५ ५९ ६ [नञ्-मध्यमपदयोर्बहुव्रीहि]

अमनुत विजानीत ४ ५ १० [मनु अवबोधे (तना०) धातोर्लङि मध्यमबहुवचने रूपम्]

अमन्त रुजन्ति १ १८९ ३ [अम रोगे (चुरा०) धातोर्लङ् । आडभावश्च । व्यत्ययेनात्मनेपद णिलुक् च]

अमन्ति प्रापयन्ति रोगान् ७ २५ २ (अम गत्यादिषु (भ्वा०) धातोर्लट्]

अमन्थत् मन्थन करता है ११ ३२ **अमन्थत**=मन्थन्ति ३ १९ १३ मन्थित्वा गृह्णीयात् १५ २२ **अमन्थिष्ठाम्**=मथ्नीताम् ३ २३ २ [मथि हिंसासक्लेशनयो (भ्वा०) धातोर्लङ् । इदित्त्वान्नुम् । व्यत्ययेनात्मनेपदम् अन्यत्र]

अमन्दान् मन्दभावरहितान् तीव्रान् (स्तोमान्= विद्याविशेषान्) १ १२६ १ [अमन्दान्=अबालिशान् अनल्पान् वा नि० ९ ९]

षति चित्' उ० ४ १७४ सूत्रेण इत्र प्रत्यय । स च चिद्भवति]

अमित्रायुधः अमित्रेषु शत्रुषु प्रक्षिप्तान्यायुधानि यैस्ते (जना) ३ २९ १५ [अमित्र व्याख्यातम् । आयुधम्=आङ्+युध सम्प्रहारे धातोर् इगुपधलक्षण क करणे । एनयो समास]

अमित्रिणे अविद्यमानानि मित्राणि सखायो यस्य तस्मै जनाय १ १२० ८ [अमित्रप्राति० मत्वर्थे इनि प्रत्यय]

अमित्रिया अमित्राणि ६ १७ १ [अमित्रप्राति० जस स्थाने 'इयाडियाजीकाराणाम्०' इति वार्त्तिकेन इयादेश]

अमिनती अहिसन्ती (उषा) १.१२४ २. [नञ्+मीञ् हिसायाम् (क्रया०) धातो शतृ, ङीप्, ह्रस्वश्च धातो]

अमिनती अहिंसके (द्यावापृथिव्यौ) ४ ५६ २ [नञ् मीञ् हिसायाम् (क्र्या०) धातो शतृ । धातोश्च ह्रस्व]

अमिनते अहिसकाय (विद्यार्थिने) ४ ५ ६ [मीञ् हिसायाम् (क्र्या०) धातो, शतृ धातोश्च ह्रस्वत्वम् । 'मीनातेर्निगमे' सूत्रेण नञ्समास]

अमिनन्त प्रक्षिपन्ति १ ७९.२ [डुमिञ् प्रक्षेपणे (स्वा०) धातोर्लङ् । विकरणव्यत्ययेन श्ना]

अमिनः अहिसक (इन्द्र =सूर्य) ६ १९ १ अनुपमोऽतुलपराक्रम (इन्द्र =जगदीश्वर) प्र०—अमिनोऽमितमात्रो महान् भवत्यमितो वा निरु० ६ १६, ७ ३९ [मीञ् हिसाया धातोर्नञ्युपपदे बाहुलकान् न प्रत्ययो ह्रस्वश्च । अमिन अमितमात्रो महान् भवति अभ्यमितो वा नि० ६ १६]

अमिनात् हिस्यात् ३ ४९.२ हिंसेत् ३ ३४ ३ [मीञ् हिसायाम् (क्र्या०) धातोर्लङ् । 'मीनातेर्निगमे' अ० ७ ३ ८१ सूत्रेण शिति ह्रस्व । अमिनात् प्रामापयद् निरु० ५ ९]

अमिनाः निवारयेद्वा प्र०—'मीनातेर्निगमे' अ० ७ ३ ८१ इति ह्रस्वादेशश्च १ ३२४ (मीञ् हिसाया (क्र्या०) धातोर्लङि मध्यमैकवचनम् । धातोश्च ह्रस्वादेश]

अमिमीत निर्मिमीते, प्र०—अत्र लडर्थे लङ् ४ ३० निर्मितवान् निर्मिमीते वा ४ २५ निर्मीयते ३ २९ ११ निमिमीते १ १२६ १ मिमीते २९ ३६ **अमिमीयाः**= निर्माण कुर्या ५ ३१ ७ [माङ् माने शब्दे च (जुहो०) धातोर्लङ् । अमिमीत=निरमिमीत । नि० ९ १९]

अमीतवर्णाः अहिसितवर्णा (स्त्रिय) ४ ५१ ९ [नञ्युपपदे मीञ् हिसाया धातो क्तप्रत्यये=अमीतम् । तस्य वर्णेन सह समास]

अमीति प्राप्नोति २२ ५. [अम गत्यादिषु (भ्वा०) धातोर्लटि 'तुरुस्तुशम्यम०' अ० ७.३ ९५. सूत्रेण ईडागम.]

अमीमदन्त अतिशयेन हर्षयत १९ ३६ आनन्दन्तु १ ८२ २ आनन्दयन्ति, प्र०—अत्र लडर्थे लुङ् ३ ५१ आनन्दयताऽस्मान् मोदयत विद्या ज्ञापयत वा, अन्व०—हर्षयत २ ३१. (मदी हर्षे (दिवा०) धातोर्णिजन्ताल्लुङ्]

अमीमेत् प्रक्षिपति १ १६४ ९. (डुमिञ् प्रक्षेपणे (स्वा०) धातो छान्दस रूपम् । अमीमेत् अन्वमीमेत् नि० ११ ४२]

अमीमेत् मिनाति १ १६४.२८ [मीञ् हिसाया (क्र्या०) धातोश्छान्दस रूपम्]

अमीवचातनम् अमीवानज्ञानादीन् ज्वरादींश्च रोगान् चातयति हिनस्ति तम् (अग्नि=परमेश्वर भौतिक वा) १ १२ ७ रोगनाशनम् ७ ८ ६ **अमीवचातन**=योऽमीवान् रोगान् शातयति स (भिषक्=वैद्य) प्र०—अत्र वर्णव्यत्ययेन शस्य च १२ ८० [अमीव =अमरोगे (चुरा०) धातोर्बाहुलकाद् ईव प्रत्यय । चातनम्=चते याचने (भ्वा०) अत्र हिसार्थे धातोर्णिचि ल्यु प्रत्यय । अथवा शद्लृ शातने धातोर्ल्युट् । वर्णव्यत्ययेन शकारस्य चकार]

अमीवहा योऽमीवान् अविद्यादिरोगान् हन्ति स (परमात्मा) ३ २९. शरीर-इन्द्रियजन्य और मानस रोगो का हनन विनाश करने वाला (परमेश्वर) आर्याभि० १ ३८ अमीवानामविद्यादीना ज्वरादीना वा हन्ता (ईश्वरो विद्वान्वा) १ ९१ १२ योऽमीवान् रोगान् हन्ति (वास्तोष्पति =गृहस्वामी) ७ ५५ १ अविद्यादिरोगाणा हन्ता (ब्रह्मणस्पति =जगदीश्वर) १ १८ २ [अमीवोपपदे हन हिसागत्यो (अदा०) धातो क्विप् । अमीवहा=अभ्यमनहा नि० १० १७]

अमीवा रोग ६ ७४ २. **अमीवाम्**=रोगम् ७ १ ७ रोगोत्पन्ना पीडाम् १२ १०५ व्याधिरूपमन्धकारम् ३४ २५ **अमीवाः**=रोगा १ १८९ ३ रोग इवान्यान् पीडयन्त रक्षस =दोषान्) ३ १५ १ रोगपीडा, भा०—आत्मनोऽविद्यादय ११ ४७. रोग इव प्राणिना पीडका (द्विष =व्यभिचारिणीर्वृ पत्नी ११ ४९ रोगान् २ ३३.२ भा० शरीरात्मरोगान् २१ १० ये रोगवद् वर्त्तमाना. शत्रवस्तान्

(स्व =सुखम्) १ ५२ ६ गृहेण तुल्यम् (क्षत्र=धन राज्य वा) ५ ३४ ६ प्रशस्तरूपयुक्तम् (वरूथ=गृहम्) ४.५५ ४ **अमवत्सु**=अमा प्रशस्तानि गृहाणि विद्यन्ते येषु (स्थानेषु) ६ ६६ ६ **अमवती**=ज्ञानयुक्ता १ १६८ ७ **अमवान्**=बलवान् (वज्र) १ ५२ १० गृहवान् (एवया-मरुत्=विज्ञानवान् मनुष्य) ५ ८७ ५ बहवो सचिवा विद्यन्ते यस्य तद्वत् (राजेव) १३ ६ **अमवन्तः**=अमाना रोगाणा गमनाऽऽगमनबलाना वा सम्बन्धो विद्यते येषान्ते प्र०—अत्र सम्बन्धार्थे मतुप् अम रोगे अम गत्यादिपु च इत्यस्माद् 'हलश्च' इति करणाधिकरणयोर्घञ्, अमन्ति रोग प्राप्नुवन्ति यद्वाऽमन्ति गच्छन्ति आगच्छन्ति बलयन्ति यैस्तेऽमा (रुद्रियास =वायव) १ ३८ ७ निन्दितरोग-कारका (पुरुषा) १ ३६ २० [अम गत्यादिपु अम रोगे वा धातो 'हलश्चे' त्यधिकरणे घञ् । 'नोदात्तोपदेश०' इति वृद्धिप्रतिपेध । ततो मतुप् प्रत्यय । अथवा=अमप्राति० तुल्यार्थे वति प्रत्यय । अमा गृहनाम निघ० ३ ४ अमागृहे । नि० ११ ४२ अम पदनाम निघ० ४ ३]

अमहीयमानाम् असत्कृताम् (जाया=स्त्रियम्) ४ १८ १३ [महीङ् पूजायाम् (कण्ड्वादि०) धातो शानच् । नञ्समास]

अमंस्त मन्यते ५ ४० **अमंसाताम्** मन्येताम् ३८ १३ [मन ज्ञाने (दिवा०) धातोर्लुङ्]

अमाजूरिव योऽमा गृहे जूर्यति तद्वत् २ १७ ७. [अमा इति गृहनाम निघ० ३ ४ अमोपपदे जॄ वयोहानौ (दिवा०) धातो क्विप् । 'बहुल छन्दसी' ति (अ० ७.१ १०३) सूत्रेणोकारादेश]

अमात्यम् अमात्येपु साधुम् (वेद =धनम्) ७ १५ ३. **अमात्यः**=मेधावी खानक प्रधानभृत्य ५ २३ (अमेति सहार्थेऽव्ययम् । तत 'अव्ययात् त्यप्' अ० ४ २ १०४ सूत्रेण शैषिक त्यप्]

अमात्रम् अपरिमितम् (धिषणा=बुद्धिम्) १ १०२ ७ [नञ्युपपदे माङ् माने शब्दे च (जुहो०) धातो 'हुयामा०' उ० ४ १६८ सूत्रेण त्रन्प्रत्यय । नञ्समास]

अमानुषम् मनुष्यसम्बन्धरहितम् (पदार्थम्) २.११ १० [मनुप्राति० 'मनोर्जातावञ्यतौ षुक् च' अ० ४ १ १६१ सूत्रेणाञ् पुगागमश्च । नञ्समास]

अमितक्रतुः अमिता क्रतव प्रज्ञा यस्य स (सेनापति) १ १०२ ६ [अमित=नञ्+माङ् माने+क्त । क्रतु प्रज्ञानाम निघ० ३ ६ एनयो समास]

अमितम् अपरिमितम् (महिमानम्) ४ १६ ५ **अमिता**=अतुलशुभगुणा (स्त्री) ५ ३४ १ अमितानि अपरिमितानि (वरासि=वरणीयानि वस्तूनि) ६ ६२ २ **अमिताः**=अतुलशुभगुणा (सत्पुरुषा) ५ ५२ २ **अमितैः**=असख्यै (कर्मभि पुरुषैर्वा) ७ ३ ७ [नञ्+माङ् माने+क्त । 'द्यतिस्यतिमा०' सूत्रेणेत्त्वम्]

अमिताः अप्रक्षिप्ता (वीरयोद्धार) १ ११६ ३ [नञ्+डुमिञ् प्रक्षेपणे (स्वा०) धातो क्त]

अमितौजाः अमित परिमाणरहितम् बलमुदक वा यस्य यस्माद्वा स (इन्द्र =सेनापति सूर्यो वा १ ११ ४ [अमित व्याख्यातम् । उब्ज आर्जवे (तु) धातो 'उब्जेर्बले बलोपश्च' उ० ४ १९२ सूत्रेणासुन् प्रत्यये—ओज । एनयो समास]

अमित्रदम्भनम् शत्रुहिंसनम् २ २३ ३ **अमित्रदम्भनः**= शत्रूणा हिंसक (राजभृत्य) ४ १५ ४ [अमित्र =शत्रु । दम्भनम्=दम्भु दम्भने (स्वा०) धातोर्भावेल्युट् अथवा कर्त्तरि ल्यु प्रत्यय]

अमित्रयन्तम् शत्रूयन्तम् (मर्त्यम्) १ १३१ ७ शत्रु-वदाचरन्तम् (मर्त्यम्) ५ ३५ ५ ['अमित्रसुबन्ताद्' आचारेऽथ 'उपमानादाचारे' अ० ३ १ १० सूत्रेण क्यच् । तत शतृप्रत्यय । 'न छन्दस्य०' अ० ७ ४ ३५ सूत्रेणेत्त्व-निषेध]

अमित्रहन् अरिहन् (राजन्) ६ ४५ १४ **अमित्रहा**= यो येन वाऽमित्रान् शत्रून् हन्ति स (सूर्यो विद्वान्वा) ५ २४ [अमित्रोपपदे हन हिंसागत्यो (अदा०) धातो क्विप् । 'सौ च' इति सूत्रेण सुप्रत्यये दीर्घत्वम्]

अमित्रः शत्रु (जन) ६ २८ ३ **अमित्रान्**=शत्रून् (दुर्जनान्) ४ ४ ४ मित्रतारहितान्(दुष्टाञ्जनान्)७ १८ ६ दुष्टान् सर्वपीडकान् (जनान्) ६ ३३ ३ मित्रभावरहितान् (दुष्पुरुषान्) २६ ४१ सर्वैं सह द्रोहयुक्तान् (दुर्जनान्) ७ ५२ २ धर्मद्वेष्टॄन् शत्रून् १३ १२ सब शत्रुओ को आर्या-भि० १ २४, ऋ० ४ ३ २१ २५ न विद्यन्ते मित्राणि येषा तान् (जनान्) १७ ३६ धर्मविरोधिनो मनुष्यान् १ ६३ ५ धर्मद्वेषिण शत्रून् (जनान्) ४ १२ २ वैर कुर्वत (जनान्) ६ ७५ ७ विरोधिन उदासीनान् (जनान्) ७ ७३ २ **अमित्राः**=मित्रभाववर्जिता (शत्रवो जना) १ १३३ १ [डुमिञ् प्रक्षेपणे (स्वा०) अत्र मानार्थे, तत 'अमिचिमि-शसिभ्य ०' उ० ४ १६४ सूत्रेण क्त्र प्रत्यय । ततो नञ्-समास, नञ्बहुव्रीहिर्वा । अम गत्यादिपु धातोर्वा 'अमेर्द्वि-

अविनाशिन् (परमेश्वर) १ ४४ ५ आत्मस्वरूपेण मरणधर्म-रहित (विद्वज्जन) ५ ३१ १३ नाऽस्ति मृत मरणाद् ुख येन तत्सम्बुद्धौ (विद्वन्, वैद्यराजोपदेशक वा) १ ११४ ६ नाशरहितम् (नाम) ५ ५७ ५ **अमृतम्**=अधर्मजन्मदु ख-रहित मोक्षसुखम् १ ८३ ५ कारणरूपेण नाशरहित जलम् ३ ११४ धर्मार्थकाममोक्षाख्यममृतसुखम् १ ७२ ६ सर्व सुखप्रापकत्वेन दु खविनाशकम् (ब्रह्म) १ ७१ ९. मोक्षसुखम् ऋ० भू० १२६ सत्यविज्ञान किरणसमूह वा ऋ० भू० १४२ मोक्षम्, ओषध्यात्मक वृष्ट्यादिक रस वा ऋ० भू० । जन्म-मृत्यु के दु ख से रहित मोक्ष प्राप्ति को स० वि० १९७, ९ ११३ ११ अमृतात्मकव्यवहारपरमार्थ-सुखसाधकम् (धर्मम्) ४.१८ कारणरूपेणाऽविनाशि-स्वरूपम् (भौतिकमग्निम्) १५ ३३ उदकेऽपि व्यापक कारणम् (अग्निम्), प्र०—अमृतमित्युदकनाम निघ० १ १२, १५ ३३ सर्वरोगहर सुरस मिष्टादिकम् २ ३४ मोक्षम् १ १२५ ६ अमृतात्मकम् (चक्षु =नेत्रम्) १९ ८९ अमृतात्मकमुदकम् १९ ९१ रोगनाशकम् (अगदम्) १९ ७३ एतत्स्वरूपमानन्दम्, भा०—मोक्षसुखम् १९ ७२ अमृतात्मक ब्रह्म ओषधे सार वा १९ ७२ मृत्युरोगात्पृथक्करम् (इन्द्रिय=विज्ञानसाधकम्) १९ ७७ अमृतमिव सुखप्रद (रसम्) १९ ७५ मृत्युनिमित्तरोगनिवारकम् (इन्द्रिय= ईश्वरेण सृष्ट धनम्) १९ ७९ मृत्युधर्मरहित विज्ञानम् १९ ७८ अमृतात्मक मोक्षसुख प्रकाशन वा १ ३१ व्यावहारिक वा पारमार्थिक सुख को स० वि० १४३, अथ० ३ ३० ७ प्रकाशयुक्त और नाशरहित (मन = मन को) स० प्र० २४७, ३४ ३ मृत्युरोगनिवारक रसम् १ २३ १९ स्वस्वरूप मुक्तिसुख यज्ञशिष्टमन्न वा १८ ६ मरणजन्मदु खादिरहितम् (मोक्षम्) १ ९८ २ नाशरहित सदामुक्तम् (ईश्वरम्) १ ४४ ५ मोक्षाख्य सुख ब्रह्म वेदश्च ऋ० भू० २१८ स्वस्वरूपेण नाशरहितम् (आप्त विद्वासम्) २२ १ मोक्षसाधकम् (इन्द्रियम्=मन) ऋ० भू० ३०६ मृत्युरहित सुखम् ५ ३ ४ मरणादि दोषरहित ईश्वर को आर्याभि० २.२४, ३२ ९ मरणादि दु खरहित मोक्षपद मे सब दुखो से छूट के सर्वव्यापी पूर्णानन्दस्वरूप परमात्मा को आर्याभि० २ ६, ३२ १० अल्पमृत्यु-रोगनिवारकम् (रेत.=वीर्यम्) १९ ८४ उदकममरणधर्मकमाकाशादिक वा, भा०—अमृतात्मकमुदकम् ३३ ४३ मरणधर्मरहित चेतन ब्रह्म २० ५ मरणधर्मरहित कारणमल्पमृत्युनिवारक वा (भेषजम्=औषधम्) ९ ६ अमृतात्मक भोज्य वस्तु (हवि =होतव्य द्रव्यम्) १८ ६६ अमृतात्मक रसम् ३ २९ ७ मोक्षसुखदायक ईश्वर को स० वि० ५, २५ १३ औषध्यादिरसम्, सत्योपदेशरूपम् प० वि० । **अमृतस्य**= नाशरहितस्य कारणस्य ५ ५८ १ अविनाशिन (सूरे = विद्वप) १ १२२ ११. मोक्षस्वरूपस्य नित्यस्य परमेश्वरस्य ऋ० भू० १५७ नाशरहितस्य मोक्षस्य ४ ३५ ३ उदक समूहस्य, प्र०—अमृतमित्युदकनामसु पठितम् निघ० १ १२, १ १३ ५ मोक्षस्य १७ ८९ अविनाशिनो जीवस्य १ १७० ४ अविनाशिनो जगदीश्वरस्य ११ ५ नाशरहितस्य परमेश्वरस्य नित्यस्य वेदस्य वा ३३ ७७ कारणस्योदकस्य मध्ये वा ५ २८ नाशरहितस्य विज्ञानस्य ६ ५२ ९ परमात्मानम्, प्र०—अत्र 'अधीगर्थदयेशा कर्मणि' इति कर्मणि षष्ठी अ० २ ३ ५२, ७ ४ ६ नित्यस्य पदार्थस्य ९ ६ ३ अतिस्वादिष्ठस्य (सोमस्य=सारस्य) ९.३४. **अमृत:**= मृत्युरहित (जीव) १ ७७ १ आत्मरूपेण मृत्युधर्मरहित (विद्वज्जन) ३ १ १८ अविनाशी (अग्नि =कारणाख्य ईश्वर) १२ २४ अनुत्पन्नत्वान्नाशरहित (जगदीश्वरो जीवो वा) १ ७० २ स्वस्वरूपेण नाशरहित (महाविद्वान्) ७ ४ ४ शत्रुभिरप्रतिहत (सभाध्यक्ष) १ ३८ ४. **अमृतात्**=मोक्ष-प्राप्ते ७ ५९ १२ **अमृतान्**=प्राप्तमोक्षान् सदेहान् विदेहान्वा विदुषो मुक्त्यानन्दानुत्तमान् भोगान्वा ४.२८ **अमृता**= विनाशविरहा (उषा) १ ११३ १३ मृत्युधर्मरहिता, भा०— नाशोत्पत्तिरहिता (देवा =जीवा) ३३ ९० स्वा-दून्युदकानि ५ ७६ ५ उदकानि, सुखकराणि (सौभगानि= शोभनैश्वर्याणि) ५ ७७ ५ नाशधर्मरहिते (प्रिये=कम-नीये परमात्मस्वरूपे) २८.२७ नाशरहितानि (सौभगानि) ५ ४३ १७ आपकी प्राप्ति रूप को आर्याभि० २ १३, १७ २९ **अमृताय**=मोक्षाय १ ९१ १८ मोक्षस्या-ऽविनाशिसुखप्राप्तये ३.२५.२. जलवच्छान्तस्वरूपाय (राज्ञे) ४ ३ ३ **अमृतानि**=नाशरहितानि वस्तूनि, प्र०—अत्र सप्तम्यर्थे प्रथमा ३३.२२ मोक्षपर्यन्तार्थप्रापकानि (काव्यानि) १ ७२ १ **अमृताम्**=अमृतात्मिकाम् (ओष-धीम्) ९९ १ **अमृते**=प्रवाहरूपेण नाशरहिते (उषा , रात्रिश्च) १ ११३.२ **अमृतेव**=जलादिना ६ ७५.१८ परमात्मना सह युक्तेन ३४ ४ सर्वरोगनिवारकेणामृतात्मके-नोषधेन १७ ४९ सर्वरोगप्रहारकेण गुणेन १९ १ परमेश्वरमोक्षबोधेन परमानन्देन ऋ० भू० २४९, वे० को०, अथ० ११ ५ ५ **अमृतेषु**=हिरण्यादिषु धनेषु, प्र०— अमृत इति हिरण्यनाम निघ० १ २, ३ ९३ ३ **अमृता:**= प्राप्तमोक्षा (देवा =विद्वास) ७ २ ११ स्वस्वरूपेण नित्या (देवा =दिव्या पदार्था) २१ २८ प्राप्तजीवनमुक्ति-

९ १६ [अम रोगे (चु०) धातोर्बाहुलकाद् ईव प्रत्यय । अमीवा=अभ्यमनेन व्याख्यात । नि० ६.१३ अमीवा देवाश्वा इति वा नि० १२ ४३]

अमुग्ध्वम् मुञ्चत ५ ५५ ६ [मुच्लृ मोक्षणे (तुदा०) धातोर्लुङि रूपम् । च्लेर्लुक् आत्मनेपदश्च व्यत्ययेन]

अमुच्यत मुच्येत १२ ६८ **अमुञ्चतम्**=मुञ्चेताम् १ ११८ ८ मोचयतम् १ ११७ १६ मुञ्चतम् प्र०—अत्र-लोडर्थे लङ् १ ११२ ८ मुञ्चतो मोचयतो वा १ ६३ ५ **अमुञ्चत**=त्यजत ४ १२ ६ **अमुञ्चत्**=मुञ्चति १ ६१ १० मुच्यात् ३ ३१ ८ **अमुञ्चः**=मुच्या ५ २ ७ मोचय ७ १३ २ **अमुच्ये**=छोड देता हू स० वि० १४६ वे० को०, अथ० १४ १ ५७ [मुच्लृ मोक्षणे (तुदा०) धातो कर्मणि लङ् । कर्त्तरि चापि लङि रूपाणि । अमुञ्चतम् प्रमुमुचतु नि० ५ २१]

अमुत मोक्षाख्यात् परलोकात्, परजन्मसुखफलाद् धर्माद्वा, अन्व०—मोक्षमुखात सत्यसुखफलाद् धर्मात् ३ ६० [अदस् सर्वनाम्न 'पञ्चम्यास्तसिल्' अ० ५ ३ ७ सूत्रेण तसिल् । 'तद्धितश्चा०' इत्यव्ययसज्ञा]

अमुत्र परस्मिन् जन्मनि १७ २ [अदस् सर्वनाम्न 'सप्तम्यास्त्रल्' अ० ५ ३ १० सूत्रेण त्रल् । अव्ययसज्ञा]

अमुत्र भूयात् परजन्मनि भाविन (अभिशस्ते = सर्वतोऽपराधात्) प्र०—अत्राऽमुत्रोपपदाद् भूधातो क्यप् २७ ६ [अमुत्रोपपदे भू सत्ताया धातो क्यप् प्रत्यय । 'कृत्यल्युटो बहुलमि'ति कर्त्तर्यपि क्यप्]

अमुमुक्तम् मोचयतम् १ ११६ १४ मोचयेतम् ६ ५० १० [मुच्लृ मोक्षणे (तुदा०) धातोर्णिचि लुङि रूपम् । चङोऽकारस्य लोप]

अमुष्णात् मुष्णाति चोरयति ६ ४४ २२ **अमुष्णाः**= मुष्णीया १ १३ १४ **अमुष्णीतम्**=चोरवद्धरतम् १ ६३ ४ [मुष स्तेये (क्र्या०) धातोर्लङ्]

अमुष्यपुत्रम् प्रतिष्ठितस्य धार्मिकस्य विदुष सन्तानम् ६ ४० [अमुष्य=अदस्सर्वनाम्न षष्ठी । पुत्र = पूञ् पवने (क्र्या०) धातो 'पुवो ह्रस्वश्च' उ० ४ १६५ सूत्रेण क्त्र प्रत्ययो ह्रस्वश्च । तयो समासे षष्ठ्या अलुक्]

अमूर मूढतादिदोषरहित (अग्ने=राजन्) ४ ४ १२ **अमूरम्**=मूढतादिदोषरहित विद्वासम् ४ ११ ५ मूढतादि-दोषरहितम् (अग्नि=मेधाविजनम्) प्र०—अत्र वर्णव्यत्य-येन ढस्य र ३ १९ १ **अमूरः**=अमूढो विद्वान् सन् (राजा) ४ ६ २ मूढत्वादिदोपरहित (विद्वज्जन) ३ २५ ३ मोहरहित (सिनेश) ४.२६ ७ गन्ता (विद्वान्) १ १४१ १२ **अमूराः**=मूढत्वादिगुणरहिता ज्ञानवन्त (सज्जना) १ ६८ ४ मूढभावरहिता (जीवा) १ ७२ २ अमूढा विद्वास ७ ४४ ५ [नञ्+मुह वैचित्ये=अविवेके (दिवा०) धातो क्त । वर्णव्यत्ययेन ढस्य रेफ । अमूर =अमूढ नि० ६ ८]

अमृक्तम् अकोमलम् (प्रय =अन्नादिकम्) २ ३७ ४ अशुद्ध जनम् ६ ५० ७ शुद्धिरहितम् (श्रव =पृथिव्यन्नादि-कम्) ६ १ ४ **अमृक्तः**=अन्यैरहिंस्य (महाविद्वज्जन) ३ ११ ६ अहिंसित (रथ =रमणीय यानम्) ७ ३७ १ **अमृक्ताः**=अशोधिता (आप =प्राणा) ४ ३ १२ **अमृक्ते**=विकाराऽवस्थयाऽशुद्धे (अहोरात्रे) ३ ६ ४ [मृजूष् शुद्धौ (अदा०), मृजू शौचालङ्करणयो (चुरा०) धातो क्त । जकारस्य षत्व न छान्दसत्वात्]

अमृक्षन्त मृष्णन्ति सहन्ते १ १२६ ४ [मृष तितिक्षा-याम् (दिवा०) धातोर्लुङ्]

अमृणः हिंस्या ५ २६ १० [मृण हिंसायाम् (तुदा०) धातोर्लङ्]

अमृणतम् सुखयतम् ४ २८ ४ [मृड सुखने (तु०) धातोर्लङ् । वर्णव्यत्ययेन डस्य णकार । अथवा=मृण हिंसाया धातोर्लोट् । नञ्समास धातूनामनेकार्थत्वादत्र सुखार्थे]

अमृतत्वम् उदकस्य भावम् ५ ६३ २ मोक्षस्य भावम् १ १६४ २३ मोक्षसुखम् ४ ३६ ४ प्राप्तमोक्षाणा भावम् १ ६६ ६ मोक्षभावमुत्तमाऽऽनन्द वा ४ ३३ ४ अमृतस्य भावम् १७ ८६ अमृतस्य मोक्षस्य वा भावम् १ ११० ३ क्रियासिद्ध नित्य विज्ञानम् ७ ४७ **अमृतत्वेन**=सर्वरोग-निवारकत्वेन सह, भा०—रोगराहित्येन ६ १६ **अमृतत्वस्य**=अविनाशिनो मोक्षसुखस्य कारणस्य वा ३१ २ मोक्षभावस्य ऋ० भू० १२० नाशरहित कारण प्रकृति और जीव का स० प्र० २८२, ३१ २ **अमृतत्वाय**= मोक्षादिसुखाना भावाय १ ७२ ६ अमृतस्य मोक्षस्य भावाय ३ ३१ ६ **अमृतत्वे**=अमृताना नाशरहिताना पदार्थाना भावे वर्त्तमाने ५ ५५ ४ [मृङ् प्राणत्यागे धातो क्त । ततो भावे त्व प्रत्यय । नञ्समास । अथवा 'मतिबुद्धि०' सूत्रेण चकारस्यानुक्तसमुच्चयार्थत्वात् वर्त्तमाने क्त]

अमृत स्वात्मस्वरूपेण नाशरहित (अग्ने=परम-विद्वज्जन) ४ ११ ५ मरणधर्मरहित (अतिथे) ५ १८ ५

अम्बयः रक्षणहेतव आप १ २३ १६ [अवि शब्दे (भ्वा०) धातो 'इ' प्रत्यये बहुवचने रूपम् । आपो वा अम्वय कौ० १२ २]

अम्बरीषः शब्दविद्यावित् (इन्द्र =विद्वज्जनः) प्र०—अत्र शब्दार्थादविधातोरौणादिक ईषन् प्रत्ययो रुगागमश्च १ १०० १७ [अवि शब्दे (भ्वा०) धातोर्बाहु० ईषन् प्रत्ययो रुगागमश्च 'अम्बरीष' उ० ४ २६ सूत्रेण]

अम्बालिके प्रपितामहि २३ १८

अम्बिकया अम्बते शब्दयति यया तया (स्वस्रा=वेदादिशब्दविद्यया) ३ ५७ **अम्बिके**=पितामहि २३ १८ [अवि शब्दे (भ्वा०) धातो कर्तरि ण्वुल् । स्त्रिया टाप् इत्वञ्च । अम्बिका शरद्वा अस्य (रुद्रस्य) अम्बिका स्वसा तै० १ ६ अम्बिका=अम्बिका ह वै नामास्य (रुद्रस्य) स्वसा श० २ ६ २ ६]

अम्बितमे याऽम्बतेऽध्यापयति साऽतिशयिता तत्सम्बुद्धौ (सरस्वति=बहुविज्ञानवति विदुषि स्त्रि) २ ४१ १६ [अम्बिप्राति० आतिशयिकस्तमप् प्रत्यय]

अम्बे ! मात २३ १८ [अम्बिप्राति० सम्बुद्धौ रूपम्]

अम्भः उदकम्, प्र०—अम्भ इत्युदकनामसु पठितम् निघ० १ १२, १८४ [आप्लृ व्याप्तौ धातो 'उदके नुम्भौ च' उ० ४ २१० सूत्रेणासि प्रत्ययो नुमागमो भकारान्तादेशश्च । अम्भ उदकनाम । नि० १ १२ अय वै (भू) लोकोऽम्भासि तै० ३ ८ १८ १]

अम्भः व्यापक, शान्तस्वभाव, जलवत् प्राणस्याऽपि प्राणम् (ईश्वरम्) प्र०—आप्लृधातोरसुन् प्रत्ययान्तस्याऽय प्रयोग ऋ० भू० १६२. [पूर्वपदे द्र० । अदोऽम्भ परेण दिव, द्यौ प्रतिष्ठा । ऐ० आ० २ ४ १ अय वै (भू) लोकोऽम्भसाꣳसि । तस्य वसवोऽधिपतय तै० ३ ८ १८ १]

अम्भृणम् शत्रुभ्यो भयङ्करम् (रक्ष =दुष्ट जनम्) १ १३३ ५ **अम्भृणौ**=अपो विभर्त्ति याभ्या तौ (पात्रे) १६ २७ [अप् उपपदे डुभृञ् धारणपोषणयो (जु०) धातोर्बाहुलकाद् 'न' प्रत्यय । अम्भृण महन्नाम निघ० ३ ३ अम्भृण (पात्रविशेष) वैश्वदेवौ वाऽअम्भृणावतो हि देवेभ्य उन्नयन्त्यतो मनुष्येभ्योऽत पितृभ्य श० ४ ५ ६ ३]

अम्यक् अमि सरला गतिमञ्चति गच्छति १ १६६ ३ [अम्युपपदे अञ्चु गतौ (भ्वा०) धातो क्विन् । अम्यक्=आमाक्तेति वाऽभ्यक्तेति वा नि० ६ १५]

अम्यक्षि गच्छति ६ ११ ५

अय प्राप्नुहि ४ १८ २ **अयत्**=गच्छति ५ ३७ २ प्राप्नोति ७ २० ७ प्राप्नुयात् २ ३० ७ **अयते**=प्राप्नोति १ १२७ ३ **अयन्**=प्राप्नुवन्ति ४ २.१६ **अयन्त**=प्राप्नुवन्ति ६ २६ १ **अयन्ते**=गच्छन्ते १ १६ २ [अय गतौ (भ्वा०) धातोर्लोटि लटि लङि च रूपाणि । व्यत्ययेन परस्मैपदेऽपि]

अयक्ष्मम् यक्ष्मादिरोगरहित शरीरादिकम् १६.४ **अयक्ष्मया**=पराजयादिपीडानिवारिकया (सेनया) १६.११ **अयक्ष्माय**=आरोग्याय, भा०—शरीरात्मनोरारोग्याय ११ ५३ यक्ष्मादिरोगनिवारणाय ११ ३८ **अयक्ष्माः**=न विद्यते यक्ष्मा रोगराजो यासु ता (अघ्न्या =गाव) प्र०—अत्र यक्ष इत्यस्माद् 'अर्तिस्तु०' उ० १ १३८ अनेन मन्प्रत्यय ११ अविद्यमानो यक्ष्मा क्षयरोगो याभ्यस्ता (आप) ४ १२ [यक्ष पूजायाम् (चुरा०) धातो 'अर्त्तिस्तु०' उणा० १ १४० सूत्रेण मन् प्रत्यय । नञ्समास]

अयच्छत् दद्यात् ११ ५६ प्रयच्छति ददाति ७ १८ १७ [दाण् दाने (भ्वा०) धातोर्लङ् । शिति 'पाघ्रा०' सूत्रेण यच्छादेश]

अयच्छथाः प्रदान कीजिए १ ५२ ८ [दाण् दाने (भ्वा०) धातोर्लङ् । शिति यच्छादेश । व्यत्ययेनात्मनेपदम्]

अयजन्त सङ्गच्छेरन् ५ ३ ८ सङ्गमयन्ति १२ २३ यजन्ते १७ ५५ यजन्तु १७ ५५ पूजयन्ति ३१ ६ समपूजयन्त पूजयन्ति पूजयिष्यन्ति च ऋ० भू० १४८ यजन्ति सगच्छन्ते १ १६४ ५० सगच्छेरन् ४ ३ ८ अपूजयन्त ऋ० भू० १२५, वे० को०, ३१ ६ **अयजः**=यजे ३ १७ २ सगमयसि १ ३१ ३ प्राप्त होता है १ ७६ ५. [यज देवपूजासगतिकरणदानेषु (भ्वा०) धातोर्लङ्]

अयजमानम् अदातारम्, भा०—स्तेनम् (पुरुषम्) १२ ६२ [यज देवपूजा...दानेषु (भ्वा०) धातो 'पूङ्यजो शानन्' अ० ३ २ १२८ सूत्रेण शानन् । नञ्समास]

अयज्ञसाचः ये यज्ञेन न सचन्ति सम्बध्नन्ति ते (मर्त्ता =असत्पुरुषा) ६ ६७ ६ [यज्ञोपपदे षच समवाये (भ्वा०) धातोरण् प्रत्यय । नञ्समास]

अयज्ञान् सगाद्याऽग्निहोत्राद्यनुष्ठानरहितान् (अविदुषो जनान्) ७.६ ३ [यज देवपूजासगतिकरणदानेषु (भ्वा०) धातो 'यजयाच०' अ० ३ ३ ६० सूत्रेण नङ् प्रत्यय । नञ्बहुव्रीहि]

अयज्युम् अयजमानम् (मर्त्यम्) १ १३१.४ **अयज्यून्**=असगतिकर्त्तॄन् (नॄन्) १ १२१ १३ विद्वत्सत्कार-

सुखा (देवा =विद्वज्जना) ५ ६६ ४ नाशरहिता अमृतरसा (आप =प्राणा जलादयो वा) ४ १२ प्राप्तात्मविज्ञाना (विद्वज्जना) ५ २ १२ अमृतात्मैकरसा (मधुश्चुत =खाद्य-पदार्था) २१ ४२ कारणरूपेण नाशरहिता (आप = प्राणा) ४ ३ १२ प्राप्तमोक्षसुखा (देवा =विद्वज्जना) ६ २१ [मृङ् प्राणत्यागे (तुदा०) धातो क्त । अथवा 'मतिबुद्धिपूजार्थेभ्यश्च' सूत्रेण चकारस्यानुक्तसमुच्चयार्थत्वाद् वर्त्तमाने क्त । नञ्समास । अमृतम् हिरण्यनाम निघ० १ २ उदकनाम निघ० १.१२ अमृते अमरणधर्माणौ नि० २ २० अमृतस्य उदकस्य नि० १२ ८ अमृतेषु देवेषु नि० ८ १६ प्रजापतिर्वाऽमृत श० ६ ३ १ १७ अमृता देवा श० २ १ ३ ४ अमृत वा ऽआप श० १ ६ ३ ७, ४ ४ ३ १५ तद्यत्तदमृतॅं सोम स श० ६ ५ १ ८ अमृत वै हिरण्यम् श० ६ ४ ४ ५ तै० १ ३ ७ ७ अमृतॅं हिरण्यम् श० १० ४ १ ६ ता० ६ ६ ४ प्राणोऽमृतम् श० १० २ ६ १८ अमृतमु वै प्राणा श० ६ १ २ ३२ सदमृतम् श० १४ ४ १ ३१ अथ यद् ब्रह्म तदमृतम् जै० उ० १ २५ १० अमृत वा ऋक् कौ० ७ १० अमृत वै रुक् श० ७ ४.२ २१ अमृतत्व वै रुक् श० ६ ४ २ १४ अमृतमेव सप्तमी चिति श० ८ ७ ४ १८ अमृतमिव हि स्वर्गो लोक तै० १ ३ ७ ५ किं नु तेऽम्मासु (देवेषु) इति अमृतमिति जै० उ० ३ २६ ८ अमृतान्मृत्यु (निवर्त्तते) श० १० २ ६ १६ एतद्वै मनुष्यस्यामृतत्व यत्सर्वमायुरेति श० ६ ५ १ १० एतद्वाव मनुष्यस्यामृतत्व यत्सर्वमायुरेति ता० २२ १२ २, २३ १२ ३ य एव शत वर्षाणि यो वा भूयाॅंसि जीवति स हैवेतदमृतमाप्नोति श० १० २ ६ ८ अमृतमु वै प्राणा श० ६ ३ ३ १३ अमृत वै प्राणा गो० उ० १ १३ अमृत वै प्राणा कौ० ११ ४, १४ २ अमृतॅं हि प्राण श० १० १ ४ २ प्राणो वाऽमृतम् श० १४ ४ ४ ३ अमृतमाप गो० उ० १.३ अमृतत्व वा आप कौ० १२ १ अमृता ह्याप तै० १ ७ ६ ३ यद्भेषज तदमृत यदमृत तद्ब्रह्म गो० पू० ३ ४ अमृतॅं ह्येतदमृतेन क्रीणाति यत्सोमॅं हिरण्येन श० ३ ३ ३ ६ अमृतॅं हिरण्यम् तै० १ ७ ६ ३ १ ७ ८ १ अमृतॅं हिरण्यममृतमेष (आदित्य) श० ६ ७ १ २ आदित्योऽमृतम् श० १० २ ६ १६ अग्निरमृतम् श० १० २ ६ १७ अमृतमेभ्य (विश्वसृड्भ्य) उदगायत् । सहस्र परिवत्सरान् तै० ३ १२ ६ ३]

अमृतासः प्राप्तमोक्षसुखा (देवास =विद्वास) ४ ३५ ८ मरणधर्मरहिता (देवास =दिव्यगुणा) १ १२३ १ मृत्युरहिता (विद्वास) १ १२७ ८ स्वरूपेणाऽविनाशिन (देवा =विद्वज्जना) ५ ४२ ५ [अमृतप्राति० जसि असुगागम]

अमृत्यवः मृत्युभयरहिता (विद्युद्भौमसूर्यरूपेण ज्योतींषि) ३ २ ६ [मृङ् प्राणत्यागे (तु०) धातो भुजि-मृङ्भ्या युक्त्युकौ' (उणा०) सूत्रेण त्युक् । नञ्समास]

अमृत्युः अविद्यमान मृत्युभय' यस्मिन् (श्रव = श्रवणम्) ६ ४८ १२ [पूर्वपदे द्र०]

अमृध्रम् न मर्धते नोनत्तितम् (मेघम्) अत्र नञ्-पूर्वस्माद् मृधातोर्वाहुलकादौणादिको रक् प्रत्यय १ ३७ ११ [नञ्+मृधु उन्दने (भ्वा०)+रक्]

अमृध्रः अहिंसक (वैद्य) ५ ४३ १३ अहिंस्र (मद =अतिहर्ष) ६ १६ ७ **अमृध्राः** =अहिंसका (राजपुरुषा) ६ ७५ ६ अध्यापकोपदेशका ३ ३८ (नञ्= मृधु उन्दने (भ्वा०) धातोर्वाहुलकाद् रक्]

अमृध्राम् अहिंसिकाम् (सेनाम्) ६ २२ १० **अमृध्राः**=अहिंसिका (उषस =प्रातर्वेला) ५ ३७ १ अकोमलाङ्गा दृढाङ्गा २६ ४६ **अमृध्रे**=अहिंसिते (द्यावा-पृथिवी) ५ ४३ २ [नञ्+मृधु उन्दने (भ्वा०) धातोर्वाहु० रक् । स्त्रिया टाप्]

अमेनान् अविद्यमाना मेना प्रक्षेपकर्त्र्य स्त्रियो येषान्तान् (ब्रह्मचारिण') ५ ३१ २ [मेना वाङ्नाम निघ० १ ११ मेना उत्तराणि पदानि निघ० ३ २६ ततो नञ् बहुव्रीहि । डुमिञ् प्रक्षेपणे (स्वा०) धातोर्वाहुलकाद् न प्रत्यय]

अमेनि अहिंसक सन् (पुरुष स्त्री वा) प्र०—अत्र 'सुपा सुलुग्०' इति सुलोप ३८ १४ निर्वैर आर्याभि० २ ३१, ३८ १४ निर्वैर (परमेश्वर) ऋ० भू० १५२ [नञ्+मीञ् हिंसायाम् (क्र्या०) धातोर्वाहुलकाद् नि प्रत्यय मेनि, वज्रनाम निघ० २ २० अमेन्यस्मे-नृम्णानि धारयेत्यक्रुध्यन्नो धनानि धारयेत्येवैतदाह श० १४ २ २ ३०]

अमेष्टम् अमाया गृहे इष्टम् (प्रजापति =ईश्वर) १० २० [अमा गृहनाम, निघ० ३ ४ तदुपपदे इष गतौ धातो क्त]

अमोचि मुच्यते ५ १ २ मुच्लृ मोक्षणे (तुदा०) धातो कर्मणि लुङ्]

अम्ब अमति प्रेमभावेन प्राप्नोति (मात !) प्र०— अत्रौणादिर्वन् प्रत्यय ६ ३६ मातरध्यापिके ५.४१ १६ [अम गत्यादिषु (भ्वा०) धातोर्वाहुलकाद् वन् प्रत्यय वकारस्य वकार]

भा०—सङ्गृह्णीयात् ३०१० अयाक्षीत् ७.१५ [यज देवपूजासंगतिकरणदानेषु (भ्वा०) धातोर्लुङ्। ले सिचो लुक् विश्वान् देवानयाडिहेति सर्वान् देवानयाक्षीदिहेत्येवैतदाह श० १४२२१६]

अयातन प्राप्नुत ५ ५४ [या प्रापणे धातोर्लङ्। 'त' प्रत्ययस्य स्थाने 'तप्तनप्तनथनाश्च' सूत्रेण तनप् आदेश]

अयातम् प्राप्नुतम् ११११६ १८ प्राप्नुयातम् १११६ २० [या प्रापणे (अदा०) धातोर्लङ्]

अयातम् अप्राप्तम् (धनम्) ५ ३१ ८. [या प्रापणे (अदा०) धातो क्त। नञ्समास.]

अयातयतम् सुशिक्षया प्रयत्नवती संस्कुर्वन्तु १ ३३ ६ [या प्रापणे (अदा०) धातोर्णिचि लङि मध्यमद्विवचने रूपम्]

अयातुः यो न याति तस्मात् (स्थिरादविदुष) ७ ३४ ८ [या प्रापणे (अदा०) धातो कर्त्तरि तृच्। नञ्समास]

अयान् यच्छतु ४ ५३ १ प्रकाशित करते है १७ ५८ इयात् ६ ७१ ५ [या प्रापणे धातोर्लङ्]

अयान् प्राप्तान् (पृथिवीदेशान्) २ ३८ ३. [इण् गतौ धातो 'एरच्' इत्यच्। द्वितीयाबहुवचने रूपम्]

अयाम गमयेम ५ ४५ ५ प्राप्नुयाम, प्र०—अत्र अय लोडुत्तमबहुवचने प्रयोग १ ३३ १ [अय गतौ (भ्वा०) धातोर्लोट्। या प्रापणे धातोर्वा लङ्]

अयामन् अगन्तव्ये मार्गे ११८१७ [या प्रापणे (अदा०) धातोर्मनिन्। नञ्समास। बहुवचनाद् अधिकरणे मनिन्]

अयामि एमि प्राप्नोमि ११५३ २ प्राप्नोमि ३३ ८५ [अय गतौ (भ्वा०) धातोर्लट्। व्यत्ययेन परस्मैपदम्। या प्रापणे धातोर्वा लङ्। छान्दसत्वान् नेकारलोप]

अयावि पृथक्कुरुत, भा०—निवर्त्तयति २८ १५ [यु मिश्रणेऽमिश्रणे च (अदा०) धातो कर्मणि लुङ्]

अयासम् अयासिष प्राप्नुयाम्, प्र०—अत्र 'वाच्छन्दसि' इतीडभाव ३ ३३ ३ **अयासिषम्**=प्राप्नुयाम् ११८ ६ करोमि, प्र०—अत्र लडर्थे लुङ् ३.४८ मै याचता हूँ आर्याभि० २ ५२, ३२ १३ [या प्रापणे (अदा०) धातोर्लुङ्]

अयासिषम् प्राप्तवती (स्त्री) ८ २७ [या प्रापणे (अदा०) धातोर्लुङ्]

अयासिष्ट यातु ५ ५८ ६ **अयासिष्टाम्**=प्राप्नुत २८ १४ **अयासुः**=प्राप्नुयु ७ ५७ १ [या प्रापणे (अदा०) धातोर्लुङ्]

अयासः गच्छन्त (स्तेना=चौरा) ६ ६६ ५ प्राप्तविज्ञानास (श्येनास=अश्वा) ४ ६ १० विज्ञानवन्त (सज्जना) ३ १८ २ प्राप्ता (गाव=किरणा) ११५४ ६ प्राप्तविद्या (विद्वज्जना) ३ ५४ १३ प्राप्तिशीला (मरुत=वाता) १ ६४ ११ ज्ञातारो गन्तारो वा (भयङ्करा जना) ७ ५८ २ अयन्त इत्ययास (गाव), समीक्षा—महीधरेणात्रायगताविल्यस्य यदयन्तीति परस्मैपदमुक्तम् तदसदात्मनेपदोपयोग्यत्वात् ८ ३ [अय गतौ (भ्वा०) धातोरच्। तत प्रथमाबहुवचनेऽसुगागमे रूपम्। अयास अयना नि० २ ७]

अयास्यः प्रयत्नाऽसाध्य स्वाभाविक (सभाध्यक्ष) १ ६२ ७ [यसु प्रयत्ने (दिवा०) धातोर्ण्यत्। नञ्समास अयास्य ते (असुरा) ऽब्रुवन्नय वा आस्य इति। यदब्रुवन्नय वाऽ आस्य इति तस्मादयमास्य। अयमास्यो ह वै नामैष। तमयास्य इति परोक्षमाचक्षते जै० उ० २.८ ७ स एवाऽयास्य (अन्नाद्यम्) आस्ये धीयते तस्मादयास्य यद्देवा (ऽयम्) आस्ये रमते तस्माद्वेवाऽयास्य जै० उ० २११८ क्व नु सोऽभूद् यो न इत्थमसक्तेत्ययमास्येऽन्तरिति सोऽयास्य श० १४४१९ स प्राणो वा अयास्य. जै० उ० २८८ अयास्य उद्गाता मै० १.९१ काठ० ९ ९ अयास्यो ब्रह्मा जै० ३ ११८]

अयांसम् अयौ प्राप्तवन्तौ दोर्दण्डौ येन तम् (सज्जनम्) २ ३५.१५. [अय=इण् गतौ (अदा०) धातोरच्। अस=अस गत्यादिषु (भ्वा०) धातो 'असे सन्' उ० ५ २१ सूत्रेण सन्-तयोर्बहुव्रीहि]

अयाः प्राप्नुवन्त (स्तेना=चौरा) ६ ६६ ५. [या प्रापणे (अदा०) धातोर्लङि मध्यमैकवचने रूपम्]

अयाः यजे सङ्गच्छस्व, प्र०—अत्र लिडर्थे लङ् ८ २० यजे, प्र०—अत्र लङ् मध्यमैकवचने शपो लुक्, श्वेतवाहादित्वात् पदान्ते डस् ३ २९ १६ [यज देवपूजासंगतिकरणदानेषु (भ्वा०) धातोर् लङ्। शपो लुक् 'बहुल छन्दसीति' सूत्रेण। पदान्ते श्वेतवाहादित्वाड् डसि टिलोपे रूपम्]

अयुक्त युनक्ति ५ ४५.१० युङ्क्ते ६ ६३ ४ युञ्जते ७ ६०.३ योजयति १.५० ९ समाहितो भवति ३३ ३७ [युजिर् योगे (रुधा०) धातोर्लुङ्]

विरोधिन (असज्जनान्) ७ ६ ३ अयज्यो = असङ्गन्तु (शत्रो) २ २६ १. [यज देवपूजासगतिकरणदानेषु (भ्वा०) धातो 'यजिमनि०' उ० ३ २० सूत्रेण युच् । बहुलवचनाद् अनादेशो न । नञ्समास]

अयज्वनः = यज्ञविरोधिन (जनस्य) १ १०३ ६ अयाक्षुस्ते यज्वानो, न यज्वानोऽयज्वानस्तान् (जनान्) १ ३३ ४ **अयज्वानः** = यज्ञानुष्ठान व्यक्तवन्त (जना) १ ३३ ५ [यज देवपूजासगतिकरणदानेषु (भ्वा०) धातो 'सुयजोर्ङ्वनिप्' सूत्रेण ङ्वनिप् । नञ्समास]

अयतन्ता प्रयत्नरहितौ (अध्यापकाऽध्येतारौ) २ २४ ५ (यती प्रयत्ने (भ्वा०) धातो शतृ । नञ्समास]

अयनम् भूमिस्थानम् ३ ३३ ७ **अयनाय** = व्यावहारिक-पारमार्थिकसुखाय ऋ० भू० १३२ अभीष्टस्थानाय मोक्षाय ३१ १८ **अयने** = भूमौ १३.५३ [अय गतौ (भ्वा०) धातोर्ल्युट् । इय (पृथिवी) वाऽपामयनमस्याꣳ ह्यापो यन्ति श० ७ ५ २.५०]

अयमानम् प्राप्नुवन्तम् (राजपुरुषम्) ४ ३८ ५ [अय गतौ (भ्वा०) धातो शानच्]

अयवानाम् अमिश्रितानाम् (पदार्थानाम्) १४ २६ **अयवाः** = अमिश्रिता, अन्व०—प्रकृत्यवयवा सत्त्वरजस्तमासि गुणा, परमाण्वादयश्च १४ ३१ **अयवोभिः** = मिश्रिताऽमिश्रितैरन्नै क्षणादिभि कालावयवै १२ ७४ [यु मिश्रणेऽमिश्रणे च (अदा०) धातो 'ऋदोरप्' इत्यप् प्रत्यय । नञ्समास । अयवा (अपरपक्षा हीदꣳ सर्वम्) अयुवते श० ८ ४ २ ११ अपरपक्षा अयवा. श० ८ ४.२ ११ योऽसुराणाम् (अर्धमास कृष्णपक्ष) सोऽयवा न हि तेनाऽसुरा अयुवत । श० १ ७ २ २५ अथो इतरथाहु य एव देवानाम् (अर्धमास = शुक्लपक्ष) आसीत्सोऽयवा न हि तमसुरा अयुवत श० १ ७ २ २६]

अयष्ट अभिसङ्गच्छेत् ६ ४७ २५ [यजदेवपूजासगतिकरणदानेषु (भ्वा०) धातोर्लुङि रूपम्]

अयसः हिरण्यस्य, प्र०—अय इति हिरण्यनाम निघ० १ २, ६.४७ १० **अयसे** = गमनाय ४ २१ ७ विज्ञानाय १ ५७ ३ **अयः** = लोहयुक्तम् (मुखम्) ६ ७५ १५. सुवर्णम् २६ २०. योऽयते गच्छति स (विद्वज्जन) ५ ६२ ७. प्राप्तिसाधका धातव १ १६३ ९ लोहा १८ १३ [अय गतौ-(भ्वा०) धातोरसुन् । अथवा = इण् गतौ (अदा०) धातोरसुन् प्रत्यय । अयस् हिरण्यनाम । निघ० १ २ अय (प्रजापति) अश्मनोऽय (असृजत) श० ६ १ ३ ५ दिशो वा अयस्मय्य (सूच्य) तै० ३ ९ ६ ५ अस्य वै (भू) लोकस्य रूपमयस्मय्य (सूच्य) तै० ३ ९ ६ ५ (असुरा) अयस्मयीमेव (पुरी) अस्मिंल्लोके (चक्रिरे) श० ३ ४ ४ ३ अय (प्रजापति.) अयसो हिरण्य (असृजत) तस्मादयो वहुध्मातꣳहिरण्यसकाशमिवैव भवति श० ६ १ ३ ५ अय विश एतद् रूप यदय श० १३ २ २ १९]

अयस्तापम् लोहसुवर्णतापकम्, भा०—तप्त लोहमिव ३० १४ [अयस् हिरण्यनाम निघ० १ २ तदुपपदे तप सन्तापे धातोरण् प्रत्यय]

अयस्मयम् सुवर्णादिप्रकृतम् (नम = अन्नम्) प्र०—अय इति हिरण्यनाम निघ० १ २, १२ ६३ **अयस्मयः** = हिरण्यमिव तेजोमय (घर्म = प्रताप) ५ ३० १५ [अयो हिरण्यम् । तत 'तत्प्रकृतवचने मयट्' अ० ५ ४ २१ सूत्रेण मयट् । 'अयस्मयादीनि च्छन्दसि' अ० १ ४ २० सूत्रेण निपातनात् साधु । अयस्मयेन (पात्रेण) असुरा अदुहुर्यवान् । काठसक० १४० १०]

अयंसत गृह्णीयु १ १३५ ६ यच्छेयु १ १३५ ६ उपयच्छेयु १ १३५ ३ **अयंस्त** = यच्छति ६ ७१ १ उद्यच्छति १ ५६ १ उपयच्छति १ १३६.२ यच्छत १ १४४ ३ [यमु उपरमे (भ्वा०) धातोर्लुङ्]

अयःशया योऽयस्सु सुवर्णादिषु शेते सा (तनू = शरीरम्) हिरण्यनाम निघ० १ २, ५ ८ [अयस् हिरण्यनाम निघ० १ २ तदुपपदे शीङ् शये (अदा०) धातो 'अधिकरणे शेते' अ० ३ २ १५ सूत्रेणाच् प्रत्यय । स्त्रिया टाप्]

अयःशिप्राः अय इव शिप्रे हनूनासिके येषामश्वाना तद्वन्त (राजपुरुषा) ४ ३७ ४ [अयस् हिरण्यनाम, शिप्रे = हनूनासिके । तयो समास. । ततो मत्वर्थेऽकार प्रत्यय]

अयःस्थूणम् सुवर्णस्तम्भमिव (उपसो हिरण्यरूपम्) ५ ६२ ८ [अयस् हिरण्यम्, तस्य स्थूणम् । तिष्ठति छादनादिकमनया सा स्थूणा = गृहस्तम्भ, 'रास्नासास्नास्थूणावीणा' उ० ३ १५ सूत्रेण निपातनात् साधु]

अया एति जानाति सर्वा विद्या यया प्रज्ञया तया, प्र०—अत्र 'सुपा०' इत्याकारादेश १ ८७ ४ [इण् गतौ (अदा०) धातो 'एरच्' इत्यच् प्रत्यय । स्त्रिया टाप्]

अया अनया १ १२८ २ अनया नीत्या ६ १७ १५ [इदम् सर्वनाम्नस्तृतीयकवचने रूपम् । पृषोदरादिना नकारस्य लोप । अया = इत्युपदेशस्य नि० ३ २१]

अयाट् यजेत्, भा०—प्राप्नुयात् २१ ४७ सङ्गच्छेत्,

८.२१८ इति लत्वविकल्प १२१ अलङ्कृत अर्थात् उत्तम रीति से बनाए गए (सोमा) आर्याभि० १७. [अलम्+डुकृञ् करणे धातो क्त प्रत्यय । कपिलकादित्वाल् लत्वविकल्प । अरङ्कृता अलङ्कृता नि० १०१]

अरङ्कृतिः अलङ्कार ७२९३ [अलम् उपपदे डुकृञ् करणे धातो क्तिन् प्रत्यय कपिलकादित्वाल् लत्वविकल्प ।]

अरङ्कृते पूर्णपुरुषार्थिने (राज्ञे) २१७ [अलमुपपदे डुकृञ् करणे धातोस्ताच्छील्ये क्विप् । कपिलकादित्वाल्लत्वविकल्प]

अरङ्गमाय यो विद्याया अर पार गच्छति तस्मै (विदुषे=आप्ताय विपश्चिते) ६४२१ [अलमुपपदे गम्लृ धातो 'गमश्चे' ति अ० ३२४७ सूत्रेण खच् प्रत्यय]

अरज्जौ असृष्टौ २१३६ [सृज विसर्गे (दिवा०) धातो 'सृजेरसुम् च' उ० ११५ सूत्रेण उ प्रत्ययोऽसुमागम, आदिसकारलोपश्च । नञ्समास]

अरणम् उदकम् ५८५७ प्रेरितम् (अश्व=तुरङ्गम्) ३५३२४ **अरणस्य**=अविद्यमानो रण सङ्ग्रामो यस्मिँस्तस्य (राय=धनस्य) ७४७ **अरणः**=सङ्ग्रामरहितो, यथावत् सङ्ग्राम न करोति य (कुराजभृत्य) ६७५१६ विज्ञाता (ब्रह्मणस्पति=महाविद्वान्) २२४७ सङ्क्रान्ता (पुत्र) ५२५ अरममाण (अन्यगोत्रजोऽनौरसो वा पुत्र) ७४८ **अरणानि**=अरमणीयानि (क्षेत्राणि) ६६११४ **अरणाय**=सल्लक्षणाय प्राप्तायान्त्यजाय २६२ अतिशूद्रादि के लिए स० प्र० ९७ [अरणमम्बु नि० ३१० अरणोऽपार्णो भवति नि० ३२ अर्ण इत्युदकनाम निघ० ११२ अपरत्र=नञ्-रणयो समास । रणाय=रमणीयाय सग्रामाय नि० ४८ रण सग्रामनाम निघ० २१७ अन्यत्र=ऋ गतौ धातोर्ल्युट् प्रत्यय]

अरणी काष्ठविशेषाविव (विद्वासौ) ५९३. **अरणीभिः**=अरणियो से ११२७४ सुखप्रापिकाभि (ऊतिभि=रक्षाभि) ११२९५ **अरण्योः**=उपर्य्यधस्थयो साधनयो ३२९२ [ऋ गतौ धातो 'अतिसृधृ०' उ० २१०२ सूत्रेणानि प्रत्यय । 'कृदिकारादक्तिन' इति ङीष् । अरणी=प्रत्यृत एने । अग्नि समरणाज्जायत इति वा नि० ५१० देवरथो वा अरणी कौ० २६ अरो वै विष्णुस्तस्य वा एषा पत्नी यदरणी काठसक० २१२३]

अरण्यम् वनम् २५३ **अरण्यानाम्**=वनानाम् १६२०. **अरण्ये**=वानप्रस्थाऽऽश्रमे ऋ० भू० २३८ जङ्गले २०१७ वानप्रस्थै सेविते एकान्तदेशे वने ३४५ **अरण्येषु**=वनेषु ११६३११ जङ्गलेषु २६२२ [ऋ गतौ (भ्वा०) धातो 'अर्त्तेर्निच्च' उ० ३१०२ सूत्रेणान्य प्रत्यय । अरण्यमपार्ण ग्रामादरमण भवतीति वा नि० ९२९. अरण्यानी अरण्यस्य पत्नी नि० ९२९ वाग्वाऽ अरण्येऽनूच्य. (पुरोडाश) श० ९३२४]

अरतये प्राप्ताय व्याप्ताय (अग्नये=परमात्मने) ७५.१. [ऋ गतिप्रापणयो (भ्वा०) धातो 'वहिवम्यर्त्तिभ्यश्चित्' उ० ४६० सूत्रेणाति प्रत्यय ।]

अरताम् प्राप्नुताम् ३३३१३ [ऋ गतिप्रापणयो. (भ्वा०) धातो शतृप्रत्यय । षष्ठीबहुवचने रूपम्]

अरतिम् नाऽस्ति रतिश्चैतन्यमस्मिँस्तम् (अग्नि=विद्युतम्) १५३२ दु खम् ४३८४ विषयेष्वरममाणम् (राजानमधिकारिण वा) ६४९१२ प्राप्तम् (पावकम्) ३३.८ प्राप्तिम् ६७१. प्रापकम् (अग्निम्) १५८७ प्रापणीयम् (अग्नि=विद्वज्जनम्) ४११ सुखप्रापकम् (अग्नि=सत्योपदेशकम्) सर्वत्र प्राप्तम् (द्रविण=धन यशो वा) ७१०३ प्राप्तविद्यम् (विद्वज्जनम्) ११२८८. **अरतिः**=प्रापक (अग्नि=विद्वान्) २२२ सर्वत्र प्राप्त (अग्नि=आप्तो जन) ४२१ सत्योपदेश प्राप्त सन् (सज्जन) ६६७८ स्वव्याप्त्या धर्त्ता (ईश्वर) १५९२ समर्थ (अग्नि=वह्नि) २४२ ज्ञाता (अग्नि=कारणाख्यो जगदीश्वर) १२२४ अरमण (अग्नि) ६३७ प्राप्ति ६१२३ **अरतौ**=अरमणवेलायाम् ५२१ ऋच्छति प्राप्नोति तम् (अग्नि=भौतिकम्) ७२४ (रमु क्रीडायाम् धातोर्भावे स्त्रिया क्तिन् । नञ्समास । अन्यत्र ऋ गतिप्रापणयो (भ्वा०) धातोरौणादिकोऽति प्रत्यय । अय वै (पृथिवी) लोकोऽरति पृथिव्या जै० २३६०.]

अरत्नी प्रजाया व्यापारे गणितविद्याया च निपुणीकरणम् ऋ० भू० २१६ भुजमध्यप्रदेशौ २०८ [ऋ गतिप्रापणयो (भ्वा०) 'ऋतनि०' उ० ४२ सूत्रेण कत्निच् । बाहुर्वा ऽअरत्नि श० ६३११३]

अरथाः अविद्यमाना रथा येषान्ते (पदातय) ५३१५ **अरथेभ्यः**=अविद्यमाना रथा येषान्तेभ्य पदातिभ्य १६२६ [नञ्रथयो समास]

अरथीः अविद्यमानरथ (वीरजन) ६६६७ [नञ्-

अयुक्तासः योगरहिता (व्यवहारा) ५.३३ ३ अधर्मकारिण (राजप्रजाजना) १० २२ [युजिर् योगे (रुधा०) धातो क्तप्रत्यये युक्त । प्रथमाबहुवचनेऽसुगागमे रूपम् । नञ्समास]

अयुक्थाः योजयसि १ ६४ १० [युजिर् योगे (रुधा०) धातोर्लुङि मध्यमैकवचने रूपम्]

अयुक्षत युञ्जते १ ६२ २ सयुङ्ग्ध्वम् ३ २६ ४ **अयुक्षाताम्**=अयोजयताम् युङ्क्थ १ १५७ १ **अयुग्ध्वम्** योजयत ५ ५७ ३ **संप्रयुग्ध्वम्**=१ ८५ ५ सयोजयत ५ ५५.६. [युजिर् योगे (रुधा०) धातोर्लुङि प्रथमाबहुवचने, द्विवचने, मध्यमबहुवचने रूपाणि]

अयुञ्जन् युञ्जन्ति ६ ७ **अयुज्महि**=प्रयुञ्ज्महि ६ ५३ १ **अयुञ्जत**=युञ्जते १ १३० ५ **अयुज्रन्**= युञ्जन्ति ३ ४१ २ [युजिर् योगे (रुधा०) धातोर्लङि रूपाणि । अयुज्महि प्रयोगे श्नमो लुक् । अयुज्रन् प्रयोगे 'बहुल छन्दसी' ति रुट् श्नमो लुक् च]

अयुजि असयुक्तायाम् (धुरि=मार्गे) ५ ४६ १ [युजिर् योगे (रुधा०) धातोर्नञ्युपपदे क्विप् । सप्तम्येकवचने रूपम्]

अयुतम् अपरिमितसङ्ख्याकम् (पदार्थसमूहम्) ४ २६.७. दश सहस्राणि (धेनव =गाव) १७ २ [अयुत दक्षिणा इति वा नि० १० १२ अयुत नियुत प्रयुत तत्तदभ्यस्तम् नि० ३ १०]

अयुध्यः योद्धुमनर्ह (इन्द्र =राजा) ४ ३० ५ शत्रुभिर्योद्धुमयोग्य (इन्द्र =सेनापति) १७ ३६ [युध सम्प्रहारे (दिवा०) धातो क्यप् प्रत्यय छान्दस । नञ्समास]

अयुनक् युनक्ति ६ ४४ २४ नियुञ्जति १ १६३ २ (युजिर् योगे (रुधा०) धातोर्लङ्]

अयुयुत्सन् युद्धेच्छा कुर्यु, प्र०—अत्र लिङर्थे लङ् व्यत्ययेन परस्मैपदञ्च १ ३३ ६ [युध सप्रहारे (दिवा०) धातोरिच्छायामर्थे सन् । ततो लङ् । 'पूर्ववत्सन' इत्यात्मनेपदे प्राप्ते व्यत्ययेन परस्मैपदम्]

अयेभ्यः य अय्यन्ते प्राप्यन्ते पदार्थास्तेभ्य ३० ८ [अय =इण् गतौ (अदा०) धातो. 'एरच्' सूत्रेणाच्]

अयोगूढम् अयसा शस्त्रविशेषेण सह गन्तारम् [अयस् उपपदे गम्लृ गतौ धातो क्विप् । 'ऊङ् च गमादीनाम्' अ० ६ ४ ४० वार्त्तिकेन ऊङ्]

अयोजि युज्यते १ १२३ १ योज्यते ५ ७५ ६ [युजिर् योगे (रुधा०) धातो कर्मणि लुङ् । योज्यते=युजिर्+णिच्+लुङ्]

अयोदंष्ट्रान्- अयोदष्ट्रायोदसनानि येषु तान् (रथान्) १ ८८ ५ [अयस् हिरण्यनाम निघ० १ २ दश दशने धातो. 'दाम्नीशस०' अ० ३ २ १८२ सूत्रेण करणे ष्ट्रन्, प्रत्यये दष्ट्रा=दशनम् । एनयो समास]

अयोधयः सम्यग् योधय, प्र०—अत्र लोडर्थे लङ् १ ३३ ७ **अयोधीत**=योधयति ४ ३८ ८ [युध सम्प्रहारे (दिवा०) धातोर्णिजन्ताल् लङ् लुङ् वा]

अयोद्धेव न योद्धा अयोद्धा तद्वत् १ ३२ [युध सम्प्रहारे (दिवा०) धातोस्तृचि योद्धा। नञ्समास । तद्वत्]

अयोयवीत् पुन पुनर्मिश्रयत्यमिश्रयति वा १ ५२ १० [यु मिश्रणेऽमिश्रणे च (अदा०) धातोर्यङ्लुकि लङि रूपम्]

अयोहनुः अयो लोहमिव दृढा हनुर्यस्य स (सविता= विद्वान् राजा) ६ ७१ ४

अयोः अनयो १ १८५ १ [अयोरिति सर्वनाम । अयो =अनयो नि० ३ २२]

अयोः वियोजय सयोजय वा ६ २५ ६ [यु मिश्रणेऽमिश्रणे च (अदा०) धातोर्लङ् । 'उतोवृद्धि ०' इति वृद्धिर्न छान्दसत्वात्]

अरक्षत् रक्षति १ ७४ १ **अरक्षन्**=रक्षेयु १ १४८ ५ रक्षन्ति ४ २७ १ [रक्ष पालने (भ्वा०) धातोर्लङ्]

अरक्षसः अकुटिलस्योत्तमस्य (सत्यवाचो जनस्य) १ १९०.३. **अरक्षसा**=अविद्यमानानि दुष्टानि रक्षासि यस्मिँस्तेन (पथा) १.१२९ ६ अदुष्टभावेन (मनसा= विज्ञानेन) २ १० ५ रक्षोवद् दुष्टतारहितेन (सज्जनेन) ११ २४ [रक्ष पालने (भ्वा०) धातोरसुन् प्रत्यय । रक्षन्तियस्मादिति रक्ष । नञ्समास]

अरक्षः अरक्षणीयम् (दुष्कर्म) ५ ८७ ६ [रक्ष पालने धातोरसुन् । नञ्समास]

अरङ्कृतः सर्वान् पदार्थानलङ्कर्त्तु शील येषान्ते (वृक्तबर्हिष ऋत्विज), प्र० —अत्र 'अन्येभ्योऽपि दृश्यते' अ० ३ २.१७८. अनेन ताच्छील्यार्थे क्विप् १ १४ ५ (अलमुपपदे डुकृञ् करणे धातोस्ताच्छील्यार्थे क्विप् । कपिलकादित्वाल्लत्वविकल्प.]

अरङ्कृताः अलङ्कृता भूषिता (सोमा =पदार्था) प्र०—'सज्ञाछन्दसोर्वा कपिलकादीनामिति वक्तव्यम्' अ०

राति ददाति स ररिवान्, न ररिवान् अररिवान् तस्य, अन्व०—परस्वादायिन (मर्त्यस्य=दुष्टस्य मनुष्यस्य) ३ ३० [रा दाने (अदा०) धातो क्वसु । नञ्समास]

अररुषे अल रोषकाय (दुष्टजनाय) ७.५६ १९ [अलम्+रुष हिंसार्थे+क्विप्]

अररो दुष्टमनुष्य । १.२६ [ऋ गतिप्रापणयो (भ्वा०) धातो 'अर्त्तेररु' ३ ४७९ सूत्रेण अरु प्रत्यय सम्बुद्धी रूपम्]

अरसम् अविद्यमानरसम् (विषम्) १.१९१ १६. [नञ्रसपदयो समास]

अरस्त रमताम् २ ११ ७ [रमु क्रीडायाम् (भ्वा०) धातो र्लुङ्]

अरंहः गमयति ५ ३२ २ [रहति गतिकर्मा निघ० २ १४ ततोलङ्]

अरहितः अत्यन्तहितकारी प० वि० । [अलम्+डुधाञ्+वर्त्तमाने क्त 'दधातेर्हि' रिति हिरादेश]

अरातयः परसुखाऽसोढार (दुर्जना) १ २९ कपटेन विद्यादानग्रहणरहिता (अयोग्या जना)१ ७ अदानस्वभावा कृपणा (जना) ११९ अदातार (पुरुषा) ६ ४८ १६ अदानरीतय (पुरुषा स्त्रियश्च) २ २३ ६ अविद्यमाना रातिर्दानं येषु ते शत्रव १ ७ दानशीलतारहिता शत्रव ११४ परपदार्थग्रहीतार शत्रव ११६ विद्याविघ्नकारिण (दुर्जना) १ २९ अन्येभ्यो दु खप्रदा (कुपुरुषा) १ २९ सत्यविरोधिनोऽरय १ २९. अन्यायेनाऽऽदातार शत्रव ५ २ ६ शत्रु लोग स० वि० १०४, २ ३५ ६ **अरातये**=रातिर्दानं न विद्यते यस्मिँस्तस्मै शत्रवे वहुदानकरणार्थं दारिद्र्यविनाशाय वा अन्व०—अदानाय १.११ **अरातिम्**=अदानम् २७ ६ शत्रुम् ४ ४ ४ **अरातिः**=शत्रु २ ७ २ **अरातीः**=न विद्यते रातिर्दानं येषु तान् कृपणान् विरोधिन (दुर्जनान्) ६ १६ २७ अदान-क्रिया ६ ४४ ९ शत्रून् ५ २६ सुखदानरहिता शत्रुसेना. ११६६ २१ अदानशीलान् शत्रून् ६ ३७ **अरात्याः**=शत्रुभूताया वाण्या तादृशस्य कर्मणो वा ऋ० भू० १६०, अथर्व० १३ ४ ४७ [रा दाने (अदा०) धातो क्तिन् । नञ्बहुव्रीहि । अरातय अदानकर्मण वा अदानप्रज्ञा वा नि० ३ ११ अमित्रान् अदानान् इति वा नि० ११ २.]

अरातीयतः विद्यादिदान कर्त्तुमनिच्छत (अविद्वज्जनस्य) १२ ५ शत्रोरिवाचरणशीलस्य (मनुष्यस्य) १ ९९ १. दुष्ट शत्रु जो हम धर्मात्माओं का विरोधी, उसके आर्याभि० १ ३३, ऋ० १ ७ ७ १ [अगतिपूर्वपदे द्र० । तत इच्छायामर्थे क्यच् तत शतृ]

अरातीयात् शत्रुत्वमाचरेत् ११ ८० [अराति+क्यच्+लिङ्]

अरातीवा योऽरातीन् शत्रून् वनति सम्भजति (मर्त्त =मनुष्य) २ २३ ७ योऽगतिरिवाचरति (दुर्जन) १.१४० ४ [अराति+वन सभक्तौ (भ्वा०) धातो 'अन्येभ्योऽपि दृश्यन्ते' इति वनिप् । 'विड्वनोरनुनासिकस्यात्' इति नकारस्याकार । पूर्वपदस्य च दीर्घत्वम्]

अराधसम् धनरहितम् (मर्त्तम्=मनुष्यम्) १ ८४ ८ **अराधसः**=अधनान् (जनात्) ५ ६१ ६ [राध ससिद्धौ (स्वा०) धातोरसुन् । राध धननाम निघ० २ १० नञ्समास अराधसम् अनाराधयन्तम् नि० ५ १७]

अराधि ससाध्यते १.७० ४ ससाधितम् २ २८ (राध ससिद्धौ (स्वा०) धातो कर्मणि लुङ्]

अराध्यै अविद्यमानससिद्धये ३० ९ (नञ्+राध ससिद्धौ (स्वा०)+क्तिन्]

अराध्वम् स्पर्धयन्ति ७ ५९ ४ दत्त १ ११६ १२ [रा दाने (अदा०) धातोर्लुङ् । व्यत्ययेनात्मनेपदम्]

अरान् चक्रस्याऽवयवान् ११४१ ९ **अराः**=रथचक्राऽवयवा ऋ० भू० ६, ३४५ [ऋ गतिप्रापणयो (भ्वा०) धातोरच् प्रत्यय]

अराम अलग करे ७ ५६ २१ [ऋ गतिप्रापणयो. (भ्वा०) धातोर्लोट् । छन्दसि सर्वविधीना विकल्पाद् ऋच्छादेशो न । अत्र प्रापणार्थे प्रयोग]

अरावा अदाता अवचनो वा (लोभिनो जनस्य) ७ ५६ १५ [नञ्+रा दाने+वनिप् । अथवा नञ्+रु शब्दे+घञ् । अरावाणो वा एते येऽमृतमभिशसन्ति ता० ६ १० १७]

अराव्णः कृपण मनुष्य से आर्याभि० १ १२, ऋ० १.२ १० १५ **अराव्णे**=अदात्रे (दुष्टमनुष्याय) ७ ३१ ५ [रा दाने (अदा०) धातोर्वनिप् । नञ्समास]

अरासत दद्यु ५ ७९ ६ रासन्ते ११६६ ३ रासन्ताम् ३ ५३ १३ [रासति दानकर्मा निघ० ३ २० ततो लङ्]

अरिगूर्त्तः अरिषु शत्रुषु गूर्त्त उद्यमी (विद्वज्जन) ११८६ ३ [अरि+गुरी उद्यमने (तु०) धातो क्त]

अरिच्यत रिच्यतेऽतिरिक्तोऽस्ति २ २२ २ पृथग्भूतोऽस्ति ऋ० भू० १२३, वे० को०, ३१ ५ [रिचिर् विरेचने

पूर्वकरयप्राति० 'छन्दसीवनिपौ' अ० ५.२.१०९ वार्तिकेन मत्वर्थे ई प्रत्यय]

अरदत् विलिखति ७ ४७ ४ विलिखेत् ३ ३३ ६ **अरदतम्**=सन्मार्गादिक विज्ञापयतम् १ ११६ ७ **अरदः**=विलिखति आकर्षति ६.३० ३ [रद विलेखने (भ्वा०) विलेखन भेदनम्। ततो लङ्। विज्ञापनेऽपि धातुरय धातूनामनेकार्थत्वात्]

अरध्रम् असमृद्धव्यवहारम् ६ ६२ ३ **अरध्रस्य**= अहिंसकस्य (राज्ञ) ६ १८ ४ [नञ्युपपदे रध हिंसा-सराध्यो (दिवा०) धातोर्घञ्। अन्यत्र कर्त्तरि अच्। रेफागमश्छान्दस]

अरन् आचरन्तु १ १२५ ७ समन्तात्प्राप्नुयु ५.३१ १३ [ऋगतिप्रापणयो (भ्वा०) धातोर्लङ्। आडभावश्च]

अरन्त रमन्ताम् ५ ३१ ८ रमते ४ १६ ६. (रमु क्रीडायाम् (भ्वा०) धातोर्लङ्। 'वहुल छन्दसी' ति शपो लुक्]

अरन्धनाय: अरमल धन यस्य स इवाऽऽचरसीत्य-रन्धनाय प्र०—अत्र लडर्थे लिड् १ ५३ १० [अल धनयो समासे तत आचारेऽर्थे 'कर्त्तु क्यड् सलोपश्च' सूत्रेण क्यड्। ततो लिड। व्यत्ययेन परस्मैपदम्]

अरन्धयत् हिंस्यात् ७ १८ ९ **अरन्धयः**=हिंसि २ ११ १९ हिंसय ६ २३ २ हिन्धि १ ५१ ६ हिंसये ७.१९ २ (रध हिंसासराध्यो (दिवा०) धातोर्णिचि लङ्। 'रधिजभोरचि' अ० ७.१ ६१. सूत्रेण नुमागम]

अरपत् रपनि गुञ्जति १ ११९ ६ व्यक्तमुपदिशति ५ ६१ ६ [रप व्यक्ताया वाचि (भ्वा०) धातोर्लङ्]

अरपः निष्पाप (पुत्र) ८ ५ अविद्यमान पाप यस्मिन् तत् सत्याचरणम्, प्र०—रपो रिप्रमिति पापनामनी भवत निरु० ४ २१, १६ ५५ निष्पापताम् ऋ० भू० २७६ वे० को० [रप व्यक्ताया वाचि (भ्वा०) धातोरसुन् प्रत्यय। तत समास। रप इति पाप नाम नि० ४ २१]

अरपाः अविद्यमान रप पाप यस्य स (वैद्य) २ ३३ ६ [रपम् पापनाम नि० ४ २१ नञ्रपसोर्वहुव्रीहि]

अरम् पर्याप्तम् १ १०८ २ अलम् प्र०—अत्र कपिल-कादित्वाल्लत्वम् ११ ५२, अरमत्र वर्णव्यत्ययेन लस्य स्थाने र ६ ४१ ५ पर्याप्त वा १ ६३ ३. [अलमित्यव्ययम् भूपणपर्याप्तिवारणेषु]

अरमणसम् यस्मिन्न रमन्ते शत्रवस्तम् (वज्र = शस्त्रविशेषम्) ६.१७.१०. [रमु क्रीडायाम् (भ्वा०) धातोर-धिकरणे ल्युट्। नञ्समास। असुगागम]

अरमतिम् विषयेष्वरममाणाम् (मही=वाचम्) ५ ४३ ६ अरमणम् ५ ५४ ६ न रमती रमण विद्यते यस्य स (सविता=सूर्यलोक) २ ३८ ४ न विद्यते पूर्वा रमती रमणे गृहस्थक्रिया यस्या सा (भार्या) ७ १ ६ [रमु क्रीडायाम् (भ्वा०) धातोर्वाहुलकाद् अति प्रत्यय। नञ्समास]

अरमतिम् अल प्रज्ञाम् ७ ३६ ८ पूर्णा प्रज्ञाम् ७ ४२ ३ **अरमतिः**=अरम्=अल मति=प्रज्ञा यस्य स (राजा) ७ ३४ २१ [अरम्=अलम्। कपिलकादित्वाल् लत्वविकल्प। मति=मन ज्ञाने धातो क्तिन् प्रत्यय। एनयो समास]

अरमन्त रमन्ते ३ ५६ ४ **अरमयः**=रमय ५ ३१ ८ रमयसि २ १३ १२ रमले ४ १६ ६ [रमु क्रीडायाम् (भ्वा०) धातोर्लङ्। अन्तर्भावितण्यर्थ]

अरम्णात् वधति, प्र०—रम्णातीति वधकर्मा निघ० २ १९, २ १२ २ हन्ति २ १५ ५ [रम्णाति वधकर्मा निघ० २ १९ ततो लङ्। अरम्णात् अरमयत् नि० १० ३२]

अरम्णाः रमय ५ ३२ १ [रमु क्रीडायाम् (भ्वा०) धातोर्लङ्। व्यत्ययेन श्ना। अरम्णा रम्णाति मयमनकर्मा विसर्जनकर्मा वा नि० १० ६]

अररिन्दानि उदकानि, प्र०—अररिन्दानि इत्युदकनाम निघ० १ १२, १ १३९ १० [अररिन्दानि उदकनाम निघ० १ १२]

अररिवान् प्राप्नुवन् (दुष्टजन.) १ १४० ४ [ऋ गतिप्रापणयो (भ्वा०) धातो क्वसु]

अररुम् प्रापकम् (मर्त्यम्) १ १२९ ३. असुर—राक्षसस्वभाव शत्रुम्, भा०—विघ्नकारिण दुष्टप्राणिनम् प्र०—अर्त्तेररु उ० ४७९ अनेन ऋ धातोररु प्रत्यय १ २९ ऋगतिप्रापणयो (भ्वा०) धातो 'अर्त्तेररु' उ० ४७९ सूत्रेण अरु प्रत्यय। अररुर्ह वै नामासुररक्ष-सामास त देवा अस्या (पृथिव्या) अपाघ्नत श० १ २ ४ १७ भ्रातृव्यो वा अररु तै० ३ २ ९ ४]

अररुषः भृश हिंसकात् (दुर्जनात्) ७ १ १३ अहिंस-कस्य (धार्मिकस्याऽऽप्तजनस्य) ३ १८ २ [अलमुपपदे रुप-हिंसार्थे (भ्वा०) धातो क्विप्। लस्य रेफ। मकारलोपश्च छान्दस.]

अररुषः अदातु (मर्त्यस्य=मनुष्यस्य) प्र—अत्र 'रा दाने' इत्यस्मात् क्वसुस्तत पष्ठ्येकवचनम् १ १८.३

ऽतप्यन्त एतदरिष्टमपश्यꣳस्ततोऽय देवानामघ्नत् (अघ्नन्) सꣳ सोऽभवद्यमसुराणान्न स समभवत् ता० १२ ५ २३]

अरिष्टवीराः अरिष्टा अहिंसिता वीरा यासु ता (विश=प्रजा) १ ११४ ३ [अरिष्टो व्या०। वीर विक्रान्तौ (चु०) धातोरच्। वीरो वीरयत्यमित्रान् वेतेर्वा स्याद् गतिकर्मणो वीरयतेर्वा। नि० १ ७ ततस्तयो० समास]

अरिष्टा अहिंसिता, भा०—अवैरबुद्धि (देवी= विद्यायुक्ता पत्नी) ११ ६९ **अरिष्टाः**=अहिंसिता (प्रजाजना) ७ ४३ ५ अहिंसनीया (माया=प्रज्ञा) २ २७ १६ अहिंसनीया न किञ्चिद्धिंसितवन्त (पूर्णविद्या अध्यापका) २ २७ २ न केनापि हिंसितु योग्या (प्रजा-जना) २ २७ ७ **अरिष्टेभिः**=हिंसितुमनर्हे (ऐश्वर्ये) १ ११२ २५ अहिंसितै (सौभगेभि=श्रेष्ठाना धनाना भावै) ३४ ३० [पूर्व व्याख्यात]

अरिष्टान् अहिंसितान् (प्रजाजनान्) ७ ४० ४ [पूर्व व्याख्यात]

अरिष्टासु बल प्राण का नाश न करने वाले (अपत्य) स० वि० १४०, अथर्व० १४ २ ७२ [अरिष्टो व्या०। असु प्रज्ञा नाम निघ० ३ ९ अपि वासुरिति प्राण नामास्त शरीरे भवति नि० ३ ८ तयो समास]

अरिष्टिम् अहिंसाम् २ २१ ६ **अरिष्ट्यै**=सुख-हेतवे, दु खनिवारणेन सुखाय, सुखाय वा २ ३ कुशलप्राप्तये ३०.१३ [रिष हिंसार्थे धातो. क्तिन्। नञ्समासः]

अरिष्यतः अन्यैरहिंसिष्यन्त (सर्वसज्जना) ४ ५७ ३ अहिंस्यमाना (विद्वज्जना) २ ८ ६ [नञ्+रिष हिंसार्थे धातो कर्मणि शतृ। व्यत्ययेन परस्मैपदम्]

अरिः ऋच्छति गृह्णात्यन्यायेन सुखानि च य (दुर्जन) प्र०—'अच इ' उ० ४ १३९ इत्यनेन ऋधातोरौणादिक इ प्रत्यय १ ६ १० प्रापक (विद्वज्जन) १ १५० १ शत्रु ३३ ८२ [ऋ गतिप्रापणयो (भ्वा०) धातोरौणादिक इ प्रत्यय। अरि=अमित्र ऋच्छते। ईश्वरोऽप्यरिरेतस्मा-देव नि० ५ ७]

अरीहणम् शत्रूणा हन्तारम् (राजानम्) ४ १८ १०. [अरि उपपदे हन्हिंसागत्यो (अदा०) धातो क्विप्। पूर्वस्य दीर्घ]

अरीरमत् रमयति २.३८ ३ रमयेत् ६.७१ ५. [रमु क्रीडायाम् धातोर्णिचि लुङ्]

अरीः सुखप्रापिका प्रजा, भा०—स्वाऽपत्यानि ६ ३६ [ऋ गतिप्रापणयो (भ्वा०) धातो इ प्रत्यये ङीपि च रूपम्। प्रजा वा अरी श० ३ ६ ४ २१]

अरुग्णम् रोगरहितम् (उत्तमजनम्) ६ ३९ २ [रुजो भङ्गे (तुदा०) धातो क्त। 'ओदितश्चे' ति नत्वम्। नञ्समास.]

अरुचः प्रकाशरहिताँश्चन्द्रादीन् ६ ३९ ४ [रुच दीप्तौ अभिप्रीतौ च (भ्वा०) धातो क प्रत्यये नञ्समास]

अरुजत् भनक्ति ६ ६१ २ **अरुजः**=रुज ६ ३० ५ रुजति ३ ३२.१६ आमर्दय १ ५६ ६ [रुजो भङ्गे (तुदा०) धातोर्लङ्]

अरुजः रोगयुक्ता (पुर=नगरी) ४ ३२ १०

अरुणप्स्वः अरुणा रक्तगुणविशिष्टाश्च प्सवो भक्ष-णानि येषान्ते वृद्धा जना १ ४६ १ [प्सु=प्सा भक्षणे धातोर् बहुलवचनादुप्रत्यय। अरुणप्सुपदयो समास]

अरुणप्सुम् अरुणरूपाम् (उपस=प्रातर्वेलाम्), प्र०—प्सु इति रूपनाम निघ० ३ ७, ५ ८० १ [अरुण प्सु पदयो समास। प्सु रूपनाम निघ० ३ ७]

अरुणबभ्रुः अरुणेन युक्तो वभ्रुर्वर्णो यस्य स (पशुविशेष) २४ २ [अरुणबभ्रुपदयो समास। वभ्रु= डुभृञ्धातो 'कुर्भ्रश्च' उ० १ २२ सूत्रेण कु प्रत्ययो द्वित्व च]

अरुणम् प्रकाशस्वरूपम् (परमेश्वरम्) ऋ भू १६२ रक्तम् (वस्तुमात्रम्) १ ७३ ७ **अरुणः**=आरक्त (पृश्नि=सूर्य) १७ ६० रक्तवर्ण (पशु) २४ ३ अग्नि-रिव तीव्रतेजा, (भा०—अग्निवद् दुष्टदाहक (राजा) १६ ६ य ऋच्छति सर्वा विद्या स आलोचको वा (विद्वज्जन) प्र०—अत्र ऋधातोरौणादिक उनच् प्रत्यय १ १०५ १८ **अरुणा**=पदार्थप्रापणसमर्थानि (पवनानि) १ १३४ ३ **अरुणान्**=आरक्तान् (पदार्थान्) २४ ११ **अरुणाम्**=रक्ताना (गवा=किरणानाम्) १ १२४ ११ **अरुणाम्**=प्राप्तव्याम् (धा=कामना) ५ ६३ ६ **अरुणाय**=प्रापकाय (जनाय) १६ ३९ **अरुणैः**=अग्न्यादिभि २ १ ६ **अरुणेभिः**=आरक्तवर्णै-रग्निप्रयोगजै (अश्वै) १ ८८ २. ईषद्रक्तै (अश्वै= किरणै) १ ११३ १४ [ऋ गतिप्रापणयो (भ्वा०) धातो-रौणादिक उनच् प्रत्यय। अरुण आरोचन। नि० ५.२०]

अरुणयुग्भिः येऽरुणान् किरणान् योजयन्ति तै.

(रुधा०) धातो कर्मणि लङ्]

अरिणक् विरिणक्ति २.१३ ५. [रिचिर् विरेचने (रुधा०) धातोर्लङ्]

अरिणन् प्राप्नुवन्तु प्र०—रिणातीति गतिकर्मसु पठितम् निघ० २ १४, ६ १८ **अरिणात्**=रिणाति प्राप्नोति २ १५ ६. प्राप्नुयात् ३.३ ११ गमयति २ १२ ३ प्रेरयति ४.२८ १ प्राप्नोति २ १५ ६ **अरिणाः**=प्राप्नुया ४ ४२ ७ प्राप्नोपि १ ५६ ६ प्रदद्या ४ ३० ६ हिनस्ति ४ १६ ५ **अरिणीत**=प्राप्नुत ४ ३६ ८. प्राप्नुवन्ति ३ ६० २ **आरिणीतम्**=गच्छतम् १ ११७ ११ [रिणातीति गतिकर्मा निघ० २ १४ ततो लङ्]

अरिरिणिभिः सुखप्रापिकाभि (ऊतिभि =रक्षणादिभि १ १२६ ५ [ऋ गतिप्रापणयो (भ्वा०) धातो 'अर्त्तिसृ०' इत्युणादिसूत्रेण अनि प्रत्यय इकारागमश्छान्दस]

अरितेव यथाऽरितानि (अरित्राणि) २ ४२ १ [ऋ गतिप्रापणयो (भ्वा०) धातोस्तृच् । अरितेव=ईरयितेव नि० ६ ३]

अरित्रम् यानस्तम्भनार्थं जलगाधग्रहणार्थं वा लोहमय साधनम् १ ४६ ८ **अरित्रः**=स्तम्भनार्थसाधनयुक्त ऋ० भू० १६६ [ऋ गतो धातो 'अर्त्तिलूधूसू०' अ० ३ २.१८४ सूत्रेण इत्र प्रत्यय]

अरित्राः येऽरिभ्यस्त्रायन्ते ते (अग्न्यादय पदार्था) ३ ३ १ [अरि उपपदे त्रैङ् पालने (भ्वा०) धातो क. प्रत्यय]

अरिधायसः अरीन् शत्रून् दधति यैस्तान् (वीरजनान्) १ १२६ ५ [अरि उपपदे+डुधाञ् धारणपोषणयो (जु०) धातो 'श्याद्व्यध०' अ० ३ १ १४१ सूत्रेण ण प्रत्यय । जसि असुगागम]

अरिप्रम् निष्पाप निर्दोषम् (आहारम्) ७ ४७ १. [रीङ् श्रवणे (दिवा०) धातो 'लीरीङोर्ह्रस्व ०' उ० ५ ५५ सूत्रेण र प्रत्यय पुगागमो ह्रस्वश्च । नञ्समास]

अरिरेचीत् रिक्तङ्कुर्यात् ४ ३४ ६ रिणक्ति ६ २० ४ [रिचिर् विरेचने (रुधा०) धातोर्णिचि लुङ्]

अरिषण्यन् द्रविणमिच्छु (द्रविणोदा =विद्वज्जन) २ ३७ ३ आत्मनो रिष हिंसनमिच्छन् (इन्द्र) प्र०—अत्र 'दुरस्युर्द्रविणस्यु०' अ० ७ ४ ३६ अनेनेत्वनिषेध १ ६३ ५ अहिंसयन् (राजा) ६ २४ ६ अहिंसन् (सेनेश) ६ २५ २ **अरिषण्या**=अहिंसकौ (वायुविद्युतौ) २ ३६ ४ [रिष हिसार्थे (भ्वा०) धातो. क्तप्रत्यये रिष्ट । तत इच्छायामर्थे क्यच्, तत शतृ । नञ्समास । 'दुरस्युर्द्रविणस्यु०' अ० ७ ४.३६ सूत्रेण रिष्टस्य रिषण्भावो निपात्यते । अरिपण्यन्=अरिप्यन् नि० ८.३]

अरिष्टगातु. अरिष्टा अहिंसिता गातुर्वाग्यस्य स (राजा) ५.४४ ३ [रिष हिसार्थे धातो. क्तप्रत्यये नञ्समासे चारिष्ट । गातु पदनाम निघ० ४ १ गाति गतिकर्मा निघ० २ १४ धातो 'कमिमनि०' उ० १ ७३ सूत्रेण तु प्रत्यय । तयो समास]

अरिष्टग्रामाः अहिंसका ग्रामा येभ्यस्ते (मरुत = विद्वज्जना) १ १६६ ६ [अरिष्टो व्याख्यात । ग्रामशब्द. समूहार्थे—ग्रस धातो 'ग्रसेरा च' उ० १ १४३ सूत्रेण मन् प्रत्यय । तत. समास]

अरिष्टतातये रिष्टाना हिंसकाना रोगाणामभावाय १२ ८१ [रिष्ट =रिप हिसार्थे धातो क्त । नञ्समासे ऽरिष्ट । तत करोत्यर्थे भावे च 'शिवशमरिष्टस्य करे' 'भावे च' सूत्राभ्या तातिल् प्रत्यय]

अरिष्टनेमिम् दु खनिवारकम् (रथम्) १ १८० १० **अरिष्टनेमिः**=अरिष्टाना दु खाना नेमि वज्रच्छेत्ता (परमेश्वर), प्र०—नेमिरिति वज्रनाम निघ० २ २०, १ ८९ ६ योऽरिष्टानि सुखानि प्रापयति स (इन्द्र = ईश्वर), प्र०—अत्राऽरिष्टोपपदाण्णीञ् प्रापणे धातोरौणादिको मि प्रत्यय २५ १६ अरिष्टानि दु खानि दूरे नयति स कार्त्तिक १५ १८ **अरिष्टनेमे**=योऽरिष्टानि अहिंसितानि कर्माणि नयति तत्सम्बुद्धो (इन्द्र=ऐश्वर्यवत्राजन्) ३ ५३ १७ [अरिष्ट =नञ्+रिप हिंसार्थे+क्त । नेमि =णीञ् प्रापणे धातोरौणादिको मि. प्रत्यय 'नियो मि ' उ० ४ ४३ सूत्रेण । तस्य (यज्ञस्य) तार्क्ष्यश्चारिष्टनेमिश्च सेनानीग्रामण्याविति शारदौ तावृतू श० ८.६ १ १६ एष (तार्क्ष्य =वायु) अरिष्टनेमि पृतनाजिदाशु. ४ २०]

अरिष्टम् रिप्यते हिस्यते य स रिष्टो न रिष्टोऽरिष्टस्तम् (यज्ञम्=अनुष्ठातुमर्हम्) २ १३ **अरिष्टः**=अहिसनीय (रथ) ५ १८ ३ अहिसित (राजा) १० २१ सर्वविघ्नरहित (धार्मिकजन.) १ ४१ २ **अरिष्टैः**=अहिंसितैहिंसकरहितै (पथिभि =मार्गै) ६ ६१ १ [नञ्+रिप हिसार्थे+क्त । अरिष्ट (साम) अनेन (अरिष्टेन साम्ना) नारिपामेति तदरिष्टस्यारिष्टत्वम् । ता० २२ ५ २३ देवाश्च असुराश्चास्पर्धन्त य देवानामघ्नन्न स समभवद् यमसुराणा ७ स ७ सोऽभवत्त देवास्तपो

आरूढोऽस्मि ६ १०. रोहेयम् १७ ६७ **अरुहाम**=प्रादुर्भवेम, प्र०—अत्र विकरणव्यत्यय ८ ५२ [रुहबीजजन्मनि प्रादुर्भावे च (भ्वा०) धातोर्लङ् । विकरणव्यत्ययेन शप स्थाने श]

अरूक्षितम् रूक्षता-रहितम् (अन्नम्) ४ ११ १. [रूक्ष पारुष्ये (चु०) धातो क्त । नञ्समास]

अरूरुचत सम्यक् प्रकाशते ३७ १५ [रुच दीप्तावभिप्रीतौ च धातोर्णिचि लुङ्]

अरे नीचसम्बोधने २३ ५५ सम्बोधने २३ ५६ ['अरे' इति निपातश्चादिगणे पठित]

अरेजन्त कम्पते, प्र०—रेजृ कम्पने अस्माद् धातोर्लङर्थे लङ् १ ३८ १० **अरेजेताम्**=चलत प्र०—भ्यसते रेजत् इति भयवेपनयो नि० ३ २१, १ ३१ ३ कम्पेताम् १ १५१ १ कम्पेते २ ११ ६ [रेजति गतिकर्मा निघ० २ १४ रेजते उत्तराणि पदानि० निघ० ३ २६ भ्यसते रेजते इति भयवेपनयो नि० ३ २१]

अरेणव: दुष्टानप्राप्ता (वेनव =किरणा) १ १५१ ५ रेणुरहिता (मरुत =वायव) ६ ६२ २ अविद्यमाना रेणवो येषु ते, भा०—निर्मला (पन्था = मार्गा) ३४ २७ अविद्यमाना रेणवो धूल्यश इव विघ्ना येषु ते (पन्था) प्र०—'अजिवृरी०' उ० ३ ३७ इति रीधातोर्णु प्रत्यय १ ३५ ११ [री गतिरेषणयो (क्र्या०) धातोर्णु प्रत्यय । नञ्समास]

अरेणु अहिंसनीयम् (वर्म) १ ५६ ३ [पूर्वपदे द्र०]
अरेणुभि: अविद्यमाना रेणवो वालुका येषु तै (रजोभि =ऐश्वर्यप्रदैर्मार्गै) ६ ६२ ६ अविद्यमानरज स्पर्शै (पथिभि) १ १६३ ६ [अरेणवो द्र०]

अरेपसम् अनपराधिनीम् (द्याम्=कामनाम्) ५ ६३ ६ **अरेपस:**=अनपराधिन (परमेश्वरभक्ता) ५ ६१ १४ अव्यक्तशब्दा निष्पापा (सत्वान) १ ६४ २ दोषलेपरहिता (नर) ५ ५३ ३ **अरेपसा**=अनपराधिनौ (अध्यापकोपदेशकौ) ५ ७३ ४ न विद्यते रेप पाप ययोस्तौ (अश्विनौ=अध्यापकोपदेशकौ) १ १८१ ४ अकम्पितेन (तन्वा=शरीरेण) १ १२४ ६ **अरेपसौ**=अविद्यमान रेपो व्यक्त प्राकृत वचन ययोरध्येत्रध्यापकयोस्तौ ५ ३ अनपराधिनौ (विवाहितौ स्त्रीपुरुषौ) १२ ६० दयालू (राजामात्यौ) ५ ५१ ६ **अरेपा:**=निष्पाप (सूर =सूर्य) ६ ३.३ पापाचरणरहिता (प्रजाजना) ४ १० ६ [अरेपसा=पापेन नि० १२ ३]

अरैक् अतिरिणक्ति १ १२४ ८ न्यतिरिणक्ति १ ११३ १६. [रिचिर् विरेचने) (रुधा०) धातोर्लुङ् सिचो लुक्]

अरोचत प्रकाशते ५ १४.४ रोचते प्रकाशते ३३.६२ **अरोचथा:**=रोचस्व ३ २६ १० प्रदीप्येथा, भा०—कृतकृत्यो भव १५ ५६ दीपयति, प्र०—अत्र व्यत्ययो लडर्थे लुङ् ३ १४ **अरोचय:**=रोचय ३ ४४ २ **अरोचयत्**=प्रकाशयेत् १ १४३ २ रोचयेत् ३ ३४ ४ **अरोचि**=प्रकाशते ७ १० २ **अरोचिष्ट**=प्रकाशते ३७ १५ [रुच दीप्तावभिप्रीतौ च (भ्वा०) धातोर्लङ् लुङ् च । रोचते ज्वलतिकर्मा निघ० १ १६]

अरोरवीत् भृश शब्दायते ५.३० ११ भृश शब्दायति २ ११ १० [रु शब्दे (अदा०) धातोर्यङ्लुगन्ताल् लङ्]

अरोहत् रोहति ३ ७ ३ **अरोहय:**=रोहयसि १ ५१.४ [रुह बीजजन्मनि प्रादुर्भावे च (भ्वा०) धातोर्लङ्]

अर्कम् ऋग्वेदम् १ १६४ २४ सूर्यादिलोकम् १ १६ ४ अर्च्यते येन तम् (वीरम्) १ ६१ ५ दिव्यगुणसम्पन्नमर्चनीय वीरम् १ ६१.८ सत्कर्त्तव्य क्रियामय व्यवहारम् ६ ४६ ८ पूजनीय (राजानम्) ५ ३१ ५ सत्करणीयम् (सूर्यम्) ५ ३० ६ अर्च्यते पूज्यते सर्वैर्जनैस्तम् (जगत्स्रष्टारमीश्वरम्) १ १० १ सत्कर्त्तव्यमन्नम् १ १८६ ४ सुसंस्कृतमन्नम् प्र०—अर्क इत्यन्ननाम निघ० २ ७, ३ २६ ८ सत्कर्त्तव्यमन्न विचार वा ७ ३६ ७ अन्न सत्कर्त्तव्य जन वा ७ ६ २ सत्कर्त्तव्य धनधान्यम् ७ ४० ७. अन्न वज्र वा, प्र०—अर्क इति वज्रनाम च निघ० २ २०, ६ ६६ ६ **अर्कस्य**=सूर्यस्य १ १३१.६ **अर्क:**=अर्चनीय (होता=दाता जन) ६.२१ ४ अग्नि १८ ५० पूजनीय-सामग्रीविशेष १८ २२ सर्वान् प्राणिनोऽर्चन्ति येन स (घर्म =यज्ञ) २६ ३६ वज्रो विद्युद्वा, प्र०—अर्क इति वज्रनाम निघ० २ २० ३ २६ ७ सत्कर्त्तव्य (इन्द्र = विद्वज्जन) ७ २४ ५ विद्यमान सूर्य १ ८३ ६ **अर्का:**=मन्त्रार्थविद (राजपुरुषा) ५ ५ ४ **अर्केण**=ऋचा समूहेन १ १६४ २४ **अर्कभि.**=अर्चनसाधकै सत्यभाषणादिभि , शिल्पविद्यासाधकै कर्मभिर्मन्त्रैश्च प्र०—अर्क इति पदनामसु पठितम् निघ० ४ २ अनेन प्राप्तिसाधनानि गृह्यन्ते 'अर्को मन्त्रो भवति यदनेनार्च्चन्ति निरु० ५ ४ अत्र 'बहुल छन्दसि' इति भिस ऐसादेशाभाव १ ७ १ **अर्केषु**=सुसंस्कृतेष्वन्नेषु १ १७६ ५ **अर्कै:**=सत्करणै ६ २१ १० अर्चनीयै (गुणै) ४ ५६ १ मन्त्रैर्विचारैर्वा १ ४७.१०

(अश्वैं =किरणैं) ६ ६५ २ अरुणोपपदे युजिर् योगे (रुधा०) धातो 'सत्सूद्विष०' सूत्रेण क्विप्]

अरुणाऽश्वाः रक्तवर्णा अश्वा ५ ५७ ४ [अरुणो व्याख्यात । अश्व =अशूङ् व्याप्तौ (स्वा०) धातो 'अशूप्रुषिलटि०' उ० १ १५१ सूत्रेण क्वन् । तत समास]

अरुणासः रक्ताऽरुणादिगुणविशिष्टा (गाव = किरणा) ६ ६४ ३ [ऋगतिप्रापणयो (भ्वा०) धातो-रौणादिक उनच् । प्रथमवहुवचनम्]

अरुणीनाम् अरुणवर्णाना स्त्रीणाम्, भा०—स्वपत्नीनाम् १९ ६३ **अरुणीभिः**=रक्तप्रभाभि १२ ७४ **अरुणीः**=ब्रह्मचारिणी (कुमार्य्य) १.११२ १९ रक्तगुणविशिष्टा (व्रा =वाण्य) ४ १ १६ किश्वदारक्ता-ऽभा (उपस =प्रातर्वेला) ४ १४ ३ प्राप्ता प्रजा ४ २ १६ सुशीलतया प्रकाशमया स्त्रिय १९ ६६ उपमोऽरुण्यो दीप्तय इव राजनीती १ १२१ ३ **अरुण्यः**= उप काला १ १४० १३ [अरुण =ऋ गतिप्रापणयोर्वातोर् उनच् । 'अन्यतो ङीप्' इति वर्णवाचिनोऽरुणात् स्त्रिया ङीप् । अरुण्यो गाव उपसाम् इति आदिष्टोपयोजनम् निघ० १ १५]

अरुषम् अश्वम्, प्र०—अरुष इति अश्वनाम निघ० १ १४, ३ १४ अश्वादिकम् १ ११४ ५ अहिंसक करुणा-मयम् (ईश्वरम्) ऋ० भू० १६३ मर्मविद्याया सीदन्तम् (विद्वासम्) ५ ४३ १२ अरुषु मर्मसु सीदन्तम् (व्रध्न= परमात्मानम्) २३ ५ सर्वेषु मर्मसु सीन्दन्तमहिंसक परमेश्वर प्राणवायु तथा वाह्ये देशे रूपप्रकाशक रक्तगुण-विशिष्टमादित्य वा प्र०—अरुषमिति रूपनामसु पठितम् ३ ७, १ ६ १. आरक्तरूपविशिष्टम् (धूमम्) ३८ १७ आरक्तगुणम् (राजानम्) ६ ४९ २ सुन्दररूपयुक्तम् १ ३६.९ **अरुषस्य**=आरक्तगुणस्याऽग्ने ६ ४९ ३ अहिंसकस्य (सज्जनस्य) ३ ३१ ३ **अरुषः**=अहिंसक सन् (अग्नि =विद्वज्जन) ३ १५ ३ य ऋच्छत्यश्वान स (वाजी=वेगवानश्व) १७ ९५ अरुणरूप (वाजी= अश्व) ४ ५८ ७ गर्भस्थ (विद्युत्) ७ ३ ३ मर्मण ५ ५६ ७ निर्मर्मव्यापी (अग्नि =अग्निरिव यजमान) ५ १ ५ मर्मसु स्थित (अग्नि) ३ २९ ६ योऽरुषु मर्मसु सीदति स (विद्वज्जन) ६ ३ ६ सुखप्रापक (समुद्र = सागर) ५ ४७ ३ आरक्तगुण (विद्युदग्नि.) ६ ४८ ६ **अरुषा**=आरक्तौ (सेनाराजनीती) ६ २७.७ अहिंसका-सत्वौ, प्र०—अत्र द्विवननस्य आकारादेश १ ६४ १० मर्मसु व्यापकौ (अश्विनौ) २ १० २ अश्वाविव जलाग्नी ७ १६ २ रूपवन्ता पदार्थसमूहेन १५ ३३ **अरुषेण**= सुरूपेण (भानुना=प्रकाशेन) २२ ८ **अरुषेभिः**= रक्तैर्गुणैं १ १४१ ८ **अरुषैः**=रक्तगुणविशिष्टैरश्वै. ३ ३१ २१ [अरुष अश्वनाम निघ० १ १४ अरुपम्= रूपनाम निघ० ३ ७ रुष हिंसार्थे धातो कर्त्तरि क । नञ्समास । ऋ गतिप्रापणयोर्धातोर्वा औणादिक उसि । अग्निर्वा अरुष तै० ३.९ ४ १]

अरुषाम् यो वहून् सनति विभजति ताम् (मही= वाचम्) ५ ४४ ६ [अरु उपपदे षण सभक्तौ धातोर्वनिप् । 'विड्वनोरनुना०' अ० ६ ४ ४१ सूत्रेणाकार । 'सनोतेरन' इति षत्वम्]

अरुषासः सुशिक्षितास्तुरङ्गा ४ ६ ६ अहिंसमाना किरणा १ १४६ २ ज्वाला ७ १६ ३ रक्तगुणविशिष्टा पदार्था ४ ४३ ६ [अरुष =नञ्+रुष हिंसार्थे+क अरुष अश्वनाम निघ० १ १४ प्रथमावहुवचनम्]

अरुषाः रक्तभास्वरगुणा ५ ७३ ५ रक्तादिगुण-विशिष्टा (देवा) ७ ४२ २ रक्तादिगुणविशिष्टा अग्न्यादय १ ११८ ५ [अरुषम् इति रूपनाम निघ० ३ ७]

अरुषस्तूपः योऽरुषानहिंसकान् उच्छ्राययति स (विद्वज्जन) ३४ १४ योऽरुष्षु मर्मसु सीदन्ति तेषु प्रशसित (पाज =वलम्) ३ २९ ३ [अरुष् उपपदे सद्लृ विशरण-गत्यवसादनेषु धातो क्विप् । तत ष्टुञ् स्तुतौ धातो 'स्तुवो दीर्घश्च' उ० ३ २५ सूत्रेण प प्रत्ययो दीर्घश्च]

अरुषी आरक्ता (उषा) ४ ५२ २ प्रकाशरूपोषा ३ ५५ ११ **अरुषीं**=आरक्तवर्णाम् (उषसम्) १.७१ १ **अरुषीः**=रक्तगुणविशिष्टा वडवा इव ज्वाला ५ ५६ ६ अरुष्य आरक्तगुणा (सूर्यकिरणा) १ ९२ २ अरुष्यो रक्तगुणविशिष्टा (किरणा) १ ९२ १ रक्तगुणा अरुष्यो गमनहेतव (अग्नय), प्र०—अत्र वाहुलकादूषन् प्रत्यय 'अन्यतो ङीप् अ० ४ १ ४० अनेन ङीप् प्रत्यय 'वाच्छन्दसि' अ० ६ १ १०६ अनेन जस. पूर्वसवर्णम् १ १४ १२ उषस इव सर्वसुखप्रापिका विद्या क्रिया वा १ ७२ १० [ऋ-गतिप्रापणयो' (भ्वा०) धातोरौणादिक उषन् प्रत्यय । 'अन्यतो ङीप्' इति स्त्रिया ङीप् । अरुषी उषो नाम निघ० १ ८ अरुषी आरोचनात् नि० १२ ७]

अरुहत् रोहति, प्र०—अत्र लडर्थे लङ्, विकरण-व्यत्ययेन शप स्थाने श १ १० ७ वर्धयति १ १४१ ५. रोहेत् १ ५१ २. **अरुहन्**=रोहन्ति १ ११० ६ **अरुहम्**=

भा०—सत्कीर्त्तय १२ १० ६ प्रकाशा १ ४८ १३ सत्क्रिया ४ ६ १० दीप्तिरूपा ज्वाला न्यायप्रकाशका नीतयो वा १ ३६ ३ **अर्चिभिः**=पूजितै (भानुभि =विद्याप्रकाशकै-र्गुणै) १२ ३२ पूजितैर्गुणकर्मस्वभावै ५ ७९ ८ तेजोभि ६ ४८ ७ [अर्च पूजायाम् धातोरौणादिक इ प्रत्यय । अर्चिरिति ज्वलतो नामधेयम् निघ० १ १७]

अर्चिषा विद्याप्रकाशेन ५ १७ ३ पूजनीयेन (भानुना=प्रकाशेन) २ ८ ४ सत्कारेण ६ ६० १० तेजसा ५ ७९ ९ सत्कारेण दीप्त्या वा ६ ४८ ३ **अर्चिषि**= अर्चितु योग्ये शुद्धे तेजसि १९ ४१ **अर्चिषे**=स्तुतिविषयाय (ईश्वराय) ३६ २० पूज्याय (सभापतये) १७ ११ **अर्चिः**=दीप्ति १ ९२ ५ प्रदीप्ति ३७ ११ विद्याप्रकाशम् ३ ६ ३ तेज, भा०—विद्युत्तेज ४ ७ ९ [अर्च पूजायाम् (भ्वा०) 'अर्चिशुचिहु०' उ० २ १०८ सूत्रेण इसि प्रत्यय]

अर्चिनः सत्कर्त्तार (मरुत =विद्वज्जना) २ ३४ १

अर्चेव सत्क्रियेव ६ ३४ ४

अर्जुन सुस्वरूप (गृहस्थजन) ७.५५ २ **अर्जुनम्**= ऋजुगत्यादिगुणम् (दिनम्) ६ ९ १ रूपम्, प्र०—अर्जुन इति रूपनाम निघ० ३ ७ ३४४ ५ **अर्जुनस्य**=रूपस्य १ १२२ ५ **अर्जुनः**=प्रशस्त रूप विद्यते यस्य स (राजा) प्र०—अर्श आदित्वादच् १० २१ **अर्जुना**=सुरूपाणि (वस्त्राणि) ३ ३९ २ [अर्ज प्रतियत्ने (चुरा०) धातो 'अर्जेर्णिलुक् च' उ० ३ ५८ सूत्रेण उनन् प्रत्ययो णिलुक् च । अर्जुनप्राति० अर्शआदित्वादच् मत्वर्थे । अर्जुनमिति रूपनाम निघ० ३ ७ अर्जुन शुक्लम् नि० २ २१ अर्जुनो ह वै नामेन्द्रो यदस्य गुह्य नाम श० ५ ४ ३ ७ (सोमस्य ह्रियमाणस्य) यानि पुष्पाण्यवाशीर्यन्त तान्यर्जुनानि ता० ८ ४ १ इन्द्रो वृत्रमह तस्य यो नस्त सोम समधावत्तानि वभ्रूतूलान्यर्जुनानि ता० ९ ५ ७ यदि सोम न विन्देयु पूतीकानभिषुणुयुर्यदि न पूतीकानर्जुनानि ता० ९ ५ ३]

अर्जुनि उपर्वद् वर्त्तमाने (विदुषि स्त्रि) ५ ८४.२ अर्जयन्ति प्रतियतन्ते ययोषसा । प्र०—अत्र अर्ज प्रतियत्ने धातोर् उनन् प्रत्ययो णिलुक् च, उ० ३ ५७ अनेनाय सिद्ध १ ४९ ३ (अर्जुनो व्याख्यात । स्त्रिया ङीप्, 'अन्यतो ङीप्' सूत्रेण) तत सम्बुद्धौ रूपम् । अर्जुनी इत्युपर्नाम निघ० १ ८ अर्जुन्यो वै नामैतास्ता एतत् परोक्षमाचक्षते फल्गुन्य इति श० ६ २ १ ३२]

अर्णम् विज्ञानम्, भा०—बोधम् १२ ४९ उदकम् ३ ३२ ११ जलम् ५ ३२ ८ **अर्णः**=जलाऽर्णवमिव शब्द-समुद्रम् प्र०—'उदके नुट् च' उ० ४ १९६ अनेन सूत्रेणा-ऽर्त्तेरसुन् प्रत्यय 'अर्ण इत्युदकनामसु पठितम् निघ० १.१२, १ ३ १२ उदकम् १ १६७ ९ **अर्णाः**=प्रापिका (धी) ५ ५० ४ नदीसम्बन्धिनी (अप =जलानि) १ १७४ २ **अर्णा**=अर्णासि जलानि, प्र०—अत्र 'सुपा सुलुग्० इति विभक्तेराकारादेश 'छान्दसो वर्णलोप०' इति सलोप ३ ३२ ५. प्रापिका (धी) ५ ५० ४ **अर्णासि**=उदकानि ६ ७२ ३. **अर्णोभिः**=जलै ४ ३ १२ [ऋ गति-प्रापणयो (भ्वा०) धातो 'उदके नुट् च' उ० ४ १९६ सूत्रेणासुन् प्रत्ययो नुडागमश्च अर्णमिनि मकारलोप । अर्ण उदक नाम निघ० १ १२ अर्णा नदीनाम निघ० १ १३]

अर्णवम् समुद्रम् १.८५ ९ समुद्रवद्वर्त्तमानम् (इन्द्रम्) १ ५१ १ पृथिवीस्य सागर १ १९ ७ **अर्णवः**= अर्णासि बहून्युदकानि विद्यन्ते यस्मिन् स (समुद्र.), प्र०—अत्र 'अर्णसो लोपश्च' अ० ५ २ १०९ इति मत्वर्थे व सलोपश्च १२ ४८ समुद्र इवाऽऽकाश ६ ६१ ८ **अर्णवान्**=नदी समुद्रान्वा ५ ३२ १ **अर्णवाय**= बहून्यर्णासि विद्यन्ते यस्मिँन्तस्मै (समुद्राय) २२ २५ **अर्णवे**=प्राणे १३ ५३ यत्राऽर्णास्युदकानि सम्बद्धानि सन्ति तस्मिन् ससारे २६ ६३ बहून्यर्णासि जलानि विद्यन्ते यस्मिँस्तस्मिन्निव (सागर इव) १९ ५५ **अर्णवैः**=समुद्रैर्नदीभिर्वा ५ ५९ १ [अर्णस् व्याख्यात । ततो मत्वर्थे 'अर्णसो लोपश्च' अ० ५ २ १०९ वार्त्तिकेन व प्रत्ययो सकारलोपश्च । अर्णवान् अर्णस्वत नि० १० ९ प्राणो वा अर्णव श० ७ ५ २ ५१]

अर्णवः प्रकृष्टतया ऋणुहि १ ४८ १५ [ऋणु गतौ (तना०) धातोर्लोट् । विकरणव्यत्ययेन शप्]

अर्णसम् जलम् ५ ५४ ६ **अर्णसः**=प्रचुरजलात् १ ११७ १४ उदकस्य १ १५८ ३ [अर्णस् व्याख्यात । तस्य रूपाणि]

अर्णसातौ अर्णाना विजयप्रापकाणा योद्धॄणा सातिर्यस्मिँस्तस्मिन् (आजौ) १.६३ ६ उदकस्य प्राप्तौ २ २० ८ प्राप्तविभागे ४ २४ ४ [अर्ण =ऋणु गतौ (तना०) धातो कर्त्तर्यच् । साति =षण् सभक्तौ धातो क्तिन् । 'जनसनखनाम्०' इत्याकारादेश । तयो समास]

अर्णाचित्ररथा अर्णौ प्रापकौ च तौ चित्ररथा आश्चर्यरथौ च तौ ४ ३० १८ [ऋणु गतौ (तना०) धातोरचि कर्त्तरि=अर्ण । अर्ण-चित्ररथपदयो समास]

सत्कर्त्तव्यैः (प्रजावलसाधुभिः) ४ १० ३ सुविचारैः ७ २३ ६ सत्कार-साधनैः ६ ४९ १४ मन्त्रैः ४ ५५.३ किरणैः २ ११ १५ सत्कार के योग्य (ब्रह्मचारियों) से स० वि० १०५, ५ ४१ ७ सत्कारसाधकतमैर्विचारैर्वचनैः कर्मभिर्वा ५ ३१ ४ मन्त्रैः सत्कारैर्वा ६ ६९ २ अर्चनीयैर्विद्वद्भिस्सह ३ ३१ ९ पूजितैः कर्मभिः २० ५४ वज्रवच्छेदकैः (किरणैः) ६ ४ ६ अन्नादिभिः प्र०—अत्र बहुवचनं सूपाद्युपलक्षणार्थम् १ १९० १ वज्रादिभिः ६ ७३ ३ स्तोत्रैः १ ६२ ७ अर्चनीयैः पदार्थैः ५ ४१ ६ [अर्च पूजायाम् (भ्वा०) धातोः 'कृदाधारार्चिकलिभ्यः कः' उणा० ३ ४० सूत्रेण कः। अर्कः अन्ननाम निघ० २ ७ वज्रनाम निघ० २ २० पदनाम निघ० ४ २ अर्को देवो भवति यदेनमर्चन्ति। अर्को मन्त्रो भवति, यदनेनार्चन्ति। अर्कमन्नं भवति, अर्चति भूतानि। अर्को वृक्षो भवति, संवृत्तः कटुकिम्ना नि० ५ ५ अर्कैरर्चनीयैः स्तोमैः नि० ६ २३ अन्नं वै देवा अर्क इति वदन्ति ता० १५ ३ २३ अर्को वै देवानामन्नम् श० १२ ८ १ २ तै० १ १ ८ ५ अन्नं वा अर्कः ता० ५ १ ९ गो० उ० ४ २ अन्नमर्कः श० ९ १ १ ४ आदित्यो वा ऽअर्कः श० १० ६ २ ६ अर्कश्चक्षुस्तदसौ सूर्यः तै० १ १ ७ २ स एष एवार्को य एष (सूर्यः) तपति श० १० ४ १ २२ अयं वाऽअग्निरर्कः श० ८ ६ २ १९ अग्निर्वाऽअर्कः श० २ ५ १ ४ स एषोऽअग्निरर्को यत्पुरुषः श० १० ३ ४ ५ आपो वा अर्कः श० १० ६ ५ २ प्राणो वा ऽअर्कः श० १० ४ १ २३ प्राणापानौ वा एतौ देवानाम् यदर्काश्वमेधौ तै० ३ ९ २१ ८ ओजो बलं वा एतौ देवानाम्। यदर्काश्वमेधौ तै० ३ ९ २१ ३ वेत्थार्कमिति पुरुषं हैव तदुवाच। वेत्थार्कं पर्णेऽइति कर्णौ हैव तदुवाच वेत्थार्कं पुरुषेऽइत्यक्षिणी हैव तदुवाच० श० १० ३ ४ ५ अस्य (अग्नेः) एवैतानि (धर्म, अर्क, शुक्र, ज्योति, सूर्य), नामानि श० ९ ४ २ २५ एतस्य वै देवस्य (रुद्रस्य) आशयदर्कं समभवत्स्वेनैवैनम् (रुद्रम्) एतद् भागेन स्वेन रसेन प्रीणाति (यजमानः) श० ९ १ १ ९ अर्कः (सामविशेषः) दीर्घतमसो ऽर्को भवति ता० १५ ३ ३४]

अर्कशोकैः अन्नादीनां शोधनैः ६ ४ ७ अर्कः सूर्य इव शोकाः प्रकाशा येषान्तैः (पुरुषोत्तमैः) ३ ३ १३ [अर्को व्याख्यातः) शोकः = ईशुचिर् पूतिभावे (दिवा०) धातोर्घञ्, शोचति ज्वलतिकर्मा निघ० १ १६ धातोर्वा घञ्। ततः समासः]

अर्कसातौ अन्नानां सविभागे १ १७४ ७ अन्नादिविभागे प्र०—अर्कः इत्यन्ननाम निघ० २ ७, ६ २० ४ [अर्कः अन्ननाम निघ० २ ६ सातिः = षण सम्भक्तौ धातोः स्त्रियां भावे क्तिन्। 'जनसनखनाम्०' अ० ६ ४ ४२ सूत्रेणात्वम्]

अर्किणः अर्का मन्त्रा ज्ञानसाधना येषान्ते (ईश्वरोपासका जनाः) १ १० १. विद्वांसः १.७.१ [अर्को व्याख्यातः। ततो मत्वर्थे इनिः]

अर्च पूजय १ ५४ ३ सत्कुरु १ ५४ २ **अर्चत्**= अर्चेत् १ १७३.२ सत्कुर्यात् १ १६५ १४ **अर्चत**=सत्कुरुत १ ७४ ५ **अर्चति**=सर्वान् पदार्थान् सत्करोति १.६ ८ **अर्चथ**=सत्कुरुथ १ १५१ ६ [अर्च पूजायाम् (भ्वा०) धातोर्लोट्। लङि आडभावश्च। अर्चति अर्चतिकर्मा निघ० ३ १४]

अर्चतः सत्क्रियां कुर्वतः (विप्रस्य=मेधाविजनस्य) ७ २२ ४ **अर्चते**=सत्कर्त्रे सभाद्यध्यक्षप्रियाय १ ८७ २ **अर्चन्तः**=सत्कुर्वन्तः (जनाः) १ ६२ २ **अर्चन्**=सत्कुर्वन् (मर्यः=मनुष्यः) ३ ३१ ७ [अर्च पूजायाम् (भ्वा०) धातोः शतृ प्रत्ययः]

अर्चन् प्राप्नुवन्तु ३ १४ ४ सत्कुर्वन्ति ४ १ १४ **अर्चन्ति**=सत्कुर्वन्ति १ ६२ ३ सत्कुर्वन्ति १ १६५ १ नित्यं पूजयन्ति १ १० १ **अर्चयः**=३ ४४ २ **अर्चा**=सत्कुरुत, प्र०—अत्र वचनव्यत्ययो 'द्व्यचोऽतस्तिङः' इति दीर्घश्च ३३ २३ **अर्चात्**=सत्कुर्यात् ४ १६ ३ **अर्चान्**=पूजयन्तु ५ ३१ ५ सत्कुर्युः ४ ५५ २ **अर्चाम**=पूजयेम १ ६२ १ सत्कुर्याम ३४ १६ **अर्चामि**=सत्करोमि ४ ४ ८ **अर्चामसि**=अर्चाम सत्कुर्मः ६ २१ ७ **अर्चे**=सत्करोमि ५ ४१ ८

अर्चत्रयः अर्चकाः (मरुतः=सज्जनाः) ६ ६६ १० [अर्च पूजायाम् (भ्वा०) धातोर् अत्रिन् प्रत्ययो बाहुलकाद्]

अर्चत्र्यः सत्कारं कुर्वत्यः प्रजाः ६ २४ १ [अर्चत्रिर्व्याख्यातः। ततः 'कृदिकारादक्तिनः' इति वार्तिकेन ङीप्]

अर्चद्धूमासः अर्चन्तः सुगन्धियुक्ता धूमा येषान्ते (अग्न्यादयः पदार्थाः) [अर्चद्धूमपदयोः समासः]

अर्चनानसम् अर्चिता श्रेष्ठा नासिका यस्य तम् (सोमम्) ५ ६४ ७ [अर्चना=नासिकापदयोः समासः। 'अञ्नासिकायाः संज्ञायां नसं०' अ० ५ ४ ११८ सूत्रेण नसादेशोऽच् प्रत्ययश्च]

अर्चयः किरणाः ५ २५ ८ सत्कृतयः ५ १७ ३. विद्याविनयप्रकाशिताः (विद्वज्जनाः) ५ १० ५ दीप्तयः,

काद्रवेयो राजेत्याह तस्य सर्पाविश'''सर्वविद्या वेद '''सर्प-विद्याया एक पर्व व्याचक्षाण इवानुद्रवेत् श० १३४३६ वाग्वा अर्बुदम् तै० ३८१६३]

अर्भकम् वाल्याऽवस्थापन्नम् ११४७ क्षुद्र जनम् प० वि०। छोटे जन को स० २४८, १६१५ अल्प क्षुद्रम्, (भा०—वालकम्) **अर्भकासः**=अल्पवयसो वालका इव क्षुद्राशया (अध्येतार) ७३३६ **अर्भके**=अल्पे (विज्ञान-कर्मणी) ४३२२३ **अर्भकेभ्यः**=अल्पगुणेभ्यो विद्यार्थि-भ्य १२७१३ कनिष्ठेभ्य क्षुद्राशयेभ्य शिक्षणीयेभ्यो विद्यार्थिभ्य १६२६ [ऋधु वृद्धौ धातो 'अर्भक-पृथुकपाका वयसि' उ० ५५३ सूत्रेण वुन् प्रत्यय, धस्य भश्च। अर्भको ह्रस्व नाम निघ० ३२ द्विश उत्तरनाम निघ० ३२६ अर्भके अवृद्धे नि० ४१५ अर्भकमित्यल्पस्य। अर्भकमवहृत भवति नि० ३२०]

अर्भगाय ह्रस्वाय वालकाय, प्र०—अत्र वर्णव्य-त्ययेन कस्य ग ११११६१ ['अर्भकम्' पदे द्र०। कस्य गकार]

अर्भस्य अल्पस्य (वसुन =धनस्य) ७३७३ **अर्भात्**=अल्पात् (पदार्थात्) ११२४६. **अर्भाम्**=अल्पामपि शिल्पक्रिया वाच वा १५१.१३ **अर्भाय**=अल्पाय (जीवसे) ११४६५ **अर्भे**=अल्पे सङ्ग्रामे १८११ अल्पवयसि जने ६५०४ **अर्भेषु**=अल्पेषु ११०२१० [ऋ गतौ धातो 'अर्त्तिगृभ्या भन्' उ० ३१५२ सूत्रेण भन्]

अर्मके दु खप्रापके (महागर्त्ते) ११३३३ [ऋगति-प्रापणयोर्धातो 'अर्त्तिस्तुसु०' उ० ११४० सूत्रेण मन् प्रत्यये अर्म। अर्म एव अर्मक इति स्वार्थे कन्]

अर्मेभ्यः प्रापकेभ्य (पुरुषेभ्य) ३०११ [ऋ गति-प्रापणयो (भ्वा०) धातोरौणादिको मन्प्रत्यय]

अर्य ! प्रशसित (शूरवीर जन) ४१६१७ **अर्यः**=ईश्वर, प्र०—अर्य इतीश्वरनाम निघ० २२२, २१२४ स्वामी ५२१२ सर्वस्य स्वामीश्वर १८१६ स्वामीश्वरो राजा ४२४८ ईश्वरो वा स्वामी ६२५७ स्वामीश्वरो जीवो वा १७०१ वैश्यो वणिग्जन ऋ० भू० १६४ स्वामी वणिग् जनो वा १७३५ वैश्य, प्र०—अर्य स्वामीवैश्ययो, अ० ३१३ इत्यनेन वैश्यार्थे निपातित १५३० सर्वस्वामी सर्वसभाध्यक्षो राजा ११९८६ अरयश्शत्रव ७३४१८ यथावज्ज्ञातार (मघवान = परमधनयुक्ता जना) ७६०११ **अर्याय**=वैश्याय, प्र०—अर्य स्वामिवैश्ययो, इति पाणिनिसूत्रम् २६२ वैश्य के लिए स० प्र० ६७, २६२ **अर्ये**=स्वामिनि वैश्ये वा २०१७ धनस्वामिनि वैश्यादौ ३३८२ [ऋ गतौ धातो 'अर्य स्वामिवैश्ययो' अ० ३११०३ सूत्रेण यत् प्रत्ययो निपात्यते। अर्य इति ईश्वर नाम निघ० २२२ अर्य = ईश्वर नि० १३४]

अर्यया अर्यस्य वैश्यस्य स्त्रिया ५७५७ **अर्या**=वैश्यकन्या ११२३१ **अर्य्यायै**=अर्य्यस्य स्वामिनो वैश्य-स्य वा स्त्रियै २३३१ [अर्य पूर्वपदे द्र०। तत स्त्रिया टापि रूपम्]

अर्यजारा अर्यौ स्वामिवैश्यौ जारयति वयसा हन्ति सा (शूद्रा=शूद्रस्य स्त्री), भा०—धनाढ्या शूद्रा जारा दासी २३३० [अर्योपपदे जॄ वयोहानौ (चुरा०) धातोरण् प्रत्यय। स्त्रिया टाप् प्रत्यय]

अर्यपत्नीः स्वामिना भार्या ७६.५ [अर्यो व्या-ख्यात। पत्नी=पतिप्राति० स्त्रिया 'पत्युर्नो यज्ञसयोगे' सूत्रेण ङीप् नकारादेशश्च]

अर्य्यमणम् न्यायाधीशम् (मित्र=सखायम्) ४२४ पक्षपातराहित्येन न्यायकर्त्तारम् (राजपुरुषम्) ६२७ प्रजाया पालकम् (अध्यापकमुपदेशक वा) २५१६ न्यायेश (इन्द्र=सभेशम्) ११७४६ न्यायकारिणम् (पुरुषम्) ६५०१ **अर्यमणः**=न्यायेशा (नर=नायका जना) ५५४८ **अर्यम्णः**=य ऋच्छति नियच्छत्याकर्षणेन पृथिव्यादीन् स सूर्यलोकस्तस्य, प्र०—'स्वन्नुक्षन्पूषन्०' उ० ११५६ अनेनाऽय निपातित ३३१ **अर्यमन्**=योऽर्यान् श्रेष्ठान् मनुष्यान् मिमीते मन्यते तत्सम्बुद्धौ (विद्याप्रकाशक विद्वन्) २२७५ श्रेष्ठसत्कृत् (सज्जन) २२७६ न्यायकारिन् (राजन्) ५६७१ **अर्यमा**=योऽर्यान् मन्यते स न्यायाधीश ३६.६ न्यायाधीश इव नियन्ता (इन्द्र=राजा) २५२४ न्यायवस्थापक (राजा) ५२६१ नियन्ता वायुर्न्यायकर्त्ता वा ११०७३ योऽर्यान् स्वामिनो न्यायाधीशान् मिमीते मान्यान् करोति सोऽर्यमा (परमात्मा) जो सत्य, न्याय के करने वाले मनुष्यो का मान्य और पाप तथा पुण्य करने वालो को पाप-पुण्य के फलो का यथावत् सत्य सत्य नियमनकर्त्ता है इसी से उस परमेश्वर का नाम अर्यमा है, प्र०—ऋ गतिप्रापणयो इस धातु से यत् प्रत्यय करने से अर्य्य शब्द सिद्ध होता है और अर्य पूर्वक 'माङ् माने' इस धातु से कनिन् प्रत्यय होने से अर्यमा शब्द सिद्ध होता है स० प्र० २०, ३६६ यमराज, प्रियाप्रिय को छोड कर

अर्णोवृतम् अर्णांसि वर्त्तन्ते यस्मिँस्तम् (अहि=मेघम्) २ १९ २ [अर्णस् उदकनाम निघ० १.१२ तदुपपदे वृतु वर्त्तने (भ्वा०) धातो 'घञर्थे कविधानम्०' वार्तिकेन क प्रत्यय]

अर्त्त प्राप्नुत ५ २५ ८. नश्यतु ४ १६ ९ प्रापय ४ १ १७. [ऋ गतौ (क्र्या०) धातोर्लोट् । 'बहुल छन्दसी' ति विकरणलुक्]

अर्त्तनम् प्रापकम् (जनम्) ३० १९

अर्थज्ञः जो वेदो को पढना और उनका यथावत् अर्थ जानता है (विद्वान् पुरुष.) स० प्र० ३ समु०, निरु० १ १८ [अर्थोपपदे ज्ञा अवबोधने (क्र्या०) धातो क प्रत्यय]

अर्थम् द्रव्यम् ४ १३ ३ प्रयोजनम् ३ ११ ३ अर्त्तु ज्ञातु प्राप्तु गुण द्रव्य वा, प्र०—'उपिकुपिगार्त्तिभ्य स्थन्' उ० २ ४ अनेनार्त्ते स्थन् प्रत्यय १ १० २ वस्तु ३ ६१ ३ य ऋच्छति प्राप्नोति तम् (अभीष्ट पदार्थम्) १ १०५ २ द्रव्यम् १ ३८ २ धनादिपदार्थम् १ १४४ ३ **अर्थान्**=सत्य विद्या जो चार वेद हैं उनका आर्याभि० २ २, ४० ८ [ऋ गतिप्रापणयो (भ्वा०) धातोरौणादिक स्थन् प्रत्यय । अर्थ अर्त्ते अरणस्थो वा नि० १ १८]

अर्थमिव द्रव्यवत् १ ११३ ६

अर्थयन्ति अर्थ कुर्वन्ति ५ ४४.११ **अर्थयस्व**=अर्थ कुरु २ १३ १३ **अर्थयासे**=याचस्व १ ८२ १. [अर्थ उपयाञ्चायाम् (चुरा०) धातोर्लट्]

अर्थः सकलपदार्थसञ्चय १८ १५

अर्थिनः प्रशस्तोऽर्थो प्रयोजन येषान्ते (सज्जना) १ १०५ २ **अर्थी**=प्रशस्तोऽर्थोऽस्याऽस्तीति (अग्नि=विद्वज्जन) ७ १ २३. [अर्थप्राति० मत्वर्थे इनि प्रत्यय]

अर्थेतः येऽर्थं यन्ति (राष्ट्रदा=सभासदो मनुष्या) १० ३ [अर्थोपपदे इण् गतौ (अदा०) धातो क्विप् । तुगागमे प्रथमाबहुवचनम्]

अर्दय नाशय २ २३.१४

अर्दयत् अर्दयेत् प्रापयेत् १ १८७ १ **अर्दयति**=नाशयति ३४ ७ [अर्द हिंसायाम् (चुरा०) धातोर्लोटि लटि लङि च रूपाणि । अर्द गतौ याचने च (भ्वा०) धातोर्वा णिचि लोट् । अर्दयति वधकर्मा निघ० २.१९ अर्दति गतिकर्मा वधकर्मा च निघण्टौ]

अर्द्धऽऋचैः ऋचामर्द्धान्यर्द्धर्चास्तैर्मन्त्रभागै १९ २५. 'प्रतिष्ठा वै अर्द्धर्च, गो० उ० ५ १० ['अर्धर्चा पुंसि च' अ० २ ४ ३१ सूत्रेण पुंसि नपुंसके च भाष्यन्ते]

अर्द्धगर्भाः अपूर्णगर्भा महत्तत्त्वाऽहङ्कारपञ्चभूतसूक्ष्माऽवयवा १ १६४.३६ [अर्द्धगर्भयो समास । गर्भ = गॄ निगरणे धातो 'अर्त्तिगॄभ्या भन्' उ० ३ १५२ सूत्रेण भन् प्रत्यय]

अर्द्धदेवम् देवस्याऽर्धमर्धम्य जगतो देव वा (इन्द्र=सूर्यम्) ४ ४२ ८ अर्द्धजगत्प्रकाशक सूर्यम् ४ ४२ ६ (अर्द्ध देवस्येति विग्रहे 'अर्द्ध नपुंसकम्' अ० २ २ २ सूत्रेणैकदेशिसमास]

अर्द्धम् वर्द्धकम् (मेघम्) ६ ४७ २१ वर्द्धनम् ४ ३२ १ अर्ध भागम् १ १६४ १७ ऋद्धिम् २ ३० ५ भूगोलार्धम् ६ ३० १ **अर्द्धौ**=वर्द्धकौ (विद्वासौ स्त्रीपुरुषौ) २ २७ १५ [ऋधु वृद्धौ (दिवा०) धातोरच् प्रत्यय । अर्धम्=हरतेविपरीतात्, धारयतेर्वा स्याद् उद्धृत भवति, ऋध्नोतेर्वा स्यात् ऋद्धतमो विभाग नि० ३ २०]

अर्द्धमासाः कृष्णशुक्लपक्षा २३ ४१ सिताऽसिता पक्षा २७ ४५

अर्द्धय वर्धय ११ ८. [ऋधु वृद्धौ (दिवा०) धातोर्लोट् । व्यत्ययेन शप्]

अर्ध्यम् अर्धे भवम् (वाज=विज्ञानवन्तम्) ५.४४ १०. **अर्ध्यः**=वर्द्धितु योग्य (यज्ञ=ब्रह्मचर्याख्य) १ १५६ १ [अर्धप्राति० भवार्थे 'अर्धाद्यत्' अ० ४ ३ ४ सूत्रेण यत् ऋधु वृद्धौ धातोर्वा ण्यत् प्रत्यय]

अर्पय समर्पय २ ३३ ४. **अर्पयतु**=संयोजयतु १ १. [ऋ गतिप्रापणयो (भ्वा०) धातोर्णिचि लोट् । 'अर्त्तिह्री०' इति सूत्रेण पुगागम]

अर्पितम् प्रापित स्थितम् (ब्रह्म) १७ ३० स्थापितम् (संवत्सरम्) १ १६४ १२ **अर्पितः**=स्थापित. (पूषा=पोषको विद्वान्) ६ ५८ २ **अर्पिता**=स्थापितानि (भुवनानि) १ १६४ १४ समर्पिता (विद्यावाणी) १ १४२ ८. **अर्पितानि**=स्थापितानि (भूतानि तन्मात्राणि वा) २३ ५२ **अर्पिताः**=स्थापनीया (कला) ऋ० भू० १९८ समर्पिता (होत्रा=क्रिया) १ १४२ ९ [ऋ गतिप्रापणयो (भ्वा०) धातोर्णिजन्तात् क्त]

अर्बुदम् दश कोटय (धेनव=दुग्धदात्र्यो गाव) १७ २. एतत्सङ्ख्याकम् (दुर्जनसमूहम्) २ १४ ४ असङ्ख्यातगुणविशिष्टम् (सैन्यम्) २ ११ २० (शम्बर=बलम्) १ ५१ ६ [अम्बुदो मेघो भवति···स (मेघ) यथा महान् बहुर्भवति वर्षंस्तदिवार्बुदम् नि० ३ १० अर्बुद

धातोरौणादिक उ प्रत्यय । वसु धननाम निघ० २ १० तयो समास अथ यदर्वाग्वसुरित्याहातो (पर्जन्यात्) ह्यर्वाग्वसु वृष्टिरन्न प्रजाभ्य प्रदीयते श० ८ ६ १ २० अर्वाग्वसुर्ह वै देवाना ब्रह्मा पराग्वसुरसुराणाम् गो० उ० १ १]

अर्वाङ् इतस्मिन् व्यवहारे वर्त्तमान (अग्नि = पावकवद्राजा) ४ १० ३ योऽर्वागञ्चति (द्युम्न = यशो धन वा) ६ १९ ९ योऽर्वाग् गच्छति स (सोम = रस) ६ ४१ ५ योऽर्वाचीनानञ्चति प्राप्नोति स (देव = सूर्य) ३४ २६ योऽधोदेशमञ्चति (रथ) १ १५७ ३ योऽर्वाचीनाननुत्कृष्टानुत्कृष्टान् कर्त्तुमञ्चति जानाति स (विद्वान्) १५ ४६ योऽधस्तादञ्चति अधो गच्छति स (सूर्य) ३ ६ ९. आभिमुख्य प्राप्त (विद्वान्) २६ २३ अभिमुखम् १ १७७ २ पश्चात् ५ ४० ४ अधो वर्त्तमान (असुर = मेघ) ५ ८३ ६ अर्वाचीनमञ्चन् (इन्द्र = सभेश) १ १७७ ५ अर्वाचीने व्यवहारे १ १०४ ९ अर्वाचीन देशम् ३ ४१ ८ अर्वत स्वकीयानध ऊर्ध्वतिर्यग्गमनाख्यवेगानञ्चति प्राप्नोतीति, प्र०—अत्र 'ऋत्विग्दधृक्०' अ० ३ २ २९ इति क्विन्, 'क्विन्प्रत्ययस्य कु' इति कवर्गादेश १ ३५ १० अर्वाचीन (विद्वान्) ३ ४३ १ अर्वाच = येऽर्वाग्गच्छन्ति ते (नर = नायका जना) ७ ४८ १ अपरत्वेन व्यपदिष्टान् (पदार्थान्) १ १६४ १९ **अर्वाञ्चम्** = योऽर्वतो वेगादिगुणानश्वानञ्चति प्राप्नोति तम् १ ४५ १० योऽर्वागधोऽञ्चति गच्छति (इन्द्र = ऐश्वर्ययुक्त जनम्) ३ ४१ ९ अर्वाग्गामिनम् (रथम्) २ ३७ ५ अर्वागुपरिष्टादधस्थ स्थानमभीष्ट वाञ्चति येन तम् ३ ४१ ९ **अर्वाञ्च:** = अर्वागधोऽञ्चन्ति ये (पदार्था) १ १६४ १९ अस्मदभिमुखा, भा०—अस्मदविरोधिन (यजत्रा = देवा) ३३ ५१ येऽर्वागञ्चन्ति विद्या प्राप्नुवन्ति ते (देवा = विद्वास) २ २९ ६ **अर्वाञ्चा** = यावर्वागञ्चतो गच्छतस्तौ (अश्विना = स्त्रीपुरुषौ) ५ ७६ १ अर्वतो वेगवानञ्चत प्राप्नुतस्तौ (नरौ) १ ४७ ८ [अर्व उपपदे अञ्चु गतिपूजनयोर्धातो 'ऋत्विग्दधृक्०' इत्यादिसूत्रेण क्विन्प्रत्यय । अर्वाक्पथ अर्वाच एनान् पथ· नि० १२ ४३]

अर्वाची याऽर्वणोऽश्वानञ्चति सा (क्रिया) २ ३५ १५ सुशिक्षाविद्याभ्यासात्पश्चाद् विज्ञानमञ्चति प्राप्नोत्यनया सा (सुमति) ८ ४ याऽर्वागधोऽञ्चति ४ ५७ ६ नवीना (पथ्या = नीति) ७ १८ ३ अस्मदभिमुखी (सुमति = प्रज्ञा) ३३ ६८ इदानीन्तनी (सुमति १ १०७ १ **अर्वाच्यै** = निम्नायै (दिशे) २२ २७ याऽवविरुद्धमञ्चति तस्यै उपदिशे २२ २४ अधस्ताद्वर्त्तमानायै (दिशे) २२ २४ याऽर्वागधोऽञ्चति तस्यै (दिशे) २२ २४ [अर्व + अञ्चु गतौ + क्विप् । स्त्रियाम् 'अञ्चतेश्चोपसङ्ख्यानम्' वा० ४ १ ६ सूत्रेण ङीप्]

अर्वाचीनम् इदानीन्तन नूतनम् (ऐश्वर्ययुक्त जनम्) ७ ४१ ६ इदानीन्तन युवावस्थास्थम् (सूनुम् = अपत्यम्) ४ २४ १ इदानी सुशिक्षितम् (मन = अन्त करणम्) ३ ३७ २ अधोगामिनम्, भा०— अनुत्कृष्टगति (मन = अन्त करणम्) ८ ३३ अधस्ताद् भूमिजलयोरुपगन्तारम् (रथम्) १ ८४ ३ **अर्वाचीन:** = इदानीन्तन (इन्द्र = राजा) ४ ३२ १४ विद्यादिबलेनाऽभिगन्ता (इन्द्र = सेनाधीश) २० ४६ **अर्वाचीना** = यावर्वागञ्चतस्तौ (विद्वज्जनौ) ५ ७४ ९ [अर्वाच्प्राति० 'विभाषाञ्चेरदिक्स्त्रियाम्' अ० ५ ४ ८ सूत्रेण स्वार्थे ख प्रत्यय]

अर्वाचीनास: इदानीन्तना (जामय = पतिव्रता भार्या) ६ २५ ३ [अर्वाच् + ख स्वार्थे । तस्य प्रथमाबहुवचनम्]

अर्वाणम् गच्छन्तमश्वम् २८ १३ [ऋ गतिप्रापणयोर्धातोर्वनिप् । छन्दसि सर्वविधीना विकल्पात् 'अर्वणस्त्रसावनञ' इति तृ-आदेशो न भवति]

अर्वान् ज्ञानीजन, प्र०—अत्र नलोपाऽभावश्छान्दस २९ २४ [ऋ गतौ धातोर्वनिप् । 'न लोप प्राति०' इति न लोपो न भवति छान्दसत्वात्]

अर्वावतम् प्राप्तसामीप्यम् (राजानम्) ३ ४० ९]

अर्वावत: प्रशस्ता अश्वा विद्यन्ते येषान्तान् (सेनाङ्गयुक्तान् वीरान्) ३ ४० ८ अर्वाचीनात् (स्वदेशात्) ३ ३७ ११ [अर्वा = अश्व, ततो मत्वर्थे मतुप्]

अर्वावति निकटदेशे ५ ७३ १ [ऋ गतौ धातोरौणादिको वन् प्रत्यय । ततो मतुपि सप्तम्येकवचनम्]

अर्शस: मूलेन्द्रिय-व्याधे १२ ९७ [ऋ गतिप्रापणयो (भ्वा०) धातो 'व्याधौ शुट् च' उ० ४ १९६ सूत्रेणासुन् शुडागमश्च]

अर्शसानम् प्राप्त सत् (दस्युम्) १ १३० ८ अर्शसानस्य प्राप्नुवत (दासस्य = सेवकस्य) २ २० ६ (ऋ गतौ धातो 'अर्तेर्गुण शुट् च' उ० २ ८८ सूत्रेण असानच् प्रत्यय शुडागमश्च]

अर्षत् गच्छत् (ब्रह्म) ४० ४ [ऋषी गतौ (तुदा०) धातो शतृ । विकरणव्यत्ययेन शप् । ऋ गतौ धातोर्वा लेटि रूपम् । सिप् विकरणश्च]

अर्षत प्राप्नुत ४ ५८ १० **अर्षति** = गच्छति

न्याय मे वर्त्तमान (ईश्वर) आर्याभि० १ १८, ऋ०१ ६.१७ १ न्यायकारी दयालु (ईश्वर) स० वि० १३४, १० ८५ ४३ न्यायकर्त्ता (विद्वान्) ४ ५५ ४ सूत्रात्मा, भा०—जीव ३४ ५७ योऽर्यान् वैश्यान् स्वामिनोऽवमन्यते स (राजा) ३३ १५ विद्युत् ७ ६० ४ नियन्ता सूर्य १ ७६ ३ न्याय-व्यवस्थाकारी (ईश्वरो विद्वज्जनो वा) १ ६० ६. विद्वत्प्रिय (न्यायाधीश) २ २७ ७ नियन्ता धारको वायु २ ३८ ६ [अर्यो व्याख्यात । अर्योपपदे माङ् माने धातो 'श्वनुक्षन्पूषन्०' उणा० १ १५६ सूत्रेण कनिन् प्रत्यय । अर्यमन्नादित्यो ऽरीन् नियच्छति नि० ११.२३ यज्ञो वा अर्यमा तै० २ ३ ५ ४ अर्यमेति तमाहुर्यो ददाति तै० १ १ २ ४ अर्यमा सप्तहोतृणाᳬं होता तै० २ ३ ५ ६ अर्यम्णो वा एतन्नक्षत्र यत्पूर्वे फल्गुनी तै० १ १ २ ४]

अर्यमेव यथार्थन्यायकारीव (परमेश्वरो विद्वान् वेव) १ ६१ ३

अर्यमो न्यायकारी (राजा) प्र०—अत्राऽर्योपपदान्मन-धातोरौणादिको बाहुलकादो प्रत्यय १ १६७ ८

अर्य्यम्यम् अर्य्यमसु न्यायाधीशेषु भवम् (प्रमादम्) ५ ८५ ७ [अर्यमन् पूर्व व्याख्यात । ततो भवार्थे यत् प्रत्यय]

अर्वतः अश्वान् १ ६३ १२ प्राप्तराज्यान् जनानश्वान्वा १ ११८ २ शीघ्र स्थानान्तर प्राप्नुत (अश्वस्य) १ १६२ ८ अश्वानिवाऽन्यादीन् ६ ५४ ५ अश्वादीन् ६ ४६ १३ वलिष्ठस्याऽश्वस्य २५ ३१ आशुगामिनोऽश्वस्येव २७ ३७ प्राप्तस्य (मासस्य) १ १६२ १२ **अर्वता**=अश्वादिना ४ ३७ ६ अश्वादिभि सेनाङ्गैः, प्र०—अर्वेत्यश्वनामसु पठितम् निघ० १ १४, १ ८ २ अश्वादियुक्तेन सैन्येन २ २ १० अश्वेन १ ११६ १७ य ऋच्छति तेनाश्वेन १ १५५ १ गन्त्रा (अश्वेन) २५ २६ विज्ञानेन सह १ १६२ ३ **अर्वति**=उत्तमेऽश्वे स्थित्वा २ ३३ १ **अर्वते**=अश्वाय १ १११ ३ अश्वादियुक्ताय सैन्याय १ ६३ ५ अश्वजातये १ ४३ ६ प्राप्ताय (दुर्जनाय) ६ ३६ २ विज्ञानाय ५ ८६ ५ प्रशस्तविज्ञानवते (विदुषे) १ १५१ ३ **अर्वत्सु**=अश्वेषु ५ ८५ २ अश्वेषु प्राप्तवेगगुणेषु विद्यादिषु वा ४ ३१ **अर्वद्भिः**=प्रशस्तैरश्वै १ ७३ ६ वेगादि-गुणैरश्वै १ १६४ १३ **अर्वन्**=अश्व इव वर्त्तयन् (मनुष्य) १७ ८७ अश्व इव वर्त्तमान (वीरजन) २६ २२. अश्वेव शीघ्र गमयन् (अग्ने । =प्रतापिन् जन) ६ १२ ६ गन्त्रश्व-वद्वर्त्तमान (शिल्पिन्) १ १६३ ११ अश्वेव वेगवद्विद्वन् २६.१२ विज्ञानयुक्त (अन्व०—पुत्र, भा०—सुसन्तान) ११ ४४ वेगवान् वह्निरिव वर्त्तमान जन २६ १४ **अर्वन्तम्**=शीघ्रगामिनमश्वम् २२ ५ वाजिनम् १ ११२ २१. वेगेन गच्छन्तमश्वम् ३४ २१ प्राप्नुवन्तम् (वाजम्= वेगान्नविज्ञानादिकम्) ५ ५४ १४ वेगवन्तमश्वमग्निम् १ ११३ ६ अश्ववत्प्राप्नुवन्त वह्निम् २६ २०. गमयन्त (विद्युदग्निम्) १ १६२ १६ गच्छन्तम् (अश्वम्) **अर्वन्तः**=अश्वा १५ ४१ वेगवन्त (पदार्था) ७ ४० ६ गच्छन्त (आशव =पदार्था) ५ ६ १ प्राप्नुवन्त (आप्ता जना) ७ ४० ६ जानन्त (राजजना) ६ १७ प्रशस्त-विज्ञानवन्त (सूरय =विद्वास) १५ ४२ **अर्वा**=अश्व १ १० ४ १ वाजीव (अग्नि =विद्युत्) ४ ७ ११ गन्ता-ऽश्व २६ २३ अश्वेव शुभगुणग्रहणे वेगवान् (धार्मिको विद्वान्) ६ ३३ २ अश्व इव बुद्धिहीनो विषयासक्त (दुर्जन) ६ २८ ४ य सद्यो मार्गान् गच्छति (अश्व) ४ ३८ १० शीघ्र गन्ता (अश्व) २६ ६ प्रापक (सूर्य) १ १५२ ५ प्राप्तप्रेरण (अग्नि) ७ ४४ ४ शुभगुणप्रापक (मनुष्य) ४ ३६ ६ य सद्य ऋच्छति गच्छति स (विद्युदादिस्वरूपोऽग्नि) ४ १ १ ४ य सर्वानृच्छति स (अग्नि =सूर्यरूप) २२ १६ [ऋ गतिप्रापणयो (भ्वा०) धातोर्वनिप् प्रत्यय । 'अर्वणस्त्रसावनञ' सूत्रेण तृ-आदेश । 'अवद्यावमाधमार्वरेफा कुत्सिते' उ० ५ ५४ सूत्रेण वा वन् प्रत्ययो निपात्यते । अर्वान्=ईरणवान् नि० १० ३१ अश्वनाम निघ० १ १४ अर्वा यच्छ्वयदरुरामीत् । तस्मादर्वा नाम तै० ३ ६ २१ ३ (हे अश्व त्व) अर्वासि ता० १ ७ १ अग्निर्वा अर्वा तै० १ ३ ६ ४ पुमाᳬंसो ऽर्वन्त श० ३ ३ ४ ७]

अर्वती: प्रशस्तवुद्धिमत्य (कन्या) १ १४५ ३ [अर्वन् पूर्व व्याख्यात । तत स्त्रिया ङीपि 'अर्वणस्त्र-सावनञ' सूत्रेण तृ-आदेश]

अर्वाक् प्राप्त्यनन्तरमाभिमुख्येनानन्दकारकम् (राध = धनम्) १ ६ ५ योऽधोऽश्चति (दूत =समाचारप्रापको जन) ६ ६३ १ सत्यधर्ममनु ५ ४३ ८ यौ अर्वागधोऽश्चत (अश्वौ) ५ ४३ ५ भूमेरधोभागम् १ ११८ २ अवर ५ ४२ पुन ५ ३२ १५ पश्चात् १ ४७ १० अध १ ६२ १६ अवस्तात् ३ ४ ८ (अर्व=अनन्तरार्थे। तदुपपदे अञ्चु गतौ याचने । च धातो क्विप् प्रत्यय अर्वाके अन्तिकनामसु पठितम् निघ० २ १६]

अर्वाग्वसुः अर्वाग् वृष्टे पश्चाद्वसु धन यस्मात् स हेमन्तर्त्तु १५ १६ [अर्वाग् व्याख्यात । वसु=वस निवासे

विनिग्रहार्थे, कुप क्रोधे (दिवा०) धातोर्णिचि लङ् । अड-भावश्च]

अवक्रन्द शब्द कुरु २ ४२ ३ **अवक्रन्दतु**=आह्वयतु ५ ५८ ६ [अव+क्रदि आह्वाने रोदने च (भ्वा०) धातोर्लोट्]

अवक्रन्दाय नीचैः कृताह्वानाय (जनाय) २२ ७ **अवक्रन्देन**=विकलतारहितेन (व्यवहारेण) २५ १ [अव+क्रदि आह्वाने रोदने च (भ्वा०) धातोर्घञ् । क्रदि वैक्लव्ये धातोर्वा घञ्]

अवक्रमिषम् उल्लङ्घयेयम्, भा०—आज्ञामुल्लङ्घ्य वर्त्तिषीय प्र०—अत्र लिङर्थे लुङ् २ [अव+क्रमु पादविक्षेपे धातोर्लुङ्, अडभावश्च]

अवक्रमुः अवक्राम्यन्तु ७ ३२ २७ [अव+क्रमु पादविक्षेपे धातोर्लिङ् । 'बहुल छन्दसी' ति शपो लुक्]

अवक्रामन् देशदेशान्तरानुल्लङ्घयन् (राजा) ११.१५ **अवक्रामन्तः**=इतस्ततो गच्छन्त (अश्वा=तुरङ्गा वह्न्यादयो वा ६ ६५ ७ धर्षयन्त (अश्वा) २९ ४४ [अव+क्रमु पादविक्षेपे धातो शतृ]

अवक्षिप दूरे गमय २ ३० ५ **अवक्षिपत्**=प्रेरयेत् ४ २७ ३ [अव+क्षिप प्रेरणे (दिवा०) धातोर्लोट् । विकरणव्यत्ययेन शप्]

अवखादः विखादो भयम् १ ४१ ४ [अव+खद स्थैर्ये हिंसाया च (भ्वा०) धातोर्घञ्]

अवगत्य प्राप्य ६ ७५ ५ [अव+गम्लृ गतौ+क्त्वा । क्त्वो ल्यप् समासे]

अवघ्नती अत्यन्त दु खयन्ती १ १६१ २ [अव+हन हिंसागत्यो (अदा०) धातो शतृ, तत स्त्रियां ङीप्]

अवचक्षे प्रख्यातुम् ४ ५८ ५ अवख्यातव्या १७ ९३ [अव+चक्षिङ् व्यक्ताया वाचि (अदा०) धातो कृत्यार्थे 'अवचक्षे च' अ० ३ ४ १५ सूत्रेण एश् प्रत्ययो निपात्यते]

अवचचक्षम् कथयेयम् ५ ३० २ [अव+चक्षिङ् व्यक्ताया वाचि धातो रूपम्]

अवजघन्थ अवहसि ६ ३१ ४ विरोधेन हसि ७ १८ २० [अव+हन हिंसागत्यो (अदा०) धातोर्लिट्]

अवजिघ्रत सुगन्धान् बोधान् वाऽधो गृह्णीत ६ ६ [अव+घ्रा गन्धोपादाने (भ्वा०) धातोर्लोट् । 'पाघ्रा०' सूत्रेण शिति जिघ्रादेश]

अवजोहिपः अवत्याजये ३ ५३ १६ [अव+ओहाक् त्यागे (जु०) धातोश्छान्दस रूपम्]

अवट अपरिभाषिताऽपरिनिन्दित (अन्व०—निणो) ११ ६१ **अवटेषु**=अपरिभाषितेषु मार्गेषु १३ ७ [नञ्+वट परिभाषणे (भ्वा०) धातोरच् कर्मणि । तत गम्बुद्धौ रूपम्]

अवट्याय अवटेषु गर्त्तेषु भवाय (भृत्याय) १६ ३८ [अवट कूपनाम निघ० ३.२३ ततो भवार्थे य]

अवत पालयत ६ १८ रक्षत २१ ११ कामयध्वम् २ ३१ २ **अवतम्**=रक्षनम् १ ११६ ६ रक्षणादिक कुरुतम् १ १०६ ७. प्राप्नुतम् १ १८१ ७ गच्छतम् २ ३१ १ प्रविशतम् १ ३४ ५ प्रवेशयतम् १ ११७ २३ **अवतः**=रक्षत २१.५२. **अवतात्**=रक्षति, प्र०—अत्र लडर्थे लोट् ५ ६ **अवताम्**=रक्षत २ १६ रक्षेताम् २७ १७ **अवति**=रक्षति २ १२ १४ **अवतु**=प्राप्नोतु १० १० प्रवेशयतु २३ १३ रक्षतु प्राप्नोतु वा १८ ३२ **अवथ**=रक्षथ ४ ३६ ५ **अवथः**=रक्षथ १ ११२ १७ वर्धयेतम् १ ११२ २२ **अवतु**=रक्षक हो आर्याभि० २ १ **अवन्ति**=रक्षन्ति १ १७६ ३ रक्षन्त्युपदिशन्ति ३४ ५८ **अवन्तु**=रक्षणादिभि पालयन्तु १ १०६ २ रक्षन्तु ५ ४६ ७ एतद्विद्यामवगमयन्तु प्रापयन्ति वा, प्र०—अत्र पक्षे लडर्थे लोट् १ २२.१६ प्रापयन्ति, प्र०—अत्र अव-धातोर्गत्यर्थात् प्राप्त्यर्थो गृह्यते, लडर्थे लोडन्तर्गतो ण्यर्थश्च १ २३ १२ अन्व०—उन्नत सम्पादयन्तु २० ११ प्रवेशयन्तु ४ ११ रक्षा करे आर्याभि० १ ११ कामयन्ताम् १७ ५४ वर्धयन्तु ७ ३६ ७. [अव रक्षणगतिकान्तिप्रीतितृप्ति-अवगम-प्रवेशादिष्वर्थेषु (भ्वा०) धातोर्लटि लोटि च रूपाणि । अवति गतिकर्मा निघ० २ १४ अवन्तु आगच्छन्तु नि० ११ १६]

अवततधन्वा अवेति निगृहीत तत विस्तृत धनुर्येन स (रुद्र=शूरवीर सेनाध्यक्ष) ३ ६१ [अवतत=अव+तनु विस्तारे धातो क्त । अवततधनुषो समास]

अवतत्य विस्तार्य १६ १३ [अव+तनु विस्तारे (तना०) धातो क्त्वा । क्त्वो ल्यप् समासे]

अवतनुहि अवविस्तृणु १५ ४० विस्तृणुहि, अ०—विनाशय १३ १३ [अव+तनु विस्तारे (तना०) धातोर्लोट्]

अवतन्मसि विरुद्धतया विस्तारयेम १६ ६३ अर्वा-गधो विस्तारयेम १६ ५४ [अव+तनु विस्तारे धातोर्लट्, उत्तमबहुवचनम्, 'इदन्तो मसि' रिति मस इकारान्तत्वम्]

अवतम् रक्षणादियुक्तम् (पर्वत=मेघम्) १ ८५ १० रक्षकम् (इन्द्र=विद्युतम्) ३ ४६ ४ [अव रक्षणादिषु (भ्वा०) धातोर्बाहुलकाद् अतच्]

११३५.२ प्राप्नुयात् प्र०—ऋधातोर्लेट् प्रयोगोऽयम् ११३५२ प्राप्नोति, भा०—धावति २३५५ **अर्षन्ति**=वर्षन्ति ११२५५ गच्छन्ति ४५८६ प्राप्नुवन्ति, प्र०—अत्र विकरणव्यत्ययेन शप् २.२५४. प्रापयन्तु, प्र०—लेट्-प्रयोगोऽयम् ११०५१२ गच्छन्ति निस्सरन्ति १७६३ गच्छन्ति प्राप्नुवन्ति, भा०—धावन्ति १७६४ **अर्षन्तु**=प्राप्नुवन्तु ३३०६ **अर्षात्**=प्राप्नुयात् ३३३११ [ऋ गतिप्रापणयो (भ्वा०) धातोर्लेट्। ऋषी गतौ (तु०) धातोर्वा लटि लोटि रूपाणि। विकरणव्यत्ययेन शप्]

अर्हणा सत्कृतानि (हव्यानि) ११२७६ [अर्ह पूजायाम् (भ्वा०) धातोर्णिचि 'ण्यासश्रन्थो युच्' इति युच् प्रत्यय]

अर्हति योग्यो भवति २१४२ **अर्हथः**=(तुम) योग्य हो ४४७२ **अर्हसि**=कर्तुं योग्योऽसि ११३४६ [अर्ह पूजायाम् (भ्वा०) धातोर्लट्]

अर्हते योग्याय (जातवेदसे=विदुषे जनाय) १६४१ **अर्हन्**=योग्यो भवन् (राजपुरुष) २३३१० सत्कुर्वन् (सज्जन) ७१८२२ **अर्हन्तः**=सत्कुर्वन्त (जना) ५७२ योग्यता प्राप्नुवन्त (नर=नायका जना) ५५२५ **अर्हन्ता**=पूज्यौ (इन्द्राग्नी=नरेशसेनापती) ५८६५ [अर्ह पूजायाम् (भ्वा०) धातो 'अर्ह प्रशसायाम्' अ० ३२१३३ सूत्रेण पूजाया शतृप्रत्यय]

अर्हरिष्वनिः योऽर्हान् हिमकाश्च सम्भजति स (सूर्य) १५६४

अर्हात् योग्यात् (विदुषो जनात्) २२३१५ [अर्ह पूजायाम् (भ्वा०) धातोरच् प्रत्यय]

अर्हामसि योग्या भवाम ४५५७ [अर्ह पूजायाम् (भ्वा०) धातोर्लट्। 'इदन्तो मसि' अ० ७१४६ सूत्रेण मस इकारान्तत्वम्]

अलकम् अर्थप्रयोजनरहितम् प० वि०। [अल भूषणपर्याप्तिवारणेषु (भ्वा०) धातोर्बाहुलकाद् क्वुन् प्रत्यय]

अलज. पक्षिविशेष २४३४

अललाभवन्तीः अलला अलला इव शब्दयन्ती (नदी) ४१८६

अलातृणः योऽल तृणाति स (इन्द्र=परमैश्वर्यप्रापको राजा) ३३०.१० [अलम् उपपदे आङ्पूर्वकात् तृदिर् हिंसायाम् (रुधा०) धातोर्युच्। दकारस्य लोपो गुणाभावश्च। 'अलम्' शब्दस्य मलोप। पृषोदरादित्वाद् रूपसिद्धि.। अलातृणो ऽलमातर्दनो मेघ नि० ६२ अलातृण पदनाम निघ० ४३]

अलिनासः अलिना=सुभूषिता नासिका येषान्ते (आर्या राजजना) ७१८७ [अल भूषणपर्याप्तिवारणेषु (भ्वा०) धातोर्बाहुलकाद् इ प्रत्यय। तस्य नासिकापदेन बहुव्रीहौ समासे नसादेश समासान्त]

अलिप्सत लिम्पन्ति ११६१.१ [लिप उपदेहे (तुदा०) धातोर्लुङ्। मध्यमबहुवचनम्]

अल्गाभ्याम् अल गन्तृभ्याम् (प्राणिभ्याम्), प्र०—अत्र छान्दसो वर्णलोप इति टिलोप २५६ [अलम् उपपदे गम्लृ गतौ (भ्वा०) धातो तृच् प्रत्यय। द्वयोरपि पदयो टिलोपश्छान्दस]

अल्पाञ्जि अल्पगति (पशु पक्षी वा) २४४ [अल्पोपपदे अञ्जू गतौ (रुधा०) धातोरौणादिक इ प्रत्यय]

अव विनिग्रहार्थे, प्र०—अवेति विनिग्रहार्थीय निरु० १३, १.११.७ अर्वागर्थे १३३७ क्रियार्थे १२४१४ निरोधे १५४४ निवारणे ४१४ निषेधे ५२६ नीचाऽर्थे १३२२ पृथक्करणे १२४१३ [अवेति विनिग्रहार्थीय नि० १३]

अव रक्ष वर्धय वा ७४१३. रक्षणादिक कुर्या ११०२.४ रक्ष रक्षति वा, प्र०—अत्र पक्षे व्यत्यय २६ प्रवेशय ३.५३३ पाहि ५३५८ जानीहि १२८३ प्राप्नुहि १२८२ प्रापय ११०२३ [अव रक्षणगतिकान्तिप्रीत्यादिषु (भ्वा०) धातोर्लोट्]

अवऋत्यै विरुद्धप्राप्तये (वधाय=हननाय) ३०१२ [अवेति विनिग्रहार्थीय नि० १३ ऋति=ऋ गतौ धातो क्तिन्]

अवकया यया अवन्ति रक्षन्ति तया क्रियया १७४ अवकाम्=रक्षिकाम् (मृदम्=मृत्तिकाम्) २५१ [अव रक्षणगताद्यर्थेषु (भ्वा०) धातोर्धात्वर्थनिर्देशे ण्वुल्। स्त्रिया टापि इत्वाभावश्च। आपो वा अवका श० ७५१११ अथ (आप) यदब्रूवन्नवाङ् न कमगादिनि ता अवाक्का अभवन्नवाक्का ह वै ता अवका इत्याचक्षते परोक्षम् श० ६१२२२ तस्मादवका अपामनुजीवनीयतमा यातयाम्न्यो हि ता श० ६१२.२४]

अवकर्शयन्ति कृश कर्तुं शक्नुवन्ति ६२४७ [अव+कृश तनूकरणे (दिवा०) धातोर्णिचि लटि रूपम्]

अवकोपयः निरोद्धु कोपयसि १५४४ [अव

(अरातय =कृपणा) १ १९ [अव + धूञ् कम्पने धातो क्त । 'यस्य विभाषेति सूत्रेणानिट्त्वम्]

अवधूनुषे अतिकम्पयसि १ ७८ ४ [अव धूञ् कम्पने (क्र्या०) धातोर्लट् । विकरणव्यत्ययेन श्नु]

अवधून्वानः अर्वाक् कम्पयन् (इन्द्र =राजा) ६ ४७ १७ [अव+धूञ् कम्पने (क्र्या०) धातो शानच् । व्यत्ययेन श्नु]

अवध्यम् हन्तुमयोग्यम् (इन्द्र =मन्त्रिणम्) १७ २४ हन्तुमनर्हम् (ईश्वर सभाध्यक्ष च) ८ ४६ [हन हिंसागत्यो (अदा०) धातोर् ण्यत् । 'बहुल सञ्ज्ञाछन्दसोरि' ति धातोर्वधादेश । नञ्समास]

अवन् रक्षन् (विद्वान् राजा) ७ ४६ २ [अव रक्षणादिपु धातो शतृ]

अवनद्धम् अधोबद्धम् (नाकादिकम्) १ ११६ २४ [अव+णह बन्धने+क्त । 'नहो ध' इति धकारादेश]

अवनक्षथः प्राप्नुथ १ १८० २ [अव+नक्षति व्याप्तिकर्मा निघ० २ १८ गतिकर्मा निघ० २ १४ धातोर्लट्]

अवनयः भूमय १ ८६ ८ अवन्ति यास्ता नद्य, प्र०—अवनय इति नदीनाम निघ० १ ३, ५ ८५ ६ तटस्था भूमय १ १९० ७ **अवनिम्**=पृथिवीम् १ १४० ५ रक्षिकाम् (मही=पृथिवीम्) ४ १९ ६ **अवनिः**=पृथिवी १ ८१ ३ रक्षक प्रापको दाता, अन्व०—करुणामय (इन्द्र =परमेश्वर) १ ४ १० **अवनीः**=रक्षिका भूमी ६ ६१ ३ पृथिवी प्रति १ ६१ १० रक्षिका (गिर) ५ ११ ५ [अव रक्षणादिपु धातो 'अर्त्तिसृधृ०' उ० २ १०२ सूत्रेणानि प्रत्यय । अवनि पृथिवीनाम निघ० १ १ अवनय अगुलिनाम निघ० २ ५ अवनयो नदीनाम निघ० १ १३ अवनयोऽङ्गुलयो भवन्ति अवन्ति कर्माणि नि० ३ ८]

अवनयामि विनिग्रहेण प्राप्नोमि प्रापयामि वा ५ २५ स्वीकरोमि ७ २५ [अव+णीञ् प्रापणे (भ्वा०) धातोर्लट्]

अवना अवनादीनि रक्षणादीनि ५ ५४.२ [अव रक्षणादिपु (भ्वा०) धातो 'ण्यासश्रन्थो युच्' इति युच् प्रत्यय]

अवनीतम् अर्वाक् प्रापितम् (सर्वगण=लोकम्) १ ११६ ८ **अवनीताय**=अविद्यमानामपगमनाय १ ११८ ७ [अव+णीञ् प्रापणे (भ्वा०) धातो क्त]

अवनोः रक्ष ५ २९ ९ सम्भज ६ १८ ३ [वन सम्भक्तौ (भ्वा०) धातोर्लङ । विकरणव्यत्ययेन उ]

अवन्ती रक्षित्र्यौ (द्यावापृथिवी) १ १८५ ४ **अवन्तीः**=रक्षन्त्य (स्त्रिय) १ १५२ ६ रक्षन्ती सेना प्रजा वा ७ ४६ २ [अव रक्षणादिपु धातो शतृ, तत स्त्रिया ङीप्]

अवन्वन् अवन्ति रक्षणादिक कुर्वन्ति, प्र०—अत्र अवधातोर्विकरणव्यत्ययेन श्नु १ ५१ २ [अव रक्षणादिपु (भ्वा०) धातोर्लङ् । विकरणव्यत्ययेन श्नु]

अवपत् वपति २ १४ ७ [डुवप बीजजन्मनि प्रादुर्भावे च (भ्वा०) धातोर्लङ्]

अवपतन्ती अध आगच्छन्ती (ओपधय =सोमादय.) १२ ९१ [अव+पत्लृ गतौ (भ्वा०) धातो शतृ, तत स्त्रिया ङीप्]

अवपदः आपत्कालात् २ २९ ६ यत्राऽवपद्यन्ते पतन्ति तत (कर्त्तात्=कूपात्) ३३ ५१ [अव+पद गतौ (दिवा०) धातो क्विप्]

अवपद्यते अवगच्छति ४ १३ ५ [अव+पद गतौ (दिवा०) धातोर्लट्]

अवपश्यन् यथार्थ विजानन् (वरुण =ईश्वर) ७ ४९ ३ [अव+दृशिर् प्रेक्षणे (भ्वा०) धातो शतृ । शिति 'पाघ्रा०' इति पश्यादेश]

अवपश्यामि सम्प्रेक्षे १ ३० [अव+दृशिर् प्रेक्षणे (भ्वा०) धातोर्लट् । शिति पश्यादेश]

अवपादि विरुद्ध प्रतिपद्यता प्राप्यताम् १ १०५ ३. [अव+पद गतौ (दिवा०) धातो कर्मणि लुङ्, अडभावश्च]

अवपानेषु अत्यन्तेपु रक्षणेपु १ १३६ ४ [अव+पा रक्षणे (अदा०) धातोर्ल्युट्]

अवप्रियाः विरुद्धतया प्रसन्नताकारका (विप्रा = मेधाविजना) ३ ५१ [अव+प्रीञ् तर्पणे (क्र्या०) धातो 'इगुपधज्ञाप्रीकिर क' अ० ३ १ १३५ सूत्रेण क प्रत्यय]

अवबबाधे अववाधते २ १४ ४ अर्वाक् नाशयामि, अन्व०—अर्वाचीनो यथा स्यात्तथा हन्मि यतो न पुन सम्मुखो भूयादिति भाव ६ १९ [अव+बाधृ विलोडने (भ्वा०) धातोर्लिट्]

अवभर अर्वाचीनतया भर ३४.१४ **अवभरते**= विरुद्ध धरति १ १०४ ३ अन्यायेन स्वीकरोति १ १०४ ३ [अव+भृञ् भरणे (भ्वा०) धातोर्लोट् लट् च]

अवतम् निम्नदेशस्थम् (उत्स=कूपम्) १ ८५ ११ अधोगामिनम् (मेघस्य मुख्यभागम्) २ २४ ४ रक्षणीय वेद्यादिगर्त्तम् ३३ १६ वृद्धम् (सोमम्) १ १३० २ [अवत कूपनाम निघ० ३ २३ [अवत =अवातितो महान् भवति नि० ५ २६]

अवतरम् अवाङ्मुख क्षुद्रमिव (दुर्जनम्) १ १२९.६ [अव+तॄ प्लवनसतरणयोर् धातो 'ऋदोरप्' इत्यप् प्रत्यय]

अवतात् हिसकाद्रक्षकाद्वा (जनात्) १ ११६ २२ [अव रक्षणादिषु धातोर्बाहुलकाद् अतच् । तत पञ्चमी]

अवताः कूपा ४ ५० ३ **अवते**=कूपे प्र०—अवत इति कूपनाम, निघ० ३ २३, ४ १७ १६ [अव रक्षणादिषु धातोरतच् । अवत इति कूप नाम निघ० ३ २३]

अवतस्थे अवतिष्ठते ५.४४ ६ प्राप्त होता हू स० प्र० २३८, १० ४८ ५ [अव+ष्ठा गतिनिवृत्तौ (भ्वा०) धातोर्लिट् । 'समवप्रविभ्य स्थ' इत्यात्मनेपदम्]

अवतारीः दु खात्तारय ६ २५ २ [अव+तॄ प्लवन-सतरणयोर्धातोर्लुङि मध्यमैकवचनम् । अडभावश्च]

अवतासः सर्वतो रक्षिता (मनुष्या) १ ५५ ८ [अव रक्षणादिषु धातोर्बाहुलकाद् अतच् प्रत्यय । प्रथमा-वहुवचनम्]

अवतोकाम् निरपत्याम् (स्त्रियम्) ३० १५ [अव पृथक्करणे । तोकमित्यपत्यनाम निघ० २ २ तयो समास]

अवत्तानाम् गृहीतानाम् (जनानाम्) २१ ४४ नम्री-भूतानामुत्कृष्टानामङ्गानाम् २१ ४३ उदारचेतसाम् (सज्जनानाम्) २१ ४५ [अव+डुदाञ् दाने (जु०) धातो क्त । 'अच उपसर्गात्त' इति तकारादेशे 'खरि च' इति चर्त्वे पष्ठीबहुवचने रूपम्]

अवत्सारस्य योऽवतो रक्षकान् सरति प्राप्नोति तस्य (क्षत्रस्य=राष्ट्रस्य) ५ ४४ १० [अव रक्षणादिषु धातो-र्बाहुलकादतच् प्रत्ययेऽवत । तदुपपदे सृ गतौ धातोरण् । अवतस्याकारलोपश्च]

अवदन् उपदिशन्तु १२ ९१. **अवदन्त**=परस्पर सवाद कुर्यु १२ ९६ **अवदः**=वदे ३ ३० ५ [वद व्यक्तायां वाचि धातोर्लङ् । 'अवदन्त' प्रयोगे व्यत्ययेनात्मने-पदम्]

अवदन् कहते हुए (विद्वज्जना) १ ११७९ २ [वद व्यक्ताया वाचि धातो शतृ । नञ्समास]

अवद्यगोहना अवद्यानि गर्ह्याणि निन्दितानि दु खानि गूहत आच्छादयतो दूरीकुरुतस्तौ, (अश्विना=विद्वज्जनौ) प्र०—अवद्यपण्य० अ० ३ १ १०१ इत्यय निन्द्यार्थे निपातित, ण्यन्ताद् गूह सवरणे इत्यस्माद्धातो 'ण्यास-श्रन्थो युच्, अ० ३ ३१ ७ इति युच् 'ऊदुपधाया गोह' अ० ६ ४ ८८ इत्यूदादेशे प्राप्ते 'वाच्छन्दसि सर्वे विधयो भवन्ति' इत्यस्य निषेध 'सुपा सुलुग्०' इत्याकारादेशश्च १ ३४ ३ [अवद्यम्=नञ्युपपदे वद व्यक्ताया वाचि धातो 'अवद्यपण्य०' सूत्रेण यत् प्रत्ययान्तो निपात्यते गर्ह्येऽर्थे । गूह सवरणे धातोर्णिचि 'ण्यासश्रन्थो युजि' ति युच् । तयो समास]

अवद्यम् निन्दित कर्म ५ ५३ १४ गर्ह्यम् (शब्दम्) ४ १८ ७ **अवद्यात्**=अधर्माचरणान्निन्द्यात् ७ ४ ६ निन्दितात् (अभिशस्ते =हिसकात्) १ ९३ ५ पापाचरणात् ४ १५ निन्दनीयात् (दुरितात्=दुष्टाचारात्) ७ १२ २ निन्द्यादधर्म्यादाचरणात् ३.३१ ८. निन्द्याद् दु खात् ३३ ४२ **अवद्यानि**=निन्द्यानि कर्माणि ६ ६६ ४ [नञ्युपपदे वद व्यक्ताया वाचि धातोर्गर्ह्यार्थे 'अवद्यपण्य०' सूत्रेण यत्]

अवद्यमिव निन्दनीयमिव (स्वाऽपत्यम्) ४ १८ ५

अवधम् अमरणम् १ १८५ ३ [हन हिंसागत्यो (अदा०) धातो 'हनश्च वध' अ० ३ ३ ७६ सूत्रेणाप् प्रत्ययो भावे, वधादेशश्च । नञ्समास]

अवधवन्ते चालयन्ति ६ ४७ १४ [अव+धूञ् कम्पने (क्र्या०) धातोर्लट् । व्यत्ययेन शप्]

अवधावति निपतति १ १६२ ११ गच्छति २५ ३४ [अव+धावु गतिशुद्ध्यो (भ्वा०) धातोर्लट्]

अवधिष्म हन्याम ९ १८ ताडयेम ९ ३८ **अवधीत्**=हन्ति १ ५२ २ नाश करे ५ ३४ ४ **अवधीः**=हसि १ ८० ७ हन्यात् ६ २७ ४ हन्या ४ ३० १५ हिन्धि, प्र०—अत्र लोडर्थे लुड् १ ३३ १२ [हन हिंसागत्यो (अदा०) धातोर्लुङ् । 'लुङि च' इति सूत्रेण वधादेश]

अवधुक्षत अलङ्कुरुते ६ ४८ १३ [अव+धुक्ष सन्दीपनक्लेशनजीवनेषु (भ्वा०) धातोर्लोट् । अत्राल-करणेऽर्थे]

अवधूतम् विनाशितम् (रक्ष =दु ख, निवारणीयम्) १ १९ दूरीकृत विचालितम् (रक्ष =दुष्टस्वभावो जन्तु) १ १४ **अवधूताः**=दूरीभूता, निवारिता (अरातय = शत्रव) १ १५ निवारणीया, विचालिता हृता

अवयासिसीष्ठाः मा कुर्याः मनिषेधं याया प्राग्नुया २१ ३ निवारयितु प्रेरयेथा, प्र०—अत्र 'वाच्छन्दसि' इति मूर्धन्यादेशाऽभाव ४ १ ४

अवयुनम् अज्ञानाऽन्धकाररूपम् ६ २१ ३ [अज गतिक्षेपणयोर्धातो 'अजियमिगीङ्भ्यश्च' उ० ३ ६१ सूत्रेण उनन्। अजेर्वी आदेश । नञ्समास । वयुनम् प्रशस्यनाम निघ० ३ ८ प्रज्ञानाम निघ० ३ ९ पदनाम निघ० ४.२ वयुन वेते, कान्तिर्वा प्रज्ञा वा नि० ५ १५ वयुनवत्= प्रज्ञानवत नि० ५ १५ वयुनानि प्रज्ञानानि नि० ८ २०]

अवये धर्म मे विपरीत चलने वाले (दुर्जन) को आर्याभि० १ २६, ८ ४७ १५.

अवरम् अर्वाचीनम् (नाम=आग्याम्) १ १५५ ३. कार्यम् १ १६८.६ **अवरान्**= अर्वाचीनानाकाशादीन् १७ १७ नीचाननुत्कृष्टगुणस्वभावान् (मनुष्यान्) ११ ७१ **अवरासु**=अर्वाचीनासु (ओषधीषु) १ १४१ ५ अवरे= अर्वाचीने (जन्नन्=जन्मनि) २ ९ ३ अर्वाचीना, भा०—निकृष्टा (पितर) १९ ४९ **अवरेण**=अर्वाचीनेन (पदा= पदेन) १ १६४ १७ **अवरेभ्य** =मध्यमेभ्यो निकृष्टेभ्यो वा (गात्रेभ्य) २३ ४४. अनुत्कृष्टेभ्य (जनेभ्य) ५ ४२. [अवरे परे नि० ११ १६. अवरेभ्योऽमात्यानुक्तनधर्मभ्य नि० १ २०]

अवरस्पराय योऽवरेषा परस्तस्मै (गत्रवे) ३० १९.

अवरासः अर्वाचीना जिज्ञासव ६ २१ ६ [अवरप्राति० प्रथमाबहुवचनम्]

अवरोकिणः अवरोधका (पशव पक्षिणो वा) २४ ६ [अव+रुधिर् आवरणे धातोर्णिनि । धकारस्य ककारो व्यत्ययेन]

अवरोधनम् रुकावट म० वि० १९६, ९ ११३ ८ [अव+रुधिर् आवरणे (रुधा०) धातोर्ल्युट्]

अवरोहन् अवरोह कुर्वन् (विद्वज्जन) ५ ७८ ४. [अव+रुह बीजजन्मनि प्रादुर्भावे च (भ्वा०) धातो शतृ]

अवर्त् आवर्तते ७ ५९ ४. [वृतु वर्त्तने (भ्वा०) धातोर्लङ् । 'बहुल छन्दसीति' शपो लुक्]

अवर्त्तत वर्त्तमान आसीत् २५ १० वर्त्तये २७ २५ वर्त्तते ३१ १७. **अवर्त्तन्त**=वर्त्तन्ते ५ ३१ ५. [वृतु वर्त्तने (भ्वा०) धातोर्लङ्]

अवर्त्तयत् वर्त्तयति २ ११ २० वर्तमानं कारयति ऋ० भू० १४४ वे० को० ६ ८ ३ **अवर्त्तयः**=प्रवर्त्तय १.१२१ १३ [वृतु वर्त्तने (भ्वा०) धातोर्णिचि लङ्]

अवर्त्तिम् अवर्त्तमानाम् (ऐश्वर्यसम्पत्तिम्) ३.५८ ३ अवाच्यम् १ ११८.३. अमार्गम् ५ ७६ २ [वृतु वर्तने (भ्वा०) धातो 'इन् अजादिभ्य' वार्त्तिकेन इन् । बाहुलकाद्वा इ. प्रत्यय. । नञ्समास]

अवर्त्या अवर्त्तनीयानि (आन्त्राणि=उदरस्था स्थूला नाडी) ४ १८.१३ [वृतु वर्त्तने (भ्वा०) धातोर्ण्यत् । नञ्समास.]

अवर्त्रः अनिवारणीय (अग्नि=राजा) ६.१२ ३.

अवर्द्धताम् वर्धयत २८ १५ वर्धयताम् २८ १३ वर्धेत २८.६ **अवर्धन्**=वर्धयेयु. ३ ३५ ९ वर्धेरन् १२ २०. अ०—अवर्धयन् ३३ ६४ वर्धन्ताम् ५ २९.११ वर्धयन्ति ५ ३१ १० [वृधु वृद्धौ (भ्वा०) धातोर्लङ् । अवर्धन् प्रयोगे व्यत्ययेन परस्मैपदम्]

अवर्धत वर्धते १ ३३ ११ **अवर्धन्त**=वर्धन्ते १.७५ ७ [वृधु वृद्धौ (भ्वा०) धातोर्लङ्]

अवर्धन् वर्धन्तम् (सखायम्) ५ २९ ११

अवर्धयत् वर्धयेत् २८ २२ वर्धयेत २८ १९ वर्धयति २८ २१ वर्धयन्ति २८ ३९ **अवर्धयन्**=वर्धयन्ति २१ ५१. वर्धयन्तु २० ६८ समुन्नयेयु. २० ७३ वर्धयेयु २८ ४१ **अवर्धयन्**=वर्धयन्तु ३ १४ **अवर्धयः**= वर्धयति २ ११ १५ [वृधु वृद्धौ (भ्वा०) धातोर्णिचि लङ्]

अवर्षी. वर्षयति ५ ८३.१० [वृषु सेचने (भ्वा०) धातोर्लुङ्]

अवर्ष्याय अविद्यमानासु वर्षासु भवाय (पुरुषाय) १६ ३८. [वर्षाप्राति० भवार्थे यत् । नञ्समास]

अवलिप्ताः अवलिप्तान्युपचितान्यङ्गानि येषान्ते (पशव) २४ ३ [अव+लिप उपदेहे (तुदा०) धातो. क्त.]

अववाति विनिग्रहेण गच्छति १.५८ ५ [अव+वा गतौ (अदा०) धातोर्लट्]

अवविद्धम् अनाडितम् (तौग्र्यम्) १.१८२ ६. [अव+व्यध ताडने (दिवा०) धातो क्त]

अववृत्रन् वर्त्तन्ते, प्र०—अत्र 'वृतु वर्त्तने' इत्यस्माद्वर्त्तमाने लङ्, व्यत्ययेन परस्मैपद प्रथमस्य बहुवचने 'बहुल छन्दसि' इति रुडागमश्च १ १६४ ४७ आवृण्वन्ति ३.३२ १५

अववृत्रन् अर्वाचीनो वृत्र इवाचरत् (राजगिल्पी) प्र०—अत्राचारे सुबन्तात् क्विप् १० १९ [अव+वृत्र प्राति० आचारेऽर्थे क्विप् । ... क्त]

अवभाति प्रकाशते १ १५४ ६ [अव+भा दीप्तौ (अदा०) धातोर्लट्]

अवभारि अवभ्रियते, प्र०—अत्र लडर्थे लुङ्, भृञ् धातोश्चिणि परेऽडभाव 'बहुल छन्दस्यमाङ्योगेऽपि अ० ६ ४ ७५ इति सूत्रेण ६ ३ [अव+भृञ् भरणे धातोर्लुङ् कर्मणि । अडभावश्च]

अवभृथ विद्याधर्मानुष्ठानेन शुद्ध (निचुम्पुण=धैर्येण शब्दविद्याव्यापक) प्र०—अत्र 'अवे भृञ' उ० २ ३ इति क्थन् प्रत्यय ३ ४८ विद्याव्रतस्नातक (वरुण=वरप्रापक विद्वन्) २० १८ यो निषेकेण गर्भं बिभर्त्ति तत्सम्बुद्धौ (हे पते) ८ २७ **अवभृथः**=शोधनम् १९ २८ यज्ञान्त-स्नानादिकम् १८ २१. **अवभृथाय**=पवित्रीकरणाय यज्ञान्तस्नानाय वा ८ ५९ [अव+भृञ् भरणे धातो 'अवे भृञ' उ० २१ सूत्रेण उ प्रत्यय । अवभृथो ऽपि निचुम्पुण उच्यते नि० ५ १८ अवभृथ तद् यदपो ऽभ्यवहरन्ति तस्मादवभृथ श० ४ ४ ५ १ यो ह वायमपा-मावर्त्त स हावभृथ सहैष वरुणस्य पुत्रो वा भ्राता वा श० १२ ९ २ ४ वरुण्यो वा अवभृथ श० ४ ४ ५ १० समुद्रोऽवभृथ तै० २ १ ५ २]

अवभेत् विनिग्रहेण भिन्द्यात् १ ५९ ६ [अव+भिदिर् विदारणे (रुधा०) धातोर्लङ् । विकरणलुक् च]

अवभेदिने शत्रूनवभेत्तु विदारयितु शीलाय, (आ०—दूताय) १६ ३४ [अव+भिदिर् विदारणे (रुधा०) धातो-स्ताच्छील्ये णिनि]

अवमम् निकृष्टम् तृणमृत्तिकाक्षुद्रक्रमिकीटादिक जगत् ऋ० भू० १३५ अथ० १० ७ ८ रक्षादिसाधक-मुत्तममर्वाचीन वा (ऋतम्=सत्यमुदक वा) १ १०५ ४ निकृष्ट रक्षक वा (वसु=द्रव्यम्) ७ ३२ १६ **अवमस्य**=अर्वाचीनस्य (सम्बन्धिजनस्य) ६ २१ ५ **अवमः**=रक्षक. (अग्नि=अध्यापको राजा वा) ४ १ ५ **अवमा**=कनि-ष्ठानि, भा०—निकृष्टानि (धामानि=जन्मस्थाननामानि) १७ २१ अर्वाचीनानि (सदासि=वस्तूनि) ३ ५४ ५ निकृष्टा (ऊति=रक्षा) ६ २५ १ **अवमाय**=अवराय रक्षकाय वा (जनाय) २ ३५ १२ **अवमे**=निकृष्टे (वृजने=व्यवहारे) १ १०१ ८ रक्षितव्ये व्यवहारे १ १८५ ११ **अवमैः**=अधमैं (अमित्रैं=शत्रुभि) ३ ३० १६ **अवमस्याम्**=अनुत्कृष्टगुणायाम् (पृथिव्याम्) १ १०८ ९ [अव रक्षणादिषु (भ्वा०) धातो 'अवद्या-वमाधमार्वरेफा कुत्सिते' उ० ५ ५४ सूत्रेण अम प्रत्यय । अवम इति अन्तिकनामसु पठितम् निघ० २ १६]

अवमार्जनानि शोधनानि १ १६३ ५ शुद्धिकरणानि २९ १६ [अव+मृजू शौचालङ्करणयो (चु०) धातोर्ल्युट]

अवमीत् उपदिशेत् १७ ६ [टुवम उद्गिरणे (भ्वा०) धातोर्लुङ्]

अवमृड आनन्दय १६ ५०. [अव+मृड सुखने (तुदा०) धातोर्लोट्]

अवयक्ष्व सङ्गच्छस्व ४ १ ५ सङ्गमय, प्र०—अत्र 'बहुल छन्दसि' इति विकरणाऽभाव २१.४ [अव+यज-देव पूजासगतिकरणदानेषु (भ्वा०) धातोर्लोट् । 'बहुल छन्दसि' सूत्रेण शपो लुक्]

अवयजनम् दूरीकरणम्, पृथक्करणम्, परिहरणम् वा ८ १३ दूरीकरणसाधनम् २० १७ छुडाने वाला (ब्रह्म) आर्याभि० २ १९, ८ १३ दूर करने वाला (ब्रह्म) आर्याभि० २ १९ नाशक (ब्रह्म) आर्याभि० २ १९ [अव+यज देवपूजासगतिकरणदानेषु (भ्वा०) धातोर्ल्युट्]

अवयजामहे नाशयाम ऋ० भू० २३९ दूर सङ्ग-च्छामहे, अन्व०—दूरीकुर्म्म ३ ४५ [अव+यज देवपूजा-सगतिकरणदानेषु (भ्वा०) धातोर्लट्]

अवयत् वेति प्राप्नोति २१ ४४ व्याप्नुयात् २१.४५ [वय गतौ (भ्वा०) धातोर्लङ्]

अवयताम् धर्मविरोधिनाम् (मरुता=मनुष्याणाम्) १ ९४ १२ [वय गतौ (भ्वा०) धातो शतृ । नञ्समास]

अवयाः योऽवयजति विरुद्ध कर्म न सङ्गच्छते स (परमेश्वर) १ १७३ १२ योऽवयजते विनिगृह्णाति स. (अ०—यजमान) ३ ४६ [अव+यज देवपूजासङ्गति-करणदानेषु (भ्वा०) धातो 'अवे यज' अ० ३ २ ७२ सूत्रेण ण्विन् प्रत्यय]

अवयातहेलाः अवयात दूरीभूत हेळो यस्मात् स (सभेश) १ १७१ ६ [अवयातम्=अव+या प्रापणे (अदा०) धातो क्त । हेडृ अनादरे धातोर्घञ् प्रत्यये हेड । तयो समास]

अवयाता विरुद्ध गन्ता (इन्द्र=सभेश) १ १२९ ११ [अव+या प्रापणे (अदा०) धातोस्तृच्]

अवयानम् अपगमन निस्सनम् १ १८५ ३ [अव+या प्रापणे+ल्युट्]

अवयासि अवयासि, प०—अत्र पुरुषव्यत्यय ४ १३ ४ [अव+या प्रापणे (अदा०) धातोर्लट्]

अवस्थाः अवतिष्ठन्ति विरुद्ध प्राप्नुवन्ति यासु ता वर्त्तमाना दशा ५ १६ १ [अव+ष्ठा गतिनिवृत्ती 'आतश्चोपसर्गे' अ० ३ ३ १०६ सूत्रेण अङ् स्त्रियाम् । तत टाप्]

अवस्परत् पालयति ६.४२४. [अवस् उपपदे पॄ पालनपूरणयो (चु०) धातोर्लेट् । विकरणव्यत्ययेन शप्]

अवस्पर्त्तः अवसा रक्षणेन दुःखात्पारकर्त्त (वृहस्पते=परमेश्वर सभेश वा) २ २३ ८ [अवस् उपपदे पॄ पालन-पूरणयो (जु०) धातोस्तृचि सम्बुद्धि]

अवस्पृधि अभिकाङ्क्ष ५ ३ ६ [अव+स्पृ प्रीति-पालनयो (भ्वा०) धातोर्लोट् 'वहुल छन्दसीति' विकरणस्य लुक्]

अवस्फूर्जते अधो वज्रवद् घात कुर्वते (विद्युते) २२ २६ [अव+टुओस्फूर्जा वज्रनिर्घोपे (भ्वा०) धातोर्लट् । व्यत्ययेनात्मनेपदम्]

अवस्फूर्जन् अर्वाचीन घोष कुर्वन् (प्राणी) १५ १६ [अव+टुओस्फूर्जा वज्रनिर्घोपे (भ्वा०) धातो शतृ]

अवस्य विरोधेनाऽन्त प्रापय ४ १६ २ निश्चिनुहि ६ ४० १ [अव+षोऽन्तकर्मणि (दिवा०) धातोर्लोट्]

अवस्यते आत्मनोऽवो रक्षणादिकमिच्छते १.११६ २३ [अव रक्षणादिपु धातोर् असुन् । तत आत्मन इच्छाया क्यच् तत शतृ]

अवस्यवः आत्मनोऽवमिच्छव (जना) १ १३१ ३ आत्मनोऽवो रक्षणादिकमिच्छव (मनुष्या) १ १० १ १ आत्मनोऽवो रक्षणादिकमिच्छन्तस्तच्छीला (ऋत्विज), प्र०—अत्र अवधातो 'सर्वधातुभ्योऽसुन्' उ० ४ १८६ इति भावेऽसुन् तत 'सुप आत्मन क्यच्' इति क्यच् प्रत्यय, तत. 'क्याच्छन्दसि' अ० ३ २ १७० अनेन ताच्छील्य उ प्रत्यय १ १४ ५ **अवस्यवे**=रक्षामिच्छवे (ब्रह्मणे=परमात्मने) अवस्युम्=आत्मनोऽव रक्षणमिच्छु कामयमान वा (जनम्) ५ ७५ ८ **अवस्युः**=आत्मनोऽवो रक्षणमिच्छु (कवि = मेधाविजन) ५ ३१ १० [अव रक्षणादिपु (भ्वा०) धातोरसुन् । अवस्पदात् 'सुप आत्मन क्यच्' इति क्यच् । 'क्याच्छन्दसी' ति उ प्रत्यय । अय वाऽवस्युरशिमिदो योऽय (वात) पवते श० १४ २ २ ५]

अवस्यूः आत्मनोऽव इच्छु, भा०—स्वात्मवत्सर्वेषा रक्षक (विद्वज्जन) १८ ४५ योऽवसीव्यति तारादितन्तून् सन्तानयति वा स (भगवान्) ५ ३२ अपने भक्तो धर्मात्माओं को अन्नादि पदार्थ देने की सदा इच्छा करने वाला (भगवान्) आर्याभि० २ १७, ५ ३२. [अवस्यु-व्याख्यातो रक्षणार्थे । अन्यत्र—अव+सिवु तन्तुसन्ताने (दिवा०) धातो कर्त्तरि क्विप् । वकारस्य ऊठ्]

अवस्युवम् आत्मनोऽवमिच्छन्तीम् (विदुपीम्) ५ ४६ १ [अवस्युपदे द्रष्टव्य । अम् प्रत्यये 'तन्वादीना छन्दसि वहुलम्' अ० ६ ४ ७७ वार्त्तिकेन उवङ्]

अवस्रन् वसन्ति ४ २ १९ [वस निवासे (भ्वा०) धातोर्लङ् । 'वहुल छन्दसि' अ० ७ १ ८ सूत्रेण रुडागम]

अवस्रजेत् वैपरीत्येन गमयेत् १ १२६ ६ [अव+सृज विसर्गे (तुदा०) धातोर्लिङ् । रेफादेशश्छान्दस]

अवस्रवेत् समन्ताद् दण्डयेत् १ १२६.६ [अव+स्रु गतौ (भ्वा०) धातोर्लिङ्]

अवस्रसः अवसारयति २ १७ ५ [अवपूर्वकसृ गतौ धातोश्छान्दस रूपम्]

अवस्वन्याय अर्वाचीनेपु स्वनेपु भवाय (मनुष्याय) १६ ३१ [अव+स्वन अवतसने, शब्दे च (भ्वा०) धातोरच् । ततो भवार्थे यत्]

अवहत् प्राप्नोति ३ ५३ ६ **अवहन्**=प्राप्नुवन्ति ४ ३३ २ प्राप्नुयु १ ५१ १० **अवहः**=प्राप्नुहि ५ ३१ ८ वहति प्राप्नोति २ १३ ८ [वह प्रापणे (भ्वा०) धातोर्लङ्]

अवहन् अवहन्ति ५ ३२ १ अवहन्यात् ५ २९ ४ [अव+हन हिंसागत्यो (अदा०) धातोर्लङ् । अडभावश्च]

अवहन्ता विरुद्धस्य हननकर्त्ता (इन्द्र = राजपुरुष) ४ २५ ६. [अव+हन हिंसागत्यो (अदा०) धातोस्तृच्]

अवहितः अवस्थित (विद्वान्) १ १०५ १७ [अव+डुधाञ् धारणपोपणयोर् धातो क्त । 'दधातेर्हि' रिति हिरादेश]

अवंशात् असन्तानात् ७ ५८ १ **अवशे**=अविद्यमाने वश इव वर्त्तमानेऽन्तरिक्षे २ १५ २ अविद्यमानो वशो ययोस्तेऽन्तरिक्षस्थे (द्यावापृथिवी=सूर्यभूमी) ४ ५६ ३ [नञ्-वशयो समास । वश =टुवम उद्गिरणे (भ्वा०) धातो श प्रत्यय । स च द्विविध =जन्मना विद्यया च]

अवः रक्षे १ १२१ १२ [अव रक्षणादिषु (भ्वा०) धातोर्लङ् । आडभावश्च]

अवः रक्षणम् ४ १ २० अवनम् रक्षणम्, प्र०—अत्र भावेऽसुन् १ १७ १ रक्षणादिकम् ३३ १७ रक्षकम् (सैन्यम्) १.११६ ४ [अव रक्षणादिपु (भ्वा०) धातोरसुन् प्रत्यय]

अवः अधस्तात् १ १६४ १७ अधोमुखम् १.१३३ ६

अववृत्रन्त विरोधेन धन प्राप्नुवन्तु ४ २४ ४. (अव+वृत्रप्राति० आचारेऽर्थे क्विप्। तत लङ्, अड-भावश्च]

अवव्ययन् दूरीकुर्वन् (सविता=सूर्य) ४.१३ ४ [अव+व्यय गतौ (भ्वा०) धातो शतृ]

अवशत् कामयते २ २२ १ [वश कान्तौ (अदा०) धातोर्लङ्। बहुल छन्दसीति शपो लुङ् न। वष्टि कान्तिकर्मा निघ० २ ६]

अवसम् रक्षणादिकम् १ ६३ ४ रक्षण स्वाम्यर्थ वा ३ ६१ **अवसः**=रक्षादे ५ ५७ ७ कमनीयस्य (विदुष जनस्य) ५ २२ ३. रक्षणादे ३ ५१ ६. रक्षणस्य ४ २१ १० **अवसा**=रक्षणाद्येन १ १२४ १३. रक्षणादिना १ १०७ ३ पालनादिना १८ ३१ रक्षाविद्याप्रवेशादि-कर्मणा सह १ २२ ११ विज्ञानेन तदुपकारकरणेन वा १ १७ ६ अन्नादिना प्र०—अव इत्यन्ननाम निघ० २ ७, ५ ७६ ५ **अवसाम्**=रक्षणादीनाम् ४ २३ ३ **अवसि**= रक्षणादौ कर्मणि ५ ६५ ५ **अवसे**=अन्नाद्याय ४.२० २ रक्षणादिने २ २६ १ रक्षणाय बह्वन्नाय वा ७ १ २ कामनायै २ ३४ १४ सम्यक् रक्षा के लिए १ १३. ज्ञानाद्याय ६ २१ ६ रक्षकाय (सभाध्यक्षाय) १ १२७ ४ प्रवेशाय १ २२ १० रक्षणादये १ २२ ६ रक्षणाय ३४ २६ विद्यादिसद्गुणप्रवेशाय ५ १७ १. रक्षणादिप्रयोजनाय १ ४८ १४ क्रियासिद्ध्येपणायै १ १७ २ विजयाऽऽगमाय १ ३५ ४ धर्मात्मना रक्षणाय दुष्टाना च हिंसनाय ४ ३ १ [अव रक्षणगतिकान्तिप्रीत्यादिपु (भ्वा०) धातो 'अत्यविचमि०' उ० ३ ११७ सूत्रेणासच्। अवसाय—पथ्यदनम्, अवर्गेर्गत्यर्थस्यासो नामकरण नि० १ १७ स्यतिरुपमृष्टो विमोचने नि० १ १७ अवसे अवनाय नि० २ २४]

अवसत् वसेत् १ १४४ २ [वस निवासे (भ्वा०) धातोर्लङ्]

अवसर्ज्जनाय त्यागाय १२ ६४ [अव+सृज विसर्गे (द्वि०) धातोर्ल्युट्]

अवसर्प्पति दुष्टेभ्यो विरुद्ध गच्छति १६ ७ [अव+सृप्लृ गतौ (भ्वा०) धातोर्लट्]

अवसानम् अवकाशम्, भा०—यथायोग्यमवकाशम् ३५ १. अवकाशमधिकार वा १२ ४५ **अवसानाः**= अन्ते समीपे स्थिता (युवतय =प्राप्तयौवना स्त्रिय) ३ १ ६ [अव+पोऽन्त कर्मणि धातोर्ल्युट्। प्रतिष्ठा वा अवसानम् कौ० ११ ५]

अवसान्याय अवसानव्यवहारे साधवे (पुरुपाय) १६ ३३. [अवसानप्राति० 'तत्र साधु' इत्यर्थे यत्]

अवसाय रक्षणाद्याय १.१०४ १ [अव रक्षणादिपु (भ्वा०) धातोरौणादिकोऽसच्, तस्मै]

अवसितासः कृतनिश्चया (विद्वासोऽविद्वासो जना.) ४ २५ ८ [अव+षोऽन्त कर्मणि धातो क्त। 'द्यतिस्यति०' सूत्रेणेत्वम्]

अवसृज दूरीकुरु ३ ४.१० **अवसृजत्**=विनिग्रहेण सृजति १ ५५ ६ अवसृजेत् १ १७४ ४ **अवसृजतम्**= निष्पादयतम् १ १५१ ६ **अवसृजन्तु**=सनिपेध निःसार-यन्तु ५ २ ६ **अवसृजः**=सयोजये १ ८९ ५ **अवसृज**= विनिग्रहेण सृजति १ १३ ११ [अव+सृज विसर्गे (तुदा०) धातोर्लोट्]

अवसृजन् अवसर्ग कुर्वन् (वनस्पति =वटादि) २ ३ १० विविधया विद्ययाऽलङ्कुर्वन् (विद्वज्जन) १ १४२ ११ [अव+सृज विसर्गे (तुदा०) धातो शतृ]

अवसृष्टः आज्ञप्त पुरुष २०.४५ **अवसृष्टा**= शत्रूणामुपरि निपतिता (सेना) ६ ७५ १६ प्रेरिता (सेनानी पत्नी) १७ ४५ [अव+सृज विसर्गे (तुदा०) धातो क्त]

अवसृष्टासः सुशिक्षिता (अश्वास =अश्वा) २० ७८ [अव+सृज विसर्गे (तुदा०) धातो क्त। प्रथमाबहुवचनम्]

अवसै निश्चयाय, प्र०—अत्र षोधातो क्विप् 'वाच्छन्दसि' इत्याकारलोपाऽभाव ३ ५३ २० [अव+षोऽन्त कर्मणि धातो क्विप्]

अवस्तात् अधस्तात् ३ २२ ३ पीछे के समय मे ८ ६ अधस्था (आप =जलानि) १२ ४६ अर्वाचीनात् समयात् ८ ६ [अवर प्राति० अस्ताति प्रत्ययो दिग्देश-कालेपु। 'विभाषाऽवरस्य' सूत्रेण अव् आदेश]

अवस्तृणामि विनिग्रहेणाऽऽच्छादयामि ५ २५ [अव+स्तृञ् आच्छादने (स्वा०) धातोर्लट्। व्यत्ययेन श्ना]

अवस्थात अवतिष्ठत ५ ५३ ८ **अवस्थाम्**= अवतिष्ठेयम् २ २७ १७ अवतिष्ठम्व २ २८ ११ **अवस्थाः**=अवतिष्ठन्ति ५ १६ १ [अव+ष्ठा गतिनिवृत्तौ (भ्वा०) धातोर्लुङ्]

अवस्थाः वस्ते ३ ३२ ११ [वस आच्छादने धातो-र्लङ्]

कान्तौ (अदा०) धातो यङ्लुकि लुङि रूपम् । 'ग्रहिज्यादि०' सूत्रे श्तिपा निर्देशेन सम्प्रसारण न भवति]

अवाशयः प्रकाशितवान् १.३१.४ [वाशृ शब्दे (दिवा०) धातोर्णिचि लङि रूपम् । अत्र प्रकाशने धातु-धातूनामनेकार्थत्वात्]

अवाऽश्वैत् वर्द्धते १ २४ ११ [टुओश्वि गतिवृद्धयो (भ्वा०) धातोर्लुङ् । छान्दसत्वात् 'ह्म्यन्तक्षण०' सूत्रेण वृद्धिप्रतिषेधो न । सिचश्च लुक्]

अवासयत् वासयति ६ ३२ २ वासयेत् ३ ७ ३ आच्छादयति १ १६० २ **अवासयः**=वासय ३ १ १७ वासये ६ १७ ५ [वस निवासे (भ्वा०), वस आच्छादने (अदा०) द्वाभ्यामपि णिजन्तात् लङ्]

अवाऽसृजत् अवसृजति २ १२ १२ **अवाऽसृजन्त**=अवसृजन्ते ४ १९ २ **अवाऽसृजः**=अवसृजति ६ ४३ ३ विनिग्रहेण सृज १ ५७ ६ [अव+सृज विसर्गे (तुदा०) धातोर्लङ्]

अवाऽस्य विरुद्धतया प्रक्षिप्य १ १४० १० [अव+असु क्षेपणे (दिवा०) धातोर्लोट्]

अवाऽस्वनीत् शब्दयेदुपदिशेत् ४ २७ ३ [अव+स्वन शब्दे (भ्वा०) धातोर्लुङ्]

अवाहन् वहन्ति ५ ४० ६ [वह प्रापणे (भ्वा०) धातोर्लङ् । छान्दस दीर्घत्वम्]

अवाऽहन् अवहन्ति ४ ३० १४ [अव+हन हिंसा-गत्यो (अदा०) धातोर्लङ्]

अवाहाः त्यजति, प्र०—अत्र 'ओहाक् त्यागे' इत्य-स्माल्लुङि प्रथमैकवचने आगमाऽनुशासनस्याऽनित्यत्वात् सगिटौ न भवत १ ११६ ३ [अव+ओहाक् त्यागे (जु०) धातोर्लुङ्]

अवांसि रक्षणादीनि २७ ३४ बहुविधानि रक्षणानि ४ ५५ ५ [अव रक्षणगतिकान्त्यादिषु (भ्वा०) धातोरसुन्]

अवाः रक्षे, प्र०—अय लेट्-प्रयोग १२ ७ ७ [अव रक्षणादिषु (भ्वा०) धातोर्लेट्]

अविका रक्षिका (राज्ञी) १ १२६ ७ [अव रक्षणादिषु (भ्वा०) धातोर् इन् प्रत्यये ऽवि । तत 'अवे क' इति स्वार्थे क । स्त्रिया टाप्]

अविक्रीतः न विक्रीत ४ २४ ६ [वि+डुक्रीञ् द्रव्य-विनिमये (क्र्या०) धातो क्त । नञ्समास]

अविक्षत प्रविशन्ति १ १६१ ४ [विश प्रवेशने (तुदा०) धातोर्लुङ् । 'शल इगुपधात्०' सूत्रेण च्ले क्स]

अविक्षितासः अविक्षीणा क्षयरहिता. (जना) ७ १ २४ [वि+क्षि क्षये धातो क्त । नञ्समास]

अविचाचलिः सर्वथा निश्चल., भा०—जितेन्द्रिय (राजा) १२ ११ [वि+चल कम्पने (भ्वा०) धातोर्यङ् । तत 'सहिवहिचलिपतिभ्यो यङन्तेभ्य किकिनौ वक्तव्यौ' अ० ३ २ १७१ वार्तिकेन कि प्रत्यय । 'दीर्घोऽकित' इत्यभ्यासस्य दीर्घ । नञ्समास]

अविचृत्यम् अमोचनीयम् (पाश=धर्म्य बन्धनम्) १२ ६५ [वि+चृती हिंसाग्रन्थनयो (तुदा०) धातो क्यप् । नञ्समास । 'ऋदुपधाच्चाक्लृपिचृते' अ० ३ १ ११० सूत्रेण छान्दसत्वात् प्रतिषेधो न भवति]

अविजाताम् अप्रसूता ब्रह्मचारिणी (कुमारीम्) ३०.१५ [वि+जनी प्रादुर्भावे (दिवा०) धातो क्त, नञ्समास, स्त्रिया टाप्]

अविजानन् न विजानन् (प्राज्ञ) १ १६४ ५ [वि+ज्ञा अवबोधने (क्र्या०) धातो शतृ । नञ्समास]

अविज्ञाताः विशेषेणाऽज्ञाता (त्र्यवय =तीन प्रकार की भेडे) २४ ५ न विशेषेण ज्ञाता विदिता (पशव) २४ ६ [वि+ज्ञा अवबोधने (क्र्या०) धातो क्त । नञ्-समास]

अविड्ढि रक्ष, प्र०—अत्राऽवधातो 'वाच्छन्दसि' इति लोट् सिपि अगादेश २ १७ ८ व्याप्नुहि प्र०—अत्र विष्लृधातो शपो लुकि लोटि मध्यमैकवचने हेर्धि ष्टुत्व जश्त्व च 'छन्दस्यपि दृश्यते' इत्यडागम १ ११० ६ प्राप्नुहि २ २४ १ प्रविश २ ३० ८ प्रवेशय ६ ४४ ६ [अव रक्षण-कान्तिप्रीतितृप्त्यवगमप्रवेशादिषु (भ्वा०) धातोर्लोट् । विष्लृ व्याप्तौ (जु०) धातोर्वा लोट्]

अवित प्रविशत रक्षत ७ ५६ ६ [अव रक्षणादिषु (भ्वा०) धातोर्लोट् । इकारादेशश्छान्दस]

अवितवे अवितुम् ७ ३३ १. [अव रक्षणादिषु धातो-स्तुमर्थे तवेन् प्रत्यय]

अवितः रक्षक (राजन्) १ १२६ १० **अविता**=रक्षक (इन्द्र =राजा) ६ ४५ ५ रक्षिता (विद्यार्थी) २७ ४४ रक्षणादिकर्त्ता (विद्वान् ओषधिसमूहो वा) १ ६१ ६. रक्षको ज्ञापक सर्वासु विद्यासु प्रवेशक (परमेश्वर) १ ३६ २ **अवितारम्**=वर्धयितारम् (विद्वासमुपदेशकमध्यापक वा) ७ ३६ ८ प्रीणयितारम् (इन्द्रम्=परमैश्वर्यप्रद राजानम्) २० ५० ज्ञानादिप्रदम् (इन्द्र =राजानम्) ६ ४७ ११ **अवितारा**=रक्षितारौ

अवस्तात् १ १६४ १८ [अवरप्राति० दिग्देशकालेष्वर्थेपु 'पूर्वाधरावराणामसि पुरधवश्चैपाम्' अ० ५.३ ३९ सूत्रेण असि प्रत्यय । अव् आदेशश्च]

अवाऽख्यत् प्रख्यापयेत् १ १६१ ४ [अव+ख्या प्रकथने (अदा०) धातोर्लुङ् । 'अस्यतिवक्ति०' सूत्रेण अङ् प्रत्यय]

अवाचः दुष्टवचनस्य ४ २५ ६ [वच परिभापणे (अदा०) धातो 'क्विप् वचिपृच्छ्या०' अ० ३ २ १७८ वार्त्तिकेन क्विप् दीर्घश्च]

अवाचि उच्यते ६ ३४ ५ [वच परिभाषणे धातो कर्मणि लुङ्]

अवाजति अवजानाति प्रक्षिपति वा १ १६१ १० [अव+अज गतिक्षेपणयोर्धातोर्लट्]

अवाजिनम् अविद्यमाना वाजिनो यत्र सङ्ग्रामे तम् ३ ५३ २३ [नञ् वाजिन् पदयो समास । वाजिन्=अश्वनाम निघ० १ १४]

अवाट् वहसि १६ ६६ [वह प्रापणे (भ्वा०) धातोर्लुङ् । सिचो लुक् छान्दस]

अवातः अविद्यमानो वातो हिंसन यस्य (विदुष सन्तान) १९ ५३ वायुर्वजित (अग्नि) ६ १६ २० अहिंसित (इन्द्र =दु खविदारको जन) ६ १८ १ **अवाता**=वायुविरहा (स्थिरा स्त्री) ६ ६४ ५ **अवाताः**=अविद्यमानो वातो वायु कम्पन यासा ता (नद्य) १ ५२ ४ पतीनप्राप्ता (युवतय =स्त्रिय) ६ ६७ ७ वायुकम्पादिरहिता (पृथिवी) १ ६२ १० **अवाते**=निर्वाते (समये) ६ ६४ ४ [वा गतिगन्धनयो (अदा०) धातो क्त । 'निर्वाणोऽवाते' सूत्रेण वातार्थे नत्व न भवति । नञ्समास । वात पदनाम निघ० ५ ४]

अवातिरत् अध प्रापयति १ १०१ ५ नीचे गिराता है तथा उन डाकुओ को मार ही डालता है आर्याभि० १४४, ऋ० १.७ १२ ५ **अवातिरतम्**=उल्लङ्घयतम् १ १५२ १ तमो हिंस्त, प्र०—अवतिरतिरिति वधकर्मा निघ० २ १९, १ ६३ ४ **अवाऽतिरः**=विनिग्रहेण शत्रुजल प्लावयति, प्र०—अत्र लडर्थे लुङ् विकरणव्यत्ययेन शप स्थाने शश्च १ ११ ७ अवतरेत् १ १३ १ ४ [अव+तॄ प्लवनसतरणयो (भ्वा०) धातोर्लङ् । व्यत्ययेन श प्रत्यय इत्वे च रूपम् । अवतिरति वधकर्मा निघ० २ १९ अवातिरत्=अवाहन् नि० २ २१]

अवात्सीः निवास कृतवान् ऋ० भू० २८९ वे० को०, अथर्व० १५ ११ २ [वस निवासे+लुङ्]

अवाथ रक्षेत ७ ४० ३ अवाथ =रक्षेताम् ७ ६१ २. [अव रक्षणादिपु (भ्वा०) धातोर्लेटि आटि च रूपम्]

अवादीमहि सर्वाणि दु खानि क्षाययेम नाशयेम, प्र०—अत्र दीङ्क्षये इत्यस्माल्लिडर्थे लङ् 'बहुल छन्दसि' इति श्यनो लुक् ३ ५८ [अव+दीङ् क्षये (दिवा०) धातोर्लङ् । श्यनो लुक् च]

अवाऽधुः अधो धरन्तु १ १५८ ५ [अव+डुधाञ् धारणपोपणयो (जु०) धातोर्लुङ्, सिचो लुक्]

अवाधूषत शत्रून् दु खानि वा दूरीकुरुत १ ८२ २ [अव+धूञ् कम्पने (क्र्या०) धातोश्छान्दस रूपम्]

अवान्तरदिशाभ्यः=उपदिशाभ्य २४ २६ [सर्वत इव हीमा अवान्तरदिश श० २ ६ १ ११]

अवाभरत् अवबिभर्त्ति १ १३० ७ [अव+भृञ् भरणे (भ्वा०) धातोर्लङ्]

अवाभिनत् अवभिनत्ति ४ १९ ४ विदृणाति २ ११ १८ [अव+भिदिर् विदारणे (रुधा०) धातोर्लङ्]

अवाऽयक्षि नाशयसि २० १८ [अव+यज देवपूजासगतिकरणदानेपु (भ्वा०) धातो सामान्ये लुङ्]

अवाऽयासिषम् विनिग्रह करोमि, अ०—दूरतस्त्यजामि, प्र०—अत्र लडर्थे लुङ् ३ ४८ [अव+या प्रापणे (अदा०) धातोर्लडर्थे लुङ् । 'यमरमनमाता सक् च' सूत्रेण सगिटौ]

अवारतः निरन्तरम् ऋ० भू० १३८ [अव+आङ्+रमु क्रीडायाम् (भ्वा०) धातो क्त । पूर्वपदस्य च दीर्घ]

अवारयेथाम् निवारयेतम् १ ११६ ८ [वृञ् आवरणे (चुरा०) धातोर्लङ्]

अवाराय अर्वाचीनमागमनाय ३० १६ [अव+ऋ गतौ धातोर्घञ् प्रत्ययो भावे । अवार अवरम् नि० २ २३.]

अवारि व्रियेत ४ ६ ७ [वृञ् वरणे धातो कर्मणि लुङ्]

अवार्य्याः अवारे भवा (इक्षव =इक्षुदण्डा) २५ १ **अवार्याणि**=अवारेपु भवानि (पक्ष्माणि=परिग्रहाणि लोमानि वा) २५ १ **अवार्याय**=अवारे अर्वाचीने भागे भवाय (पुरुषाय) १६ ४२ [अवारो व्याख्यात । ततो भवार्थे यत्]

अवावशीताम् भृश कामयेथाम्, प्र०—अत्र 'वश कान्तौ' इत्यस्य यङ्लुगन्त लङि रूपम् १ १८१ ४ [वश

अविवेषीः विशेषेण प्राप्नुया. ४ १६ १० व्याप्नुया ४२२५ [विप्लृ व्याप्तौ (जु०) धातोर्लङ् । छान्दस रूपम्]

अविवेः व्याप्नुहि ६ ३१ ३ [विप्लृ व्याप्तौ (जु०) धातोर्लङ् । छान्दस रूपम्]

अविव्यक् व्याजीकरोति ७ १८ ८ [व्यच् व्याजी करणे (तुदा०) धातोर्लङ् । 'बहुल छन्दसी' ति श्लु]

अविशस्ता अविहिंसितानि (गात्राणि=अङ्गानि) १ १६२ २० अविच्छेदक (गृभ्नु =अभिकाङ्क्षको जन) २५ ४३ [वि+शमु हिसाया (भ्वा०) धातो क्त । नञ्-समास]

अविष्यन् रक्षणादिक कुर्वन् (राजन्) १५ ६२ [अव रक्षणादिपु (भ्वा०) धातोर्लृट स्थाने शतृ]

अविश्वमिन्वन् अविद्यमानानि विश्वानि मिन्वन्ति येन तम् (रथ=रमणीय यानम्) २ ४० ३ **अविश्वमिन्वाम्**=असर्वसेविनाम् (वाच=वाणीम्) [विश्वोपपदे मिवि सेवने (भ्वा०) धातो शतृ । नञ्बहुव्रीहि]

अविषम् विषादिदोपरहितम् (पितु=अन्नम्) २ २० [विष विप्रयोगे (क्र्या०) धातोर् घञर्थे क । नञ्बहुव्रीहि। विप्लृ व्याप्तौ (जु०) धातोर्वा क प्रत्यय । विषमिति उदकनाम निघ० १ १२]

अविषः व्यापयेत् ३ १३ ६ [विप्लृ व्याप्तौ (जु०) धातोर्लुङ्, लृदित्वाद् अङ्, मध्यमैकवचनम्]

अविषा अविद्यमान विप येपु तानि (वनानि=जङ्गलानि) ६ ३९ ५ [नञ् विपपदयोर्बहुव्रीहि]

अविष्टम् व्याप्नुतम् २ ३० ६ प्राप्नुयातम् ४ ५०.११ [अव रक्षणादिपु (भ्वा०) धातोर्लुङ् । आडभावश्च]

अविष्टाम् रक्षतम् १ १८५.६ प्राप्नुयाताम् ५ ४३ २ [अव रक्षणादिषु (भ्वा०) धातोर्लुङ् आडभावश्च]

अविष्टु रक्षणादिक करोतु, प्र०—अत्र अवधातोर्लोटि सिबुत्सर्ग इति सिब्विकरण १ १११ ५ [अव रक्षणादिपु धातोर्लोट् । सिब्विकरण]

अविष्टो दोषेष्वप्रविष्टा सन्तो रक्षत (प्रजानुकूलान् राज्याधिकारिण) ७ ३४ १२ [विश प्रवेशे (तुदा०) धातो क्त नञ्समास]

अविष्ठः अतिशयेन अविता (विद्वज्जन) ७ २८ ५ अतिशयेन रक्षक (सर्वरक्षकोऽव्यापक) ७ २९ ५. [अव रक्षणादिपु धातो कर्त्तरि तृच् । तृजन्तात् 'तुश्छन्दसि' अ० ५ ३ ५९ सूत्रेण इष्ठन् 'तुरिष्ठेमेयस्सु' अ० ६ ४. १५४. सूत्रेण तृ-शब्दस्य लोप]

अविष्यन् रक्षण करिष्यन् (अश्व=तुरङ्ग) ७ ३ २ रक्षणादिक करिष्यन् (परमेश्वर) १ ५८ २. [अव रक्षणादिपु (भ्वा०) धातो 'लृट सद्वा' सूत्रेण लृट स्थाने शतृ]

अविष्यवे धर्ममव्याप्नुवते (रिपवे=शत्रवे) १ १८९ ५ [विप्लृ व्याप्तौ धातोर्बाहुलकाद् युक् प्रत्यय]

अविष्याम् रक्षाम्, प्र०—अत्र अवधातोरौणादिक स्य प्रत्यय २ २८ ३ [अव रक्षणादिपु धातो न्य प्रत्यय औणादिक]

अविहर्यक्रतो ! न विद्यन्ते विरुद्धा हर्यता प्रज्ञा कर्माणि यस्य तत्सम्बुद्धौ (इन्द्र=सभाध्यक्ष) १ ६३.२

अविह्रुतम् अकुटिलम् (क्षत्र=राज्य धन वा) अखण्डितम् ३३ ३०. [वि+ह्वृ कौटिल्ये (भ्वा०) धातो क्त प्रत्यय । 'ह्रु ह्वरेश्छन्दसि' अ० ७ २ ३१ सूत्रेण धातोर्ह्रु' आदेशः । नञ्समास]

अविह्वरन्तम् अकुटिलगतिम् ४ ३६ २. [वि+ह्वृ कौटिल्ये (भ्वा०) धातो शतृप्रत्यय । नञ्समास]

अविः रक्षणादिकर्त्री पृथिवी, सर्वरत्नाढ्या भू २३ १२ योऽवति रक्षति स. (पशुविशेष) १९ ९०. रक्षिका प्रकृति २३.५४ भेड २१.३० [अव रक्षणादिपु (भ्वा०) धातो. 'इक् कृष्यादिभ्य' अ० ३.३ १०८ वा० सूत्रेण इक् । इय (पृथिवी) वा ऽअविरिय हीमा सर्वा प्रजा अवति श० ६ १ २ ३३ नासिकाभ्यामेवास्य वीर्यम-स्रवत् । सोऽविपशुरभवन्मेष श० ११ ७ १ ३]

अव्युष्टाः अविपु रक्षणादिपुष्टा कारितनिवासा २ २८ ९ [अवि =अव रक्षणादिपु धातोर् इक् प्रत्यय । उष्टा =वस निवासे धातो क्त प्रत्यय । तयो. समास]

अवीत् रक्षेत् ७ ३४ १४ **अवीः**=रक्षे ६ २५ १ [अव रक्षणादिपु (भ्वा०) धातोर्लुङ्, आडभावश्च]

अवीताः नाशरहिता (क्रिया) ४ ४८ १ [वीता = वि+इण् गतौ धातो क्त प्रत्यये रूपम् । विशेषेणेता गता वीता, ततो नञ्समास]

अवीरता वीरभावरहितता ७ १ ११ **अवीरतायै**= कातरतायै ३ १६ ५ [वीरप्राति० भावे कर्मणि च तल्, स्त्रियां टाप् । ततो नञ्समास]

(अध्यापकोपदेशकौ) १ १८१ १ **अवितुः**=रक्षकस्य (सेनेशस्य) ७ २५ ४ [अव रक्षणादिषु (भ्वा०) धातोस्तृच् प्रत्यय]

अवित्री रक्षिका (देवी=विदुषी माता) ६ ६१ ४. रक्षादिनिमित्ते द्यावापृथिवी=सूर्यभूमी २ ३२ १ [अव रक्षणादिषु (भ्वा०)धातोस्तृच् । 'ऋन्नेभ्यो ङीप्' इति ङीप्]

अवित्सि वेद्मि १६ ५६ जानीयाम् १२ ८१ [विद ज्ञाने (अदा०) धातो रूपम्]

अविथुराः कम्पभयरहिता (नायका जना) प्र०—अत्र बाहुलकादौणादिक कुरच् प्रत्यय १ ८७ १ [वियृ याचने (भ्वा०) धातोर्बाहुलकात् कुरच् । नञ्समास । धातूनामनेकार्थत्वादत्र कम्पने]

अविदत् विन्दति प्राप्नोति १ ५३ १ प्राप्नुयात् ३ ५७ १ **अविदन्**=विजानन्ति, भा०—उपासन्ते ३३ ६०. लभन्ते १ ७२ ६ **अविदम्**=लभेय ५ ४२ अविद = वेत्सि ५ ८३ १० **अविदाम**=विन्देमहि ८ ५२ [विद्लृ लाभे (तुदा०) धातोर्लुङ् । लृदित्वादङ् । अविदाम विजानीम नि० ६ २८]

अविदस्यम् अक्षीणम् (रयि=धनम्) ७ ३९ ६ [वि+दसु उपक्षये (दिवा०) धातोर्ण्यत् । 'सञ्ज्ञापूर्वको विधिरनित्य' वृद्ध्यभाव । नञ्समास]

अविदीधयुम् द्यूतादिदुष्टकर्मरहितम् (राजानम्) ४ ३१ ७ [वि+दीधीङ् दीप्तिदेवनयो (अदा०) धातोरौणादिक उ प्रत्यये नञ्समास]

अविद्यया शरीरादिजडेन पदार्थसमूहेन कृतेन पुरुषार्थेन ४० १४ अविद्या अर्थात् कर्मोपासना से स० प्र० ३१८, ४० १४ **अविद्याम्**=अविद्या के स्वरूप को स० प्र० ३१८, ४० १४ 'अनित्याऽशुचिदुःखाऽनात्मसु नित्यशुचिसुखात्मख्यातिरविद्या, इति ज्ञानादिगुणरहित वस्तु कार्यकारणात्मक जड परमेश्वराद्भिन्नम् ४० १२ [विद ज्ञाने (अदा०) धातो -'सञ्ज्ञाया समजनिषदनिपत०' सूत्रेण क्यप् । नञ्समास]

अविद्रियाभिः अच्छिद्राभि (ऊतिभि =रक्षणादिभि) ३४ २८ या विदीर्यन्ते ता विद्रास्ता अर्हन्ति ता विद्रिया, अविद्यमाना विद्रिया यासु क्रियासु ताभि, प्र०—अत्र घञर्थे कविधानम् ततो घस्ताद्धित १ ४६ १५ [वि+दृ विदारणे (क्र्या०) धातो 'घञर्थे कविधानम्' इति क । ततोऽर्हत्यर्थे घ । नञ्समास]

अविद्वान् विद्याहीनो भृत्योऽन्यो वा १ १२० २ अजानन् सन् (सर्वोपकारी सखा गृहपति.) ८ १३ [विद ज्ञाने (अदा०) धातो शतृप्रत्यय । 'विदे. शतुर्वसुरि' ति वसु । नञ्समास]

अविद्वेषम् वैरविरोध आदि रहित व्यवहार को स० वि० १४१, अथ २ ३० १ [वि+द्विष अप्रीतौ (अदा०) धातो 'हलश्चे' ति घञ् । नञ्समास]

अविधत् परिचरेत् १ १३६ ५ विधत्ते २ १ ६ विदधाति ६ ५४ ४ [वि+डुधाञ् धारणपोषणयो (जु०) धातोर्लुङ् । धातोश्च ह्रस्वादेश.]

अविध्यत् विध्यति ५ ४० ९ मुक्तो भवति ५ ४० ५. [व्यध ताडने (दिवा०) धातोर्लङ् । धातो. सम्प्रसारणम्]

अविन्दत् प्राप्नोति १ १३०.३ जानाति, प्र०—अत्र लडर्थे लङ् १ २३ १४ लभते १ १०३ ५ विन्देत् प्राप्नुयात् ३ ३४ ४ **अविन्दतम्**=लम्भयतम् १ ६३ ४ **अविन्दन्**=लभन्ते ३ १ ३ लम्भयेरन् ३४ १७ प्राप्नुयु १ ६२ २ लभेरन् ५ ४० ६ **अविन्दः**=लभते, अ०—विन्दते, प्र०—अत्र पुरुषव्यत्यय, लडर्थे लोट् च १ ६ ५. विन्दसि प्राप्नोषि ६ ७ ५ प्राप्नुहि ६ ६१ ३ [विद्लृ लाभे (तुदा०) धातोर्लङ् । 'शे मुचादीनाम्' इति नुमागम]

अविपालम् अवीना रक्षकम् (जनम्) ३० ११. [अव्युपपदे पाल रक्षणे (चुरा०) धातोरण् प्रत्यय.]

अविप्रे अमेधाविनि (अज्ञे बालके) ६ ४५ २ [वि+प्रा पूरणे (अदा०) धातो 'आतश्चोपसर्गे' अ० ३ १ १३६. सूत्रेण क नञ्समास]

अविम् रक्षणादिनिमित्ताम् (मही=महती भूमिम्) १३ ४४ रक्षणादिहेतुम्, भा०—अन्नाद्युत्पादनेन रक्षिकाम् (गा=पृथिवीम्) १२ १७ [अव रक्षणादिषु (भ्वा०) धातोर् बाहुलकाद् इ प्रत्यय ।

अविमान् बह्वचोऽव्ययो विद्यन्ते यस्मिन् स (अग्नि.=विद्वज्जन ४.२ ५ [अविर्द्रष्टव्य पूर्वपदे। ततो मतुप् प्रत्यय

अविरणाय युद्धनिवृत्तये १ १७४ ८ [वि+रमु क्रीडायाम् (भ्वा०] धातोर्बाहुलकाद् नक् प्रत्ययो मकारलोपश्च । नञ्समास । रणाय=रमणीयाय सग्रामाय नि० ४ ८]

अविवेनन् विगतकाम (राजा) ४ २४ ६ [वेनति कान्तिकर्मा निघ० २ ६, तत शतृ । नञ्समास]

अविवेनम् दुष्टकामनारहितम् (कर्म्म) ४ २५ ३ [वि+वेनति कान्तिकर्मा निघ० २ ६ धातोर्भावे घञ् । नञ्समास]

[वेनति कान्तिकर्मा नि० २ ६ गतिकर्मा निघ० २ १४ अर्चतिकर्मा निघ० ३ १४]

अवेपय: वेपय, प्र०—अत्र लोडर्थे लङ् ८ ३९ [टुवेपृ कम्पने धातोर्णिचि लङ्]

अवेभि: न्यायपुरस्सरैः रक्षणादिभि २० ५१ [अव रक्षणादिपु धातो 'घञर्थे कविधानम्' इति क प्रत्यय]

अवेमहे दूरीकुर्महे ७ ५८ ५ सनिषेध याचामहे, भा०—तिरस्कार कारयाम १६ ६. [अव+ई गतौ (अदा०) धातोर्लट्। व्यत्ययेनात्मनेपदम्। ई धातुश्च वी धातौ प्रश्लेपाद्]

अवेषन् व्याप्नुवन्ति १ १७८ २. [विष्लृ व्याप्तौ(जु०) धातोर्लङ्। बहुल छन्दसीति शप श्लुर्न भवति]

अवेष्टा: विरुद्धस्य गन्तार (शत्रव) १० १० [अव+इष् गतौ (दिवा०) धातोस्तृच्]

अवेहि आगच्छ ५ ७८ ८

अवैतु प्राप्नोतु ५ ४६ ५

अवोचन् वदन्तु १ ११७ २५ वदेयु १ १२२ १२ कथयेयु १ १८२ ८ **अवोचम्**=वदेयम् १ ११६ २५ उपदिशेय वदेय च १ १८५ १० **अवोचाम**=उपदिशेम १ १८९ ८ उच्याम १५ २५ वदेम १ ११४ ११. [वच परिभापणे (अदा०) धातोर्लुङ्। 'अस्यतिवक्ति०' सूत्रेणाडि 'वच उम्' इत्युमागम]

अवोभि: रक्षणादिभि ४ ४१ २ नानाविध रक्षाओ से आर्याभि० २ २२, ३६ ११ पालनै १ १८५ ११ [अव रक्षणादिपु (भ्वा०) धातोरसुन् प्रत्यय]

अवो: रक्षकयो 'अध्यापकोपदेशकयो' प्र०—अत्र 'छान्दसो वर्णलोपो वा' इति सलोप ६ ६७ ११ [अव रक्षणादिपु (भ्वा०) धातोरसुन् प्रत्यय । वर्णव्यत्ययेन सकारलोप]

अव्यथमाना अभीताऽचलिता सती (स्त्री) ११ ६३ पीडामप्राप्ता, भा०—व्यभिचारकामव्यथारहिता (राजपत्नी) १३ १६ **अव्यथमानाम्**=अपीडितामचलिताम् (प्रज्ञाम्) १४ ११ [व्यथ भय सञ्चलनयो (भ्वा०) धातो शानचि स्त्रिया टापि नञ्समासे च रूपम्]

अव्यथायै अविद्यमानशरीरपीडायै १५ १० अविद्यमानसभयायै (स्त्रियै) १५ ११ अविद्यमानपीडायै क्रियायै १० २१ अविद्यमानेन्द्रियभयायै (स्त्रियै) १५ १३ अविद्यमानाऽऽत्मसञ्चलनायै (स्त्रियै) १५ १२ अविद्यमानसार्वजनिकपीडायै १५ १४. [व्यथ भयसञ्चलनयो (भ्वा०) धातो स्त्रियाम् अङ्, टाप् च । नञ्समास]

अव्यथिभि: व्यथारहिताभि (ऊतिभि=रक्षाभि) १ ११२ ६ **अव्यथि:**=अविद्यमाना व्यथिर्व्यथायस्य स (कृतब्रह्मचर्य पुरुप) १ ११७ १५. [व्यथ भयसञ्चलनयो (भ्वा०) धातोर्बाहुलकाद् इ प्रत्यय । नञ्समास]

अव्यथ्याय व्यथितुमनर्हाय (देवाय=कामाय विदुषे) २ ३५ ५ पीडा से रहित (देवाय=काम के लिए) स० वि० १०४, २ ३५ ५ [नञ्पूर्वात् व्यथभयसञ्चलनयो. (भ्वा०) धातो 'राजसूयसूर्यमृपोद्यरुच्य०' इत्यादिना क्यप् प्रत्ययान्तो निपातित]

अव्ययम् नाशरहितम् (सुखम्) ७.३३ ४ **अव्यया**= व्ययरहितानि नाशरहितानि (सुखानि) १ १३५ ६ (व्यय-गतौ (भ्वा०) धातो 'घञर्थे कविधानम्' इति क प्रत्यय नञ्समास]

अव्या: रक्षेत् २ ३८ १०. [अव रक्षणादिषु (भ्वा०) धातोर्लिङ्]

अव्युष्टा: अविपु रक्षणादिषूष्टा कारितनिवासा (उषास.=दिनानि) २ २८ ९ [अव रक्षणादिपु (भ्वा०) धातोर् इ प्रत्यये अवि । वस निवासे (भ्वा०) धातो क्त-प्रत्यये=उष्ट । तत समास]

अव्रणम् अच्छिद्रमच्छेद्यम् (ब्रह्म) ४०.८. नैवैतस्मिँश्छिद्र कर्त्तु परमाणुरपि शक्नोति, अत एव छेदरहितत्वाद-क्षतम् (ब्रह्म) ऋ० भू० ३६, ४० ८ न यस्य कर्हिचिच्छेदो भवति तद् (ब्रह्म) प० वि०। जो अखण्डैकरस, अच्छेद्य, अभेद्य, निष्कम्प और अचल है इससे अशाऽशिभाव भी जिसमे नही है क्योकि जिसमे छिद्र किसी प्रकार से भी नही हो सकता वह (ब्रह्म) आर्याभि० २ २ [व्रण गात्र-विचूर्णने (चु०) धातो 'घञर्थे क विधानम्' इति भावे क । नञ्समास]

अव्रतम् सत्यभापणादिव्यवहाररहितम् (दुर्जनम्) १ १३२ ४ मिथ्याचारयुक्तम् (दुर्जनम्) १ १३२ ४ ब्रह्मचर्यरीत्याऽऽचरणादिपालनरहितम् (मनुष्यम्) १ १०१ २ दु शीलम् (दस्युम्) १ १७५ ३ धर्म्यकर्मरहितम् (दुर्जनम्) ६ १४ ३ **अव्रतान्**=सत्यभापणादिरहितान् (असज्जनान्) १ ५१ ८ दुष्टाचारान् दस्यून् १ १३० ८ सत्याऽनुष्ठानाद् विरुद्धाचरणान् (दस्यून्) प० वि०। ब्रह्मचर्य, गृहस्थ, वानप्रस्थ, सन्यास आदि धर्माऽनुष्ठान व्रतरहित, वेद-मार्गोच्छेदक अनाचारी (जनो को) आर्याभि० १ १४. [व्रतम्=कर्मनाम निघ० २ १ आर्याभि० व्रतमिति कर्मनाम

अवीरते न विद्यन्ते वीरा यस्मिन् सैन्ये तस्मिन् ७ १ १९ [नञ्-वीरतापदयो समास]

अवीरयेथाम् विक्रमेथाम् १ ११६ ५ [वीरविक्रान्तौ (चुरा०) धातोर्लङि मध्यमद्विवचनम्]

अवीरहा विद्यासुशिक्षाभ्या रहितान् कातरान् प्राप्नोति स (विद्वान्) १ ९१ १९ अवीरान् कातरान् मनुष्यान् हन्ति येन स । प्र०—अत्र 'कृतो वहुलम्' इति करणे क्विप् ४ ३७ **अवीरहणौ**=वीरहननरहितौ (घृर्णाहौ=सूर्यविद्वासौ) ४ ३३ [वीरोपपदे हन हिंसा-गत्यो (अदा०) धातो क्विप् नञ्समास]

अवीरा: वीरतारहिता (कृतघ्ना जना) ७ ४ ६ [नञ् वीरपदयो समास']

अवीविपत् अतिशयेन भ्रामयति १ १५५ ६ [टुवेपृ कम्पने (भ्वा०) धातोर्णिचि लुङि च रूपम्]

अवीवृधध्वम् अवर्द्धयत १ १२४ १३ **अवीवृधन्**= अत्यन्त वर्धयन्तु, अन्व०—नित्य वर्द्धयन्ति, प्र०—अत्र लोडर्थे लुङ् १ ११ १ अत्यन्त वर्धयन्ति, प्र०—अत्र लडर्थे लुङ् १ ५ ८ अत्यन्त वर्धेयु १५ ५६ **अवीवृधन्त**= वर्द्धन्ताम् २१ ६० वर्धयन्तु ४ ३२ १२ [वृधु वृद्धौ (भ्वा०) धातोर्णिचि लुङि च रूपम्]

अवृकतमः न सन्ति वृकाश्चौरा यस्य सम्वन्धे सोऽतिशयित (राजा) १ १७४ १० [वृक=वृक आदाने (भ्वा०) धातो क । ततोऽतिशये तमप् । नञ्समास]

अवृकम् हिंसकप्राणिरहितम् (गृहम्) १ ४८ १५ अचौर्य्यम् (सख्य=मित्रत्वम्) ६ ४८ १८ **अवृकस्य**= चौर्यादिदोपरहितस्य (मीढुप=वीर्यसेचनसमर्थस्य यून) १ १५५ ४ **अवृक:**=चोरादिसङ्गरहित (सज्जन) ६ २ २ अस्तेन (जन) ४ १६ १८ अस्त्येन (श्रीमज्जन) ६ १५ ३ **अवृकाणि**=अविद्यमानचोराणि (सदनानि) १ ५५ ६ **अवृकाभिः**=अविद्यमानस्तेनादिभि ३ ३१ ३ **अवृका:**=अस्तेना (राजभृत्या) ४ ४ १२ अविद्यमाना वृकाश्चौरा येपु ते, भा०—स्तेयादिदोपरहिता (पितर= पालका पित्रादय) १९ ४९ अजातशत्रव (पितर) ऋ० भू० २५८. **अवृके**=अचोरे (जने) ६ ४४ **अवृकेभि.**= अचोरै (विद्वज्जनै) ७ १९ ७ [वृक आदाने (भ्वा०) धातोरिगुपधलक्षण क प्रत्यय । वृञ् वरणे धातोर्वा 'सृवृभू-शुपि०' उ० ३ ४१ सूत्रेण कक् प्रत्यय । नञ्समास । वृकश्चन्द्रमा भवति, विवृतज्योतिष्को वा विकृतज्योतिष्को वा विक्रान्तज्योतिष्को वा । आदित्योऽपि वृक उच्यते,''' श्वापि वृक उच्यते विकर्त्तनात्' 'वृद्धवाशिन्यपि वृक्युच्यते नि० ५ २० वृको लाङ्गल भवति, विकर्त्तनात् नि० ६ २६]

अवृजिना: अविद्यमान वृजिन वर्जनीय पाप येपान्ते (पूर्णविद्या अध्यापका) २ २७ २ [वृजी वर्जने (रुधा०) धातो 'वृजे किच्च' उ० २ ४७ सूत्रेण इनच् प्रत्यय । नञ्वहुव्रीहि]

अवृणक् वर्जयेत्, प्र०—अत्राऽन्तर्गतो ण्यर्थ १ १०१ २ छिनत्ति २ १७ ६ [वृजी वर्जने (रुधा०) धातोर्लङ्]

अवृणीत वृणोतु २१ ६१ वृणुयात् २८ २३ वृणोति २१ ५९ स्वीकरोति ३ ३९ ८ वृणीते, प्र०—अत्र लडर्थे लङ् १ १३ स्वीकुरुते ४ ४३ २ **अवृणीतम्**= वृणीयाताम् १ १८० ४ **अवृणीध्वम्**=वृणते स्वी-कुरुध्वम्, प्र०—अत्र प्रथमपक्षे लडर्थे लङ् १ १३ **अवृणी-महि**=वृणुयाम ३ २९ १६ स्वीकुर्वीमहि प्र०—अत्र लिङर्थे लङ् ८ २० **अवृणोत**=युद्धाय वृणुयात् ३३ २६ **अवृण्वत**=स्वीकुर्वन्तु २ ३४ १ [वृञ् वरणे (स्वा०) धातो रूपाणि]

अवृत: अस्वीकृत (अग्नि=मुनि) ६ १४ ५ अना-वृत (जन) १ १३३ ७ अनाच्छादित (रयि=धनम्) ६ १४ ५ [वृञ् वरणे (स्वा०) वृञ् आवरणे (चु०) धातोर्वा क्त प्रत्यय । नञ्समास]

अवृत्सत वर्त्तन्ते ५ ५५ ३ [वृतु वर्त्तने (भ्वा०) धातोर्लुङ् । छान्दस रूपम्]

अवृधन् वर्द्धयन्ति ३३ ६० [वृधु वृद्धौ (भ्वा०) धातोर्लङ् । व्यत्ययेन श परस्मैपदञ्च]

अवृधान् अवर्धकान् हानिकरान् (अविदुपो जनान्) ७ ६ ३ [वृधु वृद्धौ (भ्वा०, धातोरिगुपधलक्षण क प्रत्यय । नञ्समास]

अवृश्चत् वृश्चति छिनत्ति ७ १८ १७ [ओव्रश्चू छेदने (तुदा०) धातोर्लङ् । ग्रहिज्यादिसूत्रेण सम्प्र-सारणम्]

अवृहः वर्धये ५ २९ १० [वृह वृद्धौ (भ्वा०) धातो-र्लङ् । व्यत्ययेन श प्रत्यय]

अवेत् रक्षेत् ६ ४७ १५ **अवेताम्**=रक्षेताम् १ ७६ २ [अव रक्षणादिषु (भ्वा०) धातोर्लिङ्]

अवेदि विद्यते ७ ८ २ [विद सत्तायाम् (दिवा०) धातो कर्मणि लुङ् । विद ज्ञाने धातोर्वा रूपम्]

अवेनत् कामयते ४.३३ ६ याचते ४ १८ ११.

स्तत्सम्बुद्धौ स वा (भा०—अग्ने=जगदीश्वर, सूर्यविद्युत्प्रत्यक्षोऽग्निर्वा), प्र०—'अन्येषामपि दृश्यते' इति दीर्घ २ २० [अशूङ् व्याप्तौ (स्वा०) धातोर् इ प्रत्यय, ततोऽतिशायने तमप्, पूर्वस्य च दीर्घ]

अशीतिः उपलक्षणमेतदसङ्ख्यस्य, भा०=बहुत्व (होमा=देयानि आदेयानि वस्तूनि) २३ ५८ [अष्टाना दशताम् अशीभाव, ति प्रत्ययश्च निपात्यते 'पङ्क्तिविंशति०' अ० ५ १ ५९ सूत्रेण अन्नमशीति । श० ८ ५ २ १७ अन्नमशीतय श० ९ १ १ २१

अशीमहि प्राप्नुयाम ७ ३२ २६ **अशीय**=व्याप्नुयाम्, प्राप्नुयाम् ५ ७. प्राप्नुयाम् २.३३ ६ [अशूङ् व्याप्ती (स्वा०) धातोर्लिङ्]

आशीर्दा आशीरिच्छा ददाति स (पुत्र) ८ ५. [आङ्+शासु इच्छायाम्+क्विप् प्रत्यये आशी तदुपपदे डुदाञ् दाने धातो क प्रत्यय ।

अशीर्षा शिर आद्यवयवरहित (अग्नि=परमात्मा) ४ १ ११ [नञ्-शिरसोर्बहुव्रीहि । 'शीर्षश्छन्दसि' अ० ६ १ ६० सूत्रेण शीर्षन् शिरस समानार्थो निपात्यते]

अशुचत् शोधयति ७ ६ ४ [शुच शोके (भ्वा०) धातोर्लङ् । धातूनामनेकार्थत्वादत्र शोधनेऽपि]

अशुद्धाः न शुद्धा, अशुद्धा गुणा, अ०—दोषा, भा०—सर्वदोषा १ १३ [शुध शौचे (दिवा०) धातो क्त प्रत्यये शुद्ध । तस्य नञा समास]

अशुषम् शोकरहित हर्षितम् (इन्द्र=सभासेनाध्यक्षम्) १ १०१ २ अशुष्कम् (अधर्मिण शत्रुम्) ६ ३१ ३ अशुष्कम् आर्द्रम् (शुष्ण=बलम्) २ १९ ६ असुर, दुःखम् ४ १६ १२ शोषरहितम् (अग्निम्) १ १७४ ३ आर्द्रम् (पदार्थम्) २ १४ ५ **अशुषस्य**=शोषणरहितस्य (जनस्य) ६ २० ४ [शुष शोषणे (दिवा०) धातो 'घञर्थे कविधानम्' इति भावे क । ततो नञ्समास]

अशूद्राः अविद्यमान शूद्रो येषान्ते (जना), न शूद्रा अशूद्रा (विद्वज्जना) ३० २२

अश्रृणवम् शृणोमि १९ ४७ **अश्रृणो**=शृणुया ७ २९ ४ [श्रु श्रवणे (भ्वा०) धातोर्लङ् । 'श्रुव शृ चे' ति श्नु प्रत्यय, शृ आदेशश्च]

अशेम प्राप्नुयाम, प्र०—अत्र अशूङ् धातो 'लिङ्याशिष्यङ्' इत्यङ्, सार्वधातुकसञ्ज्ञया 'लिङ सलोपो०' इति सकारलोप, आर्धधातुकसञ्ज्ञया शपोऽभाव १ ८९ ८ व्याप्नुयाम, प्र०—'वाच्छन्दसि सर्वे विधयो भवन्ति' इति नियमाच्छप स्थाने श्नुर्न १.२४ ५ **अशेमहि**=प्राप्नुयाम २५ २१. [अशूङ् व्याप्ती (स्वा०) धातोर्लिङ् । व्यत्ययेन शप्]

अशेरन् शयीरन् १ १३३ १ [शीङ् स्वप्ने (अदा०) धातोर्लिङर्थे लङ्]

अशेवा असुखानि ७ ३४ १३ [नञ्-शेवयो समास । शेवम्=सुखनामसु पठितम् निघ० ३.६. शेव इति सुखनाम शिष्यतेर्वकारो नामकरण नि० १० १७.]

अशेषसः नि शेषा (क्षत्रियकुलोद्भवा राजपुत्रा) ७.१ ११ [शिष असर्वोपयोगे धातोरसुन् । ततो नञा समास.]

अशोचत दीप्यते ३.२९ १४ [शोचति ज्वलतिकर्मा निघ० १ १७. ततो लङ्]

अशोचि प्रकाश्यते ७ ८ १ [शोचति ज्वलतिकर्मा निघ० १.१७ तत कर्मणि लुङ्]

अश्नवत् प्राप्त होता है आर्याभि० १ ३, ऋ० १ १ १.३. अश्नुते १ ११३.१८. प्राप्नुयात् प्राप्नोति वा १ १ ३. व्याप्नुयात्, प्र०—अत्र व्यत्ययेन परस्मैपद शप् च १ ९३ ३ प्राप्नोति, प्र०—अत्र लेट् प्रयोग, व्यत्ययेन परस्मैपदञ्च १.१३ **अश्नवन्त**=अश्नुवते ७ ३०४ **अश्नवाम**=प्राप्नुयाम ६ ४९ १५ **अश्नवामहै**=प्राप्नुयाम १२ ६१ **अश्नवै**=प्राप्नुयाम प्र०—लोट्-प्रयोगोऽयम् २० २३ [अशूङ् व्याप्ती (भ्वा०) धातोर्लेट्]

अश्नम् मेघम् २ १४ **अश्नस्य**=मेघस्य, प्र०—अश्न इति मेघनाम निघ० १ १०, २ २० ५ व्यापकस्य (परमेश्वरस्य) ६ ४ ३ **अश्नः**=भोक्ता (विद्वान् शिल्पी) १ १६४ १ व्यापक (यजत्र=विद्वज्जन) १ १७३ २ **अश्ना**=भोक्तव्यानि (वस्तूनि) ४ २८ ५ [अशूङ् व्याप्ती (क्र्या०) अश भोजने (भ्वा०) धातोर्वा बाहुलकाद् नक् प्रत्यय । अश्न इति मेघनाम निघ० १ १० अश्ना=अशनवता मेघेन नि० १० १२]

अश्नाति भक्षण अर्थात् नाश करता है स० वि० २१०, अथर्व० ९ ६ ३ १ भोजन करता है स० वि० २१० **अश्नामि** भुञ्जे २ ११ [अश भोजने (क्र्या०) धातोर्लट्]

अश्नुतः व्याप्नुत ८ ५ **अश्नुताम्**=प्राप्नुताम् ३२ १६ **अश्नुते**=प्राप्नोति ६ २८ ४ प्राप्त होता है स० प्र० ४२३, ९ ८३ १ **अश्नुथ**=प्राप्नुथ ५ ५४ १० **अश्नुवन्ति**=प्राप्नुवन्ति ७ २२ ८ **अश्नुवन्तु**=प्राप्नुवन्तु ६ २३ ८ **अश्नुवे**=प्राप्नोमि १ १६४ ३७

वृणोनीति सत । नि० २ १३ नञ्व्रतयो समास]

अव्रदन्त मृदूनि भवन्ति २ २४ ३

अशकम् शक्तवान् २.२८ [शक्लृ शक्तौ (स्वा०) धातोर्लुङ् । लृदित्वादङ्]

अशक्नुवन् शक्नुयु ५ ४० ६ [शक्लृ शक्तौ (स्वा०) धातोर् लडि प्रथमवहुवचने रूपम्]

अशत प्राप्नुत १ ८७ ५ [अशूङ् व्याप्तौ सघाते च (स्वा०) धातोर्लोट् । विकरणव्यत्ययेन शप्]

अशत्रुम् अविद्यमाना शत्रवो यस्य तम् (विद्वज्जनम्) ५ २ १२ **अशत्रुः**=न सन्ति शत्रवो यस्य स (नृपति) १ १०२ ८ (नञ्शत्रुपदयोर्वहुव्रीहि]

अशनिम् विद्युतम् ३९ ८ वज्रम् ३ ३० १६ छेदन-भेदनेन वज्रस्वरूपाम् (गभस्तिम्=किरणान्) १ ५४ ४ व्यापिका घोषयुक्ताम् (विद्युतम्) २५ २ **अशनिः**= विद्युत् १ १४३ ५ [अश भोजने (क्र्या०) अशूङ् व्याप्तौ (स्वा०) धातोर्वा 'अर्त्तिसृधम्यश्यवितृभ्योऽनि' उ० २ १०२ सूत्रेणानि प्रत्यय]

अशनिमानिव यथा वहुशस्त्राऽस्त्र (इन्द्र=राजा) ४.१७.१३ [अशनिर्व्याख्यात । ततो मतुप्]

अशन्येव विद्युतेव २ १४ २

अशपत सत्यपरावे आक्रुशयत १ १६१ १२ [शप आक्रोशे (भ्वा०) धातोर्लङ्]

अशमिष्ट शाम्यति ५ २ ७ **अशमिष्ठाः**=शमादि-गुणान् गृहाण ८ २० शमये ३ २९ १६. [शमु उपशमने (दिवा०) धातोर्लुङ् । व्यत्ययेनात्मनेपदम्]

अशयत् शेते ३ १ ११ [शीङ् स्वप्ने (अदा०) धातोर्लङ् । व्यत्ययेन परस्मैपद शप् च]

अशसः अस्तवकान् (रक्षस=दुष्टाचारान्) ४ ४ १५ अहिंसकस्य (प्रजाजनस्य) २ ३४ ९ [शसु स्तुतौ (भ्वा०) धातो. 'घञर्थे क विधानम्' इति क प्रत्ययो भावे नञ्-समास । अन्यत्र शसु हिंसायाम् (भ्वा०) धातो क]

अशस्तिहा अप्रशस्ताना दुष्टाना हन्ता (राजा) ३३ ९५ [शस्ति=शसु स्तुतौ धातो क्तिन् । ततो नञ्-समास, तदुपपदे हन हिंसागत्यो (अदा०) धातो क्विप् ।]

अशस्तीः अप्रशमिता निरुदका [सुपारा=मार्गान्] ७ १८ ५ अप्रशसनीया शत्रुक्रिया १.१००.१० अप्रशस्ता शत्रुसेना ११.१५ अप्रशसिता (वनस्पतय=वटादिवृक्षा) ६ ४८ १७. अहिंसा ४ ४८ २ अप्रशसा. (शत्रुसेना) ६ ६८ ६ (शसु स्तुतौ (भ्वा०) धातो क्तिन्]

अशंसन् स्तुवन्ति १ ६७ २ [शसु स्तुतौ (भ्वा०) धातोर्लङ्]

अशंसिषम् प्रशसेयम् ४ ३ १६ [शसु स्तुतौ (भ्वा०) धातोर्लुङ्]

अशाम्यन् शाम्यन्ति १४ ३१. [शमु उपशमने (दिवा०) धातोर्लङ् । 'शमामष्टानाम्०' इति दीर्घ]

अशिक्षतम् पाठयतम् १ ११२ १९ **अशिक्षः**= शिक्षय ६ ३१ ४ [शिक्ष विद्योपादाने (भ्वा०) धातोर्लङ् । व्यत्ययेन परस्मैपदम्]

अशिपदाः भोजनादिव्यवहाराय प्राप्ता (नद्य) ७ ५० ४ [अश भोजने (क्र्या०) धातोरि प्रत्ययेऽशि । पद गतौ धातोर्घञर्थे कप्रत्यये पद । तयो समास]

अशिमिदाय यदस्यते भुज्यते तदन्न तन्मेदते यस्मिँस्तस्मै रसाय ३८ ७ [अशि=अश भोजने (क्र्या०) धातोरि प्रत्यय । तदुपपदे ञिमिदा स्नेहने (भ्वा०) धातोर्घञर्थे क प्रत्यय]

अशिवस्य सर्वस्मै दु खप्रदस्य (दस्यो) १ ११७ ३. अमङ्गलस्य (दुर्जनस्य) ६ ४४ २२ **अशिवाः**=अमङ्गला-चरणा (सखाय) ५ १२ ५ अकल्याणकरा (भा०— अशुभाचरणानि दुष्टाश्च ३५ १० **अशिवेन**=अमङ्गल-कारिणा *न्यायाधीशेन* १ ११७ १७ असुखेन १ ११६ २४ [नञ्शिवयोर्वहुव्रीहि । शिव सुखनाम निघ० ३ ६]

अशिवासः असुखप्रदा (नाव) ७ ३२ २७ [नञ्-शिवयोवर्हुव्रीहि]

अशिशात् छेदयेत् ७ १८ २४

अशिश्नत् हिनस्ति ७ २८ ३

अशिश्रयुः श्रयन्ति सेवन्ते, प्र०—अत्र लडि प्रथमस्य वहुवचने विकरणव्यत्ययेन शप स्थाने श्लु 'सिजभ्यस्त०' इति झेर्जुस् 'जुसि च, इनि गुण १ ९२ २ [श्रिञ् सेवायाम् (भ्वा०) धातोर्लङ् । विकरणव्यत्ययेन श्लु]

अशिश्रेत् आश्रयेत ७ ३८ १ [श्रिञ् सेवायाम् (भ्वा०) धातोर्लिङ् । शप श्लुश्च व्यत्ययेन]

अशिश्वी. वत्सरहिता (धेनव=गाव) १.१२०.८. अवाला (युवतय=ब्रह्मचारिण्य) ३ ५५ १६ वाल्या-ऽवस्था से रहित (युवतिया) म० प्र० ८५ [नञ् शिश्वो समास । शिशु शो तनूकरणे धातो 'श किन सनूवच्च' उ० १ २० सूत्रेण उप्रत्ययान्त. । समासे च 'सख्यशिश्वीति भाषायाम्' अ० ४ १ ६२ सूत्रेण ङीष्]

अशीतम अश्नुते व्याप्नोति चराचर यत्र सोऽतिशयेन-

धातो 'अश्वादयश्च' उ० ५ २९ सूत्रेण डुन् प्रत्ययो रुडागमश्च]

अश्रेत् श्रयति, प्र०—अत्र लडर्थे लङ् 'वहुल छन्दसि' इति शपो लुक् च १ ९२ ५ श्रयेत्, प्र०—अत्र विकरणस्य लुक् लङ्प्रयोगश्च १५ २५ आश्रयति ४ १३ २ आश्रयेत् ४ ६ २ **अश्रेः**=आश्रय ३ ५४ ११ सेवये ५ ३३ २ [श्रिञ् सेवायाम् (भ्वा०) धातोर्लङ् । शपो लुक्]

अश्रोत् शृणोति १ ३९ ६ शृणुयात् ७ ३३ ५ [श्रु श्रवणे (भ्वा०) धातोर्लङ् । 'वहुल छन्दसि' ति शपो लुक्]

अश्वकः अश्व इव गन्ता जन, भा०—पुरुषार्थी २३ १८ [अश्व प्राति० इवार्थे कन् प्रत्यय]

अश्वजिते योऽश्वैर्जयति तस्मै (इन्द्राय=विद्वत्सभा-सेनेशाय) २ २१ १ [अश्वोपपदे जि जये (भ्वा०) धातो क्विप्]

अश्वत्थम् पिप्पलमिव १ १३५ ८ **अश्वत्थे**=श्व स्थाता न स्थाता वा वर्त्तते तादृशे देहे १२ ७९ श्व स्थास्यति न स्थास्यति वा तस्मिन्ननित्ये ससारे ३५ ४ **अश्वत्थः**=योऽश्नुते स (मेधावी जन) ६ ४७ २४ [प्रजापतिर्देवेभ्योऽनिलायत । अश्वो रूप कृत्वा । सोऽश्वत्थे सवत्सरमतिष्ठत् । तदश्वत्थस्याश्वत्थत्वम् तै० ३ ८ १२ २ अग्निर्देवेभ्यो निलायत । अश्वो रूप कृत्वा । सोऽश्वत्थे सवत्सरमतिष्ठत् । तदश्वत्थस्याश्वत्थत्वम् तै० १ १ ३ ९ अश्वत्थो वनस्पतिरभवत् श० १२ ७ १ ९ तेजसो य एष वनस्पतिरजायत यदश्वत्थ ऐ० ७ ३२ साम्राज्य वा एतद् वनस्पतीनाम् (यदश्वत्थ) ऐ० ७ ३२ ८ १६ अश्वत्थ (पात्र) भवति । तेन वैश्योऽभिपिञ्चति श० ५ ३ ५ १४ आश्वत्थेन (पात्रेण) वैश्योऽभिपिञ्चति तै० १ ७ ८ ७]

अश्वदावन् योऽश्वान् व्याप्तिकरान् विज्ञानादिगुणान् ददाति तत्सम्वुद्धौ (गृहस्थ जन) ५ १८ ३ [अश्व =अशूङ् व्याप्तौ धातोरौणादिक क्वन् । तदुपपदे ददातेर्धातोर्वनिप् प्रत्यय]

अश्वदाः या अश्वादीन् पशून् प्रददति ता (विदुष्य स्त्रिय) १ ११३ १८ अश्वानग्न्यादीन्स्तुरङ्गान् वा ददति (धनाढ्या जना) ५ ४२ ८ [अश्वोपपदे डुदाञ् दाने (जु०) धातो क । स्त्रिया टाप्]

अश्वपतिभ्यः अश्वाना पालकेभ्य (राजपुरुषेभ्य) १६ २४ [अश्वो व्याख्यात । पति =पा रक्षणे (अदा०) धातोरौणादिको डति । तयो समास.]

अश्वपम् अश्वाना रक्षक शिक्षकम् (सज्जनम्) ३० ११. [अश्वोपपदे पा रक्षणे धातो क प्रत्यय]

अश्वपर्णाः अश्वाना पर्णानि पालनानि यासु सेनासु ता (सेना) २९ ५७ महान्त पर्णा पक्षा येपान्ते (वीर-जना) ६ ४७ ३१ **अश्वपर्णैः**=अग्न्यादीनामश्वाना पतनै सह वर्त्तमानै (रथेभि) १ ८८ १. [अश्वपर्णयोर्वहुव्रीहि । अश्वो व्याख्यात । पर्ण =पृ पालनपूरणयोर्धातो 'धापृवस्य-ज्यतिभ्यो न' उ० ३ ६ सूत्रेण न प्रत्यय अश्वपर्णे = अश्वपतनै नि० ११ १४.]

अश्वपेशसम् अश्वादीना पेशो रूप यस्यास्ताम् (राति=दानम्) २ २ १३ शीघ्रगन्तृ पेशोरूपमिव रूप यस्या ताम् (राति=विद्यादिदानक्रियाम्) २ ११६. [अश्वपेशसो समास । पेशस् रूपनाम निघ० ३ ७]

अश्वबुध्यम् अश्वा बुध्यन्ते सुशिक्षन्ते येन तम् (रयि=विद्याराज्यश्रियम्) १ ९२ ८ **अश्वबुध्यान्**= अश्वान् वेगवतस्तुरङ्गान् वा वोधयन्त्यवगमयन्त्येषु तान् (सङ्ग्रामान्) प्र०—अत्रान्तर्गतो ण्यर्थो वाहुलकादौणादिको-ऽधिकरणे ल्यप् च १ ९२ ७ अश्वानन्तरिक्षे भवानग्न्यादीन् चालयितु वर्द्धितु बुध्यन्ते तान् (वाजान्=विज्ञानवेगयुक्तान् सम्वन्धिन) १ १२१ १४ [अश्वोपपदे वुध अवगमने धातोरधिकरणे वाहुलकाल् ल्यप्]

अश्वम् तुरङ्गम् ६ ४६ २ विद्युदाख्यमग्निम् १ ११७ ९ विद्युतम् १ ११७ ४ व्याप्तु शील (मेघम्) १३ ४२ शुक्लवर्ण वाष्पाख्यम् ऋ० भू० १९३ तुरङ्गादिकम् १२ ७८ व्यापनशील विद्युतम् १ ११८ ९ व्यापकत्ववेगादि-गुणसमूहम् ९ ७ अध्वव्यापिनमग्निम् १ ११६ ६ तुरङ्ग-मिवाशुगामिनीम् (विद्युतम्) ३ ५३ ११ अश्ववत् शीघ्र गमयितारम् (अग्निम्) १ १६२ १५ आशु सुखकर बोधम् ४ ३९ ५ आशुगामिनम् (वायुम्) २९ १३ वेगवन्तम् (अश्वम्) २५ ३७ वेगवन्तम् (पदार्थम्) १ १६१ ७ महान्तम् (भा०—शरीरात्मनोर्महद् वलम्) २२ ४ **अश्वस्य**=आशुगमकस्य द्रव्यस्य १ ११६ १२ महान् गृहस्थाश्रम के स० वि० १०५, २ ३५ ६ व्याप्तिकारका-ऽन्यादेस्तुरङ्गस्य वा १ ५३ २ महतो व्याप्तिविद्यस्य (उषस =प्रभातस्य) ४ ३९ ३ महत (मेघस्य) प्र० — अश्व इति महन्नाम निघ० ३ ३, ५ ८३ ६ सकलशुभगुण-व्याप्तस्य (राज्ञ) ४ ३९ ६ वह्न्यादे ३७ ९ तुरङ्गस्य २५ ४२ वलेन युक्तस्य जनस्य २३ ६२ वलवत, भा०— वलिनो जनस्य २३ ६१ वीर्यप्रदातुर्महत. (विद्वज्जनस्य) २.३५.६ तुरङ्गस्येवाग्निगृहस्य १ ११६ ७ व्याप्तुमर्हस्य

अश्नुहि=व्याप्नुहि, प्र०—अत्र व्यत्ययेन परस्मैपदम् १ ५४ ६ **अश्नोति**=व्याप्नोति, प्र०—अत्र व्यत्ययेन परस्मैपदम् १ ६४ २ प्राप्नोति २ २४ ८ **अश्नोतु**=व्याप्नोतु १ १७ ६ प्राप्नोतु, प्र०—अत्र व्यत्ययेन परस्मैपदम् ३ ५१ १२ [अशूङ् व्याप्तौ (स्वा०) धातोर्लटि लोटि च रूपाणि। व्यत्ययेन परस्मैपदम्। अश्नुते व्याप्तिकर्मा निघ० २ १८]

अश्नुवन् विद्यासुखेन व्याप्नुवन् (विद्वज्जन) १ ११६ २५ [अशूङ् व्याप्तौ (स्वा०) धातो शतृप्रत्यय]

अश्नेव योऽश्नाति भुङ्क्ते तद्वत् (राजपुरुष) २ ३० ४ [अश भोजने (क्र्या०) धातोर्बाहुलकाद् नक्, तद्वत्]

अश्मदिद्यव: मेघविद्याप्रकाशका (मरुत =मनुष्या) ५ ५४ ३. [अश्मा मेघनाम निघ० १ १० द्युत् दीप्तौ धातोश्छान्दस दिद्युरूपम्। तयो समास]

अश्मन् अश्मनि १७ १ मेघे, भा०—मेघमण्डले, प्र०—अश्मेति मेघनाम निघ० १ १०, १७ १ **अश्मन:**=पाषाणात् २ ११ मेघस्य ६ ४३ ३ पाषाणस्य मेघस्य वा ३ २९ ६ **अश्मना**=विषहरेण पाषाणेन १ १९१ ५ **अश्मनि**=मेघमण्डले १ १३० ३ **अश्मनो:**=पाषाणयोर्मेघयोर्वा २ १२ ३ **अश्मा**=अश्नुते व्याप्नोति स मेघ १७ ६० पाषाणवद् दृढम् (तनू =शरीरम्) ६ ७५ १२ पाषाण २९ ४९ **अश्मानम्**=मेघम् ४ १९ ६ व्यापनशील मेघम् १ १२१ ८ मेघमिव राजानम् ४ २२ १ अश्नुवन्त मेघम् ५ ३० ८ योऽश्नुते सहन्ति त मेघम् २ ३० ५ [अशूङ् व्याप्तौ सघाते च (स्वा०) धातोर्बाहुलकान् मन् प्रत्यय। अश्मा मेघनाम निघ० १ १० स्थिरो वो ऽश्मा श० ६ १.२ ५ शर्कराया अश्मानम् असृजन तस्माच्छर्करारश्मैवान्ततो भवति श० ६ १ ३ ५]

अश्मनेव यथाऽश्मना तथा २.१४ ६ [अश्मा मेघनाम निघ० १ १० तद्वत्]

अश्मन्मयीम् मेघप्रचुराणामिव पाषाणनिर्मितानाम् (पुरा =शत्रुनगरीणाम्) ४ ३० २० [अश्मन् प्राति० 'तत्प्रकृतवचने मयट्' अ० ५ ४ २१ सूत्रेण प्राचुर्ये मयट्। टित्वान् ङीप्। अश्मन्मयीभि =अश्ममयीभि नि० ४ १९]

अश्मन्वती बहवोऽश्मानो मेघा पाषाणा वा विद्यन्ते यस्या सृष्टौ नद्या वा सा ३५ १० [अश्मा मेघनाम निघ० १ १० ततो मयट्। 'मादुपधायाश्चे०' ति मस्य वकार]

अश्मव्रजा: येऽश्मसु मेघेषु व्रजन्ति (उस्रा =किरणा) ४ १ १३ [अश्मन् उपपदे व्रज गतौ (भ्वा०) धातोर् मूलविभुजादित्वात् कर्त्तरि क. प्रत्यय]

अश्मास्यम् अश्मनो मेघस्य मुख्यभागम् २ २४ ४ [अश्मा मेघनाम निघ० १ १० आस्यप्राति० भवार्थे 'शरीरावयवाच्च' इति यत्]

अश्याम् प्राप्नुयाम्, प्र०—अत्र व्यत्ययेन परस्मैपद 'बहुल छन्दसि' इति विकरणस्य लुक् १ ९२ ८ **अश्याम**=प्राप्नुयाम, प्र०—अत्र व्यत्ययेन श्यन् परस्मैपद च १ ११४ २ भुञ्जीमहि १ १३६ ७ प्राप्त हो आर्याभि० १ ४५, ऋ० १ ८५ २ भुञ्जमहि ५ ४१ १८ **अश्या:**=प्राप्नुया ४ ५ ७ भोग कुर्या १ ६० ३ व्याप्नुया, प्र०—अत्र व्यत्ययेन परस्मैपदम् १ ६६ ३ व्याप्नुहि १ ७० ३ **अश्यु:**=भुञ्जते १ ७३ ५ प्राप्नुयु २ १९ ८ [अशूङ् व्याप्तौ (स्वा०) धातोर्लिङ्। व्यत्ययेन श्यन् परस्मैपदञ्च]

अश्रथ्नन् विमुक्तानि भवन्ति २ २४ ३ [श्रन्थ विमोचने (क्र्या०) धातो शतृ। नञ्समास]

अश्रद्धान् श्रद्धारहितान् (अविदुषो जनान्) ७ ६ ३ [नञ्-श्रद्धयो समास। 'श्रदन्तरोरुपसर्गवत् वृत्ति' अ० ३ ३ १०६ वार्तिकेनोपसर्गवत् श्रद् उपपदे 'आतश्चोपसर्गे' अ० ३ ३ १०६ सूत्रेण दधातेरङ् प्रत्यय। स्त्रिया टाप्]

अश्रद्धाम् अप्रीतिम् १९ ७७ अप्रीति को स० वि० १८७ [श्रद्धापूर्वपदे व्याख्यातम्। तस्य नञा समास]

अश्रमास: श्रमरहिता (जना) ६ २१ १२ [नञ्-श्रमयोर्बहुव्रीहि। श्रमु तपसि खेदे च (दिवा०) धातोर्घञ्]

अश्रमिष्ठा: अतिशयेनाऽश्रान्ता श्रमरहिता (राजभृत्या) ४ ४ १२. [नञ्-श्रमयोर्बहुव्रीहि। ततोऽतिशायने इष्ठन् प्रत्यय]

अश्रवम् शृणोमि १ १०९ २ [श्रु श्रवणे (भ्वा०) धातोर्लङ्। व्यत्ययेन शप्। अश्रवम्=अश्रौषम् नि० ६ ६ अशृणवम् नि० ११ ३९]

अश्रायि श्रियेत सेव्येत १ ५१ १४ आश्रयति ६ ११ ५ [श्रिञ् सेवायाम् (भ्वा०) धातो कर्मणि लुङ्]

अश्रितम् असेवितम् (अग्नि=विद्युदाख्यम्) ४ ७ ६ [श्रिञ् सेवायाम् (भ्वा०) धातो क्त। नञ्समास]

अश्रीणीत श्रीणाति पचति ७ १७ [श्रीञ् पाके (क्र्या०) धातोर्लङ्]

अश्रीरम् अश्लीलममङ्गलमधर्माचरणम् ६ २८ ६ [अश्लीलम्=पापकम् नि० ६ २३ रलयोरभेद]

अश्रुभि: रोदनै २५.९ [अशूङ् व्याप्तौ (स्वा०)

श० ७ ३ २ १० तस्मा (आयास्यायोद्गात्रे) अमुमादित्यमश्व श्वेत कृत्वा (आदित्या) दक्षिणामानयन् ता० १६ १२ ४ तेऽङ्गिरस आदित्येभ्य अमुमादित्यमश्व श्वेत भूत दक्षिणामानयन् तै० ३ ९ २१ १. ते (आदित्या) अश्व श्वेत दक्षिणा निन्युरेतमेव य एप (सूर्य) तपति कौ० ३० ६ अग्निर्वा अश्व श्वेत श० ३ ६ २ ५ अग्निरेप यदश्व श० ६ ३ ३ २२ सोऽग्निरश्वो भूत्वा प्रथम प्रजिगाय गो० उ० ४ ११ अश्वो न देववाहन इति अश्वो ह वा एप (अग्नि) भूत्वा देवेभ्यो यज्ञ वहति श० १ ४ १ ३० यस्मात्प्रजापतिरालब्धोऽश्वोऽभवत् तस्मादश्वो नाम तै० ३ ९ २१ ४ प्राजापत्योऽश्व श० ६ ५ ३ ९ सौर्यो वा अश्व गो० उ० ३ १९ वारुणो हि देवतयाऽश्व तै० १ ७ २ ६ वारुणो वा ऽश्व तै० २ २ ५ ३ वारुणो ह्यश्व श० ७ ५ २ १८ वैश्वदेवो वा अश्व श० १३ २ ५ ४ अश्वे वै सर्वा दैवता अन्वायत्ता तै० ३ ८ ७ ३ अश्वश्चतुस्त्रिंश तै० २ ७ १ ३ अश्वश्चतुस्त्रिंशो दक्षिणानाम् ता० १७ ११ ३ अपूतो वाऽएपोऽमेध्यो यदश्व श० १३ १. ११ तस्मादश्वस्त्रिभि (पद्भि) तिष्ठंस्तिष्ठति श० १३ २ ७ ६ ईश्वरो वा अश्व प्रयुक्त परा परावत गन्तो तै० ३ ८ ९ ३ अश्वो वै बृहद्वय तै० ३.९ ५ ३ (हे ऽश्व त्व) हयोऽसि ता० १ ७ १ (हे ऽश्व त्व) सप्तिरसि ता० १ ७ १ (हे ऽश्व त्व) वृषासि ता० १ ७ १ वाजिनो ह्यश्वा श० ५ १ ४ १५ (हे ऽश्व त्व) वाज्यसि ता० १ ७ १ समुद्र एवास्य (अश्वस्य मेध्यस्य) बन्धु समुद्रो योनि श० १० ६ ४ १ जागतो ऽश्व प्राजापत्य तै० ३ ८ ८ ४ स हि वारुणो यदश्व श० ५ ३ १ ५ सोमो वै वृष्णो अश्वस्य रेत तै० ३ ९ ५ ५ अश्वस्य वा आलब्धस्य रेत उदक्रामत्। तत्सुवर्णंᳪ हिरण्यमभवत् तै० ३ ८ २ ४ अश्वमालभते "श्रीर्वा एकशफम्। श्रियमेवावरुन्धते तै० ३ ९ ९ २ अश्व चापि चोत्तरत, एतस्या तद्दिश्येतौ पशू दधाति तस्मादेतस्या दिश्येतौ पशू भूयिष्ठौ श० ७ ५ २ १५]

अश्वमिष्टे योऽश्वमिच्छति तत्सम्बुद्धौ (अग्ने=विद्वज्जन), प्र०—अत्र 'बहुल छन्दसि' इति सुमागम २ ६ २

अश्वमेधस्य चक्रवर्त्तिराज्यपालनस्य विद्याया ५ २७ ५ **अश्वमेधः**=राष्ट्रम् १८ २२ **अश्वमेधाय**=आशुपवित्राय (विद्वज्जनाय) ५ २७ ४. **अश्वमेधे**=राज्यपालनाख्ये व्यवहारे ५ २७ ६ [प्रजापतिरश्वमेध श० १३ २ २ १३ अग्निर्वा अश्वमेधस्य योनिरायतनम् तै० ३ ९ २१ ३. गोऽश्वमेधेनेन्द्र्या स्वर्गाति नागान गो० पू० ५ ८. सर्वस्यैप न वेद यो ब्राह्मण सन्नश्वमेधस्य न वेद, गोऽब्राह्मण श० १३.४ २ १७ असावादित्योऽश्वमेध. श० ९ ४ २ १८ असौ वाऽ आदित्य एकविंश गोऽश्वमेध. श० १३ ५ १.५ एप वाऽश्वमेधो य एप (सूर्य) तपति श० १०.६ ५.८. एप वाऽश्वमेधो यच्चन्द्रमा श० ११ २ ५ १. राष्ट्रमश्वमेध श० १३ २ २.१६ राष्ट्र वा अश्वमेध श० १३ १ ६ ३. श्रीर्वै राष्ट्रमश्वमेध श० १३ २.९ २. यजमानो वाऽश्वमेध. श० १३ २.२ १. राजा वा एप यज्ञाना यदश्वमेध श० १३ २ २ १ वृषभ एप यज्ञाना यदश्वमेध श० १३ १ २ २ ऋषभ एप यज्ञाना यदश्वमेध तै० ३ ८ ३ ३ अश्वमेधे सर्वा देवता अन्वायत्ता श० १३ १ २ ९ प्राणापानौ वा एतौ देवानाम्। यदर्काश्वमेधौ तै० ३ ९ २१ ३ ओजो बल वा एतौ देवानाम्। यदर्काश्वमेधौ तै० ३ ९ २१.३ एप (अश्वमेध) वै ब्रह्मवर्चसी नाम यज्ञ तै० ३ ९ १९ ३ एप (अश्वमेध) वै तेजस्वी नाम यज्ञ तै० ३.९ १९ ३ एप (अश्वमेध) वा अतिव्याधी नाम यज्ञ तै० ३ ९ १९ ३ एप (अश्वमेध) वा ऊर्जस्वान्नाम यज्ञ तै० ३ ९ १९ १ एप (अश्वमेध) वै प्रतिष्ठितो नाम यज्ञ तै० ३ ९.१९ २ एप (अश्वमेध) वै क्लृप्तो नाम यज्ञ तै० ३ ९ १९.३. एप (अश्वमेध) वै दीर्घो नाम यज्ञ तै० ३ ९ १९ ३ एप (अश्वमेध.) वै विधृतो नाम यज्ञ तै० ३ ९ १९ २ एप (अश्वमेध) वै व्यावृत्तो नाम यज्ञ तै० ३ ९ १९ २ एप (अश्वमेध) वै पयस्वान्नाम यज्ञ तै० ३ ९ १९ १. एप (अश्वमेध) वै० विभूर्नाम यज्ञ तै० ३ ९.१९ १ एप (अश्वमेध) वै प्रभूर्नाम यज्ञ तै० ३ ९ १९ १ प्रजापतिᳪ सर्व करोति योऽश्वमेधेन यजते ता० २१ ४ २ तरति सर्वं पाप्मान तरति ब्रह्महत्या योऽश्वमेधेन यजते श० १३ ३ १.१ यो ऽश्वमेधेन यजते। देवानामेवायनेनैति तै० ३ ९ २२ ३ तेजसा वा एप ब्रह्मवर्चसेन व्यृध्यते योऽश्वमेधेन यजते तै० ३ ९ ५ १ स यो हैव विद्वानग्निहोत्र च जुहोति दर्शपूर्णमासाभ्या च यजते मासि मासि हैवास्याश्वमेधेनेष्ट भवति श० ११ २ ५ ५]

अश्वयते अश्वमिवाचरते १ ४५ २६ [अश्वपदादाचारेऽर्थे क्यङ्। छान्दसत्वाद् दीर्घाऽभाव]

अश्वायन्तः आत्मनोऽश्वानिच्छन्त (विप्रा=प्राजा जना) ४ १७ १६ महतो विदुप कामयमाना (जना) ७ ३२ २३ [अश्वपदाद् आत्मन इच्छाया क्यच्। तत शतृ प्रत्यय]

राज्यस्य १ १२१ १२ सूर्यस्याऽग्नेर्वायोर्वा ऋ० भू० १४७ अश्ववद्वीर्यवत (जनस्य) १ १६४ ३४ शीघ्रगामी सूर्य के १ १६४ ३५ **अश्वः**=आशुगन्ता तुरङ्ग ६ ३ ४ महत्तत्त्वम्, भा०—महदाख्य द्वितीया परिणति २३ ५४ योऽश्नुते व्याप्नोति मार्गान् स (अग्नि=सूर्यरूप) २२ १६ व्याप्तिशील (प्राणी) २५ ४५ उत्तमस्तुरङ्ग ३ २९ ६ आशुगामी (विद्युदादि) १ १६१ ३ वाजी १५ ६२ आशुगामी वायुरग्निर्वा १ १६४ २ व्याप्तिशीलोऽग्नि १ १६२ २२ **अश्वयोः**=क्षिप्र गमयित्रो ६ ४७ ६ **अश्वा**=व्याप्तौ (इन्द्राग्नी=वायुविद्युतौ) ६ ५९ ३. आशुगामिनी (हरी=अग्निजले) ४ ३३ १० तुरङ्गौ महान्तौ जनौ वा ६ ६७ ४ वेगेनाऽध्वनि व्याप्तिशीलौ युग्मौ पदार्थौ ४ ३४ ९ अश्वी १ १७४ ५. **अश्वान्**=वेगवत किरणान् १ ९२ १५ शीघ्रगामितुरङ्गान् ७ ३४ ४ वेगवतस्तुरङ्गान् १ १०४ १ तुरङ्गादीन् ६ ४७ २३ आशुगामिनोऽग्न्यादीन् तुरङ्गान्वा ३ ३ ४ सद्योगामिनोऽग्न्यादीन् ४ ४३ ६ महत पदार्थान् १ १०३ ५ महतो वलिष्ठान् (शूरान् जनान्) ६ ७५ १३. अत्युत्कृष्टवेगवत (विद्वज्जनान्) १ १७१ १ घोडो को स० प्र० २४७, ३४६ अश्वादीनि सेनाऽङ्गानि १३ ७० **अश्वानाम्**=वेगवतामग्न्यादिपदार्थानाम् ५ १८ ५ **अश्वाय**=सद्यो गमनाय ५ ३१ ५ तुरङ्गाद्याय ३ ५९ अग्नये (विद्युते) १.१६२.१६. **अश्वाः**=आशुगामिनस्तुरङ्गा ३ ७ २ व्याप्तिशीला किरणा, प्र०—अश्व इति किरणनाम, निघ० १ ५, ३ ६ ८ वेगवन्त (देवा=विद्वास) ९ ६ महान्तो विद्वास, प्र०—अश्व इति महन्नाम निघ० १ १४, ६ २४ ६ विद्याव्याप्तिशीला (विद्वज्जना) ३ १ ४ आशुगामिनोऽग्न्यादय १ १६४ ३ **अश्वेभिः**=सुशिक्षितैस्तुरङ्गादिभि २० ७३ **अश्वेभ्यः**=हयेभ्य १६ २४ **अश्वेषु**=वाजिपु १ ११४ ८ अग्न्यादिवेगवत्पदार्थेपु प० वि०। वह्नितुरङ्गादिपु १८ ४७ तुरङ्गहस्त्युष्ट्रादिपु, भा०—अश्वादिपु १६ १६ गवादिपु १३ २३ **अश्वैः**=आशुकारिभि (जनै) ५ ५५ १ आशुगमनहेतुभिरग्निजलकलागृहरूपैरश्वै १ ८८ २ वेगादिभिर्गुणै १ १७५ ४ सर्वोत्तम घोडो सहित आर्याभि० २ ११, ३४ ३६ सर्वोत्तम अश्व विद्या विज्ञानादियुक्त घोडे आदि पशुओ से आर्याभि० १ ३५, ऋ० १ १ ३१ ९ आशुगमनहेतुभिरग्न्यादिभिस्तुरङ्गहस्त्यादिभिर्वा १ १६ ९. आशुगामिभिर्विद्युदादिना निर्मितैर्विमानादियानै १ ११७ १४ महावलिष्ठै पुरुषार्थयुक्तै (पतिभि) ४ ५१ ५ महद्भि किरणै ६ ६५ २ महद्भिर्वेगादिगुणै ६.६२ ३. तुरङ्गैरग्न्यादिभिर्वा ५ २९ ६ व्यापनशीलै किरणै १ ११३ १४ आशुकारिभि (जनै) ५ ५५ १ [अशूङ् व्याप्तौ (स्वा०) धातो 'अशूप्रुषि०' उ० १ १५१ सूत्रेण क्वन्। य कश्चाध्वानमश्नुवीताश्व स वचनीय नि० १ १३ अश्नुतेऽध्वानम्, महाशनो भवतीति वा नि० २ २७ प्रजापतेरक्ष्यश्वयत्। तत् परापतत्तनोऽश्व समभवद्यदश्वयत्तदश्वस्याश्वत्वम् श० १३ ३.१.१ तै० १.१ ५ ४ ता० २१ ४ २ (प्रजापति) चक्षुषाऽश्वम् (निरमिमीत) श० ७ ५ २ ६ तान् (असुरान्) अश्वा भूत्वा (देवा) पद्भिरपाघ्नत यदश्वा भूत्वा पद्भिरपाघ्नत तदश्वानामश्वत्वमश्नुते यद्यत्कामयते य एव वेद ऐ० ५ १ अथ यदश्रुसक्षरितमासीत् सो ऽश्रुरभवदश्रुर्ह वै तमश्व इत्याचक्षते परोऽक्षम् श० ६ १ १ ११ यद्वै तदश्रुसक्षरितमासीदेप सोऽश्व श० ६ ३ १ २८ अप्सुजा उ वा ऽअश्व श० ७.५ २.१८ अप्सुयोनिर्वा ऽअश्व तै० ३ ८ ४ ३ अद्भ्यो ह वा ऽअग्रेऽश्व सम्बभूव सोऽद्भ्य सम्भवन्नसर्व समभवद्० श० ५ १ ४ ५ अश्वो ऽस्यत्योसि मयोऽसि हयोऽसि वाज्यसि सप्तिरस्यर्वासि वृषासि ता० १ ७ १. अत्योऽसीत्याह। तस्मादश्व सर्वान् पशूनत्येति तै० ३ ८ ९ १ तस्मादश्वः सर्वेषा पशूना श्रैष्ठ्य गच्छति तै० ३ ८ ९ १ तस्मादश्व पशूना जविष्ठ। ऐ० ५ १. आशु सप्तिरित्याह। अश्व एव जव दधाति। तस्मात् पुराशुरश्वोऽजायत तै० ३.८ १३ २ अश्व पशूना त्विपिमान् हरस्वितम तै० ३ ८ ७ ३ अश्व पशूनामाशु सारसारितम तै० ३ ८ ७ २ तस्मादश्व पशूनामाशिष्ठ श० १३ १ २.७. अश्व पशूना यशस्वितम. श० १३ १ २ ८ तस्माद्ध हैतदश्व पशूना भगितम श० ६ ३ ३ १३ परमोऽश्व पशूनाम् श० १३ ३ ३ १ अन्तो वा अश्व पशूनाम् ता० २१ ४ ६ अश्व पशूनामपचिततम तै० ३ ८ ७ २ तस्मादश्व पशूनामोजस्वितम श० १३ १ २ ६. अश्व पशूनामोजिष्ठो वलिष्ठ तै० ३ ८ ७ १ तस्मादश्व पशूना वीर्यवत्तम श० १३ १ २ ५ अश्व पशूनामन्नादो वीर्यवत्तम तै० ३ ८ ७ १ वीर्य वा अश्व श० २ १ ४ २४ क्षत्र वाऽअन्वश्व श० ६ ४ ४ १२ क्षत्र वा ऽअश्वो विडितरे पशव श० १३ २ २ १५. यजमानो वा अश्व तै० ३ ९ १७ ५ वज्रो वा ऽअश्व श० ४ ३ ४ २७, १३ १ २ ९ वज्रो वा एप यदश्वः तै० १ १ ५ ५ वज्री वा अश्व प्राजापत्य तै० ३ ८. ४ २ इन्द्रो वा अश्व कौ० १५ ४ असौ वा आदित्यो-ऽअश्व तै० ३ ९ २३ २ असौ वा ऽआदित्य एपोऽश्व.

प्रभाता) प्र०—अत्र मतौ पूर्वपदस्य दीर्घ १ १२३ १२ अश्वा महान्त. पदार्था विद्यन्ते यासु ता (विदुष्य स्त्रिय) ७ ४१ ७ **अश्वावत्या**=प्रशस्ता वेगवलयुक्ता अश्वा विद्यन्ते यस्या तया (सेनया) १ ५३ ५ [अश्वप्राति० मतुप् । पूर्वपदस्य मतौ दीर्घ । स्त्रिया डीप् प्रत्यय]

अश्वावन्तम् प्रशस्ताऽश्वादिसहितम् (रयि=धनम्) ४ ४६ ४ प्रशस्ता अश्वा विद्यन्ते यस्मिँस्तम् (राज्यम्) १ ८३ ४ [अश्वप्राति० मतुप् । द्वितीयैकवचनम्]

अश्वास: वाजिन २० ७८ सुशिक्षितास्तुरङ्गा १३ ३६ आशुगामिनोऽग्न्यादय ६ ६३ ७ सद्यो गामिन (रथा =यानानि) ४ १४ ४ अश्वा इव महान्तो विद्युदादय पदार्था ६ २६ २ तुरङ्गा ४ ४५ २ वेगादयो गुणा ५ ७५ ६ व्याप्तिशीला वेगादयो गुणा २ १२ ७ महान्त (वीरजना) ६ ६६ ४ अग्न्याद्यास्तुरङ्गा वा ५ ६३ ४ शीघ्रगामिन (अत्या =विद्युदादय पदार्था) १ १८१ २ [अश्वो व्याख्यात । तस्य प्रथमावहुवचनम्]

अश्विनकृतस्य यौ सद्गुणमश्नुवाते तावश्विनौ तावेवाश्विनौ ताभ्या कृतस्य, भा०—विद्वद्भिरैश्वर्ययुवतैर्जनैरनुष्ठितस्य (कार्यस्य) २० ३५ [अत्राश्विन्शब्दात् स्वार्थे ऽण्, वृद्ध्यभावस्त्वार्ष । 'अश्विनपदस्य' कृतपदेन सह समास]

अश्विनम् वहूत्तमाऽश्वादियुक्तम् (रयि=धनम्) ४ ३७ ५ [अश्वप्राति० मत्वर्थे इनि प्रत्यय]

अश्विना अश्विनौ जलाग्नी, प्र०—अत्र 'सुपा सुलुग्०' इत्याकारादेश "या सुरथा रथीतमोभा देवा०"। "नहि वामस्ति दूरके०" ऋ० १ २२ २, ४ वय यौ सुरथौ शोभना रथा याभ्या तौ, रथीतमा भूयासो रथा विद्यन्ते ययोस्तौ रथी अतिशयेन रथी रथीतमौ, देवौ=शिल्पविद्याया दिव्यगुणप्रकाशकौ, दिविस्पृशा विमानादियानै सूर्य्यप्रकाशयुक्तेऽन्तरिक्षे मनुष्यादीन् स्पर्शयन्तौ, उभा=उभौ, ता=तौ, हवामहे=गृह्णीम ॥१॥ यत्र मनुष्या वा तयोरश्विनो साधिपित्वाचलितयो सम्वन्धयुक्तेन हि यतो गच्छन्ति तत्र गृह विद्याधिकरण दूर नैव भवतीति यावत् ॥२॥ "अथातो द्युस्थाना देवतास्तामामश्विनौ प्रथमागामिनौ···········भाग अदित्य," निरु० १२ १ "तथा अश्विनौ चापि भर्त्तारौ······भागो०" निरु० १२ १ (अथातो०) अत्र द्युस्थानोक्तत्वात्प्रकाशस्था प्रकाशयुक्ता सूर्याग्निविद्युदादयो गृह्यन्ते, तत्र यावश्विनौ द्वौ द्वौ गप्रयुज्येते यौ च, सर्वेपा पदार्थाना मध्ये गमनशीलौ भवत । तयामध्यादस्मिन्मन्त्रे ऽश्विशब्देनाऽग्निजले गृह्येते । कुत ? यद्यस्माज्जलमश्वै स्वकीयवेगादिगुणैं रसेन सर्वं जगद् व्यश्नुते=व्याप्तवदस्ति । तथाऽग्योऽग्नि स्वकीयै प्रकाशवेगादिभिरश्वै सर्व जगद्व्यश्नुते, तस्मादग्निजलयोरश्विसञ्ज्ञा जायते । तथैव स्वकीयस्वकीयगुणैर्द्यावापृथिव्यादीना द्वन्द्वानामप्यश्विसञ्ज्ञा भवतीति विज्ञेयम् । शिल्पविद्याव्यवहारे यानादिपु युक्त्या योजितौ सर्वकलायन्त्रयानधारकौ यन्त्रकलाभिस्ताडिनौ चेत्तदाहननेन गमयितारौ च तुर्फरीगव्देन यानेपु शीघ्र वेगादिगुणप्रापयितारौ भवत । "अश्विनाविति पदनामसु पठितम्" निघ० ५ ६ अनेनापि गमनप्राप्तिनिमित्ते अश्विनौ गृह्येते १ ३ १ प्रकाशितगुणयोरव्वर्यो, अ०—अश्विनो, प्र०—अत्र 'सुपा सुलुग्०' इत्याकारादेश १ २२ ३ यजमानर्त्विजौ ५ ७८ २ प्राणाऽपानौ २१ ६० व्यापिनौ (मित्रावरुणौ=प्राणोदानौ) ७ ३५ ४ अश्विभ्या युक्तेन (रथेन=विमानादियानेन) १ २२ ४ व्यवहारव्यापिनौ (शिल्पिजनौ) १ ४६ ७ सत्योपदेशकरक्षयितारौ (प्रशस्तदानशीलो पुरुपौ) १ १८१ ६ शरीराऽऽत्मवलयुतौ (कुमारौ) १ ११७ १३ राजाऽमात्यौ ४ ४५ ५ व्यापनशीले द्यावान्तरिक्षे ६ ६२ १ व्याप्तिगुणशीलौ (अग्निजले) १ २२ २ राजप्रजाजनौ ५ ४६ १ विद्यादिशुभगुणव्यापिनौ राजप्रजाजनौ ३३ ८८ व्याप्तिमन्तौ सूर्याचन्द्रमसौ, प्र०—अत्र 'सुपा सुलुग्०' इति आकारादेश १ १५ ११ अग्निजलाभ्याम् ऋ० भू० १६३ वायुविद्युतौ ३ ५८ ४ व्याप्तिशीलौ (इन्द्राग्नी=विद्युद्भौतिकाग्नी) १ १०६ ४ अग्निवायू २१ ३६ वायूसूर्यौ २१ ४६ अग्निजलसूर्यचन्द्रादिभि १ ५३ ४ जलाग्नी इव निर्मातृवोढारौ (शिल्पिचालकौ) १ १८२ ७ शिल्पविद्याविदावध्यापकोपदेशकौ ३ ५८ ५ सकलविद्याव्याप्तौ (शिल्पिनौ) ३ ५८ ८ शिल्पविद्याऽध्येत्रध्यापकौ (गुरुशिष्यौ) १ ८६ ४ आप्तावध्यापकोपदेशकौ १ ११२ २४ शिल्पविद्याऽध्यापकाऽध्ययन-क्रियायुक्तावग्निजलादिद्वन्द्व वा १ ८६ ३ विद्याव्यापनशीलौ (अध्यापकोपदेशकौ) १ ११२ १ सर्वशुभगुणव्यापनशीलौ (अध्यापकाऽध्येतारौ) १ १११ ४ विद्याप्रापकाऽध्यापकोपदेष्टारौ १ १२० ६ विद्याशिक्षकौ २० ६४ रक्षादिकर्मव्यापिनौ (अध्यापकोपदेशकौ) २० ७६ विद्यावलव्यापिनौ (अध्यापकोपदेशकौ) १ १८२ ४ व्याप्तविद्यौ (देवौ=विद्वासौ) ५ ७४ १ वैद्यकविद्यानिपुणावध्यापकोपदेशकौ २० ६६ विद्वासौ राजप्रजाजनौ, भा०—जगद्धितैषिणौ ३४ ४७ व्याप्तसकलविद्यावध्यापकोपदेशकौ, भा०—अध्यापिकोपदेशिके विदुष्यौ १४ १ द्यावापृथिव्याविवाऽध्यापकोपदेशकौ ५ ७३ ६ शिल्पिनौ १ ११७ ६ कृषिकर्मविद्याव्यापिनौ (सभासेना-

अश्वयुजः येऽश्वान् सद्योगामिन पदार्थान् योजयन्ति (विद्वज्जना) ५ ५४ २. [अश्वोपपदे युजिर् योगे धातो क्विप् प्रत्यय । अश्विनोरश्वयुजौ (नक्षत्रौ) तै० १ ५ १ ५]

अश्वयुः आत्मनोऽश्वानिच्छु (इन्द्र) १ ५१ १४ बह्वश्वबलयुक्त (रय =विमानादियानविशेष) ४ ३१ १४ [अश्वपदाद् आत्मन इच्छाया क्यच्। 'क्याच्छन्दसी' ति उ प्रत्यय]

अश्वयूपाय अश्वाना बन्धनाय १ १६२ ६ अश्वस्य बन्धनार्थाय स्तम्भाय २५ २९ [अश्वयूपयो समास । यूप =यु मिश्रणेऽमिश्रणे च धातो 'कुयुभ्या च' उ० ३ २७ सूत्रेण प प्रत्यय वित् दीर्घश्च]

अश्वयोगाः येऽश्वान् योजयन्ति ते (मतय =मनुष्या) १ १८६.७ [अश्वोपपदे युज सयमने (चुरा०) धातोरण् प्रत्यय]

अश्वराधसः विद्युदादिपदार्थससाधिका (गिर =वाच) ५ १० ४ [अश्वोपपदे राधससिद्धौ धातोरसुन् प्रत्यय]

अश्वश्चन्द्राः अश्वाश्चन्द्राणि सुवर्णानि येषान्ते (प्रजाजना) ६ ३५ ४ [अश्वो व्याख्यात । चन्द्रम्= हिरण्यनाम निघ० १ २]

अश्वसनिः अश्वानामग्न्यादिपदार्थाना वा सनिर्दाता (गृहपति) ८ १२ [अश्वोपपदे षण् सभक्तौ धातो 'खनिकष्यजि०' उ० ४ १४० सूत्रेण इ प्रत्यय]

अश्वसातमः योऽश्वान् सनति सम्भजति सोऽतिशयित (सभेश) १ १७५ ५ [अश्वोपपदे षण् सभक्तौ धातो क्विप्। ततोऽतिशायने तमप् । धातोर्नकारस्याऽऽकारा-देश]

अश्वसादम् योऽश्वान् सादयति तम् (पुरुषम्) ३०.१३ [अश्वोपपदे षद्लृ विशरणगत्यादिषु धातोर्णिचि अण्]

अश्वसाम् अश्वाना सविभाजिकाम् (धियं=प्रज्ञाम्) ६ ५३ १० [अश्वोपपदे षण् सभक्तौ धातो क्विप् । स्त्रियां टाप्]

अश्वसूनृते अश्वा महती सूनृता प्रिया वाग्यस्याम्त-त्सम्बुद्धौ (विदुषि स्त्रि), प्र०—अश्व इति महन्नाम निघ० ३ ६, ५ ७९.१ महाज्ञानयुक्ते (विदुषि स्त्रि) ५ ७९ ३ महदन्नयुक्ते (साध्वि स्त्रि) ५ ७९ २ [अश्वसूनृतापदयो समास]

अश्वा आशुगमनशीला बडवा २१ ३३ व्यापिका (पत्नी) ३७.१२ [अश्व+टाप्]

अश्वाजनि याऽश्वान् जनयति सुशिक्षितान् करोति तत्सम्बुद्धौ (अ०—विदुषि राज्ञि) २९ ५० अश्वाना प्रक्षेप्त्रि (राज्ञि) ६ ७५ १३ [अश्व+जनी प्रादुर्भावे धातोर्बाहुलकाद् ड प्रत्यय, स्त्रिया ङीप् । अथवा अश्व+अज गतिक्षेपणयोर्धातोर्ल्युट् स्त्रिया ङीप् । अश्वाजनी कशेत्याहु. नि० ९ १८]

अश्वाजनीव विद्युदिव (स्थूणा=दृढा नीति) ५ ६२ ७]

अश्वापयः शापय ७ १९ ४

अश्वायते अश्वमिवाचरते (सज्जनाय) ६ ४५ २६ [अश्वपदात् क्यङ् आचारेऽर्थे, तत शतृ । व्यत्ययेन परस्मै-पदम्]

अश्वायन्तः आत्मनोऽश्वमिच्छन्त (सज्जना) २७ ३६ आत्मनोऽश्वानिच्छन्त (विप्रा =मेधाविनो जना) ४ १७ १६ महतो विदुष कामयमाना (सत्पुरुषा) ७.३२ २३ [अश्वपदादिच्छायामर्थे क्यच् । तत शतृ]

अश्वायेव यथाऽश्वाय ११

अश्वावत् बह्वश्वयुक्तम् (राध =धनम्) ५ ५७ ७ बहव प्रशस्ता वेगप्रदा अश्वा अग्न्यादय सन्ति यस्मिंस्तत् (वाजम्) १ ४८ १२ प्रशस्ततुरङ्गयुक्तम् (नृपाय्यम्=नृणा पाय्य मानम्), प्र०—अत्र सोमाऽश्वेन्द्रिय०, इति दीर्घ २० ८१ **अश्वावतः**=बह्वश्वयुक्तस्य (जनस्य) प्र०—'मन्त्रे सोमाऽश्वेन्द्रियविश्वदेव्यस्य मतौ' इति अश्वशब्दस्य मतौ दीर्घ १.१२२ ८ [अश्वप्राति० मतुप् । 'मन्त्रे सोमाश्वेन्द्रिय०' सूत्रेण मतौ परत पूर्वस्य दीर्घादेश]

अश्वावत् अश्वेन तुल्यौ (वाय्वग्नी) २ ४१ ७ अश्वादिभि समानम् (यज्ञम्) ८ ६३ [अश्वप्राति० तुल्यार्थे वति प्रत्यय । पूर्वस्य च दीर्घत्वम्]

अश्वावति अश्वा अस्या सम्बन्धे सन्ति तत्सम्बुद्धौ (उष) प्र०—अत्र 'मन्त्रे सोमाऽश्वेन्द्रिय०' अ० ६ ३ १३१. इत्यश्वशब्दस्य दीर्घ, सम्बन्धाऽर्थे मतुप् १ ९२ १४ सम्बद्धा अश्वा यस्मिँस्तस्मिन् रये १ ८३ १ **अश्वावतीम्**=प्रशस्तशुभगुणयुक्ताम् (महौषधीम्) प्र०—अत्र मतौ दीर्घ १२ ८१ **अश्वावती.** =प्रशस्ता अश्वा विद्यन्ते यासान्ता (सूनृता =वाच) १ ४८ २ प्रशस्तान्यश्वानि व्याप्तिशीला-न्युदकानि विद्यन्ते यासु ता (उषाम =प्रभाता) ३४ ४०. प्रशस्ता अश्वा व्याप्तयो विद्यन्ते यासान्ता (उषम =

अश्विनी आशुगामिन स्त्री ५.४६ ८ [अश्विन्+ङीप् । अश्विनी=अश्विनो पत्नी नि० १२ ४६]

अश्विया अश्वादियुक्तानि (हिरण्या=धनानि) ४ ३७ ११

अश्वी बह्वश्व (अग्नि =विद्वज्जन) ४ २ ५ बहवो महान्तोऽश्वा वेगादयो गुणा विद्यन्ते यस्मिन् सोऽग्नि (विद्वज्जन) ७ १ १२ [अश्वप्राति० मत्वर्थे इनि]

अश्वीव यथा वडवा २ २७ १६ [अश्वस्य स्त्री अश्वी । अश्व+ङीप्]

अश्वेव अश्वावद्वर्त्तमाना (उषा) ४ ५२ २ [अश्व-शब्दात् स्त्रिया टाप्, तदिव]

अश्वे इव अश्ववडवाविव ३ ३३ १ [अश्व+टाप् । अश्वा शब्दस्य द्विवचनम्]

अश्वैत् व्याप्नोति १ ९२ १२ वर्धते १ १२४ ११ [टुओश्वि गतिवृद्ध्योः (भ्वा०) धातोर्लुङ् । सिचो लुक्]

अश्व्यम् अश्वेषु भवम् (गिर) १ ११७ २२ तुरङ्गेषु वेगादिषु वा साधुम् (वीरजनम्) १ ११२ १० अश्वेषु व्याप्तविद्येषु साधुम् (मन =विज्ञानम्) १ ११६ ६ अश्वेभ्यो हितम् (राय =धनम्) २७ २७ **अश्व्यस्य**= अश्वेष्वाशुगामिषु भवस्य (पुष्टे) ४ ४१ १० **अश्व्यः**= अश्वेषु आशु गच्छत्सु साधुरत्यन्तवेगकारी (विद्वज्जन) १ ७४ ७ योऽश्वेषु वेगादिगुणेषु साधु (वीरजनो मेघो वा) १ ३२ १२ **अश्व्या**=महत्सु भवानि (राधासि=धनानि) ७ १६ १० अश्वेभ्यो हितानि (राधासि=धनानि) ५ ३६ ७ अश्वेषु हितानि (राधासि=धनानि) ६ ४४ १२ **अश्व्यानि**=अश्वाना महतामिमानि (शीर्षाणि=शिरासि) ७ १८ १६ **अश्व्यैः**=अश्वेषु भवैर्गुणै ६ ६० १४ [अश्व-शब्दात् साधवर्थे भवार्थे वा यत् प्रत्यय]

अषतरा प्राप्ततराणि (च्यौत्नानि=स्तोत्राणि), ऋ०—अत्र छान्दसो रेफस्य लोप १ १७३ ४ [ऋषी गतौ (तुदा०) धातोर्भावे घञ् प्रत्यय । रेफस्य लोपश्छान्दस सर्वोऽतिशायने तरप्]

अषाळ्हम् सोढुमनर्हम् (राजान सेनापति वा) ३ १ २० [illegible] सोढुमशक्यम् (सह =बलम्) १ ५५ ८ [illegible] (सोम = सेनाध्यक्षम्) [illegible] (नानृगणम्) ६ १८ १ **अषा-**[illegible] सोढुमशक्य (उग्र = राजा) ७ २० ३ [illegible] (विद्वान् राजपुत्र) ३ १५ ४ [illegible] (तुरीयम्?) [illegible] (स्वाय = सुवीर्याय) ७ ४६.१ **अषाळ्हाः**=असोढव्या शत्रुसेना ७ २८ २. **अषाळ्हेन** शत्रुभिरसोढव्येन (शवसा=बलेन) ६ १९.२ [षह मर्षणे धातोस्तृचि 'साढ्यैसाढ्वासाढेति निगमे' अ० ६ ३ ११३ सूत्रेण निपात्यते । ततो नञ्समास]

अषाढा शत्रुभिरसह्यमाना (पत्नी) १३ २६ [षह मर्षणे धातो क्त, स्त्रिया टाप् । नञ्समास । अषाढा (इष्टका) (देवा) ताम् (इष्टका) उपधायासुरान्त्सपत्नान् भ्रातृव्यानस्मादसहन्त यदसहन्त तस्मादषाढा श० ७ ४ २ ३३ त एते सर्वे प्राणा यदषाढा श० ७ ४.२ ३६ ग्रीवा अषाढा श० ७ ५ १ ३५ इयं पृथिवी वाऽअषाढा श० ६ ५ ३ १ वागषाढा श० ६ ५ ३ ४ वाग्वाऽअषाढा श० ७ ४ २ ३४ (नक्षत्र) यन्नासहन्त तदषाढा तै० १ ५ २ ८ अपा पूर्वाषाढा तै० १ ५ २ ८ अपा पूर्वाषाढा तै० १ ५ १ ४ विश्वेषा देवानामुत्तरा (अषाढा) तै० १ ५ १ ४]

अष्टधा दिग्भिरष्टप्रकार (दोह =सामग्रीसमूह) ८ ६२ [अष्टन् प्राति० 'सङ्ख्याया विधार्थे धा' अ० ५ ३.४२ सूत्रेण धा प्रत्यय]

अष्टमम् अष्टसङ्ख्यापूरकम् (चेतन ब्रह्म) २५ २ [अष्टन् सङ्ख्यावाचिन पूरणार्थे 'नान्तादसङ्ख्यादेर्मट्' अ० ५ २ ४९ सूत्रेण डट् मडागमश्च]

अष्टमी अष्टाना पूरणा (क्रिया) २५ ४ [अष्टम शब्दात् ङीप् प्रत्यय]

अष्टवे व्याप्तुम् ४ ३० १९ [अशूङ् व्याप्तौ (स्वा०) धातो कृत्यार्थे तवेन् प्रत्यय]

अष्टा व्यापक (सूर्यलोक) १ १२१ ८ [अशूङ् व्याप्तौ (स्वा०) धातोस्तृच्]

अष्टाकपालः अष्टसु कपालेषु संस्कृत (चरु = पाक), अष्टसु कपालेषु ससाधित (चरु =पाक) २९ ६० [अष्टन् कपालयो संस्कृतार्थे तद्धितार्थे द्विगु समास । 'संस्कृत भक्षा ' अ० ४ २ १६ सूत्रेण प्राप्तस्याण् प्रत्ययस्य 'द्विगोर्लुगनपत्ये' अ० ४ १ ८८ सूत्रेण लुक् । 'छन्दसि च' इति पूर्वपदस्य दीर्घ]

अष्टाक्षरेण याजुष्याऽनुष्टुभा (छन्दसा) ९ ३२

अष्टाचत्वारिंशत् अष्टाधिकाचत्वारिंशत् (सङ्ख्या) १८ २५ [अष्टन् चत्वारिंशत् पदयोर्बहुव्रीहौ समासे 'द्व्यष्टन सङ्ख्यायाम्०' इति पूर्वपदस्याकारादेश]

अष्टाचत्वारिंशः अष्टाचत्वारिंशद्धा (धर्त्रम्= धारणम्) १४ २३

धीशौ) १.११७.५ सूर्याचन्द्रमसौ वैद्यावध्यापकौ वा ७ ४१.१. सत्योपदेशव्यापिनौ अध्यापकोपदेशकौ १.१८१ ७. शिल्पविद्याक्रियाशिक्षकौ (विद्वज्जनौ) १ १६१ ६ सद्गुण-कर्मस्वभावव्यापिनौ, भा०—पठितसाङ्गोपाङ्गवेदौ (सरस्वती=प्रशसिता गृहिणी तथा पुरुष) २० ५६. शुभ-गुणव्यापिनौ (विद्वांसौ स्त्रीपुरुषौ) ४ १५ १० विद्यान्याय-प्रकाशकौ (विद्वज्जनौ) १ १३६ ३ सिद्धसाधकौ (अ०—विद्वांसौ) १६ ६३ आयुर्वेदाङ्गव्यापिनौ (विद्वज्जनौ) १६ १२ सद्वैद्यौ २१ ४३ वैद्यकविद्याव्यापिनौ (भिषजा=वैद्यौ) २१ ३३ सर्वाधीश-सेनाधीशौ ३ ५८ ६ अग्निजले इव वर्त्तमानौ सभासेनेशौ १ ४७.२ सेनेशयोद्धारौ ४.४५ ३ शत्रुसेनाव्यापिनौ (सभासेनाधीशौ) १ ११६ १८ यज्ञा-नुष्ठानशीलौ (सभासेनेशौ) १ ११६ ८ जलपृथिव्याविवाशु-सुखदातारौ (सभासेनाध्यक्षौ) १ ११६ ६ सर्वविद्याव्याप्ति-मन्तौ सभासेनेशौ १ ११६.१० सूर्यवायुसदृक्कर्मकारिणौ सभासेनेशौ १ ४७ ३ सकलविद्यासुखव्यापिनौ (सभासेनेशौ) १ ४६ १५ गृहाश्रमधर्मव्यापिनौ स्त्रीपुरुषौ १ १२० १ शिल्पविदौ दम्पती १ ११८ १ पतिपत्नी सर्व-लोकाऽधिपती १ ११८ ६ भूगर्भविद्याविदौ स्त्रीपुरुषौ १ ११७ २० विद्यासुशिक्षितौ स्त्रीपुरुषौ, व्या०शुभगुणकर्म-स्वभावौ २०.५६ स्त्रीपुरुषौ १६ १८ ब्रह्मचर्येण प्राप्त-विद्यौ स्त्रीपुरुषौ ५ ७५ ८ व्याप्तसुखौ (स्त्रीपुरुषौ) ५ ७६ ३ गृहाश्रमव्यवहारव्यापिनौ (स्त्रीपुरुषौ) १६ ८८ सूर्योषसौ ५ ७७ २ शिल्पविद्याऽध्यापकाऽध्येतारौ स्वामि-सेवकौ वा ३ ५८ ७. सुसत्कृतौ पुरुषौ २१ ४२ विद्या-ज्योतिर्विस्तारमयौ १ ३४ ६ क्षत्रधर्मव्यापिनौ (सभासेनेशौ) १.४७ ४ वह्निजलवद्यानसिद्धि सम्पाद्य प्रेरकचालका-वध्वर्यू, प्र०—'अश्विनावध्वर्यू' १ ३४ ३ विद्यादाता-ग्रहीतारावध्वर्यू १ ३४.४ वायुसूर्याविव वर्त्तमानौ धर्मन्यायप्रकाशकौ (उपदेशकसेनेशौ) १ ४१ १० पशुपाल-कृषीवलौ २१ ४१ सूर्य और चन्द्र को स० वि० १५५, ७ १४ १ हे सूर्यचन्द्रवत्प्रकाशमानौ (अ०—योगाऽध्येत्रध्या-पकौ ७ ११ **अश्विनोः**=सभासेनेशयो १ १२० १० सूर्याचन्द्रमसो ३८ १ सूर्याचन्द्रमसोरध्वर्य्वोर्वा, प्र०—सूर्याचन्द्रमसावित्येके, निरु० १२ १, १ १० विद्वत्क्रिया-कुशलयो (सज्जनयो) १ १५७ ३ प्राणोदानयो ११ ६ प्राणापानयोरध्वर्य्वोर्वा ५ २२ वैद्यकविद्या प्राप्तयोरध्या-पनौपधिकारिणो (अध्यापकवैद्ययो) २० ३ सकलविद्या-व्याप्तयोरध्यापकोपदेशकयो २० ३ प्रकाशभूम्यो प्र०—द्यावापृथिव्यावित्येके, निरु० १२ १, १ २१ द्यावापृथिव्यो-राकर्षणधारणाभ्यामिव ११.२८. **अश्विनौ**=अश्विदेवताकौ (पशू) २४ १ सूर्याचन्द्रमसाविवाध्यापिकोपदेशिके १ ४६ १. सूर्याचन्द्रमसाविव राजराजपुरुषौ ६ ३१ सर्वपदार्थगुण-व्यापिनौ स्त्रीपुरुषौ १ १८० ७ सूर्याचन्द्रमसाविव वैद्यक-विद्याकार्ये प्रकाशमानौ (वैद्यजनौ) २० ५८ वायुजले १ ४४ ८ प्रजाराजानौ २५ ३ अध्वर्यू प० वि० । वायूदके इवोपदेष्टृ पदेश्यौ ५.७८ १ विद्याप्रीतिशीलौ (सभासेनेशौ) १ ११६ ५ यौ व्युपदेशकौ (अध्यापकोपदेशकौ) १ १८४ ६ अध्यापकपरीक्षकौ ५ ७५ १ शिल्पविद्याव्यापिनौ (अध्या-पकोपदेशकौ) १ १८३ ६ सुशिक्षितौ स्त्रीपुरुषौ ३८ १२. **अश्विभिः**=सूर्याचन्द्रमस् ? आदिभि ६ ४५ २१. **अश्विभ्याम्**=राज्यस्वामिपशुपालाभ्याम् २१ ४० बहु-भोजिभ्या स्त्रीपुरुषाभ्याम् १६ ८६ इन्द्राग्निभ्याम् २१ ३४ अग्निवायुभ्याम् २१ ५५ सूर्याचन्द्रमोभ्याम् २० ६० विद्या-व्यापिभ्याम् (योगिभ्याम्) १६ ६५ पूर्णविद्याऽध्यापको-पदेशकाभ्याम् २० ३३ व्याप्तविद्याभ्याम् (स्त्रीपुरुषाभ्याम्) १६ १ [अश्वशब्दात् मत्वर्थे इनि प्रत्यय । अश्विनौ (द्यावापृथिव्यौ) यद् व्यश्नुवाते सर्व रसेनान्यो ज्योतिषान्य नि० १२.१ अथवा अशूङ् व्याप्तौ (स्वा०) धातोर्बाहुलकाद् विनि । अश्विन् द्विवचने=अश्विनौ । इमे ह वै द्यावा-पृथिवी प्रत्यक्षमश्विनाविमे हीदꣳ सर्वमश्नुवाता पुष्कर-स्रजावित्यग्निरेवास्यै (पृथिव्यै) पुष्करमादित्योऽमुष्यै (दिवे) श० ४ १ ५ १६ श्रोत्रे अश्विनौ श० १२ ६ १ १३ नासिके अश्विनौ श० १२ ६ १ १४ तद् यौ ह वा ऽइमौ पुरुषा-विवाक्ष्यो । एतावेवाश्विनौ श० १२ ६ १ १२ अश्विना-वध्वर्यू ऐ० १ १८ अश्विनौ वै देवाना भिषजौ ऐ० १ १८. मुख्यौ वा ऽश्विनौ (यज्ञस्य) श० ४ १ ५ १६ श्वेताविव ह्यश्विनौ श० ५ ५ ४ १ सयोनी वा ऽअश्विनौ श० ५ ३.१.८ अश्विनाविव रूपेण (भूयासम्) म० २ ४ १४ आश्विन द्विकपाल पुरोडाश निर्वपति श० ५ ३ १ ८ आश्विनो द्विकपाल (पुरोडाश) ता० २१ १०.२३ वसन्तग्रीष्मा-वेवाश्विनाभ्याम् (अवरुन्धे) श० १२ ८ २ ३४ अश्विभ्या-ऽन्धाना तै० १ ५ ११ ३ अथ यदेन (अग्निम्) द्वाभ्या बाहुभ्या द्वाभ्यामरणीभ्या मन्थन्ति द्वौ वा अश्विनौ तद-स्याश्विन रूपम् ऐ० ३ ४ देवस्य त्वा सवितु प्रसवे । अश्विनोर्बाहुभ्याम् तै० २ ६ ५ २ गर्दभरथेनाश्विना उदजय-ताम् ऐ० ४ ६ तदश्विना उदजयता रासभेन कौ० १८ १. इममेव लोकमाश्विनेन (अवरुन्धे) श० १२.८ २ ३२. अश्विनमन्वाह तदमु लोक (दिव) आप्नोति कौ० ११ २ १८ २]

२.२८. १३ ३ निन्द्यात् (वचस) ५ १२ ४. **असता**= अवर्त्तमानेन (बलादिना) ४ ५ १४ [अस भुवि (अदा०) धातो शतृ । नञ्समास । मृत्युर्वाऽसत् श० १४ ४ १ ३१ तदाहु किं तदसदासीदित्यृषयो वाव तदग्रेऽसदासीत् श० ६ १ १ १ अस्य यदसत् सर्क सा वाक् सोऽपान जै० उ० १.५३ २]

असत्याः असत्याऽऽचरणा (पापिजना) ४ ५ ५ [नञ्-सत्यपदयोर्बहुव्रीहि । सत्य कस्मात् ? सत्सु तायते, सत्प्रभव भवतीति वा नि० ३ १३]

असदत् तिष्ठेत् २६ २६. स्वकक्ष्याया भ्रमति, प्र०— अत्र लडर्थे लुङ् ३ ६ प्राप्नुयात् ११ ४८ आसीदतु ३ ६२ १५ उपसीदति ६ ५७ २. सीदति २.६ १ आसीदति २८ ४. सीदेत् ११ ३७ सीद ११ ४० **असदन्**= सीदन्ति १ १६ १ ४ भवेयु प्र०—अत्र लिडर्थे लङ् 'वाच्छन्दसि सर्वे विधयो भवन्ति' इति सीदादेशो न २.६ [षद्लृ विशरणगत्यवसादनेषु (भ्वा०) धातोर्लङ् । छान्दसत्वात् सीदादेशो न भवति]

असदः जानीहि जानीया वा ५ २१.४ आस्व १२ १७ प्राप्नोषि १२ ३८ [षद्लृ विशरणगत्यवसादनेषु (भ्वा०) धातोर्लङ् । छान्दसत्वात् सीदादेशो न भवति]

असन् प्रक्षिपन्ति ४ ३ ११ [असु क्षेपणे (दिवा०) धातोर्लङ् । विकरणलुक् आडभावश्च छान्दस]

असनत् विभजति ५ ३० १४ **असनम्**=सम्भजेयम् १ १२०.१० [षण सभक्तौ (भ्वा०) धातोर्लुङ्]

असनाम् प्रक्षेपणा क्रियाम् १ १४८ ४ [असु क्षेपणे (दिवा०) धातोर्युच् प्रत्यय । स्त्रियां टाप्]

असनाय प्रक्षेपणाय १ १३० ४. **असने**=क्षेपणे १ ११२ २१. [असु क्षेपणे (दिवा०) धातोर्ल्युट्]

असनोत् सुनुयात् ३ ३४ १० [षुञ् अभिषवे (स्वा०) धातोर्लङ् । वर्णव्यत्ययेनोकारलोपश्च]

असन्दितः अखण्डित (अग्नि =सेनापति) १३ १०. [सम्+दो अवखण्डने+क्त 'द्यतिस्यति०' इत्यादि-सूत्रेणेत्वम् । नञ्समास]

असन्वन् याचन्ते ७ १८ १.

असपत्नम् अजातशत्रुम् (राजानम्) ६ ४०. शत्रू-द्रवरहित निष्कण्टकमुत्तमराजधर्मम् ऋ० भू० २२२ सर्वत्र पक्षपातरहित पूर्णविद्या-विनययुक्त सब के मित्र सभापति राजा को स० प्र० १८३, ६ ४० **असपत्नाः**=अजात-शत्रव (राजान) ७ २५ [नञ्-सपत्नपदयोर्बहुव्रीहि]

असपर्यन् सेवन्ते ३ ९.६. सेवेरन् ३३ ७ [सपर्यति परिचरणकर्मा निघ० ३.५. ततो लङ्]

असबन्धुः यथाऽसमाना बन्धवो यस्य स (जन.) ५.२३ [समानबन्धुपदयोर्बहुव्रीहि । समानस्य सादेश 'ज्योतिर्जनपद०' अ० ६ ३ ८५ सूत्रेण । नञ्समास.]

असमनाः असमानमनस्का (कृषीवला) १ १४० ४. पृथक् पृथग् वर्त्तमाना (अग्नितनी =नाडी) ८ ५ ३ [समान-मनसोर्बहुव्रीहि । समानस्य सादेश । नञ्समास]

असमने अविद्यमान समन सङ्ग्रामो यस्मिंस्तस्मिन् (पथि) ६ ४६.१३ [नञ्-समनपदयोर्बहुव्रीहि । समनम्= सङ्ग्रामनाम निघ० २ १७]

असमरथः अविद्यमान समो रथो यस्य स (ग्रामणी) १५ १७ [नञ्समरथपदयोर्बहुव्रीहि । असमरथ तस्य (आदित्यस्य) रथस्यौतस्यासन्धस्त सेनानी ग्रामण्या-विति कपिकौ तावृतू श० ८ ६ १ १८]

असमष्टकाव्यः असमष्ट न सम्यग् व्याप्त काव्य कवे कर्म यस्य स (इन्द्र =विद्याप्रकाशको जन) २ २१ ४ [असमष्टम्=नञ्+सम्+अशूङ् व्याप्तौ (स्वा०) +क्त काव्यम्=कविप्राति० भावे कर्मणि वा ष्यञ् तयोर्बहुव्रीहि.]

असमः नास्य सम सदृशो यस्य (ईश्वर) ६ ३९ ४ **असमा**=अतुल्यौ सर्वेभ्योऽधिकौ (अध्यापकोपदेशकौ) ६.६७ १. अविद्यमाना समा यस्या साऽनुपमा (मनीषा) १ ५४.८. [नञ्-समपदयोर्बहुव्रीहि]

असमात्योजः असमाति अतुल्यमोजो यस्य स (इन्द्र =ईश्वरोपासको राजा) ६.२६ ६. [असमाति-ओजस् पदयो समास समातिश्च समानार्थे]

असमानः असदृश (व्यक्ति) ५ २३ (नञ्-समानयो समास]

असमानि अन्येषा धनैरतुल्यान्यधिकानि यावत् ७ ४३ १ [नञ्समपदयो समास]

असमाः असदृशी (विद्युत =तडित) २ १३ ७ [नञ्-समपदयो समास । स्त्रियां टाप्]

असम्भवात् अनुत्पन्नात् कारणात् ४० १० [सम्भव =सम्+भू सत्तायाम् (भ्वा०) धातो 'ऋदोरप्' इति कर्तृभिन्ने कारकेऽप् । नञ्समास]

असम्भूतिम् अनाद्यनुत्पन्न प्रकृत्यास्य सत्त्वरजस्तमो-गुणमय जड वस्तु ४० ९ अनुत्पन्न अनादि प्रकृति कारण को स० प्र० ४३२, ४० ९ [सम्भूति =सम्+भू सत्तायाम् (भ्वा०) धातो क्तिन् । नञ्समास]

अष्टादशः अष्टादशधा (तप=सन्तापो गुण)

अष्टापक्षाम् चारो ओर दो दो शाला और उनकी चारो दिशाओ मे दो दो शाला स० वि० १६८, अथर्व० ६ ३ २१ [अष्टन्-पक्षयो समास]

अष्टापदी वेदोपवेदविद्यायुक्ता (विदुषी स्त्री) ११६४४१ **अष्टापदीभिः**=अष्टौ पादौ यासा ताभिर्वाग्भि २ ७ ५ **अष्टापदीम्**=अष्टौ ब्राह्मण-क्षत्रिय-वैश्य-शूद्राश्चत्वारो वर्णा, ब्रह्मचर्य-गृहस्थ-वानप्रस्थ-सन्यासाश्चत्वार आश्रमा पदानि प्राप्तव्यानि यस्यास्ताम् (स्वाहा=वाचम्) ८ ३० [अष्टन्-पादशब्दयोर्बहुव्रीहौ 'सङ्ख्यासुपूर्वस्य' अ० ५ ४ १४० सूत्रेण पादशब्दान्तस्य लोप। 'पाद पत्' इति पदादेशे 'पादोऽन्यतरस्याम्' इति ङीप्। 'छन्दसि चे' ति पूर्वपदस्य दीर्घादेश]

अष्टाविंशतिः अष्टाविंशका विंशति (सङ्ख्या) १८ २५ [अष्टन्-विंशत्यो समास। 'द्व्यष्टन सङ्ख्या-याम्०' इत्याकारादेश]

अष्टाविंशानि दशेन्द्रियाणि, दश प्राणा, मनोबुद्धि-चित्ताऽहङ्कारविद्यास्वभावशरीरबलञ्च ऋ० भू० १६० [अष्टन्-विंशत्यो समास। तत पूरणार्थे डट्। 'ति विंशते-र्डिति' अ० ६ ४ १४२ सूत्रेण तेर्लोप]

अष्टु प्राप्नोतु ८ ६० व्याप्नोतु ७ ३ [अशूङ् व्याप्तौ (स्वा०) धातोर्लोट्। 'बहुल छन्दसी' ति शपो लुक्]

अष्टौ अष्टत्वविशिष्टा सङ्ख्या १८ २५ चतस्रो दिश उपदिशश्च १ ३५ ८ [अष्टन्प्राति० परयो जश्शसो स्थाने 'अष्टाभ्य औश्' इत्यौशादेश]

अष्ट्रा व्यापिका (पशुवर्धनक्रिया) ६ ५३ ६ **अष्ट्राम्**=व्याप्ताम् (पदार्थविद्याम्) ६ ५८.२ कृपि-साधनाऽवयवम् ४ ५७ ४. [अशूङ् व्याप्तौ (स्वा०) धातो 'सर्वधातुभ्य ष्ट्रन्' उ० ४ १५६ सूत्रेण ष्ट्रन् प्रत्यय स्त्रिया टाप्]

अष्ठीवन्तौ ष्ठीवन कफादिकमत्यजन्तौ (कुल्फौ=गुल्फौ) ७ ५० २ [ष्ठिवु निरसने (भ्वा०) धातो शतृ। नञ्समास]

असश्चत सज्ज, प्र०—अत्र सज्जधातो 'बहुल छन्दसि' इति शपो लुक्, लोडर्थे लङ्, व्यत्ययेनाऽऽत्मनेपदञ्च १ ३३ ३ [षञ्ज सङ्गे (भ्वा०) धातोर्लङ्। व्यत्ययेनात्मने-पदम्। 'बहुल छन्दसी' ति शपो लुक्]

असक्राम् या सहन क्रामति ताम् (इषम्=अन्न विज्ञान च) ६ ६३ ८ [असक्राम्=असङ्क्रमणीत् नि० ६ २९]

असघ्नोः हिंस्या १ ३१ ३ [षघ हिंसायाम् (स्वा०) धातोर्लङ्]

असङ्ख्याता सङ्ख्यारहितानि (धन्वानि=धनूंषि) १६ ५४ [सम्+ख्या प्रकथने (अदा०) धातो क्त। नञ्-समास]

असचन्त समवयन्ति ३ ३१ ४ [षच समवाये (भ्वा०) धातोर्लङ् व्यत्ययेनात्मनेपदम्]

असजातः यथा य सह न जात (व्यक्ति) ५ २३ [सह+जनी प्रादुर्भावे (दिवा०) धातो क्त। सह स्थाने सादेश। नञ्समास]

असत् भवेत्, प्र०—अत्र 'अस' धातोर्लेट्-प्रयोग १ ९ ५ स्यात् ३३ ६८ अस्तु १२ ६८ है आर्याभि० २ ५०, २५ १८ **असति**=स्यात् ११२४ ११ भवेत् ६ २३ ९ भवति ५ ५३ १५ भवानि ५ ५३ १५ **असथ**=भवत १७ ४६ भवथ ३५.४ **असथः**=भवथ. ६ ६३ १ **असन्**=सन्तु, प्र०—अत्र लेट्-प्रयोग १ ८९.१ सन्ति ३५ १० भवन्ति ७ ८ ५ भवन्तु २५ १४ स्यु ३१ २१ भवेयु, प्र०—अत्र लेट्-प्रयोग १ ३८ १५ **असम्** भवेयम् ३४ ५२ **अससि**=असि प्र०—अत्र 'बहुल छन्दसि' इति शपो लुगभाव ४ ५७ ६ स्या २ २९.२ **असः**=भवेत् ६ ३६ ५ भवे ७ २४ १ **असाम**=भवेम १ ५३ ११ **असि**=भवेत् प्र०—अत्र पुरुषव्यत्ययो लिडर्थे लट् च १ २८ भवति, प्र०—अत्र पुरुषव्यत्यय १ २९ भवति वा, प्र०—अत्र पक्षे पुरुषव्यत्यय २ २१ अस्ति वा, प्र०—अत्र भौतिकपक्षे व्यत्ययेन प्रथमपुरुषो गृह्यते १.८ उत्पादको वर्त्तसे, प्रकाशको वर्त्तते वा १८ भव, प्र०—अत्र लोडर्थे लट् ३ ४८. अस्तु ७ १७. भवसि ४.३२ २ वर्त्तते ५.१ वर्त्तसे ५ २६. सुखदायक होती है स० वि० १६६, अथर्व० ९ २ ३ ७ हो आर्याभि० १ ३९ **अस्ति**=विद्यते १ १७० १ **अस्तु**=भवेत्, प्र०—अत्र लिडर्थे लोट् १ १६ ७ भवति, प्र०—अत्र लडर्थे लोट् १.१३.११ भवतु, भवति वा, प्र०—अत्र पक्षे व्यत्यय १ १३ १०. होवे स० प्र० १८४, १ ३९ २ हो, हो सकता है आर्याभि० २ ४३, ३४ १ **अस्मि**=भवामि, वर्त्ते २ २८ [अस भुवि (अदा०) धातो रूपाणि]

असत् शून्यमाकाशम् ऋ० भू० ११६ अनित्यम्-ऋ० भू० ३२८ अथ० १० ७ १० **असतः**=अविद्यमानस्या-ऽदृश्यस्याऽव्यक्तस्य कारणस्य १३ ३ अविद्या, चक्षुरादि इन्द्रियो से अगोचर इस विविध जगत् की आर्याभि०

असम्मृष्ट. सम्यगशुद्ध (विद्यार्थी जन) ५ ११ ३. [सम्मृष्ट=सम्+मृजूष् शुद्धौ (अदा०) धातो क्त:। नञ्समास]

असंयत: अजितेन्द्रिय (जन) १ ८३ ३ [सयत=सम्+यमु उपरमे (भ्वा०) धातो क्त। नञ्समास]

असरत् सरति गच्छति ४ ३८ ६ सरेत् प्राप्नुयात् ४.२४ १४ [सृ गतौ (भ्वा०) धातोर्लङ्]

असर्जि सृज्यते, प्र०—अत्र लडर्थे लुङ् १ ३८ ८ सृजति ४ २६ ५ सृज्येत ६ ६३ ७ रची गई १ १८१ ७ [सृज विसर्गे (तुदा०) धातोर्लुङ् कर्मणि]

असवे प्राणाय, भा०—प्राणादिशुद्धये २२ ३० [असुरिति प्राणनाम, अस्त शरीरे भवति नि० ३ ८]

असश्चतम् जानीतम्, प्र०—अत्र लोडर्थे लङ्, सश्चतीति गतिकर्मा निघ० २ १४, १ ११२ ६ अप्राप्तम् (धेनु=गामिव वाणीम्) २ ३२ ३ [सश्चतीति गतिकर्मा निघ० २ १४ ततो लङ्]

असश्चत: असज्यमाना (भद्रा वीरा) २ २५ ४ असमवेता (जना.) १ ११२ २ विभाग प्राप्ता (द्वार=द्वाराणि), प्र०—अत्र 'सस्ज गतौ' इत्यस्य व्यत्ययेन जकारस्य चकार १ १३ ६ परस्पर विलक्षणा (वाच) १.१४२ ६ **असश्चता**=विलक्षणस्वरूपे (भूमिसूर्यौ) १ १६० २ [षस्ज गतौ (भ्वा०) धातो शतृप्रत्यय। नञ्समास। वर्णव्यत्ययेन जकारस्य चकार]

असश्चन्ती असमवयन्ती (धारा=प्रवाहवद्वाणी) ३ ५७ ६. पृथक् पृथग् वर्त्तमाने (रोदसी=सूर्यभूमी) ६ ७० २ [षच समवाये (भ्वा०) धातो शत्रन्ताद् ङीप्। नञ्समास। असश्चन्ती असज्यमाने इति वा। अव्युदस्यन्त्याविति वा नि० ५ २]

अससन्त: जागृता (सिन्धव) १ १४३ ३ [षस स्वप्ने (अदा०) धातो शतृ प्रत्यय.। नञ्समास। सस्तिरवपितिकर्मा। निघ० ३ २२]

अशस्तन हिंसन १ १६१ ११ [असस्तन अस्वपथ नि० ११ १६]

असहन्त सहन्ते ३ २६ ६ [षह मर्षणे (भ्वा०) धातोर्लङ्]

असयो: भुजदण्डमूलयो ५ ५७ ६ [अस गत्यादिषु (भ्वा०) धातो 'असे सन्' उ० ५ २१ सूत्रेण सन् प्रत्यय। तत षष्ठी सप्तमी वा]

असादि आसद्यते ७ ७ ५ सद्यते १.६० २. सीदेत् ५.४६ ७ [षद्लृ विशरणगत्यवसादनेषु (भ्वा०) धातोर् कर्मणि लुङ्]

असानिषम् सम्भज्य प्राप्नुयाम् ६ ४७ २३. [षण सम्भक्तौ (भ्वा०) धातोर्लुङ्]

असामि अतुलम् (महाविद्वज्जनम्) ६.३८ ५. अनल्पम् (अतुला वृद्धिम्) ६ १६ २ सम्पूर्णम् (सुखम्) प्र०—सामीति खण्डवाची न सामि असामि १ ३९ ६ **असामिभि:**=क्षयरहिताभि ऊतिभि, प्र०—अत्र षै क्षये इत्यस्माद् बाहुलकादौणादिको मि प्रत्यय १ ३९ ६ [सामि खण्डवाची, स्वरादिषु पाठादव्ययम्। नञ्समास। असामि=सामिप्रतिषिद्धम्। सामि स्यते। असुसमाप्तम् नि० ६ २३ षो अन्त कर्मणि (दिवा०) धातोर्बाहुलकान् मि प्रत्यये सामि]

असामिशवस: अखण्डितबला (नर=नायका जना) ५ ५२ ५ [असामि व्याख्यातम्। शवम् बलनाम निघ० २.९ तयोर्बहुव्रीहि]

असावि उत्पाद्यते १ ८४ १. सूयते ७ २१ १. **असावीत्** सुनोति १ १२४ १ प्रसुवति १ १५७ १ [षु प्रसवैश्वर्ययो (भ्वा०) धातो कर्मणि लुङ्]

असिक्नी: रात्री, प्र०—असिक्नीति रात्रिनाम निघ० १ ७, ७ ५ ३ **असिक्न्याम्**=रात्रौ ४.१७ १५ [असिक्नी रात्रिनाम निघ० १ ७. असिक्न्यशुक्लाऽसिता नि० ९ २४ 'सितम्' शुक्लवर्णनाम, तत्प्रतिषेधोऽसितम्। क्तार्थे 'छन्दसि क्नमित्येके' अ० ४ १.३९ वार्ति० क्नम् ङीप् च]

असिञ्चत् सिञ्चति ३ ४८.२ **असिञ्चतम्**=सिञ्चतम् १ ११६ ७ **असिञ्चन्**=सिञ्चन्ति १ ८५ ११ [षिच् क्षरणे (तुदा०) धातोर्लङ्। 'शे मुचादीनाम्' इति नुमागम]

असितग्रीव: असिता कृष्णा ग्रीवा शिखा यस्य स (भा०—अग्नि) २३ १३ [असितो व्याख्यात:। ग्रीवा=निगलनि यया सा शरीरावयव, 'शेवायह्वजिह्वाग्रीवा०' उ० १ १५४ सूत्रेण निपातनात् साधु। तयोर्बहुव्रीहि.। अग्निर्वाअसितग्रीव श० १३ २ ७ २]

असितम् निकृष्टवर्ण तम. ४ ५१ ९ कृष्ण तम ४ १३.४ कृष्ण (रूपम्) १९.८९ **असित:**=कृष्णगुण पशुविशेष २४ ३७ बन्धनरहित (पशु) प० वि०। अबद्ध (सूर्य) १ ४६ १० [षिञ् बन्धने (स्वा०) धातो क्तप्रत्यये सित। तत्प्रतिषेधोऽसित। असितो धान्वो राजेत्याह

असूदयत् सूदयत् क्षरयेत् ३ ३१ ७ **असूदयतम्**=सञ्चालयेयु १ ७२ ३. [षूद क्षरणे (चुरा०) धातोर्लङ्]

असूम् याऽस्यति प्रक्षिपति ताम् (स्त्रियम्) ३०.१४ [असु क्षेपणे (दिवा०) धातोर्बाहुलकादु प्रत्यय. । स्त्रियाम् ऊङ्]

असूर्त्ते अप्राप्ते परोक्षे (रजसि=लोके), प्र०—अत्र सृधातो क्तान्त निपातनम् 'नसत्तनिषत्त०' इत्यनेन निपात्यते १७ २८ [सृ गतौ (भ्वा०) धातो क्तप्रत्यये 'नसत्तनिषत्त०' अ० ८ २.६१ सूत्रेणोत्त्वं निपात्यते । नञ्समास । असूर्त्ते असुमीरिता वातसमीरिता माध्यमिका देवगणा नि० ६ १५]

असूर्ये अविद्यमान सूर्यो यस्मिँस्तस्मिन् (तमसि=रात्रौ) ५.३२ ६ [नञ्सूर्यपदयो समास । सूर्य—षूङ् प्राणिगर्भविमोचने (अदा०) सृ गतौ धातोर्वा 'राजसूयसूर्य०' अ० ३ १ ११४ सूत्रेण क्यप् प्रत्यय, सुवते रुडागम, सर्त्ते-रुत्व वा निपात्यते]

असृक् रुधिरम् १ १६४ ४

असृक्षत सृजेयु १ १३५ ६ सृजन्तु ५ ५२ ६. **असृक्षि**=सृजति २ ३५ १ **असृक्ष्महि**=ससृजेम, प्र०—अत्र व्यत्ययेनात्मनेपदम् २० २२ **असृग्रम्**=सृजामि विविधतया वर्णयामि, प्र०—अत्र 'बहुल छन्दसि' अ० ७ १ ८ अनेन सृजधातोरुडागम वर्णव्यत्ययेन जकारस्थाने मकार, लडर्थे लङ् च १ ६ ४ **असृजत्**=सृजति ४ १८ ७ सृजते ३ १ ६ **असृजत**=युक्त करो १ ११० ८ **असृजन्त**=सृजन्ते ४ १६ २ **असृजः**=सृजे १ १३०.५ सृजति ५ ३२ १ सृजेत् ६ १७ ६ [सृज विसर्गे (तुदा०) धातोर्लुङ् । छान्दसत्वात् क्स प्रत्यय]

असृज्यत सृष्टम् १४ २६ सृष्ट १४ २८ **असृज्यन्त**=निर्मिता (वनस्पतय) १४ ३१. उत्पादिता १४ २६ सृज्यन्ते १४ २८ समृद्धानि कुर्वन्ति १४ २८ सृष्टा (सिंहादय पशव) १४ ३० **असृज्येताम्**=रचे हैं १४.३०. [सृज विसर्गे (तुदा०) धातो कर्मणि लङ्]

असृपत् सर्पति १३ ३१ [सृप्लृ गतौ (भ्वा०) धातोर्लङ् । विकरणव्यत्ययेन श प्रत्यय]

असेधः निवारयतु ५.३१ ७ **असेधत्**=सेधते ६ ४७ २१ [षिधु गत्याम् (भ्वा०) धातोर्लङ् । सेधति गतिकर्मा । निघ० २ १४ अत्र निवारणार्थेऽपि]

अस्कन्नम् अविक्षुब्धम् (आज्य=घृतादिकम्) २ ८, [स्कन्दिर् गतिशोषणयो. (भ्वा०) धातो. क्त । नञ्समास]

अस्कभायत् प्रतिबध्नाति ४ १८ स्तभ्नाति १ १५४ १ [स्कभि प्रतिबन्धे (भ्वा०) धातोर्णिचि लङ् । छान्दसत्वात् नुमभाव]

अस्कभ्नाः प्रतिबध्नामि प्रतिबध्नाति वा । ५ १६. [स्कम्भुरिति सौत्रो धातु । ततो लङि 'स्तम्भुस्तुम्भुस्कम्भु०' अ० ३ १ ८२ सूत्रेण श्नाप्रत्यय]

अस्कृधोयु य आत्मन कृधु ह्रस्वत्व नेच्छति, (विद्यार्थिजन), प्र०—अत्र 'सुपा सुलुक्०' इति सुलोप ६ ६७ ११ अस्थूलम् ७ ५३ ३ **अस्कृधोयुः**=अपरिच्छिन्न (परमात्मा) ६ २२ ३ [अस्कृधोयु अकृध्वायु । कृध्विति ह्रस्वनाम निकृत्त भवति नि० ६ ३ कृधु ह्रस्वनाम निघ० ३ २]

अस्तभायत् स्तभ्नाति स्थिरी करोति ६.४४ २२ **अस्तभाय**.=स्तभान १.६२ ५ **अस्तभ्नात्**=स्तभ्नाति धरति २ १२ २. स्तभ्नामि स्तभ्नाति धरति वा प्र०—अत्र लडर्थे लङ् ४ ३० स्तम्भितवानस्मि ऋ० भू० १४४ वे० को०, ६ ४७ ५ **अस्तभ्नाः**=स्तभ्नाति २ १३ १० [स्तम्भुरिति सौत्रो धातु । ततो णिचि लङि रूपम् । मकारलोपश् छान्दस । अन्यत्र—'स्तम्भुस्तुम्भु०' अ० ३ १ ८२ सूत्रेण श्नाप्रत्यय]

अस्तम् सुखमय गृहम्, भा०—दिव्यसुखयुक्त मोक्षाख्य व्यावहारिक चाऽऽनन्दम्, प्र०—अस्तमिति गृहनामसु पठितम् निघ० ३.४, ३ ४७ अस्यन्ति दूरीकुर्वन्ति दु खानि यस्मिँस्तद् गृहम् १ ११६.५ घर को स० वि० १३८, अथर्व० १४.२ २६ [अस्तं गृहनाम निघ० ३.४. गृहा वा अस्तम् श० २ ५ २.२६]

अस्तम् प्रक्षिप्ताम् (स्त्रियम्) ४.१६ १० प्रक्षिप्त प्रेरितम् (विद्युदग्निम्) ५ ६ १ क्षिप्त चालित यानम् ऋ० भू० १६३ [असुक्षेपणे (दिवा०) धातोर्बाहुलकात् त प्रत्यय]

अस्तमिव गृह प्राप्येव १ ११६ २५ [अस्त गृहनाम निघ० ३.४.]

अस्तमीके समीपे १ १२६ ६. [अस्तमीके अन्तिकनाम निघ० २.१६]

अस्तम्भीत् उत्तभ्नाति ३ ५ १०. [स्तम्भुरिति सौत्रो धातु, ततो लुङि रूपम् । 'जृस्तम्भु०' अ० ३ १ ५८ सूत्रेणाङभावे सिच्]

अस्तवे असितु प्रक्षेप्तुम्, प्र०—अत्र असधातोस्तुमर्थे तवेन् प्रत्यय १६ ३

अ० ३ २ ३ इत्यसूपपदाद् ग धानो क १ ३५ १० **असुरा**=प्राणवद् बलिष्ठौ (अध्यापकोपदेशकौ) १ १५१ ४ यावसुपु रमेते तौ (मित्रावरुणा=अध्यापकोपदेशकौ) ७ ३६ २ प्र०—अत्राऽऽकारादेशो 'बहुल छन्दसि' इति ७ ३६ २ **असुरान्**=दुष्टकर्मकारिणो मूर्खान् पाखण्डिनो जनान्, दैत्यरक्ष स्वभावान् (दुर्जनान्) ऋ० भू० २३७ **असुराय**=मेघाय ५ ४१ ३ **असुराः**=प्रकाशरहिता (सत्वन) १ ६४ २ अविद्वासो दुष्टस्वभावा (जना) २ २६ धर्माऽऽच्छादका (भा०—दुष्टा मनुष्या) २ ३०. **असुरैः**=अविद्वद्भि, अन्तकरूपाभि प्रजाभिर्वा १७ २६ विद्याहीनैर्मनुष्यै १ १०८ ६ [असुर=मेघनाम निघ० १ १० असुरा=असुरता स्थानेष्वस्ता स्थानेभ्य इति वा। अपि वा ऽसुरिति प्राणनामास्त शरीरे भवति, तेन तद्वन्त नि० ३ ८ देवाश्च वा असुराश्च प्रजापतेर्द्वया पुत्रा आसन् ता० १८ १ २ असुर, तेऽसुरा भूयासो बलीयाꣳस (प्रजापते पुत्रा) आसन् ता० १८ १ २ कनीयस्विन इव वै तर्हि (युद्धसमये) देवा आसन् भूयस्विनोऽसुरा ता० १२ १३ ३१ कनीयसा एव देवा ज्यायसा असुरा श० १४ ४ १ (असुरा) स्वेष्वेवास्येषु जुह्वतश्चेरु श० ११ १ ८ १ मायेत्यसुरा (उपासते) श० १० ५ २.२० असुर, असुरमायया कौ० २३ ४ असुर, आसुरी माया स्वधया कृतासीति प्राणो वा ऽसुस्तस्यैषा माया स्वधया कृता श० ६ ६ २ ६ असुर, (प्रजापति) तेभ्य (असुरेभ्य) तमश्च माया च प्रददौ श० २ ४ २ ५ अहर्वै देवा अश्रयन्त रात्रिमसुरा ऐ० ४ ५ अहर्वै देवा अश्रयन्त रात्रिमसुरा गो० उ० ५ १ (असुरा प्रजापतिमब्रुवन्) दयध्वमिति न आत्थेति श० १४ ८ २ ४ योऽपक्षीयते तम् (अर्धमासम्) असुरा उपायन् श० १ ७ २ २२ असुरा वा एषु लोकेष्वासꣳ स्तान् देवा ऊर्द्वसद्मनेन (साम्ना) एभ्यो लोकेभ्य प्राणुदन्त ता० ६ २ ११ ततोऽसुरा एषु लोकेषु पुरश्चक्रिरे ऽयस्मयीमेवास्मिंल्लोके रजतामन्तरिक्षे हरिणी (सुवर्णमयीम्) दिवि श० ३ ४ ४ ३ अर्वा (भूत्वा) असुरान् (अवहत्) श० १० ६ ४ १ मनो वा असुरम्। तद्धचसुषु रमते जै० उ० ३ ३५ ३]

असुरघ्नः दुष्टकर्मकारिणा हन्ता (विद्वज्जन) ६ २२ ४ **असुरघ्ने**=योऽसुरान् दुष्टकर्मकारिणो हन्ति तिरस्करोति तस्मै (यतये=सन्यासिने) ७ १३ १ [असुरो व्याख्यात। तदुपपदे हन हिंसागत्यो (अदा०) धातो 'कृत्यल्युटो बहुलमि' ति वार्त्तिकेन बहुलग्रहणाट् टक् प्रत्यय]

असुरत्वम् अस्यति प्रक्षिपति दूरीकरोति सर्वाणि दुःखानि तस्य भावम् (अद्वितीय ब्रह्म) ३ ५५ ४ प्रज्ञा, शास्त्रशिक्षायुक्तप्रज्ञा मे रमण के भावार्थ को स० प्र० ११०, ३.५५ १६ प्राणेषु क्रीडमानम् (सर्वान्तर्यामि ब्रह्म) ३ ५५ २ यदसुषु प्राणेषु रमते तत् (अद्वितीय ब्रह्म) ३ ५५ १. प्राणाधारम् (ऋत=सत्यम्) ३ ५५ ३. प्रक्षेप्तृत्वम् (असहाय ब्रह्मतेज) ३ ५५ ६ सर्वेषा प्रक्षेप्तारम् (चेतनमात्रस्वरूप ब्रह्म) ३ ५५ ५ [असुरप्राति० भावे कर्मणि वा त्व प्रत्यय। असुरत्वमेक प्रज्ञावत्त्व वा अनवत्त्व वा। असुरिति प्रज्ञानाम, अस्यत्यर्थान् अस्ताश्चास्यामर्था। अपि वा असुरत्वमादिलुप्तम् नि० १० ३४]

असुर्य ! असुरेषु प्रवासरहितेषु साधो (बृहस्पते=परमेश्वर) २ २३ २ **असुर्यम्**=असुरस्य मेघस्य भवम् (मेघाज्जलमिव बहुविधमैश्वर्यम्) ३ ३८ ७ असुरेषु अविद्वत्सु भवम् (सङ्गम्) ६ ३६ १ असुरेषु मेघेषु प्राणक्रीडासाधनेषु भव द्रव्यम् ८ २४ असुरस्य मेघस्येद स्वकीय स्वरूपम् ७ ५ ६ असुराणामविदुषा स्व धनम् २ २७ ४ असुरसम्बन्धिनम् (विद्योपदेशम्) ५ १० २ असुरस्य स्वम् (असुरभावम्) २ ३३ ६ असुरेभ्यो विद्वद्भ्यो हित (क्षत्र—धन राज्य वा) ५ ६६ २ असुराणा मूढाणा पापिनामिदमैश्वर्यम् ६ २० २ **असुर्यस्य**=असुरेषु मूर्खेषु भवस्य (अज्ञानस्य) ७ २२ ५ मेघे भवस्य (जलस्य) २ ३५ २ **असुर्यः**=असुभ्य प्राणेभ्यो हित (परमेश्वर) ३३ ४० **असुर्याणि**=असुराणा मेघानामिमानि चिह्नानि ४ ४२ २ **असुर्यात्**=असुराणा दुष्टाना निजव्यवहारात् १ १३४ ५ **असुर्याय**=असुरेषु अविद्वत्सु भवायाऽविदुषे (जनाय) ४ १६ ३ **असुर्याः**=असुराणा प्राणपोषणतत्पराणामविद्यादियुक्तानामिमे सम्बन्धिनस्तत्सदृशा पापकर्माणि (दुर्जना) ४० ३ [असुरप्राति० साध्वर्थे भवार्थे वा यत् प्रत्यय]

असुवत् ऐश्वर्ययोग कुर्यात् १ ११० ३ [षु प्रसवैश्वर्ययो (भ्वा०) धातोर्लङ्। विकरणव्यत्ययेन श प्रत्यय]

असुष्वीन् अभिषवस्याऽकर्त्तॄन् (दुर्जनान्) ६ ४४ ११ येऽसूनभिषुण्वन्ति तान् (आप्तान् जनान्) ४ २४ ५ [षुञ् अभिषवे (स्वा०) धातोर्वि प्रत्यय षुगागमश्च बाहुलकाद्। ततो नञ्समास]

असुष्वेः अलसस्याऽनिष्पादकस्य ४ २५ ६ [पूर्वपदे व्याख्यातम्]

असूत सूते जनयति ३ ३१ ३ [षूङ् प्राणिगर्भविमोचने (अदा०) धातोर्लङ्]

निन्दार्थे इनि प्रत्यय २ २७ [ष्ठा गतिनिवृत्तौ (भ्वा०) धातो 'स्थ किच्च' उ० ५ ४ सूत्रेण ऊरन् प्रत्यय.। ततो निन्दार्थे इनि प्रत्यय । नञ्समासश्च]

अस्ना रुधिराणि, २५ ६ [असृज् रुधिरम् । तस्य स्थाने टा प्रत्यये 'पद्दन्नोमास्हृन्निशसन्०' अ० ६ १ ६३ सूत्रेण 'असन्' आदेश]

अस्नातारा स्नानादिकर्मरहितौ (मनुष्यौ) ४ ३० १७ **अस्नातॄन्**=अस्नातकान् (अयज्ञस्नानकर्त्तृकान् जनान्) २ १५ ५ [ष्णा शौचे (अदा०) धातो. कर्त्तरि तृच्। नञ्समासश्च]

अस्नाविरम् नाड्यादिसम्बन्धरहितम् (ब्रह्म=ईश्वर.) ४० ८ नाड्यादिसम्बन्धरहितत्वाद् बन्धनावरणविमुक्तम् (ब्रह्म) ऋ० भू० ३६, ४० ८ जो नाडी आदि के बन्धन मे नही आता (ब्रह्म परमेश्वर) स० प्र० २४४, ४० ८ नाडी आदि का प्रतिबन्ध (निरोध) जिसका नही हो सकता और अतिसूक्ष्म होने से जिसको कोई आवरण भी नही हो सकता वह (ब्रह्म=ईश्वर) आर्याभि० २ २, ४० ८

अस्पन्दमानः किञ्चिच्चलित सन् (अग्नि=विद्युदिव राजा) ४ ३ १० [स्पदि किञ्चिच्चलने (भ्वा०) धातो शानच् । नञ्समासश्च]

अस्पष्ट स्पशते, प्र०—अत्र लडर्थे लड् 'बहुल छन्दसि' इति शपो लुक् १ १० २ [स्पश बाधनस्पर्शनयो (भ्वा०) धातोर्लङ् । 'बहुल छन्दसी' ति शपो लुक्]

अस्पः प्रीणय ५ १५ ५ [स्पृ प्रीतिपालनयो (स्वा०) धातोर्लङ् 'बहुल छन्दसीति' शपो लुक्, ततश्च श्नुरपि न भवति]

अस्पृक्षत् स्पृहेत् २८ १८ **अस्पृक्षः**=स्पृश, प्र०—अत्र लोडर्थे लङ् ६ २ [स्पृश सस्पर्शने (तुदा०) धातोर्लुङ् 'स्पृशमृश०' अ० ३ १ ४४ वार्त्तिकेन वा क्स प्रत्यय]

अस्पृध्रन् स्पर्द्धन्ताम् ६ ६६ ११ स्पर्द्धन्ते ७ ५६ ३. [स्पर्द्ध सघर्षे (भ्वा०) धातोर्लङ् छान्दस रूपम्]

अस्पृशत् स्पृशति ६ ८ २ **अस्पृशन्त**—स्पर्श करते है स० वि० १७० वे० को०, अय० १४ २ ३२ [स्पृश सस्पर्शने (तुदा०) धातोर्लङ्]

अस्फुरत् स्फुरति सञ्चालयति २ १२ १२ वर्धयति २ ११ ६ [स्फुर सञ्चलने (तुदा०) धातोर्लङ्]

अस्मत्रा अस्मासु १ १३२ २ अस्मासु मध्ये १ १३७ १ [अस्मद् सर्वनाम्न. 'देये त्रा च' अ० ५ ४ ५५, सूत्रेण तदधीनवचने त्रा प्रत्यय]

अस्मत्राञ्चः ये शत्रुभ्योऽस्मांस्त्रायन्ते तानञ्चन्ति प्राप्नुवन्ति ते (राज्यकर्माधिकारिणो जना) ६ ४४ १६ [अस्मत्रोपपदे अञ्चु गतिपूजनयो (भ्वा०) धातो 'ऋत्विग्-दधृक्०' अ० ३ २ ५६ सूत्रेण क्विन् प्रत्यय]

अस्मत्सखा अस्माक मित्रम् (राजा) ६ ४७ २६. वय सखायो यस्य स (राजा) ८ ५० [अस्मद्-सखि-शब्दयो समास]

अस्मद्र्यक् योऽस्मानञ्चति सर्वज्ञतया जानाति (इन्द्र=भगवान्) ७ ३६ अस्माक सम्मुखीभूत (इन्द्र=सूर्य.) ६ १६.१ योऽस्मानञ्चति स (इन्द्र=परमैश्वर्यप्रदो न्यायेश) ६ १६ ३ योऽस्मानञ्चति जानाति ज्ञापयति वा (राजा) ५ ४ २. योऽस्मानञ्चति प्राप्नोति (शक्ति=सामर्थ्यम्) ४.२२.८ **अस्मद्र्यञ्चः**=येऽस्मानञ्चन्ति प्राप्नुवन्ति ते (विद्वासोऽध्येतारश्च) ७ १६ १० [अस्मद्युपपदे अञ्चु गतिपूजनयोर्धातो क्विन् । 'विष्वग्देवयोश्च टेरद्र्य०' अ० ६ ३ ६२ सूत्रेण सर्वनाम्न टेरद्रिरादेश]

अस्मद्राता येऽस्मभ्य रान्ति शुभान् गुणान् ददति ते (राजसभासेनाजना) ७ ४६ [अस्मद्+रा दाने (अदा०) धातोस्तृच् प्रत्यय । व्यत्ययेनैकवचनम्]

अस्मध्रुक् योऽस्मान् द्रोग्धि (दुर्जन) १ १७६ ३ अस्मान् द्रुह्यति य स (मर्त्य.) १ ३६ १६ [अस्मद्+द्रुह जिघासायाम् (दिवा०) धातो क्विप् । छान्दसो दकार-लोपश्च]

अस्मयुम् अस्मान् पाययितारम् (अग्नि=प्रसिद्ध विद्युत वा) प्र०—अत्राऽस्मदुपपदाद्याधातोरौणादिक कु 'छान्दसो वर्णलोपो वा' इति दलोप ११ १३ **अस्मयुः**=योऽस्मान् याति स (शिल्पी जन) ५ ७४ ८ अस्मान् कामयमान (राजा) ६ ४८ २ अस्मान्वात्मानमिच्छु (विद्वज्जन) १.१३१ ७ अहमिवाऽऽचरन् (विद्वज्जन) १ १३५ २ योऽस्मान् कामयते (विद्यार्थी जन) २७ ४४ आत्मनोऽस्मानिच्छुरिव (इन्द्र=विद्वज्जन) ३ ४२ १ **अस्मयू**=आवामिवाचरन्तौ (इन्द्रवायू=सर्पपवनाविवा-ऽध्यापकोपदेशकौ १ १३५ ५ अस्मानिच्छन्तौ (अध्यापकोपदेशकौ) १ १५१ ७ [अस्मद् सर्वनाम्न 'उपमानादाचारे' अ० ३ १ १० सूत्रेण क्यच् प्रत्यय । 'क्याच्छन्दसि' अ० ३ २ १७० सूत्रेण उ प्रत्यय । छान्दसो दकारलोपश्च । अग्नि भरन्तमस्मयुमित्यग्नि भरन्तमस्मत्प्रेषितमित्येतत् श० ६ ३ २ ३]

अस्तः प्रक्षिप्त (राजजन) २ ११ २० योऽस्यति स (राजा) ७ १८ ११ [असु क्षेपणे (दिवा०) धातोर्बाहुलकात् त प्रत्यय]

अस्ता शस्त्राऽस्त्राणां प्रक्षेप्ता (इन्द्र =सर्वसेनाधिपति) १७ ३५ **अस्तारः**=प्रक्षेप्तार (नर =नायका जना) १ ६४ १० **अस्तुः**=शत्रूणां विजेतु प्रक्षेप्तु (वीरजनस्य) १ ६६ ४ प्रक्षेप्तु (शिल्पिनो विदुष) १ १४८.४ **अस्तृभिः**=सर्वशस्त्राऽस्त्रप्रक्षेपणदक्षै (शूरेभि =योद्धृभि शूरवीरै) १ ८ ४ [असु क्षेपणे (दिवा०) धातो कर्त्तरि तृच् प्रत्यय]

अस्ता इव यथा शस्त्राणां प्रक्षेप्ता (शूरवीरो जन) १ ७० ६ [असु क्षेपणे (दिवा०) धातोस्तृच्]

अस्तातिम् गृहस्थम् ५ ७ ६ [अस्त गृहनाम निघ० ३ ४ अाति =अत सातत्यगमने (भ्वा०) धातो 'अज्यतिभ्या च' उ० ४.१३१ सूत्रेण इण्। तयो समास]

अस्तारि तीर्यते ६ ६३ ३ [स्तृञ् आच्छादने (स्वा०) धातो कर्मणि लुङ्]

अस्तावि स्तूयते ६.२३ १० [ष्टुञ् स्तुतौ (अदा०) धातो कर्मणि लुङ्]

अस्तुतः अप्रशसित (सखा) ५.६७ ५ [ष्टुञ् स्तुतौ (अदा०) धातो क्तः]

अस्तुवत प्रशसत १४ ३१ प्रशसन्तु १४ २६ स्तुवन्तु १४ २८ स्तुवन्तु सङ्ख्यायन्तु १४ २६. [ष्टुञ् स्तुतौ (अदा०) धातोर्लङ्]

अस्तृणन् विस्तारयन्ति ३ ६ ६ आच्छादयन्तु ३३ ७ आच्छादयन्ति १ १८८ ४ [स्तृञ् आच्छादने (क्र्या०) धातोर्लङ्]

अस्तृतः अहिंसितस्सन् (मनुष्य) १ ४१ ६ **अस्तृतम्**=हिंसारहितम् (सत्यम्) १ १५ ५ [स्तृणाति वधकर्मा निघ० २ १६ तत क्त। नञ्समास]

अस्ते गृहे वा प्रक्षेपणे ७ १ २ [अस्त गृहनाम निघ० ३ ४]

अस्तेव गृहाणीव ४ ३१ ३ [अस्त गृहनाम, तदिव]

अस्तेव प्रेरक सारथिरिव ६ २० ६ [असु क्षेपणे (दिवा०) धातोस्तृच्]

अस्तोढ्वम् स्तुवत १ १२४ १३ **अस्तोषत**=स्तुवन्ति प्र०—अत्र लडर्थे लुङ् ३ ५१ स्तुत १ ८२ २ **अस्तोषि**=प्रशससि ५ ४१ १० स्तौमि १ १२२ १ **अस्तोष्ट**=स्तौति १ ७७ ५ [ष्टुञ् स्तुतौ (अदा०) धातोर्लुङ्]

अस्तोभयत् बन्धयति १ ८८ ६ [ष्टुभु स्तम्भे (भ्वा०) धातोर्णिचि लाङि रूपम्]

अस्त्रिधम् अहिंसनीयम् (अश्विना =अध्यापकमुपदेशक च) २५ १६ [नञ्पूर्वात् स्रिधक्षये धातोर्घञर्थे क प्रत्यय]

अस्थभिः अस्थिरैश्चञ्चलै किरणचलनै १ ८४.१३ **अस्थभ्यः**=शरीरस्थकठिनाऽवयवेभ्य, सूक्ष्माऽवयवाऽस्थिरूपेभ्य ३६ १० अस्थिभ्य, प्र०—छन्दस्यपि दृश्यते, इत्यनेन हलादावप्यनङ् २३ ४४ [असु क्षेपणे (दिवा०) धातो 'असिसञ्जिभ्या क्थिन्' उ० ३ १५४ सूत्रेण क्थिन् प्रत्यय। अस्यति प्रक्षिपति येन तदस्थि। 'छन्दस्यपि दृश्यते' अ० ७ १ ७६ सूत्रेणानङ्। षष्टिश्च ह वै त्रीणि च शतानि पुरुषस्यास्थीनि श० १० ५ ४.१२. अस्थि वा एतत् यत्समिध तै० १ १ ६ ४ अस्थीनि वै समिध श० ६ २ ३ ४६ अस्थीष्टका श० ८ १ ४ ५, ८ ७ ४ १६ अस्थि प्रतिहार जै० उ० १ ३६ ६ सप्त च ह वै शतानि विंशतिश्च सवत्सरस्याहानि च रात्रस्याहानि च रात्रयश्चेत्येतावन्त एव पुरुषस्यास्थीनि च मज्जानश्चेत्यत्र तत्समम् गो पू० ५ ५]

अस्थन्वन्तम् अस्थियुक्त देहम् १ १६४ ४ [अस्थिप्राति० मतुप् प्रत्यय। 'छन्दस्यपि दृश्यते' अ० ७ १ ७६. सूत्रेणानङ्]

अस्थात् तिष्ठेत् १ १६२.२१ तिष्ठति ३ ६१.६ उत्तिष्ठति उदेति ३४ २६. वर्त्तते ४ ५१ १ स्थितवानस्ति १ ३५ १० तिष्ठते २ ४ ७ **अस्थाम्**=तिष्ठेयम् ४ २८ [ष्ठा गतिनिवृत्तौ (भ्वा०) धातोर्लुङ्। 'गातिस्थाघु०' सूत्रेण सिचो लुक्]

अस्थित तिष्ठते १ ४० ७ **अस्थिरन्**=स्थिरा इवाचरेयु १ १३५ १ स्थिरा स्यु १ १३५ १ तिष्ठेरन्, प्र०—अत्र लिङर्थे लुङ् 'वाच्छन्दसि' इति झस्य रनादेश 'छान्दसो वर्णलोप' इति सिच सलोप १ ६४ ११ तिष्ठन्ति १ ८० ७ **अस्थु**=आतिष्ठन्ति ६ ४४ २० तिष्ठन्ति ७ ४३ २ तिष्ठेयु १७ ५६ सन्ति ५ ७६.१ तिष्ठन्तु १ १२३ ६ उत्तिष्ठन्तु ७ ६० ४ प्राप्नुवन्तु ४.४१ ८. [ष्ठा गतिनिवृत्तौ (भ्वा०) धातोर् लुङ्। व्यत्ययेनात्मनेपदम् 'स्थाघ्वोरिच्चे' ति कित्त्वमित्त्व च]

अस्थूरि अशिथिर यानम् ६.१५ १६ तिष्ठन्ति यस्मिस्तालस्थे तत्स्थूर, तन्निन्दित विद्यते यस्मिन् तत् स्थूरि, न स्थूरि यथा स्यात्तथा (गार्हपत्यानि कर्माणि), प्र०—अत्र

शापय ७ १६ ४ [जिप्वप् शये (अदा०) धातोर्णिचि लङ्]

अस्वाप्सम् शब्दयत २ ११ ७ [स्वृ शब्दोपतापयो (भ्वा०) धातोर्लुङ् । 'सनीवन्तर्द्धभ्रस्जदम्भु०' अ० ७ २ ४६ सूत्रेणेड्विकल्प]

अह दु खविनिग्रहे १ ६२ ३ शत्रुविनिग्रहे १ ११६ ३ विशेषणग्रहणे ५ ३४ ३ विनिग्रहार्थे, प्र०—अह इति विनिग्रहार्थीय निरु० १ ५, १ ६ ४ निरोधे १ १४० ६ निश्चये ६ ३ इसके अनन्तर ६ ३८ ४ [अह इति च ह इति च विनिग्रहार्थीयौ नि० १ १५]

अह इव अहानीव ७ ३४ ५ [अह =दिनम्, उपाहरन्त्यस्मिन् कर्माणि नि० २ २१]

अहतम् हन्यातम् ६ ७२ १ [हन हिंसागत्यो (अदा०) धातोर्लङ्]

अहतौ न हतौ हिंसितौ (पितरौ=माता पिता च द्वौ) १६ ११ [हन हिंसागत्यो (अदा०) धातो क्तप्रत्यये नञ्समासे च रूपम्]

अहन् शत्रून् हसि १.६३ ३ हन्ति १.५६ ५ हन्या ४ ३० ५ हन्यात् ३३ २६ दूरीकुर्या ६ २६ ३ हतवान् हन्ति हनिष्यति वा १ ३२ २ जहि १ ३२ ४ [हन हिंसागत्यो (अदा०) धातोर्लङ्]

अहन् अहनि दिवसे ४ १२ १ **अहना**=दिवसेन व्याप्त्या वा प्र०—अत्र 'वाच्छन्दसि' इत्यल्लोपो न १ १२३ ४ **अहनि**=दिने १ ११० ७ **अहनी**=रात्रिदिने १.१२३ ७ अहर्निशम् १.१८५ १ **अहभिः**=दिवसैस्सह ७ २८ ४ दिनै, प्र०—अत्र 'छान्दसो वर्णलोपो वा' इति रलोप १ १६४ ५१ प्र०—अत्र 'वाच्छन्दसि' इति रुत्वाऽभावो नलोपश्च ४ ४५ ६ **अहसु**=दिनेषु, प्र०—अत्र 'वाच्छन्दसि' इति रोरभावे नलोप १ १२४ ८ **अहः**=व्याप्तिशील दिनम् १ ७१ २ प्रतिदिनम् ३८ ११ दिने ३ ४८ २ **अहा**=दिनानि ४ ३० ३ अहानि दिनानि १ ५० ७ **अहानि**=दिनानि ३६ ११ सव दिवस आर्याभि० २ २३, ३६ ११ **अहोभिः**=दिनै ३५ १ **अह्नः**=दिवसस्य ४ १० ५ **अह्ना**=अहर्विद्यया १५ ६ दिवसेन ४ १६ ३ **अह्नाम्**=दिनानाम् १ १८५ ४ **अह्ने**=दिनाय ६ २० [अह =दिनम्, उपाहरन्त्यस्मिन् कर्माणि नि० २ २१ अहनी अहोरात्रे नि० ३ २२ अहना उषो नाम निघ० १ ८ अहर्मित्र ता० २५ १० १० अहर्वै मित्र ऐ० ४ १० अहरेव सविता गो० पू० १ ३३ अह यज्ञो वै स्व यजु० १ २१ अहर्देवा सूर्य श० ११ २ २ अह स्वर्ग श० १३ २ १ ६ अहर्वै स्वर्गो लोक ऐ० ५ २४ अग्निर्वाऽह, सोमो रात्रि श० ३ ४ ४ १५ अह यजुष्मत्य (इष्टका) ज्योतिष्मत्यश्चह्ना रूपम् श० १० २ ६ १७ अहर्वै पात्नम् तां० ६.१ ७ अहर्वै शबलो रात्रि श्याम कौ० २ ६ अहर्व्युष्टि तै० ३ ८.१६ ४ अहर्वै वियच्छन्द श० ८ ५ २ ५ अह सब्दामह (सब्द =ऋतुविशेष) तै० ४ ४ ७ २ श० १ ७ २.२६ अह (पूर्वपक्षापरपक्षयो) यान्यहानि ते मधुवृषा तै० ३ १० १० १ अहर्वै विष्णुक्रमा श० ६ ७ ४ १२ अह ब्राह्मणो वा ऽएतद्रूप यदह श० १३ १ ५ ४ अह ब्रह्मणो वै रूपमह क्षत्रस्य रात्रि तै० ३ ६ १४ ३ अह अहर्वाहितम् ऐ० ५ ३०]

अहन्त्यै या कश्चिन्न हन्ति तस्यै (राजपत्न्यै) १६ १८. [नञ्पूर्वस्य हन्ते शत्रन्तान् ङीप्]

अहन्यः अहनि भव (मृग =सिह) १ १६० ३ **अहन्येभिः**=दिनै ५ ४८ ३ [अहन्प्राति० भवार्थे यत् प्रत्यय]

अहये मेघाय ५ ३१ ४ [अहि मेघनाम निघं० १ १०]

अहरहः प्रतिदिनम्, भा०—नित्यम् ११.७५. [अह =दिनम्, तस्य वीप्साया द्वित्वम्]

अहर्पतये पुरुषार्थेन गणितविद्यया दिवस्पालकाय (वागिन्द्रियाय) ६ २० अह्ना पालकाय (राज्ञे) १८ २८ [अहन्-पत्यो समास । 'अहरादीना पत्यादिषूपसख्यानम्' अ० ८ २ ७० वार्तिकेन रेफस्य रेफादेशो विसर्जनीयबाधनाय]

अहर्विदम् योऽहनि विन्दति तम् (व्रज=देशम्) १ १५६ ४ **अहर्विदः**=य अहर्विज्ञानप्रकाश विन्दन्ति प्राप्नुवन्ति ते (विद्वज्जना) १ २ २ [अहन्युपपदे विद्लृ लाभे (तुदा०) धातो क्विप् प्रत्यय]

अहवि अविद्यमान हविरादानमदन वा यस्य स (जन =आप्नो मनुष्य) १ १८२ ३ [नञ्-हविपदयोर्बहुव्रीहि । हवि =हु दानादानयो (जु०) धातो 'अर्त्तिशुचि०' उ० २ १०८ सूत्रेण इसि प्रत्यय]

अहस्तम् अविद्यमानहस्तम् (व्रज=मेघम्) ३ ३० ८ अविद्यमानौ हस्तौ यस्य तम् (वृत्र=मेघमिव) १८ ६६. **अहस्तः**=अविद्यमानौ हस्तौ यस्य स (मेघ) १ ३२ ७ [नञ्-हस्तपदयोर्बहुव्रीहि । हस्तो हन्ते प्राशुर्हनने नि० १ ७]

अस्माकासः येऽस्माकं मध्ये वर्त्तमाना (वीरजना), प्र०—अत्राऽणि 'वाच्छन्दसि सर्वे विधयो भवन्ति' इति वृद्ध्यभाव १ ६७ ३ अस्माकमिमे (सूरय =पण्डिता जना) ५ १० ६ **अस्माकेभिः**=अस्मदीयै (सत्वभि = शूरवीरजनै) प्र०—अत्र 'वाच्छन्दसि' इत्यणि वृद्ध्यभाव २ ३० १० [अस्मतप्राति० 'युष्मदस्मदोर०' अ० ४.३.१ सूत्रेण शैषिकोऽण् 'तस्मिन्नणि च०' अ० ४ ३ २ सूत्रेणास्माकादेश । छान्दसत्वाद् वृद्धेरभाव]

अस्मेराः या अस्मानीरयन्ति ता (युवतय =स्त्रिय), प्र०—अत्र पृषोदरादिना तलोप २ ३५ ४. हम को प्राप्त होने वाली (युवतय =कन्या लोग) स० वि० १०४, २ ३५ ४ [अस्मद्युपपदे ईर गतौ (भ्वा०) ईर क्षेपे (चुरा०) धातोरच् प्रत्यय पृषोदरादिना दकारलोप]

अस्य दूरीकुरु ३ २४ १ प्रक्षिप ६ ३७ **अस्यताम्**= पटके १७ ६४ **अस्यति**=प्रक्षिपति ३ ५३ २२ **अस्यतु**= शत्रून् प्रक्षिपतु २ २४ ८ **अस्यथ**=प्रक्षिपत १ १७२.२ प्रचालयत ५ ५५ ६ **अस्यसि**=प्रक्षिपसि ५ ८४.२ [असु क्षेपणे (दिवा०) धातोर्लोट् । अन्यत्र लटि रूपम्]

अस्यद्भ्यः प्रक्षिपद्भ्यस्त्यजद्भ्य (राजपुरुषेभ्य) १६ २२ **अस्यन्**=प्रक्षिपन् (राजा) ४ २२ २ [असु क्षेपणे (दिवा०) धातो शतृप्रत्यय]

अस्रत् सस्रतोऽध स्रवतु, प्र०—लोडर्थे लङ् ८ २८ [स्रंसु अवस्रंसने (भ्वा०) धातोर्लङ् । 'बहुल छन्दसी' ति शपो लुक् । 'वसुस्रंसु ध्वंसु०' सूत्रेण पदान्तसकारस्य दकार । नकारलोपश्छान्दस],

अस्रवन्तीम् अच्छिद्राम् (नावम्) २१ ५ छिद्रादिदोषरहिताम् (सुनावम्) २१ ७ [स्रु गतौ (भ्वा०) धातो शत्रन्तान् ङीप् । ततो नञ्समास]

अस्रवः स्रावय ६ ६१ ३ [स्रु गतौ (भ्वा०) धातोर्लङि मध्यमैकवचनम्]

अस्राक् य सृजति (सविता=जगदीश्वर) ४ ५३ ३ [सृज विसर्गे (तुदा०) धातोर्लुङ् । सिचो लुक् । अमागमश्च]

अस्राक् सृजति ४ ५३ ४ [सृज विसर्गे (तुदा०) धातोर्लुङ् । सिचो लुक् । अमागमश्च]

अस्रिधम् अहिंसकम् (विद्वज्जनम्) १ ८९ ३ **अस्रिधः**=अहिंसक (सोम =विद्वज्जन) ५ ४६ ४ अक्षयविज्ञानवन्त (विश्वेदेवास =समस्ता वेदपारगा विद्वज्जना), प्र०—अत्र क्षयाऽर्थस्य नञ्पूर्वकस्य स्रिधे क्विबन्तस्य रूपम् १ ३ ९ अहिंसिता (हसास =अश्वा) ४ ४५ ४ अहिंसनीया (इडा-सरस्वती-मही नीतय) १ १३ ९ अहिंस्रा (तिस्रो देवी) ५ ५ ८ **अस्रिधा**= अहिंसकौ (अध्यापकोपदेशकौ) ४ ३२ २४ [क्षयार्थे वर्तमानस्य स्रिध धातो क्विप् । नञ्समासश्च]

अस्रीवयः यदस्यति कामयते च तदस्त्रीवयोऽन्नादिकम् १४ १८

अस्रेधता अक्षीणेन (मनसा=चित्तेन) ३ १४ ५ इतस्ततो गमनरहितेन स्थिरेण (मनसा=विज्ञानेन) १८ ७५ **अस्रेधन्तः**=अहिंसन्त (मरुत =मनुष्या) ७ ५९ ६ अक्षीणोत्साहा (देवास =विद्वास शूरा) ३ २९ ६ [नञ्पूर्वात् स्रिध क्षयार्थात् धातो शतृप्रत्यय]

अस्रेधन्ती साधयन्ती (उषा) ५ ८० ३ [क्षयार्थक-स्रिध धातो शत्रन्तान् ङीप् । नञ्समासश्च]

अस्रेमाणम् अक्षयम् (अग्निम्) ३ २९ १३ [स्रिध क्षये धातो शानच् । नञ्समास । वर्णव्यत्ययेन धकारलोप । अस्रेमा=प्रशस्यनाम निघ० ३ ८.]

अस्वदयत् स्वादयति २ ४ ७ [स्वद आस्वादने (चुरा०) धातोर्लङ्]

अस्वनीत् शब्दयेदुपदिशेत् ४ २७ ३ [स्वनशब्दे (भ्वा०) धातोर्लुङ्]

अस्वप्नजः जागरूका (राजभृत्या) ४ ४ १२ विद्याव्यवहारे जागृता अविद्यानिद्रारहिता (जगत्कल्याणकरा जना) २ २७ ९ **अस्वप्नजौ**=स्वप्नो न जायते ययोस्तौ, भा०—तमोगुणानभिभूतौ प्राणापानौ ३४ ५५ [ञिष्वप् शये (अदा०) धातोर्भावे नन् प्रत्यये स्वप्न । स्वप्नोपपदे जनीप्रादुर्भावे धातोर्डप्रत्यये स्वप्नज । ततो नञ्समास । जागृतो अस्वप्नजौ (देवौ वाय्वादित्यौ) नि० १२ ३७]

अस्वम् या दुष्कर्म न सूते नोत्पादयति ताम् [धेनु= वाचम्) १ ११२ ३ [षूङ् प्राणिगर्भविमोचने (अदा०) धातो क्विप् प्रत्यये सू । नञ्समासे ऽसू । 'वा छन्दसि' अ० ६ १ १०७ वार्तिकेन पूर्वरूपाऽभावे यणादेशे च रूपम्]

अस्वरन् स्वरन्ति शब्दयन्ति ५ ५४ ८ [स्वृ शब्दोपतापयो (भ्वा०) धातोर्लङ्]

अस्ववेशम् न स्वकीयो वेशो यस्य तम् (सत्पुरुषम्) ७ ३७ ७ [वेश =विश प्रवेशे (तुदा०) धातो 'पदरुजविशस्पृशो घञ्' अ० ३ ३ १६ सूत्रेण घञ् । नञ्-स्ववेशाना बहुव्रीहि]

अस्वापयत् स्वापयेत् ४ ३० २१ **अस्वापयः**=हत्वा

मेघहन्ते १ १६५ ६ अहीना मेघाना हत्या यस्मिँस्तस्मिन् (सूर्ये) १ ६१ ८ अहेर्मेघस्य हत्या हनन पतन येन तस्मिन्, प्र०—निमित्तार्थेऽत्र सप्तमी ३ ३२ १२ [अहिहत्या-पदयो समास । अहिर्व्याख्यात । हत्या=हन हिंसागत्यो (अदा०) धातो 'हनस्त च' अ० ३ १ १०८ सूत्रेण भावे क्यप्]

अहिहन् अहेर्मेघस्य हन्तेव शत्रुहन् (विद्वज्जन) २ १३ ५ [अहि उपपदे हन् हिंसागत्यो (अदा०) धातो क्विप्]

अहिहनम् मेघस्य हन्तारम् (अश्व=विद्युदग्निम्) १ ११७ ६ [पूर्वपदे व्याख्यातम्]

अहिहा मेघस्य हन्ता (इन्द्र=विद्युत्) २ १९ ३ [अह्युपपदे हन्ते क्विप् । 'सौ चे' ति सूत्रेण दीर्घ]

अहीन् सर्पवत् प्राणान्तकान् रोगान्, भा०—जलसुख-नाशकान् रोगान् १६ ५ [अहिर्मेघवाची, तस्य द्वितीयाबहु-वचनम्]

अहुतादः येऽहुतमदन्ति ते, भा०—होममकुर्वन्तो भुञ्जाना (देवा=विद्वांस सन्यासिन) १७ १३ [नञ्-पूर्वाद् हु दानादानयो (जु०) धातो क्तप्रत्ययेऽहुत । तदुपपदे अद भक्षणे (अदा०) धातो कर्तरि क्विप् । अहु-तादो हि प्राण श० ९ २ १ १४ अथैता (प्रजा) अहुतादो यद्राजन्यो वैश्य शूद्र ऐ० ७ १९]

अहुवे जुहोमि, प्र०—अत्र 'बहुल छन्दस्यमाड्योगेऽपि, इत्यडागम २ ३७ २ [हु दानादानयो (जु०) धातोर्लट् । 'बहुल छन्दसीति' शपो लुक् । अडागमश्छान्दस । व्यत्यये-नात्मनेपदम्]

अहूमहि प्रगमेम ६ ४५ १० [हु दानादानयो (जु०) धातोर्लङ् । 'बहुल छन्दसि' इति शपो लुक्]

अहूयते दीयते ५ ६ ५ [हु दानाऽदानयो (जु०) धातो कर्मणि लट् । अडागमश्छान्दस]

अहूषत स्पर्धध्वम् १ १४ ३ स्पर्द्धयन्ताम् १ ४९ ४. उपदिशत १ ४५ ४ आह्वयन्ति शिल्पार्थं स्पर्धयन्ति वा, प्र०—अत्र लडर्थे लुङ् 'बहुल छन्दसि' इति सम्प्रसारण च १ १४ ३ [ह्वेञ् स्पर्धायाम् (भ्वा०) धातोर्लुङ् । धातो सम्प्रसारण छान्दसम्]

अहृणीयमाना क्रोधरहिताचरणी मन्त्री (राजा-मात्या) ४ ६२ ६ [हृणीङ् रोषणे लज्जाया च (कण्ड्-वादि०) धातोर्नञ्पूर्वात् शानच्]

अहृषत हरत ३५ १८ [हृञ् हरणे धातोर्लुङ्]

अहेडता अनादरेण (मनसा=विज्ञानेन) २ ३२ ३

अहेडन्=अनादरमकुर्वन् (अग्ने=राजन् वा सेनापते) १५ १ [हेडृ अनादरे (भ्वा०) धातोर्नञ्पूर्वात् शतृ । व्यत्ययेन परस्मैपदम्]

अहेडमान. सत्क्रियमाण (वरुण=विद्वज्जन) २१ २ अनादृत (विद्वान्) १ १३८ ३ सत्कृत (इन्द्र.=राजा) ६ ४१ १ [नञ्पूर्वाद् हेडृ अनादरे (भ्वा०) धातो शानच् । अहेडमान=अक्रुध्यन् नि० ४.२५. अहेड-मानो वरुणेह बोधीत्यक्रुध्यन्तो वरुणेह बोधीत्येतत् श० ९.४ २ १७]

अहेम व्याप्नुयाम २ १९ ७. [अह व्याप्तौ (स्वा०) धातोर्लिङ् । विकरणव्यत्ययेन शप्]

अहेव दिनानीव ६ ६१ ९ [अहन् पदे द्रष्टव्यम्]

अहोरात्राः रात्रिदिनानि २७.४५ **अहोरात्रे**=अहश्च रात्रिश्चाऽहोरात्रे, प्र०—'हेमन्तशिशिरावहोरात्रे च छन्दसि' अ० २ ४ २८ इत्यनेन नपुंसकत्वम् ६.२१

अहोरात्रेभ्यः=अहर्निशेभ्य २२ २८ [अहश्च रात्रिश्चेति विग्रह । 'अहस्सर्वैकदेश०' अ० ५ ४.८७ सूत्रेण समासान्तो-ऽच् प्रत्यय । नपुंसकत्वञ्च छान्दसम् । अहोरात्रे वा अश्वस्य मेध्यस्य लोमनी तै० ३ ९ २३ १. एते ह वै संवत्सरस्य चक्रे यदहोरात्रे ऐ० ५ ३० अहोरात्रे परिवेष्ट्री श० ११ २ ७ ५. तमस्मा अक्षितिमहोरात्रे पुनर्दत्त जै० उ० ३.२२.८. मृत्योर्ह वा एतौ व्राजबाहू यदहोरात्रे कौ० २ ९ अहोरात्राणी-ष्टका (संवत्सरस्य) तै० ३ ११ १० ४ अहोरात्रे वा उपासानक्ता ऐ० २ ४ अहोरात्रे नक्तोषासा श० ६ ७ २ ३. अहोरात्रे वै गो आयुषी कौ० २६ २ अहोरात्रे वै नृवाहसा तै० ३ ९ ४ ३ अहोरात्रे तद्वाऽअहोरात्रेऽएव विष्णुक्रमा भवन्ति श० ६ ७ ४ १० अहोरात्रे वात्सप्रम् (सूक्तम्) श० ६ ७ ४ १० यौ द्वौ स्तोभावहोरात्रे एव ते जै० उ० १ २१ ५ अहोरात्रे वै रौहिणौ (पुरोडाशौ) श० १४ २ २ अहोरात्रौ वै मित्रावरुणौ ता० २५ १० १० अहोरात्रे वै पिशङ्गिले श० १३ २ ६ १७ अहोरात्राणि वा ऽउपसद श० १० २ ५ ४ अहोरात्राणि हिङ्कार ष० ३ १ अहोरात्राणि वै वरुत्रयो ऽह्नोरात्रैर्हीद ७ सर्व वृतम् श० ६ ५ ४ ६ अहोरात्राणा वा ऽएतद्रूप यद्धाना श० १३ २ १ ४ अहोरात्रे स (प्रजापति) एतमतिरात्रमपश्यत्तमहरत्ते-नाहोरात्रे प्राजनयत् ता० ४ १ १४]

अह्यन् व्याप्नुवन् (इन्द्र=राजा) ६ ४० २ [अह व्याप्तौ (स्वा०) धातो कर्मणि शतृ । छान्दसत्वात्कर्मण्या-त्मनेपद न भवति]

अहंपूर्वः अयमहमित्यात्मज्ञानेन पूर्ण (रथ) १ १८१ ३ [अहमित्यात्मार्थे सर्वनाम । पूर्व =पृ पालनपूरणयोर्धातो रूपम् । तयो समास]

अहंयुः अह विद्यते यस्मिन् स (जन) १ १६७ ७ [अहम् शब्दात् 'अहंशुभमोर्युस्' अ० ५ २.१४०. सूत्रेण मत्वर्थे युस् । अहमिति शब्दान्तरमहकारे]

अहः व्याप्तिशीलम् (अर्जुनम्=ऋजुगत्यादिगुणम्) ६ ९ १ [अह व्याप्तौ (स्वा०) धातोरसुन् प्रत्यय]

अहार्षम् हरेयम् १२ ११ [हृञ् हरणे (भ्वा०) धातोर्लुङ्]

अहावि हूयते २० ७९ [हु दानादानयो (जु०) धातो कर्मणि लुङ्]

अहासत ज्ञापयन्ति, प्र०—अत्र 'ओहाङ् गतौ' इत्यस्माल्लडर्थे लुङ् १.६ ४ [ओहाङ् गतौ (जु०) धातोर्लुङ्]

अहाः त्यजति, प्र०—अत्र 'ओहाक् त्यागे' इत्यस्माल्लुडि प्रथमैकवचने आगमानुशासनस्याऽनित्यत्वात् सगिटौ न भवत १ ११६ ३ [ओहाक् त्यागे (जु०) धातोर्लुङ्]

अहिगोपा अहिना मेघेन गोपा गुप्ता आच्छादिता (आप =जलानि) १ ३२ ११ [अहि मेघनाम निघ० १ १० गोप =गुपू रक्षणे (भ्वा०) धातोर्घञ् । तयो समास । अहिगोपा =अहिना गुप्ता नि० २ १७]

अहिघ्ने योऽहिं मेघ हन्ति तस्मै (सवित्रे=सूर्याय) २ ३० १ [अहि =मेघ, तदुपपदे हन हिंसागत्यो (अदा०) धातो 'कृत्यल्युटो बहुलमि' ति टक् प्रत्यय]

अहिन्वन् वर्धयन्ति ३ ३१ ५ [हि गतौ वृद्धौ च (स्वा०) धातोर्लङ्]

अहिभानवः अहेर्मेघस्य प्रकाशका (वायव) १ १७२ १ [अहिर्मेघवाची । भानु =भा दीप्तौ (अदा०) धातो 'दाभाभ्या नु' उ० ३ ३२ सूत्रेण नु प्रत्यय]

अहिना मेघेन ४ ५५ ६ मेघेनेव घनेन ४ १७ १

अहिम्=सर्प शत्रु वा १ १०३ ७ सर्पमिव वर्त्तमान (वृक=स्तेनम्) ७ ३२ ७ सर्वत्र व्याप्तुमर्हं मेघम् १ ५१ ४ व्याप्नुवन्त मेघम् ६ ३० ४ मेघमिव चेष्टमानमुन्नतम् (वृक=चोरम्) ९ १६ **अहिः**=व्यापनशीलो मेघ २ ३१.६ सर्पवत् क्रुद्धो विषधर ८ २३ समस्तविद्यासु व्यापनशील (ईश्वर) ५ २३ सर्पवत् (विद्वज्जन) ६ १२

अहेः=मेघस्य १ ५२ १० [अह व्याप्तौ (स्वा०) धातोर्बाहुलकाद् इ प्रत्यय । अथवा 'आङि श्रिहनिभ्या ह्रस्वश्च' उ० ४ १३८ सूत्रेण आङ्पूर्वस्य हन्तेरिण् प्रत्यय । अहि = मेघनाम । निघ० १ १० उदकनाम निघ० १ १२. अहि = अयनात्, एति अन्तरिक्षे अयमपीतरोऽहिरेतस्मादेव, निर्ह्रसित उपसर्ग आहन्तीति नि० २ १७ अही गोनाम नि० २ ११. द्यावापृथिव्योर्नाम निघ० ३ ३० अथ (वृत्र) यदपात्समभवत्तस्मादहि श० १ ६ ३ ९.]

अहिमन्यव येऽहिं मेघ मानयन्ति ज्ञापयन्ति ते (वायव) १ ६४ ८ येऽहिं व्याप्तिं मानयन्ति ज्ञापयन्ति ते (मरुत) १ ६४ ९ [अहिर्व्याख्यात । मन्यु =मन ज्ञाने (दिवा०) धातो 'यजिमनि०' उ० ३ २० सूत्रेण युच् । तयो समास]

अहिमायस्य अहेर्मेघस्य मायाऽऽच्छादनमिव कापट्य यस्य तस्य (शत्रो) ६ २० ७ **अहिमायान्**=अहेर्मेघस्य माया इव माया प्रज्ञा येषा तान् (विदुषो जनान्) १ १९० ४ [अहिर्मेघवाची । माया प्रज्ञानाम निघ० ३ ९ मात्यन्तर्भवतीति विग्रहे मा माने (अदा०) धातो 'माछाशसिभ्यो य' उ० ४ १०९ सूत्रेण यप्रत्यये टापि च माया रूपम्]

अहिमायाः मेघस्य माया कुटिलगतय ६ ५२ १५ [पूर्वपदे व्याख्यातम्]

अहिरिव मेघ इव गर्जन्, भा—मेघवद् गर्जन् (पुमान्=पुरुषार्थिसेनापति) प्र०—अहिरिति मेघनाम निघ० १ १०, २९ ५१

अहिशुष्म योऽहिं मेघ शोषयति स सूर्यस्तद्वद्वर्त्तमान (इन्द्र=राजन्) ५ ३३ ५ [अहिर्मेघवाची । शुष्मम्= बलनाम निघ० २ ९ शुष्यति निस्सार करोतीति विग्रहे शुष शोषणे (दिवा०) धातो 'अर्विसिविमिशुषिभ्य कित्' उ० १ १४४ सूत्रेण मन् प्रत्यय]

अहिंसतीम् हिंसादिदोषरहित (शाला) को म० वि० २०५, वे० को०, अथर्व० वे० को० ९ ३ २२ [नञ्पूर्वात् हिसि हिंसायाम् (रुधा०) धातो शत्रन्तात् ङीप्]

अहिंसन् अनाशयन् रक्षन्त्सन् (रुद्र =सेनाध्यक्ष) ३ ६१ [नञ्पूर्वात् हिसि हिंसायाम् (रुधा०) धातो शतृ]

अहिंसानस्य हिंसारहितस्य (मित्रस्य) ५ ६४ ३ [नञ् पूर्वाद् हिसि हिंसायाम् (रुधा०) धातो शानच् । व्यत्ययेनात्मनेपदम्]

अहिंस्यमानः अहिंसित सन् (वैद्य.) १ १४१ ५ [नञ्पूर्वाद् हिसि हिंसायाम् (रुधा०) धातोर्लृट स्थाने शानच्]

अहिहत्याय मेघहननाय १ १३० ४ **अहिहत्ये**=

श० ४ ६ १ १ अयुर्वै ग्रह प्रजापति श० ४.१ १.२ प्रजापतिर्वा एष यदशु सो अस्य (यजमानस्य) एष आत्मैव श० ४ ६ १ १ श० ११ ५.६ १]

अंशेव भागमिव ५ ८६ ५ [अशो व्याख्यात पूर्वपदे]

अंसत्रा असान् गत्यादीन् रक्षतस्तौ (अश्विना = विद्वज्जनौ) ४ ३४ ६ [अम गत्यादिषु (भ्वा०) धातो 'अमे सन्' उ० ५ २१ सूत्रेण सन् । असोपपदे त्रैङ् पालने (भ्वा०) धातो क प्रत्यय । असत्रम् अहसस्त्राण धनुर्वा कवच वा नि० ५ २६]

असाभ्याम् भुजमूलाभ्याम् २५ ३ **अंसेषु**—बल-पराक्रमाऽधिकरणेषु भुजमूलेषु १ ६४ ४ स्कन्धेषु ५ ५४.११ **अंसौ**=बाहुमूले २० ८ [अस पूर्वपदे व्याख्यात]

अस्याः असेषु स्कन्धेषु भवा (सूचिका =वृश्चिका-दय) १ १९१ ७ [अमो व्याख्यात, ततो भवार्थे यत्]

अंहतिः दारिद्र्यम् १ ९४ २ [हन हिंसागत्यो. (अदा०) धातो 'हन्तेरह च' उ० ४ ६२ सूत्रेणाति = प्रत्यय । धातोश्चाहादेश । अहतिश्चाहश्चाहुश्च हन्तेर्निरूढो-पधाद् विपरीतात् नि० ४ २४]

अहसः अधर्माचरणात् ६ १६ ३० अपराधात् ५ ५१ १३ अविद्याज्वरादिरोगात् १ ९१ १५ विद्याध्ययन-निरोधकाद्विघ्नाख्यात् पापात् १.११७ ३ पापात्, प्र०—अत्र 'अमरोगे' इत्यस्माद् 'अमेर्हुक् च' उ० ४ २१३ अनेनाऽसुन् प्रत्ययो हुगागमश्च १ १८ ५ अधर्मानुष्ठानात् १ ११८ ८ दुष्टाचारात् १.१८० ५ पापाचरणात् तत्फलाद् दुखाद्वा १ १०६ १ रोगजन्यदुखात् १२ ८६ दुष्टाद् व्यसनात् २० १४ मिथ्याचारात् १६.१० दुष्टा-चरणादपराधाद्वा ७ १५ ३ दुखदारिद्र्याख्यात् पापात् ७ १ १५ कुपथ्यजन्यादपराधात् २ ३३ ३ अविद्या आदि महापाप से आर्याभि० १ १३, ऋ० १ ३ १० १४ क्षुज्ज्वरादिरोगात् १ ६३ ८ **अहसि**=पापे १ ५४ १ **अंहः**=अनिष्टाचरणम् ३ १५ ३ पाप पापजन्य दु.ख वा ५ ५४ ११ पापमपराधभूतम् ६ ३ १ पापात्मकं कर्म कुपथ्यादिक वा २ ३३ २ दुखदातारम् (जनम्) ४ २ ६ दुखरोगवेगम्, प्र०—अत्र 'अमेर्हुक् च, उ० ४ २१३ चादसुन्, अनेन वेगो गृह्यते १ ४२ १ [अम गत्यादिषु (भ्वा०) धातो 'अमेर्हुक् च' उ० ४ २१३ सूत्रेणासुन् प्रत्यय । हुगागमश्च । अहश्च हन्तेर्निरूढोपधाद् विपरीतात् नि० ४ २४]

अंहसस्पतये सर्वेषा वेगस्य पालकाय (चैत्रादिमासाय) ७ ३० क्लिष्टस्य पालकाय (फाल्गुनमासाय) २२.३१ [अंहस्-पतिपदयो समास । विभक्तेरलुक् च]

अंहांसि अधर्मयुक्तानि कर्माणि ७ २३.२ [अहस् व्याख्यात । तस्य प्रथमाबहुवचने रूपम्]

अंहुभेद्याः अहुमपराध या भिनत्ति तस्या (प्रजायाः), भा०—दुखविच्छेदिकाया प्रजाया २३ २८ [अहि गतौ (भ्वा०) धातोर् औणादिक उ प्रत्यय । अहु-उपपदे भिदिर् विदारणे (भ्वा०) धातोर्ण्यत् । 'कृत्यल्युटो बहुलमि'-ति कर्तरि ण्यत्]

अंहूरणा येऽहयन्ति तेऽहवो गन्तारस्तेषां रण रमणं यस्या सा (भूमि =पृथिवी) ६ ४८ २० **अंहूरणात्**=अहुर पाप विद्यतेऽस्मिन् व्यवहारे तत. १ १०५.१७ [अहि गतौ (भ्वा०) धातोरौणादिक उ-प्रत्यये अहु.। अहु-रणपदयो समास । पूर्वपदस्य च दीर्घ । अहूरणाशि० मत्वर्थे न प्रत्यय । अहुर =अहस्वान् भवति नि० ६ २७ अहूरणमप्यस्य भवति नि० ६ २७]

अंहोमुचः दुखमोचयितृभ्य (अप =जलानि) ४ १३. [अहुर्व्याख्यात । तदुपपदे मुच्लृ मोचने (तुदा०) धातो क्विप्]

अंहोयुवः येंऽहोऽपराध युवन्ति पृथक्कुर्वन्ति ते (मनुष्या) ५ १५.३ [अहुर्व्याख्यात । तदुपपदे यु मिश्रणेऽमिश्रणे च (अदा०) धातो क्विप्]

अंहोः पापमाचरितु (दुर्जनस्य) २ २६ ४ गुरु-प्राप्तस्य गृहाश्रमस्याऽनुष्ठानस्य ८ ४ प्राप्तस्य प्राप्तव्यस्य वा राज्यस्य १.६३ ७ अपराधात् ५ ६७ ४. दुष्टाचारात् ५ ६५.४ विज्ञानवत् (सुमति), प्र०—अगाऽहि धातो-रौणादिक उ प्रत्यय १ १०९ १ अपराधिन (मर्त्यस्य) ३३ ६८ [अहि गतौ (भ्वा०) धातोरौणादिक उ प्रत्यय]

आ अनुगतार्थे क्रियायोगे १ १९ ८ यथावत् आर्याभि० १ ३७, ऋ० १ ६ २१ १३ मर्यादायाम् ७.५९ १२ अभित. ५ १६ समन्तात् १ ७ २ धात्वर्थे १.१० २ क्रियाऽर्थे १ ७.३ आधाराऽर्थे १ २९ २ आभि-मुख्ये १ ४२.५ अनन्तरे १ ६७ ४. सर्वत १.८६ ५ [अर्वागर्थे नि० १ ३ एतस्मिन्नेवार्थे (समुच्चयार्थे) देवेभ्यश्च पितृभ्य एत्याकार नि० १ ४ उपमार्थे दृश्यते नि० ३ १६ अध्यर्थे दृश्यते नि० ५ ५]

आऽकरम् समन्तात्कुर्याम् १ २ ५८ **आकरः**= समन्तात्करोति ६ २२ १० [आङ्+डुकृञ् करणे धातो-

अह्यर्षूणाम् येऽहि मेघ प्राप्नुवन्ति तेषाम् (रक्षाणाम्) २ ३८ ३ [अहि =मेघ, तदुपपदे ऋषी गतौ धातोर्बाहुलकात् सिद्धि]

अह्रयम् लज्जादिदोपरहितम् (राध =धनम्) ५ ७९ ५ लज्जारहितम् (अग्निम्) ३ २ ४ **अह्रयः**= ये सद्योऽन्हुवन्ति व्याप्नुवन्ति यानानि मार्गास्ते (अग्न्यादय.) १ ७४.८ अह्नुवन्ति व्याप्नुवन्ति सर्वा विद्या ये ते विद्वास, प्र० अत्र 'अह व्याप्तौ' इत्यस्माद् बाहुलकेनौणादिक क्रि॰ प्रत्यय, महीधरेणाय 'ह्री लज्जायाम्, इत्यस्य प्रयोगोऽशुद्ध एव व्याख्यात इति ३ १६ **अह्रया**=अलज्जया प्रतिपादितानि (राधासि=धनानि) ५ ७९ ६ [अह व्याप्तौ (स्वा०) धातोर्बाहुलकात् क्रिन् प्रत्यय । छान्दसत्वाद् गुण]

अह्रयाण लज्जारहित (राजन्) ४ ४ १४ **अह्रयाणम्**=विगतलज्ज प्रकाशितम् (वन्धुम्), प्र०—अत्र नञ्पूर्वाद् ह्री धातोर्बाहुलकादौणादिक आनच् प्रत्यय १ ६२ १० [नञ्पूर्वाद् ह्री लज्जायाम् (जु०) धातोर्बाहुलकाद् आनच् प्रत्यये रूपम् । अह्रयाणोऽह्रीतयान नि० ५ १५ ह्रीतशब्दस्य ह्रभावश्छान्दस]

अह्रुतप्सवः अह्रुतमकुटिल सूर्यरूप यासान्ता (ऊतय =सुरक्षिता प्रजा) प्र०—अत्र 'ह्रु ह्वरेश्छन्दसि' अ० ७ २ ३१ इत्यनेन ह्रुरादेश प्स्विति रूपनाम निघ० ३.७, १ ५२ ४ [ह्वृ कौटिल्ये (भ्वा०) धातोर्नञ् पूर्वात् धातोह्रुरादेश । प्सु रूपनाम निघ० ३ ७ तयो समास]

अह्रुतम् कुटिलतारहितम् (हविर्धान=हविषा धान स्थित्यधिकरणम् १ ६ **अह्रुतः**=अकुटिल सरल (त्वेष =प्रकाश) ६ ६१ ८ **अह्रुता**=अकुटिलानि सरलानि शोभनानि (अङ्गानि) प्र०—अत्र 'शेश्छन्दसि बहुलम्' अ० ६ १.७० इति लुक् ८ २९ [नञ्पूर्वाद् ह्वृ कौटिल्ये (भ्वा०) धातो क्त प्रत्यय । पूर्वपदवत् ह्रुरादेशश्च]

अह्वत आह्वयेत् १ १०६ ६ आह्वयति, प्र०—अत्र लडर्थे लड् १ २४ १२ **अह्वन्त**=आह्वयन्ति ५ २९ ८ आह्वयन्ते ४ ६ ६ [ह्वेञ् स्पर्धाया शब्दे च (भ्वा०) धातोर्लुङ् । 'लिपिसिचिह्वश्चे' ति च्लेरङ्]

अह्वयत् उपदिशेत् १ ११७.१८ आह्वयेत् १ ११७ १९ [ह्वेञ् स्पर्धाया शब्दे च (भ्वा०) धातोलङ्]

अह्वाम इच्छेम ६ ५० ४ **अह्वे**=आह्वयामि २ ३२ ८ प्रशसामि ३ ३३ ५ आह्वयेयम् ३ ५६ ४ **अह्वेताम्** आह्वयत २८ १४ [ह्वेञ् स्पर्धाया शब्दे च (भ्वा०) धातोर्लुङ् । च्लेरङ् । ह्वयति अर्चतिकर्मा निघ० ३ १४]

अह्वे अह्नुवन्ति व्याप्नुवन्ति यस्मिन् व्यवहारे तस्मिन् १ ६६.३ [अह व्याप्तौ (स्वा०) धातोर्बाहुलकात् क्वन् प्रत्यय]

अंशम् सेवाविभाग, भोजनाच्छादन-धन-यान-शस्त्र-कोशविभाग वा १ १०२ ४ प्राप्तम् (ऐश्वर्यम्) २ १९ ५ भागम् ३.४५ ४ वल सेना को आर्याभि० १ ४३, ऋ० १ ७ १४ ४ **अशः**=विभाग ५ ४२ ५. प्रेरक (राजा शिष्यो वा) २ १ ४ दुष्टाना सम्यग् घातक (द्विव ज्जन) २.२७ १ विभाजक (आप्तो जन) ३४ ५४ भाग ७ ३२ १२ **अंशाय**=परमाण्ववगमाय १० ५ भागाय १ ११२ १ [अश =अशुना व्याख्यात नि० १२ ३६]

अंशवे पदार्थाना किरणाना वेगाय १४६.१० **अंशुना**=भागेन २० २७ किरणसमूहेन १७ ८६. सूर्येण ४ ५८ १ **अशुभिः**=सृष्टितत्त्वाऽवयवै १ ९१ १७. किरणै १२ ११४. **अंशुभ्याम्**=बाहुभ्यामिव, अन्व०—बाह्याऽभ्यन्तरव्यवहाराभ्याम् ७ १ **अशुम्**=विभक्तम् (वीरपुरुषम्) ६ १७ ११ विभक्ता सोमवल्लीम् १ १३७ ३ विज्ञानादिक पदार्थम् ४ २६ ६ प्राणप्रदम् (दुग्धम्) ५ ३६ १ वैद्यकविद्यारीत्या विभक्तम् (मदिर= मादक द्रव्यम्) ६ २० ६ सारम् ३ ३६ ७ **अंशुषु**= विभक्तेषु सासारिकेषु पदार्थेषु ८ ५७ **अशुः**=व्याप्तिमान् सूर्य, प्र०—अत्र 'अशूङ् व्याप्तौ' इत्यस्माद्धातोर्बाहुलकेनौणादिक उ प्रत्ययो नुगागमश्च १८ १९ प्रापक (स्वराजपीडको जन) ४ २२ ८ किरण ५ ४३ ४ ओषधिसार ३ ३६ ६ सविभाग, प्र०—अत्र 'अमधातोरु प्रत्यय शकारागमश्च ७ २६ **अशुरंशुः**=अवयवोऽवयव, अन्व०—अङ्गमङ्गम्, प्र०—अत्र 'अशूङ् व्याप्तौ सघाते च' इत्यस्माद् बाहुलकादौणादिक उ प्रत्ययो नुमागमश्च ५ ७

अशो=सूर्यवत्प्रकाशमान (देव=दिव्याऽऽत्मन् जन) ७ ३ **अंशोः**=स्त्रीशरीररय भागात् १ १२५ ३ अशात् २ १३ १ सूर्यस्य प्राप्तस्य ४ १ १९ प्राप्तव्यस्य महोषधिरसस्य ४ २५ ३ प्राप्तस्य (सन्तानस्य) ३ ४८ २ [अशूङ् व्याप्तौ सघाते च (स्वा०) धातोर्बाहुलकादु प्रत्ययो नुमागमश्च । अशु शमष्टमात्रो भवति । अननाय श भवतीति वा नि० २ ५ प्राण एवाशु चक्षुरेवाशु श० ११ ५ ९ २. मनो ह वाशु श० ११ ५ ९ २ प्रजापतिर्वा एष यदशु

आखुः समन्तात् खनति अवदृणाति ये भोजनसाधनेन स (पदार्थ), प्र०—अत्र 'आङ्परयो खनिशॄभ्या डिच्च' उ० १ ३३ इति कु प्रत्ययो डित्सञ्ज्ञा च ३ ५७. मूषक २४ ३८ **आखून्**=मूषकान् २४ २६ [आङ्+खनु अवदारणे (भ्वा०) धातोरौणादिक कु प्रत्यय, स च डिच्च]

आऽख्यत् समन्तात्प्रख्याति ४ २ १८ [आङ्+ख्या प्रकथने (अदा०) धातोर्लुङ्। 'अस्यतिवक्ति०' इति सूत्रेण च्लेरङ्]

आऽगच्छतम् आगच्छतम् ५ ७८ ४ **आगच्छताम्**=समन्तात् प्राप्नुत, प्र०—अत्र लडर्थे लोट् १ २२ १. **आगच्छन्ति**=समन्ताद् यान्ति १ ८५ ११ [आङ्+गम्लृ गतौ (भ्वा०) धातोर्लोट्]

आगच्छात् समन्तात् प्राप्नुयात् १८ ६० **आगच्छाति**=आगच्छेत् प्राप्नुयात् ७ ३३ १४ [आङ्+गम्लृ गतौ (भ्वा०) धातोर्लेट्। आडागम]

आगत समन्ताद् गमयत्, अ०—समन्तादागच्छत, प्र०—अत्र गमधातोर्ज्ञानार्थ प्रयोग १ ३ ७ **आगतम्**=समन्तात् प्राप्नुतम् १ ४६ १३. समन्ताद् गच्छतम् १ ४७ ६ अभितो गच्छतम् १ ४७ ७ आगच्छतम्, प्र०—अत्र गम्लृ गतौ इत्यस्माद् 'बहुल छन्दसि' इति शपो लुकि सति शित्वाऽभावाच्छयाऽभावो 'अनुदात्तोपदेश' इत्यादिना मलोपश्च ७ ८ [आङ्+गम्लृ गतौ (भ्वा०) धातोर्लोट्। शपो लुक् मकारलोपश्च छान्दसत्वात्]

आगतः समन्तात् प्राप्त सहायकारी पुरुष इव (सोम =ऐश्वर्यसमूह) ८ ५६ [आङ्+गम्लृ गतौ (भ्वा०) धातो क्त]

आगतिः आगमतम् २० १३ [आङ्+गम्लृ गतौ (भ्वा०) धातो क्तिन् प्रत्यय]

आगतेन सब प्रकार से प्राप्त होने वाले (मित्र) के द्वारा प० वि०। [आङ्+गम्लृ गतौ (भ्वा०) धातो क्त]

आगतौ समन्तात् प्राप्तौ (ऋत्विगध्वर्यू) २ ५ ६ [आङ्+गम्लृ गतौ (भ्वा०) धातो क्तिन्]

आगात् समन्तात् गच्छति १ ११३ १६ [आङ्+इण् गतौ (अदा०) धातोर्लुङ्। 'इणो गा लुङि' इति गादेश सिचो लुक् च]

आगधिता समन्ताद् गृहीता (नीति) प्र०—गध्य गृह्णाते नि० ५ ५, १ १२६ ६ [आङ्+गध्य गृह्णाते नि० ५ ५ इति प्रमाणात् गध धातो क्त। स्त्रिया टाप्। आगधिता गध्यतिर्मिश्रीभावकर्मा नि० ५ १५]

आऽगन् आगच्छति, प्र०—अत्र गम्लृधातो लङि प्रथमैकवचने 'बहुल छन्दसि' इति शपो लुक्, संयोगान्तलोपे 'मो नो धातो' इति मस्य नकारादेश १ १२३ २. आगच्छति प्राप्नोति १ १७९ ४. समन्तात्प्राप्नोति, प्र०—अत्र लडर्थे लुङ्, 'मन्त्रे घस०', इति च्लेर्लुक् 'मो नो धातो' इति मकारस्य नकार ४ १५ समन्तादागच्छन्तु ८ ५३ ७. आभिमुख्येन प्राप्नोति ४ १५ अभित प्राप्नोति ४ १५ समन्तात्प्राप्नोतु ७ २० ९ समन्तात्प्राप्ता (महत्तत्त्वादय) १ १६४ ३७ आगच्छेत् प्राप्नुयात् ७ ५० १ **आगन्त**=नित्यमागच्छत, समन्तात्प्राप्नुत, प्र०—अत्र गमेर्लोटो-मध्यमबहुवचने प्रयोग 'बहुल छन्दसि' अष्टा० २ ४ ७३ इत्यनेन शपो लुकि कृते 'तप्तनप्तनथनाश्च' अ० ७ १ ४५ इति तनादेशे पित्वादनुनासिकलोपाऽभाव १ ३ ८. आगच्छन्तु प्राप्नुवन्तु ५ ४३ १०. **आगन्तन**=आगच्छत ५ ५७ १ प्राप्नुत ८ ४३ ४. **आगन्तम्** आगच्छतम्, प्र०—अत्र गमधातोरडभावो 'बहुल छन्दसि' इति शपो लुक् १ १३५ ५ **आगन्तु**=आगच्छन्तु १ १८९ ६ **आगन्म**=समन्तात्प्राप्नुयाम प्र०—अत्र लिङर्थे लुङ् ४ १. [स्पष्टम्]

आगनीगन्ती भृश बोध प्रापयन्ती (ज्या=प्रत्यञ्चा) २९ ४० [आङ्+गम्लृ गतौ धातोर्यङ्लुकि शत्रन्तात् ङीप्]

आगमत् सर्वत आगाप्यात् गमयति वा, प्र०—अत्र पक्षे वर्त्तमानेऽर्थे लिङर्थे च लुङ् 'बहुल छन्दस्यमाङ्योगेऽपि' अ० ६ ४ ७५ इत्यडभाव १ ५ ३ आगच्छेत् प्राप्नुयात् ३ १३ १ समन्ताद् गच्छेत् ५ ३६ १ समन्ताद् गच्छतु, प्राप्तो भवतु वा, प्र०—अत्र लुङ्प्रयोगोऽडभावश्च १ १.५ समन्ताद् गच्छति ४ ५५ १० आगच्छेत् ३ १० ४ हमारे हृदय मे प्रकट हो आर्याभि० १ ५, ऋ० १ १ १ ५ **आगमथः**=प्राप्नुथ ४ ४३ ४ **आगमन्**=आगच्छन्ति १७ ७८. आगच्छन्तु प्राप्नुवन्तु, प्र०—अत्र लिङर्थे लुङ्-प्रयोग १ ८९ ७ **आगमन्तु**=समन्ताद् गच्छन्तु, प्र०—अत्र 'बहुल छन्दसि' इति शपो लुक् १८ ३१ समन्तात् प्राप्नुवन्तु १ १८९ २ **आगमम्**=प्राप्नुयाम् २० २२ [गम्लृ गतौ (भ्वा०) धातो रूपाणि]

आगमिष्ठः अतिशयेनाऽऽगन्ता (विद्वज्जन) ६ ५२ ५ **आगमिष्ठा**=समन्तादतिशयेन गन्तारौ (अश्विना=स्त्री-पुरुषौ) ५ ७६ २ [आङ्+गम्लृ गतौ (भ्वा०) धातोस्तृच् कर्त्तरि। ततोऽतिशायनेऽर्थे इष्ठन्। 'तुरिष्ठेमेयस्सु' अ० ६ ४ १५४ सूत्रेण तृ-शब्दस्य लोप]

लुँङ्। 'कृमृदृरुहिभ्यश्छन्दसि' अ० ३ १ ५६. सूत्रेण च्ले स्थाने अङ्]

आकरः समूह ५ ३४ ४ **आकरे**=समूहे ३ ५१ ३. [एत्य तस्मिन् कुर्वन्तीति विग्रहे आङ्पूर्वात् करोते 'पुंसि सञ्ज्ञाया घ प्रायेण' अ० ३ ३ ११८ सूत्रेण घ प्रत्यय]

आकर्त्त समन्तात् कुरुत ६ ५१ १५ [आङ् डुकृञ् करणे (तना०) धातोर्लुङ् । च्लेरङ् च]

आकाय्यस्य समन्तात्काये भवस्य (राज्ञ) ४ २६ ५ [आङ् पूर्वात् कायप्राति० भवार्थे यत्]

आकीम् समन्तात् १.१४ ६ [आकीम् सर्वपदसमाम्नाय निघ० ३ १२]

आकीरिणः समन्ताद् विक्षेपका (तायव =स्तेना) ५ ५२ १२ [आङ्+कॄ विक्षेपे (तुदा०) धातोर्बाहुलकाद् इनच् । स च कित्]

आकूतात् उत्साहात् १८ ५८ **आकूतिम्**=उत्साहकारिका क्रियाम् ११ ६६ उत्साहम् ३६ ४ **आकूतिः**=अध्यवसाय उत्साह आप्तरीतिर्वा ऋ० भू० ६५, ऋ० १० १६१ ४ **आकूत्यै**=उत्साहाय ४ १७

आकृणुते सव प्रकार से उत्पन्न करती हे स० प्र० १५१, १० ४० २ **आकृणुध्वम्**=समन्तात् कुरुध्वम् १ ७७ २ **आकृणोति**=समन्तात्करोति १ १७३ ११ **आकृधि**=समन्तात् कुरु १ ५५ ७ समन्तात्कुर्या ३ १६ ५ [आङ्+डुकृञ् करणे (तना०) धातोर्लेट् । विकरणव्यत्ययेन श्नु]

आकृष्णेन समन्तात्कर्षितेन (रजसा=लोकसमूहेन) ३४ ३१ आकर्षणात्मना (रथेन), परमाणूना धारणेन वा प० वि० । आकर्षणगुणेन सह ऋ० भू० १४१ [आङ्+कृष विलेखने (भ्वा०) धातोर्नक् प्रत्यय । कृष्यतेर्निकृष्टो वर्ण नि० २ २०]

आके समीपे २ १ १० [आके =अन्तिकनाम निघ० २ १६ दूरनाम निघ० ३ २६]

आकेनिपासः य आके समीपे नितरा पान्ति ते किरणा ४ ४५ ६ [आके अन्तिकनाम निघ० २ १६ निपास =नि+पा रक्षणे (अदा०) धातो क प्रत्यय । आकेनिप =मेधाविनाम निघ० ३ १५]

आक्रन्दय समन्ताद्रोदयाऽऽह्वय वा ६ ४७ ३० [आङ पूर्वात् क्रदि आह्वाने रोदने च (भ्वा०) धातोर्लोट्]

आक्रन्दयते यो दुष्टानामाक्रन्दयते रोदयति तस्मै न्यायाधीशाय १६ १६ [आङ् पूर्वात् क्रदि आह्वाने रोदने च (भ्वा०) धातोर्णिचि लटि च रूपम्]

आक्रमताम् आक्रमण अर्थात् रीतिपूर्वक आरूढ हो स० वि० १८६ अथर्व० ६ ५ १ [आङ् पूर्वात् क्रमु पादविक्षेपे (भ्वा०) धातोर्लोट् । 'आङ उद्गमने अ० १ ३ ४० इत्यात्मनेपदम्, व्यत्ययेन वा]

आक्रमः समन्तात्क्रमन्ते पदार्था यस्मिन्नन्तरिक्षे तस्य विज्ञापक (विद्वज्जन) १५ ६ [आङ्+क्रमु पादविक्षेपे (भ्वा०) धातो 'पुंसि सञ्ज्ञाया घ प्रायेण' इति घ प्रत्यय]

आक्रमीत् अभित क्राम्यति, अन्व०—आक्राम्यति, प्र०—लडर्थे लुङ् ३ ६ चारो ओर घूमता जाता है स० प्र० ३१३, ३ ६ आक्रमण कुर्वन् सन् गच्छति ऋ० भू० १३६ [आङ्+क्रमु पादविक्षेपे (भ्वा०) धातोर्लुङ्]

आक्रयायै आक्रमन्ति प्राणिनो यस्या तस्यै हिंसायै ३० ५ [आङ्+क्रमु पादविक्षेपे (भ्वा०) धातोरधिकरणे 'पुंसि सञ्ज्ञाया घ प्रायेण' अ० ३ ३ ११८ सूत्रेण घ । वर्णव्यत्ययेन मकारस्य यकार]

आक्रंसते समन्तात्क्रमेत् १.१२१ १ [आङ्+क्रमु पादविक्षेपे (भ्वा०) धातोर्लेट् । 'सिब्बहुल लेटि' इति सिब्विकरण । व्यत्ययेनात्मनेपदञ्च]

आक्षित् य समन्तात् क्षियति सर्वत्र वसति स (परमात्मा) ३ ५५ ५ [आङ्+क्षि निवासगत्यो (तुदा०) धातो क्विप् । तुगागम]

आऽक्षितम् समन्तादनष्टमिव ५ ७ ७ [आङ्+नञ्+क्षि क्षये (भ्वा०) धातो क्त प्रत्यय]

आक्षिषुः व्याप्नुवन्ति १ १६३ १० प्राप्नुयु २६ २१ [अक्षू व्याप्तौ (भ्वा०) धातोर्लुङ्]

आक्षेति समन्तात् क्षियति निवासयति १ ६४ १३ [आङ्+क्षि निवासगत्यो (तु०) धातोर्लट् । 'बहुल छन्दसी'-ति विकरणलुक् । अन्तर्भावितण्यर्थश्चाय धातु]

आखरेष्ठः समन्तात् खनति य तस्मिन् तिष्ठतीति स (यज्ञ) प्र०—'खनो डडरेकेकवका' अ० ३ ३ १२५ अनेन वार्त्तिकेनाऽऽखर सिध्यति २ १ [आङ्+खनु अवदारणे (भ्वा०) धातोर्डर प्रत्यय । तदुपपदे ष्ठा गतिनिवृत्तौ (भ्वा०) धातो क]

आखिदति दैन्य प्राप्नोति ४ २५ ७ [खिद दैन्ये (दिवा०) धातोर्लट् । व्यत्ययेन श प्रत्यय]

आखिदते आ समन्ताद दीनायैश्वर्योपक्षीणाय (पुरुषाय) १ ६ ४६ [आङ्+खिद दैन्ये (दिवा०) धातो. शतृ । विकरणव्यत्ययेन श प्रत्यय]

आगमिष्ठाः आगच्छन्तु, प्र०—अत्र लोडर्थे लुङ्, पुरुषवचनव्यत्यय १६ ५६ [आङ्+गम्लृ गतौ (भ्वा०) धातोर्लुङ् । व्यत्ययेनात्मनेपदम्]

आगमेः समन्ताद् गच्छ, भा०—आप्नुहि, प्र०—वा छन्दसि सर्वे विधयो भवन्ति इति छत्वाऽभाव । [आङ्+गम्लृ गतौ (भ्वा०) धातोर्लिङ् । छान्दसत्वाच्छत्वाऽभाव]

आगम्याः आगच्छे १ १८६ ६ [आङ्+गम्लृ गतौ (भ्वा०) धातो रूपम्]

आगम्याः समन्ताद् गमयितु योग्या (अश्वा) १ १८१ ३ [आङ्+गम्लृ गतौ (भ्वा०) धातोर्णिचि 'पोरदुपधात्' इति यत्]

आगहि समन्तात्प्राप्नुहि प्रापयति वा, प्र०—अत्र पक्षे व्यत्यय 'बहुल छन्दसि' इति शपो लुक् 'वाच्छन्दसि' अ० ३ ४ ८८ इति हेरपित्वात् 'अनुदात्तोपदेश०' अ० ६ ४ ३७ अनेनाऽनुनासिकलोपश्च १ १४ २ आभिमुख्येन कार्याणि प्रापयति १ १६ ५ समन्ताद् गच्छ गच्छति वा १ १६ २ आगच्छ प्राप्नुहि ३ ३१ १८ समन्तात् प्राप्नोति १ १६ ४ आगच्छ, अ०—अस्मदात्मनि प्रकाशितो भव १ ४ ३ सर्वत प्राप्नोति, प्र०—अत्र व्यत्ययो लडर्थे लोट् 'बहुल छन्दसि' इति शपो लुक् च १ २३ १ समन्तात् सुखानि गमयति १ १६ ६ अभित साधको भवति १ १६ ६ प्राप्नुया ४ ३२ ५ समन्ताद् गच्छ गच्छति वा, अ०—समन्ताद् विदितो भवसि १ १६ ३ [आङ्+गम्लृ गतौ (भ्वा०) धातोर्लोट् । छान्दसत्वाच्छपो लुक् । सिपो हिरादेश । मकारलोपश्च हेरपित्त्वात्]

आगः अपराधम् ७ ५७ ४ [आग आङ् पूर्वाद् गमे' नि० ११ २४ तद्यास्तिस्र आगा इम एव ते लोका जै० उ० १ २० ७]

आऽगात् आगच्छति ४ १ ७ प्राप्नोति १ १२३ ४ समन्तात् प्राप्नुयात् ३ ३० १३ समन्तादागच्छेत् ३ ८ ४ आता है स० प्र० १०६, ३ ८ ४ आऽगाम=प्राप्नुयाम ५ २ ८ **आऽगाः**=आगच्छे ३ २१ ४ [आङ्+इण् गतौ (अदा०) धातोर्लुङ् । इणो गादेश सिचो लुक् च]

आऽगामि समन्ताद् गम्यते ६ १६ १६ [आङ्+गम्लृ गतौ (भ्वा०) कर्मणि लुङ्]

आगुरस्व सततमुद्यम कुरुष्व, प्र०—अत्र व्यत्ययेनाऽऽत्मनेपदम् ३ ५२ १ उद्यमस्व २१ ६१ [आङ्+गुरी उद्यमने (तुदा०) धातोर्लोट् । व्यत्ययेनात्मनेपदम्]

आऽगुः समन्तात् प्राप्नुवन्ति ३ ८ ६ समन्ताद् व्याप्नुवन्तु १ १८१ ६ आगच्छेयु १.१७४ ८ आगच्छन्ति ३ ५६ २ [आङ्+इण् गतौ (अदा०) धातोर्लुङ् । इणो गादेश, सिचो लुक् च]

आग्नावैष्णवाः अग्निवायुदेवताका (पशव) २४ ८ [अग्नि-विष्णुपदयोर्द्वन्द्वसमासे 'साम्य देवता' अ० ४ २ २४ सूत्रेण अण् । 'देवताद्वन्द्वे च' अ० ७ ३ २१ सूत्रेणोभयपदवृद्धि । 'देवताद्वन्द्वे च' अ० ६ ३ २६ सूत्रेण पूर्वपदस्यानङ्]

आग्निमारुताः अग्निवायुदेवताका (शुकरूपा वाजिना कल्माषा पशव) २४ ७ [अग्नि-मरुत्पदयोर्द्वन्द्वसमासे 'सास्य देवता' अ० ४ २ २४ सूत्रेणाण् 'देवताद्वन्द्वे च' सूत्रेणोभयपदवृद्धौ च रूपम्]

आग्निवेशिम् योऽग्नि प्रवेशयति तम् (केतु=प्रज्ञाम्) ५ ३४ ६ [अग्न्युपपदे विश प्रवेशे (तुदा०) धातोर् बाहुलकाद् इञ् प्रत्यय]

आग्नीध्रम् अग्नीध्र ऋत्विज शरणम् १६ १८ आग्नीध्रात्=अग्निरिध्यते प्रदीप्यते यस्मिन् तस्येद शरणमाश्रयण तस्मात् (ईश्वरात्), प्र०—'अग्नीध शरणे रञ् भ च' अ० ४ ३ १२० अनेन वार्त्तिकेनाऽधिकरणवाचिन क्विबन्ताद् अग्नीध्र-प्रातिपदिकादण् प्रत्यय २ १० अग्नाऽऽश्रयात् २ ११ अग्नि धरति यस्मात् तस्मात् (सत्यकामत) २ ३६ ४ **आग्नीध्रे**=प्रदीपन साधनइन्धनादौ ८ ५६ अग्नीध्र शरणे ३८ १८ [अग्नि-उपपदे ञिइन्धी दीप्तौ (रुधा०) धातोरविकरणे क्विप्-प्रत्यये=अग्नीध । तत इदमर्थे 'अग्नीध शरणे रञ् भ च' अ० ४ ३ १२० वार्तिकेन रञ् प्रत्यय । भसञ्ज्ञकत्वाच्च जश् न । द्यावापृथिव्यौ वा ऽ एष यदाग्नीध्र श० १ ८.१ ४१ वसन्त आग्नीध्रस्तस्माद् वसन्ते दावाश्चरन्ति तद् ह्यग्निरूपम् श० ११ २ ७ ३२ अन्तरिक्षमाग्नीध्रम् तै० २ १ ५ १ अन्तरिक्ष वा ऽआग्नीध्रम् श० ६ २ ३ १५.]

आग्नेयः अग्निदैवत्य (कृष्णोऽज पशु) २६.५६ अग्निदेवताक (कृष्णग्रीव पशु) २६.५८ **आग्नेयाः**=अग्निदेवताका (कृष्णग्रीवा पशव.) २४ १४ [अग्नि-प्राति० 'साऽस्य देवता' अर्थ मे 'अग्नेर्ढक्' अ० ४ २ ३३ सूत्रेण ढक् प्रत्यय. । ढस्येयादेश । मा या मन्द्रा साऽऽग्नेयी (आगा) जै० ३० १ ३७ २ त्रिणिवनमाग्नेय भवति प्रतिष्ठायै ता० १३ ३ २१]

आग्मन् समन्तात् प्राप्नुवन्तु ४ ३४ ५ आगच्छन्ति ६ २८ १ [आङ्पूर्वाद् गम्लृ गतौ (भ्वा०) धातोर्लुङ् ।

भा०—विज्ञेयस्य (जगत) २८.२६ विज्ञानस्य ५.३५ प्राप्तु योग्यस्याऽध्यापनव्यवहारस्य २८८ निदानाऽऽदे २८७ प्रक्षेप्तु योग्यस्य (पदार्थस्य) कर्त्तव्यस्य न्यायस्य २८४ विज्ञेयस्य राज्यविषयस्य २८५. विज्ञानेन रक्षितु योग्यस्य राज्यस्य २८३ ज्ञातु योग्यस्य (वचस) २८६. स्नेहद्रव्यस्य ६ १६ **आज्येन** यज्ञेऽग्नौ च प्रक्षेपितु योग्येन हविषा सस्कृतेन होतव्येन पदार्थेन २६ [आज्यम् पर्वपदे गाधितम् । आज्य महिष्यभ्यनक्ति । तेजो वा आज्यम् । तै० ३ ६ ४ ६ तेजो वा आज्यम् ता० १२ १० १८ तेज आज्यम् तै० १ ६ ३ ४ अग्नेर्वा एतद्रूपम् । यदाज्यम् तै० ३ ८ १४ २ देवलोको वा आज्यम् कौ० १६ ५ एतद्वै देवाना प्रियतम धाम यदाज्यम् श० १३ २ १७, १३ ३ ६ २ आज्यम् (=विलीन सर्पि.) वै देवाना सुरभि ऐ० १ ३ एषा हि विश्वेषा देवाना तनू यदाज्यम् तै० ३ ३ ४ ६ एतद्वै जुष्ट देवाना यदाज्यम् श० १ ७ २ १० एतद्वै सवत्सरस्य स्व पय यदाज्यम् श० १ ५ ३ ५ रस आज्यम् श० ३ ७ १ १३ आज्यᳪ ह वाऽअनयोरविमृषितो प्रत्यक्ष रस श० २ ४ ३ १० पशव आज्यम् तै० १ ६ ३ ४ यज्ञो वा आज्यम् तै० ३ ३ ४ १ यजमानो वा आज्यम् तै० ३ ३ ४ ८ वज्रो ह्याज्यम् श० १ ३ २ १७ वज्रो वाऽआज्य वज्रेणैवैतद्रक्षाᳪसि नाष्ट्रा अपहन्ति श० ७ ४ १ ३४ वज्रो वाऽआज्य वज्रेणैवैतन्नाष्ट्रा रक्षाᳪस्यव-बाधते श० ३ ६ ४ १५ वज्रो वा ऽआज्यम् कौ० १३ ७ श० १ ५ ३ ४ तै० ३ ८ १५ १ काम आज्यम् तै० ३ १ ४ १५ सत्यमाज्यम् श० ११ ३ १ १ प्राणो वा आज्यम् तै० ३ ८ १५ २३ रेतो वाऽआज्यम् श० १ ६ २ ७ छन्दाᳪसि वा आज्यम् तै० ३ १ ५ ३ अयातयाम ह्याज्यम् श० १ ५ ३ २५ ईश्वरो वा एषोऽन्धो भवितो यश्चक्षुषा-ज्यमवेक्षते । निमीत्यावेक्षेत तै० ३ ३ ५ २ आज्यानि (शास्त्राणि, स्तोत्राणि) आज्येन वै देवा सर्वान् कामान् जयन्त्सर्वममृतत्वम् कौ० १४ १ ते वै आजिमाज्यैरेवाजयन्न आयन् यदाज्यैरेवाजयन्त आयस्मादाज्यानामाज्यत्वम् ऐ० २ ३६ ते (देवा) आजिमायन्यदाजिमायᳪस्तदाज्याना-माज्यत्वम् ता० ७ २ १ तद्वा उद षड्विधमाज्य तूष्णी जपस्तूष्णी शस पुरोरुक्सूक्तमुक्थवीर्य याज्येति । कौ० १४ १ आत्मा वै यजमानस्याज्यम् कौ० १४ ४ वागे-वाज्यम् कौ० २ ६ सर्वाणि स्वराण्याज्यानि (स्तोत्राणि) ता० ७ २ ५ आज्य तेज आज्यम् तै० ३ ३ ४ ३ तेजोऽसि शुक्रमस्यमृतमसि (आज्य !) श० १ ३ १ २८ एतद्वेत । यदाज्यम् तै० १ १ ६ ४ मेधो वा आज्यम् तै० ३ ६ १२ १ एतद् वै मधुदेव्य यदाज्यम् ऐ० २.२ (=विलीन सर्पि) नवाद् । त्रिवृत्स्तोमान्याज्यानीति प्राजापत्यानीति ? वृषाऽ-निरुक्तो वै प्रजापतिरनिरुक्तान्याज्यानि श० १.६ १ २० आज्यम् अर्थपाज्याहुतिर्यजुर्विर्यजो यस्य' (=पशुयज्ञ.) श० १ ७ २ १०.]

आञ्जन् गमयन्ते ६ ६३ ३. [अञ्जु व्यक्तिम्रक्षण-कान्तिगतिषु (रुधा०) धातोर्लङ् । व्यत्ययेन शप्]

आञ्जनीकारीम् आञ्जनी प्रसिद्धा क्रिया कर्त्तुं शील यस्यास्ताम् (स्त्रियम्) ३० १४ (आङ्+अञ्जु-व्यक्तिम्रक्षणादिषु (रुधा०) धातोर्ल्युटि ङीपि आञ्जनी । तदुपपदे करोतेर्णिनि प्रत्यय]

आडम्बराघातम् आडम्बरस्याऽऽघातक कोलाहल-कर्त्तारम् (जनम्) ३० १६ [आडम्बरोऽर प्रत्ययान्त औणादिक । तदुपपदे आङ् पूर्वात् हन् हिंसागत्यो (अदा०) धातोरण्मुल् प्रत्यय]

आणिम् सङ्ग्रामम्, भा०—आणाविति सङ्ग्रामनामसु पठितम् निघ० २ १७, १.३५ ६ **आणि:**=तीक्ष्णम् ५ ४३ ८ **आणौ**=सङ्ग्रामे १ ६३ ३ [अण शब्दार्थे (भ्वा०) धातोर् बाहुलकाद् इण् प्रत्यय. । आणौ सङ्ग्रामनाम निघ० २ १७ आणिरक्षणात् नि० ६ ३२]

आण्डा गर्भान् १० दि०। गर्भा तो, आर्याभि० १ ४६ ऋ० १ ७ १६ ८ अण्डवत् गर्भे स्थितान्, आर्याभि० १४८, १ १०४.८ **आण्डाभ्याम्**=वीर्याऽऽधारकाभ्याम् २५ १ अण्डाऽऽकाराभ्या वृषणाऽवयवाभ्याम् २५ ७ **आण्डौ**= अण्डाकारौ वृषणौ २० ६ [आण्डौ आणी इव व्रीडयति तत्सम्भे नि० ६.३२ आण्डौ वै रेत सिञ्चतो, यस्य ह्याण्डौ भवत स एव रेत सिञ्चति श० ७ ४ २ २४]

आत् नैरन्तर्ये २ २८ ६ अभित ३३ ७. समन्तात् १.१८ ८ आनन्तर्ये १ ६ ४ अद्भुते १.३२ ४ (आत् सम नि० ४ ११]

आतक्षत् समन्तात् तनूकरोति १ ५.१ १०. **आत-क्षत**=अभितो निष्पादयत १ १११ ३ समन्तात् तनुत ४ ३५ ६ विस्तृणुत ४ ३६ ८ **आतक्षन्तु**=अभितो रचयन्तु ४ ३३.८ [आङ्+तक्षू तनूकरणे (भ्वा०) धातोर्लेटि लेटि वा रूपम्]

आततने विस्तृणीयाम् ७ २६ ३ **आततन्थ**=सर्वत-स्तनोषि ७ ५ ४ अमन् सन्तागच्छति ऋ० भू० १३८ विस्तारयति ३ ६ ५ विस्तृणोषि, प्र०—अत 'बभूथा-ततन्थ०, अ० ७ २ ६४ अनेन सूत्रेण निपात्यते १ १६१ २२

मिदमिति विग्रहे अङ्गूषप्राति० इदमर्थेऽण् । ततो भावे ष्यञ् प्रत्यय । अथवा आङ्गूषप्राति० हितार्थे यत्]

आचकृषे समन्तात् कृतवानसि १ ५२ १२ [आङ्+डुकृञ् करणे (तना०) धातोर्लिट्]

आचके समन्तात् कामितवान् कामयता वा, प्र०—अत्र पक्षे लोडर्थे लिट् 'आचके' इति कान्तिकर्मसु पठितम् निघ० २ ६, ४ २१ समन्तात् कामयेत ३ ३ १० समन्तात् कामयते, प्र०—अत्र 'छान्दसो वर्णलोपो वा' इति यलोप ३ ३ ३ समन्तात् कामये २ ११ सर्वत सुखैस्तर्पयेत् १ ४० २ [आचके कान्तिकर्मा निघ० २ ६ आङ् पूर्वाद्वा चक तृप्तौ प्रतिघाते च (भ्वा०) धातोर्लिट् । 'अत एक हल्मध्ये०' इति एत्वमपि छान्दसत्वान्न भवति]

आचक्रथुः समन्तात् कुरुत १ ६२ १७ सर्वत कुर्यातम् १ ११६ २२ **आचक्रे**=सेवते, प्र०—अत्र 'गन्धनावक्षेपण०' अ० १ ३ ३२ इति करोते सेवनात् आत्मनेपदम् ३ ३ ८७ समन्तात् करोति ३ ३२ १३ [आङ्+डुकृञ् करणे (तना०) धातोर्लिट् सामान्ये]

आचक्रिः समन्तात् कर्त्ता (इन्द्र =राजा) ६ २४ ५ [आङ्+डुकृञ् करणे (तना०) धातो 'किकिनावुत्सर्गश्छन्दसि' अ० ३ २ १७१ वार्त्तिकेन कर्त्तरि कि प्रत्ययो लिड्वच्च]

आचक्रे शृणुयाम्, प्र०—अत्र कै शब्दे, अस्माल्लिट्, व्यत्ययेनाऽऽत्मनेपदम् १ ११७ २३

आचक्रे अप्रतिहते (द्यावाक्षामा), प्र०—चक्र चकतेर्वा नि० ४ २७, १ १२१.११ [आङ्+चक तृप्तौ प्रतिघाते च (भ्वा०) धातो रूपम्]

आचखाद स्थिरीकरोति ६ ६१ १ [खद स्थैर्ये हिंसाया च (भ्वा०) धातोर् आङ् पूर्वाल् लिट्]

आचरणेषु समन्ताच्चरन्ति जानन्ति व्यवहरन्ति येषु तेषु (व्यवहारेषु) १ ४८ ३ [आङ्+चर गतौ (भ्वा०) धातोरविकरणे ल्युट्]

आचरतः समन्ताद् गच्छत आगच्छतश्च १ ६२ ८ [आङ्+चर गतौ (भ्वा०) धातोर्लट्]

आचरन्ती समन्तात्प्रानुवत्यौ (धनुर्ज्ये) २६ ४१ सत्याचरण कुर्वती (विदुषी स्त्री) १ १६४ ४० समन्तात् प्रियाचरण कुर्वत्यौ (योषा=पत्न्यौ) ६ ७५ ४ [आङ्+चर गतौ (भ्वा०) धातो शत्रन्तान् ङीप् प्रत्यय]

आचरिक्रत् धर्मोपदेशमेव करोति ऋ० भू० २३७, अथर्व० ११ ५ ६ [आङ्+डुकृञ् करणे (तना०) धातोर्यङ्लुकि शतृ प्रत्यये रूपम्]

आऽचर्थः सत्कुरुथ १ १५१ ६ [आङ्+चर गतौ (भ्वा०) धातोर् लट् । 'बहुल छन्दसी' ति शपो लुक्]

आचष्टे समन्तात्कथयति ७ ३४.१० [आङ्+चक्षिङ् व्यक्तायां वाचि (अदा०) धातोर्लट्]

आचाकन्तु सर्वत कामयन्तु १ १२२ १४ [चाकनत् कान्तिकर्मा निघ० २ ६. तत आङ् पूर्वाल्लोट्]

आचार्यः विद्याऽध्यापक ऋ० भू० २३५ तीसरा जो विद्या का देने वाला (गुरु) स० प्र० ४३६, अथर्व० ११ ५ ३. विद्वान् (जन) स० वि० ८०, अथर्व० ११ ५ १७ [आङ्+चर गतौ (भ्वा०) धातो 'कृत्यल्युटो बहुलमि' ति कर्त्तरि ण्यत् प्रत्यय । आचार्य कस्मात् ? आचार्य आचार ग्राहयत्याचिनोत्यर्थान् आचिनोति बुद्धि वा नि० १ ४ सस्थानाध्यायिन आचार्या पूर्वे बभूवु श्रवणादेव प्रतिपद्यन्ते न कारण पृच्छन्ति गं० पू० १ २७]

आचिकेत् सर्वतो जानीयात् १ १५२ ३ समन्ताद्विजानीयात् ७ ६१ १ विजानीत १ १६४ १६ समन्ताद् वेत्ति ऋ० भू० २०३ [आङ्+कि ज्ञाने (जु०) धातोर्लङ्]

आचिकेत् समन्ताद् विजानाति ७ ४२ ४ [आङ्+कि ज्ञाने (जु०) धातोर्लङ्]

आचितम् सहितम् १ १८२ २ [आङ्+चिञ् चयने (स्वा०) धातो क्त]

आचित्तम् चेतनतारहितम् (ब्रह्म=अन्नम्) १ १५२ ५ [नञ्-चित्तपदयो । समास]

आऽचुच्यवुः आगच्छन्तु ५ ५६ ८ समन्तात् च्यावयेयु ५ ५३ ६ [आङ्+च्युङ् गतौ (भ्वा०) धातोर्लिट् । व्यत्ययेन परस्मैपदम्]

आच्छत् समन्तात् पापनिवारक कर्म १५ ५ दोपाऽपवारणम् १५ ४ [आङ्+छद अपवारणे (चुरा०) धातो क्विप्]

आच्य अधो निपात्य १६ ६२

आच्यावयामसि प्रापयाम ४ ३२ १८ [आङ्+च्युङ् गतौ (भ्वा०) धातोर्णिचि लटि रूपम् । 'इदन्तो मसि' अ० ७ १ ४६ सूत्रेण मस इकारान्तत्वम्]

आच्यावयामः प्रापयाम ४ १७ १६ [आङ्+च्युङ् गतौ (भ्वा०) धातोर्णिचि लटि रूपम्]

आछ्यति समन्ताच्छिनत्ति २३ ३६ [आङ्+छो छेदने (दिवा०) धातोर्लट् । व्यत्ययेन शप्]

आछृन्दन्तु समन्तात्प्रदीप्यन्ताम् ११ ६५ [आङ्+

समन्तात्तनु १२४० समन्तात्तनोपि ३४२२ विस्तृणीहि १६५४ समन्तात्तनोति ३२२२ [तनु विस्तारे (तना०) धातोर्लिट्। 'छन्दसि सर्वे विधयो विकल्प्यन्ते' इत्येत्वाभ्यासलोपौ न भवत]

आततन्वान् समन्ताद्विस्तारितवान् ३१.५. (तनु विस्तारे (तना०) धातोराङ्पूर्वाल् लिट स्थाने क्वसु]

आततम् समन्तात्तत विस्तृतम् (चक्षु =नेत्रम्) १२२२० व्याप्तम् ऋ० भू० ४४ सब ओर से व्याप्त होने से सब जगह मे परिपूर्ण एक रस भर रहे (ब्रह्म) को आर्याभि० १२१ **आतत**=व्याप्त (सूर =सूर्य) ६२६ [आङ्+तनु विस्तारे (तना०) धातो क्त प्रत्यय]

आतता समन्ताद्विस्तृता (नाभि) ११०५६ **आतताः** समन्ताद्विस्तृता (रश्मय =किरणा) २५२ [आङ्+तनु विस्तारे (तना०) धातो क्तप्रत्यये स्त्रिया टाप्]

आततान सर्वतो विस्तृणाति ११२६२ समन्तात्तनोति ७२३१ आतनोति विस्तृणाति ७४७४ सर्वतो विस्तृणोति ५१७ [आङ्+तनु विस्तारे (तना०) धातोर्लडर्थे लिट्। आततान आतनोति नि० १० ३१]

आततायिने समन्तात्तत विस्तृत शत्रुदलमेतु शीलमस्य तस्मै (शूर-जनाय) १६१८ [आततम्=आङ्+तनु विस्तारे (तना०) धातो क्त। तदुपपदे इण् गतौ (अदा०) धातोस्ताच्छील्ये णिनि प्रत्यय]

आतनच्मि समन्तात्सङ्कोचयामि दृढीकरोमि १४ [तञ्चू सकोचने (रुधा०) धातोराङ् पूर्वाल् लट्]

आतनन् विस्तारयेत् १६१२३ सर्वत सङ्कुचेत्, प्र०—अत्र 'उपसर्गाच्चाऽदैर्घ्ये' इत्याद्यपीयपाठात् तनुधातो स्वगणे लेट्-प्रयोग समर्थो भवति ३४२३ [आङ्+तनु विस्तारे (तना०) धातोर्लङ्। विकरणव्यत्ययेन शप्]

आतनि. विस्तारक (अग्नि =राजा) २११० [आङ्+तनु विस्तारे (तना०) धातो कर्त्तरि बाहुलकाद् इ प्रत्यय]

आतनुष्व विस्तृणीहि ४४४ **आतनोषि**=विस्तृणासि ४५२७ **आतन्वन्ति**=सर्वतो विस्तृणन्ति १८४६ अनुगम्य विस्तारयन्ति ११६८ समन्ताद्विस्तृण्वन्ति १३२२ [आङ्+तनु विस्तारे (तना०) धातोर्लोट्]

आतन्वन्तः विस्तारयन्त (आकेपिनास =किरणा) ४४५६. [आङ्+तनु विस्तारे (तना०) धातो शतृ प्रत्यय]

आतन्वानेभ्यः समन्तात् सुखविस्तारकेभ्य (सत्पुरुषेभ्य) १६२२. [आङ्+तनु विस्तारे (तना०) धातो शानच् प्रत्यय]

आतपति समन्तात्तपति ३१२० समन्तादन्त करणे प्रकाशयति ऋ० भू० १३३ [आङ्+तप सन्तापे (भ्वा०) धातोर्लेट्]

आतपः समन्तात् प्रतापयुक्त १५५१ समन्तात् प्रतापक (घर्म) ५७३५ [आङ्+तप सन्तापे (भ्वा०) धातोरच् प्रत्यय]

आतप्याय आतपेषु भवाय (सत्पुरुषाय) १६३८ [आतपप्राति० भवार्थे यत् प्रत्यय]

आतरन्ति प्राप्नुवन्ति ७३२१३ [आङ्+तॄ प्लवनसतरणयो (भ्वा०) धातोर्लट्]

आतस्थिवांसम् आस्थितम् (भुज्यु=भोगसमूहम्) १११६५ **आतस्थिवांसः**=समन्तात् स्थिता (द्यावापृथिवी) ५४७२ **आतस्थिवांसा**=समन्तात्तिष्ठन्तौ (द्यावापृथिव्यौ) २१२८ [आङ्+ष्ठा गतिनिवृत्तौ (भ्वा०) धातोर्लिट क्वसु। 'वस्वेकाचाद्घसाम्' अ० ७२६७. सूत्रेणेडागम]

आतस्थुः समन्तात् स्थिरा भवन्ति ऋ० भू० १५७ समन्तात् तिष्ठन्ति १७२६ आस्थितवन्त ११५ **आतस्थौ**=समन्तात् तिष्ठति ३७२ [आङ्+ष्ठा गतिनिवृत्तौ (भ्वा०) धातोर्लिट्]

आतान समन्तात् सुख तनित (विद्वज्जन) ६१२ [आङ्+तनु विस्तारे (तना०) धातोर्लिट्। वर्णव्यत्ययेन तकारलोपश्च। अथवा—आङ्+तनु धातो 'तनोतेर्ण उपसख्यानम्' इति ण प्रत्यय]

आतासु व्याप्तासु दिक्षु प्र०—आता इति दिङ्नामसु पठितम् निघ० १६, १११३१४ **आताः**=व्याप्ता दिश ३४३६

आतिथ्यम् अतिथिसत्कारम् ५२८२ अतिथे कर्म १७६३ यदतिथेर्भाव सत्काराख्य कर्म वा ५१. अतिथिवत् सत्कारम् ४४१० **आतिथ्ये**=अतिथीना सत्कारे ४३३७ [अतिथि अत सातत्यगमने (भ्वा०) धातो 'ऋतन्यञ्जि' उ० ४२ सूत्रेण इथिन्। नञ्तिथिपदयोर्वा बहुव्रीहि। ततो भावे ष्यञ्]

आतिथ्यरूपम् अतिथीना भाव कर्म वाऽऽतिथ्य

आदधिष्व=समन्ताद् धेहि ३ ३५ ६ **आदधीत**=समन्ताद् दधेत ५ ६६ १ **आदधुः**=समन्ताद् धरन्ति ७ ३२ २ समन्ताद् धरन्तु १ ५८ ६ **आदधे**=समन्तात् स्थापयामि, भा०—प्रयत्नेनोपनियोजयामि ३ ५ समन्ताद् दधेत ३ २७ ६ अभितो धरामि ५ ६ समन्ताद् दधाति ३ २३ १ आदधीय १ १३६ १ अभित स्वीकरोमि ५ ६ [आङ्+दध धारणे (भ्वा०) धातोर्लट्। व्यत्ययेनैकवचनम्। अन्यत्र लिटि लुङि लोटि च रूपाणि]

आदधर्ष तिरस्कुर्यात् ६ ७ ५ आधृष्णोति ५ ८५ ६ आदधर्षत्=प्रगल्भो भवेत् २ ४१ ८ आदधर्षीत् समन्ताद् धृष्णुयात् २० ८२ **आदधर्षति**=समन्ताद् धर्षितुमिच्छति १ १५५ ५ तिरस्करोति ६ २८ ३ धर्षयितु शक्नोति, प्र०—अत्र लेटि व्यत्ययेन श्लु ३५ १८ [आङ्+ञिधृषा प्रागल्भ्ये (स्वा०) धातोर्लेट्। व्यत्ययेन श्लु]

आदधर्षीत् समन्ताद् धर्षेत्, प्र०—अत्र 'वाच्छन्दसि' इति द्विर्वचनम् १३ ११ आधृष्णुयात् ४ ४ ३ [आङ्+ञिधृषा प्रागल्भ्ये (स्वा०) धातोर्लुङ्। छान्दसत्वाद् द्विर्वचनम्]

आदधानाः समन्ताद् धरन्त (विद्वज्जना) १ १६५ १२ [आङ्+दध धारणे (भ्वा०) धातो शानच्]

आदध्मसि समन्ताद् धराम ११ ७३ [आङ्+डुधाञ् धारणपोषणयो (जु०) धातोर्लटि उत्तमबहुवचने मस इदन्तत्व छन्दसि]

आदने अत्तव्ये घासे ६ ५६ ३ [अद भक्षणे (अदा०) धातोर्णिजन्ताल् ल्युट्]

आदभत् सर्वतो हिंस्यात् ७ ५६ १५ **आदभुः**=समन्ताद् हिंसन्ति ६ ४६ १० समन्ताद्धिंसन्तु ३ १६ २ [दभ्नोति वधकर्मा निघ० २ १६ ततो लङ्। व्यत्ययेन शप्]

आदम् आददामि १ १२६ २ [आङ्पूर्वाद् डुदाञ् दाने (जु०) धातोर्लुङ्। सिचो लुक्, आकारस्य च ह्रस्वश्छान्दसम्]

आदम् अत्तु योग्यम् (इषम्=अन्नम्) १२ १०५ [अद भक्षणे (अदा०) धातोर्घञ्]

आदर्त्ता समन्तात् शत्रूणा विदारक (इन्द्र =राजा) ४ २० ६ [आङ्+दृ विदारणे (क्र्या०) धातोस्तृच् कर्त्तरि]

आदर्द्द तम् समन्ताद् भृश विदारयतम् ४ २८ ५ [आङ्+दृ विदारणे (क्र्या०) धातोर्यङ्लुकि लोट्]

आदर्षि सर्वतो द्रियस्वाऽऽदर कुरु, प्र०—अत्र 'दृङ आदरे' इत्यस्माल्लोटि मध्यमैकवचने 'वाच्छन्दसि' इति रिप पित्वाद् गुण १.११० ६ विदीर्ण करोषि ४ १६ ८ समन्ताद् विदृणासि ५ ३६ ३. [आङ्+दृङ् आदरे (तुदा०) धातोर्लोट्। अथवा दृ विदारणे (क्र्या०) धातोर्लट्। 'बहुल छन्दसी' ति विकरणस्य लुक्]

आदशस्ये आदद्या ७ ३७.५ [आङ्+दाशति दानकर्मा (निघं० ३ २०) धातोर्लृटि रूपम्। धातोश्च ह्रस्वश्छान्दस]

आऽदः विदृणीहि, प्र०—अत्र विकरणस्याऽलुक् लङ् प्रयोग १ १२१ १० [आङ्+दृ विदारणे (क्र्या०) धातोर्लङ्]

आदः अत्ता प्र०—अत्र 'कृतो बहुलम्०' इति कर्त्तरि घञ् 'बहुल छन्दसि' इति घस्लादेशो न १ १२१ ६ [अद भक्षणे (अदा०) धातोर्घञ्]

आदात् समन्ताद् ददाति ४ १६ **आदाति**=समन्ताद् ददाति ७ ४२ ४ **आदाम**=समन्ताद् दद्याम ५.३०.१५ [आङ्+डुदाञ् दाने (जु०) धातोर्लङ्। 'गातिस्थाघु०' इति सिचो लुक्]

आदाय गृहीत्वा ४ २६ ७ [आङ्+डुदाञ् दाने (जु०) धातो क्त्वा। समासे ल्यप्]

आदारः समन्ताच्छत्रूणा दारणकर्त्ता गुण १ १६ ५ [आङ्+दृ विदारणे (क्र्या०) धातोर्घञ् भावे]

आदित् तदनन्तरम् ऋ० भू० १३६ [गायत्रीयꣳ सोममाहरत् तस्य योऽशु परापतत् त आदारा अभवन् तै० १ ४ ७ ५-६ यत्र वै यज्ञस्य शिरोऽच्छिद्यत तस्य यो रसो व्यप्रुष्यत्तत आदारा समभवन् श० ४ ५ १० ४ आदारा यत्र वाऽएन (विष्णु=यज्ञम्) इन्द्र ओजसा पर्यगृह्णात्तदस्य परिगृहीतस्य रसो व्यक्षरत्स पूयन्निवाशेत सोऽब्रवीदादीर्येव वत मऽएप रसोऽस्तोपीदिति तस्मादादारा श० १४ १ २ १२]

आदित्य[1] अविनाशिस्वरूप विद्वन् (गृहपते) ८ ५ विद्यया सूर्य इव प्रकाशमान (गृहपते) ८ ३ अविनाशिस्वरूप सूर्य इव सत्यन्यायप्रकाशक, भा०—सत्याचरणे वर्त्तमान (वरुण=शत्रूणा बन्धक राजन्) १२ १२ **आदित्यम्**=सूर्यम् १३ ४१ सूर्यमिव वर्त्तमानम् (राजान=नरेशम्) ४ १ २ **आदित्यः**=सूर्यवद्विद्यया प्रकाशित (अर्वा=वह्निरिव वर्त्तमानो जन) २६ १४. प्रलये सर्वस्याऽऽदातृत्वात् (ईश्वर) ३२ १ विनाशरहित सूर्यवत्प्रकाशक (पन्था=मार्ग) १ १०५ १६ अदित्यावन्तरिक्षे भव (विद्युदग्नि) १ १६३ ३ जिसका कभी

ज्यायानाकाशाज् ज्यायानग्यै पृथिव्यै ज्यायान्त्सर्वेभ्यो भूतेभ्य स प्राणस्यात्मैष म ऽआत्मैतमित आत्मान प्रेत्याभि सम्भविष्यामीति यस्य स्यादद्धा न विचिकित्सास्तीति श० १०.६ ३ २ अथ यो हैवैतमग्नि सावित्र वेद। स एवास्माल् लोकात्प्रेत्य। आत्मान वेद। अयमहमस्मीति तै० ३.१० ११.१ आत्मनो वा ऽअरे दर्शनेन श्रवणेन मत्या विज्ञानेनेद सर्व विदितम् श० १४ ५ ४ ५ यश्चायमध्यात्म ꣳ शारीरस्तेजोमयोऽमृतमया पुरुषोऽयमेव स यो ऽयमात्मेदममृतमिद ब्रह्मेदꣳ सर्वम् श० १४ ५ ५ १ आत्मा ह्यय प्रजापति श० ४ ६ १ १, ११ ५ ९ १ आत्मा वै तनू श० ७ ३ १ २३, ७ ५ २ ३२ आत्मा (शरीरम्) वे पू श० ७ ५ १ २१ अन्तरिक्ष यच्छान्तरिक्ष दꣳहान्तरिक्ष मा हिꣳसी (यजु० १४ १२) इत्यात्मान यच्छात्मान दꣳहात्मान मा हिंसीत्येतत् (अन्तरिक्षम् आत्मा) श० ८ ३ १ ९ आत्मा वै वृषाकपि ऐ० ६ २९ गो० उ० ६ ८ (होत्रा) यदि वृषाकपिम् (ऋ० १० ८६ १ २३) आत्मानम् अस्य अन्तरियात ऐ० ५ १५ आत्मा वै वेन (ऋ० १० १२३ १) कौ० ८ ५ आत्मा वै समस्त सहस्रवास्तोकवान् पुष्टिमान् ऐ० २ ४० आत्मा सूक्तम् कौ० १४ ४, १५ ३, १६ ४, २३ ८ आत्मा वै स्तोत्रम् श० ५ २ २.२० आत्मैव स्तोत्रिय जै० उ० ३ ४ ३ आत्मा वै स्तोत्रिय कौ० १५ ४ २२ ८ ऐ० ३ २३ २४, ६ २६ गो० उ० ३ २२ आत्मा वै स्तोत्रियानुरूपौ कौ० ३० ८ आत्मा महदुक्थम् श० १० १ २ ५ आत्मा उपासुसवन ऐ० २ २१ आत्मा लोकम्पृणा (इष्टका) श० ८ ७ २ ८ आत्मा वै बृहती ऐ० ६ २८ गो० उ० ६ ८ आत्मा त्रिष्टुप् श० ६ २ १ २४, ६ ६ २ ७ आत्मा वै होता कौ० २९ ८ ऐ० ६ ८ गो० उ० ५ १४ आत्मा वै यज्ञस्य होता कौ० ९ ६ आत्मा होतृचमस ऐ० २ ३० आत्मा वै ब्राह्मणाच्छसी कौ० २८ ९]

आत्मन्नेव आत्मा अर्थात् परमेश्वर ही मे तथा अपने आत्मा के तुल्य स० वि० २१४, ४० ६ [आत्मन्-एव पदद्वयम्]

आत्मन्वतीभि. प्रशस्ता आत्मन्वन्तो विद्यावन्त क्रियाकुशला पुरुषा विद्यन्ते यासु ताभि (नौभि) १ ११६ ३ स्वय स्थिताभि स्वात्मीयस्थिताभिर्वा (नौभि) ऋ० भू० १९० [आत्मन्प्राति० अतिशायनेऽर्थे मतुप्। ततो ङीप्। 'अयस्मयादीनि च्छन्दसि' सूत्रेण भत्वान्नकारलोपो न भवति]

आत्मन्वन्तम् स्वकीयजनयुक्तम् (प्लव=नौकादिकम्) १ १८२ ५ [आत्मन्+मतुप्]

आत्मसनि आत्मान सनति सम्भजति येन तत् (अपत्यम्) १९ ४८ [आत्मन्युपपदे षण सभक्तौ (भ्वा०) धातो 'खनिकषि०' उ० ४ १४०. सूत्रेण इ प्रत्यय]

आत्महन: य आत्मान घ्नन्ति तद्विरुद्धमाचरन्ति ते (जना) ४० ३ [आत्मन्युपपदे हन हिंसागत्यो (अदा०) धातो क्विप्]

आत्मेव यथाऽऽत्मा मनश्च शीघ्र गच्छति ऋ० भू० १९६ आत्मन शीघ्र गमनवत् १ ३४ ७ आत्मा इव १ ७३ २ [आत्मन् इव पदयो समास]

आथर्वण: अथर्वणोऽहिंसकस्याऽपत्यम् १ ११६ १२ **आथर्वणाय**=छिन्नसशयस्य पुत्राय १ ११७ २२ [अथर्वन् प्राति० अपत्यार्थेऽण्प्रत्यय। अथर्वाणोऽथर्ववन्त। थर्वतिश्चरतिकर्मा तत्प्रतिषेध नि० ११ १९ चरतिश्च चर सशये (चुरा०) भेषज वा आथर्वणानीति ता० १२ ९.१० भेषज वै देवानामाथर्वणो (अथर्वणा ऋषिणा……… मन्त्रा) भैषज्यायै वारिष्ट्यै ता० १६ १० १०]

आदत् आदद्यात् ५ ३२ ८ आद्यात् १ १२७ ६ आदत्ते १ १२ ४ **आदत्त**=आददाति ५ २९ २ समन्ताद् गृह्णीयात् १ १४५ ३ [आङ्+डुदाञ् दाने (जु०) धातोर्लुङ्। आकारस्य च ह्रस्वश्छान्दस]

आदर्दर्षि समन्ताद् भृश विदृणासि २ १२ १५ [आङ्+दृ हिंसायाम् (स्वा०) धातोर्यङ्लुकि लटि रूपम्]

आददान: समन्ताद् गृह्णन् ४ १९ ९ [आङ्+डुदाञ् दाने (जु०) धातो शानच्]

आददि: आदाता (ब्रह्मणस्पति =राज्यधनस्य पालको राजपुरुष) २ २४ १३ [आङ्+डुदाञ् दाने (जु०) धातो 'आदृगमहनजन किकिनौ लिट् च' अ० ३ २ १७१ सूत्रेण कि प्रत्ययो लिड्वच्च]

आददीमहि समन्ताद् गृह्णीम, प्र०—अत्र लडर्थे लिङ् १ ८ ३ **आददे**=सर्वतो गृह्णाति, प्र०—अत्रा ऽऽत्मनेपदे तलोप १ १६१ १२ समन्ताद् गृह्णामि ६ ३० समन्तात् स्वीकरोमि १ २४ आगृह्णीयात् ४ १५ ८ सर्वतो गृह्णीयाम् ३८ १ आदद्याम् ४ ३४ ४ आददामि ५ ७ १० [आङ्+डुदाञ् दाने (जु०) धातोर्लिङ्]

आददृशे समन्ताद् दृश्यते ६ ४८ ६ [आङ्+दृशिर् प्रेक्षणे (भ्वा०) धातो कर्मणि लिट्]

आदधते समन्ताद् धरन्ति ६ ४८ १७ **आदधिरे**= समन्ताद् धरन्ति १ ५९ ३ समन्ताद् दधति १ ८३ ४.

श० ३ २ ३ ६ असौ वा आदित्य एकाकी चरति तै० ३ ९ ५ ४ आदित्यस्त्वेव सर्वऽऋतव । यदैवोदेत्यथ वसन्तो-यदा सगवोऽथ ग्रीष्मो यदा मध्यन्दिनोऽथ वर्षा यदा-पराह्णोऽथ शरद् यदैवास्तमेत्यथ हेमन्त श० २ २ ३ ९ आदित्य त्रिर्ह वा एष (मघवा=इन्द्र=आदित्य) एतस्या मुहूर्त्तस्येमाम्पृथिवी समन्त पर्येति जै० उ० १ ४४ ९ एष ह वा अह्ना विचेता योऽसौ (सूर्य) तपति गो० उ० ६ १४ एष (आदित्य) ह वा अह्ना विचेतयिता ऐ० ६ ३५ असौ वाऽ आदित्य पाप्मनोऽपहन्ता श० १३ ८ १ ११ स वा एष (आदित्य) न कदाचनास्तमेति नोदेति। तद् यदेन पश्चादस्तमयतीति मन्यन्ते अह्न एव तदन्त गत्वाथात्मान विपर्य्यस्यतेऽहरेवाधस्तान् कुरुते रात्री परस्तात् गो० उ० ४ १० ऐ० ३ ४४ तस्य (अर्कस्य=आदित्यस्य) एतदन्न तदर्क्यमेष चन्द्रमास्तदर्क्य यजुष्ट श० १० ४ १ २२ प्राङ् चार्वाङ् चादित्यस्तपति ता० १२ १० ६ यस्माद् गायत्रोत्तम-स्तृतीय (त्रिरात्र) तस्मादर्वाङ् आदित्यस्तपति ता० १० ५ २ सहस्र हैत आदित्यस्य रश्मय जै० उ० १ ४४ ५ स एष (आदित्य) एकशतविधस्तस्य रश्मय शत विधा एष एवैकशततमो य एष तपति श० १० २ ४ ३ षष्टिश्च ह वै त्रीणि च शतान्यादित्यस्य रश्मय श० १० ५ ४ ४ षष्टिश्च ह वै त्रीणि च शतान्यादित्य नाड्या समन्त परियन्ति श० १० ५ ४ १४ शतयोजने ह वा एष (आदित्य) इतस्तपति कौ० ८ ३ त (सावित्रमग्नि) स (भरद्वाज) विदित्वा। अमृतो भूत्वा। स्वर्ग लोकमियाय। आदित्यस्य सायुज्यम् तै० ३ १० ११ ५ असौ वा ऽआदित्यो विवस्वानेष ह्यहोरात्रे विवस्ते तमेष (मृत्यु) वस्ते सर्वतो ह्येनेन परिवृत श० १० ५ २ ४ विवस्वान् आदित्यैष ते सोमपीथ श० ४ ३ ५ १८ य (मार्तण्ड) उ ह तद् विचक्रु (देवा आदित्या) स विवस्वानादित्यस्तस्येमा प्रजा श० ३ १ ३ ४ असौ वाऽ आदित्य सूर्य श० ९ ४ २ २३ असावादित्यो देव सविता श० ६ ३ १ १८ आदित्य एष सविता गो० पू० १ ३३ जै० उ० ४ २७ ११ धातासौ स आदित्य श० ९ ५ १ ३७ स एष (आदित्य) सप्तरश्मि-र्वृषभस्तुविष्मान् जै० उ० १ २८ २ सप्त ह्येत आदित्यस्य रश्मय जै० उ० १ २९ ८ 'युक्ता ह्यस्य (इन्द्रस्य) हरयश्शता दश' (ऋ० ६ ४७ १८) इति सहस्र हैत आदित्यस्य रश्मय। तेऽस्य युक्तास्तैरिद सर्व हरति। तद्यदेतैरिद सर्व हरति। तस्माद्धरय (रश्मय) जै० उ० १ ४४ ५ स य स विष्णुर्यज्ञ स। स य स यज्ञोऽसौ स आदित्य (विष्णु=आदित्य) श० १४ १ १ ६ एष वै वृषा हरि (यजु० ३८ २२) य एष (आदित्य) तपति श० १४ ३ १ २६ असौ वै वैश्वानरो योऽसौ (आदित्य) तपति कौ० ४ ३ १९ २ स य स वैश्वानर। असौ स आदित्य श० ९ ३ १ २५ चक्षुस्त्वा ऽएतद् वैश्वानरस्य (यदादित्य) श० १० ६ १ ८ एष वै सुतंतेजा वैश्वानर (यदादित्य) श० १० ६ १ ८ एष (आदित्य) ह्येवाऽऽ-राम् प्रजानामृषभ जै० उ० १ २९.८ आदित्यो वाजी तै० १ ३ ६ ४. असौ वाऽआदित्यो अश्वोऽरुष श० १३ २ ६ १ असौ वा आदित्यो अश्व तै० ३.९ ४ १ आदित्यो वै वृषाकपि गो० उ० ६ १२ असावादित्यो वेन श० ७ ४ १ १४ स य स कूर्मोऽसौ स आदित्य श० ७ ५ १ ६ असौ वै षोडशी योऽसौ (आदित्य) तपति कौ० १७ १ एष (आदित्य) दीक्षित गो० पू० २ १. असौ वाऽ आदित्यो दिव्यꣳ रोचनम् श० ६ २ १ २६ असौ वाऽ आदित्यो दिव्यो गन्धर्व श० ६ ३ १ १९ असौ वाऽ आदित्यो विश्वव्यचा (यजु० १३ ५६) यदा ह्येवैष उदेत्यथेदꣳ सर्व व्यचो भवति श० ८ १ २ १ असौ वाऽ आदित्यो व्यचश्छन्द श० ८ ५ २ ३ असौ वा आदित्यो भा इति जै० उ० १ ४ १ असौ वा आदित्यो हꣳस शुचिषत् श० ६ ७ ३ ११ एष (आदित्य) वै हस शुचिषद् ऐ० ४ २० असौ वाऽ आदित्यस्तप श० ८ ७ १ ५ (आदित्यस्य) पुरुषो यजूꣳषि श० १० ५ १ ५ अथ य एष एतस्मिन् (आदित्य०) मण्डले पुरुष सोऽग्निस्तानि यजूꣳषि स यजुषा लोक श० १० ५ २ १ असौ वाऽ आदित्य एषो ऽग्नि श० ६ ४ १ १ आदित्यो वाऽ अस्य (अग्ने) दिवि वर्च श० ७ १ १ २३ अथ वाऽ अग्निर्ऋतमसावादित्य सत्य यदि वासावृतमयꣳ (अग्नि) सत्यमुभयम्वेतदयमग्नि श० ६ ४ ४ १० एष (आदित्य) वै सत्यम् ऐ० ४ २० सत्यमेष य एष (आदित्य) तपति श० १४ १ २ २२ असावादित्य सत्यम् तै० २ १ ११ १ तद् यत्तत्सत्यम्। असौ स आदित्यो य एष एतस्मिन्मण्डले पुरुष श० १४ ८ ६ २३ सत्य हैतद् यद्रुक्म। ... तद् यत्तत्सत्यम्। असौ स आदित्य श० ६ ७ १ १-२ तस्य (अश्वस्य श्वेतस्य) रुक्म पुरस्ताद् भवति। तदेनस्य रूप क्रियते य एष (आदित्य) तपति श० ३ ५ १ २० असौ वाऽ आदित्य एष रुक्म एष हीमा सर्वा प्रजा अतिरोचते श० ७ ४ १ १० आदित्यो वै भर्ग जै० उ० ४ २८ २ आदित्य एव चरण यदा ह्येवैष उदेत्यथेदꣳ सर्व चरति श० १० ३ ५ ३ आदित्य असौ वाऽ आदित्यो हृदयम् श० ९ १ २ ४० असौ वाऽ आदित्यो द्रप्स श० ७ ४ १ १० असौ वाऽ

नाश न हो और स्वप्रकाशस्वरूप हो वह (ईश्वर) आर्याभि० २४.३२ १ विनाशरहितो परमेश्वरो, जीव, कारणरूपेण प्राणो वा १ २५ १२ **आदित्या**=सूर्य-प्राणौ १ १३६ ३ अविनाशिनौ (सुहृदौ) ५ ६७ १ अखण्डितौ (सूर्याचन्द्रमसौ) २ ४१ ६ **आदित्यान्**=मासानिव वर्त्तमानान् पूर्णविद्यान् (आप्तान् जनान्) ४ २५ ३ सर्वान् मासान् ७ ४४ १ द्वादशमासान् १ १४ ३ कृताष्टचत्वारिंशद्ब्रह्मचर्येण पूर्णविदुष (राज्ञ =नृपान्) ६ ५१ १४ मुख्यान् विदुष २५ १ समाचरिताष्टचत्वारिंशत्सवत्सरब्रह्मचर्याऽखण्डितव्रतान् महाविदुप (जनान्) १ ४५ १ **आदित्यानाम्**=अखण्डितन्यायाधीशानाम् २५ ६ पूर्णब्रह्मचर्यविद्यावताम् सज्जनानाम् २ २७ १३ सूर्यादीना मासाना वा ३ ५६ ४ कालाऽवयवानाम् २४ ३६ मासानामुत्तमाना विदुपा वा १४ २५ सूर्यसम्बन्धिना मासानाम् २४ ६ पूर्णविद्याना विदुपाम् (जनानाम्) ७ ५१ १ **आदित्याः**=द्वादशा मासा, प्र०—कतम आदित्या इति ? द्वादशा मासा सवत्सरस्य एत आदित्या, एते हीद सर्वमाददाना यन्ति तस्मादादित्या इति, शत० १४ ६ ७ ६, २ ५ समाचरितेनाऽष्टचत्वारिंशद्वर्पपरिमितब्रह्मचर्येण गृहीतसमस्तविद्या, अन्व०—पूर्णविद्यया शरीरात्माखिलवला विद्वास (राजान्य) ६ ३४ चैत्रादयो द्वादशा मासा, प्रथम-मध्यमोत्तमविद्वासो वा १४ ३० द्वादशमासा वसुरुद्रादिसञ्ज्ञका विद्वासश्च १४ २० कालाऽवयवा ६ ६२ ८ विद्यायुक्ता प्राणाऽवयवा १५ १२ पूर्णकृतब्रह्मचर्यविद्या (महाविद्वासो जना) ६ ५१ ५. अन्तरिक्षस्य, प्र०—अदितिरित्यन्तरिक्षमित्यस्मादयमर्थो गृह्यते ४ २२ सूर्या २ २७ ८ सूर्यवद्विद्याप्रकाशा २ २७ १६ उत्तमा विद्वासोऽव्यापका ११ ६० उत्तमा विपश्चित ११ ६५ पूर्णविद्यावलप्राप्त्या विपश्चित ११ ५८ कारणरूपेण नित्या सूर्यादय पदार्था ११ ०६ २ द्वादशमासा, किरणास्त्रसरेणवो वा ऋ० भू० १४३ किरणा ऋ० भू० १४७, अथर्व० १४ १ २ वरुणादयो विद्वास (सज्जना) १ ४१ ५ **आदित्येभ्यः**=तेजस्विभ्य (भा०—आचार्येभ्य) ३४ ५४ सवत्सरेभ्य ८ ३ **आदित्यैः**=उत्तमकलैश्च विद्वद्भि, भा०—कालाऽवयवमासै २८ ४ पूर्णविद्यावद्भि (सज्जनै) २६ ८ पूर्णविद्यैर्मनुष्यैर्द्वादशभिर्मासैर्वा ११ ०७ २ सवत्सरस्य मासै कृताऽष्टचत्वारिंशद्वर्पब्रह्मचर्यै सह वा ५ ११ [दो अवखण्डने (दिवा०) धातोर्नञ्पूर्वात् क्तिन् प्रत्ययेऽदिति । 'द्यतिस्यति०' इति सूत्रेणेत्वम् । तत 'दित्यदित्यादित्य०' अ० ४ १ ८५ सूत्रेण ण्य प्रत्यय । आदित्य=आदत्ते रसानादत्ते, भाम ज्योतिपामादीप्तो भासेति वादिते पुत्र इति वा नि० २ १३ यदस्य दिवि तृतीय तदसावादित्य इति हि ब्राह्मणम् नि० ७ २८ आदित्य यदसुराणा लोकानादत्त । तस्मादादित्यो नाम तै० ३ ९ २१ २ तेपा (नक्षत्राणा) एष (आदित्य) उद्यन्नेव वीर्य क्षत्रमादत्ते तस्मादादित्यो नाम श० २ १ २ १८ तस्य यद् (प्रजापते) रेतस प्रथममुददीप्यत तदसावादित्योऽभवत् ऐ० ३ ३४ तस्य (प्रजापते) शोचन आदित्यो मूर्धनोऽसृज्यत ता० ६ ५ १ तत् (छिन्न विष्णोश्शिर) पतित्वासावादित्योऽभवत् श० १४ १ १ १० आदित्यो वा अर्क श० १० ६ २ ६ पर्जन्य आदित्य गो० पू० ४ ३ ज्योति शुक्रमसौ (आदित्य) ऐ० ७ १२ (हे आदित्य त्व) व्युपि सविता भवस्युदेष्यन् विष्णुरुद्यन्पुरुप उदितो बृहस्पतिरभिप्रयन्मघवेन्द्रो वैकुण्ठो माध्यन्दिने भगोऽपराह्ण उग्रो देवो लोहितायन्नस्तमिते यमो भवसि । अग्नसु सोमो राजा निशायाम् पितृराजस्स्वप्ने मनुष्यान् प्रविशसि पयसा पशून् । विरात्रे भवो भवस्यपररात्रे ऽङ्गिरा अग्निहोत्रवेलायाम्भृगु जै० उ० ४ ५ १-३. असौ वाऽ आदित्योऽस्मा पृश्नि श० ९ २ ३ १४ अप्रतिधृष्या (प्रजापतेस्तनूविशेप) तदादित्य ऐ० ५ २५ एप (आदित्य) वा अब्जा अद्भ्यो वा एप प्रातरुदेत्यप साय प्रविशति ऐ० ४ २० असौ वा आदित्य एपोऽ अश्व श० ६ ३ १ २९ आदित्यस्त्रिपात् तस्येमे लोका पादा गो० पू० २ २८ (९) अथ यत्तच्चक्षुरासीत् स आदित्योऽभवत् जै० उ० २ २ ३ चक्षुरादित्य श० ३ २ २ १३ आदित्यो वा उद्गाताऽधिदेव चक्षुरध्यात्मम् गो० पू० ४ ३ किं नु ते मयि (आदित्य) इति । ओजो मे वलस्मे चक्षुर्मे जै० उ० ३ २७ ८ प्राण आदित्य ता० १६ १३ २ अथैप एव यश य एष (आदित्य) तपति श० १४ १ १ ३२ एप (आदित्य) वै यश श० ६ १ २ ३ आदित्योऽसि दिवि श्रित । चन्द्रमस प्रतिष्ठा तै० ३ ११ १ ११ एप (आदित्य) स्वर्गो लोक तै० ३ ८ १० ३ (आदित्यलोक प्रशमति) तद्दैव्य क्षत्रम् । सा श्री । तद् ब्रध्नस्य विष्टपम् । तत्स्वाराज्यमुच्यते तै० ३ ८ १० ३ देवलोको वा आदित्य कौ० ५ ७ गो० उ० १ २५ आदित्य एषा भूतानामधिपति ऐ० ७ २० असावादित्य शिर प्रजानाम् तै० १ २ ३ ३ सर्वतोमुखो वा ऽअसावादित्य एप वाऽ इदꣳ सर्व निर्द्धयति यदिद किञ्च पुष्यति तेनैप सर्वतो मुखस्तेनान्नाद श० २ ६ ३ १४ आदित्यो वा उद्गाता गो० पू० २ २४ आदित्य उद्गीय जै० उ० १ ३३ ५ आदित्य उदयनीय.

३ १.३ ३ तदभ्यनूक्ता अष्टौ पुत्रासो अदितेर्ये जातास्तन्व परिदेवान् उपप्रैतु सप्तभि परा मार्तण्डमास्यदिति ता० २४ १२ ५-६ एताभिर्वा आदित्या द्वन्द्वमार्ध्नुवन् मित्रश्च वरुणश्च धाता चार्यमा चाꣳशश्च भगश्चेन्द्रश्च विवस्वांश्च ता० २४ १२ ४ कतमऽआदित्या इति ? द्वादशमासा सवत्सरस्यैतऽआदित्या , एते हीदꣳ सर्वमाददाना यन्ति ते यदिदꣳ सर्वमाददाना यन्ति तस्मादादित्या इति श० ११ ६ ३ ८ सप्तादित्या ता० २३ १५ ३ भूमोऽएष देवाना यदादित्या श० ६ ६ १ ८ प्राणा वा आदित्या । प्राणा हीद सर्वमाददते जै० उ० ४ २.९ घृतभाजना ह्यादित्या श० ६ ६ १ ११ आदित्यास्त्वा जागतेन छन्दसा समृजन्तु ता० १ २ ७ वर्षाभिर्ऋतुनादित्या स्तोमे सप्तदशे स्तुत वेरूपेण विशौजसा तै० २ ६ १९ १-२ सर्वे वा ऽआदित्या श० ५ ५.२ १० आदित्या वै प्रजा तै० १ ८ ८ १ एते खलु वादित्या यद् ब्राह्मणा तै० १ १ ९ ८ पशव आदित्या ता० २३ १५ ४ सर्प्या वा आदित्या ता० २५ १५ ४ आदित्या अदिति पुत्रकामा साध्येभ्यो देवेभ्यो ब्रह्मौदनमपचत् तस्या उच्छेषणमददु । तत्प्राश्नात् सा रेतोऽधत्त । तस्यै धाता चार्यमा चाजायेताम् । ···मित्रश्च वरुणश्चाजायेताम् । अशश्च भगश्चाजायेताम् ।··· इन्द्रश्च विवस्वाश्चाजायेताम् तै० १ १ ९ १-३ अदितिर्वै प्रजाकामौदनमपचत्तत उच्छिष्टमश्नात् सा गर्भमधत्त तत आदित्या अजायन्त । गो० पू० २ १५ (प्रजापते) रेतस उत्पन्न) यत्तृतीयमदीदेदिव त आदित्या अभवन् ऐ० ३ ३४ द्वयो ह वा इदमग्रे प्रजा आनु । आदित्याश्चैवाङ्गिरसश्च श० ३ ५ १ १३ विश्वकर्मा त्वादित्यैरुत्तरत पातु श० ३ ५ २ ७ वरुण आदित्यै (उदक्रामत्) ऐ० १ २४. वरुण आदित्यै (व्यद्रवत्) श० ३ ४ २ १ आदित्यास्त्वा पश्चादभिपिञ्चन्तु जागतेन छन्दसा तै० २ ८७ १५ ५ अथैन (इन्द्र) प्रतीच्या दिश्यादित्या देवा ···अभ्यपिञ्चन्··· स्वाराज्याय ऐ० ८ १४ गावो वा आदित्या ऐ० ४ १७ आदित्या. एव यश गो० पू० ५ १५ आदित्यानीमानि यजूꣳपीत्याहु श० ४४ ५ १९ आदित्यानीमानि शुक्लानि यजूꣳषि वाजसनेयेन याज्ञवल्क्येनाख्यायन्ते श० १४ ९ ४ ३३ आदित्याना तृतीय सवनम् कौ० १६ १ ३० १ श० ४ ३ ५ १ आदित्य हि तृतीयसवनम् ता० ९ ७ ७ अथेम विष्णु यज्ञ त्रेधा व्यभजन्ते । वसव प्रात सवनꣳ रुद्रा माध्यन्दिन सवनमादित्यास्तृतीयसवनम् श० १४ १ १ १५ जगत्यादित्याना पत्नी गो० उ० २ ९ आदित्याना वा एतद्रूप यल्लाजा तै० ३ ८ १४ ४ वसवो वै रुद्रा आदित्या सꣳसवभागा तै० ३ ३ ९ ८ तान् हादित्यानङ्गिरसो याजयाञ्चक्रु गो० उ० ६ १४. त एतेन सद्य क्रियाङ्गिरस आदित्यानयाजयन् श० ३ ५ १ १७ आदित्याश्चाङ्गिरसश्चैतन् सत्रꣳ समदधनादित्यानामेक-विनतिरङ्गिरसा द्वादशाह ता० २४ २ २ आदित्या ह उत उत्तरा सुवर्ग लोकमायन् ते वा उतो यन्त प्रतिनुदन्ते तै० १.१ ९ ८ । (आदित्या) स्वर्ग लोकमायन्नहीयन्ताङ्गिरसा ता० १६ १२ १. ते ह्यादित्या पूर्वे स्वर्ग लोक जग्मु पश्चेवाङ्गिरस षष्ठ्या वा वर्षेषु ऐ० ४ १७ तत उ हादित्या स्वर्गेयु कौ० ३०.६ तऽआदित्या । तर्तुभि स्तोमैश्चतुर्भि. पृष्ठैर्लेपुनि नामभि स्वर्ग लोकमस्यप्लवन्त श० १२ २ २ १०. तस्य (स्वर्गस्य लोकस्य) आदित्या अधिपतय तै० ३ ८ १८.२]

आदित्येभिः सवत्सरस्य नाम ७ ४४ ४ [आदित्यो व्याख्यात । तस्य भिसि रूपम् 'बहुल छन्दसि' अ० ७ १ १० सूत्रे बहुलवचनाद् ऐसादेशो न भवति]

आदिदीहि समन्तात् प्रकाशय ३ ५३.४. [दीदयति ज्वलतिकर्मा निघ० १ १६ तत आङ् पूर्वाल्लोट्]

आदिदेशति समन्तात् सम्यगुपदिशति ६ ५६ १. सर्वतोऽतिसृजेदस्मात् समन्तादतिदेश्य पीडयेत् १ ४२ २ [आङ्+दिश अतिसर्जने (तुदा०) धातो रूपम्]

आदिनवदर्शम् य आदौ नवान् पश्यति तम्, भा०—ज्योतिर्विदम् (महाविद्वज्जनम्) ३० १८ [आदि-नवोपपदे दृशिर् प्रेक्षणे (भ्वा०) धातोर्णमुल्]

आदिवम् द्योतनात्मक सूर्य लोक को । आर्याभि० १ १३, ऋ० १.४.१४ १२]

आदिशम् दिशमभिव्याप्यैव ७ १७ **आदिशः**=आभिमुख्या दिश ६ १९ **आदिशाम्**=समन्ताद् दीयमानानाम् (जनानाम्) ६ ४ ५ **आदिशे**=आज्ञापालनाय ६ ४८ १४ [आङ्-दिशो समास दिक्=दिश अतिसर्जने (तुदा०) धातो क्विप्]

आदिशे अभिप्रशसे ६ ५६ १.

आदीदिहि समन्तात् प्रकाशय ५ २३ ४ [आङ्+दीदयति ज्वलतिकर्मा निघ० १ १६ धातोर्लोट्]

आदीधयन् प्रदीपयन्ति ७ ७ ६ [आङ्+दीधीङ् दीप्तिदेवनयो (अदा०) धातोर्लङ् । 'बहुल छन्दसी' ति शपो लुक् न । व्यत्ययेन च परस्मैपदम्]

आदुरे शत्रूणा विदारक (राजन्) ४ ३० २४ [आङ्+दृ विदारणे (क्र्या०) 'आदृगमहनजन ०' अ०

आदित्य महित. (यजु० १८ ३९) एप अहोरात्रे सदधाति श० ६ ४ १ ८ असो वाऽ आदित्य एप रथ श० ६ ४ १ १५ तस्य (आदित्यस्य) रश्मप्रोतश्चासमरथश्च (यजु० १५ १७) सेनानीग्रामण्याविति वार्षिकौ तावृतू श० ८ ६ १ १८ तद्यदेप (आदित्य.) सर्वैर्लोकैर्स्समस्तरमादेप (आदित्य) एव साम जैं० उ० १ १२ ५ (प्रजापति) स्वरित्येव सामवेदस्य रसमादत्त। सोऽसौ द्यौरभवत्। तस्य यो रस प्राणेदत् स आदित्योऽभवद् रसस्य रस जैं० उ० १ १ ५ साम्नामादित्यो दैवत तदेव ज्योतिर्जागतच्छन्दो द्यौ स्थानम् गो० पू० १ २९ यदनूदित (आदित्य) स हिङ्कार जैं० उ० १ १२ ४ असावादित्यस्तोमभागा श० ८ ५ ४ २ स य स यज्ञो ऽसौ स आदित्य श० १४ १ १ ६ एप वै सवत्सरो य एप (आदित्य) तपति श० १४ १ १ २७ स य स सवत्सरोऽसौ स आदित्य श० १० २ ४ ३ आदित्य एव प्रायणीयो भवति श० ३ २ ३ ६ तदसौ वा आदित्य प्राण जैं० उ० ४ २२ ६ आदित्यो वै प्राण जैं० उ० ४ २२ ११ उद्यन्नु खलु वा आदित्य सर्वाणि भूतानि प्रणयति तस्मादेन प्राण इत्याचक्षते ऐ० ५ ३१ असौ वाऽ आदित्य कवि श० ६ ७ २ ४ आदित्यो वै घर्म श० ११ ६ २ २ असौ वै घर्मो योऽसौ (आदित्य) तपति कौ० २ १ आदित्यो निवित् जैं० उ० ३ ४ २ यन्महान्देव आदित्यस्तेन कौ० ६ ६ असौ वाऽ आदित्य शुक्र (यजु० १८ ५०) श० ६ ४ २ १ एप वै शुक्रो य एप (आदित्य) तपति श० ४ ३ १ २६ यद्वा ऽएप एव शुक्रो य एप (आदित्य) तपति तद्यदेप तपति तेनैप शुक्र श० ४ २ १ १ तत्र ह्यादित्य शुक्रश्चरति गो० पू० २ ६ असौ वा आदित्य शुक्र ता० १५ ५ ६ आदित्यो वाव पुरोहित ऐ० ८ २७ आदित्यो वै देवसस्फान गो० उ० ४ ६ असौ वा आदित्यो लोकम्पृणा (इष्टका) श० ८ ५ ४ ८ असौ वाऽ आदित्यो लोकम्पृणैप हीमाल्लोकान्पूरयति श० ८ ७ २ १ वायुर्वा एत (आदित्य) देवतानामानशे ता० ४ ६ ७. तदसावादित्य इमाल्लोकान्त्सूत्रे समावयते तद्यत्तत्सूत्र वायु स श० ८ ७ ३ १० सा या सा वागसौ स आदित्य श० १० ५ १ ४ आदित्य एव यश गो० पू० ५ १५ आदित्यो यश श० १२ ३ ४ ८ आदित्यो यूप तैं० २ १ ५ २ असौ वा अस्य (अग्निहोत्रस्य कर्त्तु) आदित्यो यूप ऐ० ५ २८ अथ यद्विपुवन्तमुपयन्ति। आदित्यमेव देवता यजन्ते श० १२ १ ३ १४ आदित्यो बृहत् ऐ० ५ ३० असौ वाऽ आदित्यो ब्रह्म श० ७ ४ १ १४ आदित्यो वै ब्रह्म जैं० उ० ३ ४ ६ असावादित्य सुब्रह्म प० १ १ आदित्य ह्येतेति चन्द्रमा ओमित्यादित्य जैं० उ० ३ ६ २ ओमित्यादित्य जैं० उ० ३ ३ १२ ओमित्यसौ यो ऽसौ (आदित्य) तपति ऐ० ५ ३२ यदेतत् (आदित्य) मण्डल तपति। तन्महदुक्थ ता ऋच स ऋचा लोक श० १० ५ २ १ (आदित्यस्य) मण्डलमेवार्च्च श० १० ५ १ ५ अग्निश्च ह वा आदित्यश्च रोहिणावेताभ्याꣳ हि देवताभ्या यजमाना स्वर्ग लोकꣳ रोहन्ति श० १४ २ १ २ छन्दोभिर्वै देवा आदित्यꣳ स्वर्ग लोकमहरन् ता० १२ १० ६ त्रैष्टुभो वा एप य एप (आदित्य) तपति कौ० २५ ४ त्रैष्टुब्जागतो वा आदित्य ता० ४ ६.२३ जगती छन्द आदित्यो देवता श्रेणी श० १० ३ २ ६ स (आदित्य) उद्यन्नेवामूम् (दिवम्) अविद्रवत्यस्त यन्निमाम् (पृथिवीम्) अविद्रवति श० १ ७.२.११]

आदित्यवते पूर्णविद्यायुक्तपाण्डित्यवते (इन्द्राय=सन्तानाय) ३८ ८ [आदित्य पूर्वपदे द्रष्टव्य। ततोऽतिशायनेऽर्थे मतुप्]

आदित्यवनिः या आदित्यान् मासान् वनति सम्भजति सा (स्वाहा=ज्योतिःशास्त्रसंस्कारयुक्ता वाक्) ५ १२ [आदित्योपपदे वन सम्भक्तौ (भ्वा०) धातोर् इ प्रत्यय]

आदित्यवर्णम् आदित्यस्य वर्ण स्वरूपमिव स्वरूप यस्य त स्वप्रकाशम्, भा०—स्वप्रकाशानन्दस्वरूपम् (पुरुषम्=ईश्वरम्) ३१ १८ स्वप्रकाशविज्ञानस्वरूपम् (पुरुष=परमेश्वरम्) ऋ० भू० १३१, ३१ १८ आदित्यादि का रचक और प्रकाशक परमात्मा, आर्याभि० २ ८, ३१ १८ [आदित्यवर्णपदयोर्बहुव्रीहि। उत्तरपदलोपश्च]

आदित्या याऽऽदित्यवदर्थविद्याप्रकाशिकाऽष्टचत्वारिंशत्सवत्सरपर्यन्ताऽनुष्ठितब्रह्मचर्य्ये स्वीकृता सा (वाग् विद्युद्वा) ४ २१ [आदित्यो व्याख्यात, ततस्स्त्रिया टाप्]

आदित्यासः अष्टचत्वारिंशद्वर्षपरिमितेन ब्रह्मचर्य्येण कृतविद्या मासा इव व्याप्ताऽखिलविद्या वा (विद्वज्जना) ५ ५१ १२ सूर्यवत्तेजस्विन, भा०—पूर्णविद्या राजकर्मकरा (जना) ३३ ६६ आदित्यवद्विद्यादिशुभगुणै प्रकाशमाना (गृहपतय) ८ ४ सूर्य इव पूर्णविद्या प्रकाशा (कवय=मेधाविजना) ३ ५४ १० द्वादशमासा इव विद्यार्थिन (जना) २ १ १३ पूर्णा विद्वास सवत्सरस्य मासा वा ७ ५१ २ [आदित्यो व्याख्यात। तस्य प्रथमाबहुवचने जसोऽसुगागमे च रूपम्। आदित्या=अष्टौ ह वै पुत्रा अदिते। यास्त्वेतद्देवा आदित्या इत्याचक्षते सप्त ह वै तेऽविकृतꣳ हाष्टम जनयाञ्चकार मार्तण्डम् श०

[आङ्+डुधाञ् धारणपोषणयो (जु०)+लुङ् । प्रथमा-बहुवचनम्]

आधूनोमि समन्तात् [कम्पयामि, प्र०—अत्रान्तर्गतो णिच् ८ ४८ [आङ्+धूञ् कम्पने (स्वा०) धातोर्लट् छान्दसत्वादुकारस्य दीर्घ]

आधृषः समन्ताद् धर्षणं कुर्वन्त (भ्रातृन् पितरश्च पितॄ श्च) २ १ ६ **आधृषे**=समन्ताद् धृष्णुवन्ति यस्मिन् व्यवहारे तस्मै १ ३९ ४ [आङ्+ञिधृषा प्रागल्भ्ये (स्वा०) धातो क्विप्]

आधृषे आधर्षितुम् ५ ८७ २ आधृषाय ५ ८ ५ [आङ्+ञिधृषा प्रागल्भ्ये (स्वा०) धातोस्तुमर्थे कसे प्रत्यय]

आधेहि समन्ताद् दधाति ४ १० सर्वथा उत्पन्न कर स० प्र० १४८, १० ८५ ५ [आङ्+डुधाञ् धारण-पोषणयो (जु०) धातोर्लोटि मध्यमैकवचनम् । 'घ्वसो-रेद्धाव०' इत्येत्वमभ्यासलोपश्च]

आध्यक्ष्याय अध्यक्षाणा भावाय ३० ११ [अध्यक्ष प्राति० भावे ष्यञ्]

आध्याः समन्ताद् ध्यायन्ति चिन्तयन्ति ये ते (सज्जना) १ १०५ ७ परस्य मनसि शोकादिजनका (जना) १ १०५ ८ आधि य समन्ताद् दधाति स्म् । २२ २० [आङ्+ध्यै चिन्तायाम् (भ्वा०) बाहुलकात् कर्त्तरि क्यप् । आध्य =कामा नि० ४ ६]

आध्रः य सर्वैस्समन्ताद् ध्रियते (परमात्मा) ७ ४१ २ अपुत्रस्य पुत्र ३४ ३५ सब ओर से धारणकर्त्ता (परमात्मा) स० वि० १५६, ७ ४१ २ समन्ताद् धृतेन (बलेन) ७ १८ १७ [आङ्+डुधाञ् धारणपोषणयो (जु०) धातोर्बाहुलकाद् रक् प्रत्यय । आध्र =आढ्यालु नि० १२ १४]

आध्वम् उपविशत, भा०—पुन पुन प्रयतध्वम् १७ ६५ [आस उपवेशने (अदा०) धातोर्लोट्]

आध्वर्यवम् य आत्मनोऽध्वरमिच्छति तम् (शिल्पि-जनम्) प्र०—अत्र 'वाच्छन्दसि' इत्यस्यपि गुणावादेशौ २८ १६ [अध्वर =अध्वर इति यज्ञनाम । ध्वरति हिंसा-कर्मा तत्प्रतिषेध नि० १ ८ अध्वर्यु =अध्वर युनक्ति, अध्वरस्य नेताध्वर कामयते इति वापि वाधीयाने युरुप-बन्ध नि० १ ८ अध्वरपदाद् इच्छायामर्थे क्यच् । 'क्याच्छन्दसि' इत्यु प्रत्यय]

आनक्तु कामयताम् ७ ४३ ३ [अञ्जू व्यक्तिम्रक्षण-कान्तिगतिषु (रुधा०) धातोराङ्पूर्वाल् लोट्]

आनजाना प्रसिद्धौ, प्रसिद्धिकारकौ (इन्द्राग्नी = वायुविद्युतौ) प्र०—अत्र अञ्जू धातोर्लिट व्यत्ययेन कानच् १ १०८ ४

आनजे व्यनक्ति ३३ २९ सर्व कामयते प्रकटयते विज्ञायते, प्र०—अत्राऽऽत्मनो कर्मणि लिट् १ १०२ १ अन्वेषणायेन १ १६१ ८, **आनञ्ज**=अन्वेषेन, कामयेत प्र०—अत्र लिडर्थे लिट् ८ ३० [अञ्जू व्यक्तिम्रक्षणकान्ति-गतिषु (रुधा०) धातोर्लिट् कर्मणि । क्वचित् व्यत्ययेनात्मने-पदम्]

आनञ्जे आनन्दयन्तु निवृत्तु, प्र०—अत्र व्यत्ययेना-त्मनेपदम् १ ८८ १ [अज गतिक्षेपणयो (भ्वा०) धातो-र्लिट् । नुडागमश्छान्दस.]

आनट् समन्ताद् व्याप्नोति, प्र०—अत्र व्यत्ययेन परस्मैपद लडन्च १ ७१ ८ आनटिनि व्याप्तिकर्मा, निघ० २ १४, ३३ ११ प्राप्नोति, प्र०—अत्र नशतेर्गतिकर्मणो लटि 'छन्दस्यपि दृश्यते' इत्यागम. १ १६३ ७ अनुवोत १ १२१ १ [नशूङ् व्याप्तौ गतौ च (भ्वा० आत्म०) धातोराङ् पूर्वात् लङ् । नशति गतिकर्मा निघ० २.१४ व्याप्तिकर्मा निघ० २ १८ धातोर्वा लङ्]

आनतिः आनमन्ति यया सा (आगति =आगमनम्) २० १३ समन्तान्नमनम् २० १३ [आङ्+णम प्रह्वत्वे शब्दे (भ्वा०) धातो क्तिन्]

आनन्दनन्दौ आनन्देन सम्भोगजनितसुखेन नन्दतस्तौ (आण्डौ=अण्डाकारौ वृषणौ) २० ६ [आङ्+टुनदि समृद्धौ (भ्वा०) धातोर्घञ्प्रत्यये=आनन्द । नदुपपदे नदि धातोरेव कर्त्तरि—अन्]

आनन्दम् आनन्द को स० वि० १६६, ऋ० ६ ११. ३ ६ **आनन्दाय**=परमसुखाय १६ ८ **आनन्दाः**=सम्पूर्ण समृद्धिया स० वि० १६७, ६ ११३ ११ [आङ्+टुनदि समृद्धौ (भ्वा०)+घञ्]

आनः अनन्ति येन तज्जीवनम् १ ५२ १५ [अन प्राणने (अदा०) धातोर्घञ्]

आनमम् समन्तात् सत्कृति कर्त्तुम् ४ ८ ३ [आङ्+णम प्रह्वत्वे शब्दे (भ्वा०) धातोस्तुमर्थे णमुल्]

आनसे समन्तान्नमामि ६ ५१ ६ [आङ्+णम प्रह्वत्वे शब्दे (भ्वा०) धातोर्लट् । व्यत्ययेनात्मनेपदम्]

आनय अपने मन को गृहाश्रम से इधर की ओर ला स० वि० १८६, अथर्व० ६ ५ १ [आङ्+णीञ् प्रापणे (भ्वा०) धातोर्लोट्]

३ २ १७१ सूत्रेण कि द्वित्वाऽभावश्चं छान्दसं । अथवा— आङ् पूर्वात् दृ विदारणे (क्र्या०) धातो 'अच इ' उ० ४१३६ सूत्रेण इ. प्रत्यये रूपम् । मध्यस्याकारस्योकारश्छान्दस । आदुरि=आदरणात् नि० ६ ३१]

आदृत्य आदर कृत्वा १ १० ३ ६ [आङ्+दृङ् आदरे (तुदा०) धातो क्त्वा समासे क्त्वो ल्यप् ।

आदेदिशानान् भृशमाज्ञाकर्तॄन् (शत्रून् जनान्) ६ ४४ १७ [आङ्+दिश अतिसर्जने (तुदा०) धातोर्यङ्न्ताच्छानच्]

आदेवम् समन्ताद् विद्याप्रकाशयुक्तम् (विद्वज्जनम्) ४ १ १ (आङ्+दिवु द्युत्यादिषु (दिवा०) धातो पचाद्यच्]

आदेवीः समन्ताद् देदीप्यमाना विदुषी (विश = प्रजा) ६ ४९ १५ [आङ्+दिवु द्युत्यादिषु (दिवा०) धातो पचाद्यच्-पचादिगणे टित् पाठान् ङीप्]

आदेवे सर्वतो विद्याप्रकाशयुक्ते (जने=विदुषि पुंसि) २ ४ १ [आङ्+दिवु द्युत्यादिषु (दिवा०) धातो पचाद्यच्]

आद्विहायाः सर्वव्यापक और आकाशवद् निर्विकार अक्षोभ्य सर्वाधिकरण (ईश्वर) आर्याभि० २ ४०, १७ २६ अनन्तर विविधेषु पदार्थेषु व्याप्त (परमेश्वर) प्र०—अत्रोहाङ् गतावित्यस्माद् असुन् णित् कार्यश्च १४ २६ [आत्+वि+ओहाङ् गतौ (जु०) धातोरसुन् । णित्वत्त्वाद् युगागमश्च]

आद्व्यानम् सम्पूर्ण विद्याओ मे व्यापकता स० वि० ८०, अथर्व० ११ ५ २४]

आधक् समन्ताद् दहे ७ १ २१ [आङ्+दह भस्मीकरणे (भ्वा०) धातोर्लुङ् । 'मन्त्रे घसह्वरणशवृद०' अ० २ ४ ८० सूत्रेण लेर्लुक्]

आधत्त समन्ताद् धारयत २ ३३ **आधत्तम्**= सर्वतो दध्यातम् १ ११७ १७ समन्तात्पोषयतम् १ ११६ १६ [आङ्+डुधाञ् धारणपोषणयो (जु०) धातोर्लोटि मध्यमबहुवचनम्)

आधत्तन समन्ताद् दधतु, प्र०—अत्र व्यत्यय 'तप्तनप्०' इति तनबादेशश्च १ २० ७ [आङ्+डुधाञ् धारणपोषणयो (जु०) धातोर्लोट् । तप्रत्ययस्य स्थाने तनबादेशश्च]

आधवनीयः आधवनसाधनपात्रविशेष १८ २१ [आङ्+धुञ् (स्वा०) धातोरनीयर् प्रत्यय]

आधवे समन्तात्प्रक्षेपणे १ १४१ ३ [आङ्+धुञ् कम्पने (स्वा०) धातो 'ऋदोरप्' त्यप् प्रत्ययो भावे । आधव =आधवनात् नि० ६ २९]

आधात् आदध्यात् ५ ४० ८ अभिमुख दधाति १ ६३ २. समन्ताद् दधाति १ १६४ ३३ **आधारयः**= समन्ताद् धारय १ ५२ ८ **आऽधाः**=सर्वतो दधाति ५ ७ ९ समन्ताद्धर १ ६१ १६ समन्ताद्धेहि ३ ५६ ६ आधेहि ६ ४७ ९ **आऽधिथाः**=आदध्या ६ ३१ १ [आङ्+डुधाञ् धारणपोषणयो (जु०) धातोर्लुङ् । 'गातिस्थाघु०' सूत्रेण सिचो लुक् । आधिथा =आङ्+डुधाञ्+ लुङि मध्यमैकवचनम् । 'स्थाघ्वोरिच्च' सूत्रेणेत्व कित्वञ्च]

आधावतम् समन्ताद् धावयत १ १०९ ४ **आधावते**=सद्यो गच्छति, भा०—सद्यो गच्छत्यागच्छति, धावति ३३ ९० **आधावन्तु**=समन्तात् प्राप्नुवन्तु ६ ३९ [आङ्+धावु गतिशुद्ध्यो (भ्वा०) धातोर्लङ् । उभयपदी चाय धातु]

आधिपत्यम् अधिपतेर्भावम् (क्षत्र =राजन्यकुलम्) १४ २४ **आधिपत्याय**=अधिष्ठातृत्वाय १८ २८ **आधिपत्ये**=अधिष्ठातृत्वे ३७ १२ अधिपतेर्भावे ३७ १२. (अधिपतिप्राति० भावे 'पत्यन्तपुरोहितादिभ्यो यक्' अ० ५ १ १२८ सूत्रेण यक्]

आधिम् य समन्ताद् दधाति तम् (भौतिकमग्निम्) २२ २० [आङ् डुधाञ् धारणपोषणयो (जु०) धातो 'उपसर्गे घो कि' अ० ३,२ ९२ सूत्रेण कि । छान्दसत्वात् कर्त्तरि]

आधिवक्ता यथावदनुशासिता (इन्द्र =सभाध्यक्ष) १ १०२.११ [अधि+ब्रूञ् व्यक्तायां वाचि (अदा०) धातोस्तृच् 'ब्रुवो वचि' रिति वच्यादेश]

आधीतम् सर्वतो धारितम् (अध्ययनम्) १५ ७ समन्ताद् धृतिनिश्चयवृत्ति १८ २. समन्ताद्धृतम् १ १७० १ आधीताय=समन्ताद्विद्यावृद्धये २२ २० **आधीतेन**= समन्ताद्धारितेन (अध्ययनेन) १५ ७ (आङ्+डुधाञ धारणपोषणयो (जु०) धातो क्त । 'घुमास्था०' अ० ६.४ ६६ सूत्रेणेकारादेश । छान्दसत्वाद् दधातेर्हिर्भावो न भवति । आधीतम्=आध्यातम् आध्यातमभिप्रेतम् नि० १ ६]

आधुनयन्ताम् गर्भ धारण करे स० प्र० ११०, ३ ५५ १६ [आङ्+धूञ् कम्पने (क्र्या०) धातोर्णिच् । 'धूञ्प्रीञोर्नुग्' इति नुक् छान्दस च ह्रस्वत्वम्]

आधुः समन्ताद् दध्यु, प्र०—अत्राऽडभाव २ ४ ३.

२४ ३४ **आन्तरिक्षाः**=अन्तरिक्षदेवताका (धूम्रा = पश्चादय) २४ १० [अन्तरिक्षप्राति० 'सास्य देवता' इत्यण् प्रत्यय । अन्तरिक्ष कस्मादन्तरा क्षान्त भवत्यन्तरेमे इति वा शरीरेष्वन्तरक्षयमिति वा नि० २ १०]

आन्त्याय अन्ते भवाय (जनाय) १८ २८ [अन्त-प्राति० भवार्थे यत् । आद्यक्षरस्य दीर्घत्व छान्दसम्]

आन्त्यायनाय अन्ते भवनमयन यस्य स अन्त्यायन, स एव तस्मै (पुरुषाय) १८ २८ अन्त्य नीचमयन प्रापण यस्य तस्मै (विनशिने=विनष्टु शीलाय जनाय) ६ २० [आन्त्य-अयनपदयो समास आन्त्य=अन्त+यत् । अयनम्=अय गतौ+ल्युट्]

आन्त्राणि उदरस्थ-अन्नपाकाऽऽधारा नाडी १९ ८६ उदरस्था स्थूला नाडी ४ १८ १३ **आन्त्रैः**=उदरस्थैर्नाडी-विशेषै २५ ७]

आन्दन् बन्धितारम् (जनम्) ३० १६ [अदि बन्धने (भ्वा०) धातोराङ्पूर्वादिच् कर्त्तरि]

आऽन्वसृक्षत समन्तादनुसृजन्तु ५ ५२ ६ (आङ्+अनु+सृज् विसर्गे (तुदा०) धातोर्लुङ् । च्ले क्सादेश]

आप आप्नोति ५ ४५ ६ प्राप्नुयात् ४ ४१ १ व्याप्नोति ५ ४२ ६ प्राप्नोति ४ ५१ ७ आप्नुयात् ८ २३ २ [आप्लृ व्याप्तौ (स्वा०) धातोर्लिट् सामान्ये]

आपत समन्तात् पतति गच्छति, प्र०—अत्र लडर्थे लोट् । अन्व०—आपतति समन्तात् पृथिवी शोभन जलरस गमयति ३ ४६ **आपतन्ति**+अभित उपरिष्टादध पतन्ति १ ७९ २ [आङ्+पत्लृ गतौ (भ्वा०) धातोर्लोट्]

आपतये समन्तात् पति पालकोऽर्य पतिस्तस्मै (प्रयोजनाय) ५ ५ [आङ्-पतिपदयो समास । 'पति समास एव' इति समासे पतिशब्दस्य घिसंज्ञकत्वाद् 'घेर्ङिति' इति गुणे ऽयादेशे च रूपम्]

आपत्यते समन्तात् प्राप्यते १ ८४ ६ [आङ्+पत्लृ गतौ (भ्वा०) धातो कर्मणि लट्]

आपथयः समन्तादभिमुख पन्था येषान्ते (विद्वज्जना) ५ ५२ १० [आङ्-पथिन् पदयोर्बहुव्रीहि । 'ऋक्पूरब्धू०' अ० ५ ४ ७४ इति प्राप्त समासान्तोऽपि न छान्दसत्वात्]

आपथ्य पथि भव पथ्य, समन्त पथ्य आपथ्य १ ६४ ११ [पथिन्प्राति० भवार्थ यत् । आङ्-पथ्यपदयो समास]

आपन् आप्नुवन्ति ६ १४ [आप्लृ व्याप्तौ (स्वा०) धातोर्लङ् । विकरणव्यत्ययेन शप्]

आपनीफणत् सर्वतोऽत्यन्त गच्छति ४ ४० ४ [आङ्+फण गतौ (भ्वा०) फणी । गतिकर्मा निघ० २ १४ धातोर्यङ् यङ्लुकि शतृप्रत्यये रूपम् । 'दाधर्ति' आपनीफणत्' अ० ७ ४ ६५ इत्यस्यागमस्य नीगागमो निपात्यते]

आपप्रथे समन्तात्प्रख्यापयति ७ ८७ २ **आपप्राथ**—समन्तात्प्रति व्याप्नोति ७ २० ४ [आङ्+प्रथ प्रख्याने (भ्वा०) धातोर्लिट्]

आपप्रिवान् सर्वत स्वतेजसा व्याप्तवान्, भा०—स्वप्रकाशेन सर्वमभिव्याप्तवान् (सूर्य) १७ ५९ सर्वत व्याप्तवान् १७३८ **आपप्रिवासम्** समन्तात् पूर्णम् (विद्वज्जनम्) १ १८६ १ [आङ्+पॄ पालनपूरणयो (जु०) धातोर्लिट, क्वसु]

आपप्रुषी समन्ताद् व्याप्ता (सरस्वती · विद्या-शिक्षिता वाक्) ६ ६१ ११ समन्तात् सर्वा विद्या व्याप्नुवती (स्त्री) ४ ५२.६ [आङ्+पॄ पालनपूरणयो (जु०) धातोर्लिट क्वसु । स्त्रिया ङीपि 'वसो सम्प्रसारणम्' इति सम्प्रसारणे परत्वे च रूपम्]

आपप्रौ आ=समन्तात् प्राति० ३ ३०.११ समन्तात् प्रपूर्त्ति १ ८१ ५ समन्ताद् व्याप्नोति ६ १० ४ [आङ्+प्रा पूरणे (अदा०) धातोर्लिट् । 'आत औ णल' इत्यौत्वम्]

आपयः मिलता व्याप्ता (मरुत=विद्वज्जना) २ ३४ १० विद्याव्याप्तुकामा (मनुष्या) १ ११०.२ सकलशुभगुणव्यापिन (देवा=विद्वज्जना) २ २९ ४ य आप्नुवन्ति ते (निगमविद्यार्थिनो जना) ५ ५३ २ **आपये**—सकलविद्याव्याप्तये ६ २० विद्याव्यापकाय (विद्वज्जनाय) २ ३८ ११ प्रापकायाऽऽप्ताय (सत्पुरुषाय) ७ ८ ६ **आपिषु**=विद्यादिगुणैर्व्याप्तेषु (विद्वज्जनेषु) २ २९ ४ **आपिः**=गुणप्रापक (विद्वज्जन) प्र०—अत्र आप्लृ व्याप्तौ इत्यस्माद् 'उणादिभ्य' अ० ३ ३ १०८ इतीण् प्रत्यय १ २६ ३ य प्रीत्या प्राप्नोति स (विद्वज्जन) १ ३१ १६ य समन्तात्पिबति शुभगुणव्याप्तो वा (राजा) ३ ५१ ६ य सर्वानाप्नोति (इन्द्र=राजपुरुष) ४ २५ ६ आपी=सकलविद्या प्राप्तौ (इन्द्रावरुणा=राजाऽमात्यौ) ४ ४१ २ **आपीन्**=य आप्नुवन्ति तान् (प्रजाजनान् राजपुरुषान्वा) ७ ३१ १२ **आप.**=प्राप्तवनान् २ २८ ११ [आप्लृ व्याप्तौ (स्वा०) धातो 'उणादिभ्य' अ० ३ ३ १०८ वार्त्तिकेन इञ् प्रत्यय]

आपयायाम् प्राणव्यापिकाभ्याम् (सरस्वत्या=वाचि) ३ २३ ४ [आप्लृ व्याप्तौ (स्वा०) धातोर्बहुलकाद् रञ्

आनवस्य समन्तान्नवीनस्य (राज) ७ १८ १३ **आनवाय**=समन्तान्नवीनाय (वचसे=वचनाय) ६ ६२ ६ [आङ्-नवपदयो समास, । नवम्=नवनाम निघ० ३ १८]

आनश आनशिरे व्याप्नुवन्ति, प्र०—अत्र व्यत्ययेन परस्मैपद पुरुषव्यत्ययश्च ३ ६० १ प्राप्नुयु ४ ३६ ४ सम्यग् व्याप्नुत ३ ६० २ **आनशते**=व्याप्नोति प्र०—नशदिति व्याप्तिकर्मा निघ० २ १६, ३३ ७६ **आनशु:**= व्याप्नुवन्ति प्राप्नुवन्ति १ ५२ १४ अश्नुवते १ १६४ २३ व्याप्नुवन्ति १ ११५ १ ६ अश्नुवन्ति १ ११०.४ पा सकते आर्याभि० १ १५ अश्नवन्ति ६ २२ ४ सम्यक् प्राप्नुयु, प्र०—अत्र व्यत्ययेन परस्मैपदम् ३ ६० ३ **आनशे**= प्राप्नोति ५ ७ ८ व्याप्नोति ५ ८१ ५ **आनश्याम्**= प्राप्नुयाम् ६ २६ ७ **आनाश**=व्याप्नुयात् ६ १६ २६ [आनशे व्याप्तिकर्मा निघ० ११ १८]

आनशाना: प्राप्नुवन्त (देवा=विद्वज्जना) ३२ १० प्राप्त होते हुए (देवा=विद्वान् जन) स० वि० ७, ३२ १० [आङ्+नशत् व्याप्तिकर्मा निघ० २ १८ धातो शानच् । अशूङ् व्याप्तौ धातोर्वा शानच् । नुडागमश्छान्दस]

आनिर्हतेभ्य: ये समन्तान्निर्हताम्तेभ्य (भा०—अनार्यमनुष्यादिप्राणिभ्य) १६ ४६ (आङ्+निर्+हन हिंसागत्यो (अदा०) धातो क्त]

आनिशितम् सर्वतो नितरा तीक्ष्णम् (शरव्यम्) ४ २४ ८ [आङ्-निशितपदयो समास । निशितम्= नि+शो तनूकरणे+क्त । 'शाच्छोरन्यतरस्याम्' इति वेत्त्वम्]

आनिषत्त समन्तान्निषण्ण (अग्नि=सूर्यलोक) ३ ६ ८ समन्तान्नितरा स्थित (विद्वान् सभेश) १८ ५३ **आनिषत्ता:**=कृतनिवासा (पितर) १६ ६८ समन्तान्निषण्णा (पितर) ऋ० भू० २६४ [आङ्+नि+षद्लृ विशरणगत्यवसादनेषु (भ्वा०) धातो क्त । 'नसत्तनिषत्तानुत्त०' अ० ८ २ ६१ सूत्रेण छन्दसि नत्वाऽभाव]

आनिषत्सि समन्तान्निश्चिततया निषीदसि ३ १४ २ **आनिषसाद**=समन्तान्नित्य सीदतु १० २७ समन्तान्नित्य सीद २० २ **आनिषीद**=आस्स्व १ १०४ १ **आनिषीदत**=समन्तान्नितरामाध्वम् ७ ३४ अभितो निश्चयेन वर्त्तध्वम् १ २२ ८ आभिमुख्येन नितरा तिष्ठत १ ५१

आनिषेदु:=निषीदेयु ४ ५० ३ [आङ्+नि+षद्लृ विशरणगत्यवसादनेषु (भ्वा०) धातोर्लट् । 'बहुल छन्दसी' ति शपो लुकि सीदादेशो न भवति]

आनीयमाने समन्तात्प्राप्ते (पयसि=उदके) ३९ ५ [आङ्+णीञ् प्रापणे (भ्वा०) धातो कर्मणि शानच्]

आऽनुगमन् समन्तादनुकूल गच्छन् (सखा) ३ ३९ ५ [अनु+गम्लृ गतौ (भ्वा०) धातो शतृ । 'बहुल छन्दसी 'ति शपो लुक्]

आनुषक् अनुकूलतया १ ५८ ३ आनुकूल्ये ६ ४८ ४ [आनुषक्=नामानुपूर्व्यस्यानुषक्त भवति नि० ६ १४ पदनामसु निघ० ४ ३]

आनुषक् अनुकूलम् (सज्जनम्) २ ६ ८ योऽनुसजति (राजा) ६ ५ ३ व्याप्त्यानुषक्तमुत्कृष्टगुणैरनुरक्तमाकर्षणेनाऽनुयुक्त वा (विश्वम्=जगत्) १ ५२ १४ अभितो योऽनुषज्ति तत् (बर्हि=अन्तरिक्षम्) १ १३ ५ आनुषक्त अर्थात् व्याप्त (बर्हि=अन्तरिक्षम्) आर्याभि० १ १५ य आनुकूल्येन सचति समवैति स (क्रियाविज्जन) ३ ४१ २ आनुकूल्येन वर्त्तमान (विद्वज्जन) ३ ११ १ अनुकूल (अग्नि=राजा) ४ १२ ३ [अनु+षञ्ज सङ्गे (भ्वा०) धातो क्विप् । 'अनिदिताम्०' अ० ६ ४ २४ सूत्रेण नकारलोपेऽनोऽकारस्य दीर्घश्छान्दस । आनुषगिति नामानुपूर्व्यस्यानुषक्त भवति नि० ६ १४]

आनुष्टुभम् अभितोऽनुकूलतया स्तोभते सुख बध्नाति येन तत् (छन्द) १२ ५ **आनुष्टुभेन**=अनुष्टुप्कथितेन (छन्दसा=स्वच्छेनाऽर्थेन) १३ ५३ विद्या गृहीत्वा पश्चाद् दु ख विस्तम्भुवन्ति येन तेन (छन्दसा) १५ ६५ अनुष्टुब्विहितार्थयुक्तेन (छन्दसा) ११ ११ [अनु+स्तोभति अर्चतिकर्मा निघ० ३ १ धातो क्विप् । अनुष्टुबनुष्टोभनात् नि० ७ १२]

आनूकम् आनुकूल्यम् ५ ३३ ६

आनृचु: स्तावयन्ति तद्गुणान् प्रकाशयन्ति, प्र०—अत्र 'अपस्पृधेथामानृचु०' अ० ६ १ ३६ अनेनाऽर्चधातोर्लिट्युसि सम्प्रसारणमकारलोपश्च निपातित १ १६ ४ अर्चाम ५ ६ ८ **आनृचे**=स्तौमि १ १६० ४ [अर्च पूजायाम् (भ्वा०) धातोर्लिट् । 'अपस्पृधेथामि' ति सूत्रे निपातनाद् रूपसिद्धि]

आन्तरिक्ष: अन्तरिक्षदेवताक (अजल=पक्षिविशेष)

प्रत्यय । 'कृदिकारादक्तिन' इति वार्त्तिकेन ङीप् । तत' सप्तमी । यकारागमश्छान्दस]

आपरीवृतम् सर्वत आवृतम् (रज =लोकलोकान्तरम्) ४ ४५ २ [आङ्+परि+वृञ् आवरणे (चुरा०) धातो क्त । पूर्वपदस्य दीर्घत्वम्]

आपर्यश्याम् समन्तात् सर्वत प्राप्नुयाम् [आङ्+परि+अशूङ् व्याप्तौ (स्वा०) धातोर्लिङ् । व्यत्ययेन परस्मैपद विकरणलुक् च छान्दसम्]

आपवस्व समन्तात् पवित्रीकुरु ८ ६३ सर्वथा पवित्र कर स० वि० १९५, ९ ११३ २ [आङ् पूञ् पवने (क्र्या०) धातोर्लोट् । विकरणव्यत्ययेन शप्]

आप: जलानि, वाऽऽनुवन्ति शब्दोच्चारणादिव्यवहारान् याभिस्ता आप प्राणा, प्र०—आप इत्युदकनामसु पठितम् निघ० १ १२ 'आप इति पदनामसु पठितम् निघ० ५ ३ आभ्या प्रमाणाभ्यामप्-शब्देनाऽत्रोदकानि, सर्वचेष्टाप्राप्तिनिमित्तत्वात् प्राणाश्च गृह्यन्ते १ ८ ७ व्याप्तिशीलानि जलानि १ ८३ २ अन्तरिक्षे व्याप्तिशीला (देवी =स्त्रिय) ९ ६ जलवद्वर्त्तमाना शातर ४ १८ ८ प्राणा जलानीव विद्वास २० २० जलानीव शान्ता (स्त्रियो विदुष्य) १० ७ आप्नुवन्तीत्याप (अन्व०—सर्वविद्याव्यापिनो विपश्चित) ६ १७ सकलविद्याधर्मव्यापिन (राजपुरुषा) १० ४ व्यापिकास्तन्मात्रा २७ २५ ब्रह्मणो नाम ऋ० भू० ३०८ सर्वव्यापक ईश्वर प० वि० २१२ पवित्रजलानीव सकलशुभगुणव्यापिका कन्या १२ ३५ व्याप्तिशीला सूक्ष्मास्तन्मात्रा २७ २६. जलानीव प्रजा ५ ३४ ९ आप्नुवन्ति व्याप्नुवन्ति शरीरमित्याप (इन्द्रियाणि मनो बुद्धिश्च ३४ ५५ प्राणान्, प्र०—अत्र शसो जस् २ २४ १२ वाष्परूपाणि जलानि १ ११६ ९ अन्तरिक्ष प्राणा वा १ १०० १५ सर्वा शुभगुणकर्मविद्याव्यापिन्य (देवी =विदुष्यो देव्य) ८ २६ सर्वव्यापकत्वादीश्वर ३२ १ कारणाख्या प्राणा जीवा वा १७ ३० जलानीव शान्तिशीला विदुष्य सत्स्त्रिय प्र०—आप्लृ व्याप्तौ अस्माद्धातोरप्शब्द सिध्यति, स नियतस्त्रीलिङ्गो बहुवचनान्तश्च ३६ १४ आकाश ३२ ७ आप्ता प्रजा ६ २७ आप्नुवन्ति सद्गुणान् यास्ता (देवी =विदुष्य सत्स्त्रिय) ६ १३ प्राणा जलादयो वा ४ १२ आप्नुवन्ति व्याप्नुवन्ति सर्वान् पदार्थान्ते प्राणा १ २० २१ प्राणवलानि १ १७८ १ जलो को स० वि० २०९, अथर्व० ६ ६ १ ५ जल और जलस्थ पदार्थ आर्याभि० २ २५, ३६ १७ प्राणप्रद वायु स० वि० १९६, ९ ११३ ८ प्राण, वायु, समुद्र इत्यादि आर्याभि० १ ३२, ऋ० १ ७ १० १५ [आप्लृ व्याप्तौ (स्वा०) धातो 'आप्नोतेर्ह्रस्वश्च' उ० २ ५८ सूत्रेण क्विप् प्रत्यये ह्रस्वत्वे चाप् शब्द सिध्यति । अथवा 'आप कर्माख्यायां ह्रस्वो नुट् च वा' उ० ४ २०८ सूत्रेणासुन् प्रत्ययो ह्रस्वश्च । आप आप्नोते नि० ९ २६ आप =आपना आपनानि वा नि० १२ ३८ आप अन्तरिक्षनाम निघ० १ ३ आप =उदकनाम निघ० १ १२ तद्या एताश्चान्द्रमस्य आगामिन्य आपो भवन्ति रश्मयस्ता नि० ५ ४२ आप तद् यदब्रवीत् (ब्रह्म) आभिर्वा अहमिद सर्वमाप्स्यामि यदिद कि चेति तस्मादापो ऽभवस्तदपामप्त्वमाप्नोति वै स सर्वान् कामान् यान् कामयते गो० पू० १ २ सेदꣳ सर्वमाप्नोद् यदिद कि च यदाप्नोत्तस्मादाप श० ६ १ १ ९ अद्भिर्वाऽइद सर्वमाप्तम् श० १ १ १ १४ आपो ह वा ऽइदमग्रे सलिलमेवास । ता अकामयन्त कथ नु प्रजायेमहीति श० ११ १ ६ १ अश्मनो ह्याप प्रभवन्ति श० ९ १ १ ४ तस्मात्पुरुषात्तप्तादापो जायन्ते श० ६ १ ३ १ ता वा ऽ एता सप्तदशाप सम्भरति श० ५ ३ ४ २२ प्राणा वा आप तै० ३ २ ५ २ ता० ९ ९ ४ आपो वै प्राणा श० ३ ८ २ ४ प्राणो ह्याप जै० उ० ३ १० ९ अमृत वा ऽ आप श० १ ९ ३ ७ अमृतत्व वाऽआप कौ० १२ १ अमृता ह्याप श० ३ ९ ४ १६ अमृत वा एतदस्मिन् लोके यदाप ऐ० ८ २० आपो वा ऽ उत्स श० ६ ७ ४ ४ आपोऽक्षितिर्या इमा एपु लोकेपु याश्चेमा अध्यात्मन् कौ० ७ ४ शान्तिराप श० १ २ २ ११ शान्तिर्वा आप ऐ० ७ ५ आपो हि शान्ति ता० ८ ७ ८ शान्तिर्वै भेपजमाप कौ० ३ ६, ७, ८, ९ गो० उ० १ २५ आपो ह वा ऽओपधीना रस श० ३ ६ १ ७ रसो वा ऽ आप श० ३ ३ ३ १८ आपो वे सर्वस्य शान्ति प्रतिष्ठा प० ३ १ आपो वा ऽअस्य सर्वस्य प्रतिष्ठा श० ४ ५ २ १४ आप सत्ये (प्रतिष्ठिता) ऐ० ३ ६ गो० उ० ३ २ श्रद्धा वा आप तै० ३ २ ४ १ मेध्या वा आप श० १ १ १ १ मेध्या वा एता आपो भवन्ति या आतपति वर्षन्ति श० ५ ३ ४ १३ पवित्र वा ऽआप श० १ १ १ १ आपो वै क्षीररसा आसन् ता० १३ ४ ८ ऊर्ग्वा आपो रस कौ० १२ १ अन्न वा ऽआप श० २ १ १ ३ अन्नमाप कौ० १२ ३ ८ आपोऽन्नम् ऐ० ६ ३० तद्यास्ता आपोऽन्न तत् जै० उ० १ २५ आपो वै रक्षोघ्नी तै० ३ २ ३ १२ (इन्द्र) एताभि (अद्भि) ह्येन (वृत्रम्) अहन् श० १ १ ३ ८ वज्रो वा ऽआप श० १ १ १ १७ वीर्य वा ऽ आप श० ५ ३ ४ १ आपो वा ऽअर्क श० १० ६ ५ २. अप्सु

१८८, १९ ३० [आप्लृ व्याप्तौ (स्वा०) धातोर्लट्]

आप्यते प्राप्यते १९ २५ प्राप्ति की गई है स० वि० १८८, १९ ३० [आप्लृ व्याप्तौ (स्वा०) धातो कर्मणि लट्]

आप्यम् आप्तु प्राप्तु योग्य सखित्वम्, प्र०—अत्र 'आप्तृ व्याप्तौ' इत्यस्मादौणादिको यत्, अत्र सायणाचार्येण प्रमादादढुपधत्वाऽभावेऽपि 'पोरदुपधात्' इति कर्मणि यत्, 'यतोऽनाव' इत्याद्युदात्तत्व, यच्च छान्दसमाद्युदात्तत्वमित्य-शुद्धमुक्तम्, औणादिकस्य यत्प्रत्ययस्य विद्यमानत्वात् १ ३६ १२ आप्तु योग्यम् (उक्थ्य=विद्यावच) प्र०—अत्राऽऽ-प्तृ-धातोर्बाहुलकादौणादिको यत् प्रत्यय १ १० ५ १३ **आप्येन**=व्याप्येन वस्तुना २ २९ ३ [आप्लृ व्याप्तौ (स्वा०) धातोर्बाहुलकादौणादिको यत् प्रत्यय । आप्य = आप्यमाप्नोते निघ० ६ १४]

आप्यायताम् समन्ताद् वर्धयताम्, प्र०—अत्रा-ऽन्तर्गतो ण्यर्थ ५ ७ सत्कर्माऽनुष्ठानेन वर्द्धताम् ६ १५ सर्वतो वर्द्धताम् ३८ १८ अभितो वर्धयताम् ५ ७ **आप्यायध्वम्**=आप्यायामहे वा प्र०—अत्र पक्षे व्यत्यय ११ **आप्यायन्ताम्**=पुष्टा भवन्तु १ ९३ १२ **आप्यायय**=अभितो वर्धय वर्धयति वा ५ ७ **आप्या-यस्व**=सर्वतो वर्धस्व वर्द्धयेद्वा ५ ७ अभितो वर्धस्व १ ९१ १६ समन्तात्पुपाण ३८ २१ अ०—नित्य व्यापय २ १४ **आप्यासिषीमहि**=समन्ताद्वर्धेम, प्र०—अत्र प्यैङ् धातो 'सिवुत्सर्गश्छन्दसि' अ० ३ १ ३४ अनेन वार्त्तिकेन सिप् प्रत्यय २ १४ सर्वतो वर्द्धेम ३८ २१ [आङ्+ओप्यायी वृद्धौ (भ्वा०) धातोर्लोट् । अन्यत्र लिङपि]

आप्यायमानः समन्ताद्वर्धमान (मनुष्य) १२ ११३ पुष्ट पुष्टिकारक (विद्वज्जन) १ ९१ १८ वृद्ध इव (यम =सूर्य) ८ ५७ [आङ्+ओप्यायी वृद्धौ (भ्वा०) धातो शानच्]

आप्रणेषि समन्तात्प्रकर्षेण नयसि २ १ १६ [आङ्+प्र+णीञ् प्रापणे (भ्वा०) धातोर्लट् । 'बहुल छन्दसी' ति शपो लुक्]

आप्रथस्व अभित प्रख्यातो भव १३ २ [आङ्+ प्रथ प्रख्याने (भ्वा०) धातोर्लोट्]

आप्रयच्छ समन्तात् प्रकर्षेण देहि ५ १९ [आङ्+ प्र+यमु उपरमे (भ्वा०) धातोर्लोट् । 'इषुगमियमा छ' इति छकारादेश]

आप्रयातु अभित प्रकृष्ट प्राप्नोतु १८ ७२ **आप्रयाहि**=समन्तात्प्रकर्षेण गच्छ ३४ १९ [आङ्+ प्र+या प्रापणे (अदा०) धातोर्लोट्]

आप्ररिक्थाः समन्तादतिरिणक्षि, प्र०—अत्र 'वाच्छन्दसि' इति विकरणाऽभाव ३ ६ २ [आङ्+ प्र+रिचिर् विरेचने (रुधा०) धातोर्लट् । 'बहुल छन्दसी' ति शपो लुक् । अथवा 'वाच्छन्दसि' वार्तिकेन विकरणा-ऽभाव]

आप्रशस्यते अभित प्रशस्तो जायते २८ ३ [आङ्+प्र+शसु स्तुतौ (भ्वा०) धातो कर्मणि लट्]

आप्रस्य पूर्णबलस्य (सेनापते) ११३२२ [आङ् पूर्वात् प्रा पूरणे (अदा०) धातो क प्रत्यय]

आप्राः समन्ताद् व्याप्नोति १३ ४६ समन्तात्प्राति-पिपर्त्ति प्र०—अत्र लडर्थे लुङ् ७ ४२ अभित प्राति-व्याप्नोति ४ ५२ ५ समन्ताद् व्याप्नुयो ६ ४६ ५ समन्तात्पूरितवान् १ ११५ १ समन्तात् पिपृहि ६ २ [आङ्=पॄ पालनपूरणयो (जु०) धातोर्लुङ् । 'मन्त्रे घस-ह्वरणशवृदहात्०' अ० २ ४ ८० सूत्रेण लेर्लुक् । आङ्-पूर्वात् प्रा पूरणे (अदा०) धातोर्वा लुङ्]

आप्राः समन्ताद्धारयन् (परमेश्वर) प० वि० । [आङ्+प्रा पूरणे (अदा०) धातोरच् प्रत्यय]

आप्रायि समन्तात् पूर्यन्ते ३४ ३२ [आङ्+प्रा पूरणे (अदा०) धातो कर्मणि लुङ्]

आप्रीणीते अभित कामयते ७ ७ ३ [आङ्+प्रीञ् तर्पणे कान्तौ च (क्र्या०) धातोर्लट्]

आप्रीतपाः समन्तात् प्रीतान् कमनीयान् पदार्थान् पाति रक्षति (विष्णु =विद्युत्) ८ ५७ [आङ्-प्रीतोपपदे पा रक्षणे (अदा०) धातो क प्रत्यय । आकारस्य न लोपश्छान्दसत्वात्]

आप्रीभिः या समन्तात् प्रीणन्ति ताभि (क्रियाभि) १९ १९ **आप्री.**=सर्वथा प्रीत्युत्पादिका परिचारिका, (भा०—सुशिक्षितसेविका) १९ १९ [आङ्+प्रीञ् तर्पणे कान्तौ च (क्र्या०) धातो क्विप् । आप्रिय (ऋच) तद्यद् आप्रीणाति तस्मादाप्रियो नाम कौ० १० ३ आप्रीभिराप्नुवन् तदाप्रीणामाप्रीत्वम् तै० २ २ ८ ६ तद्यदेन (पशुम्) एताभिराप्रीभिराप्रीणात् तस्मादाप्रियो नाम श० १० ८ ३ ५ यदेतान्याप्रिय आज्यानि भवन्ति, आत्मानमेवैतेराप्रीणाति ता० १५ ८ २ प्राणा वा आप्रिय कौ० १८ १२ तेजो वै ब्रह्मवर्चसामाप्रिय ऐ० २ ४]

आपिप्यानम् सर्वतो वर्धमानम् (कलश=कुम्भम्) ४ २७ ५ [आङ्+ओप्यायी वृद्धौ (भ्वा०) धातोर्यङन्ताच्छानच् । 'लिड्यङोश्च' अ० ६ १ २९ सूत्रेण पीभाव]

आपिप्रिये समन्तात्प्रीणाति ३ ५१ ३ [आङ्+प्रीञ् तर्पणे कान्तौ च (क्र्या०) धातोर्लिट्]

आपिब समन्तात् श्रवणशक्त्या गृहाण १ १० ११ [आङ्+पा पाने (भ्वा०) धातोर्लोट् । शिति पिबादेश]

आपीपयन् आवर्द्धयेयु १.१५२ ६ [आङ्+ओप्यायी वृद्धौ (भ्वा०) धातोर्लङ]

आपीपाय आवर्द्धस्व ४ ३ ६ (आङ्+ओप्यायी वृद्धौ (भ्वा०) धातोर्लिट् । 'लिड्यङोश्चे' ति पीभाव]

आपुनन्ति समन्तात् पवित्रीकुर्वन्ति ३ ८.५ [आङ्+पूञ् पवने (क्र्या०) धातोर्लट् । 'प्वादीना ह्रस्व' इति शिति ह्रस्व]

आपु: प्राप्नुवन्ति, प्र०—अत्र वर्त्तमाने लडर्थे लिट् १ २४ ६ पा सकते है आर्याभि० १ ३२ [आप्लृ व्याप्तौ (स्वा०) धातोर्लिट् लडर्थे]

आपूर्ण: समन्तात् पूरित (कलश =कुम्भ) ३ ३२ १५ [आङ्+पृ पालनपूरणयो (जु०) धातो 'धापॄवस्य०' उ० ३ ६ सूत्रेण न प्रत्यय । बाहुलकाद् गुणाऽभाव]

आपूर्यमाणम् समन्तात् न्यूनतारहितम् (श्रव = अन्नम्) १ ५१ १० [आङ्+पृ पालनपूरणयो (जु०) धातो कर्मणि शानच्]

आपृचे समन्तात् सम्पर्काय ५ ५० २ [पृची सम्पर्चने (अदा०) पृची सम्पर्के (रुधा०) धातोर्वा 'धवर्थे क विधानम्' इति क प्रत्यय]

आपृचीमहि समन्तात् सम्बन्धनीयाम १ १२९ ७ [आङ्+पृची सम्पर्चने (अदा०) धातोर्लिङ्]

आपृच्छ्यम् समन्तात् प्रष्टव्यम् १ ६४ १३ [आङ्+प्रच्छ ज्ञीप्सायाम् (तुदा०) धातोर्क्यप् प्रत्यय । किति सम्प्रसारणम्]

आपृच्छ्य: समन्तान्निश्चयार्थं प्रष्टु योग्य (विद्वज्जन) १ ६० २ [आङ्+प्रच्छ ज्ञीप्साया (तुदा०) धातो क्यप् । किति 'ग्रहिज्या०' सूत्रेण सम्प्रसारणम्]

आपृण समन्ताद् योजय ६ २१ अभित पूरय १ १६ ६ समन्तात् पूरयति व। ३ १७ समन्तात् सुखय १७ ७२ आपूर्ण कुरु ३ ३० १६ सब प्रकार से पूर्ण करो आर्याभि० २ ३३, ३ १७ परिपूर्ण करो आर्याभि० १ ३५ अभित पिपूर्धि ११ ६३ **आऽपृणत्**=समन्तात्पूरयति ३ २७ अभित प्रपूरयेत् ३ ३४ १ आपृणाति व्याप्नोति २ १५ २ **आपृणध्वम्**=समन्तात् सुखयत २५ २८ अभित पूरयध्वम् १ १६२ ५ **आऽपृणन्ति**=समन्ता‍त् सुखयेयु १ ५२ ४ अभित पालयन्ति विद्या पूरयन्ति वा ५ ११ ५ **आपृणस्व** सुखी भव १७,७९ समन्तात् सुखय ६ ४१ ४ **आऽपृणात्**=अभित प्रपूर्यात् १२ २३ **आपृणथे**=समन्तात् पूरयतम् ७ ६१ २ [आङ्+पृण प्रीणने (तुदा०) [धातोर्लोट् । पॄ पालनपूरणयो (क्र्या०) धातोराङ्पूर्वाल्लोटि लङि वा रूपाणि]

आपृणक्तु समन्तात् सम्पर्क करोतु १ ८४ १ [पृची सम्पर्के (रुधा०) धातोराङ् पूर्वाल्लोट् । (आपृणस्व) आपृणस्वेत्याप्रजायस्वेत्येतत् श० ६ २ ३ ४४]

आपृणन् समन्तात् पूरयन् (परमेश्वर) ४ ५३ २ [आङ्+पॄ पालनपूरणयो (क्र्या०) धातो शतृप्रत्यय]

आपृणन्ती अभित सुखयन्ती (उषा) १ १२४ ५ [आङ्+पृण प्रीणने (तु०) धातो शतरि स्त्रिया ङीपि च रूपम्]

आपे. य आप्नोति तस्य (सर्वव्यापकस्येश्वरस्य) २ २७ १७ प्राप्तस्य (अनृजो =कुटिलस्य जनस्य) ४ ३ १३ प्राप्तधनात् २ २८ ११ [आप्लृ व्याप्तौ (स्वा०) धातोर् इ प्रत्यय औणादिक]

आप्तम् व्याप्त प्राप्तम् (होमादिकम्) १९ २९ **आप्त:**=सर्वविद्यादिसद्गुणव्याप्त सत्योपदेष्टा (राजा, विद्वज्जनो वा) १ ३० १४ [आप्लृ व्याप्तौ (स्वा०) धातो क्त प्रत्यय]

आप्ता: प्राप्त होती है म० वि० १९७, ९ ११३ ११ [आप्लृ व्याप्तौ (स्वा०) धातो क्तप्रत्यये स्त्रिया टापि च रूपम्]

आप्त्य: य आप्तेषु भव स (विद्वज्जन) १ १०५ ९ [आप्लृ व्याप्तौ+क्तप्रत्यये=आप्त । ततो भवार्थे यत् । आप्त्या आप्नोते नि० ११ २० आप्त्यम्=आप्तव्यम् नि० ११ २१ आप्त्या (देवा) साध्याश्च त्वाऽऽप्त्याश्च देवा पाङ्क्तेन च्छन्दसा त्रिणवेन स्तोमेन शाक्वरेण साम्ना ऽऽरोहन्तु तानन्वारोहामि राज्याय ऐ० ८ १२ अथैन (इन्द्र) अस्या ध्रुवाया मध्यमाया प्रतिष्ठाया दिशि साध्याश्चाऽऽप्त्याश्च देवा ' अभ्यषिञ्चन्'' ' '' राज्याय ऐ० ८ १४]

आप्नोति प्राप्नोति १९ १९ प्राप्त होता है म० वि०

क्रियासु तासि सह १ ५१ ९ यें विद्याविनये समन्ताद् भवन्ति तैं सह (सन्निभि सह) ५ ३५ ३ [आङ्+भूमि-पदयो समास । भूमि = भू सत्ताया धातो 'भुव कित्' उ० ४ ४५ सूत्रेण मि प्रत्ययो किच्चाधिकारणे । भवन्ति पदार्था यस्या सा भूमि]

आभूप समन्तादलङ्कुरु ७ ७ **आभूषति**=समन्तादाप्नोति १ १३६ ५ [आङ्+भूप अलङ्कारे (भ्वा०) धातोर्लोट्]

आभूषति समन्तादाप्नोति १ १३६ ५ [आङ्+ भू प्राप्तौ धातोर् लेट् 'सिब्बहुल लेटी' ति सिप् विकरणो, णिचोऽभावश्च]

आभूषन्ती समन्ताद् भूपणयुक्ता (स्त्रिय) १ ४३ ९ [आङ्+ भूप अलङ्कारे (भ्वा०) धातो शतरि स्त्रिया डीपि च रूपम्]

आभूषु समन्ताद् भूपिता जना येन तत् (सुकर्म) १ ५६ ३ [आङ्+भूप अलकारे (भ्वा०) धातोर्बाहुलकाद् उ प्रत्यय]

आभूषेण्यम् अलङ्कर्त्तव्यम् (महित्वन=महिमानम्) ५ ५५ ४ [आङ्+भूप अलङ्कारे (भ्वा०) धातो 'कृत्यार्थे तवैकेन्केन्यत्वन' अ० ३ ४ १४ इति केन्य प्रत्यय]

आभृतम् समन्ताद् धृतम् (मासम्) १ १६१ १० समन्तात् पुष्ट धृत वा (रेत =वीर्यम्) ३८ २८ समन्तात् पोपितम् (सह =वलम्) २९ ५३ आभिमुख्येन धृतम् (वज्र वल वा) ६ ४७ २७ **आभृत**=समन्तात् पोपित (सुत =पुत्र) २ ३६ ५ समन्ताद्धृत (आनन्द) ५ ५८ ११ **आभृता**=समन्ताद् धृतानि (वसूनि=धनानि) ६ १६ ४८ [आङ्+भृञ् भरणे (भ्वा०) धातो क्त प्रत्यय]

आभोगयम् समन्ताद् भोगेपु साधु व्यवहारम्, प्र०—अत्रोभयसज्ञान्यपि छन्दासि दृश्यन्ते, इति भसज्ञानिपेधाद-ल्लोपाऽभाव १ ११० २ [भोगप्राति० भवार्थे यत् । छन्दसि भसज्ञाया अभावाद् 'यस्येति चे' त्यल्लोपो न भवति । आङ्भोगयो समास । भोग =भुजपालनाभ्यवहारयो (रुधा०) धातोर्घञ्]

आभोगये समन्ताद् भुञ्जन्ते सुखानि यस्या तस्यै पुरुपार्थयुक्तायै (राये=राज्यश्रिये) प्र०—अत्र बहुलवचना-दौणादिको यि प्रत्यय १ ११३ ५ [आङ्+भुजपालना-भ्यवहारयो (रुधा०) धातोर्यिप्रत्यये छान्दस रूपम्]

आभ्रियन्ते समन्ताद् ध्रियन्ते ७ ९१ २ [आङ्+भृञ् भरणे (भ्वा०) धातो कर्मणि लट्]

आमत्स्व अस्माभि स्तुत सन् सदा समन्ताद्धर्षय, प्र०—'बहुल छन्दसि' इति श्यनो लुक् १ ९ ३ [आङ्+मदी हर्षे (दिवा०) धातोर्लोट् । 'बहुल छन्दसी' ति श्यपो लुकि तत्स्थाने शपिति श्यनोऽपि लुक्]

आमन्येथाम् समन्ताद् विजानीतम् ३ ५८ ४ [आङ्+मन ज्ञाने (दिवा०) धातोर्लङ्]

आममत् रोगा कुर्यात्, प्र०—अम रोगे, अमागम लङि रूपम् १९ ४७ [अम रोगे (चुरा०) धातोर्लङ्, अमागमश्छान्दस]

आमस्य अपरिपक्वस्य (क्रविप =अशितस्य पदार्थस्य) २५ ३३ **आम:**=अपरिपक्व आत्मा यस्त करणयुक्त (मनुष्य) स० प्र० ४२३, ९ ८३ १ [अम रोगे (चुरा०) धातोर् घञ्]

आममिरे समन्तात् सृजन्ति ३ ३८ ७ [आङ्+माङ् माने शब्दे च (जु०) धातोर्लिट् सामान्ये]

आमयति रोगयति, भा०—रोगाऽऽविष्कार भवति १२ ८३ [अम रोगे (चुरा०) धातोर्लट्]

आमरीता समन्ताद् विनाशक (शत्रु) ४ २० ८ [आङ्+मृ हिंसायाम् (क्र्या०) धातोस्तृच् । 'वृतो वा' अ० ७ २ ३८ इनीटो दीर्घ]

आमा आमानि (वस्तूनि) ३ ३० १४ अपरिपक्वम् (आहारम्) प्र०—अत्र विभक्तेराकारादेश ४ ३ ९ [अम रोगे (चुरा०) धातोर्घञ्]

आमादम् आमानपरिपक्वानत्ति तम्, भा०—दाहकस्वभाव येनामान् पदार्थान् पक्त्वाऽदन्ति तम् (अग्नि=विद्युदाख्यम्) १ १९ [आमोपपदे अद भक्षणे (अदा०) धातोरण्प्रत्यय । अयम् (अग्नि) वा ऽआमाद्येनेद मनुष्या पक्त्वाऽदन्ति श० १ २ १ ४]

आमायाम् अप्रौढायाम् (उस्रियाया)=गवि) १ १८० ३ **आमासु**=अपक्वास्वोपधीपु १ ६२ ९ [आमम्=अपरिपक्वम् ततष्टापि रूपम्]

आमायाम् गृहे भवासु (पूर्पु=पुरीपु) २ ३५ ६ अपने घरो मे उत्पन्न हुए (पुत्र और कन्या रूप प्रजाओ मे) स० वि० १०४, २ ३५ ६ [अमा गृहनाम निघ० ३ ४ अम पदनाम निघ० ४ ३ अम प्राति० भवार्थे इण् प्रत्यये स्त्रिया टापि च रूपम्]

आमिक्षा दधिदुग्धमिष्टैर्निर्मिता (हवि =पदार्था)

-**आबध्नन्** समन्तात् बध्नीयुः ३४५२ **आबबन्ध**= अभितो बध्नामि १२६५ [बन्ध बन्धने (क्र्या०) धातो राङ्पूर्वात् शतृप्रत्यय । अन्यत्र—आङ्+बन्ध+लिट्]

आबभाज समन्तात् सर्व सेवन्ते ११६४८ (आङ्+भज सेवायाम् (भ्वा०) धातोर्लिट्]

आबभूव समन्तात् भवति ३२५ समन्तात् भवेत् ६२५ प्रकाशित हुई म० प्र० २८१, १०११६७ [आङ्+भू सत्तायाम् (भ्वा०) धातोर्लिट्]

आबिभ्रति समन्तात् भरन्ति ६१६४० [आङ्+डुभृञ् धारणपोषणयो (जु०) धातोर्लटि प्रथमबहुवचने रूपम्]

आभगः समस्तसौभाग्य (आप्तपुरुष) ११३६४ [आङ्-भगपदयो समास]

आभज समन्तात् सेवस्व ३४७३ अभिलष ११२१ १५ **आऽभजत्**=समन्तात् सेवेत ११५६५ समन्तात् सेवते ४३०१६ **आभजन्त**=अभितो भजन्ते सेवन्ते १६५६ **आभजस्व**=आसेवस्व ४३२२१ **आभजे-महि**=समन्तात् सेवेमहि ७३२७ [आङ्+भज सेवायाम् (भ्वा०) धातोर्लोट् । अन्यत्र लिङ्]

आभजन्तीः समन्तात् सेवमाना (देवी =दिव्या स्त्रिय) १७.५४ [आङ्+भज सेवायाम् (भ्वा०) धातो शतरि स्त्रिया डीपि च रूपम्]

आभनन्त समन्तात् भनन्तु उपदिशन्तु ७१८७ [आङ्+भण शब्दार्थे (भ्वा०) धातोर्लङ् । व्यत्ययेनात्मने-पदम्]

आभयते समन्तात् भय जनयति १५८५ [भय करोतीति विग्रहे 'तत्करोति तदाचष्टे' वार्त्तिकेन णिच् । 'सनाद्यन्ता धातव' इति धातुसञ्ज्ञायाम् आङ्पूर्वाल्लट् । णिलोपश्छान्दस । 'छन्दस्युभयथा' इत्यार्धधातुकसञ्ज्ञाया वा णेर्लोप]

आभर समन्तात् भर १७६८ आभिमुख्येन धर १५३३ अभितो भरति वा ४१६ अभित सम्यग् धारय प्रदेहि १४७ समन्ताद्धारय १८१ समन्तात्पुष्णीहि ५१६५ अभित पोषय ३४३३ सर्वत पालयसि ३६७ अभित सुखैर्भरति पुष्णातीति ४१६ समन्तात् देहि १८१७ समन्तात् प्रापय १८१९ समन्ताद्धर पुष्णीहि वा ५३५२ **आभरत्**=समन्तात् भरत, अभितो बिभ्रत २०५६ **आभरतम्**=अभितो धारयतम् ११०६७ **आभरति**=समन्ताद्धरति ४२२४. अभित सम्यग् धारय प्रदेहि १४७ [आङ्+भृञ् भरणे (भ्वा०) धातो र्लोट्]

आभरति समन्तात् हरति ४२२४ [आङ्+हृञ् हरणे (भ्वा०) धातोर्लट् । 'हृग्रहोर्भश्छन्दसी' ति [हकारस्य भकार]

आभरद्वसुः या समन्ताद्वसूनि बिभर्त्ति सा (विदुषी स्त्री) ५७९३ [आभरत्+वसुपदयोर्बहुव्रीहि, 'वोतो-गुणवचनात्' इति विकल्पाद् ङीप् न]

आभरन्तः समन्तात् धरन्त (ऋषय) १५४६ [आङ्+भृञ् भरणे (भ्वा०) धातो शतृप्रत्यय]

आभरत् समन्ताद्धरेत् ४२७ [आङ्+हृञ् हरणे (भ्वा०) धातोर्लेट्]

आभाति समन्तात् प्रकाशयति ३२५३ अभितो राजति १२२१ समन्तात्प्रकाशते १२६ **आभासि**= समन्तात् प्रकाशयसि १५०४ अभितो दीपयसि १५६३ **आभाहि**=समन्तात् भाहि १४८९ समन्तात प्रकाशय २७१ [आङ्+भा दीप्तौ (अदा०) धातोर्लट् । आभाहि पदे लोट् च]

आभार्ष्टाम् समन्तात् दहताम् २८१७ [आङ+भ्रस्ज पाके (तुदा०) धातोर्लुङि प्रथमद्विवचने रूपम् । 'वदव्रज०' इति वृद्धि 'भ्रस्जोरोपधयोरमन्यतरस्याम्' इति रेफोपधयोर्निवृत्ति रमागमश्च]

आभुवत् समन्तात् भूयात्, अ० भवति वा, प्र०—भूधातोराशिषि लिङि प्रथमैकवचने 'लिङ्याशिष्यङ्' अ० ३१८६ इत्यङि सति 'किदाशिषि' इत्यागमाऽनित्यत्वे प्रयोग १५३ समन्तात् भवेत् ३६४ अभितो भवे ४३११ [आङ्+भू सत्तायाम्+आशिषि लिङ् । आगम-शासनस्यानित्यत्वाद् यासुट् न भवति]

आभुवम् यत्र समन्ताद्भवति सुख तम् (रयि= द्रव्यम्) प्र०—अत्र 'घञर्थे कविधानम्' इति क प्रत्यय ११३३७ समन्तात् भवनशीलम् (गा=बलीवर्दम्) ११५१४ **आभुवः**=समन्तात् भवन्ति ये या वा तान् ता वा (अप) १६४१ समन्तात् भवन्ति ये ते (वायव) १६४६ [आङ्+भू सत्तायाम् (भ्वा०) धातो 'घनर्थे क-विधानमि' ति क प्रत्यय]

आभुः रिक्त खड्गादिरहित सेनापति १६१० [आङ्+भू सत्तायाम् धातो 'डुप्रकरणे मितद्र्वादिभ्य उपसंख्यानम्' अ० ३३१८० इति डु प्रत्यय]

आभूभिः समन्तात् भवन्ति वीरा यासु प्रशासन-

आयताम् =आगच्छताम्, आगच्छन्तीना वा (मनुनाम् = जनानाम्) १ १६६ ७ [आङ्+इण् गतौ (अदा०) धातो शतृप्रत्यय]

आयन् समन्तात् प्राप्नुयात् २ ३० ७ **आयथुः** = सर्व राज्य रक्षेथाम् १० ३४ **आयन्** =प्राप्नुवन्ति ६.७ ४ मर्यादायामायान्तु ७ ५ ३ आगच्छन्ति प्राप्नुवन्ति ७ ५६ १२ आप्नुवन्ति १ १६३ ६ प्राप्नुयु ३ ३३ ७ प्राप्नुवन्तु १७ ५६ आगच्छन्ति २७ २५ **आयन्ति**— समन्तात्प्राप्नुवन्ति ३ ३१ १४ **आयन्तु** =समन्तात्प्राप्नुवन्तु १ ८९ १ आगच्छन्तु १६ ५८ **आयम्** =आगच्छेय प्राप्नुयाम् १ १२५ ३ [आङ्+इण् गतौ (अदा०) धातोर्लङि लटि लोटि च रूपाणि]

आयय आयाय ५ ६१ १ आगच्छत १ १६८ ० **आययुः** =समन्ताज्जानीयु प्राप्नुयुर्वा ५ ५३ ३ समन्तात् प्राप्नुयु २ ५ ५ **आयात** =अभितो गच्छत १ ८८ १ समन्तात्प्राप्नुत १ १७१ २ **आयातम्** =समन्तात्प्राप्नुतम् ३४ ४७ अभित प्राप्नुतम् ३३ ८८ समन्ताद् गच्छतो गमयतो वा प्र०—अत्र व्यत्यय, अन्तर्गतो ण्यर्थश्च १ ३ ३ समन्तात्प्राप्नुतम् ३३ ५८ समन्तात्प्राप्नुत २ ३६ ५ अभितो गच्छतम् १ ४७ २ आगच्छतम् १ १८४ ६ **आयाताम्** =आगच्छताम् ७ ४८ १ **आयाति** =समन्तात् प्राप्नोति ३४ ३१ समन्ताद् गच्छति ३३ ४३ **आयातु** =आगच्छतु २० ४७ समन्ताद् गच्छतु ५ ४५ ६ समन्तात् प्राप्नोतु ४ ४८ ५ **आयासत्** = समन्ताद् यायात् २० ४८ समन्तात्प्राप्नुयात् ४ २० १ **आयासि** =समन्ताद् याति, प्र०—अत्र पुरुषव्यत्यय १ १२ ४ **आयासिष्टम्** =आयातम् १ ११६ ४ **आयासीष्ट** =समन्तात् प्राप्नुयात्, प्र०—अत्र व्यत्ययेनात्मनेपदम् १ १६५ १५ **आयाहि** =समन्तात्प्राप्नुया १ १० १८ समन्तात्प्राप्नो भव भवति वा, अ०—कृपया प्राप्नुहि प्राप्नोति वा १ ३ ४ तू प्राप्त हो आर्याभि० १७ आगच्छ ५ ४० १ समन्तात्प्राप्नुहि ४ १६ १० आभिमुख्यतयाऽऽगच्छ १ १७७ २ समन्ताद् गच्छ १ १३४ १ समन्ताद् याति समन्तात्प्रापयति, अ०—समन्तात्प्राप्नोति १ ३ ६ आगच्छ आगच्छति वा, प्र०—अत्र पक्षे व्यत्यय १ २ १ समन्ताद् यजामि सङ्गमयामि वा, प्र०—अत्र लडर्थे लुङडभावश्च १ १४ १ [या प्रापणे (अदा०) धातोर्लङि लटि लेटि लुङि च रूपाणि]

आयत समन्ताद्धन्ति, प्र०—अत्र 'यमो गन्धने' अ० १ २ १५ इत्यनेन सिच किन्त्वम् १ ८०.१२ [आङ्+यम् उपरमे (भ्वा०) धातोर्लिङि। 'आङो यमहन' प० १.३ इत्यात्मनेपदम्। 'यमो गन्धने' इति सिच कित्त्वादनुनासिकलोप]

आयतने आयान्ति आगच्छन्ति प्राणिनो यस्मिँस्तज्जगत्तस्मिन् जगति स्थाने गृहे वा ५ ७८. [यतो वा आयातनम् उ० १८६ २५]

आयता विस्तृतानि (धनानि) ५ ८४ ६ [आङ्+यमु उपरमे (भ्वा०) धातो क्त प्रत्यय]

आयतिः समन्तात् विस्तृति १ १३८ ६ [आङ्+यमु उपरमे (भ्वा०) धातो क्तिन्। यमो वा आयति। उ० ३० २३]

आयती समन्तात् प्राप्यमाणा (गौरिवी) १ १६१ २ **आयतीनाम्** आगामिनीनामुषसाम् १ ११३ ८ आगच्छन्तीनाम् (उषसाम्) १ १२४ २ **आयतीन्** =प्राप्नुवतीम् (उषसम् - प्रभातम्) १५ २४ आगच्छन्तीम (उषसम्—पार्थिवीनाम्) ३ ६१ ६ [आङ्+इण् गतौ (अदा०) धातो शतृप्रत्यये स्त्रियां ङीपि रूपम्। (आयती) वाङ्नाम निघ० १.८]

आयते गतौ प्राप्नुवते (जिज्ञासवे जनाय) २ १३ ८ [आङ्+इण् गतौ (अदा०) धातो शतृ प्रत्यय]

आयत्याः पश्चाद्भुवा (उषस --प्रभाता) ५ ४५ १ [आङ्+इण् गतौ (अदा०) धातो शतरि ङीपि रूपम्]

आयनाय समन्ताद् विज्ञानाय २२ ७ [आङ्+अय गतौ (भ्वा०) धातोर्ल्युट्]

आयन्तम् प्राप्नुवन्तम् (अग्नि =विद्युतम्) ११ ४७ आगच्छन्तम् (शिष्यम्) १ १२५ २ [आङ्+इण् गतौ (अदा०) धातो शतृप्रत्यय। 'इणो यण्' इति यणादेश]

आयमत् समन्तादुपरमेत १२ ११५ **आयमति** = अभितो यच्छेत्, प्र०—अत्र लेटि 'बहुल छन्दसि' इति शपभाव १ १४१ ११ [आङ् +यमु उपरमे (भ्वा०) धातोर्लङ् लट् च]

आयवः ये स्वकर्मफलानि यान्ति ते मनुष्या, प्र०—आयव इति मनुष्यनाम निघ० २ ३, ३३ ६७ विद्वांस १ १३० ६ प्राप्नुवन्त (जना) १ १३६ ३ ये सूर्यमभितो यन्ति ते लोका १ १३१ २ ये पुरुषार्थ यन्ति ते मनुष्या १ १३१ २ विद्वज्जना १ १३० ३ ज्ञानवन्तो मनुष्या ४ ७४ ये सत्य यन्ति ते मनुष्या प्रजा ३३ २८ प्राप्तसत्यासत्यविवेचना. (मानुषास = मनुष्या) १ ६० ३

१६ २१ मधुराऽम्लादिमयोगयुक्ता (हवि =वस्तु) १६ २३ [समन्तान्मेपति हिनस्तीत्यामिक्षा=क्षीरविकार इति विग्रहे, (आङ्पूर्वाद् मिश गेपकृते (भ्वा०) धातो-र्बाहुलकात् स' प्रत्यय किच्च। आण्डस्य वा ऽएतद्रूप यदामिक्षा तै० १ ६ २.४]

आऽमित्रः समन्तादशत्रु (जन) ६ २८ ३ [आङ्-अमित्रपदयो समास । मित्रम्=मिनोति मान्य करोतीति विग्रहे, डुमिञ् प्रक्षेपणे (स्वा०) धातो 'अमिचिशसिभ्य क्त्र' उ० ४ १६४ सूत्रेण क्त्र प्रत्यय]

आमिनत् आहिंस्यात् ४ ३० २३ **आमिनन्ति**= समन्ताद्धिंसन्ति ५ ६४.४ [आङ्+मीञ् हिंसायाम् (क्र्या०) धातोर्लेटि रूपम् । ह्रस्वत्व छान्दसम्]

आमिनन्त समन्तात् प्रक्षिपन्ति १ ७६ २ [आङ्+डुमिञ् प्रक्षेपणे (स्वा०) धातोर्लङ् । विकरणव्यत्ययेन श्ना]

आमिनाना समन्ताद् हिंसन्ती (उषा), प्र०—मीञ् हिंसायाम्, इत्यस्य रूपम् १ ६२ १० [आङ्+मीञ् हिंसायाम् (क्र्या०) धातो. शानचि स्त्रिया टापि च रूपम् । ह्रस्वत्व छान्दसम्]

आमिनाने परस्पर प्रक्षिपन्ती पदार्थाविव (रात्र्युषसौ) प्र०—आमिनाने आमिन्वाने अन्योऽन्य याऽव्यारम कुर्वाणे इति नि० २ २०, १ ११३ २ [आङ्+डुमिञ् प्रक्षेपणे (स्वा०) धातो शानचि स्त्रिया टापि रूपम् । विकरणव्यत्ययेन च श्ना]

आमिमिक्षुः समन्तात् सिञ्चन्ति सम्बध्नन्ति ६ २६ २ अभित सिञ्चत ६ २६ ३ [आङ्+मिह सेचने (भ्वा०) धातोर्लुङ् । 'शल इगुपधात्०' इति च्ले क्स । छान्दस द्वित्वम् । 'भिजभ्यरतविदिभ्यश्चे' ति झेर्जुस्]

आमिश्लतमः समन्तादतिशयेन मिश्रित (सोम = ऐश्वर्ययोग ओषधिरसो) वा ६ २६ ४ [आङ्+मिश्रपदयो समासेऽतिशायने तमप् प्रत्यय । कपिलादित्वाद् रेफ य लकार । मिश्र =मेशति शब्दयतीति विग्रहे, मिश शब्दे (भ्वा०) धातोर्बाहुलकाद् रक् प्रत्यय]

आमिषि मासे ६ ४६ १४ [अमन्ति=रोगिणो भवन्ति येनेति विग्रहे, अम' रोगे (चुरा०) धातो 'अमेर्दीर्घश्च' उ० १ ४६ सूत्रेण टिषच् प्रत्ययो धातोरकारस्य च दीर्घ]

आमुरः समन्ताद् रोगकारिण (जना) ४ ३१ ६ [आङ्+अम रोगे (चुरा०) धातोर्बाहुलकाद् उरच् प्रत्यय]

आमुष्य चोरयित्वा ३ ४८ ४ [आङ्+मुष स्तेये (क्र्या०) धातो क्त्वा । समासे क्त्वो ल्यप्]

आमेन्यस्य समन्तान्मेयस्य (रजस =लोकस्य) ५ ४८ १ [आङ्+मा माने (अदा०) धातो कृत्यार्थे केन्य प्रत्यय]

आमेस्याने पुन पुनरहिंसन्त्यौ (द्यावाक्षामा=प्रकाशभूमी) १ ६६ ५ [आङ्+मीञ् हिंसाया (क्र्या०) धातोर्यङि शानचि टापि च रूपम्]

आयच्छ अभिता ददाति, प्र०—अत्र व्यत्ययो लडर्थे लोट् च ४ ६ **आयच्छत**=समन्ताद् गृह्णीत ८ ५१ १० **आयच्छतस्** समन्ताद् विस्तारयत, प्र०—अत्र पुरुषव्यत्ययो लडर्थे लोट् च १ १७ ८ **आयच्छतु**=निगृह्णातु ४ ३२ १५ **आयच्छन्तु** अभितो निगृह्णन्तु १ १३० २ [आङ्+यमु उपरमे (भ्वा०) धातोर्लोट् । 'इषुगमियमा छ' इति छकारादेश]

आयच्छद्भ्यः समन्ताद् निगृहीतृभ्य (राजपुरुषेभ्य) १६ २२ [आङ्+यमु उपरमे (भ्वा०) धातो शतृ । 'इषुगमियमा छ' इति छकारादेश]

आयक्षत् समन्तात् सङ्गच्छेत्पूजयेद्वा ५ १३ ३ **आयक्षि**=अभित सङ्गमयेत् १ १०५ १३ **आयज** = समन्ताद् गमय १ १८८ ६ **आयजताम्**=समन्ताद् गृह्णातु २१ ४७ **आऽयजन्त**=समन्तात् सङ्गच्छन्ते ४ ४२ ८ आभिमुख्येन ददतु १ १२१ ५ **आयजन्ते**= समन्तात् सङ्गच्छन्ते ३ ४ २ **आयजसे**=समन्तात् सुख ददसे १ ६८ २ **आयजस्व**=समन्ताद् यजस्व ७ ४ अभितो देहि ३ १ १२ [आङ्+यज देवपूजासङ्गतिकरणदानेषु (भ्वा०) धातोर्लेट् । सिब्बहुल लेटि' इति सिब्विकरण । अन्यत्र लोटि लटि च रूपाणि]

आयजाते समन्ताद् यजेत सङ्गच्छेत ६ ७० ११ आयजेत ३ ५३ ११ [आङ्+यज देवपूजासङ्गतिकरणदानेषु (भ्वा०) धातोर्लेट् आडागम]

आयजिष्ठः समन्तादतिशयितो यष्टा (गोपा =गवा पाता जन) २ ६ ६ [आङ्+यज देवपूजासङ्गतिकरणदानेषु (भ्वा०) धातो तृच् कर्त्तरि । ततोऽतिशायन इष्ठन्प्रत्यये 'तुरिष्ठेमेयस्सु' इति तृचो लोप]

आयजी समन्ताद् यज्यन्ते सङ्गम्यन्ते पदार्था याभ्या तौ स्त्रीपुरुषौ, प्र०—अत्र बाहुलकादौणादिक करणकारके इ प्रत्यय १ २८ ७ [आङ् पूर्वाद् यजदेवपूजासङ्गतिकरणदानेषु (भ्वा०) धातोर्बाहुलकाद् इ प्रत्यय]

आयत् प्राप्नुवन् (विश्व=सर्व जगत्) ३ ५५ ८

१५.६३ विदुष १.१४७.१ प्रापकस्य (मज्जनस्य) १.१७४.६ जीवनस्य ५.४६.१ सनातनात् कारणात् १.१६६.२ प्राप्तव्यस्य (वस्व =धनस्य) २.२०.४ प्राप्तु योग्यस्य (मेघस्य) प्र०—'छन्दसीरण' उ० १.२, १.१०४.४ प्राप्तस्य (अग्ने) २.४.२ आयुण ४.३८.४ **आयौ**= जीवनविषये १.११४.८ [इण् गतौ (अदा०) धातो 'छन्दसीण' उ० १.२ सूत्रेण उण् प्रत्यय । एति प्राप्नोति सर्वानित्यायुर्जीवनकाल । अथवा इण् धातो 'एतेर्णिच्च' उ० २.११८ सूत्रेण उसि प्रत्यय । णिद्वद्भावाद् वृद्धिश्च । आयुस् अन्ननाम निघ० २.७ आयुश्च वायुरयन नि० ९.३ आयोरयनस्य मनुष्यस्य ज्योतिषो वोदकस्य वा नि० १०.४०, ११.४९ आयु (एकाह)—आयुषा वै देवा असुराणामायुक्तायुते भ्रातृव्य य एव वेद ता० १६.३.२ आयु उर्वशी वा ऽप्सरा पुरूरवापतिरथ यत्तस्मान्मिथुनाद-जायत तदायु श० ३.४.१.२२ वरुण एवायु श० ४.१ ४.१० अग्निर्वा ऽआयु श० ६.७.३.७ अग्निर्वा ऽआयुष्मानायुष ईष्टे श० १३.८.४.८ संवत्सर आयु श० ४.१.४.१० यज्ञो वा आयु ता० ६.४.४ असौ लोक (द्युलोक) आयु गो० ४.१५ असावुत्तम (लोक = स्वर्लोक) आयु (सोम) ता० ४.१.७ अन्नमु वा ऽआयु श० ९.२.३.१६ आयुर्वा उद्गाता । आयु क्षत्रसंग्रहीतार तै० ३.८.५.४ प्राणो वा आयु ऐ० २.३८ यो वै प्राण स आयु श० ५.२.४.१० आयुर्वा उष्णिक् ऐ० १.५ स यो हैव विद्वान्त्सायम्प्रातराग्नी भवति सर्वꣳ हैवायुरेति श० २.४.२.६ य एव विद्वान्त्स्यान्न मृण्मये भुञ्जीत । तथा हास्यायुर्न रिष्येत तेजश्च आ० १.१ आयुर्वै विकर्णी (इष्टका) श० ८.७.३.११ आयुर्वै सहस्रम् तै० ३.८.१५.३ विदेदग्निर्नभो नामाग्ने ऽअङ्गिर आयुना नाम्नेत्याह (यजु० ५.९) श० ३.५.१.३२ अमृतमायुर्हिरण्यम् श० ३.८.२.२७ आयुर्हि हिरण्यम् श० ४.३.४.२४ आयुर्वै हिरण्यम् तै० १.८.९.१ यद्धिरण्य ददाति आयुस्तेन वर्षीय कुरुते गो० उ० ३.१९]

आयुनि प्राप्ते (स्वापत्ये =स्वकीये सन्ताने) ३.३.७ [आयु-व्याख्यातम् । तस्य सप्तम्येकवचने रूपम्]

आयुयुज्रे समन्ताद् युञ्जते ५.५८.७ [आङ्+ युजिर् योगे (रुधा०) धातोर्लिट्]

आयुयुवे समन्ताद् बध्नाति १.१३८.१ **आयुवते**= समन्ताद्युवते बध्नाति प्र०—अत्र विकरणव्यत्ययेन श १.१०५.२ [आङ्+युञ् बन्धने (क्र्या०) धातोर्लिट् । अपन्न-लाट् । विकरणव्यत्ययेन श]

आयुर्दा. आयु प्रद (परमेश्वर), अन्व०—आयुर्निमि-त्तम् ३.१७ आयु उमर बढ़ाने वाले (परमेश्वर) आर्याभि० २.३३ [आयुरुपपदे डुदाञ् दाने (जु०) धातो क प्रत्यय]

आयुर्युधः ये आयुषा सह युध्यन्ते (अ०—भृत्या, भा०—जीवनादिरक्षका वायव) १.६.६० [आयुरुपपदे युध सम्प्रहारे (दिवा०) धातो क प्रत्यय]

आयुवः प्राप्ता (धेनव =गाव) २.५.५ समन्तात् सयोजका वियोजकाश्च (मरीचय =किरणा) १.८.३९ [आङ्+यु मिश्रणेऽमिश्रणे च (अदा०) धातोरच् प्रत्यय । 'तन्वादीना छन्दसि बहुलम्' अ० ६.४.७७ वार्तिकेन उवङ्]

आयुष्पाः य आयु पाति स (आप्तो विद्वज्जन) २.२.१ [आयुषि-उपपदे पा रक्षणे (अदा०) धातो क प्रत्यय । छान्दसत्वादाकारलोपो न भवति]

आयुष्मान् बह्वायुर्विद्यते यस्य स (राजा) ३५.१७ [आयुष्प्राति० मतुप् प्रत्ययो भूम्नि । 'तसौ मत्वर्थे' अ० १.४.१९ सूत्रेण भत्वात् पदकार्य न भवति]

आयुष्यम् आयुषे जीवनाय हितम् (हिरण्य =तेजो सुवर्णादिकम्) ३४.५० [आयुर्व्याख्यातम् । ततो हितार्थे यत्]

आयूय सम्मेत्य २.३७.३ [आङ्+यु मिश्रणे ऽमिश्रणे च (अदा०) धातो क्त्वा । समासे क्त्वो ल्यप्]

आये यत्समन्तादाप्यते तस्मिन् (सङ्गथे =सङ्ग्रामे) २.३८.१० [आङ्पूर्वाद् इण् गतौ (अदा०) धातो 'एरच्' इत्यच् प्रत्यय]

आयेजे समन्ताद् याजयति १.११४.२ स्वप्रजा को सङ्गत और अनेक विध ताडन करता है आर्याभि० १.४५ [आङ्=यज देवपूजासङ्गतिकरणदानेषु (भ्वा०) धातोर्लिट्]

आयेमिरे समन्ताद् वि-तृणन्ति ३.६.८ [आङ्+ यम उपरमे (भ्वा०) धातोर्लिट् । 'आङो यमहन' इत्यात्मने-पदम्]

आयेषम् समन्तात् प्रयतेयम् २.२७.१६

आयै एतु गन्तुम् २.१८.३ [आङ्+या प्रापणे (भ्वा०) धातोश्छन्दसि कै प्रत्ययस्तुमर्थे]

आयोत्सि अभिमुख युध्यसे, प्र०—अत्र 'बहुल छन्दसि' इति स्यनभाव १.१३२.४ [आङ्+युध सम्प्र-

[आङ्+या प्रापणे (अदा०) धातो 'डुप्रकरणे मितद्र्वादिभ्य उपसंख्यानम्' इति डु प्रत्यय]

आयवसस्य पूर्णसामग्रीकरय (राज्ञ) १ १२२ १५ [आङ्-यवस-पदयोर्वहुव्रीहि]

आयवे गमनाय २ २ ८ प्रायणाय १ १४० ८ विज्ञानाय १ ३१ ११ [इण् गतौ (अदा०) धातो 'छन्दसीण' उ० १ २ सूत्रेण उ प्रत्यय]

आयसम् अयोनिर्मितम् (वज्रम्) १ ५२ ८ अयोमयम् (वज्रम्) १ ८१ ४ अयोनिर्मित शस्त्राऽस्त्रादिकम् १ १२१ ९ **आयसः**=विज्ञानात् १ ५६ ३ अयसा निष्पन्नस्तेजोमयो वा (वज्र) १ ८० १२ [अय =हिरण्यनाम निघ० १ २ अयस्प्राति० विकारार्थेऽण् प्रत्यय]

आयसी अयोमयी दृढा (पू =नगरी) ७ १५ १४ **आयसीभिः**=अयस सुवर्णनिर्मितान्याभूषणानीवेश्वरेण रचिताभि (पूर्भि =अन्नादिक्रियाभि) १ ५८ ८ अयसा निर्मिताभि (पूर्भि =नगरीभि) ७ ३ ७ **आयसीम्**=अयोविकाराम् (शस्त्राऽस्त्ररूपाम्) १ ११६ १५ **आयसीः**=सुवर्णमयीर्लोहमयीर्वा (पुर =नगर्य्य) ४ २७ १ सुवर्णलोहनिर्मिता (पुर =नगर्य्य) २ २० ८ [अय +हिरण्यनाम निघ० १ २ ततोऽवयवविकारयोऽर्थयोरण् प्रत्यय । स्त्रिया 'टिड्ढाण्०' इति ङीप्]

आयामयन्ति समन्तात् नियमयन्ति २५ ३६ [आङ्+यमु उपरमे (भ्वा०) धातोर्णिचि लटि च रूपम्]

आयासाय समन्तात् प्रापणाय, भा०—पुरुषार्थसिद्धये ३६ ११ [आङ्+यसु प्रयत्ने (दिवा०) धातोर्घञ् प्रत्यय]

आयुक्त समन्ताद् युक्तो भवति ५ १७ ३ [आङ्+युजिर् योगे (रुधा०) धातो क्त प्रत्यय]

आयुञ्जाथाम् समन्ताद् युज्येते ऋ० भू० १९७ [आङ्+युजिर् योगे (रुधा०) धातोर्लङि मध्यमद्विवचनम्]

आयुधम् समन्ताद् युध्यन्ति येन तत् (शस्त्रम्) ३ ४४ ४ असिभुशुण्डीशतघ्न्यादिकम् १६ ५१ भुशुण्डिशतघ्न्यसिधनुर्वाणशक्तिपट्टपाशादि २९ ४५ आयुध्यन्ति येन तत् (किरणवत्तीव्रस्वभाव शस्त्रम्) ५ ६३ ४ **आयुधा**=आयुधानि ५ २ ३ शस्त्राऽस्त्राणि ५ ५७ ८ आग्नेयाऽस्त्रादीनि ऋ० भू० १५१, आग्नेयादि अस्त्र और शतघ्नी (तोप), भुशुण्डी (बन्दूक), वाण, करवाल (तलवार) आदि शस्त्र स० प्र० १८४, १ ३९ २ **आयुधानि**=समन्ताद्युध्यन्ते यैस्तानि १७ ४२ शतघ्नीभुशुण्ड्यादीनि शस्त्राणि आग्नेयादीन्यस्त्राणि वा १ ६१ १३ **आयुधेभिः**=युद्धसाधनै (शस्त्राऽस्त्रै) ७ २१ ४ [आङ्+युध सम्प्रहारे (दिवा०) धातो 'घञर्थे कविधान स्थास्नापाव्याधिहनियुध्यर्थम्' अ० ३ ३ ५८ वार्त्तिकेन क । आयुधमायोधनात् नि० १० ६ आयुधा=आयुधानि नि० १० ३०]

आयुधानीव यथा वीरैर्युद्धविद्यया प्रक्षिप्तानि शस्त्राणि गच्छन्त्यागच्छन्ति तथा १ ९२ १ [व्युत्पत्ति पूर्वपदे द्रष्टव्या । आयुधानि=उदकनाम निघ० १ १२]

आयुधाय य समन्ताद् युध्यते तस्मै (सभेशाय), प्र०—अत्र 'इगुपध०' इति क प्रत्यय १६ १४ [युध सम्प्रहारे (दिवा०)+क । आङ्-युधपदयो समास]

आयुधिने ये शतघ्न्यादिभि समन्ताद् युध्यन्ते ते प्रशस्ता विद्यन्ते यस्य तस्मै (राजपुरुषाय) १६ ३६ [आयुधो व्याख्यात । ततो मत्वर्थे इनि प्रत्यय]

आयुनक् शिल्पकार्ये नियुञ्जीत १ १६३ २ [आङ्+युजिर् योगे (रुधा०) धातोर्लङ्]

आयुना जीवनेन प्रापकत्वेन वा ५ ९ **आयुभिः**=जीवनै ५ ६० ८ **आयुम्**=यन्त गच्छन्त (सभेशम्) १ ३१ ११ य एति प्राप्नोति तम् (जीवनम्) १ ५३ १० **आयुषः**=जीवनस्य १२ ६५ नियतवर्षाज्जीवनात् ११ ४६ **आयुषा**=चिरञ्जीवनेन १२ ७ अन्नेन १२ ९ जीवनेन ७ १ २४ **आयुषि**=प्राणधारणे २२ २ वयसि १९ १६ जीवनहेतौ भा०—युक्ताहारविहारेण शरीरारोग्यसन्ताने १७ ९९ जीवननिमित्ते प्राणे ,४ ५८ ११ **आयुषु**=वात्याद्यवस्थासु १ ५८ ३ **आयुषे**=पूर्णायुवर्धनेन सुखभोगाय १ २० आयुर्भोगाय ३ ६३ जीवनाय १४ २१ वृद्धये, उन्नत्यै ७ २३ वर्द्धनाय ७ २२ जीवन के लिए स० वि० १९०, अथर्व० १९ ४० ३ **आयुः**=जीवन ज्ञान वा १ ९४ १६ विद्याधर्मोपयोजक जीवनम् १ ९६ ८ चिरञ्जीवनम् १ ११६ १९ जीवनहेत्वन्नम् प्र०—आयुरित्यन्ननामसु पठितम् निघ० २ ७, १ ११३ १७ जीवनप्रदमन्नम् ३७ १२ जीवन तन्निमित्त वा ५ १७ एति जीवन येन तत् ५ २ उपर आर्याभि० २ १३, १८ २९ ज्ञाता (इन्द्र =मेधावी जन) १ १६२ १ आयु को स० वि० १४०, अथर्व० १४ २ ६४ प्राणधारणम् १ १२५ ६ जीवन प्राप्तव्य वस्तु वा १ ७३ ५ जीवन विज्ञान वा २१ २ वय १ २४ ११ **आयूंषि**=अन्नादीनि जीवनानि वा ३५ १६ **आयोः**=न्यायाऽनुगामिनो दीर्घजीवितस्य

हिंसार्थे (भ्वा०)धातोर्यङ्लुगन्ताल् लोटि छान्दस रूपम्]

आरीः ज्ञानवत्य (प्रजा), प्र०—अत्र ऋधातो 'सर्वधातुभ्य इन्' इतीन् प्रत्यय 'कृदिकारादक्तिन इति ङीप्, पूर्वसवर्णादेशश्च १ ७७ ३ समन्तादाप्तु योग्या (विश =प्रजा) १ ६६ ३]

आरीः प्राप्त होवो आर्याभि० १ ८०, ऋ १ ७ ३ ३ [ऋ गतिप्रापणयो (भ्वा०) धातोर्लुङ्]

आरुचयन्त रुचिमाचक्षते ३ ६ ७ [आङ्-रुचि-पदयो समासे 'तत्करोति तदाचष्टे' इति णिजन्ताल् लङ्, शतरि वा रूपम्]

आरुजत्नुभिः समन्ताद् भञ्जद्भि (वह्निभि = मरुद्भि) प्र०—अत्राऽऽङ्पूर्वाद् 'रुजो भङ्गे' इत्यस्माद्धातो-रौणादिक त्नु प्रत्यय १ ६ ५

आरुजः य समन्ताद् रुजति भनक्ति (इन्द्र =सूर्य) ३ ४५ २ समन्ताद् रोगयुक्ता (पुर =नगरी) ४ ३२ १० **आरुजे**=समन्ताद् रोगाय ४ ३१ २ दु खभञ्जकाय जीवाय ३६ ५ [आङ्+रुजो भङ्गे (तुदा०) धातो कर्त्तरि क्विप्]

आरुणीषु गच्छन्ति प्राप्नुवन्ति सुखानि यैस्तान्य-रुणानि यानानि तेषामिमा क्रियास्तासु १ ६४ ७ [ऋ गतिप्रापणयो (भ्वा०) धातो 'अर्त्तेश्च' उ० ३ ६० सूत्रेण उनन् प्रत्ययेऽरुण । तत 'तस्येदमि' त्यण्प्रत्यये स्त्रिया ङीपि च रूपम्]

आरुन्धानः समन्ताच्छत्रून् निरुन्धान (राज्याधिकारी जन) ४ ३८ ४ [आङ्+रुधिर् आवरणे (रुधा०) धातो शानच्]

आरुपितम् आरूढम् (नक्षत्रम्) ४ ५ ७ [आङ्+रुह बीजजन्मनि प्रादुर्भावे च (भ्वा०)धातोर्णिजन्तात् क्त । 'रुह पोऽन्यतरस्याम्' इति हकारस्य पकार]

आरुरुचे समन्ताद्रोचते १७ १० **आरुरोच**= समन्ताद् रोचते ४ ५ १५ [आङ्+रुच दीप्तावभिप्रीतौ च (भ्वा०) धातोर्लिट् । अन्यत्र व्यत्ययेन परस्मैपदम्]

आरुव समन्तात् शब्दविद्या प्रकाशय १ १० ४ [आङ्+रु शब्दे (अदा०)धातोर्लोट् । विकरणव्यत्ययेन श]

आऽरुहत् आरोहति, प्र०—अत्र लडर्थे लङ्, विकरण-व्यत्ययेन शप स्थाने श १ १० २ समन्ताद्रोहेत् १ ५१ २ **आरुहन्ति**=समन्ताद् रोहन्ति १७ ६८ **आऽरुहम्**= समन्ताद् रोहेयम् १७ ६७ **आरुहेम** - अधितिष्ठेम २१ ६ [आङ्+रुह बीजजन्मनि प्रादुर्भावे च (भ्वा०) धातोर्लङ् । व्यत्ययेन श]

आरे समीपे दूरे वा ७ ३२ १ दूरे समीपे च १ ११४ १० दूरे ७ ५६ १७ [आरे दूरनाम निघ० ३ २६]

आरे अघाम् आरे दूरेऽघ पाप यस्याम् (स्वस्ति= सुख) ६ ५६ ६ **आरे अघाः**=आरे दूरेऽघानि पापानि यासान्ता (इष =अन्नादिसामग्री) ६ १ १२ [आरे-अघपदयो समास । आरे=दूर नाम निघ० ३ २६ अघम्=आङ्+हन हिंसागत्यो धातोर्ड प्रत्यय । अघ हन्तेर्निर्ह्रसितोपसर्ग आहन्तीति नि० ६ ११]

आरैक् समन्ताद् व्यतिरिणक्ति १ ११३ १ अभि-मुखमृणक्ति ३ ३१ २ [आङ्+रिचिर् विरेचने (रुधा०) धातोर्लुङ् । छान्दसत्वाल्लेर्लुक् । आरैक् अरिचत् नि० २ १६ आरैक्=प्रारिचत् नि० ३ ६]

आरोचते समन्तात् प्रकाशते ४ ११ १ **आरो-चथाः**=समन्तात् प्रदीपयति, प्र०—अत्र व्यत्ययो लडर्थे लङ् ३ १४ [आङ्+रुच दीप्तावभिप्रीतौ च (भ्वा०) धातोर्लट् । अन्यत्र लङ् रोचते ज्वलतिकर्मा निघ० १ १६]

आरोधनम् सर्वतो निरोधनम् ४ ८ २ समन्तान्नि-रोधकम् (अग्नि=विद्युदग्निम्) ४ ८ ४ **आरोधनानि**= समन्तान्निग्रहणानि ४ ७ ८. [आङ्+रुधिर् आवरणे (रुधा०) धातोर्ल्युट्]

आरोह सर्वत प्रसिद्धो भव १० १० अ०—शत्रून् विजयस्व १० ११ समन्तादुन्नति गमय गमयति वा, अ०— समन्ताद् रोहति ३ १४ समन्ताद् दर्शयसि दर्शयति वा ४ ३२ सब ओर से तू चढ स० वि० १३८, अथर्व० १४ २ ३१ **आरोहसे**=समन्ताद् रोहसे १ ५१ १२ [आङ्+रुह बीजजन्मनि प्रादुर्भावे च (भ्वा०) धातोर्लोट् । अन्यत्र लट्]

आरोहणम् आरोहन्ति येन तत् १ ५२ ६ [आङ्+ रुह बीजन्मनि प्रादुर्भावे च (भ्वा०) धातो करणे ल्युट्]

आरोहन् समारूढ सन् जगत्यारोहण कुर्वन् वा १ ५० ११ **आरोहन्तम्**=आरोहण कुर्वन्तम् (मेघम्) २ १२ १२ [आङ्+रुह बीजजन्मनि प्रादुर्भावे च (भ्वा०) धातो शतृप्रत्यय]

आऽरोहयत् उपरि स्थापितवान् १ ७ ३ **आरो-हयः**=समन्ताद्रोहयसि १ ५१ ४ [आङ्+रुह बीजजन्मनि प्रादुर्भावे च (भ्वा०) धातोर्णिजन्ताल्लट्]

आऽर्चत् समन्तात् सत्कुर्यात् ५ ३३ ६ आऽर्चत= समन्तात् सत्कुरुत ५ ५४ १ **आऽर्चति**=समन्तात्

हारे (दिवा०) धातोर्लट् । 'बहुल छन्दसि' इति श्यनो लुक् । व्यत्ययेन परस्मैपदम्]

आयोयुवानः समन्ताद् भृश मिश्रयिता विभाजको वा (अग्नि =परमात्मा) ४ १ ११ [आङ्+यु मिश्रणेऽमिश्रणे च (अदा०) धातोर्यङि शानचि च रूपम्]

आर अभिता गच्छति ३ ३० १० **आरत्**=समन्तात् प्राप्नोति १७ ८९ **आरत**=समन्ताद् गच्छन्तु १ ४ ५ प्राप्नुत, प्र०—अत्र लोडर्थे लङ् १ ३९ ५ **आरन्**=समन्तात्प्राप्नुयु ५ ३१ १३ आचरन्तु १ १२५ ७ प्रापयति १ ४९ ३ **आरुः**=समन्ताद् गच्छेयु ३ ७ १ सर्वत प्राप्नुवन्तु ३ १४ [आङ्+ऋ गतौ (जु०) धातोर्लिटि, लुङि च रूपाणि । लुङि 'सर्तिशास्त्यर्तिभ्यश्च' त्यङ् । 'ऋदृशोऽङि' इति गुण]

आरजः लोक-लोकान्तरम् ४ ४५ २. [रजसी द्यावापृथिवीनाम निघ० ३ ३० रञ्ज रागे (भ्वा०) धातो 'भूरञ्जिभ्या कित्' उ० ४ २१७ सूत्रेण असुन् प्रत्यय]

आर्जीकात् सरलता से स० वि० १९५, ९ ११३ २ [ऋजीक सरलम्, तत प्रभवत्यर्थेऽण् प्रत्यय]

आरणे सर्वतो युद्धभावे १ ११२ ६ [आङ्-रण-पदयो समास । रण सग्रामनाम निघ० २ १७]

आरण्यम् जङ्गलोत्पन्नम् (गर्भ =शत्रुवम्) १३ ५१ **आरण्यः**=अरण्ये भव (पशु =सिंहादि) ६ ६ **आरण्यानाम्**=वनानाम् १६ २० **आरण्याः**=अरण्ये भवा, भा०—वनस्था (सिंहादय पशव) ३१ ६ [अरण्यप्रातिपदिकात् भवार्थेऽण् प्रत्यय । ऋच्छन्ति गृहाद् गच्छन्ति यत्रेति विग्रहे 'ऋ गतिप्रापणयो' (भ्वा०) धातो 'अर्त्तेर्निच्च' उ० ३ १०२ सूत्रेणान्य प्रत्यय]

आरपन्ती व्यक्तशब्द वदन्ती (सा=बुद्धि) २२ २ [आङ्+रप व्यक्ताया वाचि (भ्वा०) धातो शत्रन्तात् ङीप्]

आरभम् आरब्धुम् ५ ३४.५ [आङ्+रभ राभस्ये (भ्वा०) धातोर्णमुल् । 'रभेरशब्लिटो' अ० ७ १ ६३ सूत्रेण प्राप्तो नुमपि न भवति, आगमशासनस्यानित्यत्वात्]

आरभस्व आरम्भ कर स० वि० १८९, अथर्व० ९ ५ १ **आरभे**=समन्तात् कुर्वे, अ०—नित्य कुर्वे ४ ६ समन्तादारम्भ कुर्वे ४ ६ [आङ्+रभ राभस्ये (भ्वा०) धातोर्लोट्]

आरभे आरब्धुम् १ १८२ ७ आरब्धव्ये व्यवहारे प्र०—अत्र 'कृत्यार्थे तवैकेन्केन्यत्वन ' अ० ३ ४ १४ अनेन रभधातो केन्प्रत्यय १ २४ ५ आरब्धव्ये गमनागमने १ ४ २ [आङ्+रभ राभस्ये (भ्वा०) धातो कृत्यार्थे केन्प्रत्यय]

आरभ्य स्वसामर्थ्यमाश्रित्य १ ५७ ४ [आङ्+रभ राभस्ये (भ्वा०) धातो क्त्वा । क्त्वो ल्यप् समासे]

आरम्भणम् आरभते यस्मात्तत् १७ १८ [आङ्+रभ राभस्ये (भ्वा०) धातोर् अपादाने ल्युट् । 'रभेरशब्लिटो ' अ० ७ १ ६३ सूत्रेण नुम्]

आरया प्रतोदेन ६ ५३ ५ [ऋ गतिप्रापणयो (भ्वा०) धातो आरा शस्त्रिकायामिति भिदादिपाठाद् अङ् वृद्धिश्च]

आरात् निकटात् १९ ८८ दूरात् समीपाद्वा १ १६३. ६ निकटे २९ १७ [आरादिति दूरसमीपयोरिति कोश]

आरात्तात् दूरे ८ ३२ १. दूरात् १ १६७ ९]

आराम् काष्ठविभाजिकाम् (राजनीतिम्) ६ ५३ ८ [ऋ गतिप्रापणयो (भ्वा०) धातो 'आरा शस्त्रिकायामि' ति भिदादिपाठात् स्त्रियाम् अङ्वृद्धिश्च]

आरारन्धि समन्तादरमस्व रमते वा, प्र०—अत्र रमधातोर्लोटि मध्यमैकवचने 'बहुल छन्दसि' इति शप स्थाने श्लु, व्यत्ययेन परस्मैपदम् 'वाच्छन्दसि' इति हे पित्वाद् 'अङितश्च' इति धि १ ९१ १३ यथावत् रमण करो आर्याभि० १ ३७ [आङ्+रमु क्रीडायाम् (भ्वा०) धातोर्लोट्]

आरास्व अभितो देहि ददाति वा ४ १६ [आङ्+रा दाने (अदा०) धातोर्लोट् । व्यत्ययेनात्मनेपदम्]

आरितः सभया विज्ञापित (इन्द्र =सभाद्यध्यक्ष) १ १०१ ४ समन्तात्प्राप्त (शमादिगुणकर्मयुक्तो जन) २ २१ ३ [आङ्+ऋ गतिप्रापणयो (भ्वा०) धातोर्यङ्लुगन्तात् क्त । 'सूचिसूत्रि' अ० ३ १ २२ वा० इति यङ् । 'बहुल छन्दसी' ति यङो लुक् । इडागमश्छान्दस । प्रत्ययलक्षणेन द्वित्वे, अभ्यासस्य 'उरत्' इत्यत्वे रपरत्वे च, 'रुग्रिकौ च लुकि' इति रुगागमे' 'रो रि' इति पूर्वरेफस्य लोपे 'ढ्लोपे पूर्वस्य दीर्घोऽण ' अ० ६ ३ १०९ इति दीर्घे रूपम् । आरित प्रत्यृत नि० ५ १६]

आरिशामहे समन्तात् प्राप्नुयाम, प्र०—अत्र 'लिश गतौ' इत्य य वर्णव्यत्ययेन लस्य स्थाने रेफादेश १ १८७ ८ [आङ्+लिश गतौ (तुदा०)धातोर्लट् । व्यत्ययेनात्मनेपदम् । वर्णव्यत्ययेन लस्य रेफादेश]

आरीरिषः समन्ताद् हिंस्या १ १०४ ६ [आङ्+रिष

धातो 'अर्य स्वामीवैश्ययो' अ० ३ १ १०३ सूत्रेण यत्। अर्य =ईश्वरनाम निघ० २ २२ आर्य =ईश्वरपुत्र नि० ६ २६]

आर्षेय ऋषिषु साधुस्तत्सम्बुद्धौ (पुरुष) प्र०—अत्र छान्दसो ढक् २१ ६१ [ऋषिप्राति० 'तत्र साधु' अर्थे छान्दसो ढक्। ढस्यैयादेश]

आलाऽक्ता आलेन विषेण दिग्धा युक्ता (शूरवीरा राज्ञी) ६ ७५ १५

आव सर्वतो रक्ष २ ११ ११ **आवत्**=समन्ताद्रक्षेत् ३ ३२ २ रक्षणादिक कुर्यात् १ ८५ ७ समन्ताद्रक्षति प्रीणाति १ ३६ १७ **आवत**=समन्तात्पालयत २० ७६ विजानीत १ ६४ १३ **आवतम्**=अभिमुख पालयतम् १ ११२ २१ समन्तात्कामयतम् १ ११२ १५ सर्वतो रक्षतम् १० ३३ रक्षणीयवेद्यादिगर्त्त कुरुतम् ३३ १६ समन्ताद्विजानीतम् १ ११२ १३ **आवतु:**=कामयेताम् १ १६१ १० **आवथु.**=समन्ताद्रक्षताम्, प्र०—अत्र पुरुषव्यत्यय २० ७७ सर्वतो रक्षेथाम् १० ३४ **आवन्**=प्रकर्षेण रक्षन्ति ३ ३ १० प्राप्नुयाम ४४४ ६ **आवम्**=रक्षयेयम् ४ २६ ३ **आव:**=समन्तादवति अवेत् १३ ३ समन्ताद्रक्षे ७ १९ २ सर्वतो रक्ष ६ २६ ४ समन्तात्प्रापय १ ३३ १५ समन्ताद्रक्षति ५ ७७ २ अभिमुख रक्षेत्, प्र०—अत्र लिडर्थे लड् १ ३३ १४ समन्ताद्रक्ष प्राप्नुहि वा १ ३३ ७ प्राणिन सुखेन प्रवेशयेत् १ ३३ १४ समन्तात् कामयस्व ७ १९ ३ **आविथ**=समन्तादवति २ १३ ६ सर्वतो रक्षसि १ ५३ १० अभिमुख रक्ष १ ५१ ६ समन्ताद्रक्षे १ १३१ ५ अभित पालय १ १३१ ५ रक्षणादिक करोषि १ ५४ ६ [आङ्+अव रक्षणगतिकान्तिप्रीतितृप्त्यवगमप्रवेशश्रवणस्वाम्यर्थयाचनक्रियेच्छादीप्त्यवाप्त्यालिङ्गनहिंसादानभागवृद्धिषु (भ्वा०) धातो लोटि लङि लिटि च रूपाणि]

आवक्षत् समन्ताद् वहेत् १ १५७ ३ सर्वत प्रापयेत् १७ ६२ **आवक्षति**=समन्ताद् वहतु प्रापयतु वे० भा० न० ११२ कृपा से प्राप्त करो आर्याभि० १४ **आवक्षन्**=समन्ताद् वहन्तु प्रापयन्तु १ १०४ २ **आवक्षि**=समन्तादावह ५ ४३ १० समन्तात्प्राप्नोषि प्रापयसि वा ५ २६ १ आवह ६ ४७ ६ समन्तात् प्रापय ३ ७ ६ समन्तादुपदिशसि १७ ८ समन्ताद् वदसि ३ १४ २ सर्वथा उपदेश करो आर्याभि० १ ५२ [आङ्+वह प्रापणे (भ्वा०) धातोर्लेट्। 'सिब् बहुल लेटी' ति सिप्। आवक्षत्=आवहति नि० ८ ४२]

आवदत समन्तादुपदिशत १ ६४ ६ **आवदत**=समन्तादुपदिशत ५ १७ **आवदानि**=समन्तादुपदिशेयम् २६ २ मैं उपदेश करता हूँ स० प्र० ६७, २६ २ **आवदेम**=समन्तादुपदिशेम १ ११७ २ [आङ्+वद व्यक्ताया वाचि (भ्वा०) धातो लोटि लटि लिटि च रूपाणि]

आवदन् समन्तादुपदिशन् (उपदेशको जन) २ ४३ ३ समन्ताद् ब्रुवन् सन् (मनुष्य) १.११ ६ निरन्तर उपदेश करता हुआ (परमेश्वर) आर्याभि० १ ५३ [आङ्+वद व्यक्ताया वाचि (भ्वा०) धातो शतृप्रत्यय]

आवनसे सर्वत सम्भजसि १ १४० ११ **आवनिषीष्ट**=समन्ताद् याचेत् १ १२७ ७ **आवनेम**=आभिमुख्यतया सविभागेनातिष्ठेम १ ७० १ [आङ्+वन सभक्तौ (भ्वा०) धातोर्लटि लिङि च रूपाणि। व्यत्ययेनात्मनेपदम्। अथवा वनु याचने (तना०) धातो रूपाणि लटि व्यत्ययेन शप्]

आवनुथ: समन्तात् कामयेथे, प्र०—वनोतीति कान्तिकर्मसु पठितम् निघ० २ ६, ७ १७ [आङ् पूर्वात् वनोति कान्तिकर्मा (निघ० २ ६) धातोर्लट्]

आवपतु समन्तात् स्थापयतु ३५ ५ [आङ्+टुवप बीजसन्ताने (भ्वा०) धातोर्लोट्]

आवपनम् समन्ताद् वपति यस्मिंस्तत् (क्षेत्रम्) २३ ६ समन्ताद्वपन्ति यस्मिंस्तत् (भा०—सर्वबीजवपनार्थ क्षेत्रम्) २३ ४६ समन्तात् सर्वाऽऽधारम् (उत्पत्तिस्थानम्) २३ ४५ बीजारोपणादेरधिकरणम् क्षेत्रम् ऋ० भू० १४४ [आङ्+टुवप बीजसन्ताने (भ्वा०) धातो 'करणाधिकरणयोश्च' अ० ३ ३ ११७ सूत्रेणाधिकरणे ल्युट्। अय वै (भू) लोक आवपन महत् तै० ३ ६ ५ ५]

आवयत् समन्ताद् व्याप्नुयात् २१ ४५ [आङ्+वय गतौ (भ्वा०) धातोर्लिडर्थे लेट्]

आऽवयन्ति समन्तादवगच्छन्ति ५ ४१ १३ [आङ्+अव+इण् गतौ (अदा०) धातोर्लट्। 'इणो यण्' इति यणादेश]

आवय अभितो विद्या कामयमाना (विद्वज्जना) १ १२७ ८ समन्तात्प्राप्तविद्या (विद्वज्जना) २५ २८ [आङ्पूर्वाद् वय गतौ (भ्वा०) धातोरच् प्रत्यय]

आवया: येनाऽवयजन्ति स (अध्वर्यु =अहिंसायज्ञ-

समर्पयति १ ६ १० **आऽर्चन्**=सर्वत सत्कुर्य्यु ५ २६ २ अभितोऽर्चन्तु १ ५२ १५ [आङ्+अर्च पूजायाम् (भ्वा०) धातोर्लङ् । अन्यत्र लङपि]

आर्चत्कस्य समन्तादर्चत सत्कुर्वत शिष्टस्याऽनुकम्पकस्य (शत्रुनाशकस्य जनस्य) प्र०—अत्राऽर्चधातोर्बहुलकादौणादिकोऽति प्रत्ययस्ततोऽनुकम्पायां क प्रत्यय १ ११६ २२ [आङ्+अर्च पूजायाम् (भ्वा०) धातोरौणादिकोऽति प्रत्यय । ततोऽनुकम्पायां क प्रत्यय]

आऽर्चन् समन्तात् सत्कुर्वन् (विद्वज्जन) ५ ४५ ७ [आङ्+अर्च पूजायाम् (भ्वा०) धातो शतृप्रत्यय]

आर्जुनेयम् अर्जुनेन रूपेण निर्वृत्तम् (कुत्स=वज्रम्) प्र०—अत्र चातुरर्थको ढक् १ ११२ २३ अर्जुनेन ऋजुना विदुषा निष्पादितमिव (कुत्स=वज्रम्) ४ २६ १ **आर्जुनेयाय**=अर्जुन्या सुरूपवत्या विदुष्य पुत्राय ७ १६ २ [अर्जुन =अर्जने (भ्वा०) धातोर्णिजन्ताद् 'अर्जेर्णिलुक् च' उ० ३ ५८ सूत्रेण उनन् णेर्लुक् च । ततो निर्वृत्तार्थे ढक्, ढस्येयादेशश्च । अन्यत्र अर्जुनीप्राति० अपत्यार्थे ढक्]

आर्त्त समन्तात् प्राप्नोति ७ ३४ ७ समन्तात्प्राप्य ४ १ १७ अभिमुख प्राप्नुत ५ ५२ ६ सर्वत प्राप्नुया ४ १ १२ [आङ्+ऋत गतौ सौत्रो धातु, ततो लङ् । छान्दसत्वादीयङ् प्रत्ययो न]

आर्त्तनासु या आर्त्तयन्ति सत्ययन्ति तासु (वाणीषु) १ १२० ६ [ऋतुप्राति० 'तत्करोति०' इति णिचि 'ण्यासश्रन्थो युच्' इति युचि रूपम्]

आर्त्तवाः ऋतुषु भवा गुणा १४ २६ **आर्त्तवेभ्यः**=ऋतुजातेभ्य (पदार्थेभ्य) २२ २८ [ऋतुप्राति० भवार्थे जातार्थे वा अण्प्रत्यय । अथवा तदस्य प्राप्तमित्यस्मिन्नर्थे ऋतुप्राति० 'ऋतोरण्' अ० ५ १ १०५ सूत्रेणाण्]

आर्त्नी प्राप्यमाणे (धनुर्ज्ये) २६ ४१ गच्छन्त्यौ (योषा=पत्न्यौ) ६ ७५.४१ आर्त्न्यौ =पूर्वाऽपरयो (कोटयो) १६ ६ ['आर्त्नी' इति देवतापद साङ्ग्रामिकोपकरणस्य द्विवचनम् । आर्त्नी अर्त्तन्यौ वाग्व्यौ वारिपण्यौ वा नि० ६ ३६ 'ऋत' गतौ सौत्रो धातु, 'ऋतेरीयङ्' इति, ततो ल्युट् कर्त्तरि अर्त्तनम् । स्त्रियां ङीपि अर्त्तनी । अर्त्तनी शब्दस्यैव द्विवचने 'आर्त्नी' ति छान्दस रूपम्]

आर्त्यै कामपीडायै ३० ६ पीडानिवृत्तये ३० १७ [ऋ गतिप्रापणयो (भ्वा०) धातो क्तिन् प्रत्यय स्त्रियाम् । वृद्धिश्च मित्रादिगणे पाठाद् भवति । अनार्त्यै स्नेत्येवेतदाह यदाह व्यथायै त्वेति (व्यथा आर्ति) श० ५ ४ ३ ७]

आर्त्विज्या ऋत्विजा गुणप्रकाशकानि कर्माणि १ ६४ ६ [ऋत्विज्प्राति० भावकर्मणो ष्यञ् प्रत्यय । ऋत्विज्=ऋतूपपदे यजते क्विन्]

आऽर्दन् समन्ताद् हिंसन्ति ४ १७ २ [आङ्+अर्द हिंसायाम् (चुरा०) धातोर्लङ् । व्यत्ययेन शप् । अर्दतिवधकर्मा निघ० २ १६]

आऽर्दयः आर्दयति नयति ६ १७ १२ [अर्द गतौ (भ्वा०) धातोर् णिजन्ताल् लुङ्]

आर्द्रदानुः य आर्द्राणां गुणानां दानुर्दाता स (समुद्र) १८ ४५ [आर्द्र=अर्द गतौ याचने च (भ्वा०) धातो 'अर्देर्दीर्घश्च' उ० २ १८ सूत्रेण रक्, दानु=डुदाञ् दाने (जु०) धातो 'दाभाभ्यां नु' उ० ३ ३२ सूत्रेण नु । तयो समास । आर्द्रदानु एष (वायु) ह्यार्द्रं ददाति श० ६ ६ १ २६]

आर्द्रस्य सपङ्कस्य सागरस्य १ ११६ ४ जलेन पूर्णस्य समुद्रस्य ऋ० भू० १६० [अर्दति गच्छति याचते वा तद् आर्द्रमिति विग्रहे 'अर्द गतौ' धातोरौणादिको रक् प्रत्यय]

आऽर्पिता स्थापितानि (भुवनानि) १ १६४ १४ [ऋ गतिप्रापणयो (भ्वा०) धातोर्णिजन्तात् क्त । 'अर्तिह्री०' इति पुक् 'पुगन्तलघूपधस्ये' ति च गुण]

आर्य्यम् आर्याणामर्याणां वा इदम् (सह=बलम्) १ १०३ ३ सकलशुभगुणकर्मस्वभावेषु वर्त्तमानम् (विद्यादातार जनम्) १ १५६ ५ उत्तमगुणकर्मस्वभाव धार्मिक (सज्जनम्) ३ ३४ ६ **आर्य्यस्य**=उत्तमजनस्य ७ १८ ७ **आर्य्यः**=धर्म्यगुणकर्मस्वभाव (दास=सेवक) ३३ ८२ ब्राह्मणक्षत्रियवैश्यवर्ण (राजा) ५ ३४ ६ **आर्य्या**=धर्मिष्ठानुत्तमान् जनान् ६ ३३ ३ **आर्यान्**=धार्मिकानाप्तान् विदुष सर्वोपकारकान् मनुष्यान् १ ५१ ८ धार्मिक विद्वान् आप्त पुरुषों को स० प्र० ३०७, १ ५१ ८ विद्या, धर्मादि उत्कृष्टस्वभावाऽऽचरणयुक्त जनों को आर्याभि० १ १४ **आर्य्याय**=अर्य्यस्येश्वरस्य पुत्रवद्वर्त्तमानाय (सज्जनाय) १ ११७ २१ सज्जनाय मनुष्याय ७ ५ ६ उत्तमगुणकर्मस्वभावाय (जनाय) १ ५६ २ **आर्य्ये**=ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य, द्विज में स० प्र० ३०८ **आर्य्येण**=उत्तमविद्या-धर्मसामर्थ्येन २ ११ १६ **आर्य्याणि**=द्विजकुलानि ६ २२ १० [ऋ गतिप्रापणयो (भ्वा०) धातोर्ण्यत् प्रत्यय । अर्य-आर्यप्रातिपदिकयोर्वा 'तस्येदम्' इत्यण् । ऋ गतौ

वि० १०५, ५४१७ **आवहन्ति**=समन्तात् प्रापयन्ति, प्र०— अत्राऽन्तर्गतो ण्यर्थः ११४६ **आवहन्तु**=समन्तात् प्रापयन्तु ११६१ समन्तात् प्राप्नुवन्तु ११३४१ समन्ताद् गमयन्तु ३४३६ **आऽवहः**=समन्तात् प्राप्नुया ८१६ [आङ्पूर्वाद् वह प्रापणे (भ्वा०) धातोर्लोटि लटि लङि च रूपाणि]

आवहतम् प्रापयन्तम् (रयि=धनम्) ५७६५ आङ्+वह प्रापणे (भ्वा०) [धातो शतृ। आगमशासनस्यानित्यत्वात् नुमागमो न भवति]

आवहात् समन्तात् प्राप्नुयात् १८५६ **आवहातः**= अभित प्राप्नुत ३४३४ आवहेताम् ३३५२ **आवहान्**=समन्तात् प्राप्नुयु १८४१८ [आङ्पूर्वाद् वह प्रापणे (भ्वा०) धातोर्लेटि रूपम्। 'लेटोऽडाटौ' इत्याडागम]

आवहन्ती सर्वत सुख प्रापयन्ती (उषा =कन्या) १४८६ **आवहन्तीम्**=प्रापयन्तीम् (उषस =प्रातर्वेलाम्) ५८०१ [आङ्पूर्वाद् वह प्रापणे (भ्वा०) धातो शत्रन्तात् ङीप्]

आव. आवृण्वन्ति स्वव्याप्त्याऽऽच्छादयन्ति ता (बुध्न्या =सूर्यादयो लोका) १३३ [आङ्पूर्वाद् वृञ् आवरणे (चुरा०) धातोर्लुङ्। 'मन्त्रे घसह्वर०' इत्यादिना लेर्लुक्]

आवावृधु. समन्ताद् वर्धयन्तु ५५५३ [आङ्+ वृधु वृद्धौ (भ्वा०) धातोर्लिट्। परस्मैपदमभ्यासस्य च दीर्घत्व छान्दसत्वात्]

आवास्यम् समन्तादाच्छादयितु योग्य, सर्वतोऽभिव्याप्यम् (जगत्=प्रकृत्यादिपृथिव्यन्त जगत्), भा०— सर्वतो व्याप्तम् (जगत्) ४०१ सब ओर से व्याप्त (जगत्) को स० प्र० २३८, ४०१ [आङ्पूर्वाद् वस आच्छादने (अदा०) धातोर्ण्यत्]

आवित्त प्राप्तपूर्णभोगो लब्धप्रतीतो वा (अग्नि = पावक इव विद्वज्जन) प्र०—'वित्तो भोगप्रत्यययो' अ० ८२५८ अनेनाऽय निपातित १०६ [आङ्+विद्लृ लाभे (तुदा०) धातो क्त 'वित्तो भोगप्रत्यययो' रिति निपातनात् नकारादेशो न भवति]

आऽवित्सि समन्ताद् जानीयाम् १२८१ [आङ्+ विद् ज्ञाने (अदा०) धातोर्लट्। गुणाऽभावश्छान्दस]

आविदम् समन्तात् प्राप्नुयाम् २२८११ [आङ्पूर्वाद् विद्लृ लाभे (तुदा०) धातोर्लुङ्। लृदित्त्वादङ्]

आविद्वान् य समन्तात् सर्व वेत्ति (आप्तो विद्वज्जन) ४१६१० [आङ्+विद ज्ञाने (अदा०) धातो शतृ। 'विदे शतुर्वसु' इति शतुर्वसुरादेश । सर्वनामस्थाने नुमि हल्ङ्यादिलोपे दीर्घे च रूपम्]

आविभाति अभित प्रकाशते १७१६ समन्तात् प्रकाशते २८४ [आङ्+विपूर्वाद् भा दीप्तौ (अदा०) धातोर्लट्]

आविमोचनात् विमोचनमारभ्य ३५३२० [आङ्-विमोचनपदयो समास । विमोचनम्=वि+मुच्लृ मोचने (तुदा०) धातोर्ल्युट्]

आविरकृणोत् प्रादुर्भूत कुर्यात्, भा०—आविष्करोति ३३२६ [आवि =प्रकटीभावे, तदुपपदे डुकृञ् करणे (तना०) धातोर्लङ्। विकरणव्यत्ययेन श्नु]

आविरकृत प्रकट करोति ११२४४ [आविरुपपदे डुकृञ् करणे (तना०) धातोर्लुङ्]

आविरभवत् प्रकट भवति ४.३११ **आविर्भुवत्**= प्रकट भवेत् ४११६ [आविरुपपदे भू सत्तायाम् (भ्वा०) धातोर्लङ्। अन्यत्र व्यत्ययेन श]

आविराविवासे प्रकट समन्ताद्वासयामि ७५८५ [आविरुपपदे आङ्+वस आच्छादने (अदा०) धातोश्छान्दस रूपम्]

आविर्ऋजीक. प्रसिद्ध सरलस्वभाव (राज्याधिकारिजन) ४३८४ [आविरुपपदे ऋज गतिस्थानार्जनोपार्जनेषु (भ्वा०) धातो 'ऋजेश्च' उ० ४२२ सूत्रेण ईकन् प्रत्यय किच्च]

आविर्बभूव प्रकट भवति ५१६ [आविरुपपदे भू सत्तायाम् (भ्वा०) धातोर्लिट्]

आविर्भवन् प्रकृष्टतया भवन् (इन्द्र =सूर्य) २१५७. [आविरुपपदे भू सत्तायाम् (भ्वा०) धातो शतृप्रत्यय]

आविवाय समन्तात् सवृणोति १७१४ आभिमुख्येन गच्छेत् ११५६५ [आङ्+अज गतिक्षेपणयो (भ्वा०) धातोर्लिटि 'अजेर्व्यघञपो' अ० २४५६ सूत्रेण 'वीरादेश'। वी गतिप्रजनकान्त्यसनखादनेषु (अदा०) धातोर्वा लिटि रूपम्]

आविवास आविवसति ५८३१ **आविवासतः**= समन्तात् परिचरत ३३७६ **आविवासति**=समन्तात् सेवते, प्र०—आविवासतीति परिचरणकर्मसु पठितम् निघ० ३५, ११२६ समन्तात् परिचरति सेवते २.२६३

मिच्छुर्जन) २५ २८ य समन्तायजति सङ्गच्छते स (होतृजन) १ १६२ ५ [आङ्+अव+यज देवपूजासगतिकरणदानेपु (भ्वा०) धातो 'अवे यज' अ० ३ २ ७२ सूत्रेण मन्त्रे ण्विन् प्रत्यय । 'श्वेतवाहादीना डस् पदस्य' अ० ३ २ ७१ वा० सूत्रेण पदान्ते डसादेशे 'अत्वसन्तस्य चाधातो' अ० ६ ४ १४ सूत्रेण उपधाया दीर्घादेशे सस्य रुत्वे विसर्गादेशे च रूपम् । आवया =उदकनाम निघ० १ १२]

आवरत् आवृणुयात् १ १४३ ६ आवृणोति ३ ५ १ निवारयति १ ११३ १४ विवृणोतीव १ ११३ ४ **आवरते**=समन्तात् रवीकरोति ६ २२ ११ **आऽवः**= समन्ताद् वृणोति १ ६२ ४ [आङ्+वृञ् वरणे (स्वा०) वृञ् आवरणे (चुरा०) धातोर्वा लङ् । विकरणव्यत्ययेन शप् । 'आव' प्रयोगे लु् । 'मन्त्रे घसह्वर०' सूत्रेण लेर्लुक्]

आवरीवर्त्ति समन्ताद् भृशमावर्त्तते १ १६४ ३१ समन्ताद् भृशमावृणोति समन्ताद्वर्त्तते वा ३७ १७ [आङ्+वृतु वर्त्तने (भ्वा०) वृञ् वरणे (स्वा०) धातोर्वा यङ्लुगन्ताल् लट् । अभ्यासस्य रीगागम]

आवर्त्तयतु समन्तात् प्रवृत्त कारयतु ४ २० [आङ्+वृतु वर्त्तने (भ्वा०) धातोर्णिजन्ताल् लोट्]

आवर्जते समन्ताद् वर्जयति त्याजयति, प्र०—अत्राऽऽङ्पूर्वाद् वृजीधातोर्लट् 'वहुल छन्दसि' इति शपो लुङ् न, अन्तर्गतो ण्यर्थश्च १ ३३ १ [आङ्+वृजी वर्जने (अदा०) धातोर्लट् । 'वहुल छन्दसी' ति सूत्रेणादादित्वेऽपि शपो लुक् न भवति]

आवर्त्तयामसि समन्तात् प्रवर्त्तयाम १८ ६८ आवर्त्तयाम ३ ३७ १ [आङ्+वृतु वर्त्तने (भ्वा०) धातोर्णिजन्ताल् लट् । 'इदन्तो मसि' रिति मस इकारान्तत्वम्]

आवर्त्तयासि आवर्त्तये २३ ७ [आङ्+वृतु वर्त्तने (भ्वा०) धातोर्णिजन्ताल्लट्]

आवर्द्धयन् समन्ताद्वर्द्धयन्ति २८ १३ **आऽवर्द्धय** = आ=समन्ताद्वर्धयति २ ११ १५ [आङ्+वृधु वृद्धौ (भ्वा०) धातोर्णिजन्ताल्लङ्]

आववक्षे आभिमुख्येन वक्षति रोप सङ्घात करोति १ ६१ ६ [आङ्पूर्वाद् वक्ष रोपे (भ्वा०) धातोर्लिट् । व्यत्ययेनात्मनेपदम्]

आववर्त समन्ताद् वर्त्तते, प्र०—अत्र शप स्थाने श्लुस्तस्य स्थाने तप् च १ १६५ २ **आववर्त्तत्**=समन्ताद्वर्त्तते ६ ६ ६८.१ **आववर्त्तति**=भृश वर्त्तते ५ ७३ ७. [आङ्पूर्वाद् वृतु वर्त्तने (भ्वा०) धातो रूपाणि । 'वहुल छन्दसी' ति साभ्यासत्वम्]

आऽववर्त्तत् आवर्त्तयेत् ४ २४ १ समन्ताद्वर्त्तयते २ ३४ १४ **आववृतीय**=समन्ताद्वर्त्तयामि, प्र०—अत्र 'वहुल छन्दसि' इति साऽभ्यासत्वम् १ १८० ५ [आङ्पूर्वाद् वृतु वर्त्तने (भ्वा०) धातोर्णिजन्ताल्लङ् । 'वहुल छन्दसी' ति साभ्यासत्वम्]

आववृतन् आवर्त्तन्ते ५ ६१ १६ **आववृत्यात्**= आवर्त्तनाम् प्र०—अत्र वृतु धातोर्लिङि विकरणात्मनेपद व्यत्ययेन श्लुर्द्वित्व च ३३ ६८ **आववृत्याम्**=आवर्त्तयेयम् प्र०—अत्र व्यत्ययेन परस्मैपद, 'वहुल छन्दसि' इति शप श्लु ३ ३२ १३ **आववृत्याम**=आवर्त्तयेम ७ २७ ५ आववृत्या =समन्ताद्वर्त्तेथा १ १७३ १३ समन्तात् प्रवर्त्तये ६ ५० ६ आभिमुख्येन प्रवर्त्तय ७ ४२ ३ **आववृत्स्व**= समन्ताद्वर्त्तस्व ४ १ २ [आङ्पूर्वाद् वृतु वर्त्तने (भ्वा०) धातो रूपाणि । 'वहुल छन्दसी' ति शप श्लु]

आवव्ने सर्वत सम्भजति ५ ७४ ७ [आङ्पूर्वाद् वन सम्भक्तौ (भ्वा०) धातोर्लिट् । अकारलोपश्छान्दस । व्यत्ययेनात्मनेपदम्]

आवश्मि समन्तात् कामये ३ ८१ १४ **आवष्टि**= आभिमुख्येन कामयते ४ २२ १ [आङ्+वश कान्तो (अदा०) धातोर्लट् । 'वश्मि', 'वष्टि' कान्तिकर्मा निघ० २ ६]

आऽवसत् समन्ताद् वसेत् १ १४४ २ [आङ्+वस निवासे (भ्वा०) धातोर्लङ्]

आवसथान् निवासस्थानो को स० वि० २०६, अथर्व० ९ ६ ७ [आङ्पूर्वाद् वस निवासे (भ्वा०) धातो 'उपसर्गे वसे' उ० ३ ११६ सूत्रेण अथ प्रत्यय । समन्ताद् वसति यत्रेति विग्रह]

आवह समन्ताद् वहति प्रापयति, अ०—समन्ताद् देशान्तर प्रापयति, प्र०—अत्र व्यत्यय १ १३ ४ समन्ताद् वहसि प्रापयसि, वहति प्रापयति वा, प्र०—अत्र पक्षान्तरे पुरुषव्यत्यय १ १३ १ अभितो वह वहति वा, अ०— समन्तात् प्रापय प्रापयति वा १ १२ ३ समन्तात् प्राप्नुहि, प्र०—अत्र व्यत्ययो लडर्थे लोट् च १ २२ १० आभिमुख्येन प्राप्नुहि प्रापय वा ७ १६ ४ **आवहतम्**=सर्वत प्रापयतम् १ ९२ १७ अभिमुख प्रापयेतम् ५ ४३ १७ **आवहत**= समन्ताद् धरत ५ ४१ ७ सब ओर से प्राप्त होते हु स०

आविवासते=समन्तात् परिचरति १ ११७ १ **आविवासथ**=समन्तात् सेवेथाम् १ ११९ ६ **आविवासन्ति**=समन्तात्परिचरन्ति ४.११ ५ [आविवासतीति परिचरणकर्मा निघ० ३ ५ तस्य रूपाणि]

आविवासन् समन्तात् परिचरन् (विद्वज्जन) १ १५२ ६ **आविवासन्तः**=सर्वत परिचरन्त (विद्यार्थिजना) ५ ४५ ३ [विवासति परिचरणकर्मा (निघ० ३ ५) धातोराङ्पूर्वात् शतृप्रत्यय]

आविवसन्ती समन्तात् सेवमाना (माता) ५ ४७ १ [परिचरणार्थकाद् आविवासतेर्धातो शत्रन्तात् ङीप्]

आविवासयन्तः सत्य समन्तात् सेवमाना (कवय = विद्वज्जना) ५ ४५ ४ [आविवासते परिचरणार्थकाद् धातोर्णिजन्तात् शतृप्रत्यय]

आविवासात् समन्तात् सेवते ७ २० ६. **आविवासान्**=समन्तात् सेवन्ते २ ११ १६ [आविवासतेर्लेट्। 'लेटोऽडाटौ' सूत्रेणाट्]

आविवासे समन्तात् सेवेय ६ ५२ १७ समन्तात् सेवे ६ ५१ ८ **आविवासेत्**=समन्तात् सेवेत् ६ १६ ४६ [विवासति परिचरणकर्मा (निघ० ३ ५) धातो रूपाणि। आविवासेम परिचरेम नि० २ २४]

आविविद्रे समन्ताल्लभन्ते ३ ५४ ४ [आङ्+विद्लृ लाभे (तु०) धातोर्लिट्। 'इरयो रे' अ० ६ ४ ७६ सूत्रेण 'रे' आदेश]

आविविशुः समन्तात् प्रविशेयु ३ ७ १ आविशन्ति ५ १८ २ **आविवेश**=समन्ताद् विष्टोऽस्ति १७ १७ समन्ताद् विष्टमस्ति २३ ५० समन्तात्प्रविष्टोऽस्ति २३ ५१ समन्तात् प्रविष्टवान् ३ ३ ४ व्याप्तवानस्ति ऋ० भू० ४४ आविश ३ ३१ ५ सर्वत प्रविशति १७ ६० समन्ताद् व्याप्नोति ४ ५८ ३ समन्तादाविष्टो व्याप्तोऽस्ति २३ ४९ स्वव्याप्त्याऽऽविष्टोऽस्ति २३ ५२ सर्वत प्रविशति ५ ४७ ३ आविशति १.१६४ ३२ प्रविष्ट होके पूर्ण हो रहा है आर्याभि० २ १४ **आविवेशीः**=समन्तात् पुन पुनराविश ३ ३२ १० **आविवेशुः**=आविशन्ति ४ २३ ९ [आङ्पूर्वाद् विश प्रवेशने (तुदा०) धातोर्लिट्]

आविश समन्तात्प्राप्नुहि १ १७६ १ समन्ताद्विश ४ २७ सब ओर से प्रविष्ट वा प्राप्त हो स० वि० १३४, १० ८५ ४३ **आविशत्**=समन्ताद्विशति २ १३ १ **आविशत**=अ०—विज्ञानेन समन्तात् प्रवेश कुरुत ४ १३ समन्ताद्विशत ७ ४६ **आविशतु**=समन्तात्प्रविशतु १२ १०५ **आविशन्**=आविशन्ति ७ ५५.१ **आविशन्ति**=समन्तात् प्राप्नुवन्ति ६ ३६ ३ **आविशन्तु**=समन्तादाविष्टा भवन्तु १ ५ ७. समन्ताद्विशन्ति, प्र०—अत्र लडर्थे लोट् १ १५ १ **आविशस्व**=समन्तात्प्रविश, प्र०—अत्र व्यत्ययेनात्मनेपदम् १७ ८७. [आङ्पूर्वाद् विश प्रवेशने (तुदा०) धातोर्लोट्, लङ् च। अन्यत्र लोटि व्यत्ययेनात्मनेपदश्च]

आविशतात् समन्ताद् विशतु ३४ ५० [आङ्+विश प्रवेशने (तुदा०) धातोर्लोट्। 'तुह्योस्तातङ्ङाशिष्यन्यतरस्याम्' इति हे स्थाने तातङ्]

आविशन् आविष्ट सन् (अग्नि) ५ २५ ४ [आङ्+विश प्रवेशने (तुदा०) धातो शतृप्रत्यय]

आविशन्ती समन्तात् प्रविशन्ती (सुरा=सोमवल्ल्यादिलता) १९ ७ [आङ्+विश प्रवेशने (तुदा०) धातो शत्रन्तात् ङीप्]

आविशम् आविशन्ति यस्मिँस्तम् ४ २४ ६ [आङ्+विश प्रवेशने (तु०) धातोरविकरणे 'घञर्थे क विधानम्' इति क प्रत्यय]

आविषुः अभित स्वस्वकक्षा व्याप्नुवन्ति प्र०—अत्र लडर्थे लुङ्, अय व्याप्त्यर्थस्याऽवधातो प्रयोग १ ११ ५ प्राप्तविद्य कुर्वन्तु ४ ३६ ६ सर्वता व्याप्नुयु २३ २९ [आङ्पूर्वाद् अव रक्षणादिषु (भ्वा०) धातोर्लुङ्]

आविष्करिक्रत् प्रकृष्टतया भृश कुर्वन् (इन्द्र = ईश्वर) १ १३१ ३ [आविरुपपदे डुकृञ् करणे (तना०) धातोर्यङ्लुगन्तस्य शतरि 'दाधर्तिदर्धर्ति०' अ० ७ ४ ६५ सूत्रेणाभ्यासस्य चुत्वाऽभावोऽभ्यासककारस्य च रिगागमा निपात्यते]

आविष्कर्त्त प्रकट कुरुत, प्र०—विकरणस्यात्र लुक् १ ८६ ९ [आविरुपपदे डुकृञ् करणे (तना०) धातोर्लोट्। विकरणस्य च लुक्]

आविष्कृणवाथ प्रकट कुरुथ १८ ६० [आविरुपपदे करोतेर्लेट्। विकरणव्यत्ययेन श्नु। आविरकृत= आविष्कुरुत नि० ४ १९]

आविष्कृणुषे आविष्करोषि १ १२३ ११ **आविष्कृणुष्व**=प्रकट कुणुष्व १३ १३ प्रकट कुरु ४४.५ **आविष्कृणोति**=प्रकट करोति ५ ८३ ३ **आविष्कृणोमि**=प्रादुर्भाव करोमि १ ११९ १२ **आविष्कृण्वन्ति**=प्रकट कुर्वन्ति १ १२३ ६ [आविष्+कृ+लट् विकरणव्यत्ययेन श्नु। आवि कृणुते=आविष्कुरुते

आशाः=दिश १.७.६६ प्राप्तीच्छा १.१६२.७ [आशा दिङ्नाम निघ० १.६ आशा दिशो भवन्त्यासदनात्। आशा उपदिशो भवन्त्यभ्यशनात् नि० ६.१ 'आङ शासु इच्छायाम्' (अदा०) धातोर्वा साधनीयम्]

आशासते आशा कुर्वन्ति, भा०—समन्तात्कामयन्ते ३३.७८ समन्तादिच्छन्ति १.१६५.४ **आशास्ते**=समन्तादिच्छति १.१६३.१३ **आशास्स्व**=आभिमुख्येन शिक्ष २१.६१ [आङ शासु इच्छायाम् (अदा०) धातोर्लट्। अन्यत्र लोट्]

आशिक्षायै समन्ताद्विद्योपादानाय, भा०—सर्वतो विद्याग्रहणायाऽध्यापनाय च ३०.१० [आङ्-शिक्षापदयो समास। शिक्षा=शिक्ष विद्योपादाने (भ्वा०) धातो 'गुरोश्च हल' अ० ३.३.१०३ इत्यङ्। शिक्षति दानकर्मा निघ० ३.२० शिक्षा=देहि नि० १.७]

आशिनेभ्यः सकलविद्याव्यापकेभ्योऽध्यापकेभ्य १.२७.१३ [आङ्+अशूङ् व्याप्तौ (स्वा०) धातोर्बाहुलकात् इनन् प्रत्यय]

आशिरम् यदश्यते तत् क्षीरादिकम्, ३.५३.१४ समन्ताद् भोग्यम् (घृतम्) १.१३४.६ समन्ताद् भोगम् १.१३७.६ [आङ्+'अश भोजने' (क्रया०) धातो 'श्री पाके' धातोर्वा क्विप्। धातोश्च शीर्भावश्छान्दस। आशीर्=आश्रयणाद्वा ऽऽश्रपणाद्वा नि० ६.८]

आशिशीत समन्तात्तीक्ष्णीकुरुत ६.१६.१२ [आङ्+शिञ् निशाने (तीक्ष्णीकरणे) धातोर्लिङ्। 'बहुलं छन्दसी' ति शप श्लु]

आशिश्रेत् समन्तादाश्रयेत् ३.३८.८ [आङ्+श्रिञ् सेवायाम् (भ्वा०) धातोर्लिट्। 'बहुलं छन्दसी' ति शप श्लु]

अशिश्वीः बाल्याऽवस्था से रहित (युवतय=पूर्णयुवावस्थासम्पन्न स्त्रियाँ) स० प्र० ११०, ३.५५.१६ [नञ्-शिश्वीपदयो समास। अशिश्वी=शिशुप्राति० नञ्पूर्वात् 'सख्यशिश्वीति भाषायाम्' अ० ४.१.६२ सूत्रेण ङीष्]

आशिष न्याय्येच्छाविशिष्टा क्रिया, प्र०—शास इत्त्वे आशास: क्वावुपसङ्ख्यानम्, अ० ६.४.३४ अनेन वार्त्तिकेनाऽऽशीरिति सिद्ध २.१० चक्रवर्त्तिराज्याऽनुशासनादय इच्छा ऋ० भू० १४९ सिद्धा इच्छा १.१७९.६ आशीर्वादान् ३.४३.२ आशाए आर्याभि० २.५१, २.१० इच्छासिद्धय. (इष्टसाधिका सिद्धय) १७.५७ कामना २.१० **आशिषा**=आशीर्वादेन १.७.५.७ उत्तम शासन, सहज स्वभाव से आर्याभि० २.३०, १३.१७ [आङ्. शासु इच्छायाम् (अदा०) धातो क्विप्। धातोरुपधाया इकारादेश:। 'शासिवसिघसीनामुपसङ्ख्यानम्' इति शकारस्य षकार। आशिष.=अवेक्षणात्मकं निघ० ३.२. आशीराशास्ते. नि० ६.८.]

आशिष्ठाः अतिशयेनाऽनुगामिन (वह्नय=अश्वा) २.२४.१३ [आङ्पूर्वात् 'अशूङ् व्याप्तौ' धातोस्तृजन्तात् अतिशायने इष्ठन्। 'तुरिष्ठेमेयस्सु' सूत्रेण तृचो लोप]

आशीर्दाः य इच्छासिद्धिं ददाति स (यज्ञ) १.८.५६ [आशिष्युपपदे डुदाञ् दाने (जु०) धातो क प्रत्यय]

आशीर्वन्त. आशिष प्रशस्ता कामना भवन्ति येषाम् ते (सोमास=उत्पन्ना पदार्था), प्र०—अत्र 'शास इत्त्वे 'आशास: क्वावुपसङ्ख्यानम्' अ० ६.४.३४ अनेन वार्त्तिकेनाशीरिति सिद्धम्, तत प्रशसार्थे मतुप् 'छन्दसीर' इति वत्त्व च। सायणाचार्येण 'श्रीञ् पाके' इत्यस्मादिद पद साधितम्, तदिद भाष्यविरोधादयुक्तमस्तीति बोध्यम् १.२३.१ [आशिष्प्राति० प्रशसार्थे मतुप्। 'छन्दसीर' इति मतुपो मकारस्य वकार]

आशु सद्य. १.८४.१८ शीघ्रम् १७.३३ शीघ्रकारिणम् (सद्ग्रामम्) ५.८४.१ **आशुभिः**=अश्वैरिव क्षिप्रकारिभि (किरणै) २.३८.३ शीघ्रगन्तृभिरश्वै २.३४.३ शीघ्रगमयित्रीभिर्विद्युदादिपदार्थै २.१६.३ आशुकारिभिर्गुणै ५.६१.११ सद्योऽभिगामिभि (जनै) ५.५५.१ शीघ्र गमनागमनकारकैर्विमानादियानै. १.३७.१४ **आशुम्**=वेगादिगुणवन्तमग्निवाय्वादिपदार्थसमूहम्। प्र०—आश्विस्त्यश्वनामसु पठितम्, निघ० १.१४ 'कृवापा०' उ० १.१ अनेनाऽशूङ् धातोरुण् प्रत्यय १.४७ पूर्णमश्वान प्राप्नुवन्तम् (राजजनम्) ४.३८.२ मार्गान् सद्योऽनुवन्तम् (अर्वन्तम्=अश्वम्) ३४.२१. शीघ्र सिद्धिप्रदम् (वृजन=योगबलम्) ७.१२ शीघ्रगमकम् (अश्व=विद्युदग्निम्) १.११७.६ शीघ्रकारिण (अश्वम्) १.१३४.५ शीघ्रगमनहेतुम् (अश्वम्) १.६०.५ **आशुः**=शीघ्र गन्ता (विद्युदादिस्वरूपोऽग्नि) ४.११.४ सद्य ७.१८.६ तीव्रवेग (अश्व=तुरङ्ग) २.६.९ शीघ्रगाम्यश्व ४.२२.८ [अशूङ् व्याप्तौ (स्वा०) धातो 'कृवापा०' उ० १.१ सूत्रेण उण् प्रत्यय। आशु क्षिप्रनाम निघ० २.१५ आशु इति द्यु इति च क्षिप्रनामनी भवत निघ० ६.१ आशव क्षिप्रकारिण नि० ६.६ आशु=अश्वनाम निघ० १.१४]

आशुः प्राप्नुवन्ति ४.३३.४ समन्तादश्नीयु १६.६१

आवेः समन्ताद् विद्धि १ ६३ २ [आङ्+अव रक्षणादिषु (भ्वा०) धातोर्लिङ्]

आवोढम् आवहत २ ४१ ६ समन्ताद्वहतम् २० ८३ [आङ्+वह प्रापणे (भ्वा०) धातोर्लुङि मध्यमवहुवचनम्]

आऽव्य सर्वतो रक्षित्वा १ १६६ १३ [आङ्+अव रक्षणादिषु (भ्वा०) धातो क्त्वा । समासे क्त्वो ल्यप्]

आऽव्यन् समन्तात् कामयन्ताम् ३ ४६ १८ [आङ्+अवरक्षणादिषु (भ्वा०) धातो कर्मणि शतृव्यत्ययेन]

आऽव्ययेयम् समन्तात् प्राप्नुयाम् ३३ ५१ [आङ्+व्यय गतौ (भ्वा०) धातोर्लिङ्]

आव्याधिनीनाम् समन्तात् शत्रुसेना व्यद्धु शील यासा तासा स्वसेनानाम् १६ २० **आव्याधिनीभ्यः**=शत्रुसेनाताडनशीलाभ्य स्वसेनाभ्य १६ २४ **आव्याधिनीः**=समन्ताद् बहुरोगयुक्तास्ताडितु शीला वा (सेना) ११ ७७ [आङ्पूर्वाद् व्यध ताडने (दिवा०) धातोस्ताच्छील्ये णिनि प्रत्यय । स्त्रिया ङीप् 'ऋन्नेभ्यो ङीप्' अ० ४ १ ५ सूत्रेण]

आऽवृ आवृणोमि ४ ५५ ५ [आङ्+वृञ् वरणे (स्वा०) धातोर्लङ् । 'वहुल छन्दसी' ति विकरणलुक्]

आश अश्नाति, भा०—रुधिरादिक पिबति २५ ३२. [अश भोजने (क्र्या०) धातोर्लिट्]

आशकः समन्ताच्छक्नुहि ७ २० ६ [आङ्+शक्लृ शक्तौ (स्वा०) धातोर्लोट् । व्यत्ययेन शप्]

आशत सर्वतो व्याप्तवन्तो भवेयु', प्र०—अत्र 'अशूङ् व्याप्तौ' इत्यस्माल्लिङर्थे लुङ्प्रयोग 'वाच्छन्दसि सर्वे विधयो भवन्ति' इति च्लेरभाव १ ८ ६ अभिमुख प्राप्नुवन्ति २ २१ ५ सर्वतो व्याप्नुत २० ७२ समन्ताद् व्याप्नुवन्ति, प्र०—अत्र 'वहुल छन्दसि' इति श्नो लुक् १ ८५ २ समन्तात्प्राप्नुवन्ति, प्र०—अत्र व्यत्ययो लडर्थे लट् 'वहुल छन्दसि' इति शपो लुकि श्नोऽभावश्च १ २० २ [आङ्+अशूङ् व्याप्तौ सघाते च (स्वा०) धातोर्लुङ् लङ् च । लुङि च्ले, लङि श्नोश्चाभावश्छान्दस]

आशयत् समन्ताच्छेते १ ५२ ६ [आङ्+शीङ् शये (अदा०) धातोर्लङ् । 'वहुल छन्दसी' ति शपो लङ् न भवति । आशयदाशेते नि० २ १६]

आशयानम् आस्थितम् (वृत्र=मेघम्) २ ११ ६ य. समन्ताच्छेते तम् (मेघम्) ५ ३० ६ समन्तात्प्राप्तनिद्रमिव (शत्रुम्) ११२१ ११ समन्ताच्छयानमिव वर्त्तमानम् (अहिं=मेघम्) ४ १७.७ [आङ्+शीङ् शये (अदा०) धातो शानच्]

आशये गर्भाशय मे सर्वथा ठहरता है स० वि० १६८, अथ० २ ३ २१ [आङ् पूर्वात् 'शीङ् शये' (अदा०) धातोरधिकरणे घ प्रत्यय']

आशाते समन्तात् प्राप्नुत १ १३६ ३ **आशाथे**=सर्वतो व्याप्नुत, प्र०—'छन्दसि लुङ्लङ्लिट' अ० ३ ४ ६ इति वर्त्तमाने लिट् 'वाच्छन्दसि सर्वे विधयो भवन्ति' इति नुडभाव १ २ ८ समन्तात्प्राप्नुथ १ १५१ ८ सर्वतोव्याप्नवन्तौ स्त १ १५ ६ [आङ्+अशूङ् व्याप्तौ सघाते च (स्वा०) धातोर्लिट् । 'अश्नोतेश्च' अ० ७ ४ ७२ सूत्रेण प्राप्तोऽपि नुडागमो न छान्दसत्वात्]

आशवः वेगादिगुणसहिता सर्वक्रियाव्याप्ता (सोमास=सर्वपदार्था) १ ५ ७ शीघ्रगामिनोऽश्वा इवाऽग्न्यादय, प्र०—आशुरित्यश्वनाम निघ० १ १४, १ ११८ ४ शीघ्रगामिनोऽश्वा २ ३१ २ शुभगुणव्यापिन (कृपीवला) १ १४० ४ येऽश्नुवन्ति ते (सोमा) १ १३५ ६ आशुगामिन पदार्था ५ ६ १ **आशवे**=वायुरिवाऽश्वान व्याप्तायाऽश्वाय १६ ३१ यानेषु सर्वानिन्दन्य वेगादिगुणानाञ्च व्याप्तये १ ४ ७ [अशूङ् व्याप्तौ सघाते च (स्वा०) धातो 'कृवापाजि०' उ० १ १ सूत्रेण उण्प्रत्यये आशु । अश्नुते व्याप्नोति तदाशु शीघ्रम् । अश्नुते सद्याऽध्वानमित्याशुरश्व । आशु क्षिप्रनाम, निघ० २ १५ अश्वनाम निघ० १ १४ आशु इति शु इति च क्षिप्रनामनी भवत । नि० ६ १ आशु भार्गव भवति ता० १४ ६ ६ अहर्वा एतदव्लीयत तद्देवा आशुनाभ्यधिन्वꣳस्तदाशोराशुत्वम् ता० १४ ६ १० आशव क्षिप्रकारिण नि० ६ ५]

आशसः आशसन्ति ते (सज्जना) ५ ५६ २ काममिच्छन्त (ब्रह्मचारिणो जना) ५ ३२ ११ **आशसा**=समन्तात् प्रशसितेन (नमसा=सत्कारेण) ४५ ११ [आङ् पूर्वात् 'शसु स्तुतौ (भ्वा०) धातो कर्त्तरि क्विप् । शसनत् कान्तिकर्मा (निघ० २ ६) धातोर्वा क्विप्]

आशापालाः य आशा दिश पालयन्ति (देवा=विद्वज्जना) २२ १६ (आशा दिङ् नाम । निघ० १ ६ तदुपपदे पालयतेर्धातोरण् प्रत्यय । शत वै तस्या राजपुत्रा आशापाला श० १३ १ ६ २ अथैते देवा (आशापाला) आप्या साध्या अन्वाध्या मरुत श० १३ ४ २ २६]

आशाभ्यः दिग्भ्य, प्र०—आशा इति दिङ्नाम, निघ० १ ६, २४ १ १२. व्यापिकाभ्य (दिग्भ्य) २२ २७

आश्रीणन्ति समन्तात् पचन्ति १५ ६० [आङ्+श्रीञ् पाके (क्र्या०) धातोर्लट्। इकारस्य च ह्रस्वश्छान्दस]

आश्रिषत् समन्तादाश्रयति २५ ३४ [आङ्+श्रिञ् सेवायाम् (भ्वा०) धातोर्लङ्। सिबुत्सर्गश्छन्दसि' अ० ३ १ ३४ वा० इति सिप्]

आश्रिषत् आभिमुख्येन श्लिष्येत् १ १६२ ११ अत्राडभावो वर्णव्यत्ययेन लस्य स्थाने रेफादेशश्च [आङ्+श्लिष आलिङ्गने (दिवा०) धातोर्लङ्। विकरणव्यत्ययेन श]

आश्रुतिः समन्ताच्छ्रवण यस्या सा (पत्नी) ३७ १२ [आङ्+श्रु श्रवणे (भ्वा०) धातो स्त्रिया क्तिन्]

आश्रुत्कर्ण समन्ताच्छ्रुतौ विज्ञानमयौ श्रवणहेतू कर्णौ यस्य तत्सम्बुद्धौ (इन्द्र=जगदीश्वर) प्र०—अत्र सम्पदादित्वात् करणे क्विप् १ १० ६ [आश्रुत्-कर्ण-पदयोर्वहुव्रीहि। आश्रुत्=आङ्+श्रु श्रवणे (भ्वा०) धातो+सम्पदादित्वात् क्विप् करणे]

आश्वश्वतमाः आशव सद्योगामिनोऽश्वा विद्यन्ते येषान्ते (योद्धारो जना) ५ ४१ ४ [आशु-अश्वपदयो-र्वहुव्रीहौ, अतिशायने तमप्]

आश्वश्वाः आशुगामिनोऽग्न्यादयो अश्वा येपान्ते (वीरजना) ५ ५८ १ [आशु-अश्वपदयोर्वहुव्रीहि]

आश्वश्व्यम् आशवो वेगादयो गुणा अश्वा इव यस्मिँ-स्तम् (सुवीर्य=सुष्ठु पराक्रमम्) ५ ६ १० (अश्वप्राति० 'भवे छन्दसि' अ० ४ ४ ११० सूत्रेण यत्। आशु-अश्व्य-पदयो समास]

आश्विनम् प्रशस्ताऽश्वादियुक्तम् (रयि=धनम्) ५ ४ ११ **अश्विनोः**=सूर्याचन्द्रमसोरिदम् (तेज=प्रकाश) १६ ८ **आश्विन.**=अश्विनो सूर्याचन्द्रमसोरय मध्यवर्त्ती (प्रकाश) १८ १६ अश्विनो प्राणाऽपानगत्योरय सम्बन्धी (प्रजापति=जीव) ३६ ५ अश्विदेवताक (लोपाश=वनचरपशुविशेषोऽश्विगुण) २४ ३६ **आश्विनाः**=सूर्यचन्द्रदेवताका (पशव) २४ ३ [अश्व-प्राति० प्रशसार्थे मत्वर्थे इनि। ततस्तस्येदमिति अण्-प्रत्यये प्रकृतिभावे च रूपम्। अश्वा=अश्वसदृशा शक्तय पशुरूपा अश्वा वा सन्त्यनयोस्तस्मादश्विनौ। अश्विनौ यद् व्यश्नुवाते सर्व रसेनान्यो ज्योतिषान्य। अश्वैरश्विनावि-त्यौर्णवाभ। तत्कावश्विनौ ? द्यावापृथिव्यावित्येके। अहो-रात्रावित्येके। सूर्याचन्द्रमसावित्येके। राजानौ पुण्यकृता-वित्यैतिहासिका नि० १२ १ अश्विनौ देवते एषामिति विग्रहे वा 'साऽस्य देवता' सूत्रेणाण्। आश्विन (ग्रह) श्रौत्रमाश्विन कौ० १३ ५ श्रौत्र चात्मा चाश्विन ऐ० २ २६ (शस्त्रम्) यदश्विना उदजयतामश्विनावाश्नु-वाता तस्मादेतदाश्विनमित्याचक्षते। ऐ० ४ ८. तेषा (देवाना) अश्विनौ प्रथमावधातान्तावन्ववदन् सह नोऽस्त्विति तावब्रूताङ् किन्नो तत स्यादिति यत्कामयेथे इत्यब्रुवँ-स्तावब्रूतामस्मद्देवत्यमिदमुक्थमुच्याता इति तस्मादाश्विन-मुच्यते ता० ६ १ ३६ द्वाभ्या ह्याश्विनमित्याख्यायते कौ० १८ ५]

आष्ट समन्तादश्नुवीत, प्र०—अत्र लिङि लुङ् विकरणस्य लुक् १ १२१ ६ [अशूङ् व्याप्तौ (स्वा०) धातोर्लुङ्। विकरणस्य लुक् छान्दसत्वात् आष्ट। व्याप्ति-कर्मा निघ० २ १८]

आस अस्ति, प्र०—अत्र 'छन्दस्युभयथा' इति लिट् आर्द्धधातुकसज्ञाऽभाव ३३ ८० भवेयम् ४ २७ २ भवति ५ २ ५ वर्त्तते ५ ४४ २ **आसते**=सन्ति १ १६ ६ [अस भुवि (अदा०) धातोर्लिट्। 'छन्दस्युभयथा' इति लिट आर्द्धधातुक सज्ञाऽभावेऽस्तेर्भूर्भावो न भवति]

आस आस्ते ५ ५६ ३ **आसते**=उपविशन्ति २३ १६ स्थित है स० वि० १६७, ६ ११३ ११ उप-विष्टा सन्ति २ १३ ४ आस्ते, प्र०—अत्र 'बहुल छन्दसि' इत्येकवचनस्य बहुवचनम् ६ ४७ १६ [आस उपवेशने (अदा०) धातोर्लिट् 'दयायासश्चे' ति आम् न भवति छान्दसत्वात्।]

आसङ्कारिषत् समन्तात् सम्यक् कुर्यात् ६ ४८ १५ [आङ्+सम्पूर्वात् करोतेर्लेट्। 'सिब्बहुल णिद्वक्तव्य' इति णित्वे वृद्धि]

आसचन्त समन्तात् सेवन्ताम् १ ७३ ४ **आसचसे**=सर्वत सम्बध्नासि ४ ११ ६ **आसचस्व**=समन्तात् समवेहि १ १२६ ६ **आसचेते**=समन्तात् समवेत १ १३६ ३ [आङ्+षच समवाये (भ्वा०) षच सेचने (भ्वा०) (अय सेवनार्थेऽपि) धातोर्वा लङ्। व्यत्ययेनात्मने-पदम्]

आसजामि समन्तात् सयुनज्मि १ १६१ १० [आङ्+षञ्ज सङ्गे (भ्वा०) धातोर्लट्। 'दससञ्जस्वञ्जाम्०' इति शपि अनुनासिकलोप]

आऽसत् समन्ताद् भवतु १ १०७ १ [आङ्+अस भुवि (अदा०) धातोर्लेटि रूपम्]

आसतः निन्द्यात् (वचस) ५ १२ ४ (नञ्-सत्

[अशूङ् व्याप्तौ (स्वा०) अश भोजने (क्र्या०) धातोर्वा-लिट्। आगमशासनस्यानित्यत्वात् नुडागमो न भवति]

आशुपत्वा सद्य पतित्वा ४ २६ ४ [आशूपपदे पत्लृ गतौ (भ्वा०) धातो क्त्वा। पृषोदरादित्वाद्रूपसिद्धि.]

आशुया शीघ्रगमना (उल्का विद्युत्पाता) प्र०—अत्र जस स्थाने याऽऽदेश. १३ १० क्षिप्राणि (भ्रमास = भ्रमणानि) ४.४ २ आशुगैरश्वै ६ ४६ १४ [आशु व्याख्यातम्। तस्य प्रथमा बहुवचने जसो यादेश। 'आशु' इति क्षिप्रनाम निघ० २.१५]

आशुरथाय आशु शीघ्रगामिनो रथा यानानि यस्य तस्मै, (भा०—तूर्णगामियानस्थवीराय) १६ ३४ [आशु-रथपदयोर्बहुव्रीहि]

आशुशुक्षणि: शीघ्रकारी (अग्नि =राजमानो विद्वान् राजा वा) २ १ १ शीघ्र शीघ्रं दुष्टान् क्षिणोति हिनस्ति य (अग्नि =न्यायाधीशो राजा) ११ २७ [आशुशुक्षणि = आशु इति च शु इति च क्षिप्रनामनी भवत, क्षणिरुत्तर क्षणोते। आशु शुचा क्षणोतीति वा सनोतीति वा। आ इत्याकार उपसर्ग पुरस्ताच्चिकीर्षित ज उत्तर, आशु-शोचयिषुरिति नि० ६ १ आशु शुचा क्षणिता सनिता वार्थ]

आशुशुग्धि समन्तात् शोधय, प्रकाशय, प्र०—अत्र विकरणव्यत्ययेन श्लु १ ९७ १ [आङ्+ईशुचिर् पूतीभावे (दिवा०) धातोर्लोट्। व्यत्ययेन शप श्लु]

आशुश्राव समन्ताच्छ्रावयति ५ ५२ २ [आङ् पूर्वात् श्रुश्रवणे (भ्वा०) धातोर्लिट्]

आशुषाण: सर्वतो व्याप्नुवन् सन् (विद्वज्जन) ५ ३६ ४ आशुषाणा समन्ताद् विभजन्त (पितर = जनका) ४ २ १६ सद्यो विभाजका (प्रजाजना) ४ २ १४ समन्तात् प्राप्नुवन्तो ब्रह्मचर्येण शुष्कशरीरा वा (आप्ता जना) ४ १ १३ सद्य कुर्वाणा (आप्ता जना) २ १६ ७ [आशूपपदे षण् सम्भक्तौ (भ्वा०) धातो कर्त्तरि अण्। अथवा आङ्पूर्वाद् अशूङ् व्याप्तौ (भ्वा०) धातोर्वा छान्दस रूपम्]

आशुषाणास: शीघ्रकारिण (क्षितय =मनुष्या) ४ २४ ४ [आशु=क्षिप्र नाम। तदुपपदे षणसम्भक्तौ (भ्वा०) धातोरण्। जसोऽसुगागम]

आशुषेणाय आशु शीघ्रगामिनी सेना यस्य तस्मै, भा०—चलिष्ठसेनाय (सेनापतये) १६.३४ [आशु-सेना-पदयोर्बहुव्रीहि। 'एति संज्ञायामगात्' अ० ८ ३ ९९ सूत्रेण षकारादेश]

आशुहेमभि: शीघ्र गमयद्भि (जूतिभि =युद्ध-क्रियाभि) १.११६ २. [आशूपपदे हि गतौ वृद्धौ च (स्वा०) धातोर्मनिन् प्रत्यय.]

आशुहेमा आशून् शीघ्रकारिणो जनान् हिनोति वर्धयति स (राजा) २ १ ५ शीघ्रं वर्द्धको गन्ता वा (इन्द्र =विद्युदिव राजा) ७ ४७ २ शीघ्रं वर्द्धमान (अहि =मेघ) २ ३१ ६ [आशूपपदे हि गतौ वृद्धौ च (स्वा०) धातोर्मनिन्]

आशू शीघ्र गमयितारौ (हरी=जलाऽग्नी) २ ३५ ४

आशून्=आशुगामिन (अर्वत =अश्वान्) ६ ६० १२ [आशुरित्यश्वनाम निघ० १ १४ तस्य द्विवचने रूपम्]

आशृण्वती: या समन्ताच्छृण्वन्ति ता. (आप = प्राणा) ५ ४५ १० [आङ्+'श्रु श्रवणे' (भ्वा०) धातो शत्रन्तात् ङीप्]

आशृण्वते समन्ताच्छ्रवण कुर्वते (देवाय=नृपाय) ४ ३ ३ [आङ्+श्रु श्रवणे (भ्वा०) धातो शतृप्रत्यये रूपम्]

आशृण्वन्ति समन्तात् प्रशंसा कुर्वन्ति १ १९० ? [आङ्+श्रुश्रवणे (भ्वा०) धातोर्लट्। 'श्रुव शृ च' इति श्नु शृ आदेशश्च]

आशो: सकलविद्याव्यापकस्य (राज) ४ ३ ६ [आशुर्व्याख्यातम्। तस्य षष्ठ्या रूपम्]

आश्या: समन्ताद् भोग कुर्या १.९० ३ समन्ताद् व्याप्नुहि १ ७० १ [आङ्+अश भोजने (क्र्या०) अशूङ् व्याप्तौ (स्वा०) धातोर्लिङ्। 'बहुल छन्दसी' ति विक-रणस्य लुक्]

आश्रावयन्त इव समन्तात् श्रवण कारयन्त इव (जना) १ १३९ ३ [आङ्पूर्वात् श्रवणप्रातिप० 'तत्करोति तदाचष्टे' इति णिचि 'णाविष्ठवत्प्रातिपदिकस्ये' ति टेर्लोपे शतरि रूपम्]

आश्रवस्यात् अत्यन्त विद्या, धन-धान्य युक्त सब ओर से होवे स० वि० १०५, य आत्मन श्रव इच्छति तस्मात् (जनात्) ५ ३७.३ [आङ्+श्रवस् पदादिच्छा-यामर्थे क्यच्। ततो लिङ्]

आश्रावय समन्ताद् विद्योपदेशान् कुरु १९.२४

आश्रवयेतम्=समन्ताच्छ्रावयताम्, प्र०—वृद्ध्यभाव-श्छान्दस २ १ ९. [आङ्पूर्वात् 'श्रु श्रवणे' (भ्वा०) धातो-र्णिचि लोटि च रूपम्]

आसमाविष्करत् समन्तात् सम्यक् प्रकट कुर्यात् ६ ४८ १५ [आङ्+सम्+आविष्पूर्वात् करोतेर्लेट् । व्यत्ययेन शप्]

आसया मुखेन, प्र०—अत्र 'छान्दसो वर्णलोपो वा' इत्यास्यशब्दस्य यलोप 'सुपा सुलुग्०' इति विभक्तेर्याजादेशश्च १ २० १

आसया उपवेशनेन १ १२७ ८ [आस उपवेशने (अदा०) धातो 'ण्यासश्रन्थो युच्' इति युचि टापि आसनारूपम् । तस्य तृतीयैकवचने पृषोदरादित्वान्नकारलोप]

आसवम् समन्तादैश्वर्ययुक्तम् (सवितारम्=ईश्वरम्) २२ १३ सकलैश्वर्यहेतुम् (भगम्) २२ १४ [आङ्+षु प्रसवैश्वर्ययो (भ्वा०) धातो 'ऋदोरप्' इत्यप् । ततो मत्वर्थेऽकार]

आससाद समन्तादवसादयति १ ६७ ४ समन्तात् कृतवान् ऋ० भू० २०३ समन्तान्निवमेत् ७ ४ ५ [आङ्+षद्लृ विशरणगत्यवसादनेषु (भ्वा०) धातोर्लिट्]

आससार समन्ताद् गच्छति ४ ३० ११ [आङ्+सृ गतौ (भ्वा०) धातोर्लिट्]

आसस्राणास: समन्ताद् गतिमन्त (अश्वा +तुरङ्गा) ६ ३७ ३ [आङ्+सस्रति गतिकर्मा, निघ० २ १४ धातो शानन्ति प्रथमाबहुवचने जसोऽसुगागम । आङ्+सृ गतौ धातोर्वा कानच् । आसस्राणास =आससृवास नि० १० २]

आस: होवे स० वि० १४२, अथ० १४ २ ७५ प्राप्नुया ऋ० भू० २०८ [अस भुवि (अदा०) धातोर्लङ् । विकरणव्यत्ययेन शप]

आसा अभ्यन्ते वर्णा येन तेन मुखेन १ ७६ ४ मुखेनाऽस्मनेन वा ५ १७ २ आस्येन, प्र०—अत्र छान्दसो वर्णलोप इति यलोप २ १ १४ [आस्यप्राति० तृतीयैकवचनम् । छान्दसत्वाद् यकारलोप]

आसा उपवेशनेन ५.१७ ५ [आस उपवेशने+युच्+टाप् । टा प्रत्यये नकारलोपश्छान्दस]

आसा अन्तिके १ १२९ ५ [आसा=समीपात् निघ० २ १६]

आसाच्यम् समन्तात् साचितु समवेतु योग्यम् (शिशुम्) १ १४० ३ [आङ्+षच् समवाये (भ्वा०) धातोर्णिजन्ताद् ण्यत्]

आसात् समीपात् (देशात्) २० ४८ [आसात्=समीपात् निघ० २ १६]

आसाते उपविशत. २ ४१ ५. **आसाथे**=उपविशथ १ १५२ ३ [आस उपवेशने (अदा०) धातोर्लट्].

आसादय समन्तात् स्थापय १ २८ समन्तादासय १ ४५ ६ **आसादयतम्**=समन्तादवस्थापयतम् १४ ४ **आसादयध्वम्**=समन्तात् स्थापयत ५ ४३ १२ **आसादयात्**=समन्तात् सादयेत् पापयेत् २२ १७ समन्तात् प्रापयतु ऋ० भू० २४६ [आङ्+षद्लृ विशरणगत्यवसादनेषु (भ्वा०) धातोर्णिजन्ताल् लोट्]

आऽसादि समन्तात् सीदेत् ५ ४३ ७ [आङ्पूर्वात् षद्लृ विशरणगत्यवसादनेषु (भ्वा०) धातो कर्मणि लुङ्]

आसाधन् समन्तात् ससाध्नुवन् (मनुष्य) प्र०—अत्र व्यत्ययेन शप् ३ १ १७ [आङ्पूर्वात् साध ससिद्धौ (भ्वा०) धातो शतृ । व्यत्ययेन शप्]

आसान: आसीन (अग्नि =पुरुषार्थी विद्वज्जन) ६ १० ६ [आस उपवेशने (अदा०) धातो शानच् । 'ईदास ' इतीकारादेशो न छान्दसत्वात्]

आसानेभि: आसीनैर्ऋत्विग्भि सह ६ ५१ १२ [आस उपवेशने (अदा०) धातो. शानच् । ईकारादेशश्छान्दसत्वान्न भवति]

आसाविषत् समन्तात् सुवेत् ७ ४५ ३ [आङ् पूर्वात् षुप्रसवैश्वर्ययो । (भ्वा०) धातोर्लेट् । सिपो णित्वाद् वृद्धि]

आसिचम् समन्तात् सिक्ताम् (पूर्णा कामनाम्) ७ १६ ११ समन्तात् सेचकम् २ ३७ १ [आङ्+षिच क्षरणे (तुदा०) धातोर् इगुपधलक्षण क प्रत्यय । घञर्थे वा क]

आसिञ्चन्ती: समन्तात् सिञ्चन्त्य (अवनय +नद्य) ५ ८५ ६ [आङ्+षिच् क्षरणे (तुदा०) धातो शत्रन्तात् ङीप् । 'शे मुचादीनाम्' इति नुमागम]

आसिथ भवसि ६ ४५ १७ [अस भुवि (अदा०) धातोर्लिटि मध्यमैकवचनम्]

आसिषासति समन्ताद्विभक्तुमिच्छति ७ ३२ १४ [आङ्पूर्वात् षण सम्भक्तौ (भ्वा०) धातोरिच्छायामर्थे सन् । 'सनीवन्तर्द्धभ्रस्ज०' इटो विकल्पे 'जनसनखना सञ्झलो ' इत्यात्वे रूपम्]

आसिसक्तु समन्तात् सुखै सयोजयतु ७ ३७ ८

आसीत् अस्ति, प्र०—अत्र वर्त्तमाने लङ् १ ३२ ११ भा०—सर्वप्रकाशोऽवर्त्तत २५ १० बभूव निरु० १० २३, १३ ४ हे आर्याभि० २ ३२, १७ १८ था स० प्र० २८२ हुआ हे और होगा स० प्र० २८२, १० १२१ १ भवति

पदयो समास । 'अन्येषामपि दृश्यते' इति पूर्वपदस्य दीर्घ]

आसता समन्ताद् वर्त्तमानेन (कालेन), प्र०—अत्र 'अन्येषामपि०' इत्याद्यचो दीर्घ ४ ५ १४ [अस भुवि (अदा०) धातो शतृप्रत्यय । पूर्वस्याचो दीर्घत्वम्]

आसत्सि आसन्नोऽसि २ ६ ८ समन्ताद् दोषान् हिनस्ति प्र०—अत्र विशरणार्थस्य पद्लृधातो प्रयोग पुरुषव्यत्ययश्च १ १२ ४ समन्तात् सीदसि, प्र०—अत्र 'बहुल छन्दसि' इति शपो लुक् ३ ३० १८ [आङ् पूर्वात् पद्लृ विशरणगत्यवसादनेषु (भ्वा०) धातोर्लट् । 'बहुल छन्दसी' ति शपो लुकि सीदादेशो न भवति]

आसदत् स्वकक्षाया भ्रमति, भा०—समन्तात्प्रतिक्षण भ्रमति प्र० अत्र लडर्थे लुङ् ३ ६ समन्तात् प्राप्नुयात् ३ ११ १ आसीदतु ३ ६२ १५ आसीदति २८ ४ **आसदताम्**=आसीदेत् ७ ४२ ५ **आसदन्तु**=समन्तादवस्थापयन्ति, अ०—प्रापयन्ति । प्र०—अत्र पद्लृ-इत्यस्य स्थाने 'वाच्छन्दसि सर्वे विधयो भवन्ति' इति सीदादेशाऽभावो लडर्थे लोट् च २ ५ समन्तात्तिष्ठन्तु ३ ४ ८ समन्तात् प्राप्नुवन्तु २७ १६ आसीदन्तु ७ ४३ ३ **आसद:**=आस्स्व १२ ५६ सर्वत प्राप्नोषि १२ ३८ समन्ताद् जानीया ५ २१ ४ समन्ताज्जानीहि २ २१ ४ [आङ्+पद्लृ विशरणगत्यवसादनेषु (भ्वा०) धातोर्लुङ् । लृदित्वादङ् लोटि तु छान्दसत्वात् सीदादेशो न भवति]

आसदम् आसीदन्ति सर्वे यस्मिँस्तम् (योनिं=कारणमव्यक्तम्) ३ ६२ १३ य आसीदति तम् (जन=प्रसिद्ध विद्वज्जनम्) ४ ६ १ [आङ्+पद्लृ विशरणगत्यवसादनेषु (भ्वा०) धातोरधिकरणे घ प्रत्यय]

आसदे समन्तात् स्थित्यर्थं गमनार्थं वा ५ २६ ८ समन्तात् सीदन्ति प्राप्नुवन्ति सुखानि यया साऽऽसत्तस्यै १ १३ ७ आसादनीयाय (बर्हि=अन्तरिक्षे) ३ ४१ ६ (आङ्+पद्लृ विशरणगत्यवसादनेषु (भ्वा०) धातो सम्पदादित्वात् भावे क्विप् । आसदे=आसीदतु नि० ७ २०]

आसदे आगत्तुमुपवेष्टुम् ५ ४६ ५ [आङ्+पद्लृ विशरणगत्यवसादनेषु (भ्वा०) धातोस्तुमर्थे से प्रत्यय]

आसद्य समन्ताद्विज्ञाय स्थित्वा वा २ १८ उपविश्य ६ ६८ ११ आगत्य १२ ३६ प्राप्य १ १० ६ ५ [आङ्+पद्लृ विशरणगत्यवसादनेषु (भ्वा०) धातो क्त्वा । समासे क्त्वो ल्यप्]

आसन् सन्तु ३ ३ ७४ सन्ति १ १६४ ४३ भवन्ति १ १० ६ ७ भवेयु ५ ५२ १२ स्यु ३ ३ ७४. [अस भुवि (अदा०) धातोर्लङ्]

आसन् मुखे, प्र०—अत्राऽऽस्यशब्दस्य 'पद्दन्नोमास०' अ० ६ १ ६३ अनेनाऽऽसन्नादेश 'सुपा सुलुग्०' इति सप्तम्येकवचनस्य लुक् ७ २४ आसन आस्ये वा ५ १८ ४ आस्ये मुखे १२ ६४ **आसनि**=आस्ये ५ ६ ६ व्याप्त्यास्ये मुखे १.७५ १ [आस्यप्राति० सप्तमीविभक्ति 'पद्दन्नोमास०' अ० ६ १ ६३ सूत्रेणासन्नादेश । विभक्तेश्च लुक् छान्दसत्वात्]

आसन्दी समन्ताद्रसप्रापिका (नाभि) १९.८६ समन्तात् सन्यते सेव्यते या सा (सुक्रिया) प्र०—अत्र 'सन्' धातोरौणादिको दप्रत्ययस्ततो ङीप् १९ १६ **आसन्द्याम्**=यानाऽऽसनविशेषे ८ ५६ [आङ्+षण सभक्तौ (भ्वा०) धातोरौणादिको दप्रत्यये ङीपि च रूपम् । अथवा आङ्-पूर्वात् पदलृ विशरणगत्यवसादनेषु (भ्वा०) धातोर्वा साधनीयम् । सैषा (आसन्दी) खादिरी वितृणा भवति श० ५ ४ ४ १ इय (पृथिवी) वा वाऽआसन्द्यस्याᳫं हीद सर्वमासन्नम् श० ६ ७ १ १२]

आसन्नम् समीपस्थम्, भा०—सर्वेषा समीपम्, ईश्वरस्य समीपवर्त्तिन जीवम् (बर्हि=अन्तरिक्षम्) २८ २१. **आसन्न.**=सर्वेषा निकट. (विष्णु=हिरण्यगर्भ ईश्वर) ८ ५५ **आसन्नानाम्**=समीप बैठने हारो (सन्यासियो) के स० वि० २०६, अथर्व० ६ ६ ४ [आङ्-पूर्वात् पद्लृ विशरणगत्यवसादनेषु (भ्वा०) धातो क्त प्रत्यय । 'रदाभ्याम्०' इति दकारतकारयोर्नकारौ]

आसन्निषून् आसने प्राप्ता वाणा यैस्तान् (मयोभून्=सुवीरान्) १ ८४ १६ [आसन-इषुपदयो समास । आसनस्य स्थाने 'पदन्नोमास०' अ० ६ १ ६३ सूत्रेण आसन्-आदेश आसन्निषून्=असून्यसुवन्ति, इषून् इषुणुवन्ति नि० १३ २५]

आसपर्यन् समन्तात् सेवमान (बलाध्यक्षो न्यायाधीश) ४ १२ २ [आङ्पूर्वात् 'सपर्यति परिचरणकर्मा (निघ० ३ ५) धातो शतृ]

आसपेम सपर्यैर्नियमयेम ५ ४३ १२ [सपति परिचरणकर्मा निघ० ३ ५ अर्चतिकर्मा निघ० ३ १४ धातोराङ्पूर्वाल्लिङ्]

आसभि: आस्यै मुखै ४.४५ ३ [आस्यप्राति० भिस् । 'पदन्नोमास ०' सूत्रेण 'आसन्' आदेश]

आस्क्राः समन्तादाहूता (प्रजाजना.) ७ ४३.५ मनु-वलस्य आगितार (विश्वेदेवा = विद्वज्जना) १ १८६ २ **आस्क्रे** = आक्रमणाभावे (अहोरात्रे) ३ ५ ४]

आस्तम् आसाथाम्, प्र०—अत्र व्यत्ययेन परस्मैपदम् १ १२० ७ **आस्ताम्** = समन्तादुपविशतु ३ ४ ११ **आस्ते** = उपविशति ७ ५५ ६ तिष्ठति १७ ५६ [आस उपवेशने (अदा०) धातोर्लङि मध्यमद्विवचने रूपम्। व्यत्ययेन परस्मैपदम्]

आस्ताम् भवत १४ ३० **आऽस्तु** = समन्ताद् भवतु १ ५५ ७ [अस भुवि (अदा०) धातोर्लङि प्र ... द्विवचनम्] [अन्यत्र आङ्पूर्वाद् अस्तेर्लोट्]

आस्तृणन्ति समन्ताद् यन्त्रैश्छादयन्ति ७ ३२ आस्तृणामि समन्तात् सामग्र्याऽऽच्छादयामि २ ५ [आङ्+स्तृञ् आच्छादने (क्र्या०) धातोर्लट्। 'प्वादीनां ह्रस्वः' इति शिति परे ह्रस्व]

आस्तृता वस्त्राऽलङ्कारशुभगुणैः सम्यगाच्छादिता [राजपत्नी) १३ १६ [आङ्+स्तृञ् आच्छादने (स्वा०) धातो क्तप्रत्यये स्त्रिया टाप्]

आस्थ समन्ताद् भवत ७ ४३ ४ [आङ्पूर्वाद् 'अस भुवि' (अदा०) धातोर्लटि मध्यमबहुवचनम्]

आस्थन समन्तात् सन्ति, प्र०—अत्र 'तप्तनप्तनथनाश्च' इति थनाऽऽदेश १ १०५.५ [आङ्+अस भुवि (अदा०) धातोर्लटि मध्यमबहुवचने थस्य स्थाने थनादेशे रूपम्]

आस्थात् समन्तादातिष्ठेत् ३ ५ ७ समन्तात् तिष्ठति प्र०—अत्र लडर्थे लुङ् २ ८ समन्तात्तिष्ठेत् ३ १४ १. [आङ्+ष्ठा गतिनिवृत्तौ (भ्वा०) धातोर्लुङि 'गातिस्थाघु०' इति सिचो लुकि रूपम्]

आस्थाता समन्तात् स्थिर सेनापति २६ ५२ आस्थायुक्त (राजा) ६ ४७ २६ [आङ्+ष्ठा गतिनिवृत्तौ (भ्वा०) धातोस्तृच् कर्त्तरि]

आस्थाथः समन्ताद् भवथ ४.४६ ४ [आङ्+ष्ठा गतिनिवृत्तौ (भ्वा०) धातोर्लटि मध्यमद्विवचनम्। छान्दसत्वात् तिष्ठादेशो न भवति]

आस्थानात् आस्थाया ११.३८ निवासस्थानस्य सकाशात् ११.२१ [आङ्+ष्ठा गतिनिवृत्तौ (भ्वा०) धातोरधिकरणे ल्युट्]

आस्थितम् निश्चितम् (जीवनलक्ष्यम्) ६ १५ [आङ्+ष्ठा गतिनिवृत्तौ (भ्वा०) धातो क्त.। 'द्यतिस्यति० इतीत्वम्]

आस्थिवांसः समन्तात् स्थिता. (पञ्चजना) ५ ८७ २ [आङ्+ष्ठा गतिनिवृत्तौ धातोर्लिट् क्वसु। छान्दसत्वाद् द्वित्व न]

आस्नुः समन्तात् स्थिताः १ ११५ ३ गर्त्तारोहानजानु १ १२३ ११ [आङ् ... । 'गातिस्था०' इति सिचो लुक्]

आस्नः आस्यान्मुखात् १ ११६ १८ **आस्ना** = आस्येन ५ ७३ ६ **आस्ने** —आस्याय मुखाय २ ३८ ६ [आस्यप्राति० पञ्चमी-तृतीया-चतुर्थीषु रूपाणि। 'पद्दन्नोमास्०' इति सूत्रेण 'आसन्' आदेश। 'अल्लोपोऽनः' इत्यलोप]

आस्मयेते समन्तादीषद्धसत ३ ४ ६ [आङ्+ष्मिङ् ईषद्धसने (भ्वा०) धातोर्लट्]

आस्महे कुर्महे ऋ० भू० १६६, प्र सं० १३ ४४७ [आस उपवेशने (अदा०) धातोर्लटि उत्तमबहुवचनम्]

आस्माकः योऽस्माकमुपदेष्टाऽधिपतिर्वा स (उपदेष्टा) ४ २४ [अस्मद् सर्वनाम्न शैषिकोऽण्। 'तस्मिन्नणि च युष्माकास्माकौ' अ० ४ ३ २ सूत्रेण अस्माकादेश]

आस्यत् क्षिपेत् क्षिप्यात् ८ ३० २० [असु क्षेपणे (दिवा०) धातोर्लङ्]

आस्यम् मुखम् २ १३ ८ मुखमिव प्रमुखम् (आननमध्यागतम्) २ १ १३ **आस्ये** = मुखे २१ ५० प्रज्वलिते ज्वालामयमुखेऽग्नौ ११ ७८ **आस्येन** = आस्यन्ति क्षिपन्ति यस्मिंस्तेन (मुखेन) २५ १ अस्यन्ति क्षिपन्ति उदरेऽन्नादिकं येन तदास्यं तेन मुखेन, प्र०—ओष्ठात् प्रभृति प्राक्काकलकादास्यम्, प० ११६ इति महाभाष्ये २ ११ [आस्यतेऽस्मिन् , आस्यन्दतेऽन्नमिति वा नि० १ ६]

आह वदति ४ ३३ ५ ब्रूयात् ७ १८ ४ प्रतिवदेत् २ २८ १० उपदिशति ५ ३७ १ उपदेश करता है ऋ० भू० वि० १५६, ८ ४१ २ ब्रूते ४ १८ १० (ब्रूञ् व्यक्तायां वाचि (अदा०) धातोर्लट्। 'ब्रुव पञ्चानामादित आहो ब्रुव' इति सूत्रेण लट परस्मैपदानामादितः पञ्च णलादयो धातोश्चाहादेश]

आहनस्याय वीररसाय वादित्रवादनेषु साधवे, भा०—अत्युत्तमानि वादित्राणि यस्य तस्मै (पुरुषाय) १६ ३५ [आहनने साधुरिति विग्रहे आहननप्राति० साध्वर्थे यत्। आङ्पूर्वाद् हन् धातोर्ल्युटि = आहननम्। आङ्पूर्वस्य हन्तेरुच्चारणार्थे प्रयोग। यथा आहत्य तूर्यो

१४ २८ [अस् भुवि (अदा०) धातोर्लङ् । 'अस्तिसिचो-ऽपृक्ते' इतोडागम । आसीत्=बभूव नि० १० २३.]

आसीद समन्तात् स्थिरो भव १७ ७३ समन्तात् सादयति प्र०—अत्र लडर्थे लोडन्तर्गतो ण्यर्थो व्यत्ययश्च, अभित सीदति गमयति, सर्वत सीदति प्राप्नोति, समन्तात्प्रापयति २ ६ समन्तात्प्रापयसि प्रापयति वा ४ ३६. **आऽसीदत्**=सर्वत सादयसि सादयत्यवस्थापयति वा ४.३० **आसीदत**=सर्वतो देशान्तर गच्छत १ ८५ ६ **आसीदताम्**=समन्तात् प्राप्नुत ११४२ ७ **आसीदन्तु**=समन्तादास्ताम् ५ २६ ६ आभिमुख्यतया सीदन्तु १ ४४ १३ [आङ्+षद्लृ विशरणगत्यवसादनेषु (भ्वा०) धातोर्लोट् लङ् च । शिति सीदादेश]

आसीनः उपविष्ट सन् (उपदेशको जन) २ ४३ ३ हमारे हृदय मे सदा स्थिर (परमात्मा) आर्याभि० १ ५३ **आसीनाः**=स्थिरा (कृतकृत्या विद्वज्जना) ३ ३१ १२ **आसीनाय**=स्थिताय (जनाय) २२ ७ **आसीनेभ्यः**=आसनोपरिस्थितेभ्य (राजपुरुषेभ्य) १६ २३ [आस उपवेशने (अदा०) धातो शानच् । 'ईदास' इतीकारादेश]

आसीनासः उपस्थिता सन्त (पितर =वृद्धा जना) १६ ६३ [आसीनो व्याख्यात । तस्य प्रथमाबहुवचने रूपम्]

आसुतः समन्ताद्रोगनिवारणे सेवित (सोम = महौषधिरस) १६ ५ [आङ्+षु प्रसवैश्वर्ययो (भ्वा०) धातो क्त प्रत्यय]

आसुता समन्तान्निष्पादिता (क्रिया) १६ १४. [आङ्+षु प्रसवैश्वर्ययो (भ्वा०) धातो क्तप्रत्यये स्त्रिया टापि रूपम्]

आसुतिम्=समन्ताद् जन्मभावम् २ १ १४ प्रजाम् १ १०४ ७. [आङ्+षु प्रसवैश्वर्ययो (भ्वा०) धातो स्त्रिया क्तिन्]

आसुरस्य=मेघभवस्य (महीम्=वाणीम्) ५ ८५ ५ **आसुरः**=असुरो मेघ इव ५ ४० ६ अनुद्भूतरूप (सूर्य) ५ ४० ५ असुरे प्रकाशरूपरहिते वायौ भव (अग्नि) ३ २६ ११ **आसुरात्**=असुरस्य मेघस्याऽय तस्मात् १६ ३४ मेघात् २० ६७ **आसुरे**=असुरस्य मेघस्याऽय व्यवहारस्तस्मिन्, प्र०—असुर इति मेघनाम निघ० १ १०, १० ३२ [असुर =असु क्षेपणे (अदा०) धातो 'असेरुरन्' उ० १ ४२ सूत्रेण उरन् । अस्यति प्रक्षिपति धर्म शुभगुणाश्च सोऽसुर । असुरप्राति० भवार्थे, इदमर्थे वाण् प्रत्यय । असुर इति मेघनाम निघ० १ १०]

आसुरी येऽसुषु प्राणेषु रमन्ते तेषा स्वा (माया= प्रज्ञा) ११ ६६ [असुरप्राति० तस्येदमर्थेऽण्प्रत्यये स्त्रिया ङीप् । असुरा=असुरता स्थानेष्वस्ता स्थानेभ्य इति वा । अपि वासुरिति प्राणनामास्त शरीरे भवति तेन तद्वन्त नि० ३ ८]

आसुव समन्तात् प्रेर्ध्व १६ ३८ समन्तादुत्पादय कृपया प्रापय ऋ० भू० ३. समन्ताज्जनय ३ ५४ ११ प्राप्त कीजिए स० वि० ४, ३० ३ **आऽसुवत्**=सर्वत ऐश्वर्ययोग कुर्यात् १ ११० ३ **आसुवन्ति**=समन्तादुत्पादयन्ति ४ ५४ ६ **आसुषाव**=समन्तान्निष्पादयेत्, भा०—आसव निस्सारयेत् १६ २ [आङ्+षु प्रसवैश्वर्ययो (भ्वा०) धातोर्लोट् । अन्यत्र लङ् लट् लिट् च । विकरणव्यत्ययेन श]

आसुषूदति समन्ताद् ददाति १ १०५ १४ [आङ्+षूद क्षरणे (भ्वा०) षूद क्षरणे (चु०) धातोर्णिजन्ताल्लुङ् । च्लेश्चङ् । इकारलोपो न छान्दसत्वात्]

आसुः भवन्ति ६ १६ ४. आसन् ४ ५१ ७ सन्ति ६ २१ ५ [अस भुवि (अदा०) धातोर्लिट् । अस्तेर्भूभावोऽपि न, 'छन्दस्युभयथेति' लिट आर्धधातुकसज्ञाया अभावात्]

आसुः दोषान् प्रक्षिपेयु १ १७६ २ [असु क्षेपणे (दिवा०) धातोर्लिट्]

आसूर्यम् स्वय प्रकाशस्वरूप सूर्यादि का प्रकाशक परमात्मा है उसको स० वि० १६८, १० ७२ ७ [आङ् पूर्वात् सूसर्तिभ्या क्यप्, सर्तेरुत्व सुवतेश्च रुडागम 'राजसूयसूर्य०' अ० ३ १ ११४ सूत्रेण निपातनात्साधु । सरति सुवति वा सूर्य]

आसृजत समन्ताद्विविधतया प्रकाशयत सम्पादयत वा १ ६ २ [आङ्+सृज विसर्गे (तुदा०) धातोर्लोट्]

आसे मुखे ७ २० ३ [आस्यप्राति० सप्तम्येकवचने रूपम् । आस्यस्य स्थाने 'पद्दन्नोमास०' सूत्रेणासन् आदेश । 'अयस्मयादीनि च्छन्दसि' ति अजादावपि पदत्वान्नकारलोप]

आसेचनानि समन्तात् सेचनाधिकरणानि (पात्राणि) १ १६२ १३ समन्तात् सिञ्चन्ति यैस्तानि (पात्राणि) २५ ३६ [आङ्+षिच् क्षरणे (तु०) धातो 'करणाधिकरणयोश्च' इति ल्युट्]

आसोषवीति अभिविध भृश सुवति ३ ५६ ७ [आङ्+षु प्रसवैश्वर्ययो (भ्वा०) धातोर्यङ्लुकि लटि रूपम्]

आस्कन्दम् समन्तादुत्प्लुत्य गमनम् २३ ५६ **आस्कन्दाय**=समन्ताच्छोषणाय ३० १८ [आङ्+स्कन्दिर् गतिशोषणयो (भ्वा०) धातोर्भावे घञ्]

समन्तात् स्पर्द्धित शब्दित (अग्निम्) वा ५ ८ ६ समन्ताद्व्रत-दीक्षादिकर्मभि स्वीकृतम्, भा०—सुपरीक्षित वर्त्तुमर्हम् (पतिम्) ३४ १० समन्तात् स्वीकृतम् (हवि =अन्नम्) १ ६४ ३ समन्ताद् गृहीतम् (हवि =उत्तममन्नम्) २ १ १३ समन्तात् प्रदत्तम् (पुरोडाश=अन्नविशेषम्) ३ २८ ३ समन्तात् कृताऽऽह्वानम् (विद्वासमध्यापकम्) ३ ५२ ६ समन्तात् प्रक्षिप्तम् (हव्य =द्रव्यम्) ? ३२ ६ विद्वद्भि समन्तात् सत्कृतम् (अग्नि =परमेश्वरम्) १ ६६ ३ जिसको हम दीनता से कहते है उस (ईश्वर) को अपना सर्वथा पुकारते है आर्याभि० १ ४० **आहुतस्य**=सर्वत कृतप्रियस्य (अग्ने) ७ ३ ५ **आहुत:**=समन्तात् सङ्-गृहीतो धर्म इव (अग्नि =पावक) १५ ३८ सम्यक् स्वीकृत (अग्नि =विद्युत्) ७ १ १६ समन्तात्तर्पितो हुतो वा (अग्नि =सभाद्यध्यक्षो विद्वान् पावको वा १८ ५७ सर्वत. कृताऽऽह्वान (अग्नि =सूर्य) ३३ ६ समन्तात् कृतसत्कार (उद्यमी विद्वज्जन) ६ १६ ३४ [आङ्+हु-दानाऽऽदानयो (जु०) धातोर्निष्ठासञ्ज्ञक क्त । अथवा आङ्-पूर्वाद् ह्वेञ् स्पर्धाया शब्दे च (भ्वा०) धातो क्त । 'वचिस्वपियजादीना किती' ति सम्प्रसारणम् आहुतम् अभिहुतम् नि० ७ २५]

आहुतिम् या समन्ताद्धूयते ताम् (सामग्रीम्) ६ १ ६ समन्ताद् ग्रहणम् १ १३५ ८ समन्ताद् वेद्या प्रक्षिप्ताम् (सामग्रीम्) २ ३७ ६ समन्ताद्धूयन्ते गृह्यन्ते शुभानि यया ताम् (क्रियाम्) १ ३१ ५ समन्ताद् घृतादिसुसंस्कृताम् (क्रियाम्) १ ६३ ३ **आहुति:**=होम, प्रलय १ १०५ ५ **आहुती**=आदातव्ये (क्रिये) २१ ५२ **आहुती:**=या आहूयन्ते प्रदीयन्ते ता १६ १६ [आङ्+हु दानादानयो (जु०) धातो स्त्रिया क्तिन् । आहुतिर्हि यज्ञ श० ३ १ ४ १ द्वे वा आहुती सोमाहुतिरेवान्याज्याहुतिरन्या श० १ ७ २ १० तद् यदाहूयति तस्मादाहुतिर्नाम श० ११ २ २ ६ आहुतयो वै नामैता यदाहुतय एताभिर्वै देवान् यजमानो ह्वयति तदाहुतीनामाहुतित्वम् ऐ० १ २ तस्मिन्नग्नौ यत् किञ्चाभ्यादधात्याहितय एवास्य ता आहितयो ह वै ता आहुतय इत्याचक्षते परोक्षम् श० १० ६ २ २

आहुवध्यै आह्वयितुम् ६ ६० १३ समन्ताच्छब्दयितु-मुपदेष्टु श्रोतु वा, प्र०—अत्र 'ह्वेञ्' इत्यस्मात् 'तुमर्थे सेसेन०' इति कध्यै प्रत्यय ३ १३ [आङ्+ह्वेञ् स्पर्धाया शब्दे च (भ्वा०) धातो 'तुमर्थे सेसेन०' इति सूत्रेण तुमर्थे कध्यै प्रत्यय । 'वचिस्वपियजादीना किती' ति सम्प्रसारणम्]

आहुवामहे समन्तात् स्पर्द्धामहे ५ ५६ ८ (आङ्+ह्वेञ् स्पर्धाया शब्दे च धातोर्लट । 'बहुल छन्दसि' अ० ६ १ ३४ सूत्रेण सम्प्रसारणम् 'बहुल छन्दसी' ति शपो लुक् । उवङादेशश्च । आहुवामहे=आह्वयामहे नि० ११ ५०]

आहुवे समन्तादाददामि गृह्णामि वा १ १११ ४ आदद्मि ७.१६ १ आह्वये, भा०—प्रकटये १५ ३२ [आङ्+हु दानादानयो (जु०) धातोर्लट् । 'बहुल छन्दसी' ति शपो लुक् । अथवा=आङ्+ह्वेञ् स्पर्धाया शब्दे च (भ्वा०) लट् । 'बहुल छन्दसि' अ० ६ १ ३४ सूत्रेण सम्प्र-सारणम् । 'बहुल छन्दसी' ति शपो लुकि, उवङादेशे च रूपम्]

आहु: कथयन्ति १ १६४ १६ कथयन्तु ५ ३० २ कथयेयु ५ ५३ ३ उपदिशन्ति ३ ७ ८ वदन्ति १५.४६ [ब्रूञ् व्यक्ताया वाचि (अदा०) धातोर्लट् । 'ब्रुव पञ्चाना-मादित आहो ब्रुव' अ० ३ ४ ८४ सूत्रेण प्रथमबहुवचन उस्, आहादेशश्च धातो]

आहूर्य: आह्वातव्य, प्र०—अत्र ह्वेञ् धातोर्बाहुल-कादाक् रुडागमश्च १ ६६ २ [आङ्+ह्वेञ् स्पर्धाया शब्दे च (भ्वा०) धातोर्बाहुलकाद् यकि रुडागमे कृते, कित्वाद् यजादित्वात् सम्प्रसारणे च रूपम्]

आऽहूषत आभिमुख्येनाऽऽह्वयन्ति शिल्पार्थं स्पर्ध-यन्ति वा, प्र०—अत्र लडर्थे लुङ् 'बहुल छन्दसि' इति सम्प्रसारण च १ १४ २ (आङ्+ह्वेञ् स्पर्धाया शब्दे च (भ्वा०) धातोर्लुङ् । 'बहुल छन्दसि' अ० ६ १ ३४ सूत्रेण सम्प्रसारणम्]

आह्लादुनीवृत: ये ह्लादुन्या शब्दकर्त्र्या विद्युता युक्ता (मरुत =मानवा) ५ ५४ ३ [आह्लादुनी= आङ्+ह्लाद अव्यक्ते शब्दे (भ्वा०) धातोर्बाहुलकाद् उनन् प्रत्यये स्त्रिया ङीप् । वृत =वृञ् वरणे (स्वा०) धातो क्त । तयो समास]

आऽह्वयन्त आह्वयन्ते ४ ६ ६ **आह्वये**=समन्तात् शब्दयेयम् ५ ५६ १ आह्वामहे समन्तात् स्पर्धामहे ३ ५३ [आङ्+ह्वेञ् स्पर्धाया शब्दे च (भ्वा०) धातोर्लङ् । 'आह्वामहे' प्रयोगे 'बहुल छन्दसि' सूत्रेण शपो लुकि 'आदेच उपदेशेऽशिती' त्यात्वे रूपम्]

इक्षव: इक्षुदण्डा, गुडादिनिमित्ता (इक्षुदण्डा) २५ १ [इष इच्छायाम् (तुदा०) धातो 'इषे क्सु' उ० ३ १५७ सूत्रेण क्सु । इष्यते इति इक्षु]

इङ्गय गमय ४ ५७ ४ **इङ्गयन्ति**=चेष्टन्ते १ १६४ ४५ [इगि गत्यर्थे (भ्वा०) धातोर्णिजन्ताल् लोट् लट् च]

यच्छास्त्रम् (अ० ७ १ ६५. सूत्रे महाभाष्ये) ब्राह्मण इदमाहृतमित्यन्यत्र प्रयोग.]

आहनाः या आहन्यन्ते ता (वाच) ५ ४२ १३ व्याप्ता (अप =जलानि) २ १३ १ [आङ्+हन हिंसागत्यो (अदा०) धातोर् (सर्वधातुभ्योऽसुन्' उ० ४ १८९ सूत्रेणासुन्। आहन =आहसीव नि० ५ २ आहनम = आहननवन्त नि० ४ १५]

आहलक् समन्ताद्धल विलेखनमञ्चति स (राजा) २३ २२ समन्ताद्विलिखित यश स्यात्तथा २३ २३ [आङ् पूर्वाद् 'हल विलेखने' (भ्वा०) धातोरचि=आहल । तदुपपदे 'अञ्चु गतिपूजनयो (भ्वा०) धातो क्विप्]

आहवनानि समन्ताद् दानानि ७ १.१७ सत्कारपूर्वकनिमन्त्रणानि ७ ८ ५ [आङ्+हु दानाऽऽदानयो (जु०) धातोर्भावे ल्युट्]

आहवनीयः आहवनीय अग्नि अर्थात् जिसमे ब्रह्मचर्याश्रम मे ब्रह्मचारी होम करता है स० वि० २ १०, अथर्व०, ९ ६ १३ [आङ्+हु दानाऽऽदानयो (जु०) धातोरनीयर् प्रत्यय । आहवनीय (अग्नि) द्यौराहवनीय श० ८ ६ ३ १४ यद्वाऽऽहवनीयमुपतिष्ठने । दिव तदुपतिष्ठते श० २ ३ ४ ३६ एप वै स यज्ञ येन तद्देवा दिवमुपोदक्रामन्नेप आहवनीयोऽथ य इहाहीयत स गार्हपत्यस्तस्मादेत (आहवनीय) गार्हपत्यात् प्राञ्चमुद्धरन्ति श० १ ७ ३ २२ यज्ञो वा आहवनीय' स्वर्गो लोक ऐ० ५ २४, २६ स्वर्गो वै लोक आहवनीय प० १ ५ तै० १ ६ ३ ६ देवयोनिर्वाऽ एप यदाहवनीय श० १२ ९ ३ १० इन्द्रो ह्याहवनीय. श० २ ६ १ ३८ तस्य (राज्ञ) पुरोहित एवाहवनीयो भवति ऐ० ८ २४ शम इत्याहवनीय जै० उ० ४ २६.१५ प्राणादानावेवाहवनीयश्च गार्हपत्यश्च श० २.२ २ १८ यज्ञ आहवनीय श० १.७ ३ २६ यजमान आहवनीय तै० ३ ३ ७ २ एतदायतनो यजमानो यदाहवनीय ता० १२ १० १९ यजमानदेवत्यो वा आहवनीय तै० १ ६ ५ ३ यद्वा आहवनीयमुपतिष्ठने । पशूंस्तद्याचते श० २ ३ ४ ३२ योनिर्वै पशूनामाहवनीय कौ० १८ ६ गो० उ० ४ ६ आहवनीयो वा आहुतीना प्रतिष्ठा श० २ ४ ३ १० सामवेदादाहवनीय (अजायत) प० ४ १ शिरो वै यज्ञस्याहवनीय पूर्वोऽर्धो वै शिर पूर्वार्धमेवैतद् यज्ञस्य कल्पयात श० १ ३ ३ १२ आहवनीयो वै यज्ञस्य शिर श० ६ ५ २ १ (पुरुपस्य) मुखमेवाहवनीय कौ० १७ ७ मुखमेवास्य (यज्ञस्य) आहवनीय श० ३ ५ ३.३]

आहवन्ते अभित स्पर्धन्ते प्रेप्सन्ते १ ६३ ६ समन्तादाददति ३ ४३ २ [आङ्+हु दानाऽऽदानयो (जु०) धातोर्लट् । 'बहुल छन्दसी' ति शप श्लुर्न भवति बहुलवचनात्]

आहवम् प्रतिष्ठाह्वानम् १ १५५ ६ [ह्वेञ् स्पर्धाया शब्दे च (भ्वा०) धातो' 'भावेऽनुपसर्गस्य' अ० ३ ३ ७५ सूत्रेणाप सम्प्रसारणञ्च भावे । तत =आङ्-हवपदयो समास]

आहवामहे अभित स्वीकुर्वीमहि, प्र०—लेट्—प्रयोगोऽयम् ४ ५ [आङ्+हु दानाऽऽदानयो (जु०) धातोर्लेट्]

आहवेषु सङ्ग्रामेषु ६ ४७ १ [आङ्+ह्वेञ् स्पर्धाया शब्दे च (भ्वा०) धातो 'आङि युद्धे' अ० ३ ३ ७३ सूत्रेणाप्प्रत्यय सम्प्रसारणञ्च]

आऽहार्षम् समन्ताद् हरेयम् १२ ११ [आङ्+हृञ् हरणे (भ्वा०) धातोर्लुङि उत्तमैकवचनम्]

आहावम् समन्तात् स्पर्धनीयम् (अग्निम्) ६ ७ २ [आङ्+ह्वेञ् स्पर्धाया शब्दे च (भ्वा०) धातो स्पम् । आहाव आह्वानाद् नि० ५ २६]

आहावाः निपानसदृशा मार्गा जलाधारा वा, प्र०—निपानमाहाव., अ० ३ ३ ७४ इति निपातनम् १ ३४ ८ [आङ्+ह्वेञ् स्पर्धाया शब्दे च (भ्वा०) धातो 'निपानमाहाव ' अ० ३ ३ ७४ सूत्रेण सम्प्रसारणमप्प्रत्ययो वृद्धिश्च निपात्यते । वागाहाव ऐ० ४ २१ ब्रह्म वा आहाव ऐ० २ ३३]

आहितम् स्थितम् (ज्योति +प्रकाशक ब्रह्म) ६ ९ ६ **आहितः**=समन्ताद् धृत २८ ११ स्थापित सन् (चन्द्रमा) ऋ० भू० १४४ [आङ्+डुधाञ् धारणपोपणयो (जु०) धातो क्त । दधातेर्हि' रिति धातोर्हिरादेश]

आहिता सर्वत स्थापिता (वाणीची=वाक्) ५ ७५ ४ (आङ्+डुधाञ् धारणपोपणयो (जु०) धातो. क्त । दधातेर्हिरि' ति धातो. स्थाने हिरादेश]

आहिनुहि समन्ताज्जानीहि १ १४३ ४ (आङ्+हि गतौ वृद्धौ च (भ्वा०) धातोर्लोट्]

आहुत बहुभि सत्कृत (अग्ने=विद्वन्राजन्) ७ १५ ७ तृप्ति प्राप्त (अग्ने=प्रकाशमय सेनापते) १७ ५० समन्तात् कृताऽऽह्वान (अग्ने=प्रकाशयुक्त राजन्) ३ २४ ३ सत्कारेण निमन्त्रित (विद्यार्थिजन) ५ ११ ३ **आहुतम्**=

यदिडा श० १ ८ १ ११ एतद्ध वै मनुर्विभयाचकार इद वै मे तनिष्ठ यज्ञस्य यदियमिडा पाकयज्ञिया श० १ ८ १ १६ मनुर्ह्येतामग्रेऽजनयत तस्मादाह मानवी (इडा) इति श० १ ८ १ २६ सा (इडा) वै पश्वावत्ता भवति श० १ ८ १ १२]

इडस्पदे पृथिव्यन्नस्थाने, भा०—ससारस्य मध्ये २१ २६ [इड्-पदयो समास । षष्ठ्या अलुक्]

इडावान् वहन्नयुक्त (अग्नि =विद्वज्जन) ४ २ ५ [इडा शब्दादातिशायने मतुप् । इडेति पृथिवीनाम निघ० ११ अन्ननाम निघ० २ ७]

इडेन्यः प्रशसनीयधर्म्यकर्मा (अतिथि) ५ १ ९ [ईळ स्तुतौ (अदा०) धातोर्बाहुलकाद् औणादिक एण्य प्रत्यय । केन्य प्रत्ययो वा कर्त्तरि छान्दसत्वात्]

इत् एति जानात्यनेन तदिज्ज्ञानम् ३ ३४ ईयते प्राप्यते सोऽयमित् तस्माद् देशात् प्र०—अत्र कर्मणि क्विप्, तत 'सुपा सुलुग्०' इति डसेर्लुक् १ ४ ५ [इण् गतौ (अदा०) धातो कर्मणि क्विप्]

इत् निश्चये १ १०४ ५ ही आर्याभि० २० ४५, ३४ ३८ अपि २० ५४ इव १ ७१ ३ चार्थे १ २११ किन्तु स० प्र० ९१, १ १६४ ३९ पादपूरणार्थे १ ६१ १४ एव ६.६१ ८ [इत् पदपूरण नि० १ ९ महान् नि० ६ १]

इत प्राप्नुत ३३ ४७ प्राप्नुवन्ति ३ ४७ यन्तु प्राप्नुवन्तु ३ २७ [इण् गतौ (अदा०) धातोर्लोट्]

इत ऊतिः इत ऊति रक्षा यस्मात्तत् (ऐश्वर्यम्) १ १५१ ९ **इत ऊतिः**=इत ऊती रक्षणाद्या क्रिया यस्मात् स (सूर्य) १ १४६ २ [इत -ऊतिपदयो समास । इत = इदम् सर्वनाम्नस्तसिल् । ऊति =अव रक्षणादिषु (भ्वा०) धातो 'ऊतियूति०' अ० ३ ३ ९७ सूत्रेण क्तिन् प्रत्ययान्तो निपात्यते]

इतन प्राप्नुत ३ २९ ९ प्र०—अत्र 'इण गतौ' इत्यस्माल्लोटि युष्मद् वहुवचने 'तप्तनप्तनथनाश्च' अ० ७ १ ४५ इति तनवादेश ५ ८७ ८ [इण् गतौ (अदा०) धातोर्लोटि मध्यमवहुवचने त प्रत्ययस्य स्थाने तनवादेश]

इतरजनानाम् इतरे च ते जना इतरजनास्तेपाम् २४ ३६ [इतर-जनपदयो कर्मधारय]

इतः अस्मात् (स्थानात्) २ ८ अस्माच्छरीरान्मर्त्यलोकाद्वा ३ ६० अस्मात्कारणात् १ ९८ १ अस्माद्वर्त्तमानाध ते १ ११९ ८ इस हेतु से स० वि० १४५, ४ २ [इदम् सर्वनाम्न 'पञ्चम्यारतसिल्' इति तसिल् । 'इदम इश्' इति इशादेश । 'तद्धितश्चासर्वविभक्ति' रित्यव्ययसज्ञा]

इतः प्राप्त (प्रेरको विद्वान्) १९ २ प्राप्ता. (रक्षादिक्रिया) १ १३० ५ [इण् गतौ (अदा०) धातो क्त]

इति प्रकाराऽन्तरे ६ २२ अनेन प्रकारेण ४ ३३ ५ इव १२ ६४

इत्था अस्माद्धेतो. ३३ २७ अनेन प्रकारेणाऽस्माद्धेतोर्वा ६ ४७ २० एव प्रकारेण ४ ४१.३ अनेन हेतुना ३ ९ ५ धारणपालनवृद्धिक्षयहेतुना, प्र०—अत्र 'था हेतौ च छन्दसि' अ० ५ ३ २६ इति था प्रत्यय १ २ ६ अस्मादिव ६ १८ ५ इत्थमस्मै हेतवे १ ९२ १७ [इदम् सर्वनाम्न प्रकारवचने 'था हेतौ च च्छन्दसि' अ० ५ ३ २६ सूत्रेण थाप्रत्यय 'एतेतौ च रथो ' इति थकारादौ प्रत्यये परत इदम 'इत्' आदेश । इत्था सत्यनाम, निघ० ३ १० पदनाम निघ० ४ २ इत्था=अमुत्र नि० ४ २५]

इत्थाधिये अनेन प्रकारेण धीर्यस्य त म (मर्त्याय= मनुष्याय) ४ ११ ३ **इत्थाधीः**=अनेन हेतुना धीर्धारणावती बुद्धिर्यस्य स (इन्द्र =विद्वज्जन) २ २० २ [इत्थाधीपदयो समास । इत्था व्याख्यातम् । धी =ध्यै चिन्तायाम् (भ्वा०) धातो 'ध्यायते सम्प्रसारणम्' अ० ३ २ १७८ वा० इति क्विप् सम्प्रसारणञ्च]

इत्य आगत्य ऋ० भू० २८९, अथर्व० १५ ११ २ [इण् गतौ (अदा०) धातो क्त्वा । क्त्वो ल्यप् छान्दसत्वात् । 'क्त्वाऽपि छन्दसि' अ० ७ १ ३८ सूत्रेऽपि पदेन सर्वोपाधिव्यभिचारादसमासेऽपि ल्यप्]

इत्या एमि जानामि यया रीत्या सा १८ १५ एतुमर्हा क्रिया १२ ६२ प्राप्तु योग्या (स्त्री) १ १६७ ५ **इत्याम्**= एतुमर्हां क्रियाम् १२ ६२ **इत्याः**=एतु प्राप्तु योग्या (धेनव =गाव) ७ ३६ ३ **इत्यै**=सङ्गत्यै प्राप्तये वा १ ११३ ६ [इण् गतौ (अदा०) धातो 'सज्ञाया समजनिषद०' अ० ३ ३ ९९ इति सूत्रेण स्त्रिया क्यप् । ततष्टाप् । 'ह्रस्वस्य पिति कृति तुग्' इति तुगागम]

इत्यै प्रापयितुम् १ १२४ १ [इण् गतौ (अदा०) धातो स्त्रिया भावे क्यप् प्रत्यये टापि चतुर्थ्या रूपम् । 'तुमर्थाच्च भाववचनात्' अ० २ ३ १५ सूत्रेण चतुर्थी]

इत्वा प्राप्य ३२ १२ [इण् गतौ (अदा०) धातो क्त्वा]

इथः प्राप्नुथ १० १६ [इण् गतौ (अदा०) धातोर्लटि

इच्छ भा०—गृहाण १२ ६२ **इच्छति**=काङ्क्षति १८० ६ [इष इच्छायाम् (तुदा०) धातोर्लोट् । 'इषुगमियमा छ' इति शिति छकारादेश]

इच्छत इच्छते ऋ० भू० २५१, अथर्व० ११ ५ १७ **इच्छते**=इच्छा करता है म० वि० १८०, अथर्व० ११ ५ १७ स्वीकुर्यात् ऋ० भू० २३७ **इच्छस्व**=तू इच्छा कर स० प्र० १५४, ऋ० १० १० **इच्छन्त**=इच्छन्तु, प्र०—अत्र व्यत्ययेनात्मनेपदम् १ ६८ ४ [इष इच्छायाम् (तुदा०) धातोर्लोट् षकारस्य छकारादेशश्शिति]

इच्छन्तः श्रद्धालवो भूत्वा (जना) १७२ २ इच्छा करते हुए (ऋषय=वेदविद्जना) स० वि० १६८, अथर्व० १६ ४१ १ [इष इच्छायाम् (तुदा०) धातो शतृप्रत्यये 'इषुगमियमा छ' इति शिति छत्वे च रूपम्]

इच्छन्ती इच्छा करती हुई (वधू) स० वि० १०५, ५ ३७ ३ **इच्छन्ती**.=इच्छन्त्य (गाव इव वीतय) प्र०—अत्र 'सुपा सुलुग्०' इति पूर्वसवर्ण १ २५ १६ [इष इच्छायाम् (तुदा०) धातो शत्रन्तात् ङीप्]

इच्छमानः उत्पन्न करना चाहता हुआ (परमेश्वर) आर्याभि० २ ३०, १७ १७ अत्र व्यत्ययेनाऽऽत्मनेपदम् १७ १७ **इच्छमानाः**=इच्छन्त (मेधाविनो जना) प्र०—व्यत्ययेनाऽत्राऽऽत्मनेपदम् १ ११० ५ अभिलषन्त (परिषद=सभा) ३ ३३ ७ [इष इच्छायाम् (तुदा०) धातोर्लट स्थाने शानच् । शिति षकारस्य छत्वे 'आने मुग्' इति मुकि रूपम्]

इच्छमानासः भा०—सेवमाना (ऋत्विजो नर=नेतारो जना) ३ २ ६ [इच्छमानो व्याख्यात । तस्य प्रथमा बहुवचने जसोऽसुगागम]

ईट्टे स्तौति १ १३४ ५ [ईड स्तुतौ' (अदा०) धातोर्लट्]

इडया अन्नादिनिमित्तरूपया पृथिव्या १२ ७४ प्रशसितया वाचा ५ ४ ४ **इडः** प्रशमनीयस्य (अधिकारस्य) प्र०—इड इति पदनाम निघ० ५ २ अत्रेडधातोर्बाहुलकादौणादिक क्विप्, आदेर्ह्रस्वश्च १५ ३० वाण्या प्र०—अत्र 'जसादिषु छन्दसि वावचनम्' इति याडभाव २८ १ विद्याप्राप्तये स्तोतुमर्ह (अग्नि=प्रत्यक्षो भौतिक), दाहप्रकाशादिगुणाधिक्येन स्तोतुमर्ह (अग्नि=विद्युत्) २ ३ अन्नम् ११ २६ **इडा**=ईड्यते स्तूयतेऽनया सा वाणी, प्र०—इडेति वाङ्नामसु पठितम् निघ० १ ११, अत्र 'ईड' धातो कर्मणि बाहुलकादौणादिकोऽन् प्रत्ययो ह्रस्वत्व च 'वा छन्दसि सर्वे विधयो भवन्ति, इति गुणादेशाऽभावश्च । अत्र सायणाचार्येण 'टाप चैव हलन्तानाम्' इत्यशास्त्रीयवचनस्वीकारादशुद्धमेवोक्तम् १ १३ ९ प्रशसितुमर्हा, भा०—स्तुतियुक्ता (वाणी) २८ ८ स्ताविका (सरस्वती=विदुषी स्त्री) २१.५४ स्तोतु योग्योपदेशिका (स्त्री) २० ६३ भूमि २१ १६ भा०—सर्वदोषगुणविज्ञापिका वाक् २८ १८ सुशिक्षिता मधुरा वाक् २६ ३३ प्रशसितया वाचा २१ ३२ **इडाभिः**=प्रशसिताभिर्वाग्भि ३३ ३४ भूमिवाणीनीतिभि प्र०—इडेति पदनाम निघ० ५ ५ अनेन प्राप्तु योग्या नीतिर्गृह्यते १ ४८ १६ अन्नादिभि ५ ५३ २ पृथिवीभि प्र०—इडेति पृथिवीनाम निघ० १ १ **इडाम्**=स्तोतुमर्हा वाचम् १२ ५१ **इडाया.**=स्तोतुमन्वेष्टुमर्हाया वेदवाण्या, प्र०—इडेति वाङ्नामसु पठितम् निघ० १ ११, ४ २२ **इडे**:=सुशिक्षिता वागिव स्त्रि ३८ २ इडा पृथिवी ३ २७ प्रश'ते! (विदुषि कन्ये) १ १८८ ८ हे स्तोतुमर्हे (पत्नि) ८ ४३ [ईड स्तुतौ (अदा०) धातोर्बाहुलकाद् औणादिकोऽन् प्रत्यय । धातोश्च ह्रस्वत्वम् । स्त्रिया टापि इडा रूपम् । इड=ईट स्तुतौ धातोर्बाहुलकात् क्विप्, धातोश्च ह्रस्वत्वम् इळ पदनाम निघ० ५ २ इळा पृथिवीनाम निघ० १ १ वाङ्नाम निघ० १ ११ अन्ननाम निघ० २ ७ गोनाम निघ० २ ११ पदनाम निघ० ५ ५ इळ (बहु० व०) अन्न वा इड ऐ० २ ४६ १५ प्रजा वाऽइळ श० १ ५ ४ ३ वर्षा वाऽइड इति हि वर्षा इडा यदिद क्षुद्रꣳ सरीसृप ग्रीष्महेमन्ताभ्यान्नित्यक्त भवति तद्वर्षा ईडितमिवान्नमिच्छमान चरति तस्माद् वर्षा इड श० १ ५ ३ ११ इळो यजति वर्षा एव वर्षाभिर् ईडितमन्नाद्यमुत्तिष्ठति कौ० ३ ४ इडा इय (पृथिवी) वा इडा कौ० ६ २ गौर्वाऽइडा श० ३ ३ १ ४ या वा सा (इडा) सीद्गौर्वै सासीत् श० १ ८ १ २४ इडाहि गौ श० २ ३ ४ ३४ पशवो वा इडा कौ० ३ ७, ५ ७, २६ ३ श० १ ८ १ २२, ७ १ १ २७ प० २ २ ता० ७ ३ १५, १४ ५ ३१ गो० उ० १ २५ तै० १ ६ ६ ६ ऐ० २ ६, १०, ३० (पशव) अथेडा पशून्त्समवद्यति श० १ ७ ४ ६ अन्न पशव इडा कौ० १३ ६ अन्न वा इळा ऐ० ८ २६ कौ० ३ ७ श्रद्धेडा श० ११ २ ७ २० उत मैत्रावरुणी (इडा) इति । यदेव (इडा मित्रावरुणाभ्याꣳ समगच्छत श० १ ८ १ २७ यदेवास्यै (इडायै) घृत पदे समतिष्ठत तस्मादाह घृतपदी (इडा) इति श० १ ८ १ २६ इडा वै मानवी यज्ञानूकाशिन्यासीत् तै० १ १ ४ ४ सा (मनुर्दुहिता) एषा निदानेन

गृहे) ४ २ ७ [इनो व्याख्यातम्, तदुपपदे दधातेर् बाहु० औणा० कितच्]

इनस्य महदैश्वर्यस्य स्वामिन १.१४६ १ समर्थस्ये-श्वरस्य १ १५५ ४ **इनः**=स्वामी सूर्य १ १६४ २१. समर्थ. (इन्द्र =विद्वज्जन) २ २०.२ ईश्वर ७ ३६ २ **इना**= इनान् प्रभून् समर्थान् ३ २८ २ [इन =इनतमे पदे पदे द्रष्टव्य]

इनासः ईश्वरा समर्था (नर) ५.५४ ८ [इन प्राति० प्रथमाबहुवचने जसोऽसुगागमे रूपम्]

इनुहि व्याप्नुहि ६ १०.७ **इनोति**=प्राप्नोति ६ ४ ३. **इनोषि**=व्याप्नोषि ४ १० ७ प्रेप्यसि ६ ५ ३ [इन्वति व्याप्तिकर्मा निघ० २ १८ इन्वति गतिकर्मा निघ० २ १४. ततो लोट्, लट् च]

इन्दवः उन्दन्ति स्नेहयन्ति सर्वान् पदार्थान् ये ते रसा, प्र०—अत्र 'उन्देरिच्चादे' उ० १ १२ इत्यु प्रत्यय, आदेरिकारादेशश्च १ १६ ६ जलानि, अन्व०—उन्दन्ति आर्द्रीकुर्वन्ति पदार्थान्ते जलरसा, प्र०—इन्दव इत्युदक-नामसु पठितम् निघ० १ १२, १ १५ १ सोमा १ ८४ ५ जलानि, क्रियामया यज्ञा, प्राप्तव्या भोगाश्च, प्र०—इन्दु-रिति यज्ञनामसु पठितम् निघ० ३ १७, पदनामसु च निघ० ५ ४, १ २ ४ सोमलताद्युदकादीनि ६ ४१ २. रसवन्त सोमाद्योषधिगणा १ १४ ४ सङ्गन्तार पूजनीया (यज्ञा) ४ ४७ २ आर्द्रीभूता (मनुष्या) १ १३ ४ २ सस्नेहा (भोक्तव्या पेयाश्च पदार्था) ३ ४०.५ सार्द्रा (सोमा = ओषध्यादय पदार्था) ३ ४० ४ ऐश्वर्ययुक्ता आनन्दिता (भद्रा धार्मिका जना) ७ ३१ ६ सुखकारका जलादि-पदार्था ऐश्वर्याणि ४ ५० १० उन्दन्ति स्नेहयन्ति सर्वान् पदार्थास्ते रसा १ २ ६ **इन्दवे**=ऋजवे विद्यार्थिने (जिज्ञासवे छात्राय) ३ ३ ६ २ **इन्दुभिः**=आह्लादकारि-भिर्गुणै पदार्थैर्वा १ ५.३ ४ स्निग्धै पदार्थै सह १ २३ १५ सोमलतादिभिश्चन्द्रकिरणैर्वा ६ १६ १६. आनन्दकरैरुदकै ६ ४२.२ **इन्दुम्**=रोगहरौषधिरसम् २६ २३ परमै-श्वर्यम् २० ५७ सूर्यम् २१ ५८ आर्द्रस्वभाविन जनम् २० ४६ जलम् १३ ४३ ऐश्वर्यम ५ १८ २ परमैश्वर्य-कारकम् (सोमम्=ओषधिम्) १९ ३४ **इन्दुः**=जल-वदार्द्रस्वभाव (देव =परमेश्वर) २ २२ २ परमैश्वर्ययुक्त (देव =जीव) २ २२ ३. सुस्नेहयुक्त (पदार्थ) १९.९५ आनन्दकर (शिल्पिजन) ६ ४४.२२. ऐश्वर्यकर (वाजी = अश्व) १ १७५ १ चन्द्र २ २२ १ सोम ६ ४४ २१ आर्द्रीकर (सूर्य) ६ ३९ ३ **इन्दून्**=आह्लादान् ६ ४७.१४ **इन्दो**=शमादिगुणयुक्तसत्यानिन् स० वि० १०५, ९ ११३ २. सुप्रजासु चन्द्रवद्वर्त्तमान (सेनेश) १ १७६ ५ आर्द्रीकारकसभाध्यक्ष १.४३ ८ सोम्यगुण-सम्पन्न (ईश्वरो विद्वान्वा) १ ९१ १ हे सर्वानन्दयुक्त जगदीश्वर स० वि० १९७, ९ ११३ ११. ऐश्वर्यवन् (विद्वन्राजन्) ४ २८ २ **इन्दोः**=सोमगुणसम्पन्नस्य (गृह-पत्यु पुत्रस्य) ८ ९ [उन्दी क्लेदने (रुधा०) धातो 'उन्दे-रिच्चादे' उ० १ १२ सूत्रेण उ प्रत्यय आदेश्चेकारादेश । उनत्त्यार्द्रीकरोति पदार्थानिति विग्रह । इन्दु =उदक नाम निघ० १ १२ यज्ञनाम निघ० ३ १७ पदनाम निघ० ५ ४ इन्दुरिन्वेरुनत्तेर्वा नि० १० ४१ सोमो वाऽइन्दु श० २ २ ३ २३ सोमो वै राजेन्दु ऐ० १ २९]

इन्द्र परमेश्वर सूर्य्यो वा अत्राऽऽह यास्काचार्य्य 'इन्द्र इरा दृणातीति वेरा ददातीति यज्वनाम्' नि० १० ८ 'इन्द्राय साम गायत० नि० ७ २. इराशब्देनाऽन्न पृथिव्या-दिकमुच्यते । तद्दारणात्तद्दानात्तद्धारणात् चन्द्रलोकस्य प्रकाशाय द्रवणात्तत्र रमणादित्यर्थेनेन्द्रशब्दात् सूर्य्यलोको गृह्यते । तथा सर्वेषा भूताना प्रकाशनात्प्राणैर्जीवस्योपकरणा-दस्य सर्वस्य जगत उत्पादनाद् दर्शनहेतोश्च सर्वैश्वर्य्ययोगाद् दुष्टाना शत्रूणा विनाशकाद् दूरे गमकत्वाद्यज्वना रक्षक-त्वाच्चेत्यर्थादिन्द्रशब्देनेश्वरस्य ग्रहणम् । एव परमेश्वरा-द्विना किञ्चिदपि वस्तु न पवते । तथा सूर्य्याकर्षणेन विना कश्चिदपि लोको नैव चलति तिष्ठति वा । "प्रतुविद्युम्नस्य स्थविरस्य घृष्वे" ऋ० ६ १८ १२ यस्याऽय महाप्रकाशस्य वृद्धस्य सर्वपदार्थाना जगदुत्पत्तौ सघर्षकर्त्तु सहनशीलस्य बहुपदार्थनिर्मातुरिन्द्रस्य परमैश्वर्य्यवत परमेश्वरस्य सूर्य्य-लोकस्य सृष्टेर्मध्ये महिमा प्रकाशते तस्याऽस्य न कश्चिच्छत्रु, न किञ्चित्परिमाणसाधनमर्थादुपमानम्, नैकत्राधिकरण चाऽस्ति, इत्यनेनोभावर्थौ गृह्येते १ ३ ४ जगदीश्वर सुवीर वा अ०—शूरवीरेश्वर वा ३.४६ मृदुग्रस्वभाव (मनुष्य) ३ ५३ ५ न्यायप्रापक (राजन्) ६ ४७ ८ सर्वाऽर्यस्य सुखस्य वर्त्त (राजन्) ६ ४७ १० हे महाराजाऽधिराज (ईश्वर) आर्याभि० १ २८, ऋ० ५.८ १७ ४१ विद्वन्मनुष्य २६ ४ मेघाऽवयवाना छेदकवच्छत्रुछेदक (सभेश) १ ५२ ८ इन्द्रियाऽधिष्ठातर्जीव ३ ३२ १० सर्वसेनास्वामिन् (सेनापते) ७ २३ ५ न्यायेश विद्वन् (जन) ६ २१ ८ दात (प्रजाजन) ४ ३२ २० सत्यैश्वर्यप्रद (सज्जन) ४ ३२ ११ अनन्त-बलेश्वर १ ८ ३ यज्ञैश्वर्ययुक्त (विद्वज्जन) ४ २२ ११. दारिद्र्यविदारक (शिल्पिजन) ३ ३५ ७ शिल्पविद्यैश्वर्ययुक्त (शिल्पिजन) ३ ३५ ४ सभाद्यध्यक्ष १ ५५ ७ दु खविदारक

मध्यमद्विवचनम्]

इदम् अन्तरिक्षस्थमुदकम्, प्र०—इदमित्युदकनामसु पठितम् निघ० १ १२, ५ ११ जलम् १६ ७२ जलादि १६ ७८ [इदम् उदकनाम निघ० १ १२]

इदा एव ४ १० ५ इदानीम् ४ ३३ ११ [इदा नवनाम निघ० ३ २८ इदम सर्वनाम्नो दा प्रत्यय]

इदानीम् वर्त्तमानसमये ३४ ३७ इसी समय मे म० वि० १५६, ७४१४ [इदमूमर्वनाम्न 'दानी च' अ० ५ ३ १८ सूत्रेण दानीम् प्रत्यय । इदानीम्=नवनाम निघ० ३.२८]

इदावत्सरः निश्चयेन समन्ताद्वर्त्तमान सवत्सर इव (विद्वान् जिज्ञामुर्वा) २७ ४५ **इदावत्सराय**=इदावत्सरस्तृतीयस्तत्र कार्यसम्पादनाय, प्र०—अत्र वर्णव्यत्यय ३० १५

इदु पादपूरणे १ ६१ ८

इद्धम् दीप्तम् (सूर्यम्) १ ६६ ५ प्रदीप्तम् (विद्वज्जनम्)१ ७३ ४ **इद्धः**=शुभलक्षणै प्रकाशित (अग्नि = विद्वान्-राजा) १२ ३३ प्रदीप्यमान (द्यौ =सूर्य) १२ २१ प्रदीप्त (सविता) १२ ६ [ञिइन्धी दीप्तौ (रुधा०) धातो. क्त । 'अनिदिताम्०' इति नकारलोप]

इद्धाऽग्नयः इद्धा प्रदीप्ता मानस-वाह्याग्नया यैस्ते (नर) १ ८३ ४ [इद्ध-अग्निपदयोर्वहुव्रीहि]

इद्वत्सरः निश्चितसवत्सर इव (विद्वान् जिज्ञामुर्वा) २७ ४५ **इद्वत्सराय**=पञ्चमाय वर्षाय ३० १५

इधते प्रदीपयति ७ १ ८ [ञिइन्धी दीप्तौ (रुधा०) धातोर्लट् । विकरणव्यत्ययेन श]

इधान प्रदीप्त (अग्नि =पावक) १५ ३६ इन्धनै पावकवद् विद्यया प्रदीप्त (विद्वज्जन) १ ७६ ५ प्रदीप्यमान (सूर्य) १२ २२ प्रकाशमान (वलाध्यक्षो न्यायाधीश) ४ १२ २ दीपयन् (अग्नि =विद्वान्) ६ १० २ **इधानाः**= देदीप्यमाना (अग्नय) ७ ३ ३ प्रकाशमाना (अग्नय = पावका) ६ ६६ २ [ञिइन्धी दीप्तौ (रुधा०) धातो. शानच्]

इधीमहि प्रदीपयेम ५ ६ ४ प्रकाशयेम ३ २७ १५ जीवेम ३ १८ प्रकाशयेमहि, प्र०—अत्र 'वहुल छन्दसि' इति श्नमो लुक् २४ [ञिइन्धी दीप्तौ (रुधा०) धातोर्लिङ् । 'वहुल छन्दसि' इति शपो लुकि तत्स्थानभाविन श्नमोऽपि लुक्]

इध्मभृतिः इध्माना धारक (पक्थी=पाचक) ६.२० १३. [इध्मभृतिपदयो समास । इध्म =ञिइन्धी दीप्तौ (रुधा०) धातो 'इषियुधीन्धि०' उ० १ १४५ सूत्रेण मक्प्रत्यय । भृति =डुभृञ् धारणपोषणयो (जु०) धातो क्तिच्प्रत्यय । क्तिन् वा कर्त्तरि छान्दसत्वात्]

इध्मम् इन्धनम् १ ६४ ४ प्रदीप्तम् (मूर्धानम्) ४ २ ६ देदीप्यमानम् (अनीक=विजयमान सैन्यम्) ४ १२ २ **इध्मः**=प्रदीप्त (सूर्य) ३३ २४ प्रदीपक (वसन्त =पूर्वाह्णकाल) ३१ १४ इन्धनानि, अग्निर्वा ऋ० भू० १२७ **इध्मेन**=समिधेन (घृतेन=आज्येन) ३ १८ ३ [ञिइन्धी दीप्तौ (रुधा०) धातो 'इषियुधीन्धि०' उ० १ १४५ सूत्रेण मक्प्रत्यय । इध्म समिन्धनात् नि० ८ ४ *यज्ञेध्म इति कात्थक्य* । अग्निरिति शाकपूणि ८ ५ आत्मा वा इध्म तै० ३ २ १० ३ वनस्पतय इध्मा तै० २ १ ५ २ वनस्पतय इध्मा ऐ० ५ २८ इध्म तासाम् (आप्रीदेवतानाम्) इध्म प्रथमागामी भवति नि० ८ ५ इन्वे ह वा एतदध्वर्यु । इध्मेनाग्निं तस्मादिध्मो नाम श० १ ३ ५ १ इध्म पदनाम निघ० ५ २]

इध्यते प्रदीप्यते २८ १ प्रज्ञाप्यते प्रदीप्यते वा ३ १ २१ **इध्यसे**=प्रदीप्यसे ५ २१ २ **इध्यस्व**= प्रदीप्तो भव २७ २ [ञिइन्धी दीप्तौ (रुधा०) धातो कर्मणि लट् । अन्यत्र लोडपि]

इध्यमानः देदीप्यमान. (राजा) ५ ३ ८ [ञिइन्धी दीप्तौ (रुधा०) धातो कर्मणि शानच्]

इनक्षत् व्याप्नुयात्, प्र०—इनक्षदिति व्याप्तिकर्मसु पठितम् निघ० २ १८, ८ ५३ [इनक्षति व्याप्तिकर्मा निघ० २ १८ ततो लेटि रूपम्]

इनक्षतः व्याप्नुवत १ ५१ ६ **इनक्षन्**=व्याप्नुवन् (अग्नि =कारणाख्य ईश्वर) प्र०—इनक्षतीति व्याप्तिकर्म० निघ० २ १८, १२ २४ [व्याप्त्यर्थकाद् इनक्षते शतृ]

इनतमः अतिशयेनेश्वर समर्थ (राजा) ३ ४६.२ [इनतम =ईश्वरतम नि० ११ २१ इन =इण् गतौ (अदा०) धातो 'इषसिञ्जि०' उ० ३ ३ सूत्रेण नक् प्रत्यय । इनप्राति० अतिशायने तमप् । इन =ईश्वरनाम निघ० २ २२ इन =समित ऐश्वर्येणेति वा समितमनेनैश्वर्यमिति वा नि० ३ १२]

इनधते ईश्वरेण सङ्गमयेत ४ १२ १ [इन ईश्वरनाम निघ० (२ २२) तदुपपदे दधातेर्लट्]

इनधते इनमीश्वर दधाति यस्मिँस्तस्मिन् (दुरोणे=

१ १०६ ६ अनन्तपराक्रम जगदीश्वर पूर्ण वीर्य विद्वान वा १ ८० १५ परमैश्वर्य के दाता और परमैश्वर्ययुक्त (ईश्वर) को स० वि० १५५, ७ १४ १ सत्य धर्म न्याय यो दधाति तम् (राजानम्) ६ ३६ ३ परमैश्वर्यवन्त यजमानम् २८ १४ सूर्यमिव जीवम् २८ १८ ऐश्वर्य जीव वा २१ दुःख-विच्छेत्तारम् (परमेश्वर विद्वान वा) २ २० ४ अविद्याऽन्धकारविदारकमध्यापकम् ७ २९ ५ परमैश्वर्ययुक्त जनम् १९ ३२ सर्वज्ञ सर्वशक्तिमन्तमीश्वरम् १ ७ ५ बलादिधारक सोमम् २० ६९ राज्यधारक (राजानम्) २० ५० इन्द्रिय-स्वामिन जीवम् ७ २६ १ परमैश्वर्यवन्त शालाध्यक्षम् १ १०६ ६ **इन्द्रस्य**=योगजन्यस्य परमैश्वर्यस्य १९ ७४ परमैश्वर्यवतो धर्मस्य १९ ७७ परमेश्वरस्य यज्ञस्य वा १.४ विद्युत इव १० १७ अ०—सूर्यलोकस्य मेघस्य वा १ २४ सूर्यादि राज्यस्य वा ५ ३० इन्द्रियस्वामिनो जीवस्य १९ ३ परमैश्वर्येण युक्तस्य योजकस्य वा (मनुष्यस्य) ४ १० इन्द्रियों के साथ वर्त्तमान कर्मों के कर्त्ता भोक्ता जीव का आर्याभि० १ २३ परमैश्वर्ययुक्त राज्य और धन के स० प्र० १८३, ९ ४० परमैश्वर्ययुक्तस्य धार्मिकस्य विदुष (जनस्य) १ १६७ १० **इन्द्रः**=य इन्दति परमैश्वर्यवान् भवति स इन्द्र परमेश्वर, जो अखिल ऐश्वर्ययुक्त है वह परमेश्वर प्र०—इदि परमैश्वर्ये इस धातु से रन् प्रत्यय करने से इन्द्र शब्द सिद्ध होता है स० प्र० २०, ३६ ९. वायु, प्र०—विश्वेभि सोम्य ऋ० १ १५ १० अनेन प्रमाणेनेन्द्र-शब्देन वायुर्गृह्यते १ ३ ६ अन्तरिक्ष सूर्यप्रकाश, प्र०—'इन्द्रियमिन्द्रलिङ्ग०' अ० ५ २ ९३ इति सूत्राशयादिन्द्र-शब्देन जीवस्यापि ग्रहणम् १ २ ६ विद्युदिव पराक्रमी सभाध्यक्ष १ ८० १० सूर्यलोक १ १०० १ राजमान (राजा) ५ २९ ३ इन्द्रियवान् जीव १ १०१ ५ अन्याय-विदारक सभेश १८ १६ सकलपदार्थविच्छेत्ता (सूर्यादि) १८ १८ सर्वाऽभिव्यापिका तडित्, विद्युत्क्रिया १८ १८ विद्यार्थिनो जाड्यविच्छेदक उपदेशक १८ १६ य पुष्टि-करणविद्याया रमते (सज्जन) १८ १६ जलाना धर्त्ता (सूर्य) २० ३९ दिग्ज्ञापक (सूर्य) १८ १८ अखिलैश्वर्य (ईश्वर) ७ ४० विद्युत्सूर्यो वा ३४ ५७ सकलाऽविद्या-छेदकोऽध्यापक १८ १६ ईश्वरोपासको राजा ६.२९ ६ परमात्मा विद्युद्वा ५ ७ ऐश्वर्यकारी सभेश २५ ४६ चन्द्र इव आर्द्रस्वभाव (विद्वान् सभेश) १८ ५३ पराक्रम-वान् सूर्य इव तेजस्वी विद्युद्रूपोऽग्नि) ३ ४६ ३ कालज्ञान-निमित्त (सूर्य) १८ १८ लोकलोकान्तरस्था विद्युत् १८ १८ विद्याप्रद (राजा) ६ ४७ १३ भूमेर्दारयिता (कृषीवल) ४ ५८ ९ परमैश्वर्यकारको विद्युदग्नि ३ २५ ४ विद्युदिव सुखप्रदो दुःखविदारक (विद्वज्जन) ३ ३१ १५ सूर्य इव प्रतापी सभेश ३३ २६ अग्निर्विद्युत् सूर्यो वा १ १३ ५ सर्वजगत्स्रष्टेश्वर १ ७ ३ भौतिक सूर्यो वायुर्वा २ ६ अ०—विद्वान् सेनापति, सूर्यलोको वा १ ११ ४ दारयिता सूर्यलोक २ १२ १ आश्चर्य गुणकर्म-स्वभाव परमेश्वर २ १२ ५ परमैश्वर्यवान् सभाशाला-सेनान्यायाधीश १ ५१ ९ प्रजारक्षक (राजा) ४ २१ १ परमसुखप्रदो राजा ४ २२ १ विद्युद् धनाध्यक्षो वा १ १०३ ३ सर्वत्राऽभिव्याप्ता विद्युत् २० २६ परमैश्वर्य-युक्तो मित्र १.१७३ ६ वीरपुरुषराजा ७ २० ८. सूर्य इव योद्धा (सभेश) २ २० ७ अनेकैश्वर्य. (सेनापति) १ १०२ ६ सत्यन्यायधर्त्ता (राजा) ४ २९ ३ समर्थो राजा ७ ३२ १२ परमैश्वर्यवान् सूर्य इव पिता ४ १८ ११ सूर्य के सदृश सब जगत् का प्रकाशक (परमेश्वर) स० प्र० २३८, १० ४८ ५ परम ऐश्वर्य का कर्त्ता (सभापति राजा) स० प्र० १८३, अथर्व० ९.१० ९८ १ परमैश्वर्ययुक्त, रक्षक, सर्वनियन्ता, धरणादिकालपति, सर्वस्वामी, प्राणा-धार, प्राणपति, महाराज (परमेश्वर) आर्याभि० २ २१, ३९ ८. पूर्णविद्यो वैद्य ६ २७.२ रूपविच्छेदक (अग्नि) १९ ८५ प्रशस्तविद्यैश्वर्यो विद्वान् (जन) १ १०० १९ सर्वदुःखविदारक (परमेश्वर) ७ २५ सकलैश्वर्यवान्, प्रत्येकाऽङ्गपुष्ट सभापति ७ ३२ विद्युदादिरूपो वह्नि ३ ४६ सर्वैश्वर्याऽऽधार (पुरुषार्थ) १८ १८ शत्रूणा विदारयिता सेनेश १७ ३३ सूर्य इव महाप्रकाश (प्रसन्नात्मा जन) ३ ३६ ८ परमैश्वर्यहेतु (वृत्रहा=सूर्य) ३ ३१ ११ प्रशस्तसेनाधारक (सेनापति) २० ५० विद्युत् परमैश्वर्य वा १४ २० परमैश्वर्यहेतुमान् हेतुर्वा (सूर्य सभाध्यक्षो वा) १ ६१ ९ परमैश्वर्ययोगाढ्यो वृद्ध (योगिजन) ९ ३९ शत्रुविदारक सेनाधीश १० ९ पूर्ण-विद्यो वैद्य ६ २७ २ सेनाऽधिपति स्तनयित्नुर्वा १ ६१ १० सर्वपदार्थविच्छेत्ता (जगदीश्वर) २ १५ ४ परमैश्वर्य सभाध्यक्ष १ १०२ ११ शत्रूणा दारयिता सेनापति १७ ४६ रोगविच्छेदक (सद्वैद्य) १९ ८५ विद्युदिव व्याप्तविद्य (राजा) ७ २७ ४ अग्निविद्युत्सूर्यो वा १ १७ ५ **इन्द्रात्**=विद्युत ५ ३० ५ **इन्द्राय**=परमै-श्वर्यवन्तम् (परमेश्वरम्) प्र०—अत्रोभयत्र 'सुपा सुलुग्०' इति द्वितीयैकवचनस्थाने चतुर्थ्येकवचनम् १ ४ १०. परमे-श्वर सूर्य वा, प्र०—अत्र 'सुपा सुलुग्०' अनेनाऽम स्थाने ङे १ ५ ४ परमैश्वर्यवते परमेश्वराय स्वामिने व्यवहाराय

विद्वन् (राजन्) ८ ३६ विजयप्रद सभाद्यध्यक्ष १ ६३ ७ शत्रुविनाशक (सभापते) १ १०४ ८ शत्रूणा विदारयित (सेनापते) १ ८४ ४ शत्रुजित् (सेनापते) ७ ३८ सुखैश्वर्य-प्रापक (विद्वज्जन) ६ २१ १२ सुखाना धारक (सेनापते) १७ ५१ सुखेच्छो विद्यैश्वर्ययुक्त जन २० २९ सूर्यवन्न्याय-प्रकाशितराजन् ५ ३५ १ ऐश्वर्यकारक (सज्जन) ३ ४१ १ ऐश्वर्यवर्द्धक (राजन्) ६ ४६ ११ ऐश्वर्ययुक्त पुरुष स० प्र० १४८, १० ८५ ४५ ऐश्वर्याय द्रवन्, ऐश्वर्ये रममाण वा (सभापते) प्र०—इन्दवे द्रवनीति वेन्दौ रमत इति वा, निरु० १० ८, ८ ३६ ऐश्वर्यमिच्छुक (राजन्) ५ ४० १ ऐश्वर्ययुक्त स्वामिन् (राजन्) ३ ५३ ६ परमैश्वर्यप्रापक, शत्रुनिवारक, सभासेनयो परमाऽध्यक्ष (महाराज) १ ११ ७ परमैश्वर्यप्रयोजक (राजन्) ४ २२ ५ हे सर्वविघ्नविदारक सकलैश्वर्ययुक्त सम्राट् ३ ३५ सर्वतो रचयितरीश्वर १ ८ ६ सकलैश्वर्यसम्पन्न (राजन्) ३ ५१ ८ महायश सर्वविभाग-कारकेश्वर, सर्वविभक्तरूपदर्शक सूर्यलोक वा १ १० ७ सर्वज्ञे-श्वर १ १० २ सर्वश्रोतौ व्यापिन्नीश्वर प्रकाशमान सूर्य-लोक वा १ १० ३ सर्वथा स्तोतव्य परमेश्वर १ ६ ४ सर्व-स्वामिन्नीश्वर सभाध्यक्ष राजन्वा १ ११ २ हे यज्ञपते (विद्वज्जन) ३ ३६ १ पुष्कलैश्वर्यकारक (राजन्) ४ ३० २२ विद्युदग्निरिव वर्त्तमान (राजन्) १ १७४ २ विद्यैश्वर्यवर्द्धक (राजन्) ६ १७ १४ विद्यादिपरमैश्वर्ययुक्त विद्वन् (जन) प्र०—इन्द्र इति पदनामसु पठितम् निघ० ५ ४ अनेन गन्ता प्रापको विद्वान् जीवो गृह्यते १ ५ ६ वायु १ १८ ५ अविद्या-विच्छेदक (विद्वज्जन) २ ११ १६ आयुर्वेदविद्यायुक्त (वैद्य) २ ११ ११ विद्योपदेशकर्त्त (विद्वज्जन) ६ २२ ४ पूर्णायु कामुक (राजादिमनुष्य) ३ ४० ५ इन्द्रियस्वामिन् जीव २१ ५७ प्रशसनीयकर्मन् (राजन्) ४ १९ ११ योगैश्वर्य-जिज्ञासो (जन) १ १७६ ६ कालविभागकर्त्त सूर्यलोक १ १५ १ युद्धस्य परमसामग्रीसहित (सेनापते) १७ ३७ विद्याक्रियाकुशल (निजम्विन् जन) ६ २३ ८ धनोन्नतये प्रेरक (राजन्) ७ २७ ५ सुखप्रद सुखहेतो वा (सभाध्यक्ष विद्युद्वा) १ ६३ ८ इन्द्रियाद्यैश्वर्ययुक्त भोजक (जीव) २ २२ ४ सर्वेश्वर इव वर्त्तमान (विद्वज्जन) २ २१ ६ सर्वाभिरक्षक (आप्तपुरुष) १ १३१ ४ परमैश्वर्यप्रद जगदीश्वर सेनाध्यक्षो वा १ ८१ ६ दुष्टदलहर (राजन्) ५ ३१ ५ पालयित (सेनापते) १ ८१ ३ सर्वैश्वर्यप्राप्तिहेतो (सभाद्यध्यक्ष) १ ८४ १ योगैश्वर्यमिच्छुक (राजन्) ५ ३० ४ प्रकृष्टपदार्थप्रद (सेनाद्यध्यक्ष) १ १०३ ३ परम-विद्यैश्वर्ययुक्त (विद्वन् जन) १ १०० १७ अधर्मविदारक (सभाध्यक्ष) १ १२१ १४ परमधनवन् परमधनहेतुर्वा (सभाध्यक्ष विद्युद्वा) १ ६२ १२ विद्युदिव सभेश १ १७७ २ बह्वैश्वर्ययुक्त (सर्वसुहृद् विद्वज्जन) ३ ४२ १ हे परमात्मा आर्याभि० १ ४१, ऋ० १ ७ ६ ७ हे परमैश्वर्य-युक्तेश्वर आर्याभि० १ ४६ परमैश्वर्ययुक्त इस वधू के स्वामिन् (पते) स० वि० १३४ दुःखविदारकाऽतिविद्या-बलसम्पन्न (विद्वज्जन) १ १६९ १ ऐश्वर्यवन् (विद्वज्जन) २० ७४ सुखेच्छा-विद्यैश्वर्ययुक्तजन २० २९ प्रजापालन तत्पर (राजन्) ६ ४५ २५ परमैश्वर्ययुक्त गृहपते ८ १५ अन्नदात (राजन्) ६ २० ४ विवाहितपते ऋ० भू० २२४, १० ८५ ४५ ऐश्वर्यप्राप्तये तत्कर्माऽनुष्ठानर्मनुष्य १ २८ १ अन्त करणवहिष्करणशरीरादिसाधनैरैश्वर्यवन् मनुष्य १ २८ २ अविद्यानिद्रादोषविदारक विद्वन् (जन) १ २९ ३ वीराणा रक्षक (सेनापते) १ १०२ ५ **इन्द्रम्**=परमेश्वर परमैश्वर्यदातारमीश्वर, परमैश्वर्यसाधक विद्युदाख्य भौतिक-मग्निं, बाह्याऽभ्यन्तरस्थ वायुम् १ १६ ३ परमेश्वर विद्युदादियुक्त वायु वा, प्र०—इन्द्र इति पदनामसु पठितम् निघ० ५ ४ विद्याजीवनप्रापकत्वादिन्द्रशब्देनाऽत्र परमात्मा वायुश्च गृह्यते 'विश्वेभि सोम्य मध्वग्न इन्द्रेण वायुना' ऋ० १ १४ १० इन्द्रेण वायुनेति वायोरिन्द्रसञ्ज्ञा १ ५ १ सूर्यम् ३३ १३ स्वकीय जीवस्वरूपम् २८ २७ सुखाना विभर्त्तारं सेनेशम् १ ५१ २ परमैश्वर्यवन्त, सूर्यमिव शत्रूणा विदारयितारम् (राजानम्) १ ५१ १ नीत्या सुशोभमानम् (राजानम्) २८ ४ विरोधविदारकम् (शुन=परपरमेल-जन्य सुखम् ३ ५० ५ अविद्या-दुष्टजनविनाशकम् (राजानम्) ६ ४७ ११ ऐश्वर्यप्रद सोमरसम्, भा०—रोगनिवारक-मौषधम् २० ६२ परमैश्वर्ययुक्तमुत्तमश्रीप्रापकमुद्योगम् ६ १२ विजयप्रदमीश्वर, शत्रूणा विजेतारं शूर वा १ १२ १ पृथिव्या राज्यप्रदम् (अ०—सर्वगुणैरुत्कृष्ट परमेश्वरम्) १ ७ १० महाबलवन्त वायुम् १ ७ १ विद्युद्वत्तीव्रबुद्धिम् (सज्जनम्) ६ ४८ १४ शरीरात्मराजश्रिया सुशुम्भमानम् (राजानम्) ६ १९ ११ परमैश्वर्यवन्त धनिकम् (जनम्) १० ३३ अविद्याविदारकमाप्त विद्वासम् (राजानम्) ७ ३१ १२ विद्युदिव दुष्टदोषप्रणाशकम् (विद्वासमध्यापकम्) ३ १२ ३ विद्युत परमैश्वर्यवन्त सभाध्यक्ष वा १ १०६ १ अविद्यादिक्लेशविदर्त्तारम् (विद्वास जनम्) ३ ४३ ८ न्यायेन राज्यपालक (राजानम्) ऋ० भू० २२० मेघाना धारकम् (वात=वायुम्) २ १४ ३ प्रशसितगुणधरम् (राजानम्) ४ २० ५ सकलैश्वर्यप्रद परमेश्वरमात्मन सर्वभोगहेतुं वायु वा। विद्युदाख्यमग्निम् १ ८७ ५ परमैश्वर्यवन्त शालाध्यक्षम्

क्षत्रियो यद् च यजमान श० ५ ३ ५ २७ ऐन्द्रो वै राजन्य तै० ३ ८ २३ २ इन्द्र क्षत्रम् श० १० ४ १ ५ क्षत्र वा इन्द्र कौ० १२ ८ तै० ३ ६ १६ ३ श० २ ५ २ २७ यदशनिरिन्द्रस्तेन कौ० ६ ६ स्तनयित्नुरेवेन्द्र श० ११ ६ ३ ९ तस्मादहिन्द्रा ब्रह्मेति कौ० ६ १४ यत्पर भा प्रजापतिर्वा स इन्द्रो वा श० २ ३ १ ७. देवलोको वा इन्द्र कौ० १६ ८ इन्द्रो बल बलपति श० ११ ४ ३ १२ तै० २ ५ ७ ४ इन्द्रो मे बले श्रित तै० ३ १० ८ ८ वीर्य वा इन्द्र ता० ९ ७ ५,८ गो० उ० ६ ७ वीर्यमिन्द्र तै० १ ७ २ २ इन्द्रिय वीर्यमिन्द्र श० २ ५ ४, ८ इन्द्रिय वै वीर्यमिन्द्र श० ३ ९ १ १५ शिश्नमिन्द्र श० १२ ९ १ १६ रेत इन्द्र श० १२ ९ १ १७ वृषा वा इन्द्र कौ० २० ३ अर्जुनो ह वै नामेन्द्र श० २ १ २ ११ अर्जुनो ह वै नामेन्द्रो यदस्य गुह्य नाम श० ५ ४ ३ ७ एष एवेन्द्रो यदाहवनीय श० २ ३ २ २ इन्द्रो ह्याहवनीय श० २ ६ १ ३८ स यस्स इन्द्रस्सामैव तत् जै० उ० १ ३ १ १ ऋचश्च सामानि चेन्द्र श० ४ ६ ७ ३ इन्द्र एष यदुद्गाता जै० उ० १ २२ २ स य स इन्द्र । एष सोऽप्रतिरथ श० ९ २ ३ ५ इन्द्र आसीत् सीरपति शतक्रतु तै० २ ४ ८ ७ स प्रजापतिरिन्द्रं ज्येष्ठ पुत्रमपन्यधत्त नेदेनमसुरा बलीयाꣳसोऽहनन्निति तै० १ ५ ९ १ ते (देवा) होचु इन्द्रो वै नो वीर्यवत्तम श० ४ ६ ६ ३ स (इन्द्र) एतमिन्द्राय ज्येष्ठायै (ज्येष्ठानक्षत्राय) पुरोडाशमेकादशकपाल निरवपन् महाव्रीहीणाम् । ततो वै स ज्यैष्ठ्य देवानामभ्यजयत् तै० ३ १ ५ २ इन्द्र (एवैन) ज्येष्ठाना (मुवते) तै० १ ७ ४ १ सो (प्रजापति) ऽकामयतेन्द्रो मे प्रजायाꣳ श्रेष्ठ स्यादिति तामस्मै स्रज प्रत्यमुञ्चत्ततो वा इन्द्राय प्रत्यय श्रैष्ठ्यायातिष्ठन्त तच्छिल्प पश्यन्त्य ता० १६ ४ ३ इन्द्र. खलु वै श्रेष्ठो देवतानामुपदेशनात् तै० २ ३ १ ३ इन्द्र सर्वा देवता इन्द्रश्रेष्ठा देवा. श० ३ ४ २ २ अथ यदिन्द्रे सर्वे देवास्तस्थाना । तस्मादाहुरिन्द्र सर्वा देवता इन्द्रश्रेष्ठा देवा इति श० १ ६ ३ २२ ततो वा इन्द्रो देवानामधिपतिरभवत् तै० २ २.१० ३ सो (इन्द्र) ऽग्र देवताना पर्यैन् अगच्छन् स्वाराज्यम् तै० १ ३ २ २ स (इन्द्र) वै देवाना वसुर्वीरो ह्येपाम् श० १ ६ ४ २ इन्द्रो वै देवानामोजिष्ठो बलिष्ठ सहिष्ठ सत्तम पारयिष्णुतम ऐ० ७ १६, ८ १२ इन्द्रो वै देवानामोजिष्ठो बलिष्ठ कौ० ६ १४ गो० उ० १ ३ इन्द्रौजसा पते तै० ३ ११ ४ २ इन्द्रो मृधा विहन्ता कौ० ४ १ इन्द्रायाꣳहोमुचे तै० १ ७ ३ ७. इन्द्राय सुत्राम्णे तै० १ ७ ३ ७

वृद्धानामिन्द्र प्रदापयिता तै० १ ८ २ ३ श्लोक सारी हैवैषामिन्द्रो भवति यथा गौ प्रज्ञात गोष्ठम् गो० उ० ६ ४ श्लोक सारी वा इन्द्र ऐ० ६ १८.२२ गो० उ० ५ १५ इन्द्रो वै त्रिशिरस त्वाष्ट्रमहन् ता० १८ ५ १ इन्द्रो वृत्रꣳ हत्वा देवताभिश्चेन्द्रियेण च व्यार्धत् तै० १ ६ १ ७ इन्द्रो मरुद्भि (व्यद्रवत्) श० ३ ४ २ १ इन्द्रो रुद्रै (उदक्रामत्) ऐ० १ २४ इन्द्रस्य पुरोडाश श० ४ २ ५ २२ यदिन्द्रो ऽपिबच्छचीभि तै० १ ४ २ ३ इन्द्रो यज्ञस्य नेता श० ४ १ २ १५ तदाहु किन्देवत्यो यज्ञ इति ऐन्द्र इति ब्रूयात् गो० उ० ३ २३ इन्द्रो यज्ञस्यात्मेन्द्रो देवता श० ९ ५ १ ३३ ऐन्द्रो वै यज्ञ ऐ० ६ ११ ऐन्द्रो हि यज्ञक्रतु कौ० ५ ५, २८ २, ३ इन्द्रो यज्ञस्य देवता ऐ० ५ ३४ ६ ९ श० २ १ २ ११ इन्द्रो वै यज्ञस्य देवता श० १ ४ १ ३३ न ह वा इन्द्र कश्चन भ्रातृव्यमपश्यते जै० उ० १ ४५ ६ ऋक् सामे वा इन्द्रस्य हरी ऐ० २ २४ तै० १ ६ ३ ९ इन्द्रस्य वै हरी बृहद्रथन्तरे ता० ९ ४ ८ सेनेन्द्रस्य पत्नी गो० उ० २ ९ यत्नाक्रमैर्वैर्यजनऽइन्द्र एव तर्हि भवतीन्द्रस्यैव सायुज्यꣳ सलोकता जयति श० २ ६ ४ ८ ऐन्द्रा वै पशव ऐ० ६ २५ एतद्वा इन्द्रस्य रूप यदृषभ श० २ ५ ३ १८ (प्रजापति) ऐन्द्रमृषभ (आलिप्सत) श० ९ २ १ ५ ऐन्द्रमृषभꣳ सेन्द्रत्वाय (आलभते) तै० १ ८ ५ ६ स ह्यैन्द्रो यदृषभ श० ५ ३ १ ३ इन्द्रो वा अश्व कौ० १५.४ ऐन्द्र माध्यन्दिनम् गो० उ० १ २३ ऐन्द्रो माध्यन्दिन कौ० ५ ५ २२ ७ ऐन्द्रो वै माध्यन्दिन ऐ० ६ ३० ऐन्द्रो वै माध्यन्दिन. गो० उ० ६ ६ मध्यस्थो वा इन्द्र कौ० ५ ४ (अन्तरिक्षस्थान) इन्द्रो ज्योतिर्ज्योतिरिन्द्र इति तदन्तरिक्षलोक लोकानाप्नोति माध्यन्दिन सवन यज्ञस्य कौ० १४ १ स (इन्द्र) एत माहेन्द्र ग्रहमधृत माध्यन्दिन सवनाना निष्केवल्यमुक्थाना त्रैष्टुभ छन्दसा पृष्ठ साम्नाम् ऐ० ३ २१ ऋभवो वा इन्द्रस्य प्रिय धाम ता० १४ २.५ ऐन्द्र वै सुत्यमह कौ० ४ ४ (प्रजापति) अग्निहोत्रेण दर्शपूर्णमासाभ्यामिन्द्रमसृजत कौ० ६ १५ ऐन्द्र एकादशकपाल (पुरोडाश) ता० २१ १० ऐन्द्रमेकादशकपाल पुरोडाश निर्वपति श० ५ ३ १ ३ हेमन्तशिशिरावैन्द्राभ्याम् (अवरुन्धे) श० १२ ८ २ ३४ दिवमिन्द्रेण अवरुन्धे श० १२ ८ २ ३२ अथैन्द्राय ज्येष्ठाय । हायनाना चरु निर्वपति श० ५ ३ ३ ६ यद्वै किञ्चन पीतवत्पद तदैन्द्र रूपम् ऐ० ६ १० यद् (अक्ष्यो) शुक्ल तदैन्द्रम् श० १२.९ १ १२ इन्द्रघोपस्त्वा वसुभि पुरस्तात्पातु श० ३ ५ २ ४ स वा एष (आदित्य) इन्द्रो वै मृध उद्यन्

वा ४ १६ परमोत्तमव्यवहाराय २० ३३ परमैश्वर्यप्रदाय राज्याय ८ ३६ परमविद्याप्रकाशेनाऽविद्याविदारकाय (सभापतये) ६ ३२ परमैश्वर्ययोगाय, अ०—परमैश्वर्य-प्राप्ताय ११ ऐश्वर्यप्रदाय गृहाय ८ ३३ पुरुषार्थे द्रवणाय ६४ विद्यावृष्टिकारकाय (आप्ताय जनाय) १ ६१४ सुखप्रदात्रे द्रव्यैश्वर्याय ४ २४ ७ इन्द्रियाऽधिष्ठातुर्जीवस्य बोधाय १० ५ दुष्टशत्रुविदारणाय, विद्यायोगमोक्षैश्वर्याय ६ २ जीवाय विद्युते परमैश्वर्याय वा २२ २७ अत्यन्तोत्कृष्टाय (शूरवीराय जनाय) १ ८४ ५ सर्वमित्रायैश्वर्य-मिच्छुकाय जीवाय ११० ५ परमैश्वर्य प्राप्ति के लिए स० वि० १६६, ६ ११३ ७ परमैश्वर्य युक्त मोक्ष का आनन्द देने के लिए स० वि० १६६, ६ ११३ ६ सब दुःख विदारण के लिए स० वि १६७, ६ ११३ १० सर्वशुभ-लक्षणाऽन्विताय (सत्पुरुषाय) २ २१ २ परमैश्वर्यवते परमात्मने १ ८ १० परमैश्वर्यप्रापकाय रणाय ७ ३८ ऐश्वर्यसुखप्रदाय पत्ये १६ १८ परमानन्दप्राप्तये ८ ४४ परमैश्वर्यकारणाय ११ ३ १२ परमैश्वर्ययुक्ताय जगदीश्वराय ६ २ **इन्द्रे**—परमैश्वर्यवति प्राणिनि २१ ३५ विद्या-विनयाऽन्विते (राजनि) २८ ४५ स्वाऽऽत्मनि २८ ४० परमैश्वर्ये २० ६६ विद्युति २१ ३७ सूर्यप्रकाशे २१ २३ **इन्द्रेण**—परमेश्वरेणाऽऽप्तेन विदुषा वा २ १८ ८ विद्युदाख्यस्त्रेण ७ ४८ २ विद्युता तद्रचितेन विदारकेण शस्त्रेण वा १५ ३४ वायुना विद्युता वा ३ ४ ११ परमेश्वरेण सूर्येण सह वा १ ६ ७ **इन्द्रौ**—परमैश्वर्यकारकौ (मित्रावरुणौ—उपदेशक-सेनापती) १० १६ [इदि परमैश्वर्ये (भ्वा०) धातो 'ऋज्रेन्द्राग्रवज्र०' उ० २ २८ सूत्रेण रन् प्रत्यय । इन्दति परमैश्वर्यवान् भवतीति विग्रह । इन्द्र पदनाम निघ० ५ ४ इन्द्र —इरा दृणातीति वा इरा ददातीति वा, इरा दधातीति वा । इरा दारयत इति वा । इरा धारयत इति वा । इन्दवे द्रवतीति वा । इन्दौ रमत इति वा । इन्धे भूतानीति वा । 'तद्यदेन प्राणै समैन्धस्त-दिन्द्रस्येन्द्रत्वमिति विज्ञायते ।' इद करणादित्याग्रायण । इद दर्शनादित्यौपमन्यव । इन्दतेर्वैश्वर्यकर्मण । इन्दञ्छत्रूणा दारयिता वा द्रावयिता वा । आदरयिता च यज्वनाम् नि० १० ८ इन्द्र —इन्धो वै नामैष योऽय दक्षिणेऽक्षन्पुरुष-स्त वाऽएतमिन्ध सन्तमिन्द्र इत्याचक्षते परोऽक्षेणेव श० १४ ६ ११ २ अग्निमिन्वा इदमिन्द्रिय प्रत्यस्थादिति । तदिन्द्रस्येन्द्रत्वम् तै० २ २ १० ४ तस्य (क्षत्रियस्य) हदीक्षमाणस्येन्द्र एवेन्द्रियमादत्ते ऐ० ७ २३ इन्द्रस्येन्द्रिये-णाभिषिञ्चामि ऐ० ८ ७ इन्द्रस्येन्द्रियेण (त्वाभिषिञ्चामि) श० ५ ४ २ २ (देवस्य त्वा सवितु प्रसवे) इन्द्रस्येन्द्रियेण ता० १ ३ ५ इन्द्रियम् (आत्मन् धत्ते) ऐन्द्रेण (पशुना) तै० १ ३ ४ ३ इन्द्रमच्छसुता इ । इतीन्द्रियस्य वीर्यस्यावरुध्यै ता० ११ १० ४ (यजु० ३८ १६) मधुहुतमिन्द्रतमेऽअग्ना-विति मधु हुतमिन्द्रियतमेऽग्नावित्येवैतदाह श० १४ २ २ ४२ (इन्द्रियवान्) सखाय इन्द्रमूतयऽइतीन्द्रियवन्तमूतयऽइत्येतत् श० ६ ३ २ ४ इन्द्र (एवैनम्) इन्द्रियेण (अवति) तै० १ ७ ६ ६ इन्द्रस्य त्वेन्द्रियेण व्रतपते व्रतमादधामि तै० ११ ४ ८ दधात्विन्द्र इन्द्रियम् ता० १ ३ ५ मयीदमिन्द्र इन्द्रिय दधातु श० १ ८ १ ४२ 'इन्द्रियमिन्द्रलिङ्गमिन्द्रदृष्ट-मिन्द्रसृष्टमिन्द्रजुष्टमिन्द्रदत्तमिति वा' अ० ५ २ ६३ इति सूत्रे इन्द्र —आत्मा । युक्ता ह्यस्य (इन्द्रस्य) हरय शता दशेति । सहस्र हैत आदित्यस्य रश्मय (इन्द्र —आदित्य) जै० उ० १ ४४ ५ इन्द्र इति ह्येतमाचक्षते य एष (सूर्य) तपति श० ४ ६ ७ ११ एष वै शुक्रो य एष (सूर्य) तपत्येष (सूर्य) उ एवेन्द्र श० ४ ५ ५ ७, ४ ५ ६ ४ स यस्स इन्द्र एष एव स य एष (सूर्य) एव तपति जै० उ० १ २८ २ १ ३२ ५ अथ य स इन्द्रोऽसौ स आदित्य श० ८ ५ ३ २ एष वाऽइन्द्रो य एष (सूर्य) तपति श० २ ३ ४ १२ ३ ४ २ १५ स यस्स आकाश इन्द्र एव स । जै० उ० १ २८ २ अथ यत्रैतत् प्रदीप्तो भवति । उच्चैर्धूम परमया जूत्या बल्बलीति तर्हि हैष (अग्नि) भवतीन्द्र श० २ ३ २ ११ इन्द्रो वागित्यु वाऽआहु श० १ ४ ५ ४ तस्मादाहुरिन्द्रो वागिति श० ११ १ ६ १८ अथ य इन्द्रस्सा वाक् जै० उ० १ ३३ २ वाग्वा इन्द्र कौ० २ ७ १ ३ ५ वागिन्द्र श० ८ ७ २ ६ अय वाऽइन्द्रो योऽय (वात) पवते श० १४ २ २ ६ यो वै वायु स इन्द्रो य इन्द्र स वायु श० ४ १ ३ १६ सर्व वा ऽइदमिन्द्राय तत्स्थानमास यदिद किं चापि योऽय (वायु) पवते श० ३ ६ ४ १४ योऽय चक्षुषि पुरुष एष इन्द्र जै० उ० १ ४३ १० तत प्राणोऽजायत स (प्राण) इन्द्र श० १४ ४ ३ १६ प्राण एवेन्द्र श० १२ ६ १ १४ स योऽय मध्ये प्राण । एष एवेन्द्रस्तानेष प्राणान्मध्यत इन्द्रियैरैन्द्ध यदैन्द्ध तस्मादिन्ध इन्धो ह वै तमिन्द्र इत्याचक्षते परोऽक्षम् श० ६ १ १ २ हृदयमेवेन्द्र श० १२ ६ १ १५ यन्मन स इन्द्र गो० उ० ४ ११ मन एवेन्द्र श० १२ ६ १ १३ रुक्म एवेन्द्र श० १०.४ १ ६ एष वा एतर्हीन्द्रो यो यजते तै० १ ३ ६ ३ इन्द्रो वै यजमान श० २ १ २ ११ एष वा ऽअत्रेन्द्रो भवति यद् यजमान श० ३ ३ ३ १० यजमानो वै स्वे यज्ञ ऽइन्द्र श० ८ ५ ३ ८ द्वयेन वाऽएष इन्द्रो भवति यच्च

१ २३ इन्द्रो ज्येष्ठामनुनक्षत्रमेति तै० ३ १ २ १ इन्द्रस्य रोहिणी तै० १ ५ १ ४ एता वा ऽ इन्द्रनक्षत्र यत्फल्गुन्य श० २ १ २ ११ ऐन्द्रꣳ सान्नाय्यम् (हवि) श० २ ४ ४ १२ ऐन्द्र वै दधि श० ७ ४ १ ४२ ऐन्द्री ब्राह्मणाच्छंशी श० ६ ४ ३ ७ तै० १ ७ ६ १ ऐन्द्राबार्हस्पत्य ब्राह्मणाच्छसिन उक्थ भवति गो० उ० ४ १४, १६ ऐन्द्रो वाऽएष यज्ञो यत्सौत्रामणी श० १२ ८ २ २४ ऐन्द्रो वा एष यज्ञक्रतुर्यत् सौत्रामणी कौ० १६ १० गो० उ० ५ ७ ऋषभमिन्द्राय सुत्रामणऽआलभते श० ५ ५ ४ १ तस्मात्सदस्यृक्सामाभ्या कुर्वन्त्यैन्द्रꣳ हि सद श० ४ ६ ७ ३ ऐन्द्रं हि सद श० ३ ६ १ २२]

इन्द्रघोष: इन्द्रस्य परमेश्वरस्य वेदाख्याया विद्युतो वा घोषो विविधशब्दार्थसम्बन्धो यस्य यस्या वा स सा वा वाक् (विश्वकर्मा विद्वान् वाग्वा) प्र०—घोष इति वाङ्नामसु पठितम् निघ० १ ११, ५ ११ [इन्द्रो व्याख्यातम् घोष इति वाङ्नाम निघ० १.११ तयो समास]

इन्द्रजूतम् सभाध्यक्षेण प्रेरितम् (शिल्पिनम्) १ ११८ ६ **इन्द्रजूत:**—इन्द्रो विद्युदिव प्रतापयुक्त (सज्जन) ३ ३३ ११ [इन्द्र-जूतपदयो समास । जूत = 'जू' इति सौत्रो धातुर् वेगितायां गतावर्थे, तत क्त प्रत्यय]

इन्द्रज्येष्ठा इन्द्र सभापतिर्ज्येष्ठो येषु ते (देवा = विद्वज्जना) ३ ३ ५० **इन्द्रज्येष्ठान्**—इन्द्रो विद्युत् सूर्यो वा ज्येष्ठो येषान्तान् (क्षयान्=निवासान्) ४ ५४ ५ **इन्द्रज्येष्ठा:**—इन्द्र =सूर्यो ज्येष्ठ प्रशस्यो येषान्ते (मरुद्गणा =मरुता समूहा) १ १३ ८. सूर्यो ज्येष्ठो महान् येषा लोकाना तद्वद्वर्त्तमाना (विद्वज्जना) ६.५१ १५ इन्द्र. परमविद्यैश्वर्य प्रधान येषान्ते (सर्वविद्वास) २ ४१ १५ इन्द्र सभापतिर्ज्येष्ठो येषु ते (भा०-राजजना) ३ ३ ५० [इन्द्रज्येष्ठपदयो समास । ज्येष्ठ = प्रशस्यप्राति० अतिशायन इष्ठन् 'ज्य च' ति सूत्रेण ज्यादेश]

इन्द्रज्येष्ठास: इन्द्रो राजा ज्येष्ठो येषान्ते (राजप्रजाजना) ७ ११ ५ [इन्द्रज्येष्ठस्य जस्य सुगागमे रूपम्]

इन्द्रतमा अतिशयेनैश्वर्ययुक्तौ (अश्विनौ=अध्यापकोपदेशकौ) १ १८२ २ **इन्द्रतमे**—अतिशयेनैश्वर्यकारके विद्युद्रूपे (अग्नौ=पावके) ३८ १६. [इन्द्रप्राति० अतिशायने तमप् । 'सुपा सुलुगि' त्याकारादेश]

इन्द्रत्वोता: इन्द्रेण त्वया पालिता (प्रजा.) १ १३२.१

इन्द्रपत्नी इन्द्रस्य जीवस्य पत्नी स्त्रीवद्वर्त्तमाना इडा-सरस्वती-भारतीवाण्य २८ ८ [इन्द्र-पत्नीपदयो समास । पत्नी=पति प्राति० स्त्रिया 'पत्युर्नो यज्ञसयोगे' अ० ४ १ ३३ सूत्रेण नकारादेशो ङीप् च]

इन्द्रपानम् इन्द्रस्य जीवस्य पातुमर्हम् (मधुमत्तम = बहुमधुरादिगुणयुक्त वस्तु) ५ ४३ १ इन्द्रस्यैश्वर्यस्यैश्वर्यस्य वा पान रक्षण वा ६ ४४ १६. **इन्द्रपाना.**—य इन्द्र परमैश्वर्यहेतु सविनार पान्ति ते (चमूषद), प्र०—अत्र नन्द्यादित्वात् ल्यु प्रत्यय १ ५४ ६ [इन्द्रोपपदे 'पा पाने' 'पा रक्षणे' वा (अदा०) धातोर्भावे ल्युट् । अन्यत्र नन्द्यादित्वात्कर्त्तरि ल्यु]

इन्द्रपीतस्य सूर्येण जीवेन वा पीतस्य (पयस = उदकस्य दुग्धस्य वा) ३८ २८ [इन्द्र-पीतपदयो समास । पीतम्=पा पाने (भ्वा०) धातो क्त । 'घुमास्थागापा०' अ० ६ ४ ६६ सूत्रेणेकारादेश]

इन्द्रमिव ऐश्वर्यमिव ११ ५७ यथाविद्युतम् १४ १५ सूर्यप्रकाशमिव सद्यो गन्तारम् (विद्युद्यानम्) १ ११६ १० सूर्यवत् दूरस्थमपि व्यवहारप्रकाशनसमर्थम् (तारम्) ऋ० भू० २०० [इन्द्र-इवपदयो समास । 'इवेन सह समासो विभक्त्यलोप पूर्वपदप्रकृतिस्वरत्व च वक्तव्यम्' अ० २ २ १८ वा० इति समासे विभक्तेर्न लोप]

इन्द्रयन्ते इन्द्र स्वामिन कुर्वते ४ २४ ४ [इन्द्रप्राति० 'तत्करोति तदाचष्टे' वार्तिकसूत्रेण णिजन्ताल् लट्]

इन्द्रवत् विद्युद्वत् (ऐश्वर्यम्) ३८ ४ [इन्द्रप्राति० 'तत्र तस्येव' अ० ५ १ ११६ सूत्रेण वति । स्वरादिपाठाद् वतेरव्ययत्वम्]

इन्द्रवत् इन्द्र परमैश्वर्य विद्यते यस्मिँस्तत् (वस्तु) ३८ ४. चेतनाऽऽत्मसयुक्त शरीरम् ३८ ४. [इन्द्रप्राति० समर्गेऽर्थे मतुप् । 'मादुपधायाश्च०' इति मतोर्मकारस्य वकार]

इन्द्रवत्या इन्द्रो वह्नी विद्युद् विद्यते यस्या तया (रात्र्या=तमोरूपया) प्र०—अत्र भूमस्यर्थे मतुप् 'स्तनयित्नुरेवेन्द्र, शत० १४ ५ ७ ७, ३ १०. सूर्यप्रकाशमहितया (उषसा) ३ १० सूर्यप्रकाशवत्योपमाऽथवा जीववत्या मानसवृत्या, वायुचन्द्रवत्या रात्र्या सह ऋ० भू० २४६ [इन्द्रप्राति० भूम्नि मतुप् । 'उगितश्चे' ति स्त्रिया ङीप्]

इन्द्रवन्त. परमैश्वर्ययुक्त इन्द्रस्तद्वन्त (सर्ववीरा) १ १०५ १६ वह्निन्द्र ऐश्वर्य विद्यते येषान्ते (रुद्रास =

भवति······इन्द्रो वैकुण्ठो मध्यन्दिने जै० उ० ४ १०.१० इन्द्रो वै मघवान् श० ४ १ २ १५ स उ एव मख स विष्णु । तत इन्द्रो मखवानभवन्मखवान्ह वै त मघवानमित्याचक्षते परोऽक्षम् श० १४ १ १ १ ३ इन्द्रो वसुधेय श० १ ८ २ १ ६ इन्द्र उ वै वेन कौ० ८ ५ इन्द्रो वै वेधा ऐ० ६ १० गो० उ० २ २० इन्द्रो हि षोडशी श० ४ २ ५ १४ इन्द्रो ह वै षोडशी श० ४ ५ ३ १ कौ० १७ १ ४ एतद्ध वा इन्द्राग्न्यो प्रिय धाम यद् वागिति ऐ० ६ ७. गो० उ० ६ १३ वाग् वै ऐन्द्री ऐ० २ २९ वाक् च प्राणश्चेन्द्रवायव ऐ० २ १६ अथैतद्वामेऽक्षिणि पुरुषरूपम् । एषास्य (दक्षिणेऽक्षणि वर्त्तमानस्य पुरुषस्येन्द्राख्यस्य) पत्नी विराट् श० १४ ६ ११ ३ इन्द्रो वृषा श० १४ १ ३३ इन्द्रो वै वृषा ता० ९ ४ ३ इन्द्रो वै वाजी ऐ० ३ १८ इन्द्रो वै गोपा ऐ० ६ १० गो० उ० २ २० इन्द्रो उ वै परुच्छेप कौ० २३ ४ एतेन (पारुच्छेपेन रोहिताख्येन छन्दसा) वा इन्द्र सप्त स्वर्गाल्लोकानारोहत् ऐ० ५ १० इन्द्रो वै चतुर्होता तै० २ ३ १ ३ इन्द्र सप्तहोता तै० २ ३ १ १ २ २ ८ ५. यन्मन स इन्द्र गो० उ० ४ ११ इन्द्रो वै प्रदाता स एत्रास्मै यज्ञ प्रयच्छति कौ० ४ २ यो ह खलु वाव प्रजापति स उ वावेन्द्र तै० १ २ २ ५ इन्द्रो वै त्वष्टा ऐ० ६ १० इन्द्र उ वै वातापि स हि वातमाप्त्वा शरीराण्यर्हन् प्रतिप्रैति कौ० २७ ४ कतमत्तदक्षरमिति। यत्क्षरन्नाऽक्षीयतेति इन्द्र इति जै० उ० १ ४३ इन्द्र उ वै वरुण स उ वै पयोभाजन कौ० ५ ४ गो० उ० १ २२ इन्द्रस्य शतभिषक् (नक्षत्रम्) तै० १ ५ १ ५ इन्द्रो लोकम्पृणा श० ८ ७ २ ६ यत् पुरस्ताद् वासीन्द्रो राजा भूतो वासि जै० उ० ३ २१ २ दक्षिणा दिक् । इन्द्रो देवता तै० ३ ११ ५ १ अथ यद् विश्वजितमुपयन्ति । इन्द्रमेव देवता यजन्ते श० १२ १ ३ १५ इन्द्रो विश्वजिद् इन्द्रो हीद सर्व विश्वमजयत् कौ० २४ १ ततो वा इदमिन्द्रो विश्वमजयद् यद् विश्वमजयत्तस्माद् विश्वजित् ता० १६ ४ ५ इन्द्रो वै युधाजित् ता० ७ ५ १४ इन्द्रो वै प्रासहस्पतिस्तुविष्मान् ऐ० ३ २२ सेना वा इन्द्रस्य प्रिया जाया वावाता प्रासहा नाम ऐ० ३ २२. सेना ह नाम पृथिवी धनञ्जया विश्वव्यचा अदिति । सूर्यत्वक् । इन्द्राणी देवी प्रासहा ददाना तै० २ ४ २ ७ वैखानसा वा ऋषय इन्द्रस्य प्रिया आसन् ता० १४ ४ ७ यत्रेन्द्र देवता (यज्ञेषु) पर्यवृञ्जन् (यत स इन्द्र) विश्वरूप त्वाष्ट्रमभ्यमस्त वृत्रमस्तृत यतीन्त्सालावृकेभ्य प्रादादरुर्मघानवधीद् बृहस्पते प्रत्यवधीदिति तत्रेन्द्र सोमपीथेन व्यार्द्धत ऐ० ७ २८

कालकञ्जा वै नामासुरा आसन् । ते सुवर्गाय लोकायाग्निमचिन्वत पुरुष इष्टकामुपादधत् पुरुष इष्टकाम् । स इन्द्रो ब्राह्मणो ब्रुवाण इष्टकामुपाधत्त । एषा मे चित्रा नामेति । ते सुवर्गलोकमाप्रारोहन् । स इन्द्र इष्टकामवृहत् । तेऽवाकीर्यन्त येऽवाकीर्यन्त त ऊर्णनाभयोऽभवन् । द्वावुदपतताम् । तौ दिव्यौ श्वानावभवताम् तै० १ १ २ ४-६ इन्द्रो यतीन् सालावृके येभ्य प्रायच्छत्तमश्लीला वागभ्यवदत् स प्रजापतिमुपाधावत् तस्मा एतमुपहव्य प्रायच्छत् ता० १८ १ ९ नमुचिर्ह वै नामासुर आस तमिन्द्रो निविव्याध तस्य पदा शिरोऽभितष्ठौ स यदभिष्ठित उदवाधत स उच्छ्वङ्कुरतस्य पदा शिर प्रचिच्छेद ततो रक्ष समभवत् श० ५ ४ १ ९ त (त्रिशीर्षाण त्वाष्ट्र विश्वरूप) इन्द्रो दिद्वेषतस्य तानि शीर्षाणि प्रचिच्छेद श० १ ६ ३ २ स (इन्द्र) यत्र त्रिशीर्षाण त्वाष्ट्र विश्वरूप जघान श० १ २ ३ २ इन्द्रो वै वृत्रहा कौ० ४ ३ महानाम्नीभिर्वा इन्द्रो वृत्रमहन् कौ० २३ २ इन्द्रो वा एष पुरा वृत्रस्य वधादथ वृत्रꣳ हत्वा यथा महाराजो विजिग्यान एव महेन्द्रोऽभवत् श० १ ६.४२१, ४ ३ ६ १७ इन्द्रो वै वृत्र हत्वा विश्वकर्माऽभवत् ऐ० ४ २२ तस्य (इन्द्रस्य) असौ (द्यु०) लोकोनाभिजित आसीत्तम् (इन्द्र) विश्वकर्मा भूत्वाभ्यजयत् तै० १ २ ३ ३ मरुतो ह वै क्रीडिनो वृत्रꣳ हनिष्यन्तमिन्द्रमागत तमभित परिचिक्रीडुर्महयन्त श० २ ५ ३ २० ते (मरुत) एनम् (इन्द्रम्) अभ्यक्रीडन् तै० १ ६ ७ ५ इन्द्रो वै मरुत क्रीडिन गो० उ० १ २३ इन्द्रो वै मरुतसान्तपन गो० उ० १ २३ इन्द्रस्य वै मरुत कौ० ५ ४, ५ धर्म इन्द्रो राजेत्याह तस्य देवा विश श० १३ ४ ३ १४ एतद्वाऽइन्द्रस्य निष्केवल्यꣳ सवन यन्माध्यन्दिनꣳ सवन तेन वृत्रमजिघासत्तेन व्यजिगीषत श० ४ ३ ३ ६ ऐन्द्र वै माध्यन्दिन सवनम् । जै० उ० १ ३७ ३ इन्द्रस्य माध्यन्दिन सवनम् कौ० १४ ५ ऐन्द्र हि त्रैष्टुभ माध्यन्दिन सवनम् कौ० २९ २ गो० उ० ४ ४ त्रैष्टुभ इन्द्र कौ० ३ २ २२ ७ इन्द्र (श्रिय) बलम् (आदत्त) श० ११ ४ ३ ३ तान् (पशून्) इन्द्र पञ्चदशेन स्तोमेन नाप्नोत् तै० २ ७ १४ २ ऐन्द्रो राजन्य ता० १५ ४ ८ (राजन्यस्य) इन्द्रो देवता ता० ६ १ ८ हरिव आगच्छेति पूर्वपक्षापरपक्षौ वा इन्द्रस्य हरी ताभ्याꣳ हीदꣳ सर्व हरति ष० १ १ ऐन्द्री द्यौ ता० १५ ४ ८ द्यौरिन्द्रेण गर्भिणी श० १४ ९ ४ २१ ऐन्द्र हि पुरीषम् श० ८ ७ ३ ७ अथ यत्पुरीषꣳ स इन्द्र श० १० ४ १ ७ ऐन्द्र्यो वालखिल्या (ऋच) ऐ० ६ २९. ऐन्द्रो वा एष यज्ञक्रतुर्यत्साकमेधा कौ० ५ ५ गो० उ०

सयुक्तौ वायुविद्युदग्नी ३३ ४६ सभासेनाधीशौ ३३ ६१ अध्यापकोपदेशकौ ३३ ६३ अध्येत्रध्यापकौ १ १० ६ ७ उपदेश्योपदेष्टारौ १ १० ६ ८ न्यायसेनाध्यक्षौ वायुविद्युतौ वा १ १०८ ६ परमधनाढ्यौ युद्धविद्याप्रवीणश्च १ १०८ १३ स्वामिभृत्यौ १ १०८ ५ ऐश्वर्यविद्यायुक्तौ (अध्यापकोपदेशकौ) ३ १२ २ विद्युद्भौतिकावग्नी १ १० ६ १ इन्द्र प्रसिद्धो विद्युदग्नि पावकश्च १८ ४७ इन्द्रो विद्युच्चाग्नि सूर्यश्च १४ ११ सूर्य तथा अग्नि आर्याभि० २ २३, ३६ ११ बिजली और प्रसिद्ध अग्नि स० वि० १२२, अथर्व० १४ १ ५४ वायुवह्नी इव वर्त्तमानौ राजप्रजाजनौ ६ ५६ २ **इन्द्राऽग्निभ्याम्**=जीवाऽग्निभ्याम् २२ ५ वायुविद्युदस्त्राभ्याम् ३४ ४६ सूर्याग्निभ्याम् ५ ८६ ६ विद्युत्प्रसिद्धाभ्या वह्निभ्याम् ७ २३ **इन्द्राग्न्योः**=वायुपावकयो २५ ५ इन्द्रो वायुरग्निविद्युत्तयो २ १५ सूर्यविद्युतो ६ २४ [इन्द्र-अग्नि-पदयोर्द्वन्द्वे 'देवताद्वन्द्वे च' अ० ६ ३ २६ सूत्रेण पूर्वस्याऽऽनङ् । इन्द्राग्नी प्राणोदानौ वा ऽ इन्द्राग्नी श० २ ५ २ ८ इन्द्राग्नी हि प्राणोदानौ श० ४ ३ १ २२ प्राणापानौ वा इन्द्राग्नी गो० २ १ प्राणापानौ वा एतौ देवाना यदिन्द्राग्नी तै० १ ६ ४ ३ वल वै तेज इन्द्राग्नी गो० उ० १ २२ ब्रह्मक्षत्रे वा इन्द्राग्नी कौ० १२ ८ अमृतꣳ इन्द्राग्नी श० १० ४ १ ६ इन्द्राग्नी वै देवानामयातयामानौ तै० १ १ ६ ५, १ २ ५ १ इन्द्राग्नी वै देवाना मुखम् कौ० ४ १४ तस्मादाहुरिन्द्राग्नी ऽ एव देवानाꣳ श्रेष्ठाविति श० ८ ३ १ ३ इन्द्राग्नी वै देवानामोजस्वितमौ श० १३ १ २ ६ इन्द्राग्नी वै देवानामोजिष्ठौ ता० २४ १७ ३ प० ३ ७. इन्द्राग्नी इव वनेन (भूयास) म० २ ४ १४ ओजो वल वा एतौ देवाना यदिन्द्राग्नी तै० १ ६ ४ ४ इन्द्राग्नी वै देवानामोजिष्ठौ वलिष्ठौ सहिष्ठौ सत्तमौ पारयिष्णुतमौ ऐ० २ ३६ इन्द्राग्नी वै देवानामोजिष्ठौ वलिष्ठौ तै० ३ ८ ७ १ एताभिर्वा इन्द्राग्नी अत्यन्या देवता अभवताम् ता० २४ १७ २ इन्द्राग्नी वै विश्वेदेवा श० १० ४ १ ६ इन्द्राग्नी वै सर्वे देवा कौ० १२ ६ श० ६ १ २ २८ इन्द्राग्नी वा इद सर्वम् श० ४ २ २ १४ अस्ति वै छन्दसा देवतेन्द्राग्नी श० १ ८ २ १६ प्रतिष्ठे वा इन्द्राग्नी कौ० ३ ६, ५ ४ क्षत्र वा इन्द्राग्नी श० २ ४ २ ६ ज्योतिरिन्द्राग्नी श० १० ४ १ ६ ऐन्द्राग्न वै सामतस्तृतीय सवनम् को० ४ ४ तस्मादैन्द्राग्नौ द्वादशकपाल पुरोडाशो भवति श० १ ६ ४ ३ ऐन्द्राग्नो द्वादशकपाल पुरोडाशो भवति श० २ ५ २ ८ ऐन्द्राग्नानि ह्यवथानि श० ४ २ ५ १४ दर्शपूर्णमासयोर्वै देवते स्त इन्द्राग्नी ऽ एव श० २ ४ ४ १७ इन्द्राग्नी वै विश्वेदेवा श० २ ४ ४ १३ इन्द्राग्नी हि विश्वेदेवा श० २ ६ २ १४ नक्षत्राणामधिपत्नी विशाखे । श्रेष्ठाविन्द्राग्नी भुवनस्य गोपौ तै० ३ १ १ ११ इन्द्राग्न्योविशाखे (नक्षत्रविशेष) तै० १ ५ १ ३ एतद्ध वा इन्द्राग्न्यो प्रिय धाम यद् वागिति गो० ६ ७ गो० उ० ५ १३]

इन्द्राणी इन्द्रस्य परमैश्वर्ययुक्तस्य स्त्री ५ ४६ ८ सूर्य की कान्ति स० वि० १३८ **इन्द्राणीम्**=परमैश्वर्ययुक्ताम् (विदुषी स्त्रीम्) २ ३२ ८ इन्द्रस्य सूर्यस्य वायोर्वा शक्ति सामर्थ्यमिव वर्त्तमानाम् (स्त्रियम्) १ २२ १२ **इन्द्राण्यै**=इन्द्रस्य विद्युद्रूपस्य स्त्रीव वर्त्तमानायै दीप्त्यै २५ ४ परमैश्वर्यकारिण्यै राजनीत्यै ३८ ३ [इन्द्रशब्दात् स्त्रियाम् 'इन्द्रवरुण०' अ० ४ १ ४६ सूत्रेण ङीप् आनुक् च । इन्द्राणी इन्द्रस्य पत्नी नि० ११ ३७ इन्द्राणी ह वा ऽइन्द्रस्य प्रिया पत्नी, तस्या उष्णीषो विश्वरूपतम श० १४ २ १ ८ स एष एवेन्द्र योऽय दक्षिणेऽक्षन्पुरुषोऽथेयमिन्द्राणी श० १० ५ २ ६.]

इन्द्रापर्वता सूर्यमेघाविव वर्त्तमानौ सभासेनेशौ १ १३२ ६ सूर्यमेघसदृशौ सेनापतिसेनाजनौ, प्र०—अत्र 'सुपा सुलुग्०' अ० ७ १ ३६ इत्याकारादेश ८ ५३ विद्युन्मेघाविव राज्यसेनाधीशौ ३ ५३ १ [इन्द्र-पर्वतपदयोर्द्वन्द्वे । 'देवताद्वन्द्वे च' अ० ६ ३ २६ सूत्रेण पूर्वपदस्यानङ् । इन्द्रो व्याख्यात । पर्वत =मेघनाम निघ० १ १०]

इन्द्रापूषणा विद्युत्पृथिव्यौ ३६ ११ विद्युद्वायू ७ ३५ १ **इन्द्रापूष्णोः**=ऐश्वर्यवत्पुष्टिमतो (विद्युत्सूर्ययो) १ १६२ २ विद्युद्वाय्वो २५ २५ [इन्द्र-पूषन् पदयोर्द्वन्द्वे पूर्वपदस्यानङ् । पूषन्=पृथिवीनाम निघ० १ १. पदनाम निघ० ५ ६ पूषेत्यपर सोऽदन्तक । 'अदन्तक पूषा' (श० १ ७ ४ ७ गो० उ० १ २) इति च ब्राह्मणम् नि० ६ ३१]

इन्द्राबृहस्पती वायुसूर्यौ २५ ६ अध्यापकोपदेशकौ ४ ४६ ५ राजोपदेशकविद्वासौ ४ ४६ २ विद्युत्सूर्याविव प्रधानराजानौ ४ ४६ १ राजाऽमात्यौ ४ ४६ ६ **इन्द्राबृहस्पतिभ्याम्**=राजाऽनूचानाभ्या विद्वद्भ्याम् ७ २३ [इन्द्र-बृहस्पतिपदयोर्द्वन्द्वे पूर्वपदस्य आनङ्ादेश । बृहस्पति पदनाम निघ० ५ ४ 'तद्बृहतो करपत्योश्चोरदेवतयो सुट् तलोपश्च' अ० ६ १ १५७ इति सुट् तलोपौ । बृहत पाता वा पालयिता वा नि० १० ११]

इन्द्राब्रह्मणस्पती राजधनपालकौ (प्रजा-राजपुरुषौ)

विद्वज्जना) ५.५७.१ परमैश्वर्ययुक्ता (पितर) ४.३३.३
इन्द्रवन्ता=वह्वैश्वर्ययुक्तौ (अश्विनौ=सभामेनेशौ) १.११६.२१ [इन्द्र+मतुप् । मकारस्य वकार । प्रथमा-वहुवचनम्]

इन्द्रवायुभ्याम् विद्युत्प्राणाभ्यामिव योगाकर्षण-निष्कर्षणाभ्याम् ७.८ **इन्द्रवायू**=प्राणसूर्यसदृशौ योगम्यो-पदेष्ट्रभ्यासिनौ (योगिसिद्धजनौ) ७.८ सूर्यवायू इवा-ऽध्यापकोपदेशकौ ४.४६.६ इमौ प्रत्यक्षौ सूर्य्यपवनौ। 'इन्द्रेण सेचना दिवो दृळहानि दृहितानि च । स्थिराणि न पराणुदे, ऋ० ८.१४.९ यथेन्द्रेण=सूर्य्यलोकेन प्रकाशमाना किरणा धृता, एव च स्वाऽऽकर्षणशक्त्या पृथिव्यादीनि भूतानि दृढानि पुष्टानि स्थिराणि कृत्वा दृहितानि धारितानि सन्ति, न पराणुदे=अतो नैव स्वस्व-कक्षा विहायेतस्ततो भ्रमणाय समर्थानि भवन्ति । 'इमे चिदिन्द्र रोधसी अपारे ......परिस्रवणात मेघम् निरु० ६.१ यतोऽय सूर्य्यलोको भूमिप्रकाशौ धारितवानस्ति, अत एव पृथिव्यादीना निरोध कुर्वन् पृथिव्या मेघस्य च कूल स्रोतश्चाकर्षणेन निरुणद्धि । यथा वाहुवेगेनाकाशे प्रतिक्षिप्तो लोष्ठो मृत्तिकाखण्ड पुनर्विपर्य्ययेणाकर्षणाद् भूमिमे-वागच्छति, एव दूरे स्थितानपि पृथिव्यादिलोकान् सूर्य्य एव धारयति । सोऽय सूर्य्यस्य महानाकर्ष. प्रकाशश्चाऽस्ति । तथा वृष्टिनिमित्तोऽप्ययमेवाऽस्ति । "इन्द्रो वै त्वष्टा" ऐ० ब्रा० ६.१० सूर्य्यो भूम्यादिस्थस्य रसस्य मेघस्य च छेत्ताऽस्ति । एतानि भौतिकवायुविषयाणि 'वायवा याहि०' इति मन्त्रप्रोक्तानि प्रमाणान्यत्रापि ग्राह्याणि १.२.४ वनिविद्वासौ राजाऽमात्यौ ४.४७.४ विद्युत्प्राणौ १.१३९.१ इन्द्रश्च वायुश्च तौ विद्युत्पवनौ १.१४.३ विद्युत्पवन-विद्याविदौ (विद्वज्जनौ) ३.३५.६ सूर्यपवनाविव (अध्या-पकोपदेशकौ) १.१३५.५ राजप्रजाजनौ ३.३.८६ वायुविद्युद्वच्छीघ्रकारिणौ शिल्पविद्याऽध्यापकोपदेशकौ ४.४६.४ वायुविद्युदग्नी इव प्रतापिनौ राजसेनेशौ ४.४६.५ अग्निपवनौ १.२३.२ [इन्द्र-वायुपदयो समास । इन्द्रो व्याख्यात । वायु=अजगतिक्षेपणयो (भ्वा०) धातोरौणादिको युच् । 'वा यौ' अ० २.४.५७ सूत्रेण वातोर्वादेश । 'वा गतौ' (अदा०) धातोर्वौणादिक उण्]

इन्द्रवाहा याविन्द्र विद्युत परमैश्वर्य वहतस्तौ (हरी=जलाग्न्याख्यौ), प्र०—अत्राऽऽकारादेश १.१११.१ **इन्द्र-वाहौ**=ऐश्वर्यप्रापकौ (हरी=वायुविद्युतौ) ४.३५.५ [इन्द्रोपपदे वह प्रापणे (भ्वा०) धातो 'वहश्च' अ० ३.२.६४ सूत्रेण ण्वि प्रत्यय । अथवा—'कर्मण्यण्' इत्यण् प्रत्यय]

इन्द्रशत्रुः इन्द्र शत्रुर्यस्य वृत्रस्य स (मेघ) १.३२.६ इन्द्र शत्रुर्यस्य स मेघ. १.३२.१० [इन्द्र-शत्रुपदयो समास । इन्द्रशत्रु=इन्द्रोऽस्य शमयिता वा शातयिता वा नि० २.१६]

इन्द्रसखा इन्द्रः परमैश्वर्यो राजा सखा यस्य स (विद्वज्जन) ७.३४.२४ [इन्द्र-सखिपदयो समास । 'राजाहस्सखिभ्यष्टच्' अ० ५.४.९१ सूत्रेण तत्पुरुषे विहितष्टच् समासान्तो वहुव्रीहावपि भवति छान्दसत्वात्]

इन्द्रसारथिः इन्द्रो विद्युत् सारथिर्यस्य स (वायु) ४.४६.२. इन्द्रस्य विद्युत सूर्यस्याऽग्नेर्वा नियमेन गमयिता (नियुत्वान्=नियतगतिर्वायु) ४.४८.२ [इन्द्र-सारथि-पदयो समास । सारथि=सारयति नियमेन चालयतीति विग्रहे 'सृ' गतौ (भ्वा०) धातोर्णिजन्तात् 'सर्त्तेर्णिच्च' उ० ४.८९ सूत्रेण घथिन् प्रत्यय । णेर्लोपो णित्वाच्च वृद्धि]

इन्द्रस्येव यथा परमैश्वर्ययुक्तस्य राज्ञ ९.८ सूर्यस्येव ७.९.१ [इन्द्र-इवपदयो 'इवेन सह समासो विभक्त्य-लोप ०' अ० २.२.१८ वा० इति समासो विभक्तेश्च न लोप]

इन्द्रस्वन्तम् परमैश्वर्ययुक्तस्वामिसहितम् (रयिं=धनम्) ४.३७.५ [इन्द्रस्वप्राति० मतुप्]

इन्द्रहूतिम् परमैश्वर्यप्रकाशिकाम् (वीतिं=वियम्) ६.३८.१ [इन्द्रोपपदे ह्वेञ् स्पर्धाया शब्दे च (भ्वा०) धातो क्तिन् वाहुलकात् यजादित्वात् किति सम्प्रसारणम्]

इन्द्रा परमैश्वर्ययुक्तम् (सज्जनम्) ६.५७.१

इन्द्राकुत्सा इन्द्रश्च कुत्सश्चेन्द्राकुत्सौ विद्युदाघातौ ५.३१.९ [इन्द्र-कुत्सयो समासे 'देवताद्वन्द्वे च' अ० ६.३.२६ सूत्रेण पूर्वपदस्यानङ् । कुत्स इत्येतत् कृन्ततेर्ऋषि कुत्सो भवति । कर्त्तास्तोमानाम् इत्यौपमन्यवोऽत्राप्यस्य वधकर्मैव भवति । 'तत्सख इन्द्र शुष्ण जघान' इति नि० ३.११ कुत्स=वज्रनाम निघ० २.२०]

इन्द्राऽग्नी इन्द्रो वायुर्विद्युदादिरूपोऽग्निश्च तौ ३.१३ वायुवह्नी प्र०—"या वै वायु स इन्द्रो य इन्द्र स वायु" शत० ४.१.३.१९, १.२.१.१ प्राणविद्युताविव (आप्ताव-ध्यापकोपदेशकौ) १.१३९.९ वायुसवितारौ १.१०८.२ वायुपावकौ १.१०८.१ सूर्यविद्युतौ ५.४६.३ सूर्याऽग्नी इव प्रकाशमानौ सभापतिसभासदौ ७.३१ मातापितरौ १.२.५४ इन्द्र परमैश्वर्यश्चाऽग्निर्विज्ञाता च तौ १५.५९.

च क्रोध च श्लाघा च रूप च पुण्यमेव गन्ध सप्तमम् गो० पू० २ २]

इन्द्रियावत् प्रशस्तानि इन्द्रियाणि भवन्ति यस्मिन् तत् (दुग्धम्) १६ ६५ **इन्द्रियावतः**=बहुधनयुक्तस्य (बृहस्पतिसुतस्य) ८ ६ **इन्द्रियावान्**=प्रशस्तानीन्द्रियाणि यस्मिन् स (भाग =कर) ६.२७ [इन्द्रियमिति धननाम निघ० २ १० ततो भूम्नि प्रशसार्थे वा मतुप्। 'मन्त्रे सोमाश्वेन्द्रियविश्वदेव्यस्य मतौ' अ० ६ ३ १३१ सूत्रेण मतौ परतो दीर्घत्वम्]

इन्द्रेषिताम् इन्द्रेण परमेश्वरेण प्रेषिताम् (धमनिं=वेदवाणीम्) २ ११ ८ **इन्द्रेषिताः**=इन्द्रेण स्वामिना प्रेरिता (पवय =चक्राणि) ५ ३१ ५ **इन्द्रेषिते**=इन्द्रेण सूर्येण वर्षाद्वारा प्रेरिते (अध्यापिकोपदेशिके) ३ ३३ २ [इन्द्र-इषितपदयो समास । इषित =इषु गतौ (दिवा०) धातो क्त]

इन्धताम् दीप्यन्तु १ १७० ४ प्रदीपयन्तु ११ ६१ प्रकाशयन्तु १२ ४४ **इन्धते**=प्रदीपयन्ति ७ ३२ प्रकाशयन्ति ३४ ४४ प्रदीप्यन्ते १ ४४ ७ **इन्धे**=प्रकाशयामि २० २४ प्रकाशयते ७ १ १६ प्रदीपयामि ७ ८ १ [ञिइन्धी दीप्तौ (रुधा०) धातोर्लोटि लटि च रूपाणि]

इन्धन्वभिः प्रदीपिकाभि (धेनुभि =वाग्भि) प्र०—अत्र वनिपि 'छान्दसो वर्णलोपो वा' इत्यलोप २ ३४ ५ [ञिइन्धी दीप्तौ (रुधा०) धातोर्वनिप्]

इन्धान प्रदीपयन्, अ०—विद्वान् (सभेशो राजा) १२ १८ प्रदीप्त सन् (विद्वज्जन) १ १४३ ७ **इन्धानाः**=प्रकाशमाना (ऋषय =वेदार्थवेत्तारो जना) १५ ५६ प्रकाशयन्त, अ०—प्रदीपयन्त (जना) ३ १८ प्रकाशयितार प० वि०, अथर्व० १६ ५ ३ [ञिइन्धी दीप्तौ (रुधा०) धातो शानच्। ताच्छील्ये चानश् वा कर्त्तरि]

इन्व व्याप्नुहि ५ ४ ७ **इन्वतम्**=वर्धयतम् १ १६० ५ **इन्वतः**=व्याप्नुत, प्र०—इन्वतीति व्याप्तिकर्मसु पठितम् निघ० २ १८, १ १० ८ **इन्वताम्**=व्याप्नुताम् ६ ७० ६ **इन्वति**=व्याप्नोति जानाति वा, प्र०—इन्वतीति गतिकर्मसु पठितम् २ १४, १ १८ ७ प्राप्नोति १ १२८ ५ **इन्वतु**=व्याप्नोतु प्राप्नोतु १ १६२ १२ ददातु ४ ५३ ७ **इन्वथः**=प्राप्नुतम् १ ११६ ७ **इन्वसि**=व्याप्नोति, प्र०—अत्र 'व्यत्ययो बहुलम्' इति लकार व्यत्यय ५ २८ २ व्याप्नोषि १ १७६ १ व्याप्नोषि व्याप्नोति वा १ ६४ १० **इन्विरे**=व्याप्नुवन्ति ५ ६ ६ [इवि व्याप्तौ (भ्वा०) धातोर्लोटि लटि लिटि च रूपाणि । नोटि व्यत्ययेनात्मनेपदम्। इन्वति गतिकर्मा निघ० २ १४ व्याप्तिकर्मा निघ० २ १८]

इन्वतः प्रियस्य (यजमानस्य) १ १४१ ४ [इवि गतौ (भ्वा०) धातो शतरि रूपम्]

इन्वन् प्राप्नुवन् (राजा) ५ ३० ७ **इन्वन्तः**=व्याप्नुवन्त (मनुष्या) ३ ४ ५ [इवि गतौ (भ्वा०) धातो शतृ० । इन्वतीति व्याप्तिकर्मणो वा (निघ० २ १८) शतृ]

इभम् हस्तिनमिव ६ २० ८ **इभाय**=हस्तिने १ ८४ १७ **इभेन**=हस्तिना ४ ४ १ [इण् गतौ (अदा०) धातो 'इण कित्' उ० ३ १५३ सूत्रेण भन् प्रत्यय किच्च। इभाय=महते नि० १३ ३६ इभेन=इगभृतागणेन गतभयेन हस्तिना वा नि० ६ १२]

इभ्यान् य इभान् हस्तिनो नियन्तुमर्हन्ति तान् (हस्तिचालकान्) १ ६५ ४ [इभप्रातिपदिकादर्हत्यर्थे यत्। इभश्च व्याख्यातम्]

इमथा इदानीन्तनानामिव (योगिनाम्) ७ १२ इममिव ५ ४४ १ [इमप्राति० 'प्रत्नपूर्वविश्वेमात्थाल छन्दसि' अ० ५ ३ १११ सूत्रेणेवार्थे थाल् प्रत्यय। इमथा=अमुथा नि० ३ १६]

इमसि प्राप्नुम १ १ ७ [इण् गतौ (अदा०) धातोर्लटि, उत्तमबहुवचने मसि 'इदन्तो मसि' रिति मस इदन्तत्वम्]

इमः प्राप्नुम ११ १६ [इण् गतौ (अदा०) धातोर्लट्]

इयक्षते यष्टु सत्कर्त्तुमिच्छते (इन्दवे=विद्यार्थिने) प्र०—अत्र छान्दसो वर्णलोप इत्यभ्याम-यकारलोप ३३ ६२ [यज देवपूजासगतिकरणदानेषु (भ्वा०) धातोरिच्छायामर्थे सनि शतरि रूपम्। अभ्यासयकारस्य च 'छान्दसो वर्णलोप' इति लोप]

इयक्षन् प्राप्तुमिच्छन् (सूरि =विद्वान्) १ १५३ २ **इयक्षन्तः**=सत्कुर्वन्त (सत्पुरुषा) २ २० १ यष्टु सङ्गमयितुमिच्छन्त (अहिसका जना) ६ २१ ३ [इयक्षति गतिकर्म, निघ० २ १४, तत शतृ। अथवा=यज देवपूजासगतिकरणदानेषु (भ्वा०) धातो सन्नन्ताच्छतृ। अभ्यासयकारस्य लोपश्छान्दस]

इयक्षमाणाः यज्ञ चिकीर्षमाणा (यजमाना)

२ २४ १२ [इन्द्र-ब्रह्मणस्पतिपदयोर्द्वन्द्वे पूर्वपदस्यानङ् । ब्रह्मण·पति=ब्रह्मण पाता वा पालयिता वा नि० १० १२ ब्रह्मणस्पति=पदनाम निघ० ५ ४]

इन्द्रामरुतः इन्द्रश्च विद्युन्मरुतश्च वायवस्तान् २ २६ ३ [इन्द्र-मरुत्पदयोर्द्वन्द्वे पूर्वपदस्यानङ् । मरुत= ऋत्विङ्नाम निघ० ३ १८ पदनाम निघ० ५ ५. मरुत्= हिरण्यनाम निघ० १ २ रूपनाम निघ० ३ ७]

इन्द्रावतः ऐश्वर्ययुक्तान् (पुरुषार्थिनो जनान्) ४ २७ ४ [इन्द्रप्राति० भूम्नि मतुप् । 'अन्येपामपि दृश्यते' अ० ६ ३ १३७ सूत्रेण दीर्घ]

इन्द्रावरुणयोः इन्द्रश्च वरुणश्च तयो सूर्याचन्द्रमसो, प्र०—इन्द्र इति पदनामसु पठितम् निघ० ५ ४ 'वरुण इति च निघ० ५ ४ अनेन व्यवहारप्रापकौ गृह्यते १ १७ १ **इन्द्रावरुणा**=अग्निजले, प्र०—अत्र 'सुपा सुलुग्० इत्याकारादेशो वर्णव्यत्ययेन ह्रस्वत्वञ्च १ १७ ३ विद्युज्जले ७ ३५ १ वायुजले सम्यक् प्रत्युक्ते १ १७ ८ वायुविद्युताविव (अध्यापकोपदेशकौ) ४ ४२ ६ शुभगुण-युक्तप्रधानौ (राजाऽमात्यौ) ४ ४१ ३ परमैश्वर्य-श्रेष्ठाचार-युक्तौ (अध्यापकोपदेशकौ) ४ ४१ १ विद्यैश्वर्यप्रशसित-गुणयुक्तौ (अध्यापकोपदेशकौ) ४ ४१ ५ प्राणोदानवत् प्रियवलिनौ (अध्यापकोपदेशकौ) ४ ४१ १ शत्रुविदारक-श्रेष्ठौ (राजाऽमात्यौ) ४ ४१ ४ वायु और चन्द्र आर्याभि० २ २३, ३६ ११ सूर्यचन्द्रवद्वर्त्तमानौ राजप्रजाजनौ ६ ६८ ८ **इन्द्रावरुणाभ्याम्**=विद्युज्जलाभ्याम् ७ २३ [इन्द्र-वरुणपदयोर्द्वन्द्वे पूर्वपदस्यानङ् । इन्द्र इति पदनाम निघ० ५ ४ वरुण इति पदनाम निघ० ५ ४]

इन्द्राविष्णू सूर्यविद्युतौ ६ ६९ १ विद्युत्सूर्याविव (अध्यापकोपदेशकौ) १ १५५ २ विद्युद्वायू ४ ५५ ४ विद्युत्सूत्रात्मानौ ४ २ ४ वायुसूर्यौ ६ ६९ ४ वायुविद्युता-विव सभासेनेशौ ६ ६९ ३ **इन्द्राविष्णुभ्याम्**= ईश्वरवेदज्ञानाभ्याम् ७ २३ [इन्द्र-विष्णुपदयोर्द्वन्द्वे 'देवताद्वन्द्वे च' इति पूर्वपदस्यानङ् । विष्णु=यज्ञ-नाम निघ० ३ १७ पदनाम निघ० ५ ६ विष्णु=अथ यद् विपितो भवति तद् विष्णुर्भवति । विष्णुर्विशतेर्वा व्यश्नोतेर्वा नि० १२ १८ विष्लृ व्याप्तौ (जु०) धातो 'विपे किच्च' उ० ३ ३६ सूत्रेण णु प्रत्यय किच्च]

इन्द्रासोमा विद्युदोपधिगणौ ३६ ११. सेनापत्यैश्वर्य-वन्तौ २ ३० ६ विद्युच्चन्द्रमसौ ६ ७२ १ वायुविद्युतौ ६ ७२ ४ राजा और प्रजा आर्याभि० २ २३, ३६ ११ वायुविद्युद्वद् वर्तमानौ (अध्यापकोपदेशकौ) ६ ७२ ५ [इन्द्र-सोमपदयोर्द्वन्द्वे पूर्वपदस्यानङ् । 'सुपा सुलुग्०' त्याकारादेश]

इन्द्रियम् इन्द्रस्यैश्वर्यप्राप्तेर्लिङ्ग चिह्नमिन्द्रेण पर-मेश्वरेण दृष्टमिन्द्रेण सृष्ट प्रकाशितमिन्द्रेण विद्यावता जीवेन जुष्ट सप्रीत्या सेवितमिन्द्रेण परमेश्वरेण यद्दत्त सर्वसुख-ज्ञानसाधकम् प्र०—'इन्द्रियमिन्द्रलिङ्गमिन्द्रदृष्टमिन्द्रसृष्ट-मिन्द्रजुष्टमिन्द्रदत्तमिति वा' अ० ५ २ ९३ अनेनोक्तेष्वर्थेषु इन्द्रियशब्दो निपातित २ १० सुशिक्षित मन २० ७१ प्रशस्त बुद्ध्यादिक चक्षुरादिक वा १ ५७ ३ विज्ञानयुक्त मन १ ५५ ४ मन आदीनि वाग्भिन्नानि षड् ज्ञानेन्द्रि-याणि कर्मेन्द्रियाणि च ऋ० भू० १०२ दिव्या वाचम् १९ ७३ दिव्य श्रोत्रम् १९ ७३ चित्तम् १९ ७७ जिह्वा-दिकम् १९ ७६ मन आदिकम् १९ ५ अन्त करणम् २१ ५४ श्रोत्रादिकम् २१ २० मन प्रभृतीन्द्रियमात्रम् २१ ४० मन-आदिकार्यसाधकम् ८ ३ धनम् २० ५५ इन्द्रै राजभिर्जुष्ट न्यायाचरणम् १९ ७५ इन्द्रेण जीवेन जुष्टम् (भा०—आरोग्यम्) २८.३६ इन्द्रैर्जीवैर्जुष्ट सुखम् २८ ३१ विज्ञानसाधक (मन) १९ ७७ उपस्थ पुरुष-लिङ्गम् १९ ७६. ऐश्वर्यम् २१ २२ विज्ञान धन वा १ १११ २ इन्द्रस्य परमैश्वर्यवतस्तव ईश्वरस्य जीवस्य च लिङ्गम् (प्रत्यक्षाऽप्रत्यक्षसामर्थ्यम्) १ १०३ १ प्रज्ञानम् १९ ७४ ज्ञानादिव्यवहारसाधकम् (मन) २१ १४ शान्त धर्मयुक्त अन्त करण स० वि० १४४, अथर्व० १२ ५ ७ **इन्द्रियाणि**=चक्षुरादीनि धनानि वा १९ १२ ऐश्वर्य-जनकानि सुवर्णादीनि २० ५८ **इन्द्रियाय**=धनायेन्द्रिय-बलाय वा १९ ३४ धनाय, प्र०—इन्द्रियमिति धननामसु पठितम् निघ० २ १०, १ १०४ ६ धनवर्धनाय १० १८ नेत्राद्यायाऽन्त करणाय वा १० २३ न्यायव्यवहारप्रकाश-नायाऽन्यायाऽन्धकारनाशाय ऋ० भू० २२२ **इन्द्रिये**= मनसि श्रोत्रादौ वा ३ ४५ **इन्द्रियेण**=परमैश्वर्येण विज्ञानेन वा ऋ० भू० २१८ इन्द्रेण जीवेन जुष्टेन प्रीतेन वा १० २१ मनसा धनेन वा ७ २० **इन्द्रियेभ्यः**=कार्य-साधकतमेभ्य (श्रोत्रादिभ्य) ७ ६ **इन्द्रियैः**=इन्द्रस्य जीवस्य लिङ्गै २० ६१ [इन्द्रियमिति धन नाम निघ० २ १० इन्द्रप्राति० षष्ठीसमर्थात् 'इन्द्रियमिन्द्रलिङ्ग-मिन्द्रदृष्टमिन्द्रसृष्टमिन्द्रजुष्टमिन्द्रदत्तमिति वा' अ ५ २ ९३ सूत्रेण लिङ्गादिष्वर्थेषु घच् प्रत्ययान्तो निपात्यते । प्राणा इन्द्रियाणि । ता० २ १४ २ जायमानो ह वै ब्राह्मण सप्तेन्द्रियाण्यभिजायते ब्रह्मवर्चसञ्च यशश्च स्वप्न

ईकारस्थाने इ १ १३४ २ [ईर गतौ कम्पने च (अदा०) धातोस्तुमर्थे कध्यै प्रत्यय । धातोरीकारस्य ह्रस्वश्छान्दस]

इरम्मदम् य इरयाऽन्नेन माद्यति हृष्यति तम् (सेनापतिम्) प्र०—'उग्रपश्येरम्मदपाणिन्धमाश्च' अ० ३ २ ३७ इति खश्प्रत्ययान्तो निपातित । [इरा अन्ननाम निघ० २ ७ तदुपपदे 'मदी हर्षे' (दिवा०) धातो 'उग्र पश्येरम्मद०' अ० ३ २ ३७ सूत्रेण खश्प्रत्ययान्तो निपात्यते]

इरस्य. प्राप्तु योग्य (विद्वज्जन) ७ ४० ६

इरस्या अन्नेच्छया ५ ४० ७ ['इरा' अन्ननाम निघ० २ ७ तत आत्मन इच्छाया क्यचि 'सर्वप्रातिपदिकेभ्यो लालसायामसुक्०' अ० ७ १ ५१ वा० सूत्रेणामुक् । 'अ प्रत्ययाद्' इत्यकारे प्रत्यये स्त्रिया टाप्]

इरा अन्नादिकम्, प्र०—इरेत्यन्ननामसु पठितम् निघ० २ ७, ५ ८३ ४ **इरायै**=अन्नादिवृद्धये ३० ११ [इण् गतौ (अदा०) धातो 'ऋज्रेन्द्राग्रवज्र०' उ० २ २८ सूत्रेण रन् प्रत्ययान्तो निपात्येत । एति गच्छति ययेति विग्रह । 'इरा' इत्यन्ननाम निघ० २ ७]

इरावत् अन्नाद्यैश्वर्ययुक्तम् (वर्त्ति=मार्गम्) ७ ४० ५ ['इरा' इत्यन्ननाम (निघ० २ ७), ततो भूम्नि मतुप्]

इरावती इरा प्रशस्तान्यन्नानि विद्यन्ते यस्या सा (पृथिवी=भूमिरन्तरिक्ष वा), प्र०—अत्र प्रशसार्थे मतुप् 'इरेत्यन्ननामसु पठितम् निघ० २ ७, ५ १६ **इरावतीम्**= इरा जलानि विद्यन्ते यस्यास्ताम् (वाचम्) ५ ६३ ६ **इरावतीः**=बह्वन्नादिसामग्रीस्ता (धेनव=वाण्य) ५ ६६ २ [इरावती नदीनाम निघ० १ १३ इरावती परुष्णीत्याहु नि० ६ २५ 'इरा' इत्यन्ननाम निघ० २ ७, ततो भूम्नि मतुप् । स्त्रिया ङीप्]

इरिणम् कम्पित जगत् १ १८६ ६ [इरित निर्ऋ-णम् । ऋणातेरपार्ण भवति, अपरता अस्मादोषधय इति वा नि० ६ ६ ऋ गतौ (भ्वा०) धातो 'अर्त्ते किदिच्च' उ० २ ५१ सूत्रेण 'इनन्' प्रत्यय किच्च । धातोश्चेकारा-देश । ऋच्छन्ति गच्छन्ति यत्र यस्माद्वेति विग्रह]

इरिण्याय इरिण ऊपरभूमौ साधवे (पुरुषाय) १६ ४३ [इरिण व्याख्यातम् । तत साध्वर्थे यत् प्रत्यय]

इरी प्रेरक (एवयामरुत्=विज्ञानवान् मनुष्य) ५ ८७ ३

इर्यम् प्रेरकम् (राजानम्), प्र०—अत्र वर्णव्यत्ययेन दीर्घेकारस्य ह्रस्व ५ ४८ ४ प्रेरणीयम् (परीक्षक जनम्) ६ ५४ ८ **इर्य.**=सन्मार्गे प्रेरक (अग्नि=यतमानो सन्यासी) ७ १३ ३ [ईर गतौ कम्पने च (अदा०) धातो कर्त्तरि बाहुलकादौणादिको यक् । धातोश्च छान्दस ह्रस्व-त्वम् । इल प्रेरणे (चु०) धातोर्वा साधनीयम् । अन्यत्र कर्मणि ण्यत्]

इलयत गच्छत १ १९१ ६ [इल प्रेरणे (चुरा०) धातोर्लोट् । गुणाऽभावश्छान्दस]

इलीविशस्य इलाया पृथिव्या बिले गर्त्ते शेते तस्य वृत्रस्य प्र०—इलेति पृथिवीनामसु पठितम् निघ० १ १, इदमभीष्ट पद पृषोदरादिना सिध्यति 'इलीविशस्य इला-बिलशयस्य नि० ६ १९, १ ३३ १२ [इला अन्ननाम (निघ० २ ७), तस्य बिलमुदकम् । उदकेऽन्न गुप्त विद्यते । तस्योदकस्य शय =शयनस्थान मेघ अथवा—इला पृथिवी-नाम (निघ० १ १) तस्या बिलानि गुहास्थानानि, तेषु य शेते स इलाबिलशयो दस्यु । पृषोदरादित्वाद्रूपसिद्धि । इली-विश =इलाबिलशयस्य नि० ६ १९ इलीविश पदनाम निघ० ४ ३]

इलावान् बह्वन्नयुक्त (सभाध्यक्ष) ८ २ ५ [इला अन्ननाम निघ० २.७ ततो भूम्नि मतुप्]

इव यथा १२ ६ वद्वत् ७ ४० जैसे न० प्र० १५१, १० ४० २ समान स० प्र० २४७, ३४ ६ [इवेत्युपमार्थे नि० १ ४ इव इति पदपूरण नि० १ १० इव परि-भयार्थे वा नि० ६.२८]

इषणत् इष्णाति प्राप्नोति ४ १७ १४ **इषणन्त**= इच्छन्तु १ १३४ ५ प्राप्नुवन्ति ४ २३ ६ **इषणः**=प्रेरय ४ २२ १०. प्रेरये ४ १६ ६ [इष आभीक्ष्ण्ये (क्र्या०) इष गतौ (दिवा०) धातोर्वा लेटि रूपम् । व्यत्ययेन शप् श्ना च]

इषणि एषणायाम् २ २ ६ [इषु इच्छायाम् (तुदा०) धातोर्बाहुलकाद् औणादिक क्युन् । अत्लोपश्छान्दस]

इषण्य प्रेरय ३ ५० ३ **इषण्यत**=प्राप्नुवन्ति ५ ५२ १४ **इषण्यन्ति**=अन्नादिकमिच्छन्ति ५ ६ ६ [इषणप्राति० इच्छायामर्थे क्यच् । छान्दसत्वादल्लोप]

इषण्यन् आत्मन इषण प्रेरणमिच्छन्निव (विद्युद्रूपो-ऽग्नि) ३ ६१ ७ [इषणप्राति० आत्मन इच्छायामर्थे क्यच् । तत शतृ । अल्लोपश्छान्दस]

इषध्यै एष्टु ज्ञातुम् ७ ४३ १ [इष गतौ (दिवा०) धातोस्तुमर्थे कध्यै प्रत्यय:]

इषन्त प्राप्नुवन्तु १ १३४ ५ [इष गतौ (दिवा०)

१७६९ **इयक्षमाणम्**=अतिशयेन सङ्गच्छमानम् (पतिम्) १ १२३ १० [यज देवपूजासगतिकरणदानेषु (भ्वा०) धातो सन्नन्ताच्छानच् । अभ्यासयकारस्य च लोपश्छान्दस]

इयक्षसि यष्टु सङ्गन्तुमिच्छसि ३ ३ ५५ सगच्छसे प्राप्नोषि वा ६ ४६ ४ [यज देवपूजासगतिकरणदानेषु (भ्वा०) धातो सन्नन्ताल् लट् । अभ्यासयकारस्य लोपश्छान्दस]

इयत् प्राप्नुवन् (अग्ने=ई०, अग्निर्वा) ४ १६ एतावत् परिमाणम् (आयु) १० २५ [इण् गतौ (अदा०) धातो शतृप्रत्यय । 'इणो यण्' इति यणादेशो न भवति छान्दसत्वात् । यणभाव इयङ्]

इयत् एतावत् परिमाणम् (आयु) १० २५ **इयति**=एतावति (देवयजने=विदुषा पूजने) ३७ ५ [इदम् सर्वनाम्नो वतुप् । 'किमिदभ्या वो घ' अ० ५ २ ४० सूत्रेण घादेशे घस्येयादेशे 'इदकिमोरीश्की' इतीशादेशे 'यस्येति चे' ति लोप]

इयत्तिकः कुत्सित (कुपुम्भक =नकुल) प्र०—अत्र कन् प्रत्यय १ १९१ १५ [इयदिति व्याख्यातम् । तत स्त्रिया डीपि कुत्सितार्थे कन् । 'केऽण ' इति ह्रस्व]

इयत्तिका इयति प्रदेशे भवा वाला (शकुन्तिका=कपिञ्जली) १ १९१ ११ [इयदिति व्याख्यातम्, तत स्त्रिया डीपि भवार्थे कन् । 'केऽण' इति ह्रस्वत्वम्]

इयत्यै सुखप्राप्तीच्छायै (विशे=प्रजायै) ७ ४२ ४ [इण् गतौ (अदा०) धातो शतृ+डीप्]

इयध्यै एतु प्राप्तुम् ६ २० ८ [इण् गतौ (अदा०) धातोस्तुमर्थे कध्यै प्रत्यय । छान्दसत्वादियङ्]

इयन्ति एतावन्ति (सवना=कर्माणि) ६ २३ ४ [इयद् व्याख्यातम् । ततो नपुसके प्रथमाबहुवचने रूपम्]

इयर्त्ति प्राप्नोति ४ २१ ५ गच्छति ४ १७ १२ अर्पयति प्र०—अत्रान्तर्गतो णिच् ३३ ७८ उन्नयति ६ ४७ ३ जानाति १ ११३ १७ **इयर्मि**=गच्छामि १ ११६ १ प्राप्नोमि ४ ४२ ५ **इयर्षि**=प्राप्नोषि १२ १०७ [इयर्त्ति गतिकर्म निघ० २ १४ ऋ गतौ (जु०) धातोर्लट् । 'अर्त्तिपिपर्त्योश्च' इति श्लावभ्यासस्येत्वे 'अभ्यासस्यासवर्णे' इतीयङि पिनि गुणे च रूपम् । इयर्त्ति=इरयति नि० ९ ३]

इयात् प्राप्नुयात् १२ ६८ [इण् गतौ (अदा०) धातोर्लिङ्]

इयाते गच्छत ३ ३ ४४ [इण् गतौ (अदा०) धातोर्लट् । व्यत्ययेनात्मनेपदम् । इङ् गतौ (दिवा०) धातोर्वा-लट्]

इयानः प्राप्नुवन् (कर्मोपासनाज्ञानविज्जन) २ ३४ १४. सर्वाऽभीष्टाऽभिज्ञाता (राजा) प्र०—अत्रेङ् गतौ, इत्यस्माच्छन्दसि लिट् अ० ३ २ १०५ इति लिट् 'लिट कानज्वा' अ० ३ २ १०६ इति कानच्, १.३० १४ **इयानाः**=प्राप्नुवन्त (विद्वज्जना) ७ २५ ५. गन्त्र्य (नाव) १० १६ अधीयमाना (जना) ७ ५२ ३ **इयानम्**=गच्छन्तम् (रथम्) १ १८० १० [इङ् गतौ (दिवा०) धातोश्छन्दसि लिट कानच् । इङ् गतौ (दिवा०) धातोश्शानच् वा]

इयाम उल्लङ्घयेम त्यजेम ५ ५३ १४ **इयाय**=प्राप्नोतु ४ ४ ११ एति ७ ३३ १३

इयानासः प्राप्नुवन्त (मर्त्तास =मनुष्या) ५ २२ ३ [इङ् गतौ (दिवा०) धातो शानचि प्रथमाबहुवचने जसोऽसुगागम]

इये प्राप्नुयाम्, प्र०—अत्र व्यत्ययेनाऽऽत्मनेपद, लडर्थे लिट् च २ १७ ७ **इयेथ**=एषि ४ ६ १ [इण् गतौ (अदा०) धातोर्लिट् । व्यत्ययेनात्मनेपदम्]

इरज्यति ऐश्वर्यं दातु सेवितु च योग्योऽस्ति, प्र०—इरज्यतीत्यैश्वर्यकर्मसु पठितम् निघ० २ २१, परिचरणकर्मसु च, निघ० ३ ५, १ ७ ९ **इरज्यथः**=ऐश्वर्ययुक्ता कुरुथ १ १५१ ६ [इरज्यति ऐश्वर्यकर्म निघ० २ २१ परिचरणकर्म निघ० ३ ५.]

इरज्यन् ऐश्वर्य कुर्वन् (अग्नि =अग्निवत्प्राप्तपुरुषार्थ जन) १२ १०९ [इरज्यति ऐश्वर्यकर्म (निघ० २ २१) धातो शतृ । इरज्यन्नग्ने प्रथयस्व जन्तुभिरिति । मनुष्या वै जन्तवो दीप्यमानो अग्ने प्रथयस्व मनुष्यैरित्येतत् श० ७ ३. १ ३२]

इरज्यन्त प्राप्नुवन्तु ७ २३ २ **इरज्यसि**=ऐश्वर्य प्राप्नोषि १ ५५ ३ [इरज्यति ऐश्वर्यकर्म (निघ० २ २१) धातोर्लङ् आडभावश्च । अन्यत्र लट्]

इरज्यन्ता ऐश्वर्य सम्पादयन्तौ (इन्द्राग्नी=वायुविद्युतौ) ६ ६० १ [इरज्यति ऐश्वर्यकर्म (निघ० २ २१) धातो शतृ]

इरधन्त य इरान् इलान् प्रेरकान् दधति त इरधास्त इवाऽऽचरन्तु १ १२९ २ [इल प्रेरणे (चुरा०) धातोरिगुपधलक्षणे कप्रत्यये=इल । तदुपपदे दधाते क प्रत्यय । इरधप्राति० आचारे क्विपि धातोर्लङ्]

इरध्यै ईर्त्तु प्राप्तुम्, प्र०—अत्र वर्णव्यत्ययेन

शल्यस्तेजन पर्णानि ऐ० १ २५ इषवो वै दिद्यव श० ५ ४ २ २ इषु =पदनाम निघ० ५ ३]

इषवान् ज्ञानवान् (विद्वज्जन) १ १२९ ६. [इषति गतिकर्मा निघ० २ १४, ततो 'घञर्थे कविधानमि' ति कप्रत्यय । इष्यते यत् तद् इष ज्ञानम् । तन्तो मतुप् । इषवान्=अन्नवान् कामवान् वा नि० १०.४२]

इषव्यः इषुषु साधु (राजन्य=राजपुत्र) २२ २२ [इषुप्राति० 'तत्र साधुरि' त्यर्थे यत्प्रत्यय]

इषः इच्छ ३ ३ ७ [इषु इच्छायाम् (तुदा०) धातोर्लोट् । 'इषुगमियमा छ' इति छत्व न भवति छान्दसत्वात्]

इष.स्तुतः अन्नादे स्तावक (रथपति =शिल्पी जन) ५ ५० ५ [इष-स्तुतपदयो समासे विभक्तेरलुक् । इष् इत्यन्ननाम । स्तुत ष्टुञ् स्तुतौ (अदा०) धातो कर्त्तरि वाहुलकाद् औणादिक क्त]

इषाण प्रापय कामय वा ३१ २२ स्वेच्छया निष्पादय तथा सर्वलोक, सर्वलोकसुख सर्वलोकराज्य वा मदर्थ कृपया सिद्ध कुरु ऋ० भू० १३४ [इष आभीक्ष्ण्ये (क्र्या०) धार्तोलोटि मध्यमेकवचने 'हल श्न शानज्झौ' अ० ३ १ ८३ सूत्रेण हौ परत शानच्]

इषाय अन्नोत्पादकायाऽश्विनाय २२ ३१. [इषमित्यन्ननाम निघ० २ ७ इषु इच्छायाम् (तुदा०) धातो 'घञर्थे कविधानम्' इति कर्मणि क]

इषिलम् इष्टम् (केत =विज्ञानम्) २ ३८ ५. **इषितः**=प्रेरित (इन्द्र =विद्वज्जन) २० ८८ अन्वेषित (अग्नि =पावक) ३ ३ २ इच्छाप्रयुक्त (यजमान) ३ ४ ३ प्रापयितव्य (इन्द्र =परमेश्वर) १ ३ ५ इष्ट (होता=दातृजन) ७ ३९ १ **इषिता**=इषितावध्यापकोपदेशकौ ७ ३३ १३ प्रज्ञापकौ सन्तौ (इन्द्राग्नी=अध्यापकोपदेशकौ) ३ १२ १ प्रेषितौ प्रार्थितौ (इन्द्राग्नी=राजप्रजाजनौ) ७ ३१ **इषिताः** प्रेरिता (नाव) १ १८२ ६ [इष गतौ (दिवा०) धातो क्त प्रत्यय । इषु इच्छायाम् (तुदा०) धातोर्वा क्त । इडागमश्छान्दस । उभयत्र गुणाभावोऽपि छान्दसम् । इषित प्रेषित इति वा अधीष्ट इति वा नि० ८ ८]

इषितासः प्रेरिता सन्त (जना) ६ ४६ १०. [इषितशब्दस्य प्र० वहुवचने जसोऽसुकि रूपम्]

इषिधः इच्छाप्रकाशिका (इष =अन्नाद्या) ६ ६३ ७ [इषु इच्छायाम् (तुदा०) धातो 'इक् कृष्यादिभ्य' इति इक् । 'इषि' उपपदे दधाते. क्विप्]

इषिर ! इच्छो (इन्द्र =सभेश) १ १२९.१. **इषिरम्**=एश्वर्यम् (अग्निं=वह्निम्) ३ २.१४. गमनम् ५.३७.२ प्राप्तव्यम् (दक्ष=बलम्) ५ ८८ ४. **इषिरः**=येनेच्छन्ति स (वात =वायु) १८.४१ ज्ञानवान् (राजा) ६ २९ ३ सद्यो गन्ता (वात =वायु) ७ ३५ ४ गन्तव्य (विद्वान्) ५ ४१ १२ इच्छु (मित्र =सुहृज्जन) ३ ५ ८ **इषिरा**=गन्तारौ (अश्विना =विद्याव्यापकोपदेशकौ) ५ ७५ ५ **इषिराम्**=बहुपदार्थप्रापिकाम् (भूमिम्) ३ ३० ९ प्राप्नुवन्तीम् (पत्नीम्) ५ ३७ ३ वर की इच्छा करने वाली हृदय को प्रिय स्त्री को स० वि० १०५, ५ ३७ ३ प्राप्तव्याम् (स्वधाम्=अन्नम्) १ १६८.९. **इषिराः**=ज्ञानवन्त (देवा =विद्वांस) २ २९ १ गन्तार (देवा =विद्वांस सैनिका) ३ ५६ ८ **इषिरैः**=प्राप्तै (वेगादिगुणै) ६ ६२ ३ [इषिर, इषिरेणेत्येतौ पदनाम्नौ, निघ० ४ १ इषु इच्छायाम् (तुदा०) 'इषिमदिमुदि०' उ० १ ५१. सूत्रेण किरच् प्रत्यय । इषिरेण=ईषणेन एषणेन अर्पणेन वा नि० ४ ७ इषिर इति क्षिप्र उत्वेजन् श० ६ ४ १ १०]

इषिरेभिः इष्टै (केतेभि =प्रज्ञाभि) ३ ६० ७ [इषिर इति व्याख्यानम् । ततो भिस् । 'वहुल छन्दसी' ति भिस ऐसादेशो न भवति]

इषुकारम् य इषून् बाणान् करोति तम् (शिल्पिजनम्) ३० ७. [इषूपपदे डुकृञ्करणे धातोरण् प्रत्यय]

इषुकृतेव बाणीकृताविव (अध्यापकोपदेशकौ) १ १८४ ३]

इषुकृद्भ्यः बाणनिर्मापकेभ्य. (जनेभ्य) १६ ४६ [इषूपपदे डुकृञ् करणे (तना०) धातो क्विप् कर्त्तरि]

इषुधिमते प्रशस्तेषुधिवर्त्ते (राजजनाय) १६ २१ प्रशस्तशस्त्राऽस्त्रकोशाय १६ ३६ [इषूपपदे दधाते 'कर्मण्यधिकरणे च' अ० ३ ३ ९३ सूत्रेण कि । ततो मतुप् प्रत्यय]

इषुधिः इषवो धीयन्ते यस्मिन् स (तूणीर) १६ १२ [इषूपपदे दधाते 'कर्मण्यधिकरणे च' इति किरधिकरणे । इषुधि =इषूणा निधानम् नि० ९ १३ इषुधि =पदनाम निघ० ५ ३]

इषुध्यति इषून् धरति ५ ५० १ याचते शरान् धरति वा २२ २१ शरादीनि शस्त्राणि धरेत्, प्र०—लेट् प्रयोगोऽयम् ११ ६७ शरान् धारयेत् ४८ [इषुध

धातोर्लङ्। विकरणव्यत्ययेन श आत्मनेपदञ्च। आड-भावोऽपि छान्दस]

इषम् इष्यते या सत्क्रिया ताम्, प्र०—अत्र 'कृतो बहुलम्' इति कर्मणि क्विप् १ १२ ११ अन्न विज्ञान वा ७ ४८ ४ अन्नाद्यैश्वर्यम् ४ १६ २१ अन्नादिपदार्थसमूहम्, प्र०—इषमित्यन्ननामसु पठितम् निघ० १ ७, १ १६ अभीष्टमन्नम् ३ ४६ इच्छामन्न वा ७ ३६ २ उत्तमगुण-सम्पादकमन्नाद्यौषधसमूहम् १ ४६ ६ विज्ञानम् ३५ १६ विज्ञान धन वा ७ ८ ७ इष्टामिच्छा वा २ ३४ ८ विद्या-योगज बोधम् १ १७१ ६ प्राप्तिम् १.१७७ ५ इच्छासिद्धिम् १६ ३८ इष्ट सुखम् १ १८४ ६ प्राप्तव्य सुख १ १८० १० प्रेरणम् १ १७८ ५ शास्त्रविज्ञानम् १ १७४ १० **इषः**=इष्यन्ते यास्ता सेना, प्र०—अत्र 'कृतो बहुलम्' इति वार्त्तिकेन कर्मणि क्विप् १ ९ ८ विद्यासिद्धयो या इष्यन्ते ता क्रिया १ ३ १ अन्नादीनीच्छा वा ६ ६६ १ विज्ञानानि ३ ५४ २२ अन्नादिसामग्री ६ १ १२ इच्छा ३ ३० ११ अन्नाद्यान्योषधिगणान् ३ ६२ १४ ज्ञातव्या प्रजा १ १८१ ६ एष्टव्या रथ्या १ १३० ३ प्राप्तव्यान् रसान् ६ ३५ ४ इष्टसाधका किरणा १ ८६ ५ इष्यतेऽसावा-श्विनो मास १४ १६ **इषा**=इष्यते ज्ञायते येन तदिट् ज्ञान तेन, प्र०—'इष गतौ' इत्यस्य क्विबन्तस्य रूपम् 'कृतो बहुलम्' इति करणे क्विप् २ १८ इष्टविद्यया-ऽन्नादिना वा ४ १ इच्छयाऽन्नेन वा निमित्तेन ३४ ४८ स्वेच्छया १ ११७ १ उत्तमाऽन्नादिसमूहेन १ ८८ १ **इषाम्**=सर्वैर्जनैर्यानीष्यन्ते तेषाम् (रयीणाम्) ३ १३ **इषे**=अन्नविज्ञानयो प्राप्तये, प्र०—इषतीति गतिकर्मसु पठितम्, निघ० २ १४ अस्माद्धातो क्विपि कृते पदमिद सिध्यति, अन्व०—अन्नायोत्तमेच्छायै १ १ वृष्ट्यै ३३ ११ इच्छापूर्त्तये १ ७१ ८ अन्नरूपायै राज्यलक्ष्म्यै १ ५० ११ आश्विनाय ७ ३० इच्छासिद्धयेऽन्नप्राप्तये वा ७ २१ १० उत्तम अन्न के लिए आर्याभि० २ ३१, ३८ १४ [इषु इच्छायाम् (तुदा०) इष गतौ (दिवा०) धातोर्वा कर्मणि 'कृतो बहुलमि' ति क्विप्। इषम् अन्ननाम निघ० २ ७ इषा अद्भि सह नि० १० २६ प्रजा वाऽ इष। श० १.७ ३ १४ अन्न वाऽ इषम् कौ० २८ ५ अय वै लोक इषमिति। ऐ० ६ ७]

इषयते इषमन्न विज्ञान वा कामयमानाय (मर्त्याय=मनुष्याय) ६ १६ २५ [इषमित्यन्ननाम (निघ० २ ७), तत 'तत्करोति तदाचष्टे' इति णिजन्ताच्छतृ]

इषयध्यै इषयितु गमयितुम् १ १८३ ३ गन्तुम् ६ ६४ ४ [इष गतौ (दिवा०) धातोर्णिजन्तात् तुमर्थे कध्यै प्रत्यय। गुणाभावश्छादस]

इषयन् प्रापयन् (विद्वज्जन) ६ १ २ **इषयन्तम्**=प्राप्नुवन्त गच्छन्त वा (सज्जनम्) ६ १८ ५ प्रापयन्तम् (पावकमग्निम्) ६ १ ८ **इषयन्तः**=प्राप्नुवन्तो प्रापयन्तो वा (सिन्धव=नद्य) ४ ४६ ४ इषमन्न कामयमाना (सज्जना) ६ १६ २७ [इष गतौ (दिवा०) धातोर्णि-जन्ताच्छतृ। गुणभावश्छान्दस। अन्यत्र—इषमित्यन्ननाम, ततो 'तत्करोति तदाचष्टे' इति णिचि शतरि च रूपम्]

इषयन्त प्राप्नुयु २ २ ११ एपयन्ति प्राप्नुवन्ति, प्र०—अत्र लडि 'वा छन्दसि सर्वे विधयो भवन्ति' इति गुणाऽभावोऽडभावश्च १ ७७ ४ [इष गतौ (दिवा०) धातोर्णिजन्ताल् लङ्। गुणाभाव आडभावश्च छान्दसौ]

इषयन्ती सुख प्रापयन्त्यौ (रोदसी=द्यावापृथिव्यौ) ४ ५६ ४ **इषयन्तीः**=इषमन्न कुर्वन्त्य (विट्टुप्य) ३ ३३ १२ [इषमित्यन्ननाम (निघ० २ ७) तत 'तत्करोति-तदाचष्टे' इति णिचि शतरि स्त्रिया ङीपि च रूपम्]

इषयुः इष्यते सर्वैर्जनैर्विज्ञायते यत्तद्याति प्राप्नोतीति (विद्वज्जन) प्र०—अत्र इषधातो 'घञर्थे कविधानमि'ति क तस्मिन्नुपपदे या धातोरौणादिक कु १ १२० ५ [इष गतौ (दिवा०) धातोर् 'घञर्थे क विधानमि' ति क। इषोपपदे या प्रापणे (अदा०) धातोर् औणादिक कुप्रत्यय]

इषये विज्ञानायाऽन्नाय वा ६ ५२ १५ [इष गतौ (दिवा०) धातो 'इक् कृष्यादिभ्य' अ० ३ ३ १०८ वा सूत्रेण इक् प्रत्यय]

इषयेम प्राप्नुयाम १ १८५ ९ [इष गतौ (दिवा०) धातोर्णिचि लिङि च रूपम्। गुणाऽभावश्छान्दस]

इषवः बाणा १६ ६४ बाणाद्या शस्त्रविशेषा २६ ४८ शस्त्राऽस्त्राणि १६ ६६ प्राप्ता सेना १७ ४३ गतय १३ ७ **इषवे**=इष्णात्यभीक्ष्ण हिनस्ति शत्रून् येन तस्मै (भा०—शस्त्राऽस्त्राय) १६ १ **इषुम्**=प्राप्ति-साधनमिच्छाविशेष वा १ ६४ १० [ईष गतिहिंसादर्शनेषु (भ्वा०) धातो 'ईषे किच्च' उ० १ १३ सूत्रेण उ प्रत्यय। स च कित्, धातोरिकारादेशश्च। ईषति गच्छति हिनस्ति वा शत्रूनिति विग्रह। इषु इच्छायाम् (तुदा०) इष गतौ (दिवा०) इष आभीक्ष्ण्ये (क्र्या०) धातुभ्यो वा साधनीयम्। इषु=ईषतेर्गतिकर्मणो वधकर्मणो वा निरु० ९ १८ वीर्य वा ऽइषु श० ६ ५ २ १० चतु सन्धिर्ह्यीषुरनीक

इष्टयजुषः इष्टानि यजूंषि यस्य तस्य (वीरगृहपते) ८.१२ [इष्ट-यजुष्पदयोर्बहुव्रीहि । विभक्तिव्यत्ययश्च]

इष्टयः इष्टप्राप्तय ६ ७४ १ सत्सङ्गतय १ १४५ १ **इष्टये**=विद्यासङ्गतये २७ ३३ अभीष्टसिद्धये १ ५७ २ यजन्ति सङ्गच्छन्ते यस्मिन् यज्ञे तस्मै, प्र०—अत्र वाहुलकादौणादिकस्ति प्रत्यय किच्च १ ११३ ५ इष्टरूपायै (महीयै=नीतये) १ ११३ ६ इष्टसुखप्राप्तये ५ ७८ ३ इष्टसुखाय १ ११२ १ अभीष्टसुखाय २७ २७ **इष्टिभिः**=होमैरिव सत्कारै २ १ ६ **इष्टिः**=यजनक्रिया ४ ४ ७ **इष्टे !**=पूजितु योग्य (विद्वज्जन), प्र०—अत्र सज्ञाया क्तिच् १ १४३ ८ **इष्टे.**=इष्टस्य गृहाश्रमस्य स्थानात् १ १२५ ३ **इष्टैः**=सगन्तु प्राप्तुमर्हैं (मेघजलैं) ४ ५५ ६ **इष्टौ**=यजने सङ्गतिकरणे २ २८ ७ विज्ञान-वर्द्धके यज्ञे ६ ११ ३ इष्टसाधिकाया नीतौ १ ६२ ३ गन्तव्यायाम् (सदने=आकाशे) १ १४८ ३ [इष्टि =यज्ञ-नाम, निघ० ३ १७ यज देवपूजासगतिकरणदानेषु (भ्वा०) धातो क्तिन् स्त्रियां, सज्ञाया क्तिच् वा । इषु इच्छाया वा धातो 'मन्त्रेवृषेष०' अ० ३ ३ ९६ सूत्रेण क्तिन्]

इष्टरश्मिः इष्टा सयोजिता रश्मयो येन (प्राप्त-विज्ञानो जन) १ १२२ १३ [इष्ट-रश्मिपदयोर्बहुव्रीहि । इष्ट =यज सगतिकरणे (भ्वा०)+क्त । रश्मि =अशूङ् व्याप्तौ (स्वा०) धातो 'अश्नोते रश्च उ० ४ ४६ सूत्रेण मि , धातोश्च रशादेश]

इष्टव्रताः इष्टकर्माण (विद्वज्जना) ३ ५९ ९ [इष्ट-व्रतपदयो समास । इष्ट व्याख्यातम् । व्रतमिति कर्मनाम निघ० २ १]

इष्टापूर्त्ते इष्ट च पूर्त्त च ते १८ ६१ इष्ट श्रौत कर्म च पूर्त्त स्मार्त्त कर्म च ते १८.६० इष्ट सुख विद्वत्सत्करणमीश्वराराधन सत्सङ्गतिकरण सद्विद्यादिदानञ्च, पूर्त्तं पूर्णं वल ब्रह्मचर्य विद्याऽलङ्करण पूर्ण यौवन पूर्ण साधनोपसाधनञ्च ते १५ ५४ [इष्ट-पूर्त्तपदयोर्द्वन्द्वसमासे पूर्वपदस्य दीर्घ । इष्टम्=यजदेवपूजासगतिकरणदानेषु (भ्वा०) धातो क्त. । पूर्त्तम्=पॄ पालनपूरणयो (जु०)+ धातो क्त]

इष्टाऽश्वः इष्टा सङ्गता अश्वा यस्य स (प्राप्तविद्यो जन) १ १२२.१३ [इष्ट-अश्वपदयोर्बहुव्रीहि । इष्टाश्वपदे व्याख्याते]

इष्णन् अभीक्ष्णमिच्छन् (इन्द्र =पुरुषार्थी सभेश) २ २० ५ प्राप्नुवन् (इन्द्र =राजा) ४ १७ ३ [इष आभीक्ष्ण्ये (क्र्या०) धातो. शतृ]

इष्णानः अभीक्ष्ण निष्पादयन् शोधयन् (सभाध्यक्ष.) १ ६१.१३. [इष आभीक्ष्ण्ये (क्र्या०) धातो शानच् । व्यत्ययेनात्मनेपदम्]

इष्णासि अभीक्ष्ण प्राप्नोषि गच्छसि वा १ ६३ २ [इष आभीक्ष्ण्ये (क्र्या०) धातोर्लट्]

इष्मिणम् इष्मो वहुविधो विद्यते यस्य तम् (पितर=जनकम्) ५ ५२ ६ **इष्मिणः**=प्रशस्तविज्ञानगतिमन्तः (मनुष्या) १ ८७ ६ वहुविधमिष्म इच्छा येषान्ते (विद्वद्राजजना) ५ ८७ ५ इच्छाऽन्नादियुक्ता (युद्धविद्या-कुशला जना) ७ ५६ ११. [इषु इच्छायाम् (तु०) धातो. 'इषि युधीन्धि०' उ० १.१४५ सूत्रेण मक् प्रत्यये—'इष्म'। ततो मत्वर्थे इनि. । इष्मिण =ईषणिन इति वा, एषणिन इति वा, अर्षणिन इति वा नि० ४ १६ इष्मिण. पदनाम निघ० ४ १]

इष्यत प्राप्नुत २६ २२. विजानीत १ १५ ६ **इष्यति**=गच्छति १ ३४ १० **इष्ये**=प्राप्नोमि ४ ३३ १ [इष गतौ (दिवा०) धातोर्लोट् । अन्यत्र लट् । 'इष्ये' प्रयोगे व्यत्ययेनात्मनेपदम्]

इष्यन् जानन् (सभाध्यक्ष) १ ६१ १२ [इष गतौ (दिवा०) धातो शतृ]

इष्वै गन्त्र्यै (शूरवीरायै राज्ञ्यै) ६ ७५ १५ [इष गतौ (दिवा०) धातो 'इषे किच्च उ' उ० १ १३ सूत्रेण उ । स्त्रियां चतुर्थ्या एकवचने रूपम् । 'ङिति ह्रस्वश्च' अ० १ ४.६ सूत्रेण पक्षे नदीसज्ञकत्वेन न गुण]

इह अस्मिन् वर्त्तमाने काले १९ ५९ अस्मिन् ससारेऽस्मत्कुले वा २ ३३ अस्मिन् ससारे वर्त्तमानसमये वा २५ २० अस्मिन् स्थाने १ १२ ३ अस्या प्रजायाम् ७ ३६ अस्मिन् राज्यकर्मणि १७ ६६ एतेषु (जनेषु) ३ २१ अस्या शिल्पविद्यायामस्मिन् गृहे वा १ १३ १० एतस्मिन् व्यवहारे १ २२ १२ इस स्थान मे स० वि० १३८, अथर्व० १४ २ २९ इसी जन्म मे आर्याभि० २ ४५, ३४ ३८ [इदम्सर्वनाम्न सप्तम्यन्ताद् 'इदमो ह' अ० ५ ३ ११ सूत्रेण ह. प्रत्यय । 'इदम इश्' अ० ५ ३ ३ सूत्रेण इदम इशादेश । 'तद्धितश्चासर्वविभक्तिरि' त्यव्ययसज्ञा]

इहि एति २२ १९ प्राप्नुहि ६ ५४ ६ जानीहि प्राप्नुहि वा ४ २० गच्छ १.१० ४. गच्छति, प्र०—अत्र व्यत्यय ५ ८३ ६ प्राप्नुहि प्रापयति वा १ ९ अ. प्राप्नुयात्

शरधारणे (कण्ड्वादि०) धातोर्लट् । इषुध्यति=याच्ञा-कर्मा नि० ३ १९ इषुधिप्राति० 'सर्वप्रातिपदिकेभ्य इत्येके' इति क्विपि लटि रूपम्]

इषुध्यते इषुध इवाऽऽचरति तस्मै (जनसमूहाय) १ १२८ ६ [इषूपपदे दधाते कप्रत्यये=इषुध । तदिवा-चरतीति क्यङ् आचारेऽर्थे]

इषुध्यवः य इषुभिर्युध्यन्ते (शिल्पिनो विद्वज्जना) ५ ४१ ६ [इषूपपदे युध सम्प्रहारे (दिवा०) धातोर्बाहुलका-दौणादिको युक् प्रत्यय । पृषोदरादिना रूपसिद्धि]

इषुध्येव इषवो धीयन्ते यस्या तयेव १ १२२ १ [इषुधिपद व्याख्यातम्]

इषुबलाः इषुभि शस्त्राऽस्त्रै बल सैन्य वा येषान्ते (राजजना) ६ ७५ ९ [इषु-बलपदयो समास]

इषुम् बाणम्, प्राप्तिसाधनम्, इच्छाविशेष वा १ ६४ १० बाणाऽऽवलिम्, भा०—शस्त्रम् १६ ३ [इषुरीषतेर्गतिकर्मणो वधकर्मणो वा नि० ९ १८ इष गतौ (दिवा०) धातो 'इषे किच्च उ' उ० १ १३. सूत्रेण उ प्रत्यय किच्च । इष्यति गच्छति सग्रामे शत्रु प्रतीति विग्रह]

इषुमते प्रशस्ता इषवो बाणा विद्यन्ते यस्य तस्मै वीराय (जनाय) १६ २९ **इषुमन्तः**=बाणवन्त (शिल्पिनो वीरजना वा) ५ ५७ २ **इषुमद्भ्यः**=बहव इषवो विद्यन्ते येषान्तेभ्य (सैनिकेभ्य) १६ २२ **इषुमान्**=बाणवान् (वीर =शुभगुणेषु व्यापनशीलो जन) २ ४२ २ [इषु व्याख्यातम् । ततोऽतिशायने भूम्नि वा मतुप्]

इषुयते इषुरिवाऽऽचरति १ १२८ ४ [इषु व्या-ख्यातम् । तदिवाचरतीत्याचारे क्यङ्]

इषुहस्तेन इषव शस्त्राणि हस्तयोर्यस्य तेन (इन्द्रेण=पराक्रमाऽऽढ्येन सेनापतिना) १७ ३४. **इषु-हस्तैः**=शस्त्रपाणिभि सुशिक्षितैर्बलिष्ठैर्भृत्यै १७ ३५ [इषु-हस्तपदयो समास]

इषे इच्छापूर्त्तये १ ७१ ८ अन्नाय १ १८० २ [इष् इत्यन्ननाम । इषु इच्छायाम् (तुदा०) धातो क्विप् सम्पदादित्वाद् भावे]

इषे प्राप्तुम् ६ १३ २ [इष गतौ (दिवा०) धातो-स्तुमर्थे के प्रत्यय]

इष्कर्त्तारम् निष्कर्त्तार ससाधकम् (प्रचेतस= प्रकृष्टप्रज्ञ पुरुषम्) प्र०—अत्र छान्दसो वर्णलोप इति नलोप १२ ११० [निस् उपपदे डुकृञ् करणे (तना०) धातोस्तृच् कर्त्तरि । 'छान्दसो वर्णलोप' इति नकारलोप । इष्कर्त्तारम-ध्वरस्य प्रचेतसमिति । अध्वरो वै यज्ञ । प्रकल्पयितार यज्ञस्य प्रचेतसमित्येतत् । श० ७ ३ १ ३३]

इष्कृतिः निष्कर्त्री (ओषधि) १२ ८३ [निसुपपदे करोतेर्धातो स्त्रिया क्तिन् । 'छान्दसो वर्णलोप' इति न-लोप]

इष्टकानाम् इज्यन्ते सगम्यन्ते कामा यै पदार्थैस्ते-षाम् १३ ३१ **इष्टकाम्**=इष्ट कर्म यस्यास्ताम् १४ ११ **इष्टकाः**=इष्टसुख साधिका (धेनव) १७ २ वेद्या चिता ३५ ८ **इष्टके**=इष्टकेव शुभैर्गुणै सुशोभिते, अ०— इष्टकावद् दृढाङ्गे (देवि=देदीप्यमाने स्त्रि) १३ २१ [यज देवपूजादिषु (भ्वा०) धातोर्बाहुलकादौणादिक क्त । तत 'सज्ञाया कन्' अ० ५ ३ ८७ इति सूत्रेण कन् । इषु इच्छाया धातोर्वा क्तप्रत्यये कन् । तद् यदिष्टात्समभव-स्तस्मादिष्टका श० ६ १ २ २२ तद् यदस्माऽइष्टे कमभवत्त-स्माद्वेवेष्टका श० ६ १ २ २३ अस्थीनि वा ऽ इष्टका श० ८ ७ २ १० अहोरात्राणि वा ऽ इष्टका श० ९ १ २ १८]

इष्टनिः इच्छाविशिष्ट (विद्वज्जन) प्र०— अत्रेषधातोर्बाहुलकादौणादिकोऽनि प्रत्ययस्तुगागमश्च १ १२७ ६ यष्टु योग्य (विद्वज्जन) १ १२७ ६ [इषु इच्छायाम् (तुदा०) धातोर्बाहु० औणा० अनि प्रत्यय-स्तुगागमश्च]

इष्टम् येन इज्यते तम् (अग्निम्) १ १६२ १५ ब्रह्मोपासन सर्वोपकारक यज्ञाऽनुष्ठान च ऋ० भू० १०५, अथर्व० १२ ५ १० सुख तत्साधन वा १८ ५७ अभीप्सितम् (अश्वम्) २५ ३७ **इष्टः**=सत्कृत आहुतिभिर्वर्धितो वा (अग्नि =सभाध्यक्षो विद्वान् पावको वा) १८ ५७ कृत (यज्ञ) १८ ५६ सङ्गन्तुमर्ह (वनस्पति =पिप्पलादि) २१ ५८ **इष्टानि**=सुखसाधनानि कर्माणि १७ २६ सङ्गतानि (तत्त्वानि) १ १६४ १५ **इष्टे**=सङ्गन्तव्ये (व्यवहारे) ६ ८ ७ **इष्टौ**=पूजनीयौ (मातापितरा= जनकजनन्यौ) ४ ६ ७ इष्टम्=यज्ञ करना और कराना । स० वि० १४५, अथर्व० १२ ५ १० [यज देवपूजा-सगतिकरणदानेषु (भ्वा०) धातो क्त । इषु इच्छाया (तुदा०) धातोर्वा 'मतिबुद्धिपूजार्थेभ्यश्च' अ० ३ २ १८८ सूत्रे चकारस्यानुक्तसमुच्चयार्थत्वाद् वर्तमानेऽपि क्त । इष्टानि कान्तानि वा, क्रान्तानि वा, गतानि वा, मतानि वा नतानि वा नि० १० २६]

१ ४ ३ ५ मनुष्यो वा ऽईडेन्या श० १ ५ २.३. ईडेन्यो ह्येष श० १ ४ १ २ ६]

ईड्यम् उत्तमैर्गुणैः प्रशसनीयम् (अग्निम्) ६.१५ २ अध्यन्वेषणीयम् (विद्युदाख्य वह्निम्) ३.६ ८ प्रशसितुमर्हम् (सोम=सोमाद्योषधिगणम्) २८ २६ **ईड्यः**= अध्येष्टव्य (अग्नि=ईश्वरो भौतिकोऽग्निर्वा) १ १२ ३ नित्य स्तोतव्योऽन्वेष्टव्यश्च (अग्नि=परमेश्वरो भौतिको वा) १ १ २ उपासितुमध्येपितु वाऽर्हं (अग्नि) ३ १५. स्तोतुमन्वेष्टु वा योग्य (अग्नि=राजा सेनेशो वा) ७ १५ १० भा०—पूजाऽर्हं (अग्नि=ईश्वरो भौतिको वा) ४ १६ स्तोतव्य उपास्य (ईश्वर) ऋ० भू० ७८ स्तुति के योग्य (ईश्वर) आर्याभि० १ ४ प्रशसनीय गुण-कर्म-स्वभावयुक्त (सभापति राजा) स० प्र० १८३, अथर्व० ६ १० ८६ १ प्रशसनीय (विद्वान्) ५ २२ १ ईडितु स्तोतुमध्येपितु योग्य (घर्म=अग्निहोत्रादिको यज्ञ) १७ ५५ **ईड्या**.=अध्येपितु योग्या (विद्युदादय) १ १४ ८ [ईड स्तुतौ (अदा०) धातोर्ण्यत् । ईडच=ईडितव्य नि० ८ ८ वन्दितव्य नि० ७ १६ ईडच इति यज्ञिय इत्येतत् श० ६ २ ३ ६]

ईदृक्षासः एतल्लक्षणसहिता (मनुष्या.) १७ ८४ [इदमुपपदे दृशिर् प्रेक्षणे (भ्वा०) धातो 'दृशे क्सश्च वक्तव्य' अ० ३ २ ६० वा० क्स प्रत्यय । 'दृक्षे चेति वक्तव्यम्' अ० ६ ३ ६० वा० सूत्रेणेदम ईशादेश]

ईदृङ् अन्येन तुल्य (अ०—पुरुष) १७ ८१ [इदमुपपदे दृशिर् प्रेक्षणे (भ्वा०) धातो 'त्यदादिषु०' इति क्विन् । 'इदकिमोरीश्की' अ० ६ ३ ६० सूत्रेण इदम ईशादेश । 'क्विन् प्रत्ययस्य कु' इति कुत्वम्]

ईदृशे ईदृग्लक्षणे (सङ्ग्रामादिव्यवहारे) ३३ ६१ ईदृग्व्यवहारे ६ ४५ ५ [इदमुपपदे दृशिर् प्रेक्षणे (भ्वा०) धातो त्यदादिषु दृशो०' अ० ३ २ ६० इति कञ् । 'इदकिमोरीश्की' अ० ६ ३ ६० सूत्रेण ईशादेश]

ईधिरे प्रदीपयन्ति ५ २५ २ प्रदीपयेयु ३ २६ १५ [ञिइन्धी दीप्तौ (रुधा०) धातो सामान्ये लिट् । 'इन्धिभवतीभ्याञ्च' अ० १ २ ६ सूत्रेण कित्वे 'अनिदिताम्' नलोपो गुणाऽभावश्च । 'लिटस्तझयोरेश्इरेच्' इति झस्येरेच्]

ईधे प्रदीपये १२ २० प्रदीपयति ६ १६ १४ प्रापयति ६ १६ १५ प्रदीप्यताम् ११.३४ प्रदीपयेत्, प्र०—अत्र 'लोपस्त आत्मनेपदेषु' इति तकारलोप ११.३३ दीपयति प्र०—अत्र लडर्थे लिट् 'इजादेश्च गुरुमतो०' अ० ३ १.३६ इति प्रतिषेधादाङ्निषेध 'इन्धिभवतीभ्याञ्च, अ० १ २.६ इति लिट कित्वाद् 'अनिदिताम्०' इति नलोपो गुणाऽभावश्च १ ३६.११ [ञिइन्धी दीप्तौ (रुधा०) धातो सामान्ये लिट्]

ईन्धे प्रकाशित करता हूँ स० वि० १८६, २० २४ [ञिइन्धी दीप्तौ (रुधा०) धातोर्लट् । छान्दस धातोर्दीर्घत्वम्]

ईम् जलम् ५ ५४ ४ जलमग्नि वा, प्र०—ईमित्युदकनामसु पठितम् निघ० १ १२, पदनामसु च निघ० ४ २ अनेन शिल्पविद्यासाधकतमावेतौ गृह्येते १.६ २ जल पृथिवी च १.४ ७ ज्ञातव्य प्राप्तव्य परमेश्वर विद्युद्रूपमग्नि वा १ ६५ ३ विज्ञानमुदक वा १ ६७ ४. एव १ ३८ ११ जलमन्न पृथिवी वा १ ५.१ २ दुग्धम् २ ३५ १३ प्रदातारम् (अग्निम्=सभाध्यक्षम्) १.३६ ७ प्राप्तम् (पेयपदार्थम्) ५ १ ३ प्राप्तव्यम् (इन्द्र=अग्निम्) १ ८७ ५ प्राप्तव्यया (इपा=इच्छया) १ १२६ ७ प्रत्यक्ष, सर्वत १ १६७ ८ शास्त्रबोधम् १.११६ १२ महान्तम् (पुरुषम्) ४ १७.४ विद्याम् ५ २ ५ प्राप्त वस्तु ६ १७ २ प्राप्तव्यो विजय १.८१ १ समुच्चये २३ ५५ जलेन २ २२ १ उदक सर्वान् पदार्थान्वा ५ ३७ ३ सर्वा क्रियाम् १ १६४ ३२ विजयप्रापिका सेवा १.७१ ४ प्राप्तव्यान् बोधान् १ ६७ २ सततम् ३ ३० १६ अभिगताम् (विद्याम्) १ १२७ ७. सर्वम् ४ १७ १७ शब्द को प० वि०, सब प्रकार की स० वि० १०५, ५ ३७ ३ सर्वत ६ ३ ६ [ईम् उदकनाम निघ० १ १२ पदपूरण नि० १ ६ ईम् पदनाम निघ० ४ २.]

ईमहे याचामहे, प्र०—इमह इति याच्ञाकर्मसु पठितम् निघ० ३ १६, १ १० ६ व्याप्नुयाम् ६ १७ प्राप्नुयाम ७ ५४ १ विजानीम., प्र०—अत्र 'ईङ् गतौ' इत्यस्मात् 'बहुल छन्दसि' इति शपो लुकि श्यनभाव १ ६ १० प्राप्नुयाम जानीम वा ५ ८२ ३ प्राप्नुम १.१७ ३ जानीम १ ४० १ दूरीकुर्महे ७ ५८ ५ [ईमहे याच्ञाकर्मा निघ० ३ १६ ईङ् गतौ (दिवा०) धातोर्लट् । 'बहुल छन्दसी' ति शपो लुकि श्यन् न भवति]

ईयचक्षसा ईय प्राप्तव्य ज्ञातव्य वा चक्षोर्दर्शन कथन च ययोस्तौ (मित्रा=सखायौ) ५ ६६ ६ [ईङ् गतौ (दिवा०) धातोर् बाहुलकादौणादिको यक् प्रत्यये ईयम् । चक्षस्-चक्षिङ् व्यक्ताया वाचि, दर्शनेऽपि (अदा०) धातोर-

३ ५७ प्राप्नोति १ १५ [इण् गतौ (अदा०) धातोर्लोटि मध्यमैकवचने रूपम्]

इहेव यथाऽस्मिन् स्थाने तथा १ ३७ ३. [इह-इव-पदयो समास । इह पद व्याख्यातम्]

इहेह अस्मिन् जगति, प्र० अत्र वीप्साया द्वित्वम्, प्रकर्षद्योतनार्थम् १ १८ १४ अस्मिन्नस्मिन् व्यवहारे २३ ३८ अस्मिन् ससारे व्यवहारे च १९ ६ ['इह' पद व्याख्यातम् । तस्य वीप्साया द्वित्वम्]

इहेहमातरा इहेह माता जननी ययोस्तौ (भ्रातरा=बन्धू) ६ ५९.२ [इहेह-मातृपदयो समास]

ई उदकम्, प्र०—अत्र 'छान्दसो वर्णलोपो वा' इति मलोप १ १० ३ १ ईम् उदकनाम निघ० १ १२ पदनाम निघ० ४.२]

ईक्षते देखता है स० वि० २५४, अथर्व० ९.६ ३ **ईक्षध्वम्**=सम्प्रेक्षध्वम् ५ ३४ **ईक्षन्ताम्**=प्रेक्षन्ताम् ३६.१८ **ईक्षन्ते**=आलोकन्ते १७ ६८ **ईक्षामहे**=पश्येम ३६.१८ **ईक्षे**=पश्यामि ४ २० ८. [ईक्ष दर्शने (भ्वा०) धातोर्लेटि लोटि च रूपाणि । ईक्षे पदनाम निघ० ४ ३ ईक्षे ईशिषे नि० ६ ६]

ईक्षमाणाय दर्शकाय (मनुष्याय) २२ ८ [ईक्ष दर्शने (भ्वा०) धातो शानच्]

ईक्षयत् दर्शयेत् १.१३२ ५ ईक्ष दर्शने (भ्वा०) धातोर्णिजन्ताल् 'लिडर्थे लेट्' इति लेट्]

ईक्षिताय अन्येन दृष्टाय (जीवाय) २२ ८. [ईक्ष दर्शने (भ्वा०) धातो क्तप्रत्यये चतुर्थ्येकवचनम्]

ईङ्खयन्ति खेदयन्ति निपातयन्ति १ १९ ६ [ईखि गतौ धातोर्णिचि लटि च रूपम् । ईङ्खते गतिकर्मा निघ० २ १४.]

ईजते दूरीकरोति ६.६४.३. कम्पते ५ ४८.२. [ईज गतिकुत्सनयो (भ्वा०) धातोर्लट्]

ईजे सङ्गच्छते ६.३ २. यजामि ६.१६ ४. सङ्गच्छे ६ १ ६ [यज देवपूजासगतिकरणदानेषु (भ्वा०) धातो सामान्ये लिट् । 'असयोगाल् लिट् कित्' इति कित्वे यजादित्वात् सम्प्रसारणम्]

ईजानम् यज्ञ कुर्वन्तम् (पुत्रम्) १ १२५ ४ **ईजानस्य**=यज्ञकर्त्तु. (मर्त्यस्य=साधारणमनुष्यस्य) ६ ४८ २०. **ईजान:**=यजमान (सत्पुरुष) ७ ५६ २ **ईजानाय**=सङ्गन्तु शीलाय (पुरुषाय) १.११३ २० [यज देवपूजासङ्गतिकरणदानेषु (भ्वा०) धातो 'छन्दसि लिट्' अ० ३.२.१०५ सूत्रेण लिटि 'लिट कानज्वा' अ० ३ २.१०६ सूत्रेण कानचि सम्प्रसारणे द्वित्वे च रूपम्]

ईट्टे ऐश्वर्यं प्रयच्छति ७ २४ ५. ऐश्वर्यं लभते ४ २५ १ अधीच्छति ४ २५ ३ स्तौति १ १८० २ ऐश्वर्यवान् भवेत् ३ ५२ ५ ऐश्वर्ययुक्त करोति ५ १२ ६ ऐश्वर्यहेतु विदधाति १ ८५ १८ [ईड स्तुतौ (अदा०) धातोर्लट् । ईश ऐश्वर्ये (अदा०) धातोर्वा साधनीयम्]

ईडत स्तुत १ ९६ ३ स्तुति करो आर्याभि० १ ४०, ऋ० १ ७ ३ ३ **ईडते**=स्तुवन्ति गुणै ,प्रकाशित कुर्वन्ति ५ ८ ३. स्तुवन्ति अध्येषन्ति वा १ १५ ७ प्रशसन्ति ७ ४४ ४ स्तुवन्त्यन्विच्छन्ति वा ७ १० ५ **ईडिष्व**=प्रशसाऽध्यन्विच्छ वा ६ ६० १० **ईडीत**=प्रशस्येत् ५ २१ ४ प्रशसत ६ १६ ४६ **ईडे**=स्तौमि प्राप्नोमि ४ ३३ १. स्तुवे, याचेऽधीच्छामि प्रेरयामि वा १ १ १ अध्येषयामि स्तौमि वा ३ १ १५ अध्यन्विच्छामि १३ ४३ गुणै प्रशसामि ७ ५३ १ अधीच्छामि ५ ६० १ सत्कुर्याम् १ ४४ ४ मैं स्तुति करता हूँ आर्याभि० १ २, ऋ० १.१ १ १ [ईड स्तुतौ (अदा०) धातोर्लोट् लट् वा । ईळते याचन्ति स्तुवन्ति वर्धयन्ति पूजयन्तीति वा नि० ८ १ ईळे=याचामि । ईळिरध्येषणाकर्मा पूजाकर्मा वा नि० ७ १५]

ईडान: स्तुवन् (वह्नि=विद्वज्जन) २७ १४ **ईडानाय**=स्तुवते (सज्जनाय) २ ६ ६ [ईड स्तुतौ (अदा०) धातो शानच्]

ईडाना प्रशसन्ती (घृताची=रात्रि) ५ २८ १ [ईड स्तुतौ (अदा०) धातो शानच् प्रत्यये स्त्रिया टापि च रूपम्]

ईडितम् प्रशस्तम् (इन्द्र=राज-राजपुरुषम्) २८ ३ **ईडित:**=प्रशसितगुण (सज्जन) ७ ७ ३ मनुष्यैरध्येषितोऽधिष्ठित (अग्नि=भौतिक) १ १३ ४ विद्यामभीप्सुभि: सम्यगध्येषितव्य (अग्नि=प्रत्यक्षोऽग्नि) २ ३. [ईड स्तुतौ (अदा०) धातो. क्त.]

ईडिता प्रशसितौ (होतारौ=स्त्रीपुरुषौ) ५.५ ७. [ईड स्तुतौ (अदा०) धातो कर्त्तरि तृच्]

ईडेन्यम् प्रशसनीयम् (विद्वज्जनम्) ७ २ ३ स्तोतुमर्हम् (वलम्) २८.२६ **ईडेन्य:**=अन्वेषणीय (अग्नि=पावक) १५ ३६ ईडितु प्रशसितुमर्ह (अग्नि=महाविद्वान्) ३ २७ १३ स्तोतु योग्य (विद्वान्) १ ७९ ५ [ईड स्तुतौ (अदा०) धातो 'कृत्यार्थे तवैकेनकेन्यत्वन' अ० ३ ४ १४ सूत्रेण केन्य. प्रत्यय । वाग्वाऽ ईडेन्या श०

(इन्द्रम्=ईश्वरम्) १ ११ ८ रचने समर्थ परमेश्वर तन्मध्यस्थविद्यासाधक वायु वा १ ५ २ निर्मातारम् (इन्द्र=परमात्मानम्) ७ ३२.२२ सर्वस्य जगत. स्वामिनम् (ईश्वरम्) ३९ ८ ऐश्वर्ययुक्तम् (कपर्दिनम्=ब्रह्मचारिरण विद्वज्जनम्) ६ ५५ २ ईशनशीलम् (परीक्षक जनम्) ६.५४ ८ ईषणशीलम् (सूनु=सत्पुत्रम्) ७.७ ७ ईष्टेऽसावीशान सर्वजगत्कर्त्ता तम् (जगदीश्वरम्) ऋ० भू० ८८ सर्वस्या सृष्टेर्विधातारम् (परमात्मानम्) १ ८८ ५ ईशान उत्पादन करने की इच्छा करने वाले सब जगत् के स्वामी (ईश्वर) को आर्याभि० २ ५०, २५ १८ **ईशानः**=ऐश्वर्यवान्, ऐश्वर्यहेतु, सृष्टे कर्त्ता प्रकाशको वा (इन्द्र.=ईश्वर सूर्यो वा) १ ७ ८ अधिष्ठाता (पुरुष=ईश्वर) ३१ २ पूर्णसामर्थ्य (सेनापति) १ ८७.४. समर्थ (सज्जन.) २ २४ १५ साधक समर्थ (अग्नि=विद्वज्जन) १५ ३५. शक्तिमान् (विद्वान्) १ १३० ९ अधिपति (इन्द्र.=सभाध्यक्ष) १ ६१ १५. ईषणशील सर्वस्येश्वर' (परमेश्वर.) ऋ० भू० १२० ईशनकर्त्ता अर्थात् ईश्वरता करने वाला, सब से बडा और प्रलयोत्तरकाल मे रहने वाला (ईश्वर) आर्याभि० १ २८, ५ ८ १७ ४१ **ईशानाय**=समर्थाय जनाय २४.२८ [ईश ऐश्वर्ये (अदा०) धातोस्ताच्छीलिकश्चानश् । आदित्यो वा ऽ ईशान आदित्यो ह्यस्य सर्व स्येष्टे श० ६ १ ३ १७ एतान्यष्टौ (रुद्र, सर्वशर्व, पशुपति. उग्र, अशनि, भव, महान्देव, ईशान) अग्निरूपाणि । कुमारो नवम श० ६ १ ३ १८. स ह स (असु) ईशानो नाम । स दशधा भवति । स एष एतस्य (आदित्यस्य) रश्मिरसुर्भूत्वा सर्वास्वासु प्रजासु प्रत्यवस्थित जै० उ० १.२९ ३ यदीशानोऽन्न तेन कौ० ६ ८.]

ईशानकृत् य ईशानानीशच्छीलान् पुरुषार्थिन करोति (जगदीश्वर) २ १७ ४ ईशानानैश्वर्यवत करोतीति (इन्द्र=सभाध्यक्ष) १ ६१.११ **ईशानकृतः**=य ईशानान् ऐश्वर्ययुक्तान् कुर्वन्ति ते (वायव) १ ६४ ५ [ईश ऐश्वर्ये (अदा०) धातोस् ताच्छीलिकश्चानश् । ईशानोपपदे डुकृञ् करणे धातो क्विप्]

ईशाना प्रभवित्री (उषा) १ ११३ ७ [ईश ऐश्वर्ये (अदा०) धातोर्लट । शानचि स्त्रिया टापि रूपम्]

ईशाना समर्थौ (मित्रावरुणौ=अध्यापकोपदेशकौ) ५ ७१ २ [ईश ऐश्वर्ये (अदा०) धातो शानच् । 'सुपा सुलुग्' इत्याकार]

ईशानासः ऐश्वर्ययुक्ता (विद्वज्जना) १ १४१ ३ समर्था. स्वामिन' १.७३ ९. [ईश ऐश्वर्ये (अदा०) धातोस्ताच्छीलिकश् चानश् । ततो जसोऽसुगागम']

ईशायै ययैश्वर्यं प्राप्नोति तस्यै (क्रियायै) २१.५७ [ईश ऐश्वर्ये (अदा०) धातोर् औणादिकोऽन् प्रत्यय, ततष्टाप्]

ईशिरे ऐश्वर्यं प्राप्नुवन्ति ५.५८ १ [ईश ऐश्वर्ये (अदा०) धातोर्लिटि प्रथमबहुवचनम्]

ईशिषे इच्छसि ४ ५२ ३ ईश्वरो भवसि ६ ४१.३. ऐश्वर्यवान् भवे. २ ३९.१ ऐश्वर्यं करोषि १ ७०.५ ऐश्वर्यं विदधासि ५ ८१ ५ ईशन करोषि २ २४.१ ईशोऽसि, भा०—स्वामी भवसि १७ ७१ समर्थोऽसि २.१६ ६ **ईशीत**=समर्थो भवेत् ४ १५.५. **ईशीय**=ईश्वर' समथ भवेयम् ७ ३२.१८ **ईशे**=ईष्टे, प्र०—अत्र सर्वत्रैकपक्षे 'लोपस्त आत्मनेपदेषु' इति तलोपोऽन्यत्रोत्तमपुरुषस्यैकवचनम् ३ १६ १ ईष्टे ऐश्वर्यं करोति ४ १२ ३. ईश्वरो भवति ४ २१ ४ इच्छामि ६.५१.८. ईष्टे ज्ञातुमिच्छति ७ ४ ६ रचना करता है स० वि० ५, २३.४३ ऐश्वर्ययुक्तो भवति १ ७१.९ समर्थो भवामि ३ ३२. ईष्टे, प्र०—अत्र 'लोपस्त आत्मने०' इति तलोप २०.३२ [ईश ऐश्वर्ये (अदा०) धातोर्लट् । 'ईश. से' अ० ७ २ ७७ सूत्रेणेडागम । 'ईशीय' प्रयोगे लिङ् । 'ईशे' इत्यत्र 'लोपस्त आत्मनेपदेषु' सूत्रेण तलोप.]

ईषते गच्छति १ १२४ ६ प्राप्नोति प्र०—ईषतीति गतिकर्मा निघ० २ १४, ६ ४२ ३ हिनस्ति ५.८३ २. युद्धमिच्छेत् १ ८४ १७ अभिगच्छति ५ ६७ ५. पश्यन्ति १ १४१.८ ईषधु=प्रापयितुमिच्छतम् १.११२ १६ **ईषन्ते**=हिंसन्ति ६ ६६ ४. [ईष गतिहिंसादर्शनेषु (भ्वा०) धातोर्लट् । ईषते भीत. पलायते नि० १०.११ ईषति गतिकर्मा निघ० २.१४]

ईषमाणः ऐश्वर्यं कुर्वन् (प्रजाजन) प्र०—अत्र 'बहुल छन्दसि' इति शपो लुक् १ १७१ ४ **ईषमाणाः**=गच्छन्त (ऊर्मय=उदकतरङ्गा) ४ ५८.६ भयात् पलायमाना (मृगा) १७.९४ [ईष गतिहिंसादर्शनेषु (भ्वा०) धातो शानच्]

ईषा हिंसक. (इन्द्र=ऐश्वर्यवान्राजा) ३.५३.१७. [ईष गतिहिंसादर्शनेषु (भ्वा०) धातोरिगुपधलक्षण क प्रत्यय । 'सुपा सुलुग्०' इत्याकार]

ईषुः इच्छन्तु ३ १ २ **ईषे**=इच्छामि ५ ४९.१ **ईष्टे**=ईषण करोति ५ ८७ ३. [ईष गतिहिंसादर्शनेषु

सुन् प्रत्ययः। तयो समास]

ईयतुः प्राप्नुत ३२९ गच्छत. ३३ ६७ **ईयते**=गमयति १३० १९ गच्छति ११४१ ८ गम्यते २१ ५५ प्राप्नोति १४८ ५. **ईयथुः**=प्राप्नुयातम्, प्र०—अत्र पुरुषव्यत्यय ५ ७३ ४ **ईयन्ते**=प्राप्यन्ते ५ ५५ १ **ईयसे**=प्राप्नोषि गच्छसि वा ५ ३ ८ विज्ञायसे विज्ञायते वा ४ ३२ व्याप्नोषि ६ १५ ९ **ईयुः**=प्राप्नुयुर्गच्छेयुर्वा ७ १८ १० यन्ति ३४ ४५ प्राप्नुवन्ति ११६४ ८ [इण् गतौ (अदा०) धातोर्लिटि प्रथमद्विवचनम् ईयसे, ईयते=ईङ् गतौ (दिवा०) धातोर्लट्]

ईयमानम् गच्छन्तम् (रथम्) ५.३०.१. **ईयमानाः**=प्राप्नुवन्त (परमाणव) ५ ४७ २ [ईङ् गतौ (दिवा०) धातो शानच्]

ईयिवांसम् प्राप्नुवन्तम् (सिह=व्याघ्रम्) ३ ९ ४ [इण् गतौ (अदा०) धातो क्वसु प्रत्यय। 'उपेयिवानाश्वाननूचानश्च' अ० ३ २ १०९ सूत्रेण द्वित्वेऽभ्यासदीर्घत्वम् इडागमश्च निपात्यते। 'इणो यण्' इति यणादेश]

ईयुषीणाम् अतीतानाम् (उषसाम्) ११२४ २ गच्छन्तीनाम् (सूर्यकान्तीनाम्) १११३ १५ [इण् गतौ (अदा०) धातोर्लिट क्वसु। 'उपेयिवान्०' इति निपातनाद् अभ्यासदीर्घत्वम् इडागमश्च। 'वसो सम्प्रसारणम्' इति सम्प्रसारणम्]

ईरताम् प्राप्नुवन्तु ४ ८ ७ प्राप्नुवन्ति २९ १२ उत्कृष्टतया जायन्ते ५ २५ ७ गच्छन्ति कम्पन्ते वा ५ ६३ ४ प्रेरयन्तु ११२३ ६ **ईरते**=प्राप्नुयु ११८७ ५ प्राप्नुवन्ति ७ ५६ १४ गच्छन्ति प्राप्नुवन्ति १ ५२ १ कम्पयन्ति गच्छन्ति वा ५ ८३ ३ **ईरय**=गमय १ ४८ २ प्रेरयत ५ ४२ ३ नियोजय ८ १९. प्रेरय १४ ८ **ईरयथ**=प्रेरयथ ५ ५५ ५ **ईरयध्वम्**=प्रापयत ४ ३४ २ **ईरयन्ति**=प्रेरणा करते है ५ २० २ **ईरयस्व**=प्रापय ७ ५ ८ प्रेरणा कर स० वि० १७०, अथर्व० १४ २ २८ **ईरयामि**=प्रेरयामि २ ३३ ८ [ईर गतौ कम्पने च (अदा०) धातोर्लोट् लट् च। 'बहुल छन्दसी' ति शपो लुङ् न। अन्यत्र ईर क्षेपे (चुरा० पर०) धातो रूपाणि]

ईरयध्यै प्रेरितुम् ४ २ १ [ईर क्षेपे (चुरा०) धातोस्तुमर्थे अध्यै प्रत्यय]

ईरयन्ती सद्य प्रेरयन्ती (उषा) १११३ १२ [ईर क्षेपे (चुरा०) धातो शत्रन्तान् ङीप्]

ईरिरे प्रेरयन्ति ३ ११ ६ प्राप्नुवन्ति ३ २९ १५. [ईर गतौ कम्पने च (अदा०) धातोर्लिट्। झस्येरेच्]

ईर्ध्वम् कम्पध्वम् १११३ १६ [ईर गतौ कम्पने च (अदा०) धातोर्लोट्]

ईर्म प्राप्तव्य ज्ञातव्य वा (वपु=सुरूपम्) ५ ७३ ३ प्रेरक (सज्जन) ४ २७ २ [ईर गतौ कम्पने च (अदा०) धातोर्बाहुलकादौणादिको मक्। ईर्म इह, ऋणे, अस्मिन् लोक इति वा। ईर्म इति बाहुनाम समीरिततरो भवति नि० ५ २५]

ईर्मान्तासः कम्पनान्ता (अश्वा=अग्न्यादय) ११६३ १० ईर्म प्रेरित स्थितिर्येषान्ते, भा०—प्रेरणामनुगन्तार (अश्वा) २९ २१ [ईर क्षेपे (चुरा०) धातोर्बाहुलकादौणादिको मन् प्रत्यय। ईर्म=क्षेपोऽन्तो येषामिति समास। ईर्मान्तास=समीरितान्ता नि० ४ १३ ईर्मान्तास पदनाम निघ० ४ १]

ईर्यतायै कम्पनाय ३० ८ [ईर गतौ कम्पने च (अदा०) धातोर्बाहुलकादौणादिको यक्। ईर्य शब्दात् भावे तल्, ततष्टापि चतुर्थ्यां रूपम्]

ईवत् गतिरक्षणवत् (नम=अन्नम्) ५ ४९ ५

ईवतः गच्छत (उद्यमिनो जनस्य) ७ ५६ १८ बहुगतिमत (द्यून्=प्रकाशान्) ४ ४३ ३ प्रशस्तगमनकर्त्तु (सेनापते) ४ १५ ५ सामीप्ये गच्छत (राजपुरुषस्य) ७ २३ १ **ईवते**=उपगताय (जनाय) ६ ७३ २ विद्याव्याप्ताय (ब्रह्मणे=वेदविज्जनाय) ४ ४ ६ [ई गतिप्रजनादिपु (अदा०) धातो शतरि छान्दस रूपम्]

ईशत ईष्टा समर्थो भवतु, अ०—उत्पद्यताम्, भा०—प्रबलो भवेत्, प्र०—अत्र लोडर्थे लङ् 'बहुल छन्दसि' इति शपो लुगभाव ११ समर्थयन, प्र०—अत्र लडर्थे लोडन्तर्गतो ण्यर्थश्च १ २३ ९ विघ्नानामीश्वरो भवेत् ६ ७१ ३ अ०—हन्तु समर्थो भवेत् ११ समर्थो भवतु १ ३६ १६ समर्थो भवेत्, प्र०—अत्र विकरणव्यत्ययेन श २ ४२ ३ [ईश ऐश्वर्ये (अदा०) धातोर्लोट्। 'बहुल छन्दसी' ति शपो लुङ् न]

ईशः करुणामय (ईश्वर) आर्याभि० १ ४१, १ ७ ९ ७ [ईश ऐश्वर्ये (अदा०) धातोरिगुपधलक्षण क प्रत्यय]

ईशा ईश्वरेण सकलैश्वर्यसम्पन्नेन सर्वशक्तिमता परमात्मना ४० १ [ईश ऐश्वर्ये (अदा०) धातो कर्त्तरि क्विप्]

ईशानम् ईष्टे कारणात् सकलस्य जगतस्तम्

उक्थवाहसा प्रशसितविद्याप्रापकौ (इन्द्राग्नी=विद्युद्विद्याविद्विद्वांसौ) ६ ५९ १० [उक्थोपपदे वह प्रापणे (भ्वा०) धातोर्णिजन्ताद् असुन् । उक्थ व्याख्यातम्]

उक्थशसिनः वेदप्रकाशकरणशीलान् (सज्जनान्) ६.४५ ६ [उक्थोपपदे शसु स्तुतौ (भ्वा०) धातोस्ताच्छील्ये णिनि]

उक्थशासः य उक्थाना प्रशसनीयाना मन्त्राणामर्थाञ्छासन्ति ते (नर=विद्वासोऽध्यापका) ७ १९ ६ ये योगाऽभ्यास विहाय उक्थानि वचनानि शसन्ति तेऽर्थात् शब्दार्थयो खण्डने रता (अब्रह्मविदो जना) १७ ३१ य उक्थानि वक्तु योग्यानि वचनानि शसन्ति (पितर=जनकादय) १९ ६६ प्रशसितशासना (पितर=जनका) ४ २ १६ केवल विषय भोगो के लिए ही अवैदिक कर्म करने मे लगे हुए (मनुष्य लोग) आर्याभि० २४४, १७ ३१. **उक्थशासा**=उक्था उक्ता शासा शासनानि ययोस्तौ (वाय्वग्नी) २ ३९ १ [उक्थोपपदे शासु अनुशिष्टौ (अदा०) धातोरण् प्रत्यय । उक्थ-शासपदयो समासो वा (शासु धातोर्घञ्) अथवा उक्थोपपदे शसु स्तुतौ (भ्वा०) धातो साधनीयम्]

उक्थशुष्मा: उक्थानि उक्तानि शुष्माणि वलानि याभिस्ता (गिर=वाच) ६ ३६.३ [उक्थ-शुष्मपदयो समास । शुष्मम्=वलनाम निघ० २ ९.]

उक्थाऽर्का उक्थानि प्रशसितानि वचनान्यर्काणि पूजनीयानि च ६ ३४ १ (उक्थ-अर्कपदयो समास । अर्क पदनाम निघ० ४ २ अर्चपूजायाम् (चु०) धातो क औणादिक]

उक्थाव्यम् प्रशसाऽर्हाणि स्तोत्राणि शस्त्रविशेषाणि वा तस्य तमिव सेनापतिम्, भा०—सुशिक्षित शस्त्राऽस्त्रपरमप्रवीणम् ७ २२

उक्थाशस्त्राणि उक्थानि च तानि शस्त्राणि च, प्र०—अत्र 'अन्येषामपि०' इति पूर्वपदस्य दीर्घ १९ २८ [उक्था-शस्त्रपदयो समास]

उक्थिनम् प्रशस्तोक्थवाक्यजन्यबोधनिष्पादितम्, भा०—विद्यासुशिक्षायुक्ता वाचम् (भक्ष्याद्यन्वित भोज्यमन्नरसादिकम्) २० २९ उक्थानि वक्तु योग्यानि प्रशस्तानि वचनानि यस्य तम्, भा०—धर्मसुशिक्षाप्रकाशकम् (इन्द्र—वीरम्) २८ ३३ बहून्युक्थानि वक्तु योग्यानि वेदस्तोत्राणि विद्यन्ते यस्य तम् (आप्त विद्वासम्) ३ ५२.१ **उक्थिनः**=गुणप्रशसका (राजप्रजास्थसज्जना.) ३ १२ ५ [वच परिभाषणे (अदा०) धातोस्थक् प्रत्यय । ततो मत्वर्थे इनि प्रत्यय]

उक्थेऽउक्थे वक्तु योग्ये योग्ये व्यवहारे १२.२७ धर्म्यं उपदेष्टव्ये व्यवहारे व्यवहारे ७ २६ २ [उक्थशब्दस्य वीप्साया द्विर्वचनम्]

उक्थेभिः स्तोत्रै, प्र०—अत्र 'बहुल छन्दसि' इति भिस स्थान ऐसभाव १ २ २. प्रशसकै (वचनै.) ५ ४५ ४ सुष्ठूपदेशै २ ११.१६ वेदस्तोत्रैरधीतवेदाप्तोपदिष्टवचनैर्व १ ४७ १० प्रशसनीयै. स्तुतिसाधकैर्वेदविभागैर्मन्त्रै. ३३.७६ [उक्थम्=वच परिभाषणे (अदा०) धातोस्थक् प्रत्यय]

उक्थ्यम् उक्थेषु प्रशसनीयेषु भवम् (सुप्रवाचन=अध्यापनमुपदेशनम्) १ १०५.१२ उक्थेषु वक्तु योग्येषु भवम् (अशम्) २.१३ १ उच्यते प्रशस्यते यत्तस्मै हितम् (वाजम्) १ ४८.१२ प्रकृष्ट विद्यावच १ १०५.१३ उक्थेषु प्रशसनीयेषु साधुम् (मन्त्रम्) ३४ ५७. प्रशसितम् (वच) ५ ३८ २ प्रशसितु योग्यम् (अग्नि=विद्युदादिरूप वह्निम्) ३.२९ २ प्रशसनीय कर्म ४ ३६ ४. वक्तु श्रोतु योग्यम् (तोकम्) १ ६४ १४ वक्तु श्रोतु योग्येषु ऋग्वेदादिषु भवम् (मन्त्रम्) १ ४० ५ **उक्थ्यः**=प्रशसितो योग्यो विद्वान् ३ १० ६ यानि विद्यासिद्ध्यर्थं वक्तु वाचयितु वाऽर्हाणि तत्र साधु (इन्द्र=अग्निर्विद्युत्सूर्यो वा, वरुण=जल वायुश्चन्द्रो वा) १ १७ ५ **उक्थ्यैः**=उचन्ति सर्वा विद्या येषु तै (व्यवहारै) ३ ५.२. [उक्थम्=वच परिभाषणे (अदा०) धातोरौणादिकस्थक् । तत 'तत्र साधु' 'तत्र भवे' वार्थे यत् । उक्थ्यम् प्रशस्यनाम निघ० ३.८ वक्तव्यप्रशसनम् नि० ११ ३१ अन्न वा उक्थ्यम् गो० पू० ४ २० पशव उक्थ्यानि कौ० २१ ५. यज्ञिय वै कर्मोक्थ्य वच ऐ० १ २९ उक्थ्या वाजिन गो० उ० १ २२.]

उक्षण वलप्रदान् (वीरान्) १.१३५ ९ सेचकान् (विदुषो जनान्) ५ ५२ ३ **उक्षणः**=सेचका (सज्जना.) ६ १६ ४७ सुखसेचका (देवा=विद्वज्जना) ३ ७ ७ सेचनकर्त्तार (सत्वान=प्राणिन) १ ६४ २ सेचनसमर्थान् (वीरजनान्) १.१३५ ९ मधुरैरुपदेशै सेचमाना. (वाच) ५ २७ ५ जलस्य सुखस्य वा सेक्तारो महान्त (अग्निपवनमेघादय) प्र०—उक्षा इति महन्नाम निघ० ३ ३, १ १०५.१० सेक्तार (वृषभा) २० ७८ वृषभान् १ १६८ २ [उक्ष सेचने (भ्वा०) धातो 'श्वन्नुक्षन्पूषन्०' उ० १ १५९ सूत्रेण कनिन् प्रत्यय । उक्षण=उक्षतेर्वृद्धिकर्मण, उक्षन्त्युदकेनेति वा । उक्षण एतान् माध्य-

(भ्वा०) धातोर्लिट् सामान्ये। व्यत्ययेन परस्मैपदम्। धातूनामनेकार्थत्वाद् इच्छार्थेऽपि। 'ईष्टे' प्रयोग ईश ऐश्वर्ये (अदा०) धातोरपि सिध्यति]

ईहे ऐश्वर्ययुक्त करोति ५ १२ ६ स्तौति १ १८० २ ऐश्वर्यहेतु विदधाति १ ८४.१८. [ईह चेष्टायाम् (भ्वा०) धातोर्लेटि रूपम्]

उ वितर्के १७ ६७ समुच्चये १२ ५८ उत्तमे २१ ५ निश्चयार्थे ३३ ८१ पादपूरणार्थे १ ६१ १४ प्रसिद्धार्थे १७ २० आकाङ्क्षायाम् १ ६१ १३ अद्भुते ७ २० २ आश्चर्ये ३ ५७ ४ अच्छे प्रकार स० प्र० ११०, १ १७६ १ निश्चय ही आर्याभि० २४३, ३४१ एव ३२४ [उ विनिग्रहार्थे, पदपूरण नि० १ ५]

उक्तः कथित (होता=होतृजन) ४ ४१ १. **उक्ताः**=निरूपिता (भा०—पश्वादिपालनमार्गा) २४ १७ कथिता (सचरा.=पशव) २४ १५ ब्रूञ् व्यक्तायां वाचि (अदा०) धातो क्त। 'ब्रुवो वचिरि' ति वच्यादेशे 'वचिस्वपि०' इति सम्प्रसारणम् वच परिभाषणे (अदा०) धातोर्वा क्त]

उक्तिम् स्तुति को स० प्र० २४८, ४० १६ [ब्रूञ् व्यक्तायां वाचि (अदा०) धातो क्तिन् स्त्रियाम्। धातोश्च वच्यादेश]

उक्थपत्रः उक्थानि वक्तु योग्यानि वेदस्तोत्राणि पत्राणि विद्यागमकानि यस्य स (घर्म=यज्ञ) १७ ५५ [उक्थ-पत्रपदयो समास। उक्थम्=वच परिभाषणे (अदा०) धातो 'पातृतुदिवचि०' उ० २ ७ सूत्रेण थक्। पत्रम्=पत्लृ गतौ+ष्ट्रन् करणे]

उक्थभृतम् य ऋग्वेद विभर्त्ति (आप्त विद्वासम्) ७ ३३ १४ [उक्थ व्याख्यानम्। तदुपपदे डुभृञ् धारणपोषणयो (जु०) धातो क्विप्। तुगागम.]

उक्थम् शास्त्रप्रवचनम् १ ८६ ४ वक्तु योग्य स्तोत्रम् प्र०—अत्र 'पातृतुदि०' उ० २.७ अनेन वचधातोस्थक् प्रत्यय. १ १० ५ वक्तु योग्य शास्त्रम् ४ १६ २ वक्तुमर्हम् (आज्य=घृतम्) १५ १० प्रशसनीय वचन कर्म वा १ १०० १७. वाच्यम् (विदवचनम्) १५ १२ उच्यन्त ईश्वरगुणा येन तादृक्समूहम् १ ८ १०. वेदविद्या १.१०६ १४ उपदेष्टु योग्यम् (कर्म वचन वा) १५ ११ प्रशसितम् (वच) ५ ३६ ५ **उक्थस्य**=प्रशसितस्य कर्मण ६ ४४ ६ **उक्थानाम्**=स्तोत्र-विशेषाणाम् १६ २५ **उक्थानि**=वक्तु योग्यानि वचनानि २ ८ ५ प्रशसनीयानि कर्माणि ७ ५६ २३ **उक्थाय**=प्रशमिताय (जनुषे=जन्मने) ५ ४५ ३ **उक्थे**=श्रोतु वक्तुमर्हे वा (वचने) ६ २३ १ वक्तव्ये ४.२० १० **उक्थेन**=प्रशसनीयेन (वाहसा=प्रापणेन) २६ ८ **उक्थेभ्यः**=प्रशसनीयेभ्यो वेदोक्तेभ्य कर्मभ्य ७.२२ **उक्थेषु**=प्रशसितेषु धर्म्येषु कर्मसु ५ ६ ६ वक्तु श्रोतुमर्हेषु वेदविभागेषु १५ ४३ प्रशसनीयेषु व्यवहारेषु ३ ३३ ८ **उक्थैः**=वेदविद्याजन्यैरुपदेशै ५.४५ १ तद्गुणप्रशसकैर्वचोभि ७ ३४ १६ परिभाषितोपदेशै १ ७१ २ वक्तुमर्हैर्वेदितव्यैर्वेदवचनै ६ १३ ४ कीर्त्तनीयैर्वचनै ६ ११० वेदस्थै स्तोत्रै ६ ६६ ३ प्रशसितैर्गुणै ६ १६ १५ **उक्था**=उक्थानि परिभाषितुमर्हाणि वेदस्थानि सर्वाणि स्तोत्राणि अ०—स्तुतिसाधकानि, प्र०—'पातृतुदिवचि०' उ० २ ७ अनेन वचधातो स्थक् प्रत्ययस्तेनोक्थस्य सिद्धि 'शेश्छन्दसि बहुलम्' इति शेर्लुक् १ ५८ प्रशस्तानि विज्ञानानि १ १७३ ६ प्रशसनीयानि वस्तूनि ४ २२ १ प्रशसनीये (रजसी=द्यावापृथिव्यौ) ४ ४२ ६ वक्तु योग्यानि वेदस्तोत्राणि वचनानि वा १ ५४ ७ वक्तु श्रोतुमर्हाणि (प्रवचनानि) ६ ६७ १० प्रशसनै ४ ३३ १० प्रशसनीयानि वचनानि ७.१६ ६ उचितानि (सख्या=कर्माणि भावा वा) ४ ३ ४ उक्तानि वक्तव्यानि ६ २६ ४ [वच परिभाषणे (अदा०) धातो 'पातृतुदिवचि०' उ० २ ७ सूत्रेण थक् प्रत्यय। उक्थम् प्राण उ ऽएवोक्तस्यान्नमेव थ तदुक्थम् श० १० ४ १ २३. एष (अग्नि) उ ऽएवोक्तस्यैतदन्न थ तदुक्थम् श० १० ४ १ ४ अग्निर्वा ऽउक्तस्याहुतय एव थम् श० १० ६.२ ८ आदित्यो वा उक्। तस्य चन्द्रमा एव थम् श० १० ६ २ ६ प्राणो वा ऽउक्तस्यान्नमेव थम् श० १० ६ २ १० (देवा. सोम) उक्थैरुदस्थापयन्। तदुक्थानाम् उक्थत्वम् तै० २ २ ८ ७ (वागिति) एतदेषा (नाम्ना) उक्थमतो हि सर्वाणि नामान्युत्तिष्ठन्ति श० १४ ४ ४ १ वागुक्थम् ष० १ ५ अन्नमुक्थानि कौ० ११ ८, १७ ७ प्रजा वा उक्थानि तै० १ ८ ७ २ पशव उक्थानि ऐ० ४ १, १२ गो० उ० ६ ७ तै० १ ८ ७ २ पशवो वा उक्थानि कौ० २८ १०, २६ ८ ष० ३ ११ तै० १ २ २ २ ता० ४ ५ १८ विडुक्थानि ता० १८ ८ ६ ऐन्द्राग्नानि ह्युक्थानि श० ४.२ ५ १४ (देवा) अन्तरिक्षमुक्थेन (अभ्यजयन्) ता० ६ ३ ६ अपच्छिदिव वा एतद् यज्ञकाण्ड यदुक्थानि ता० ११ ११ २ यदुक्थानि भवन्त्यनुगन्तत्या एव ता० १८ ८ ६ (तमेतम् पुरुषम्) उक्थमिति बह्वृचा (उपासते) एष हीदꣳ सर्वमुत्थापयति श० १० ५ २ २०.]

शत्रूणा हनने कठिनस्वभाव (इन्द्र=सेनापते) ७ २५ १ बाणादियुक्त (सैनिक) ३ ४६ २ **उग्रम्**=उत्कृष्टम् (शर्म=गृहम्) २६ १६ उत्कृष्टस्वभावम् (इन्द्र=विद्वासम्) ३ ४३ ८. अत्युत्कृष्टम् (गाम्) ३४ ३५ उग्र-गुणकर्मस्वभावम् (पद=विज्ञानम्) ५ ३० २ क्रूर भयङ्करम् (वच=वचनम्) ५ ८ शत्रुभि सोढुम-शक्यम् (शर्द्ध=बल सैन्यम्) १७ ४१ तीक्ष्णस्वभावम् (महादेव=परमात्मानम्) ३९ ८ तीव्र गुणम् ३९ ९. कठिन दृढम् (शव=बलम्) ३ ३६ ४ सर्वै सह समवेतम् (इन्द्र=विद्युतम्) ३ ४६ ४ दुष्टेषु कठिनस्वभाव श्रेष्ठेषु सरलम् (इन्द्र=राजानम्) ३ ४८ ५ दुष्टै शत्रुभि-रसहम् (अश्व=विद्युतम्) १ ११८ ६ दुष्टाना दु खप्रदम् (इन्द्र=राजानम्) ३ ४६ ५ दुष्टाना दमयितारम् (राजानम्) ३ ४७ ५ द्वेषविनाशकम् (शुन=परस्परमेल-जन्य सुखम्) ३ ५० ५ शत्रुबलविदारणक्षमम् (सेनापतिम्) १ १०२ १० दु सहम् (वच=परिभाषणम्) ५ ८. दुर्जयम् (धनम्) ५ ३१ ८ प्रचण्डपराक्रमम् '(इन्द्र=सम्राजम्) ७ ३६ तेजोमयम् (भग=ऐश्वर्यम्) ७ ४१ २ तेजस्वभावम् (इन्द्र=राजाद्यध्यक्षम्) ३ ३२.१७ तेजस्वी (ईश्वर) को स० वि० १५६, ७ ४१ २ **उग्रस्य**=उत्कृष्टस्य (बलस्य) ५ २० २ **उग्रः**=सर्वोत्कृष्ट (इन्द्र=परमैश्वर्यप्रद ईश्वर), 'ऋजेन्द्राग्र०' उ० २ २९ इति निपातनम् १ ७ ४ तीक्ष्णस्वभाव (भा०—शूर (जन) ३३ ८० तीव्र प्रभाव ४ २३ ७ तीव्रकारी (इन्द्र=सभाध्यक्ष) १ ५५ ३ तीव्रभाग्योदय (इन्द्र=ऐश्वर्यवान् विद्वान्) ३ ३६ ५ अतिकठिनदण्डप्रद (इन्द्र=सेनाद्यधि-पति) १ १०० १२ क्रूरस्वभाव (राजपुरुष) २.३३ ९ दुष्टाना वधे तीव्रतेजा (इन्द्र=सेनापति) १७ ३७ दुष्टाना हन्ता (सभाध्यक्ष) १ ५१ ११ दुष्टानामुपरि क्रोधकृत् (इन्द्र=राजा)२० ४८ दुष्टदलने तेजस्वी (राजा) ८ ४६ हिंसने तीव्र (इन्द्र=मन्त्री) १७ २४ भयङ्कर (ईश्वर) आर्याभि० १ ३४ [उच्यति समवैतीति विग्रहे उच समवाये (दिवा०) धातो 'ऋज्रेन्द्राग्रवज्र०' इत्यादिना रन् प्रत्य-यान्तो निपातित । वायुर्वाऽउग्र श० ६ १ ३ १३ एता-न्यष्टौ (रुद्र, शर्व, पशुपति, उग्र, अशनि, भव, महादेव, ईशान) अग्निरूपाणि । कुमारो नवम श० ६ १ ३ १८]

उग्र इव तेजस्वीव (राजादिजन इव) ६ १६ ३९ [उग्र-इवपदयो समास]

उग्रधन्वा उग्र धनुर्यस्य (इन्द्र=सर्वसेनाधिपति) १७ ३५ [उग्र-धन्वन्पदयोर्बहुव्रीहि । उग्र व्याख्यातम् । धन्वन्—धवि गतौ (भ्वा०) धातो 'कनिन् युवृषितक्षि०' उ० १ १५६ सूत्रेण कनिन्]

उग्रमुग्रम् तेजस्विन तेजस्विनम् (दुर्जन दुर्जनम्) ६ ४७ १६ [उग्र व्याख्यातम् । तस्य वीप्साया द्विर्वचनम्]

उग्रा तीव्रतेजस्का (द्यौ) ३२.६. **उग्राभिः**=अत्यन्तोत्कृष्टाभि [ऊतिभि=रक्षाप्राप्तिविज्ञानसुख-प्रवेशनै) १ ७ ४ **उग्राः**=कठिनगुणकर्मस्वभावा (पति-व्रता' स्त्रिय) ७ ५६ ६. (उग्र व्याख्यातम् । तस्य स्त्रिया टापि रूपम्]

उग्रा उग्रबली तेजस्विस्वभावौ (सभासेनाधीशौ) प्र०—अत्र विभक्तेर्लुक्, संहितायामिति दीर्घ. ३३ ६१. तीक्ष्णस्वभाव वाले (सूर्यादि और पृथिवी) स० वि० ६, ३२ ६ तीव्रौ (वाय्वग्नी) प्र०—अत्र 'सुपा सुलुग्०' इत्याकार १ २१ ४ (उग्र व्याख्यातम्]

उग्राः दृढा, भा०—बलिष्ठा (बाहव=भुजाः) १७.४६. तीव्रसवेगादिगुणसहिता (मरुत=वायव') १ २३.१० [उग्र व्याख्यातम् । तत प्रथमाबहुवचनम्]

उग्रादेवम् उग्रान् तीव्रस्वभावान्, विजिगीषुम् (सभाध्यक्षम्) प्र०—अन्येषामपि०, इति पूर्वपदस्य दीर्घ १.३६ १८ [उग्र-देवपदयो समास । देव=दिवु क्रीडा-विजिगीषादिषु (दिवा०) धातो पचाद्यच् प्रत्यय]

उग्रेभिः तेजस्विभि. (विद्वज्जनै) १ १७१ ५ तीक्ष्ण-स्वभावै (शूरवीरै) १ १३३ ६ [उग्र व्याख्यातम् । 'बहुल छन्दसी' ति भिस ऐसादेशो न भवति]

उचथम् वक्तव्यम् (वचनम्) २.१९ ७ वक्तु योग्यम् (वचनम्) १ १८२ ८ **उचथस्य**=वक्तु योग्यस्य (दुर्जनस्य) ७ १८ ५ उचितस्य (जनस्य) ७ १८ ५ **उचथानि**=रुचिकराणि (सुखानि) ४ २४ ७ वेदवचनानि १ ७३ १० उचितानि वचनानि ४ २२० **उचथाय**=प्रवचनायाऽध्यापनाय १ ११० १ [वच परिभाषणे (अदा०) धातोर्बाहुलकादौणादिकोऽथ प्रत्यय । स च कित् । कित्वात्सम्प्रसारणम्]

उचथा वक्तुमर्हाणि (ब्रह्मा=धनानि) २ २० ५ [उचथ व्याख्यातम् । 'शेश्छन्दसि बहुलमिति' शेर्लुक्]

उच्चरण्यत् चरणमिवाऽऽचरेत्, प्र०—'वाच्छन्दसि' अ० १ ४ ९ इत्यत्राऽल्लोप ईत्त्वाऽभावश्च ८ २४ [उत्+चरणप्राति० आचारेऽर्थे क्यच् । छान्दसत्वादल्लोप]

उच्चरत् उत्कृष्टतया चरति सर्वं जानाति ३६ २४ उत्कृष्टतया सर्वत्र व्याप्तमस्ति प० वि० । प्रलय के ऊर्ध्व

मिकान् सस्त्यायान् नि० १२६ उक्षन् महन्नाम निघ० ३.३]

उक्षत सिञ्चत १८७२ **उक्षतम्**=सिञ्चतम् २१८ सिञ्चेताम् २१६ [उक्ष सेचने (भ्वा०) धातोर्लोट्]

उक्षन् सेवन्ते ४११० [उक्ष सेचने (भ्वा०) धातोर्लेट्। अत्र सेवनार्थे धातूनामनेकार्थत्वात्]

उक्षन्ति सिञ्चन्ति ११६६३ **उक्षन्ते**=सेवन्ते ५५६१ सिञ्चन्ति २३४३ [उक्ष सेचने (भ्वा०) धातोर्लट्]

उक्षन्तम् वीर्यसेचनसमर्थ (जवान) को आर्याभि० १५०, १.११४७ वीर्यसेक्तारम् (युवानम्) १६१५ विद्यावीर्यसेचनसमर्थम् (जनम्) प० वि०। [उक्ष सेचने (भ्वा०) धातोर्लट शतृप्रत्यय]

उक्षभिः महद्भि (जनै) ११३६१० [उक्षन् व्याख्यातम्। तस्य तृतीयाबहुवचने रूपम्। उक्षन् महन्नाम निघ० ३३]

उक्षमाणः सिञ्चमान (मेघ) ५४२१४ **उक्षमाणाः**=सेवमाना (नर) ५५८८ **उक्षमाणे**=सुखैं सिञ्चमाने (द्यावापृथिव्यौ) ४५६२ [उक्ष सेचने (भ्वा०) धातोर्लट शानच्। अथवा ताच्छील्ये चानश्। व्यत्ययेन आत्मनेपदम्]

उक्षयन्त सिञ्चन्ति ६१७४ [उक्ष सेचने (भ्वा०) धातो स्वार्थे णिजन्ताल् लङ्। आडभावश्छान्दस]

उक्षा वीर्यसेचक (वृषभ) १८२७ सूर्य ४५६१ वृष्ट्या सेचक (समुद्र) १७६० सेचनसमर्थ (गौ = जनो वृषभो वा) २१२० वर्षा के द्वारा भूगोल का सेचन और आकर्षण करने वाला (सूर्य) स० प्र० ३११ **उक्षाणम्**=वीर्यसेचनसमर्थम् (गा==युवाऽवस्थ वृषभम्) २८३२ **उक्षाणः**=वीर्यसेचनसमर्था (पशव) २४२३ [उक्ष सेचने (भ्वा०) धातो 'श्वन्नुक्षन्०' उ० ११५६ सूत्रेण कनिन्। उक्षतेर्वृद्धिकर्मण, उक्षन्त्युदकेनेति वा नि० १२६]

उक्षामि शोधयामि, आर्द्रीकरोमि, सिञ्चामि वा २१ [उक्ष सेचने (भ्वा०) धातोर्लट्]

उक्षितम् सिक्तम् (भा०—गर्भम्) १६१५. वीर्यसेचनस्थित गर्भम् १११४७ विद्यावीर्यसिक्त जनम् प० वि०। सेवकम् (इन्द्र=विद्युतम्) २१६१ गर्भ मे वीर्य के सेचन को, आर्याभि० १५०, ऋ० १८६७ **उक्षित**= ससिक्त (अग्नि.) ५८७ सेवित (शमादिशुभकर्माऽऽचारिजन) २२१३ सिक्त (विद्वज्जन) १३६१६ **उक्षिते**=सिञ्चिते (उपासानक्ता=रात्रिदिने) २३६ [उक्ष सेचने (भ्वा०) धातो क्त प्रत्यय। उक्षित = महन्नाम निघ० ३३]

उक्षितासः वृष्टिद्वारा सेक्तार (रुद्रास =वायव) १८५२ [उक्ष सेचने (भ्वा०) धातो क्त। तस्य प्रथमाबहुवचने जसोऽसुगागमे रूपम्]

उखच्छित् य उख गमन छिनत्ति स (राजपुरुष) ४१६६ (उखम्=उख गत्यर्थे (भ्वा०) धातो 'घञर्थे कविधानम्' इति क। तदुपपदे छिदिर् द्वैधीकरणे (रुधा०) धातो क्विप्]

उखा पाकस्थाली ३५३२२ ज्ञातुमर्हा (पृथिवी= स्त्री) १२६१ उखाम्=सूपादिसाधनी स्थालीम् ११५६ प्राप्तव्या कन्याम् ११.६४ **उखायाः**=पाकसाधिकाया (स्थाल्या.) ११६२१३ प्राप्ताया प्रजाया १२१६ **उखे!**=अन्नाऽऽधारा स्थालीव विद्याऽऽधारे, ज्ञानयुक्ते, विज्ञानमिच्छुके, जिज्ञासो वा (कन्ये) ११६१ [उख गत्यर्थे (भ्वा०) धातोरौणादिको ऽन् प्रत्यय। तत स्त्रिया टाप्। उखा एतद्वै देवा एतेन कर्मणैतयावृतमेमाल्लोकानुदखनन् यदुदखनस्तस्मादुत्खोत्खा ह वै तामुखेत्याचक्षते परोक्षम् श० ६.७१२३ आत्मैवोखा श० ६५३.४, ६६.२१५ शिर एतद् यज्ञस्य यदुखा श० ६५३८ उदरमुखा श० ७५१३८ योनिर्वाऽउखा श० ७५२२ इमे वै लोका उखा श० ६५२१७, ६७१२२, ७५१२७ प्राजापत्यमेतत् कर्म यदुखा श० ६२२.२३ पर्वतदग्नेर्यदुखा श० ६२२२४]

उख्यम् उखाया सस्कृत भक्ष्यमोदनादिकम्, प्र०—अत्र 'शूलोखाद्यत्' अ० ४२१६ अनेन 'सस्कृत भक्षा' इत्यर्थे यत् १७६५ **उख्यस्य**=उखाया स्थाल्या भवस्य पाकसमूहस्य १४१ [उखाप्राति० 'शूलोखाद् यत्' अ० ४२१६ सूत्रेण 'सस्कृत भक्षा' अर्थे यत्। अथवा उखा प्राति० भवार्थे यत्। अय वाऽग्निरुख्य श० ८२१४]

उगणाभ्यः विविधतर्कयुक्ता गणा यासु ताभ्य (स्त्रीभ्य) १६२४ [उ-गणपदयोर्बहुव्रीहि। उ=वितर्के इति व्याख्यातम्]

उगणाः उद्यताऽऽयुधसमूहा (सेना), प्र०—पृषोदरादित्वादभीष्टसिद्धि ११७७

उग्र! तेजस्विन् (राजन्) ४२१८ प्रतापिन् (इन्द्र= राजन्) ४२०७. तीक्ष्णस्वभाव (राजन्) ४२४४.

उत्कृष्टतया प्राप्नुवन्त, भा०—उन्नयन्त (भानव = किरणा) १५ २४ [उत्+ओहाङ् गतौ (जु०) धातो शानच्। धातूनामनेकार्थकत्वात् त्यागेऽपि। अथवा ओहाक् त्यागे (जु०) धातोश्छान्दस रूपम्]

उज्जिहीते उत्कृष्टतया विज्ञापयति १ १०५ १८ [उत्+ओहाङ् गतौ (जु०) धातोर्लट्। भृञादित्वादभ्यासस्येत्व श्लौ। हलादौ क्ङिति 'ई हल्यघो' अ० ६ ४ ११३ इतीत्वम्]

उज्जेषम् उत्कृष्टया नीत्या जयेयमुत्कर्षेयम् ९ ३१. [उत्+जि जये (भ्वा०) धातोर्लिङर्थे लेट्। 'सिब्बहुल लेटी' ति सिप्]

उज्जेषी उत्कृष्टतया जेतु शील (भा०—गृहस्थ') १७ ८५ [उत्+जि जये (भ्वा०) धातोस्ताच्छील्ये णिनि। 'सिबुत्सर्गश्छन्दसि' अ० ३ १ ३४ वा सूत्रेण सिप्]

उत् उत्कृष्टार्थे प्र०—उदित्येतयो प्रातिलोम्य प्राह निरु० १ ३, १ १० १ ऊर्ध्वे १ ५० १ आश्चर्ये ३० ३१ उत्कृष्टतया ९ ३१ उत्कृष्टरीत्या १५ ५४ अधिकार्थे ७ ३२ १२ उत्कर्षे १७ १० उद्गमने ७ ४२. अपि ४ २८. अत्यन्तार्थे ४ ४५ १ ऊर्ध्वे उत्कृष्टबोधे व्यवहारे च अथर्व० ११ ५ ५, ऋ० भू० २४९ एवार्थे ७ १६.११ क्रियायोगे ७ ४१ चार्थे ६ ७२ २ धात्वर्थे १ १२ [उत् (न्यवेति विनिग्रहार्थीयौ) इत्येतयो प्रातिलोम्यम् नि० १ ३. उदिति सोऽसावादित्य जै० उ० २ ९ ८]

उत अप्यर्थे १ २३ १९ यदि १६ १० उत्प्रेक्षायाम् १ १७ ६ चार्थे ५ १९ तथा आर्याभि० १ ५० विकल्पे, अव्ययार्थे। और आर्याभि० १ १५ [उत अपि नि० १.६. च नि० १० २७]

उतानि सततानि वस्त्राणि १९ ८९ [वेञ् तन्तुसन्ताने (भ्वा०) धातो क्त। यजादित्वात् किति सम्प्रसारणम्]

उतो अपि २५ २९ पक्षान्तरे १ २३ १५

उत्किरामि उत्कृष्टतया विक्षिपामि ५ २३ उत्कृष्टतया प्रक्षिपामि ५ २३ [उत्+कॄ विक्षेपे (तुदा०) धातोर्लट्। 'ॠत इद्धातोरि' तीत्वे रपरत्वे च रूपम्]

उत्कूलनिकूलेभ्यः ऊर्ध्वनीचतटेभ्य ३० १४

उत्क्रमणम् ऊर्ध्वं क्रमण तेज इव ७ २९ [उत्-क्रमणपदयो समास। क्रमणम्=क्रमुपादविक्षेपे (भ्वा०) धातोर्ल्युट्]

उत्क्रमः उद्ध्वं क्रम क्रमण यस्मात्तस्य (विद्वज्जन) १५ ९. [उत्+क्रमपदयो समास। क्रम=क्रमु पादविक्षेपे (भ्वा०) धातोर्घञ्। 'नोदात्तोपदेशस्य०' अ० ७ ३.३४ इति वृद्धिर्न भवति]

उत्क्रान्तिः उत्क्राम्यन्त्युत्तरन्त्युल्लङ्घयन्ति समान् विषमान् देशान् यया गत्या तद्विद्यागात्री (विदुषी स्त्री) १५ १ [उत्+क्रमु पादविक्षेपे (भ्वा०) धातो क्तिन्। 'अनुनासिकस्य क्विझलो क्ङिति' अ० ६.४ १५. सूत्रेण उपधाया दीर्घ]

उत्तभान ऊर्ध्वं स्तभान १७ ७२ [उत्+स्तम्भु (सौत्रो धातु) धातोर्लोट्। 'स्तम्भुस्तुम्भु०' अ० ३.१ ८२ इति श्ना। 'हल श्न शानज्झौ' इति श्न शानजादेश। 'उद स्थास्तम्भो पूर्वस्य' इति पूर्वसवर्ण]

उत्तभिता धारिताऽस्ति ऋ० भू० १४३ धारण किया है स० प्र० ३११ [उत्+स्तम्भु स्तम्भार्थे सौत्रो धातु। ततस्तृच् कर्त्तरि। पूर्वसवर्णादेशश्च]

उत्तमम् सर्वोत्कृष्टम् (सूर्यम्=ईश्वरम्) ३५ १४ श्रेयासम् (रस=वीर्य) ९ ३ प्रशस्तम् (दक्ष=बलम्) १ १५६ ४ अतिशयेन श्रेष्ठम् (पुनम्) ५ २५ ५ उत्कृष्टगुणकर्मस्वभावम् (सूर्यम्) १ ५० १०. विजयाऽऽख्यम् (नाक=सर्वसुखप्रद विजयम्), सर्वथोत्कृष्टम् (मोक्षपदम्), प्रशस्तम् (अविद्यमानदुख भोगम्), सर्वश्रेष्ठम् (सर्वदु ख प्रणाशकमानन्दम्) ९ १० सर्वोत्कृष्टम् (ईश्वरम्) २० २१ अतिश्रेष्ठम् (श्रव=अन्नादिक श्रवण वा) ४ ३१.१५. भा०—अत्युत्तमम् (नाकम्=सुखम्) १८ ५१ **उत्तमः**= श्रेष्ठ (भौतिकाग्नि) ३ ५ १० **उत्तमानि**=श्रेष्ठानि (द्युम्नानि=धनानि यशासि वा) ३३ १२ श्रेष्ठनमानि (श्रवासि=श्रवणान्यन्नानि वा) १ ९१ १८ **उत्तमाम्**= अतिश्रेष्ठाम् (श्रियम्=शोभा लक्ष्मी च) ३२ १६ **उत्तमेन**=प्रशस्तेन (पविना=वाचा) ६ ३० [उत् शब्दाद् अतिशायने तमप्]

उत्तमेभिः श्रेष्ठै (कर्मभि) ६ ६० ३ [उत्तम व्याख्यातम्। ततो भिस्। 'बहुल छन्दसीति' ऐसादेशो न भवति]

उत्तम्भनम् उत्कृष्ट प्रतिबन्धनम् प्र०—अत्र 'उद स्थास्तम्भो पूर्वस्य' अ० ८ ४ ६१ अनेन सस्य पूर्वसवर्णादेश ४ ३६ [उत्+स्तम्भु स्तम्भार्थे सौत्रो धातु। ततो ल्युट्। 'उद स्थास्तम्भो०' इति पूर्वसवर्णादेश]

उत्तरणाय अर्वाचीनतटात्परतट प्राप्नुवते प्रापयते वा (जनाय) १९ ४२ [उत्+तॄ प्लवनसन्तरणयो (भ्वा०)

रहता है आर्याभि० २ ३७, ३६ २४ [उत्+चर गतौ (भ्वा०) धातोर्लेट्]

उच्चरन्तम् ऊर्ध्वं प्राप्नुवन्तम् (सूर्यम्) ६ ५२ ५ ऊर्ध्वं विहरन्तम् (सूर्यमण्डलम्) ४.२५.४ [उत्+चर गतौ (भ्वा०) धातो शतृ]

उच्चा ऊर्ध्वं स्थितानि (धनानि) २ ३० ५ उच्चानि उत्कृष्टानि (ब्रह्मचर्य-विद्या-बल-शील-पुरुषार्थां) २.२ १० उच्चादुत्कृष्टकर्मसेवमानाद्, प्र०—अत्र 'सुपा, सुलुग्०' इति पञ्चम्येकवचनस्याकारादेश १ ११६ २२ उच्चे ऊर्ध्वस्थिते (दिवि=आकाशे) २ ४०.४ उच्चम् (शर्म=गृहम्) २६ १६ उच्चानि वस्तूनि १ १२३ २ उच्चानि सुखानि कर्माणि वा १ ३३ ७ [उच्चा=उच्चैः. नि० ६.३६ उच्चै =उच्चितं भवति नि० ४ २४]

उच्चाबुध्नम् उच्चा ऊर्ध्वं बुध्नमन्तरिक्ष यस्मिँस्तत् (विमानादियानस्थमुदकाधार कुण्डम्) १ ११६ ६ [उच्च-बुध्नपदयोर्बहुव्रीहि । बुध्नम्=अन्तरिक्षं बद्धा अस्मिन् धृता आप इति वा । इदमपीतरद् (हृदयम्) बुध्नमेतस्मा-देव बद्धा अस्मिन् धृता प्राणा इति नि० १० ४४]

उच्चैर्घोषाय उच्चैर्घोषो यस्य तस्मै (न्यायावीशाय) १६ १६ [उच्चैस्-घोषपदयो समास । उच्चै =उच्चित भवति नि० ४ २४]

उच्छ विशिष्टतया वासय १.११३.१७ विवासय ६ ६५ ६ विवस १ ४८ १ उच्छति विवासयति १ ६२ १४ [उच्छी विवासे (भ्वा०) धातोर्लोट्]

उच्छत् विवासयति १ ४८ ८ [उच्छी विवासे (भ्वा०) धातोर्लेट्]

उच्छति विवसति १ ४६ १. **उच्छन्तु**=सेवन्ताम् ७ ४१ ७ तमो विवासयन्तु १ १२४.६ विवसन्तु ३ ४ ४० **उच्छात्**=विवसेत् १ ११३ १३ प्राप्नुयात् १ १२४ ११. **उच्छान्**=विवासयेयु. ४ ५५ २ विवासयेत् ५ ३७ १ [उच्छी विवासे (भ्वा०) धातोर्लट्, लोट्, लेट् च]

उच्छन्ती विवासयन्ती दूरीकुर्वन्ती (उषा) १ ६२ ६ निवसन्ती (उषा =स्त्री) ५ ७६ १० अन्धकार निस्सार-यन्ती (उषा =प्रातर्वेला) १ १२४ १ **उच्छन्तीम्**=निवासयन्तीम् (उषसम्) १ ७१ १ **उच्छन्तीः**=सेवयन्ती (उषस =प्रातर्वेला) ४ ३६ १ सुवासयन्त्य (स्त्रिय) ४ ५१ ३ **उच्छन्त्याम्**=विविधवासदात्र्याम् (उषसि=प्रभातवेलायाम्) १ १८४ १ [उच्छी विवासे (भ्वा०) धातोः शत्रन्तान् ङीप्]

उच्छशाधि उत्कृष्टतया शिक्षय ७ १ २५ [उत्+शासु अनुशिष्टौ (अदा०) धातोर्लोट् । 'बहुल छन्दसी' ति शप श्लु]

उच्छंस उत्कृष्टतया स्तुहि ५ ५२ ८ [उत+शसु स्तुतौ (भ्वा०) धातोर्लोट्]

उच्छात् विवसनात् १ ४८ ३ [उच्छी विवासे (भ्वा०) धातोर्भावे घञ् । तत पञ्चमी]

उच्छिष उच्छिष्टं त्यज ६ ७५ १६ ऊर्ध्वं शिष्ट त्यजेत् १७ ४५

उच्छिष्टात् उत् सर्वस्मादूर्ध्वं शिष्टात् परमेश्वरात् तत्सामर्थ्यात् च ऋ० भू० १३६ [उत्+शासु अनुशिष्टौ (अदा०) धातो क्त । 'शास इदङ्हलोरि' तीत्युपधाया इत्वम् । 'शासि वसिघसीना चे' ति षत्वम्]

उच्छोचस्व उत्कृष्टतया विचारय ४ २ २० [उत्+शुच शोके (भ्वा०) धातोर्लोट् । व्यत्ययेनात्मनेपदम्]

उच्छ्रयतात् उच्छ्रित कुर्यात्, भा०—प्रजाराजपुरुषा-नुन्नयेत् २३ २७ [उत्+श्रिञ् सेवायाम् (भ्वा०) धातो-र्लोट् । मध्यमपुरुषैकवचने 'तुह्योस्तातङ्०' इति हे स्थाने तातङ्]

उच्छ्रयस्व उत्कृष्टतया सेवस्व ३ ८ २ उत्कृष्ट सेवस्व सेवते वा ४ १० [उत्+श्रिञ् सेवायाम् (भ्वा०) धातोर्लोट्]

उच्यते उपदिश्यते १ ११४ ६ उपदिश्येत, अ०—उच्येत, तद्गुणान् प्रकाशयेत्, प्र०—लेट्-प्रयोगोऽयम् १२ ८० कथ्यते १ ७७ १ कहा जाता है स० वि० २०८, अथर्व० ६ ६ १ २ **उच्यसे**=परिभाष्यसे १ ३१ १४. **उच्येते**=कथ्येते ३ १ १० [वच परिभाषणे (अदा०) धातो कर्मणि लट्]

उच्यसि वदसि ५ ८ १ ४ [वच परिभाषणे (अदा०) धातोर्लट् । विकरणव्यत्ययेन यक्]

उज्जजान उत्कृष्टतया जायते ३ १ १२ [उत्+जनी प्रादुर्भावे (दिवा०) धातोर्लिट्]

उज्जिघ्नते उत्कृष्टतया हिंसन्ति १.६४ ११ [उत्+हन हिंसागत्यो (अदा०) धातोर्लट् । 'बहुल छन्दसीति' शप श्लु । व्यत्ययेनात्मनेपदम्]

उज्जितम् जयत्यनया सा जितिरुत्कृष्टा चासौ जितिश्च तामुत्कृष्ट विजयम्, विद्यया सम्यगुत्कर्षम् २ १५ [उत्+जि जये (भ्वा०) धातो क्त]

उज्जिहानाः सम्यक् त्यजन्त (मानवा) ५.१.१

धातोर्वा रूपम्]

उत्तिरामसि उत्कृष्टतया तराम ३ ३७ १० [उत्+तॄ प्लवनसन्तरणयो (भ्वा०) धातोर्लट्। विकरणव्यत्ययेन शप्रत्यये रूपम्। 'इदन्तो मसि' रितीदन्तता मस]

उत्तिष्ठ ऊर्ध्वं गच्छ ५ ५६.५ उद्युक्तो भव ४ ४४ उत्तिष्ठतु उद्युक्तो भवतु ३४ ५६ प्रकाशितो भव ७ ३८ २ **उत्तिष्ठत**=उद्यता भवत, भा०—प्रयत्नेनोद्यमिनो भवत ३५.१० [उत्+ष्ठा गतिनिवृत्तौ (भ्वा०) धातोर्लोट्। शिति 'पाघ्राध्मास्था०' इत्यादिना तिष्ठादेश। 'उद स्थास्तम्भो०' इति पूर्वसवर्णादेश]

उत्तिष्ठन् उद्यमाय प्रवर्त्तमान (सत्पुरुष.) ७ ३३ १ सद्गुणकर्मस्वभावेषूर्ध्वं तिष्ठन् (इन्द्र =सभापती राजा) ८ ३६ [उत्+ष्ठा गतिनिवृत्तौ (भ्वा०) धातो शतृ। शिति तिष्ठादेश पूर्वसवर्णादेशश्च पूर्वपदवत्]

उत्थाय आलस्य विहाय ११ ६४ [उत्+ष्ठा गतिनिवृत्तौ (भ्वा०) धातो क्त्वा। समासे क्त्वो ल्यप्। पूर्वसवर्णादेशश्च पूर्वपदवत्]

उत्थिताय कृतोत्थानाय (जीवाय) २२ ८ [उत्+ष्ठा गतिनिवृत्तौ धातो क्त। 'द्यतिस्यतिमास्थाम्०' इति धातोरिकारादेश। पूर्वसवर्णादेशश्च]

उत्पतन् ऊर्ध्वमुड्डीयमान इव (पक्षी) २ ४३ ३ उत्तम व्यवहार मे पहुँचाता हुआ (परमेश्वर) आर्याभि० १ ५३ [उत्+पत्लृ गतौ (भ्वा०) धातो शतृ]

उत्पतन्ति ऊर्ध्वं गमयन्ति ऋ० भू० १९८. प्राप्नुवन्ति १ १६४ ४७ [उत्+पत्लृ गतौ (भ्वा०) धातोर्लट्। अन्तर्भावितण्यर्थश्च]

उत्पातयति ऊर्ध्वं जागरयति १ ४८ ५ [उत्+पत्लृ गतौ (भ्वा०) धातोर्णिजन्ताल्लट्]

उत्पारयन्ति उत्कृष्टतया पार गमयन्ति १ १८२.६ [उत्+पार कर्मसमाप्तौ (चुरा०) धातोर्लट्]

उत्पुनामि उत्कृष्टतया पवित्रीकरोमि, प्र०—उदित्येतयो प्रातिलोम्य प्राह, निरु० १ ३, १ ३१. [उत्+पूञ् पवने (क्रया०) धातोर्लट्। 'प्वादीना ह्रस्व' इति धातोर्ह्रस्वत्वम्]

उत्प्रपूर्याः पूर्ण कुर्य्या १५ ४३ [उत्+प्र+पॄ पालनपूरणयो (जु०) धातोर्लिङ्। 'बहुल छन्दसी' ति शपो लुक्]

उत्सक्थ्याः ऊर्ध्वं सक्थिनी यस्यास्तस्या प्रजाया २३ २१ [उत्+सक्थिपदयो समास। सक्थि—पञ्ज सङ्गे (भ्वा०) धातो 'असिसञ्जिभ्या क्थिन्' उ० ३ १५४. सूत्रेण क्थिन् प्रत्यय.। सक्थि-सचतेरासक्तोऽस्मिन् काय नि० ६ १८]

उत्सधिम् उत्सा कूपा धीयन्ते यस्मिन् भूमिभागे तम् १.८८ ४ [उत्सोपपदे डुधाञ् धारणपोषणयो (जु०) धातोरधिकरणे कारके 'कर्मण्यधिकरणे च' इति कि प्रत्यय। उत्स कूपनाम निघ० ३ २३]

उत्सम् उन्दन्ति येन त कूपम्, प्र०—उत्समिति कूपनाम, निघ० ३ २३, १७ ८७ कूपमिव जलेन क्लिन्नम् (दशयन्त्रम्=जगत्) ६.४४ २४ कूप इवाऽऽर्द्रीकरम् (अग्नि=विद्वद्राजानम्) १२ १६ कूपमिव पालक गवादिकम्, अ०—वीर्यसेचक वृषभम् १३ ४६ **उत्सः**=उन्दन्ति यस्मात् स कूप इव (पुरुष) १६ ८७ कूप इव तृप्तिकर (ईश्वर) १ १५४ ५. **उत्सौ**=कूपोदकमिवाऽऽर्द्रीभूतौ (स्त्रीपुरुषौ) १३ ३५ [उनत्ति क्लिद्यतीत्युत्स। उन्दी क्लेदने (रुधा०) धातो 'उन्दिगुधिकुपिभ्यश्च' उ० ३ ६८ सूत्रेण स प्रत्यय. किच्च। उत्स कूपनाम नि० ३ २३. उत्सरणाद्वोत्सदनाद्वोत्स्यन्दनाद्वोनत्तेर्वा नि० १०.६ आपो वा ऽउत्स श० ६.७ ४.४.]

उत्सवे हर्षनिमित्ते व्यवहारे १ १०२ १ कर्त्तव्याऽऽनन्दसमये ३३ २६ **उत्सवेषु**=आनन्दयुक्तेषु कर्मसु १ १०० ८ [उत्+षु प्रसवैश्वर्ययो (भ्वा०) धातो. 'ऋदोरप्' त्यप् प्रत्यय]

उत्सादतः त्यागमात्रात् २१ ४५ उत्सादन कुर्वत (प्रत्यङ्गात्) २१ ४३ गात्रोत्सादनात् २१ ४४ [उत्+षद्लृ विशरणगत्यवसादनेषु (भ्वा०) धातोर्णिजन्ताच्छतृ। अथवा=उत्सादप्राति० सार्वविभक्तिकस्तसि प्रत्यय]

उत्सादम् ऊर्ध्वं सीदन्ति यस्मिँस्तम् (तालु=आस्याऽवयवम्) २५ १ **उत्सादेभ्यः**=नाशेभ्य प्रवृत्तम् ३० १० [उत्+षद्लृ विशरणगत्यवसादनेषु (भ्वा०) धातोर्घञ् 'हलश्च' सूत्रेण]

उत्सिनाति उत्कृष्टतया बध्नाति १ १२५ २. [उत्+षिञ् बन्धने (क्रया०) धातोर्लट्]

उत्स्नाय स्नान कृत्वा २ १५ ५ [उत्+ष्णा शौचे (अदा०) धातो क्त्वा। समासे क्त्वो ल्यप्]

उदक् उत्तरत ३ ५३ ११ उत्तरस्या (दिश) ६ ३६ [दिशावाचिन उदक् शब्दादुत्तरस्यास्ताति प्रत्ययस्य 'अञ्चेर्लुक्' अ० ५ ३ ३० सूत्रेण लुक्]

उदकम् (जलम्) १ १६४.७ जल को स० वि०

धातोर्ल्युडन्ताच्चतुर्थी]

उत्तरतः उत्तरस्माद् देशात् ५ ११ उत्तरकाले २ ३ [उत्तरप्राति० पञ्चम्यन्तात् तसिल्]

उत्तरम् प्रलयाऽनन्तर कारणाऽऽख्यम् १ १५४ १ सर्वेभ्य सूक्ष्मत्वादुत्तरम् (ईश्वरम्) २० २१ सर्वेभ्य पदार्थेभ्य उत्तरस्मिन् वर्त्तमानम् (सूर्यम्=ईश्वरम्) ३८ २४ उत्पद्यमानम् (रूपम्) १ ६५ ८ अन्ताऽवयवम् (सधस्थ=कारणरूपम्) ५ १८. सर्वेषा लोकानामुत्तारकम् (सूर्य=जगदीश्वरम्) २७ १० सर्वोत्कृष्ट' प्रलयादूर्ध्व वर्त्तमान सप्लवकर्त्तारम् (ईश्वरम्) १ ५० १० उत्तरन्ति येन तत् (दक्ष=बलम्) ६ १६ १७ दु खेभ्य उत्तारक परत्र वर्त्तमानम्, जन्ममृत्युक्लेशादिभ्य पृथग्वर्त्तमानम् (सूर्यम्=ईश्वरम्) ३५ १४ अर्वाक्कालीनम् (सुम्न=सुखम्) २ २३ ८ उत्तर समुद्र अर्थात् गृहाश्रम को स० वि० ८०, अथर्व० ११ ५ ६ उत्तरा दिशाम् २५ ५ **उत्तरः**=उत्तरकालीन (राजविरोधिजन) ४ १८ ६ पश्चात् (पुरुष) ४ ३० १ उत्कृष्ट तारयति समादधाति स (परमेश्वर) २३ ५२ **उत्तरात्**=सर्वेभ्य उत्तरम् (स्व=सुखसम्पादकदिग्रूपम्) १३ ५७ पश्चात् ५ ६० ७ **उत्तरान्**=आगामिन (उपस) १ ११३ १३ **उत्तरे**=विजयाऽनन्तरसमये कुशला विद्यमानजीवना (वीरजना) १७ ४३ सिद्धान्तसिद्धा (स्तोमा=स्तुतिसमूहा) १ ७ ७ **उत्तरेण**=उपरिस्थेन (प्रकाशेन) २५ २ [उत् शब्दादतिशायने तरप्। उत्तर=उद्धततरो भवति नि० २ ११ उत्+तॄ प्लवनसन्तरणयो (भ्वा०) धातो 'ऋदोरप्' त्यप्। अय वै (भू) लोकोऽद्भ्य उत्तर श० १४ ३ १ २८ तेषु ह वा एष एतदध्याहितस्तपति स वा एप (सूर्य) उत्तरोऽस्मात्सर्वस्माद् भूताद् भविष्यत सर्वमेवेदमतिरोचते यदिद किं च ऐ० ४.१८]

उत्तरवेद्याः उत्तरा चाऽसौ वेदी च तस्या १६ १६ [उत्तरावेदीपदयो समास। उत्तर व्याख्यातम्। वेदी=विद सत्ताया (अदा०) धातो 'हृपिषिरुहिवृतिविदि०' उ० ४११९ सूत्रेण इन्। 'कृदिकारादक्तिन' इति डीप् स्त्रियाम्। नासिका ह वा ऽएषा यज्ञस्य यदुत्तरवेदि। अथ यदेनामुत्तर वेदेरुपकिरति तस्मादुत्तरवेदिर्नाम श० ३ ५ १ २ द्यौरुत्तरवेदि श० ७ ३ १ २७ योनिर्वा ऽउत्तरवेदि श० ७ ३ १ २८ योषा वा ऽउत्तरवेदि श० ३ ५ १ ३३ पशवो वा ऽउत्तरवेदि तै० १ ६ ४ ३ खल उत्तरवेदि ता० १६ १३ ७]

उत्तरस्मिन् उत्तमाऽऽसने १८ ६१ [उत्तरसर्वनाम्न सप्तमी। 'पूर्वादिभ्यो नवभ्यो वा' इति स्मिन्नादेश]

उत्तराम् उत्कृष्टतया तरन्ति यया सेनया ता प्राप्तविजयाम् (सेनाम्) १७ ५० कारणरूपाम् (दिवम्) १ ५० ११ [उत्+तॄ प्लवनसतरणयो: (भ्वा०) धातो 'ऋदोरप्' त्यप्। तत स्त्रिया टाप्]

उत्तरामुत्तराम् आगामिनीमागामिनीम् (समा=वेलाम्) ३८ २८. पुन पुनर्निर्मिताम् (सीता=भूमिकर्षिकाम्) ४ ५७ ७ [उत्तराम् पदस्य वीप्साया द्वित्वम्]

उत्तरासदः ये प्रश्नोत्तराणि समादधाना उत्तरस्या दिशि सीदन्ति (देवा=विद्वज्जना) ९ ३६ **उत्तरासद्भ्यः**=य उत्तरस्या दिशि सीदन्ति तेभ्य (देवेभ्य=विद्वज्जनेभ्य) ९ ३५ [उत्तरोपपदे षद्लृ विशरणगत्यवसादनेषु (भ्वा०) धातो क्विप् कर्त्तरि। सहिताया पूर्वपदस्य दीर्घ]

उत्तानयोः उपरिस्थयो ऊर्ध्व स्थापितयो पृथिवीसूर्ययो १ १६४ ३३ **उत्तानः**=ऊर्ध्व स्थित (सूर्य) ४ १३.५ ऊर्ध्व तनित इव स्थित (जीवात्मा) ४ १४ ५ [उत्+तनु विस्तारे (तना०) धातो 'तनोतेर्ण उपसख्यानम्' अ० ३ १ १४० वा इति ण प्रत्यय। उत्तान उत्ततान ऊर्ध्वतानो वा नि० ४ २१]

उत्तानहस्तः ऊर्ध्ववाहु (विद्वज्जन) ६ ६३.३ उत्तानौ उपरिस्थौ हस्तौ यस्य स (मर्त्त=मनुष्य) ६ १६ ४६ **उत्तानहस्ताः**=उत्तानावूर्ध्वगतावभयदातारौ हस्तौ येषान्ते (जना) १८ ७५ उत्थापितकरा (गिष्पा) ३ १४ ५ [उत्तान-हस्तपदयो समास। उत्तान व्याख्यातम्। हस्त=हसधातो 'हसिमृ०' उ० ३ ८६ सूत्रेण तन्प्रत्यय। हस्तो हन्ते प्राशुर्हनने नि० १ ७]

उत्तानाम् ऊर्ध्वगामिनीम् (रशना=रज्जुम्) ५ १ ३ **उत्तानायाम्**=उत्कृष्टतया विस्तृताया जगत्याम् १ १६४ १४ उत्कृष्टतया विस्तीर्णाया भूमावन्तरिक्षे वा ३४ १४ उत्तान इव शयानाया पृथिव्याम् २ १० ३ सरलतया शयानो मनुष्य इव वर्त्तमानाया भूमौ ३ २९ ३ **उत्तानायाः**=उत्कृष्टस्तान शुभलक्षणविस्तारो यया राज्ञ्यास्तस्या ११ ३९ [उत्+तनु विस्तारे (तना०) धातो 'तनोतेर्ण उपसख्यानम्' इति वा० सूत्रेण ण। स्त्रिया टाप्]

उत्तिर उत्कृष्टतया विस्तारय, अ०—उत्कृष्टेतया निवारय १ ११ ७ [उत्+तॄ प्लवनसन्तरणयो (भ्वा०) धातोर्लोट। व्यत्ययेन श। तिरते प्रवर्धयते (नि० ११ ६.)

अ० ८ २ १३ सूत्रेण उदधावर्थे सज्ञाया विषये मतावुदकस्योदन्भावो निपात्यते]

उदन्वतीः उदकयुक्ता (नद्य) ७ ५० ४ [उदकप्राति० मतुप् भूम्न्यर्थे । मतुवन्तान् ङीप् । पूर्वपदवत् उदन्भावश्च]

उदपप्तन् ऊर्ध्वं पतन्ति १ ६२ २. [उत्+पत्लृ गतौ (भ्वा०) धातोर्लुङ् । लृदित्त्वादङ् । 'पत पुम्' इत्यङि पुमागम]

उदप्रुतम् उदकयुक्तम् (पौर=मनुष्यम्) ५ ७४ ४
उदप्रुतः=उदकस्य गमयितार ४ ४५ ४. उदक प्राप्ता नद्य इव (धेनव =वाच) ७ ४२ १ [उदक-प्रुत्पदयो समास । उदकस्य उदादेशश्छान्दस । प्रुत्=प्रुङ् गती (भ्वा०) धातो क्विप् । 'ह्रस्वस्य पिति कृति तुग्' इति तुगागम]

उदभिः उदकै २ १३ ५ [उदकप्राति० भिस् । उदकस्योदादेश । 'बहुल छन्दसी' ति भिस ऐसादेशो न भवति]

उदमन्दिषुः उत्कृष्टतया हर्षयन्तु १ ८२ ६ [उत्+मदि स्तुतिमोदमदस्वप्नकान्तिगतिषु (भ्वा०) धातोर्लुङ् । व्यत्ययेन परस्मैपदम्]

उदमुच्ये छोड देता हूँ स० वि० १२२, अथर्व० १४ १ ५७ [उत्+मुच्लृ मोक्षणे (तुदा०) धातो कर्मणि लङ्]

उदमृक्षन्त उत्कृष्टतया मृषन्ति सहन्ते १ १२६ ४ [उत्+मृक्ष सघाते (भ्वा०) धातोर्लङ् । व्यत्ययेनात्मनेपदम् । धातूनामनेकार्थकत्वादत्र सहनेऽपि]

उदमेघे यस्योदकैर्मिह्यते सिच्यते जगत् तस्मिन् समुद्रे १ ११६ ३ [उदक-मेघपदयो समास । उदकस्योदादेशश्छान्दस । मेघ =मिह सेचने (भ्वा०) धातो पचाद्यच् । न्यङ्क्वादिषु पाठात् कुत्वम्]

उदयनात् उदयात् १ ४८ ७ [उत्+अय गतौ (भ्वा०) धातोर्ल्युट् । तत पञ्चमी]

उदयँस्त उद्यच्छति १ ५६ १ [उत्+यमु उपरमे (भ्वा०) धातोर्लुङ् । 'समुदाङ्भ्यो यमोऽग्रन्थे' अ० १ ३ ७५ सूत्रेणात्मनेपदम्]

उदरम् घर के भीतर का प्रसार विस्तार स० वि० १६७, अथर्व० ९ २ १५. **उदरस्य**=उदरस्य सकाशात् २५ ३३ **उदरे**=शरीराऽभ्यन्तरे ४ १२ **उदरेषु**=अन्तर्देशेषु १ २५ १५ [उत्+दॄ विदारणे (क्र्या०) धातो 'उदि दृणातेरलचौ पूर्वपदान्त्यलोपश्च' उ० ५ १६. सूत्रेणाल् अच् वा प्रत्यय । उद्दृणाति येनान्नमिति विग्रह । प्रजापतेर्वा एतदुदर यत्सद. । ता० ६.४.११ उदर वै सद कौ० ११ ८ उदरमेवास्य (यज्ञस्य) सद श० ३.५ ३ ५ उदर मध्यमा चिति श० ८.७ २ १८ उदरम् उखा श० ७ ५ १ १८]

उदर्के उत्कृष्टतयाऽऽप्तौ १ ११३ १८ [उत्+अर्च-पूजायाम् (भ्वा०) 'कृदाधाराचिकलिभ्य क' उ० ३ ४० सूत्रेण क प्रत्यय । रसो वा उदर्क कौ० ११ ५]

उदर्येण उदरे भवेन (व्यवहारेण) २५ ८. [उदर व्याख्यातम् । ततो भवार्थे यत्]

उदव उत्तम रीति मे कृपा करके रक्षण करो, आर्याभि० १ ४३ उत्कृष्टतया रक्ष ५ ५ ६ सर्वथा रक्षा कीजिए स० वि० १५६, ७ ४१ ३ उद्गमय प्रापय, प्राप्त करा आर्याभि० २ ११.३४.३६ **उदवत**=कामयध्वम् २ ३१ २ **उदवन्तु**=उत्कर्षेण रक्षन्तु, भा०—पालयन्तु १६ ४६ [उत्+अव रक्षणगतिकान्तिप्रीतितृप्त्यवगम-प्रवेशश्रवणादिषु (भ्वा०) धातोर्लोट्]

उदवता ऊर्ध्वगमनेन ६ १८ ६ [उत्+अव रक्षण-गत्यादिषु (भ्वा०) धातो शतृप्रत्यय]

उदवर्त्तय ऊर्ध्वं वर्त्तय १६ ७१ [उत्+वृतु वर्त्तने (भ्वा०) धातोर्णिचि लोट्]

उदवविश्रथाय उत्कृष्टतया विमोचय १२.१२ [उत्+अव+वि+श्रन्थ विमोचनप्रतिहर्षयो (क्र्या०) धातोर्घञ् । 'अवोदैधोद्मप्रश्रथ०' अ० ६ ४ २९ इति निपातनात् नलोपो वृद्ध्यभावश्च]

उदवाहासः य उदक वहन्ति तानिव (मरुत = वायव इव) ५ ८३ ३ [उदकोपपदे वह प्रापणे (भ्वा०) धातोरण् प्रत्ययः । प्रथमाबहुवचने जसोऽसुगागम.]

उदव्रजे उदकानि व्रजन्ति यस्मिँस्तस्मिन् (आकाशे) ६ ४७ २१ [उदक-व्रजपदयो समास । व्रज =व्रज गतौ (भ्वा०) धातोरधिकरणे 'गोचरसचरवहव्रज०' अ० ३ ३ ११९ सूत्रेण घप्रत्ययान्तो निपात्यते]

उदसृजत् अपिसृजति ६ ३२ २ **उदसृजः**=उत्सृजति त्यजति २.१३.१८ [उत्+सृज विसर्गे (तुदा०) धातोर्लङ्]

उदस्तभ्नात् उत्कृष्टतया स्तभ्नाति ६ ४७ ५. [उत्+स्तम्भु स्तम्भार्थे (सौत्रो धातु) धातोर्लङ् । 'स्तम्भु-स्तुम्भुस्कम्भु०' अ० ३ १ ८२ सूत्रेण श्नाविकरण]

उदस्तम्भीत् उत्तभ्नाति ३ ५ १० [उत्+स्तम्भु

२०६, अथर्व० ६ ६ ४ **उदकाय**=आर्द्रीकारकाय(जलाय) २२.२५. [उदकम् उदकनाम निघ० १ १२ उन्दी क्लेदने (रुधा०) धातो 'उदकञ्च' उ० २.३६ सूत्रेण निपातनात् क्वुन् प्रत्यय । उदक कस्मादुनत्तीति सत नि० २ २४]

उदक्ताः पुनरूर्ध्वं गच्छन्त्य (नाव =विमानानि) १० १६ [उत्+अञ्चु गतिपूजनयो (भ्वा०) धातो क्त]

उदगन्म प्राप्नुयाम प० वि०, २० २१ **उदगात्**= उत्कृष्टतया प्राप्तोऽस्ति प० वि०, १ ११५ १ उद्गमनतया प्राप्नोति ७.४३. उदितोऽस्ति १३ ४६ [उत्+गम्लृ गतौ (भ्वा०) धातोर्लङ् । 'बहुल' छन्दसीति शपो लुक् । 'म्वोश्च' अ० ८ २.६५ सूत्रेण नकारादेश । उदगात्-प्रयोगे-उत्+इण् गतौ (अदा०) धातोर्लुङ् । 'इणो गा लुङि' इति गादेश । सिचो लुक् च]

उदच ऊर्ध्वं गच्छति, प्र०—अत्र व्यत्यय ५ ८३ ८ [उत्+अञ्चु गतिपूजनयो (भ्वा०) धातोर्लोट् । विकरण-व्यत्ययेन श प्रत्यय]

उदजते ऊर्ध्वं क्षिपति, प्र०—अत्र व्यत्ययेनाऽऽत्मने-पदम् १ ६५ ७. [उत्+अजगतिक्षेपणयो (भ्वा०) धातो-र्लट् । व्यत्ययेनात्मनेपदम्]

उदजनि उत्कृष्टतया जनयति १ ७४ ३ [उत्+जनी प्रादुर्भावे (दिवा०) धातोर्लुङ् । 'दीपजन०' इत्यादिना विकल्पेन चिण्]

उदजयत् उत्कृष्टरीत्योत्कर्षेत् ६ ३४ उत्कृष्टतया नीत्या जयेदुत्कर्षेत् ६ ३१ [उत्+जि जये (भ्वा०) धातोर्लङ्]

उदजायन्त उत्कृष्टा भवन्ति ४ १८ १ [उत्+जनी प्रादुर्भावे (दिवा०) धातोर्लङ् । 'ज्ञाजनोर्जा' इति जादेश]

उदञ्चनः उत्कृष्टता प्रापक (विद्वज्जन) ५ ४४ ३ [उत्+अञ्चु गतिपूजनयो (भ्वा०) धातो कर्त्तरि युच् बाहुलकादौणादिक]

उदञ्चम् ऊर्ध्वं प्राप्नुवन्तम् (सिन्धु=समुद्रम्) २ १५ ६ (उत्+अञ्चु गतिपूजनयो (भ्वा०) धातोर्बाहुल-कादन् प्रत्यय औणादिक कर्त्तरि]

उदतिरम् उत्कृष्टतया सन्तरेयमुल्लङ्घेयम् ११.८२ [उत्+तॄ प्लवनसन्तरणयो (भ्वा०) धातो सामान्ये लङ् । विकरणव्यत्ययेन शप्रत्यये ऋत इत्वे रपरत्वे च रूपम्]

उदतिष्ठत् उत्तिष्ठति ४ १८ ८ ऊर्ध्वे उत्कृष्टबोधे व्यवहारे च तिष्ठति ऋ० भू० २३५ उत्कृष्टतया तिष्ठति २ १५ ७ **उदतिष्ठः**=उत्तिष्ठते ५ ११ ३ [उत्+ष्ठा गतिनिवृत्तौ (भ्वा०) धातोर्लङ् । शिति प्रत्यये तिष्ठादेश]

उदद्यौत् उत्कृष्टतया द्योतते ३ ५ ६ [उत्+द्यु अभिगमने (अदा०) धातोर्लङ् । 'उतो वृद्धिर्लुकि हलि' सूत्रेण वृद्धि । धातूनामनेकार्थकत्वादत्र द्यु द्योतने]

उदधिम् उदकधारक सागरम् १८ ५५ **उदधिः**= उदकानि धीयन्ते यस्मिँस्तत् समुद्रोऽन्तरिक्ष वा ३८ २२ [उदकोपपदे दधाते 'कर्मण्यधिकरणे च' इत्यधिकरणे कि । उदकस्य 'पेपवासवाहनधि च' अ० ६ ३ ५८. सूत्रेण उदादेश]

उदधीनिव उदकानि धीयन्ते येषु तानिव (सागरा-निव) ३ ४५ ३ [उदकोपपदे डुधाञ् धारणपोषणयो (जु०) धातोरधिकरणे कि. प्रत्यय. । उदकस्य उदादेश]

उदन् उदकमये जलाशये, प्र०—अत्र 'पद्दन्नोमास०' इत्युदकस्योदन्नादेश १ १०४ ३ [उदकशब्दात् सप्तमी । 'सुपा सुलुक्०' इति सप्तम्या लुक् । 'पद्दन्नोमास०' अ० ६ १ ६३ सूत्रेणोदकस्य 'उदन्' इत्यादेशश. । उदन् उदके नि० १० १२]

उदनयः उन्नेय (शिल्पविद्याविज्जन) २ १३ १२.

उदनष्टाम् उत्कृष्टतया प्रसिद्धाम् (प्रशसाम्) ७ ४५ २

उदनि उदके, प्र०—अत्र 'पद्दन्नोमास०' इत्युद-कस्योदन्नादेश. १ ११६ २४ [उदकप्राति० सप्तमी । उदकस्य 'उदन्' आदेश.]

उदनिमान् बहूदक (मेघ) ५ ४२ १४ [उदक प्राति० भूम्न्यर्थे मतुप् । उदकस्योदनिभावश्छान्दस]

उदनेव जलानीव ४ २० ६ [उदक-इव पदयो समास । उदकस्य 'उदन्' आदेश]

उदन्यवः आत्मन उदकमिच्छव (विद्वज्जना) ५ ५४.२ **उदन्यवे** आत्मन उदकानीच्छवे (जिज्ञासवे) ५ ५७ १ [उदकपदात् 'सुप आत्मन क्यच्' सूत्रेणात्मन इच्छाया क्यच् । 'क्याच्छन्दसी' ति उ प्रत्यय । 'पद्दन्नो-मास्०' सूत्रे शस्प्रभृतिष्विति प्रकारे प्रभृतिशब्द । तेन क्यच्यपि उदकस्य उदन्नादेश । उदन्युरुदन्यते नि० ११ १५]

उदन्या इव उदकमन्वन्विन्य इव (धारा इव) २ ७ ३. [उदकशब्दाद् भवार्थे यत् । उदकस्य उदन्नादेशश्च]

उदन्वता बहूदकसहितेन (रथेन=मेघरूपेण) ५ ८३ ७ [उदकप्राति० भूम्न्यर्थे मतुप् । 'उदन्वानुदधौ च'

(अदा०) धातोर्लिट्]

उदीची या उदङ्ङुत्तर देशमञ्चति सा (दिक्) १५ १३ उत्तरा (दिक्) १४ १३ बाईं ओर (दिशा) प० वि०, अथर्व० ३ २७ ४ **उदीचीम्**=उत्तराम् (दिशम्) १० १३ **उदीचीः**=उत्तरा (दिश) १६ ६४ **उदीच्यै**=योदक् पूर्वाऽभिमुखस्य जनस्य वामभागमञ्चति तस्यै (दिशे) २२ २४ [उत्+अञ्चु गतिपूजनयो (भ्वा०) धातो 'ऋत्विग्दधृग्०' अ० ३ २ ५९ सूत्रेण क्विन्। 'अनिदिताम्०' इति नलोपे 'अञ्चतेश्चोपसस्यानम्' अ० ४ १ ६. वा० इति स्त्रियां ङीपि भसंज्ञायाम् 'अच' सूत्रेणाल्लोपे प्राप्ते 'उद ईत्' अ० ६ ४ १३९ इनीकारादेश । उदीची हि मनुष्याणां दिक् श० १ ७ १ १२ एषा (उदीची) वै देवमनुष्याणां शान्ता दिक् तै० २ १ ३ ५ एषा (उदीची) वै रुद्रस्य दिक् तै० १ ७ ८ ६ एषा वै वरुणस्य दिक् तै० ३ ८ २० ४ नक्षत्राणां वा एषा दिग्यदुदीची प० ३ १ साम्नामुदीची महती दिगुच्यते तै० ३ १२ ९ १ उदीच्येव यश गो० पू० ५ १५.]

उदीयुः उत्कृष्टतया प्राप्नुयु १६ ४६ [उत्+इण् गतौ (अदा०) धातोर्लिटि प्रथमबहुवचनम्]

उदीरत् सन्नुदन् ४ २ ७ **उदीरताम्**=उत्कृष्टतया प्रेरताम् १९.४६ **उदीरते**=कम्पयन्ति गच्छन्ति वा ५.८३ ३ उत्कृष्टतया कम्पयन्ति २ १७ १ प्राप्नुवन्ति १२ ८२ उत्कृष्टा जायन्ते १ ८१ ३ उत्कृष्ट कम्पन्ते गच्छन्ति ४ ४५ २ [उत्+ईर गतौ कम्पने च (अदा०) धातो शतृ । व्यत्ययेन परस्मैपदम् । अन्यत्र लोट् लट् च । 'बहुल छन्दसी' ति शपो लुङ् न भवति]

उदीरय उत्कृष्टतया गमय १ ४८ २ प्रेरयत ५ ४२ ३ **उदीरयताम्**=उत्कृष्टतया प्रेरयन्तु १ १२३ ६ **उदीरयन्ति**=उत्कृष्टतया प्रेरते १.१६८ ८ [उद्+ईर गतौ कम्पने च (अदा०) धातोर्णिचि लोट्, लटौ । ईर क्षेपे (चुरा०) धातोर्वा रूपाणि]

उदीरयन्ती कर्मसु प्रवर्त्तयन्ती (उषा) १ ११३ ८ [ईर क्षेपे प्रेरणे (चुरा०) धातो. शत्रन्तान् ङीप्]

उदीराणाः उत्कृष्टता प्राप्ता (राजप्रजाजना) ४.३९ ५. उत्कृष्ट ज्ञान प्राप्ता (मनुष्या) ७.४४ २ [उत्+ईर गतौ (अदा०) धातो शानच् । ताच्छील्ये चानश् वा]

उदीर्ध्वम् ऊर्ध्वं कम्पध्वम् १ ११३ १६ [ईर गतौ कम्पने च (अदा०) धातोर् उत्पूर्वाल् लोट्]

उदीर्ष्व उत्कृष्टमिच्छ ऋ० भू० २११ विचार और निश्चय रख स० प्र० १५२, १०.१८ ८ [ईर गतौ कम्पने च (अदा०) धातोर् उत्पूर्वाल्लोट्]

उदुद्धर्षसे उत्कृष्टतयाऽऽनन्दसि ४ २१ ९ [उत्+हृष तुष्टौ (दिवा०) धातोर्लट् । व्यत्ययेन शप् आत्मनेपद च]

उदूपथुः उत्कृष्टतया वपत १ ११७ १२ ऊर्ध्वं वपेथाम् १ ११६ ११ ऊर्ध्वं वपेतम् १ ११७ ५ [उत्+डुवप् बीजसन्ताने (भ्वा०) धातोर्लिटि मध्यमद्विवचनम् । 'असंयोगात्०' इति लिट कित्वे यजादित्वात् सम्प्रसारणम्]

उदूहथुः ऊर्ध्वं वहत १ १८२ ७ [उत्+वह प्रापणे (भ्वा०) धातोर् लिटि मध्यमद्विवचनम् । यजादित्वात् किति सम्प्रसारणम्]

उदृचः उत्कृष्टा अधीता प्रत्यक्षीकृता ऋचो यस्मिँस्तस्य (यजस्य=शिल्पविद्यासिद्धस्य) ४.९ **उदृचि**= उत्कृष्टा ऋचो यस्मिन्नध्ययने तस्मिन् १ ५३ ११ [उत्-ऋच्पदयोर्बहुव्रीहि । 'विभाषा समासान्तो भवति' इति परिभाषाश्रयेण 'ऋक्पूरब्धू पथाम्०' इति समासान्तो न भवति]

उदेति उदय प्राप्नोति । १ १५७ १ सब जगत् मे उदित प्रकाशमान हो रहे हो आर्याभि० १ ४७ **उदेषि**= उत्कृष्टतया प्राप्तोऽसि १ ५०.५ [उत्+इण् गतौ (अदा०) धातोर्लट्]

उदैत् उदेति ३१४ उदित प्रकाशितोऽस्ति ऋ० भू० १२१ **उदैति**=अधिष्ठातृत्वेन व्याप्नोति ऋ० भू० १५२ जाता है स० प्र० २४६, ३४१ जाता आता है आर्याभि० २.४३, ३४१ उद्गच्छति ३४१ [उत्+इण् गतौ (अदा०) धातोर्लङ् । 'आटश्चे' ति वृद्धि]

उदैरत् प्रेरयति ७ २३ १ **उदैरतम्**=उत्कृष्टतया गच्छतम् १.११८ ६. [उत्+ईर गतौ कम्पने च (अदा०) धातोर्लङ् । 'बहुल छन्दसी' ति शपो न लुक् । व्यत्ययेन परस्मैपदम्]

उदैरयतम् प्रेरयतम् १ ११७ २४ उत्कृष्टतया गमयतम् १ ११२ ५ [उत्+ईर क्षेपे=प्रेरणे (चुरा०) धातोर्लङ्]

उदोजसम् उत्कृष्ट पराक्रमम् १२ ८१ [उत्+ओजस्पदयो. समास । ओज=उब्ज आर्जवे (तुदा०) धातो 'उब्जेर्बले बलोपश्च' उ० ४ १९२ इति बलोपो गुणोऽसुन् च प्रत्यय]

न्मभार्ये (मौत्रो धातु) धातोर्लुङ्। 'जृस्तम्भुम्रुचु०' अ० ३.१.५८ सूत्रेण च्लेर्वाऽङादेशे पक्षे सिच्]

उदस्थात् उत्तिष्ठते ७ १६ ३ उत्तिष्ठति १ १६४ १७ उत्तिष्ठतु १७.४१ ऊर्ध्वमुदेति १ १२३ १ **उदस्थाम्**=उत्कृष्टतया तिष्ठेयम् ४ २८ उत्कृष्टतया प्राप्नुयाम् ४ २८ **उदस्थुः**=उत्तिष्ठन्तु ७.६० ४ [उत्+ष्ठा गतिनिवृत्तौ (भ्वा०) धातोर्लुङ् । 'गातिस्थाघुपाभूभ्यः' इति सिचो लुक्]

उदहार्य्यः या उदक हरन्ति ता. (स्त्रिय) १६ ७ [उदकोपपदे हृञ् हरणे (भ्वा०) धातोरण्प्रत्यये स्त्रिया ङीप्। उदकस्योदादेशश्छान्दस.]

उदा उदकेन ५.४१ १४ [उदकप्राति० तृतीयैकवचनम्। 'पद्दन्नोमास्' सूत्रेणोदन्नादेश । 'अयस्मयादीनि छन्दसि' इत्यजादावपि पदसञ्ज्ञाया नकारान्लोपो, न स्वरलोप.। इनादेशोऽपि न छान्दसत्वाद्]

उदाचरत् ऊर्ध्वं गच्छति ७ ५५ ७. [उत्+आङ्+चर गतौ (भ्वा०) धातोर्लङ्]

उदाजत् ऊर्ध्वं क्षिपति २ १२ ३ ऊर्ध्वमधो गमयति २ २४ १४ विक्षिपेत् हन्यात् २ १४ ३ प्रक्षिपति ३.४४ ५ ऊर्ध्वं समन्तात् क्षिपतु, प्र०—अत्र लोडर्थे लङ् १.११२.१२. **उदाजन्**=प्राप्नुवन्ति ४ १ १३ [उत्+अज गतिक्षेपणयो (भ्वा०) धातोर्लङ्]

उदादाय ऊर्ध्वं समन्ताद् गृहीत्वा १ २८ [उत्+आङ्+डुदाञ् दाने (जु०) धातो क्त्वा। समासे क्त्वो ल्यप्]

उदानः य ऊर्ध्वमनिति (वायुविशेष) ६ २० उदानिति बलयति येन स (वायु.) २२ २३ **उदानाय**=उत्कृष्टाय बलाय १३ १९. उत्कृष्टाय जीवनबलसाधनाय (वायवे) ७ ६ स्फूर्तिहेतव ऊर्ध्वमन्यते चेष्ट्यते येन तस्मै उत्क्रमणपराक्रमहेतवे (वायवे) १ २०. [उत्+अन प्राणने (अदा०) धातोर्घञ् प्रत्यय। तद् यदस्यैषो (उदान) न्तरात्मन्यतो यद्वैनेनेमा. प्रजा यतास्तस्मादन्तर्यामो नाम श० ४ १.२ २ उदान उदयनीय ऐ० १ ७ उदन्त इव ह्ययमुदान ष० २ २ चन्द्रमा उदान जै० ३० ४ २३ ६ उदानो वै त्रिककुप् छन्द श० ८ ५ २ ४ उदानो वै नियुत श० ६ २ २.६ एति ('आ' इति) उदान श० १४ १ ५ उदानो वै बृहच्छोचा श० १ ४ ३ ३ उदाना मासा ता ५ १० ३]

उदारत् उदूर्ध्वं प्राप्नोति १७ ८६ उत्कृष्टतया प्राप्नोति ४ ५८.१ **उदारताम्**=प्राप्नुताम् ३ ३३.१३. [उत्+ऋ गतौ (जु०) धातोर्लुङि 'सर्त्तिशास्त्यर्तिभ्यश्च' च्लेरङ्। ऋदृशोऽङि' सूत्रेण गुण]

उदारिथ उत्कृष्टतया प्राप्नोषि २ ६ ३ उत्कृष्टै. साधनै. प्राप्नुहि १७ ७५. [उत्+आङ्+ऋ गतौ (जु०) धातोर्लिटि मध्यमैकवचनम्]

उदारथिः उद्दीपक (ईश्वर) १ १८७ १० [उत्+आङ्+ऋ गतौ (भ्वा०) धातो 'उदृत्तेश्चित्' उ० ४.८८. सूत्रेण थिन् प्रत्यय]

उदारः य उत्कृष्ट परीक्ष्य ऋच्छति ददाति, भा०—सुपात्रेभ्यो दाता (राजा=प्रकाशमानो जन) १२.२२. [उत्+ऋ गतौ (भ्वा०) धातोरण् प्रत्यय]

उदारुहम् उत्कृष्टतया रोहेयम् १७ ६७ [उत्+आङ्+रुह बीजजन्मनि प्रादुर्भावे च (भ्वा०) धातोर्लङ्। विकरणव्यत्ययेन श]

उदाहसत् उत्कृष्टतया ज्ञापयन्ति, प्र०—अत्र 'ओहाङ् गतौ' इत्यस्माल्लडर्थे लुङ् १ ६ ४ [उत्+आङ्+ओहाङ् गतौ (जु०) धातोर्लुङ्। छान्दस रूपम्]

उदिङ्गय उत्कृष्टतया गमय ४ ५७ ४ [उत्+इगि गतौ (भ्वा०) धातोर्णिचि लोट्]

उदितः उदय प्राप्त (सूर=सूर्य) ३२ ७ [उत्+इण् गतौ (अदा०) धातो क्त]

उदिता उदिते (काले), प्र०—अत्राऽऽकारादेश ३३ ४२. उदये ७ ४१.४ उत्कृष्टप्राप्तौ १ ११५.६ उदितावुदये ७ ६ ७ सूर्योदये ६ ५१ १ उदितौ प्राप्तोदयौ (इन्द्राग्नी=पवनविद्युतौ) १ १०८ १२. उदयसमये ३४.३७ [उत्+इण् गतौ (अदा०) धातो क्त.। उदितस्य रूपाणि]

उदितिम् उदयम् ६ १५ ११. [उत्+इण् गतौ (अदा०) धातो क्तिन् स्त्रियाम्]

उदिते उदय प्राप्ते (सूर्ये) ५ ५४.१०. ['उदित' इति व्याख्यातम्]

उदिथः प्राप्नुथ १० १६ [उत्+इण् गतौ (अदा०) धातोर्लेटि मध्यमद्विवचने रूपम्]

उदियर्त्ति ऊर्ध्वं प्राप्नोति ४ ४५ १. उत्कृष्टतया जानाति १ ११३ १७ उन्नयति ६ ४७ ३ **उदियर्षि**=उत्कृष्टतया प्राप्नोषि १२ १०७ [उत्+ऋ गतौ (जु०) धातोर्लट्। 'अर्तिपिपर्त्योश्च' इत्यभ्यासस्येत्त्वम्। 'अभ्यासस्यासवर्णे' इत्यभ्यासस्येयङ्]

उदियाय उदेति ७ ३३ १३ [उत्+इण् गतौ

उद्यतम् उद्वृतम् (ब्रह्म) १ ८०.६. **उद्यतः**= प्रयत्नेन प्रेरित (असु =प्राण) ८ ५८ उत्कृष्टतया यत (सिन्धु =नदी) ८ ५६ ऊर्ध्वं गच्छन् (प्रजापति =जीव) ३६ ५ उद्योगी (यज्ञ =शिष्य) ६ ६८ १ [उत्+यमु उपरमे (भ्वा०) धातो क्त]

उद्यतस्रुचे उद्यता उत्कृष्टतया गृहीता स्रुग् येन तस्मै यज्ञानुष्ठात्रे १ ३१ ५ [उद्यत-स्रुच्पदयो समास । यत-स्रुच =ऋत्विड्नाम । निघ० ३ १८]

उद्यता उत्कृष्टतया यतानि गृहीतानि (वस्तूनि) २ ३१ ७ [यमु उपरमे (भ्वा०) धातो क्तप्रत्यये=यत इति रूपम् । उत्-यतपदयो समास]

उद्यतिम् उद्यमम् १ १६० ३ [उत्+यमु उपरमे (भ्वा०) धातो क्तिन्]

उद्यते कथ्यते ५ ५५ ८ क्लिद्यते १ १६४ ४७ [वद व्यक्ताया वाचि (भ्वा०) धातो कर्मणि लट् । यजादित्वात् किति सम्प्रसारणम् । अन्यत्र उन्दी क्लेदने (रुधा०) धातो कर्मणि लट्]

उद्यन् उदयन् (सूर्य) ७ ६० १ उदय प्राप्नुवन् (सूर्य) १ १२४ १ [उत्+इण् गतौ (अदा०) धातो शतृ । 'इणो यण्' अ० ६ ४ ८१ सूत्रेण यणादेश.]

उद्यन्ता उत्कृष्टतया नियन्ता (इन्द्र =सेनेश) १ १७८ ३ [उत्+यमु उपरमे (भ्वा०) धातो कर्त्तरि तृच्]

उद्यन्तु उद्गच्छन्तु १७ ४२ [उत्+इण् गतौ (अदा०) धातोर्लोट् । 'इणो यण्' सूत्रेण यणादेश]

उद्यमिष्ट उत्कृष्टतया नियच्छेत् ५ ३२ ७ [उत्+यमु उपरमे धातोर्लुङ् । 'समुदाङ्भ्यो यमोऽग्रन्थे' अ० १ ३ ७५ सूत्रेणात्मनेपदम् । इडागमश्छान्दस]

उद्ययमीति उत्कृष्टतया पुन पुनरतिशयेन नियम करोति १ ६५.७ [उत्+यमु उपरमे (भ्वा०) धातोर्यङ्-लुकि रूपम्]

उद्यंसते उत्कृष्टतया रक्षति १ १४३ ७

उद्यासाय ऊर्ध्वं गमनाय ३६ ११ [उत्+यसु प्रयत्ने (दिवा०) धातोर्भावे घञ्]

उद्युवामहे उत्कृष्टतया विभजामहे ६ ५७ ६ [उत्+यु मिश्रणे अमिश्रणे च (अदा०) धातोर्लट् । व्यत्ययेनात्मनेपद शप्रत्ययश्च]

उद्येमिरे उत्कृष्टतया युञ्जन्ति १ १०.१. [उत्+यमु उपरमे (भ्वा०) धातोर्लिट् । 'समुदाङ्भ्यो यमोऽग्रन्थे' त्यात्मनेपदम्]

उद्रः जलचर कर्कटाऽऽख्य २४ ३७. [उनत्ति क्लिद्यतीति विग्रहे उन्दी क्लेदने (रुधा०) धातो 'स्फायि-तञ्चि०' उ० २ १३ सूत्रेण रक् प्रत्यय]

उद्रिच्यते अधिको भवति ७ ३२ १२ [उत्+रिचिर् विरेचने (रुधा०) धातो कर्मणि लट्]

उद्रिणम् उदकवन्तम् (उत्स =कूपम्) २ २४ ४ [उद्र इति व्याख्यानम् । ततो मत्वर्थे इनि.]

उद्रिरिचे उत्कृष्टतयाऽतिरिच्यते १.१०२ ७ [उत्+रिचिर् विरेचने (रुधा०) धातोर्लिट्]

उद्वत्सु ऊर्ध्वेपूत्कृष्टेपु प्रदेशेपु १ १६१ ११ [उत्-शब्दाद् मतुप् । 'भय' अ० ७ २ १० सूत्रेण मतुपो मस्य वादेश]

उद्वतः उपरिस्थितान मार्गान् ३ २ १० ऊर्ध्वान् प्रदेशान ७ ५० ४ ऊर्ध्वदेशस्था (नभा =वृष्टिजलानि) ५ ८३ ७

उद्वधीत् उत्कृष्टतया हन्यात् १३ १६ [उत्+हन हिंसागत्यो. (अदा०) धातोर्लुङ् । 'लुङि चे' ति हनो वधादेश । अडभावश्छान्दस]

उद्वपतु उत्कृष्टतया बीजवत् सन्तनोतु ११ ६३ [उत्+डुवप् बीजसन्ताने (भ्वा०) धातोर्लोट्]

उद्वयसम् उत्कृष्ट वयो जीवन यस्मात्तम् (रस =सारम्) ६ ३. [उत्+वयम् पदयोर्बहुव्रीहि । वय =अन्ननाम निघ० २.७ वेति गच्छतीति विग्रहे वी गत्यादिपु (अदा०) धातोरसुन् प्रत्यय]

उद्वरीवृजत् उत्कृष्टतया भृश वर्जयति ६ ५८ २ [उत्+वृजी वर्जने (अदा०) धातोर्णिजन्ताल्लुङ]

उद्वहन्ति उत्कृष्टतया प्रापयन्ति ज्ञापयन्ति प्रकाशयन्ति प० वि० । ऊर्ध्वं प्राप्नुवन्ति १ ५० १ [उत्+वह प्रापणे (भ्वा०) धातोर्लट्]

उद्वावृषाणः उत्कृष्टतया बलिष्ठ सन् (राजा) ४ २६ ३ उत्कृष्टतया भृश बलकरस्य (मघस्य=धनस्य) ४ २० ७ [उत्+वृष शक्तिबन्धने (चुरा०) धातोर्यङन्ताच्छानच्]

उद्वृह उत्कृष्टतया वर्धस्व ३ ३० १७. **उद्वृहः**= उच्छेदये ६ ४८ १७ [उत्=वृह वृद्धौ (भ्वा०) धातोर्लोट् । व्यत्ययेन श प्रत्यय । वृहू उद्यमने (तुदा०) धातोर्वा लोट्]

उनत्त विद्यासुशिक्षाभ्या सिञ्चत ५.४२ ३ [उन्दी क्लेदने (रुधा०) । धातोर्लोट् 'श्नसोरल्लोपो' ऽपि न, छान्दसत्वात्]

उदोजसः उत्कृष्टमोजो पराक्रमो येषान्ते (मरुत = मानवा) ५ ५४ ३ [उत्+ओजस्-पदयोर्बहुव्रीहि]

उद्गः जलस्य १ ११२.१२.

उदगात् ऊर्ध्वं व्याप्नोति १ ५० १३

उद्गाता यज्ञ मे सामगान करने वाला महापण्डित आर्याभि० १ ५२ [उत्+गा स्तुतौ (जु०) धातो कर्त्तरि तृच्। सूर्य उद्गाता गो० पू० १ १३ आदित्यो वा उद्गाताऽधिदैव चक्षुरध्यात्मम् गो० पू० ४ ३ पर्जन्यो वा ऽउद्गाता श० १२ १.१ ३ वर्षा उद्गाता तस्माद्यदा वलवद्वर्षति साम्न इवोपब्दि क्रियते श० १२ २ ७ ३२ प्रजापतिर्वा ऽउद्गाता श० ४.३ २ ३ उद्गातैव यश गो० पू० ५ १५ प्राण उद्गाता कौ० १७ ७ गो० उ० ५ ४ ते य एवेमे मुख्या प्राणा एत एवोद्गातारश्चोपगातारश्च जै० उ० १ २२ ५ देवाना वै षड् उद्गातार आसन् वाक् च मनश्च चक्षुश्च श्रोत्र चाऽपानश्च प्राणश्च जै० उ० २ १ १]

उद्गातेव यथोद्गाता तथा (वेदविज्जन) २ ४३ २ [उद्गातेति व्याख्यातम्]

उद्गुरमाणाय य उत्कृष्टतया गुरत उद्यच्छत्युद्यम करोति तस्मै (पुरुषाय) १६ ४६ [उत्+गुरी उद्यमने (तुदा०) धातो शानच्]

उद्गृहीताय ऊर्ध्वं गृहीत जल येन तस्मै (मेघाय) २२ २६ [उत्+ग्रह उपादाने (क्र्या०) धातो क्त। 'ग्रहोऽलिटि दीर्घ' इतीटो दीर्घ]

उद्गृह्णते य ऊर्ध्व गृह्णाति तस्मै (मेघाय) २२.२६ [उत्+ग्रह उपादाने (क्र्या०) धातो शतृ। धातो सम्प्रसारण किति]

उद्ग्राभम् उत्कृष्टतया ग्रहणम् १७ ६४ **उद्ग्राभेण**=उत्कृष्टतया गृह्णाति येन तेन (साधनेन) १७ ६३ [उत्+ग्रह उपादाने (क्र्या०) धातोर्घञ्। 'हृग्रहोर्भश्छन्दसि हस्येति वक्तव्यम्' अ० ८ २ ३५ वा० सूत्रेण हकारस्य भकार]

उद्दिशः या उद्दिश्यन्ते ता (शत्रुलक्षिता दिश) ६ १९ [उत्+दिश अतिसर्जने (तुदा०) धातो 'ऋत्विक्०' इति सूत्रेण क्विन्। 'कृतो वहुलम्' अ० ३ ३ ११३ वा० सूत्रेण कर्मणि क्विन्]

उद्दृंह उद्वर्धय १७ ७२ [उत्+दृहि वृद्धौ (भ्वा०) धातोर्लोट्]

उद्द्रावाय ऊर्ध्व गताय द्रवीभूताय (वाष्पाय) २२ ८ [उत्+द्रु गतौ (भ्वा०) धातोर्घञ् 'उदि श्रयतियौतिपूद्रुव' अ० ३ ३ ४९ सूत्रेण]

उद्द्रुताय उत्कर्षं गताय (धूम्राय) २२ ८ [उत्+द्रु गतौ (भ्वा०) धातो क्त]

उद्धर्षय उत्कर्षय, भा०—नित्य हर्षय, उन्नय १७ ४२ **उद्धर्षयन्ति**=उत्साहयन्ति ५ २७ ५ [उत्+हृष तुष्टौ (दिवा०) धातोर्णिजन्ताल्लोट्]

उद्ना उदकेन ५ ८५ ६ [उदक+टा। 'पद्दन्नोमास्०' इति उदन्नादेशे 'अल्लोपोऽन' इत्यल्लोप]

उद्बाधस्व पृथक् कुरु ४ २८ [उत्+वाधृ विलोडने (भ्वा०) धातोर्लोट्]

उद्बुध्यस्व प्रकाशितो भव ऋ० भू० ३०५ ऊर्ध्वत्वेन जानीहि १८ ६१ उत्कृष्टरीत्या जानीहि १५ ५४ [उत्+बुध अवगमने (दिवा०) धातोर्लोट्]

उद्बोधत् उद्बोधय ४ १५ ७ [उत्+बुध अवगमने (भ्वा०) धातोर्लेट्]

उद्भरन्तु उत्कृष्टतया धरन्तु १७ ५३ [उत्+भृञ् भरणे (भ्वा०) धातोर्लोट्]

उद्भिदम् पृथिवी भित्त्वा जातेन काष्ठेन निर्मितम् (रथम्) ११०२९ उद्भिद्य जायते तम् (भा०—जात वलम्) २८ २५ **उद्भिदः**=ये पृथिवी भित्त्वा प्ररोहन्ति (वृक्षादिवत् परोपकारिणो जना) ५ ५९ ६ य उद्भिन्दन्ति (क्रतव =यज्ञा प्रज्ञा वा) २५ १४ उत्कृष्टतया दु ख-विदारका (देवा) १ ८९ १. उद्भेद विदारण प्राप्ता (ओषधिरसा) ११३९ ६ ये पृथिवीमुद्भिद्य जायन्ते (ओषध्यादय) ११३९ ६ [उत्+भिदिर् विदारणे (रुधा०) धातो क्विप्]

उद्भिनदत् उद्भिन्द्यात् १२ २७ [उत्+भिदिर् विदारणे (रुधा०) धातोर्लेट्]

उद्भिः उदकै १ ८५ ५

उद्भृतम् उत्कृष्टरीत्या धृतम् (ओज =वलम्) ६ ४७ २७ उद्धृतम् (मेद =स्निग्ध वस्तु) २१ ४४ उत्कृष्टतया पोषितम् (मेद =स्निग्ध वस्तु) २१.४५ [उत्+भृञ् भरणे (भ्वा०) धातो क्त]

उद्भौ उद्वुत्कृष्टानि वस्तूनि भवन्ति यस्मिँस्तस्मिन् (शर्मन्=गृहे) १५ १ [उत्+भू सत्तायाम् भ्वा०) धातो 'डुप्रकरणे मितद्रवादिभ्य उपसख्यानम्' अ० ३ २ १८० वा० सूत्रेण डु]

उद्मेघे समुद्रे ऋ० भू० १८९

प्रयोग' १ २८ ३. [उप+च्युङ् गतौ (भ्वा०) धातो 'ऋदोरप्' इत्यप्। च्यवते गतिकर्मा निघ० २ १४]

उपजग्मुषः य उप=सामीप्य गतवन्तस्तान् (मनुष्यादीन्) १ ५३ ९ [उप+गम्लृ (भ्वा०) धातोर्लिट क्वसु.]

उपजायते यत्किञ्चिदुत्पद्यते तत्सर्वं त्रयोदशो मासो वा १ २५ ८ [उप+जनी प्रादुर्भावे (दिवा०) धातोर्लट्]

उपजिह्विका उपगताऽनुकूला जिह्वा यस्या पत्न्या सा ११ ७४ [उप+जिह्विकापदयो समास । जिह्वा=वाङ्नाम निघ० १ ११ उपजिह्विका वम्रीभिरुपजिह्विका इति सीमिकानाम् । उपजिह्विका उपजिघ्रच नि० ३ २]

उपतस्थुः समीप तिष्ठन्ते १ ६५ ६ [उप+ष्ठा गतिनिवृत्तौ (भ्वा०) धातोर्लिट्]

उपतिष्ठथः समीपस्थौ भवत ५ ६३ ३ [उप+ष्ठा गतिनिवृत्तौ (भ्वा०) धातोर्लट्]

उपतिष्ठन्त उपतिष्ठन्तु १ १३५ ८ [उप+ष्ठा गतिनिवृत्तौ (भ्वा०) धातोर्लङ्। अडभाव । व्यत्ययेनात्मनेपदम्]

उपतिष्ठाते समीप तिष्ठेत १ १२४ ११ [उप+ष्ठा गतिनिवृत्तौ (भ्वा०) धातोर्लट्]

उपदद्यमाने उपादीयमाने (शर्मन्=गृहे) ६ ४६ १३. [उप+दद दाने (भ्वा०) धातो कर्मणि शानच्]

उपदधामि समीप धरामि ५ २५ समीप धारयामि, तेन पुष्णामि उपदधाति वा १ १८ सामीप्येन धारयामि १ १८ [उप+डुधाञ् धारणपोषणयो (जु०) धातोर्लट्]

उपदसत् समीप नश्येत् १ १३६ ५ **उपदस्यन्ति**= समीपतया क्षयन्ति ५ ५५ ५ समीप नश्यन्ति १ ६२ १२ [उप+दसु उपक्षये (दिवा०) धातोर्लेट् लट् च]

उपदाम् उप समीपे दीयते ताम् (उत्कोचम्) ३० ९ [उप+डुदाञ् दाने (जु०) धातो 'आतश्चोपसर्गे' अ० ३ ३ १०६ सूत्रेणाङ् स्त्रियाम्]

उपद्यवि समीपस्थे प्रकाशितेऽप्रकाशिते वा (धार्मिकेऽधार्मिके जने) ७ ३१ ९ [उप+द्युपदयो समास]

उपद्रव समीपमागच्छ ६ ४८ १६ [उप+द्रु गतौ (भ्वा०) धातोर्लोट्]

उपधापयेते सामीप्येन पाययत, भा०—समीप पालयेताम् ३३ ५ समीप पाययेते १ ६५ १ [उप+धेट् पाने (भ्वा०) धातोर्णिजन्ताल्लट्। आत्वे पुगागम । 'धेट उपसंख्यानम्' अ० १.३ ८९ वा० सूत्रेण परस्मैपदप्रतिषेधादात्मनेपदम्]

उपधीव यथोपधिर्मध्यस्थस्य रथाऽवयवस्य धारिका २ ३९ ४. [उपधि-इवपदयो समास । उपधि=उप+डुधाञ् धारणपोषणयो (जु०) धातो कि प्रत्यय]

उपध्वस्ताः उपाऽध पतिता (पशव) २४ १४ [उप+ध्वसु अवस्रसने (भ्वा०) धातो क्त]

उपनतिः उपनमन्ति यया सा (अस्थि) २० १३ [उप+णम प्रह्वत्वे शब्दे (भ्वा०) धातो स्त्रियां क्तिन्]

उपनयमानः विद्यापठनार्थमुपवीतं दृढव्रतमुपदिशन् (आचार्य्य) ऋ० भू० २३५, अथर्व० ११ ५ ३ प्रतिज्ञापूर्वक समीप रख के (आचार्य) स० वि० ८०, अथर्व० ११ ५ ३ [उप+णीञ् प्रापणे (भ्वा०) धातो शानच्। 'सम्माननोत्सञ्जनाचार्यकरण०' अ० १ ३ ३६ सूत्रेणात्मनेपदमाचार्यकरणे]

उपनिपद्यते समीपतया प्राप्नोति ऋ० भू० २२१ अथर्व० १८ ३ ११ [उप+नि+पद गतौ (दिवा०) धातोर्लट्]

उपनिपद्यमानम् समीपे प्राप्नुवन्तम् (सूर्यम्) १.१५२ ४ [उप+नि+पद गतौ (दिवा०) धातो शानच्]

उपनिषेदुः ब्रह्मचर्य ही से समीप प्राप्त होवे स० वि० १९८, १९ ४१ १ समीपता से प्राप्त होकर अनुष्ठान करते हैं स० वि० १८६, अथर्व० १९ ४१ १ [उप+नि+षद्लृ विशरणगत्यवसादनेषु (भ्वा०) धातोर्लिट्]

उपनीतम् प्राप्तसमीपम् (अश्मान=मेघम्) १ १२१ ९ [उप+णीञ् प्रापणे (भ्वा०) धातो क्त.]

उपन्यसादि अ०—समीप निपाद्येत ४ ६ २ [उप+नि+षद्लृ विशरणगत्यवसादनेषु (भ्वा०) धातो. कर्मणि लुङ्]

उपपतिम् य पत्यु समीपे वर्त्तते तम् (अन्यपतिम्) ३० ९ [उप-पतिपदयो समास]

उपपर्चनम् उपसम्बन्ध ६ २८ ८. [उप+पृची सम्पर्के (रुधा०) धातोर्भावे ल्युट्]

उपपृक् उप सामीप्य पृङ्क्ते स्पृशति य स (अहि=मेघ) १.३२ ५ [उप+पृची सम्पर्के (रुधा०) धातो क्विप्। उपपृक् उपपर्चन नि० ६ १८]

उपपृङ्धि सम्बधान २ २४ १५ [उप+पृची सम्पर्के (रुधा०) धातोर्लोट्]

उपपृच्यताम् उपसम्बध्यताम् ६ २८.८ [उप+पृची सम्पर्के (रुधा०) धातो कर्मणि लोट्]

उनत्त उच्छिन्न (पशु) २४.७ [उन्दी क्लेदने (रुधा०) धातो क्त]

उनत्ति आर्द्रीकरोति ५ ८५ ४ [उन्दी क्लेदने (रुधा०) धातोर्लट्]

उनप् उम्भति पूरयति २ १३ ६ [उभ पूरणे (तुदा०) धातोर्लङ् । विकरणव्यत्ययेन श्नम् । आडभावश्छान्दस]

उनोति प्रेरयति ५ ३१ १

उन्दन् आर्द्रीकुर्वन् (अग्नि = विद्युत्) २ ३ २ [उन्दी क्लेदने (रुधा०) धातो शतृ]

उन्दन्ति क्लेदन्ति १ ८५ ५ [उन्दी क्लेदने (रुधा०) धातोर्लट्]

उन्धि उन्दयति क्लेदयति ५ ८३ ८ [उन्दी क्लेदने (रुधा०) धातोर्लोट्]

उन्नयध्वम् उत्कर्षत २ १४ ६. **उन्नयन्ति** = उन्नति-शील करके प्रतिष्ठित करते हैं म० प्र० १०६, ३ ८ ४ ऊर्ध्वत्वेनोत्तम सम्पादयन्ति ३ ८ ४ **उन्नयामि** = ऊर्ध्वं वध्नामि भा०—प्रापयामि ११ ८२ [उत् + णीञ् प्रापणे (भ्वा०) धातोर्लोट् । अन्यत्र लट्]

उन्नशत् उत्कर्षेण नश्यति १ १६४ २२ **उन्नशन्** = नाशयेयु २ २३ ८ [उत् + णश अदर्शने (दिवा०) धातोर्लुङ् । पुषादित्वादङ् । अटभावश्छान्दस]

उन्निनीथः उत्कर्षं प्राप्नुथ १ १८११ **उन्निनेथ** = उन्नय ६ १८ १३ **उन्निन्यथुः** = ऊर्ध्वं नयतम् १ ११६ ८ [उत् + णीञ् प्रापणे (भ्वा०) धातोर्लिट्]

उन्नीतः ऊर्ध्वं नीत सुगन्ध्यादिपदार्थ ८ ५८ [उत् + णीञ् प्रापणे (भ्वा०) धातो क्त]

उन्नीयमानाः उत्कृष्टान् गुणान् प्रापयन्त (देवा = विपश्चित) ३ ८ ६ [उत् + णीञ् प्रापणे (भ्वा०) धातो कर्मणि शानच्]

उन्नेतृणाम् उत्कर्षं प्रापयितॄणाम् (पुरुषाणाम्) ६ २ [उत् + णीञ् प्रापणे (भ्वा०) धातो कर्त्तरि तृच्]

उन्मत्तम् उन्मादरोगिणाम् (जनम्) ३० ८ [उत् + मदी हर्षे (दिवा०) धातो क्त । ईदित्त्वादनिट्त्वम्]

उन्ममन्द उन्मन्दते कामयते २ ३३ ६ [उत् + मदि स्तुतिमोदमस्वप्नकान्तिगतिषु (भ्वा०) धातोर्लिट् । व्यत्ययेन परस्मैपदम्]

उन्मा ऊर्ध्वं मिनोति यया तुलया तद्वत्, भा०—तुलादिकम् १५ ६५ [उत् + मा माने (अदा०) धातोर्घञ्]

उप सामीप्ये १ ८२ १ सामीप्ये क्रियायोगे, प्र०—उपेत्युपजन प्राह नि० १ ३, २ १६ उपगमार्थे १ २१ ४ क्रियार्थे १ ५ गतार्थे २ १० उपयोगार्थे १ २२ १६ [उप इत्युपजनम् नि० १ ३ इय (पृथिवी) वा उप श० २ ३ ४ ६ उप वै रथन्तरम् ता० १६ ५ १४]

उप समीपस्थ सन् (पुत्र) १२ ७८

उपकृणवन्त उपकुर्वन्ति ७ ३७ ७ [उप + डुकृञ् करणे (तना०) धातोश्छान्दस रूपम्]

उपक्षरन्ति समीपतया वर्षन्ति १ १२५ ४ उपवर्षन्ति ५ ६२ ४ [उप + क्षर सचलने (भ्वा०) धातोर्लट्]

उपक्षियन्तः उपनिवसन्त (सज्जना) ३ ५६ ३ [उप + क्षि निवासगत्यो (तुदा०) धातो शतृप्रत्यय]

उपक्षेतारः उपगतान् द्वैधीकुर्वाणा (मनुष्या) ३ १ १६ [उप + क्षि निवासगत्यो (तुदा०) धातो कर्त्तरि तृच्]

उपक्षेति उपनिवसति २ २७ १३ विजानाति निवासयति वा १ ७३ ३ निवासित और धारण करता है आर्याभि० १ ४६ [उप + क्षि निवासगत्यो (तुदा०) धातोर्लट् । 'बहुल छन्दसी' ति शपो लुकि शप्रत्ययस्यापि लुक्]

उपगतम् समीपमागच्छतम् ५ ७१ ३ [उप + गम्लृ गतौ (भ्वा०) धातो क्त]

उपगन्तम् सामीप्येन गमयतम् १ १३७ ३ [उप + गम्लृ गतौ (भ्वा०) धातोर्लोट् । बहुल छन्दसीति' शपो लुकि छकारादेशो न भवति]

उपगमेयम् समीपतया प्राप्नुयाम् १ १५८ ३ [उप + गम्लृ गतौ (भ्वा०) धातोर्लिङ् । 'लिङ्याशिष्यङ्' अ० ३ १.८६ सूत्रेणाङ्]

उपगात् उपगच्छेत्, प्र०—अत्राऽडभाव १ १६४ ४ [उप + इण् गतौ (अदा०) धातोर्लुङ् । 'इणो गा लुङि' सूत्रेण गादेश । अडभावश्च]

उपगायत सामीप्येन शास्त्राणि पाठयत ३३ ८२ [उप + गै शब्दे (भ्वा०) धातोर्लोट्]

उपगृणन्ति उपगन्तु स्तुवन्ति १ ४८ ११ [उप + गृ शब्दे (क्र्या०) धातोर्लट्]

उपगेषम् समीप प्राप्नुयाम्, अ०—विजानीयाम् ५ ५ [उप + गेषृ अन्विच्छायाम् (भ्वा०) धातोर्लङ् । अडभावश्च । धातोश्च गतिरर्थो धातूनामनेकार्थत्वात्]

उपचिताम् अन्येषा वर्धमानाना रोगाणाम् १२ ६७ [उप + चिञ् चयने (भ्वा०) धातो क्विप्]

उपच्यवम् प्रापणम्, प्र०—अत्र 'च्युङ गतौ' इत्यस्य

(परमेश्वरम्) २ २३ १ [उपम-श्रवम्पदयो समास । तनोऽतिशायने तमप्]

उपमस्य उपमा विद्यते यस्य तस्य (गञ्ज) ४ ४२ १ उपमायुक्तस्य (कृष्टे =मनुष्यस्य) ४ ४२ २ [उपमप्राति० मत्वर्थीयप्रत्ययस्य लुक्]

उपमस्याम् उपमायाम्, प्र०—अत्र 'वाच्छन्दसि' इति स्याडागम १ १४५ ५ [उपमप्राति० सप्तमी । उपमम् इति व्याख्यातम्]

उपमा उपमीयतेऽनयेति दृष्टान्त १ ३१ १५ दृष्टान्त १ १२४ २ सब व्यवहारो मे उपयुक्त अन्तरिक्षादि आर्याभि० २ २८, १३ ३ **उपमाः**=उपमिमते याभिस्ता. (भा०—दृष्टान्ता) १३ ३ [उप+मा माने (अदा०) धातो 'आतश्चोपसर्गे' अ० ३ ३ १०६ सूत्रेण स्त्रियाम् अङ्]

उपमातयः उपमा. ४ २३ ३ **उपमातिः**=उपमानम् ४ ४३ ४ [उप+मा माने (अदा०) धातोर्बाहुलकादौणादिकम् ति प्रत्यय]

उपमातिवनि. उपमातेर्विभाजक (अहि =मेघ) ५ ४१ १६ [उपमाति-वनिपदयो समास । उपमाति = उप+मा माने+ति । वनि =वन सम्भक्तौ (भ्वा०) धातोर्बाहुलकादौणादिक 'इ' प्रत्ययः]

उपमादम् य उपमा ददाति तम् (अग्नि=पावकम्) ३ ५ ५ [उपमोपपदे डुदाञ् दाने (जु०) धातो क प्रत्यय]

उपमासि प्रापयसि १ ६२ ७ परिमिमीषे १ १४२ २ **उपमाहि**=उपमन्यस्व ४ २२ १० [उप+मा माने (अदा०) धातोर्लट् लोट् च]

उपमित् य उपमिनोति स (रोव =रोवनम्) ४ ५ १ य उप=समीपे मिनोति प्रक्षिपति स १ ५९ १ [उप+डुमिञ् प्रक्षेपणे (स्वा०) धातो क्विप् । ह्रस्वस्य तुगागम]

उपमिताम् सब प्रकार की उत्तम उपमायुक्त (शाला) को सं० वि० १९६, अथर्व० ९ ३ १ [उप+मा माने (अदा०) धातो क्त । 'द्यतिस्यतिमा०' इतीकारादेश]

उपमिमीहि उत्कृष्टतया मान्य कुरु ७ १९ ११. उपमितान् कुरु १ ८४ २० [उप+माङ् माने शब्दे च (जु०) धातोर्लोट् । व्यत्ययेन परस्मैपदम्]

उपयच्छामि उत्कर्षेण गृह्णामि ३८ ६ [उप+यमु उपरमे (भ्वा०) धातोर्लट् । 'इपुगमियमा छ' इति छकारादेश]

उपयन्तम् समीप प्राप्नुवन्तम् (अध्यापकम्) २ ३३.१२ [उप+इण् गतौ (अदा०) धातो शतृ]

उपयन्ति समीपतया प्राप्नुवन्ति १ ८३ २ **उपयन्तु**= समीप प्राप्नुवन्तु ३ ४ समीप गमयन्तु ५ ६२ ४ [उप+ इण् गतौ (अदा०) धातोर्लट्]

उपया अधर्मी के समीप रहने वाले उसके सहायक को, आर्याभि० १ २६

उपयात समीपतया प्राप्नुत ४ ३५ १ **उपयातम्**= समीप प्राप्नुतम् ३.२५ ४. उपाऽऽप्नुत २ ३६ ८ **उपयाति**=समीप गच्छति ७ १ १२. **उपयाथः**=समीप प्राप्नुत १ १८३ १ समीपतया प्राप्नुथ १ १८२ २ [उप+या प्रापणे (अदा०) धातोर्लोट् । अन्यत्र लट्]

उपयामगृहीतः अध्यापननियमै स्वीकृत. (सुताऽध्येता) ७ ३३. सुनियमैर्गृहीताऽन्त करण (विद्वज्जन) २६ ६ सुनियमैर्निगृहीताऽऽत्मा २६ ५ सुनियमैरधीतविद्य भा०—सुशिक्षित. (इन्द्र =सेनापति) ७.२२ सर्वनियमोपनियमसामग्रीसहित (मुख्यसभासद्) ७ ३६ यमानां समूहो यामम्, उपगत च तद् याम चोपयामम्, उपयामेन गृहीत उपयामगृहीत परमेश्वर ७.२५. सेनासु नियमस्वीकृत (इन्द्र =सेनापति) ७ ३७. यमनियमादिभिर्योगाङ्गै साक्षात् स्वीकृत (इन्द्र.=ईश्वर) ७ ४० सेनादिसामग्रीसंगृहीत (इन्द्र =सेनापति) ८ ४४ भा०—यमादिसाधनाऽन्वित (योगजिज्ञासुर्जन) ७ ८ योगाऽभ्यासेन स्वीकर्त्तु योग्य (इन्द्र =भगवान्) ७ ३६ राज्याङ्गैर्युक्त (शिल्पविधिविज्जन) ७ १६ राज्यगृहाश्रमसामग्रीसहित (विद्वान् राजा वा) ६ ४ राज्यव्यवहाराय स्वीकृत (अग्नि =सभापती राजा) ८ ३८ राजनियमै स्वीकृत (इन्द्र =सभासेनापति) ७ ३८ उपगतैर्यामैर्यमै स्वीकृत (जगदीश्वर) ८ ४१ उपगतयमैर्विदित (ईश्वर) २६ ३ उपयामैर्गृहीतानि जितानि इन्द्रियाणि येन स (इन्द्र = विद्वज्जन) २६ ४ उपयामा सामग्रीगृहीता येन स (गृहस्थो जन) ८ ३३ उपयामेन सत्कर्मणा योगाभ्यासेन गृहीत स्वीकृत (जगदीश्वर) २३ ४ यो यामैर्यमसम्बन्धिभि कर्मभिरुप समीपे गृहीत साक्षात्कृत (भगवान्) २३ २ कर्षकादिभि स्वीकृत (राजपुरुष) १९ ६ उपयामैरुत्तमनियमै सङ्गृहीत, भा०—शिक्षित (विद्वान्) २० ३३ उपगतैर्वर्म्यैर्यामैर्यमसम्बन्धिभिर्नियमैर्गृहीत सयुत (राजप्रजाजन) १९ ८ उपयामै. प्रजाराजजनै स्वीकृत (इन्द्र =सम्राट्) ६ २ उपगतैर्यामानामिमै सेवकै पुरुषै स्वीकृत (इन्द्र =सम्राट्) ६ २

उपप्रक्षे समीपतया सम्पर्के ५ ४७ ६ [उप+पृची सम्पर्के (रुधा०) धातोश्छान्दस रूपम्]

उपप्रयन् सामीप्यङ्गच्छन् (सेनापति) १ १० ३ ४ **उपप्रयन्तः**=उत्कृष्ट निष्पादयन्तो जानन्त (जना) ३ ११ समीपतया प्राप्नुवन्त (राजप्रजाजना) ४ ३६ ५ प्रयत्नेनोपाय कुर्वन्त (मनुष्या) ७ ४४ २ समीप प्राप्तवन्त (मनुष्या.) १ ७४ १ [उप+प्र+इण् गतौ (अदा०) धातो शतृ]

उपप्रयन्ति समीप गच्छन्ति ३ १२ ७ **उपप्रयन्तु**= प्राप्नुवन्तु, भा०—उपतिष्ठेयु ३४ ५६ [उप+प्र+इण् (अदा०) धातोर्लट्]

उपप्रयाहि समीपतया गच्छाऽऽगच्छ १ ८२.६ समीप प्राप्नुहि १५ ५२ [उप+प्र+या प्रापणे (अदा०) धातोर्लोट्]

उपप्रवहतः अच्छे प्रकार से प्राप्त हो सकते है स० वि० १०५, ५ ४१ ७ [उप+प्र+वह प्रापणे (भ्वा०) धातोर्लट्]

उपप्रसस्त्रे सम्वन्ध को समीपता से प्राप्त होती है स० वि० १०४, २ ३५ ५ [उप+प्र+सृ गतौ (भ्वा०) धातोर्लिट् । व्यत्ययेनात्मनेपदम्]

उपप्राऽगात् समीपतया गच्छतु प्राप्नोतु १.१६२ ७ समीप गच्छति १ १६३ १२ समीपतया प्राप्नुयात् २५.३० [उप+प्र+इण् गतौ (अदा०) धातोर्लुङ् । 'इणो गा लुङी' ति गादेश । 'गातिस्थाघु०' इति सिचो लुक्]

उपप्रेत समीपतया प्राप्नुत ३ ५३ ११ [उप+प्र+ इण् गतौ (अदा०) धातोर्लोट्]

उपप्रैत् समीप प्राप्नोति ५ ३०.६ [उप+प्र+इण् गतौ (अदा०) धातोर्लङ्]

उपबर्बृहत् सामीप्येन भृशमुपवर्हयति ५ ६१.५ [उप+वृह वृद्धौ (भ्वा०) धातोर्यङ्लुगन्ताल् लङ् । अड-भावश्च]

उपबर्हणीम् सुवर्द्धिकाम् (क्षा=भूमिम्) १.१७४ ७. [उप+वृह वृद्धौ (भ्वा०) धातोर्ल्युडन्तान् ङीप् स्त्रियाम्]

उपब्दिः महाशब्दकर्त्ता (विद्वज्जन) १.७४ ७ वाक् प्र०—उपब्दिरिति वाङ्नाम, निघ० १ ११, १ १६६.७

उपब्रवामहै समीपतयोपदिशेम ५.५१ १२. [उप+ ब्रूञ् व्यक्ताया वाचि (अदा०) धातोर्लोट् । 'वहुल छन्दसी' ति शपो न लुक्]

उपब्रुवते समीपमुपदिशन्ति १.१३४ २. **उपब्रुवे**= समीप्येनोपदिशामि १ १७६ ५ समीपमुपदिशेयम् १ १८५ ७ उपयोगि वच उपदिशेयम् १ १८८ ८. समीप-तया कथयामि ३ ३७ ५ **उपब्रूते**=समीपमुपदिशेत् १ ४० २ [उप+ब्रूञ् व्यक्ताया वाचि (अदा०) धातोर्लट्]

उपभरन्ती उपधरन्ती (स्वसा=भगिनी) २ ५ ६ [उप+भृञ् भरणे (भ्वा०) धातो शत्रन्तान् ङीप्]

उपभूषतम् सामीप्येनाऽलङ्कुरुतम् ३३ ८८ [उप+ भूप अलङ्कारे (भ्वा) धातोर्लोट्]

उपभृत् योपगत विभर्त्त्यनया हस्तक्रियया सा घृताची=होमक्रिया) २ ६ [उप+डुभृञ् धारणपोषणयो (जु०) धातो स्त्रिया सम्पदादित्वात् क्विप् । ह्रस्वस्य तुगागम । अथेदमन्तरिक्षमुपभृत् श० १ ३ २ ४ अन्तरिक्ष-मुपभृत् तै० ३.३ १ २. सावित्र्युपभृत् तै० ३ ३ ७ ६. उपभृत् सव्य. (हरत) तै० ३ ३ १ ५ अत्तैव जुहूराद्य उपभृत् श० १.३ १.११]

उपभ्राजन्ते समीप प्रकाशन्ते ७ ५५ २ [उप+ भ्राजृ दीप्तौ (भ्वा०) धातोर्लट्]

उपमदन्ति समीपतया कामयन्ते, भा०—सिद्धकामा भवन्ति २५ ३० [उप+मदी हर्षे (दिवा०) धातोर्लट् । व्यत्ययेन शप्]

उपमन्थितारम् समीपे विलोडितारम् (दुर्जनम्) ३० १२. [उप-मन्थ विलोडने (भ्वा०) धातो कर्त्तरि तृच्]

उपमन्युम् उप समीपे मन्तु योग्यम् (कारु=शिल्प-कार्यकर्तृजनम्) १ १० २ ६ [उप-मन्युपदयो समास । मन्यु=मन ज्ञाने (दिवा०) धातोरौणादिको युच् । मन्युरिति क्रोधनाम निघ० २ १३ पदनाम निघ० ५ ४]

उपमम् उपमाम् ५ ६४ ४ उपमानम् १ ११० ५ दृष्टान्तस्वरूपम् १ ६१ ३ उपमेयसाधकतमम् (अर्क= धनधान्यम्) ७ ४० ७ येनोपमीयते तम् (अर्क=सत्कर्त्तव्य-मन्न विचार वा) ७ ३६ ७ उपमायुक्तम् (नाम) ५ ३ ३ येनोपमिमीते तम् (केतु=प्रज्ञाम्) ७ ३० ३ [वस्तुत उपगतेन स्तुतम् १ ११० ५ उपमे अन्तिकनाम निघ० २ १६. उप+मा माने (अदा०) धातो 'आतश्चोपसर्गे' सूत्रेण क]

उपमर्मृजन्त अत्यन्त मार्जयन्तु शोधयन्तु १ १३५.५ [उप+मृजूष् शुद्धौ (अदा०) धातोर्यङ्लुगन्ताच्छान्दस रूपम्]

उपमश्रवस्तमम् उपमीयते येन तच्छ्रवस्तदतिशयितम्

वचि' रिति वचिरादेश]

उपवक्तेव यथोपवक्ता तथा (सविता=सूर्य इव राजा) ६.७१ ५ [उपवक्तृ-इवपदयो समास]

उपवक्षतः समीप वहत, अ०—उपगत वहत प्रापयत, प्र०—अत्र लडर्थे लेट् १ १६ २ [उप+वह प्रापणे (भ्वा०) धातोर्लेट्। 'सिब् बहुल लेटी' ति सिप्]

उपवसुम् उप समीपे वसूनि यस्या ताम् (स्वस्ति=सुखम्) ६ ५६ ६ [उप-वसुपदयो समास। वसुरिति धननाम निघ० २ १०]

उपवहतः समीपतया प्राप्नुत १ ८४ २ **उपवहन्तु**=समीप प्राप्नुवन्तु १ ४६ १ [उप+वह प्रापणे (भ्वा०) धातोर्लट् लोट् च]

उपवाकम् उपगता वाग् यस्मिँस्तम् (सूर्यम्) १ १६४.८

उपवाकाः=उपगता प्राप्ता यवा १९.२२ **उपवाकैः**=उपनयन्ति यैस्तै. (कर्मभि) १९ ९०

उपवाकाभिः उपदेशक्रियाभि २१ ३० उपगताभिर्वाग्भि २१ ३१ [यच्छ्लेष्माणस्ता उपवाका (अभवन्) श० १२ ७ १ ३]

उपवाच्यः उपवक्तु योग्य (इन्द्र=सूर्य) १ १३२.२. उपदेशनीय (सविता=सर्वैश्वर्यप्रद ईश्वर) ४.५४ १ [उप+वच परिभाषणे (अदा०) धातोर्ण्यत् प्रत्यय]

उपविष्टाय य उपविशति तस्मै (जनाय) २२ ७. [उप+विश प्रवेशे (तुदा०) धातो क्तो बाहुलकादौणादिक]

उपवीतिने प्रशस्तमुपवीत यज्ञोपवीत विद्यते यस्य तस्मै, भा०—यज्ञोपवीतधारकाय (सेनाधीशाय) १६ १७. [उपवीतप्राति० मत्वर्थे इनि। उपवीतम्=उप+वी गतिप्रजनकान्त्यसनखादनेपु (अदा०) धातो क्त सज्ञाया 'क्तिच् क्तौ च सज्ञायाम्' अ० ३ ३ १७४ सूत्रेण]

उपवेतु उत्कृष्टतया व्याप्नोतु ५ ११ ४ [उप+वी गतिप्रजनकान्त्यसनखादेनपु (अदा०) धातोर्लोट्]

उपवोचन्त उपगतमुपदिशन्तु १ १२७ ७ **उपवोचे**=समीपमुपदिशेयम् ४ ४६ ४ [उप+वच परिभाषणे (अदा०) धातोर्लुङ्। अडभावो व्यत्ययेनात्मनेपदञ्च]

उपशाकेभिः उपशक्यन्तै यै कर्मभिस्तै' प्र०—अत्र 'बहुल छन्दसि' इति भिस ऐस् न १ ३३ ४. [उप+शक्लृ शक्ती (स्वा०) धातोर्घञ्]

उपशिक्षति उत्कृष्टतया विद्या ददाति, प्र०—अत्र व्यत्ययेन परस्मैपदम् ६ २८ २ **उपशिक्षन्ति**=समीपतया शिक्षा प्रददति १ १७३ १०. [उप+शिक्ष विद्योपादाने (भ्वा०) धातोर्लट्। व्यत्ययेन परस्मैपदञ्च]

उपशिक्षन् उपगता विद्या ग्राहयन् (ब्रह्मा=चतुर्वेदविज्जन) ५ ४०.८ [उप+शिक्ष विद्योपादाने (भ्वा०) धातो. शतृ। व्यत्ययेन परस्मैपदम्]

उपशिक्षायै उपवेदादिविद्योपादानाय, भा०—परीक्षादानाय ३० १० [उप+शिक्ष विद्योपादाने (भ्वा०) धातो 'गुरोश्च हल' इति स्त्रियाम् अङ्]

उपशिश्रियाणाः ये उपश्रयन्ति ते (मरुत=वनिष्ठा योद्धृजना) ७ ५६ १३ [उप+श्रिञ् सेवायाम् (भ्वा०) धातोश्छन्दसि लिट्। 'लिट कानज्वा' इति कानच्]

उपशृणवत् समीपतया शृणुयात् १७.९० [उप+श्रु श्रवणे (भ्वा०) धातो' शतृ। 'श्रुव शृ चे' ति श्नु शृ आदेशश्च]

उपशृण्वन्ति सामीप्येन शृण्वन्ति १२ ९४ [उप+श्रु श्रवणे (भ्वा०) धातोर्लट्। 'श्रुव. शृ चे' ति श्नु, शृ आदेशश्च]

उपशेषे सन्तानोत्पादनाय ऋ० भू० २११ [शेप इत्यपत्यनाम निघ० २ २]

उपश्रवत् समीप शृणुयात् ६.५० ६ [उप+श्रु श्रवणे (भ्वा०) धातोर्लेट्। छान्दसत्वात् 'श्रुव शृ च' इति श्नुर्न भवति]

उपश्रिताः उपश्लेपतया श्रिता कण्ठा येपान्ते (रुद्रा=जीवा वायवो वा) १६ ५६ [उप्+श्रिञ् सेवायाम् (भ्वा०) धातो क्त]

उपश्रुतिम् उपगता श्रूयमाणाम् (गिरा=वाचम्) ८ ३४ उपयुक्ता श्रुतिं श्रवणम् १.१०.३ [उप+श्रु श्रवणे (भ्वा०) धातो क्तिन्]

उपश्रोता य उपद्रष्टा सञ्छृणोति (उपदेशको जन) ७ २३ १ [उप+श्रु श्रवणे (भ्वा०) धातोस्तृच्। वायुर्वा उपश्रोता गो० उ० ४ ९ वायुरुपश्रोता तै० ३ ७ ५ ४]

उपश्वासय उपप्राणय ६ ४७ २९ [उप+श्वस प्राणने (अदा०) धातोर्णिचि लोटि च रूपम्]

उपसचन्ते समीप समवयन्ति १ १९० २ [उप+षच् समवाये (भ्वा०) धातोर्लट्। व्यत्ययेनात्मनेपदम्]

उपसत्ता उपसीदन् (अग्नि=विनयप्रकाशितो राजा) २७ ४ य उपसीदति स (अग्नि=विद्वज्जन) २७ २ [उप+षद्लृ विशरणगत्यवसादनेपु (भ्वा०) धातो कर्त्तरि तृच्]

उपसदम् य समीपे सीदति तम् (पुरुषम्) ३० ९

साङ्गोपाङ्गसाधनै (स्वीकृत) (अध्यापक) ८ ४७ शास्त्र-नियमोपनियमा गृहीता येन स (कुमारब्रह्मचारी) ८ १ उपयामेन विवाहनियमेन गृहीत (गृहपति) ८ ७. उपयामाय गृहाश्रमाय गृहीत (गृहपति) ८ ११ साधनोपसाधनै स्वीकृत (इन्द्र =राजा) ६ ३ ब्रह्मचर्यनियमै स्वीकृत (अङ्ग =राजा) १० ३२ उपनियमै स्वीकृत (योगमभीप्सु) ७ ११ उपात्तैर्गृहीत, भा०—यमादिभिर्योगाङ्गैर्निरुद्धचित्त (योगजिज्ञासु) ७ ४ उपयामा. शौचादयो नियमा गृहीता येन स (योगी) ८ १२ विनयादिराजगुणैर्युक्त (सभापती राजा उपदेशको वा) ७ २० विद्याविचारसयुक्त (विद्वज्जन) २६ ८ [याम.=यमु उपरमे (भ्वा०) धातोर् अच्। तत समूहार्थेऽण्, तस्येदमर्थेऽण् वा। उप-यामपदयो समासे तत उपयाम-गृहीतपदयो समास। गृहीत =ग्रहउपादाने (क्र्या०)+क्त]

उपयामम् उपगत नियमम् २५ २ [उप-यामपदयो समास। याम.=यमु उपरमे (भ्वा०) धातोर्घञ् 'यम समुपनिविपु च' इति सूत्रेण। इय (पृथिवी) वाऽउपयाम इय वा इदमन्नाद्यमुपयच्छति पशुभ्यो मनुष्येभ्यो वनस्पतिभ्य श० ४ १ २ ८]

उपयासत् उपागच्छेत् ५ ४० ४ [उप+या प्रापणे (अदा०) धातोर्लेट् सिव्विकरण]

उपयाहि उपगत प्राप्नुहि ८.२० उपाऽऽगच्छ ३ ६० ७ समीप प्राप्नुहि १ १३५ १ समीप गच्छ प्राप्नुहि वा १ ८२ ५ [उप+या प्रापणे (अदा०) धातोर्लोट्]

उपयुज्महे समादधीमहि, प्र०—अत्र वहुल छन्दसि इति श्यनो लुक् १ १६५ ५. [उप+युज समाधौ (दिवा०) धातोर्लट्। श्यनो लुक्]

उपयुञ्जाथे नियुक्तौ भवत १ १५१ ४ [उप+युजिर् योगे (रुधा०) धातोर्लट्]

उपरताति उपरतातौ पलै मेघाऽस्त्रादिभि योद्धव्ये सङ्ग्रामे ७ ४८ ३ उपराणा मेघानामवकाशवत्यन्तरिक्षे १ १५१ ५ [उपर इति मेघनाम निघ० १ १० उपरो मेघो भवति। उपरमन्तेऽस्मिन्नभ्राणि। उपरता आप इति वा नि० २ २१]

उपरम् मेघम् १.६२ ५ मेघमिव प्र०—उपरमिति मेघनाम निघ० १ १०, ५ ३१ ११ **उपरा:**=समीपे रममाणा (किरणा) ५ २६ ५ **उपरेण**=उत्कृष्टनियमेन ६.२ [उपर इति मेघनाम निघ० १.१० आ उपर उपल इत्येताभ्या साधारणानि पर्वतनामभि (उपर शब्दो मेघपर्वतयोर्वाचक इत्यर्थ) उपर उपलो मेघो भवति, उपरमन्तेऽस्मिन्नभ्राणि, उपरता आप इति वा नि० २ २२]

उपरा मेघ इव १ ५४ ७ समीपस्था दिक् १ १६७ ३ **उपरासु**=श्रेष्ठासु (मनुष्यादिप्रजासु) ४ ३७ ३ दिक्षु, प्र०—उपरा इति दिङ्नाम निघ० १ ६, १ १२७ ५ [उपरा इति दिङ्नाम निघ० १ ६]

उपरासत् उपदद्यात् ६ ५० ६ [उप+रासति दानकर्मा (निघ० ३ २०) धातोर्लेट्]

उपरास: वानप्रस्थ सन्यास। श्रममाप्ता गृहाश्रमभोगेभ्य उपरता (पितर =प्रजाशोधका वृद्धा जना) १९ ६८ [उप+रमु क्रीडायाम् (भ्वा०) धातो 'अन्येष्वपि दृश्यते' अ० ३ २ १०१ सूत्रेण ड प्रत्यय। प्रथमावहुवचने च जस्यसुगागमे रूपम्]

उपरि ऊर्ध्वं वर्त्तमानम् (द्या=प्रकाशम्) ४ ३१ १५ ऊर्ध्वमुत्कृष्टे व्यवहारे १८ ४४ उत्कर्षे ३३ ८५ सर्वोपरि विराजमाना (मति =प्रज्ञा) १३ ५८ ['उपर्युपरिष्टात्' अ० ५ ३ ३१ सूत्रेण ऊर्ध्वस्योपभावो रिल् च प्रत्ययो निपात्यते। दिग्देशकालेषु]

उपरिप्रुता उपरि प्रवते यस्तेन (भङ्गेन=मर्दनेन) ७ ३ [उपर्युपपदे प्रुङ् गतौ (भ्वा०) धातो क्विप्। ह्रस्वस्य तुगागमे तृतीयाया रूपम्]

उपरिष्टात् ऊर्ध्वात् ३७ १२ ['उपर्युपरिष्टात्' अ० ५ ३ ३१. सूत्रेण दिग्देशकालेषु वर्त्तमानस्योर्ध्वस्योपभावो रिष्टातिल् च निपात्यते]

उपरिसद: ये उपरि उत्कृष्ट आसने व्यवहारे वा सीदन्ति ते (देवा =आयुर्वेदविदो विद्वाम) ६ ३६ **उपरिसद्भ्य:**=सर्वोपरि विराजमानेभ्य (देवेभ्य =विद्वद्वरेभ्य) ६ ३५ [उपर्युपपदे षद्लृ विशरणगत्यवसादनेषु (भ्वा०) धातो क्विप्प्रत्यय]

उपरिस्पृशम् य उपरि स्पृशति तम् (अधिराजान=राजानम्) ३४ ४६ [उपर्युपपदे स्पृश सम्पर्शने (तुदा०) धातो क्विप्]

उपरेण उत्कृष्टनियमेन ६ २

उपलान् मेघान्, प्र०—उपल इति मेघनाम, निघ० १ १०, २५ ८ [उपल इति (मेघपर्वतयोर्नाम)। आ उपर उपल इत्येताभ्या साधारणानि पर्वतनामभि' नि २ २२]

उपवक्ता उपदेशकानामुपदेशक (विद्वज्जन) ४ ६ ५ [उप+ब्रूञ् व्यक्तायां वाचि (अदा०) धातोस्तृच्। 'ब्रुवो

भूमी) २ ३२ १ [उप+ष्टुञ् स्तुतौ (अदा०) धातो क्त]

उपस्तुतौ निकटे प्रशसितौ (अश्विनौ=अध्यापकोपदेशकौ) १ ८१ ७ [उप+ष्टुञ् स्तुतौ (अदा०) धातो क्त]

उपस्तुत्यम् उपस्तोतुमर्हम्(कर्माङ्गमग्निम्)१ १६३.१ उपगतस्तुतिविषयम्, भा० सर्व प्रशसितम् (कर्म) २९ १२ समीपे प्रशसनीयम् (उक्थ्य कर्म) १ १३६ २ [उप+ष्टुञ् स्तुतौ (अदा०) धातो 'एतिस्तुशास्वृदृजुष क्यप्' अ० ३ १ १०९. सूत्रेण क्यप्]

उपस्तुहि सामीप्येन प्रकाशय १ १२ ७ समीपतया प्रशस २ ८ १ समीपतया प्रशसय १ २२ ६ [उप+ष्टुञ् स्तुतौ (अदा०) धातोर्लोट्]

उपस्तृणन्ति आच्छादयन्ति २५ ३९ बिछौने आदि करते है स० वि० २०९, अथर्व० ९ ६ ८ [उप+स्तृञ् आच्छादने (क्रचा०) धातोर्लट्]

उपस्तृणीषणि उपाऽऽच्छादनीयम् (ऐश्वर्यम्) ६ ४४ ६]

उपस्तोषाम समीपतया प्रशसेम ६ ५५ ४ [उप+ष्टुञ् स्तुतौ (अदा०) धातोर्लोट्। उपस्तोपाम उपस्तुम नि० ८ ७]

उपस्थम् समीपस्थम् (वायुम्) २ ३५ ९ उपतिष्ठन्ति यस्मिँस्तम् (सज्जनम्) २ ४१ २१ **उपस्थे**=कर्तॄणा समीपस्थे देशे १ ९५ ५ उत्सर्गे १ ११७ ५ स्वाङ्के ११ ५७ समीपे स्थातव्ये व्यवहारे १ १०९ ३ अङ्क १ १८५ ५ उत्सङ्गे १२ ३९ गोद मे आर्याभि० १ २७, ऋ० ५ ३ २७ २५ उपतिष्ठन्ति यस्मिँस्तस्मिन् प्र०—अत्र 'घञर्थे कविधानम् स्था०' अ० ३ ३ ५८ इति वार्त्तिकेनाऽधिकरणकारके क प्रत्यय १ ३१ ९ समीपे स्थापयितव्ये व्यवहारे १ १०९ ३ सामीप्ये ११ २१ **उपस्थात्**=य समीपे तिष्ठति तस्मात् (यानात्) ६ ६२ ६ समीपात् ३ ३३ १ समीपस्थव्यवहारात् १ ९५ ४ **उपस्था**=उपतिष्ठन्ति यस्मिँस्तत्र १ ३५ ६ क्रोडे तिष्ठति सा (उपा) १ १२४ ५ [उपस्थे उपस्थाने नि० ७ २६ उप+ष्ठा गतिनिवृत्तौ (भ्वा०) धातो 'घञर्थे कविधानम्। स्थास्नापाव्यधिहनियुध्यर्थम्' अ० ३ ३ ५८ वा० सूत्रेणाधिकरणे क प्रत्यय]

उपस्थात् उपतिष्ठते २ ३ १० [उप+ष्ठा गतिनिवृत्तौ (भ्वा०) धातोर्लुङ्। अडभावश्छान्दस]

उपस्थाय सामीप्य प्राप्य ३ ४८.३ यथावत् जान कर उपस्थित निकट प्राप्त होकर आर्याभि० २ १०, ३२ ११ पठित्वा सरोव्य वा, भा०—सम्पाद्य लब्ध्वा ३२.११ उपगतो भूत्वा विदित्वा च ऋ० भू० ८९ समीप स्थित होकर स० वि० २१५, ३२ ११ [उप+ष्ठा गतिनिवृत्तौ (भ्वा०) धातो क्त्वा। समासे क्त्वो ल्यप्]

उपस्थायम् अभिक्ष्णमुपस्थातुम् १ १४५ ४ [उप+ष्ठा गतिनिवृत्तौ (भ्वा०) धातो 'आभीक्ष्ण्ये णमुल् च' अ० ३ ४ २२ इति णमुल्]

उपस्थावराभ्यः उपस्थिताभ्योऽवराभ्यो निकृष्टक्रियाभ्य ३० १६ [उपस्था-अवरापदयो समास। उपस्थ इति व्याख्यातम्]

उपस्थिताय प्राप्तसमीपत्वाय (पदार्थाय) २२ ७ [उप+ष्ठा गतिनिवृत्तौ (भ्वा०) धातो क्त। 'द्यतिस्यतिमा०' इतीकारादेश]

उपस्थुः उपतिष्ठन्तु ७ १८ ३ [उप+ष्ठा गतिनिवृत्तौ (भ्वा०) धातोर्लुङ्]

उपस्थेयाम उपतिष्ठेम ६ ४७ ८ [उप+ष्ठा गतिनिवृत्तौ (भ्वा०) धातोराशिषि लिङि 'लिङ्याशिष्यङ्' अ० ३ १ ८६ सूत्रेणाङिकृते 'छन्दस्युभयथा' अ० ३.४ ११७ सूत्रेण सार्वधातुकत्वादियादेश]

उपस्थेषम् उपपत्सीय, प्र०—अत्र 'लिङ्याशिष्यङ्' इत्यङि कृते 'छन्दस्युभयथा' इति सार्वधातुकत्वादियादेश आर्धधातुकत्वात् सकारलोपो न भवति २ ८

उपस्रवन्तु प्राप्नुवन्तु ३५ २० [उप+स्रु गतौ (भ्वा०) धातोर्लोट्]

उपहत्नुम् य उपहन्ति तम् (वीरपुरुषम्) २ ३३.११ [उप+हन हिंसागत्यो (अदा०) धातो 'कृहनिभ्या क्त्नु' उ० ३ ३० इति क्त्नु प्रत्यय]

उपहरति स्वीकार करता है स० वि० २१०, अथर्व० ९ ६ १२ [उप+हृञ् हरणे (भ्वा०) धातोर्लोट्]

उपहिन्वन्तु सामीप्येन प्रीणयन्ति सेधयन्ति, प्र०—अत्र लडर्थे लोडन्तर्गतो ण्यर्थश्च १ २३ १७ [उप+हि गतौ वृद्धौ च (स्वा०) धातोर्लोट्। हिनोत इति पदनाम निघ० ४ ३]

उपहूतस्य समीपमाहूतस्य (पयस=उदकस्य दुग्धस्य वा) ३८ २८ सत्कारेणाऽऽहूतोपस्थितस्य (वीरगृहपते) ८ १२ **उपहूतः**=सम्मानित उपस्थित (वीरगृहपति) ८ १२ सत्कृत्याऽऽहूत (जन) २० ३५ उप समीपे कृताऽऽह्वान (विद्वज्जन) ३८ २८ समीप सम्यक्

उपसीदन्ति यस्या ता वेदीम् २ ६ १. **उपसदाम्**=य उपसीदन्ति तेषामतिथीनाम् १६ १४ [उप+षद्लृ विशरणगत्यवसादनेषु (भ्वा०) धातो कर्त्तरि क्विप्। ते (देवा) एताभिरुपसद्भिरुपासीदस्तद् यदुपासीदस्तस्मादुपसदो नाम श० ३ ४ ४ ४ ऋतव उपसद श० १० २.५.७ मासा उपसद १० २ ५ ६ अर्धमासा उपसद श० १० २ ५ ५. अहोरात्राणि वा ऽउपसद श० १० २ ५ ४ इमे लोका उपसद श० १० २ ५ ८ एतदु यज्ञे तप । यदुपसद, तपो वा ऽउपसद श० १० २ ५ ३ तपो ह्युपसद श० ३ ६ २ ११ ग्रीवा वै यज्ञस्योपसद श० ३ ४ ४ १ वज्रा वा ऽउपसद श० १० २.५ २ जितयो वै नामैता यदुपसद ऐ० १ २४ ता (उपसद) वा ऽज्यहविषो भवन्ति श० ३ ४ ४ ६ इषु वा एता देवा समस्कुर्वत यदुपसदस्तस्याग्निरनीकमासीत्, सोम शल्यो विष्णुस्तेजन वरुण पर्णानि ऐ० १ २५]

उपसदेम समीप प्राप्नुयाम ६ ७५ ८ [उप+षद्लृ-विशरणगत्यवसादनेषु (भ्वा०) धातोर्लिङ्। छान्दसत्वात् सीदादेशो न भवति]

उपसद्य सामीप्य प्राप्य १८ ७५ [उप+षद्लृ विशरणगत्यवसादनेषु (भ्वा०) धातो क्त्वा। समासे क्त्वो ल्यप्]

उपसद्यः समाश्रयितु योग्य (परमेश्वर) ऋ० भू० २२२ प्राप्तु योग्य (न्यायाधीशो राजा) २ २३ १३ समीप जाने और शरण लेने योग्य (सभापति राजा) स० प्र० १८३, अथर्व० ६ १० ९८ १ **उपसद्याय**=समीपे स्थापयितु योग्याय (यतिरूपायाऽतिथये) ७ १५ १ [उप+षद्लृ विशरणगत्यवसादनेषु (भ्वा०) धातोर् ण्यत्। छान्दसत्वाद् वृद्धिर्न भवति]

उपसन्नमन्तु समीप प्राप्त होकर नम्र होवे स० वि० १६०, अथर्व० १६ ४१ १ यथावत् सत्कार किया करे स० वि० १६८, अथर्व० १६ ४१ १ [उप+सम्+णम प्रह्वत्वे शब्दे (भ्वा०) धातोर्लोट्]

उपसंप्रयात समीप सम्यक् प्राप्नुत १५ ५३ [उप+सम्+प्र+या प्रापणे (अदा०) धातोर्लोट्]

उपसि समीपे ५ ४३ ७ [उपसि उपस्थे नि० ६ ६]

उपसीदन् समीपतया तिष्ठन्ति १ ७२ ५ समीपतयाऽवतिष्ठन्ते १.६५ १ [उप+षद्लृ विशरणगत्यवसादनेषु (भ्वा०) धातोर्लङ्। अडभावश्छान्दस । शिति सीदादेश]

उपसृज उत्कृष्टतयोत्पादय ३ ४ १०. उत्कर्षेण निर्मिमीहि ६.३६ ४. **उपसृजन्ति**=समीपतया ददते २ ११६ समीप प्रयच्छन्ति २ २ १३ [उप+सृज विसर्गे (तुदा०) धातोर्लोट्]

उपसृजन् समीप प्रापयन्निव (गृहस्थो जन इव) ८ ५१ [उप+सृज विसर्गे (तुदा०) धातो शतृ]

उपसेक्तारम् उपसेचनकर्त्तारम् (पुरुषम्) ३० १२ [उप+षिच् क्षरणे (तुदा०) धातो कर्त्तरि तृच्]

उपसेदिम समीपतया प्राप्नुयाम १ ८६ २ उपतिष्ठेम ५ ८ ४. **उपसेदुः**=उपसीदन्ति ७ ३३ ६ [उप+षद्लृ विशरणगत्यवसादनेषु (भ्वा०) धातोर्लिट्। उपसेदिम= उपसीदेम नि० १२ ३६]

उपस्तभायत् उपस्तभ्नीयात् ४ ५ १ [उप+स्तम्भु स्तम्भनार्थे सौत्रो धातु, तस्य णिचि लेटि च रूपम्। मकारलोपश्छान्दस]

उपस्तयः ये उप समीपे स्त्यायन्ति सघ्नन्ति ते (वैद्या) प्र०—अत्रोपपूर्वात् 'स्त्यै सघाते' इत्यस्मादौणादिक क्विप् सम्प्रसारण च १२ १०१ **उपस्तिः**=सहति (मित्रजन) १२ १०१. [उप+ष्टचै शब्दसघातयो (भ्वा०) धातोरौणादिक क्विप्, सम्प्रसारण पूर्वरूपे च रूपम्]

उपस्तिरे उपस्तृणामि, प्र०=अत्र 'वाच्छन्दसि' इति रेफादेश २ ३१ ५ [उप+स्तॄञ् आच्छादने (क्र्या०) धातोश्छान्दस रूपम्]

उपस्तिरे आस्तरणे ५ ८५.१ सस्तराय ४ ३३ १

उपस्तुतम् उपगतैर्गुणै प्रशसितम् (सद्वैद्यम्) १ ११२ १५ य उपगतैर्गुणै स्तूयते तम् (सुवीर्य=सुबलम्) १ ३६ १७ **उपस्तुतः**=समीपे प्रशसित (इन्द्र=राजा) ७ २७ ३ उपगत स्तौति स उपस्तुतो विद्वान् प्र०—अत्र स्तुधातोर्बाहुलकादौणादिक क्त प्रत्यय १ ३६ १० **उपस्तुताः**=उपगतेन स्तुता (ऋभव=मेधाविनो जना) १ ११० ५ [उप+ष्टुञ् स्तुतौ (अदा०) धातो क्त]

उपस्तुता उपगतप्रशसया कीर्त्तितौ (अश्विना=स्त्रीपुरुषौ) ५ ७६ २ उपगतैर्गुणै प्रशसितौ (अध्यापकोपदेशकौ) १ १३६ १ [उप+ष्टुञ् स्तुतौ (अदा०) धातो क्त। 'सुपा सुलुक्०' इत्याकार]

उपस्तुतिम् उपगता प्रशसाम् १ १४८ २ उपमिता प्रशसाम् ४ ५६ ५ **उपस्तुतिः**=उपगता चाऽसौ स्तुति १ १५८ ४ **उपस्तुत्या**=ययोपस्तौति तया (वाचा) ६ ६१ १३ समीपेन स्तुत्या २१ ४६ [उप+ष्टुञ् स्तुतौ (अदा०) धातो स्त्रिया क्तिन्]

उपस्तुते उप समीपे प्रशसिते (द्यावापृथिवी=सूर्य-

सामीप्येन गच्छ ५ ३९ [उप+इण् गतौ (अदा०) धातोर्लुङ्। 'इणो गा लुङि' सूत्रेण गादेशे 'गातिस्था०' इति सिचो लुक्]

उपाघ्नत नित्य घ्नन्ति ऋ० भू० २३८ [उप+आङ्+हन हिंसागत्यो (अदा०) धातोर्लङ्। 'आङो यमहन' इत्यात्मनेपदम्]

उपाचर समीप समन्तात् प्राप्नुहि १ १८७.३ [उप+आङ्+चर गतौ (भ्वा०) धातोर्लोट्]

उपाचरत् उपचारिणीव वर्त्तते १ ४६ १४ [उप+चर गतौ (भ्वा०) धातोर्लङ्]

उपाजत समीपतया विजानीत १ १६१ ६ [उप+आङ्+अज गतिक्षेपणयो (भ्वा०) धातोर्लोट्]

उपातसत् उपभूषयेत्, भा०—प्रशसयेत् २३ २८ [उप+तसि अलकारे (चुरा०) धातोर्लङ्। नुमागम आगमशासनस्यानित्यत्वात्]

उपातिष्ठन्त समीप स्थिरा भवेयु, प्र०—अत्र लिडर्थे लङ् १ ११ ६ [उप+ष्ठा गतिनिवृत्तौ (भ्वा०) धातोर्लङ्। व्यत्ययेनात्मनेपदम्]

उपानट् समीपतया समन्ताद व्याप्नोति १७ ८६. [उप+आङ्+नशत् व्याप्तिकर्मा (निघ० २.१८) धातोर्लङ्]

उपाऽऽयन् उपायन्ति, प्राप्नुवन्ति १३ ५१ [उप+आङ्+इण् गतौ (अदा०) धातोर्लङ्]

उपायने समीपे प्राप्ते (काले) २ २८.२. [उप+अय गतौ (भ्वा०) धातोर्ल्युट्]

उपाऽऽयात उत्कर्षेण समन्तात् प्राप्नुत ४ ३४.५ [उप+आङ्+या प्रापणे (अदा०) धातोर्लोट्]

उपाऽऽयातन समीप समन्तात्प्राप्नुत ४ ३४ ६ [उप+आङ्+या प्रापणे (अदा०) धातोर्लोट्। तस्य तनपादेशश्छान्दस.]

उपायातम् समीपतया सम्यक् प्राप्नुतम् १ ११६ १६ समीपमागच्छत, उपागच्छत, प्र०—अत्र व्यत्यय १.२ ५. उपायात समीप समन्तात् प्राप्नुत, प्र०—अत्र व्यत्यय १ २ ६. **उपायातु**=समीपमागच्छतु ४ २११ **उपायाहि**=समीप समन्तात्प्राप्नुहि १.१३० १ समीपतया प्राप्तो भव १ ३ ५ [उप+आङ्+या प्रापणे (अदा०) धातोर्लोट् लङ् वा]

उपावत समीपतया रक्षत ३३ १९ [उप+अव रक्षणगतिकान्तिप्रीतितृप्त्यादिषु (भ्वा०) धातोर्लोट्]

उपावतु: समीप कामयेताम् १ १६१ १०.

उपावरोह उपवर्त्तस्व ६ २६ **उपावरोहन्तु**=समुपाश्रयन्तु ६ २६ [उप+अव+रुह बीजजन्मनि प्रादुर्भावे च (भ्वा०) धातोर्लोट्]

उपावसि उत्कृष्टतया रक्षसि १२.१०७. [उप+अव रक्षणादिषु (भ्वा०) धातोर्लट्]

उपावसुम् उप समीपे वसूनि यस्या ताम् (रश्मिर=सुखम्) ६ ५६ ६ [उप-वसुपदयो समास। सहिताया पूर्वपदस्य दीर्घ]

उपावसृज उत्कर्षेण यथावद् देहि २९ ३५ [उप+अव+सृज विसर्गे (तुदा०) धातोर्लोट्]

उपावसृजन् समीपतया विविधया क्रियया॒ऽऽनङ्कुर्वन् (विद्वज्जन.) १ १४२.११ [उप+अव+सृज विसर्गे (तुदा०) धातो शतृप्रत्यय]

उपावस्रक्षत् उपावसृजेत् २१.४६ [उप+अव+सृज विसर्गे (तुदा०) धातोर्लुङ्। च्ले. क्सादेशश्छान्दस। 'सृजिदृशोर्झल्यमकिति' अ० ६ १ ५८. सूत्रेणामागम]

उपावह समीप समन्ताद् वहति प्रापयति, प्र०—अत्र व्यत्ययो लडर्थे लोट् च १ २२ ९ **उपावहन्तु**=सामीप्येनाऽभित प्राप्नुवन्तु १ ४७ ८ [उप+आङ्+वह प्रापणे (भ्वा०) धातोर्लोट्]

उपावह्रियमाण: क्रियाकौशलेनोपयोज्यमान (इन्द्र=विद्युत्) ८ ५६ [उप+अव+हृञ् हरणे (भ्वा०) धातो. कर्मणि शानच्]

उपाविधन् समीप समन्ताद् विदधतु १.१४६ १ [उप+आङ्+वि+डुधाञ् धारणपोषणयो (जु०) धातोर्लङ्। शपो लुक्]

उपावी: उपागत पालक इव, शरणागतस्य रक्षक (त्वष्टा=सर्वदु खच्छित् सभापति) ६ ७. [उप+अव रक्षणादिषु (भ्वा०) धातोर्बाहुलकाद् औणादिक ई प्रत्यय]

उपावृत: ये भोगा उपावर्त्तन्ते (सुखोपभोगा.) १२ ८ [उप+आङ्+वृतु वर्त्तने (भ्वा०) धातो क्विप्]

उपश्रिता: उपश्लेषतया श्रिता कण्ठा येषान्ते (रुद्रा=जीवा वायवो वा) १६ ५६ [उप-श्रितपदयो समास। सहिताया पूर्वपदस्य दीर्घ]

उपासते प्राप्य सेवन्ते ३२ १४ अनुशासनं मन्यन्ते ऋ० भू० १०६, स्वीकुर्वन्ति प० वि०। उपासना करते हैं स० वि० १८६, १० १६१ २ यथावत् मानते हैं आर्याभि० २.४८, २५ १३ उपाश्रित होते हैं आर्याभि० २ ५३,

प्रापित (कीलाल=उत्तमान्नादिपदार्थसमूह) ३ ४३ कृतोपह्वान, अ०—स्पर्द्धित सन् (पिता=पालनहेतु सूर्यलोक) २ ११ [उप+ह्वेञ् स्पर्द्धाया शब्दे च (भ्वा०) धातो क्त । यजादित्वात् किति सम्प्रसारणे पूर्वरूपे 'हल' इति दीर्घ]

उपहूता यथावत् स्पर्द्धिता (भारती=वाणी) २६ ८ उपहूयते जनै राज्यसुखार्थं या (माता, पृथिवी=विद्या) २ १० [उपहूत इति व्याख्यातम् । तत स्त्रिया टाप्]

उपहूताः सामीप्य प्रापिता (अजाऽव्य) ३ ४३ सम्यक् प्राप्ता (गाव) ऋ० भू० २४०. नियन्त्रिता (पितर) ऋ० भू० २६२ सामिप्यमाहूता (पत्नी=विदुष्य स्त्रिय) ६ ३४ समीपस्था (अजाऽव्य) स० वि० १४७, ३ ४३ [उपहूत इति व्याख्यातम् । तस्य प्रथमा-वहुवचने रूपम्]

उपह्वयताम् उपह्वयति, अ०—स्वीकरोतु, प्र०—अत्र व्यत्ययेन लडर्थे लोट् २ ११ उपगत स्पर्धतामुपदिश-ताम् २ १० **उपह्वयामहे**=समीप शब्दयामहे ३ ४२ हम प्रगसा करते और प्रीति से समीपस्थ बुलाते है म० वि० १४६, ३ ४२ **उपह्वये**=सामीप्येन स्वीकुर्वे १ २१ १ समीप गन्तु स्पर्द्धे १ १३ ८ सामीप्येन सम्यक् स्पर्द्धे १ १३ १० उपगम्य स्वीकुर्वे १ २३ १८ निकट-माह्वये १ १३ १२ उपगतभोगद्योतनाय उपतापये, अ०—उपगम्योपतापये १ १३ ३ उपयोक्तु स्वीकुर्वे १ २२ १२ उपस्तुयाम् २२ १३ सामीप्येन स्वीकरोमि १ १६४ २६ समीपतया स्पर्द्धे १ १३ ७ [उप+ह्वेञ् स्पर्द्धाया शब्दे च (भ्वा०) धातोर्लोट्]

उपह्वरे उपह्वरन्ति कुटिलयन्ति येन तस्मिन् व्यव-हारे, प्र०—अत्र 'कृतो वहुलम्०' इति करणे अच् १ ६२ ६ निकट २६ १५ **उपह्वरेषु**=उपस्थितेषु कुटिलेषु मार्गेषु १ ८७ २ [उप+ह्वृ कौटिल्ये (भ्वा०) धातो 'कृतो वहुलम्' अ० ३ ३ ११३ वा० सूत्रेण करणेऽच्]

उपाकयोः समीपस्थयो सेनयो १ ८१ ४ **उपाके**=समीपे ७ ४२ ३ समीप वर्त्तमाने (उपसौ=रात्र्यहनी) प्र०—उपाके इति अन्तिकनाम, निघ० २ १६, ३ ४६ परस्परमसन्निहितवर्त्तमाने (रात्रिदिने) १ १४२ ७ सन्नि-हिते, भा०—परस्परेण कालेन सह वर्त्तमाने सम्बद्धे (उपासानक्ता=रात्रिदिने २६ ३१ [उपाके उपक्रान्ते नि० ८ ११ अन्तिकनाम निघ० २ १६]

उपाकरम् उपाकरोमि १ ११४ ६ [उप+डुकृञ् करणे (तना०) धातोर्लुङ् । 'कृमृदृरुहिभ्यश्छन्दसि' अ० ३ १ ५६ सूत्रेण च्लेरङ्]

उपाकृधि उपाकुरु १७ ६ [उप+आङ्+डुकृञ् करणे (तना०) धातोर्लोट् । 'श्रुशृणुपृकृवृभ्यश्छन्दसि' अ० ६ ४ १०२ सूत्रेण हेर्धिरादेश । विकरणव्यत्ययेन शप् । 'वहुल छन्दसी' ति शपो लुक्]

उपागच्छतम् समीप प्राप्नुतम् १ ४७ ३ [उप+आङ्+गम्लृ गतौ (भ्वा०) धातोर्लोट्]

उपाऽऽगच्छतम् उपगत समन्ताद् गमयत, प्र०—अत्र लडर्थे लोडन्तर्गतो ण्यर्थश्च १ ७१ ४ [उप+आङ्+गम्लृ गतौ (भ्वा०) धातोर्लोट्]

उपागतम् समीपतयाऽऽगच्छतम्, प्र०—अत्र 'गम्लृ गतौ' इत्यस्माद् 'वहुल छन्दसि' अ० २ ४ ७३ इति शपो लुकि सति शित्वाऽभावाच्छस्याऽभाव 'अनुदात्तोपदेश०' अ० ६.४ ३७ इत्यादिना मलोपश्च ७ ८ समीपमागच्छत, प्र०—अत्र लोट्-मध्यम-द्विवचनम् १ २४ समीप समन्तात् प्राप्नुतम् ३३ ५६ [उप+आङ्+गम्लृ गतौ (भ्वा०) धातोर्लोट् । छान्दसत्वाच्छपो लुकि छकारादेशो न भवति । मकारलोपश्च]

उपागन्तम् समीपतया सम्यक् प्राप्नुतम् १ १३७ १ [उप+आङ्+गम्लृ गतौ (भ्वा०) धातोर्लोट् । शपो लुकि छत्वमपि न]

उपागन्म प्राप्नुयाम ६ १६ ३८ [उप+गम्लृ गतौ (भ्वा०) धातोर्लङ् । शपो लुकि छत्वाऽभावे 'म्वोश्चे' ति नकारादेश]

उपागमन्तु समीप सर्वतो गच्छन्तु १ १०७ २ [उप+आङ्+गम्लृ गतौ (भ्वा०) धातोर्लोट् । 'वहुल छन्दसी' ति शपो लुकि छत्वमपि न भवति]

उपागहि समीपतयाऽऽगच्छति, अ०—उपागच्छति, प्र०—अत्र शपो लुकि सति 'वाच्छन्दसि' इति हेरपित्वाद् 'अनुदात्तोपदेश०' अ० ६ ४ ३७ इत्यनुनासिकलोपो लडर्थे लोट् च १ ४ २ समीपमागच्छ १७ ६ समीप समन्ताद् गच्छति, प्र०—अत्र व्यत्ययो लडर्थे लोट् 'वहुल छन्दसि' इति शपो लुक् च १ १६ ५ उपागच्छ, उपागच्छति वा १ ६१ १० [उप+आङ्+गम्लृ गतौ (भ्वा०) धातोर्लोट् । 'वहुल छन्दसी' ति शपो लुकि छत्व न भवति । हेरपित्वात् कित्वादनुनासिकलोप]

उपाऽगाम् समीप प्राप्नुयाम् ५ ४२ **उपाऽगाः**=

उभयतः शीर्ष्णी उभयत शिरोवदुत्तमा गुणा यस्या सा, भा०—वाह्याभ्यन्तररक्षणाभ्या सर्वोत्तमा (वाग् विद्युच्च) प्र०—अत्र पञ्चभ्या अलुक् ४ १६ [उभयतस्-शिरस्पदयो समास । 'शीर्षश्छन्दसि' अ० ६ १ ६० सूत्रेण शिरस स्थाने 'शीर्षन्' आदेश । स्त्रिया ङीप्]

उभयत्र गमनाऽऽगमनयो ३ ५३ ५ [उभयसर्वनाम्न सप्तम्यन्तात् त्रल्]

उभयस्य द्विविधस्य (जगत स्थातुश्च) ४ ५३ ६ [उभप्राति० 'उभादुदात्तो नित्यम्' अ० ५ २ ४४ सूत्रेणा-वयवे विहितस्य तयपोऽयजादेश]

उभया वर्त्तमानेन सह पूर्वाऽपराणि (जन्मकृत्यानि) २ ६ ७ [उभयप्राति० परस्य जस स्थाने भूतस्य शेर्लुक् 'शेश्छन्दसि बहुलम्' अ० ६ १ ७० सूत्रेण]

उभयादतः उभयोरध ऊर्ध्वभागयोर्दन्ता येषान्ते (पशव) ३१ ८ उभयतो दन्ता येषान्ते उष्ट्रगर्दभादय ऋ० भू० १२४ [उभय-दन्तपदयोर्बहुव्रीहौ 'छन्दसि च' अ० ५ ४ १४२ सूत्रेण दन्तस्य दतृ-आदेश । संहिताया पूर्वपदस्य दीर्घ]

उभयासः उभयत्र वर्त्तमाना (सेनाजना) ४ २४ ३ [उभयप्राति० प्रथमाबहुवचने जसोऽसुगागम]

उभयाहस्ति उभये हस्ता प्रवर्त्तन्ते यस्मिँस्तत् (राध =द्रव्यम्) ५ ३९ १ [उभय-हस्तपदयोर्बहुव्रीहौ 'द्विदण्डयादिभ्यश्च' अ० ५ ४ १२८ सूत्रेण समासान्त इच् प्रत्यय । संहिताया पूर्वस्य दीर्घ । उभयाहस्ति उभाभ्या हस्ताभ्याम् नि० ४ ५]

उभयाहस्त्या समन्तादुभयत्र हस्तो येषु कर्मसु तानि तेषु साधूनि (वसु=वासस्थानानि) १ ८१ ७ [उभय-हस्तपदयोर्बहुव्रीहौ समासान्त इच्प्रत्यये कृते 'तत्र साधुर्' इत्यर्थे यत्प्रत्यये जस स्थानेभूतस्य शेर्लुक्]

उभ्नाः प्रपूर्द्धि, प्र०—अत्र व्यत्ययेन श्ना १ ६३ ४ [उभ पूरणे (तुदा०) धातोर्लोट् । विकरणव्यत्ययेन श्ना-प्रत्यय]

उमेभिः रक्षणादिकर्त्तृभिस्सह (देवेभि =विद्वज्जनै) ५ ५१ १

उरणम् आच्छादकम् (दुर्जनम्) २ १४ ४ [ऋ गतौ (भ्वा०) धातो 'अर्त्ते क्युरुच्च' उ० ५ १७ सूत्रेण क्यु प्रत्ययो धातोरुकारादेशश्च । उरण =ऊर्णावान् भवति, ऊर्णा पुनर्वृणोतेरूर्णोतेर्वा नि० ५ २१]

उरवः विशालजघनोरस्का (पितर =पालनक्षमा राजपुरुषा) २९ ४६ बहव (परमाणव) ५.४७.२ बहु-प्रज्ञा (पूर्णविद्या परीक्षका जना) २ २७ ३. बहव (मरुत =मनुष्या) ५ ५७ ४ **उरवे**=विस्तृताय (मार्गाय) १.१३६ २ [ऊर्णुञ् आच्छादने (अदा०) धातो 'महति ह्रस्वश्च' उ० १ ३१ सूत्रेण कु प्रत्ययो नुलोपो ह्रस्वश्च ऊर्णोत्याच्छादयत्यल्पानिति विग्रह । उरुबहुनाम निघ० ३ १]

उरः हृदयम्, भा०—अन्त करणम् २० ७ वक्ष-स्थलम् १ १५८ ५ **उरसा**=अन्त करणेन ११ ३१ [ऋ गतौ (भ्वा०) धातो 'अर्त्तेरुच्च' उ० ४ १९५. सूत्रेणासुन् प्रत्ययो धातोरुकारादेशश्च । उरुस्त्रिष्टुप् प० २ ३ उरस्त्रिष्टुभ श० ८ ६ २.७]

उराणम् बहुबल कुर्वन्तम् (इन्द्र=सेनेशम्) १ १७३ ७ **उराणः**=य उरून् बहूननिति प्राणयति स (सूर्य) ४ ६ ३. य उरुर्बह्वनिति स (जन), प्र०—अत्र वर्णव्यत्ययेनोकारस्य स्थानेऽकार ३ १९.२ बहुकुर्वाण (अग्नि =विद्युत्) ४ ७ ८ बहुकुर्वन् (अग्नि =सूर्य) ४ ६ ४ [उराण =उरु कुर्वाण. नि० ६ १७. 'उरु' इत्यु-पपदे अन प्राणने (अदा०) धातोरण् । वर्णव्यत्ययेनो-कारस्याकार । उरूपपदाद्वा णीञ् धातोर्ड प्रत्यय । उराण पदनाम निघ० ४ ३]

उरु व्यापकम् (अन्तरिक्षम्=आकाशम्) ३ ५४ १९ विस्तीर्णम् (सुखम्) ५ ४१ बहुविधम् (सुखम्), प्र०—उर्विति बहुनामसु पठितम् निघ० ३ १, १.७ बहु (अन्त-रिक्षम्) ७ ५ **उरुः**=बहुशक्ति (जगदीश्वर) २.१३ ७ सर्वशक्तिमान् (ईश्वर) ऋ० भू० १९२ **उरुणा**=बहुना (पथा=मार्गेण) ४ २९ ५ **उरुम्**=बहुगुणाऽन्वित न्यायम् ८ २३ बहुबलादिगुणविशिष्टम् (वीरसेनाम्) १ ५७ ६ बहुविधम् (लोक=भुवनसमूहम्) १ ९३ ६ बह्वाच्छादन स्वीकरण वा ४ २७ बह्वैश्वर्यम् (इन्द्र=राजाद्यध्यक्षम्) ३ ४१ ५ बहुसुखकर विस्तीर्णम् (लोकम्) ७ ६० ९ **उरुषु**=विस्तीर्णेषु (विक्रमणेषु=सृष्टिक्रमेषु) १ १५४ २ **उरो !**=बहुसुखप्रतिपादक (अन्तरिक्ष =यज्ञ) ४ ७ **उरोः**=बहुन (मनस =विज्ञानात्) प्र०—अत्र लिङ्ग-व्यत्ययेन पुंस्त्वम् ४ ६ बहुगुणैश्वर्यात् १७ ४९ बहुविध-गुणयुक्तात् (अन्तरिक्षात्=आकाशात्) ३.४६ ३. बहोरनन्तात् (अन्तरिक्षात्) ५ १९ **उरौ**=बहुसुखकरे (कार्ये) ५ ४२ १७ पुष्कले (अन्तरिक्षे=आकाशे) ३ ६ ८ बहुरूपे (अन्तरिक्षे=आकाशे) ५ ५२ ७ विस्तृते (अन्त-रिक्षे=अन्तराल आकाशे) ६ ३३ बाहौ ३ १ ११ ['उरु'

३२ १४ उपारयतया जानन्ति ४० ६ **उपास्महे**=उपासन कुर्महे ऋ० भू० १६६, अथर्व० १३ ४ ४७ [उप+आस उपवेशने (अदा०) धातोर्लट्]

उपासदत् उपसीदति ६ ५७ २ [उप+षद्लृ विशरणगत्यवसादनेषु (भ्वा०) धातोर्लुङ् । लृदित्त्वाद् अङ्]

उपासीदतम् सामीप्येनाऽभितो गच्छतम् १ ४७ ८ [उप+आङ्+षद्लृ विशरणगत्यवसादनेषु (भ्वा०) धातोर्लोट् । णिति सीदादेश]

उपासृजध्वम् उत्कृष्टतया विविधविद्यायुक्त कुरुत ६ ४८.११ [उप+आङ्+सृज विसर्गे (तुदा०) धातोर्लोट् । व्यत्ययेनात्मनेपदम्]

उपासेदिम समीप समन्तात्प्राप्नुयाम २५ १५ [उप+आङ्+षद्लृ विशरणगत्यवसादनेषु (भ्वा०) धातोर्लिट्]

उपास्थात् उपतिष्ठेत् २५.४४ [उप+ष्ठा गतिनिवृत्तौ (भ्वा०) धातोर्लुङ् । 'गातिस्थाघुपाभूभ्य०' इति सिचो लुक्]

उपास्थित उपतिष्ठति २ ५ ६ **उपाऽस्थु:**=उपतिष्ठन्ति ४४१ ६ समीप प्राप्नुवन्तु ४४१ ८ [उप+ष्ठा गतिनिवृत्तौ (भ्वा०) धातोर्लुङ् । 'अकर्मकाच्चे' त्यात्मनेपदे 'स्थाघ्वोरिच्च' अ० १ २ १७ सूत्रेणेकारान्तादेश किच्च]

उपांशु: उपगता अशवो यत्र स उपाशुर्जप १८ १६. उपगृहीता (जपरूप) १३.५४. **उपांशो:**=उप सामीप्येऽनिति तस्य (सेनेशस्य) प्र०—अत्राऽनधातोरु शुगागमश्च ६ ३८ [उप-अशुपदयो समास । अशु =शमष्टमात्रो भवति । अननाय शम्भवतीति वा नि० २.५ अनिरुक्त वा ऽउपाशु श० १ ३ ५ १० प्रमाणो वा ऽअस्य (यज्ञस्य) उपाशु श० ४.१ १ १ अथवा उपाशु प्राण एव कौ० १२ ४ यज्ञमुख वा ऽउपाशु श० ५ २ ४ १७ इय (पृथिवी) ह वा ऽउपांशु श० ४ १ २ २७]

उपेति: उपेयते सुखानि यया सा (नीति) १ ७६.१ [उप+इण् गतौ (अदा०) धातो स्त्रिया क्तिन्]

उपेतौ प्राप्तौ (पितरा=जनकौ) ३ १८.१. [उप+इण् गतौ (अदा०) धातो क्त]

उपेमसि समीप समन्ताद् प्राप्नुम १ १ ७ [उप+इण गतौ (अदा०) धातोर्लट् । 'इदन्तो मसि' इति मस इदन्तत्वम्]

उपेयतु: समीपं प्राप्नुत ३ २.६

उपैति सामीपतया प्राप्नोति ७ १ ६ सामीपता मे प्राप्त होता है मं० वि० २०६, अथर्व० ६ ६.४ [उप+इण् गतौ (अदा०) धातोर्लट्]

उपैमसि सामीप्यं सर्वत प्राप्नुम वे० आ० नि० उपगम्य समन्तात् प्राप्नुम, प्र०—अत्र 'इदन्तो मसि' इतीकारादेश ३ २२ अ०—नित्यमुपाप्नुम ३ २३ [उप+आङ्+इण् गतौ (अदा०) धातोर्लट् । मस इदन्तता]

उपैमि समीपतया ज्ञातु प्राप्तुमनुष्ठातु प्राप्नोमि १ ५ समीप प्राप्त होऊ स० प्र० १६४, २० २४ समीप प्राप्त होता हूँ स० वि० १८६, २० २४ **उपैषि**=समीपतया प्राप्नोषि १ ५३ ७ **उपैहि**=समीप प्राप्त हो स० प्र० १५२, १० १८ ८ [उप+इण् गतौ (अदा०) धातोर्लट् लोट् च । 'एत्येधत्यूठ्सु' अ० ६ १ ८६ सूत्रेण वृद्धिरेकादेश]

उपो समीपे १ ६१ १४ सामीप्ये १ १२४ ४.

उपोक्षत (उप+आ+उक्षत) समीप समन्तात् सिञ्चत १ ८७ २ [उप+आङ्+उक्ष सेचने (भ्वा०) धातोर्लोट्]

उपोत्थित: समीपे प्रकाशित (विष्णु =हिरण्यगर्भ परमेश्वर) ८ ५५ [उप+उत्+ष्ठा गतिनिवृत्तौ (भ्वा०) धातो क्त । 'द्यतिस्यतिमास्थाम्०' अ० ७ ४ ४० सूत्रेणेकारादेश । 'उद स्थास्तम्भो ०' इति पूर्वसवर्णादेश]

उपोदके उपगतान्युदकानि यस्मिँस्तस्मिन् (लोके) ३५ ६ [उप+उदकपदयो. समास]

उपोप अति सामीप्ये १ १२३.७ सामीप्ये, प्र०—अत्र 'उपर्यध्यधस सामीप्ये' अ० ८ १ ७ इति द्वित्वम् ८ २

उपोपपृच्यते सामीप्येन सम्बध्यते ३ ३४ [उप+पृची सम्पर्के (रुधा०) कर्मणि लट् । उपशब्दस्य द्वित्व सामीप्ये]

उपोपसश्चसि सामीप्येन प्राप्नोषि, प्र०—सश्चतीति गतिकर्मसु पठितम् निघ० २ १४, ८ २ [उप+सश्चति गतिकर्मा (निघ० २ १४) धातोर्लट् । सामीप्ये उपशब्दस्य द्वित्वम्]

उब्जतम् कुटिलमपहत, कुटिल दूरीकुरुत, प्र०—अत्र व्यत्ययो लडर्थे लोट् च १.२१ ५ **उब्जन्तु**=कुटिल कुर्वन्तु ६ ५२ १ **उब्ज:**=हन्या ४.१६ ५. [उब्ज आर्जवे (तुदा०) धातोर्लोट्]

उब्जन् आर्जव कुर्वन् (इन्द्र =सूर्य) १ ५२ २ [उब्ज आर्जवे (तुदा०) धातो शतृप्रत्यय]

उब्धम् उन्दकम् (दृढज्ञानम्) ४.१.१५

व्यापकाय (राज्ञे) ७ ३१ १ ११ [उरु-व्यचस्पदयो समास । व्यचस्=वि+अञ्चु गतिपूजनयो (भ्वा०) धातोरसुन् प्रत्यय । बाहुलकादनुनासिकलोप । अथवा व्यच व्याजीकरणे (तुदा०) धातोरसुन् । धातूनामनेकार्थत्वाद् व्याप्त्यर्थे]

उरुव्यचसा बहुव्यापिनी (रोदसी=द्यावापृथिवी) १ १६० २ [पूर्वपदे व्याख्यातम्]

उरुव्यचा बहुव्याप्त्या १ १०८ २ [उरूपपदे विपूर्वादञ्चते क्विप्]

उरुव्यचाः बहुपु व्याप्त (विद्वज्जन) ५ ४६ ६ उरु बहुविध व्यचो विज्ञान पूजन सत्करण वा यस्य स (सभाध्यक्ष) १ १०४ ६ बहुशुभगुणव्याप्त (समृद्धो राजा) ३ ५० १ ['उरुव्यचसम्' पदे व्याख्यातम्]

उरुव्यञ्चम् उरुपु बहुषु विशेषेणाऽञ्चति तम् (रुक्मम्=आदित्यम्) १५ २५ बहुव्याप्तिमन्तम् (स्तोमम्) ५ १ १२ [उरूपपदे विपूर्वात् अञ्चु गतिपूजनयो (भ्वा०) धातोरण् प्रत्यय]

उरुशर्म्मा उरूणि बहूनि सुखानि यस्या सा (अदिति=विदुषी माता) १० १६ [उरु-शर्मन्पदयो समास । 'उरु' व्याख्यातम् । शर्मन्=सुखनाम निघ० ३ ६ गृहनाम निघ० ३ ४]

उरुशंस बहुभि प्रशसित (वरुण=विद्वज्जन) २१ २ य उरून् बहून् शसति तत्सम्बुद्धौ (आप्त विद्वन्) १८ ४६ उरु बहुशस प्रशसा यस्य तत्सम्बुद्धौ (विद्वज्जन) १ १३८ ३ बहुभि शस्यते यत्तत्सम्बुद्धौ पक्षे सूर्यो वा (वरुण=जगदीश्वर) १ २४ ११ **उरुशंसस्य**=बहुप्रशसितस्य (विद्वत्पितु) २ २८ ३ **उरुशंसः**=बहुप्रशस (राजा) ४ १६ १८ [उरु+शसु स्तुतौ (भ्वा०) धातोरण् प्रत्यय]

उरुशंसा बहुस्तुती (मित्रावरुणा=अध्यापकोपदेशकौ) ३ ६२ १७ [पूर्वपदे व्याख्यातम्]

उरुशंसाः बहुप्रशसा (जगत्कल्याणकरा जना) २ २७ ६ [उरूपपदे शसु स्तुतौ (भ्वा०) धातोरण् । 'कृतो बहुलमि' ति वा कर्मण्यण्]

उरुष्य पाहि १ ५८ ६ रक्ष, प्र०—अत्र कण्ड्वाद्याकृतिगणत्वादुरुपशब्दाद् यक्, अ०—सतत पृथग् रक्ष ३ २६ बहुना योगाऽभ्यासेनाऽविद्यादिक्लेशानन्त नय, प्र०—अत्रोरूपपदात् 'षोऽन्त कर्मणि' इत्यस्मात् क्विप्, ततो नामधातुत्वात् क्विप्, ततो मध्यमैकवचनप्रयोग ७ ४ रक्ष, प्र०—उरुष्यतीति रक्षति कर्मा नि० ५ २३, १.६१ १५. सेवस्व ४ २ ११. **उरुष्यत**=सेवध्वम् ५ ८७ ६ **उरुष्यतम्**=प्रेरयेतम् ५ ६५ ६ सेवेतम् ४.४३ ४ सेवेथाम् ४.४३ ७. **उरुष्यति**=रक्षति २ २६ ४ वर्धयति १ १५५ २ सेवते ६ १४ ५ **उरुष्यथ.**=रक्षथ १.११६ ६ सेवेथाम् १ १५५ २ **उरुष्या**=सेवेत, रक्षेत ६ ४. **उरुष्यात्**=रक्षेत् ७ १ १५ **उरुष्याः**=रक्षे ७ ३ ८ **उरुष्येत्**=सेवेत ४ ५५ ५ **उरुष्व**=सेवस्व ४ २ ११ [उरुष्-शब्दात् कण्ड्वाद्याकृतिगणत्वाद् यक् । ततो लोट् । अथवा उरुपपदे षोऽन्त कर्मणि (दिवा०) धातो क्विपि ततो नामधातोर्लोट् । अथवा उरुष्यती रक्षतिकर्मा नि० ५ २३]

उरुष्यत् आत्मन उरुर्बहुरिवाचरति ३ ५८ [उरु बहुनाम (निघ० ३ १) तत आचारे क्यचि लेट् । 'सुग् वक्तव्य' अ० ७ १ ५१ वा० सूत्रेण क्यचि सुगागम]

उरूची या उर्वीर्बह्वीर्विद्या अञ्चति प्राप्नोति सा (जिह्वा=वाणी) ३ ५७ ५ या बहूनञ्चति प्राप्नोति सा पृथिवी ७ ३५ ३ बह्वीना पदार्थविद्याना ज्ञापिका बह्वर्थज्ञापिका वा (वेना=वेदचतुष्टयो वाक् वाणी वा) प्र०—उर्विति बहुनामसु पठितम् निघ० ३ १, १ २ ३ योरूणि बहून्यञ्चति सा (गौ=पृथिवी) ३ ३१ ११ **उरूचीम्**=या उरूणि बहून्यञ्चति प्राप्नोति ताम् (मही=भूमिम्) २१ ५ उरूणि बहूनि वस्तून्यञ्चन्तीम् (अमति=सुन्दर रूपम्) ७.४५ ३ [उरूपपदे अञ्चु गतिपूजनयो (भ्वा०) धातो 'ऋत्विग्०' अ० ३ २ ५६ सूत्रेण क्विन् । 'अच' इत्यकारलोपो ङीपि । 'चौ' इति पूर्वस्य दीर्घ]

उरूची य उरून् बहूनञ्चतस्ते (रोदसी=द्यावापृथिव्यौ) ४ ५६.४ ये बहूनञ्चतस्ते (रोदसी=भूमिप्रकाशौ) ६.११ ४ [पूर्वपदे व्याख्यातम् । 'वा छन्दसि' अ० ६ १ १०६ सूत्रेण पूर्वसवर्णदीर्घ]

उर्वराजिते य उर्वरा सर्वफलपुष्पशस्यादिप्रापिका जयति तस्मै (इन्द्राय=विद्वत्सभासेनेशाय) २ २१ १ [उर्वरा उपपदे जि जये (भ्वा०) धातो क्विप् । ह्रस्वस्य तुक्]

उर्वी बहुविस्तीर्णे (द्यावापृथिवी) १ १८५ ६ हिंसके (अपारे=द्यावापृथिव्यौ) ३ १ १४ [उर्वी=द्यावापृथिवीनाम निघ० ३ ३० ऊर्णुञ् आच्छादने (अदा०) धातो 'महति ह्रस्वश्च' उ० १ ३१ सूत्रेण कु । स्त्रियां ङीष्]

उर्वी बहुफलाद्युपेता (भूमि=पृथिवी) ६ ४७ २० [उर्वी पृथिवी नाम निघ० १ १ उर्वी.=ऊर्णोतेर्वृणोतेरित्यौर्णवाभ नि० २ २७]

इति 'उरव' पदे व्याख्यातम् । उरु बहुनाम निघ० ३ १]

उरुक्रमस्य बहुपराक्रमस्य (विष्णो =परमेश्वरस्य) १ १५४.५ **उरुक्रमः**=बहव क्रमा पराक्रमा यस्य स (ईश्वरो विद्वज्जनो वा) १ ६० ६ अनन्त पराक्रम (ईश्वर) आर्याभि० १ १, ऋ० १ ६ १८ ६ बहुपुरुषार्थ (विद्वज्जन) ३ ५४ १४ उरुर्महान् क्रम पराक्रमो यस्य स, अनन्त, महापराक्रमयुक्त परमात्मा स० प्र० २१, ३६ ६ उरुर्वहु क्रम ससाररचने यस्य स (विष्णु =ईश्वर) ३६ ६ उरवो वहवो क्रमा यस्य (एवयामरुन्=विज्ञानवान् मनुष्य) ५ ८७.४ [उरु-क्रमपदयो समास । उरुपदम् 'उरव' इत्यत्र व्याख्यातम् । उरु बहुनाम निघ० ३ १ क्रम =क्रमु पादविक्षेपे (भ्वा०) धातोर्घञ् । 'नोदात्तोपदेश०' इति सूत्रेण वृद्धिप्रतिषेध]

उरुक्षया उरुक्षयौ बहुषु जगत्पदार्थेषु क्षयो निवासो ययोस्तौ (मित्रावरुणौ=सूर्यवायू) अत्र 'सुपा सुलुग्०' इत्याकार 'उर्विति बहुनामसु' पठितम् निघ० ३ १ 'क्षि निवासगत्यो' अस्य धातोरधिकरणाऽर्थे क्षयशब्द १ २ ६ [उरु-क्षयपदयो समास । उरु बहुनाम निघ० ३ १ क्षय =क्षि निवासगत्यो (तुदा०) धातो 'पुसि सज्ञाया घ प्रायेण' त्यधिकरणे घ]

उरुगायः ! उरूणि बहूनि शास्त्राणि गायति पठति, तत्सम्बुद्धौ (कुमार ब्रह्मचारिन्) ८ १ **उरुगायम्**=उरूणि गया अपत्यानि धनानि गृहाणि वा यस्मात्तम् (श्रव =अन्न श्रवण वा) ६ ६५.६ बहुभिर्गीयमान विद्यावोधम् ७ ३५ १५ बहुभि प्रशसनीयम् (विद्यार्थिजनम्) ६ २८ ४ **उरुगायस्य**=बहुर्गय स्तुतिर्यस्य तस्य (विष्णो = व्यापकस्येश्वरस्य) प्र०—अत्र 'गै शब्दे' इत्यस्माद् 'घञर्थे कविधानम्' इति कर्मणि क ६ ३ बहुभि स्तुतस्य (सज्जनस्य) ३ ६ ४ बहुधा प्रशसितस्य (परमेश्वरस्य) १ १५४ ६ **उरुगायः**=यो बहूनर्थान् वेदद्वारा गायत्युपदिशति स (विष्णु =परमेश्वर) ५ १८ य उरुभिर्बहुभिर्मन्त्रैर्गीयते स्तूयते वा स (परमेश्वर) १ १५४ १ बहुभि स्तुत (अलविद्यो जन) २ १ ३ **उरुगायाय**=बहुप्रशसिताय (जीवनाय) १ १५५ ४ बहुप्रशसाय (विष्णवे= परमेश्वराय) ४ ३ ७ [उरूपपदे गै शब्दे (भ्वा०) धातोरण् प्रत्यय । 'आतो युक् चिण्कृतो' रिति युगागम । अथवा= उरु-गयपदयो समास । गय =अपत्यनाम निघ० २ २ धननाम निघ० २ १०. गृहनाम निघ० ३ ४ अथवा= उरुपपदे गायते 'घञर्थे कविधानमि' ति कर्मणि क । उरुगायस्य विष्णोर्महागते नि० २ ८]

उरुगाया बहुप्रशसौ (अध्यापकोपदेशकौ) ४ १४.१. [उरूपपदे गै शब्दे (भ्वा०) धातो 'घञर्थे कविधानमि' ति कर्मणि क]

उरुचक्रयः बहुकर्त्तारो महापुरुषार्थिन (विद्वज्जना) ५ ६७ ४ **उरुचक्रिः**=बहुकर्त्ता (विद्वज्जन) २ २६ ४ [उरु-चक्रिपदयो समास । उरु बहुनाम निघ० ३ १ चक्रि =डुकृञ् करणे (तना०) धातो 'किकिनावुत्सर्गश्छन्दसि सदादिभ्यो दर्शनात्' अ० ३ २ १७१ वा० सूत्रेण कि प्रत्ययो लिट्वच्च कार्यम्]

उरुचक्षसम् उरु बहुविध वेदद्वारा चक्ष आख्यान यस्य तम् (परमेश्वरम्) १ २५ ५ उरुषु बहुषु चक्षो विज्ञान प्रकाशन वा यस्य त कर्मकर्त्तार जीवम् १ २५ १६ **उरुचक्षसः**=बहुदर्शनान् (नॄन्=उत्तमविदुष) ६ ५१ ६ **उरुचक्षसा**=उरु बहु चक्षो व्यक्त वचन दर्शन वा यस्यास्तया (वाचा विद्युता वा) ४ २३ [उरु-चक्षस्पदयो समास । उरु बहुनाम निघ० ३ १ चक्षस्=चक्षिङ् व्यक्तायां वाचि दर्शनेऽपि (अदा०) धातो असुन् प्रत्यय । 'चक्षिङ ख्याञ्' इति ख्याञादेशे प्राप्ते 'असनयोश्च प्रतिषेधो वक्तव्य' अ० २ ४ ५४ वा० सूत्रेण प्रतिषेध]

उरुचक्षाः उरूणि बहूनि चक्षासि दर्शनानि यस्मात् स (सूर्य =सविता) ७ ३५ ८ [उरु-चक्षस्पदयो समासः, । चक्षस्पूर्वपदे व्याख्यातम्]

उरुज्रयसम् बहुवेगवन्तम् (अग्निम्) ५ ८ ६

उरुज्रयः बहुगन्तार (देवा =विद्वज्जना) ७ ३६ ३ [उरुज्रय बहुजवा नि० १२ ४३ उरूपपदे जवतिगतिकर्मा (निघ० २ १४) धातोर्बाहुलकाद् ड्रि प्रत्यय]

उरुधारा उर्वी धारा विद्यासुशिक्षाधारणा यस्या सा (पत्नी) ८ ४२ [उर्वी-धारापदयो समास । पूर्वपदस्य पुवद्भाव । धारा वाड्नाम निघ० १ ११]

उरुप्रथाः बहु प्रथ सुखस्य विस्तारो यस्मात् स, (घर्म =यज्ञ), प्र०—उर्विति बहुनामसु पठितम् निघ० ३ १, १ २२ बहुविस्तार (इन्द्र =सूर्य) २० ३६ [उरु-प्रथपदयो समास । उरु बहुनाम निघ० ३ १ प्रथ =प्रथ प्रख्याने (भ्वा०) धातो. 'घञर्थे कविधानमि' ति क]

उरुव्यचसम् बहुषु सद्गुणेषु व्यापकम् (इन्द्र = धार्मिक राजानम्) ६ ३६ ३ उरुव्यचस =बहुव्यापकस्य (अग्ने =पावकस्य) २७ १६ **उरुव्यचसे**=बहुषु विद्यासु

उलूखलक उलूखल कायति शब्दयति यस्तत्सम्बुद्धौ विद्वन् (जन) १ २८ ५ [उलूखलोपपदे कै शब्दे (भ्वा०) धातो क प्रत्यय । उलूखल पूर्वपदे व्याख्यातम् । उलूखल पदनाम निघ० ५ ३]

उलूखल सुतानाम् उलूखलेन सम्पादितानाम् (पदार्थानाम्) प्र०—उलूखलशब्दार्थ यास्कमुनिरेव समाचष्टे—उलूखलमुरुकर वोर्क्कर वोर्ध्वख वोरु मे कुर्वित्यब्रवीत् तदुलूखलमभवत्, उरुकर चैतदुलूखलमित्याचक्षते, नि० ६ २०, १ २८ ४ [उलूखल-सुतपदयोः समास । उलूखल व्याख्यातम् । सुत =षु प्रसवैश्वर्य (अदा०) धातो क्त]

उल्काः विद्युत ४ ४ २ विद्युताता' १३ १० [उष दाहे (भ्वा०) धातो 'शुकवल्कोल्का' उ० ३ ४२ सूत्रेण कक् प्रत्ययान्तो निपात्यते। षकारस्य लत्वम् । ओषति दहतीति विग्रह]

उल्वम् बलम् १० ८ आवरणम् १६ ७६ [उल्व पदनाम । निघ० ४ ३ उच समवाये (दिवा०) धातो 'उल्वादयश्च' उ० ४.६५ सूत्रेण वन् प्रत्यय । निपातनाच्चकारस्य लत्व गुणाभावश्च। उल्व ऊर्णोतेर्वृणोतेर्वा नि० ६ २५ उल्व घृत श० ६ ६ २ १५ उल्व वाऊषा ७ ३ १ ११]

उवाच उच्यात् ५ २ ८ वक्ति २ ३० २ [वच परिभाषणे (अदा०) धातोर्लिट्]

उवास वसति १ ४८ ३ वस १ ११३ १३ [वस निवासे (भ्वा०) धातोर्लिट् । 'लिट्यभ्यासस्य०' इति सम्प्रसारणम्]

उवाह वहति १ ११६ १८ [वह प्रापणे (भ्वा०) धातोर्लिट । लिटि अभ्यासस्य सम्प्रसारणम्]

उवोच वदति ७ ४ ३ उच्यात् ७ २१ १ **उवोचिथ**= उपदिश ७ ३८ ३ [उच समवाये (दिवा०) धातोर्लिट् । अत्र व्यक्ताया वाचि धातूनामनेकार्थत्वात् । अथवा वच परिभाषणे (अदा०) धातोर्लिट् । धातोरकारस्यौकारश्छान्दस]

उशतः कामितान् (दिव्यान् गुणान्) प्र०—अत्र 'कृतो बहुलम्०' इति कर्मणि लट स्थाने शतृ-प्रत्यय १ १२ ४ कामयमानान् (पितॄन्=जनकादीन्) १६ ७० विद्यादिसद्गुणान् कामयमानान् (देवान्=विदुषो गृहस्थान्) ८ १६ [वश कान्तौ (अदा०) धातोर्लट स्थाने शतृप्रत्यय) 'कृतो बहुलमि' ति कर्मणि शतृ । धातोर्ग्रह्यादि-सूत्रेण सम्प्रसारणम्]

उशती कामयमाना (जाया=हृद्या स्त्री) ४.३ २ कामयमाने (अध्यापिकोपदेशिके) ३ ३ ३ १ कामना करती हुई (जाया=स्त्री) स० प्र० ६०.१० ७१ ४ **उशतीम्**= कामयमानाम् (मनीषा=प्रज्ञाम्) ६ ४७ ३ **उशतीः**= कामयमाना (मातर) ३६ १५ स्वस्वधारणगुण प्रकाशयन्ती (पत्नी=पृथिव्यादिद्रव्यस्थशक्तय इव) १.२२ ६ कमनीया' (ऊर्म्या=रात्री) २ ४ ३ [वश कान्तौ (अदा०) धातो शत्रन्तान् ङीप् । उशती उशत्यौ कामयमाने नि० ६ ३६ कामयमाना नि० ११६]

उशतीव कामयमाना स्त्रीव १ ३२ १० [उशती-इवपदयो समास]

उशते कामयमानाय (ईश्वराय) ४ १७ १७ उशद्भि =कामयमानै (ज्ञानिभिर्जनकै) १६ ५१ **उशद्भ्यः**=त्वत्पदार्थान् कामयमानेभ्य (देवेभ्य = शत्रुभ्य) १ १६ २ ११ सत्पुरुषेभ्य २५ ३४ **उशन्**= कामयमान (इन्द्र=राजन्) ४ २० ४ कामयन् (मित्र) ४ २७ [वश कान्तौ (अदा०) धातोर्लट शतृ । उशत कामयमानान् नि० ६ १३ उशन्नुशन्तमिति प्रिय प्रियमित्येवैतदाह श० ३ ३ ३ १० वायुर्वा उशन् ता० ७ ५.१६]

उशधक् य उशान् युद्ध कामयमानान् दहति स (इन्द्र =राजा) ३ ३४.३ उश. कमनीयान् दहति येन स (अग्नि) ३ ६ ७ कामयमान (अग्नि =उत्तमो राजा) ७.७ २ य उशन्ति परस्व कामयन्ति तान् दहति स (सभेश) ३३ २६ [उशोपपदे दह भस्मीकरणे (भ्वा०) धातो क्विप् । उश =वश कान्तौ (अदा०) धातोरिगुपधलक्षण क प्रत्यय । धातो सम्प्रसारणम्]

उशना सर्वहितङ्कामयमान (परमेश्वर) ४ २६ १ कान्तियुक्त (विद्वान्) १ १३० ६ कामयिता (विद्वज्जन) १ ८३ ५ धर्मकामुक (प्रजापालको राजा), प्र०—अत्र डादेश १ १२१ १२ **उशनाः**=कामयमाना (विद्वज्जना) ५ ३१ ८ **उशने**=कामयमाने (काव्ये) १ ५१ ११ [वश कान्तौ (अदा०) धातो 'वशे कनसि' उ० ४ २३६ सूत्रेण कनसि । वष्टि कामयते स इति विग्रह । 'ऋदुशनस्०' अ० ७ १ ६४ सूत्रेणानङ् आदेश सौ]

उशनेव यथाकाम (उपदेशको जन) ४ १६ २ [उशना-इवपदयो समास]

उशन्तम् कामयन्तम् (स्योनम्=सुखम्) ४ २७ कामयमान (पति) १ ७१ १ **उशन्तः**=शृण्वन्त श्रावयन्त (जना) ऋ० भू० २६५ सन्तानो की कामना करते हुए

उर्वरासाम् बहुश्रेष्ठाना भूमीनाम् ६ २० १ बहुश्रेष्ठा पदार्था सन्ति यस्या ता भूमिं सनति तम् (प्रजाजनम्) ४ ३८ १ **उर्वरासु**=सुन्दरवर्णयुक्तासु (वाणीषु) १ १२७ ६ पृथिव्यादिनिमित्तेषु ६ २५ ४. भूमिषु ४ ४१ ६

उर्वर्याय उरुणा महतामर्य्याय स्वामिने (पुरुषाय) १६ ३३ [उरु-अर्यपदयो समास । उरु बहुनाम निघ० ३ १ ऊर्णुञ् आच्छादने (अदा०) धातो 'महति ह्रस्वश्च' उ० १ ३१ सूत्रेण कु प्रत्यय । अर्य ='अर्य स्वामी वैश्ययो' सूत्रेण स्वामिन्यभिधेये ऋ गतौ (भ्वा०) धातोर्यत् प्रत्ययो निपात्यते]

उर्वशी ययोरूरुणि बहूनि सुखान्यश्नुवते सा यज्ञक्रिया, प्र०—उर्वशीति पदनामसु पठितम् निघ० ५ ५, उर्विति बहुनामसु पठितम् निघ० ३ १ तस्मिन्नुपपदे अशूङ् धातो 'सपदादिभ्य क्विप्' तत शार्ङ्गरवाद्यन्तर्गतत्वात् ङीन् ५ २ उरु बहु अश्नाति यया सा दीप्ति १५ १६ उरवो बहवो वशे भवन्ति यया सा वाणी प्र०—उर्वशीति पदनामसु पठितम् निघ० ४ २, ५ ४१.१६ बहुवशकर्त्री प्रज्ञा ५ ४१ १६ **उर्वशीः**=बहु व्यापिका (क्रिया) ४ २ १८ **उर्वश्याः**=विशेषविद्याया ७ ३३ ११ [उर्वशी पदनाम निघ० ५ ५ उरूपपदे अशूङ् व्याप्तौ (स्वा०) अश भोजने (क्र्या०) धातोर्वा 'सपदादिभ्य क्विप्' इति स्त्रिया क्विप् । तत स्त्रिया ङीन् । अथवा उरूपपदे अशूङ् व्याप्तौ (स्वा०) धातो 'सर्वधातुभ्य इन्' उ० ४ ११८ सूत्रेण इन् । तत स्त्रिया 'कृदिकारादक्तिन' अ० ४ १ ४५ वा० सूत्रेण ङीष् । उर्वशी अप्सरा । उर्वभ्यश्नुते, उरुभ्यामश्नुते, उरुर्वा वशोऽस्या नि० ५ १३]

उर्वारुकमिव यथोर्वारुकफलम् पक्व भूत्वामृतात्मक भवति तथा ३ ६० यथोर्वारुकफलम् ७ ५६ १२

उर्विया पृथिव्याम् ३ १ १८ पृथिव्या, प्र०—उर्वीति पृथिवीनाम निघ० १ १, १ १२४ १ उर्व्या पृथिव्या सह, प्र०—अत्रोर्वीशब्दात् टास्थाने डियाजादेश १ ९२ ६ बहुरूपया दीप्त्या ६ ६ ४ बहुरूप (विद्वज्जन) २ ३५ ८ बहुपुरुषार्थयुक्ता (स्त्री) ६ ६४ ३ बहुत्वेन २६ ३० [उर्वी पृथिवी नाम निघ० ११ तत 'टास्थाने डियाजादेश 'इयाडियाजीकाराणामुपसख्यानम्' अ० ७ १ ३९ वा सूत्रेण । उर्विया उरुत्वेन नि० ८ १०]

उर्वी बहुफलादियुक्ते (रोदसी=द्यावापृथिवी) ७ १८ २४ बहुरूपे द्यावापृथिव्यौ १ ६१.८ बहुपदार्थधरे (रोदसी=सूर्यभूलोकौ) ४ ४२ ३ बहुले (रोदसी=प्रकाशाऽप्रकाशे जगती) ३ ५६ ७ महती (मही=पृथिवी) ३ ३८ ३ विस्तीर्णा (पृथ्वी) १ १८९ २ बहुत्वे (पृथिवी द्यौश्च) ६ ६८ ४ बहुफलाद्युपेता (भूमि) ६ ४७ २० **उर्वीम्**=विस्तृताम् (क्षा=भूमिम्) ६ १७ ७ बहुपदार्थयुक्ताम् (पृथिवी=भूमिम्) ७ ३८ २ महतीम् (अव्यापिकोपदेशिकाम्) ३ ३३ ३ उर्वी =बहुस्वरूपे (सूर्यभूमी) ३ ६ १० षड्विधा भूमी ६ ४७ ३ बहुसुखप्रदा प्रजा ३ ३३ ६ बह्वी पृथिवी १ ८ ७ **उर्व्या**=महत्या पृथिव्या सह १२ १ बहुरूपयोत्तमफलप्रदया पृथिव्या सह १४ ८ **उर्व्याः**=पृथिव्या १ १४६ २ **उर्व्यै**=बहुरूपायै (दिशे) २२ २७ [ऊर्णुञ् आच्छादने (अदा०) धातो 'महति ह्रस्वश्च' उ० १ ३१ सूत्रेण कुप्रत्यये=उरु । ततो ङीषि उर्वी । उर्वी नदीनाम निघ० १ १३ उर्व्य ऊर्णोते, वृणोतेरित्यौर्णवाभ नि० २ २६ पृथिवीनाम निघ० १ १ द्यावापृथिवीनाम निघ० ३ ३० यथेय पृथिव्युर्वी एवम् उरुर्भूयासम् श० २ १ ४ २८]

उलप्याय उलपे उत्क्षेपणे साधवे (जनाय), प्र०—अत्रोलधातोरौणादिकोऽपन् प्रत्यय १६ ४५ [उलपप्राति० 'तत्र साधु' रित्यर्थे यत् । उलप =वल सवरणे (भ्वा०) 'विटपविष्टपविशिपोलपा' उ० ३ १४५ सूत्रेण कपन् प्रत्ययान्तो निपात्यते । धातोरादेश्च सम्प्रसारणम्]

उलः क्षुद्रकृमि २४ ३१

उलूकः उलूक २४ ३८ [वल सवरणे (भ्वा०) धातो 'उलूकादयश्च' उ० ४ ४१ सूत्रेण ऊकप्रत्ययान्तो निपात्यते]

उलूखलः बहुकार्यकरेण साधनेन, प्र०—अत्र 'सुपा सुलुक्०' इति तृतीयैकवचनस्य लुक् १ २८ ६ [उरूपपदे डुकृञ्करणे (तना०) धातो 'कृञो हेतुताच्छील्यानुलोम्येषु' अ० ३ २ २० सूत्रेण टप्रत्यये, उकारस्य दीर्घे, रेफयोर्लत्वे ककारस्य खकारश्च वर्णव्यत्ययेन । लत्वम्, ककारस्य खकारश्च वर्णव्यत्ययेन । उलूखलम् उरुकर वोर्क्कर वोर्व्वख वोरु मे कुर्वित्यब्रवीत्तदुलूखलमभवत् । उरुकर चैतत्तदुलूखलमित्याचक्षते परोक्षेणेति च ब्राह्मणम् नि० ९ २० (प्रजापतिरब्रवीत्) उरु मे करदिति तस्माद् उरुकरमुरुकर ह वै तदुलूखलमित्याचक्षते परोऽक्षम् श० ७ ५ १ २२ अन्तरिक्ष वोलूखलम् श० ७ ५ १ २६ योनिरुलूखलम् श० ७ ५ १ ३८]

उषसाम्=प्रत्यूष कालानाम् २ २८ २ प्रभातवेलानाम् ६ ४७ ५ **उषसि**=दिने ४ २ ८ **उषसे**=प्रातःकालाय १ ११३ १ **उषः**=उषर्वद् वर्त्तमाने विदुषि (स्त्रि) १ ११३ १२ उषर्वत् सर्वरूपप्रकाशिके विदुषि स्त्रि १ ४८ १६ उषा इव कमनीये स्त्रि १ ४८ ६ हे दाहगुणयुक्तोषर्वत् स्त्रि १ ४८ २ उषस १ ४८ ४ उषा., प्र०—अत्र 'सुपा सुलुग्०' इति विभक्तेर्लुक् १ ५७ ३ उषर्वद्विद्याप्रकाशयुक्ते स्त्रि १ १२४ २ उषा इव शुम्भमाने (स्त्रि) ४ ५२ ३ **उषाः**=सुप्रभात १ ११३ ४. दिननिमित्त प्रकाश १ ११३ ८ प्रातर्वेलेव ४ ३० १० प्रबोधदात्री १ ४८ ५ सुशोभा कान्ति १ ४८ ७ दाहनिमित्तशीला १ ४६ १ दाहाऽऽरम्भनिमित्ता १ ११३ ५ सूर्याचन्द्रमसो प्रात प्रकाश १ ४६ १४ प्रभावती १ ४८ ३ उषर्वत् प्रकाशिका (स्त्री) १ ४८ १५ [उष दाहे (भ्वा०) धातो 'उष किच्च' उ० ४ २३४ सूत्रेणासि प्रत्यय. किच्च । ओषति दहतीति विग्रह । स्त्रियाम् उषा । तत्र इगुपधलक्षणे क-प्रत्यये स्त्रिया टाप् । उषा पदनाम निघ० ५ ५ निघ० ५ ६ उषस् उच्छतीति सत्या रात्रे पर काल नि० २ १८ उषा वष्टे कान्तिकर्मण, उच्छतेरितरा माध्यमिका नि० १२ ५ रात्रिर्वा उषा तै० ३ ८ १६ ४ योषा सा एका ऐ० ३ ४८ भूताना पतिर्गृहपतिरासीदुषा पत्नी श० ६ १ ३ ७]

उषसः दाहाऽऽदिकर्तॄन् पदार्थान् १ १३४ ३ [उषस व्याख्यातम्]

उषसा रात्रिदिने ५ १ ४ प्रात साय सन्धिवेले ३ १४ ३ [व्याख्यातम् उषसम् । 'सुपा सुलुक्०' इत्याकारादेश]

उषसौ रात्र्यहनी, अ०—स्त्रीपुरुषौ ३ ४ ६ [उषस व्याख्यातम्]

उषस्याः उषोदेवताका, भा०—उषोगुणा पशव पक्षिणश्च २ ४ ४ [उषस व्याख्यातम् । ततो भवार्थे यत् प्रत्यय]

उषः सुखे निवासिनि विदुषि (स्त्रि), प्र०—अत्र 'वस निवासे' इत्यस्माद्धातोरौणादिकोऽसुन् स च बाहुलकात् कित् १.११३ ७

उषाणः दहन् (सैन्यपुरुष) ४ १६ १४ [उष दाहे (भ्वा०) धातो शानच् । व्यत्ययेनात्मनेपदम् । 'बहुल छन्दसी' ति शपो लुक्]

उषाभ्याम् उभयवेलाभ्याम्, प्र०—अत्र 'छान्दसो वर्णलोपो वा' इति सलोप २१ ५० [उषसमिति व्याख्यातम्]

उषाम् उषस प्रभातवेलाम् १ १८१ ६ [उष दाहे (भ्वा०) धातोरिगुपधलक्षण क । स्त्रिया टाप्]

उषासम् उषस प्रभातसमयम्, प्र०—अत्र 'अन्येषामपि०' इति दीर्घ १५ २४ दिनमुख प्रभातम् ६ ३० ५ **उषासः**=प्रभातवेला इव शोभमाना (विदुष्य स्त्रिय) प्र०—अत्र 'वाच्छन्दसि' इत्युपधादीर्घ ७ ४१ ७ प्रभातवाता १ १३४ ४ प्रत्यूषसमया १ १२३ २ [उषसमिति व्याख्यातम् । उपधादीर्घश्छान्दस]

उषासा प्रात सायवेले २९ ६ प्रभाते २० ६१ [उषसमिति व्याख्यातम् । 'सुपा सुलुक्०' इत्याकारादेश]

उषासौ रात्रिदिने इव (अध्यापकोपदेशकौ) १.१८८ ५ प्रात सायवेले, प्र०—अत्र 'अन्येषामपि०' इत्युपधादीर्घ २१ ५० [उषसमिति व्याख्यातम्]

उषासानक्ता उषाश्च नक्तश्च ते २० ४४ प्रत्यूषरात्र्यौ २ ३१ ५ रात्रिदिने ५ ४१ ७ भा० अहोरात्रौ २८ ३७

उषे दहनकर्त्र्याविव स्त्रियौ २१ १७ काम दहन्त्यौ (सुपेशसा=सुखरूपे स्त्रियौ) २१ ३५ प्रतापयुक्ते (प्रात सायवेले) २८ ६ [उष दाहे (भ्वा०) धातोरिगुपधलक्षण क । स्त्रिया टापि सम्बुद्धौ रूपम्]

उष्णन् दहन् (अग्नि=वह्नि) २ ४ ७ [उष दाहे (भ्वा०) धातो शतृ । विकरणव्यत्ययेन श्ना]

उष्णिक् यद् दु खानि दहति तम् (वय=पराक्रमम्) १४ १० स्नेहनम् १४ १८ **उष्णिहम्**=उष्णिहा प्रतिपादितम् (इन्द्रिय=जीवस्य लिङ्गम्) २८ २५ **उष्णिहा** यया उष स्निह्यति तया (क्रियया) २३ ३३ **उष्णिहे**=उत्कृष्टतया स्निह्यति यया तस्यै क्रियायै २४ १२ **उष्णिहा**=छन्दोविशेष २१ १३ [उत्पूर्वात् ष्णिह प्रीतौ कान्तौ (दिवा०) धातो 'ऋत्विग्दधृग्०' अ० ३ २ ५९ सूत्रेण क्विन् । निपातनाद् उपसर्गान्तलोप षत्व च । उष्णिक् उष्णिगुत्स्नाता भवति । स्निह्यतेर्वा स्यात्कान्तिकर्मण । नि० ७ १२ उष्णिगुत्स्नातात् स्निह्यतेर्वा कान्तिकर्मणोऽपि वोष्णीषिणी वेत्यौपमिकम् । दे० ३ ४ यस्य सप्त ता उष्णिहम् कौ० ६ २ अष्टाविंशत्यक्षरोष्णिक् कौ० २६ १ आयुर्वा उष्णिक् ऐ० १ ५ ग्रीवा उष्णिह श० ८ ६.२ ११ चक्षुरुष्णिक् श० १० ३ ११ पशवो वा उष्णिक् ता० ८ १०.४ अजाविकमेवोष्णिक् कौ० ११ २ औष्णिहो वै पुरुष ऐ० ४ ३]

(स्त्रीपुरुष) स० वि० १३६, अथर्व० १४ २ ३८ कामयमाना (जनकादय) १६ ७० [वश कान्तौ (अदा०) धातोर्लट शतृप्रत्यय]

उशन्ता कामयमानौ (स्त्रीपुरुषौ) ७ ४२ ५ [वश कान्तौ (अदा०) धातो शतृप्रत्यय]

उशन्ति प्रकाशन्ते, कामयन्ते १ २ ४ भा०—साक्षात्कर्त्तु प्रयतन्ते ७ ८ [वश कान्तौ (अदा०) धातोर्लट् । ग्रह्यादिसूत्रेण सप्रसारणम्]

उशमानः कामयमान (इन्द्र =राजा) ४ १६ ४ [वश कान्तौ (अदा०) धातो शानच् । व्यत्ययेनात्मनेपद शप्रत्ययश्च]

उशानः कामयमान (विद्यार्थिजन) ४ २३ १ [वश कान्तौ (अदा०) धातो शानच् । व्यत्ययेनात्मनेपदम्]

उशिक् कामयमान (राजा) ८ ५० सत्यङ्कामयमान (अग्नि =भौतिकोऽग्निरिव राजा) १ ६० ४ कमिता (अग्नि =विद्वज्जन) ३ ३ ७ कान्तिमान् (भगवान्) ५ ३२ सर्वप्रिय, कमनीयस्वरूप अर्थात् सब लोगो का चाहने योग्य (ईश्वर) आर्याभि० २ १७, ५ ३२ **उशिग्भिः**=कामयमानैर्वीरै (राजपुरुषै) ३ ३४ ४. **उशिजम्**=सद्गुणप्रचार कामयमानम् (अध्यापकम्) ३ २७ १० **उशिजः**=मेधाविन (यजमाना =सङ्गन्तारो जना) प्र०—उशिगिति मेधाविनाम निघ० ३ १५, १२ २८ कामयमानान् (प्रजाजनान्) ३ १५ ३ कामयमाना (गोपालका जना) ४ १६ ६ कामयितार (राजाप्रजाजना) १ ६० २ कमनीयान् (देवान्=विदुषो जनान्) ६ ७ कमनीया (विद्युद्भूमसूर्यरूपेण ज्योतीषि) ३ २ ६ कमितार (मनीषिणो जना) २ २१ ५ [वश कान्तौ (अदा०) धातो 'वश कित्' उ० २ ७१ सूत्रेण 'इजि' प्रत्यय किच्च । उशिक् कान्तिकर्मा निघ० २ ६ उशिज =मेधाविनाम निघ० ३ १५ उशिग्वष्टे कान्तिकर्मण नि० ६ १०]

उशेन्यः कमनीय (राजा) ७ ३ ६ [वश कान्तौ (अदा०) धातो कृत्यार्थे केन्य प्रत्यय । धातो सम्प्रसारणम्]

उश्मसि कामयेमहि १ ६४ ३ कामयामहे, प्र०—अत्र 'इदन्तो मसि' इति मसेरिदन्ताऽऽदेश १ २१ १ प्रकाशयितु प्राप्तु वा कामयामहे १ २२ ६ उश्म कामयामहे ६ ३ [वश कान्तौ (अदा०) धातोर्लट् । 'इदन्तो मसि' रिति मस इदन्तत्वम् । कामयामहे नि० २ ७. उश्मसि कान्तिकर्मण निघ० २.६]

उषद्भिः य उषन्ति हविर्दहन्ति तैर्यजमानै २६ ३७ ईश्वरादिपदार्थविद्या कामयमानैर्विद्वद्भि सह १ ६ ३. [उप दाहे (भ्वा०) धातो शतृ । व्यत्ययेन श]

उषमाणः दहन् (राजा) ४ २२ २ [उप दाहे (भ्वा०) धातो शानच् । व्यत्ययेनात्मनेपद शप्रत्ययश्च]

उषर्बुधम् य उपसि वोधयति तम् (अग्नि =वह्निम्) ३ २ १४ य उषसि बुध्यते तम् (द्विजम्) ४ ६ ८ **उषर्बुधः**=उपसि बोधयुक्ता (हसास =अश्वा) ४ ४५ ४ रात्रिचतुर्थप्रहरे जागृता (सज्जना) १ १३२ २ य उषसि स्वय बुध्यन्ते, सुतान् बोधयन्ति तान् (देवान्=विदुषो जनान्) १ ४४ १ य उष काल बोधयन्ति तान् किरणान् १ ६२ १८ उप सम्प्राप्य बोधयन्ति तान् (देवान्=दिव्यान् भोगान्) १ १४ ६ उषसि वोधयुक्ता (हसास =अश्वा) ४ ४५ ४ **उषर्बुधे**=प्रत्युष काले जागरूकाय (अग्नये= विद्युते) १ १२७ १० [उषस्-उपपदे बुध अवगमने (भ्वा०) धातोरिगुपधलक्षण क प्रत्यय । अन्तर्भावितण्यर्थ]

उषर्भुत् य उपसि बुध्यते (अतिथिर्जन) ६ ४ २ य उषसि सर्वान् बोधयति स (अग्नि =विद्युदाद्यग्नि) प्र०—अत्रोषरुपपदाद् बुधधातो क्विप् 'वशो भष्०' इति भत्वञ्च १ ६५ ५ [उषस् उपपदे बुध अवगमने (भ्वा०) धातो क्विप् । 'कृतो बहुलमि' ति कर्त्तृभिन्नेष्वपि कारकेषु क्विप्]

उषसम् प्रात कालम् १ ४४ ८ दिनम् ३ ३२ ८ प्रभातकालम् ३ २० १ सन्धिवेलाम् १ ११५ २ रात्र्यन्तसमयम् १ ७१ १ प्रत्युष कालम् १ ५६.४ प्रत्यूष कालम् २ १२ ७ प्रभातसमयम् १ ११३ ११ **उषसः**=दिवसानि १ ६० ७ दिवसस्य ७ ३६ २ दिवसमुखस्य ४ १४ १ प्रभातवेला इव स्त्रिय १ ११३ २० प्रभातवेलाया दिनमिव ४ २ १५ प्रभाता इव १ ७६ १ प्रात कालीना सूर्यस्य रश्मय १ ६२ २ प्रात कालस्था प्रकाशा १ ६२ १ प्रातर्वेला इव ४ ५१ ३ प्रात कालस्य मध्ये १ १३१ ६. प्रात साय समयान्, भा०—प्रभातस्य १५ ३७ प्रात - कालात् १ ४४ १ प्रातर्मुखानि दिनानि १३ २८ प्रत्यूष - कालमिव सत्पुरुषान् ३ ४४ २ प्रकाशकर्त्र्यो वेला ३ १७ ३. उष काल से स० वि० १३८, अथर्व० १४ २ ३१ प्रात काल की वेलाओ को स० प्र० ११०, ऋ० १ १७६ १ **उषसा**=रात्र्यवसानोत्पन्नया दिवसहेतुना ३.१० दिनप्रमुखेन १ ६२ ५ दिनेन सह १ ७३ ७ प्रात - कालेन युक्तया क्रियया १ ४४ २ प्रकाशेन १ ४४ १४

३ ४३ ८ अतिशयेन गुणप्राप्तये १ ४८ १४ ऐक्यभाव-प्रवेशाय ३५० ५ रक्षणाद्यर्थाय १ १०६ १ रक्षादिव्यवहार-सिद्धये ५ ४६ ३ रक्षाऽर्थम् १ १०४ २ रक्षणाद्याय पुष्ट्ये १ ८ १ रक्षणाय, स्वामित्वप्राप्त्येत क्रियोपयोगाय वा १ ६ ६ क्रियासिद्धीच्छायै १ २३ ३ प्रीतये १ २२ ५ धनाढ्याय ७ ४४ १ प्रीत्याद्याय २७ ४१ **ऊतिभिः**=रक्षा-प्राप्ति-विज्ञान-सुख-प्रवेशनै १ ७ ४ अन्वेषणादिरक्षादिभि ५ ३३ ७ रक्षाप्रीतितृप्त्यवगमप्रवेशयुक्ताभि (क्रियाभि) १ ३२ ८ रक्षणादिकर्त्तृभि सेनाभि २ ११ १६ **ऊतिम्**=रक्षा, प्रीतिमवगम च १ १० १०. **ऊतिः**=रक्षणादियुक्ता नीति १ ११७ १६ रक्षणादिका (क्रिया) १ ६३ ६ [अव रक्षणगतिकान्तिप्रीतितृप्त्यवगमप्रवेशश्रवणस्वाम्यर्थयाचनक्रियेच्छादीप्त्यवाप्त्यालिङ्गनहिंसादान-भागवृद्धिपु (भ्वा०) धातो 'ऊतियूति०' अ० ३ ३ ९७ सूत्रेण क्तिन् निपात्यते । 'ज्वरत्वर०' अ० ६ ४ २०. सूत्रेण ऊठ् । ऊतिरवनात् निघ० ५ ३ ऊनी ऊत्या च पथा (च) नि० १२ २१ ऊतय खलु वै ता नाम याभिर्देवा यजमानस्य हवमायन्ति । ये वै पन्थानो या सुतयस्ता वा ऊतयस्त उ एवैतत् स्वर्गयाणा यजमानस्य भवन्ति । ऐ० १ २]

ऊती ऊत्या रक्षणाद्यया क्रियया ४ १ ५ ऊनये रक्षणाद्याय, प्र०—अत्र 'सुपा सुलुग्०' इति चतुर्थ्या एकवचनस्य पूर्वसवर्णादेश १ १०० १ ऊत्यै रक्षणाद्याय ४ २६ १ रक्षणादिव्यवहारसिद्धये १ १००.२ ऊत्या रक्षणाद्येन ४ २३ २ रक्षक (परमेश्वर) ऋ० भू० ३०८ ऊत्या रक्षणादिक्रियया ४ ३१ १ रक्षाद्यया क्रियया, प्र०—'सुपा सुलुग्०' इति पूर्वसवर्ण १८ ७४ रक्षाभि, प्र०—अत्र 'सुपा सुलुग्०' इति भिसो लुक् ४४१ ११ रक्षा के लिए आर्याभि० १ ३२, ऋ० १ ७ १० १५ सम्यग्रक्षया ७ १६ ११ ऊत्या रक्षणादिकर्मयुक्तया (क्रियया) १ १७८ १ व्यवहारविचारक्षे १ १८५ ६ ['ऊतय' पदे व्याख्यातम्]

ऊतीः रक्षाद्या क्रिया १ १३० ५ रक्षणाद्या १ ११६ ८ ['ऊतय' पदे व्याख्यातम्]

ऊत्या रक्षणादिसत्क्रियया १ १३५ ५ रक्षणेन ऋ० भू० २६० रक्षया ६ ४८ ६ ['ऊतय' पदे व्याख्यातम्]

ऊदिम वदेम १ १६१ १ [वद व्यक्ताया वाचि (भ्वा०) धातोर्यजादित्वात् किति सम्प्रसारणम्]

ऊधन् ऊधनि उषसि, प्र०—ऊध इत्युषसो नामसु पठितम् निघ० १ ८, १२ २० ऊधनि अवयवे ४ ७ ७ ऊधनि दुग्धाऽऽधारे १ १५२.६. आढ्ये धनाढ्ये (सदने=राज्ये) ४ १० ८ **ऊधनि**=रात्री, प्र०—ऊध इति रात्रिनाम निघ० १ ७, २ ३४ २ उप ममये ५ ३४ ३ अत्र वर्णव्यत्ययेन सस्य न ३.२६ १४ उपसि १.५२.३ **ऊध्नः**=विग्तीर्णवलान् (पुरुषान्) ४ २२.६ **ऊधः**=पयोधिकरणम् २ ३४ १० दुग्धाऽधिकरणम् १ ६६ २ दुग्धाऽऽधारम् ७ ५६.४ स्तनाऽऽधार २.१४ १० जलाऽऽधार धनसमूहम् ५.३२ २ जलस्थानम् १ १४६ २ रात्री ३ १ ६ उषा ३ ५५ १३ उपसम् १ ६४.५ उत्कृष्टम् (सोम=दुग्धादिरसम्) ४.२३ १ ऊर्ध्वं गमयिता (विद्वज्जन) ५ ४४ १३ [वह प्रापणे (भ्वा०) धातोर्बाहुलकाद् औणादिकोऽसुन् । धातो सम्प्रसारणे कृते दीर्घत्व धकारश्चान्तादेश वर्णव्यत्ययेन सस्य नकार । ऊधस् रात्रिनाम निघ० १ ७ गोरुध उद्धततर भवति उपोनद्धमिति वा । स्नेहानुप्रदानसामान्याद्रात्रिरप्यूध उच्यते नि० ६ १६ ऊधा रात्रिनाम निघ० १.७]

ऊनम् अ०—बुद्धिबलशौर्यादिकमपर्याप्तम् ३ १७ न्यून (बलादि) आर्याभि० २.३३, ३.१७ [अवति रक्षादिक करोतीति विग्रहे अव रक्षणादिपु (भ्वा०) धातो 'इण सिञ्जि०' उ० ३ २ सूत्रेण नक् प्रत्यय]

ऊनयीः परिहीण क्षीण न्यून सम्पादये, ऊनये. प्र०—लुङ्प्रयोगोऽयम् १ ५३ ३. [ऊन परिहाणे (चुरा०) धातोर्लुङ् । 'नोनयतिध्वनयति०' अ० ३ १ ५१ सूत्रेण णिजन्ताद् धातोश्च्लेश्चङ प्रतिपेधे सिच् । आडभावश्च]

ऊपथुः वपेथाम् १.११६.११. वपेतम् १ ११७ ५ वपत १ ११७ १२ **ऊपिषे**=वपसि, प्र०—अत्र लडर्थे लिट् १ ३१ ६ [डुवप् बीजसन्ताने (भ्वा०) धातोर्लिट् । यजादित्वात् किति सम्प्रसारणम्]

ऊम् अप्यर्थे १ ३२ १५ अद्भुते १.११३ २ आश्चर्ये ३ ५७ ४ चाऽर्थे १ ३६ १३ निश्चयाऽर्थे १.३४ ११ वितर्के १ २६ ५. जिज्ञासने १ २८ ३]

ऊमाः कमनीया (अश्वा=किरणा) ३ ६ ८ सर्वस्य रक्षणादिकर्त्तार (आप्ता पुरुषा) ५ ५२ १२ रक्षादिकर्मकर्त्तार (विद्वज्जना) ३३ ८० **ऊमैः**=रक्षणादिभि १ १६६ ७ **ऊमासः**=रक्षणादिकर्त्तार (विद्वज्जना) १ १६६ ३ [अव रक्षणादिपु (भ्वा०) धातो 'अविसिवि०' उ० १ १४४ सूत्रेण मन् प्रत्यय किच्च । 'ज्वरत्वर०' सूत्रेण ऊठ् । ऊमा वै पितर प्रात सवने, ऊर्वा माध्यन्दिने, काव्यास्तृतीयसवने (ऊमा=ऋतुविशेष)

उष्णीष. शिरोवेष्टनमिव ३८ ३ [उत् पूर्वात् ष्णो वेष्टने (भ्वा०) धातोर्णिजन्ताद् बाहुलकाद् ईषन् प्रत्यय । उपसर्गान्तलोपश्च । उष्णीष स्नायते नि० ७ १२]

उष्णीषिणे प्रशस्तमुष्णीष शिरोवेष्टन विद्यते यस्य तस्मै ग्रामण्यै भा०—प्रधानपुरुषाय १६ २२ [उष्णीष प्राति० अतिशायने इनि । उष्णीष पूर्वपदे व्याख्यातम्]

उस्रयाम्णे उस्रै किरणैरिव यानेन याति तस्मै (जनाय) ४ ३२ २४ [उस्रोपपदे या प्रापणे (अदा०) धातोर्मनिन् प्रत्यय । 'उस्र' अग्रिमपदे द्रष्टव्यम्]

उस्रः रश्मिरिव (विद्वज्जन) १ ६६ ५ किरणान्, प्र०—उस्रा इति रश्मिनाम निघ० २ १५, ५ ४६ ३ किरणयुक्तानि दिनानि ७ १५ १८ गा प्र०—उस्रेति गोनाम निघ० २ ११, ३ ५८ ४ **उस्राः**=सूर्यकिरणा, १ ३ ८ रश्मीन् ४ ४५ ५ किरणा ४ ११ ३ किरणान् ६ ३ ६ दिनानि ६ ५२ १५ गाव १ १२२ १४ रश्मय ४ २५ २ मूलराज्ये परम्परया निवसन्त (विद्वास) १ १७१ ५ [वस निवासे (भ्वा०) धातो 'स्फायितञ्जि०' उ० २ १३ सूत्रेण रक् । कित्वात् सम्प्रसारणम् । उस्रा रश्मिनाम निघ० १ ५ गोनाम निघ० २ ११]

उस्रा रश्मयो विद्यन्ते ययोस्तौ (अश्विना=अन्तरिक्षविद्युतौ) ६ ६२ १ किरणवद्वर्त्तमानौ (अग्निवायू) २ ३९ ३ [उस्र इति व्याख्यातम् । ततो मत्वर्थे 'लुगकारेकाराश्च वक्तव्या' अ० ४ ४ १२८ वा० सूत्रेण अकारप्रत्यय]

उस्रा इव यथा किरणास्तथा १ ८७ १ [उस्रा व्याख्यातम् । उस्रा-इवपदयो समास]

उस्रि गवादियुक्तम् (भेषजम्=औषधम्) ५ ५३ १४ [उस्रेति गोनाम निघ० २ ११ ततो मत्वर्थे इकारप्रत्यय]

उस्रिकम् य उस्राभिर्गोभिश्चरति तम् (विद्वज्जनम्) १ १९० ५ [उस्रेति गोनाम निघ० २ ११ चरत्यर्थे ततष् ठन्प्रत्यय]

उस्रियः उस्रासु किरणेषु भव (वृषभ=मेघ) ५ ५८ ६ [उस्रेति रश्मिनाम निघ० १ ५ ततो भवार्थे घ प्रत्यय]

उस्रिया क्षीरादिप्रदा (गौ) ४ ५ ९ **उस्रियाणाम्**=गवाम् ४ ५ ८ रश्मीनाम् ५ ३० ४ किरणानाम् ५ ३० ११ **उस्रियाभिः** किरणै १ ६२ ३ **उस्रियायाम्**=पृथिव्याम् ३ ३० १४ गवि १ १८० ३ भूमौ ३ ३९ ६ **उस्रियायाः**=दुग्धदात्र्या धेनो, प्र०—उस्रियेति गोनाम निघ० २ ११, १ १५३ ४ धेनोर्गो १ १२१ ५ **उस्रियासु**=पृथिवीषु ५ ८५ २ गोषु ४ ३१ भूमिषु २ ४० २. **उस्रियाः**=किरणा, प्र०—अत्र इयाडियाजीकाराणामुपसङ्ख्यानाम्, इत्यनेन शस स्थाने डियाजादेश, उस्रेति रश्मिनामसु पठितम् निघ० १ ५, १ ६ ५ उस्रासु रश्मीषु भवा विद्युत १ ११२ १२ पृथिव्या वर्त्तमाना (प्रजा) ४ ५० ५ किरणैस्सयुक्त (सूर्य) ३ १ १३ गाव किरणा ३ ३१ ११ ['उस्रिया' इति गोनाम निघ० २ ११ उस्रेति रश्मिनाम (निघ० १ ५) ततो भवार्थे य प्रत्यय । उस्राविणोऽस्या भोगा नि० ४ १९]

उस्रेव यथा गौस्तया १ ९२ ४ [उस्रा इव पदयो समास]

उस्रौ रश्मिमन्तौ निवासहेतू सूर्य्यवायू, प्र०—उस्रेति रश्मिनामसु पठितम् निघ० १ ५ गोनामसु च निघ० २ ११, ४ ३३ [उस्रा रश्मिनाम गोनाम च । ततो मत्वर्थे 'लुगकारेकाराश्च वक्तव्या' अ० ४ ४ १२८ वा० सूत्रेण अकार]

उहीत वहेत् ७.३७ ६ [वह प्रापणे (भ्वा०) धातोर्लिङ् । छान्दस रूपम्]

उहुवः भाराणा वोढार (हसास=अश्वा) ४ ४५ ४ [वह प्रापणे (भ्वा०) धातोश्छान्दस रूपम्]

उह्यमानः गम्यमान (इन्द्र=राजपुरुष) २ १८ ६ [वह प्रापणे (भ्वा०) धातो कर्मणि शानच्]

ऊचिम उच्याय १ १६१ १ **ऊचिषे**=वक्ति १२ ४९ उच्या ३ २२ ३ **ऊचुः**=वदन्ति ६ ४५ ८. वदन्तु ४ ३३ ६ [वच परिभाषणे (अदा०) धातोर्लिट्]

ऊचुषे वक्तुमर्हाय (श्रवसे=धनाय) १ १०३ ४. [वच परिभाषणे (अदा०) धातोर्लिट क्वसु]

ऊतयः रक्षा ४ ३१ १० रक्षका गुणा ३ १३ २ रक्षादिक्रियावन्त (जना) १ १३४ २ रक्षणादिका क्रिया १ ६१ ६ रक्षादय १ ५१ २ रक्षणादीनि कर्माणि १ ८४ २० रक्षणाद्या ५ ५४ ७ रक्षणानि १ ११ ३ रक्षा-विज्ञान-सुखप्राप्त्यादय १ ८ ९ अनन्तरक्षण तथा बलादि गुण आर्याभि० १ ४१, ऋ० १ ७ ९ ७ कमनीया रक्षादय प० वि० । रक्षा करने हारे (उपाय) आर्याभि० १ २६ रक्षादिक्रियावन्त (ऋाणा=सज्जना) १ १३४ २ **ऊतये**=व्यवहार-सिद्धि-प्रवेशाय ३ ३९ ९ विद्याप्राप्ताय प्र०—अत्राऽवधातो प्रयोग 'ऊतियूति०' अ० ३ ३ ९७ अस्मिन् सूत्रे निपातित १ ४ १ विद्यादिशुभगुणप्रवेशाय

ऊर्जः ऊर्जयन्ति सर्वे पदार्था यस्मिन् स कार्त्तिक १४ १६ **ऊर्जाय**=बलाऽन्नोत्पादकाय कार्त्तिकाय २२ ३१ [ऊर्ज बलप्राणनयो (चुरा०) धातो क्विप्। ततो मत्वर्थे 'लुगकारेकाराश्च वक्तव्या' अ० ४ ४ १२८ वा० सूत्रेण अकार]

ऊर्जा वेगपराक्रमादिगुणयुक्ता (सहिता=विद्युत्) ३ २२ [ऊर्ज बलप्राणनयो (चुरा०) धातोर्बाहुलकाद् औणादिकेऽन् प्रत्यये स्त्रिया टापि रूपम्]

ऊर्जा पराक्रमयुक्तानि कर्माणि, भा०—शरीरात्मबलानि १२ ६ [ऊर्ज बलप्राणनयो (चुरा०) धातोर्बाहुलकादौणादिकोऽन्। 'शेश्छन्दसि बहुलम्' अ० ६ १ ७० सूत्रेण शेर्लोप]

ऊर्जानी पराक्रमयुक्ता नीति १ ११६ २

ऊर्जाहुतयः ऊर्जा बल-प्राणनकारिका आहुतयो ग्रहणानि दानानि वा येषान्ते (ग्रहा=गृहाश्रमिणो जना) ६ ४ [ऊर्ज्-आहुतिपदयो समास। ऊर्ज् इति व्याख्यातम् आहुति=आङ्+हुदानादानयो (जु०) धातो क्तिन्]

ऊर्जाहुती सुसंस्कृताऽन्नाऽऽहुती २८ ३६ अन्नस्याऽऽहुती २१ ५२ बलप्राणधारिके (उषासानक्ता=रात्रिदिने), बलस्याऽऽदात्र्यौ (रात्रिदिने) २८ १६ [ऊर्जाहुती ऊर्जाह्वान्यौ। द्यावापृथिव्याविति वाहोरात्रे इति वा गस्य च समा चेति कात्थक्य नि० ६ ४१ सिद्धि पूर्वपदे द्रष्टव्या]

ऊर्णम्रदाः य ऊर्णैराच्छादकैर्मृदन्ते ते (जना) २१ ५७ [ऊर्णोपपदे म्रद मर्दने (भ्वा०) धातोरच् प्रत्यय]

ऊर्णम्रदसम् ऊर्णानि धान्याच्छादनानि तुषाणि म्रदयन्ति येन त पाषाणमयम्, अ०—प्रस्तर उलूखलाख्य साधकोऽस्त्याऽस्ति तस्मात्तम् २ २ ऊर्णानि सुखाऽऽच्छादनानि म्रदयति येन त यज्ञम् २ ५ **ऊर्णम्रदाः**=य ऊर्णानाच्छादकानि मृदनन्ति ते (मनुष्या) २१ ३३ य ऊर्णै रक्षकैर्मृदनन्ति (अर्का=मन्त्रार्थविदो जना) ५ ५ ४ ऊर्णमाच्छादन मृदनन्ति सन्त्वेषन्ति यया सा (ऊर्क्=शिल्पविद्या) ४ १० [ऊर्णोपपदे म्रद मर्दने (भ्वा०) धातोरसुन् प्रत्यय]

ऊर्णाम् आच्छादिकाम् (शत्रुसेनाम्) ४ २२ २ **ऊर्णाः**=रक्षिता (विदुषा सङ्गा) ५ ५२ ६ [ऊर्णुञ् आच्छादने (अदा०) धातो 'ऊर्णोतेर्डे' उ० ५ ४७ सूत्रेण ड प्रत्यय। स्त्रिया टाप्। ऊर्णा पुनर्वृणोतेरूर्णोतेर्वा नि० ५ २१]

ऊर्णायुम् अविम् १३ ५० [ऊर्णाप्राति० 'ऊर्णाया युस्' अ० ५ २ १२३ सूत्रेण मत्वर्थे युस्। 'सिति च' इति पदत्वाद् भत्वाऽभावात् 'यस्येति चे' ति लोपो न। ऊर्णां याति प्राप्नोतीत्यूर्णायुरिति विग्रहे ऊर्णोपपदे या प्रापणे धातो 'डुप्रकरणे मितद्र्वादिभ्य उपसंख्यानम्' अ० ३ २ १८० वा० सूत्रेण डु प्रत्यय। इममूर्णायुमित्युर्णावलमित्येतत् श० ७ ५ २ ३५]

ऊर्णावन्तम् बहूर्णादिवस्त्रयुक्तम् (योनिं=गृहम्) ६ १५ १६ [ऊर्णा प्राति० भूम्न्यर्थे मतुप्]

ऊर्णासूत्रेण ऊर्णाकम्बलेनेव (भा०—साधनविशेषेण) १६ ८० [ऊर्णा-सूत्रपदयो समास। ऊर्णा व्याख्यातम्]

ऊर्णु आच्छादय १६ ५३ **ऊर्णुत**=आच्छादयत २ १४ ३ **ऊर्णुते**=आच्छादयति १ ६२ ४ **ऊर्णुवाथाम्**=आच्छादयताम् २ १६ प्राप्नुयाथाम् २३ २० **ऊर्णुषे**=स्वव्याप्त्याऽऽच्छादयसि ४ ५४ २ विस्तारयसि ३३ ५४ **ऊर्णोत्**=आच्छादयति स्वीकरोति वा १ ६८ १ **ऊर्णोति**=निष्पादयति १ १०५ १५ [ऊर्णुञ् आच्छादने (अदा०) धातोर्लोट् लट् लेट् च]

ऊर्दरम् कुसूलम् २ १४ ११ [ऊर्क् पराक्रमं रस वा दृणातीति विग्रहे 'ऊर्जि दृणातेरलचौ' उ० ५ ४० सूत्रेण दॄ विदारणे (क्र्या०) धातोरलचौ प्रत्ययौ। ऊर्दर कृदरमित्यावपनम्य, ऊर्दरमुदीर्ण भवति ऊर्ज दीर्ण वा नि० ३ २०]

ऊर्ध्वग्रावाणः मेघा ३ ५४ १२ [ऊर्ध्व=उच्छ्रितो भवति। ग्राव मेघनाम निघ० १ १० तयो समास]

ऊर्ध्वचितः ऊर्ध्व सञ्चिन्वन्ते (विद्वज्जना) १२ ४६ ऊर्ध्वानुत्कृष्टगुणान् चेतयन्ति ते मनुष्याश्चितानि कपालानि वा १ १८ [ऊर्ध्वोपपदे चिञ् चयने (स्वा०) धातो क्विप्]

ऊर्ध्वनभसम् ऊर्ध्व नभो जल यस्मात्तम्, अ०—त्वद्यज्ञशोधित जलमूर्ध्वप्रापकम् (मारुतम्) ६ १६ [ऊर्ध्वनभस्पदयो समास। ऊर्ध्व=उच्छ्रितो भवति नि० ८ १५ नभ=उदक नाम निघ० १ १२]

ऊर्ध्वपृश्निः ऊर्ध्व उत्कृष्ट पृश्नि स्पर्शो यस्य स (पशु पक्षी वा) २४ ४ [ऊर्ध्व-पृश्निपदयो समास। ऊर्ध्व व्याख्यातम्। पृश्नि=साधारणनाम निघ० १ ४ स्पृशति सयुक्तो भवतीति विग्रहे 'घृणिपृश्नि०' उ० ४ ५२ सूत्रेण स्पृश सस्पर्शने (तुदा०) धातोर्नि प्रत्ययो निपात्यते। धातो सकारलोप]

ऊर्ध्वबर्हिभ्यः ऊर्ध्वमुत्कृष्ट बर्हिर्वर्द्धन येभ्यस्तेभ्य (पितृभ्य=पालकेभ्यो जनेभ्य) ३८ १५ [ऊर्ध्व-बर्हि-

नैत्तरीय ४.४ ७ २) ऐ० ७ ३४]

उरः वक्षस्थलम् १ १५८ ५

ऊरुभ्याम् जानुन ऊर्ध्वाभ्या पादाऽवयवाभ्याम् २५ ६ [ऊर्णुञ् आच्छादने (अदा०) धातो 'ऊर्णोतेर्नुलोपश्च' उ० १ ३० सूत्रेण कु]

ऊरू सक्थिनी २० ८ ऊरू इव वेगादिकर्मकर्त्तृणी (शरीराङ्गे) ३१ ११ कटि के अधस्थ और जानु के उपरिस्थ भाग स० प्र० ११४, ३१ ११ व्यापारादिमध्यमैर्गुणैरुत्पन्ने (शरीराऽवयवे) ऋ० भू० १२५ **ऊरुम्**=वह्लाच्छादन स्वीकरण वा ४ २७ **उरुभ्याम्**=जानुन ऊर्ध्वाभ्या पादाऽवयवाभ्याम् २५ ६ **ऊरौ**=आच्छादने ८.५५ [पूर्वपदे व्याख्यातम् । अनुष्टुप् छन्दो विश्वेदेवा देवतोरु श० १०.३ २ ६]

ऊर्क् सुसंस्कृतमन्नम् १८ ६ पराक्रमाऽन्नादिप्रदा शिल्पविद्या ४ १० पराक्रमोऽन्न वा १७ १ वलवान् (ब्रह्म) १०.२५ रस १८ ५४ **ऊर्ज्जम्**=पराक्रमाख्या नीतिम् १ ११६.८ पराक्रमम् १ ११८ ७ पराक्रममन्नादिक वा ४ १० विद्यादिपराक्रममनुत्तम रस वा १ १६. प्राणनम् २८ १६ वलम् १५ ६ शरीराऽऽत्मवलम् १२ ५८ अनेकविध वलम् ३ ४१ इष्ट विविध रसम्, प्र०—ऊर्ग्रस, श० १ ५ ४.२, २ ३४ पराक्रम तथा अन्नादि ऐश्वर्य को स० वि० १४६, ३.४१ अन्न पराक्रम वा, प्र०—ऊर्गिति अन्ननाम, निघ० २ ७, ६ ७० ६ **ऊर्जः**=पराक्रमस्य ६ ४८ २ पराक्रमान् ५ १७ ५ पराक्रमात् १ ५८ ८ पराक्रमयुक्तस्य (मनुष्यस्य) ५ ७ १ पराक्रमयुक्ता (विद्यार्थिनो जना) ७ १७ ६ पराक्रमा अन्नादयो वा २ ११.१ वलपराक्रमप्रदा, भा०—वलपराक्रमयोर्जनका. (आप =प्राणरूपा) १८ ४१ वलादियुक्तस्य (विद्वज्जनस्य) ६ १६ २५ पृथिवी आदि जगत् रूप अन्न का, आर्याभि० १ ४०, ऋ० १ ७ ३ ३ वायुरूपात् कारणात् १ ६६ ३ **ऊर्जाम्**=वलयुक्ताना सेनानामन्नादीना वा ५ ४१ १२ **ऊर्जे**=वेदविद्याविज्ञानग्रहणाय ऋ० भू० १५२ पराक्रमप्राप्तये १४ २२ पराक्रमोत्तमरसलाभाय, प्र०—श० ५ १ २ ८, ११ कार्त्तिकाय ७ ३० अत्यन्त पराक्रम के लिए आर्याभि० २ ३१, ३८ १४ [ऊर्जे अन्नाय नि० ६.२६ ऊर्ग् इत्यन्ननामोर्जयतीति सत । पक्व सुप्रवृक्णमिति वा नि० ३ ८ ऊर्क्=अन्ननाम निघ० २ ७ ऊर्ज वलप्राणनयो (चुरा०) धातो क्विप् । ऊर्क् अन्न च रस च नि० ६ ४१ ऊर्ज दधाथामिति रस दधाथामित्येवैतदाह श० ३ ६ ४ १८ ऊर्ग् वा आपो रस कौ० १२ १ आपो वा ऽऊर्जोऽद्भ्यो ह्यूर्ग् जायते श० ६ ४ १ १० ऊर्ग् वा उदुम्वर तै० १ १ ३ १० अन्न वा ऽ ऊर्गुदुम्वर श० ३ २ १ ३३ ऊर्ग् वा अन्नमुदुम्वर तै० १ २ ६ ५ ऊर्ग् वा अन्नाद्यमुदुम्वर ऐ० ५ २४ कौ० २५ १५ ऊर्ग् वै मुञ्जा तै० ३ ८ १ १ ऊर्ग् विराट् तै० १ २ २ २ अन्नमूर्जम् कौ० २८ ५]

ऊर्जम् पराक्रमम् ११.८३ **ऊर्जे**=वलयुक्ताय पराक्रमाय) ११ ५० [ऊर्ज वलप्राणनयो (चुरा०) धातो क्विप्]

ऊर्जयन् वल प्राप्नुवन् (विद्वज्जन.) २ ३५ ७ [ऊर्ज वलप्राणनयो (चुरा०) धातो शतृ]

ऊर्जयन्तीम् पराक्रमादिदानेनोन्नयन्तीम् (सुमतिं=श्रेष्ठा प्रज्ञाम्) ५ ४१ १८ वल प्रापयन्तीम् (महौषधीम्) १२ ८१. **ऊर्जयन्तीः**=वलयन्त्य (शक्तय) ३ ७ ४ **ऊर्जयन्त्यः**=ऊर्जवतीषु वलयन्तीषु साध्व्य (आप) २.१३ ८ [ऊर्ज वलप्राणनयो (चुरा०) धातो शत्रन्तान् ङीप्]

ऊर्जयमाने वल कुर्वाणे (उपासानक्ता=रात्रिदिने) २८ १६ [ऊर्ज वलप्राणनयो (चुरा०) धातो शानच्]

ऊर्जव्यस्य वहुवलप्राप्तस्य (भा०—सर्वविद्यासम्वन्धस्य) ५ ४१ २०

ऊर्जसने पराक्रमस्य प्रक्षेपणे ६ ४ ४ [ऊर्ज्-असनपदयोऽसमास । ऊर्ज् व्याख्यातम् । असनम्=असुक्षेपणे (दिवा०)+ल्युट्]

ऊर्जस्वती अन्नवती, ऊर्ग् वहुविधमन्न यस्या सा (पृथिवी) प्र०—अत्र 'तदस्यास्त्य०' इति भूम्नि मतुप् 'ऊर्गिति अन्ननाम' निघ० २ ७ 'ज्योत्स्नातमिस्रा०' अ० ५ २ ११४ इति निपातित १ २७ ऊर्ज पराक्रमसम्वन्धो विद्यते यस्या सा (सीता=काष्ठपट्टिका) १२ ७० वहुत वल, आरोग्य, पराक्रम को वढाने वाली, धन-धान्य से पूरित सम्वन्ध वाली (शाला) स० वि० १६७, अथर्व० ६ २ ३ १६ **ऊर्जस्वतीः**=वलपराक्रमप्रदा (अप = जलानि प्राणान्वा) १० १ [ऊर्जस्प्राति० भूम्न्यर्थे मतुवन्तात् स्त्रिया ङीप् । ऊर्जस्=ऊर्जवलप्राणनयो (चुरा०) धातोरसुन् । ऊर्जस्वती नदीनाम निघ० १ १३]

ऊर्जस्वन्तम् प्रशस्तवलकारकम् (अ०—रसम्) १७ ८७ उत्तमपराक्रमसम्वन्धिनम् (करदाय प्रजापुरुषम्) ६ ३०. [ऊर्ज वलप्राणनयो (चुरा०) धातोरसुन् प्रत्ययान्तान् भूम्न्यर्थे मतुप्]

ऊर्व्याय ऊर्वी हिंसाया साधवे (पुरुषाय) १ ६ ४ ५ [उर्वी हिंसार्थे (भ्वा०) धातोर्बाहुलकादौणादिकः कु प्रत्ययः। स्त्रियां ङीप्। ततः 'तत्र साधु' रित्यर्थे यत्]

ऊर्व्यूतिः ऊर्व्या पृथिव्या ऊती रक्षा येन स (राजा) ६ २४ २ [ऊर्वी-ऊतिपदयो समास। ऊर्वी=ऊर्णुञ् आच्छादने (अदा०)+कु। स्त्रियां ङीप्। ऊति=अव-रक्षणादिषु (भ्वा०+क्तिन्)]

ऊवध्यम् वधितु ताडितुमर्हम् (उदरस्थमपक्वमन्नम्) १ १६२ १० ऊरू वध्ये येन तत् (रेत=वीर्यम्) प्र०—अत्र छान्दसो वर्णलोपो वा, इति रुलोप १६ ८४ मलीनम् (भा०—दुर्गन्धयुक्त द्रव्यम्) २५ ३३ [ऊरु-वध्यपदयो समास। पूर्वपदस्थस्य रोर्लोप। वध्यम् वधप्राति० 'दण्डा-दिभ्यो य' अ० ५ १ ६६ सूत्रेणार्हत्यर्थे य प्रत्ययः]

ऊवुः तन्तुवद् विस्तारयेयु. १ ६१ ८ [वेञ् तन्तु-सन्ताने (भ्वा०) धातोर्लिट्। 'वश्चास्यान्यतरस्यां किति' इति सूत्रेण यकारस्य वकार]

ऊष निवासयन्ति ४ ५१ ४ **ऊषतुः**=वास करते थे स० प्र० १२०, १० ४० २ **ऊषुः**=वसेयु ३ ७ १० [वस निवासे (भ्वा०) धातोर्लिट्। यजादित्वात् सम्प्रसारणम्। 'शासिवसिघसीनाञ्चे' ति षत्वम्। पुरुषव्यत्ययः]

ऊष्मणः आतपान् ६ १८ **ऊष्मणा**=ऊष्णतया २५ ९ [उष दाहे (भ्वा०) धातोर्बाहुलकादौणादिको मनिन् प्रत्यय। अन्येषामपीति दीर्घ]

ऊष्मण्या ऊष्मसु साधूनि (पात्राणि) २५ ३६ [ऊष्मन्प्राति० 'तत्र साधु' रित्यर्थे यत्। ऊष्मन् इति व्याख्यातम्]

ऊहति वितर्कयति ५ ३४.३ **ऊहथुः**=प्राप्नुतम् १ ११६ ४ प्रापयतम् १ ४७ ६ प्रापयथ ६ ६३ ६ वहतम् १ ११६ २० वहेतम् १ ११६ ३ वहथ, प्र०—अत्र पुरुष-व्यत्यय ६ ६२ ३ देशान्तरमगा सम्यक् सुखेन प्रापयत ऋ० भू० १६०, सद्यो गमयेतम् १ ११६ ५ **ऊहामि**=तर्कयामि ६ ३ तर्केण निश्चयामि ५ २५ योजयामि, तर्केण क्षिपामि, तर्कै प्राप्नोमि करोमि वा २ १५ [ऊह वितर्के (भ्वा०) धातोर्लट्। व्यत्ययेन परस्मैपदम्। ऊहथु=वह प्रापणे (भ्वा०) धातोर्लिट्। यजादित्वात् किति सम्प्रसारणम्]

ऊहिरे प्राप्नुवन्ति २ ३४ १२ **ऊहिषे**=वितर्कयसि १ १२८ ६ **ऊहुः**=वहन्ति ४ २७ ३ [वह प्रापणे (भ्वा०) धातोर्लिट्। सम्प्रसारण किति। ऊहिषे=ऊह वितर्के (भ्वा०) धातोर्लिट्। छान्दसत्वाद् आमोऽभाव]

ऊहे वितर्कयामि ५ ३ ६ [ऊह वितर्के (भ्वा०) धातो-र्लट्]

ऊह्याते देशान्तर गम्यते १ १२० ११. **ऊह्याथे**=वितर्कयथ ४ ५६ ६ [वह प्रापणे (भ्वा०) ऊह वितर्के (भ्वा०) धातो कर्मणि लट्]

ऊहळाः प्राप्ता (दिश) ६ ६० २

ऋक् ऋग्वेद १८ २६ ऋग्वेदाऽध्ययनम् ऋ० भू० १५४, **ऋग्भिः**=मन्त्रै २ ३५ १२ **ऋचम्**=प्रशंसनीय-मृग्वेदम् ३६ १. **ऋचः**=ऋग्वेदश्रुतय १८ ६७ ऋग्वेदा-ऽऽदे १ १६४ ३६ चत्वारो वेदा ऋ० भू० ३१६, ऋच्स्तुतय ५ ४४ १४ प्रशंसितवृद्धयो विद्यार्थिन ५ ४४ १५ सब वेदों का स० प्र० ६१, १ १६४ ३६ ऋग्वेद ३४ ५ **ऋचा**=वेदचतुष्टयेन १ १६४ ३६ प्रशंसया, ऋग्वेदादिना ६ १६ ४७ स्तुत्या ५ ६४ १ ऋग्वेदेन ११ ८ प्रशंसया ५ ६ ५ स्तुत्या ऋग्वेदादिना वा, भा०—वेदगीत्या १८ ६३ वेदादि शास्त्र पढने मे, स० वि० २१५, १ १६४ ३६ ऋग्वेदादि से स० प्र० ६१, १ १६४ ३६ प्रशंसितौ (स्त्री-पुरुषौ) २ ३.७ **ऋचे**=स्तुतये १३ ३६ [ऋच् स्तुतौ (तुदा०) धातो क्विप् 'अन्येभ्योऽपि दृश्यन्ते' सूत्रेण। ऋक् वाड्नाम निघ० १ ११ ऋक् अर्चनी नि० १ ८ अथेमानि प्रजापतिर् ऋक्पदानि शरीराणि सञ्चित्याऽभ्यर्चत्। यद-भ्यर्चत्ता एवर्चोऽभवन् जै० उ० १ १५ ६ प्राणो वा ऋक् प्राणेन ह्यर्चति श० ७ ५ २ १२ ब्रह्म वा ऋक् कौ० ७ १० वागृक् जै० उ० ४ २३ ४. वागेवर्क्‌श्च सामानि च। मन एव यजूंषि श० ४ ६ ७ ५ ऋग् स्यन्तरम् तां० ७ ६ १७ अमृत वा ऋक् कौ० ७ १० अस्थि वा ऋक् श० ७ ५ २ २५ ऋक् शतपदी प० १ ४ तस्य (दक्षिणनेत्रस्य) यच्छुक्ल तदृचा रूपम् जै० उ० ४ २४ १२ ऋक्सामयोर्हैते (शुक्लकृष्णे) रूपे श० ६ ७ १ ७ उक्थमिति बह्वृच (उपासते) श० १० ५ २ २० यदेतन्मण्डल (आदित्य) तपति। तन्महदुक्थ ता ऋच स ऋचा लोक श० १० ५ २ १ वीर्यं वै देवतऽर्च्च श० १.७ २ २०]

ऋक्वता बहुप्रशंसायुक्तेन (गणेन=उपदेश्यविद्यार्थि-समुदायेन) ४ ५० ५ [ऋच्प्राति० प्रशसाया मतुप्। 'अयस्मयादीनि च्छन्दसि' अ० १ ४ २० सूत्रेण पदत्वात् कुत्व भत्वाज्जश्त्व च न भवति]

ऋक्वभिः प्रशस्ता ऋच स्तुतयो विद्यन्ते येषु कर्मसु तै १ ८७ ६ प्रशसनीयै (विनयादिगुणै) ६ ३२ २ प्रशसितै (कविभि=विपश्चितै ६ ३२ ३ प्रशसितैर्गुणकर्म-

पदयो समास । बर्हि =बृह बृहि वृद्धौ (भ्वा०) धातो-र्बाहुलकादौणादिक इ प्रत्यय]

ऊर्ध्वम् उपरिस्थम् (भानु=किरणम्) ४ ६ २ उत्कृष्ट भागम् १ ८८ ४ उत्कृष्टगुणम् (यजम्) ५ १७ उच्छ्रितम् उत्कृष्टम् (केतु=प्रज्ञाम्) ३ ८ ८ उत्कृष्टमार्गम् प्रति १ ८५ १० प्राप्तोन्नतिम् (अध्वरम्=अहिंसनीय व्यवहारम्) २७ १८ अग्रगामिनम् (राजानम्) २३ २७ **ऊर्ध्व.** =उन्नत (अग्नि =राजकर्मचारिजन) ४ ४.५. उपर्य्याकाशस्थ (अग्नि =राजा) १२ १३ ऊर्ध्वगामी (पावक) ५ १ २ उपर्य्यविद्याता (अग्नि =विद्वान्) ४ ६ १ ऊर्ध्व स्थित उत्कृष्ट (इन्द्र =पुरुषार्थी सभेश) २ २० ६ ऊर्ध्व स्थित ऊर्ध्व स्थापितो वा (जन) ४ १० सब से उत्कृष्ट गुण वाला (परब्रह्म) आर्याभि० १ १६ उपरिगामी (गातु =स्नावको जन) ३ ४ ४ ऊर्ध्वगामी (अग्नि = पावक) ७ ३६ १ [ऊर्ध्व =उच्छ्रितो भवति नि० ८ १५ उत्+डुधाञ् धारणपोषणयो (जु०) धातोर्बाहुलकादौणादिक क्वन् प्रत्यय• । बाहुलकाद् 'उत्' इत्यस्य 'ऊर्' इत्यादेश]

ऊर्ध्वया उपरि गत्या १५ ४७

ऊर्ध्वया उत्कृष्टया (धियया) १ १२७ १ **ऊर्ध्वा**= उत्कृष्टा (उषा) ३ ५५ १४ ऊर्ध्व स्थिता (उष =उषा) ३ ६१ ३ उत्कृष्टसुखप्रापिका (वाणी =वाणी) १ ८८ ३ **ऊर्ध्वाम्**=उत्कृष्टाम् (धियम्) १ १४४ १ **ऊर्ध्वाः** =ऊर्ध्व-गमयित्र्य (मेधा =प्रज्ञा) ३ ५८ २ उत्तमा (समिध) २७ ११ उपरिस्था (दिश) १६ ६४ ऊर्ध्व गामिन्यो ज्वाला १ १८१ ६ उच्चपदस्थ (स्त्रिय) १ १४० ८ **ऊर्ध्वायै**=ऊर्ध्ववर्तमानायै (दिशे) २२ २४ **ऊर्ध्वा**= ऊर्ध्वानि (तेजासि) २७ ११ ऊर्ध्व गन्तॄणि (तेजासि) ७ ४३ २ **ऊर्ध्वासः**=उत्कृष्टा (जना) ७ ३१ ६ ['ऊर्ध्वम्' इति व्याख्यातम् । अथैतदन्तरिक्षम् (ऊर्ध्वा दिक्) एषा हि दिग्बृहस्पते श० २ ३ ४ ३६ पक्ति (छन्द) ऊर्ध्वा दिक् श० ८ ३ १ १२ एषा वा ऊर्ध्वा बृहस्पतेर्दिक्-यदेष उपरिष्टादर्यम्ण पन्था श० ५ ५ १ १२ स्वर्ग्यैव ऊर्ध्वा दिक् ऐ० १ १८]

ऊर्ध्वशोचिषम् ऊर्ध्वज्वालम् (अग्निम्) ६ १५ २ [ऊर्ध्व-शोचिष्पदयो समास । शोचिस्=शोचति ज्वलति-कर्मा (निघ० १ १६) धातो 'अर्चिशुचिहुसृपि०' उ० २ १०८ सूत्रेण इसि प्रत्यय]

ऊर्ध्वसानु. ऊर्ध्व सानव शिखरा यस्य स (अर्वा= सूर्य) १ १५२ ५ [ऊर्ध्व-सानुपदयो समास । सानु = षण सम्भक्तौ (भ्वा०) धातो 'दृसनिजनिचरि०' उ० १ ३ सूत्रेण ञुण्प्रत्यय । षणु दाने (तना०) धातोर्वा ञुण्]

ऊर्मय: तरङ्गादय १ ५२ ७ वीचय १ ४४ १२ समुद्रादिजलतरङ्गा ६ ४४ २० **ऊर्मिभिः**=शत्रुभेदनोत्थ श्रमस्वेदोदकै १७ ९५ प्रापकै प्रकारैस्तरङ्गैर्वा, प्र०— अत्र 'अर्त्तेरुच्च' उ० ४ ४ इति ऋधातोर्मि प्रत्यय ऊकारा-देशश्च १ ६५ १०. **ऊर्मिम्**=उषम जलवीचि वा १ ६५ १० रक्षणादिकम्, अ०—आनन्दम् ४ ५८ ११ तरङ्गमिवो-च्छ्रितम् (आहारम्) ७ ४७ १. बोधम् १७ ९६ जलधाराम् ४ ५७ २ लहरीम् ७ ३८ **ऊर्मि:**=ज्ञाता (राजा), प्रापक (राजा) १० २ आच्छादकस्तरङ्ग ९ ६ जलसमूह ४ ५८ १ **ऊर्म्मीन्**=सतरङ्गान् (सिन्धून् =नदी) ४ १९ ५. [ऊर्मि ऊर्णोति नि० ५ २४ ऊर्णुञ् आच्छादने (अदा०) धातो 'अर्त्तेरुच्च' उ० ४ ४४ सूत्रेण बाहुलकात् मि । ऋ गतौ (भ्वा०) धातोर्वा मि प्रत्यय]

ऊर्म्या राज्या सह, प्र०—ऊर्म्येति रात्रिनाम, निघ० १ ७, १ १८४ २ **ऊर्म्याया:**=रात्रे ६ ६५ २. रात्र्या ६ १० ४ **ऊर्म्ये**=रात्रीव वर्त्तमाने (देवि=विदुषि स्त्रि) ५ ६१ १७ [ऊर्म्या रात्रि नाम निघ० १ ७]

ऊर्म्याय ऊर्मिषु जलतरङ्गेषु भवाय वायुरिव वर्त्त-मानाय (मनुष्याय) १६ ३१ [ऊर्मि पद व्याख्यातम् । ततो भवार्थे यत्]

ऊर्व इव प्राप्तेन्धनोऽग्निरिव ३ ३० १६

ऊर्वम् आच्छादकम् (सत्यम्) ४ २८ ५ दु खाना हिंसकम् (अग्निम्) २ ३५ ३ हिंस्यम् (दुष्टजनम्) ६ १७ १ दोषहिंसनम् १ ७२ ८. निरोधस्थानम् ३ ३२ १६ **ऊर्वात्**= बहुरूपात् ५ ४५ २ हिंसनात् ६ १७ ६ विस्तीर्णात् (परिश्रमात्) ४ १२.५ **ऊर्वान्**=आच्छादकान् पावकान् ७ १६ ७ विनश्वरान् पदार्थान् २ १३ ७ [उर्वी हिंसार्थे (भ्वा०) धातोर्बाहुलकादौणादिक क्वन् प्रत्यय । 'राल्लोप ' इति वलोपे 'वोरुपधाया०' इति दीर्घे । ऊमा वै पितर प्रात सवने, ऊर्वा माध्यन्दिने, काव्यास्तृतीयसवने श० ७ ३४]

ऊर्वष्ठीवे ऊरू चाऽष्ठीवन्तौ च ते, प्र०—अत्र 'अच-तुर०' अ० ५ ४ ७७ इति निपातित १८ २३. [ऊरु= ऊर्णुञ् आच्छादने (अदा०) धातो 'ऊर्णोतेर्नुलोपश्च' उ० १ ३०. सूत्रेण कु प्रत्यय । अष्ठीवन्=अस्थिप्राति० मतुपि 'आसन्दीवदष्ठीवत्० अ० ८ २ १२ सूत्रेणाष्ठीभाव । ततो समासे 'अचतुरविचतुर०' अ० ५ ४ ७७ सूत्रेण समासान्तोऽच्-प्रत्यये टिलोपो निपात्यते]

वा) ४ २४ ८ ['ऋ' उपपदे हन् हिंसागत्यो (अदा०) धातो क्वनिप् प्रत्यय । ह्य घकार नकारस्याकारश्छान्दस]

ऋघावान् ऋघा बह्वच स्तुनय सत्याऽसत्यविवेचिका मतयो विद्यन्ते यस्मिन् स (मन्त्र =विचार) १ १५२ ५ य ऋन् शत्रून् घ्नन्ति ते वा बहव शूरा विद्यन्ते यस्य स (इन्द्र =परमैश्वर्ययुक्तो जन), प्र०—अत्र हनधातोर्वर्ण-व्यत्ययेन हग्य घो नलोपश्च ३ ३० ३

ऋचसे प्रशसिताय कर्मणे ६ ३९ ५ [ऋच् स्तुतौ (तुदा०) धातोरसुन् प्रत्यय]

ऋचीषम ऋचा तुल्यप्रशमनीय (इन्द्र =राजन्) ६ ४६ ४ **ऋचीषमाय**=ऋच्यन्ते स्तूयन्ते त ऋचीपाग ग-नतिमान्यान् करोति तस्मै (इन्द्राय =सभाद्यध्यक्षाय), प्र०-अत्र ऋचधातोर्बाहुलकादौणादिक कर्मणीपन् प्रत्यय १ ६१ १ [ऋच् स्तुतौ (तुदा०) धातोर्बाहुलकादौणादिक कर्मणीषन् प्रत्यय । ऋचीषोपपदे मा माने (अदा०) धातो 'अन्येष्वपि दृश्यते' अ० ३ २ १०१ वा० सूत्रेण ड प्रत्यय । ऋचीषम =ऋचासम नि० ६ २३]

ऋच्छतु प्राप्नोतु १३ ४७ [ऋच्छ गत्यादिषु (तुदा०) धातोर्लोट् । ऋच्छति गतिकर्मा निघ० २ २४ परिचरण-कर्मा निघ० ३ ५]

ऋच्यमाना स्तूयमाना (वाक्) ६ ३८ २ **ऋच्य-माने**=स्तूयमाने (अहोरात्रे) ६ ४९ ३ [ऋच् स्तुतौ (तुदा०) धातो कर्मणि शानच् । स्त्रियां टाप्]

ऋजवे सरलाय, भा०—विनयेन युक्ताय (विदुषे) ३७ १० **ऋजुः**=सरल (विद्वज्जन) २ २६ १ [अर्ज अर्जने (भ्वा०) अर्ज प्रतियत्ने (चुरा०) धातोर्वा 'अर्जिदृशि०' उ० १ २७ सूत्रेण कु प्रत्यय । धातोश्च 'ऋजि' आदेश । ऋजु =ऋजुरित्यप्यस्य (ऋञ्जते) भवति नि० ६ २१ असौ वा लोक ऋजु सत्य ह्यृजु सत्यमेव य एष (सूर्य) तपति श० १४ १ २ २२]

ऋजिप्यम् ऋजूना पालके भवम् (वृषण=राज-पुरुषम्) ६ ६७ ११ ऋजिपेषु सरलाना पालकेषु साधुम् (राजजनम्) ४ ३८ २ **ऋजिप्यः**=सरलगामिषु साधु (राजा) ४ ३८ ७ य ऋजुगामिषु साधु (सज्जन) ४ २७ ४ **ऋजिप्याः**=ऋजीन् सरलान् व्यवहारान् प्यायन्ते वर्द्धयन्ति ते (सखाय =सुहृदो जना) ३ ३१ १७ ['ऋजि' उपपदे पा रक्षणे (अदा०) धातो क । तत 'तत्र साधु' इत्यर्थे यत् । अथवा= 'ऋजि' उपपदे ओप्यायी वृद्धौ (भ्वा०) धातो क प्रत्यय]

ऋजिप्यासः ये ऋजि कोमलत्व वर्द्धयन्ति ते (प्राज्ञा राजजना) २ ३४ ४ ['ऋजि' उपपदे ओप्यायी वृद्धौ (भ्वा०) धातो क । तत प्रथमाबहुवचने जसोऽसुगागम । ऋजि =ऋज गतिस्थानादिषु (भ्वा०) धातोरिक् प्रत्यय]

ऋजिश्वना ऋजव ऋजुगुणयुक्ता सुशिक्षिता श्वानो येन तेन सह (व्यवहारेण) १ ५३ ८ ऋजव सरला श्वानो वृद्धयो यस्मिन्नध्ययने तेन, प्र०—अत्र श्वन्शब्द श्विधातो कनिन्प्रत्ययान्तो निपातित उणा० १ १०१ १ **ऋजिश्वने**=ऋजुगुणैर्वृद्धाय (अपत्याय) ४ १६ १३ ऋज्वादिगुणवर्धकाय (सुपात्राय) ६ २० ७ **ऋजिश्वा**= ऋजि सरलश्चासौ श्वा च ५ २९ ११ **ऋजिश्वानम्**= य ऋजीन् ज्ञानादि-सरलान् गुणान् अश्नुते त धार्मिक मनुष्यम्, प्र०—अत्र 'इक् कृषादिभ्य' इत्यृजधातोरिक् 'अशूङ्धातोर्ट् क्वनिप् अकारलोपश्च १ ५१ ५ [ऋजिश्वन् पदयो समास । श्वन्=टुओश्वि गतिवृद्धयो (भ्वा०) धातोरौणादिक कनिन्]

ऋजीते सरले व्यवहारे २९ ४९ ['ऋजि' उपपदे इण् गतौ (अदा०) धातो क्त]

ऋजीते ऋजु गच्छति ६ ७५ १२ ['ऋजि' उपपदे इण् गतौ (अदा०) धातोर्लट् । व्यत्ययेनात्मनेपदम्]

ऋजीपी सरलगामी (शकुन =पक्षी) ४ २६ ६

ऋजीषम् उपार्जकम् (इन्द्र=सूर्यलोकम्) प्र०—अत्र 'अर्जेर्ऋज् च' उ० ४ २ इत्यर्जधातोरीषन् प्रत्यय ऋजा-देशश्च १ ३२ ६ [अर्ज अर्जने (भ्वा०) धातो 'अर्जेर्ऋज च' उ० ४ २८ सूत्रेणेषन् प्रत्यय । ऋजादेशश्च]

ऋजीषिणम् ऋजूना सरलाना धार्मिकाणा जना-नामीषितु शीलम् (इन्द्र=राजानम्) ६ ४२ २ प्रशस्त-मुपार्जन विद्यते यस्मिंस्तम् (मरुता गणम्) १ ६४ १२ **ऋजीषिण.**=कोमलस्वभावा (मरुत =विद्वज्जना) २ ३४ १ सर्वविद्यायुक्ता उत्कृष्टसेनाङ्गोपार्जका (नृतमास = नायका जना) १ ८७ १ **ऋजीषिन्**=सरलस्वभाव (सज्जन) ७ ४२ ३ ऋजुभावमिच्छन् (विद्वज्जन) ३ ४३ ५ ऋजीषि सरलत्व यस्याऽस्ति तत्सम्बुद्धौ (तेजस्विन् राजपुरुष) ६ १७ १० ऋजुधर्मयुक्त (इन्द्र=राजन्) ६ २० २ शोधक (सज्जन गृहस्थिन्) ३ ३२ १ **ऋजीषी**=ऋजु (इन्द्र = जगदीश्वरः) ४ १६ ४ सरलगुणकर्मस्वभाव (राजा) ६ २४ १ सरलादियुक्त (राजा) ५ ४० ४ ऋजुनीति (इन्द्र.=राजा) ४ १६.१ ऋजुगामी (राजकर्मचारी) ६ १८ २ ['ऋजि' उपपदे ईष गतिहिंसादर्शनेषु (भ्वा०)

स्वभावैः १ १५५ ६ सत्कर्तृभिः (मरुद्भि =मनुष्यैः) ५ ५२ १. सत्कर्त्तव्यैः (मरुद्भि =मनुष्यैः) ५ ६० ८ ऋग्वेदादिभि ७ १० ४ **ऋक्वा**=सत्कर्त्ता (सत्पुरुष) ७.३७ ४ **ऋक्वाणः**=प्रशस्ता ऋच स्तुतयो विद्यन्ते येषान्ते (विद्वाम) १ ८७ ५. स्तुत्याना गुणाना स्तावका (सज्जना) ३ १३ ५ [ऋच्प्राति० मत्वर्थे 'छन्दसीवनिपौ' अ० ५ २ १०६. वा० सूत्रेण वनिप्। अयम्मयादित्वात् पदत्वात् कुत्वं भत्वाच्च जश्त्व न भवति।]

ऋक्षलाभिः गत्यादानै २५ ३. [ऋक्षोपपदे ला आदाने (अदा०) धातोर् 'घवर्थे क विधानमि' ति क प्रत्ययो भावे स्त्रिया टाप्। ऋक्ष =ऋषी गतौ (तुदा०) धातो स प्रत्यय]

ऋक्षः पशुविशेष ५ ४६ ३ भल्लूक २४ ३६ **ऋक्षाः**=सूर्यचन्द्रनक्षत्रादिलोका १ २४ १०. [ऋषी गतौ (तुदा०) धातो 'ऋषेर्जातौ' उ० ३ ६७ सूत्रेण स प्रत्यय.। ऋक्षा स्तृभिरिति नक्षत्राणाम्। उदीर्णानीव ख्यायन्ते निघ० ३ २०. सप्तर्षीन् उ ह स्म वै पुरऽर्क्षा इत्याचक्षते श० २.१ २ ४]

ऋक्षीकाभ्यः या ऋक्षा गती कुर्वन्ति ताभ्य. (स्त्रीभ्य) ३० ८

ऋक्समम् ऋच सनन्ति सम्भजन्ति येन तत् साम १३ ५६

ऋक्सामयोः ऋक् च साम च तयोर्वेदयो ४ ६ **ऋक्सामानि**=ऋक् च सामानि च तानि १८ ४३ **ऋक्सामाभ्याम्**=ऋचन्ति स्तुवन्ति पदार्थान् येन स ऋग्वेद, सामयन्ति सान्त्वयन्ति कर्माऽन्त फल प्राप्नुवन्ति येन स सामवेद., ऋक् च साम च ताभ्याम्, प्र०—अत्र 'अचतुर-विचतुर-सुचतुर-स्त्री-पुस-धेन्वनडुहर्क्साम०' अ० ५.४ ७७ इति सूत्रेणाऽस्य समासान्ताऽच्प्रत्ययेन निपातित ४.१ [ऋक्-सामनूपदयो समास। 'अचतुरविचतुर०' अ० ५ ४ ७७ सूत्रेण द्वन्द्वसमासे समासान्तेऽच् प्रत्यये 'नस्तद्धिते' अ० ६ ४ १४४ सूत्रेण टिलोप। ऋक्सामे वा इन्द्रस्य हरी ऐ० २ २४ तै० १ ६ ३ ६ ऋक्सामे वै हरी श० ४ ४ ३ ६ ऋक्सामे वै सारस्वतावुत्सौ तै० १ ४४.६. ऋक्सामानि वा एष्टय ऋक्सामैर्ह्यागासत ऽइति नो ऽस्त्वित्त्य नोऽस्त्विति श० ६ ४ १ १२]

ऋग्मियम् य ऋग्भिर्मीयते तम् (राजानमिव सूर्यम्) ६ ८ ४ य ऋग्भिर्मीयते प्रमीयते तम् (अग्निम्) ३ २ ४ ऋचा वेदमन्त्राणा निर्मातारम् (इन्द्र =धारकमीश्वरम्) प्र०—ऋगुपपदात् मीञ् धातो विवप्, अमीयडादेशश्चेति १ ६ ६ स्तुतिभि स्तवनीयम् (आप्त विद्वज्जनम्) ६ ४५ ७ **ऋग्मियाय**=ऋग्भिर्यो मीयते स्तूयते तस्मै (सभाद्यध्यक्षाय, प्र०—अत्र ऋगुपपदान्माधातोर्बाहुलकादौणादिको डियच्-प्रत्यय १ ६२.१. य ऋचो मिनोत्यधीते तस्मै (नरे =नायकाय जनाय) ३४ १६ [ऋच्शब्दात् मत्वर्थीय 'बहुल छन्दसि' अ० ५ २ १२२. सूत्रेण ग्मिनि। अमीयडादेश, छन्दसि सर्वनामस्थानेऽपि पदत्वान्नलोप। ऋगुपपदाद्वा मा माने (अदा०) धातो डियच् प्रत्यय। ऋग्मियम् ऋग्मन्तमिति वा, अर्चनीयमिति वा, पूजनीयमिति वा नि० ७.२६.]

ऋग्मी ऋग्वेदी (इन्द्र =सभाध्यक्षो वा), **ऋग्मिभिः**= ऋच. ऋग्वेदमन्त्रा सन्ति येषान्ते ऋग्मयस्तै. (विद्वज्जनै.) प्र०—अत्र मत्वर्थीयो बाहुलकाद् ग्मिनि. प्रत्यय १ १०० ४ [ऋच्प्राति० मत्वर्थे 'बहुल छन्दसि' अ० ५.२ १२२ सूत्रेण ग्मिनि.]

ऋघायतः ऋत सत्य हिंसत (दुर्जनस्य), प्र०—अत्र हनधातो 'छान्दसो वर्णलोपो वा' इति तलोपो बाहुलकादौणादिको डण्) प्रत्यय. २ २५ ३ बाधमानान् (वनून्= अधर्मसेविनो जनान्) ४ ३०.५ [ऋतोपपदे हन हिंसागत्यो (अदा०) धातोर्बाहुलकादौणादिको डण्। पूर्वपदस्य तकारलोप। ऋघायप्राति० क्विपि नामधातुसज्ञाया लट्]

ऋघायन्त बाध्यन्ते ४ १७.२ [रध हिंसासराध्यो. (दिवा०) धातोऽन् सम्प्रसारण च। तत आचारे क्यङ्]

ऋघायमाणम् परिचरितुमर्हम् (इन्द्र =जगदीश्वरम्) प्र०—ऋध्यते पूज्यते इति ऋघ, अत्र बाहुलकात् क, तत आचारे क्यङ् 'ऋघ्नोतीति परिचरणकर्मसु पठितम् निघ० ३.५, १ १० ८. **ऋघायमाणः**=वर्द्धमान. (सभेश) प्र०—अत्र ऋधु धातो. क. प्रत्ययो वर्णव्यत्ययेन घ, तत 'उपमानादाचारे' इति क्यङ् १.१७६.१. ऋघो हिंसितुम् इवाऽऽचरति (सभापति.), प्र०—अत्र रधधातोर्बाहुलकादौणादिकोऽन् प्रत्यय. सम्प्रसारणञ्च तत आचारे क्य १ ६१ १३ [ऋधु वृद्धौ (स्वा०) धातोरिगुपधलक्षण क। तत आचारे क्यङन्तात् शानच्। धस्य घो वर्णव्यत्ययेन। रध हिंसासराध्यो (दिवा०) धातोऽन्। तत. क्यङ् आचारे। रेफस्य सम्प्रसारणम्, धस्य घकारश्छान्दस। ऋध्नोतीति परिचरणकर्मा (निघ० ३.५) धातो क। तत क्यङ् आचारे। तत शानच्]

ऋघावा शत्रूणा हन्ता (अर्य =स्वामीश्वरो राजा

४ ६ ६ [ऋजूपपदे अञ्चु गतिपूजनयो (भ्वा०) धातो क्विन् प्रत्यय]

ऋञ्जत प्रसाध्नुत ५ ८७ ५ **ऋञ्जते**=प्रसाध्नोति १ १८३ ९ प्रसाधयन्ति २ २ ५ भृज्जन्ति १ १४१ ६ [ऋजि भर्जने (भ्वा०) धातोर्लोट् लट् च । लोटि व्यत्ययेन परस्मैपदम् । ऋञ्जति पदनाम निघ० ४ ३ ऋञ्जति प्रसाधनकर्मा नि० ६ २१]

ऋञ्जती ऋञ्जमाना पाचयित्री (शरु =दुष्टाना हिंसिका ऋष्टि) १ १७२ २ [ऋजि भर्जने (भ्वा०) धातो शत्रन्तान् ङीप् । व्यत्ययेन परस्मैपदम्]

ऋञ्जन् ससाध्नुवन् (विद्वज्जन) ३ ३१ १ प्रसाध्नुवन् (राजा) ४ ३८ ७ प्राप्नुवन् (काल) १ ९५ ७ [ऋञ्जति प्रसाधनकर्मा (नि० ६ २१) धातो शतृप्रत्यय]

ऋञ्जन्ति साध्नुवन्ति ३ ४३ ६ **ऋञ्जसे**= प्रसाध्नोषि ४ ८ १ [ऋञ्जन्ति प्रसाधनकर्मा (नि० ६ २१) धातोर्लट्]

ऋञ्जसानम् विवेकादिभावनै प्रसाध्यमानम् (अग्नि=परमेश्वरम्) १ ६६ ३ जिसको विवेक विज्ञानादि से सिद्ध करते और जानते है उस (परमेश्वर) को आर्याभि० १४०, ऋ० १ ७ ३ ३ **ऋञ्जसान**=प्रसाध्नुवन् (इन्द्र =राजा) ४ २१ ५ य ऋञ्जति प्रसाध्नोति स (देव =जीवात्मा) प्र०—अत्र 'ऋञ्जिवृधिमहि०' उ० २ ८७ अनेन सानच् प्रत्यय १ ५८ ३ [ऋञ्जति = प्रसाधनकर्मा (निघ० ६ २१) धातो 'ऋञ्जिवृधि०' उ० २ ८७ सूत्रेण सानच् किच्च]

ऋञ्जे भर्जयामि ३ ४ ७ साध्नोमि ४ २६ १ [ऋजि भर्जने (भ्वा०) धातोर्लट् । ऋञ्जति प्रसाधनकर्मा नि० ६ २१]

ऋणचित् य ऋण चिनोति स (विद्वज्जन) २ २३ १७ [ऋणोपपदे चिञ् चयने (स्वा०) धातो क्विप् ह्रस्वस्य तुक्]

ऋणच्युतम् ऋणादयुक्तम् (दिवोदास=विद्वासम्) ६ ६१ १ [च्युङ् गतौ (भ्वा) धातो क्त । ऋण-च्युतयो समास]

ऋणञ्चयस्य ऋण चिनोति येन तस्य (राज्ञ) ५ ३० १२ **ऋणञ्चये**=ऋण चिनोति यस्मात्तस्मिन् (राजनि) ५ ३० १४ [ऋण-चयपदयो समास । विभक्तेर्लुक् । चय =चिञ् चयने (स्वा०) धातो 'एरच्' इत्यच्]

ऋणधत् समृध्नुयात १ ८४ १६ [ऋधु वृद्धौ (स्वा०) धातोर्लट् । विकरणव्यत्ययेन श्नम्]

ऋणया प्रापया सेनया ४.२३ ७ [ऋ गतिप्रापणयो (भ्वा०) धातो क्तप्रत्यये टापि च रूपम्]

ऋणयावा य ऋण याति प्राप्नोति स (सेनापति) १ ८७ ४ [ऋणोपपदे या प्रापणे (अदा०) धातोर्वनिप्]

ऋणयाः य ऋण याति प्राप्नोति स (विद्वान्राजा) २ ३३ ११ [ऋणोपपदे या प्रापणे (अदा०) धातोरण् प्रत्यय]

ऋणवः प्राप्नुया १ १३८ २ प्रसाध्नुया ८ ८ ३ ऋणुहि १ ४८ १५ [ऋणु गतौ (तना०) धातोर्लोट्]

ऋणः प्रापक (तायु =स्तेन) ६ १२ ५ [ऋ गति-प्रापणयो (भ्वा०) धातोर्बाहुलकादौणादिक क्त]

ऋणा ऋणानि २ २८ ९ प्राप्तानि (अनीका= सैन्यानि) ४ २३ ७ [ऋ गतिप्रापणयो (भ्वा०) धातो क्त । 'ऋणमाधमर्ण्ये' इति निष्ठानत्व निपात्यते । ऋण ह वै जायते योऽस्ति । स जायमान एव देवेभ्य ऋषिभ्य पितृभ्यो मनुष्येभ्य श० १ ६ २.१]

ऋणानि अन्येभ्यो देयानि विज्ञानानि २ २७ ४ ऋ गतिप्रापणयो. (भ्वा०) धातोर्बाहुलकादौणादिक क्त]

ऋणावानम् ऋणयुक्तम् (मर्त्य =मनुष्यम्) १ १६९ ७ [ऋणप्राति० मत्वर्थे वनिप् । पूर्वस्य दीर्घत्वम्]

ऋणुत साध्नुत ५.४५ ६ **ऋणोः**=प्राप्नुया १ १७४ २ प्रसाध्नुया ६ १८ ५ प्राप्नोषि, प्र०—अत्र लडर्थे लङ् 'बहुल छन्दसि' इत्यडभावश्च १ ३० १४. प्रापयसि १ ३० १५ **ऋणोति**=प्रापयति, प्र०—अत्रान्तर्गतो ण्यर्थ १ ३५ ६ [ऋणु गतौ (तना०) धातोर्लङ् । आडभावश्च । अन्यत्र लट् । ऋणोति गतिकर्मा निघ० २ १४]

ऋण्वति गच्छति, प्र०—ऋण्वतीति गतिकर्मा, निघ० २ ४, ६ २ ६ साध्नोति ५ १६ २ प्राप्नोति १ १२८ ६ गच्छति जानाति वा ३ ११ २ **ऋण्वथः**=प्राप्नुथ १ १५१ ५ **ऋण्वन्**=प्रसाध्नुवन्ति ७ ५ ६ हिंसन्ति १ ६९ ५ [ऋण्वति गतिकर्मा (निघ० २ १४) धातोर्लट् । अन्यत्र लङ्]

ऋण्वन् प्रसाध्नुवन् (अग्नि =विद्वज्जन) ७ २ १ [ऋण्वति गतिकर्मा (निघ० २ १४) धातो शतृप्रत्यय]

ऋण्वे प्रसाध्नोमि ५ ७४ ५ [ऋणु गतौ (तना०) धातोर्लट्]

धातोस्ताच्छील्ये णिनि । ऋजीपी सोम । यत् सोमस्य पूयमानस्यातिरिच्यते तदृजीषम्, अपार्जित भवति । तेनर्जीषी सोम । अथाप्यैन्द्रो निगमो भवति 'ऋजीपी वज्री' इति नि० ५ १२.]

ऋजीषेण सरलभावेन १६ ७२ [ऋजीपमिति व्याख्यानम्]

ऋजु सरल यथास्यात्तथा २ ३ ७ **ऋजुना**=सरलेन शुद्धेन वा (पथा=न्यायमार्गेण) १४१ ५ ['ऋजवे' पदे व्याख्यातम्]

ऋजुक्रतुः ऋजव क्रतव प्रज्ञा कर्माणि वा यस्य स (विद्वज्जन) १ ८१ ७ [ऋजु-क्रतुपदयो समास । ऋजुरिति व्याख्यातम् । क्रतु =कर्मनाम निघ० २ १ प्रज्ञानाम निघ० ३ ९]

ऋजुगाथ य ऋजु सरल व्यवहार गाति स्तौति तत्-सम्बुद्धौ (विद्वज्जन) ५ ४४ ५ [ऋजूपपदे गै शब्दे (भ्वा०) धातोर्बाहुलकादौणादिकः थन् प्रत्यय]

ऋजुनीती ऋजु सरला शुद्धा चाऽसौ नीतिश्च तया, प्र०—अत्र 'सुपा सुलुग्०' इति तृतीयाया पूर्वसवर्णादेश १ ९० १ सरल शुद्ध कोमलत्वादि गुणविशिष्ट चक्रवर्ती राजाओ की नीति को । आर्याभि० १ १८, ऋ० १ ६ १७ १ [ऋजु-नीतिपदयो समास । नीति =णीञ् प्रापणे (भ्वा०) धातो क्तिन् प्रत्यय । तव्याख्याने पूर्वसवर्णादेश]

ऋजुमुष्कान् य ऋजुना मुष्णन्ति तान् (वृषण = बलिष्ठान् सन्तानान्) ४ २ २ **ऋजुमुष्काः**=य ऋजुमार्गं मुष्णन्ति ते (अरुपास =तुरङ्गा) ४ ६ ९ [ऋजूपपदे मुप स्तेये (क्र्या०) धातोर्बाहुलकादौणादिक कक् । प्रत्यय]

ऋजुयवः कर्मभिरात्मन ऋजुत्वमिच्छन्तस्तच्छीला प्र०—अत्र 'क्याच्छन्दसि' इत्यु प्रत्यय १ २४ ४ [ऋजुपदाद् आत्मन इच्छाया क्यच् । ततस्ताच्छील्ये उ]

ऋजुवनि. ऋजूनामकुटिलाना पदार्थाना सविभाजिका (मातेव विदुषी स्त्री) ५ ४१ १५ [ऋजूपपदे वन सम्भक्तौ (भ्वा०) धातोर्बाहुलकादौणादिक इ प्रत्यय]

ऋजुहस्ता ऋजू सरलौ हस्तौ यस्या यस्या वा सा (मातेव विदुषी स्त्री) ५ ४१ १५ [ऋजु-हस्तपदयो समास]

ऋजूयताम् सरलीकुर्वताम् (देवाना=विदुपा जनानाम्) २५ १५ आत्मन ऋजुत्वमिच्छताम् देवाना=विद्वज्जनानाम्) १ ८९ २ [ऋजुपदाद् आत्मन इच्छाया क्यचि शतरि च रूपम् । 'अकृत्सार्वधातुकयो' रिति दीर्घ । ऋजूयताम् ऋजुगामिनाम् ऋतुगामिना वा नि० १२ ३९]

ऋजूयते ऋजूयन्ते ५ १२ ५ [ऋजुपदादाचारे क्यङ्]

ऋजूयते ऋजुरिवाऽऽचरतीति तस्मै (विदुषे जनाय) १ ११६ २३ [ऋजुपदादाचारे क्यच् । तत शतृप्रत्यय]

ऋजूयन्तम् आत्मन ऋजुभावमिच्छन्तम् (सज्जनम्) १ १३६ ५ [ऋजुपदाद् इच्छाया क्यचि शतरि च रूपम्]

ऋजूयेव ऋजुना मार्गेणेव, प्र०—अत्र टा-स्थाने याऽऽदेश, 'अन्येपामपि०' इति दीर्घ १ १८३ ५ [ऋजु-इव पदयो समास]

ऋज्यते उपार्ज्यते १ १४० २ [ऋज गतिस्थानार्जनोपार्जनेपु (भ्वा०) कर्मणि लट्]

ऋज्यन्तः ऋजुरिवाऽऽचरन्त (हरय =मनुष्या) ६ ३७ २. [ऋजु पदादाचारे क्यच् । उकारलोपश्छान्दस । ऋज्यन्त ऋजुगामिन नि० १० ३ ऋज गतौ (भ्वा०) धातो शतृ । व्यत्ययेन परस्मैपदम्]

ऋज्रा ऋज्राणि (प्रशस्त-कर्माणि) ४ १६ ११ ऋजुगामिनौ (अश्वौ) १ १७४ ५ [अर्ज अर्जने (भ्वा०) धातो 'ऋज्रेन्द्राग्र०' उ० २ २८ सूत्रेण रन् प्रत्ययान्तो निपात्यते]

ऋज्राऽश्वम् सरलतुरङ्गम् (स्तेनम्) १ ११६ १६ **ऋज्राऽश्वस्य**=ऋज्रा ऋजुगामिनोऽश्वा वेगवन्तो यस्य तस्य (सभाद्यध्यक्षस्य) १ १०० १६ **ऋज्राऽश्वः**=ऋज्रा ऋजवोऽश्वा महत्यो नीतयो यस्य स (विद्वज्जन) प्र०—अश्व इति महन्नाम, निघ० ३ ३, १ १०० १७ ऋजुगतिमदश्व पुरुष १ ११७ १८ **ऋज्राऽश्वे**=सुशिक्षित-तुरङ्गादियुक्ते सैन्ये १ ११७ १७ [ऋज्र-अश्वपदयो समास । 'ऋज्र' इति व्याख्यातम् । अश्वा =अश्वनाम निघ० १ १४ महन्नाम निघ० ३ ३ अश्व =अशूङ् व्याप्तौ (स्वा०) धातो 'अशूप्रुषि०' उ० १ १५१ सूत्रेण क्वन्]

ऋज्रासः सरलस्वभावा (विद्वासो जना) ७ १८ २३ ['ऋज्रा' इति व्याख्यातम् । ततो जसोऽसुगागम]

ऋज्रे ऋजुप्रिये (कर्मणि) ६ ६३ ९ ['ऋज्रा' इति व्याख्यातम्]

ऋज्रेभिः ऋजुगमकैः (अश्वैः =यानैः) १ ११७ १४ ['ऋज्रा' इति व्याख्यातम् । भिस ऐसादेशो न भवति छन्दसि]

ऋज्वञ्च. याभिर्ऋजुमञ्चन्ति (हरित =अङ्गुलय)

जनितमुदकेन चालित वा (रथम्) १ ७० ४ [ऋत-प्रवीत-पदयो समास । प्रवीतम्=प्र+वी गतिप्रजनकान्त्यसनखादनेषु (अदा०) धातो क्त]

ऋतप्सू ऋत जल प्सातो भक्षयतस्तौ (अध्यापकोपदेशकौ) प्र०—ऋतमित्युदकनाम, निघ० १ १२, १ १८० ३ [ऋतोपपदे प्सा भक्षणे (अदा०) धातो 'डुप्रकरणे मितद्र्वादिभ्य उपसख्यानम्' इति डु प्रत्यय]

ऋतम् यथार्थ सर्वविद्याऽधिकरण वेदशास्त्रम् प० वि० । अव्यभिचारि (सत्यम्=अव्यक्त जीवाख्य, सत्यभाषणादिकम्) ११ ४७ प्राप्तु योग्य कारणम् (रत्नम्=सुवर्णहीरकादिकम्) ३ ५४ ३ ब्रह्म, सत्य, यज्ञ वा १ ४१ ४ सत्य विज्ञान १ ७१ ३ सत्य कारणम् १ १०५ ५ वेद- सृष्टिक्रम--प्रत्यक्षादिप्रमाणविद्वदाचरणाऽनुभव- स्वात्मपवित्रतानामनुकूलम् (सुप्रवाचनम्=अध्यापनमुपदेशनम्) १ १०५ १२ यज्ञ, सत्यव्यवहार जलादि च १ १८८ २ सत्याऽऽढचम् ५ ६८ १ सत्य धर्म्मम् ७ २१ ५ सत्यरूपम् १ १०५ १५ सत्य न्याय्यम् ४ २ १६ उदकम् २ २८ ४ **ऋतस्य**=प्राप्तसत्यस्य (पत्यु) २ १ ५ सत्याचारस्य ३ ६२ १८ सत्यन्यायाख्ययज्ञस्य ६ ८ कारणस्य १ १०५ ६ सत्यस्य ५ १२ २ सत्यस्य विज्ञानस्य ७ ७ ६ सत्यविद्यामयस्य वेदचतुष्टयस्य जलस्य वा १ ६७ ४ सत्यस्य वस्तुनो व्यवहारस्य वा ७ ६० ५ सत्यव्यवहारयुक्तजनस्य १ १२३ ९ सत्यस्य प्रकृत्याख्यस्य ४ ४२ ४ सत्यस्य सर्वविद्यायुक्तस्य वेदचतुष्टयस्य, सनातनस्य जगत्कारणस्य वा, प्र०—ऋतमिति सत्यनामसु पठितम्, निघ० ३ १० 'पदनामसु च' निघ० ५ ४, १ १ ८ सत्यविद्यामयस्य वेदचतुष्टयस्य मोक्षस्य च वे० भा० न० सत्यस्वरूपस्य सत्यप्रियस्य वा (ईश्वरस्य) १ ४३ ९ सत्यस्य परमाण्वादे ५ २१ ४ अनादिस्वरूपस्य सस्यस्य कारणस्य जलस्य वा, प्र०—ऋतमित्युदकनाम, निघ० १ १२, ३ २३ यथार्थम्, प्र०—अत्र कर्मणि षष्ठी २९ १६ शुद्धस्य सत्यस्य २ ६ यथार्थस्वरूपस्य (ज्योतिष =प्रकाशस्य) १ २३ ५ यथार्थस्य धर्म्यस्य व्यवहारस्य ६ ५१ ८ स्वरूपप्रवाहेण सत्यस्य १ ६८ ३ स्वसामर्थ्यस्य ऋ० भू० ८९ मेघोत्पन्नजलस्येव सत्यस्य १ ७३ ६ यथार्थ सत्यस्वरूप परमात्मा का आर्याभि० २ १०, ३२ ११ सत्यस्योदकस्य वा ७ ५३ २ **ऋते**=ब्रह्मणि पुरुषार्थे च ऋ० भू० १०१, १२ ५ १ सत्ये धर्मे ६ ६७ ८ सत्यभाषणादिरूपे सङ्क्रन्तव्ये व्यवहारे ७ १६ ६ उदकमये समुद्रादौ २ २९ ४ यजनिमित्तम् (अग्निम्) ३३ ८ यथार्थ पक्षपातरहित न्याय रूप धर्म मे स० वि० १४३, अथर्व० १२.५ १ [ऋ गतिप्रापणयो (भ्वा०) धातोर्बाहुलकादौणादिक क्त । ऋतम् उदकनाम निघ० १ १२ प्रत्यृत भवति नि० २ २५ सत्यनाम निघ० ३ १०. यज्ञस्य नि० ६ २२ सत्य वा ऽऋतम् श० ७.३ १ २३. तै० ३ ८ ३ ४ ऋतमिति सत्यमित्येतत् ६ ७ ३ ११ ऋतमित्येष (सूर्य) वै सत्यम् ऐ० ४ २० अग्निर्वा ऋतम् तै० २ १ ११.१ ऋतमेव परमेष्ठी तै० १ ५ ५ १ चक्षुर्वा ऋत तस्माद्यतरो विवदमानयोराहाहमनुष्ठचा चक्षुपादर्शमिति तस्य श्रद्दधति ऐ० २ ४० मनो वा ऋतम् जै० उ० ३ ३६ ५ ब्रह्म वा ऽऋतम् श० ४ १ ४ १० ओमित्येतदेवाक्षरमृतम् जै० उ० ३ ३६.५ अय वा ऽअग्निर्ऋतमसावादित्य सत्य यदि वासावृतमय (अग्नि) सत्यमुभयम्वेतदयमग्नि श० ६ ४.४ १० ऋतनेवैन स्वर्ग गमयन्ति ता० १८ २ ९]

ऋतयन् सत्यमिवाऽऽचरन् (विद्यार्थिजन) ५ ४३ ७ सत्यमाचरन् (विद्वज्जन) ५ १२ ३ ऋत सत्यमात्मन इच्छन् (पुत्र) १ ११७ २२ [ऋतपदाद् आत्मन इच्छायाम् आचारे वा क्यजन्ताच्छतृप्रत्यय]

ऋतया सत्यविज्ञानयुक्तया (क्रियया) २ ११ १२ [ऋ गतिप्रापणयो (भ्वा०) धातो क्त । तत स्त्रिया टाप्]

ऋतयुक् य ऋतेन सत्येन युनक्ति (विद्वज्जन) ६ ३९.२ **ऋतयुग्भि** =जलस्य योजकै (अश्वै =किरणै) ६ ३९ ४ य ऋतेन सत्येन युञ्जते तै (अश्वै =पुरुषार्थिपतिभि) ४ ५१ ५ [ऋतोपपदे युजिर् योगे (रुधा०) धातो 'सत्सूद्विषद्रुह०' अ० ३ २ ६१ सूत्रेण क्विप्]

ऋतये हिंसायै ३० १३ [ऋ गतिप्रापणयो (भ्वा०) धातो क्तिन् स्त्रियाम् । धातूनामनेकार्थकत्वाद् हिंसायामर्थे]

ऋतव: वसन्ताद्य २३ ४० शरदादय २७ १ [ऋ गतिप्रापणयो (भ्वा०) धातो 'अर्त्तेश्च तु' उ० १ ७२ सूत्रेण तु प्रत्यय । 'ऋतुना' पदे द्रष्टव्य]

ऋतवाकेन यथार्थ बोलने से स० वि० १९५, ९ ११३ २ [ऋत-वाकपदयो समास । वाक वच् परिभाषणे (अदा०) धातोर्घञि 'चजो कु घिण्यतो' अ० ७ ३ ५२ सूत्रेण कुत्वम्]

ऋतवादिभ्य: ऋत वदितु शील येषा तेभ्य सत्यवादिभ्यो विद्वद्भ्य ५ ७ [ऋतोपपदे वद व्यक्ताया वाचि (भ्वा०) धातोस्ताच्छील्ये णिनि]

ऋतसत् य सत्ये सीदति (जीवात्मा) ४ ४० ५ य ऋते सत्ये सस्थित (ब्रह्म जीवश्च) १२ १४ य ऋतेषु

ऋतचित् य ऋत सत्य चिनोति स (अग्नि=राजा) ४ ३ ४. या ऋत सत्य चिनोति सा (नारी) ४ १६ १० [ऋतोपपदे चिञ् चयने (स्वा०) धातो क्विप्। ह्रस्वस्य तुक्। ऋत सत्यनाम निघ० ३ १०.]

ऋतजात य ऋते सत्ये जायते तत्सम्बुद्धौ (अग्ने=विद्वन् जन) ६ १३ ३ सत्याचारे प्राप्तप्रसिद्धे (अग्ने=विद्वन्) १ १८९ ६ ऋतात् सत्यात् प्रादुर्भूत (विद्वन् जन) १ १४४ ७ सत्याचरणे प्रसिद्ध (अग्ने=विद्वन् जन) ३ २० २ **ऋतजातस्य**=ऋतात् सत्यात् कारणाज्जातस्य जगतो मध्ये ३ ६ १० **ऋतजातः**=ऋतेन सत्याचरणेन जात प्रसिद्ध (राजपुरुष) १ ३६ १९ **ऋतजाताः**=ऋतेन सत्येन प्रसिद्धा (विद्वांस) ३ ५४ १३ य ऋते जायन्ते ते (परमेश्वरभक्ता) ५ ६१ १४ [ऋतोपपदे जनी प्रादुर्भावे (दिवा०) धातो क्त। 'ज्ञाजनोर्जा' इति जादेश। ऋत सत्यनाम निघ० ३ १०]

ऋतजातसत्याः ऋताज्जातेषु व्यवहारेषु सत्सु साध्व्य (ब्रह्मचारिण्य कन्या) ४ ५१ ७ ऋत-जात-पदयो समासे कृते सत्यपदेन सह समास]

ऋतजाः य ऋत सत्य ज्ञान जनयति स (ब्रह्म-जीवश्च) १२ १४ य सत्यविद्यामय वेद जनयति स (परमेश्वर) १० २४ य सत्याज्जात (जीवात्मा) ४ ४० ५ ये ऋत सत्य जानन्ति ते (ब्रह्मविदो जना) ७ ३५ १५ [ऋतोपपदे जनी प्रादुर्भावे (दिवा०) धातोर्ड प्रत्यय। अथवा ऋतोपपदे ज्ञा अवबोधने (क्र्या०) धातोर्क प्रत्यय। छान्दसो जादेशोऽशित्यपि। ऋतजा इत्येष (सूर्य) वै सत्यजा। ऐ० ४ २०]

ऋतजित् य ऋत विज्ञानमुत्कर्षति स, भा०—यो विद्याकर्मोन्नयति स (गण=गणनीयो विद्वज्जन) १७ ८३ [ऋतोपपदे जि जये (भ्वा०) धातो क्विप्। ह्रस्वस्य तुक्]

ऋतज्ञाम् ऋत सत्य जानन्ति यया ताम् (मही=वाचम्) ५ ४३ ६ **ऋतज्ञाः**=य ऋत सत्य जानन्ति ते (विप्रा=विद्वांस) २१ ११ ये ऋत यथार्थं जानन्ति ते (कवय=विद्वांस) ५ ५७ ८ य ऋत सत्य व्यवहार ब्रह्म वा जानन्ति ते (विप्रा=मेधाविनो जना) ७ ३८ ८ ये 'ऋत सत्य जानन्ति' भा०—विदितवेदितव्या अधिगत-याथातथ्या (पितर=पालका जना) १९ ४९ य ऋत परमात्मान प्रकृति वा जानन्ति (नर=नायका जना) ५ ५८ ८ ब्रह्मविदो वेदविदश्च (पितर) ऋ० भू० २५८ या ऋतञ्जानन्ति ता (युवती=स्त्रिय) ४ १९ ७ सत्य-विद (विद्वज्जना) १ ७२ ८ [ऋतोपपदे ज्ञा अवबोधने (क्र्या०) धातो क प्रत्यय। स्त्रिया टाप्। अन्यत्र प्रथमा-बहुवचनम्। ऋतज्ञा सत्यज्ञा वा यज्ञज्ञा वा नि० ११ १८]

ऋतज्येन ऋता सत्या ज्या यस्मिँस्तेन (धन्वना=धनुषा) २.२४ ८ [ऋत-ज्या पदयो समास। ऋत सत्यनाम निघ० ३ १० ज्या वयोहानौ (क्र्या०) धातो स्त्रियामडि टापि च ज्यारूपम्]

ऋतद्युम्न ! हे सत्यधन और सत्य-कीर्त्ति वाले यति-वर स० वि० १९५, ९.११३ ४ [ऋत-द्युम्नपदयो समास। ऋत सत्यनाम निघ० ३ १० द्युम्न धननाम निघ० २ १०]

ऋतधाम सर्वगत सत्य और यथार्थस्वरूप वाला धाम स्थान आर्याभि० २ १७, ५ ३२ ऋत यथार्थं धाम स्थित्यर्थ स्थान यस्य स (राजा) १८.३८ यथा सत्य जल वा दधाति तथा (भगवान् विद्वान्वा) ५ ३२ [ऋत-धामन्पदयो समास। धामन्=डुधाञ् धारणपोषणयो (जु०) धातोर्बाहुलकादौणादिको मनिन् प्रत्यय। दधाति यत्रेति विग्रह]

ऋतधीतयः सत्यधारका (महाविद्वांस) ६ ५१ १० ऋतस्य सत्यस्य धीतिर्धारण येषान्ते (विद्वज्जना) ५ ५१ २ **ऋतधीतिभिः**=जलधारकैर्गुणै ६ ३९ २ [ऋत-धीति-पदयो समास। धीति=डुधाञ् धारणपोषणयो (जु०) धातो स्त्रिया क्तिन्]

ऋतनिभ्यः सत्यन्यायकर्त्रीभ्यो राज्ञीभ्य २ २७ १२ [ऋत-तनिपदयो समास। तकारलोप पूर्वपदस्य छान्दस। तनि=तनु विस्तारे (तना०) धातोर्बाहुलकाद् इ प्रत्यय]

ऋतपाः य ऋत सत्य पाति (सूर्य) ६ ३ १ सत्य-पालिका (उषा) १ ११३ १२ [ऋतोपपदे पा रक्षणे (अदा०) धातोरण् प्रत्यय]

ऋतपेशसे सत्यस्वरूपाय (वरुणाय=उत्तमव्यव-हाराय) ५ ६६ १ [ऋत-पेशस्पदयो समास। पेशस् इति रूपनाम निघ० ३ ७ हिरण्यनाम निघ० १ २]

ऋतप्रजात ऋत सत्य प्रजात यस्मात्तत्सम्बुद्धौ (अर्य=स्वामीश्वर) २६ ३ ऋते सत्याचरणे प्रकट (बृह-स्पते=विद्वज्जन) २ २३ १५ **ऋतप्रजातः**=कारणा-दुत्पद्य ऋते वायावुदके प्रसिद्ध (अग्नि) १ ६५ ५ [ऋत-प्रजातपदयो समास। प्रजात=प्र+जनी प्रादुर्भावे (दिवा०) धातो क्त]

ऋतप्रवीतम् ऋतात् सत्यात् कारणात् प्रकृष्टतया

कामयमानस्य (राज्ञ) ७ ३४ १७ [ऋतपदाद् आत्मन इच्छाया क्यचि 'क्याच्छन्दसी' ति उ प्रत्यय । ऋतायु यज्ञकाम नि० १० ४५]

ऋतायोः आत्मन ऋत सत्यमिच्छु (विद्वज्जन) १ १६६ ५ [ऋतपदाद् आत्मन इच्छाया क्यचि ताच्छील्ये उ प्रत्यय]

ऋतावरि ! सत्याचरणयुक्ते (विदुषि स्त्रि !) २ १.१८ **ऋतावरी**=उषा ६ ६१ ६ बहुसत्यप्रकाशिका (उषा) ४ ५२ २ सत्यप्रकाशिकोषा ३ ५४ ४ ऋत सत्य विद्यते यस्या सा (उषा =प्रातर्वेला) ३ ६१ ६ **ऋतावरीम्**=बहुसत्याचरणयुक्ताम् (उषस =प्रातर्वेलाम्) ५ ८० १ **ऋतावरीः**=ऋत पुष्कलमुदक विद्यते यासु ता (नद्य) ३ ३३ ५ ऋत सत्य विद्यते यासु ता (दिव =ज्योतीषि ३ ५६ ५ उषस ४ १८ ६ [ऋतमुदकनाम निघ० १ १२ सत्यनाम निघ० ३ १० तत 'छन्दसीवनिपौ' अ० ५ २ १०९ वा० सूत्रेण वनिप् । 'वनो र च' अ० ४ १ ७ सूत्रेण रेफडीपौ । 'अन्येषामपि०' सूत्रेण पूर्वस्य दीर्घ]

ऋतावरी सत्यकारणयुक्ते (विद्युदन्तरिक्षे) १ १६० १ बहूनृतादीन्युदकानि विद्यन्ते ययोस्ते (सूर्यभूमी) ३ ६ १० बह्वृत सत्य विद्यते ययोस्ते (द्यावापृथिव्यौ) ४ ५६ २ [ऋतावर्य =नदीनाम निघ० १ १३ ऋतावरीर्ऋतवत्य । ऋतमित्युदक नाम प्रत्यृत भवति । नि० २ २५ सिद्धि पूर्वपदे द्रष्टव्या]

ऋतावः ऋत सत्य विद्यते यस्मिँस्तत्सम्बुद्धौ (अग्ने =राजन्) ४ १० ७ ऋत सत्य बहुविध विद्यते यस्य तत्सम्बुद्धौ (वरुण=अध्यापकोपदेशक वा) २ २८ ६ सत्यप्रकाशक (विद्वन्नध्यापक) ३ १४ २ **ऋतावा**=ऋत सत्य विद्यते यस्मिन् स (पुत्र =तनय) ४ ४२ ४ सत्यगुणकर्मस्वभाववान् (विद्वान्) १ ७७ २ ऋता प्रशस्ता सत्यगुणा विद्यन्ते यस्मिन् स (विद्वज्जन) १ ७७ १ सत्यस्वरूप (अग्नि =आप्तो जन) ४ २ १ सत्यप्रकाशक (देव =विद्वान्) ३ ५४ १२ सत्यसेवी (विप्र =मेधाविजन) ७ ६१ २ सत्यवान् (तत्त्ववेत्ता विद्वान्) ३ ५३ ८ ऋतस्य सत्यस्य सम्बन्धो विद्यते यस्य स (विद्वान् सभेश) प्र०—अत्र अन्येषामपि०' इति दीर्घ 'सुपा सुलुग्०' इति डादेश १८ ५३ सत्याचरण (राजा) ४ ३८ ७ ऋतानि सत्यानि कर्माणि गुणा स्वभावो वा यस्य स (सभाध्यक्ष) १ ७७ ५ **ऋतावानम्**=ऋत बहु सत्य विद्यते यस्मिँस्तम् (अग्नि=विद्वज्जनम्) प्र०—अत्र 'छन्दसीवनिपौ इति वार्त्तिकेन वनिप् १२ १११ सत्यादागमयम् (अग्नि=पावकम्) ३ २ १३ ऋत सत्य विद्यते यस्मिँस्तम् (अग्नि=परमेश्वरम्) ४ ७ ३ **ऋतावानः**=प्रशंसितमृत सत्य विद्यते येषु ते (देवा =दिव्यगुणा) ३ ५६ ८ सत्यस्य प्रकाशिका (कन्या) ७ ४० ७ [ऋत सत्यनाम निघ० ३ १० ततो मत्वर्थे 'छन्दसीवनिपौ' अ० ५ २ १०९ वा सूत्रेण वनिप् । 'अन्येषामपि०' इति दीर्घ]

ऋतावा=य ऋत जल सवनति भजति स (सूर्य इव राजा) ६ ७३ १ सत्यस्य विभाजक (अग्नि =परमात्मा) ४ ६ ५ य ऋत वनति सभजति स (विद्वज्जन) २ ३५ ८ सत्यस्य जलस्य वा विभाजक (अग्नि =विद्युत्) ७ ३ १ सत्याऽसत्योर्विभाजक (अग्नि =सर्वप्रकाशको जगदीश्वर) ६ १५ १३ य ऋतेन सत्येन वनति सम्भजति स (धार्मिको जन) १ १२२ ६ **ऋतावानम्**=य ऋत जल वनति सम्भजति तम् (वैश्वानर=अग्निम्), भा०—योऽग्निर्जलादीनि मूर्त्तानि द्रव्याणि स्वतेजसा भिनत्ति, निरन्तर जलमाकर्षति च तम् २६ ६. सत्यस्य सम्भक्तारम् (राजानम्) ४ १ २. **ऋतावानः**=य ऋतानि सत्याचरणानि वनन्ति सभजन्ति ते (कवय =प्राज्ञा विद्वास) २ २४ ७ [ऋतोपपदे वन सभक्तौ (भ्वा०) धातो 'अन्येभ्योऽपि दृश्यन्ते' इति विच् । 'विड्वनोर्०' इत्याकारादेश]

ऋतावा य ऋत सत्य वनुते याचते स (विद्वज्जन) ३ १३ २ **ऋतावानः**=सत्य याचमाना (विद्वज्जना) ७ ३९ ७ [ऋतोपपदे वनु याचने (तना०) धातो 'अन्येभ्योऽपि दृश्यन्ते' इति विच् । 'विड्वनोर्०' इत्याकारादेश]

ऋतावाना ऋत सत्य विद्यते ययोस्तौ (अध्यापकोपदेशकौ) ५.६५ २ ऋतस्य सत्यस्य सम्बन्धिनौ (सभासेनेशौ), प्र०—अत्र 'अन्येषामपि०' इति दीर्घ १ १३६ ४ सत्याचारसम्बन्धिनौ (अध्यापकोपदेशकौ) १ १५.८ [ऋतप्राति० मत्वर्थे 'छन्दसीवनिपौ' अ० ५ २ १०९ वा० सूत्रेण वनिप् । सहिताया पूर्वस्य दीर्घ]

ऋतावानाः ऋत सत्य मत कर्म वा विद्यते येषु ते (विद्वज्जना) ५ ६७ ४ **ऋतावानौ**=सत्याऽऽचारिणौ (अध्यापकोपदेशकौ) १.१५१ ४ [पूर्वपदे व्याख्यातम्]

ऋतावृधः य ऋतेन वेदविज्ञानेन वर्द्धन्ते तान् (पितॄन्=जनकादीन्) १९ ६५ सत्यविद्यावर्द्धका (विश्वेदेवा =सर्वविद्वास) ६ ५२ १० या ऋतेन जलेन नद्य इव सत्येन वर्द्धन्ते ता (सत्यस्त्रिय) प्र०—अत्र 'अन्येषामपि०'

सत्येपु ऋकृत्यादिपु सीदति स (परमेश्वर) १० २४ [ऋतोपपदे पद्लृ विशरणगत्यवसादनेपु (भ्वा०) धातो 'सत्सूद्विपद्रुहृ०' अ० ३ २ ६१ सूत्रेण क्विप्। ऋतसदित्येष (सूर्य) वै सत्यसत् ऐ० ४ २०]

ऋतसदनम् यदृताना सत्याना बोधाना स्थान तत् ४ ३६ ऋताना यथार्थाना पदार्थाना सादन स्थानम् ४ २६ [ऋत-सदनपदयो समास। सद्नम्=पद्लृ विशरणगत्यवसादनेपु (भ्वा०) धातोरधिकरणे ल्युट्। सदनम्=उदकनाम निघ० १ १२]

ऋतसदनी या क्रिया ऋताना जलाना सदनी गमनागमनकारिणी ४ ३६ [ऋत-सदनीपदयो समास। सदनी=पद्लृ विशणगत्यवसादनेपु (भ्वा०) धातोरधिकरणे ल्युट्। तत स्त्रिया ङीप्]

ऋतसाप य ऋतेन सत्येन सपन्ति सम्बध्नन्ति ते (विद्वासो जना) ६ ५० २ ये ऋतेन सपन्ति प्रतिज्ञा कुर्वन्ति ते (मरुत=सत्पुरुषा) ७ ५६ १२ सत्यसम्बन्धा (विद्वज्जना) ५ ४१ ६ य आप्नुवते त आप, समानाश्च ते इति साप, ऋतस्य सत्यस्य मध्ये व्यापका व्यापयितारो वा विद्वास १ १७६ २ [ऋतोपपदे पप समवाये (भ्वा०) धातो कर्त्तर्यण्। समवाय=सम्बन्ध सम्यगवबोधो वा। अन्यत्र=ऋत-सापपदयो समास। साप=आप्लृ व्याप्तौ (स्वा०) धातो क्विप् प्रत्यये=आप्। तत समानेन सह समास। समानस्य सादेश]

ऋतस्तुभम् यया ऋत स्तोभते स्तभ्नाति धरति ताम् (नीतिम्) १ ११२ १० [ऋतोपपदे स्तम्भु (सौत्रो धातु) धातो क्विप्]

ऋतस्पते! हे सत्यपालक! भा०—सत्यसेवक (वायो=विद्वज्जन) २७ ३४ [ऋत-पतिपदयो समास। पारस्करप्रभृतीनामाकृतिगणत्वात् सुडागम]

ऋतस्पृशः य ऋत सत्य यथार्थ स्पृशन्ति स्वीकुर्वन्ति ते (विद्वासो जना) ५ ६७ ४ सत्यस्पर्शस्य (राज्ञ) ४ ५० ३ [ऋतोपपदे स्पृश सस्पर्शने (तुदा०) धातो क्विप्]

ऋतस्पृशा ऋतस्य ब्रह्मणो वेदस्य स्पर्शयितारौ प्रापकौ जलस्य च (मित्रावरुणौ=सूर्यवायू) १ २ ८ [ऋतोपपदे स्पृश सस्पर्शने (तुदा०) धातो क्विप्। 'सुपा सुलुक्०' इत्याकारादेश]

ऋतः सत्यज्ञान, भा०—विधानधर्त्ता (अ०—परमात्मा) १७ ८२ [ऋत सत्यनाम निघ० ३ १० ततो मत्वर्थे 'लुगकारेकाराश्च वक्तव्या' अ० ४.४ १२८. वा० सूत्रेण लुक्]

ऋता सत्याऽऽचारौ (अध्यापकोपदेशकौ) ६ ६७ ४. ऋतौ यथार्थमुगुणस्वरूपौ, (सभासेनाऽधिपती) १ ४६ १४ [ऋतप्राप्ति० 'सुपा सुलुक्०' सूत्रेणौकारस्याकार]

ऋता ऋतानि सत्यानि (विज्ञानानि) १ १६१ ६ ऋत सत्यनाम निघ० ३ १० तत शेर्लोप 'शेश्छन्दसि बहुलम्' अ० ६ १ ७० सूत्रेण]

ऋता ऋते सत्यसुखप्रापके यज्ञे ६ १५ १४ ['ऋता' इति व्याख्यातम्]

ऋतात् सत्याद् धर्म्याद् व्यवहारात् १ १३६ २ **ऋतानाम्**=सत्यानाम् (व्यवहाराणाम्) ४ २३ ४ **ऋतानि**=सत्यानि (वचनानि) १ १७६ २ **ऋताय**=सत्य प्राप्ताय (विदुपे जनाय) १ १५३ ३ सत्याचाराय १ १३७ २ धर्म्यव्यवहारेण प्राप्ताय (धनाय) ५ २० ४ सत्याय जलाय वा ४ २३ १० सत्यलक्षणाऽन्वितायोदकाय वा १ १२१ ४ सत्यविद्याय (सज्जनाय) १ १५१ ३ [ऋतमिति पदे व्याख्यातम्]

ऋतायतः उदकमिवाऽऽचरत (सज्जनस्य) २ ३२ १ आत्मन ऋत सत्यमिच्छत (महाविदुप) २ १ २ **ऋतायते**=ऋत कामयमानाय (विद्यार्थिने जनाय) ५ २७ ४ ऋतमात्मन इच्छवे (विदुपे जनाय), प्र०—'वाच्छन्दसि सर्वे विधयो भवन्ति, इति क्यच उत्व न १ ९० ६ आत्मन ऋत विज्ञानमिच्छते (मनुष्याय) १ ६१ ७ [ऋतपदाद् आत्मन् इच्छायामाचारे वा क्यच्। तत शतृ]

ऋतायते ऋतमिव करोति ४ ८ ३ ऋतमुदकमिवाऽऽचरन्ति, प्र० अत्र वचनव्यत्ययेन बहुवचनस्थान एकवचनम् 'ऋतमित्युदकनामसु पठितम्' निघ० १ १२ 'न छन्दस्यपुत्रस्य' इतीत्वाऽभाव 'अन्येपामपि०' इति दीर्घ १३ २७ [ऋतपदादाचारे क्यङ्]

ऋतायन् ऋत सत्यमात्मन इच्छन् (विद्वज्जन) १ ११७ २२ ऋतमाचरन् (सज्जन) ५ ४० १ (ऋतपदाद् आत्मन इच्छाया क्यच्, आचारे वा उपमानाद्। 'नच्छन्दस्यपुत्रस्य' इतीत्वाऽभाव। तत शतृ]

ऋतायवः ऋत सत्यमिच्छव (विद्वज्जना) ५ ८ १ आत्मन ऋतमिच्छव (नर=नायका जना) ५ ५४.१२ **ऋतायुभ्याम्**=आत्मन ऋतमिच्छद्भ्यामिव (अध्यापकशिष्याभ्याम्) ७ १० **ऋतायोः**=ऋतं सत्यं न्यायधर्म्म

यम् (सूक्तम्) कौ० २६ ६. ऋतवो वै देवा श० ७ २.४ २६. ऋतवो ह वै प्रयाजा । तस्मात्पञ्च भवन्ति पञ्च ऋतव श० १.५.३ १ ऋतवो वै प्रयाजा ऽनुयाजा कौ० १४ ऋतवो वै पृष्ठानि तै० ३ ६ ६ १ श० १३ ३ २ १ ऋतव पितर कौ० ५ ७ श० २४.२ २४ गो० उ० १ २४ ऋतव एव प्रवोवाज गो० पू० ५ १२ ऋतवो वाव होत्रा गो० उ० ६ ६ ऋतवो होत्राशसिन. कौ० २६ ८ सदस्या ऋतवोऽभवन् तै० ३ ११ ६ ४. ऋतवो वै विश्वेदेवा श० ७ १ १ ४३ ऋतवो वै वाजिन कौ० ५ २ श० २ ४ ४ २२. गो० उ० १ २० ऋतव शिक्यमृतुभिर्हि सवत्सर शक्नोति स्थातु यच्छक्नोति तस्माच्छिक्यम् श० ६.७ १ १८ ऋपभो वा एष ऋतूना यत्सवत्सर । तस्य त्रयोदशो मासो विष्टपम् तै० ३ ८ ३ ३ अग्निष्टोम उक्थ्योऽग्निर् ऋतु. प्रजापति सवत्सर इति । एते ऽनुवाका यज्ञक्रतूनाञ्चर्तूनाञ्च संवत्सरस्य च नामधेयानि तै० ३.१० १० ४ मुख वा एतद् ऋतूना यद्वसन्त तै० १ १ २ ६ अन्त ऋतूना हेमन्त श० १ ५ ३ १३]

ऋतुपाः य ऋतून् पाति रक्षति स सूर्य ३ ४७ ३ **ऋतुपाभिः**=ये ऋतुषु पान्ति तै (मरुद्भि =मनुष्यै) ४ ३४ ७ [ऋतूपपदे पा रक्षणे धातोरच्प्रत्यय]

ऋतुमतः प्रशस्ता वसन्तादय ऋतवो विद्यन्ते येषा तान्, भा०—देशकालज्ञान् (पितॄन्=विद्यावयोवृद्धान् पित्रादीन्) १६ ६१ ऋतुविद्यावतोऽर्थात् यथासमयमुद्योग-कारिण (पितॄन्) ऋ० भू० २६३ [ऋतुप्राति० मतुप्]

ऋतुशः ऋतुमृतु प्रति २३ ५७ वहुषु ऋतुषु १ १६२ ४ वहूनृतून् १३ ४३ ऋत्वर्हम्, भा०—प्रत्यृतु २५ २७ ऋतावृतौ २६ १० [ऋतुप्राति० 'सर्ल्यैकवचनाच्च वीप्सायाम्' अ० ५ ४ ४३ सूत्रेण वीप्साया शस्]

ऋतुष्ठाः या ऋतुषु वसन्तादिषु तिष्ठन्ति ता (सत्य-स्त्रिय) १७ ३ [ऋतूपपदे ष्ठा गतिनिवृत्तौ (भ्वा०) धातो क प्रत्यय । स्त्रिया टाप्]

ऋते विना २ १२ ६ भिन्न ७ ११.१ ['ऋते' इत्यव्ययम्]

ऋतेजाः यो ऋते सत्ये जायते (सूर्य) ६ ३ १ सत्ये प्रादुर्भूता (उषा) १ ११३ १२ [ऋतोपपदे जनी प्रादुर्भावे (दिवा०) धातोर्ड प्रत्यय । सप्तम्या समासेऽलुक्]

ऋतेन सत्यस्वरूपेण ब्रह्मणा २ २७ ८ सत्येन परमात्मना वा ५ १५ २ सत्येन वेदविज्ञानेन, विद्याविनय-युक्तेन न्यायेन १६ ७५ सत्येन व्यवहारेण ७ ३४ ८ जलेनेव सत्येन ५ ८०.१ वहिरथेन वायुना नह १६ ७६ कालेन सूर्येण वायुना वा ऋ० भू० १४३ यथार्थेन योगा-भ्यासेन, भा०—सत्याचरणेन १६ ७३ सत्यविज्ञानयुक्तेन (वेदेन) १६.७८ [ऋतमिति व्याख्यातम् । ऋतम् उदकनाम निघ० १ १२ धननाम निघ० २ १०. सत्यनाम निघ० ३.१०.]

ऋतेश्रिताः ऋते ब्रह्मणि पुरुषार्थे चाऽऽश्रिता., ऋत मेवमानाश्च (ज्ञानिनो जना) ऋ० भू० १०१ [ऋत-श्रितपदयो समास । सप्तम्या अलुक् । श्रित =श्रिञ् सेवायाम् (भ्वा०) धातो क्त]

ऋतोः ऋतुसमयात् २ २८ ५ ['ऋतुना' पदे द्रष्टव्य]

ऋत्विक् ऋत्वनुकूल सङ्गच्छन् (विद्वज्जन) २ ५ ७ **ऋत्विजम्**=य ऋतौ ऋतौ प्रत्युत्पत्तिकाल ससार सङ्गत यजति करोति तथा च शिल्पसाधनानि सङ्गमयति, सर्वेषु ऋतुषु यजनीयस्तम् (अग्निम्=परमेश्वरं भौतिक-मग्नि वा) प्र०—'ऋत्विग्दधृग्०' अ० ३ २ ५६ अनेन कर्त्तरि निपातन तथा 'कृतो बहुलम्०' इति कर्मणि वा १ १ १ सर्वेषु ऋतुषु यजनीय, पूजार्ह, यथाकाल जगद्रचक ज्ञानादियज्ञसाधकम् (ईश्वरम्) वे० भा० न० य ऋतूनर्हति तम् (सज्जनम्) ७ १६ ६ ऋतून् यजति सङ्गच्छते यस्तम् (बहुश्रुत सज्जनम्) १ ४५.७ यज्ञ-सम्पादकम् (विद्वज्जनम्) १ ४४ ११ यज्ञसाधकम् (विद्वासम्) ५.२६ ७ य ऋतुषु यजति तद्वद्वर्त्तमानम् (अग्नि=पावकम्) ५ २२ २. ऋत्विग्वत् सुखसाधकम् (अग्नि=परमेश्वरम्) ३ १० २. सब ऋतु वसन्त आदि के रचक अर्थात् जिस समय जैसा सुख चाहिये, उस समय वैसे सुख के सम्पादक (ईश्वर) को आर्याभि० १ २, १ १ १ **ऋत्विजः**=य ऋतुषु यजन्ते ते विद्वास १ ६० ३. समय-समय मे प्राप्त होने वाले (सन्यासि जन) स० वि० २०६, अथर्व० ६ ६ ६ ऋतूपपदे यज देवपूजासगतिकरणदानेषु (भ्वा०) धातो कर्त्तरि क्विन् । 'ऋत्विग्०' अ० ३ २ ५६ सूत्रेण निपात्यते । ऋत्विक् ईरण, ऋग्यष्टा भवतीति शाकपूणि । ऋतुयाजी भवतीति वा नि० ३ १६ ऋतव ऋत्विज श० ११ २ ७ २ ऋत्विजो हैव देवयजनम् श० ३ १ १ ५ एते एव सरघो मधुकृतो यद् ऋत्विज श० ३ ४ ३ १४ आत्मा वै यज्ञस्य यजमानोऽङ्गान्यृत्विज श० ६ ५ २ १६]

ऋत्वियम् ऋत्विगर्हम् (सत्कर्म) २.१ २ ऋतु सम्प्राप्तोऽस्य तम् (गर्भम्=बीजम्) २३ ६३ **ऋत्वियः**=

इनि दीर्घ १७ ३ ये ऋतेन सत्येन वर्द्धन्ते (भा०—ईश्वरोपासका विद्वास) १७ ७८ या ऋत सत्य वर्द्धयन्ति ता (प्रजा) ५ ४४ ४ ऋतेन सत्येनाऽऽचरणेन विज्ञानेन च वृद्धा (वाच) १ १४२ ६ सत्यस्य वर्द्धका, (देवा = विद्वज्जना) ३४ ५३ या ऋत यथायोग्य सत्य वर्द्धयन्ति ता (द्वार = द्वाराणि) २८ २८ सत्यव्यवहारवर्द्धकान् (देवान् = दिव्यान् गुणान् भोगान्वा) ६ १५.१८ ऋतमुदक सत्य यज्ञ च वर्धयन्ति तान् (देवान् = विद्वज्जनान्) १ १४ ७ या ऋत सत्य सुख जल वा वर्धयन्ति ता (द्वार = द्वाराणि) १ १३ ६ ऋतेन सत्येन वर्धन्ते ते (विद्वास) १ ४४ १४ [ऋतोपपदे वृधु वृद्धौ (भ्वा०) धातो क्विप् । 'अन्येषामपि दृश्यते' अ० ६ ३ १३७ सूत्रेण सहिताया दीर्घ । ऋतावृध् = सत्यवृधो वा यज्ञवृधो वा नि० १२ ३३]

ऋतावृधा यावृतेन सत्याऽनुष्ठानेन वर्धेते तौ (अश्विनौ = सूर्यपवनौ) १ ४७ १ यावृतेन यथार्थगुणेन प्राप्तिसाधकेन वर्धयेते तौ (अश्विनौ = सभासेनेशौ) १ ४७ ३ यावृतेन जलेन यथार्थतया शिल्पक्रियया वा वर्धेते तौ (अश्विनौ = सूर्यपवनौ) १ ४७ १ कारणेन वर्द्धिते (द्यावापृथिवी = क्षितिसूर्यौ) १ १५९ १ यावृत सत्य वर्धयतस्तौ (अध्यापकोपदेशकौ) ५ ६५ २ सत्येन वृद्धौ (अध्यापकाऽध्येतारौ) २ ४१ ४ ये ऋतेन कारणेन वर्धेता ते (देवी = द्यावापृथिव्यौ भूमिसूर्यप्रकाशौ) १ १०६ ३ सत्यवर्द्धकौ (मित्रावरुणा = अध्यापकोपदेशकौ) ३ ६२ १८ यावृत विज्ञान वर्द्धयतस्तौ, (अ०—अध्यापकाऽध्येतारौ) ७ ६ [पूर्वपदे सिद्धि द्रष्टव्या]

ऋतावृधे सत्यस्य वर्द्धकाय (अग्नये = पावकाय) ३ २ १ **ऋतावृधौ** = ऋत सत्य कारण जल वा वर्द्धयतस्तौ (मित्रावरुणा = सूर्यवायू) प्र० —अत्राऽन्तर्गतो ण्यर्थ 'अन्येषामपि दृश्यते' इति दीर्घश्च १ २३ ५ ऋत ब्रह्म तेन वर्धयितारौ ज्ञापकौ जलाकर्पणवृष्टिनिमित्ते वा (मित्रावरुणौ = सूर्यवायू) १ २ ८ ['ऋतावृध' इति पदे व्याख्यातम्]

ऋताषाट् य ऋत व्यवहार सहते स (राजा) १८ ३८ [ऋतोपपदे षह मर्षणे (भ्वा०) धातो 'छन्दसि सह' अ० ३ २.६३ सूत्रेण ण्वि । 'सहे साड स' अ० ८ ३ ५६ सूत्रेण षत्वम् । 'अन्येषामपि दृश्यते' अ० ६ ३ १३७ सूत्रेण दीर्घत्वम्]

ऋतीषहम् य ऋतीन् परपदार्थप्रापकाञ्छत्रून् सहते तम् (वीर = शूरपुरुषम्) ६ १४ ४ गतिसहम् (इन्द्र = राजानम्) प्र०—अत्र 'सहितायाम्' इति दीर्घ २६ ११. [ऋत्युपपदे षह मर्षणे (भ्वा०) धातो क्विप् प्रत्यय । पूर्वपदस्य दीर्घ सहितायाम्]

ऋतीषाहम् य ऋति सत्य सहते तम् (रयिम्), प्र०—अत्र 'अन्येषामपि०' इति दीर्घ १ ६४ १५ [ऋत्युपपदे षह मर्षणे (भ्वा०) धातो 'छन्दसि सह' अ० ३ २ ६३ सूत्रेण ण्वि । पूर्वपदस्य दीर्घत्वम्]

ऋतुथा ऋतुभ्य २३ ४० ऋत्वनुकूलानि (अन्नानि) १ १७० ५ ऋतौ ऋतौ, प्र०—अत्र 'वाच्छन्दसि' इति थाल् १ १६२ १६. ऋतुप्रकारेण १ १६४ ४४ ऋतुरिव ६ १८ ३ ऋतुभि २६ १६ ऋतुप्रकारै २० ६५ ऋतौ २५ ४२ ऋतुष्विव ६.६ ३ [ऋतुप्राति० प्रकारवचने 'वा छन्दसि' इति थाल् प्रत्ययोऽसर्वनाम्न अपि । अथवा इवार्थे थाल् प्रत्यय । ऋतुथा = ऋतावृतौ नि० ८ १६ ऋतुथा = काले काले नि० १२ २७]

ऋतुना औष्ण्य प्रापकेन २१ २४ प्राप्तव्येन (वसन्तेन) २१ २३ वसन्ताद्येन २ ३७ ६ वसन्तादिभि सह, प्र०—अत्र 'जात्याख्यायामेकस्मिन् बहुवचनमन्यतरस्याम्' अ० १ २ ५८ अनेन जात्यभिप्रायेणैकवचनम् १ १५ १ **ऋतुभिः** = वसन्तादै १२ ६१ ऋच्छन्ति प्राप्नुवन्ति यैस्तै (वसन्तादिभि) प्र०—अत्र 'अर्त्तेश्च तु' उ० १ ७३ इति ऋ-धातोस्तु प्रत्यय किच्च १ १५ १० मेधाविभि सह ४ ३४ २ सहचरितै सुखै, सर्वै कालाऽवयवै १४ ७ **ऋतुः** = वसन्तादि २५ ४२ **ऋतू** = यावृच्छतस्तौ (ज्येष्ठाऽऽपाढौ) १४ ६ वृष्टिप्रापकौ (श्रावणभाद्रपदौ), वर्षर्त्तुसम्बन्धिनौ (श्रावणभाद्रपदौ) १४ १५ बलप्रदौ (आश्विनकार्त्तिकौ) १४ १६ स्वलिङ्गप्रापकौ (मार्गशीर्ष पौषश्च मासौ) १४ २७ **ऋतून्** = रसाऽऽहरणसाधकान् (वसन्तादीन्) १ १५ ५ [ऋ गतिप्रापणयो (भ्वा०) धातो अर्त्तेश्च तु' उ० १ ७३ सूत्रेण तु प्रत्यय किच्च । ऋतु अर्त्तेर्गतिकर्मण नि० २ २५ ऋतुभि कालै नि० ८ ३ द्वौ द्वौ हि मासावृतु ता० १० १२ ८ द्वौ हि मासावृतु श० ७ ४ २ २६ त्रयो वा ऋतव सवत्सरस्य श० ३ ४ ४ १७ पञ्च वाऽ ऋतव श० २ २ ३ १४ पञ्चर्तवो हेमन्तशिशिरयो समासेन ऐ० १ १ षड् वा ऋतव सवत्सरस्य श० १ २ ५ १२ वसन्तो ग्रीष्मो वर्षा, ते देवा ऋतव । शरद् हेमन्तशिशिरस्ते पितर (ऋतव) श० २ १ ३ १ या षड् विभूतय ऋतवस्ते जै० उ० १ २१ १ तद् यानि तानि भूतानि ऋतवस्ते श० ६ १ ३ ८ सप्त ह्यतव श० ६ ३ १ १६ अग्नयो वाऽ ऋतव श० ६ २ १ ३६ ऋतवो हैते यदेताश्चितय श० ६ २ १ ३६ ऋतव उपसद श० १० २ ५ ७ ऋतव उद्गीथ ष० ३ १ ऋतवो वा उदु ब्रह्मी-

प्रिय धाम ता० १४ २ ५]

ऋभुक्षणम् ये ऋभून् मेधाविन क्षाययति निवासयति ज्ञापयति वा तम् (इन्द्र=क्रियाकुशल विद्वान सेनापति वा) १ १११ ४. **ऋभुक्षणः**=महान्त (नर=नायका जना), प्र०—ऋभुक्षा इति महन्नाम, निघ० ३ ३, ७ ४८ १ मेधाविनो विद्वास (जना) ७ ३७.१ **ऋभुक्षाः**=मेधावी (जन) ६ ५० १२ महान् (मेधाविजन) ४ ३३ ६ सद्गुणैर्महान्त (आप्ता विद्वास) ४ ३४ ५ य ऋभून् मेधाविन क्षियति निवासयति स महान् (इन्द्र=राजा) ७ ४८ ३ [ऋभुक्षा महन्नाम निघ० ३ ३ उरुक्षयण ऋभूणा राजेति वा नि० ६ ३ ऋभु मेधाविनाम (निघ० ३ १५), तदुपपदे क्षि निवासे (तुदा०) धातोर्डिनि प्रत्यय । 'पथिमथ्यृभुक्षामात्०' इत्याकारादेश]

ऋभुतः ऋभूणा सकाशात् ४ ३६ ५ [ऋभु मेधाविनाम, निघ० ३ १५. तत सार्वविभक्तिकस्तसि]

ऋभुमत् प्रशस्ता ऋभवो मेधाविनो विद्यन्ते यस्मिँस्तत् (वय=आयु) १ १११ २ **ऋभुमन्तम्**=प्रशस्ता ऋभवो मेधाविनो विद्यन्ते यस्य तम् (विद्वासमध्यापकम्) ३ ५२.६ **ऋभुमान्**=प्रशस्ता ऋभवो मेधाविनो विद्यन्ते यस्य स (सेनाऽध्यक्ष) १ ११०.६ [ऋभुप्राति० मतुप् अतिशायनेऽर्थे । ऋभुरिति मेधाविनाम निघ० ३ १५]

ऋभ्वसम् ऋभु मेधाविनमसते गृह्णाति तम् (विद्वज्जनम्) प्र०—ऋभुरिति मेधाविनाम, निघ० ३.५, अस गत्यादि ५ ५२ ८ ऋभून् मनुष्यादीन् पदार्थान्वाऽस्यन्ति येन तम् (रथम्) १ ५६ १ [ऋभूपपदे अस गतिदीप्त्यादानेषु (भ्वा०) धातो कर्त्तरि मूलविभुजादित्वात् क । अन्यत्र ऋभूपपदे असु क्षेपणे (दिवा०) धातो करणे 'पुसि सज्ञाया घ प्रायेण' अ० ३ ३ ११८ सूत्रेण घ]

ऋभ्वा महता मेधाविना मन्त्रिणा, प्र०—अत्र सुपा सुलुग्०, इत्याकारादेश १ १०० ५. अत्यन्त विज्ञानादि प्रकाश वाला, सबका प्रकाशक, महान्, महाबल वाला (ईश्वर) आर्याभि० १ ३४ [ऋभुरिति मेधाविनाम निघ० ३.१५. ततस्तृतीयाया स्थान आकार.]

ऋश्यः मृगविशेष २४.३७ **ऋश्यान्**=मृगजातिविशेषान् पशून् २४ २७. [ऋषति गच्छतीति विग्रहे ऋषी गतौ (तुदा०) धातो. 'अघ्न्यादयश्च' उ० ४ ११२ सूत्रेण यक्]

ऋषभम् वृषभम् २१.५६. श्रेष्ठ पुरुषार्थम् २१ ४०. बलीवर्दम् २१ ३८ अतिश्रेष्ठम् (गाम्) २८ ३४ **ऋषभस्य**=उत्कृष्टगुणकर्मस्वभावस्य राज्ञ २१.४७ प्राप्तु योग्यस्य (हविष=वस्तुन) २१.४६ उत्तमस्य (हविष=वस्तुन) २१.४५ श्रेष्ठस्य (विदुषा राज्ञ) ६ २८ ८ **ऋषभ**=बलिष्ठ (वृषभ) १८ २७ विज्ञानवान् (परमयोगी) १९ ९१ गतिमान् पशु १४ ६ श्रेष्ठ (गौ=वृषभ) २१.२२ **ऋषभाय**=श्रेष्ठाय मनुष्याय (जनाय) २४ ३० **ऋषभाः**=बलिष्ठा (पशव) २४.१३. **ऋषभेण**=गन्तु योग्येन, भा०—पुरुषार्थेन (गवा) २१ ३२ [ऋषी गतौ (तुदा०) धातो 'ऋषिवृषिभ्या कित्' उ० ३ १२३ सूत्रेण अभच् किच्च । ऋषभो वै पशूनामधिपति ता० १९ १२ ३ ऋषभो वै पशूना प्रजापति श० ५ २ ५ १७. वृषा वा वृषभो योषा ब्रह्मण्या गो० ६ ३ वीर्यं वा ऋषभ ता० १८ ९ १४]

ऋषभास. वृषभा २०.८८ उत्तमा (अस्मत्सम्बन्धिजना) ६ १६ ४७ [पूर्वपदे व्याख्यानम् । तत प्रथमाबहुवचने जसोऽसुगागम]

ऋषयः वेदविद्यापुरस्सरा परमयोगिन १८ ५८. वेदादिशास्त्रार्थविद (महाविद्वास) ३४.४९ वेदार्थवेत्तार, भा०—वेदपारगा (सज्जना.) १५ ४९ मन्त्रद्रष्टार (योगिजना) ऋ० भू० १२५ मन्त्रार्थविद (विप्रा=मेधाविपुरुषा) २५ ३० वेदार्थविद्या को प्राप्त (मन्त्यासि जन) स० वि० १९८, अथर्व० १९ ४१ १ प्राणादय पञ्च देवदत्तधनञ्जयौ च १७ ७९ विद्वान् लोग सं० वि० १८९, अथर्व० १९ ४१ १ विषयप्रापका (पञ्च ज्ञानेन्द्रियाणि) ३४ ५५ गन्तार (स्तव) १ १६४ १५ ज्ञापका प्राणा १५ ११ प्रापका (वायव) १५ १० प्रापका (पितर=पालका जना.) ४ ४२ ८ बलवन्त प्राणा १५.१३. गतिमन्त (प्रथमजा=वायव) १५ १२ धनञ्जयादय सूक्ष्मस्थूला वायव. प्राणा १५ १४ **ऋषिभिः**=मन्त्रार्थद्रष्टृभिरध्यापकैस्तर्कै. कारणस्थै प्राणैर्वा, प्र०—'ऋषिप्रशसा चैवमुच्चावचैरभिप्रायैर्ऋषीणा मन्त्रदृष्टयो भवन्ति' निरु० ७ ३ इयमेव ऋषीणा प्रशसा यतस्त एवमुच्चावचैर्महदल्पाभिप्रायैर्मन्त्रार्थैविदितै प्रशसनीया भवन्ति, तेषाम् ऋषीणा मन्त्रेषु दृष्टयोऽर्थादित्यन्नपुरुषार्थेन मन्त्रार्थाना यथावद् दर्शनानि ज्ञानानि भवन्ति, तस्मात्ते पूज्या सत्कर्त्तव्या आसन्निति । 'साक्षात्कृतधर्माण ऋषयो बभूवुस्ते०' निरु० १ २० कीदृशा ऋषयो भवन्तीत्यत्र प्राह—यत साक्षात्कृतधर्माणो धार्मिका आप्ता यै सर्वा विद्या यथावद्विदिता येऽवरेभ्यो ह्यसाक्षात्कृतवेदेभ्यो मनुष्येभ्य उपदेशेन वेदमन्त्रान् मन्त्रार्थाश्च सप्रादु प्रकाशितवन्तस्तस्मात्ते ऋषयो जाता । तै कस्मै प्रयोजनाय मन्त्राध्यापन तदर्थ-

ऋतुयाजक (विद्वज्जन) ५ ७५ ९ य ऋतुमर्हति स (क्रियाविज्जन) ३ ४१ २ ऋतु प्राप्तोऽस्य स (अग्ने=विद्युदग्नि.) प्र०—अत्र 'छन्दसि घस्' अ० ५.१ १०६ अनेन ऋतुशब्दाद् घस् प्रत्यय ३ १४ **ऋत्विये**=ऋतु समय मे स० वि० १३६, अथर्व० १४ २ ३७ [ऋतु-प्राति० तदस्य प्राप्तमित्यस्मिन् विषये 'छन्दसि घस्' अ० ५ १ १०६ सूत्रेण घस्। 'सिति चे' पदसञ्ज्ञायाम् 'ओर्गुण' इति न भवति। छन्दसि सर्वविधीना विकल्पाद् अर्हत्यर्थेऽपि घस्। ऋतव ऋत्विज श० ११ २ ७ २ इति ऋत्विगर्थे ऋतु]

ऋत्वियाः या ऋतुमर्हन्ति ता (वाच) १ १६० २ [पूर्वपदे व्याख्यातम्। स्त्रिया टाप्]

ऋदूदरः मृदूदर (वैद्य) प्र०—ऋदूदर सोमो मृदूदरो मृदुरुदरेष्विति वा०, नि० ६ ४, २ ३३ ५ **ऋदूदराः**=ऋत् सत्यमुदरे येषान्ते (कवय=मेधाविजना) ३ ५४ १० [मृदु-उदरपदयो समासे मकार-लोपश्छान्दस। अन्यत्र ऋत्-उदरपदयो समास। ऋदूदर सोमो मृदूदरो मृदुरुदरेष्व् इति वा नि० ६ ४]

ऋद्धम् समृद्धम् (प्राप्तपदार्थम्) १८ ११ [ऋधु वृद्धौ (दिवा०) धातो क्त]

ऋद्धिः सम्यग् वृद्धि ८ ५२ योगेन प्राप्ता समृद्धि १८ ११ [ऋधु वृद्धौ (दिवा०) धातो क्तिन्। अग्निमुखा ह्यृद्धि श० ३ ३ ८ ९]

ऋधक् य समृध्नोति स (मर्त्य=मनुष्य) ३३ ८७ समृद्धिवर्द्धके (भा०—कर्मणि), समृद्धिर्यथा स्यात्तथा ८ २० स्वीकारे ३ २५ १ सत्ये ७ ५७ ४ सत्यम् (रुद्र=परमात्मानम्) ६ ४९ १० यथार्थम् ६ ४० ५ [ऋधक् पदनाम निघ० ४ १ ऋधक् पृथगर्थेऽव्ययम्। ऋधु वृद्धौ (दिवा०) धातोर्बाहुलकादौणादिकोऽजि प्रत्यय। ऋध्यति वर्धयतीति विग्रह। ऋधक् पृथग्भावस्य प्रवचन भवति। अथाप्यृध्नोत्यर्थे दृश्यते। ऋध्नुवन् नि० ४ २५]

ऋधत् ऋध्नुयात् समर्द्धयेत् ६ २ ४ ऋधु वृद्धौ (दिवा०) धातोर्लेट्। व्यत्ययेन श]

ऋधद्वाराय ऋधत् सवर्द्धक सत्यो वार स्वीकरणीयो व्यवहारो यस्य तस्मै (अग्नये=सुपात्राय जनाय) ६ ३ २ [ऋधत्-वारपदयो समास। ऋधत्=ऋधु वृद्धौ (दिवा०) धातोर्बाहु० अति प्रत्यय। वार=वृञ् वरणे (स्वा०) धातोर्घञ्]

ऋधाथे वर्धयत, प्र०—अत्र व्यत्ययो 'बहुल छन्दसि' इति विकरणाभावश्च १ १७ ९. **ऋधीमहि**=समृद्धा भवेम ६ ३७ १ **ऋधेम**=वर्द्धेमहि ऋ० भू० २४७, अथर्व० १९ ५५ ४. [ऋधु वृद्धौ (दिवा०, स्वा०) धातोर्लिङ्। 'बहुल छन्दसी' ति विकरणलुक्। अन्यत्र लिङ्व्यत्ययेन शप् च]

ऋधावा शत्रूणा हन्ता (अयं=राजा) ४ २४ ८

ऋध्नोति वर्धयति १ १८ ८ [ऋधु वृद्धौ (स्वा०) धातोर्लट्। ऋध्नोति परिचरणकर्मा निघ० ३ ५]

ऋध्यताम् वर्धताम् २६.२ **ऋध्याम्**=वर्धयेयम् ५ ६० १ **ऋध्याम**=वर्धेम १७ ७७ समृध्याम ४ १० १ वर्द्धेमहि १५ ४४. **ऋध्यासम्**=वर्द्धिषीय ८ ९ [ऋधु वृद्धौ (दिवा०) धातोर्लोट्। व्यत्ययेनात्मनेपदम्। अन्यत्र लिङ्। ऋणाद्धिपरिचरणकर्मा निघ० ३ ५]

ऋन्धन् ससाधयन् (तनूनपात्=धार्मिको मनुष्य) २९ २६ वर्द्धमान. सन् (यज्ञ=राजधर्म) १ १७३ ११ साध्नुवन् (पुत्र) ३.३१ २ [ऋन्धन् अर्द्धयित्वा नि० ३ ७ समर्द्धय नि० ८ ६ ऋधु वृद्धौ (दिवा०) धातो शतृ। व्यत्ययेन श्नम्]

ऋबीसम् सरलम् (भावम्) ५ ७८ ४ **ऋबीसात्**=नष्ट विद्याप्रकाशादविद्यारूपात्, प्र०—ऋबीसमपगतभासमपहृत-भासमन्तर्हितभास गतभासं वा नि० ६ ३६, १ ११७ ३ **ऋबीसे**=दुर्गतभासे व्यवहारे १ ११६ ८ [ऋबीसम्=अपगतभासम्, अपहृतभासम्, अन्तर्हितभासम्, गतभास वा नि० ६ ३६]

ऋभवः मेधाविन (विद्वज्जना) प्र०—ऋभुरिति मेधाविनाम, निघ० ३ १५, अत्राऽऽह निरुक्तकार—ऋभव उरु भान्तीति वा, ऋतेन भान्तीति वा, ऋतेन भवन्तीति वा, नि० ११ १५, १ ११० १ प्राज्ञा (विद्वासो मेधाविजना) ४ ३३ २ विपश्चित (विद्वज्जना) ४ ३४ १० धीमन्त (विद्वास) ४ ३५ ५ सूरय (विद्वज्जना) ४ ३६ ७ किरणा १ ११० ६ क्रियाकुशला मेधाविन. (जना) १ १११ १. **ऋभुः**=प्रशस्तो विद्वान् १ १११ ५ बहुविद्या-प्रकाशको विद्वान्, मेधाव्यायु सभ्यताप्रकाशक (विद्वज्जन) १ ११० ७ सकलविद्याजातप्रज्ञो मेधावी (जन) १ १२१.२ धनञ्जय सूत्रात्मा वायुरिव मेधावी १ १६१ ६ महान् (विद्वान् जन) ३ ५ ६ [ऋभुरिति मेधाविनाम निघ० ३.१५ ऋभव उरु भान्तीति वा, ऋतेन भान्तीति वा, ऋतेन भवन्तीति वा, आदित्यरश्मयोऽप्यृभव उच्यन्ते नि० ११ १६ प्रजापतिर्वै पिता ऋभून् मर्त्यान् सतो मर्त्यान् कृत्वा तृतीयसवन आभजन् ऐ० ६ १२ ऋभवा वा इन्द्रस्य

म्यन्त परम्' अ० २ २ ३५ वा० सूत्रेण]

ऋष्वः ! महापुरुष (राजन्) ५ ३३ ३ प्राप्तविद्य (इन्द्र=शिल्पिजन) ३ ३५ ८ प्राप्तविज्ञान (अग्ने=विद्वत्पुत्र) ४ २ २ **ऋष्वम्**=महान्तम् (इन्द्र=विद्युतमिव राजानम्) ६ २० ६ गन्तारम् (युवानम्) ६ १६ २ श्रेष्ठम् (राजानम्) ४ १६ १ **ऋष्वः**=प्रापक (विद्वज्जन) ३ ५ ५ प्राप्तु योग्य (विद्वान्) ३ ५ ७ ज्ञाता (इन्द्र = विद्याप्रकाशको जन) २ २१ ४ गतिमान् (सूर्य) १ १४६ २ प्राप्तविद्य (सेनापति) १ ८१ ४ महान् (अग्नि) ३ ५ १० **ऋष्वात्**=महत कारणात् ४ २२ ४ **ऋष्वान्**=महत (अश्वान् रथादीन्वा) प्र०—ऋष्व इति महन्नाम निघ० ३ ३, ६ ६३ ६ **ऋष्वाः**=महान्तो महाशया (वेधस =मेधाविजना) ५ ५२ १३ [ऋष्व इति महन्नाम निघ० ३ ३ ऋषी गतौ (तुदा०) धातोर्वाहुलकादौणादिको वन् प्रत्यय किच्च]

ऋष्वया महत्या (सेनया) ६ १८ १० **ऋष्वाः**= महत्य (द्वार =गृहद्वाराणि) २६ ५ [ऋष्व इति महन्नाम निघ० ३ ३]

ऋष्ववीरस्य ऋष्वा महान्तो गुणा वीरा वा यस्य तस्य (जगतो महावीरस्य मनुष्यस्य वा) १ ५२ १३ [ऋष्ववीरपदयो समास । ऋष्व इति महन्नाम निघ० ३ ३. वीर =वीरो वीरयत्यमित्रान् वेतेर्वा स्याद् गतिकर्मणो वीरयतेर्वा नि० १ ७]

ऋष्वा ऋष्वौ महान्तौ (वाहू=भुजौ) ६ ४७ ८ [ऋष्व इति महन्नाम निघ० ३ ३ 'सुपा सुलुगि' त्याकार]

ऋष्वासः ज्ञानहेतव (सत्वान =बलपराक्रमप्राणिभूतगणा) १ ६४ २ [ऋषी गतौ (तुदा०) धातोर्वाहुलकाद् औणादिको वन् प्रत्यय किच्च । जसोऽसुगागम]

ऋष्वे ! महागुणयुक्त (विद्वन् पते) ६ ६४ ४ [ऋष्व इति महन्नाम निघ० ३ ३]

एकचक्रम् एक सर्वकलाभ्रमणार्थ चक्र यस्मिँस्तम् (रथम्=विमानादियानम्) १ १६४ २ [एक-चक्र-पदयो समास । एकम्=इण् गतौ (अदा०) धातो 'इण्भीकापा०' उ० ३ ४३ सूत्रेण कन् । चक्रम्=डुकृञ् करणे (तना०) धातो कप्रत्यये 'कृञादीना के द्वे भवत इति वक्तव्यम्' अ० ६ १ १२ वा० सूत्रेण द्वित्वम् । एकचक्रम् एकचारिणम् नि० ४ २७]

एकजम् एकस्मात् कारणाज्जातम् (महत्तत्त्वम्) १ १६४ १५ [एकोपपदे जनी प्रादुर्भावे (दिवा०) धातो 'अन्येष्वपि दृश्यते' अ० ३ २ १०१ सूत्रेण ड प्रत्यय]

एकताय एकस्य सुखस्य भावाय १.२३ [एकप्राति० भावे तल् । तलन्तस्य लिङ्गव्यत्ययेन पुंस्त्वम्]

एकत्रिंशत् एकाऽधिका त्रिंशत् (सङ्ख्या) १८ २४ [एक-त्रिंशत्पदयो समास । त्रिंशत्='पङ्क्तिविंशतित्रिंशत्०' अ० ५ १ ५६ सूत्रेण निपात्यते तदस्य परिमाणमिति विषये]

एकत्वम् परमात्मनोऽद्वितीयत्वम् ४० ७ आत्मा के एक भाव को स० वि० २१५, ४० ७ [एकप्राति० भावे त्व. प्रत्यय]

एकधनविदे य एकेन धर्मेण विज्ञानेन वा धन विन्दति तस्मै (इन्द्राय=परमैश्वर्ययुक्ताय (पुरुषाय) ५ ७. [एक-धनोपपदे विद्लृ लाभे (तुदा०) धातो क्विप्]

एकधेनुभिः एकैव धेनुर्वाक् सहायभूता येषा तैं सह (विद्वज्जनै) ७ ३८.५ [एक-धेनुपदयो समास । धेनुरिति वाङ्नाम निघ० १ ११ धेनु =धेट् पाने (भ्वा०) धातो 'धेट इच्च' उ० ३.३४ सूत्रेण नु प्रत्यय । धेनुर्धयतेर्वा-धिनोतेर्वा नि० ११.४२]

एकनीडम् एकस्थानम् भा०—एकाधिकरणम् (जगत्) ३२ ८ [एक-नीडपदयो समास । नीडम्=नितरा मिलन्ति यत्रेति विग्रहे पृषोदरादित्वात्साधु]

एकपदी एकवेदाऽभ्यासिनी (विदुषी स्त्री) १ १६४ ४१ **एकपदीम्**=एकमोमिति पद प्राप्तव्य यस्या ताम् (स्वाहा=वाचम्) ८ ३० [एक-पादपदयो समासे 'सङ्ख्यासुपूर्वस्य' अ० ५ ४ १४० सूत्रेण समासान्तलोपे 'पादोऽन्यतरस्याम्' अ० ४ १ ८ सूत्रेण ङीपि 'पाद पत्' अ० ६ ४ १३० सूत्रेण पदादेश]

एकपात् एक पादो गमन प्रापण यस्य स (अहि = मेघ) २ ३१ ६ एक पादो बोधो यस्य स (अज = ईश्वर) ३४ ५३ एक पादो जगति यस्य स (अज = परमात्मा) ६ ५० १४ एकस्मिन् पादे विश्व यस्याऽस्ति स (ईश्वर) ५ ३३ सर्व जगदेकस्मिन् पादे यस्य स (अज = परमेश्वर) ७ ३५ १३ सब जगत् जिसके किञ्चिन्मात्र एक देश मे है वह (अनन्त ईश्वर) आर्याभि० २ १८, ५ ३३ [एक-पादपदयोर्बहुव्रीहौ समासे 'सङ्ख्यासुपूर्वस्य' अ० ५ ४ १४० सूत्रेण समासान्तलोप । वायुरेकपात्तस्याकाश पाद । गो० पू० २ ८ एकपात्=एकेन पादेन पातीति वा, एकेन पादेन पिबतीति वा, एकोऽस्य पाद इति वा नि० १२.३०]

प्रकाशश्च कृत इत्यत्रोच्यते—उत्तरोत्तर वेदार्थप्रचाराय। येऽवरेऽल्पबुद्धयो मनुष्या अध्ययनायोपदेशाय च ग्लायन्ते तेषा वेदार्थविज्ञानायेम नैघण्टुक निरुक्ताख्य च ग्रन्थ समाम्नासिषु सम्यगभ्यासार्थ रचितवन्त। येन सर्वे मनुष्या. वेद वेदाङ्गानि च यथार्थतया विजानीयुरेव कृपालव ऋषयो गण्यन्त इति। 'पुरस्तान्मनुष्या वा ऋषिपूत्क्रामत्सु०' निरु० १३ १२ अत्र तर्क एव ऋषिरुक्त। 'अविज्ञाततत्त्वेऽर्थे०' न्याय० १ १ ४० या तत्त्वज्ञानार्थोहा सैव तर्कशब्देन गृह्यते। 'प्राणा ऋषय' श०न० ७ २ १ ५ अत्रर्षिशब्देन प्राणा गृह्यन्ते १ १ २ विचारशीलैर्मन्त्रार्थद्रष्टृभि (परमयोगिजनै) १ २३ २४. वेदविद्भिर्विद्वद्भि, भा०—सच्चिदानन्दस्वरूपेश्वरमेवकैर्धार्मिकैर्विद्वद्भि परोपकारकत्वादाप्तै १२ २६ **ऋषिम्**=कार्यसिद्धिप्राप्तिहेतुम् (द्युत=कारणस्थां दीप्तिम्) प्र०—अत्र 'इगुपधात् कित्' उ० ४ १२० अनेन 'ऋषी गतौ' इत्यस्माद्धातोरिन् प्रत्यय ३ १६ वेदमन्त्रार्थद्रष्टार, जितेन्द्रियतया शुभगुणाना सर्वैवोपदेष्टार, सकलविद्याप्रत्यक्षकारिणम् (परमविद्वज्जनम्) १ १० ११ सकलवेदमन्त्रार्थवेत्तारम् (महाविद्वासम्) ३ ४३ ५ वेदपारगाऽध्यापकम् १ ११७ ३ **ऋषि:**=मन्त्रार्थवेत्तेव (ईश्वर) ४ २६ १ सर्वज्ञ (ईश्वर) आर्याभि० २ ३०, १७ १७ ज्ञाना (परमेश्वर) १७ १७ प्रापको विद्वान् १३ ५४ रूपप्रापक (जमदग्नि=प्रज्वलिताऽग्निर्नयनम्) १३ ५६ शब्दप्रापक. (श्रोत्रम्) १३ ५७ विज्ञापक पति १४.५ अध्यापकोऽध्येता वा १ १०६ ६ सर्वविद्याविद् वेदोपदेष्टा (महाविद्वान्) १ ३१ १ मन्त्रार्थद्रष्टा विद्वान् विद्याप्रकाशक (सज्जन) १ ६६ २. **ऋषीणाम्**=वेदार्थशब्दसम्बन्धविदाम् (महाविदुषाम्) ७ २६ ४ **ऋषे**=हे विद्याप्रद (परमविद्वज्जन) ५ ५६ ८ **ऋषे**.=मन्त्रार्थविद (परमविदुष) ५.३३ १० [ऋषी गतौ (तुदा०) धातो 'इगुपधात् कित्' उ० ४ १२० सूत्रेण इन् प्रत्यय किच्च। ऋषय पदनाम निघ० ५ ६ ऋषीन्=सप्त ऋषीणानि ज्योतीषि नि० ३.२६. ऋषि दर्शनात् स्तोमान्ददर्शेत्यौपमन्यव। तद् 'यदेनास्तपस्यमानान् ब्रह्म स्वयम्भ्वभ्यानर्षत्त ऋषयोऽभवस्तदृषीणामृषित्वम् इति विज्ञायते नि० २ ११ ऋषय=आदित्यरश्मय। इन्द्रियाणि नि० १२ ३६ प्राणा वा ऋषय ऐ० २ २७. प्राणा ऋषय श० ७ २ ३ ५ एते वै विप्रा यदृषय श० १.४ २ ७ अथ यदेवानुब्रवीत। तेनर्षिभ्य ऋणं जायते यद्ध्येभ्य एतत्करोत्यृषीणा निधिगोप इति ह्यनूचानमाहु। श० १ ७ २ ३. यो वै ज्ञातोऽनूचान स ऋषिरार्षेय श० ४ ३ ४ १६ ये यत्पुरास्मात् सर्वस्मादिदम् इच्छन्त श्रमेण तपसारिषंस्तस्माद् ऋषय श० ६.१.१ १]

ऋषिकृत् ऋषीन् ज्ञानवतो मन्त्रार्थद्रष्टॄन् कृपया ध्यानोपदेशाभ्या करोति (अग्नि=सर्वोत्तमो विद्वान्) प्र०—अत्र 'कृतो बहुलम्' इति करणे क्विप् १ ३१ १६ [ऋष्युपपदे डुकृञ् करणे (तना०) धातो क्विप्। ह्रस्वस्य तुगागम। ऋषिरिति व्याख्यातम्]

ऋषिद्विषे वेदविदीश्वरविरोधिने दुष्टाय मनुष्याय १ ३६.१० [ऋष्युपपदे द्विष अप्रीतौ (अदा०) धातो कर्त्तरि क्विप्। ऋषिरिति व्याख्यातम्]

ऋषिस्वरम् ऋषीणामुपदेशम् ५.४४.८ [ऋषिस्वरपदयो. समास]

ऋषूणाम् मन्त्रार्थविदाम् (विद्वज्जनानाम्) प्र०—अत्र वर्णव्यत्ययेन इकारस्य स्थाने उत्वम् ५ २५ १. प्राप्तविद्याना जिज्ञासूना वा (अध्यापकानामध्येतॄणा वा) प्राप्तवैद्यकविद्यानाम् (परमवैद्यानाम्) १ १२७ १०. [ऋषिरिति व्याख्यातम्। तत षष्ठी। वर्णव्यत्ययेनेकारस्योकार]

ऋष्टय: ज्ञानवन्त (मरुत=मनुष्या) ५ ५७ ६ गमनाऽऽगमनशीला (वायव) १ ६४.४. शस्त्राऽस्त्राणि ५.५४ ११ प्रापका (दन्ताद्यवयवा) ७ ५५.२ **ऋष्टिभि:**=प्रापिकाभि (पृषतीभि=मरुद्गतिभि) २.३६ २ यन्त्रचालनार्थैर्गमनाऽऽगमननिमित्तैर्दण्डै १ ८५ ४. व्यवहारप्रापकै (पृषतीभि=वेगादिगुणै) १ ६४ ८ याभि: कलायन्त्रयष्टिभिर्ऋषन्ति जानन्ति प्राप्नुवन्ति व्यवहारांस्ताभि (वाशीभि=वाणीभि) १ ३७ २ **ऋष्टिषु**=प्राप्तिषु १ १६६ ४ **ऋष्टि:**=प्रापिका (वाक्=वाणी) १ १६७ ३ प्राप्ति १.१६६ ३ **ऋष्टी:**=प्राप्ता सेनाजना. ५ ५२ ६ [ऋषी गतौ (तुदा०) धातो स्त्रिया क्तिन्]

ऋष्टिमद्भि: कलाभ्रामणार्थयष्टिशस्त्राऽस्त्रादियुक्तै (रथेभि=विमानादियानै.) १ ८८ १ **ऋष्टिमन्त:**=बह्व्य ऋष्टयो गतयो येषा ते (मर्या=मनुष्या) ३ ५४ १३. प्रशस्तविज्ञानवन्त (मरुत.=मनुष्या) ५.६० ३ [ऋषी गतौ (तुदा०) धातो क्तिन् प्रत्यये—ऋष्टि। ततो भूम्नि मतुप्]

ऋष्टिविद्युत: विद्युति ऋष्टिर्विज्ञान येषा ते (वेधस=मेधाविनो जना) ५ ५२.१३ ऋष्टिर्विद्युदिव येषान्ते (मरुत=विद्वासो जना) १.१६८ ५ [ऋष्टिविद्युत्पदयो समास। 'सप्तमी विशेषणे बहुव्रीहाविति' पूर्वनिपाते प्राप्ते सप्तम्यन्तस्य परनिपात. गड्वादिभ्य सप्त-

९ ३३ [एकादश-अक्षरपदयो समास]

एकादशी एकादशाना पूरणा (क्रिया) २५ ४ [एकादशप्राति० पूरणप्रत्ययान्तात् (टिड्ढाण०) इति स्त्रिया ङीप्]

एकायुः एक सत्यगुणस्वभावमायुर्यस्य स (अग्नि = परमेश्वर) १ ३१ ५ [एक-आयुपदयो समास]

एजत् चलत्सन् (विश्व=सर्व जगत्) १९ ४७ कम्पयन् (ब्रह्म) १ १६४ ३० कम्पमानम् (जगत्) ऋ० भू० २०५ [एजति गतिकर्मा निघ० २ १४ एजृ कम्पने (भ्वा०) धातो शतृप्रत्यय]

एजत् कम्पते ४ १७ १० कम्पयत् १ १६४ ३० **एजतः**=कम्पयत २३ २८ **एजति**=कम्पते वर्द्धते च ८ २८ कम्पते चलति वा ५ ७८ ८ चाल पर चला रहा है आर्याभि० २ १२, ४० ५ कम्पते कम्प्यते वा ४० ५ चलित हो के उत्पन्न होता है आर्याभि० १ ४७, ऋ० ७ ८ १२.२ चलता है आर्याभि० २ १२, ४० ५ **एजतु**= सत्कर्मसु चेष्टताम्, भा०—अधर्माचरणाद् बिभीयात् २३ २७ कम्पताम् ५ ७८ ७. चलतु ८ २८ [एजृ कम्पने (भ्वा०) धातोर्लेट् लट् लोट् च]

एजान् भीरून् कम्पकान् (जनान्) ६ २५ ७ [एजृ कम्पने (भ्वा०) धातो पचाद्यच् कर्त्तरि]

एज्याः समन्ताद् यष्टु सङ्गन्तु योग्या क्रिया २१ ४७ [आङ्+यज देवपूजासङ्गतिकरणदानेषु (भ्वा०) धातोर् बाहुलकादौणादिक यक्। किति सम्प्रसारणम्]

एणी मृगी २४ ३६ [एणस्य स्त्री एणी। एणप्राति० स्त्रिया ङीप्]

एत समन्तात् प्राप्नुत ५ ४५ ६ समन्ताद् यन्तु प्राप्नुवन्तु ३ २७ प्राप्त होवो स० वि० १४२, अथर्व० ३ ३०.५ **एतम्**=समन्तात्प्राप्नुतम् ४ ३३ **एति**=प्राप्नोति ५ ५६ ३ गच्छति ६ ४३ १७ गच्छति प्राप्नोति वा ५ ४७ १ जाता आता है आर्याभि० २ ४३, ३४ १ प्राप्त होता है स० प्र० १८४, ३४ १ विजानाति प्राप्नोति वा ५ ४४ १२ प्रापयति ८ ४ प्राप्नुयात् १ १२४ ६ **एतु**=गच्छतु १७ ४० गच्छतु ७ ४४ [इण् गतौ (अदा०) धातोराङ्पूर्वाद् लोट्। अन्यत्र लटि लोटि च रूपाणि। एति गतिकर्मा निघ० २ १४]

एतग्वा एतान् प्रत्यक्षान् पदार्थान् गच्छन्तीति (धना=किरणा) १.११५ ३. [एतग्वा अश्वनाम निघ० १ १४]

एतन प्राप्नुत ५ ८७ ८ [आङ्पूर्वाद् इण् गतौ (अदा०) धातोर् लोट्। तस्य तनबादेश]

एतरी प्राप्नुवन्ती (अग्निज्वाला) ५ ४१ १० प्राप्तव्ये (दमे=गृहे) ६ १२ ४

एतवे एतु गन्तुम् १ ११२ ८ प्राप्तुम् ५ ४४ ११ एतुम्, प्र०—अत्र 'तुमर्थे से०' इति तवे-प्रत्यय १ ४६ ११ [इण् गतौ (अदा०) धातोस्तुमर्थे तवेन् प्रत्यय]

एतवै प्राप्तुम् ४ ५८ ९ गन्तुम् ८ १३ [इण् गतौ (अदा०) धातोस्तुमर्थे तवैप्रत्यय]

एतशम् वेगादि गुणयुक्ताऽश्ववन्तम् (रथम्) १ ५४ ६ प्राप्तविद्यमश्ववद् बलिष्ठम् (सज्जनम्) ४ ३० ६ अश्वम् ४ १७ १४ **एतशस्य**=अश्वस्य सम्बन्धीनि बलानि, प्र०—एतश इत्यश्वनाम, निघ० १ १४, १७ १० **एतशः**=प्राप्नुवन् (उपकारि जन) २ १९ ५ सर्वत्र प्राप्त (सविता=ईश्वर) ५ ८१ ३ अश्वोऽश्विकमिव ५ ३१ ११ साधुरश्व १ १२१ १३ सर्व जगदित स्वव्याप्त्या प्राप्त (सविता=ईश्वर), प्र०—इणस्तशन्तसुनौ, उ० ३ १४७, ११ ६ **एतशे**=अश्वेऽश्विक इव ५ २९ ५ **एतशेन**=अश्वेनेव व्याप्तिशीलेन वेगवता किरणनिमित्तेन वायुना १२ ७४ [एतश =अश्वनाम निघ० १ १४ इण् गतौ (अदा०) धातो 'इणस्तशन्तशसुनौ' उ० ३ १४९ सूत्रेण तशन् प्रत्यय]

एतशेभिः विज्ञान-वेदादिभिरागमकैर्गुणैरश्वै ४ ३२ [पूर्वपदे व्याख्यातम्। ततो भिस ऐसादेशो न भवति छान्दसत्वात्]

एता प्राप्तौ (हरी=हरणशीलावश्वौ) ३ ४३ ४ [आङ्+इण् गतौ (अदा०) धातो क्त। 'सुपा सुलुक्०' इत्याकार]

एतादृक्षासः एतै पूर्वोक्तै सदृशा (मनुष्या) १७ ८४ [एतदोपपदे दृशिर् प्रेक्षणे (भ्वा०) धातो 'दृशे क्सश्च वक्तव्य' अ० ३ २ ६० वा० सूत्रेण क्स प्रत्यय। 'दृक्षे चेति वक्तव्यम्' अ० ६ ३ ९१ वा० सूत्रेण सर्वनाम्न एतद आकारादेश। जसोऽसुक् च]

एतावत् एतत्परिमाणमस्य तत् (रूप=स्वरूपम्) १९.३१. **एतावन्तः**=यावन्तो व्याख्याता (रुद्रा =प्राणजीवा) १६ ६३ **एतावान्**=एतत् परिमाण दृश्याऽदृश्य ब्रह्माण्डरूपम्, भा०—इद सर्व सूर्यचन्द्रादिलोकलोकान्तर चराचर यावज्जगदस्ति तत् (महिमा=माहात्म्यम्) ३१ ३ [एतत् सर्वनाम्न 'यत्तदेतेभ्य परिमाणे वतुप्' अ० ५ २ ३९

एक एकः प्रत्येक (जन) ३ २६ १५ [एकपदस्य वीप्साया द्वित्वम्]

एकम् स्वय सिद्धम् (परमात्मानम्) १७ ३० अद्वितीय ब्रह्म ४० ४ **एकः**=अद्वैत (परमात्मा) १.१५४.४ अद्वितीय (परमेश्वर) १ ७ ६ अनुत्तमोऽसहाय. [प्रजापतिर्वा एक तै० ३ ८ १६ १. एकम्=इण् गतौ (अदा०) धातो 'इण्भीकापा०' उ० ३ ४३ सूत्रेण कन्। एका इता सख्या नि० ३ १०]

एकविंशतिः एकाऽधिका विंशति (सङ्ख्या) १८ २४ [एक-विंशतिपदयो समास]

एकविंशः एकविंशतिधा (प्रतूर्त्ति=शीघ्रगति) १४ २३ एकविंशतेर्विद्याना पूरक (सिद्धान्त) १३ ५७. षोडश कलाश्चत्वार पुरुषार्थाऽवयवा कर्त्ता चेति तेषामेकविंशते पूरण (स्तोम=स्तुतिविषय) १० १३ एतत्सङ्ख्यापूरक (सोम=चन्द्र) १५ १३ **एकविंशाभ्याम्**= एतत्सङ्ख्यायुक्ताभ्याम् (मित्रावरुणाभ्या=प्राणोदानाभ्याम्) २६ ६० **एकविंशे**=एतत्सङ्ख्याके (स्तोमे= स्तुतिव्यवहारे) २१.२६ [एक-विंशतिप्राति० पूरणार्थे डट्। 'तिविंशतेर्डिति' अ० ६.४ १४२ सूत्रेण तेर्लोप । प्रतिष्ठा वा एकविंश स्तोमानाम् ता० ३ ७ २ एकविंश एव (स्तोम) सर्वम् गो० पू० ५ १५ एकविंशो वै स्वर्गो लोक श० १०.५ ४.६ एष एवैकविंशो य एष (सूर्य) तपति श० ५ ५ ३ ४ एकविंशो वा अस्य भुवनस्यादित्य ता० ४ ६ ३ असौ वा आदित्य एकविंश तै० १ ५ १० ६ एकविंशो वा एष य एष (आदित्य) तपति कौ० २५ १ द्वादश वै मासा सवत्सरस्य पञ्चर्तवस्त्रयो लोकास्तद्विंशतिरेषऽएवैकविंशो य एष (सूर्य) तपति। सैषा गतिरेषा प्रतिष्ठा श० १ ३ ५.११ आदित्य एवैकविंशस्यायतन द्वादशमासा पञ्चर्त्तवस्त्रय इमे लोका असावादित्य एकविंश ता० १०.१ १० एकविंशो वै प्रजापतिर्द्वादशमासा पञ्चर्त्तवस्त्रय इमे लोका असावादित्य एकविंश ऐ० १.३० एकविंशो वै पुरुष तै० ३ ३.७ १ एकविंशोऽय पुरुषो दशहस्त्या अगुलयो दशपाद्या आत्मैकविंश ऐ० १ १६ क्षत्र वा एकविंश ता० १८ १० ६ विड् वा एकविंश तै० १ ८ ८ ५ शौद्रो वर्ण एकविंश ऐ० ८ ४ एकविंशोऽग्निष्टोम ता० १६ १३ ४ तम् (एकविंशस्तोम) उ देवतल्प इत्याहु ता० १० १ १८]

एकवीर. एकश्चाऽसौ वीरश्च (इन्द्र=सेनेश) १७ ३३ [एक-वीरपदयो समास । एको ह तु सन्वीरो वीर्यवान् भवति। जै० ३ २ ६ ६ एको ह्येवैष वीरो यत्प्राण जै० ३ २ ५.१.]

एकशताय एकाऽधिकाय शताय (व्यवहाराय पदार्थाय वा) २२ ३४ [एक-शतपदयो समास]

एकशफम् एकखुरमश्वादिकम् १३ ४८ **एकशफाः**= अश्वादय १४ ३०. [एक-शफपदयो समास । पशवो वा एकशफम् तै० ३ ६ ११ ४ श्रीर्वा एकशफम् तै० ३ ६ ८ २]

एकशितिपात् एक शिति पादोऽस्य (कृष्ण पशु) २६.५८ [एक-शिति-पादपदाना समास । 'सख्यासुपूर्वस्य' अ० ५ ४ १४० सूत्रेण समासान्तलोप । शिति= कृष्ण शुक्लो वा। शति सौत्रो धातु । तत 'क्रमितिमिशति०' उ० ४ १२२ सूत्रेण इन् प्रत्यय किच्च धातोरकारस्येकारादेशश्च]

एकश्रुष्टीन् एक ही धर्मकृत्य मे शीघ्र प्रवृत्त होने वाले (गृहस्थादि मनुष्यों) को स० वि० १४३, अथर्व० ३ ३० ७. [एक-श्रुष्टीपदयो समास । श्रुष्टी पदनाम निघ० ४ ३ श्रुष्टीति क्षिप्रनाम । आशु अष्टीति नि० ६ १३]

एकाकी असहायोऽद्वितीय (सूर्य=सूर्यलोक) २३ ४५ [एकप्राति० 'एकादाकिनिच्चासहाये' अ० ५ ३ ५२ सूत्रेण आकिनिच् प्रत्यय]

एकाऽक्षरेण ओमित्यनेन विज्ञापकेन दैव्या गायत्र्या छन्दसा ६ ३१ [एक-अक्षरपदयो समास । अक्षर वाङ् नाम निघ० १ ११]

एकादश प्राणाऽपानोदानसमान-नाग-कूर्म-कृकल-देवदत्त-धनञ्जयजीवा (देवास.=देवा) पृथिव्यप्तेजो-वाय्वाकाशाऽऽदित्य-चन्द्र - नक्षत्राऽहङ्कार-महत्तत्त्व-प्रकृतय, श्रोत्र-त्वक् चक्षू रसना-घ्राण-वाक्-पाणि-पाद-पायूपस्थ-मनासि ७ १६ एकाधिका दश (सख्या) १८.२४ एतत्सङ्ख्याता (देवा=दिव्यगुणा प्राणादय) २० ११ दशेन्द्रियाणि मनश्च १ १३६ ११ **एकादशभिः**=दश प्राणा एकादश आत्मा तै० १४ २६ **एकादशम्**=ग्यारहवे (पति) को स० वि० १३४, १० ८५ ४५ [एक दशत् पदयो समास]

एकादशकपालः एकादशसु कपालेषु सस्कृत पाक ६ ३३. [एकादश-कपालपदयोस्तद्धितार्थे समास । संस्कृतार्थे विहितस्य अण् प्रत्ययस्य 'द्विगोर्लुगनपत्ये' इति लुक्]

एकादशाऽक्षरेण आसुर्या पङ्क्त्या (छन्दसा)

लुक् १३ ५३ [इण् गतौ (अदा०) धातोरधिकरणे बाहुलकादौणादिको मनिन्। आङ्+एमन् इति स्थिते 'एमन्नादिषु छन्दसि पररूपम्' अ० ६ १ ९४ वा० सूत्रेण पररूपम्]

एमभिः प्रापकैर्गुणै ५ ५९ २ [इण् गतौ (अदा०) धातोर्मनिन् प्रत्यय]

एमसि समन्तात् प्राप्नुम, प्र०—अत्र 'इदन्तो मसि' इतीदादेश ३ ४१ प्राप्त होते है स० वि० १४६, ३ ४१ [आङ्+इण् गतौ (अदा०) धातोर्लट्। 'इदन्तो मसी' ति मस इदन्तता]

एमहे समन्ताद् याचामहे, प्र०—ईमहे इति याच्ञाकर्मसु पठितम्, निघ० ३ १९, ४ ५ समन्तात्प्राप्नुम, प्र०—अत्र 'ईड गतौ' इत्यस्मात् 'बहुल छन्दसि' इति शपो लुकि श्यनभाव १ १७ ३

एमः एति येन स प्रयत्न १८ १५ [इण् गतौ (अदा०) धातोर्बाहुलकादौणादिको मन् प्रत्यय]

एमि प्राप्नोमि १ १७१ १ प्राप्नुयाम्, प्र०—अत्र लिडर्थे लट् ३ ४१ प्राप्तोऽस्मि २३ ५० [इण् गतौ (अदा०) धातोर्लट्]

एयसे (आ+ईयसे) समन्ताद् गच्छसि ४ २ ३

एयात्=समन्तात्प्राप्नुयात् १२ ६८ [आङ्+ईङ् गतौ (दिवा०) धातोर्लेटि मध्यमैकवचनम्। अन्यत्र आङ्+इण् गतौ (अदा०) धातोर्लिङ्। एयात्=आगच्छतु नि० ५ २८]

एयुषीणाम् समन्तादतीतानामुषसाम् १ १२४ ४ [आङ्+इण् गतौ (अदा०) धातोर्लिट क्वसु। स्त्रियां ङीपि 'वसो सम्प्रसारणम्' इति सम्प्रसारणम्]

एयेथ (आ+इयेथ) अभित एषि ४ ९ १ [आङ्+इण् गतौ (अदा०) धातोर्लिटि मध्यमैकवचनम्। आङ्+च (अदा०) धातोर्वा णिचि लोटि रूपम्]

एरयस्व समन्तात् प्रापय ७ ५ ८ प्रेम से प्रेरणा कर स० वि० १३९, अथर्व० १४ २ ३८ [आङ् पूर्वाद् ईर क्षेपे (चुरा०) धातोर्लोट्। आङ्+ईर गतौ कम्पने च (अदा०) धातोर्वा णिचि लोट्]

एरिरे (आ+ईरिरे) समन्तात् प्राप्नुवन्ति ३ २९ १५ सर्वत प्रेरयन्ति ६ ५ २ समन्ताज्जानीयु १ १४३ ४ प्रेरयन्ति प्राप्नुवन्ति वा १ १२८ ८ कम्पयन्ति गमयन्ति वा २ २ ३ [एरिरे इतीर्त्तिरुपसृष्टोऽभ्यस्त नि० ४ २३ आङ्+ईर गतौ कम्पने च (अदा०) धातोर्लिट्। छान्दसत्वाद् आम् न]

एव अवधारणार्थे १ ८ ८ निश्चयार्थे २ २८ [एव एवम् नि० २ १९]

एवम् अमुना प्रकारेण २१.४४ इसी प्रकार स० वि० १४५, ४.२

एवया गमनक्रियया ५ ४१ १६ [इण् गतौ (अदा०) धातोर् वन्प्रत्यये स्त्रिया टापि तृतीयैकवचनम्]

एवयामरुत् य एवान् प्रापकान् यान्ति तेषा यो मरुत् मनुष्य (धीमान् जन.) ५ ८७ १ विज्ञानवान् मनुष्य. ५ ८७.२ [एवया-मरुत्पदयो समास। एवया=इण् गतौ (अदा०) बाहु० औणादिको वन्, तत एवोपपदे या प्रापणे (अदा०) धातोरण् प्रत्यय। प्रतिष्ठा वा एवयामरुत् ऐ० ६ ३०, गो० पू० ६ ८.]

एवयावरी दु खनिवारिका (अध्यापिकोपदेशिका वा) ६ ४८ १२. [एवोपपदे या प्रापणे (अदा०) धातोर्वनिप् प्रत्यय। तत. स्त्रिया 'वनो र च' सूत्रेण ङीप् रेफादेशश्च]

एवयावः एति जानाति सर्वव्यवहार येन स एवो बोधस्त याति प्राप्नोति प्रापयति वा तत्सम्बुद्धौ (विद्वज्जन), प्र०—'मतुवसोरादेशे वन उपसङ्ख्यानम्, अ० ८ ३ १ अनेन वार्तिकेनाऽत्र सम्बोधने रु १ ९० ५ [एव=इण् गतौ (अदा०) धातोर्बाहु० औणादिको वन्। एवोपपदे या प्रापणे (अदा०) धातोर्वनिप्। तत सम्बुद्धौ 'मतुवसोरादेशे वन उपसङ्ख्यानमि' इति वार्तिकेन रु]

एवयाव्नः य एव विज्ञानं यान्ति तान् (यतस्रु च = ऋत्विज) २ ३४ ११ [एवेति व्याख्यातम्। तदुपपदे या प्रापणे (अदा०) धातोर्वनिप्। 'अल्लोपोऽन' इत्यल्लोप]

एवयाः एवान् रक्षकान् याति (विद्वज्जन) १ १५६ १ [एवोपपदे या प्रापणे (अदा०) धातोरण् प्रत्यय छान्दस एव=अव रक्षणादिषु (भ्वा०) धातोरच् कर्त्तरि]

एवः प्रापणम् १५ ५ ज्ञानम् १५ ४ **एवान्**= प्राप्तव्यान् (पदार्थान्) ६ ५१ २ **एवा.**=कामयमाना (मरुत =मनुष्या) ५ ४१ ५ **एवेन**=गमनेन १ १२८ ३ **एवैः**=विज्ञानादिप्राप्तै सद्गुणै सह ७ ६ ६ ज्ञापकै प्रापकैर्गुणै १ ६८ २ प्रशस्तैर्ज्ञानै कर्मभिर्वा १ १०० १८ प्राप्तै प्रशस्तज्ञानै १ १०० २ प्रापणै ५ ४१ ५ सुखप्रापकै. (गुणै) ४ ५६ १ [एवै कामैरयनैरवनैर्वा नि० १२ २१ एव=इण् गतौ (अदा०) धातोर्बाहु० औणादिको वन्]

एवासः गमनशीला (रथा) १ १६६ ४ ['एव' इति व्याख्यातम्। ततो जसोऽसुक्]

सूत्रेण वतुप् । 'आ सर्वनाम्न' अ० ६ ३ ९१ सूत्रेणाकारादेश सर्वनाम्न]

एतासः समन्तात् प्राप्ता (वायव इव विद्वास) १ १६५ १ [आङ्+इण् गतौ (अदा०) धातो क्त । जसो ऽसुक् च]

एतो एते (जना) ५ ४५ ५

एतोः अयनम् २ १५ ५ एताम् (अविष्या=रक्षाम्) २ ३८ ३

एत्य सेवा कृत्वा ऋ० भू० २८६, अथर्व० १५ ११ २ [आङ्+इण् गतौ (अदा०) धातो क्त्वा । समासे क्त्वो ल्यप्]

एत्यै समन्ताद् गत्यै २७.४५ [आङ्+इण् गतौ (अदा०) धातो स्त्रिया क्तिन्]

एदिधिषुः पतिम् अकृतविवाहाया ज्येष्ठाया पुत्र्यामूढा कनिष्ठा तस्या पतिम् ३० ९

एधताम् वर्द्धताम् २३ २६ **एधते**=वर्द्धते ८ ५ [एध वृद्धौ (भ्वा०) धातोर्लोट् लट् च]

एधते समन्तात् प्रदीपयति ७ १ ८ [आङ्+ञिइन्धी दीप्तौ (रुधा०) धातोर्लट् । नकारलोपश्छान्दस]

एधमानद्विट् यो वर्धमानान् द्वेष्टि स (राजप्रजाजन) ६ ४७ १६ [एधमानोपपदे द्विष् अप्रीतौ (अदा०) धातो कर्त्तरि क्विप् । एधमान =एध वृद्धौ (भ्वा०) धातो शानच् । एधमानद्विट्=एधमानान् द्वेष्टि नि० ६ २२]

एधः इन्धते प्रदीपयन्ति येन तद्वत्, भा०—इन्धन, घृतम् ३८ २५ वर्द्धक (जगदीश्वर) २० २३ इन्धनम् १ १५८ ४ [ञिइन्धी दीप्तौ (रुधा०) धातोर्घञ् प्रत्यये 'अवोदैध०' अ० ६ ४ २९ सूत्रेण नलोपो गुणश्च निपात्यते । वर्धकार्थे तु एध वृद्धौ (भ्वा०) धातो कर्त्तर्यच्]

एधि प्राप्तो भव ४ १ ५ भवसि १ ९१ १५ भवतु ४ १६ वर्धय, वर्धयिता भव ७ ४७ प्राप्त हो स० प्र० १५२, अथर्व० १४ २ १८ [अस् भुवि (अदा०) धातोर्लोट् । 'घ्वसोरेद्धावभ्यासलोपश्च०' इति सकारस्यैत्वे ह्यावल्लोपे च, एत्वस्यासिद्धत्वाद् 'हुझल्भ्यो हेर्धि' इति धिभाव । एधि= भव नि० १० १७]

एधिषीमहि सर्वतो वर्द्धयेम ३८ २५ वर्द्धिषीमहि २० २३ [एध वृद्धौ (भ्वा०) धातोराशिषि लिङि, उत्तमपुरुषबहुवचनम्]

एन गति पुरुषार्थेन सुखानि यस्तत्सम्बुद्धौ (विद्वज्जन) १ १७३ ९ [इण् गतौ (अदा०) धातोर्बाहुलकादौणादिको न प्रत्यय]

एनस एनसः अधर्मस्याऽधर्मस्य ८ १३ [एनस पदस्य वीप्साया द्विर्वचनम्]

एनसः अपराधात् २० १४. अपराधस्य ४ १२ ५ विरोधाऽऽचरणस्य ८ १३ दुष्टाचारात् २० २० पाप मे आर्याभि० २ १६, ८ १३ पापो को आर्याभि० २ १६, ८ १३ धर्मविरुद्धाचरणात् भा०—दुष्टाचारात् ६ १७ दु ख के आर्याभि० २ १६, ८ १३ **एनः**=अधर्माचरणम् ८ १३ अपराधम् ६ ५१ ७ कुपथ्यादिकमपराध वा ६ ७४ ३ पापाचरणम् १ १२५ ७ प्रापक (दुर्जन) ७ १८ १८ दु खफल पापम् ५ ३६ पापरूप कर्म को स० वि० ७, ४० १६ [ईयते प्राप्यते दु खमनेनेति विग्रहे इण् गतौ (अदा०) धातो 'इण आगसि' उ० ४ १९८ सूत्रेणासुन् प्रत्यय । एनस्= एन एते नि० ११ २१]

एना एनेन पूर्वोक्तेन (नमसा=अन्नेन) प्र०—अत्रा ऽऽकारादेश. १५ ३२ [इदम सर्वनाम्न । 'द्वितीयाटौस्स्वेन' अ० २ ४ ३४ सूत्रेणान्वादेश एनादेश । 'सुपा सुलुग्' इत्याकारादेश । एनम् एनाम्=अस्यास्या इत्येतेन व्याख्यातम् नि० ५ २८]

एनांसि भा०—दुश्चेष्टा २० १६ अपराधान् २० १५ ['एनस' पदे द्रष्टव्यम्]

एनी ये इतस्ते (द्यावापृथिव्यौ) १ १४४ ६ [एतद सर्वनाम्नोऽन्वादेशे 'वा छन्दसि०' इत्येनादेश औ प्रत्ययेऽपि]

एनीम् प्राप्तु योग्याम् (श्रियम्) ५ ३३ ६ **एनीः**= एन्यो मृगस्त्रिय इव (अवनय =नद्य) ५ ८५ ६ [एनी नदीनाम निघ० १ १३]

एनोः एनयो (अध्यापकोपदेशकयो) प्र०—अत्र 'छान्दसो वर्णलोप०' इत्यकारलोप १ १३९ १ अनयोर्मध्ये ६ ६९ ८ [इदम सर्वनाम्न ओसि 'द्वितीयाटौस्स्वेन' अ० २ ४ ३४ सूत्रेणान्वादेश एनादेश । 'छान्दसो वर्णलोप' इति वा० सूत्रेणाकारलोप]

एन्यः या यन्ति ता नद्य, प्र०—एन्य इति नदीनाम निघ० १ १३, ५ ५३ ७ [एनी+जस् । एनी नदीनाम निघ० १ १३]

एम प्राप्नुयाम ४ ७ ९ [इण् गतौ (अदा०) धातोर्लिङि उत्तमपुरुषबहुवचनम्]

एमन् प्राप्तव्ये स्थाने, प्र०—अत्र सप्तम्या लुक् 'एमन्नादिषु छन्दसि पररूपम्' इति वार्त्तिकेन पररूप च १३ १७ एति गच्छति तस्मिन् वायौ, प्र०—अत्र सप्तमी

ऐन्द्रम् परमैश्वर्यस्वरूप, सब विद्वानों मे अत्यन्त शोभायमान (ईश्वर) को आर्याभि० २.१८ इन्द्रस्यैश्वर्यस्येदम् (सद =सभाम्) १९ १८ इन्द्रस्य परमैश्वर्यस्येदधिकरणम् (ईश्वर सभाध्यक्षो वा) ५ ३० इन्द्रो विद्युद्देवता यस्य तद् विज्ञानम् १९ १५ ऐश्वर्यकारकम् (भवनम्=आरोग्यकर होमादिकम्) १९ २६ इन्द्रस्य विद्युत इदम् (वलम्) १९ ८ **ऐन्द्रः**=विद्युद्देवताक (उदान = य ऊर्ध्वमनिति) ६ २० इन्द्रदेवताक (अरुण पशु) २९ ५८ इन्द्रो जीवो देवताऽस्य स ऐन्द्र (प्राण =शरीरस्थो वायुविशेष) ६ २० [इन्द्रप्राति० 'सास्य देवता' (अ० ४ २ २४) अर्थे 'तस्येदम्' अ० (अ० ४ ३ १२०) अर्थे वाऽण् प्रत्यय]

ऐन्द्रवायवः इन्द्रो विद्युद्वायुश्च तयोरय सम्बन्धी (कर्त्तव्य) १८ १९ [इन्द्र-वायुपदयो समासे 'तस्येदम्' इत्यर्थेऽण् प्रत्यय । वाक् प्राणश्चैन्द्रवायव ऐ० २ २६]

ऐन्द्राग्नः इन्द्राग्निदैवत्य (सहित =दृढाङ्ग पशु) २९ २८ इन्द्रो वायुरग्निर्विद्युच्च ताभ्या निर्वृत्त (व्यवहार) १८ २० **ऐन्द्राग्नाः**=इन्द्राग्निदेवताका (सञ्चरा प्राणिन) २४ १५ वायुविद्युत्सञ्ज्ञिन भा०—वाय्वग्न्यादिगुणा पशव २४ ८ वायुविद्युद्देवताका (सञ्चरा =मार्गा) २४ १७ [इन्द्र-अग्निपदयो समासे 'सास्य देवता' इत्यर्थे तेन निर्वृत्तमित्यर्थे वाऽण् प्रत्यय]

ऐन्द्राबार्हस्पत्याः वायुसूर्यदेवताका (पशव) २४ ७ [इन्द्र-बृहस्पतिपदयो समासे 'सास्य देवता' इत्यर्थे 'दित्यदित्या०' इति ण्य प्रत्यय । 'देवताद्वन्द्वे च' अ० ६ ३ २६ सूत्रेण पूर्वपदस्यानङ् । 'देवताद्वन्द्वे च' अ० ७ ३ २१ सूत्रेणोभयपदवृद्धि]

ऐन्द्रावैष्णवाः विद्युद्वायुदेवताका (पशव) २४ ७ [इन्द्र-विष्णुपदयो समासे 'सास्य देवता' इत्यर्थेऽण् । पूर्वपदवदानङ् उभयपदवृद्धिश्च]

ऐमि समन्तात्प्राप्नोमि ४ २ समन्तात् प्राप्नुयाम् प्र०—अत्र लिङर्थे लट् ३ ४१ सब प्रकार से प्राप्त होता हूँ स० वि० १४६, ३ ४१ [आङ्पूर्वाद् इण् गतौ (अदा०) धातोर्लट्]

ऐये गच्छेः ५ २ ८ [ईङ् गतौ (दिवा०) धातोर्लिङ् । आडागमश्छान्दस]

ऐरत् प्राप्नोति २ १५ ८ प्रापयेत् ४ ४६ ऐरयति २ १९ ६ कम्पयति यथाक्रम चालयति ४ ५६ ३ प्रेरयेत् ३ ३१ १५ प्रेरयति ३ ५५ २० **ऐरत**=प्रेरयन्ति ७ २३ १

ऐरतम्=गच्छतम् १ ११८ ६. [ईर गतौ कम्पने च (अदा०) धातोर्लङ् । 'बहुल छन्दसी' ति शपो लुक् न । व्यत्ययेन परस्मैपदम्]

ऐरम् प्रेरयेयम् ४ २६.३ [ईर गतौ कम्पने च (अदा०) धातोर्लङ् । व्यत्ययेन परस्मैपदम् । छान्दसत्वाच् छपो लुङ् न]

ऐरयत् कम्पयति २ १७ १ गमयति १ ५१.११ प्रेरयति २ २० ७ प्रेरयेत् ६ ५६.३ वीरयन् वीरयत्यूर्ध्वमधो गमयति, प्र०—अत्र लडर्थे लुङ् १ ७ ३. **ऐरयतम्**=प्रापयतम् ६ ७२.३. गमयतम् १ ११२ ५. प्रेरयतम् १ ११७ २४ **ऐरयन्**=प्राप्नुवन्ति, प्र०—अत्र लडर्थे लट् १ २८ **ऐरयम्**=प्रेरयेयम् ४ ४२ ३. [ईर गतौ कम्पने च (अदा०) धातोर्णिचि लट्]

ऐरयः ईर्ष्व २.१७ ३ [ईर गतौ कम्पने च (अदा०) धातोर्णिचि लङि मध्यमैकवचनम्]

ऐरयेथाम् प्रेरयेतम् ६ ६९ ८ चालयेथाम् १ १५७ ५ [ईर गतौ कम्पने च (अदा०) धातोर्णिचि लङि च रूपम्]

ऐरिरे समन्तात् प्राप्नुवन्त, प्र०+ईर गतौ कम्पने च, इत्यस्याऽमन्त्र इति प्रतिषेधादामोऽभावे प्रयोग १ ६ ४, [ईर गतौ कम्पने च (अदा०) धातोराङ् पूर्वाल् लिट् । आमोऽभावश्च छान्दस]

ऐलवृदाः इलाया पृथिव्या इमानि वस्तुजातानि ऐलानि, तानि ये वर्धयन्ति ते, भा०—पृथिवीरक्षका वायव, प्र०—अत्र वर्णव्यत्ययेन धस्य द, इगुपधलक्षण कश्च १६ ६० [इला पृथिवीनाम निघ० १ १ तत 'तस्येदम्' इत्यर्थेऽण् प्रत्यय । ऐलोपपदे वृधु वृद्धौ (भ्वा०) धातोरिगुपधलक्षण क । अन्तर्भावितण्यर्थ. । वर्णव्यत्ययेन धकारस्य दकार]

ऐषन्त इच्छेयुः १ १२९ ५ [ईष गतिहिंसादर्शनेषु (भ्वा०) धातोर्लङ् । धातूनामनेकार्थत्वाद् इच्छार्थेऽपि]

ओ सम्बोधने १ १७७ ५ आभिमुख्ये १ १६५ १४ अवधारणे १ ११३ ११ प्रेरणेषु २ ३४ १५]

ओकसः सर्वनिवासाऽर्थस्याऽऽकाशस्य १ ३० ९ **ओकः**=गृहम् ४ १९ १५ स्थानम् २ १९ १ निवासस्थानम् ६ ४१ १ **ओकसि**=गृहे ५ ३३ ४ **ओकांसि**=निवासान् ३४ ५७ समवेतानि गृहाणि २ ३८ ५ [अवतिरक्षणहेतुर्भवतीति विग्रहे अव रक्षणादिषु (भ्वा०) धातोर्बाहुलकात् कक् प्रत्यय । उच्यते यत्रेति विग्रहे उच समवाये (दिवा०) धातोर्वा बाहुलकाद् औणादिकोऽसुन्

एवावदस्य एवान् प्राप्तान् गुणान् वदन्ति येन तस्य (क्षत्रस्य=राष्ट्रस्य) ५ ४४ १० ['एव' इति व्याख्यातम्। तदुपपदे वद व्यक्तायां वाचि (भ्वा०) धातो 'पुंसि सज्ञाया घ प्रायेण' अ० ३ ३ ११८ सूत्रेण करणे घ प्रत्यय]

एवो एव ४ १२ ६

एषते (आ+ईषते) अभिगच्छति ५ ६७ ५ प्राप्नोति १ १४६ १ हिनस्ति ५ ८६ ३ [आङ् पूर्वाद् ईष गतिहिंसादर्शनेषु (भ्वा०) धातोर्लट्]

एषस्य सर्वत्र प्राप्तव्यस्य (विष्णो=परमेश्वरस्य) ७ ४० ५ ऐश्वर्यवत (विष्णो=ईश्वरस्य) २ ३४ ११ [इण् गतौ (अदा०) धातोर्बाहु० औणादिक स प्रत्यय]

एषः कार्यकारणसङ्गत्या यदनुमीयते (योनि=असम प्रमाणम्) ८.४१ [इण् गतौ (अदा०) धातोर्बाहुलकादौणादिक स प्रत्यय]

एषि प्राप्नोषि १ १२३ १० [इण् गतौ (अदा०) धातोर्लट्। मध्यमैकवचनम्]

एषे एतु प्राप्तुम् ५ ४१ ५ गन्तुम् ५ ६६ ३ [इण् गतौ (अदा०) धातोस्तुमर्थे 'तुमर्थे सेसेन०' इति सेन् प्रत्यय]

एषे (आ-इषे) समन्तादिच्छामि ५ ४६ १ सब सुख प्राप्त कराने को समर्थ होवे स० वि० १०५, ५ ४१ ७ [आङ्+ईष गतिहिंसादर्शनेषु (भ्वा०) धातोर्लट्]

एषे समन्तादिच्छवे (अत्रये=विदुषे जनाय) १ १८० ४ [आङ्पूर्वाद् इषु इच्छायाम् (तुदा०) धातो कर्त्तरि क्विप्। ततश्चतुर्थ्या एकवचनम्]

एषो इयम् (उषा=प्रातर्वेला) १ ४६ १

एष्टयः समन्तादिष्टयो विद्वत्पूजा सत्सङ्गो विद्यादानञ्च याभ्यस्ता (क्रिया) १८ ४३ **एष्टः**=भा०—समन्तात् पूजितु योग्य (विष्णु=परमेश्वर) २३ ४६ [आङ्+यज देवपूजासङ्गतिकरणदानेषु (भ्वा०) धातो. स्त्रिया क्तिन्। किति सम्प्रसारणम्। ऋक्सामानि वाऽएष्टय ऋक्सामैर्ह्याशासनऽइनि नोऽस्त्वित्यत्य नोऽस्त्विति श० ६ ४ १ १२]

एष्टा पर्यालोचक (विद्वज्जन) १ १८४ २ **एष्टाः**=सर्वत इष्टकारिण (राय=धनसमूहान्) ५ ७. [इष गतौ (दिवा०) धातो कर्त्तरि तृच्। अन्यत्र आङ्पूर्वाद् इषु इच्छायाम् (तुदा०) धातो क्त]

एष्टौ समन्ताद् यज्ञ+क्रियायाम् ६ २१ ८ [आङ् यज देवपूजासङ्गतिकरणदानेषु (भ्वा०) धातो स्त्रिया क्तिन्। सप्तम्या एकवचनम्]

एहि (आ-इहि) आगच्छ ६ १६ १६ आगच्छन्ति प्र०—अत्र व्यत्यय ५ ८३ ६ प्राप्नुहि प्रापयति वा, प्र०—अत्र पुरुषव्यत्ययो लडर्थे लोट् च १ ६ १ समन्तात् प्राप्नुहि प्राप्नोतु वा ४ २० समन्तात प्राप्नुयात्, प्र०—अत्र व्यत्यय ३ २७ अध्ययनेनैवैति प्राप्नोति १ १५ अभित प्राप्नुहि, समन्तादेति, अ०—सञ्जानीहि ५ ६ [आङ् पूर्वादिइण् गतौ (अदा०) धातोर्लोट्]

एहिमायासः आ समन्ताच्चेष्टाया प्रज्ञा येषान्ते (विश्वेदेवास=समस्तवेदपारगा विद्वास) प्र०—चेष्टार्थस्याऽऽङ्पूर्वस्य ईहधातो 'सर्वधातुभ्य इन्' उ० ४ ११६ इतीन्प्रत्ययान्त रूपम् 'मायेति प्रज्ञानामसु पठितम्' निघ० ३ ६, १ ३ ६ [एहि-मायापदयो समास। एहि=आङ्+ईह चेष्टायाम् (भ्वा०) धातो 'सर्वधातुभ्य इन्' उ० ४ ११६ सूत्रेण इन्। माया प्रज्ञानाम निघ० ३ ६]

ऐक्षेताम् पश्यत ३२.७ [ईक्ष दर्शने (भ्वा०) धातोर्लङि प्रथमपुरुषद्विवचनम्]

ऐजन् एजन्ति १ ६३ १ [एजृ कम्पने (भ्वा०) धातोर्लङ्]

ऐट्ट प्रशसेत ३ ४८ ३ [ईड स्तुतौ (अदा०)धातोर्लङ्]

ऐडम् इडाया वाचो व्याख्यात्री साम १३ ५७

ऐडेन=इडाया अन्नस्येद सस्करण तेन १५ ७ [इळा वाङ् नाम निघ० १ ११ अन्ननाम निघ० २ ७ इळाप्राति० व्याख्यानार्थे तस्येदमर्थे वाऽण् प्रत्यय]

ऐत् प्राप्नोति ५ ३० ६ **ऐत**=प्राप्नुत ४ ३५ ३ [इण् गतौ (अदा०) धातोर्लङ्]

ऐतन विज्ञापयत १ ११० ३ विजानीत १ १६१ ६ प्राप्नुत १ ११० २ [इण् गतौ (अदा०) धातोर्लङि मध्यमबहुवचनम् तस्य तनवादेशश्छान्दस]

ऐताम् प्राप्नुत १४ ३० **ऐतु**=समन्तात्प्राप्नोतु ३३ ३४ [इण् गतौ (अदा०) धातोर्लङि प्रथमद्विवचनम्। ऐतु=आङ्+इण् गतौ+लोट्]

ऐधेव एधै काष्ठैरिव १ १६६ १ [ऐध-इव पदयो समास। एध=ञिइ-धी दीप्तौ (रुधा०) धातोर्घञि 'अवोदैध०' इति नलोप। एधप्राति० 'तस्येदम्' इत्यर्थेऽण्, स्वार्थे वाऽणि 'ऐध' इति रूपम्]

ऐनोः प्रेरये ४ १६ ७ **ऐनोत्**=प्राप्नोति, प्र०—अत्रेणधातोर्व्यत्ययेन श्नु १ ६६ ५ [इण् गतौ (अदा०) धातोर्लङ्। व्यत्ययेन शप श्नु]

ओरिणम् दु खान्धकारस्याऽपनयनम् १ ६१ १४ **ओण्योः**=द्यावापृथिव्यो, प्र०—ओण्योरिति द्यावापृथिवी-नामसु पठितम्, निघ० ३ ३०, ४.२५ [ओणृ अपनयने (भ्वा०) धातो 'इक् कृष्यादिभ्य' अ० ३ ३ १०८ वा० सूत्रेण इक् प्रत्यय । ओण्यौ द्यावापृथिव्योर्नाम । निघ० ३ ३०]

ओतम् सूत्रे मणिगणा इव प्रोतम्, भा०—सञ्चितम् (ज्ञानम्) ३४ ५ सर्वव्यापक (चित्त=चित्त को) स० प्र० २४७, ३४४ **ओतः**=ऊर्ध्वतन्तु पट इव ३२ ८ [आङ्+वेञ् तन्तुसन्ताने (भ्वा०) धातो क्त । 'ग्रहिज्या०' इति सूत्रेण किति सम्प्रसारणम्]

ओतवै विस्ताराय १ १६४ ५ [आङ्+वेञ् तन्तु-सन्ताने (भ्वा०) धातोस्तुमर्थे तवै प्रत्यय । 'छन्दस्युभयथा' इति सार्वधातुकत्वे सार्वधातुकमपिदिति किन्त्वे च ग्रह्यादि-सूत्रेण सम्प्रसारणम्]

ओतुम् रचयितुम् ६ ९ २ [आङ्+वेञ् तन्तुसन्ताने (भ्वा०) धातोस्तुमुन् । 'छन्दस्युभयथा' इति सार्वधातुकत्वे किन्त्वे सम्प्रसारणम्]

ओतुम् रक्षकम् (तन्तु=जगत्कारणम्) ६ ९ ३ [अव रक्षणादिषु (भ्वा०) धातो 'सितनिगमिमसि०' उ० १ ६९. सूत्रेण तुन् । ज्वरत्वर०' इति सूत्रेणोपधावकारयोरुठ् । ततो गुणे रूपम्]

ओदती उन्दन कुर्वन्ती (उषा) १ ४८ ६ [उन्दी क्लेदने (रुधा०) धातोराङ्पूर्वाच्छत्रन्तात् ङीप् । छान्दसत्वात् श्नमोऽभाव । ओदती उषो नाम । निघ० १ ८]

ओद्मन् ओषधीषु, प्र०—अत्र सप्तमी-लुक् १३ ५३ [उन्दी क्लेदने (रुधा०) धातोर्मनिन्नौणादिक । 'अवोदैधौद्म०' इति न लोपो गुणश्च निपात्यते]

ओपमिमीहि अभित श्रेष्ठैरुपमितान् कुरु १ ८४ २० [आङ्+उप+माङ् माने (जुहो०) धातोर्लोट् । व्यत्ययेन परस्मैपदम्]

ओपशमिव अत्यन्त सम्बद्धम् (द्या=प्रकाशम्) १ १७३ ६ ['ओ' इत्यवधारणे, तदुपपदे पश बन्धने (चुरा०) धातोर्घञर्थे क । तत =ओपशम्-इव-पदयो समास]

ओ३म् योऽवति सकल जगत्तदाख्या ४० १७ एतन्नाम-वाच्यमीश्वरम् ४० १५ अवतीत्योम्, रक्षा करने से यह ईश्वर का नाम है, म० प्र० १४, ४० १७ ईश्वर-वाचको यज्ञो वेदविद्या वा, प्र०—ओ३म् ख ब्रह्म, अत्र 'अवतेष्टि-लोपश्च' उ० १ १४२ अनेनाऽवधातोर्मन् प्रत्ययोऽस्य टिलोपश्च, अ०—हे ओङ्कारवाच्यबृहस्पते, भा०—एतत्परमेश्वरस्यैव नाम २ १३ ओंकार शब्द परमेश्वर का सर्वोत्तम नाम है, इसमें अ, उ और म् तीन अक्षर मिलकर 'ओ३म्' समुदाय हुआ, इस एक नाम से परमात्मा के बहुत नाम आते हैं, जैसे—अकार से विराट्, अग्नि और विश्वादि, उकार से हिरण्यगर्भ, वायु और तैजसादि, मकार से ईश्वर, आदित्य और प्राज्ञादि स० प्र० ११ रक्षा करने वाला (ईश्वर), स० वि० ११४, १० ८५ ४४ यह मुख्य परमेश्वर का नाम है जिस के साथ अन्य सब नाम लग जाते हैं स० वि० ७५, ३६ ३ [अव रक्षणगतिकान्ति-प्रीत्यादिषु (भ्वा०) धातो 'अवतेष्टिलोपश्च' उ० १ १४२ सूत्रेण मन्प्रत्ययो टिलोपश्च प्रत्ययस्यैव । धातोरुपधाव-कारयोरुठ् च चादिषु पाठादव्ययम् । तदेतदक्षर (ओङ्कार) ब्राह्मणो य काममिच्छेत् त्रिरात्रोपोषित प्राङ्मुखो वाग्यतो बर्हिष्युपविश्य सहस्रकृत्व आवर्त्तयेत् सिद्ध्यन्त्यस्यार्था सर्व-कर्माणि च गो० पू० १ २२ (ओङ्कारस्य) को धातुरित्या-प्लृधातुरवनिमप्येके रूपसामान्यादर्थसामान्यान्नेदीय, तस्मादापेरोङ्कार सर्वमाप्नोतीत्यर्थ गो० पू० १ २६ को विकारो च्यवते । प्रसारणमाप्नोतेराकारपकारौ विकार्यावादित ओङ्कारो विक्रियते । द्वितीयो मकार एव द्विवर्ण एकाक्षर ओमित्योङ्कारो निर्वृत्त गो० पू० १.२६ ते (देवा) ओङ्कार ब्रह्मण पुत्र ज्येष्ठ ददृशु गो० पू० १ २३ लातव्यो गोत्रो, ब्रह्मण पुत्रो, गायत्र छन्द, शुक्लो वर्ण, पुंसो वत्सा रुद्रो देवता ओङ्कारो वेदानाम् गो० पू० १ २५ तासामभि-पीडितानां (व्याहृतीनां) रस प्राणेदत् । तदेतदक्षरम-भवदोमिति यदेतत् जै० उ० १ २३ ७ तानि (भूर्भुव स्व) शुक्राण्यभ्यतपत्तेभ्योऽभितप्तेभ्यस्त्रयो वर्णा अजायन्त अकार उकारो मकार इति । तानेकधा समभरत्तदेतद् ओ३मिति ऐ० ५ ३२, ओमिति वै साम जै० उ० १ ६ २ ओमिति मन जै० उ० १ ६ २ ओमित्यथर्वणा शुक्रम् गो० पू० २ २४ ओमितीन्द्र जै० उ० १ ६ २ ओमित्यसौ योऽसौ (सूर्य) तपति ऐ० ५ ३२ हन्तेति चन्द्रमा ओमित्यादित्य जै० उ० ३ ६ २ ओमिति वै स्वर्गो लोक ऐ० ५ ३२ ओमित्येतदेवाक्षरमृतम् जै० उ० ३ ३६ ५ तदेत् सत्यमक्षर यदोमिति । तस्मिन्नाप प्रतिष्ठिता जै० उ० १ १० २ तस्मादोमित्येव प्रतिगृह्णीयात् तद्धि सत्य तद्देवा विदु श० ४ ३ २ १३ ओमित्यृच प्रतिगर एव तथेति गाथाया ओमिति वै दैव तथेति मानुषम् ऐ० ७ १८ यद्वै नेत्यृच्यो-मिति तत् श० १४ १ ३० एतद्ध वा (ओमिति) अक्षर

प्रत्यय (उणा० ४.२१६) । कुत्वन्तु न्यङ्क्वादित्वात् । ओक इति निवासनामोच्यते नि० ३ ३ गृहा वा ओका निरु० ८ २६]

ओकिवांसा सङ्गतौ सम्बद्धौ (इन्द्राग्नी=वायु-विद्युतौ) ६ ५६ ३ [आङ्पूर्वाद् उच समवाये (दिवा०) धातोर्लिट क्वसु । 'सुपा सुलुग्०' इत्याकार । छान्दस रूपम्]

ओक्ता समन्तादुक्तानि प्रशंसितानि (अन्नानि धनानि वा) १ ६३ ६ [आङ्पूर्वाद् वच परिभाषणे (अदा०) धातो क्त । 'शेश्छन्दसि बहुलम्' इति शेर्लोप]

ओक्यम् ओकेषु गृहेषु साधु (विद्योपदेशम्) १.१३३ ५ ['ओक' इति व्याख्यातम् । तत 'तत्र साधु' इत्यर्थे यत्]

ओक्ये गृहे ३ ४२ ८ घर मे, आर्याभि० १ ३७, ऋ० १ ६२ १ १३ ['ओक' इति व्याख्यातम् । ततो भवार्थे यत्]

ओक्षतम् समन्तात् सिञ्चेताम् २ १ ६ [उक्ष सेचने (भ्वा०) धातोर्लेडि मध्यमद्विवचनम्]

ओजस. पराक्रमस्य १ ५२ १२ बलस्य ५ ३२ ६ अपने सामर्थ्य से, आर्याभि० १ १३, ऋ० १ ५२ १२ **ओजसा**=जलेन, प्र०—ओज इत्युदकनाम, निघ० १ १२, २ २२.३ उदकेन सह ३४ ७ स्वबलेन १ १३० ६ प्रशस्त शरीरात्मसभा-सेनाबलेन ८ ३६ बलेन वेगेन वा १ १६ ८ स्वस्य शरीरबुद्धिबलेन सैन्येन वा १७ ३८ अनन्तबलेन, प्र०—ओज इति बलनामसु पठितम्, निघ० २ ६, १ ११.८ पराक्रमेण, कोमलेन कर्मणा वा १ १२७ ४ विद्याबलेन १ ५५ ६ सामर्थ्येन ३० ४१ बलादिगुणसमूहेन १ १६ ४ **ओजसे**=बलयुक्ताय (सभाध्यक्षाय) १ ५७ ५ पराक्रमाय ८ ३६ आत्मबलाय ७ २८ **ओज:**=वेगवद् बलम् ४ ७ १० जलवेग, प्र०—ओज इत्युदकनाम, निघ० १ १२, २८ ५ पराक्रमकारि (अ०—वैद्युत तेज ५ ५ पराक्रमस्वरूप (ईश्वर), आर्याभि० २ ६, १६ ६ पराक्रम को आर्याभि० २ ६, १६ ६. महाप्राणवत्त्वम् १६ ६ पराक्रमयुक्त (अ०—परमात्म परमात्मा) १० १५ जलमिव बलम् ५ ३१ ७ न्यायपालनोऽन्वित पराक्रम, ऋ० भू० १०२ सत्य विद्याबलम्, ऋ० भू० १४६ बलकरमन्नादिकम् ६ ४६ ७ बलपराक्रम ३४ ५१ मानस बलम् ३६ १ शरीरस्य तेज १८ ३ अनन्त सामर्थ्य-युक्त (ईश्वर) से० प्र० २४६, १६ ६ प्राणधारणम् ६ १६ ६ वीर्य्यम् ५ ३२ १० बलकरमन्नादिकम् ६ ४६ ७

ओजांसि=शरीरात्मन पराक्रमान् १ ८० १५ [उब्जति कोमलो भवतीति विग्रहे उब्ज आर्जवे (तुदा०) धातो 'उब्जेर्बले बलोपश्च' उ० ४ १६२ सूत्रेणासुन् प्रत्यय । ओजो बलम् । नि० ६ २३ ओज =उदकनाम निघ० १ १२ बलनाम निघ० २ ६ ओजसा बलेन । ओज ओजतेर्वा उब्जतेर्वा नि० ६ ८ ओज सह सह ओज कौ० ३ ५ वज्रो वा ओज श० ८ ४ १ २०]

ओजस्वती: विद्याबलपराक्रमयुक्ता राजस्त्रिय, जितेन्द्रिया (राजस्त्रिय) १० ३ ['ओज' इति पूर्वपदे व्याख्यातम् । ततोऽतिशायने मतुपि स्त्रिया ङीप्]

ओजायमानम् ओज पराक्रममिवाऽऽचरन्तम् (अहिं=मेघम्) २ १२ ११ बलयन्तम् (अहिं=मेघम्) ३ ३२ ११ **ओजायमान:**=ओज इवाऽऽचरन् (जन) १ १४० ६ [ओजस्पदादाचारेऽर्थे 'कर्त्तु क्यङ् सलोपश्च' अ० ३ १ ११ सूत्रेण क्यङ् सलोपश्च । तत शानच्]

ओजिष्ठ अतिशयेनौजस्विन् (राजन्) १ १२६ १० **ओजिष्ठम्**=अतिशयेन बलप्रदम् (श्रव =अन्न श्रवण वा) ६ ४६ ५ अतिशयेन बलिष्ठम् (मेद =स्नेह) ३ २१ ५ अतिशयेन पराक्रमयुक्तम् (द्युम्न=यशोधन वा) ५ १० १ **ओजिष्ठ:**=अतिपराक्रमी (इन्द्र =विद्वान् राजा) ८ ३६ अतिशयेनौजस्वी, भा०—ब्रह्मचर्येण शरीरात्मबलयुक्तो विद्वान् (राजा) ३३.६४ **ओजिष्ठाय**=अतिशयेनौजो विद्यते यस्मिन् विद्या-व्यवहारे तस्मै ५ ५ ['ओजस्' इति व्याख्यातम् । ततोऽतिशायन इष्ठन् । 'टे' अ० ६ ४ १५५ सूत्रेणेष्ठनि परे टेर्लोप]

ओजिष्ठया अतिशयेन पराक्रमयुक्तया (दक्षिणया) १ १६६ ४ [ओजस्प्राति० अतिशायन इष्ठन् । तत स्त्रिया टाप्]

ओजिष्ठेभि: अतिशयेन बलादिगुणयुक्तैर्नरोत्तम-सैन्यै ४ २० १ बलिष्ठैर्योद्धृभि २० ४८ ['ओजिष्ठ' इति व्याख्यातम् । ततो भिस ऐसादेशो न]

ओजीय: बलिष्ठम् (विश्व=जगत्) २ ३३ १० [ओजस्प्राति० अतिशायन ईयसुन् । टेर्लोप]

ओजीयान् अतिशयेन पराक्रमी (राजा) ६ २० ३ [ओजस्प्राति० अतिशायन ईयसुन् । टेर्लोप]

ओजोभि: पराक्रमादिभि ७ ५६ ६ [ओजस्प्राति० तृतीयाबहुवचनम् । 'ओजस्' इति व्याख्यातम्]

ओज्मानम् पराक्रमयुक्त रसम् २६ ५३ बलकारिणम् (मेघमिव सुखम्) ६ ४७ २७.

सर्वासामोषधीना रसो यत्पय को० २ १ अग्नेर्वा एषा तनू यदोषधय तै० ३ २ ५ ७ यदुग्रो देवा ओषधया वनस्पतय-स्तेन को० ६ ५ ओषधयो वै पशुपतिस्तस्माद् यदा पशव ओषधीर्लभन्तेऽथ पतीयन्ति श० ६ १ ३ १२ ओषधयो वै मुद, ओषधिभिर्हीद सर्व मोदते श० ९ ४ १ ७ ओषधयो बर्हि ऐ० ५ २८ श० १ ३ ३ ९ तै० २ १ ५ १ ओषधय खलु वै वाज तै० १ ३ ७ १ ओषधयो मधुमती तै० ३ २ ८ २ रसो वा एव ओषधिवनस्पतिषु यन्मधु ऐ० ८ २० सौम्या ओषधय श० १२ १ १ २ सोम ओषधीनामधिराज गो० उ० १ १७ सोमो वै राजा ओषधीनाम् कौ० ४ १२ सोमो वा ओषधीना राजा तै० ३ ९ १७ १ औषधो वै सोमो राजा ऐ० ३ ४० ओषधि-लोको वै पितर श० १३ ८ १ २० जगत्य ओषधय श० १ २ २ २ ओषधयो वै देवाना पत्न्य श० ६.५ ४ ४. मैनान्य वा एतदोषधीना यद्यवा ऐ० ८ १६ साम्राज्य वा एतदोषधीना यन्महाव्रीहय ऐ० ८ १६ (प्रजापति) विष्णोरध्योषधीरसृजत तै० २ ३ २ ४]

ओषधिः सोमादि १ १६६ ५ [पूर्वपदे व्याख्यातम्]

ओहते प्राप्नोति ५ ५२ १० व्यवहारान् वहति, प्र०—अत्र 'वाच्छन्दसि' इति सम्प्रसारण लघूपधगुण १ १७६ ४ वहति प्रापयति ५ ४२ १० वितर्कयति ७ १६ ११ प्राप्नोति प्रापयति वा ५ ५२ ११ [वह प्रापणे (भ्वा०) धातोर्लट्। छान्दसत्वात् सम्प्रसारण लघूपधगुण। ऊहृ वितर्के (भ्वा०) धातोर्वा छान्दस रूपम्]

ओहते वितर्कयुक्ताय (जनाय) २ २३ १६ [ऊह वितर्के (भ्वा०) धातो शत्रन्ताच्चतुर्थी। अलघूपधत्वेऽपि छान्दसत्वाद् गुण]

ओहम् ओहति प्राप्नोति येन तम् (स्तोम=स्तुतिम्) १ ६१ १ **ओहेन**=बीजादिस्थापनेन '१ १८० ५ **ओहैः**= अर्दकै कर्म्मभि ४ १० १ विद्यासुखप्रापकै (स्तोमै= वेदभागै) १५ ४४ रक्षणादिभि १७ ७७ [वह प्रापणे (भ्वा०) धातोर्घञर्थे क प्रत्यय। छान्दसत्वात्सम्प्रसारणे कृते गुण]

ओहसा प्राप्तेन बलेन वेगेन वा ६ ६७ ९ [वह प्रापणे (भ्वा०) धातोरसुन्। छान्दसत्वात् सम्प्रसारणे कृते गुण]

ओहसानम् तर्कगम्यम् (अहि=मेघम्) ६ १७ ९ [ऊह वितर्के (भ्वा०) धातोर्घञर्थे क। छान्दसत्वाद् गुण। ओहोपपदे षण सम्भक्तौ (भ्वा०) धातोरण् प्रत्यय]

ओहानम् त्यजन्तम् (मेघम्) ५ ३० ६ [ओहाक् त्यागे (जु०) धातो 'कृत्यल्युटो बहुलमि' ति कर्त्तरि ल्युट्। छान्दसत्वादोकारानुबन्धस्य लोपो न]

ओहानः रक्षक (विद्वज्जन) ६ ५२ ५ [ओहाङ् गतौ (जु०) धातो पूर्वपदवल्ल्युट् कर्त्तरि]

औषधीः ओषध्य २० १९ [ओषधिप्राति० 'कृदि-कारादक्तिन' इति वार्तिकसूत्रेण ङीप्]

औक्षन् सिञ्चन्ति ३ ९.९ सिञ्चेरन् ३३ ७ [उक्ष सेचने (भ्वा०) धातोर्लङ्]

औचथ्यम् उचितेपूचितेषु कर्मसु साधुम् (विद्वज्जनम्) १ १५८ ४ **औचथ्यः**=प्रशसितेषु भव (रेक्ण=धनम्) १ १५८ १ [उच समवाये (दिवा०) धातोर्बाहुलकादौणा-दिकोऽथ प्रत्यय, स च णित्। औचथप्राति० साध्वर्थे भवार्थे वा यत्]

औच्छत् निवासयति ५ ३० १४ **औच्छः**= विवासयति ५ ७९ २ निवासवती वर्त्तते ५ ७९ ३ [उच्छी विवासे (भ्वा०) धातोर्लङ्]

औद्भिदम् उद्भिनत्ति दु खानि येन तदेव, भा०— विद्वद्भि सह परामृश्य सत्यासत्यनिर्णय (हिरण्य=तेजो सुवर्णादिकम्) ३४ ५० [उत्+भिदिर् विदारणे (रुधा०) धातोर्मूलविभुजादित्वात् क। तत स्वार्थे प्रज्ञादित्वादण्]

औद्भिद्यम् उद्भिदा पृथिवी भित्त्वा जाताना भावम् (वृक्षादि) १८ ९ [उद्भिदप्राति० भावे ष्यञ्]

औपद्रष्ट्र्याय उपद्रष्टृत्वाय ३० १३ [उपद्रष्टृ-प्राति० भावे कर्मणि वा ष्यञ्]

औब्जः य उब्जत्यार्जवी करोति तेन निर्वृत्त स (सूर्यलोक) १.५६ ५ [उब्ज आर्जवे (तुदा०) धातोरच् कर्त्तरि। ततो निर्वृत्तार्थेऽण् प्रत्यय]

औब्जः आर्जवे भव २ २३.१८ [उब्ज आर्जवे (तुदा०) धातोर्घञर्थे क। ततो भवार्थेऽण्]

औब्जत् उब्जति सरली करोति १ ८५ ९ [उब्ज आर्जवे (तुदा०) धातोर्लङ्]

औभ्नात् मृद्नाति ४ १९ ४ [उभ उम्भ पूरणे (तुदा०) धातोर्लङ् विकरणव्यत्ययेन शप श्ना। मृद्ना-त्यर्थे धातूनामनेकार्थकत्वात्]

और्णनाभम् ऊर्णा नाभ्या यस्य तदपत्यमिव (वृत्र= मेघम्) २ ११ १८ [ऊर्णा-नाभिपदयो समास। समासा-न्तोऽच प्रत्यय। ततोऽपत्यार्थेऽण्]

और्णोत् ऊर्णुत आच्छादयति १७ १८ स्वीकरोति

वेदाना त्रिविष्टपम् जै० उ० ३ १६ ७ एतद् (ओमिति) एवाक्षर त्रयी विद्या जै० उ० १ १८ १० न (ब्रह्म) ओमित्येतदक्षरमपश्यद् द्विवर्णञ्चतुर्मात्र सर्वव्यापि सर्वविभ्वयातयाम ब्रह्म गो० पू० १ १६ एष (ओमित्यक्षरम्) उ ह वाव सरस जै० उ० १ ८ ५ यथा सूच्या पलाशानि सन्तृण्णानि स्युरेवमेतेना (ओमिति) अक्षरेणेमे लोका सन्तृण्णा जै० उ० १ १० ३ एवमेवैव विद्वान् ओमित्येतदेवाक्षर समारुह्य यददोऽमृत तपति तत्प्रपद्य ततो मृत्युना पाप्मना व्यावर्त्तते जै० उ० १ १८ ११]

ओमभिः रक्षणादिकारकैः (ओपधैः) ४ ४३ १३ [अव रक्षणादिपु (भ्वा०) धातोर्मनिन् । उपधावकारयोरूठ् धातो]

ओमानम् रक्षादिकर्त्तारम् (जनम्) ६ ५०.७ रक्षणादिसत्कर्मपालकम् (ऊर्जं=पराक्रमम्) १ ११८ ७ ['ओमन्' इति पूर्वपदे व्याख्यातम् । ततो द्वितीयैकवचनम्]

ओमासः अवन्ति सद्गुणै रक्षन्ति ते (देवास = विद्वज्जना) ७ ३ ३ रक्षका, ज्ञानिनो विद्याकामा उपदेशप्रीतयो, विज्ञानतृप्तयो यथार्थस्यावगमा , शुभगुणप्रवेशा , सर्वविद्याश्राविण , परमेश्वरप्राप्तौ व्यवहारे च पुरुषार्थिन , शुभविद्यागुणयाचिन , क्रियावन्त , सर्वोपकारमिच्छुका, विज्ञाने प्रशस्ता आप्ता सर्वशुभगुणलिङ्गिनो दुष्टहिंसका शुभगुणदाता सौभाग्यवन्तो ज्ञानवृद्धा, (विश्वेदेवास = सर्वे विद्वास), प्र०—अव रक्षण-गति-कान्ति-प्रीति-तृप्त्यवगम-प्रवेश-श्रवण-स्वाम्यर्थयाचन-क्रियेच्छा-दीप्त्यवाप्त्यालिङ्गन-हिंसा-दान-भाग-वृद्धिपु, इत्यस्माद् 'अविसिविसिशुपिभ्य कित्, इत्यनेनौणादिकेन सूत्रेणाऽवधातोरोमशब्द सिध्यति । ओमास इति पदनामसु पठितम्, निघ० ४ ३, १ ३ ७ [अव रक्षणादिपु (भ्वा०) धातोरौणादिको मन् प्रत्यय । ततो जसोऽसुगागम । ओमास पदनाम निघ० ४ ३ ओमास अवितारो वा ऽवनीया वा नि० १२ ४०]

ओम्यावतीम् अवन्ति त ओमास्तेपु भवा प्रशस्ता विद्या तद्वतीम् (नीतिम्) १ ११२ २० ['ओम' इति पूर्वपदे व्याख्यातम् । ततो भवार्थे यत् प्रत्यये मतुपि च स्त्रिया ङीप्]

ओम्यावन्तम् ये अवन्ति ते ओमानस्तान् ये यान्ति प्राप्नुवन्ति त ओम्या , एते प्रशस्ता विद्यन्ते यस्य तम् (विद्वज्जनम्) १ ११२ ७ [अव रक्षणादिपु (भ्वा०) धातोर्मनिन् प्रत्यय ओमन् । तदुपपदे या प्रापणे (अदा०) धातोरण् प्रत्यय । ततोऽतिशायने मतुप्]

ओर्णुत आच्छादयत २.१४.३. आङ्+ऊर्णुञ् आच्छादने (अदा०) धातोर्लोट्]

ओषतात् दह १३ १२ **ओषति**=दहेत् १ १३० ८ **ओषः**=दहसि १ १७५ ३ [उप दाहे (भ्वा०) धातोर्लोट् । 'तुह्योस्तातङ्' इति तातङादेश. । अन्यत्र लट्]

ओषधयः यवादय , प्र०—फलपाकान्ता बहुपुष्पफलोपगा, मनु० १ ८६, १ २१ सोमाद्या ३६ १७ सोमयवाद्या २० १६ **ओषधीनाम्**=सोमाद्योषधीनाम् १ १२७.८ **ओषधीभिः**=यवादिभि , प्र०—ओपधय ओषद् धयन्तीति वा दोष धयन्तीति वा, नि० ६ २७, १ २१ यवसोमलतादिभि १५ ७ **ओषधीभ्यः**=प्रसिद्धाभ्य (वनस्पतिभ्य) ६ २ रोगनिवारिकाभ्य (सोमलतादिभ्य) ६ ६ **ओषधीषु**=सोमलतादिपु १६ ३३ **ओषधीः**= गोधूमाद्या (अन्नानि) १ १०३ ५ वृक्षादि वनस्थ सत्र पदार्थ, आर्याभि० १ २७, ऋ० ७ ३४ २५ सर्वरोगनाशिका (सोमाद्या) १ ६१ २२ ओषधय १३ २७ यवादीन् १ १६३ ७ सोमलतादय ओषध्य , प्र०—'अत्र वाच्छन्दसि' इति पूर्वसवर्णदीर्घ १ ६० ६ **ओषधे**=ओपधिवद्वर्त्तमाने (स्त्रि) १२ ६६ ओपधिवद्वर्त्तमान विद्वन् (जन) १२ १०० ओषो विज्ञान धीयते यस्मिंस्तत्सम्बुद्धौ (अ० विज्ञानवरा ऽव्यापक, प्र०—अत्र 'ओष गतौ' इत्यस्माद् गतिरत्र विज्ञान गृह्यते ६ १५ ओपधिव्यापिन् (ईश्वर) १ १८७ १० ओपधि १२ १०१ ओपधिम् १२ ६८ सोमलताद्योपधिगण ४ १ सर्वरोगनिवारक (विद्वज्जन) ५ ४२ **ओषध्याः**= यवादे १ २५ [ओषद् उपपदे धेट् पाने (भ्वा०) धातो 'कर्मण्यधिकरणे च' अ० ३ ३ ९३ इति विहित कि प्रत्ययोऽत्र 'कृतो बहुलम्' इति कर्त्तर्यपि, तलोपश्च, स्त्रिया ङीप् । ओषद्=उप दाहे (भ्वा०) धातो शतृ । ओषधय ओषद्धयन्तीति वा, ओपत्येना धयन्तीति वा, दोष धयन्तीति वा नि० ६ २७ ओषधय पदनाम निघ० ५ ३ (प्रजापति) ता (आहुति) व्यौक्षत् ओष धयेति, तत ओषधय समभवँस्तस्मादोषधयो नाम श० २ २ ४ ५ द्वय्यो वा ओषधय पुष्पेभ्योऽन्या फल गृह्णन्ति । मूलेभ्यो अन्या तै० ३ ८ १७ ४ उभय्यो (ओषधय) ऽस्मै स्वदिता पच्यन्ते ऽकृष्टपच्याश्च कृष्टपच्याश्च ता० ६ ६ ६ वाग्दैवत्य साम, वाचो मनो देवता, मनस पशव , पशूनामोषधय , ओषधीनामाप । तदेतदद्भ्यो जात सामाप्सु प्रतिष्ठितमिति जै० उ० १ ५६ १४ आपो ह वाऽओषधीना रस श० ३ ६ १ ७ अपामोषधय (रस) ओषधीना पुष्पाणि (रस) पुष्पाणा फलानि (रस) । श० १४ ९ ४ १ एष ह वै

प्रत्ययः । कक्ष=कक्षो गाहते वस इति नामकरण ख्यातेर्वाऽनर्थकोऽभ्यास । किमस्मिन् ख्यानमिति । तत्सामान्याद् मनुष्यकक्षो बाहुमूलसामान्यादश्वस्य नि० २.२.]

कक्षीवता शिक्षकेन विदुषा १ ११७ ६. **कक्षीवते**=कक्षा प्रशस्ताऽङ्गुलय इव विद्याप्रान्ता विद्यन्ते यस्य तस्मै (जनाय) १ ५१ १३ प्रशस्तशासनयुक्ताय (विद्यार्थिने जनाय) १ ११६ ७ **कक्षीवन्तम्**=कक्षेषु विद्याऽध्ययन-कर्मसु साध्वी-नीति कक्षा, सा वह्वी विद्यते यस्य विद्या जिघृक्षोस्तम् (विद्वज्जनम्), प्र०—अत्र भूम्न्यर्थे मतुप् 'कक्ष्याया सज्ञाया मतो सम्प्रसारण कर्त्तव्यम्' अ० ६ १ ३७. इति वार्त्तिकेन सम्प्रसारणादेश 'आसन्दीवदष्ठीवच्च०' अ० ८ २ १२ इति निपातनात् मकारस्थाने वकारादेशश्च ३ २८ या कक्षासु कराऽङ्गुलिक्रियासु भवा शिल्पविद्यास्ता प्रशस्ता विद्यन्ते यस्य तम् (यजमानम्), प्र०—कक्षा इति अङ्गुलिनामसु पठितम्, निघ० २ ५, अत्र कक्षाशब्दात् 'भवे च्छन्दसि' इति यत्, तत प्रशसाया मतुप् १ १८ १ प्रशस्ता कक्षा सहाया विद्यन्ते यस्य तम् (स्तोतार जनम्) १ ११२ ११ **कक्षीवन्तः**=प्रशस्ता कक्षयो विद्यन्ते येषान्ते (भृत्या जना) १ १२६ ४ **कक्षीवान्**=सर्वसृष्टि-कक्षा विद्यन्ते यस्मिन् स (ईश्वर) ८ २६ १ युद्धे प्रशस्त-कक्ष (वीरयोद्धा) १ १२६ ३ बह्व्य कक्षयो विद्याप्रदेशा विदिता सन्ति यस्य स (विद्वज्जन) १ १२६ २ ['कक्ष्या' इत्यङ्गुलीनाम निघ० २ ५ ततो भवार्थे यत्। ततो प्रशसाया मतुपि 'कक्ष्याया सज्ञाया मतौ सम्प्रसारणम्' अ० ६ १ ३७ वा सूत्रेण सप्रसारणे 'आसन्दीवदष्ठीवत्०' अ० ८ २ १२ सूत्रेण मकारस्य वकार । कक्षीवत् कक्ष्यावान् नि० ६ १०]

कक्ष्यप्रा कक्ष्य प्रात पिपूर्त्त (हरी=अश्वौ) ८ ३४ कक्षासु भवा कक्ष्या सर्वपदार्थाऽवयवास्ता प्रात प्रपूरयन्तौ (हरी=अश्वौ) १ १० ३ [कक्ष्योपपदे प्रा पूरणे (अदा०) धातो क प्रत्यय । 'सुपा सुलुगि' ति सूत्रेणा-कारादेश । कक्ष्या अङ्गुलिनाम निघ० २ ५ प्रकाशयन्ति कर्माणि नि० ३ ९ रज्जुरश्वस्य कक्ष सेवते निरु० २ २.]

कक्ष्य कक्षासु भव (मद=आनन्द) ५ ४४ ११ **कक्ष्याय**=कक्षासु भवाय, भा०—कक्षास्थाय (जनाय) १६ ३४ **कक्ष्ये**=कक्षासु भवे (रोदसी=द्यावापृथिव्यौ) १ १७३ ६ [कक्षाप्राति० भवार्थे यत्]

कङ्कः लोहपृष्ठ २४ ३१ [ककि गतौ (भ्वा०) धातोरच् प्रत्यय]

कङ्कतः चञ्चल (मनुष्य) १ १९१ १ विषवान् इव (प्राणी इव) १ १९१ १ [ककि गतौ (भ्वा०) धातोर्बाहुल-कादौणादिकोऽतच् प्रत्यय]

कच्च कदा च ३३ ३५

कच्चित् किञ्चित् (आग=अपराधम्) २ २७ १४

कञ्चन् कञ्चिदपि (शत्रुम्) १७ ४५

कण्टकीकारीम् या कण्टकी करोति ताम् (दुष्टा स्त्रियम्) ३० ८ ['कण्टकी' इत्युपपदे डुकृञ् करणे (तना०) धातोरण् प्रत्यय । स्त्रिया ङीप्]

कण्ठ्यम् कण्ठे भव स्वरम् ३९ ९ [कण्ठप्राति० भवार्थे 'शरीरावयवाच्च' अ० ४ ३ ५५ सूत्रेण यत् । कण्ठ=करणति येन शब्द करोतीति विग्रहे कण शब्दार्थे (भ्वा०) धातो 'कणेष्ठ' उ० १ १०३ सूत्रेण ठ०]

कण्वतमः अतिशयेन मेधावी (जन) १ ४८ ४ [कण्वप्राति० अतिशायने तमप् । 'कण्व' इति मेधाविनाम निघ० ३ १५]

कण्वम् मेधाविनम् (जनम्) १ ११२.५ **कण्वाः**=मेधाविनो विद्वास, प्र०—कण्व इति मेधाविनाम, निघ० ३ १५, १ १४ २ [कण्व इति मेधाविनाम । निघ० ३ १५ कणति निमीलति चेष्टते य इति विग्रहे कण निमीलने (चुरा०) धातो 'अशूप्रुषिलटिकणि०' उ० १ १५१ सूत्रेण क्वन् प्रत्यय]

कण्वहोता कण्वो मेधावी चाऽसौ होता दाता च (विद्वान्) ५ ४१ ४ [कण्व-होतृपदयो समास । कण्व इति व्याख्यातम् । होता=हु दानादानयो (जु०) धातो-स्तृच्]

कण्वासः शिल्पविद्याविदो मेधाविन (जना) १ ४६ ९ [कण्व इति व्याख्यातम् । ततो जसोऽसुगागम]

कत् कदा, प्र०—छान्दसो वर्णलोपो वा, इत्याकार-लोप १ १२१ १ कुत्र, प्र०—पृषोदरादित्वात् 'क्व', इत्यस्य स्थाने कत् १ १०५ ५ केन (पथा=मार्गेण) १ १०५ ६ [किम सर्वनाम्न सप्तम्यन्तात् 'सर्वैकान्य०' अ० ५ ३ १५. सूत्रेण दा प्रत्यय । छान्दसत्वादाकारलोप]

कतमत् बहूनामुपादानाना मध्ये किमिति प्रश्ने (आरम्भणम्) १७ १८ **कतमस्य**=किस (देवस्य=सदा मुक्त परमात्मा) का स० प्र० ३३०, १ २४ १ **कतमः**=कौन सा (देव=परमात्मा) स० प्र० २७३, अथर्व० १० २३.४ २० बहूना मध्ये क (सभापती राजा) ७ २९ [किम् सर्वनाम्नो 'वा बहूना जातिपरिप्रश्ने डतमच्' अ० ५ ३ ९३ सूत्रेण डतमच् । ततो नपुसके 'अद्ड्डतरादिभ्य ०'

१ ६८ ५ आच्छादित कर रखा है, आर्याभि० २.३२, १७ १८ **और्णोः**=आच्छादयतु ६ १७ ६ [ऊर्णुञ् आच्छादने (अदा०) धातोर्लङ्]

औशिजस्य कामयमानेषु कुशलस्य (राजभृत्यस्य) ४ २१ ७ कामयमानाऽपत्यस्य ४ २१ ६ य उशजि प्रकाशे जात स उशिक्, तस्य विद्यावत पुत्र इव (यजमान) १ १८ १ य सर्वा विद्या वष्टि स उशिक्, तस्य विद्यापुत्र इव, भा०—विद्याज पुत्र ३ २८. विद्याकामस्य पुत्र १ १२२ ५ कमनीयस्य पुत्र (परिव्राट्=सन्यासी) १ ११६ ६ कामयमानस्य पुत्र ६ ४ ६ **औशिजाय**= मेधाविपुत्राय, प्र०—उशिज इति मेधाविनाम, निघ० ३ ५, १ ११२ ११ [वश कान्तौ (अदा०) धातो 'वश किन्' उ० २ १७ सूत्रेण इजि प्रत्यय किच्च । ग्रह्यादिसूत्रेण सम्प्रसारणम् । वष्टि य कामयते यत्काम्यते वा स उशिक् । उशिज्प्राति० 'कृतलब्धक्रीतकुशला' अ० ४ ३ ३८ सूत्रेण कुशलार्थे वा 'तस्यापत्यम्' अ० ४ १ ९२ सूत्रेणापत्यार्थे वा 'तत्र जात' अ० ४.३ २५ सूत्रेण जातार्थे वा अण् प्रत्यय. । आदिवृद्धि । उशिज इति मेधाविनाम निघ० ३ १५ 'उशिक् इति कान्तिकर्मा निघ० २ ६ औशिज = उशिज पुत्र । उशिग् वष्टे कान्तिकर्मण नि० ६ १०]

औष्णिहाय उष्णिग्व्रतोविताय (सवित्रे=ऐश्वर्योत्पादकाय पुरुषाय) २६ ६० [उत्+ष्णिह प्रीतौ (दिवा०) धातो 'ऋत्विग्दधृग्०' अ० ३ २ ५९ सूत्रेण क्विन् प्रत्यय । निपातनादुपसर्गान्तलोप षत्व च उष्णिगुत्स्नाता भवति, स्निह्यतेर्वा स्यात् कान्तिकर्मण नि० ७ १२ उष्णिहप्राति० 'प्रज्ञादिभ्यश्च' अ० ५ ४.३८ सूत्रेणाण् ।]

औहत ऊहते १.१६४ २६ [ऊह वितर्के (भ्वा०) धातोर्लङ्]

औहिष्ट वितर्कयति ६ १७ ८ [ऊह वितर्के (भ्वा०) धातोर्लुङ्]

ककरान् पक्षिविशेषान् २४ २० [कक लौल्ये (भ्वा०) धातोर्बाहुलकादौणादिकोऽरन् प्रत्यय]

ककुत् महान् (अग्नि=सर्वस्वामीश्वर, प्रकाशादिगुणवान् भौतिको वा) ककुह इति महन्नामसु पठितम् निघ० ३.३, ककुह-शब्दस्य स्थाने ककुत्, पृषोदराद्याकृतिगणान्तर्गतत्वात् सिद्ध ३ १२ प्र०—ककुहशब्दस्यान्त्यलोपो वर्णव्यत्यययेन हस्य द १३ १४. [ककुह=महन्नाम निघ० ३ ३ पृषोदरादित्वादन्त्यलोपो हस्य च द । अथवा= कस्य देहस्य मुखस्य वा कु भूमि ददातीति विग्रहे कम्+कु+दा+क प्रत्यय । कक लौल्ये (भ्वा०) धातोर्गौणा० इति प्रत्यय.]

ककुत्पतिः दिशा पालक (अग्नि=प्रसिद्ध पावक) १५ २०. [ककुभ=दिङ्नाम निघ० १ ६ ककुभ्-पति-पदयो समास । भस्य दकारो वर्णव्यत्ययेन]

ककुन्मान् प्रशस्ता ककुतो लौल्या गुणा विद्यन्ते यस्मिन् (पराक्रम), प्र०—अत्र ककधातोर्गौणादिक उति उ० १ ६४, ६ ६ [कक लौल्ये (भ्वा०) धातोर्बाहुलकादौणादिक (१ ६४) उति प्रत्यय । ततोऽतिशायने मतुप्]

ककुप् दिश १४ ६ लालित्ययुक्ता (छन्दोऽर्थविज्ञापनम्) २३ ३३ दिगिव यश. १५ ४ भा०—उत्तमानि वस्त्राणि २१ २१ **ककुभम्**=दिग्वच्छुद्धम (रूपम्) ८ ४६. स्तम्भकम् (इन्द्रिय=धनम्) २८.३३ **ककुभः**=दिश ४ १६ ४ सर्वा दिश, प्र०—ककुभ इति दिङ्नाम, निघ० १ ६, ३४ २४ **ककुभा**=ककुप्छन्दसा २८ ४४ **ककुभाम्**=दिशाम् ५ ४४ २ **ककुभे**=ककुबुष्णिक्-छन्दोऽर्थाय २४.१३. ['ककुभ' इति दिङ्नाम निघ० १ ६ ककुप् ककुभिनी भवति । ककुप् च कुब्जश्च कुजतेर्वोब्जतेर्वा नि० ७ १२ प्राणो वै ककुप् छन्द. श० ८.५ २ ४ कीकसा. ककुभ श० ८.६ २ १० पुरुषो वै ककुप् । ता० ८ १०.६]

ककुभाय प्रसन्नमूर्त्तये (पुरुषाय) १६.२०.]

ककुहः महती (जनित्री+मातृ), प्र०—ककुह इति महन्नाम, निघ० ३ ३, ३ ५४ १४ सर्वा दिश १ १८१.५ **ककुहाः**=दिश १ १८४ ३ ['ककुह' इति महन्नाम निघ० ३ ३]

ककुहः महान् (जन) ५ ७३ ७ **ककुहान्**=महत (यतस्रुच=ऋत्विज) प्र०—ककुह इति महन्नाम निघ० ३ ३, २ ३४.११ ['ककुह' इति महन्नाम निघ० ३ ३]

ककुहासः महान्तो विद्वास (जना) १ १६ ३ सर्वा दिश ४.४४ २ ['ककुह' इति महन्नाम निघ० ३ ३ ततो जसोऽसुगागम]

कक्कटः मृगविशेष २४ ३२ [कखति हसतीति विग्रहे कखे हसने (भ्वा०) धातोर्बाहुलकादौणादिक (उ० ४ ८१) अटन् प्रत्यय । कुगागमे चर्त्वे च रूपम्]

कक्षः क्रान्तस्तटादि ६ ४५ ३१ **कक्षाणाम्**=गृहप्रान्तावयवेषु स्थितानाम् (जनानाम्) १६ १६ **कक्षेषु**= सामन्तेषु ११ ७६ [कषति हिनस्तीति विग्रहे कष हिंसार्थे (भ्वा०) धातो 'वृतृवदिवचि०' उ० ३ ६२. सूत्रेण स

१ ११६ १० कामयमानानाम् (जनानाम्) १ १६३ ८ कमनीयानाम् (जनानाम्) २९ १९ [कनी दीप्तिकान्तिगतिषु (भ्वा०) धातोर्बाहुलकाद् औणादिक ईन प्रत्यय । 'कनीनाम्' प्रयोगे नुटोऽभाव आगमशासनस्यानित्यत्वात्]

कनीयसः अतिशयेन कनिष्ठात् (विद्यार्थिन) ७ २० ७ [युवन्प्राति० अल्पाद्वातिशायने ईयसुन् । 'युवाल्पयो कन्०' इति कन्नादेश]

कनीय. अतिशयेन कनिष्ठम् ['कनीयस' इति पदे ४ २४ ६ [पूर्वपदे व्याख्यातम्]

कनीयान् अतिशयेन कनिष्ठ (बन्धुर्विद्वान्) ४ ३३ ५ व्याख्यातम्]

कन्या कुमारिका (शिष्या) १ १६१ ५ कमनीया (विदुषी कन्या) ६ ४९ ७ [कन्यते दीप्यते काम्यते गच्छति वेति विग्रहे कनी दीप्तिकान्तिगतिषु (भ्वा०) धातो 'अघ्न्यादयश्च' उ० ४ ११२ सूत्रेण यक् । स्त्रिया टाप् । कन्या कमनीया भवति, क्वेय नेतव्येति वा, कमनेनानीयत इति वा, कनतेर्वा स्यात्कान्तिकर्मण नि० ४ १५]

कन्या इव यथा कुमार्य्य ४ ५८ ६ कुमार्य्य इव १७ ९७ [कन्या-इव पदयो समास । कन्येति व्याख्यातम्]

कपनेव वायुगतय इव ५ ५४ ६ [कपना-इव-पदयो समास । कपना कम्पना क्रिमयो भवन्ति नि० ६ ४]

कपर्दिनम् कृतब्रह्मचर्य्य जटिल विद्वासम् (वैद्यम्) १ ११४ ५ जटाजूट ब्रह्मचारिणम् (विद्वासम्) ६ ५५ २ **कपर्दिनः**=प्रशसितो जटाजूटो विद्यते यस्य तस्य (अ०—सेनापते) १६ १० **कपर्दिने**=जटिलाय ब्रह्मचारिणे १६ २९ कृतब्रह्मचर्याय (सेनापतये) १६ ४८ जटायुक्ताय जनाय १६ ४३ [कपर्दप्राति० प्रशसाया मत्वर्थीय इनि]

कपिञ्जल. पक्षिविशेष २४ ३८ [कपिशब्दोपपदे जॄ वयोहानौ (क्र्या०) धातो खच्प्रत्ययो बाहुलकाद् रेफस्य लत्व च । कपिञ्जल कपिरिव जीर्ण, कपिरिव जवत ईषत् पिङ्गलो वा, गमनीय शब्द पिञ्जयतीति वा नि० ३ १८]

कबन्धिनः बहूदका (मरुत =मनुष्या) ५ ५४ ८ [कबन्धमित्युदकनाम निघ० १ १२ ततो भूम्नि इनि । कबन्ध मेघम् । कवनमुदक भवति तदस्मिन् धीयते । उदकमपि कबन्धमुच्यते बन्धिरनिभृतत्वे कमनिभृत च नि० १० ४]

कम् सुखम्, प्र०—कमिति वारिमूर्द्धसुखेषु १.२८ ८ सुखस्वरूपम् (देवम्=ईश्वरम्) ५ १८ सुखकारकम् (वपु =शरीरम्) १.१०२ २ सुखकर सुन्दरम् (अत्क=वस्त्रम्) ६ २९ ३ सुखसम्पादकम् (सोमवल्ल्यादिरसम्) १ ४७ १० कल्याणम् १ ८८ ३ सुख ते सुख दाता (ईश्वर) को आर्याभि० १ ३१, द्वि० १ ७ ८ १ सुखकारिणम् (नव=नौकादिकम्) १ १८२ ५ सुखप्रदम् (देवम्) १ २९ १ [कम् उदकनाम निघ० १ १२ सुखनाम निघ० ३ ६. पदपूरण नि० १ १९ उदकम् निघ० ४ १७ ब्रह्म नि० ६ ३५]

कमयाध्वे कामयध्वम् २ १४ ८ [कमु कान्तौ (भ्वा०) धातो 'कमेर्णिङ्' इति स्वार्थे णिङि लट् । वृद्ध्यभावश्छान्दस]

कयस्य विज्ञातु (विदुषो जनस्य) १.१२९ ५

कर कुर्या ४ ३३.५ कुरु १ ८२ १ [डुकृञ् करणे (तना०) धातोर् लोट् । विकरणव्यत्ययेन शप्]

करञ्जम् य किरति विक्षिपति धार्मिकान्स्तम् (पर्णयम्=दस्युम्) प्र०—अत्र 'कॄ विक्षेपे' इत्यस्माद्धातोर्बाहुलकादौणादिकोऽञ्-प्रत्यय १ ५३ ८ [कॄ विक्षेपे (तुदा०) धातोर्बाहुलकादौणादिकोऽञ्प्रत्यय]

करणम् साधनम् ६ १८ १३ करोति येन तत् ५ ३१ ७ **करणानि**=साधनानि कर्माणि वा २ १५ १ क्रियन्ते यैस्तानि (अपासि=कर्माणि) ४.१९ १०. कुर्वन्ति यैस्तानि साधनानि ५.३१.६ [डुकृञ् करणे (तना०) धातो करणे ल्युट् । करण कर्मनाम निघ० २ १]

करणा कुर्वन्तौ (अश्विना=स्त्रीपुरुषौ) १ ११९ ७. [डुकृञ् करणे (तना०) धातो 'कृत्यल्युटो बहुलमि' ति कर्त्तरि ल्युट् । 'सुपा सुलुग्' इत्याकार]

करत् कुर्य्यात् ४ ३९ ६ करोतु, प्र०—लेट्-प्रयोगोऽयम् ७ २५ कुर्य्यु, प्र०—लेट्-प्रयोगोऽय 'बहुल छन्दसि' इति विकरणाभाव १ ८९ ३ **करतः**=कुर्याताम् २१ ४३ **करताम्**=कुरुत, प्र०—अत्राऽपि लडर्थे लोट्, विकरणव्यत्ययश्च १ २३ ६ कुर्याताम् ३३ ४६ करुत=कुर्य्यात् ४ २२ १ **करते**=करोति ४ ४४ ३ कुर्य्यात् ४ १९ १ **करथः**=कुर्याताम् ६ ५० ३ **करन्**=कुर्य्यात् ५.३० ६ कुर्वन्तु १ १८६ २ कुर्य्यु, प्र०—लेट्प्रयोगोऽयम् 'बहुल छन्दसि' इति विकरणाऽभाव १ ८९ ३ **करसि**=कुर्या ६ ३५ १. **करसे**=कुर्य्या ३ ४३ ५ **कर** =कुर्य्यात् ३.४१ ६ कुर्य्या ६ ४५ २७ करोति ६ २२ १० कुरु १ ८२ १ [डुकृञ् करणे (तना०) धातोर्लेट् । विकरणव्यत्ययेन शप् । करत कुरुथ नि० ३ १५]

करम्भम् भोग कर्त्तु योग्यम् (पदार्थम्) ६ ५७ २

अ० ७ १ २५ सूत्रेण स्वमो स्थानेऽद्ड्]

कतमः अत्यन्ताऽऽनन्दयुक्त (परमात्मा) ऋ० भू० २१८ अतिशयेन सुखकारी (सत्यराजा=सत्यन्याय-प्रकाशक सभेश) २० ४ [क० सुखनाम (निघ० ३ ६) ततोऽतिशायने वा तमप्]

कतमाम् बहूना मध्ये काम् (द्या=प्रकाशम्) १ ३५ ७ ['कतम इति व्याख्यातम्। तत स्त्रिया टाप्]

कतरा द्वयोर्द्वयोर्मध्ये कतरौ (द्यावापृथिव्यौ कार्य-कारणे वा) १ १८५ १ अनयोर्मध्ये एक (सभेश सेनेशो वा) ६ ६६ ८ [किम सर्वनाम्न 'किंयत्तदोर्निर्द्धारणे द्वयो-रेकस्य डतरच्' अ० ५ ३ ९२ सूत्रेण निर्धारणे डतरच्]

कतिधा कतिप्रकारै ३१ १० [कतिप्राति० प्रकारेऽर्थे 'सख्याया विधार्थे धा' अ० ५ ३ ४२. सूत्रेण धा। सख्या-सज्ञा तु 'बहुगुणवतु डति सख्या' अ० १ १ २२ सूत्रेण। कति=किम सर्वनाम्न 'किम सख्यापरिमाणे डति च' अ० ५ २ ४१ सूत्रेण डति प्रत्यय]

कत्पयम् कतिपयम् (मेघम्) प्र०—अत्र 'छान्दसो वर्णलोपो वा' इती लोप ५ ३२ ६ [कत्पयम्=सुखपयसम्। सुखमस्य पय नि० ६ ३]

कथा कथम् १ ५४ १ केन प्रकारेण ४ ३ ५ किस प्रकार से, आर्याभि० २ ३२, १७ १८ केन हेतुना १ ४१ ६ [किम सर्वनाम्न 'था हेतौ च च्छन्दसि' अ० ५ ३ २६ सूत्रेण हेतौ प्रकारवचने च था प्रत्यय। तस्य विभक्ति-सज्ञकत्वात् 'किम क' अ० ७ २ १०३ सूत्रेण किम कादेश। कथा कथम् नि० ९ ३०]

कथो कथम् ५ २९ १३

कदा कस्मिन् काले ३ ३४. [किम सर्वनाम्न सप्त-म्यन्तात् काले वाच्ये 'सर्वैकान्य०' अ० ५ ३ १५ सूत्रेण दा प्रत्यय]

कदाचन कदाचिदपि ३४ ४१ कभी भी स० प्र० २३८, १० ४८ ५ ['कदा' इति व्याख्यातम्। कदा-चन-पदयो समास]

कद्रीची अचाक्षुष्यगमना (पृथिवी) १ १६४ १७ [किम्शब्दोपपदे अञ्चु गतिपूजनयो (भ्वा०) धातो 'ऋत्विग्०' इत्यादिना क्विन्। 'विष्वग्देवयोश्च०' अ० ६ ३ ९२ सूत्रेण पूर्वपदस्य टेरद्रिरादेश स्त्रिया ङीप्। 'अच' इत्यकारलोपे 'चौ०' अ० ६ ३ १३८ सूत्रेण दीर्घ]

कधप्रियाः ये कथाभि कथाभि प्रीणयन्ति ते (विद्वज्जना) प्र०—अत्र वर्णव्यत्ययेन थकारस्य धकार 'ङ्यापो सज्ञाछन्दसोर्बहुलम्' अ० ६ ३ ६३ अनेन ह्रस्व १ ३८ १ **कधप्रिये**=कथन कथा प्रिया यस्या सा (उष) १ ३० २० [कथोपपदे प्रीञ् तर्पणे कान्तौ च (क्र्या०) धातोर्मूलविभुजादित्वात् क। इयङ् आदेश पूर्वपदस्य ह्रस्वत्व थकारस्य च धकार।]

कनिक्रदत् भृश शब्दयन्, भा०—उच्चै शब्दयन् (हरि=अश्व) ३३ ९० भृश शब्दायमान (उपदेशक) २ ४२ १ भृश गच्छन् (अग्नि=विद्वत्सन्तान) ११ ४६ [क्रदि आह्वाने रोदने च (भ्वा०) धातो 'दाधर्तिदर्धर्ति०' अ० ७ ४ ६५ सूत्रेण लुङि च्लेरङादेशो द्विर्वचनमभ्यासस्य चुत्वाभावो निगागमश्च निपात्यते। कनिक्रदत्=व्यक्रन्दीत् नि० ९ ३]

कनिक्रदम् भृश विकल प्राप्तव्ययम् (पशुम्) १३ ४८ [क्रदि वैक्लव्ये (भ्वा०) धातोर्यङ्लुङन्तादच्]

कनिष्ठाय अतिशयेन बालकाय १६ ३२ [अल्पप्राति० अतिशायन इष्ठन्। 'युवाल्पयो कन्०' अ० ५ ३ ६४ सूत्रेण वा कन्नादेश]

कनीन इव यथा प्रकाशमानो जन १ १७७ १८ [कनीन-इवपदयो समास। कनीन=कनी दीप्तिकान्ति गतिपु (भ्वा०) धातोर्बाहु० ईनप्रत्यय]

कनीनकम् कनति प्रकाशते येन तत् (चक्षु=दर्शकम्) प्र०—अत्र कनीधातोर्बाहुलकादौणादिक ईनक-प्रत्यय ४ ३२ [कनी दीप्तिकान्तिगतिपु (भ्वा०) धातोर्बाहुलकादौणादिक ईनक प्रत्यय]

कनीनक· य कनति दीपयति स एव कनीनक, भा०—वृष्ट्युत्पादक (सूर्य), प्र०—अत्र कनीधातोर्बाहुलकादौ-णादिक ईनप्रत्ययस्तत स्वार्थे कन् ४ ३ **कनीनकाभ्याम्**=प्रदीप्ताभ्या कमनीयाभ्याम् (कर्णाभ्या=श्रवणसाधका-भ्याम्) २५ २ तेजोमयाभ्या कृष्णगोलकतारकाभ्याम् २५ १ [कनी दीप्तिकान्तिगतिपु (भ्वा०) धातोर्बाहु० औणादिक ईन प्रत्यय। तत स्वार्थे कन्। कनीनक कन्यके नि० ४ १५ शुष्णो दानव प्रत्यङ् पतित्वा मनुष्या-णामक्षीणि प्रविवेश स एष कनीनक कुमारक इव परि-भासते श० ३ १ ३ ११]

कनीनकेव कमनीयेव (विज्ञानकर्मणी) ४ ३२ २३. [कनीनक इति व्याख्यातम्। तस्य इवपदेन सह समास]

कनीन. दीप्तिमान् (सूर्य) ३ ४८ १ **कनीनाम्**=कान्तीनाम् २ १५ ७ कन्येव वर्त्तमानाना रात्रीणा सूर्यादीना वा १ १६ ४ यौवनत्वेन दीप्तिमता ब्रह्मचारिणा कन्यानाम्

श्रवणसाधकाभ्याम् २५.२ कुर्वन्ति श्रवणं याभ्याम् १६.६१ **कर्णाः**=यैः कार्याणि कुर्वन्ति ते (प्रमाव) २४ ३ **कर्णे**=कुर्वन्ति येन तस्मिन् ५.३१ ६ **कर्णेभिः**= श्रोत्रैः, प्र०—अत्र ऐसभाव १.८९.८ कानों से आर्याभि० २.२७, २५.२१ **कर्णौः**=नौचालकैः (कैवर्त्तैः) २.३४.३ **कर्णौ**=करोति श्रवणं याभ्यां तौ २५.२ कर्णौ (पृथिवीसूर्यौ) ३३.७१ **कर्णा**=श्रोत्रौ ४.२९.३ कर्णौ श्रोत्रे ३३.१९ कर्णानि ४.२३.८. [डुकृञ् करणे (तना०) धातोः कॄ विक्षेपे (तुदा०) धातोर्वा 'कृवृजृसि०' उ० ३.१० सूत्रेण नक् प्रत्ययः। कर्णः कृन्ततेर्निकृत्तद्वारो भवति। ऋच्छतेरित्याग्रायणः। ऋच्छन्तीव खे उदगन्तामिति ह विज्ञायते नि० १.९]

कर्णयोनयः कर्णः श्रोत्रं योनिर्येषां ते (धामिका वीराः) २.२४.८ [कर्ण-योनिपदयोः समासः]

कर्त्त कुरुत, अत्र 'बहुलं छन्दसि' इति विकरणस्य लुक्, लोडादेशस्य तस्य स्थाने तबादेशः १.६०.५ **कर्त्तन**= कुर्यात् ७.४८.४ कुरुत २.१४.६ कुर्वन्तु १२.६६ [डुकृञ् करणे (तना०) धातोर्लोट्। 'बहुलं छन्दसीति' विकरणस्य लुक्]

कर्त्तम् कूपम्, प्र०—कर्तमिति कूपनाम, निघ० २.२३, १.१२१.१३

कर्त्तरि कारके (कर्म सम्पादके जने) १.१३९.७ [डुकृञ् करणे (तना०) धातोस्तृच्प्रत्यये सप्तम्येकवचनम्]

कर्त्तवै कर्त्तुम् २.२२.१ [डुकृञ् करणे (तना०) धातोस् तुमर्थे तवै प्रत्ययः]

कर्त्ता निष्पादकः (इन्द्रः=सेनापतिः) १.१००.६ **कर्त्तारम्**=भा०—स्रष्टारम् (ईश्वरम्) २९.६ **कर्त्तृभिः**=सुकर्मकारिभिर्जीवैः सह ७.३२ पुरुषार्थिभिः (जनैः) १.५५.८ कर्मकारकैः (सज्जनैः) ६.१६.१ [डुकृञ् करणे (तना०) धातोः कर्त्तरि तृच्। ताच्छील्ये तृन् वा]

कर्त्तोः कर्त्तुं समर्थस्य (परमेश्वरस्य) ३३.३७ [डुकृञ् करणे (तना०) धातोस्तुमर्थे तोसुन् प्रत्ययः। 'क्त्वातोसुन्०' इत्यव्ययसंज्ञा]

कर्त्तोः कर्त्तव्यं गमनाद्यगन्तव्यं कर्म २.३८.४ [डुकृञ् करणे (तना०) धातोस् तोसुन् प्रत्ययः]

कर्त्तात् छेदकात् (अवपद=आपत्कालात्) २.१६.६

कर्त्त्वम् कर्त्तुं योग्यं कार्य्यम्, प्र०—अत्र करोतेस्त्वन् प्रत्ययः. १.१०.२ **कर्त्त्वं**=कर्त्तुं योग्यं (विद्युदादि.) प्र०—अत्र कृत्यार्थे त्वन् प्रत्ययः १.१६१.३ **कर्त्वानि**= कर्त्तुं योग्यानि (धनानि) २.३०.१० [कर्त्वं कर्मनाम निघ० २.१ डुकृञ् करणे (तना०) धातोः 'कृत्यार्थे तवै-केन्०' अ० ३.४.१४ सूत्रेण त्वन् प्रत्ययः]

कर्म धर्म्यं कृत्यम् १.१७३.९ कर्तुं यद्यदीप्सिततमभीष्टं योग्यं चेष्टामयमुत्क्षेपणादि क्रियते तत्, भा०—पुरुषार्थम् प्र०—कर्तुरीप्सिततमं कर्म, अ० १.४.४९ क्रियमाणम् १.६२.६ अभीप्सिततमा क्रिया १६.१५ **कर्मणः**= चेष्टितस्य (कार्यस्य) १.११.४ **कर्मणा**=ईप्सिततमेन व्यापारेण ६.६६.१. सत्क्रियया ७.३३.१३ [डुकृञ् करणे (तना०) धातोः 'सर्वधातुभ्यो मनिन्' उ० ४.१४५ सूत्रेण मनिन् प्रत्ययः। क्रियते तत् कर्म क्रिया वा। अपसेत्यादि-त्वादुभयलिङ्गम्। कर्मन् कर्मनाम निघ० २.१. कर्म कस्मात्. क्रियत इति सत् नि० ३.१ यज्ञो वै कर्म श० १.१.२.१ पुण्यो वै पुण्येन कर्मणा पापः पापेनेति श० १४.६.२.१४. वीर्यं वै कर्म श० ११.४.४.५ कर्माणि त्रिवृत् गो० पू० १.३२]

कर्म कुरुत, प्र०—अत्र लुङि च्लेर्लुक् 'छन्दस्युभयथा' इत्यार्धधातुकत्वेन ङित्वाभावाद् गुणः १.१७३.४ कुर्याम ६.५१.८ [डुकृञ् करणे (तना०) धातोर्लुङ्। छान्दसत्वा-च्च्लेर्लुक्, अडभावो गुणश्च]

कर्मकृतः ये कर्माणि कुर्वन्ति ते, भा०—पुरुषार्थिनः (जनाः) ३.४७ [कर्मोपपदे डुकृञ् करणे (तना०) धातोः क्विप्। ह्रस्वस्य तुक्]

कर्मणि कर्मणि क्रियायां क्रियायाम् १.१०१.४ [कर्मणि पदस्य वीप्सायां द्वित्वम्]

कर्मणे कर्त्तव्याय १.५५.३ क्रियासिद्धये ३०.७ कर्त्तुं योग्यत्वेन सर्वोपकारार्थाय, भा०—क्रियायै १.१ पञ्चविधलक्षणचेष्टामात्राय, प्र०—उत्क्षेपणमवक्षेपणमा-कुञ्चनं प्रसारणं गमनमिति कर्माणि वैशे० १.७ इत्यत्र पञ्चविधं कर्म गृह्यते १.१३ ['कर्म' इति पदे व्याख्यानम्]

कर्मण्यम् कर्मणा सम्पन्नम् (वीरम्), प्र०—अत्र 'कर्मवेषाद्यत्' अ० ५.१.१००. इति कर्मशब्दाद् यत्, 'ये चाभावकर्मणोः' इति प्रकृतिभावश्च १.९१.२० **कर्मण्यः**= यः कर्मणां सम्पद्यते सः (वीरः=सन्तानः) ३.४७ कर्मसु कुशलः (वीरजनः) ७.२.६ ['कर्म' इति व्याख्यातम्। ततः सम्पादिन्यभिधेये 'कर्मवेषाद्यत्' अ० ५.१.१०० सूत्रेण यत्। 'ये चाभावकर्मणोः' अ० ६.४.१६८ सूत्रेण प्रकृतिभावाट्टेर्लोपो न भवति]

कर्मण्याम् यः कर्मभिः सम्पद्यते ताम् (मृदं=मृति-

दध्यादियुक्त भक्ष्यविशेषम् ३ ५२ ७ **करम्भस्य**=दधि-समृष्टस्य सक्तुन १६ २२ **करम्भः**=कर्त्ता (ईश्वर) १ १८७ १० करोति मथन येन स. १६ २१ **करम्भात्**=य करम्भमन्नविशेषमत्ति स (देव =विद्वज्जन) ६ ५६ १ **करम्भेण**=अविद्याहिंसनेन, प्र०—अत्र 'कृ हिंसायाम्' इत्यस्माद्धातोर्बाहुलकादौणादिकोऽम्भच्-प्रत्यय ३ ४४. [डुकृञ् करणे (तना०) धातो, अथवा कृ हिंसायाम् (क्र्या०) धातोर्बाहुलकादौणादिकोऽम्भच् प्रत्यय]

करम्भिणम् बहव करम्भा पुरुषार्थेन सशोधिता दध्यादय पदार्था विद्यन्ते यस्य तम् (आप्त विद्वासम्) ३ ५२ १ मुष्ठुक्रियया निष्पन्नम् (भोज्यमन्नरसादिकम्) २० २६ [करम्भप्राति० भूम्नि इन् प्रत्यय । 'करम्भम्' इति व्याख्यातम्]

करस्नम् बाहुम्, प्र०—करस्नाविति बाहुनाम, निघ० २४, १ १६१ १२ **करस्ना**=बाहू, प्र०—करस्नौ बाहू कर्मणां प्रस्नातारौ, नि० ६ १४, ३ १८ ५. यौ करान् कर्त्तॄन् स्नापयत शोधयतस्तौ (गभस्ती=हस्तौ) ६ १६ ३ [करस्नौ बाहुनाम निघ० २ ४ करस्नौ बाहु कर्मणा प्रस्नातारौ नि० ६ १७ करोपपदे ष्णा शौचे (अदा०) धातो क प्रत्यय । 'सुपा सुलुगि' त्याकार]

करः य करोति स (विद्वज्जन) ६ १८ १४ [डुकृञ् करणे (तना०) धातोरच् प्रत्यय]

करा कुर्वाणौ (अध्यापकौ) १ ११६ १३

कराम कुर्य्याम, प्र०—अत्र विकरणव्यत्ययेन शप् १६ ६२ **करामहे**=कुर्याम, प्र०—अत्र लेटि व्यत्ययेन शप्, अथवा भ्वादिर्मन्तव्य ६ ५ [डुकृञ् करणे (तना०) धातोर्लेट् । विकरणव्यत्ययेन शप्]

करांसि करणीयानि कर्म्माणि ४ १६ १० [करम् कर्मनाम निघ० २ १ डुकृञ् करणे (तना०) धातोरसुन् प्रत्यय]

करिक्रत् भृश करोति ३.५८ ६ [डुकृञ् करणे (तना०) धातोर्यङ्लुगन्तस्य शतरि 'दाधर्त्तिदर्द्धर्ति०' अ० ७ ४ ६५ सूत्रेण निपातनादभ्यासककारस्य चुत्वाऽभावो रिगागमश्च निपात्यते]

करिक्रत् भृश कुर्वन् (इन्द्र.=जगदीश्वर) १ १३१ ३ **करिक्रतः**=येऽतिशयेन कुर्वन्ति (जना) १.१४० ५. [पूर्वपदे व्याख्यातम् । करिक्रत् कर्मनाम निघ० २ १]

करिष्यतः ये करिष्यन्ति तान् (देवान्=दिव्यान् गुणान्) ११.३ [डुकृञ् करणे (तना०) धातोर्लृट स्थाने 'लृट सद्वा' इति सूत्रेण शतरि रूपम्]

करिष्यथ करिष्यमाणं साधयिष्यथ १ १ ६८ **करिष्यसि**=करोषि, प्र०—अत्र 'वाच्छन्दसि सर्वे विधयो भवन्ति, इति लडर्थे लृट् १ १ ६ [डुकृञ् करणे (तना०) धातोर्लृट्]

करिष्यन् करूँगा ऐसी इच्छा करता हुआ (सन्यासीजन) स० वि० १६५, ६ ११३ १ [डुकृञ् करणे (तना०) धातोर्लृट स्थाने शतृ]

करिष्या कर्त्तु योग्यानि (कार्याणि), प्र०—अत्र 'सुपा सुलुग्०' इति डादेश १ १६५ ६

करिष्या करिष्यसि, प्र०—सिज्लोपो दीर्घश्चात्र छान्दस ३३ ७६

करुणस्य कृपामयस्य कर्मण १.१०० ७ करुणा करने वाले (ईश्वर) का, आर्याभि०, अथर्व० १२ ३ ४७ [कृ विक्षेपे (तुदा०) धातो 'कृवृदारिभ्य उनन्' उणा० ३ ५३. सूत्रेण उनन् प्रत्यय । करुणम् कर्मनाम निघ० २ १.]

करूळती य करूनूढा कामयते स करूळत सोऽस्याऽस्तीति (विद्वज्जन) ४ ३० २४

कर्कन्धु येन कर्म दधाति (मधु=विज्ञानम्) १६.६१ **कर्कन्धुभिः**=ये कर्क बदरीक्रिया दधति तैं (यवादिभिरन्नै) २१ ३२ **कर्कन्धुम्**=य कर्कान् कारुकानन्तति व्यवहारे बध्नाति तम् (वय्यम्=ज्ञातार विद्वासम्) १ ११२ ६ **कर्कन्धूनि**=कर्कन्धुफलानि स्थूलानि पक्वानि बदरीफलानीव १६ २३ [कर्क कण्टक दधातीति विग्रहे कर्कोपपदाद् डुधाञ् धारणपोषणयो (जु०) धातोर् 'अन्दूदृम्फू०' उ० १ ६३ सूत्रेण कू प्रत्यय । छान्दस ह्रस्वत्वम् । यस्येह-स्तत् कर्कन्धु श० १२ ७ १ ४]

कर्कन्धुरोहितः कर्कन्धुर्बदरीफलमिव रोहित- (पशु) २४ २ [कर्कन्धुरोहितपदयो समास । कर्कन्धु पूर्वपदे व्याख्यातम् । रोहित =रोहति प्रादुर्भवतीति विग्रहे रुह प्रादुर्भावे (भ्वा०) धातो 'रुहेरश्चलो वा' उ० ३.९४ सूत्रेण क्त प्रत्यय]

कर्करिः भृश कुर्वन् (उपदेशको जन) २४३ ३ कर्त्तव्य कर्म, धर्म को ही पुरुषार्थ से करता हुआ (ईश्वर) आर्याभि० १ ५३ ऋ० २ ८ १२ ३ [डुकृञ् करणे (तना०) धातोर्यङ्लुगन्ताद् बाहुलकाद् औणा० इ प्रत्यय]

कर्णम् श्रुतस्तुतिम् (सखायम्=सुहृद्वद्वर्त्तमानं पतिम्) २६ ४० **कर्णयोः**=श्रोत्रयो २१ ५० **कर्णः**=दीर्घकर्ण (गर्दभ =पशुविशेष) २४ ४० **कर्णाभ्याम्**=

काम्), प्र०—अत्र 'कर्मवेषाद्यत्' अ० ५ १.१०० इति कर्मशब्दात् सम्पादिन्यर्थे यत् ११ ५५ [कर्मण्यमिति व्याख्यातम्। तत स्त्रिया टाप्]

कर्मन् राज्यकर्मणि ११२१ ११ ['कर्म' इति व्याख्यातम्]

कर्मन्कर्मन् कर्मणि कर्मणि ११०२६. [कर्मन् पदस्य वीप्सायां द्वित्वम्]

कर्मभिः धर्म्याभि क्रियाभि २३ ३७ **कर्मसु**=कृष्यादिक्रियासु १० ३३ **कर्माणि**=जगत्सृष्टि-पालन-प्रलयकरणन्यायादीनि १३ ३३ सत्कर्मो को स० वि० १४५, ४.२. कर्त्तुरीप्सिततमानि क्रियमाणानि ३४ २ कर्त्तु योग्यानि, कर्त्तुरीप्सिततमानि १६११३ जगत् की उत्पत्ति-स्थिति-प्रलय आदि कर्मों को, आर्याभि० १ २३, ऋ० १.२७.१६ ['कर्म' इति पद व्याख्यातम्]

कर्मारम् य कर्माण्यलङ्करोति' तम् (सज्जनम्) ३०७ **कर्मारेभ्यः**=असि-भुशुण्डी-शतघ्न्यादिनिर्मातृभ्य (शिल्पिभ्य) १६ २७ [कर्मोपपदे ऋ गतौ (भ्वा०) धातोरण् प्रत्यय]

कर्वरम् कर्त्तव्य कर्म ६ २४ ५ [कर्वर कर्मनाम निघ० २ १ किरति विक्षिपतीति विग्रहे कॄ विक्षेपे (तुदा०) धातो 'कॄगॄ०' उ० २ १२१ सूत्रेण ष्वरच्प्रत्यय]

कर्ष विलिखति ५ ८३ ७ [कृष विलेखने (भ्वा०) धातोर्लडर्थे लोट्]

कर्हि कस्मिन् समये ६ ३५ २ कदा ५ ७४ १० [किम सर्वनाम्न सप्तम्यन्ताद् 'अनद्यतने र्हिलन्यतरस्याम्' अ० ५ ३ २१ सूत्रेण र्हिल्। किम कादेश]

कलविङ्कः चटक २४ ३१ **कलविङ्कान्**=चटकान् २४ २०

कलशम् घटम् १ ११७ १२. **कलशः**=कुम्भ ३ ३२ १५ **कलशे**=पात्रे ६ ४७ ६ [कलाशब्दोपपदात् शीङ् शये (अदा०) धातो 'अन्येष्वपि दृश्यते' अ० ३ २ १०१ सूत्रेणाधिकरणे ड. प्रत्यय। पूर्वपदस्य ह्रस्वत्वम्। कलश कस्मात्? कला, अस्मिञ्छेरते मात्रा। कलिश्च कलाश्च किरतेर्विकीर्णमात्रा नि० ११ १२]

कलशा कुम्भाविव ६ ६८ २. [पूर्वपदे व्याख्यानम्। 'सुपा 'सुलुगि'त्याकार']

कलिम् य किरति विक्षिपति, दु[illegible] न (मद्वैद्यम्), गणक वा १ ११२ १५ [क[illegible] किरतेर्विकीर्णमात्रा नि० ११.१२. कॄ वि[illegible]

धातो 'सर्वधातुभ्य इन्' उ० ४ ११८ सूत्रेण इन्। अथ ये पञ्च (स्तोमा) कलि स तै० १५ ११.१ रेफस्य ल वम्]

कल्पताम् समर्पितोऽस्तु १६ ४५. समर्थो भवतु १८ २६ समर्प्पयतु २२ ३३ समर्था भवतु २२ २२ समर्थताम् ६ २१ स्थिरा भवतु ऋ० भू० २७५ समर्पित भवतु ऋ० भू० १५४ प्रसिद्धो भवतु ऋ० भू० २७४

कल्पन्ताम्=समर्था भवन्तु ३५ ६ समर्थयन्ताम् १४.६ समर्थयन्तु १३ २५ सुखयुक्ता भवन्तु १० २८ भा०—स्वाभीष्टानि साधयन्तु १८ ७ **कल्पेताम्**=समर्थयत: १४ १५ समर्थयेताम् १४ ६. भा०—स्वस्वनियमेन समर्थौ भवेताम् १५ ५७ **कल्पस्व**=अध्यापनोपदेशाभ्या समर्थय ५ १० समर्थो भव ११७० २. **कल्पत्**=निवास कर स० वि० ६३, अथर्व० ११ ५ २६ **कल्पयन्ति**=कल्पना करते है स० वि० २०६, अथर्व० ६ ६ ७ समर्थित करते है, स० वि० २०६, अथर्व० ६ ६ ७ **कल्पयाति** कल्पयेत समर्थ कुर्यात्, भा०—सम्पादयेत् १६.६०. समर्थयेत १८ ३३ निष्पादयतु ऋ० भू० २६२ **कल्पयस्व**=समर्थयस्व २३ १५ [कृपू सामर्थ्ये (भ्वा०) धातोर्णिच्। कल्पते अर्चतिकर्मा निघ० ३ १४.]

कल्पमानः समर्थ सन् (ईश्वर) १३.४३. [कृपू सामर्थ्ये (भ्वा०) धातो शानच्]

कल्पयन्ती समर्थयन्त्यौ (प्राची=रोदसी) ५ १७. [कृपू सामर्थ्ये (भ्वा०) धातोर्णिजन्ताच्छत्रन्तात् ङीप्]

कल्पिनम् कल्प. प्रशस्त सामर्थ्यं विद्यते यस्य तम् (जनम्) ३० १८ [कल्पप्राति० प्रशसायाम् इनुप्रत्यय.। कल्प=कृपू सामर्थ्ये (भ्वा०) धातोर्घञ् प्रत्यय.]

कल्मलीकिनम् देदीप्यमानम् (नाग) प्र०—कल्मलीकिनमिति ज्वलतो नाम, निघ० १ १७, २ ३३.८

कल्माषग्रीवः जिसके हरित रंग वाले वृक्ष आदि ग्रीवा के समान है, वह (विष्णु=परमेश्वर), स० वि०, अथर्व० ३.२७ ५ [कल्माष-ग्रीवापदयो समास.। कल्माष=कालयति, कल्+विच्। त माषयति अभिभवतीति विग्रहे माष्+णिच्+अच्। कल्-माषपदयो समास। ग्रीवा गिरतेर्वा गृणातेर्वा गृह्णातेर्वा नि० २ २८]

कल्माषः श्वेतकृष्णवर्ण (पशु) २९.५८ [पूर्वपदे व्याख्यानम्]

कल्याण कल्याणकारक (सभास्वामिन्) १.३१.८. [कल्याण कमनीय भवति नि० ५.३.]

कल्याणीम् कल्याणानिमित्ताम् (वाचम

पदनाम, निघ० ५ ४ 'वाच्छन्दसि सर्वे विधयो भवन्ति, इति सर्वनाम-कार्यम् १२ १०२ आनन्दरूपाय (देवाय=परमात्मने) २३ ३ सुखदायक (देवाय=परमेश्वर) के लिए स० वि० ६, ३२ ६ **कः**=सुखस्वरूपो देव १ २४ १ प्रश्नार्थे ७ २६ कश्चिदेव १ ५४ ५ [क पदनाम निघ० ५ ४ छान्दसत्वात् सर्वनामकार्यम् । क कमनो वा, क्रमणो वा, सुखो वा, नि० १० २२ प्राणो वाव क जै० उ० ४ २३ ४ प्रजापतिरब्रवीदथ कोऽहमिति यदेवैतदवोच इत्यब्रवीत् ततो वै को नाम प्रजापतिरभवत् को वै प्रजापति ऐ० ३ २१ क=आदित्य नि० १३ २५ किम सर्वनाम्नो वा चतुर्थ्या एकवचनम्]

कः करोति ५ २९ ४ कुर्य्यात्, प्र०—अत्राऽडभावो 'मन्त्रे घस०' इत्यादिना च्लेर्लुक् १ १६२ २० कुर्य्या ७ ४३ ३ कुरु १ १६४ ४६ करोषि ७ २१ ३ [डुकृञ् करणे (तना०) धातोर्लुङ् । मन्त्रे घस०' इति च्लेर्लुक्, अटो ऽभावश्च]

काकवीरम् काकाना गोपकम् (वनस्पति=वटादिकम्) ६ ४८ १७

काकुत् सुशिक्षिता वाक्, प्र०—काकुदिति वाङ्नाम, निघ० १ ११, ६ ४१ २ **काकुदः**=वाच शब्दसमूह, प्र०—काकुदिति वाङ्नामसु पठितम्, निघ० १ ११, १ ८ ७ [काकुद् वाङ्नाम निघ० १ ११ काकुद तालु । काकुर्जिह्वा साऽस्मिन्नुद्यते । महाभाष्ये १ १ १]

काटे कटन्ति वर्षन्ति सकला विद्या यस्मिन्नध्यापने व्यवहारे तस्मिन् १ १०६ ६ [कटे वर्षावरणयो (भ्वा०) धातोरधिकरणे 'हलश्च' अ० ३ ३ १२१ सूत्रेण घञ्]

काट्याय काटेपु कूपेपु भवाय (भा०—कूपाना जलाय) प्र०—काट इति कूपनाम, निघ० ३ २३, १६ ३७ कटेष्वावरणेपु भवाय (जनाय) १६ ४४ [काट इति कूपनाम (निघ० ३ २३) ततो भवार्थे यत् । अथवा कटे वर्षावरणयो (भ्वा०) धातोर्घञर्थे क । ततो भवार्थेऽण् तद्धित]

काण्डात्काण्डात् ग्रन्थेग्रन्थे १३ २० [काम्यते जनैरिति विग्रहे कमु कान्तौ (भ्वा०) धातो 'क्वादिभ्य कित्' उ० १ ११५ सूत्रेण ड]

कानिष. कमनीयस्य (सहस=बलवतो जनस्य) ३ २८ ५ [कनी दीप्तिकान्तिगतिपु (भ्वा०) धातोर्बाहुलकादौणा० इसिन् प्रत्यय । बहुलवचनाद् वृद्धि]

कामदुघा. या कामान् दुहन्ति प्रपिपुरति ता (सत्यस्त्रिय) १७ ३ **कामदुघे !**=इच्छापूरिके (अ०—पाचिके स्त्रि) १२ ७२ [कामोपपदे दुहप्रपूरणे (अदा०) धातो 'दुह कब् घश्च' अ० ३ २ ७० सूत्रेण कप् प्रत्ययो घकारश्चान्तादेश । स्त्रियां टाप्]

कामधरणम् कामाना धरण स्थानम् ३ २७ सङ्कल्पानामाधरण स्थानम् १२ ४६ [काम-धरणपदयो समास । पशव कामधरणम् श० ७ १ १ ८]

कामप्रेणेव यत्काम प्राति पिपर्त्ति तेनेव (मनसा=अन्त करणेन) १ १५८ २ [कामोपपदे प्रा पूरणे (अदा०) धातो क । तत तृतीयैकवचनम् । कामप्रेण-इवपदयो समास । अमृत वै कामप्रम् श० १० २ ६ ४]

कामम् अभिलाषम् ३ ३० २० इच्छासिद्धिम् १ ८५ ११ य काम्यते तम् (अभिलाषम्) १ ५४ ६ इच्छापूर्त्तिम् ३९ ४ काम्यत इष्यते सर्वैर्जनैस्तम् (पशार्थाऽभिलाषम्) १ १६ ६ इच्छाम् १२ ७२ **कामस्य**=अभिलाषी पुरुष की स० वि० १९७, ९ ११३ ११ **कामः**=कमिता (विद्वज्जन) २ ३८ ६ कामनामभिलाषा कुर्वाण (प्रजाजन) ७ २० ६ काम्यते येन यस्मिन् वा (पश्वभिलाष) १८ ८ य काम्यते स (अग्नि=सभेशो जन) १२ ११७ कामना २६ २ कामयते य परमेश्वर, य काम्यते सर्वैर्योगिभि. स परमेश्वरो जीवो वा ७ ४८ **कामान्**=सङ्कल्पितान् (आकाश-काल-दिश) २० २३ भा०—इच्छा २० ६० **कामाय**=कामयमानाय जीवाय ७ ४८ विषयसेवनाय ३० ५ इच्छासिद्धये १२ ११६ **कामाः**=सब कामनाए स० वि० १९७, ९ ११३ ११ ये कामयन्ते (सेनाऽमात्यादिजना) ४ १६ १५ अभिलाषा १२ ४४ **कामेन**=इच्छया ७ १६ १० [कमु कान्तौ (भ्वा०) धातोर्घञ् । कामो हि दाता काम प्रतिग्रहीता तै० २ २ ५ ६ समुद्र इव हि काम । नैव कामस्यान्तोऽस्ति न समुद्रस्य तै० २ २ ५ ६ श्रद्धा कामस्य मातर हविषा वर्धयामसि तै० २ ८ ८ ८]

कामयाध्वे कामयध्वम् २ १४ ८ [कमु कान्तौ (भ्वा०) धातो 'कमेर्णिङ्' अ० ३ १ सूत्रेण स्वार्थे णिङन्ताल् लट् लोडर्थे]

कामिनम् कामाऽऽतुरम् (पतिम्) ५ ६१ ७ **कामिनः**=प्रशस्त कामो येषामस्ति तान् (जनान्) ५ ५३ १६ कामयितार (मरुत=मनुष्या) ७ ५९ ३. **कामी**=कामयितु शील (वीरपुरुष) ३ १४ १ [कमु कान्तौ (भ्वा०) धातोस्ताच्छील्ये णिनि । अथवा कामप्राति० प्रशसायाम् इन्]

काम्पीलवासिनीम् क सुख पीलति बध्नाति गृह्णातीति

वा, करोति यो येन वा स क्रतु, कविश्चासौ क्रतुश्च स (अग्नि =परमेश्वरो भौतिको वा), प्र०—कवि क्रान्तदर्शनो भवति कवतेर्वा, नि० १२ १३ य सर्वविद्यायुक्त वेदशास्त्र कवते उपदिशति स कविरीश्वर, क्रान्त दर्शन यस्मात् स सर्वज्ञो भौतिको वा क्रान्तदर्शन 'कृञ क्रतु' उ० १ ७६ अनेन कृञो हेतुकर्त्तरि कर्त्तरि वा कतु प्रत्यय १ १ ५ कवि (सर्वदृक्) सबको देखने वाला, क्रतु सब जगत् का जनक (ईश्वर) आर्याभि० १ ५, ऋ० १ १ १ ५ कवि सर्वज्ञ क्रान्तप्रज्ञ सर्वेषा जीवाना बुद्धे क्रमिता तदग्रे न कस्यापि बुद्धि क्रमते सर्वेषा बुद्धे प्रभुत्वात्, क्रतु सर्वजगत्कर्त्ता (ईश्वर) वे० भा० न० महान् विद्वान् ६ १६ २३ **कविक्रतो !**=कवीना क्रतुरिव क्रतु प्रज्ञा यस्य तत्सम्बुद्धौ (अग्ने=विद्वज्जन) ३ १४ ७ [कवि-क्रतुपदयो समास । कविरिति व्याख्यातम् । क्रतु = कर्मनाम निघ० २ १ प्रज्ञानाम निघ० ३ ९]

कविच्छदा यौ कवीन् विदुषश्छदयत ऊर्जयतस्तौ (इन्द्राग्नी=अध्यापकोपदेशकौ) ३ १२ ३ [कव्युपपदे छद अपवारणे (चु०) धातो छदिरूर्जने (भ्वा०) धातोर्वा मूलविभुजादित्वात् क प्रत्यय]

कवितमम् अतिशयेन मेधाविनम् (विद्वज्जनम्) ५ ४२ ३ **कवितमस्य**=अतिशयेन कवे (देवस्य=महाविदुष) ५ ८५ ६ **कवितम.**=विद्वत्तम (मेधाविजन) ७ ९ १ [कविरिति व्याख्यातम् । ततोऽतिशायने तमप्]

कविप्रशस्त. कविभि प्रशसनीय कविभि प्रशस्तो वा (अतिथिर्जन) ५ १ ८ [कवि-प्रशस्तपदयो समास]

कविशस्त: कविभि विद्वद्भि प्रशसित (अग्नि = सत्पुरुष) ३ २१ ४ **कविशस्ता:**=कविभि मेधाविभि शस्ता प्रशसिता अध्यापिता वा (मन्त्रा =वेदस्य श्रुतयो विचारा वा) ६ ५० १४ [कवि-शस्तपदयो समास । शस्त =शसु स्तुतौ (भ्वा०) धातो क्त प्रत्यय । कविशस्ता मेधाविशस्ता नि० १२ ३३]

कवीयमान: अतीव विद्वान् (मनुष्य) १ १६४ १८ [कविपदाद् आचारेऽर्थे क्यङि शानच्]

कव्यता कव्य कवित्व तन्यते यया तया (निविदा= वेदवाचा) १ ९६ २ [कविप्राति० 'तत्र साधु' रित्यर्थे यत् प्रत्यये कव्यम् । तदुपपदे तनु विस्तारे (तना०) धातोर् 'अन्येष्वपि दृश्यते' इति ड प्रत्यय । स्त्रियां टाप्]

कव्यवाहन ! य कविषु साधूनि वस्तूनि वहति प्रापयति तत्सम्बुद्धौ (अग्ने=अग्निरिव) प्रकाशमान विद्वज्जन) १९ ६४ कवीना प्रागल्भ्यानि कर्माणि प्राप्त (अग्ने=विद्वन् पुत्र) १९.६६ **कव्यवाहन:**=य. कव्यानि कवीना प्रशस्तानि कर्माणि प्रापयति स (अग्नि =विद्वज्जन) १९ ६५ **कव्यवाहनाय**=कुवन्ति शब्दयन्ति सर्वा विद्या ये ते कवय क्रान्तदर्शना क्रान्तप्रज्ञाश्च तेभ्यो हितानि कर्माणि कव्यानि तानि यो वहति प्रापयति तस्मै, भा०—शिल्पिना कार्यवाहनाय (अग्नये=भौतिकाय) २ २९ [कविप्राति० साध्वर्थे हितार्थे वा यत् प्रत्यये कव्यम् । तदुपपदे वह प्रापणे (भ्वा०) धातोर्णिजन्ताद् 'अन्येभ्योऽपि दृश्यते' अ० ३ ३ १३० सूत्रेण युच् प्रत्यय]

कव्या कवय, प्र०—अत्र 'सुपा सुलुग्०' इति विभक्तेड्यदिश २२ २

कशया ताडनसाधनेन २५ ४० गत्या शिक्षया वा १ १५७ ४ ताडनार्थरज्ज्वा ५.८३ ३ प्रेरकया (वेत्रेण) १ १६२ १७ शासनेन गत्या वा १ १६८ ४ **कशा**=वाणी, प्र०—कशेति वाङ्नामसु पठितम्, निघ० १ ११, ७ ११ **कशा:**=चेष्टासाधनरज्जुवन्नियमप्रापिका क्रिया १ ३७ ३ वाक् १ २२ ३ [अश्वाजनी कशेत्याहु । कशा प्रकाशयति भयमश्वाय । कृष्यतेर्वाणूभावात् । वाक् (कशा) पुन प्रकाशयत्यर्थान् । खशया, क्रोशतेर्वा नि० ९ १९ वाङ्नाम निघ० १ ११]

कश: शासनीय (जन्तुविशेष) २४ ३८. **कशान्**= पक्षिविशेषान् २४ २६ [कश जलम् निघ० १ १२]

कशीकेव यथा ताडनार्था कशीका १ १२६ ६

कशोजुवम् कशास्युदकानि जवयति गमयति तम् (सेनापतिम्) प्र०—कश इत्युदकनाम, निघ० १ १२, १ ११२ १४. [कश इत्युदकनाम (निघ० १ १२), तदुपपदे जु गतौ (सौत्रो धातु) धातो 'अन्येभ्योऽपि दृश्यते' अ० ३ २ १७८ सूत्रेण क्विप्]

कश्चन कश्चिदपि ६ ४७ १

कश्यपस्य आदित्यस्येश्वरस्य, प्र०—प्रजापति प्रजा असृजत यदसृजताकरोत् तद्यदकरोत् तस्मात् कूर्म, कश्यपो वै कूर्मस्तस्मादाहु, सर्वा प्रजा काश्यप्य इति, श० ७ ४ १ ५ अनेन प्रमाणेनेश्वरस्य कश्यपसज्ञा, एतन्निर्मित त्रिगुणमायुर्लभेमहीत्यभिप्राय ३ ६२ प्राणस्य ऋ० भू० ८१ **कश्यप:**=कच्छप २४ ३७ जीव स० वि० २७

कस्मै सुखकारकाय (देवाय=परमेश्वराय) २५ १० सुखस्वरूपाय (देवाय=कमनीयाय सवितृलोकाय) २५ १२ सुखस्वरूपाय सुखकारकाय (देवाय=ईश्वराय) प्र०—क इति

कारोतरेण=कूपेनेव प्र०—कारोतर इति कूपनाम, निघ० ३ २३, १६ ८२ **कारोतरात्**=कारान् व्यवहारान् कुर्वत शिल्पिन 'उ इति वितर्के' तरति येन तस्मात् (शफात्=खुरादिव जलमेवस्यानात्) १.११६ ७ [कार+उ+तृ प्लवनसंतरणयो (भ्वा०) धातोरप् प्रत्यय । कारोतर कूपनाम निघ० ३ २३ कारोतरात् इति कूपनाम निघ० ३ २३]

कार्षिः कर्षति हलेन भूमिमिति (वैश्यो जन), प्र०—अत्र 'इञ् कृष्यादिभ्य' अ०—३ ३ १०८ इतीञ् प्रत्यय ६ २८ [कृष विलेखने (भ्वा०) धातोरिञ्प्रत्यय । 'कृषेर्वृद्धिश्छान्दसे' उ० ४ १२७ सूत्रेण वा इञ्प्रत्यय]

कार्ष्णम् मृगचर्मादिकम् ऋ० भू० २३७ मृग-चर्मादि स० वि० ८०, अथर्व० ११ ५ ६ [कृष्णप्राति० अवयवे विकारे चार्थेऽण् प्रत्यय । कृष्ण =कृष विलेखने (तुदा०) धातो 'कृषेर्वर्णे' उ० ३ ४. सूत्रेण नक् । कृष्ण कृष्यतेनिकृष्टो वर्ण नि० २ २१]

कार्ष्मेव यथा काष्ठादिक द्रव्यम् १ ११६ १७ [कार्ष्म-इवपदयो समास]

कालका पक्षिविशेष २४ ३५

काव्यम् कविभिर्निर्मितम् १५ ४ कविभि कमनीयम् (वच) ५ ३९ ५ **काव्ययोः**=कविभिर्विद्वद्भिर्निर्मितयोर्व्यवहार-परमार्थप्रतिपादकयोर्ग्रन्थयो ३३ ७२ **काव्यस्य**=कवे कर्मण १ ११७ १२ **काव्यः**=कवेर्मेधाविन पुत्र १.१२१.१२. यथा कवे पुत्र शिष्यो वा १.८३ ५ **काव्या**=कविभिर्विद्वद्भिर्निर्मितानि (काव्यानि) ४ ११.३ कवीना मेधाविना कर्म्माणि ५.५६.४. कवे =क्रान्तप्रज्ञस्य कर्माणि २.५.३ वेदस्तोत्राणि १ ७२ १ **काव्यानि**=कविभि क्रान्तप्रज्ञैर्विद्वद्भिर्निर्मितानि (सर्व-शास्त्राणि) ३.१ १८ **काव्याय**=कविभि. सुशिक्षिताय (स्नानकाय) ६.२० ११ **काव्येन**=कविना मेधाविना निर्मितेन शास्त्रेण ३.३६.५. **काव्यैः**=कविभि परम-विद्वद्भिर्धार्मिकैर्निर्मितै (दसनाभि =कर्मभि) १०.३४. [कविप्राति० भावे कर्मणि च ष्यञ् ब्राह्मणादित्वात् । त्रयी वै विद्या काव्य छन्द श० ८ ५ २ ४ ऊमा वै पितर प्रात सवने ऊर्वा माध्यन्दिने, काव्यास्तृतीयसवने ऐ० ७ ३४]

काशि. न्यायविनयादिशुभगुणप्रदीप्ति २ ३० ५. [काशृ दीप्तौ (भ्वा०) धातो 'इञ् कृष्यादिभ्य' इति वार्तिकेन इञ् । काशिर्मुष्टि प्रकाशनात् नि० ६.१. काशृ दीप्तौ (भ्वा०) धातो. 'सर्वधातुभ्य इन्' उ० ४ ११८ सूत्रेण इन् प्रत्यय]

काष्ठाम् दिशम् ६ १३ **काष्ठासु**=दिक्षु ३८ ३७ **काष्ठाः**=दिश प्रति १ ६३ ५ सङ्ग्रामप्रदेशान्, प्र०—काष्ठा इति सङ्ग्रामनाम निघ० २ १७, १८ ६५ दिश इव नदी ४ ५८ ७ दिश-स्तम्भ्या प्रजा ९ ५६ ६ [काशृ दीप्तौ (भ्वा०) धातो 'हनिकुषिनी०' उ० २ २ सूत्रेण क्थन् प्रत्यय स्त्रिया टाप् । काष्ठा दिङ्नाम निघ १ ६ तत्र काष्ठा इत्येतदनेक यापि तत्वस्य नाम भवति । काष्ठा दिशो भवन्ति क्रान्त्वा स्थिता भवन्ति, काष्ठा उपदिशो भवन्तीतरेतर क्रान्त्वा स्थिता भवन्ति, आदित्योऽपि काष्ठोच्यते क्रान्त्वा स्थितो भवति, आज्यन्तोऽपि काष्ठोच्यते क्रान्त्वा स्थिता भवन्तीति स्थावरणाम् नि० २ १५ सुवर्गो वै लोक काष्ठा तै० १ ३ ६ ५]

किकिदीविना कि कि ज्ञान दीव्यति ददाति दर्शनेन (चापेण=भक्षणेन), प्र०—कि ज्ञाने. इत्यस्मादौणादिके सन्वति डौ कृते किविस्तदुपपदाद् दिवु धातोरौणादिक किर्बाहुलकाद् दीर्घश्च १० ८७ [किकिना शब्देन दीव्यतीति विग्रहे 'किकि' इत्युपपदे दिवु क्रीडादिषु (दिवा०) धातो कृविघृष्विछविं०' उ० ४ ५६ सूत्रेण क्विन् प्रत्ययान्तो निपात्यते]

किकिरा विकीर्णानि (हृदयानि) ६ ५३ ८ व्यवस्था-पत्राणि ६.५३ ७

किञ्च किञ्चिदपि (पाप पुण्यं वा) १ २३.२२

किञ्चन किञ्चिदपि (कर्म्म) ३४ ३ कुछ भी (कर्म) स० प्र० २४७, ३४ ३

कितवम् द्यूतकारिणम् (पापि-जनम्) २ २९.५ **कितव**=द्यूतशील (दुर्जन.) ३०.२२ [कितव किं तवास्तीति शब्दानुकृति , कृतवान् वाशीर्नामिक नि० ५ २२]

कितवासः द्यूतकारा (छलिनो जना) ५.८५ ८ [कितव इति पूर्वपदे व्याख्यातम् । ततो जसोऽसुगागम]

किन्त्वः किमसौ किमन्यो वा २० २८

किम् प्रश्ने १७ १८ कुछ (जगत्), स० प्र० २३८ ४० १.

किम्पूरुषम् जाङ्गल कुत्सित मनुष्यम् ३०.१६ [किम्पुरुषपदयो समास । सहिताया दीर्घ । अथैनमुत्क्रान्तमेध (पुरुष देवा.) अत्यार्जन्त स किम्पुरुषोऽभवत् ऐ० २ ८. किम्पुरुषो वै मयु श० ७.५ २ ३२]

किम्मयः य किं मिनोति स (चमस =यज्ञपात्रम्)

कम्पील, स्वार्थेऽण्प्रत्यये काम्पील, त वासयितु शीलम-स्यास्ता लक्ष्मीम् २३ १८ [काम्पीलोपपदे वस निवासे (भ्वा०) धातोस्ताच्छील्ये णिन्यन्तान् ङीप्। काम्पील = कम्=सुखम्, तदुपपदे पील प्रतिष्टम्भे (भ्वा०) धातोरण्। कम्पीलप्राति० प्रज्ञादित्वात्स्वार्थेऽण् प्रत्यय]

काम्यम् कमनीयम् (परमेश्वरम्) ३२ १३ प्रियम् (राध =धनम्) २ २२ ३ कामना के योग्य ईश्वर को, आर्याभि० २ ५२, ३२.१३ **काम्या:**=काम्यन्ते इष्यन्ते ये पदार्थास्ते ३ २७ कमनीया (सखाय =सुहृद) ३ ३१ १७ [कमु कान्तौ (भ्वा०) धातोर्ण्यत् काम्यानि उदकानि नि० ११ ३३]

काम्या कमनीयौ (हरी=हयौ) २३ ६ कमनीयानि (वसूनि=धनानि) ५ ६१ १६ कामयितव्यौ (रथे=याने) १ ६ २ कमनीये (कर्मणी), प्र०—अत्र 'सुपा सुलुग्' इति द्विवचनस्याऽऽकारादेश १ ८ १० [कमु कान्तौ (भ्वा०) धातोर्ण्यत्। तत प्रथमा द्विवचनस्याकारादेश। बहुवचने तु 'शेश्छन्दसि बहुलम्' इति शेर्लोप]

काम्ये ! हे कमनीये (पत्नि) ८ ४३ [कमु कान्तौ (भ्वा०) धातोर्ण्यत्। स्त्रिया टाप्। सम्बुद्धौ रूपम्]

काम्यै कामयितव्यैरुत्तमै (गणै =किरणैर्मरुद्भिर्वा) १ ६ ८ [कमु कान्तौ (भ्वा०) धातोर्ण्यत्]

काय सुखसाधकाय विदुषे (सज्जनाय) २२ २० को ब्रह्म देवता यस्य वेदमन्त्रस्य तस्मै २० ४ सुखस्वराज्य-प्रदाय (ईश्वराय) ऋ० २१८ [क कमनो वा क्रमणो वा सुखो वा नि० १० २२ ततश्चतुर्थी। 'सास्य देवता' 'कस्येत्' इति प्राप्तोऽण् न भवति छान्दसत्वात्]

कायमान: अध्यापयन्नुपदिशन् वा (अग्नि =आप्ता-ऽध्यापक उपदेशको वा) ३ ६ २ [कायमान चायमान, कामयमान इति वा नि० ४ १४]

काया: प्रजापतिदेवताका (पश्वादिप्राणिन) २४ १५ [को वै प्रजापति ऐ० ३ २१ तत 'सास्य देवतेत्यर्थे' 'कस्येत' अ० ४ २ १५ सूत्रेणाण् प्रत्यय। इकारश्चान्तादेश]

कारम् कुर्वन्ति यस्मिंस्तम् (विद्युदग्निम्) १ ११२ १. क्रियते यस्तम् (नद्य=नदीम्) १ १३१ ५ कर्त्तारम् (राजानम्) ५ २६ ८ शिल्पकृत्यम् ४ १ १४ **कारे**= कर्त्तव्य-व्यवहारे १ १४१ १० [डुकृञ् करणे तना० धातोर्घञ् प्रत्यय। कर्तरि तु छान्दसत्वादण् निरुपपदेऽपि]

कारव. कारुका शिल्पिन ३ ६ १ ये कार्याणि कुर्वन्ति ते (शिल्पिनो जना) १ ११ ६ कारुकरा (नर =नायका जना) ६ ४६ १ कर्त्तार (शिल्पिन) २७ ३७ **कारुम्**= शिल्पकार्यकर्त्तारम् (जनम्) १ १०२ ६ य उत्साहेनोत्तमानि कर्माणि करोति तम् (शिल्पिन जनम्) १ ३१ ८ **कारु:**=शिल्पकार्यसाधिका (मेधा=प्रज्ञा) १ १६५ १४. स्तुत्याना शिल्पकर्मणा कर्त्ता (इन्द्र =विद्वज्जन), प्र०— कारुरहमस्मि स्तोमाना कर्त्ता, नि० ६ ६, १ ८३ ६ **कारू**=शिल्पिनौ, प्र० भा०—कारु-शब्दे द्विवचन-मध्यापकहस्तक्रिया-शिक्षकाऽभिप्रायम् २६ ३२ शिल्पविद्या-कुशलौ पुरुषार्थिनौ (स्त्रीपुरुषौ) ७ २ ७ **कारो** !=य करोति तत्सम्बुद्धौ (मज्जन) ३ ३३ ८ **कारो:**=कर्त्तु शीलस्य (शिल्पजनस्य) १ १७८ ३ पुरुषार्थिन (शिल्पिन) १ १६५ १५ शिल्पविद्याविद (जनस्य) ३४ ४८ शिल्प-विद्यासाध्यकर्त्तु (विदुषो जनस्य) १ १४८ २ कारकरस्य शिल्पिन (जनस्य) ३ ३६ ७ क्रियाकुशलस्य (जनस्य) १ १६८ १० सर्वस्य सुखकर्त्तु (शिल्पिजनस्य) १ १६७ ११ कारकस्य (शिल्पिन) १ १७७ ५ [कारु =स्तोतृनाम निघ० ३ १६ कारुकर्त्तारी नि० ८ १२ कारुरहमस्मि कर्त्ता स्तोमानाम् नि० ६ ५ डुकृञ् करणे (भ्वा०) धातो 'कृवापाजि०' उ० १ १ सूत्रेण उण् प्रत्यय]

काराधुनीव कारान् शब्दान् धूनयतीव (वात इव) १ १८० ८ [कारोपपदे धूञ् कम्पने (स्वा०) धातोर्बाहुलका-दौणादिको नि प्रत्यय। धुनि=धुनोते नि० ५ १२ काराधुनि-इवपदयो समास]

कारिण: कर्त्तु शीला (विद्वासो जना) ३ ५४ १४ [डुकृञ् करणे (तना०) धातोस्ताच्छील्ये णिनिश्छान्दसत्वान् निरुपपदादपि]

कारिम् उपहासकर्त्तारम् (दुर्जनम्) ३० ६ विक्षेपकम् (जनम्) ३० २० [डुकृञ् करणे (तना०) धातो, कॄ विक्षेपे (तुदा०) धातोर्वा 'इञ् कृष्यादिभ्य' इति वार्त्तिकेन इञ्]

कारिषत् कुर्य्यात् ६ ४८ १५ [डुकृञ् करणे (तना०) धातोर्लेट्। 'सिब् बहुल लेटी' ति सिपि, तस्य णित्वाद् वृद्धि]

कारुधाय: कारुणा विदुषा धर्त्त (इन्द्र=न्यायेश विद्वन्) ६ २१ ८ **कारुधाया:**=य कारून् शिल्पिनो दधाति स (इन्द्र =अधिष्ठाता जीव) ३ ३२ १० कारुणा शिल्पिना धारक (इन्द्र =राजा) ६ ४४ १५ विदुषा शिल्पिना धारयिता (इन्द्र =विद्युत्) ६ ४४ १२ कारवो ध्रियन्ते येन स (राजा) ६ २४ २ [कारूपपदे डुधाञ् धारणपोषणयो (जु०) धातोरसुण् प्रत्यय]

कारोतर: कर्मकारी (भिषक्=वैद्य) १६ १६.

दीर्घो बाहुलकात् १ ३१ १३ [कीर्गिरिति व्याख्यानम्। स्तोतृनाम निघ० ३ १६]

कीर्तिः सद्गुणग्रहणार्थमीश्वरगुणानामुपदेशार्थं कीर्तनं स्वमत्कीर्तिमत्त्व च, ऋ० भू० १०३, अथर्व० १२ ५ ६ सत्याचरण से प्रशंसा, य० वि० १०५, अथर्व० १२ ५ ६ [कृत संशब्दने (चुरा०) धातो 'इपिषिकिभ्य०' उ० ४ ११६ सूत्रेण इन्-प्रत्यय]

कीर्तेन्यम् कीर्तितुम् १ ११६ ६ कीर्तनीयम् (नाम=प्रसिद्ध कर्म) १ १०३ ४ कीर्तनीयमत्यन्तप्रशंसनीयम् (सामर्थ्यम्) ऋ० भू० १६३ [कृत संशब्दने (चुरा०) धातो 'कृत्यार्थे तवैकेन्केन्यत्वन' उ० ३ ४ १४ सूत्रेण केन्य]

कीलालपे य कीलालमन्नरस पिबति तस्मै (अग्नये=जनाय) २० ७८ [कीलालमित्यन्ननाम निघ० २ ७ तदुपपदे पा पाने (अदा०) धातो 'गापोष्टक्' अ० ३ २ ८ इति टक्]

कीलालम् सुसंस्कृतमन्नम्, प्र०—कीलालमित्यन्ननामसु पठितम्, निघ० २ ७, २ ३४ **कीलालः**=विशेषेणोत्तमरस, ऋ० भू० २४० उत्तमाज्यादिपदार्थसमूह, भा०—भक्ष्य-भोज्य-लेह्य-चूष्य पदार्थ ३ ४३ उत्कृष्ट रस आर्याभि० २ ४६, ३ ४३]

कीवत कियत (दुर्जनान्), प्र०—अत्र वर्णव्यत्ययेन य-य स्थाने व ३ ३० १७ [किम्सर्वनाम्न परिमाणे वतुप् प्रत्यये 'किमिदभ्या वो घ' इति वकारस्य घकार । 'इदकिमोरीश्की' इति की-आदेशे 'यस्येति च' लोपे, वर्णव्यत्ययेन यस्य वकारे इकारस्य च छान्दसदीर्घत्वे रूपम्]

कीस्तासः मेधाविन (विद्वज्जना), प्र०=कीस्तास इति मेधाविनाम, निघ० ३ १५, ६ ६७.१०

कुकूननानाम् भृश शब्दविद्यया नम्राणाम् (पत्नीनाम्), प्र०—अत्र 'कुङ् शब्दे' इत्यस्माद् यङि गुणाऽभावेऽभ्यस्त कुकूयपदान्नमधातोर्गौणादिको नक्प्रत्ययश्च, तत षष्ठीबहुवचनम् ८ ४८]

कुक्कुटः कुक परद्रव्याऽऽदानार चोर शत्रु वा कुटति येन स यज्ञ १ १६ [कुक आदाने (भ्वा०) धातो क्विप् प्रत्यये कुक्। कुक् इत्युपपदे कुट कौटिल्ये (तुदा०) धातोर्बाहुलकात् औणा० क्विप्]

कुक्षयः उभयत उदराऽवयवा ३ ३६ ८ **कुक्षिः**=कुष्णाति निष्कर्षति सर्वपदार्थेभ्यो रस य (इन्द्र=सूर्यलोक), प्र०—अत्र 'प्लुषिकुषिशुषिभ्य क्सि' उ० ३ १५३ अनेन कुषधातो क्सि प्रत्यय १ ८ ७ **कुक्षी**=उदरपार्श्वौ २ ११ ११ [कुष निष्कर्षे (क्या०) धातो 'प्लुषिकुषिशुषिभ्य क्सि' उ० ३ १५५ सूत्रेण क्सि]

कुचर. य कुत्सित चरति स (मृग=सिंह) १ १५४ २ य कुत्सिता गति चरति स (मृग=मृगेन्द्र सिंह) १८ ७१ य कुत्सित प्राणिवध चरति (मृग=सिंह) ५ २० [कूपपदे चर गतौ (भ्वा०) धातो 'चरेष्ट' अ० ३ २ १६ सूत्रेण ट प्रत्यय । कुचर चरति कर्म कुत्सितम्। अथ चेद्देवताभिधान क्वाय न चरतीति नि० १ २०]

कुटरु. कुक्कुट २४ ३६ **कुटरून्** कुक्कुटान् २४.१३ [कुट कौटिल्ये (तुदा०) धातो 'कुट किच्च' उ० ४ ८० सूत्रेणारु]

कुटस्य कुटिलस्य मार्गस्य मरणात् १.१६४ [कुट कौटिल्ये (तुदा०) धातोर्वज्रार्थे क । कुटस्य कृतस्य कर्मण नि० ५ २४.]

कुणारम् शब्दयन्तम् (वृत्र=मेघम्), प्र०—अत्र 'क्वणशब्दे' इत्यस्माद्धातोर्बाहुलकादौणादिक आर प्रत्यय १८ ६६ शब्दायमानम् (वृत्र=मेघम्) ३ ३० ८ [कुणारं परिक्वणन मेघम् नि० ६ १]

कुण्डृणाची वनचरी (पशु जाति.) २४ ३३ **कुण्डृणाच्या**=यया कुटिला गतिमञ्चति प्राप्नोति तया (गत्या) १ २९ ६]

कुतः कस्माद् १ १३६ १ [किम सर्वनाम्न पञ्चम्यन्तात् तसिल्]

कुत्र कस्मिन् ५ ७ २ [किम सर्वनाम्न सप्तम्यन्तात् त्रल् । 'कु तिहो' रिति किम कुरादेश]

कुत्सम् वज्रायुधयुक्तम् (नर्य=नृषु साधु जनम्), १ ११२ ६ वज्रम् ४ २६ १ वज्रमिव दृढम् ६ १८ १३ विद्युतमिव वज्रम् ७ १६ २ वज्रादिशस्त्रसमूहम् १ ५१.६ कुत्सितम् ५ ३१ ८ सायणाचार्येणाऽत्र भ्रान्त्या कुत्सगोत्रोत्पन्न ऋषिर्गृहीतोऽसम्भवादिद व्याख्यानमशुद्धम् १.३३ १४ **कुत्सस्य**=अवक्षेप्तु (प्रजापते) २ १४ ७ **कुत्सः**=विद्यावज्रयुक्तश्छेत्ता पदार्थाना भेत्ता वा (ऋषि=अध्यापकोऽध्येता वा), प्र०—कुत्स एतत्कृन्ततेः ऋषि कुत्सो भवति, कर्ता स्तोमानामित्यौपमन्यवोऽत्राप्यस्य वधकर्मैव भवति, निरु० ३ ११, १ १०६ ६ निन्दित (श्वित्रजन) ४ १६ १० **कुत्साय**=शस्त्राऽस्त्रयुक्ताय (जनाय) ४.३० ४ कुत्स प्रशस्तो वज्र शस्त्र-

४ ३५ ४ [किमुपपदे मिञ् प्रक्षेपणे (स्वा०) धातोरच् प्रत्यय । आत्वाऽभावश्च छान्दस]

कियते अल्पसामर्थ्याय (विद्यार्थिजनाय) ४ ५ ६ [किम् प्राति० परिमाणे 'किमिदम्भ्या वो घ' अ० ५ २ ४० सूत्रेण वतुप् वस्य घादेशश्च । घस्येयादेश]

कियेधाः य कियतो धरति स प्र०—अत्र पृषोदरा० इति तत्स्थाने इकार (सूर्य) १ ६१ ६ कियतो गुणान् धरतीति (सभाद्यध्यक्ष) १ ६१ १२ [कियेधा कियद्धा इति वा क्रममाणधा इति वा नि० ६.२० । कियदुपपदे डुधाञ् धारणपोषणयो (जु०) धातोरच् प्रत्यय । पृषोदरादित्वात् तस्य स्थाने इकार]

किर विक्षिप ६ ४६ २ प्रापय २७ ३८ **किरते**=विकिरति ५ ३८ ७ **किरामि**=विक्षिपामि ५ २३ प्रक्षिपामि ५ २३ [कॄ विक्षेपे (तुदा०) धातोर्लोट् । अन्यत्र लट्]

किरणम् ज्योति ४ ३८ ६ दीप्तिम् ५ ५६ ४ **किरणाः**=कान्तय १ ६३ १ [किरति विक्षिपत्यन्धकारमिति विग्रहे कॄ विक्षेपे (तुदा०) धातो 'कॄपॄवृजि०' उ० २ ८१ सूत्रेण क्यु प्रत्यय । किरणा रश्मिनाम निघ० १ ५ अश्वरश्मि तेषा (रश्मिवाचिशब्दानाम्) आदित साधारणानि पञ्च (खेदय, किरणा, गाव, रश्मय, अभिशव) अश्वरश्मिभि नि० २ १५]

किरातम् जनविशेषम् ३० १६ [किर पर्यन्तभूमिम् अतति गच्छतीति विग्रहे किरोपपदात् अत सातत्यगमने (भ्वा०) धातोरच्]

किरिकेभ्यः विक्षेपकेभ्य (जनेभ्य) १६ ४६ [कॄ विक्षेपे (तुदा०) धातो 'कॄगॄशॄ०' उ० ४ १४३ सूत्रेण इ प्रत्यय, तत स्वार्थे क । एते (किरिका) हीद सर्व कुर्वन्ति श० ६ १ १ २३]

किर्मिरम् कर्बुरवर्णम् (पुरुषम्) ३० २१

किल निश्चयाऽर्थे ६ ४७ १ खलु १२ ७६ [किल विद्याप्रकर्षे नि० १ ५]

किलासम् ईषच्छ्वेतवर्णम् (पुरुषम्) ३० २१

किलास्यः निश्चितमास्य यस्य स (विद्वज्जन) ५ ५३ १ [किल-आस्यपदयो समास]

किल्विषम् स्वाऽन्त स्थ मलम् ३५ ११ किल्विषात्=पापात् ५ ३४ ४ [किलति क्रीडति विचारशून्यतया कार्येषु प्रवर्त्तते येनेति विग्रहे किल श्वैत्ये (श्वैत्यक्रीडनयोरिति मैत्रेय) (तुदा०) धातो 'किलेर्बुक् च' उ० १ ५० सूत्रेण टिषच् प्रत्यय । किल्विष किलमिद सुकृतकर्मणो भय कीर्तिमस्य भिनत्तीति वा नि० ११ २४]

कियुः आत्मन किमिच्छु (विप्र=मेधाविजन), प्र०—अत्र 'वाच्छन्दसि' इति क्यच्-प्रतिषेधो न ३ ३३ ४ [किम्-सर्वनाम्न इच्छाया क्यचि 'क्याच्छन्दसी' त्युप्रत्यय]

किंशिलाय किं कुत्सित शिलो वृत्तिर्यस्य तस्मै (जनाय) १६ ४३ [किम्-शिलपदयो समास]

किस्वित् क्वा ? आर्याभि० २ ३२, १७ १८

कीकटेषु अनार्यदेशनिवासिषु म्लेच्छेषु ३ ५३ १४. कीकटा नाम देशोऽनार्यनिवास । कीकटा किंकृता, किं क्रियाभिरिति प्रेप्सा वा नि० ६.३२]

कीकसा भृश गामनानि २५ ६ [कङ्कते चञ्चल भवतीति विग्रहे ककि गतौ (भ्वा०) धातोर्बाहुलकाद् (उ० ३ ११७) असच् प्रत्यय । धातोश्च कीकादेश]

कीनाशम् कृषीवलम् ३० ११ **कीनाशाः**=ये श्रमेण क्लिश्यन्ति ते कृषीवला, भा०—चतुरा कृषिकारा (जना), प्र०—अत्र 'क्लिशेरीच्चोपधाया कन्-लोपश्च लो नाम् च' उ० ५ ५६ क्लिशधातो कनि प्रत्यये ललोप उपधाया ईत्व धातोर्नामागमश्च १२ ६९ [क्लिशू विबाधने (क्र्या०) धातो 'क्लिशेरीच्चोपधाया०' उ० ५ ५६ सूत्रेण कन् प्रत्ययादिकार्याणि]

कीरये स्तावकाय (जनाय) ६ २३ ३ [कीरि स्तोतृनाम निघ० ३ १६ कॄ विक्षेपे (तुदा०) धातो 'कॄगॄपॄकुटि०' उ० ४ १४३ सूत्रेण इ प्रत्ययो बाहुलकाद् धातोर्दीर्घश्च]

कीरिचोदनम् कीरीणा विद्यार्थिना प्रेरकम् (विद्वत्तम जनम्) ६ ४५ १९ [कीरि स्तोतृनाम निघ० ३ १६ चोदनम्=चुद सञ्चोदने (प्रेरणे) (चुरा०) धातोर्बाहुलकाद् औणा० ल्युन् । ततस्तयो समास]

कीरिणः विक्षेपका (तायव=स्तेना) ५ ५२ १२ [कॄ विक्षेपे (तुदा०) धातोर्बाहुलकाद् इनि प्रत्यय]

कीरिणा सकलविद्यास्तावकेन (जनेन), प्र०—कीरिरिति स्तोतृनाम, निघ० ३ १६, ५ ४० ८ शत्रूणा विक्षेपकेन प्रबन्धेन ११०० ६ **कीरि.**=स्तोता विद्वान् (जन) ६ ३७ १ मद्य स्तोता (सज्जन) ७ २१ ८ **कीरेः**=सकलविद्यास्तोतु (विद्वज्जनस्य) २ १२ ६ किरति विविधतया वाचा प्रेरयतीति कीरि स्तोता तस्मात् (सज्जनात्), प्र०—अत्र 'कॄ विक्षेपे' इत्यस्मात् 'कॄगॄपॄकुटि०' उ ४ १४३ अनेन इ-प्रत्यय, स च किदुर्वस्य च

१६ २७ [कालति सङ्घातयतीति विग्रहे कुल सस्त्याने (सघाते) बन्धुपु च (भ्वा०) धातो 'तमिविशि०' उ० १ ११८ सूत्रेण कालन् प्रत्यय]

कुलिश वज्रम्, प्र०—कुलिश इति वज्रनाम, निघ० २ २०, ३ २ १ [कुलिश =कूलशातनो भवति नि० ६ १७]

कुलिशी कुलिशेन वज्रेणाऽभिरक्ष्या (वीरपत्नी) १ १०४ ४ [कुलिश इति वज्रनाम निघ० २.२० ततो मत्वर्थे इनि प्रत्यय]

कुलीका: पक्षिणीविशेषा २४ २४

कुलीपय: जलजन्तुविशेष २४ ३५

कुलुङ्ग: पशुविशेष २४ ३२

कुलुञ्चानाम् ये कुशीतेन लुञ्चन्ति अपनयन्ति पर-पदार्थास्तेपाम् (दुर्जनानाम्) १६ २२ [कूपपदे लुञ्च अपनयने (भ्वा०) धातोरण् प्रत्यय]

कुल्फौ गुल्फौ ७ ५० २

कुल्या: वाटिकादिपु जलचालनमार्गा ३ ४५ ३ निर्मिता जलगमनमार्गा ५ ८३ ८ जलप्रवाहधारा ३५ २० घृतधारा ६ १२ [कुल्या नदीनाम निघ० १ १३]

कुल्याय कुल्यासु नदीपु भवाय (जलप्रायदेशाय) प्र०-कुल्या इति नदीनाम, निघ० १ १३, १६ ३७ [कुल्या-प्राति० भवार्थे यत्]

कुवलम् कोमल वदरीफलमिव १६ २२ **कुवलै:**= कुत्सित वल यैस्तैर्वदरै, प्र०—अत्र 'कु शब्दे' इत्यस्मा-द्धातोरौणादिक कलन् प्रत्यय २१ २६ सुशब्दै १६ ८६ कु शब्दे (अदा०) धातोरौणादिक कलन् प्रत्यय । यदश्रुभ्य (तेजो ऽस्रवत्) तत्कुवलमभवत् श० १२ ७ १ २]

कुवित् महान् (अग्नि =विद्वज्जन) १ १४३ ६ महान्तम् (राजानम्) ३ ४३ ५ वह्वैश्वर्य्य (अङ्ग =राजा) प्र०—कुविदिति वहुनाम, निघ० ३ १, १० ३२ वहुविज्ञान-युक्त (अङ्ग =मित्र) २३ ३८ वहुवारम् ३.४२ ४ वहु-विधानि (राय =धनानि) १ ३३ १ वलम्, प्र०—कुवि-दिति वहुनाम, निघ० ३ १, १६ ६ [कुवित् वहुनाम निघ० ३ १]

कुवित्सस्य य कुवित् महत् सनति विभजति तस्य (सत्यासत्यविवेचकस्य राज्ञ) ६ ४५ २४ [कुवित् वहुनाम (निघ० ३ १) तदुपपदे पण सभक्तौ (भ्वा०) धातो 'अन्येष्वपि दृश्यते' इति ड प्रत्यय]

कुशरास: कुत्सिताश्च ते शरा १ १६१ ३ [कु-शर-पदयो समास]

कुशिकस्य विद्यानिष्कर्षप्रापकस्य (विद्वज्जनस्य) प्र०—अत्र वर्णव्यत्ययेन मूर्द्धन्यस्य तालव्य ३ ३३ ५

कुशिका:=ये कुर्वन्त्यपदिशन्ति ते कुशा, प्रशस्ता कुशा विद्यन्ते येपु ते कुशिका (विद्वज्जना) ३.५३ ११ विद्या-सिद्धान्तनिष्कर्पका (विप्रा) ३ ५३ १० [कुप निष्कर्षे (क्र्या०) धातोर्वाहुलकादौणादिक किन् प्रत्यय । वर्ण-व्यत्ययेन मूर्धन्यस्य पस्य शकार । अथवा कुशप्राति० प्रशसायामर्थे मत्वर्थे ठन् । कुशिको राजा वभूव । कोशते शब्दकर्मण क्रशतेर्वा स्यात प्रकाशयतिकर्मण साधु विक्रो-शयितार्थानामिति वा नि० २ २५]

कुशिकेभि: कार्यसिद्धान्तविद्भि (जनै) ३ ५३ ८ शब्दायमानै (सज्जनै) ३ २६ ३ [कुशिक इति पूर्वपदे व्याख्यातम् । ततो भिस ऐसादेशो न भवति छान्दसत्वात्]

कुशिकास: विद्याविनयादिभिराप्ता निष्पन्ना (नूतना विद्वास) ३ ४२ ६ उपदेशका (विद्वज्जना) ३ २६ १ उत्कर्प प्राप्ता (जना) ३ २६ १५ सर्वशास्त्रसिद्धान्त-वेत्तार (विप्रा =पूर्णविद्या मेधाविजना) ३ ५० ४ शब्दायमाना (विप्रा =मेधाविजना) ३ ३० २० [कुशिक-प्राति० जसोऽसुगागम । कुशिक इति व्याख्यातम्]

कुषवा कुत्सित सव प्रेरणा यस्या सा (युवति) ४ १८ ८ [कु-सवपदयो समास । स्त्रिया टाप् । सव = पु प्रसवैश्वर्ययो (भ्वा०) धातो 'ऋदोरप्' इत्यप् प्रत्यय]

कुषुम्भक: अल्प कुषुम्भो नकुल, प्र०—अत्र कन् प्रत्यय १ १६१ १५ [कुषुम्भप्राति० 'अल्पे' अ० ५ ३ ८५ सूत्रेण कन् प्रत्यय । कुषुम्भ =कुस श्लेषणे (दिवा०) धातो 'कुसेरुम्भोमेदेता' उ० ४ १०६ सूत्रेण उम्भ प्रत्यय । वहुलवचनाद् गुणाऽभाव]

कुष्ठाभ्याम् निष्कर्षाभ्याम् २५ ६ [कुष निष्कर्षे (क्र्या०) धातो 'हनिकुषिनीरमिकाशिभ्य क्थन्' उ० २ २ सूत्रेण क्थन्प्रत्यय]

कुह कहाँ स० प्र० १५१, १० ४० २ कस्मिन् (काले) १ १८ ४ कुत्र १ ११७ १२ क्व प्र०—अत्र 'वा ह च छन्दसि' अ० ५ ३ १३ अनेन किमो ह प्रत्यय 'कु तिहो' अ० ७ २ १०४ इति कुरादेशश्च १ २४ १० [कुह क्व नि० ३ १५]

कुहचिद्विदे य कुह क्वचिदपि विन्दति तस्मै (राये= धनाय) ७ ३२ १६ [कुहचिदुपपदे विद्लृ लाभे (तुदा०) धातो क्विप्प्रत्यय]

कुहस्वित् कहा स० प्र० १५१, १० ४० २

समूहो वा यस्य तस्मै धृतव्रताय (यूने=युवावस्थाय जनाय) १ ६३ ३ वज्रप्रहाराय ६ २०.५ **कुत्साः**= वज्राऽस्त्राद्या शस्त्राऽस्त्रसमूहा ७ २५ ५ **कुत्सेन**= वज्रेणेव दृढेन कर्मणा ५ २९ ९ कुत्सितकर्मणा ४ १६ ११ [कुत्स वज्रनाम निघ० २ २० कुत्स एतत् कृन्ततेर्ऋषिः कुत्सो भवति, कर्त्ता स्तोमानामित्यौपमन्यवोऽत्राप्यस्य वधकर्मैव भवति नि० ३ ११]

कुत्स्येन कुत्से वज्रे भवेन वेगेन ४ १६ १२ [कुत्स वज्रनाम निघ० २ २० ततो भवार्थे यत्]

कुपयम् गोपनीयम् (शिशुम्) १ १४० ३

कुब्जम् वक्राङ्गम् (जनम्) ३० १० [कुब्जश्च कुजतेर्वोब्जतेर्वा नि० ७ १२]

कुभन्यवः आत्मन कुभनमुन्दनमिच्छव (आप्ता पुरुषा) ५ ५२ १२ [कुभनपदाद् आत्मन इच्छायामर्थे क्यच् । 'क्याच्छन्दसी' ति उ प्रत्यय]

कुभा कुत्सितप्रकाशा (रसा=पृथिवी) ५ ५३ ९ [कु+भा दीप्तौ (अदा०) धातो क । स्त्रिया टाप्]

कुमारम् ब्रह्मचारिणम्, अ०— विद्यार्थिनम् (जनम्) २ ३३ बालकम् ५ २ २ **कुमाराः**=अतिचपला वेगवन्तो बालका १७ ४८ कृतचूडाकर्माण (बालका) ६ ७५ १७ **कुमारेण**=अकृतविवाहेन (जनेन) २८ १३ [कामयते भोगान् इति विग्रहे कमु कान्तौ (भ्वा०) धातो 'कमे किदुच्चोपधाया ' उ० ३ १३८ सूत्रेणारन् प्रत्यय । कुमार क्रीडायाम् (चुरा०) धातोर्वा अच्-प्रत्यय]

कुमारीपुत्रम् विवाहात पूर्व व्यभिचारेणोत्पन्नम् (अपत्यम्) ३० ६ [कुमारम् इति व्याख्यातम् । ततो 'वयसि प्रथमे' इति स्त्रिया ङीप्प्रत्यये कुमारी । कुमारी-पुत्रपदयो समास]

कुम्भः कलश इव वीर्यादिधातुभि पूर्ण (भा०— वीर्यवान् पुरुष) १९ ८७ **कुम्भान्**=कलशान् १ ११७ ६ [कु=भूमि कुत्सित वा उम्भति पूरयतीति विग्रहे कूपपदे उम्भपूरणे (भ्वा०) धातोरच् । शकन्ध्वादिन्यायेन पररूपम्]

कुम्भिनीरिव यथा जलाऽधिकारिण्य (नद्य) १ १९१ १४ [कुम्भप्राति० मत्वर्थ इनि । कुम्भिनी-इव-पदयो समास]

कुम्भी धान्यादिपदार्थाऽऽधारा १९ १६ धान्याऽऽधारा (अ०—स्त्री) १९ ८७ **कुम्भीभ्याम्**=धान्यजलाऽऽधाराभ्याम् (पात्रीभ्याम्) १९ २७ [कुम्भप्राति० स्त्रिया ङीप्]

कुयवम् कुत्सितसङ्गमम् २ १९ ६ कुत्सिता यवा अन्नादि यस्य तम् (दुर्जनम्) ७ १९ २ कौ पृथिव्या यवा यस्मात् तम् (वृत्र=मेघ शत्रु वा) १ १०३ ८ कुत्सिता यवा यस्मिँस्तत् (शत्रुस्थानम्) ६ ३१ ३ कुत्सितैर्यवैर्वियुक्तम् (अन्नम्) १८ २० **कुयवस्य**=कुत्सिता धर्माऽधर्ममिश्रिता व्यवहारा यस्य तस्य (राजपुरुषस्य) १ १०४ ३ [कु-यवपदयो समास । यव=यु मिश्रणेऽमिश्रणे च (अदा०) धातो 'ऋदोरप्' इत्यप्]

कुयवाचम् य कुयवान् वक्ति प्रशसति तम् (सामान्य जनम्) १ १७४ ७ [कुयवोपपदे वच परिभाषणे (अदा०) धातो क्विप् । पूर्वपदस्थवकाराकारयोर्लोप]

कुरु सम्पादय ११ ८० कीजिए स० प्र० २४६, ३२१४ तू कर, आर्याभि० २५३, ३२१४ [डुकृञ् करणे (तना०) धातोर्लोट्]

कुरुपिशङ्गिला कुरो कृतस्य कृष्यादे पिशान्यङ्गानि गिलति सा, भा०—या सेधा कृष्यादिकविनाशयति, (अजा=प्रकृति) २३ ५६ भा०—कृष्यादि विनाशिनी (श्वावित्=पशुविशेष इव सेधा) २३ ५५ [कुरु-पिशङ्गिलापदयो समास । कुरु =डुकृञ् करणे (तना०) धातो 'कृग्रोरुच्च' उ० १ २४ सूत्रेण कु प्रत्यय उकारश्चान्तादेश]

कुर्मः सम्पादयाम १७ ५२ [डुकृञ् करणे (तना०) धातोर्लट्]

कुर्वन् सम्पादयन् (अग्नि =पावक) २८ २२ करता हुआ (मनुष्य) स० प्र० २४९, ४० २ [डुकृञ् करणे (तना०) धातो शतृप्रत्यय]

कुलायम् कुल की वृद्धि को स० वि० १२२, अथर्व० १४ १ ५७ कुल-अयपदयो समास । अय =इण् गतौ (अदा०) धातो 'एरच्' सूत्रेणाच्प्रत्यय]

कुलाययत् कुलाय कुलोन्नतिं कामयमान (मनुष्य) ७ ५० १ [कुलायप्राति० 'तत्करोति तदाचष्टे' इति णिचि शतृप्रत्यय]

कुलायिनम् गृहादिसामग्रीयुक्तम् (यज्ञ=सङ्गतिमय व्यवहारम्) ६ १५ १६ [कुलायप्राति० ससर्गे मत्वर्थे इनि प्रत्यय]

कुलायिनी कुल यदेति तत्कुलाय, तत्प्रशस्त विद्यते यस्या सा (स्त्री) १४ २ [कुलायप्राति० प्रशसायाम् इनि । तदन्तात् स्त्रिया ङीप्]

कुलालेभ्यः मृत्स्ना पात्रादिरचकेभ्य (जनेभ्य)

कृणमः=निश्चित करता हूँ स० वि० १४२, अथर्व० ३ ३० ४ **कृणवत**=कुर्वन्ति १ ७२ ५ कुर्वन्तु, प्र०—अत्र लड्यडभाव १ १०० ७ कुरुत ४ २४.३ करो, आर्याभि० १४१, ऋ० १ ७ ६ ७ [डुकृञ् करणे (तना०) धातो रूपाणि । विकरणव्यत्ययेन श्नु । कृवि हिंसाकरणयोश्च (भ्वा०) धातोर्वा रूपाणि]

कृणुहि अनुतिष्ठ ४ २ २० [डुकृञ् करणे (तना०) धातोर्लोट् । विकरणव्यत्ययेन श्नु]

कृण्वती प्रकाशं कुर्वती (उषा) ५ ८० २ **कृण्वते**=कुर्वन्ति ६ ७५ ७ कुर्वते (सवित्रे=सूर्याय) २ ३० ४ **कृण्वन्**=सम्पादयन् (राजा) ११ १५ वि०--कुर्वन् (विद्वज्जन) २६ ३७ **कृण्वन्तम्**=कुर्वन्तम् (नरम्) २ २८ ७ **कृण्वन्तः**=कुर्वन्त (वसिष्ठा =सन्मार्गस्था जना) ७ ३७ ४ प्र०—इद 'कृवि हिंसाकरणयोश्च' इत्यस्य रूपम् १ ६ ३ [डुकृञ् करणे (तना०) धातो शत्रन्तात् ङीप् । विकरणव्यत्ययेन श्नु । कृवि हिंसाकरण-योश्च (भ्वा०) धातोर्वा रूपम्]

कृण्वन्ति कुर्वन्ति ३४ २ **कृण्वन्तु**=कुर्वन्तु १ १७० ४ भा०—आचरेयु २३ ४२ हिंसन्तु १ १६१ १० निष्पादयन्तु १ १७० ४ [डुकृञ् करणे (तना०) धातो, कृवि हिंसाकरणयोश्च (भ्वा०) धातोर्वा लट् । कृण्वन्ति कुर्वन्ति नि० ६ ३२ कृण्वति वधकर्मा निघ० २.१६]

कृण्वानः कुर्वन् (महाराज) ३ ५३ ८ [डुकृञ् करणे (तना०) धातो शतृ । विकरणव्यत्ययेन श्नु]

कृण्वाना कुर्वती (अदिति =विद्युत्) २६ ४ कुर्वन्तौ (मातापितरौ) १५ ५३ [पूर्वपदे व्याख्यातम् । स्त्रिया टाप् । अथवा 'सुपा सुलुग्०' इत्याकार]

कृण्वानासः कुर्वन्त (मुमुक्षुजना) १ ७२ ६ (कृण्वान इति व्याख्यातम् । ततो जसोऽसुगादेश]

कृण्वाथाम् उत्पन्न करो स० वि० १३६, अथर्व० १४ २.३७ **कृण्वीत**=कुर्यात् ४ २१ ५ **कृण्वे**=करोमि ७ ३६ २ **कृण्वैते**=कुर्याताम् ६ २५ ४ **कृत**=कुरुत, प्र०—अत्र विकरणलुक् १२ ७६ [डुकृञ् करणे (तना०) धातोर्लोट् । विकरणव्यत्ययेन श्नु]

कृत यो विद्वान् कृतस्तत्सम्बद्धौ (विद्वज्जन) ६ ५८ ३ **कृतम्**=कर्त्तव्य कर्म १ ११७ ८ निष्पन्नम् (व्यवहारम्) १ १३२ १ निष्पादितम् (सुखम्) ४ १० ७ निष्पादित प्रकाशित वा (रूप=स्वरूपम्) १६ ३१ आचरितम् (एन =पापम्) १ २४ ६ शाधितम् (हवि =द्रव्यम्) १ ३४.८ [डुकृञ् करणे (तना०) धातो. क्त । ये वै सत्याय स्तोमा कृत ना नै० १५ ११.१.]

कृतब्रह्मा कृतं ब्रह्म धनमन्नं वा येन स (नरः) ६ २० ३ कृतानि ब्रह्माणि धनानि येन स (ब्रह्मगुण्यो?) ७ २५ १ [कृत-ब्रह्मन् पदयो समास । ब्रह्म=धननाम निघ० २ १० अन्ननाम निघ० २.७. उदकनाम निघ० १ १२]

कृतम् कुरुतम्, प्र०—अत्र विकरणस्य लुक् १ ११२ २४ कुरुत, प्र०—अत्र तवर्थे तोट्, सायणस्य विवरणे 'बहुलं छन्दसि' इति शपो लुक् च १.१३८. कुर्यातम् ६ ५६ ८. [डुकृञ् करणे (तना०) धातोर्लोट् । 'बहुलं छन्दसि' इति शपो लुकि तत्स्थाने भाविनो विकरणस्यापि लुक्]

कृतस्य कुर्वतः (व्यवहारस्य) ९ ११४ **कृतः**=सम्पादित (रथ) १ १४१ ८ निरन्तर स्थापित (वेदप्रति-पादितो मार्ग) १ १०५ १६. निष्पन्न (राजन्य.=राजपुत्र) ३१ ११ आज्ञप्त (आप्त पुरुष) ३४ ४२ **कृता**=निर्मिता निष्पादिता (सत्यवती= वाक्) ६ ६१ १३ कृतानि (कर्माणि) ३४ १६ **कृतानि**=कार्याणि क्रियाप्रकार-रूपाणि १ ११-४ कर्माणि १ १०० ६ उत्पादितानि (भुवनानि) २ १२ ४ अनुष्ठितानि (कर्माणि) २ ११ ६. [डुकृञ् करणे (तना०) धातो क्तान्तात् षष्ठी]

कृतिः क्रिया १ १६८ ३ [डुकृञ् करणे (तना०) धातो स्त्रियां क्तिन्]

कृत्तिम् मृगचर्मादिमयीम् (अलङ्करणीम्) १६ ५१ [कृत्ति =गृहनाम निघ० ३ ४ कृती छेदने (रुधा०) धातो क्तिन् । 'कृतो बहुल वा' इति वार्त्तिकबलेन कर्त्तर्यपि क्तिन् । कृत्ति कृन्ततेर्यशो वा अन्न वा । इयमपीतरा कृत्तिरेतस्मादेव सूत्रमयी । उपमार्थे वा नि० ५ २२]

कृत्तिवासः कृत्तिश्चर्म तद्वद् दृढानि वासांसि धृतानि येन स (रुद्र =शूरवीर सेनाध्यक्ष) ३ ६१ [कृत्ति-वासस्-पदयोः समास । कृत्तिरिति व्याख्यातम् । वासस् =वस्त्र आच्छादयतीति विग्रहे वस आच्छादने (अदा०) धातो 'वसेर्णित्' उ० ४ २१८ सूत्रेणासुन्]

कृते हलादिभि कर्षिते, योगाङ्गैर्निष्पादिते (योनौ=क्षेत्रेऽन्त करणे वा) १२ ६८ [डुकृञ् करणे (तना०) धातो क्त]

कृत्नवे कर्त्तुम् २ १३ १० [डुकृञ् करणे (तना०) धातो 'कृहनिभ्या क्त्नु' उ० ३ ३० सूत्रेण क्त्नु]

कूचिदर्थिनम् क्वचिद् बहवोऽर्था विद्यन्ते यस्मिँस्तम् (अग्नि) ४ ७ ६ ['कूचित्-अर्थिन् पदयो समास । कूचित्=क्वचित्, छान्दसत्वात् 'कु' इत्यादेशो दीर्घश्च । अर्थिन्=अर्थप्राति० मत्वर्थ इनि प्रत्यय]

कूजते अप्रकटशब्दोच्चारकाय (जनाय) २२ ७ [कूज अव्यक्ते शब्दे (भ्वा०) धातोश्शत्रन्ताच्चतुर्थी]

कूपे कूपाकारे हृदये १ १०५ १७ [कौति शब्दयतीति विग्रहे कु शब्दे (अदा०) धातो कुयुभ्या च' उ० ३ २७ सूत्रेण प प्रत्यय कित् दीर्घश्च । कूप कूपनाम निघ० ३ १६ कुपान भवति कुप्यतेर्वा नि० ३ १६]

कूप्याभ्यः कूपेषु भवाभ्य (अद्भ्य =जलेभ्य) २२ २५ **कूप्याय**=कूपे भवाय (भृत्याय) १६ ३८ [कूप-प्राति० भवार्थे यत् प्रत्यये स्त्रिया टाप्]

कूर्मः कच्छप २४ ३४ **कूर्मान्**=कच्छपान् २५ ३ [स य कूर्मो नाम । एतद्वै रूप कृत्वा प्रजापति प्रजा असृजत, यदसृजताकरोत्तद्यकरोत्तस्मात्कूर्म, कश्यपो वै कूर्मस्तस्मादाहु सर्वा प्रजा काश्यप्य इति श० ७ ५ १ ५. ता (पृथिवी) स क्लिश्याप्सु प्राविध्यत्तस्मै य पराङ्रसो ऽक्षरत् स कूर्मोऽभवत् श० ६ १ १ १ २ यो वै स एषा लोकानामप्सु प्रविद्धाना पराङ्रसो ऽत्यक्षरत् स एष कूर्म श० ७ ५ १ १ स य स कूर्मोऽसौ स आदित्य श० ६ ५ १ ६ प्राणो वै कूर्म प्राणो हीमा सर्वा प्रजा करोति श० ७ ५ १ ७ द्यावापृथिव्यौ हि कूर्म श० ७ ५ १ १० शिर कूर्म श० ७.५ १ ३५]

कूल्याय कूलेषु समुद्रनद्यादितटेषु साधवे (पुरुषाय) १६ ४२ [कूलप्राति० 'तत्र साधु' इत्यर्थे यत्]

कूश्मान् शासनानि प्र०—अत्र कशधातोर्मक्प्रत्ययो-ऽन्येषामपि० इति दीर्घश्च २५ ७ [कसि गतिशासनयो (अदा०) धातोर्बाहुकादौणादिको मक् प्रत्यय । अकारस्यो-कारादेशो बाहुलकात्]

कूष्ठः य कौ पृथिव्या तिष्ठति (विद्वज्जन) ५ ७४ १ [कूपपदे ष्ठा गतिनिवृत्तौ (भ्वा०) धातो क प्रत्यय]

कृकदाश्वम् कृक हिंसन दाशति त शत्रुम्, प्र०—अत्र दाशृधातोर्बाहुलकादौणादिक उण्-प्रत्ययस्ततोऽमिपूर्व इत्यत्र 'वाच्छन्दसि' इत्यनुवृत्तौ पूर्वसवर्णविकल्पेन यणादेश १ २६ ७ [कृक-दाशुपदयो समास । दाशु=दाशृ दाने (भ्वा०) धातोर्बाहु० औणा० उण् प्रत्यय]

कृकलासः सरट २४ ४०

कृकवाकुः कुक्कुट २४ ३५ [कृके कण्ठेन वक्तीति विग्रहे कृकोपपदात् वच् परिभाषणे (अदा०) धातो 'कृके वच कश्च' उ० १ ६ सूत्रेण ञुण् प्रत्यय । कृकवाकु = कृकवाको पूर्व शब्दानुकरणम् नि० १२ १३]

कृच्छ्रेश्रितः ये कृच्छ्रे दु खेऽपि धर्म श्रियन्ति सेवन्ते (राजपुरुषा) ६ ७५ ६ ये कृच्छ्रे कष्टे श्रिता कष्ट सेव-माना (पितर =पालनक्षमा राजपुरुषा) २६ ४६ [कृच्छ्र-श्रितपदयो समासे सप्तम्या अलुक् । श्रित =श्रिञ् सेवा-याम् (भ्वा०) धातो क्त]

कृणवत् कुर्यात् १२ २६ **कृणवते**=कुर्वते ४ २ ६ **कृणवन्**=कुर्वन्ति ७ ४८ ३ कुर्य्यु ५ २ ३ **कृणवन्त**=कुरुत १ १७८ २ कुर्वन्ति ७ ३७ ७ **कृणवन्ते**=कुर्वन्ति प्र०—व्यत्ययेनाऽत्राऽऽत्मनेपदम् १ ८८ ३ **कृणवम्**=प्रकाश करने हारा हूँ, म० प्र० २३८, १०४६ १ **कृण-वसे**=करोषि ६ १६ १७ **कृणवः**=करोषि ५ ४ ११ कुर्या ६ ३५ ३ हिंसितु शक्नोति १ ५४ ५ **कृणवाथ**=कुरुथ १८ ६० **कृणवाम**=कुर्याम २ २६ ३ **कृणवे**=करता हूँ स० वि० १६७, अथर्व० ६ २ ३ १५ **कृणवै**=कर्त्तु शक्नुयाम् १ १६५ १० **कृण**=कुरु करोति वा, प्र०—अत्र पक्षे लडर्थे लोट् २ २० कर म० वि० १३४, १० ८५ ५५ **कृणुत**=स्वीकुरुत ४ ११ कुरुत ५ ४६ ५ **कृणुतम्**=कुरुतम् १ ६३ १२ **कृणुतात्**=कुरु २ ३० ५ **कृणुताम्**=करोतु १५ ५१ कुरुताम् २ ५ ७ **कृणुते**=करोति ४ ७ ११ कर स० वि० ८०, अथर्व० ११ ५ ३ करोति निर्मिमीते ३३ ३८ **कृणुथ**=कुरुथ ६ २८ ६ **कृणुध्वम्**=कुरुत १५ ५३ कुरुध्वम् १ ७७ २ **कृणुषे**=धारयति ५ १ २ ऋ० भू० २०३ करोति १ १२३ १० करोषि १ १२३ ११ **कृणुष्व**=करोति कुर्याद् वा प्र०—अत्र लडर्थे लोट्, व्यत्ययेनाऽऽत्मनेपद च १ १० ७ कुरु १५ ३६ कुरुष्व १३ ६ **कृणुहि**=सम्पादय, प्र०—'उतश्च प्रत्ययाच्छन्दो वा वचनम्' अ० ६ ४ १०६ अनेन वार्त्तिकेन विकल्पाद्धेर्लोपो न भवति १ १८ १ करोति, प्र०—अत्र व्यत्यय 'कृवि हिंसाकरणयोश्च' इत्यस्माल्लडर्थे लोट् १ १३ २ करोषि ३३ ७६ कुरु १ १६५ ६ **कृणोत**=कुरुत ३ २६ ६ **कृणोतन**=कुर्य्यात् १ १६१ २ कुर्यातम् ४ १५ १० कुरुत, प्र०—अत्र तकारस्थाने तनब्रादेश १ १३ १२ **कृणोति**=करोति १ १०५ १५ कारयति १ ६२ ६ **कृणोतु**=करोतु १ ८४ ३ सदा सिद्ध करे म० वि० १४१, अथर्व० १४ २ ७५ **कृणोमि**=करोमि ४ ४२ ५ स्थिर करता हूँ म० वि० १४१, अथर्व० ३ ३० १ **कृणोषि**=करोषि १ ७४ ४ **कृण्महे**=कुर्म ७ १६ ४

कृत्नुः छेदिका श्येनी इव (उषा) १ ९२ १० [कृती छेदने (रुधा०) धातो 'कृहनिभ्या क्त्नु' उ० ३ ३० सूत्रेण क्त्नु]

कृत्नो कर्त्त (इन्द्र=राजन्) ६ १८ १५ [कृत्नुरिति व्याख्यातम्। तत सम्बुद्धि]

कृत्याम् करोति यया ताम् (क्रियाम्) ५ २३ दुष्क्रियाम् ३५ ११ [डुकृञ् करणे (तना०) धातो स्त्रिया 'कृञ श च' अ० ३ ३ १०० सूत्रेण क्यप्]

कृत्रिमा कृत्रिमाणि (सदनानि=स्थानानि) १ ५५ ६ **कृत्रिमाणि**=क्रियमाणानि (रोधासि=आवरणानि) २ १५ ८ [डुकृञ् करणे (तना०) धातो 'ड्वित क्त्रि' अ० ३ ३ ८८ सूत्रेण क्त्रि प्रत्यय। 'क्त्रेर्मम नित्यम्' अ० ४ ४ २० सूत्रेण मप् प्रत्यय। ततश् शेर्लोप]

कृत्वः बहव कर्त्तारो विद्यन्ते यस्य तत्सम्बुद्धौ (अग्ने=वैद्यराज विद्वन्) ३ १८ ४]

कृत्वा अनुष्ठाय ३ ४७ [डुकृञ् करणे (तना०) धातो क्त्वा]

कृत्वाय कृत्वा ११ ५९ [डुकृञ् करणे (तना०) धातो क्त्वा। 'क्त्वो यक्' अ० ७ १ ४७ सूत्रेण यगागम]

कृत्वी कृत्वा, प्र०—अत्र 'स्नात्व्यादयश्च' इति निपातितम् १ १६१ ३ [डुकृञ् करणे (तना०) धातो क्त्वा। स्नात्व्यादयश्च' अ० ७ १ ४९ सूत्रेण निपातनाद् रूपसिद्धि]

कृत्वे प्रज्ञायै न्यायकर्मणे वा १ १११ २ [क्रतुरिति कर्मनाम निघ० २ १ प्रज्ञानाम निघ० ३ ९ गुणाऽभावश्छान्दस]

कृत्व्यः करणीय कर्म, प्र०—कृत्वीति कर्मनाम, निघ० २ १, ६ २ ८ **कृत्व्यान्**=कर्मसु साधून् (यून्=दिवमान्) १ १२१ ७ **कृत्व्ये**=कर्त्तव्ये (कार्य्ये) १ ५४ ६ [कृत्वीति कर्म नाम निघ० २ १ तत साध्वर्थे भवार्थे वा यत्]

कृत्स्नहृदयेन सम्पूर्णहृदयाऽवयवेन ३९ ८ [कृत्स्नहृदयपदयो समास। कृत्स्नम्=कृती छेदने (रुधा०) धातो 'कृत्यशूभ्या क्स्न' उ० ३ १७ सूत्रेण क्स्न। कृन्तति स्वल्पमिति विग्रह। हृदयम्=हरति विषयानिति विग्रहे हञ् हरणे (भ्वा०) धातो 'वृह्नो षुग्दुकौ च' अ० ४ १०० सूत्रेण कयन् प्रत्ययो दुगागमश्च]

कृत्स्नायतया आयस्य लाभस्य भाव आयता, कृत्स्ना चाऽसावायता कृत्स्नायता, तया सम्पूर्णलाभतया १९ २० [कृत्स्न-आयतापदयो समास। कृत्स्न व्याख्यातम्]

कृथ कुरुत, प्र०—अत्र विकरणस्य लुक् १२ ८३ **कृथः**=कुरुथ ५ ७४ ५ कुरुतम्, प्र०—अत्र लोडर्थे लट् विकरणस्य लुक् च १ ११२ ८ [डुकृञ् करणे (तना०) धातोर्लोडर्थे लट्, विकरणस्य लुक् च]

कृदरम् उदरम् २९ १ [कृत्स्न दणानीति विग्रहे 'कृदरादयश्च' उ० ५ ४१ सूत्रेण निपात्यते। कृदर गृहनाम निघ० ३ ४ ऊर्दर कृदरमित्यावपनस्य। कृतदर भवति नि० ३ २०]

कृधि करोषि करोति वा, प्र०—अत्र लडर्थे लोट्, पक्षे व्यत्यय, विकरणाऽभाव 'श्रुशृणुपृकृ०' अ० ६ ४ १०२ अनेन हेर्धादेशश्च १ १४ ७ कुरु, प्र०—अत्र विकरणलुक् १३ २२ कुरु निष्पादय १ १०९ ५ कुर्या ५ ४१ कुरु कारय वा ४ १० कीजिए म० वि० १९७, ६ ११३ १० [डुकृञ् करणे (भ्वा०) धातोर्लोट्। 'बहुल छन्दसी' ति विकरणस्य लुक्। 'श्रुशृणु०' इत्यादिना हेर्धिरादेश]

कृधु ह्रस्वम्, भा०—स्वल्पम् (कर्म), प्र०—कृध्विति ह्रस्वनाम, निघ० ३ २, २३ २८ **कृधुना**=ह्रस्वेनाऽल्पेन (वचसा=ज्ञानेन) ४ ५ १४ [कृधु ह्रस्वनाम निघ० ३ २ निकृत्त भवति नि० ६ ३]

कृध्वम् कुरुध्वम् ७ ३४ १५ [डुकृञ् करणे धातोर्लोट्। विकरणस्य लुक्]

कृन्तामि छिनद्मि ६ १ कृती छेदने (रुधा०) धातोर्लट्।

कृपते समर्थयतु, प्र०—व्यत्ययेनाऽत्र श १ ११३.१० [कृपू सामर्थ्ये (भ्वा०) धातोर्लट्। व्यत्ययेन शप स्थाने श]

कृपमाणम् कृपा कर्त्तु शीलम् (परिव्राज=मन्यामिनम्) १ ११९ ८ कृपा कर्त्तारम् (कवि=मेधाविजनम्) प्र०—अत्र विकरणव्यत्ययेन श १ ११६ १४ [कृपू सामर्थ्ये (भ्वा०) धातो शानच्। व्यत्ययेन श। ताच्छील्ये चानश् वा]

कृपा कल्पते समर्थयति यया तया (विद्यया) १ १२७ १ कृपया ६ २ ६ कम्पा ४ ७५ सामर्थ्येन १७ १० समर्थया क्रियया १५ ४३ कल्पनया १ १२८ ७ [कृप कृपायां गतौ (भ्वा०) धातो 'षिद्भिदादिभ्योऽङ्' अ० ३.३ १०४ सूत्रेण स्त्रियामङ्। भिदादिगणे (कृपे सम्प्रसारण च' इति वार्त्तिकेनापि सम्प्रसारणम्। कृपा=कृप् कृपतेर्वा कल्पतेर्वा नि० ६ ८ कल्पते अर्चतिकर्मा निघ०

प्रकाशकाश्चेश्वरस्य गुणा प० वि० । **केतवे**=विज्ञान-स्वरूपाय ज्ञापकाय वा (सूर्याय=परमेश्वराय सूर्यलोकाय वा) ४ ३५ विज्ञानाय १ १६६ १ **केतुना**=सङ्केतरूप-चिह्नेन ३८ १६ जागरूकेण ज्ञानेन जागृताऽवस्थया ३७ २१ प्रज्ञया सुकर्मणा वा ३७ २१ विज्ञान अर्थात् विद्यादान से, आर्याभि० १ १६, ऋ० १ ३ १० १४ शोभन-कर्मणा प्रज्ञया वा, प्र०—केतुरिति प्रज्ञानामसु पठितम्, निघ० ३ ६, १ ३ १२ **केतुम्**=ध्वजवद् वर्त्तमानम् (वह्निम्) १ ६० १ महाप्राज्ञम् (राजानम्) ७ ६.२ प्रज्ञापकम् (अग्निम्) ६ ७ २ सूर्यमिव ७ ५ ५ प्रज्ञानम् १ ६ ३ प्रज्ञाम् २९ ३७ किरणम् १ १२४ ५ रूपादि-प्रापकम् (अग्नि=वह्निम्) ३ २ १४ ध्वजवद्विज्ञापकम् (अग्नि=पावकम्) ३ २९ ५ **केतु**=प्रज्ञापिका (उप= उषा) ३ ६१ ३ प्रज्ञापक इव प्रज्ञा ५ ११ ३ ज्ञानस्वरूपम् (ब्रह्म) ३ ५५ २ उद्गतशिखा प्रज्ञावती वा (उषा) १ १२४ ११ ज्ञापयित्री पताकेव प्रसिद्धा (स्त्री) १ ११३ १९ ज्ञानवान् (मनुष्य) ३ १ १७ विज्ञापक (ईश्वर आप्तो वा) १ १३ १ [चायते पूजयतीति विग्रहे चायृ पूजानिशामनयो (भ्वा०) धातो 'चाय की' उ० १ ७४ सूत्रेण तु प्रत्यय । धातोश्च 'की' इत्यादेश । केतु प्रज्ञानाम निघ० ३ ९ केतुना कर्मणा प्रज्ञया वा नि० ११ २७ केतव रश्मय नि० १२ १५ केतु प्रज्ञानम् नि० १२ ७ कित निवासे रोगापनयने च (भ्वा०) धातोर्वा वाहुलकादौणादिक उ प्रत्यय]

केतवेदाः केत प्रज्ञात वेदो धन येन स (राजपुरुष) प्र०—केत इति प्रज्ञानाम, निघ० ३ ६, १ १०४ ३ [केत-वेदस्पदयो समास । केत प्रज्ञानाम निघ० ३ ९ वेदस् धननाम निघ० २ १०]

केतसापः ये केतेन प्रज्ञया सपन्ति ते (विद्वज्जना) ५ ३८ ३ [केतोपपदे षप् समवाये (भ्वा०) धातोरण् प्रत्यय । केत प्रज्ञानाम निघ० ३ ९]

केताः प्रज्ञा प्रज्ञापनव्यवहारान् १ ५५ ७ [केत प्रज्ञानाम निघ० ३ ९]

केतान् बोधान् १ १४६ ३ [केत प्रज्ञानाम निघ० ३ ९]

केतुमत् प्रशस्तप्रज्ञायुक्तम् (वच) ६ ४७ ३१ केतु प्रशस्ता ध्वजा यासु ता (स्वसेना) प्र०—अत्र स्त्री-प्रत्ययस्य लुक् २९.५७ [केतुप्राति० प्रशसार्थे मतुप् । केतुरिति व्याख्यातम्]

केतू किरणौ २ ११ ६ [केतुरिति व्याख्यातम् । तस्य द्विवचनम् ।]

केतेभिः प्रज्ञाभि ३ ६० ७ [केत इति व्याख्यातम् । तत्रश्छन्दसि भिस ऐसादेशो न भवति]

केवटे कूपे, प्र०—केवट इति कूपनाम, निघ० ३ २३, ६ ५४ ७

केवर्त्तम् जले नौकाया पारावारयोर्गमकम् (नाविक-जनम्) ३० १६ [के जले वर्तत इति विग्रहे कोपपदाद् वृतु वर्त्तने (भ्वा०) धातोरण् । समासे सप्तम्या लुङ् न]

केवलम् असहायम् (सह=बलम्) १ ५७ ६ **केवलः**=एक एवेष्टोऽसाधारणसाधनो वा (त्वष्टा= परमेश्वरो भौतिकोऽग्निर्वा) १ १३ १० असहाय (इन्द्र= राजा) ४ २५ ७ एकश्चेतनमात्रस्वरूप एवेष्टदेव (इन्द्र= राज्यप्रदेश्वर) १ ७ १०

केवला केवलाम् (पक्तिम्=पाकम्) ४ २५ ६ [केवलप्राति० स्त्रिया टाप्]

केशिनः प्रकाशवन्तो ज्ञापका (वायुविद्युत्सूर्या) १ १६४ ४४ [केशप्राति० भूम्नि इनि प्रत्यय । केश= क्लिश उपतापे (दिवा०) धातो 'क्लिशेरन् लो लोपश्च' उ० ५ ३३ सूत्रेणान्प्रत्यय, लकारस्य च लोप । केशी केशा रश्मयस्तैस्तद्वान् भवति, काशनाद्वा प्रकाशनाद्वा केशीद ज्योतिरुच्यत इत्यादित्यमाह नि० १२ २६ अथाप्येते इतरे ज्योतिषी केशिनी उच्येते । धूमेनाग्नी रजसा च मध्यम नि० १२ २६]

केशिना प्रशस्ता केशा विद्यन्ते ययोस्तौ (हरी= अश्वौ) प्र०—अत्र 'सुपा सुलुग्०' अ० ७ १ ३९ इति विभक्तेराकारा ८ ३४ सूर्यरश्मिवत्प्रशस्तकेशयुक्तौ (हरी=अश्वौ) १ ८२ ६ वहव केशा किरणा विद्यन्ते ययोस्तौ (सूर्यविद्युतौ) ३ ६ ६ प्रकाशयुक्ते आकर्षणवले (हरी=अश्वौ), प्र०—अत्र 'सुपा सुलुग्०' इति द्विवचनस्याकारादेश १.१० ३ [केशिन् इति व्याख्यातम् । तस्य द्विवचने प्रयोग]

केशिनीः रश्मिवती (सुन्दरस्त्रिय) १ १५१.६ प्रशसनीयकेशा (स्त्रिय) १ १४० ८ [केशप्राति० मत्वर्थे इनि । तत. स्त्रिया ङीप्]

केशिभिः केशा वहवो रश्मयो विद्यन्ते येषामग्निविद्यु-त्सूर्याणा तै सह, प्र०—'क्लिशेरन् लो लोपश्च' उ० ५ ३३ अनेन क्लिशधातोरन् लकारलोपश्च, ततो भूम्न्यर्थे इनि, "केशी केशा रश्मयस्तैस्तद्वान् भवति, काशनाद् वा, प्रकाश-

समूहेन तम् १ ५८ ४ पृथिवीविकारमयम् ऋ० भू० १६८ **कृष्णः**=अग्निना छिन्नो वायुना कर्षितो यज्ञ २ १ कृष्णगुणविशिष्ट (प्राणी) २४ ३० आकर्षणकर्त्ता (सूर्य) १ ७६ २. कर्षक (जुहुराण=कुटिलगतिर्जन) ४ १७ १३ **कृष्णा**=कर्षणानि ६ ६० १० कृष्णान्याकर्षण-कृष्णवर्णयुक्तानि पृथिव्यादीनि १ ३५ ४ कृष्णानि मैन्यानि ४ १६ १३ श्यामा (विदुषी स्त्री) ४ ३ ६ **कृष्णात्**=अन्धकारात् १ १२३ १ **कृष्णान्**=कृष्णवर्णान् कृषिसाधकान् वा (पदार्थान्) २४ ११. **कृष्णाय**=विद्याकर्षणाय, भा०—विद्याप्राप्तये २५ १ **कृष्णाः**=निकृष्टवर्णा कर्षिता वा (रात्री) ६ ४७ २१ कृष्णवर्णा विलेखननिमित्ता वा, भा०—कर्षणादिकार्यसाधका पश्वादिपदार्था २४ १० **कृष्णासु**=परिपक्वासु विलिखितासु (ओषधीषु) १ ६२ ६ **कृष्णेभिः**=परस्पराकर्षणैर्विलेखनै १ ६२ ८ **कृष्णे**=कर्षिते (द्यावाभूमी) ४ ४८ ३ **कृष्णेन**=आकर्षण गुण मे स० प्र० ३१३, ३३४३ कर्षति येन स कृष्ण तेन, यद्वा कृष्णवर्णेन लोकेन, प्र०—कृष्ण कृष्यतेर्निकृष्टो वर्ण, नि० २ २० 'यत् कृष्णं तदन्नस्य, छा० उ० ६ ५ एताभ्या प्रमाणाभ्या पृथिवीलोका अत्र गृह्यन्ते 'कृषेर्वर्णे' उ० ३ ४ इति नक् प्रत्यय, अत्राऽऽङ्पूर्वकत्वादाकर्षणार्थो गृह्यते १ ३५ २ पृथिव्यादिना १ ३५ ६ कृष्णवर्णेन (रजसा=लोकेन) ३४ २५ [कृष विलेखने (भ्वा०) धातो 'कृषेर्वर्णे' उ० ३ ४ सूत्रेण नक् प्रत्यय । कृष्णम्=कृष्यतेर्निकृष्टो वर्ण नि० २ २० कृष्णा=कृष्णवर्णा रात्रि नि० २ २०]

कृष्णयामम् कृष्णा कर्षिता यामा येन तम् (सूनुम्=अपत्यम्) ६ ६ १ [कृष्ण-यामपदयो समास । याम=या प्रापणे (अदा०) धातो 'अर्त्तिस्तुसुहु०' उ० १ १४० सूत्रेण मन् प्रत्यय]

कृष्णयोनीः कृष्णा कर्षिका योनिर्यासा ता (सेना) २ २० ७ [कृष्णा-योनिपदयो समास । योनि=यौति सयोजयति पृथक् करोति वेति विग्रहे यु मिश्रणेऽमिश्रणे च (अदा०) धातो 'वहिश्रिश्रुयुद्रुग्ला०' उ० ४ ५१ सूत्रेण नि प्रत्यय । योनि=उदकनाम निघ० १ १२ गृहनाम निघ० ३ ४]

कृष्णव्यथिः य कर्षकश्चाऽसौ व्यथयिता च (अग्नि=वह्नि) २ ४ ७ [कृष्ण-व्यथिपदयो समास । व्यथि=क्रोधनाम निघ० २ १३ व्यथ भयसञ्चलनयो (भ्वा०) धातोरौणा० इन्]

कृष्णसीतासः कृष्णा कृषिसाधनी सीता येषा ते (कृषीवला) १ १४० ४. [कृष्णा-सीतापदयो समास । सीता=स्यति कर्मसमाप्ति करोतीति विग्रहे षोऽन्त. कर्मणि (दिवा०) धातोरौणादिको बाहुलकात् क्त । आकारस्येकारादेश]

कृष्णाञ्जिः कृष्णा विलिखिता अञ्जिर्गतिर्यस्य स (पशु पक्षी वा) २४ ४ [कृष्णा-अञ्जिपदयो समास । अञ्जि=अञ्जू व्यक्तिम्रक्षणकान्तिगतिषु (रुधा०) धातोरौणादिक इन् प्रत्यय]

कृष्णाध्वा कृष्णोऽध्वा मार्गो यस्य (अग्नि) २ ४ ६ कृष्ण कर्षितोऽध्वा मार्गो येन (विद्युत्प्रकाश) ६ १० ४ [कृष्ण-अध्वन् पदयो समास । अध्वन्=अद भक्षणे (अदा०) धातो 'अदेर्ध च' उ० ४ ११६ सूत्रेण क्वनिप् धान्तादेशश्च अध्वा=अन्तरिक्षनाम निघ० १ ३]

कृष्णासः ये कर्षन्ति ते (सूरय=विद्वास) १ १४१ ८ [कृष्णप्राति० जसोऽसुगागम । कृष्ण=कृष विलेखने+नक्]

कृष्णियाय कृष्णमाकर्षणमर्हाय (विद्वज्जनाय), प्र०—'वाच्छन्दसि सर्वे विधयो भवन्ति, इति घ १ ११६ २३ कृष्ण विलेखन कृषिकर्माऽर्हति यस्तस्मै (कृषीवलाय) १ ११७ ७ [कृष्ण इति व्याख्यातम् । तत अर्हत्यर्थे घ प्रत्यय । ततश्चतुर्थी]

कृण्व कुरु, प्र०—अत्र 'कृञ्' इत्यस्माद्धातोर्लोटि विकरणाऽभाव १ १० ६ कुरुष्व ७ २२ ४ विलिख १ ५४ ६ [डुकृञ् करणे (तना०) धातोर्लोट् । कृष विलेखने (भ्वा०) धातोर्वा]

केतपूः य केनेन विज्ञानेन पुनाति (ईश्वर) ११ ७ य केत प्रज्ञा पुनाति पवित्रीकरोति स (वाचस्पति=वाण्या पालक प्रजाराजजन) ९ १ य केन विज्ञान पुनाति स (सविता=सर्वजगदुत्पादको जगदीश्वर) ३० १ [केनोपपदे पूञ् पवने (क्र्या०) धातो क्विप् प्रत्यय । केत प्रज्ञानाम निघ० ३ ६ अन्न केत, श० ६ ३ १ १६]

केतम् प्रज्ञा प्रज्ञापन वा ४ २६ २ प्रज्ञानम्, प्र०—केत इति प्रज्ञानाम, निघ० ३.६, ३० १ विज्ञानम् ११.७ **केतः**=प्रज्ञाविशेषो बोध १ २४ १२ [केतमिति पूर्वपदे व्याख्यातम्]

केतवः ज्ञापका (अग्नय=सूर्यविद्युत्प्रसिद्धाग्नय) ८ ४० किरणा ३० ३१ किरणा इव प्रकाशमाना विद्वास ८ ४१ ज्ञानानि १ १९१ ४ प्रज्ञानानि ७ ४१ किरणा, विविधजगत पृथक् पृथग् रचनादिनियामका ज्ञापका

क्रतुमन्ता बहुप्रज्ञायुक्तौ (यानसाधकचालकौ) १ १८३ २ [क्रतु+मतुप्। 'सुपा सुलुग्' इत्याकारादेश। क्रतुपद व्याख्यातम्]

क्रतुमान् बहुशुभप्रज्ञ (होता=होतृजन) ४ ४ १ १ प्रज्ञावान् (इन्द्र=सभाध्यक्ष) १ ६२ १२ [क्रतुपद व्याख्यातम्। ततो भूम्नि प्रशसाया वा मतुप्]

क्रतुविदम् क्रतु प्रज्ञा ता विन्दति येन तम् (सोमम्=ओषधिगणम्) ३ ४० २ [क्रतूपपदे विद्लृ लाभे (तुदा०) धातो क्विप्। क्रतुपद व्याख्यातम्]

क्रतुविदा क्रतु प्रज्ञा विन्दति याभ्या तौ (अध्यापकोपदेशकौ) २ ३६ २ [क्रतूपपदे विद्लृ लाभे (तुदा०) धातो क्विप्। 'सुपा सुलुग्' इत्याकारादेश]

क्रतुस्थला प्रज्ञाकर्मज्ञापनोपदिक् १५ १५ [(अग्ने) पुञ्जिकस्थला च क्रतुस्थला चाप्सरसाविति दिक् चोपदिशा चेति स्माह माहित्रिय, सेना च तु ते समितिश्च श० ८ ६ १ १६]

क्रतूदक्षाभ्याम् प्रज्ञाबलाभ्याम् ७ २७ [क्रतु प्रज्ञानाम निघ० ३ ६ दक्ष बलनाम निघ० २ ६ तयो समास]

क्रतूयन्ति प्रज्ञा कर्माणि चेच्छन्ति ४ २४ ४ [क्रतुपदाद् आत्मन इच्छाया क्यच्। ततो लट्]

क्रत्वा श्रेष्ठया प्रज्ञयोत्तमेन कर्मणा वा ४ २१ १० क्रतुना प्रज्ञया वा ३ २ ३ **क्रत्वे**=प्रज्ञायै ३४ ८ प्रज्ञानाय ६ ४० २ सद्विद्या-शुभकर्माऽनुभूतसंस्कारस्मृतये, प्र०—क्रतुरिति कर्मनामसु पठितम्, निघ० २ १, ३ ५४ [क्रतुरिति प्रज्ञानाम निघ० ३ ६ कर्मनाम निघ० २ १]

क्रत्वामघास. क्रतु प्रज्ञा कर्मैव मघ धन येषान्ते (स्वामिनो जना) ५ ३३ ६ [क्रतु-मघपदयो समास। क्रतुरिति व्याख्यातम्। मघम्=धननाम निघ० २ १०]

क्रन् कुर्य्यु २७ ४ [डुकृञ् करणे (तना०) धातोर्लुङ्। अडभावो विकरणलुक् च छान्दसत्वात्]

क्रन् कुर्वन् (जातवेदा=ईश्वर.) ७ ५ ७ [डुकृञ् करणे (तना०) धातो शतृ। विकरणलुक्]

क्रन्त क्रमन्तु १ १४१ ३ [क्रमु पादविक्षेपे (भ्वा०) धातोर्लङ्। अडभावो विकरणलुक् च]

क्रन्त: क्रमक (अग्नि=राजा) ४ २ १४ [क्रमु पादविक्षेपे (भ्वा०) धातोर्बाहु० औणा० क्त]

क्रन्द शब्द कुरु २ ४२ ३ क्रन्दति, प्र०—अत्र व्यत्यय ५ ८३ ७ **क्रन्दत्**=ह्वयति १ १७३ ३ [क्रदि आह्वाने रोदने च (भ्वा०) धातोर्लट्। विकरणस्य लुक्]

क्रन्दत् शब्द कुर्वन् (अश्व) १ ३६ ८ [क्रदि आह्वाने रोदने च (भ्वा०) धातो शतृप्रत्यय.]

क्रन्दति श्रेष्ठानाह्वयति दुष्टान् रोदयति, प्र०—अनाऽन्तर्भावितो ण्यर्थ १ १०० १३ **क्रन्दतु**=आह्वयतु ५ ५८ ३. **क्रन्दते**=आह्वान रोदन वा कुर्वते २२ ७ [क्रदि आह्वाने रोदने च (भ्वा०) धातोर्लट्]

क्रन्दते आह्वान रोदन वा कुर्वते (जनाय) २२ ७ [क्रदि आह्वाने रोदने च (भ्वा०) धातोश् शतन्ताच्चतुर्थी]

क्रन्दन् शब्दायमान (अश्व=तुरङ्ग) ३ २६ ३ [क्रदि आह्वाने रोदने च (भ्वा०) धातो शतृप्रत्यय]

क्रन्दनु: आह्वाता (विद्वज्जन) ७ ४२ १ [क्रदि आह्वाने रोदने च (भ्वा०) धातोर्बाहुलकादौणादिकोऽनु प्रत्यय]

क्रन्दय रोदयाऽऽह्वय वा २६ ५६. [क्रदि आह्वाने रोदने च (भ्वा०) धातोर्लोट्]

क्रन्दसी क्रन्दमानौ विरोधयन्तौ (राजाऽमात्यौ) ६ २५ ४ गुणै प्रशसनीये (द्यावापृथिव्यौ) ३२ ७ रोदनशब्दनिमित्ते (द्यावापृथिव्यौ) २ १२ ८ [क्रदि आह्वाने रोदने च (भ्वा०) धातोरौणादिकोऽसुन् प्रत्यय]

क्रपाय व्यवहारसिद्धये ८ ५५

क्रमणाय गमनाऽऽगमनाय ६ ७० ३. **क्रमणे**=अनुक्रमेण गमने (यशीरात्मवले) १ १५५ ५ [क्रमु पादविक्षेपे (भ्वा०) धातोर्ल्युट्]

क्रमताम् चालयति, प्र०—क्रमयति, प्र०—अत्र लडर्थे लोट् १ ६ आक्रमण अर्थात् गतिपूर्वक आरूढ हो म० वि० २३०, ६ ५ १ **क्रमते**=प्राप्नोति १ १४४ १ **क्रमध्वम्**=पराक्रम कुरुत, भा०—पराक्रमध्वम् १७ ६५ **क्रमस्व**=पुरुषार्थी भव ४ १८ ११. गच्छ ५ ३८ [क्रमु पादविक्षेपे (भ्वा०) धातोर्लोट्। 'अनुपसर्गाद्वा' इत्यात्मनेपदम्]

क्रम: अवरयाऽन्तरम् १२ ५ व्यवहार १२ ५ [क्रमु पादविक्षेपे (भ्वा०) धातोर्भावे घञ्। 'नोदात्तोपदेश०' इति वृद्धिर्न भवति]

क्रमाम अनुक्रमेण प्राप्नुयाम ६ ४६ १५ **क्रमिषम्**=उल्लङ्घेयम्, प्र०—अत्र लिडर्थे लुङ् २८ **क्रमिष्ट**=क्रमते १ १५५ ४ **क्रमिष्टम्**=अतिक्रमण कुरुतम् १ १८२ ३ **क्रमी:**=क्रमस्व १ ५१ ६ **क्रमु:**=अवक्राम्यन्तु ७ ३२ २७ [क्रमु पादविक्षेपे (भ्वा०) धातोर्लङ्। अडभावश्च। अन्यत्र लुङ्]

नाद् वा, केशीद ज्योतिरुच्यते, नि० १२ २५-२६, १ १६ ४ ['केशिन्' इति व्याख्यातम्]

केशैः शिरस्थैर्बालैः २५ ३ [केशिन पदे व्याख्यातम्]

केसराणि विज्ञानानि १६ ६१

कोपयथ धूनय ५ ५७ ३. **कोपयः**=कोपयसि १ ५४ ४ [कुप क्रोधे (दिवा०) धातोर्णिचि लोडर्थे लट्]

कोम्या प्रशमनीयानि (दिनानि) १ १७१ ३

कोशकारीम् या कोशं करोति ताम् (स्त्रियम्) ३० १४ [कोशोपपदे डुकृञ् करणे (तना०) धातोरणि स्त्रियां ङीप्। कोश कुष निष्कर्षे (क्र्या०) धातोरच् प्रत्ययः। षकारस्य शकारश्छान्दसः। कोशः कुष्णातेः विकुषितो भवति। अयमपीतर कोशं एतस्मादेव सचय आचितमात्रो महान् भवति नि० ५ २६ कोश मेघनाम निघ० १ १०]

कोशम् धनाऽऽलयम् ५ ५९ ८ मेघम्, प्र०—कोश इति मेघनाम, निघ० १ १०, ५ ५३ ६ धनादीनां कोश इव जलेन पूर्णं मेघम् ५ ८३ ८ **कोशः**=धनसमुदाय ६ ५४ ३ मेघ १ ११२ ११ [पूर्वपदे व्याख्यातम्]

कोशयोः या कोशान् यान्ति ता भूमी ६ ४७ २२ [कोशोपपदे या प्रापणे धातोरणि स्त्रियां ङीप्। कोश इति व्याख्यातम्]

कोशान् दशगुणधनपूर्णान् ६ ४७ २३ **कोशाः**= यथा मेघा १ ८७ २ **कोशेन**=मेघेन १ १३० २. [कोश-कारीम् पदे द्रष्टव्यम्]

कोश्याभ्याम् कोश उदरे भवाभ्यां मांसपिण्डाभ्याम् ३९ ८ [कोश इति व्याख्यातम्। ततो भवार्थे यत्]

कौलालम् कुलाल-पुत्रम् ३० ७ [कुलालप्राति० अपत्यार्थेऽण्। कुलाल=कोलति संघातयतीति विग्रहे कुल सम्त्याने बन्धुषु च (भ्वा०) धातोः 'तमिविशिविडि०' उ० १ ११८ सूत्रेण कालन् प्रत्ययः]

कौलितरम् अतिशयेन कुलीनम् (दास=सेवक जनम्) ४ ३० १४.

कौलीकान् पक्षिविशेषान् २४ २४

कौशिकः। सर्वासां विद्यानामुपदेशे प्रकाशे च भवस्तत्सम्बुद्धौ। अर्थानां साधूपदेष्टर्वा (इन्द्र=सर्वानन्द-स्वरूपेश्वर) प्र०—क्रोशते शब्दकर्मणः क्रंशतेर्वा स्यात्, प्रकाशयति कर्मणः, साधु विक्रोशयिताऽर्थानामिति वा नद्यः प्रत्यूनु निरु० २ २५ अनेन कौशिकशब्द उक्तार्थो गृह्यते १ १० ११ [कुशिकप्राति० भवार्थेऽण्। अथ यत्सुवर्ण-रजताभ्यां कुशीभ्यां परिगृहीत आसीत्। तास्य (आदित्यस्य चात्वालस्य) कौशिकता तै० १ ५ १० २]

क्रतवः प्रज्ञा ७ ४८ १ प्रज्ञा १ ५५ ८ यज्ञा. प्रज्ञा वा, प्रशस्तक्रियावन्त शिल्पयज्ञधियो वा (देवा.=विद्वांस) १ ८६ १ **क्रतवे**=प्रज्ञायै कर्मणे वा २२ ३० विज्ञानाय १८ २८ **क्रतुभिः**=प्रज्ञाकर्मभि ६ ७ ४ श्रेष्ठै कर्मभि १ १०० १४ **क्रतुना**=प्रकाशकर्मणा २ १२ १ **क्रतुम्**= प्रज्ञा कर्माणि वा ५ ३१ ११ जीवस्य प्रज्ञानम् ६ ९ ५ धर्म्या प्रज्ञाम् ७ ३२ २६ क्रियाम् ७ ५ ६ सर्वं सङ्गत ससारास्य यज्ञम् १ २ ८ प्रज्ञानम् (सुशिक्षितास्वम्) १५ ४४ प्रज्ञा पुरुषार्थ वा १ ८० १५ प्रज्ञापन कर्म वा १ ६८ २ **क्रतुः**=करोति कार्याणि येन स (इन्द्र= अग्निर्विद्युत्सूर्यो वा, वरुण=जल वायुश्चन्द्रो वा), प्र०— कृञ. कतु, उ० १ ७७ अनेन कृञ्धातो कतु-प्रत्यय १ १७ ५ प्रज्ञा राज्यपालनाख्यो यज्ञो वा ४ २१.२ प्रज्ञा-कर्मयुक्त प्रज्ञाकर्मज्ञापको वा (सभाध्यक्ष) १ ७७ ३ प्राज्ञ (महाविद्वान्) ३ ११ ६ सव समार का कर्त्ता (ईश्वर) आर्याभि० १ १६, ऋ० १ ६ १६ ५ कर्मपराक्रम १ १७५ ५ प्रशस्तकर्मप्रज्ञ (विद्वान्) १ ६ ३ १ प्रज्ञामय प्रज्ञाप्रद प्रज्ञाहेतोर्वा (परमेश्वर ओषधिराजा वा) १ ९१ ५ **क्रतो**।=य करोति जीवस्तत्सम्बुद्धौ ४० १५ **क्रतोः**= प्रज्ञाया, भा०—शास्त्रयोगजाया धिय १२ ४५ [क्रतु कर्म वा प्रज्ञा वा नि० २ २८ य क्रियते यया करोति वेति विग्रहे डुकृञ् करणे (तना०) धातो 'कृञ कतु' उ० १ ७६ सूत्रेण कतु प्रत्यय। क्रतु=कर्मनाम निघ० २ १ प्रज्ञानाम निघ० ३ ९ क्रतुना कर्मणा नि० १० १० क्रत्वे अपत्याय नि० ११ २७ स यदेव मनसा कामयतऽइद मे स्यादिद कुर्वीयेति स एव क्रतु श० ४ १ ४ १ क्रतुर्मनोजव श० ३ ३ ४ ७ हृत्सु ह्यय क्रतुर्मनोजव प्रविष्ट श० ३ ३ ४ ७ क्रतु दक्ष वरुण स शिराधि (ऋ० ८ ४२ ३) इति वीर्य प्रज्ञान वरुण स शिराधीनि ऐ० १ १३ मित्र एव क्रतु श० ४ १ ४ १]

क्रतुप्रा. ये प्रज्ञा पूरयन्ति ते (मेधाविजना) ४ ३९ २ [क्रतूपपदे प्रा पूरणे (अदा०) धातो क । क्रतुपद व्याख्या-तम्]

क्रतुमत् भूयास क्रतवो भवन्ति यस्मिँस्तत् (ब्रह्म) ऋ० भू० ३०६ प्रशस्तप्रज्ञाकर्मयुक्तम् (मन) ३६ ३ प्रशसितप्रज्ञायुक्तम् (विद्वासम्) २ २३ १५ [क्रतुपद व्याख्यातम्। तत प्रशसाया मतुप्]

क्रीणामि गृह्णामि ४ २६ **क्रीणावहै**=व्यवहारयोग्यानि वस्तूनि दद्याव गृह्णीयाव वा ३ ४६ [डुक्रीञ् द्रव्यविनिमये (क्र्या०) धातोर्लट्]

क्रीतस्य गृहीतस्य (सोमस्य=सोमलताद्योषधिसमूहस्य) १६ १५ **क्रीतः**=व्यवहृत (विष्णु=व्याप्तो धनञ्जय) ८ ५५ [डुक्रीञ् द्रव्यविनिमये (क्र्या०) धातो क्त]

क्रीयसे क्रीयते ४ २६ [डुक्रीञ् द्रव्यविनिमये (क्र्या०) धातो कर्मणि लट्]

क्रुङ् यथा पक्षी अल्पमल्प पिबति तथा १६ ७३ [क्रुञ्च कौटिल्याल्पीभावयो (भ्वा०) धातो 'ऋत्विग्०' अ० ३ २ ५६ सूत्रेण क्विन्]

क्रुञ्चान् सारसान् २४ २२ **क्रुञ्चो**=पक्षिविशेषौ २५ ६ [क्रुञ्च कौटिल्याल्पीभावयो (भ्वा०) धातोरच्]

क्रुद्धम् क्रोधयुक्तम् (जनम्) ४ १५ ३ [क्रुध कोपे (दिवा०) धातो क्त प्रत्यय]

क्रुध्मी क्रोधशीलानि (मनासि=अन्त करणानि) ७ ५६ ८

क्रुमुः क्रमिता (रसा=पृथिवी) ५ ५३ ६ [क्रमु पादविक्षेपे (भ्वा०) धातोरौणादिक उ प्रत्यय । उपधाया उकारादेशो वर्णव्यत्ययेन]

क्रूरम् दुश्चरित्रम् (जनम्) ६ १५ **क्रूरस्य**=कृन्तन्त्यङ्गानि यस्मिन् तस्य युद्धस्य, 'प्र०—कृतेश्छ क्रू च' उ० २ २१ अनेन कृन्ततेरक् प्रत्यय क्रू इत्यादेशश्च १ २८ [कृती छेदने (रुधा०) धातो 'कृतेश्छ क्रू च' उ० २ २१ सूत्रेण रक् प्रत्ययो धातोश्च क्रूरादेशश्च । गर्गामो वै क्रूरम् श० १ २ ५ १६ क्रूरमित्यप्यस्य (कृन्तते) भवति नि० ६ २२]

क्रोडः निमज्जनम् २५ ८

क्रोधाय बाह्यकोपाय ३० १४ [क्रुध कोपे (दिवा०) धातोर्भावे घञ्]

क्रोशन्ति रुदन्ति ४ ३८ ५ [क्रुश आह्वाने रोदने च (भ्वा०) धातोर्लट्]

क्रोशाय रोदनाय ३० १६ [क्रुश आह्वाने रोदने च (भ्वा०) धातोर्घञ्]

क्रोष्टा शृगाल २४ ३२ [क्रुश आह्वाने रोदने च (भ्वा०) धातो 'सितनिगमि०' उ० १ ६६ सूत्रेण तुन् प्रत्यय । 'तृज्वत् क्रोष्टु' अ० ७ १ ९५ सूत्रेण तृज्वद्भाव]

क्लथन् हिंसा कुर्वन् (प्रजापति=जीव) ३६ ५ [क्लथ हिंसायाम् (भ्वा०) धातो शतृप्रत्यय]

क्लीबम् नपुंसकम् (जनम्) ३० ५ **क्लीबे**=स्वसामर्थ्याय ४० १५ [क्लीबृ अधार्ष्ट्ये (भ्वा०) धातोरिगुपधलक्षण क । अन्यत सिद्ध]

क्लृप्तम् समर्थितम् (कर्म) १८ ११ [कृपू सामर्थ्ये (भ्वा०) धातो क्त । 'कृपो रोल' इति रेफभागस्य लकार]

क्लृप्तिः समर्थोहा १८ ११ [कृपू सामर्थ्ये (भ्वा०) धातो स्त्रिया क्तिन् । रेफभागस्य लकार]

क्लोमभिः क्लेदनै २५ ८ **क्लोमानम्**=कण्ठनाडिकाम् १९ ८५

क्लोशम् क्रोशम् ६ ४६ १४ [क्रुश आह्वाने रोदने च (भ्वा०) धातोर्घञ् । रेफस्य लकार]

क्व कस्मिन् कुत्र वा १ ३४ ६ [किम सर्वनाम्न सप्तम्यन्तात् 'किमोऽत्' अ० ५ ३ १२ सूत्रेणात्प्रत्यय । 'क्वाती' ति 'कु' इत्यादेश]

क्वयिः पक्षिविशेष २४ ३६

क्वो कुत्र, प्र०—अत्र वर्णव्यत्ययेनाऽकारस्थान ओकार १ ३८ ३

क्षत्ता छेदक (अग्नि=विद्वान्) ६ १३ २ **क्षत्तारम्**=क्षतात्तारक धर्मात्मानम् (जनम्) ३० १३ [क्षद सवृत्ताविति सौत्रो धातु, तत 'तृन्तृचौ शसिक्षदादिभ्य०' उ० २ ९४ सूत्रेण तृच्]

क्षत्तृभ्यः शूद्रात् क्षत्रियाया जातेभ्य (राजपुरुषेभ्य) १६ २६ [पूर्वपदे व्याख्यातम्]

क्षत्रपतिः राज्यस्य पालक (राजा) १० १७ [क्षत्रपति-पदयो समास । क्षत्रपद द्रष्टव्य 'क्षत्रम् इति पदे]

क्षत्रभृत् य क्षत्र राज्य बिभर्त्ति स, (भा०—प्रजा पालको राजा) २७ ७ [क्षत्रोपपदे डुभृञ् धारणपोषणयो (भ्वा०) धातो क्विप् । क्षत्रपद द्रष्टव्य 'क्षत्रमि' ति पदे]

क्षत्रम् राज्य, क्षण्यते हिंस्यते नश्यते पदार्थो येन स क्षतो घातादिस्तनस्त्रायते रक्षतीति क्षत्र क्षत्रियादिवीरस्तम् ५ २७ धनम् ५ ६४ ६ दुष्टनाशक कुलम् १८ ४० विद्यावर्द्धक राजकुलम् १८ ४१ चक्रवर्त्तिन राजानम् १८ ४२ धनुर्वेदम् १८ ४३ राज्य, धनुर्वेदविद्या, क्षत्रियकुलम् ३२ १६ राजन्यकुलम्, भा०—सर्व राज्यम् १८.३८ शूरवीरकुलम्, भा०—शौर्य्यम् १८ ३६ क्षत्रियाणा राज्यम् १० ४ क्षात्रधर्मप्राप्त राजन्यकुलम् १४ २४ क्षत्रियकुलमर्था-

क्रमुः क्रमिता (रसा=पृथिवी) ५ ५३ ९ [क्रमु पादविक्षेपे (भ्वा०) धातोर्बाहुलकादौणादिक उ प्रत्यय]

क्रयस्य द्रव्यविक्रयस्य १९ १३ [डुक्रीञ् द्रव्यविनिमये (क्र्या०) धातो 'एरच्' इत्यच् भावे]

क्रवणस्य शब्दकर्त्तु (विद्वज्जनस्य) ५ ४४ ९

क्रविषः भक्षितस्य (पदार्थस्य) २५ ३३ गन्तु (अश्वस्य) २५ ३२ क्रमितु योग्यस्याऽन्नस्य १ १६२ १० क्रमणशीलस्य (अश्वस्य), प्र०—अत्र क्रमधातोरौणादिक इसि प्रत्ययो वर्णव्यत्ययेन मस्य व १ १६२ ९ [क्रमु पादविक्षेपे (भ्वा०) धातोरौणादिक इसि प्रत्यय । मस्य वकारादेशो वर्णव्यत्ययेन]

क्रव्यादम् य क्रव्य मासमत्ति तम् (भा०—दुष्टाचारिण जनम्) ३५ १९ क्रव्य पक्व मासमत्ति स तम् (विद्युदाख्यमग्निम्) १ १७ [क्रव्योपपदे अद भक्षणे (अदा०) धातो 'क्रव्ये च' अ० ३ २ ६९ सूत्रेण विट् । क्रव्यादे क्रव्यमदते । क्रव्य विकृताज्जायत इति नैरुक्ता नि० ६ ११ अथ येन (अग्निना) पुरुष दहन्ति स क्रव्याद् श० १ २.१ ४]

क्राणस्य कुर्वाणस्य (सेनापते) प्र०—अत्र 'वाच्छन्दसि' इति शपो लुक् १ १३२ २

क्राणा कुर्वन् (मित्र =उत्तमविद्वान्) ५ १० २ कुर्वाणौ (इन्द्रवायू=विद्युत्प्राणौ) १ १३९ १ कुर्वती (माता) ५ ७ ८ कर्त्ता (देव =जीवात्मा) प्र०—अत्र कृञ्धातोर्बाहुलकादौणादिक आनच्प्रत्यय 'सुपा सुलुग्०' इति आकारादेशश्च १ ५८ ३ **क्राणाः**=कर्त्तु शीला (जना) १ १३४ २ पुरुषार्थ कुर्वाणा (मनुष्या) १ १३४ २ [डुकृञ् करणे (तना०) धातोर्बाहु० औणा० आनच् । क्राणा कुर्वाणा नि० ४ १९]

क्राणासः उत्तमानि कर्माणि कुर्वन्त (सज्जना) १ १३४ २ [क्राणप्राति० जसोऽसुगागम । क्राणेति पूर्वपदे द्रष्टव्यम्]

क्रान्तम् वृद्धम् (महद्यक्ष=ब्रह्म) ऋ० भू० ९०, १० ७ ३८ क्रमाऽधिकरणम् (राजशिरिपनम्) १० १९ [क्रमु पादविक्षेपे (भ्वा०) धातो क्त । 'अनुनासिकस्य०' अ० ६ ४ १५ सूत्रेणोपधाया दीर्घ । 'यरय विभाषे' तीण्निषेध]

क्रामाम अनुक्रमेण गच्छेम ३८ १९ **क्रामेम**= लङ्घयेम १ १२५ ६ [क्रमु पादविक्षेपे (भ्वा०) धातोर्लोट् । 'क्रम परस्मैपदेषु' इति दीर्घ शिति परत]

क्रियमाणम् वर्त्तमाने सम्पाद्यमानम् (ब्रह्म=बृहदन्न धन वा) ७ ३५ १४ [डुकृञ् करणे (तना०) धातो कर्मणि शानच्]

क्रियमाणा वर्त्तमानेन पुरुषार्थेन सिद्धानि (अन्नानि धनानि वा) ५ २९ १५ [डुकृञ् धातो कर्मणि शानचि द्विवचनस्य सुपा सुलुगि' त्याकार]

क्रियास्म कुर्याम ६ २३ ६ [डुकृञ् करणे (तना०) धातोराशिषि लिङ्]

क्रिवि कृणोति हिनस्ति येन तत् (नाम) प्र०—अत्र नकारस्थाने वर्णव्यत्ययेनेकार १० २० **क्रिविम्**=कूपम्, प्र०—क्रिविरिति कूपनाम, निघ० ३ २३, २ १७.६ **क्रिविः**=प्रजापालनकर्त्ता (सूर्यवद् राजा) १ ४४ ४ [कृवि हिंसाकरणयोश्च (भ्वा०) धातोरौणादिक इ प्रत्यय । इदितत्वान्नुमो नकारस्येकारे यणादेशे च रूपम् । क्रिवि कूपनाम निघ० ३ २३]

क्रिविर्दती क्रिविर्हिंसनमेव दन्ता यस्या सा (विद्युत्) १ १६६ ६ [क्रिवि-दन्तपदयो समास । क्रिवि-व्याख्यानम् । क्रिविर्दती विकर्त्तनदन्ती नि० ६ ३०]

क्रीडन्तः धनुर्वेदविद्याशिक्षणाय युद्धाय शस्त्राऽभ्यास कुर्वन्त (जना) ४ ४ ९ **क्रीडन्तौ**=सद्धर्मक्रिया कुर्वन्तौ (स्त्रीपुरुषौ) ऋ० भू० २०९ क्रीडा करते हुए (स्त्रीपुरुषौ) स० वि० १३७, अथर्व० १४ १ २२ [क्रीडृ विहारे (भ्वा०) धातो शत्रन्ताज्जस्]

क्रीडम् क्रीडन्ति यस्मिँस्तत् (मारुत=मरुता समूह) प्र०—अत्र 'क्रीडृ विहारे, इत्यस्मात् 'घञर्थे कविधानम्' इति क प्रत्यय १ ३७ १ क्रीडन्ति येन तत् (मारुत=मरुता समूह) १ ३७ ५ [क्रीडृ विहारे (भ्वा०) धातो 'घञर्थे कविधानमि' ति क]

क्रीडयः क्रीडन्त (धूनय =वीरजना) १ ८७ ३ [क्रीडृ विहारे (भ्वा०) धातोरौणादिक इ प्रत्यय । ततो जस्]

क्रीडा विहार १८ ५ [क्रीडृ विहारे (भ्वा०) धातो स्त्रियाम् 'गुरोश्च हल ' इत्यकार प्रत्यय]

क्रीडा क्रीडका (विद्वासो जना) १ १६६ २ [क्रीडृ विहारे (भ्वा०) धातोरच् कर्त्तरि]

क्रीडिभ्यः प्रशसितक्रीडेभ्य (मरुद्भ्य =मनुष्येभ्य) २४ १६ **क्रीडी**=अवश्य क्रीडितु शील (भा०—गृहस्थो जन) १७ ८५ [क्रीडृ विहारे (भ्वा०) धातोस् , ताच्छील्ये णिनि । औणादिको वा इ प्रत्यय कर्त्तरि]

क्षत्रवनिः क्षत्र सम्भाजिन वनति तम्, भा० य क्षत्रियैर्वन्यते ससेव्यते तम् (परमेश्वरम्), प्र०—अत्राऽमो लुक् १ १७ राज्य वनयति तम्, भा०—राज्यवर्धनम् (ईश्वर भौतिकमग्नि वा) १ १८ राजधर्मप्रकाशकस्य विभाजितार, राजगुणाना दृष्टान्तेन प्रकाशयितार वा (परमेश्वर भौतिकमग्नि वा) १ १८ क्षत्रस्य राज्यस्य क्षत्रियाणा वा सविभाजकम् (सभाध्यक्षम्) ६ ३ सर्वमनुष्यार्थ ब्रह्मणो वेदस्य विभाजितार, ब्रह्माण्डस्य मूर्त्तद्रव्यस्य प्रकाशक वा (परमेश्वर भौतिकमग्नि वा) १ १८ बलविद्यासम्भाजितारम् (सभाध्यक्षम्) प्र०—अत्र 'सुपा सुलुग्०' इति विभक्तेर्लुक् ५ २७ क्षत्रियाणा क्षत्रस्य राज्यस्य वा सविभाजकम् (सभाध्यक्षम्) ६ ३ [क्षत्रोपपदे वन सम्भक्तौ (भ्वा०) धातोरौणादिक इन् प्रत्यय.]

क्षत्रवनिः यया क्षत्र राज्य धनुर्विद्या शूरवीरान् पुरुषान्वा वनन्ति सम्भजन्ति सा (स्वाहा=वाक्) ५ १२ [क्षत्रोपपदे वन सम्भक्तौ (भ्वा०) धातोरौणादिक इन् प्रत्यय]

क्षत्रश्रीः राज्यलक्ष्मी ६ २६ ८ [क्षत्र-श्रीपदयो समास । श्री=श्रिञ् सेवायाम् (भ्वा०) धातो 'क्विब्-वचिप्रच्छि०' उ० २ ५७ सूत्रेण क्विप् दीर्घश्च]

क्षत्रियस्य क्षत्राऽपत्यस्य राज ५ ६६ १ क्षात्रधर्म-युक्तस्य (वाजस्य=वेगस्य विज्ञानस्य वा ४ १२ ३ [क्षत्र व्याख्यातम् । ततोऽपत्यार्थे 'क्षत्राद् घ' अ० ४ १ १३८ सूत्रेण घ प्रत्यय]

क्षत्रिया या क्षत्रस्याऽपत्यवद्वर्त्तते (विद्याविदुषी) ४ १६ [क्षत्रियप्राति० स्त्रिया टाप् । क्षत्रियपद व्याख्यातम्]

क्षत्रियाय क्षत्रस्य पुत्राय १० ४ [व्याख्यातम्]

क्षद से अविद्या-रोगाऽन्धकारविनाशकाय बलाय १ २५ १७

क्षद्मेव उदकमिव १ १३० ४ [क्षद्मेत्युदकनाम निघ० १ १२ अन्ननाम निघ० २ ७]

क्षपः रात्री ६ ५२ १५ क्षान्ता रात्री १ ७० ४ **क्षपाम्**=रात्रिम् ३ ४६ ४ [क्षप उदकनाम निघ० १ १२ क्षपा रात्रिनाम निघ० १ ७ रात्रय क्षपा ऐ० १ १३]

क्षपावान् क्षपा प्रशस्ता रात्रयो विद्यन्ते यस्मिन् यस्य वा स (जगदीश्वरो जीवो वा) १ ७० ३ बह्वय क्षपा रात्रयो विद्यन्ते यस्मिन् स (अग्नि=पावक) ७ १० ५ क्षपा रात्रि सम्बन्धिनी यस्य स चन्द्र ३ ५५ १७ [क्षपा प्राति० प्रशसाया मतुप् । क्षपा रात्रिनाम निघ० १.७]

क्षमा सर्वसहनयुक्ता पृथिवी १ १०३ १ [क्षमा पृथिवी नाम निघ० १ १ क्षमूष् सहने (भ्वा०) धातो 'षिद्भिदा-दिभ्योऽङ्' इत्यङ्]

क्षमाचरा. ये क्षमाया पृथिव्या चरन्ति, भा०—ये वायवो भूमेरन्तरिक्षमन्तरिक्षाद् भूमिं च गच्छन्त्यागच्छन्ति, तत्र ये तेजोभूम्यादितत्त्वानामवयवाश्चरन्ति ते १६.५७ [क्षमेति व्याख्यातम् । तदुपपदे चर गतौ (भ्वा०) धातो 'चरेष्ट' इति ट प्रत्यय]

क्षमाय रक्षणाय ६ २२.

क्षमि क्षाम्यन्ति सहन्ते जना यस्मिन् व्यवहारे तस्मिन् स्थित्वा, प्र०—अत्र 'कृतो बहुलम्' इत्यधिकरणे क्विन् 'बाच्छन्दसि सर्वे विधयो भवन्ति' इति 'अनुनासिकस्य क्विब्-झलो०' इति दीर्घो न भवति १ २५ १८ पृथिव्याम् ३ ८ ७ [क्षमा पृथिवीनाम निघ० १ १ क्षमूष् सहने (भ्वा०) धातोरधिकरणे क्विप्]

क्षमेत सहेत २ ३३ १. [क्षमूष् सहने (भ्वा०) धातो-र्लिङ्]

क्षम्यस्य क्षन्तुमर्हस्य (जन्मन=प्रादुर्भावस्य) ७ ४६ २ क्षमाया साधो (राज) २ १४ ११ [क्षमाप्राति० अर्हत्यर्थे तत्र साध्वर्थे वा यत् प्रत्यय । क्षमा=क्षमूष् सहने (भ्वा०)+अङ्]

क्षयणाय निवासे वर्त्तमानाय (जनाय) १६ ४३. [क्षि निवासगत्यो. (तुदा०) धातोर्ल्युट्]

क्षयत् निवसेत् ६ २३ १० [क्षि निवासगत्यो (तुदा०) धातोर्लिडर्थे लेट्]

क्षयतः निवसत (राज=नृपान्) ६ ५१ ४ [क्षि निवासगत्यो (तुदा०) धातो शतृ । व्यत्ययेन शप्]

क्षयति निवसति निवासयति वा ५ ४२ ११. प्राप्नुयात् प्र०—लेट प्रयोगोऽयम् १ ५१ १४ **क्षयथ**=निवसथ ६ ५१ ७. **क्षयथ**=निवसथ १ ११२ ३ [क्षि निवासगत्यो (तुदा०) धातोर्लेट् । व्यत्ययेन शप्]

क्षयद्वीर शूरवीर-निवासक (रुद्र=न्यायाधीश) १ ११४ १०. **क्षयद्वीरम्**=क्षयता शत्रुहन्तॄणा मध्ये प्रशसा-युक्तम् (पुत्रम्) १ १२५ ३ क्षयन्त शत्रूणा नाशकर्त्तारो वीरा यस्य सेनाध्यक्षस्य तम् १ १०६ ४ **क्षयद्वीरस्य**=क्षयन्तो निवासिता वीरा येन तस्य (रुद्रस्य=सभाध्यक्षस्य) १ ११४ ३. **क्षयद्वीराय**=क्षयन्तो विनाशिता

द्विद्याशौर्यादिगुणोपेतम् २०२५ क्षताद्रक्षकम् (उर = हृदयम्) २०७ क्षत्रियकुल राष्ट्र वा ५ २७ ६ क्षत्रियोपलक्षण विद्याचातुर्यशौर्यधैर्यवीर-पुरुषाऽन्वितम् (राष्ट्र = राज्यम्) ऋ० भू० १०४ राज्य क्षत्रियवर्णश्च ऋ० भू० १५२ राज्य धनुर्वेदविदं क्षत्रिय वा ६ ३ धन राज्य वा २१ २८ **क्षत्रस्य**=राजन्यस्य १० २६ राजव्यवहारस्य ऋ० भू० २१६ राजकुलस्थ २० १ क्षत्रियस्य १० ८ **क्षत्राणाम्**=क्षत्रकुलोद्गतानाम् १० १७ **क्षत्राणि**= राज्योद्भवानि धनानि, प्र०—क्षत्रमिति धननाम, निघ० २ १, ४ ४ ८ **क्षत्राय**=राजधर्मनिष्ठाय (भा०—राजकुलाय) १८ ४४ राजधर्माय ऋ० भू० २२२ राज्याय पालनाय वा ३० ५ साम्राज्याय ऋ० भू० १५२ अखण्ड चक्रवर्त्ति राज्य के लिए, आर्याभि० २ ३१, ३८ १४ **क्षत्रे**=क्षताद्रक्षके क्षत्रियकुले २० १० **क्षत्रेण**=राज्येन धनेन वा २७ ५ [क्षतोपपदे त्रैङ् पालने (भ्वा०) धातो 'अन्येष्वपि दृश्यते' सूत्रेण उ प्रत्यय । पूर्वपदान्त्याकारस्य च लोपः। क्षत =क्षणु हिंसायाम् (तना०) धातो क्त प्रत्यय । क्षत्रम् उदकनाम निघ० १ १२ धननाम निघ० २ १० प्राणो हि वै क्षत्र त्रायते हैन प्राण क्षणितो प्रक्षत्रमात्रमाप्नोति क्षत्रस्य सायुज्य सलोकता जयति य एव वेद श० १४ ८ १४ ४ क्षत्र राजन्य ऐ० ८ ६ श० ५ १ ५ ३ १३ १ ५ ३ क्षत्रस्य वाऽएतद्रूप यद्राजन्य श० १३ १ ५ ३ ओज क्षत्र वीर्य राजन्य ऐ० ८ २, ३ ४ क्षत्र हि राष्ट्रम् ऐ० ७ २२ आदित्यो, वै दैव क्षत्रमादित्य एषा भूतानामधिपति ऐ० ७ २० क्षत्र वा एतदारण्यकाना पशूना यद्व्याघ्र ऐ० ८ ६ क्षत्र वा एतद् वनस्पतीना यन्न्यग्रोध ऐ० ७ ३१ ८ १६ क्षत्र वा एतदोषधीना यद् व्रीहय ऐ० ८ १६ क्षत्र वा एतदोषधीना यद्दूर्वा ऐ० ८ ८ क्षत्र वै पय श० १२ ७ ३ ८ क्षत्रस्यैतद्रूप यद्धिरण्यम् श० १३ २ २ १७ ब्रह्मणो वै रूपमह क्षत्रस्य रात्रि तै० ३ ६ १४ ३ क्षत्रस्य वा ऽएतद्रूप यद्रात्रि श० १३ १ ५ ५ क्षत्र पञ्चदश (स्तोम) ऐ० ८ ४ क्षत्र हि ग्रीष्म श० २ १ ३ ५ अथ वा ऽअग्निर्ब्रह्म च क्षत्र च श० ६ ६ ३ १५ ब्रह्म वा अग्नि क्षत्र सोम कौ० ६ ५ क्षत्र सोम ऐ० २ ३८ कौ० ७ १० क्षत्र वै सोम श० ३ ४ १ १०, ३ ६ ३ ३७, ५ ३ ५ ८ प्रजापतिर्वै क्षत्रम् श० ८ २ ३ ११ मित्र क्षत्र क्षत्रपति तै० २ ५ ७ ४ श० ११ ४ ३ ११ क्षत्र वरुण कौ० ७ १०, १२ ८ श० ४ १ ४ १ गो० उ० ६ ७ क्षत्र वै वरुण श० २ ५ २ ६ क्षत्र वाऽइन्द्र कौ० १२.८ तै० ३.६.१६३ श० २ ५ २ २७, ३ ६ १ १६, ४ ३.३ ६ क्षत्रमिन्द्र श० २ ५ ४ ८ क्षत्रमिन्द्र क्षत्रियेषु ह पशवोऽभविष्यन् श० ४ ४ १ १८ तस्मादु क्षत्रियो भूयिष्ठ हि पशूनामीशते गो० उ० ६ ७ क्षत्र वै वैश्वानर श० ६ ६ १ ७, ६ ३ १ १३ यान्येतानि देवत्रा क्षत्राणीन्द्रो वरुण सोमो रुद्र पर्जन्यो यमो मृत्युरीशान इति तस्मात् क्षत्रात् पर नास्ति तस्माद् ब्राह्मण क्षत्रियमधस्तादुपास्ते राजसूये श० १४.४.२ २३ क्षत्र वै स्विष्टकृत् श० १२ ८ ३ ३६ क्षत्र त्रिष्टुप् कौ० ३ ५ श० ३ ४ १ १० ब्रह्म हि पूर्व क्षत्रात् ता० ११ १ २ सैषा क्षत्रस्य योनिर्यद् ब्रह्म श० १४ ४ २ २३ ब्रह्मणा क्षत्र निर्मितम् तै० २ ८ ८ ६ तद् यत्र ब्रह्मण क्षत्र वशमेति तद् राष्ट्र समृद्ध तद्वीरवदाहास्मिन् वीरो जायते ऐ० ८ ६ अभिगन्तैव ब्रह्म कर्त्ता क्षत्रिय श० ४ १ ४ १ एतद्ध त्वेवानवक्लृप्त यत्क्षत्रियोऽब्राह्मणो भवति तस्मादु क्षत्रियेण कर्म करिष्यमाणेनोपसर्त्तव्य एव ब्राह्मण श० ४ १ ४ ६ क्षत्र वै होता ऐ० ६ २१ गो० उ० ६ ३ क्षत्र मध्यन्दिन सवनम् कौ० १६ ४ भुव इति (प्रजापति) क्षत्रम् (अजनयत) श० २ १ ४ १२ यजुर्वेद क्षत्रियस्याहुर्योनिम् तै० ३ १२ ६ २ क्षत्र वै साम श० १२ ८ ३ २३ गो० उ० ५ ७ क्षत्र वै स्तोत्रम् प० १ ४ क्षत्र वै लोकम्पृणा (इष्टका) विश इमा इतरा इष्टका श० ८ ७ २ २ क्षत्र वै लोकम्पृणा (इष्टका) श० ६ ४ ३ ५ क्षत्रमुपाशुयाज श० ११ २ ७ १५ क्षत्र वै प्रस्तर श० १ ३ ४ १० यरतान्तव वस्ते क्षत्र वर्द्धते न ब्रह्म गो० पू० २ ४ ब्रह्म वै पौर्णमासी क्षत्रममावस्या कौ० ४ ८ एतानि क्षत्रस्यायुधानि यदश्वरथ कवच इषुधन्व ऐ० ७ १६ अन्न वै क्षत्रियस्य विट् श० ३ ३ २ ८ तस्मान्न कदाचन ब्राह्मणश्च क्षत्रियश्च वैश्य च शूद्र च पश्चादन्वित श० ६ ४ ४ १३. तस्मात् क्षत्रिय प्रथम यन्तमितरे त्रयो वर्णा पश्चादनुयन्ति श० ६ ४ ४ १३ तस्मादु क्षत्रियमायन्तमिमा प्रजा विश प्रत्यवरोहन्ति तमधस्तादुपासते श० ३ ६ ३ ७ क्षत्रियो ऽजनि विश्वस्य भूतस्याधिपतिरजनि विशामत्ताऽजन्यमित्राणा हन्ताऽजनि ब्राह्मणाना गोप्ता ऽजनीति ऐ० ८ १७ एतद्धै परार्द्ध्यमन्नाद्य यत् क्षत्रिय कौ० २५ १५ निरुक्तमिव हि क्षत्रम् श० ६ ३ १ १५ अपरिमितो वै क्षत्रिय ऐ० ८ २० क्षत्र बृहत् (साम) ऐ० ८ १ यत्पुरा भवति क्षत्ररूप तदपो अन्नस्य रस ऐ० ८ ८ अथास्य (क्षत्रियस्य) एष भक्षो न्यग्रोधस्यावरोधाश्च फलानि चौदुम्बराण्याश्वत्थानि प्लाक्षाण्यभिषुणुयात्तानि भक्षयेत्सोऽस्य स्वो भक्ष ऐ० ७ ३० स (क्षत्रिय) ह दीक्षमाण एव ब्राह्मणतामभ्युपैति ऐ० ७ २३]

शत्रुसेनास्था वीरा येन तस्मै (रुद्राय=सेनापतये) १ ११४ २ क्षयन्तो दोषनाशका वीरा यस्य तस्मै (कपर्दिने=ब्रह्मचारिणे) १ ११४ १ क्षयन्तो दुष्टनाशका वीरा यस्य तस्मै (सेनापतये) १६ ४८ शत्रुओ के वीरो का क्षय करने वाला (ईश्वर) आर्याभि० १४५ ऋ० १८५२ [क्षयत्-वीरपदयो समास । क्षयत्=क्षि क्षये (भ्वा०) धातो शतृ]

क्षयन् निवासयन् (अग्नि =सूर्यो विद्युद्वा) ३ २५ ३ **क्षयन्तम्**=निवसन्तम् (प्रचेतस=प्रकृतप्रज्ञ पुरुषम्) १२ ११० [क्षि निवासगत्यो (तुदा०) धातो शतृ । व्यत्ययेन शप्]

क्षयम् निवासस्थानम् ३ ३ २ निवासम् ३ ११ ७ निवासितारम् (अग्नि=पावकम्) ३ २ १३ निवासयितुम् (रयिं=श्रियम्) ६ ४६ १५ निवास प्राप्तव्य वा १ १३२ ३ गृहम् ६ २ ५ **क्षयः**=निवासार्थ प्रासाद १ १४४ ७ निवासहेतव (कालविभागा) २ २ २ **क्षयान्**=निवासान् ४ ५४ ५ **क्षयाय**=क्षत्रियाणा पालनाय ६ ४० विज्ञानोन्नतये ५ ४१ निवासार्थाय गृहाय विज्ञानादिप्राप्तये वा ५ ३८ **क्षये**=चक्षुषि १३ ५३ निवसनीये गृहे ३ २१ **क्षयौ**=निवसन्तौ (स्त्रीपुरुषौ) २ २७ १५ [क्षि निवासगत्यो (तुदा०) धातो 'पुसि सज्ञाया घ प्रायेणे' ति घ प्रत्यय । 'क्षयो निवासे' अ० ६ १ २०१ इत्याद्युदात्तत्वम् । भावे 'एरचि' इत्यच् । 'कृतो बहुलमि' ति कर्त्तर्यपि । अन्तो वै क्षय कौ० ८ १ क्षयो वै देवा गो० उ० २ १३]

क्षयय क्षायय निवासय, पराजय प्रापय वा ३ ४६ २ [क्षि निवासगत्यो (तु०) धातोर्णिचि लोट्]

क्षयसि निवससि ४ ५ ११ निवससि निवासयसि वा ६ १३ २ **क्षयाम**=निवाम करवाम १ ११ १ २ [क्षि निवासगत्यो (तु०) धातोर्लट् । क्षयति ऐश्वर्यकर्मा निघ० २ २१]

क्षरति वर्षति ५ ५६ २ [क्षर सञ्चलने (भ्वा०) धातोर्लट्]

क्षरध्यै क्षरितु सञ्चलितुम् १ ६३ ८ [क्षर सञ्चलने (भ्वा०) धातोस्तुमर्थेऽध्यै प्रत्यय]

क्षरन् क्षरन्ति १ ११६ ९ **क्षरन्तः**=कम्पन्त २ ११ १ **क्षरन्ति**=वर्षन्ति १३ २७ सवर्षन्ति १ ७२ १० वर्षन्तु १ १२५ ४ [क्षरन् मचलने (भ्वा०) धातोर्लङ् अडभाव । शतृप्रत्ययान्त वा रूपम्]

क्षरन्ती प्राप्नुवन्ती (गौ =वाणी) १ १८१ ७ **क्षरन्तीम्**=प्रापयन्तीम् (मही=पृथिवीम्) ४ १६ ६ **क्षरन्तीः**=वर्षन्त्य. (आप =जलानि) ७ ३४ २ [क्षर सञ्चलने (भ्वा०) धातो शत्रन्तात् ङीप् । धातूनामनेकार्थत्वात् प्रापणेऽर्थेऽपि]

क्षरसि वर्षसि १ २७ ६ [क्षर सञ्चलने (भ्वा०) धातोर्लट्]

क्षातिः क्षय ६ ६ ५

क्षाम् व्यापकत्वान्निवासहेतुम् (अग्नि=परमेश्वरम्) १ ६६ ७ भूमिम्, प्र०—क्षेति भूमिनाम, निघ० १ १, ७ १८ ६ भूमि भूमिराज्यमात्र वा १ १८६ ३ [क्षा पृथिवीनाम निघ० १ १ क्षा क्षियतेर्निवासकर्मण नि० २ ६]

क्षाम पृथिवीम्, प्र०—क्षामेति पृथिवीनाम निघ० १ १, 'सुपा सुलुग्०' इति विभक्तिलोप १२ २१ क्षान्तम् (बुध्नम्=अन्तरिक्षम्) ४ १६ ४ **क्षामन्**=पृथिव्याम्, ६ १५ ५ क्षामनि राज्यभूमौ १७ १० **क्षामा**=पृथिवीम् प्र०—अत्राऽन्येपामपि०, इत्युपधादीर्घ 'सुपा सुलुग्०' इति विभक्तिलोप १२ २१ निवासभूमिम्, प्र०—अत्र विभक्तेर्लुक् १६ ६६ **क्षामेव**=निवासाऽधिकरणा पृथिवीम् २ ३६ ७ [क्षाम क्षामा पृथिव्या नाम्नी निघ० १ १]

क्षासु भूमिषु, प्र०—क्षेति पृथिवीनाम निघ० १ १, १ १२७ १० **क्षाः**=पृथिवी १.१३३ ६ भूमय ४ १७ १ [क्षा पृथिवी नाम निघ० १ १]

क्षिणन्ति हिसन्ति ६ ७५ ७ **क्षिणोमि**=हिनस्मि ११ ८२ [क्षिणु हिंसायाम् (तना०) धातोर्लट् । व्यत्ययेन शप्]

क्षितयः मनुष्या, प्र०—क्षितय इति मनुष्यनाम, निघ० २ ३, १ १०० ७ गृहस्था मनुष्या ५ १ १० निवासवन्तो मनुष्या ६ १ ५ हे शूरवीर मनुष्यो ! आर्याभि० १४१, ऋ० १७ ६ ७ क्षिय क्षय प्राप्नुवन्ति निवसन्ति ये ते मनुष्या, प्र०—'क्षि निवासगत्यो' इत्यर्थयोर्वर्त्तमानान् धातो 'क्तिच्क्तौ च सञ्ज्ञायाम्' अ० ३ ३ १७४ अनेन क्तिच् १ ३६ ३ **क्षितिभ्यः**=भूमिस्थदेशेभ्य ३ १३ ४ **क्षितिषु**=पृथिवीषु १ ७३ ४ **क्षितिः**=क्षियन्ति निवसन्ति, राज्यरत्नानि प्राप्नुवन्ति यस्या सा (पृथिवी) १ ६५ ३ भूमि १ १५१ ४ **क्षितीनाम्**=पृथिवीलोकाना मध्ये, प्र०—क्षितिरिति पृथिवीनामसु पठितम्, निघ० १ १, १ ७ ६ राजसम्बन्धिनीना भूमीना मध्ये ६ ४६ ७ स्वराज्ये निवसन्तीनाम् (विशा=प्रजानाम्) ३ ३४ २. **क्षितीः**=

क्षेत्रजित्याय यया क्रियया क्षेत्राणि जयन्ति तस्या भावाय ३३ ६० [क्षेत्रजित्प्राति० भावे कर्मणि वा ष्यञ् । क्षेत्रजित्=क्षेत्रोपपदे जि जये (भ्वा०) धातो क्विप्]

क्षैत्रपत्येषु क्षेत्राणा भूमण्डलाना पतय पालकास्तेषा कर्मसु १ ११२ १३ [क्षेत्र-पतिपदयो समासे भावे कर्मणि च 'पत्यन्तपुरोहितादिभ्यो यक्' अ० ५ १ १२८ सूत्रेण यक्]

क्षोणस्य अध्यापकस्य १ ११७ ८ [क्षोणस्य क्षयणस्य नि० ६ ६]

क्षोणी स्वपरभूमी, प्र०—क्षोणीति पृथिवीनाम, निघ० १ १, ३३ ६७ **क्षोणीभिः**=पृथिवीभि २ ३४ १३ **क्षोणीभ्याम्**=द्यावापृथिवीभ्याम् २ १६ ३ **क्षोणीः**= भूमी १ १७३ ७ बह्वी पृथिवी १ ५४ १ [क्षौति शब्दय-तीति विग्रहे टुक्षु शब्दे (अदा०) धातोर्बाहुलकादौणादिको नि प्रत्यय । स्त्रियां 'कृदिकारादक्तिन' इति ङीष् । क्षोणी पृथिवी नाम निघ० १ १ क्षोणी द्यावापृथिवीनाम निघ० ३ ३०]

क्षोदन्ति सपिषन्ति ७ ५८ १ [क्षुदिर् सपेषणे (रुधा०) धातोर्लट् । विकरणव्यत्ययेन शप्]

क्षोदन्ते क्षरन्ति वर्षन्ति ५ ५८ ६ [क्षोदति गतिकर्मा (निघ० २ १४) ततो लट्]

क्षोदस जलस्य १ १८२ ५ **क्षोदसा**=प्रवाहेण १ ११२ १२ **क्षोदः**=अगाधजलम् १ ६२ १२ उदकम्, प्र०— क्षोद इत्युदकनाम, निघ० १ १२, ६ १७ १२ जल जलसमूहो वा १ ६६ ५ [क्षोदस् उदकनाम निघ० १ १२]

क्षोभणः क्षोभकर्त्ता सञ्चालयिता (इन्द्र =सेनेश) १० ३३ [क्षुभ सञ्चलने (भ्वा०) धातो 'चलनशब्दार्थाद-कर्मकाद् युच्' अ० ३ २ १४८ सूत्रेण तच्छीलादिषु कर्त्तरि युच्]

क्ष्णोत्रेणेव तेजस्विकारकेण साधनेनेव २ ३६ ७

क्ष्मया भूम्या सह, प्र०—क्ष्मेति पृथिवीनाम, निघ० १ १, ७ ४६ ३ पृथिव्या ५ ८४ ३ **क्ष्मः**=पृथिवी १ १०० १५ पृथिवी का, आर्याभि० १ ३२, ऋ० १ ७ १० १५ [क्ष्मा पृथिवी नाम निघ० १ १ क्षमूष् सहने (भ्वा०) धातो 'क्षमेरुपधालोपश्च' उ० ५ ६५ सूत्रेणाच्-प्रत्यय उपधालोपश्च]

खजकृत् य खज सङ्ग्राम करोति स (राजपुरुष), प्र०—खज इति सङ्ग्रामनाम, निघ० २ १७, ६ १८ २ [खजोपपदे डुकृञ् करणे (तना०) धातो क्विप् । खजे सग्राम नाम निघ० २ १७]

खजङ्करः य सङ्ग्राम करोति स (सेनापति), प्र०—अत्र 'खज मन्थने' इति धातो 'कर्मणि०' इत्यण् 'वाच्छन्दसि सर्वे विधयो भवन्ति' इति वृद्ध्यभाव सुपो लुगभावश्च १ १०२ ६

खड्गः तुण्डशृङ्ग पशुविशेष २४ ४० [खडति भिनत्तीति विग्रहे खड भेदने (चुरा०) धातो 'छापूखडिभ्य कित्' उ० १ १२४ सूत्रेण गन् प्रत्यय]

खदिरस्य एतत्काष्ठस्य ३ ५३ १६ [खदति हिनस्तीति विग्रहे खद स्थैर्ये हिंसाया च (भ्वा०) धातो 'अजिरशिशिर०' उ० १ ५३ सूत्रेण किरच्प्रत्ययान्तो निपात्यते । खदिरेण ह सोममाचखाद । तस्मात् खदिरो यदेनेनाखिदत् श० ३ ६ २ १२ अस्थिभ्य एवास्य (प्रजापते) खदिर समभवत् । तस्मात् स दारुण बहुसार श० १३ ४ ४ ६]

खनतु भूमिं खनित्वा कूपजलवद् विद्यायुक्तान्निष्पादयतु ११ ६१ [खनु अवदारणे (भ्वा०) धातोर्लोट्]

खनमानः भूमिमवदारयन् (कृषीवल) १ १७९ ६ [खनु अवदारणे (भ्वा०) धातो शानच् । व्यत्ययेनात्मनेपदम्]

खनामः विलिखाम ११ २८ **खनामि**=उत्पाटयामि १२ ६५ निष्पादयामि ११ २८ [खनु अवदारणे (भ्वा०) धातोर्लट्]

खनिता उत्पाटिता (ओषधी) १२ ६५ सेवक १२ १०० [खनु अवदारणे (भ्वा०) धातोस्तृच् कर्त्तरि]

खनित्रिमाः या खनित्रेण सञ्जाता (आप =जलानि) ७ ४९ २ [खनु अवदारणे (भ्वा०) धातो 'उषिखनिभ्या कित्' उ० ४ १६२ सूत्रेण ष्ट्रन् । खनित्रप्राति० जातार्थे डिमच्प्रत्यय]

खनित्रैः खननसाधनै १ १७९ ६ [खनु अवदारणे (भ्वा०)+ष्ट्रन्]

खम् आकाशम् ४० १२. आकाशवद् व्यापकम् (ब्रह्म) ४० १७ आकाशमिव व्यापकत्वात् खम् (ब्रह्म), आकाशवत् व्यापक होने से यह नाम ईश्वर का है, स० प्र० १४, ४० १७ [खनु अवदारणे (भ्वा०) खर्व गतौ (भ्वा०) धातोर्वा 'अन्येभ्योऽपि दृश्यते' अ० ३ २ १०१ सूत्रेण ड प्रत्यय । ख पुन खनते नि० ३ १३ छिद्र खमित्युक्तम गो० उ० २ ५]

खलितम् निर्बालशिरस्कम् (जनम्) ३० २१ [स्खल

मनिन् किच्च १० ८ [क्षौति शब्दयतीति विग्रहे टुक्षु शब्दे अदा०) बाहुलकादौणादिको मक् प्रत्यय । अथ ययापैव राध्नोति सा तृतीया सासौ द्यौ सैपा क्षुमा नाम श० ५ ३ ५ २६]

क्षुम्पमिव यथा सर्प फणम् १ ८४ ८ [क्षुम्प-इव-पदयो समास । क्षुम्पम्=क्षुभ सञ्चलने (दिवा०) धातो-रौणादिक प प्रत्यय । मकारस्य मकारश्छान्दस । क्षुम्पम् अहिच्छत्रक भवति यत् क्षुभ्यते नि० ५ १७ क्षुम्पति गतिकर्मा (निघ० २ १४) धातोर्वाच्प्रत्यय]

क्षुरः क्षुर इव छेदक आदित्य १५४ **क्षुराः**= धर्म्यशब्दा १ १६६ १० क्षुरति विलिखति येन वा छिनत्तीति विग्रहे—क्षुर विलेखने (तुदा०) धातो 'ऋज्रेन्द्राग्र०' उ० २ २८ सूत्रेण रन् प्रत्यय]

क्षे भूमी राज्याय विद्यते यस्मिँस्तस्मिन् (सुकर्मणि) प्र०—'अर्शादिभ्योऽच्' ४ ३ ६ [क्षा पृथिवीनाम (निघ०) १ १ ततो मत्वर्थेऽर्शादित्वादच्]

क्षेति क्षयति निवसति, प्र०—अत्र 'बहुल छन्दसि' इति विकरणस्य लुक् १ ६४ २ निवासयति ३ ५५ ४ निवासयत्यैश्वर्य करोति वा ५ ३७ ४ निवसति निवासयति वा ३ ५५ ७ **क्षेषि**=निवससि ७ १८ २ [क्षि निवास-गत्यो (तुदा०) धातोर्लट् । 'बहुल छन्दसीति' विकरणस्य लुक्]

क्षेत्रजेषे क्षेत्रमन्नादिसहित भूमिराज्य जेपते प्रापयति तस्मै (मेघाय) प्र०—अत्राऽन्तर्गतो ण्यर्थ, क्विबुपपद-समासश्च १ ३३ १५ [क्षेत्रोपपदे जेपृ गतौ (भ्वा०) धातो क्विप्]

क्षेत्रम् क्षियन्ति निवसन्ति पदार्था यस्मिँस्तत् ३ ३१ १५ क्षियन्ति निवसन्ति त देशम् ६ ४७ २० स्वनिवासस्थानम् १ १०० १८ **क्षेत्रस्य**=क्षयन्ति निव-सन्ति यस्मिन् जगति तस्य ७ ३५ १० शस्यस्योत्पत्तेरधि-करणस्य ४ ५७ १ **क्षेत्रात्**=गर्भाशयोदरान्निवासस्थानात् १ ११६ ७ सस्कृताया भार्याया ५ २ ३ **क्षेत्राणाम्**= धान्योद्भवाऽधिकरणानाम् १६ १८ **क्षेत्राणि**=क्षियन्ति निवसन्ति येषु तानि (स्थानानि) ६ ६१ १४ **क्षेत्रे**= क्षियन्ति निवसन्ति यस्मिन् पुण्ये कर्मणि तत्र ५ ६२ ७ [क्षयति नश्यति निवासहेतुर्भवतीति विग्रहे । क्षि निवास-गत्यो (तुदा०) क्षि क्षये (भ्वा०) धातोर्वा 'दादिभ्य-श्छन्दसि' उ० ४ १७० सूत्रेण त्रन् प्रत्यय । क्षेत्रम् क्षियते-र्निवासकर्मण नि० १० १४ इय वै क्षेत्र पृथिवी कौ० ३० ११ गो० उ० ५ १०]

क्षेत्रमिव यथा क्षेत्र तथा १ ११० ५ [क्षेत्र-इव पदयो समास । क्षेत्रपद व्याख्यातम्]

क्षेत्रसाता क्षेत्राणा विभागे ७ १६ ३ [क्षेत्र-सात-पदयो समास । सात =षण सम्भक्तौ (भ्वा०) धातो क्त । 'जनसनखना सञ्झलो' अ० ६ ४ ४२ सूत्रेणा-कारादेश]

क्षेत्रसाधसः ये क्षेत्राणि साध्नुवन्ति ते (ऋत्विज) ३ ८ ७ [क्षेत्रोपपदे साध ससिद्धौ (स्वा०) धातोरण् । ततो जसोऽसुक्]

क्षेत्रासाम् य क्षेत्राणि सनति विभजति तम् (प्रजा-जनम्) ४ ३८ १ [क्षेत्रोपपदे षण् सभक्तौ (भ्वा०) धातो 'अन्येष्वपि दृश्यत' इति ड प्रत्यय । पूर्वपदस्य सहिताया दीर्घ । उत्तरपदस्याकारादेशश्छान्दस]

क्षेपयत् प्रेरयेत् ५ ६ ७ [क्षिप प्रेरणे (तुदा०) धातो-र्णिजन्ताल्लेट्]

क्षेमम् कल्याणकर रक्षणम् १ ६६ २ प्राप्य योगम् ऋ० भू० १६० **क्षेमस्य**=कुशलता का, आर्याभि० १ ४१, ऋ० १ ७ ६ ७ रक्षणस्य १ १०० ७ **क्षेमः**=कल्याण-कारी (विद्वज्जन) १ ६७ १ रक्षणम् १८ ७ **क्षेमाय**= रक्षणाय १४ २१ रक्षण के लिए म० वि० १४७, ३ ४३ **क्षेमे**=रक्षणे ५ ३७ ५ **क्षेमेण**=रक्षणेन १ ५५ ४ [क्षयत्यज्ञान नाशयतीति विग्रहे क्षि क्षये (भ्वा०) धातो 'अर्त्तिस्तुसु०' उ० १ १४० सूत्रेण मन्प्रत्यय]

क्षेमयन्तम् रक्षयन्तम् (विद्वास जनम्) ३ ७ २ **क्षेमयन्त**=रक्षयन्त (त्रिधातव =सत्त्वरजस्तमासि) ५ ४७ ४ क्षेम रक्षण कुर्वन्त (विद्वासो जना) ४ ३३ १० [क्षेम करोतीति विग्रहे 'तत्करोति तदाचष्टे' इति वार्त्तिकेन णिचि शतृप्रत्यय । क्षेम व्याख्यातम्]

क्षेम्याय क्षेमेषु रक्षकेषु साधुस्तस्मै (वीरपुरुषाय) १६ ३३ [क्षेम व्याख्यातम् । तत तत्र साध्वर्थे यत्]

क्षेषत् निवसति ६ ३ १ **क्षेषि**=निवसे ६ ४४ निवससि ७ १८ २ [क्षि निवासगत्यो (तुदा०) धातोर्लेट् । 'सिब् बहुल लेटि' इति सिप्]

क्षेष्यन्तः निवसन्त (देवास =विद्वासो जना) २ ४ ३ [क्षि निवासगत्यो (तुदा०) धातो शतरि रूपम् । विकरणव्यत्ययेन स्य प्रत्यय]

क्षैतवत् क्षितौ भववन् (यश =धनमन्न कीर्त्ति वा ६ २ १ [क्षितिप्राति० भवार्थेऽण् प्रत्यये क्षैतम् । तन-स्तुल्यार्थे वति]

(सज्जनानाम्) २ २३ १ सब समूहों के पति (परमेश्वर) आर्याभि० २ ४६, २३ १६ **गणाय**=गणनीयाय (विद्वज्जनाय) ७ ५८ १ **गणाः**=समूहा ५ ७९ ५ राज्याधिकारिण ६ ३१ **गणे**=गणनीये विद्वत्सङ्घे ६ ४० १ **गणेन**=अध्यापकविद्यार्थिसमूहेन १ ११७ ३ गुणिधित-भृत्यसमूहेन सैन्येन वा १७ ३५ गणनीयेन सङ्ख्यानेन समूहेन ३ ३२ २ किरणसमूहेनोपदेश्यविद्यार्थिसमुदायेन ४ ५० ५ **गणेभ्यः**=सेवकेभ्य १६ २५ **गणैः**=किरण-समूहैर्मरुद्भिर्वा १ ६ ८ [गण सङ्ख्याने (चुरा०) धातोरच् । घञर्थे वा क । गण वाङ्नाम निघ० १ ११ गण गणनाद् गुणश्च नि० ६ ३६]

गणं गणम् समूह समूहम् ३ २६ ६ [गणपदस्य वीप्साया द्विर्वचनम्]

गणश्रिभिः समुदाय-लक्ष्मीभि ५ ६० ८ **गण-श्रियः**=गणाना समूहाना श्रिय शोभा येषु ते (मरुत = विद्वज्जना) १ ६४ ६ **गणश्रिये**=या गणाना समूहानां श्री शोभा तस्यै विद्युते २२ ३० [गण-श्रीपदयो समास]

गण्या सङ्ख्यातु योग्या (गी =वाणी) ३ ७ ५ [गण-प्राति० अर्हत्यर्थे यत्]

गत गच्छत १ १०६ २ प्राप्नुत, प्र०—अत्र लोटि शपो लुक् ३७ १४ **गतम्**=प्राप्नुतम् २ ३७ ५ गच्छत प्राप्नुत वा, प्र०—अत्र 'बहुल छन्दसि' इति शपो लुक् १ १३५ ४ [गम्लृ गतौ (भ्वा०) धातोर्लोट् । 'बहुल छन्दसी' ति शपो लुक्]

गतम् प्राप्तम् (ऋतम्=सत्यमुदक वा) १ १०५ ४ **गतः**=प्राप्त (अध्वा=मार्ग) ७ ५८ ३ [गम्लृ गतौ (भ्वा०) धातो क्त]

गतासुम् गतप्राणम्, मृतम् (जनम्) ऋ० भू० २११, १० १८ ८ मरे हुए (पति की आशा) को स० प्र० १५२, १० १८ ८ [गत-असुपदयो समास । अपि वासुरिति प्राणनामास्त शरीरे भवति तेन तद्वन्त नि० ३ ८]

गतिः गमनम् १८ १५ [गम्लृ गतौ (भ्वा०) धातो स्त्रिया क्तिन्-प्रत्यय]

गत्वा प्राप्य १७ ६५ [गम्लृ गतौ (भ्वा०) धातो क्त्वा]

गत्वी गत्वा प्राप्य वा ४ ४१ ५ [गम्लृ गतौ (भ्वा०) धातो 'स्नात्व्यादयश्च' अ० ७ १ ४९ सूत्रेण क्त्वा प्रत्ययान्तो निपात्यते]

गध्यम् ग्रहीतव्यम् (वाज=वेगम्) प्र०—अत्र वर्णव्यत्ययेन रेफलोपो हस्य घ ४ १६ ११ गध्यम् (वाजम्=अन्नाद्यैश्वर्यम्) ४ १६ १६ **गध्यस्य**=अभिकाङ्क्षितु योग्यस्य (राजस्य—विज्ञानादे) ६ १० ६ सर्वै प्राप्तु योग्यस्य (वाजस्य=विज्ञानस्य) ६ २६ २ [ग्रह उपादाने (क्र्या०) गृधु अभिकाङ्क्षायाम् (दिवा०) धातोर्वा 'अध्न्याद-यश्च' उ० ४ ११२ सूत्रेण यकि निपातनात् रूपसिद्धि । गध्य गृह्णाते नि० ५ १५]

गध्या मिश्रीभूतान् (शत्रून्) ४ ३८ ४ [गव्यपद व्याख्यानम् । गध्य पदनाम निघ० ४ २]

गन् गच्छति ७० ३१ [गन्ति गतिकर्मा निघं० २ १४]

गनीगन्ति भृश गच्छति ६ ७५ ३ भृश बोध प्रापयन्ति २६ ४०. [गम्लृ गतौ (भ्वा०) धातोर्यङ्लुगन्ताल्लट्]

गन्त प्राप्नुत ५ ८७ ६ गच्छन्तु प्राप्नुवन्तु ५ ४३ १० गच्छत गच्छन्ति वा, प्र०—अत्र पक्षे लडर्थे लोट्, 'बहुल छन्दसि' इति शपो लुक् 'तप्तनप्तन०' इति तनबादेशो ङित्वाऽभावादनुनासिकलोपाऽभाव १ ३८ २. **गन्तन**= प्राप्नुत २ ३४ ५ गच्छत ७ ५९ ५ गच्छथ ५ ५७ १ [गम्लृ गतौ (भ्वा०) धातोर्लोट् । शपो लुक्]

गन्तम् गच्छतम्, प्र०—अत्र 'बहुल छन्दसि' इति शपो लुक् १ १३५.५ गच्छथ ५ ५७ १ गमयतम् १ १३७ ३ प्राप्नुतम् १ १३७ १. [गम्लृ गतौ (भ्वा०) धातोर्लोट् । शपो लुक्]

गन्तम् गच्छतम् (निधिम्=ऐश्वर्यम्) ५ ४३ ८

गन्तवे गन्तुम्, प्र०—अत्र 'गत्यर्थकर्मणि०' इति द्वितीयार्थे चतुर्थी १ ४६ ७ प्राप्तुम् १५ ५५ जाने को स० वि० २०८, अथर्व० ६ ५ १७ [गम्लृ गतौ (भ्वा०) धातोतुमर्थे तवेन् प्रत्यय]

गन्ता गमनशील (वायु) २७.२६ **गन्तारम्**= ज्ञातार सर्वत्र व्याप्त्या प्रापकम् (इन्द्र=धारकमीश्वरम्) १ ६ ६ [गम्लृ गतौ (भ्वा०) धातोस्ताच्छील्ये तृन् । कर्त्तरि तृज्वा]

गन्ताम् प्राप्नुत , प्र०—अत्र विकरणलुक् ६ १६

गन्तारा गच्छत इति गमनशीलौ (अ०—अग्निजले), प्र०—अत्र 'सुपा सुलुग्०' इत्याकारादेश १ १७ २

गन्तु गच्छतु प्राप्नोतु ७ १८ ४ [गम्लृ गतौ (भ्वा०) धातोर्लोटि विकरणलुक्]

गन्तोः गन्तु प्राप्तुम् १ ८९ ६ गन्तव्यानि (अधर्म्य-कर्माणि) ३ ५४ १८ गमनम् २५ २२ [गम्लृ गतौ (भ्वा०)

सञ्चलने (भ्वा०) धातो 'खलति' उ० ३ ११२ सूत्रेणातच्-प्रत्यये धातो सलोप प्रत्ययान्तस्येत्वञ्च निपात्यते]

खल्याय खले सञ्चयाविकरणे साधवे (पुरुषाय) १६ ३३ [खलप्राति० 'तत्र साधु' इत्यर्थे यत्]

खल्वाः चणका १८ १२

खाताः खनिता (अवता =कूपा) ४ ५० ३ [खनु अवदारणे (भ्वा०) धातो क्त । 'जनसनखना सञ्झलो' अ० ६ ४ ४२ इत्याकारादेश । खात कूपनाम निघ० ३ २३]

खाद विनाशय, अ०—विनाशये ११ ७८

खादति खादेत् १ १५८ ४ **खादथ**=खादन्ति १ ६४ ७ [खाद भक्षणे (भ्वा०) धातोर्लेट्]

खादयः खाद्यानि भक्ष्यविशेषाणि (वस्तूनि) १ १६६ ६ भोक्तार (वीरजना) ५ ५४ ११ ये खादन्ति ते (मरुत = बलिष्ठा योद्धृजना) ७ ५६ १३ **खादिषु**=भक्षणादिषु ५ ५३ ४ **खादिः**=भोजनम् १ १६८ ३ [खाद भक्षणे (भ्वा०) धातोर्बाहुलकादौणादिक इन्प्रत्यय]

खादिनम् खादितु भक्षयितु शीलम् (शिशु =बालम्) ६ १६ ४० **खादिनः**=भक्षका (मरुत =विद्वज्जना) २ ३४ २ [खाद भक्षणे (भ्वा०) धातोर्णिनिस्ताच्छील्ये]

खादिहस्तम् खादिहस्तयोर्यस्य तम् (विद्वज्जनम्) ५ ५८ २. [खादि-हस्तपदयो समास । खादिरिति व्याख्यातम्]

खादोअर्णाः खादो भक्षणीयान्यन्नानि वा यान्यर्णांसि यासु ता (नद्य) ५ ४५ २ [खादो अर्ण नदीनाम निघ० १ १३]

खानि इन्द्रियाणि ४ २८ १ खातानि (जलस्थानानि) २ १५ ३ [खनु अवदारणे (भ्वा०) धातो 'अन्येष्वपि दृश्यते' इति ड प्रत्यय । ख पुन खनते नि० ३ १३]

खाम् नदीम्, प्र०—खा इति नदीनाम, निघ० १ १३, २ २८ ५

खार्यः एतत्परिमाणमितान्यन्नादीनि ४ ३२ १७

खिदत् दैन्य प्राप्नोति ४ २८ २ **खिदति**=दैन्य प्राप्नोति ४.२५ ७ [खिद दैन्ये (दिवा०) धातोर्लेट् लट् च]

खिद्रम् दैन्यम् ५ ८४ १ [खिद दैन्ये (दिवा०) धातो 'स्फायितञ्चिवञ्चि०' उ० २ १३ सूत्रेण रक्प्रत्यय । खिद्र खेदन छेदन भेदनम् नि० ११ ३७]

खिद्वः दीन (जन) ६ २२ ४ [खिद दैन्ये (दिवा०) धातोर् बाहु० औणादिको वनुप्रत्यय]

खिल्ये खण्डेषु भवे (व्यवहारे) ६ २८.२ [खिल-प्राति० भवार्थे यत् प्रत्यय]

खृगलेव यौ खृ खनन गलयतस्तौ (वायुविद्युतौ) २ ३९ ४

खेलस्य खण्डस्य १ ११६ १५

ख्यः प्रकथयसि ६ १५ १५ **ख्यत्**=वर्जयेत् ७ ३६ ७ **ख्यतम्**=निराकुरुतम् ५.६५ ६ **ख्यन्**=प्रकाशयन्ति ३ ३१ १२ ख्यापयेयु १ १६२ १ [ख्या प्रकथने (अदा०) धातोर्लुङ् । अडभावश्छान्दस । 'अस्यतिवक्तिख्यातिभ्यो-ऽङ्' इत्यङ्प्रत्यय]

गच्छ प्राप्नुहि ६ २१ गच्छतु, प्र०—अत्र व्यत्यय, १ २५ प्राप्नुहि प्रापय वा ४ २४ प्राप्नुहि गच्छतु वा १ २६ जानीहि ६ २१ गमन कुरु ४ ३४. गच्छतु गमय वा १ २६. गच्छति २ १६ कालविद्यया जानीहि याहि वा ६ २१ प्राणायामाऽभ्यासेन विद्धि ६ २१ पठन-पाठन-पुरस्सरेण श्रवणमनननिदिध्यासन-साक्षात्कारेण विजानीहि ६ २१ प्राप्त हो स० वि० १४०, अथर्व० १४ २ ७५ निवेहि ६ २१ **गच्छत**=प्राप्नुत ७ ४६ **गच्छतम्**= गमयत ४ ३३. प्राप्नुतम् ५ ७५ ३ **गच्छति**=चलति १ ८३ १ प्राप्नोति १ १ ४ **गच्छताम्**=गमयत., प्र०—अत्र लडर्थे लोडन्तर्गतो ण्यर्थश्च १ २१ ४ प्राप्नुत १ २२ १ **गच्छतु**=गच्छति २ २२ प्राप्त हो स० वि० १८६, अथर्व० ६ ५ १ **गच्छथ**=प्राप्नुथ ५ ५५ ७ **गच्छथ.**= गमन कुरुतम्, प्र०—लट्-प्रयोगोऽयम् १ २२ ४ प्राप्नुथ १ ११२ १८ **गच्छन्ति**=प्राप्नुवन्ति १ १४५ ३ यान्ति १ ८५ ११ [गम्लृ गतौ (भ्वा०) धातोर्लोट् । अन्यत्र लडपि]

गच्छाः प्राप्नुया ६ ३५ ३ **गच्छाति**=गच्छेत्, प्राप्नुयात् ७ ३३ १४ [गम्लृ गतौ (भ्वा०) धातोर्लेट्]

गणकम् गणितविदम् (विद्वासम्) ३० २० [गण-सख्याने (चुरा०) धातो कर्त्तरि ण्वुल्]

गणपतये समूहाना पालकाय वायवे २२ ३० **गणपतिभ्यः**=गणाना सेवकाना पालकेभ्य (गजपुरुषेभ्य) १६ २५ **गणपतिम्**=मुख्याना स्वामिनम् (परमेश्वरम्) २ २३ १. समूहपालकम् (जगदीश्वरम्) २३.१९ [गण-पतिपदयो समास । गणो गणनाद् गुणश्च नि० ६ ३६]

गणम् समूहम् १ ६४ १२ गणनीयम् (विद्वासम्) ५ ५८ २ मरुता समूह इव १ ८७ ४ **गणान्**=परि-चारकादीन् ६ ३१. **गणानाम्**=गणनीयाना मुख्यानाम्

(पूर्णविद्या परीक्षका जना) २ २७ ३ **गभीरे**=विस्तीर्णे (रजसी=द्यावापृथिव्यौ) ४ ४२ ३ गम्भीराश्रये (पृथ्वी=भूम्यन्तरिक्षे) ४ २३ १० गाम्भीर्यादिगुणसहिते (सूर्यभूमी) ४ ५६ ३ [गभीर महन्नाम निघ० ३ ३ गभीरमुदकनाम निघ० १ १२ गभीरा वाड्नाम निघ० १ ११ गभीरे द्यावापृथिवीनाम निघ० ३ ३० गम्लृ गतौ (भ्वा०) धातो 'गभीरगम्भीरौ' उ० ४ ३५ सूत्रेण ईरन् प्रत्यये मकारस्य भकारो निपात्यते। गभीरमिममध्वर कृधीति। अध्वरो वै यज्ञो महान्तमिम यज्ञ कृधीत्येवैतदाह श० ३ ६ ४ ५]

गभीरवेपा: गभीरोऽविद्वद्भिर्लक्षितुमशक्यो वेप कम्पन यस्य स (रश्मिगणेन युक्त सूर्य) प्र०—टुवेपृ कम्पने इत्यस्मात् 'सर्वधातुभ्योऽसुन्' इत्यसुन्प्रत्यय १ ३५ ७ [गभीर-वेपस्पदयो समास। गभीर व्याख्यातम्। वेपस्=टुवेपृ कम्पने (भ्वा०) धातो 'सर्वधातुभ्योऽसुन्' उ० ४ १८६ इत्यसुन्। गम्भीरवेपस=गम्भीरकर्माणो वा गम्भीरप्रज्ञा वा नि० ११ १७]

गभे प्रजायाम् २३ २२ [विड् वै गभ श० १३ २ ६ ६ तै० ३ ६ ७ ३]

गमत् गच्छति ७ ३२ १० आज्ञाप्यात् गमयति वा, प्र०—अत्र पक्षे वर्त्तमानार्थे लिडर्थे च लुड् 'बहुल छन्दस्यमाड्योगेऽपि' अ० ६ ४ ७५ इत्यडभाव १ ५.३ गच्छेत्, प्राप्नुयात् ३ १३ १ गच्छति ७ ३२ १० प्राप्नोति ७ ३२ ११ **गमथ:**=प्राप्नुथा ४ ४३.४ [गम्लृ गतौ (भ्वा०) धातोर्लुड्। अडभावश्छान्दस]

गमध्यै गन्तुम् १ १५४ ६ प्राप्तुम् ६ ३ [गम्लृ गतौ (भ्वा०) धातोस्तुमर्थेऽध्यैन् प्रत्यय]

गमन् गच्छन्तु प्राप्नुवन्तु, प्र०—अत्र लिडर्थे लुड्-प्रयोग १ ८६ ७ **गमन्ति**=प्राप्नुवन्ति ७ ३४ २० **गमन्तु**=गच्छन्तु ४ ३५ १ समन्तात् प्राप्नुवन्तु १ १८६ २ [गम्लृ गतौ (भ्वा०) धातोर्लुड् अडभावश्च। 'गमन्ति गमन्तु' प्रयोगयोस्तु लट्-लोटौ। विकरणस्य लुक्]

गमया प्राप्नुहि ८ ४४ प्रापय, प्र०—अत्र 'तुजादीनाम्०' इति दीर्घ ५ ५ १० **गमयन्ति**=प्राप्त कराते है स० वि० २०६, अथर्व० ६ ६ ६ [गम्लृ गतौ (भ्वा०) धातोर्णिचि लोट्। दीर्घान्तादेशश्छान्दस]

गमानि गच्छेयम् ४ १८ २ **गमाम**=गच्छेम ११ ५२ प्राप्नुयाम ३६ १६ [गम्लृ गतौ (भ्वा०) धातोर्लोट्। विकरणस्य लुक्]

गमिष्ठा अतिशयेन गन्तारौ (अश्विना=स्त्रीपुरुषौ) ५ ७६.२ [गम्लृ गतौ (भ्वा०) धातोस्तृच्। ततोऽतिशायन इष्ठन् प्रत्यय। 'तुरिष्ठेमेयस्सु' अ० ६ ४ १५४ सूत्रेण तृचो लोप]

गमेम प्राप्नुयाम ४ ५ १३ गच्छेम, प्र०—अत्र 'बहुल छन्दसि' इति शपो लुक् १८ ५१ **गमेमहि**=गच्छेम ६ ४४ २ सगच्छेमहि ५ ५१ १५ [गम्लृ गतौ (भ्वा०) धातोर्लिड्। विकरणस्य लुक्]

गमेयम् प्राप्नुयाम् १ १५८ ३

गमे: गच्छ, प्र०—अत्र 'वाच्छन्दसि सर्वे विधयो भवन्ति' इति छत्वाऽभाव १८ ५६ [गम्लृ गतौ (भ्वा०) धातोर्लिड्। छत्वाऽभावश्छान्दस]

गम्भन् गम्भनि धारके मेघे, प्र०—अत्र गमधातोरौणादिको बाहुलकाद् भनि प्रत्यय सप्तम्या लुक् च १३ ३०]

गम्भीरया अगाधबलया (सेनया) ६ १८ १०. [गम्लृ गतौ (भ्वा०) धातोरीरन्प्रत्यये 'गभीरगम्भीरौ' उ० ४ ३५ सूत्रेण मकारस्य भकारो मुमागमश्च। गम्भीरमुदकनाम निघ० १ १२ गम्भीरा वाड्नाम निघ० १ ११ गम्भीरे द्यावापृथिव्योर्नाम निघ० ३ ३०]

गम्यात् प्राप्नुयात् ६ १६ **गम्या:**=प्राप्नुहि २६ २४ गच्छे १ १८१ ५ प्रापये १ १८७ ७ प्राप्नुया ५ ४१ १८ [गम्लृ गतौ (भ्वा०) धातोर्लिड्। विकरणस्य लुक्]

गम्या: गन्तु योग्या (सुखदातारो जना) १ १६३ १३ गमयितु योग्या (अग्न्यादिपदार्था) १ १८१ ३ [गम्लृ गतौ (भ्वा०) धातो 'पोरदुपधात्' अ० ३,१ ६८ सूत्रेण यत्प्रत्यय]

गम्या: गच्छे १ १८१ ५ [गम्लृ गतौ (भ्वा०) धातोर्लिड्। शपो लुक्]

गयम् प्रजाम् ७.३२ ७ अपत्य धन गृह वा, प्र०—गय इति अपत्यनाम, निघ० २ २, धननाम निघ० २ १०, गृहनाम निघ० ३ ४, ६ ७१ ३ श्रेष्ठमपत्य धन वा ५ ४४ ७ भा०—अपत्य-धन-गृहादिकम् ३३ ६६ [गय अपत्यनाम निघ २ १ धननाम निघ २ १० गृहनाम निघ० ३ ४ स यदाह गयोऽसीति सोम वैतदाहैष ह वै चन्द्रमा भूत्वा सर्वांल्लोकान् गच्छति तद् यद्गच्छति तस्माद् गयस् तद्गयस्य गयत्वम् गो० पू० ५ १४ प्राणा वै गया श० १४ ८ १५ ७]

गयस्फान: [illegible] वर्धयिता

धातोस्तुमर्थे तोसुन् प्रत्ययः]

गन्धर्वः गां पृथिवीं धरतीति (वाचस्पतिः=राजप्रजाजनः) प्र०—अत्र पृषोदरादिना गो-शब्दस्य गस्भावः ९ १ यो गां पृथिवीं धरति स वायुः ११६३ २ यो गाः=पृथिवीं वाणीं वा धरति धारयति वा स सूर्यलोकः ७ ३ गोः पृथिव्या धर्त्ता (यमः=नियन्ता वायुः) २६ १३ यो गां वेदवाचं धरति सः (विद्वान्=पण्डितो जनः) ३७ ९ यो गाः सूर्यकिरणान् धरति स (चन्द्रमाः) १८ ४० यो गां पृथिवीं धरति स सूर्यः सूत्रात्मा वायुर्वा, भा०—विद्युदग्निः १७ ३२ येन वागादीन् धरति स, भा०—वेदवित् पुरुषः १८ ४२ द्वितीयो नियुक्तः पतिः ऋ० भू० २१४ एक स्त्री से सम्भोग करने से जो दूसरा नियोग से प्राप्त हो, वह (पति) स० प्र० १५३, १० ८५ ४० गच्छतीति गः ब्रह्म, तद्धरतीति स गन्धर्वः (विद्वान् जनः), सर्वगत ब्रह्म को जो धारण करने वाला है, उस (विद्वान् जन) का नाम गन्धर्व है, आर्याभि० २ २८, ३७.९ भोगाऽभिज्ञत्वात् गन्धर्व इति पतिसञ्ज्ञा ऋ० भू० २२४, १० ८५ ४० **गन्धर्वस्य**=यो गां पृथिवीं धरति स गन्धर्वो वायुस्तस्य, प्र०—वातो गन्धर्वस्तस्यापोऽप्सरसः, शत० ९ ३ ३ १०, १२ २७ १४ **गन्धर्वान्**=पृथिवीराज्यपालनादिव्यवहारेषु कुशलान् (राजपुरुषान्) ऋ० भू० २१६ **गन्धर्वाणाम्**=गायकानाम (जनानाम्) २४ ३७ **गन्धर्वाः**=ये वायवः इन्द्रियाणि च धरन्ति ते ९ ७ गानविद्याविदः सूर्यादयो वा, ऋ० भू० १३६ गानविद्याकुशला (विद्वांसः=सत्यशास्त्रविदो जनाः) १२ ९८ [वरुण आदित्यो राजेत्याह तस्य गन्धर्वा विशस्त इमेऽआसत इति युवानः शोभना उपसमेता भवन्ति तानुपदिशत्यथर्वाणो वेदः सोऽयमिति श० १३ ४ ३ ७ गन्धा मे मोदो मे प्रमोदो मे। तन्मे युष्मासु (गन्धर्वेषु) जै० उ० ३.२५ ४ रूपमिति गन्धर्वा (उपासते) श० १० ५ २ २० योषित्कामा वै गन्धर्वा श० ३ २ ४ ३ स्त्रीकामा वै गन्धर्वा ऐ० १ २७ त (गन्धर्वा) उ ह स्त्रीकामाः कौ० १२ ३ तस्य (पतञ्जलस्य काप्यस्य) आसीद् दुहिता गन्धर्वगृहीता श० १४ ६ ३ १ एतदेव कुमारी गन्धर्वगृहीतोवाच कौ० २ ९ एतदु हैवोवाच कुमारी गन्धर्वगृहीता ऐ० ५ २९ तमेते गन्धर्वाः सोमरक्षा जुगुपुरिमे धिष्ण्या इमा होत्रा श० ३ ६ २ ९ वातो गन्धर्व श० ९ ४.१ १० प्राणो वै गन्धर्व जै० उ० ३ ३६ ३ मनो गन्धर्व श० ९ ४ १ १२ यज्ञो गन्धर्व श० ९ ४ १ ११ अग्निर्गन्धर्व श० ९ ४ १ ७ चन्द्रमा गन्धर्व श० ९ ४ १ ९ सूर्यो गन्धर्व श० ९ ४ १ ८ असौ वाऽदित्यो दिव्यो गन्धर्व श० ६ ३ १ १९. गन्धर्वाः सप्तविंशति श० ५ १ ४ ८ (अश्वो) वाजी (भूत्वा) गन्धर्वान् अवहत् श० १० ६ ४ १]

गन्धर्वाप्सरोभ्यः गन्धर्वाश्चाऽप्सरसश्च ताभ्यः ३० ८ [गन्धर्व-अप्सरस् पदयोः समासः 'गो' इत्युपपदे धृञ् धारणे (भ्वा०) धातोर्वन् औणादिकः। पृषोदरादित्वाद् गस्भावो गोपदस्य। अप्सरा अप्सारिण्यपि वाऽप्स इति रूपनाम नि० ५ १३]

गन्धारीणामिव यथा पृथिवीराज्यधर्त्रीणां स्त्रीणाम् १ १२६ ७ ['गो' इत्युपपदे धृञ् धारणे (भ्वा०) धातोरण्-प्रत्यये स्त्रियां ङीप्। तत इव पदेन सह समासः]

गन्म प्राप्नुयाम ६ ६१ १४ [गम्लृ गतौ (भ्वा०) धातोर्लिङ्। विकरणलुक्। मकारस्य नकारो 'म्वोश्च' सूत्रेण। अडभावश्च]

गभस्तिपूतम् गभस्तिभिः किरणैर्बाहुभ्यां पवित्रीकृतम् (राज्यं धनं वा) २ १४ ८ **गभस्तिपूतः**=गभस्तिभिः किरणैः पूत इव (देवः=विद्वान्), प्र०—गभस्तय इति रश्मिनामसु पठितम्, निघ० १ ५, ७ १ [गभस्ति-पूतपदयोः समासः। गभमन्धकारमस्यतीति विग्रहे गभोपपदे असु क्षेपणे (दिवा०) धातोर्बहुलकादौणादिकः ति प्रत्ययः। गभस्तयः रश्मिनाम निघ० १ ५ अङ्गुलिनाम निघ० २ ५ गभस्ती बाहुनाम निघ० २ ४ पूतम्=पूञ् पवने (क्र्या०) धातोः क्तः]

गभस्तिम् रश्मिम् १ ५४ ४ **गभस्ती**=हस्तौ, प्र०—गभस्तीति बाहुनाम, निघ० २ ४, ६ १९.३ **गभस्तौ**=किरणे ६ २० ९ विज्ञानप्रकाशे २ १८ ८ नीतिप्रकाशे १ ६२ १२ अङ्गुल्या निर्देशे, प्र०—गभस्तय इति अङ्गुलिनामसु पठितम्, निघ० २ ५, ७ १७ **गभस्त्योः**=रश्मियुक्तयोः सूर्यप्रसिद्धाग्न्योरिव भुजयोः १ ६४ १० बाह्वोः १ १३० ४ हस्तयोर्मध्ये ५ ५४ ११ [गभस्तिरिति व्याख्यातम्। गभस्ति रश्मिनाम निघ० १ ४ बाहुनाम निघ० २ ४ पाणी वै गभस्ती श० ४ १ १ ९]

गभीरम् गूढाऽऽशयम् (इन्द्र=विद्युतम्) ३ ४६ ४ अगाधम् (ब्रह्म=धनमन्नं वा) ५ ८५ १ अगाधगुणम् (करदाय जनम्) ६ ३० गहनम् (पदं=दुःखम्) ४ ५ ५ महोत्तमगुणागाधम् (धाम) १ ९३ ३ **गभीरः**=गाम्भीर्यगुणोपेतः (सिन्धुः=समुद्रः) २ ३२ १६ **गभीराः**=गम्भीराशया (राजपुरुषाः) ६ ७५ ९ अगाधाशया (पितरः=पालनक्षमा राजपुरुषाः) २९ ४६ शीलवन्त

१४ २३ गर्भ इव विद्याशुभगुणैरावृता (सज्जना) १४ २५ **गर्भे**=सर्वपदार्थाऽन्त स्थाने १ ६५ २ आभ्यन्तरे ६ १६ ३५ मध्ये १४८ ५ कुक्षौ ११ ५७ अन्त करणे, भा०—सर्वप्राणिना हृदये ३२ ४ गर्भस्थे जीवात्मनि ३११९ **गर्भेभ्यः**=गन्तु स्तोतु योग्येभ्य (विद्वद्भ्य) १ १४६ ५ [गिरति गृणातीति विग्रहे गॄ निगरणे (तुदा०) धातो 'अर्त्तिगृभ्या भन्' उ० ३ १५२ सूत्रेण भन् प्रत्यय । गर्भ गृभेर्गृणात्यर्थे गिरत्यनर्थानिति वा नि० १० २३ एष वै गर्भो देवाना (यजु ३७ १४) य एष (सूर्य) तपति, एष हीद सर्व गृह्णात्येतेनेद सर्व गृभीतम् श० १४ १ ४ २ प्रजा वै पशवो गर्भ श० १३ २ ८ ५ वायव्या गर्भा तै० ३ ९ १७ ५ पुरुष उ गर्भ जै० उ० ३ ३६ ३ इन्द्रिय वै गर्भ तै० १ ८ ३ ३ गर्भ समित् श० ६ ६ २ १५ सवत्सरो वाव गर्भ पञ्चविश, तस्य चतुर्विशत्यर्धमासा सवत्सर एव गर्भा पञ्चविशस्तद्यत्तमाह गर्भ इति सवत्सरो ह त्रयोदशो मासो गर्भो भूत्वर्त्तून् प्रविशति श० ८ ४ १ १६ विपुरूपा इव हि गर्भा श० ४ ५ २ १२ सवत्सरे वृद्धगर्भा प्रजायन्ते मै० १ ६ १२]

गर्भरसा रसो गर्भे यस्या सा (माता=पृथिवी) १ १६४ ८ [गर्भ-रसपदयो समास । गर्भपद व्याख्यातम्]

गर्भिणीषु गर्भा विद्यन्ते यासु तासु (स्त्रीषु) ३ २९ ५ गर्भप्राति० मत्वर्थे इनि-प्रत्यये स्त्रिया ङीप्]

गर्हसे निन्दसि ४ ३ ५ [गर्ह कुत्सायाम् (भ्वा०) धातोर्लट्]

गल्गलीति भृश निगलतीव वर्त्तते २२ २२ [गल अदने (भ्वा०) धातोर्यङ्लुगन्ताल्लट् । छान्दसत्वादभ्यासस्य लोपो न]

गवयम् गोसदृश (पशुविशेषम्), रोष वा १३ ४९ **गवयस्य**=गोसदृशस्य (पशो) ४ २१ ८ [गौरिवायो गमन प्राप्तिर्वाऽस्येति गवय । गो-अयपदयो समास]

गवयी गवयस्य स्त्री २४ ३० [गवयपद व्याख्यातम् ततो गौरादित्वान् ङीष्]

गवा किरणेन ५ ३० ७ **गवाम्**=स्वस्वविषय-प्रकाशकाना मन आदीन्द्रियाणा किरणाना पशूना वा, प्र०—गौरिति पदनामसु पठितम्, निघ० ४ १ इत्यत्रेन्द्रियाणा पशूना च ग्रहणम् । गाव इति रश्मिनामसु च पठितम् निघ० १ ५, १ १० ७ वाणीनाम् १ १२२ ७ गन्तॄणाम् (रश्मीनाम्) ५ ३० ४ गवा पृथिव्यादीना वा १ १० १ ४ धेन्वादीनाम् ३ ४ १ ३ गवि=वाचि ... इन्द्रियाय पृथिव्यै वा १ ४३ २ इन्द्रिय-धेनुसमूहाय ३ ५९ गवादि-पशुहिताय ५ ३३ ४ गोजातये १ ४३ ६ स्तावकाय (सज्जनाय) ६ ४५ २२ [गम्लृ गतौ (भ्वा०) धातो 'गमेर्डो' उ० २ ६७ सूत्रेण डोस्-प्रत्यय । गौ पृथिवी-नाम निघ० १ १ गौ वाङ्नाम निघ० १ ११ गौ स्तोतृ-नाम निघ० ३ १६ गौरिति पृथिव्या नामधेयम् । यद्दूर गता भवति । यच्चास्या भूतानि गच्छन्ति । गातेर्वौकारो नामकरण । अथापि पशुनामेह भवत्येतस्मादेव नि० २ ५]

गवाशिरम् गाव किरणा इन्द्रियाणि वाऽश्नन्ति यस्मिँस्तम् (सोमम्=ऐश्वर्यकारक पेयम्) ३.३२ २ गावोऽश्नन्ति त यम् (सोमम्=ओषधिगणमिवैश्वर्यम्) ३ ४२ १ **गवाशिरः**=ये गोभिरिन्द्रियैर्वाऽश्यन्ते ये गोभि किरणैर्वाऽश्यन्ते (सोमा=ऐश्वर्ययुक्ता पदार्था) १ १३७ १ गोरससम्कर्त्ता (जन) १ १८७ ९ गा किरणा-नश्नुते तस्य (शुक्रस्य=उदकस्य) २ ४१ ३ [गो-आङ्-अशिरपदाना समास । गौरिति व्याख्यानम् । अशिरम् अश भोजने (क्र्या०) धातो 'अशेर्नित्' उ० १ ५२ सूत्रेण किरच्प्रत्यय]

गविषः गवामिच्छो (राज्ञ) ४ ४१ ७ गा इच्छन् (राजा) गा प्राप्तुमिच्छन् (सविता=सवितृलोकम्) ४ १३ २ ['गो' इत्युपपदे इषु इच्छायाम् (तुदा०) धातो क्विप्]

गविष्टिषु किरणाना सङ्गतिषु ५ ६३ ५ गवा किरणानामिष्टय सङ्गतयो यासु क्रियासु तासु ६ ५९ ७ **गविष्टौ**=गवा किरणाना सङ्गमने ३ ४७ ४ किरण-समागमे ६ ३१ ३ गवा किरणाना सङ्गत्याम् ३३ ६३ गो स्वर्गस्य सुखविशेषस्येष्टाविच्छाया सत्याम् ३४ २३ गवामिन्द्रिय-पृथिवीराज्य-विद्याप्रकाशकानामिष्टयो यस्मिँ-स्तस्मिन् तम् (चक्रवर्त्तिराज्यैश्वर्ये) १ ९१ २३ गो सुशिक्षि-ताया वाच सङ्गतौ ६ ४७ २० [गो-इष्टिपदयो समास । गौरिति व्याख्यातम् । इष्टि=यज देवपूजासगतिकरणदानेषु (भ्वा०) धातो स्त्रिया भावे क्तिन्]

गविष्ठिरः=यो गवि सुशिक्षिताया वाचि तिष्ठति (विद्वज्जन) ५ १ १२ गोषु किरणेषु तिष्ठतीति (विद्युत्) १५ २५ [गो-स्थिरपदयो समास । गौरिति व्याख्यातम् । स्थिरम्=ष्ठा गतिनिवृत्तौ (भ्वा०) धातो 'अजिरशिशिर०' उ० १ ५३ सूत्रेण किरच् निपात्यते । 'गवियुधिभ्या स्थिर' इति षत्वम् । 'हलदन्तात्सप्तम्या ०' इत्यलुक्]

गवेन्द्रियम् ...

(परमेश्वर) प्र०—गय इत्यपत्यनामसु पठितम्, निघ० २ २, धननामसु च, निघ० ३ ४, ४.३७ गयाना प्राणाना वर्धयिता (ईश्वरो विद्वज्जनो वा), प्र०—स्फायी वृद्धौ इत्यस्माद्धातोर्नन्द्यादेराकृतिगणत्वाल्ल्यु 'छान्दसो वर्णलोप' इति यलोप 'अत्र सायणाचार्येण स्फान इति कर्त्तरि ल्युडन्त व्याख्यात तदशुद्धम् १ ९१ १२ धनवर्धक (विद्वज्जन) १ ९१ १९ गृहस्य वर्धक (गृहस्थो जन) ७.५४ २ प्रजाधन जनपद और सुराज्य का बढाने वाला (ईश्वर) आर्याभि० १ ३८, ऋ० १ ६ २१ १२ [गय इति व्याख्यातम्। स्फान =स्फायी वृद्धौ (भ्वा०) धातोर्नन्द्यादित्वाल्ल्यु। यकारलोपश्छान्दस। गयस्फान प्रतरण सुवीर (ऋ० १ ९ १९) इति गवा न स्फाययिता प्रतारयितैधीत्येव ऐ० १ १३]

गरन् निगलेयु १ १५८ ५ [गॄ निगरणे (तुदा०) धातोर्लङ्। अडभावो व्यत्ययेन शप् च]

गरुत्मान् गरुत शब्दा विद्यन्ते यस्य स (सुपर्ण = पक्षी) १२ ४ गुर्वात्मा (सुपर्ण =वृक्ष इवाध्येताऽध्यापक पक्षी च) १२ ४ यो गुर्वात्मा स गरुत्मान्, जिसका आत्मा अर्थात् स्वरूप महान् है, वह (ईश्वर), स० प्र० १५, १ १६४ ४६ [गिरति निगलतीति विग्रहे गॄ निगरणे (तुदा०) धातो 'मृग्रोरुति' उ० १ ९४ सूत्रेण उति प्रत्यय। गरुत्प्राति० मतुप्। गरुत्मत् गरणवान् गुर्वात्मा महात्मेति वा नि० ७ १८]

गर्त्तम् गृहम् ५ ६८ ५ उपदेशक-गृहम्, प्र०—गर्त्त इति गृहनाम, निघ० ३ ४, १० १६ [गॄ निगरणे (तुदा०) धातो 'हसिमृग्रिण्०' उ० ३ ८६ सूत्रेण तन् प्रत्यय। गिरति निगलतीति विग्रह। गर्त्त सभास्थाणुर् गृणाते सत्यसगरो भवति नि० ३ ५ श्मशानसचयोऽपि गर्त्त उच्यते गुरतेरपगूर्णो भवति नि० ३ ५ गृहनाम निघ० ३ ४ पितृदेवत्यो वै गर्त्त श० ५ २ १ ७ पुरुपो गर्त्त श० ५ ४ १ १५ रथोऽपि गर्त्त उच्यते गृणाते स्तुतिकर्मण नि० ३ ५]

गर्त्तसदम् यो गर्त्ते गृहे सीदति तम् (वीरपुरुपम्) २ ३३ ११ [गर्त्तमिति व्याख्यातम्। तदुपपदे सद्लृ विशरणगत्यवसादनेपु (भ्वा०) धातो कर्त्तरि क्विप्]

गर्त्तारुगिव गर्त्ते आरुगारोहण गर्त्तारुक् तद्वत् १ १२४ ७ [गर्त्तारुगिव गर्त्तारोहिणीव नि० ३ ५]

गर्दभम् लम्वकर्ण खरम् ३ ५३ २३ गर्दभस्य स्वभावयुक्तम् (शत्रु जनम्) १ २९ ५ **गर्दभः**=पशुविशेप २४ ४० [गर्द शब्दे (भ्वा०) धातो 'कृशृशलि०' उ० ३ १२२ सूत्रेणाभच्। गर्दयति शब्द करोतीति विग्रह। तस्मात्स (गर्दभ) द्विरेता वाजी। ऐ० ४ ९ अथ यदासा पासव पर्यशिप्यन्त ततो गर्दभ समभवत्, तस्माद् यत्र पासुल भवति गर्दभस्थानमिव वतेत्याहु श० ४ ५ १ ९]

गर्भत्वम् गर्भस्याधिकरणा वाक् तस्या भावस्तत् १ ६४ [गर्भमिति पद द्रष्टव्यम्। गर्भप्राति० भावे त्व प्रत्यय]

गर्भधम् यो गर्भ दधाति तम् (जगदीश्वरम्), भा०—प्रकृते पतिम्, सर्वेपा बीजानि विदधाति यस्त जगदीश्वरम् २३ १९ प्रकृतिम् २३ १९ सब जगत् को जिस सामर्थ्य से उत्पन्न किया है, उस अपने सामर्थ्य का धारण करने वाला (जगदीश्वर), आर्याभि० २ ४६ [गर्भमिति पदे गर्भव्याख्या। तदुपपदे डुधाञ् धारणपोपणयो (जु०) धातो क प्रत्यय]

गर्भम् बीजम्, भा०—सूर्यादीना पर कारण प्रकृति, तत्र बीजधारक परमात्मान च २३ ६३ धारणम् १७ ३२ सर्वजगदुत्पत्तिस्थानम् ५ ४७ ४ सर्वव्यवहारादिकारणम् (अहोरात्रम्) १ ९५ २ सर्वलोकानामुत्पत्तिस्थान प्रकृताख्यम् १७ ३० किरणाख्य वीर्यम् १ १६४ ३३ विद्याज बोधम् १ १५६ ३ स्तुतिविपयम् (आदित्य=सूर्यम्) १३ ४१ कार्याख्यम् (सूनुम्) १ १८५ २ अन्त स्वरूपम् ४ ७ ९ ग्रहणम् २ १८ २ गर्भमिव वर्त्तमान जल-समुदायम् ३ ३१ ७ ग्रहीतु योग्य वस्तु १७ २९ मध्यव्यापिनम् (विद्युद्रूपमग्निम्) ३ १ १३ मूल प्रधानम् २७ २५ विद्यादिसद्गुणस्थापनाख्यम् ३ २७ ९ गर्भ इव स्थितम् (इन्द्र=सूर्यम्) २८ २५ **गर्भः**=यो गृह्यते स (भा०= सन्तान) १९ ७६ यो गीर्यते स्वीक्रियते स, [अ०—अर्क, भा०—पुत्र) ११ ४३ योऽनर्थान् गिरति विनाशयति स (अग्नि =अग्नितुल्यो जीव), प्र०—गर्भो गृभेर्गृणात्यर्थे गिरत्यनर्थानिति, यदा हि स्त्रीगुणान् गृह्णाति, गुणाश्चास्या गृह्यन्तेऽथ गर्भो भवति, निघ १० २३, १२ ३७ गृह्यते सिच्यते वा स गर्भ (सन्तान) ८ २८ गर्भ इवाऽऽवृत. (जगदीश्वरो जीवो वा) १७० २ स्तोतव्योऽन्तस्थो वा (परमात्मा जीवात्मा वा) १७० १ स्तोतुमर्ह (सूर्य) ३ १ १२ अन्तस्थ आशय २९ ५४ यो गृह्णाति स (जिज्ञासुर्जन) १ १५२ ३ ग्रहीतव्य (पदार्थ) १ १६४.९ आवरक (कवि =काल) १ ९५ ४ कारणभूत (विद्वजन) ५ ४५ ३ अन्तर्हित (अपा पति =राजा) १० ३ कुक्षिस्थ (पुत्र) २ ११४ **गर्भाः**=गर्भधारणशक्तय

गाणपत्यम् गणाना सेनासमूहाना पतित्वम् ११ १५ [गणपतिप्राति० भावे कर्मणि वा 'पत्यन्तपुरोहितादिभ्यो यक्' अ० ५ १ १२८ सूत्रेण यक्]

गात् प्राप्नोतु ३३ ५६ प्राप्नोति ७ ३ ६ प्राप्नुयात् ३ ३१ १ एति १ १०४ ५ गच्छेत्, प्र०—अत्र लडर्थे लुडडभावश्च १ ३८ ५ गच्छति १ १६७ ५ **गात**=गच्छन्तु प्र०—अत्र लोडर्थे लुड् पुरुषव्यत्ययश्च ३ २१ [इण् गतौ (अदा०) धातोर्लुड । 'इणो गा लुडी' ति गादेश । अड-भावश्च]

गातन प्रशसत ५ ५५ ६ [इण् गतौ (अदा०) धातो-र्लुड् । इणो गादेश तस्य तनवादेशश्च । गा स्तुतौ (जुहो०) धातोर्लोड् वा । व्यत्ययेन शपो लुक्]

गातवे स्तावकाय (वैश्वानराय=विद्वज्जनाय) ३ ३ १
गातुभिः=विद्यासुशिक्षिताभिर्वाणीभि १ १०० ४
गातुम्=पृथिवीम्, प्र०—गातुरिति पृथिवीनाम, निघ० ११ 'गातुमिति वाङ्नाम' निघ० १ ११, १ ११२ १६ पृथिवीराज्यादिनिष्पन्नमुपकारम्, भूगर्भविद्यान्वित भूगोलम् ८ २१ गीयते ज्ञायते येन स गातुवेदस्तम्, प्र०—गातुरिति पदनामसु पठितम्, निघ ४ १. अनेन ज्ञानार्थो गृह्यते, गीयते शब्द्यते यस्त यज्ञम् २ २१ बोधसमूहम् १ ७२ ६ वाणीम् ४ १८ १० स्तुतिम् १ १५१ २ प्राप्तव्यम् (ऊर्मिम्=उषसम्) १ ६५ १० **गातुः**=स्तावक (जन) ३ ४ ४ [गायति षड्जादिस्वरान् आलापयतीति विग्रहे गा स्तुतौ (जुहो०) धातो 'कमिमनिजनि०' उ० १ ७३ सूत्रेण तु प्रत्यय । गातु पृथिवीनाम निघ० १ १ पदनाम निघ० ४ १ गातुम् गमनम् नि० ४ २१ गातु वित्त्वेति यज्ञ वित्त्वेत्येवैत-दाह श० १ ६ २ २८ गातु गमनम् नि० ४ २२]

गातुमत्या प्रशस्तवाग्भूमियुक्तया (ससदा=सभया) ७ ५४ ३ [गातुपद व्याख्यातम् । तत प्रशसाया मतुपि स्त्रिया डीप्]

गातुयन् यो गातु पृथिवीमेति स (सविता=सूर्य) १ ५२ ८ [गातूपपदे इण् गतौ (अदा०) धातो शतृप्रत्यय । गातुपद व्याख्यातम्]

गातुयन्तीव आत्मनो गातु पृथिवीमिच्छन्तीव १ १६६ ५ [गातुरिति व्याख्यातम् । तत इच्छायामर्थे क्य-जन्ताच्छत्रन्तान् डीप् । तत इवपदेन समास]

गातुवित् प्रशसावित् (सोम=विद्वान्) ३ ६२ १३ यो भूगर्भविद्यया गातु पृथिवी वेत्ति स (राजा) १ ५१ ३
गातुविदम्=वेदवाग्वेत्तारम् (शुभगुणकर्मस्वभावयुक्त जनम्) १ १०५ १५ **गातुविदः**=गीयते स्तूयतेऽनया सा गातु स्तुतिस्तस्या विदो वक्तार (देवा=विद्वज्जना) प्र०—'कमिमनिजनि०' उ० १ ७३ अनेन 'गा स्तुतौ' इत्य-स्मात् तु प्रत्यय २ २१ स्वगुणकर्मस्वभावेन गातु पृथ्वी विदन्त (देवा=गृहपतयो जना), प्र०—गातुरिति पृथ्वीनामसु पठितम्, निघ० ११, ८ २१ [गातूपपदे विद ज्ञाने (अदा०) धातो क्विप् । गातुरिति व्याख्यातम् । गातु-विदो हि देवा श० ४ ४ ४ १३]

गात्रा गात्राण्यङ्गानि १ १६२ १८ [गच्छति चेष्टते ऽनेनेति गम्लृ गतौ (भ्वा०) धातो 'गमेरा च' उ० ४ १६६ सूत्रेण त्रन्-प्रत्यय आकारादेशश्च । 'शेश्छन्दसि बहुलमि' ति शेर्लोप]

गात्रात् हस्तात् १ १६२ ११ **गात्राणाम्**=अङ्गा-नाम् २५ ४२ **गात्राणि**=अङ्गानि २३ ३६ [गात्र व्याख्यातम्]

गाथपतिम् यो गाथाना स्तावकाना विदुषा पति पालकस्तम् (रुद्रम्=परमेश्वरम्) १ ४३ ४ [गाथ-पति-पदयो समास । गाथ=गा स्तुतौ (जु०) धातो 'उपि-कुषि०' उ० २ ४ सूत्रेण थन्]

गाथम् प्रशसनीयमुपदेशम् १ १६७ ६ **गाथानाम्**=परस्पर प्रश्नोत्तरकथनयुक्ता गाथास्तासाम्, ऋ० भू० ८३ [गा स्तुतौ (जु०) धातो 'उषिकुपिगार्त्तिभ्यस्थन्' उ० २ ४ सूत्रेण थन्प्रत्यय]

गाथान्यः यो गाथा नयति तस्य (सज्जनस्य) १ १९० १ [गाथोपपदे णीञ् प्रापणे (भ्वा०) धातो क्विप्]

गाथिनः गानकर्त्तार (अर्किण=विद्वासो जना) १ ७ १ [गाथाप्राति० मत्वर्थ इनि प्रत्यय । गाथा वाङ् नाम निघ० १ ११]

गाधम् अपरिमितमुदकम् ७ ६० ७ विलोडनम् १ ६१ ११ प्रज्ञाविलोडनम् ६ ४८ ६ गभीरम् ५ ४७ ७ गृहीतपरिमाणम् (गुणसमूहम्) ६ २४ ८ **गाधानि**=परि-मितानि (अर्णासि=उदकानि) ७ १८ ५ [गाहू विलोडने (भ्वा०) धातोर्घञ् भावे । हकारस्य धकारश्छान्दस । अथाप्यन्तव्यापत्तिर्भवति, ओघो मेघो नाधो गाध नि० २ २]

गानि गच्छेयम् ४ १८ ३

गाम् वाणी पृथिवी वा ३५ १८ युवावस्थास्थ वृषभम् २८ ३२ वाचम् २८ २५ धेनुम् ६ ४६ २ धेन्वादिक पृथिव्यादिक वा १२ ७८ प्राप्तव्य बोधम् २८ २७ वली-वर्दम् १ १५१ ४ ['गवि' पदे द्रष्टव्यम्]

गवेषणम् गा भूमि प्रापकम् (रथ=प्रगन्त यानम्) ७ २३ ३ गवा वाचादीनामीपण येन तम् (विद्वद्गणम्) ६ ५६ ५ **गवेषणः**=उत्तमवाग्विद्याऽन्वेपी (न्यायकारी राजा) ७ २० ५ यो गा वाणीमिच्छति स (विद्वज्जन) गवा किरणानामिष्ट सूर्य इव (विद्वान्) १ १३२ ३ ['गो' इत्युपपदे इपु गतौ (दिवा०) धातोर्नन्द्यादित्वाल्ल्यु प्रत्यय । 'गो' इति व्याख्यातम्]

गव्यता गौरिवाऽऽचरन्तौ (जनौ) १ १३१ ३ गवा वाचेवाऽऽचरता (मनसा) ६ ४६ १० आत्मनो गौरिवाचरता (मनसा=अन्त करणेन) ३ ३१ ६ गो प्रचुरो गव्य तदाचरतीव तेन (वचसा=वचनेन) ४ १ १५ **गव्यते**=गौरिवाचरते (सज्जनाय) ६ ४५ २६ **गव्यन्**=गौरिवाऽऽचरन् (सज्जन) ३ ३३ ११ **गव्यन्तः**=आत्मनो गा इच्छन्त (विप्रा=मेधाविनो जना) ४ १७ १६ आत्मनो गा सुशिक्षिता वाचमुत्तमा भूमि वेच्छन्त (सत्पुरुषा) ७ ३२ २३ गा वाणी चक्षाणा (मनुष्या) २७ ३६ आत्मनो गा इन्द्रियाणीच्छन्त (जना) प्र०—अत्र गोशब्दात् 'सुप आत्मन क्यच्' अ० ३ १ ८ इति क्यच्प्रत्यय 'गौरिति पदनामसु पठितम्, निघ० ४ १, १ ३ ३ १ [गौरिति व्याख्यातम् । गोपदाद् इच्छायामर्थे क्यचि शतृ-प्रत्यय]

गव्यम् गवामिदम् (दुग्धादिकम्) ६ १७ १ गवा भावम् १ १२६ ३ गोरिदम् (वस्तु) ५ २६ १२ गोमय वाङ्मयम् ४ २ १७ गोषु साधुम् (पशुम्) ५ ६१ ५ गोभ्यो हितम् (राध=धनम्) २७ २७ गोभ्य पशुभ्य इन्द्रियेभ्यो वा हितम् १ ७२ ८ गोविकार दुग्धादिक सुवर्णादिक वा १ १४० १३ गवे वाचे हित व्यवहारम् ४ ५८ १० गवि वाचि भव बोध, धेनौ भव दुग्धादिक वा १७ ६८ **गव्यस्य**=गवा किरणाना विकारस्य ५ ३० १५ **गव्येभिः**=गोर्विकारैर्घृतादिभि ६ ६० १४ [गोप्राति० अवयवविकारयोरर्थयो 'गोपयसोर्यत्' इति यत् । अथवा हितार्थे साध्वर्थे भवार्थे वा यत्]

गव्या गोषु हितानि (राधासि=धनानि) ६ ४४ १२ गव्यानि सुवाचि भवानि (प्रवचनानि) ७ १८ ७ [गोप्राति० हितार्थे भवार्थे वा यत्]

गव्युः गा पृथिवीराज्यमिच्छु (इन्द्र=राजा) ६ ४१ २. आत्मनो गा वाणीमिच्छु (पूर्णविद्यो जन) ३ ३१ ८ य आत्मनो गा पृथिवी वाच वेच्छु (धार्मिको जन) ४ २३ १० गा पृथिवीमुत्तमा वाच, वा कामयमान (धर्मात्माऽऽप्तो विद्वान्, राजाऽध्यापक परीक्षको वा) ७ ३१ ३ आत्मनो गा धेनु-पृथिवीन्द्रियकिरणानिच्छु (इन्द्र=सर्वाधीशो जन) १ ५१ १४ बहवो गावो विद्यन्ते यस्मिन् स (रथ=विमानादियानविशेष) ४ ३१ १४ [गोपदादिच्छाया क्यचि 'क्याच्छन्दसी' ति ताच्छील्ये उ प्रत्यय]

गव्यूतिम् मार्गम् ५ ६६ ३ क्रोशद्वयम् ३ ६२ १६ क्रोशयुग्मम् २१ ६ [गो-यूतिपदयो समास । 'अध्वपरिमाणे च' अ० ६ १ ७६ वा० सूत्रेण वान्तादेश]

गव्यूती गवा यूतय स्थानानि, प्र०—(वा०—गोर्यूतौ छन्दस्युपसङ्ख्यानम्, अ० ६ १ ७६, १ २५ १६ [गो-यूतिपदयो समासे 'गोर्यूतौ छन्दस्युपसंख्यानम्' अ० ६ १ ७६ वा० सूत्रेण वान्तादेश । यूति=यु मिश्रणेऽमिश्रणे च (अदा०) धातो क्तिन्प्रत्यये 'ऊतियूतिजूति०' अ० ३ ३ ६७ सूत्रेण दीर्घत्व निपात्यते]

गहनम् कठिन सैन्यम्, अ०—शत्रुदलम् ८ ५३ [गहनम् उदकनाम निघ० १ १२]

गहि सर्वत प्राप्नुहि ३ ४२ २ गच्छ गच्छति वा १ १६ ३ प्राप्नुहि प्रापयति वा, प्र०—अत्र पक्षे व्यत्ययो 'बहुल छन्दसि' इति शपो लुक् 'वाच्छन्दसि' अ० ३ ४ ८७ इति हेरपित्वाद् 'अनुदात्तोपदेश०' अ० ६ ४.३७. अनेनानुनासिकलोपश्च १ १४ २ आगच्छ प्राप्नुहि वा ७ ३२ १ प्राप्नोति १ २३ १ प्राप्नुया ४ ३२ ५ [गम्लृ गतौ (भ्वा०) धातोर्लोट् । विकरणस्य लुक्]

गह्वरेष्ठा गह्वरे गहने गभीर आभ्यन्तरे तिष्ठतीति (तनू=व्याप्त शरीरम्) ५ ८ **गह्वरेष्ठाय**=गह्वरेषु गहनेषु तिष्ठति तत्र सुसाधवे (पुरुषाय) १६ ४४ [गह्वरोपपदे ष्ठा गतिनिवृत्तौ (भ्वा०) धातो क प्रत्यय । 'हलदन्तात्०' इति सप्तम्या अलुक् । सुषामादित्वात् मूर्धन्यादेश । गह्वर=गाहते विलोडयतीति विग्रहे गाहू विलोडने (भ्वा०) धातो 'छित्वरछत्वरधीवर०' उ० ३ १ सूत्रेण ष्वरच् प्रत्यये ह्रस्वत्व निपात्यते । गह्वरम् उदकनाम निघ० १ १२]

गा इव पृथिव्या इव ३ ४५ ३ [गौरिति पृथिवीनाम निघ० १ १]

गाङ्ग्यः यो गा गच्छति तस्या अदूरभव (कक्ष=क्रान्तस्तटादि) ६ ४५ ३१ ['गो' इत्युपपदे गम्लृ गतौ (भ्वा०) धातो 'अन्येष्वपि दृश्यते' इति ड प्रत्यय । द्वितीयाया अलुक् । गाङ्गप्राति० अदूरभवार्थे ण्य । अथवा गङ्गाप्राति० अदूरभवार्थे ण्य]

गायत्रीछन्द १० १० या गायन्त त्रायते सा (ईश्वर-प्रेरणा) १४ १८ **गायत्रीम्**=यया गायन्त त्रायते ता नीतिम् ६ ३२ सदर्थान् प्रकाशयन्तीम् (भा०—सद्विद्याम्) २८ २४ **गायत्र्या**=गायत्रीनिष्पादितया विद्यया १३ ३४ भा०—वेदद्वारा २८ ३५ **गायत्र्याम्**=ग यतो रक्षिकाया विद्या-याम्, भा०—पवित्रविज्ञाने ३८ १८ **गायत्र्यै**=गायतो रक्षिकायै (ऋचे) २४ २२ गायत्र्या प्र०—अत्र षष्ठ्यर्थे चतुर्थी १३ ५४ (गायत्री गायते स्तुतिकर्मण त्रिगमना वा विपरीता, गायतो मुखादुदपतदिति ब्राह्मणम् नि० ७ १२ अग्निर्हि गायत्री जै० ३ १८४ १६१ अथ यान्यष्टा-वहानि सा गायत्री जै० ३ ६ अय वै (पृथिवी) लोको गायत्री तृचाशीति ऐ० आ० १ ४ ३ अयमेव (भू)लोको गायत्री ता० ७ ३ ६ अष्टाक्षरा गायत्री ऐ० २ १७ कौ० ६ २ गो० १ ४ २४ जै० १ ११२ ता० ६ ३ १३ तै० १ १ ५ ३ श० १ ४ १ ३३ जै उ० १ १ ८ अष्टौ वसवो ऽष्टाक्षरा गायत्री तै०स० ३ ४ ६ ६-७ इमे वै लोका गायत्री ता० १५ १० ६ इय (पृथिवी) वै गायत्री मै० १ ५ १० एतद्धि (गायत्री) छन्द आशिष्टम् श० ८ २ ३ ६ एते वाव छन्दसा वीर्यवत्तमे यद्गायत्री च त्रिष्टुप् च ता० २० १६.८ एते ह खलु वै छन्दसा वीर्यतमे यद् विराट् च गायत्री च। जै० २ ३३५ एपा वै गायत्री ज्योतिष्पक्षा तयैव स्वर्ग लोक-मेति काठ० २१ १० गायत्री सर्वाणि छन्दास्यपियन्ति जै० १ २६० गायत्री छन्दसा (मुखम्) ता० ६ १ ६ गायत्री छन्दोऽग्निर्देवताशिर श० १० ३ २ १ गायत्री छन्द (प्रजापति शीर्षत एव मुखतोऽसृजत) जै० १ ६८ गायत्री देवेभ्योऽपक्रामत् तै० आ० ५ ११ ३ गायत्री पक्षिणी भूत्वा स्वर्ग लोकमपतत् काठ० २१ ४ गायत्री ब्रह्मवर्च-सम् मै० ४ ३ १ ता० ५ १ ६ तै० २ ७ ३ ३ गायत्रीमेव प्रात सवन सपद्यते जै० २ १०१ गायत्री वसूनाम् (पत्नी) मै० १ ६ २ काठ० ६ १० गो० २ २ ६ गायत्री वा वाऽग्नि श० १ ८ २ १३ गायत्री वै छन्दसामग्र ज्यैष्ठचम् जै० २ २२७ गायत्री वै प्राची दिक् श० ८.३ १ १२ गायत्री वै प्राण श० १ ३ ५ १५ गायत्री वै यज्ञस्य प्रमा काठ० ३२ ४ गायत्री वै रथन्तरस्य योनि ता० १५ १० ५ गायत्री वै रेवती ता० १६ ५ १६ गायत्री वै श्येन सोमभृत् मै० ३ ७ ६ गायत्री सुवर्ग लोकमञ्जसा वेद तै० स० ५ २ ३ ४ काठ० २० १ गायत्र्या वसव (अन्वारभ्यन्त) काठ० ७ ६ गायत्र्येव भर्ग गो० १ ५ १५ ज्यैष्ठ्य वै गायत्री जै० २ ३४६ ज्योतिर्वै गायत्री ता० १३ ७ २ तस्य (यज्ञस्य) गायत्र्येव प्रतिष्ठा जै० १ ११६ तस्य (प्राणस्य) त्वग्गायत्री ऐ० आ० २ १ ६ तेजो वै गायत्री तै० स० ३ २ ६ ३ ता० १५ १० ७. पशवो गायत्री। जै० २ ३११ पूर्वार्धो वै यज्ञ गायत्री श० ३.५ ११० मुख गायत्री (छन्दसाम्) ता० ७ ३ ७ जै० २ १३ वाग् वै गायत्री मै० १ ४ १३ काठ० २३ ५ वीर्य गायत्री श० १ ३ ५ ४ सवत्सरो वै गायत्री तै० स० २ ४ ३ २ मै० २ १ ११]

गायन्ति सामवेदादिगानेन प्रशसन्ति १ १० १ **गायसि**=गान करते हो, आर्याभि०, २ ४३ २ [गायति अर्चकर्मा निघ० ३ १४ धातोर्लट्]

गारीत् निगलेत् ५ ४० ७ [गॄ निगरणे (तुदा०) धातोर्लुङ्। अडभावश्छान्दस]

गार्हपत्यम् गृहस्थसम्बन्धी (अग्निम्=अग्निहोत्र) को स० वि० १५२, अथर्व० १४ २ १८ **गार्हपत्यः**=गृहपतिना सयुक्त (अग्नि =ईश्वरो भौतिको वा) प्र०—अत्र गृहपतिना सयुक्ते ञ्य' अ० ४ ४ ६० अनेन ञ्य प्रत्यय। इद पद महीधरादिभिर्व्याकरणज्ञानविरहत्वात् गृहस्य पति पालक इत्यशुद्ध व्याख्यातम् ३ ३६ **गार्हपत्यानि**=गृह-पतिना सयुक्तानि कर्माणि २ २७ **गार्हपत्याय**=गृह-कार्याय ऋ० भू० २०८ गृहाश्रम-कर्म के अनुष्ठान के लिए स० वि० १२१, १० ८५ ३६ **गार्हपत्येन**=गृहपतिना सयुक्तेन व्यवहारेण १ १५ १२ [गृहपतिप्राति० 'गृह-पतिना सयुक्ते ञ्य' अ० ४ ४ ६० सूत्रेण सयुक्तार्थे ञ्य। 'पत्यन्तपुरोहितादिभ्यो यक्' अ० ५ १ १२८ सूत्रेण वा भावकर्मणोर्यक्। ऋग्वेदाद् गार्हपत्य (अजायत) प० ४ १ गृहा वै गार्हपत्य श० १ १ १ १६ जाया गार्हपत्य ऐ० ८ २४ प्रजापतिर्वै गार्हपत्य कौ० २७ ४ अथैष गार्हपत्यो यमो राजा श० २ ३ २ २ अन्न वै गार्हपत्य श० ८ ६ ३ ५ कर्मेति गार्हपत्य जै० उ० ४ २६ ५ अय वै भूलोको गार्हपत्य श० ७ १ १ ६ प० १ ५ प्राणोदाना-वेवाहवनीयश्च गार्हपत्यश्च श० २ २ २ १८ श्रपणो वै गार्हपत्य कौ० २ १ यजमानदेवत्यो वै गार्हपत्य श० २ ३ २ ६ य इहाहीयन स गार्हपत्य श० १ ७ ३ २२ गार्हपत्यो वा अग्नेर्योनि तै० १ ४ ७ ४ यद् गार्हपत्य (उपतिष्ठते) पुरुषास्तद्याचते श० २ ३ ४ ३२ यद् गार्ह-पत्यम् (उपतिष्ठते) पृथिवी तत् (उपतिष्ठते) श० २ ३ ४ ३६ प्रतिष्ठा जाया गार्हपत्य तै० स० ५ २ ३ ६]

गावः रश्मय, प्र०—गाव इति रश्मिनामसु पठितम्, निघ० १ ५, ६ ३ धेनव किरणा वा १२ ८२ धेनवो वत्सस्थानानीव सुशिक्षिता वाच ४ २३ ६ पृथिव्यो धेनवो

गामय प्रापय, प्र०—अत्र 'तुजादीनाम्०' इति दीर्घ ५ ५ १०.

गाय पठ पाठय वा १ ३८ १४ प्रशम ६ १६ २२ स्तुहि ६ ४० १ [गै शब्दे (भ्वा०) धातोर्लोट्]

गायत् स्तूयात्, प्र०—अत्राऽडभाव १ १६७ ६ गायेत् १ १७३ १ [गै शब्दे (भ्वा०) धातोर्लङ् । अडभाव]

गायत आलपत १ ३७ ४ नित्यमर्चत, प्र०—गायतीति अर्चति कर्मसु पठितम्, निघ० ३ १४, १ ४ १० गान कुरुत १ २१ २ प्रशसत ५ ६८ १ गुणश्रवणस्तवनाभ्या विजानीत १ ५ ४. शास्त्राणि पाठयत ३३ ६२ **गायन्ति**=सामवेदादिगानेन प्रशसन्ति १ १० १ **गायसि**=तुम गाते ही हो, आर्याभि० १ ५२, ऋ० १ ८ ६ ८ [गै शब्दे (भ्वा०) धातोर्लोट् । गायतीति अर्चति कर्मसु पठितम् निघ० ३ १४]

गायत्रम् गायत्र्या विहित विज्ञानम् १ २ ४ गायता रक्षकम् (परमेश्वरम्) १ १६४ २३ गायन्त त्रातृविज्ञानम् १ १२० ६ गायत्रीम् २ ४३ १ गायत्रीछन्दसा प्रकाशितम् (छन्द) ३८ ६ गायत्रीनिष्पन्नमर्थम् १ २ ५ गायत्र्येव छन्द १३ ५४ गायत्र्या विहित विज्ञानम् १ २ ४ गायत्री प्रगाथा येषु चतुर्षु वेदेषु त वेदचतुष्टयम् १ २७ ४ **गायत्रस्य**=गायत्रीप्रगाथस्य छन्दस आनन्दकरस्य व्यवहारस्य वा १ ७६ ७ गायत्र्या ससाधितस्य (समिध) १ १६४ २५ **गायत्रः**=गायत्रीप्रगाथोऽस्य स (भाग) प्र०—'सोऽस्यादिरिति छन्दस प्रगाथेषु अ० ४ २ ५५ अनेन प्रगाथविषये प्रत्यय ४ २४ **गायत्राय**=गायत्रादिछन्दो-विज्ञापिताय (अग्नये=पावकाय) २६ ६० **गायत्रे**=गायत्री-छन्दो-वाच्ये (मन्त्रे) १ १६४ २३ **गायत्रेण**=गायत्रीछन्दोऽभिहितेन बोधेन १ १८८ ११ गायत्रीप्रगाथोऽस्य तेन (छन्दसा) ५ २ गायत्रीछन्द आदिर्यस्य प्रगाथस्य तेन, प्र०—सोऽस्यादिरिति छन्दस प्रगाथेषु, अ० ४ २ ५५ इति गायत्री-शब्दादण् १ १२ ११ गायत्र्येव गायत्र तेन (छन्दसा), प्र०—छन्दसा प्रत्ययविधाने नपुसकात् स्वार्थे उपसङ्ख्यानम्, अ० ४ २ ५५ अनेन वार्त्तिकेन गायत्रशब्देऽण् त्रैष्टुभादिषु अञ् च १.२७ गायत्रीनिर्मितेन (छन्दसा=स्वच्छन्देना ऽर्थेन) १३ ५३ गायत्रीछन्दसा १ १६४ २४ गायत्रीछन्दोवाच्येन (अर्थेन) २३ ८ गायन्ति सद्विद्या येन तेन वेदस्थविभक्तेन स्तोत्रेण ११ ६५ वेदविहितेन (छन्दसा) ११ ५८ वेदस्थेन (छन्दसा=सत्क्रियया) ११ ६० **गायत्रेषु**=यानि गायत्रीछन्दस्कानीमानि वेदोक्तानि स्तोत्राणि तेषु १ २१ २ [गायत्र गायते स्तुतिकर्मण नि० १ ८ गायति अर्चति कर्मा (निघ० ३ १४) धातोर्बाहुलकाद् औणादिको ऽत्रन् प्रत्यय । अथवा गायत्रीप्राति० 'सोऽस्यादिरिति छन्दस प्रगाथेषु' अ० ४ २ ५५ सूत्रेणाण् । अथवा गायत्रीप्राति० स्वार्थे 'छन्दस प्रत्ययविधाने नपुसकात् स्वार्थे उपसख्यानम्' अ० ४ २ ५५ वा० सूत्रेणाण् । गायत्रो मैत्रावरुण ता० ५ १ १५ गायत्र सप्तदश स्तोम ता० ५ १ १५ गायत्र वै प्रात सवनम् ऐ० ६ २ प० १ ४ गायत्रा पशव तै० ३ २ १ १ गायत्रो वै पुरुष ऐ० ४ ३ गायत्र प्रात सवनम् जै० उ० ४ २ २ इमे वै लोका गायत्र (साम) ता० ७ १ १ गायत्रो यज्ञ गो० पू० ४ २४ गायत्र वै रथन्तरम् ता० ५ १ १५ गायत्र हि शिर श० ८ ६ २ ६ गायत्रच्छन्दा अग्नि ता० १६ ५.१६ गायत्र साम जै० उ० १.१८ गायत्रोऽय (भूलोक) कौ० ८ ६ गायत्रेऽस्मिँल्लोके गायत्रोऽयमग्निरध्यूढ कौ० १४ ३ प्राणो गायत्र (साम) ता० ७ १ ६ तत्प्राणो वै गायत्रम् जै० उ० १ ३७ ७ गायत्र उ वै प्राण तै० ३ ३ ५ ३ कौ० ८ ५ अग्निर्गायत्र श० १६ १ १ १५ गायत्रमग्नेश्छन्द कौ० १० ५ गायत्रो वै ब्राह्मण ऐ० १ २८ गायत्रच्छन्दो वै ब्राह्मण तै० १ १ ६ ६ गायत्र वै व्रतस्य शिर, तदवि ब्रह्म जै० २ ४ १५ गायत्र चक्षु तै० ४ १ १० ५ गायत्रमेव हिकार जै० २ ४३३ गायत्रो वै देवाना सविता मै० ४ ७ १ गायत्रो वै बृहस्पति ता० ५ १ १५ गायत्रो हि यूप मै० ३ ६ ३ मनो वै गायत्रम् जै० ३ ३०५]

गायत्रछन्दसम् गायत्रीछन्दोऽर्थविज्ञापकम् (विश्वकर्माणम्=अध्यापकम्) ८ ४७ [ब्राह्मणो गायत्रीछन्दा जै० १ ६८ गायत्रछन्दा अग्नि ता० ७ ८ ४ गायत्रछन्दा वै ब्राह्मण तै० १ १ ६ ६ श्येनोऽसि गायत्रछन्दा तै० स० ३ २ १ १ गायत्र वै रथन्तर गायत्रछन्द ता० १५ १० ६]

गायत्रवर्त्तनि गायत्रस्य वर्त्तनि मार्गो वर्त्तन यस्मिँस्तत् (गानम्) ११ ८

गायत्रवेपसे गायत्र गायन्त त्रायमाण वेपो रूप यस्मात्तस्मै (इन्द्राय=धनाय) १ १४२ १२ [गायत्र-वेपस्-पदयो समास । गायत्र व्याख्यानम् । वेपस् कर्मनाम निघ० २ १]

गायत्रिणः गायत्राणि प्रशस्तानि छन्दास्यधीतानि विद्यन्ते येषा ते धार्मिका ईश्वरोपासका (भा०—मनुष्या) प्र०—अत्र प्रशसायामिनि १ १० १ [गायत्र व्याख्यानम् । ततो मत्वर्थ इनि]

गायत्री गायन्त त्रायमाणा (ऋक्) २३ ३३ पठित

गिरिशन्त गिरिणा मेघेन वा श तनोति, तत्सम्बुद्धौ (सेनाध्यक्ष) १६.३ यो गिरिणा मेघेन सत्योपदेशेन वा श सुखं तनोति, तत्सम्बुद्धौ (शिक्षक जन), प्र०—गिरिरिति मेघनाम, निघ० १ १०, १६ २ [गिरि-शमुपपदे तनु विस्तारे (तना०) धातो 'अन्येष्वपि दृश्यते' इति ड प्रत्यय]

गिरिशयाय यो गिरिषु पर्वतेषु श्रित सन् शेते तस्मै वानप्रस्थाय (जनाय) १६ २९ [गिरिरिति व्याख्यातम्। तदुपपदे शीङ् शये (अदा०) धातो 'अधिकरणे शेते' अ० ३ २ १५ सूत्रेणाच् प्रत्यय]

गिरिष्ठाम् गिरौ मेघे स्थितम् (शुक्रम्=उदकम्) प्र०—गिरिरिति मेघनाम, निघ १ १०, ५ ४३.४. **गिरिष्ठा**.=गिरौ तिष्ठतीति (मृग.=सिंह), प्र०—विवक्षातोऽत्र प्रयोग ५ २० [गिरिरिति व्याख्यातम्, तदुपपदे ष्ठा गति निवृत्तौ (भ्वा०) धातो क्विप् प्रत्यय । गिरिष्ठा-गिरिस्थायी नि० १ २०]

गिर्वणसम् गीर्भि सेव्यमानम् (धनाढ्यजनम्) ६ ५० ६ यो गीर्भिर्वनति सम्भजति, वनुते याचते वा तम् (इन्द्र=राजानम्) ६ ३४ ३ विद्यावाक्-सेवमानम् (श्रीमज्जनम्) २ ६ ३ **गिर्वणसे**=गिर. सुशिक्षिता वाचो वनन्ति सम्भजन्ति वा तस्मै (नरे=नायकाय जनाय) ३४ १६ गीर्भि स्तोतुमर्हाय (सभाद्यध्यक्षाय) १ ६२ १ **गिर्वण**:=गीर्भि प्रशसनीय (शुभाचरण जन) ६ ४५ २८ य उत्तमाभिर्गीर्भि सेव्यते तत्सम्बुद्धौ (इन्द्र=राजन्) ६ ३२.४ यो गीर्यते याच्यते तत्सम्बुद्धौ (राजन्) ३ ५१ १० वेदशिक्षाभ्या सस्कृताभिर्वाग्भिर्वन्यते सम्यक् सेव्यते यस्तत्सम्बुद्धौ (इन्द्र=सर्वरक्षकेश्वर) १ ५ १० गीर्भिर्वन्यते सम्भज्यते स गिर्वणास्तत्सम्बुद्धौ (इन्द्र=विद्वज्जन) प्र०—गिर्वणा देवो भवति गीर्भिरेन वनयन्ति, निरु० ६ १४ देवशब्देनात्र प्रशस्तैर्गुणै स्तोतुमर्हो विद्वान् गृह्यते 'गिर्वणस इति पदनामसु पठितम्' निघ० ४ ३, १ ५ ७ गीर्भिर्वन्यते सेव्यते जनैस्तत्सम्बुद्धौ (इन्द्र=सभाध्यक्ष) १ ९ ९ ६ गीर्भिर्वेदाना विदुषा च वाणीभिर्वन्यते ससेव्यते यस्तत्सम्बुद्धौ (इन्द्र=भगवन्) १ १० १२ सुशिक्षितवाचा स्तुत (इन्द्र=विद्वज्जन) ६ ४० ५ गीर्भि सत्कृत (इन्द्र=राजन्) ४ ३२ ८ यो गीर्भिर्वन्यते सम्भज्यते तत्सम्बुद्धौ (अग्ने!) १ ४५ २ यो गीर्भिर्वन्यते याच्यते तत्सम्बुद्धौ (इन्द्र=धनाढ्य जन) ३ ४१ ८ सुशिक्षिताभि गीर्भि (इन्द्र=राजन्) ६ ८६ १० यो गीर्भिर्वेदविद्या सस्कृताभिर्वाग्भिर्वन्यते सम्भज्यते, तत्सम्बुद्धौ (इन्द्र=राजन्) १ ५७ ४ [गी वाङ्नाम निघ० १ ११ तदुपपदे वनु याचने (तना०) धातो, वन सम्भक्तौ (भ्वा०) धातोर्वा औणादिकोऽसुन् प्रत्यय । गिर्वणो देवो भवति, गीर्भिरेन वनयन्ति नि० ६ १५]

गिर्वणस्तमः अतिशयेन वाग्भि प्रशसनीय (राजा) ६ ४५ २० [गिर्वणस् इति व्याख्यातम् । ततोऽतिशायने तमप्]

गिर्वणस्तमा: अतिशयेन सुशिक्षिता वाच सेवमानौ (इन्द्राग्नी=नरेश-सेनापती) ५ ८६ ४ [व्याख्यातम् । सुपा सुलुगित्याकार]

गिर्वाहसम् यो गिरा वहति प्राप्यते वा तम् (सज्जनम्) ४ ४४ १. सुशिक्षित-वाक्प्रापकम् (विद्वज्जनम्) ६ २१ २ **गिर्वाहसे**=यो गिरो विद्यावाचो वहति तस्मै (इन्द्राय=विदुषे जनाय) १ ६१ ४ **गिर्वाहः**=ये गिरो वहन्ति प्रापयन्ति ते (विद्वास) ६ २४ ६ गीर्भिर्वेदस्य वाग्भिरुह्यते प्राप्यते यस्तत्सम्बुद्धौ (सेनाध्यक्ष) प्र०—अत्र कारकोपपदाद् वह धातो 'सर्वधातुभ्योऽसुन्' उ० ४ १९६ अनेनाऽसुन्प्रत्यय 'वाच्छन्दसि सर्वे विधयो भवन्ति' इति पूर्वपदस्य दीर्घादेशो न १ ३० ५ उपदेशगिरा प्रापक (विद्वज्जन) १ १३९ ६ [गिरोपपदे वह प्रापणे (भ्वा०) धातोर्णिजन्तादौणादिकोऽसुन्]

गीताय गानाय ३० ६ [गै शब्दे (भ्वा०) धातोरौणादिको वाहुलकात् क्त । 'घुमास्था०' अ० ६ ४ ६६ सूत्रेणैकारादेश]

गीयमानासः सुगीता (गिर=वाच) ६ ६६ २ [गै शब्दे (भ्वा०) धातो कर्मणि शानच् । 'घुमास्था०' सूत्रेणैकारादेश]

गीः सत्यप्रिया वाक् १ १६८ १० सुशिक्षिता वाक् १ १८३ २ वाणी, प्र०—गीरिति वाङ्नामसु पठितम्, निघ० १ ११, ३ ४६ वेदविद्याशिक्षायुक्ता वाणी १ १६७ ११ सत्यगुणाढ्या वाणी १ १७३ १२ गायन्ति पदार्थान् यया सा (वाक्) ४ ४३ ८ आज्ञप्ता वाक् १ १८३ ४ [गृ निगरणे (तुदा०) गॄ शब्दे (क्र्या०) धातोर्वा क्विप् । गी वाङ्नाम निघ० १ ११ गिर स्तुतयो गृणाते नि० १ १० गिरा गीत्या स्तुत्या नि० ६ २४ वाग्वै गी श० ७ २ २ ५ विशो गिर श० ३ ६ १ २४.]

गुङ्गूः अव्यक्तोच्चारणा (विदुषी स्त्री) २.३२.८ [गुङ् अव्यक्ते शब्दे (भ्वा०) धातो सम्पदादित्वात् क्विप् ।

वा ४४१८ गवादय पशव ७ १० पशुपृथिवीन्द्रिय-विद्याप्रकाशाह्लादादय ऋ० भू० २४० गमनशीला (किरणा) १ ९२ १ किरणा १ १५४ ६ सूर्य की किरणे, विद्वानों का मन और गाय पशु, आर्याभि० १ ३७, ऋ० १ ९२ १ १३ धेनव, प्र०—गाव इत्युपलक्षणमेकदताम् भा०—गवाश्वादयो ग्राम्या सर्वे पशव ३१ ८ [गम्लृ गतौ (भ्वा०) धातो 'गमेर्डो' उ० २ ६७ सूत्रेण डो प्रत्यय तस्य प्रथमाबहुवचने रूपम् । गाव =रश्मिनाम निघ० १ ५ गौ पृथिवीनाम निघ० १ १ वाङ्नाम निघ० १ ११ स्तोतृनाम निघ० ३ १६ साधारणनाम निघ० १ ४ यद्दूर गता भवति, यच्चास्या भूतानि गच्छन्ति, गातेर्वौकारो नामकरण निघ० २ ५ पय नि० २ ५ चर्म च श्लेष्मा च नि० २ ५ ज्यापि गौरुच्यते नि० २ ६. शेष द्रष्टव्य गौरिति पदे]

गावेव यथा धेनुवृषभौ ३ ३३ १ [व्याख्यात गाव इति पदे]

गावौ किरणाविव सेनाराजनीती ६ २७ ७ [व्याख्यात गाव इति पदे]

गासि प्रशससि ५ २५.१. [गा स्तुतौ (जु०) धातोर्लट् । 'बहुल छन्दसी' ति शपो लुक्]

गाहते विलोडते १ १२७ ४ [गाहू विलोडने (भ्वा०) धातोर्लट्]

गाहमानः विलोडन कुर्वन् (इन्द्र =सेनापति) १७ ३९ [गाहू विलोडने (भ्वा०) धातो. शानच्]

गाः इन्द्रियाणि १ १० ८ किरणान् १.९१.२२ धेनूरिव ६ २७ ८ भूमीर्वाचो वा ६ ४७ १४. पृथिव्यादीन् ४ ३२ २२ पृथिवीराज्यानि ४.१७ १० पृथिवीन्द्रियाणि प्रकाशयुक्तान् लोकान् वा १.१०१ ५ भूगोलाख्याभूमी १ ११८ २ या गच्छन्ति ता (वाणी -वाच) ३ ३० १० [व्याख्यात गाव इति पदे]

गाः प्राप्नुया ४ ३ १३ [इण् गतौ (अदा०) धातोर्लुङ् । 'इणो गा लुङी' ति गादेश. । अडभाव [illegible] 'गातिस्था०' इति लुक्]

गिरम् यागसत्कारयुक्ता वाचम् ७ ५ १ **गिरः**—गीर्यते निगद्यते यदेन तत् १५ ५ गृणन्ति ये ते गिरो विद्वास १ ६ ६ वाच ५ ११ ५ सत्या वाच, भा०—करुणामयानुपदेशान् १३ ५२ वाणी १ ८४ ८ स्तुतय १ ५३ १ उपदेशरूपा वाणी १ १७६ २ स्तुतिवाच ५ २९ सुवाच ६ ४७ १ वेदवाण्य १ ९.४. वेदवाणी १.१४ १. वेदविद्यासस्कृता वाच भा०—साङ्गोपाङ्गान् वेदान् १२ ५६ धर्म्या वाच ५ १० ४. सर्वदेशभाषा: १.१२२ १४ विद्यासत्यभाषणादियुक्ता वाण्य, प०—गीरिति वाङ्नामसु पठितम्, निघ० १ ११, १.५.८.

गिरा वेदवाण्या विद्यया ऋ० भू० १५९ सुशिक्षितया सत्यया कोमलया वाचा ५ ५२ १३ **गिराम्** =प्रशसिताना वाचाम् १.१० ३. न्यायविद्यायुक्ताना वाचाम् ६.२४.१. [गी वाङ् नाम निघ० १.११ गॄ निगरणे (तुदा०) गॄ शब्दे (क्र्या०) धातोर्वा क्विप् । वाग्वै गी श० ७ २.२.४. विशो गिर श० ३.६ १ २४]

गिरयः ये जल गिरन्ति शब्द वा गृणन्ति ते मेघा. १.६४.७ शैला मेघा वा १.६३.१. **गिरिम्**—यो गृणाति शब्दयति तम् (अश्मान =मेघम्) ५.५६ ४. गिरिवत्सगतं मेघम् ४ १७ ३ **गिरिः**=यो गिरति जलादिकं गृणाति महत. शब्दान्वा स (मेघ) १ ३७ ७. [गॄ निगरणे (तुदा०) धातो, गॄ शब्दे (क्र्या०) धातोर्वा, 'कॄगॄशॄ०' उ० ४ १४३. सूत्रेण इ प्रत्यय किच्च । गिरि मेघनाम निघ० १.१० गिरि पर्वत नि० १ २० तस्य (वृत्रस्य) एतस्माद्गीर यद् गिरयो यदश्मान श० ३ ४ ३ १३. गिरिर्वै स्वर्गस्य योनि मै० १ १०.२० शीर्षहार्यं गिरौ जीवनम् तै० स० ६.१.९.४]

गिरिक्षिते गिरयो मेघा शैला वा क्षितौ व्युष्टा यस्मिँस्तस्मै (विष्णवे =ईश्वराय) १ १५४.३ [गिरिक्षितपदयो समास गिरिस्थगितलम् क्षित =क्षिनिवासगत्यो (तुदा०) धातो क्त]

गिरिचराय यो गिरिषु पर्वतेषु चरति तस्मै आरण्यकाय (पुरुषाय) १६ २२ [गिर्युपपदे चर गतौ (भ्वा०) धातो 'चरेष्ट' अ० ३.२ १६. सूत्रेण टः प्रत्यय]

गिरिजाः ये गिरौ मेघे जाता (गर्जनादिप्रकाशा:) ५ ८७ १ [गिर्युपपदे जनी प्रादुर्भावे (दिवा०) धातो: सप्तम्या जनेर्ड' अ० ३ २ ९७. सूत्रेण ड प्रत्यय]

गिरित्र ! गिरीन् विद्योपदेशकान् मेघान् वा [illegible] रक्षति, तत्सम्बुद्धौ (सेनापते) १६ ३ [गिर्युपपदे त्रैङ् पालने (भ्वा०) धातो 'अन्येष्वपि दृश्यते' इति ड प्रत्यय.]

गिरिश ! यो गिरिषु पर्वतेषु मेघेषु वा शेते [illegible] (वैद्यराज) १६ ४ भा०—वैद्यकशास्त्रमधीत्य पर्वतादिषु स्थितान्यौषधानि [illegible] वा [illegible] १ [illegible] व्याख्यानम् । [illegible] 'दृश्यते' अ० [illegible]

प्राति० अतिशायने तमप्। गूर्त =गुरी उद्यमने (तुदा०) धातो क्त]

गूर्तमनाः गूर्तमुद्युक्त मनो यस्य स (राजव्यवहारस्थो जन) ६ ६३ ४ [गूर्त-मनस्पदयो समास। गूर्त व्याख्यातम्]

गूर्तयः उद्यमयुक्ता कन्या १ ५६ २ [गुरी उद्यमने (तुदा०) धातो स्त्रिया क्तिन्। 'हलि च' इत्युपधाया दीर्घत्वम्]

गूर्तश्रवसम् गूर्त्त निगलित श्रव शास्त्रश्रवण येन तम् (वीरजनम्) १ ६१ ५ **गूर्तश्रवाः**=गूर्त्तेनोद्यमेन श्रव श्रवणमन्न वा यस्य स (शूर =वीरपुरुष) १ १२२ १० [गूर्त्तश्रवस्पदयो समास। गूर्त्त व्याख्यातम्। श्रव = श्रु श्रवणे (भ्वा०) धातो 'ऋदोरप्' इत्यप्। श्रव = अन्ननाम निघ० २ ७ धननाम निघ० २ १०]

गूर्ता. गच्छन्त्यो हिंसिका (उपस =प्रभातवेला) ४ १९ ८ [गुरी उद्यमने (तुदा०) धातो क्तप्रत्यये स्त्रिया टाप्]

गूहत सवृणुत १७ ४७ आच्छादयत १ ८६ १० **गूहताम्**=समावृणुत २ ४० २ **गूहथः**=सवृणुथ ५ ६३ ४ [गुहू सवरणे (भ्वा०) धातोर्लोट्। 'ऊदुपधाया गोह' इत्यजादौ प्रत्यय ऊकारादेश]

गूहन्तीः सवृण्वत्य (स्त्रिय) ४ ५१ ९ [गुहू सवरणे (भ्वा०) धातो शत्रन्तात् ङीप्। 'ऊदुपधाया गोह' इत्यूकारादेश]

गृणतः स्तुति कुर्वन (ईश्वरोपासकान् जनान्) ७ १२ २ सत्यप्रशसकान् (सज्जनान्) ६ ४९ ११ सकलविद्या स्तुवत (सभ्यसत्पुरुषस्य) ४ १७ ५ **गृणताम्**= प्रशसकानाम् (प्रजाजनानाम्) ६ ४५ १७ **गृणते**=प्रशसते (पत्ये) १ ११३ १७ विद्याप्रशसा कुर्वते पुरुषाय १ ९४ ९ गुणान् कीर्त्तयते (जनाय) १ ५८ ९ प्रशसितकर्मणे (सज्जनाय) ४ २४ १ सत्योपदेशकाय (विद्वज्जनाय) ६ ६२ ५ स्तावकाय (पत्ये) ६ ४९ ७ यजमानाय ७ ४ १० सत्यभाषण रूप स्तुति करने वाले (मनुष्य) के लिए, स० प्र० २३८, १० ४९ १ **गृणन्तम्**=स्तुवन्तम् (विप्र = मेधाविनम्) ४ २९ ४ **गृणन्तः**=स्तुवन्त उपदिशन्त (विद्वज्जना) ४ १६ ३ प्रशसन्त (युवानो जना) १ १५२ ५ [गॄ शब्दे (क्र्या०) धातो शतरि रूपम्। 'प्वादीना ह्रस्व' इति शिति प्रत्यये ह्रस्व]

गृणते स्तुति कुर्वते (सज्जनाय) ६ ४ ८ [गॄ शब्दे (क्र्या०) धातो शतृ]

गृणते स्तौति ६ ६ ७ **गृणन्ति**=अर्चन्ति शब्दयन्ति वा। अ०—स्पर्द्धन्ते, प्र०—गृणातीत्यर्चति कर्मसु पठितम् निघ० ३.१४ 'गॄ शब्दे' इति पक्षे शब्दार्थ १ १४ २ स्तुवन्ति १.४८ ११ वदन्ति १ १०० १७ उपदिशन्ति २ ४३ १ स्वीकुर्वन्ति ६ ४५ ३३ **गृणन्तु**=प्रशसन्तु १४ २ अर्चन्तु सत्कुर्वन्तु १४ ४ **गृणाति**=प्रशसति १ ४८ ४ सत्यमुपदिशति ७.२६ ५ **गृणातु**=स्तौतु ५ ४१ १९ **गृणे**= स्तौमि ५ ६ २ स्तुवे १५ ४२ [गॄ शब्दे (क्र्या०) धातोर्लट्। व्यत्ययेनात्मनेपदम्। गृणात्यर्चतिकर्मसु पठितम् निघ० ३ १४ गृणाने स्तुतिकर्मण नि० ३ ५]

गृणानः स्तुवन् (इन्द्र=राजन्) ४ १७ १८ स्तूयमान (सेनापति) ४ १९ ८ शब्द कुर्वाण (इन्द्र = सभाध्यक्ष) १ ६२ ५ प्रशसन् (मनुष्य) ४ १६ २१ उच्चारयन् प्रकटयन् (सूर्य) ३४ २६ [गॄ शब्दे (क्र्या०) धातो शानच्। व्यत्ययेनात्मनेपदम्। गृणात्यर्चतिकर्मा निघ० ३ १४]

गृणाना स्तुवन्तौ (मित्रावरुणा=अध्यापकोपदेशकौ) ३ ६२ १८] उपदिशन्तौ (अश्विना=राजप्रजाजनौ) १ ११७ ११ [गॄ शब्दे (क्र्या०) धातो शानच्। व्यत्ययेनात्मनेपदम्। 'सुपा सुलुगि' त्याकार]

गृणाना स्तुवन्ती (देवी=कमनीया वाणी) २७ १९ स्ताविका (उर्वशी=प्रज्ञा) ५ ४१ १९ **गृणाने**=स्तूयमाने (द्यावापृथिवी=भूमिसवितारौ), प्र०—अत्र 'कृतो बहुलम्०' इति शानच् १ १६० ५ [गॄ शब्दे (क्र्या०) धातो शानच्। तत स्त्रिया टाप्। व्यत्ययेनात्मनेपदम्। गृणात्यर्चतिकर्मा निघ० ३ १४]

गृणानाः स्तुवन्त (मनुष्या) ५ ५९ ८ [गॄ शब्दे (क्र्या०) धातो शानच्। व्यत्ययेनात्मनेपदम्। गृणात्यर्चतिकर्मा निघ० ३ १४]

गृणीत शब्दयत ३ ६ १० **गृणीते**=उपदिशते १ ७९ १२ स्तौति ५ ४१ १० [गॄ शब्दे (क्र्या०) धातोर्लट्। प्रथम-द्विवचने रूपम्]

गृणीमसि स्तुवीम १ ६४ १२ अर्चाम स्तुम १ ५३ २ [गॄ शब्दे (क्र्या०) धातोर्लट्। 'इदन्तोमसि'-रिति मस इदन्तत्वम्]

गृणीषणि स्तोतव्ये व्यवहारे ६ १५ ६

गृणीषे स्तौषि २ २० ४ स्तौमि, प्र०—अत्र तिङ्व्यत्ययेनेट्स्थाने से ६.४४ ४ **गृणीहि**=प्रशस ६ ६८ ३

तदुपपदे गम्लृ गतौ (भ्वा०) धातो मितद्र्वादित्वाद् डुप्रत्यये स्त्रियामूङ्]

गुदम् क्रीडाम् २३ २१ [गुद क्रीडायामेव (भ्वा०) धातोर्घञर्थे क । प्राणो वै गुद श० ३ ८ ४ ३]

गुदाः गुह्येन्द्रियाणि १९ ८६ [गुद क्रीडायामेव (भ्वा०) धातोरिगुपधलक्षण क. प्रत्यय]

गुप्ता गुप्तानि रहस्यानि (सख्या=सख्यु कर्माणि) २ ३२ २ अथर्व० [गुपू रक्षणे (भ्वा०) धातो क्त]

गुप्ताः रक्षिता (गृहस्थ मनुष्य लोग) स० वि० १४३, अथर्व० १२ ५ ३ [गुपू रक्षणे (भ्वा०) धातो क्त]

गुरस्व उद्यम कुरुष्व, ३ ५२ २ [गुरी उद्यमने (तुदा०) धातोर्लोट्]

गुरु भारवत् (द्वेष =अप्रीतिम्) ७ ५६ १९ गुरुत्व-युक्त न्यायाचरण पृथिव्यादिक द्रव्य वा १ ३९ ३ [गॄ निगरणे (तुदा०) धातो, गॄ शब्दे (क्र्या०) धातोर्वा 'कृग्रोरुच्च' उ० १ २४ इत्युप्रत्ययो धातोरुचोकारादेश]

गुरुम् महान्तम् (मन्म=विज्ञानम्) ४ ५ ६ **गुरुः**= उपदेष्टा (विद्वज्जन) १ १४७ ४ बडा (भार) स० वि० १६६, अथर्व० ९ २ ३ २४ [पूर्वपदे व्याख्यातम्]

गुल्मान् दक्षिणपार्श्वोदरस्थितान् (पदार्थान्) २५ ८

गुवः गच्छन्तीति गुव (आप =जलानि) १ १२

गुहदवद्यम् आच्छादितनिन्द्यम् (रयिं=श्रियम्) २ १९ ५ [गुहत्-अवद्ययो समास । गुहत्=गुहू सवरणे (भ्वा०) धातोरति प्रत्यय शतृवच्च बाहुलकादौणादिकम् । अवद्यम्=वद व्यक्ताया वाचि (भ्वा०) धातोर्नञ्पूर्वात् यप् प्रत्ययो गर्ह्योऽर्थे 'अवद्यपण्यवर्या०' ३ १ १०१ सूत्रेण निपात्यते]

गुहम् गूढ विज्ञानगम्य कारणज्ञानम् १ ६७ ३ [गुहू सवरणे (भ्वा०) धातोर्घञर्थे क प्रत्यय]

गुहमानः सवृत सन् (अग्नि =परमात्मा) ४ १.११ [गुहू सवरणे (भ्वा०) धातो शानच् । व्यत्ययेनात्मनेपदम्]

गुहा गुहायामन्तरिक्षे, प्र०—'सुपा सुलुग्०' इति ङेर्लुक् 'गुहा गूहते ' नि० १३ ८, १ ६ ५ गुह्यन्ते सव्रियन्ते सकला विद्या यया बुद्ध्या तस्याम् ८ ६ बुद्धौ १५ २८ बुद्धौ विज्ञाने १ ६७ ४ बुद्धे ४ ५ १२ गुहाया गर्भाशये ५ २.१ गुहायामन्त करणे ५ ८ ३ सर्वपदार्थाना मध्ये १ ६५ ११ सर्वविद्यासयुक्ताया बुद्धौ १ ६७ २ गुप्ते कारणे ३२ ८ आच्छादिका (तम =रात्री) १ १२३ ७ कन्दरायाम् ३ १ ९ महत्तत्त्वाख्याया समष्टिबुद्धौ ३ ५६ २. स्वहृदय मे आर्याभि० २ २४, ३२ ९ [गुहू सवरणे (भ्वा०) धातो 'पिद्भिदादिभ्योऽङ्' सूत्रे 'गुहागिर्योपध्योरिन्त्यङ् । गुहा गूहते नि० १३ ९]

गुहेव यथा गुहाया बुद्धौ स्थित जीवम्, अ०—बुद्धिस्थमात्मानम् ३ १ १४ [गुहा-इवपदयो समास । गुहा व्याख्यानम्]

गुह्यम् गुप्तम् (स्वात्मवस्तु) ४ ५ १० गोप्तु योग्यम् (मायिन=मायाविन शत्रुम्) २ ११ ५ रहस्यम् (नाम= सज्ञा) १० ८६ गोपनीयम् (व्यवहारम्) १ ८९ १० [गुहू सवरणे (भ्वा०) धातो 'शसिदुहिगुहिभ्यो वा०' अ० ३ १ १०९ वा० सूत्रेण । क्यप्]

गुह्यमानम् रहसि स्थितम् (घृत=प्रदीप्त विज्ञानम्) १७ ९२ गोप्यमानम् (घृतमिव विज्ञानम्) ४ ५८ ४ **गुह्यमान** =सम्यग् क्रियमाण (अग्नि =ईश्वरो भौतिको वा) २ १७ [गुहू सवरणे (भ्वा०) धातो कर्मणि शानच्]

गुह्या गूढानि विज्ञानानि ३ ३८ ३ [गुह्य व्याख्यानम् । 'सुपा सुलुगि' त्याकार]

गुह्यानि गुप्तानि सम्यक् स्वीकर्त्तव्यानि (सप्त पदानि) १ ७२ ६ **गुह्याः**=गुप्तानि रहस्यानि २ ३२ २ **गुह्येन**=गोप्येन (व्रतेन=शीलेन) १ १८३ ३ **गुह्येषु**= गुप्तेषु रक्षितव्येषु (व्रतेषु=सत्यभाषणादिनियमेषु) ३ ५४ ४ [गुहू सवरणे (भ्वा०) धातो 'शसिदुहि-गुहिभ्यो वेति वक्तव्यम्' अ० ३ १ १०९ वा० सूत्रेण क्यप्]

गुः गच्छन्ति, प्र०—अत्राऽडभावो लडर्थे लुड् च १ ६५ २ प्राप्नुवन्ति १ १०४ २ प्राप्नुवन्तु ४ ३७ २ प्राप्नुयु ७ २१ ५ गच्छेयु ३ ७ ७ [इण् गतौ (अदा०) धातोर्लुङ् । 'इणो गा लुङीति' गादेश । 'गातिस्थाघु०' इति सिचो लुक् । अडभावश्छान्दस]

गूळ्हम् गुप्त विद्युदाख्यम् ५ ४० ६ गूढाऽऽशयम् (ऋषि=वेदपारगाऽव्यापकम्) १ ११७ ४ आवृत आच्छादित (यह सब जगत्) स० प्र० २८९ [गुहू सवरणे (भ्वा०) धातो क्त । हस्य ढत्वे, तस्य धत्वे, ष्टुत्वे, 'ढो ढे' लोप ढलोपे, पूर्वस्य दीर्घत्वे रूपम्]

गूळ्हा गुप्तानि (वसु=धनानि) ६ ४८ १५ [व्याख्यातम्]

गूर्त उद्यच्छ १ १७३.२ [गुरी उद्यमने (तुदा०) धातोर्लोट् 'बहुल छन्दसी' ति विकरणस्य लुक् । व्यत्ययेन परस्मैपदम्]

गूर्ततमाः=अतिशयिता उद्यमा १.१६७ १ [गूर्त-

१० ६२ १ स्वीकुर्वीत १२ ३५ **गृभ्णीव**=ग्राह्य गृह्णाति वा, प्र०—अत्र पक्षे व्यत्यय 'हृग्रहोर्भश्छन्दसि, इति हकारस्य भकार १ १८ [ग्रह उपादाने (क्र्या०) धातोर्लट् । ग्रह्यादिसूत्रेण सम्प्रसारणम् । हस्य च भकारश्छान्दस]

गृभ्णानाः गृह्णन्त (देवा =विद्वासो जना) १५ ५० [ग्रह उपादाने (क्र्या०) धातो शानच् । सम्प्रसारण ग्रह्यादिसूत्रेण, हस्य च भकार]

गृभ्य सङ्ग्रह करके, स० वि० ८०, अथर्व० ११ ५ ६. [ग्रह उपादाने (क्र्या०) धातो क्त्वा । क्त्वो ल्यबादेशश्छान्दस]

गृष्टिः सकृत्प्रसूता गौ ४ १८ १०

गृहते गृह्णन्ति ५ ३२ १२ [ग्रह उपादाने (क्र्या०) धातोर्लट् । विकरणव्यत्ययेन श]

गृहपतये गृहाश्रमस्वामिने १० २३ गृहपालकाय (जनाय) २४ २४ **गृहपतिना**=सर्वस्वामिना गृहपालकेन वा (जगदीश्वरेण सुगृहस्थेन वा) २ २७ **गृहपतिम्**=गृहस्वामिनम् (अग्नि=परमविद्वज्जनम्) ४ ११५ गृहव्यवहारपालकम् (जनम्) ५ ८ १ **गृहपतिः**=गृहाणा स्थानविशेषाणा पति पालनहेतु (ईश्वरो भौतिकोऽग्निर्वा) ३ ३९ गृहस्य स्थानस्य तत्स्थस्य वा पति पालनहेतु (अग्नि =प्रसिद्धो रूपवान् दहनशील) ११२ ६ गृहस्य पालक इव ब्रह्माण्डस्य प्रबन्धकर्त्ता (परमेश्वर) ६ १५ १३ गृहस्य पालयिता (अग्नि) १ ६० ४ गृहकृत्यस्य पालक (अग्नि =महाविद्वान् जन) २ १ २ गृहाऽऽत्मपालको भौतिक (पावक) परमेश्वरो वा प० वि० । अथर्व० १९ ५५ ३ **गृहपतीनाम्**=गृहाश्रमपालकानाम् (गृहस्थपुरुषाणाम्) ६ ३९ **गृहपते**=गृहाभिरक्षकेश्वर, गृहाणा पालयिता (अग्नि) वा ३ ३९ गृह्णन्ति स्थापयन्ति पदार्थान् यस्मिन् ब्रह्माण्डे, शरीरे, निवासार्थे वा गृहे तस्य य पति पालयिता तत्सम्बुद्धौ (अग्ने=जगदीश्वरो विद्वज्जनो वा) २ २७ [गृह-पतिपदयो समास । गृहम्=ग्रह उपादाने (क्र्या०) धातो 'गेहे क' इति सूत्रेण क प्रत्यय । सम्प्रसारण ग्रह्यादिसूत्रेण । असावेव गृहपतिर्योऽसौ (सूर्य) तपत्येष हि गृहाणा पतिस्तस्यर्तव एव गृहा कौ० १७ ५ असौ वै गृहपतिर्योऽसौ (सूर्य) तपत्येष (सूर्य) पति, ऋतवो गृहा ऐ० ५ २५ अय वै (पृथिवी०) लोको गृहपति श० १२ १११ गो० पू० ४ १ अय यदग्निं गृहपतिमन्ततो यजति कौ० ३ ९ अग्निर्गृहपतिरिति हैक आहु सोऽस्य लोकस्य (पृथिव्या) गृहपति ऐ० ५ २५ तप आसीद् गृहपति तै० ३ १२ ९ ३ वायुर्गृहपतिरिति हैक आहु सोऽन्तरिक्षस्य लोकस्य गृहपति ऐ० ५ २५ प्रजापतिरेव गृहपतिरासीत् जै० ३ ३७४]

गृहपत्नी घर के स्वामी की स्त्री, स० वि० १४०, अथर्व० १४ २ ७५ [गृहपतिप्राति० 'पत्युर्नो यज्ञसयोगे' सूत्रेण ङीप् नकारान्तादेशश्च]

गृहपम् गृहाणा रक्षकम् (सज्जन) ३० ११ [गृहोपपदे पा रक्षणे (अदा०) धातो क प्रत्यय]

गृहं गृहम् निकेतनम् निकेतनम् १।१२३ ४ [गृह व्याख्यातम् । तस्य वीप्साया द्वित्वम्]

गृहम् गृह्णाति यस्मिंस्तत् (सदनम्) १ २२ ४ निवासस्थानम् १ ४९ १ **गृहान्**=गृहाणि ४ ३३. गृहस्थान् (जनान्) ६ ५४ २. गृहाश्रमस्थान् विदुष (जनान्) ३ ४१ गृह्णन्ति विद्यादिपदार्थान् येषु तान् (स्थानविशेषान्) २ ३२ द्वीपखण्ड-देशान्तरस्थानानि ४ ३४ **गृहाय**=निवासस्थानाय १ १४० १२ **गृहाः**=ये गृह्णन्ति ते गृहस्थादय १८ ४४ गृह्णन्ति ब्रह्मचर्याश्रमानन्तर गृहाश्रम ये मनुष्यास्तत्सम्बुद्धौ ३ ४१ हे गृहस्थ लोगो स० वि० १४६, ३ ४१ **गृहे**=निवासस्थाने, यज्ञशालाया, कलाकौशलसिद्धविमानादियानसमूहे वा १ १३ १२ घर में स० वि० १४२, अथर्व० ३ ३० ४ **गृहेभ्यः**=प्रासादेभ्य १ १२० ८ गृहस्थ-सम्बन्धियो के लिए, स० वि० ३८, अथर्व० १४.२ २७ **गृहेषु**=निवसनीयेषु प्रासादेषु ३ ४३ [ग्रह उपादाने (क्र्या०) धातो (गेहे क) इति क प्रत्यय । अथवा घञर्थे कविधानमिति क प्रत्यय । गृहा कस्माद् गृह्णन्तीति सताम् नि० ३ १३ ऋतवो (प्राणा) गृहा ऐ० ५ २५ जै० २ ३९ गृहा गार्हपत्य (अग्नि) मै० १ ५ १०. काठ० ८ ७ गृहाणा ह पितर ईशते श० २ ४ २ २४ गृहा वै दुर्या ऐ० १ १३ श० १ १ २ २२ गृहा वै प्रतिष्ठा श० १ १ १ १९ गृहा वै सुन्कम् ऐ० ३ २३ प्रतीच्या दिशा गृहा पशवो मार्जयन्ताम् तै० स० १ ६ ५ २ काठ० ५ ५]

गृहमेधासः गृहे मेधा प्रज्ञा येषान्ते (मरुत =उत्तमा जनाः) ७ ५९ १० [गृह-मेधापदयो समास । मेधा=धननाम निघ० २ १०]

गृहमेधिभ्यः गृहस्थेभ्य (मरुद्भ्य =मनुष्येभ्य) २४ १६ **गृहमेधी**=प्रशस्तो गृहे मेध सङ्गमोऽस्याऽस्तीति स (भा०—गृहस्थो जन) १७ ८५ [गृह-मेधपदयो समासे

[गॄ शब्दे (क्र्या०) धातोर्लट् । व्यत्ययेनात्मनेपदम् । अन्यत्र लोट् । गृणात्यर्चतिकर्मा निघ० ३ १४]

गृत्सपतिभ्यः मेधाविरक्षकेभ्य (विद्वद्भ्य) १६ २५ [गृत्स-पतिपदयो समास । गृत्स इति गृत्स-पदे द्रष्टव्यम्]

गृत्सम् यो गृणाति त मेधाविनम् (जनम्) ३ १६ १ **गृत्सः**=यो गृणाति स मेधावी (वैश्वानर =राजा) ४ ५ २ **गृत्सेभ्यः**=ये गृणन्ति पदार्थगुणान् स्तुवन्ति तेभ्यो विद्वद्भ्य १६ २५ [गृधु अभिकाक्षायाम् (दिवा०) धातो 'गृधिपण्योर्दकौ च' उ० ३ ६६ सूत्रेण स प्रत्ययो-धकारस्य च भषभावनिवृत्त्यर्थो दकार । गृत्स मेधाविनाम निघ० ३ १५ गृत्स इति मेधावि नाम, गृणाते स्तुतिकर्मण निघ० ६ ५]

गृत्समदासः गृत्साना मेधाविना मद आनन्द इवानन्दो येषान्ते (आप्ता विद्वज्जना) २ ४ ६ गृत्सा अभिकाङ्क्षिता मदा हर्षा यैस्ते (विद्वासो जना) २ ३६ ८ [गृत्स व्याख्यातम् । गृत्स-मदपदयो समास । जसोऽसुगागम । मद = मदी हर्षे (दिवा०) धातोरप्]

गृत्समदाः गृत्सोऽभिकाङ्क्षितो मद आनन्दो येषान्ते (विद्वास) २ १६ ८ गृहीताऽऽनन्दा (विद्वासो जना) २ ४१ १८ [गृत्स व्याख्यातम् । गृत्स-मदपदयो समास मद =मदी हर्षे (दिवा०) धातो 'मदोऽनुपसर्गे' अ० ३ ३ ६७ सूत्रेण अप् प्रत्यय । गृत्समद गृत्समदन नि० ६ ५ (ऋषि) स यत्प्राणो गृत्सोऽपानो मदस्तस्माद् गृत्समद इत्याचक्षते ऐ० आ० २ २ १]

गृधः अभिकाङ्क्षी ४० १ आकाङ्क्षा कर, स० प्र० २३८, ४० १ [गृधु अभिकाक्षायाम् (दिवा०) धातोर्लोट् । व्यत्ययेन श]

गृध्नुः परोत्कर्षाऽभिकाङ्क्षक (सभाध्यक्ष) १ ७० ६ अभिकाङ्क्षिता (लोभाक्रुष्टहिसको जन) १ १६२ १० [गृधु अभिकाक्षायाम् (दिवा०) धातोर्बाहुलकादौणादिको नु प्रत्यय किच्च]

गृध्यन्तम् अभिकाङ्क्षमाणम् (शत्रुम्) ४ ३८ ३ [गृधु अभिकाक्षायाम् (दिवा०) धातो शतृ]

गृध्र सर्वेषा सुखाऽभिकाङ्क्षक (अध्यापको जन) १ १६० ७ **गृध्रात्**=अभिकाङ्क्षाया ५ ७७ १ **गृध्राः**= अभिकाङ्क्षन्त (गोतमास =विद्वासो जना) १ ८८ ४ पक्षिण १ ११८ ४ [गृधु अभिकाक्षायाम् (दिवा०) धातो 'सुसूधाञ्गृधिभ्य क्रन्' उ० २ २४ सूत्रेण क्रन् प्रत्यय । गृध्र आदित्यो भवति गृध्यते स्थानकर्मण नि० १३ १३ श्येनो गृध्राणाम्''' 'पवित्रमत्येति तै० म० ३ ४ ११ १]

गृभम् ग्रहीतुम् ७.४ ३. [ग्रह उपादाने (क्र्या०) धातो सम्पदादित्वात् स्त्रिया क्विप् । 'कृतो बहुलमि' ति तुमर्थेऽपि]

गृभः ग्रहीतु योग्याया (पौरुषेय्या =पुरुषसम्बन्धि-विद्याया) २१ ४३ [ग्रह उपादाने (क्र्या०) धातो स्त्रिया सम्पदादित्वात् क्विप् । सप्रसारण हस्य च भकार]

गृभयन्तः ग्रहीता इवाचरन्त (शिल्पविद्याविदो जना) १.१४८ ३

गृभात् गृहात् ७ २१.२ [ग्रह उपादाने (क्र्या०) धातो 'गेहे क' इति क प्रत्यय । सप्रसारण ग्रहिज्यादि-सूत्रेण । हस्य च भकार]

गृभाय गृहाण ५ ८३ १० गृह्णीया २ २८ ६ गृहाण ग्राहय वा, प्र०—अत्राऽन्तर्गतो ण्यर्थ, ग्रह धातोर्हस्य भत्व श्न स्थाने शायजादेशश्च १ ६१ ४ [ग्रह उपादाने (क्र्या०) धातोर्लोटि श्न स्थाने 'छन्दसि शायजपि' अ० ३ १ ८४ सूत्रेण शायच्]

गृभायति गृह्णाति, प्र०—अत्र हस्य भ, श्न शायच् १ १४० ७ [ग्रह उपादाने (क्र्या०) धातोर्लट् । 'हृग्रहोर्भश्छन्दसी' ति हस्य भकार । श्न छान्दस शायच्]

गृभीतम् गृहीतम् (मन =अन्त करणम्) ७ २४ २ **गृभीतः**=गृहीत (धर्म =अग्निहोत्रादिको यज्ञ), प्र०— 'हृग्रहोश्छन्दसि हस्य भत्वम्, अनेनाऽत्र हस्य भ १ २४ १२ स्वीकृत शुन शेप =विद्वान्) १ २४ १३ **गृभीतान्**= गृहीतान् लोकान् १ ६३ ५ [ग्रह उपादाने (क्र्या०) धातो क्त । ग्रह्यादिसूत्रेण सम्प्रसारणे हस्य भकारे 'ग्रहोऽलिटि दीर्घ' इति दीर्घत्वम् । गृभीत इति धारित इत्येतत् श० ६ २.३ ६]

गृभीततातये गृहीता ताति सत्कर्म विस्तृतिर्येन (एकपुरवासिजनाय) ५ ७४ ४ [गृहीत-तातिपदयो समासः । गृभीत व्याख्यातम् । ताति =तनु विस्तारे (तना०) धातो स्त्रिया क्तिन्]

गृभीताम् गृहीताम् (राति=दानम्) २५ २५ [गृभीतप्राति० स्त्रिया टाप् । गृभीत व्याख्यातम्]

गृभ्णन्ति ग्राहयन्ति, प्र०—अत्र णिज्लोप १ १६२ १५ गृह्णन्ति १ ५५ २ **गृभ्णाति**=गृह्णाति १ ५५ २ **गृभ्णातु**=गृह्णातु ११ ५६ **गृभ्णामि**= गृह्णामि ऋ० भू० २०८ ग्रहण करता हूँ, स० वि० १२१, १० ८५ ३६ **गृभ्णीत**=गृह्णीत ऋ० भू० १६६,

मत्वर्थ इनि । गृह व्याख्यातम् । मेध = मेधृ सगमे च (भ्वा०) धातोर्भावे घञ् । मेध मेधाविनाम निघ० ३ १५ यज्ञनाम निघ० ३ १७]

गृहमेधीयम् गृहमेधे गृहस्थशुद्धे व्यवहारे भवम् (प्रजाजनम्) ७ ५६ १४ [गृहमेधप्राति० 'द्यावापृथिवी-शुनासीर०' अ० ४ २ ३२ सूत्रेण साम्य देवता विषयेऽपि विहितश्छो भवार्थेऽपि छान्दसत्वात् । गृहमेधो वै पाकयज्ञ । काठसक० १४० १ पशवो वै गृहमेधा काठ० ३६ ९ यद्धाना करम्भो भवति, तेन गृहमेध जै० २ ३८ गृहमेधीय पुष्टिकर्म वै गृहमेधीय गो० २ १ २३ गो० उ० १ २३ पुष्टि कर्म वा एतद् यद् गृहमेधीय कौ० ५ ५]

गृहाण ग्रहण कुरु १७ ४४ [ग्रह उपादाने (क्र्या०) धातोर्लोट् । 'हल श्न शानज्झौ' इति शानच्]

गृहे गृहे प्रतिगृहम् १ ७१ ४ [गृहे पदस्य वीप्साया द्वित्वम्]

गृह्णामि वृणोमि, अङ्गीकरोमि ७ २३ भा०—स्वीकरोमि १३ १ सम्पादयामि, स्वीकरोमि १ २७ [ग्रह-उपादाने (क्र्या०) धातोर्लट्]

गेषम् प्राप्नुयाम् ५ ५ [गेपृ अन्विच्छायाम् (भ्वा०) धातोर्लङ् । अडभावश्छान्दस]

गेहाय गृहपत्नीसङ्गमाय ३० ९

गेह्यम् गृहेषु गृहेषु भवम् (धनादिकम्) ३ ३० **गेह्याय**=गेहे नितरा भवाय (जनाय) १६ ४४ [गेह-प्राति० भवार्थे यत्]

गैरिक्षितस्य गिरौ पर्वते क्षित निवसन यस्य तस्य (सूरे मेधाविजनस्य) ५ ३३ ८ [गिरि क्षितपदयो समासे स्वार्थे प्रज्ञादित्वादण् । गिरि-क्षितपदे व्याख्याते]

गोऽअग्रया गाव इन्द्रियाणि येनव पृथिव्यो वाऽग्रा श्रेष्ठा यस्या तया (सेनया) १ ५३ ५ **गोअग्रान्**=गौर्भूमि-रग्रे प्राप्नुवन्ति यैस्तान् (सङ्ग्रामान्), प्र०—गौरित्युप-लक्षण तेन भूम्यादिसर्वपदार्थनिमित्तानि सम्पद्यन्ते १ ९२ ७ **गोअग्राम्**=गौ पृथिवी धेनुर्वाऽग्रा मुख्या यस्यास्ताम् (राति=दानम्) २ २ १३ गाव इन्द्रियाण्य-ग्रसराणि यस्या ताम् (क्रियाम्) २ ११ १६ **गोअग्राः**= गौर्वागग्रा उत्तमा यासु ता (इप =अन्नादीनीच्छा वा) ६ ३९ १ गाव इन्द्रियाण्यग्रे यासा ता (धिय) प्र०—अत्र 'सर्वत्र विभाषा गो ' अ० ६ १ १२२ अनेन सूत्रेणाऽत्र प्रकृतिभाव १ ९० ५ गाव सूर्यकिरणा अग्रे यासा ता (अप) १ १६९ ८ [गो-अग्रपदयो समास । 'सर्वत्र विभाषा गो ' अ० ६ १ १२२ सूत्रेण प्रकृतिभाव]

गोअजनासः गवि सुशिक्षिताया वाचि अप्रादुर्भूता (अध्येतार) ७ ३३ ६ [गो-अजनासपदयो समास । गौरिति व्याख्यास्यते । अजनास =नञ्पूर्वाज् जनी प्रादुर्भावे (दिवा०) धातो पचाद्यच् । जसोऽसुगागम । 'सर्वत्र विभाषा गो' रिति प्रकृतिभाव]

गोअर्णसः गो पृथिव्या जलस्य च, प्र०—अत्र 'सर्वत्र विभाषा गो ' इति प्रकृतिभाव १ ११२ १८ **गोअर्णसा**=गाव: किरणा अर्णो जल चाऽस्मिँस्तेन (ज्योतिषा=प्रकाशेन) २ ३४ १२ [गो-अर्णस्पदयो समास । पूर्ववत् प्रकृतिभाव । गोरिति व्याख्यास्यते । अर्णस्=उदकनाम निघ० १ १२]

गो ऋजीकम् गोर्भूमेर्ऋजुत्वेन प्रापकम् (देव= कृपकम्) ७ २१ १ गाव इन्द्रियाणि ऋजीकानि सरलानि येन तम् (सोमम्=महौषधिरमम्) ६ २३ ७ [गो-ऋजीक-पदयो समास । गो-पद व्याख्यातम् । ऋजीकम्=ऋज गतिस्थानार्जनोपार्जनेषु (भ्वा०) धातो 'ऋजेश्च' उ० ४ २२ सूत्रेण ईकन् प्रत्यय]

गो ऋजीका गवा दुग्धादिना मिश्रितानि (मधूनि) ३ ५८ ४ [व्याख्यातम्]

गो ओपशा गाव आ उपशेरते यस्या सा (पशुवर्धन-क्रिया) ६ ५३ ९ [गो-आङ्-उप इत्युपपदे शीङ् शये (अदा०) धातो 'अन्येष्वपि दृश्यते' इति ड प्रत्यय]

गोघातम् गवा घातकम्, भा०—गोघ्नम् (दुर्जनम्) ३० १८ [गो-घातपदयो समास । घात =हन हिंसा-गत्यो (अदा०) धातो 'कृनो वहुल वेति' वा० सूत्रेण कर्त्तरि घञ्]

गोघ्नम् गवा हन्तार (दुर्जनम्) १ ११४ १० [गा हन्तीति विग्रहे 'गो' इत्युपपदे हन हिंसागत्यो (अदा०) धातो टक्प्रत्यय 'कृतो वहुलमि' ति वार्त्तिकेन । मूल-विभुजादित्वात् को वा]

गोजाता. गवि अन्तरिक्षे प्रसिद्धा (पदार्था) ६ ५० ११ गवा सुशिक्षितया वाचा प्रादुर्भूता (विद्वज्जना) ७ ३५ १४ [गो-जातपदयो समास । जात =जनी-प्रादुर्भावे (दिवा०) धातो क्त]

गोजाः यो गा पृथिव्यादीन् जनयति (परमेश्वर) १० २४ यो गा इन्द्रियाणि पशून् वा जनयति (ब्रह्म जीवश्च) १२ १४ यो गोषु पृथिव्यादिषु जात (जीवात्मा) ४ ४० ५ ['गो' इति सप्तम्यन्त उपपदे जनी प्रादुर्भावे

पति. स्वामी तस्मिन्, अ०—पृथिव्यादिरक्षणमिच्छुकस्य धार्मिकमनुष्यस्य समीपे १ १ [गो-पतिपदयो समास । गौरिति व्याख्यास्यते]

गोपाजिह्वस्य गोरक्षका जिह्वा यस्य तस्य (राजादिजनस्य) ३ ३८ ९ [गोपा-जिह्वापदयो समास । गोपा= 'गो' इत्युपपदे पा रक्षणे (अदा०) धातो क । स्त्रिया टाप् । जिह्वा वाङ्नाम निघ० १ ११]

गोपा रक्षकौ (राजाऽमात्यौ) ५ ६२ ९ ['गो' इत्युपपदे पा रक्षणे (अदा०) धातो क । 'सुपा सुलुग्' इत्याकारादेश]

गोपान् पालकान् (विदुषो जनान्) ६ ५१ ३ [गोप इति व्याख्यातम्]

गोपाम् रक्षकम् (मनुष्यम्) ६ ५२.३ इन्द्रिय-पश्वादीना रक्षकम् (ईश्वर भौतिकमग्नि वा) ३ २३ गा पृथिव्यादीन् पाति रक्षति तम् (अग्नि=परमेश्वरम्) १ १ ८ ['गो' इत्युपपदे पा रक्षणे (अदा०) धातो क्विप् प्रत्यय । गोपा गोपायिता आदित्य निघ० ३ ११ एप वै गोपा य एप (सूर्य) तपत्येष हीद सर्वं गोपायति श० १४ १ ४ ९ प्राणो वै गोपा । स हीद सर्वमनिपद्यमानो गोपायति जै० उ० ३ ३७ २ इन्द्रो वै गोपा ऐ० ६ १० गो० उ० २ २० अग्निर्वै देवाना गोपा ऐ० १ २८]

गोपायत पालयत ५ ३४. [गुपू रक्षणे (भ्वा०) धातोर्लोट् । 'गुपूधूपविच्छिपणिपनिभ्य आय' अ० ३ १ २८ सूत्रेण आय प्रत्ययः]

गोपालम् गवा पालकम् (जनम्) ३० ११ ['गो' इत्युपपदे पाल रक्षणे (चुरा०) धातोरण् प्रत्यय]

गोपावत् पृथिवीपालवत् ७ ६० ८ [गोपाप्राति० तुल्यार्थे वति । गोपा ='गो' इत्युपपदे पा रक्षणे (अदा०) धातो क्विप्]

गोपाः रक्षक. (अग्नि =विद्युत्) १५ २७ रक्षका भृत्या (जना) १६ ७ पृथिव्यादयो जगद्रक्षका, भा०—सर्वलोकाभिरक्षका (पृथिव्यादिलोका) १७ ५८ गवा पाता (जन) २ ९ ६ गोपाला पशुरक्षका (जना) ७ १३ ३ पालिका (रशना =रज्जव) २९ १६ [गोपेति व्याख्यातम्]

गोपीथाय पृथिवीन्द्रियादीना रक्षणाय, प्र०—निशीथ-गोपीथाऽवगथा, उ० २ ९ अनेनाऽय निपातित १ १९ १ **गोपीथे**=गवा पेये दुग्धाऽऽदौ ५ ६५ ६ ['गो' इत्युपपदे पा रक्षणे (अदा०) धातो, पा पाने (अदा०) धातोर्वा 'निशीथ-गोपीथावगथ' उ० २ ९ सूत्रेण थक् प्रत्यय । गोपीथाय सोमपानाय नि० १० ३६]

गोपौ रक्षकौ राजाऽमात्यौ ५ ६३ १ [गोप इति व्याख्यातम्]

गोभाजः ये गा पृथिवी भजन्ति ते (वैद्या जना) १२ ७९ ये गा पृथिवी वाचमिन्द्रियाणि किरणान् वा भजन्ति ते (जीवा) ३५ ४ ['गो' इत्युपपदे भज सेवायाम् (भ्वा०) धातो भजो ण्वि' अ० ३ २ ६२ सूत्रेण ण्वि प्रत्यय]

गोभिः सुशिक्षिताभिर्वाणीभि पृथिवीधेनुभिर्वा २० ७३ गोहस्त्यश्वादिभि सह १ २३ १५ इन्द्रिय-पृथिवी-विद्या-प्रकाश-पशुभि १ १६ ६ धेनु-वृषभैं २० ३७ धेनुभि सुष्ठु व्यवहारयुक्तैर्वा ८ १५ रश्मिभि, प्र०—गाव इति रश्मिनामसु पठितम्, निघ० १ ५, १ ७ ३ [गौरिति पदे द्रष्टव्यम्]

गोमघा पृथिवीराज्येन सत्कृतानि धनानि ६ ३५ ३ **गोमघाः**=भूमिराज्यधना, (प्रजाजना) ६ ३५ ४ [गो-मघपदयो समास । मघम्=धननाम निघ० २ १०]

गोमत् प्रशस्ता गाव इन्द्रियाणि किरणा पृथिव्यादयो वा विद्यन्ते यस्मिँस्तद् (वाजम्=विज्ञानमन्न वा) १ ४८ १२ प्रशस्ता गौर्वाग् विद्यते यस्मिँस्तत् (सैन्यम्) ७ २३ ६ प्रशसिता गावो गवादय पशवो यस्मिन् (राज्यम्) २० ५४ बहुगवादियुक्तम् (परमैश्वर्यम्) ७ २७ ५ बह्व्यो गावो विद्यन्ते यस्मिँस्तद् (वर्त्ति =मार्गम्) २ ४१ ७ गौ प्रशस्ता वाक्, गाव स्तोतारश्च विद्यन्ते यस्मिँस्तत् (अत्र = विद्या सुवर्णादि च धनम्) प्र०—अत्र प्रशसार्थे मतुप् १ ९ ७ गाव सुखप्रापिका बह्व्यो विद्यन्ते यस्मिँस्तत्, (यानम्) प्र०—गौरिति पदनामसु पठितम्, निघ० ५ ५ अनेन प्राप्त्यर्थो गृह्यते, अत्र भूम्न्यर्थे मतुप् १ ३० १७ **गोमतः**=प्रशस्तवाग्युक्तस्य (वाजस्य=विज्ञानस्य) ६ ४५ २३ प्रशस्तधेनुपृथिवीयुक्तस्य (ऐश्वर्यस्य) १५ ३५ शोभना वाक् पृथिव्यादयो वा विद्यन्ते यस्य तस्य (प्रजाजनस्य) ३ १६ १ प्रशस्ता पृथिवी, गाव पशवो वागादीनीन्द्रियाणि च विद्यन्ते यस्मिँस्तस्य (इन्द्रस्य=ईश्वरस्य सभासेनाध्यक्षस्य वा) १ ११ ३ गाव सम्बद्धा रश्मयो विद्यन्ते यस्य तस्य (वलस्य=मेघस्य), प्र०—अत्र सम्बन्धे मतुप् १ ११ ५ बहुकिरणयुक्तान् (वज्रान्=मेघान्) ६ ७३ ३ गावो विद्यन्ते येषा तान् (प्रजाजनान्) ४ ३२ ६ अतिशयितस्तोता विप्र =मेधाविजन) ६ १० ३.

'वा छन्दसि' इति पूर्वरूपैकादेशो न भवति]

गौः विद्यासुशिक्षिता वाणी १ १७३ ८ पृथिवी धेनुर्वा १ १६४ २८ पशु २१ १६ वृषभ २१ १७ या गच्छति सा (इन्द्र =विद्युत्) ३ ३० १४ स्तोता (जन) २१ १३ गच्छतीति गौ पृथिवी १ १६४ १७ गन्त्री (वाक्) ४४१ ५ यो गच्छति स भूगोल, प्र०—गौरिति पृथिवीनामसु पठितम्, निघ० ११ 'गौरिति पृथिव्या नामधेयम्' यद् दूर गता भवति यच्चाऽस्या भूतानि गच्छन्ति, नि० २ ५, ३ ६ विद्यया स्तोतव्य (विद्वान् जन) २१ १४ पृथिवीगोल सूर्यश्चन्द्रोऽन्यो लोको वा, ऋ० भू० १३६ [गम्लृ गतौ (भ्वा०) धातो 'गमेर्डो' उ० २ ६८ सूत्रेण डोसि प्रत्यये गो रूपम् । सु प्रत्यये 'गोतो णित्' इति णित्वे वृद्धौ गौरूपम् । गौ पृथिवीनाम निघ० ११ साधारणनाम निघ० १४ वाङ्नाम निघ० १११ स्तोतृनाम निघ० ३ १६ पदनाम निघ० ४१ गाव रश्मिनाम निघ० १५ गौरिति पृथिव्या नामधेयम्, यद्दूर गता भवति, यच्चास्या भूतानि गच्छन्ति, गातेर्वौकारो नामकरण नि० २ ५ पय नि० २ ५ चर्म च श्लेष्मा च नि० २ ५ अधिषवणचर्म नि० २ ५ स्नाव च श्लेष्मा च नि० २ ५ ज्यापि गौरुच्यते, गमयतीषून् नि० २ ६ सो (आदित्यरश्मि) ऽपि गौरुच्यते नि० २ ६ गौ आदित्यो भवति गमयति रसान्, गच्छत्यन्तरिक्षे । अथ द्यौ यत् पृथिव्या अधिदूर गता भवति, यच्चास्या ज्योतींषि गच्छन्ति नि० २ १४. वागेषा माध्यमिका, धर्मधुगिति याज्ञिका नि० ११ ४२ गावो गमनात् नि० १२ ७ इमे वै लोका गौर्यद्धि किं च गच्छतीमास्तल्लोकान् गच्छति श० ६ १ २ ३४ इमे लोका गौ श० ६ ५ २ १७ अयमस्यमो (लोक =अन्तरिक्षम्) गौ ता० ४ १ ७ अन्तरिक्ष गौ ऐ० ४ १५ गावो वा आदित्या ऐ० ४ १७ अन्नसु गौ श० ७ ५ २ १६ अन्न वै गौ तै० ३ ६ ८ ३ अन्न हि गौ श० ४ ३ ४ २५ जै० उ० ३ ३ १३ यज्ञो ह्येवेय (गौ) नो ह्यते गोर्यज्ञस्तायतेऽन्न ह्येवेय (गौ) यद्धि किं चान्न गौरेव तदिति श० २ २ ४ १३ यज्ञो वै गौ तै० ३ ६ ८ ३ (प्रजापति) प्राणाद् गाम् (निरमिमीत) श० ७ ५ २ ६ प्राणो हि गौ श० ४ ३ ४ २५ इन्द्रिय वै वीर्य गाव श० ४ ५ ३ १० मुखादेवास्य बलमस्रवत् स गौ पशुरभवदृषभ श० १२ ७ १४ इडे रन्ते हव्ये काम्ये चन्द्रे ज्योतेऽदिति सरस्वति महि विश्रुति एता ते ऽघ्न्ये (देवत्रा) नामानि श० ४ ५ ८ १० इडा हि गौ श० २ ३ ४ ३४ सरस्वती हि गौ श० १४ २ १ ७ मह्य इति ह वा ऽएतासामेक नाम यद्गवाम् श० १ २ १ २२ या गौ सा सिनीवाली सा एव जगती ऐ० ३ ४८ विराड् वै गौ श० ७ ५ २ १६ गौ विराजो वा एतद्रूप यद् गौ ता० ४ ६ ३ गौर्वै सार्वगत्री कौ० २७ ४ साहस्रो वा एष शतधार उत्सो यद् गौ श० ७ ५ २ ३४ स ह्येष सोमोऽजस्रो यद् गौ श० ७ ५ २ १६ गौर्वै स्रुच तै० ३ ३ ५ ४ गौर्वै देवाना मनोता कौ० १० ६ ऐ० २ १० वैश्वदेवी वै गौ गो० उ० ३ १६ यद्गोस्तेन रौद्री श० ५ २ ४ १३ रौद्री वै गो तै० २ २ ५ २ आग्नेयो वै गौः श० ७ ५ २ १६ गौर्वा ऽइद सर्व बिभर्त्ति श० ३ १ २ १४ महास्त्वेव गोर्महिमेत्यध्वर्यु (आह)। गौर्वै प्रतिधुक् श० ३ ३ ३ १ मनुष्याणा ह्येतासु (गोषु क्षीरदध्यादिविषया) कामा प्रविष्टा श० २ ३ ४ ३४ सर्वस्य वै गाव प्रेमाण सर्वस्य चारुता गता ऐ० ४ १७ अपशवो वा एते यदजावयश्चारण्याश्च एते वै सर्वे पशव यद् गव्या इति तै० ३ ६ ६ २ नैते सर्वे पशवो यदजावयश्चारण्याश्चैते वै सर्वे पशवो यद्गव्या इति श० १३ ३ २ ३ तस्मादाहुर्गाव पुरुषस्य रूपमिति श० १२ ६ १ ४ षट्त्रिंशदवदाना गौ गो० पू० ३ १८ तस्मात् सवत्सर ऽएव स्त्री वा गौर्वा विडवा वा विजायते श० ११ १ ६ २ आग्रयणपात्रमुक्थ्यपात्रमादित्यपात्रमेतान्येवानु गाव प्रजायन्ते श० ४ ५ ५ ८ गा चाज च दक्षिणत एतस्या तद्दिश्येतौ पशू दधाति तस्मादेतस्या दिश्येतौ पशू भूयिष्ठौ श० ७ ५ २ १६ आग्नेयो वै गौ श० ७ ५ २ १६ इन्द्रिय वै वीर्य गाव श० ५ ४ ३ १० इय (पृथिवी) वै गौ काठ० ३७ ६ गा पशुम् जै० १ ६६ गावो वै शक्वर्य जै० ३ १०३ गोभिर्यज्ञ दाधार (इन्द्र) तै० स० ४ ४ ८ १ गौरेव रथन्तरम् जै० १ ३३३ गौर्घृताची तै०स० २ ५ ७ ४ गौर्वाव सर्वस्य मित्रम् तै०स० २ ५ २ ६ गौर्वै देवाना मनोता ऐ० २ १० गौर्वै वाग्, गौर्विराड्, गौरिडा, गौ खल्वेव गौ, गौरिद सर्व मै० ४ २ ३ गौर्हि यज्ञिया मेध्या मै० १ ८ ६ गौस्त्रिष्टुक् तै० स० ७ ५ १ ५ गोस्साय प्रातस्तनमाप्यायते काठ० २४ १० जगती छन्दस्तद् गौ, प्रजापतिर्देवता मै० २ १३ १४ तस्मादाहुर्गावो लवणमिति जै० ३ २३६ तस्मादेषा (गौ) उपजीवनीया श० २ २ ४ १२ ता (गाम्) रुद्राय होत्रे ऽददात् श० ४ ३ ४ २५ यज्ञो वै गौ तै० ३ ६ ८ ३ श० ४ ३ ४ २५ माता रुद्राणा दुहिता वसूना स्वसादित्यानामृतस्य नाभि प्र नु वोच चिकितुषे जनाय मा गाम् अनागाम् अदितिं वधिष्ट म० २ ८ १५]

ग्धः हन्तु, प्र०—हन्तेर्लुङि छान्दसमेतत् १ ११८ ५

ग्नापतिः वाच पति पालक (परमेश्वर) २ ३८ १० [ग्ना-पतिपदयो समास । ग्ना वाङ्नाम नि० १११]

ग्नाभिः सुशिक्षिताभिर्वाग्भि २ ३१ ४ **ग्नाम्**=

गोष्ठम् गवां स्थानम्, प्र०—अत्र 'घञर्थे क-विधानम्' इति क ५ १७ **गोष्ठे**=गावः पशवः इन्द्रियाणि यस्मिँस्तिष्ठन्ति तस्मिन् ३ २१ ['गो' इत्युपपदे ष्ठा गतिनिवृत्तौ (भ्वा०) धातोः 'घञर्थे क-विधानम्' इति क प्रत्ययः। 'अम्बाम्बगोभूमि०' अ० ८ ३ ९७ सूत्रेण मूर्धन्यादेशः। गोष्ठ एव पुरीषम् जै० ३ ११४. सोऽन्नवीद् (प्रजापतिः) गोष्ठो वाव स इदं पशूनां सामाभूदिति। तदेव गोष्ठस्य गोष्ठत्वम् जै० ३ १५३]

गोष्ठादिव यथा स्वस्थानात् तथा १२ ८२ [गोष्ठात्-इवपदयोः समासः]

गोष्ठानम् गौर्वाणी तिष्ठति यस्मिन्नध्ययनाध्यापने त व्यवहारम्, भा०—विद्यावृद्धिम्, प्र०—गौरिति वाङ्नामसु पठितम्, निघ० १ ११, १ २६ गौः पृथिवी तिष्ठति यस्मिँस्तदन्तरिक्षम् १ २६ गवां सूर्यरश्मीनां पशूनां वा स्थानम्, प्र०—गाव इति रश्मिनामसु पठितम्, निघ० १ ५, १२५. [गौरिति व्याख्यास्यते, तदुपपदे ष्ठा गतिनिवृत्तौ (भ्वा०) धातोरधिकरणे ल्युट्प्रत्ययः। सुषामादित्वात् षत्वम्]

गोष्ठ्याय गोष्ठेषु गवां स्थानेषु साधवे (पुरुषाय) १६ ४४ [गोष्ठ व्याख्यातम्। ततः साध्वर्थे यत् प्रत्ययः]

गोसखायम् गौर्भूगोलः सखा यस्य तम् (सोम=जलम्) ५ ३७ ४ [गो-सखिपदयोः समासः]

गोसनाः यो गाः सनुते याचते तत्सम्बुद्धौ (जिज्ञासो जन!) ४ ३२ २२ [गोषणपदे व्याख्यातम्]

गोसनिः गोः संस्कृतवाचो भूमेर्विद्याप्रकाशादेः सनिर्दाता (वीरो गृहपतिः) ८ १२ **गोसणिम्**=गवां विभाजिकां (प्रज्ञाम्) ६ ५३.१० [गोषणिम्पदे व्याख्यातम्]

गोसादीः या गाः सादयन्ति हिंसयन्ति ताः पक्षिणीः २४ २४ [गोषादी-पदे व्याख्यातम्]

गोहा यो गा हन्ति (दुर्जनः) ७ ५६ १७ ['गो' इत्युपपदे हन हिंसागत्योः (अदा०) धातोः क्विप्। 'सौ चे' ति दीर्घः]

गोहे संवरणीये गृहे ४ २१ ६ [गुहू संवरणे (भ्वा०) धातोः 'हलश्च' सूत्रेण घञ्प्रत्ययः]

गोः भूमेः १ १२१ २ पृथिव्यादेः ४ २३ ६ वाचः २२ ४८ धेनोः १ १२१ ७ [गौरिति पदे द्रष्टव्यम्]

गौपत्यम् वाक्चातुर्य्यम्, अध्यापकत्वम्, सकलविद्याऽधिस्वामित्वम्, गोर्धेनोः पृथिव्या वाचो वा पतिस्तस्य भावम् ११ ५८ **गौपत्येन**=गवामिन्द्रियाणां पशूनां वा पतिः पालकस्तस्य भावः कर्म वा तेन, भा०—चेष्टादिव्यवहारहेतुना, (जीवेन) प्र०—अत्र 'पत्यन्तपुरोहितादिभ्यो यक्' अ० ५ १ १२८ इति यक् प्रत्ययः ३ २२ [गो-पतिपदयोः समासे भावकर्मणोरर्थयोः 'पत्यन्तपुरोहितादिभ्यो यक्' अ० ५ १ १२८ सूत्रेण यक्]

गौरम् गौर-वर्णम् (पशुं=द्रष्टव्यमश्वादिकम्) १३ ४८ **गौरः**=यो गवि सुशिक्षितायां वाचि रमते सः (ब्रह्मा=चतुर्वेदविज्जनः) ४ ५८ २ यो वेदविद्यावाचि रमते स एव (ब्रह्मा=चतुर्वेदविज्जनः) १७ ९० गौरगुणविशिष्टो मृगः १ १६ ५ [गायति शब्दं करोतीति विग्रहे गै शब्दे (भ्वा०) धातोः 'किशोरादयश्च' उ० १ ६५ सूत्रेण ओरन्प्रत्यये धातोराकारादेशो निपात्यते। अरुणे श्वेते पीते निर्मले च वाच्यलिङ्गः। अथवा=गुङ् अव्यक्ते शब्दे (भ्वा०) धातोः 'ऋज्रेन्द्राग्र०' उ० २ २८ सूत्रेण निपातनात् साधुः। अथवा='गो' इत्युपपदे रमु क्रीडायाम् (भ्वा०) धातोः 'अन्येष्वपि दृश्यते' सूत्रेण ड प्रत्ययः। विभक्तेश्चालुक्]

गौरिव आदित्य इव ५ ५९ ३ [गो-इव पदयोः समासः]

गौरिवीतेः यो गौरिं वाचं व्येति सः (राजा), प्र०—गौरीति वाङ्नाम' निघ० १ ११, ५ २९ ११ [अतिरिक्तं गौरीवीतम् तां० १८ ६ १९ तैं० १ ४५ २ एतद्ध वा अध्वश्व देवानां यद् गौरिवीतम् जै० ३ १७ एतद्वै यज्ञस्य स्वस्तनं यद् गौरीवितम् तां० ५ ७५ गौरीवितिर् (ऋषिविशेषः) वा एतच्छाक्तयो ब्रह्मणोऽतिरिक्तमपश्यत्तद् गौरीवितमभवत् तां० ११.५ १४ तेजो वै ब्रह्मवर्चसं गौरिवीतम् ऐ० ४ २ देवा वै वाचं व्यभजन्त तस्या यो रसोऽत्यरिच्यत तद्गौरी वितमभवत् तां० ५ ७ १ प्रजा वै पशवो गौरिवीतम् जै० ३ २९१ प्र वा इन्द्राय मादनमिति गौरीवितम् तां० ९ २ २ ब्रह्म यद्देवा व्यकुर्वत ततो यदतिरिच्यत तद् गौरीवितमभवत् तां० ९ २ ३ रसो वै गौरिवीतम् जै० ३ २९१ वाचो वै रसोऽत्यक्षरत् तद् गौरिवीतमभवत् जै० ३ १८]

गौरीः गौरवर्णा (विदुषी स्त्री) १ १६४ ४१. [गौर पदं व्याख्यातम्। ततः 'षिद्गौरादिभ्यश्च' अ० ४ १ ४१. सूत्रेण स्त्रियां ङीप्। गौरी वाङ्नाम निघ० १ ११ गौरी रोचतेर्ज्वलतिकर्मणः नि० ११ ३९]

गौर्यम् गौरीं वाचम्, प्र०—गौरीति वाङ्नाम, निघ० १ ११, ४ १२ ६ **गौर्यः**=शुभ्राः किरणा इव उद्यमयुक्ता सेना १ ८४.१० [गौरी व्याख्यातम्।

(राजानम्) ऋ० भू० २२४ **ग्रामजितः**=ये ग्राम जयन्ति (नर=नायका जना) ५ ५४ ८ [ग्रामोपपदे जि जये (भ्वा०) धातो क्विप् । ग्रामपद व्याख्यास्यते]

ग्रामण्यम् ग्रामस्य नायकम् (प्रधानपुरुष) ३० २० [ग्रामोपपदे णीञ् प्रापणे (भ्वा०) धातो 'सत्सूद्विष०' अ० ३ २ ६१ सूत्रेण क्विप् । वैश्यो वै ग्रामणी श० ५ ३ १ ६ मारुत सप्त कपालो वैश्यस्य ग्रामण्यो गृहे मै० २ ६ ५ ग्रामण्यो गृहान् परेत्य मारुत सप्तकपाल पुरोडाश निर्वपति । श० ५ ३ १ ६ एको बहूना ग्रामणी काठ० २७ १०]

ग्रामः मनुष्यसमूह इव (सज्जन) ३ ३३ ११ **ग्रामाः**=मनुष्यनिवासा २ १२ ७ **ग्रामे**=गृहाश्रमे ऋ० भू० २३६ शालासमुदाये नगरादौ १ ११४ १ शालासमुदाये गृहस्थै सेविते (नगरे), प्र०—ग्राम इत्युपलक्षण नगरादीनाम् ३ ४५ ब्रह्माण्डसमूहे १६ ४८ **ग्रामेभिः**=ग्रामस्थै प्रजापुरुषै १ १०० १० **ग्रामेषु**=मनुष्यादिनिवासेषु १ ४४ १० [ग्रसु अदने (भ्वा०) धातो 'ग्रसेरा च' उ० १ १४३ सूत्रेण मन्प्रत्यय आकारान्तादेशश्च । छन्दासीव खलु वै ग्राम तै० स० ३ ४ ६ २]

ग्राम्यान् ग्रामे भवान् (पशून्=गवादीन्) ६ ३२ **ग्राम्याः**=ग्रामे भवा गवादय, भा०—ग्रामस्था पशव ३१ ६ [ग्रामप्राति० भवार्थे यत् । ग्रामपद व्याख्यातम्]

ग्रावग्राभः यो ग्राव्ण स्तावकान् गृह्णाति स (विद्वज्जन) १ १६२ ५ यो ग्रावाण मेघ गृह्णाति स (अध्वर्यु=अहिंसायज्ञमिच्छु) २५ २८ [ग्रावन् इत्युपपदे ग्रह उपादाने (क्र्या०) धातोर् अण् हकारस्य भकारादेश । ग्रावेति व्याख्यास्यते]

ग्रावच्युतः ग्राव्णो मेघाच्युत (अशु=यज्ञपदार्थाना सविभाग) प्र०—ग्रावेति मेघनामसु पठितम्, निघ० १ १०, ७ २६ [ग्रावन्-च्युतपदयो समास । ग्रावा मेघनाम नि० १ १० च्युत=च्युङ् प्लुङ् गतौ (भ्वा०) धातो क्त]

ग्रावणा मेघ से स० वि० १६६, ६ ११३ ७ **ग्रावभिः**=मेघै ३ ४२ २ गर्जनायुक्तैर्मेघै २६ ५ **ग्रावभ्यः**=गर्जकेभ्य मेघेभ्य प्र०—ग्रावेति मेघनाम, निघ० १ १०, ३८ १५ **ग्रावा**=गर्जनायुक्तो मेघ इव (विद्वज्जन) ५ ३१ १२ जलगृहीतो मेघ १ १४ मेधावी (जन) १ १३५ ७ यो गृणाति स मेघ इव विद्वान् १ ८४ ३ पाषाण १ २८ १ **ग्रावाणम्**=मेघमिव ७ ३३ १४ **ग्रावाणः**=मेघादय पदार्था १ ८९ ४ सदसद्विवेचका विद्वास अ०—स्तावका विद्वास सभासद, प्र०—ग्रावाण इति पदनामसु पठितम्, निघ० ५ ३, ६.२६ शिलाफलकादय १८ २१ **ग्राव्णः**=मेघान् ३ ५७ ४ [गृणाति अर्चतिकर्मा (निघ० ३ १४) धातो क्वनिप् प्रत्ययो धातोश्च ग्रादेशश्छान्दस । अथवा=ग्रह उपादाने (क्र्या०) धातो क्वनिप् ग्रादेशश्च । ग्रावा मेघनाम निघ० १ १० ग्रावाणो हन्तेर्वा गृणातेर्वा गृह्णातेर्वा नि० ६ ८ अश्मा उपर उपल इत्येताभ्या (अद्रि ग्रावा, गोत्र, वल, अश्न, उपर, उपल) साधारणानि पर्वतनामभि नि० २ २१ प्राणा वै ग्रावाण श० १४ २ २ ३३ वज्रो वै ग्रावा श० ११ ५ ६ ७ पशवो वै ग्रावाण ता० ६ ६ १४ विड् वै ग्रावाण ता० ६ ६ १ विशो ग्रावाण श० ३ ९ ३ ३. जागता वै ग्रावाण. कौ० २९ १ वार्हता ग्रावाण श० १२ ८ २ १४ साम्ना वै ग्रावाण ता० ६ ६ १४ विद्वासो हि ग्रावाण श० ३ ९ ३ १४ यदि ग्रावापि शीर्यते पशुभिर्यजमानो व्यृध्यते ता० ६ ६ १३ ग्रावाणो दन्ता तै० स० ६ २ ११ १४ मै० ३ ८ ८ ग्रावाणो वै सोमस्य राज्ञो मलिम्लुसेना तै० स० ६ ३ २ ६ ग्रावा शेप तै० स० ७ ५ २५ २ ग्राव्णा पर्वता काठ० ३५ १५ यज्ञमुख ग्रावाण मै० ४ ५ २ राष्ट्र वै द्रोणकलशो विशो ग्रावाण जै० १ ८० वत्सा (पशवो हि) ग्रावाण काठ० २५ ६]

ग्रावहस्तासः गावा स्तुतिसमूहो ग्रहण दान वा ग्रावाण पाषाणादयो यज्ञशिल्पविद्यासिद्धिहेतवो हस्तेषु येषा ते (द्रविणस=ऋत्विज) प्र०—'ग्रावाणो हन्तेर्वा गृणातेर्वा गृह्णातेर्वा' नि० ९ ८, १ १५ ७ [ग्रावा व्याख्यातम्। ग्रावान्हस्तपदयो समास । जसोऽसुगागम]

ग्रावेव मेघ इव ४ ३ ३. [ग्रावा-इवपदयो समास । ग्रावापद व्याख्यातम्]

ग्रीवा प्रजाया सुखेन भूषितपुरुषार्थकरणम् ऋ०भू० २१९ **ग्रीवायाम्**=कण्ठे ४ ४० ४ **ग्रीवासु**=कण्ठेषु १२ ६५ **ग्रीवाः**=शिरासि ५ २६ कण्ठप्रदेशा २० ८ कण्ठान् ६ ४८ १७ [निगलति यया सेति विग्रहे गृ निगरणे (तुदा०) धातो 'शेवायह्वाजिह्वाग्रीवा०' उ० १ १५४ सूत्रेण वन्प्रत्ययो ग्रीभावश्च निपात्यते । ग्रीवा गिरतेर्वा गृणातेर्वा गृह्णातेर्वा नि० २ २८ ग्रीवा उष्णिह श० ८ ६ २ ११ उष्णिक् छन्द सविता देवता ग्रीवा श० १०.३ २ २ ग्रीवा वै यज्ञस्योपसद श० ३ ४ ४ १ ग्रीवा पञ्चदश । चतुर्दश वा ऽ एतासा कारुकराणि, वीर्य पञ्चदशम् । तस्मादेताभिरण्वीभि सतीभिर्गुरु भार हरति श० १२ २ ४ १० गो० पू० ५ ३ इमा एव ग्रीवा पञ्चदशमह

गच्छन्ति ज्ञान यया ताम् (मही=वाचम्) ५ ४३ ६ [ग्ना वाङ्नाम निघ० १ ११ गमनादय नि० १० ४७ गच्छन्त्येना नि० ३ २१ छन्दासि वै ग्नाश्छन्दोभिर्हि स्वर्ग लोक गच्छन्ति श० ५ ५ ४ ७]

ग्नाव: ग्ना प्रशसिता वाणी विद्यते यस्य तत्सम्बुद्धौ (राजन् शिष्य वा) २ १ ५ सर्वपदार्थप्राप्तिर्यस्य व्यवहारे (ऋतु), प्र०—ग्ना इति उत्तरपदनामसु पठितम्, निघ० ३ २६, १ १५ ३ प्रशस्त-वाग्मिन् (विद्वज्जन), प्र०—ग्नेति वाङ्नाम, निघ० १ ११, २६ २१ ['ग्नास् इति व्याख्यातम्। ग्नाप्राति० मत्वर्थे 'छन्दसीवनिपौ च वक्तव्यौ' अ० ५ २ १०६ वा० सूत्रेण वनिप्। 'वन उपसख्यानम्' अ० ८.३ १ वा सूत्रेण रुत्वम्]

ग्नासु गन्तु योग्यामु भूमिषु १ १६१ ४ **ग्ना:**=वेदवाच प्र०—ग्ना इति वाङ्नामसु, निघ० १ ११, ११ ६१ पृथिव्या, प्र०—ग्ना इत्युत्तरपदनामसु पठितम्, निघ० ३ २६, १ २२ १० मुशिक्षिता वाच ३३ ४८ ['ग्ना' इति व्याख्यातम्]

ग्नास्पत्नीभि: या ग्ना पतीना स्त्रियस्ताभि (स्वपत्नीभि) ४ ३४ ७ [ग्ना-पतिपदयो समासे स्त्रिया डीप् नकारान्तादेशश्च। ग्ना इति व्याख्यातम्]

ग्मन् गच्छन्ति ५ ३३ १०. प्राप्नुयु ३ ३८ २ प्राप्नुवन्ति प्र०—अत्र गमधातोर्लुडि 'मन्त्रे घस०' इति च्लेर्लुक्, 'गमहन०' इत्युपधालोपोऽडभावो लडर्थे लुड् च १ ६५ १ प्राप्नुवन्तु ४ ३४ ५ **ग्मन्त**=प्राप्नुत १ १२२ ११

ग्म: पृथिव्या ५ ३८ ३ पृथिव्यादे, प्र०—ग्मेति पृथिवीनामसु पठितम्, निघ० १ १, १ २५ २० प्रकाशरहितपृथिव्यादिलोकान्। प्र०—अत्र गमधातोर्बाहुलकादौणादिक अ-प्रत्यय उपधालोपश्च १ ३७ ६

ग्मिषीय प्राप्नुयाम्, प्र०—अत्राऽऽशिषि लिडि वा 'छन्दसि सर्वे विधयो वा भवन्ति' इति डागम 'गमहनजन०' अ० ६ ४ ९८ इति उपधालोपश्च ३ १६ [गम्लृ गतौ (भ्वा०) धातोराशिषि लिड्]

ग्रथिन: अज्ञानेन बद्धान् (अविदुषो जनान्) ७ ६ ३ [ग्रन्थ बन्धने (चुरा०) धातोरिणिनि प्रत्यय। नकारलोपश्छान्दस]

ग्रभणवत् प्रशस्त ग्रभण ग्रहण विद्यते यस्मिँस्तत् (आयु =जीवनम्) १ १२७ ५ [ग्रहणप्राति० मतुप्। हकारस्य भकार 'हृग्रहोर्भश्छन्दसी' ति वार्त्तिकेन]

ग्रभाय ग्रहणाय ७ ४ ८

ग्रभीष्ट गृह्णीया २ २९ ५

ग्रसिताम् निगलिताम् (वर्त्तिकामिव प्रजाम्) १ ११२ ८ [ग्रसु अदने (भ्वा०) धातो क्त]

ग्रसिष्ठ: अतिशयेन ग्रसिता (मर्त्त=मनुष्य) २६ १८ [ग्रसु अदने (भ्वा०) धातोस्तृजन्तादतिशायने इष्ठन्। 'तुरिष्ठेमेयस्सु' सूत्रेण तृचो लोप। ग्रसिष्ठ ग्रसितृतम नि० ६ ८]

ग्रहम् गृह्णाति येन तम् (अक्षित=अक्षय सुखम्) ३८ २६ **ग्रहान्**=गृह्यन्ते स्वीक्रियन्ते विवाहकाले नियतशिक्षाविषया ये तान् ८ ९ **ग्रहाभ्याम्**=यौ गृह्णीतस्ताभ्याम् (स्त्रीपुरुषाभ्याम्) १९ ९० याभ्या गृह्णीतस्ताभ्याम् (व्यवहाराभ्याम्) १९ ९१ **ग्रहा:**=ग्रहीतारो गृहाऽऽश्रमिण भा०—राजप्रजाजना गृहस्था ६ ४ यै सर्वं क्रियाकाण्ड गृह्णन्ति ते व्यवहारा १९ २८ [ग्रह उपादाने (क्र्या०) धातो 'घञर्थे कविधानम्' इति क प्रत्यय। अन्नमेव ग्रह। अन्नेन हीद सर्व गृहीतम् श० ४ ६ ५ ४ नामैव ग्रह। नाम्ना हीद सर्व गृहीतम् श० ४ ६ ५ ३ वागेव ग्रह। वाचा हीद सर्व गृहीतम् श० ४ ६ ५ २ अङ्गानि वै ग्रहा श० ४ ५ ९ ११ यद् गृह्णाति तस्माद् ग्रह श० १० १.१ ५ त (सोमम्) अघ्नन्। तस्य यशो व्यगृह्णत। ते ग्रहा अभवन्। तद् ग्रहाणा ग्रहत्वम् तै० २ २ ८ ६ तद् यदेन पात्रैर्व्यगृह्णतस्माद् ग्रहा नाम श० ४ १ ३ ५ (प्रजापति) तौ (दर्शपूर्णमासौ) ग्रहेणागृह्णात् तद् ग्रहस्य ग्रहत्वम् तै० २ २ २ १ यद् वित्त (यज्ञ) ग्रहैर्व्यगृह्णत तद् ग्रहाणा ग्रहत्वम् ऐ० ३ ९ तान् पुरस्तात् पवित्रस्य व्यगृह्णात् ते ग्रहा अभवन्। तद् ग्रहाणा ग्रहत्वम् तै० १ ४ ११ ते (देवा) सोममन्वविन्दन्। तमघ्नन्। तस्य यथाभिज्ञाय तनूर्व्यगृह्णत। ते ग्रहा अभवन्। तद् ग्रहाणा ग्रहत्वम् तै० १ ३ १ २ एष वै ग्रह। य एष (सूर्य) तपति, येनेमा सर्वा प्रजा गृहीता श० ४ ६ ५ १ अष्टौ ग्रहा (प्राण, जिह्वा, वाक्, चक्षु, श्रोत्र, मन, हस्तौ, त्वक्) श० १४ ६ २ १ प्राणा वै ग्रहा श० ४ २ ४ १३ साम ग्रह श० ४ २ ३ ७ ग्रहान् वा अनु प्रजा पशव प्रजायन्ते तै० स० ६ ५ १० १ ग्रहा ह वा ऋतस्य योनि जै० १ १० ४ प्राणा वा एत इतरे ग्रहा मै० ४ ६ ६]

ग्राह्य: ग्रहीतु, योग्य, भा०—परस्परमनुष्यग्राह्यानुग्राहकभाव ४ २४ [ग्रह उपादाने (क्र्या०) धातो क्यप्]

ग्रामजितम् येन पूर्व शत्रुणा समूहा जितास्तम्

अन्न यज्ञ वा, प्र०—घर्म इत्यन्ननामसु पठितम्, निघ० १ ६, यज्ञनामसु च, निघ० ३ १७, ८ १६ **घर्मः**=प्रदीप्तो दिवसकर (सूर्य) ३ २६ ७ जिघ्रति येन स प्रकाश इव यज्ञ १८ ६६ यज्ञ इव सगतियुक्त (अग्नि=पावक) २० ५५ पूजनीयतम (अ०—सर्वतो प्रकाशमयजगदीश्वरो विद्वान्वा) ३८ २१ अग्नितापयुक्त शोधक (वर्गो=यज्ञ) १ २ दिनम्, प्र०—घर्मेति अहर्नाम, निघ० १ ६, ३ ५३ १४ आतपम् १ १६४ २८ **घर्माय**=प्रसिद्धाऽप्रसिद्ध-सुखप्रदाय यज्ञाय ३८ ३ [घृ क्षरणदीप्त्यो (जु०) धातो 'घर्मग्रीष्मौ' उ० १ १४६ सूत्रेण मक्-प्रत्यय । घर्म अहर्नाम निघ० १ ६ यज्ञनाम निघ० ३ १७ घर्मम्=हर्म्यम् नि० ६ ३२ हरणम् नि० ११ ४२ तद् यद् (छिन्न विष्णोश्शिर) घृट्टित्यपतत्तस्माद् घर्म श० १४ १ १ १० अस्यैव एतान्यस्न (घर्म, अर्क, शुक्र, ज्योति, सूर्य) नामानि श० ६ ४.२ २५ अग्निर्वै घर्म श० ११ ६ २ २. तप्त इव वै घर्म श० १४ ३ १ ३३ आदित्यो वै घर्म श० ११ ६ २ २ असौ वाऽआदित्यो घर्म श० ६ ४ २ १६ असौ वै घर्मो यो ऽसौ (सूर्य) तपति कौ० २ १ एष वै घर्मो य एष (सूर्य) तपति श० १४ १ ३ १७ वेदमिथुन वा एतद् यद् घर्म गो० उ० २ ६ तदेतद् देवमिथुन यद् घर्म स यो घर्मस्तच्छिश्नम् ऐ० १ २२ अग्निश्च मे घर्मश्च मे (यज्ञेन कल्पताम्) तै० स० ४ ७ ६ १ घर्म इति दिवा ऽऽचक्षीत । सम्राडिति नक्तम् तै० आ० ५ ११ २ तेजो वै घर्म मै० २ २ ८ देवमिथुन वा एतद् यद् घर्म गो० २ ? ६ ब्रह्मवर्चस वै घर्म तै० स० २ २ ७ २]

घर्मपावभ्यः घर्मेण यज्ञेन पवित्रीकर्तृभ्य (पितृ-भ्य=पालकजनेभ्य) ३८ १५ [घर्म-पावन्पदयो समास । घर्म इति व्याख्यातम्]

घर्मस्तुभे यो घर्म यज्ञ स्तोभति स्तौति तस्मै (विदुषे जनाय) ५ ५४ १ [घर्म यज्ञनाम निघ० ३ १७ तदुपपदे स्तोभति अर्चतिकर्मा (निघ० ३ १४) धातो क्विप्]

घर्मस्वरसः घर्मे-यज्ञे स्वकीयो रसो यस्य स (विद्वज्जन) ४ ५५ ६ [घर्म-स्वरसपदयो. समास । घर्म-पद व्याख्यातम्]

घर्मासः पापानि ७ ३३ ७ [घर्म इति व्याख्यातम्]

घसत् अद्यात् २१ ४५ **घसः**=भक्षय ३ ५२ ३ **घस्ताम्**=भक्षयताम् २१ ४३ [अद भक्षणे (अदा०) धातोर्लुङ् । 'लुङ्सनोर्घस्लृ' अ० २ ४ ३७ सूत्रेण घस्ला-देश । अडभावश्च]

घसः भोग ४ ३२ १६ [अद भक्षणे (अदा०) धातो 'उपसर्गेऽद' सूत्रेणानुपसर्गादपि छान्दसत्वादप् धातोर्घस्लृ-आदेश]

घासम् भक्षण, (भा०—यवबुसादिकम्) ११ ७५ **घासे**=भोजने २१ ४३ [अद भक्षणे (अदा०) धातोर्घञ् । 'घञपोश्च' अ० २ ४ ३८ सूत्रेण घस्लृ-आदेश']

घासिम् अदनम् २५ ३८ [अद भक्षणे (अदा०) धातो 'इणजादिभ्य' इति इञ्प्रत्यय । 'बहुल छन्दसी' ति घस्लादेश । अथवा 'घसॢ अदने (भ्वा०) धातो 'जनिघसि-भ्यामिण्' उ० ४ १३० सूत्रेण इण्प्रत्यय]

घासेअज्राणाम् भोजनेऽग्रे प्राप्तव्यानाम् (अग्निष्वा-त्ताना - गृहीताग्निजनानाम्) २१ ४३ भोजने कमनीयानाम (सत्क्रियाणाम् - विद्वदधिष्ठानृजनानाम) २१ ४४. [घास-अज्रपदयो समास । घास इति व्याख्यातम् । सप्तम्या अलुक् । घासपद व्याख्यातम् । अज्र=अज गतिक्षेपणयो (भ्वा०) धातोर्बाहु०रक्]

घृणा दीप्ति ६ ३ ७ दीप्ति. क्षरण वा १ ५२ ६ [घृ क्षरणदीप्त्यो (जु०) धातोर्बाहुलकादौणादिको नक्-प्रत्यय । घृण अहर्नाम निघ० १ ६]

घृणाः प्रदीप्ता (पदार्था) ४ ४३ ६ [घृ क्षरण-दीप्त्यो (जु०) धातो क्त]

घृणिः रश्मिवान् सूर्य ३५ ८ [घृ क्षरणदीप्त्यो (जु०) धातो 'घृणिपृश्नि०' उ० ४ ५२ सूत्रेण निप्रत्ययान्तो निपात्यते। घृणि अहर्नाम निघ० १ ६ ज्वलतो नाम निघ० १ १७ क्रोधनाम निघ० २ १३]

घृणीव प्रदीप्त सूर्य इव २ ३३ ६ [घृणिपद व्याख्या-तम्]

घृणीवान् तेजस्वी पशुविशेष २४ ३६ [घृणिरिति व्याख्यातम् । ततोऽतिशायने मतुप् । छान्दस दीर्घत्वम्]

घृणे प्रदीप्ते (रणे=सङ्ग्रामे) ६ १५ ५ [घृ क्षरण-दीप्त्यो (जु०) धातो क्त]

घृतच्युतम् उदकात् प्राप्तम् (स्वारम्=उपताप शब्द वा) २ ११ ७ [घृत-च्युतपदयो समास । घृतम्=घृ सेचने (भ्वा०) धातो क्त । घृतम् उदकनाम निघ० १ १२]

घृतनिर्णिक् यो घृतमुदक नितरा नेनेक्ति पुष्णाति स, यद्वा घृतस्य सुस्वरूपम् (सूर्य), प्र०—निर्णिक् इति रूपनाम निघ० ३ ७, २ ३५ ४ यो घृतेन निर्णेक्ति स (अग्नि=पावक) ३ १७ १ आज्योदकयो शोधक (अग्नि=वह्नि) ३.२७ ५ जल को शोधन करने हारा)

ओजो वै वीर्यं ग्रीवा ओजो वीर्य पञ्चदश, तस्मात् पशवो ग्रीवाभिर्भार वहन्ति जै० २ ५७ ग्रीवा अणिष्ठास्सती-वीर्यवत्तमा काठ० २५ १ त्रीणि वा आसा ग्रीवाणा पर्वणि शा० आ० २ ३]

ग्रीष्म. यो रसान् ग्रसते स (ऋतु) १३ ५५ मध्याह्न ३१.१४ **ग्रीष्माय**=ग्रीष्मतौ सुखाय २४ ११ **ग्रीष्मेण**=सर्वरसग्रहीत्रा (ऋतुना) २१ २४ [ग्रसु अदने (भ्वा०) धातो 'घर्मग्रीष्मौ' उ० १ १४९ सूत्रेण मक् प्रत्यये धातोर्ग्रीभाव पुगागमश्च निपात्यते। ग्रीष्म = स्यन्तेऽस्मिन् रसा नि० ४ २७ अनिरुक्त ऋतूना ग्रीष्म जै० उ० १ १२ १ ३ एतावेव (शुक्रश्च शुचिश्च) ग्रैष्मौ (मासौ)। स यदेतयोर्वलिष्ठ तपति ते नो हैतौ शुक्रश्च शुचिश्च श० ४ ३ १ १५ ग्रीष्म उपर्युष्णोऽधश्शीतमधि-गम्यते। तस्मादु ग्रीष्मे शीता कूप्या अप उदाहरन्ति जै० १ १६७ ग्रीष्म ऋतु (राजन्यस्य) ता० ६ १ ८ ग्रीष्म एव मह गो० १ ५ १५ ग्रीष्म प्रस्ताव प० ३.१ ग्रीष्म-म्प्रस्ताव (प्रजापतिरकरोत्) जै० उ० १ ३ २ ७ ग्रीष्मेण दक्षिण पक्षम् (अचिनुत) तै० स० ५ ६ १० १. ग्रीष्मे वा इन्द्रो वृत्रमहन् मै० १ ६.९ ग्रीष्मो दक्षिण पक्ष तै० ३ ११ १० ग्रीष्मो दक्षिण पक्षम्। वर्षा उत्तरम् मै० ४ ९ १८ ग्रीष्मोऽध्वर्युस्तप्त इव वै ग्रीष्मस्तप्तमिवाध्वर्यु-र्निष्क्रामति श० ११ २ ७ ३२ ग्रीष्मो वै तनूनपाद् ग्रीष्मो ह्यासा प्रजाना तनूस्तपति श० १ ५ ३.१० ग्रीष्मो वै राजन्यस्य ऋतु काठ० ८ १ तै० ११.२७ ग्रीष्मो हि तन्व तपति कौ० ३ ४ तनूनपात यजति ग्रीष्ममेव तै० स० २ ६ ११ तस्मात् क्षत्रियो ग्रीष्मऽआदधीत क्षत्र हि ग्रीष्म श० २ १.३ ५ यस् स्तनयति तद् ग्रीष्मस्य (रूपम्) श० २ २ ३ ८ वाग् ग्रीष्म अग्निर्ग्रीष्म जै० २ ५० श्वेता (पशव) ग्रीष्माय मै० ३ १३ १९ पड्भिरिन्द्रैः (पशुभि) ग्रीष्मे (यजते) श० १३ ५ ४ २८ स (प्रजापति) ग्रीष्माद् एव वसन्त निरमिमीत जै० ३ १ तस्य (वायो) रथ-स्वनश्च रथेचित्रश्च सेनानीग्रामण्याविति ग्रैष्मौ तावृतू श० ८ ६ १ १७]

ग्रैष्मी ग्रीष्मर्तु व्याख्यात्री ऋक् १३ ५५ [ग्रीष्म इति व्याख्यातम् ततो व्याख्यानेऽर्थेऽण्प्रत्यये स्त्रिया ङीप्]

ग्रैष्मौ ग्रीष्मे भवौ (ज्येष्ठाऽऽषाढौ) १४ ६ [ग्रीष्म इति व्याख्यातम्। ततो भवार्थेऽण्]

ग्लापयन्ति आलपन्ति १ १६४.१० [ग्लै हर्षक्षये (भ्वा०) धातोर्णिचि लट्। धातूनामनेकार्थकत्वादत्रा-लापनेऽपि]

ग्लाविनम् अहर्षितारम् (जनम्) ३० १७. [ग्लै हर्षक्षये (भ्वा०) धातो 'ग्लानुदिभ्या डौ' उ० २ ६४ सूत्रेण डौ प्रत्यय। ग्लौप्राति० मत्वर्थे इनि प्रत्यय]

ग्लौभिः हर्षक्षयै २५ ८ [ग्लाविति व्याख्यातम्]

घ एवाऽर्थो निपात १ ५ ३ अपि २ ३४ १४

घनम् घनीभूतम् (इन्द्र=राजानम्) ३ ४९ १ हन्ति येन तम् ४ ३८ १५ **घनः**=दृढ काठिन्येन मूर्त्ति प्रापितो वा, अ०—मूर्त्तिमानय सूर्यलोक, प्र० मूर्त्तौ घन, अ० ३ ३ ७७ अनेनाऽय निपातित १ ४ ८ **घनाः**=शतघ्नी-भुशुण्ड्यसि-चाप-बाणादीनि दृढानि युद्धसाधनानि, प्र०—अत्र 'शेश्छन्दसि बहुलम्' इति लुक् १ ८ ३ **घने**=हनने ६ २६ ८ **घनेन**=वज्राख्येन शस्त्रेण, प्र०—मूर्त्तौ घन, अ० ३ ३ ७७ इति घनशब्दो निपातितस्तेन काठिन्यादि-गुणयुक्तो हि शस्त्रविशेषो गृह्यते अत्र 'ईषा अक्षादिषु च छन्दसि प्रकृतिभावमात्र द्रष्टव्यम्, अ० ६ १ १२७ इति वार्तिकेन प्रकृतिभाव, अत्र सायणाचार्येण द्रष्टव्यमिति भाष्यकार पाठमबुद्ध्वा वक्तव्यमित्यशुद्ध पाठो लिखित, मूलवार्तिकस्याऽपि पाठो न बुद्ध १ ३३ ४ [हन हिसागत्यो (अदा०) धातो 'मूर्त्तौ घन' अ० ३ ३ ७७ सूत्रेण अप्-प्रत्ययो मूर्त्तौ (काठिन्ये) वाच्ये, घश्चादेशो निपात्यते]

घनाघनः अतिशयेन शत्रून् घातुक (इन्द्र=सेनेश) प्र०—'हन्तेर्घत्व च, इति वार्तिकेनाऽचि प्रत्यये घत्वम-भ्यासस्यागागमश्च १७ ३३ [हन हिंसागत्यो (अदा०) धातोरच्प्रत्यये 'हन्तेर्घत्व च' अ० ६ १ १२ वा० सूत्रेण द्वित्वमभ्यासहकारघत्वागागमश्च। परस्य हकारस्याभ्यासा-च्चेति सूत्रेण कुत्वम्]

घनेव यथा घनेन तथा १.६३ ५ [घन-इवपदयो समास। घन इति व्याख्यातम्]

घर्म ! प्रदीपक (देव=जगदीश्वर!) ३७ १८ प्रकाशा-ऽऽत्मन्, दिनमिव विशालविद्य, विद्युत् प्रकाश इव वर्त्तमान (विद्वन् विदुषी वा) ३८ १८ प्रकाशमान (देव=विद्वज्जन) ३८ १६ **घर्मम्**=यज्ञम् ५ ७३ ६ अग्निहोत्रादिक यज्ञम्, प्र०—घर्म इति यज्ञनामसु पठितम्, निघ० ३ १७, १७ ५५ सुखवर्षक यज्ञम् ३८ ६. गृहाश्रमकृत्याख्य यज्ञम् ५ ७६ १ गृहाऽऽश्रम-व्यवहाराऽनुष्ठानम् ३८ १३ दिनम् प्र०—घर्म इत्यहर्नामसु पठितम्, निघ० १ ९, ३ ५३ १४ प्रतापम् २९ ६ प्रतापस्वरूपम् (अग्नि=विद्युतम्) १ ११२ १ सूर्यतापम् १ ११९ ६ प्रशस्ता घर्मा यज्ञा विद्यन्ते यस्य तम् (विद्वज्जनम्), प्र०—अत्र घर्मशब्दादर्श आदित्वादच् १ ११२ ७ प्रदीप्त सुगन्धियुक्त भोज्य पदार्थम् १ ११९ २

दुवस्यत घृतैर्बोधयतातिथिम् काठ० १६ १०]

घृतयोनिम् घृत दीपक तत्त्व योनि कारण यस्य तम् (यज्ञम्) ३ ४ २ घृतमुदक प्रदीप्त कारण वा योनिर्गृह यस्य तम् (अग्निम्) ५ ८ ६ **घृतयोनिः**=घृत प्रदीप्त तेजो योनि कारण गृह वा यस्य स (अ० - अग्नि) ३५ १७ **घृतयोनी**=घृतमुदक कारण ययोस्तौ (विद्वांसौ जनौ) ५ ६८ २ **घृतयोने**=यथा जलनिमित्ता विद्युद् वर्त्तते, तथा तत्सम्बुद्धौ (विद्वज्जन) ५ ४१ यथा घृतयोनिरग्निस्तथा तत्सम्बुद्धौ (सुशिक्षित शूर जन) ५ ३८ [घृतयोनिपदयो समास । घृत व्याख्यातम् । योनि =यौति सयोजयति पृथक् करोति वेति विग्रहे यु मिश्रणेऽमिश्रणे च (अदा०) धातो 'वहिश्रिश्रुयु०' उ० ४ ५१ सूत्रेण नि प्रत्यय योनि उदकनाम निघ० १ १२ गृहनाम निघ० ३ ४]

घृतवत् घृतमाज्यमुदक वा प्रशस्त विद्यते यस्मिंस्तत् (मधु=रसम्) ३ ३१ ११ बहुघृतादियुक्त हवि ३ ५६ १ घृत प्रशस्त जल विद्यते यस्मिँस्तत् (पय =रसादिकम्) प्र०—अत्र प्रशसार्थे मतुप् १ २२ १४ बहुघृतयुक्तम् (हव्यम्) ७ ४७ ३ [घृत व्याख्यातम् । तत प्रशसार्थे मतुप्]

घृतवत् घृतेन तुल्यम् ३ ५ ६ घृतेन पुष्टिदीप्तिकारकेण तुल्या ४ २२ [घृतप्राति० तुल्यार्थे वति]

घृतवद्भिः बहुघृतादिपदार्थै सह वर्त्तमानै (द्रव्यैर्हुतै) २ २६ ४ घृतादियुक्ते (इळाभि =अन्नै) ७ ३ ७ [घृत व्याख्यातम् । तत प्रशसार्थे भूम्नि वा मतुप्]

घृतवती घृत बहूदकमस्ति यस्या सा (स्त्री) १४ २ प्रशस्तान्याज्यादीनि विद्यन्ते यस्या सा (स्त्री) १४ ४ प्रशस्ताऽऽज्यादियुक्ता (स्त्री) १५ ३ बहूदकयुक्ता नदी ६ ११ ५ [घृतप्राति० प्रशसार्थे भूम्न्यर्थे वा मतुबन्तात् स्त्रिया ङीप्]

घृतवती घृतमुदक बहु विद्यते ययोस्ते (द्यावापृथिवी=सूर्यभूमी) ३४ ४५ बहु घृतमुदक दीप्तिर्वा विद्यते ययोस्ते (द्यावापृथिवी=सूर्यभूमी), प्र०—घृतमिति उदकनाम, निघ० १ १२, ६ ७० १ [घृत व्याख्यातम् । ततो मतुबन्तान् ङीप् । घृतवती द्यावापृथिव्योर्नाम निघ० ३ ३०]

घृतवन्तम् बहुघृतादिवन्तम् (यज्ञ=सङ्गतिमय व्यवहारम्) ६ १५ १६ बहुघृतमुदक विद्यते यस्मिँस्तम् (योनिं=गृहम्) ३ ५ ७ बहुघृतयुक्तम् (यज्ञम्) १ १४२ २ **घृतवन्तः**=प्रशस्त बहु वा घृतमाज्यमुदक वा विद्यते येषान्ते (पदार्था) ३ २१ २ [घृतवदिति व्याख्यातम् । ततो द्वितीयैकवचनम्]

घृतवृधा घृतेन तेजसा वर्धेते (द्यावापृथिवी=विद्युदन्तरिक्षे) ६ ७० ४ [घृतोपपदे वृधु वृद्धौ (भ्वा०) धातो क्विप् । 'सुपा सुलुगि' त्याकार]

घृतश्चुतम् उदकात् प्राप्तम् (स्वारम्=उपताप शब्द वा) २ ११ ७ **घृतश्चुतः**=घृतेन सिक्ता (मज्जना) ३ २१ ३ **घृतश्चुता**=घृत स्योतति येन (स्नुना=यज्ञसाधनेनेव योगाभ्यासेन) ५ १४ ३. [घृत-श्चुतपदयो समास । श्चुत =श्चुतिर् क्षरणे (भ्वा०) धातो क्त]

घृतश्च्युत घृतमाज्य श्च्युत निस्सृत याभ्यस्ता (मत्यश्रिय) १ ७ ३ [व्याख्यातम् । अथवा घृतोपपदे श्च्युतिर् क्षरणे (भ्वा०) धातो सम्पदादित्वात् क्विप् । पशवो वै घृतश्च्युत ता० ६ १ १७]

घृतश्रियम् यो घृत श्रयति, घृतेन शुम्भमानस्तम् (राजानम्) ५ ८ ३ घृतेनोदकेन शोभमानम् (भिषजम्=वैद्यम्) २८ ६ **घृतश्रिया**=घृत प्रदीपनमवकाशनञ्च श्रीर्ययोस्ते (द्यावापृथिवी=विद्युदन्तरिक्षे) ६ ७० ४ **घृतश्रीः**=घृतमाज्य सेवमान (अतिथिर्विद्वज्जन) १ १२८ ४ [घृतोपपदे श्रिञ् सेवायाम् (भ्वा०) धातो 'क्विप् वचिपृच्छ्यायतस्तु०' वार्ति० सूत्रेण क्विप् दीर्घत्व च]

घृतसदम् आज्य प्राप्नुवन्तम् (इन्द्र=सम्राजम्) ६ २ [घृतोपपदे सदॢ विशरणगत्यवसादनेषु (भ्वा०) धातो क्विप्]

घृतस्नाः याभिर्घृतमाज्यमुदक वा स्नान्ति ता (हरित =अङ्गुलय) ४ ६ ६ [घृतोपपदे ष्णा शौचे (अदा०) धातो क प्रत्यय]

घृतस्नुना घृतमिव शुद्धेन (हव्येन=अध्ययनेन श्रवणेन वा) ६ ५२ ८ **घृतस्नुः**=यो घृतमुदक स्नाति (रथ =विमानादियानम्) ५ ७७ ३ [घृत व्याख्यातम् । तदुपपदे ष्णा शौचे (अदा०) धातो 'मितद्र्वादिभ्य उपसख्यानम्' इति डु प्रत्यय]

घृतस्नुवः घृतमुदक स्नुवन्ति प्रस्रवन्ति यास्ता (धाना =दीप्तय) १ १६ २ **घृतस्नुवा**=यौ घृतमुदक स्नुत =स्रावयतस्तौ (सूर्यविद्युतौ) ३ ६ ६ **घृतस्नू**=घृतस्य स्रावकौ (मित्रावरुणौ=सुहृद्वरौ) १ १५३ १ यौ घृतमुदक स्नुत प्रस्रावयतस्तौ (वाय्वग्नी) ४ २ ३ यौ घृतमुदक स्नात शोधयतस्तौ (अग्नी) ३ ४१ ६ [घृत व्याख्यातम् । तदुपपदे ष्णु प्रस्रवणे (अदा०) धातो क्विप् । तत प्रथमाद्विवचनम् घृतस्नू =घृतप्रस्राविण्य,

(अग्नि) स० वि० १०४, २३५४ **घृतनिर्णिजः**= घृतेनाऽऽज्येनोदकेन शुद्धीकृता (यज्ञा=सत्या व्यवहारा) ४३७२ [घृत व्याख्यातम्। तदुपपदे णिजिर् शोच-पोषणयो (जु०) धातोर्निरुपसर्गात् क्विप्]

घृतपावानः उदकपा वीरा (जना) ६.१६ [घृत व्याख्यातम्। तदुपपदे पा पाने (भ्वा०) धातो 'आतो मनिन्क्वनिब्वनिपश्च' अ० ३ २ ७४ सूत्रेण वनिप्]

घृतपृचा घृतेन प्रदीपनेनोदकेन वा सम्पृक्ते (द्यावा-पृथिवी=विद्युदन्तरिक्षे) ६७०४ [घृत व्याख्यातम्। तदुपपदे पृची सम्पर्चने (अदा०) धातो क्विप्]

घृतपृष्ठम् घृत पृष्ठमिव यस्य तम् (अग्निम्) ७२४ घृतमुदकमाज्य पृष्ठ आधारे यस्य तम् (अग्निम्) ५४३. घृत दीपनमाज्यमुदक वा पृष्ठे यस्य तम् (अग्निम्) ५१४५ घृतमुदक पृष्ठे यस्मिँस्तत् (बर्हि=अन्तरिक्षम्) ११३५ **घृतपृष्ठः**=घृतमुदक पृष्ठे यस्य स (शिल्पी जन) ५३७१ घृत जल पृष्ठेऽस्य (सूर्य) ११६४१ **घृतपृष्ठाः**= घृतमुदक पृष्ठे आधारे येषा ते (वह्नय=अग्नय) ११४६ [घृत-पृष्ठपदयो समास। पृष्ठ=पृषु सेचने (भ्वा०) धातो 'तिथपृष्ठगूथयूथप्रोथा' उ० २१२ सूत्रेण थक्-प्रत्यय]

घृतप्रतीकम् ये घृतमाज्य प्रत्येति तम् (अग्नि= विद्वज्जनम्) ११४३७ **घृतप्रतीकः**=प्रतीतिकर जल-माज्य वा यस्य स (अग्नि=विद्युत्) १५२७ घृतमाज्य प्रतीक प्रदीपक यस्य स (अग्नि=पावक) ३११८ यो घृतमुदक प्रत्याययति स (घृतयोनि=अग्नि) ३५१७ घृतमाज्यमुदक वा प्रतीतिकर यस्य स (अग्नि) ५१११ [घृत-प्रतीकपदयो समास। घृत व्याख्यातम्]

घृतप्रयाः यो घृतेन प्रीणाति स (सज्जन) ३४३३ [घृतोपपदे प्रीञ् तर्पणे कान्तौ च (क्र्या०) धातोरच्-प्रत्यय]

घृतप्रसत्त. घृते प्रसत्त (अग्नि) ५१५१ [घृत-प्रसत्तपदयो समास। प्रसत्त=प्र+सद्लृ विशरणगत्य-वसादनेषु (भ्वा०) धातो क्त। नत्वाऽभावश्छान्दस]

घृतप्रुषम् यो यज्ञसिद्धेन घृतेन प्रुष्णाति स्निह्यति तम् (जनम्) १४५१ घृतेनोदकेनाऽऽज्येन वा सिक्तम् (आहारम्) ७४७१ **घृतप्रुषः**=ये घृतमुदक प्रोषयन्ति पूरयन्ति ते (ऊर्मय=समुद्रादिजलतरङ्गा) ६४४२० **घृतप्रुषा**= घृतेन तेजसा प्रुट् पूर्णस्तेन (मनसा=विज्ञानेन) २३२ [घृतोपपदे प्रुष स्नेहन-सेचन-पूरणेषु (क्र्या०) धातो क्विप्]

घृतप्व. घृत पुनन्ति यास्ता (आप=जलानि) ४२ [घृतोपपदे पूञ् पवने (क्र्या०) धातो क्विप्]

घृतम् उदकम्, प्र०—घृतमित्युदकनामसु पठितम्, निघ० ११२, ६१६ शुद्ध प्रदीप्तमुदकम् ३४४० घृतमिवा-ऽऽनन्दप्रद विज्ञानम् ४५८४ सन्दीप्त तेज २३११. उदकमाज्य वा १११०६ आज्यादिकम् ३२ प्रदीप्त-विज्ञानम् ११३५७ **घृतस्य**=शुद्धस्य ज्ञानस्य १७६६ विज्ञानस्य १७६५ प्रदीप्तस्य विज्ञानस्य १७६८ प्रकाश-स्य ४५८६ प्रकाशितस्य बोधस्य ४५८१० **घृतेन**= प्रदीपकेनोदकेनाऽऽज्येन वा ७८१ उदकेनाऽन्नेन वा २६२ विद्याप्रकाशेन ५११३ सुगन्ध्यादिगुणयुक्तेना-ऽऽज्येन २२२ **घृतेभिः**=आज्यादिभि २७४ **घृतैः**= उदकादिभि ३६२१६ शोधितैं सुगन्ध्यादियुक्तैर्घृतादिभि-र्यानेषु जलवाष्पादिभिर्वा प्र०—अत्र बहुवचनमकसाधन-द्योतनार्थम् ३१ आज्यादिभी रसैं ११५३१ प्रदीपकैं साधनैं ५८७ [घृ क्षरणदीप्त्यो (जु०) धातो 'अञ्जि-घृसिभ्य क्त' उ० ३८९ सूत्रेण क्त प्रत्यय। घृतम् उदकनाम निघ० ११२ घृतमित्युदकनाम जिघर्त्ते सिञ्चति-कर्मण नि० ७२४ एतद्वा अग्ने प्रिय धाम यद् घृतम् तै० ११९६ घृत वै देवा वज्र कृत्वा सोममघ्नन् गो० उ० २४ देवव्रत वै घृतम् ता० १८२६ बहुदेवत्य वै घृतम् कौ० २०४ सर्वदेवत्य वै घृतम् कौ० २१४ रेतो वै घृतम् श० ९२३३४ रेतसिक्तिर्वै घृतम् कौ० १६५ उल्व घृतम् श० ६६२१५ घृतमित्यन्तरिक्षस्य (रूपम्) श० ७५१३ एतद्वै प्रत्यक्षाद् यज्ञरूप यद् घृतम् श० १२८ अन्तो वै पयसा घृतम् जै० १२२४ अन्नस्य घृतमेव रस-स्तेज म० २६१५ आयुर्दा देवजरस वृणानो घृत वसानो घृतपृष्ठो अग्ने काठ० १११३ एतद्रूपा वै पशवो यद् घृतम् काठ० ११२ घृत वै देवाना फाण्ट मनुष्याणाम् श० ३१३८ घृत वै देवाना मधु काठ० २६३ घृत च मे मधु च मे (यज्ञन कल्पताम्) तै० स० ४७४१ घृत दुहाना-दितिर्जनाय, सा मे धुक्ष्व सर्वान् भूतिकामान् काठ० ३१.१४ घृत देवानामायुत मनुष्याणाम् मै० ३६२ काठ० २३१ घृत मनुष्याणाम् (सुरभि) ऐ० १३ घृतेन ते (अग्ने) तन्व वर्धयामि काठ० ३८१२ तेजो वा एतत् पशूना यद् घृतम् ऐ० ८२० तेजो वै घृतम् तै० स० २२९६ मै० १६८ काठ० १०१ पयो वै घृतम् मै० २१७ पशवो घृतम् मै० ११० काठ० २२६ भूतिर्दध्ना घृतेन वर्धताम् तै० स० ३२६१ मै० ४८९. यदध्रियत तद् घृतम् तै० स० २३१०१ मै० २३४ वज्रो घृतम् काठ० २०५ स घृद्इत्यकरोत् तद् घृतस्य घृतत्वम् काठ० २४७ समिधाग्नि

भू० २५६ **घोरा**=भयङ्करी (अश्वा=तुरङ्गी, महान्तो जनो वा) ६ ६७ ४ भयङ्करा (समृति=युद्धम्) ४.१६ १७ दुष्टाना दुःखप्रदा (सरस्वती=विद्याविज्ञानयुक्ता वाणी) ६ ६१ ७ **घोराः**=विद्युद्योगेन भयङ्करा (मरुत=वायव) १ १६७ ४ **घोरे**!=हे भयानके (प्र०-पत्नि!) १२ ६४ [हन हिंसागत्यो (अदा०) धातो 'हन्तेरच् घुर च' उ० ५ ६४ सूत्रेणाच् प्रत्ययो धातोर्घुरादेशश्च]

घोरवर्पसः घोर हननशील वर्पो रूप स्वरूप येषान्ते (मरुत=वायव), प्र०—वर्प इति रूपनाममु पठितम् निघ० ३ ७, १ १६ ५ [घोर-वर्पस्पदयो समास]

घोषतम् घोप कुर्वन्तो स्त ५ १७ **घोषथः**= विशेषेण शब्दयथ १ १५.१ ४ [घुपिरविशब्दने (भ्वा०) धातोर्लोट् अन्यत्र लट्]

घोषम् विद्या सुशिक्षायुक्ता वाचम्, प्र०—घोप इति वाङ्नामसु पठितम्, निघ० १ ११, ३ ७ ६ **घोषः**= सुवक्तृत्वयुक्ता वाक् ७ २३ २ शौर्योत्साहजनको विचित्र-वादित्र-स्वरालापशब्द, भा०—मनोहरो निर्भयादिजनको वादित्रशब्द १७ ४१ वाणी, प्र०—घोप इति वाङ्नाम, निघ० १ ११, ३ ३० १६ **घोषात्**=सुशिक्षिताया वाच ६ ३८ २ शब्दद्वारया ५ ३७ ३ **घोषान्**=वाक्प्रयोगान् ३ ३३ ८ शब्दान् ६ ७५ ७ **घोषाय**=सत्प्रियभाषणादि-युक्तायै वाण्यै १० ५ **घोषा**.=शब्दा १७ ४२ **घोषे**= उत्तमाया वाचि १ १२० ५ [घुपिरविशब्दने (भ्वा०) धातोर्घञ्। घोप=वाङ्नाम निघ० १.११ घोपो घुष्यते नि० ९ ६]

घोषायै घोपा प्रशसिता शब्दा, गवादिस्थित्यर्था स्थानविशेषा वा विद्यन्ते यस्या तस्यै (कृषिभूम्यै) १ ११७ ७ [घोपप्राति० 'अर्श आदिभ्योऽच्' इत्यच् मत्वर्थे। तत स्त्रिया टाप्। घोष इति व्याख्यातम्]

घोषि शब्दयुक्त वच ४ ४८ घोपो यस्मिन्नस्ति तत् (मन्म=विज्ञानम्) ६ ५ ६ [घोपप्राति० मत्वर्थ इनि]

घोषेव आमाना वागिव १ १२२ ५ [घोप-इवपदयो समास। घोप=वाङ्नाम निघ० १ ११]

घ्नन् नाशयन् (सेनापति) ६ ७३ २ विनाशयन् (बलाध्यक्षो न्यायाधीश) ४ १२ २ **घ्नन्तम्**=विरोध विनाशयन्तम् (इन्द्र=विद्वज्जनम्) ३ ४३ ८ हन्तारम् (इन्द्र=राजाद्यध्यक्षम्) ३ ३२ १७ विद्यावन्त शूरवीरमिव ३ ३६ ६ **घ्नन्त**.=शत्रु-हनन कुर्वन्त (राजपुरुषा) १ ३६ ८ [हन हिंसागत्यो (अदा०) धातो शतृप्रत्यय]

घ्नन्ति नाशयन्ति १ ४१ ३ [हन हिंसागत्यो (अदा०) धातो लटि प्रथमबहुवचनम्]

घ्रंसम् गत्र्या दिनम्, प्र०—घ्रंस इत्यहर्नाम, निघ० १.९, १ ११६ ८ दिनम् ५.४८ ७ [घ्रंस अहर्नाम निघ० १ ९ घ्रसम् अह नि० ६.३६]

घ्राताय योऽघ्रायि तस्मै (जनाय) २२ ८ [घ्रा गन्धोपादाने (भ्वा०) धातो क्त प्रत्यय। 'नुदविद०' निष्ठानत्वविकल्प]

च अनुक्त-समुच्चयार्थे १ २ ५ पुनरर्थ १.२६ आवृत्त्यर्थे १ ७ ४ अन्वाचये २ १४ पश्चादर्थे २ १६ पूर्वार्थानुकर्पणे १ १४ १ और, स०वि० १६७, ऋ० ६ ११३ ११ भी, आर्याभि० २ ३७, ३६ २४ पश्चादन्तरे ६ २६ [च समुच्चयार्थे नि० १ ४]

चकनन्त कामयन्ते १ १६८ ४ [कानिषन् कान्ति-कर्मा निघ० २ ६ कनी दीप्तिकान्तिगतिषु (भ्वा०) धातो-र्यङ्लुकि व्यत्ययेनात्मनेपदम्]

चकमानः कामयमान (राजा) ५ ३६ १ [चकमान कान्तिकर्मा निघ० २ ६ चक तृप्तो प्रतिघाते च (भ्वा०) धातो शानच्]

चकर करोमि १ १६५ ८ **चकरम्** भृश करोमि ४ ४२ ६ [डुकृञ् करणे (तना०) धातो सामान्ये लिट्। अन्यत्र यङ्लुकि रूपम्]

चकर्तिथ कृन्तसि १ ५८.६ **चकर्थ**=करोपि २ १३ ११ करोति १ ६३ ८ कुरु १ १३१ ५ कुर्य्या ५ ३३ ४ [कृती छेदने (तुदा०) धातो सामान्ये लिट्। अन्यत्र डुकृञ् करणे (तना०) धातोर्लिट्]

चकर्थ कृन्त ३ ३० १७

चकानः कामयमान (इन्द्र=विद्वान् राजा) ७ २७ १ **चकाना**=कामयमानो (सभासेनेशौ) ६ ६८ ३ **चकाना**=देदीप्यमाना (सेनाऽस्मा यादिजना) ४ १६ १५ [चक तृप्तो प्रतिघाते च (भ्वा०) धातो शानच्। व्यत्ययेनात्मनेपदम्, सुगभावश्च छान्दस चकमान कान्तिकर्मा निघ० २ ६]

चकार कुर्य्या, प्र०—अत्र लिडर्थे लिट् ८ २३ करोति ४ १६ ४ कुर्यात् १२ ६५ कृतवान्, करोमि करिष्यामि वा, प्र०—अत्र 'छन्दसि लुङ्लङ्लिट' अ० ३ ४ ६ इति कालसामान्ये लिट् ८ १३ करोति करिष्यति वा, प्र०—अत्र सामान्यकाले लिट् १ ३२ १ करोतु ७ २६ ३. [डुकृञ् करणे (तना०) धातो सामान्ये लिट्]

घृतसारिण्य, घृतमानिन्य इति वा नि० १२ ३६ अन्यत्र ष्णा शौचे (अदा०) धातोरौणा० उ प्रत्यय]

घृतस्नूः या घृतमुदक स्नान्ति शोधयन्ति ता (गिर = सस्कृता वाणी) २ २७ १ घृतमुदकमिव प्रदीप्त व्यवहार स्नान्ति शोधयन्ति ता (गिर = वाच) ३४ ५४ [घृतस्नु-रिति व्याख्यातम्]

घृतस्नो यो घृत स्नाति शुन्धति तत्सम्बुद्धौ (विद्वन्) ५ २६ २ [घृतस्नुपद व्याख्यातम् । तत सम्बुद्धौ रूपम्]

घृतहस्ता घृत हस्ते गृह्यते यया सा (इळा=प्रशस-नीया वाक्) ७ १६ ८ [घृत-हस्तपदयो समास]

घृताची घृतमुदकमञ्चत इति घृताची अग्निवाय्वो-र्धारणाकर्षणक्रिये, भा०—रसच्छेदकधारकौ (अग्निवायू) प्र०—अत्र पूर्वसवर्णादेश 'घृतमित्युदकनाम' निघ० १ १२, २ १६

घृताची सुखप्रदा रात्रीव ३ ३० ७ घृतमाज्यमुदक वाऽञ्चति प्राप्नोति सा दीप्ति १५ १८ घृतमायुर्निमित्त-मञ्चति। प्राप्नोत्यनया सुनियमाचरणक्रियया सा २ ६ या घृतमुदकमञ्चति प्राप्नोति सा (रात्रि) घृतमाज्यमञ्चति प्राप्नोत्यनयाऽऽदानक्रियया सा २ ६ या होमक्रिया घृतमुदक-मञ्चति प्रापयति सा, प्र०—घृतमित्युदकनामसु पठितम्, निघ० १ १२, २ ६ या घृतमुदकमञ्चति सा (देवी= विदुषी स्त्री) ५ ४३ ११ रात्रि, प्र०—घृताचीति रात्रि-नाम, निघ० १ ७, ६ ६३ ४

घृताचीम् या घृतमुदकमञ्चति प्राप्नोति ता रात्रीम् ३ १६ २ घृत जलमञ्चति प्रापयतीति ता क्रियाम्, प्र०—घृतमित्युदकनामसु पठितम्, निघ० १ १२, १ २७ **घृताचीः**=या घृतमुदकमञ्चन्ति ता (अ०—द्युती) १७ ५६ या घृतमाज्यादिक जल वाऽञ्चन्ति प्रापयन्ति ता (समिध) ३ ४ **घृताच्या**=या घृतमुदकमञ्चति प्राप्नोति तया रात्र्या ३ २७ १ [घृताची रात्रिनाम निघ० १ ७ घृतमित्युदकनाम (निघ० १ १२) तदुपपदे अञ्चु गति-पूजनयो (भ्वा०) धातो 'ऋत्विग्०' इत्यादिना क्विन् । 'अनिदिताम०' इति नकारलोपे 'अञ्चतेश्चोपसख्यानमि' ति ङीप् । 'अच ' इत्यकारलोपे 'ची' इति दीर्घ । घृताच्यसि जुहूर्नाम्ना श० १ ३ ४ १४ घृताच्यसि ध्रुवा नाम्ना श० १ ३ ४ १४ घृताच्यस्युपभृन्नाम्ना श० १ ३ ४ १४ स्रुग् घृताची श० ८ ६ १ १६ स विश्वाचीरभिचष्टे घृताचीरिति स्रुचश्चैतद् वेदीश्चाह घृताची—स्रुक् श० ६ ० ३ १३ वाग्वै धीर्घृताची ऐ० आ० १ १ ४]

घृताऽन्नः घृतमाज्य प्रदीपनमन्नमिव प्रदीपक यस्य (अग्नि =विद्युत्) ७ ३ १ [घृत-अन्नपदयो समास]

घृतावृधा घृतेन तेजसा वर्धेते (द्यावापृथिवी=विद्युद्-अन्तरिक्षे) ६ ७० ४ [घृतोपपदे वृधु वृद्धौ (भ्वा०) धातो क्विप् । 'सुपा सुलुगि' त्याकार]

घृतासुति. घृतमासूयते येन स (विद्वज्जन) १ १५६ १ **घृतासुती**=घृतेन समन्तात् सुति प्रेरण ययोस्तौ (इन्द्राविष्णू=वायुसूर्यौ) ६ ६६ ६ घृतेनाऽऽसुति सवन ययोस्तौ (अध्यापकोपदेशकौ) १ १३६ १ यौ घृतमुदक-मासुत (सूर्याचन्द्रमसौ) २ ४१ ६ [घृत व्याख्यातम् । सुति =षु प्रसवैश्वर्ययो (भ्वा०) धातो क्तिन् । तयो समास]

घृताहवन घृतमाज्यादिक जल चाऽऽसमन्ताद् जुह्वति यस्मिन् स (अग्ने=अग्निर्भौतिक) १ १२ ५ घृतग्राहिन् (विद्वज्जन) १ ४५ ५ [घृतोपपदे हु दानाऽदानयो (जु०) धातोरधिकरणे ल्युट्]

घृषुम् घर्षणशीलम् (मरुता गणम्) १ ६४ १२ **घृषौ** दुष्टाना घर्षणे ६ ४६ ४ [घृषु सघर्षे (भ्वा०) धातो 'मृगय्वादयश्च' उ० १ ३७ सूत्रेण कु प्रत्यय]

घृष्वय. सम्यग् घर्षणशीला (वीरजना) १ ८५ १ प्र०—'कृविघृष्वि०' उ० ४ ५६ घृषु सङ्घर्षे इत्यस्माद् विन् प्रत्यय १ ८५ १ मोढार (क्रीडा =क्रीडका जना) १ १६६ २ **घृष्वये**=घर्षिताय शुद्धाय (प्रजाजनाय) ४ ३२ ६ घर्षणाय ४ ३२ ६ घर्षन्ति परस्पर सञ्चूर्णयन्ति येन तस्मै (प्रकाशमानाय यशसे) १ ३७ ४ **घृष्वे !**= पदार्थाना सङ्घर्षक ! (अग्ने=राजन्) ४ २ १३ **घृष्वेः**= दुष्टाना घर्षकस्य (वीरजनस्य) ६ १८ १२ [घृषु सघर्षे (भ्वा०) धातो. 'कृविघृष्विच्छवि०' उ० ४ ५६ सूत्रेण विन् प्रत्ययान्तो निपात्यते]

घृष्विराधसः घृष्वीनि सम्वृद्धानि राधासि धनानि येषान्ते (मरुत =धार्मिका विद्वासो जना) ७ ५६ ५ [घृष्विरिति व्याख्यातम् । राधस् इति धननाम निघ० २ १० तयो समास]

घोरम् हननम् २ १२ ५ **घोरः**=यो हन्ति स (इन्द्र =राजा) ७ २८ २ **घोरस्य**=दुष्टस्य (जनस्य) ४ ६ ६ **घोराणाम्**=हन्त्रीणाम् (मरुता =वायूनामिव) १ १६६.७ **घोराय**=हन्यन्ते सुखानि यस्मिन् तद् घोर, तन्निवारणाय, प्र०—'हन्तेरच् घुर् च' उ० ५ ६४ अनेन घोर इति सिद्धयति २ ३२ आपत्काल-निवारणाय, ऋ०

चक्राणौ कुर्वन्तौ (राजप्रजाजनौ) ४ ४१ १० [डुकृञ् करणे (तना०) धातोर्लिट कानच्। लिट् च सामान्ये]

चक्रिम् शिल्पविद्याक्रियासाधनेषु यानाना शीघ्र-चालनस्वभावम् (ईम्=जलमग्नि वा) १ ६ २ **चक्रिः**=य करोति स, कर्त्तु शील (परमात्मा) ३ १६ ४ कर्त्ता (इन्द्र =सूर्य इव राजा) ७ २० १ [डुकृञ् करणे (तना०) धातोस्तच्छीलादिष्वर्थेषु 'आदृगमहन०' अ० ३ २ १७१ सूत्रेण किलिङ्वच्च]

चक्रिया चक्रेण २ ३४ ६ चक्राविव वर्त्तमानान् (वायून्) २ ३४ १४ [चक्रिरिति व्याख्यातम्। ततस्तृतीया-स्थाने 'सुपा सुलुग्०' सूत्रेण यादेश]

चक्रियेव यथा चक्रे भवा पदार्था १ १८५ १ यथा चक्राणि तथा ५ ३० ८ [चक्रियेव=चक्रयुक्ते इव नि० ३ २२]

चक्रयोः चक्रयो ६ २४ ३ रथाङ्गयो, प्र०—अत्र कृञ् धातो 'आदृगमहन०' अ० ३ २ १७१ इति कि-प्रत्यय १ ३० १४ [चक्रिरिति व्याख्यातम्। तत षष्ठ्या = सप्तम्या वा द्विवचनम्]

चक्रेव चक्राणीव ४ ३० २

चक्षणम् प्रकाशनम् ५ ५५ ४ दर्शनम्, प्र०—चक्षिङ् दर्शने, इत्यस्माल्ल्युटि प्रत्यये परे 'असनयोश्च, अ० २ ४ ५४ इति वार्तिकेन स्याजादेशाऽभाव १ १३ ५ [चक्षिङ् व्यक्ताया वाचि, अय दर्शनेऽपि (अदा०) धातोर्भावे ल्युट। 'चक्षिङ ख्याञ्' इति ख्याञादेशे प्राप्ते 'असनयोश्चे' ति प्रतिषेध]

चक्षणिः प्रकाशक सूर्य ६ ४ २ [चक्षिङ् दर्शने (अदा०) धातोर्बाहुलकादौणादिकोऽनि प्रत्यय]

चक्षत चक्षीत १ १२१ २ **चक्षते**=सत्यमुपदिशन्ति १ १६० ६ दर्शयन्ति १ १२१ २ [चक्षिङ् व्यक्ताया वाचि (अदा०) अय दर्शनेऽपि, धातोर्लङ्, अडभावश्छान्दस। अन्यत्र लट्]

चक्षदानम् व्यक्तोपदेशकम् (लम्पटजनम्), प्र०—अत्र चक्षिङ्धातोरौणादिक आनक्प्रत्ययोऽदुगागमश्च बाहुलकात् १ ११६ १६ **चक्षदानः**=चक्षो विद्यावचो दीयते येन स (जार =वृद्धो जन) १ ११७ १८

चक्षमीथाः सहस्व २ ३३ ७ [क्षमूष् सहने (भ्वा०) धातोर्लिङ्। विकरणस्य लुक् द्वित्वञ्च छान्दसम्]

चक्षय प्रख्यापय १ १३४ ३ [चक्षिङ् व्यक्ताया वाचि (अदा०) धातोर्णिजन्ताल्लोट्]

चक्षसा प्रज्ञानेन ६ ७ ६ दर्शनेन (विवस्वता=सूर्येण) १ ६६ २. दर्शनेन वा १ ८७ ५ प्रकाशेन १ ५० ६ तन्निमित्तभूतेन दर्शनेन १ ६२ ११ व्यक्तेन दर्शनेनोपदेशेन वा ३३ ३२. प्रज्ञानेन ६ ७ ६ **चक्षसे**=प्रसिद्धाय (ऊर्जे=बलाय) ३६ १४ सर्वद्रष्टृदर्शयितुर्वा (सूर्याय=परमेश्वराय सूर्यलोकाय वा), प्र०—अत्र षष्ठ्यर्थे चतुर्थी, इति वार्तिकेन चतुर्थी 'चष्ट इति पश्यतिकर्मसु पठितम्' निघ० ३ ११, ४ ३५ ख्यापयितुम् ५ १५ ४ विद्यायुक्तवाण्या प्रकाशाय १ ११२ ८ ख्यातु योग्याय (रणाय=सङ्ग्रामाय) ११ ५० द्रष्टुम् १ ४८ ८ दर्शनाय १ ७ ३ [चक्षिङ् व्यक्ताया वाचि, अय दर्शनेऽपि (अदा०) धातोरौणादिकोऽसुनप्रत्यय। चष्टे पश्यतिकर्मा निघ० ३ ११ चक्षसे दर्शनाय नि० ६ २७.]

चक्षसे उपदिशे ५ ३ ६ **चक्षाथाम्**=उपदिशेताम् १० १६ **चक्षाथे**=उपदिशथ ५ ६२ ८ **चक्षि**=वदेयम् ७ ३ ६ [चक्षिङ् व्यक्ताया वाचि (अदा०) धातोर्लट्। 'बहुल छन्दसी' ति शपो न लुक्]

चक्षाणः उपदिशन् (विद्वज्जन) १ १२८ ३ [चक्षिङ् व्यक्ताया वाचि (अदा०) धातोर्लट शानच्]

चक्षुरिव यथा चक्षु ५ ५४ ६

चक्षुर्दाः चष्टेऽनेन तद्, ददातीति, भा०—चक्षु-व्यवहार-साधक (सूर्य) ४ ३ [चक्षुस्-उपपदे डुदाञ् दाने (जु०) धातो क्विप्। चक्षुरिति व्याख्यास्यते]

चक्षुषम् प्रत्यक्षम् १२ ५ ६ प्रकाशकम् (ब्रह्म) १८ ६६ दर्शक ब्रह्म १ ११५ १ नेत्रवद् दर्शनहेतु (ब्रह्म) १ ६२ ६

चक्षुषः प्रत्यक्षादेरिन्द्रियोत्पन्नात्, भा०—प्रत्यक्षादि-प्रमाणात् १८ ५८ न्यायदर्शकस्य (उपदेशकस्य) १७ २५ नेत्र का, आर्याभि० २ ३६, ३६ २ नेत्रस्य ३६ २ **चक्षुषा**=दृष्ट्या ५ ३४ लोचनेन, भा०—विवेकेन ११ ६० स्वात्मवत् प्रेमबुद्ध्या, ऋ० भू० ६८, दृष्टि से स० वि० २१४, ३६ १८ विज्ञानेन प्रत्यक्षप्रमाणेन नेत्रेण १ ३० दर्शनशक्तियुक्तौ (जलाऽग्नी) २ ३६ ५ **चक्षुषे**=चष्टे पश्यति येन तस्मै २२ २३ एकस्य चक्षुर्गोलकस्य दहनाय ३६ ३ पदार्थाना दृष्ट्यै १ २० **चक्षुः**=चष्टेऽनेन तन्नेत्रम् ६ १४ चष्टे नेनेक्ति नेत्रेन्द्रियम् ३ २६ ७ चष्टे येन तन्नेत्रम् प्र०—'चक्षे शिच्च' उ० २ ११५ अनेन चक्षेरुसि प्रत्यय शिच्च १ २२ २० चष्टे पश्यति येन तत्

चकृपन्ते कृपालवो भवन्ति १ १७६ ५

चकृम कुर्याम २५ ३० विदध्याम १ १०१ ६ कुर्मो वा करिष्याम २० १७ कुर्महे करिष्यामो वा, प्र०—अत्र लट्लृटोरर्थे लिट् ३ ४५ [डुकृञ् करणे (तना०) धातो सामान्ये लिट्]

चकृवान् कृतवान् (इन्द्र =परमैश्वर्यवान्राजा) ५ २६ १४ **चकृवांसम्**=कुर्वन्तम् (इन्द्र=परमैश्वर्यवन्त शत्रुविदारक वा राजानम्) ६ १७ १३ **चकृवांसः**=कर्त्तार (मेधाविनो जना) १ १६१ ४ [डुकृञ् करणे (तना०) धातोर्लिट क्वसु]

चकृषन्त कृपालवो भवन्ति ४ १ १४

चकृषे करोषि ४ ३५ ७ करोति १५ २३ कृतवानसि उत्पन्न किया है, आर्याभि० १ १५, १ ५२ १४ कुर्या १ ११३ ६ [डुकृञ् करणे (तना०) धातोर्लिटि मध्यमैकवचने रूपम्]

चके कामितवान् कामयता वा, प्र०—अत्र पक्षे लोडर्थे लिट् 'आचके इति कान्तिकर्मसु पठितम् निघ० २ ६, ४ २१ कामये २१ १ प्रशमामि १ २५ १६ कामयते, प्र० —अत्र 'छान्दसो वर्णलोपो वा' इति यलोप ३ ३ ३ कामयेत ३ ३ १० कृतवानस्ति ऋ० भू० ४३, १० ७ ३२ [आचक इति कान्तिकर्मसु पठितम् निघ० २ ६ चक तृप्तौ प्रतिघाते च (भ्वा०) धातोर्लिट्]

चक्र कुरुत, प्र०—अत्र लोडर्थे लिट् १ ८६ ६ कुर्वन्तु २५ २२ कुर्वन्ति ७ ५६ २३ कुर्याम ४ ३६ ४ [डुकृञ् करणे (तना०) धातोर्लिटि मध्यमबहुवचनम्]

चक्रतुः कुर्याताम्, प्र०—अत्र लिडर्थे लिट् ८ ३७ कुरुत १ १५६ २ **चक्रथुः**=कुर्यातम् १ १०८ ५ कुरुतम् १ ११७ १७ कुरुथ ६ ५६ १ **चक्राते**=कुरुत ३ ५४ ६ **चक्राथे**=कुरुत १ १०८ ३ **चक्रिरे**=कुर्वन्ति ७ ६० ११ कृतवन्त सन्ति १ ४० ५ **चक्रुः**=कृतवन्त १६ ५३ कुर्वन्ति ४ १६ ३ कुर्य्युः ४ ३३ ३ **चक्रे**=कुर्य्यात् ३ ४८ ३ कृतवान् २ ४० ४ करोति, प्र०—अत्र लडर्थे लिट् १ ३३ १० [डुकृञ् करणे (तना०) धातो सामान्ये लिट्]

चक्रम् भूगोलराज्यम् १ १७५ ४ भूगोलसमूहम् २ ११ २० स्वराज्यम् १ १७४ ५ कलाचालकम् ५ ३१.११ क्रामति रथो येन तत् १ १२१ १३ कलायन्त्रादिकम् ६ ५४ ३ चक्रवद्वर्त्तमान जगत् पृथिव्यादिकम् १ १३० ६ चक्रमिव वर्त्तमान ब्रह्माण्ड ५.१६ चरति येन तत् ५ ७३ ३ यन्त्रकलासमूहम् १ ३० १६ **चक्राणि**=चक्रवद्वर्त्तमानानि कर्म्माणि ४ ३१ ६ **चक्रेण**=शस्त्रसमूहेन चक्राङ्कयुक्तेन यानसमूहेन वा १ ५३ ६ **चक्रैः**=लोकभ्रमणाय परिध्याख्यै ६ ६२ १० [चक्रम्=चकतेर्वा, चरतेर्वा, क्रामतेर्वा नि० ४ २६ डुकृञ् करणे (तना०) धातो 'घञर्थे कविधानम्' इति क प्रत्यय । 'कृञादीना के द्वे भवत इति वक्तव्यम्' अ० ६ १ १२. वा० सूत्रे द्वित्वम् । वज्रो वै चक्रम् तै० १ ४ ४ १० जै० १ ५१]

चक्रमन्त क्रमन्ते गच्छन्ति ४ ४२ ६ रमन्ते २ १६ ६ [क्रमु पादविक्षेपे (भ्वा०) धातोर्लिट् । छान्दसत्वाद् झस्य इरेच् न]

चक्रमे क्रमते ५ ८७ ४ यथायोग्य प्रकृतिपरमाण्वादिपादानशान् विक्षिप्य साऽवयव कृतवान् १ २२ १७ क्रान्तवान्, निक्षिप्तवान्, क्राम्यति, क्रमिष्यति वा, प्र०—अत्र सामान्यार्थे लिट् २ १५ विहितवान् १ २२ १८ [क्रमु पादविक्षेपे (भ्वा०) धातोर्लिट् । 'अनुपसर्गाद्वा' इत्यात्मनेपदम्]

चक्रमाणा क्रमयितारौ (वायुविद्युतौ) ६ ६२ २ [क्रमु पादविक्षेपे (भ्वा०) धातोर्लिट् । 'लिट कानज्वा' इति कानच् । 'सुपा सुलुगि' त्याकारादेश]

चक्रमाथे कामयथ ६ ६९ ५ [क्रमु पादविक्षेपे (भ्वा०) धातोर्लिटि मध्यमद्विवचनम् । 'अनुपसर्गाद्वा' इत्यात्मनेपदम्]

चक्रमासज. यो चक्रस्य मासकालस्य मासान्तेभ्यो जा-- (आर्य =राजा) ५ ३४ ६ [चक्रमासोपपदे जनी प्रादुर्भावे (दिवा०) धातोर्ड प्रत्यय]

चक्रमिव यथा चक्र गच्छति तथा ३ ६१ ३ [चक्र-इवपदयो समास । चक्रपद व्याख्यातम्]

चक्रये पुरुपार्थकरणशीलाय (इन्द्राय=ऐश्वर्यमिच्छवे जीवाय) १ ९ २ [डुकृञ् करणे (तना०) धातोस्तच्छीलादिष्वर्थेषु 'आदृगमहन०' अ० ३ २ १७१ सूत्रेण किलिड्वच्च]

चक्रवाकः पक्षिविशेष २४ ३२ **चक्रवाकौ**=पक्षिविशेषाविव २५ ८ चकवा चकवी के समान एक दूसरे से प्रेम बद्ध (स्त्रीपुरुष) स० वि० १४०, अथर्व० १४ २ ६४

चक्राणासः भृश युद्ध कुर्वाणा (योद्धृजना) १ ३३ ८ [डुकृञ् करणे (तना०) धातोर्लिट कानच् । 'सोऽसुगागम]

अभ्यश्नुत एभिरिति वा, नि० ९ ७, १ ३१ १३ [चतुर्-अक्षपदयो समास । अक्ष =अशूङ् व्याप्तौ (स्वा०) धातो 'अशेर्देवने स' उ० ३ ६५ सूत्रेण स । अक्षा अश्नुवत एनानिति वाभ्यश्नुवते एभिरिति वा नि० ९ ६]

चतुरनीकः चतुर्विधान्यनीकानि यस्य स (राजा) ५ ४८ ५ [चतुर्-अनीकपदयो समास]

चतुरश्रिम् चतुरङ्गिणी सेना प्राप्तम् (राजाख्य वीरजनम्) ४ २२ २ **चतुरश्रिः**=चतुरो वेदानश्नुते स (विद्वज्जन) १ १५२ २ [चतुर्-अश्रिपदयो समास । अश्रि =श्रिञ् सेवायाम् (भ्वा०) धातोराङ्पूर्वात् 'आडि 'श्रिहनिभ्या ह्रस्वश्च' उ० ४ १३८ सूत्रेण इण्प्रत्यय उपसर्गस्य ह्रस्वश्च ।]

चतुरः एतत्सङ्ख्याकान् (भागान्) ४ ३५ ४ धर्मा-ऽर्थकाम-मोक्षान् २३ २० चतुर्विधानि भू–जलाऽग्नि-वायुभि सिद्धानि शिल्पकर्माणि १ २० ६ वाय्वग्नि-जल-भूमी १ १६१ २ धर्माऽर्थ-काम-मोक्षान् २३ २० [चतुर्पद व्याख्यातम्]

चतुर्थी चतुर्णा पूर्णा (क्रिया) २५ ४ ५ [चतुर्-प्राति० पूरणार्थे डट् । 'पट्कतिकतिपयचतुरा थुक्' अ० ५ २ ५१ सूत्रेण थुगागम । स्त्रिया ङीप् । यज्ञ एव चतुर्थी चिति श० ८ ७ ४ १५ यदूर्ध्व मध्यादर्वाचीन ग्रीवाभ्य-स्तच्चतुर्थी चिति श० ८ ७ ४ २१]

चतुर्दशम् दशेन्द्रिय-मनोबुद्धिचित्ताना सङ्ख्यापूरक-महङ्कारम् ९ ३४ [चतुर्-दशन्पदयो समासे पूरणार्थे डट्-प्रत्यय]

चतुर्दशाक्षरेण साम्न्युष्णिहा (छन्दसा) ९ ३४ [चतुर्दश-अक्षरपदयो समास]

चतुर्धा अध-ऊर्ध्व-तिर्यक्-समगतियुक्तम् (चमस=रथम्) ४ ३५ २ [चतुर्प्राति० 'सख्याया विधार्थे धा' अ० ५ ३ ४२ सूत्रेण धाप्रत्यय]

चतुर्भिः चतुष्ट्वसङ्ख्याकै (नामभि) १ १५५ ६ [चतुर् इति व्याख्यातम्]

चतुर्युगः यश्चतुर्षु युज्यते स (रथ) २ १८ १ [चतुर्-युगपदयो समास । युग =युजिर् योगे (रुधा०) धातोर्घञ् उच्छादिपाठादगुणत्वम्]

चतुर्वयम् चत्वारो वयम् (जनसमूहम्) ४ ३६ ४ चत्वारो धर्मार्थ-काम-मोक्षा वया व्याप्तव्या येन तम् (विद्वद्व्यवहारम्) १ ११० ३

चतुर्विंशतिः चतुरधिका विंशति (सङ्ख्या) १८ २५ [चतुर्-विंशतिपदयो समास]

चतुर्विंशः चतुर्विंशतिधा (स्तोम) १४ २५ [चतुर्विंश एव स्तोमो भवति तेजसे ब्रह्मवर्चसाय ता० १५ ९ १ १६ तेजश्चतुर्विंश स्तोमानाम् ता० १५ १० ६ चतुर्विंशो वै सवत्सरोऽन्न पञ्चविंशम् ता० ४ १० ५]

चतुश्चत्वारिंशत् चतुरधिका चत्वारिंशत् (सङ्ख्या) १८ २५ [चतुर्-चत्वारिंशत्पदयो समास]

चतुश्चत्वारिंशः एतत्सङ्ख्याया पूरक (स्तोम) १४ २६ [चतुश्चत्वारिंशत्प्राति० पूरणार्थे डट्प्रत्यय]

चतुःशृङ्गः चत्वारो वेदा शृङ्गाणीव यस्य (ब्रह्मा=चतुर्वेदविज्जन) ४ ५८ २ चत्वारो वेदा शृङ्गवदुत्तमा यस्य स (ब्रह्मा=चतुर्वेदविज्जन) १७ ९० [चतुर्-शृङ्गपदयो समास. । शृङ्ग =शॄ हिंसायाम् (क्या०) धातो 'शृणातेर्ह्रस्वश्च' उ० १ १२६ सूत्रेण गन्प्रत्यय स किद् नुडागमश्च । शृङ्ग श्रयतेर्वा शृणातेर्वा शम्नातेर्वा शरणायोद्गतमिति वा शिरसो निर्गतमिति वा नि० २ ८]

चतुष्टोमः चत्वार स्तोमा स्तुतयो यस्मिन् सवत्सरे स १४ २३ चतुर्भिर्वेदै स्तूयते य स्तोता (विद्वज्जन) १४ २५ [चतुर्-स्तोमपदयो समास । 'स्तुतस्तोमयो-श्छन्दसि' अ० ८ ३ १०५ सूत्रेण छन्दसि मूर्धन्य । स्तोम =ष्टुञ् स्तुतौ (अदा०) धातो 'अर्त्तिस्तुसुहु०' उ० १ १४० सूत्रेण मन्प्रत्यय । यच्चतुष्ट्या देवाश्चतुर्भि स्तोमैरस्तुवस्तस्माच्चतुः स्तोम, त चतु स्तोम सन्त चतुष्टोममित्याचक्षते ऐ० ३ ४३ प्रतिष्ठा वै चतुष्टोम ता० ६ ३ १६ प्रतिष्ठा चतुष्टोम श० ८ २ ४ २६ परमश्चतु-ष्टोम मस्तोनानाम् श० १३ ३ ३ १ अन्तश्चतुष्टोम स्तोमानाम् ता० २१ ४ ६ सरघा वा अश्वस्य सक्थ्या वृहत तद्देवाश्चतुष्टोमेन प्रत्यदधुर्यच्चतुष्टोमो भवत्यश्वस्य सर्वत्वाय ता० २१ ४ ४]

चतुष्पक्षा जिसके पूर्व, पश्चिम, दक्षिण और उत्तर मे एक एक शाला और इनके मध्य मे पाँचवी वडी शाला हो, स० वि० १६८, अथर्व० ९ २ ३ २१ [चतुर्-पक्षपदयो समास]

चतुष्पत् चत्वार पादा यस्य पश्वादे स, अत्र 'वाच्छन्दसि' इति पदादेश १ ४९ ३ **चतुष्पदः**=गवादे २३ ३ चत्वार पादा यस्य गवादेस्तस्य २५ १७ गौ आदि प्राणि-समूह के, स० वि० ५, २३ ३ **चतुष्पदा**=गवादिना २९ १९ चत्वार पादा यस्मिँस्तेन (वाकेन=यजुषा)

३६ १ चष्टे येन तद्रूपग्राहकमिन्द्रियम् ४ १५ नेत्रव्यवहारम् ४ ३ प्रकाशक (विद्वज्जन) ५ ५६ ३ व्यक्तिकारकम् (इन्द्रियम्) १ १६४ १४ बाह्यमाभ्यन्तर विज्ञान तत्साधन वा (अग्ने=अग्निर्भौतिक) २ १६ चक्षुरिव सर्वदर्शकम् (ब्रह्म=ईश्वर) ३६ २४ नेत्रदृष्टि, ऋ० भू० ४४ नेत्रवद् दर्शनहेतु (उषा) १ ९२ ९ दर्शक प्रकाशकम् (घृतम्=आज्यम्) १८ ६६ प्रकाशको विज्ञानमयो विज्ञापकश्च (ब्रह्म) प० वि० । सर्वदृग् (ब्रह्म) प० वि० । चाक्षुष प्रत्यक्षम्, ऋ० भू० १०४ चक्षुरादीन्द्रियम् ३ ३७ २ दर्शनम् १४ १७ नेत्रम् १९ ८९ **चक्षोः**=ज्योति स्वरूपात् (ब्रह्मण) ३१ १२ ज्योतिर्मयात् (परमेश्वरात्) ऋ० भू० १२६ [चक्षिङ् व्यक्ताया वाचि, अय दर्शनेऽपि (अदा०) धातो 'चक्षे शिच्च' उ० २ ११९ सूत्रेण उसि प्रत्यय, स च शित्। चक्षु ख्यातेर्वा चष्टेर्वा नि० ४ ३ चक्षु=ख्यानम् नि० १२ १६ चक्षुर्वा ऋतम् ऐ० २ ४० सत्य वै चक्षु श० १ ३ १ २७ एतद्ध वै मनुष्येषु सत्य निहित यच्चक्षु ऐ० १ ६ एतद्वै मनुष्येषु सत्य यच्चक्षु गो० उ० २ २३ सत्य वै चक्षु श० ४ २ १ २६ चक्षुर्वै सत्यम् तै० ३ ३ ५ २ चक्षुर्निवित् जै० उ० ३ ४ ३ तस्मादेक सच्चक्षुर्द्वेधा ऐ० २ ३२ त्रिवृद् वै चक्षु शुक्ल कृष्ण लोहितमिति कौ० ३ ५ तस्माद् विरूप चक्षु कृष्णमन्यच्छुक्लमन्यत् प० २ २ चक्षुर्हृदये (श्रितम्) तै० ३ १० ८.५ शश्वद्ध वै रेतस सिक्तस्य चक्षुषी ऽएव प्रथमे सम्भवत श० ४ २ १ २८ चक्षु पुरुषस्य प्रथम सम्भवत सम्भवति ऐ० ३ २ चक्षुर्वै त्वक् श० ६ ३ ३ ११ चक्षुर्वै विचक्षण चक्षुषा हि विपश्यति कौ० ७ ३ चक्षुर्वै विचक्षण वि ह्यनेन पश्यतीति ऐ० १ ६ यच्चक्षु स बृहस्पति गो० उ० ४ ११ चक्षुर्वै जमदग्निर्ऋषि, यदेनेन जगत् पश्यत्यथो मनुते तस्माच्चक्षुर्जमदग्निर्ऋषि श० ८ १ २ ३ चक्षुषी वै रोहिणौ (पुरोडाशौ) श० १४ २ १ ५ चक्षुर्मैत्रावरुण कौ० १३ ५ चक्षुश्च मनश्च मैत्रावरुण ऐ० २ २६ चक्षुरध्वर्यु गो० उ० ५ ४ चक्षुर्वै यज्ञस्याध्वर्यु श० १४ ६ १ ६ चक्षुरेवोद्गाता गो० पू० २ १० चक्षुर्ब्रह्मा तै० २ १ ५ ९ चक्षुर्वै ब्रह्म श० १४ ६ १० ८ चक्षुर्ब्रह्म गो० पू० २ १० चक्षुर्देव गो० पू० २ १० यद्वै चक्षुस्तद् हिरण्यम् गो० पू० २ ११ सूर्यो मे चक्षुषि श्रित तै० ३ १० ८ ५ चक्षुरादित्य जै० उ० ३ २ ७ तद् यच्चक्षुरादित्य स जै० उ० १ २८ ७ यत्तच्चक्षुरसौ स आदित्य श० १० ३ ३ ७ अर्कश्चक्षुस्तदसौ सूर्य तै० १ १ ७ २ चक्षुर्वा ऽअपा क्षयस्तत्र हि सर्वदैवाप क्षियन्ति श० ७ ५ २ ५४ चक्षुरेव चरण चक्षुषा ह्ययमात्मा चरति श० १० ३ ५ ७ चक्षुरुष्णिक् श० १० ३ १ १. त्रैष्टुभ चक्षु ता० २० १६ ५ चक्षुर्वै प्रतिष्ठा श० १४ ९ २ ३ चक्षुर्वाव साम्नोऽपचिति जै० उ० २ ३९ ५. चक्षुर्यश श० १२ ३ ४ १० चक्षुरेव यश गो० पू० ५ १५. यच्चक्षु स बृहस्पति गो० २ ४ ११ प्रजापतेर्वा एते चक्षुषी यच् शुक्रामन्थिनौ मै० ४ ६ ३ चत्वारि चक्षुषो रूपाणि द्वे शुक्ले द्वे कृष्णे तै० स० ५ ३ १ ४ चक्षुश्चतुर्होता मै० १ ९ ५ काठ० ९ १३ चक्षुर्वै शुक्र मै० ४ १ १२ ६ तै० ३ ३ ५ २]

चक्षुष्पाः चक्षुर्दर्शन रक्षतीति स, भा०—दृष्टिव्यवहारस्य पालक (अग्ने=अग्निर्भौतिक) २ १६ यश्चक्षु पाति (विद्वज्जन) २० ३४ [चक्षुरिति व्याख्यातम्, तदुपपदे पा रक्षणे (अदा०) धातो क्विप् प्रत्यय । विद्वद्वसु श्चक्षुष्पा तै० स० ३ २ १० २]

चक्षुष्मते प्रशस्त चक्षुर्विद्यते यस्य तस्मै (जनाय) ३५ ७ [चक्षुष्प्राति०, अतिशायने मतुप् । चक्षुरिति व्याख्यातम्]

चखांसम् प्रतिघातम् (दुर्जनम्) २ १४ ४

चचक्ष कथयेत् ५ २ ८ [चक्षिङ् व्यक्ताया वाचि (अदा०) धातोर्लिट् । व्यत्ययेन परस्मैपदम्]

चतन्तम् गच्छन्त व्याप्तम् (नम=सत्कारमन्न वा) प्र०—चततीति गतिकर्मसु पठितम्, निघ० २ १४, १ ६५ १ [चतति गतिकर्मा (निघ० २ १४) धातो शतृप्रत्यय]

चतसृभिः धर्माऽर्थ-काम-मोक्षविज्ञापिकाभि गीर्भि=वाग्भि) २७ ४३ **चतस्रः**=चतु सङ्ख्योपेता (उपदिश) १ १६४ ४२ चतु सङ्ख्याका (उपरा=दिशा) १ ६२ ८ पूर्वाद्या दिश १८ ३२ चतुष्ट्वविशिष्टा सङ्ख्या अ०—चतु सङ्ख्या १८ २५ एतत्सङ्ख्याप्रमिता (प्रदिश) २७ १ साम-दाम-दण्ड-भेदाऽऽख्या वृत्तय ५ ३२ २ [चतुर्प्राति० स्त्रियां तृतीयाबहुवचनम् । चतुरश्चतसृ आदेश । चतुर्=चते-याचने (भ्वा०) धातो 'चतेरुरन्' उ० ५ ५८ सूत्रेण उरन् । चत्वारश्चलिततमा सख्या नि० ३ १०]

चतिनम् आनन्दप्रदम् (इन्द्र=परमैश्वर्यप्रदमीश्वरम्) ६ १९ ४

चतुरक्षरेण दैव्या बृहत्या (छन्दसा) ९ ३१ [चतुर्-अक्षरपदयो समास]

चतुरक्षः य खलु चतस्र सेना अश्नुते व्याप्नोति स चतुरक्ष (सभाध्यक्ष) प्र०—अक्षा अश्नुवते इति वा

दीना हित (अग्नि = सूर्य) ३ ३ ६ २ चन स्वन्नादिपु हितो = हितकारी (अग्नि = विद्वज्जन) ३ ११ २ अन्नाय हितकारी (अग्नि = पावक) ३ २ ७ चनसे अन्नाय हित (अग्नि) ३ २ २ चनसे पृथिव्याद्यन्नाय हितकारी (अग्नि) प्र०—चन इत्यन्ननाम, नि० ६ १५, ३३ ७५ [चनस्पद व्याख्यातम्। तदुपपदे हि गतौ वृद्धौ च (स्वा०) धातोरौणादिक क्त। अथवा = चनस्-हितपदयो समास]

चन्द्र आह्लादप्रद (विद्वज्जन) ५ १० ४ **चन्द्रम्** = आह्लादकारकम् (यन्त्रम्) ४ १८ सुवर्णम्, प्र०—चन्द्रमिति हिरण्यनामसु पठितम्, निघ० १ २, ४ २६ आनन्दकर देदीप्यमान सुवर्णमिव वर्त्तमानम् (अग्नि = वह्निम्) ३ ३ ५ आह्लादकर सुवर्णम् ४ २ ३१ हिरण्यवदानन्दप्रदम् (स्वरूपम्) १२ १० ४ **चन्द्राणि** = काञ्चनादीन् धातून् ४ २६ **चन्द्राय** = चन्द्रलोकस्य प्राप्तये ३६ २ चन्द्रमण्डलाय २२ २६ चन्द्रलोकाय २२ २८ **चन्द्राः** = आह्लादकरा (विद्वज्जना) ७ ३६ ७ आनन्ददा (विदुष्य स्त्रिय) ७ ४० ७ चन्द्रादिलोकान्, प्र०—अत्र शस स्थाने जस् १२ १०२ **चन्द्रे** = हे आह्लादकारके (पत्नि) ८ ४३ **चन्द्रेण** = इन्दुना १ ४८ ६ आनन्देन १६ ६३ रत्नजटितेन (रथेन = यानेन) ४ ४८ ३ आह्लादकेन सुवर्णादिजटितेन (रथेन = यानेन) ४ ४८ २ सुवर्णमयेन (रथेन) ४ ४८ १ [चदि आह्लादने दीप्तौ च (भ्वा०) धातो 'स्फायितञ्चिवञ्चि०' उ० २ १३ सूत्रेण रक्-प्रत्यय चन्द्रम् = हिरण्यनाम निघ० १ २ चन्द्रमाश्चायन् द्रमति, चन्द्रो माता, चान्द्र मानमस्येति वा। चन्द्रश्चन्दते कान्तिकर्मण। चन्दनमित्यप्यस्य भवति। चारु द्रमति, चिर द्रमति, चमेर्वा पूर्वम् नि० ११ ५ असौ वै चन्द्र प्रजापति श० ६ २ २ १६ चन्द्र एव सविता जै० उ० ४ २७ १३ चन्द्र ह्येतच्चन्द्रेण क्रीणाति यत्सोम हिरण्येन (चन्द्र = सोम, चन्द्रम् = हिरण्यम्) श० ३ ३ ३ ६ चन्द्र हिरण्यम् तै० १ ७ ६ ३ चन्द्रा ह्याप तै० १ ७ ६ ३ असौ वै चन्द्र पशुस्त देवा पौर्णमास्यामालभन्ते श० ६ २ २ १७]

चन्द्रदक्षिणा. = चन्द्र सुवर्ण दक्षिणा दान येपान्ते (सेनाप्रजाजना) ७ ४५ [चन्द्र-दक्षिणापदयो समास। चन्द्र इति पद व्याख्यातम्। दक्षिणा = दक्षते समर्द्धयतिकर्मणो व्यृद्ध समर्द्धयतीति नि० १ ७]

चन्द्रबुध्न. चन्द्र सुवर्ण चन्द्रमा वा बुध्नेऽन्तरिक्षे यस्य यस्माद्वा स (मेघ), प्र०—चन्द्रमिति हिरण्यनाम, निघ० १ २, १ ५२ ३ [चन्द्र-बुध्नपदयो समास। चन्द्र इति व्याख्यातम्। बुध्नमन्तरिक्ष बद्धा अस्मिन् धृता आप इति वा इदमपीतरद् (शरीरस्य मूल हृदयम्) बुध्नमेतस्मादेव बद्धा अस्मिन् धृता प्राणा इति नि० १० ४४]

चन्द्रमसम् चन्द्रलोकम् २३ ५६ **चन्द्रमसः** = चन्द्रलोकाऽऽदे १ ८४ १५ चन्द्रस्य २४ ३५ **चन्द्रमसि** = चन्द्रलोके २३ ४ चन्द्रलोकसमीप आह्लादे वा १ २८ **चन्द्रमाः** = यस्सर्वान् चन्दयत्याह्लादयति स १८ ४० इन्दु (देवता) १४ २० आह्लादकारक इन्दुलोक ११ ०५ १ चन्द्रलोक २३ ४ आनन्दस्वरूपत्वादाह्लादकत्वाच्च (ईश्वर) ३२ १ शैत्यकर (चन्द्रलोक) ३३ ६० आह्लादकरश्चन्द्र २३ ४६ आनन्दस्वरूप और स्व-सेवको को आनन्द देने वाला (ईश्वर), आर्याभि० २ ४, ३२ १ [चन्द्र इति व्याख्यातम्, तदुपपदे माङ् माने शब्दे च (जु०) धातो 'चन्द्रे मो डित्' उ० ४ २२८ सूत्रेणासि प्रत्यय। चन्द्रमा पदनाम निघ० ५ ५ चन्द्रमा = चायन् द्रमति, चन्द्रो माता, चान्द्र मानमस्येति वा नि० ११ ५ स (इन्द्र) चन्द्र म आहरेति प्रालपत्। तच्चन्द्रमसश्चन्द्रमसत्वम् तै० २ २ १० ३ चन्द्रमा वै मा मास। तस्मान् मेत्याह। भा इति हेतत् परोक्षेणैव जै० उ० ३ १२ ६ चन्द्रमा वै सोम कौ० १६ ५ तै० १ ४ १० ७ श० १२ १ १ २ चन्द्रमा उ वै सोम श० ६ ५ १ १ सोमो राजा चन्द्रमा श० १० ४ २ १ असौ वै सोमो राजा विचक्षणश्चन्द्रमा कौ० ४ ४ ७ १० एतद्वै देवसोम यच्चन्द्रमा ऐ० ७ ११ चन्द्रमा वाऽस्य (सोमस्य) दिवि श्रव उत्तमम् श० ७ ३ १ ४६ यद्रुद्रश्चन्द्रमास्तेन कौ० ६ ७ (प्रजापति) त (रुद्र) अब्रवीन्महान्देवोऽसीति। तद्यदस्य तन्नामाकरोच्चन्द्रमास्तद्रूपमभवत् प्रजापतिर्वै चन्द्रमा प्रजापतिर्वै महान्देव श० ६ १ ३ १६ (इन्द्र.) त (वृत्र) द्वेधान्वभिनत्तस्य यत् सौम्य न्यवतमास त चन्द्रमस चकाराथ यदस्यासुर्य्यमास तेनेमा प्रजा उदरेणाविध्यत् श० १ ६ ३ १७ अथैष एव वृत्रो यच्चन्द्रमा श० १ ६ ४ १३ चन्द्रमा एव मन्थी श० ४ २ १ १ चन्द्रमा वै वरेण्यम् जै० उ० ४ २८ १ चन्द्रमा द्विपात्तस्य पूर्वपक्षापरपक्षौ पादौ गो० पू० २ ८ चन्द्रमा वै पञ्चदश एप हि पञ्चदश्यामपक्षीयते पञ्चदश्यामापूर्य्यते तै० १ ५ १० ५ अथो चन्द्रमा वै भान्त पञ्चदश स च पञ्चदशाहान्यापूर्यते पञ्चदशापक्षीयते तद् यत्तमाह भान्त इति भाति हि चन्द्रमा श० ८ ४ १ १० षोडशकलो वै चन्द्रमा ष० ४ ६ एतद्वै देवसत्य यच्चन्द्रमा कौ० ३ १ चन्द्रमा पुनरसु० तै० २ ५ ७ ३ चन्द्रमा वै जायते पुन तै० ३ ६ ५ ४ मनो मे रेतो मे प्रजा मे पुनस् सम्भूतिर्मे तन्मे त्वयि (चन्द्रमसि) जै० उ० ३ २७ १४ नक्षत्राणि स्थ चन्द्रमसि श्रितानि। सवत्सरस्य प्रतिष्ठा

१ १६४ २४ **चतुष्पदे**=गवाद्याय १६ ४८. गवादि पशु-वर्ग के लिए आर्याभि० २ २१, ३६ ८ [चतुर्-पादपदयो समास । पादस्य पदादेशश्छान्दस । समासान्तलोपे पदा-देशश्छान्दस]

चतुष्पदाः चत्वारि पदानि यासु ता (प्रजा) २३ ३४ [चतुर्-पादशब्दयो समासे समासान्तलोपे पदा-देशे 'टाबृचि' अ० ४ १ ९ सूत्रेण टाप्]

चतुष्पदी चतुर्वेदाऽध्यापिका (विदुषी स्त्री) १ १६४ ४१ **चतुष्पदीम्**=चत्वारि धर्मार्थकाममोक्षा पदानि यस्यास्ताम् (स्वाहा=वाचम्) ८ ३० [चतुर्-पादपदयो समासे समासान्तलोपे पदादेशे स्त्रिया 'पादोऽन्यत-रस्याम्' इति ङीप्]

चतुष्पदे चत्वार पादा यस्य गवादेस्तस्मै ११ ८३

चतुष्पात् चत्वार पादा यस्य स गवादि ४ ५१ ५ गवादिकम् १४ २५ गवादीन् १४ ८ [चतुर्-पादयो समासे समासान्तलोपे 'पादोऽन्यतरस्याम्' इति ङीपोऽभावे रूपम्। चतुष्पाद पशव गो० उ० १ ४ तै० २ १ ३५ चतुष्पादा पशव ता० ३.८ ३ चतुष्पादा वै पशव ऐ० २ १८ चतुष्टया वै पशवोऽथो चतुष्पादा कौ० १६ ३]

चतुस्त्रिंशत् एतत्सङ्ख्याका (वङ्की =कुटिला गती) १ १६२ १८ अष्टौ वसव एकादश रुद्रा, द्वादशाऽऽ-दित्या, इन्द्र, प्रजापति प्रकृतिश्चेति (तन्तव =वस्त्रादय) ८ ६१ शिक्षणानि २५ ४१ [चतुर्-त्रिंशत्पदयो समास]

चतुस्त्रिंशः चतुस्त्रिंशद्विध (नाक =आनन्द) १४ २३ [तस्य चतुस्त्रिंशोऽग्निष्टोम प्रजापतिश्चतुस्त्रिंशो देवतानाम् ता० १२ ७ ५ अश्वश्चतुस्त्रिंशो दक्षिणाना प्रजापतिश्चतुस्त्रिंशो देवतानाम् ता० १७ ११ ३]

चतु.सहस्रम् चत्वारि सहस्राणि सङ्ख्या यस्य तम् (घर्म=प्रतापम्) ५ ३० १५

चतुःस्रक्तिः चतुरस्रा, भा०—प्राप्तरसा (नाभि) चार ३८ २० कोणे वाली (नाभि) आर्याभि० २ ४१, ३८ २० [एष वै चतु स्रक्तिर्य एष (सूर्य) तपति दिशो ह्येतस्य स्रक्तय श० १४ ३ १ १७]

चत्ताय याचिताय (शत्रवे) १ १३२.६ आह्लादाय, अ०—आनन्दाय ८ ५३ [चते याचने (भ्वा०) धातो क्त]

चत्वारः वर्णा आश्रमाश्च १ १२२.१५ ऋत्विज ७ १८ २३ पृथिव्यादय ५ ४७ ४ [चतुर् इति व्याख्यानम् तत प्रथमाबहुवचनम् । 'चतुरनडुहोरामुदात्त' इत्यामागम । चत्वारश्चलिततमा सख्या नि० ३ १०]

चत्वारि चत्वारो वेदा ४ ५८ ३ नामाख्यातोपसर्ग-निपाता १ १६४ ४५

चत्वारिंशः एतत्सङ्ख्यापूरको ब्रह्मचर्यव्यवहारकर (वर्च =अध्ययनम्) १५ ३ [चत्वारिंशत्प्राति० पूरणार्थे डट्]

चत्वारिंश्याम् चत्वारिंशत पूर्णायाम् (शरदि= शरद्ती) २ १२ ११ [चत्वारिंशत्प्राति० पूरणार्थे डट् । तत स्त्रिया ङीप्]

चन अपि ४ १८ ८ कदाचित् १ १८ ७ आकाङ्क्षा-याम् ३ ३४

चनस्यतम् अन्नवदेनौ सेव्येताम्, प्र०—'चायनेरन्ने ह्रस्वश्च' उ० ४ २०० अनेनाऽसुन्प्रत्ययान्ताच्चनस्शब्दात् क्यच्प्रत्ययान्तो नामधातोर्लोटि मध्यमस्य द्विवचनेऽस्य प्रयोग १ ३ १. [चनस्शब्दाद् 'उपमानादाचारे' अ० ३ १ १० सूत्रेण क्यच् । ततो लोट्]

चनः अन्नादिकमैश्वर्य्यम् ७ ३८ ३ भोग्यमन्नम् २० ८९ अन्नभोजनादिव्यवहारम् १ ३ ६ भक्ष्य-भोज्य-लेह्यचूष्यामरयन्नम्, प्र०—अत्र 'चायनेरन्ने ह्रस्वश्च' उ० ४ २००. अनेनाऽसुन्प्रत्ययो नुडागमश्च १ २६ १० [चायृ पूजानिशामनयो (भ्वा०) धातो 'चायतेरन्ने ह्रस्वश्च' उ० ४ २०० सूत्रेणासुन् प्रत्ययस्य नुडागमे सति यलोपो ह्रस्वश्च । चन अन्ननाम नि० ६ १५]

चनिश्चदत् आह्लादयति ५ ४३ ४

चनिष्ठम् अतिशयेनाऽन्नम् ५ ७७ ४. [चनस्पद व्याख्यातम् । ततोऽतिशायन इष्ठन् प्रत्यये टिलोपे रूपम्]

चनिष्ठा अतिशयेनाऽन्नाद्यैश्वर्ययुक्ता (सुमति = शोभना प्रज्ञा) ७ ५७ ४ [चनिष्ठ व्याख्यातम् । तत स्त्रिया टाप्]

चनोधाः चनास्यन्नानि दधातीनि (गृहपतिर्जन), प्र०—चन इत्यन्ननामसु पठितम्, निघ० ६ १५, ८ ७ अभ्यासेनाऽविकार्यो ग्राह्य, सर्वेभ्योऽधिकाऽन्नवान् गम्यते (गृहपतिर्जन) प्र०—अभ्यासे भूयासमर्थ मन्यते, नि० १० ४२, ८ ७ [चनस्पद व्याख्यातम् । तदुपपदे डुधाञ् धारणपोषणयो (जु०) धातो क्विप् । चन इत्यन्ननाम नि० ६ १५]

चनोहितः यश्चनांस्यन्नानि हिनोति प्रापयति स (अग्नि =पावक) २२ १६. ओषधिपाकसामर्थ्येन अन्ना-

चन्द्रेव सुवर्णानीव, प्र०—चन्द्रमिति सुवर्णनाम, निघ० १ १२, ३ ६१.७ [चन्द्र-इवपदयो समास]

चमसम् यज्ञसाधनम् ८ ३५ ३ चमत्यस्मिन् मेघे १ ११० ३ मेघम् १ १६१ १ मेघमिव गर्जनायुक्त रथम् ४ ३५ २. पेयमाधनम् ४ ३५ ५ मेघमिव विभक्तम् (उक्थ्य=प्रशमनीय कर्म) ४ ३६ ४ **चमसः**=आचामति येन स (यज्ञपात्रम्) ४ ३५ ४ **चमसा**=चमसौ ४ ३३ ५ **चमसान्**=मेघानिव (पदार्थान्) १ १६१ ६ मेघान् प्र०—चमस इति मेघनाम, निघ० १ १०, ४ ३३ ६ **चमसाः**=ये चाम्यन्ति अदन्ति भोगान् येभ्यो मेघेभ्यस्ते (इन्द्रयानाः=मेघा) १ ५४ ६ होम-भोजन-पात्राणि १८ २१ [चमु अदने (भ्वा०) धातो 'अत्यविचमि०' उ० ३ ११७ सूत्रेण असच्प्रत्यय । चमस =मेघनाम निघ० १ १० चमस कस्मात् ? चमन्त्यस्मिन्निति नि० १० १२]

चमू द्विविधे सेने ५ ५१ ४. सेनया, प्र०—अत्र 'सुपा सुलुक्०' इति तृतीयैकवचनस्य लुक् ८ ३६ **चमूषु**=भक्षयित्रीषु सेनासु ३ ४८ ४ **चम्वा**=सेनयेव ३ ५५ २० **चम्वोः**=सेनयोर्मध्ये ४ १८ ३ द्यावापृथिव्योर्मध्ये ६ ५७ २ पदाति-हस्त्यश्वादिस्थयो सेनयोरिव १ २८ ६ [चमु अदने (भ्वा०) धातो 'कृषिचमितनि०' उ० १ ८० सूत्रेण ऊ प्रत्यय स्त्रियाम् । चम्वौ द्यावापृथिव्योर्नाम निघ० ३ ३०]

चमूषदः से चमूषु सेनासु सीदन्ति अवस्थिता भवन्ति ते वीरा १ ५४ ६ चमन्त्यदन्ति विनाशयन्ति शत्रुबलानि याभिस्तास्वस्व, ये चमूषु सेनासु सीदन्ति ते (इन्दव =सोमाद्योषधिगणा), प्र०—अत्र 'क्वनो बहुलम्' इति वार्त्तिकमाश्रित्य 'सत्सूद्विष०' अ० ३ २ ६१ अनेन करणे क्विप् 'कृषि-चमितनि०' उ० १ ८१ अनेन चमूशब्दश्च सिद्ध १ १४ ४ [चमूपद व्याख्यानम् । तदुपपदे षद्लृ विशरण-गत्यवसादनेषु (भ्वा०) धातो करणे क्विप्]

चम्रिषः चमन्त्यदन्ति भोगांस्तान् (पूर्वी =प्राचीना प्रजा), प्र०—अत्र बाहुलकादौणादिक इसि प्रत्ययो रुटागमश्च १ ५६ १ [चमु अदने (भ्वा०) धातोर्बाहुलकाद् इसि प्रत्ययो रुट् च]

चम्रीषः ये चमूभि शत्रुसेना ईषन्ते हिंसन्ति ते (वीरा योद्धृजना) १ १०० १२ चमू=सेना मे वश को प्राप्त (परमात्मा) आर्याभि० १ ३४, ऋ० १ ७ १० १२

चम्वीव यथा चम्वौ यज्ञपात्रे २० ७६

चयत् चिनोमि ५ ६० १ **चयते**=एकत्र करोति १ १६७ ८ **चयध्वे**=सञ्चिनुत ७ ५२ २. सञ्चिनुथ ६ ५१ ७ [चिञ् चयने (स्वा०) धातोर्लेट् । अन्यत्र लट् । विकरणव्यत्ययेन शप्]

चयमानाः वर्धमाना (देवा =पूर्णविद्या विद्वज्जना) २ २७ ४ [चय गतौ (भ्वा०) धातो शानच्]

चयसे प्राप्नोषि १.१६० ५ **चयिष्टम्**=चिनुत ६ ६७ ८ **चयेम**=चिनुयाम १ १३२ १ [चय गतौ (भ्वा०) धातोर्लेट् । अन्यत्र लुङ् लिङ् च । चिञ् चयने (स्वा०) धातोर्वा रूपाणि । विकरणव्यत्ययेन शप् । चयसे= चातयसि नि० ४.२५]

चय्यम् चयेषु सान्त्वनेषु भवम् प्र०—'चय सान्त्वने' धातोरच् ततो यत् १६ ८८ [चय गतौ (भ्वा०) धातोरच् । ततो भवार्थे यत् । धातूनामनेकार्थकत्वात् सान्त्वनेऽर्थेऽपि]

चर विजानीहि, प्र०—अत्र चर इत्यस्य गत्यर्थत्वात् प्राप्त्यर्थो गृह्यते ८ ३४ प्राप्नुहि प्राप्नोति वा १ १० ३ [चर गतौ (भ्वा०) धातोर्लोट्]

चरकाचार्यम् चरकाणा भक्षकाणामाचार्य्यम् ३० १८ [चरक-आचार्यपदयो समास । चरक =चर भक्षणार्थे ऽपि (भ्वा०) धातोरच् । तत स्वार्थे कन् । अथवा चर धातो 'क्वुन् शिल्पिसञ्ज्ञयो ०' उ० २ ३२ सूत्रेण क्वुन्]

चरणम् गमनम् ३ ५ ५ विहरना, स० वि० १६७, ६ ११३ ६ [चर गतौ (भ्वा०) धातोर्भावे ल्युट् । चक्षुरेवचरण चक्षुषा ह्ययमात्मा चरति श० १० ३ ५ ७ आदित्य एव चरण यदा ह्येवैष उदेत्यथेद सर्व चरति श० १० ३.५ ३]

चरणीयमाना प्राप्नुवती (उष =उषा) ३ ६१ ३

चरण्यत् चरणमिवाऽऽचरेत्, प्र०—'वाच्छन्दसि' इत्यत्रात्लोप ईत्वाऽभावश्च ८ २४ [चरणपदात् 'उपमानादाचारे' इति क्यच् । ततो नामधातोर्लेट् । अल्लोप ईत्वाभावश्च छान्दसम्]

चरत् चरति ३३ ६३ गच्छति ६ ५६ ६ प्राप्नोति १ १७३ ३ सर्व जानाति, प० वि०, ३६ २४ **चरतः**= कुरुत २ २४ ५ वर्त्तेते २० २५ चलत ६ २७ ७ आगच्छत १ ६२ ८ प्राप्नुत १ १०२ २ **चरति**= प्राप्तोऽस्ति ३ ५५ ६ विलसति ३ ५८ १ स्वेनैव स्व प्रकाशित सन् भवति, ऋ० भू० १४४ भ्रमति २३.४६ सेवते १ ५२ ६. प्राप्नोति ५ ४४ ८ गच्छति ५ ६३.४ [चर गतौ (भ्वा०) धातोर्लेट् । अन्यत्र लट्]

तै० ३ ११ १ १३ चन्द्रमा अस्यादित्ये श्रित । नक्षत्राणा प्रतिष्ठा तै० ३ ११ १ १२ (सूर्यरश्मि =चन्द्रमा) सूर्यस्येव हि चन्द्रमसो रुग्मय श० ६ ४ १ ६ चन्द्रमा एव सविता गो० पू० १ ३३ चन्द्रमा मे मनसि श्रित तै० ३ १० ८ ५ तद् यत्तन् मनश्चन्द्रमास्स जै० उ० १.२८ ५ अथ यत्तन्मन आसीत् स चन्द्रमा अभवत् जै० उ० २ २ २ यत्तन्मन एष स चन्द्रमा श० १० ३ ३ ७ मनश्चन्द्रमा जै० उ० ३ २ ६ एष वै (चन्द्रमा) रेत श० ६ १ २ ४ स (चन्द्रमा) वै देवाना वस्वन्न ह्येषाम् श० १ ६ ४ ५. अन्नमु चन्द्रमा श० ८ ३ ३ ११ अन्नमु वै चन्द्रमा जै० उ० १.३ ४ चन्द्रमा ह्येतस्यान्न य एष (सूर्य) तपति श० ४ ६ ७ १२ चन्द्रमा वै प्राण जै० उ० ४.२२ ११ असौ वै चन्द्र· प्रजापति श० ६ २.२ १६ प्रजापतिर्वै चन्द्रमा श० ६ १ ३ १६ चन्द्रमा वै धाता प० ४ ६ चन्द्रमा एव धाता विधाता च गो० उ० १ १० चन्द्रमा वै ब्रह्म ऐ० २ ४१ चन्द्रमा वै ब्रह्मा श० १२ १.१ २ गो० पू० २ २४ चन्द्रमा ब्रह्मा (आसीत्) गो० पू० १ १३. चन्द्रमा वै ब्रह्मा-ऽधिदैव मनोऽध्यात्मम् गो० पू० ४ २ चन्द्रमा वै ब्रह्म कृष्ण (यजु० २३.१३) श० १३ २ ७ ७ यददश्चन्द्रमसि कृष्ण पृथिव्या हृदय श्रितम् म० १ ५ १३ स यदस्यै पृथिव्याऽअनामृत देवयजनमासीत्तच्चन्द्रमसि न्यदधत तदे-तच्चन्द्रमसि कृष्णम् श० १ २ ५ १८ यदस्या (पृथिव्या) यज्ञीयमासीत्तदमुष्या (दिवि) अदधात् । तददश्चन्द्रमसि कृष्णम् तै० १ १ ३ ३ एतद्वा इय (भूमि) अमुष्या (दिवि) देवयजनमदधाद् यदेनच्चन्द्रमसि कृष्णमिव ऐ० ४ २७ चन्द्रमा एव (सवत्सरस्य) द्वारपिधान श० ११ १ १ १ रात्रिर्वै चन्द्रमा श० १२ ४ ४ ७ चन्द्रमा उदान जै० उ० ४ २२ ६ स (चन्द्रमा) अस्य (सूर्यस्य) व्यात्तम् आपद्यते। (सूर्य) त (चन्द्रमस) ग्रसित्वोदेति । स (चन्द्रमा) न पुर-स्तान्न पश्चाद् ददृशे श० १ ६ ४ १८ चन्द्रमा वा अमावस्या-यामादित्यमनुप्रविशति ऐ० ८ २८ अयँप चन्द्रमा दक्षिणे-नैति प० २ ४ तस्मादिमौ सूर्याचन्द्रमसौ प्रत्यञ्चौ यन्तौ सर्व एव पश्यति श० ४ २ १ १८ चन्द्रमा मनुष्यलोक जै० उ० ३ १३ १२ वागघ चन्द्रमा भूत्वोपरिष्टात् तस्थौ श० ८ १ २७ वागिति चन्द्रमा जै० उ० ३ १३ १२ हन्तेति चन्द्रमा ओमित्यादित्य जै० उ० ३ ६ २ चन्द्रमा वै हिङ्कार जै० उ० १ ३ ४ चन्द्रमा एव हिङ्कार जै० उ० १ ३३ ५ चन्द्रमा प्रतिहार जै० उ० १ ३६ ६ चन्द्रमा वै यज्ञायज्ञिय यो हि कश्च यज्ञ सतिष्ठतें, एतमेव तस्याहुतीना रसोऽप्येति तद्यदेत यज्ञोऽप्येति तस्माच्चन्द्रमा यज्ञायज्ञियम् श० ६ १ २ ३६ चन्द्रमा वै भर्ग जै० उ० ४ २८ २ वायुराप श्चन्द्रमा इत्येते भृगव गो० उ० २ ८ वृष्टिर्वै वृष्ट्वा चन्द्र-मसमनुप्रविशति ऐ० ८ २८ चन्द्रमा एव सर्वम् गो० पू० ५ १५]

चन्द्ररथम् चन्द्रमिव रथ यस्य तम् (अग्नि=वह्निम्) ३ ३ ५ **चन्द्ररथः**=चन्द्र रजत सुवर्ण वा रथे यस्य स (होता=विद्यादातृजन) १ १४१ १२ [चन्द्र-रथ पदयो समास । चन्द्रपद व्याख्यातम्। रथ =रमु क्रीडायाम् (भ्वा०) धातो 'हनिकुपि०' उ० २ २ सूत्रेण क्थन् प्रत्यय]

चन्द्ररथा चन्द्र इव रथो यस्या सा (विदुषी स्त्री) ३ ६१ २ **चन्द्ररथाः**=चन्द्र सुवर्णमिव रथो रमणीय स्वरूप यासा ता (उषस =प्रभातवेला) ६ ६५ २ [चन्द्र-रथयो समासे स्त्रिया टाप् । चन्द्ररथौ व्याख्यातौ]

चन्द्रवत् सुवर्णादियुक्तमानन्दादिप्रद वा (राध = धनम्) ५ ५७ ७ **चन्द्रवता**=पुष्कल चन्द्र सुवर्ण विद्यते यस्मिँस्तेन (राधसा=धनेन), प्र०—चन्द्र इति हिरण्यनाम, निघ० १ २, ३ ५० ४ बहूनि चन्द्राणि सुवर्णादीनि धनानि विद्यन्ते यस्मिँस्तेन (राधसा=धनेन) ३ ३० २० [चन्द्र इति व्याख्यातम् । ततो मतुप्]

चन्द्रवर्णाः चन्द्रस्य वर्ण इव वर्णो येषान्ते (विद्वज्जना) १ १६५ १२ [चन्द्र-वर्णपदयो समास]

चन्द्रा आह्लादयित्री, भा०—बहुसुखकारिका (वाग्विद्युद् वा) ४ २१ आह्लादप्रदा (उषा) १ १५७ १ आह्लादकानि सुवर्णादीनि ४ २३ ९ **चन्द्राभिः**=आनन्द-धनकरीभि (प्रजाभि) ६ ६ ७ **चन्द्राणि**=आनन्दप्रदानि सुवर्णा-दीनि (वसूनि=द्रव्याणि) ५ ४२ ३ काञ्चनादीन् धातून् ४ २६ [चन्द्रपद व्याख्यातम्। तत स्त्रिया टाप् । चन्द्रा ह्याप तै० १ ७ ६ ३]

चन्द्राग्राः चन्द्र सुवर्णमानन्दो वाऽग्रे यासा ता (गिर =वाच) ५ ४१ १४ चन्द्र सुवर्णमग्रमुत्तम यासु ता (वाच) ६ ४९ ८ चन्द्रमाह्लादनमग्र मुख्य यासान्ता (साधनानि) ३४ ४२ [चन्द्राग्रा चायनीयाग्राणि धनानि नि० १२ १८]

चन्द्रास आह्लादकरा (सोमा =ओषध्यादय पदार्था) ३ ४० ४ [चन्द्रप्राति० जसोऽसुगागम]

चन्द्री चन्द्र बहुसुवर्ण विद्यते यस्य स, (भा०—न दरिद्रो विद्वान्) २० ३७ चन्द्र बहुविध सुवर्ण विद्यते यस्य स (भिषक्=वैद्य) ११ ३१ [चन्द्रपद व्याख्यातम् । ततो मत्वर्थे इनि प्रत्यय]

[चर गतौ (भ्वा०) धातो 'अर्त्तिलूधू०' अ० ३ २ १८४ सूत्रेण करणे इत्र प्रत्यय]

चरिष्णु यच्चरति गच्छति (अग्नि -विद्युत्तेज) ४ ७ ६ **चरिष्णुः**=गन्ता (त्वेष =प्रकाश) ६ ६१ ८ [चर गतौ (भ्वा०) धातो 'अलङ्कृञ्निराकृञ्०' अ० ३ २ १३६ सूत्रेण तच्छीलादिष्वर्थेषु इष्णुच्प्रत्यय]

चरिष्यामि अनुष्ठास्यामि १ ५ आचरण करूगा, आर्याभि० २ ४७, १ ५ [चर गतौ (भ्वा०) धातोर्लृट्]

चरुम् ज्ञानलाभ मेघ वा १ ७ ६. **चरुः**=स्थालीपाक, पाको वा २६ ६० [चर गतौ भक्षणे च (भ्वा०) धातो 'भृमृशीङ्तृचरि०' उ० १ ७ सूत्रेण उ प्रत्यय । चरु मेघनाम निघ० १ १० चरुर्मृच्चयो भवति, चरतेर्वा समुच्चरन्त्यस्मादाप निघ० ६ ११ ओदनो हि चरु श० ४ ४ २ १ इमे लोकाश्चरु पचबिल मै० १ ४.६ काठ० ३२ ६]

चरूणाम् पात्राणाम् २५ ३६ अन्नादिपचनाऽऽधारणाम् (पात्राणाम्) १ १६२ १३ [चरुपद व्याख्यानम्]

चरेते सञ्चरन्ति १ १२३ ७ [चर गतौ (भ्वा०) धातोर्लट् । व्यत्ययेनात्मनेपदम्]

चर्करीमि भृश करोमि ४ ३६ २ [डुकृञ् करणे (तना०) धातोर्यङ्लुगन्ताल् लट्]

चर्किरन् भृश विक्षिपेयु १ १३१ ५ **चर्किराम**=भृश विक्षिपेम ४ ४० १ भृश विक्षेपयाम ४ ३६ ४१ [कृ विक्षेपे (तुदा०) धातोर्यङ्लुगन्तात् सामान्ये लङ् । अडभावश्छान्दस]

चर्कृतात् सतत कर्त्तु योग्यात् कर्मण १ १०४.५ [डुकृञ् करणे (तना०) धातोर्यङ्लुगन्तात् क्त]

चर्कृतिः अत्यन्तक्रिया ५ ७४ ६ भृशमुत्तमा क्रिया ६ ४८.२१ [डुकृञ् करणे (तना०) धातोर्यङ्लुगन्तात् स्त्रिया क्तिन्]

चर्कृत्यम् भृश कर्त्तु योग्यम् (राजपुरुषम्) ४.३८ २ पुन पुन कर्त्तव्येषु कार्येषु साधुम् (तोकम्=अपत्यम्), प्र०—अत्र यङ्लुगन्तात् करोते क्तस्तत साध्वर्थे यत् १ ६४ १४ सभापति होने को अत्यन्त योग्य (सभापति राजा) स० प्र० १८३, अथर्व० ६ १० ६८ १ वार वार सत्क्रियासु योजनीयम् (ताराऽऽख्य यन्त्रम्) ऋ० भू० १६६ **चर्कृत्य.**=पुन . पुनरुपासनीय (परमेश्वर) ऋ० भू० २२२ [डुकृञ् करणे (तना० धातोर्यङ्लुगन्तात् क्त । तत 'तत्र साधु' इति यत्]

चर्कृषत् भृश कर्षन् भृश ग्रीम विलिखन् (कृषाः=कृषाः) १ १७६ ७. पुन पुनर्भूमि कर्षन्, प्र०—अत्र यङ्लुगन्तात् १ २३.१५ [कृष विलेखने (भ्वा०) धातोर्यङ्लुगन्तात्]

चर्मणः त्वच ८ ३६ ४ चर्मप्राणे ३.६० २ त्वगुपरिभागस्य १ १६१ ७ [चर गतौ (भ्वा०) धातो 'सर्वधातुभ्यो मनिन्' उ० ४ १४५ सूत्रेण मनिन् । चम चरतेर्वोच्चृत भवतीति वा नि० २ ५ [जिह्वा चर्म । तै० स० ६ ७ ११.४ चर्म वाजनत् पशुनाम (मृगम्य) त्वगनुग, चर्म देवता श० ३ २ १ ८]

चर्मन् चर्मणि ४ ५ ७ [व्याख्यातम् । सप्तम्या लुक्]

चर्मम्नम् यश्चर्म निःशान म्नायत्यभ्यस्यति तम् (जनम्) ३० १५ [चर्मण्युपपदे म्ना अभ्यासे (भ्वा०) धातो क प्रत्यय]

चर्माणीव यथा चर्माणि लोमानि छिन्नानि ६ ८ ३ [चर्मन्-इवपदयो समास]

चर्मेव यथा चर्म देहमावृणोति तथा ४ १३ ४ चर्मवत् काष्ठादिनावृत्य १ ८५ ५ [चर्मनपद व्याख्यानम् । चर्मन्-इवपदयो समास]

चर्षणय. विद्वान (मनुष्या) ६ ३३ २ मनुष्या. १ १८४ ४. **चर्षणिभ्यः**=उत्तमेभ्यो मनुष्येभ्य १ ८४ २० **चर्षणिः**=दर्शक मनुष्य, प्र०—चर्षणिरिति पदनामसु पठितम्, निघ० ४ २. १ ८६ ४ **चर्षणीनाम्**=मनुष्याणाम्, प्र०—चर्षणय इति मनुष्यनामसु पठितम् निघ० २ ३, १ ७ ६ मनुष्यादिप्राणीनाम्, प्र०—'कृषेरादेश्च च' उ० २ १०० अनेन कृषधातोरनि प्रत्यय आदेश्चकारादेशश्च १ १७ २ मनुष्याणा तत्सम्बन्धिसेनाना वा १७.३३ ऐश्वर्येण प्रकाशमानानाम् (मानुषाणा=मानवाना मध्ये) ४ ८ ८ मनुष्यादिप्रजानाम् ३ १० १ विद्याप्रकाशवता मनुष्याणाम् ३ ६२ ६ **चर्षणीभ्यः**=दुष्टेभ्य श्रेष्ठेभ्यो वा मनुष्येभ्य १ ५५ १ चर्षणी =प्राणान् मनुष्यान् वा ५ ८६ २ प्रकाशान् ४ ७ ४ प्रकाशमाना मनुष्यसेना ५ २३ १ [चर्षणि =चायिता आदित्य नि० ५ २४ चर्षणीनाम् मनुष्याणाम् नि० १२ २१ कृष विलेखने (भ्वा०) धातोर्बहुलकादौणादिको अनि प्रत्यय । आदेश्च धातोश्चकारादेश । चर्षणय =मनुष्यनाम निघ० २ ३ चर्षणि पदनाम निघ० ४ २]

चर्षणी प्रचर्षणी सम्यक् सुखप्रापकौ (इन्द्राग्नी=

चरतः स्वगत्या व्याप्तस्य (दिव =सूर्यस्येव विदुष) १ १४६ १. **चरता**=प्राप्तेन (वधेन) ३ ३२ ६ **चरताम्**=प्राणभृताम् २ ३८ ६ [चर गतौ (भ्वा०) धातो शतृप्रत्यय]

चरथम् चर्य्यते गम्यते भक्ष्यते यस्तम् (रज = सकारण लोकसमूहम्) १ ५८ ५ मनुष्यादिजङ्गमम् १ ७२ ६ जङ्गम-समूहम् १ ६८ १ आगमन विज्ञान वा ३ ३१ १५. **चरथाम्**=जङ्गमानाम् (प्राणिनाम्) १ ७० २. चरथाय=गमनाय विज्ञानाय भोजनाय वा ४ ३६ ३. सब से अधिक आनन्द भोग, सब देशो मे अव्याहत गमन=इच्छाऽनुकूल आने जाने के लिए, आर्याभि० १ १६, ऋ० १ ३ १०.१४ चरणाय १ ३६ १४ भ्रमणाय ४ ५१ ५ [चरथाय=चरणाय नि० ४.१९ चर गतौ (भ्वा०) धातोरौणादिको बाहुलकाद् अथ प्रत्यय]

चरद्भ्यः अनर्थकारिभ्य (प्रजापुरुषेभ्य) १६ २१. [चर गतौ (भ्वा०) धातोर्बाहु० औणादिक अति प्रत्यय]

चरध्यै चरितु भक्षितु गन्तुम् १.६१.१२. [चर गतौ (भ्वा०) धातोस्तुमर्थे अध्यै प्रत्यय । चरध्यै चरणाय नि० ६,२०]

चरन् विचरन् (पुत्र) १.१४४ ४ जानन् प्राप्त सन् (ईश्वर सूर्यलोको वा) १ ३३ ४ **चरन्तम्**=प्राप्नुवन्तम् (आत्मानम्) ३ १ ६ ज्ञातार सर्वज्ञमीश्वरम्, ऋ० भू० १६३ विहरन्तम् (पुत्रम्) ४ १८ १२ व्यवहरन्तम् (कुमारम्) ५ २ ४ सर्वं जगज्जानन्त, सर्वत्र व्याप्नुवन्तम (अ०—स्वात्मनि परमात्मान, बाह्यदेशे सूर्य वायु वा) १ ६ १ गच्छन्तम् (सूनुम्) १ १८५ २ **चरन्तः**=विचरते हुए (गृहस्थादि मनुष्य) स० वि० १४२, अथर्व० ३ ६ ५. [चर गतौ (भ्वा०) धातो शतृप्रत्यय । वायुर्वै चरन् तै० ३ ६ ४ १]

चरन्त चरन्तु, प्र०—अत्र व्यत्ययेनाऽऽत्मनेपदम् २ ४ ५ [चर गतौ (भ्वा०) धातोर्लङ् । अटभावो व्यत्ययेनात्मनेपदञ्च]

चरन्ता प्राप्नुवन्तौ गच्छन्तौ वा (विद्याकामौ जनौ) १ १५८.२. [चर गतौ (भ्वा०) धातो शतृ। प्रथमाद्विवचनस्याकारश्छान्दस]

चरन्ति वर्त्तन्ते २ ३० प्रवर्त्तन्ते १ ६४ ५ प्राप्नुवन्ति गच्छन्ति वा ४ ६ १० व्यवहरन्ति १७ ३१ सञ्चरन्ति ५ ६ २ विचरन्ति ६ ४७.३१ आचरन्ति ७ ३३ ६ गच्छन्त्यागच्छन्ति १ ३६ ३ जानन्ति गच्छन्ति वा ७ १.१८ व्यवहरन्ति १७ ३१ प्रवृत्त हो रहे है आर्याभि० २ ४४, १७ ३१ [चर गतौ (भ्वा०) धातोर्लट्]

चरन्तीः प्राप्नुवन्त्य (नद्य =सरिता) ३ ३३ ४ **चरन्ती**=प्राप्नुवन्ती (वाक्) ७ ३६ ७ प्राप्नुवत्यौ (उषासा=प्रात साय वेले) २६ ६ गच्छन्ती (योषा= स्त्री) १ १६७ ३ [चर गतौ (भ्वा०) धातो शत्रन्तात् ङीप्]

चरन्तु विलसन्तु ४ ८ ७ [चर गतौ (भ्वा०) धातोर्लोट्]

चरमम् अन्तिमम् (युक्ताहारविहार ब्रह्मचर्य्यम्) ७ ५६ ३ [चर गतौ (भ्वा०) धातो 'चरेश्च' उ० ५ ६६ सूत्रेण अमच्-प्रत्यय]

चरसि गच्छसि प्राप्नोषि ११ ३६ [चर गतौ (भ्वा०) धातोर्लट्]

चरसे व्यवहर्त्तुं भोजयितु वा १ ६२ ६ चरित गन्तुम् ५ ४७ ४ [चर गतौ भक्षणे च (भ्वा०) धातोस्तुमर्थे असेन् प्रत्यय]

चराचरेभ्यः स्थावर-जङ्गमेभ्य (जड-चेतनेभ्य) २२ २९ [चर-अचरपदयो समास । चर =चर गतौ (भ्वा०) धातोरच्]

चराणि गतिमन्ति प्राप्तव्यानि वा (वीर्ययुक्तानि सैन्यानि) ५ २९ १३ [चर गतौ (भ्वा०) धातोरच् । घञर्थे को वा]

चराथा चरथया (वसत्या), प्र०—अत्र चरधातोर्बाहुलकादौणादिकोऽथच् प्रत्यय, प्रत्ययाऽऽदेर्दीर्घ 'सुपा सुलुग्०' इत्याकारादेशश्च १ ६६ ५ [चराथा=चरन्त्या नि० १० २१]

चरामसि विचराम १ ५७ ४ [चर गतौ (भ्वा०) धातोर्लट् । उत्तमबहुवचने 'इदन्तो मसि' इति मस इदन्तता]

चरामि गच्छामि १ १६४ ३७ प्राप्नोमि ३ ५५ १४. [चर गतौ (भ्वा०) धातोर्लट्]

चरितवे चरितु व्यवहर्त्तुम् १ ११३ ५ [चर गतौ (भ्वा०) धातोस्तुमर्थे तवेट्प्रत्यय]

चरितस्य अनुष्ठितस्य कर्मण १ ११०.२ [चर गतौ (भ्वा०) धातो क्त]

चरित्रम् ग्रत्रु-शीलम् १ ११६ १५ **चरित्रान्**= व्यवहारान् ६.१४ **चरित्राय**=धर्माऽऽचरणाय १३ १६ शुभ-कर्माऽऽचारणाय १४ १२. सत्कर्मानुष्ठानाय १५ ६४

गाम्मि १७ ६ ३ **चाकशीहि**=भृश चक्ष्व पुन पुनर्गाथि, प्र०—अय कशधातोर्यङ्लुगन्तस्य प्रयोग 'वाच्छन्दसि' इति पित्वादीट् १६ २ [काशृ दीप्तौ (भ्वा०) धातोर्यङ्लुकि लटि रूपम् । 'वहुल छन्दसीति वक्तव्यम्' अ० ७ ३ ८७ वा० सूत्रेण ह्रस्वत्वम् । अन्यत्र लोट्]

चाक्षुष्य: चक्षुष इमा दर्शनीया (वर्षा) १३ ५६ [चक्षुष् प्राति० 'तत्र साधु' इति यत् । हितार्थे वा यत् । चक्षुष्यप्राति० स्वार्थेऽण्]

चाक्ष्म: व्यक्तवाक् (राजपुरुष) २ २४ ६ [चक्षिङ् व्यक्ताया वाचि (अदा०) धातोर्बाहुलकादौणादिको मक् । वाहुलकादेवोपधादीर्घश्च । चाक्ष्म पश्यतिकर्मा निघ० ३ ११]

चातयते विज्ञापयति, प्र०—चततीति गतिकर्मा, निघ० २ १४, ४ १७ ६ [चतति गतिकर्मा (निघ० २ १४) धातोर्णिजन्ताल् लट्]

चातयस्व याचयस्व २ ३३ २ नाश प्रापय ७ १ ७ हिंसय हिन्धि वा ५ ४ ६ [चते याचने (भ्वा०) धातोर्णिजन्ताल् लोट् । धातूनामनेकार्यकत्वाद् हिंसार्थेऽपि । चातयतिर्नाशने नि० ६ ३०]

चायमान: पूज्यमान (अग्नि =राजा) ६ २७ ८ वर्धमान (पशु =गवादि) ७ १८ ८ **चायमानाय**= सत्कर्त्रे (सज्जनाय) ६ २७ ५ [चायृ पूजानिशामनयो (भ्वा०) धातो शानच्]

चायव: सत्कर्त्तार (राजजना) ३ २४ ४ [चायृ पूजानिशामनयो (भ्वा०) धातोर्बाहुलकादौणादिक उ प्रत्यय]

चारणाय अतिशूद्रायाऽन्त्यजाय, ऋ० भू० ३१० [चर गतौ (भ्वा०) धातोर्णिजन्ताल् ल्युट् । 'कृत्यल्युटो वहुलमि' ति कर्त्तरि ल्युट्]

चारय प्रापय २३ २१ [चर गतौ (भ्वा०) धातोर्णिजन्ताल्लोट्]

चारव: सुन्दरस्वभावा गन्तारो वा (नर =मनुष्या) ५ ५६ ३ [चर गतौ (भ्वा०) धातो 'दृसनिजनिचरि०' उ० १ ३ सूत्रेण ञुण् । चारु चरने नि० ८ १५ रुचेर्विपरीतस्य नि० ११ ५]

चारु श्रेष्ठतरम् (मन) १ १८७ ६ सुन्दर वस्त्रम् ५ ४८ ५ सुन्दर भोक्तव्यम् (सवन=भोजनम्) ३ ३२ १ श्रैष्ठ्य यथा स्यात्तथा १ ७२ २ पवित्र (नाम) स० प्र० ३३०, १ २४ १ **चारुम्**=श्रेष्ठ व्यवहारम् १ ७२ १०. श्रेष्ठाम् (मति=बुद्धिम्) २० ७८ भक्षणीय सुन्दरम् (पुरोडाश=सुसस्कृताऽन्नविशेषम्) ३ ५२ ५ **चारु:**= अत्युत्तम (सोम =महौषधिरस) ४ ४९ २. श्रेष्ठ (ईश्वर सभाव्यक्षो वा) १ ९४ १३ सुन्दरा (सोमलता) ६ ८ १ अत्यन्तशोभायमान और शोभा का देने वाला (ईश्वर), आर्याभि० १ ४८, ऋ० १ ६ ३२ १३. [चारुपद व्याख्यातम्]

चारुतमम् अतीव सुन्दरम् (कर्म) १ ६२ ६ **चारुतम**=अतिशयेन सुशील सुन्दर (अतिथि) ५ १.९ [चारुपद व्याख्यातम् । ततोऽतिशायने तमप्]

चारुप्रतीक: सुन्दर गुणकर्मस्वभावै प्रतीत (विद्वान् श्रीमज्जन) २ ८ २ [चारु-प्रतीकपदयो समास । चारु-व्याख्यातम् । प्रतीक =प्रतिप्राति०क न्प्रत्यय । निपातस्य दीर्घ]

चाषान् भक्षणानि २५ ७ **चाषेण**=भक्षणेन, भा०—औषधसेवनेन १२ ८७ [चष भक्षणे (भ्वा०) धातोर्घञ्]

चिकित: जानासि, प्र०—मध्यमैकवचने लेट्प्रयोग १ ९१.१ [कि ज्ञाने (जु०) धातोर्लेट्]

चिकितान! ज्ञानयुक्त (मर्त्त=मनुष्य) ५ ६६ १ [कित ज्ञाने (भ्वा०) धातोर्लिट स्थाने कानच्]

चिकितान: ज्ञानवान् ज्ञापक (महाबलिजन) ३ १८ २ [कित ज्ञाने (भ्वा०) धातोर्लिट स्थाने कानच्]

चिकितुष: प्रशस्तविद्यस्य (विद्वज्जनस्य) १ ७३.१ **चिकितुषा**=विज्ञापयित्र्या (वाचा) ६ ६१ १३ **चिकितुषे**=चिकित्सितु विचारयितुमिष्टाय (रणाय=सङ्ग्रामाय) ६ ४१.४ ज्ञातव्याय (विद्यार्थिने जनाय) ५ ४१.११ विज्ञापनाय ४ १६ २ विज्ञानवते (पत्ये) ६ ६६ १. [कित ज्ञाने (भ्वा०) धातोर्लिट. स्थाने क्वसु प्रत्यय]

चिकितु: विज्ञातु (सेनाऽध्यक्षस्य) ३ ५३ २४ [कि ज्ञाने (जु०) धातोस्तृच्, गुणाऽभावो द्वित्व च छान्दसम्]

चिकिते जानाति ७ २३ २ जानातु ३ ५३ २३. विज्ञापयति २ ४ ५ चिकित्सति १ ५१ ७ ज्ञापयति १ ७१ ७ [कि ज्ञाने (जुहो०) धातोर्लट् । व्यत्ययेनात्मनेपदम्]

चिकित्रिरे जानीत १ १६६ १३. [कित ज्ञाने (भ्वा०) धातोर्लिटि झस्य इरेच् । रुडागमश्छान्दस]

चिकित्रे विज्ञानवते (पूर्णविद्यायाध्यापकाय) १ १८६ ६ [कित ज्ञाने (भ्वा०) धातोस्तृच् । गुणाभावो द्वित्व च छान्दसम्]

विद्युत्प्रसिद्धाग्नी) १ १०६ ५ [चर्षणिरिति व्याख्यातम्। तत प्रथमाद्विवचनम्]

चर्षणीधृत् यो मनुष्यान् धरति (इन्द्र =राजा) ४ १७ २० **चर्षणीधृतम्**=चर्षणीना सत्यासत्यविवेचकाना धर्त्तारम्(अध्यापकमुपदेशक वा) ४ १ २ विद्वद्भिर्धृतम् (अध्यापकमुपदेशक वा) ४ १ २ **चर्षणीधृतः**=सत्योपदेशेन मनुष्येभ्य सुखस्य धर्त्तार (सर्वविद्वज्जना), प्र०—चर्षणय इति मनुष्यनामसु पठितम्, निघ० २.३, १ ३ ७ सुशिक्षया मनुष्याणा धर्त्तु (देवस्य) ११ ६२ चर्षणयो मनुष्यास्तान् धरन्ति पोषयन्ति ते (देवास =विद्वास) ७ ३३ [चर्षणिरिति व्याख्यातम्। तदुपपदे धृञ् धारणे (भ्वा०) धातो क्विप्। तुगागम। चर्षणिधृत =मनुष्यधृत नि० १२ ४०]

चर्षणीप्राम् यश्चर्षणीन् मनुष्यान् प्राति व्याप्नोति तम् (रयिं=धनम्) ६ ४६ १५ **चर्षणीप्राः**=यश्चर्षणीन् मनुष्यान् प्राति व्याप्नोति स (अग्नि =राजा) ४ २ १३ यश्चर्षणीन् मनुष्यान् सुखै पिपर्त्ति स (इन्द्र =सूर्य) १ १८६ ६ यश्चर्षणीन् मनुष्यान् प्राति विद्यया पिपर्त्ति स (राजा) १ १७७ १ यश्चर्षणीन् मनुष्यान् सत्यविद्या-शिक्षा-शीलै प्राति प्रपूर्त्ति स (इन्द्र =धार्मिको विद्वान्, राजा वा) ३ ३४ ७ यश्चर्षणिषु मनुष्येषु विद्युद्रूपेण व्याप्नोति (अग्नि =सूर्य) ६ १६ १ यो विद्यादिभिर्गुणैश्चर्षणीन् मनुष्यान् प्राति व्याप्नोति (विद्वज्जन) ६ ३६ ४ चर्षणीन् मनुष्यान् प्राति सुखै प्रपूरयति स (इन्द्र = भगवान् जगदीश्वर) ७ ३६ [चर्षणिरिति व्याख्यातम्। तदुपपदे प्रा पूरणे (अदा०) धातो क्विप्]

चर्षणीसहम् मनुष्याणा सोढारम् (क्रतु=प्रज्ञाम्) ५ ३५ १ शत्रुसेनाया सोढारम् (राजानम्) ६ ४६ ६ चर्षणयो मनुष्या शत्रून् सहन्ते येन तम् (विद्युद्यानम्) १ १११६ १० मनुष्यसेनाया कार्यसहनशीलम् (ताराख्य यन्त्रम्) ऋ० भू० १६६ **चर्षणीसहाम्**=ये चर्षणीन् मनुष्यसमूहान् सहन्ते तेषाम् (योद्धृजनानाम्) २८ १ [चर्षणिरिति व्याख्यातम्। तदुपपदे षह मर्षणे (भ्वा०) धातो क्विप् करणे 'कृतो बहुल वे' ति वार्त्तिकेन। कर्त्तरि वा क्विप्]

चलाचलासः चलाश्चाऽचलाश्च ता (शङ्कव = कीला) १ १६४ ४८ चला चालनाऽर्हा अचला स्थित्यर्हा कला) ऋ० भू० २०७, १ १६४ ४८ [चल-अचलपदयो समास]

चषालवन्तः बहवश्चषाला भोगा विद्यन्ते येषान्ते (बहुश्रुता विद्वास) ३ ८ १० [चषालप्राति० भूम्न्यर्थे मतुप्। चषाल =चष भक्षणे (भ्वा०) धातो 'सानसिवर्णसि०' उ० ४ १०७. सूत्रेणालच् प्रत्ययान्तो निपात्यते]

चषालम् वृक्षविशेषम् १ १६२ ६ यूपाऽवयवम्, भा०—अश्वबन्धनादिनिमित्ताय काष्ठविशेषज वस्तु २५ २६ [व्याख्यातम्। चषालाद् वै देवतास्स्वर्ग लोकमायन् काठ० २६ ४]

चष्टे वदति ७.२८ ४ उपदिशति १ १६० ७ प्रकाशयति ७ ६० ३ कथयामि ६ २६ २ जानाति ७ ६१ १ दर्शयति, प्र०—अत्राऽन्तर्गतो ण्यर्थ १ १०८ १. कथयति ७ ३४ १० कथयामि ६ २६ २ अभित ख्याति ३ ५६ १. पश्यति १२ ६६ विख्यायते ५ १६ १ [चक्षिङ् व्यक्तायां वाचि (अदा०) धातोर्लट्। अय धातुर्दर्शनार्थेऽपि। चष्टे पश्यतिकर्मा निघ० ३ ११]

चस्कन्द प्राप्नोति १ ३ ५ [स्कन्दिर् गतिशोषणयो (भ्वा०) धातो सामान्ये लिट्]

चाकन् चङ्कन्यते काम्यते, प्र०—'कनी दीप्तिकान्तिगतिषु' इत्यस्य यङ्लुगन्तस्य क्विबन्त रूप 'वाच्छन्दसि सर्वे विधयो भवन्ति, इति तुगभाव 'दीर्घोऽकित' इत्यभ्यासस्य दीर्घत्व च। सायणाचार्येणेद भ्रमतो मित्सज्ञकस्य ण्यन्तस्य च कनीधातो रूपमशुद्ध व्याख्यातम् १ ३३ १४ कामयते २ ११ ३ कामयसे प्र०—अत्र कनी दीप्तिकान्तिगतिषु इत्यस्माल्लडो मध्यमैकवचने 'बहुल छन्दसि' इति शप स्थाने श्लु 'श्लौ' इति द्वित्व 'बहुल छन्दस्यमाङ्योगेऽपि' इत्यडभाव, सयोगान्तसलोपश्च १ १७४ ५ [कनी दीप्तिकान्तिगतिषु (भ्वा०) धातोर्यङ्लुगन्तप्रयोग। चाकन् चायन्निति वा कामयमान इति वा नि० ६ २८ चाकन् पदनाम निघ० ४ ३ चाकनत् कान्तिकर्मा निघ० २ ६ चाकनत् पश्यतिकर्मा निघ० ३ ११]

चाकन कामये, प्र०—अत्र कनधातोर्वर्तमाने लिट् 'तुजादीना दीर्घोऽभ्यासस्य' इति अभ्यासदीर्घत्वञ्च १ ५१ ८ प्रकाशितो भवेयम्, प्र०—अत्र तुजादित्वादभ्यासदीर्घ १ १२० १० कामना करता हूँ, आर्याभि० १ १४ **चाकनन्त**=कामयन्ते ५.३१ १३ **चाकनः**=कामयसे १ ५१ १२ **चाकनाम**=कामयेमहि २ ११ १३ **चाकन्तु**=कामयन्तु १ १२२ १४ [कनी दीप्तिकान्तिगतिषु (भ्वा०) धातोर्लिट्। छान्दस रूपम्]

चाकशीति अभिपश्यति १ १६४ २० **चाकशीमि**=प्रकाशयामि ४ ५८ ५ भृश प्राप्नोमि १३ ३८ सर्वतोऽनु-

चितन्त्या बुद्धिमत्या (मात्रा) १ १२६ ७ [चिती सज्ञाने (भ्वा०) धातो शत्रन्तात् ङीपि तृतीयैकवचनम्]

चितयत् सज्ञापयेत् १ १८० ८ [चिति सज्ञाने (भ्वा०) धातोर्णिजन्ताल् लेट् । गुणाऽभावश्छान्दस]

चितयत् यच्चित ज्ञातार करोति तत् (ब्रह्म =धन-मन्न वा) २ ३४ ७

चितयन् ज्ञापयन् (देव =विद्वज्जन) ५ १५ ५ [चिती सज्ञाने (भ्वा०) धातोर्णिजन्ताच्छतृप्रत्यय]

चितयन्त चित कुर्वन्तु २ ३४ २ विज्ञापयन्ति ४ ५१ ३ [चिती सज्ञाने (भ्वा०) धातोर्णिजन्ताल् लङ् । अडभावश्छान्दस]

चितयद्भि: ज्ञापयद्भि (अर्कै =विद्वद्भि) ५ ४१ ७ सब सत्य विद्याओ को जनाने हारे (ब्रह्मचारियो) से, स० वि० १०५, ५ ४१ ७ **चितयन्तम्**=ज्ञापयन्तम् (रूपम्) ६ ६ ७ **चितयन्त** =सञ्चेतयन्त (जना) प्र०—अत्र 'वाच्छन्दसि' इत्युपधागुणो न १ १३१ २ ज्ञापयन्त (नर =नायका जना) ५ १६ २ गुणाना चिति कुर्वन्त (सभासेनाप्रजास्था जना) १ ६४ ४ सञ्जानन्त (क्षितय =मनुष्य) १ ३३ ६ [चिती सज्ञाने (भ्वा०) धातोर्णिजन्ताच्छतृप्रत्यय । गुणाऽभावश्छान्दस]

चितयन्ति ज्ञापयन्ति ७ ६० ६ **चितयन्ते**=प्रज्ञापयन्ति ५ ५६ २ सञ्ज्ञापयन्ति १ १७१ ५ [चिती सज्ञाने (भ्वा०) धातोर्णिजन्ताल् लट्]

चितयन्त्या चेतनताया कर्त्र्या (कृपा=सामर्थ्येन) १७ १० ज्ञापयन्त्या (कृपा=कृपया) ६ १५ ५ [चिती सज्ञाने (भ्वा०) धातोर्णिजन्ताच्छतृप्रत्यय]

चितये चेतनाय (परमेश्वराय) २३ ४६ [चिती सज्ञाने (भ्वा०) धातो क्तिन्प्रत्यय । यच्चेतयमाना अपश्यस्तस्माच्चितय श० ६ २ ३ ६ पञ्च ह्येतेऽग्नयो यदेताश्चितय श० ६ २ १ १६ पञ्च तन्वो व्यस्रसन्त लोम त्वङ् मासमस्थि मज्जा ता एवैता पञ्च चितय श० ६ १ २ १७ ऋतवो हैते यदेताश्चितय श० ६ २ १ ३६ सप्त योनीरिति चितीरेतदाह श० ६ २ ३ ४४]

चितयेम ज्ञापयेम २ २ १० चिति सज्ञानमाचक्ष्महि ४ ३६ ६ [चिती सज्ञाने (भ्वा०) धातोर्णिजन्ताल् लिङ्]

चित इन्धनै सयुक्त (अग्नि) १ ११२ १७ सञ्चित (अग्नि) १ १५८ ४ [चिञ् चयने (स्वा०) धातो क्त प्रत्यय]

चिताना. सज्ञाकारिण्य (अप =जलानि प्राणान्वा), प्र०—अत्र विकरणलुग् व्यत्ययेनाऽऽत्मनेपदश्च १० १. [चिती सज्ञाने (भ्वा०) धातो शानच् । विकरणस्य लुक्, आत्मनेपदञ्च व्यत्ययेन]

चितास: सञ्चययुक्ता (जीवा) ७ १८ १० [चिञ् चयने (स्वा०) धातो क्त प्रत्यय । जसोऽसुगागमश्च]

चित्तगर्भासु चित्त चेतनत्व गर्भो यासु तासु (प्रजासु) ५ ४४ ५ [चित्त-गर्भपदयो समास । चित्त व्याख्यास्यते । गर्भ =गॄ निगरणे (तुदा०) गॄ शब्दे (क्र्या०) धातोर्वा 'अर्त्तिगॄभ्या भन्' उ० ३ १५२ सूत्रेण भन्प्रत्यय]

चित्तम् चेतति येन तत् (योगाभ्यासजनिता विद्युतम्) ११ ६६ अन्त करणम् १ १६३ ११ अन्त करणस्य स्मरणात्मिका वृत्तिम् १ १७० १ सर्वज्ञ, सर्वव्यापक साक्षी (मन) स० प्र० २४७, ३४५ स्मृति १८ २ स्वान्तम् १७ ४४ सञ्ज्ञानम् ५ ७ ६ पूर्वपराऽनुभूत स्मरणात्मक धर्मेश्वरचिन्तनम, ऋ० भू० ६४ स्मृतिसाधकम् (अन्त-करणम्) २२ २० विज्ञानसाधिकामन्त करणवृत्तिम् २५ २ सर्वपदार्थ-विषयिज्ञानम् ३४ ५ **चित्तानि**=अन्त करणानि ७ ५६ ८ सज्ञतानि धर्म्याणि कर्म्माणि १२ ५८ [चिती-सज्ञाने (भ्वा०) धातो क्त । चित्त प्रज्ञानाम निघ० ३ ६ चित्त चेतते नि० १ ६ चित्त विज्ञातम् तै० स० ४ १ ६ १ मै० २ ७ ७ मनो वै चित्तम् मै० ४ २ ६]

चित्तिन: विद्वान् सज्ञान (गृहस्थादिमनुष्यगण), स० वि० १४२, अथर्व० ३ ३० ५ [चित्तप्राति० मत्वर्थे इनि प्रत्यय । वचनव्यत्यय]

चित्तिभि: चयनक्रियाभि ५ ४४ १० चयनै १ १६४ २६ काष्ठादिचयनै ३ ३ ३ सज्ञानै १७ ५३ सम्यग् विज्ञानैस्सह, भा०—विद्यासञ्चयै १२ ३१ **चित्तिम्**= चिन्वन्ति यया ताम् (क्रियाम्) १७ ७८ चिन्वन्ति विद्या यया ताम् (प्रकृतिम्) २ २१ ६ कृतचयना क्रियाम् ४ २ ११ ज्ञानम् २७ ६ **चित्ति:**=सम्यङ् ज्ञाता ज्ञापको वा (ईश्वरो विद्युद्वा) १ ६७ ५ [चित्तिभि कर्मभि नि० २ ६ चिती सज्ञाने (भ्वा०) धातो क्तिन् स्त्रियाम् । चित्ति स्रुक् मै० १.६ १ तै० आ० ३ ११]

चित्पति चेतयति येन विज्ञानेन तस्य पति पालयिताऽधिष्ठातेश्वर ४ ४ [चित्-पतिपदयो समास चित्= चिती सज्ञाने (भ्वा०) धातो 'कृतो बहुल वा' इति करणे क्विप् प्रजापतिर्वै चित्पति ३ १ ३ २२ मनो वै चित्पति तै० स० ६ १ १ ६ मै० ३ ६ ३]

चित्र ! अद्भुतविद्य (इन्द्र=मनुष्य) ६ ४६ २ अद्-

चिकित्वत् ज्ञापयन्तीम् (सत्यवाचम्) ४ ५२ ४ **चिकित्वः**=ज्ञानवन् (परमेश्वर जीव वा) १ ७० ३ विज्ञानवन् (परमेश्वर) २ ६ ८ विज्ञातव्यम् (ऋत=सत्य कारणम्) ५ १२ २ बुद्धिमन् (विद्वज्जन) ५ २ ७ शुद्ध-बहुप्रज्ञायुक्त (राजन्) ६ ५ ३ [कित ज्ञाने (भ्वा०) धातोर्मतुप्। धातोर्द्वित्व 'वा छान्दसि' इति वार्तिकेन]

चिकित्वान् ज्ञानवान् ज्ञानहेतुर्वा (देव=सूर्योऽध्यापको वा) १ ७१ ५ विवेकी (विद्वज्जन) ४ ५ १२ ज्ञानवान् ज्ञापको वा (विद्वज्जन) १ ७१ ७ विज्ञानवान् (विद्वान् जन) ४ ८ ४ सत्यार्थविज्ञापक (अग्नि=विद्वज्जन) ४ १२ १ केतयति जानातीति (धार्मिकोऽखिलविद्यो न्यायकारी जन) प्र०—अत्र 'कित् ज्ञाने' अस्माद् वेदोक्ताद्धातो क्वसु प्रत्यय 'चिकित्वान् चेतनवान्' नि० २ ११, १ २५ ११ **चिकित्वांसम्**=विद्वासम् (सज्जनम्) ४ ७ ५. **चिकित्वांसः**=विज्ञापयन्त (विद्वज्जना) ७ ६० ७ [किन ज्ञाने (भ्वा०) धातोर्लिट स्थाने क्वसु। चिकित्वान् चेतनवान् नि० ८ ५ नि० २ ११ चिकित्वानिति विद्वानित्येतत् श० ६ ४ २ ६]

चिकित्विन्मनसम् चिकित्वित। विज्ञानवता मन इव मनो यस्य तम् (देव=विद्वास जनम्) ५ २२ ३ [चिकित्वित्-मनस्पदयो समास]

चिकित्सत् चिकित्सते ४ १६ १० **चिकित्सति**=सगय प्राप्नोति ४० ६ [कित निवासे रोगापनयने च (भ्वा०) धातो 'गुप्तिज्किद्भ्यः सन्' इति स्वार्थे सन्। तत शतृ। अन्यत्र लट्]

चिकित्सन्ती चिकित्सा कुर्वती (अर्या=वैश्यकन्या) १ ११२३ १ [कित निवासे रोगापनयने च (भ्वा०) धातो स्वार्थे सन्। तत शत्रन्तात् ङीप्]

चिकित्स यश्चिकित्सति रोगपरीक्षा करोति तत्-सम्बुद्धौ (इन्द्र=वैद्यराज) ६ ४७ २० [चिकित्स धातोरच्-प्रत्यय, तत सम्बुद्धि। चिकित्स=कित निवासे रोगापनयने च (भ्वा०) धातो स्वार्थे सन्]

चिकित्स सशययुक्तो भव १ ६१ २३ रोगनिवारणायेव विघ्ननिवारणोपाय कुरु ३४ २३ [कित निवासे रोगापनयने च (भ्वा०) धातो स्वार्थे सन्। ततो लोटि मध्यमैकवचनम्]

चिकिद्धि ज्ञापय २ ४३ ३ विजानीहि ५ १ १० परमविद्या प्राप्त कराओ आर्याभि० १ ५३, ऋ० २८ १२ ३ [कित ज्ञाने (भ्वा०) धातोर्लोट्। 'बहुल छन्दसी' ति शप श्लु]

चिकीषते वेत्तुमिच्छति ११ १८ [कि ज्ञाने (जु०) धातोरिच्छायामर्थे सन्नन्ताल् लट्। व्यत्ययेनात्मनेपदम्]

चिकेत उद्बुध्येत २ ४ ६ विजानीयात् २ १४ १० जानाति १ ६७ ४ केतति जानाति, प्र०=अत्र 'कित ज्ञाने' धातोर्लडर्थे लिट् १ ३५ ७ विजानीत १ १६४ १६ आचरति ऋ० भू० २१३, अथर्व० ५ १ २ **चिकेतत्**=जानाति ५ ३६ १ चिकेतति विजानाति ६ ६२ ६ विजानीयात्, प्र०—अय 'कित ज्ञाने' धातोर्लेट्, प्रथमैकवचनप्रयोग 'बहुल छन्दसि' इति शप श्लु १ ३५ ६ **चिकेतति**=ज्ञापयति १ ४३ ३ जानाति १ ८२ ४ **चिकेतसि**=जानीया १ १३१ ६ **चिकेथे**=जानीथ ५ ६६ ४ [कित ज्ञाने (भ्वा०) धातोर्लिट् सामान्ये। अन्यत्र लेटि शप श्लौ रूपम्]

चिक्युः चिनुयु १ १६४ ३८ [चिञ् चयने (स्वा०) धातोर्लिटि प्रथमबहुवचनम्। 'विभाषा चे' इत्यभ्यासात् परस्य वा कुत्वम्। चिक्यत् कान्तिकर्मा निघ० २ ६, पश्यतिकर्मा निघ० ३ ११]

चिच्युषे च्यावयसि ४ ३० २२ [च्युङ् गतौ (भ्वा०) धातोर्लिटि मध्यमैकवचनम्। अभ्यासोकारस्य इकारश्छान्दस, इडभावश्च]

चित् अपि २० ५२ इव, प्र०—चिदित्युपमार्थे, नि० १ १४, १ १० ६ अ०—यथा १ ६ ५ एवार्थे, प्र०—चिदिद पूजायाम्, नि० १ ४, १ ६ ५ पूजार्थे, प्र०—चिदिद ब्रूयादिति पूजायाम्, नि० १ ४, १ १० ६ अ०—अन्ये नास्तिका १ ४ ५ निश्चयार्थे ५ ४१ १७ भी, स० वि० १५६, ७ ४१ २ खलु १ १६७ ७ चार्थे १ २८ ६ पुनरर्थे १ ३० ४ यदि १ १६ ४ वितर्के १ २४ १० किञ्चित् २ १७ १४ [चिदित्येषोऽनेककर्मा। आचार्यश्चिदिद ब्रूयाद् इति पूजायाम्। दधिचिदित्युपमार्थे। कुल्माषाश्चिदाहरे-त्यवकुत्सिते नि० १ ४]

चित् या विद्याव्यवहारस्य चेतयमाना वाग् विद्युद्वा ४ १६. सज्ञप्ता (कन्या) १२ ५३ **चितः**=चेतयन्ति सजानन्ति ये ते चित (मनुष्या कपालानि वा) १ १८ सचिता (विद्वज्जना) १२ ४६ [चिती सज्ञाने (भ्वा०) धातो क्विप्। अथापि पशुनामेह भवत्युदात्त। 'चिदसि मनासि धीरसि' चितास्त्वयि भोगा, चेतयस इति वा नि० ५.५. चित् मर्मणि नि० ६ ३३]

चितन ज्ञापयत ४ ३७ ७

१ ५ २ २ त्वष्टा नक्षत्रमभ्येति चित्राम् तै० ३ १ १ ६ चक्षुर्वा एतत् सवत्सरस्य यच्चित्रा पूर्णमास ता० ५ ६ ११ इन्द्रस्य चित्रा तै० १ ५ १ ३ चित्रा नक्षत्र त्वष्टा देवता मै० २ १३ २० य सपत्नवान् भ्रातृव्यवान् वा स्यात् स चित्रायामग्निमादधीत मै० १ ६ ६ या तामिष्टकाम् (इन्द्र॰) आवृहत् सा चित्राऽभवत् मै० १ ६ ६]

चित्रयामम् चित्रा अद्भुता यामा प्रहरा यस्माद् यद्वा चित्र याम प्रापण यस्य तम् (अग्नि=पावकम्) ३ २ १३ [चित्र-यामपदयो समास । चित्र व्याख्यातम् । याम=या प्रापणे (अदा०) धातोर्गौणादिको मन् प्रत्यय]

चित्रराती चित्राऽद्भुता रातिर्दान याभ्या तौ (वायु-विद्युतौ) ३ ६२ ५ चित्राऽद्भुता रातिर्दान ययोस्तौ (सभा-सेनेशौ) ६ ६२ ११ [चित्रा-रातिपदयो समास । चित्रा व्याख्यातम् । राति=रा दाने (अदा०) धातो क्तिन् । औकारे द्विवचने परे 'प्रथमयो पूर्वसवर्ण' इति पूर्वसवर्णदीर्घ]

चित्रशोचिषम् अद्भुतप्रकाशम् (नाक=सुखम्) ५ १७ २ [चित्र-शोचिष्पदयो समास । शोचिष्= शोचि=ज्वलतो नाम निघ० १ १७]

चित्रशोचि: चित्र विविध शोचि प्रकाशो यस्य स (विप्र=मेधाविजन) ६ १० ३ [चित्र-शोचिस्पदयो समास । शोचिस्=शोचति ज्वलतिकर्मा (निघ० १ १६) धातोरौणा० इसि प्रत्यय]

चित्रश्रवस्तम चित्राण्यद्भुतानि श्रवास्यतिशयिता-न्यन्नानि वा यस्य तत्सम्बुद्धौ (अग्ने=विद्वज्जन) १५ ३१. **चित्रश्रवस्तमम्**=चित्राण्याश्चर्यभूतानि श्रवास्यन्नादीनि यस्मात् तम् (द्युम्न=धनम्) ११ ६२ चित्राण्यद्भुतानि श्रवासि श्रवणान्यन्नानि वा येन तदतिशयितम् (द्युम्न= यशस्कर धन विज्ञान) वा ३ ५९ ६ **चित्रश्रवस्तम:**= चित्रमद्भुत श्रव श्रवण यस्य सोऽतिशयित (अग्नि= परमेश्वरो भौतिको वा) १ १ ५ चित्रमाश्चर्य श्रव श्रवण यस्य स चित्रश्रवा, अतिशयेन चित्रश्रवा चित्रश्रवस्तम (अग्नि=परमेश्वर) वे० भा० न० ११५ आश्चर्य-श्रवणादि, आश्चर्यगुण, आश्चर्यशक्ति, आश्चर्यरूपवान् और अत्यन्त उत्तम (ईश्वर), आर्याभि० १ ५, ऋ० १ १ १ ५ चित्राण्यद्भुतानि श्रवास्यतिशयितान्यन्नादीनि यस्य (अग्नि=विद्युदिव विद्वज्जन) १ ४५ ६ [चित्र-श्रवस्-पदयो समासे कृतेऽतिशायने तमप् । चित्र व्याख्यातम् । श्रवस्=अन्ननाम निघ० २ ७ धननाम निघ० २ १०]

चित्रसेना: चित्राऽद्भुता सेना येषान्ते (राजपुरुषा) ६ ७५ ६ अद्भुतसेन्या (पितर=पालनक्षमा राजपुरुषा) २९ ४६ [चित्रा-सेनापदयो समास । चित्रा व्याख्यानम् । सेना=षिञ् बन्धने (स्वा०) धातो 'कृवृजृसिद्रु०' उ० ३.१० सूत्रेण न प्रत्यय । इनेन सहेति वा]

चित्रा विविधाऽऽश्चर्यगुणा (शुचि=पवित्रोऽग्नि) प्र०—अत्र 'सुपा सुलुक्०' इत्याकारादेश १ ६६ १ विचित्रस्वरूपोषा १ ९२ १२ विविधव्यवहारसिद्धिप्रदा (उषा=सुप्रभात) १ ११३ ४ **चित्राम्**=अद्भुतसुख-प्रकाशिकाम् (इषम्=इच्छामन्नादिप्राप्ति वा) १ ६३ ८ अद्भुतविषयाम् (सुमति=प्रज्ञाम्) १ ७ ७४ [चित्रापद व्याख्यातम्]

चित्रामघे ! चित्राण्यद्भुतानि मघानि धनानि यस्यास्तत्सम्बुद्धौ (उष) प्र०—अत्र अन्येषामपि इति दीर्घ १ ४८ १० [चित्र-मघपदयो समास । पूर्वपदस्य दीर्घ । मघम्=धननाम निघ० २ १०]

चित्रायु: चित्रमायुर्यस्या सा (विदुषी कन्या) ६ ४९ ७ [चित्र-आयुपदयो समास । आयु=इण् गतौ (अदा०) धातो 'छन्दसीणश्च' उ० २ ११८ सूत्रेण उसि प्रत्यय । आयु=अन्ननाम निघ० २ ७]

चित्रावसो ! चित्रमद्भुत वसु धन विद्यते यस्मिँस्त-त्सम्बुद्धावीश्वर ! चित्राणि वसूनि धनानि यस्माद् वा स भौतिकोऽग्निर्वा, प्र०—अत्र 'अन्येषामपि०' इति दीर्घ ३ १८ [चित्र-वसुपदयो समास । पूर्वपदस्य दीर्घ । वसु=वस निवासे (भ्वा०) धातो 'शृस्वृ०' उ० १.१० सूत्रेण उ प्रत्यय । वसु=धननाम निघ० २ १० रात्रि-नाम निघ० १ ७ रात्रिर्वै चित्रावसु सा हीय सगृह्येव चित्राणि वसति श० २ ३ ४ २२]

चित्रिणीषु अद्भुतासु सेनासु ४ ३२.२ [चित्र व्याख्यातम् । ततो मत्वर्थ इनि । तत स्त्रिया ङीप्]

चित्रोतय: चित्रा आश्चर्यवद्रक्षणाद्या क्रिया यासु ता मात्रादयोऽध्यापिका) १२ १०८ [चित्रा-ऊतिपदयो समास । ऊति=अव रक्षणादिषु (भ्वा०) धातो 'ऊति-यूति०' अ० ३ ३ ९७ सूत्रेण क्तिन् प्रत्ययान्तो निपात्यते]

चित्र्यम् अद्भुते भवम् (रथ=यानम्) ५ ६३ ७ चित्रेषु अद्भुतेषु भवम् (रयि=धनम) ७ २० ७ [चित्र व्याख्यातम् । ततो भवार्थे यत्]

चिनवत् चिनुयात् ४ २ ११ **चिनुहि**=सञ्चय कुरु

भुतगुणकर्मस्वभाव (इन्द्र=राजन्) ६ ४६ ५ आश्चर्यगुण-कर्मस्वभाव (इन्द्र=राजन्) ४ ३२ २ आश्चर्यरूप (इन्द्र=शत्रुनाशक विद्वज्जन) २७ ३८ अद्भुतकर्मकारिन् (इन्द्र=परमैश्वर्यप्रद राजन्) ७ २० ७ अद्भुत (विद्वन्) २७ ३६ **चित्रम्**=नानाविधम् (इन्द्रम्=ऐश्वर्यम्) १ १४२ ४ अद्भुत विज्ञानम् ४ २३ २ अद्भुतस्वरूपम् ३४ ३३ आश्चर्यगुणयुक्तम् (राध=धनम्) १ ११० ६ चक्रवर्त्ति-राज्यश्रिया विद्यामणिसुवर्णहस्त्यश्वादियोगेनाऽद्भुतम् (राध=धनम्) १ ६ ५ आश्चर्यभूतम् (रयिं=धनम्) ६ ६ ७ आश्चर्यवेगादियुक्तम् (रथ=रमणहेतु यानम्) १.३४ १० **चित्रस्य**=अद्भुतस्य (राधस=धनस्य) १ २२ ७ **चित्रः**=नानावर्णोऽद्भुत (सविता=सूर्य) ६ ४ ६. अद्भुतगुणकर्मस्वभावपरमेश्वर ३६ ४ अद्भुत-पुरुषार्थ (अग्नि=विद्वज्जन) ६ ४८ ६ शौर्यादिगुणै-रद्भुत (विद्वान्=शिल्पी) १ ८८ २ **चित्राः**=अद्भुता अनेकवर्णा (किरणा) १ ११५ ३ **चित्रेभिः**=अद्भुतै (अभ्रै=घनै) ५ ६३ ३ **चित्रे**=आश्चर्य-व्यवहारे १ ३० २१ [चिञ् चयने (स्वा०) धातो 'अमिचिमि-शसिभ्य क्त्र' उ० ४ १६४ सूत्रेण क्त्र प्रत्यय । चित्र चायनीय महनीयम् नि० २२ ६ सर्वाणि हि चित्राण्यग्नि श० ७ ४ १ २४ चित्ररूपा वै पशव जै० ३ १०१ चित्राण्येव नक्षत्राणाम् (रूपम्) जै० २ ४२६

चित्रक्षत्र चित्रमद्भुत क्षत्र राज्य धन वा यस्य (राजन्) ६ ६ ७ [चित्र-क्षत्रपदयो समास । चित्र व्याख्यातम् । क्षत्रमपि व्याख्यातम्]

चित्रज्योतिः चित्रमद्भुत ज्योतिर्यस्य स (भा०—सूर्य) १७ ८० [चित्र-ज्योतिस्पदयो समास । चित्र व्याख्यातम्]

चित्रतमम् अत्यन्ताऽऽश्चर्ययुक्त रूपम् ६ ६ ७ अतिशयेनाऽऽश्चर्यरूपम् (स्व=सुखम्) ४ २३ ६ **चित्र-तम.**=अतिशयेनाऽश्चर्यस्वरूपगुणक्रियायुक्त (रथ) १ १०८ १. अतिशयेनाश्चर्यगुणकर्मस्वभाव (विद्वज्जन) ६ ३८ १ [चित्र व्याख्यातम् । ततोऽतिशायने तमप्]

चित्रतमा अतिशयाऽद्भुतगुणकर्मस्वभावोत्पादकानि (कर्माणि) ४ १ ६ [चित्र व्याख्यातम् । ततोऽतिशायने तमप् । तत 'सुपा सुलुगि' त्याकार]

चित्रदृशीकम् आश्चर्य-दर्शनम् (अर्ण=जलम्) ६ ४७ ५ [चित्र-दृशीकपदयो समास । चित्र व्याख्यातम् । दृशीकम्=दृशिर् प्रेक्षणे (भ्वा०) धातोर्बाहुलकादौणादिक ईकन् प्रत्यय]

चित्रध्रजतिः विचित्रगति (अग्नि) ६ ३ ५ [चित्र-ध्रजतिपदयो समास चित्र व्याख्यातम् । ध्रजति=ध्रज गतौ (भ्वा०) धातोरौणादिकोऽति प्रत्यय]

चित्रबर्हिषम् चित्रमाश्चर्य बर्हिरन्तरिक्ष भवति यस्मात्त (धरुण=पृथिवीम्) १ २३ १३ चित्रमनेकविधं बर्हिरुत्तम कर्म क्रियते येन तम् (राजान=प्राण जीव वा) १ २३ १४ [चित्र-बर्हिष्पदयो समास । चित्र व्याख्यातम् बर्हि=अन्तरिक्षनाम निघ० १ ३ उदकनाम निघ० १ १२ पदनाम निघ० ५ २]

चित्रभानवः आश्चर्यप्रकाशा (मेधाविनो जना) १ ८५ ११ चित्रा अद्भुता भानवो दीप्तयो येभ्यस्ते (गिरय) १ ६४ ७ **चित्रभानुम्** अद्भुतकिरणाम् (अग्नि=विद्युतम्) ७ १२ १ **चित्रभानु**=विचित्रदीप्ति (अग्नि=पावक) २ १० २ अद्भुतप्रकाश (विवस्वान्=सूर्य) ७ ६ ३ चित्रा भानवो दीप्तयो यस्य यस्माद् वा (सविता=ऐश्वर्यवान्राजा सूर्यलोको वायुर्वा) १ ३५ ४ **चित्रभानो !**=चित्रा आश्चर्यभूता भानवो दीप्तयो यस्य स (इन्द्र=परमेश्वर सूर्यो वा) १ ३ ४ चित्रा भानवो विद्याप्रकाशा यस्य तत्सम्बुद्धौ (इन्द्र=सभेश) २० ८७ [चित्र-भानुपदयो समास । चित्र व्याख्यातम् । भानु=अहर्नाम निघ० १ ६ भानु=भा दीप्तौ (अदा०) धातो 'दाभाभ्या नु' उ० ३ ३२ सूत्रेण नु प्रत्यय]

चित्रया अनेकविधया (ऊती=ऊत्या) २ १७ ८ **चित्रा**=अद्भुतगुणकर्मस्वभावा (उषा) ४ ५२ २ अद्भुतस्वरूपा (उषा=प्रभातवेला) ४ १४ ३ विविध-व्यवहारसिद्धिप्रदा (उषा) १ ११३ ४ विचित्रस्वरूपोपा, प्र०—चित्रेत्युषर्नाम, निघ० १ ८, १ ६२ १२ [चित्रप्राति० स्त्रिया टाप्]

चित्रा चित्राण्यद्भुतानि (सुखानि) १ १२५ ६ [चित्र व्याख्यातम् । तत 'सुपा सुलुग्०' इत्याकार]

चित्राभिः अद्भुताभि (ऊतिभि=रक्षादिभि) ४ ३२ ५ **चित्राम्**=अद्भुतविषयाम् (सुमतिं=प्रज्ञाम्) १७ ७४ अद्भुतसुखप्रकाशिकाम् (इषम्) १ ६३ ८ [चित्र-पद व्याख्यातम् । तत स्त्रिया टाप् । ते ह देवा समेत्योचु । चित्र वाऽअभूम यऽइयत सपत्नानवधिष्मेति तद्वै चित्रायै चित्रात्वम्, चित्र ह भवति हन्ति सपत्नान् हन्ति द्विषन्त भ्रातृव्य य एव विद्वांश्चित्रायामाधत्ते श० २ १ २ १७ चित्रा शिर (नक्षत्रियस्य प्रजापते. तै०

चेतिष्ठः अतिशयेन चेतयिता (सोम =ओषधिसमूह) १ ६५ ५ [चिती संज्ञाने (भ्वा०) धातोस्तृच्। ततोऽतिशायने इष्ठन्। 'तुरिष्ठेमेयस्सु' अ० ६ ४ १५४ सूत्रेण तृ-शब्दस्य लोप]

चेत्ता ज्ञानस्वरूप (देवता=सवितेश्वर) १.२२ ५ सम्यग् ज्ञानस्वरूपत्वेन सत्याऽसत्यज्ञापक (परमेश्वर) २२ १० [चिती संज्ञाने (भ्वा०) धातो कर्त्तरि तृच्]

चेत्यः चितिषु भव (विद्युदग्नि) ६ १ ५ [चिती-प्राति०भवार्थे यत्। चिति =चिञ् चयने (स्वा०) धातो क्तिन्]

चो च ५ २६ १३

चोद प्रेरय १ ४८ २ **चोदत्**=प्रेरयेत् ७ २७ ३ **चोदत**=प्रेरयत १ १६८ ४ [चुद सञ्चोदने (चुरा०) धातोर्लोट्। 'अनित्यण्यन्ताश्चुरादय' इति णिचोऽभाव]

चोदना प्रेरणानि कर्माणि २६ ७ [चुद सचोदने (चुरा०) धातोर्ल्युट्। 'शेश्छन्दसि बहुलम्' इति शेर्लोप]

चोदप्रवृद्ध चोदनेन प्रेरणेन प्रवृद्ध (इन्द्र =सूर्य इव सभेश) १ १७८ ६ [चोद-प्रवृद्धपदयो समास। चोद = चुद सचूर्णने (चुरा०) धातोर्घञ्]

चोदम् प्रेरणाम् २ १३ ६ **चोदः**=प्रेरक (विद्वान् नर) ५ ६१ ३ [चुद सचूर्णने (चुरा०) धातोर्भावे घञ्। अन्यत्र कर्त्तरि अच्]

चोदय प्रेरय प्रापय १ ६ ५ **चोदयः**=प्रेरय ६ २६ ३ **चोदयत्**=प्रेरयति, प्र०—अत्र लटर्थे लङड-भावश्च ७ १६ **चोदयत**=प्रेरयत १ १८८ ८ [चुद सचोदने (चुरा०) धातोर्लोट्। अन्यत्र लङ् अडभावश्च]

चोदयन् प्रेरयन् (सेनापति) १ ८० ५ [चुद सञ्चूर्णने (चुरा०) धातोर्णिजन्ताच्छतृप्रत्यय]

चोदयन्मति प्रज्ञाप्रेरकम् (अग्नि=विद्वज्जनम्) ५.८ ६

चोदयसि प्रेरयसि १ ६४ १५ **चोदयासे**=चोदय ६ ४६ १३ [चुद सञ्चूर्णने (चुरा०) धातोर्लट्। अन्यत्र लेट्]

चोदयित्री शुभगुणग्रहणप्रेरिका (सरस्वती=वाणी) १ ३ ११ प्रेरयित्री (विदुषी स्त्री) २० ८५ [चुद सञ्चूर्णने (चुरा०) धातोर्णिचि कर्त्तरि तृचि स्त्रिया ङीप्]

चोदस्व प्रेरयस्व १ १०४ ७ **चोदः**=चुद्यात् प्रेरयेत् १ १४३ ६ **चोदामि**=प्रेरयामि ३ ४२ ८ [चुद सचूर्णने (चुरा०) धातोर्लोट्। अन्यत्र लटपि। 'अनित्यण्यन्ताश्चुरादय' इति णिचोऽभाव]

चोदिता प्रेरक (परमेश्वर) १ ५१.८ उत्तम कामो मे प्रेरणा करने वाला (ईश्वर), आर्याभि० १ १४ **चोदितारा**=प्रेरकौ (अश्विनौ=अध्यापकोपदेशकौ) ५ ८३ ६ [चुद सचूर्णने (चुरा०) धातो कर्त्तरि तृच्]

चोदीः शुभे कर्मणि प्रेरयसि १ ६३ ४ [चुद सचूर्णने (चुरा०) धातोर्लुङि मध्यमैकवचनम्। अडभावश्छान्दस। अनित्यण्यन्ताश्चुरादय इति णिचोऽभावश्च]

चोष्कूयते भृशमाह्वयति ६ ४७ १६. **चोष्कूयसे**= सब धन के दाता हो, अपने सेवको पर दया कर रहे हो, आर्याभि० १ २८, ऋ० ५ ८ १७ ४१ [चोष्कूयते पदनाम निघ० ४ ३ कु शब्दे (तुदा०) धातोर्यङन्ताल्लट्। अभ्यासस्य पुगागमश्छान्दस। चोष्कूयते व्युदस्यति नि० ६ २२]

चोष्कूयमाणः सर्वानाप्रावयन् (इन्द्र =राजा) प्र०—'प्रुञ् आप्रवणे' इत्यस्य यङन्त रूपम् १ ३३ ३ [चोष्कूयमाण पदनाम निघ० ४ ३ प्रुञ् आप्रवणे (क्र्या०) धातोर्यङन्ताच् शानच्। चोष्कूयमाण ददत्। चोष्कूयतेश्चर्करीतवृत्तम् नि० ६ २२]

च्यवतानः च्यावयन् सन् (अर्य =स्वामी) ५ ३३ ६

च्यवनः गन्ता (राजकर्मचारी) ६ १८ २ च्यावयिता (शमादि शुभकर्माचारी जन) ७ २१ ३ [च्युङ् गतौ (भ्वा०) धातो 'कृत्यल्युटो बहुलमि'ति कर्त्तरि ल्युट्। औणादिको युच् वा। च्यवन ऋषिर्भवति, च्यावयिता स्तोमाना च्यवानमित्यप्यस्य निगमो भवति नि० ४ १६ च्यवनो वै दाधीचोऽश्विनो प्रिय आसीत् ता० १४ ६ १० सा (सुकन्या) होवाच (हे अश्विनौ) पतिं (च्यवन) नु मे पुनर्युवाण कुरुतम् श० ४ १ ५ ११]

च्यवना प्राप्तानि (भुवनानि) २ १२ ४ [च्युङ् गतौ (भ्वा०) धातोर्ल्युटि जस स्थाने भूतस्य शेर्लोप]

च्यवन्त च्यवन्ते १ ४८ २ **च्यवन्ते**=प्राप्नुवन्ति १ १६७ ८ **च्यवम्**=प्राप्नुयाम् १ १६५ १० **च्यवस्व**= गच्छ ४ ३४ [च्युङ् गतौ (भ्वा०) धातोर्लङ्, अडभाव। अन्यत्र लट् लोट् च। च्यवते गतिकर्मा निघ० २ १४]

च्यवानम् गच्छन्तम् (रथम्) १ ११७ १३ पृच्छन्तम् (विद्यार्थिजनम्) ५ ७५ ५ गन्तारम् (युवान जनम्) १ ११८ ६ **च्यवानात्**=गमनात् ५ ७४ ५ पलायमानात् (राजपुरुषात्) १ ११६ १० [च्युङ् गतौ (भ्वा०) धातो शानच्। आगम शासनस्यानित्यत्वान्मुकोऽभाव। अन्यत्र भावे ल्युटि दीर्घश्छान्दस]

६ ५३ ४ [चिञ् चयने (स्वा०) धातोर्लेट् । अन्यत्र लोट्]

चिन्वती चयन कुर्वती (उषा =प्रभातवेला) ३ ६१ ४ [चिञ् चयने (स्वा०) धातो शत्रन्तात् ङीप्]

चिन्वन्तु वर्धयन्तु, प्र०—अत्रान्तर्गतो ण्यर्थ ४ २४ सञ्चिन कुर्वन्तु २३ ३६ [चिञ् चयने (स्वा०) धातोर्लोट्]

चिन्वानः वर्धमान (मनुष्यजन्मप्राप्तो जन) १३ ४७ पुष्ट सन् (अग्नि =राजा) १३ ४६ [चिञ् चयने (स्वा०) धातो शानच्]

चियन्तु चिन्वन्तु, प्र०—अत्र 'वहुल छन्दसि' इति विकरणलुगियङादेशश्च १ ६० ४ [चिञ् चयने (स्वा०) धातोर्लोट् । 'वहुल छन्दसी' ति विकरणस्य लुक् । इयङादेशश्च]

चिश्चा चिश्चेति शब्दानुकरणम् ६ ७५ ५ [चिश्चा शब्दानुकरणम् नि० ६ १४]

चीयमानः वर्धमान (अग्नि =पावक इव राजा) १३ ४७ [चिञ् चयने (स्वा०) धातो कर्मणि शानच्]

चुक्रुधाम कुपिता भवेम २ ३३ ४ [क्रुध कोपे (दिवा०) धातोर्लिटि उत्तम वहुवचने आडागमश्छान्दस]

चुच्यवत् च्यावयति २ ४१ १० [च्युङ् गतौ (भ्वा०) धातोर्यङ्लुकि लेटि रूपम्]

चुमुरिम् अत्तारम् (शम्वर =मेघम्) ६ १८ ८ चोरम् ७ १६ ४ वक्त्रसयुक्तम् (दस्यु =वलात्कारिण चोरम्) २ १५ ६

चुमुरिम् चोरम् ७ १६ ४

चृत नाशय, प्र०—अत्रान्तर्गतो ण्यर्थ १ २५ २१ विमुञ्च १२ ६३ **चृतन्ति**=ग्रथ्नन्ति १ ६७ ४ [चृती हिंसा-ग्रन्थनयो (तुदा०) धातोर्लोट् । अन्यत्र लट्]

चेकितानः प्रज्ञापक (विप्र =मेधाविजन) ३ २६ ७ प्रज्ञापयन् (सूर्य) ४ १४ २ ज्ञानयुक्त (विद्वान् राजा) १५ ५१. [कित ज्ञाने (भ्वा०) धातोर्लिट स्थाने कानच् । चेकितान सत्पतिश्चेकितान इत्ययमग्नि सता पतिश्चेतयमान इत्येतत् श० ८.६ ३ २०]

चेकिताना भृश चेतयन्ती (उषा =प्रभातवेला) १ ११३ १५ प्राणिन प्रज्ञापयन्ती (उषा =प्रभातवेला) ४ १४ ३ [कित ज्ञाने (भ्वा०) धातोर्लिट स्थाने कानच्, ततो स्त्रिया टाप्]

चेकिते जानाति, प्र०—अत्र 'वा छन्दसि सर्वे विधयो भवन्ति' इत्यभ्यासस्य गुण १ १५ ३ विज्ञापयतु ७ ६१ १३ [कि ज्ञाने (जु०) धातोर्लट् । छान्दसोऽभ्यासस्य गुण । व्यत्ययेनात्मनेपदम्]

चेतः चेतति स्मरति येन तत् (चित्तम्) ३४ ३ **चेतसा**=चित्तेन ५ ७३ ६ [चिती सज्ञाने (भ्वा०) धातोरौणादिकोऽसुन् । चेत प्रज्ञानाम निघ० ३ ६]

चेतति सज्ञापयति प्रकाशयति वा, प्र०—अत्रान्तर्गतो ण्यर्थ १ १० २ सजानीते सज्ञापयति वा ३ ११ ३ [चिती सज्ञाने (भ्वा०) धातोर्लट् । अन्तर्गतो ण्यर्थ]

चेततः चेतनस्वरूपस्य (सवितु =जगदीश्वरस्य) २२ ११. सञ्ज्ञापकस्य (राज्ञ) ४ ५ ४ **चेतते**=प्रज्ञापकाय (अध्यापकाय) ३ १४ २ [चिती सज्ञाने (भ्वा०) धातो शतृप्रत्यय]

चेतथ सजानीध्व ज्ञापयत वा ५ ५६ ३ **चेतथ**.= चेतयत प्रकाशयित्वा धारयित्वा च सज्ञापयत प्र०—अत्र व्यत्ययोऽन्तर्गतो ण्यर्थश्च १ २ ५ ज्ञापयथ ४ ४५ ६ [चिती सज्ञाने (भ्वा०) धातोर्लोडर्थे लट्]

चेतनम् चेतयति येन तत् (स्वरूपम्) १ १३ ११ चेतति येन तम् (यज्ञम्) १ १७० ४ अनन्तविज्ञानादियुक्तम् (अग्नि=परमात्मानम्) ४ ७ २ **चेतनः**=ज्ञानादिगुणयुक्त (जीवात्मा) २ ५ १ [चिती सज्ञाने (भ्वा०) धातो करणे ल्युट् । अन्यत्र 'कृत्यल्युटो वहुलम्' इति कर्त्तरि ल्युट्]

चेतन्ती सम्पादयन्ती सती (सरस्वती=वाक्) १ ३ ११ सज्ञापयन्ती (सरस्वती=विदुषी स्त्री) २० ८५ [चिती सज्ञाने (भ्वा०) धातो शत्रन्तात् ङीप्]

चेतयत् ज्ञापयत् ४ १ ६ **चेतयति**=सम्यग् ज्ञापयति १ ३.१२ **चेतयध्वम्**=ज्ञापयध्वम् ३ ५३ ११ [चिती सज्ञाने (भ्वा०) धातोर्णिजन्ताल् लङ् अडभावश्च । अन्यत्र लट्लोटौ]

चेतयन्ती प्रज्ञापयन्ती (क्रिया-प्रज्ञायुक्ता वाक्) २६ ३३ [चिती सज्ञाने (भ्वा०) धातोर्णिजन्ताच्छत्रन्तात् ङीप् । चेतयन्ती चेतयमाना नि० ८ १४]

चेतारः सम्यग् ज्ञानयुक्ता विज्ञापका (पूर्णविद्या जना) ७ ६० ५ [चिती सज्ञाने (भ्वा०) धातोस्तृच् प्रत्यय कर्त्तरि]

चेति जानाति, प्र०—अत्र विकरणस्य लुक् ४ ४३ ६ विज्ञायते ४ ३७ ४ सज्ञायते, प्र०—अत्र चितिधातोर्लुङ्यड-भावश्चिण् च १ ६२ १२ सज्ञापयति ३ १२ ९ [चिती सज्ञाने (भ्वा०) धातो सामान्ये लुङ् । अडभाव, चिण् च । अथवा लटि विकरणस्य लुक्]

व्येत्येकस्मान्न द्वाभ्या न स्तोत्रियया स्तोम' श० १२ २ ३ ३ ह्येकेनाक्षरेण न्यच्छन्दो भवति न द्वाभ्याम् कौ० २७ १ छन्दासि वाऽस्य सप्त धाम प्रियाणि (यजु० १७ ७९) श० ९ २ ३ ४४ सप्त वै छन्दासि कौ० १४ ५ १७ २ सप्त छन्दासि श० ९ ५ २ ८ छन्दासि वै हारियोजन (ग्रह) श० ४ ४ ३ २ छन्दासि वै सवेश उपवेश तै० १ ४ ६ ४. छन्दासि वै व्रजो गोस्थान तै० ३ २ ९ ३ छन्दासि वै वाजिन गो० उ० १ २० तै० १ ६ ३ ९ पशवो वै छन्दासि श० ७ ५ २ ४२, ८ ३ १ १२ पशवश्छन्दासि ऐ० ४ २१ कौ० ११ ५ ता० १९ ५ ११ पशवा वै देवाना छन्दासि श० ४ ४ ३ १ पशवो वै देवाना छन्दासि तद यथेद पशवो युक्ता मनुष्येभ्यो वहन्त्येव छन्दासि युक्तानि देवेभ्यो यज्ञ वहन्ति श० १ ८ २ ८ छन्दासि वै दिश श० ८ ३ १ १२, ९ ५ १ ३९ रसो वै छन्दासि श० ७ ३ १ ३७ इन्द्रिय वीर्य छन्दासि ता० ६ ९ २६ प्राणा वै छन्दासि कौ० ७ ९ १७ २ प्राणा छन्दासि कौ० ११ ८ छन्दासि वै देवाना पवित्राणि ता० ६ ६ ६ छन्दासि देव्य श० ९ ५ १ ३९ छन्दासि वै देविका कौ० १९ ७ छन्दासि वै साध्या देवास्तेऽग्रेऽग्निनाग्निमयजन्त ते स्वर्ग लोकमायन् ऐ० १ १६ छन्दासि वै देवा प्रातर्यावाण श० ३ ९ ३ ८ छन्दासि वै देवा वयोनाधा (यजु० १४ ७) छन्दोभिर्हीद सर्व वयुन नद्धम् श० ८ २ २ ८ छन्दासि वै गाश्छन्दोभिर्हि स्वर्ग लोक गच्छन्ति श० ६ ५ ४ ७ देवा वै छन्दास्यब्रुवन् युष्माभि स्वर्ग लोकमयामेति ता० ७ ४ २ सर्वैर्वै छन्दोभि-रिष्ट्वा देवा स्वर्ग लोकमजयन् ऐ० १ ९ यातयामनि वै देवैश्छन्दासि छन्दोभिर्हि देवा स्वर्ग लोक समाश्नुवत श० ३ ९ ३ १० छन्दोभिर्वै देवा आदित्य स्वर्ग लोकमहरन् ता० १२ १० ६ छन्दोभिर्हि स्वर्ग लोक गच्छन्ति श० ६ ५ ४ ७ प्रजापतेर्वा एतान्यगानि यश्छन्दासि ऐ० २ १८ यानि क्षुद्राणि छन्दासि तानि मरुताम् ता० १७ १ ३ एकाक्षर वै देवानामवम छन्द आसीत् सप्ताक्षर परमन् नवाक्षरमसुराणामवम छन्द आसीत् पञ्चदशाक्षर परमम् ता० १२ १३ २७ छन्दासि समिद्धानि देवेभ्यो यज्ञ वहन्ति श० १ ३ ४ ६ हिरण्ययीमिति हिरण्मयी ह्येषा या छन्दोमयी श० ६ ३ १ ४१ हिरण्यममृतानि छन्दासि श० ६ ३ १ ४२ छन्दासि वै लोमानि श० ६ ४ १ ६, ६ ७ १ ६ बृहती वाव छन्दसा स्वराट् ता० १० ३ ८ स्वा-राज्य छन्दसा बृहती ता० २४ ६ ३ श्रीर्वै यशश्छन्दसा बृहती ऐ० १ ५ छन्दासि सावित्री गो० पू० १ ३३ जै० उ० ४ २७ ७ पञ्च च्छन्दासि रात्रौ शसन्त्यनुष्टुभ गायत्री-मुष्णिह त्रिष्टुभ जगतीमित्येतानि वै रात्रिच्छन्दासि कौ० ३० ११ कतम एते देवा इति छन्दासीति ब्रूयाद् तै० स० २ ६ ९ ३ छन्दप्रतिष्ठानो वै यज्ञ मै० ३ ६ ५ छन्दसा धेनव (रूपम्) काठ० १२ ४ छन्दासि खलु वै सोमस्य राज्ञ साम्राज्यो लोक' तै० स० ३ १ २ १ छन्दासि जज्ञिरे तस्मात् (यज्ञात्) काठसक० १०० १८ छन्दासि देविका काठ० १२ ८ मै० ४.३ ५ कौ० १९ ७ श० ९ ५ १ ३९ छन्दासि वरुणपाशा मै० २ ३ ३ काठ० १२ ६ छन्दासि वै धुर मै० ३ ८ ४ जै० ३ २१० छन्दासि वै पञ्चजना मै० १.४.९ काठ० ३२ ६ छन्दासि वै व्रजो गोस्थान मै० ४ १ १० छन्दासि वै सर्वा देवता जै० १ ३४२ छन्दोभिर्यज्ञस्तायते जै० २ ४३१]

छन्दस्याम् स्वतन्त्रतायुक्त वाणी को, स० वि० १९६, ९ ११३ ६ [छन्दस् इति व्याख्यातम् । तत स्त्रिया ङीप्]

छन्द:स्तुभ: यो छन्दोभि स्तोभन स्तवन कुर्वन्ति (आप्ता जना) ५ ५२ १२ [छन्दस् उपपदे स्तोभति अर्चति-कर्मा (निघ० ३ १४) धातो क्विप् कर्त्तरि]

छन्दु: स्वच्छन्द (अध्यापक उपदेशको वा) १ ५५ ४

छन्दोनामानाम् यानि छन्दसामुष्णिगादीना नामानि तेषाम् प्र०—अत्र 'अनसन्तान्नपु सका०' अ० ५ ४ १०३. इति सूत्रेण समासान्तष्टच् प्रत्यय ४ २४ [छन्दस्-नामन्पदयो समास । समासान्तष्टच् प्रत्यय]

छर्दिषा सत्यासत्यदीपकेन (स्वस्त्या=सत्क्रियया) १५ ६४ प्रदीप्तेन (शन्तमेन=कर्मणा) १३ १९ प्रकाशेन १४ १२ **छर्दि:**=दीप्तियुक्त शस्त्रास्त्रादिकम् १ ११४ ५ शुद्धाऽऽच्छादनादिना सन्दीप्यमान गृहम् १ ४८ १५ गृहम्, प्र०—छर्दिरिति गृहनाम, निघ० ३ ४, ४ ५३ १ [छर्दि गृहनाम निघ० ३ ४ छदी सदीपने (चुरा०) धातो 'अर्चि-शुचिहुसृपि०' उ० २ १०८ सूत्रेण इसि प्रत्यय]

छागम् छ्यति छिनत्ति रोगान् येन तम् २८ २३ छागदुग्धम् २१ ५९ दु ख छेत्तुमर्हम् (अजम्) २१ ४० छेद-कम् अजादिपशुम्) २८ ४६ **छागस्य**=अजादे २१ ४१ **छाग:**=छेदक २५ २६ **छागेन**=दु खच्छेदकेन (भा०—छाग-दुग्धादिना) २१ ६० छेदनेन २८ २३ अजादि-दुग्धेन १९ ८९ **छागै:**=पशूना पय आदिभि २१ ४२ [छो छेदने (दिवा०) धातो 'छापूखडिभ्य कित्' उ० १ १२४ सूत्रेण गन्प्रत्यय । छागप्राति० अवयवे विकारे वार्थे 'प्राणिरजतादिभ्योऽञ्' अ० ४ ३ १५४ सूत्रेणाञ्-

च्यवाना सद्यो गन्तारौ (अध्यापकोपदेशकौ) ६ ६२ ७ [च्युङ् गतौ (भ्वा०) धातो 'कृत्यल्युटो बहुलमि' ति कर्त्तरि ल्युट्। दीर्घश्छान्दस । 'सुपा सुलुग्' इत्याकारादेश । च्यवाना बाहुनाम निघ० २ ४ च्यवानमित्यपि (च्यावयिता स्तोमानाम) नि० ४ १९]

च्यावयति चालयति ७ १९ १ **च्यावयथ**=चालयथ १ ११६८ ६ [च्युङ् गतौ (भ्वा०) धातोर्णिजन्ताल्लट्]

च्यावयन् प्रचालयन् निपातयन् (राजा) ३ ३० ४ [च्युङ् गतौ (भ्वा०) धातोर्णिजन्ताच्छतृप्रत्यय]

च्यावयन्ति पातयन्ति १ ३७ ११ प्रचालयन्ति १ ६४ ३ **च्यावयन्ते**=गमयन्ति ६ ३१ २ **च्यावयसि**= प्रापयसि ३ ४३ ७ **च्यावयामः**=प्रापयाम ४ १७ १६ [च्युङ् गतौ (भ्वा०) धातोर्णिजन्ताल् लट्]

च्यावयामसि प्रापयाम ४ ३२ १८ [च्युङ् गतौ (भ्वा०) धातोर्णिजन्ताल् लटि उत्तमबहुवचनम् । 'इदन्तो मसि' इति मस इदन्तता]

च्यौत्ना बलानि, प्र०—च्यौत्नमिति बलनाम, निघ० २ ९, ६ ४७ २ [च्युङ् गतौ (भ्वा०) धातो 'जनिदाच्यु०' उ० ४ १०४ सूत्रेण त्नण् प्रत्यय]

च्यौत्नानि स्तोत्राणि १ १७३ ४ च्यवयन्ति शत्रवो येभ्यस्तानि बलानि ७ १९ ५ **च्यौत्नाय**=च्यवनाय गमनाय ६ १८ ८ [च्यौत्नमिति बलनाम निघ० २ ९]

छदयत् बलयति ६ ४९ ५ सत्करोति, प्र०—छदयतीत्यर्चतिकर्मा, निघ० ३ १४, ३ ९ ७ **छदयन्ति**=ऊर्जयन्ति ५ ७९ ५ **छदयाथ**=अविद्या दूरीकुरुत १ १६५ १२ [छदयति (ते) अर्चतिकर्मा निघ० ३ १४ छद अपवारणे (चुरा०), छद संवरणे (चुरा०), छदिर् अर्जने (भ्वा०) धातोर्वा णिचि धातोर्लेट् । अन्यत्र लट्]

छदिः विघ्नाऽपवरणम् १५ ५ अपवारणम् १४ ९ दुःखाऽपवारकत्वेन प्रापक प्रापिका वा (यजमान =यज्ञकर्त्ता पुरुषस्तत्पत्नी वा) ५ २८ [छद अपवारणे (चुरा०) धातोरौणादिक इसि प्रत्यय । छदि =गृहनाम निघ० ३ ४ अतिच्छन्दा वै छदिश्छन्द सा हि सर्वाणि छन्दासि छादयति श० ८ २ ४ ५ अन्तरिक्ष वै छदिश्छन्द श० ८ ५ २ ६ सिंहो वयश्छदिश्छन्द तै० स० ४ ३ ५ २ मै० २ ८ २]

छन्त्सत् सवृणुयात् १ १३२ ६ ऊर्जेत् ८ ५३ **छन्त्सि**=ऊर्जयसि १ १६३ ४ अर्चसि २९ १५ [छन्त्सत् कान्तिकर्मा निघ० २ ६ छदिर् ऊर्जने (भ्वा०), छदयति अर्चतिकर्मा (नि० ३ १४) धातोर्वा लेटि रूपम्]

छन्दसा चन्दन्त्यानन्दन्ति येन तेन (कर्मणा) ५ २ स्वच्छन्देन ११ ९ स्वच्छन्दताप्रदेन (यज्ञेन) २.२५ स्वातन्त्र्याऽऽनन्दप्रदेन (यज्ञेन) १ २७ स्वच्छन्दतया १९ ७४ स्वच्छेनाऽर्थेन १३ ५३ सुखकारकेण (यज्ञेन) सुखसम्पादकेन (यज्ञेन) ५ २ आह्लादकरेण (भा०—धर्मानुष्ठानेन) २८ ४५ भा०—धर्मेण २८ ४४ अत्यानन्दप्रकाशेन १ २७ आह्लादकारिणा (यज्ञेन) प्र०—'चन्देरादेश्च छ' उ० ४ २२६ अनेनाऽसुन् प्रत्यय १ २७ भा०—सत्क्रियया ११ ६० **छन्दः**=स्वीकरणम् (रथन्तर=यदस्मिँल्लोके तारक वस्त्वस्ति तत्), प्रकाशनम् १५ ५ प्रकाशकम् (काव्यम्), प्रकाशकरम् (मन =सकल्पो विकल्प) १५ ४ स्वाधीन (पुरुष) १४ ९ स्वाधीनम् (वय = जीवनम्, स्वातन्त्र्यम्, प्रदीपनम् १५ ५ बलम् १४ ९ बलकारि (अन्नादिकम्) १४ १८ बलकरम् (इन्द्रियम्) २८ २५ आनन्दम् १४ ९ आनन्दकरम् (त्रिककुप्) १५ ४ उपदेश, परिग्रहणम्, उत्साह, उत्साहनम्, पराक्रमम्, स्वाच्छन्द्यम्, विद्याधर्मशमादिकर्म १४ ९ स्वच्छन्द स्वतन्त्र वस्तु, ऋ० भू० १४७ सत्यप्रदीपक (परिभू =सर्वत पुरुषार्थी) १५ ४ आह्लादकारी व्यवहार १५ ४ सुखप्रदम् (वरिव =सत्यसेवनम्) १५ ४ विज्ञानम् १५ ४ सुखसाधिका(सर्वा दिश) १५ ४ सुखसाधक (लोक)१५ ४ सुखावहम् (विघ्नापवरणम्) १५ ५ सस्थापनम् १५ ५ तृप्तिकर कर्म १५ ४ प्रतिष्ठाप्रदम् (यश) १५ ४ जलमिव शान्ति १५ ४ अर्थकरम् (समुद्र =सागर इव गाम्भीर्यम्) १५ ४ ऊर्जनम् १५ ४ आह्लादनम् १४ १० प्रकाश १४ १८ प्रयतनम् (एव =प्रापणम्) १५ ५ सृष्टिविद्याबलकारकम् (विज्ञानम्) १२ ५ स्वाछन्द्यम् १४ ९ प्रदीपनम् १४ ९ **छन्दांसि**=ऋग्यजु सामाऽथर्वाणश्चतुरो वेदान् ६ २१ उष्णिगादीनि १२ ४ अथर्ववेद ३१ ७ **छन्दोभिः**=गायत्र्यादिभिर्विद्वद्भि स्तोतृभिर्वा, प्र०—छन्द इति स्तोतृनाम, निघ० ३ १६, १९ २८ प्रज्ञापकैर्गायत्र्यादिभि १९ २० [चदि आह्लादने दीप्तौ च (भ्वा०) धातो 'चन्देरादेश्च छ' उ० ४ २१९ सूत्रेण असुन्, धातोरादेश्च छकारादेश । छन्द स्तोतृनाम निघ० ३ १६ छन्दति अर्चतिकर्मा निघ० ३ १४ छन्दासि च्छादनात् नि० ७ १२ छन्दासि छन्दयन्तीति वा दे० ३ १९ तान्यस्मै (प्रजापतये) अच्छदयस्तानि यदस्माऽअच्छदयस्तस्माच्छन्दासि श० ८ ५ २ १ (देवा) त (सोमम्) छन्दोभिरसुवन्त तच्छन्दसा छन्दस्त्वम् तै० २ २ ८ ७ न वा एकेनाक्षरेण छन्दासि वियन्ति न द्वाभ्याम् ऐ० १ ६ २ ३७ नाक्षराच्छन्दो

सा एव जगती ऐ० ३ ४८ ब्रह्म ह वै जगती गो० उ० ५ ५ जगत्य ओषधय श० १ २ २ २ पशवो वै जगती गो० उ० ५ ५ ष० २ १ पशवो जगती कौ० १६ २ श० ३ ४ १ १ ३ तै० ३ २ ८ २ जागता वै पशव ऐ० १ ५, ३ १८, ४ ३ जागता हि पशव ऐ० ५ ६ जागता पशव ऐ० १ २८ कौ० ३० २ ष० ३ ७ गो० उ० ४ ४६ जगती वै छन्दसा परम पोष पुष्टा ता० २१ १० ६ जागतोऽश्व प्राजापत्य तै० ३ ८ ८ ४ जागतो वै वैश्य ऐ० १ २८ जगती छन्दो वै वैश्य तै० १ १ ६ ७ ता वा एता जगत्यो यद् द्वादशाक्षराणि पदानि ता० १६ ११ १० यस्य द्वादश ता जगतीम् कौ० ६ २ द्वादशाक्षरपदा जगती ष० २ १ द्वादशाक्षरा जगती ता० ६ ३ १३ द्वादशाक्षरा वै जगती ऐ० ३ १२ गो० उ० ३ १० तै० ३ ८ १२ २ श० ४ १ १ १ १२ अष्टाचत्वारिंशदक्षरा वै जगती श० ६ २ २ ३३ अष्टाचत्वारिंशदक्षरा जगती तै० ३ ८ ८ ४ जै० उ० ४ २ ८ जगती सर्वाणि छन्दासि श० ६ २ १ ३० जगती प्रतीची (दिक्) श० ८ ३ १ १२ प्रतीचीमारोह। जगती त्वावतु वैरूप साम सप्तदशस्तोमो वर्षा ऋतुर्विड् द्रविणम् श० ५ ४ १ ५ आदित्यास्त्वा पश्चादभिषिञ्चन्तु जागतेन छन्दसा तै० २ ७ १५ ५ आदित्या जगती समभरन् जै० उ० १ १८ ६ जगत्यादित्याना पत्नी गो० उ० २ ६ जागतोऽसौ (द्यु) लोक कौ० ८ ६ साम्नामादित्यो देवत तदेव ज्योतिर्जागत छन्दो द्यौ स्थानम् गो० पू० १ २६ जागतो वा एष य एष (सूर्य) तपति कौ० २५ ४ त्रैष्टुब्जागतो वा आदित्य ता० ४ ६ २३ जगती छन्द आदित्यो देवता श्रोणी श० १० ३ २ ६ श्रोणी जगत्य श० ८ ६ २ ८ अनूक जगत्य श० ८ ६ २ ३ योऽयमर्वाङ् प्राण एव जगती श० १० ३ १ १ गवाशीर्जगती ता० १२ १ २ मध्य जगती ष० २ ३ वल वै वीर्य जगती कौ० ११ २ वल वीर्यमुपरिष्टाज्जगती कौ० ११ २ रैभ्या जगती (अपुनीन) जै० उ० १ ५७ १ जागत श्रोत्रम् ता० २० १६ ५ जागतमु वै तृतीयमवनम्। गो० उ० २ २२ ऐ० ६ २, १२ जागत हि तृतीयसवनम् कौ० १६ १ ष० १ ४ ता० ६ ३ ११ गो० उ० ४ १८ जागता वै ग्रावाण कौ० २६ १ जगत्येव यश गो० पू० ५ १५ पुसो वा एतद् रूप यद् बृहत् स्त्रियै जगती जै० ३ २६१ प्रजनन जगती जै० १ ६३ ष० २ ३]

जगन्थ गच्छ, प्र०—अत्र पुरुषव्यत्यय १८ ७१ अहन् १ ५२ १५ भा०—उपदिश २३ ४६ [गम्लृ गतौ (भ्वा०) धातोर्लिटि मध्यमैकवचनम्। थलि भारद्वाजनियमाद् इड्विकल्प]

जगन्वान् गन्ता (इन्द्र =ईश्वर) ३.३८ ६ भृश गन्ता (कृतब्रह्मचर्यो जन) १ ११७.१५ विज्ञानवान् ऋ० भू० २१६ [गम्लृ गतौ (भ्वा०) धातोर्लिट स्थाने क्वसु। 'विभाषा गमहन्०' अ० ७ २ ६८ सूत्रेणेड्विकल्प। 'मो नो धातो' रिति नकार]

जगन्वांसा गच्छन्तौ (विद्वज्जनौ) ५ ६४ १ ['जगन्वान्' इति व्याख्यानम्। ततो प्रथमाद्विवचनम्। 'सुपा सुलुग्०' इत्याकारादेश]

जगम्यात् पुन पुन प्राप्नुयात् १ ६२ १३ भृश गच्छेत् १ १०४ २ यथावत् प्राप्नुयात् ५ ३३ ५. पुन पुनर्भृश ज्ञानानि गमयेत् १ ६० ५ अ०—समन्तात्प्राप्नुयात् ६ १६ **जगम्याम्**=भृश गच्छेयम् १ ११६ २५ **जगम्युः**=भृश गच्छेयु १ १७६ २ भृश प्राप्नुयु, प्र०—अत्र 'वाच्छन्दसि' इति नुगागमाऽभाव १ १७६ १ [गम्लृ गतौ (भ्वा०) धातोर्यङ्लुकि लिङि रूपम्। 'वाछन्दसी' ति अभ्यासस्य नुगागमो न भवति]

जगाम गच्छेत् ५ ३१ १२ गच्छति १ १४५ १. [गम्लृ गतौ (भ्वा०) धातो सामान्ये लिट्]

जगार निगिलति ४ १८ ८ [गॄ निगरणे (तुदा०) धातोर्लिट्]

जगृधुः अभिकाङ्क्षेयु २ २३ १६ [गृधु अभिकाङ्क्षायाम् (दिवा०) धातो सामान्ये लिटि प्रथमबहुवचनम्]

जगृभथुः गृह्णीत, प्र०—अत्र पुरुषव्यत्यय ६ ७२ ४ **जगृभुः**=गृह्णीयु ५ २ ५ **जगृभ्म**=गृह्णीयाम १ १३६ १० **जगृभ्यात्**=भृश गृह्णीयात् ५ ४२ २ **जगृभ्रिरे**=गृह्णीयु ४ ७ २ **जगृभ्रे**=गृह्णीयु १ १४८ ३ गृह्णन्ति ७ ४ ३ गृह्णन्तु ५ ३२ ११ [ग्रह उपादाने (क्र्या०) धातोर्लिट्। 'हृग्रहोर्भश्छन्दसि' इति हकारस्य भकार]

जगृभ्वान् गृहीतवान् ४ २३ ४ [ग्रह उपादाने (क्र्या०) धातोर्लिट स्थाने क्वसु। हकारस्य भकारादेशश्छान्दस]

जग्धम् भुक्तम् (अन्नम्) १ १४० २ [अद भक्षणे (अदा०) धातो क्त प्रत्यय। 'अदो जग्धिर्ल्यप्ति किति' इति जग्धिरादेश]

जग्मयः गमनशीला (देवा =विद्वज्जना) १ ८६ ७ शीघ्रगमनशीला (वायव) १ ८५ ८ सञ्चार (देवा = विद्वासो जना) २५ २० **जग्मये**=विज्ञानाऽधिक्याय

प्रत्यय । बृहस्पतये छागमालभते काठ० १६ १३ यत्र बृहस्पतेश्छागस्य हविप प्रिया धामानि काठ० १८ २१ लोहितग्रीवश्छागैः (त्वावतु) तै० स० ७ ४ १२ १ काठ० ४४ १]

छादयामि अपवृणोमि १७ ४६ [छद अपवारणे (चुरा०) धातोर्लट्]

छाया आश्रय २५ १३ दुःखच्छेदकाश्रयो वा ५ २८ **छायाम्**=गृहम्, प्र०—छायेति गृहनाम, निघ० ३ ४, २ ३३ ६ आश्रयम् २८ **छायायाम्**=आश्रये १५ ६३ [छो छेदने (दिवा०) धातो 'माछाशसिभ्यो य' उ० ४ १०९ सूत्रेण य प्रत्यय । छाया गृहनाम निघ० ३ ४ मृत्युर्वै तमश्छाया ऐ० ७ २२ तद्वापि छाया पर्यवेक्षेतात्मनोऽप्रणाशाय जै० १ १६७ तस्मादु छायामभि च ष्ठीवेदभि च मेहेत जै० २ ३७०]

छायेव यथा शरीरैः सह छाया वर्त्तते तथा १ ७३ ८ [छाया इवपदयो समास]

छिद्रम् इन्द्रियम् २३ ४३ छिनत्ति यत् तत् (भा०—दुर्व्यसनम्) १२ ५४ निर्बलता, रोग, चाञ्चल्य को, आर्याभि० २ ३६, ३६ २ न्यूनत्वम् ३६ २ [छिदिर् द्वैधीकरणे (रुधा०) धातो 'स्फायितञ्जि०' उ० २ १३ सूत्रेण रक् प्रत्यय]

छिद्रा छिद्राणि (गात्राणि=अङ्गानि) २५ ४३ [छिद्र व्याख्यातम् तत शेर्लोप]

छिन्नम् द्वैधीकृतम् (यज्ञम्) ८ ६१ [छिदिर् द्वैधीकरणे (रुधा०) धातो क्त । 'रदाभ्या निष्ठा त०' इति दकारतकारयोर्नकार]

छृन्दन्तु प्रदीप्यन्ताम् ११ ३५ [उच्छृदिर् दीप्तिदेवनयो (रुधा०) धातोर्लोट्]

छेदि छिन्द्या २ २८ ५ **छेद्य**=छिन्द्याम् १ १०९ ३ [छिदिर् द्वैधीकरणे (रुधा०) धातो कर्मणि लुङ् । अडभावश्चिण् च । अन्यत्र छिदिर् धातोर्लिङि छान्दस रूपम्]

छ्यन्तु छिन्दन्तु २३ ४१ [छो छेदने (दिवा०) धातोर्लोट् 'ओत श्यनि' सूत्रेणोकारस्य लोप]

जक्षत: भक्षण-हसने कुर्वत (स्वकीयभृत्यान्) १ ३३ ७ जक्ष भक्षहसनयो (अदा०) धातो शत्रन्ताद्द्वितीयाबहुवचनम्]

जक्षिवांस: अन्न जग्धवन्त (गृहस्था जना) ८ १९ [अद भक्षणे (अदा०) धातोर्लिट स्थाने क्वसु । 'लिट्यन्यतरस्याम्' अ० २ ४ ४० सूत्रेण घस्लृ आदेश । 'वस्वेकाजाद्घसाम्' अ० ७ २ ६७ ' सूत्रेण इडागम । जक्षिवास खादितवन्त नि० १२ ४२]

जगच्छन्दसम् जगच्छन्दोऽवगमकम् (अध्यापकम्) ८ ४७

जगत् ससारम् १९ ३ यद् गच्छति तत् (चेतन सन्तानादिगणम्) १८ ५ मनुष्यादिक जङ्गम राज्यम् १६ ४ जङ्गम पुत्रगवादिकम् ३३ ३४ सर्व विश्वम् ४ ५३ ३ **जगत:**=गच्छत (ससारस्य) १ १५९ ३ चर जगत् का, आर्याभि० २ ५०, २५ १८ स्थावर जड अप्राणि जगत् का, आर्याभि० १ ४४, ऋ० १ ७ १२ ५ **जगताम्**=मनुष्यादिससारस्थानाम् २ ३१ ५ जङ्गमाना मनुष्यादीनाम् १३ १८ [गम्लृ गतौ (भ्वा०) धातो 'द्युतिगमिजुहोतीना द्वे च' अ० ३ २ १७८ वा० सूत्रेण क्विप् प्रत्यये धातोर्द्विवचनम् । जगत मनुष्यनाम निघ० २ ३ जगत् जङ्गमम् नि० ९ १३ सर्व वा ऽ इदमात्मा जगत् श० ४ ५ ९ ८ इय (पृथिवी) वै जगती, अस्या हीद सर्व जगत् श० ६ २ १ २९ य पुरुषमात्रस्स जगच् चित् काठ० २१ ४ जगत्=स्थावर जङ्गम च नि० ९ १२ नि० ५ ३]

जगती गच्छति सर्व जगद् यस्या सा (छन्द =पराक्रमम्) १४ १८ एतच्छन्दोऽभिहितमर्थम् १० १२ जगदुपकारकम् (छन्द =आह्लादनम्) १४ १० जगद्वद्विस्तीर्णा (विज्ञानक्रिया) २३ ३३ जगद्गता (जगती छन्द) १३ ५६ **जगतीभि:**=उत्तमाभिरोपधीभि १ २१ **जगतीषु**=सृष्टिपु ६ ७२ ४ विविधासु पृथिव्यादिपु सृष्टिपु १ १५७ ५ **जगतीम्**=एतच्छन्दोऽभिहिता नीतिम् ९ ३३ **जगत्याम्**=जगदन्विताया सृष्टौ ३८ १८ गम्यमानाया सृष्टौ ४० १ ससार मे, स० प्र०' २३८, ४० १ **जगत्यै**=जगद्रक्षणायै क्रियायै २४ १२ [गम्लृ गतौ (भ्वा०) धातो 'वर्त्तमाने पृषद्बृहन्महज्जगच्छतृवच्च' उ० २ ८४ सूत्रेण अति प्रत्यय शतृवच्च कार्यम् । धातोर्जगादेश । शतृवद्भावात् ङीप् । जगती गो नाम । निघ० २ ११ गततम छन्द जलचरगतिर्वा, जल्गल्यमानोऽसृजदिति च ब्राह्मणम् नि० ७ १३ जगती गततम छन्दो जज्जगतिर्भवति क्षिप्रगतिर्जज्मला कुर्वन्नसृजदेति हि ब्राह्मणम् । दै० ३ १७ तदिद सर्व जगदस्या तेनेय जगती श० १ ८ २ ११ इय (पृथिवी) वै जगती, अस्या हीद सर्व जगत् श० ६ २ १ २९, ६ २ २ ३२ इय (पृथिवी) वै जगती श० १२ ८ २ २० जगती हीयम् (पृथिवी) श० २ २ १ २० या सिनीवाली सा जगती ऐ० ३ ४७ या गौ सा सिनीवाली

धातोर्लोट् । सुडागमश्छान्दस]

जजान जनयति २.१२ ३ जनयतु, प्र०—अत्र लोडर्थे लिट् १८ ३३ जनयते, प्र०—अत्राऽन्तर्गतो णिच्प्रत्यय ३४ १४ उत्पादितवान् ४ ५६ ३ जनयेत् ७ २० ५ जायते ४ १७ १२ जज्ञे प्रादुर्भावयति, प्र०—अत्र व्यत्ययेन परस्मैपदम् २ ४० ५ जनयन्ति १६ ६० **जज्ञतुः**=जनयत २७ २४ [जनी प्रादुर्भावे (दिवा०) धातोर्लिटि प्रथमैकवचनम् । व्यत्ययेन परस्मैपदम् । जजान=जनयति नि० १० ३४]

जज्ञानम् जनकम् (शिशु=बालकम्) ३ १ ४ सुखजनकम् (पाज=बलम्) ६ २१ ७ विद्याविनयेषु जायमानम् (महाविद्वासम्) ६ ३८ ५ प्रादुर्भूतम् (अहिर्बुध्न=मेघाऽऽकाशम्) १३ ४२ सब जगत् मे व्यापक (प्रादुर्भूत) ईश्वर को, आर्याभि० २ २८, १३ ३ सर्वस्य जनक विज्ञातृ (ब्रह्म) १३ ३ **जज्ञानः**=प्रादुर्भावयिता (अग्नि=ईश्वरो भौतिको वा) १ १२ ३ प्रादुर्भूत सन् (सभेश) १२ ६ प्रसिद्ध (परमेश्वर) १ ६३ १ जायमान (द्यौ=सूर्य) १२ २१ **जज्ञाना**=अवबोधहेतू (प्राणोदानौ वायू) १ २३ ४ **जज्ञानाम्**=प्रजाताम् (माया=प्रज्ञापिका विद्युतम्) १३ ४४ [जनी प्रादुर्भावे (दिवा०) धातोर्लिट स्थाने कानच्]

जज्ञिरे प्रादुर्भवन्ति १ ६४ २ जायन्ते जनयन्ति वा १ ६४ ४ उत्पन्ना सन्ति ३१ ८ प्रकाशिता, अजायन्त ३१ ७ **जज्ञिषे**=जायसे ५ ३५ ३ जातोऽसि, जातोऽसि वा १ ५१ ६ [जनी प्रादुर्भावे (दिवा०) धातोर्लिटि प्रथमबहुवचनम्]

जज्ञुः जायन्ते १ १५६ ३ [जनी प्रादुर्भावे (दिवा०) धातोर्लिटि प्रथमबहुवचनम् । व्यत्ययेन परस्मैपदम्]

जज्ञे जायते ३ ३१ ३ जातमस्ति ३ ५५ १ जायताम् १ १२१ ६ प्रादुर्भूतोऽस्ति ३३ ८० जायेत ७ २० १ [जनी प्रादुर्भावे (दिवा०) धातोर्लिटि प्रथमैकवचनम्]

जञ्झतीरिव शब्दकारिण्य शीघ्रगतयो वा ता इव (वायव इव) ५ ५२ ६ [जञ्झतीरापो भवन्ति शब्दकारिण्य नि० ६ १६]

जञ्जती यथा युद्धे प्रवृत्ता सेना १ १६८ ७ [जजि युद्धे (भ्वा०) धातो शत्रन्तात् ङीप्]

जठरम् उदरमिव कोशम् २० ४५ उदरस्थमग्निम् ६ ६७ ७ उदराग्निम् ५ ३४ २ उदरम् ६ ६९ ७ **जठरस्य**=उदरस्य, प्र०—जठरमुदर भवति, जग्धमस्मिन् ध्रीयते, नि० ४ ७, १ ११२ १७ **जठरात्**=मध्यात् ३ २६ १४ **जठरे**=जायन्ते यस्मादुदराद् वा तस्मिन्, प्र०—'जनेरष्ठ च' उ० ५ ३८ अत्र 'जनधातोरर प्रत्ययो नकारस्य' ठकारश्च १ १० ४ ६ आभ्यन्तरे २ २२ २ जातेऽस्मिन् जगति ३.४२ ५ उदरे, प्र०—जठरमुदर भवति, जग्धमस्मिन् ध्रियते धीयते वा, नि० ४ ७, १२ ४७ जायते सुख यस्मात्तस्मिन्नुदरे ३ ४० ५. **जठरेषु**=जायन्ते वृष्ट्यो येभ्यस्तेषु (मेघेषु) १ ५४.१० अन्तर्वर्तिष्वन्नादिपचनाऽधिकरणेषु वा १ ६५ १०. [जनी प्रादुर्भावे (दिवा०) धातो 'जनेरष्ठ च' उ० ५ ३८ सूत्रेण अर प्रत्यय, नकारस्य ठकारादेशश्च जठरमुदर भवति' जग्धमस्मिन् ध्रियते धीयते वा नि० ४ ८ मध्य वै जठरम् श० ७ १ १ २२]

जठलस्य जठरस्योदरस्य मध्ये १ १८२ ६. [जठर व्याख्यातम् । रेफस्य लकारादेश कपिलादित्वात्]

जतूः पक्षिविशेषान् २४.२५ [जनी प्रादुर्भावे (दिवा०) धातो 'फलिपाटिनमि०' उ० १ १८ सूत्रेण उप्रत्यये तकारान्तादेश]

जत्रव: मन्धय. २५ ८ [जनी प्रादुर्भावे (दिवा०) धातो 'जन्वादयश्च' उ० ४ १०२ सूत्रेण रु-प्रत्यये नस्य तकारादेश.]

जनञ्जनम् मनुष्य मनुष्यम् ५.१५ ४ [जनपदस्य वीप्साया द्वित्वम् । जनपद च व्याख्यास्यते]

जनत् जनयति, प्र०—अत्राऽडभावो विकरणात्मनेपदव्यत्ययश्च २ ४०.२ जनयेत् ४ ४० २ जायेत २ २१ ४ [जनी प्रादुर्भावे (दिवा०) धातोर्लङ् । अडभावो विकरणव्यत्ययेन शप्, परस्मैपदञ्च । जनदित्यङ्गिरसाम् (शुक्रम्) गो० पू० २ २४ तमाङ्गिरस वेदमभ्यश्राम्यदभ्यतपत् समतपत् तस्माच्छ्रान्तात्तप्तात्सन्तप्ताज्जनदिति द्वेतमक्षर व्यभवत् गो० पू० २ २४]

जनत उत्पादयत, प्रसिद्ध्या प्रकाशयत ४ ११ **जनथः**=जनयतम्, प्र०—शप आर्धधातुकत्वाण्णिलुक् १ ११३ ७ [जनी प्रादुर्भावे (दिवा०) धातोर्णिजन्ताल्लोट् । 'छन्दस्युभयथा' इति छन्दसि शपोऽप्यार्धधातुकत्वात् णेर्लोप]

जनना सुखजनकौ (प्राणाऽपानौ), उत्पादकौ (सोमापूषणा=प्राणापानौ) २ ४० १ [जनी प्रादुर्भावे (दिवा०) धातो 'अनुदात्तेतश्च हलादे' अ० ३ २ १४९ सूत्रेण युच्प्रत्यय कर्त्तरि]

जनन्त जनयन्ति ७ ७ ४ [जनी प्रादुर्भावे (दिवा०) धातोर्लङ् । विकरणव्यत्ययेन शप् अडभावश्च]

जनन्ती (उषा=प्रभातवेला) ३ ६१ ४ [जनी

(विदुषे=ग्राप्ताय विपश्चिते) ६ ४२ १ **जग्मिः**=गन्ता (इन्द्र =सूर्य इव राजा) ७ २० १ [गम्लृ गतौ (भ्वा०) धातो 'ग्राद्दगमहनजन ०' ग्र० ३ २ १७१ सूत्रेण कि प्रत्ययो लिड्वच्च कार्यम् । जग्मि गन्ता नि० ५ १८]

जग्मिरे सगच्छन्ते ६ १६ ५ [गम्लृ गतौ (भ्वा०) धातोर्लिट् । व्यत्ययेनात्मनेपदम्]

जग्मुषः गन्तॄन्, प्राप्तान्, वेदितॄन् (सर्वमनुष्यान्) ७ ३६ ३ [गम्लृ गतौ (भ्वा०) धातोर्लिट क्वसु द्वि०-वहुवचनम्]

जग्मुषी गन्तु शीला (योषा=युवति) १ ११६ ५ **जग्मुषीः**=प्राप्तु योग्या (गिर =भाषा) १ १२२ १४ [गम्लृ गतौ (भ्वा०) धातोर्लिट स्थाने क्वसु । तत स्त्रिया ङीप्]

जग्मुः जानीयु प्राप्नुयुर्वा ३ १ १३ प्राप्नुवन्ति ५ ५६ २ गता १८ ५८. गतवन्त १८ ५२ गच्छेयु ६ २४ ६ गच्छन्ति १ ३२ २ प्राप्नुवन्ति ४ ३३ ६ प्राप्नुयु ४ ४१ ८ [गम्लृ गतौ (भ्वा०) धातो सामान्ये लिटि प्रथमवहुवचने रूपम्]

जग्मे सगच्छते १ १६४ ८ [गम्लृ गतौ (भ्वा०) धातोर्लिट् । व्यत्ययेनात्मनेपदम्]

जग्रभत् गृह्णाति ३२ २. [ग्रह उपादाने (क्र्या०) धातोर्लेट् । हस्य भकारो द्विर्वचनश्च छान्दसम्। विकरण-व्यत्ययश्च]

जग्रसानान् शत्रुसेना ग्रसमानान् (शूरवीरान्) ४ १७ १ [ग्रसु ग्रदने (भ्वा०) धातोर्लिट कानचि द्वितीया वहुवचनम्]

जग्रसीत् ग्रसते ५ ४१ १७ [ग्रसु ग्रदने (भ्वा०) धातोर्लुङ् । ग्रडभावो द्विर्वचन च छान्दसम्]

जघना ऊरुणी, प्र०—जघन जघन्यते , नि० ६ २० ग्रत्र 'हन्ते शरीरावयवे द्वे च' उ० ५ ३२ ग्रनेनाच्-प्रत्ययो द्वित्व 'सुपा सुलुग्०' इति त्रिपु विभक्तेराकारादेशश्च १ २८ २ [हन हिंसागत्यो (ग्रदा०) धातो 'हन्ते शरीरा-वयवे द्वे च' उ० ५ ३२ सूत्रेण ग्रच्प्रत्यय , धातोर्द्वित्वश्च । स्त्रिया टाप् । जघन जघन्यते नि० ६ २०]

जघनान् नीचकर्मकारिण (दुर्जनान्) ६ ७५ १३ यून (दुर्जनान्) २६ ५० **जघने**=कट्यधोभागावयवे ५ ६१ ३ [जघन व्याख्यातम् । ततो मत्वर्थीयप्रत्ययस्य 'गुणवचनेभ्यो मतुपो लुग्वक्तव्य ' ग्र० ५ २ ६४ वा० सूत्रेण लुक्]

जघन्थ हन्यात् २ १५ ६ हन्ति २ ३० ४ जहि १८ ६६ जह्या ३ ३० ८ हत १ ५२ १५ हसि ६ ३१ ४ [हन हिंसागत्यो (ग्रदा०) धातोर्लिटि मध्यमैकवचने रूपम् । भारद्वाजनियमेन इटोऽभाव]

जघन्याय जघने नीचकर्मणि भवाय शूद्राय म्लेच्छाय वा १६ ३२ [जघन व्याख्यातम् । ततो भवार्थे यत् । इवार्थे शाखादित्वाद् य प्रत्ययो वा]

जघन्वान् हतवान् १ १७४ ६ हन्ति, प्र०—ग्रत्र वर्त्तमाने लिट् १ ३२ ११ [हन हिंसागत्यो (ग्रदा०) धातो-र्लिट स्थाने क्वसु । 'विभाषा गमहन०' इति इटो विकल्प । जघन्वान्=जघ्निवान् नि० २ १७ घ्नन् नि० ७ २३]

जघन्वान् हनन कुर्वन् (सविता सूर्य) १ ५२ ८ हन्ता (शूरवीरो जन) ७ २३ ३ [व्याख्यातम्]

जघान हन्यात् ७ २० ३ हन्ति २० ३६ हतवान् १ ३२ ७ [हन हिंसागत्यो (ग्रदा०) धातोर्लिट् । प्रथम-पुरुषैकवचनम्]

जघास ग्रत्ति २५ ३८ [ग्रद भक्षणे (ग्रदा०) धातो-र्लिट् । 'लिट्यन्यतरस्यामि' ति धातोर्घस्लृ ग्रादेश]

जघ्नुषः हन्तु सकाशात् (योद्धृजनात्) १ ३२ १४ [हन हिंसागत्यो (ग्रदा०) धातोर्लिट क्वसु । पञ्चम्या एकवचनम्]

जघ्रिः जिघ्रति यस्या सा (उखा=स्थाली) २५ ३७ जिघ्रन्ती (पाकस्थाली) १ १६२ १५ [घ्रा गन्धोपादाने (भ्वा०) धातो 'किकिनावुत्सर्गश्छन्दसि' इति कि-प्रत्ययो लिड्वच्च कार्यम्]

जङ्गहे ग्रत्यन्त ग्रहीतव्ये (व्यवहारे) १ १२६ ६

जङ्घनत् भृश हन्ति प्राप्नोति ६ १६ ३४ भृश हन्यात् ३ ५३ ११ भृश हन्ति ३३ ६ **जङ्घनन्त**=ग्रत्यन्त घ्नन्ति, प्र०—ग्रत्र लडर्थे लङ् 'छन्दस्युभयथा' इत्यार्धधातुक-सज्ञयाऽकार-यकारयोर्लोपोऽडभावश्च १ ८८ २ भृश हत २ ३१ २ **जङ्घन्ति**=भृश घ्नन्ति ६ ७५ १३ [हन हिंसा-गत्यो (ग्रदा०) धातोर्यङ्लुगन्ताल् लङ् । ग्रडभावश्छान्दस]

जङ्घाम् हन्ति यया ताम् (ग्रायसीम्=ग्रयोविकार शस्त्रास्त्रम्) १ ११६ १५ सर्वसुखजनिकाम् (वर्त्तिका=नीतिम्), प्र०—'ग्रच् तस्य जङ्घ च, उ० ५ ३१ इति जन-धातोरच्-प्रत्ययो जङ्घादेशश्च १ ११८ ८ [हन हिंसागत्यो (ग्रदा०) धातो 'ग्रच् तस्य जङ्घ च' उ० ५ ३१ इति बाहुलकाद् ग्रच् जङ्घादेशश्च]

जजस्तम् योधयतम् ४ ५० ११ [जज युद्धे (भ्वा०)

जनयन्तीः प्रकटयन्त्य (आप = व्यापिकास्तन्मात्रा) २७ २५ उत्पादयन्त्य (आप = व्यापिकास्तन्मात्रा) २७ २६ [जनी प्रादुर्भावे (दिवा०) धातोर्णिजन्ताच्छतृ-प्रत्ययान्तात् ङीप्]

जनयः ये जनयन्ति ते पतय १ ६२ १० मातापितरः ५ ६१ ३ जनयितारः (स्वीकृता पतय) १ १८६ ७ [जनी प्रादुर्भावे (दिवा०) धातो 'जनिघसिभ्यामिण्' उ० ४ १३० इति इण्]

जनयः जाया ४ ५ ५ जनिका (सुपत्नी — शोभना पत्नी) २० ४० जनित्र्य, भा०—सर्वदा प्रसूता, (पत्नी स्त्रिय) २० ४३ या जनयन्ते ता प्रजा १.७१.१. शुभ-गुणैः प्रसिद्धा (देवी = दिव्यगुणप्रदा स्त्रिय) ११ ६१. जनिन्यो भार्या ४ १६ ५ विद्या सुशिक्षया प्रादुर्भूता (सुपत्नी) १० ३५ [जनीना जायानाम् नि० १२ ४६. जनी प्रादुर्भावे (दिवा०) धातो 'जनिघसिभ्यामिण्' उ० ४ १३० सूत्रेण इण्प्रत्यय । 'जनिवध्योश्च' इति वृद्धि-प्रतिषेध । आपो वै जनयोऽद्भ्यो हीदं सर्वं जायते श० ६ ८ २ ३ नक्षत्राणि वै जनयो ये हि जना पुण्यकृत स्वर्गं लोक यन्ति तेषामेतानि ज्योतीषि श० ६ ५ ४ ८.]

जनयामि प्रकटयामि १ १०६ २ **जनये** = उत्पादये ७ २६ १ [जनी प्रादुर्भावे (दिवा०) धातोर्णिजन्ताल्लट् । अन्यत्र-व्यत्ययेनात्मनेपदम्]

जनराज्ञः जना धार्मिका राजानो येषान्तान् (मनुष्यादि-कान्) १ ५३ ६ [जन-राजन्पदयो समास]

जनराट् यो जनेषु धार्मिकेषु विद्वत्सु राजते स (सूर्यो विद्वान्वा) ५ २४ [जनोपपदे राजृ दीप्तौ (भ्वा०) धातो क्विप्]

जनवादिनम् प्रशस्ता जनवादा विद्यन्ते यस्य तम्, (उत्तमजनम्) ३० १७ [जनवादप्राति० प्रशस्तार्थे मत्वर्थ इन् प्रत्यय । जनवाद = जनवादपदयो समास । वाद = वदतेर्घञ्]

जनश्रियम् जनाना शोभा लक्ष्मीर्यस्य तम् (देव = दिव्यगुण विद्वांसम्) ६ ५५ ६ [जन-श्रीपदयो समास । जनश्रिय जातश्रियम् नि० ६ ४]

जनसी जनयित्र्यौ द्यावापृथिव्यौ २ २ ४ [जनी प्रादुर्भावे (दिवा०) धातोरसुन् प्रत्ययान्तात् प्रथमाद्विवचनम्]

जनसहः यो जनान् सहते (शमादिशुभकर्माचारी जन) २ २१ ३ [जनोपपदे षह मर्षणे (भ्वा०) धातो खच् प्रत्ययश्छान्दस । पूर्वपदस्य मुमागम]

जना जनी १ १३१ ३ [जनयः इत्यस्यार्थम् । 'सुपा सुलुक्०' इति प्रथमा विभक्तेराकारादेश]

जनासमि जनयाम, प्र०—अत्र अन्तर्गत ण्यर्थोऽस्ति ३ २ १ [जनी प्रादुर्भावे (दिवा०) धातोर्लट् । विकरण-व्यत्ययेन शप् । मस इकारागम]

जनाषाट् यो जनान् सहते स (इन्द्र = सभाध्यक्ष), प्र०—अत्र 'छन्दसि सह' अ० ३ २ ६३ इति सहतेर्ण्वि-प्रत्यय. १ ५४ ११ [जनोपपदे षह मर्षणे (भ्वा०) धातो 'छन्दसि सह' इति ण्वि प्रत्यय । 'सहे साड स' इति षत्वम् । 'अन्येषामपि दृश्यते' अ० ६ ३.१३७. सूत्रेण पूर्वपदस्य दीर्घ]

जनासः मनुष्या (जना) २ १२ ८ वीरा (सैनिका जना) ३ ५३ २३ विद्यासु प्रादुर्भूता (सैनिकजना) ३.५५ १८. विद्याप्रिया विद्वांस ४.१६ ८ धीमन्तो जना ६ १२.११ विद्वांसो जना ७ १९ ७ विद्वांसो योगिन ८ ७ ४ १ उत्तमा धार्मिका विद्वांस ७ ९ ६ जना प्रसिद्धा (शूर मनुष्या) ७ ५६ २२. प्रसिद्धा पुण्यात्मान (महात्मान) ५.३४ ६ प्रसिद्धा गुणाढ्या (भृत्या) ५ ६२.३ [जनप्राति० प्रथमाबहुवचने असुगागम । जनाद इत्यादिना]

जनि उत्पन्ने, प्र०—अडभाव १ १४१ १ [जनी प्रादुर्भावे (दिवा०) धातोर्लुङ् । अडभाव । 'दीप-जनबुध०' अ० ३ १ ६१. सूत्रेण चिण्]

जनितः[1] उत्पादक (परमेश्वर विद्वन्वा) १ ७६ ४ **जनिता** = उत्पादक (वीर्यवान् पुरुष) १९ ८७ गुणानि प्रादुर्भावुक, भा०—गुणाना जनक (राजा) ३३.६६. पिता सुखस्य १ १२९ ११ जनयिता (परमेश्वर) अ०—अत्र 'जनिता मन्त्रे' अ० ६ ४ ५३ इति णिलोप ३२ १० प्रसिद्धकर्त्तारणा सर्वा पजन्य १७ ३२ सर्वेषा पदार्थाना प्रादुर्भावयिता (परमेश्वर) १७ २७ सकल जगत् का उत्पादक (परमात्मा) स० वि० ६, ३२ १० सर्वव्यव-हारागामुत्पादक (द्यौ) ऋ० भू० २७६ सब जगत् तथा हम लोगो का भी पालन करने वाला पिता (ईश्वर), आर्याभि० २६, ३२ १० **जनितु** = जनकस्य (पितु) ४ १७ १२ **जनितारा** = उत्पादकौ (राजशिल्पिनौ) ६ ६६ २ [जनी प्रादुर्भावे धातोर्णिजन्तात् कर्त्तरि तृच् । 'जनिता मन्त्रे' ६ ४ ५३ सूत्रेण णेर्लोप । जनिता = जनयिता नि० ४ २१]

जनितो. जनकयो ४ ६ ७

जनित्रम् अपत्यजन्मनिमित्तम् (रेत = वीर्यम्) १९ ८४

प्रादुर्भावे (दिवा०) धातोर्णिजन्ताच्छत्रन्तात् ङीप्। छन्दसि शप आर्धधातुकत्वात् णिलोप]

जनभक्षः यो जनैर्भक्ष सेवनीय (विद्वज्जन) २ २१ ३ [जन-भक्षपदयो समास। भक्ष=भज सेवायाम् (भ्वा०) धातोरौणा० स प्रत्यय]

जनभृतः ये जनान् विभ्रति ते (राजपुरुषा) १० ४ [जनोपपदे डुभृञ् धारणपोषणयो (जु०) धातो क्विप्। तुगागम]

जनम् मनुष्यम् १ ४४ ६ जिज्ञासु मनुष्यम् २ २३ ४ पुरुषार्थेषु प्रादुर्भूतम् (वीरपुरुषम्) १ ४५ १० पुरुषार्थयुक्त धार्मिक विपश्चितम् १ ४५ ६ प्रसिद्ध मनुष्यादिक प्राणिमयम् ३ ५३ १२ शुभाचरणे प्रसिद्धम् (राजानम्) ६ ५२ १० **जनस्य**=श्रेष्ठस्य देवस्य मनुष्यस्य १ ७० १ जातस्य (ससारस्य) १५ २७ **जनः**=यशसा प्रादुर्भूत (मनुष्य) १ १३६ ५ उत्तमगुणकर्मभिर्वर्त्तमान (राजा) १ ५४ ७ यो विद्याधर्माभ्या परोपकारान् जनयति प्रकटयति स अ०—विद्वान्) ३ ५५ उत्तमो विद्वान् ७ ५५ ५ प्रजा-सेनास्थो मनुष्य १ ४१ १ **जनान्**=मनुष्यादीन् १ ६४ १३ धार्मिकान् मनुष्यान् १ १३२ ५. मनुष्यादीन् प्राणिन १ ५० ३ प्रसिद्धान् वीरान् (मनुष्यान्) ३ ४६ २ **जनानाम्**=शुभगुणेषु प्रादुर्भूतानाम् (मनुष्याणाम्) १ १७७ १ सज्जनाना मनुष्याणाम् १ ८१ ६ राजप्रजा-पुरुषाणाम् ४ ४ ६ **जनाय**=धर्म्ये प्रसिद्धाय (मनवे=मनुष्याय) १ १३० ५ राज्ञे ७ ३४ ६ शुभगुणविद्यासु प्रादुर्भूताय विदुषे १ ११७ ६ जनसमूहाय १ ६२ १७ परोपकारे प्रसिद्धाय (अध्यापकाय) ७ १६ १२ सत्पुरुषाय २ ३४ ८ सेवकाय जीवाय १ १३ ८ जीवस्य रक्षणाय १ ३६ १६ **जनाः**=विद्याविज्ञानेन प्रादुर्भूता मनुष्या १२ १११ मनुष्या प्राणा वा २५ २३ जगत् के जीवनहेतु प्राणो, आर्याभि० १ १७, ऋ० १ ६ १६ १० शौर्य-धनुर्वेदकुशला अतिरथा मनुष्या १ १०२ ५ प्राणा इव वर्त्तमाना (मनुष्या) ६ ११ ४ जीवा १ ८६ १० **जने**=सम्बन्धिनि पुरुषे १ ११३ १६ विद्याधर्मादिगुणै प्रसिद्धे मनुष्ये १ ४८ ११ गुणैरुत्कृष्टे सेवनीये (पुरुषे) १ ६६ २ जनेषु=सत्याचरणेषु मनुष्येषु ५ ३१ १३ यत्र-कारकेषु विद्वत्सु, लोक-लोकान्तरेषु वा, ऋ० भू० ३०६ [जनी प्रादुर्भावे (दिवा०) धातो पचाद्यच्प्रत्यय। अथवा घञ्-प्रत्यय, 'जनिवध्योश्च' सूत्रे वृद्धि-प्रतिषेध। अन्तो वा एषा ऋद्धीना यज्जन मै० २ २ ६ इय (पृथिवी) वाव जनो यो वा इमामेति न स पुनरागच्छति काठ० २५ ७ एष ह वै पद्भ्या पाप करोति यो जनमेति जै० २ १३५]

जनमाने उत्पद्यमाने (जगति) प्र०—अत्र विकरण-व्यत्यय ३३ ४१ [जनी प्रादुर्भावे (दिवा०) धातो शानच्। विकरणव्यत्ययेन शप् जनमाने=जनिष्यमाणे नि० ६ ८]

जनय उत्पादय १ ११३ १६ प्रकटय ३४ ३६ उत्पन्न कर, स० वि० १३८, अथर्व० १४ २ ३१ **जनयत्**=जनयेत् १ ७१ ८ जनयति ३३ ११ **जनयत**=जनयति, प्र०—अत्र लड्यडभावो 'बुधयुध०' इति परस्मैपदे प्राप्ते व्यत्ययेनात्मनेपदम् १ ६५ ४ **जनयतम्**=उत्पादयतम् १ १८५ ३ **जनयथ**=उत्पादयत ११ ५२ [जनी प्रादुर्भावे (दिवा०) धातोर्णिजन्ताल् लोट्। 'बुध-युधनशजन०' अ० १ ३ ८६ सूत्रेण परस्मैपदम्। अन्यत्र लड् तत्राऽडभावश्छान्दस]

जनयत्यै सर्वसुखोत्पादिकाय राज्यलक्ष्म्यै, भा०—पूर्णश्रियै १ २२ [जनी प्रादुर्भावे (दिवा०) धातोर्णिजन्ताच् शतृप्रत्ययान्तात् ङीप्। नुमोऽभाव]

जनयन् प्रकाशयन् (विद्वज्जन) १ १४८ ८ उत्पादयन् (विश्वकर्मा=परमेश्वर) १७ १८ प्रकटयन् (अग्नि=परमेश्वर) ७ ५ ६ [जनी प्रादुर्भावे (दिवा०) धातोर्-णिजन्ताच् शतृप्रत्यय]

जनयन् जनयति ३ २ १२ जगत् का कर्त्ता है, आर्याभि० २ ३४, १७ १६ प्रकाश करता है, स० वि० ८०, अथर्व० ११ ५ २४ [जनी प्रादुर्भावे (दिवा०) धातोर्णिजन्ताल् लड् अटोऽभावश्च। अन्यत्र=जनी प्रादुर्भावे धातोर्णिजन्ताच्छतृ-प्रत्यय]

जनयन्त जनयन्ति, प्र०—अत्राऽडभाव १ ५२ २ प्रकटयन्ति १ १४१ २ उत्पादयन्त, प्र०—अत्र लोडर्थे लड्ऽडभावश्च ७ २४ उत्पादयेयु, प्र० अत्र लड्यडभाव १६ ८४ जनयेयु ३ २ ३ प्रादुर्भवेयु ३३ ८ [जनी प्रादुर्भावे (दिवा०) धातोर्णिजन्ताल्लड्। अडभावश्च। 'बुधयुधनशजन०' इति परस्मैपदे प्राप्ते व्यत्ययेनात्मनेपदम्]

जनयन्तः निष्पादयन्त (देवा=विद्वासो जना) ३१ २१ प्रकटयन्त (भा०—सभाध्यक्षादयो जना) १ ८५ २ [जनी प्रादुर्भावे (दिवा०) धातोर्णिजन्ताच् छतृ-प्रत्यय]

जनयन्ति पुत्रोत्पत्ति करते है, स० वि० १४०, अथर्व० १४ २ ७२ [जनी प्रादुर्भावे (दिवा०) धातो-र्णिजन्ताल् लट्। 'बुधयुध०' इति परस्मैपदम्]

जनुषम् जन्म १ १४१ ४ विद्याजन्म १.१३६ ६. प्रसिद्धाम् (वाचम्) २.४२.१. **जनुष** =जना १ ६१ १४ जन्मानि ६ ६६ ४ प्रसिद्धात् (वेदम = धनाद्विज्ञानाद्वा) २ १७ ६ **जनुषा**=जन्मना ७ २० ३ प्रादुर्भूतेन कर्मणा १ १०२ ८ जातेन जगता सह १ ६४ ६ द्वितीयेन जन्मना ५ २६ १४ **जनुषाम्**=जन्मवताम् (मनुष्याणाम्) ४.१७ २० जनानाम् १ १५ १ १ **जनुषे**=जन्मने ५ ४५ ३ [जनी प्रादुर्भावे (दिवा०) धातो 'जनेरुसि' उ० २ ११५ सूत्रेण उसि प्रत्यय । जनुषम् जन्म नि० ६ ३]

जनूषि जन्मानि ७ ४ १ [जनुष् इति व्याख्यातम् । ततो नपुंसकलिङ्गे प्रथमाबहुवचने रूपम्]

जनू जनन्य प्रकृतय ७ ५८ २ [जनी प्रादुर्भावे (दिवा०) धातोर्बाहुलकादौणादिक उ प्रत्यय । तत स्त्रियाम् ऊङ्प्रत्यय]

जने जने मनुष्ये मनुष्ये ५ ६७ ४ [जनपद व्याख्यातम् । ततो वीप्साया द्विर्वचनम्]

जन्तवः जीवा १ ८१ ६ मनुष्या १ ४५ ६ जना १५ ३१ सब जीव, सन्ताने, म० प्र० २३८, १ ०४८ १ **जन्तवे**=प्राणिने ३ २ १२ **जन्तुभि.**=मनुष्यादिभि १२ १०६ मनुष्यै , प्र०—जन्तव इति मनुष्यनाम, निघ० २ ३, ३ ३ ६ **जन्तुम्**=प्राणिनम् ७ ५८ ३ **जन्तोः**= जीवमात्रस्य ५ ३२ ७ [जनी प्रादुर्भावे (दिवा०) धातो 'कमिमनिजनि०' उ० १ ७३ सूत्रेण तु प्रत्यय । जन्तव मनुष्यनाम निघ० २ ३ मनुष्या वै जन्तव श० ७ ३ १ ३२]

जन्म प्रादुर्भावम् १ ७० ३ प्रादुर्भाव ११ १२ शरीरधारणेन प्रादुर्भावम् १ ७० १ त्रिविद्याजननम् १ ७१ ३ जन्मानि ५ ४१ १४ [जनी प्रादुर्भावे (दिवा०) धातो 'सर्वधातुभ्यो मनिन्' उ० ४ १४५ सूत्रेण मनिन् । अथवा बाहुलकाद् औणादिक (उ० १ १४५) मक्]

जन्मञ्जन्मन् जन्मनि जन्मनि ३ १ २० [जन्मन्-पदस्य वीप्साया द्वित्वम् । जन्मन् व्याख्यानम् । डेर्लुक्]

जन्मन् जन्मनि, प्र०—अत्र 'सुपा सुलुग्०' इति डेर्लुक् १७ ७५ जन्मनि प्रादुर्भावे, अ०—द्वितीये विद्याजन्मनि १२ ५५ **जन्मना**=शरीरेण, अ०—मनुष्यदेहधारणाख्येन १ ८७ ५ **जन्मने**=वर्त्तमानदेहोपयोगाय पुन शरीरधारणेन प्रादुर्भावाय वा १ २० १ जाताय (सञ्चितकर्मनिमित्ताय) १ १६६ १ **जन्मनि**=पूर्वाऽपरे (शरीरधारणाख्ये) १ १४१ ११ वर्त्तमानं प्राप्स्यमान च (शरीरधारणम्) ८.३ [जनी प्रादुर्भावे (दिवा०) धातो 'सर्वधातुभ्यो मनिन्' उ० ४ १४५ सूत्रेण मनिन् । जन्म उदकनाम निघ० १ १२ जन्म जन्मानि जातानि नि० १२.२३ जन्मसु=कर्मसूदयेषु नि० ११ २३]

जन्मेव यथा प्रादुर्भावि कर्म प्रकटयति तथा ३ १५ २ [जन्म व्याख्यानम् । जन्मन्-इवपदयो समास]

जन्यम् जनितु योग्यम् (सुष्टुतिं = प्रशंसाम्) २.३७ ६ **जन्य.**=यो जायते (महाराज) ४ ३८ ६ **जन्या**=जनितारो (वाय्वग्नी) २ ३६ १ **जन्यात्**= उत्पत्स्यमानात् (अहस =अपराधात्) ४ ५५ ५ [जनी प्रादुर्भावे (दिवा०) धातो 'तकिशसिचतियतिजनीनामुपसंख्यानम्' अ० ३ १ ९७ वा०सूत्रेण यत् । 'भव्यगेयप्रवचनीय०' अ० ३ ४ ६८ सूत्रेण कर्तरि वा निपात्यते सपत्ना वै द्विषन्तो भ्रातृव्या जन्यानि ऐ० ८ २६]

जन्येव जनेभ्यो हित इव (अग्नि =जगदीश्वर) २ ६ ७ [जन्य-इवपदयो समास । जन्य =जनप्राति० हितार्थे यत्]

जवारु जवमानरोहम् (नक्षत्रम्) ४ ५ ७ [जवारु= जवमानरोहि जरमाणरोहि गरमाणरोहीति वा नि० ६ १७.]

जभरत् यथावद्धरेत्, पोषयेत्, पुष्येत् ४ १२ २ बिभर्त्ति ४ २ ६ **जभर्थ**=हरसि ४ १६ ६ **जभार**= हरति ३ ४३ ७ धरेत् ४ २७ २ बिभर्त्ति ७ ५६ ४ [डुभृञ् धारणपोषणयो (जु०) धातोर्लेट् । छान्दस द्विर्वचनम् । अन्यत्र लिट्]

जभार हरति, प्र०—अत्र वर्त्तमाने लिट् 'हृग्रहोर्भश्छन्दसि वक्तव्यम्' इति भादेश १ ३२.६ जहार ३३ ३७ [हृञ् हरणे (भ्वा०) धातोर्लिट् । हकारस्य भकारश्छान्दस]

जभ्रिरे भरेयु , प्र०—अत्राऽभ्यासस्य वर्णव्यत्ययेन बस्य ज ६ १७ भरन्ति पुष्णन्ति १ ७२ ४ हरन्तु १ ११९ १४ **जभ्रुः**=बिभ्रति ७ १८ १६ धरन्तु ३ ५४ १ धरन्ति ४ ७ ४ **जभ्रे**=धरति १ ६१ ८ [डुभृञ् धारणपोषणयो (जु०) धातोर्लिटि प्रथमबहुवचने झस्येरेच् । वर्णव्यत्ययेनाभ्यासस्थबकारस्य जकार]

जमदग्निदत्ता चक्षुषा प्रत्यक्षेण दत्ता (वाक्), प्र०—चक्षुर्वै जमदग्निर्ऋषि , शत० ८ १ २ ३, ३ ५३ १५ [जमदग्निदत्तापदयो समास । जमदग्निरग्रिमे पदे द्रष्टव्य]

जमदग्निना चक्षुषा प्रत्यक्षेण ३.६२ १८

कारण जनक वा (वीर्यम्) २३ ५६ जन्मसाधन कर्म ७ ४६ २ उत्पत्तिनिमित्तम् (ऊर्णायुम्=अविम्) १३ ५० जननम् १४ २४ जनकम् २१ ५५ जनक कारणम् ७.३४ २. जन्म १ १६३ ४ भा०—द्वितीय विद्याजन्म २६ १५ भा०—निमित्तकारण (ब्रह्म) २३ ६० [जनी प्रादुर्भावे (दिवा०) धातो 'अगित्रादिभ्य इत्रोत्रौ' उ० ४ १७३ सूत्रेण इत्र प्रत्यय । विड् वै जनित्रम् श० ८ ४ २ ५ वसिष्ठो वा एते (जनित्रे) पुत्रहत सामनी अपश्यत् स प्रजया पशुभि प्राजायत ता० १६ ३ ८]

जनित्री अनेककार्योत्पादिके (द्यावापृथिवी=विद्युद्-भूमी) २६ ३४ मातृवत्सर्वेषा महत्तत्त्वादीनामुत्पादिका (प्रकृति) ३ ३१ १२ उत्पादिका (उषा) १ १२४ ५ उत्पादयित्री (द्यावापृथिवी) १ १८५ ६ माता २ ३० २ **जनित्रीः**=जनन्य (मातर) ६ ५० ७ मातृ ३ ५४ १४ [जनित्र व्याख्यातम् । तत स्त्रिया ङीप् । जनित्री जनयित्र्यौ नि० ८ १४]

जनित्वम् जन्मादिकारणम् (सूर्य) १ ६६ ४ जना हुआ बालक म० प्र० १५२, १० १८८ सन्तानम्, ऋ० भू० २११, उत्पत्स्यमानम्, भा०—यच्च जनिष्यते (कार्यरूप जगत्) २५ २३ जन्म का हेतु (ईश्वर), आर्याभि० १ १७, ऋ० १ ६ १६ १० **जनित्वाः**=ये जनिष्यन्ते ते (पदार्था) ४ १८ ४. **जनित्वैः**=जनिष्यमाणै (जनै) १२ २७ जनित्वम् जनिष्यमाण नि० १० २१ जनी प्रादुर्भावे (दिवा०) धातो 'जनिदाच्युसृवृ०' उ० ४ १०४ सूत्रेण इत्वन्-प्रत्यय]

जनिदाम् या जनि जन्म ददाति (इन्दु=राजानम्) ४ १७ १६ [जनिपद व्याख्यातम् । तदुपपदे डुदाञ् दाने (जु०) धातो क्विप्]

जनिभिः जन्मभिर्जनकैर्वा ६ ५० १३ भा०—यान्य-पत्यानि जनयेयुस्तै (जन्मभि) २६ २४. जनयित्रीभिर्वडवाभि ३ २६ ३ प्रादुर्भूताभि प्रजाभि ७ १८ २ [जनिपद व्याख्यातम् । ततस्तृतीयाबहुवचनम् । देवाना वै पत्नीर्जनय तै० स० ५ १ ७ २ काठ० १९ ७ नक्षत्राणि वै जनय मै० ३ १ ८ श० ६ ५ ४ ८]

जनिम जन्म २ ३५ ६ जन्मानि ३ १ २० [जनी प्रादुर्भावे (दिवा०) धातो 'जनिमृड्भ्यामिमनिन्' उ० ४ १४६ सूत्रेण इमनिन्-प्रत्यय]

जनिमन् जन्मनि प्रादुर्भावे ४ २२ ४ [जनिम-पदे व्याख्यातम्]

जनिमन् प्रशस्ता जनिर्जन्म विद्यते यस्य तत्सम्बुद्धौ (विद्वज्जन) ३ १ ४ जन्मवन् (राजन्) ४ १७ २ [जनि-पद व्याख्यातम् । ततोऽतिशायने मतुप्]

जनिमानि जन्मानि ३ ४ १० [जनी प्रादुर्भावे (दिवा०) धातो 'जनिमृड्भ्याम् इमनिन्' उ० ४ १४६ सूत्रेण इमनिन्-प्रत्यय]

जनियन्त जायामिच्छन्त (विप्रा=मेधाविनो जना) ४ १७ १६ [जनिशब्दादिच्छाया क्यचि शतरि च रूपम्]

जनिवतः जन्मवत (ब्रह्मचारिणो जना) ५ ३१ २ **जनिवान्**=विद्याया जन्मवान् (विद्वान् जन) ५ १४ ७ [जनिप्राति० प्रशसाया मतुप् । 'छन्दसीर' अ० ८ २ १४ सूत्रेण मतुपो मकारस्य वकारादेश]

जनिषीष्ट जनयतु ७ ८ ६ जायेत ४ १८ १ [जनी प्रादुर्भावे (दिवा०) धातोराशिषि लिङ्]

जनिष्ट जायते ५ १ ५ जनयत ५ ६ ३ **जनिष्ठाः**= जनये, प्र०—अत्र लुड्यडभाव ३३ ६४ जनय ७ २८ २ [जनी प्रादुर्भावे (दिवा०) धातोर्लुङ्, अडभाव । 'दीप-जनबुध०' इति चिणो विकल्पे पक्षे सिच्]

जनिष्ठाः अतिशयेन प्रकटा (विद्वासो जना) १ ६८ २ [जनी प्रादुर्भावे (दिवा०) धातो कर्त्तरि तृजन्तादतिशायने इष्ठन् । 'तुरिष्ठेमेयस्सु' सूत्रेण तृचो लोप]

जनिष्यते उत्पत्स्यते २७ ३६ [जनी प्रादुर्भावे (दिवा०) धातो कर्मणि लृटि प्रथमैकवचनम्]

जनिष्यमाणम् उत्पत्स्यमानम् (पदार्थमात्रम्) १८ ५ **जनिष्यमाणः**=प्रसिद्धि प्राप्स्यमान (देव=ईश्वर) ३२ ४ [जनी प्रादुर्भावे (दिवा०) धातो कर्मणि 'लृट सद्वा' सूत्रेण सत्सज्ञक शानच् प्रत्यय]

जनिष्व जनय ६ १५ १८ [जनी प्रादुर्भावे (दिवा०) धातोर्लोट् । 'छन्दस्युभयथा' इत्यार्धधातुकत्व इडागम । 'बहुल छन्दसी' ति शपो लुकि श्यनोऽप्यभाव]

जनी जनयित्री (दुहिता=कन्या) ४ ५२ १ **जनी-नाम्**=जनाना प्रजानाम् १ ६६ ४ जनित्रीणा भार्य्याणाम् ५ ४६ ८ **जनीः**=अपत्यानि प्रादुर्भवित्री (स्त्री) १ १६७ ७ [जनिपद व्याख्यातम् । तत 'कृदिकारा-दक्तिन' इति स्त्रिया ङीप् । जनि जाया नि० १२ ४६ जनीनाम् जायानाम् नि० १२ ४६]

जनीरिव जायमाना प्रजा इव ७ २६.३ [जनी व्याख्यातम् । जनी-इवपदयो समास]

जरां आर्षी (पितरौ) ४.३३ ३. **जरणाम्**=जराऽवस्थाम् ५ ३०.४. **जरणः**=स्तुत्य. १ १४१.३ [जॄष् वयोहानौ (दिवा०) धातोर्बाहु० औणा० युच् । तत गेर्लोपश्छन्दसि । अन्यत्र स्त्रियां टाप् । जरति अर्चतिकर्मा निघ० ३.१४.]

जरण्यया जरणान् विद्यावृद्धानर्हति यया विद्यया तया १ ११६ ३ [जरणापद व्याख्यातम् । जरणप्राति० अर्हत्यर्थे यत् । ततष्टाप् स्त्रियाम् । तृतीयैकवचनम्]

जरताम् स्तुयात् ४ ४ ८ [जरते अर्चतिकर्मा (निघ० ३ १४) धातोर्लोट्]

जरतीः वृद्ध दुष्ट स्त्रियः, म० वि० १३८, अथर्व० १४ २ २६

जरते स्तावकाय (विप्राय=मेधाविजनाय) ६ ६५ ४. [जरति अर्चतिकर्मा (निघ० ३.१४), तत शत्रन्ताच्चतुर्थ्या एकवचनम्]

जरते स्तौति १ १२३ १० स्तकरोति १ ५६.३. [जरते अर्चतिकर्मा (निघ० ३ १४.), ततो लट् । जरते गृणाति नि० ४.२४ जरते स्तुतिकर्मण नि० १०.८]

जरदष्टि. जरं पूर्णमायुर्व्याप्तो य स (जन) ३४ ५२ जराऽवस्था को प्राप्त सुखपूर्वक (स्त्री) सं० वि० १०१ जराऽवस्था ऋ० भू० २०८ **जरदष्टिम्**=वृद्धावस्थाम् ८ ३१ १ [जरत्=जॄष् वयोहानौ (दिवा०) धातोर्बाहु० औणा० अति प्रत्यय । अष्टि=अशूङ् व्याप्तौ संघाते च (स्वा०) धातोर्बाहु० औणा० ति प्रत्यय । तयो समास]

जरद्विषम् जरद् विनष्ट शत्रुरूप विष यस्य तम् (गृहपतिम्) ५ ८ २ [जरद्-विषपदयो समास । जरदिति व्याख्यानम्]

जरन्तम् स्तवानम् (पतिम्) १.११७ १३ [जरति अर्चतिकर्मा निघ० ३.१४ तत शतृप्रत्यय]

जरन्ता स्तुवन्तौ (शिल्पिजनौ) १.१६१.७ [जरति अर्चतिकर्मा निघ० ३ १४. तत शत्रन्तात 'सुपां सुलुग्' इत्याकारादेश]

जरन्ति जीर्णं कुर्वन्ति ६ २८ ७ **जरन्ते**=स्तुवन्ति, प्र०—जरा स्तुतिर्जरते स्तुतिकर्मण, नि० १० ८, १ २ २. [जॄष् वयोहानौ (दिवा०) धातोर्लट् । विकरणव्यत्ययेन शप् । अन्यत्र=जरते अर्चतिकर्मा निघ० ३ १४. जरते स्तुतिकर्मण. नि० १० ८]

जरमाणम् स्तुवन्तम् (इन्द्र=राजानम्) ३ ५१ १

जरमाणः=स्तुवन् (सज्जन) ६ ६२.१. **जरमाणाः**=स्तुवन्त (विद्यार्थिजना) २ २८ २. [जरते अर्चतिकर्मा (निघ० ३ १४) धातोः शानच् । जरते. स्तुतिकर्मण नि० १०.८]

जरयन् नाशयन् (विद्वान् श्रीमज्जन) २ ८.२ **जरयन्तम्**=अन्यान् जरां प्रापयन्तम् (इन्द्र=विद्युतम्) २ १६ १ [जराप्राति० 'तत्करोति तदाचष्टे' इति वा० सूत्रेण णिजन्ताच्छतृप्रत्यय]

जरयन्ती हीनं कुर्वती (उषा.) १.९२ १० या जीर्णामवस्थां भावयन्ती (उषा) १ ४८ ५. वयो गमयन्ती (उषा) १ १२४ १० **जरयन्तीः**=जरां प्रापयन्ती (उषस=प्रभाता) १ १७६ १ [जराप्राति० 'तत्करोति तदाचष्टे' इति वा० सूत्रेण णिजन्ताच्छतरि स्त्रियां ङीप् प्रत्यय । जरा=जॄष् वयोहानौ (दिवा०) धातो 'षिद्भिदादिभ्योऽङ्' इत्यङ् प्रत्यय]

जरसम् जरां वृद्धाऽवस्थाम्, प्र०—अत्र 'जराया जरसन्यतरस्याम्' अ० ७ २ १०१ अनेन जरा-शब्दस्य जरसादेश १.११६ ६ जरा, भा०—यदा शतवार्षिकमायुर्व्यतीयात तदैव शरीरस्य जराऽवस्था भवेत् २५ २२ [जराप्राति० द्वितीयैकवचने 'जराया जरसन्यतरस्याम्' अ० ७.२ १०१ सूत्रेण जरास्थाने जरसादेश. । जरा=जॄष् वयोहानौ (दिवा०) धातो 'षिद्भिदादिभ्योऽङ्' इत्यङ् । तत. स्त्रियां टाप् । जरसा=जरया नि० ११ ३८]

जरसे अर्च्यसे पूज्यसे, प्र०—अत्र विकरणव्यत्ययेन कर्मणि यक स्थाने शप् । जरत इति अर्चतिकर्मसु पठितम् ३.१४, १ ६४ १४ **जरस्व**=स्तुहि, प्र०—अत्र व्यत्ययेनाऽऽत्मनेपदम् । जरतीति स्तुतिकर्मा निघं० ३.१४, ३.३.७ प्रशंस ७ ८ ६ [जरते अर्चतिकर्मा (निघ० ३ १४) धातोर्लट् । अन्यत्र लोट् । प्रथमप्रयोगे कर्मणि प्रयोग, व्यत्ययेन शप् आत्मनेपदञ्च]

जरा वृद्धाऽवस्था १८ ३ **जरायै**=स्तुत्यै १ ३८ १ [जरा व्याख्यातम् । जरा स्तुति नि० १०.८.]

जराते स्तौति ५ ३७ २ **जरामहे**=स्तुमहे २.२३.६. प्रशंसेम ३ ४१ ७. [जरते अर्चतिकर्मा निघ० ३.१४, ततो लेटि रूपम् । 'लेटोऽडाटौ' इत्याडागम. । व्यत्ययेनात्मनेपदम्]

जराबोध ! जरया गुणस्तुत्या बोधो यस्य सैन्यनायकस्य तत्सम्बुद्धौ (सेनाऽधिपते !) १.२७ १० [जरा-बोधपदयो समास । जरा व्याख्यातम् । जराबोध=जरा-

जमदग्नि =प्रज्वलिताऽग्निर्नयनम् १३ ५६ **जमदग्नेः**= चक्षुष, प्र०—चक्षुर्वै जमदग्निर्ऋषिर्यदेनेन जगत् पश्यति, अथो मनुते, तस्माच्चक्षुर्जमदग्निर्ऋषि, श० ८ १ २ ३ अनेनाऽपि प्रमाणेन रूपगुणग्राहक चक्षुर्गृह्यते ३ ६२ चक्षुरित्युपलक्षणमिन्द्रियाणाम्, ऋ० भू० ८१ [जमत्= ज्वलतो नाम (निघ० १ १७) जमत्-अग्निपदयो ममास। जमदग्नय =प्रजमिताग्नयो वा प्र०—ज्वलिताग्नयो वा नि० ७ २४ चक्षुर्वै जमदग्निर्ऋषिर्यदेनेन जगत् पश्यत्यथो मनुते तस्माच्चक्षुर्जमदग्निर्ऋषि श० ८ १ २ ३ प्रजापतिर्वै जमदग्नि श० १३ २ २ १४ जमदग्निर्ह वै माहेनाना पुरोहित आस जै० २ ३१० जमदग्ने सप्ताह विद्रथ चक्षूपीति जै० २ १७० सर्वरूपा वै जामदग्न्य सर्वसमृद्धा ऐ० २ २६]

जम्भकम्=यो जम्भयति नाशयति तम् (जनम्) ३० १६ [जभि नाशने (चुरा०) धातोर्ण्वुल् कर्त्तरि]

जम्भय विनाशय २ २३ ६. **जम्भयतम्**=विनाशयतम् १ १८२ ४ [जभि नाशने (चुरा०) धातोर्लोट्]

जम्भयन् साऽवयवान् दर्शयन् (सूर्य) १ १६१ ८ औषधैर्निवारयन् (भिषक्=वैद्यो जन) १६ ५ **जम्भयन्तः**=विनामयन्त (अश्वा योद्धारो वा) ७ ३८ ७ गात्राणि विनमयन्त (भा०—वीरा राजजना) ८ १६ विनाशयन्त. (विद्वासो जना) २१ १० [जभि नाशने (चुरा०) धातो शतृप्रत्यय। जभी गात्रविनामे (भ्वा०) धातोर्वा णिजन्ताच् छतृ। 'रधिजभोरचि' सूत्रेण नुम्]

जम्भयोः वन्धनयोर्मुखमध्ये ग्रासमिव ११ ७६ **जम्भे**=जम्भन्ति गात्राणि विनामयन्ति येन मुखेन तस्मिन् १५ १५ बन्धने ११ ७६ व्याघ्रस्य मुख इव कष्टे १५ १६. मार्जारमुखे मूषक इव पीडायाम् गुणरूपमुखे १५ १८ वशे, प० वि०, अथर्व० ३ २७ १ **जम्भेभिः**=गात्रविनामै ७ ७ २ **जम्भैः**=गत्याक्षेपै ४ ७ १० विस्फुरणै १ १४३ ५ चालनादिभि स्वगुणै १ १४८ ४ गात्रविक्षेपै ७ ३४ [जभी गात्रविनामे (भ्वा०) धातोर्घञ्प्रत्यय। 'रधिजभोरचि' सूत्रेण नुमागम]

जम्भ्यैः जम्भेषु मुखेषु भवैर्जिह्वादिभि ११ ७८ [जम्भ इति व्याख्यातम्। ततो भवार्थे यत्]

जय उत्कर्ष १० २१ **जयत**=विजयध्वम् १७ ४६ [जि जये (भ्वा०) धातोर्लोट्]

जयताम् विजेतु समर्थानाम् (देवाना=विद्वज्जनानाम्) १७ ४१ [जि जये (भ्वा०) धातो शत्रन्तात् षष्ठ्या बहुवचनम्]

जयतामिव विजयकारिणा योद्धृणा शत्रूणामिव १ २३ ११ [जयतामिति व्याख्यातम्। जयताम्-इवपदयो ममास]

जयति उत्कर्षति १ ३६ ४ **जयतु**=विजयतु ५ ३७ स्वोत्कर्षाय तिरस्करोतु, उत्कर्षतु ७ ४४ [जि जये (भ्वा०) धातोर्लेट्। अन्यत्र लोट्]

जयन् उत्कर्ष प्राप्तुमिच्छन् (सेनापति) ६ ७३ २ उत्कर्ष प्राप्नुवन् (बृहस्पति=सेनापति) १७ ३६ शत्रून् पराजयन् (इन्द्र=राजा) ४ १७ १० विजयन् (विद्वान् राजा) ५ ३१ ६ **जयन्तम्**=शत्रून् विजयमानम् (योद्धजनम्) ६ ७५ १८ शत्रून् पराजयमानम् (इन्द्र=सेनापतिम्) १७ ३८ शत्रूणा विजेतारम् (राजान सेनापति वा) ३४ २० विजयहेतुम् (सेनाद्यध्यक्षम्) १ ६१ २१ विजयमानम् (वल=सेनाम्) ५ ४४ १ दुष्टान् पराजयन्तम् (शूरवीरम्) १७ ४६ [जि जये (भ्वा०) धातो शतृप्रत्यय]

जयन्ती उत्कर्षता प्राप्नुवती सेना १ ११६ १७ जयशीला (युवति स्त्री) १ १२३ २ **जयन्तीनाम्**= शत्रुविजयेनोत्कर्षन्तीनाम् (देवसेनानाम्) १७ ४० [जि जये (भ्वा०) धातो शत्रन्तान् ङीप्]

जयन्तु विजयिन्यो भवन्तु १७ ४३ [जि जये (भ्वा०) धातोर्लोट्]

जयाति जयेत् ५ ३७ ५ शत्रुओ को जीत सके, म० प्र० १८३, अथर्व० ६ १० ६८ १ **जयासि**=जय ६ ३५ २ [जि जये (भ्वा०) धातोर्लेट्। 'लेटोऽडाटो' इत्याडागम]

जयामसि जयाम ४ ४७ १ [जि जये (भ्वा०) धातोर्लट्। उत्तमबहुवचने 'इदन्तो मसि' रिति मस इदन्तता। जयामसि=जयाम नि० १० १५]

जयुषा जयशीलौ (अध्यापकोपदेशकौ) ६ ६२ ७ [जि जये (भ्वा०) धातोर्बाहुलकादौणादिक उसि प्रत्यय। 'सुपा सुलुग्०' इत्याकारादेश]

जयुषा जयप्रदेन (रथेन) १ ११७ १६ [जयुष् इति व्याख्यातम्। ततस्तृतीया]

जयेम उत्कर्षयेम २ ४० ५ शत्रून् विजयेमहि १ १०२ ४ दुष्ट जनो को जीते, आर्याभि० १ ४३, ऋ० १ ७ १४ ४ **जयेयम्**=उत्कर्षयेयम् १८ ३३ [जि जये (भ्वा०) धातोर्लिङि उत्तमबहुवचनम्]

जरणा जरणानि स्तुत्यानि कर्माणि १ १२१ ६.

जलापभेषजम् जलापाय सुखाय भेषज यस्मात्तम् (रुद्रम्=परमेश्वरम्) १ ४३ ४. [जलाप-भेषजपदयो समास । जलापम् उदकनाम निघ० १ १२ सुखनाम निघ० ३ ६ भेषजम्=भिषज् चिकित्सायाम् (कण्ड्वा०) धातो रूपम्]

जलाष सुखकर्त्ता (भेषज =भिषग्जन) २ ३३ ७ दुखनिवारक (रुद्र =परमात्मा जीवो वा) ७ ३५ ६ [जलापम् उदकनाम निघ० १ १२ सुखनाम निघ० ३.६ जल घातने (भ्वा०) जल अपवारणे (चुरा०) धातोर्वा वाहुलकादौणादिक आपच्प्रत्यय]

जल्गुल: अतिशयेन गृणीहि, प्र०—अत्र 'गॄ शब्दे' इत्यस्माद् यङ्लुगन्ताल्लेट् 'बहुल छन्दसि' इत्युपधाया उत्वञ्च १ २८ १ अतिशयेन शब्दय १ २८ २ शृणूपदिश च १ २८ ३ [गॄ शब्दे (क्र्या०) धातोर्यङ्लुगन्ताल् लेट् । धातोर् उपधाया उत्व रपरत्व छान्दसम् । कपिलकादित्वाल् लत्वम्]

जल्प्या जल्पेषु सत्याऽसत्यवादाऽनुवादेषु भवा (अब्रह्मविदो जना), प्र०—अत्र 'सुपा सुलुग्०' इति विभक्तेराकारादेश १७ ३१ [जल्पप्राति० भवार्थे यत् । जल्प = जल्प व्यक्ताया वाचि (भ्वा०) धातोर्घञ्प्रत्यय]

जवनी वेगशीला (सूनृता=अन्नादिसमूहकरी राजनीति) १ ५१ २ **जवनीभि:**=वेगवतीक्रियाभि २ १५ ६ [जु वेगिताया गतौ सौत्रो धातु । ततो ल्युडन्तान् ङीप्]

जवम् वेगम् २५ ३ **जवाय**=वेगाय २२ ८ [जवति गतिकर्मा (निघ० २ १४) धातो 'ऋदोरप्' इत्यप् । 'जवसवौ छन्दसि वक्तव्यौ' अ० ३ ३ ५६ वा० सूत्रेण अच् प्रत्ययो वा । वीर्यं वै जव श० १३ ४ २ २]

जवसा वेगेनेव १ ११८.११ **जवसे**=वेगाय ३ ५० २ **जवासि**=वेगा इव ४ ११ ८ [जु वेगिताया गतौ सौत्रो धातु । जवति गतिकर्मा निघ० २ १४ धातोरौणादिकोऽसुन् प्रत्यय]

जविष्ठम् वेगवत्तमम् (मन =अन्त करणवृत्ति) ६ ९ ५ अतिशयेन वेगवत्तरम् (मन) ३४ ६ अत्यन्त वेगवाला (मन =मन) स० प्र० २४७, ३४४ [जव प्राति० अतिशायन इष्ठन् । जव व्याख्यातम्]

जविष्ठा अतिशयेन वेगवन्तौ (वाय्वग्नी) ४ २ ३ [जवप्राति० अतिशायन इष्ठन् । 'सुपा सुलुग्' इत्याकारादेश । जव व्याख्यातम्]

जवीय: अतिशयेन वेगवत् (ब्रह्म=परमेश्वर.) ४० ४ [जवप्राति० अतिशायन ईयसुन् प्रत्यय.]

जवीयान् अतिशयेन वेगयुक्त (रथ) १ ११७.२. अतिशयेन वेगवान् (वायुयानाग्यो रथ) १ १८३ १. [जव प्राति० अतिशायन ईयसुन्]

जवेते गच्छत ३ ३३ १. [जयति गतिकर्मा निघ० २.१४]

जसमानम् शत्रून् हिंसन्तम् (भुज्यु=पालक जनम् १ ११२.६. [जसु हिंसायाम् (चु०) धातो शानच् । व्यत्ययेनात्मनेपदम् । जसति गतिकर्मा निघ० २ १४]

जसुरये हिंसकाय (अरये=शत्रवे) ६ १३ ५ [जसु मोक्षणे (दिवा०) धातो 'जसिसहोरुरिन्' उ० २ ७३ सूत्रेण उरिन्प्रत्यय । जसुरि जस्तमिव नि० ४ २४.]

जसुरिम् प्रयतमानम् (पतिम्) ५ ६१ ७ [व्याख्यातम्]

जस्यत मुञ्चतु मोचयन्तु १ १९१ ७ [जसु मोक्षणे (दिवा०) धातोर्लोट्]

जस्वने अन्यायेन परस्वप्रापकाय दुष्टाय राज्ञे, प्र०—जसतीति गतिकर्मा, निघ० २ १४, ६ ४४ ११ [जसति गतिकर्मा (निघ० २ १४) धातोर्वनिप्]

जहका गात्रसङ्कोचिनी (जोक इति भाषायाम्) २४ ३६ [ओहाक् त्यागे (जु०) धातो 'जहातेर्द्वे च' उ० २ ३४ सूत्रेण क्वुन् प्रत्ययो द्वित्वञ्च स्त्रिया टाप् ऋतूना जहका काठ० ४७ ८ जहका वैष्णवी मै० ३ १४ १७]

जहती: पूर्वामवस्था त्यजन्ती (विश =प्रजा) ७ ५ ३ [ओहाक् त्यागे (जु०) धातो शत्रन्तान् ङीप्]

जहाति त्यजति १ ९५ ७ **जहातु**=त्यजतु ३ ५३ २१. **जहामि**=त्यजामि १२ १०५ [ओहाक् त्यागे (जु०) धातोर्लट्]

जहि दूरे प्रक्षिप ४ २२ ९ हिन्धि गमय वा १ ४२ २ त्यज ७ ४८ ८ मारय दण्डय वा १ १७६ ४ [हन हिंसागत्यो (अदा०) धातोर्लोट् 'हन्तेर्ज' सूत्रेण धातो स्थाने जादेश]

जहितस्य हातु (जनस्य) प्र०—अत्र हा धातोरौणादिक इतच्प्रत्ययो वाहुलकात् सन्वच्च १ ११६ १० [ओहाक् त्यागे (जु०) धातोरौणादिक इतच् । बाहुलकात् सन्वद्भावाद् द्वित्वम्]

जहिता जहितौ त्यक्तारौ (अन्ध=चक्षुर्विज्ञानविकल,

म्तुतिर्जरते म्तुतिकर्मण , ता वोधय, तया वोधयितरिति वा नि० १० ७]

जराय हानये १ १६४ ११ म्नावकाय २ ३४ १० [जॄष् वयोहानो (दिवा०) जरति अर्चतिकर्मा निघ० ३ १४, धातोर्वा वाहु० औणा० अकारप्रत्यय । ततश्चतुर्थी]

जरायु वृद्धाऽवस्थाप्रापकम् (सभेश राजानम्) १० ८ [जरोपपदे इण् गतौ (अदा०) धातो 'किंजरयो श्रिण' उ० १ ४ सूत्रेण ञुण्]

जरायुणा देहाऽऽवरणेन ५ ७८ ८ वहिराच्छादनेन १९७६ जरामेति येन जरायु तेन वस्त्रेणाऽग्निना वा १७ ५ आवरणेन सह ८ २८ [जरायुपद व्याख्यातम् । ततो नपुसके तृतीयैकवचनम् । जरायु =जरया गर्भस्य जरया यूयत इति वा नि० १० ३६ शणा जरायु श० ६ ६ २ १५]

जरित: । प्रशसक । (सज्जन) ३ ३३ ८ सत्यगुणस्तावक (अग्ने=विद्वज्जन) ३ १५ ५ **जरिता**=स्तावक (प्रजाजन) ५ ३६ ३ स्तोता (इन्द्र =सूर्यवद्राजा) ४ १७ १६ सकलविद्यास्तावक (विप्र =मेधाविजन) ५ ४३ १ सेवक (राजपुरुप) ३ ५२.५ सकलविद्याप्रशसक (विद्वज्जन) ५ ३६ ४ **जरितारम्**=विद्यागुणस्तावक पितरम् ५ ३ ११ गुणाना प्रशमकम् (सज्जनम्) ७ २० २ **जरितार.**=सत्यस्तावका (धार्मिका विद्वास) ७ ३२ २ विद्यालाभस्तोतार (विद्वज्जना) ६ २१ १० स्तोतारोऽर्थाद्वायुगुणस्तावका अर्चकाश्च (विद्वासो जना) १ २ २. **जरितु:**=स्तोतुरध्यापकादुपदेशकात् १ ११८२ ४ **जरितृभ्य:**=सकलविद्यागुणस्तावकेभ्य (विद्वद्भ्य) १ १७५ ६ योगगुणसिद्धीना वेदितृभ्य (योगिभ्य) १ १७६ ६ **जरितॄणाम्**=सद्विद्याविदाम, (मनुष्याणाम्) ४ ३१ ३ **जरितॄन्**=सकलविद्यास्तावकान् (सूरीन्=विद्वज्जनान्) ७ ३ ८ **जरित्रे**=सकलविद्याऽध्यापकाय) ४ २१ ११ विद्यागुणप्रकाशकाय (विद्वज्जनाय) याचमानायाऽयाचिताय वा (जनाय) ४ २४ ११ स्तुतिकर्त्रे (सत्पात्राय जनाय) १ १८५ ३. विद्यामिच्छुकाय (सज्जनाय) ४ २३ ११ विदुषे (जनाय) ४ २२ ११ स्तुत्याय (मनुष्याय) ४ १६ १८ अर्चिताय (विद्वज्जनाय) २ ३८ ११ [जरते अर्चतिकर्मा (निघ० ३ १४) धातो कर्त्तरि तृच्प्रत्यय । जरिता=गरिता नि० १ ७ जरिता=स्तोतृनाम निघ० ३ १६ यजमानो जरिता ऐ० ३ ३८]

जरिमा=अतिशयेन जरिता वयोहानिकर्त्ता (मनुष्य) १ ७१ १. अतिशयेन जरा (वृद्धाऽवस्था) ४ १६ १३ एतस्या स्तुतेर्भावयुक्त (सर्वविद्याभिव्याप्तो विद्वान्) १ ७१.१०. स्ताविका (माता=जननी) ४ ४१ १५ अतिशय वृद्धपन स० प्र० ११०, १ १७६ १ **जरिमाणम्**=प्राप्तजरस देहम् १ ११६ २५ [जॄष् वयोहानौ (दिवा०) धातोर्वाहु० औणा० इमनिच्प्रत्यय । जराप्राति० वा, भावे कर्मणि वा इमनिच्प्रत्ययश्छान्दस]

जरूथम् जराऽवस्थया युक्तम् (जीर्ण मेघम्) ७ ९ ६ जराऽवस्था प्राप्त जीर्ण काष्ठम् ७ १ ७ [जॄष् वयोहानौ (दिवा०) धातो 'जॄवॄञ्भ्यामूथन्' उ० २ ६ सूत्रेण ऊथन् प्रत्यय । जरूथ गरूथ गृणाते नि० ६ १७]

जरेत प्रशसिता भवेत् ४ ३ १५ **जरेथाम्**=स्तुयातम् ३ ५८ २ **जरेथे**=जरयत २ ३९ १. [जरति अर्चतिकर्मा निघ० ३ १४ ततो लिङ् । व्यत्ययेनात्मनेपदम् । जरेथे प्रयोगे लट्]

जर्भुरत् भृश धरेत् २ २ ५ [डुभृञ् धारणपोपणयो (जु०) धातोर्यङ् लुगन्ताल् लेट् । विकरणव्यत्ययेन श । शप्रत्ययस्य ङित्वाद् गुणाऽभावे 'उदोष्ठ्यपूर्वस्य' इत्युकारादेशो रपरत्वश्च]

जर्भुराण: भृश धरन् (वरुण =वरो जीव) २ ३८ ८ भृश गात्राणि विनामयत् (वायु) प्र०—अत्र जृभी धातोरौणादिक उरानन् प्रत्यय ११ २४ **जर्भुराणा**=भृश पोपकानि धारकाणि (शृङ्गाणि=सेनाङ्गानि) २९ २२ अत्यन्त पुष्टानि (शृङ्गाणि=कर्माणि) १ १६३ ११ भृश वर्त्तारौ (अग्निवायू) २ ३९ ३ [डुभृञ् धारणपोपणयो (जु०) धातोर्यङ्लुगन्ताच्छानच् । व्यत्ययेनात्मनेपदम् । अन्यत्र=जृभि गात्रविनामे (भ्वा०) धातोरौणादिक उरानन् प्रत्यय । नुमोऽभावश्छान्दस । नाभिभृशे तन्वा जर्भुराण इति न ह्योपो (अग्नि) ऽभिमृशे तन्वा दीप्यमानो भवति श० ६ ३ ३ २०]

जर्भुरीति भृश धरति ५ ८३ ५ [डुभृञ् धारणपोपणयो (जु०) धातोर्यङ्लुगन्ताल् लट्]

जर्हृषन्त भृश हृष्यन्तु ६ १७ ४ [हृष तुष्टौ (दिवा०), हृषु अलीके (भ्वा०) धातोर्यङ्लुगन्ताल् लङ् । अडभाव । व्यत्ययेनात्मनेपदम्]

जर्हृषाण: भृश हृषित (इन्द्र =विद्वान् सेनापति.) ७ २१ ४ पुन पुनर्हर्ष प्रापयन् (राजप्रजाजन) १ ५२ २ अतिशयेन हृष्ट (अग्नि =शूरवीर सेनापति) ५ ३७ [हृष तुष्टौ (दिवा०) धातोर्यङ्लुगन्ताच् छानच् । व्यत्ययेनात्मनेपदम्]

७ ३ ८५ सूत्रेण गुणप्रतिषेध । जागृवि जागरणात् । नि० ६ ८ यज्ञो वै जागृवि काठ० ३७ १०]

जागृहि विद्यामुन्नय २७ ३ अ०—अस्माँश्च जागृतान् कुरु २७ ३ अविद्याऽन्धकार-निद्रात सर्वान् पृथक्कृत्य विद्याऽर्कप्रकाशे जागृतान् कुरु, अविद्यानिद्रा त्यक्त्वा विद्यया चेत १५ ५४ जागर्ति प्र०—अत्र व्यत्ययो लडर्थे लोट् च ४ १४ निद्रादिक गृहकार्ये परित्यज २७ ३ [जागृ निद्राक्षये (अदा०) धातोर्लोट्]

जाग्रतः भा० जागृताऽवस्थस्य (मम=जनस्य) ३४ १ जागते हुए (मे=मुझ जन) का, स० प्र० २४६, ३४ १ [जागृ निद्राक्षये (अदा०) धातो शतृप्रत्यय]

जाग्रत् जागरणे २० १६ [जागृ निद्राक्षये (अदा०) धातो शतृ । 'सुपा सुलुग्' इति डेर्लुक्]

जाग्रद्भ्यः प्रवुद्धेभ्य (राजपुरुषेभ्य) १६ २३ [जागृ निद्राक्षये (अदा०) धातो शतृप्रत्यय]

जातम् प्रसिद्धम् (पतिम्) ५ ३२ ११ उत्पन्नम् ३२ ५ प्रकटम् (सोमम्=ऐश्वर्यम्) ३ ५१ ८ प्रसिद्धि गतम् (अमृत) २ ८३ ५ प्रादुर्भूत जगत्कर्त्तारम् (भा०—सृष्टिकर्त्तारमीश्वरम्) ३१ ६ प्रसिद्धमुत्पन्न वलम् १ ११७ १६ यत्किञ्चिदुत्पन्न कार्यम् २५ २३ उत्पन्न विज्ञानम् १ १५६ २ **जातस्य**=उत्पन्नस्य कार्यस्य १ ६६ ७ प्रसिद्धस्य जगतो मध्ये २ ३३ ३ **जातः**=प्रकटत्व गत (सेनेश) १ ६६ ४ प्राकट्य प्राप्त, भा०—प्रकटीभूत (देव =ईश्वर) ३२ ४ विद्याजन्मनि प्रादुर्भूत (अग्नि = विद्वान् पुत्र) ४ २ २ प्रकट सन् (सूर =सूर्य) १ १३० ६ प्रादुर्भूतस्य (ससारस्य), प्र०—अत्र षष्ठ्यर्थे प्रथमा २५ १० निष्पन्न , भा०—प्रसिद्ध (अग्नि =सूर्यवद् राजा) १२ १३ जनक (प्रजापति) १३ ४ **जातान्**=उत्पन्नान् प्रसिद्धान् (सपत्नान्=शत्रून्) १५ १ प्रादुर्भूतान् विरोधिन (शत्रून्) १५ २ **जातानि**=प्रसिद्धानि (वलादीनि) ६ २५ ५ उत्पन्न हुए (जड चेतनादिको) को स० वि० ६, १० १२१ १० [जनी प्रादुर्भावे (दिवा०) धातो क्त प्रत्यय । 'जनसनखना सञ्झलो' अ० ६ ४ ४२ सूत्रेण आकारादेश । जात जायमान नि० ८ २१]

जातवेदसम् प्रसिद्धविद्यम् (पतिम्) १ १२७ १. जातेषु विद्यमानम् (पावकम्) ५ २६ ७ जातेषु पदार्थेषु विद्यमानमिव व्याप्तविद्यम् (परमेश्वरम्) १ ४४ ४ जात-विद्यम् (मित्र=सखायम्) ६ ४८ १ जातविज्ञानम् (मित्र=सखायमीश्वरम्) २७ ४२ उत्पन्न वेदविज्ञानम् ११ ५३. प्राप्तविद्यम् (सन्तानम्) ३ ११.४ प्रसिद्ध-प्रज्ञम् (विप्रम्=आप्त मेधाविजनम्) १५ ४७ यो जातान् पदार्थान् विन्दति तम् (सूर्यम्) १ ५० १ यो जातान् वेत्ति, विन्दते, जाता वेदसो वेदा पदार्था वा यस्मात्तम् (सूर्यम्=ईश्वरम्) ८ ४१ यो जातेषु सर्वेषु स्वव्याप्त्या विद्यतेऽथवा जातान् सर्वान् पदार्थान् वेत्ति तम् (चेतन=परमात्मानम्) ३ ३ ८ जात-वित्तम् (अग्नि=विद्युदादिस्वरूपम्) २ २ १ जाता ऋग्वेदादयश्चत्वारो वेदा सर्वज्ञानप्रदा यस्मात् तथा जातानि प्रकृत्यादीनि भूतान्यसङ्ख्यातानि विन्दति, यद्वा जात सकल जगद् वेत्ति जानाति स जातवेदास्तम् (ईश्वरम्) प० वि० । **जातवेदसः**=जातविद्या विद्वास सन्त (विप्रास =मेधाविनो जना) ३ ११ ८ **जातवेदसा**=प्राप्तप्रकटविद्यौ (स्त्रीपुरुषौ) ७ २ ७ **जातवेदसि**=जात-विद्ये (सद्गृहस्थे) ६ १६ ४२ **जातवेदसे**=यो जात सर्व वेत्ति, विन्दति, जातेषु विद्यमानोऽस्ति, तस्मै (जगदीश्वराय) १ ६६ १ उत्पन्न मात्र सब जगत् को जानने वाले, सर्वत्र प्राप्त, विद्वानो से ज्ञात, सब मे विद्यमान, जात अर्थात् प्रादुर्भूत, अनन्त धनवान् वा अनन्त ज्ञानवान् परब्रह्म के लिए, आर्याभि० १ ३३, ऋ० १ ७७ १ जाते जाते उत्पन्ने पदार्थे विद्यमानस्तस्मिन्, अ०—जातवेदसि (अग्नये=रूपादिगुणस्वभावे), प्र०—जाते जाते विद्यते इति वा, जातवित्तो वा, जातधनो, जातविद्यो वा, जात-प्रज्ञानो यत् तज्जात पशूनविन्दतेति तज्जातवेदसो जात-वेदस्त्वमिति, नि० ७ १६, ३ २ जातेषु पदार्थेषु विद्यमानाय जातप्रज्ञानाय वा (भौतिकाऽग्नये परमात्मने वा) ३ १० ३ यो विद्वान् जात सर्व वेत्ति, तस्मै, जातेषु कार्येषु विद्यमानाय वा (ईश्वराय) १ ६४ १ **जातवेदसौ**=जात वेदो विद्या ययोस्तौ (अ०—अध्येत्रध्यापकौ) ५ ३ उत्पन्नाऽखिलविज्ञानौ (स्त्रीपुरुषौ) १२ ६० **जातवेदः**=यो जातान् सर्वान् वेत्ति जातान् विन्दति वा तत्सम्बुद्धौ (अग्ने=परमेश्वर !) १ ४४ १ जात विज्ञान यस्य स (अग्ने=विद्वज्जन) १५ ३५ जातप्रज्ञानवल (तेजस्विन् राजन्) ६ १६ २६ प्रकटविद्य (अग्ने=विद्वज्जन) २७ २२ जाता वेदा प्रज्ञा यस्य तत्सम्बुद्धौ (विद्वन्) १६ ६७ जाता वेदा यस्माद्, जातान् वेदान् वेत्ति, जातान् सर्वान् पदार्थान् विन्दति, जातेषु पदार्थेषु विद्यते वा तत्सम्बुद्धौ (वैश्वानर=जगदीश्वर) १ ५६ ५ जातेषु जनेषु ज्ञानिन् विद्वन् (जन) १६ ३६ जाता विदिता वेदा य य तत्सम्बुद्धौ (अग्ने=विद्वन् राजन्) १२ १६ जातवित्तम् (अग्ने=अग्निम्) प्र०—अत्र विभक्ति-व्यत्यय ३ २६ ४ **जातवेदाः**=जात वेदो विज्ञान यस्य

भोग=विकल च जनम्) ४ ३० १६ [ओहाक् त्यागे (जु०) धातोरौणादिक इतच्प्रत्यय । वाहुलकाच्च सन्-वत्त्वे द्वित्वम् । 'सुपा सुलुग' इत्याकार]

जहीमः त्यजाम ३५ १० [ओहाक् त्यागे (जु०) धातोर्लट्]

जहुः त्यजन्ति २ २४ ७ जहति ७ १८ १५ [ओहाक् त्यागे (जु०) धातो सामान्ये लिट्]

जहृषाणः अतिशयेन हृष्ट (सेनापति) ५ ३७ **जहृषाणेन**=सज्जनाना सन्तोषकेन (मन्युना=क्रोधेन) प्र०—अत्र हृष तुष्टौ इत्यस्माल्लिट कानच्, तुजादित्वाद् दीर्घश्च १ १०१ २]

जह्नावीम् जहत्यास्त्याज्याया शत्रुसेनाया इमा विरोधिनी सेनाम्, प्र०—'जहातेर्द्वेऽन्त्यलोपश्च' उ० ३ ३६ इति हा धातोर्नुस्तत 'तस्येदम्' इत्यण्, पृषोदरादित्वाद् वर्णविपर्यय १ ११६ १६ **जह्नाव्याम्**=जह्नोरत्यक्तुरिय नीतिस्तस्याम्, प्र०—अत्राऽऽकाराऽकारयोर्व्यत्यय ३ ५८ ६ [ओहाक् त्यागे (जु०) धातो 'जहातेर्द्वेऽन्त्यलोपश्च' उ० ३ ३६ सूत्रेण नु-प्रत्यये जह्नु । तत 'तस्येदम्' इत्यण् प्रत्ययान्तान् ङीप् । वर्णव्यत्ययेनाकार याकार, अकारस्य चाका‍ादेश]

जंह. सद्यो ग ता (यजत्र =राजा) ६ १२ २

जागतम् जगज्जानाति येन तत् (छन्द =सृष्टि-विद्या-वलकारक वेदम्) १२ ५ **जागतः**=जगतीप्रगाथोऽस्य स (यज्ञ) ४ २४ **जागतेन**=जगत्या विहितेन साधनेन ११ १० जगत्येव जागत सर्वलोकसुखकारक तेन (छन्दसा=आह्लादकारकेणाऽनुष्ठानेन) २ २५ जगतीप्रगाथो-ऽस्य तेन (छदसा) ५ २ जगतीछन्द प्रकाशितेनाऽर्थेन २३ ८ जगत्युक्तेन (छन्दसा) १३ ५३ जगत्येव जागत तेन (छन्दसा) १ २७ जगद्विद्याप्रकाशकेन (छन्दसा) ११ ६५ **जागतेभ्यः**=जगतीवोधितेभ्य (देवेभ्य =दिव्यगुणेभ्यो जनेभ्य) २९ ६० [जगतीप्राति० 'सोऽस्यादिरिति च्छन्दस प्रगाथेषु' अ० ४ २ ५५ सूत्रेणाण्प्रत्यय । अथवा जगति प्राति० 'छन्दस प्रत्ययविधाने नपुसके स्वार्थ उपसख्यानम्' वा० सूत्रेण स्वार्थेऽण् प्रत्यय]

जागरणम् जागृतम् (प्रवोधम्) ३० १७ [जागृ निद्रा-क्षये (अदा०) धातोर्ल्युट् भावे]

जागरासि जागती रहे, स० वि० १६६, अथर्व० १४ २ २६ [जागृ निद्राक्षये (अदा०) धातोर्लेट् । आडागम]

जागार जागृतो भवति ५ ४४ १५ **जागारः**= अविद्यानिद्राया उत्थाय जागर्ति ५ ४४ १४ [जागृ निद्राक्षये (अदा०) धातोर्लिट् । 'छन्दसि वेति वक्तव्यम्' अ० ६ १ ८. वा० सूत्रेण वा द्वित्वम्]

जागरूके प्रसिद्धे (द्यावापृथिव्यौ) ३ ५४ ७ [जागृ निद्राक्षये (अदा०) धातो 'जागुरूक' अ० ३ २ १६५ सूत्रेण तच्छीलादिषु ऊक प्रत्यय]

जागृतम् प्रसिद्धगुणौ स्त, प्र०—अत्र व्यत्ययो लडर्थे लोट् च १ २१ ६ [जागृ निद्राक्षये (अदा०) धातोर्लोट्]

जागृधुः अभिकाङ्क्षेयु २ १३ १६. [गृधु अभिकाङ्क्षायाम् (दिवा०) धातोर्लिटि प्रथमवहुवचनम् तुजादित्वादभ्यासस्य दीर्घ]

जागृयाम सचेतना अनलसा सन्तो वर्त्तेमहि ९ २३ [जागृ निद्राक्षये (अदा०) धातोर्लिङि उत्तमपुरुषे वहुवचनम्]

जागृवद्भिः अविद्यानिद्रात उत्थातृभि (योगिभिर्जनै) ७ ५ १ अविद्याऽऽलस्य-निद्रा विहाय विद्यापुरुषार्थादिक प्राप्तै (मनुष्येभि =मनुष्यै) ३ २९ २ **जागृवांसः**= अविद्यानिद्रात उत्थाय जागरूका, भा०—पुरुषार्थिन (विप्रास =मेधाविजना) ३४ ४४ अविद्यानिद्रान उत्थिता विद्याया जागरूका (विप्रा =-मेधाविनो जना) ३.१० ९. जागरूका (मेधाविजना), प्र०—अत्र जागर्तेर्लिट स्थाने क्वसु 'द्विर्वचनप्रकरणे छन्दसि वेति वक्तव्यम्' अ० ६ १ ६ अनेन द्विर्वचनाऽभावश्च १ २२ २१ [जागृ निद्राक्षये (अदा०) धातोर्लिट स्थाने क्वसु । 'छन्दसि वेति वक्तव्यम्' इति वा० सूत्रेण द्वित्वाऽभावश्च]

जागृवांसा जागृतौ (सभासेनेशौ) १ १३६ ३ [जागृ निद्राक्षये (अदा०) धातोर्लिट क्वसु । द्वित्वाऽभावश्च छान्दस । 'सुपा सुलुग्०' इत्याकार]

जागृवि जागरूकम् (ज्योति =तेज) २० ३० प्रसिद्धम् (नाम=सज्ञा) ७ २ जागरूका कार्यसाधनेऽप्रमत्ता (सरस्वती=सद्विद्या स्त्री) प्र०—अत्र 'सुपा सुलुक्०' इति सोर्लोप २१ ३६ **जागृविः**=सदा जाग्रदिव (वैश्वानर = पावक) ३ २ १२ जागरूक (अग्नि =विद्युत्) १२ १० यो नित्य धर्म्ये पुरुषार्थे जागर्ति स (अग्नि =सभास्वामी राजा) १.३१ ९ **जागृवे !**=जागृत (अग्ने—विद्वज्जन) ३ ३ ७ जागरूक (अग्ने=प्रकाशयुक्त राजन्) ३.२४.३ [जागृ निद्राक्षये (अदा०) धातो 'जॄशॄस्तॄजागृभ्य क्विन्' उ० ४.५४ सूत्रेण क्विन् । 'जाग्रोऽविचिण्णल्ङित्सु' अ०

राकृतिगणत्वाद् भवाऽर्थेऽञ् 'शेश्छन्दसि बहुलम्' इति शेर्लोप । अत्र सायणाऽऽचार्येण पृषोदराद्याकृतिगणत्वादाद्युदात्तत्व प्रतिपादित, तदशुद्धम्, अनुत्सर्गाऽपवादत्वात् १ ६५ ३ [जनप्राति० भवार्ये 'उत्सादिभ्योऽञ्' अ० ४ १ ८६ सूत्रेणाञ् । उत्सादेराकृतिगणत्वात्]

जानाथ विजानीत, प्र०—लेट्-प्रयोगोऽयम् १८ ६०. **जानाथाम्**=जानीत, प्रादुर्भूतविद्यामाधिके भवत, प्र०—अत्र व्यत्ययो लडर्थे लोट् च २ १६ **जानीहि**=विद्धि १ ५१ ८ [ज्ञा अवबोधने (क्र्या०) धातोर्लोट् । व्यत्ययेनात्मनेपदम]

जानुना उरुजङ्घयोर्मध्यभागौ २० ८ [जानुप्राति० प्रथमाद्विवचनम् । जानु=जनी प्रादुर्भावे (दिवा०) धातो' 'दृसनिजनि०' उ० १ ३ सूत्रेण ञुण्प्रत्यय]

जापयत उत्कर्षेण बोधयत, उत्कृष्टता प्रापयत ९ ११. [जि जये (भ्वा०) धातोर्णिजन्ताल्लोट् । 'क्रीङ्जीना णौ' इत्येच स्थाने आत्वे पुगागम]

जामयः बन्धव इव १ २३ १६ प्राप्तचतुर्विंशतिवर्षा युवतय ३ ५७ ३ पतिव्रता भार्या उव ६ २५ ३ ज्ञानवन्त्यपत्यानि, प्र०—जमतीति गतिकर्मसु पठितम्, निघ० २ १४ अत्र जमु धातो 'इणजादिभ्य' अ० ३ ३ १० अनेनेण्प्रत्यय 'जमतेर्वा स्याद् गतिकर्मण' नि० ३ ६, १ ३१ १० **जामये**=जामात्रे ३.३१ २ जामिभि=बन्धुवर्गै १ १०० ११ स्त्रीभि १ ७१.७ **जामिम्**=भोजनयुक्तम् (स्थानम्) १३ १३ जामाग्रादिकम् ६ ४४ १७ भोगम् ४ ४ ५ प्रसिद्ध (शत्रुम्) १ १११.३ भार्य्याम् १ १२४ ६ जायमानम् (अग्नि=पावकम्) ३ २ ६ **जामि**=उदकमिव शान्तिप्रद (विद्वान् जन) १ ७५ ४ बन्धु (इन्द्र=राजपुरुष) ४ २५ ६ सुखप्रापको बन्धु १ ६५ ४ कन्येव (उषा) १ १२३ ५ ज्ञाता (अग्नि=महाविद्वज्जन) प्र०—अत्र ज्ञा-धातोर्बाहुलकादौणादिको मि प्रत्ययो जाऽऽदेशश्च १ ७५ ३ **जामि**=जातम् (सना=सनातन ब्रह्म) ३ ५४ ९ **जाम्योः**=अत्तव्याऽन्नप्रदयोर्द्यावापृथिव्यो ५ १९ ४ [या प्रापणे (अदा०) धातोर्बाहुलकाद् (उ० ४ ४३) सूत्रेणौणादिको मि प्रत्यय । धातोरादेश्च जकारादेश । जमतीति गतिकर्मसु पठितम् (निघ० २ १४), तत 'इणजादिभ्य । अ० ३ ३ १० वा० सूत्रेण इण्प्रत्यय । जामये=भगिन्यै जामिरन्येऽस्या जनयन्ति जामपत्यम् । जमतेर्वा स्याद्गतिकर्मणो निर्गमनप्राया भवति नि० ३ ६ जामि=अतिरेकनाम, बालिशस्य वा, असमानजातीयस्य वोपजन. नि० ४ २० जामि उदकनाम निघ० १ १२ जामय.=अङ्गुलिनाम निघ० २ ५]

जामर्य्येण जामर्येण जाम, तस्मादृते येन तेन (पयसा=दुग्धेन, धाणिना=अन्नेन) ४.३ ९

जामात.[1] कन्यापतिवद् वर्त्तमान[1] (वायो=विद्वज्जन) २७ ३४ [जाया कन्या मानि मिनोति मिमीते मार्जयतिवेति विग्रहे जायोपपदे माङ् माने (जु०) मा माने (अदा०) धातोर्वा 'नप्तृनेष्टृत्वष्टृ०' उ० २.९५ सूत्रेण तृच् । निपातनाद् या-लोपश्च]

जामि जातम् (सर्व जगत) ३ ५४ ९

जामित्वम् सुख-दु खभोगम् १.१६६.१३ **जामित्वाय**=कन्यावत् पालनाय प्रजाभावाय १ १०५.६ [जामिपद व्याख्यानम् । ततो भावे कर्मणि वा त्व प्रत्यय]

जामी सुखभोक्तारौ (अध्यापकोपदेशकौ) १ १५८ ४ कन्ये इव १ १८५ ५. **जामीन्**=सम्बन्धिनो बन्धून् (मित्राणि) ६ १९ ८ **जामीनाम्**=भोक्तृणाम् (स्वसृणा=भगिनीनाम्) ३ १ ११ [जामिरिति व्याख्यातम् । (जमु अदने (भ्वा०) धातो 'इण् अजादिभ्य' वार्त्तिकेन इण् प्रत्यय । प्रथमाद्विवचने पूर्वसवर्णदीर्घ]

जाम्बिलेन फलविशेषेण २५ ३.

जायत जायते, प्र०—अत्राऽडभाव ४ १ ११ **जायताम्**=उत्पद्यताम् ३५ २२ **जायते**=प्रसिद्धो भवति २.३ ९ उत्पद्यते ५ १ ४ प्रकाशितो भवति २३.४६ **जायन्ते**=उत्पद्यन्ते ३ ३६ ५ **जायसे**=उत्पद्यसे ५ ११ ३ [जनी प्रादुर्भावे (दिवा०) धातोर्लङ्, अडभावश्छान्दस । 'ज्ञाजनोर्जा' इति शिति जादेशश्च । अन्यत्र लोट्लटौ]

जायमानम् उत्पद्यमानम् (भोगम्) १ ६० ३ **जायमानस्य**=कल्पाऽन्ते पुनरुत्पद्यमानस्य कार्यस्य जगत १ ९६ ७ **जायमानः**=उत्पद्यमान (इन्द्र=राजा) ४ १७ ७ प्रसिद्ध (अग्नि=विद्वान् जन) ३ ६ ५ प्रादुर्भवन् (मनुष्य) १ ९६ १ प्रकट सन् (विद्युदग्नि) ६ १० ४ दूसरे विद्याजन्म मे प्रसिद्ध (पुरुष), स० प्र० १०६, ३ ८ ४ विद्याया मातुरन्त स्थित्वा निष्पन्न (विद्यार्थिजन) ३ ८ ४ **जायमानाः**=उत्पद्यमाना (उपस=प्रभातवेला) ६ ५२ ४ [जनी प्रादुर्भावे (दिवा०) धातो शानच्]

जायमाना उत्पद्यमानौ (पूजनीयौ अध्यापकोपदेशकौ) ६ ६७ ४ उत्पद्यमाना (उषा) १ ९२ १० **जायमानाम्**=

स (विद्वज्जन) १ ७ ६ ६ जातप्रज्ञो वेदार्थवित् (मनुष्य) १८ ५ ६ जातानि वेद्यानि धनानि यस्मात् स (अग्नि = पावक) ३.२३ १ यो जातेषु सर्वेषु पदार्थेषु विद्यमानोऽग्नि ३ २६ २ यो जातेषु पदार्थेष्वभिव्याप्य विद्यते स (अग्नि = पावक इवेश्वर) ७ १२ २ यो जातान् विन्दति वेत्ति वा स (सभाध्यक्ष) १ ७७ ५ आविर्भूत विद्यायोगप्रज्ञ, भा०—वेदादिशास्त्रवेत्ता (राजा) ३ ३ १६ जातानां सर्वेषां पदार्थानां वेत्ता जगदीश्वर ३ ५ ४ यो जातेषु पदार्थेषु अजात सन् विद्यते स (जीव) ३ १ २१ [जातशब्दोपपदाद् विद ज्ञाने (अदा०) विद सत्तायाम् (दिवा०) विद्लृ लाभे (तुदा०) विद विचारणे (रुधा०) विद चेतनाख्याननिवासेषु (चुरा०) धातोर्वौणादिकोऽसुन्। जातवेदा कस्मात्? जातानि वेद, जातानि वैनं विदु, जाते जाते विद्यत इति वा, जातवित्तो वा जातधन, जातविद्यो वा जातप्रज्ञान। 'यत्तज् जात पशूनविन्दतेति तज्जातवेदसो जातवेदस्त्वम्' इति ब्राह्मणम्। 'तस्मात् सर्वानृतून् पशवो ऽग्निमभिसर्पन्ति' इति च। स न मन्येऽयमेवाग्निरिति। अप्येते उत्तरे ज्योतिषी जातवेदसी उच्येते ततो नु मध्यम। ···अथासावादित्य, ·····अयमेवाग्निर्जातवेदा निपानमेवैते उत्तरे ज्योतिषी एतेन नामधेयेन भजेते नि० ७ १६ २०

सो ऽब्रवीज्जाता वै प्रजा अनेनाविदमिति, यदब्रवीज्जाता वै प्रजा अनेनाविदमिति तज्जातवेदस्यमभवत्तज्जातवेदसो जातवेदस्त्वम् ऐ० ३ ३६ प्राणो वै जातवेदा स हि जातानां वेद ऐ० २ ३६ तद् यज्जात जात विन्दते तस्माज्जातवेदा श० ६ ५ १ ६८ वायुर्वै जातवेदा वायुर्हीदं सर्वं करोति यदिदं किञ्च ऐ० २ ३४ जातवेद शिवो भव तै० स० ४ १ ६ ४ यज्जात पशूनविन्दत तज्जातवेदसो जातवेदस्त्वम् मै० १ ८ २]

जाता जातौ (अश्विनौ = अध्यापकोपदेशकौ) १ १८१ ४ [जातपद व्याख्यातम्। 'सुपा सुलुगि०' त्याकारादेश]

जाता प्रसिद्धा (वाक्) ६ ६१ १२ **जातासु** = उत्पन्नासु प्रजासु ३ ५५ ५ **जातेभिः** = उत्पन्नै (सृष्टिपदार्थै) ३ ३१ ११ [जात इति व्याख्यातम्। तत स्त्रिया टाप्। जातेभि = भिस ऐसादेशो न भवति छन्दसत्वात्]

जातूभर्मा यो जातान् जन्तून् बिभर्त्ति स (इन्द्र = सेनाद्यध्यक्ष) प्र०—अत्र जनिधातोरुत्तु प्रत्ययो नकारस्याकारादेशोऽन्येषामपीति दीर्घ १ १०३ ३ [जातु = जनी प्रादुर्भावे (दिवा०) धातोरौणादिकस्तु प्रत्ययो नकारस्य चाकारादेशो बाहुलकात्। तदुपपदे डुभृञ् धारणपोषणयो (जु०) धातोर्मनिन्प्रत्यय]

जातूष्ठिरस्य कदाचिल्लब्धस्थिते. (मेनेरस्य) २ १३ ११ [जातु-स्थिरपदयो समास। संहितायां दीर्घ]

जानतः धार्मिकान् विदुष (जनान्) ३ ४२ जानने वाले (विद्वानो) को, स० वि० १४७, ३ ४२ **जानता** = विदुषा (जनेन) ५ ५१ १५. [ज्ञा अवबोधने (क्र्या०) धातो शतृप्रत्यय। 'ज्ञाजनोर्जा' इति शित्प्रत्यये जादेश]

जानताम् विज्ञानवन्तो भवत, ऋ० भू० ६२, १० १६१ २ [ज्ञा + शतृ इति व्याख्यातम्। तत षष्ठ्या बहुवचनम्]

जानती ज्ञापयन्ती (उषा) १ १२३ ६ या जानाति सा स्त्री १ १३४ १ विज्ञानवती (वैद्या स्त्री) ३ ३ ५६. प्रबुध्यमाना (प्रज्ञा) १ १०४ ५ **जानतीः** = ज्ञानयुक्ता (विदुषी स्त्री) १ १४० ७ ज्ञानवत्य (उषास = प्रभातान्) ३ ३१ ४ विज्ञानवती (ग्रा = वाण्य) ४ १ १६ [ज्ञा अवबोधने (क्र्या०) धातो शत्रन्तान् ङीप्]

जानते जानन्ति ३ ५७ ३ जानते और जनाते है प० वि० [ज्ञा अवबोधने (क्र्या०) धातोर्लट्। व्यत्ययेनात्मनेपदम्]

जानतः धार्मिकान् विदुष (जनान्) ३ ४२ **जानन्** = जानन्ती च (पुरुष स्त्री च) १५ ५६ [ज्ञा अवबोधने (क्र्या०) धातो शतृ। शिति प्रत्यये धातोर्जादेश]

जानन् जानीयु १७ ४७ **जानन्तु** = विदन्तु ३ ४२ सुहृत् जाने स० वि० १४७, ३ ४२ [ज्ञा अवबोधने (क्र्या०) धातो सामान्ये लङ्। अडभावश्छान्दस। अन्यत्र लोट्। शितिप्रत्यये जादेश]

जानम् जायते यस्मात्तदाकाशम्, प्र०—अत्र जनधातो घञ्, स्वर-व्यत्ययेनाऽऽद्युदात्तत्वम्। सायणाऽऽचार्येणेद जनिवध्वो' इत्यादीनामबोधादुपेक्षितम् १ ३७ ६ प्रादुर्भावम् ५ ५३ १ [जनी प्रादुर्भावे (दिवा०) धातोर्घञ् प्रत्यय]

जानराज्याय जनानां विदुषां मध्ये परमराज्यकरणाय, ऋ० भू० २२२, ६ ४० जनानां राज्ञां माण्डलिकानामुपरि प्रभवाय (महाराजाय) १०.१८ बडे-बडे विद्वानो मे युक्त राज्य पालने के लिए, स० प्र० १८३, ६ ४० जनाना राजसु भवाय (इन्द्रियाय = धनाय) ६ ४०. [जन-राज्यपदयो समासे भवार्थेऽण् प्रत्यय]

जाना जनेषु भवानि (कर्माणि), प्र०—अत्रोत्सादे-

जिगातु=प्रशसति २ ३४ १५ [जिगाति गतिकर्मा निघ० २.१४ ततो लोट्। गा स्तुतौ (जु०) धातोर्वा लोट्]

जिगाय जयति ६ ३२ ३ जयेत् ३ ३४ ४ जयति, उत्कर्षता प्रापयति, प्र०—अत्र लुङर्थे लिट् १ ३० १६ [जि जये (भ्वा०) धातोर्लिट्। 'सन्लिटोर्जे' अ० ७ ३ ५७ सूत्रेणाभ्यासादुत्तरस्य कवर्गादेश]

जिगीवान् जयशील (अर्य =ईश्वर) २ १२ ४ **जिगीवांस.**=शत्रुधनानि जेतुमिच्छन्त (वीरजना) ५ ६२ ६ जेतु शीला (प्रजाजना) ६ १६ ७ [जि जये (भ्वा०) धातोर्लिट क्वसु। 'सन्लिटोर्जे' इत्यभ्यासादुत्तरस्य कुत्वम्]

जिगीषति शत्रून् जेतुमिच्छति, ऋ० भू० २३८, [जि जये (भ्वा०) धातोरिच्छाया सन्। ततो लट्]

जिगीषमाणम् जेतुमिच्छन्तम् (रूपम्) १ १६३ ७ शत्रून् विजयमानम् (वीरस्योत्तमरूपम्) २६ १८ [जि जये (भ्वा०) धातोरिच्छाया सन्नन्ताच् छानच्। व्यत्ययेनात्मनेपदम्]

जिगीषा जेतुमिच्छा १ १८६ ४ जेतुमिष्टानि (अहानि=दिनानि) १ १७१ ३. [जि जये (भ्वा०) धातोरिच्छाया सन्। तत स्त्रियाम् 'अ प्रत्ययात्' इत्यकारप्रत्यये टाप्]

जिगीषु. जयशील (विद्वज्जन) २ ३८.६ [जि जये (भ्वा०) धातोरिच्छाया सन्नन्तात् ताच्छील्ये 'सनाशसभिक्ष उ' अ० ३ २ १६८ इत्युकारप्रत्यय]

जिगृत उद्गिरत ७.५७.६ **जिगृतम्**=जागृतो भवतम् १ १५८ २ उपदेशयतम् ४ ५० ११.

जिगेथ जितवानसि १ १०२ १०. **जिग्यथुः**=विजयेथे ६ ६६ ८ [जि जये (भ्वा०) धातोर्लिटि मध्यमैकवचनम्। 'सन्लिटोर्जे' इत्यभ्यासादुत्तरस्य कुत्वम्]

जिग्युभि. विजेतृभि (शूरवीरैर्जनै) १.१०१ ६

जिग्युषः विजययुक्तान् (धार्मिकाञ्जनान्) १ १७ ७ जयशीलस्य (राज्ञ) ७ ३२ १२. **जिग्युषे**=जयशीलाय (वीरपुरुषाय) २७ ३८ [जि जये (भ्वा०) धातोर्लिट। क्वसु। अभ्यासादुत्तरस्य पूर्ववत् कुत्वम्]

जिग्ये जयति, जितवान् भवति १ ३२ १३ पराजितो भवति ६ ६६ ८ [जि जये (भ्वा०) धातोर्लिट्। व्यत्ययेनात्मनेपदम्]

जिघत्नु. हन्तुमिच्छु (प्रजाहिंसको जन) २ ३०.६ [हन हिंसागत्यो (अदा०) धातोर्बाहुलकाद् (उ० ३ ३१) औणा० क्नु मनवच्च कार्यम्]

जिघर्त्ति क्षरति ४.१७ १४ **जिघर्मि**=प्रदीप्ये सञ्चालयामि वा ४ २२ [घृ क्षरणदीप्त्यो (जु०) धातोर्लट्। 'बहुल छन्दसि' अ० ७ ४ ७८ सूत्रेणाभ्यासस्येत्वम्। जिघर्त्ति जिघर्त्ते निश्चनिकर्मण नि० ७ २४]

जिघांसतः हन्तुमिच्छत (मनुष्यात्) १ ८० १३. जो मारने की इच्छा करता है, उस मनुष्य से, सायाभि० ११२, १३.१०.१५ **जिघांसद्भ्यः**=हन्तुमिच्छद्भ्य (प्रजाजनेभ्य) १६ २१ **जिघांसन्**=हन्तुमिच्छन् (इन्द्र=राजा) ४ २३ ७ [हन हिंसागत्यो (अदा०) धातोरिच्छाया सन्नन्तात् शतृप्रत्यय.। 'अभ्यासाच्च अ० ७ ३ ५५ सूत्रेणाभ्यासादुत्तरस्य कुत्वम्]

जिघांसति हन्तुमिच्छति, भा०—हिंसितुमिच्छति (मनुष्य) २२ ५ **जिघांसति**=हन्तुमिच्छति १.१८० २ [हन हिंसागत्यो (अदा०) धातोरिच्छाया सन्नन्ताल्लट्]

जिघ्नते हन्त्रे (शत्रवे) १ ८० ५. [हन हिंसागत्यो (अदा०) धातो शतृ। 'बहुल छन्दसि' इति शप श्लु]

जिघ्नते हन्ति ६ ५६.२ प्राप्नोति ६ ५३ ३ गच्छन्ति, प्र०—अत्र 'बहुल छन्दसि' इति शप श्लुर्व्यत्ययेनाऽऽत्मनेपद च १ ५४ १०. घ्नन्ति गमयन्ति २६ ५०. **जिघ्नन्ते**=हिंसन्ति प्र०—अत्र 'बाच्छन्दसि सर्वे विधयो भवन्ति' इति अदादेशविकल्प १ ६४ ११. **जिघ्नसे**=हन्या प्र०—अत्र हनधातोर्लेटि शप स्थाने श्लुर्व्यत्ययेनाऽऽत्मनेपद च १.१०२.७ [हन हिंसागत्यो (अदा०) धातोर्लेट्। शप स्थाने श्लुश्छान्दस। व्यत्ययेनात्मनेपदश्च]

जिघ्नमानः घ्नन् सन् (राजा) ३.३०.४. [हन् हिंसागत्यो (अदा०) धातो शानच्। 'बहुल छन्दसि' इति सूत्रेण शप स्थाने श्लु। व्यत्ययेनात्मनेपदम्]

जिघ्रत सुगन्धान् बोधान् वा गृह्णीत ६६. [घ्रा गन्धोपादाने (भ्वा०) धातोर्लोट्। 'पाघ्रा०' इत्यादिना शिति जिघ्रादेश]

जिजिन्वथुः प्रीणीथ, समीक्षा—अत्र सायणाचार्येण भ्रमाल्लिटि मध्यमपुरुषद्विवचनान्तप्रयोगे सिद्धेऽप्यन्तमशुद्ध प्रथमपुरुषबहुवचनान्त साधितमिति वेद्यम् १ ११२.६ [जिवि प्रीणनार्थे (भ्वा०) लिटि मध्यमपुरुषस्य द्विवचने रूपम्]

जिजीविषेत् जीवितुमिच्छेत् ४० २. जीने की इच्छा

प्रसिद्धाम् (मेधाम्) ५ ४२ १३. [जनी प्रादुर्भावे (दिवा०) धातो शानच्। तत 'सुपा सुलुगि' त्याकार। अन्यत्र स्त्रिया टाप्]

जायवः जयशीला (शूरा जना), जेतार शूरा (जना) १ १३५ ८ शत्रून् विजेतार (वीरजना) १ ११६ ३ **जायुः**=प्रजेता (जन) १ ६७ १ [जयत्यभिभवति तिरस्करोति शत्रून् इति विग्रहे जि जये (भ्वा०) धातो 'कृवापाजिमि०' उ० १ १ सूत्रेण उण्-प्रत्यय]

जाया स्त्री, स० वि० १४१, अथर्व० ३ ३० २ पत्नी ३ ५३ ४ जायन्ते यस्या अपत्यानि सा (स्त्री) ३ ५३ ६ **जायाम्**=स्वस्त्रियम् १ ८२ ५ [या जायते यस्या वा सेति विग्रहे जनी प्रादुर्भावे (दिवा०) धातो 'जनेर्यक्' उ० ४ १११ सूत्रेण यक्प्रत्यय। 'ये विभाषा' इति सूत्रेण व्यवस्थितविभाषाविज्ञानात् पत्न्या नित्यमात्वम्। स्त्रिया टाप्। पतिर्जायां प्रविशति गर्भो भूत्वा स मातर तस्या पुनर्नवो भूत्वा दशमे मासि जायते तज्जाया जाया भवति यदस्या जायते पुन ऐ० ७ १३ तद् यदब्रवीद् (ब्रह्म) आभिर्वा अहमिद सर्व जनयिष्यामि यदिद किञ्चेति तस्माज्जाया अभवस्तज्जायाना जायात्व यच्चासु पुरुषो जायते गो० पू० १ २ अर्धो ह वा एष आत्मनो यज्जाया तस्माद् यावज्जाया न विन्दते नैव तावत् प्रजायतेऽसर्वो हि तावद् भवति, अथ यदैव जाया विन्दतेऽथ प्रजायते, तर्हि हि सर्वो भवति श० ५ २ १ १० जाया गार्हपत्य (अग्नि) ऐ० ८ २४]

जायेव यथा भार्या तथा १ ६६ ३ हृद्या स्त्रीव ४ ३ २ [जाया पद व्याख्यातम्। जाया-इवपदयो समास]

जारम् व्यभिचारिणम् (दुर्जनम्) ३० ६ वयोहानिकारकम् (सूर्यम्) १ १५२ ४ **जारस्य**=लम्पटस्य, रात्रेर्जरयितु सूर्यस्य वा १ ९२ ११ **जारः**=वयोहन्ता सूर्य १ ६९ १ दुःखहन्ता सविता १ ६६ ५ विभागकर्त्ता आदित्य १ ६६ ४ हन्ता सूर्य १ ६६ ४ निवारयिता (सूर्य) ६ ५५ ५ व्यभिचारी वृद्धो वा (जन) १ ११७ १८ व्यभिचारेण वयोहन्ता, अ०—य सर्वत क्षीणो जायते (दुर्जन) २३ ३१ जाल्म इव (पुरुष इव) १ १३४ ३ [आदित्योऽत्र जार उच्यते रात्रेर्जरयिता, स एव भासाम् (नक्षत्राणा ज्योतिषा च) नि० ३ १६ जार जरयिता नि० १० २१]

जारयन्ती वयो गमयन्ती (उषा) १.१२४ १० [जॄ वयोहानौ (चुरा०) धातो शत्रन्तात् ङीप्]

जारयायि जार जराऽवस्था यातु शील यस्य तच्छरीरम् ६ १२ ४ [जारोपपदे या प्रापणे (अदा०) धातोस्ताच्छील्ये णिनि प्रत्यय। जारयायि=अजायि नि० ६ १५]

जारिषुः जारकर्माणि कुर्वन्तु १ १२५ ७ जीर्णानि भवन्तु १ १३७ ८ जरन्तु, प्र०—अत्राऽडभाव १ १३६ ८ [जॄष् वयोहानौ (दिवा०) धातोर्लुङ्। अडभावश्छान्दस]

जार्यम् जराऽवस्था जन्यम् (शेव=सुखम्) ५ ६४ २ [जॄष् वयोहानौ (दिवा०) धातो 'ऋहलोर्ण्यत्' इति ण्यत्]

जासु यासु, प्र०—अत्र वर्णव्यत्ययेन यस्य स्थाने ज ७ ४६ २ [यद् सर्वनाम्न स्त्रिया सप्तम्या बहुवचनम्। वर्णव्यत्ययेन यकारस्य जकार]

जास्पतिम् जायाया पतिम् १ १८५ ८ **जास्पतिः**=प्रजाया पालक (राजा) ७ ३८ ६ [जाया-पतिपदयो समास। छान्दसो वर्णलोप इति या-लोप सुडागमञ्च]

जास्पत्यम् जायापतेर्भावम् जास्पत्यम्, प्र०—अत्र छान्दसो वर्णलोपो वा इति या-लोप सुडागमश्च ३ ३ १२ जायाया पतित्वम् ५ २८ ३ [जाया-पतिपदयो समासे भावे कर्मणि वा 'पत्यन्तपुरोहितादिभ्यो यक्' इति यक्]

जाहुषम् जहुषा गन्तव्यानामिद गमनम्, प्र०—अत्र 'ओहाङ् गतौ' इत्यस्माद् औणादिक उसिप्रत्यय 'तस्येदम्' इत्यण्, १ ११६ २०]

जाहृषाणेन सज्जनाना सन्तोषकेन (मन्युना=क्रोधेन) प्र०—अत्र हृष तुष्टौ, इत्यस्माल्लिट कानच्, तुजादित्वाद् दीर्घश्च १.१०१.२)

जाः यो जनयति सुखानि स (विद्वज्जन) १ १४३ ८ जायमान सूर्य ६ ४७ २१ [जनी प्रादुर्भावे (दिवा०) धातो 'अन्येष्वपि दृश्यते' इति ड प्रत्यय। जा अपत्यनाम निघ० २ २ जा अपत्यम् नि० ६ ६]

जिगर्तिम् प्रशसा निगलन वा ५ २६ ४ [गॄ निगरणे (तुदा०) धातोर्लट्। 'बहुल छन्दसी' ति शप श्लु। गृणाति अर्चतिकर्मा निघ० ३ १४]

जिगात स्तुत्यानि कर्माणि कुरुत १ ८५ ६ प्रशसत ७ ५७ ७ **जिगातन**=प्रशसन्ति ५ ५६ ६ **जिगातम्**=प्राप्नुतम्, प्र०—जिगातीति गतिकर्मा, निघ० २ १४, २ २४ १२ **जिगाति**=स्तौति ३ ३९ १ प्राप्नोति, प्र०—जिगातीति गतिकर्मसु पठितम्, निघ० २ १४ तस्मात् प्राप्त्यर्थो गृह्यते १ २ ३ प्रशसति ७ ४१ गच्छति ५ ८७ ४ **जिगासि**=स्तौषि ३ २२ ३ प्रशससि ५ १५ ४

जिहीष्व त्यज ५ ७८ ५ [ओहाक् त्यागे (जु०) धातोर्लोट् । व्यत्ययेनात्मनेपदम् । 'जहातेश्च' इतीत्वम् । अभ्यासस्येकारादेशश्छान्दस]

जिह्मम् कुटिलम् (उत्स=कूपम्) १ ८५ ११. **जिह्मानाम्**=कुटिलानाम् (दुर्जनानाम्) २ ३५ ६ [ओहाक् त्यागे (जु०) धातो 'जहाते सन्वदाकारलोपश्च' उ० १ १४१. सूत्रेण मन्प्रत्यय । जिह्माना जिह्म जिहीते नि० ८ १५]

जिह्मवारम् जिह्म कुटिल वारो वरण यस्य तम् (यानस्थमुदकाधार कुण्डम्) १ ११६ ९ [जिह्म-वारपदयो समास]

जिह्मश्ये जिह्म शेते स जिह्मशीस्तस्मै शयने वक्रत्व प्राप्ताय जनाय, प्र०—'जहाते सन्वदाकारलोपश्च' उ० १ १४० अनेनाऽय सिद्ध 'जिह्म जिहीतेरूर्ध्वमुच्छ्रितो भवति, ८ १५, १ ११३ ५ [जिह्म व्याख्यातम् । तदुपपदे शीङ् शये (अदा०) धातो क्विप् । ततश्चतुर्थ्या एकवचनम्]

जिह्वरतम् कुटिलौ भवतम्, अ०—कुटिले भवेता तथा कुरुतम् ५ १७ [ह्वृ कौटिल्ये (भ्वा०) धातोर्लोट् । 'छन्दसि वा' इति द्विर्वचनम्]

जिह्वया वाण्या ५ ४८ ५ वाचा ३३ ९३ रसनेन्द्रियेणेव किरणज्वालासमूहेन १ ४६ १० ज्वालाशक्त्या १ १४८. सत्यप्रियया वाचा १७ ८ ज्वालेव वर्त्तमानया (विशेषतया) ३ ३५ ९ **जिह्वा**=रसनेन्द्रिय वाग् वा १ ८७ ५ जुहोति शब्दमन्न वा ,यया सा जिह्वा २० ६ जिहीते विजानाति रसमनया सा, प्र०—'शेवायह्वाजिह्वा०' उ० १ १५२ अनेनाऽय निपातित १.३० जुहोति गृह्णाति यया सा (सरस्वती=वाणीव ज्ञानवती स्त्री) १९ ८८ रसेन्द्रियम् ८ २४ **जिह्वाभि**.=विद्याविनययुक्ताभिर्वाग्भि , प्र०—जिह्वति वाङ्नाम, निघ० १ ११, ६ १६ २ **जिह्वाम्**= ज्वालाम् २७ १८ जोहवीति यया ता वाचम् १३ १५ **जिह्वाः**=काल्यादय सप्त सङ्ख्याका ज्वाला १७ ७९ [जयति यया सेति विग्रहे जि जये (भ्वा०) धातो , 'शेवायह्वा-जिह्वा०' उ० १ १५४ सूत्रेण वन्प्रत्ययान्तो निपात्यते । निपातनाद् धातोर्हुगागम । जिह्वा वाङ्नाम निघ० १ ११ जिह्वा जोहुवा नि० ५ २७ जिह्वा कोकुवा नि० ५ २६.]

जीजनत् जनयति ४.१६ ३. जनयेत्, प्र०—अत्र लुड्यडभाव १ १२६ ११ **जीजनन्**=जनयेयु , प्र०—अत्राऽडभाव १ १५१ १ जनयन्ति ४ ६ ८ **जीजनन्त**= जनयन्ति, प्र०—अत्र लडर्थे लुडडभावश्च १.६० ३. **जीजनम्**=जनयेयम् ७ १५ ४ [जनी प्रादुर्भावे (दिवा०) धातोर्णिजन्ताल् लुङ् । अडभावश्छान्दस]

जीमूतस्येव यथा मेघस्य २९ ३८ मेघस्येव ६ ७५ १. [जीमूतस्य-इवपदयो समास । जीमूतपदमग्रिमे द्रष्टव्यम्]

जीमूतान् मेघान्, प्र०—अत्र 'जेर्मूट् चोदात्त ' इत्यनेनाऽय सिद्ध २५ ८. [जि जये (भ्वा०) धातो 'जेर्मूट् चोदात्त ' उ० ३ ९१ सूत्रेण क्त प्रत्यय । धातोर्दीर्घश्च]

जीयते जेतु शक्यते ३ ५९ २ जितो भवति ५ ५४ ७. [जि जये (भ्वा०) धातो कर्मणि लट्]

जीरदानवः जीवन्ति ते (मरुत =मनुष्या.) ५ ५३ ५ जीवनप्रदा (पर्वता =मेघा) ५ ५४ ९ जीवा (प्राज्ञा सज्जना)२ ३४ ४ **जीरदानुम्**=जीवाऽऽत्मानम् १ १७१ ६ जीवदयाम् १ १७६ ६ दीर्घ जीवनम् १ १८१ ६. जीवस्वरूपम् १.१७४ १० जीवनम् १ १६५ १५ स्वात्मस्वरूपम् १ १७५ ६ जीवननिमित्तम् (वृजन =बलम्) १.१६७ ११. जीवस्वभावम् १ १७८ ५ जीवनोपायम् १.१८२ ८ **जीरदानुः**=यो जीवयति (पर्जन्य =मेघ) ५ ८३.१. **जीरदानू**=यौ जीवन दद्याता तौ (मित्रराजाना=प्राणविद्युतौ) ५ ६२ ३ [जीवति प्राणान् धारयतीति विग्रहे जीव प्राणधारणे (भ्वा०) धातोर् महाभाष्यकारसम्मत्या रदानुक् प्रत्यय । धातोर्वलोपो वलि ऊङ्निषेधश्च बाहुलकाद्]

जीरम् विद्यावन्तम् (विद्वज्जनम्), प्र०—अत्र 'जोरी च' उ० २ २३ इति दीर्घोऽनेन सूत्रेणाऽय सिद्ध १ ४४ ११. वेगम् ५.३१ १२ **जीरः**=वेगवान् (अग्नि =पावक) ३ ३.६. [जीरा क्षिप्रनाम निघ० २ १५ जु वेगिताया गतौ सौत्रो धातु , तत 'जोरी च' उ० २ २३ सूत्रेण रक् प्रत्यय , ईकारश्चान्तादेश । महाभाष्यकारसमत्या तु 'रकि ज्य सम्प्रसारणम्' महाभाष्यम् १ १ ४ वार्तिकेन ज्या वयोहानौ (क्र्या०) धातो रक्प्रत्यये सम्प्रसारणम् । जिनात्यवस्था जहातीति जीर

जीरयः वयोहर्त्तार (शूरा जना) २ १७ ३ ये जीर्यन्ते ते मनुष्या ३ ५१ ५]

जीरा वेगयुक्ता (देवी) १ ४८.३ [जीरप्राति० स्त्रिया टाप् । जीरमिति व्याख्यातम्]

जीराश्वम् जीरान् जीवान् प्राणधारकानश्नुते येन तम् (रथ=यानम्) १ ११९ १ **जीराश्वः**=जीरा वेगा अश्वा यस्मिन् (रथ) १ १५७ ३ जीरा वेगवन्तो बहवोऽश्वा यस्य स (होता=विद्यादातृजन) १ १४१ १२ जीरा

कर, म० वि० १४५, ४० २ [जीव प्राणधारणे (भ्वा०) धातोरिच्छायामर्थे सन् । ततो लिङि रूपम्]

जितम् स्वपुरुषार्थेन लब्धम् (भगम्=ऐश्वर्यम्) ३४ ३५ जयशील (ईश्वर) को, स० वि० १५६, ७४१ २ [जि जये (भ्वा०) धातो क्त प्रत्यय । अन्यत्रौणादिको वाहुलकात् क्त प्रत्यय]

जिनन्ति जयन्ति, प्र०—अत्र विकरणव्यत्यय ४ २५ ५ [जि जये (भ्वा०) धातोर्लट् । विकरणव्यत्ययेन श्ना]

जिनाति अभिभवति ५ ३४ ५ [जि जये (भ्वा०) धातोर्लट् विकरणव्यत्ययेन श्ना]

जिन्व जानीहि १५ ६ विजानीहि १५ ६ प्रीणीहि १४ १७ प्राप्नुहि रक्ष वा १५ ७ प्राप्नुहि जानीहि वा, प्र०—जिन्वतीति गतिकर्मसु पठितम्, निघ० २ १४, ८ ७ सुखय २ २४ १६ प्रसादय ३ ५३ २१ **जिन्वतम्**=प्रीणीतम् १ १५७ २ गमयत प्राप्नुत वा ६ ४९ ६ सुखयतम् १ १११८ २ **जिन्वति**=प्रीणाति १५ २० तर्पयति १३ १४ रचयितु जानाति प्रापयति वा, अ०—स्रष्टु जानाति, भा०—दधाति, जनयति ३ १२ प्राप्नोति १ १६२ ३ पुष्णाति, ऋ० भू० ३०५, ३ १२ **जिन्वतु**=प्राप्नोतु सुखयतु वा २ ४० ६ प्रीणात्वानन्दतु ४ ५३ ७. प्रापयतु ६ ३९ १४ **जिन्वते**=पृणाति ३ २ ११ **जिन्वथ**=प्रीणयथ ३६ १६ प्राप्नुवन्ति ६ ४९ ११ प्रीणयत ११ ५२ **जिन्वथः**=गमयथ २ ४० ३ प्राप्नुथ ५ ७४ ४ गच्छथ ४ ४५ ३ प्रीणीत १ ११२ २२ तर्पयथ १ ११२ ६ प्रीणीतम् १ ११२ २२ **जिन्वन्ति**=प्रीणन्ति १ १६४ ५ तर्पयन्ति १ १६४ ५ **जिन्वतु**=प्राप्नोतु सुखयतु वा २ ४० ६ प्रीणात्वानन्दतु ४ ५३ ७ **जिन्वते**=पृणाति ३ २ ११ **जिन्वे**=तर्पयामि ४ २१ ८ **जिन्वन्**=तर्पयन्तु १ ७१ १ [जिवि प्रीणने (भ्वा०) धातोर्लोट् । लट् लङ् च । 'जिन्वते' 'जिन्वे' प्रयोगयोर्व्यत्ययेनात्मनेपदम् । जिन्वति गतिकर्मा निघ० २ १४ प्रीतिकर्मा नि० ६ २२ जिन्व यजमान मदेनेति तेन प्रीणीहि श० १२ ८ १ ४]

जिन्वन्तः तर्पयन्त (वायव) १ ६४ ८ [जिवि प्रीणने (भ्वा०) धातो. शतृप्रत्यय]

जिन्वम् सर्वै सुखैस्तर्पकम् (ईश्वरम्) १ ८९ ५ तृप्तिकारक (ईश्वर) को, आर्याभि० २ ५०, २५ १८ प्रकाशित करने वाले, प्रीणनीय स्वरूप (ईश्वर) को, आर्याभि० १ १०, ऋ० १ ६ १५.५ [जिवि प्रीणने (भ्वा०) धातोर्वाहुलकाद् औणादिकोऽन्प्रत्यय]

जिन्वासः प्राप्नुवन्त (अध्यापकाऽध्येतारो जना) ७ ३३ १ [जिन्वमिति व्याख्यातम् । तत प्रथमावहुवचने जसोऽसुगागम]

जिव्रयः दृढजीवना (देवा=विद्वासो जना) ४ १९ २ **जिव्रिः**=जीर्णो वृद्ध (विद्वज्जन) १ १८० ५ **जिव्री**=सुजीवनयुक्तौ (पितरा=मातापितरौ) १ ११० ८ जीवन्तौ (पितरा=पितरौ) ४ ३६ ३ **जिव्रेः**=जीर्णाद्, वृद्धाऽवस्था प्राप्तात् जनकात् १ ७० ५ [जृष् वयोहानौ (दिवा०) धातो 'जीर्यते क्रिन् रुच्च व' उ० ५ ४९ सूत्रेण क्रिन् प्रत्ययो रेफस्य च वकारादेश । 'हलि चे' ति प्राप्तो दीर्घोऽपि वाहुलकान्न भवति । जिव्रय जीर्णा नि० ३ २१]

जिषे शत्रून् जेतुम्, प्र०—अत्र 'तुमर्थे सेऽसेन०' इति क्से प्रत्यय १ १११ ४ [जि जये (भ्वा०) धातोस्तुमर्थे क्से प्रत्यय]

जिष्णु जयशीलम् (क्षत्र=क्षत्रियकुलम्) ११ ८१. **जिष्णुना**=जयशीलेन (इन्द्रेण=सेनापतिना) १७ ३४ **जिष्णुः**=जयशील (युवा=प्राप्तयौवनो जन) २२ २२ **जिष्णोः**=जयशीलस्य (अश्वस्य) २३ ३२ [जि जये (भ्वा०) धातोस्तच्छीलादिष्वर्थेषु 'ग्लाजिस्थश्च क्स्नु' अ० ३ २ १३९ सूत्रेण क्स्नु प्रत्यय]

जिहताम् प्राप्नुवन्तु ११ ३८ **जिहते**=प्राप्नुवन्ति ५ ८३ ४ गच्छन्ति ५ ८७ ३ **जिहाताम्**=प्राप्नुत ७ ३४ २४ **जिहाते**=गच्छत ५ ३२ ९ [ओहाङ् गतौ (जु०) धातोर्लोट् । अन्यत्र लट् च]

जिहानः प्राप्नुवन् (विद्वज्जन) ३ ३८ १ [ओहाङ् गतौ (जु०) धातो शानच्]

जिहीत स्वस्थानाच्चलति, प्र०—अत्र लडर्थे लिङ् १ ३७ ७ गच्छति ५ ४५ ३ **जिहीते**=प्राप्नोति ३ ५१ ४ गमयेते ५ ३२ १० विज्ञापयति १ १०५ १८ ओहाङ् गतौ (जु०) धातोर्लिङ् । अन्यत्र लट्]

जिहीळानस्य अज्ञानादस्माकमनादर कृतवतो जनस्य, प्र०—अत्र 'पृषोदरानि यथोपदिष्टम्, इत्येकारस्यैकार १ २५ २ [हेडृ अनादरे (भ्वा०) धातो शानच् । 'बहुल छन्दसी' ति शप श्लु]

जिहीळिरे क्रोधयेयु ७ ५८ ५ [हेळते क्रुध्यतिकर्मा निघ० २ १२ ततो लिटि प्रथमवहुवचनम् । एकारस्येकारश्छान्दस]

अनि प्रत्यय । छान्दस द्वित्वम्]

जुजुरुषः जीर्णाऽवस्था प्राप्त (गृहस्थि जन) ५ ७४ ५ जीर्णाद् वृद्धात् (आप्तादध्यापकात्) १ ११६ १०. [जूष् वयोहानौ (दिवा०) धातोर्लिट स्थाने क्वसु प्रत्यय । 'वहुल छन्दसि' अ० ७ १ १०३ सूत्रेणोकारादेशे रपरत्वे च रूपम्]

जुजुर्वान् रोगाऽऽपन्न (मनुष्य) १ ११८ ६ जीर्ण (अग्नि) २ ४ ५ [जूष् वयोहानौ (दिवा०) धातोर्लिट क्वसु । 'वहुल छन्दसी' त्युकारादेश । 'हलि चे' ति दीर्घो न छान्दसत्वात्]

जुजुर्वा इव यथा वृद्धाऽवस्था प्राप्तो मनुष्य, प्र०—जूष् वयोहानौ, इत्यस्मात् क्वसु 'वहुल छन्दसि' इत्युत्वम् वाच्छन्दसि सर्वे विधयो भवन्ति' इति 'हलि च' इति दीर्वो न १ ३७ ८ [जुजुर्वान्-इवपदयो समास । जुजुर्वान् इति व्याख्यातम्]

जुजुषाणः सेवमान (परमेश्वरो विद्वान् वा) १ ६१ १० भृश सेवमान (विद्वज्जन) २ ३६ ३ प्रसन्न सेवमान (त्वष्टा=विद्वज्जन) २६ २४ **जुजुषाणा**= सेवितौ प्रीतौ वा (अश्विनौ=दम्पती) १ ११८ ७ **जुजुषाणाय**=प्रीत्या सेवमानाय (क्रत्वे=प्रज्ञानाय जनाय) ५ ४३ ५ **जुजुषाणा**=सम्यक् सेवमाना (देवी=विदुषी स्त्री) ५ ४३ ११ [जुषी प्रीतिसेवनयो (तुदा०) धातोर्लिट कानच् । अथवा शानच्प्रत्यये 'वहुल-छन्दसी' ति शप श्लु]

जुजुषाणासः=भृश सेवमाना (धीमन्तो विद्यार्थिजना) ४ ३४ ३ [जुषी प्रीतिसेवनयो (तुदा०) धातोर्लिट कानच् । जसोऽसुगागम । जुजुषाणास जोषयमाणास नि० ६ १६]

जुजुषुः सेवन्ते, प्र०—अत्र 'वहुल छन्दसि' इति शप श्लु १ १६५ २ सेवेरन् १ १५२ ५ **जुजुषे**=सेवसे प्रीणासि वा ५ ३६ ४ सेवते ४ २२ १ [जुषी प्रीतिसेवनयो (तुदा०) धातोर्लिट् सामान्ये]

जुजुष्टन सेवध्वम् ४ ३६ ७ [जुषी प्रीतिसेवनयो (तुदा०) धातोर्लोट् । छान्दसत्वात् शप श्लु । तस्य स्थाने तनवादेशश्छान्दस]

जुजुष्वान् सेवितवान् (इन्द्र=पुरुषार्थिजन) २ २० ५ [जुषी प्रीतिसेवनयो (तुदा०) धातोर्लिट क्वसु]

जुजोष सेवते ४ २३ ५ जुषते ४ २४ ५ **जुजोषत्**= जुषेत १ १७३ ४ सेवते ७ २६ १ भृश सेवते ३ ४ ६ भृश सेवेत ४ ४ १० **जुजोषतम्**=अत्यन्त सेवेते, प्र०—अत्र जुषी प्रीतिसेवनयो, इति धातो शब्विकरणस्य स्थाने श्लु 'वहुल छन्दसि' इति शप् च १ ८३ ११ **जुजोषन्**=सेवन्ते ७ ५८ ३ **जुजोषः**=जुषसे ५ ३० ३ सेवस्व ४ ६.६ भृश सेवसे ४ २ १० [जुषी प्रीतिसेवनयो (तुदा०) धातोर्लिट्]

जुनन्ति गच्छन्ति ७ २० १०. प्राप्नुवन्ति १ १६६.३ प्रेरयन्ति ७ ४० ३ **जुनाम**=वर्त्तीयाम १ १८६ ५ **जुना**=प्रेर्ये, प्र०—अत्र जुन गतौ इत्यस्य लेट्-प्रयोग १ २७ ७ गमये ६ २६ [जुन इत्येके (गतौ) (तुदा०) धातोर्लट्]

जुम्वकाय अतिवेगवते २५.६ [वरुणो वै जुम्वक श० १३ ३ ६ ५ तै० ३ ६ १५ ३.]

जुरतम् रुजत नाशयतम् १ १८२ ३ [रुजो भङ्गे (तुदा०) धातोर्लोट् । वर्णविपर्ययेन रेफस्य जकार, जकारस्य च रेफ]

जुरताम् जीर्णानाम् (जनानाम्) २ ३४ १० [रुजो भङ्गे (तुदा०) धातो शतृप्रत्ययान्तात् षष्ठ्या वहुवचनम् वर्णयोरेफजकारयोराद्यन्तविपर्यय]

जुवः जववन्त (कृषीवला) १ १४० ४ वेगवन्त (वायव) १ १३४ १ [जूप्राति० प्रथमावहुवचनम् । जू=जु वेगिताया गतावित्ति सौत्रो धातु । तत 'क्विब् वचिप्रच्छि०' अ० ३ २ १७८ वा०सूत्रेण क्विप्प्रत्ययो दीर्घश्च]

जुषत जुषते ५ १३ ३ सेवध्वम् ७ १५ ६ **जुषताम्**=प्रीत्या सेवताम्, भा०—सत्कर्माण्येव प्राप्नोतु २ १३ **जुषध्वम्**=सेवध्वम् ७ ५६ १४ **जुषन्त**= सेवन्ताम् प्र०—अत्राऽडभाव ३३ ४८ प्रीणन्ति सेवन्ते वा १ ६८ २ **जुषन्ताम्**=प्रीत्या सेवन्ताम् ८ १७ ५ **जुषस्व**=सेवस्व ७ ५४ १ प्रीणीहि १३ ४७ जुषते, प्र०—अत्र व्यत्ययो लडर्थे लोट् च, अ०—सेवते ३ ४ सेवस्व सेवते वा, प्र०—अत्र पक्षे व्यत्ययो लडर्थे लोट् च ३ ५७ प्रीत्या सेवस्व जुषते वा १ १२ १२ भा०—सत्कुरु १६ ६७ [जुषी प्रीतिसेवनयो (तुदा०) धातोर्लोट् । व्यत्ययेन परस्मैपदम् । अन्यत्रात्मनेपदे एव । जुषते कान्तिकर्मा निघ० २ ६]

जुषमाणः सेवमान (विद्यार्थिजन) ४ २३ १ [जुषी प्रीतिसेवनयो (तुदा०) धातो शानच्]

जुषाणः यो जुषते सेवते स (अग्नि=भौतिक)

वेगवन्तोऽश्वा आशुगामिनो गुणा यस्य स (अग्नि = वह्नि) २.४ २ [जीर-अश्वपदयो समास । जीराश्वौ व्याख्यातौ]

जीव जीवन धारण कर, स० वि० १२१, अथर्व० १४ १ ५२ जी, स० प्र० १५६, [जीव प्राणधारणे (भ्वा०) धातोर्लोट्]

जीवगृभः यो जीव गृह्णाति तस्य व्याधे १२ ८५ [जीवोपपदे ग्रह उपादाने (क्र्या०) धातो क्विप् । हृस्य भश्छान्दस]

जीवदानुम् या जीवेभ्यो जीवनार्थं वस्तु ददाति ताम् (पृथिवीम्) १ २८ [जीवोपपदे डुदाञ् दाने (जु०) धातो 'दाभाभ्या नु' उ० सूत्रेण नुः प्रत्यय]

जीवधन्याः या जीवेषु धन्या धनाय हिता (अप = जलानि) १ ८० ४ [जीव-धन्यापदयो समास । धन्या= धनप्राति० हितार्थे यत्, तत स्त्रिया टाप्]

जीवनम् जीविकाप्रापणम् १ ४८ १० [जीवप्राण-धारणे (भ्वा०) धातोर्ल्युट्]

जीवन्तः प्राणान् धरन्त (जना) १ १३६ ६ [जीव प्राणधारणे (भ्वा०) धातो शतरि प्रथमा बहु-वचनम्]

जीवपीतसर्गः जीवै सह पीत सर्गो येन स (विद्वज्जन) १ १४९ २ [जीव-पीत-सर्गपदाना समास]

जीवभोजनः जीवा भोजन भक्षण यस्य स, (अ०-व्यभिचारी जन) भा०—विषयसेवाया क्रीडन् जन, क्रीडन्ती स्त्री वा २३ २१ [जीव-भोजनपदयो समास]

जीवम् प्राणधारिणम् (आत्मानम्) ७ ३९ ज्ञान-साधनयुक्तम् (भा०—मनुष्यजन्म, जीवनम्) ३ ५५ जीव-समूहम् १ ९२ ६ प्राणधारकम् (जीवनम्) १२ ६१ जीवात्मानम् १ १४० ८ **जीवः**=इच्छादिगुणविशिष्ट (आत्मा) १ ११३ १६ य प्राणान् धरति (कुमार) ५ ७८ ६ **जीवाय**=जीवति प्राण धारयति, प्राणधारणेन समर्थो भवति यस्मिन्नायुषि तस्मै २ ३२ जीवनार्थ विद्या-जीविकाप्राप्तये, ऋ० भू० २५६, **जीवाः**=विद्यमान-जीवना (आचार्यादय) ऋ० भू० २५७, १९ ४६ ये जीवन्ति ते (भा०—पितर) १९ ४६ **जीवेभ्यः**=प्राण-धारकेभ्य स्थावरशरीरेभ्य ३५ १५ [जीव प्राणधारणे (भ्वा०) धातोरच्प्रत्यय]

जीवयाजम् जीवान् याजयति धर्म च सङ्गमयति तम् (नर=विनयाभियुक्त मनुष्यम्) १ ३१ १५ [जीवोप-पदे यज देवपूजासगतिकरणदानेषु (भ्वा०) धातोर्णिजन्ताद् अण्प्रत्यय]

जीवलोकम् जीते हुए दूसरे पति को, स० प्र० १५२, १० १८ ८

जीवशंसे जीवाना शसा स्तुतिर्यस्मिँस्तस्मिन् व्यवहारे चोपमाम् १ १०४ ६ जीवै प्रशसनीये (बर्हिषि=अन्त-रिक्षे) ७ ४६ ४ [जीव-शसापदयो समास । शसा=शसु स्तुतौ धातोर्घञ् । स्त्रिया टाप् । अथवा जीवोपपदे शसु स्तुतौ (भ्वा०) धातोरण् प्रत्यय]

जीवसे जीवनाय प्राणधारणाय १ १५५ ४ जीवि-तुम् प्र०—अत्र 'तुमर्थे सेसे०' इत्यसे प्रत्यय ३ ५४ आरोग्य, देह, शुद्धमानस, बल और विज्ञान इत्यादि के लिए, आर्याभि० ११६, ऋ० १ ३ १० १४ [जीव प्राणधारणे (भ्वा०) धातोस्तुमर्थेऽसे प्रत्यय । जीवसे चिरञ्जीवनाय नि० १२ ३९]

जीवात् चिर जीवेत् १ ८४ १६ [जीव प्राणधारणे (भ्वा०) धातोर्लेट् । आडागम]

जीवातवे जीवनाय १ ९४ ४ भा०—दीर्घाऽऽयुषे १८ ६७ [जीव प्राणधारणे (भ्वा०) धातो । 'जीवेरातु' उ० १ ७८ सूत्रेण आतु प्रत्यय । चतुर्थ्या एकवचनम् । जीवातवे चिरजीवनाय नि० १० ३८]

जीवातुम् जीवनम् ६ ४७ १० **जीवातुः**=येन जीवन्ति यज्जीवयति वा (जीवन-व्यवहार) १८ ६ [व्याख्यात पूर्वपदे । जीवातु जीविकाम् नि० ११ ११]

जीविता जीवनहेतूनि कर्माणि ३३ ५४ जीवनानि १ ११३ ६ जीवितानि (जीवनानि) ४ ५४ २ [जीव प्राण-धारणे (भ्वा०) धातोर्बाहुलकादौणादिक क्त । 'सुपा सुलग्०' इत्याकारादेश]

जीवेम प्राणान् धारयेम ३६ २४ प्राणान् धारयेमहि प० वि०, ३६ २४ जीवे, आर्याभि० २ ३७, ३६ २४ [जीव प्राणधारणे (भ्वा०) धातोर्लिङि उत्तम-बहुवचनम्]

जीहिपः त्याजये ३ ५३ १९ [ओहाक् त्यागे (जु०) धातोर्णिजन्ताल्लुङ् । अडभावे छान्दस रूपम्]

जुगुर्यात् उद्यच्छेत् १ १७३ २ **जुगुर्याः**=उद्यच्छे, उद्यमिन कुर्या १ १४० १३ [गुर्वी उद्यमने (भ्वा०) धातोर्लिङ् । 'बहुल छन्दसि' नि शप श्लु]

जुगुर्वणी अत्यन्तमुद्यमिनौ (अध्यापकोपदेशकौ) १ १४२ ८. [गुर्वी उद्यमने (भ्वा०) धातोर्बाहु० औणा०

इति प्राप्तेऽड्भावो न भवति १४३८ प्रसहन्ताम् ३ ५५ २ [हृ प्रसह्यकरणे (जु०) धातोर्लङ्, अडभावो व्यत्ययेनात्मनेपदम् । 'बहुल छन्दसि' अ० ७ १ १०३ सूत्रेणोत्वम् । झस्य छान्दसत्वाद् अड्भावो न भवति ।]

जुहुरः हिम्यात् ७ ४ ४

जुहुराणम् कुटिलगतिजन्यम् (एन =पापम्) १ ८६ १ कुटिलतायुक्त (कर्म), स० वि० ७, ४० १६ कुटिल पक्षपात सहित (एन =पापकर्म) को, स० वि० २१४, ४० १६ कौटिल्यमन्त करणस्य ७ ४३ **जुहुराणः**=कुटिलगति (दुर्जन) ४ १७ १४ दुष्टेषु कुटिल (जन) १ ७३ ११ [हुर्छा कौटिल्ये (भ्वा०) धातो 'हुच्र्छे सनो लुक् छलोपश्च' उ० २ ६१ सूत्रेण आनच्प्रत्यय]

जुहुरे जुह्वति २ ६ ३ शब्दयन्ति १ ४८ १४ कुटिलयन्ति ५ १६ २ [ह्वृ कौटिल्ये (भ्वा०) धातोर्लिटि रूपम् । 'बहुल छन्दसी' त्युत्वम् । व्यत्ययेनात्मनेपदम् । हु दानादानयो (जु०) धातोर्वा लिटि प्रथमबहुवचनम् । इरेच् स्थाने 'इरयो रे' अ० ६ ४ ७६ सूत्रेण रे आदेश । जुहुरे जुह्विरे नि० ४ १६]

जुहूभिः पान-साधनै (पात्रै) ५ १ ३ जुह्वति याभि क्रियाभि १ ५८ ४ **जुहूः**=जुहोति ददाति हविरादत्ते सुख चाऽनया सा (घृताची=आदानक्रियया) प्र०—हु दानाऽऽदानयो, इत्यस्मात् 'हुव श्लुवच्च' उ० २ ५६ अनेन क्विप् प्रत्ययो दीर्घादेशश्च २ ६ [असौ (द्यौ) वा जुहू । तै० ३ ३ १ १ तस्यासावेव द्यौर्जुहू श० १ ३ २ ४ यजमानदेवत्या वै जुहू. तै० ३ ३ ५ ४ अत्तैव जुहूराद्य उपभृत् श० १ ३ २ ११ क्षत्र वै जुहूर्विश इतर स्रुच श० १ ३ ४ १५ जुहूर्दक्षिणो हस्त तै० ३ ३ १.५ आग्नेयी वै जुहू तै० ३ ३ ७ ६ जुहूर्वै यज्ञमुखम् मै० ३ १ १ जुह्वा हि घृताची द्यौर्जन्मना काठ० १ ११ द्यौरसि जन्मना जुहूर्नाम मै० १ १ १२ पर्णमयी जुहू तै० स० ३ ५ ७ २ यजमानो वै जुहू मै० १ ४ १३ वाग् जुहू तै० आ० २ १७ २ आश्रावयेति जुहू तेन युनक्ति काठ० ३१ १३]

जुहूमसि स्तुम, प्र०—'बहुल छन्दसि' अ० २ ४ ७६ अनेन शप स्थाने श्लु । 'अभ्यस्तस्य च' अ० ६ १ ३३ अनेन सम्प्रसारणम् । 'सम्प्रसारणाच्च' अ० ६ १ १०८ अनेन पूर्वरूपम् । 'हल' अ० ६ ४ २ इति दीर्घ । 'इदन्तो मसि' अ० ७ १ ४६ अनेन मसेरिकारागम' १ ४ १ [ह्वेञ् स्पर्धाया शब्दे च (भ्वा०) धातोर्लट् । स्पष्टमन्यत्]

जुहूराणम् कुटिलम् (एन.=दु खफल पापम्) ५.३६. [जुहुराणमिति व्याख्यातम् । उकारस्य दीर्घश्छान्दस]

जुहूरे शब्दयन्ति १ ४८ १४ [ह्वेञ् स्पर्धाया शब्दे च (भ्वा०) धातोर्लिटि छान्दस रूपम्]

जुहूर्थाः प्रदद्या ७ १ १६ [हु दानादानयो (जु०) धातोश्छान्दस रूपम्]

जुहोत गृह्णीत २ १४ १ आदद्यात ७ ४७ ३ दत्त २ १४ ५ दत्ताऽऽदत्त वा १ १५ ६ दद्यु ३ ५६ ५ [हु दानादानयो (जु०) धातोर्लोट् । 'बहुल छन्दसीति वक्तव्यम्' अ० ७ ३ ८७ वा० सूत्रेण गुण]

जुहोतन प्रक्षिपत, प्र०—अत्र हुधातोर्लोटि मध्यमबहुवचने 'तप्तनप्त०' इति तनबादेश ३ १ दत्त १२ ३० [हु दानादानयो (जु०) धातोर्लोट् । तस्य तनबादेशश्छान्दस]

जुहोति आहुतिया देता है, स० वि० २०६, अथर्व० ६ ७ ४ **जुहोमि**=ददामि १७ ७८ आददामि ३४.५४ नियोजयामि ऋ० भू० ६४, ऋ० ८ ८ ४६ ३ गृह्णामि १७ ७८ क्षिपामि १ १६२ १६ निवेदयामि वा २ २७ १ व्याददामि ३४ ५४. [हु दानादानयो (जु०) धातोर्लट्]

जुह्वत आददत् (परमेश्वर) १७ १७ होम=प्रलय करता हुआ (परमात्मा), आर्याभि० २ ३०, १७ १७ [हु दानादानयो (जु०) धातोर्लङ् । अडभाव]

जुह्वति क्षरन्ति ५ ७ ५ स्थापयन्ति २ ४१ १८ [हु दानादानयो (जु०) धातोर्लटि प्रथमबहुवचनम्]

जुह्वः विद्याविज्ञाने आददत्य (कन्या) १ १४५ ३ जुहोति याभिस्ता (यज्ञसाधनानि) ६ ६६ १० याभिर्जुह्वत्युपदिशन्ति परस्पर ता (सुखसाधनानि) १ ५८ ७ **जुह्वा**=होमसाधनेन ७ ३ ४ जुहोति गृह्णाति ददाति वा यया (पावकया=पवित्रकारिकया ज्वालया) ६ ११ २ ग्रहणसाधनेन ३४ ५४. ग्रहणसाधनया क्रियया २ १० ६ दानाऽऽदानक्रियाकौशलया बुद्ध्या १ ७३ ५ आज्यहवनसाधनया १३ १० जिह्वया साधनेन २ २७ १ साधनोपसाधनयुक्तया क्रियया ३ ३१ ३ जुह्वति याभि क्रियाभि १ ५८ ४ होमसाधनेन ४ ४ २ [हु दानाऽऽदानयो (जु०) धातो 'हुव श्लुवच्च' उ० २ ५६ सूत्रेण क्विप्प्रत्ययो दीर्घादेशश्च । श्लुवद्भावेन द्वित्वम् । 'जुहूभि' पदेऽपि द्रष्टव्यम्]

जुह्वान भुञ्जान (विद्वज्जन) १ ७५ १ [हु दानादानयो (जु०) धातोश्शानच् । व्यत्ययेनात्मनेपदम्]

जुह्वास्यः जुहोत्यस्या सा जुहूर्ज्वाला, साऽऽस्य मुख यस्य स (अग्नि =प्रसिद्धो रूपवान् दहनशील. पावक)

३ १० सेवमान (विद्वान् राजा) ६ ४७ २८ प्रीत (विद्वान् जन) १ १३५ २ प्रीत सेवमानो वा (इन्द्र = सभापति) २ १४ ६ **जुषाणाः**=प्रीता (विद्वासो जना) २८ ११ [जुषी प्रीतिसेवनयो (तुदा०) धातो शानच्। आगमशासनस्यानित्यत्वान् मुगागमो न। ब्रह्म वै जुषाण कौ० ३ ५]

जुषाणा सेवमानौ (नरौ=स्त्रीपुरुषौ) १ ११८ १० [जुषाण इति व्याख्यातम्। तत 'सुपा सुलुग्०' इत्याकारादेश]

जुषाणा सेवमाना (अदिति =नाशरहिता विद्युत्) २६ ४ प्रसन्ना सेवमाना सती (वाक्=वाणी) ८ ३७ [जुषाण इति व्याख्यातम्। तत स्त्रिया टाप्]

जुषाते सेवते ४ ४३ १ **जुषामहे**=प्रीणीयाम ५ ४२ **जुषेत**=प्रीत्या सेवेत ७ ३४ २१ **जुषेताम्**= सेवेताम् २१.४१ **जुषेथाम्**=सेवेथाम् ४ ५७ ५ जुषेते सेवेते १ ६३ ७ **जुषेरत**=सेवेरन् प्रीणन्तु वा, प्र०—अत्र 'बहुल छन्दसि' इति रुडागम १ १३६ ४ [जुषी प्रीतिसेवनयो (तुदा०) धातोर्लेटि लोटि लिङि च रूपाणि]

जुष्टतमम् धार्मिकैर्भक्तैर्जनै शिल्पिभिश्च यो जुष्यते स जुष्ट, अतिशयेन जुष्टस्तम्, भा०—प्रीत्येष्टबुद्ध्या च सेवनीयम् (ईश्वर भौतिकमग्निं वा)·१ ८ अतिशयेन प्रसन्नम् (विद्वास जनम्) ६ ४ अतिशयेन जुषमाणम् (इन्द्र=सम्राजम्) ६ २ **जुष्टतमः**=अतिशयेन सेवित (अर्वा=ज्ञानी जन) २६ २४ अतिशयेन सेवमान (सज्जन) १ १६३ १३ [जुषी प्रीतिसेवनयो (तुदा०) धातो क्त। जुष्टप्राति० अतिशायने तमप् प्रत्यय]

जुष्टतमासः राजधर्मिभिरतिशयेन सेविता (नृतमास =नायका जना) १ ८७ १ [जुष्टतम व्याख्यातम्। तत प्रथमाबहु० जसोऽसुगागम]

जुष्टम् सेवमानम् (विद्वास जनम्) ६ ४ जुषमाणम् (इन्द्र=सम्राजम्), प्रीतम् (इन्द्र=सम्राजम्) ६ २ सेवितम् (जगदीश्वरम्) २३ ४ प्रीत्या सशोधितम् (हवि) २ १ प्रीत्या वर्त्तमानम् (इन्द्र=राजानम्) ६ ३ प्रीत, प्रीत्या सेवनीयम् १ १३ पुष्ट्यादिगुणयुक्त प्रीतिकर जल पवन वा २ १· विद्याप्रीतिक्रियाभि सेवितम् (यज्ञम्) १ १३ प्रीत्या सम्पादितम् (हवि) २ १ प्रीतिकरम् (हव्य= विज्ञानम्) ११ ६६ अ०—प्रीत चारु फलम् १ १० **जुष्ट.**=सेवित प्रीतो वा (विद्वान् अतिथि) ५ ४ ५ [जुषी प्रीतिसेवनयो (तुदा०) धातो क्त प्रत्यय। ईदित्त्वादनिट्त्वम्]

जुष्टयः जुष्यन्ते प्रीयन्ते यास्ता (गिर =स्तुतिवाच) ५ २६ [जुषी प्रीतिसेवनयो (तुदा०) धातो स्त्रिया क्तिन्]

जुष्टा प्रीता सेविता वा ४ १७ **जुष्टाम्**=सद्भी राजभि सेविता नीतिम् ४ २६ ३ प्रीत्या सम्पादिताम् (वेदिम्) २ १ पूर्वकालसेविताम् (वसतिं=निवासस्थानम्) १ ३३ २ **जुष्टाः**=या प्रीणन्ति सेवन्ते ता (प्रशसा) १ १० १२ प्रीता सेविता वा (गिर =स्तुतिवाच) ५ २६ [जुषी प्रीतिसेवनयो (तुदा०) धातो क्तप्रत्यये स्त्रिया टाप्]

जुष्टानि प्रीतानि सेवितानि· (उचथानि=वेदवचनानि) १ ७३ १० [जुष्ट व्याख्यातम्। तत प्रथमाबहुवचनम्]

जुष्टासः विद्वद्भि सेविता (यज्ञा =सत्या व्यवहारा) ४ ३७ २ [जुष्ट व्याख्यातम्। तत प्रथमाबहुवचने जसोऽसुक्]

जुष्टी जुष्ट्या प्रीत्या सेवया वा ७ ३३ ४ [जुष्टिव्याख्यातम्। ततस्तृतीयाया पूर्वसवर्ण 'सुपा सुलुग्०' सूत्रेण]

जुष्ट्वी प्रीता सेवमाना वा (दुहिता) १ ११८ ५ [जुषी प्रीतिसेवनयो (तुदा०) धातो क्त्वा। 'स्नात्व्यादयश्च' अ०—७ १ ४६ सूत्रेणेदन्तत्वम्]

जुहवाम आदद्याम १ ११० ६ [हु दानादानयो (जु०) धातोर्लोटि उत्तमबहुवचनम्]

जुहवाम दद्याम १ ११४ ३ [हु दानादानयो (जु०) धातोर्लोट्]

जुहाव आह्वयेत् ७ २१ ८ [ह्वेञ् स्पर्धाया शब्दे च (भ्वा०) धातोर्लिट्]

जुहुत दत्त ७ १५ १ **जुहुते**=जुहोति ६ १० ६ [हु दानादानयो (जु०) धातोर्लोटि मध्यमबहुवचनम्। अन्यत्र लट्। व्यत्ययेनात्मनेपदम्]

जुहुमः प्रशसाम २३ ६५ गृह्णीम १० २० आश्रय लेवे, वाञ्छा करे, स० वि० ६, १० १२१ १० **जुहुयाम**= दद्याम ७ १ १७ [हु दानादानयो (जु०) धातोर्लट्। अन्यत्र लिङ्]

जुहुरन्त प्रसह्यकारिणो भवन्तु, प्र०—अत्र 'हृ प्रसह्यकरणे, व्यत्ययेनाऽऽत्मनेपदम्, लङ्यडभावो 'बहुल छन्दसि' इत्युत्वम् 'वाच्छन्दसि सर्वे विधयो भवन्ति' इति 'अदभ्यस्तात्'

१ १३० ६ जेतु योग्यम् (धनम्) २ ५ १ **जेन्यस्य**=जेतु योग्यस्य (शर्धत=बलस्य) ६ ४२ ४ **जेन्यः**=जापयितु शील (रथ) ७ १८ जेतु शील (यजमान) ५ १ ५ जेतु योग्य (वीरजन) २ ५ १ विजयहेतु (मातरिश्वा=वायु), प्र०—अत्र बाहुलकादौणादिक एन्यप्रत्ययो डिच्च १ ७१ ४ [जि जये (भ्वा०) धातोर्बाहुलकाद् औणादिक एन्य प्रत्ययो डिच्च]

जेन्या जनेषु नयनकर्त्तृषु साधू (पती=दम्पती) १ ११६ ५ [जनप्राति० 'तत्र साधु' सूत्रेण यत्। अकारस्यैकारश्छान्दस 'सुपा सुलुग्' इत्याकार]

जेन्या जेतु योग्या (गौ=पृथिवी) ३ ३१ ११ [जेन्य व्याख्यातम्। जेन्यप्राति० स्त्रिया टाप्]

जेन्यावसू यौ जेन्यान् जयशीलान् वासयतो यद्वा ज्येन्य जेतव्य जित वा वसु धन याभ्या तौ (राजप्रजाजनौ) ३३ ८८ [जेन्य-वसुपदयो समास। जेन्य व्याख्यातम्। पूर्वपदस्य सहिताया दीर्घ]

जेमा जेतुर्भाव १८ ४ [जेतृप्राति० भावे इमनिच्। 'तुरिष्ठेमेयस्सु' अ० ६ ४ १५४ सूत्रेण तृचो लोप]

जेषम् जयेयम्, प्र०—लोडुत्तमैकवचने प्रयोग ९ १३ उत्कर्षयेयम् ६ ३४ अनुगतमुत्कर्ष प्राप्नुयाम् २ १५ **जेषः**=विनय प्राप्नोषि, प्र०—जि जये इत्यस्माल्लोटि मध्यमैकवचने प्रयोग १ १० ८ **जेषि**=जयसि, प्र०—अत्र शपो लुक् ६ ४५ १५ अत्र शबभाव २ ३० ८ [जि जये (भ्वा०) धातोर्लोट्। अन्यत्र लट्। 'बहुल छन्दसि' सूत्रेण शपो लुक्। पुगागमश्छान्दस। लुङि वा रूपम्। अड्-वृद्धचोरभावश्छान्दस]

जेषे उत्कृष्टु विजेतुम्, प्र०—अत्र जिधातोस्तुमर्थे से-प्रत्यय। सायणाचार्येणेदमपि पदमशुद्ध व्याख्यातमर्थसंगत्यासम्भवात् १ १०० ११ जेतुम् ६ ४४ १८ [जि जये (भ्वा०) धातो 'तुमर्थे सेऽसेन्०' अ० ३ ४ ९ सूत्रेण से-प्रत्यय]

जेष्म जयेम, प्र०—अत्र लिडर्थे लुङ्, अड्वृद्ध्यभावश्च १ १६ **जेष्यसि**=उत्कर्षयसि २३ १७ [जि जये (भ्वा०) धातोर्लुङ्। अड्-वृद्धचोरभावश्छान्दस]

जेहमानम् प्रयतमानम् (अग्निम्=अश्वम्) १ १६३ ९ प्रयत्नसाधकम् (पात्र=ज्ञानसमूहम्) १ ११० ५ प्रयत्नेन गच्छन्तम् (गिर=विमानम्) २९ १७ [जिहते गतिकर्मा निघ० २ १४ तत शानच्]

जे जये ६ ४४ [जि जये (भ्वा०) धातोर्लोट् मध्यमैकवचनम्। शपो लुक्]

जैत्रम् जेतृभि परिवृत रथम् (यानम्) १७.३७ जयन्ति येन तम् (रथम्), प्र०—अत्र जिधातो 'सर्वधातुभ्य ष्ट्रन्' इति ष्ट्रन्-प्रत्ययो बाहुलकाद् वृद्धिश्च १ १०२ ३. दृढ वैयाघ्र विजयनिमित्तम् (रथम्) १ १०२ ५ जेतु शीलम् (सुशिक्षितसेनादिजनम्) १८ ९ **जैत्राय**=जयाय ३४ ५० [जि जये (भ्वा०) धातोरौणादिक ष्ट्रन्प्रत्ययो वृद्धिश्च बाहुलकाद्]

जैत्रीम् जैयशीलाम् (सातिम्=सम्भक्तिम्) १ १११ ३ **जैत्रीः**=जयशीला (सूर्यकिरणा) ३ ३१ ४ [जि जये (भ्वा०) धातो 'सर्वधातुभ्य ष्ट्रन्' इति ष्ट्रन् प्रत्ययो वृद्धिश्च बाहुलकात्। तत स्त्रिया ङीप्]

जोगुवानः पुन पुनरव्यक्त शब्द कुर्वन् (सभाध्यक्ष) १ ६१ १४ [गुङ् अव्यक्ते शब्दे (भ्वा०) धातोर्यङन्ताच्छानच्प्रत्यय। यङो लुक्]

जोगुवे भृशमुपदेशकाय (विद्वज्जनाय) १ १२७ १० [गुङ् अव्यक्ते शब्दे (भ्वा०) धातोर्यङन्तात् क्विप्। ततश्चतुर्थी]

जोगुवे उपदिशामि ५ ६४.२ [गुङ् अव्यक्ते शब्दे (भ्वा०) धातोर्लट्। 'बहुल छन्दसि' इति शप. श्लु। अभ्यासस्य गुणश्छान्दस। यङ्लुगन्ताद्वा लट्]

जोषत् जुषेत, प्र०—अत्र व्यत्ययेन परस्मैपदम् ८ ४५ जुषताम्, प्र०—अत्र व्यत्ययेन परस्मैपदम् १७ २३ सेवेत १ १६७ ५ [जुषी प्रीतिसेवनयो (तुदा०) धातोर्लेट्]

जोषम् प्रीतिं प्रसन्नताम् १ ७७ ५ विपरीतसेवनम् ४ २७.२ पूर्णम् (शपथम्) ७ ४३ ४ प्रीतिम् ९ २३ ८ जुष्यते प्रीत्या सेव्यते तम् (परिधिम्) २ १७ **जोषे**=प्रीतिजनके व्यवहारे १ १२० १ [जुषी प्रीतिसेवनयो (तुदा०) धातोर्घञ्]

जोषयन्ते प्रीतयन्ति १ ८३ २ **जोषयासे**=सेवये ५ ३ १० सेवय ४ ३२ १६ सेवयस्व ३ ५२ ३ **जोषयेते**=सर्वान् सेवयत १ ९५ ५ सेवेते, प्र०—अत्र स्वार्थे णिच् १ ९५ ६ [जुषी प्रीतिसेवनयो (भ्वा०) धातोर्णिजन्ताल् लट्। 'जोषयासे' प्रयोगे आडागमश्छान्दस]

जोषवाकम् प्रीतिकर वचनम् ६ ५९ ४ [जोषवाकपदयो समास। जोष व्याख्यातम्। वाक=वच् परिभाषणे (अदा) धातोर्घञ्। जोषवाकमित्यविज्ञातनामधेय जोषयितव्य भवति नि० ५ २२.]

१ १२.६ [जुहू-ग्रास्यपदयो समास । जुहूरिति व्याख्यातम्]

जुहवे स्पर्द्धे ६ २ ३ [ह्वेञ् स्पर्धाया शब्दे च (भ्वा०) धातोर्लटि उत्तमैकवचने रूपम्]

जूजुवत् गमयेत् २ ३१ ४ [जु वेगिताया गताविति सौत्रो धातु । ततो णिजन्ताल् लुङ् । ग्रडभावश्छान्दस. । जवति गतिकर्मा निघ० २ १४]

जूजुवान् भृग गमयिना (विद्युदादिस्वरूपोऽग्नि) ४ ११ ४ **जूजुवांसम्**=ग्रतिशयेन वेगवन्तम् (चक्र=कलाचक्रम्) ५ ३१ ११ [जु वेगिताया गताविति सौत्रो धातु, ततो लिट स्थाने क्वसु प्रत्यय । तुजादीनामित्यभ्यासस्य दीर्घ]

जूजुवानेभि: वेगवद्भि (ग्रश्वै) प्र०—ग्रत्र 'तुजादीनाम्०' इति ग्रभ्यासदैर्घ्यम् ५ २६ ६. [जु इति सौत्रो धातु । ततो लिट स्थाने कानच् । 'तुजादीनामित्यभ्यासस्य दीर्घ । 'बहुल छन्दसी' ति भिस ऐसादेशो न]

जूजुवु: सद्यो गच्छन्ति ७ २१ ५ [जु वेगिताया गताविति सौत्रो धातु । ततो लिटि प्रथमबहुवचने रूपम्]

जूत· प्राप्तवेग (वात =वायु) ४ १७ १२ [जवति गतिकर्मा (निघ० २ १४), ततो भावे क्त । 'जू' इति सौत्रो धातु]

जूतये रक्षणाद्याय १ १२७ २ **जूतिभि:**=जूयते प्राप्यतेऽर्थो याभिस्ताभिर्युद्धक्रियाभि १ ११६ २ वेगादिभिर्गुणै ३ ३ ८ **जूतिम्**=न्यायवेगम् ४ ३८ ६ **जूति:**= वेग २१ ५६ वेगेन व्याप्तिकर्म (मन =मननशील ज्ञानसाधनम्) प्र०—'ऊतियूतिजूति०' ग्र० ३ ३ ६७ ग्रनेन निपातित २ १३ **जूतया**=वेगेन ३ १२ ३ ['जू' इति सौत्रो धातु, तत स्त्रियां क्तिन् प्रत्यये 'ऊतियूतिजूति०' ग्र० ३ ३ ६७ सूत्रेण निपात्यते। जूनि गति प्रीतिर्वा नि० १० २८]

जूर्ण: रोगी (जन) १ १८० ५ [जूरी हिंसावयोहान्यो (दिवा०) धातो क्त]

जूर्णायाम् गन्तुमशक्याया वृद्धाऽवस्थायाम् १ ४६ ३ [जूर्ण इति व्याख्यातम् । तत स्त्रियां टाप्]

जूर्णिनी वेगवती (राति =दानम्) ६ ६३ ४ [जूर्णप्राति० मत्वर्थ इनि । तत स्त्रियां ङीप्]

जूर्णि: शीघ्रकारिणी (सेना) १ १२७ ८ रोगवान् (होता=ग्रत्ता जन) १ १२७ १० जीर्णा (विदुषी पत्नी) ७ ३६ १ [जूर्णिर्जवतेर्वा द्रवतेर्वा दुनोतेर्वा नि० ६ ४ जूर्णि क्षिप्रनाम निघ० २ १५ क्रोधनाम निघ० २ १३ ज्वर रोगे (भ्वा०) धातो 'वीज्याज्वरिभ्यो नि' उ० ४ ४८ सूत्रेण नि प्रत्यय 'ज्वरत्वर०' सूत्रेण ऊठ्]

जूर्णेव पुरातनानीव (वर्षाणीव) १ १८४ ३ [जूर्णइव पदयो समास । जूर्ण इति व्याख्यातम्]

जूर्यति रुजति १ १२८ २ **जूर्यन्ति**=जीर्यन्ति जीर्णानि भवेयु १ ११७४ [जूरी हिंसावयोहान्यो (दिवा०) धातोर्लट् । व्यत्ययेन परस्मैपदम्]

जूर्यत्सु वेगवत्सु (वनेषु=रश्मिषु) ३ २३ १

जूर्यन्त्यै: जीर्णाऽवस्थाप्राप्तिनिमित्तायै (घोषायै= वाण्यै कृष्यै वा) १ ११७ ७ [जूरी हिंसावयोहान्यो (दिवा०) धातो शतृप्रत्ययान्तान् ङीप् । ततश्चतुर्थी]

जूर्य: जीर्ण (ग्रतिथि =विद्वज्जन) ६ २ ७ [जूरी हिंसावयोहान्यो (दिवा०) धातोर्ण्यत्]

जूर्व हिन्धि ६ ६ ६ [जूर्वति वधकर्मा (निघ० २ १६) धातोर्लोट्]

जूर्वन् विनाशयन् (सूर्य) १ १६१ ६ [जूर्वति वधकर्मा (निघ० २ १६) धातो शतृप्रत्यय]

जू: जीर्णाऽवस्था प्राप्त (जन) २ १४ ३ ज्ञानी वेगवान् वा (जन) ४ १७ [जवति गतिकर्मा (निघ० २ १४) धातो, जू इति सौत्रधातोर्वा 'क्विव् वचिपृच्छि०' उ० २ ५७ सूत्रेण क्विप् दीर्घादेशश्च । जूरसीत्येतद्ध वा ग्रस्या (वाच) एक नाम श० ३ २ ४ ११ ज्वर रोगे (भ्वा०) धातोर्वा क्विप्प्रत्यये 'ज्वरत्वर०' ग्र० ६ ४ २० सूत्रेण वकारस्योपधायाश्च स्थाने ऊठ्]

जेता जेतु शील (इन्द्र =सेनेश) १ १७८ ३ जयशील (इन्द्र =शत्रुविदारको राजा) ६ ४५ २ उत्कर्षत्वप्रापक (वय जीवनम्) १ ६६ २ **जेतारम्**=शत्रून् जापयति जयति वा तम् (इन्द्रम्=ईश्वर सभाध्यक्ष वा) १ ११ २ जयशीलम्, भा०—विजेतारम् (इन्द्र=राजानम्) २८ २ [जि जये (भ्वा०) धातोस्तच्छीलादिष्वर्थेषु तृन् । कर्त्तरि तृच्प्रत्ययो वा]

जेत्वानि जेतु योग्यानि शत्रुसैन्यानि ६ ४७ २६ [जि जये (भ्वा०) धातो 'कृत्यार्थे तवैकेनकेन्यत्वन' ग्र० ३ ४ १४ सूत्रेण त्वन्प्रत्यय । जेत्वानि जेतव्यानि नि० ६ १२]

जेन्यम् जयति येन तम् (वाजिनम्=ग्रश्वम्)

ज्या प्रत्यञ्चा २९ ४० **ज्याम्**=धनुष प्रत्यञ्चाम् ४ २७ ३ बाणसन्धानार्थम् १६ ६ [जयति यया शत्रून् मा ज्येति विग्रहे जि जये (भ्वा०) धातो 'अघ्न्यादयश्च' उ० ४ ११२ सूत्रेण यक्प्रत्ययान्त पद निपातितम्। ज्या जयतेर्वा जिनातेर्वा, प्रजावयतीपूनीति वा नि० ९ १८]

ज्याकारम् यो ज्या प्रत्यञ्चा करोति तम् (शिल्पि-जनम्) ३० ७ ['ज्या' व्याख्यातम्। ज्योपपदे डुकृञ् करणे (तना०) धातोरण्प्रत्यय]

ज्याज्मन् प्रत्यञ्चा २९ ४०

ज्यायस्यै ज्येष्ठायै (स्वस्रे) १ १२४ ८ [वृद्धप्राति० अतिशायने ईयसुन् प्रत्यये 'वृद्धस्य च' अ० ५ ३ ६२ सूत्रेण ज्यादेश:। 'ज्यादादीयस' अ० ६ ४ १६० सूत्रेण ईयस आकारादेश]

ज्यायस्वन्त: उत्तम विद्यादिगुणयुक्त (विद्वान् लोग), स० वि० १४२, अथर्व० ३ ३० ५ [प्रशस्यप्राति०' अति-शायने ईयसुन्प्रत्यये 'ज्य च' अ० ५ ३ ६१ सूत्रेण ज्यादेश। ज्यायस्प्राति० मतुप्]

ज्याय: अतिशयेन ज्येष्ठम् (ब्रह्म) ७ ३२ २४ प्रशस्यम् (मुखम्) ६ २९ ७

ज्यायान् महिमाऽनन्त (पुरुष =परमेश्वर), ऋ० भू० १२१, ३१ ३ अतिशयेन ज्येष्ठ (इन्द्र =विद्वज्जन) ७ २० ७ महान् वृद्ध (सूर्य) ३ ३८ ५ महान् (इन्द्र = सूर्य इव प्रकाशमानो जगदीश्वर) ६ ३० ४ अतिशयेन प्रशस्तो महान् (पुरुष =परमेश्वर) ३१ ३ **ज्यायांसम्**= श्रेष्ठम् (ऋषिस्वरम्=ऋषीणामुपदेशम्) ५ ४४ ८ [वृद्ध-प्राति० प्रशस्यप्रातिपदिकाद्वातिशायने ईयसुन्। वृद्ध-प्रशस्ययो स्थाने ज्यादेश। ईयस आकारादेशश्च]

ज्यावाजम् ज्याया शब्दम् ३ ५३ २४ [ज्या-वाज-पदयो समास। ज्या व्याख्यातम्। वाज =वज गतौ (भ्वा०) धातोर्घञ्]

ज्येष्ठतमा अतिशयेन ज्येष्ठौ (मित्रावरुणा=अध्या-पकोपदेशकौ) ६ ६७ १ **ज्येष्ठतमाय**=अतिशयेन वृद्धाय (अवसे=रक्षणाद्याय) २ १६ १ [वृद्धप्राति० अतिशायने इष्ठन्प्रत्यये 'वृद्धस्य च' अ० ५ ३ ६२ सूत्रेण ज्यादेश। ततोऽतिशायने तमप्। प्रथमाद्विवचने 'सुपा सुलुग्०' इत्याकार]

ज्येष्ठतातिम् प्रशस्त ज्येष्ठम् (वृजन=योगवलम्) ७ १२ ज्येष्ठमेव (राजानम्) ५ ४४ १ [ज्येष्ठ व्याख्यातम् ज्येष्ठप्राति० भावे स्वार्थे वा छान्दस तातिल्प्रत्यय]

ज्येष्ठम् अतिशयेन प्रशस्यम् (रत्न=धनम्) ५ ४९ २ अतिशयेन प्रशस्तम् (विप्र=विद्वासम्) १ १२७ २ वृद्ध श्रेष्ठम्, भा०—सर्वोत्कृष्ट सर्वोपास्य परमेश्वरम् (ब्रह्म) ३३ ८० विद्यावृद्धम् (अध्यापकम्) ४ १ २ प्रवृद्धम् (शव =वलम्) ६ ४८ २१ **ज्येष्ठ:**=अतिशयेन प्रशसनीय (परमेश्वर सभाध्यक्षो वा), प्र०—अत्र 'ज्य च' अ० ५ ३ ६१ इति सूत्रेण प्रशस्यस्य स्थाने ज्यादेश १ १०० ४ पूर्वज (बन्धु विद्वान्) ४ ३३ ५ **ज्येष्ठाय**=सबसे बडे होने के लिए, स० प्र० १८३, ९ ४० **ज्येष्ठे**=अतिशयेन प्रशस्ये (द्यावापृथिवी=सूर्यभूमी) ४ ५६ १ [वृद्धात् प्रशस्या-द्वातिशायने इष्ठन्प्रत्यय। प्रातिपदिकस्येष्ठन्प्रत्यये ज्या-देश। प्रजापतिर्वाव ज्येष्ठ तै० स० ७ १ १ ४ यद्वै ज्येष्ठ तन्महत् ऐ० आ० १ ३ ७]

ज्येष्ठराज्यम् यो ज्येष्ठेषु राजते तम् (परमेश्वरम्) २ २३ १ [ज्येष्ठराजन्पदयो समासे भवार्थे यत्]

ज्येष्ठा प्रशस्यानि (नृम्णानि=धनानि) ४ २२ ९ [प्रशस्यप्राति० अतिशायने इष्ठन्। ज्यादेश। शेर्लोप-श्छान्दस]

ज्येष्ठास: विद्यावयोवृद्धा प्रशस्तवाच (विद्वज्जना) ५ ८७ ९ [ज्येष्ठ व्याख्यातम्। ततो जसोऽसुगागम]

ज्यैष्ठ्यम् प्रशस्यस्य भाव १८ ४ **ज्यैष्ठ्याय**= अत्युत्तमकर्मणामनुष्ठानाय १ ५ ६ प्रशस्त-सुख-भावाय १४ १६ प्रशस्यभावाय १४ १५ अतिशयेन प्रशस्यस्य भावाय १४ ६ ज्येष्ठाना वृद्धाना भावाय १४ २७. ज्ञान-वृद्ध-व्यवहार-स्थापनाय ऋ० भू० २२२, ९ ४० वृद्धस्य भावाय ३ ५० ३ विद्याधर्मवृद्धाना भावाय १० १८ ज्येष्ठ-त्वाय ९ ४० ज्येष्ठे मासि भवाय व्यवहाराय, वृद्धत्वाय वा १३ २५ [ज्येष्ठ व्याख्यातम्। ततो भावे कर्मणि वा ष्यञ्-प्रत्यय। ज्यैष्ठ्य वा अग्निष्टोम जै० २ ३७८]

ज्योक् चिराऽर्थे १ २३ २१ निरन्तरम् १ १३६ ६ [स्वरादिपाठादव्ययम्]

ज्योतिरग्रा: ज्योतिर्विद्याप्रकाशादिकमग्रा अग्रगण्या ७ ३३ ७ पहली ज्योति के तुल्य, स० वि० १६९, अथर्व० १४ २ ३१ [ज्योति-अग्रपदयो समास। ज्योति-पद व्याख्यास्यते]

ज्योतिरनीक: ज्योतिरेवाऽनीक सैन्यमिव यस्य स (अग्नि) ७ ३५ ४ [ज्योति =अनीकपदयो समास। ज्योति पद व्याख्यास्यते]

जोषि जुपसे सेवसे, प्र०—अत्र 'बहुलं छन्दसि' इति शब्विकरणस्य लुक्, व्यत्ययेन परस्मैपदं च २ ३७ ६ सेवते २ ३७ ६ [जुषी प्रीतिसेवनयोः (भ्वा०) धातोश्छान्दसं रूपम्]

जोषिषत् जुषेत सेवेत, प्र० —अत्र व्यत्ययेन परस्मैपदम् २ ३५ १ [जुषी प्रीतिसेवनयोः (भ्वा०) धातोर्लेट्। 'सिब्बहुलं लेटि' इति सिप्]

जोष्टार इव सेवमाना इव (प्रजाजना) इव ४ ४१ ६ [जोष्टार-इवपदयोः समासः। जोष्टारोऽग्रिमे पदे द्रष्टव्यम्]

जोष्टारम् प्रीतं सेवमानम् (शमितारं=यजमानम्) २८ १० **जोष्ट्रे**=जुषमाणाय (अ०—होत्रे) १७ ५६ [जुषी प्रीतिसेवनयोः (भ्वा०) धातोः कर्त्तरि तृच्। इडभावश्छान्दसः]

जोष्ट्री सेवनीया (सरस्वती=स्त्री) २१ ५१ सेवमाने (उषासानक्ता=रात्रिदिने) २८ १५ प्रीतिमत्यौ (वसुधिती=विद्याधारिके स्त्रियौ) २८ ३८ **जोष्ट्रीभ्याम्**=सेविकाभ्यां वेलाभ्याम् २१ ५० [जुषी प्रीतिसेवनयोः (भ्वा०) धातोः 'सर्वधातुभ्यः ष्ट्रन्' इत्युणादिसूत्रेण ष्ट्रन् प्रत्ययः। स्त्रियां ङीप्]

जोष्या सेवितुं योग्या (गौः=विद्यासुशिक्षिता वाणी) १ १७३ ८ [जुषी प्रीतिसेवनयोः (भ्वा०) धातोर्ण्यदन्तात् स्त्रियां टाप्]

जोहवीति भृशमाह्वयति ३४ ३८ भृशमाह्वयन्ति ७ ५६ १८ भृशं ददाति ३ ६२ २ भृशमाददाति ७ ३८ ६ भृशं शब्दयति ३ ३३ ४ भृशमुपदिशति ५ ४३ १ भृशं प्रशंसति ७ ४१ ५ निश्चय कर के प्रशंसा करता है, स० वि० १५६, ७ ४१ ५ ग्रहण करने की अत्यन्त इच्छा करता है, आर्याभि० २ ४५, ३४ ३८ **जोहवीमि**=भृशं स्पर्द्धे ५ ४ १० भृशं स्वीकरोमि २ १० ६ भृशं प्रशंसामि आह्वयामि वा ३ ४३ ३ भृशं स्तौमि १ १७५ ६ भृशं ह्वयामि १ १७६ ६ भृशं गृह्णामि ५ ६६ ३ पुनः पुनराददामि १ ३४ १२ भृशमाददामि १ १६४ ५२ [हु दानादानयोः (जु०) धातोर्यङ्लुगन्ताल् लट्। ह्वेञ् स्पर्द्धायां शब्दे च (भ्वा०) धातोर्वा यङ्लुगन्ताल् लट्। धातोः सम्प्रसारणं 'अभ्यस्तस्य च' अ० ६ १ ३३ सूत्रेण। जोहवीमि आह्वये नि० ११ ३३]

जोहुवती या भृशमाह्वयती (स्त्री) ७ २४ २ [ह्वेञ् स्पर्द्धायां शब्दे च (भ्वा०) धातोर्यङ्लुगन्तात् शत्रन्तात् ङीप्]

जोहुवन्त भृशमाददति ७ २१ ७ [हु दानादानयोः (जु०) धातोर्यङ्लुगन्ताल् लङ्। व्यत्ययेनात्मनेपदमडभावश्च]

जोहुवानम् आहूयमानमाह्वयितारं वा (जनम्) ५ ४२ ७. **जोहूवानान्**=भृशमाह्वयमानान् (नॄन्=नायकान् राजपुरुषान्) ७ २८ ३ [ह्वेञ् स्पर्द्धायां शब्दे च (भ्वा०) धातोर्यङन्ताच्छानच्]

जोहुवाना भृशं प्राप्तप्रशंसा (माता) ५ ४७ १ [ह्वेञ् स्पर्द्धायां शब्दे च (भ्वा०) धातोर्यङन्ताच्छानच्। स्त्रियां टाप्]

जोहूत्रम् अतिशयेन स्पर्द्धितम् (अश्वं=विद्युतम्) १ ११८ ६ **जोहूत्रः**=भृशं दाता (इन्द्र=परमेश्वर आप्तो जनो वा) २ २० ३ अतिशयेन सङ्गमनीय (अग्नि) २ १० १ [ह्वेञ् स्पर्द्धायां शब्दे च (भ्वा०) धातोः, हु दानादानयोः (जु०) धातोर्वा छान्दसं रूपम्]

ज्ञातयः सम्बन्धिनः (जनाः) ७ ५५ ५ [ज्ञा अवबोधने (क्र्या०) धातोः स्त्रियां क्तिन्। ज्ञातिः संज्ञानात् नि० ४ २१]

ज्ञात्रम् जानामि येन तत् (ज्ञानम्) १८ ७ [ज्ञा अवबोधने (क्र्या०) धातोः 'सर्वधातुभ्यः ष्ट्रन्' उ० ४ १५ सूत्रेण ष्ट्रन्]

ज्ञासः जानन्ति ये तान् विदुषः, सृष्टिस्थान् ज्ञातव्यान् पदार्थान् वा १ १०६ १ [ज्ञा अवबोधने (क्र्या०) धातोः 'इगुपधज्ञाप्रीकिरः कः' अ० ३ १ १३५ सूत्रेण कः प्रत्ययः। प्रथमाबहुवचने जसोऽसुक्। विभक्तिव्यत्ययः]

ज्ञुबाधः जानुनी बाधमाना (जनाः) ६ १ ६ [जानुशब्दोपपदे बाधृ विलोडने (भ्वा०) धातोः क्विप्। जानुस्थाने ज्ञुरादेशश्छान्दसः]

ज्ञेयाः ज्ञातुं योग्याः (विद्वांसो जनाः) २ १० ६ [ज्ञा अवबोधने (क्र्या०) धातोः 'अचो यत्' सूत्रेण यत्। 'ईद् यति' अ० ६ ४ ६५ सूत्रेण ईकारान्तादेशः]

ज्ञेषम् जानीयाम् प्र०—जानातेर्लेटि सिपि रूपम् २० २५ [ज्ञा अवबोधने (क्र्या०) धातोर्लेट्]

ज्मन् ज्मनि भूमौ, प्र०—अत्र 'सुपां सुलुक्०' इति सप्तम्येकवचनस्य लुक् 'ज्मेति पृथिवीनाम' निघ० १ १, १७ ६ पृथिव्याम् ७ २१ ६ **ज्मयाः**=भूमेर्मध्ये ७ ३९ ३ **ज्मः**=पृथिव्याः ६ ६२ १ [ज्मा पृथिवीनाम निघ० १ १ ज्मया=ज्मा पृथिवी तस्यां भवा नि० १२ ४३ ज्मया=ज्माशब्दात् सप्तम्यां याच्प्रत्ययश्छान्दसः। भवार्थे वा या प्रत्ययश्छान्दसः.]

आ० ६ १० ३ ज्योतिर्वामिम् तै० स० ५ ५ ३ ४ ज्योतिर्वै यज्ञ काठ० ३१ ११ ज्योनिर्वै हिरण्यम् तै० स० ५ ५ ३ ४ ऐ० ७ १२ गो० २ ५ ८ ता० ६ ६ १० श० ६ ७ १ २. ज्योतिर्हि स्वर्गो लोक मै० १ ४ ७ ज्योतिश्च मे सुवश्च मे तै० स० ४ ७ ११ ज्योतिषैव तमस् तरति मै० १ ८ ६ ज्योतिस्तद्यत् साम, ज्योतिस्तद्यद् देवता जै०१ ७६ त्रीणि ज्योतीषि सचते स षोडशी । काठसक० १०५ १६ दिवि ते बृहद्भा इत्याह सुवर्ग एवास्मै लोके ज्योतिर्दधाति तै० स० ३ ४ ३ ६ प्रजा ज्योति श० ८ ३ २ १४ काठ० ३३ ७ वाक् प्राणाना ज्योतिरुत्तमम् काठ० २० ११ विराजा ज्योतिषा सह (घर्मो विभाति) तै० आ० ४ २१ १ मै० ४ ९ १३ सुवर्गो वै लोको ज्योति तै० १ २ २ २ सुवर्वै पूर्वमहर्ज्योतिरुत्तरम् जै० २ २३७ हिङ्कारेण वै ज्योतिषा देवाग्स्त्रिवृते ब्रह्मवर्चसाय ज्योतिरदधु जै० १ ६६ हिरण्य सम्प्रदाय षोडशिना स्तुवन्ति । षोडशिनमेव तज्ज्योतिष्मन्त कुर्वन्ति जै० १ २०५ स त्वमग्ने दिव्येन ज्योतिषा भाहि समन्तरिक्षेण स पार्थिवेन क० ६ ३ स ज्योतिषा भूमेति स देवैरभूमेत्येवैतदाह श० १ ९ ३ १४ अस्य एवैतानि (घर्म, अर्क, शुक्र, ज्योति, सूर्य) अग्नेर्नामानि श० ९ ४ २ २५ ज्योतिरमृतम् श० १४ ४ १ ३२ प्राणो वै ज्योति श० ८ ३ २ १४ अग्निर्ज्योतिर्ज्योतिरग्निरिन्द्रो ज्योतिर्ज्योतिरिन्द्रस्सूर्यो ज्योतिर्ज्योतिस्सूर्य काठ० ४० ६ पञ्च ज्योतीषीद्धान्येषु लोकेषु दीप्यन्ते । अग्नि पृथिव्या वायुरन्तरिक्ष आदित्यो दिवि चन्द्रमा नक्षत्रेषु विद्युदप्सु जै० १ २९२ २.४३३ यत्ते सोम दिवि ज्योतिर्यत् पृथिव्या यदुरा अन्तरिक्षे तेनास्मै यज्ञपतय उरु राये कृधि मै० १ ३ ३ यथामूनि त्रीणि ज्योतीष्येवमिमानि पुरुषे त्रीणि ज्योतीषि यथासौ दिव्यादित्य एवमिद शिरसि चक्षुर्यथाऽसावन्तरिक्षे विद्युदेवमिदमात्मनि हृदय यथायमग्नि पृथिव्यामेवमिदमुपस्थे रेत शा० आ० ७ ४ यद् हिरण्यशल्कै प्रोक्षति, ज्योतिषैवास्मै सवत्सर विवासयति काठ० २१ ६]

ज्योतिष्कृत् यो ज्योतीषि करोति स, अ०—सविता, भा०—विद्याप्रकाशको राजपुरुष ३३ ३६ यो ज्योति प्रकाशात्मक सूर्यादिलोक करोति स (ईश्वर) १ ५० ४ [ज्योतिष्उपपदे डुकृञ् करणे (तना०) धातो क्विप् । ज्योतिष्पद व्याख्यातम्]

ज्योतिष्मत् बहुन्याययुक्तम् (क्षत्र=राज्यम्) १ १३६ ३ [ज्योतिष्पद व्याख्यातम् । ततो मतुप्]

ज्योतिष्मती प्रशस्तानि ज्योतीषि विद्यन्ते यस्या ताम् (तम=रात्रिम्) प्र०—अत्र 'सुपा सुलुक्०' इत्यमो लुक् १ ४६ ६ ज्योतिष्मतीम्=बहु ज्योतिर्विद्यते यस्यास्ताम् (स्त्रियम्) १४ १४ प्रशस्त ज्योतिर्विद्याविज्ञान विद्यते यस्यास्ताम्, (अ०—विद्युतम्) १३ २४ बहुतेजोयुक्ताम् (अदिति=दिवम्) १ १३६ ३ प्रशस्तानि ज्योतीषि ज्ञानानि विद्यन्तेऽस्या ताम् (स्त्रियम्) १५ ५८ [ज्योतिष्प्राति० भूम्नि प्रशस्तार्थे वा मतुप्, तत स्त्रिया ङीप् । ज्योतिष्पद व्याख्यातम्]

ज्योतिष्मन्तम् बहुप्रकाशम् (विद्वज्जनम्) २ २३.३. बहूनि ज्योतीषि विद्यन्ते यस्मिँस्तम् (अग्नि=विद्युतम्) ११ २८ प्रशस्त-ज्योतिर्युक्तम् (अग्नि=विद्युतम्) ११ ३१. **ज्योतिष्मन्त:**=शुद्ध विज्ञानयुक्त मुक्ति को प्राप्त शुद्ध पुरुषगण स० वि० १९७, ९ ११३ ९ **ज्योतिष्मान्**= प्रशस्तप्रकाशयुक्त (अग्नि=जीव) १२ ३८ बहूनि ज्योतीषि प्रकाशा विद्यन्ते यस्य स: (अ०—ईश्वर) १७ ८० बहूनि ज्योतीषि विज्ञानानि विद्यन्ते यस्य स (विद्वान् जन), अ०—सूर्य १२ ३२ [ज्योतिष्पद व्याख्यातम् । ततो भूम्नि प्रशस्तार्थे वा मतुप् । देवयाना वै ज्योतिष्मन्त पन्थान ऐ० ३ ३८ प्रजापतये त्वा ज्योतिष्मते ज्योतिष्मन्त गृह्णामि मै० १ ३ ३५ विराजा ज्योतिष्मान् तै० स० ४ ४ ८ १]

ज्योतीरथम् प्रकाशयुक्त रमणीय यानम् १ १४० १ [ज्योतिष्-रथपदयो' समास]

ज्योते ! हे सुशीलेन द्योतमाने (पत्नि !) ८ ४३.

ज्रयस: वेगवत (यानस्य) ५ ३२ ९ [ज्रयति गतिकर्मा निघ० २ १४]

ज्रयसानौ गच्छन्तौ विजानन्तौ वा (मित्रावरुणौ= अध्यापकोपदेशकौ) ५ ६६ ५ [ज्रयति गतिकर्मा निघ० २ १४ तत शानच् । सुडागमश्छान्दस । व्यत्ययेनात्मनेपदम्]

ज्रय: ज्रयन्त्यभिभवन्त्यायुर्येन तत् (काल) १ ९५ ९ तेज १ १०१ ७ वेगयुक्त (अग्नि) १ १४० ९ वेगवन्त (आप्तपुरुषा) ५ ४४ ६ अतितेजोमया (रश्मय=किरणा) ४ ५२ ५ **ज्रयांसि**=वेगयुक्तानि कर्माणि ५ ८ ७ ज्ञातव्यानि (कार्याणि) प्र०—ज्रयतीति गतिकर्मा, निघ० २ १४, ६ ६ ६ [ज्रयति गतिकर्मा (निघ० २ १४) । ज्रि अभिभवे (भ्वा०) धातोर्वा 'एरच्' अ० ३ ३ ५६ सूत्रेणाच्प्रत्यय]

तकत् वह १ १३३ ४ [तकति गतिकर्मा निघ० २ १४ तक हसने (भ्वा०) धातोर्वा लेट्]

ज्योतिर्जरायुः ज्योतिषा जरायुरिवाऽऽच्छादक (वेन =कमनीयश्चन्द्र) ७ १६. [ज्योति-जरायुपदयो समास । ज्योति पद व्याख्यास्यते । जरायु =जरोपपदे इण् गतौ (अदा०) धातो 'किजरयो श्रिण' उ० १ ३ सूत्रेण ञुण्प्रत्यय । ज्योतिर्जरायु =ज्योतिरस्य जरायुस्थानीय भवति नि० १० ३९]

ज्योतिषस्पती प्रकाशस्य पालयितारौ (मित्रावरुणा= सूर्यवायू) प्र०—अत्र 'षष्ठ्या पतिपुत्र०' अ० ८ ३ ५३ अनेन विसर्जनीयस्य सकारादेश १ २३ ५ [ज्योतिष्-पति-पदयो समास । षष्ठ्या अलुक्]

ज्योतिष: प्रकाशस्य २६ ६ **ज्योतिषा**=प्रकाशेन, भा०—विज्ञानेन ३८ १६ स्वप्रकाशेन ३३ ९२ विद्या-प्रकाशेन ११ ४० विद्यासुशिक्षाप्रकाशेन शीतलेन तेजसा वा १ ९१ २२ विद्यान्यायसुशिक्षाप्रकाशेन ११ ५३ सत्यविद्यो-पदेशप्रकाशेन ३८ १६ सूर्यादिप्रकाशेन वा धर्मादिप्रकाशेन ३७ २१ मननादिरूपप्रकाशेन ३८ १६ तेजस्विना लोक-समूहेन सह २ ९ विद्या-धर्म-प्रकाश-कारकेण (व्यवहारेण) २ २५ दीप्त्या १३ ४० द्योतमानेन (अग्निना) २९ २७ **ज्योतिषाम्**=इन्द्रियाणा सूर्यादीना च, ऋ० भू० १५२, ३४ १ शब्दादिविषयप्रकाशकानामिन्द्रियाणाम्, भा०—ज्ञानस्य साधकत्वादिन्द्रियाणाम् ३४ १ अग्नि, सूर्यादि और श्रोत्रादि इन्द्रिय, इन ज्योति-प्रकाशको का, आर्याभि० २ ४३, ३४ १ **ज्योतिषि**=विद्युति १३ ५३ **ज्योतिषे**= प्रदीपनाय २२ ३० न्याय-प्रकाशाय १३ ३९ **ज्योति:**= प्रकाशम् १५ ५८ विज्ञानम् १४ १४ विद्याप्रकाशम् भा०—विद्युदादिपदार्थविद्याम् १३ २४ प्रकाशक (अग्नि = पावकवद्राजा) ४ १० ३ द्योतमानम्, भा०—अन्त करणमनोऽहङ्कारवृत्तित्वाच्चतुर्विधमन्त प्रकाशकम् (मन) ३४ ३ ज्ञानप्रकाशम् ६ ४७ ८ तेज ३ ३३ प्रकाशकम् (ईश्वरम्) ३३ ४० सूर्यादिप्रकाश ११०० ८ प्रदीप्ति २९ ७ विद्युतो दीप्ति १८ ५० विज्ञानविषयम्, विज्ञान-प्रकाशम् ८ ५२ स्वप्रकाश सर्वप्रकाशक वा (ब्रह्म), सूर्य इव स्वप्रकाश चेतन परमात्मानम् ६ ९ ५ प्रकाशस्वरूपम्, भा०—तेजस्वि (ब्रह्म=अनन्तमीश्वरम्) २३ ४७ प्रकाश-युक्त दिनम् २ २७ १४ शिल्पविद्याप्रकाशम् २९ ३२ प्रकाशवान् (इन्द्र =भौतिक सूर्यो वायुर्वा), प्र०—'द्युते रिसन्नादेश्च ज' उ० २ १०५ इति द्युत-धातोरिसन्प्रत्यय आदेर्जकारादेश्च २ ९ प्रकाशमय, शिल्पविद्यासाधनप्रका-शक (अग्नि =ईश्वरो भौतिको वा) ३ ९ अ०—स्वाहुत हवि ३ ९. सर्वात्मप्रकाशको वेदद्वारा सकलविद्योपदेशक, अ०—सर्वात्मम् ज्ञानम् (सूर्य =चराचरात्मा जगदीश्वर) ३ ९ सर्वव्यवहारप्रकाशक (अ०—सूर्यलोक) ३ ९. सर्वप्रकाशक (अग्नि =जगदीश्वर) ३ ९ सकलपदार्थ-प्रकाशनम् अ०—सकलविद्याप्रकाशक ज्ञानम् ३ ९ सकल-पदार्थप्रकाशनम्, अ०—मूर्त्तद्रव्यप्रकाशनम् ३ ९ पृथिव्यादि-मूर्त्तद्रव्यप्रकाशक (सूर्यलोक) ३ ९ अ०—विद्युदाख्यो-ऽयमग्नि शरीर-ब्रह्माण्डस्थ ३ ९ सत्यप्रकाशक (सूर्य = जगदीश्वर) ३ ९ प्रकाशमिव विद्याम् ३ ३९ ७ सूर्यप्रकाश इव विज्ञानदीप्ति ३ ३९ ८ प्रकाशस्वरूप परमात्मानम् ७ ३२ २९ प्रकाशक, प्रवर्त्तकम् (मन), प्र०—"आत्मा मनसा सयुज्यते, मन इन्द्रियेणेन्द्रियमर्थेन" इति महर्षि-वात्स्यायनोक्ते ३४ १ सर्वपदार्थप्रकाशकम् (मन) ऋ० भू० १५२, ३४ १ ज्ञानप्रकाश २२ ३३ विद्युदादिप्रकाशम् १३ २४ प्रकाशमानम्, अ०—सवितृमण्डलम् २७ १० प्रकाशस्वरूप सूर्यलोकम् १ ५० १० द्युतिम् १७ ५८ दीप्तिम् १ ९३ ४ विद्याप्रकाशादिकम् ७ ३३ ७ विद्या-विनयप्रकाशम् १ ११७ २१ न्याय-विनय-प्रचारकम् (प्रशस्त बुद्ध्यादिकम्) १ ५७ ३ प्रकाशमयम् (स्व = सुखम्) ४ १६ ४ प्रकाशयुक्त (मन =मन), स० प्र० २४७, ३४ ३ स्वप्रकाशस्वरूप और सुख के प्रकाशक (ईश्वर) को, आर्याभि० २ १७, ५ ३२ सूर्यादि लोक, अग्न्यादिपदार्थ, आर्याभि० २ १३, १८ २९ स्वय प्रकाशकत्वेन ज्ञानप्रकाशकम् (ब्रह्म) १ ३६ १९ युद्धविद्या-प्रकाशम् ३ ३४ ३ **ज्योतींषि**=विद्यातेजासि ३ १० ५ विद्यादिसद्गुणप्रकाशकानि तेजासि १ ५५ ६ अग्नि-सूर्य-विद्युदाख्यानि सर्वजगत्प्रकाशकानि, ऋ० भू० ४४, तेजो-मयानि प्रकाशकानि (विद्युत्सूर्यचन्द्ररूपाणि) ३२ ५ सूर्य-विद्युदग्न्याख्यानि ८ ३६ अग्नि, वायु और सूर्य इनको, आर्याभि० २ १४, १४ १४ [द्युत् दीप्तौ (भ्वा०) धातो 'द्युतेरिसिन्नादेश्च ज' उ० २ ११० सूत्रेण इसिन्प्रत्यय. । आदेश्च जकारादेश । अयमग्निर्ज्योति श० ९ ४ २ २२ अय वै (भू) लोको ज्योति काठ० ३३ ३ ऐ० ४ १५ जै० २ ३१७ असौ (सूर्य) वाव ज्योतिस्तेन सूर्य नाति-शसति ऐ० ४ १० अहर्ज्योति श० १० २ ६ १९ इद-मेवान्तरिक्ष ज्योति जै० २ १९६ इय (पृथिवी) वाव ज्योति तै० स० ७ २ ४ २ ता० १६ १ ७ एतद्ध ज्योति-रुत्तम य एष (सूर्य) तपति जै० २ ६८ एतद्ध वाव सर्वेषु लोकेषु ज्योतिर्यद् हिरण्यम् जै० १ ८० एतद्वै प्रजात देवतीर्थ यज्ज्योतिरतिरात्र जै० २ ३०५ ज्योति प्रवर्ग्य श० १४ ४ १ ३२ तै० आ० ५ १० ४. ज्योतिरिति नक्षत्रेषु तै०

ववर्थेति निगमे' अ० ७.२ ६४. सूत्रेण निपातनात् न]

ततन्वत् विस्तृणन् (जगदीश्वर) प्र०—अत्र तनु धातो शतृप्रत्यये 'बहुल छन्दसि' अ० २ ४ ७६. अनेन बहुल शप श्लु ६ २१ ३ [तनु विस्तारे (तना०) धातो शतृप्रत्यये छान्दस शप श्लु । व्यत्ययेन उकारप्रत्ययश्च]

ततन्वान् विस्तीर्ण (सूर्य =सवितृमण्डलम् ७ ६१ १. [तनु विस्तारे (तना०) धातोर्लिट कानच् । 'छन्दस्युभयथे' ति लिट सार्वधातुकत्वाद् शप उकारप्रत्ययोऽपि भवति]

ततपते तताना विस्तृताना पालक (अग्ने=पावक राजन्) ४ २ ६ [तत-पतिपदयो समास । तत =तनु विस्तारे (तना०) धातो क्त । 'यस्य विभाषा' इत्यनिट्त्वेऽनुनासिकलोप]

ततम् व्याप्तम् (परिधि=सर्वलोकाऽऽवरणम्) ७ ३३ ६. विस्तृतम् (अप =कर्म १ ११० १ **ततः**= विस्तृत (सूर्य), प्र०—अत्र 'तनिमृङ्०' उ० ३ ८६. अनेन तन्-प्रत्यय किच्च १ ८३ ५ [तनु विस्तारे (तना०) धातो क्त प्रत्यय । अथवा तनु विस्तारे धातो. 'तनिमृङ्भ्या किच्च' उ० ३ ८८ सूत्रेण तन्प्रत्यय किच्च]

ततरुषः तारक (यजत्र =राजा) ६.१२ २ [तॄ प्लवनसन्तरणयो (भ्वा०) धातोर्लिट क्वसु । विभक्तिव्यत्ययश्च]

ततर्द हिनस्ति, प्र०—अत्र लडर्थे लिट् १ ३२ १ विस्तारितवान्, ऋ० भू० २८३, १ ३२ १ जलप्रवाहेण हिंसितवान्, ऋ० भू० २८३, १ ३२ १ [तर्द हिंसायाम् (भ्वा०) धातोर्लिट्]

ततर्ह तिरस्करोति, सर्वान्निवारयति, ऋ० भू० २३७, अथर्व० ११ ३ ७ [तृह हिंसार्थे (तुदा०) धातोर्लिट्]

ततस्रे तस्यन्ति दु खान्युपक्षयन्ति १ १३१ ३ तन्वन्ति ४ २३ ५ उपक्षयन्ति ४ ५० २ [तसु उपक्षये (दिवा०) धातोर्लिट् । व्यत्ययेनात्मनेपदम् । 'इरयो रे' अ० ६ ४ ७६ सूत्रेण 'रे' इत्यादेश]

ततः तदनन्तरम् १० १६ तस्मात् ८ ६० इस कारण से स० वि० २१५, ४० ६ भा०—पश्चात् ३१४ [तद्-सर्वनाम्न 'पञ्चम्यास्तसिल्' इति विभक्तिसञ्ज्ञके तसिल्-प्रत्यये 'त्यदादीनाम ' इत्याकारान्तादेश]

ततान तनोति विस्तृणोति १ ३५ ७ तनयति ५ ५४ ५ विस्तारयति, प्र०—तुजादित्वाद् दीर्घ १ १०५ १२ तनुते विस्तृणाति ३ ५३ १५ [तनु विस्तारे (तना०) धातोर्लिटि प्रथमैकवचनम्]

ततार तरेत् ७.३३.३ [तॄ प्लवनसन्तरणयो (भ्वा०) धातोर्लिटि प्रथमैकवचनम्]

ततुरिम् त्वरमाणम् (अग्नि=पावकम्) ४ ३६.२. दु खात् तारयितारम् (परमात्मानम्) ६ २२ २ **ततुरिः**= शत्रूणा हिंसक (राजा) ६ २४ २ तरिता (सेनेश) ६ ६८ ७ दु खान सर्वान् सन्तारक (परमात्मा) १ ४५ ३ [तॄ प्लवनसतरणयो. (भ्वा०) धातो 'आदृगमहनजन.०' अ० ३ २.१७१. सूत्रेण तच्छीलादिष्वर्थेषु कि प्रत्ययो लिट्वच्च कार्यम् । उपह्वते ततुरिरिति । तदेना प्रत्यक्षमुप-ह्वयते ततुरिरिति सर्व ह्येषा पाप्मान तरति तस्मादाह ततुरिरिति श० १ ८ १ २२

ततृदाना दु खस्य हिंसयाँ (राजप्रजाजनौ) ४.२८ ५ **ततृदानाः**=भूमि हिंसन्त (सिन्धव =नद्य) ५ ५३ ७ [उतृदिर् हिंसानादरयो (रुधा०) धातोर्लिट कानच् । सुपा सुलुग्०' इत्याकारादेश । अन्यत्र प्रथमाबहुवचनम्]

ततृपि अतिशयेन तृप्तिकारकम् (सोमम्=ओषधिगणम्) ३.४० २ [तृप प्रीणने (दिवा०) धातो 'किकिनावुत्सर्गश्छन्दसि' अ० ३ २ १७१ वा० सूत्रेण कि]

ततृपाणम् प्राप्ततृपम् (प्राणिनम्) १.१३० ८ भृश तृपिनम् (ओक =गृहम्) १ १७३ ११ **ततृपाणः**= तृपातुर (वीरपुरुष) ६ १५ ५ तातृपाण भृश तृड्युक्त (वनवृजन) प्र०—अत्र तुजादित्वादभ्यासदीर्घ २ ४ ६ अतिशयेन पिपासित (सेनापति) १ १३० २ पुन पुनर्जन्मनि तृप्यति (सूरिर्मेधाविजन) प्र०—अत्र 'छन्दसि लिट्' इति लडर्थे लिट् 'लिट कानज्वा' इति कानच्, वर्णव्यत्ययेन दीर्घत्वञ्च १ ३१ ७ [ञितृष पिपासायाम् (दिवा०) धातोर्लिट स्थाने कानच्]

तते तनुते, प्र०—अत्र 'बहुल छन्दसि' इति विकरणस्य लुक् १ ८३ ५.

तत्वाय ब्रह्मादितत्त्व-ज्ञानाय, ऋ० भू० १५६, १११ तेषा परमेश्वरादीना पदार्थाना भावाय १११ [तद्-सर्वनाम्नो भावे त्व प्रत्यय । ततश्चतुर्थी]

तत्निरे विस्तृणन्ति १ १६४ ५ [तनु विस्तारे (तना०) धातोर्लिटि प्रथमबहुवचने 'तनिपत्योश्छन्दसि' अ० ६ ४ ९९ सूत्रेण धातोरुपधाया लोप]

तत्र तेषु कर्मसु १ १३ १२ उस सन्यास आश्रम मे, स० वि० २१५, ४० ७ तस्मिन् १ १०५ ९ उसी अपने स्वरूप मे, स० वि० १९७, ९ ११३ ११ [तद्-सर्वनाम्न 'सप्तम्यास्त्रल' अ० ५ ३ १० सूत्रेण त्रल]

तकम् तम्, प्र०—अत्राऽकच्प्रत्यय १ १९१ १५ [तद्सर्वनाम्नो द्वितीयैकवचने 'तम्' इति रूपम्। तत 'अव्ययसर्वनाम्नामकच् प्राक् टे' अ० ५ ३ ७१ सूत्रेणाकच्]

तकवानस्य प्राप्तविद्यस्य (विदुषो जनस्य), प्र०—गत्यर्थात् तकधातोरौणादिक उ, पश्चाद् भृगवाणवत् आचारे क्विपि, व्यत्ययेनात्मनेपदे शानचि 'छन्दस्युभयथा' इत्यार्धधातुकत्वाद् गुण १.१२० ६

तक्तः प्रसन्न (इन्द्र =परमैश्वर्यप्रदो राजा) ६ ३२ ५ [तक हसने (भ्वा०) धातो क्त प्रत्यय]

तक्ववीये तक्वना स्तेनानामसम्बन्धे मार्गे १ १३४ ५ [तक्वा स्तेननाम निघ० ३ २४]

तक्ववीरिव यस्तकान् सेनाजनान् व्याप्नोति तद्वत् (अध्यापक-उपदेशक इव) १ १५१.५ [तक्ववी -इव पदयो समास]

तक्वा स्तेन १ ६६ १ [तक्वा स्तेननाम निघ० ३ २४]

तक्षत् तनूकरोति १ ६१ ६ तीक्ष्णीकृत्य शत्रून् हिंस्यात् १ १२१ ३ **तक्षत**=निष्पादयत १ १११ २. सूक्ष्मान् कुरुत ३ ३८.२ प्रापयत ४ १६ ८ रक्षत ३ ५४ १७ विस्तृणुत ४ ३६ ८ [तक्षू तनूकरणे (भ्वा०) धातोर्लेट्। अन्यत्र लोट्। 'तनूकरणे तक्ष' अ० ३ १ ७६. सूत्रेण विकल्पेन श्नु पक्षे शप्। तक्षति करोति कर्मा नि० ४.१९]

तक्षत् जलादीनि तनूकुर्वन् (सूर्य-मण्डलम्) १ १२७ ४. [तक्षू तनूकरणे (भ्वा०) धातो शतृप्रत्यय]

तक्षति छिन्दन्ति, प्र०—अत्र वचनव्यत्ययेनैकवचनम् १ १६२ ६ तक्षन्ति तनूकुर्वन्ति, भा०—निर्मिमते प्र०—अत्राऽपि वचनव्यत्ययेनैकवचनम् २५ २९ **तक्षथ**=कुरुत ४ ३६ ३ **तक्षन्**=रचयन्तु ५ ३१ ४ सूक्ष्मीकुर्वन्तु १ १११ १ विस्तीर्णां कुर्वन्तु १ १११ १ सूक्ष्मरचनायुक्त कुर्वन्तु १ १११ १ सूक्ष्म कुर्वन्ति, छेदनादिना रचयन्ति वा, प्र०—अत्र लडर्थे लङडभावश्च १ २० ३ **तक्षन्तु**=रचयन्तु ४ ३३ ८ [तक्षू तनूकरणे (भ्वा०) धातोर्लेट्। अन्यत्र लङ् लोट् च। लङ्यडभावश्छान्दस]

तक्षभ्यः ये तक्ष्णुवन्ति तनूकुर्वन्ति तेभ्य (शिल्पिभ्य) १६ २७ [तक्षू तनूकरणे (भ्वा०) धातो 'कनिन् युवृपितक्षि०' उ० १ १५६ सूत्रेण कनिन्प्रत्यय]

तक्षम् उपदिशेयम् ६ ३२ १ [तक्षू तनूकरणे (भ्वा०) धातोस्सामान्ये लङ्। उत्तमैकवचनम्। अडभावश्च]

तक्षाणम् तनूकर्त्तारम् (शिल्पिजनम्) ३० ६ [तक्षन् प्राति० द्वितीयैकवचनम्। तक्षन् इति व्याख्यातम्]

तक्षाम सवृणुयामाऽऽच्छादयाम, स्वीकुर्याम ५ ७३ १०. **तक्षुः**=विस्तृणीयु २ १९ ८ [तक्ष त्वचने (सवरणे) (भ्वा०) धातोर्लोट्। उत्तमैकवचनम्। अन्यत्र तक्षू तनूकरणे (भ्वा०) धातोर्लिट् सामान्ये। द्वित्वाभावश्च छान्दस]

तकितः विद्युत २ २३ ९ [तड आघाते (चु०) धातो 'ताडेर्णिलुक् च' उ० १ ९८ सूत्रेण इति प्रत्ययो णेश्च लुक्। तडिदित्यन्तिकवधयो ससृष्टकर्म ताडयतीति सत नि० ३ १० विद्युत् तडिद् भवतीति शाकपूणि। सा ह्यवताडयति दूराच्च दृश्यते। अपि त्विदमन्तिकनामैवाभिप्रेत स्यात् नि० ३ ११ तडित्=अन्तिकनाम निघ० २ १६ वधकर्मा निघ० २ १९]

तळिदिव यथा विद्युत्तथा १.९४ ७ [तडित्-इव-पदयो समास। तडिदिति व्याख्यातम्]

ततक्ष तक्षति १ ५२ ७ तीक्ष्णीकरोति ६ ३ ८ छिनत्ति १ ३२ २ कणीकृत्य भूमौ पातयति १ ३२ २ प्रक्षिपेत् १ १२१ १२ **ततक्षुः**=तनू कुर्वन्ति। प्र० अत्र लडर्थे लिट् १ २० २ सूक्ष्मा विस्तृताश्च कुर्वन्ति ४ ३४ ९ **ततक्षे**=तनूकरोषि ५ ३३ ४ [तक्षू तनूकरणे (भ्वा०) धातोर्लिट्। तक्षति करोतिकर्मा नि० ४ १९ ततक्षु =चक्रु नि० ६ २७]

ततनन् तनिष्यन्ति ४ ५ १३ तन्वन्तु १ १६६ १४ **ततनन्त**=विस्तीर्णानि भवन्ति १ ५२ ११ **ततनः**=व्याप्नुहि ७ १ २ विस्तारय, प्र०—लेटि मध्यमैकवचने 'तनु विस्तारे' इत्यस्य रूपम्, विकरणव्यत्ययेन श्नो श्लु १ ३८ १४ **ततनाम**=विस्तीर्णीयाम ५ ५४ १५ विस्तारयेम १ १६० ५ **ततने**=विस्तृणीयाम् ७ २९ ३ [तनु विस्तारे (तना०) धातोर्लेट्। विकरणव्यत्ययेन उ-प्रत्ययस्य स्थाने श्लु]

ततनुष्टिम् विस्तारम् ५ ३४ ३ [तनु विस्तारे (तना०) धातो सन्नन्तात् क्तिच् कर्त्तरि। 'तितनिष्टि' इत्यस्य स्थाने ततनुष्टि। अभ्यासस्य इकाराभाव, सन्-प्रत्यये इट स्थाने उट्आगमश्छान्दस। ततनुष्टि ततनिषु धर्मसन्तानादनपेतमलङ्करिष्णुमयज्वानम् नि० ६ १९]

ततन्थ तनोति ६ १६ २१ विस्तृणोति ६ १ ११ तनोषि ६ ४ ६ विस्तारयति ३ ६ ५ विस्तृणोषि ६ ६ ६ विस्तृणुहि १९ ५४ **ततन्युः**=विस्तृणीयु १ १४१ १३. [तनु विस्तारे (तना०) धातोर्लिटि मध्यमैकवचने छान्दसत्वाद् एत्वाभ्यासलोपौ इडागमश्च 'बभूथाततन्थजगृम्भ-

ऽन्-प्रत्यय । स्त्रिया टाप्]

तनाय य सर्वम्मै सद्विद्याधर्मोपदेशेन सुखानि तनोति तस्मै (कण्वाय=मेधाविजनाय) प्र०—अत्र वाहुलकादौणादिकोऽन्प्रत्यय । इद सायणाचार्येण पचाद्यजित्यशुद्ध व्याख्यातम् । कुतोऽच्-स्वराऽभावेन 'ञ्नित्यादिर्नित्यम्' इत्याद्युदात्तस्याऽभिहितत्वात् १ ३६ ७ [तनु विस्तारे (तना०) धातोरौणादिकोऽन्-प्रत्यय । ततश्चतुर्थी]

तनु विस्तृणुहि १ १२० ११ **तनुते**=विस्तृणोति ३३ ३७ **तनुथाः**=विस्तारये ५ ७९ ६ **तनुध्वम्**= विस्तृणीत १२ ६८ **तनुष्व**=विस्तृणीहि २ ३३ १४ **तनुहि**=विस्तृणीहि ४ ४५ [तनु विस्तारे (तना०) धातोर्लोटि रूपाणि । 'उतश्च प्रत्ययाच्छन्दो वा वचनम्' अ० ६ ४ १०६ वा० सूत्रेण छन्दसि हेर्लोपे विकल्प]

तनुकृद्भ्यः यथा विस्तारकारिभ्यस्तथा (पापिजनेभ्य) ५ ३५ **तनूकृत्**=यस्तनूषु पृथिव्यादिविस्तृतेषु लोकेषु विद्या करोति स (सर्वमङ्गलकारक सभाध्यक्ष) १ ३१ ६ [तनूपपदे डुकृञ् करणे (तना०) धातो क्विप्-प्रत्यय । तनू =तनु विस्तारे (तना०) धातो 'कृषिचमितनि०' उ० १ ८० सूत्रेण स्त्रियाम् ऊ प्रत्यय]

तनूनपात् यस्तनूनि शरीराणि न पातयति स (यज्ञ) १ १८८ २ शरीररक्षक (विद्वज्जन) ३ ४ २ यस्तनू न पातयति, भा०—न स्वशरीरनाशक (विद्वज्जन) २०.३७ यस्य तनूर्व्याप्तिर्न पतति (अग्नि) ३ २९ ११ यस्तनूषु शरीरेषु न पतति स (असुर =वायु) २७ १२ यस्तनूर्विस्तृतान् पदार्थान् न पातयति तत्सम्बुद्धौ (भा०—धार्मिकमनुष्य !) २९ २६ तनूना शरीरौषध्यादीनामूनानि न्यूनान्युपाङ्गानि पाति रक्षति स (अग्नि =भौतिक), प्र०—इम शब्द यास्कमुनिरेव समाचष्टे—तनूनपादाज्य भवति०' नि० ८ ५, १ १३ २ यस्तनू शरीर न पातयति तत्सम्बुद्धौ (विद्वज्जन !) १ १४२ २ यस्तन्वा ऊन पाति स (होता=आदातृजन) २१ ३० **तनूनपातम्**=शरीरादिरक्षकम् (गर्भम्) २८ २५ य शरीराणि न पाति तम् (इन्द्र=परमैश्वर्यकारक राजानम्) २८ २ [तनूनपाद् आज्यमिति कात्थक्य । नपादित्यनन्तराया प्रजाया नामधेय निर्णततमा भवति । गौरत्र तनूरुच्यते, तता अस्या भोगा, तस्या पयो जायते, पयस आज्य जायते । अग्निरिति शाकपूणि । अग्निरत्र तन्व उच्यन्ते तता अन्तरिक्षे ताभ्य ओषधिवनस्पतयो जायन्ते । ओषधिवनस्पतयो जायन्ते । ओषधिवनस्पतिभ्य एष जायते नि० ८ ५ प्राणो वै तनूनपात् स हि तन्व पाति ऐ० २ ४ ग्रीष्मो वै तनूनपाद् ग्रीष्मो ह्यासा प्रजाना तनूस्तपति श० १ ५ ३ १० तनूनपात यजति ग्रीष्ममेव, ग्रीष्मो हि तन्व तपति कौ० ३ ४ रेतो वै तनूनपात् श० १ ५ ४ २ तनूनपाद् वै यज्ञ प्रसृत काठ० ३६ ३ तनूनपात यजति, यज्ञमेवावरुन्वे तै० स० २ ६ १ १ यो वाऽयं (वायु) पवते एष तनूनपात् श० ३ ४ २ ५]

तनूनप्त्रे तनूर्देहान् नयन्ति प्राप्नुवन्ति येन तस्मै ५ ५ [तनूपपदे णीञ् प्रापणे (भ्वा०) धातो तृचि रूपम्]

तनूनाम् शरीराणाम् २७ ४४ विस्तृतसुखसाधकाना शरीरादीना पदार्थाना वा २ २३ ८ शरीराणा विस्तृताना पदार्थाना वा १ ५ १० शरीरो की म० प्र० ११०, १ १७९ १ **तनूभिः**=विस्तृतशरीरै ४ ५१ ६ बलविशिष्टशरीरैर्विद्वद्भि ८ १६ विस्तृतवलै शरीरै १ ८६ ८ सुसस्कृतै शरीरै १५ ७ तन्वते सुखानि कर्माणि च यासु ताभि २ २४ शरीरो से, स० वि० १३९, अथर्व० १४ २ ३२ **तनूषु**=विस्तृतबलयुक्तेषु शरीरेषु १ ८५.३ **तनूः**=व्याप्ति-निमित्त शरीरम् ५ ४० शरीर विस्तृता नीतिर्वा १६ ४९ व्याप्ति ५ ८ शरीरवद्विस्तारक वा (हवि) ५ १ विद्याविस्तृति ५ ४० व्याप्त विस्तृत शरीरम् ५ ८ विस्तृता व्याप्ति ५ ६ शरीराणि १५ ७ सुखविस्तारनिमित्त शरीरम् ४ २ शरीरवत् तस्य सयोगेन विस्तृतो यज्ञ १ १५ विद्याविस्तृति ५ ४० **तन्वि**= शरीरे ६ ४६ १२ **तन्वै**=शरीराय २३ ४४ [तनु विस्तारे (तना०) धातो 'कृषिचमि०' उ० १ ८० सूत्रेण स्त्रियाम् ऊ प्रत्यय । तनु =तनु विस्तारे धातो 'भृमृशीङ्०' उ० १ ७ सूत्रेण उ प्रत्यय । आत्मा वै तनु श० ६ ७ २ ६ सा मे ते (सुपर्णस्य गरुत्मत) तनूर्वामदेव्यम् मै० २ ७ ८]

तनूपा यौ तनु पातस्तौ (अश्विना=स्त्रीपुरुषौ) २० ५६ [तनू व्याख्यातम् । तदुपपदे पा रक्षणे (अदा०) धातो क प्रत्यय । 'सुपा सुलुग्' इत्याकार]

तनूपाः यस्तनू सर्वपदार्थदेहान् पाति रक्षति स जगदीश्वर, पालनहेतुर्भौतिको वा (अग्नि) ३ १७ स्वस्याऽन्येषा च शरीराणा रक्षक (इन्द्र =राजा) ६ ४६ १० य शरीरमात्मान च रक्षति (अग्नि =अन्तस्थो विज्ञानस्वरूपो वा०) ४ १५ शरीरपालक (राजा) ४ १६ २० शरीर का रक्षक (ईश्वर) आर्याभि० २ ३३, ३ १७ [तनू इति व्याख्यातम् । तदुपपदे पा रक्षणे (अदा०) धातो क्विप्-प्रत्यय । आत्मा वै तनू श० ६ ७ २ ६]

तत्रो तेषु खलु १ ३७ १४

तत्सार तत्सरेत् १ १४५ ४ [त्सर छद्मगतौ (भ्वा०) धातोर्लिटि प्रथमैकवचनम्]

तत्सिनाय तस्य यानसमूहस्य बन्धनाय १ ६१ ४ [तत्-सिनपदयो समास । सिन =षिञ् बन्धने (स्वा०) धातो क्त । निष्ठातकारस्य नकारश्छान्दस]

तथा तेन प्रकारेण ३१ १३ [तद्-सर्वनाम्न 'प्रकारवचने थाल्' अ० ५ ३ २३ सूत्रेण थाल्प्रत्यय । तथा=उपमानाम निघ० ३ १३]

तदप: तेषा प्राणान् ५ ४७ २ **तदपा:**=तदप कर्म यस्य स (सविता=जगदीश्वर) २ ३८ १ [तद्-अप-पदयो समास । अप कर्मनाम निघ० २ १]

तदोकस: तान्यन्तरिक्षवाय्वादीन्योकासि येषा ते (इन्दव =जलरसा १ १५ १ **तदोकसा**=तदोक स्थान ययोस्तौ (इन्द्रावृहस्पती=राजामात्यौ) ४ ४९ ६ **तदोकसे**=तद्यानमोक स्थान यस्य तस्मै (शिल्पिजनाय) ३ ३५ ७ **तदोका:**=तच्छ्रेष्ठमोको गृह यस्य स (वैद्यकशास्त्रविज्जन) ७ २९ १ [तद्-ओकम्पदयो समास । तदिति सर्वनाम । ओकम्=अव रक्षणादिषु (भ्वा०) धातोर् बाहुलकादौणादिक कक्प्रत्यय]

तदोजा: तदेवौज पराक्रमो यस्य स (अतिथिर्जन) ५ १ ८ [तद्-ओजम्पदयो समास । ओजस्=उब्ज आर्जवे (तुदा०) धातो 'उब्जेर्बले बलोपश्च' अ० ४ १९२ सूत्रेण असुन् बलोपश्च]

तद्वश: तदिच्छ द्रविणोदा =विद्वान्) २ ३७ १ **तद्वशाय**=तत्तत्कामयमानाय (ऐश्वर्यवते जनाय) २ १४ २ [तद्-वशपदयो समास । वश =वश कान्तौ (अदा०) धातो 'वशिरण्योरुपसङ्ख्यानम्' इति वार्त्तिकेन अप्प्रत्यय]

तनच्मि सङ्कोचयामि, दृढीकरोमि १ ४ [तञ्चू सङ्कोचने (रुधा०) धातोर्लटि उत्तमैकवचनम्]

तनत् विस्तारयेत् १ ६१ २३ [तनु विस्तारे (तना०) धातोर्लेटि रूपम् । विकरणव्यत्ययेन शप्]

तनयम् सुखविस्तारकमपत्यम् ६ १३ ६ विशालम् (तोकम्=अपत्यम्) ७ ६० ८ विस्तीर्णशुभगुणकर्मस्वभावम् (तोकम्=अपत्यम्) ७ ५६ २० विद्यापुत्रम् (भा०—अपत्यम्) ३४ ५८ विद्वास पौत्रम् १ ६४ १४ औरस विद्यार्थिन वा २ २४ १६ पौत्रम् २ २५ २ प्राप्तकुमारावस्थम् (अपत्यम्) ३४ ३३ सुकुमारम् ६ ४८ १० **तनयस्य**=अपत्यस्य १ १६६ ८ पौत्रादे १.१०० ११ यून पुत्रस्य २ ३० ५ कुमारावस्था प्राप्तस्य (तोकस्य=अपत्यस्य) ४ २४ ३ **तनय:**=सुखविस्तारक (शिष्य) ३ २३ ५ विस्तीर्णवृद्धि (सूनु =पुत्र) ३ १ २३. भा०—सुसन्तान १२ ५१ कामद (सुसन्तान) ३ ५.११ धार्मिक पुत्र ३.१५ ७. विद्याविस्तारक (सूनु =अपत्यम्) ३ २२ ५ विद्यासुखप्रचारक (सूनु) ३ ७ ११ **तनयाय**=कुमाराय (पुत्राय) ५ ६९ ३ सन्तानाय ६ ४९ ५ यूने पुत्राय १ ११४ ६ सुकुमाराय सन्तानाय ६ ५० ७ सुसन्तानाय १ १८४ ५ प्राप्तकौमार्यौवनाऽवस्थाय (विद्यार्थिजनाय) ३ ५३ १८ प्राप्तकुमाराऽवस्थाय (तोकाय=सद्यो जातायाऽपत्याय) २ ३३ १४ दशवार्षिकाय षोडशवार्षिकाय वा (अपत्याय) ४ १२ ५ **तनये**=अतीतशैशवाऽवस्थे पुत्रे १ ११४ ८ पञ्चमाद्वर्षादूर्ध्व वय प्राप्ते, भा०—कुमारे १६ १६ ब्रह्मचारिणि कुमारे ६ ३१ १ पौत्रस्य, प्र०—अत्र विभक्तिव्यत्यय ३४ १३ [तनु विस्तारे (तना०) धातो 'वलिमलितनिभ्य कयन्' उ० ४ ९९ सूत्रेण कयन्प्रत्यय । तनय.=अपत्यनाम निघ० २ २ तनयेषु=पौत्रेषु । तनय तनोते. नि० १० ७]

तनयावहै विस्तृणावहै १ १७० ४ [तनु विस्तारे (तना०) धातोर्णिजन्ताल्लेटि रूपम्]

तनयित्नो: विद्युत ४ ३ १ [स्तनयित्नुशब्दात् षष्ठी । सकारलोपश्छान्दस । स्तनयित्नु =स्तनी देवशब्दे (चुरा०) धातो 'स्तनिहृषि०' उ० ३ २९ सूत्रेण णिजन्ताद् इत्नुच् प्रत्यय]

तनसा पौत्रादिसहिता (जना) ५ ७० ४ [तनु विस्तारे (तना०) धातोरौणादिकोऽसुन् वचनव्यत्यय तना धननाम निघ० २ १०]

तना विस्तारक (अग्नि =विद्वज्जन) ३ २५ १ विस्तृतधनप्रदा (सुता =मूर्त्तिमन्त पदार्था) प्र०—तनेति धननामसु पठितम्, निघ० २ १० अत्र 'सुपा सुलुक्' इत्यनेनाकारादेश, अ०—विस्तृतप्राप्तिहेतव सूर्यकिरणा १ ३ ४ विस्तृतेन (राया=धनेन) ६ ४९ १३ विस्तृतगुणेन २० ८७ [तना धननाम निघ० २ १० तनु विस्तारे (तना०) धातोरन्प्रत्यय औणादिक]

तना विस्तृतानि धनानि १ ७७ ४ [तना धननाम निघ० २ १०]

तना विस्तृतया (वाण्या) २ २ १ विस्तृता (तविषी=सेना) १ ३९ ४ [तनु विस्तारे (तना०) धातोरौणादिको

णार्थम् ३४४८ [तनूरिति पद व्याख्यातम् । तत षष्ठी चतुर्थी च]

तन्वि विस्तीर्णा नीति ४ ६ ६ [तनुप्राति० स्त्रिया ङीप्]

तन्वे विस्तृणुयाम् ४ १८ १० [तनु विस्तारे (तना०) धातोर्लटि उत्तमैकवचनम्]

तप तापय तपस्वी भव वा ६ ५ ४ सन्तापय २ २३ १४ **तपत्**=तपेत् २५ ४३ **तपति**=विशेषेण सन्तापयति ३ ५३ २ **तपतु**=तपे, आर्याभि० २ २२, ३६ १० [तप सन्तापे (भ्वा०) धातोर्लोट् लेट् लट च क्रमश]

तपनः तापकृत् (जगदीश्वरो विद्वज्जनो वा) २ २३ ४ [तप सन्तापे (भ्वा०) धातोर्नन्द्यादित्वाल् ल्यु प्रत्यय]

तपनी सन्तापिनी (शस्त्र्या) २ २३ १४ [तप सन्तापे (भ्वा०) धातोर्ल्युडन्तात् ङीप्]

तपन् शत्रून् सन्तापयन् (अग्नि =विद्वान्राजा) १२ १६ **तपन्तः**=सन्तापदु ख सहमाना (विप्रा = मेधाविनो जना) ५ ४३ ७ [तप सन्तापे (भ्वा०) धातो शतृप्रत्यय]

तपन्ति क्लेशयन्ति १ १०५ ८ **तपन्तु**=दु खयन्तु, भा०—ताडन कुर्वन्तु १७ ७ सन्तापयन्तु १७ ११ पीडयन्ति ३६ २८ [तप सन्तापे (भ्वा०) धातोर्लट् । तपन्ति पाचयन्ति नि० २ २२]

तपसः धर्मानुष्ठानस्याऽग्नेस्तापसस्य वा ४ २६ प्रतापकस्य (दिव =सूर्यादे) ३७ १६ अनन्तसामर्थ्यात्, प० वि०, **तपसा**=धर्मानुष्ठानेन १५ ४६ धर्म-विद्याऽष्ठानेन तापेन तेजसा वा १ १८ प्रतापेन २६ ११ ब्रह्मचर्य प्राणायामादिकर्मणा ६ ५ ४ सन्तापेन १२ १५ ब्रह्मचर्याऽनुष्ठान रूप तप से, स० वि० ८०, अथर्व० ११ ५ ४ तपश्चरण से स० वि० ८०, अथर्व० ११ ५.१७ **तपसि**= विज्ञाने, ऋ० भू० ६०, अथर्व० ११ ५ १७ **तपसे**= माघाय ७ ३० तप उत्पादकाय माघाय २२ ३१ सन्तापजन्याय सेवनाय ३० ५ तपनाय ३० ७ **तपः**=प्राणायामो धर्माऽनुष्ठान वा १८ २३ जितेन्द्रियत्वादिपुरस्सर धर्माऽनुष्ठानम् ५ ६ प्राक्क्लेशमुत्तरानन्द ब्रह्मचर्य्यम् ५ ४० यस्तापहेतु स माघो मास १५ ५७ भा०—सतत धर्माचरणम् १८ २३ सन्तापो गुण १४ २३ धर्मे श्रमकर्त्ता, भा०—दुष्टान् परिताप्य श्रेष्ठाना सुखयिता (विद्वान्) ३७ ११ बडे उत्तम व्रत ब्रह्मचर्य को, स० वि० ६३, अथर्व० ११ ५ २६ ब्रह्मचर्य रूप आश्रम को, स० वि० १६८, अथर्व० १६ ४१ १ [तप सन्तापे (भ्वा०) धातो• 'सर्वधातुभ्योऽसुन्' उ० ४ १८६ सूत्रेणासुन् प्रत्यय । तपति दु खीभवति तप्यते समर्थो वा भवति येन तत् तप । तप ऐश्वर्ये (दिवा०) धातोर्वाऽसुन् । तप दाहे (चुरा०) धातोर्वाऽसुन् । तपस्प्राति० 'मत्वर्थे मासतन्वोरि' ति सूत्रेण प्राप्तस्य यत्प्रत्ययस्य 'लुगकारेकाराश्च वक्तव्या' अ० ४ ४ १२८ वा० सूत्रेण लुक् । तप ज्वलतो नामधेयम् निघ० १.१७ अग्नी वा ऽआदित्यस्तप श० ८ ७ १.५ तप स्विष्टकृत् श० ११ २ ७ १८ तपो वा अग्नि श० ३.४ ३ २ तपोऽसि लोके श्रितम् । तेजस प्रतिष्ठा तै० ३ ११.१ २ तप आसीद् गृहपति तै० ३ १२ ९ ३ एतद् वै तपो यो दीक्षित्वा पयोव्रतेऽसत् श० ६ ५ १ ८ तपो दीक्षा श० ३ ४ ३ २ तै० स० ४ ३ ८ १. मै० २ ८.४. अमासाग्यनुब्रूते तपस्व्यनुब्रवाऽइति श० १४ १ १ २६ एतौ (तपश्च तपस्यश्च) एव शैशिरौ (मासौ) स यदेतयोर्बलिष्ठ श्यायति तेनो हैतौ तपश्च तपस्यश्च श० ४ ३ १ १६ सवत्सरो वाव तपो नवदशस्तस्य द्वादशमासा पड्ऋतव सवत्सर एव तपो नवदशस्तद्यत्तमाह तप इति सवत्सरो हि सर्वाणि तपति श० ८ ४ १ १४ अजा भवति, स तपसमेवैतत् (सोमम्) क्रीणाति श० ३ ३ ३ १८ ऋतेन तप (अन्वाभवत्) काठ० ३५ १५ एतत् खलु वाव तप इत्याहुर्य स्व ददातीति तै० स० ६ १ ६ ३ एतद् वाव तपो यत्स्व ददाति क० ३७ १ एप ह त्वै जायते यस्तपसोऽधि जायते तै० स० ७ २ १० ३ तद्धि जात यत् तपसोऽधिजायते, न यत् स्त्रिया काठ० ३४ १२ तपसा देवा देवतामग्रआयन् तपसर्षय सुवरन्वविन्दन्, तपसा सपत्नान्प्रणुदामारातीस्तपसि सर्व प्रतिष्ठित तस्मात्तप परम वदन्ति तै० आ० १० ६३ १ तपसा ब्रह्मणा सह तस्य दोहमशीमहि मै० ४ ९ १३ तपसा ब्रह्म विजिज्ञासस्व तै० आ० ६ २ १ तपसा वै प्रजापति प्रजा असृजत काठ० ६ ७ तपसा वै लोक जयन्ति श० ३ ४ ४ २७ तपो नवदशइत्युत्तरात्, तस्मात् सव्यो हस्तयोस्तपस्वितर काठ० २० १३ तपो वा एप उपैति यो वाचꣳ यच्छति मै० १ ८ ४ तपोऽवान्तरदीक्षायाम् (सोम) काठ० ३४ १४ तपो वै पुष्करपर्णम् तै० आ० १ २५ १ तपो वै यज्ञस्य श्लेश्म काठ० ३४ ६ तपो हि स्वाध्याय तै० आ० २ १४ २ तस्मादु तमेव तपस्तप्यमान मन्यन्ते यो ददत् जै० १ २८७ तेजोऽसि तपसि श्रितम् । समुद्रस्य प्रतिष्ठा तै० ३ ११ १ ३ दीक्षा च मे तपश्च मे (यज्ञेन कल्पताम्) तै० स० ४ ७ ६ १ दीक्षायै च त्वा (अग्ने) तपसश्च तेजसे जुहोमि तै० स० ३ ३ ११ ब्रह्म तपसि (प्रतिष्ठितम्) ऐ०

तनूरुचम् तन्वो रोचन्ते यस्मै तम् (राजानम्) २ १ ६ **तनूरुचा**=या तनूषु रुक् प्रीतिस्तया ६ २५ ४ [तनू व्याख्यातम्। तदुपपदे रुच दीप्तौ (भ्वा०) धातो 'कृतो वहुल वा' वार्त्तिकेन क्विप्। सम्पदादित्वादन्यत्र क्विप् स्त्रियाम्]

तनूशुभ्रम् शुभ्रा शुद्धा तनूर्यस्य तम् (विद्वज्जनम्) ५ ३४ ३ [तनू-शुभ्रपदयो समास। तनूशुभ्रम्=तनू शोभयितारम् नि० ६ १६]

तने विस्तीर्णे (तुजे=दाने) ५ ४१ ६ विस्तारे २ ६ २ विस्तृते (यशसि) ६ ४६ १२ [तनु विस्तारे (तना०) धातोरौणादिकोऽन् प्रत्यय]

तनोतु विस्तारयतु अ०—सदधातु २ १३ **तनोषि**= विस्तृणासि ४ ५२ ७ [तनु विस्तारे (तना०) धातोर्लोट्]

तन्तम् शत्रुम् ८ ५३

तन्तयः विस्तीर्णा (प्रजा) ६ २४ ४ [तनु विस्तारे (तना०) धातो क्तिच्। न क्तिचि दीर्घश्च' सूत्रेण दीर्घानुनासिकलोपयोर्निषेध। 'तितुत्र०' अ० ७ २ ६ सूत्रेण इण्निषेध]

तन्तवः सूत्रवत् समवेतु शीला (वस्वादय) ८.६१ **तन्तुना**=विस्तृतेन (पोषेण=पुष्ट्या) १५ ७ **तन्तुम्**= विस्तारम् १ १४१ १ विस्तारकम् (शूर पुरुषम्) २० ४१ विस्तीर्णम् (इन्द्र=विद्युतम्) २० ४३ सन्तानम् १५ ५३ विस्तृत वस्तुविज्ञान वा १ १५६ ४ करणम् ४ १३ ४ सूत्रम् २ ३ ६ **तन्तुः**=मूलम् २ २८ ५ **तन्तून्**=विस्तृतान् धातून् १ १६४ ५ [तनु विस्तारे (तना०) धातो 'सितनिगमि०' उ० १ ६६ सूत्रेण तुन् प्रत्यय। प्रजा वै तन्तु ऐ० ३ ११ तन्तुरिति प्रजा (असृजत) तै० स० ५ ३ ६ १]

तन्त्रम् कुटुम्वधारणमिव तन्त्रकलानिर्माणम् १६ ८० [तत्रि कुटुम्बधारणे (चुरा०) ग्गनोरौणादिकोऽन्प्रत्यय। अच् वा प्रत्यय]

तन्त्रायिणे तन्त्राणि कलाशास्त्राणि अयितु ज्ञातु प्राप्तु वा शील यस्य तस्मै (विदुषे जनाय) ३८ १२ [तन्त्रोपपदे अय गतो (भ्वा०) धातोस्ताच्छील्ये णिनि प्रत्यय। एष वै तन्त्रायी य एष (सूर्य) तपत्येष हीमाँल्लोकास्तन्त्रमिवानुसचरति श० १४ २ २ २२]

तन्दते हिनस्ति १ १३८ १

तन्द्रत् मुह्येत् २ ३० ७

तन्द्रम् कुटुम्वधारणम्, प्र०—अत्र 'तत्रि कुटुम्वधारणे' इत्यस्मादच्, वर्णव्यत्ययेन तस्य द १४ ६ स्वतन्त्रताऽकरणम् १५ ५ [पङ्क्तिर्वै तन्द्रं छन्द श० ८ २ ४ ३]

तन्मसि विस्तारयेम १६ ५४ [तनु विस्तारे (तना०) धातोर्लट्। 'वहुल छन्दसी' ति सूत्रेण शपो लुकि उ प्रत्ययोऽपि न भवति। 'इदन्तो मसि' इतीदन्तता]

तन्यता तन्यतुना गर्जनेन शब्देन, प्र०—अत्र 'सुपा सुलुक्०' इति डादेश १ ८० १२ [स्तन देवशब्दे (चु०) धातो शत्रन्तात् तृतीया। व्यत्ययेन शप्। सकारलोपश्छान्दस]

तन्यति शब्दायते ६ ३८ २ [स्तन देवशब्दे (चुरा०) धातोर्लट्। विकरणव्यत्ययेन श्यन्। सस्य च लोपश्छान्दस]

तन्यतुम् विद्युतम् १ ५२ ६ **तन्यतुः**=विस्तृत-वेगस्वभावा विद्युत्, प्र०—अत्र 'ऋतन्यञ्जिवन्यर्पि०' उ० ४ २ अनेन तन-धातोर्यतुच् प्रत्यय १ २३ ११ गर्जनसहित (विद्युत्) १ ३२ १३ तन्यतोरिव=विद्युत इव ४ ३८ ८ [तनु विस्तारे (तना०) धातो 'ऋतन्यञ्जि०' उ० ४ २ सूत्रेण यतुच् प्रत्यय। तन्यतु तनित्री वाचोऽन्यस्या नि० १२ ३०]

तन्यवः विद्युत ५ ६३ ५

तन्वते विस्तृणन्ति ६ ५६ ७ **तन्वन्ति**=विस्तारयन्ति १ १६ ८ **तन्वन्तु**=विस्तृणन्तु २६ १४ [तनु विस्तारे (तना०) धातोर्लट्। अन्यत्र लोट्]

तन्वन्तः विस्तृणन्त (सूर्यकिरणा) ४ ४५ २ [तनु विस्तारे (तना०) धातो शतृप्रत्यय]

तन्वम् शरीरम्, प्र०—अत्र 'वाच्छन्दसि' इत्यत्र 'अमि पूर्व' इत्यनुवर्त्तनात् पूर्वरूपादेशो न भवति ३ १७ स्वरूपम् ऋ० भू० ३१७, १० ७१४ विस्तृत शरीरम् २३ ७ तेजस्वि-शरीरम् ४ १६ १४ शरीर को, आर्याभि० २ ३३, ३ १७ **तन्वः**=शरीरस्य मध्ये २५ ४३ शरीरस्य, प्र०—अत्र 'जसादिषु छन्दसि वा वचनम्' इति वार्त्तिकेनाऽऽडभाव ४ १८ तनू शरीराणि १ १४० ६ विस्तृतविद्या (भा०—वालिका) १६ ४४ विस्तीर्णा (प्राणा) ७ ५६ ७ वलारोग्ययुक्तास्ते (देहा) १ ७२ ५ **तन्वा**= विस्तृतया नीत्या [तनूरिति व्याख्यातम्]

तन्वानः विस्तृणान (अग्नि=पावक) ३ ३ ६ **तन्वानाः**=विस्तृणन्त (उशिज=ऋत्विज) ७ १० २ [तनु विस्तारे (तना०) धातो शानच्]

तन्वाः अन्त करणाऽऽख्यस्य वाह्यस्य शरीरस्य वा ३.१७. **तन्वे**=विस्ताराय १ १६५ १५ शरीरादिरक्ष-

[तप सन्तापे (भ्वा०) धातो शतृ । विकरणव्यत्ययेन श्यन्]

तप्यद्ध्वम् तपन्तु तापयत वा, अ०—यथा तपन्तु तथा तापयत १ १८ [तप सन्तापे (भ्वा०) धातोर्लोट् । व्यत्ययेन श्यन् आत्मनेपदञ्च]

तप्यमानः वेद-पठन, वीर्यनिग्रह, आचार्य के प्रिया-चरणादि कर्मों को पूरा करता हुआ (ब्रह्मचारी जन), स० वि० ६३, अथर्व० ११ ५ २६ **तप्यमानाय**=प्राप्त-तापाय (जनाय) ३६ १२ [तप सन्तापे (भ्वा०) धातो कर्मणि शानच्]

तमत् अभिकाङ्क्षेत २ ३० ७ [तमु काङ्क्षयाम् (दिवा०) धातोर्लेट्]

तमसस्परि अन्धकारात् पृथग्वर्त्तमानम् (सूर्य=जगदीश्वरम्) ३८ २४ (तमम् पदमग्रे व्याख्यास्यते। तमस्-परिपदयो समास । पञ्चम्या अलुक्]

तमसः अन्धकारस्य १ १७३ ५ अन्धकारस्येव दु खस्य १ ६२ ८ अन्धकारादविद्याया इव ३ ३६ ७ अज्ञानादन्ध-काराद्वा भा०—अज्ञानलेशाद् ३१ १८ आवरकादज्ञानादन्ध-कारात् १ ५० १० भा०—अविद्याऽन्धकारात् पृथग्भूतम् (सूर्यं=जगदीश्वरम्) २७ १० रात्रे प्रकाशरहितस्य समुद्रस्य वा १ १८३ ६ अन्धकारवदविद्याछलाधर्मव्यवहारस्य १.३३ १० **तमसा**=रात्र्यन्धकारेण १७ ४४ अन्धकार से, स० प्र० २८२, अन्धकारेण शतघ्न्याद्युत्थधूमेन मेघपर्वता-कारेणाऽस्त्रादिधूमेन वा, भा०—शस्त्रास्त्रप्रहारोत्थधूम-धूल्यादिना १७ ४७ **तमसि**=रात्रौ, प्र०—तम इति रात्रिनाम, निघ० १ ७, १ ११७ ५ **तमसे**=अन्धकाराय ३० ५ **तमः**=तिमिरम् १ ११३ १६ अन्धकारम् ४ १३ ४ भा०—अधर्माऽविद्याऽन्धकारम् ३४ २२ रात्रिवदविद्याऽन्ध-कारम् १ ८६ १० अन्धकार अर्थात् महामूर्खत्व, चिरकाल घोर दु ख रूप नरक, स० प्र० ४३२, ४० ६ अविद्याकुत्सिता-स्य चक्षुर्दृष्ट्यावरक वाऽन्धकारम् १ ६१ २२ अन्धकार कारागृहम् १८ ७० अन्धकाररूप दु खम् १ ११७ १७ अन्धकाररूपा रात्रिम् ५ १४ ४ रात्र्यन्धकारम् ३३ ६२ **तमांसि**=रात्री ११४३ रात्रिरिव वर्त्तमानान् दुष्टान् जनान् ७ ५६ २० रात्रिरिवाऽविद्यादीनि ६ ७२ १. अज्ञान, दु ख आदि ससार के मोहो को, स० वि० १८६, अथर्व० ६ ५ १ [तम रात्रिनाम निघ० १ ७ तम तनोते नि० २ १६ ताम्यति काङ्क्षति येनेति विग्रहे तमु काङ्क्षायाम् (दिवा०) धातो 'सर्वधातुभ्योऽसुन्' इत्यसुन् प्रत्यय । कृष्णमिव हि तम. ता० ६ ६ १० कृष्ण वै तम श० ५ ३ २ २ मृत्युर्वै तम श० १४ ४ १.३२ गो० उ० ५ १. मृत्युर्वै तमश्छाया ऐ० ७ १२ पाप्मा वै तम श० १२ ६. २ ८ तमो रज नि० ६ २८ तमो मृत्यु. काठ० १० ६. विससरश्मिरवमत् तमासि काठ० ११ १३]

तमिस्राः रात्रय २ २७ १४. [तमस्प्राति० मत्वर्थे 'ज्योत्स्नातमिस्राशृङ्गिण०' अ० ५ २ ११४ सूत्रेण तमस उपधाया इकारो रश्च प्रत्ययो निपात्यते]

तमोगाम् प्राप्ताऽन्धकारम् (मेघम्) ५ ३२ ४ [तमस् उपपदे गम्लृ गतौ (भ्वा०) धातोर्ड प्रत्यय]

तमोहनम् यस्तमो हन्ति तम् (ज्योतीरथ=प्रकाश-युक्त रमणीय यानम्) १ १४० १ [तमसुपपदे हन हिंसा-गत्यो (अदा०) धातो क्विप्प्रत्यय]

तमोहना यौ तमो हतस्तौ (सूर्यचन्द्रमसौ) ३ ३६ ३ [तमस्-उपपदे हन हिंसागत्यो (अदा०) धातो क्विप् । 'सुपा सुलुग्' इत्याकारादेश]

तम्पताम् सुखयतम् ३ १२ ३

तर उल्लङ्घस्व ११ ७२ [तॄ प्लवनसन्तरणयो (भ्वा०) धातोर्लोट्]

तरक्षुः व्याघ्र २४ ४०

तरणयः तरणाऽवस्था प्राप्ता (राजभृत्या) ४ ४ १२. **तरणिः**=सन्तारक (अग्निरिव विद्वान्), प्र०—अत्र 'सुपा सुलुक्०' इति सुलुक् ३ ११ ३ **तरणिभिः**=सन्तरणैः ४ ३३ १ **तरणिम्**=अध्वना तारकम् (अग्निम्) ३ २६ १३ **तरणिः**=क्षिप्रतया सम्प्लविता (सर्वप्रकाशक सर्वात्मेश्वर) १.५०.४ प्लविनाऽतिवेगवान् (परिज्मा= वायु) १ ११२ ४ दु खेभ्यस्तारक (विचक्षण=अतीव धीमान् जन) ४ ४५ ५. पुरुषार्थी (सत्पुरुष) ७ ३२ ६. सद्यो गन्ता (अर्वा=अश्व) ३ ४६ ३ दु खात् पारग सुखविस्तारक (अ०—सत्कर्मानुष्ठाता जन) १ १२१ ६. तारयिता (इन्द्र =राजा) ७ २६ ४ [तरणि क्षिप्रनाम निघ० २ १५ तॄ प्लवनसतरणयो (भ्वा०) धातो 'अर्त्तिसृधृ०' उ० २ १०२ सूत्रेण अनि प्रत्यय]

तरणित्वा शीघ्रत्वेन १ ११० ६ [तरणि क्षिप्र-नाम निघ० २ १५ ततो भावे त्व प्रत्यय । 'सुपा सुलुग्०' इति तृतीयाया आकार]

तरणित्वेन शीघ्रत्वेन १ ११० ४ [तरणिप्राति० भावे त्व प्रत्यय । तरणित्वेन क्षिप्रत्वेन नि० ११ १६]

३ ६. गो० २ ३ २ मनो वाव तप जै० ३.३३४ सत्येन तपसा सह तस्य (घर्मस्य) दोहमशीमहि तै० आ० ४ २१ १ स्वाध्यायप्रवचने एवेति नाको मौद्गल्य । तद्धि तपस्तद्धि तप तै० आ० ७ ९ १]

तपस्पतिः यथा ब्रह्मचर्यादिपालक (आचार्य) ५ ४० तपस पालयिता (अग्नि=ईश्वरोऽध्यापको वा) ५ ६ [तपस्-पतिपदयो समास । तपस् इति व्याख्यातम्]

तपस्यः तपो धर्मो विद्यतेऽस्मिन् स फाल्गुनो मास १५ ५७ **तपस्याय**=फाल्गुनाय ७ ३० तपसि साधवे फाल्गुनाय २२ ३१ [तपम् इति व्याख्यातम् । तत 'तत्र साधु' इत्यर्थे यत् । अथवा तपस्प्राति० मत्वर्थे 'मत्वर्थे-मासतन्वो.' अ० ४ ४ १२८ सूत्रेण यत्प्रत्यय]

तपस्वान् बहुतपोयुक्त (विद्वज्जन) ६ ५ ४ [तपम् व्याख्यातम् । ततो भूम्नि मतुप्]

तपाति तापयति ५ ७९.९ [तप सन्तापे (भ्वा०) धातोर्लेट् । आडागम]

तपिष्ठः अतिशयेन तप्त (विद्वज्जन) ६ ५ ४ **तपिष्ठाम्**=अतिशयेन तप्ताम् (अशनि=वज्रम्) ३ ३० १६ **तपिष्ठेन**=अतिशयेन तप्तेन (हन्मना=हननेन) ७ ५९ ८ अतिशयेन तापयुक्तेन (शोचिपा=तेजसा) ४ ५ ४ **तपिष्ठैः**=अतिशयेन प्रतापकैः (ज्योतिर्भि किरणैर्वा) ७ १५ १३ अतिशयेन सन्तापकरै शस्त्रै १३ ९ अतिशयेन सन्तापकैः शस्त्रादिभि ४ ४ १ [तपस्प्राति० अतिशायने इष्ठन् । टेर्लोप । अथवा तपस्विन्प्राति० अतिशायने इष्ठन्प्रत्यये 'विन्मतोर्लुक्' अ० ५ ३ ६५ सूत्रेण विन्प्रत्ययस्य लुक् । तपिष्ठैः तप्ततमैस्तृप्ततमैः प्रपिष्टतमैरिति वा नि० ६ १२]

तपुर्जम्भः तपूंषि तापा जम्भो वक्त्रमिव यस्य स (अग्नि) १ ५८ ५ **तपुर्जम्भः**=तपूंषि एव जम्भानि यस्य तत्सम्बुद्धौ (सेनापते) प्र०—'तप सन्तापे' इत्यस्मादौणादिक उसिन्प्रत्यय, सताप्यन्ते शत्रवो यैस्तानि तपूंषि 'जभि नाशने' इत्यस्मात् करणे घञ्, जम्भ्यन्त एभिरिति जम्भनान्यायुधानि, तपूंषि एव जम्भानि यस्य तत्सम्बुद्धौ (सेनापते) १ ३६ १६ [तपुष्-जम्भपदयो समास । तपुष्= तप सन्तापे (भ्वा०) धातोरौणादिक उसिन्प्रत्यय । जम्भ = जम्भनाशने (चुरा०) धातो करणे घञ्प्रत्यय]

तपुर्मूर्द्धा तपुस्तापो मूर्द्धेवोत्कृष्टो यस्य (अग्नि = विद्युत्) ७ ३ १ [तपुस्-मूर्धन्पदयो. समास । तपुस् पूर्वपदे व्याख्यातम्]

तपुषः तपत्यस्मिन् सूर्यस्तस्य दिनस्य मध्ये ३ ३९ ३ **तपुषा**=परितापेन क्रोधादिना २ ३४ ९ तापेन २ ३० ४ **तपुः**=परितापक (अग्नि) २ ४ ६ सन्तापम्, भा०—कठोर दण्डम् ६ ६२ ८ **तपूंषि**=प्रतप्तानि (ब्रह्मास्त्रादीनि) ४ ४ २ तेजोमयानि (वृजिनानि=बाधकानि बलानि) ६ ५२ २ तापा, भा०—अग्न्याद्यस्त्राणि शतघ्न्यादय. १३ १० [तप सन्तापे (भ्वा०) धातो 'अर्त्तिपृवपियजितनिधनितपिभ्यो नित्' उ० २ ११७ सूत्रेण उसि प्रत्यय । स च नित् । तपु तपने नि० ६ ११ तपुषी क्रोधनाम निघ० २ १३]

तपुषिम् प्रतप्तम् (हेतिं=वज्रम्) ६ ५२ ३. [तपुष् इति व्याख्यातम् ततो मत्वर्थे 'लुगकारेकाराश्च वक्तव्या' अ० ४ ४ १२८ वा०सूत्रेण इकार]

तपुष्पा यौ तपूंषि पातो रक्षतस्तौ (अश्वौ) ३ ५३ ३ [तपुस् इति व्याख्यातम् । तदुपपदे पा रक्षणे (अदा०) धातो क । 'सुपा सुलुग्०' इत्याकार]

तपो तपस्विन्, दुष्टाना पुरुषाणा दाहक (विद्वन् जन !) ३ १८ २ [तपस्प्राति० मत्वर्थीयप्रत्ययस्य 'लुगकारेकाराश्च वक्तव्या' इति वार्त्तिकेन लुक्]

तपोजा यस्तपसो जायते प्रकट्यते स, भा०—तपसा विज्ञातव्य (धर्त्ता=ईश्वर) ३७ १६ ब्रह्मचर्यादितपसा जात (सभेशो राजा) १० ६ [तपस् उपपदे जनी प्रादुर्भावे (दिवा०) धातो 'अन्येष्वपि दृश्यते' अ० ३ २ ९८ सूत्रेण ड प्रत्यय । वचनव्यत्यय]

तपोभिः प्राप्तकरैरग्निगुणै ७ १ ७ [तपस्पद व्याख्यानम् । ततस्तृतीयाबहुवचनम्]

तप्तम् ऐश्वर्ययुक्तम् (विद्वास जनम्), प्र०—ऐश्वर्याऽर्थात् तपधातोस्त प्रत्यय १ ११२ ७ तपोजनितम् (ऊर्ज=पराक्रमम्) १ ११८ ७ धर्मेणाऽध्ययनाऽध्यापन-श्रमेण वा सन्तप्तम् (वा =बाह्यमुष्कम्) ५ ११ तापाऽन्वितम् (घर्मम्=अग्निहोत्रादिक यज्ञम्) १७ ५५ **तप्तः**= भा०—पुरुषार्थी (सज्जन) २० ५५ [तप सन्तापे (भ्वा०), तप ऐश्वर्ये (दिवा०) धातोर्वा क्त प्रत्यय]

तप्तायनी तप्तानि स्थापनीयानि वस्तून्ययन यस्या विद्युत सा ५ ९ [तप्त-अयनपदयो समास]

तप्यतुः दुष्टाना परितापक (राजपुरुष) २ २४ ९ [तप सन्तापे (भ्वा०) धातोर् औणादिको (४.२) बाहु० यतुच् प्रत्यय]

तप्यते यस्ताप प्राप्नोति तस्मै (जनाय) ३९ १२

तरुषन्ते=सद्य प्लवन्ते ५ ५९ १ [तरुष्यतिप्येवङ्कर्मा (हन्तिकर्मा) नि० ५ २ तॄ प्लवनसन्तरणयो (भ्वा०) धातोर्लेट्। विकरणव्यत्ययेन उ सिन् च। आत्मनेपदञ्चापि व्यत्ययेनैव]

तरुष. तारकस्य (राय =धनस्य) ६ १५ ३ दु खेभ्य सन्तारकस्य (दक्षस्य=वलस्य) ३ २ ३ अविद्यासप्लवकान् (नॄन्=नायकान् जनान्) १ १२२ १३ **तरुषि**=दु खात् तारके सङ्ग्रामे ६ २५ ४ [तॄ प्लवनसन्तरणयो (भ्वा०) धातोरौणादिक उसि प्रत्ययो वाहुलकाद्]

तरुषसा तरन्ति शत्रुवलानि येन तत्तरुपस्तेन (राया=परमलक्ष्म्या) १ १२९ १०]

तरुषेम प्राप्नुयाम, प्र०—तरुष्यतीति पदनाम, निघ० ४ २, ७ ४८ २ [तॄ प्लवनसन्तरणयो (भ्वा०) धातोर्लिङ्। विकरणव्यत्ययेन उ सिप् च]

तरुष्यतः हनिष्यत शत्रून् ३३ ६६ [तरुष्यतिप्येवङ्कर्मा (हन्तिकर्मा) निघ० ५ २ तत शतृप्रत्यय]

तरेम सर्वान् दोपास्त्यजेम ६ १५ १८ [तॄ प्लवनसन्तरणयो (भ्वा०) धातोर्लिङि उत्तमवहुवचनम्]

तर्तरीति भृश तरति ६ ४७ १७ [तॄ प्लवनसन्तरणयो (भ्वा०) धातोर्यङ्लुगन्ताल्लट्]

तर्पय प्रीणय १ ५४ ९ **तर्पयत**=प्रीणीत ६ ३० सुखयत, भा०—प्रीत्या नित्य सेवध्वम् २ ३४ **तर्पयन्त**=तर्प्पयन्ति १ ८५ ११ **तर्पयेथाम्**=तर्पयेते, प्र०—अत्र व्यत्ययो लडर्थे लोट् च १ १७ ३ [तृप तृप्तौ (चुरा०) धातोर्लोट्। अन्यत्र लङ्। अडभावश्च]

तर्य्यः यस्तीर्य्यते, तरितु योग्य (जन) ५ ४४ १२ [तॄ प्लवन-सन्तरणयो (भ्वा०) धातोर्ण्यत्]

तलवम् यो हस्तादितलानि वाति हिनस्ति तम् (पुरुषम्) ३० २० [तलोपपदे वा गतिगन्धनयो (अदा०) धातो क प्रत्यय]

तल्पम् पर्यङ्कपर, स० वि० १३८, अथर्व० १४ २ ३१ [तलयति प्रतिष्ठा करोतीति विग्रहे तलप्रतिष्ठायाम् (चुरा०) धातो 'खष्पशिल्पशष्प०' उ० ३ २८ सूत्रेण पप्रत्ययान्तो निपात्यते। मानवो वै तल्प तै० २ २ ५ ३]

तल्पशीवरी. यास्तल्पेषु शेरते ता (नारी =स्त्रिय) ७ ५५ ८ [तल्पोपपदे शीङ् शये (अदा०) धातो 'अन्येभ्योऽपि दृश्यन्ते' इति वनिप्। 'वनो रच' सूत्रेण ङीप्, रेफश्चान्तादेश]

तल्प्याय तल्पे शयने साधवे (शिपिजनाय) १६ ४४ [तल्प व्याख्यातम्। तत 'तत्र साधु' रित्यर्थे यत्। ततश्चतुर्थी]

तवसम् महावलयुक्तम् (मरुता गणम्) १ ६४ १२ वलवन्तम् (विद्वासम्) ५ ५८ २ वलिष्ठम् (सज्जनम्) ६ १७ ४ वलादिवर्धकम् (इन्द्र=परमैश्वर्यप्रदमीश्वरम्) ६ १७ ८ वलकारकम् (विद्युद्रूपमग्निम्) ३ १ १३ वलम् ७ २४ ३ **तवसः**=वलिष्ठा गतिमन्त (मनुष्या) ५ ६० ४ प्रवृद्धवला (वायव इव वर्त्तमाना जना) १ १६६ ८ **तवसा**=वलेन, प्र०—तव इति वलनाम, निघ० २ ९, १८ ६९ **तवसे**=वलिने (इन्द्राय=विद्वज्जनाय) ५ ३३ १ वलवते (इन्द्राय=सभाद्यध्यक्षाय) १ ६१ १ विद्यावृद्धाय (गृत्साय=मेधाविने जनाय) ३ १ २ वलयुक्ताय (कपर्दिने=ब्रह्मचारिणे जनाय) १ ११४ १ वर्धकाय (मनुष्याय) ६ ४९ १२ [तव वलनाम निघ० २ ९ तवस महन्नाम निघ० ३ ३ तवस इति महतो नामधेयम् उदितो भवति नि० ५ ९ तवतेर्वा वृद्धिकर्मण नि० ९ २५ ततोऽसुन्प्रत्यय । तव इति सौत्रो धातु]

तवस्तमः अतिशयेन वली (सद्वैद्य) २ ३३ ३ **तवस्तमा**=अतिशयेन वलयुक्तौ वलप्रदौ वा (इन्द्राग्नी=विद्युद्भौतिकाग्नी) १ १०९ ५ [तवस् इति व्याख्यातम्। ततोऽतिशायने तमप्। अन्यत्र 'सुपा सुलुग्०' इत्याकारादेश । तवस्-इति वलनाम निघ० २ ९]

तवस्तरम् अत्यन्त वलयुक्तम्, भा०—वलिष्ठम् (इन्द्र=राजानम्) प्र०—तव इति वलनाम, निघ० २ ९ ततस्तरप् ११ १४ तूयते विज्ञायत इति तवा, सोऽतिशयितस्तम् (इन्द्र=परमात्मान सभाध्यक्ष वा) समीक्षा सायणाचार्येणाऽत्र विन्-प्रत्ययस्य छान्दसो लोप इति यदुक्त तदशुद्ध प्रमाणाऽभावात् १ ३० ७ [तवस् इति वलनाम निघ० २ ९ ततोऽतिशायने तरप्]

तवस्यम् तवसि वले भवम् (विजयम्) २ २० ८ [तवस् इति वलनाम निघ० २ ९ ततो भवार्थे यत्प्रत्यय]

तवागाम् प्राप्तवलम् (वृषभम्) ४ १८ १०

तविषः वलवत (वायो) १ १६५ ६ वलात् ५ ८७ ५. [तविप महन्नाम निघ० ३ ३]

तविषात् वलिष्ठान् (सभासेनेशात्) १ १७१ ४ **तविषाः**=वलवन्त (विद्वासो जना) ५ ५४ २ [तविष महन्नाम। निघ० ३ ३ तविषेभि =महद्भि नि० २ २३. तव इति सौत्रो धातु । तत 'तवेर्णिद्वा' उ० १ ४८ सूत्रेण टिषच्-प्रत्यय]

तरणे दुःखादुद्धरणे ६ १ ५ [तॄ प्लवनसन्तरणयो (भ्वा०) धातोर्भावे ल्युट्]

तरत दुःखानि उल्लङ्घयत ३५ १० तरति=उल्लङ्घयति ३ ४६ २. उल्लङ्घते ७ ५६ २ **तरन्ति**=उल्लङ्घन्ते ३४ ५१ प्राप्नुवन्ति ७ ३२.१३ [तॄ प्लवन-सन्तरणयो (भ्वा०) धातोर्लोट्]

तरद्द्वेषाः तरन्ति द्वेषान् येषु ते (पन्थान =मार्गा) १ १०० ३ [तरन्-द्वेषपदयो समास]

तरन् उल्लङ्घयन् (अग्नि =राजा) ३ २४ १ शत्रु-बल सप्लवन् (अग्नि =विद्वान् राजा) ६ ३७ **तरन्तम्**=सप्लावकम् (वृक=विद्युतम्) १ १०५ ११ **तरन्तः**=उल्लङ्घमाना (राजद्रोहिणो जना.) २ ११ १६ [तॄ प्लवनसन्तरणयो (भ्वा०) धातो शतृप्रत्यय]

तरन्ती दुःख प्लावयन्त्यौ (द्यावापृथिव्यौ) ४ ५६ ७ [तॄ प्लवनसन्तरणयो (भ्वा०) धातो शत्रन्तान् ङीप्। विभक्ते पूर्वसवर्णदीर्घ]

तरसा बलेन, प्र०—तर इति बलनाम, निघ० २ ६, ५ ५४ १५. **तरसे**=तारकाय (बलाय) ३ १८ ३ **तरः**=तरति येन बलेन तत् १ ३३ १२ **तरोभिः**=तरन्ति यैस्तानि तरासि नौकादीनि तै २ ३६ ३. [तॄ प्लवनसन्तरणयो (भ्वा०) धातोरौणादिकोऽसुन्। तर इति बलनाम निघ० २ ६ स्तोमो वै तर ता० ११ ४ ५ स्तोमो वै देवेषु तरो नामासीत् ता० ८ ३ ३ तरो वै यज्ञ जै० १ १५३]

तरस्वी प्रशस्त तरो विद्यते यस्य स (पुरुष) १६ ८८. [तरस्प्राति० मत्वर्थे 'अस्मायामेधास्रजो विनि.' अ० ५ २ १२१ सूत्रेण विनि]

तरः यस्तरति स (अध्यापको जन) १ १६० ७ **तराय**=उल्लङ्घकाय (जनाय) २ १३ १२ [तॄ प्लवन-सतरणयो (भ्वा०) धातो 'ऋदोरप्' इत्यप्प्रत्यय]

तराथः गृहाश्रम के पार होवो, स० वि० १४०, अथर्व० १४ २ ४३ **तरामसि**=उल्लङ्घेमहि ७ ३२ २७ [तॄ प्लवनसन्तरणयो (भ्वा०) धातोर्लेट्। आडागम। अन्यत्र मस इदन्तता]

तरित्रतः अतिशयेन सप्लवत (दधिक्राव्ण =अश्वस्य) ६ १५ अध्वनस्तरिता (वायु) ४ ४० ३ [तॄ प्लवनसन्तर-णयो (भ्वा०) धातो शतरि 'दाधर्त्तिदर्धर्त्ति०' अ० ७ ४ ६५ सूत्रेण छन्दसि शप श्लौ षष्ठ्येकवचनेऽभ्यासस्य रिगागमो निपात्यते]

तरीयान् तरणीय (विद्वान् जन) ५ ४१ १२ [तॄ प्लवनसन्तरणयो (भ्वा०) धातोस्तृचि अतिशायने 'तुश्छन्दसि' अ० ५ ३ ५६ सूत्रेण ईयसुन्। 'तुरिष्ठेमेयस्सु' अ० ६ ४ १५४ सूत्रेण तृचो लोप]

तरीषणि तरणे ५ १० ६ दुःखं तरितु सामर्थ्यम् ४ ३७ १.

तरुणम् युवाऽवस्थास्थम् (शिशु =वत्सम्) १ १८६ ७ **तरुणः**=युवा (कुमार) ७ ४ २ **तरुणेन**=युवाऽवस्थेन (कुमारेण=अकृतविवाहजनेन) २८ १३ [तॄ प्लवन-सन्तरणयो (भ्वा०) धातो 'त्रो रश्च लो वा' उ० ३ ५४ सूत्रेण उनन्प्रत्यय]

तरुणीषु युवतय इव वर्त्तमानासु (प्रजासु) ३ ५५ ५ [तरुणप्राति० स्त्रियां 'वयस्यचरम इति वक्तव्यम्' अ० ४.१.२० वा सूत्रेण ङीप्-प्रत्यय। तरुणपद व्याख्यातम्]

तरुता उल्लङ्घयिता (शत्रु) ६ ६६ ८ प्लविता (विद्वान्) १ १२६ २ तर्त्ता, वरयिता, पार गमयिता (सेनाऽध्यक्षो जन) प्र०—'असित-स्कभित-स्तभित', अ० ७ २ ३४ अनेनाऽय निपातित १ २७ ६ सप्लवनकर्त्ता (शत्रुर्जन) १ ४० ८ **तरुतारम्**=ताराख्य यन्त्रम्, ऋ० भू० १६६, १ ८ २१ १० शब्दान् सन्तारक प्लावक वा ताराख्य व्यवहारम् १ ११६ १० [तॄ प्लवनसन्तरणयो (भ्वा०) धातोस्तृचि 'असितस्कभितस्तभित०' अ० ७ २ ३४ सूत्रेण उट् आगमो निपात्यते। एष (तार्क्ष्य =वायु) वै सहावास्तरुता, एष हीमाँल्लोकान् मद्यस्तरति ऐ० ४ २० तरुतारम्=तारयितारम् नि० १० २८]

तरुत्र दुःखात्तारक (इन्द्र=विद्वज्जन) २ ११ १६ अविद्यातारक (इन्द्र=बलप्रद विद्वज्जन) २ ११ १५. **तरुत्रम्** = समुद्रादितारकम् (अश्व = विद्युदग्निम्) १ ११७ ६ तारकम् (राजानम्) ६ २६ २ **तरुत्रः**=दुःखेभ्यस्तारक (ऋतु =राज्यपालनाख्यो यज्ञ) ४ २१ २ दुःखादुल्लङ्घयिता (राजा) १ १७४ १ सर्वदुःखादुत्तीर्ण (इन्द्र =प्रजारक्षको जन) ६ १७ २ **तरुत्राः**=दुःखात् सर्वेषा सन्तारका (विद्वज्जना) ७ २५ ५ [तॄ प्लवनसन्तर-णयो (भ्वा०) धातोरौणादिक उत्र प्रत्ययो बाहुलकात्]

तरुभिः वृक्षै ५ ४४ ५. [तॄ प्लवनसन्तरणयो (भ्वा०) धातो 'भृमृशीङ्तृचरि०' उ० १ ७ सूत्रेण उ प्रत्यय]

तरुषन्त ये दुःखानि तरन्ति तद्वदाचरत १ १३२.५

सन्ततकर्मा भवति । अहोरात्रकर्मा वा नि० ३ १४ ये जनेषु मलिम्लव स्तेनासस्तस्करा वने । ये कक्षेष्वघायवस्ताँस्ते (अग्ने) दधामि जम्भयो तै० स० ४ १ १० २]

तस्तभाने धारिके (क्रन्दसी=द्यावापृथिव्यौ) ३२ ७ [स्तम्भुरिति सौत्रो धातु । ततो लिटि कानच् ।-प्रथम-द्विवचनम्]

तस्तभ्वांसम् स्तम्भिवन्तम् (अहिं=मेघम्) २ ११ ५ [स्तम्भुरिति सौत्रो धातु । ततो लिट क्वसु]

तस्तम्भ स्तभ्नाति १ ६७ ३ **तस्तम्भत्**=स्तभ्नीयात् १ १२१ ३ [स्तम्भुरिति सौत्रो धातु । ततो लिट् । अन्यत्र लेट् । छान्दस द्वित्वम्]

तस्थतुः तिष्ठत ४ ५६ २ तिष्ठेताम् ३ १४ ३ [ष्ठा गतिनिवृत्तौ (भ्वा०) धातोर्लिट्, प्रथमद्विवचनम्]

तस्थिवान् यस्तिष्ठति (वरुण=परमेश्वर) ५ ८५ ५ **तस्थिवांसम्**=प्रतिष्ठन्तम् (परमात्मानम्) ६ ९ ७ तिष्ठन्तम् (अ०—सूर्यमिव) १२ २० स्थितम् (परमेश्वरम्) १ ७२ ४ स्थितिमन्तम् (भोगम्) ऋ० भू० १९३ १ ११६ ५ **तस्थिवांसः**=तिष्ठन्त (पर्वता=शैला) ३ ५६ १ स्थिरप्रज्ञा (देवास=विद्वासो जना) ३ ८ ६ स्थिरास्सन्त (राजजना) ४ ४ ६ [ष्ठा गति-निवृत्तौ (भ्वा०) धातोर्लिट क्वसु]

तस्थिवांसा स्थितिमन्तौ (इन्द्राग्नी=वायुपावकौ) १ १०८ १ [तस्थिवान् इति व्याख्यातम् । तत प्रथमा-द्विवचनस्याकारश्छान्दस]

तस्थुषः स्थावरान् काष्ठादि-पदार्थान् ५ ५३ २ तिष्ठन्तीति तान् सर्वान् पदार्थान् मनुष्यान् वा, प्र०—तस्थुष इति मनुष्यनामसु पठितम्, निघ० २ ३, १ ६ १ स्थावरस्य (जगत) २५ १८ स्थिरस्य (जगत) ३ ३८ ९ अचर जगत् का, आर्याभि० २ ५०, २५ १८ [ष्ठा गतिनिवृत्तौ (भ्वा०) धातोर्लिट क्वसुप्रत्ययान्ताद् द्वितीया वहुवचनम् । षष्ठ्या एकवचन वा । तस्थुष मनुष्यनाम निघ० २ ३ स्थावरस्य च नि० १२ १६]

तस्थुषीः स्थिरा (किरणा) ५ ६२ १ [तस्थुष इति=व्याख्यातम् । तत स्त्रिया ङीप्]

तस्थुः तिष्ठन्ति ३१ १९ स्थितिं चक्रिरे, ऋ० भू० १३२, ३१ १९ तिष्ठेयु १ १६४ ३ स्थिरा भवन्ति ११ ५, ऋ० भू० १६२ तिष्ठन्तु ७ ६ ६ वर्त्तन्ते १ ५२ ४ **तस्थे**=तिष्ठते ५ ४४ ६ तिष्ठामि १ ७२ ६ **तस्थौ**=तिष्ठति ३३ २२ तिष्ठेत् १२ ३४ [ष्ठा गतिनिवृत्तौ (भ्वा०) धातोर्लिट् । 'तस्थे' प्रयोगे व्यत्ययेनात्मनेपदम् । तस्थु=सन्तिष्ठन्ते नि० ४ २७]

ताढि आजहि १८ ७१

तात् तावन्ति (विज्ञानानि), प्र०—अत्र 'छान्दसो वर्णलोपो वा' इति वलोप 'शेश्छन्दसि बहुलम्' इति शेर्लोप ६ २१ ६ [तत्सर्वनाम्न परिमाणे 'यत्तदेतेभ्य परिमाणे वतुप्' अ० ५ २ ३९ सूत्रेण वतुप् । 'आ सर्वनाम्न' अ० ६ ३ ९१ सूत्रेणाकारादेश । तावत्प्राति० प्रथमाबहुवचने शेर्लोप । वकारस्य लोपश्छान्दस]

तातृपिम् अतिशयेन तृप्तिकरम् (सोमम्=ओषधि-गणम्) ३ ४० २ [तृप प्रीणने (दिवा०) धातोर्यङ्लुगन्ताद् औणादिक इ प्रत्यय]

तातृषाणः अतिशयेन पिपासित (इन्द्र=सभेश) १ १३० २ [ञितृष् पिपासायाम् (दिवा०) धातोर्यङ्-लुगन्ताद् औणादिक आनच्-प्रत्यय]

तात्या तस्मिन्नवसरे भवा (पितरा=जननी जनकश्च) प्र०—अत्र 'वाच्छन्दसि' इति तदव्ययात्त्यप् १ १६१ १२

तात्या या तते परमेश्वरे साध्वी तया (धिया=प्रज्ञया) ७ ३७ ६ तत=तनु विस्तारे (तना०) धातो क्त प्रत्यय । ततप्राति० 'तत्र साधु' रित्यर्थेऽण्णन्तान् ङीपि तृतीयैकवचनम्]

तादीत्ना तदानीम्, प्र०—अत्र 'पृषोदरादीनि यथो-पदिष्टम्' अ० ६ ३ १०९ अनेन वर्णविपर्यासेनाकारस्थान ईकार, ईकारस्थान आकारस्तुडागम पूर्वस्य दीर्घश्च १ ३२ ४]

तान्वः तन्व, प्र०—अत्र 'अन्येषामपि दृश्यते' इत्या-द्यचो दीर्घ ३ ३१ २ [तनूप्राति० प्रथमाबहुवचनम् । तनूरिति व्याख्यातम् । 'अन्येषामपि दृश्यते' इति दीर्घादेश । तान्व आत्मज पुत्र नि० ३ ६]

ताप्तम् तपे, प्र०—अत्र लिङर्थे लुङ् ५ ३३ **ताप्सीत्**=तपेत् १३ ३० [तप सन्तापे (भ्वा०) धातोर्लुङ् । अडभावश्छान्दस]

ताम्रः ताम्रमिव कठिनाऽङ्ग (राजा), प्र०—अत्र 'अमितम्योर्दीर्घश्च' उ० २ १६ अनेनाऽस्य सिद्ध १६ ६ **ताम्राय**=यस्ताम्यति ग्लायति तस्मै (पुरुषाय) १६ ३९ [तमु काङ्क्षायाम् (दिवा०) धातो 'अमितम्योर्दीर्घश्च' उ० २ १६ सूत्रेण रक् प्रत्ययो धातोरकारस्य च दीर्घ । ताम्रम् रूपनाम निघ० ३ ७]

तविषाणि बलानि ३ १२ ८ [तविष इति व्याख्यातम् । तत प्रथमावहुवचनम्]

तविषी प्रशस्त-बलादि-युक्ता सेना, प्र०—'तवेर्णिद् वा' उ० १ ४८ अनेन टिषच्-प्रत्ययो णिद् वा १ ३१ २ बलादिगुणयुक्ता (देवी=दिव्यगुणैर्वर्त्तमाना स्त्री) १ ५६ ४ **तविषीभिः**=पूर्णबलयुक्ताभि सेनाभि १ ८७ ४ बलै १ १६६ ४ बलादिभिर्गुणै ३ ३ ५ बलाऽऽकर्षणादिगुणाढ्याभि सेनाभि १ ५१ २ सेनादिबलै ५ ३२ ३ **तविषीम्**=बलम् ५ ३४ ७ बलयुक्ता सेनाम्, भा०—बलवती सेनाम्, प्र०—तविषीति बलनाम, निघ० २ ९, ३४ ७ **तविषीषु**=बलयुक्तेषु सैन्येषु १ ५२ २. **तविषीः**=बलानि १ ६४.७. बलयुक्ता (गिर=विविधविद्यायुक्ता वाण्य) ३ ३१ १३ भा०—हृष्टपुष्टसेना २० ४७ **तविष्याः**=बलयुक्ताया सेनाया ५ २९ १४ [तव इति सौत्रो धातु, तत 'तवेर्णिद्वा' उ० १ ४८ सूत्रेण टिषच् प्रत्यय । स्त्रिया टित्त्वात् ङीप् । तविषी बलनाम निघ० २ ९ तवतेर्वा वृद्धिकर्मण नि० ९ २५]

तविषीमन्तम् प्रशस्ता तविषी सेना यस्य तम् (वीराणा गणम्) ५ ५८ १ [तविषीपद व्याख्यातम्, ततो मतुप् प्रशस्तार्थे]

तविषीयन्तः सेना कामयमाना (वीर-राजजना) ५.८५ ४ [तविषी व्याख्यातम् । तत इच्छार्थे क्यजन्ताच्छतृ-प्रत्यय]

तविषीयमाणम् सेनयेवाऽऽचरन्तम् (शत्रुजनम्) २ ३० ८ [तविषीपद व्याख्यातम् । तत आचारे क्यङ् । तत शानच्]

तविषीवः प्रशसिता तविषी सेना विद्यते यस्य तत्सम्बुद्धौ (इन्द्र=सेनेश) ७ २५ ४ बलवत्-सेनावन् (इन्द्र=राजन्) ४ २० ७ [तविषीपद व्याख्यातम् । ततो मत्वर्थे 'छन्दसीवनिपौ' अ० ५ २ १०९. वा०सूत्रेण वनिप् । 'वन उपसख्यान कर्त्तव्यम्' अ० ८ ३ १ वा०सूत्रेण सम्बुद्धौ रुत्वम्]

तवीयः अतिशयेन बलम् ६ १८ ४ [तव बलनाम निघ० २ ९ ततोऽतिशायने ईयसुन् प्रत्यय]

तवीयान् अतिशयेन प्रशसित (राजा) ६ २० ३ [पूर्वपदे व्याख्यातम्]

तव्यम् तवे बले भवम् (क्षत्र=राज्यम्) १ ५४ ११ **तव्ये**=तवे बले हितम् (क्षत्र=राज्यम्) १ ५४ ११ [तव बलनाम निघ० २ ९ ततो भवार्थे हितार्थे वा यत् प्रत्यय]

तव्यस बलस्य ५ ४३ ९ **तव्यसे**=अतिशयेन वृद्धाय (रुद्राय=परमेश्वराय जीवाय वा) १ ४३ १ [तव बलनाम निघ० २ ९ ततोऽतिशायन ईयसुन् । ईकारलोपश्छान्दस]

तव्यसीम् अतिशयेन बलवतीम् (मतिम्) १ १४३.१ [तव्यस् इति व्याख्यातम् । तत स्त्रिया ङीप्]

तव्यान् अतिशयेन बलवान् (राजपुरुष), प्र०—अत्रेयसुन्, ईकारलोप ३ ३२ ११ ये तविषि बले भवास्तान् (वीरजनान्), प्र०—अत्र 'छान्दसो वर्णलोपो वा' सलोप ५ ३२ ३ **तव्यांसम्**=अतिशयेन वृद्धम् (अग्निं=पावकम्) ५ १७ १ [तव बलनाम निघ० २ ९ ततोऽतिशायन ईयसुन् प्रत्यय । ईकारलोपश्छान्दस । अथवा तवस्बलवाचिन प्राति० भवार्थे यत् । सकारलोपश्छान्दस]

तष्टम् तीक्ष्ण शोधितम् (परमात्मस्वरूपम्) ६ १६ ४७ **तष्टः**=विहित (स्तोम=स्तुतिविषय) १.१७१ २ **तष्टान्**=तक्षन्ति तीक्ष्णीकुर्वन्ति यैर्विद्यास्तान् (मन्त्रान्) १ ६७ २ [तक्षू तनूकरणे (भ्वा०) धातो क्त प्रत्यय । तक्षति करोतिकर्मा नि० ४ १९ तत क्त प्रत्यय]

तष्टेव तक्षेव ७ ३२ २० यथा तक्षक शिल्पी शिल्पविद्याव्यवहारान् विज्ञापयति तथा १ १०५ १८ तथा तनूकर्त्ता शिल्पी १ ६१ ४ यथा छेत्ता (दुष्टदोषनिवारको जन) १ १३० ४ यथा काष्ठाना सूक्ष्मत्वस्य कर्त्ता (विद्वज्जन) ३.३८ १ [तष्टा-इवपदयो समास । तष्टा=तक्षू तनूकरणे (भ्वा०) धातोस्तृच् । तष्टा तक्षणवन् नि० ५ २१]

तसरम् तस्यत्युपक्षयति दु खानि येन तम् (रसम्=आनन्दम्) १९ ८३ [तसु उपक्षये (दिवा०) धातोरौणादिक क्सरन् प्रत्ययो बाहुलकात् । तनु विस्तारे (तना०) धातोर्वा तन्यृषिभ्या क्सरन्' उ० ३ ७५ सूत्रेण क्सरन्]

तस्करम् दस्य्वादिकम् (दुर्जनम्) ७ ५५ ३ चोरम् ३० ५ **तस्करस्य**=प्रसिद्धचोरस्य, भा०—अपुरुषार्थिन (दुर्जनस्य) १२ ६२ **तस्करः**=चोर ६ २८ ३ **तस्करान्**=चोर इव वर्त्तमानान् (दुर्जनान्) ११ ७८ **तस्कराणाम्**=स्तेयकर्मकर्तॄणाम् (प्रजाजनानाम्) १६ २१ **तस्कराः**=प्रसिद्धा (चोरलुण्ठकादयो दुर्जन) ११.७९. **तस्करा इव**=यथा चोरा (तथा सर्पादय) १ १९१ ५ [तस्कर स्तेननाम निघ० ३ २४ तद्-करपदयो समासे 'तद्बृहतो करपत्योश्चोरदेवतयो सुट् तलोपश्च' अ० ६ १ १५७ वा० सूत्रेण सुट् तलोपश्च । तस्कर=तन्करो भवति । करोति यत पापकमिति नैरुक्ता । तनोतेर्वा स्यात्

पाके (तुदा०) धातो क्तिन्। 'ग्रहिज्या०' इति सूत्रेण सम्प्रसारणम्]

तिग्मम् वज्रवत् तीव्रम् (मन=विज्ञानम्), प्र०—तिग्ममिति वज्रनामसु पठितम्, निघ० २ २०, ७ १७ तीव्रगुणकर्मस्वभावम् (वज्र=शस्त्राऽस्त्रम्) ७ १८ १८ तीक्ष्णीकृतम् (सृकम्=वज्रतुल्य शस्त्रम्) १८ ७१ तीव्रम् (सोमम्=ऐश्वर्यम्) ३ ४८ ३ **तिग्मेन**=तीव्रेण (शोचिषा=प्रकाशेन) १७ १६ [तिज निशाने (भ्वा०) धातो 'युजिरुचितिजा कुश्च' उ० १ १४६ सूत्रेण मक्-प्रत्यय कुत्वञ्च। तिग्मम्=वज्रनाम निघ० २ २० तिग्म तेजतेरुत्साहकर्मण नि० १० ६]

तिग्ममूर्द्धानः तिग्म उपरि वर्त्तमाना (योद्धारो जना) ६ ४६ ११ [तिग्म-मूर्धन्पदयो समास। तिग्म व्याख्यातम्]

तिग्मशृङ्गः तिग्मानि तीव्राणि शृङ्गाणीव किरणा यस्य सूर्यस्य स ६ १६ ३६ [तिग्म-शृङ्गपदयो समास। तिग्ममिति व्याख्यातम्। शृङ्गाणि ज्वलतो नाम निघ० १ १७]

तिग्मशोचिषे तीव्रबुद्धिप्रकाशाय १ ७६ १० [तिग्म-शोचिष्पदयो समास। तिग्म व्याख्यातम्। शोचि=ज्वलतो नाम निघ० १ १७]

तिग्महेती तिग्मस्तीव्रो हेतिर्वज्रो ययोस्तौ (वैद्य-राजानौ) ६ ७४ ४ [तिग्म-हेतिपदयो समास। तिग्ममिति व्याख्यातम्। हेति=वज्रनाम निघ० २ २० तिग्म व्याख्यातम्]

तिग्महेते तिग्मस्तीव्रो हेतिर्वज्रो दण्डो यस्य तत्सम्बुद्धौ (अग्ने=सभाध्यक्ष राजन्), प्र०—हेतिरिति वज्रनाम, निघ० २ २०, १३ १२ तिग्मा तीव्रा हेतिर्वृद्धिर्यस्य तत्सम्बुद्धौ (अग्ने=राजन्) ४ ४ ४ [तिग्म-हेतिपदयो समास। तिग्ममिति व्याख्यातम्। हेति वज्रनाम निघ० २ २० हेति=हि गतौ वृद्धौ च (स्वा०) धातो क्तिन् प्रत्यय]

तिग्मा तिग्मानि तीव्राणि (अनीका=सैन्यानि) ४ २३ ७ [तिग्ममिति व्याख्यातम्। तत प्रथमाबहुवचने शेर्लोपे रूपम्]

तिग्मा तीव्रा (अशनि=विद्युत्) ४ १६ १७ **तिग्माम्**=तीव्रा गतिम् ४ ७ १० [तिग्ममिति व्याख्यानम्। तत स्त्रिया टाप्]

तिग्मानीकम् तिग्मानि निशितानि तीक्ष्णान्यनीकानि सैन्यानि यस्मिँस्तम् (सीम्=अहोरात्रव्यवहारम्) १ ६५ २ [तिग्म-अनीकपदयो समास। तिग्ममिति व्याख्यातम्। अनीकम्=अन प्राणने (अदा०) धातो 'अनिहृषिभ्या किच्च' उ० ४ १७ सूत्रेण ईकन्-प्रत्यय किच्च]

तिग्मायुधः तिग्मानि तीव्राण्यायुधानीव किरणा यस्य स (इन्द्र=सूर्य) २ ३० ३ **तिग्मायुधाय**=तिग्मानि तीव्राण्यायुधानि यस्य तस्मै (रुद्राय=शूरवीराय) ७ ४६ १ **तिग्मायुधाः**=तीक्ष्णायुधा (विद्वासो जना) ५ २ १० **तिग्मायुधौ**=तिग्मानि तेजस्विन्यायुधानि ययोस्तौ (वैद्यराजानौ) ६ ७४ ४ [तिग्म-आयुधपदयो समास। तिग्ममिति व्याख्यातम्। आयुधानि उदकनाम निघ० १ १२ आयुधमायोधनात् नि० १० ६ आङ्पूर्वाद् युध सम्प्रहारे (दिवा०) धातो 'घजर्थे कविधानम्' इति क प्रत्यय]

िततउना चालनी से, प० वि०, [तनु विस्तारे (तना०) धातो 'तनोतेर्डउ सन्वच्च' उ० ५ ५२ सूत्रेण डउ प्रत्यय सन्वच्च कार्यम्। िततउ परिपवन भवति, ततवद्वा तुन्नवद्वा तिलमात्रतुन्न वा नि० ४ ६]

तितिक्षते सहते, प्र०—अत्र व्यत्ययेनाऽऽत्मनेपदम् २ १३ ३ **तितिक्षन्ते**=सहन्ते ३ ३० १ तिज निशाने (भ्वा०) धातो 'गुप्तिज्किद्भ्य सन्' अ० ३ १ ५ सूत्रेण स्वार्थे सन्नन्तात् लट्। 'निन्दाक्षमाव्याधिप्रतीकारेषु सन्निष्यते' इतीष्ट्या क्षमाया सन्। व्यत्ययेनात्मनेपदम्]

तितिरुः तरेयु २ २३ ५ प्लवन्त उल्लङ्घयन्ति, प्र०—अत्र लङर्थे लिट् १ ३३ ८ [तॄ प्लवनसन्तरणयो (भ्वा०) धातोर्लिट्। 'ऋच्छत्यॄताम्' इति लिटि प्राप्तो गुणो न भवति छान्दसत्वात्। ततश्च 'ऋत इद्धातो' रितीत्व रपरत्व च]

तितिर्वः शत्रूणा बल तरित उल्लङ्घयित (इन्द्र=राजन्) ६ ४१ ४ [तॄ प्लवनसन्तरणयो (भ्वा०) धातो क्वनिप् प्रत्यय। छान्दस द्विर्वचनम्]

तितिर्वांसः सम्यक् तरन्त (मनुष=मनुष्या) प्र०—अत्र तॄ धातोर्लिट स्थाने वर्त्तमाने क्वसु १ ३६ ७ [तॄ प्लवनसन्तरणयो (भ्वा०) धातोर्लिट स्थाने क्वसु। प्रथमाबहुवचने रूपम्]

तित्तिरिः तीतरी इति भाषायाम् २४ ३६ **तित्ति-रीन्**=भा०—वर्षासु प्रमुदितान् (पक्षिविशेषा) २४.२०न्

तायते पालयति, प्र०—अत्राऽन्तर्गतो ण्यर्थः १ ११० १ तन्यते विस्तीर्यते ३ ४ ४ बढाया जाता है स० प्र० २४७, ३४४ [तायृ सन्तानपालनयो (भ्वा०) धातोर्लट्]

तायवः सूर्यपालका वायव १ ५० २ स्तेना ५ ५२ १२ **तायुम्**=तस्करम् ४ ३८ ५ **तायुः**=स्तेन (जन), प्र०—तायुरिति स्तेननामसु पठितम्, निघ० ३ २४, ६ १२ ५ [तायृ सन्तानपालनयो (भ्वा०) धातोरौणादिक उ प्रत्ययो बाहुलकात् । तायु स्तेननाम निघ० ३ २४]

तारकाः दु खस्य पारे कारिण (सिध्मा =मङ्गल-कारिण पश्वादय) २४ १०. [तृ प्लवनसन्तरणयो (भ्वा०) धातो कर्त्तरि ण्वुल्प्रत्यय । सिध्मास्तारका मै० ३ १३ ११ सलिल वा इदमन्त (अन्तरिक्षे) आसीत् । यदतरन् तत्तार-काणा तारकत्वम् तै० १ ५ २ ५]

ताराय दु खात् सन्तारकाय (सज्जनाय) १६ ४० [तृ प्लवनसन्तरणयो (भ्वा०) धातोर्णिजन्तादच्-प्रत्यय कर्त्तरि]

तारि तीर्यन्ते १ ११६ ६ **तारिषत्**=सन्तार्येत्, प्र०—अत्राऽन्तर्गतो ण्यर्थ १ २५ १२ वर्धयेत् ४ ३९ ६ **तारिषः**=सन्तर ११ ८३ सन्तारयसि ३४ ८ **तारिषी-महि**=तरेम, प्र०—अत्र व्यत्ययेनात्मनेपदम् २ २३ १० **तारिष्टम्**=अन्तरिक्ष प्लावयतम् १ ३४ ११ पारयतम् १ १५७ ४ वर्धयतम् ३४ ४७ **तारीत्**=तारये ६ ४७ ६ सन्तार्येत् १ ६९ ३ सुखानि ददाति १ ७३ १ उल्लङ्घयेत् २ २० ८ उल्लङ्घते १ १५२ ३ **तारीः**=दु खात्तारय ६ २५ २ [तृ प्लवनसन्तरणयो (भ्वा०) धातो कर्मणि लुङ् । अडभावश्छान्दस । अन्यत्र लेडपि]

तार्क्ष्यः तीक्ष्ण तेज प्रापक आश्विन १५ १८ तृक्षितु वेदितु योग्यस्तृक्ष्य, तृक्ष्य एव तार्क्ष्य (ईश्वर), प्र०—अत्र गत्यर्थात् तृक्षधातोर्ण्यत्, तत स्वार्थेऽण् १ ८९ ६ अश्व इव (इन्द्र =परमैश्वर्यवानीश्वर) प्र०—तार्क्ष्य इत्यश्वनाम, निघ० १ १४, २५ १९ [तृक्ष गतौ (भ्वा०) धातोर्ण्यति तर्क्ष्य । तत प्रज्ञादित्वात् स्वार्थेऽण्प्रत्यय । तार्क्ष्य अश्वनाम निघ० १ १४ तार्क्ष्य =त्वष्ट्रा व्याख्यात । तीर्णेऽन्तरिक्षे क्षियति, तूर्णमर्थ रक्षति, अश्नोतेर्वा नि० १० २७ वायुर्वै तार्क्ष्य कौ० ३० ५ अय वै तार्क्ष्यो योऽय (वायु) पवते, एष स्वर्गस्य लोकस्याभिवोळ्हा ऐ० ४ २० तस्य (यज्ञस्य) तार्क्ष्यश्चारिष्टनेमिश्च सेनानी ग्रामण्याविति शारदौ तावृतू श० ८ ६ १ १६ तार्क्ष्यो वै पश्यतो राजेत्याह तस्य वयासि विश ......पुराण वेद श० १४ ३ ३ १३ स्वस्त्ययन वै तार्क्ष्य. (तार्क्ष्यदेवताकमन्त्र) ऐ० ४ २९. भद्ररतार्क्ष्य सुप्रजागत्वाय । काठसक० ६० ५]

तालु आस्याऽवयवम् २५ १ [तृ प्लवनसन्तरणयो (भ्वा०) धातो 'त्रो रश्च ल' उ० १ ५ सूत्रेण ञुण् प्रत्ययो रेफस्य च लकारादेश । तालु नरतेस्तीर्णतममङ्ग लततेर्वा स्याद् लम्बकर्मणो विपरीताद् यथा तल लतेत्य-विपर्यय नि० ५ २७ अवक्रन्देन तालुम् तै० स० ५ ७ ११ ७. मै० ३ १५ १ का० ५३ १]

तावकेभ्यः त्वदीयेभ्यस्तत्सिद्धेभ्यो वा १ ९४.११ [युष्मत् प्रातिपदिकाच् छैषिकोऽण् । तत 'तवकममकावेक-वचने' अ० ४ ३ ३ सूत्रेण तवकादेशोऽणि]

तावान् तावत्परिमाण (सोम =उत्पन्नपदार्थसमूह) १ १० ८ २ [तत् सर्वनाम्न परिमाणेऽभिधेये 'यत्तदेतेभ्य परिमाणे वतुप्' इति वतुप् 'आ सर्वनाम्न ' इत्याकारादेश]

तिगितेन प्राप्तेन (शस्त्रेण) २ ३० ९ **तिगितैः**=तीक्ष्णै (जम्भै =वक्त्रै) १ ४३ ५ [तिग गतौ (भ्वा०) धातो क्त प्रत्यय । तिज निशाने (भ्वा०) धातोर्वा रूपम्]

तिग्मजम्भ ! तिग्म तीव्र जम्भो गात्रविनामन यस्मात् तत्सम्बुद्धौ (अग्ने=विद्वज्जन !) १५ ३७ तिग्म तीव्र जम्भ वक्त्र यस्य तत्सम्बुद्धौ (विद्वज्जन) १ ७९ ६ **तिग्मजम्भस्य**=तिग्म तीव्र तेजस्वि जम्भो मुख यस्य तस्य (सेनापते) ४ १५ ५ **तिग्मजम्भः**=तिग्मानि गात्रविनमनानि यस्य स (वैश्वानर =राजा) ४ ५ ४ [तिग्म-जम्भपदयो समास । तिग्ममिति व्याख्यास्यते । जम्भ =जभी गात्रविनामे (भ्वा०) धातोर्घञ् । 'रधि-जभोरचि' सूत्रेण नुम्]

तिग्मतेजः तीव्राणि तेजासि यस्मात् तत् (नम =अन्नादिकम्) १२ ६३ **तिग्मतेजाः**=तिग्मानि तीक्ष्णानि तेजासि भवन्ति यस्मात् स (वायु =गमनागमनशील पवन), प्र०—'युजिरुजितिजा कुश्च' उ० १ १४५ अनेन 'तिज निशाने' इत्यस्मान्मक्-प्रत्यय कुत्वादेशश्च, तथैव 'सर्वधातुभ्योऽसुन्' उ० ४ १९६ अनेन तिज इत्यस्मादसुन् प्रत्यय १ २४ [तिग्म-तेजस्पदयो समास । तिग्ममिति व्याख्यास्यते । तेजस्=तिज निशाने (भ्वा०) धातोरसुन्]

तिग्मभृष्टिः तिग्मा तीव्रा भृष्टि परिपाको यस्य स. (विविद्वान्=श्रेष्ठो विद्वान् जन.) ४ ५ ३ [तिग्मा-भृष्टि-पदयो समास । तिग्ममिति व्याख्यास्यते । भृष्टि =भ्रस्ज

प्रत्यय । 'दधातेर्हि' रिति धातोर्हिरादेश]

तिर्यञ्चम् तिरश्चीनम् (पार्श्वस्थ वीरजनम्) १० ८. तिर्यक्स्थितमधस्थ वा (ईश्वरम्) ३२ २ [तिरसुपपदे अञ्चु गतौ (भ्वा०) धातो 'ऋत्विक्०' इत्यादिना क्विन् । 'अनिदिताम्' इति नलोपे 'उगिदचाम्०' इति नुम् । तिरसस्तिर्यलोपे' अ० ६ ३ ९४ सूत्रेण तिरि इत्यादेश]

तिल्विले स्नेह-स्थाने (क्षेत्रे=पुण्ये कर्मणि) ५ ६२.७

तिष्ठ तिष्ठति, प्र०—अत्राऽन्त्यपक्षे व्यत्ययो लडर्थे लोट् च २ १३ प्रकाशितो भव ७ ३८ २ स्थिरो भव १२ ११ धर्मे वर्त्तस्व १ १२१ १२ उद्युक्तो भव ४ ४४ **तिष्ठत्**=अतितिष्ठति १ १७४ ४ तिष्ठति ४ १ १७ [ष्ठा गतिनिवृत्तौ (भ्वा०) धातोर्लोट् । अन्यत्र लेट् । शिति प्रत्यये तिष्ठादेश]

तिष्ठत स्थिरा भवत १ १९१ ६ प्रतिष्ठा लभध्वम्, भा०—प्रशसा लभन्ते २६ २२ प्र० – अत्र 'वाच्छन्दसि सर्वे विधयो भवन्ति' इति नियमात् 'समवप्रविभ्य स्थ' अ० १ ३ २२. इत्यात्मनेपद न भवति १ १५ ६ **तिष्ठति**=प्रवर्त्तते १ ५१ ११ वर्त्तते १ ५८ २ **तिष्ठेत्**=२० ४९ **तिष्ठते**=वर्त्तते १ ५८ ४ **तिष्ठसि**=तिष्ठति प्र०—अत्र पुरुषव्यत्यय ३ ६१ ३ **तिष्ठस्व**=तिष्ठते, प्र०—अत्र लडर्थे लोट् २ १९ [ष्ठा गतिनिवृत्तौ (भ्वा०) धातोर्लोट् । शिति तिष्ठादेश । अन्यत्र व्यत्ययेनात्मनेपदम्]

तिष्ठत् स्वस्वरूपेण स्थिर सत् (ब्रह्म) ४० ४ **तिष्ठते**=वर्त्तमानाय (अश्वायेव=यथाऽश्वाय) ११ ७५ **तिष्ठद्भ्य.**=स्थितेभ्य (राजपुरुषेभ्य) १६ २३ [ष्ठा गतिनिवृत्तौ (भ्वा०) धातो शतृप्रत्यय । शिति तिष्ठादेश]

तिष्ठन्तीभ्यः स्थिराभ्य (अद्भ्य) २२ २५ [ष्ठा गतिनिवृत्तौ (भ्वा०) धातो शतृप्रत्ययान्तात् स्त्रिया ङीप्]

तिष्ठाति तिष्ठतु १ ८२४ तिष्ठेत् ४ २० २ **तिष्ठाते**=तिष्ठेत १ १२४ ११ **तिष्ठाः**=तिष्ठे ३ ८ १ [ष्ठा गतिनिवृत्तौ (भ्वा०) धातोर्लेट् । अन्यत्र व्यत्ययेनात्मनेपदम् । तिष्ठा तिष्ठासति नि० ८ १८]

तिष्ठिपत् समन्तात् प्रस्थापयेत् २५ ४३ [ष्ठा गतिनिवृत्तौ (भ्वा०) धातोर्णिजन्ताल्लुङ् । अडभावश्छान्दस । 'तिष्ठतेरित्' अ० ७ ४ ५ सूत्रेण णौ चङ्युपधाया इकारादेश]

तिष्यः आदित्य पुष्यनक्षत्र वा ५ ५४ १३ [तिष्यनक्षत्रवाचिन प्राति० 'नक्षत्रेण युक्त काल' इति प्राप्तस्याण 'लुबविशेषे' अ० ४ २ ४ सूत्रेण लुप् । तिष्यो नक्षत्र बृहस्पतिर्देवता तै०स० ४ ४ १० १ मै० २ १३ २० तिष्यो वै रुद्र काठ० ११ ५. बृहस्पतेस्तिष्य तै० १ ५ १ २, ३ १ १ ५. रुद्रस् तिष्य तै० म० २ २.१० १. मै० २ १ ५]

तिसृणाम् त्रिविधानाम् (धिषणाना=कर्मोपासना ज्ञानविदा बुद्धीनाम्) ५.६९ २ **तिसृभिः**=त्रिविधाभि कर्मोपासना ज्ञान-ज्ञापिकाभि (गीर्भि =वाग्भि) २७ ४३ प्राणोदानव्यानगतिभि १४ २८ **तिसृषु**=त्रिविधासु भूम्यादिषु ६ ४७ ४ **तिस्रः**=त्रिविधा (दिव =प्रकाशान्) ४ ५३ ५ स्थूलत्रसरेणुपरमाण्वाख्या १ ३४ ८ ऊर्ध्वाध समगती १ ३४ ७ स्थूला मध्या सूक्ष्मा च ३.५६ २ स्थूलसूक्ष्म-कारणाख्या ३ ५६ ५. सुशिक्षिता सभा सेना प्रजा ५ ३५ २ विद्याराजधर्मसभास्था ७.३३ ७. अध्यापकोपदेशकपरीक्षित्र्य २८ ४१ त्रित्वसङ्ख्याका (देवी =देदीप्यमाना विदुष्य) २८ ४१ त्रित्वसङ्ख्याता (जिह्वा = विविधा वाणी) ३ २० २ त्रित्वसङ्ख्या (भा०—कर्मोपासनाज्ञानविज्ञापिका वाणी) २८.३१ त्रित्वविशिष्टा सङ्ख्या १८ २४ त्रित्वसङ्ख्यावत्य (इडा-सरस्वती-भारती) २१ १९ त्रित्वसङ्ख्याविशिष्टान् (शरद) १ ७२ ३ त्रिप्रकारकाणि विद्युद्भौमसूर्यरूपेण स्थितानि ज्योतीषि ३ २ ९ त्रिप्रकारका (इडा-सरस्वती-मही देव्य) १ १३ ९ उत्तम-मध्यम-निकृष्टरूपेण त्रिविधा (दानुचित्रा क्रिया) १ १७४ ७ गार्हपत्या-हवनीय-दाक्षिणात्यरूपास्त्रिविधा (दिव =दीप्ती) २ ३ २ [त्रिप्राति०सख्यावाचिन स्त्रिया रूपाणि । 'त्रिचतुरो स्त्रिया तिसृचतसृ' अ० ७ २ ९९ सूत्रे 'तिसृ' इत्यादेशो विभक्तौ परत । अजादौ विभक्तौ तु 'अचि र ऋत' इति रेफादेश]

तिस्तिराणा यन्त्रकलाभिराच्छादितौ (इन्द्राग्नी= वायुविद्युतौ) १ १०८ ४ [स्तृञ् आच्छादने (क्र्या०) धातोर्लिट स्थाने कानच् । 'सुपा सुलुग्०' इत्याकारादेश]

तिस्तिरे स्तृणाति आच्छादयति ३ ४१ २ [स्तृञ् आच्छादने (क्र्या०) धातोर्लिट्]

तिस्थिपत् स्थापयेत् १ १६२ २० [ष्ठा गतिनिवृत्तौ (भ्वा०) धातोर्णिजन्ताल्लुङ् । अडभाव । 'तिष्ठतेरित्' इतीकारादेश । षत्वाऽभावश्छान्दस]

तीक्ष्णेषवे तीक्ष्णा तीव्रा इषवोऽस्त्रशस्त्राणि यस्य तस्मै (वीरपुरुषाय) १६ ३६ [तीक्ष्ण-इषुपदयो समास]

तीर्त्वा उल्लङ्घ्य ४० ११ तर कर अर्थात् पृथक् होकर स० वि० १८९, अथर्व० ९ ५ १ [तॄ प्लवनसन्तर-

[तॄ प्लवनसन्तरणयो (भ्वा०) धातोरौणादिको बाहुलकाद् इ प्रत्यय । स च कित् सन्वत्कार्यमभ्यासस्य तुगागम । तित्तिरि तरणात्, तिलमात्रचित्र इति वा नि० ३ १८ अथ यदन्यस्माऽग्रगनाय (विश्वरूपस्य मुखम्) आस । ततस्तित्तिरि समभवत् श० ५ ५ ४ ६ येन (शिरसा विश्वरूपस्त्वाष्ट्र) अन्नमावयत् स तित्तिरि मै० २ ४ १ रुद्राणा तित्तिरि काठ० ४७ ६ अथ यदन्नादनम् (त्रिशीर्ष्णो मुखम्) आसीत् स तित्तिरिरभवत् जै० २ १५४]

तितृत्सान् तर्दितु हिंसितुमिच्छेयु ३ ३ २८ [उतृदिर् हिसानादरयो (रुधा०) धातोरिच्छाया सन्नन्तात्लेट् । आडागम]

तित्याज छोड देता है, प० वि०, [त्यज हानौ (भ्वा०) धातोर्लिट् । अभ्यासस्येकारादेशश्छान्दस]

तित्रतः तरन्त (देवास =विद्वासो जना), प्र०—अत्र विकरणव्यत्ययेन शसोऽभ्यासस्येत्वञ्च २ ३१ ७

तित्विषाणस्य अग्निज्वालयेव विद्यया प्रकाशमानस्य (राज्ञ) ५ ८ ५ [त्विष दीप्तौ (भ्वा०) धातोर्लिट स्थाने कानच्]

तित्विषे प्रकाशय १ ५२ ६ [त्विष दीप्तौ (भ्वा०) धातोर्लिट् ।

तित्विषे त्वेषति प्रदीप्यते १ १०२ २ [त्विष दीप्तौ (भ्वा०) धातोर्लडर्थे लिट् ।

तिर सन्तारय, प्र०—तरतेर्विकरणव्यत्ययेन श 'ऋत इद्धातो' इतीकार १ १० ११ विस्तारय १ ११ ७ दुख प्लवस्व ५ ४१ **तिरत**=निष्पादयत ७ ५७ ५ **तिरते**=प्राप्नोति ६ ६८ ७ प्लवते सन्तरति वा, प्र०—अत्र व्यत्ययेनात्मनेपद, विकरणव्यत्ययेन शश्च १ १०४ ४ वर्धयति ७ ५९ २ **तिरध्वम्**=शत्रुबलमुल्लङ्घध्वम् ७ ५६ १४ **तिरन्त**=प्रतरन्ति ७ ७ ६ **तिरन्तु**=वर्धयन्तु १ ८९ २ पूर्णं भोजयन्तु २५ १५ **तिरन्ते**=सन्तरन्ति १ १२५ ६ [तॄ प्लवनसन्तरणयो (भ्वा०) धातोर्लोट् । अन्यत्र लड् अपि । व्यत्ययेन शप स्थाने श । आत्मनेपदमपि क्वचिद् व्यत्ययेन । 'ऋत इद्धातो' रितीत्व रपरत्वञ्च । तिरते प्रवर्धयते नि० ११ ६]

तिरश्चता तिरश्चीनेन (त्वेन=केन जनेन सह) ४ १८ २

तिरश्चा तिर्यग् गत्या १ ९१ १५ तिरश्चीनेन (वयसा=जीवनेन) २ १० ४ येन तिरोऽञ्चनि तेन (वयसा=जीवनेन) ११ २३ [तिरस् इति व्याख्यास्यते । तदुपपदे अञ्चु गतौ (भ्वा०) धातो 'ऋत्विक्०' इत्यादिना क्विन् । ततस्तृतीया]

तिरश्चीनपृश्नि: तिरश्चीन पृश्नि स्पर्शो यस्य स (पशु पक्षी वा) २४ ४ [तिरश्चीन-पृश्निपदयो समास । तिरश्चीनपद व्याख्यास्यते । पृश्नि =स्पृश सस्पर्शने (तु०) धातो 'घृणिपृश्नि०' उ० ४ ५२ सूत्रेण नि प्रत्यय]

तिरश्चीन: तिर्यग्-गमन (रश्मि =किरणो दीप्ति.) ३३ ७४ [तिरसुपपदे अञ्चु गतौ (भ्वा०) धातो 'ऋत्विक्०' इति क्विन् । तत 'विभाषाञ्चेरदिक्स्त्रियाम्' इति स्वार्थे ख प्रत्यय । तिरस् इति व्याख्यास्यते]

तिरसि तरसि ४ ६ १ **तिर**=प्लव, दुखात् पार गच्छ ३ ४० ३ [तॄ प्लवनसन्तरणयो (भ्वा०) धातोर्लट् । अन्यत्र लोट् । विकरणव्यत्ययेन श]

तिर: तिरस्करणे निवारणे ७ ६० ६ तिर्यक् ४ २९ १ अन्तर्धाने १ ४६ ६ तिरोभावे ६ १० ४ अधोगमने १ ६१ ७ तिरश्चीन कर्म ५ ५३ १४ तिरश्चीने ६ ६५ १. [तिर सत इति प्राप्तस्य । तिरस्तीर्ण भवति । सत ससृत भवति नि० ३ २०

तिराति विहन्ति ७ ५८ ३ [तॄ प्लवनसन्तरणयो (भ्वा०) धातोर्लेट् । आडागम । व्यत्ययेन श]

तिरामसि तराम ३ ३७ १० **तिरेत**=वर्धयेत ७ ५८.३ [तॄ प्लवनसन्तरणयो (भ्वा०) धातोर्लट् । व्यत्ययेन श । मस इदन्तता छन्दसि । अन्यत्र लिङ्]

तिरोअह्न्यम् तिरश्च तदहश्च तिरोहस्तस्मिन् भवम् (रसम्) १ ४७ १ चोरादीना तिरस्कर्तॄणि अहनि प्रसिद्धम् (जन=पुरुषार्थेषु प्रादुर्भूतम्) १ ४५ १० तिरस्वहस्सु साधुम् (पुरोडाश=सुसंस्कृतमन्नादिकम्) ३ २८ ६ तिरश्चीनेऽह्नि भवम् (पुरोडाशम्=अन्नविशेषम्) ३ २८ ३ तिरश्चीनेष्वहस्सु साधुम् (पूर्ण ब्रह्मचर्यम्) ३ ५८ ७ अहनि भवमहन्यम्, तिरस्कृतमाच्छादितमहन्य येन तम् (जनम्) प्र०—अत्र 'प्रकृत्यन्त पादमव्यपरे' इति प्रकृतिभाव १ ४५ १० [तिरस्-अह्न्यपदयो समास । तिरस् इति व्याख्यातम् । अहन्यम्=अह्न्यप्राति० भवार्थे साध्वर्थे वा यत्]

तिरोदधे निवारयामि ७ ५० १ [तिरसुपपदे डुधाञ् धारणपोषणयो (जु०) धातो सामान्ये लिट् । तिरोदधे=अन्तर्दधाति नि० १२ ३२]

तिरोहितम् परिच्छिन्नम् (अग्नि=पावकम्) ३ ९ ५ [तिरसुपपदे डुधाञ् धारणपोषणयो (जु०) धातो क्त

मत्वर्थे 'छन्दसीवनिपावि' तीकारप्रत्यय । अथवा तुज हिसायाम् (भ्वा०) धातोरौणादिक इ तुजये अपत्यजननाय नि० १२ ४५]

तुजसे बलाय शत्रूणा हिसनाय वा ४ २३ ७ [तुज वज्रनाम निघ० २ २० तुज हिसायाम् (भ्वा०) धातोस्तुमर्थे कसेन्-प्रत्यय]

तुजे दाने ५ ४१ ६

तुज्यमानास: कम्पमाना स्वा स्वा वसतिमाददाना (देवा =पृथिव्यादय) १ ११ ५ [तुजि हिंसाबलादाननिकेतनेषु (चुरा०) धातो कर्मणि शानच् । जसोऽसुगागम । तुज्यमानास क्षिप्रनाम निघ० २ १५]

तुज्या: हिसनीया (भृमय =भ्रमणानि) ३ ६२ १ [तुज हिसायाम् (भ्वा०) धातोरौणादिको यक् प्रत्ययो बाहुलकात्]

तुञ्जते तुञ्जन्ति पालयन्ति, प्र०—अत्र व्यत्ययेनाऽऽत्मनेपदमेकवचनञ्च १ १३१ २ (तुञ्जति दानकर्मा निघ० ३ २० तुजि पालने (भ्वा०) धातोर्लट् आत्मनेपद व्यत्ययेन]

तुञ्जमाना: बलायमाना (मनुष्या) ३ १ १६ [तुजि हिसाबलादाननिकेतनेषु (चुरा०) धातो शानच् । व्यत्ययेनात्मनेपदम्]

तुञ्जाते दु खानि हिंस्त , प्र०—व्यत्ययेनाऽत्राऽऽत्मनेपदम् १ १०५ ६ [तुजि हिसाबलादाननिकेतनेषु (चुरा०) धातोर्लट् । व्यत्ययेनात्मनेपदम् । अनित्यण्यन्ताश्चुरादय इति णिच् न भवति]

तुञ्जे तुञ्जे दातव्ये दातव्ये (पदार्थे पदार्थे) १ ७ ७ [तुञ्जस्तुञ्जतेर्दानकर्मण । तुञ्जे तुञ्जे दाने दाने नि० ६ १८]

तुतुज्यात् बलयेत् १ १४३ ६ [तुज हिसायाम् (भ्वा०) धातोर्लिङ् । 'बहुल छन्दसि' सूत्रेण शप श्लु]

तुतुर्यात् हिस्यात् ६ ६३ २ **तुतुर्याम**=विनाशयेम ५ ४५ ११ [तुर त्वरणे (जु०) धातोर्लिडि रूपम् । धातूनामनेकार्थकत्वाद् हिसायामर्थेऽत्र]

तुतुर्वणि: शीघ्रगति १ १६८ १

तुतोद तुद्यात् प्रेरयेत् २ १६२ १७ [तुद व्यथने (तुदा०) धातोर्लिट्]

तुथ: ज्ञानवर्धक (जगदीश्वरो विद्वज्जनो वा) ५ ३१ ज्ञानवृद्ध (सभापति) प्र०—तु गतिवृद्धिहिसासु इत्यस्मादौणादिक थक्-प्रत्यय ७ ४५ सर्वविद् (ईश्वर), प्र०—'तुथो वै ब्रह्म' यह शतपथ की श्रुति है, आर्याभि० २ १६, ५ ३१ [ब्रह्म वै तुथ श० ४ ३ ४ १५ सत्य तुथो विश्ववेदा । काठ० २८ ४ तुथो ह स्म वै विश्ववेदा देवाना दक्षिणा विभजति तै० स० ६ ६ १ २ तुथोऽसि विश्ववेदा तै० स० १ ३ ३ १ मै० १ २.१२ काठ० २ १३ तुथोऽसि जनधाया देवास्त्वा ' 'प्रणयन्तु मै० १ ३ १२

तुद व्यथय ६ ५३ ६ **तुन्दते**=व्यथते, प्र०—अत्र 'वाच्छन्दसि सर्वे विधयो भवन्ति' इति नुमागम १ ५८ १ [तुद व्यथने (तुदा०) धातोर्लोट् । अन्यत्र नुमागमश्छान्दस]

तुम्रम् ग्लातारम् (इन्द्र=हृद्य पतिम्) ६ २२ ५ सत्कर्मसु प्रेरकम् (इन्द्र = राजानम्) ४ १८ १० **तुम्र:**= आहन्ता (इन्द्र =समृद्धो राजा) ३ ५० १

तुरगातु सद्यो गमनम् १ १६४ ३० [तुर-गातुपदयो समास]

तुरणे दुग्धादिपानार्थ त्वरमाणाय (मज्जनाय), प्र०—अत्र तुरणधातो क्विप् १ १२१ ५ [तुरण त्वरायाम् (कण्ड्वादि०) धातो क्विप् । ततश्चतुर्थी]

तुरण्यत: सद्यो गच्छत (श्येनस्य) ४ ४० ३ शीघ्र गच्छत (वे =पक्षिण) ६ १५ **तुरण्यन्**=त्वरन् (गृहस्थो जन) १ १२१ १. [तुरण त्वरायाम् (कण्ड्वादि०) धातो शतृप्रत्यय]

तुरण्यति त्वरयति ६ १४ सद्यो गमयति ४ ४० ४ [तुरण त्वरायाम् (कण्ड्वादि०) धातोर्लट् । तुरण्यति तूर्णमश्नुतेऽध्वानम् नि० २ २८]

तुरण्यव: क्षिप्र कर्त्तार (जना) ७ ५२ ३ पालका (जना) १ १३४.५ [तुरण त्वरायाम् (कण्ड्वा०) धातोरौणादिक (३ २०) युच् बाहुलकात्]

तुरण्यसत् आत्मनस्तुरण त्वरणमिच्छन् (राजा) ४ ४० २ [तुरणपदाद् इच्छायामर्थे क्यच् । तत शतृप्रत्यय । व्यत्ययेन सिप्]

तुरत: सद्य कर्त्तु (राज्ञ) ६ १८ ४ [तुर त्वरणे (जु०) धातो शतृप्रत्यय । 'बहुल छन्दसी' ति शपो लुक्]

तुरम् शीघ्रम् ७ ५६ १६ अविद्यादिदोषनाशक सामर्थ्यम् ५ ८२ १ शीघ्रकारिणम् (राजपुरुषम्) ४ ३८ ७ **तुरस्य**=क्षिप्र कुर्वत (गिर =वाच) ७ २२ ५ शीघ्रकारिण (तव्यस =बलस्य) ५ ४३ ६ शीघ्र सुखकरस्य (द्रविणस =द्रव्यसमूहस्य) १ ६६ ८ त्वरमाण-य सभा-

णयो (भ्वा०) धातो क्त्वा]

तीर्थानि यानि वेदाऽऽचार्य-सत्यभाषण-ब्रह्मचर्यादि-सुनियमादीन्यविद्यादु खेभ्यस्तारयन्ति यद्वा यै समुद्रादिभ्य-स्तारयन्ति तानि १६ ६१ **तीर्थे**=जलाशये १ १७३ ११ तरन्ति येन तस्मिन्नर्थे (याने) १.४६ ८ समुद्राणा तरणे कर्त्तव्ये, ऋ० भू० १६६, ऋ० १ ३ ३४ ८ **तीर्थेभ्यः**= तरन्ति यैस्तीर्यन्ते वा येभ्य (साधनै साधनेभ्यो वा) ३० १६ [तॄ प्लवनसन्तरणयो (भ्वा०) धातो 'पातॄतुदिवचि०' उ० २ ७ सूत्रेण थक्। तीर्थेन हि प्रतरन्ति तद्यथा समुद्र तीर्थेन प्रतरेयु गो० पू० ५.२ दक्षिणतस्तीर्थाना गाधम् काठ० २६ ८ अप्सु स्नाति साक्षादेव दीक्षातपसी अवरुन्वे, तीर्थे स्नाति, तीर्थे हि (अङ्गिरस) ता (दीक्षाम्) प्रावेशयन्, तीर्थे स्नाति तीर्थमेव समानाना भवति तै०म० ६ १ १ २]

तीर्थ्याय तीर्थेपु वेदविद्याऽध्यापकेपु सत्यभापणादिपु च साधवे (सत्पुरुषाय) १६ ४२ जो वेदादि शास्त्र और सत्यभापणादि धर्मलक्षणो मे साधु है, उस (सज्जन) को. स० प्र० ४५५, १६ ४२ [तीर्थप्राति० 'तत्र साधु' रित्यर्थे यत्-प्रत्यय]

तीव्रम् तीव्रगुणस्वभावम् (सोम=ओषधिरस प्रेरणा-ख्य व्यवहार वा) २० ६३ तेजोमयम् (सवनम्=ऐश्वर्यम्) ४ ३५ ६ सुशोधितम् (घृतम्) ५ ५ १ सर्वदोपाणा निवा-रणे तीक्ष्णस्वभावम्, भा०—शीघ्र दोपनिवारकम् (घृतम्= आज्यादिकम्) ३ २ **तीव्रः**=तीक्ष्ण (महाविद्वान्) २ ४१ १४ तेजस्वी वेगवान् (ओपविसार) ६ ४७ १ **तीव्रान्**=तीक्ष्णान् (घोपान्=शब्दान्) २६ ४ **तीव्राः**= तीक्ष्णवेगा (सोमास =उत्पन्नपदार्था) १ २३ १ तीक्ष्ण-स्वभावा (जना) ५ ३० १३ कठिना (समद = संग्रामान्) ६ ७५ २ तीव्रवेगवती शत्रूणा सेना २६ ३६ **तीव्रेण**=आशुकारिगुणेन १६ १ **तीव्रैः**=तीक्ष्णवेगादि-गुणै (सोमै =रसभूतैर्जलै) १ १०८ ४ [तिज निशाने (भ्वा०) धातोर्बाहुलकाद् (२ २८) औणादिको रन् प्रत्ययो जस्य वो दीर्घत्व च धातोर्बाहुलकादेव]

तीव्रसुतम् तीव्रै तेजस्विभि कर्मभिर्निष्पादितम् (उत्तमौपधिरसम्) ६ ४३ २ [तीव्र-सुतपदयो समास । तीव्र व्याख्यातम् । सुतम्=पुञ् अभिपवे (स्वा०) धातो क्त]

तु पुन , स० वि० २१४, ४० ६ पश्चादर्थे १ ६६ ४ हेतौ ३४ १६ पुनरर्थे १ १० ११ क्षिप्रम् ३३ ६५ चाऽर्थे ३३ ६४ एव १ १६६ ४ अवधारणे ३४ ११

तुग्रम् तेजस्विनम् (वीरपुरुपम्) ६ २६ ४ आदातारम् (इभ=हस्तिनम्) ६ २० ८ **तुग्रस्य**=बलिष्ठस्य (जनस्य) ६ ६२ ६ **तुग्रः**=शत्रुहिंसक सेनापति १ ११६ ३ य कश्चिद्धनाऽभिलापी भवेत् स (जन) प्र०—तुजि हिंसा-बलादाननिकेतनेपु, अस्माद्धातोरौणादिके रक्प्रत्यये कृते तुग्र इति पद जायते १ ८ ३, ऋ० भू० १६८. **तुग्राय**= बलाय १ ११७ १४ [तुजि हिंसाबलादाननिकेतनेपु (चुरा०) धातोरौणादिको रक्-प्रत्यय । 'इदितो नुम् धातोरि' ति नुम् न भवति, आगमशासनस्यानित्यत्वात् । तुज हिंसायाम् (भ्वा०) धातोर्वा रूपम् । अन्वेति तुग्र (आदित्य) तै० आ० १ १० ४]

तुग्र्यासु अप्सु हिसनक्रियासु १ ३३ १५ [तुग्र व्या-ख्यातम् । ततो भवार्थे यत् प्रत्यये स्त्रिया टाप्]

तुचे पुत्र-पौत्राद्यायाऽपत्याय, प्र०—तुगित्यपत्यनाम०, निघ० २ २, ३३ ६४ [तुक् इत्यपत्यनाम निघ० २ २ ततश्चतुर्थी]

तुच्छ्यान् तुच्छेपु क्षुद्रेपु भवान् (कामान्) ५ ४२ १० **तुच्छ्येन**=तुच्छ अर्थात् अनन्त परमेश्वर के सन्मुख, स० प्र० २०७, [तुच्छप्राति० भवार्थे यत्]

तुज्यते हिंस्यते १ ८४ १७ [तुज हिंसायाम् (भ्वा०) धातो । कर्मणि लट्]

तुज प्रेरय ५ १७ ३ **तुजेते**=हिंस्त १ ६१ १४ [तुज हिंसायाम् (भ्वा०) धातोर्लोट् । अन्यत्र व्यत्ययेनात्मने-पदम्]

तुजतः बलवत. (मनुष्यस्य) ३ ३६ ८ **तुजता**= छेदकेन वज्रेण १ ६१ ६ **तुजन्**=हिसन् (सूर्य) १ ६१ ६ [तुज हिंसायाम् (भ्वा०) धातो शतरि पष्ठ्या एकवचनम्]

तुजम् आदातव्यम् (रयिं=धनम्) ३ ४५ ४ **तुजः**= शत्रुहिंसक-बलादियुक्ता सेना ३ ३४ ५ आदत्ता (धेनव = (किरणा) १ १५१ ५ **तुजा**=तोजति हिनस्ति दु खेन येन तेन १ ५६ ३ दुष्टाना हिंसको (सभासेनेशौ) ६ ६८ २ **तुजे**=विद्याबलमिच्छुकाय (तोकाय=अपत्याय) ४ १ ३ [तुजि हिंसाबलदाननिकेतनेपु (चुरा०) धातोर्घञर्थे क । अथवा हिंसार्थकात् तुजधातो क्विप् । 'कृतो बहुलम्' इति क्विप् कर्तृभिन्नकारकेपु भवति । तुज वज्रनाम निघ० २ २०]

तुजये बलाय ५ ४६ ७ **तुजिम्**=बलिष्ठम् (वीर-पुरुपम्) ६ २६ ४ [तुज वज्रनाम निघ० २ २० ततो

याचते स (इन्द्र =राजा) ५ ३५ ३ हिंसक हिंसन् वा० १ १३० ६ शीघ्राऽऽनन्ददाता (प्रशसितप्रज्ञादियुक्तो जन) १ ५६ ३ यस्तुरान् शीघ्रकरान् वनति सम्भजति स. (इन्द्र =सेनाध्यक्ष) १ ६१ ११ शीघ्र-शत्रुहन्ता (इन्द्र = राजा) २ ० ४८ सद्योगामी (विद्वज्जन) १ १८६ ३. शीघ्रकारी (इन्द्र =राजा) ४ २० १ तम शीत हिंसन् (अग्नि =विद्युत्सूर्यरूप) १ १२८ ३ [तुरोपपदे वन सम्भक्तौ (भ्वा०) धातोर्गौणादिक इन् प्रत्यय । तुर इति व्याख्यातम् । तुर्वणि तूर्णवनि नि० ६ १४]

तुर्वणे हिंसनाय ६ ४६ ८ [तुरोपपदे वन सम्भक्तौ (भ्वा०) धातो क्विप्]

तुर्वयाणम् तूर्वा शत्रुबलहिंसका योद्धारो यानेषु यस्य तम् (कुत्स =वज्रमिव वीरपुरुषम्) १ ५३ १० [तूर्व-यानपदयो समास । तुर्व =तुर्वी हिंसायाम (भ्वा०) धातोरच्प्रत्यय । यानम् =या प्रापणे (अदा०) धातो करणे ल्युट्]

तुर्वशम् यस्तूर्णकारी वशगतस्त मनुष्यम् १ १७४ ६ उत्तम मनुष्यम् १ ५४ ६ हिंसकाना वशकरम् (अग्नि वीरजनम्) ६ ४५ १ सद्यो वशगमनम् (यदु =यत्नशील मनुष्यम्) ६ २० १२ निकटस्थ जनम्, प्र०—तुर्वश इति अन्तिकनाम, निघ० २ १६, ७ १९ ८ तुरा शीघ्रतया पर-पदार्थान् वष्टि काङ्क्षति तम् (यदु =मनुष्यम्) १.३६ १८ **तुर्वश:**=सद्यो वशङ्कर (सज्जन) ७ १८ ६ **तुर्वशाय**=सद्यो वशकरणसमर्थाय (मनुष्याय) ५.३१ ८ **तुर्वशे**=वेद-शिल्पादिविद्यावति मनुष्ये १ ४७ ७ **तुर्वशेषु**=तूर्वन्तीति तुरस्तेषा वशा वशङ्कर्त्तारो मनुष्यास्तेषु, प्र०—तुर्वश इति मनुष्यनाम, निघ० २ ३, ११०८.८. [तुर्वश मनुष्यनाम निघ० २ ३ तुर्वश अन्तिकनाम निघ० २ १६ तुरोपपदे वश कान्तौ (अदा०) धातोर्वा मूलविभुजादित्वात् क प्रत्यय]

तुर्वशायदू शीघ्र वशकरो यत्नवाश्च तौ मनुष्यौ, प्र०—तुर्वश इति मनुष्यनाम, निघ० २ ३. यदव इति च ४ ३० १७ [तुर्वश-यदुपदयो. समास । तुर्वश मनुष्यनाम निघ० २ ३ यदव मनुष्यनाम निघ० २.३]

तुर्वसि हिनस्ति ३३ ६७ [तुर्वी हिंसायाम् (भ्वा०) धातोर्लट् पुरुषव्यत्यय]

तुर्वीतये साधनैर्व्याप्ताय (जनाय) २ १३.१२ तुरणा शीघ्रकारिणा व्याप्तिरतस्यै (दाशुषे =दानकरण-शीलाय) १ ६१ ११ शत्रूणा हिंसकाय (राजजनाय) ४ १९ ६ **तुर्वीतिम्**=हिंसकम् (पापिजनम्), प्र०—अत्र बाहुलकात् कीति प्रत्यय. १ ११२ २३ तूर्वति हिनस्ति यस्तम् (दुष्ट जनम्) प्र०—अत्र हिंसाऽर्थात् तुर्वीधातो-र्बाहुलकादौणादिक कर्तृकारक ईति-प्रत्यय १.३६ १८ दुष्टान् प्राणिनो दोषांश्च हिंसन्तम् (वय्य - मानवन्त मनुष्यम्), प्र०—अत्र सशाया किन् 'बहुल छन्दसि' इति ईडागम १ ५४ ६ [तुर्वी हिंसायाम् (भ्वा०) धातोर्बाहुलका-दौणादिक ईति प्रत्यय । ततस्तुर्वी । अथवा तुरोपपदे वी गति प्रजनकान्त्यसनखादनेषु (अदा०) धातो क्तिन्]

तुलायै तोलनाय ३० १७ [तुल उन्माने (चुरा०) धातो. 'तुल्यार्थैरतुलोपमाभ्याम्०' इति निपातनाद् अट् णिलुक् च । ततस्तुर्ला]

तुविकूर्मि: तुविर्बहुविध कूर्मि. कर्मयोगो यस्य स (इन्द्र =परमैश्वर्ययुक्तो जन) ३.३० ३. **तुविकूर्मिम्**= बहुकर्माणम् (इन्द्र =हर्य पतिम्) ६ २२ ५ [तुवि-कूर्मि-पदयो समास । तुवि बहुनाम निघ० ३ १ कूर्मि =डुकृञ् करणे (तना०) धातोरौणादिको मि । ऋकारस्योत्वार-च्छान्दस.]

तुविकूर्मितम: अतिशयेन बहुकर्त्ता (इन्द्र =राजा) ६ ३७ ४ [तुविकूर्मिप्राति० अतिशायने तमप्-प्रत्यय.]

तुविक्षत्राम् तुविर्बहु क्षत्र धन यस्या ताम् (मही = भूमिम्) २१ ५ [तुवि-क्षत्रपदयो समास । तुवि बहुनाम निघ० ३ १ क्षत्रम् =धननाम निघ० २ १०]

तुविग्रये बृहन्निमित्तोपदेशकाय (इन्द्राय =सभा-सेनेशाय) २ २१ २ [तुवि इत्युपपदे गृ शब्दे (क्र्या०) धातोरौणादिक उ प्रत्यय । गुणाभावो बाहुलकात् । तुवि व्याख्यातम्]

तुविग्राभम् बहूना ग्रहीतारम् (इन्द्र =हर्य पतिम्) ६ २२ ५ [तुवि इत्युपपदे ग्रह उपादाने (क्र्या०) धातो-रण् कर्तरि । हस्य भश्छान्दस]

तुविग्रीव: बहुबलयुक्ता सुन्दरी वा ग्रीवा यस्य स (विद्वज्जन) ५ २ १२ **तुविग्रीवा:**=तुविर्बलिष्ठा ग्रीवा येषान्ते (स्वादिष्ठा पदार्था) १ १८७ ५ [तुवि-ग्रीवा-पदयो समास । तुविग्रीवाशब्दो व्याख्यातो]

तुविग्रेभि: बहुशब्दवद्भि (सत्वभि =प्राणिभि) १ १४० ६. ['तुवि' इत्युपपदे गृ शब्दे (क्र्या०) धातो-रौणादिको इट्-प्रत्ययो बाहुलकात्]

तुविजात बहुषु विद्वत्सु प्रसिद्ध (विद्वन् जन) ५ २ १० **तुविजात:**=बलादिगुणै प्रसिद्ध (विद्वान्

द्यव्यक्षस्य १ ६१ १३ सद्योऽनुष्ठातु (राज) ६ १८४. दुःखहिंसकस्य (राधस =धनस्य) ६ ४४ ५ **तुरः**=शीघ्रकारी (परमात्मा) ७ ४१ २ त्वरितोऽनलस सन् (विद्वान् मनुष्य) १.१२१ ३ त्वरमाण (ईश्वर) ३४ ३५. तुरतीति (ब्रह्मणस्पति =जगदीश्वर), प्र०—'तुर त्वरणे' इत्यस्मादिगुपधत्वात् क १ १८ २ हिंसक (इन्द्र =राजा) ६ ४४ ३ **तुराणाम्**=सद्य कारिणाम् (शूरवीराणाम्) ७ ४० १ शीघ्रकारिणाम् (विद्वज्जनानाम्) १ १७१ १ हिंसकानाम् (प्राणिनाम्) ५ ४१ ५. **तुराय**=दुःखहिंसकाय (मनुष्याय) ६ ४६ १२ क्षिप्र कारिणे (वीरपुरुषाय) ६ ३२ १ शीघ्रवाय ३३ ६४ क्षिप्रकारिणे (विदुषे जनाय) ६ ६६ ६ कार्यसिद्धये तूर्ण प्रवर्त्तमानाय, शत्रूणा हिंसकाय (इन्द्राय=सभाध्यक्षाय) १ ६१ १ सद्योगमनाय १ १२१ ७ त्वरमाणाय (अदितये=अन्तरिक्षाय) ४.३ ८ दुःखहिंसकाय ६ ४६ १२ [तुर त्वरणे (जु०) धातोरिगुपधलक्षण क । तुर इति यमनाम तरतेर्वा त्वरतेर्वा, त्वरया तूर्णगतिर्यम नि० १२ १४]

तुरयन् सद्यो गमयन् (राजा) ४ ३८ ७ **तुरयन्तम्**=हिंसन्तम् (शुष्मम्=बलम्) ३३ ६७ [तुर त्वरणे (जु०) धातोर्णिजन्ताच्छतृ]

तुरयन्ते सद्यो गमयन्ति २ ३४ ३ [तुर त्वरणे (जु०) धातोर्णिजन्ताल्लट्]

तुरयाः शीघ्रता प्राप्तम् (शुष्म =बलम्) ४ २३ १०
तुरश्चित् दुष्टो का भी (दण्डदाता ईश्वर), स० वि० १५६, ७ ४१ २

तुराषाट् तुरान् त्वरितान् शत्रून् सहते (इन्द्र = सभेशराजा) १० २२ यस्तुरा त्वरितान् शीघ्रकारिण सहते स (इन्द्र =राजा) ३ ४८ ४ यस्तुरान् हिंसकान् सहते (इन्द्र =राजा) ६ ३२ ५ [तुर =तुर त्वरणे (जु०) धातोरिगुपधलक्षण क । तुरोपपदे षह मर्षणे (भ्वा०) धातो 'छन्दसि सह' सूत्रेण ण्वि । 'सहे साड स' इति षत्वम् । 'अन्येषामपि दृश्यते' इति दीर्घत्वम्]

तुरास. त्वरिता आशुकारिण (उत्तमविद्वज्जना) ७ ६० ८ शीघ्रकारिण (मनुष्या) ७ ५१ १. शीघ्रकारिणस्त्वरिता (देवा =विद्वज्जना) ५ ४२ ५ सद्य कर्त्तार (विद्वासो जना.) ३ ५४ १३ [तुर त्वरणे (जु०) धातोरिगुपधलक्षण क । प्रथमाबहुवचने जसोऽसुगागम]

तुरीपम् तूर्ण रक्षकम् (धनम्) १ १४२ १० यस्तुर सद्य आप्नोति तम् (रायस्पोष=धनस्य पुष्टिम्) २७ २० तारक, शीघ्रकारी (विद्वदुपदेशम्), प्र०—अत्र तुर-धातोर्बाहुलकादौणादिक ईप् प्रत्यय ३ ४ ९. क्षिप्रम् ७ २ ६
तुरीपाय=नौकाना पालकाय (त्वष्ट्रे=विद्याप्रकाशकाय जनाय) २२ २० [तूर्णोपपदे पा रक्षणे (अदा०) धातो क प्रत्यय । तूर्णस्य तुर्भावश्छान्दस । तुर त्वरणे (जु०) धातोर्वा बाहुलकादौणादिक ईप्-प्रत्यय । अथवा तूर्णोपपदे आप्लृ व्याप्तौ (स्वा०) धातो क्वन् ताच्छीलिकश्छान्दस । तूर्णस्य तुर्भावो धातोराकारस्य ईकारादेशश्छान्दस । तुरीपम् तूर्णापि नि० ६ २१]

तुरीय ! चतुर्थवत् (गृहपते !), प्र०—अत्राऽर्शआदित्वादच् ८ ३ **तुरीयम्**=चतुर्थ निपातम् १ १६४ ४५ चतुर्णा स्थूल-सूक्ष्म-कारण-परमकारणाना सङ्ख्यापूरकम् (द्रविणोदा=विद्यादिधनप्रदमीश्वरम्) प्र०—'चतुरश्छयता-वाद्यक्षरलोपश्च' अ० ५ २ ५१ इति वार्तिकेनाऽस्य सिद्धि १ १५ १० **तुरीयः**=चतुर्थ (यज्ञ=सङ्गन्तव्य सत्कार्य) १७ ५७ तूर्णमाप्नोति स (त्वष्टा=विद्वान् जन) २१ २० चौथा (पति) स० प्र० १५३, १० ८५ ४० **तुरीयेण**=चतुर्थेन (ब्रह्मणा=धनेन) ५ ४० ६ [चतुर्-प्राति० पूरणार्थे 'चतुरश्छयतावाद्यक्षरलोपश्च' अ० ५ २ ५१ वा०सूत्रेण छ प्रत्यय, आद्यक्षरचकारस्य स्वरसहितस्य लोप । यद्वा चतुर्थ तत्तुरीयम् श० ४ १ ३ १४]

तुरेभिः शीघ्रगामिभिरश्वै ३ ४ ११ आशुकारिभि (देवै =विद्वद्भिर्दिव्यगुणैर्वा) ७ २ ११ [तुर त्वरणे (जु०) धातोरिगुपधलक्षण क । ततस्तृतीयाबहुवचने रूपम् । बहुल छन्दसी' ति भिस ऐसादेशो न भवति]

तुर्यवाट् यस्तुर्य चतुर्थ वर्ष वहति प्राप्नोति स वृषभादि, यस्य त्रीणि वर्षाणि पूर्णानि जातानि चतुर्थ प्रविष्ट स इत्यर्थ १८ २६ तुर्यान् चतुरो वेदान् वहति येन स (पुरुष) १४ १० **तुर्यवाहम्**=यस्तुर्य चतुर्गुण भार वहति तम् (गाम्=वृषभम्) २८ २८ **तुर्यवाहः**=ये तुर्य चतुर्थ वहन्ति ते (पशुपालका जना) २४ १२ [तुर्योपपदे वह प्रापणे (भ्वा०) धातो 'वहश्च' अ० ३ २ ६४ सूत्रेण ण्वि प्रत्यय । तुर्य =चतुर्प्राति०पूरणार्थे 'चतुरश्छयतौ०' अ० ५ २ ५१ वा० सूत्रेण यत्, आद्यक्षरलोपश्च]

तुर्यः हिंन्धि ३३ ६६ **तुर्याम**=हिंस्याम ५ ६ ६ हिंसेम ६ ४ ५ [तूरी गतित्वरणहिंसनयो (दिवा०) धातोर्लोट् । अन्यत्र लिङ् । धातोरुपधाया ह्रस्वत्व छान्दसम्]

तुर्यौहि पूर्वोक्तसदृशी गौ १८ २६
तुर्वणिः यस्तुर शीघ्रकारिण शुभगुणानमात्यान्

न्स्नागार), प्र०—तुविग्रिनि बहुनाम, निघ० ३ १, १ १३० ७ [तुविरिति बहुनाम, ततोऽतिशायने तमप्प्रत्यय]

तुविष्टमा अतिशयेन बलिष्ठौ (अश्विनौ=वायु-विद्युतौ) ५ ८३ २ [तुविरिति बहुनाम निघ० ३ १. ततोऽतिशायने तमप् । 'सुपा सुलुगिति' सुपेराकारादेश]

तुविष्म. बहुबलयुक्त (इन्द्र =सूर्यवद्राजा) ७ २० ४

तुविष्मान् बहुबलाकर्षणयुक्त (इन्द्र =सूर्यलोक) २ १२ १२. शरीरात्मबलयुक्त (अध्यापको जन) १ १६० ८ बलवान (विद्वज्जन) प्र०—तुविरिति बलनाम, निघ० ३ १, १ १६५ ६ तुविषो बहवो बलवन्तो वीरा विद्यन्ते यस्य स (सत्यवाग्जन) १ १६० ३ प्रशसित-बल (राजा) ४ २६ ३ वृद्धिमान् (सभाध्यक्ष) प्र०—अत्र तुधातोर्बाहुल-कादौणादिक इसि-प्रत्यय. स च कित् १ ५५ १ बहुबल (विविद्वान्=श्रेष्ठो विद्वान्) ४ ५ ३ [तुविष्प्राति० मतुप् । तुविष्=तु गतिवृद्धिहिंसासु (अदा०) धातोरौणादिक इसि प्रत्यय]

तुविष्वणसम् बहूना सेवकम् (राजानम्) ५ ८ ३

तुविष्वणस=ये तुर्वीपि बलानि वनते याचन्ते ते (प्रजाजना) ४ ६ १० [तुविष्-वनस्पदयो समास । तुविष् इति पूर्वपदे व्याख्यानम् । वनम्=वन सम्भक्तौ (भ्वा०)+असुन्]

तुविष्वण तुविर्बहुविध स्वनो येषान्ते (मरुत = मनुष्या), प्र०—अत्र व्यत्ययेनैकवचनम् १.१६६ १ [तुविष्-स्वनपदयो समास । तुविष् व्याख्यानम् । स्वन = स्वनशब्दे (भ्वा०) धातो 'स्वनहसोर्वा' इत्यप्प्रत्यय]

तुविष्वणि बलसेवने ५ १६ ३ बहुस्वनम् (गर्व = यजम्) ६ ४८ १५ [तुविष्-उपपदे वन सम्भक्तौ (भ्वा०) धातोरौणादिक इन्]

तुविष्वणि परमाणुसमिकीभूताना विभक्ता सूर्य २ १३ ६ बलसेवी (अग्नि =पावक) ५ ५६ ८ यस्तुविषो बहून् पदार्थान् वनति सम्भजति स (जीव) १ ५६ ४ [तुविष्-वनिपदयो समास । तुविरिति बहुनाम निघ० ३.१ वनि = वन सम्भक्तौ (भ्वा०) धातोरौणादिक इन्-प्रत्यय]

तुविस्वनि. तुविर्बहुधा स्वनिरुपदेशो यस्य स विद्वान् १ १२७ ६ [तुविस्-स्वनिपदयो समास । तुविस्=तु गतिवृद्धिहिंसासु (अदा०) धातोरौणादिक इसि स्वनि = स्वनशब्दे (भ्वा०) धातोरौणा० इन्प्रत्यय]

तुव्योजसम् बहुपराक्रमम् ८.२२ ८ [तुवि-ओजस्-पदयो समास । तुवीति व्याख्यातम् । ओजस् बलनाम निघ० २ ९]

तुष्टुवाना: प्रशसन्त (विद्वासो जना) ७ ५१ ३ तुष्टुवास =पदार्थगुणान् स्तुवन्त (मनुष्या) १ ८६ ८ स्तुति और आज्ञा का अनुष्ठान सदा करते हुए (हम लोग), आर्याभि० २ २७, २५ २१ स्तोतार (विद्यार्थिजना) २ २८ २ स्तुवन्त (देवा =विद्वासो जना) २५ २१ [ष्टुञ् स्तुतौ (अदा०) धातोर्लिट स्थाने कानच्]

तूणवधमम् यस्तूणव धमति तम् (जनम्) ३० १९

तूताव वर्धयति, प्र०—अत्राऽन्तर्गतो ण्यर्थ 'तुजादीना दीर्घोऽभ्यासस्य' इति दीर्घ १ ९४ २ [तु गतिवृद्धिहिंसासु (अदा०) धातो सामान्ये लिट् । 'तुजादीनामि' त्यभ्यासस्य दीर्घ । तूताव पदनाम निघ० ४ १]

तूतुजान: क्षिप्रकारी (सूरि =विद्वज्जन) ६ २९ ५ त्वरमाण (इन्द्र.=वायु), प्र०—तूतुजान इति क्षिप्रनामसु पठितम्, निघ० २ १५, १ ३ ६ सद्य कर्त्ता (सूरि = विद्वान् जन) ६ ३७ ५ [तूतुजान क्षिप्रनाम निघ० २ १५ तुज हिंसायाम् (भ्वा०) धातोर्लिटि कानचि 'तुजादीनाम्' इत्याभ्यासस्य दीर्घ । तूतुजान त्वरमाण नि० ६ २०.]

तूतुजिम् बलवन्तम् (इभ=हस्तिनम्) ६ २० ८

तूतुजि:=बलवान् (इन्द्र =राजा) ७ २८ ३ शीघ्रकारी (इन्द्र =राजा) ४ ३२ २ [तुज हिंसायाम् (भ्वा०) धातो 'किकिनावुत्सर्गश्छन्दसि०' अ० ३ २ १७१ वा०सूत्रेण कि प्रत्ययो लिड्वच्च । 'तुजादीनाम्०' इत्यभ्यासस्य दीर्घ । तूतुजि क्षिप्रनाम निघ० २.१५]

तूतोत् वर्द्धयेत् २ २० ५ **तूतो:**=वर्धय ६ २६ ४ [तु गतिवृद्धिहिंसासु (अदा०) धातोर्लङ् । 'बहुल छन्दसि' इति शप श्लु]

तूपर: हिंसक (पशु) २४ १ **तूपरा:**=हिंसका (प्राणिन) २४.१५ **तूपरौ**=अविद्यमानशृङ्गौ (पशू) २९ ५९ [तूपरो भवति, प्राजापत्यो ह्येष देवतया तै० स० २ १ ६ ५ यत्तूपरस्तद्रश्वानाम् (रूपम्) जै० २ ३७१]

तूयम् तूर्णम् प्र०—तूयमिति क्षिप्रनाम, निघ० २ १५, ७ ५८ ४ क्षिप्रम् ६ ५ ६ शीघ्रम् ३ ५३ १६ तूर्णं सुखकरम् (पुरोडाशम्) ३ ५२ ८ वर्द्धकम् (यज्ञ=शिल्प-विद्याप्रकाशमयम्) २६ ३३ [तूयम् क्षिप्रनाम निघ० २ १५ उदकनाम निघ० १ १२]

तूर्णय: सर्वत्र विद्या प्रकाशयितु त्वरमाणा (विश्वे-देवा =समस्ता विद्वासो जना), प्र०—'ञित्वरा सम्भ्रमे,

राजजन) २ २७ १. तुवेर्विद्यावृद्धात् प्रसिद्धविद्य (अव्यापक) १.१६० ८. **तुविजाता:**=तुविना वलेन सह प्रसिद्धा (मरुत =वायव) १ १६८ ४ **तुविजातौ**=बहुभ्य कारणेभ्यो बहुपु वोत्पन्नौ प्रसिद्धौ (मित्रावरुणौ=सूर्यवायू), प्र०—तुवीति वहुनामसु पठितम्, निघ० ३ १, १ २ ६ [तुवि-जातपदयो समास । तुविजात बहुजात नि० १२ ३६]

तुविद्युम्न बहुविध द्युम्न विद्याद्यनन्त धन यस्य तत्सम्बुद्धौ (इन्द्र=अन्तर्यामिन्नीश्वर), प्र०—द्युम्नमिति धननामसु पठितम्, निघ० २ १० तुवीति वहुनामसु च, निघ० ३ १, १ ६ ६ तुविर्बहुविध द्युम्न धन यशो वा यस्य (सज्जन) ३ १६ ३ वहुप्रशस (इन्द्र=राजन्) ६ १८ ११ वहुधनकीर्त्तियुक्त (अग्ने=विद्वज्जन) ३ १६ ६ **तुविद्युम्नस्य**=बहुयशस (राज्ञ) ४ २१ २ वहुप्रशसाधनस्य (सज्जनस्य) ६ १८ १२ **तुविद्युम्ना:**=बहुधनयशोऽन्विता. रुद्रास =मध्यमा विद्वास) ५ ८७ ७ [तुवि-द्युम्नपदयो समास । तुवीति वहुनाम निघ० ३ १ द्युम्नम् धननाम निघ० २ १०]

तुविद्युम्नास: तुवीनि बहूनि द्युम्नानि विद्याप्रकाशनानि येषान्ते (मरुत =विद्वासो जना) १ ८८ ३ [तुविद्युम्नपदयो समासे जसोऽसुक्]

तुविनृम्ण वहुधनयुक्त (राजन्) ६ ३१ ५ बहुधन (इन्द्र=राजन्) ४ २२ ६ **तुविनृम्णम्**=बहुविध धनम् १ ४३ ७ **तुविनृम्ण.**=तुवीनि बहूनि धनानि यस्य स (प्रजापति =राजा) प्र०—तुवीति बहुनामसु पठितम्, निघ० ३ १, ७ १७ [तुवि-नृम्णपदयो समास । नृम्णम्=धननाम निघ० २ १० वलनाम निघ० २ ६]

तुविप्रतिम् तुवीना बहूना पदार्थाना प्रतिमातरम् (नर=परमेश्वर सभासेनाध्यक्ष वा) प्र०—अत्रैकदेशेन प्रतिशब्देन प्रतिमातृशब्दार्थो गृह्यते १ ३० ६ [तुवीति बहुनाम निघ० ३ १ तुवि-प्रतिपदयो समास]

तुविबाधम् यो बहून् शत्रून् वाधते तम् (इन्द्र=सूर्यलोकम्) १ ३२ ६ [तुवीत्युपपदे बाधृ विलोडने (भ्वा०) धातो क्विप्]

तुविब्रह्माणम् बहवो ब्रह्माणश्चतुर्वेदविदो विद्वासो यस्य तम् (पुत्र=सन्तानम्) ५ ४५ ५ [तुवि-ब्रह्मन्पदयो समास]

तुविमघस्य बहुधनस्य (जनस्य) ५ ३३ ६ **तुविमघा**=बहुविध मघ पूज्य विद्याधन यस्य तत्सम्बुद्धौ (इन्द्र=सभाध्यक्ष) प्र०—मघमिति धननामसु पठितम्, निघ० २ १० 'मघमिति धननामधेय महतेर्दानकर्मण, नि० १ ७ 'अन्येपामपि०' इति दीर्घ. १ २६ २ **तुविमघास:**=बहुधना (नर=नायका जना) ५ ५८.८ बहुधनयुक्ता (कवय =विद्वासो जना) ५ ५७ ८ [तुविमघपदयो समास । तुवीति बहुनाम निघ० ३ १ मघम् धननाम निघ० २ १० 'तुविमघास' प्रयोगे जसोऽसुक्]

तुविमन्यव: बहुक्रोधा (भयङ्करा जना) ७ ५८ २ [तुवि-मन्युपदयो समास । मन्यु क्रोधनाम निघ० २ १३]

तुविम्रक्ष: बहुस्नेह (राजकर्मचारि जन) ६ १८ २ [तुवि-मृक्षपदयो समास]

तुविम्रक्षास: बहुभि सह सङ्गता (नवग्वा =नवीनगतय) ६ ६ ३ [तुवि-म्रक्षपदयो समासे जसोऽसुक्]

तुविराधसम् बहुधनधान्यम् (सर्वसेनाधिकारिपतिम्) ७ २३ ५ **तुविराधस:**=बह्वैश्वर्यस्य (राज्ञ) ४ २१ २ बहुधनवत (नृन्) ५ ५८ २ [तुवि-राधस्पदयो समास । तुवि बहुनाम निघ० ३ १ राध धननाम निघ० २ १०

तुविवाज: तुवि बहुविधो वाजो विद्या-बोधो यासा ता (प्रजा) १ ३० १३ **तुविवाजेभि:**=बहुवेगैर्बहुसङ्ग्रामैर्वा ६ १८ ११ [तुवि-वाजपदयो समास । तुवीति बहुनाम निघ० ३ १ वाज अन्ननाम निघ० २ ७. बलनाम निघं० २ ६. वाजे सग्रामनाम निघ० २ १७]

तुविशग्म तुवि बहुविधानि शग्मानि सुखानि यस्य तत्सम्बुद्धौ (इन्द्र=महैश्वर्ययुक्त प्रजाजन) ६ ४४ २ [तुविशग्मपदयो समास । तुवीति व्याख्यातम् । शग्मम् सुखनाम निघ० ३ ६]

तुविशुष्म. तुवि बहु शुष्म बलं यस्य स (सूर्य) २ २२ १ [तुवि-शुष्मपदयो समास । शुष्मम् बलनाम निघ० २ ६]

तुविशुष्मा बहुबलसेनायुक्तो (सभासेनेशौ) ६ ६८ २ [तुविशुष्म इति व्याख्यातम् । तत 'सुपा सुलुगि०' त्याकारादेश]

तुविश्रवस्तमम् अतिशयेन बह्वन्न-श्रवणयुक्तम् (पुत्रम्) ५ २५ ५ **तुविश्रवस्तम:**=अतिशयेन बहुश्रुत (महाविद्वान्) ३ ११ ६ [तुवि-श्रवस्पदयो समासे अतिशायने तमप् । तुवीति व्याख्यातम् । श्रवस् अन्ननाम निघ० २ ७ धननाम निघं० २ १०]

तुविष्टम: अतिशयेन बली (इन्द्र =सूर्य) १ १८६ ६ **तुविष्टमाय**=अतिशयेन तुविर्बहुस्तस्मै (इन्द्राय=

जनानाम्) ७ ३३ ६ [उतृदिर् हिंसानादरयो (रुधा०) धातोरिच्छायामर्थे सनि 'सनाशसभिक्ष उ' अ० ३ २ १६८ सूत्रेण उ प्रत्यय । 'छन्दसि वे' ति द्विर्वचन न भवति]

तृन्धि हिन्धि ५ १२ २ [उतृदिर् हिंसानादरयो (रुधा०) धातोर्लोट्]

तृपत् तृप्यति ७ ५६ १०. तृप्यतु ३ ३२ २ [तृप तृप्तौ (तुदा०) धातोर्लेट्]

तृपत् तृप्त सन् (इन्द्र =विद्वज्जन) २ ११ १५. तृप्यत् (सुत =पुत्र) २ ३६ ५ तृप्यन् (सूर्य), प्र०—अत्र विकरणव्यत्ययेन श २ २२ १ [तृप प्रीणने (दिवा०) धातो शतृप्रत्यय । विकरणव्यत्ययेन श प्रत्यय । तृप् तृप्तौ (तु०) धातोर्वा शतृ । तृप प्रीणने (दिवा०) धातोर्वा 'सञ्चत्तृपद्वेहत्' उ० २ ८५ सूत्रेणाति प्रत्यय]

तृप्णवः ये तृप्यन्ति ते (सोमलतादय) ३ ४२ २ [तृप प्रीणने (दिवा०) धातोर्वाहुलकादौणादिको णु प्रत्यय]

तृप्णुत सुखयत १ ११० १ **तृप्णुहि**=तृप्तो भव २ १६ ६ [तृप तृप्तौ (तु०) धातोर्लोट् । विकरणव्यत्ययेन श्नु]

तृप्ताः प्रीता (विप्रा =विद्वासो जना) २१ ११. प्रीणिता (विप्रा =मेधाविनो जना) ७ ३८ ८ [तृप प्रीणने (दिवा०) धातो क्त प्रत्यय]

तृप्तांशवः तृप्ता अशवो येभ्यस्ते (सोमास = सोमाद्योपधिरसा) १ १६८ ३ [तृप्त-अशुपदयो समास]

तृप्तिः पूर्ण तृप्ति, स० वि० १६७, ६ ११३ १० [तृप प्रीणने (दिवा०) धातो स्त्रिया क्तिन् । तृप्ति उदकनाम निघ० १ १२]

तृप्यतु प्रीणातु ८ ३७ **तृप्यन्तु**=प्रीणन्तु ७ १५ [तृप प्रीणने (दिवा०) धातोर्लोट्]

तृम्पताम् सुखयतम् ३ १२ ३ **तृम्पतु**=प्रीणयति प्र०—अत्र लडर्थे लोडन्तर्गतो ण्यर्थश्च १ २३ ७ **तृम्पन्तु**= प्रीणन्तु ७ १५ [तृम्प तृप्तौ (तुदा०) धातोर्लोट् । अन्तर्गतो ण्यर्थश्च]

तृळ्हा हिंसितानि (रक्षासि=दुष्टान्जनान्) ६ १६ ४८ **तृळ्हाः**=हिंसिता (अमित्रा =शत्रुजना) १ १३३ १ [तृहू हिंसार्थे (तुदा०) धातो क्त । अन्यत्र शेर्लोप । ऊदित्त्वादिड्विकल्प]

तृषन् तृषिता भवन्तु, प्र०—अत्र लोडर्थे लुड् ६ ३१ [जितृष पिपासायाम् (दिवा०) धातोर्लुड् । पुष्पादित्वादड्-प्रत्यय । अडभावश्छान्दस]

तृषाणः तृषातुर इव (राजा) ५ ३६ १ **तृषाणान्**= पिपासितान् (राजसेवकान्) ४ १८ ७ [त्रितृष पिपासायाम् (दिवा०) धातोर्लिट कानच् । द्वित्व छान्दसत्वान्न भवति]

तृषितः यस्तृष्यति पिपासति स (गौर =गौरगुण-विशिष्टो मृग) १ १६ ५ [त्रितृष पिपासायाम् (दिवा०) धातो क्त प्रत्यय]

तृपु क्षिप्रम्, प्र०—तृप्विति क्षिप्रनाम, निघ० २.१५, ४ ७ ११ शीघ्रम् १ ५८ २ **तृपुणा**=क्षिप्रेण ४ ७ ११ **तृपुम्**=क्षिप्रकारिणम् (अग्नि=शिल्पिविद्वासम्) ४ ७ ११ [तृपु क्षिप्रनाम निघ० २ १५ तत्स्नोर्वा तत्स्नेर्वा नि० ६ १२]

तृपुच्यवसः तृपु क्षिप्र ये च्यवन्ते गच्छन्ति (मरुत = शूरवीरा जना) ६ ६६.१० [तृपु-च्यवस्पदयो समास तृपु क्षिप्रनाम निघ० २ १५ च्यवस्=च्युड् गतौ (भ्वा०) धातोरसुन्प्रत्यय]

तृपुच्युतम् क्षिप्र पतितम् (शिशुम्), प्र०—तृप्विति क्षिप्रनाम, निघ० २ १५, १ १४० ३ [तृपु-च्युतपदयो समास]

तृष्टम् पिपासितम् (विद्यारा रूक्ष्णजनम्) ३ ६ ३ [त्रितृष पिपासायाम् (दिवा०) धातो क्त । इड्-अभावश्छान्दस]

तृष्णजम् तृष्णा जायते यस्मात् तम् (मृगम्=पशु-विशेष परमेश्वरम्) प्र०—अत्र जनधातोर्ड 'ड्यापो सज्ञा-छन्दसोर्बहुलम्' इति ह्रस्वत्वम् १ १०५ ७ [तृष्णा उपपदे जनी प्रादुर्भावे (दिवा०) धातो 'पञ्चम्यामजातौ' अ० ३ २ ६८ सूत्रेण उ प्रत्यय । पूर्वपदस्य च 'ड्यापो सज्ञा-छन्दसोर्बहुलम्' अ० ६ ३ ६३. सूत्रेण ह्रस्वत्वम् । तृष्णा=ञितृष पिपासायाम् (दिवा०) धातो 'तृषि-शुषिरसिभ्य कित्' उ० ३ १२ सूत्रेण न प्रत्यय, स च कित । स्त्रिया टाप् । रषाभ्यामिति णत्वम्]

तृष्णजः प्राप्ततृष्णा (सूर्यवज्जना) ७ ३३.५ **तृष्णजे**=तृषितु शीलाय (गोतमाय=भृश मार्ग गन्त्रे जनाय) १ ८५ ११ यस्तृष्णाति तस्मै (जिज्ञासवे जनाय) ५ ५७ १ [ञितृष पिपासायाम् (दिवा०) धातोस्तच्छीलादि-ष्वर्थेषु 'स्वपितृषोर्नजिड्' अ० ३ २ १७२ सूत्रेण नजिड्-प्रत्यय । तृष्णाजे, तृष्णक् तृष्यते नि० ११ १५]

तृष्णया तृष्यते यया पिपासया लोभगत्या वा तया १ ३८ ६ [ञितृष पिपासायाम् (दिवा०) धातो 'तृषिशुषि-

इत्यस्माद् 'वहिश्रिश्रुयुद्रुग्लाहात्वरिभ्यो नित्' उ० ४ ५३ अत्र नेरनुवर्त्तनात् तूर्णिरिति सिद्धम् १ ३ ८ **तूर्णिम्**=सद्योगमकम् (अग्नि=वह्निम) ३ ३ ५ शीघ्रकारिणम् (इन्द्र=राजानम्) ३ ५१ २ **तूर्णि.**=सद्योगामी (रथ=यानम्) ३ ११ ५ [जित्वरा सम्भ्रमे (भ्वा०) धातो 'वहिश्रिश्रुयु०' उ० ४.५१ सूत्रेण नि. प्रत्यया निच्च। 'ज्वरत्वर०' अ० ६ ४ २० सूत्रेण वकारस्योपधायाश्च स्थाने ऊठ्। तूर्णि क्षिप्रनाम निघ० २ १५ तूर्णि कर्म नि० ७ २७ सर्व ह्येष पाप्मान तरति तस्मादाह तूर्णिर्हव्यवाडिति श० १ ४ २ १२ वायुर्वै तूर्णिर्वायुर्हीदं सर्व सद्यस्तरति यदिद किञ्च ऐ० २ ३४ तूर्णिर्हव्यवाडित्याह, सर्व ह्येष (अग्नि) तरति तै० स० २ ५ ६ ३]

तूर्णितमः अतिशयेन त्वरिता (अग्नि=सेनापति) १३ ११ अतिशीघ्रकारी (अग्नि=विद्वान्राजा) ४ ४ ३ [तूर्णिरिति पूर्वपदे व्याख्यातम्। ततोऽतिशायने तमप्]

तूर्ण्यर्थः तूर्णि सद्योऽर्थो यस्य स (राजपुरुष) ३ ५२ ५ **तूर्ण्यर्थाः**=तूर्णय सद्यो गामिनोऽर्था यासु ता (धेनव=वाच) ५ ४३ १ [तूर्णि-अर्थपदयो समास। तूर्णिरिति व्याख्यातम्]

तूर्य हिन्धि ३३ ६६ [तूरी गतित्वरणहिंसनयो (दिवा०) धातोर्लोट्]

तूर्वतम् हिंस्यातम् ६ ५० १० [तुर्वी हिंसार्थे (भ्वा०) धातोर्लोट्। 'उपधायाञ्च' इति दीर्घ]

तूर्वन् हिंसन् (जन) ६ १५ ५ **तूर्वन्त.**=हिंसन्त (आयव=मनुष्या) ६ १४ ३ [तुर्वी हिंसार्थे (भ्वा०) धातो शतृप्रत्यय। 'उपधायाञ्च' इति दीर्घ]

तूर्वयाणम् तूर्व शीघ्रगामि यान यस्यास्ताम् (क्षा=पृथिवीम्) ६ १८ १३ तूर्वाणि शीघ्रगमनानि यानानि यस्मात्तम् (अग्निम्) १ १७४ ३. तूर्वा शत्रुबलहिंसका योद्धारो यानेषु यस्य तम् (कुत्स=वज्रमिव वीरपुरुषम्) १ ५३ १० [तूर्व-यानपदयो समास]

तूर्वसि हिनस्ति ३३ ६७ [तुर्वी हिंसायाम् (भ्वा०) धातोर्लट्। 'उपधायाञ्च' इति दीर्घ]

तूर्षु शीघ्रकारिषु १ ११२ ४ [जित्वरा सम्भ्रमे (भ्वा०) धातो क्विप्। 'ज्वरत्वर०' अ० ६ ४ २० सूत्रेण वकारस्योपधायाश्च ऊठ्]

तूष्णीम् मौनमालम्ब्य २ ४३ ३ मौन मे ही, आर्याभि० १ ५३, २ ४३ ३ [स्वरादिपाठाद् अव्ययत्वम्। यदा वै तूष्णीमास्ते प्राणमेव वागप्येति जै० २ ५०]

तृक्षौ विद्याशुभगुणप्राप्ते (जने=मनुष्ये) ६ ४६ ८. [तृक्ष गतौ (भ्वा०) धातोर्गेणादिकोऽन्प्रत्यय]

तृणम् घासविशेषम्, भा०—भक्ष्य, भोज्य पेय च श्रेष्ठमौषधम् २५ ३१ हिंसितव्य घासम् १ १६१ ११. [तृह हिंसायाम् (भ्वा०) धातो 'तृहे क्नो हलोपश्च' उ० ५ ८ सूत्रेण क्न-प्रत्ययो हकारस्य च लोप]

तृणस्कन्दस्य यस्तृणानि स्कन्दति गच्छति गमयति वा तस्य (राज्ञ) १ १७२ ३ [तृण व्याख्यातम्। तदुपपदे स्कन्दिर् गतिशोषणयो (भ्वा०) धातोरण्-प्रत्यय]

तृणा तृणानि घासविशेषान् ३ २६ ६ [तृणमिति व्याख्यातम्। तस्य द्वितीयाबहुवचने 'शेर्लोपश्छन्दसि' इति शेर्लोप]

तृतीयम् त्रित्वसङ्ख्याक विद्याजन्म १ १५५ ५ त्रयाणा पूरकम् (सवन=सुखैश्वर्यम्) ४ ३४ ४ अष्टाचत्वारिंशद्वर्षपरिमितसेवित ब्रह्मचर्यम् ४ ३५ ६ तीसरे (नाक=दुखरहित वानप्रस्थाश्रम को) स० वि० १८६, अथर्व० ६ ५ १ तीसरे (नियुक्त पति को) स० प्र० १५३, १० ८५ ४० **तृतीयः**=त्रयाणा सङ्ख्यापूरक प्राणादिस्वरूप (जनिता=पर्जन्य) १७ ३२ **तृतीये**=त्रयाणा पूरके (रजसि=लोके) १२ २० जीवप्रकृतिभ्या विलक्षणे, भा०—शुद्धस्वरूपे (धामन्=ईश्वरे) ३२ १० नासारिक सुख-दुःख से रहित नित्यानन्द-युक्त (धामन्=ईश्वर) मे स० वि० ७, ३२ १० एक स्थूल जगत् पृथिव्यादि, दूसरे—सूक्ष्म आदिकारण प्रकृति से भिन्न तीसरे सर्वदोष रहित अनन्ताऽऽनन्दस्वरूप परब्रह्म धाम मे आर्याभि० २.६, ३२ १० **तृतीयैः**=वसुरुद्राभ्या विलक्षणैर्द्वादशमासैः २० १२ **तृतीयस्याम्**=तृतीयकक्षाया वर्त्तमानायाम् (पृथिव्याम्) ५ ६ **तृतीया**=त्रयाणा पूरणा क्रिया २५ ४ [त्रि-सङ्ख्यावाचिन प्राति०पूरणार्थे 'त्रे सम्प्रसारणञ्च' अ० ५ २ ५५ सूत्रेण तीय प्रत्यय त्रेश्च सम्प्रसारणम्। तृतीयप्राति० सप्तम्या 'विभाषा द्वितीयातृतीयाभ्याम्' अ० ७ ३ ११५ सूत्रेण स्याडागम। बहुदेवत्य तृतीयमह कौ० २० ४ जागतमेतदहर्यत्तृतीयम् ता० १२ ७ ३ उद्वन्मिव वै तृतीयमह। ता० १२ ४ ४ अन्तरिक्षदेवत्यमेतदहर्यत्तृतीयम्। ता० १२ १ ८ २]

तृत्सव. शत्रूणा हिंसका (वीरा राजपुरुषा) ७.१८ १५ हिंस्रा (राजादयो जना) ७ १८ १६ **तृत्सवे**=हिंसकाय (शत्रवे) ७ १८ १३ **तृत्सुभ्य.**=हिंसकेभ्य. (शत्रुभ्य) ७ १८ ७ **तृत्सूनाम्**=अनाद्यानानाम् (अच्येतृ-

अपत्यम्) ६ १३ ६ पुत्रादिकम् (भा०—अपत्यम्) १८ ७७ **तोकस्य**=सन्तानस्य १ ८ ६ ह्रस्वस्याऽपत्यस्य २ ३० ५ **तोकाय**=सद्यो जातायाऽपत्याय बालकाय प्रजायै वा १ ४३ २ ह्रस्वाय बालकाय १ ११४ ६ सद्योजाताय पञ्च-वार्षिकाय (अपत्याय) ४ १२ ५ अल्पवयसे (सन्तानाय) ६ ५० ७ अल्पाय (तनयाय=कुमाराय) ५ ६६ ३ अति-बालकाय १ १८९ २ **तोके**=ह्रस्वे तनये, प० वि० अल्पे (व्यवहारे) २ २ ११ [तुज हिंसाबलादाननिकेतनेषु (चुरा०) धातो सञ्ज्ञाया घ प्रत्यय । तोक तुद्यते. नि० १० ७ तोक पुत्राश्च नि० १२ ७ तोकम् अपत्यनाम निघ० २ २. प्रजा वै तोकम् श० ७ ५ २ ३९]

तोकवत् प्रशसितानि तोकान्यपत्यानि यस्मिंस्तत् (सुवीर्य=शोभन बल यस्मात्तत्) ३ १३ ७ [तोक व्याख्या-तम् । तत प्रशसाया मतुप्]

तोकसाता तोकानामपत्यानां विभाजने ६ १८ ६ [तोक-सातिपदयो समास । 'सुपा सुलुग्' इति सप्तम्या स्थाने आकारादेश । तोक व्याख्यातम्। साति=षण सम्भक्तौ (भ्वा०) धातो क्तिन्प्रत्यय । 'जनसनखनाम्०' अ० ६ ४ ४२ सूत्रेणाकारादेश]

तोक्मभि: अपत्यै २१ ३१ [तोक्म अपत्यनाम निघ० २ २]

तोक्मानि अपत्यानि, भा०—यज्ञाऽर्हाण्यपत्यानि, प्र०—तोक्मेत्यपत्यनाम, निघ० २ २, १९ १३ **तोक्मभि**=बालकै १९ ८१ [तोक्म अपत्यनाम निघ० २ २]

तोत: तुवन्ति जानन्ति प्राप्नुवन्ति हिंसन्ति वा येन स (वाग्विद्युद्वा), प्र०—अत्र 'तु गतिवृद्धि-हिंसासु, इति धातो-र्बाहुलकादौणादिकस्तन्-प्रत्यय ४ २२

तोदस्य प्रेरणस्य ६ ६ ६ व्यथाया ६ १२ १ **तोद:**=शत्रूणा हन्ता (इन्द्र=राजा) ४ १६ ११ व्यथनम् ६ १२ ३ [तुद व्यथने (तुदा०) धातोर्घञ्प्रत्यय । कर्त्तरि वाच्प्रत्यय । तोद तुद्यते नि० ५ ७]

तोदस्येव व्यथकस्येव (शत्रुजनस्येव) १ १५० १ [तोदस्य इव पदयो समास]

तोशतमा: अतिशयेन प्रीता सन्त (देवा=विद्वासो जना) १ १६९ ५ [तोशप्राति० अतिशायने तमप्प्रत्यय । तोश=तुष प्रीतौ (दिवा०) धातोर् अच्-प्रत्यय । वर्ण-व्यत्ययेन षस्य शकार]

तोशमाना. सन्तुष्टिकरौ (शुनासीरा=वायुसूर्यौ), प्र०—अत्र वर्णव्यत्ययेन श., विकरणाऽऽत्मनेपदव्यत्ययौ च १२ ६९ [तुष प्रीतौ (दिवा०) धातो शानच् । 'सुपा सुलुग्०' इत्याकारादेश । वर्णव्यत्ययेन षस्य शकार । व्यत्ययेन शप् आत्मनेपदञ्च]

तोशा वर्धको विनाशको (इन्द्राग्नी=सभासेनेशौ) ३ १२ ४ [तुष प्रीतौ (दिवा०) धातो कर्त्तरि अच्-प्रत्यय. । 'सुपा सुलुग्०' इत्याकारादेश । वर्णव्यत्ययेन षस्य शकार]

तौग्र्यम् बलवत्तृषु भवम् (प्रसिद्ध जनम्) १ १८२ ६ बलवतो हिंसकस्य राज्ञ पुत्र राजन्यम् १ ११८ ६ **तौग्र्य:**=तुग्रा बलिनस्तेषु भव (जिघ्रि=जीर्णावृद्धो विद्वज्जन) १ ११८ ५ तुग्रेण बलेन निर्वृत्त सेनावृन्द १ ११७ १५ **तौग्र्याय**=तुग्रेषु बलिष्ठेषु भवाय (दृढ-प्लवाय) १ १८२ ५ बलेषु साधवे (कर्मणे) १.१५८ ३ [तुग्र=तुज हिंसायाम् (भ्वा०) धातोरौणादिको बाहुलकाद् रक्प्रत्यय । बाहुलकात् कुत्वम् । तुग्रप्राति० भवार्थे साध्वर्थे निर्वृत्तार्थे वा ण्य. प्रत्ययश्छान्दस । अथवा यत् प्रत्ययान्तात् स्वार्थे प्रज्ञादित्वाद् अण्]

त्मनम् आत्मानम्, प्र०—अत्र 'वा छन्दसि सर्वे विधयो भवन्ति' इत्याकारलोप उपधादीर्घत्वनिषेधश्च । सम्भवत—सायणाचार्यैरेतद् पदमुपधादीर्घत्वनिषेधकर वचनमविज्ञाया-ऽशुद्ध व्याख्यातम् १ ६३.८ आत्मनि ४४.६ **त्मना**=आत्मना, अ०—तीव्राऽऽत्मना, प्र०— अत्र छान्दसो वर्णलोप इत्याकारलोप १५ ३७ आत्मना जीवेन १ ६९ ५ आत्मना-ऽन्त करणेन २ २५ २ आत्मना मनसा प्राणेन वा १ ४१ ६ भा०—सुप्रकाशिताऽऽत्मना २७ २१ **त्मने**=आत्मने (तन-याय=पुत्राय) १ ११४ ६ स्वात्मने १ १८४ ५ आत्मनि १ १८३ ३ [अत सातत्यगमने (भ्वा०) धातो 'सातिभ्या मनिन्मनिणौ' उ० ४ १५३ सूत्रेण मनिण्प्रत्यय । आत्मन्प्राति० टाप्-प्रत्यये 'मन्त्रेष्वाड्यादेरात्मन' अ० ६ ४ १४१ सूत्रेणाकारलोप ।अन्यत्र 'आडोऽन्यत्रापि छन्दसि लोपो दृश्यते' वा० सूत्रेणाकारलोप । त्मना आत्मना नि० ३ २२]

त्मन्या आत्मनि साध्व्या क्रियया १ १८८ १०. आत्मना, प्र०—अत्राऽऽकारलोपो विभक्तेर्यादेशश्च २९ १० प्र०—अत्र 'सुपा सुलुक्०' इति टा–स्थाने याऽऽदेश २० ४५ [आत्मन्प्राति० टाप्-प्रत्यये 'मन्त्रेष्वाड्यादेरात्मन' अ० ६ ४ १४१ सूत्रेणाकारलोप । टाप्स्थाने च यादेश-श्छान्दस । पूर्वत्र साध्वर्थे यत् प्रत्यय । त्मन्या आत्मना आत्मानम् नि० ८.१७]

रसिभ्य कित्' उ० ३ १२ सूत्रेण न प्रत्यय किच्च । स्त्रिया टाप्]

तृष्यते पिपासवे (जनाय) १ १७६ ६ तृषाऽऽक्रान्ताय (जनाय) १ १७५ ६ तृष्णिताय (पायनाय=पानाय) १.११६ ६ **तृष्यन्तम्**=तृषाऽऽनुरमिव (पतिम्) ५ ६१ ७ [जितृष पिपासायाम् (दिवा०) धातो शतृप्रत्यय]

तृष्वीम् पिपासिताम् (मृगीम्) ४ ४ १ क्षिप्रगतिम्, प्र०—तृष्विति क्षिप्रनाम, निघ० २ १५ ततो 'वोतो गुणवचनाद्' इति ङीप् १३ ६ [तृष्वीति क्षिप्रनाम तरतेर्वा त्वरतेर्वा निघ० ६ १२]

तृंहतीभ्यः हन्त्रीभ्य (सेनाभ्य) १६ २४ [तृह हिंसायाम् (रुधा०) धातोश्शत्रन्तात् ङीप् स्त्रियाम्]

तेजनेन तीव्रेण कर्मणा १ ११० ५ [तिज निशाने (भ्वा०) धातोर्ल्युडन्तात् तृतीया । तेजतेरुत्साहकर्मण नि० १० ६ वज्रो वै तेजनम् मै० ४ २ ६]

तेजमानः तीक्ष्णीकृत (स्वधिति=विद्युद्वज्र) ३ ८ ११ [तिज निशाने (भ्वा०) धातो शानच् । तेजतेरुत्साहकर्मणो वा नि० १० ६ 'गुप्तिजकिद्भ्य सन्' इति प्राप्तोऽपि सन् न भवति छान्दसत्वात्]

तेजसा तीक्ष्णेन ज्योतिपेव शत्रुदाहकत्वेन १० ३० निर्दीनतया प्रागल्भ्येन च, ऋ० भू० १६१, प्रतापेन १ ५६ २ तीक्ष्णेन (सूर्येण) ३८ २७ जलेन, प्र०—तेज इत्युदकनाम, निघ० १ १२, २३ ४० तीक्ष्णस्वरूपेण (सूर्यप्रकाशेन) २१ २३ प्रकाशेन २० ८० निशातेन तीव्रेण कर्मणा १५ ७ प्रागल्भ्येन २८ २ तीक्ष्णप्रतापेन २८ ६ तीक्ष्णीकरणेन १७ ७२ **तेजसे**=तेजोवर्धनाय ३० ११ न्यायादिसद्गुणप्रकाशाय, ऋ० भू० २१८, २० ३ प्रागल्भ्याय १६ ७६ **तेजः**=प्रागल्भ्यम् १६ ६ प्रकाश १६ ८ प्रकाशमय, अ०—तेजोवत्सर्वविद्यादर्शक (ईश्वर), भा०—अग्नेर्ज्वाला ३८ २५ ज्ञानप्रकाशम् २० २३ तीव्रप्रज्ञ (जगदीश्वर) २० २३ स्वप्रकाश १ ३१ प्रकाशयुक्तम् (चक्षु=नेत्रम्) १६ ८६ स्वप्रकाश अनन्ततेज अविद्याऽन्धकार से रहित (ईश्वर), आर्याभि० २ ६, १६ ६ तेजस्वीपन, स० वि० १४४, अथर्व० १२ ५ ७ यज्ञोत्थ तेज ३३ ११ प्रकाशहेतु (सूर्य, ईश्वरो वा) १ ३१ प्रगल्भता, धृष्टता, निर्भयता, निर्दीनता, ऋ० भू० १०२, अथर्व० १२ ५ ७ [तेज इत्युदकनाम निघ० १ १२ ज्वलतो नाम निघ० १ १७ तिज निशाने (भ्वा०) धातोरौणादिकोऽसुन्प्रत्यय । तेजतेरुत्साहकर्मणो वा (नि० १० ६) असुन् । तेजो वा अग्नि श० २ ५ ४ ८ तेजोऽसि तपसि श्रितम् । समुद्रस्य प्रतिष्ठा तै० ३ ११ १ ३ तेजो वै वायु तै० ३ २ ६ १ तेज एव श्रद्धा श० ११ ३ ११ तेजोऽसि शुक्रमस्यमृतमसि (आज्य !) श० १ ३ १ २८ तेज आज्यम् तै० ३ ३ ६ ३ तेजो हिरण्यम् तै० ३ १२ ५ १२ तेज उद्यत (प्रवर्ग्य) तै० आ० ५ ११ ४ तेज प्रवर्ग्य (सूर्य) मै० २ २ ८ तेज प्रात सवन आत्मन् दधीत तै० स० ३ २.६ २ तेजो वसोर्धारा तै० स० ५ ४ ८ १ तेजो वाऽग्निष्टोमस्तेजो विषुवत् जै० २ ३८७ तेजो वै त्रिणव स्तोमानाम् जै० २ २१६ तेजो वै त्रिवृत् तै० स० ५ ५ ८ १ मै० ४ ४ १० तेजो वै प्रात सवनम् (यज्ञायज्ञीयम्) मै० ४ ७ ६ जै० ३ २६० तेजो वै ब्रह्मवर्चस ज्योतिरग्निष्टोम जै० २ ३१२ तेजो वै मदन्ती मै० ३ ७१०. तेजो वै यूप मै० ३ ६ ३ तेजो वै शुक्रो ब्रह्मवर्चसम् मै० ४ ६ ३ तेजो वै हिरण्यम् तै० स० ५ १ १० ५ मै० १ ११ ८ काठ० ११ ४ पशवो वै तेजो ब्रह्मवर्चसम् मै० १ ८ ३ समुद्रोऽसि तेजसि श्रित, अपा प्रतिष्ठा तै० ३ ११ १ ४]

तेजस्वि परमविद्यायुक्त तथा ससार मे सबसे अधिक प्रकाशित (ईश्वर), आर्याभि० २ १ [तेजस् इति व्याख्यातम् । ततो मत्वर्थे 'अस्मायामेधास्रजो विनि' अ० ५ २ १२१. सूत्रेण विनि प्रत्यय]

तेजिष्ठया याऽतिशयेन तीव्रा तेजिष्ठा सेना नीतिर्वा तया १ ५३ ८ अतिशयेन तेजस्विन्या (शस्त्र्या) २ २३.१४ **तेजिष्ठा**=अतिशयेन तेजस्विनी (अरति=प्राप्ति) ६ १२ ३ [तेजस् इति व्याख्यातम् । ततो विनि प्रत्ययान्तादतिशायन इष्ठन्प्रत्ययान्तात् स्त्रिया टाप् । 'विन्मतोर्लुक्' अ० ५ ३ ६५ सूत्रेण विनो लुक्]

तेजीयसा तेजस्विना शुद्धस्वरूपेण (मनस=अन्त-करणेन) ३ १६ ३ [तेजस्विन्प्राति० अतिशायन ईयसुन् । 'विन्मतोर्लुक्' इति विनो लुक्]

तेतिक्ते भृश तीक्ष्णा करोति ४ २३ ७ [तिज निशाने (भ्वा०) धातोर्यङ्लुकि 'दाधर्तिदर्धर्ति०' अ० ७ ४ ६५ सूत्रेणात्मनेपद निपात्यते]

तेतिजानः भृश तीक्ष्ण (स्वधिति=वज्र) ५ ४३. [तिज निशाने (भ्वा०) धातोर्यङ्लुकि लिटि कानच्प्रत्यय]

तेदनीम् श्रवणक्रियाम् २५ २

तोकम् सद्योजातमपत्यम्, भा०—पुत्रपौत्रादिकम् ३४ ३३ अल्पमपत्यम् २ २५ २. वर्धकम् (तनयम्=

त्रयोदशाक्षरेण आसुर्यानुष्टुभा (छन्दसा) ९ ३४. [त्रयोदश-अक्षरपदयो समास]

त्रयोदशी त्रयोदशाना पूरणा (क्रिया) २५ ४. ['त्रयोदशम् इति व्याख्यातम् । तत स्त्रियाम् टिड्ढाणञ्०' इति ङीप्प्रत्यय । यमस्य त्रयोदशी मं० ३ १५ ४]

त्रयोविंशतिः त्र्यधिका विंशति (सङ्ख्या) १८ २४ **त्रयोविंशत्या**=पञ्चङ्गैः १४ ३० [त्रि-विंशतिपदयो समासे 'त्रेस्त्रय' सूत्रेण त्रयस्-आदेश]

त्रयोविंश त्रयोविंशतिधा (योनि =सयोजको वियोजको गुण) १४ २३ [त्रि-विंशतिपदयो समासे 'त्रेस्त्रय' इति त्रयसादेशे पूरणार्थे डटि प्रत्यये 'ति विंशतेर्डिति' इति तेर्लोप]

त्रसदस्युम् त्रसा भयभीता दस्यवो भवन्ति यस्मात्तम् [सत्पुरुषम्] ७ १९ ३ त्रस्यन्ति दस्यवो यस्मात् तम् (राजानम्) ४ ४२ ९ यो दस्युभ्यस्त्रस्यति तम् (सेनापतिम्) १ ११२ १४ **त्रसदस्युः**=त्रस्यन्ति दस्यवो यस्मात् स (सेनापति) ४ ३८ १ [त्रस-दस्युपदयो समास । त्रस =त्रसी उद्वेगे (दिवा०) धातोरौणादिकोऽन्प्रत्यय]

त्रसन्ति उद्विजन्ति ६ १४४ (त्रसी उद्वेगे (दिवा०) धातोर्लट् । 'वा भ्राश०' इति सूत्रेण शप्]

त्रातः[1] रक्षित (राजन्) १ १२९ १० रक्षक (सभेश) १ १२९ ११ **त्राता**=पालक (अग्नि =वेदविदध्यापक उपदेशको वा विद्वान्) २५ ४७ रक्षिता (राजा) ३४ १३ सर्वाभिरक्षक (देव =विद्वज्जन) १ १०६ ७ **त्रातारम्**=रक्षितारम् (भा०—ईश्वर सभाध्यक्ष वा) ८ ४६ अभिरक्षितारम् (ईश्वरम्) १ ४४ ५ **त्रातारः**=रक्षका (मरुत =शूरा मनुष्या) ७ ५६ २२ **त्रातुः**=रक्षकस्य (ईश्वरस्य) १ १५५ ४ [त्रैङ् पालने (भ्वा०) धातो कर्त्तरि तृच्-प्रत्यय । 'आदेच उपदेशेऽशिति' सूत्रेण धातोराकारान्तादेश]

त्राध्वम् रक्षत, पालयत २ २९ ६ (त्रैङ् पालने (भ्वा०) धातोर्लोट् । 'बहुल छन्दसी' ति शपो लुक्]

त्राम् रक्षकम् (सेनाजनम्) ४ २४ ३ [त्रैङ् पालने (भ्वा०) धातो कर्त्तरि अच्प्रत्यय. क्विप् वा]

त्रामणे पालनव्यवहाराय ५ ४६ ६ **त्रामभिः**=त्रायन्ते ये धार्मिका विद्वास शूरास्तै १ ५३ १० [त्रैङ् पालने (भ्वा०) धातोरौणादिको मनिन्प्रत्यय]

त्रायताम् पालयतु ४ ५५ ७ **त्रायध्वे**=रक्षथ ७ ५९ १ रक्षत ५ ५३ १५ **त्रायस्व**=त्रायताम् ४ १ रक्ष ५ ४२ **त्रायेथाम्**=रक्षेताम् ६.११ [त्रैङ् पालने (भ्वा०) धातोर्लोट्]

त्रायमाणः रक्षक. (दातृजन) ६ ५० ८. रक्षन् (सविता =ईश्वर) ७ ३५ १० [त्रैङ् पालने (भ्वा०) धातो. शानच्प्रत्यय]

त्रासते उद्वेजयन्ति १ १२८ ५ **त्रासाथे**=भय दत्तातम् ५ ६२ ६ [त्रसी उद्वेगे (दिवा०) धातोर्लोट् । 'वा भ्राश०' इति सूत्रेण शप् । उपधाया दीर्घश्छान्दस । व्यत्ययेनात्मनेपदम्]

त्रासीयाम् त्रासेयम् ५ ४१ १ त्रासेयाम् ४ ५५ १ [त्रसी उद्वेगे (दिवा०) धातोर्लिङ् । छान्दस रूपम्]

त्रिककुप् त्रिभि सेनाऽध्यापकोपदेशकैर्युक्ता ककुभो दिशो यस्य स (सम्राट्) १.१२१ ४ त्रीणि सानि सुखानि ककुभानि येन कर्मणा तत्, प्र०— अत्र छान्दसो वर्णलोप इति सलोप १५ ४. [त्रि-ककुभ्पदयो समास । ककुभ =दिङ्नाम निघ० १ ६ अथवा त्रि-कु उपपदयो स्कुम्भु स्तम्भनार्थे (सौत्रो धातु) धातो क्विप्-प्रत्यय । उदानो वै त्रिककुप् छन्द श० ८ ५ २.४]

त्रिकद्रुकेषु त्रीणि कद्रुकानि आह्वानानि येषु तेषु (लोकेषु) २.२२ १ त्रिभि कद्रुकैर्विकलनैर्युक्तेषु कर्मसु २ १५.१. त्रीणि कद्रुकाणि शरीरात्ममन पीडनानि येषु तेषु व्यवहारेषु २ ११ १७ त्रय उत्पत्ति-स्थिति-प्रलयाख्या कद्रवो विविधकला येषा तेषु कार्य-पदार्थेषु, प्र०—अत्र कदि-धातोरौणादिक. कुन् प्रत्यय पुन समासान्त कप् स १ ३२ ३ [त्रि कद्रुकपदयो, त्रिकद्रुपदयोर्वा समास. । कद्रु कदि आह्वाने रोदने च (भ्वा०), कदि वैक्लव्ये (भ्वा०) धातोर्वा औणादिक नुन् प्रत्यय., तत समासान्त कप्]

त्रिकशः त्रिधा कशा गमनानि गमनसाधनानि वा यस्मिन् स. (रथ) २.१८ १. [त्रि-कशापदयो समास । अश्वाजनी कशेत्याहु । कशा प्रकाशयन्ति भयमश्वाय, कृष्यतेर्वा अणूभावात् । वाक् कशा पुन प्रकाशयत्यर्थान्, खशया, क्रोशतेर्वा नि० ९ १८.]

त्रिचक्रः त्रीणि चक्राणि यस्मिन् स (रथ =यानविशेष) ४.३६.१ त्रीणि कलाना चक्राणि यस्मिन् तेन (रथेन =यानविशेषेण) १ ११८ २ [त्रि-चक्रपदयो समास । चक्र चकतेर्वा चरतेर्वा क्रामतेर्वा नि० ४ २७]

त्रिणवत्रयस्त्रिंशौ ये त्रयश्च काला नवाङ्कविद्याश्च, त्रयश्च त्रिंशच्च वस्वादय पदार्था व्याख्याता याभ्या तयो पूरणौ तौ (स्तोमौ=स्तुतिविशेषौ) १० १४ त्रिणवश्च

त्यक्तेन वर्जितेन तच्चित्तरहितेन (भावेन) ४० १ अन्याय के त्याग और न्यायाचरणरूप धर्म मे, स० प्र० २३८, ४० १ [त्यज हानौ (भ्वा०) धातो क्त प्रत्यय । ततस्तृतीयैकवचनम्]

त्यजसः त्यक्तु योग्यो व्यवहार ४४३ ४ **त्यजसा**= ससारसुखत्यागेन १ ११६ ८ त्यागेन ६ ३ १ [त्यज हानौ (भ्वा०) धातोरौणादिकोऽसुन्प्रत्यय । त्यज क्रोधनाम निघ० २ १३]

त्यायताम् महन्यताम् ६ १५ [रत्यै पृचै शब्दसघातयो (भ्वा०) धातो कर्मणि लोट् । सकारलोपश्छान्दस]

त्रययाय्यः यस्त्रय रक्षक याति प्राप्नोति स (अतिथि =विद्वज्जन) ६ २ ७ [त्रयोपपदे या प्रापणे (अदा०) धातोरौणादिक आय्य प्रत्यय । त्रय =त्रैङ् पालने (भ्वा०) धातो कर्त्तरि अच्-प्रत्यय । वर्णव्यत्ययेनाकारस्य अकार]

त्रयस्त्रिशत् त्र्यधिका त्रिशत् (सङ्ख्या) १८ २४ **त्रयस्त्रिशतम्**=एतत्सङ्ख्याकान् पृथिव्यादीन् १ ४५ २ [त्रि-त्रिशत्पदयो समास । 'त्रेस्त्रय' अ० ६ ३ ४८ सूत्रेण त्रे स्थाने 'त्रयस्' इत्यादेश]

त्रयस्त्रिशद्देवा अष्टौ वसव, एकादश रुद्रा, द्वादशाऽऽदित्या, इन्द्र प्रजापतिश्च, ऋ० भू० ६६, अथर्व० १४ २३, ४ २३ (त्रयस्त्रिशत् देवपदयो समास । त्रयस्त्रिशत्-पद व्याख्यातम्]

त्रयस्त्रिशः त्रयस्त्रिशत्-प्रकार (विष्टप =व्याप्तिम्) १४ २३ एतत्सङ्ख्याया पूरक (स्तोम =स्तुतिविषय) १४ २६ **त्रयस्त्रिशाय**=एतत्सङ्ख्याताय (सवित्रे= ऐश्वर्योत्पादकाय पुरुपाय) २६ ६० **त्रयस्त्रिशा**=त्र्यधिकास्त्रिशत् (देवा =पृथिव्यादयः) २० ११ **त्रयस्त्रिशे**= वस्वादिसमूहे, भा०—अष्टौ वसव , एकादश रुद्रा, द्वादशाऽऽदित्या, विद्युद्यज्ञश्चेति त्रयस्त्रिशद्दिव्ये पदार्थसमूहे २१ २८ (त्रयस्त्रिशत्पद व्याख्यातम् । तत पूरणार्थे 'तस्य पूरणे डट्' अ० ५ २ ४८ सूत्रेण डट्प्रत्यये टेर्लोप । स्तोमार्थे वा 'स्तोमे डविधि पञ्चदशाद्यर्थ ' अ० ५ १ ५८ वा० सूत्रेण ड-प्रत्यये टेर्लोप । त्रयस्त्रिश (स्तोम) त्रयस्त्रिशो वै स्तोमानामधिपति ता० ६ २ ७ एष वै समृद्ध स्तोमो यत् त्रयस्त्रिश ता० १५ १२ ६ ज्योतिस्त्रयस्त्रिश स्तोमानाम् ता० १३ ७ २ त्रयस्त्रिश स्तोमाना (सत्) ता० ४ ८ १० सत् त्रयस्त्रिश स्तोमानाम् ता० १५ १२ २ अन्तो वै त्रयस्त्रिश परमो वै त्रयस्त्रिश स्तोमानाम् ता० ३ ३ २ वर्ष्म वै त्रयस्त्रिश ता० १६ १० १० तम् (त्रयस्त्रिश स्तोमम्) उ नाक इत्याहु ता० १० १ १८ देवता एव त्रयस्त्रिशस्यायतनम् ता० १० १ १६ अनूक त्रयस्त्रिश । द्वात्रिंशद्वाऽएतस्य कशेरुकाण्यनूक त्रयस्त्रिशम् श० १२ २ ४ १४ सवत्सरो वाव प्रतिष्ठा त्रयस्त्रिश तस्य चतुर्विंशतिरर्धमासा षडृतवो द्वेऽअहोरात्रे सवत्सर एव प्रतिष्ठा त्रयस्त्रिशस्तद्यत्तमाह प्रतिष्ठेति सवत्सरो हि सर्वेषा भूताना प्रतिष्ठा श० ८ ४.१ १२ त्रयस्त्रिश एव स्तोमो भवति प्रतिष्ठायै ता० १५ १२ ८ त्रयस्त्रिशेन श्रीकाम (यजेत) जै० २ १३६ त्रयस्त्रिशो वै स्तोमो महान् जै० ३ १३७ अग्र त्रयस्त्रिश स्तोमानाम् जै० ३ १३५ त्रयस्त्रिश स्तोममन्वारण्या पशव जै० २ ३२]

त्रयः त्रित्वसङ्ख्याका, त्रित्वसङ्ख्याविशिष्टा. (पवय =कलाचक्राणि) १ ३४ २ जलाग्निमनुष्यपदार्थस्थित्यर्थविकाशा १ ३४ ६ कर्मोपासनानि ४ ५८ ३. तदस्मद्युष्मत्पदवाच्या (त्रिधातव =जीवा) २१ ३७ वायु-जल-विद्युत ४४५ १ अध्यापकोपदेशकवैद्या २८ ८ विद्युद्भौमसूर्यरियाऽग्नयो भूम्यप्तेजासि वा ७ ३३ ७ प्रातर्मध्यसायसवनानि, भूतभविष्यद्वर्त्तमाना काला वा (पादा =अविगमसाधनानि) १७ ६१ अध्यक्ष-प्रजा-भृत्या १ १२२ १५ **त्रयाणि**=त्रीणि (कर्माणि) १२ १६ **त्रिभिः**=सत्वादिगुणै १ १५५ ४ शरीरवाङ्मनोभि ३ २६ ८ भूम्यन्तरिक्षजलेषु गमयितृभि (रथै =रमणीयैर्विमानादिभिर्यानै) १ ११६ ४ स्थूल-सूक्ष्माऽतिसूक्ष्मैरवयवै १ १५४ ३ **त्रिषु**=नाम-स्थान-जन्मसु १ १५४ २ निकृष्टमध्यमोत्तमेषु (सानुषु =शिखरेषु) २ ३ ७ त्रिविधेषु जगत्सु ५.२० भूतभविष्यद्वर्त्तमानेषु कालाऽवयवेषु १२ ५५ [त्रय तीर्णतमा सख्या नि० ३ ६ तॄ प्लवनसन्तरणयो (भ्वा०) धातोरौणादिको ड्रि प्रत्यय]

त्रया त्रयाणामवयवा (देवा =दिव्यगुणा पृथिव्यादय) २० ११ [सख्यावाचिन त्रिप्राति० अवयवार्थे 'सख्याया अवयवे तयप्' अ० ५ २ ४२ सूत्रेण तयपि, तस्य स्थाने 'द्वित्रिभ्या तयस्यायज्वा' अ० ५ २ ४३ सूत्रेणायजादेश]

त्रयोदशम् दश-प्राण-जीव-महत्तत्त्वाना सङ्ख्यापूरकमव्यक्त कारणम् (स्तोमम्) ६ ३४ **त्रयोदश**= त्र्यधिकादश (सख्या) १८ २४ **त्रयोदशभि**=दश प्राणा द्वे प्रतिष्ठे त्रयोदश आत्मा तै० १४ २६ [त्रि-दशन्पदयो समास त्रेस्त्रय' अ० ६ ३ ४८ सूत्रेण त्रे स्थाने त्रयसादेश । 'तस्य पूरणे डट्' सूत्रेण पूरणार्थे डट्-प्रत्यय]

त्रिनाके त्रिविध अर्थात् आध्यात्मिक, आधिभौतिक, आधिदैविक दुःख से रहित (त्रिदिवे उस अपने सुख स्वरूप में) म० त्रि० १९७, ९ ११३ ९ [त्रि-नाकपदयो समास । नाक =कमिति सुखनाम, तत्प्रतिषिद्ध प्रतिषिध्येत नि० २ १४ नञ्-अकपदयो समासे 'नभ्राण्नपान्नवेदा०' अ० ६ ३ ७५ सूत्रेण नञ प्रकृतिभाव]

त्रिनाभि त्रयो नाभयो बन्धनानि यस्मिन् तत् (चक्रम्) १ १६४.२ [त्रि-नाभिपदयो समास । नाभि =णह बन्धने (दिवा०) धातो 'नहो भश्च' उ० ४ १२६ सूत्रेण इञ् प्रत्ययो भकारादेशश्च । त्रिनाभि ऋतु (सवत्सर) नि० ४ २७]

त्रिपदा: त्रीणि पदानि यासु ता (प्रजा) २३ ३४. [त्रि-पदपदयो समास]

त्रिपदीम् त्रीणि वाङ्मन शरीरस्थानि सुखानि यस्या-स्ताम् (स्वाहा=वाचम्) ८ ३० [त्रि-पादपदयो समासे 'सख्यासुपूर्वस्य' सूत्रेणान्तलोपे 'पादोऽन्यतरस्याम्' सूत्रेण ङीपि 'पाद पत्' इति पदादेश]

त्रिपाजस्य: त्रिषु शरीरात्मसम्बन्धिबलेषु साधु (ईश्वर) ३ ५६ ३ [त्रि-पाजस्पदयो समासे 'तत्र साधु' रिति यत्प्रत्यय । पाजस् =अन्ननाम निघ० २ ७ बलनाम निघ० २ ९]

त्रिपात् त्रय पादा अशा यस्य स , भा०—कार्यजगत. पृथगशत्रयेण प्रकाशित सन् परमेश्वर ३१ ४ त्रय पादा यस्मिन्, भा०—ऐश्वर्यस्य सामर्थ्यस्याशत्रयम् ३१ ३ द्योतनात्मक जगत् प्रकाशक च तस्मात् (प्रकाश्यमानात्) त्रिगुणमीश्वरम्, ऋ० भू० १२१, ३१ ४ [त्रि-पादपदयो. समासे 'सख्यासुपूर्वस्य' सूत्रेणान्तलोप । आदित्यस्त्रिपात्-तस्येमे लोका पादा गो० पू० २ ८]

त्रिपृष्ठै: त्रीणि पृष्ठानि जीप्सितव्यानि येषा तै (महभि =सत्कारै) ७ ३७ १ [त्रि-पृष्ठपदयो समास । पृष्ठम्=प्रच्छ जीप्सायाम् (तुदा०) धातोर्बाहुलकादौणादि-स्थक् प्रत्यय । पृषु सेचने धातोर्वा 'तिथपृष्ठ०' उ० २ १२ सूत्रेण थक्]

त्रिबन्धुर: त्रयो बन्धुरा अधोमध्योर्ध्व बन्धा यस्मिन् (रथ) १ ११८ १ त्रयो बन्धुरा बन्धा यस्मिन् स (रथ) १ १५७ ३ त्रयो बन्धुरा बन्धनानि यस्य स, भा०—त्रैकाल्यप्रबन्ध (देव =जीव) २८ १६ **त्रिबन्धुरेण**= त्रीणि बन्धुराणि बन्धनानि यस्मिँस्तेन (रथेन) १ ४७.२. त्रिविधबन्धनयुक्तेन (रथेन) १.११८ २ [त्रि-बन्धुरपदयो. समास । बन्धुर =बन्ध बन्धने (क्र्या०) धातो 'मद्गुरा-दयश्च' उ० १ ४१ उरच्प्रत्यय]

त्रिबन्धु: त्रयाणा बन्धु (विद्वज्जन) ७ ३७ ७ [त्रि-बन्धुपदयो समास । बन्धु =बन्ध बन्धने (क्र्या०) धातो शृस्वृस्निहि०' उ० १ १० सूत्रेण उ प्रत्यय]

त्रिबर्हिषि त्रयो वेदवेत्तारो वृद्धा यस्या तस्याम् (सदसि=सभायाम्) १ १८१ ८ [त्रि-बर्हिष्पदयो समास । बर्हिष्=बृहि वृद्धौ (भ्वा०) धातो 'बृहेर्नलोपश्च' उ० २ १०९ सूत्रेण इसि]

त्रिमन्तु: त्रिसृणा कर्मोपासनाज्ञानविद्याना मन्तुर्मन्ता (विद्वज्जन) १ ११२ ४ [त्रि-मन्तुपदयो समास । मन्तु =मन ज्ञाने (दिवा०) धातो 'कमिमनिजनि०' उ० १ ७३ सूत्रेण तुन् प्रत्यय]

त्रिमाता त्रयाणा जन्म-स्थान-नाम्ना माता जनक (जगदीश्वर) ३ ५६ ५ [त्रि-मातृपदयो समास । मातृ= माङ् माने (जु०) धातोरौणादिकस्तृच्प्रत्यय । 'न षट् स्वस्रादिभ्य ' अ० ४ १ १० सूत्रेण स्त्रीप्रत्ययस्य ङीप प्रतिषेध]

त्रिमूर्द्धानम् त्रिषु निकृष्ट-मध्यमोत्तमेषु पदार्थेषु मूर्द्धा यस्य तम् (अग्निम्) १ १४६ १ [त्रि-मूर्धन्पदयो समास । मूर्धन्=मूर्वी बन्धने (भ्वा०) धातो 'श्वनुक्षन्०' उ० १ १५९ सूत्रेण कनिन्प्रत्यये वकारस्य धकारो निपात्यते]

त्रियुगम् वर्षत्रयम् १२ ७५ [त्रि-युगपदयो समास । त्रियुगम् त्रीणि युगानि नि० ९ २८.]

त्रिरश्मिम् त्रिभिर्वाङ्मन शरीरैर्योऽश्यते प्राप्यते तम् (मन्त्रम्) १ १५२ २ [त्रि -अश्मिपदयो समास । त्रि = त्रिप्राति० सुच् । अश्मिम्=अशूङ् व्याप्तौ (स्वा०) धातो-रौणादिक क्रि प्रत्यय]

त्रिरह्ना त्रिभिर्दिनै , ऋ० भू० १९०, ऋ० १ ८ ८ ४ [त्रिस्-अहन्पदयो समास]

त्रिवत्सम् त्रय कर्मोपासनाज्ञानानि वत्सा इव यस्य तम् (गा=प्राप्तव्य बोधम्) २८ २७ **त्रिवत्स.**=त्रय कर्मोपासनाज्ञानानि वत्सा इव यस्य स (विद्वज्जन) १४ १० त्रयो वत्सा यस्य स (जन) १८ २६ त्रीणि देहेन्द्रियमनासि वत्सा इवाऽनुचराणि यस्य स (विद्वान् मनुष्य) २१.१५ **त्रिवत्सा:**=त्रयो वत्सास्त्रिषु वा निवासो येषान्ते (पशुपालका जना) २४ १२ [त्रि-वत्स-पदयो समास । वत्स =वद व्यक्ताया वाचि (भ्वा०) धातोरौणादिक स प्रत्यय]

त्रयस्त्रिंशच्च ते साग्नी १३ ५८ [त्रि-नवन्-त्रि-त्रिंशत्-पदाना समासे पूरणार्थे डट्प्रत्यय । अथवा-त्रिणवत्रयस्त्रिंशत्-पदयो समास]

त्रिणव: सप्तत्रिंशद्विधा (क्रतु =कर्म प्रज्ञा वा) १४ २३ **त्रिणवाय**=त्रिभि कर्मोपासनाज्ञानै स्तुताय (णवगाय=शक्तिजाय व्यवहाराय) २९ ६० **त्रिणवे**=त्रिगुणा नव यस्मिंस्तस्मिन् सप्तविंशे व्यवहारे २१ २७ [त्रि-नवन्पदयो समास । त्रिणव (स्तोम) । वज्रस्त्रिणव श० ८ ४ १ २० प० ३ ४ वज्रा वै त्रिणव ता० ३ १ २ इमे वै लोकास्त्रिणव ता० ६ २ ३ त्रिवृद्धेव त्रिणवस्यायतनम् ता० १० १ १ ३ तमु (त्रिणवस्तोम) पुष्टिरित्याहुस्त्रिवृद्धचैवेप पुष्ट ता० १० १ १ ५ त्रिवृच्च त्रिणवश्च राथन्तरौ तावजश्चाश्वश्चान्वसृज्येता तस्मात्तौ राथन्तर प्राचीन प्रधूनुत ता० १० २ ५ त्रिणव ब्राह्मणश्छमिन जै० २ २२४ प्रतिष्ठा त्रिणव तै० स० ५ ३ ४ ४]

त्रितम् हिंसकम् (दुष्टजनम्) २ ३४ १० **त्रितस्य**=त्रिभिरुत्तम-मध्यम-निकृष्टोपायैर्युक्त य (राजजनस्य) २ ११ २० **त्रित:**=सम्प्लावक (इन्द्र =विद्युत्) प्र०—अत्रौणादिकस्तृधातो क्तिच्-प्रत्यय १ १६३ २ सम्प्लावक (अग्नि) ५ ९ ५ उपरिरेखातो मध्यरेखातस्तिर्यग्रेखातश्च १ ५२ ५ त्रिपु वर्द्धक (विद्वज्जन) ५ ४१ १० त्रिपु कालेपु, प्र०—अत्र सप्तम्यर्थे तसि-प्रत्यय ३४ ७ त्रिपु क्षित्युदकान्तरिक्षेपु वर्धमान (विद्वान् शिल्पिजन) ५ ४१ ४ ब्रह्मचर्याऽध्ययन-विचारेभ्य २ ३१ ६ त्रिभ्योऽध्यापनोपदेशरक्षणेभ्य ५ ८६ १ यस्त्रीन् विपयान् विद्या-शिक्षा-ब्रह्मचर्याणि तनोति स (बृहस्पति =विद्वान् जन), प्र०—अत्र त्र्युपपदात्तनोतेरौणादिको ड प्रत्यय १ १०५ १७ त्रिभ्यो भूत-भविष्यद्वर्त्तमानकालेभ्य १ १०५ ९ सन्तारक (अग्नि) १ १६३ ३ मनोवाक्कर्मभ्य १ १८७ १ यस्त्रीणि शरीरात्म-मन सम्बन्धिसुखानि तनोति स (कश्चिद् जन) २ ३४ १४ **त्रिताय**=त्रयाणामग्निकर्मंहविपा भावाय, भा०—शारीरिक-वाचिक-मानसिकस्थिरसुखाय १ २३ त्रिविधाना शारीरिकवाचिकमानसाना सुखाना प्राप्तिर्यस्य तस्मै (सत्पुरुपाय) २ ११ १९ **त्रितेपु**=प्रसिद्धविद्युत्सूर्येपु ६ ४४ २३ [त्रिप्राति० सप्तम्यर्थे तसि । तृ प्लवनसन्तरणयो (भ्वा०) धातोरौणादिको वा क्तिच् प्रत्यय । त्रि-इत्युपपदे तनु विस्तारे (तना०) धातोर्ड प्रत्ययो वा । त्रिप्राति० वा भावे तल्प्रत्यय । त्रित तीर्णतमो मेधया बभूव । अपि वा सख्यानमेवाभिप्रेत स्यात्, एकतो द्वितस् त्रित इति त्रयो बभूवु नि० ४ ६ त्रित त्रिस्थान इन्द्र नि० ९ ४५ त्रैत भवति प्रतिष्ठायै ता० १४ ११ २२]

त्रिदिवे तीन सूर्य विद्युत् और भौम्य अग्नि मे प्रकाशित सुख-स्वरूप मे, म० वि० १९७, ९ ११३ ९

त्रिधा त्रिभि प्रकारै, भा०—त्रिप्रकारक स्थूलसूक्ष्मकारणविज्ञापक ज्ञानम् १७ ९२ त्रिभि प्रकारैर्मनोवाक्छरीरशिक्षादिभि १ ११७ २४ श्रद्धापुरुपार्थ-योगाभ्यासै ४ ५८ ३ त्रिभि प्रकारैर्मन्त्रब्राह्मणकल्पै, उरसि कण्ठे शिरसि वा १७ ९१ [त्रिप्राति० 'सख्याया विधार्थे धा' अ० ५ ३ ४२ सूत्रेण धा प्रत्यय]

त्रिधातव. त्रय सत्त्वरजस्तमासि धातवो धारका येपान्ते (पृथिव्यादय) ५ ४७ ४ दधति सर्वान् विषयानिति धातव, त्रयो धातवो येपान्ते जीवा, भा०—अस्थिमज्जावीर्याणि २१ ३७ त्रयोऽस्थिमज्जावीर्याणि धातवो येभ्यस्ते (अध्यापकोपदेशकवैद्या) २८ ८ **त्रिधातु:**=त्रयो धातवो यस्मिन् स (अर्क =वज्रो विद्युद्वा) ३ २६ ७ **त्रिधातुना**=त्रयो धातवो यस्मिंस्तेन (वायुयानाख्येन रथेन) १ १८३ १ [त्रि-धातुपदयो समास । त्रिरिति व्याख्यानम् । धातु =डुधाञ् धारणपोपणयो (जु०) धातो 'सितनिगमि०' उ० १ ६९ सूत्रेण तुन्-प्रत्यय]

त्रिधातु त्रीणि सुवर्ण-रजतायसादयो धातवो येपु तानि (वसूनि =धनानि) ३ ५६ ६ त्रय सुवर्ण-रजतताम्रा धातवो यस्मिँस्तत् (छर्दि =गृह) ६ ४६ ९ त्रय सत्व-रजस्तमासि गुणा धारका यस्मिँस्तत् सर्व जगत् ४ ४२ ४ त्रय सत्त्वरजस्तमसादि-धातवो येपु तानि (भुवनानि) १ १५४ ४ त्रय सत्वादयो गुणा धातवो धारका यस्मिँस्तदव्यक्त प्रकृत्यात्मक जगत्कारणम् ७ ५४ सत्वरजस्तमोमय जगत् ६ ४४ २३ त्रयोऽयस्ताम्रपित्तलानि धातवो यस्मिन् भू-समुद्राऽन्तरिक्षगमनार्थे याने तत् १ ३४ ६ **त्रिधातूनि**=त्रयो वातपित्तकफा येपु शरीरेपु वाऽय -सुवर्णरजतानि येपु धनेपु तानि १ ८५ १२ [त्रि-धातुपदयो समासे नपुसके रूपम् । 'स्वमोर्नपुसकादि' नि सुप्रत्ययस्य लुक् । धातु =डुधाञ् धारणपोपणयो (जु०) धातोरौणादिकस्तुन् । यज्ञस्त्रिधातु जै० २ ३९६ यदस्मिन् (इन्द्रे) त्रीणि वीर्याण्यधत्ता तस्मात् त्रिधातु मै० २ ४ ६ यत् त्रि प्रायच्छत् त्रि प्रत्यगृह्णात् तत् त्रिधातोस्त्रिधातुत्वम् । तै० म० २ ४ १२ ७]

त्रिधातुशृङ्ग: त्रयो धातवो शुक्ल-रक्त कृष्णगुणा शृङ्गवद् यस्य स (वयोधा =वैद्य) ५ ४३ १३ [त्रि-धातु-शृङ्गपदाना समास]

गतपदयो समास]

त्रिशुक् तिस्रो मृदु-मध्य-तीव्रा दीप्तयो यस्य स, भा०—अग्निविद्युत्सूर्यरूपेण त्रिविध प्रकाश ३८ २७ [त्रि-शुच्पदयो समास । शोचति ज्वलतिकर्मा निघ० १ १६]

त्रिशोकः त्रिषु दुष्टगुणकर्मस्वभावेषु शोको यस्य विदुष स १ ११२ १२ [त्रि-शोकपदयो समास । शोक =शुच शोके (भ्वा०) धातोर्घञ्]

त्रिषधस्थ ! त्रिषु समानस्थानेषु वर्त्तमान (राजादि-जन) ६ ८ ७ त्रिभि प्रजा-भृत्याऽमात्यैर्जनै सह पक्षपात-रहितस्तिष्ठति तत्सम्बुद्धौ (राजन्) ६ १२ २ **त्रिषधस्थः**= त्रिषु भूम्यन्तरिक्षसूर्यलोकेषु त्रिविधेषु समानस्थानेषु वर्त्तमान (यजत्र =राजा) ६ १२ २ त्रिषु समानस्थानेषु कर्मोपासनाज्ञानेषु वा तिष्ठति (बृहस्पति =सूर्यो विद्वान् वा) ४ ५० १ **त्रिषधस्थे**=त्रीणि भू-जलपवनाख्यानि स्थित्यर्थानि स्थानानि यस्मिँस्तस्मिन् (बर्हिषि=अन्तरिक्षे) १ ४७ ४ त्रिभि सहस्थाने (विद्याधर्म-पुरुषार्थाख्ये) ५ ११ २ [त्रिसधोपपदे ष्ठा गतिनिवृत्तौ (भ्वा०) धातो क प्रत्यय । त्रिसध=त्रि-सहपदयो समासे सहस्थाने सधादेश 'सध मादस्थयोश्छन्दसि' अ० ६ ३ ९६ सूत्रेण]

त्रिषधस्था त्रिषु समानस्थानेषु या तिष्ठति सा (वाक्) ६ ६१ १२ [त्रिसधस्थ व्याख्यातम् । तत स्त्रिया टाप्]

त्रिषु त्रिविधेषु (पदेषु=नामस्थानजन्माख्येषु) २३ ४९ वेदरीत्या कर्मोपासनाज्ञानेषु १५ ६० भूत-भविष्यद्वर्त्तमानेषु कालाऽवयवेषु १२ ५५ [त्रिसख्यावाचिन सप्तम्या बहुवचनम्]

त्रिष्टुप् एतच्छन्दोऽभिहित विज्ञानम् १० ११ या-ऽऽध्यात्मिकाऽऽधिभौतिकाऽऽधिदैविकानि त्रीणि सुखानि स्तोभते स्तभ्नाति सा (छन्दोऽर्थविज्ञापनम्) २३ ३३ त्रीणि कर्मोपासनाज्ञानानि स्तुवन्ति यया सा (छन्द) १४ १० यया त्रीणि सुखानि स्तोभति सा (छन्द) १४ १८ **त्रिष्टुभे**=त्रयाणा शारीरिकवाचिक-मानसाना सुखाना स्तम्भनाय स्थिरीकरणाय २४ १२ [त्र्युपपदे स्तोभति अर्चतिकर्मा (निघ० ३ १) धातो क्विप्प्रत्यय त्रिष्टुप् स्तोभत्युत्तरपदा । का तु त्रिता स्यात् । तीर्णतम छन्द । त्रिवृद् वज्रस्तस्य स्तोभतीति वा । यत् त्रिरस्तोभत् तत् त्रिष्टुभस्त्रिष्टुप्त्वमिति विज्ञायते नि० ७ १२ त्रिवृद् वज्रस्तस्य स्तोभमित्येत्यौपमिकम् दे० ३ १६ वज्रस्तेन यत्त्रिष्टुप् ऐ० २ १६ वज्रस्त्रिष्टुप् कौ० ७ २ श० ३ ६ ४ २२ त्रैष्टुभो वज्र. गो० उ० ९ १८ त्रिष्टुब् इन्द्रस्य वज्र ऐ० २ २ त्रैष्टुभ इन्द्र कौ० ३ २ २२ ७ इन्द्रस्त्रिष्टुप् श० ६ ६ २ ७ ऐन्द्र त्रैष्टुभ माध्यन्दिन सवनम् गो० उ० ४ ४ ऐन्द्र हि त्रैष्टुभ माध्यन्दिन सवनम् कौ० २६ २ त्रैष्टुभ वै माध्यन्दिन सवनम् ऐ० ६ ११ त्रैष्टुभ माध्यन्दिन सवनम् ष० १ ४ एते वाव छन्दसा वीर्यवत्तमे यद् गायत्री च त्रिष्टुप् च ता० २० १६ ८ वीर्य वै त्रिष्टुप् ऐ० ६ १५ ष० १ ७ वीर्य त्रिष्टुप् ऐ० १ २१, ४ ३, ११ बल वै वीर्य त्रिष्टुप् कौ० ७ २, ८ २ ११ २, १६ १ गो० उ० ५ ५ बल वीर्य पुरस्तात् त्रिष्टुप् कौ० ११ २ ओजो वा इन्द्रिय वीर्य त्रिष्टुप् ऐ० १ ५, ८ २ इन्द्रिय वै वीर्य त्रिष्टुप् तै० १ ७ ६ ८ इन्द्रिय वै त्रिष्टुप् तै० १ ७ ६ २ उरस्त्रिष्टुप् ष० २ ३ उरस्त्रिष्टुभ श० ८ ६ २ ७ वृषा त्रिष्टुप् कौ० २० ३ त्रिष्टुप् छन्दा वै राजन्य तै० १ १.६ ६ त्रैष्टुभो वै राजन्य ऐ० १ २८,८ २ (राजन्यस्य) त्रिष्टुप् छन्द । ता० ६ १ ८ क्षत्रस्यैवैतच्छन्दो यत् त्रिष्टुप् कौ० १० ५ क्षत्र वै त्रिष्टुप् कौ० ७ १० ब्रह्म गायत्री क्षत्र त्रिष्टुप् श० १ ३ ५ ५ क्षत्र त्रिष्टुप् कौ० ३ ५ श० ३ ४ १ १० अथैतदधीतरस शुक्रिय छन्दो यत्त्रिष्टुप् ऐ० ६ १२ त्रिष्टुवेव मह गो० पू० ५ १५ या राका सा त्रिष्टुप् ऐ० ३ ४७ त्रिष्टुब्भीयम् (पृथिवी) श० २ २ १ २० त्रैष्टुभो हि वायु श० ८ ७ ३ १२ त्रैष्टुभेऽन्त-रिक्षलोके त्रैष्टुभो वायुरध्यूढ कौ० १४ ३ यजुषा वायुर्देवत तदेव ज्योतिस्त्रैष्टुभ छन्दोऽन्तरिक्ष स्थानम् गो० पू० १ २९ त्रैष्टुभोऽन्तरिक्षलोक कौ० ८ ९ त्रैष्टुभमन्तरिक्षम् श० ८ ३ ४ ११ अन्तरिक्ष त्रिष्टुप् जै० उ० १ ५ ३. अन्त-रिक्षमु वै त्रिष्टुप् श० १ ८ २ १२ अन्तरिक्षे विष्णुर्व्यक्रस्त त्रैष्टुभेन छन्दसा ततो निर्भक्तो योऽस्मान् द्वेष्टि य च वय द्विष्म श० १ ९ ३ १० त्रिष्टुबसौ (द्यौ) श० १ ७ २ १५ असावुत्तम (लोक =द्युलोक) त्रिष्टुप् ता० ७ ३ ९ त्रैष्टुभो वा एष य एष (सूर्य) तपति कौ० २५ ४ त्रैष्टुब्जागतो वा आदित्य ता० ४ ६ २३ त्रैष्टुभा पशव कौ० ८ १ १० २ अपान त्रिष्टुप् ता० ७ ३ ८ यऽएवाय प्रजनन प्राण एष त्रिष्टुप् श० १० ३ १ १ त्रैष्टुभ चक्षु ता० २० १६ ५ आत्मा वै त्रिष्टुप् श० ६ ४ २ ६ आत्मा त्रिष्टुप् श० ६ २ १ २४, ६ ६ २ ७ आत्मा त्रिष्टुभ श० ८ ६ २ ३ त्रैष्टुभ पञ्चदशस्तोम ता० ५ १ १४ एतद्वै बृहत स्वमायतन यत् त्रिष्टुप् ता० ४ ४ १० त्रैष्टुभ वै बृहत् ता० ५ १ १४ त्रैष्टुभो ब्राह्मणाच्छꣳसी ता०

त्रिवत्सा त्रयो वत्सा यस्या सा (गौ) १८ २६ [त्रि-वत्सपदयो समासे स्त्रिया टाप्]

त्रिवयाः त्रीणि वयासि यस्य स (ब्रह्मचाग्जिन) २ ३१ ५ [त्रि-वयस्पदयो समास]

त्रिवरूथम् त्रीणि वरूथानि गृहाणि यस्मिन् (शर्म=सुसुख गृहम्) ४ ५३ ६ शीतोष्णवर्षासूत्तमम् (छर्दि = गृहम्) ६ ४६ ६. **त्रिवरूथः**=त्रिषु भूम्यधोऽन्तरिक्षेषु वरूथानि गृहाणि यस्य स (देव =विद्वज्जन) २१ ५५ त्रीणि त्रिविधसुखप्रदानि वरूथानि गृहाणि यस्य स (इन्द्रो देव =ऐश्वर्यमिच्छुको जीव) २८ १६ त्रीण्युत्तम-मध्यम-निकृष्टानि वरूथा गृहाणीव निवासस्थानानि यस्य स (अग्नि =परमेश्वर) ६ १५ ६ त्रीणि वरूथान्याध्या-त्मिकाऽऽधिदैविकाऽऽधिभौतिकानि सुखानि यस्मिन् स (भा० राष्ट्र) १५ १ **त्रिवरूथेन**=त्रीणि त्रिविधानि शीतोष्ण-वर्षासुखकराणि वरूथानि गृहाणि यस्य तेन (राजा) ६ २६ ७ त्रिषु वर्षाहिमन्तग्रीष्मसमयेषु वरूथेन वरेण (गृहेण) ५ ४ ८ [त्रि-वरूथपदयो समास । वरूथ =वृञ् वरणे (स्वा०) धातो 'जॄवृञ्भ्यामूथन्' उ० २ ६ सूत्रेण ऊथन् प्रत्यय । वरूथम्=गृहनाम निघ० ३ ४]

त्रिविष्टि आकाशे ४ ६ ४ त्रिविधे सुखप्रवेशे ४ १५ २ [त्रि-विष्टिपदयो समास । विष्टि =विश प्रवेशने (तुदा०) धातो क्तिन्]

त्रिविष्टिधातु त्रिधोत्तम-मध्यम-निकृष्टा विष्टयो व्याप्तयो धातूना पृथिव्यादीना यस्मिंस्तत् (प्रतिमान= जगत्) १ १०२ ८ [त्रिविष्टि-धातुपदयो समास]

त्रिवृत् यस्त्रिभि कर्मोपासनाज्ञानैर्वर्त्तते स (विद्वान् पुरुष) १३ ५४ यस्त्रिधा वर्त्तते (विद्युत्) १५ १० त्रिभिर्मनोवाक्छरीरबलाना बोधकारक (स्तोम) १० १० यस्त्रिभि सत्वरजस्तमोगुणै सह वर्त्तते तस्याव्यक्तस्य वेत्ता, भा०—पृथिव्यादिपदार्थाना गुणकर्मस्वभावविज्ञाता विद्वान् १५ ६ य कर्मोपासनाज्ञानेषु साधकत्वेषु वर्त्तते (विद्वज्जन) १ १४० २ त्रीणि कर्मोपासनाज्ञानानि वर्त्तन्ते यस्मिंस्तत् (शिर) १२ ४ यस्त्रिभि कायिक-वाचिक-मानसै साधनै शुद्ध वर्त्तते (स्तोम) १४ २४ शीते चोष्णे द्वयो-र्मध्ये च वर्त्तते स (चतुष्टोम =संवत्सर) १४ २३ **त्रिवृता**=त्रिभि शिल्पक्रियाप्रकारै संपूरितस्तेन (श्येन) १ ४७ २ यस्त्रिषु कालेषु वर्त्तते तेन (ऋतुना) २१ २३ स्थावरणेन (श्येन) १ ११८ २ यस्त्रिषु स्थलजलान्तरिक्षेषु पूर्णगत्या गमनाय वर्त्तते तेन (श्येन=विमानादियानस्व-रूपेण) १ ३४ १२ **त्रिवृते**=यस्त्रिभि सत्वरजस्तमो-गुणैर्युक्तस्तस्मै (अग्नये=पावकाय) २६ ६०. ['त्रि' इत्युप-पदे वृतु वर्त्तने (भ्वा०) धातो क्विप्प्रत्यय । त्रिवृत् वज्र नि० ७ १२ त्रिवृत् (स्तोम) । वायुर्वाऽआशुस्त्रिवृत्स एषु त्रिषु लोकेषु वर्तते श० ८ ४ १ ६ तान् (पशून्) अग्निस्त्रिवृता स्तोमेन नाप्नोत् तै० २ ७ १ ८ १ त्रिवृदग्नि श० ६ ३ १ २५ अग्निर्वै त्रिवृत् तै० १ ५ १० ४ त्रिवृद्वा अग्निर्ज्वाला अर्चिर्धूम इति कौ० २८ ५ तेजो वै त्रिवृत् ता० २ १७ २ तेजो वै स्तोमाना त्रिवृत् ऐ० ८ ४ तेजो वै त्रिवृद् ब्रह्मवर्च-सम् ता० १७ ६ ३ त्रिवृदेव स्तोमो भवति तेजसे ब्रह्मवर्चसाय ता० ११ १ ७ ब्रह्मवर्चस वै त्रिवृत् तै० २ ७ १ १ त्रिवृदेव भर्ग गो० पू० ५ १५ ब्रह्म वै स्तोमाना त्रिवृत् ऐ० ८ ४ ब्रह्म वै त्रिवृत् ता० २ १६ ४, १६ १७ ३, २३ ७ ५ शिर एव त्रिवृत् गो० पू० ५ ३ तस्मात् त्रिवृत् स्तोमाना मुखम् ता० ६ १ ६ मुख वै त्रिवृत्स्तोमानाम् ता० १७ ३ २ यत् त्रिवृद्-भवति यदेवास्य (यजमानस्य) मुखतोऽपूत तत्तेनापहन्ति ता० १७ ५ ६ प्राणो वै त्रिवृत् ता० ६ २ २, ६ ३ ४, ६ ८ १५ प्राणा वै त्रिवृत् ता० २ १५ ३, २ ६ ३ प्राणा वै त्रिवृत् स्तोमाना प्रतिष्ठा ता० ६ ३ ४ एष (त्रिवृत्) हि स्तोमानामाशिष्ठ श० ८ ४ १ ६ त्रिवृद् वै स्तोमाना क्षेपिष्ठ प० ३ ८ ता० १७ १२ ३ वज्रो वै त्रिवृत् त्रिवृद् बर्हिर्भवति तै० १ ६ ३ १ वसन्तेनर्त्तुना देवा वसव-स्त्रिवृता स्तुतम् । रथन्तरेण तेजसा हविरिन्द्रे वयो दधु तै० २ ६ १६ १ त्रिवृच्च त्रिणवश्च राथन्तरौ तावजश्चाश्व-श्चान्वसृज्येता तस्मात्तौ राथन्तर प्राचीन प्रधूनुत ता० १० २ ५ अग्र वै मुख त्रिवृत् स्तोमानाम् जै० २ २१७ इमे वै (त्रय) लोकास्त्रिवृत जै० १ २१२ तद्ध वा आहु-र्ब्रह्म वै त्रिवृद्, ब्रह्म गायत्री जै० ३ ३३८ तस्य (अग्नि-ष्टोमस्य) त्रिवृत् प्रात सवनम् मै० ४ ४ १० त्रिवृता तेज-स्कामो ब्रह्मवर्चसकामोऽग्निष्टुता यजेत जै० २ १३६ त्रिवृता ब्रह्मवर्चसेन (देवा) ···ज्योतिरदधु जै० १ ६६ त्रिवृता वै स्तोमेन प्रजापति प्रजा असृजत मै० ३ ६ ७ त्रिवृति प्रातस्सवने पञ्चदशमच्छावाकस्याज्यम् जै० २ १३१ त्रिवृतैव ब्राह्मण श्रेष्ठता गच्छति, पञ्चदशेन राजन्य जै० २ १३२ त्रिवृत् त्रिपामा जै० ३ १३ गुप्त वै त्रिवृत् स्तोमानाम् जै० २ १३५ न्यून वै त्रिवृत् जै० २ ८६]

त्रिवृत्तम् कर्मोपासनाज्ञानयुक्तम् (स्तोमम्) ६ ३३ [त्रि-वृत्तपदयोः समास]

त्रिशता त्रीणि शतानि येषु (शङ्कव = कीला) १ १६४ ४८ त्रीणि शतानि १ १६४ ४८, ऋ० सू० [त्रि-

स एव (दास =सेवक) १ १५८ ५. [त्र्युपपदे तनु विस्तारे (तना०) धातो क्विप् । तत स्वार्थेऽण्प्रत्यय]

त्रैयम्बकाः त्रिष्वधिकारेष्वम्बक लक्षण येषान्ते (गवादय) २४ १८ [त्रि-अम्बकपदयो समासे प्रज्ञादेराकृतिगणत्वात् स्वार्थेऽण् । त्र्यम्बकपदे द्रष्टव्यम्]

त्रैवृष्णः यस्त्रिपु वर्षति स एव (विद्वज्जन) ५ २७ १ [त्र्युपपदे वृषु सेचने (भ्वा०) धातोरौणादिक कनिन्प्रत्यय । तत स्वार्थेऽण् । प्रत्ययस्थाकारलोपश्छान्दस]

त्रैष्टुभम् त्रिभि सुखै सम्बद्धम् (छन्द) १२ ५. त्रिष्टुभा व्याख्यातमर्थजातम् (छन्द) ३८.६ त्रिष्टुभम् २ ४३ १ त्रिष्टुभि भवम् (अर्थम्) १ १६४ २३ **त्रैष्टुभः**= त्रिष्टुप्प्रगाथोऽस्य स (भाग =अग) ४ २४ **त्रैष्टुभात्**= त्रिष्टुप्-छन्दो वाच्यात् (मन्त्रात्) १ १६४ २३ **त्रैष्टुभाय**= त्रिष्टुप्छन्दसा प्रख्याताय (इन्द्राय=ऐश्वर्याय) २६ ६० **त्रैष्टुभेन**=त्रिष्टुप्-प्रोक्तेन (छन्दसा=स्वच्छेनाऽर्थेन) १३ ५३ त्रीणि कर्मोपासनाज्ञानानि स्तोभन्ते स्थिरीकुर्वन्ति येन (छन्दसा) ११ ६५ त्रिधा स्तुतेन (वचसा) ५ २६ ६ त्रिवेदविद्यास्तवनेन १ १६४ २४ त्रिष्टुभा निर्मितेनाऽर्थेन (छन्दसा=स्वच्छन्देन) ११ ६ त्रिष्टुवेव त्रैष्टुभ त्रिविधसुखहेतुस्तेन (छन्दसा) २ २५ त्रिष्टुप्-प्रकाशिनेनाऽर्थेन (छन्दसा) २३ ८ त्रिष्टुप्-प्रगाथोऽस्य तेन (छन्दसा= सुखकारकेण व्यवहारेण) ५ २ [त्रिष्टुविति व्याख्यातम् । ततो भवार्थेऽण् स्वार्थे वा । 'सोऽस्यादिरिति०' अ० ४ २ ५५ सूत्रेण वा छन्दस प्रगाथेपु अण्प्रत्यय]

त्र्यक्षरेण दैव्याऽनुष्टुभा (छन्दसा) ९ ३१ [त्रि अक्षरपदयो समास । छन्दोनाम]

त्र्यनीकः त्रीणि त्रिगुणान्यनीकानि सैन्यानि यस्य स (राजा) ३ ५६ ३ [त्रि-अनीकपदयो समास । त्र्यनीक (अग्नि) इति सवनान्येवानीकानि ऐ० ३ ३९]

त्र्यम्बकम् त्रिष्वम्बक रक्षण यस्य रुद्रस्य परमेश्वरस्य यद्वा त्रयाणा जीवकारण कार्याणामम्बको रक्षकस्तम् (रुद्रम्=ईश्वरम्) ७ ५९ १२ सर्वाध्यक्षम् (ईश्वरम्) ३ ६० अमति येन ज्ञानेन तदम्ब, त्रिपु कालेष्वेकरस ज्ञान यस्य तम् (रुद्र=परमेश्वरम्), प्र०—अत्र 'अम गत्यादिपु' अस्माद् बाहुलकेन करणकारके व प्रत्ययस्तत 'शेपाद्विभाषा' अ० ५ ४ १५४ इति समासान्त कप्-प्रत्यय ३ ५८ [अम्बिका ह वै नामास्य (रुद्रस्य) स्वसा, तयास्यैप सहभागस्तद्यदस्यैप स्त्रिया सह भागस्तस्मात् तस्मात् त्र्यम्बका (पुरोडाशा) नाम श० २ ६ २ ९ त्र्यम्बको रुद्र नि० १३ ३५ रुद्रास्त्र्यम्बका काठ० ३६ १४ त्र्यम्बकास्तृतीयसवनमकुर्वत तै० स० ३ २ २ ३ तृतीयसवने त्र्यम्बकान् (प्रवाकल्पयन्) काठ० २३ ७ अप्रतिष्ठिनास्त्र्यम्बका काठ० ३६ १४]

त्र्यरुणः त्रीणि मन शरीरात्म-सुखान्यृच्छति (विद्यार्थी) ५ २७ ३ त्रयोऽरुणा गुणा यस्य स (विद्वान् जन) ५ २७ १ [त्रि-अरुणपदयो. समास. । अरुण =ऋ गतिप्रापणयो (भ्वा०) धातो 'अर्त्तेश्च' उ० ३ ६० सूत्रेण उनन्प्रत्यय]

त्र्यवयः त्रिविधाश्च ता अवयश्च ता २४ ५ तिस्रो ऽवयो येषा ते (पशुपालका जना) २४ १२ **त्र्यविम्**= या त्रिधाऽवति ताम् (गाम्=पृथिवीम्) २८ २४ कार्यकारणजीवाख्यानि त्रीणि वस्तूनि यो रक्षति तम् (नियन्तारमीश्वरम्) ३ ५५ १४ **त्र्यविः**=त्रयाणा शरीरेन्द्रियाऽऽत्मनामवी रक्षण यस्मात् स (गौ =विद्वज्जन) २१ १२ त्रयोऽव्यादयो यस्मात् तम् (वृद्धियुक्त पुरुषम्) १४ १० तिस्रोऽवयो यस्य स (जन) १८ २६ [त्रि-अविपदयो समास. । अव रक्षणगत्यादिपु (भ्वा०) धातोरौणादिक इन्प्रत्यय]

त्र्यवी तिस्रोऽवयो यस्या सा (स्त्री) १८ २६ [त्रि-अविपदयो समासे स्त्रिया 'कृदिकारादक्तिन' वा० सूत्रेण ङीप्]

त्र्यायुषम् त्रीणि च तान्यायूपि च त्र्यायुष बाल्ययौवनवृद्धावस्थासुखकरम् (आयु) प्र०—इद पदम् 'अचतुरविचतुर०' अ० ५ ४ ७७ इति सूत्रे समासान्तत्वेन निपातितम् ३ ६२ पूर्वोक्त त्रिगुणमायु, प्र०—'एतेर्णिच्च' उ० २ ११८ अनेनेण् धातोरुसि प्रत्ययो णित्वाद् वृद्धि 'ईयते प्राप्यते यत्तदायु ३ ६२ विद्याशिक्षापरोपकारसहित त्रिगुणमायु ३ ६२ ब्रह्मचर्य-गृहस्थ-वानप्रस्थाऽऽश्रम-सुखसम्पादक त्रिगुणमायु ३ ६२ त्रिगुणमर्थात् त्रीणि शतानि वर्षाणि यावत्तावदायु:, ऋ० भू० ८१, ३ ६२ तिगुणी अर्थात् तीन सौ वर्ष पर्यन्त (नेत्र-ज्योति) स० प्र० ४१६, ३ ६२ [त्रि-आयुस्पदयो समासे 'अचतुरविचतुर०' अ० ५ ४ ७७ सूत्रेण समासान्तोऽच् निपात्यते । आयुस्= इण् गतौ (अदा०) धातो 'एतेर्णिच्च' उ० २ ११८ सूत्रेण उसि प्रत्ययो णिच्च]

त्र्याशिरः यास्त्रिभिर्जीवाग्नि-वायुभिरश्यन्ते भुज्यन्ते ता (वाच) ५ २७ ५ [त्रि-आशिरपदयो समास । आशिर =आङ्पूर्वाद् अश भोजने (क्र्या०) धातोरौणादिक किरच् प्रत्यय]

५ १ १४ नागगग्या त्रिष्टुप् (अपुनीत) जै० उ० १ ५७ १ त्रिष्टुब् दक्षिणा (दिक्) श० ८ ३ १ १२ त्रिष्टुब् रुद्राणा पत्नी गो० उ० २ ९ रुद्रास्त्रिष्टुभ समभरन् जै० उ० १ १८ ५ यत्यैकादश ताम्त्रिष्टुभम् कौ० ६ २ एकादशाक्षरा वै त्रिष्टुप् कौ० ३ २, १० २ ता० ६ ३ १३ ऐ० ३ १२,८ २ श० १ ३ ५ ५ गो० उ० १ १८,३ १० एकादशाक्षरा त्रिष्टुप् तै० ३ ८ १२ १ चतुश्चत्वारिंशदक्षरा वै त्रिष्टुप् श० ८ ५ १ ११ चतुश्चत्वारिंशदक्षरा त्रिष्टुप् कौ० १६ ७ जै० उ० ४ २ ५]

त्रिष्टुप्छन्दसम् त्रिष्टुप्छन्दोऽर्थ-बोधयितारम्, (अध्यापकम्) ८ ४७ [त्रिष्टुभ्-छन्दस्पदयो समास । ततोऽधीते वेद वार्ये जातस्य प्रत्ययस्य लुक् छान्दसम् । राजन्यस् त्रिष्टुप्छन्दा जै० १ ६८ सुपर्णोऽसि त्रिष्टुप्छन्दा तै० स० ३ २ १.१]

त्रिष्ठम् त्रिषु शरीराऽऽत्म-मन सुखेषु तिष्ठतीति (सौभगत्वम्) १ ३४ ५ [त्र्युपपदे ष्ठा गतिनिवृत्तौ (भ्वा०) धातो क प्रत्यय]

त्रिष्ठिनम् ये त्रिषु जल-स्थलाऽन्तरिक्षेषु तिष्ठन्ति ते त्रिष्ठा, बहवस्त्रिष्ठा विद्यन्ते यस्य तम् (भा०—यान-गमक पुरुषम्) ३० १४ [त्रिष्ठ व्याख्यातम् । ततो भूम्नि इन्-प्रत्यय । 'स्थास्थिन्स्थृणामिति वक्तव्यम्' अ० ८ ३ ९७ वा० सूत्रेण षत्वम्]

त्रिसधस्थः त्रिषु य कर्मोपासनाज्ञानेषु स्थित (विद्वान् जन) १ १५६ ५ ['त्रिषधस्थपदे' द्रष्टव्यम्]

त्रिसप्तसमिधः अस्य ब्रह्माण्डस्यैकविंशतिसमिध कारणानि बुद्ध्यन्त करण जीवश्चैका सामग्री परमसूक्ष्मत्वात्, दशेन्द्रियाणि, पञ्चतन्मात्रा पञ्चभूतानि च, ऋ० भू० १२८, ३१ १५. [त्रिसप्त-समिध्-पदयो समास]

त्रिसप्तैः एकविंशत्या (सत्वभि =पदार्थै) १ १३३ ६ [त्रि-सप्तन्पदयो समास]

त्रिंशत् आकाश द्या च वर्जयित्वा सर्वान् भूम्यादीन् पदार्थान् ६ ५९ ६ त्रिंशत्संख्याकानि पृथिव्यादीनि, त्रयस्त्रिंशतो वस्वादीना देवाना मध्ये पठितानि, अन्तरिक्षमादित्यमग्निं च विहाय (धाम =धामानि) ३ ८ एतत्सङ्ख्याकान् (मुहूर्त्तान्) ३३ ९३ **त्रिंशतम्**=एतत्संख्यातम् (शत्रुसमुदायम्) ४ ३० २१ **त्रिंशता** एतत्संख्याकै (नियुद्भि =गतिभि) भा०—अनेकाभिर्गतिभि २७ ३३ ['पङ्क्तिविंशतित्रिंशत्०' अ० ५ १ ५९ सूत्रेण त्रयाणा दशाता त्रिन् भाव शच्च प्रत्ययो निपात्यते]

त्रिंशच्छतम् त्रिंशच्छतानि यस्मिन् (सङ्गमे) ६ २७ ६ [त्रिंशत्-शतपदयो समास]

त्रिः त्रिवारम् ४ १ ७ [त्रिप्राति० क्रियाभ्यावृत्तिगणने सुच्प्रत्यय]

त्री त्रीणि (योजनानि) ३४ २४ त्रीणि त्रिप्रकारकाणि (रजासि=लोकान्) ४ ५३ ५ [त्रिप्राति० नपुंसकलिंगे प्रथमाबहुवचने शेर्लोप]

त्रीणि तीन (ज्योतींषि=अग्नि वायु और सूर्य को) आर्याभि० २ १४, ८ ३६ विद्यादि व्यवहारो की वृद्धि के लिए तीन प्रकार की राजसभा, धर्म सभा और विद्यासभा, स० वि० १८२, ३ ३८ ६. त्रिविधानि (पदा=पदानि) १ २२ १८ उत्पत्ति-स्थिति-प्रलया काला वा ३२ ९ त्रिविधानि शरीरात्म-मन सुखकराणि (आयूपि=जीवनानि) ३ १७ ३ त्रिप्रकारकाणि (रोचना=ज्योतींषि) ४ ५३ ५ भूम्यन्तरिक्ष-सूर्यरूपेण त्रिविध जगत् ३४ ४३ **त्रीणाम्**=त्रयाणा सकाशात् (मित्रार्यमावरुणानाम्), प्र०—अत्र 'वाच्छन्दसि सर्वे' विधयो भवन्ति, इति 'त्रेस्त्रय' इति त्रयादेशो न ३ ३१ **त्रीन्**=अधोमध्योर्ध्वस्थान् (समुद्रान्=लोकान्) अ०—शारीरिक-वाचिक-मानसानि त्रिविधानि १३ ३१ जन्म-स्थान-नामवाच्यान् (लोकान्) ६ ३१ [सख्यावाचिनस् त्रिप्राति० रूपाणि । 'त्रीणाम्' प्रयोगे 'त्रेस्त्रय' अ० ७ १ ५३ सूत्रेण त्रयादेशो न भवति छान्दसत्वात्]

त्रैताय त्रयाणा भवाय ३० १८ [त्रिप्राति० तल्-प्रत्यय । इकारस्यैकारश्छान्दस । उत्तिष्ठस्त्रेता भवति ऐ० २ १५.]

त्रेधा त्रिभि प्रकारै १ १५४ १ त्रिप्रकारै १ १८१ ६ त्रिप्रकारकम् (पद=जगत्) १ २२ १७ त्रिप्रकारकाणि (रजासि=लोकान्) भा०—पृथिवीसूर्यत्रसरेणुभेदेन त्रिविध जगत् ५ १८ [त्रिप्राति० विधार्थे धाप्रत्यय । इकारस्यैकारश्छान्दस । त्रेधा त्रिधा नि० १२ १९]

त्रेधा इव यथा त्रिभि पठनपाठन-हस्तक्रियादिभि प्रकारैस्तथा, प्र०—इवेन सह नित्यसमासो विभक्त्यलोप पूर्वपदप्रकृतिस्वरत्वञ्च, अ० २ १४ अत्र सायणाचार्येण त्रेधैव त्रिभिरेव प्रकारैरित्येव सर्वोऽशुद्धो व्याख्यान । पदपाठ इव-शब्दस्य प्रत्यक्षत्वात् १ ३४ ४ [त्रेधा-इवपदयो समास]

त्रैतन यस्त्रीणि शरीरात्ममनोजानि सुखानि तनोति

सद्यो जातशिशुस्याऽश्वस्य २६ ६ सुखप्रकाशकस्य (ईश्वरस्य) १३ ५० **त्वष्ट्रा**=सर्वदुःखच्छेदकेन गुणेन ८ १० प्रतापिना सूर्येणेव न्यायेन १० ३० **त्वष्ट्रे**=प्रकाशकाय (जनाय) २२ २० विद्याप्रकाशकाय (विद्वज्जनाय) २२ २० प्रकाशाय, प्र०—त्विष उतोऽत्वम्, उ० २ ९५ अनेनाऽयं सिद्ध २२ २० [त्विष दीप्तौ (भ्वा०) धातो 'नप्तृनेष्टृत्वष्टृ०' उ० २ ९५ सूत्रेण तृन् तृच् वा प्रत्ययो निपात्यते । अथवा तच्छीलाद्यर्थेषु) त्विरेर्देवतायामकारश्चोपधाया अनिट्त्वञ्च' अ० ३ २ १३५ वा० सूत्रेण तृन् प्रत्यय । त्वष्टा तूर्णमश्नुते इति नैरुक्ता । त्विषेर्वा स्याद् दीप्तिकर्मण, त्वक्षतेर्वा स्यात् करोतिकर्मण । माध्यमिक (मध्यमे स्थाने भव । वायुर्वेन्द्रोऽन्तरिक्षस्थान) त्वष्टेत्याहुर्मध्यमे च स्थाने समाम्नात । अग्निरिति शाकपूणि नि० ८ १४ त्वष्टा वाग्वै त्वष्टा वाग्घीद ताष्टीव ऐ० २ ४ इन्द्रो वै त्वष्टा ऐ० ६ १० त्वष्टा वै पशूनामीष्टे श० ३ ८ ३ ११ त्वष्टुर्हि पशव श० ३ ८ ३ ११ त्वष्टा पशूना मिथुनाना रूपकृद् रूपपति तै० २ ५ ७ ४ त्वष्टा वै पशूना मिथुनाना रूपकृत् तै० ३ ८ ११ २ त्वष्टा वै पशूना रूपाणा विकर्त्ता ता० ६ १० ३ त्वष्टा हि रूपाणि विकरोति तै० २ ७ २ १ त्वाष्ट्राणि वै रूपाणि । श० २ २ ३ ४ त्वष्टा वै रूपाणामीशे तै० १ ४ ७ १ त्वष्टा वै रूपाणामीशे तै० १ ८ ७ १ त्वष्टा वै रूपाणामीष्टे श० ५ ४ ५ ८ त्वष्ट्रा रूपेण तै० १ ८ १ ७ त्वष्टा (श्रिय) रूपाणि (आदत्त) श० ११ ४ ३ ३ त्वष्टा वै रेत सिक्त विकरोति कौ० ३ ९ श० १ ९ २ १० रेत सिक्तिर्वै त्वाष्ट्र कौ० १९ ६ त्वष्ट समिधा पते तै० ३ ११ ४ १ त्वष्टुर्ह वै पुत्र । त्रिशीर्षा षडक्ष आस तस्य त्रीण्येव मुखान्यासुस्तद्यदेव रूप आस तस्माद् विश्वरूपो नाम श० १ ६ ३ १, ५ ५ ४ २ त्वाष्ट्र दशकपाल पुरोडाश निर्वपति श० ५ ४ ५ ८ (श्री) त्वाष्ट्र दशकपाल पुरोडाश (अपश्यत्) श० ११ ४ ३ ५ (प्रजापति) त्वाष्ट्रमेव (आलिप्सत) श० ६ २ १ ५ वारुणी च हि त्वाष्ट्री चावि श० ७ ५ २ २० त्वाष्ट्र वडवमालभेत प्रजाकाम गो० उ० २ १ सवत्सरो वै त्वष्टा मै० ४ ४ ७ वाग्वै त्वष्टा, वाग्घीद सर्व ताष्टीव ऐ० २ ४ त्वष्टा यजमान काठ० ७ १०]

त्वष्टृमान् त्वष्टार उत्तमा शिल्पिनो विद्यन्ते यस्य स (इन्द्र =राजा) ६ ५२ ११ **त्वष्टृमन्त.**=बहवस्त्वष्टार प्रकाशात्मान पदार्था विद्यन्ते येषु ते (जना स्त्रियो वा) ३७ २० [त्वष्टृप्राति० भूम्नि प्रशसाया वा मतुप्]

त्वष्टेव उत्तम शिल्पीव (विद्वान् -पूर्णविद्या जन) ४ ४२ ३ [त्वष्टृ-इव-पदयो समास]

त्व: अन्यो द्वितीयो वा १ १४७ २ कश्चित् मित्र १२ ४२ जो विद्वान् से भिन्न (अविद्वान्) स० प्र० ६०, १० ७१ ४ [त्व इति विनिग्रहार्थीय सर्वनामानुदात्तम् । अर्धनामेत्येके नि० १ ७ तं त्वा दे नि० १ ८. त्वा देव त्वष्टारस्य तोऽजतन नि० ३ २०]

त्वाङ्कामया यया त्वा कामयते तया (गिरा =वाण्या), अत्र द्वितीयैकवचनस्याऽलुक् १८ ११७ [युष्मद्-कामयापदयो समास । 'प्रत्ययोत्तरपदयोश्च' इति त्वादेश]

त्वादत्तेभिः त्वया दत्तैः (भेषजैः —औषधैः) २ ३३ २ [युष्मद् दत्तपदयो समास । 'बहुल छन्दसि' सूत्रेण भिस ऐस् न भवति]

त्वादातम् त्वया शोधित तेन सुवर्ण वा (नव = द्रव्यम्) १ १० ७ त्वया शोधितम् धन =आरोग्यकरसुवर्णमन्न धन वा) ३ ८० ९ त्वया दानवम् (पशुम्) ५ ७.१० [युष्मद्-आदातपदयो समास । आदातम्—आङ्—दुदाञ् दाने (जु०) दैप् शोधने (भ्वा०) धातोर्वा क्त । छान्दसत्वाद् 'अच उपसर्गात्' इति त्वादेशो न भवति । त्वादातम्= त्वया दातव्यम् नि० ४ ८]

त्वाद्रूतास त्व दूतो येषा ते (विद्वासो जना) २ १० ९ [युष्मद्-दूतपदयो समासे जसोऽसुक्]

त्वायत. त्वामात्मान त्वाऽऽत्मान इच्छत (जन्तु = स्तोतृजनस्य) १ ५३ ३ त्वा कामयमानान् (दाशुष = दातृजनान्) २ २ २ **त्वायता**=त्वा प्राप्तेन (मनसा — विज्ञानेन) ६ ८० ३ **त्वायन्त.**=त्वा कामयमाना (प्रजापुरुषा) ७ १८ १२ [युष्मद्-पदाद् इच्छायामर्थे क्यच् । 'प्रत्ययोत्तरपदयोश्चे' ति त्वादेश । 'न छन्दस्यपुत्रस्य' अ० ७ ४ ३५ सूत्रेणेत्त्वप्रतिषेध । क्यजन्ताच्छतृप्रत्यय]

त्वायव. त्वा न योग्या (गुणा =मूर्तिमन्त पदार्था) प्र०—'छन्दसीण, उ० १ १२ इत्युणादिके उणप्रत्यये कृते आयुरिति सिध्यति, त्वदित्यत्र 'छान्दसो वर्णलोपो वा, इत्यनेन तकारलोप । मूर्त्तपक्षे तन्निमित्तप्राप्ताऽऽयुप (मूर्त्तिमन्त पदार्था) १ ३४ त्वत्कामयमाना (जना) ३ ४१ ७ ये त्वा युवन्ति मिलन्ति ते (पदार्था) २० ८७ **त्वायुभि.**= त्वा कामयमानै (नृभि =नेतृभिर्जनै) ८ १६ १६ **त्वायु:**=त्वा कामयमान (प्रजाजन:) ६ ४७ १० [युष्मद्-पदाद् इच्छायामर्थे क्यचि 'क्याच्छन्दसि' सूत्रेण उ प्रत्यय । युष्मद्-आयुस्पदयोर्वा समास । युष्मद्-यवपदयोर्वा समास यव =यु मिश्रणेऽमिश्रणे च (अदा०) धातोरच् प्रत्यय]

त्र्युदायम् य मनोदेह-वचनैरुदायन्ति तम् (सोमम्=ऐश्वर्यम्) ४ ३७ ३ [त्रि-उदायपदयो समास । उदाय उत्-आङ् पूर्वाद् या प्रापणे (अदा०) धातो क प्रत्ययः]

त्र्युधा त्रीणि कारण-सूक्ष्म-स्थूलान्यूधासि यस्मिन् स (परमेश्वर), प्र०—अत्र वर्णव्यत्ययेन ह्रस्व ३ ५६ ३ [त्रि-ऊधस् पदयो समासे छान्दस ह्रस्वत्वम् । ऊवस्=वह प्रापणे (भ्वा०) धातोर्वाहु० औणा० असुनुप्रत्यय । धातो सम्प्रसारणे कृते दीर्घत्व धकारश्चान्तादेश]

त्वक् यस्त्वचति सवृणोति स (ईश्वर सूर्यो वायुर्वा) ४ ३० त्वचति सवृणोत्यनया सा १ १६. त्वग्वत्सेविनम् (व्यवहारम्) १ १४ स्पर्शेन्द्रियसुखम् ७ ४७ **त्वचम्**=त्वगिन्द्रियम् १ ७६ ३ शरीराऽवयवम् १ २२ सम्पर्कमिन्द्रियम् १ १३० ८ त्वगाच्छादक रक्षकवर्म ५ ३३ ७ आच्छादकम् (जनम्) १ १२६ ३ **त्वचः**=वाच ४ १७ १४ **त्वचा**=मास-रुधिरादीना सवरकेणेन्द्रियेण २५ ६ **त्वचि**=त्वगिन्द्रिये १ १४५ ५ उपरिभागे १६ ८२ सवरणे २३ ३७ **त्वचे**=शरीराऽऽवरणदाहाय, तदन्तराऽऽवरणदाहाय ३६ १० [तनु विस्तारे (तना०) धातो 'तनोतेरनश्च व' उ० २ ६३ सूत्रेण चिक्प्रत्यय । धातोरनुभागस्य स्थाने वकारादेश । त्वच् सवरणे धातोर्वा क्विप्प्रत्यय । त्वक् प्रस्ताव जै० उ० १ ३६ ६ त्वक् सूददोहा श० ८ १४ ५]

त्वक्षसा सूक्ष्मीकरणेन ६ १८ ६ शत्रुओ के बल के छेदक बल से, आर्याभि० १ ३२, ऋ० १ ७ १० १५ रवेन बलेन सामर्थ्येन, प्र०—त्वक्ष इति बलनाम, निघ० २ ६, १ १०० १५ तीव्रेण (वीर्येण=बलेन) ४ २७ २ [त्वक्ष बलनाम निघ० २ ६ त्वक्षू तनूकरणे (भ्वा०) धातोरौणादिकोऽसुनुप्रत्यय]

त्वक्षीयसा प्रदीप्तेन (वयसा=आयुषा) २ ३३ ६

त्वद्रिक् त्वा प्रति यतमान (अध्यापको जन) ५ ३ १२

त्वयतायै त्वया प्रयत्नेन साधितायै (इषे=इच्छासिद्धयेऽन्नप्राप्तये वा) ७ २१ १० यया त्वस्मिन् यतते तस्यै (इषे=अन्नाद्यै) ७ २० १० [युष्मद्-यतापदयो समास । 'प्रत्ययोत्तरपदयोश्च' सूत्रेण त्वादेश । यती प्रयत्ने (भ्वा०) धातोरौणादिकोऽन् प्रत्यये स्त्रिया टापि यताशब्द सिध्यति]

त्वष्ट: १ शत्रु-बलच्छेत (देव=दिव्यविद्यासम्पन्न सेनाध्यक्ष) ६ २० सर्वदु खच्छिन् (अ०—सभापते) ६ ७ देदीप्यमान (विद्वज्जन) २६ २४ विच्छेदक (विद्वज्जन) २ ३६ ३ छेदक (जन) ३ ४६ विद्याप्रापक (देव=विद्वज्जन) ७ २ ६ **त्वष्टा**=त्वक्षति तनूकरोति दु खानि, प्रलये सर्वान् पदार्थान् छिनत्ति वा स जगदीश्वर २ २४ निर्माता (बृहस्पति=परमेश्वर) २ २३ १७ विच्छेदकोऽग्नि १८ १७ सूर्य, ऋ० भू० २८३, १ ३२ २ सर्वतो विद्यया प्रदीप्त (विद्वान् जन) ४ ३१ ५ दु खविच्छेदक (ईश्वर) २१ ५५ छेत्ता (सेनापति) १ ८० १४ विविधरूपस्य निर्माता (पुरुष) २ ३ ६ रचनकर्त्ता (परमेश्वर), ऋ० भू० १३०, ३१ १७ प्रकाशक (देव=विद्वान् जन) ३ ५४ १२ तनूकर्त्ता (विद्वान् जन) १ १६१ ४ छेत्ता सूर्य इव विद्वान् १ १६१ ५ मेधाऽवयवाना मूर्त्तद्रव्याणा च छेत्ता (सूर्य) १ ५२ ७ विद्या-धर्मेण राजमानः (विद्वान् जन) १ १४२ १० विद्यया प्रकाशित ईश्वर २७ २० ज्ञाता (चतुरो जन) ४ ३३ ६ शिक्षक (विद्वान् जन) ४ ३३ ५ विद्याऽऽदि-सद्गुणै प्रकाशमान अ०—विद्वान् जन) २६ ६ विद्युदिव वर्तमानो विद्वान् (जन) २० ४४ प्रकाशयिता (सूर्य) १ ६१ ६ सर्ववस्तु-विच्छेदकोऽग्निरिव परीक्षको विद्वान् (जन) ७ ३५.६ स्वाऽऽत्मप्रकाशित (ईश्वर) २६ ६ दीप्तिमत्त्वेन छेदक (इन्द्र=सूर्य) १ ८५ ६ अविद्याच्छेदक (विद्वान् जन) ८ १६ वेगाऽऽदिगुणविद्यावित् (विद्वान् जन) ६ ८ सर्वव्यवहाराणा तनूकर्त्ता (अध्यापको गृहपति) ८ १४ सुखविस्तारक (गृहपति=गृहस्थो जन), भा०—दुखिना दु खच्छेदनम् ८ १७ प्रकाशमान (इन्द्र=सूर्य) १ १८६ ६ सुरूपसाधक (विद्वान् जन) १ १६२ ३ जेमे बिजली सब को व्याप्त हो रही है, वैसे तू (शुभानने=पत्नि), स० वि० १२१, अथर्व० १४ १ ५३ दीप्तिमत्त्वेन छेदक (इन्द्र=सूर्य), प्र०—'त्विषेर्देवतायामकारश्चोपधाया अनिट्त्वञ्च' अ० ३ २ १३५ अनेन वार्त्तिकेन त्विषधातोस्तृन् १ ८५ ६ **त्वष्टारम्**=तेजस्विनम् (शत्रु जनम्) ३ ४८.४ दोषविच्छेदकम्, भा०—रोगनिवारकम् (भिषज=वैद्यम्) २८ ६ देदीप्यमानम् (पुरुषम्) २६ ३० छेदनकर्त्तारं सूर्य शिल्पिन वा १ २२ ६ दु खाना छेदक सर्वपदार्थाना विभाजितार वा (परमात्मान भौतिकमग्नि वा) १ १३ १० वियोग-सयोगादिकर्त्तारम् (देव=विद्वाम जनम्) २६ ३४ दु खच्छेत्तारम् (भिषज=वैद्यवरम्) २१ ३८ **त्वष्टुः**=छेदकात् कालात् १ ६५ ५ विद्युतो वायोर्वा १ ६५ २. प्रदीप्तस्य (सूर्यादि) २५ ५ मूर्त्तद्रव्यच्छेदकस्य (अग्ने) १ ८४ ५ प्रकाशस्य ४ १८ ३ प्रदीप्ताच्छिक्षणात्, भा०—

(रूपम्) १ ११४ ५ विद्यान्यायदीप्तिमन्तम् (रुद्र = शत्रुयोद्धारम्) १ ११४ ४ प्रकाशितम् (वच = वचनम्), ५ ८ प्रकाशकम् (वच = शब्दनम्) ५ ८ प्रदीप्तम् (वच = परिभाषणम्) ५ ८ स्वकान्त्या प्रकृष्टम् (तम = अन्धकार) ३४ ३२ दीप्तिमत् (शर्ध = बलम्) ६ ४८ १५ कमनीयम् (रूपम्) १ ६५ ८ प्रकाशयुक्तम् (क्षत्र = धन राज्य वा) ५ ३४ ६ सूर्य्यदीप्तिम् १ १६८ ६ देदीप्यमानम् (शर्व = बलम्) ५ ५६ ९ अग्न्यादिप्रकाशवद्द्रव्ययुक्तम् (मारुत गण + मरुतामिम समूहम्) १ ३८ १५ **त्वेषस्य** = क्रोधाऽग्निना प्रदीप्तस्य (अघायो = दुष्टाचारिणो जनस्य) १६ ५० **त्वेषः** = प्रदीप्तस्वभाव (अग्नि) १ ६६ ३ यस्त्वेषति प्रदीप्तो भवति स (सभाध्यक्ष) १ ७० ६ दीप्तियुक्त (अग्नि = विद्यादिकार्यकारणस्य स्वरूप) २ ९ १. दीप्तिमान् (विद्वद्राजजन) ५ ८७ ५ देदीप्यमान (राजा) ६ ३ ८ **त्वेषाः** = विद्यासुशीलप्रकाशा १ १४३ ३ बाह्याभ्यन्तरघर्षणेनोत्पन्नविद्युदग्निना प्रदीप्ता (रुद्रियास = वायव) १ ३८ ७ [त्विष दीप्तौ (भ्वा०) धातोर्भावे घञ् प्रत्यय । अथवा कर्त्तरि अच्-प्रत्यय । औणादिको वा अन्प्रत्यय । त्वेष स भानुरर्णवो नृचक्षा इति महान्त्स भानुरर्णवो नृचक्षा इत्येतत् (त्वेष = महान्) श० ७ १ १ २३ एनश्च वैरहत्यञ्च त्वेष वच तै० १ ५ ९ ६]

त्वेषसा विद्यान्याय-बलप्रकाशेन कान्त्या वा १ ६१ ११ [त्विष दीप्तौ (भ्वा०) धातोरौणादिकोऽसुन् प्रत्यय]

त्वेषथात् प्रदीप्तात् (व्यवहारात्) १ १४१ ८ [त्विष दीप्तौ (भ्वा०) धातोर्बाहु० औणादिकोऽथ प्रत्यय]

त्वेषद्युम्नाय प्रकाशमानाय यशसे १ ३७ ४ [त्वेष-द्युम्नपदयो समास । द्युम्नम् धननाम निघ० २ १०.]

त्वेषनृम्णः त्वेष सुप्रकाशित नृम्ण धन यस्य स (अ०—वीर), भा०—वीरत्वम् ३ ३ ८० [त्वेष-नृम्णपदयो समास । नृम्णम् बलनाम निघ० २ ९ धननाम निघ० २ १० त्वेषनृम्ण दीप्तिनृम्ण नि० १४ २४]

त्वेषप्रतीका त्वेषस्य प्रकाशस्य प्रतीतिकारिका (प्राप्तविद्यासुशिक्षा स्त्री) १ १६७ ४ [त्वेष-प्रतीकपदयो समासे स्त्रिया टाप् । त्वेषप्रतीका भयप्रतीका, महाप्रतीका-दीप्तप्रतीका वा नि० १० २१]

त्वेषयामा. त्वेषे दीप्तौ सत्या यामा गमन येषान्ते (रथा) १ १६६ ५ [त्वेष-यामपदयो समास । याम या प्रापणे (अदा०) धातोरौणादिको मनुप्रत्यय]

त्वेषरथः त्वेष प्रकाशवान् रथो यस्य स (मनुष्याणा गण) ५ ६१.१३ [त्वेष-रथपदयो समास]

त्वेषसन्दृक् यस्त्वेष न्यायप्रकाश मपश्यति दर्शयति वा (इन्द्र = राजा) ६ २२ ९ **त्वेषसन्दृशः** = त्वेष दीप्ति पश्यन्ति ते सम्यग् दर्शयितार (नर = नेतारो जना) १ ८५ ८ ये त्वेष सपश्यन्ति (विद्वज्जना) ५ ५७ ५ [त्वेषोपपदे सम्पूर्वाद् दृशिर् प्रेक्षणे (भ्वा०) धातो क्विन् प्रत्यय]

त्वेषा प्रदीप्ति १ १६८ ७ [त्विष दीप्तौ (भ्वा०) धातोर्भावे घञ्-प्रत्ययान्तात् स्त्रिया टाप्]

त्वेषासः प्रकाशमाना (श्येनास = अश्वा) ४ ६ १० त्विषन्ति दीप्यन्ते यास्ता (अर्चय = दीप्तय) १ ३६ २० [त्विष दीप्तौ (भ्वा०) धातोर्घञ्-प्रत्ययान्तात् प्रथमा बहु-बहुवचने जसोऽसुक् । त्विष धातो कर्त्तरि अच् वा]

त्वेषी प्रकाशमाना (समृति = सम्यक् सत्यक्रियावान् जन) ७ ६० १० [त्विष दीप्तौ (भ्वा०) धातोर्घञ्प्रत्यये त्वेष । ततो मत्वर्थे इनि प्रत्यय]

त्वेष्येण त्विषि प्रदीपने भवेन (बलेन) ७ ५८ २ [त्वेषप्राति० भवार्थे यत्]

त्वोतयः त्वया रक्षिता (मनुष्या) ५ ६५ ५ [युष्मद्-ऊतिपदयो समास । ऊति = अवरक्षणादिषु धातो क्तिन्]

त्वोतः त्वा कामयमान (जन) ३ १९ ३ युष्माभि-रुत सङ्गमित (अग्नि) १ ७४ ८ त्वया रक्षित (मनुष्य) ३ ५९ २ **त्वोताः** = त्वया पालिता (प्रजाजना) ६ १९ १३ त्वया रक्षिता (प्रजा) ५ ३ ६ त्वया कृत-रक्षा (मनुष्या) १ ७३ ९ [युष्मद्-ऊतपदयो समास । ऊत = अवरक्षणादिषु (भ्वा०) धातो क्तप्रत्यय । आगम-शासनस्यानित्यत्वाद् इट् न भवति]

त्वोतास. त्वया रक्षिता वर्धिता (प्रजाजना) ४ २९ ५ त्वया बल प्रापिता (धार्मिका शूरा जना) १ ८ ३ त्वया जगदीश्वरेण रक्षिता सन्त (जना) १ ८ २ [त्वोत इति व्याख्यातम् । तत प्रथमाबहुवचने जसोऽसुग्-आगम]

त्सरत् विरुद्ध गच्छति १ ७१ ५ [त्सर छद्मगतौ (भ्वा०) धातोर्लेटि रूपम्]

त्सरुः कठिनो रोग ७ ५० २ कुटिलगति (रोग) ७ ५० १ कुटिलो रोग ७ ५० ३ [त्सर छद्मगतौ (भ्वा०) धातो 'भृमृशीङ्०' उ० १ ७ सूत्रेण उ प्रत्यय]

त्सारी कुटिलगामी (विद्वान् जन) १ १३४.५ [त्सर छद्मगतौ (भ्वा०) धातो 'छन्दसि वा' इति नियमान्

त्वाया त्वा प्राप्ते (पृथिवीद्यावा=भूमिविद्युतौ) ४६ ५ त्वत्कामनया २ १८ ६ त्वया, प्र०—अत्र 'सुपा लुक्०' इति तृतीयास्थानेऽयाजादेश १ १०१ ८ त्वयि, ०—अत्र विभक्ते 'सुपा सुलुग्०' इत्ययाजादेश ३२ १२ यस्त्वा कामयते (अग्नि=राजा) ४ २ ६ दीयया (मत्या) ७ २६ ३ तव नीत्या ७ १८ २१ **ायाः**=त्वा प्राप्ता (प्रजाजना), प्र०—अत्र विभक्ते-कारादेश ४ २ १४ त्वया सहिता (मनुष्या.) १०१ ६ **त्वाभि.**=त्वदीयाभि (ऊतिभि=रक्षाभि) २० २ [युष्मत्प्राति० इच्छाया क्यच्। 'तस्येदम्' इत्यण् । युष्मदस्त्वादेश]

त्वावत. त्वत्सदृशान् (नॄन्=सत्कर्त्तव्यान् जनान्) २० १ त्वय। सदृशस्य (शूरवीरजनस्य) ७ २१ ८ त्सदृशस्य (ईश्वरस्य विदुषो वा) १ ६१.८ त्वया रक्षिता. खाय=सुहृज्जना) ४ ३२ ६ **त्वावान्**=त्वादृश भाध्यक्ष), प्र०—अत्र 'वतुप्प्रकरणे युष्मदस्मद्भ्या न्दसि सादृश्योपसङ्ख्यानम्, अ० ५ २ ३६ इति सादृश्यार्थे तुप् १ ३० १४ त्वया सदृश (इन्द्र=जगदीश्वर) ३२ २३ त्वत्सदृश (कश्चिदपि पदार्थ) १ ५२ १३ युष्मत्प्राति० सादृश्येऽर्थे 'वतुप्प्रकरणे युष्मदस्मद्भ्या न्दसि सादृश्योपसङ्ख्यानम्' अ० ५ २ ३६ वा० सूत्रेण तुप्। 'प्रत्ययोत्तरपदयोश्च' सूत्रेण त्वादेश । 'आ सर्वनाम्न' ० ६ ३ ६१ सूत्रेणाकारादेश]

त्वावसुम् त्वया प्राप्तधनम् (प्रजाजनम्) ७ ३२ १४ युष्मद्-वसुपदयो समास । वसु धननाम निघ० २ १०]

त्वावृधा या त्वा वर्धयते सा (देवी=दिव्यगुणैर्वर्त्त-माना स्त्री) १ ५६ ५ [युष्मदुपपदे वृधु वृद्धौ (भ्वा०) धातो क्विप् 'सुपा सुलुग्०' इत्याकारादेश]

त्वाष्ट्रम् तूर्ण य सकला विद्या अश्नुते तस्येद विज्ञानम् ०—त्वष्टा तूर्णमश्नुत इति नैरुक्ता, नि० ८ १३, १११७ २२ त्वष्ट्रा निर्मितम् (प्रजासुखम्) २ ११ १६ वष्टु सूर्यस्येद तेज ३ ७ ४ **त्वाष्ट्राः**=त्वष्टृदेवताका, ०—सूर्यगुणा पशव पक्षिणश्च २४ ४ [त्वष्टृपद याख्यातम् । तत 'तस्येदम्' 'सास्य देवता' इत्येतयो-र्थयोरण्प्रत्यय । त्वाष्ट्रोऽसुर इत्यैतिहासिका नि० २ १६ वाष्ट्र वडवमालभेत पशुकाम तै० स० २ १ ८ ३ त्वाष्ट्र शकपाल पुरोडाश (श्रीरपश्यत्) श० ११ ४ ३ ५ त्वाष्ट्र-विम् (प्रजापतिरालिप्सत) श० ६ २ १ ५ त्वाष्ट्रा वै गवस्त्वष्टा पशूना प्रजनयिता मै० २ ५ ५ त्वाष्ट्राणि वै रूपाणि श० २ २ ३ ४ त्वाष्ट्रौ लोमशसक्थौ काठ० ४८ २ त्वाष्ट्र लोमसक्थ्यौ सक्थ्यो मै० ३ १३ २ रेत सिक्तिर्वै त्वाष्ट्र कौ० १६ ६. प्लीहाकर्ण शुण्ठाकर्णोऽधिरुढाकर्णास्ते त्वाष्ट्रा मै० ३ १३ ५]

त्वाहतस्य त्वया हतस्य (दुर्जनस्य) ७ ३२ ७ [युष्मद्-हतपदयो समास । हत=हन्ते क्त प्रत्यय]

त्विषः प्रतापात् ४ १७ २ प्रदीप्तस्य (दक्षस्य=बलस्य) ३८ २८ **त्विषे**=शरीरात्मदीप्तिबलाय ५ ५२ १२ [त्विष दीप्तौ (भ्वा०) धातो सम्पदादित्वात् क्विप्]

त्विषिम् प्रकाशम् २१ ५३ प्रकाशयुक्तम् (इन्द्रिय=श्रोत्रादि) २८ ४० प्रदीप्तिम् २१ ३५ विद्याप्रकाश तेजो वा १ ७१ ५ **त्विषिः**=ज्योति (आप्तो राजा) १० ५ विज्ञान-प्रकाश १० ५ दीप्ति (परमाप्त परमात्मा) १० १५ न्यायप्रदीप्तिरिव २० ५ दीप्ति, शुभगुणाना प्रकाश, सत्यगुणकामना च, ऋ० भू० १०४, अथर्व० १२ ५ ८ सत्यन्यायदीप्ति, ऋ० भू० २१८, २० ५ सद्वि-द्यादि से तेज जो आरोग्य, शरीर और आत्मा के बल से प्रकाशमान है स० वि० १४४, अथर्व० १२ ५ ८ [त्विष दीप्तौ (भ्वा०) धातोरौणादिक इन्प्रत्यय । त्विषिरित्य-प्य य दीप्तिर्नाम भवति नि० १ १७]

त्विषीमत् बह्व्यस्त्विषयो दीप्तयो विद्यन्ते यस्मिंस्तत् (सदन=स्थानम्), प्र०—अत्र 'अन्येषामपि०' इति दीर्घ. ३ ३१ १२ [त्विषीति व्याख्यातम् । ततो भूम्नि मतुप् । 'अन्येषामपि दृश्यते' इति मतुपि परे दीर्घ]

त्विषीमतीम् प्रशस्तविद्याप्रकाशयुक्ताम् (वाचम्) ५ ६३ ६ [त्विषीमदिति व्याख्यातम् । तत स्त्रिया ङीप्-प्रत्यय]

त्विषीमते बह्व्यस्त्विषयो न्यायदीप्तयो विद्यन्ते यस्य तस्मै (सेनाधीशाय), प्र०—अत्र 'शरादीना च' इति दीर्घ १६ १० प्रशस्तप्रकाशान्त करणवते (इन्द्राय=अध्यापकायोपदेशकाय वा) १ ५५ ५ **त्विषीमन्त**=विद्याविनयादिप्रकाशयुक्ता (मरुत=शूरवीरा मनुष्या) ६ ६६ १० **त्विषीमान्**=बहुदीप्तियुक्त (इन्द्र=विद्युत्) २ २२ २ [त्विषिपद व्याख्यातम् । ततो भूम्नि मतुबन्तस्य रूपाणि]

त्वेनम् केन अन्येन वा ४ १८ २ [त्व इति व्याख्या-तम् । तस्य छान्दस रूपम्]

त्वेषम् प्रकाशम् ३ २६ ५ दीप्तिमन्तम् (विद्वासम्) ५ ५८ २ सद्गुण-प्रकाशम् ५ ५३ १० प्रकाशमानम्

दक्षिणत्रा दक्षिणे ६ १८ ६ [दक्षिणप्राति० सप्तम्यन्तात् 'देवमनुष्यपुरुष०' अ० ५ ४ ५६ सूत्रेण बहुलवचनात् त्रा-प्रत्यय]

दक्षिणया ज्ञानसाधिकयाऽज्ञाननाशिकया (धिया=प्रज्ञया कर्मणा वा) ४ २३ सुशिक्षितया सेनया १ १२३ ५ **दक्षिणा**=दक्षन्ते वर्धन्ते यया सा (प्रतिष्ठा श्रीर्वा) प्र०—अत्र 'द्रुदक्षिभ्यामिनन्, उ० २ ४६ इतीनन्प्रत्यय १ १८ ५ दक्षिणया, प्र०—अत्र विभक्तिलोप १६ ३० दक्षिणस्या दिशि ५ १ ३ दक्षिणत १५ १६ दक्षन्ते प्राप्नुवन्ति विज्ञान विजयश्च यया सा (अदिति=वाग्विद्युद् वा) ४ १६ वलकारिणी (राजनीति) २ ११ २१ विद्यासुशिक्षादानम् २ १८ ८ प्राणप्रदा (विदुषी स्त्री) २ १७ ६ सत्कार से, स० वि० १८८, १६ ३० दातु योग्या (भा०—सुखदु ख-फला गति) १ १६८ ७ **दक्षिणाभिः**=दानै ३ ६२ ३ **दक्षिणाम्**=वर्द्धिकाम् (धनादिरूपाम्) ६ ३७ ४ प्रतिष्ठा श्रिय वा १६ ३० यदा सर्वत सत्कृत फलवान् भवति, तदा साऽस्य दक्षिणा ताम्, ऋ० भू० १००, १६ ३० सत्कारपूर्वक धनादि को, स० वि० १८८, १६ ३० दक्षिणा दिगम् १० ११ **दक्षिणाया**=दक्षिणस्याम् (धुरि) १ १६४ ६ दिश १ १२३ १ ज्ञानप्रापिकाया (उपस) ३ ५८ १ **दक्षिणायै**=दानाय २६ २ सर्वस्वदानाय, ऋ० भू० ३१०, २६ २ या पूर्वमुखस्य पुरुषस्य दक्षिणबाहुसन्निधौ वर्त्तते, तस्यै (दिशे) २२ २४ **दक्षिणाः**=दक्षन्ते दीयन्ते सुपात्रेभ्यस्ता (प्रतिष्ठा श्रियो वा) १८ ४२ दानानि ३ ३६ ५ कर्मानुसारेण दानानि, भा०—मानादि-व्यवहारा १८ ६४ [दक्षिणमिति व्याख्यातम् । तत स्त्रिया टाप् । दक्षिणा दक्षते समर्द्धयतिकर्मणो व्यृद्ध समर्द्धयतीति । अपि वा प्रदक्षिणागमनात् । दिशमभिप्रेत्य दिग्घस्तप्रकृति, दक्षिणो हस्तो दक्षतेरुत्साहकर्मणा, दाशतेर्वा स्याद् दानकर्मण नि० १ ७ त (यज्ञ) देवा दक्षिणाभिरदक्षयस्तद्यदेन (यज्ञ) दक्षिणाभिरदक्षयस्तस्माद्दक्षिणा नाम श० २ २ २ २, ४ ३ ४ २ तद् यद् दक्षिणाभिर्यज्ञ दक्षयति तस्माद् दक्षिणा नाम कौ० १५ १ दक्षिणा वै यज्ञाना पुरोगवी ऐ० ६ ३५ एषा ह वै यज्ञस्य पुरोगवी यद् दक्षिणा गो० उ० ६ १४ शुभा वा एता यज्ञस्य यद् दक्षिणा ता० १६ १ १४ श्लेष्म वा एतद् यज्ञस्य यद् दक्षिणा ता० १६ १ १३ यज्ञ आयुस्तस्य दक्षिणा आयुष्कृत मै० २ ३ ४ यज्ञोऽदक्षिणो रिष्यति तस्मादाहुर्दातव्यैव यज्ञे दक्षिणा भवत्यल्पिकापि ऐ० ६ ३५ तस्मान्नादक्षिणेन हविषा यजेत श० १ २ ३ ४ नादक्षिण हवि स्यादिति ह्याहु श० ११ १ ३ ७, ११ १ ४ ४ तस्माद् ऋत्विग्भ्य एव दक्षिणा दद्यान्नानृत्विग्भ्य श० ४ ३ ४ ५ अर्वा ह स्म वै पुरा ब्राह्मणे दक्षिणा नयन्तीति अर्वा इतरेभ्य ऋत्विग्भ्य जै० उ० ३ १७ ५ तस्मादाग्नेयाय प्रथम दक्षिणा यज्ञे दीयन्ते गो० पू० २ १७ चतस्रो वै दक्षिणा हिरण्य गौर्वासोऽश्व श० ४ ३ ४ ७ अन्न दक्षिणा ऐ० ६ ३ दक्षिणा वै स्तावा (अप्सरस यजु १८ ४२) दक्षिणाभिर्हि यज्ञ स्तूयतेऽथो यो वै कश्च दक्षिणा ददाति स्तूयतऽएव स श० ६ ४ १ ११ दक्षिणा सावित्री गो० पू० १ ३३ दक्षिणासु त्वेव न सवदितव्यꣳ सवादेनैवर्त्विजोऽलोका इति श० ६ ५ २ १६ यन्माध्यन्दिने सवने दक्षिणा नीयन्ते स्वर्ग एतेन लोके हिरण्य हस्ते भवति गो० उ० ३ १७ एषा वै (दक्षिणा) दिक् पितॄणाम् श० १ २ ४ १७ घोरा वा एषा दिग् दक्षिणा शान्ता इतरा गो० १ २ १६ तस्मादेतस्या (दक्षिणस्याम्) दिश्येतौ पशू (गोश्चाजश्च) भूयिष्ठौ श० ७ ५ २ १६ तस्मादेष (वायु) दक्षिणैव भूयिष्ठ वाति श० ८ १ १ ७, ६ १ १ ७ दक्षिणया दिशा मासा पितरो मार्जयन्ताम् मै० १ ४ २ काठ० ५ ५ दक्षिणा (दिक्) ब्रह्मण श० १३ ५ ४ २४ दक्षिणामाहुर्यजुषामपाराम् तै० ३ १२ ६ १ दक्षिणामेव दिश सोमेन प्राजानन् श० ३ २ ३ १७ दक्षिणा समुद्र मै० ४ ७ ८ दक्षिणैव दिक् सर्वम् गो० १ ५ १५ पितॄणा वा एषा दिग्दक्षिणा ष० ३ १]

दक्षिणसत् यो दक्षिणे देशे सीदति स (अ०—जन) ३८ १० [दक्षिणोपपदे पद्लृ विशरणगत्यवसादनेषु (भ्वा०) धातो क्विप् । दक्षिणासदो (देवा) यमनेत्रा तै० स० १ ८ ७ १ यमनेत्रेभ्यो देवेभ्यो दक्षिणासद्भ्य स्वाहा श० ५ २ ४ ५]

दक्षिणः दक्ष प्रशस्त वल, गतिर्विद्यते यस्य तस्य (वाजिन =राज्ञ) ६ ८ [दक्ष इति व्याख्यातम् । ततो मत्वर्थे इनि प्रत्यय । दक्षिन्प्राति० षष्ठी विभक्ति]

दक्षिणाग्निः वानप्रस्थ सम्बन्धी अग्नि, स० वि० २१०, अथर्व० ६ ६ १३ [दक्षिण-अग्निपदयो समास । तस्य योऽग्नेस्तृतीयो भागस्त देवपितर पर्यगृह्णन् दक्षिणतोऽनयन् स दक्षिणाग्निरभवत् तद् दक्षिणाग्नेर् दक्षिणाग्नित्वम् काठसङ्क० १५ १३ यजुर्वेदाद् दक्षिणाग्नि (अजायत) ष० ४ १]

दक्षिणावत् दक्षिणाभिस्तुल्यम् (कार्यम्) ३ ५३ ६ [दक्षिणा व्याख्यातम् । ततस्तुल्यार्थे वति प्रत्यय]

दक्षिणावताम् प्रशसितयोर्धर्म्यधनविद्ययोर्दक्षिणा

निरुपपदादपि णिनि प्रत्यय]

दक्ष अतिचतुर (अग्ने=विद्वज्जन) ३ १४ ७ **दक्षम्**=वलम् १ १५१ ४ वल चातुर्य्यम् ३ १३ २ चतुरम् (अध्यापकमुपदेशक वा) २५ १६ विद्याचातुर्य-वलयुक्तम् (विद्वास जनम्) १ ८६ ३ **दक्षस्य**=चतुरस्य विद्यावल-युक्तस्य विदुषो जनस्य) ५ १० २ कुशलस्य जनस्य ३३ ७२ शरीराऽऽत्म-वलयुक्तस्य (पुरुषस्य) १५ ४५ चतुरस्य विद्यार्थिन (जनस्य) ३ २७ ६ **दक्षः**=चतुर (मनुष्य) १ ५६ ४ वलम्, भा०—उत्तम वलम् ३८ २७ विद्यमानशरीरात्म-वल (मर्त्य=मनुष्य) १ ६१ १४ चातुर्य्यम् १८ २ वलचातुर्य्ययुक्त (विद्वान् सभेश) १८ ५३ **दक्षाणाम्**=विद्याक्रियाकौशलेषु चतुराणाम् (विदुषा जनानाम्) १ ६५ ६ **दक्षाय**=चातुर्य्याय वलाय ५ ४३ ५ वलप्राप्तये प्र०—दक्ष इति वलनामसु पठितम्, निघ० २ ६, ३ ५४ वलाय चतुरत्वाय वा, भा०—वृद्वये ३४ ८ **दक्षेण**=वलयुक्तेन (तन्वा=शरीरेण) ४ ५६ ६ **दक्षैः**=विद्यासुशिक्षाचातुर्य्यगुणैः १ ६८ ४ विज्ञानादि-गुणैः १ ६१ २ वलैश्चतुरैर्गुणैर्वा ७ ६० ६ [दक्ष वृद्धौ शीघ्रार्थे च (भ्वा०) धातो, दक्ष गतिशासनयो (भ्वा०) धातोर्वा, दक्षते समर्द्धयतिकर्मण (नि० १ ७) धातोर्वा अच्प्रत्यय कर्त्तरि। भावे वा घञ्प्रत्यये मत्वर्थीयस्य प्रत्ययस्य लुक्। दक्ष वलनाम निघ० २ ६ आदित्यो दक्ष इत्याहु नि० ११ २० दक्षाय अपत्याय नि० ११ ३० दक्षो ह वै पार्वतिरेनेन यज्ञेनेष्ट्वा सर्वान् कामानाप कौ० ४४ स (प्रजापति) वै दक्षो नाम श० २ ४ ४ २ क्रतु दक्ष वरुण सशिशाधि (ऋ० ८ ४२ ३) इति वीर्य प्रज्ञान वरुण सशिशाधीति ऐ० १ १३ स्वैर्दक्षैर्दक्षपितेह सीदेति। स्वेन वीर्येणेह सीदेत्येतत् श० ८ २ १ ६ अथ यदस्मै तत्समृध्यते स दक्ष श० ४ १ ४ १ वरुणो दक्ष श० ४ १ ४ १ प्राणा वै दक्षा। जै० १ १५१ दक्षश्च मे वल च मे (यज्ञेन कल्पताम्) तै० स० ८ ७ १ २.]

दक्षक्रतव दक्षा शरीरात्मवलानि क्रतव प्रज्ञा कर्माणि वा येषा ते (देवा=विद्वासो जना), प्र०—दक्ष इति वलनामसु पठितम्, निघ० २ ६, ४ ११ [दक्ष-क्रतु-पदयो समास। दक्ष इति वलनाम निघ० २ ६ क्रतु= कर्मनाम निघ० २ १ प्रज्ञानाम निघ० ३ ६ दक्षक्रतू ते मैत्रावरुण (ग्रह) पातु मै० ४ ८ ७]

दक्षत वल प्राप्नुत ७ ३२ ६ **दक्षते**=वर्धते ७ १६ ६ [दक्ष गतिशासनयो (भ्वा०) धातो, दक्ष वृद्धौ शीघ्रार्थे वा (भ्वा०) धातोर्वा लोट्। व्यत्ययेन परस्मैपदम। अन्यत्र लट्]

दक्षन् दहेत् प्र०—अत्र 'वाच्छन्दसि' इति भस्त्व न १ १३० ८ [दह भस्मीकरणे (भ्वा०) धातोर्लेट्। 'सिब्-बहुल लेटि' सूत्रेण सिप्]

दक्षपतिः विद्याचातुर्य्य-पालक (काल) १ ६५ ६. [दक्ष-पतिपदयो समास। दक्ष इति व्याख्यातम्]

दक्षपिता दक्षस्य वलस्य चतुराणा भृत्याना वा पिता पालक (विद्वान् जन) १४ ३ **दक्षपितॄन्**=चतुरान् जनकानध्यापकान् वा ६ ५० २ [दक्ष-पितृपदयो समास]

दक्षसे वलाय, विद्यावलदानाय २ १ ११. आत्मवलाय १ १५१ ३ भा०—वल वर्धयितुम् २७ ४२ [दक्ष वृद्धौ शीघ्रार्थे वा (भ्वा०) धातोस्तुमर्थे असेन्प्रत्यय]

दक्षाय्य यो राजकर्मसु प्रवीण (इन्द्र=सेनेश) १ १२६ २ दक्षश्चतुरो विद्वानिव (विद्युदग्नि) ७ १ २. विज्ञानकारक (परमेश्वरो विद्वान् वा) १ ६१ ३ हिंसक (अग्नि=पावक) २ ४ ३ [दक्ष गतिहिंसनयो (भ्वा०) दक्ष वृद्धौ शीघ्रार्थे वा (भ्वा०) धातोर्वा 'श्रुदक्षि०' उ० ३ ६६ सूत्रेण आय्य प्रत्यय]

दक्षासः विज्ञान-वलवृद्धा शीघ्रकारिण (मेधाविनो जना) १ ५१ २ [दक्ष इति व्याख्यातम्। ततो जसोऽसुगागम]

दक्षिणम् उत्तमाऽङ्ग, दक्षिणभागम् ८ २७ **दक्षिणः**=वृष्टे प्रापक (वायु), प्र०—दक्षधातोर्गत्यर्थत्वादत्र प्राप्त्यर्थो गृह्यते २ ३ प्राप्त (वाहु=यज्ञ) प्र०—'दक्ष गतिहिंसनयो, इत्यस्माद् 'द्रुदक्षिभ्यामिनन्' उ० २ ५० इतीनन्प्रत्यय अनेन गतेरन्तर्गत प्राप्त्यर्थो गृह्यते १ २४ एको दक्षिणपार्श्वस्थ (अश्व) १ ८२ ५ **दक्षिणात्**=दक्षिणपार्श्वात् ५ १६ **दक्षिणे**=दक्षिणभागस्थेन सैन्येन प्र०—अत्र 'सुपा सुलुक्०' इति तृतीयास्थाने शे आदेश १ १०० ६ [दक्ष गतिहिंसनयो (भ्वा०) धातो 'द्रुदक्षिभ्यामिनन्' उ० २ ५० सूत्रेण इनन्प्रत्यय। दक्षिणो वा अर्द्ध आत्मनो (शरीरस्य) वीर्यवत्तर ता० ५ १ १३]

दक्षिणतः दक्षिणप्रदेशात् ५ ११ दक्षिणपार्श्वत १६ ६२ दक्षिणायन-कालविभागात् १ ६५ ६ दक्षिणाद् देशात् ३७ १२ दक्षिणपार्श्वे २ ४२ ३ [दक्षिण व्याख्यातम्' तत 'आद्यादिभ्य उपसंख्यानम्' अ० ५ ४ ४४ वा० सूत्रेण तसि]

दक्षिणतः कपर्दाः दक्षिणत कपर्दा जटाजूटा येषा ब्रह्मचारिणा ते, (अध्यापकाऽध्येतार) ८ ३३ १ [दक्षिणत-कपर्दपदयो समास। दक्षिणत पद व्याख्यातम्]

दाता (पिता) ५ २ ३ [डुदाञ् दाने (जु०) धातोर्लिट कानच्]

ददाभ हिनम्ति ५ ३२ ७ [दभ्नोति वधकर्मा निघ० २ १९ धातोर्लिट् सामान्ये]

ददार विदृणाति ६ २७ ४ [दृ हिंसायाम् (भ्वा०) धातोर्लिट्]

ददाश दाशति ददाति २ २७ १२ दाशति, प्र०—अत्र लडर्थे लिट् १ ३६ ४ **ददाशत्**=दद्यात् ५ ३७ ५ दाशति, प्र०—अत्र लडर्थे लेट् 'बहुल छन्दसि' इति शप स्थाने श्लु १ ९१ २० ददाति ३४ २१ दाशेत् ७ २० ८ **ददाशति**=ददाति, प्र०—अत्र 'बहुल छन्दसि' इति शप श्लु १ १५६ २ **ददाशः**=ददासि, प्र०—अत्र दाशृ धातोर्लेटो मध्यमैकवचने शप श्लु १ ९४ १५ **ददाशिम**=दद्याम १ ८६ ६ **ददाशुः**=ददति ४ ८ ५ [दाशृ दाने (भ्वा०) धातोर्लिट्। अन्यत्र लेटि शप श्लुश्च छान्दसम्। अन्यत्र लिट् च]

ददाशुषे दात्रे (सज्जनाय) दातु शीलाय (विदुषे जनाय) १ ११२ २० दातु (विदुषो जनस्य) १ १४७ १ [दाशृ दाने (भ्वा०) धातोर्लिट क्वसु प्रत्यय। तत चतुर्थी विभक्ति]

ददिः सुखाना दाता (विद्वान् जन) १ ११० ७ दाता (द्रविणोदा=विद्यादेर्धनप्रदो जगदीश्वर), प्र०—अत्र 'आदृगम०' अ० ३ २ १७१ इति डुदाञ् धातो कि प्रत्यय १ १५ १० [डुदाञ् दाने (जु०) धातो 'आदृगमहनजन०' अ० ३ २ १७१ सूत्रेण कि. प्रत्ययो लिट्वच्च]

ददीमहि गृह्णीम, प्र०—अत्र लडर्थे लिङ् १ ८ ३ दद्याम २ २३ ९ **ददीरन्**=प्रयच्छेयु ७ ४८ ४ **ददुः**=दत्तवन्त स्यु ५ १८ ५ प्रयच्छेयु ५ ५२ १७ दद्यु ३ ५३ १६ ददति ७ १३ १० [डुदाञ् दाने (जु०) धातोर्लिङ्। ददुरित्यत्र तु लिट्]

ददुषः दत्तवत (ऐश्वर्ययुक्तस्य राज्ञ) १ ५४ ८. **ददुषाम्**=दातृणाम् (सज्जनानाम्) ६ ८ ७ [डुदाञ् दाने (जु०) धातोर्लिट क्वसु]

ददृक्षे दृश्यते ६ ६४ २ [दृशिर् प्रेक्षणे (भ्वा०) धातोर्लिट् कर्मणि। विकरणव्यत्ययेन क्स प्रत्यय]

ददृवांसः विदारका (मनुष्या=मननशीला जना) ४ १ १४ [दृ हिंसायाम् (भ्वा०) धातोर्लिट क्वसु]

ददृशानम् द्रष्टव्यम् (ओज=वेगवद्बलम्) ४ ७ १०

ददृशानः=दृष्टवान् सन् (विद्वान् जन) १ १२७ ११. सप्रेक्षक (इन्द्र=ईश्वर) ४ १७ १७ [दृशिर् प्रेक्षणे (भ्वा०) धातोर्लिट स्थाने कानच्-प्रत्यय]

ददृशे दृश्यते १ ९५ १ पश्यामि ६ ४४ १० [दृशिर् प्रेक्षणे (भ्वा०) धातोर्लिट् कर्मणि]

ददृश्रे दृश्यन्ते, प्र०—अत्र दृशेर्लिटि 'इरयो रे' अ० ६ ४ ७६ इति सूत्रेणाऽस्य सिद्धि १ २४ १० इति पश्येयु ३ ५४ ५ [दृशिर् प्रेक्षणे (भ्वा०) धातोर्लिट् कर्मणि। 'इरयो रे' अ० ६ ४ ७६ सूत्रेण 'रे' आदेश। ददृश्रे दृश्यते नि० १८ २७]

ददृश्वान् दृष्टवान् (त्वष्टा=ज्ञाता मनुष्य) ४ ३३ ६ [दृशिर् प्रेक्षणे (भ्वा०) धातोर्लिट स्थाने क्वसु प्रत्यय]

ददृहाणम् दृहितु शीलम् (पर्वत=मेघम्) १ ८५ १० **ददृहाणः**=हिसन् (राजा) प्र०—अत्र व्यत्ययेनाऽऽत्मनेपदम्, तुजादित्वाद् दैर्घ्यम् 'बहुल छन्दसि' इति शप श्लु १ १३० ४ वर्धमान (राजा) ४ २६ ६ [दृहि वृद्धौ (भ्वा०) धातो शानच्। व्यत्ययेनात्मनेपदम्। 'बहुल छन्दसी' ति शप श्लु। धातूनामनेकार्थत्वाद् हिंसायामर्थेऽपि]

ददृहि विदारय, प्र०—अत्र श्न श्लु 'तुजादीनाम्०' इत्यभ्यासदीर्घ १ १३३ ६ [दृ विदारणे (क्र्या०) धातोर्लोट्। 'बहुलं छन्दसी' ति शप स्थानीयस्य श्न श्लु]

ददे गृह्णामि २२ १ ददामि ४.३७.३. ददाति ७ ६ ७ गृह्णीयात् ४ १५ ८ दद्याम् ४ ३४ ४ स्वीकरोमि १ २४ **ददौ**=ददाति ४ ५ २ [डुदाञ् दाने (जु०) धातोर्लट् अन्यत्र लिट्]

दद्धि देहि ४ २० ७ धर, प्र०—अत्र 'दध धारणे' इत्यस्माद् 'बहुल छन्दसि' इति शपो लुग्, व्यत्ययेन परस्मैपदञ्च १ १७६ ४ याचस्व प्र०—दद्धीति याच्ञाकर्मा, निघ० ३ १९, २ १७ ७ [दध धारणे (भ्वा०) धातोर्लोट्। व्यत्ययेन परस्मैपदम्। 'बहुल छन्दसी' ति शपो लुक्। डुदाञ् दाने (जु०) धातोर्वा लोटि छान्दस रूपम्। दद्धि याच्ञाकर्मा निघ० ३ १९]

दद्भिः दन्तै २५ १ [दन्तप्राति० भिसि 'पद्दन्नोमास्०' अ० ६ १ ६३ सूत्रेण दत् आदेश]

दद्रिरे विदीर्णान् कुर्वन्ति, प्र०—व्यत्ययेनाऽत्राऽऽत्मनेपदम् ३३ ७० [दृ विदारणे (क्र्या०) धातोर्लिट्। व्यत्ययेनात्मनेपदम्]

दद्रुः द्रान्ति १ ६२ ११ गच्छन्ति प्राप्नुवन्ति ४ १९ ५ [द्रा कुत्सायां गतौ (अदा०) धातोर्लिटि प्रथमाबहुवचनम्]

दधत् दधाति, प्र०—दधातेर्लेटो रूपम् १८ ६५

नं येपा तेपाम्, धर्मोपार्जिता धनविद्यादयो वहव पदार्था द्यन्ते येपा तेपाम् (विदुपा जनानाम्) प्र०—ग्रत्र प्र-साया मतुप् १ १२५ ६ **दक्षिणावन्त.**=वहुविद्यादान-क्ता, वह्वभयदानदातार (ब्राह्मणा जना) १.१२५ ६ दक्षिणा व्याख्यानम्। तत प्रगसाया मतुप्। 'मादुप-ायाश्च मतोर्व ०' ग्र० ८ २ ६ सूत्रेण मतुपो मकारस्य कारादेग]

दक्षिणावाट् या दक्षिणा दिश वहति सा (प्राची=र्वा दिक्) ३ ६ १ ['दक्षिणा' इत्युपपदे वह प्रापणे भ्वा०) धातो 'वहश्च' ग्र० ३ २ ६४ सूत्रेण ण्वि प्रत्यय]

दक्षिणावान् प्रगस्ता दक्षिणा विद्यते यस्य स राजा) ६ २६ ३ [*दक्षिणा व्याख्यातम्। तत प्रशसाया* नतुप्]

दक्षिणावृतः या दक्षिणा वृण्वन्ति ता (थिय) १ १४४ १ [दक्षिणोपपदे वृज् वरणे (भ्वा०) धातो कर्त्तरि क्विप्]

दक्षिणासदः ये दक्षिणस्या दिशि ग्रवतिष्ठन्ते (देवा = योगिनो न्यायाधीशा) ६ ३६ **दक्षिणासद्भ्यः**=ये दक्षिण-स्या दिशि सीदन्ति तेभ्य (देवेभ्य =विपश्चिद्भ्यो जनेभ्य) ९ ३५ ['दक्षिणा' इत्युपपदे षद्लृ विशरणगत्यवसादनेपु (भ्वा०) धातो क्विप्-प्रत्यय कर्त्तरि]

दक्षिणित् दक्षिणेन पार्श्वेनैति गच्छतीति (इन्द्र = शत्रुविदारको राजा) ५ ३६ ४ [दक्षिणोपपदे इण् गतौ (ग्रदा०) धातो क्विप्। पूर्वपदस्याकारस्य लोपश्छान्दस]

दग्धा दाहक (ग्रग्नि) ५ ९ ४ [दह भस्मीकरणे (भ्वा०) धातो कर्त्तरि तृच्प्रत्यय]

दघ्या. तिरस्कुरु १ १२३ ५ [दघ घातने पालने च (जु०) धातोर्लिङ्। 'वहुल छन्दसी' ति ग्रपो लुक्]

दङ्क्ष्णवः मास-घासादीना दङ्क्षणशीला व्याघ्रादय, भा०—सिंहादिहिंसका पगव, प्र०—ग्रत्र दगधातो-र्वाहुलकान्नु सुडागमश्च १५ १५ [दग दगने (भ्वा०) धातोर् वाहु० ग्रौणादिको नु प्रत्यय सुडागमश्च]

दण्डा इव यष्टिका इव गुष्क-हृदयाऽभिमानिन (ग्रध्येतारो जना) ७ ३३ ६ [दण्डा-इवपदयो समास। वज्रो वै दण्डो विरश्मस्तायै ग० ३ २ १ ३२]

दतः दन्तान् ७ ५५ २ [दन्तशब्दस्य 'दत्' इत्यादेग 'पद्दन्नोमास्०' ग्र० ६ १ ६३ सूत्रेण]

दत्त तत्तद् दान कुरुत २ ३२ दद्यात २० ७१ **दत्तम्**=सुपात्रेभ्य समर्पितम् १८ ६४ [डुदाञ् दाने (जु०) धातोर्लोटि मध्यमवहुवचनम्]

दत्रम् दानम् ३ ३६ ९ **दत्रे**=दानव्ये हिरण्यादि-धने सति, प्र०—दत्रमिति हिरण्यनाम, निघ० १ २, ४ १७ ६ [दत्रम् हिरण्यनाम निघ० १ २]

दत्रवान् दानवान् (सज्जन) ६ ५० ८ [दत्रमिति हिरण्यनाम निघ० १ २ ततो मतुप् प्रशसायाम्]

दत्वते दन्तवते (दगते=दगकाय हिंसकप्राणिने) १ १२९ ५ [दन्तप्राति० भूम्नि मतुप्। 'पद्दन्नोमास०' ग्र० ६ १ ६३ सूत्रेण 'दत्' इत्यादेग]

दद दत्त, प्र०—ग्रत्र लोडर्थे लिट् १ ३९ ९ ददतु ४ ३६ ९ [डुदाञ् दाने (जु०) धातोर्लिटि मध्यमवहु-वचनम्]

ददत् ददाति ४ २४ १० दद्यात् ७ २८ ५ दीजिये, ग्रार्याभि० २ ११, ३४ ३८ [डुदाञ् दाने (जु०) धातोर्लेट्]

ददत् प्रयच्छन् (ईश्वर) ७ ४१ ३ ददान (ईश्वर) ३४ ३६ **ददत्**=दान कुर्वत (विदुपो राज्ञ) ७ ३० ४ दानशीलान् (सज्जनान्) ५ ७९ ५ दानशीला (विद्वासो जना) १ ७३ ५ **ददता**=दानकर्त्रा (विदुपा जनेन) ५ ५१ १५ [डुदाञ् दाने (जु०) धातो शतृप्रत्यय]

ददते ददाति १ २४ ७ [दद दाने (भ्वा०) धातोर्लट्। ददते धारयतिकर्मा नि० २ २]

ददथुः दद्यातम् ४ ३९ ५ दत्त ४ ३८ १ [डुदाञ् दाने (जु०) धातोर्लिटि मध्यमद्विवचनम्]

ददभन्त दभ्नुयु १ १४८ २ [दम्भु दम्भने (स्वा०) धातोर्लिट्। व्यत्ययेनात्मनेपदम्]

ददर्श पश्यति ४ १३ ५ देखता है, स० प्र० ९०, १० ७१ ४ दृष्टवान् दृष्टवती च ८ ९ [दृशिर् प्रेक्षणे (भ्वा०) धातोर्लिट्]

ददश्वान् दत्तवान् (वायु) ४ ३८ ६ [दाशृ दाने (भ्वा०) धातोर्लिट क्वसु। छान्दस धातोरुपधाया ह्रस्व-त्वम्]

ददात् देता है, स० वि० १३७, ग्रथर्व० १४ १ ९ **ददाति**=प्रयच्छति १ ४० ४ **ददातु**=प्रयच्छतु ३ ५५ ददानि वा, प्र०—ग्रत्र पक्षे लडर्थे लोट् १ १५ ८ दीजिए, ग्रार्याभि० २ ५४, ३२ १५ **ददाथ**=देहि ६ २० ११ [डुदाञ् दाने (जु०) धातोर्लेटि लटि लोटि लिटि च रूपाणि]

ददानम् दातारम् (ग्रध्यापकम्) १ १४८ २ **ददानः**=

१ १४, ६ १४ अश्व इव धारकान् क्रामयिता गमयिता (अग्नि) ७ ४४ ५ यो दधिभिर्धर्तृभि क्रम्यते गम्यते स (राजा) ४ ३८ १० यो धारकं सह क्राम्यति (राजा) ४ ३८ ६ धर्त्तयाना धारक (वाजी=तुरङ्ग) ४ ४० ४. [दधिक्रा अश्वनाम निघ० १ १४ पद नाम निघ० ५ ४ तत्र दधिक्रा इत्येतद् दधत्क्रामतीति वा दधत्क्रन्दतीति वा दधदाकारी भवतीति वा। तस्याश्ववद् देवतावच्च निगमा भवन्ति नि० २ २७ देवपवित्र वै दधिक्रा ऐ० ६ ३६ अग्न वे दधिक्रा गो० उ० ६ ३६]

दधिक्रावा धारकाणा गमयिता (अग्नि) ७ ४४ ४ धर्त्तव्ययानक्रमिता (राजा) ४ ४० २ **दधिक्रावाणम्**= धारकाणा यानाना क्रामयितार गमयितारम् (अग्नि= भौतिकम्) ७ ४४ ३ **दधिक्राव्णेव**=धारकान् क्रमत इव (भा०—वेगयुक्ताऽश्ववत्) ७ ४१ ६ यथा धारक क्रमितोऽश्वस्तया ३४ ३६ **दधिक्राव्ण**'=यो दधीन् पोषकान् धारकान् वा क्रामयति तस्य (अश्वस्य) २३ ३२ यो विद्याधरान् कामयते तस्य (राज्ञ) ४ ३६ २ वाय्वादिकारण क्रामयितु (परमेश्वरस्य) ४ ४० १ धर्तृधरस्य वायो. ४ ४० ३ धर्म्मधरस्य क्रमयितुर्वा (राज्ञ) ४ ३६ ६ धर्त्तृणा प्रचालकस्य (उष =अन्नादे) ४ ३६ ४ धारकाणा क्रमयितु (उषस =प्रभातस्य) ४ ३६ ३ ['दधि' इत्युपपदे क्रमु पादविक्षेपे (भ्वा०) धातो क्वनिप्प्रत्यय कर्त्तरि। दधि =डुधाञ् धारणपोषणयो (जु०) धातो 'आदृगम०' अ० ३ २ १७१ सूत्रेण कि प्रत्ययो लिड्वच्च दधिक्रावा अश्वनाम निघ० १ १४]

दधिध्वे धरत ४ ३४ ३ धरध्वम् ४ ३७ १ धरिष्यथ, प्र०—अत्र लोडर्थे लिट् १ ३८ १ **दधिरे**=धरन्तु ३ ५० ३ धरन्ति ३ १ ६ दधति ६ ४८ २१ दध्यासु ५ ५५ १ धरेयु १२ २८ हितवन्त १२ १११ दध्यु १ १३ ११ दधीरन्, प्र०—अत्र लिङर्थे लिट् १ ४५ ७ **दधिषे**=धरसि १५ २३ दधसि ७ २८ २ धारयेयम् ५ ४५ ११ **दधिष्व**=धर २० ८६ दधते १ ३ ६ धारय, प्र०—अत्र दध धारणे इत्यस्माल्लोट् 'छन्दस्युभयथा' इत्यार्धधातुकाश्रयेणेडागम १ १० ६ [दध धारणे (भ्वा०) धातो सामान्ये लिटि। 'छन्दसि वा' इति नियमाद् द्वित्वम् 'अत एकहल्मध्ये०' इति एत्व च न भवति। दधिष्व प्रयोगे लोटश्छन्दस्यार्धधातुकत्वाद् इडागम । दधिषे धत्स्व निघ० ५ २५]

दधीचः ये दधीन् वाय्वादीनञ्चन्ति तान् (वृत्राणि= वृत्रसम्बन्धिभूतानि जलानि) १ ८४ १३. विद्या-धर्मधारकान-ञ्चति विज्ञापयति तस्य (मन्त्राग्निजनस्य) १ ११६ ९ **दधीचे**=दधीन् विद्या-धर्मधरानञ्चति पूजयति तस्मै १ ११७ २२ ['दधि' इत्युपपदे अञ्चु गतिपूजनयो (भ्वा०) धातो 'ऋत्विक्०' सूत्रेण क्विनि 'अनिदिताम्०' इति नलोपे भसज्ञके प्रत्यये परत 'अच' सूत्रेणाकारलोपे 'चौ' सूत्रेण पूर्वपदस्य दीर्घत्वे रूपम्। दधि =डुधाञ् धारणपोषणयो (जु०) धातो 'किकिनावुत्सर्गश्छन्दसि' इत्यादिना वा० सूत्रेण कि प्रत्ययो लिड्वच्च कार्यम्]

दधीत धरत ५.४१ ५ धरेत ६.१५ **दधीमहि**= धरेम ५ ३५ ८. **दधुः**=दधति १ ८० १५ धातुमर्हन्ति २१ १३ धरन्तु ३ ३ ५ दध्यु, भा०—आप्नुवन्तु २१ २६ दधीरन् २१.१२ धरेयु, भा०—धरन्ति २१ २२ दध्यासु २० ७५ [दध धारणे (भ्वा०) धातोर्लिट्। 'बहुल छन्दसी' ति शपो लुक्। अथवा डुधाञ् धारणपोषणयो (जु०) धातोर्लिड्। दधु प्रयोगे दधातेर्धातोर्लटि सामान्ये प्रथमबहुवचनम्]

दधृक् प्रागल्भ्य प्राप्तौ (अध्यापकोपदेशकौ) ५ ६६ ३ [ञिधृषा प्रागल्भ्ये (स्वा०) धातो 'ऋत्विग्०' इत्यादिना क्विनि निपातनाद् द्वित्वम्। पदान्ते च कुत्वम्]

दधृषम् प्रगल्भम् (विद्वास जनम्) ३ ४२ ६. [पूर्वपदे व्याख्यातम्]

दधृषिः अतिशयेन प्रगल्भ (योद्धृ-जन) २ १६.७ [ञिधृषा प्रागल्भ्ये (स्वा०) धातो 'किकिनावुत्सर्गश्छन्दसि' अ० ३ २ १७१ वा० सूत्रेण कि प्रत्ययो लिड्वच्च। वाग् वै दधृषी मै० ४ २ ६]

दधृष्वान् प्रसोढा (विद्वान् जन) १ १६५ १० धारयन् (इन्द्र =राजा) ४ २२ ५ धर्षितवान् ५ २९ १४ [धृष प्रसहने (चुरा०) ञिधृषा प्रागल्भ्ये (भ्वा०) धातोर्लिट स्थाने क्वसु]

दधे धरामि २० ८५. दधामि ५ ५३ ५. दधाति, प्र०—अत्र 'छन्दसि लुङ्लङ्लिट' अ० ३.४ ६ अनेन वर्त्तमाने लिट् १ ३ ११ धारयति, ऋ० भू० ११७, १० १२९ ७ धत्ते १ १४९ ५ धरति ३ २२ १ धरे, वृणोमि, कथयामि वा ५ १४ धारण करता है, स० प्र० २८१, १० १२९ ७ हितवान् दधाति, धास्यति वा ५ १५. दधामि २ ३१ ६ धृतवान् १ २२ १७ दधेत ३ २७ ९ दधेय ३ २७ १० स्वात्मनि धरेत् १ ३६ १९ दध्यात् ३ ३९ ६ **दधौ**=विदधाति १ ६५ २३ [डुधाञ् धारण-

दधातु १८.६४ धरेत् ४ ७४ ७ दध्यान् २१ ५५ धेहि ७ २४ ४ **दधतः**=धरत अ० दध्याताम् १६ ८२ **दधताम्**=धारयन्तु ३५ १५ **दधति**=धरन्ति १ ५५ ५ **दधतु**=धरन्तु ३२ १६ **दधथुः**=धत्त, प्र०—अत्र पुरुपव्यत्यय ६ ७२ ४ **दधन्**=दधीरन् १ ७१ ३ **दधनत्**=अपोपयत्, प्र०—अनकारागमश्छान्दस ३३ ६४ **दधन्युः**=धरन्त प्र०—'वाच्छन्दसि' इति नुडागमो यासुडभाव ४ ३ १२ **दधः**=धेहि ७ ३० ३ दध्या १ ८१ ३ [डुधाञ् धारणपोपणयो (जु०) धातोर्लेटि, लटि, लिटि, लङि, लिङि च रूपाणि]

दधत् दधान सन् (सविता=सूर्य) ३४ २४ धारण कुर्वन्, भा०—प्राप्य (जन) २० ७१ यो दधाति स (यज्ञ) ११८८ २ धरन्तसन् (अग्नि=पावक) ४ १५ २ धरत् (चक्षु=नेत्रम्) २८ ३५ दधन् (त्वष्टा=विद्युत्) २० ४४ [डुधाञ् धारणपोपणयो (जु०) धातो शतृप्रत्यय]

दधतीम् धरन्तीम् (मेनाम्) १ ११६ १६ **दधतीः**=धरमाणा (मधुमती=ओपध्य) १० ४ [डुधाञ् धारणपोपणयो (जु०) धातो शत्रन्तान् ङीप्]

दधन्वतः विद्यादिशुभगुण-धर्त्तॄणा धारकस्य (विदुपो जनस्य) ६ ४८ १८ दृढत्वेन धर्त्तु (दृते=मेघस्य) ६ ४८ १८ **दधन्वान्**=धरन् सन् (वैद्य) १६ २. [डुधाञ् धारणपोपणयो (जु०) धातो शानचि चानशि (ताच्छील्ये) वा दधान । ततो मतुपि दधानस्य दधन्भावश्छान्दस]

दधन्विरे दधति ३ ६० ३ **दधन्वे**=धरति २ ५ ३ पृणाति ३ ३ १ १ [डुधाञ् धारणपोपणयो (जु०) धातोर्लिट् । 'व्यत्ययो बहुलम्' अ० ३ १ ८५ सूत्रेण बहुलवचनाद् द्विविकरणता । तेन श्नु श्लुश्चापि भवत]

दधर्ष धृष्णाति ५ ८५ ६ तिरस्कुर्यात् ६ ७ ५ **दधर्षति**=तिरस्करोति ७ ३२ १४ धर्पितुमिच्छति १ १५५ ५ धर्पयितु शक्नोति, प्र०—अत्र लेटि व्यत्ययेन श्लु ३५ १८ **दधर्षीत्**=धर्पेत्, प्र०—अत्र 'वाच्छन्दसि' इति द्विर्वचनम् १३ ११ [धृप प्रसहने (चुरा०) त्रिधृषा प्रागल्भ्ये (स्वा०) धातोर्वा लिट् । अन्यत्र लेटि व्यत्ययेन श्लु । अपरत्र लुङि द्वित्वमडभावश्च छान्दसौ]

दधात दधीरन् १६ ६३ दधति ७ ५८ ३ धरत ८ १७ दध्यात ५ ३ ७ धरन्ति ६ ६२ ८ [डुधाञ् धारणपोपणयो (जु०) धातोर्लोट्]

दधातन धरत ८ ५ [डुधाञ् धारणपोपणयो (जु०) धातोर्लोटि मध्यमबहुवचने त-प्रत्ययस्य स्थाने 'तप्तनप्तनथनाश्च' अ० ७ १ ४५ सूत्रेण तनप् । दधातन धत्त नि० ६ २७]

दधाति धरति १ ६६ ४ धरेत् १ ६६ २ निष्पादयति ७ ३८ १ धारयति ४० ४ **दधातु**=धारण करोतु ८ १४ दधाति वा, प्र०—अत्र लडर्थे लोट् २ ३ धारयतु ६.८ पुष्णातु ३६ २ विदधातु ८.१६ पोपयतु ऋ० भू० १४६, **दधाते**=धरत १ २६ **दधाथ**=धेहि, प्र०—अत्र वचनव्यत्ययेन बहुवचनम् ४ ५ ६ **दधाथे**=धरथ १ १५१ ६ **दधामि**=स्थापयामि ७ ५ व्यवस्थापयामि ३५ १५ धरामि ६ ३० धारयामि, दधाति, पुष्णामि वा १ १८ **दधासि**=धरसि १ ३१ ७ [डुधाञ् धारणपोपणयो (जु०) धातोर्लटि लेटि वा रूपम् । अन्यत्र लोटि, लटि च रूपाणि]

दधानः धरन् (राजा) ४ २२ ३ धरन्नुदारो धातेव १ ६७ २ धरन् पुष्यन् सन् (विष्णु=सर्वव्यापक परमात्मा) ३ ५५ १० धारण करता हुआ (मन्यास लेने वाला पुरुप) स० वि० १६५, ६ ११३ १ **दधानान्**=धारकान् (पुरुपान्) ६ ४७ २५ धरत (अमन्यमानान्=शठान् जनान्) २ १२ १० **दधानाः**=धरन्त (उत्तमविद्वज्जना) ७ ६० ८ धारयितार (आप्ता विद्वांसो जना), अ०—सर्वासु—विद्यासु धर्म्ये पुरुपार्थे च वर्त्तमाना १ ४ ५ सर्वधारका (मरुत=वायव) १ ६ ४ **दधाना**=धरन्तौ (अध्यापकोपदेशकौ) २० ४२ [डुधाञ् धारणपोपणयो (जु०) धातो शानच् । 'दधाना' प्रयोगे 'सुपा सुलुग्०' इत्याकार]

दधाना धरन्ती (उपा) १ १२३ ४ **दधाना**=धरन्त्य (आप=सूक्ष्मास्तन्मात्रा) २७ २६ धरन्त्य सत्य (आप=व्यापिकास्तन्मात्रा) २७ २५ **दधाने**=धारयन्त्यौ (उपासानक्ता=रात्रिदिने) २६ ३२ [डुधाञ् धारणपोपणयो (जु०) धातो शानजन्तात् स्त्रिया टाप्]

दधिक्राम् यो धारकान् क्रामति तमश्वम् ३ २० १ पृथिव्यादिधारकाणा क्रमितारम् (अग्निम्) ७ ४४ २ न्यायधर्त्तॄणा कामयितारम् (अश्व=बोधम्) ४ ३९ ५ धर्त्तव्यधरम् (राजानम्) ४ ३९ १ यो दधिना धारकेणाऽधिकेन सह तम् (राजजनम्) ४ ३८ २ यो भूम्यादीन् दधीन् धर्त्रीन् पदार्थान् क्रामति तम् (अग्नि=विद्युतम्) ३ २० ५ **दधिक्राः**=यो दधीन् धारकान् क्राम्यति स दधिक्रा अश्व, प्र०—दधिक्रा इत्यश्वनामसु पठितम्, निघ०

दभीतये दु खहिंसनाय ६ २६ ६. हिंसनाय मारणाय २.१३ ६ **दभीतिम्**=हिंसकम् (प्राणिनम्) २.१५.६ दम्भिनम् (पापिजनम्) १ ११२ २३ **दभीतिः**=हिंस्र (शत्रुजन) ४ ४१ ४ **दभीतेः**=हिंसनात् २.१५ ४ [दभ्नोति वधकर्मा निघ० २ १६ दम्भु दम्भने (स्वा०) धातो क्तिन्प्रत्यये 'तितुत्रेष्वग्रहादीनाम्०' अ० ७ २ ६. वा० सूत्रेणेडागम । तस्य दीर्घत्व छान्दसम्]

दभ्नुवन्ति हिंसन्ति १ ५५ ७. [दभ्नोति वधकर्मा निघ० २ १६ दम्भु दम्भने (स्वा०) धातोर्लट्]

दभ्यते हिंस्यते १ ४१ १ [दभ्नोति वधकर्मा निघ० २ १६ तत कर्मणि लट्]

दभ्रम् अल्पम् (द्रव्यम्) ४ ३२ २० ह्रस्व वस्तु, प्र०—दभ्रमिति ह्रस्वनामसु पठितम्, निघ ३ २, १ ११३ ५. **दभ्रस्य**=ह्रस्वस्य (युद्धस्य) १ ८१ २ **दभ्राणि**=अल्पानि कर्माणि १ १२६ ७ **दभ्राः**=हिंसका (शत्रवो जना) ४ २५ ५. **दभ्रेभिः**=अल्पै ह्रस्वैर्वा (सखिभि = सुहृज्जनै) ४ ३२ ३. अल्पयुद्धसाधनै सह, प्र०—अत्र 'बहुल छन्दसि' इति भिस ऐस् न १ ३१ ६ [दभ्नोति वधकर्मा निघ० २ १६ दम्भु दम्भने (स्वा०) धातो 'स्फायितञ्चि०' उ० २ १३ सूत्रेण रक्प्रत्यय । दभ्र ह्रस्वनाम निघ० २ ८ दभ्रम् अर्भकमित्यल्पस्य दभ्र दभ्नोते, सुदम्भ भवति नि० ३ २०]

दम् यो दमयति तम् (अग्निम्) ६ ३ ७ [दमु उपशमने (दिवा०) धातो क्विप् कर्त्तरि]

दमम् दान्तस्वभाव, गृहम् १ ७५ ५ **दमाम्**=गृहाणाम्, प्र०—अत्र नुडभावे पूर्वसवर्णदीर्घ ३३ १ **दमाय**=जितेन्द्रियत्वाय ३ ६ ३ **दमे**=गृहे दमने वा ७ १ २ परमोत्कृष्टे पदे, वे० भा० न०, ११ ८ उपशमने गृहीते गृहे वा १ ६७ ५ गृहरूपे हृदयावकाशे १ १४३ ४ दाम्यन्ति जना यस्मिँस्तस्मिन् गृहे २ १ २ निजगृहे २ १ ७ दान्ते गृहे ४ ६ ४ दाम्यन्त्युपशाम्यन्ति जना यस्मिन् गृहे ससारे वा तस्मिन् १ ६१ ६ दाम्यन्त्युपशाम्यन्ति यस्मिँस्तस्मिन् स्वस्थाने परमोत्कृष्टे प्राप्तुमर्हे पदे, अ०—शान्तस्वरूपे ३ २३ दान्ते ससारे १ ६१ १४ दमनशीले व्यवहारे ३ १० २ दाम्यन्त्युपशाम्यन्ति दु खानि यस्मिँस्तस्मिन् परमानन्दे पदे, प्र०—अत्र 'दमु' धातो 'हलश्च' अ० ३ ३ १२१ अनेनाऽधिकरणे घञ्प्रत्यय १ १ ८ [दमु उपशमने (दिवा०) धातो 'हलश्च' सूत्रेणाधिकरणे घञ्प्रत्यय. । दम गृहनाम निघ० ३ ४. दम इति नियत ब्रह्मचाग्नि तै० आ० १०.६२.१. दमेन दान्ता: किल्विषमवधून्वन्ति तै० आ० १० ६३ १. दम शमयिता (मन्याग्निनो यज्ञस्य) तै० आ० १० ६४ १.]

दमेदमे दाम्यन्ति जना यस्मिँस्तस्मिन् गृहे गृहे प्र०—दम इति गृहनामसु पठितम्, निघ० ३.४. अत्र वीप्सया द्वित्वम् ८ २४ ['दमे' पदस्य वीप्साया द्वित्वम्]

दमयन् दमन कुर्वन् (इन्द्र =राजा) ६ ४७ १६. **दमयन्तम्**=निवारयन्तम् (राजानम्) ७ ६.४ [दमु उपशमने (दिवा०) धातोर्णिजन्ताच्छतृप्रत्यय. । 'न पादमि०' इति परस्मैपदे प्रतिषिद्धेऽपि व्यत्ययेन परस्मैपदम्]

दमिता नियन्ता (इन्द्र =राजा) ३ ३४ १०. दमनकर्त्ता (विद्वान् राजा) २ २३ ११ [दमु उपशमने (दिवा०) धातो कर्त्तरि तृच्प्रत्यय]

दमूनसम् दमनशीलम् (अग्नि=परमविद्वास जनम्) ४ ११ ५ दमनसाधकम् (भग =ऐश्वर्यम्) १ १४१.११ इन्द्रियान्त.करणस्य दमकरम् (गृहपतिम्) ५.८ १. **दमूनसः**=दान्ता (उत्तमजना) ५.४२ १२ **दमूनाः**=शम-दमादियुक्त (अतिथिर्जन.) ५ ४ ५ दमनशीलो जितेन्द्रिय. (अग्नि =राजा) ४.४ ११. दाम्यति येन स (अग्नि =भौतिकोऽग्निरिव राजा) प्र०—अत्र 'दमेरुनसि' उ० ४ २४० इत्युनम् प्रत्ययोऽन्येषामपि० इति दीर्घ १ ६० ४. सुहृद्वर (पति.) १ १२३ ३ जितेन्द्रिय-मनस्क: (व्याप्तविद्यो विद्वज्जन) ३ ३१ १६ उपशमयुक्त (मनुष्य) १ ६८ ५. दान्त. (विद्वान् जन) १ १४०.१०. [दमु उपशमने (दिवा०) धातो 'दमेरुनसि' उ० ४.२३५ सूत्रेण उनसि. प्रत्यय । 'अन्येषामपि दृश्यते' इति सूत्रेण दीर्घ । दमूना दममना वा, दानमना वा, दान्तमना वा, अपि वा दम इति गृहनाम तन्मना स्यात् नि० ४ ४]

दम्पतिम् स्त्री-पुरुषाख्य द्वन्द्वम् १.१२७ ८ **दम्पती**=विवाहितौ स्त्रीपुरुषौ ५ ३ २ जायापती ८ ५ जाया और पति, स० वि० १४०, अथर्व० १४ २ ६४ **दम्पते**=स्त्री-पुरुष ५ २२ ४ [जाया-पतिपदयो समासे जायाशब्दस्य दमादेश]

दम्पतीव यथा भार्यापती २ ३९ २ [दम्पती-इवपदयो समास]

दम्भयत् दम्भयति हिंसयति ६ १८ १०. **दम्भयः**=हिन्धि १ ५४ ६ [दम्भु दम्भने (स्वा०) धातोर्णिजन्ताल्लङ् । अडभावश्छान्दस]

दम्यम् दमनीयम् (प्रजाजनम्) ७ ५६ १४. दात

पोषणयो (जु०) धातो सामान्ये लिट्]

दध्म गच्छेम, प्र०—दध्यतीति गतिकर्मा, निघ० २.१४, ७ ५६ २१ **दध्मः**=निक्षिपाम. १६ ६४. सस्थापयाम १५ १५ धराम १५ १६ हम दग्ध कर देते हैं, प० वि०, अथर्व० ३ २७ १ [दध्यति गतिकर्मा निघ० २ १४ दध धारणे (भ्वा०) धातोर्वा छान्दस रूपम्]

दध्मसि धरेम १ ५० १२ धराम ११ ७३ स्थापयेम १ ५० १२ [दध धारणे (भ्वा०) धातोर्लटि 'बहुल छन्दसी' ति शपो लुकि व्यत्ययेन परस्मैपदम् । 'इदन्तो मसि' इति मस इदन्तता]

दध्यङ् दधति यैस्ते दधय सद्गुणास्तानञ्चति प्रापयति वा स (अध्यापको जन) प्र०—अत्र 'कृतो बहुलम्' इति करणे क्विस्ततोऽञ्चते क्विप् १ ८० १६ दधीन् विद्याधर्मधारकानञ्चति प्राप्नोति स (विद्वान् जन) १ ११६ १२ यो धारकान् विदुषोऽञ्चति प्राप्नोति (पुत्र =तनय) ६ १६ १४ दधीन् धारकानञ्चति (कण्व =मेधाविजन) १ १३९ ९ यो दधीन् सुखधारकानग्न्यादिपदार्थानञ्चति स (ऋषि =वेदार्थवेत्ता जन) ११ ३३ ['दधि' इत्युपपदे अञ्चु गतिपूजनयो (भ्वा०) धातो 'ऋत्विग्०' इत्यादिना क्विन् । दधि =दधातेर्धातो 'किकिनावुत्सर्गश्छन्दसि' इति वार्तिकेन कि प्रत्ययो लिड्वच्च कार्यम् । दध्यङ् प्रत्यक्तो ध्यानमिति वा, प्रत्यक्तमस्मिन् ध्यानमिति वा नि० १२ ३३ दध्यङ् वा आङ्गिरसो देवाना पुरोहानीय आसीत् तां० १२ ८ ६ वाग्वै दध्यङ्डाथर्वण श० ६ ४ २ ३ इन्द्रो दधीचो अस्थभिर्वृत्राण्यप्रतिष्कुत । जघान नवतीर्नव तै० १ ५ ८ १]

दध्याशिरः ये दध्नाऽश्यन्ते ते (सोमास =ओषधिरसा) १ १३७ २ ये धातुमशितु योग्या (सोमास =ऐश्वर्ययुक्ता पदार्था) ५ ५१ ७ ये दधत्यश्नन्ति ते (प्रजाजना) ७ ३२ ४ दधति पुष्णन्तीति दधयस्ते समन्तात् शीर्यन्ते येषु ते (सोमास =सर्वपदार्था), प्र०—अत्र दधाते प्रयोग 'आद्गम०' अ० ३ २ १७१ अनेन किन्प्रत्यय, शृ हिंसार्थ, क्विप् १ ५ ५ [दधि-आशिरपदयो समास । दधि =डुधाञ् धारणपोषणयो (जु०) धातो 'किकिनावुत्सर्गश्छन्दसि' वा० सूत्रेण किन् । आशिर =आङ्+अश भोजने (क्र्या०) धातो 'अशेर्नित्' उ० १.५२. सूत्रेण किरच्प्रत्यय । आङ्पूर्वाद्वा शृ हिंसायाम् (क्र्या०) धातो क्विप्-प्रत्यय]

दधिरे धरन्ति १ ४८ ३ **दध्रे**=दधिरे १७ २९ धरति, प्र०—अत्र लडर्थे लिट् १ ३७ ७ [डुधाञ् धारणपोषणयो (जु०) धातोर्लिट् । 'इरयो रे' अ० ६ ४ ७६ सूत्रेण बहुल रे आदेश । 'बहुल छन्दसि' अ० ७ १ ८ सूत्रेण रुडागम]

दन् ददन् (विद्वान् जन), प्र०—अत्र डुदाञ् धातो 'शतरि छन्दसि वेति वक्तव्यम्' इति द्विर्वचनाऽभावे सार्वधातुकत्वान् ङित्त्वमार्धधातुकत्वादाकारलोपश्च १ १२० ६ ददन् (पति =गो पालयिता जन) प्र०—अत्र 'बहुल छन्दसि' इति शपो लुक् १ १५३ ४ दाता (ईश्वरः) १ १४८ १. [डुदाञ् दाने (जु०) धातो शतृप्रत्यय । छान्दस रूपम्]

दनः अनद, प्र०—अत्राऽऽद्यन्तवर्णविपर्ययोऽडभावश्च १ १७४.२ [णद शब्दे (भ्वा०) धातोर्लङ् । अडभावश्छान्दस । आद्यन्तविपर्ययश्च नकार-दकारयो । दन दानमनस नि० ६ ३१]

दन्तमूलैः दन्ताना मूलै २५ १ [दन्त-मूलपदयो समास]

दन्तः येन दशति स (वीरजनसमूह) ६ ७५ ११ दाम्यते जनै स (मृग =कस्तूरी-मृग २९ ४८ [दाम्यत्युपशाम्यति यो येन वेति विग्रहे दमु उपशमने (दिवा०) धातो 'हसिमृग्०' उ० ३ ८६ सूत्रेण तन्प्रत्यय]

दन्दशूकाः परदु खप्रदाय दशनशीला (शत्रव) १० १० [दश दशने (भ्वा०) धातोर्यङन्ताद् 'यजजपदशा यङ' अ० ३ २ १६६ सूत्रेण तच्छीलादिष्वर्थेषु ऊक प्रत्यय । 'लुपसदचरजप०' सूत्रेण भावगर्हाया यङ्प्रत्यये ऽभ्यासस्य 'जपजभदहदश०' इत्यादिना नुगागम.]

दभत् हिंस्यात् १ १७८ २ **दभन्**=हिंस्यु प्र०—अत्र लिङर्थे लङडभावश्च ५ ३९ दभ्नुवन्तु हिंसन्तु, प्र०—अत्र लोडर्थे लङडभावश्च ८ १ दभ्नुयु २ ३२ २ हिंसेयु, प्र०—अत्र व्यत्ययो लिङर्थे लङ् च ४ २७ **दभन्ति**=हिंसन्ति ७ ३२ १२ [दभ्नोति वधकर्मा निघ० २ १९. दम्भु दम्भने (स्वा०) धातोर्लङ् लट् च । विकरणव्यत्ययेन श । लङ्यडभावश्छान्दस]

दभः दभ्नाति हिनस्ति येन स (धर्म) ५ १९ ४ **दभाय**=हिंसकाय (जनाय) ५ ४४ २ [दभ्नोति वधकर्मा निघ० २ १९ ततो घञर्थे क प्रत्यय । कर्त्तरि वौणादिक क प्रत्यय.]

दभाति हिनस्ति ६ २८ ३ [दभ्नोति वधकर्मा (निघ० २ १९) धातोर्लेट् । आडागम]

मेध्या श० ७ ३ २ ३, ६ २ १ १२ दर्भो वा ओषधीनाम-पहतपाप्मा तै० ब्रा० १ २ ३]

दर्भः दृणुयाम्म ३ ४५ २ [दृ विदारणे (क्र्या०) धातोश्छान्दस रूपम्]

दर्मा विदारक मन् (शूरो जन) १ १३२ ६ शत्रु-विदारयिता (सभापति) ८ ५३ **दर्माणम्**=विदारयितारम् (वीरजनम्) १ ६१ ५ [दृ विदारणे (क्र्या०) धातो 'अन्येभ्योऽपि दृश्यन्ते' अ० ३ २ ७५ सूत्रेण मनिन्-प्रत्यय]

दर्वि पाक साधिका होतव्य द्रव्यग्रहणार्था (चमसी) प्र०—अत्र 'सुपा सुलुक्०' इति सुलोप ३ ४६ **दर्वी**=ग्रहणाग्रह णसाधने १५ ४३ दर्वाणि याभ्या ते पाकसाधने ५.६ ६ [दृ विदारणे (क्र्या०) धातो 'उत्सुकदर्विहोमिन.' उ० ३.८४ सूत्रेण विन्-प्रत्ययान्तो निपात्यते। 'वृद्भ्या विन्' उ० ४ ५३ सूत्रेण वा विन्प्रत्यय । एप खलु वै स्त्रिया हस्तो यद् दर्वि सै० १ १० १६]

दर्विदा काष्ठच्छित् पक्षिविशेष २४ ३४

दर्शत[1] दर्शनीय (ईश्वर), आर्याभि० १ ७, ऋ० १.१ ३ १ ज्ञानदृष्ट्या द्रष्टु योग्य योग्यो वा (वायो=ईश्वर भौतिको वा) १ २ १ **दर्शतम्**=दर्शनीयम् (धूमम्) ३८ १७ द्रष्टव्य रूपम् (निवात=क्षेमम्) १ ११७ ५ यो दर्शयति तम् (सूर्यम्) १ १६४ ५२ दर्शकम् (अग्नि=विद्युदादिरूपम्) ६ १ ३ **दर्शतस्य**=द्रष्टु योग्यस्य (वपुष=रूपस्य) १२ १०६ **दर्शतः**=द्रष्टु योग्य (विद्वान् जन) ३ १० ६ द्रष्टव्य प्रष्टव्यो वा (सूर्य=सविता) ६ ३० २ **दर्शतात्**=सुन्दरात् रूपात् १ ११६ ११ [पश्यन्ति येन स दर्शत इति विग्रहे दृशिर् प्रेक्षणे (भ्वा०) धातो 'भृमृदृशियजिपर्वि०' उ० ३ ११० सूत्रेण अतच्-प्रत्यय । दर्शत दर्शनीय नि० १०.२]

दर्शता द्रष्टव्या (विद्युत्) १ ६४ ६ द्रष्टव्या (देवी=विदुषी स्त्री) ६ ६४ ५ **दर्शताः**=द्रष्टु योग्या (प्रजा) ३ ५७ ४ **दर्शते**=द्रष्टव्ये (नक्तोषासा=रात्रिदिने) २८ २६ **दर्शताभिः**=द्रष्टव्याभि (श्रीभि=राजनीति-शोभाभि) ६ ६३ ६ [दर्शत इति व्याख्यातम् । तत स्त्रिया टाप्]

दर्शनाय प्रेक्षमाणाय (विदुषे जनाय) १ ११६.२३ [दृशिर् प्रेक्षणे (भ्वा०) धातो 'कृत्यल्युटो बहुलम्' इति ल्युट्]

दर्शि दृश्यते ३ ५६ २ [दृशिर् प्रेक्षणे (भ्वा०) धातोर्लुङ् । अडभावश्छान्दस]

दर्श्या द्रष्टु योग्यानि (रूपाणि) ५ ५२.११. [दृशिर् प्रेक्षणे (भ्वा०) धातोर्ण्यत्प्रत्यय । 'शेश्छन्दसि बहुलम्' इति शेर्लोप]

दर्षि विदृणासि ६ २६ ५ प्रिय यादृदरषि कुरु प्र०—अत्र दृङ् आदरे इत्यस्माल्लेटि मध्यमैकवचने 'वाच्छन्दसि' इति सिप पित्वाद् गुण १ ११० ६ विदीर्ण करोषि ४ १६ ८ **दर्षीष्ट**=दृणीहि १ १३२ ६. [दृ विदारणे (क्र्या०) दृङ् आदरे (तुदा०) धातोर्वा लोट् । 'बहुल छन्दसि' इति विकरणस्य लुक् । व्यत्ययेन परस्मैपदस्थ । अन्यत्र लिटि रूपम्]

दविद्युतत् प्रकाशयति १७ ५१ विद्योतयति ७ १०.१. द्योतयति ६ १६ ४५ **दविद्योत्**=प्रकाशते ६ ३ ८. [द्युत दीप्तौ (भ्वा०) धातोर्यङ्लुकि शतरि अभ्यासस्य सम्प्रसारणा-भाव, अत्व विगागमश्च 'दाधर्तिदर्धर्ति०' अ० ७.४.६५ सूत्रेण निपात्यते । दविद्योत्=अद्योतत नि० ११ ३६]

दविधाव भृश चालयति १ १४० ६.

दविध्वत् भृश धुन्वन् (सविता=सवितृलोकम्) ४.१३ २ **दविध्वतः**=धुन्वन् कम्पयन्त (राजजना) प्र०—इद पद 'दाधर्ति०' इत्यत्र निपातितम् ७ ४.६४, २.३४ ३ कम्पयन (सूर्यस्य) ४ १३ ४ पदार्थान् धूनयन्त (अकेपिनाम=किरणा) ४ ४५ ६ [ध्वृ हूर्च्छने (भ्वा०) धातो 'दाधर्तिदर्धर्ति०' अ० ७ ४ ६५ सूत्रेण यङ्लुगन्तस्य शतरि अभ्यासस्य विगागम ऋकारलोपश्च निपात्यते]

दविष्ठम् अतिशयेन दूरम् (स्तेन=चोरम्) ६.५१.१३ [दूरप्राति० अतिशायन इष्ठन्-प्रत्यये 'स्थूलदूरयुव०' अ० ६ ४ १५६ सूत्रेण यणादिपरस्य रेफस्याकारस्य च लोप पूर्वस्य च गुणादेश]

दवीयः अतिशयेन दूरम् (शत्रु जनम्) ६ ४८.२६. [दूरप्राति० अतिशायन ईयसुन्प्रत्यये 'स्थूलदूरयुव०' अ० ६ ४ १५६ सूत्रेण यणादिपरस्य लोप. पूर्वस्य च गुण । दवीय दूरतरम् नि० ६ १३]

दश दश दिश १ ६५ २ दशसङ्ख्याका (क्षिप=अङ्-गुलय) ५ ४३ ४ एतत्सङ्ख्याका (कोशयी=भूमी) दशत्वसङ्ख्याविशिष्टानि (वस्तूनि) १ ५१ १३ दशसंख्या-याम् १ ५३ ६ [दश=दस्ता दृष्टार्था वा नि० ३ १०. दशेति वै सर्वमेनावती हि सख्या ऐ० ब्रा० २ ३ ४ एतद्ध वै परम वाच क्रान्त यद् दशेति जै० १ २३५]

दशग्वासः दश गावे इन्द्रियाणि जितानि यैस्ते

शीलम् (अग्निम्) ३.२ ८ **दम्येभिः**=दातु योग्यै (अनीकै =सैन्यै) ३.५४ १. [दमु उपशमने (दिवा०) धातो 'पोरदुपधात्' सूत्रेण यत्]

दयते हिनस्ति ६ ६ ५ दया करोति ७ २१ ७ ददाति ६ ३० १ **दयध्वम्**=दया कुरुत ७ ३७ २ **दयन्त**= दयन्ते घ्नन्ति ३३ १४ **दयसे**=कृपा करोषि ७ २३ ४ देहि ६ २२ ६ **ददासि**=६.३७ ४ रक्षा करोषि २ १३ ६ **दयस्व**=देहि १ ६८ ३ [दय दानगतिरक्षणहिंसादानेषु (भ्वा०) धातोर्लट्। अन्यत्र लोटि लङि चापि रूपाणि। दयते दयतिरनेककर्मा, उपदयाकर्मा, दानकर्मा वा विभाग-कर्मा वा। दहतिकर्मा। हिसाकमा नि० ४ १७]

दयमानः दाता (इन्द्र =सभेश) १ १३० ७ ददन् सन् (अग्नि =वह्नि) ३ २ ११ दातु, विद्यादिगुणान् प्रकाशयितु, सतत रक्षितु, दु खानि दोषान् शत्रूंश्च सर्वथा विनाशयितु, धार्मिकान् स्वभक्तानादातु समर्थ (इन्द्र = परमात्मा), प्र०—दय दानगतिरक्षणहिंसा-दानेषु' इत्यस्य रूपम् १ १० ६ कृपालु सन् (इन्द्र =राजपुरुष) ३ ३४ १ सर्वेषामुपरि दया कुर्वन् (युवाकु =अध्यापको जन) १.१२० ३ [दय दानगतिरक्षणहिंसादानेषु) (भ्वा०) धातो शानच्प्रत्यय । अथवा 'ताच्छील्यवयोवचनशक्तिषु चानश्' अ० ३ २ १२६ सूत्रेण चानश्]

दयमाने रात्र्यौ २८ १६ [दयमान व्याख्यातम्। तस्य प्रथमाद्विवचनम्]

दरयन् दुःखानि विदारयन् (अग्नि =सूर्य इव स्वप्रकाश परमेश्वर) ७ ५ ३. **दरयन्तः**=विदारयन्त (विद्वासो मनुष्या) १ ५३.४ [दृ विदारणे (क्रया०) धातोर्णिजन्ताच्छतृप्रत्यय । घटादिपाठान् मित्वाद् ह्रस्वत्वम्]

दरयः विदारय, प्र०—अत्र लिडर्थे लडडभावश्च १ ६२ ४ [दृ विदारणे (क्रया०) धातोर्णिजन्ताल्लङ्। अडभावश्छान्दस । घटादिपाठान् मित्वे ह्रस्वत्वम्]

दरिद्र ! यो दरिद्राति तत्सम्बुद्धौ (राजप्रजाजन) १६ ४७ [दरिद्रा दुर्गतौ (अदा०) धातो पचाद्यच्प्रत्यय । 'श्याद्व्यध०' इत्यकारान्तलक्षणस्तु णो न भवति, 'उत्तरार्धवातुके०' इत्यस्य विषयसप्तमीत्वात् प्रागेव प्रत्य-योत्पत्तेराल्लोपात्]

दरीमन् अतिशयेन विदारणे, प्र०—अत्र 'अन्येषामपि दृश्यते' इति उपधा-दीर्घ 'सुपा सुलुक्०' इति सप्तम्या लुक् १.१२६ ८ [दृ विदारणे (क्रया०) धातोरौणादिको बाहु० डमनिन्प्रत्यय । 'अन्येषामपि दृश्यते' सूत्रेण दीर्घत्वम् । सप्तम्या लुक् च]

दर्त् विदृणाति ६ २० १० विदारितवान् भवति, प्र०—अत्र विकरणाऽभाव १ १७४.२ [दृ विदारणे (क्रया०) धातोर्लङि रूपम्। अडभावश्छान्दसः। 'बहुलं छन्दसी' ति विकरणस्य लुक्]

दर्त्तः ! विदारक (इन्द्र =सभेश) १ १३० १० **दर्त्ता**=विदारक (शत्रुजन) ६ ६६ ८ [दृ विदारणे (क्रया०) धातो कर्त्तरि तृच्]

दर्त्नुम् विदारकम् (राजानम्) ६ २० ३ [दृ विदारणे (क्रया०) धातोर्बाहुलकादौणादिक क्त्नु प्रत्यय । बहुल-वचनादेव गुणश्च]

दर्दरीति भृश विदृणाति ६ ७३ २ [दृ विदारणे (क्रया०) धातोर्यङ्लुगन्ताल् लट्]

दर्दर्तु भृश वर्धताम् ७ ५५ ४ **दर्दर्षि**=भृश विदृ-णासि २ १२ १५ **दर्दः**=पुर्नविदारय, प्र०—अय यङ्लुगन्त प्रयोगोऽडभावश्च १ ६३ ७ विदारये ६ २० ७ विदृणाति ७ १८ १३ **दर्दृहि**=अत्यन्त वर्धय ३ ३० २१ भृश वर्धय ७ ५५ ४ [दृ विदारणे (क्रया०) धातोर्यङ्लुगन्ताल्लोट्। अन्यत्र लट्, लङ्, लोट् च। धातूनामनेकार्थकत्वादत्र वर्धने ऽर्थेऽपि]

दर्द्रृत दृणीहि ६ १७ ५ [दृ विदारणे (भ्वा०) धातोश्छान्दस रूपम्]

दर्धर्षि भृश दधासि ५ ८४ ३ [धारयतेर्धृञो वा श्लौ यङ्लुकि अभ्यासस्य दीर्घत्व णिलोपश्च निपात्यते 'दाधर्त्तिदर्धर्ति०' अ० ७ ४ ६५ सूत्रेण]

दर्भासः कुशा १ १९१ ३. [दर्भप्राति० जसोऽसुक्। दर्भ =दृ विदारणे (क्रया०) धातो 'दृदलिभ्या भ.' उ० ३ १५१ सूत्रेण भ प्रत्यय । मेध्या वै दर्भा श० ३ १ ३ १८ आपो दर्भा श० २ २ ३ ११ आपो वै दर्भा. तै० ३ ३ २ १ अपा वा एवत् तेजो वर्च यद्दर्भा तै० २ ७ ६ ५ पवित्र वै दर्भा तै० १ ३ ७ १ उभयम्वैतदन्न यद्दर्भा आपश्च ह्येता ओषधयश्च या वै वृत्राद् बीभत्स-माना आपो धन्व दृभन्त्य उदायस्ते दर्भा अभवन् यद् दृभन्त्य उदायस्तस्माद् दर्भास्ता हैता शुद्धा मेध्या आपो वृत्राभिप्रक्षरिता यद्दर्भा यदु दर्भास्तेनौषधय श० ७ २.३ २ एतर्हि पाञ्चाला दर्भान् कुशा इत्येवाचक्षते जै० २ १०० तासा (अपाम्) यन्मेध्य यज्ञिय सदेवमासीत् तदपोदक्रामत् ते दर्भा अभवन् तै० स० ६ १ १ ७ ते (दर्भा) हि शुद्धा

प्राणाय) ५ १६ [दाशृ दाने (भ्वा०) धातोरौणादिकेऽसुन्-प्रत्यये छान्दसह्रस्वत्वे च दशस्-शब्द सिध्यति। तत आचारे क्यचि सुपा सुलुगित्याकारादेश.]

दशस्येः दद्या ७ ३७ ५ ['दशस्य' इति व्याख्यातम्। ततो लिङि मध्यमैकवचनम्]

दशाऽक्षरेण याजुष्या पङ्क्त्या (छन्दसा) ९ ३३. [दशन्-अक्षरपदयो समास]

दशाऽङ्गुलम् पञ्च स्थूल-सूक्ष्मभूतानि दशाऽङ्गुलानि अङ्गानि यस्य तज्जगत्, भा०—पञ्चभि स्थूलै भूतै सूक्ष्मैश्च युक्त जगत् ३१ १ ब्रह्माण्ड-हृदययोरुपलक्षणम्। पञ्चस्थूलभूतानि, पञ्चसूक्ष्माणि चैतदुभय मिलित्वा दशाऽवयवाऽऽख्य सकल जगत्। पञ्च प्राणा सेन्द्रिय चतुष्टयमन्त करण दशमो जीवश्च। एवमेवाऽन्यदपि जीवस्य हृदय दशाऽङ्गुलपरिमितम् ऋ० भू० ११६, ३११ [दशन्-अङ्गुलिपदयो समासे 'तत्पुरुषस्याङ्गुले. सङ्ख्याव्ययादे' ५४८६ सूत्रेण समासान्तोऽच्प्रत्यय। दशन्-अङ्गुल-पदयोर्वा समास]

दशाऽरित्रः दश अरित्राणि स्तम्भनसाधनानि यस्मिन् स (रथ) २१८१ [दशन्-अरित्रपदयो समास। अरित्रम्=ऋ गतौ (भ्वा०) धातो 'अर्तिलूधू०' अ० ३२१८४ सूत्रेण करणे इत्र]

दशो दशविधान् (हिरण्यपिण्डान्=सुवर्णादिसमूहान्) ६ ४७ २३

दशोणये दशोनय परिहाणानि यस्मात् तस्मै (कवये=विपश्चिते जनाय) ६ २० ४ **दशोणिम्**=दशधोणि परिहाण यस्य तम् (इभ=हस्तिनम्) ६ २० ८ [दशन्-ओणिपदयो समास। ओणि=ओणृ अपनयने (भ्वा०) धातोरौणादिक इन्प्रत्यय]

दश्यान् द्रष्टव्यान् (कवीन्=अध्यापकोपदेशकान्) ४ २ १२ [दसि दर्शनदसनयो (चुरा०) धातोर्ण्यत्। नकारलोपश्छान्दस, वर्णव्यत्ययेन च सकारस्य शकारादेश]

दसत् क्षयेत् १ १२१ १५ [दसु उपक्षये (दिवा०) धातोर्लङ्। अडभावश्छान्दस। विकरणव्यत्ययेन शप्]

दसमानः शत्रूनुपक्षयन् (विद्वान् रक्षको जन) १ १३४ ५ [दसु उपक्षये (दिवा०) धातो शानच्। व्यत्ययेनात्मनेपद शप्-प्रत्ययश्च]

दसयन्त दोषानुपक्षयन्तु ५ ४५ ३ **दसाम**=उपक्षयेम १० २२. [दसु उपक्षये (दिवा०) धातोर्णिजन्ताल् लङ्। अडभावश्छान्दस। अन्यत्र दसु धातोर्लङ्। अडभावो विकरणव्यत्ययेन च शप्]

दसाय शत्रूणामुपक्षयाय ६ २१ ११ [दसु उपक्षये (दिवा०) धातोर्घञर्थे क' प्रत्यय]

दस्म! अन्धकारोपक्षेत (सभापते) १.६२ ११. प्र०—दसु उपक्षये इत्यस्माद् 'इषियुधीन्धिदसि०' उ० १.१४५. अनेन मक्प्रत्यय १ ४ ६ दु खोपनाशक (अध्यापकोपदेशक वा) ४.१ ३ शत्रूणामुपक्षयित (इन्द्र=सभेश) १.१२९ ३ शत्रोरुपक्षेत. (इन्द्र=सभाध्यक्ष. सूर्यो वा) १.६२.१२. परदु खभञ्जक (अग्ने=विद्वज्जन) २ ९ ५ **दस्मम्**=दु खानामुपक्षेत्तारम् (सभाध्यक्षम्) १ ७७ ३ दु खोपक्षयितारम् (इन्द्र=राजानम्) २६ ११. **दस्मस्य**=दु खाऽपक्षयितु' (विदुषो जनस्य) ५ १७ ४. दु खोपक्षेतु (इन्द्रस्य=सभाद्यध्यक्षस्य) १.६२ ६. दु खोपक्षयकरस्य (अपत्यस्य) ३ १ ७ **दस्मः**=दु.खोपक्षेप्ता (अग्नि=विद्युत्) १ १४८ ४ दु खाना दुष्टानाञ्चोपक्षेता (राजा शिष्यो वा) २.१ ४ मूर्त्तद्रव्याणामुपक्षयिता (अग्नि=पावक) ३.३ २. **दस्माः**=दु खोपक्षेत्तार (जना) ५.४१ १३ दु खाना विनाशका. (आप्ता विद्वास) दु खोपक्षयितार (सूर्यादय) ५ ४९ ३ [दसु उपक्षये (दिवा०) धातो 'इषियुधीन्धिदसिश्याधूसूभ्यो मक्' उ० १.१४५ सूत्रेण मक्-प्रत्यय]

दस्मत् दु खोपक्षेत्तारम् (यज्ञम्) १.७४ ४ ['दस्म' इति व्याख्यातम्। ततो द्वितीयैकवचनस्याद् आगमश्छान्दस]

दस्मतमः अतिशयेन दु खाना क्षेत्ता (इन्द्र=पुरुषार्थी-सभेश) २ २० ६ ['दस्म' पद व्याख्यातम्। ततोऽतिशायने तमप्]

दस्मवर्चाः दस्मेषु शत्रुषु वर्चस्तेज प्रागल्भ्य यस्य स (इन्द्र=विद्वान्) १ १७३ ४ दस्मेषूपक्षयेषु वर्च प्रदीपन यस्य स (युवा नर) ६ ५८ ४ दस्ममुपक्षयित निवासयित निवासित वा वर्चो दीप्तिर्येन स (अग्नि=विद्वज्जन) ६ १३ २ [दस्म-वर्चस्पदयो समास। 'दस्म' पद व्याख्यातम् वर्चस्=वर्च दीप्तौ (भ्वा०) धातोरौणादिकोऽसुन्-प्रत्यय]

दस्मा दु खोपक्षयितारौ (इन्द्रावरुणौ=नृपाऽमात्यौ) ४ ४१ ६ ['दस्म' इति व्याख्यातम्। तत प्रथमा-द्विवचनस्य 'सुपा सुलुग्०' इत्याकारादेश]

दस्मे उपक्षयित्र्यौ (रात्रिदिने) ३ ५५ १५ ['दस्म' इति व्याख्यातम्]

दस्यन्ति क्षयन्ति ५ ५४ ७ [दसु उपक्षये (दिवा०)

(नर =नायका जना) ५ २६ १२ **दशग्वा:**=ये दशभिरिन्द्रियं सिद्धिं गच्छन्ति ते (विद्वज्जना) २ ३४ १२ **दशग्वे**=दश गावो यस्य तस्मै (पुष्पाय) ४ ५१ ४ **दशग्वै:**=ये रश्मयो दश दिशो गच्छन्ति तै (विप्रै =मेधाविजनै) १ ६२ ४ दशविधा गतयो येषान्तै (वायुभि) ३ ३६ ५ [दश-गोपदयो समास । छान्दस रूपम्]

दशतयस्य दशविधस्य (धामे =विदुषो जनस्य) १ १२२ १३ दशधाविधस्य (सूरे =विदुषो जनस्य) १ १२२ १२ **दशतय:**=दशगुणित (एध =इन्धनम्) १ १५८ ४ [सख्यावाचिनो दशन्प्राति० 'सख्याया अवयवे तयप्' अ० ५ २ ४२ सूत्रेण तयप्-प्रत्यय]

दशते दशकाय (हिंसकाय प्राणिने) १ १८६ ५ [दशु दशने (भ्वा०) धातो शतृप्रत्यये । 'दशसञ्ज०' सूत्रेण शपि अनुनासिकलोप]

दशद्युम् दशभिरङ्गुलिभि प्रकाशप्रदम् (वीरपुरुषम्) ६ २६ ४ दशसु दिक्षु द्योतते तम् (वृत्रम्) १ ३३ १४ [दशोपपदे दिवु क्रीडाविजिगीषादिषु (दिवा०) धातो क्विप्प्रत्यय । दशन्-द्युपदयोर्वा समास । द्यु =अहर्नाम निघ० १ ६]

दशपक्षाम् जिसके मध्य मे दोशाला और उनके चारो दिशाओ मे चार-चार शाला हो, उस को, स० वि० १६८, अथर्व० ९ ३ २१ [दशन्-पक्षपदयो समास]

दशप्रमतिम् दशधा प्रकृष्टा मतिर्यस्मिंस्तम् (वपु =रूपम्) १ १४१ २ (दशन्-प्रमतिपदयो समास]

दशभि: दशविधाभिर्गतिभि २७ ३३ दशविधैर्वायुभि ३ ३६ ५ [दशन्प्राति० तृतीयाया बहुवचनम्]

दशभुजि या दशभिरिन्द्रियैर्भुज्यते सा (पृथिवी) १ ५२ ११ [दशोपपदे भुजपालनाभ्यवहारयो: (रुधा०) धातोर्बाहुलकादौणादिक इन्-प्रत्यय । बहुलवचनादेवाऽगुणत्वम्]

दशमायम् दशाऽङ्गुलय इव माया मान यस्य तम् (इभ =हस्तिनम्) ६ २० ८ [दशन्-मायापदयो समास:। माया=प्रज्ञानाम निघ० ३ ९]

दशमास्य दशसु मासेषु जात (उत्तम बालक) ५ ७८ ८ **दशमास्य:**=दशसु मासेषु भव (गर्भ), भा०—दशमासात् पूर्वं न स्खलेत् यो हि दशमासादूर्ध्वं जायते स प्रायशो बलबुद्धियुक्तो भवति, यस्तस्मात्पूर्वमुत्पद्यते नाऽस्य तादृग्भवति ८ २८ [दशन्-मासपदयो समासे जातार्थे भवार्थे वा यत् । अथवा 'द्विगोर्यप्' अ० ५ १ ८२ सूत्रेण यप्-प्रत्ययो वयस्यभिधेये]

दशमी दशाना पूरणा (क्रिया) २५ ४ **दशम्या**=दशाना पूरिकया (देवतया) १० ३० [पूरणप्रत्ययान्ताद् दशमप्राति० 'वयसि पूरणात्' अ० ५ २ १३० सूत्रेण इनि]

दशमे दशाना पूरणे (युगे =वर्षे) १ १५८ ६ [दशन्-सख्यावाचिन प्राति० पूरणार्थे 'तस्य पूरणे डट्' इति डट्-प्रत्यये 'नान्तादसख्यादेर्मट्' अ० ५ २ ४९ सूत्रेण मडागम]

दशयन्त्रम् सूक्ष्मस्थूलानि दशभूतानि यन्त्रितानि यस्मिंस्तत् (सर्वं जगत्) ६ ४४ २४ [दशन्-यन्त्रपदयो समास]

दशरथस्य दश रथा यस्य सेनेशस्य १ १२६ ४. [दशन्-रथपदयो समास]

दशवीरम् दश वीरा पुत्रा यस्मात् तत् (अपत्यम्) १६ ४८ [दशन्-वीरपदयो समास]

दशस्य दाशन्ति ददति येन तद् दशस्तदात्मानमिच्छ ६ ११ ६ देहि ७ ४३ ५ क्षय शमय ३ ७ १० **दशस्यत**=बलयत ५ ५० ३ **दशस्यतम्**=दत्तातम्, प्र०—अय दशस्-शब्द कण्ड्वादिषु द्रष्टव्य १ १३६ ५ [दाशृ दाने (भ्वा०) धातोरौणादिकोऽसुन् प्रत्यये दाशस् । छान्दसह्रस्वत्वे दशस्-शब्दाद् इच्छाया क्यजन्ताल् लोट् । दशस् शब्दो वा कण्ड्वादिषु द्रष्टव्य कण्ड्वादेराकृतिगणत्वात्]

दशस्यन् प्रयच्छन् (इन्द्र =राजा) ६ २६ ६ अभिमत प्रयच्छन् (मेघ) १ १८१ ८ उपक्षयन् (उपकारिजन) २ १६ ५ दशति येन तद्दशन्, तदिवाऽऽचरन्तीति (प्रतापी मनुष्य), प्र०—अत्र दशधातोरसुन्-प्रत्यय, स च किन्, तत 'उपमानादाचारे' इति क्यच् १ ६१ ११ **दशस्यन्त:**=विस्तारयन्त (विद्वासो जना) ५ ३ ४ बलयन्त (मरुत =उत्तमराजजना) ७ ५६ १७ [दशस्य इति व्याख्यातम् । तत शतृप्रत्यय । दश दशने (भ्वा०) धातोर्वा असुन् किच्च । तत आचारे क्यजन्ताच्छतृ]

दशस्यन्ता बलवन्तौ (अध्यापकोपदेशकौ) ६ ६२ ७ ['दशस्य' इति व्याख्यातम् । तत शत्रन्तात् प्रथमाद्विवचने 'सुपा सुलुग्०' इति विभक्तेराकारादेश]

दशस्यन्ती: इष्टान् कामान् ददती (पत्नी =भार्या) ५ ४२ १२ ['दशस्य' इति व्याख्यातम् । तत शत्रन्तान् ङीप्]

दशस्या दशा इवाऽऽचरति, तस्मै (मनवे=बोधाय,

स्थाने । दस्री दर्शनीयौ नि० ६ २६]

दह भस्मसात् कुरु ७ १५.१३. भस्मीभूत करो, आर्याभि० १.१६, ऋ० १ ३ १० १४ [दह भस्मीकरणे (भ्वा०) धातोर्लोट्]

दहतात् भस्मीकुरु ३.१८ १ [दह भस्मीकरणे (भ्वा०) धातोर्लोटि 'तुह्योस्तातङ्०' इत्याशिषि तातङ्-डादेश]

दहन् भस्मीकुर्वन् (अग्नि) ३ २६ ६ [दह भस्मी-करणे (भ्वा०) धातो शतृप्रत्यय]

दशनावान् प्रशस्तकर्मयुक्त (सज्जन) ३ ३६ ४ [दशनाशब्दात् प्रशसाया मतुप् । दशना=दशि दर्शन-दशनयो (चुरा०) धातो 'ण्यासश्रन्थो युच्' इति युच्-प्रत्यय । सकारस्य वर्णव्यत्ययेन शकारादेश]

दंशासि उपदेशाऽध्यापनादीनि कर्माणि १ ११६ २५ [दसि दर्शनदशनयो (चुरा०) दशि दशने (चुरा०) धातोर्वा असुन्]

दंष्ट्राभ्याम् मुखदन्ताभ्याम् २५ १ तीक्ष्णाऽग्राभ्या दन्ताभ्याम् ११ ७८ **दंष्ट्रै**=दद्भि २ १३ ४ [दश दशने (भ्वा०) धातो 'दाम्नीशसयुयुज०' अ० ३ २ १८२. सूत्रेण करणे ष्ट्रन्प्रत्यय]

दंसना दसन दर्शनम्, प्र०—अत्र 'सुपा सुलुग्०' इति विभक्तेराकारादेश ३ ६ ७ कर्माणि ५ ८७ ८ [दसि दर्शनदशनयो (चुरा०) धातो 'ण्यासश्रन्थो युच्' सूत्रेण युच्]

दंसनाभिः उत्तमै कर्मभि ४ ३३ २ भाषणै १ ११८ ६ **दंसनाभ्यः**=सुखकरक्रियाभ्य ३ ३ ११ [दसि दर्शनदशनयो (चुरा०) धातो 'ण्यासश्रन्थो युच्' अ० ३ ३ १०७ सूत्रेण युचि स्त्रिया टाप्]

दंसः कर्म १ ६२ ४ दमयन्ति पश्यन्ति विद्या सुखानि च येन कर्मणा तत् १ ६२ ६ [दसि दर्शनदशनयो (चुरा०) धातो 'हलश्च' सूत्रेण करणे घञ्प्रत्यय । दस कर्मनाम निघ० २ १]

दंसिष्ठा अतिशयेन दसितारौ पराक्रमिणौ (अश्विना=अध्यापकोपदेशकौ) १ १८२.२. [दसितृप्राति० अतिशायन इष्ठन्-प्रत्यय । 'तुरिष्ठेमेयस्सु' सूत्रेण तृचो लोप । दसितृ=दसि दर्शनदशनयो (चुरा०) धातो कर्तरि तृच्]

दंसु दाम्यन्ति जना येषु (रश्मिषु) १ १३४ ४ दमेषु १ १४१ ४ [दसि दर्शनदशनयो (चुरा०) धातोर् बाहु० औणादिक उ प्रत्यय]

दंसुजूतः यो दमुभिरुपक्षयितृभिर्वीरैर्जूत प्रेरित स: (नहुष=मनुष्य) १ १२२.१० [दसु-जूतपदयो समास । दसुरिति व्याख्यातम्]

दंसुपत्नीः दसूना कर्मकर्तृणा पत्न्य ४ १६.७ [दसुरिति व्याख्यातम् । दसु-पत्नीपदयो. समास]

दसोभिः शिष्टाऽनुष्ठितै (कर्मभि) १ ११७.४. कर्मभि १२.७४. [दसि दर्शनदशनयो (चुरा०) धातोरौणादिकोऽसुन्प्रत्यय]

दाक्षायणम् दक्षेण चतुरेणाऽयन प्रापणीय तदेव, भा०—धर्म्येण वर्त्तनम् (हिरण्य=ज्योतिर्मयम्) ३४ ५१ **दाक्षायणाः**=चातुर्यविज्ञानयुक्ता (सुमनस्यमाना=सज्जना) ३४.५२ [दक्ष-अयनपदयो समासे दक्षायन-प्राति० स्वार्थेऽण्प्रत्यय । दक्ष बलनाम निघ० २ ६ दक्ष=दक्ष वृद्धौ शीघ्रार्थे च (भ्वा०) धातो पचाद्यच्-प्रत्यय]

दात् दद्यात् १ १२१ १२ जन्म देता है, स० प्र० ३३०, १ २४ १ **दात**=दत्त, प्र०—अत्र 'बाच्छन्दसि' इति शपो लुक् २.३४ ७. [डुदाञ् दाने (जु०) धातोर्लुङ् । अडभावश्छान्दस । 'गातिस्था०' सूत्रेण सिचो लुक् । अन्यत्र लङि 'बहुल छन्दसी' ति शपो लुकि अडभावे च रूपम्]

दातवे दातुम् ७ ५९ ६ [डुदाञ् दाने (जु०) धातो-स्तुमर्थे तवेन्-प्रत्यय । दातवे दानाय नि० ४ १५]

दातवै दातुम् ४.२१ ६ [डुदाञ् दाने (जु०) धातो-स्तुमर्थे तवैप्रत्यय]

दाता दानशीलो दानहेतुर्वा (सविता=जगदीश्वर सूर्यो वा) १ २२ ८ प्रापक (ईश्वरो भौतिकोऽग्निर्वा) ४ १६ **दातारौ**=सुखदानहेतू (इन्द्राग्नी=वायुर्विद्युदादि-रूपोऽग्निश्च तौ) ३ १३ [डुदाञ् दाने (जु०) धातो कर्त्तरि तृच् । 'तृन्' अ० ३ २ १३५ सूत्रेण तच्छीलादिषु वा तृन्प्रत्यय । अग्निर्वै दाता स एवास्मै यज्ञ ददाति कौ० ४ २]

दाति छिनत्ति १ ६५ ४. ददाति, प्र०—अत्राऽभ्यास-लोप ४ ८ ३ [दाप् लवने (अदा०) धातोर्लट् । अथवा डुदाञ् दाने (जु०) धातोर्लट् । 'बहुल छन्दसीति' शपो लुक् । दाति दानकर्मा निघ० ३ २०]

दातिवारम् यो दातिं दान वृणोति तम् (विद्वास जनम्) ५ ५८ २ **दातिवाराः**=ये दातिं लवन छेदन वृण्वन्ति (मरुत=मनुष्या) ३ ५१ ६ ['दाति' इत्युपपदे वृञ् वरणे (स्वा०) धातो 'कर्मण्यण्' इत्यण्-प्रत्यय ।

धातोर्लट्]

दस्यवः परपीडका मूर्खा धर्मरहिता दुष्टा मनुष्या। १ ५१ ८ दुष्ट गुण-स्वभाव-कर्माऽऽचरण परहानिकरण-तत्परा (दुर्जना), प० वि०। नास्तिका (जना) १ ५१.८ दस्यु अर्थात् आर्यों से विपरीत डाकू, दुष्ट, अधार्मिक और अविद्वान् जन, स० प्र० ३०७, १ ५१ ८ **दस्यवे**=दुष्ट-कर्म-कर्त्रे (दुर्जनाय) १ १०३ ३ **दस्युभ्यः**=साहसिकेभ्य-श्चौरेभ्य (जनेभ्य) ४ ३८.१ **दस्युम्**=साहसिक चोरम् (जनम्) ५ ४.६ दुष्टाचार साहसिकम् (दुर्जनम्) ७ १९ ४ दुष्टम् (जनम्) ६ १४ ३ प्रसह्य परस्वाऽपहर्त्तारम् (दुर्जनम्) १ १७५ ३ बलात्कारिण चोरम् (दुर्जनम्) २.१५ ९ दुष्टस्वभावयुक्तम् (शम्वर=मेघम्) १ ५९ ६ बलात्कारेण परस्वाऽपहर्त्तारम् (जनम्) १ ५३ ४ दुष्टकर्मणा सह वर्त्तमान परद्रोहिण परस्वहर्त्तार चौर शत्रु वा १ ५३ ४ **दस्युः**=परपदार्थाऽपहारक (दुर्जन) २ ११ १८ **दस्यून्**=साहसेनोत्कोचान् चोरान् ३ ३४ ६ महादुष्टान् (जनान्) १ ७८.४ दुष्टान् साहसिकांश्चोरान् (अविदुषो जनान्) ७ १६ ३ दुष्टकर्म-कारकान् (दुर्जनान्) ७ ५ ६. परस्वाऽपहारकान् (कुपुरुषान्) १ ६३ ४ भयङ्करान् चोरान् (जनान्) २ २० ८ दुष्टाचारान् मनुष्यान् २ १३ ९ अतिदुष्टकर्मकारिण (दुर्जनान्) ३ २९ ९. महासाहसि-कान् (चोरादीन् जनान्) ४ २८.३ सहसा पर-पदार्था-ऽपहर्त्तॄन् (नीचान् जनान्) १ १०१ ५ डाकुओ को, आर्याभि० १ ४४, ऋ० १ ७ १२ ५ **दस्योः**=परस्वाऽऽ-दातुश्चोरस्य (जनस्य) १ १०४ ५ परद्रव्याऽपहारकस्य दुष्टस्य (जनस्य) ६ ३१ ४ उत्कोचकस्य (जनस्य) १.११७ ३. पर-पदार्थ-हर्त्तुर्दुष्टस्य (जनस्य) २ १२ १० [दसु उपक्षये (दिवा०) धातोः 'यजिमनिशुन्धिदसिजनिभ्यो युच्' उ० ३ २० सूत्रेण युच्-प्रत्यय । दस्यु दस्यते क्षया-र्थाद् उपदस्यन्त्यस्मिन् रसा उपदासयति कर्माणि नि० ७ २३ त एते अन्ध्रा पुण्ड्रा शवरा पुलिन्दा मूतिवा इत्युदन्त्या बहवो भवन्ति वैश्वामित्रा दस्यूना भूयिष्ठा ऐ० ७.१८]

दस्युघ्ना या दस्यून् हन्ति सा (नारी) ४ १६ १० ['दस्यु' रिति व्याख्यातम्। तदुपपदे हन हिंसागत्यो (अदा०) धातो 'कृतो बहुल वा' इति वार्त्तिकेन बहुलवचनात् टक-प्रत्ययान्तात् स्त्रिया टाप्]

दस्युजूताय दुष्ट-सङ्गाय ६ २४ ८ [दस्यु-जूतपदयो समास । दस्युरिति व्याख्यातम् । जूत=जु इति सौत्रो धातु, ततो भावे क्त]

दस्युहत्याय दस्यूना हत्य। यस्मै तस्मै (श्रवसे=धनाय) १ १०३ ४. दस्यूना हनन यस्मिन् व्यवहारे तस्मै १ ५१ ६ **दस्युहत्येषु**=दस्यूना हत्या हननानि येषु सङ्ग्रामादि-व्यवहारेषु १ ५१ ५ [दस्यु-हत्यापदयो समास । दस्युपद व्याख्यातम्। ह.या=हनहिंसागत्यो (अदा०) धातो 'हनस्त च' अ० ३ १ १०८ सूत्रेण भावे क्यप्प्रत्यय । तकारश्चान्तादेश]

दस्युहन्तमम् यो दस्यूनतिशयेन हन्ति तम् (योद्धृ-जनम्) ६ १६ १५ [दस्यु-हन्तृपदयो समासेऽतिशायने तमप् । तृचो लोपश्छान्दस । अथवा=दस्यूपपदे हन् धातो क्विपि अतिशायने तमप् । 'नाद्घस्य' अ० ८ २ १७ सूत्रेण घसञ्ज्ञकस्य तमपो नुडागम]

दस्युहा यो दस्यून् दुष्टाश्चोरान् हन्ति (राजा) ६ ४५ २४ दुष्टाना चौराणा हन्ता (इन्द्र=सेनाद्यधिपति) १ १०० १२ दुष्ट पापी लोगो का हनन करने वाला (परमात्मा), आर्याभि० १ ३४, ऋ० १ ७ १० १२ [दस्यु-रिति व्याख्यातम् । तदुपपदे हन हिंसागत्यो (अदा०) धातो क्विप्प्रत्यय]

दस्येत् उपक्षाययेत् ६ ३७ ३ [दसु उपक्षये (दिवा०) धातोर्लिङ् । अन्तर्भावितण्यर्थ]

दस्र ! दु खोपक्षयित (विद्वज्जन) ६ ५६ ४ **दस्रा**=दु खोपक्षयितारौ (अश्विना=अध्यापकोपदेशकौ) १ ११२ २४ दु खहिंसकौ (अश्विना=कृषिकर्मविद्याव्यापिनौ सभासेना-धीशौ) १ ११७.५ दु खानामुपक्षयकर्त्तारौ (अश्विनौ=अग्निजले), प्र०—अत्र 'दसु उपक्षये' इत्यस्मादौणादिको रक् प्रत्यय १ ३ ३ दुष्टाना निवारकौ (विद्वासौ जनौ) ३३ ५८ दु खदारिद्र्य-नाशकौ (अध्यापकोपदेशकौ) १ १८३ ५ विद्योपयोग प्राप्नुवन्तावशेषदु खोपक्षयितारौ वाय्वग्नी १ ९२ १८ रोगोपक्षयितारौ (भिषजौ=सद्वैद्यौ) १ ११६ १६ दातारौ (नासत्या=राजधर्म-सभापती) १.११६ १० दु खविनाशकौ (अश्विना=सभासेनेशौ) १ ११७ २१ शत्रूणामुपक्षेतारौ (अश्विनौ=वायुविद्युतौ) १ ४७ ६ दु खनिवर्त्तकौ (अश्विनौ=सभासेनेशौ) १ ११७ २२ क्लेशविनाशकौ (अश्विना=शिल्पविद्या-विदावध्यापकोपदेशकौ) ३ ५८ ५ **दस्राः**=उपक्षेतार (धेनव=वाच) ५ ५५ ५ [दसु उपक्षये (दिवा०) धातो 'स्फायितञ्चिवञ्चि०' उ० २ १३ सूत्रेण रक्प्रत्यय । 'दस्रा' प्रयोगे 'सुपा सुलुग्' इत्याकारादेश प्रथमाद्विवचनस्य

दानाः=दातार (ऋत्विजो जना) ७ १८ २३. ददाना.=(वाच) ५ २७ ५ **दाना**=दानानि ५ ५२ १४ दानेन ५ ८७ २ [डुदाञ् दाने (जु०) धातो 'कृत्यल्युटो बहुलम्' इति सूत्रे बहुलवचनात् कर्त्तरि ल्युट्]

दानुचित्राः अद्भुतदाना (त्रिविधा क्रिया) १ १७४ ७ चित्रा अद्भुता दानवो दानानि यासु ता (उषस =प्रभातवेला) ५ ५९ ८. चित्राण्यद्भुतानि दानवो दानानि येषा ते (विद्वासो जना) ५ ३१ ६ [दानु-चित्र-पदयो समास । दानुपद 'दानवे' पदे द्रष्टव्यम्]

दानुमत् प्रशस्ता दानवो दानानि वस्तूनि वा विद्यन्ते यस्मिँस्तस्मिन् (वसु=द्रव्यम्) १ ५१ ४ [दानुप्राति० प्रशसाया मतुप्प्रत्यय । दानुपद दानवे द्रष्टव्यम्]

दानुमत्याः बहूनि दानवो दानानि विद्यन्ते यस्या पृथिव्या तस्या मध्ये ५ ६८ ५ [दानुप्राति० भूम्नि मतुबन्तात् स्त्रिया ङीप्]

दानौकसम् दानमोकश्च यस्य तम् (वीरजनम्) १ ६१ ५ [दान-ओकस्पदयो. समास. । दानमिति व्याख्यातम् । ओकस्=वच परिभाषणे (अदा०) धातोर्बाहु० औणा० असुन् । न्यङ्क्वादित्वात् कुत्वम्]

दान्ति छिन्दन्ति १९ ६ लुनन्ति १०.३२ [दाप् लवने (अदा०) धातोर्लट्]

दाम् देता हूँ, स० प्र० २३८, १०.४९.१ [डुदाञ् दाने (जु०) धातोर्लुङि उत्तमैकवचनम् । अडभावश्छान्दस]

दाम उदरबन्धनम् २५.३१ दमनसाधनम् (रशना=व्यापिका रज्जु) १ १६२.८ [डुदाञ् दाने (जु०) धातो 'सर्वधातुभ्यो मनिन्' उ० ४.१४५ सूत्रेण मनिन्]

दामनः दात्री (स्त्री) ५ ३६ १ **दामनि**=य सुखानि ददाति तस्मिन् गृहाश्रमे १.५६ ३ [डुदाञ् दाने (जु०) धातोरौणादिको मनिन्प्रत्यय]

दामन्वन्तः बहुदानक्रियायुक्ता (विद्वासो जना) ५ ७९ ४ बहु-बन्धना (प्रजा) ६ २४ ४ [दामन् इति व्याख्यातम् पूर्वपदे । ततो भूम्नि मतुबन्तात् प्रथमाबहुवचनम्]

दामा दातु योग्य (सोम =ऐश्वर्यसमूह) ६ ४४.२

दामानम्=यो ददाति तम् (ईश्वरम्) ३३ ५४ दातारम् (परमेश्वरम्) ४ ५४ २ [डुदाञ् दाने (जु०) धातो 'सर्वधातुभ्यो मनिन्' उ० ४ १४५ सूत्रेण मनिन्]

दामेव यथा रज्जु २ २८ ६ [दामन्-इवपदयो समास]

दायि दीयते १ ६१.१५ [डुदाञ् दाने (जु०) धातो कर्मणि लुङ् । अडभावश्छान्दस]

दारु काष्ठम् ६ ३ ४ **दारुम्**=दु खविदारकम् ७.६ १ [दारु दृणातेर्वा द्रूणातेर्वा नि० ४ १५ दॄ विदारणे (क्र्या०) धातो 'दृसनिजनिचरिचटिरहिभ्यो ञुण्' उ० १.३ सूत्रेण ञुण्प्रत्यय]

दार्भ्याय दर्भेषु विदारकेषु भवाय ५.६१ १७ [दर्भ प्राति० भवार्थे यत् । तत स्वार्थेऽण्]

दार्वाघाटः शतपत्रक २४ ३५ [दारु आहन्तीति विग्रहे दारुवुपपदे आङ्पूर्वाद् हन हिंसागत्यो. (अदा०) धातो 'दारावाहनोऽणन्तस्य च ट सज्ञायाम्' अ० ३.२ ४९ वा० सूत्रेण अण्, अन्तस्य च टकारादेश]

दार्व्वाहारम् यो दारूणि काष्ठानि आहरति तम् ३० १२ ['दारु' इति व्याख्यानम् । तदुपपदे आङ्पूर्वाद् हृञ् हरणे (भ्वा०) धातो 'कर्मण्यण्' इत्यण्प्रत्यय]

दावने दाने (विदुषे जनाय) ५ ६५.३. सुख दाने (रायसे=धनाय) १ १३९ ६. दाने ६ ७१ २ दानाय २ १११ दानशीलाय (सज्जनाय) २ ११०. [डुदाञ् दाने (जु०) धातोरौणादिको बाहुलकाद् वनिप्प्रत्यय. । दावने दानस्य नि० ४ १८]

दावपम् वनदाहकम् (जनम्) ३०.१६

दाशत् दाश्यात् १ ७० ३ दद्यात् ४.२ ६ ददाति ६ १६ २०. [दाशृ दाने (भ्वा०) धातोर्लेट् । दाशति दानकर्मा निघ० ३ २०]

दाशतः सेवमाना. ७ १४ ३. दातार ७ १७ ७ [दाशृ दाने (भ्वा०) धातो शतृप्रत्यय । विभक्तिव्यत्यय]

दाशति ददाति १ १५१ ७ [दाशृ दाने (भ्वा०) धातोर्लट् । दाशति दानकर्मा निघ० ३ २०]

दाशम् दाशत्यस्मै तम् ३० १६ **दाशा**=दानाय । प्र०—अत्र 'सुपा सुलुग्०' इत्याकारादेश. [दाशृ दाने (भ्वा०) धातो 'दाशगोघ्नौ सम्प्रदाने' अ० ३ ४ ७३ सूत्रेण सम्प्रदाने कारके अच्प्रत्ययो निपात्यते]

दाशराज्ञे यो दाशति सुख ददाति राजा तस्मै ७ ३३ ३ दाशाना दातॄणा राज्ञे ७ ३३ ५ [दाश-राजन्-पदयो समास । दाश =दाशृ दाने (भ्वा०) धातो कर्त्तर्यच्-प्रत्यय]

दाशात् ददाति १ ७१ ६ ददति २ २३ ४ दद्यात् १ ६८ ३ [दाशृ दाने (भ्वा०) धातोर्लेट् । आडागम]

दाशुषे दानशीलाय जीवाय ३४.२४ दात्रे १९.६३

दाति =डुदाञ् दाने (जु०) दाप् लवने (अदा०) धातोर्वा भावे क्तिन्]

दातुः दानकर्त्तु (सज्जनस्य) २६ २ शोधयितु १ १३ ११ [डुदाञ् दाने (जु०) दैप् शोधने (भ्वा०) धातोर्वा कर्त्तरि तृच्]

दातोः दातुम् ७ ४ ६ [डुदाञ् दाने (जु०) धातोस्तुमर्थे तोसुन्प्रत्यय]

दात्यौहः काक २४ ३६ **दात्यौहान्**=कृष्णकाकान् २४ २५ मासेभ्यो दात्यौहान् (आलभते) मै० ३ १४ ६

दात्रम् दातु योग्यम् (महि=महद्राज्यम्) १ ११६.६ दानम् ११८५ ३ दानयोग्य सुखकारकत्वात् पोषक च (सामर्थ्यम्) ऋ० भू० १६३, ऋ० ८ ८ ६ १ दाति रोगान् येन तद्वान् (सभेशो राजा) १० ६ **दात्रा**=दातारौ (राजसेनाऽध्यक्षौ) ४.३८ १ **दात्राणि**=दानानि ६ ६१ १ **दात्रात्**=दानात् ७ ५६ २१ [डुदाञ् दाने (जु०) धातो 'दादिभ्यश्छन्दसि' उ० ४ १७० सूत्रेण त्रन् प्रत्यय । दाप् लवने (अदा०) धातो 'दाम्नीशसयुयुज०' अ० ३ २.१८२ सूत्रेण करणे ष्ट्रन्]

दात्रे दानकरणशीलाय (राज्ञे) ६ ४४ १० [डुदाञ् दाने (जु०) धातोस्तृजन्ताच् चतुर्थी]

दादृहाणम् दृ हितु शीलम् (पर्वत=मेघम्) १ ८५.१० **दादृहाणः**=दोषान् हिंसन् (इन्द्र =विद्वज्जन), प्र०—अत्र व्यत्ययेनाऽऽत्मनेपदम्, तुजादित्वाद् दैर्घ्यम्, बहुल छन्दसि, इति शप श्लु १ १३० ४ वर्धमान (राजा) ४ २६ ६ [दृह दृहि वृद्धौ (भ्वा०) धातोर्लिटः स्याने कानच् प्रत्यय । 'तुजादीनाम्' इत्यभ्यासस्य दीर्घत्वम् । धातूनामनेकार्थकत्वाद् हिंसायामर्थेऽपि]

दादृहि विदारय, प्र०—अत्र श्न श्लु 'तुजादीनाम्०' इत्यभ्यासदीर्घ १ १३३ ६ [दृ विदारणे (क्र्या०) धातोर् लोट् । विकरणव्यत्ययेन श्न श्लु, 'तुजादीनाम्' इत्यभ्यासस्य दीर्घ]

दाधर्थ धरसि धरति वा, प्र०—'दाधर्त्ति०' अ० ७ ४ ६५ अनेनाऽय यङ्लुगन्तो निपातित ५ १६ [धारयतेर्धृञो वा श्लौ यङ्लुकि 'दाधर्त्तिदर्धर्ति०' अ० ७ ४ ६५ सूत्रेण लिटि अभ्यासस्य दीर्घत्व णिलोपश्च निपात्यते]

दाधार धरतु १ १५६ ४ धरति पोषयति वा १ १५४ ४ धरति पुष्णाति वा ३ ३२ ८. स्वसत्तयाऽऽकर्षणेन धरति १ ६७ ३ धारितवान्, ऋ० भू० ११८, ऋ० ८ ७ ३ १ दधाति, प्र०—अत्र 'तुजादीनाम्०' इत्यभ्यास-दैर्घ्यम् ६.४४ २४ धरेत् १ ६६ २ धृतवान्, धरति, धरिष्यति वा, प्र०— अत्र 'तुजादीनाम्०' इत्यभ्यासदैर्घ्यम् २३ १ धारयति नि० १० २३, १३ ४. धारण कर रहा है, स० वि० ५, १३.४. अपने आकर्षण मे धारण किया है, स० प्र० ३१२, १०.१२१ १. रचन, धारण करता है स० प्र० ३१३, १० १२१ १ उत्पन्न किया है, स० प्र० २०८, १० १२१ १ [दाधार धारयति नि० १० २२ धृञ् धारणे (भ्वा०) धातोर्लिटि प्रथमैकवचनम् । 'तुजादीनाम्०' इत्यभ्यासस्य दीर्घत्वम्]

दाधृविः धर्त्री (माता) ६.६६ ३ [धृञ् धारणे (भ्वा०) धातोरौणादिको बाहुलकाद् क्विन्प्रत्यय । धातोर्द्वित्वम् अभ्यासस्य च दीर्घत्व छान्दसम्]

दाधृषिम् भृश प्रगल्भम् (इन्द्र=राजानम्) ४ १७ ८. **दाधृषिः**=अतिशयेन प्रगल्भ (शिल्पिजन) २ १६ ७ [ञिधृषा प्रागल्भ्ये (स्वा०) धातो 'किकिनावुत्सर्गश्छन्दसि' इति वा० सूत्रेण कि, लिड्वच्च । 'तुजादीनाम्०' इत्यभ्यासस्य दीर्घ]

दानम् यद् दीयते तत् (धनादिकम्) ७ १८ २२ दीयमानम् (वस्तुमात्रम्) ३ ३४ **दानानि**=दातव्यानि (धनादीनि) २१ ६१ भा० —विद्याधर्म-वर्धनाय ६ २७ विद्यादिदानाय १ ४८ ४ अन्येषा सत्काराय २ १४ १२ सुखवितरणाय १ ११२ २ **दाने**=दीयते येन तस्मिन् (पुण्ये कर्मणि) २ १३ ७ [डुदाञ् दाने (जु०) धातो 'कृत्यल्युटो बहुलम्' सूत्रेण ल्युट्]

दानवम् दुष्टप्रकृतिम् (जनम्) ५ २९ ४ दुष्ट-जनम् ५ ३२.१ **दानवस्य**=दुष्टकर्मकर्त्तु (जनस्य) २ ११ १० **दानवाय**=दान-कर्त्रे (जनाय) ५ ३२ ७ [डुदाञ् दाने (जु०) धातो 'दाभाभ्या नु' उ० ३ ३२ सूत्रेण नु प्रत्यय । दानोरपत्य दानव इति 'तस्यापत्यम्' इत्यण्प्रत्यय । दो अवखण्डने (दिवा०) धातोर्वा नु प्रत्यय । दानुरेव दानव इति स्वार्थेऽण् । दानवम् दानकर्माणम् नि० १०.९]

दानवे दात्रे (शिल्पिने विदुषे) ५ ५६ १ **दानुनः**=दानस्य २.४१ ६ **दानुम्**=दातारम् (प्रजाजनम्) ४ ३०.७ जलस्य दातारम् (वृत्र=मेघम्) २ ११ १८ **दानुः**=दान-शील (राजा=सभाध्यक्ष) १ ५४ ७. **दानु**=दानम् ६ ५० १३ [दानून् दातॄन् नि० ११ २१ डुदाञ् दाने (जु०) धातो 'दाभाभ्या नु' उ० ३ ३२ सूत्रेण नु प्रत्यय]

दानः यो ददाति स (इन्द्र =राजा) ७ २७ ४

यया सा दिक्, तद्वत् (स्त्री) १४ १२ **दिक्षु**=पूर्वादिषु १६.६ **दिग्भ्यः**=पूर्वप्रतिपादिताभ्य सर्वाभ्य (पूर्वादिभ्य) ६ १९ सर्वाभ्य ग्राशाभ्य १० ८ [दिशन्ति तामिति विग्रहे दिश ग्रतिसर्जने (तुदा०) धातो 'ऋत्विग्दधृक्०' ग्र० ३ २ ५९ सूत्रेण कर्मणि क्विन् निपात्यते, करणे वा। दिश दिशतेरासदनादपि व्याभ्यशनात् नि० २ १५ पञ्च वै दिश श० ५ ४ ४ ६ पञ्च वा इमा दिशश्चतस्रस्तिरश्च एकोर्ध्वा ऐ० ६ ३२ तद् या ग्रमुष्मादादित्यादर्वाच्य पञ्च दिशस्ता नाकसद श० ८ ६ १ १४ या (ग्रमुष्मादादित्यात्) पराच्य (पञ्च दिश) ता पञ्च चूडा श० ८ ६ १ १४ सप्त-दिश श० ९ ५ २ ८ दिश सप्तहोत्रा (यजु० १३ ५) श० ७ ४ १ २० नव दिश श० ६ ३ १ २१, ६ ८ २ १० दश दिश श० ६ ३ १ २१, ८ ४ २ २३ दिशो वै स नाक स्वर्गो लोक श० ८ ६ १ ४ स्वर्गो हि लोको दिश श० ८ १ २ ४ ता वा ऽएता देव्य । दिशो ह्येता श० ९ ५ १ ३९ दिशोऽग्नि श० ६.२ २ ३४, ६ ३ १ २१, ६ ८ २ १,० विश्वे त्वा देवा वैश्वानरा कृण्वन्त्वानुष्टुभेन छन्दसाङ्गिरस्वत् (ध्रुवासि दिशोऽसि यजु० ११ ५८) इति दिशो ह्येतद् यजुरेतद्वै विश्वे देवा वैश्वानरा एषु लोकेषूखायामेतेन-चतुर्थेन यजुषा दिशोऽदधु श० ६ ५ २ ६ ता (दिश) उ एव विश्वे देवा जै० उ० २ २ ४, २ ११ ५ स (प्रजापति.) विश्वान् देवानसृजत तान् दिक्षूपादधात् श० ६ १.२ ९ वायुर्दिशा यथा गर्भ श० १४ ९ ४.२१ दिशो लोगेष्टका श० ७ ३ १ १३ दिशो वै हरित श० २ ५ १ ५ दिश शिक्य दिग्भिर्हीमे लोका शक्नुवन्ति स्थातु यच्छक्नुवन्ति तस्माच्छिक्यम् श० ६ ७ १ १६ ऋतवो वै दिश प्रजनन गो० उ० ६ १२ दिशो मे श्रोत्रे श्रिता तै० ३ १० ८ ६ अथ यत्तच्छ्रोत्रमासीत्ता इमा दिशोऽभवन् जै० उ० २ २.४ तद् यत् तच्छ्रोत्र दिश एव तत् श० १० ३ ३ ७ श्रोत्र दिश जै० उ० ३ २ ८ दिशो वै श्रोत्र दिश पर रज श० ७ ५ २ २० दिशो वै लोहमय्य (सूच्य) श० १३ २ १० ३ दिशो वा ग्रयस्मय्य (सूच्य) तै० ३ ९ ६ ५ ग्रवान्तरदिशो रजता (सूच्य) श० १३ २ १० ३ ग्रवान्तरदिशो रजता (सूच्य) तै० ३ ९ ६ ५ दिशो वाऽग्रस्य (सूर्यस्य) वुञ्न्या उपमा विष्ठा (यजु० १३ ३) श० ७ ४ १ १४ छन्दासि वै दिश श० ८ ३ १ १२, ९ ५ १ ३९ दिशा वै विष्टारपक्तिश्छन्द श० ८ ५ २ ४ दिशो वै परिभूश्छन्द श० ८ ५ २ ३ दिश परिधय तै० २ १ ५ २ ऐ० ५ २८ दिशो परिधानीया जै० उ० ३ ४ २ दिशो वै प्राण जै० उ० ४ २२ ११ दिश समान जै० उ० ४ २२ ९ दिशा वा एतत्साम यद् वैरूप्यम् ता० १२ ४ ७ ग्रपरिमिता हि दिश श० ६.५ २.७ एतद् वै देवा इमाँल्लोकानुखा कृत्वा दिग्भिरदृहन् दिग्भि पर्यतन्वन् श० ६ ५ २.११]

दितिम् नाशवन्तम् (पदार्थम्) १० १६. नाशवत् कार्यम् ५ ६२ ८ खण्डिता क्रियाम् ४ २ ११ **दितिः**= दु खनाशिका नीति ७.१५ १२ ग्रखण्डिता सामग्री १८ २२ [दो ग्रवखण्डने (दिवा०) धातो स्त्रिया क्तिन्-प्रत्यये 'द्यतिस्यति०' ग्र० ७ ४ ४० सूत्रेण तकारादौ किति परे इकारादेश]

दित्यवाट् दितौ खण्डिताया क्रियाया भवा दित्या-स्तान यो वहति पृथक् करोति स (जन) १८ २६ दितिभि खण्डनैर्निर्वृत्तान् यवादीन् वहति (क्रिया) १४ १० दितये हित वहति (गौ=जन) २१ १३ **दित्यवाहम्**=यो दित्यान् खण्डितान् वहति गमयति तम् (भा०—शरीरम्) २८ २५ [दित्योपपदे वह प्रापणे (भ्वा०) धातो: 'वहश्च' ग्र० ३ २ ६४ सूत्रेण ण्वि प्रत्यय । दित्य =दितिप्राति० भवार्थे यत्प्रत्यय । दिति =दो ग्रवखण्डने (दिवा०) धातो स्त्रिया क्तिन्]

दित्यौही तत्स्त्री १८ २६. [दित्यवाड् इति व्याख्या-तम्। तत स्त्रिया ङीपि 'वाह ऊठ्' ग्र० ६ ४ १३२ सूत्रेण ऊठि 'एत्येधत्यूठ्सु' सूत्रेण वृद्धि]

दित्सति हिंसितुमिच्छति २ २८ १० **दित्ससि**= दातुमिच्छसि ४ ३२ ८ [डुदाञ् दाने (जु०) दो ग्रवखण्डने (दिवा०) धातोरिच्छाया सनि 'सनिमीमाघु०' ग्र० ७ ४ ५४ सूत्रेणाच इसादेशेऽभ्यासलोपे सस्य तकारे च रूपम्]

दित्सन्तम् दातुमिच्छन्तम् (जनम्) २ १४ १० [दित्सतीति व्याख्यातम् । तत्र शत्रन्ताद् द्वितीया]

दित्सु दातुमिच्छु (मन) ५ ३९ ३ [दित्सतीति व्या-ख्यातम् । तत 'सनाशसभिक्ष उ' इति सूत्रेण उ प्रत्यय]

दिदिड्ढि उपाचिनुहि, प्र०—ग्रत्र 'बहुल छन्दसि' इति शप श्लु २ ३२ ६ उपदिश २ ४१ १७ दिश देहि, प्र०—ग्रत्र दिश धातो 'बहुल छन्दसि' इति शप श्लु, भा०—उत्पादय ३४ १० [दिश ग्रतिसर्जने (तुदा०) धातो-र्लोटि मध्यमैकवचनम् । 'बहुल छन्दसीति शप श्लु]

दिदीहि प्रकाशय १ ११३ १७ देहि २ ९ ६ धर्म्याणि कर्माणि प्रकाशय ३.१५ ४ प्राप्नुहि, प्र०—ग्रत्र दिव् धातो शप श्लु ३ ३ ७ [दीयति गतिकर्मा (निघ० २ १४) धातोर्लोट् शप स्थाने श्लौ सति श्यन् न भवति]

दिदृक्षन्ते द्रष्टुमिच्छन्ति ३ ३० १३ [दृशिर् प्रेक्षणे

विद्यादिदानकर्त्रे ३.३४ दातु योग्याय विद्यार्थिने १२ १०६. दातु योग्याय विदुषे ११.२५ दानशीलाय कार्याविपतये १७४ ६ दात्रेऽपत्ये २.३२ ५ शब्दोच्चारणकर्त्रे १ २ ३ सर्वस्वं दत्तवते १ १.६ सर्वेषा सुखदात्रे ३ २४ ५ अध्ययनार्थं राज्यप्राप्त्यर्थञ्च ध्यान दत्तवते मनुष्याय १.८ ८ विद्याग्रहणानुष्ठान कृतवते मनुष्याय १.२७.६. दात्रे पुरुषार्थिने मनुष्याय १ ४४ १. सुशीले वर्त्तमान कुर्वते मनुष्याय १ ६४ १४. अध्ययने चित्त दत्तवते विद्यार्थिने १ ६३ १. [दाशृ दाने (भ्वा०) धातोर्लिट स्थाने क्वसुप्रत्यये 'दाश्वान्-साह्वान्मीढ्वाश्च' अ० ६ १ १२ सूत्रेणाद्विर्वचनमनिट्त्व च निपात्यते। दाशुषे दत्तवते नि० ११ ११]

दाशेम दद्याम ४ १० ४ स्वीकुर्याम २७.४४. [दाशृ दाने (भ्वा०) धातोर्लिङि उत्तमबहुवचने रूपम्]

दाश्वध्वरः दाशुर्दाताऽध्वरोऽहिंसको यस्मिन्त्स. (विद्वान् जन) १ ७५ ३ **दाश्वध्वराय**=दाशुर्देयोऽध्वरो ऽहिंसामयो यज्ञो येन तस्मै (सत्पुरुषाय) ६ ६८ ६ [दाशु-अध्वरपदयो समास । दाशु =दाशृ दाने (भ्वा०) धातो कर्त्तरि औणादिक उ प्रत्यय.। अध्वर यज्ञनाम निघ० ३ १७ अध्वर इति यज्ञनाम । ध्वरति हिंसाकर्मा तत्प्रतिषेध. नि० १ ८]

दाश्वान् दानशील. १ ४० ७ दाता ४ २ ७. **दाश्वांसः**=सर्वस्याभयदातार प्र०—'दाश्वान्साह्वान्-मीढ्वाश्च' अ० ६.१ १२ अनेनाय दानार्थाद् दाशे क्वसु. प्रत्ययान्तो निपातित १.३ ७ उत्कृष्टज्ञान दत्तवन्त ७ ३३. **दाश्वांसम्**=सुखस्य दातारम् २७ २७ [दाशृ दाने (भ्वा०) धातोर्लिट स्थाने क्वसुप्रत्यये 'दाश्वान्साह्वान्-मीढ्वाश्च' अ० ६ १ १२ सूत्रेण अद्विर्वचनमनिट्त्व च निपात्यते। दाश्वास दत्तवन्त नि० १२ ४०. यजमानो वै दाश्वान् श० २ ३ ४.३८]

दाष्टि दशति १ १२७ ४ [दाश हिंसायाम् (स्वा०) धातोर्लटि प्रथमैकवचनम् । 'बहुल छन्दसी' ति शपो लुक्]

दासः सेवक १ १५८ ५ सेवक इव मेघ. ५ ३० ६ **दासा**=उपक्षयितारौ (राजप्रजाजनौ) ६ ४७ २१ **दासाः**=सुखप्रदा (शूद्रजना) १ १५८ ५ **दासम्**= दातु योग्यम् २ १२ ४ दातारम् ७ १६.२ **दासस्य**= जलस्य दातु ५ ३० ८ [दसि दर्शनदशनयो (चुरा०)। धातो 'दसेष्टटनौ न आ च' उ० ५ १० सूत्रेण ट प्रत्यय नकारस्याकारादेशश्च । दास. दस्यतेरुपदासयतिकर्माणि नि० २ १७]

दासपत्नीः दास आश्रयदाता पतिर्यासा ता (आप = जलानि) प्र०—अत्र सुपामिति पूर्वसवर्णादेश । १ ३२ ११. ये दस्यन्त्युपक्षिण्वन्ति शत्रून् ते दासास्तेषा पत्नीरिव वर्त्तमाना किरणा ३ १२ ६ यो जल ददाति स दासो मेघ स पति. पालको यासा ता (अप =जलानि) ५.३०.५ [दास-पत्नीपदयो समास । दास इति पद व्याख्यातम् । दास-पत्नी दासाधिपत्न्य' नि० २ १७]

दासप्रवर्गम् दासाना सेवकाना प्रवर्गा समूहा यस्मिँस्तम् (रयिम्=राज्यधनम्) १ ९२ ८. [दास-प्रवर्गपदयो समास । दास इति पद व्याख्यातम्]

दासवेशाय दासा सेवका विशन्ति यस्मिँस्तस्मिन् (सत्कर्मणे) २.१३ ८ [दास-वेशपदयो समास । दासपद व्याख्यातम् । वेश =विश प्रवेशे (तुदा०) धातो 'हलश्च' सूत्रेणाधिकरणे घञ्प्रत्यय]

दासानि दासकुलानि ६ २२ १० दानानि ६ ६० ६ **दासा**=दातव्यानि ६ ३३.३ [दास इति व्याख्यातम् । अथवा=दासति दानकर्मा (निघ० ३ २०) धातोर्भावे घञ्]

दासीः दासीशीला नगरी । प्र०—अत्र 'दसेष्टटनौ न आ च' उ० ५.१०, १.१०३ ३ सुखस्य दात्री (अप = जलानि) २ २० ७ सेविका ४ ३२ १० दानशीला (विश =प्रजा) ४ २८ ४ [दास इति व्याख्यातम् । दास-प्राति० स्त्रिया 'टिड्ढाण०' सूत्रेण ङीप्प्रत्यय । दासति दानकर्मा (निघ० ३ २०) धातोर्वा कर्त्तरि औणादिक इनि. प्रत्यय । दासिशब्दात् 'कृद् इकारादक्तिन ' इति वा० सूत्रेण ङीष्प्रत्यय]

दासीत् विगतदानो भवेत् ७ १ २१ [दासति दान-कर्मा निघ० ३ २०]

दास्वती प्रशस्तानि दानानि विद्यन्ते अस्या सा (देवि=कन्या) १ ४८ १ [दासप्राति० प्रशसाया मतुवन्तात् स्त्रिया ङीप् । दासशब्दस्याकारलोपश्छान्दस । दासति दान-कर्मा (निघ० ३ २०) धातोर्भावे घञ्प्रत्यय]

दाः देहि १ १६९ ४ यो ददाति ६ १६ २६ छिन्द्या १ १०४ ७ ददाति १५ ४८ दद्यात् । प्र०—अत्र पुरुष-व्यत्यय १ १२१ ४ दद्या १ १०४ ८ दोरवखण्डये विनाशये १ १०४ ५ [दा देहि नि० १० १६ डुदाञ् दाने (जु०) धातोर्लुङि मध्यमैकवचने रूपम् । अडभावश्छान्दस । दो अवखण्डने (दिवा०) धातोर्वा लुङ्]

दिक् काष्ठा १५ ११ अध ऊर्ध्वा १४ १३ दिशन्ति

धातोरिच्छायामर्थे सन्]

दिप्सन्तः दम्भमिच्छन्त (रिपव =शत्रव) ४ ४.१३ दम्भितुमिच्छव (दुर्जना) २ २७ ३ अस्मान् दम्भितु हिंसितुमिच्छन्त (रिपव =अरय) १ १४७ ३ [दम्भु दम्भने (स्वा०) धातोरिच्छाया सनि 'दम्भ इच्च' अ० ७ ४ ५६ सूत्रेण धातोरच इकारादेशेऽभ्यासलोपे च 'सनीवन्त०' इतीडभावे 'हलन्ताच्च' इति सन कित्त्वादनुनासिकलोपे 'खरि च' इति भकारस्य पकारादेशे छान्दसत्वाद् 'एकाच्०' इति भषोऽभावे 'सनाद्यन्ता धातव' इति धातुसज्ञाया लट शतरि रूपम्]

दिव इव सूर्यप्रकाश.दिव २ २ २ [दिव-इवपदयो समास । दिव इति व्याख्यारयते]

दिवम् सूर्यम् ६ २१ सूर्यादिक जगत् १२ १०२ सूर्य विद्युद् वा १६ ५६ सूर्यप्रकाशम् १ ६२ ८. सूर्याद्यग्निम् भा०—खगोलविद्याम् १२ ५ सूर्यलोकम् ३ ७ न्यायप्रकाशम् १५ ६४ धर्म-प्रकाशम् १५ ६४ विद्या-सूर्यम् १५ ६४ विद्यादिप्रकाशम् ५ १३ विद्युतम् ४ ४२ ४. द्योतनाऽऽत्मकमाकाशम् ऋ० भू० १६८, ऋ० २ ३ २३ ४७ दिव्य स्वरूपम् ऋ० भू० १५६, ११ ४ दीप्तिम् १.८० ११ सर्वोत्तम स्वप्रकाशमग्न्याख्यम्, प० वि०, ऋ० ८ ८ ४८ ३ प्रकाशमय सूर्यम् ३ ५९ ७ सत्यप्रकाशम् १५ ६ दिव्य-विज्ञानम् १२ ४ प्रकाशस्वरूपम् (परमेश्वर विद्युत वा) १ ६८ १ अविद्यागुणप्रकाशम् ३८ १७ प्रकाशमान सूर्यम् १७ ६७ ज्ञानप्रकाश सूर्यलोक वा १ १८ प्रकाशमयम् (अन्तरिक्षम्=आकाशम्) १७ ७२ प्रकाशम् १ २६ देदीप्यमाना राजनीतिम् ९ २४ द्यौ को, स० प्र० ३१६, १० १९० ३ परम आकाश को, आर्याभि० १ १३ ऋ० १ ४ १४ १२.

दिवः=विद्युत्प्रकाशात् ४ २६ ६ सूर्यप्रकाशात् १४ ८ द्योतन-कर्मणोऽग्ने १५ ११ राज्यप्रकाशस्य १ १५ १ ४ प्रकाशमानस्य (विदुषो जनस्य) १ १४६ १ प्रकाशमयान्न्यायात् १ ५४ ४ प्रकाशकर्मण सूर्यलोकस्य १ १०० ३. सूर्यात् २९ ५३ प्रकाशस्वरूपस्य (असुरस्य=शत्रुप्रक्षेपकवीरस्य) ३ ५३ ७ प्रकाशयुक्तस्याऽऽकाशस्य मध्ये १३ १४ कमनीयस्य (जनस्य) ६ ४९ २ प्रकाशान् १ ४९ १ सूर्यप्रकाशात् १ ४६ १ व्यवहर्त्तॄन् (भृत्यादीन्) ५ ५९ ७ कामना करने योग्य शुद्ध कामना वाले (मुक्ति को प्राप्त हुए सिद्ध पुरुष) की स० वि० १९७, ९ ११३ ९ बिजली अथवा बुरी कामना की, स० वि० १९६, ९ ११३ ८ न्यायविनयादि-प्रकाशजातस्य १७ ६५ प्रकाशमयस्य (ब्रह्माण्डस्य) १७ ६० द्योतमानस्य (सूर्यस्य परमेश्वरस्य वा) १७ ६७ प्रकाशमानात् (महत्तत्वात्) २ ३८ ११ कमनीयान् कामयमानान् वा (राज्ञ =नृपान्) ६ ५१ ४ दीप्ती (गार्हपत्याऽऽहवनीयदाक्षिणात्यरूपा) २ ३ २ विज्ञानादिप्रकाशस्य मध्ये १९ ६० प्रकाशवत सूर्यादिजगत ३ १२ स्वप्रकाशात् १ २३ १३ प्रकाशवत सूर्यादिलोकस्य ११९ विज्ञानयुक्तस्य (काव्यस्य) १ ११७ १२ सूर्यादिप्रकाशकलोकान् १ १०० १५ कामनाया ७ १५ ४ सूर्यस्य १.१८३ २ व्यवहारस्य १ १८४ १ द्योतमानस्य (पदार्थस्य) १३ २ द्योतमानान् गुणान् १ ४८.१५ दिव्यस्याऽऽकाशस्य ३.२ १२ प्रकाशाद्विद्युत ३७ १३. प्रकाशमयस्य सूर्यादे ३७ १६ किरणान् ३ ४ ४ कामयमानान् विद्युदादीन् वा ५ ८७ ३ दिव्या (विद्युतो वृष्टय) ५ ८४.३ प्रत्यक्षाऽग्ने प्रकाशात् । सूर्यप्रकाशान्मेघमण्डलाद् वा २ ६ ५ प्रकाशमयाल्लोकान् २ १३ ७ विद्या-दीप्ती ३ १ ६ प्रकाशयुक्तस्य (पृथिव्या = भूमे) ३ १ ३ विज्ञानप्रकाशात् १ ५९.५. द्युलोकस्य ४ ४४ २ सूर्यप्रकाशयुक्तस्याकाशस्य १ १०५ ११ दिव्यगुणपदार्थयुक्तस्याकाशस्य १ १०५ १० द्योतकस्य सूर्यमण्डलस्य १ १०५ ५ सूर्यप्रकाशात् १ १०५ ३. सूर्याऽऽदे १ ९३ ६ कामनात १ १४२ ३ दिव्या कामना ५ ४१ ४. कामयमानस्य (यजमानस्य) ५ ४१ ३ विद्याप्रकाशान् ५ ४१.७. कमनीयस्य सुखस्य ४ १४ ५ विद्याप्रकाशमानान् (व्यवहारान्) ३ ४३ ६ प्रकाशमानात् पदार्थाऽन्तरात् ६ ३० १. प्रकाशा किरणा कमनीया ३ ५७ २ ज्योतींषि ३ ५६ ५. कमनीया (ऐश्वर्यप्राप्तय) ३ ५६.६ दिव्यादाकाशात् २ २७ १५ विद्युताऽऽदे ३ ५४ ११ दिव्यगुणसमूहान् १ ५६ ६ प्रशसायुक्तस्याऽन्तरिक्षस्य मध्ये ४ ४५.१ द्योतनात्मकात् सूर्यात् १ ४७ ६ प्रकाशादाकर्षणाद्वा १ ५६ ५. कमनीयाया (स्वसु =भगिन्या) ४ ५२ १. दिवसस्य पदार्थबोधस्य ६ १५ १ सत्य कामयमाना (नर =नेतारो जना) ६ २ ३ दिव्यस्य (गृहाश्रमस्य) १२ ५५. विद्युत्सूर्यादिविद्या-प्रकाशिका (गिर =सुशिक्षिता वाच) ७ ३९ ५ दिव्या गुणा स्वभावा क्रिया वा ८ ३१ कामना ५ ५७.१. द्योतकान् (पदार्थान्) १ ७१ २ विद्यान्यायप्रकाशितव्यवहारान् १ ११४ ५ विद्यान्यायप्रकाशका (मरुत =विद्वासो जना) १ ८६ १ प्रकाशमाना (माया =प्रज्ञा) ५ ४० ६. प्रकाश्यस्य पदार्थस्य १ ११५ ३. प्रकाशितस्याऽऽकाशस्य १ ११० ६ द्योतमानस्य सवितु १ ९२ ७ दिव्यसुखप्रदात् प्रकाशात् १ १२१ ९ दीप्त्या १.१२१ ८. कमनीयस्य (गृहस्थव्यवहारस्य) १५ ६४ अ०—प्रसिद्धाऽग्नेर्विद्युतो वा ५ १९ कामनाओं को, स० वि० १०५, ५ ४१ ७. स्वर्ग

भ्वा०) धातोरिच्छायामर्थे सन् । 'ज्ञाश्रुस्मृदृशां सन' अ० १ ३ ५७ सूत्रेणात्मनेपदम्]

दिदृक्षेण्यम् द्रष्टुं योग्यम् (महित्वन=महिमानम्) १ ५५ ४ **दिदृक्षेण्यः**=द्रष्टुमिच्छयैष्टव्य (जेन्य=शत्रूणा जेता जना) १ १४६ ५ [दृशिर् प्रेक्षणे (भ्वा०) धातोरिच्छाया सनि 'कृत्यार्थे तवैकेन्केन्यत्वन' अ० ३ ४ १४ सूत्रेण केन्य प्रत्यय.]

दिदृक्षेयः द्रष्टुमिच्छाया सानुदर्शनीय (नृतम=अतिशयेन नेता जन), प्र०—अत्र 'वाच्छन्दसि' इति ढ ३ १ १२ [दृशिर् प्रेक्षणे (भ्वा०) धातोरिच्छाया सन्नन्तात् कृत्यार्थे 'वा छन्दसि' इति ढ प्रत्यय । ढस्य एयादेश]

दिदेष्टु उपदिशतु ७ ४० २ [दिश अतिसर्जने (तुदा०) धातोर्लोट् । विकरणव्यत्ययेन शप श्लौ सति शप्रत्ययो न भवति]

दिद्यवः प्रकाशमाना (योद्धारो जना) ६ ४६ ११. विद्याविनयाभ्या प्रकाशमानास्तेजस्विन (विद्वासो जना) ४ ४१ ११ [दिवु क्रीडाविजिगीषाव्यवहारद्युतिस्तुतिमोदमदस्वप्नकान्तिगतिषु (दिवा०) धातो 'कुर्भ्रश्च' उ० १ २२ इति सूत्रेण बाहुलकात् कु प्रत्ययो द्वित्वञ्च । वकारलोपोऽपि बाहुलकादेव]

दिद्युत् देदीप्यमाना विद्युत् १ १६६ ६ न्याय-दीप्ति ७ ४६ ३ विच्छेदिका (विजयकर्त्री सेना) १ ६६ ४ भृश द्योतमानम् (रप=अपराधम्) ७ ३४ १३ प्रकाश ६ ६६ १० **दिद्युत.**=तडित २ १३ ७ [द्युत दीप्तौ (भ्वा०) धातो 'द्युतिगमिजुहोतीना द्वे च' अ० ३ २ १७८ वा० सूत्रेण क्विप्प्रत्ययो द्वित्वञ्च । अभ्यासस्य सप्रसारण 'द्युतिस्वाप्योः सम्प्रसारणम्' अ० ७ ४ ६७ सूत्रेण । दिद्युत् वज्रनाम निघ० २ २० दिद्युत् द्यतेर्वा द्युतेर्वा द्योततेर्वा नि० १० ७]

दिद्युतानः देदीप्यमान (अग्नि=सूर्य) ३ ७ ४ [द्युत दीप्तौ (भ्वा०) धातोर्लिट स्थाने कानच् । अभ्यासस्य सम्प्रसारण 'द्युतिस्वाप्योः सम्प्रसारणम्' इति सूत्रेण]

दिद्युम् द्योतमाना विद्या दीप्ति वा १ ७१ ५ सुप्रकाशम् ६ ४६ ६ विद्या-न्याय-प्रकाशम् (वज्रम्) ४ ४१ ४ प्रज्वलित शस्त्राऽस्त्रम् ७ ५६ ६ **दिद्यून्**=विद्या-धर्म-प्रकाशकान् व्यवहारान् १० १७ **दिद्योः**=अतिदुःखात्, अ०—प्रमादाद् दुःखात्, प्र०—अत्र दिवु धातो 'कुर्भ्रश्च' उ० १ २२ इति चकारेण कुप्रत्ययो बाहुलाद् वकारलोपश्च २-२० [दिवु क्रीडाविजिगीषाव्यवहारद्युतिस्तुत्यादिषु (दिवा०) धातोर्बाहुलकाद् (उ० १ २२.) औणादिक कुप्रत्ययो द्वित्वञ्च । अभ्यासस्य च सम्प्रसारणम् । इषवो वै दिद्यव श० ५ ४ २ २]

दिधिषन्त उपदिशन्ति, प्र०—अत्र व्यत्ययेनाऽऽत्मनेपदम् १.१३२ ५ **दिधिषन्ति**=धरन्ति २ ३५ ५ धारण करती है, स० वि० १०४, २ ३५ ५ **दिधिषन्तु**=उपदिशन्तु ३ ८ ६ **दिधिषन्ते**=शब्दयन्ति ४ १८ ७ **दिधिषामि**=शब्दयामि उपदिशामि २ ३५ १२ [धिष शब्दे (जु०) धातोर्लट् । व्यत्ययेनात्मनेपदञ्च । अडभावश्छान्दस अन्यत्र लटि रूपाणि । अत्र 'व्यत्ययो बहुलम्' सूत्रेण द्विविकरणता]

दिधिषाय्यः यथावद्धर्त्ता (अग्नि=विद्युदाख्य पावक) २ ४ १ धारक पोषक (विद्वान् जन) १ ७३ २ [डुधाञ् धारणपोषणयो (जु०) धातो 'दधातेर्द्वित्वमित्त्व पुक् च' उ० ३ ६७ सूत्रेण आय्य प्रत्यय, इत्व पुगागमश्च]

दिधिषुम् धारकम् (धर्मम्) ६ ५५ ५ [डुधाञ् धारणपोषणयो (जु०) धातो कूप्रत्यये 'अन्दूदृम्फू०' उ० १ ६३ सूत्रेण निपात्यते । बाहुलकात् प्रत्ययस्य ह्रस्वत्वम् । दिधिषो दातु नि० ८ २०]

दिधिषेय वरेयम् ७ ३२ १८ [डुधाञ् धारणपोषणयो (जु०) धातो रूपम्]

दिधिषोः सम्बन्ध के लिए नियोग, स० प्र० १५२, १० १८ ८ ['दिधिषुम्' पदे द्रष्टव्यम्]

दिधिष्वः धारयन्त्य (कुमार्य) १.७१ ३. [डुधाञ् धारणपोषणयो (जु०) धातो कूप्रत्यये 'अन्दूदृम्फू०' उ० १ ६३ सूत्रेण निपात्यते]

दिधृत धरत, प्र०—अत्र 'बहुल छन्दसि' इति शप श्लु १ १३६ ८ **दिधृतम्**=धरतम् ५ ८६ ६ [धृञ् धारणे (भ्वा०) धातोर्लोट् । शप स्थाने श्लुश्छान्दस । 'बहुल छन्दसि' अ० ७ ४ ७८ सूत्रेणाभ्यासस्येकारादेश]

दिप्सति हिंसितुम् इच्छति २ २८ १० **दिप्सन्ति**=विरोद्धुम् इच्छन्ति १ २५ १४ [दम्भ दम्भने (स्वा०) धातोरिच्छाया सन्नन्तान् लट् । 'दम्भ इच्च' इति सूत्रेणाच इकारादेशेऽभ्यासलोपे 'सनीवन्त' इतीडभावे 'हलन्ताच्च' इति सन कित्वादनुनासिकलोपे 'खरि चे' ति चर्त्वे छान्दसत्वाद् 'एकाच०' इति भष् न भवति]

दिप्सवः मिथ्याभिमानव्यवहारमिच्छव शत्रव १ २५ १४ [दिप्स धातो 'सनाशसभिक्ष उ' इति तच्छीलादिष्वर्थेषु उ प्रत्यय । दिप्स=दम्भ दम्भने (स्वा०)

पदयो समास । दिव्=दिवु क्रीडाद्यर्थेषु (दिवा०) धातो सम्पदादित्वात् स्त्रिया क्विप् । इष्टि =इष गतौ (दिवा०) इषु इच्छायाम् (तुदा०) धातोर्वा क्तिन् । अथवा यज देव-पूजासगतिकरणदानेषु (भ्वा०) धातो स्त्रिया क्तिन् । यजादित्वात् सम्प्रसारणम् । दिविष्टिषु दिव एषणेषु नि० ६.२२]

दिविसदम् न्यायप्रकाशे व्यवस्थितम् (इन्द्र=सम्राजम्) ६ २ [दिव् इत्युपपदे पद्लृ विशरणगत्यवसादनेषु (भ्वा०) धातो कर्त्तरि क्विप् । समासे सप्तम्या अलुक्]

दिविस्पृशम् विद्याप्रकाशयुक्तम् (यज्ञम्) ३३ ८५. दिवि विज्ञानप्रकाशे स्पृशन्ति येन तम् (यज्ञ=अध्यापनाऽध्ययनसङ्गतिमयम्) २ ४१ २० दिवि स्पृशति येन तम् (रथ=रमणीय यानम्) ४ ४६ ४ प्रकाशे स्पर्शनिमित्तम् (यज्ञ=व्यवहारम्) १ १४२ ८ **दिविस्पृशः**=यो दिवि परमात्मनि सुख स्पृशति तस्य (देवस्य=विदुषो जनस्य) ५ १३ २. ये दिवि स्पृशन्ति (अरपास =ज्वाला) ७ १६.३. **दिविस्पृशा**=दिवि प्रकाशे स्पृशति येन तेन (विद्युता) १५ २७ यो दिवि प्रकाशे स्पृशति तेन (अग्निना) ५ ११ १ [दिव् इत्युपपदे स्पृश सस्पर्शने (तुदा०) धातो क्विप् । 'हृद्द्युभ्या ङे' अ० ६ ३ ६ वा० सूत्रेण सप्तम्या अलुक्]

दिविस्पृशा यौ दिवि शुद्धे व्यवहारे स्पृशतस्तौ (अध्यापकाऽध्येतारौ) १ १३७ १ यौ प्रकाशयुक्त आकाशे यानानि स्पर्शयतस्तौ (इन्द्रवायू=अग्निपवनौ) प्र०—अत्र 'सुपा सुलुग्०' इत्याकारादेश १ २३ २ यौ दिव्यन्तरिक्षे यानानि स्पर्शयतस्तौ (अश्विनौ=अग्निजले), प्र०—अत्राऽन्तर्गतो ण्यर्थ 'सुपा सुलुक्०' इत्याकारादेशश्च १ २२ २ [दिवि स्पृशमिति व्याख्यातम् । तत 'सुपा सुलुग्०' इत्याकारादेश]

दिवीव यथा सूर्य-प्रकाशे १५ २५ यथा सूर्ये ५ १ १२ आदित्यप्रकाश इव ६ ५ यथा सूर्यादिप्रकाशे विमलेन ज्ञानने स्वात्मनि वा १ २२ २० सूर्यज्योतिषीव ७ २४ ५ [दिवि-इवपदयो समास]

दिवे दिवे प्रतिदिनम्, प्र०—दिवे दिवे इत्यहर्नामसु पठितम् निघ० १ ६, १ १ ३ विज्ञानस्य प्रकाशाय प्रकाशाय १ १ ७. प्रतिदिन प्रतिक्षण च, ऋ० भू० १३१, ऋ० ६ १ ६ ३ भा०—नित्यम् २५ १४ [दिवे दिवे अहर्नाम निघ० १ ६]

दिवोजाः सूर्यज्जातेव (उषा) ६ ६५ १. [दिव् इत्युपपदे जनी प्रादुर्भावे (दिवा०) धातो 'पञ्चम्यामजातौ' अ० ३.२.९८ सूत्रेण ड प्रत्यय । पञ्चम्या अलुक् समासे]

दिवोदासम् दिवो विद्या-धर्मप्रकाशस्य दातारम् (सेनापतिम्) प्र०—'दिवश्च दास उपसङ्ख्यानम्' अ० ६ ३ २१. इति षष्ठ्या अलुक् १ ११२.१४ विद्याप्रकाश-दातारम् (राजानम्) ८ १८.२५ विज्ञानमयस्य प्रकाशस्य दातारम् (विद्वास जनम्) ४ २६ ३ प्रकाशवज्ज्ञानदानशीलम् (विद्वज्जनम्) ६ २६ ५. विद्याप्रकाशस्य दातारम् (विद्वान् जनम्) ६ ६१ १ **दिवोदासस्य**=प्रकाशदातु' (सूर्यस्य) ६ १६ १६ **दिवोदासात्**=प्रकाशदातु (प्रजाजनस्य) ६ ४७ २२ कमनीयधनदातु (राज्ञ) ६ ४७ २३ **दिवोदासाय**=कमनीयस्य पदार्थस्य दात्रे (सज्जनाय) ६ १६ ५ कमितस्य प्रदात्रे (पूरवे=मनुष्याय) १ १३० ७ विज्ञान-प्रदाय (धार्मिकाय जनाय) ६ ४३ १ विज्ञानस्य दात्रे (महाविदुषे जनाय) ६ ३१ ४ प्रकाशदात्रे (पूज्याय जनाय) २ १६ ६ प्रकाशस्य सेवकाय ४ ३० २० विद्याप्रकाशदात्रे सेनाऽध्यक्षाय १.११६ ४ न्यायविद्याप्रकाशस्य दात्रे (भरद्वाजाय सेनाध्यक्षाय) १ ११६ १८ **दिवोदासेभिः**=प्रकाशस्य दातृभि १ १३० १० [दिव्-दासपदयो समासे 'दिवश्च दास उपसख्यानम्' अ० ६ ३.२१. वा० सूत्रेण षष्ठ्या अलुक् । दिव्-दासौ व्याख्यातौ]

दिवोरुचः विज्ञान-प्रकाशे रुचिकराः (सज्जना) ३ ७.५ [दिव् इत्युपपदे रुच दीप्तावभिप्रीतौ च (भ्वा०) धातोर् मूलविभुजादित्वात् क प्रत्यय । विभक्तेरलुक् च]

दिव्यम् दिवि शुद्धे भवम् (शर्ध =वलम्) १.१३९ १ शुद्धम् (अज्म=मार्गम्) २९.२१ दिवि प्रकाशे भवम् (नभ =जलम्), प्र०—'द्यु-प्रागपागुदक्प्रतीचो यत्' अ० ४ २.१०१ इति शैषिको यत् २ २२ कमनीयम् (सद्मान=गोशालम्) १ १७३.१ दिवि कामनाया साधुम् (कोश=धनालयम्) ५ ५९ ८ व्यवहर्त्तव्य शुद्धम् (नभ =जलम्) ६.२१. दिवि शुद्धगुणे भवम् (अग्नि=पावकम्) १८.५१. कमनीय शुद्ध वा (धनम्) ७ २ १ पवित्रम् (शर्ध =वलम्) ३ १६ ४ **दिव्यस्य**=कमनीयास्विच्छासु सावो (वचनस्य) ६ ३६ १ शुद्धस्य कमनीयस्य (जगत =ससारस्य) ६ २२ ६. अतिशुद्धस्य (अमृतस्य =परमात्मन) १ ११२ ३. दिवि भवस्य (वस्व =धनस्य) २ १४ ११ दिवि भवस्य वृष्ट्यादिविज्ञानस्य १ १४४ ६ दिवि शुद्धे व्यवहारे भवस्य (राय =धनस्य) ५ ६८ ३ दिवि शुद्धगुण-कर्म-स्वभावे भवस्य (जन्मन =प्रादुर्भावस्य) ७ ४६ २ **दिव्यः**=दिवि शुद्धगुणकर्मसु साधु (केतपू =य केतेन विज्ञानेन पुनातीश्वर) ११ ७ शुद्धस्वरूप (इन्द्र =जगदीश्वर)

का, आर्याभि० १ ३२ ऋ० १ ७ १० १५ प्रकाशस्वरूप परमेश्वर की, स० प्र० ४२३, ६ ८३ २ **दिवा**=काम-नया विद्यादीप्त्या वा ६ ४६ १० अन्तरिक्षेण सह २६ १७ धर्म-प्रकाशेन १५ ६ विज्ञानाऽन्वकारप्रकाशेन सह १ ६८ २. दिवसेन ५ ७६ २ सूर्येण ७ १८ कामनया प्रीत्या सह वा ६ ३ ६. सूर्य्यादिना १७ २६ **दिवि**=सूर्यप्रकाशादाविव विद्याविनये १६ ६४ अन्तरिक्षे ६ ४८ ६ कामे ७ ३२ २१ विद्युति सूर्ये वा १ १५६ ५ प्रकाशमये सूर्याऽऽदौ दिव्य-व्यवहारे वा १ ६१ ४ विद्याप्रकाशे १ ६१ १८ दिव्येऽन्त-रिक्षे १ ८५ २ शुद्धे व्यवहारे ५ ६० ६. कामनायाम् ५ ६१ १२ द्योतनात्मके विद्युदादौ १२ ४८. शुभगुण-प्रकाशे ६ २५ आकाशे १ ८० १३ आकाश इव दिव्ये विद्याव्यवहारे १ ८३ ६ प्रकाशस्वरूपे (अध्यापके) १ ७३ ७ द्योतनात्मके सर्वप्रकाशके (परमेश्वरे) ऋ० भू० १६३, ऋ० १ १ १११ दिव्ये व्यवहारे प्रकाशे वा ५ ७४ २ प्रकाशये जगदीश्वरे २ २२ ४ सूर्यप्रकाशे १ १०५ १ सर्वविद्याप्रकाशे १ १०५ १६. द्योतके ससारे ऋ० भू० १२१, ३१ ३. द्युलोकेऽन्तरिक्षे ४ ३५ ८ द्योतनात्मके ब्रह्मणि सूर्यादिप्रकाशे वा प्रकाशमाने परमात्मनि सूर्ये वा ४ ५ ११ दिव्य आकाशे ३ २.१३ कृषि-विद्या-प्रकाशे ४.५७ ५ सूर्य्यादिलोके १३ ६ प्रकाशवति सूर्यादौ १.१०३ १ मार्त्तण्ड-प्रकाशे, ऋ० भू० ४४, ऋ० १ २ ७ ५ प्रकाशमाने कमनीये सत्कर्त्तव्ये परमे-श्वरे ५ ११ ३ प्रकाशयुक्तेऽन्तरिक्षे ५ २७ ६ द्योतमाने सूर्ये १ ६५ ३ विज्ञान-प्रकाशे ३८ ११ प्रशसनीये राज्ये ५.३५ ८ कमनीये राष्ट्रे ५ ३५ ८ विद्याप्रकाशे ५ २ १०. कमनीये न्यायप्रकाशे ६ १७ १४ प्रकाश-निमित्ते (सूर्यलोके) १ ७ ३. भा०—स्वेऽविनाशिनि मोक्षस्वरूपे, द्योतनात्मके स्वस्वरूपे ३१ ३ दिव्यगुणसम्पन्ने जगति १.६८.२ आकाश मे, आर्याभि० १ २१, ऋ० १ २ ७ २० विद्युति ७ १६ **दिवे**=क्रीडायै ३० २१ सर्वथा शुभगुणस्य प्रकाशकाय (सूर्याय) १ ५४ ३ कामयमानाय (जनाय) ६ १८ १४ विद्याप्रकाशाय विद्युद्विद्यायै वा ३७ १६ विद्युन शुद्धये २२ २६ दिव्यसुखाय १ १८५ १० प्रकाशमानाय (जनाय) ४ ३ ५ विद्युत्प्राप्तये ३६ १ सर्वसुखद्योतनाय ६ २५ विद्यादिप्रकाशाय ६ १ द्योतकाय (विदुषे जनाय) १ १३६ ६. सत्यधर्मप्रकाशाय ५ २६ [दिवु क्रीडाविजिगीषाव्यवहार-द्युतिस्तुतिमोदमदस्वप्नकान्तिगतिषु (दिवा०) धातो कर्त्तरि क्विप्प्रत्यय. । छान्दस रूपम्]

दिवक्षसः दीप्तिं प्राप्य व्याप्ता (वेनव =वाच) ३ ७ २ **दिवक्षाः**=ये दिव विज्ञानप्रकाशादिकमक्षन्ति व्याप्नुवन्ति (वाजा =व्यवहारा) ३ ३० २१ [दिव् इति व्याख्यातम् । अक्ष =अशूङ् व्याप्तौ (स्वा०) धातो 'अशेर्देवने' उ० ३ ६५ सूत्रेण स. प्रत्यय । दिव्-अक्षपदयो समासे जसोऽसुक् । पूर्वसवर्णदीर्घश्च न भवति छान्दसत्वात्]

दिवस्पृथिव्योः सूर्य्यभूम्योर्मध्ये ५ ४६ ५ [दिव्-पृथिवीपदयो समास. । दिव्पदस्य 'दिवसश्च पृथिव्याम्' अ० ६ ३.३०. सूत्रेण दिवस्आदेश । दिव् इति व्याख्यातम्]

दिवा दिवसे २० १५ दिने २० ६१ दिव्यन्तरिक्षे १.१६३.६ **दिवाभिः**=अहर्निशवर्त्तमानाभि (ऊतिभि = रक्षादिभि) ३८ १२ [दिवु क्रीडाविजिगीषाव्यवहारद्युति-स्तुत्यादिषु (दिवा०) धातो 'कनिन् युवृषि०' उ० १ १५६. सूत्रेण बाहुलकात् कनिन्प्रत्यय । दिवा० अहर्नाम निघ० १ ६ व्युष्टिर्वै दिवा व्येवास्मै वासयति ता० ८ १.१३]

दिवातरात् अतिशयेन दिवा दिवातरस्तस्मात् सूर्यात् १ १२७ ५ ['दिवा' इति व्याख्यातम् । ततोऽति-शायने तरप्प्रत्यय]

दिवापतये दिनस्य पालकाय सूर्याय २२ ३०. [दिवा-पतिपदयो समास । दिवा व्याख्यातम्]

दिविक्षयम् दिवि प्रकाशे क्षयो निवासो यस्य तम् (विद्वास जनम्) ५ ४६ ५ [दिव्-क्षयपदयो. समास । सप्तम्या अलुक् । दिव् इति व्याख्यातम् । क्षय =क्षि निवास-गत्यो (तुदा०) धातोरधिकरणे 'पुसि सज्ञाया घ प्रायेण' इति घ प्रत्यय । 'क्षयो निवासे' अ० ६ १ २०१ सूत्रेण आद्युदात्त]

दिवित्मती प्रकाशयुक्ता (उषा) ५ ७६ १ [दिवित्मत्-प्राति० स्त्रिया ङीप् । दिवित्मदिति व्याख्यास्यतेऽग्रिमे पदे]

दिवित्मते विद्या-धर्म-न्याय-प्रकाशिताय (सख्याय= मित्रत्वाय) ४ ३१ ११ **दिवित्मता**=दिव प्रकाशमिन्धते ये प्रशस्तै स्वगुणैस्तद्वता (विदुषा जनेन) १ २६ २ [दिव् इति व्याख्यातम् । तदुपपदे ञिइन्धी दीप्तौ (रुधा०) धातो 'कृतो बहुलम्' इति करणे क्विप् । तत प्रशंसाया मतुप्-प्रत्यय]

दिविष्टिषु दिव्यासु सङ्गतिषु २७ ३० प्रकाशितासु कान्तिषु १ ४८ ६ दिव्यासु इष्टिषु १ १४१ ६ प्रकाशे स्थि-तासु क्रियासु ४ ४७ १ दिव्यासु क्रियासु ४ ४६ १ दिव्येषु व्यवहारेषु १ १३६ ४ आकाश-मार्गेषु १ १३६ ४ दिव्या इष्टय सङ्गतानि कर्माणि सुखानि वा येषु व्यवहारेषु तेषु १ ८६ ४ दिवो दिव्या इष्टयो येषु पठनपाठनाख्येषु यज्ञेषु १ ४५ ७. पक्षेष्ट्यादिसद्व्यवहारेषु ४ ६ ३ [दिव्-इष्टि-

दिष्टाम् निर्दशिताम् (दिशम्) ११८३५ [दिश अतिसर्जने (तुदा०) धातो क्त प्रत्यय । तत. स्त्रिया टाप्]

दिष्टाय दिशत्यतिसृजति येन त मै (जनाय) ३०.७. [दिश अतिसर्जने (तुदा०) धातो. 'कृतो बहुलमि' ति करणे क्त प्रत्यय]

दीक्षया ब्रह्मचर्यादि आश्रमो के नियम-पालन से, स० वि० १८८, १९३० नाना प्रकार के ब्रह्मचर्य-सत्य-भाषणादि व्रत-धारण से, स० वि० १४३, अथर्व० १२५३ सद्भिराप्तैर्विद्वद्भि कृतसत्योपदेशया (शिक्षया) ऋ० भू० १०२, अथर्व० १२५३ **दीक्षाम्**=ब्रह्मचर्य-विद्यादिसुशिक्षाप्रज्ञाम् १९३० उत्तमाऽधिकारम्, ऋ० भू० १००, १९३० व्रताऽऽदिशम् ५६ व्रतोपदेशम् ५४० दीक्षा को, स० वि० १९०, अथर्व० १९४०३ ब्रह्मचर्यादि आश्रम का उपदेश स० वि० १८९, अथर्व० १९४११ **दीक्षायाम्**=नियम-धारणाऽऽरम्भे ८५४ **दीक्षायाः**= ब्रह्मचर्यादे भा०—बाल्याऽवस्थामारभ्य सज्जनोपदिष्ट-विद्याग्रहणाय (सुशिक्षाप्रज्ञाया) १४२४ **दीक्षायै**= यज्ञसाधन-नियमपालनाय १९१३ धर्म-नियमाऽऽचरणरीतये ४७ [दीक्ष मौड्येज्योपनयननियमव्रतादेशेषु (भ्वा०) धातो 'गुरोश्च हल' अ० ३३१०३ सूत्रेण स्त्रियामकार प्रत्यय । ततष्टाप् । या वै दीक्षा सा निषत् । तत्सत्र तस्मा-देनानासदित्याहु श० ४६८१ प्राणा दीक्षा श० १३१७२ तै० ३८१०२ वाग्दीक्षा। तया प्राणो दीक्षया दीक्षित तै० ३७७७ वाग् दीक्षा कौ० ७१ आपो दीक्षा। तया वरुणो राजा दीक्षया दीक्षित तै० ३७७६ पृथिवी दीक्षा। तयाग्निर्दीक्षया दीक्षित तै० ३७७४-५ अन्तरिक्ष दीक्षा। तया वायुर्दीक्षया दीक्षित तै० ३७७५ द्यौर्दीक्षा। तयादित्यो दीक्षया दीक्षित तै० ३७७५ ओषधयो दीक्षा। तया सोमो राजा दीक्षया दीक्षित तै० ३७७६-७ ऋत वाव दीक्षा सत्य दीक्षा ऐ० १६ सत्ये ह्येव दीक्षा प्रतिष्ठिता भवति श० १४६९२४ तद् दीक्षायै (रूपम्) यच्छ्रद्धा श० १२८२४ तपो दीक्षा श० ३४३२ प्रजापतिरकामयताश्वमेधेन यजेयेति । स तपोऽतप्यत । तस्य तेपानस्य । सप्तात्मनो देवता उदक्रामन् । सा दीक्षाभवत् तै० ३८१०१. दीक्षा सोमस्य राज्ञ पत्नी गो० उ० २६ दीक्षया विराडाप्तव्या काठ० २१५ दीक्षयैवात्मान पुनीते काठ० ३४७ दीक्षा पत्नी तै० आ० ३६१ य एव पशुमान् भवति त दीक्षोपनामुका जै० १२८७ स (प्रजापति) दीक्षाभिरेव पौर्णमासीरवारुन्धो-पसद्भिरष्टका. प्रसुतेनामावास्या जै० ३२ सोमो दीक्षया (सहागच्छतु) तै० आ० ३८.१]

दीक्षातपसोः दीक्षा ब्रह्मचर्यादिनियमसेवन च, तपो धर्माऽनुष्ठान च तयो ४२ [दीक्षा-तपस्पदयो समास । 'अभ्यर्हित च पूर्व निपततीति वक्तव्यम्' अ० २२३४ वा० सूत्रेण दीक्षाया पूर्वनिपात । 'न दधिपय आदीनि' अ० २४१४ सूत्रेणैकवद्भावप्रतिषेध]

दीक्षापतिः यथाव्रताऽऽदेश-पालक (विद्वान् आचार्य) ५४० व्रतादेशानामुपदेशपालको रक्षणनिमित्ता वा (अग्नि =ईश्वरोऽध्यापको विद्युद् वा) ५६ [दीक्षा-पति-पदयो समास । 'दीक्षा' इति व्याख्यातम्]

दीक्षितः ब्रह्मचर्यादि-दीक्षा प्राप्य जातविद्य. (सज्जन) २०२४ प्राप्तदीक्ष (ब्रह्मचारिजन), ऋ० भू० २३७, अथर्व० ११३६ दीक्षित होकर (ब्रह्मचारी), स० वि० ८०, अथर्व० ११.५६ दीक्षा को प्राप्त होता हुआ (वानप्रस्थिजन) स० वि० १८६, २०२४ दीक्षा प्राप्त सन् (विद्वान् जन) स० वि० २२९ [दीक्षाप्राति० 'तदस्य सञ्जात तारकादिभ्य इतच्' अ० ५२३६ सूत्रेण इतच् । तारकादिराकृतिगण । स वै धीक्षते। वाचे हि धीक्षते यज्ञाय हि धीक्षते यज्ञो हि वाग् धीक्षितो ह वै नामै-तद् यद् दीक्षित इति श० ३२२३० कस्य स्विद्धेतो-र्दीक्षित इत्याचक्षते श्रेष्ठा श्रिय क्षियतीति गो० पू० ३१९ न ह वै दीक्षितोऽग्निहोत्र जुहुयान्न पौर्णमासेन यज्ञेन यजेत गो० पू० ३२१ अथ न दीक्षित काष्ठेन वा नखेन वा कण्डूयेत श० ३२१३१ तस्माद् दीक्षित कृष्णविषाणयैव कण्डूयेत नान्येन कृष्णविषाणाया श० ३२१३१ नैन (दीक्षित) अन्यत्र चरन्तमभ्य तमियात् । न स्वपन्तमभ्युदि-यात् श० ३२२२७ अथ यद्दीक्षित । अनृत्य वा व्याहरति क्रुध्यति वा तन् मिथ्याकरोति श० ३२२२४ स य सत्य वदति स दीक्षित कौ० ७३ अथ य एतमेतद् दीक्षयन्ति तद् द्वितीयम्म्रियते जै० उ० ३९४ यज्ञाद् ह वा एष पुनर्जायते यो दीक्षते ऐ० ७२२ एव वाऽएप यज्ञ सम्भरति यो दीक्षते श० ३२२३ यदह दीक्षते तद्विष्णुर्भवति श० ३२११७ उभय वाऽएपोऽत्र भवति यो दीक्षते विष्णुश्च यजमानश्च श० ३२११७ यद्वै दीक्षन्ते अग्ना-विष्णू एव देवते यजन्ते श० १२१३१ अग्नीषोमौ वाऽएतमन्तर्जम्भऽआदधाते यो दीक्षते श० ३३४२१, ३६३.१९ हविर्वाऽएप भवति यो दीक्षते श० ३३४२१ उदगृभ्णीते वाऽएषोऽस्मात् लोकाद् देवलोकमभि यो दीक्षते

७ ३२ २३ द्युषु शुद्धेषु पदार्थेषु भवो दिव्य, जो प्रकृत्यादि दिव्य पदार्थों मे व्याप्त है वह ईश्वर, स० प्र० १५, १ १६४ ४६ शुद्धव्यवहार (विद्वान् जन) ५ ४१ ४ प्रकाशमानेषु क्षत्रगुणेषु भव (वाचस्पति =वाण्या पालक प्रजाराजजन) ६ १ दिवि भव (ईश्वर) १.१६४ ४६ शुद्धगुणकर्मस्वभावेषु भव (सविता=जगदीश्वर) ७ ३७ ८. **दिव्यानि**=विद्यादिशुभगुणप्रकाशकानि (भेषजा= सोमादीन् ओषधी) १ ३४ ६ दिवि प्रकाशे भवानि सूर्यविद्युतादीनि १ ६४ ३ शुद्धानि जलादीनि वस्तूनि कर्माणि वा १ ६४ ५ दिव्यगुणकर्मस्वभावानि वस्तूनि ६ २२ ८ अतीवोत्तमानि (वसु=धनानि) ६ ५६ ६ दिवि सुप्रकाशे भवानि (धामानि=स्थानानि) ११ ५ प्रकाशरूपाणि विद्योपासनायुक्तानि कर्माणि, ऋ० भू० १६२, ११ ५ **दिव्याय**=दिव्यभोगाऽन्विताय (जन्मने) १ ५८ ६ **दिव्याः**=दिवि शुद्धे कमनीये गुणादौ भवा (विद्वज्जना) ७ ३५ १४ शुद्धगुणकर्मस्वभावा (राजानो बहुमूल्या पदार्था वा) ७ ३५ ११ शुद्धा (आप =जलानि) ७ ४६ २ उत्तमा पदार्था) ६ ५० ११ **दिव्या**=शुद्धगुणसम्पन्ना (वृष्टि) १३ ३० दिव्येषु गुणेषु भवा भा०—दिव्या क्रिया ३८ १८ शुद्धा (वृष्टि =शक्ति) १ १५२ ७ दिवि कारणे वाय्वादिकार्ये च भवा (अशनि =विद्युत्) १ १४३ ५ दिवि शुद्धे व्यवहारे भवौ (अध्यापकोपदेशकौ) ४ ४३ ३ **दिव्यासः**=प्राप्तदिव्यशिक्षा, भा०—सुशिक्षिता दिव्यगतय (अश्वा) २६ २१ दिवि क्रीडायां साधव (आशव =अश्वा) १ ११८ ४ **दिव्ये**=दिव्यगुणकर्मस्वभावे (उपासानक्ता=रात्रिदिने) २६ ३१ दिव्यस्वरूपे (योषणे=भार्ये) २७ १७ **दिव्येन**=अतिशुद्धेन (रोचनेन=प्रदीपनेन) २७ १ **दिव्येभ्य**=निर्मलेभ्य (पदार्थेभ्य) ७६ शोधकेभ्यो वाय्वादिभ्य ७ ३ [दिव् इति दीव्यते क्विप्। तत 'द्युप्रागपागुदक्प्रतीचो यत्' अ० ४ २ १०१ सूत्रेण भवार्थे यत्। 'तत्र साधु' इत्यर्थे वा यत्। दिव्या=अत्र दिव्यप्राति० स्त्रिया टाप्। दिव्यासः= दिव्यप्राति० जसोऽसुगागम]

दिव्येव यथा दिव्या (विद्युत्) १ १७६ ३ यथा सूर्यस्था किरणारतया १ १६६ ११ [दिव्या-इवपदयो समास । दिव्येति व्याख्यानम्]

दिशन्ता उपदिशन्तौ (कारू=शिल्पिनौ जनौ) २६ ३२. उच्चारयन्तौ (देवौ=देदीप्यमानौ विद्वांसौ) २६ ७ [दिश अतिसर्जने (तुदा०) धातो. शत्रन्तात् 'सुपा सुलुग्०' इति विभक्तेराकारादेश । दिशन्ता=प्रदिशन्तौ नि० ८ १२]

दिशमानः उपदिशन् (विद्वान् जन) प्र०—अत्र व्यत्ययेनात्मनेपदम् ३ ३१ २१. [दिश अतिसर्जने (तुदा०) धातो शानच्। व्यत्ययेनात्मनेपदम्]

दिशः या दिश्यन्त उपदिश्यन्ते दिग्भि सहचरितास्ता प्रजा १२ १७ ये दिगन्त्यतिसृजन्ति ते जना ११ ६२. पूर्वाऽद्या, भा०—रुद्रा वायवो वा १६ ६३. उपदेष्टव्या प्रजा १२ ५६. ऐशानाद्या ३५ ६ अ० दिश इव शुद्धा विदुष्य, भा०—सुप्रकाशितकीर्त्तय (पत्न्य) २३ ३६ पूर्वादीन् १२ ५ सर्वासु दिक्षु व्याप्तकीर्त्तय (स्त्रिय) ११ ५८ काष्ठा ११ ६३ आशा १७.५४ सव पूर्वादि दिशाए, आर्याभि० २ १०, ३ २ ११ **दिशाम्**=सर्वासु दिक्षु स्थिताना राज्यप्रदेशानाम् १६ १७ पूर्वाऽऽदीनाम् १४ ५ [दिश अतिसर्जने (तुदा०) धातो 'ऋत्विग्दधृक्०' अ० ३ २ ५६ सूत्रेण कर्मणि क्विन् निपात्यते। अथ यत्तच्छ्रोत्रमासीत्ता इमा दिशोऽभवन् श० १० ३ ३ ७ अपरिमिता हि दिश श० ६ ५ २ ७ एप उ ह वै चतुर्थो लोको यद् दिश जै० २ १७६ चतस्रो दिशश्चत्वारोऽवान्तरदिश तै० स० २ ४ ६ २ त एते षड् ऋतवष्षड् दिश जै० २ ५२ तस्य (धर्मरूपस्यादित्यस्य) दिश कपालानि काठ० ३१ ६ दश दिश श० ६ ३ १ २१ दिग्भ्यश्चक्रवाक काठ० ४३ ३ दिश परिधय मै० १ ८ ७ काठ० ६ ६ तै० २ १ ५ २ दिश पादा तै० स० ७ ५ २५ १ दिश श्रोत्रम् ऐ० आ० २ १ ५ दिश सप्तहोत्रा श० ७ ४ १ २० दिश समित्, ता प्रजापति समिन्द्धे मै० ४ ६ २३ दिशो भूति श० ७ ३ १ १३ दिशो वा ऋतस्य सत्यम् तै० स० ३ ३ ५ ५ दिशो वै परिभूश्छन्द श० ८ ५ २ ३-४ दिशो वै पृष्ठानि जै० २ २१ दिशो वै लोहमय्य (सूच्य.) श० १३ २ १० ३ दिशो वै श्रोत्र दिश पर रज श० ७ ५ २ २० दिशो वै स्वर्गो लोक मै० ४ ४ ४ काठ० २३ ६ दिशो हरित श० २ ५ १ ४ ऐ० आ० २ १ १ दिशो ह्येतस्य (सूर्यस्य) स्रक्तय श० १४ ३.१ १७ धर्मासि दिशो दृह, रयिं देहि पोष देहि काठ० १ ७ सेय प्राची दिक् प्रथमा यजत जै० २ २१४]

दिशामि उपदिशामि १३ ४८ कथयामि १३ ५१ [दिश अतिसर्जने (तुदा०) धातोर्लटि उत्तमैकवचनम्]

दिषीय खण्डयेयम् २ ३३ ५ [दो अवखण्डने (अदा०) धातोर्लिङ्। व्यत्ययेनात्मनेपदम्]

वृत्सर्गश्छन्दसि' इति वा० सूत्रेण कि प्रत्ययो लिड्वच्च । तुजादित्वादभ्यासस्य दीर्घत्वम्]

दीद्यत् देदीप्यमान (मनुष्य) ३ १ १ प्रकाशमान (अग्ने=विद्वज्जन) १६ ४० **दीद्यतम्**=प्रकाशक विज्ञानम ३ २७ १५ [दीदयति ज्वलतिकर्मा निघ० १ १६ तत शतृप्रत्यय । शपो लुक् । चक्षुर्वे दीदयैव श० १ ४ ३ ७]

दीद्यत् दीप्यते ७ १० १ प्रकाशयति २ ६ २ [दीदयति ज्वलतिकर्मा निघ० १ १६ दीदयद्=दीप्यमे नि० १० १६]

दीद्यानः देदीप्यमान सूर्य इव, भा०—स्तूयमान (अग्नि =शत्रुदाहक सभेश) १७ ६६ प्रकाशमान प्रकाशयन् वा (अग्नि =विद्वज्जन) ३ १५ ५ [दीदयति ज्वलतिकर्मा निघ० १ १६ तत शानच् । व्यत्ययेनात्मनेपदम्]

दीद्ये प्रकाशयेयम्, प्र०—दीदयतीति ज्वलतिकर्मा, निघ० १.१६, ३ ५४ ३ [दीदयति ज्वलतिकर्मा निघ० १ १६ ततो लिडर्थे लट् । व्यत्ययेनात्मनेपदम्]

दीधयन् प्रदीपयन्ति ७ ७ ६ [दीधीङ् दीप्तिदेवनयो (अदा०) धातोर्णिजन्ताल्लङ् । अडभावश्छान्दस]

दीधय प्रकाशय ३ ३८ १ [दीधीङ् दीप्तिदेवनयो (अदा०) धातोर्णिजन्ताल्लोट्]

दीधरत् धारयति ३ २ १० धारय, प्र०—अत्र लोडर्थे लुङ्भावश्च ८ ५१ [धृञ् धारणपोषणयो (जु०) धातोर्णिजन्ताल्लुङ् । अडभावश्छान्दस]

दीधः निनरा कारागारे निदधाति ६ ६७ ४ धारयसि ६ १७ ६ [दधातेर्णिजन्ताल्लुङि मध्यमैकवचनम् । अडभावश्च छान्दस]

दीधितिभिः प्रदीपिकाभि क्रियाभि ७ १ १ **दीधितिम्**=धर्त्तारम् (गर्भम्) ३ ३१ १ नीतिप्रकाशम् ४ २ १६. विद्याप्रकाशम् १६ ६६ **दीधितिः**=दीप्ति ३ ४ ३. विद्याप्रदीप्ति २ १८६ ११ प्रकाशमाना विद्या ५ १८ ४. **दीधिती**=प्रकाशयन्ती (गी =वाक्) ५ ४२ १ [दीधीङ् दीप्तिदेवनयो (अदा०) धातो स्त्रिया क्तिन्-प्रत्यय । दीधितय रश्मिनाम निघ० १ ५ दीधितय अङ्गुलिनाम निघ० २ ५ दीधितयो अङ्गुलयो भवन्ति, धीयन्ते कर्मसु नि० ५ १० दीधितिम् विधानम् नि० ३ ४]

दीधिम प्रकाशयेम ३३ ४१. [दीधीङ् दीप्तिदेवनयो (अदा०) धातोर्लिङ् । व्यत्ययेन परस्मैपदम्]

दीध्यत् युद्धे शत्रून् वञ्चित्वा स्वय प्रकाशेत ६ २० [दीधीङ् दीप्तिदेवनयो (अदा०) धातोर्लिङर्थे लङ् । वचनव्यत्यय]

दीध्यतः देदीप्यमाना (सत्पुरुषा) २ २०.१ [दीधीङ् दीप्तिदेवनयो (अदा०) धातो शतृप्रत्यय । व्यत्ययेन परस्मैपदम् । विभक्तिव्यत्यय]

दीध्यानः प्रकाशयन् (देव =विद्वज्जन) ४ २३ ४ दीप्यमान सन् (अर्वा=गन्ताऽश्व) २६ २३ देदीप्यमान (अर्वा=अश्व) १ १६३ १२ **दीध्यानाः**=शुभैर्गुणै प्रकाशयमाना (विप्रा =मेधाविनो जना) ४ ५०.१ विद्यादिसद्गुणै प्रकाशमाना (विद्वांसो जना) ३ ७.८ देदीप्यमाना (देवा =विद्वांसो जना) ४ ३३ ६ [दीधीङ् दीप्तिदेवनयो (अदा०) धातो शानच्]

दीध्ये प्रकाशये ५ ३३.१ [दीधीङ् दीप्तिदेवनयो (अदा०) धातोर्लट्]

दीनाः क्षीणा (निरभिमाना व्यापारिणो जना) ४ २४ ६ [दीङ् क्षये (दिवा०) धातो. 'इण् सिञ्०' उ० ३ २. सूत्रेण नक्प्रत्यय]

दीपय: प्रकाशय ६ २२ ८ [दीपी दीप्तौ (दिवा०) धातोर्णिजन्ताल्लोट्]

दीयत् गच्छेत्, प्र०—दीयतीति गतिकर्मा, निघ० २ १४, १.१८० १ **दीयतम्**=दद्यातम् ५ ७४ ६ [दीयति गतिकर्मा निघ० २ १४ ततो लङ् । अडभावश्छान्दस]

दीयथः क्षयथ ५ ७३ ३. **दीय**=क्षिणुहि, प्र०—व्यत्ययेनात्रात्मनेपदम् १७ ३६ उपक्षयति ५ ८३ ७ **दीयन्ति**=क्षयन्ति प्र०—व्यत्ययेन परस्मैपदम् २ ३५ १४. [दीङ् क्षये (दिवा०) धातोर्लट् । 'दीय' प्रयोगे तु लोट् । व्यत्ययेन परस्मैपदम् । दीयति गतिकर्मा निघ० २ १४]

दीयन् गच्छन् (औशिज =कामयमानस्य पुत्र) प्र०—दीयतीति गतिकर्मा, निघ० २ १४, ६ ४ ६ [दीयति गतिकर्मा, निघ० २ १४ तत शतृप्रत्यय]

दीर्घतमा. दीर्घ तमो यस्मात् स (लोभातुरो जन) १ १५८ ६ [दीर्घ-तमस्पदयो समास । दीर्घमिति व्याख्या यते। तमस्=तमु काङ्क्षायाम् (दिवा०) धातो रौणादिकोऽसुन् । तमस्तनोते नि० २ १६ दीर्घतमा मामतेयो दशपुरुषायुषाणि जिजीव । शा० आ० २ १७]

दीर्घम् विशालम् (वीर्य=सामर्थ्यम्) ५ ५४ ५. वर्षशतादप्यधिकम् (आयु) १ ११६.२५ महान्त समयम् १ १२३ ८ लम्बमानम् (आयु =जीवनम्) ३४ ५१ चिरञ्जीविनम् ४ २३ ६. बहुकालपर्यन्तम् (आयु) १ ६६ ८.

श० ३ १ ४ १ देवान् वा ऽएष उपोत्क्रामति यो दीक्षते श० ३ १ १ १ देवान् वा ऽ एष उपावर्त्तते यो दीक्षते स देवतानामेको भवति श० ३ १ १ ८-१० देवगर्भो वा एष यद्दीक्षित कौ० ७ २ गर्भो वा एष भवति यो दीक्षते श० ३ २ १ ६ गर्भो (यज्ञस्य) दीक्षित श० ३ १.३ २८ स (क्षत्रिय) ह दीक्षमाण एव ब्राह्मणतामभ्युपैति ऐ० ७ २३ तस्मादपि (दीक्षित) राजन्य वा वैश्य वा ब्राह्मण इत्येव ब्रूयाद् ब्राह्मणो हि जायते यो यज्ञाज्जायते श० ३ २ १ ४० सिपासवो वा एते यद्दीक्षिता ऐ० ६ ७. दीक्षितस्यैव प्राचीनवशा (शाला) नादीक्षितस्य श० ३ १ १ ७ एष (आदित्य) दीक्षित गो० पू० २ १. यो वै दीक्षिताना पाप कीर्त्तयति तृतीयम् (अगम्) ता० ५ ६ १०]

दीदयत् दीदयति प्रज्वलति, प्र०—अत्राऽडभाव 'दीदयतीति ज्वलतिकर्मा' निघ० १ १६, २.४ ३ द्योतयति ६ १६ ३६ प्रकाशयति ५ ४५ ६ **दीदयतम्**=प्रकाशयत १ ९३ १० **दीदयति**=प्रदीप्यते ५ ६ ४ **दीदाय**=प्रकाशय ७ ३ ५ प्रकाशयेत् २ ३५ ४ दीपयति ७ १२ १ दीप्यते ४ ६ ७ प्राप्त होवे, सं० वि० १०४, २ ३५ ४ [दीदयति ज्वलति कर्मा निघ० १ १६ तत लड्। अडभाव 'दीदयति' प्रयोगे लट्। 'दीदाय' प्रयोगे सामान्ये लिट्। दीङ् क्षये (दिवा०) धातोर्वा लिट्। व्यत्ययेन परस्मैपदम्। दीदयत् दीप्यते नि० १० १९]

दीदयन् प्रकाशयत् सत् (ब्रह्म) २६ ३ प्रकाशकम् (विद्वास जनम्) २ २३ १५ [दीदयति ज्वलिकर्मा। निघ० १ १६ तत शतृप्रत्यय]

दीदियुः दीप्यन्ते। प्र०—दीदयतीति ज्वलतिकर्मसु पठितम्, निघ० १ १६ दीङ् क्षये इत्यस्माद् व्यत्ययेन परस्मैपदम्, अभ्यासस्य ह्रस्वत्वे 'वाच्छन्दसि सर्वे विधयो भवन्ति' इत्यनभ्यासस्य ह्रस्व । समीक्षा—सायणाचार्येणेद पदमन्यथा व्याख्यातम् १ ३६ ११ [दीदयति ज्वलतिकर्मा निघ० १ १६ ततो लिट् सामान्ये। अनभ्यासस्य ह्रस्वश्छान्दस]

दीदिविम् सर्वप्रकाशकम् (अग्नि=परमेश्वरम्) व्यवहारयन्तम् (जगदीश्वर भौतिकमग्नि वा)। प्र०—अत्र 'दिवो द्वे दीर्घश्चाभ्यासस्य' उ० ४ ५५ इति दिव क्विन् प्रत्ययो द्वित्वाभ्यासदीर्घौ च ३ २३ सम्यक् प्रकाशकम् (परमात्मानम्) वे० भा० न० १ १ ८ सर्वप्रकाशकम् (अग्नि=परमेश्वरम्) १ १ ८ [दिवु क्रीडाविजिगीषाव्यवहारद्युत्यादिषु (दिवा०) धातो 'दिवो द्वे दीर्घश्चाभ्यासस्य' उ० ४.५५ सूत्रेण क्विन् प्रत्ययोऽभ्यासस्य च दीर्घत्वम्। क्विन्-प्रत्ययस्य वहुलवचनादेव इत्सज्ञालोपश्च न भवत]

दीदिवः विजय कामयमान (अग्ने=वह्निरिव राजन्) ७ १ ८. तेजस्विन् शत्रुदाहक वा (अग्ने=आप्तविद्वन्), प्र०—दीदयतिर्ज्वलतिकर्मा, निघ० १ १६ अत्र 'तुजादीनाम्०' इत्यभ्यास-दीर्घ १७ ९. विद्यादिगुणै शोभावन् (अ०—विद्वन्, भा०—अध्यापक) २५ ४८. ये दीदयन्ति ते दीदय प्रकाशास्ते वहवो विद्यन्ते यस्मिन् तत्सम्बुद्धौ (विद्वज्जन) १५ ४८ सत्यप्रद्योतक (राजन्) ५ २४ ३.४ स्व-सामर्थ्येन देदीप्यमान दीप्तिमान् वा (अग्ने=जगदीश्वर भौतिकोऽग्निर्वा) १ १२ १०. यो दीव्यति शुभैर्गुणैर्द्रव्याणि प्रकाशयति तत्सम्बुद्धौ (अग्ने=भौतिकाऽग्ने), अथ दिवु धातो क्वसु-प्रत्ययाऽत प्रयोग १ १२ ५ प्रकाशमयाऽऽनन्दप्रद (अ०—जगदीश्वर), प्र०—अत्र दिवु धातो 'छन्दसि लिट्' इति लिट् 'क्वसुश्च' इति लिट स्थाने क्वसु 'छन्दस्युभयथा' इति लिडादेशस्य क्वसो सार्वधातुकत्वादिडभाव 'तुजादीना दीर्घोऽभ्यासस्य' इत्यभ्यास-दीर्घ 'मतुवसो रु सम्बुद्धौ छन्दसि' इति रुरादेशश्च ३ २६ **दीदिवान्**=देदीप्यमान (अग्नि=विद्युदादिकार्यकारणस्य स्वरूप) २ ९ १ धर्म्य व्यवहार चिकीर्षु (मनुष्यजन्मप्राप्तो जन) ११ ३६ **दीदिवांसम्**=देदीप्यमानम् (अग्नि=पावकम्) ४ ३९ २ देदीप्यमान दातारम् (विद्वास जनम्) ५ ४३ १२ प्रदीप्यमानम् (विद्वास जनम्) ३ २७ १२ प्रकाशमानम् (विद्वास जनम्) ६ १ ६ प्रकाशमान प्रकाशयन्त वा (अग्नि=विद्यादिरूपम्) ६ १ ३ सद्गुणैर्देदीप्यमानम् (राजानम्) ३ १३ ५ [दिवु क्रीडाविजिगीषाव्यवहारद्युतिस्तुतिमोदमदस्वप्नकान्तिगतिषु (दिवा०) धातोर् लिट क्वसौ छान्दस रूपम्]

दीदिहि प्रदीपय ७ १ ३ प्रकाशय १ १४० १० भृश प्रकाशय १ ७९ ५ प्रकाशस्व प्रकाशय वा ३ ५४ २२ प्रकाशितो भव २७ ५ देहि ६ ४८ ७ कामय २७ १ कामयस्व, भा०—उपकुरु १७ ७६ **दीदेत्**=प्रकाशयति २ २ ८ **दीदेथ**=विजानीहि १ ४४ १० प्रकाशयेथ प्र०—अत्र शबभाव १ ३६ ११ [दीदयति ज्वलतिकर्मा निघ० १ १६ तस्य लोटि लिडि च रूपाणि। शपो लुक्]

दीद्यग्नी दीदिर्दीप्तिर्हेतुरग्निर्ययोस्तौ (अश्विनौ=सूर्याचन्द्रमसौ) १ १५ ११ [दीदि-अग्निपदयो समास। दीदि=दीदयति ज्वलतिकर्मा निघ० १ १६ तत किकिन्-

दुग्धः प्रपूर्ण (अंशु =ओषधिसार) ३ ३६ ६ [दुह प्रपूरणे (अदा०) धातो क्त प्रत्यय]

दुघानाः प्रपूरका (पन्थास =मार्गा), प्र०—अत्र वर्णव्यत्ययेन हस्य घ १ १०० ३ प्रपूरयन्त (सुविद्वारा) ३ ३१ १० [दुह प्रपूरणे (अदा०) धातो शानच्। वर्णव्यत्ययेन हस्य घकार]

दुघे सुखाना प्रपूरिके (रात्रिदिने) २८ १६ पूरिके (ऊर्जाहुती=सुसंस्कृतान्नाहुती) २८ ३६ प्रपूरिके प्रात सायवेले २१ ५२ प्र०—अत्र 'वाच्छन्दसि' इति केवलादपि कप्-प्रत्यय २१ ३४ सुष्ठु कामवर्द्धिके (देवी=रात्रिदिने) २८ १६ [दुह प्रपूरणे (अदा०) धातो 'दुह कब् घश्च' अ० ३ २ ७० सूत्रेण छन्दसि सर्वविधीना विकल्पनात् केवलादपि कप् घश्चान्तादेश]

दुच्छुना दुष्टेन शुनेव २ २३.६ **दुच्छुनाभ्यः**=दुःखकारिणीभ्य शत्रुसेनाभ्य २ ३२ २ **दुच्छुनाम्**=दुष्टा श्वान इव वर्त्तमानाग्तान् हिंस्यान् प्राणिन, भा०—दुष्टाचरणदुष्टानाम्, प्र०—अत्र कर्मणि षष्ठी ३५ १६ दुतो दुष्टाश्श्वान इव वर्त्तमानास्तेषाम्, भा०—दुष्टाना जनानाम् १६ ३८ **दुच्छुनायै**=दुष्ट शुन गमन यस्यास्तस्यै (शत्रुस्त्रियै), प्र०—अत्र शुन गतौ इत्यस्माद् 'घञर्थे क०' इति क १ १२६ ५ **दुच्छुनाः**=दुष्टा श्वान इव वर्त्तमाना, भा०—दुष्टा (दुर्जना) २६ ५६ दुष्टा श्वान इव (शत्रवो जना) ६ ४७ ३० दुर्गत शुन सुख याभ्यस्ता (शत्रुसेना), प्र०—अत्र वर्णव्यत्ययेन सस्य त 'शुनमिति सुखनाम०' निघ० ३ ६, १ ११६ २१ [दुस्-श्वन्पदयो समास। वर्णव्यत्ययेन सकारस्य तकारादेश। अथवा दुस्शुनपदयो समास। शुनम्=शुन गतौ (तुदा०) धातो 'घञर्थे कविधानमिति' क प्रत्यय। अथवा दुस्-शुनम्-पदयो समास। शुनमिति सुखनाम निघ० ३.६ वर्णव्यत्ययेनोपसर्गस्य सस्य स्थाने तकारादेश। यो वा अभिचरति योऽभिदासति य पाप कामयते स वै दुच्छुन जै० १ ६३]

दुच्छुनायसे दुष्टेष्वेवाचरसि ७ ५५ ३ [दुस्-शुनपदयो समासे कृते आचारेऽर्थे क्यङ्। व्यत्ययेन सस्य तकार]

दुदुक्षन् दोग्धुमिच्छेयु, भा०—दोग्धु समर्था स्यु प्र०—अत्र वर्णव्यत्ययेन घस्य द ३३ २८ [दुह प्रपूरणे (अदा०) धातोरिच्छायामर्थे सन्नन्ताच्छतृप्रत्यय। 'एकाचो बशो भष्०' इति प्राप्तो धकारो न भवति छान्दसत्वात्]

दुदुक्षन् कामान् प्रपूरयन् (प्रजाजन.) ७ १८.४. [दुह प्रपूरणे (अदा०) धातोरिच्छायामर्थे सन्नन्ताच्छतृ-प्रत्यय]

दुदुहे प्राति ३ ५७.१ पिपूर्त्ति ४ ३.१० दुह्यते ३ ३१ ११. दोग्धि ५ ४३ ४. पूरयति ६ ६६ १ **दुदुह्रे**=दुहन्ति ३ ५७ २ प्रपूरयन्ति, प्र०—अत्र वर्त्तमाने लिट् 'इरयो रे, अ० ६.४ ७६. अनेनेरेजित्यस्य स्थाने रे आदेश ३ १६ **दुदोहिथ**=धोक्षि २ १३.६. [दुह प्रपूरणे (अदा०) धातोर्लिटि रूपाणि। लिट् न 'छन्दसि लुङ्लङ्लिट' इति सामान्यकाले]

दुद्रवत् भृश गच्छेत् ७ १६ २ भृश गच्छति ५ ५० ४ द्रवति १५ ३४. शरीरादौ द्रवति गच्छति, प्र०—अत्र वर्त्तमाने लङ्, माङ्योगमन्तरेणाऽपि अडभाव १५.३३. भा०—वेगवानन्येभ्यो वेगप्रदो वर्त्तते १५ ३४ [द्रु गतौ (भ्वा०) धातोर्यङ्लुगन्तात् लङ्। अडभावश्छान्दस]

दुधये हिंसकाय (दुर्जनाय) ६ ३६ ७

दुधितम् पूर्णम् (तम.=अन्धकारम्) ४ १.१७ [दुह प्रपूरणे (अदा०) धातो क्त प्रत्यय। वर्णव्यत्ययेन हस्य धकार। इडागमोऽपि छान्दस]

दुधिता दुधितानि दुर्हितानि (नमासि=रात्री) ४ १६ ४ दुर्हितानि दूरे सन्ति सुखकारकाणि (शरीरादीनि) २ १७ ४ [दुर्-हितपदयो समास। हस्य धकार, उपसर्गस्थरेफस्य च लोपश्छान्दस]

दुध्र! दुःखेन धर्त्तु योग्य (विद्वज्जन) ६ २२ ४ **दुध्रः**=बलेन पूर्ण (पौष्ण) १ ५६ ३ दुःखेन धर्त्तु योग्य (इन्द्र=परमैश्वर्यप्रद ईश्वर), प्र०—अत्र 'छान्दसो वर्णलोपो वा' इति वर्णलोपो 'घञर्थे क-विधानम्' इति धृ-धातो क प्रत्यय २ १२ १५ [दुस्पूर्वाद् धृञ् धारणे (भ्वा०) धातो 'घञर्थे कविधानम्' इति क प्रत्यय। वर्णव्यत्ययेन सकारलोप। 'दुध्र' प्रयोगे तु दुह प्रपूरणे (अदा०) धातोरपि औणादिके रक्प्रत्यये साधनीयम्। वर्णव्यत्ययेन हस्य धकार]

दुध्रकृतः ये दुध्राणि धारकाणि बलादीनि कुर्वन्ति ते (मरुत=वायव) १.६४ ११. [दुध्र इत्युपपदे डुकृञ् करणे (तना०) धातो. क्विप्प्रत्यय। दुध्र इति व्याख्यातम्]

दुध्रवाचः दुर्धरा वाग् येषा ते (यज्ञाऽनुष्ठातारो

लम्बीभूतम् (आजि=सङ्ग्रामम्) ४ २४ ८. दीर्घकाल पर्यन्त, स० वि० १४०, अथर्व० १४ २ ७५ **दीर्घ.**= विस्तीर्ण (रयि=धनम्) ४ २ ५ बृहत् (ओक.=गृहम) १ १७३ ११ **दीर्घाय**=महते, निरन्तराय (चक्षसे=दर्शनाय) १ ७ ३ **दीर्घेण**=प्रलम्बितेन (आयुषा) १ ११६ ६ [द्राघृ आयामे (भ्वा०) धातोरच्प्रत्यय । धातो 'द्रा' स्थाने 'दीर्' आदेश । दीर्घम् द्राघते नि० २ १६ आयुर्वै दीर्घम् ता० १३ ११ १२]

दीर्घयशसे महद्यशसे (पुरुषाय) ५ ६१ ६ [दीर्घ-यशस्पदयो समास । दीर्घ व्याख्यातम्]

दीर्घयाथे यान्ति यस्मिन् स याथो मार्गो, दीर्घश्चासौ याथश्चतस्मिन् ५ ४५ ६ **दीर्घयाथैः**=दीर्घा याथा गमनानि येषु तै (पथिभि=मार्गै) २ १५ ३ [दीर्घयाथपदयो समास । दीर्घ व्याख्यातम् । याथ=या प्रापणे (अदा०) धातोर् अथ प्रत्ययो बाहु० औणादिक]

दीर्घश्मश्रुः दीर्घकालपर्यन्त केश-श्मश्रूणि धारितानि येन स (ब्रह्मचारी), ऋ० भू० २३७, अथर्व० ११ ५ ६ चालीस वर्ष तक डाढी, मूछ आदि पच केशो का धारण करने वाला ब्रह्मचारी, स० वि० ८०, अथर्व० ११ ५ ६. [दीर्घ-श्मश्रुपदयो समास । दीर्घमिति व्याख्यातम् । श्मश्रु='श्मनि श्रयतेर्डुन्' उ० ५ २८ सूत्रेण 'श्मन्' इत्युपपदे श्रयतेर्डुन्प्रत्यय । श्मनि मुखे श्रयतीति विग्रह । एष (आदित्य) दीर्घश्मश्रु गो० १ २ १]

दीर्घश्रवसे दीर्घाणि महान्ति श्रवासि विद्यादीन्यन्नानि धनानि वा यस्य तस्मै (मेधाविपुत्राय), प्र०—श्रव इत्यन्ननामसु पठितम्, निघ० २ ७ धननामसु च, निघ० २ १०, १ ११२ ११ [दीर्घ-श्रवस्पदयो समास । दीर्घमिति व्याख्यातम् । श्रव=अन्ननाम निघ० २ ७ धननाम निघ० २ १० अन्तरिक्ष दैर्घश्रवसम् जै० २४ ३६]

दीर्घश्रुत् यो दीर्घ काल शृणोति (अग्नि=राजा) ७ १६ ८ यो दीर्घ विस्तीर्णानि बहुकाल वा शास्त्राणि शृणोति (विप्र=मेधावी जन) ७ ६१ २ [दीर्घमिति व्याख्यातम् । तदुपपदे श्रु श्रवणे (भ्वा०) धातो क्विप् । 'ह्रस्वस्य पिति कृति तुक्' इति सूत्रेण तुगागम]

दीर्घश्रुत्तमम् य दीर्घेण कालेन शृणोति सोऽतिशयित तम् (राजकर्मचारिण जनम्) ५ ३८ २ **दीर्घश्रुत्तमा**=यौ दीर्घकाल शृणुतस्तावतिशयितौ (अध्यापकोपदेशकौ ५ ६५ २ ['दीर्घश्रुत्' इति व्याख्यातम् । ततोऽतिशायने तमप्-प्रत्यय]

दीर्घा दीर्घाणि (दिनानि) १ १४० १३ **दीर्घाम्**=लम्बीभूताम् (प्रसिति=बन्धनम्) ४ २२ ७. विस्तृताम् (प्रसिति=बन्धनम्) १ २० **दीर्घाः**=स्थूला (तमिस्रा=रात्रय) २ २७ १४ [दीर्घमिति व्याख्यातम् । ततो नपुसके जस शिरादेशे 'शेश्छन्दसि बहुलम्' अ० ६ १ ७० सूत्रेण शेर्लोप । 'दीर्घाम्' प्रयोगे दीर्घप्राति० स्त्रिया टाप्]

दीर्घाधियः दीर्घा बृहती धीर्येषा ते (देवा=पूर्णविद्या विद्वासो जना), प्र०—अत्र 'अन्येषामपि०' इति पूर्वपदस्य दीर्घ २ २७ ४ [दीर्घा-धीपदयो समास । 'ङ्यापो ०' इति पूर्वपदस्य ह्रस्वत्वे सहिताया दीर्घ]

दीर्घाप्साः दीर्घा बृहन्तोऽप्सा शुभगुणव्याप्तयो येषा ते (वर्णा आश्रमाश्च) १ १२२ १५ [दीर्घ-अप्सपदयो समास । अप्स=रूपनाम निघ० ३ ७]

दीर्घायुत्वम् चिराऽऽयुषो भाव १८ ६ **दीर्घायुत्वाय**=दीर्घ-काल जीवन के लिए, स० वि० १४०, अथर्व० १४ २ ७५ [दीर्घ-आयुपदयो समासे कृते भावे त्व प्रत्यय । आयु=एति प्राप्नोति सर्वान् इति विग्रहे इण् गतौ (अदा०) धातो 'छन्दसीण' उ० १ २ सूत्रेण उण्प्रत्यय]

दीर्घायुशोचिषम् दीर्घमायु शोचि पवित्रकर यस्य तम् (अतिथिम्) ५ १८ ३ [दीर्घ-आयु-शोचिष्पदाना समास । शोचि=ज्वलतोनाम निघ० १ १७]

दीर्घायुः चिरमायु (विद्वान् जन) १२ १०० चिरञ्जीवी (कुमार=ब्रह्मचारी) ४.१५ ६ [दीर्घ-आयुपदयो समास]

दीवि द्यूतकर्मणि ५ ८५ ८ [दिवु क्रीडाविजिगीषादिषु (दिवा०) धातो छान्दस रूपम्]

दीष्व देहि, प्र०—अत्र शपो लुक् 'छन्दस्युभयथा, इत्यार्धधातुकत्वम् ३८ ३ [डुदाञ् दाने (जु०) धातोर्लोटि छान्दस रूपम्]

दुक्षः दुषये ७ ४ ७ [दुष वैकृत्ये (दिवा०) धातोर्लिङर्थे लुङ् । 'शल इगुपधादनिट क्स' इति च्ले क्सादेश । अडभावश्छान्दस]

दुग्धम् पूर्ण कुरुतम्, भा०—गमयतम् ३३ ८८ **दुग्धाम्**=प्रपिपूर्त्तम् १ १५८ ४ [दुह प्रपूरणे (अदा०) धातोर्लोट् । 'दादेर्धातोर्घ' इति हकारस्य घकारे 'झषस्तथो ०' इति प्रत्ययतकारस्य धत्वे जश्त्वे च रूपम्]

दुग्धम् गवादिभ्य पय १६ १५ [दुह प्रपूरणे (अदा०) धातो कर्मणि क्त प्रत्यय औणादिक]

(पापिनो जना) ४ ५ ५ **दुरेवैः**=दु ख-प्रापकैर्दुष्टैर्मनुष्यादि-प्राणिभि १ ११७ ४ [दुर्-एवपदयो समास । एव = इण् गतौ (अदा०) धातो 'इण्शीभ्या वन्' उ० १ १५२ सूत्रेण वन्प्रत्यय]

दुरोकम् शत्रुभिर्दु सेवम् (सभ्य सभापति वा) ७ ४.३ [दुस्-ओकपदयो समास । ओक =अव रक्षणगतिकान्त्याप्तिपु (भ्वा०) धातोर्बाहुलकाद् औणादिक कक्प्रत्यय]

दुरोकशोचिः दूरस्थेष्वोकेषु स्थानेपु शोचयो दीप्तयो यस्य स. (अग्नि =राजा) १ ६६ ३ [दुर्-ओक-शोचिपदाना समास]

दुरोणम् गृहम् ४ १३ १ **दुरोणे**=निवासस्थाने गृहे ३ २५ ५ [दुरोणे गृहनाम निघ० ३ ४ दुरोण इति गृहनाम दुखा भवन्ति दुस्तर्पा नि० ४ ५ दुरोणे=गृहे नि० ८ ५]

दुरोणसत् यो दुरोणे गृहे सीदति स (परमेश्वर) प्र०—दुरोण इति गृहनाम०, निघ० ३ ४ १० २४ यो दुरोणे सर्वर्त्तुसुखप्रापके गृहे सीदति स (ब्रह्म जीवो वा) १२ १४ ['दुरोण' इत्युपपदे षद्लृ विशरणगत्यवसादनेषु (भ्वा०) धातो क्विप्प्रत्यय । दुरोण-पद व्याख्यातम् । दुरोणसदिति विपयसदित्येतत् श० ६ ७ ३ ११]

दुरोषाः दुर्गतो दूरीभूत ओष क्रोधो यस्य स (इन्द्र = राजा) ४ २१ ६ (दुर्-ओषस्पदयो समास । ओषस् = उप दाहे (भ्वा०) धातोरौणादिकोऽसुन्प्रत्यय]

दुरोहणम् दु खेन रोढुमर्हम् (छन्द =बलम्) १५ ५ [दुर्-पूर्वाद् रुह बीजजन्मनि प्रादुर्भावे च (भ्वा०) धातोर्ल्युट्]

दुर्गहा यो दुर्गान् दु खेन गन्तु योग्यान् हन्ति (इन्द्र = मनुष्य) ४ १८ २ यानि दु खेन पार गन्तु योग्यानि तानि घ्नन्ति (दुरिता=स्थानानि) ५ ४ ६ **दुर्गहाणि**=यानि दुर्गाणि दु खेन गन्तु योग्यानि घ्नन्ति तानि धर्म्याणि कर्माणि ६ २२ ७ [दुर्गोपपदे हन हिसागत्यो (अदा०) धातो क्विप्प्रत्यय । दुर्ग इति व्याख्यास्यते । अथवा दुर्पूर्वात् गाहू विलोडने (भ्वा०) धातोर्वा छान्दस रूपम्]

दुर्गा दु खेन गन्तु योग्यानि (दुर्व्यसनानि) ७ ६० १२ येपु दु खेन गच्छन्ति तानि, (दुर्गाणि) प्र०—अत्र 'सुदुरोरधिकरणे०' अ० ३ २ ४८ इति दुरुपपदाद् गमेर्ड प्रत्यय. 'शेश्छन्दसि०' इति लोप १ ४१ ३ **दुर्गात्**=कठिनाद् भू-जलाऽन्तरिक्षस्थमार्गात् १ १०६ १ **दुर्गाणि**=दु खेन गन्तु योग्यानि स्थानानि १ ६६ १ दुस्सह दु खो को, आर्याभि० १ ३३, ऋ० १ ७७ १ **दुर्गे**=शत्रुभिर्दु खेन गन्तव्ये प्रकोटे ७ २५ २ [दुर् इत्युपपदे गम्लृ गतौ (भ्वा०) धातो 'सुदुरोरधिकरणे' अ० ३ २ ४८ वा० सूत्रेण ड प्रत्यय । दुर्गाणि=दुर्गमानि स्थानानि निघ० ७ २० दुर्गमनानि स्थानानि नि० १३.३३]

दुर्गृभिश्वनः दु खेन गृभिर्ग्रहण श्वाऽभिव्याप्तिर्यस्य तस्य (वृत्रस्य=मेघस्य) प्र०—अत्र ग्रहधातो 'इक् कृपादिभ्य ' इतीक् हस्य भत्व च 'अशूङ् व्याप्तौ' इत्यस्मात् कनिन्प्रत्ययो वुगागमोऽकारलोपश्च १ ५२ ६

दुर्गृभिः दु खेन ग्रहीतु योग्यै (स्त्रीभि) १ १४० ६ [दुर् इत्युपपदे ग्रह उपादाने (क्र्या०) धातोश् छान्दस रूपम्]

दुर्गृभीयसे दु खेन गृह्णासि ५.६ ४. [दुर्गृभिप्राति० आचारे क्यङ् । दुर्गृभि =दुर्+ग्रह उपादाने (क्र्या०) धातो 'इक् कृपादिभ्य ' इतीक् । हस्य भकारश्छान्दस]

दुर्दृशीकम् दु खेन द्रष्टु योग्यम् (रोगम्) ७ ५० १ [दुर् इत्युपपदे दृशिर् प्रेक्षणे (भ्वा०) धातोर्बाहु० औणादिक ईकन्प्रत्यय]

दुर्धरम् शत्रुभिर्दु खेन धर्तुं योग्यम् (राध =विद्याराज्यसिद्धधन) १ ५७ १ [दुर् इत्युपपदे धृञ् धारणे (भ्वा०) धातोरौणादिकोऽन्प्रत्ययो बाहुलकाद्]

दुर्धर्त्तवः दु खेन धर्त्तार (दुर्जना) ५ ८७ ६ [दुर्-धर्त्तुपदयो समास । धर्त्तु =धृञ् धारणे (भ्वा०) धातोरौणा० तु प्रत्यय]

दुर्धितात् दु खेन धृतात् (व्यवहारात्) १ १४० ११ दुर्--धितपदयो समास । धित =डुधाञ् धातो क्त । 'दधातेर्हि ' इति हिरादेशे वर्णव्यत्ययेन हस्य धकार]

दुर्धुरः दुर्गता धुरो येषा ते (किरणा) ५ ५६ ४ [दुर्-धुर्पदयो समास । धुर्=धुर्वी हिंसार्थे (भ्वा०) धातो क्विप्प्रत्यय । 'राल्लोप इति वकारलोप]

दुर्नियन्तवः दु खेन नियन्तु निग्रहीतु योग्या (वीरा) १ १३५ ६ [दुर्-नियन्तुपदयो समास । नियन्तु =नि पूर्वाद् यमु उपरमे (भ्वा०) धातोर् बाहु० औणादिक (उ० १ ७२) तु प्रत्यय]

दुर्नियन्तुः यो दुर्दु खेन नियन्ता तस्य (विदुषो जनस्य) १ १६० ६ [दुर्-नियन्तृपदयो समास । नियन्तृ=निपूर्वाद् यमु उपरमे (भ्वा०) धातो कर्त्तरि तृच्प्रत्यय]

दुर्भृतये दुष्टा भृतिर्धारण पोपण वा यस्य तस्मै (असज्जनाय) ७ १ २२ [दुर्-भृतिपदयो समास । भृति = डुभृञ् धारणपोषणयो (जु०) धातो स्त्रिया क्तिन्]

दुर्मतिम् दुष्टा मतिम् ११ ४७ दुष्टा चाऽसौ मतिश्च

जना) ७ २१ २ [दुध्र-वाच्पदयो समास । दुध्र इति व्याख्यातम्]

दुन्दुभिः वादित्रविशेष २९ ५७ **दुन्दुभे**=हे दुन्दुभिरिव गर्जितमेन (वीरपुरुष) २९ ५६ दुन्दुभिरिव गर्जक (विद्वज्जन) ६ ४७ २९ दुन्दुभिरिव वर्त्तमान (राजन्) ६ ४७ ३० दुन्दुभिरिव गम्भीरगर्जन (वीरजन) २९ ५५ ['दुम्भ शब्दे' इति नैरुक्तधातोर्यङन्तात् कि प्रत्ययः औणादिक । 'दुन्दुभिरिति शब्दानुकरणम् । द्रुमो भिन्न इति वा, दुन्दुभ्यतेर्वा स्याच्छब्दकर्मणः नि० ९ १२ परमा वा एषा वाग् या दुन्दुभौ तै० १ ३ ६, २ ३ एषा वै परमा वाग्या सप्तदशाना दुन्दुभीनाम् श० ५ १ ५ ६]

दुन्दुभ्याय दुन्दुभिषु वादित्रेषु साधवे (प्रशसितजनाय) १६ ३५ [दुन्दुभिप्राति० 'तत्र साधु' इति यत्प्रत्यय । दुन्दुभि व्याख्यातम् । दुन्दुभिरिति शब्दानुकरणम्, द्रुभो भिन्न वा, इति दुन्दुभ्यतेर्वा स्याच्छब्दकर्मणः । नि० ९ १२]

दुरद्मन्यै दुष्टा अद्मनी अदनक्रिया यस्या तस्या (विपत्तये), प्र०—अत्र पञ्चम्यर्थे चतुर्थी २ २० [दुस्-अद्मनी-पदयो समास. । अद्मनी=अद् भक्षणे (अदा०) धातो 'अदेर्मुट् च' उ० २ १०५ सूत्रेण अनि प्रत्ययो मुडागमश्च । 'कृदिकारादक्तिन' इति वार्त्तिकेन स्त्रिया ङीप्]

दुरः शत्रून् हिंसितु हृदयहिंसकान् प्रश्नान् वा १ १२० २ दूर्वन्ति सर्वाणि दुःखानि यैस्तान् विद्याप्रवेशस्थान् द्वारान् १ ७२ ८ द्वाराणि, प्र०—अत्र पृषोदरादित्वात् सम्प्रसारणेनेष्टसिद्धि १ ११३ ४ हिंसकान् (शत्रून् जनान्) १ ६८ ५ द्वाराणि २० ३६ दुष्टान् (शत्रु-जनान्) १ ६९ ५ सुखं सवारकाणि द्वाराणि १ ५३ २ गृहद्वाराणि ६ १७ ६ [दुर्वी हिंसार्थे (भ्वा०) धातो क्विप्-प्रत्यये 'राल्लोप' अ० ६ ४ २१ सूत्रेण वकारस्य लोप अथवा द्वारयति सवृणोतीति विग्रहे द्वार्प्रातिपदिकस्य पृषोदरादित्वात् सप्रसारणे रूपम् । वृष्टिर्वै दुर ऐ० २ ४]

दुराधर्षम् दुःखेन धर्षितु योग्यम् (शर्म=गृह सुख वा) ६ ४६ ७ दुःखेनाऽऽधर्षितु योग्य दृढम् (वेदविज्ञानम्) ३ ३१ [दुर्-आङ् पूर्वाद् जिधृषा प्रागल्भ्ये (स्वा०) धातोर्घञ् प्रत्यय]

दुराध्यम् दुःखेन वशीकर्त्तुं योग्यम् (स्तेन=चोरम्) ६ ५१ १३ **दुराध्यः**=दुष्टाचारा दुष्टधिय (भाग्यहीना जना) ७ १८ ८ दुःखेनाऽऽध्यातु योग्य (नाव) ७ ३२ २७ [दुस्-आङ्-धी पदाना समासे 'छन्दस्युभयथा' अ० ६ ४ ८६ सूत्रेण यणादेश । अथवा दुस्-आङ्पूर्वाद् ध्यै चिन्तायाम् (भ्वा०) धातोर् 'अचो यत्' इति यत्प्रत्यय । अथवा दुराधीपदस्य प्रथमाबहुवचनम् । ये वै स्तेना रिपवस्ते दुराध्य ता० ४ ७ ५]

दुरितम् दुष्टाचरणम् २ २३ ५. दुःखायेत प्राप्तम् (पापम्) १ १२५ ७. दुष्टस्वभावाऽनुष्ठानजनित पापम् १ २३.२२ **दुरितस्य**=दुःखेनेतस्य प्राप्तस्य (पापस्य) ३ ३९ ८ **दुरितात्**=दुष्टाचारात् १ १४७ ३ दुष्टकर्मभ्य. ऋ० भू० २०३, ४ १५ दुष्टाचाराद् दुःखाद्वा ४ ४ १३ दुष्टाचारादश्रेष्ठाचारात् ३ ३९ ७ दुष्टाऽन्यायाऽऽचरणात् २९ ४७ अधर्माऽऽचरणात् ६ ५० १० पापजन्यात् प्राप्तव्याद् दुःखाद् दुष्ट-कर्मणो वा ४ १५ **दुरितानि**=दुःखदानि पापानि २ २७ ५ दुर्गुण दुर्व्यसन और दुःखो को, स० वि० ४, ३० ३ दुःखेनेतु प्राप्तु योग्यानि स्थानाऽन्तराणि ५ ७७ ३ दुष्ट-कर्म और दुःख, प० वि०, दुःखानि दुष्टाचरणानि वा ४ ३९ १ दुःखानि सर्वान् दुष्टगुणाँश्च, ऋ० भू० ३, ३० ३ सब पाप-जनित अत्यन्त पीडाओ को, आर्याभि० १ ३३, ऋ० १ ७७.१ भा०—दुर्व्यसनानि २७ ६ **दुरिताय**=दुष्टाचाराय १ १४७ ५ **दुरिता**=दुष्टाचरणानि २७ ६ दुःखेनेता प्राप्तानि (पापानि) ५ ६ ६ दुःखानि ७ ३२ १५. दुःखस्य प्रापकाणि पापानि ६ १५ १५ दुःखेन नेतु योग्यानि (स्थानानि) १ ९९ १ दुःखप्रापकाणि कर्माणि फलानि वा ५ ३ ११ दुष्टानि व्यसनानि २९ ५६ दुःखेन प्राप्तु योग्यानि (स्थानानि) ५ ४ ९ दुःसहानि दुःखानि प्र०—अत्र शेर्लोप १ ४१ ३ दुष्टानि दुःखानि, प्र०—अत्र 'शेश्छन्दसि०' इति लोप १ ३५ ३ दुःखेनेतु प्राप्तु योग्यानि स्थानान्तराणि ५ ७७ ३ [दुस्पूर्वाद् इण् गतौ (अदा०) धातो क्त-प्रत्यय । दुरितानि दुर्गतिगमनानि नि० ६ १२]

दुरिष्ट्यै दुष्टा इष्टिर्यजन यस्या तस्या, (दुष्टात् यज्ञात्) प्र०—अत्र पञ्चम्यर्थे चतुर्थी २ २० [दुस्-इष्टिपदयो समास । इष्टि =यज देवपूजासङ्गतिकरणदानेषु (भ्वा०) धातो स्त्रिया क्तिन् । यजादित्वात् सम्प्रसारणम्]

दुरुक्तैः दुष्टुरुक्तै (वचनै) १ १४७ ४ **दुरुक्ताय**=दुष्टमुक्त येन तस्मै (मनुष्याय) १ ४१ ९ [दुस्-उक्तपदयो समास । उक्तम्=वच परिभाषणे (अदा०) धातो क्तप्रत्यये 'वचिस्वपि०' सूत्रेण किति सम्प्रसारणम्]

दुरेवस्य दुःखेन प्राप्तु योग्यस्य (दुर्जनस्य) २.२३ १२ **दुरेव.**=दुष्टाचरणम् ६ १६ ३१ दुःखेन प्राप्तु योग्य (शत्रुजन) ४ ४१ ४ **दुरेवाः**=ये दुष्ट यन्ति ते (रिपव = शत्रुजना) ३ ३० १५ दुष्टाचरणा २ २३ ८ दुष्टमेव प्रापण कर्म यासा ता (माया =प्रज्ञा) ५ २ ९ दुर्व्यसना

हृल्लेखयदणुलासेषु' अ० ६ ३ ५० सूत्रेण हृदादेश]

दुर्हृणायुः दुष्ट-हृदय (मनुष्य) ७ ५९ ८ **दुर्हृणायून्**=शत्रुभिर्दुर्लभ हृण प्रसह्यकरण येषा ते दुर्हृणास्त इवाऽऽचरन्तीति दुर्हृणायवस्तान् (सुवीरान् जनान्) प्र०— यन्त्यत 'क्याच्छन्दसि' इत्यु प्रत्यय १ ८४ १६ [दुर्हृण-प्राति० आचारे क्यङि 'क्याच्छन्दसि' सूत्रेण उ प्रत्यय । दुर्हृण =दुर् इत्युपपदे हृणीङ् रोषणे लज्जाया च (कण्ड्वादि०) धातो 'घञर्थे कविधानम्' इति क प्रत्यय । दुर्हृणायून्=दुराधर्षान् नि० १३ २५]

दुवन्यसत् परिचरणमिच्छन् (राजा) ४ ४० २ [दुवस्यति परिचरणकर्मा नि० ३ ५ तत शतरि छान्दस रूपम्]

दुवसनासः परिचारका (प्रजाजना) ४ ६ १० [दुवस्यति परिचरणकर्मा (निघ० ३ ५) तत 'कृत्यल्युटो बहुलम्' इति कर्त्तरि ल्युट् । जसोऽसुक् च]

दुवसः परिचारका (भृत्या जना) १ १६८.३ **दुवसे**=दुवस्यते परिचरते (शिल्पिने जनाय) १ १६५ १४ **दुवः**=परिचर्य्याम् १ ३६ १४ [दुवस्यति परिचरणकर्मा (निघ० ३ ५) तत कर्त्तरि क्विप्]

दुवस्य सेवस्व ५ ४२ ११ **दुवस्यत**=सेवध्वम् ३ १ परिचरत ५ २८ ६ **दुवस्यति**=परिचरति ३ ३ १ सेवते १ ७८ २ **दुवस्यथ**=नित्य सेवध्वम्, ऋ० भू० २००, १ १११ ९ १० **दुवस्यथः** परिचरतम् १ ११२ १५ सेवेथाम् १ १११ ९ १० **दुवस्यन्**=परिचरेयु ३ ११ ३ **दुवस्यन्ति**=परिचरन्ति १ ६२ १० दुवस्येत्=सेवेत ६ १६ ४६ [दुवस्यति परिचरणकर्मा निघ० ३ ५ ततो लेटि, लटि, लङि च रूपाणि । दुवस्यतिराप्नोतिकर्मा नि० १० २० समिधाग्नि दुवस्यतेति । समिधाग्निं नम-यतेत्येतत् श० ६ ८ १ ६]

दुवस्यन् सेवमान (यजमानो जन) ३ १ २ [दुवस्यति परिचरणकर्मा (निघ० ३ ५) धातो शतृप्रत्यय]

दुवस्यात् सेवमानात् (शिल्पिनो जनात्) १ १६५ १४ [दुवस्यति परिचरणकर्मा (निघ० ३ ५) धातोरच् कर्त्तरि। तत पञ्चमी]

दुवस्वद्भ्यः विद्या-विनय-धर्मेश्वरान् सेवमानेभ्य (देवेभ्य =सकलविद्याप्रचारकेभ्यो विद्वद्वरेभ्य) ६ ३५ **दुवस्वन्तः**=दुवो बहुविद्या-धर्म-परिचरण विद्यते येषु ते (देवा =आयुर्वेदविदो विद्वास) ६ ३६ **दुवस्वान्**=दुव प्रशस्त परिचरण विद्यते यस्य स (विद्वज्जन) १८ ४५ परिचरणीय=विद्वानो से सेवनीयतम (ईश्वर) आर्याभि० २ १७, ५ ३२ [दुवस्यति परिचरणकर्मा (निघ० ३ ५) धातो क्विपि दुवस् । तत प्रशसाया मतुबन्तस्य रूपाणि]

दुवः परिचर्य्याम् १ ४ ५ परिचरण सेवनम् ३ १६ ४ कार्यसेवनम् ६ २९ ३ **दुवांसि**=परिचरणानि सेवनानि ७ २० ६ [दुवस्यति परिचरणकर्मा (निघ० ३ ५) धातो सम्पदादित्वात् भावे क्विप्]

दुव प्राप्त करो, उत्तम प्रतिष्ठायुक्त सदैव रखो आर्याभि० १ १६, १ ३ १० १४. [दुवस्यतिराप्नोतिकर्मा नि० १० २०]

दुवोया यौ दुव परिचरण यातरतौ (रोहितौ=विद्युत्पावकौ) ५ ३६ ६ [दुवस्-उपपदे या प्रापणे (अदा०) धातो क्विप् । तत 'सुपा सुलुग्०' इति सूत्रेणाकारादेश]

दुवोयु दुव परिचरण कामयमानान् (राज्ञ =नृपान्) ६ ५१ ४ यो दुव परिचरण कामयते तस्मै (राज्ञे=नृपाय) ६ १८ १४. परिचरणाय कमनीयम् (क्षत्र=राज्य धन वा) ७ १८ २५ **दुवोयुः**=परिचरण कामयमान (राजा) ६ ३६ ५ [दुवस्-प्राति० इच्छायामर्थे क्यचि 'क्याच्छन्दसि' इति सूत्रेण उ प्रत्यय । दुवस् इति व्याख्यातम्]

दुश्चरितात् दुष्टाऽऽचरणात् ४ २८ [दुस्-उपपदे चर गतौ (भ्वा०) धातो क्त प्रत्यय । वृजिनमनृत दुश्चरितम् तै० ३ ३ ७ १०]

दुश्च्यवनः शत्रुभिर्दु खेन च्योतु योग्य (इन्द्र =सेनापति) १७ ३९ **दुश्च्यवनेन**=य शत्रुभिर्दु खेन कृच्छ्रेण च्यवते तेन (इन्द्रेण=सेनापतिना) १७ ३४ ['दुस्' इत्युपपदे च्युङ् गतौ (भ्वा०) धातो 'चलनशब्दार्थादकर्मकाद् युच्' अ० ३ २ १४८ सूत्रेण युच्प्रत्यय]

दुष्कृतम् यो दुष्ट कर्म करोति तम् (दुर्जनम्) ६ १६ ३२ **दुष्कृतः**=ये दु खेन कुर्वन्ति तान् (दुर्भिक्षान्) ५ ८३ ९. दुष्टाचारान् ५ ८३ २ [दुस् इत्युपपदे डुकृञ् करणे (तना०) धातो कर्त्तरि क्विप्प्रत्यय । दुष्कृत पापकृत नि० १० ११]

दुष्कृताय दुष्टाचाराय ३० १९ [दुस् इत्युपपदे करोतेर्धातो क्त प्रत्यय]

दुष्टरम् शत्रुभिर्दु खेनोल्लङ्घयितु शक्यम् (विद्युद्यानम्) १ ११९ १० शत्रुभिर्दु खेन तरितु योग्यम् (रयिम्) १ ७९ ८ दुस्तर, प्लवितुमशक्यम् (तरुतार=तारारय

ताम् १ १२६ ६ दुष्टा प्रज्ञाम् ४ ११ ६ **दुर्मतिः**=दुष्टा मति २ ३३ १४ दुष्टा चाऽसौ मतिश्च दुष्टा मतिर्यस्य स वा १ १३१ ७ **दुर्मतौ**=दुष्टाया बुद्धौ ५ ४२ ६ दुष्टाया प्रज्ञायाम् ५ ४३ १५ दुष्टा मतिर्यस्य स (दुर्जन) १ १३७ १ दुष्टधी (दुष्टाचारिजन) ७ ५६ ९ दुष्ट-बुद्धि (जन) १६ ५० **दुर्मतीनाम्**=दुष्टाना मनुष्याणाम् १ १२९ ८ दुष्टधिया मनुष्याणाम् १ १२९ १ दुष्टाचारिणा मनुष्याणाम् १ १२९ ८ [दुर्-मतिपदयो समास । मति = मन ज्ञाने (दिवा०) मनु अवबोधने (तना०) धातोर्वा स्त्रिया क्तिन्प्रत्यय 'मन्त्रे वृषेषपचमन०' अ० ३ ३ ९६ सूत्रेण]

दुर्मदम् दुर्गतो दुष्टो मदोऽभिमान यस्य तम् (दुर्जनम्) ३० ८. **दुर्मदः**=दुष्टो मदो यस्य स (अयोद्धेव मेघ) १ ३२ ६ [दुर्-मदपदयो समास । मद =मदी हर्षग्लेपनयो (भ्वा०) मदी हर्षे (दिवा०) धातोर्वा 'मदोऽनुपसर्गे' अ० ३ ३ ६७ सूत्रेण अप्प्रत्यय]

दुर्मन्मानम् यो दुष्ट मन्यते स दुर्मन्, यस्त मिनाति तम् (विद्वास जनम्) १ १२९ ७ [दुर इत्युपपदे मन ज्ञाने (दिवा०) धातो क्विप्। 'दुर्मन्' उपपदे मीञ् हिंसायाम् (क्र्या०) धातो 'कृत्यल्युटो बहुलम्' इति कर्त्तरि ल्युट्-प्रत्यये 'मीनातिमिनोतिदीङा ल्यपि च' अ० ६ १ ५० सूत्रेणाकारादेश]

दुर्मर्षम् दुर्गतो मर्ष सेचन यस्मात् तत् (आयु = जीवनम्) १२ २५ दु खेन मर्षितु पोढु शीलम् (आयु = अन्नम्) १२ १ [दुर्-मर्षपदयो समास । मर्ष =मृषु सेचने (भ्वा०) धातोर्घञ्प्रत्यय । अथवा=दुर् इत्युपपदे मृष तितिक्षायाम् (दिवा०) धातोर्वा खल् । कर्त्तरि अच् वा प्रत्यय]

दुर्मायव दुष्टो मायु प्रक्षेपो येषा ते (रिपव = शत्रवो जना) ३ ३० १५ [दुर्-मायुपदयो समास । मायु =डुमिञ् प्रक्षेपणे (स्वा०) धातो 'कृवापाजिमि०' उ० १ १ सूत्रेण उण्प्रत्यय । 'मीनातिमिनोति०' इति सूत्रेणाकारादेश]

दुर्मित्रासः दुष्टा मित्रा सखायो येषा ते (शत्रवो जना) ७ १८ १५ दुष्टानि तानि मित्राणि ७ २८ ४ [दुर्-मित्रपदयो समासे प्रथमाबहुवचने जसोऽसुगागमे रूपम्]

दुर्मित्रियाः दु खप्रदा विरोधिन्य (ओषधय = सोमादय) ऋ० भू० २०१, ६ २२ दुर्मित्राणीव, अ०—शत्रुवत् (आप ओषधयश्च) ६.२२. दुष्टानि मित्राणीव (प्राणा ओषधयश्च) ३८ २३ दुर्मित्रा शत्रव इव, भा०—शत्रुवत् पीडका (आप =प्राणा जलानि वा, ओषधय = सोमयवाद्या) २०.१९ शत्रुरिव विरुद्धा, भा०—शत्रुवद् दुखदा (आप ओषधयो वा) ३६ २३ प्रतिकूल, दु.खकारक प्राणादि, आर्याभि० २ २९, ३६ २३ [दुर् मित्रपदयो समासे इवार्थे भवार्थे वा घ प्रत्ययश्छान्दस]

दुर्य गृहेषु वर्त्तमान (राजपुरुष) ७ १ ११ **दुर्य्यः**= गृहसम्बन्धी द्वारस्थ (यूप) १ ५१ १४ द्वारवन्ति (ओकासि=गृहाणि) २ ३८ ५ [दुर्यप्राति०भवार्थे यत् । दुर्या इति गृहनाम निघ० ३ ४]

दुर्य्यान् गृहाणि, प्र०—दुर्य्या इति गृहनामसु पठितम्, निघ० ३ ४, ४ ३७ प्रासादान् १ ९१ १९ **दुर्य्याः**= गृहाणि, अ०—गृहादय पदार्थास्तत्रस्था मनुष्यादय प्राणिन, प्रासादास्तत्रस्था मनुष्या १ ११ **दुर्य्यासु**= गृहेषु ४ १ १८ गृहेषु भवासु रीतिपु ७ १ ११ **दुर्य्ये**= गृहरूपे ५.१७ [दुर्या गृहनाम निघ० ३ ४ गृहा वै दुर्या ऐ० १ १३ श० १ १ २ २२, ३ ३ ४ ३०]

दुर्योणे गृहनयने ५ २९ १० गृहे ५ ३२ ८ समराङ्गणे १ १७४ ७

दुर्वर्त्तुः दु खेन वर्त्तमानयुक्तस्य (दुर्जनस्य) ६ ६ ५ यो दु खेन वर्त्तते तस्य (दुष्टजनस्य) ४ ३८ ८ [दुर् इत्युपपदे वृतु वर्त्तने (भ्वा०) धातोरौणादिको बाहु० तु प्रत्यय। दुर्वर्त्तुर्दुर्वार नि० ४ १७]

दुर्वाससे दुष्ट-वस्त्र-धारणाय ७ १ १९ [दुर्-वासम्-पदयो समास । वासस्=वस आच्छादने (अदा०) धातो 'वसेर्णित्' उ० ४ २१८ सूत्रेण असुन्प्रत्यय]

दुर्हणायाः दु खेन हन्तु योग्याया शत्रुसेनाया १ १२१ १४ [दुर् इत्युपपदे हन हिंसागत्यो (अदा०) धातोरौणादिको बाहुलकाद् अन्-प्रत्ययान्तात् स्त्रिया टाप्]

दुर्हणायुवम् दु खेन हन्तु योग्य कामयते ताम् (उषसम्) ४ ३० ८ [दुर् इत्युपपदे हन हिंसागत्यो (अदा० धातोरौणादिकोऽन् प्रत्यय । तत इच्छायामर्थे क्यजन्तात् 'क्याच्छन्दसि' इति सूत्रेण उ प्रत्यय]

दुर्हार्दः दुष्ट हृदय वाली अर्थात् दुष्टात्मा (स्त्रिया) स० वि० १३८, अथर्व० १४.२ २९ [दुर्-हार्दपदयो समास । हार्द =हृदयप्राति० भवार्थेऽण्-प्रत्यये 'हृदयस्य

दूर पूर्वपदे व्याख्यातम्। आधी=आङ्+ध्यै चिन्तायाम् (भ्वा०) धातो 'ध्यायते सम्प्रसारण च' अ० ३ २.१७८ वा० सूत्रेण क्विप्-प्रत्यय सम्प्रसारण च]

दूर-उपब्द: दूर उपब्दिर्वाग् येषा ते (वीरा योद्धृजना) प्र०—उपब्दिरिति वाङ्नाम, निघ० १ ११, ७ २१ २ [दुर्-उपब्दिपदयो समास उपब्दिरिति वाङ्नाम, निघ० १ ११ इकारस्याकारादेशो वर्णव्यत्ययेन]

दूरके दूर एव दूरके, भा०—अनिदूरस्थमपि स्थानम् प्र०—अत्र स्वार्थे कन्प्रत्यय १ २२ ४ [दूर-प्राति० स्वार्थे कन्प्रत्यय । दूर कस्मात् ? द्रुत भवति दुरय वा नि० ३ १९]

दूरङ्गमम् यद् दूर गच्छति गमयति वाऽनेकपदार्थान् गृह्णाति तत्, भा०—वेगवता वेगवत्तरम् (मन) ३४ १ दूर-गमनशीलम् (मन), ऋ० भू० १५२, ३४ १ स्वप्न मे दूर-दूर जाने के समान (मन=मन), स० प्र० २४६, ३४ १ दूर जाने का जिसका स्वभाव है वह (मन), आर्याभि० २४३, ३४ १ ['दूर' इत्युपपदे गम्लृ गतौ (भ्वा०) धातो 'गमश्च' अ० ३ २ ४७ सूत्रेण खच्-प्रत्यय । 'खित्यनव्ययस्य' इति पूर्वपदस्य मुमागम । छान्दसत्वादसञ्ज्ञायामपि खच्]

दूरम् दूर दूर, स० प्र० २४६, ३४ १ विप्रकृष्टदेशम् १ ४२ ३ **दूरे**=विप्रकृष्टे १ ७९ ११ विप्रकृष्टदेशे २ ११ ८ अधर्मात्मा, अविद्वान्, विचारशून्य, अजितेन्द्रिय, ईश्वरभक्ति-रहित इत्यादि दोषयुक्त मनुष्यो से बहुत दूर है, आर्याभि० २ १२, ४० ५ दूरम् ७ २० ७ [दुर् इत्युपपदाद् इण् गतौ (अदा०) धातो 'दुरीणो लोपश्च' उ० २ २० सूत्रेण रक् प्रत्ययो धातोश्च लोप । दुखेनेयते प्राप्यते तद् दूरम्। दूरम् कस्मात् ? द्रुत भवति दुरय वा नि० ३ १९]

दूरात् विप्रकृष्टाद् देशात् २० ४८

दूरे अन्ते विप्रकृष्टे समीपे च (द्यावापृथिव्यौ) ३ ५४ ७ [दूरे अन्ते द्यावापृथिव्योर्नाम निघ० ३ ३०.]

दूरे दृशम् दूरे द्रष्टु योग्यम् (गृहपतिं=गृहस्वामिनम्) ७ १ १ **दूरेदृश**=ये दूरे दृश्यन्ते पश्यन्ति वा (नर=नायका मनुष्या) ५ ५६ २ दूरे पश्यन्ति ते (निर्मलविद्या विद्वासो जना) १ १६६ ११ **दूरेदृशा**=यया दूरे पश्यन्ति तया (भामा=दीप्त्या) ६ १० ४ **दूरेदृशे**=यो दूरे स्थितान् दर्शयति तस्मै (सूर्याय=परमेश्वराय सूर्यलोकाय वा) ३ ३५ [दूर इत्युपपदे दृशिर् प्रेक्षणे (भ्वा०) धातोर् कर्त्तरि क्विप्प्रत्यय । अथवा सम्पदादित्वात् स्त्रिया क प्रत्यय । सप्तम्या अलुक्। दूरेदृश दूरे दर्शनम् नि० ५ १०]

दूरे वधाय योऽरीन् दूरे बध्नाति तस्मै (शूरवीरजनाय) १६ ४० ['दूर' इत्युपपदे बन्ध बन्धने (क्र्या०) धातोर्मूलविभुजादित्वात् क प्रत्यय । सप्तम्या अलुक्]

दूरेभा: दूरदेशे भा दीप्तयो यस्य स (अग्नि) १ ६५ ५ [दूरे-भापदयो समास । सप्तम्या अलुक् । भा=भा दीप्तौ (अदा०) धातो सम्पदादित्वात् क्विप्]

दूरेऽमित्र: दूरेऽमित्रा शत्रवो यस्य स, भा०—शत्रुद्वेषी (गण=गणनीयो विद्वज्जन) १७ ८३. [दूर-अमित्रपदयो समास । समासे सप्तम्या अलुक्]

दूरोहणम् दुखेन रोढुमर्हम् (छन्द=ऊर्जनम्) १५ ५ [दुर् इत्युपपदे रुह बीजजन्मनि प्रादुर्भावे च (भ्वा०) धातो 'अन्येभ्योऽपि दृश्यते' अ० ३ ३ १३० सूत्रेण युच् प्रत्यये 'रो रि' लोपे 'ढ्रलोपे०' इति दीर्घ । असौ वा आदित्यो दूरोहण छन्द श० ८ ५ २ ६ स्वर्गो वै लोको दूरोहणम् ऐ० ४ २० २१]

दूर्वे दूर्वावद् वर्त्तमाने, अ०—ओषधीवत् स्त्रि १३ २० [दुर्वी हिंसायाम् (भ्वा०) धातो गुरोश्च हल' अ० ३ ३ १०३ सूत्रेणाकारप्रत्यय तत स्त्रिया टाप् । क्षत्र वा एतदोषधीना यद् दूर्वा ऐ० ८ ८ तदेतत् क्षत्र प्राणो ह्येष रसो (यद् दूर्वा) श० ७ ४ २ १२ लोमभ्यो दूर्वा (प्रजापतेरजायन्त) जै० २ २६७ धूर्वा ह वै ता दूर्वेत्याचक्षते परोऽक्षम् श० ७ ४ २ १२]

दूषीकाभि: विक्रियाभि २५ ९ (दुष वैकृत्ये (दिवा०) धातो 'कपिदूषिभ्यामीकन्, उ० ४ १६ सूत्रेण ईकन् प्रत्यय । धातोरुकारस्य दीर्घत्व बहुलवचनाद्]

दृक्षसे दृश्यसे १ ६ ७ [दृशिर् प्रेक्षणे (भ्वा०) धातोविकरणव्यत्ययेन कर्मणि क्स । अथवा दृशिर् धातोर्लिडर्थे लेट् सिप् च । व्यत्ययेनात्मनेपदम् । दृक्षसे=सदृश्यसे नि० ४ १२]

दृढम् स्थिरम् (ऊर्व=निरोधस्थानम्) ३ ३२ १६ **दृढस्य**=अतिपुष्टस्य ६ ६२ ११ **दृढा**=दृढाम् (केतुम्) १ ७१ २ दृढीकृता (द्यौ पृथिवी वा) ३२ ६ दृढानि (वसूनि=धनानि) ३ ६ ५ **दृढा:**=स्थिरा कृता (गिरय=मेघा) १ ६१ १४ [दृह दृहि वृद्धौ (भ्वा०) धातो क्तप्रत्यये 'दृढ स्थूलबलयो' अ० ७ २ २० सूत्रेण इडभावो हकारनकारयोर्लोपश्च निपात्यते । दृढाप्रयोगे स्त्रिया टाप्]

दृढास: दृहिता (किरणा) १ ६३ १ [दृढ प्राति०

यन्त्रम्) ऋ० भू० १६६, ऋ० १ ८.२१ १० **दुष्टरस्य**=दु खेन तरितु योग्यस्य (साधो=सत्पुरुषस्य) ७ ८ ३. **दुष्टरः**=दु खेन तरितुमुल्लङ्घयितु जेतु योग्य (अग्नि=राजा) ३ २४ १ दु खेन तरितु सम्प्लवितु योग्य (अग्नि=विद्वाद्राजा) ६ ३७ **दुष्टरा**=दु खेन तरितुमुल्लङ्घयितु योग्यौ (इन्द्राग्नी=नरेश-सेनापती) ५ ८६ २ [दुस् इत्युपपदे तॄ प्लवनसन्तरणयो (भ्वा०) धातो 'ऋदोरप्' इत्यप्प्रत्यय । दुसो मूर्धन्यादेशश्छान्दस. । दुष्टरा दुरनुकराण्यन्यै. नि० ५ २५ दुष्टरस्तन्न रातीरिति दुस्तरो ह्येप रक्षोभिर्नाष्ट्राभि श० ५ २ ४ १६]

दुष्टरीतये शत्रुभिर्दु खेन तरितुमर्हाय (इन्द्राय=सभासेनेशाय) २ २१ २ [दुस् इत्युपपदे तॄ प्लवनसन्तरणयो (भ्वा०) धातोरौणादिको बाहुलकाद् ईति प्रत्यय]

दुष्टरीतु दु खेन तरितुमुल्लङ्घयितु योग्यम् (सह) ६ ११ [दुस् उपपदे तॄ प्लवनसन्तरणयो (भ्वा०) धातोर्बाहु० औणादिक ईतु प्रत्यय]

दुष्टुतिः दुष्टा चाऽसौ स्तुति पापकीर्त्तिश्च सा १ ५३ १ **दुष्टुती** दुष्टया प्रशसया ७ ३२ २१ दुष्टया स्तुत्या प्र०—अत्र 'सुपा सुलुक्०' इति पूर्वसवर्ण २ ३३ ४ [दुस्-स्तुतिपदयो समास]

दुः दद्यु प्र०—अत्र लुङ्यडभाव १ १२७ ४ [डुदाञ् दाने (जु०) धातोर्लुङ् । अडभावश्छान्दस । 'गातिस्थाघु०' इति सिचो लोप]

दुष्पदा दु खेन पत्तु प्राप्तु योग्येन (चक्रेण=शस्त्र-समूहेन यानसमूहेन वा) १ ५३ ६ [दुस् इत्युपपदे पद गतौ (दिवा०) धातो 'सम्पदादित्वात्' क्विप् । ततस्तृतीया]

दुष्परिहन्तु दु खेन परिहनन यस्य तद्विद्याद्यभ्यासार्थम् (शर्म=गृहम्) २ २७ ६ [दुस्-परिहन्तुपदयो समास । परिहन्तु=परि पूर्वाद् हन् हिंसागत्यो (अदा०) धातोरौणादिकस्तु प्रत्ययो बाहुलकाद्]

दुष्प्राव्यः दु खेन प्रावितु योग्य (इन्द्र=राजपुरुष) ४ २५ ६ [दुस् इत्युपपदे प्रुङ् प्लुङ् गतौ (भ्वा०) धातोर्ण्यत्]

दुस्तरम् दु खेन तरितु योग्य बलम् १ १३६.८ [दुस्+तॄ प्लवनसन्तरणयो (भ्वा०) धातो 'ऋदोरप्' इत्यप्प्रत्यय]

दुहन्ता प्रपूरयन्तौ (अश्विना=सभासेनेशौ) १ ११७ २१ [दुह प्रपूरणे (अदा०) धातो. शतृप्रत्यय । 'सुपा सुलुग्०' इत्याकारादेश]

दुहन्ति प्रपूरयन्ति १ १३७ ३ पिप्रति १ ६४ ५ पिपुरति १ ६४ ६ प्रपिपुरति १ १३७ ३ **दुहाते**=पिपृते ६ ७० २ प्रात ४ २३ १० [दुह प्रपूरणे (अदा०) धातोर्लट्]

दुहाना प्रपूरयन्ती (धेनु=वाक्) ३ ५८ १ **दुहानाम्**=सुखप्रपूरिकाम् (धेनु=वाणीम्) २ ३२ ३ प्रपूरयन्तीम् (अदिति=धेनुम्) १३ ४६ **दुहानाः**=पूर्णशिक्षाविद्या (धारा.=वाच) ७ ४३ ४ काममलङ्कुर्वाणा (उपस=प्रभातवेला) ६ २८ १ प्रपूरयन्त (भानव=किरण-दीप्तय) ३ १ १४ प्रपूरयन्त्य (उपास=प्रभाता) ३४ ४० [दुह प्रपूरणे (अदा०) धातो शानच् । तत स्त्रिया टाप्]

दुहाम् प्रपूरिकाम् (सीता=भूमिकर्षिकाम्) ४ ५७ ७ [दुह प्रपूरणे (अदा०) धातो 'इगुपधज्ञाप्रीकिर क' सूत्रेण क । तत स्त्रिया टाप्]

दुहितरम् कन्यामिव वर्त्तमानाम् (उपास=प्रातर्वेलाम्) ४ ३० ६ **दुहितरः**=कन्या इव किरणा ४ ५१ १० **दुहितरा**=कन्ये इव वर्त्तमाने (अहोरात्रे) ६ ४६ ३. **दुहितरि**=कन्येव वर्त्तमानायाम् (उपसि) १ ७१ ५ **दुहितः**=पुत्रीव उप १ ४८ १ **दुहिता**=पूर्णयुवति कन्या १ ११७ १३ पुत्री इव (उपा) १ ४८ ८ दुहितेवोषा ३ ५५ १२ पुत्रीवोषा १६ ४ दुहितेव कान्ति ४ ४३ २ दूरे हिता कन्येव कान्तिरषा १ ११६ १७ दूरे हिता पुत्री वा १ ६२ ५ कन्येव वर्त्तमाना (उपा) ४ ५२ १ **दुहितुः**=दूरे हिताया कन्याया ३ ३१ १ उपस १ १६४ ३३ **दुहित्रा**=या कन्येव वर्त्तमाना तया (उपसा=प्रभातवेलया) १ १८३ २ [दोग्धि कार्याणि प्रपूरयतीति विग्रहे दुह प्रपूरणे (अदा०) धातो 'नप्तृनेष्टृ०' उ० २ ९५ सूत्रेण तृच् निपात्यते, दुहिता दुर्हिता दूरे हिता दोग्धेर्वा नि० ३ ४]

दुहीत परिपूर्णा स्यात् २ १८ ८ [दुह प्रपूरणे (अदा०) धातोर्लिङ्]

दुहीयत् दुह्यात्, प्र०—अत्र व्यत्ययेन परस्मैपद यासुटो ह्रस्वश्च २ १५ १० प्रपूरयेत् २ १७ ६ प्रपूरयति २ १८ ६ **दुहीयन्**=या दुग्धादिभि प्रपिपुरति, प्र०—दुह धातोरौणादिक इ किच्च, तस्मात् क्यजन्ताल्लेड्-बहु-

जसोऽसुग् आगम । दृढमिति व्याख्यातम्]

दृतिम् चर्ममय-सुरापात्रमिव १ १६१ १० दृतिमिव वर्त्तमान मेघम् ४ ४५ ३ यो दृणाति त दृतिरिव जलेन पूर्णम् ५ ८३ ७ **दृतिः**=मेघ, प्र०—दृतिरिति मेघनाम, निघ० १ १०, ४ ४५ १ **दृते!**=अविद्याऽन्धकार-निवारक जगदीश्वर विद्वन् वा ३६ १८ सकल मोहाऽऽवरणविच्छेदको पदेशक वा परमात्मन् ३६ १६ हे सर्वदु खविनाशकेश्वर, ऋ० भू० ६८, ३६ १८ हे अनन्त-बल, महावीर, दुष्ट-स्वभाव-नाशक ईश्वर, आर्याभि० २ ३, ३६ १८ हे सर्व-दु खविदारक परमात्मन्, स० वि० २१४, ३६ १८ [दीर्यतेऽसौ दृतिरिति विग्रहे दॄ विदारणे (क्र्या०) धातो 'दृणातेर्ह्रस्व' उ० ४ १८४ सूत्रेण ति प्रत्ययो ह्रस्वश्च । दृति मेघनाम निघ० १ १० सवत्सरो वै वाकुरो दृति जै० २ ३६६]

दृतेरिव मेघस्येव ६ ४८ १८ [दृते-इवपदयो समास । दृतिमिति व्याख्यातम्]

दृध्रम् सुखवर्धकम् (दृढज्ञानम्) ४ १ १५ [दृह वृद्धौ (भ्वा०) धातोरौणादिको रक् । वर्णव्यत्ययेन हकारस्य धकारादेश]

दृभीकम् भयङ्करम् (दुर्जनम्) २ १४ ३ दृभी भये (चुरा०) धातोरौणादिको वाहुलकाद् ईकन् प्रत्यय । गुणा-ऽभावो वाहुलकादेव]

दृवा य शत्रून् दृणाति (राजा), प्र०—अत्र 'अन्येपा-मपि०' अ० ३ २ ७५ इति क्वनिप् १० ८ [दृ विदारणे (क्र्या०) धातो क्वनिप्प्रत्यय । दृवा (इपु) स यया प्रथमया (इष्वा) समर्पणेन पराभिनत्ति सैका सेय पृथिवी सैषा दृवा नाम श० ५ ३ ५ २६]

दृशतिः दर्शनम् ६ ३ ३ [दृशिर् प्रेक्षणे (भ्वा०) धातोर्वाहु० औणादिकोऽति प्रत्यय किच्च]

दृशये दर्शनाय ६ ६ ५ [दृशिर् प्रेक्षणे (भ्वा०) धातो 'इक् कृष्यादिभ्य' इति वा० सूत्रेण इक्प्रत्यय । दृशि प्राति० चतुर्थी]

दृशानम् दृश्यमान दर्शयितार वा (अग्निम्) २ १० ४ सप्रेक्षणीयम् (वायुम्) ११ २३ **दृशानः**=दर्शक अमृत = नाशरहित ईश्वर.) १२ २५ **दृशाना**=दृश्यमाना (उषा) प्र०—अत्र कर्मणि लट शानच् 'वहुल छन्दसि' इति विकरणस्य लुक् च १ ६२ १२ [दृशिर् प्रेक्षणे (भ्वा०) धातो 'युधिवुधिदृश किच्च' उ० २ ६० सूत्रेण आनच्-प्रत्यय । अथवा दृशिर् धातो कर्मणि शानच् । 'वहुल छन्दसी' ति विकरणस्य लुक् । 'दृशाना' प्रयोगे स्त्रिया टाप् । दृशान (यजु० ११ २३) व्यचिष्ठमन्नैरभस दृशानमित्यव-काशव तमन्नैरन्नाद दीप्यमानमित्येतत् श० ६ ३ ३ १६]

दृशि दर्शके ५ ५२ १२ [दृशिर् प्रेक्षणे (भ्वा०) धातो क्विप् प्रत्यय । तत सप्तमी]

दृशीकम् द्रष्टुमर्हम् (स्तोमम्) प्र०—अत्र वाहुलका-दौणादिक ईकन् प्रत्यय किच्च १ २७ १० **दृशीके**= द्रष्टव्ये (तनये=कुमारे) ४ ४१ ६ द्रष्टव्ये ज्ञानव्यवहारे १ ६६ ५ दर्शके (आदित्ये) १ ६६ ५ [दृशिर् प्रेक्षणे (भ्वा०) धातोर्वाहुलकादौणादिक ईकन् प्रत्यय किच्च । दृशीकम्=दर्शनीयम् नि० १० ८]

दृशे द्रष्टुम्, प्र०—'दृशे विख्ये च' अ० ३ ४ ११ अनेनाऽस्य निपातित १ २३ २१ दर्शयितुम् १ ५२ ८ द्रष्टु दर्शयितु वा १ ५१ ४ द्रष्टव्ये (रूपे) ४ ११ १ दर्श-नाय ३० ३१ [दृशिर् प्रेक्षणे (भ्वा०) धातो 'दृशे विख्ये च' अ० ३ ४ ११ सूत्रेण के प्रत्ययो निपात्यते । दृशे दर्शनाय नि० १२ १५]

दृशेयम् दर्शन कराता है, स० प्र० ३३०, १ २४ १. दृश्यासम्, इच्छा कुर्याम्, प्र०—अत्र 'दृशेरग् वक्तव्य' अ० ३ १ ८६ अनेन वार्त्तिकेनाशीर्लिङि दृशेरग् विकरणेन रूपम् १ २४ १

दृश्यान् द्रष्टव्यान् (अ०—कवीन्) ४ २ १२ [दृशिर् प्रेक्षणे (भ्वा०) धातो 'ऋदुपधाच्चाक्लृपिचृते' अ० ३ १ १०६ सूत्रेण क्यप्]

दृषद्वत्याम् वहवो दृषदो विद्यन्ते यस्याम् (सर-स्वत्या=वाचि) ३ २३ ४. [दृषद्-प्राति० भूम्नि मतुवन्तान् ङीप्-प्रत्यय । दृषद्=दॄ विदारणे (क्र्या०) धातो 'दृणाते पुग्घ्रस्वश्च' उ० १ १३१ सूत्रेण अदि प्रत्यय पुक् च]

दृष्टः समीक्षित (रुद्र=सेनेश) १६ ७ [दृशिर् प्रेक्षणे (भ्वा०) धातो क्त प्रत्यय]

दृष्टवीर्यम् दृष्ट सम्प्रेक्षित वीर्य यस्य तम् (वृहस्पति=राजानम्) २ २३ १४ [दृष्ट-वीर्यपदयो समास]

दृष्ट्वा सम्प्रेक्ष्य १६ ७७ पर्यालोच्य १६ ७६ [दृशिर् प्रेक्षणे (भ्वा०) धातो क्त्वा-प्रत्यय]

दृहळम् सुस्थिरम् (राज्यम्) ४ १७ १० निश्चयम् ३ ३० ५ सुखवर्धकम् (अद्रि=मेघमिव) ४ १ १५ ध्रुवम् (भागम्) ६ ३० ५ **दृहळा**=दृढानि (धरुणानि= उदकानीवाचरणानि) ४ २३ ६ दृढम् प्र०—अत्राकारादेश.

(सवितु'=परमात्मा) का, स० वि० ७५, ३६ ३. गदा मुक्त परमात्मा का, रा० प्र० ३३०, १ २४ २. **देवः**= सर्वेषां सुखानां दाता, सर्वविद्या-द्योतकः (सविता=भगवान्), प्र०—देवो दानाद्वा दीपनाद्वा द्योतनाद्वा, द्युस्थानो भवतीति वा, यो देव सा देवता, नि० ७ १५, १ १. विद्या-प्रकाश-दाता १ ७१ ५ जिगीषु (राजा) १ १८८ १ विद्वान् पिता ४ ५५ ७ रक्षक सन् (ईश्वर) ३७ १८. सकलसुखदातेश्वर भा०—मङ्गलप्रद १७ ६२ शुद्धस्वरूप (ईश्वर) १८ ३० अखिल-राज्येश्वर ६ २ सुखयिता (अध्वर=यज्ञ) ६ २३ शत्रून् विजिगीषु (इन्द्र=सभापती राजा) ६ ३७ विद्या-प्रकाशित (सविता=ऐश्वर्यवान् सभापति) ६ २६ द्योतनात्मक (सूर्य) २ ३१ ४ दाता प्रकाशको वा (ईश्वरो भौतिको वा) ४ १६ प्रकाशमान प्रकाशहेतुर्वा (सविता= जगदीश्वर सूर्यलोको वा) १ २० स्वप्रकाश प्रकाश-करो वा (अग्नि=परमेश्वरो भौतिको वा) १ १ ५ दिव्यगुण-कर्म-स्वभाव कमनीय (अग्नि=आप्तजन) ४ २ १ दिव्यगुणसम्पन्नो विद्वान् १ ६८ १ जीव २८ १६ य स्वप्रकाशेन सर्वस्य प्रकाशक (ईश्वर) ४ ४ सङ्गमनीय प्रकाशको वा (वृषभ=यज्ञ शब्दो वा) १७ ६१ स्वय प्रकाशस्वरूप परमेश्वर १ ३ सूर्य इव विद्वान् (जन) ४ २३ ५ देदीप्यमान सूर्य ५ १ २ दिव्य-गुणप्रद (वनस्पति=किरणाना पालक सूर्य) २८ २० दिव्य सभ्य (भा०—राजपुरुष) २८ ४३ दिव्यस्वरूप (ईश्वर) ३२ ४ दिव्यगुणो मेघ २६ ३५ दिव्यगुणयुक्तो विद्युदाख्य ३६ १० स्वप्रकाशस्वरूप (अ०—परमात्मा) ३७ १४ सर्वज्ञ (अग्नि=ईश्वर) २८ ४५ द्योतनात्मक (सूर्य) ऋ० भू० १४२, ३३ ४३ प्रशस्तो विद्वान् मनुष्य १ १०५ १४ जगदीश्वर इव (अग्नि=परमविद्वान् जन) ४ ११ ६ दिव्यसुखदाता (विद्वान् जन) १ ७३ ३ विजय-प्रदाता (विद्वान् जन) ४ ३० २४ विद्याप्रकाशस्य (सभा-ध्यक्षो राजा) ५ ३६ कामयमान (आप्तो जन) ४ ८ ३ व्यवहार-हेतु (अग्नि=विद्युदाख्य) २ ४ १ विद्वान् प्रकाशमानो लोको वा ६ ३० ४ दाता दिव्यगुण (सूर्यो विद्वान् वा) ७ ४५ १ कमनीयतम (अध्यापक) १ १६० ८ द्योतमान (सविता=परमेश्वर) ४ ५३ १ प्रकाशस्वरूप (सविता=सूर्य) स० प्र० ३१३, ३३ ४३ देदीप्यमान कामयमानो वा (विद्वज्जन) ७ १० २ सूर्यादीनामपि प्रकाशक (परमेश्वर) ७ ३८ ३ पूर्णविद्य सुखप्रद (प्रशस्त-यशो राजा) ७ ६ ७ देदीप्यमाना (विद्युत्) ३४ ३१ सकल सुखदाता परमेश्वर, स० वि० ७, ४० १६. दिव्य-प्रकाश (सविता=कर्मसुप्रेरक ईश्वर) १ १२४ १. व्यव-हर्त्ता (अग्नि=विद्वान् जन) २७ १३ विद्या-दाता (अग्नि=विद्वान् जन) १७ ७६ सत्य न्याय कामयमान. (इन्द्र=सभेश) १ १२६ ११ सब जगत् के बाहर और भीतर सूर्य के समान प्रकाशक ईश्वर आर्याभि० १ ४६, ऋ० १ ५ १६ ३ दिव्यस्वभाव (वनस्पति=पिप्पलादि) २१.५८ द्योतमान (वनस्पति=सूर्य) २१ ५६ दिव्यस्व-रूप: (अ०—वायु, भा० जीव) १७ ३२ आनन्दोत्पादक (अग्नि=जगदीश्वर) १ ३१ १ सर्वस्य न्यायविनयस्य द्योतक (अग्नि=सभास्वामी) १.३१ ६ दानादिगुणयुक्त (मेघ) १ ३२ १२ दीव्यति प्रकाशयतीति स (परमेश्वर) १ ३५ २. सर्वव्यवहारसाधक (वायु) १ ३५ १०. **देवा**= दिव्यगुणौ (इन्द्रवायू=अग्निपवनौ), प्र०=अत्र 'सुपां सुलुक्०' इत्याकारादेश १ २३ २ दिव्यगुणगुक्तौ (विद्युदग्नि-वायू) ३.२५ ४ दिव्यसुखप्रदौ (राज्य-सेनाऽधीशौ) ३.५३ १ दिव्यगुणप्रापकौ (वसुविदौ=अध्यापकोपदेशकौ) १.४६ २ कमनीयौ विद्वांसौ २८ ४०. सुखप्रदातारौ (अ०—वायुवह्नी) २८ १७ वैद्यविद्यया प्रकाशमानौ (भिषजा=चिकित्सकौ) २१ ५३ दिव्यस्वभावौ (सुहृदौ) ५ ६७ १ दातारौ (अध्या-पकोपदेशकौ) १ १८४ ३ वि०—देदीप्यमानौ (अश्विनौ= अग्निजले) १ २२ २. **देवान्**=दिव्यानीन्द्रियाणि विद्यादि-दिव्यगुणान्, दिव्यान् ऋतून्, दिव्यान् भोगान् वा, प्र०— ऋतवो वै देवा, शत० ७ २ २ २६ अनेनर्त्तु-शब्देन दिव्यगुणविशिष्टा भोगा गृह्यन्ते १ १ २ दिव्यगुणसाहित्ये-नोत्तम-गुणप्रकाशकान् (मरुत=शिल्पव्यवहारप्रापक-वायून्) १ २३ १० धार्मिकान् विदुष ३७ १८ शुभान् गुणान् विदुषो वा ३८.१० विदुषो दिव्यगुणान् ऋतून्, भोगान् वा ५.१२ परमविदुष (जनान्) १ १३.१२ दिव्यान् गुणान् विजिगीषकान् वीरान् वा २ ६ ६ विदुषो जीवानिन्द्रियाणि च १ २० दिव्यान् क्रियासिद्धान् व्यव-हारान् १ १४ १२ दिव्यगुणयुक्तान् पदार्थान् १ ४८ १२ धार्मिकान् विदुष ४ १ २ विदुषो वस्वादीन् वा २ २४ ११ वीरान् विदुषो दिव्यगुणान् वा १ ४४ ७ विदुषोऽतिथीन् ५ १ ११ दिव्यगुणसहितान् पदार्थान् १ १२ ३ दिव्य-व्यवहारान् १ १५ १२ दिव्यगुणान् मनुष्यान् ३ २२ ३ दिव्यगुण-कर्मस्वभावान् पृथिव्यादीन् २१ ५८ दिव्यगुणा-ऽन्वितान् दिव्यान् गुणान् वा १ १०५ १७ विदुषो दिव्य-क्रियायुक्तान् वा (पदार्थान्) १ १०५ १४ उपासकान् योगिन (जनान्) ऋ० भू० १५६, ११ ४ प्रकाशितव्यान् दिव्यगुणान् पृथिव्यादीन् २ १२ १ दिव्यान् व्यवहारान्

१ ६३ ८ सुखप्रद १ १७३ १३ योगेनाऽऽत्मप्रकाशित। (योगिजन) ७ ७ योगजिज्ञासो (सोम=प्रशस्त-गुण शिष्य) ७ १४ दिव्याऽऽत्मन् ७ ३ दिव्यविद्यासम्पन्न सेनाध्यक्ष ६ २० परमविद्वन् ६ ३६ १ देव फलादीना दाता (वनस्पति =अपुष्पफलवान्) १ १३ १० सर्वाऽऽनन्दप्रद व्यवहारहेतुर्वा (ईश्वर सूर्यो वा) १ २६ विजयप्रद विजय-हेतुर्वा (ईश्वर सूर्यो वा) १ २६ सूर्यादिप्रकाशकेश्वर १ २५ विद्वन् (जन) १ १४ १२ अग्निरिव द्योतमान (विद्वज्जन) २ ३ ४. सूर्याऽऽदिसर्वजगद्-विद्याप्रकाशक सर्वाऽऽनन्दप्रद (परमेश्वर) ऋ० भू० ३, ३० ३ सर्वप्रकाशकेश्वर प्रकाश-दाहयुक्तमग्नि वा १ ११२ ८ दिव्य-विज्ञानप्रद, अ०—सत्ययोगविद्ययोपासनीय (सवित =सर्वसिद्ध्युत्पादक भगवन्) ११ ७ सत्यकामनाप्रद (सवित =अन्तर्यामिरूपेण प्रेरक जगदीश) ११ ८ शुभगुण-दात (अ०—जगदीश्वर) २ २१ सर्वजगत्प्रकाशक (ईश्वर) २ २१ दिव्यविद्य (रथ =रमणीयस्वरूप विद्वन् जन) २९ ५४ दिव्यसुख-गुणाना दात. (जगदीश्वर) २ १२ दिव्यकर्मकारिन् (रुद्र= न्यायाधीश) १ ११४ १० दिव्यगुणप्रापक दिव्यगुणनिमित्तो वा (सोम=विद्वज्जन) १ ९१ १४ सब सुखो के दाता परमेश्वर स० वि० २१४, ४० १६ दिव्य गुण युक्त (राज्य) आर्याभि० १ ५, ऋ० १ १ १.५ **देवम्**= देदीप्यमानम्, भा०—श्रेष्ठौषधदायकम् (भिषजम्=वैद्यम्) २८ ९ विजयादिलाभप्रदम्, भा०—महादेवम् (सूर्यं= परमात्मानम्) ३५ १४ दिव्यम् (बर्हि =उदकम्) २८ ४४ दिव्यगुणकर्मस्वभाव, सर्वानन्दप्रदम् (परमात्मानम्) ३ ९ ८ कमनीय दातारम् (परमेश्वरम्) ३ २० ५. दिव्य-गुणवन्तम् (परमेश्वर भौतिकमग्नि वा) १ १५ ७ प्रकाश-मानम् (भा०—मुक्तादिरत्नम्) २८ ४४ विद्याविनयाभ्या सुशोभितम् (इन्द्र=राजानम्) २८.२ सुखदातारम् (सवि-तारम्=ईश्वरम्) ४ २५ कामयमानम् (इन्द्र=जीवम्) २८ ४० धार्मिकम् (इन्द्र=जीवम्) २८ ४५ स्त्रीव्रत विद्वासम् २८ ३९ दातार, हर्षकर, विजेतार, द्योतक वा (अग्नि=परमेश्वर भौतिक वा) १ १.१ द्योतमानम् (सूर्य=जगदीश्वरम्) २७ १० सुखदातारम् (अग्नि= परमेश्वर भौतिक वा) १ १२ ७ कान्तारम् (विद्वासम्) १ १३८ २ धर्मात्मना, मुमुक्षूणा, मुक्ताना च सर्वाऽऽनन्दस्य दातार मोदयितार च (ईश्वरम्) प० वि०, ३५ १४ प्रकाशकम् (अग्नि=पावकम्) ३ २६ १ परमेश्वर विद्या-युक्त शुद्धव्यवहार वा ४ २० पूज्यतम, कमनीयतम ईश्वर को, आर्याभि० १ २, ऋ० १ १ १ द्योतकम् (इन्द्र= सूर्यम्) २० ४१ दिव्यगुणप्रदम् (ज्योति=तेज) २० ३०. दातार सुखाना द्योतक सर्वस्य जगत प्रकाशक सर्वैर्विद्वद्भि कमनीय स्वभक्ताना मोदक हर्षकर शत्रूणा मनुष्याणा कामक्रोधादीना वा विजिगीषकम् (ईश्वरम्) वे० भा० न० **देवस्य**=यो दीव्यति दीव्यते वा स देवस्तस्य 'जो सब सुखो का देने हारा है और जिसकी प्राप्ति की कामना सब करते हैं, उस (सवितु =परमात्मा का), स० प्र० ५१, ३६ ३ द्योतमानस्य (विदुषो जनस्य) ५ १३ २ सकल-जगत्प्रकाशकस्य (सवितु =सर्वान्तियामिन ईश्वरस्य) ३७ २ स्वप्रकाशस्येश्वरस्य १८ ३६ वेदविद्याप्रकाशकस्य (सवितु =सकलैश्वर्यवतो जगदीश्वरस्य) ९ ९. प्रकाशित-न्यायस्य (सवितु =सेनेशस्य) ९ ३८ सर्वजगत्प्रकाशकस्य सर्वसुखदातुरीश्वरस्य ११० विधातुरीश्वरस्य द्योतकस्य सूर्यस्य वा १ २१ सर्वानन्दप्रदस्य (सवितु =प्रेरकस्येश्वर-स्य सूर्यस्य वा) १ २४ दिव्यगुणकर्मस्वभावस्य (राज्ञ) ४ १ ६. कर्मफल-प्रदातु (ईश्वरस्य) ३ ३४ दिव्यसुखप्रापकस्य (भगस्य=ऐश्वर्यस्य) ४ ५५ ५ सूर्यादिजगते प्रदीपकस्य (सवितु =प्रेरकस्येश्वरस्य) ११ ९ प्रकाशमयस्य शुद्धस्य सर्वसुखप्रदातु परमेश्वरस्य ३.३५ हर्षकरस्य (सवितु = ईश्वरस्य) २ ११ सुखप्रदातु (सवितु =परमेश्वरस्य) ३० २ स्वप्रकाशकस्य परमेश्वरस्य ६ ७१ २ देदीप्यमानस्य (सूर्यस्य) ३७ १२ कामयमानस्य (विदुषो जनस्य) ४ २ १९ स्वप्रकाशस्याऽऽनन्दप्रदस्य (परमेश्वरस्य) ऋ० भू० १५६, ११ ३ सर्वजगत्प्रकाशकस्य (ईश्वरस्य) ऋ० भू० १५६, ऋ० ४ ४ २४ १ स्वप्रकाशमानस्य, सर्वस्य जगत उत्पादक-स्य परमेश्वरस्य, ऋ० भू० २१७, कमनीयस्य पत्यु ११ ६२ सर्वजगत्प्रकाशकस्य परमेश्वरस्य ११ ६७ सर्वतो दीप्यमानस्य (अ०—ईश्वरस्य) २० ३ सकलैश्वर्यदातु, प्रकाशमानस्य, सर्वप्रकाशकस्य, सर्वत्र व्याप्तस्याऽन्तर्यामिण (सवितु =ईश्वरस्य) ३ ६२ १० अखिलविद्याशुभगुण-कर्म-स्वभाव-द्योतकस्य (बृहस्पते =परमेश्वरस्य) ९ १० सर्वत प्रकाशमानस्य (सवितु =जगदीश्वरस्य) ९ १० धनुर्वेदादियुद्धविद्या-प्रापकस्य (इन्द्रस्य=सेनापते) ९ १० सर्वेषु प्रकाशमानस्य (अग्ने =अग्न्यादिपदार्थस्य) ९ १४ स्वप्रकाशस्वरूपस्य सर्वै कमनीयस्य, सर्वसुखप्रदस्य (सवितु =परमेश्वरस्य) २२ ९ स्तोतुमर्हस्य (ईश्वरस्य) २२ ११ सर्वद्योतकस्य (सवितु =जगदीश्वरस्य) ११ २ प्रकाशमानेश्वरस्य २० ११ यो दीव्यति प्रकाशयति खल्वा-नन्दयति सर्व विश्व स देवस्तस्य (ईश्वरस्य) प० वि०, ३ ६२ १० कामना करने योग्य, सर्वत्र विजय कराने वाले

(आप्ता विद्वासो जना) ६ ३६ योगिनो न्यायाऽधीशा ६ ३६ दिव्याऽऽत्मानो योगिन १७ ७३ हे पूर्ण विद्वान् जनो, स० वि० १६८, १० ७२ ७ इन्द्रियाणि, ऋ० भू० १३४, ३१ २१ दिव्यगुणवन्तस्तत्सम्बुद्धौ दिव्यगुणा वा १.१०६ २ पृथिवीसूर्यलोकादय १ १६४ ३९ त्रयस्त्रिशद् वस्वादय, ऋ० भू० ६०, अथर्व० १० २३ ४ ३८ विजिगीषव (अ०—विद्वासो जना) १७ ४३ दिव्यगुणा ऋत्विज १७ ५२ मोदका (रुद्रा =बलवन्तो वायव) १५ ११ दिव्यस्वरूपा (विद्वासो जना) २१ ५८ अ०—दिव्यगुणा भ्रमन्त पृथिव्यादयो लोका १ ११ ५ हे विद्वानो राजप्रजा जनो, स० प्र० १८३, ६ ४० पृथिव्यादय इव विद्वास (जना) २५ १४ दिव्यगुणादियुक्ता पृथिव्यादय, भा०—पृथिव्यादीनि तत्त्वानि २५ २३ सुसभ्या विद्वास (जना) २७ ८ देदीप्यमाना विद्वास (जना) ३१ १६ दिव्यविद्या ३ ४ ११ पूर्णविद्वास, भा०—विद्वत्तमा (जना) १७ १४ विद्वान् लोग, प्र०—विद्वासो हि देवा, शत० ब्राह्म०, आर्याभि० २ ६, ३२ १० सब दिव्य गुण-कर्म-स्वभाव और विद्यायुक्त (विद्वान्), स० प्र० २३६, १ १६४ ३६ विद्यासुशिक्षे-जिज्ञासव (जना) १ ११० ७ दिव्यगुण-कर्म-स्वभावा विपश्चित ३ ८ ६ दिव्या प्राणा १२ २ द्योतका (सूर्यादय) १५ १४ भा०—योगिनो विद्वास ३२ १० दिव्यसुखप्रदा (अधिपतय =स्वामिनो जना) १५ १२ आ०—उपासका विद्वास ३४ ३८ दातार (मर्त्ता) १ १६० १ विद्यादातार (विद्वज्जना) १७ ५६ सुशिक्षयोत्कृष्टा, विद्वास ऐश्वर्यभागिनो, राजभक्ता (अ०—सभाजना) ६ ३३ भा०—धार्मिका सुशीला विद्वासो राजादयो मनुष्या ६ ३६ भा०—विवेचका (विद्वज्जना) १७ ७० कामयमाना (विद्वास) १७ ७८ भा०—शिल्पिनो विद्वास (जना) ३३ ७ **देवेन**=सूर्यादिप्रकाशकेन (सवित्रा=सर्वान्तर्यामिणा जगदीश्वरेण) ३ १० सर्वजगद्योतकेन (सवित्रा=सर्वस्य जगत उत्पादकेनेश्वरेण) ३ १० सर्वगतेन (वातेन=वायुना सह) ६ ११ दिव्यगुण-कर्म-स्वभावयुक्तेन, भा०—शुद्धेन (मनसा) ३४ २३ विदुषा (जनेन) ३७ १४ दिव्यसुखप्रदेन (त्वष्ट्रा=गुणेन) ८ १० दिव्यगुणसम्पन्नेन (मनसा) १ ६१ २२ **देवेभ्यः**= दिव्येभ्य शत्रुभ्य १ १६२ ११ दिव्यगुणेभ्यो दिव्यगुण-युक्तपतिभ्य ८ ४३ विद्वद्भ्यो दिव्यगुणसुखेभ्यो वा (पदार्थेभ्य) ३ ४७ दिव्यसुखकारकेभ्य पूर्वोक्तेभ्य (य० २ ५) वस्वादिभ्य, भा०—दिव्यपदार्थेभ्य २ ७ भा०—विद्यासुशिक्षा-ब्रह्मचर्य सत्सङ्गिभ्य (जनेभ्य) २२ ४

दिव्यगुणेभ्य २२ २८ दिव्य सुखाना प्राप्तये २ ८ विद्वद्भ्यो दिव्यसुखेभ्यो वा २ ६ भा०—दिव्यौषध्यादिभ्य २ ५ दिव्येभ्यो जलादिभ्य ३६ १३. क्रीडमानेभ्यो जीवेभ्य २ ३८ १ धार्मिकेभ्य (पुरुषेभ्य) ५ १० सुशीलेभ्यो विद्वद्भ्य (जनेभ्य) ५ १० दिव्यगुणेभ्यो विद्या चिकीर्षुभ्य शूरवीरेभ्य (जनेभ्य) ५ १० दिव्यन्यायप्रकाशकेभ्य (विद्वद्भ्य) ६ ३५ सकलविद्या-प्रचारकेभ्य (भा०—विद्वद्वरेभ्यो जनेभ्य) ६ ३५ दिव्यसुख-प्रदेभ्य (राजकर्मचारिभ्य) ६ ३५ विपश्चिद्भ्य (जनेभ्य) ६ ३५ धार्मिकेभ्यो विद्वद्भ्य ६ ३५ दीव्यन्ति प्रकाशन्ते सत्कर्माऽनुष्ठानेन ये तेभ्यो धर्मिष्ठेभ्यो विद्वद्भ्य ६.११ शुभेभ्यो गुणेभ्य ६ ११ शोधकेभ्यो वाय्वादिभ्य ७ ३ प्रशस्त-गुण-पदार्थेभ्य ७ ६ दिव्यगुणेभ्य पृथिव्यादिभ्य ३१ २० इन्द्रियेभ्य, ऋ० भू० २३८, अथर्व० ११ ३ १६ दिव्यभोगेभ्य २२ १६ कमनीयदिव्यसुखेभ्य ८ ८ दिव्यगुणेभ्यो जनेभ्य २६ ६० भा०—दिव्यगुणकर्मसिद्धये १२ १०४ दिव्यगुणकर्मस्व-भावेभ्य (भा०—विद्वद्भ्यो जनेभ्य.) २२ ४ **देवेषु**= प्रकृत्यादि-जीवेषु २७ २६ सत्य-विद्या प्राप्तेषु (विद्वत्सु जनेषु) ५ ६८ ३ विद्वत्सु कामेषु वा १ १७६ ६ प्रशसकेषु (विद्वज्जनेषु) ३ १६ ४. दिव्येषु गुणेषु विद्वत्सु वा १८ ६२ दानसाधकेषु (अवयवेषु) १५ १२ विजिगीषमाणेषु राजसु ८ ३६ अखिलविद्यासु प्रकाशमानेषु विद्वत्सु ८ ४० दिव्येषु धर्म्येषु व्यवहारेषु १८ ६४ विद्याकामेषु (कुमारेषु) २ ४१ १८ द्योतमानेषु लोकेषु १ १४२ ११ विद्वत्सु, प्र०—विद्वासो हि देवा, शत० ३ ७ ३ १०, ३ ६२ दिव्येषु पदार्थेषु विद्वत्सु वा ४ २ १ कमनीयेषु पदार्थेषु १५ १० विद्वत्सु, दिव्येषु सूर्यादिपदार्थेषु वा, अ०—दिव्येषु कर्मसु राज्येषु, शिल्पविद्यासिद्धेषु विमानेषु वा १ १५ ८ द्योत-मानेषु (पदार्थेषु) ४ ५ १ विद्वद्वर्येषु (जनेषु) ८ ३८ सद्विद्यादिदिव्यगुणेषु विद्वत्सु ६ १३ पितृषु ६ १५ ६ सृष्ट्यादौ पुण्यात्मसु जातेषु अग्निवाय्वादित्याङ्गिरस्सु मनुष्येषु १ २७ ४ प्रशसकेषु (जनेषु) ३ १६.४ **देवैः**= सत्यवादिभिर्विद्वद्भि, प्र०—'सत्यमेव देवा.' शत० १ का० । १ प्रपा० । १ ब्रा० । ४ क०, ७ २ ८ विद्वद्भिर्दिव्यगुणैर्वा ७ २ ११ अन्नादि कामयमानैर्विद्वद्भि १२ ७० विद्वद्भिर्वीरै (जनै) ६.४७ २६ दिव्यैर्गुण-कर्म-स्वभावैर्विद्वद्भिर्वा १ ६० १ पूर्णविद्यै (जनै:) १४ ७ परोपकाराय सत्याऽ-सत्यविज्ञापयितृभि (जनै) १४ ७ भा०—आप्तविद्वदनु-मतिभि २८ ३ द्योतनाऽऽत्मकैर्मन आदीन्द्रियै ३ ४८

२६ १० दिव्य-गुण अर्थात् विद्यादि को, आर्याभि० १४, ऋ० १.११२ विदुषोऽध्यापकान् ७ १७ ३ दिव्यविद्वद्विपश्चित (जनान्) ५ २११ दिव्यगुणान् विदुषो विद्यार्थिनो वा १२४६ विद्या कामयमानान् (विद्यार्थिजनान्) ११४२ ११ दिव्यानीन्द्रियाणि विद्यादि दिव्यगुणान् दिव्यर्तून् दिव्यभोगांश्च वे० भा० न० ११२ भा०—अविद्यादिक्लेशाना निवारकान् शुद्धान् गुणान् ११३ भा०—विद्वत्सङ्ग-सत्यशास्त्र-प्राणायामाऽभ्यासान् २० ४४ **देवानाम्**=दिव्याना गुणाना विदुषा वा १७० ३ दिव्यगुणाना पृथिव्यादीना मध्ये ११८८ ११ आप्ताना विदुषाम् (जनानाम्) ७ ४१ ४ विदुषा पृथिव्यादिलोकाना वा २ ८ ६ दिव्यगुणसम्पन्नाना विदुषा पदार्थाना वा १ ६४ १३ दयया विद्यावृद्धि चिकीर्षताम् (विदुषाम्) १ ८६ २ विदुषा योद्धॄणा मध्ये १७ ५१ धार्मिकाणा विदुषा मध्ये १४ ३ सुखदातॄणा विदुषाम् (जनानाम्) २१ ५३ पृथिव्यादीनामेकत्रिंशत १ २२ ६ दिव्याना पृथिव्यादीनाम् २७ २५ देदीप्यमानाना राज्ञाम् ३ ५५ २१ सूर्यादीना विदुषा वा मध्ये ३ ५५ ४ दिव्याना जलादीनाम् ११८५ ४ आप्ताना विपश्चिनाम् (जनानाम्) ८ १५ धार्मिकाणामाप्ताना विदुषाम् ८ ५० आचार्यादीना विदुषाम् (जनानाम्) १६ ४७ सत्य कामयमानाना विदुषाम् ११३६ ७ दिव्याना विदुषा पतीनाम्, भा०—सुशिक्षिताना विदुषा यूनाम् (जनानाम्) १२ ५५ दिव्यगुणवता विदुषाम् प० वि०, ७ ४२ पूर्ण विद्वान् धार्मिक आप्त लोगो की, स० वि० १५६, ७ ४१ २४ ब्रह्मचर्य सुनियमो से पूर्ण विद्वानो के, स० प्र० ११०, ३ ५५ १६ परम विद्वानो के, आर्याभि० १४८, ऋ० १ ६ ३ २ १३ दिव्य सूर्यादि-लोको तथा इन्द्रियादियो और विद्वानो का, आर्याभि० २४२, १७ २७ दातॄणाम् (विदुषा जनानाम्) २५ १५ भा०—प्रशसिताना विदुषाम् २६ २८ सूर्यादीनाम् भा०—सूर्यकिरणवद् वर्त्तमानाना पदार्थानाम् २४ ६ **देवाय**=दीपकाय (ईश्वराय सूर्याय वा) २५ ११ कामाय (विदुषे जनाय) २ ३५ ५ दिव्याय कमनीयाय (भगाय=धनाद्याय) ८ ७ परमात्मदेव की, स० प० २८२, १० १२११ सर्वसुखप्रदात्रे परमात्मने २३ १ विद्या कामयमानाय (विद्यार्थिजनाय) २२ १२ कामना करने योग्य पर-ब्रह्म की प्राप्ति के लिए, स० वि० ६, ३२ ६ दिव्यसुखप्रदाय विज्ञानस्वरूपाय (ईश्वराय) १२ १०२ विदुषे, देवाना विदुषामेव सत्काराय ११२७ ६ दिव्यगुणभोगयुक्ताय (जन्मने= पुन शरीरधारणेन प्रादुर्भावाय) १ २० १ काम के लिए, स० वि० १०४, २ ३५ ५ स्वप्रकाशाय सकलसुख-दात्रे (ईश्वराय) ३२ ६ सकल ऐश्वर्य के देने वाले परमात्मा के लिए स० वि० ५, २३ ३ सकल ज्ञान के देने वाले परमात्मा की प्राप्ति के लिए स० वि० ५, २५ १३ द्योतमानाय (अ०—परमेश्वराय) २५ १० सर्वसुखप्रदाय (ईश्वराय) २७ २६ प्रकाशमानाय (अ० परमेश्वराय) १३ ४ दिव्यगुण-सम्पन्नाय (नृपाय) ४ ३ ३ विदुषे न्याय कामयमानाय ७ ४६ १ शुद्ध परमात्मा के लिए, स० वि० ५, १३ ४ कमनीयाय, भा०—धर्माऽर्थ-काम-मोक्षफलप्रापकाय (परमात्मने) २३ ३ दिव्यगुणाय (सूर्याय=परमेश्वराय सूर्यलोकाय वा) ४ ३५ शुद्धस्वरूपाय (ईश्वराय) ३२ ७ **देवा:**=दिव्यगुणा (पृथिव्यादयोऽष्टवसव, प्राणादयो दश वायवो जीवात्मा च, चैत्रादयो द्वादश मासा, विद्युद्यज्ञश्च) २० ११ देव-शब्देन् मन षष्ठानि श्रोत्रादीनीन्द्रियाणि गृह्यन्ते तेषा शब्दस्पर्श-रूप-रस-गन्धाना सत्याऽसत्ययोश्चार्थाना द्योतकत्वात् तान्यपि देवा, ऋ० भू० ६४, ४० ४ चन्द्रादयो दिव्या पदार्था इव विद्वास (जना) उपदेशका विद्वासो ऽधिष्ठातारो वा ६ ७५ १८ शत्रून् विजिगीषमाणा (विद्वासो जना) १२ २६ सत्योपदेशका विद्वास (जना) ११ ६० सदुपदेशप्रदातार (विद्वासो जना) ११ ६५ सूर्यादय इव विद्वास (जना) २ २७ ४ वस्वादय ५ ८१ ३ दिव्या पृथिव्यादयो विद्वासो वा २० २५ दिव्याऽऽत्माऽन्त करणा योगविद (जना) १७ ३० पृथिवीसूर्यलोकादय ११६४ ३६ विद्वासो भूम्यादयो वा ११६३ ६ विद्याया कामयितार (भा०—प्रशस्ता विद्वास) १८ ६१ विद्यादिशुभगुणाना दातार (सर्वविद्वासो जना) ७ ३५ ११ वेदशास्त्रविद सेनापतय, भा०—उपदेशका राजपुरुषा १० १८ धार्मिका विद्वास (जना) ६ ४० विद्यासुशिक्षादान-रक्षका (विद्वासो जना) २ २६ ६ स्वस्वविषयप्रकाशकानि श्रोत्रादीनीन्द्रियाणि ६ ६ ५ सत्याऽसत्य-स्तावका गृहस्था (जना) ८ २१ व्यवहरमाणा (विद्वासो जना) ८ १८ अध्यापकोपदेष्टार (विद्वज्जना) ६ ५२ ८ विद्वासो मनुष्या इन्द्रियाणि च, ऋ० भू० ३१६, ११६४ ३६ विद्वासोऽग्न्यादयो वा १ २२ १६ सद्गुणिनो धर्मात्मानो विद्वास (जना) ११७४ १ प्रशसनीया (राजजना) ३३ ५० विद्वास सभासद (जना) २५ ४६ देदीप्यमाना योगिन (पुरुषा) ७ १२ धनुर्वेदविदो विद्वास, भा०—सत्पुरुषा धनुर्वेदज्ञा परोपकारिणो विद्वास ७ २४ आयुर्वेदविद (विद्वासो जना) ६ ३६ सर्वेभ्य सुखदातार, भा०—सर्वसुखैरलङ्कर्त्तार (विद्वासो जना) ६ ३६ सर्वविद्याविद

श० ११६३४-५ पश्चवा वै देवा व्युत्क्रामन् अग्निर्वसुभि सोमो रुद्रै, इन्द्रो मरुद्भि, वरुण आदित्यै, बृहस्पति-विश्वैर्देवै गो० उ० २२ तस्य वाऽएतस्य वासस । अग्ने पर्यासो भवति वायोरनुछादो नीवि पितृणा सर्पाणा प्रघातो विश्वेषा देवाना तन्तव आरोका नक्षत्राणामेव हि वा ऽएतत्सर्वे देवा अन्वायत्ता श० ३.१२१८ अग्निर्वायु-रादित्य एतानि ह तानि देवाना हृदयानि श० ९११२३ अग्निर्वै देवानामवमो विष्णु परमस्तदन्तरेण सर्वा अन्या देवता ऐ० ११ तद्यदेतस्मिन्नाके स्वर्गे लोके देवा असीद-स्तस्माद्देवा नाकसद श० ८६११. द्यौर्वै सर्वेषा देवाना-मायतनम् श० १४३२८ पृथिवी वै सर्वेषा देवानामाय-तनम् श० १४३२४ देवगृहा वै नक्षत्राणि तै० १५२६ नगो वै देवाना ग्राम ता० ६९२ स यदेव यजेत । तेन देवेभ्य ऋण जायते तद् ह्येभ्य एतत् करोति यदेनान् यजते यदेभ्यो जुहोति श० १७२२ देवा यज्ञिया श० १५२.३ दिव तृतीय देवान् यज्ञोऽगात ऐ० ७५ यज्ञ उ देवानामात्मा श० ८६१२० यज्ञो वै देवानामात्मा श० ९३२७ सर्वेषा वाऽएष भूताना सर्वेषा देवानामात्मा यद् यज्ञ श० १४३२१ एतद्वै देवानामपराजितमायतन यद् यज्ञ तै० ३३७७ यज्ञ उ देवानामन्नम् श० ८१२१० ततो देवा यज्ञोपवीतिनो भूत्वा दक्षिण जान्वाच्योपासीदन् (प्रजापति) तान् (देवान्) अब्रवीद् यज्ञो वोऽन्नममृतत्व व ऊर्ज सूर्यो वो ज्योतिरिति श० २४२१. किं नु तेऽस्मासु (देवेषु) इति । अमृतमिति जै० उ० ३२६८ ऊर्गिति देवा (उपासते) श० १०५२२० साम देवानामन्नम् ता० ६४१३ एतद्वै देवाना परममन्न यत्सोम । एतन्मनुष्याणा यत्सुरा तै० १३३२-३ एष वै सोमो राजा देवानामन्न यच्चन्द्रमा श० १६४५, २४२७, १११४४ हविर्वै देवाना सोम श० ३५३२ एतद्वै देवाना परममन्न यन्नीवारा तै० १३६८ इत (हवि) प्रदानाद्धि देवा उपजीवन्ति श० १२५२४ उभये देवमनुष्या पशूनुपजी-वन्ति श० ६४४२२ तस्यै (वाचे) द्वौ स्तनौ देवा उपजी-वन्ति स्वाहाकार च वषट्कार च श० १४८९१. जीव वै देवाना हविरमृतममृतानाम् श० १२११२० एक वा एतद्देवानामह सवत्सर तै० ३९२२१ सवत्सरो वै देवाना गृहपति. ता० १०३६ सवत्सरो वै देवाना जन्म श० ८७३.२१ सवत्सर खलु वै देवाना पू तै० १७७५. स प्राणेन देवान् देवलोकेऽदधात् जै० उ० २८३ प्राणेन वै देवा अन्नमदन्ति । अग्निरु देवाना प्राण श० १०१.४१२ न ह वा अनार्षे यस्य देवा हविरश्नन्ति कौ० ३.२ नहि देवा अहुतस्याश्नन्ति तै० १६६.४ न ह वा अव्रतस्य देवा हविरश्नन्ति ऐ० ७११ कौ० ३१ सूर्यो वै सर्वेषा देवानामात्मा श० १४३२.९ यज्ञो वै स्व अहर् देवा सूर्य. श० ११२२१ देवा वै स्व श० १९३१४ अहरेव देवा श० २१३१ अहर्वै देवा अश्रयन्त रात्री-मसुरा ऐ० ४५ अहर्वै देवा आश्रयन्त रात्रीमसुरा. गो० उ० ५१ देवा वै नृचक्षस श० ८४२५ गातुविदो हि देवा श० ४४४१३ देवाना वा एतद् यज्ञिय गुह्य नाम यच्चतुर्होतार ऐ० ५.२३. युञ्जन्तु त्वा मरुतो विश्ववेदस इति युञ्जन्तु त्वा देवा इत्येवैतदाह श० ५१४९ देवा महिमान. श० १०.२२ अमृता देवा २१३४. देवा वै मृत्योरबिभयुस्ते प्रजापतिमुपाधावँस्तेभ्य एतेन नवरात्रेणा-मृतत्व प्रायच्छन् ता० २२१२१ देवा वै सर्पा । तेषामिय (पृथिवी) राज्ञी तै० २२६२२ विप्रा विप्रस्य इति प्रजा-पतिर्वै विप्रो देवा विप्रा श० ६३११६ स ह स न मनुष्यो य एवविद्देवाना हैव स एक श० १०३५१३ अथ हैते मनुष्यदेवा ये ब्राह्मणा ष० १.१ एते वै देवा अहुतादो यद् ब्राह्मणा गो० उ० १६ ब्राह्मणो वै सर्वा देवता तै० १४४२,४ आहुतिभिरेव देवान् प्रीणाति दक्षिणाभिर्मनुष्य-देवान् ब्राह्मणाञ्छुश्रुवुषोऽनूचानान् श० २२२६ द्वया वै देवा । अहैव देवा अथ ये ब्राह्मणा शुश्रुवासोऽनूचानास्ते मनुष्यदेवा श० २२२६, ४३४४ विद्वासो हि देवा श० ३७३१० धर्म इन्द्रो राजेत्याह तस्य देवा विशस्तऽइम-ऽआसत इति श्रोत्रिया अप्रतिग्राहका उपसमेता भवन्ति तानुपदिशति सामानि वेद सोऽयमिति श० १३४३१४ ऋतवो वै देवा श० ७२४२६. वसन्तो ग्रीष्मो वर्षा ते देवा ऋतव, श० २१३१ तस्मात् प्राणा देवा, श० ७.५१२१ प्राणा देवा श० ६३११५ चक्षुर्देव गो० पू० २११ मनो देव गो० पू० २१० मनो वै देववाहन मनो हीद मनस्विन भूयिष्ठ वनीवाह्यते श० १४३.६ वाक् च वै मनश्च देवाना मिथुनम् ऐ० ५२३ वागेव देवा श० १४४३.१३ वाग्देव गो० पू० २१० वाग्वै देवाना पुरान्नमासीत् तै० १३५१ वागिति सर्वे देवा जै० उ० १९२ वायुर्वै देव जै० उ० ३४८, सा या पूर्वाहुति । ते देवाः श० २.३ २१६ अह्न पूर्वाह्णो देवा. श० २१३१ तस्मै (वृत्राय) ह स्म पूर्वाह्णे देवा । अशनमभिहरन्ति श० १६३१२ य एवापूर्यतेऽर्धमास स देवा श० २१३१ य एवापूर्यते त (अर्धमास) देवा उपायन् श० १७२२२ अर्धमासे देवा इज्यन्ते तै० १४९१ देवाश्च वा असुराश्च । उभये

विद्वानो वा दिव्यगुणो के साथ वर्त्तमान आर्याभि० ११८, ऋ० १६१७१ देदीप्यमानैः (गुणै) २८२० द्योतमानै (पृथिव्यादिभि) २०११ भा०—धार्मिकैरध्यापकै २०३८ प्रकाशकै (किरणै) २१५६ **देवौ**=दिव्य-स्वरूपौ प्राणाऽपानौ ३४५५ शुभगुणान् कामयमानौ माता-पितरौ, भा०—विद्वासौ स्त्रीपुरुषौ, २८४० वैद्यकविद्यया प्रकाशमानौ (भिषजा=चिकित्सकौ) २८७ विद्यादातारौ (विद्वासौ स्त्रीपुरुषौ) ४१५१० दिव्यगुण-कर्म-स्वभावौ (सूर्याचन्द्रमसौ) ५३८३ [दिवु क्रीडाविजिगीषाव्यवहार-द्युतिस्तुतिमोदमदस्वप्नकान्तिगतिषु (दिवा०) धातो पचाद्यच् प्रत्यय । दिवु मर्दने (चुरा०) दिवु परिकूजने (चुरा०) धातोर्वा अच् । देवो दानाद्वा, दीपनाद्वा, द्योतनाद्वा, द्युस्थानो भवतीति वा । यो देव स देवता निघ० ७१५ दिवा वै नोऽभूदिति । तद् देवाना देवत्वम् तै० २२९९ दिवा देवानसृजत नक्तमसुरान् यद्दिवा देवानसृजत तद् देवाना देवत्वम् ष० ४१ तस्मै मनुष्यान्त्सृजानाय (प्रजा-पतये) दिवा (=दिवस) देवत्रा (अभवत् । तदनु देवान-सृजत । तद् देवाना देवत्वम् तै० २३८३ तद् देवाना देवत्व यद् दिवसमभिपद्यासृज्यन्त श० ११११६७ तद्वेव देवाना देवत्व यदस्मै ससृजानाय दिवेवास श० १११६७ मर्त्या ह वाऽअग्रे देवा आसु स यदैव ते सवत्सर-मापुरथामृता आसु श० १११२१२ मर्त्या ह वाऽअग्रे देवा आसु । स यदैव ते ब्रह्मणापुरथामृता आसु श० ११२३६ एतेन वै (अष्टरात्रेण) देवा देवत्वमगच्छन् । देवत्व गच्छति य एव वेद ता० २२११२-३ उभये ह वाऽइदमग्रे सहासुर्देवाश्च मनुष्याश्च श० २३४४ उभय-म्वैतत् प्रजापतिर्यच्च देवा यच्च मनुष्या श० ६८१४ प्राचीनप्रजनना वै देवा प्रतीचीनप्रजनना मनुष्या श० ७४२४० प्राची हि देवाना दिक् श० १२५१७ देवाना वा एषा दिग्यत्प्राची ष० ३१ यद्वै मनुष्याणा प्रत्यक्षन्तद् देवाना परोक्षमथ यन्मनुष्याणा परोक्षन्तद् देवाना प्रत्यक्षम् ता० २२१०३ तस्मै (चन्द्रमसे) ह स्म पूर्वाह्णे देवा अशनमभिहरन्ति मध्यन्दिने मनुष्याऽपराह्णे पितर श० १६३१२ द्राघीयो हि देवायुष ह्रसीयो मनुष्यायुषम् श० ७३११० देवाना वै विधामनु मनुष्या श० ६७४६, ६११.१६ स (सूर्य) यत्रोदङ्डावर्त्तते । देवेषु तर्हि भवति देवान्तर्ह्यभिगोपायति श० २१३३ देवाश्च वा असुराश्च प्रजापतेर्द्वया पुत्रा आसन् ता० १८१२ उभये वा एते प्रजापतेरध्यसृज्यन्त । देवाश्चासुराश्च तै० १४१.१ स (प्रजापति) · · अकामयत प्रजायेयेति । स तपोऽतप्यत । सोऽन्तर्वानभवत् । स जघनादसुरानसृजत · · स मुखाद् देवानसृजत तै० २२९५-८ स (प्रजापति) आस्येनैव देवानसृजत श० १११६७ (प्रजापते) कनीयास (पुत्रा) देवा ता० १८१२ कानीयसा एव देवा ज्यायसा असुरा श० १४४११ कनीयस्विन इव वै तर्हि (युद्ध-समये) देवा आसन् भूयस्विनोऽसुरा ता० १२१३३१. ते देवाश्चक्रमाचरञ्छालम् असुरा आसन् श० ६८१.१ एकाक्षर वै देवानामवम छन्द आसीत्सप्ताक्षरम् ता० १२१३२७ उत्तरावती वै देवा आहुतिमजुहवु । अवाची-मसुरा तै० २१४१ देवाना वै यज्ञ रक्षास्यजिघासन् ता० १४१२७ त्रया वै देवा । वसवो रुद्रा आदित्या श० ४३५१ एते वै त्रया देवा यद् वसवो रुद्रा आदित्या श० १३४१२, १५११७, १८.३८ कतमे ते त्रयो देवा इति । इम ऽ एव त्रयो लोका एषु हीमे सर्वे देवा इति । कतमौ तौ द्वौ देवावित्यन्न चैव प्राणश्चेति । कतमोऽध्यर्ध इति योऽय पवत इति । कतम एको देव इति प्राण इति श० ११६३१० त्रयस्त्रिशद् देवता ता० ४४११ त्रय-स्त्रिशद्वै देवता तै० १२२५, १८७१, २७१३-४ त्रयस्त्रिशद्वै सर्वा देवता कौ० ८६ त्रयस्त्रिशद्वै देवा प्रजा-पतिश्चतुस्त्रिश श० १२६१३७ त्रयस्त्रिशद् देवता प्रजापतिश्चतुस्त्रिश ता० १०११६, १२१३२४ अष्टौ वसव । एकादश रुद्रा द्वादशादित्या इमेऽएव द्यावापृथिवी त्रयस्त्रिश्यौ त्रयस्त्रिशद्वै देवा प्रजापतिश्चतुस्त्रिश श० ४५७२ देवता वाव त्रयस्त्रिशोऽष्टौ वसव एकादश रुद्रा द्वादशादित्या प्रजापतिश्च वषट्कारश्च ता० ६२५ (त्रयस्त्रिशत्) अष्टौ वसव एकादश रुद्रा द्वादशादित्या प्रजापतिश्च वषट्कारश्च ऐ० २१८, ३७, ३२२ अष्टौ वसव एकादश रुद्रा द्वादशादित्या वाग् द्वात्रिंशी स्वरस्त्रय-स्त्रिशस्त्रयस्त्रिशद्देवा गो० उ० २१३ त्रयस्त्रिशद्वै देवा सोमपास्त्रयस्त्रिशदसोमपा अष्टौ वसव एकादश रुद्रा द्वादशा-दित्या प्रजापतिश्च वषट्कारश्चैते देवा सोमपा एकादश प्रयाजा एकादशानुयाजा एकादशोपयाजा एतेऽसोमपा पशु-भाजना ऐ० २१८ त्रयस्त्रिशद् वै सोमपा देवताया सोमाहुतीरन्वायत्ता अष्टौ वसव एकादश रुद्रा द्वादशादित्या इन्द्रो द्वात्रिश प्रजापतिस्त्रयस्त्रिशस् त्रयस्त्रिशत् पशुभाजना कौ० १२६ कतमे ते (देवा) त्रयस्त्रिशदिति । अष्टौ वसव एकादश रुद्रा द्वादशादित्यास्तऽ एकत्रिंशदिन्द्रश्चैव प्रजा-पतिश्च श० ११६३५. कतमे ते (देवा) त्रयश्च त्री च शता त्रयश्च त्री च सहस्रेति । स (याज्ञवल्क्य) होवाच । महिमान एवैषा (देवानाम्) एते त्रयस्त्रिशत् त्वेव देवा इति

देवकृतस्य=दानशीलकृतस्य (एनस =पापस्य) भा०—दानादि-प्रशक्तमनुष्यस्य ८ १३ इन्द्रिय, विद्वान् और दिव्य-गुणयुक्त जन के, आर्याभि० २ १६, ८ १३ [देव-कृतपदयो समास]

देवक्षत्रे देवानां धने राज्ये वा ५ ६४ ७ [देव-क्षत्र-पदयो. समास । क्षत्रम्=उदकनाम निघ० १ १२ धननाम निघ० २ १० 'क्षद' इति सौत्रो धातु । क्षदति रक्षतीति क्षत्रम् । 'गुधृवीपचिवचि०' उ० ४ १६७ सूत्रेण क्षदधातो ष्ट्र प्रत्यय । क्षतात् त्रायत इत्यपि विग्रह]

देवगणाः विद्वत्समूहा, प० वि० ३२ १४ देवाना विदुषा समूहा ३२ १४ विद्वानो के वृन्द, आर्याभि० २ ५३, ३२.१४ दिव्यगणे विज्ञानिनश्च, ऋ० भू० १४६, ३२ १४. [देव-गणपदयो समास]

देवगोपाः देवा विद्वासो गोपा रक्षका येषान्ते, यद्वा ये देवाना दिव्याना गुणाना कर्मणा वा गोपा (सर्वमनुष्या) १ ५३ ११ यो देवान् विदुषो गोपायति (राजा) ६ ६८ ७. देवाना विदुषा रक्षका (मनुष्या) ५ ४५ ११ सर्वेषा रक्षक (पृश्नि =अन्तरिक्षमवकाश) ७ ३५ १३ [देव-गोपपदयो समास । अथवा=देवोपपदे गुपू रक्षणे (भ्वा०) धातो 'कर्मण्यण्' सूत्रेण अण्प्रत्यय । देवगोपा=देवी गोप्त्री, देवान् गोपायतीति, देवा एन गोपायन्त्विति वा नि० ११ ४२]

देवजनाः देवा विद्वासश्च ते जना धर्मे प्रसिद्धाश्च भा०—विद्वासो विदुष्यश्च १९.३९. विद्वांस श्रेष्ठा ज्ञानिनो विद्यादानिन (ईश्वराज्ञापालका जना) ऋ० भू० २६७, १९ ३९ [देव-जनपदयो समास]

देवजातस्य देवेभ्यो दिव्येभ्यो गुणेभ्य प्रकटस्य (सप्ते =अश्वस्य) १ १६२.१ देवैर्दिव्यैर्गुणै प्रसिद्धस्य (सप्ते =अश्वस्य) २५ २४ **देवजाताय**=देवैर्दिव्यैर्गुणै. प्रसिद्धाय (सूर्याय=परमेश्वराय सूर्यलोकाय वा) ४ ३५ [देव जातपदयो समास । देवजातस्य=देवैर्जातस्य नि० ६ ३.]

देवजामिभ्यः विदुषा भगिनीभ्य २४ २४. **देव-जामिः**=यो देवै सह जमति स (घोष =वाक्) ७ २३ २ [देव-जामिपदयो समास । जामि =या प्रापणे (अदा०) धातोर् बाहु० औणादिको मि प्रत्यय (उ० ४.४३) आदेर्जत्वम् । अथवा देवोपपदे जमु अदने धातोरौणादिको बाहु० इन्प्रत्यय]

देवजाः यो देवेषु विद्वत्सु जात (आप्तो विद्वान्) ३ ५३ ९ देवाद् विद्युतो जाता (ऋतव) १ १६४ १५. [देवोपपदे जनी प्रादुर्भावे (दिवा०) धातो 'सप्तम्या जनेर्ड' सूत्रेण 'पञ्चम्यामजातौ' सूत्रेण वा ड प्रत्यय । अथवा देवो-पपदाज् जनी धातो क्विप्प्रत्यय । 'जनसनखना०' इत्या-कारान्तादेश]

देवजुष्टम् विद्वद्भि सेवितम् (अन्नम्) ४ २६ ४
देवजुष्टा=विद्वद्भि प्रीता सेविता वा (वाक्) १ ७७ १
देवजुष्टैः=विद्वद्भि सेवितै (वचोभि =वचनै) ५ ४५ ४. [देव-जुष्टपदयो समास । 'देवजुष्टा' प्रयोगे स्त्रिया टाप् । जुष्टम्=जुषी प्रीतिसेवनयो (तुदा०) धातो क्त]

देवजूतम् देवै प्राप्तम् (शूष =बलम्) ७ २५ ५.
देवजूतः=देवै प्रेरित (आप्तो जन) ३ ५३ ९ देवैर्विदित-आलित (रयि =धनम्) ४ ११ ४ [देव-जूतपदयो समास । देवजूतम्=देवगत देवप्रीत वा निघ० १० २८ जूतम्=जवति गतिकर्मा (निघ० २ १४) ततो भावे क्तः प्रत्यय]

देवतमः विद्वत्तम (राजा) ४ २२ ३ **देवतमाय**= अतिशयेन प्रकाशयुक्ताय (सूर्याय) २ २४ ३. [देव इति व्याख्यातम् । ततोऽतिशायने तमप्]

देवतया दिव्यसुखप्रदया (धर्मानुष्ठानयुक्तया क्रियया) १२ ५३ दिव्यगुणया (ईश्वरेण) १४ ६ दिव्यगुणप्रापिकया (विद्वत्स्त्रिया) १२ ५३ परमपूज्यया परमेश्वराख्यया १३ २५ दिव्यया (पत्न्या) १३ २४ दिव्यगुणयुक्तया (पत्न्याख्यया) १५ ५८ पूज्यतमया व्याप्तया ब्रह्माख्यया सह १५ ५७ देदीप्यमानया (राज्ञ्या) सह १० ३० भा०—सुलक्षणया वाचा पत्न्या च सह २७ ४५ दिव्यसुखप्रदान-क्रियया सह १४ १२ विवाहितपतिरूपया सुखप्रदया (पत्न्या) १३ १९ दिव्यया (पत्न्या सह) १३ २४ **देवता**= देव एव देवता (ईश्वर) प्र०—स्वार्थे तल् प्रत्यय ३३ ७९ द्योतमान एव (इन्द्र =सभाध्यक्ष) १ ५५ ३ देव एव दिव्यगुणत्वात् १४ २० देव एव देवता विद्वानेव, प्र०—देवात्तल् इति स्वार्थे तल्, जातावेकवचनञ्च ४ ५८ १० दिव्य-गुणयुक्तम् (त्वामग्निमिव वर्त्तमान विद्वासम्) प्र०—अत्र सुपो लुक् ३३ १३ दिव्यगुण (अग्नि =विद्वज्जन) ७ १ २३. जगदीश्वर ६ ४ ७ उपासनीय इष्टदेव एव (सविता= ईश्वर) २२ १० पूज्यतमा (सविता=जगदीश्वर) १ २२.५ विद्वास (जना), प्र०—अत्र 'सुपा सुलुक्०' इति जसो लुक् १७ ९८. विद्वान्, सूर्यादि, बुद्ध्यादि, आर्याभि० १ ३२. ऋ० १ ७ १० १५. दिव्यजनानाम्,

प्राजापत्य। प्रजापते पितुर्दायमुपेयुरेतावेवार्धमासौ (शुक्ल-कृष्णपक्षौ) श० १ ७ २ २२ यशो देवा श० २ १ ४ ६ तस्माद् (देवा) यश श० ३ ४ २ ८ देवा वै यशस्कामा सत्रमासत ता० ७ ५ ६ ते (देवा) आसत श्रिय गच्छेम यश स्यामान्नादा स्यामेति श० १४ १ १ ३. श्रीर्देवा श० २ १ ४ ६ सर्वे वै देवास्त्विवपिमन्तो हरस्विन तै० ३ ८ ७.३ तिर इव वै देवा मनुष्येभ्य श० ३ १ १ ८, ३.३ ४ ६ परोक्ष वै देवा श० ३ १ ३ २५ परोक्षकामा हि देवा श० ६ १ १ २, ७ ४ १ १० परोक्षप्रिया इव हि देवा भवन्ति प्रत्यक्षद्विप गो० पू० २ २१ यदु ह किं च देवा कुर्वते स्तोमेनैव तत्कुर्वते यज्ञो वै स्तोमो यज्ञेनैव तत्कुर्वते श० ८ ४ ३ २ मनो ह वै देवा मनुष्यस्याजानन्ति श० २ १ ४ १, २ ४ १ ११ मनो देवा मनुष्यस्याजानन्ति श० ३ ४ २ ६ (देवा प्रजापतिमब्रुवन्) दाम्यतेति न आत्थेति श० १४ ८ २ २ जाग्रति देवा श० २ १ ४ ७. न वै देवा स्वपन्ति श० ३ २ २ २२ यो वै देवाना पर्यैति स ऋतम्य पर्यैति श० ४ ३ ४ १६ एक ह वै देवा व्रत चरन्ति सत्यमेव श० ३ ४ २ ८ एक ह वै देवा व्रत चरन्ति यत्सत्य तस्मादु सत्यमेव वदेत् श० १४ १ १ ३३ सत्यमेव देवा अनृत मनुष्या श० १ १ १ ४, १ १ २ १७, ३ ३ २ २, ३ ६ ४ १ सत्यसहिता वै देवा ऐ० १ ६ सत्यमया उ देवा कौ० २ ८ शैशिरेणर्त्तुना देवा । त्रयस्त्रिशेऽमृत स्तुत सत्येन रैवती क्षत्रम् । हविरिन्द्रे वयो दधु तै० २ ६ १९ २ त्रिपत्या हि देवा श० १ १ तै० ३ २ ३ ८ अपहतपाप्मानो देवा श० २ १ ३ ४ अथ देवा । अन्योऽन्यस्मिन्नेव जुह्वतश् चेरुस्तेभ्य प्रजापतिरात्मान प्रददौ श० ५ १ १ २, ११ १ ८ २ ते देवा प्रजापतिमेवाभ्ययजन्त । अन्योऽन्यस्यासन्न-सुरा अजुहवु । प्रजापतिर्देवानुपावर्त्तत गो० उ० १ ७ अ १ देवा ऊर्ध्व पृष्ठेभ्योऽपश्यन् । त उपपक्षावग्रे ऽवपन्त । अथ श्मश्रूणि । अथ केशान् । ततस्ते ऽभवन् । सुवर्ग लोकमायन् । यस्येव वपन्ति । भवत्यात्मना । अथो सुवर्ग लोकमेति । तै० १ ५ ६ २ देवा वै छन्दास्यब्रुवन् युष्माभि स्वर्गं लोकमयामेति ता० ७ ४ २ छन्दोभिर्हि देवा स्वर्ग लोक समाश्नुवत श० ३ ९ २ १० सर्वैर्वै छन्दोभिरिष्ट्वा देवा स्वर्गं लोकमजयन् ऐ० १ ६ यज्ञेन वै देवा दिवमुपोदक्रामन् श० १ ७ ३ १ यज्ञेन वै तद्देवा यज्ञमयजन्त यदग्निनाऽग्निमयजन्त ते स्वर्गं लोकमायन् ऐ० १ १६ तम् (अग्नि) देवा रोहिण्यामादधत ततो वै ते सर्वान् रोहानरोहन् तै० १ १ २ २ आनन्दात्मानो हैव सर्वे देवा श० १० ३ ५ १३ इन्द्रो वै देवानामोजिष्ठो बलिष्ठ, कौ० ६ १४ गो० उ० १ ३ इन्द्राग्नी वै देवानामोजिष्ठौ ता० २४ १७ ३. प० ३ ७ इन्द्राग्नी वै सर्वे देवा कौ० १२ ६, १६ ११ श० ६ १ २ २८ हव्यवाहनो वै (अग्नि) देवानाम् श० २ ६. १ ३० अग्निर्वै देवाना होता ऐ० १ २८, ३ १४ अग्निरेव देवाना दूत आस श० ३ ५ १ २१ वरुणो वै देवाना राजा श० १२ ८ ३ १० तस्मादाहुर्विष्णुर्देवाना श्रेष्ठ इति श० १४ १ १ ५ रुद्रो वै ज्येष्ठश्च श्रेष्ठश्च देवानाम् कौ० २५ १३ विश्वे वै देवा देवाना यशस्वितमा तै० ३ ८ ७ २ श० १३ १ २ ८ शृतकामा इव हि देवा तै० ३ २ ८.१२ अग्नयो वै सर्वे देवा जै० २ २२५ अन्नमु देवाना सोम जै० ३ १७४ अभिपिक्तो (राजा) वै देवाना वरुण मै० ४ ३ ७ अस्या (पृथिव्याम्) वै प्रतिष्ठाय देवा यज्ञमतन्वत मै० ३ ७ १ एप ह वै देवाना राज्ञी यच्छ्रद्धा जै० २.४२६ ओपधयो वै देवाना पत्न्य मै० ३ १ ८ तस्य (अमृतस्य) देवा आयुष्कृत मै० २ ३ ४ दिवा वै मनुष्या यज्ञेन चरन्ति नक्त देवा । मै० ४ ५ १ काठ० २३ ५ देवा एकरूपा सर्वे शुक्ला जै० १ २७८ देवा ह धर्मणा ध्रुवा काठ० ३५ ७ न हि देवा अश्रु कुर्वन्ति मै० २ १ १० नियुतो देवाना विश काठ० १२ १३ प्रजापतिश्रेष्ठा वै देवा जै० २ ३७१ बिभ्यति वै देवेभ्य पशव काठ० ७.७]

देवकम् देवमिव वर्त्तमानम् (सत्पुरुषम्) ७ १८ २० [देवप्राति० इवार्थे कन्प्रत्यय । स्वार्थे वा क प्रत्यय । देवपद व्याख्यातम्]

देवकामम् यो देवान् विदुप कामयते तम्, भा०—विद्याकामम् (वीरमनुष्यम्) २९ ९ **देवकामः**=यो देवान् विदुप कामयते स (यजमानो जन) ४ २५ १ देवाना विदुपा काम इच्छा यस्य स (वीरजन) ७ २ ९ [देवोपपदे कमु कान्तौ (भ्वा०) धातो 'कर्मण्यिङ्' इति णिङन्तात् 'कर्मण्यण्' इत्यण्प्रत्यय । देव-कामपदयोर्वा समास]

देवकिल्विषात् देवेपु विद्वत्स्वपराधकरणात्, भा०—पापाचरणाद्, विद्वदीर्ष्या-विषयात् १२ ९० [देव-किल्विप-पदयो समास । किलनि क्रीडति विचारशून्यतया कार्येपु प्रवर्त्तते येन तत् किल्विप पाप । 'किलेर्बुक् च' उ० १ ५० सूत्रेण टिषच् प्रत्ययो बुगागमश्च]

देवकृतम् देवैराचरितम् (एन=पापम्) २० १८ विद्वद्भिर्विद्याध्ययनाय निर्मितम् (योनिं=गृहम्) ७.४ ५ कामिभिरनुष्ठितम् (एन=दुष्टाचरणम्) ८ २७ इन्द्रिय-कृत कर्म ८ १५ यद् देवैरिन्द्रियै कृत तत् (एन=पापम्) ३ ४८ देवैर्विद्वद्भि कृत निष्पादित शास्त्रम् ३ ३३ ४

प्र०—विष्वग्देवयोश्च टेरद्र्यञ्चतौ वप्रत्यये, अ० ६ ३ ९२ अनेन देवशब्दस्य टेरद्रिरादेश १ ६३ ८ देवानञ्चता प्रानुवता, भा०—दिव्येन (मनसा) २६ २३ [देवान् अञ्चतीति विग्रहे देवोपपदाद् अञ्चु गतिपूजनयो (भ्वा०) धातो 'ऋत्विग्दधृग्०' इति क्विन्प्रत्यय । 'विष्वग्देवयोश्च टेरद्र्यञ्चतौ वप्रत्यये' अ० ६ ३ ९२ सूत्रेण देवस्य टेरद्र्यादेश । 'अच' इत्यकारलोपे 'चौ' सूत्रेण पूर्वस्य दीर्घत्वम्]

देवद्रीचीम् यया देवानञ्चति ताम् (रात्रिम्) ३.६ १ [देवद्रीचेति व्याख्यातम् । तत स्त्रियाम् 'अञ्चतेश्चोपसख्यानम्' । यस्योर्व्वा वाक् स आर्त्विजीनो देवत्रैव हि स काठ० १३ ४ असुर्य पात्रमनाच्छृण्णम्, आच्छृणत्ति देवत्राऽक तै० स० ५ १ ७ ४]

देवनिद: ये देवान्निन्दन्ति तान् (दुर्जनान्) १ १५२ २ ये देवान् विदुषो दिव्यगुणान्वा निन्दन्ति तान् (नास्तिकान् जनान्) २ २३ ८ [देवोपपदान् णिदि कुत्सायाम् (भ्वा०) धातो क्विप् प्रत्यय । आगमशासनस्यानित्यत्वान् नुमोऽभाव]

देवन्देवम् विद्वास विद्वास, दिव्य दिव्य पदार्थ वा ३३ ९ ?. ['देवम्' पदस्य वीप्साया द्विर्वचनम्]

देवपत्नी: देवैर्विद्वद्भि पालनीया (ग्ना =वाणी) १ ६१ ८ देवाना विदुषा स्त्रिय ५ ४६ ८ [देव-पत्नी-पदयो समास । देवपत्नी =देवपत्न्य नि० १२ ४६ देव-पत्न्यो देवाना पत्न्य नि० १२ ४४]

देवपणिभि: देवाना दिव्यगुणवतामग्नि-पृथिव्यादीना विदुषा वा पणयो व्यवहारा स्तुतयश्च ताभि २ १७. [देव-पणिपदयो समास । पणि =पण व्यवहारे स्तुतौ च (भ्वा०) धातोर्नाहु० औणादिक इन्प्रत्यय]

देवपानम् देवै किरणैरिन्द्रियैर्वा पेयम् (चमस=मेघ) १ १६१ ५ देवा पिबन्ति येन तत् (चमस =यज्ञ-पात्रम्) ४ ३५ ५ [देवोपपदे पा पाने (भ्वा०) धातोर्ल्युट् प्रत्यय]

देवपीयव: ये देवाना विदुषा द्वेष्टार, भा०—ये आप्तान् विदुषो द्विषन्ति ते (पणय =व्यवहारिणो जना) ३५ १ (देव-पीयुपदयो समास । पीयु =पा पाने (भ्वा०) धातो 'मृगय्वादयश्च' उ० १ ३६ सूत्रेण कुप्रत्यये धातोरीकारादेशो युगागमश्च निपात्यते । देवपीयुम् । पीयतिर्हिंसाकर्मा नि० ४ २५]

देवपुत्रे देवस्य परमात्मन पुत्रवद्वर्त्तमाने (रोदसी=प्रकाशभूमी) १ १८५.४ देवाना विदुषा पुत्र इव वर्त्तमाने (रोदसी =भूमिसूर्यलोकौ) ६ १७ ७ देवा विद्वास पुत्रा पुत्रवत्पालका ययोस्ते (सूर्यभूमी) ७ ५३ १ देवैर्दिव्यै प्रकृत्यशै पुत्र इव प्रजाते (क्षितिसूर्यौ) १ १५९ १ देवा दिव्या विद्वासो दिव्यरत्नादियुक्ता पर्वतादयो वा पुत्रा पालयितारो ययोस्ते (देवी =द्यावापृथिव्यौ भूमिसूर्यप्रकाशौ) १ १०६ ३ देवा विद्वास पुत्रा ययोस्ते द्यावापृथिव्यौ) ४ ५६ २ [देव-पुत्रपदयो समासे प्रथमा-द्विवचनम्]

देवप्सरस्तमम् देवैर्विद्वद्भिरतिशयेन ग्राह्यम् (वच.) १ ७५ १ [देव-प्सरस्पदयो समासेऽतिशायने तमप् । प्सर =रूपनाम निघ० ३ ७]

देवबन्धो: प्रकाशमानाना पृथिव्यादीना सम्बन्धिन (वाजिन =जलादय.) १ १६२ १८ देवा विद्वासो बन्धुवद् यस्य तस्य (अश्वस्य) २५ ४१ [देव-बन्धुपदयो समास । बन्धु =बन्धबन्धने (क्र्या०) धातो 'शॄस्वृस्निहित्रपि०' उ० १ १० सूत्रेण उ प्रत्यय]

देवभक्तम् देवैर्विद्वद्भि सेवितम् (अपूप =भोज्य-पदार्थम्) १२.२६ देवै सेवितम् (रत्न =रमणीय धनम्) ४ १ १० [देव-भक्तपदयो समास । भक्तम् =भज सेवायाम् (भ्वा०) धातो क्त प्रत्यय]

देवयजनम् देवाना विदुषा यजन पूजनं तेभ्यो दानञ्च ४ १ देवैर्यदिज्यते येन वा देवाना यजन देवयजन तद् (ब्रह्म यज्ञो वा) १ ३१ विद्वानो के यजन करने के समान, स० वि० २०९, अथर्व० ९ ६ १ ३ **देवयजनात्**=देवा यजन्ति यस्मिन् तस्मात् (भा०—विद्वत्कार्यानुष्ठानात्) १ २६ **देवयजने**=देवाना विदुषा सङ्गतिकरणे, एतेभ्यो दाने वा ४ २२ देवा विद्वासो यजन्ति यस्मिन् तस्मिन् (यज्ञमन्दिरे) ३७ ३ विदुषा पूजने ३७ ९ विद्वद्यजनाऽधिकरणे (यज्ञ-स्थाने) ३७ ९ विदुषा पूजने स्थानविशेषे ३७ ६ [देवोपपदे यज देवपूजासगतिकरणदानेषु (भ्वा०) धातो 'करणाधिकरणयोश्च' अ० ३ ३ ११७ सूत्रेण ल्युट् । देवयजनम् =भौम देवयजनम् गो० पू० २ १४ देवयजन वै वर पृथिव्यै ऐ० १ १३ ऋत्विजो देवयजनम् गो० पू० २ १४ श्रद्धा देवयजनम् गो० पू० २ १४ आत्मा देवयजनम् गो० पू० २ १४ ऋत्विजो हैव देवयजन ये ब्राह्मणा. श० ३ १ १ ५ एष हि पृथिव्या मूर्धा यद् देवयजनम् मै० ३ ७ ६ काठ० २४ १ दक्षिणतो वर्षीयसी करोति, देवयजनस्यैव रूपमक तै० स० २ ६ ४ ३ पृथिव्या ह्येष मूर्धा यद् देवयजनम् तै० स० ६ १ ८ २ ब्राह्मणा वाव

प्र०—निर्धारणेऽत्र षष्ठी 'सुपा सुलुक्०' इत्यामो लुक् च १ १०० १५ दिव्यगुणसम्पन्नौ (अश्विनौ=अध्यापकोपदेशकौ) ४ ४४ २ दिव्यस्वरूपे (भूमिसूर्य्यौ) ६ ७० ५ कर्मकाण्डे देवताशब्देन वेदमन्त्राणां ग्रहणम् । गायत्र्यादीनि छन्दांसि ह्यग्न्यादिदेवताख्यान्येव गृह्यन्ते, ऋ० भू० ६०, **देवताम्**=दिव्यगुणताम् (अग्रम्=उत्तम सुखम्) अ०—मुखम् १३ ५१ **देवतायाम्**=पूजनीयायाम् (प्रजापतौ=परमेश्वरे) ३५ ६ **देवतासु**=विद्वत्सु १६ ३२ **देवताः**=देवा एव देवतास्ता (विदुषो जनान्) १६ ५ दिव्या विद्वांसो गुणा वा १३ १ देवा विद्वांस (जना) १६ ८१ [देव इति व्याख्यातम् । तत 'देवात्तल्' अ० ५.४ २७ सूत्रेण तल्प्रत्यय । देवतामृगब्भ्यनूक्ता या यजु सैव देवता सक्सो देवता तद् यजु ग० ६ ५ १ २ त्र्यम्त्रिंशद् देवता ता० ४ ४ ११ आपो वै सर्वा देवता ऐ० २ १६ अग्नौ हि सर्वा देवता इज्यन्ते काठ० २५ ३ एता वै सर्वा देवता यद् वसतीवर्य जै० १ ३४२ कतमैका देवतेति, प्राण इति जै० २ ७७ देवता एव पृष्ठैरवरुन्धते तै० म० ७ ४ २ ३ देवता यजत्रा काठ० २६ ८ देवता वै यज्ञस्य शर्म यज्ञो यजमानस्य मै० ३ ६.६ देवता वै विश्वा धामानि काठ० २४ ७ देवता वै विश्वा धामानि काठ० २४ ७. देवतैव मेधपतिरिति कौ० १० ४ न प्रजापतेरन्या पूर्वा देवतास्ति जै० २ १७४ प्रजापति सर्वा देवता तै० स० २ १ ४ ३ प्राणा वै देवता मै० २ ३ ५ काठ० ११ ८ ब्राह्मणो वै सर्वा देवता तै० १ ४ ४ २ मध्यायतनो वै प्रजापतिर्देवतानाम् जै० २ ३४६ मुख वा अग्निर्देवतानाम् जै० ३ ३०० यतो यज्ञस्ततो देवता मै० ३ ६ ६ यावतीर्वै देवतास्ता सर्वा वेदविदि ब्राह्मणे वसन्ति तै० आ० २ १५ ६ वाक् च वै वायुश्चैत देवतानामानशानौ जै० २ ३८६ विष्णुर्वै परमो देवतानाम् जै० २.१६२]

देवतातये देवेभ्यो विद्वद्भ्यो दिव्यगुणेभ्यो वा ३३ ८७ दिव्यगुणप्राप्तये ३ २६ २ देवाना विदुषामेव सत्काराय १ १३७ ६. **देवताता**=देवाना विदुषा कर्मसु, प्र०—अत्र 'देवात्तातिल्, अ० ४ ४ १४२ 'सुपा सुलुक्०' अ० ७.१.३६ इति डादेशश्च ६ १६ देवा एव देवतास्तासा भाव १ ५८ १. देवतातौ (विद्वत्पङ्क्तौ) ४ ६ १ सत्ये व्यवहारे यज्ञे ६ ६८ २ देवैर्विद्वद्भि कृता (शस्ति=प्रशसा) ४ ३ १५ देवान् विदुष ३ १६ १ देवैरनुष्ठातव्ये सङ्गन्तव्ये व्यवहारे ७ २ ५ विद्वद्भिरनुष्ठातव्ये यज्ञे ७ ३८ ७ देवता विद्वांस इव वर्त्तमाना (वाजिन=विद्वज्जना) २१ १०. दिव्ये यज्ञे ६ ४ १ दिव्यगुणप्रापके यज्ञे ७ ४३ ३ देवेनेश्वरेण विद्वद्भिर्वा सह, प्र०—अत्र देवशब्दात 'सर्वदेवात्तातिल्' इति तातिलि कृते 'सुपा सुलुक्०' इति तृतीयास्थाने डादेश १ ६५.८ विद्वत्कर्त्तव्ये व्यवहारे ५ २६.१. शिल्पक्रियायज्ञसम्पत्तिहेतू यद्वा देवान् विदुषो दिव्यगुणान् वा तनुतस्तौ (अश्विनौ=द्यावापृथिव्यौ) प्र०—अत्र 'दुतनिभ्या दीर्घश्च' उ० ३.८८ इति क्त प्रत्यय 'देवतातेति यज्ञनामसु पठितम्' निघ० ३ १७, १ ३४.५ देवा एव देवतास्तासा भाव १ ५८ १. देवेनेव १ १२८ २ **देवतातिम्**=देवनामेव परमात्मानम् १ १४१ १० दिव्यस्वरूपाम् (घृताची=रात्रीम्) ३.१६ २. दिव्यस्वभावम् (शर्व=बलम्) ३ १६ ४ दिव्यसुखप्रापक यज्ञम् ७ १ १८ देवैरनुष्ठित यज्ञम् ७ ३६.१. दिव्यगुणाऽन्विताम् (परिचर्य्याम्) ४ ६ ३ देवान् ४ ६ ६ [देव प्राति० 'सर्वदेवात् तातिल्' अ० ४ ४ १४२ सूत्रेण स्वार्थे तातिलप्रत्यय । अथवा तनु विस्तारे (तना०) धातो 'दुतनिभ्या दीर्घश्च' उ० ३ ६० सूत्रेण क्तप्रत्यये तात । देव-तातपदयो समासे 'सुपा सुलुग्०' इति विभक्तेराकारादेशे देवताता शब्दः सिध्यति । देवताता यज्ञनाम निघ० ३ १७ देवताती यज्ञे नि० १२.४३]

देवत्तम् यद् देवेनेश्वरेण दत्त विद्वद्भिर्वाऽध्यापकेन तत् १ ३७ ४. [देवोपपदे डुदाञ् दाने (जु०) धातो क्तः प्रत्यय । छान्दसत्वादनुपसर्गादपि ददातेस्तकारादेश]

देवत्रा देवेषु वर्त्तमानम् (सूर्यं=जगदीश्वरम्) २७.१० दिव्यगुणेषु देवेषु २०.२१ देवेषु विद्वत्सु दिव्यगुणेषु वा १ ६३ ६ प्रकाशमयेषु सूर्येषु ३५ १४ विद्वत्सु, मनुष्येषु, पृथिव्यादिषु वा वर्त्तमानम् १ ५० १० सर्वेषु दिव्यगुणवत्सु पदार्थेषु प० वि०, ३५ १४ देवेषु दिव्येषु पदार्थेषु ३८ २४ दिव्यान् गुणान् ६ २७ देवेषु पतिषु ६ ३४ देव देवमिति देवत्रा ६ २० देवेषु पवित्रगुणकर्मस्वभावेषु वर्त्तमाना (प्रजा-सभा-सेना-जना) ७ ४३ देवेष्विति १ १८२ ५ [देवप्राति० 'देवमनुष्यपुरुषपुरुमर्त्येभ्यो द्वितीयासप्तम्योर्बहुलम्' अ० ५ ४ ५६ सूत्रेण त्रा प्रत्यय । देवत्रा=देवान नि० ८ ६ अ० ४ १ ६ वा० सूत्रेण ङीप्प्रत्यय]

देवत्वम् विदुषा भावम् १ १३६ १ प्रकाशमयस्य भाव १ ११५ ४ विद्वत्त्वम् ३ ११ ३ देवस्य भावम् ३३ ३७ विदुषा कर्म भाव वा १० १४ **देवत्वा**=देवाना विदुषा दिव्यगुणाना वा भावस्पाणि (गुणकर्माणि) १ ६६ ३ [देवप्राति० भावे कर्मणि वा त्व-प्रत्यय । 'देवत्वा' प्रयोगे प्रथमाबहुवचने शेर्लोप.]

देवद्रीचा देवान् विदुषोऽञ्चता सत्कारिणा (मनसा)

गच्छन्ति येषु तान् (पथ =मार्गान्), भा०—वाष्पयानान् २६ २ यान्ति यैस्तान् देवाना विदुषा गमनाऽधिकरणान् (अध्वन =मार्गान्) १ ७२ ७. **देवयाना:**=याभिर्देवान् दिव्यान् भोगान् प्राप्नुवन्ति ता (अध्न्या =गा) १२ ७३. **देवयाने**=यथा विदुषा गमनागमनाधिकरणे तथा (पथि=मार्गे) ५ ३३ परमार्थ मार्ग मे, आर्याभि० २ १८, ५ ३३ **देवयानै:**=देवा विद्वासो यान्ति येषु तै (पथिभि) भा०—धर्म्यमार्गै २१ ११ विद्वन्मार्गै ७ ३८ ८ देवा धार्मिका विद्वासो गच्छन्ति येषु तै (पथिभि =मार्गै), भा०—विद्वत्सङ्गयोगाभ्यासधर्माऽऽचारै १८ ६० विद्वासो यान्ति यैर्धर्म्यै (पथिभि), भा०—धार्मिकाणा विदुषा मार्गै ९ १८ देवा विद्वासो यान्ति यैस्तै (मार्गै) ३ ५८ ५ आप्ता विद्वासो गच्छन्ति येषु तै (पथिभि = मार्गै) ५ ४३ ६ देवा आप्ता विद्वासो यान्ति यैस्तै (मार्गै) १९ ५८ [देवयानपदयो: समास । यानम्=या प्रापणे (अदा०) धातो करणेऽधिकरणे वा कारके ल्युट् प्रत्यय । 'देवयाना' प्रयोगे देवोपपदे या प्रापणे धातो 'छन्दसि गत्यर्थेभ्य' अ० ३ ३ १२९ सूत्रेण युच्प्रत्यय । तत स्त्रिया टाप् । देवयाना-वै ज्योतिष्मन्त पन्थान ऐ० ३ ३८ अयो वै देवयाना पन्थान गो० उ० २ ११. तै० स० २ ५ ११ ६ ये चत्वारो पथयो देवयाना अन्तरा द्यावा-पृथिवी वियन्ति तै० स० ५ ७ २ ३ यमाहुर्य्यस्य पन्था इन्येष वाव देवयान पन्था ता० १२ १२ ३ वायु देवयान (पन्था) जै० २ २९८ यो देवयान पन्थास्तेन यज्ञो देवान् अप्येतु तै० स० १ ६ ३ २ वर्हिर्यजति, य एव देवयाना पन्थानस्तेष्वेव प्रतितिष्ठति तै० स० २ ६ १ ३ तस्य वा एतस्य सवत्सरस्याग्निष्टोमसमामान्येव देवयान पन्था जै० २ ६० एप वाव देवयान पन्था यत् पृष्ठ्य षडह जै० २ ४३ ३]

देवयावा यो देवान् दिव्यगुणान् भोगान् याति प्राप्नोति स (अग्नि =पावक इव विपश्चित्, ७ १० २ [देव-यावन्पदयो समास । यावन्=या प्रापणे (अदा०) धातो 'आतो मनिन्क्वनिब्वनिपश्च' अ० ३ २.७४ सूत्रेण वनिप्प्रत्यय]

देवया. देवान् दिव्यान् गुणान् विदुषो वा याति प्राप्नोति येन स (यज्ञ) १ १७७ ४ ये देवान् दिव्यान् गुणान् यान्ति ते (प्राणा) १ १६८ १ देवान् विदुषो यज-मान पूजयन् (विप्र =मेधावी जन) ३ ८ ५ या देवान् विदुषो यान्ति ता (वाच =वाण्य) ५ ७६ १ नियताऽऽत्मा (विप्र =मेधाविजन) ३ ८ ५ [देवोपपदे या प्रापणे (अदा०) धातो क्विप्प्रत्यय । देवया=देवेज्या नि० १२ ५ अत्र देवोपपदे यजतेर्ण्विन् प्रत्ययश्छान्दस]

देवयूनि देवान् दिव्यान् गुणान् कुर्वन्ति (शोचीषि= तेजासि) ७ ४३ २ [देवोपपदाद् या प्रापणे (अदा०) धातो 'मृगय्वादयश्च' उ० १ ३७ सूत्रेण कु प्रत्यय । देवयुशब्दस्य नपुसके प्रथमाबहुवचने रूपम्]

देवरम् द्वितीय वर नियोगेन प्राप्तम्, प्र०—देवर कस्मात् ? द्वितीयो वर उच्यते, नि० ३ १४, १४० २ देवर को, स० प्र० १० ४० २ द्वितीय वरम्, ऋ० भू० २११, ऋ० ७ ८ १८ २ [दिवु क्रीडाद्यर्थेषु (दिवा०) धातो 'अर्तिकमिभ्रमिचमि०' उ० ३ १३२ सूत्रेण अर प्रत्यय । दीव्यति क्रीडादिक करोतीति देवर । विधवाया द्वितीय पति पत्यु कनिष्ठभ्राता। देवर कस्मात् ? द्वितीयो वर उच्यते नि० ३ १४]

देवृषु मेरे भाई जो तेरे देवर ज्येष्ठ अथवा कनिष्ठ हैं, उनमे । स० वि० १३५, १० ८५ ४६ [दिवु क्रीडाव्यवहार-द्युतिस्तुतिमोदमदादिषु (दिवा०) धातो 'दिवेर्ऋ' उ० २ ९९ सूत्रेण ऋप्रत्यये देवृशब्द । दीव्यति क्रीडादिक करोतीति देवा, पत्यु कनीयान् भ्राता वा]

देवलोकम् देवाना विदुषा लोक दर्शक व्यवहारम् २९ १० **देवलोकाय**=देवाना दर्शनाय ३० १२ [देव-लोकपदयो समास । अथवा-देवोपपदे लोकृ दर्शने (भ्वा०) धातो 'कर्मण्यण्' इत्यण्प्रत्यय । लोक =लोकृ दर्शने (भ्वा०) धातो कर्त्तरि अच्, भावे वा घञ्प्रत्यय । देव-लोक त्रयो वै देवलोका गो० उ० १ १ सप्त वै देव-लोका ऐ० २ १९ चतस्रो दिशस्त्रय इमे लोका एते वै सप्त देवलोका श० १० २ ४ ४ एकविंशतिर्वै देवलोका । द्वादशमासा पञ्चर्त्तव । त्रय इमे लोका । असावादित्य एकविंश तै० ३ ८ १० २ वेदिर्वै देवलोक श० ८ ६ ३ ६ देवलोको वा एप यद् विषुवान् ता० ४ ६.२ उत्तरो वै देवलोक क्ष० १२ ७ ३ ७ देवलोको वा इन्द्र कौ० १६ ८ देवलोको वा आदित्य कौ० ५ ७ विद्यया देवलोक (जय्य) श० १४ ४३ २४ अन्तर्हितो हि देवलोको मनुष्य-लोकात् तै० स० ६ १ १ १ उदञ्च प्राञ्च प्रश्रयतेष वै देवलोक काठ० २६ ३ एते ह वाव द्वादश देवलोका जै० २ ६ त्रयस्त्रिंशद् देवलोका जै० २.२१० नव देव-लोका तै० स० २ ५ ११ ६ स्वराड् वै देवलोक जै० २ १९६]

देववत: प्रशस्तगुण-विद्वद्युक्तस्य (गो =वेनो भूमेर्वा)

देवयजनम् काठ० २५ ३ यत्र क्वचिद् ब्राह्मणो विद्यावान् मन्त्रेण करोति तद्देवयजनम् गो० १ २ १४ यद्वै (देवा) तद्यज्ञमृविन्दश्ँस्तद् देवयजनस्य देवयजनत्वम् मै० ३ ८ १ वर्ष्म ह्येतत् पृथिव्या यद् देवयजनम् तै० स० ६ २ ६ ३]

देवयजनि देवा यजन्ति यस्या सा (पृथिवी) १ २५ देवा यजन्ति यस्या तस्या, अ०—देवयजन्या (पृथिवि= पृथिव्या), प्र०—अत्र प्रातिपदिकनिर्देशानामर्थतन्त्रत्वात् षष्ठ्यर्थे प्रथमा विपरिणम्यते ३ ५ [देवोपपदे यज देवपूजासगतिकरणदानेषु (भ्वा०) धातोरौणादिको वाहु० अनि प्रत्यय । अथवा देवोपपदे यजतेर्ल्युट्, ततो ङीप् । छान्दस ह्रस्वत्वम् । इय वै पृथिवी देवी देवयजनी श० ३ २ २ २०]

देवयजम् देवान् विदुषो दिव्यगुणान् वा यजति सङ्गतान् करोति येन यज्ञेन स देवयट्, तम् । भा०—दिव्यगुणप्रकाशकम् (अग्निं=विद्युदाख्यम्) प्र०—अत्र 'अन्येभ्योऽपि दृश्यन्ते' इति सूत्रेण 'कृतो बहुलम्०' इति वार्त्तिकेन करणे विच्प्रत्यय १ १७ [देवोपपदे यज देवपूजासगतिकरणदानेषु (भ्वा०) धातो 'अन्येभ्योऽपि दृश्यन्ते' अ० ३ २ ७५ सूत्रेण विच् कर्त्तरि । करणे तु 'कृतो बहुलम्' इति वार्त्तिकेन विच्]

देवयज्यया विदुपा सङ्गत्या सत्कारेण च १ ११४ ३ **देवयज्यायै**=देवाना विदुषा दिव्यगुणाना वा यज्या सत्क्रिया तस्यै, प्र०—'छन्दसि निष्टर्क्य०' अ० ३ १ १२३ इति देवयज्या शब्दो निपातित १ १३ यथोत्तमगुणदानाय तथा, यथा दिव्याना सङ्गतये तथा ५ ४२ [देवोपपदे यज देवपूजासगतिकरणदानेषु (भ्वा०) धातो 'छन्दसि निष्टर्क्यदेवहूय०' अ० ३ १ १२३ सूत्रेण यत् निपात्यते । स्त्रिया टाप्]

देवयज्याय देवाना समागमाय ७ ३ ६. [देवोपपदे यजतेर्धातोर्बाहु० औणादिको य प्रत्यय । देवयज्याय= देवयज्यायै नि० ६ २२ प्रजा वा उत्तरा देवयज्या तै० स० ३ ६ ७.६. यस्य हि प्रजा भवत्यमु लोकमात्मनैत्यथास्मिंल्लोके प्रजा यजते तस्मात् प्रजोत्तरा देवयज्या श० १ ८ १ ३१]

देवयताम् आत्मनो देवान् विदुष कुर्वताम् (जनानाम्) १.१६० २ कामयमानानाम् (जनानाम्) १७ ६६ **देवयते**=देवान् कामयमानाय (सज्जनाय) ३ २६ १२ दिव्यान् गुणकर्म-स्वभावान् कामयमानाय (सज्जनाय) ३ १० ७ कुर्वते शिल्पिने १ १५ १२ **देवयद्भिः**=दैवान् कामयद्भि (सज्जनै) ३ ५ १ **देवयन्**=आत्मान देवमिच्छन् (विद्वज्जन) २ २६ १ **देवयन्तम्**=देवान् दिव्यगुणान् कामयमानम् (विद्वास मित्रजनम्) १.४१ ८. **देवयन्तः**=आत्मनो देवान् विदुष इच्छन्त (मनुष्या) १ १७३ ४ कामयमाना गणित-विद्या जानन्तो ज्ञापयन्त (नर=गणका जना) १ ११५ २ प्रकाशयन्त आत्मनो देवमिच्छन्तो मनुष्या १ ६ ६ विद्यावृद्धि की कामनायुक्त (कवय=विद्वान् लोग), स० प्र० १०६, ३ ८४ देवान् विदुष कामयन्त (सज्जना) ७ २ ५ कामयमाना (राजप्रजाजना) ४ २ १७ देवानाचक्षाणा (व्यवहारा) ३ ६ १ सत्यविद्या कामयमाना (मरुत=आर्त्विजीना विद्वास) १ ४० १ [देवपदाद् आत्मन इच्छायामर्थे क्यजन्ताच्छतृप्रत्ययान्तस्य रूपाणि । देवयन्त=देवान् कामयमाना नि० ८ १८]

देवयतीनाम् आत्मनो देवान् दिव्यान् भोगान् गुणाँश्चेच्छन्तीनाम् (विशा=प्रजानाम्) १ ३६ १ **देवयन्तीः**=दिव्यान् गुणान् विदुषो वा कामयन्ती (विश=प्रजा) ३ ६ ३ देवान् विदुष पतीन् कामयमाना (कन्या) ७.१० ३ कामयमाना प्र०—अत्र 'वा छन्दसि' इति पूर्वसवर्णदीर्घ १ ७७ ३ [देवयद् इति व्याख्यात पूर्वपदे । तत स्त्रिया ङीप्प्रत्यय]

देवयवः ये देवान् दिव्यान् भोगान् कामयन्ते ते (नर=नेतारो जना) १ १५४ ५ **देवयुवम्**=देवान् विदुष कामयमान विद्वासम् (जनम्) ६ २८ २ देवान् कामयमानम् (विद्वज्जनम्) ५ ३४ ५ य आत्मनो देवान् कामयते तम् (जन=प्रसिद्ध विद्वासम्) ४ ६ १ आत्मान देवमिच्छन्तम् (जनम्) १ ८३ २ देवान् विदुषो दिव्यगुणान्वा यौति प्राप्नोति प्रापयति वा तम् (यज्ञपतिम्= यज्ञस्य कामयितार जनम्) १ १२ **देवयु**=देवान् विदुष कामयमान (जन) ५ ४८ २ [देवपदाद् आत्मन इच्छायामर्थे क्यजन्तात् 'क्याच्छन्दसि' सूत्रेण उ प्रत्यय । 'न छन्दस्यपुत्रस्य' अ० ७ ४ ३५ सूत्रेणेत्व दीर्घत्व च भवति । देवयव=ऋत्विङ् नाम निघ० ३ १८ अथवा—देवोपपदे या प्रापणे (अदा०) धातो 'मृगय्वादयश्च' उ० १ ३७ सूत्रेण कु प्रत्यय]

देवयानम् देवाना विदुषा यात्रासाधकम् (अश्वम्) १ १६२ ४. देवाना प्रापणसाधनम् (अश्वम्) २५ २७ **देवयानात्**=देवा विद्वासो यान्ति यस्मिँस्तस्मात् (भा०—विद्वन्मार्गात्) ३५ ७ **देवयानान्**=देवा विद्वासो यान्ति

देवसख देवाना विदुषा सुहृत् (भा०—हे विद्वन् जन) २३ ४६ [देव-सखिपदयो समास]

देवसदम् देवेषु धार्मिकेषु विद्वत्स्ववस्थितम (इन्द्र=सम्राजम्) ६ २ [देवोपपदे षद्लृ विशरणगत्यवसादनेषु (भ्वा०) धातो क्विप्]

देवसेनानाम् विदुषा सेनानाम् १७ ४० [देव-सेना-पदयो समास]

देवस्तुतः देवैर्विद्वद्भि प्रशसित (रथस्पति =शिल्पी जन) ५ ५० ५ [देव-स्तुतपदयो समास]

देवहविः देवेभ्यो हविरिव ६ १० यथा देवाना हविरादातुमर्ह चरित्रमस्ति तथा ६ ८ [देव-हविष्पदयो समास हविष्=हु दानादानयो (जु०) धातो 'अर्चिशुचि-हुसृपि०' उ० २ १०८ सूत्रेण इसि प्रत्यय]

देवहितम् देवेभ्यो हितकारिणम् (वाज=विज्ञानम्) ६ १७ १५ देवेभ्यो विद्वद्भ्यो हितकारि (ब्रह्म=जगदीश्वर) ५ ४२ २ देवेभ्यो विद्वद्भ्यो हितम् (आयु=जीवनम्) १ ८६ ८ देवेभ्यो हित, दिव्यगुणवता धर्मात्मना, विदुषा, स्वसेवकाना च हितकारि (ब्रह्म), प० वि०, ३६ २४. देवेभ्यो हितकरम् (सोमम =ऐश्वर्यम्) ४ ३७ ३ देवेभ्य प्रियम् (सद =स्थानम्) १६ ७ इन्द्रियो और विद्वानो के हितकारक (आयु) को, आर्याभि० २ २७, २५ २१ देव अर्थात् विद्वानो के लिए वा मन आदि इन्द्रियो के लिए हितकारक मोक्षादि सुख का दाता (ब्रह्म), आर्याभि० २ ३७, ३६ २४ [देव-हितपदयो समास । हितम्=डुधाञ् धारणपोषणयो (जु०) धातो क्त । 'दधातेर्हि' इति हिरादेश]

देवहूतमम् देवैर्विद्वद्भि स्तूयते शब्द्यते सोऽतिशयित-स्तम्, भा०—विद्वद्भि स्तोतव्यम् (अ०—अग्निम्=ईश्वर भौतिक वा), प्र०—'ह्वेञ् स्पर्द्धायां शब्दे च इत्यस्य रूपम् १ ८ **देवहूतमः**=देवैर्विद्वद्भिरतिशयेन प्रशसित (अग्नि=विद्वान् राजा) ३ १३ ६ **देवहूतमान्**=ये देवैर्विद्वद्भि-र्हूयन्ते स्तूयन्ते तेऽतिशयितास्तान् (अश्वान्) ३३ ४ देवै-विद्वद्भि स्पर्द्धितान् (अश्वान्) १३ ३७ **देवहूः**=यो देवान् विदुष आह्वयति स, आ०—आप्तैर्विद्वद्भिरुपास्यते य स (यज्ञ=ईश्वर) १७ ६२ [देवोपपदे ह्वेञ् स्पर्धाया शब्दे च (भ्वा०) धातो क्विप् । यजादित्वात्सप्रसारणम् । ततो-ऽतिशायने तमप्]

देवहूतिभि विदुषा वेदाना वा वाग्भिराह्वानान्याहूतय-स्ताभि १ १२ १२ देवै प्रशसिताभिर्वाग्भि ७ १४.१

देवहूतिम्=देवैर्गहनाम (वषट्कृति=सत्यक्रियाम्) ७ १४ ३ **देवहूतिः**=देवा विद्वास आह्वयन्ति यया सा (वाक्) ६ ६५.५ देवैर्विद्वद्भि प्रशसिता (वाक्) ६ ३८ २ **देवहूतौ**=देवानामाह्वाने ६ ७३ २ दिव्यगुणाना विदुषा वा सद्ग्रहणे ६ ५२ ४ [देव-हूतिपदयो समास । हूति=ह्वेञ् स्पर्धाया शब्दे च (भ्वा०) धातो. स्त्रिया क्तिन् देवहूतिर्देवहूतय, ये देवान् आह्वयन्ते नि० ५ २५]

देवहेडनम् देवाना हेडनमनादरम्, भा०—विदुषो-ऽनादरम् २० १४ देवाना विदुषा मनादराऽऽख्यम् (व्यव-हारम्) ७ ६० ८ [देव-हेडनपदयो समास । हेडनम्=हेडृ अनादरे (भ्वा०) धातोर्भावे ल्युट्]

देवाच्या या देवानञ्चति तया (प्रशसया) १ १२७ १ (देवोपपदे अञ्चु गतिपूजनयो (भ्वा०) धातो क्विन् । 'अनिदिताम्०' इति नलोपे 'अच' इत्यकारलोपे 'चौ' इति दीर्घ पूर्वपदस्य । 'अञ्चतेश्चोपसख्यानम्' अ० ४ १ ६ वा० सूत्रेण ङीप् । 'विष्वग्देवयोश्चटेरद्र्यञ्चतौ वप्रत्यये' अ० ६ ३ ६० सूत्रेण टिस्थाने प्राप्तस्य अद्रेरादेशस्याभाव-श्छान्दस]

देवायुवम् या देवान् पृथिव्यादीन् दिव्यगुणान् विदुषो वा यावयति ताम् (वाच=वाणीम्) ३७ १६ [देवोपपदे यु मिश्रणेऽमिश्रणे च (अदा०) धातो क्विप् । 'वा छन्दसि' अ० ६ १ १०७ वा० सूत्रेण पूर्वैकादेशो न भवति । पूर्व-पदस्य दीर्घ सहितायाम्]

देवावान् बहवो देवा विद्वासो विद्यन्ते यस्य स (राजा) ४ २६ ६ [देव प्राति० भूम्नि मतुप् । छान्दसो दीर्घश्च]

देवावीः यो देवानवति स (अग्नि=विद्वान् जन) ३ २६ ८ देवै रक्षित शिक्षितश्च (विद्वज्जन) ११.३५ **देवाव्यम्**=उक्ताना देवाना पालकम्, भा०—यज्ञकर्मा-ऽनुष्ठातार वीरपुरुषम् (सेनापतिम्) ७ २२ विद्वद्-रक्षकम् (सेनापतिम्) ७.२३ यो देवानवति स देवावीस्तम् (सभापति पूर्णविद्यमुपदेशक वा), प्र०— 'अवि-तृ-स्तृ-तन्त्रिभ्य ई' उ० ३ १५८ इति रक्षणाद्यर्थादव-धातोरी प्रत्यय, ब्रह्मविदा तर्पकम् (विद्वास सभापतिम्), एतद्दिव्यविद्या-व्यापकम् (शिल्पिन जनम्) दिव्यविद्यावोधकम् (विद्वास जनम्), प्रशस्तयोगविद्याप्रापकम् (सभापतिम्) ७ २३ देवान् दिव्यान् विदुषो गुणान् वाऽवन्ति येन स देवावीस्तम् (यज्ञ=विद्याधर्मसङ्गमयितार व्यवहारम्), प्र०—अत्रो-णादिक ई-प्रत्यय ११ ८ [अवी=अव रक्षणगतिकान्ति-

७ १८ २२ **देववन्तम्**=देवा विद्वासो विद्यन्ते सम्बन्धे यस्य तम् (प्रजाजनम्) ६ ४७ १० **देववान्**=बहवो देवा विद्वासो विद्यन्ते यस्य स (राजा) ४ २६ ६ [देवप्राति० प्रशसाया भूम्नि वा मतुप्प्रत्यय]

देववाततमाः येऽतिशयेन देवान् विदुप पदार्थान् वा प्राप्नुवन्ति ते (सत्पुरुपा) ६ २६ ४ [देव-वातपदयो समासेऽतिशायने तमप् । वात =वा गतिगन्धनयो (अदा०) धातोरौणादिको बाहुलकात् क्त प्रत्यय]

देववाता देवैर्विद्वद्भि कृता (शस्ति =प्रशसा) ४ ३ १५ [देव-वातपदयो समासे स्त्रिया टाप् । वात = वा गतिगन्धनयो (अदा०) धातो क्त प्रत्यय]

देववातः देवो दिव्यो वात प्रेरको यस्य स (अग्नि = पावक) ३ २३ २ **देववाताः**=ये देवैर्विद्वद्भि सह वान्ति ते (गिर =सुशिक्षिता वाच) ३ २० २ [देव-वातपदयो समास । वात =वा गतिगन्धनयो (अदा०) धातोर्बाहु० औणादिक क्त प्रत्यय कर्त्तरि]

देववाहनः यो देवान् दिव्यान् वेगादिगुणान् वाहयति प्रापयति स (अग्नि =पावक) ३ २७ १४ [देवोपपदे वह प्रापणे (भ्वा०) धातोर्णिजन्तात् 'कृत्यल्युटो बहुलम्' इति बहुलवचनात् कर्त्तरि ल्युट् । 'कव्यपुरीपपुरीष्येपु ञ्युट्' अ० ३ २ ६५ सूत्रेण वा छन्दसि देवोपपदेऽपि वह धातोर्ञ्युट् प्रत्यय । मनो वै देववाहनम् श० १ ४३ ६]

देववीतम. यो देवान् दिव्यान् गुणान्, विदुपो वेति व्याप्नोति, प्राप्नाति सोऽतिशयित (अग्नि =विद्वज्जन) ३८ १७ यो देवान् विदुपो व्याप्नोति सोऽतिशयित (सभापति) १ ३६ ६ देवैर्विद्वद्भि कमनीयतम (अध्यापको जन) ११ ३७ [देवोपपदे वी गतिव्याप्तिप्रजनकान्त्यसनखादनेपु (अदा०) धातो कर्त्तरि क्विवन्तादतिशायने तमप्प्रत्यय]

देववीतये देवेपु दिव्यगुणेषु व्याप्तये २ २३ ७ दिव्यगुण-प्राप्तये ६ १५ १८ देवाना दिव्याना गुणाना भोगाना वा प्राप्तये ५ ६ भा०—धर्मार्ऽथकामसिद्धये २२ १३ देवाना विदुपा दिव्यगुणाना वा नीतिर्ज्ञान, प्रापण, प्रजन, व्याप्ति, प्रकाशोऽन्येभ्य उपदेशन, विविधभोगो या यस्या तस्यै (क्रियायै) प्र०—वी गतिव्याप्तिप्रजन-कान्त्यसन-खादनेपु । भा०—दिव्यसुखसम्पादनाय १ १५ दिव्याना गुणाना व्याप्तये ३७ १८ देवाना दिव्यगुणाना भोगाना च वीतिर्व्याप्तिरतस्यै १ १२ ६ विद्वत्प्राप्तये ३ २१ २ **देववीतिम्**=विदुषा वीति विशिष्टा नीतिम् १ ११३ १२ **देववीतौ**=देवैर्विद्वद्भिर्व्याप्ताया क्रियायाम् ५ ४२ १०. देवाना वीति प्राप्तिर्यस्मिन् व्यवहारे तस्मिन् ७.१६.४ देवाना वीतिर्व्याप्तिस्तस्याम् ३ १७ ५ [देव-वीतिपदयो समास । वीति =वी गति व्याप्ति प्रजनकान्त्यसनखादनेपु (अदा०) धातो 'मन्त्रेवृषेपपचमन०' अ० ३ ३ ६६ सूत्रेण स्त्रिया क्तिन्प्रत्यय]

देवव्यचस्तमम् देवैर्विद्वद्भिर्व्यचो व्याप्त तदतिशयितम् (शर्म=गृहम्) १ १४२ ५ **देवव्यचस्तमः**=यो देवान् पृथिव्यादीन् धरति भिनत्ति च सोऽतिशयित (यज्ञ) ५ २२ २ यो देवेपु दिव्येपु पदार्थेष्वतिशयेन व्याप्त (यज्ञ = सत्यव्यवहार) ५ २६ ८ [देव-व्यचस्पदयो समासे कृतेऽतिशायने तमप्प्रत्यय । व्यचस्=व्यच् व्याजीकरणे (तुदा०) धातोरौणादिकोऽसुन् । 'व्यचे कुटादित्वमनसि' इति वा० सूत्रेण ङित्वनिपेधान् 'ग्रहिज्यादिना०' सम्प्रसारण न भवति]

देवव्यचाः यो देवान् पृथिव्यादीन् व्यचति व्याप्नोति स (अग्नि) ३ ४ ४ [देवोपपदे व्यच् व्याजीकरणे (तु०) धातोरौणादिकोऽसुन्]

देवशत्रवः देवाना विदुपामरय (दुर्जना) ६ ५६ १ [देव-शत्रुपदयो समास]

देवशः देवान् (विदुपो जनान्) ३ २१ ५ [देवप्राति० 'वा छन्दसि' इति शस्]

देवशिष्टे देवस्य जगदीश्वरस्य शासन नियम प्राप्ते (रात्र्युपसौ) १ ११३ ३ [देव-शिष्टपदयो समास । शिष्ट =शासु अनुशिष्टौ (अदा०) धातो क्त]

देवश्रवः यो देवेभ्यो विद्वद्भ्य शृणोति तत्सम्बुद्धौ (शिल्पिजन) ३ २३ ३ **देवश्रवाः**=देवान् य शृणोति स (जन) ३ २३ २ [देवोपपदे श्रु श्रवणे (भ्वा०) धातोरौणादिकोऽसुन्प्रत्यय]

देवश्रीः श्रीयते या सा श्रीर्देवेपु विद्यते यस्य स (अ०—यजमान) १७ ५६ [देव-श्रीपदयो समास । श्री =श्रिञ् सेवायाम् (भ्वा०) धातो 'क्विप् वचिपृच्छि०' उ० २ ५७ सूत्रेण क्विप्-प्रत्ययो दीर्घश्च]

देवश्रुत् यो देवान् विदुप शृणोति स, भा०—सर्वश्रोता (देव =जगदीश्वर) ३७ १८ **देवश्रुतः**=या देवान् शृण्वन्ति ता (अन्वये प्रजा) ६ ३० **देवश्रुतौ**=यया दिव्यौ विद्याश्रुतौ विद्वासौ ५ १७ [देवोपपदे श्रु श्रवणे (भ्वा०) धातो कर्त्तरि क्विप्प्रत्यय । देवश्रुतम्=देवा एन शृण्वन्ति नि० २ १२]

भारती वाण्य) २८८ दिव्यानि पवित्राणि (अप = जलानि) ११ ३८ दैव्या क्रिया २८.१८. [दिवु क्रीडा-विजिगीषाव्यवहारद्युतिस्तुतिमोदमदस्वप्नकान्तिगतिषु (दिवा.) धातो पचादिषु 'देवट्' इति पाठाद् इगुपधलक्षण क प्रत्यय वाधित्वाऽच्प्रत्यये टित्वान् ङीप्। देवी.= देव्य नि० १२ ४५ देवी इय वै पृथिवी देवी देवयजनी। श० ३ २ २ २० प्राणो वा अपानो व्यानस्तिस्रो देव्य ऐ० २ ४ अथैष क प्रजापतिस्तद्यद्देव्यश्च कश्च तस्माद् देविका पञ्च भवन्ति पञ्च हि दिश श० ९ ५ १.३९ ता वाऽएता देव्य। दिशो होता श० ९ ५ १ ३९. छन्दांसि देव्य श० ९ ५ १ ३९ अन्तरिक्ष देवी जै० उ० ३ ४ ८ तिस्रो देवीरिडा मही भारती''' ' मै० ३ ११ ११ तिस्रो देवीर्वर्हिरेद सदन्त्विडा सरस्वती भारती मही गृणाना तै० स० ४ १ ८ २-३ वाग्वै तिस्रो देवी मै० १ १० ६]

देवितमे! अतिशयेन विदुषि (सरस्वति स्त्रि) २ ४१ १६ [देवी प्राति० अतिशायने तमप्। ततष्टाप्। 'घरूप कल्प०' अ० ६ ३ ४३ सूत्रेण पूर्वस्य ह्रस्व]

देवृकामा देवर की कामना करने वाली (स्त्री), स० प्र० १५२, अथर्व० १४ २ १८ देवर से नियोग करने वाली (स्त्री), पत्र० वि०, अथर्व० १४ २ १७ नियोगेन द्वितीय-वरस्य कामनावती (स्त्री), ऋ० भू० ५३२, अथर्व० १४ २ १८ देवर की कामना करती हुई अर्थात् नियोग की भी इच्छा करने हारी (स्त्री), स० वि० १३८, १० ८५ ३ ['देवृ' इत्युपपदे कमु कान्तौ (भ्वा०) धातो 'कमेर्णिङ्' इति णिङ् प्रत्ययान्ताद् 'शीलिकामिभक्ष्याचरिभ्यो ण०' अ० ३ २ १ वा० सूत्रेण ण। तत स्त्रिया टाप्। देवृ=दिवु क्रीडादर्थेषु (दिवा०) धातो 'दिवेर्ऋ' उ० २ ९९ सूत्रेण ऋ प्रत्यय]

देवेद्धेषु देवैरिद्धेषु प्रज्वलितेषु (अग्निषु) ७ १ २२ [देव-इद्धपदयो समास। इद्ध = ञिइन्धी दीप्तौ धातो क्त]

देवेभिः दिव्यै पृथिव्यादिभि ३ ४ ४७ दिव्यगुणै (जनिभि = जन्मभि) २६ २४ दिव्यगुण-कर्म-स्वभावै-विद्वद्भि ३ २४ ४ दिव्याभि प्रकाशयुक्ताभि प्रजाभि १७ २९ दिव्यगुणै पदार्थैरिव विद्वद्भि ३ १० ४ सूर्यादि-भिर्दिव्यैर्वा (जनिभि = जन्मभिर्जनकैर्वा) ६ ५० १३ विद्वद्भि (जनै) ७ ५ जिगीषुभिर्वीरै (जनै) १ १८८ १ दिव्यैरवादिभि पदार्थै सह १ ५९ १ धार्मिकै सभ्यैर्विद्वद्भि सह ३ ४० ३ दिव्य गुणों के साथ, आर्याभि० १ ५, ऋ० १ १ १ ५ [देव प्राति० भिस ऐसादेशोच्छान्दसत्वान्न भवति]

देवोदेवः विद्वान् विद्वान् (जन) ५ ८२.१६ [देव-पदस्य वीप्साया द्विवचनम्]

देव्यम् देवेषु विद्वत्सु भवम् (वर्ण = रूपम्) १ १४० ७. **देव्यौ** = देवेषु विद्वत्सु कुशलौ (अध्वर्यू = विद्वांसौ) ३३ ७३. देवेषु दिव्येषु विद्वत्सु गुणेषु वा कुशलौ (मनुष्यौ) ३३ ३३. [देवप्राति० भवार्थे 'भवे छन्दसि' अ० ४ ४ ११० सूत्रेण यत्। 'तत्र साधु' रिति वा यत्]

देव्यः देदीप्यमाना. (अ०—विदुष्य स्त्रिय) ३७ ४. **देव्या** = देदीप्यमानया (धिया = प्रज्ञया कर्मणा वा) ३३ ९१ दिव्यगुणसहितया विद्यायुक्तया मेनया १ ५३ ५ शुद्धविद्याशिक्षाऽऽपन्नया (धिया = प्रज्ञया क्रियया वा) ११ ४१ **देव्याम्** = विदुष्याम् (स्त्रियाम्) २ ४१ १७ **देव्याः** = दिव्यसुखप्रापिकाया (उषस = प्रभातवेलाया) ४ १ १७ **देव्यै** = दिव्यायै (शूरवीरायै राज्यै) ६ ७५ १५ [देवी-शब्दस्य रूपाणि। 'देवी' इति व्याख्यातम्]

देशे स्वनिवासे स्थाने ३४ ११ [दिश अतिसर्जने (तुदा०) धातो 'अकर्त्तरि च कारके०' इति सूत्रेण कर्मणि घञ्-प्रत्यय]

देष्णम् दातु योग्यम् (धनादिकम्) ७.३२ २१ दातव्यम् (धेनु = वाचम्) ६ ६३ ८ **देष्णस्य** = दातु (इन्द्रस्य = सुखप्रदातुर्जनस्य) ३ ३० १६ **देष्णे** = दातु योग्ये (उक्थे = वक्तव्ये) ४ २० १० [डुदाञ् दाने (जु०) धातोर्बाहु० औणादिक इष्णुच्-प्रत्यय। वर्णव्यत्ययेन उकारस्याकारादेश]

देयम देयास्म, प्र०—डुदाञ् दाने इत्यस्मादाशीर्लिङ्-युत्तमबहुवचने 'लिङ्याशिष्यङ्' इत्यङ् 'छन्दस्युभयथा' इति मस आर्धधातुकसंज्ञामाश्रित्य सकारलोपाऽभाव, सार्वधातुक-संज्ञामाश्रित्य 'अतो येय' इतीयादेशश्च २ ३२]

देहत् वर्धये ७ ५० २ [दिह उपचये (अदा०) धातो-र्लेट्। 'वहुल छन्दसी' ति शपो लुङ् न भवति]

देहि दीजिये, आर्याभि० २.३३, ३ १७ देहि ददाति वा २ २६ [डुदाञ् दाने (जु०) धातोर्लोटि मध्यमैकवचनम्। 'घ्वसोरेद्धाव् अभ्यासलोपश्च' इति सूत्रेण हौ परे एकारा-देशोऽभ्यासलोपश्च]

देह्यः उपचेतु योग्य (इन्द्र = राजा) ६ ४७ २ उप-चेतु वर्धयितु योग्य (सर्वपूज्यो राजा) ७ ६ ५. [दिह उप-चये (अदा०) धातोर्ण्यत् प्रत्यय]

दैवताय धनसम्बन्धिने (सवित्रे = ऐश्वर्योत्पादकाय पुरुषाय) २९ ६० [देवताशब्दात् 'तस्येदम्' इति सूत्रेण

प्रीत्यादिषु (भ्वा०) धातो 'अवितृस्तृतन्त्रिभ्य ई' उ० ३ १५८ सूत्रेण ई प्रत्यय । देव-अवीपदयो. समास]

देवासः ये दीव्यन्ति विद्यादिगुणै प्रकाशन्ते तत्सम्बुद्धौ= (भा०—परमविद्वासो जना) ४ ५ प्र०—अत्र 'आज्जसेर-सुक्' इत्यसुगागम १ १९ ३ विद्वास शूरा (जना) ३ २९ ६ प्रशस्ता विद्वास (जना) १.८३ २ विद्या कामयमाना (सज्जना.) ३ २ ३ प्राणा इव विद्वास (जना) ७ ५९ १ दिव्यस्वभावा विद्यार्थिन ७ १७.६ विद्याभि प्रकाशमाना (सर्वविद्वास) २ ४१ १५ दिव्यगुणा १ १२३ १ दिव्यगुणविशिष्टा (मरुद्गणा =मरुता समूहा) १ २३ ८ दिव्यगुणयुक्ता (प्राणादय) ७ १९ हे राजसभा-सदो विद्वास, अ०—राजसभाया सभ्या जना ७ १९ दिव्यगुणा पृथिवी-चन्द्रादय प्रकाशिता १.१९ ६. [देव प्राति० जसोऽसुगागम । देव इति व्याख्यातम्]

देवि दिव्यगुणैर्विराजमानाया (अ०—वाचो विद्युतो वा) प्र०—अत्र 'अर्थाद्विभक्तेर्विपरिणाम ' इति विभक्तेर्वि-परिणाम ४ २३ देदीप्यमाने (स्त्रि) १३ २१ दिव्यगुणे स्त्रि १ ४८ १५ हे दिव्य कमनीय (शाला) स० वि० १६६, अथर्व० ९ २ ३ ७ दात्रि (स्त्रि) १ १२४ १२ विद्या-सुशिक्षाभ्या द्योतमाने (कन्ये) १ ४८ १ विदुषि कुमारि ३४ ११ देदीप्यमाना (अ०—वाग्विद्युद् वा) ४ २० कामय-माने (विदुषि मात) ६ ६१ ६ सुलक्षणै सुशोभिते (कन्ये) १ १२३ ३ विद्यायुक्ते (पत्नि !) ११ ६९ सुशोभिते (विदुषि स्त्रि) ३ ६१ २ **देवी**=देदीप्यमाने (उपासा-नक्ता=रात्रिदिने इवाऽध्यापिकाऽध्येत्र्यौ स्त्रियौ) २८ ३७ दात्र्यौ (ऊर्जाहुती=सुसस्कृताऽन्नाहुती) २८ ३९ दिव्यगुणे (रोदसी=प्रकाशभूमी) ६ ५० ५ दिव्यगुण-सम्पन्ने (दुर्ये=गृहरूपे) ५ १७ दिव्यगुण-कर्म-स्वभावयुक्ते (द्यावापृथिवी=प्रकाशभूमी) ३ २५ ३ दिव्यगुणयुक्ते द्यावापृथिव्यौ भूमि-सूर्यप्रकाशौ १ १०६ ३ दिव्यगुण-प्रापिके (उपासानक्ता=रात्रिदिने) २८ १६ कमनीये (दुघे=प्रात सायवेले) २१ ५२ **देवी**=दिव्या स्त्री १२ ६५ सकलविद्या-धर्मा-चरणेन प्रकाशमाना, भा०—पूर्ण-विद्यावती स्त्री (वैश्वदेवी) १९ ४४ दिव्यशिक्षा-शास्त्र-विद्याभिर्देदीप्यमाना (धिषणा=प्रज्ञा) १ १०९ ४ देदीप्यमाना विदुषी माता ४ ५५ ७ दिव्यगुणयुक्ता (अदिति =विद्या) १ १०६ ७ प्रकाशदात्री (सरस्वती=स्त्री) २१ ५१ दिव्यगुण-शास्त्र-बोधयुक्ता (विदुषी स्त्री) ५ ४३ ११ सुखदात्री (स्वसदृशी विदुषी स्त्री) १ ४८ ३ दिव्यगुणा (धिषणा=प्रज्ञेव वर्त्तमाना स्त्री) २७ २४ दिव्यगुणैर्वर्त्तमाना स्त्री १ ५६ ४ सूर्यज्योति ऋ० भू० २०२, ऋ० ८ १.२३ ७ विदुषी (अदिति =अध्या-पिका) ११ ६१. प्रकाशमाना (उषा) १ ९२.१० दिव्या (वाक्=वाणी) ८ ३७ पतिव्रता विदुषी स्त्री २८ ३९ धर्मात्मा स्त्री २८ ३८ **देवीम्**=देदीप्यमाना विदुषी (स्त्रियम्) ४ ४३.१. दिव्या प्रज्ञाम् ५.६९ ३ दिव्यगुणकर्म-स्वभावाम् (इळम्=वाचम्) ७ ४४ २ देदीप्यमाना विद्वद्भि कमनीयाम् (धिय=धारणावती प्रज्ञाम्) ३ १८ ३ द्योतिकाम् (उषसम्) १ ११५ २ **देवीः**=देव्य (आप = जलानि), सर्वप्रकाशक, सर्वानन्दप्रद सर्वव्यापक ईश्वर, ऋ० भू० ३०८, ३६ १२ दिव्या (आप =जलानि) ३६ १२ दिव्यगुणप्रदा (स्त्रिय) ११ ६१. देदीप्यमाना (वाड्नाडीधारणशक्तय) २० ४३ दिव्यविद्यासम्पन्ना (ग्ना =वेदवाग्ज्ञा स्त्रिय) ११ ६१ विद्यायुक्ता (स्त्रिय) ११ ६१ कमनीया (स्त्रिय) ११ ६१ विद्यादिगुणै प्रकाश-माना (सुपत्नी =शोभना पत्नी) २० ४० विदुष्यो ब्रह्मचारिण्य (कन्या) ७ ४७ ३ आनन्दप्रदा (नद्य) ७ ५० ४. प्रमोदिका (आप =जलानि) ७ ४९ १ देव्यो देदीप्यमाना (वाक्, पृथिवी, प्रशस्त ज्ञानयुक्ता वाण्य) ३ ४ ८ दिव्यगुणकर्मस्वभावा (स्त्रिय) ४ ५१ ५ दिव्य-रूपसुशीला (आप.=कन्या) १२ ३५ दिव्या विदुषी (मातर =जनन्य) १२.७८ देदीप्यमानानि (द्वार = द्वाराणि) २७ १६ देव्य (आप =जलानि), सर्वप्रकाशक-स्सर्वानन्दप्रद ईश्वर, प० वि० २१२, ३६ १२ दिव्या शुद्धा (पत्नी) ५ ५ ५ कमनीया (वाच) १.१४२ ६ दिव्यविद्यायुक्ता (विदुष्य स्त्रिय) १ १२४ १३ दिव्यगुण-सम्पन्ना (अ०—देव्य आप), प्र०—'वाच्छन्दसि' इति जस पूर्वसवर्णत्वम् ४.१२ दिव्यसुखप्रदा शुद्धा (आप = जलानि) ६ १० सद्विद्याप्रकाशवत्य (अ०—विदुष्य स्त्रिय) ६ १३ दिव्या विदुष्यो ब्रह्मचारिण्य स्त्रिय १७ ५४ विद्वान् नरो की विदुषी स्त्रिया, स० वि० १०४, २ ३५ ५ द्योतमाना. (द्वार =द्वाराणि) १ १३ ६ देदीप्य-माना दिव्यगुणहेतव (इडा-सरस्वती-महीनीतय) १ १३ ९ दिव्यगुणत्वेन दिव्यगुणप्रापिका (आप =जलानि) १ २३ १८ दिव्यगुणयुक्ता (आप =जलानि), प्र०—अत्र 'सुपा सुलुक्' इति पूर्वसवर्णादेश १ १२ विद्यया प्रकाशिता (जननी, अध्यापिकोपदेष्ट्री च) २१ ५४ दिव्या श्रिय २८ १८ देवाना विदुषामिमा स्त्रियो देव्य १ २२ ११ त्रिविधा वाणी (इडा, सरस्वती-भारती) २९ ८ दात्र्य (भा०—त्रिविधा वाच) २८ ३१ शुद्धा रोगनाशिका (आप =जलानि) सकलविद्या-प्रकाशिका (इडा-सरस्वती-

(हेळांसि=अनादररूपाणि कर्माणि) ६ ४८ १०. [देव-प्राति० प्राग्दीव्यतीयेषु भव-जात-कृत-कुशल-साधु-लब्धा-द्यर्थेषु 'देवाद् यञञौ' अ० ४ १ ८५ वा० सूत्रेण यञ्-प्रत्यय । दैव्या वाऽएते होतारौ यत् परिधयोऽग्नयो हि श० १ ८ ३ १० प्राणापानौ वै दैव्या होतारौ ऐ० २.४ वत्सा वै दैव्या अध्वर्य्यव श० १ ८ १ २७]

दोग्ध्री प्रपूरिका (धेनु=गौ) २२.२२ [दुह प्रपूरणे (अदा०) धातो कर्त्तरि तृजन्तात् स्त्रिया ङीप्]

दोघम् प्रपूरकम् (विद्वास जनम्) ५ १५ ५ [दुह प्रपूरणे (अदा०) धातोश्छान्दसत्वाद् इगुपधलक्षण कप्रत्यय वाधित्वा अच्प्रत्यय । ह्स्य घकारश्छान्दस]

दोधतः क्रुद्ध्यत (शत्रोर्जनस्य), प्रमाण—दोधतीति क्रुद्ध्यतिकर्मा, निघ० २ १२, १ ८० ५ हिसकस्य (दुष्ट-जनस्य) २ २१ ४ [दोधतीति क्रुध्यतिकर्मा निघ० २ १२. तत शतृप्रत्ययान्तस्य रूपम्]

दोधवीति भृश कम्पयति २ ४ ४ [धूञ् कम्पने (क्र्या०) धातोर्यङ्लुगन्ताल् लट्]

दोर्भ्याम् भुजदण्डाभ्याम् २५ ३ **दोः**=भुजस्य वलम् ५ ६१ ५ [दमु उपशमने (दिवा०) धातो 'दमेर्डोसि' उ० २.६९. सूत्रेण डोसि प्रत्यय । दो शिताम भवति। दोर्द्रवते नि० ४ ३]

दोषा रात्रौ ४ २ ८ रात्रि ७ १ ६ प्रभातवेला ६ ३९ ३ रात्री ५ ३२.११ **दोषाः**=रात्रिषु, प्र०—अत्र 'सुपाम्०' इति सुव्व्यत्यय, दोषेति रात्रिनामसु पठितम् निघ० २ ७, १ ३४ ३ [दुष वैकृत्ये (दिवा०) धातोर्बाहु० औणादिक (४ १७५) आ प्रत्यय । स्वरादिपाठादव्यय-त्वम् । दोषा रात्रिनाम निघ० १ ७ दोषा=रात्रौ नि० ३.१५]

दोषावस्तः अहर्निशम्, प्र०—दोषेति रात्रिनामसु पठितम् निघ०' १ ७ रात्रे प्रसङ्गाद् वस्त इति दिननामाऽत्र ग्राह्यम् १ १ ७ दोषा रात्रि वस्ते स्वतेजसाऽऽच्छाद्य निवारयति सोऽग्निस्तम्, अ०—दोषावस्तारमग्निम् ३ २२ ['दोषा' इति व्याख्यातम् । वस्तोः=अहर्नाम निघ० १ ९ तयो समास । अथवा दोषा इत्युपपदे वस आच्छादने (अदा०) धातोर्बाहु० औणादिक क्त प्रत्यय]

दोहत् दोग्धि १ १६४ २६ **दोहते**=प्रपिपर्त्ति १ १३४ ४ **दोहसे**=प्रपिपर्सि ७ १२ [दुह प्रपूरणे (अदा०) धातो सामान्ये लङ् । अडभावश्छान्दस । अन्यत्र लट् । उभयत्र 'बहुल छन्दसि' इति शपो लुङ् न । दोहत्=दोग्धि नि० ११ ४३]

दोहनाः पूरका (जना) १ १४४ २. [दुह प्रपूरणे (अदा०) धातो कर्त्तरि नन्द्यादित्वाल् ल्यु प्रत्यय । नन्द्यादिराकृतिगण]

दोहम् प्रपूर्त्तिम् ३८ २८ **दोहः**=प्रपूर्ण सामग्री-समूह ८ ६२ [दुह प्रपूरणे (अदा०) धातो भावे घञ्-प्रत्यय]

दोहसे दोग्धुम् ६ ४५ ७. कामान् दोग्धु प्रपूरयितुम् ६ ६६ ५ कामाना प्रपूरणाय १ १४१ २ [दुह प्रपूरणे (अदा०) धातो 'तुमर्थे सेसेनसे०' अ० ३ ४ ९ सूत्रेण असे-प्रत्यय]

दौर्गहे दुर्गहने (दु खे) ४ ४२.८ [दुर्गहप्राति० भवार्थे इदमर्थे वा अण्प्रत्यय । दौर्गह=अश्वनाम निघ० १ १४]

दौर्व्रत्येन दुष्टाचारेण ३९.९ [दुर्व्रतप्राति० भावे कर्मणि वा ष्यञ्-प्रत्ययः]

द्यवि प्रकाशे ३ ३ ५३ समीपस्थे प्रकाशितेऽप्रकाशिते वा (विषये) ७ ३१ ९ **द्यविद्यवि**=दिने दिने, अ०—प्रतिदिनम्, प्र०—'नित्यवीप्सयो' अ० ८ १ ४ अनेन द्वित्वम् 'द्यवि-द्यवि इत्यहर्नामसु पठितम्' निघ० १ ९, १ ४ १. **द्यवी**=द्योतमाने (द्यावापृथिवी) ४ ५६ ५ [द्यवि-द्यवि अहर्नाम निघ० १ ९. द्युरित्यह्नो नामधेयम्, द्योतत इति सत नि० १.६ द्युभि=अहोभि नि० ६ १]

द्याम् कामनाम् ५ ६३.६ विद्युतम् ५ ५७ ३ आका-शम् १ १८० १०. प्रकाशम् १.१७३ ६ विद्या-न्याय-प्रकाशम् १ १२१ ३ सूर्यं विद्युत वा ६ ४७ २९ सर्वप्रका-शम् २३ ५० सूर्यादिका सृष्टि, भा०—प्रकाशसहिता सूर्यादिलोकप्रभृति सृष्टिम् २३ १ राजपालन-विनय-प्रका-शम् १ ५२ ११ सूर्यादिक प्रकाश वा ४ ३० सुप्रकाशाम्, भा०—वहुविध प्रकाशो यस्या ताम् (नावम्) २१ ६ आनन्दम् प्र०—अत्र दिवुधातोर्बाहुलकाड् डो-प्रत्ययष्टि-लोपे प्राप्ते वकारलोपश्च १ २६ कमनीया विद्याम् ६ ६७ ६. किरणप्रकाशवद् विद्याप्रकाशम् १ ५१ ९ सूर्यपर्यन्त जगत् को स० प्र० २८२, १० १२१ १ प्रकाशमयी योगविद्याम् १७ ६८ प्रकाशमय विद्यमान सूर्यादिलोकसमूह वा १ ६७ ३ द्योतमान सूर्यम् १ १६४ ११ दिवम्, प्र०—१० २३ नि० १३ ४ प्रकाशात्मकलोकादिकम् ३ ३२ ८ द्युलोक को आर्याभि० २ २०, १३ ४ जिसमे सूर्य का प्रतिभास आवे वैसी प्रकाशस्वरूप भूमि के समान शाला को स० वि० १६७, अथर्व० ९ ३.३ १५ [द्यौरिति अहर्नाम निघ० १ ९

अण्प्रत्यय । देवता=देवप्राति० 'देवात् तल्' इति तल्-प्रत्यय । स्त्रियां टाप्]

दैवम् देव आत्मनि भवम्, देवस्य जीवात्मन साधन-मिति वा (मन=सङ्कल्पविकल्पात्मकमन्त करणम्), भा०—परमेश्वराज्ञासेवन, विद्वत्सङ्गमनेकविधसामर्थ्ययुक्त मन ३४ १ देव अर्थात् आत्मा का मुख्य साधन, भूत भविष्यत् वर्त्तमान काल का ज्ञाता (मन) आर्याभि० २ ४३, ३४ १ दिव्यगुणयुक्त (मन=मन) स० प्र० २४६, ३४ १ ज्ञानादिदिव्यगुणयुक्तम् (मन) ऋ० भू० १५२, ३४ १ **दैवेन**=देवेन निर्मितेन (सूर्येण) ३७ १४. [देव इति व्याख्यातम् । ततो भवार्थेऽण्प्रत्यय । 'तस्येदम्' इति वा अण्-प्रत्यय । अथवा देवप्राति० प्राग्दीव्यतीयेष्वर्थेषु 'देवाद् यञ् अञौ' अ० ४ १ ८५ वा० सूत्रेण अञ्प्रत्यय । वृहन्त (पशव) दैवा मै० ३ १३ ११]

दैववातम् देवैर्विज्ञाताना सम्बन्धिनम् (अग्नि=पावकम्) ३ २३ ३ **दैववाताय**=दिव्यवायुविज्ञानाय ६ २७ ७ **दैववाते**=देवाना प्राप्ते भवे (सृञ्जये=सङ्ग्रामे) ४ १५ ४ [देव-वातपदयो समासे 'तस्येदम्' इति सूत्रेण अण्-प्रत्यय । अथवा=दैव-वातपदयो समास]

दैवी देवानामियम् (स्वस्ति=स्वास्थ्यम्) ३ ३८ ६ **दैवीम्**=देवानामाप्तानाम् विदुषामिय ताम् (नावम्) २१ ५ दिव्यगुणसम्पन्नाम् (धियम्) ४ ११ **दैवीनाम्**=देवेषु दिव्यगुणेषु भवाना (क्षितीनां=भूमीनाम्) ३ २० ४ **दैवीः**=देवाना विदुषामिमा (विश=प्रजा) ६ ६ देदीप्यमाना (द्वार=अवकाशरूपा दिश) २६ ३० देवाना न्यायकारिणा विदुषामिमा (विश=प्रजा) २८ १४ देवसम्बन्धिनीर्दिव्या (विश=प्रजा) ६ ७. अ०—दिव्या (विश=प्रजा) १७ ८६ शास्त्रज्ञातार वेत्तारो वा (विश=प्रजाजना) १७ ८६ [देवप्राति० 'तस्येदम्' इति सूत्रेण अण्-प्रत्यये 'टिड्ढाण०' इति स्त्रियां ङीप्प्रत्यय । देव्येषा नौर्यद्यज्ञ जै० १ १६६ पञ्च दिशो दैवीर्यज्ञमवन्तु देवी तै० स० ५ ४ ६ २ मै० ३ ३ ८ ब्राह्मण उभे वाचौ वदति दैवी च मानुषी च काठ० १३६ ५ श्रीर्हि मनुष्यस्य दैवी ससत् तै० स० ७ ४ २.१२ दैवीर्वा एता विशो यत् पशव काठ० २६ ७]

दैव्यम् देवेषु दिव्येषु रश्मिषु भवम् (चेतन ब्रह्म) २ ५ २ देवै सम्पादित विद्वांसम् (जनम्) ६ १६ ६ देवेषु विद्वत्सु भवम् (जनम्) १ ४४ ६ विद्वद्भि सत्कृतम् (जनम्) ६ ५२ १२ देवैर्विद्वद्भिर्निष्पादितम् (शर्ध=वलम्) ७ ४४ ५ देवेषु विद्वत्सु कुशलम् (रुद्र=सभाध्यक्षम्) १ ११४ ४. देवेषु विद्वत्सु प्रियम् (सह=वलम्) ४ ४२ ६ दिव्येषु गुणेषु भवम् (जन=विद्वासम्) ५ १३ ३ **दैव्यस्य**=यो देवै सह वर्त्तते तस्य (शिष्यगणस्य) २ ३३ ७ देवैर्विद्वद्भिर्लब्धस्य जगदीश्वरस्य २ ३८ ६ दिव्यसुख-प्रापकस्य (अवस=रक्षणस्य) ४ २१ १० देवै कृतस्य (अवस=रक्षाऽऽदे) ५ ५७.७. दिव्येषु पदार्थेषु साक्षात्-कृतस्य (सवितु=जगदीश्वरस्य) ४ ५४ ४ **दैव्यः**=देवेषु लब्ध (विद्वान् जन) २ ३ १० यो देवेषु विद्वत्सु जात (जन) प्र०—अत्र 'देवाद्यञञौ' अ० ४ १ ८५ इति वार्त्तिकेन प्राग्दीव्यतीयाऽन्तर्गते जातेऽर्थे यञ्प्रत्यय ३ ५५ देवै कृत (व्यवहार) ६ ५० १२ देवै कृतो विद्वान् (सुप्रसिद्धो राजा) ७ ८ ४ देवेषु विद्वत्सु प्रीत (अतिथि=विद्वज्जन) १२ ३४ देवेषु कुशल (अग्नि=जगदीश्वर) प्र०—अत्र कुशलेऽर्थे देवशब्दाद् यञ्-प्रत्यय १ २७ १२ **दैव्याय**=दिवि भव दिव्य, तस्य भावस्तस्मै (कर्मणे=पञ्चविध-लक्षणचेष्टामात्राय), भा०—उत्तमसुखलाभाय, दिव्यसुखाना-मुत्पादकाय १ १३ **दैव्यानि**=देवैर्विद्वद्भिर्निर्वृत्तानि वस्तूनि १३ १३ दिव्यगुणानि (व्रतानि=कर्माणि) १ २४ २ देवैर्विद्वद्भि कृतानि कर्माणि ४ ४ ५ देवेषु विद्वत्सु जातानि (व्रतानि) १ ६२.१२ दिव्यैर्गुणै कर्मभिर्वा निर्वृत्तानि (व्रतानि) १ ७० १ दिव्यगुणानि (व्रतानि=सत्यानि कर्माणि-वस्तूनि वा) १ १२४ २ **दैव्याः**=देवेषु गुणकर्मस्व-भावेषु कुशला (ऋषय) ३४ ४६ **दैव्ये**=देवेषु विद्वत्सु कुशले (जने) ४.५४ ३ **दैव्येन**=दिव्येन (वचसा=वच-नेन) ४ १.१५ देवेषु पृथिव्यादिषु भवेन (सूर्येण=ईश्वरेण) ३७ १५ दिव्यस्वरूपेण (सवित्रा=विद्युद्रूपेण) ४ ३४ ८ देवैर्विद्वद्भि कृतेन विदुषा (जनेन) ७ ५३ २ **दैव्या**=दिव्येषु पदार्थेषु भवौ (प्रसिद्धाऽप्रसिद्धाऽग्नी), प्र०—अत्र प्राग्दीव्यतीयार्थेषु यञ्-प्रत्यय १ १३ ८ देवेषु दिव्येषु गणेषु भवौ (देवा=वायुवह्नी) २८ १७ देवेषु कुशलौ (कारू=शिल्पिनौ) २६ ३२ देवेषु विद्वत्सु साधू (भिषजा=चिकित्सकौ) २८ ७ कमनीयेषु कुशलौ (देवा=विद्वासौ जनौ) २८ ४० देवेषु दिव्येषु कर्मसु साधू (कवी=मेधा-विनौ जनौ) २८ ३० देवेषु लब्धौ (अश्विना=अग्निवायू) २१ ३६ देवेषु भवौ (अध्यापकोपदेशकौ) २० ४२ दिव्य-गुणसम्पन्नौ (अश्विना=अध्यापकोपदेशकौ) २० ६२ देवेषु दिव्येषु वोधेषु कुशलौ (कवी=अध्यापकोपदेशकौ) १ १८८ ७ विद्वत्सु कुशलौ (महाविद्वासौ) ३ ७ ८ दिव्य-गुणावेव विद्वासौ स्त्रीपुरुषौ) ३ ४ ७. देवेषु प्रयुक्तानि

सीर०' अ० ४ २.३२ सूत्रेण छ प्रत्यय.। द्यावापृथिवीयम् चक्षुपी द्यावापृथिवीयम् कौ० १६ ४ द्यावापृथिवीय द्विकपालम् मै० २ १ ३ वशा द्यावापृथिवीया मै० ३ १३ १२. द्यावापृथिवीया एककपाल. (सौम्यश्चरु) मै० १.१० १, २ ६ २ द्यावापृथिवीय (पय.) प्रह्रियमाणम् मै० १ ८.१०.]

द्यावाभूमी सूर्यपृथिवी-लोकौ १७ १९ प्रकाशपृथिव्यौ ४ ५५ १. भूमि से लेकर स्वर्ग पर्यन्त, आर्याभि० २ ३४, १७ १९. [दिव्-भूमिपदयो समास । 'दिवो द्यावा' सूत्रेण पूर्वपदस्य द्यावादेश]

द्युक्षम् प्रकाशमानम् (अग्निं=विद्युदादिस्वरूपम्) २ २ १ द्युलोकस्थम् (सादन=गृहम्) १ १३६ २ द्योतमानम् (अर्यमण=न्यायाधीशम्) १.१३६ ६. द्यौर्नीति प्रकाश क्षियति निवसति यस्मिँस्तत् (भा०=राज्यम्) ३ ३१ धर्म-विद्याप्रकाशयुक्तम् (विपयम्) ५ ३९ २ कमनीयम् (धर्मज धनम्) ७ ३१ २ **द्युक्षः**=द्यौरिव क्षा भूमिर्यस्य (इन्द्र=राजादिसभ्यो जन) ६ ३७.२ यो दिव प्रकाशान् क्षियति वासयति स (विद्वज्जन) ७.३४ २४ द्युतिमान् (राजा) ६ २४ १ [द्यु=अहर्नाम निघ० १.९ तदुपपदे क्षि निवासगत्यो (तुदा०) धातोरौणादिक ड प्रत्यय.। द्यु-क्षापदयोर्वा समास । क्षा पृथिवीनाम निघ० १ १]

द्युक्षवचसम् द्योतकवचनस्य प्रकाशकम् (विप्र=मेधाविजनम्) ६ १५ ४ [द्युक्ष-वचस्पदयो समास । द्युक्षमिति व्याख्यातम्]

द्युक्षा दिवि प्रकाशे निवासो यस्या सा (अग्नेर्ज्वाला), प्र०—अत्र 'क्षि निवासगत्यो' इत्यस्मादौणादिक डप्रत्यय १.१०० १६ [द्युक्षमिति व्याख्यातम् । तत स्त्रिया टाप्]

द्युक्षासः दिवि प्रकाशे क्षियन्ति निवासयन्ति ते (इन्दव=सस्नेहा. पदार्था) ३ ४० ५ [द्युक्षमिति व्याख्यातम् । ततो जसोऽसुगागम]

द्युतद्यामा द्युतन्तो विद्योतमाना पदार्था यया सा (मनीषा=प्रज्ञा) ६ ४९ ४ द्युतद् दीप्यमानमग्निं याति तम् (वायु=प्राणादिलक्षणम्) प्र०—अत्र विभक्तेर्लुक् 'सहितायाम्' इति दीर्घ ३१ ५५ **द्युतद्यामानम्**=प्रहरान् द्योतयन्तीम् (उषस=प्रातर्वेलाम्) ५ ८० १. [द्युतदुपपदे या प्रापणे (अदा०) धातोर्मनिन् प्रत्यय । द्युतद्=द्युत दीप्तौ (भ्वा०) धातो शतृप्रत्यय । 'बहुल छन्दसी' ति शपो लुक्]

द्युतम् कारणस्था दीप्तिम्, प्र०—अत्र 'द्युत दीप्तौ' इत्यस्मात् क्विप्प्रत्यय ३ १६ **द्युता**=प्रकाशेन ६.२ ६ [द्युत् दीप्तौ (भ्वा०) धातो. क्विप्]

द्युतयन्त द्योतयन्तु २.३४.२. [द्युतमिति व्याख्यातम्। तत. 'तत्करोति तदाचष्टे' इति णिजन्ताद् धातुत्वे लङ्। अडभाव:]

द्युतानम् सत्यार्थद्योतकम् (अग्निं=पावकम्) ६ १५.४ **द्युतानः**=देदीप्यमान (सुप्रसिद्धो राजा) ७ ८४ यथा दिव सद्विद्यागुण विस्तारयन्ति तथा (परमविद्वज्जन) ५.२७ प्रकाशमान (सूर्य:) ४.५ १० [द्युत दीप्तौ (भ्वा०) धातो शानच् । 'बहुल छन्दसी' ति शपो लुक् । अथवा कर्त्तरि चानश् शप्-लुक् च । द्युतानो मारुतस्तेपा (देवानाम्) गृहपतिरासीत् ता० १७ १ ७. पशवो वै द्युतानो मारुत. काठ० ३५ १६ यो वाऽयं (वायु) पवत ऽएष द्युतानो मारुत. श० ३ ६ १ १६]

द्युभक्तम् यो दिव भजति तम् (विद्वज्जनम्) ७ ४०.२ विद्युदादिभिस्सेवितम् (रत्नं=धनम्) ४ १ १८ **द्युभक्ताः**=सूर्यादिप्रकाशेन सम्भाग प्राप्ता. (किरणा) १ ७३.६ [द्युभक्तपदयो समास । 'द्यु' इत्युपपदे वा भज सेवायाम् (भ्वा०) धातोरौणादिक क्त]

द्युभिः प्रकाशयुक्तैर्गुणैर्द्रव्यैर्वा १ ५३ ४ प्रकाशादिगुणविशेषै, प्र०—दिवो द्योतनकर्माणामादित्यरश्मीनाम्, निघ० १३ २५, ३ ८ धर्म्यै कामै ५ १६ २. दिवसै १ ११२ २५. दिनै. ३.३१.१६ प्रकाशमानै (दिनै रात्रिभिर्वा) ३५ १ देदीप्यमानै (देवेभि=किरणै) ३ ३ २ कामयमानै (विभि=पक्षिभिरिव) ५.५३ ३ विज्ञानादिप्रकाशै ७ ३१ ८. द्योतमानैर्दिनै ६ ५ ६ [द्युरिति अहर्नाम निघ० १ ९. द्युरित्यह्नो नामधेय द्योतत इति सत । द्युभि:=अहोभि नि० ६ १.]

द्यौरिव सूर्य इव ५ ५७.४ यथा सूर्यप्रकाशयुक्त आकाशे, भा०—सूर्यप्रकाशसदृश ३.५ सूर्यप्रकाशवत् २ ४ ६ [द्यौ-इवपदयो समास । द्यौ=द्यौप्राति० प्रथमैकवचनम्]

द्यौः प्रकाशयुक्त पदार्थ ३६ १७ प्रकाशमयो विद्युत् सूर्यादिलोकसमूह १ २२ १३ प्रकाशमान सूर्यादि १ ९६ ६. विद्युत्प्रकाश १ ८३ ३ आकाशस्थ (भानु=सूर्य) ४ १ १७. प्रकाशात्मक सूर्यादिलोक, ऋ० भू० १२७, ३१ १३. सूर्यादिप्रकाश १ १०० १९ प्रकाशमान परमेश्वर सूर्यादिर्वा १ ८९.१० विद्याप्रकाश प्र०—दिवो द्योतनकर्मणामादित्यरश्मीनाम्, नि० १३ २५, १ २६ सूर्यादिप्रकाशवान् पदार्थ ३२ ६ तत्प्रकाश २६ १ आकाशस्य,

द्योप्राति० द्वितीयैकवचने 'औतोऽम्शसो' अ० ६ १.९३ सूत्रेणामि परत आकारान्तादेश.। द्योशब्द:=द्युत् दीप्तौ (भ्वा०) धातोर्बाहुलकाद् औणादिको (उ० २ ६७) डो प्रत्यय । द्योतन्ते लोका अस्या यया वा द्योतते सा द्यौ । 'गोतो णित्' सूत्रे 'ओतो णित्' इति विग्रहे सर्वनामस्थानस्य णित्वाद् वृद्धि]

द्यामिव प्रकाशमिव ४ ३१ १५ सूर्यमिव (अग्निम्= ईश्वरम्) ४.७ ३ [द्याम्-इवपदयो समास । द्यामिति व्याख्यातम्]

द्याव: प्रकाशा १ १५१ ६ किरणा ४ १६ १६. प्रकाशयुक्ता दिवसा प्रकाशा वा ६ ३८ ४ प्रकाशमया लोका ३ ३२ ६ सूर्यादिप्रकाशा. ४.५७ ३ कामयमाना विद्वास (जना) ६ ४ ३ सूर्याद्या ६ २४ ७ प्रकाशान् ५ ५३ ५ प्रकाश १ ५१ १ सत्यकामा (गिर =वाच) ५ ४१ १४

द्यावा=सूर्यम् ७ ४३ १ द्यौ १ १८५ २ प्रकाश १ ६१ १४ दिव्य सुख से, आर्याभि० १ ४७, ऋ० ७ ८ १२ २ सूर्य २ ४१ २० प्रकाशम् १ ६३ १ स्वस्वप्रकाशेन प्रकाशमानौ (रात्र्युपसौ) १ ११३ २ [द्योप्रातिपदिकस्य जसि रूपम् । द्यौरिति 'द्याम्' इति पदे व्याख्यातम्]

द्यावाक्षामा प्रकाशभूमी, प्र०—अत्र 'दिवो द्यावा' अ० ६ ३ २९ अनेन दिवशब्दस्य द्यावाऽऽदेश १ १० २ २ अत्र 'अन्येषामपि दृश्यते' इति दीर्घ १२ २ भा०—द्यावाभूमी १७ ७० सूर्यभूमी ३ ८ ८ द्यावापृथिव्यौ ६ ३१ २ अन्तरिक्ष भूमिश्च १ १४० १३ क्षमा एव क्षामा, द्यौश्च क्षामा च द्यावाक्षामा सूर्यपृथिव्यौ १ १२१ ११ ब्रह्माण्डम् १७ ७० [दिवा अहर्नाम निघ० १ ९ क्षाम पृथिवीनाम निघ० १ १ तयो समास । 'दिवो द्यावा' अ० ६ ३ २९ सूत्रेण द्यावादेश । 'सुपा सुलुक्' त्याकारादेश । द्यावाक्षामा—इमे वै द्यावापृथिवी द्यावाक्षामा श० ६ ७ २ ३]

द्यावापृथिवी द्यौश्च पृथिवी च ते, प्र०—'दिवो द्यावा' इत्यनेन द्वन्द्वे समासे दिव शब्दस्य स्थाने द्यावाऽऽदेश । अस्मत्प्राप्ते न्यायप्रकाश-पृथिवीराज्ये प्र०—द्यावापृथिवीति पदनामसु पठितम्, निघ० ५ ३ इत्यत्र प्राप्त्यर्थो गृह्यते २ ९ सूर्यप्रकाशो भूमिश्च २ १६ विद्युदन्तरिक्षे ६ ७० ४ भूम्यन्तरिक्षे ५ ८३ ८ विस्तृतौ सूर्यभूमिलोकौ १७ २० राजनीति-भूराज्ये १२ २९ प्रकाशाऽन्तरिक्षे १४ ६ प्रकाशाऽप्रकाशे जगती १३ ४६ प्रकाशभूमिवद् वर्त्तमाने (अ०—अध्यापिकोपदेशिके स्त्रियौ ३७.२ प्रकाशभूमी इव सभा-न्यायप्रकाशौ १ १० १ ३ विद्युदन्तरिक्षे १ १८५ ११ द्यौश्च पृथिवी च तौ भूमिसूर्यौ, तद्गतावभीष्टदेशदेशान्तराविति यावत् ६ २१ प्रकाशाऽप्रकाशयुक्तौ लोकसमूहौ १ ५२.१४ प्रकाशाऽन्तरिक्षे ३.२६ ८. प्रकाशभूमी राज्यार्थे ६ १९ भूमिसवितारौ १ १६० ५ दिव अर्थात् सूर्यादिलोक, सर्वोपरि आकाश तथा पृथिवी अर्थात् मध्य निकृष्ट लोक आर्याभि० १ १५, ऋ० १ ४ १४ १४ द्यावा स्वर्ग, सुखविशेष और पृथिवी भूमि मध्य सुखवाला लोक आर्याभि० २ ३६, १७ २० सूर्य और भूमि स० वि० १२२, अथर्व० १४ १ ५४

द्यावापृथिवीभ्याम्=सूर्यान्तरिक्षाभ्याम् ३८ १५ सूर्य्य-भूमि-शोधनाय ३९ १३ भा०—भूमिसूर्याभ्याम् ३८.१२ प्रकाशभूम्यो शुद्धये भा०—प्रकाशभूमिभ्याम् ४ ६ द्यावा अर्थात् स्वर्ग परमोत्कृष्ट मोक्षसुख और पृथिवी अर्थात् ससार-सुख इन दोनो के लिये आर्याभि० २ ३१, ३८ १४

द्यावापृथिव्यो:=सूर्याचन्द्रवन्न्यायप्रकाश-भूम्यो २० १० दिव दिव प्रति पृथिवी पृथिवी प्रति च, ऋ० भू० २३२, प्रकाशभूम्यो २५ ५ [दिव्-पृथिवीपदयो समासे 'दिवो द्यावा' अ० ६ ३ २९ सूत्रेण पूर्वपदस्य दिवो द्यावादेश । द्यावापृथिवी पदनाम निघ० ५ ३ द्यावापृथिव्यौ—(वायो) मेनका च सहजन्या चाप्सरसाविति दिक् चोपदिशा चेति ह स्माह माहित्थिरितमे तु ते द्यावापृथिवी श० ८ ६ १ १७ द्यावापृथिवी वै गोआयुषी कौ० २६ २ इमे वै द्यावापृथिवी द्यावाक्षामा श० ६ ७ २ ३ इमे हि द्यावापृथिवी प्राणोदानौ श० ४ ३ १ २२. द्यावापृथिवी वै मित्रावरुणयो प्रिय धाम ता० १४ २ ४ द्यावापृथिवी वै देवाना हविर्धाने आस्ताम् ऐ० १ २९ द्यावापृथिवी वै सत्यस्य साधयित्र्यौ कौ० ४ १४ द्यावापृथिव्योर्वा एष गर्भो यत्सोमो राजा ऐ० १ २६ द्यावापृथिवी वै प्रतिष्ठे ऐ० ४ १० द्यावापृथिवी वै मित्रावरुणयो प्रियधाम ता० १४ २ ४. आविन्ने द्यावापृथिवी धृतव्रते तै० स० १ ८, १२ २ इमे वै द्यावापृथिवी रोदसी श० ६ ४ ४ २ इमे (द्यावापृथिव्यौ) वै हरी विपक्षसा तै० ३ ६ ४ २ इमे (द्यावापृथिव्यौ) ह वावोधनी जै० ३.६७ इमौ वै लोकौ (द्यावापृथिव्यौ) रोहिणौ (पुरोडाशौ) श० १४ २ १ ४ द्यावापृथिवी सर्व इमे लोका जै० ३ २७१ द्यावापृथिवी हि प्रजापति श० ५ १ ५ २६ यदरोदीत् (प्रजापति) तदनयो (द्यावापृथिव्यो) रोदस्त्वम् तै० २ २ ९ ४ वायुर्वा अनयो (द्यावापृथिव्यो) वत्स मै० २ ५ ४ काठ० १३ ५]

द्यावापृथिवीय: प्रकाश-भूमिदेवताक (कूर्म = कच्छप) २४ ३४ **द्यावापृथिवीया:**=द्यावापृथिवीदेवताका (वशा =पशव) २४ १४ ['द्यावापृथिवी' इति व्याख्यातम् । तत सास्य देवता विषये 'द्यावापृथिवी शुना-

द्युम्नम् धनम् ४ ८ यशो धन वा ५ १० १ प्रकाशमय यशो धन वा ६ १९ ९ प्रकाशमय ज्ञानम् १ ६.८. सुखप्रकाशयुक्त धनम्, प्र०—द्युम्नमिति धननामसु पठितम्, निघ० २ १०, ३ ३६ प्रकाशकारकमुत्तम यश, भा०—कीर्ति, प्र०—द्युम्न द्योततेर्यशो वाऽन्न वा, नि० ५ ५, ३ ३८ विज्ञानसाधकम् (धनम्) ३ ४० विद्याप्रकाश यशो धन वा १ ७३ ४ विद्याप्रकाशयुक्त धनम् १ ५४ ११. प्रकाशयुक्त यशोऽन्न वा ११ ६७ यश कर धनं विज्ञान वा ३ ५६ ६ शुद्ध यश ६ ४६.७. धर्म्यं यश ७.२५ ३. प्रकाशमय ज्ञानम् १ ६ ८ **द्युम्नानि**=यशासि ४.४ ६. यशासि धनानि वा ५ २८ ३ प्रदीप्तानि यशासि, भा०—धनानि, वेदा, भोज्यादीनि वस्तूनि च २६ १८. यशासि जलान्यन्नानि धनानि वा ३ ४० ७ **द्युम्नस्य**=धनस्य यशसो वा ५ ७ ३. **द्युम्नाय**=यशसे धनाय वा ६ ६०.११ **द्युम्ने**=यशसे ऽन्नाय वा, प्र०—द्युम्न द्योततेर्यशो वाऽन्न वा नि० ५.५, १३.३५ **द्युम्नेषु**=यशस्विषु धनप्रापकेषु वा (वीरसैनिकेषु) ३ ३७ ७ **द्युम्नेन**=प्रकाशेनेव विद्यासुशिक्षाम्पेण १ ४८.१ यशस्विना धनेन ३ २४ ३ यशसा ६ ५ ५ **द्युम्नै:**=यशोधनयुक्तै (नृभि =नेतृभिर्जनै) ४ १६ १६ यशोभिर्धनैर्वा ४ १२.१ पुण्ययशोभिस्सह १ ७८ ३ यशसा प्रकाशमानै शस्त्रास्त्रै १ ७८ ४ धनैर्विज्ञानादिभिर्गुणै' सह १ ७८ १ चक्रवर्त्यादिराजधनै सह १ ९१ २ [द्युम्नम्-धननाम नि० २ १० द्युम्नम्=द्योततेर्यशो वा अन्न वा नि० ५ ५ द्युत दीप्तौ (भ्वा०) धातोरौणादिको न प्रत्ययो मकारश्चान्तादेश । द्युम्न हि बृहस्पति श० ३.१ ४ १६ सोमस्य त्वा द्युम्नेन (अभिषिञ्चामि) तै० स० १.८ १४ १. मै० २ ६.११]

द्युम्ना द्योतमानानि यशासि धनानि वा ६ १९ ६. [द्युम्नमिति व्याख्यातम् । ततो जसो शेरादेशस्य लोप]

द्युम्नवत् प्रशस्तकीर्त्तिमत् (ब्रह्म=बृहद् धनम्) ३ २९ १५ [द्युम्नमिति व्याख्यातम् । तत प्रशसाया मतुप्]

द्युम्नवत्तमः अतिशयेन यशोधनयुक्त (विद्वज्जन) ६ ४४.१ [द्युम्नवदिति व्याख्यातम् । ततोऽतिशायने तमप् प्रत्यय]

द्युम्नवान् यशस्वी (राजा) ५ २८.४ [द्युम्नमिति व्याख्यातम् । तत प्रशसाया मतुप्]

द्युम्नश्रवसे द्युम्न यश श्रव श्रुत यस्य तस्मै (विदुषे सज्जनाय) ५ ५४ १ [द्युम्न-श्रवस्पदयो समास । द्युम्नमिति व्याख्यातम् । श्रव =अन्ननाम निघ २ ७ धननाम निघ० २ १०]

द्युम्नसाता द्युम्नस्य प्रशसाया विभागे १.१३१.१ [द्युम्न-सातिपदयो समास । द्युम्नं द्योततेर्यशो वा अन्न वा नि० ५.५ साति=षण् सम्भक्तौ (भ्वा०) धातो. क्तिन् प्रत्यये 'जनसनखना सञ्झलो.' सूत्रेणाकारान्तादेश । समासे कृते 'सुपा सुलुग्०' इति सप्तम्या स्थाने डादेश']

द्युम्नहूतिभिः द्युम्नस्य धनस्य यशसो वाऽऽह्वानै. १.१२९.७ धनविषयकवार्त्ताभि' १ १२९ ७ **द्युम्नहूतौ**=धनयशसोर्हूति प्राप्तिर्यस्यां तस्याम् (क्रियायाम्) ४ १६ ६ द्युम्नेन धनेन यशसा वा हूतिराह्वान यस्या तस्याम् (क्रियायाम्) ६ २६ ८ [द्युम्न-हूतिपदयो समास । द्युम्नमिति व्याख्यातम् । हूति =ह्वेञ् स्पर्द्धाया शब्दे च (भ्वा०) धातो क्तिन् । यजादित्वात् सम्प्रसारणम्]

द्युम्नसाहम् द्युम्नानि धनानि सहन्ते येन तम् (हरि=हयम्) १ १२१ ८ [द्युम्नमिति व्याख्यातम् । तदुपपदे षह मर्षणे (भ्वा०) धातो 'छन्दसि सह' अ० ३ २.६३ सूत्रेण ण्वि]

द्युम्निनम् यशस्विन श्रीमन्तम् (राजाध्यक्षम्) ३ ३७.८ **द्युम्निनः**=प्रशस्तकीर्त्तिमत. (वीरजनान्) १ १३८ २ [द्युम्नमिति व्याख्यातम् । तत प्रशसाया मत्वर्थे 'अत इनिठनौ' सूत्रेण इनि प्रत्यय.]

द्युम्निनी: प्रशस्त द्युम्न धन यशो वा विद्यते यासा ता (विड्य =स्त्रिय.) १० ७ [द्युम्नमिति व्याख्यातम् । ततो मत्वर्थे इनि प्रत्ययान्तात् स्त्रिया ङीप्-प्रत्यय. । द्युम्निनीराप एता इति वीर्यवत्य इत्येवैतदाह श० ५ ३ ५ १६]

द्युम्निन्तमः बहूनि द्युम्नानि धनानि विद्यन्ते यस्य स द्युम्नी, अतिशयेन द्युम्नीति द्युम्निन्तम (मद =हर्ष), प्र०—अत्र 'नाद् घस्य' इति नुट् १ १२७ ९ अतिशयेन यशस्वी (सभेश) १ १७५ ५ [द्युम्नमिति व्याख्यातम् । ततो भूम्न्यर्थे इनि । ततोऽतिशायने तमप्-प्रत्यये 'नाद् घस्य' अ० ८ २ १७ सूत्रेण नुडागम]

द्युम्नी प्रशस्तधनी यशस्वी (परमेश्वरो विद्वान् जनो वा) १ ९१ २ बहुप्रशसा-धनयुक्त (इन्द्र =राजा) ३३ ९५ द्युम्नानि बहुविधानि धनानि भवन्ति यस्मिन् (राजपुरुष) प्र०—अत्र भूम्न्यर्थे इनि १ ३६ ८. ।

द्युम्नेभिः प्रकाशनर्यशोभि ६ ६१ १३ [द्युम्नमिति व्याख्यातम् । ततो भिसि 'बहुल छन्दसी' ति सूत्रेण ऐसादेशो न भवति]

प्र०—अत्र पञ्चम्यर्थे प्रथमा ३ ३ ११ कारणरूपेण प्रकाश २५ २३ कान्ति, प्र०—द्यौर्वै सर्वेषा देवानामायतनम्, शत० १४ ३ २ ८, १ २६ विज्ञानप्रकाशहेतु (वसु =यज्ञ) १ २ विद्युत्प्रकाश १ ६४ १६ विशाल सूर्यप्रकाश १.८ ५ प्रकाशरूप (पिता=सर्वपालक ईश्वर) २ ११ प्रकाशयुक्त-लोक ३१ १३ सदैव स्वप्रकाशस्वरूप (ईश्वर) आर्याभि० १ १७, ऋ० १ ६ १६ १० सर्व-प्रकाश ऋ० भू० १४३, अथर्व० १४ १ १ प्रकाशकर्मा (विद्या) १८ १८ प्रकाश-रूपा विद्युत् २३ ४३ भा०—अतीव सूक्ष्मा विद्युत् २३ ५४. भा०—सूर्यवत् न्यायविद्योभयप्रकाशक (राज्याधिकारी जन.) २० ४७ विज्ञानादिभि प्रकाशमान (अग्नि =सूर्यवद्विद्वान्) १२ १ स्वप्रकाश (सुरेता =जगदीश्वर) १२ २५ द्योत-माना (सूर्यज्योति) ऋ० भू० २०२, ऋ० ८.१.२३.७ विद्युत् सूर्यो वा ६ २० १ कामयमाना (स्त्री) ६ १७ ६ सूर्यकान्ति १ ६० ७ सूर्यद्युति १ ६५ २ दिव्या पुरुषाकृति ८ ३२. कामयमानो विद्वान् ६ ५२ २ अन्तरिक्षम् २३ ४८ विद्युदादिप्रकाश ६ १२ २ दिव्यगुणप्रदा वृष्टि प्र०—द्यौर्वै वृष्टि, शत० १३ २ ६ १६, २३ १२ प्रकाश इव विनय ११ २० विद्यान्यायप्रकाशक (अग्नि =विद्वान्राजा) १२ ३३ सत्यकाम (राजा) ५ ३६ ५ धर्मप्रकाश १८ २२ सब लोको से ऊपर जो आकाश है सो, आर्याभि० २ २५, ३६.१७ [द्योप्राति० प्रथमैकवचने 'गोतो णित्' सूत्र केचिद् 'ओतोणित्' इति पठन्ति, तन्मते सर्वनामस्थानस्य णित्वाद्वृद्धि । द्यो=द्युत दीप्तौ (भ्वा०) धातोर्बाहु० औणादिको डो प्रत्यय । द्यौर्वैवृष्टि श० १३ २ ६ १६ द्यौर्वै सर्वेषा देवानामायतनम् श० १४ ३ २ ८]

द्युमत् विज्ञानप्रकाशयुक्तम् (स्वस्ति =सुखम्) २ ६ ६. प्रकाशवत् (अग्नि =पावक) ५ १११ प्रशस्त-प्रकाशवत् (सुवीर्यम्) १ ७४ ६ प्रशस्तप्रकाशयुक्तं मन २६ ३ द्यौर्ज्ञानप्रकाशो विद्यते यस्मिँस्तत् (वसु=विद्या-सुवर्णादिधनम्) ३ १३ ७ द्यौ प्रकाशोऽस्त्यस्मिन् तद्वत् (अग्नि =विद्युत्) १५ २७ प्रशस्तविज्ञानयुक्तम् (सुवीर्यं= शोभन धनम्) ३ १० ८ द्यौ कामना विद्यते यस्य तत् (शम्=उत्तम सुखम्) ७ ८ ६ यथार्थज्ञानप्रकाशयुक्तम् (विज्ञानम्) ५ १८ ५ सत्यव्यवहारप्रकाशो विद्यते यस्मिन् (द्रविण=धनम्) ऋ भू ३०६ २६ ३ प्रकाशवत् (जलम्) ५ २३ ४ **द्युमतः**=प्रशस्ता द्यौ कामना विद्यते यस्य तस्य (सज्जनस्य) ६ ५० ११. विज्ञानप्रकाशयुक्तान् (विप्रान्= मेधाविनो विपश्चित) ६ १७ १४ **द्युमतीम्**=विद्या-प्रकाशवतीम् (धीतिं=धियम्) ६ ३८ १ प्रशस्ता द्यौ. कामना विद्यते यस्यास्ताम् (इषम्=अन्नादिकम्) ७.५ ८. **द्युमते**= द्यौ प्रशस्तो विद्याप्रकाशो विद्यते यस्मिँस्तस्मै (यूने जनाय) १.६३ ३ [द्युप्राति० प्रशसाया भूम्न्यर्थे वा मतुप् । द्युम-तीम् प्रयोगे स्त्रिया मतुप् । द्युमत्=द्युमान्, द्योतनवान् । नि० ६.१६. द्युमत्=ज्वलतिकर्मा निघ० १.१६]

द्युमत्तम ! द्यौर्बहु. सर्वज्ञ प्रकाशो विद्याप्रकाशो वा विद्यते यस्मिन् सोऽतिशयितस्तत्सम्बुद्धौ (इन्द्र=सभेश राजन्) १ ५३.३ **द्युमत्तमम्**=द्यौ प्रशस्त प्रकाशो यस्मिँस्तदतिशयितस्तम्) (रयिं=विद्याचक्रवर्त्यादिधन-समूहम्) ३ २५ प्रशस्ता द्यौविद्याप्रकाशो विद्यते यस्य यस्मिँस्तदतिशयितम् (दक्ष=बलम्) ६ ४४ ६ प्रशस्ता दिव प्रकाशा कामना वा विद्यन्ते यस्मिन् सोऽतिशयितस्तम् (विद्वास जनम्) १५ ४८ अतिशयेन प्रकाशवन्तम् (रयिं=धनम्), भा०—सदुपदेशाद्युत्तमगुणम् २५ ४७ प्रशस्त प्रकाशो विद्यते यस्मिन् स शब्दो द्युमान्, अतिशयेन द्युमान्, द्युमत्तमस्तम् (उलूखलव्यवहारम्) प्र०—अत्र प्रशसार्थे मतुप् १ २८ ५ **द्युमत्तमा**=अतिशयेन प्रशस्त-प्रकाशयुक्तानि (शोचीषि=तेजासि) २७ ११ [द्युमदिति व्याख्यातम् ततोऽतिशायने तमप् प्रत्यय । द्युमत्तमा—(यजु० २७.११) द्युमत्तमेति वीर्यवत्तमेत्येतत् श० ६ २ १.३२]

द्युमन्तम् प्रकाशवन्तम् (विद्वास जनम्) ५ २६.३ प्रशस्ता द्यौ प्रकाशो विद्यते यस्मिँस्तम् (भग=सेवनीय-मैश्वर्यम्) ३ ३० १६ द्यौर्बहुप्रकाशो विद्यते यस्मिँस्तम् (अग्नि=जगदीश्वर भौतिक वा), प्र०—अत्र भूम्न्यर्थे मतुप् २ ४. द्यौरनन्त प्रकाशो विद्यते यस्मिन् परमेश्वरे वा प्रशस्त प्रकाशो विद्यते यस्मिन् भौतिके तम्, प्र०—अत्र भूम्न्यर्थे प्रशसार्थे च मतुप् ३ १८ बहुकामयुक्तम् (सज्जनम्) ६ १७ ४ बहुप्रकाशवन्तम् (लोकम्) १ ६४ १४. दीप्ति-मन्तम् (विद्वास राजानम्) ७ १५ ७ **द्युमन्तः**=कामयमाना प्रकाशवन्तो वा (विद्वासो जना) ५ १२ ४ बहुप्रकाशवन्त (किरणा) ५ २५ ८ प्रशस्त-कामनायुक्ता (सर्वमित्रा जना) ५ ६६ २ द्यौर्बह्वीर्दीप्तिर्वर्त्तते येपु ते (अग्नय =विद्युदादय.) ७ १.४ **द्युमान्**=बहुविद्याप्रकाश (मनुष्य) ५ ३४ ३ बहुविद्याप्रकाशयुक्त (राजभृत्य) ४ १५ ४ विद्यादिसद्गुण-प्रकाशयुक्त (इन्द्र =सभाध्यक्ष) १ ६२ १२ बहु-कला-यन्त्रादिप्रकाशित (रथ =विमानादियानविशेष) ४ ३१ १४. [द्युमदिति व्याख्यातम् । तस्य रूपाणि]

द्युमः प्रकाशवान् (अग्नि =विद्वान् जन) ६ १० २. [द्युप्राति० मतुवर्थे 'द्युद्रुभ्या म.' अ० ५ २ १०८ सूत्रेण म प्रत्यय । द्युरिति अहर्नाम निघ० १ ६]

ज्योतिर्जागतच्छन्दो द्यौ स्थानम् गो० पू० १ २९. आदित्येन दिवा नक्षत्रैस्तेनासौ लोकस्त्रिवृत् ता० १०.१ १. द्यौरसि वायौ श्रिता । आदित्यस्य प्रतिष्ठा तै० ३ ११.१ १०. वायुरस्यन्तरिक्षे श्रित । दिव प्रतिष्ठा तै० ३ ११ १.९. द्यौरन्तरिक्षे प्रतिष्ठिता ऐ० ३ ६ साम वा असौ (द्युलोक) ऋगयम् (भूर्लोक) ता० ४.३ ५ दिवमेव साम्ना (जयति) श० ४ ६ ७ २ असौ (द्यौ) वै जुहू तै० ३ ३ १ १ असौ (द्यु) लोक उत्तरौष्ठ कौ० ३.७. द्यौर्वाऽउत्तरꣳ सधस्थम् श० ८ ६ ३ २३ द्यौरुत्तरवेदि श० ७ ३.१.२७ द्यौरेव तृतीया चिति. श० ८ ७ ४.१४ द्यौर्वै तृतीयꣳरज श० ६ ७.४ ५ द्यौर्हविर्धानम् तै० २ १ ५ १ द्यौस्सूक्तम् जै० उ० ३ ४ २ द्यौर्वा ऽअपा सदन दिवि ह्याप सन्ना श० ७ ५.२ ५६ आपो वै द्यौ श० ६ ४ १ ९ द्यौर्वै वृष्टि पूर्वचित्ति । श० १३.२ ६ १४. वृष्टिर्वै द्यौ तै० ३ २ ९ ३. तस्यै वा एतस्यै वसोर्धारायै । द्यौरेवात्मा श० ६ ३ ३.१५ तन्माता पृथिवी तत्पिता द्यौ तै० २ ७ १६ ३ द्यौर्यश श० १२.३ ४ ७ द्यौ वै सर्वेषा देवानामायतनम् श० १४ ३ २ ८ द्यौरिन्द्रेण गर्भिणी श० १४.९ ४ २१. ऐन्द्री द्यौ ता० १५ ४ ८ द्यौर्ब्राह्मणी जै० उ० ३.४.६ प्रजापतिर्वै स्वा दुहितरमभ्यध्यायद्दिवमित्यन्य आहुरुषसमित्यन्ये ऐ० ३.३३. असौ (द्युलोक) भविष्यत् तै० ३ ८ १८.६ सर्वेणात्मनार्तिमारिष्यसि क्षिप्रेऽमुलोक (द्युलोक) एष्यसीति श० १४ ३ २१ (देवा) अमु (द्युलोक) बर्हिर्णिधनेन (अभ्यजयन्) ता० १० १२ ३ द्यौर्लोकꣳ (द्युलोक) शस्यया (जयति) श० १४ ६ १ ९ (प्रजापति) जीमूतै नक्षत्रैश्च दिवम् (अदृहत्) श० ११ ८ १ २]

द्रप्सम् कमनीयम् (आनन्दम्) ७.३३ ११. अ०—सर्वत्राऽभिव्याप्तमानन्दम्, भा०—जगदीश्वरस्य सानन्द स्वरूप सर्वत्रोपलब्धम् १३ ५ पार्थिव भूगोलम् ४ १३ २ **द्रप्सः**=यज्ञपदार्थ-समूह प्र०—अत्र मन्त्रे 'वा शर्प्रकरणे खर्परे लोप' इति विसर्जनीय लोप अ० ८ ३ ३६ इति भाष्य-वार्त्तिकेन ७ २६ दुष्टाना विमोहनम् ६ ४१ ३ हर्षकारी रस प्र०—'दृप हर्षणमोहनयो' इत्यस्मादौणादिक स प्रत्यय किच्च 'अनुदात्तस्य चर्दुपधस्याऽन्यतरस्याम्' अ० ६ १ ५९ अनुनाऽमागम १ २६ हर्ष १४ ५ हर्ष उत्साह १३ ५ **द्रप्साः**=हर्षयुक्ता भृत्या ज्वालादयो गुणा वा १ ९१ ११ विमोहकारका (मेघा) ५ ६३.४. दृप्यन्ति सहृष्यन्ते बलानि सैन्यानि वा यैस्ते (इन्दव =सोमाद्योषधिगणा), प्र०—अत्र 'दृप हर्षणमोहनयो' इत्यस्माद् बाहुलकात् करणकारक औणादिक स प्रत्यय १ १४.४, [दृप हर्षमोहनयो: (दिवा०) धातोर्बाहु० औणादिक स प्रत्ययः किच्च । द्रप्स सभृत प्सानीयो भवति नि० ५ १४ द्रप्स. असौ वा ऽआदित्यो द्रप्स श० ७.४.१.२० स्तोको वै द्रप्सः गो० उ० २.२.१२]

द्रप्सिनः बहुद्रप्सो विविधो मोहोऽस्ति येषा ते (घोरवर्पस =वायव) १.६४.२. [द्रप्समिति व्याख्यातम्। ततो भूम्न्यर्थे मत्वर्थे इनि. प्रत्यय]

द्रव धाव ५ ३१ २ समीपमागच्छ ६ ४८ १६ **द्रवत्**=द्रवतु १.४४.७ द्रवति प्राप्नोति सद्यो गच्छति वा ६ ४५ ३२. **द्रवताम्**=गच्छेताम् ३ १४ ३. **द्रवन्ति**=गच्छन्ति २९ ४८. धावन्ति ४ ६ ५ **द्रवन्तु**=गच्छन्तु ४ १६ १ [द्रु गतौ (भ्वा०) धातोर्लोट् । अन्यत्र लेट् । द्रवताम्=प्रयोगे व्यत्ययेनात्मनेपदम् । द्रवन्ति द्रुधातोर्लट् । द्रवति गतिकर्मा निघ० २ १४]

द्रवत् द्रव प्राप्नुवत् (इन्द्रम्=ऐश्वर्यम्) ३ ३५ २ **द्रवतः**=द्रवीभूतस्य (वे =पक्षिण) ९ १५ धावत (श्येनस्य) ४ ४० ३. **द्रवन्ता**=गन्तारौ (प्रजापति प्रजाजनश्च) प्र०—अत्र 'सुपा सुलुक्०' अ० ७ १.३९ इति आकारादेश ७ १७ [द्रु गतौ (भ्वा०) धातो शतृप्रत्यय]

द्रवत् शीघ्रम्, प्र०—द्रवदिति शीघ्रनामसु पठितम्, निघ० २.१५, १ २.५

द्रवत्पाणी द्रवच्छीघ्रवेगनिमित्ते पाणी पदार्थविद्याव्यवहारा ययोस्तौ (अश्विनौ=जलाऽग्नी) १ ३ १. [द्रवत्-पाणि-पदयो समास । द्रवदिति व्याख्यातम्]

द्रवदश्वम् द्रवन्तो द्रुत गच्छन्तोऽश्वा यस्मिँस्तम् (रथ=विमानादियानम्) ४ ४३ २. [द्रवत्-अश्वपदयो समास]

द्रवन्ती जानन्ती गच्छन्ती वा (देवी=विदुषी स्त्री) ५ ४१ १८ [द्रु गतौ (भ्वा०) धातो शत्रन्तान् ङीप्-प्रत्यय]

द्रवयति आर्द्रीकरोति ६ ३ ४ [द्रवप्राति० 'तत्करोति तदाचष्टे' इति वार्त्तिकेन णिच्-प्रत्ययान्ताल् लट् । द्रव = द्रु गतौ धातो 'ऋदोरप्' इत्यप्]

द्रवरः यो द्रवे रमते, द्रवान् ददाति वा (राजा) ४ ४० २ ['द्रव' इत्युपपदे रमु क्रीडायाम् (भ्वा०) रा दाने (अदा०) धातोर्वा 'अन्येष्वपि दृश्यते' अ० ३.२.१०१ सूत्रेण ड. प्रत्यय]

द्रवः स्निग्ध (राजा) ४.२० २ [द्रु गतौ (भ्वा०) धातो. 'ऋदोरबि' त्यप्-प्रत्यय.]

द्यून् दिनानि १२ २८ प्रकाशान् ४ ४३ ३ दिवसान् ४ ४ ६ त्रिप्रकाशान् २ २८ २ [द्यु-प्रातिपदिकाद् द्वितीयाया वहुवचनम्। द्यु =अहर्नाम निघ० १ ९ द्युरित्यह्नो नामधेयम्, द्योतत इति सत. नि० १ ६]

द्योतताम् प्रकाशताम् १५ ५२ [द्युत दीप्तौ (भ्वा०) धातोर्लोट्]

द्योतना प्रकाशमाना (उपा) १.१२३ ४. [द्योतना उपो नाम निघ० १ ८]

द्योतनाय प्रकाशनाय ६ २० ८ [द्युत दीप्तौ (भ्वा०) धातोर्भावे ल्युडन्ताच्चतुर्थी]

द्योतनिम् प्रकाशरूपा विद्याम् ३ ५८ १. [द्युत दीप्तौ (भ्वा०) धातोर्बाहुलकादौणादिकोऽनि प्रत्यय]

द्योतयत् प्रकाशयति ६ ३९ ३ [द्युत् दीप्तौ (भ्वा०) धातोर्णिजन्तात् सामान्ये लड् । अडभावश्छान्दस]

द्यो: प्रकाशस्य ४ २७ ३ सूर्यस्य ६ ६७ ६ प्रकाशमानाया (तन्यतो =विद्युत) ४ ३८ ८ [द्युप्राति० षष्ठी। द्यु =अहर्नाम निघ० १ ९]

द्योत् द्योतयेत् ४ ४ ६.

द्यौः प्रकाश १ ५२ १० प्रकाश इव १ १३३ ६. विद्युत् सूर्यप्रकाशो वा १ ११२ २५ सूर्य इव वर्त्तमान. ११ ५८ सूर्यादि १ ५७ ५ सूर्यद्युति. १ ६५ २. प्रकाशमान परमात्मा सूर्यादिर्वा १ ८९ १० सूर्यविद्याप्रकाशो वा १ १०५ १९ विद्युत् वा सूर्यादिप्रकाशमानपदार्थ १ ११३ २० विद्युदिव विद्या ३ ५४.१९ आकाशस्य ४ १ १७ सत्यकाम ५ ३६ ५ कामयमान इव ५ ४५.३. कामयमानो विद्वान् ६ ५२ २ दिव्या पुरुपाकृति ८.३२ प्रकाश इव विनय ११ २० विज्ञानप्रकाशहेतु १ २ धर्मप्रकाशस्वरूप, प्रकाशमयो वा २ ११ स्वप्रकाश १२ २५. विद्यान्यायप्रकाशक १२ ३३ प्रकाशकर्मा १८ १८ कारणरूपेण प्रकाश २५ ३३ आकाशस्य, प्र०—षष्ठ्यर्थे प्रथमा, ३३ ११ दिव्यगुणप्रदा वृष्टि. । प्र०—द्यौर्वै वृष्टि शत० १३ २ ६ १४, २३ १२ द्यौरिव सूर्यप्रकाशवत् २ ४.४६ सूर्य इव ५ ५७ ४. यथा सूर्यप्रकाशयुक्ते आकाशे ३.५ **दिवम्**=सूर्यादिक जगत् १२ १०२ सत्यप्रकाशम् १५.६ अविद्यागुणप्रकाशम् ३८ १७ देदीप्यमाना राजनीतिम् ९ २४ **द्याम्**=कामनाम् ५ २९ ६ कमनीया विद्याम् ६ ६७ ५ प्रकाशमयी योगविद्याम् १७ ६८ प्रकाशसमूह लोकम् १ ३३ १४ राज्यपालनविनयप्रकाशम् १ ५२.११ प्रकाशमय दिनम् १.३२.४ जिसमे सूर्य का प्रतिभास आवे वैसी प्रकाशस्वरूप भूमि अथर्व० ९ १५ सस्कारविधि। **दिव:**=स्व सुख दृश्यते यस्मात् तम् ३ २ १४ दिव्या गुणा क्रिया स्वभावा वा ८ ३१ प्रकाशयुक्तान् किरणान् १ ३४ ८ कमनीयान् कामयमानान् वा ६ ५१.४ दिव्यगुणसमूहम् १ ५६ ६ ज्योतीषि ३ ५६ ६ व्यवहर्त्तृन् ५.५९ ७. **दिवा**=प्रीत्या सह ६ ३ ६ विज्ञानान्धकारप्रकाशेन सह १ ९८ २ **दिव:**=प्रकाशमानात् धर्माचरणात् १ ५४ ७. प्रकाशादाकर्षकाद्वा १.५६ ५ **दिव:**=राज्यप्रकाशस्य १ १५१ ४ द्योतनात्मकस्य परमात्मन १५.६० कमनीयस्य गृहस्थव्यवहारस्य १५ ६४ व्यवहारस्य १ १८५.१. कमनीयार्थस्य ५ १० ३. **दिवि**=कृषिविद्याप्रकाशे ४ ५७ ५ प्रजाव्यवहारे १ ३६ ३ कमनीये शुद्धे व्यवहारे ६ ३४ ४. आकाशे १ ८० १३ अन्तरिक्षे १ ८५ २. दिव्ये आकाशे ३ २ १३ प्रकाशयुक्तेऽन्तरिक्षे ५ २७ ६ प्रकाशमयेऽग्नौ १ १६३ ४ द्योतनात्मके ब्रह्मणि सूर्यादिप्रकाशे वा १ ९ १. प्रकाशनिमित्ते १.७ ३. द्योतनात्मके सूर्यप्रकाशेऽन्तरिक्ष इव न्यायप्रकाशे १ ५१ न्यायप्रकाशे १ ५२ ४ प्रकाशे १ ९१.१८ सर्वविद्याप्रकाशे १ १०५ १६ [दिवु क्रीडाविजिगीषाव्यवहारद्युतिस्तुतिमोदमदस्वप्नकान्तिगतिषु (दिवा०) धातो क्विप्-प्रत्यय' । द्यौ =दिव् प्राति० प्रथमैकवचने 'दिव औत्' अ० ७ १ ८४ सूत्रेण औदादेश । द्याम्=इति द्योप्राति० द्वितीयैकवचनम् । द्यौ =अद्युतदिव वा अद इति तद्दिवो दिवत्वम् ता० २०.१४ २ अथ यत्कपालमासीत् सा द्यौरभवत् श० ६ १.२ ३ (प्रजापति) व्यानादसृ (द्यु) लोकम् (प्रावृहत् कौ० ६ १० असौ (द्यौ) हरिणी तै० १ ८ ९.१ दिवा (रूप) हिरण्यकशिपु तै० ३ ९ २० २. प्राणो वै दिव श० ६ ७ ४ ३ असौ (द्यौ) जगती जै० उ० १ ५५ ३ या द्यौ साऽनुमति सा एव गायत्री ऐ० ३ ४८ द्यौर्वै वृहद् श० ९.१ २ ३७. अथ वै (पृथिवी) लोको मित्रोऽसौ (द्युलोक) वरुण श० १२ ९ २ १२ एषा वा प्रतिष्ठा वैश्वानर (यद् द्यौ) श० १० ६ १ ९ असौ वै (द्यु) लोक समुद्रो नभस्वान् श० ९ ४ २ ५ वागिति द्यौ जै० उ० ४ २२ ११ मूर्धा तु एष वैश्वानरस्य (यद् द्यौ) श० १०.६ १.९ द्यौर्महदुक्थम् श० १० १ २ २ यत् (अग्ने) शुचि (रूप) तद् दिवि (न्यवत्त) श० २ २ १ १४ द्यौर्वा अस्य (अग्ने) परम जन्म श० ९.२ ३ ३९ द्यौ. सावित्री गो० पू० १ ३३ स सुवरिति व्याहरत् । स दिवमसृजत् तै० २.२ ४ ३ स्वरित्यसौ (द्यु) लोक श० ८ ७४.५ द्यौर्वै तृतीयसवनम् श० १२ ८ २ १० असौ वै (द्यु) लोकस्तृतीयसवनम् गो० उ० ४ १८. साम्नामादित्यो देवत तदेव

द्वादशकपालः द्वादशसु कपालेषु संस्कृत (चरु = ाक) २९ ६० [द्वादश-कपालपदयो 'तद्धितार्थोत्तरपद-समाहारे च' इति समास]

द्वादशप्रधयः यानेषु प्रधय सर्वकलायुक्तानामराणा धारणार्था द्वादश, ऋ० भू० १९८, ऋ० २ ३ २४ ४८ [द्वादशप्रधिपदयो समास । द्वादश = द्वि-दशन्पदयो समास । प्रधि = प्रपूर्वाद् दधाते कि प्रत्यय]

द्वादशाकृतिम् द्वादश मासा आकृतिर्यस्य तम् (सूर्यम्) १ १६४ १३ [द्वादश-आकृतिपदयो समास]

द्वादशाक्षरेण साम्न्या गायत्र्या (छन्दसा) ९ ३३ [द्वादशअक्षरपदयो समास]

द्वादशारम् द्वादश अरा मासा अवयवा यस्य त सवत्सरम् १ १६४.११ [द्वादश-अरपदयो समास]

द्वादशी द्वादशाना पूरणा (क्रिया) २५ ४ [द्वि-दशन् पदयो समासे 'द्व्यष्टन सख्यायाम्०' अ० ६.३ ४७ सूत्रेणा-कारादेशे पूरणार्थे डट्प्रत्यये स्त्रिया 'ठिड्ढाण्०' इति सूत्रेण ङीप्]

द्वापराय द्वावपरौ यस्मिँस्तस्मै (सत्याचरणाय जनाय) ३०.१८ [द्वि-अपरपदयो समासे पूर्वपदस्याकारादेश । द्वापर-(युगम्) सजिहानस्तु द्वापर ऐ० ७ १५]

द्वारः द्वाराणि २७ १६ प्रवेश-निर्गमार्थानि द्वाराणि २१ ४६ गमनाऽऽगमनार्थानि द्वाराणि २८ ३६ विद्या-विनयद्वाराणि, भा०—विद्याधर्मद्वाराणि २८ ५ अवकाश-रूपा, भा०—अवकाशप्रदा, अवकाशप्रदानेनानन्दप्रदा (दिश) २९ ३० द्वाराणीव सुखनिमित्ताः (पत्नी) ५ ५ ५ द्वार इव सुशोभिता (वाच) १.१४२ ६ **द्वारिषु**=आवर-केषु व्यवहारेषु १ ५२ ३ **द्वारौ**=बाह्याभ्यन्तरस्थे मुखे ५ ३३ गृहादीन्द्रिययो प्रवेशनिर्गमनिमित्तौ १ ४८ १५ **द्वार्भ्यः**=सवर्णेभ्य आच्छादनेभ्य ३० १० [वारयतीति वार, दकारोपजनेन द्वार । अथवा=द्वारयति सवृणोति यया सा द्वा । बहुवचने द्वार । बाहु० औणादिक (उ० २ ५७) सूत्रेण क्विप्। द्वार जवतेर्वा द्रवतेर्वा वारयतेर्वा। यज्ञे गृहद्वार इति कात्थक्य । अग्निरिति शाकपूणि नि० ८ ९-१०]

द्वाविंशः द्वाविंशतिधा (सम्भरण =सम्यग्धारको गुण) १४ २३ [द्वि-विंशतिपदयो समासे पूर्वपदस्या कारादेशे पूरणार्थे ड प्रत्यये 'ति विंशतेर्डिति' इति तेर्लोप । वर्चो द्वाविंश तै० स० ४ ३ ८ १ मै० २ ८ ४]

द्विक्षत् द्वेष करे स० वि० १४१, अथर्व० ३ ३० ३ [द्विष अप्रीतौ (अदा०) धातोर्लिङर्थे लेटि रूपम्]

द्विजन्मा विद्याजन्मद्वितीय (विद्वज्जन) १.१४० २. द्वाभ्यामाकाशवायुभ्या जन्म प्रादुर्भावो यस्य (मेघस्थ-विद्युत्) १ १४९ ४ गर्भ-विद्याशिक्षाभ्या जात (द्विजो जन) १ १४९ ५ **द्विजन्मानम्**=द्वाभ्या वायुकारणाभ्या जन्म यस्य त वह्निम् १ ६० १ **द्विजन्मानः**=द्वे उत्पत्ति-विद्या-प्राप्तिरूपे जन्मनी येषान्ते (विद्वासो जना) ६ ५० २. [द्वि-जन्मन्पदयो समास]

द्विता द्वयोर्भाव ४ ४२.१ द्वयो राजप्रजयोरुपदेशको-पदेश्ययोर्वा भाव ६ ४५ ८ द्वयोरध्यापकाऽध्येत्रोरुपदेष्टृ-उपदेश्ययोर्भाव ६.१६ ४ द्वयो प्रजासभाध्यक्षयोर्भाव १ ६२ ७ [द्वि प्राति० भावे तल् प्रत्यय । स्त्रिया टाप्। द्विता = द्वैधम् नि० ५ ३.]

द्विताय द्वाभ्या जन्माभ्या विद्या प्राप्ताय (अतिथये) ५ १८ २ द्वयोर्वायुवृष्टि-जलशुद्ध्योर्भावाय १ २३ [द्वि-प्राति० भावे तल्प्रत्यय' । द्वि-इतपदयोर्वा समासे इकार-लोपश्छान्दस]

द्वितीयम् द्वयो सङ्ख्यापूरकम् (भा०—गृहाश्रमम्) १२ १८ **द्वितीयः**=द्वयो सख्यापूरको धनञ्जय १७ ३२ **द्वितीयाः**=रुद्रा २० १२ **द्वितीये**=द्वयो पूरणे (अहन्=दिने) ३९ ६ **द्वितीयैः**=एकादशप्राणाद्यै रुद्रै २०.२२ [द्विसख्यावाचिन प्राति० पूरणार्थे तीय. प्रत्यय । द्वितीय' =द्वितीयवान् हि वीर्यवान् श० ३ ७ ३ ८]

द्वितीयस्याम् अस्या भिन्नायाम् (पृथिव्या=भूमौ) ५ ९ **द्वितीया**=ताडनक्रिया २५ ६ **द्वितीयया**= द्वितीयया (अध्यापनक्रियया) २७ ४३ [द्वितीयमिति व्या-ख्यातम् । तत सप्तमी]

द्विपक्षा दो पक्षो वाली (शाला) स० वि० १६८, अथर्व० ९ ३ २१ [द्वि-पक्षपदयो समासे स्त्रिया टाप् प्रत्यय]

द्विपत् द्वौ पादौ यस्य स (मनुष्य-समूह) प्र०—अत्र द्विपादिति भवितव्येऽयस्मयादित्वाद् भसज्ञा, भत्वात् 'पाद पत्' इति पद्भाव १ ९४ ५ **द्विपदम्**=द्वौ पादौ यस्मिँ-स्तत् (विद्यासुशिक्षायुक्त विद्वासम्) २८ ३२ **द्विपदः**= मनुष्यादे (जगत =ससारस्य) २३ ३ द्वौ पादौ यस्य तस्य मनुष्यादे २५ ११ **द्विपदा**=द्वौ पादौ यस्या सा (ऋक्) २१ २० द्वौ पादौ यस्मिँस्तेन (वाकेन=यजुषा) १ १६४ २४. मनुष्यादिना २६ १६ **द्विपदाः**=द्वे पदे यासु ता (प्रजा) २३ ३४. **द्विपदी**=अभ्यस्तद्विवेदा (विदुषी स्त्री)

द्रविणम् धनम्, भा०—पुष्कला श्रियम्, प्र०—अत्र 'सुपा सुलुक्०' इति विभक्तेर्लुक् १८.५६. **द्रविणम्**=धनम् ३३ ५२ धन यशो वा ५ २८ २ बलम् १८ ८ वीर्यम् ऋ० भू० २११, अथर्व० १८ ३ ११ चक्रवर्त्तिराज्यादि सिद्ध धनम् १ ६४ १४ चतुर्विधपुरुषार्थेन धन-धान्योन्नति ऋ० भू० १०४, अथर्व० १२ ५ ८ श्रियम् १७ २८ विद्यादिश्रेष्ठ-धनम् ऋ० भू० २०३, अथर्व० ७ ६ ६७ १ द्रव्यम् ४.५.११ यश ४ ५ १२ राज्योद्भव द्रव्यम् १० ११ द्रवन्ति भूतानि यस्मिन् तद् धनम् प्र०—द्रविणमिति धन-नामसु पठितम् निघ० २ ६, ८ १७ धनं बल वा ७ ६ १ विद्यादिकम् ८ ६० द्रव्यरूप जगत् को आर्याभि० २ ३०, १७ १७ ऐश्वर्यम् १० १३ द्रव्योपार्जन और उसकी रक्षा को स० वि० १४४, अथर्व० १२ ५ ८ **द्रविण:**=प्रश-स्तानि द्रविणानि द्रव्यानि विद्यन्ते यस्य स (अग्नि = विद्वान् जन) ३ ७ १० **द्रविणानि**=द्रव्याणि यशांसि वा ४ ३३ १० धनानि यशांसि वा ४ ५८ १० **द्रविणाय**= ऐश्वर्याय ३ १० ६ **द्रविणा**=द्रविण धनम्, प्र०—अत्र 'सुपा सुलुक्०' इत्याकारादेश १५ ३ धनानि, भा०—सुखानि १४ ४ [द्रु गतौ (भ्वा०) धातो 'द्रुदक्षिभ्यामिनन्' उ० २.५१ सूत्रेण कर्मणि करणे वा कारके इनन् प्रत्यय । द्रविण धननाम निघ० २.१० बलनाम निघ० २ ६ धन द्रविणमुच्यते यदेनदभिद्रवन्ति । बल वा द्रविण यदेनेनाभि-द्रवन्ति नि० ८ १.]

द्रविणस: यज्ञकर्त्तार, द्रविणसम्पादका: (अ०—ऋत्विज) १ १५ ७ यशोधनस्य ४ ३४ ५ द्रव्यसमूहस्य विज्ञान प्रापण वा १ ६६ ८ [द्रविणमेव द्रविणस् । द्रविण-स्य सकारोपजनश्छान्दस । द्रविण व्याख्यातम् । द्रवि-णास =द्रविणसादिन इति वा द्रविणसानिन इति वा नि० ८ १]

द्रविणस्यव: आत्मनो द्रविणमिच्छमाना (मनुष्या) ५ १३ २ **द्रविणस्यु:**=आत्मनो द्रविणमिच्छु (विद्वानु-द्यमी जन) ६ १६ ३४ [द्रविण व्याख्यातम् । तत आत्मन इच्छाया 'क्यजन्तात् क्याच्छन्दसी' ति उ प्रत्यय । 'सुग् वक्तव्य' अ० ७ १ ५१ वा० सूत्रेण क्यचि सुगागम]

द्रविणो धन यशो वा ६ ६६ ३ [द्रविण व्याख्यातम् । तत. प्रथमैकवचनस्योकारश्छान्दस]

द्रविणोदस: यो द्रविणमत्ति तस्य (ऋत्विज), प्र०—ऋत्विजोऽत्र द्रविणोदस उच्यन्ते हविषो दातारस्ते चैन जन-यन्ति, नि० ८ २, २ ३७ ४ [द्रविणस् उपपदे अद भक्षणे (अदा०) धातोरसुन् प्रत्यय]

द्रविणोद:! यो द्रविणो ददाति तत्सम्बुद्धौ (अग्ने= विद्वन् श्रीमज्जन) २ ६ ३ ददातीति दा, द्रविणस्याऽऽत्म-शुद्धिकरस्य विद्यादेर्धनस्य दास्तत्सम्बुद्धौ (अ०—जगदीश्वर) १ १५ १० **द्रविणोदाम्**=यो द्रव्याणि ददाति तम् (अग्नि=परमेश्वर भौतिक वा), प्र०—अत्र 'अन्येभ्योऽपि दृश्यते' इति विच् १ ६६ १ द्रविण अर्थात् निर्वाह के सब अन्न, जलादि पदार्थ और विद्या आदि पदार्थों के देने वाले (ईश्वर) को आर्याभि० १ ४०, ऋ० १ ७ ३ ३ **द्रवि-णोदा:**=द्रविणासि विद्याबलराज्यधनानि ददातीति स परमेश्वरो भौतिकोऽग्निर्वा, प्र०—द्रविणमिति बलनामसु पठितम् निघ० २ ६ द्रविणोदा इति पदनामसु पठितम् निघ० ५ २ द्रविण करोति द्रविणाति, अस्मात् 'सर्वधातु-भ्योऽसुन्' इत्यसुन् प्रत्यय तद् ददातीति निरुक्त्या पदनामसु पठितत्वाज्ज्ञानस्वरूपत्वादीश्वरो, ज्ञानक्रियाहेतुत्वादग्न्या-दयश्च गृह्यन्ते 'द्रूयन्ते प्राप्यन्ते यानि तानि द्रविणानि अत्र 'द्रुदक्षिभ्यामिनन्' उ० २ ४६ अनेन द्रु-धातोरिनन् प्रत्यय १ १५ ७ धनप्रद (देव =विद्वज्जन) ७ १६ ११ धनदाता (भूगर्भविद्याविद्विद्वान् जन) ११ २२ ये द्रविण बल ददति ते (देवा =दिव्या प्राणा) प्र०—द्रविणोदा कस्माद्? धन द्रविणमुच्यते यदेनदभिद्रवन्ति, बल वा द्रविण यदेनेनाऽभि-द्रवन्ति, तस्य दाता द्रविणोदा, नि० ८ १ २, १२ २ यो द्रविणो धन यतो वा ददाति स (सद्वैद्य) २६ २२ सुष्ठूपासितो जगदीश्वर, सम्यग् योजितो भौतिकोऽग्निर्वा १ १५ ८ विभागादि-ज्ञापक (अग्नि =परमेश्वर) १ ६६ ८. यज्ञानुष्ठाता विद्वान् मनुष्य १ १५ ६. शौर्यादि-प्रद (अग्नि =परमेश्वर) १ ६६ ८ जीवनविद्याप्रद (अग्नि =ईश्वर) १ ६६ ८ यो द्रविणासि ददाति स (अग्नि =परमेश्वर) १ ६६ ८ द्रव्यदातार (देवा =विद्वासो जना) १७ ७० **द्रविणोदेषु**=ये द्रविणासि सुवर्णादीनि द्रव्यप्रदानि विद्याऽऽदीनि च ददति तेषु (विद्वज्जनेषु) १ ५३ १ **द्रविणोदौ**=यौ द्रविणसौ दत्तस्तौ अश्विनौ= अध्यापकोपदेशकौ) ५ ४३ ६ [द्रविणस् इत्युपपदे डुदाञ् दाने (जु०) धातो 'आतो मनिन्०' अ० ३ २ ७४ सूत्रेण चकाराद् विच् प्रत्यय । अथवा—द्रविणसुपपदे ददाते क प्रत्यय । द्रविणस् इति व्याख्यातम् । द्रविणोदा कस्मात् ? धन द्रविणमुच्यते यदेनदभिद्रवन्ति । बल वा द्रविण यदेने-नाभिद्रवन्ति । तस्य दाता द्रविणोदा ।··· तत्को द्रवि-णोदा ? इन्द्र इति कौष्टुकि । स बलधनयोर्दातृतम, तस्य च सर्वा बलकृति । 'ओजसो जातमुत मन्य एनम्' इति चाह । अथाप्यग्निं द्रविणोदसमाह, एष पुनरेतस्माज्जायते ।

७ ५८ ६. द्वेषादीन् दोषान् धर्मद्वेष्टॄन् मनुष्यान् वा ११६७ ६ ईर्ष्यादीन् दोषान् वा २ ३३ २ द्वेषकान् (दुर्जनान्) ६ १ ये द्विषन्ति ते (दुर्जना) ५ २० २. ये द्विषन्ति तान् (ह्वर =शत्रून्) ३८ २० द्वेषयुक्तानि (रपासि=पापानि) १ १५७ ४ द्वेष्टु (मर्त्तात्=मनुष्यात्) ४ १० ७ [द्विष अप्रीतौ (अदा०) धातो कर्त्तरि 'अन्येभ्यो ऽपि दृश्यन्ते' इति सूत्रेण विच्]

द्वेषः द्वेष्टि येन स (दुर्गुण) ६ १८ अप्रीति ७ ५६ १६ [द्विष अप्रीतौ (अदा०) धातोर्घञ्प्रत्यय कर्त्तृ-भिन्नेषु कारकेषु]

द्वेषते अप्रीतयति, प्र०—अत्र 'वहुल छन्दसि' इति शपो लुगभाव ११८० [द्विष अप्रीतौ (अदा०) धातोर्लट्। शपो न लुक् छान्दसत्वात्]

द्वेषांसि द्वेषादियुक्तानि कर्माणि, भा०—ईर्ष्याक्रोधादि-दोषान् २१ ३ द्वेषयुक्तानि जन्तुजातानि (भा०—द्वेषादीन्) २८ १५ द्वेषयुक्तानि कर्माणि २ २९ २ **द्वेषोभिः**=द्वेष-युक्तैस्सह (दुर्जनै) ७ ६० ६ **द्वेषोभ्यः**=दुष्टेभ्य, भा०—द्वेषादियुक्तेभ्य पुरुषेभ्य २१ ४३ यथा द्विषन्ति तेभ्यस्तथा (पापिजनेभ्य) ५ ३५ शत्रुभ्य २१ ४४ विरोधिभ्य (जनेभ्य) २१ ४५ [द्विष अप्रीतौ (अदा०) धातोरौणादिको ऽसुन्प्रत्यय]

द्वेषोयुतम् द्वेषादिभी रहितम् (अग्नि=परमविद्वासम्) ४ ११ ५ **द्वेषोयुतः**=द्वेषयुक्ता (अत्रव) ५ २ ६ [द्वेषस्-युतपदयो समास। 'द्वेषस्' इति पूर्वपदे व्याख्यातम्। युत=युमिश्रणेऽमिश्रणे च (अदा०) धातो क्त प्रत्यय]

द्वेष्टि अप्रीतयति, भा०—हन्यात् २६ १० विरुणद्धि २ २५ दु खयति २ २५ शत्रूयति २ १५ न प्रीणयति १६ ६४ कोपयति १ २६ वैरयति ३ ५३ २१ विरुध्यति १ २५. अप्रीणाति १ २६ अप्रसन्नयति ३५ १२ वैरायते २ २५ द्वेष, अप्रीति, शत्रुता करता है, आर्याभि० २ २९, ३६ २३ [द्विष अप्रीतौ (अदा०) धातोर्लट् प्रत्यय]

द्वौ स्वप्रकाशभूगोलौ १ ३५ ६ **द्वाभ्याम्**=कार्य-कारणाभ्याम् २३ ३४ विद्यापुरुषार्थाभ्याम् २७ ३३ **द्वयोः**=स्वात्म-परात्मनो १ ८३ ३ राजप्रजाजनयो ६ ४५ ५ [द्विप्राति० प्रथमाद्विवचने रूपम्। अन्यत्र तृतीया-षष्ठ्यो द्विवचने]

द्व्यक्षरेण दैव्या उष्णिहा (छन्दसा) ६ ३१. [द्वि-अक्षरपदयो समास]

धक् दहे १ १७८ १ दहेत् ६ १ १४ दहति २ ११.२१ दह्यात् २.१५ १०. **धक्तम्**=दहतम् ११८३ ४ **धक्षत्**=दहेत् प्र०—अत्र 'वाच्छन्दसि' इति भपुत्र न ११३०८. दहति २४७ **धक्षि**=दहसि, प्र०—अत्र शपो लुक् १ १४१ ८ दह, प्र०—अत्र विकरण-लुक् १३.१२ [दह भस्मीकरणे (भ्वा०) धातोर्लुङ्। 'मन्त्रे घसह्वरणश०' अ० २४८० सूत्रेण लेर्लुक्। 'धक्षत्' प्रयोगे लेट्। अन्यत्र लटि शपो लुक्]

धक्षुषः दहत (अग्ने) १ १४१ ७. [दह भस्मीकरणे (भ्वा०) धातोर्लिट क्वसु]

धक्षोः दाहकस्य (अग्ने) २ ४४ [दह भस्मीकरणे (भ्वा०) धातोर्वाहु० औणादिक वसु प्रत्यय]

धत्त धरत ८ १८ भा०—उन्नयत १७ ९८ धारयत ११७११ **धत्तन**=धत्त १ ६४ १४ धरत ११०३५ दधतु, प्र०—अत्र व्यत्यय 'तप्तनप्०' इति तनवादेशश्च १२० ७ **धत्तम्**=धरेतम् ७ ५३ ३ धरत, प्र०—अत्र लडर्थे लोट् १ ९३ ७ प्रयच्छतम् १ ९३ २ धरतम् ४ ५७ ८ धारयत २ १६ **धत्तः**=दध्याताम् २८ ७ **धत्तात्**=दध्या ३ ८ १ **धत्ताम्**=धारयत २ ३ आच्छा-दित, शोभायुक्त करे, स० वि० १४८, अथर्व० १४ १ ५३ **धत्ते**=धरति ३ १० ३ **धत्थ**=धरत ७ ३७.२ **धत्थः**=धरथ १ १५७ ५ धरेतम् ६ ६८ ६ **धत्स्व**=धारण कुरु ६ २५ [डुधाञ् धारणपोषणयो (जु०) धातोर्लोटि रूपाणि धत्तात्=दास्यसि नि० ८ १८. धत्ते=धा+लट्]

धनजितम् धन जयत्युत्कर्षति येन तम् (यज्ञम्) ११८ **धनजिते**=यो धनेन जयति तस्मै (इन्द्राय=विदुषे सभासेनेशाय) २ २१ १ [धनोपपदे जि जये (भ्वा०) धातो क्विप्। 'ह्रस्वस्य पिति कृति तुक्' इति तुगागम]

धनञ्जयम् यो धन जयति तम् (कवि=विद्वासम्) ३ ४२ ६ य शत्रुभ्यो धन जयति तम् (वीरपुरुषम्) ११ ३४. **धनञ्जयः**=यो धनेन जापयति स (ईश्वर) १ ७४ ३ [धनोपपदे जि जिये (भ्वा०) धातो 'संज्ञाया भृतृवृजिधारि०' अ० ३ २ ४६ सूत्रेण छन्दसि-असज्ञायामपि खच्। पूर्वपदस्य मुम्]

धनदाः ऐश्वर्यदाता (अग्नि=विद्वान् राजा) ६ २८ यो धन ददाति स (राजा) ७ ३२ १७ **धनदाम्**=वृष्टि-वद्राजनीतिम् १ ३३ १० [धनोपपदे डुदाञ् दाने (जु०) धातो कर्त्तरि क्विप्]

धनम् यद्धिनोति वर्धयति तत्, प्र०—धन करमात्? धिनोतीति सत, नि० ३ ६, १२ ८२ सुवर्णादिकम् १८ ५

१ १६४.४१ **द्विपदीम्**=द्वे अभ्युदय-नि श्रेयसे सुखे पदे यस्या ताम् (स्वाहा वाचम्) ८ ३० **द्विपदे**=मनुष्याद्याय १७.६६ पुत्राद्याय ३६ ८ द्वौ पादौ यस्य मनुष्यादेस्तस्मै ११ ८३ मनुष्यादि के लिए स० वि० ११४, १७ ६६ [द्वि-पादपदयो समासे समासान्तलोपे च द्विपात्। तत 'प्रयस्मयादीनि च छन्दसि' इति भत्वात् 'पाद पत्' इति पदादेश । स्त्रिया 'पादोऽन्यतरस्याम्' इति वा ङीप्प्रत्यय । 'टाव् ऋचि' सूत्रेण टाप् प्रत्यये तु 'द्विपदा' इति रूपमपि । द्विपदी-मध्यमेन चादित्येन च नि० ११ ४० द्विपदे= द्विपाद्भ्य नि० १२.१३.]

द्विपात् द्वौ पादौ यस्य स मनुष्यादि ४ ५१ ५. **द्विपादम्**=मनुष्यादिकम् १३ ४७ **द्विपादे**=मनुष्याद्याय १.१२१.३. [द्वि-पादपदयो समासे समासान्तलोप । द्विपात्-द्विपाद् वै पुरुष ऐ० ४.३ द्विपाद् यजमान कौ० १६ ११ चन्द्रमा द्विपात्तस्य पूर्वपक्षापरपक्षौ पादौ गो० पू० २ ८ द्विपाद् वै पुरुष श० २ ३ ४ ३३]

द्विबर्हज्मा यो द्वाभ्या बृहते स द्विबर्हस्तेन द्विबर्हेण युक्ता ज्मा भूमिर्यस्य (सूर्य इव राजा) ६ ७३ १ [द्विबर्ह-ज्मापदयो समास । द्विबर्ह ='द्वि' इत्युपपदे वृह वृद्धौ (भ्वा०) धातोरण् प्रत्यय । ज्मा भूमिनाम निघ० १ १]

द्विबर्हसः यो द्वाभ्या विद्यापुरुषार्थाभ्या वर्द्धते तस्य (विद्वज्जनस्य) १ १७६ ५ **द्विबर्हाः**=द्वाभ्या विद्या-विनयाभ्या बर्हं वर्धन यस्य स (सभेशो राजा) ७ ८ ६ द्वाभ्या विद्याविनयाभ्या वृद्ध (विविद्वान्=विपश्चिज्जन) ४ ५ ३ यो द्वाभ्या विद्याशिक्षाभ्या प्रतापप्रकाशाभ्या वा वर्धयति स (विद्वान् जन) १ ७१ ६ द्वयोर्व्यवहार-परमार्थ-योर्वर्धक (रुद्र =न्यायाधीश) १ ११४ १० द्वाभ्या विद्या-पुरुषार्थाभ्या यो वर्धते स (सोम =ओषधिरस) ७ २४ २ द्वे बर्हसी व्यावहारिक-पारमार्थिक-वृद्धिकरे विज्ञाने यस्य सः, प्र०—द्विबर्हा इति पदनामसु पठितम्, निघ० ४ ३, ७ ३९ योऽन्तरिक्ष-वायुभ्या द्वाभ्या वर्धते (इन्द्र =सूर्य) ६ १९ २. या द्वाभ्या रात्रिदिनाभ्या बृहयति वर्धयति (उषा) ५.८० ४. [द्वि-बर्हस्पदयो समास । बर्हस्=वृह वृद्धौ (भ्वा०) धातोरौणादिकोऽसुन्प्रत्यय । द्विबर्हा =द्वयो स्थानयो परिवृढो मध्यमे च स्थान उत्तमे च नि० ६ १७]

द्विमाता द्वयोरग्निजलयोर्माता प्रमापक (परिज्मा= वायु) १ ११२ ४ द्वे वाय्वाकाशौ मातरौ यस्याऽग्ने स (वरुण =परमात्मा) ३ ५५ ६ द्वयो. प्रकाशाऽप्रकाशवतो-र्लोकसमूहयोर्माता निर्माता (अग्नि =जगदीश्वर) १ ३१ २ [द्वि-मातृपदयो समास]

द्विरूपाः द्वे रूपे यासा ता (ऐन्द्राग्ना =वायुविद्यु-त्साम्न पशव) २४.८. [द्वि-रूपपदयो समासे स्त्रिया टाप्]

द्विषतः द्वेषयुक्तस्य (मूर्खजनस्य) ६ ४७.१९ शत्रो., भा०—दु खस्य १ २४ **द्विषते**=शत्रवे १ ५० १३ **द्विषन्तम्**=शत्रुम् (जनम्) १ ५० १३ [द्विष अप्रीतौ (अदा०) धातो शतृप्रत्यय]

द्विषः द्विषन्ति अप्रीणयन्ति याभ्य शत्रुसेनाभ्यो दु ख-क्रियाभ्यो वा ता प्र०—अत्र 'कृतो बहुलम्०' इति हेतौ क्विप् ४ २९. ये धर्मे द्विषन्ति तान् (कामादीन् शत्रून्) १ ६७ ७ दुष्टान् १ ९० ३ शत्रून् ६ ५१ १६ द्वेषयुक्ता क्रिया ५ २५ ९ शत्रो ६ २४ धर्मद्वेष्टॄन् (दुर्जनान्) ५ ४४ १२ वैरिण (दोषान्) ३ १५ १ शत्रुभूता व्यभि-चारिणीर्वृ पत्नी (स्त्री.) ११ ४९ द्वेषवृत्ती २ ७ ३ अप्रीते २ ७ २ **द्विषाम्**=द्वेष्टॄणाम् (दुर्जनानाम्) ७ ३४ १३. [द्विष अप्रीतौ (अदा०) धातो कर्त्तरि क्विप्। 'कृतो बहुलम्' इति वा करणे क्विप्]

द्विष्मः न प्रीणीम ३८ २३ अप्रीतयाम १३ ४७. विरुन्ध्म १५ १५ विरुद्ध्याम १ २५ हम द्वेष करते हैं आर्याभि० २ २६, ३६ २३ पीडयाम २ २५ अप्रीति कुर्याम, भा०—विरोधिन जानीम १६ ६४ अप्रीणीम १ २६. कोपयाम १ २६ न प्रसादयेम १७ १ वैरायामहे २ २५ [द्विष अप्रीतौ (अदा०) धातोर्लटि उत्तमबहुवचने रूपम्]

द्विः द्विवारम् (विद्याजन्मयुक्त द्विजम्) ४ ६ ८ [द्वि प्राति० 'द्वित्रिचतुर्भ्य सुच्' इति सूत्रेण क्रियाभ्यावृत्तिगणने सुच्]

द्वीपम् द्विधाऽपासि यस्मिँस्तम् (महानदम्) १ १६९ ३ [द्वि-अप्पदयो समासे 'ऋक्पूरब्धू ०' अ० ५ ४ ७४ सूत्रेण समासान्तोऽकार प्रत्यय । 'द्व्यन्तरुपसर्गेभ्योऽप ईत्' अ० ६ ३.९७ सूत्रेण अप आदेरीकारादेश]

द्वीप्याय द्वीपेषु द्विर्गतजलेषु देशेषु भवाय (जनसमूहाय) १५ ३१ [द्वीपमिति व्याख्यातम् । ततो भवार्थे यत्-प्रत्यय]

द्वे रात्रिदिने १ ९५ १ शरीरात्मबले १ १५५ ५. कार्यकारणे ३ ५६ २ अभ्युदय नि श्रेयसे (सुखे) ४.५८ ३. [द्विप्राति० नपुसके प्रथमाद्विवचने रूपम्]

द्वेषः द्विषत शत्रून्, प्र०—अत्र 'अन्येभ्योऽपि०' इति कर्त्तरि विच् १ ३४ ११ द्वेष्टॄन् दुष्टान् शत्रून् मनुष्यान्

विशेषेण, शतघ्न्यादिभिः शस्त्रास्त्रैः. २६ ३६ धनुषा २ २४ ८. **धन्वन्**=धन्वत्यन्तरिक्षे १ ११५ ६ धन्वनि २६ ४० धन्वनो बहुसिक्तस्य स्थलस्य १ ११६ ४. वालुकायुक्ते स्थले ६ ३४.४. **धन्वनः**=धनुषः १६ ६ स्थलस्या-न्तरिक्षस्य च, ऋ० भू० १६०, ऋ० १ ८ ८ ४. **धन्वानि**=अविद्यमानोदकादिदेशान् ५ ८३ १० अन्तरिक्षस्थानि (अपः=जलानि) ६ ६२.२ धनूंषि ६ ५६ ७ भा०—आग्नेयाऽस्त्रादीनि १६ ५६ अन्तरिक्षावयवान् १६ ६३ स्थलप्रदेशान् ४ १६ ७ [धवि गत्यर्थे (भ्वा०) धातो 'कनिन् युवृषितक्षिराजि०' उ० १ १५६ सूत्रेण कनिन्-प्रत्ययः । धन्व=अन्तरिक्षनाम निघ० १ ३. धन्व अन्तरिक्षं धन्वन्त्यस्मादापः नि० ५ ५ धन्वन्=धनुषि नि० ६.१८]

धन्वचरः यो धन्वन्यन्तरिक्षे चरति सः (राजा) ५ ३६ १. ['धन्वन्' इति व्याख्यातम् । तदुपपदे चर गतौ (भ्वा०) धातो 'चरेष्ट' अ० ३ २.१६. सूत्रेण ट. प्रत्ययः]

धन्वच्युताः धन्वनोऽन्तरिक्षाच्च्युता प्राप्ता (अ०—मेघा.) १ १६८ ५ [धन्वन्-च्युतपदयोः समासः । 'धन्वन्' इति व्याख्यातम्]

धन्वन्तरये सर्वरोगनाशकाय (ईश्वराय) प० वि०, [धनु=चिकित्साशास्त्रम्, तस्यान्तमृच्छति धनु+अन्त+ऋ+इन्]

धन्वर्णसः धन्वे स्थलेऽर्णांसि यासां ताः (नद्यः) ५ ४५ २ [धन्व-अर्णस्पदयोः समासः । दधातिधान्यहेतुर्भवतीति धन्वम् । अर्णम् उदकनाम निघ० १ १२. शकन्ध्वादित्वात् पररूपम्]

धन्वाति प्राप्नुयात् ३.५३.४ [धवि गत्यर्थे (भ्वा०) धातोर्लिटर्थे लेट् । आटागमः]

धन्वायिभ्यः धनूंनि धनूंष्येतुं शीलमेषां तेभ्यः (सैनिकेभ्य.) १६.२२ [धन याच्ये (जु०) धातो 'भृमृशीङ्' उ० १.७ सूत्रेण उ-प्रत्यये धनु । तदुपपदे इण् गतौ (अदा०) धातोस्ताच्छील्ये णिनि.]

धन्वासह यो धनुषा शत्रून् सहते सः (सभेशो राजा) प्र०—अत्र छान्दसोऽन्त्यलोपः. १.१२७ ३ [धनुष् उपपदे षह मर्षणे (भ्वा०) धातोरच् प्रत्ययः । पूर्वपदस्यान्त्यलोपे दीर्घश्छान्दसः]

धन्वेव यथा शस्त्रविशेषः ३.४५ १. [धनु-इव पदयोः समासः]

धमति 'प्राप्नोति १७ १६ [धमति-अर्चतिकर्मा निघं० ३ १४ गतिकर्मा निघं० २ १४ वधकर्मा निघ० २ १६ ततो लटि लेटि वा रूपम्]

धमनिम् वेदवाणीम् प्र०—धमनिरिति वाङ्नाम० निघं० १.११, २.११.८ धमनि=वाङ्नाम निघ० १ ११ धमति गतिकर्मा (निघ० २.१४) ततः 'अर्तिसृधृधम्य०' उ० २ १०२ सूत्रेण अनि प्रत्ययः]

धमन्तः कम्पयमाना (राजानो जनाः) १ ८५ १० कम्पयन्तः (राजप्रजाजनाः) ४ २ १८ [धमति=गतिकर्मा नि० ६ २ ततः शतृप्रत्ययः.]

धमन्तीः शब्दयन्त्यः (वाणी=वाचः) ३ ३० १०. [धमतिर्गतिकर्मा नि० ६ २ ततः शत्रन्तात् ङीप्-प्रत्ययः]

धमितम् प्रज्वालितम् (अग्निम्) २.२४ ७ [धमति गतिकर्मा निघ० २ १४ वधकर्मा निघ० २ १६ ततः क्त-प्रत्ययः]

धय पिब १७ ८८ **धयति**=पिबति २ ३५ ५. आधरति १ १७६ दुग्ध पीके बढता है, सं० वि० १०४, २ ३५ ५ [धेट् पाने (भ्वा०) धातोर्लोट् । अन्यत्र लट्]

धयन् दुग्धं पिबन् (पुत्र.) १६ ११. पय पिबन् (धरुण=पुत्र) ८ ५१ [धेट् पाने (भ्वा०) धातो शतृ-प्रत्ययः]

धरणी आधारभूता (स्त्री) १४ २१ [धरति सर्वमिति विग्रहे धृञ् धारणे (भ्वा०) धातो 'अर्तिसृधृ०' उ० २ १०२. सूत्रेणानि प्रत्ययः । ततः स्त्रियां 'कृदिकारादक्तिनः' इति ङीप्]

धरित्री सर्वेषां धारिका (स्त्री) १४.२२ [धरतीति धरित्री। धृञ् धारणे (भ्वा०) धातो 'अर्तिलूधूसूखनसहचर इत्र' उ० ४ १७३ सूत्रेण इत्रप्रत्ययः]

धरुणम् सर्वस्य धर्त्तृ (सत्यं=कारणादिकम्) ५ १५.२ धर्त्तारम् (विद्वांस जनम्) ५ १५ ५ धर्त्तव्यं पुत्रम्, अ०—गर्भम् ८ ५१. धारणकर्त्रीं पृथिवीम्, अ०—अन्तरिक्षम्, १ २३ १३ धरति सर्वलोकान् यत्तत् तेजश्च (अग्निः=परमेश्वर) १.१८ आधारकम् (रज) १ ५६ ५ सर्वमूर्त्तद्रव्याणामाधारम् १.५६.६ उदकम्, प्र०—धरुणमित्युदकनाम, निघ० १.१२, १ १२१ २ **धरुणः**=धारक. (अग्निः=पावक) ५ १५ १. धर्त्ता (विद्वान् जन) १.७३ ४ आधार (अ०—परमात्मा) १७ ८२ धारणगुण १४ २३. धर्त्ताऽऽधारभूत, भा०—व्यर्थव्ययस्याऽकर्त्ता (राजा) १२ २२ **धरुणे**=धारक (धर्मे) ५ १५ २ **धरुणेषु**=आधारेषु ३ ३ १ धारकेषु वाय्वादिषु १ ५२ २. [धृञ् धारणे (भ्वा०) धातोर्बाहुलकादौणादिक उनन्प्रत्ययः । धरुणेषु दकेषु ।

श्रियम्, भा०—करम् ६ १७ जगत् रूप धन को, स० प्र० २३८, १० ४८ ५ वस्तुमात्रम् ४० १ विद्यासुवर्णादिकम् १ ३६ ४ **धनानाम्**=द्रव्याणाम् ३ ३२ १७ विद्यासुवर्णादीनाम् ३ ३५ ११ राज्यविभूतिनाम् १ १० २ ५ पूर्ण विद्या-राज्यादि साध्यपदार्थानाम् १ ४ ६ **धनानि**= पृथिवीसुवर्णविद्यादीनि १ ३० १६ विद्या-धर्म-चक्रवर्त्ति-राज्यश्रीप्रसिद्धानि १ ४२ ६. **धनाय**=उत्तमधनप्राप्तये १ १०० ८ **धने**=विद्याचक्रवर्त्तिराज्यसिद्धे द्रव्ये १ ५४ ६ सुवर्ण-रत्नादौ १.११६ १५ **धनेन**=ऐश्वर्येण १ २ ७ [डुधाञ् धारणपोषणयो. (जु०) धातोर्बाहु० औणादिक (उ० २ ८१) क्यु. प्रत्यय । धनम् धिनोतीति सत नि० ३ ६. राष्ट्राणि वै धनानि ऐ० ८ २६ तस्माद् हिरण्य कनिष्ठ धनानाम् तै० ३.११ ८ ७ धन मे शस्य पाहि काठ० ७.३]

धनयन् विद्यादिधन कुर्यु १.७१.३ **धनयन्त**= आत्मनो धनमिच्छन्ति, प्र०—अत्राऽडभाव १ १६७ २ **धनयन्ते**=धनं कुर्वन्ति १ ८८.३ [धनपदाद् आत्मन इच्छाया क्यजन्ताल् लड् 'न छन्दस्यपुत्रस्य' इतीत्व न । अटोऽभावश्छान्दस । अथवा=धनप्राति० 'तत्करोति तदाचष्टे' इति णिजन्तस्य रूपाणि]

धनसातौ धनाना सविभक्तौ १८ ३२ [धन-साति-पदयो समास । साति =षण सम्भक्तौ (भ्वा०) धातो क्तिन्]

धनसाम् धनानि सनन्ति सभजन्ति यया ताम् (अथर्व्यम्=सेनाम्) १ ११२ १० यो धनानि सनोति विभजति तम् (विद्वास जनम्) प्र०—अत्र धनोपपदात् सन-धातोर्विट्-प्रत्यय १ ११२ ७ **धनसाः**=ये धनानि सनन्ति सभजन्ति ते (विद्वास) २ १० ६ [धनोपपदे षण सम्भक्तौ (भ्वा०) धातो 'जनसनखनक्रमगमो विट्' अ० ३ २ ६७ सूत्रेण विट् । 'विड्वनोरनुनासिकस्यात्' अ० ६ ४ ४१ सूत्रेणाकारान्तादेश]

धनस्पृत् यो धन स्पृणोति सेवते स (राजा) ३ ४६ २ **धनस्पृतम्**=धनस्पृहायुक्तम् (गृहपतिम्) ५ ८ २. धन स्पृणन्ति येन तम् (सुदक्ष=उत्तमवल-चातुर्य्यम्) ६ १६ ८ धनेन प्रीत सेवित वा (तोकम्=तनयम्) १ ६४ १४ धनैर्विद्यासुवर्णादिभि स्पृत प्रीत सेवितस्तम् (सभ्य-जनम्) १ ३६ १० [धनोपपदे स्पृ प्रीतिपालनयो (स्वा०) धातो क्विप् प्रत्यय । तुगागम]

धना द्रव्याणि १ १३० ६ धनानि १ ६४ १३ [धन-प्राति० जस शेरादेशस्य 'शेश्छन्दसि बहुलम्' इति लोपे रूपम्]

धनायति आत्मनो धनमिच्छति २३ ३० [धनपदाद् आत्मन इच्छाया क्याजन्ताल्लट्]

धनिनम् बहुधनवन्त प्रजास्थम् (जनम्) ४ २ १५ धार्मिक धनाढ्यम् (जनम्) १ ३३ ४ **धनिन.**=बहुधन-युक्तस्य (विदुषो जनस्य) १ १५० २ [धनप्राति० भूम्न्यर्थे इनि प्रत्यय]

धनिष्ठा अतिशयेन धनिनी (माता=जननी) ३३ ६४ [धनप्राति० मतुवन्ताद् अतिशायने इष्ठन् । 'विन्मतोर्लुक्' इति मतुपो लुक् । तत स्त्रिया टाप्]

धनुतरौ शीघ्र गमयितारौ (हरी=वायुविद्युतौ) ४.३५ ५

धनुत्रीः धन-धान्यादियुक्ता (सुखैश्वर्यैणि) ३ ३१ १६

धनुष्कारम् यो धनुरादीनि करोति तम् (शिल्पिन जनम्) ३० ७ [धनुष् उपपदे डुकृञ् करणे (तना०) धातोरण्प्रत्यय । धनुर्धन्वतेर्गतिकर्मण, वधकर्मणो वा । धन्वन्त्यस्माद् इषव नि० ६ १६]

धनुष्कृद्भ्यः धनुषा निर्मातृभ्य (शिल्पिजनेभ्य) १६ ४६ [धनुष्-उपपदे डुकृञ् करणे (तना०) धातो क्विप्-प्रत्यय । तुगागम । धनुष् इति पूर्वपदे व्याख्यातम्]

धनुः चापम् १६ १३ शस्त्राऽस्त्रम् २६ ३६. **धनोः**= धनुषो ज्याया १ ३३ ४ धनुष १ १४४ ५ [धन धान्ये (जु०) धातो 'अर्त्तिपृवपियजि०' उ० २ ११७ सूत्रेण उसि प्रत्यय । धनु =धन्वतेर्गतिकर्मण, वधकर्मणो वा, धन्वन्त्यस्माद् इषव । नि० ६ १६ वार्त्रघ्न वै धनु श० ५.३ ५ २७, वज्रो वै धनु मै० ४४ ३]

धन्या धन लब्धा (धिषणा=प्रज्ञा द्यौ पृथिवी वा) ६ ११ ३ धन लब्ध्री (धिषणा=प्रज्ञा) ५ ४१ ८ [धन-प्राति० लब्धार्थे 'धनगण लब्धा' अ० ४४ ८४ सूत्रेण यत्प्रत्यय । स्त्रिया टाप्]

धन्या धनाऽर्हाणि (ऐश्वर्याणि) ३ १ १६ [धनप्राति० 'तदर्हति' अ० ५ १ ६३ सूत्रेण यत् । प्रथमाबहुवचने शेर्लोप]

धन्व प्राप्तव्यानि (अ०—योजनानि) प्र०—अत्र गत्यर्थात् धविधातोरौणादिक कनिन् 'सुपा सुलुक्०' इति विभक्तेर्लुक् १ ३५ ८ धनुरादीनि २ ३३ १०. अन्तरिक्षम्, प्र०—धन्वेति अन्तरिक्षनाम निघ० १.३, २.३८ ७ धनुर्वेदम् ६ १२ ५ **धन्वना**=धनुरादिना शस्त्राऽस्त्र-

४.४.१.१. यो वै स धर्मः सत्यं वै तत् तस्मात् सत्यं वदन्त-माहुर्धर्मं वदतीति, धर्मं वा वदन्तं सत्यं वदतीति श० १४.४ २.२६. वरुणाय धर्मस्य पतये यवमयं चरुं निर्वपेत् मै० २ ६.६. वरुणोऽस्य प्रजा धर्मेण दाधार ऐ० आ० २.१.७. श्रीर्वै धर्मः । राज्यं वै धर्मः जै० ३.२३१]

धर्मपतीनाम् धर्म्मस्य रक्षितॄणाम् (धार्मिकजनानाम्) ६.३६ [धर्म-पतिपदयोः समासः]

धर्माणम् पक्षपातरहितं न्यायाचरणं धर्म्मम् ३४ ७ धर्मकारिणम् (सज्जनम्) १.१८७ १ [धर्मन्प्राति० द्वितीयैकवचनम् । धर्मन्=धृञ्धारणे (भ्वा०) धातोर्मनिन्-प्रत्ययः]

धर्ष धृष्णुहि, प्र०—विकरणव्यत्ययेनाऽत्र शप् ६ ८ [ञिधृषा प्रागल्भ्ये (स्वा०) धातोर्लेट् । विकरणव्यत्ययेन शप्]

धवध्वे कम्पयध्वे ५ ६०.३ (धूञ् कम्पने (क्र्या०) धातोर्लट् लेट् वा । विकरणव्यत्ययेन शप्]

धवीयान् अतिशयेन कम्पकः (वायुः=स्तेनः) ६.१२.५. [धूञ् कम्पने (क्र्या०) धातोस्तृचि धविता । धवितृप्राति० अतिशायने ईयसुन् । 'तुरिष्ठेमेयस्सु' सूत्रेण तृचो लोपः]

धात् दध्यात् ७ ३४ १७. दधातु ३ ५४ १२. दधाति १.६७.२. **धात**=धरत ६.५०.७ धत्त ६.६५ ३ धरन्ति ४ ३५ ८ दधति ७ ३६ ६ **धातन**=धत्त ७ ४७ ४ **धाति**=दधाति २७.२४ **धातु**=विजयमुत्तं दधातु, ऋ० भू० २२० [डुधाञ् धारणपोषणयोः (जु०) धातोर्लुङ्, अडभावः, 'गातिस्था०' इति सूत्रेण सिचो लोपः । 'धातन' प्रयोगे 'तप्तनप्तनथनाश्च' ति सूत्रेण तप्रत्ययस्य तनबादेशः । 'धाति' प्रयोगे लट् शपो लुक् च । 'धातु' प्रयोगे लोट् शपो लुक् च]

धातवे धातुं पातुम् १.१६४४९ [धेट् पाने (भ्वा०) धातोः 'तुमर्थे सेसेन०' इति सूत्रेण तवेङ् प्रत्ययः]

धाता दधाति सकलं जगत् पोषयति वा सः (ईश्वरः) पं० वि०, ऋ० ८ ८.४८ ३ सब जगत् का धारण पोषण करने वाला (परमात्मा) आर्याभि० २ ५४, ऋ० ८.८.४८.३. गृहाश्रम-धर्त्ता (गृहपतिः=गृहस्थो जनः) ८.१७. सर्वस्य संसारस्य राज्यस्य धर्त्ता (ईश्वरः) ३२ १५ धर्त्ता पोषको वा (अधिपतिः=सर्वेषां स्वामीश्वरः) १४ २८ **धातुः**=धर्त्तुर्वायोः ३२.१२ धारकस्य (पुरुषस्य) २५ ४ **धातृभिः**=धर्त्तृभिः (विद्वद्भिर्जनैः) ३३.६ यज्ञक्रिया-धारकैर्विद्वद्भिः (जनैः) ३.१५ **धात्रा**=सकल विश्व के धारण करने वाले परमात्मा ने, स० वि० १६६, ६.११३ ४. **धात्रे**=धारकाय (श्रीमते जनाय) २४.५. भा०—ये धातृगुणान्ते धारणाय २४ ६. [डुधाञ् धारण-पोषणयोः (जु०) धातोः कर्त्तरि तृच्प्रत्ययः । धाता सर्वस्य विधाता नि० ११ १० अग्नि वै धाता मै० ४ ३ ५ इयं (पृथिवी) वै धाता तै० ३ ८ २३.३. धाता वषट्कारः तै० स० ३ ४ ६.६. मै० ४.३.५ धाता षड्ढोता तै० २.२.८.४ प्रजापतिर्धाता श० ६ ५ १ ३८ मृत्युस्तदभवद् धाता तै० ३.१२ ६ ६. य सूर्यः स धाता स उ एव वषट्कारः ऐ० ३ ४८. संवत्सरो वै धाता तै० स० १.५ १.३, मै० ४ ३.६ स यः स धातासौ स आदित्यः श० ६ ५ १ ३७.]

धातु यद् दधाति तत् (हविः=होतव्यं द्रव्यम्) ५ ४४.३ [डुधाञ् धारणपोषणयोः (जु०) धातोः 'सितनि-गमि०' उ० १.६६. सूत्रेण तुन्प्रत्ययः]

धानम् धारणम् ३ ७ ६ [डुधाञ् धारणपोषणयोः (जु०) धातोर्ल्युट्प्रत्ययः]

धानानाम् भृष्टयवादन्नानाम् १६ २२. **धानाः**=पक्वान्नविशेषाः ३.३५.७. अग्नि-संस्कृतान्नविशेषान् ३ ३५ ३ भृष्टान्नानि ६ २६.४. यवाः ४.२४ ७ अग्निना भृष्टान्नविशेषाः ३ ५२ ६ भृष्टयवादयः १६.२१. धीयन्ते यासु ता दीप्तयः प्र०—धापृवस्य०, उ० ३.६ इति नः प्रत्ययः १.१६ २ धारकाः (गृहपतयः=गृहाश्रमिणः), प्र०—अत्र दधातेरौणादिको नः प्रत्ययः ८.११. [डुधाञ् धारणपोषणयोः (जु०) धातोः 'धापृवस्यज्यतिभ्यो नः' उ० ३.६ सूत्रेण नः प्रत्ययः । ततः स्त्रियां टाप् । अयं शब्दो-नित्यस्त्रीलिङ्गो बहुवचनान्तश्च । धाना भ्राष्ट्रे हिता भवन्ति फले हिता भवन्तीति वा नि० ५.१२.]

धानावत् परिपक्वा धाना विद्यन्ते यस्मिँस्तत् (सव-नम्=ऐश्वर्यम्) ३.४३.४ [धानाप्राति० भूमन्यर्थे मतुप् । धानेति व्याख्यानम्]

धानावन्तम् बह्वचो धाना विद्यन्ते यस्य तम् (आप्तं विद्वांसम्) ३.५२.१. सुसंस्कृतैर्धान्याऽन्नैर्युक्तम् भा०—सुसंस्कृतैं रसादिभिर्युक्तमन्नम् २० २६ [धानाप्राति० भूमन्यर्थे मतुबन्ताद् द्वितीयैकवचनम् । धानेति व्याख्यातम्]

धान्यम् तण्डुलादिकम् ५ ५३ १३ धातुमर्हं यद्, यज्ञात शुद्धं, रोगनाशकेन स्वादिष्ठतमेन सुखकारकमन्नं तत्, प्र०—अत्र 'दधातेर्यत् नुट् च' उ० ५ ४८. अनेन यत्प्रत्ययो नुडा-गमश्च १ २० [डुधाञ् धारणपोषणयोः (जु०) धातो

नि० १२ ३३ वरुणमित्युदकनाम निघ० १ १२ प्रतिष्ठा वै धरुणम् श० ७४२५ असावेवादित्यो धरुण एकविंश श० ८४११२]

धरुणह्वरम् धरुणानि धारकाणि ह्वराणि कुटिलानि यस्मिँस्तत् (तम) १ ५४ १० [धरुण-ह्वरपदयो समास । धरुण व्याख्यातम् । ह्वर =ह्वृ कौटिल्ये (भ्वा०) धातोरच्-प्रत्यय]

धरुणा धर्त्री (स्त्री) १३ ३४ पुष्टिकर्त्री (स्त्री) १४ २१ विद्या-धर्मधर्त्री (राजपत्नी) १३ १६ [धरुण व्याख्यातम् । तत स्त्रिया टाप्]

धरुणानि उदकानीव शान्तान्याचरणानि, प्र०—धरुणमित्युदकनाम, निघ० १ १२, ४ २३ ६ [धरुण व्याख्यातम्]

धर्णसि धर्ता (सर्वव्यापक ईश्वर) प्र०—अत्र 'सुपा सुलुक्०' इति विभक्तेर्लुक् १ १०५ ६ **धर्णसिम्**=धर्तारम् (विद्वास जनम्), प्र०—अत्र बाहुलकादसि प्रत्ययो नुडागमश्च १ १४१ ११ अन्यद्धारकम् (विद्वास जनम्) ५ ८ ४ **धर्णसिः**=धर्ता (विद्वान् जन) ५ ४३ १३ [धृञ् धारणे (भ्वा०) धातोर्बाहुलकादौणादिकोऽसि प्रत्ययो नुडागमश्च धर्णसिरिति बलनाम निघ० २ ६]

धर्णिः यो धरति स (अग्नि =विद्युत्) १ १२७ ७ [धृञ् धारणे (भ्वा०) धातोर्बाहु० औणादिको नि प्रत्यय]

धर्त्तः ! धारक (इन्द्र =सेनापते) १ १०२ ५ **धर्त्ता**=सकलव्यवहार-धारक (विद्वान् जन) २२ ३ पोषक (पदार्थ) ७ ३५ ३ धाता (परमात्मेव राजा) ३ ४६ ४ पराक्रमेणाकर्षणेन वा धारक (इन्द्र =सेनापति सूर्यो वा) १ ११ ४ **धर्तारा**=कला-कौशल-यन्त्रेषु योजितौ होम-रक्षण शिल्पव्यवहारान् धरतस्तौ (अग्निजले) १ १७ २ धर्त्तारौ (मित्रावरुणा=प्राणोदानौ) ५ ६६ ४ [धृञ् धारणे (भ्वा०) धातो कर्त्तरि तृच्प्रत्यय । 'धर्त्तारा' प्रयोगे 'सुपा सुलुग्०' इत्याकारादेश]

धर्त्रम् धारणम् १४ २३ धरति यद् येन वा (सर्वधातृ ब्रह्म), भा०—सर्वधारको वायु, प्र०—वायुर्वाव धर्त्रं चतुष्टोम, स आभिश्चतसृभिर्दिग्भि स्तुते तद्यत्तमाह धर्त्रमिति । प्रतिष्ठा वै धर्त्रम् । वायुरु सर्वेषा भूताना प्रतिष्ठा, तदेव तद्रूपमुपदधाति, स वै वायुमेव प्रथममुपदधाति, वायुमुत्तम वायुनेव तदेतानि सर्वाणि भूतान्युभयत परिगृह्णाति शत० ८ २ १ १६ अनेन प्रमाणेन धर्त्रशब्देन वायुरीश्वरश्च गृह्येते १ १८ [धृञ् धारणे (भ्वा०) धातो 'गुधृवीपचिवचि०' उ० ४ १६७ सूत्रेण स्त्र प्रत्यय । प्रतिष्ठा वै धर्त्रम् श० ८ ४ १ २६ वायुर्वाव धर्त्रं चतुष्टोम । स आभिश्चतसृभिर्दिग्भि स्तुते श० ८ ४ १.२६ धर्त्रमस्यन्तरिक्ष दृह, प्राण दृहापान दृह तै० स० १ १ ७ १]

धर्त्री धारिका (स्त्री), भा०—मातृवन्मान्यकर्त्री भूमि १४ २१ [धर्तृ प्राति० स्त्रिया ङीप्प्रत्यय । धर्तृ =धृञ् धारणे (भ्वा०) धातो कर्त्तरि तृच्]

धर्त्रे धारणशीलाय (अ०—होत्रे जनाय) १७ ५६ [धृञ् धारणे (भ्वा०) धातो कर्त्तरि तृच्]

धर्म धर्माणि ३ १७.१ धर्त्तव्यम् (अहिंसाख्यं व्यवहारम्) ३ १७ ५ धारणम् ६ ५ धारणाम् १८ ३० सत्यधारक (पुरुष स्त्रि वा) ३८ १४ धैर्यस्वरूप (सर्व सौख्यप्रदेश्वर), आर्याभि० २ ३१, ३८ १४ **धर्मन्**=धर्मे ५ १५ २ **धर्मणः**=न्यायस्य १० २६ धर्मस्य १० २६. धर्मात् ६ ७० ३ **धर्मणा**=धर्मेण, भा०—न्यायविनययुक्तेन व्यवहारेण ३८ १६ स्वधर्मेण १ १६० १. धारणसामर्थ्येन ३४ ४५ आकर्षण-धारणादिगुणेन ६.७० १ धर्म से स० वि० १२१, अथर्व० १४ १ ५१ **धर्मणाम्**=धर्माणा योगेन १ ५५ ३ **धर्मणे**=धर्मोन्नतये ४ ५३ ३ **धर्मभिः**=धर्माचरणै ५ ८१ ४ धर्म्मे ३ ६० ६ [धृञ् धारणे (भ्वा०) धातोर्बाहु० औणादिको मनिन्प्रत्यय]

धर्मम् वेदप्रतिपाद्यम् (कर्म) ऋ० भू० २११, अथर्व० १८ ३ १ १ पक्षपातरहित न्यायाचरण, वेदोक्त कर्म को, स० वि० १४४, अथर्व० १२ ५ ७ **धर्मः**=न्याय, ऋ० भू० १५१, ३८ १४ वेदोक्तो न्याय पक्षपातरहित सत्याचरणयुक्त सर्वोपकार ऋ० भू० १०३, अथर्व० १२ ५ ७ प्रताप ५ १६ ४ पक्षपातरहितो न्याय २० ६ **धर्माय**=धर्मरक्षणाय ३० ६ **धर्मेण**=न्यायाचरणेन १५ ६ **धर्माणि**=कर्त्तव्यानि ऋ० भू० १२६, ३१ १६ धर्मान् धारकाणि पृथिव्यादीनि वा ३४ ४२ धर्म्याणि कर्माणि ५ २६ ६ धारणात्मकानि (कर्माणि) ३१ १६. स्वस्वभावजन्यान् धर्मान् १ २२ १८ [धृञ् धारणे (भ्वा०) धातो 'अर्त्तिस्तुसुहुसृधृ०' उ० १ १४० सूत्रेण मन्प्रत्यय । एष धर्मो य एष (सूर्य) तपत्येष हीद सर्वं धारयति श० १४ २ २ २६ धर्म (साम) भवति । धर्मस्य धृत्यै ता० १४ ११ ३५ धर्मेण सर्वमिद परिगृहीतम् तै० आ० १० ६२ १ धर्मो मनुष्य काठ० ३७ १७ धर्मो वा अधिपति तै० ३ ६ १६ २ धर्मो हैन (ब्रह्मचारिणम्) गुप्तो गोपायति गो० १ २ ४ प्रतिरसि धर्माय त्वा धर्मं जिन्व तै० स०

इत्यस्य यङ्लुकि प्रयोग. १ ११.२ भृश नमस्कुर्म १ ७८.५ भृश नता स्म ४ ३२.४. **नोनुवन्त**=भृश शब्दायन्ते ४ २२ ४ **नोनुवुः**=भृश प्रशसेम ६ ४५ २५. [णु स्तुतौ (अदा०) धातोर्यङ्लुकि तहि तङि लिटि च रूपाणि। नौ अर्चतिकर्मा निघ० ३ १४]

नौभिः नौकाभि १ ११६.३ समुद्रे गमनागमनहेतु-रूपाभि ऋ० भू० १६०, ऋ० १.८८ ३ **नौ.**=बृहती नौका ५ ५६ २ **नावम्**=नुदन्ति चालयन्ति प्रेरते वा या ताम् (नौकाम्), प्र०—'ग्लानुदिभ्या डौ' उ० २ ६४. अनेनाऽय सिद्ध १ ११६.५ **नावः**=सागरोपरि नाव इव विमानानि, ऋ० भू०, १० १६ [नौ वाङ्नाम निघ० १ ११ णुद प्रेरणे (तुदा०) धातो 'ग्लानुदिभ्या डौ' उ० २ ६४ सूत्रेण डौ प्रत्यय । णौ प्रणोत्तव्या भवति, नमतेर्वा नि० ५ २३]

न्यक्रमीत् नितरा क्रमते ३ ३ ६३ नितरा क्रामति ६ ५६ ६ [नि+क्रमु पादविक्षेपे (भ्वा०) धातोर्लुङ्]

न्यक्रान् नितरा कुर्वन्ति २ ११ ८. [नि+डुकृञ् करणे (तना०) धातोर्लुङ् । 'मन्त्रे घसह्वरणश०' सूत्रेण लेर्लुक् । आडागमश्छान्दस]

न्यग्रोधः वट, भा०—सूर्य २३ १३ [न्यग् उपपदे रुह बीजजन्मनि प्रादुर्भावे च (भ्वा०) धातोरच्-प्रत्यय हस्य धकारश्छान्दस । न्यक्=नि+अञ्चु गतिपूजनयो (भ्वा०) धातो. क्विन् । ते यत्रयच्चोऽरोहस्तस्मान्न्यङ् रोहन्ति न्यग्रोहो न्यग्रोहो वै नाम त न्यग्रोह सन्त न्यग्रोध इत्याचक्षते ऐ० ७ ३० न्यञ्चो न्यग्रोधा रोहन्ति श० १३ २ ७ ३ परोक्षमिव ह वा एष सोमो राजा यन्न्यग्रोध ऐ० ७ ३१ क्षत्र वा एतद्वनस्पतीना यन्न्यग्रोध ऐ० ७ ३१]

न्यङ् यो न्यग्भूतस्सन् (सूर्य) ४ १३.५ यो नित्य-मञ्चति स (जीवात्मा) ४ १४ ५ **न्यञ्चम्**=यो निश्चितमञ्चति तम् (मेघम्) ५ ८३ ७ [नि+अञ्चु गतिपूजनयो (भ्वा०) धातो 'ऋत्विग्दधृग्०' इत्यादिना कर्त्तरि क्विन्]

न्यङ्कुः मृगविशेष २४ ३२ **न्यङ्कून्**=पशु-विशेषान् २४ २७. [नि+अञ्चु गतिपूजनयो (भ्वा०) धातोर्डु प्रत्यय । 'न्यङ्क्वादीना च' इति कुत्वम्]

न्यनमत् नितरा नमतु २.२४ २ [नि+णम प्रह्वत्वे शब्दे (भ्वा०) धातोर्लेट्]

न्यपद्यन्त निश्चय से प्राप्त होते है, स० वि० १३६, अथर्व० १४ २ ३२ [नि+पद गतौ (दिवा०) धातोर्लङ्]

न्यपादयन् निश्चयेन विनाशयेत् २ ११.१० [नि० पद गतौ (दिवा०) धातोर्णिजन्तात् लङ्]

न्यपावृणोः नितरा दूरीकरोति २ ११ १८. [नि+अप+वृञ् वरणे (स्वा०) धातोर्लङ्]

न्ययनम् निश्चितगमन स्थानम् १० ७ नि+इण्-गतौ (अदा०) धातोर्ल्युट्]

न्ययातन नितरा प्राप्नुत ५.५४ ५. नि०+या प्रापणे (अदा०) धातोर्लङ् । त-प्रत्ययस्य तनबादेशश्छान्दस]

न्ययामि नितरा प्राप्नोमि ६.३४ ४. [नि+यम गतौ (भ्वा०) धातोर्लङ् । व्यत्ययेन परस्मैपदम्]

न्यरन्धय निश्चयेन हिंसय ७ १६ २ [नि+रध हिंसासराध्यो. (दिवा०) धातोर्णिजन्ताल्लोट् । 'रधिजभो-रचि' सूत्रेण नुम्]

न्यर्थम् निश्चितोऽर्थो यस्मिँस्तम् (न्यायेन प्राप्त-पदार्थम्) ७.१८ ९ **न्यर्थानि**=निश्चिता अर्था येषु प्रयोजनेषु तानि ६ २७ ६ [नि-अर्थपदयो समास]

न्यर्बुदम् असख्यम् (सख्या), (न्यर्बुदमिति नर्व-निखर्व-महापद्म-शङ्कु सख्यानामप्युपलक्षकम्) १७ २ [नि-अर्बुदम्-पदयो समास । अर्बुदो मेघो भवति, अरणमम्बु तद्दोऽम्बुद, अम्बुमद् भातीति वा। अम्बुमद् भवतीति वा। स यथा महान् बहुर्भवति वर्षस्तदिवार्बुदम् नि० ३ १० यो वै वाचो भूमा तन्न्यर्बुदम् तै० ३ ८ १६ ३]

न्यलिप्सत नितरा लिम्पन्ति १ १९१ ३ [नि+लिप उपदेहे (तुदा०) धातोर्लुङ् ।

न्यविक्षत नितरा प्रविशन्ति १.१९१ ४ [नि+विश प्रवेशने (तुदा०) धातोर्लुङ् सामान्ये]

न्यविन्देयाम् नितरा प्राप्नुतम् ४ २८ ४ [नि+विद्लृ लाभे (तुदा०) धातोर्लङ्]

न्यवृणक् नित्य वृणक्षि १ ५३ ८ नितरा वृणक्ति २ १४ ७ [नि+वृजी वर्जने (रुधा०) धातोर्लङ्]

न्यसदत् नितरा सीदति २ ९ १ **न्यसदन्**=नितरा सीदन्ति १ १९१ ४ [नि+षद्लृ विशरणगत्यवसादनेषु (भ्वा०) धातोर्लुङ् । लृदित्त्वादङ्]

न्यसादयन्त नितरा स्थापयन्तु ३३ ७ नित्य कार्येषु नियोजयत । ३ ९ ९. [नि+षद्लृ विशरणगत्यवसादनेषु (भ्वा०) धातोर्णिजन्ताल् लङ्]

न्यसादि नितरा साद्यत १ ६० २ नितरा सद्यते ३ ४ ४ [नि+षद्लृ धातो. कर्मणि लुङ्]

(मर्त्त =मनुष्य), प्र०—अत्र 'सुधित-वसुधित-नेमधित-धिष्वधिषीय च' अ० ७.४.४५. इति छन्दसि निपातनात् क्त-प्रत्यये हित्व प्रतिषिध्यते 'सुपा सुलुक्०' इति सो स्थाने आकारादेश १ ७२ ४ नेमधितौ सङ्ग्रामे ७ २७ १ धार्मिकाऽधार्मिकयोर्मध्ये धार्मिकाणा ग्रहीतार (राजपुरुषा) ६.३३ ४ [नेमपूर्वस्य दधाते. क्तप्रत्यये 'सुधितवसुधित-नेमधित०' अ० ७ ४ ४५ सूत्रेण इत्वमिडागमो वा निपात्यते। नेम =णीञ् प्रापणे (भ्वा०) धातो 'अर्तिस्तु०' उ० १ १४० सूत्रेण मनूप्रत्यय । नेमधिता सग्रामनाम निघ० २ १७ नेमधिति सग्रामनाम निघ० २ १७]

नेमन्निषः नीयन्ते इष्यन्ते च यास्ता (गूर्त्तय = उद्यमयुक्ता कन्या) १ ५६ २

नेमयः कलाचक्राणि १.३८.१२ **नेमिम्**=चक्रम् ७ ३२ २० **नेमिः**=प्रापको लय धुरि इति भाषायाम् २ ५ ३. रथाङ्गम् ५ १३.६ [नेमि वज्रनाम निघ० २ २० णीञ् प्रापणे (भ्वा०) धातो 'नियो मि ' उ० ४ ४३ सूत्रेण नि प्रत्यय]

नेमः अर्द्धाऽधिकारी (पुमान्=अलस पुरुष) ५ ६१ ८ **नेमानाम्**=अन्नानाम्, प्र०—नेम इत्यन्ननाम निघ० २ ७, ६ १६ १८. [नेम इत्यर्धस्य ······ नेमोऽपनीत नि० ३ २० नेम. अन्ननाम निघ० २ ७]

नेमे प्रह्वीभूता भवति १.५७ ५ [णम प्रह्वत्वे शब्दे (भ्वा०) धातोर्लिट् । व्यत्ययेनात्मनेपदम्]

नेमे नियन्तार (राजभृत्या) ४ २४ ४ सर्वे (सोमपा =धार्मिका वीरजना) १ ५४ ८

नेशत् नश्येत् ६.५४.७ नाशयति ४.१ १७. [णश अदर्शने (दिवा०) धातोर्लेट् । विकरणव्यत्ययेन शप्]

नेषत् नयेत् १ १४१ १२ **नेषति**=नयेत् ५ ४६ १ **नेषि**=नयसि, प्र०—अत्र 'बहुल छन्दसि' इति शवभाव. १६ ५२. प्रापयसि प्र०—अत्र नीधातोर्लेटि 'बहुल छन्दसि' इति शपो लुक् । अन्तर्गतो ण्यर्थ' १ ६१ १ प्राप्नोषि, प्र०—अत्र 'बहुल छन्दसि' इति शवभाव ८ १५. **नेषथ**=नयथ ५ ५४ ६ [णीञ् प्रापणे (भ्वा०) धातोर्लेटि 'व्यत्ययो बहुलम्' इति शप्सिपौ विकरणौ । 'नेषि' प्रयोगे शपो लुक्]

नेषतमैः अतिशयेन प्रापिकारकै (विद्याप्रकाशै) १.१४१ १२ [नेषप्राति० अतिशायने तमप् । नेष =णीञ् प्रापणे (भ्वा०) धातोरौणादिक स]

नेष्टः ! नेत (विद्वज्जन) २६ १ विद्युत् पदार्थशोधकत्वात् पोषकत्वाच्च, नेनेक्ति सर्वान् पदार्थानिति, अ०—नेष्ट्री विद्युत्, प्र०—नप्तृनेष्टृ० उ० २.६५ अनेन निपातनम् १ १५ ३. **नेष्टुः**=नायकस्य (वेदस्य) २ ५.५ [णीञ् प्रापणे (भ्वा०) धातो कर्त्तरि तृच् । 'नप्तृनेष्टृ०' उ० २ ६५ सूत्रेण निपातनात् पुगागम । अथवा तृन् प्रत्यये 'नयते पुक् च' अ० ३ २ १३५ वा० सूत्रेण पुक् । अथवा णिजिर् शौचपोषणयो (जु०) धातो कर्त्तरि तृच्]

नेष्ट्रम् नयनम् (सत्कर्म) २ १ २ **नेष्ट्रात्**=विज्ञानहेतो (व्यवहारात्) प्र०—अत्र 'णेष्टृ गतौ' इत्यस्मात् 'सर्वधातुभ्य ष्ट्रन्' उ० ४ १६३ इति बाहुलकात् ष्ट्रन् प्रत्यय. १ १५ ६. प्रापणात् २ ३७ ३. विनयात् २६ २२. [नेषृ गतौ (भ्वा०) धातो 'सर्वधातुभ्य ष्ट्रन्' इत्युणादिसूत्रेण ष्ट्रन् प्रत्यय । णीञ् प्रापणे (भ्वा०) धातोर्वा रूपम्]

नैचाशाखम् नीचा शाखा शक्तिर्यस्मिँस्तम् (नास्तिक म्लेच्छजनम्) ३ ५३ १४ [नीचा-शाखापदयो समास । तत स्वार्थेऽण्प्रत्यय । नैचाशाख नीचाशाखो नीचै शाख । शाखा शक्नोते नि० ६ ३२]

नैषादम् निषादस्य पुत्रम् ३० ८ [निषादो व्याख्यात । ततोऽपत्यार्थेऽण् प्रत्यय । एतद्वा अवरार्ध्यमन्नाद्य यन्नैषाद कौ० २५ १५]

नो निषेधे ६ ५४ ३

नोधः स्तावक' (मनुष्य) १ ६४ १ **नोधाः**=यो नायकान् प्राप्तिकरान् धरति (सभाध्यक्ष) प्र०—अत्र णीञ् धातोर्बाहुलकादौणादिको डो प्रत्ययस्तदुपपदात् डुधाञ् धातोश्च क्विप् १ ६१ १४ [णु स्तुतौ (अदा०) धातो 'नुवो धुट् च' उ० ४ २२६ सूत्रेण असिर्धुडागमश्च । 'नो' इत्युपपदे वा दधाते क्विप् । नो=णीञ् प्रापणे धातोरौणादिको डो । नोधा ऋषि भवति नवन दधाति नि० ४.१६]

नोधाः स्तोता (इन्द्र =सभाध्यक्ष) प्र०—'नुवो धुट् च' उ० ४ २२३. अनेनौणादिकसूत्रेणाऽस्य सिद्धि १ ६२ १३ [नोधा इति व्याख्यातम्]

नोधाइव यो नौति सर्वाणि तद्वत् (विद्वज्जनवत्) प्र०—'नुवो धुट् च' उ० ४ २२३ अनेन नुधातोरसि प्रत्ययो धुडागमश्च १ १२४.४ [नोधा इति व्याख्यातम् । नोधस्-इव पदयो समास]

नोनाव अत्यन्तप्रशसित (सूर्य) १ ७६.२ [णुञ् स्तुतौ (अदा०) धातोर्यङ्लुगन्तात् कर्त्तरि अच्]

नोनुमः अतिशयेन स्तुम, प्र०—अत्र 'णु स्तुतौ'

पक्वज्ञाना परिपक्वस्वरूपा वा (पृक्ष=सम्बन्धिन.) ४ ४३ ५ [डुपचप् पाके (भ्वा०) धातो क्त । 'पचो व' अ० ८ २ ५२ सूत्रेण तकारस्य वकारादेश]

पक्वा पक्वफलयुक्ता (शाखा=वृक्षाऽवयवा) १.८.८ [पक्वम् इति व्याख्यातम् । ततो मत्वर्थीयस्य प्रत्ययस्य लुक् । स्त्रिया टाप्]

पक्षतिः पक्षस्य परिग्रहस्य मूलम् २५ ४. [पक्षप्राति० मूलार्थे 'पक्षात्ति' अ० ५ २ २५ सूत्रेण ति' प्रत्यय']

पक्षः परिग्रह ६ ४७ १६ **पक्षौ**=परिग्रहो कार्य-कारणरूपौ (पदार्थौ) १८ ५२ पार्श्वाविव १२ ४ [पणायति स्तौति व्यवहरति वा येन यत्र वा स पक्ष । पण व्यवहारे स्तुतौ च (भ्वा०) धातो 'गृधिपण्योर्दकौ च' उ० ३ ६६ सूत्रेण स । णकारस्य ककारादेश]

पक्षा पक्षौ २६ १२ [पक्ष व्याख्यातम् । तत 'सुपा सुलुग्०' इत्याकारादेश]

पक्षिणम् पक्षौ विद्यन्ते यस्मिँस्तम् (प्लव=नौकादिकम्) १ १८२ ५ **पक्षिणः**=विहङ्गमान् १.४८ ५ [पक्ष इति व्याख्यातम् । ततो मत्वर्थ इनि प्रत्यय]

पक्षोभिः पक्षै २६ ५ [पक्षस्प्राति० भिस् । पक्षम्=डुपचप् पाके (भ्वा०) धातो 'पचिवचिभ्या सुट् च' उ० ४ २२० सूत्रेण असुन्]

पक्ष्माणि परिग्रहीनान्यन्यानि (वस्त्राणि) १६ ८६ परिग्रहानि लोमानि वा २५ १ परिग्रहीतु योग्यानि कर्माणि, नेत्रोर्ध्वलोमानि वा २५ १ [पक्ष परिग्रहे (चुरा०) धातोर्बाहु० औणादिको मनुप्रत्यय]

पक्ष्या पक्षेपु साध्वी (वाणी) ३ ५३ १६ [पक्ष इति व्याख्यातम् । तत साध्वर्थे यत्, तत स्त्रिया टाप्]

पङ्क्तिराधसम् पङ्क्ते समूहस्य राध समिद्धिर्यस्मात्तम् (वीर-पुरुषम्) ३३ ८६ य पङ्क्ती समुदायान् राध्नोति तम् (यज्ञम्) ३७ ७ य पङ्क्तीर्धर्मात्मवीर-मनुष्य-समूहान् राध्नोति यद्वा पङ्क्त्यर्थ राधोऽन्न यस्य तम् (नर्य=हितकारिजनम्) १ ४० ३ [पङ्क्ति-राधस्पदयो समास । राधस्=राध ससिद्धौ (स्वा०) धातोरौणादिको ऽसुन् । राध धननाम निघ० २ १०]

पङ्क्तिः पङ्क्तिनामक छन्द १० १४ पञ्चाऽवयवो योग १४ १८ **पङ्क्त्या**=विस्तृतया क्रियया २३ ३३ **पङ्क्त्यै**=पङ्क्तिछन्दोऽर्थाय २४ १३ पङ्क्त्या १३ ५८ [पञ्च परिमाणमस्येति विग्रहे 'पङ्क्तिविंशति०' अ० ५ १ ५६ सूत्रेण पङ्क्ति शब्दो निपात्यते । पञ्चन्प्राति० ति प्रत्यये टिलोप. । पञ्चपदा पङ्क्ति ऐ० ५ १८ पञ्चाक्षरा पङ्क्ति तै० २ ७ १० २ चत्वारिंशदक्षरा पङ्क्ति कौ० १७ ३ पङ्क्तिर्विराणो पत्नी गो० उ० २ २ ६ पाङ्क्तो वै तन्त्र छन्द श० ८ २ ४ ३ पृथुग्यं वै पङ्क्ति श० १ २ २ ४ ६ पञ्चो पङ्क्त श० ८ ६ २ ३ श्रोत्र पङ्क्ति श० १० ३ ११ पङ्क्तिरूर्ध्वा (दिक्) श० ८ ३.१ २२ पङ्क्ति पञ्चपदा नि० ७ १२ पचि विस्तारे (चुरा०) धातो क्तिन् । चतुर्भ्य पादेभ्योऽग्रे गता विस्तृता पङ्क्तिश्छन्दसज्ञा । पङ्क्तिर्वा अन्नम् ऐ० ६ २० यजमानो वै पङ्क्ति मै० ३ ३ ६ यज्ञस्य पङ्क्ति (पत्नी) तै० आ० ३ ६ २ अन्न वै पङ्क्ति ऐ० आ० १.१ ३. गो० २ ६ २]

पचत् पचेत् ६ १० ११ [डुपचप् पाके (भ्वा०) धातोर्लेट्]

पचतम् परिपक्वम् (पितुम्=अन्नम्) १ ६१ ७ **पचत.**=पाक कुर्वन् (पुरोळा=अन्नविशेष) प्र०—अत्र पच-धातोरौणादिकोऽतच्-प्रत्यय ३ २८ २ **पचतैः**=परिपाकपरिणामै (प्राणै) २३ १२ [डुपचप् पाके (भ्वा०) धातोरौणादिकोऽतच्-प्रत्यय]

पचता पचनानि पक्तव्यानि (वस्तूनि) प्र०—अत्रौणादिकोऽतच् २१ ६० [डुपचप् पाके (भ्वा०) धातोरौणादिकोऽतच् । पचतप्राति० शेर्लोप]

पचता परिपक्वभाव प्राप्तेन (पुरोडाशेन=उत्तमाऽन्नेन व्यञ्जनेन च) २८ ४६ **पचते**=परिपक्वं सम्पादयते (सत्पुरुषाय) २ १२ १५ **पचन्**=पाचयन् २८ ३३ **पचन्तम्**=पाक कुर्वन्तम् (मज्जनम्) २ २० ३ परिपक्व कुर्वन्तम् (सत्पुरुषम्) २ १२ १४ [डुपचप् पाके (भ्वा०) धातो शतृप्रत्यय]

पचत्यम् पचने साधुम् (पुरोळाश=अन्नविशेषम्) ३ ५२ २ [पचनप्राति० साध्वर्थे यत् । नकारस्य तकारो वर्णव्यत्ययेन]

पचनम् पाकसाधनम् (कार्यम्) २५ २६ [डुपचप् पाके (भ्वा०) धातो करणे ल्युट्]

पचन्ति पकाते है स० वि० २१०, अथर्व० ६ ६ २ १३ **पचन्तु**=परिपक्व कुर्वन्तु १ १६२ १० परिपक्वा कुर्वन्तु ११ ६१. भा०—अग्नौ जुहुयु २५ ३३ सस्कारयुक्त कुर्वन्तु, दृढबलधारिणी वा कुर्वन्तु ११ १६ [डुपचप् पाके (भ्वा०) धातोर्लेट्]

पचात् पचेत् ४ २४ ७ [डुपचष् पाके (भ्वा०) धातोर्लेट्]

न्यसीदत् निषीदेत् ५ १.६ नितरा सीदति १७ १७ नित्य अवस्थित है, आर्याभि० २ ३०, १७.१७. **न्यसीदः**= नितरा तिष्ठे ६ १.२. [नि+षद्लृ विशरणगत्यवसादनेषु (भ्वा०) धातोर्लङ् । धातो सीदादेश]

न्यस्फुरत् नितरा वर्धयति २.११.६ [नि+स्फुर सचलने (तुदा०) धातोर्लङ् । अत्र वर्धनेऽपि धातूनामनेकार्थकत्वात्]

न्यागात् नितरा प्राप्नोति २ ३८ ३. [नि+आङ्+इण् गतौ (अदा०) धातोर्लुङ् । 'इणो गा लुङी' ति गादेश]

न्यानजे नित्यमस्येच्चालयेत् १ १६१ ४ [नि+अज गतिक्षेपणयो (भ्वा०) धातोर्लिट् । छान्दसत्वाद् वीभावो न, नुडागमश्चाभ्यासस्य]

न्यार्चन् नित्यमर्चन्तु १ ५२ १५ [नि+अर्च पूजायाम् (भ्वा०) धातोर्लङ्]

न्यावृणक् नितरा वृङ्धि ५ २६.१०. [नि+आङ्+वृजी वर्जने (रुधा०) धातोर्लङ्]

न्युप्त: नित्य स्थापितो व्यवहार' ८ ५७ [नि+टुवप् बीजसन्ताने (भ्वा०) धातो क्त]

न्युहीत् निवहेत् ७ ३७ ६ [नि+वह प्रापणे (भ्वा०) धातोर्लुङ् । छान्दस सम्प्रसारणम् आटोऽभावश्च]

न्यूहतु: नितरा देशान्तर प्रापयत १ ११६ १ **न्यूहथु:**=नितरा वाहयतम् १ ११७ ६ नितरा वहतम् १ ११२ १६ [नि+वह प्रापणे (भ्वा०) धातोर्लिट् । यजादित्वात्सप्रसारणम्]

न्यृञ्जते नितरा प्रसाध्नोति, प्र०—ऋञ्जति प्रसाधनकर्मा नि० ६ २१, १ ५४ २ **न्यृञ्जे**=नितरा प्रसाध्नुयाम् ३ ७ ८ नित्य भर्जयामि ३ ४७ नितरा साध्नोमि ४ २६ १ [नि+ऋजि भर्जने (भ्वा०) धातोर्लट् । ऋञ्जति प्रसाधनकर्मा नि० ६ २१]

न्यृण्वन् नितरा प्रसाध्नुवन् (विद्युदग्नि) ७ १.२ [नि+ऋणोति गतिकर्मा (निघ० २ १४) धातो शतृप्रत्यय]

न्यृण्वन् नित्य प्रसाध्नुवन्ति ७ ५ ६. [नि+ऋ गतौ (क्र्या०) धातोर्लङ् । आडभावश्छान्दस । विकरणव्यत्ययेन श्नु]

न्यृषन्ति नितरा प्राप्नुवन्ति १ ५२.७ [नि+ऋषी गतौ (तुदा० (धातोर्लट्]

न्यृष्टम् नितरा प्राप्तम् (अक्षयकोशम्) ४ २० ६ **न्यृष्टे**=निश्चित स्वरूप प्राप्ते (द्यावापृथिव्यौ) ३ ५५ २०. [नि+ऋषी गतौ (तुदा०) धातो क्त । ईदितत्वादनिट्त्वम्]

न्येरिरे निश्चयेन प्राप्नुयु ४ १ १ नितरा कम्पयन्ति गमयन्ति २.२ ३ प्रेरयन्ति ४ १.१ [नि+आङ्+ईर गतौ कम्पने च (अदा०) धातोर्लिट् । एरिर इतीर्त्तिरुपसृष्टोऽभ्यस्त. नि० ४ २३.]

न्यैरयत् प्रेरयेत् ६ ५६.३. [नि+ईर क्षेपे (चुरा०) धातोर्लङ् । ईर गतौ कम्पने च (अदा०) धातोर्वा णिजन्तात्लङ्]

न्योकसे निश्चितानि ओकासि स्थानानि येन तस्मै (इन्द्राय=परमेश्वराय), प्र०—ओक इति निवासनामोच्यते, नि० ३.३, १.६ १० **न्योका:**=निश्चितस्थान (सोम =सोमलताद्योषधिगण ऐश्वर्य वा) ५.४४ १४ [नि-ओकस्पदयो समास]

न्योषतात् नितरा दह १३.१२. निदह ४ ४.४ **न्योषति**=नित्य दहेत् १ १३० ८ [नि+उष दाहे (भ्वा०) धातोर्लोट् । 'तुह्योस्तातङ्०' इति तातङ् आदेश । अन्यत्र लट्]

न्यौहते निश्चयेन प्राप्नोति प्रापयति वा ५ ५२ ११. [नि+आङ्+वह प्रापणे (भ्वा०) धातोर्लट् । व्यत्ययेन शप्रत्यये सम्प्रसारणम्]

न्यौहत् न्यूहते १ १६४ २६ [नि+ऊह वितर्के (भ्वा०) धातोर्लङ्]

पक्तये पाककर्त्रे (श्रेष्ठजनाय) ४ २५ ७ **पक्तिम्**= पाकम् ४ २५ ६ **पक्तिः**=पाक ४ २४ ५ **पक्तीः**= पाकान् ७ ३२ ८. नानाविधान् पाकान् २८ ४६. पाचनप्रकाराणि २१ ५६ [डुपचष् पाके (भ्वा०) धातो. स्त्रियां क्तिन् । 'कृतो बहुलम्' इति कर्त्तर्यपि क्तिन्]

पक्थास: पाकविद्याकुशला परिपक्वज्ञाना वा (आर्या राजजना) ७ १८ ७ [डुपचष् पाके (भ्वा०) धातोर्बाहु० औणादिकस्थक्-प्रत्यय । पक्थप्राति० जसोऽसुगागम]

पक्थी पाचक (जन) ६ २०.१३ [डुपचष् पाके (भ्वा०) धातोरौणादिकस्थक्-प्रत्यय । पक्थप्राति० मत्वर्थे इनि.]

पक्वम् परिपक्वस्वभावम् (वाजिन=वेगवन्तमश्वम्) २५ ३५ पच्यमानम् (पय =रसम्) १ ६२ ६ शुद्धानन्दसिद्धम् (फलम्) ऋ० भू० १५६, १२ ६८ पाकेन सम्यक् सस्कृतम् (आहारम्) १ १६२ १२ **पक्व:**=परिपक्वफलादि ४ २० ५ उपभोक्तुमर्ह (यव) १.६६ २ **पक्वा:**=परि-

भवन्ति वीर्य पञ्चदशम् गो० पू० ५ ३ प्राणो वै त्रिवृदात्मा पञ्चदश ता० १९ ११ ३ क्षत्र पञ्चदश ऐ० ८.४ तस्माद्राजन्यस्य पञ्चदश स्तोम ता० ६ १ ८ त्रैष्टुभ पञ्चदशस्तोम ता० ५ १ १४ पञ्चदशो वै राजन्य तै० म० २ ५ १० १ पञ्चदशी ते अग्ने बाहू काठ० ३९ २ बाहू वै पञ्चदशस्तोमानाम् जै० २ १३५ यजमानो वै पञ्चदश मै० ४ ७ ६ यज्ञ पञ्चदशो वज्रमेवोपरिष्टाद् दधाति, रक्षसामपहत्यै काठ० २० १३ तै० स० ७ ३ ६ २ येन प्रतितिष्ठति स पञ्चदश जै० १ २५३. वीर्यं वै बृहद् वीर्यं पञ्चदश जै० २ ४०७ पञ्चदश माध्यन्दिन सवनम् मै० ४ ४ १०]

पञ्चदशाक्षरेण आसुर्य्या गायत्र्या (छन्दसा) ९ ३४. [पचदश-अक्षरपदयो समास]

पञ्चधा पञ्च ज्ञानेन्द्रिय-शब्दादिविषयप्रतिप्रादनेन पञ्चप्रकारा ३४ ११ [पञ्चन् सख्यावाचिन प्राति० 'सख्याया विधार्थे धा' अ० ५ ३ ४२ सूत्रेण धा-प्रत्यय]

पञ्चपञ्च पञ्चपञ्च प्राणा ३.५५ १८ [पञ्चन्-शब्दस्य वीप्साया द्वित्वम्]

पञ्चपादम् पञ्च क्षण-मुहूर्त्त-प्रहर-दिवस-पक्षा पादा यस्य त संवत्सर सूर्यं वा १ १६४ १२. [पञ्चन्-पादपदयो समास]

पञ्चमी पञ्चाना पूरणा (क्रिया) २५.४ (पञ्चन्-प्राति० पूरणार्थे डटि मडागमे च स्त्रिया ङीप्]

पञ्चरश्मिम् पञ्च प्राणापान-व्यानोदान-समाना रश्मय इव यस्मिँस्तम् [रथ=रमणीय यानम्) २ ४० ३ [पञ्चन्-रश्मिपदयो समास]

पञ्चविंशति पञ्चाधिका विंशति (सख्या) १८ २४. पञ्चन्विंशतिपदयो समास]

पञ्चविंशः पञ्चविंशतिप्रकार (स्तोम.=स्तोतव्यो विद्वानधिपति) १४ २५ पञ्चविंशतिधा (ओज =पराक्रम) १४ २३ [पञ्चविंशतिप्राति० 'स्तोमे डविधि पञ्चदशाद्यर्थे ' अ० ५ १ ५८ वा० सूत्रेण ड प्रत्यय]

पञ्चहोता पञ्च प्राणा होतार आदातारो यस्या सा (गौ =वाक्) ५ ४२.१. [पञ्चन्-होतृपदयो समास. । सवत्सरो वै पचहोता तै० २ २.४ ६. अग्नि पञ्चहोतॄणा होता तै० २ ३ ५ ६ सुवर्ग्यो वै पञ्चहोता तै० २ २.८ २. तस्मै (ब्रह्मणे) पञ्चम हूत. प्रत्यशृणोत् । स पञ्चहूतोऽभवत् पञ्चहूतो ह वै नामैष । त वा एत पञ्चहूत सन्त पञ्चहोतेत्याचक्षते परोक्षप्रिया इव हि देवा तै० २ ३ ११ ३-४]

पञ्चाक्षरेण दैव्या पङ्क्त्या (छन्दसा) ९ ३२.

पञ्चारे पञ्च तत्त्वानि अरा यस्मिँस्तस्मिन् (चक्रे) १.१६४ १३. [पञ्च-अरपदयो समाम. । अरा प्रत्यृता नाभौ नि० ४ २७]

पञ्चावयः पञ्चाऽवयो येषान्ते (पशुपालका जना) २४ १२ **पञ्चाविम्**=या पञ्च प्राणान् रक्षति ताम् (गा=पृथिवीम्) २८ २६. **पञ्चाविः**=पञ्चेन्द्रियाण्यवन्ति येन स (ओषधि) १४.१० पञ्चाऽवयो यस्य स (जन) १८ २६ य पञ्चभिरव्यते रक्ष्यते स. (गौ.=विद्वज्जन) २१.१४ [पञ्चन्-अविपदयो समासः । अवि =अवरक्षणादिषु (भ्वा०) धातोरौणादिक इन्]

पञ्चावी तत्स्त्री १८ २६ [पञ्चाविरिति व्याख्यातम् । तत स्त्रिया 'कृदिकारादक्तिन ' इति ङीप्]

पञ्चाशतम् पञ्चाशत्सख्यायुक्त विज्ञानम् ५ १८ ५ **पञ्चाशतः**=एतत्सङ्ख्याता (सेना) १ १३३ ४ [पञ्च दशत परिमाणमस्येति विग्रहे पचाशत् शब्दो निपात्यते 'पक्तिविंशति०' अ० ५.१ ५९. सूत्रेण । पञ्चाशत् प्राति० मत्वर्थीयस्य लुक्]

पठर्वा ये पठन्ति तान् विद्यार्थिन ऋच्छति प्राप्नोति स सेनाध्यक्ष १ ११२ १७. [पठ् इत्युपपदे ऋ गतौ (भ्वा०) धातोर्वनिप् प्रत्यय । पठ्=पठ व्यक्ताया वाचि (भ्वा०) धातो कर्त्तरि क्विप्]

पड्वीशम् पादवन्धनमाच्छादन वा १ १६२ १४. प्राप्ताना पदार्थाना विभाजकम् (विद्युदग्निम्) १ १६२ १६ यत्पादेषु विशति तत् (भा०—अश्वस्य गतिविशेष) २५ ३८ पद्भिर्विशन्तम् (अश्वम्) २५ ३९ **पड्वीशात्**=न्यायविरोधाचरणात्, भा०—विरोधात् १२ ९० [पादोपपदे विश प्रवेशने (तुदा०) धातोर् मूलविभुजादित्वात् क । पादस्य पदादेशो धातोरिकारस्य च दीर्घश्छान्दस]

पड्भिः पादै, प्र०—अत्र वर्णव्यत्ययेन दस्य ड २३ १३ विज्ञानादिभि ४ २ १२ [पादप्राति० तृतीयाबहुवचने 'पद्दन्नोमास्०' इत्यादिना पदादेश । वर्णव्यत्ययेन दस्य डादेश । पड्भि =पानैरिति वा स्पाशनैरिति व स्पर्शनैरिति वा क्वचित् नि० ५ ३]

पणयः प्रशसनीया (स्त्रिय) ४ ५१ ३ व्यवहरमाणा (वणिजो जना) १ १५१ ९ व्यवहारिण (असज्जना) ३५.१ व्यवहारयुक्ता (जना.) १ १२४ १० व्यवहारज्ञाः (सज्जना) ६ २० ४ **पणिना**=व्यवहर्त्रा वणिग्जनादिना ४ २५.७. **पणिभिः**=व्यवहारज्ञै स्तावकै

पच्यते परिपक्वो भवति १ १३५ ८ **पच्यन्ताम्**=परिपक्वा भवन्तु २२ २२ [डुपचष् पाके (भ्वा०) धातो कर्मणि लट् । अन्यत्र लोट्]

पच्यमानात् भा०—पीड्यमानात् (गात्राद्=अङ्गात्) २५ ३४ [डुपचष् पाके (भ्वा०) धातो कर्मणि शानच्]

पच्यस्व परिपक्वो भव १० ३१ परिपक्वा कुरु १९ १ पचस्व पाचय वा १९ १ उद्यतो भव, शुद्धबुद्धिमन्त दृढपुरुषार्थ वा कुर्वन्तु १० ३१ [डुपचष् पाके (भ्वा०) धातोर्लोट् । व्यत्ययेन श्यन्]

पज्रहोषिणा पज्र सङ्गतो होषो घोषो वाण्ययोस्तौ (इन्द्राग्नी=अध्यापकोपदेशकौ) ६ ५९ ४ [पज्र-होषपदयो समासे मत्वर्थे इनि । तत 'सुपा सुलुगि' ति सूत्रेणाकारादेश । पज्रहोषिणा=प्राजितहोषिणौ नि० ५ २२ पज्र =पद गतौ (दिवा०) धातोरौणादिको रक्-प्रत्यय दस्य ज । होष =घोष । घस्य हकारश्छान्दस]

पज्रः प्राजितैश्वर्य (राजपुरुष), प्र०—पृषोदरादित्वादिष्टसिद्धि ३३ ५० बलिष्ठ (विद्वज्जन) १ १५८ ३ **पज्राः**=प्रपन्ना (प्रजाजना) १ १२६ ५ पद्यन्ते गच्छन्ति मार्गान् यैस्ते (रथा) प्र०—अत्र वर्णव्यत्ययेन दस्य ज १.१२६ ४ प्राप्ता (अधर्माचारिणो जना) १ १९० ५ **पज्रे**=गमके (रथे) १ १२२ ७ **पज्रेषु**=शिल्पव्यवहारेषु, प्र०—अत्र पन धातोर्बाहुलकादौणादिको रक् प्रत्ययो वर्णव्यत्ययेन जकारादेशश्च १ ५१ १४ [पद गतौ (दिवा०) पन व्यवहारे स्तुतौ च (भ्वा०) धातोर्वा औणादिके रक्-प्रत्यये छान्दस रूप, पृषोदरादित्वात् साधनीयम्]

पज्राम् गन्त्रीम् (युवतिम्) १ १६७ ६ [पज्रप्राति० स्त्रिया टाप् । पज्र इति व्याख्यातम्]

पज्रासः विज्ञापयितृणि मित्राणि १ ११७ १० [पज्रप्राति० जसोऽसुगागम । पज्र इति व्याख्यातम्]

पज्रियः य पज्रान् प्राप्तव्यान् बोधानर्हति सः (विद्वान् जन) १ १२० ५ **पज्रियाय**=प्रज्रेषु पद्रेषु पदेषु भवाय (विद्यार्थिने) प्र०—अत्र पदधातोरौणादिको रक्, वर्णव्यत्ययेन दस्य ज । ततो भवार्थे य १ ११६ ७ **पज्रियेण**=प्राप्तव्येषु भवेन (कक्षीवता=विदुषा जनेन) १ ११७ ६ [पज्र इति व्याख्यातम् । ततो भवार्थे घ प्रत्यय । घस्येयादेश]

पञ्च पञ्चाना निकृष्टमध्यमोत्तमोत्तमतरोत्तमतमाना पञ्चविधानाम् (क्षितीना=पृथिवीलोकानाम्) १ ७ ९. भूतानि पञ्च २ १३ १० ब्राह्मण-क्षत्रिय-वैश्य-शूद्र-निषादानाम् १ १७६ ३ प्राणाऽपानव्यानोदानसमानान् २ ३४ १४ पञ्चत्व विशिष्टा गणना १८ २४ पाच प्राण, आर्याभि० १ १७, ऋ० १ ६ १६ १० एतत्सङ्ख्याका (जना =मनुष्या प्राणा वा) २५ २३ भूम्यादीनि पञ्चतत्वानि ५ ३५ २ पूर्वादिचतस्रो मध्यस्था चैका (दिश =आशा) १७ ५४ पञ्चभिरुत्क्षेपणादिभि कर्मभि, प्र०—'उत्क्षेपणमवक्षेपण०' वैशे० १ ७ अत्र 'सुपा सुलुक्०' इति भिसो लुक् १ ९ अध्यापकोपदेशकाऽध्येत्र्युपदेश्यसामान्या १ १२२ १३ यथाऽग्निवायु-मेघ-विद्युत्-सूर्यमण्डल-प्रकाशास्तथा १ १०५ १० पञ्चज्ञानेन्द्रियवृत्तय ३४ ४ **पञ्चभिः**=होत्रध्वर्यूद्गातृ-ब्रह्म-सभ्यैर्ऋत्विग्भि ३ ७ ७ समान-चित्त-बुद्ध्यहङ्कार-मनोभि १४ २८ **पञ्चसु**=भूतेषु तन्मात्रासु वा २३ ५२ राज्य-सेना-कोश-दूतत्व-प्राड्विवाकत्वसम्पन्नेष्वधिकारिषु ३ ३७ ९ [पञ्च पृक्ता सख्या स्त्रीपुनपुसकेष्वविशिष्टा नि० ३ ८ पचि व्यक्तीकरणे (भ्वा०) धातोर्बाहु० औणादिक कनिन् प्रत्यय । पञ्चति व्यक्तीकरोतीति विग्रह.]

पञ्चजनाः पञ्च-प्राणा इवोत्तम-मनुष्या, प्र०—पञ्चजना इति मनुष्यनाम, निघ० २ ३, ६ ५१ ११ [पञ्चन्-जनपदयो समास । पञ्चजना मनुष्यनाम निघ० २ ३ पञ्चजना =गन्धर्वा पितरो देवा असुरा रक्षासीत्येके, चत्वारो वर्णा निषाद पञ्चम इत्यौपमन्यव नि० ३ ८]

पञ्चदश पञ्चोत्तरा दश (सङ्ख्या) १८ २४ **पञ्चदशभिः**=प्रतिपदादि-तिथिभि १४ २९ [पञ्चन्-दशन्पदयो समास]

पञ्चदशम् चत्वारो वेदाश्चत्वार उपवेदा षडङ्गानि च मिलित्वा चतुर्दशविद्यास्तासा सख्यापूरक क्रियाकौशलम् (स्तोमम्) ९ ३४ **पञ्चदशः**=पञ्चदशाना तिथीना पूरक (पौर्णमासी) १३ ५५ पञ्चदशाना पूरण (स्तोम =स्तोता) २९ २१ पञ्चदशाना पूरण पञ्चदशविध (भान्त =प्रकाश १४ २३ प्राणेन्द्रिय-भूताना पञ्चदशाना पूरक (ग्रीष्मर्त्तु) १० ११ **पञ्चदशाय**=पञ्च दश च यस्मिन् सन्ति तस्मै (इन्द्राय=ऐश्वर्याय) २९ ६० [पञ्चन्-दशन्पदयो समासे कृते पूरणार्थे डट् । पञ्चदशो हि वज्र श० ४ ३ ३ ४ पञ्चदश एव सह गो० पू० ५ १५ चन्द्रमा वै पञ्चदश । एष हि पञ्चदश्यामपक्षीयते पञ्चदश्यामापूर्यते तै० १ ५ १० ५ अर्धमास पञ्चदश ता० ६ २ २ ग्रीवा पञ्चदशश्चतुर्दश ह्येवैतस्या करूकराणि

दिधनम्), अ०—स्वामित्व-सम्पादक, प्र० 'तत्करोति तदाचष्टे' इति पतिशब्दाण्णिच् १.४७. गच्छन् (सूर्य) १ १५२ ५ **पतयत्सु**=पतिरिवाचरत्सु (व्यवहारेषु) ६ ६ ५ **पतयद्भिः**=इतस्ततो धावयद्भि (विद्वद्भि) १ १५८ ३ पतन्त गच्छन्तम् (आत्मानम्) २६ १७ गमयन्तम् (अग्निम्=अश्वम्) १ १६३ ६ **पतयन्तः**=ऊर्ध्वमधो गच्छन्त (पक्षिण) १ १५५ ५ इतस्तत चलन्त सन्त (पक्षिसमूहा, दृश्यादृश्या सर्वलोका वा) १ २४.६ पतिरिवाचरन्त (भूम्यादिलोका) ४ ५४.५. [पतिप्राति० 'तत्करोति तदाचष्टे' इति वा० सूत्रेण पतिशब्दाण् णिचि शतरि च रूपम् । पत्लृ गतौ (भ्वा०) धातोर्वा णिजन्ताच् छतृप्रत्यय । पतयति गतिकर्मा निघ० २ १४.]

पतयत् पति स्वामी पालक इवाऽऽचरेत् ६ ७१ ५. **पतयन्त**=पतिमिवाचरन्तु, प्र०—अत्राऽडभाव १ १६९ ७ **पतयन्ति**=पतिरिवाचरन्ति १ ६ पतिमाचक्षन्ते ३ ५५ ३ पतन्ति गच्छन्ति, प्र०—चुरादित्वात् स्वार्थे णिच् १७.६५ [पतिप्राति० 'तत्करोति तदाचष्टे' इति णिजन्ताल्लेट् । अथवा पत्लृ गतौ (भ्वा०) धातो स्वार्थे णिचि लेटि रूपम्]

पतयः स्वामिन (जना) १६ ६१ पालका (जना) २० ५१. पालका स्वामिन (प्रजाजना) ६ ४७ १२. अधिष्ठातार (पित्रध्यापकादय) १६ ५४ **पतये**=स्वामिने (जनाय) १८ २८ रक्षकाय (सेनाधीशाय), पालकाय (सेनाधीशाय), प्र०—अत्र 'षष्ठीयुक्तश्छन्दसि वा' इति घिसज्ञा १६ १७ पालकेश्वराय ७.१ विघातकाय (राजपुरुषाय) १६ २१ दण्डेन निपातयित्रे (राजपुरुषाय) १६ २१. पातयिष्णवे (प्रजाजनाय) १६ २१ दण्डादिशोषकाय (पुरुषाय) १६ २० पालकाय (सेनापतये) १६ २० प्रपातकाय (राजपुरुषाय) १६ २२ **पतिभ्यः**=गृहीतपाणिभ्य (देवेभ्य =दिव्यगुणेभ्यो जनेभ्य) २६ ३०. **पतिम्**=य पाति रक्षति चराचर जगत्तमीश्वरं, य पाति रक्षति सज्जनाँस्तम् (इन्द्र=परमात्मान वीरपुरुष वा) १ १ १ १ पालक स्वामिनम् १ ११७ ७ सर्वाऽधिस्वामी (ईश्वर) को आर्याभि० १ १०, ऋ० १ ६ १५ ५ पालयितारम् (अग्निम्) १ ६० ५ पालक सूत्रात्मानम् ५ ४६ ३ अखिलैश्वर्य स्वामिनम् १२ ५६ पालक पाणिग्रहीतारम् १७ १ १. **पतिः**=पालको यजमान १७ ५२ पालयिता पालनहेतुर्वा अ०—पालक (अग्नि =सर्वस्वामीश्वर, प्रकाशादिगुणवान् भौतिको वा) ३ १२ अधिष्ठाता (इन्द्र =सेनापति) १ १०१ ५ प्रचारेण रक्षक (परमेश्वर) ११ ७ स्वामीश्वरो राजा वा ७ ३५ १० न्यायाधीश स्वामी १ ४० ५ पालको धनकोशेश ६.७५ १७ **पति**=अन्योऽन्यस्य पालकौ (दम्पती) १ ११६ ५ पालयितारौ (इन्द्रवायू=विद्युत्पवनौ) १.२३ ३ **पते!**=स्वामिन्नीश्वर १ १८ १ पालक सेनेश ५ ३५.५ **पतेः**=पत्यु प्र०—अत्र 'षष्ठीयुक्तश्छन्दसि वा' इति पतिशब्दस्य घिसञ्ज्ञा २ २४ १४ **पत्युः**=उसी नियुक्त पति का स० वि० १५२, १० १८ ८ **पत्ये**=पति की प्रसन्नता के लिए स० वि० १४१, अथर्व० ३ ३० २. स्वस्वामिने १ १२४ ७ [पति =पा रक्षणे (अदा०) धातो 'पातेर्डति' उ० ४ ५७ सूत्रेण डति प्रत्यय । पाति रक्षतीति पति । पत्लृ गतौ (भ्वा०) धातोर्वा औणादिक इन्प्रत्यय]

पतयिष्णु गमनशीलम् (यानम्) १ १६३ ११. पतनशीलम् (भा०—अनित्य शरीरम्) २६ २२ [पत्लृ गतौ (भ्वा०) धातोर्णिजन्ताण् 'णेश्छन्दसि' अ० ३.२ १२७. सूत्रेण ताच्छील्ये इष्णुच्-प्रत्यय]

पतरम् पतन्तम् (अग्निम्) २ २ ४ [पत्लृ गतौ (भ्वा०) धातोर्बाहु० औणादिकोऽर प्रत्यय]

पतरोरिव गन्तुरिव (अर्णवस्येव) १.१८२ ७ [पतरु-इवपदयो समास । पतरु =पत्लृ गतौ (भ्वा०) धातोर्बाहु० अरु प्रत्यय]

पतालि पतेत् ७ २५ १ [पत्लृ गतौ (भ्वा०) धातोर्लेट्]

पतिजुष्टा पति की सेवा मे तत्पर पतिव्रता नारी आर्याभि० १ ४६, ऋ० १ ५ १६ ३ [पति-जुष्टपदयो समास । जुष्टम्=जुषी प्रीतिसेवनयोः (तुदा०) धातोः क्त । ईदित्त्वादनिट्त्वम्]

पतिजुष्टेव पतिर्जुष्ट प्रीत सेवितो यया तद्वत् १ ७३ ३ [पतिजुष्टा-इवपदयो समास]

पतित्वम् पालकभावम् १ ११६ ५ [पतिप्राति० भावे त्व प्रत्यय]

पतिरिपः पत्युर्भूमि, प्रा०—रिप इति पृथिवीनाम निघ० १ १, ४ ५ ५ [पति-रिपपदयो समास । रिप इति पृथिवीनाम निघ० १ १]

पतिलोकम् पतिसुखम् ऋ० भू० २११, अथर्व० १८ ३ १ १ पति के घर वा सुख को स० वि० १३४, १० ८५ ४३ [पति-लोकपदयो समास]

पतिवेदनम् पाति रक्षति स पति, पतेर्वेदन प्रापण ज्ञान वा यस्मात्तम् (त्र्यम्बक=सर्वाध्यक्ष रुद्रम्) ३ ६० [पति-वेदनपदयो. समास । वेदनम्=विद्लृ लाभे (तुदा०)

(आप्तैर्मनुष्यै)१७ ६२ प्रशमितैर्व्यवहर्त्तृभि (विद्वन्मनुष्यै) ४ ५,८ ४ पणयो व्यवहारा स्तुतयश्च ताभि २ १७ **पणिम्**=व्यवहारम् १ ६३ ४ प्रशसनीयम् (वेदज्ञानम्) ६ ६१ १ व्यवहर्त्तारम् (स्तेन-जनम्) ६ ५.१ १४ **पणि:**=प्रशमित (विद्वान् जन) ५ ६१ ८ सत्य-व्यवहार १ ३३ ३ व्यवहर्त्ता (जन) १ १८० ७ **पणीन्**=प्रशस्तव्यवहारकर्त्रीन् (अध्येतॄनुपदेष्टॄश्च) १ १८४ २ प्रशमनीयान् व्यवहारान् ६ ३६ २ व्यवहर्तॄन् (विद्यार्थिन) ७ १६ ६ प्रशमिनान् (सज्जनान्) ६ ३३ २ **पणीनाम्**=द्यूतादिव्यवहार-कर्त्तॄणाम् (कितवानाम्) ६.५३.५ प्रशमिताना व्यवहर्तॄणाम् (व्यापारिकाना जनानाम्) ६ ४५ ३१ स्तुत्यव्यवहारकर्त्तॄणाम् (प्रजाजनानाम्) ७ ६ २ व्यवहारनिष्ठाना प्रशसनीयाना नृणाम् २ २४.६ **पणे**=स्तूयमानस्य (प्रजाजनस्य) ५ ३४ ७ स्तुत्यव्यवहारस्य १ ८३ ४. प्रशमितव्यवहारकर्त्तु (सत्पुरुषस्य) ६ ५३ ६ द्यूतकर्त्तु (पाखण्डिजनस्य) ६ ५३ ३ व्यवहारस्य ३ ५८.२ सदसद्व्यवहर्त्तु (जनस्य)१ १८२ ३ [पण व्यवहारे स्तुतौ च (भ्वा०) धातोरौणादिक इन् । पणि पणनात् नि० २ १७. पणीन्=वणिज नि० ६ २७]

पणिनेव गोपालेन वणिग्जनेनेव १ ३२ ११ [पणिना-इवपदयो समास । पणिरिति व्याख्यातम्]

पण्यमानः स्तूयमान (मित्र =सुहृज्जन) ८ ५५ [पण व्यवहारे स्तुतौ च (भ्वा०) धातो कर्मणि शानच्]

पत गृहाण १२ ४. प्रपातय १२ ८७ पतति गच्छति प्र०—अत्र व्यत्ययो लडर्थे लोट् च ३ ४६ गच्छ ४ ३४. **पतत्**=पतति ४ २७ ४ पतति गच्छति प्राप्नोति वा ३ ३६ ३ **पतथ**=अद्य आगच्छत १ १६८ ६ **पतथ.**= गच्छथ १ १८३ १ **पतन्ति**=पतन्तु गच्छन्तु, प्र०—लोडर्थे लट् १ २५ ४. उपरिष्टादध पतन्ति १ ७६ २ प्राप्नुवन्ति १ १६४ ४७ श्येनवच्छत्रुदले सञ्चरन्ति १३ १० **पतसि**=गच्छसि २ १६ ३ **पतात्**=गच्छेत् १ ४६ ३ **पतामि**=प्राप्नोमि १ ३३ २ [पत्लृ गतौ (भ्वा०) धातोर्लोटि लटि च रूपाणि]

पतङ्गम् य प्रतिपात गच्छति तम् (अग्नि=अश्वम्) १ १६३ ६ सूर्यं प्रति २६ १७ **पतङ्गान्**=अश्वान्, प्र०—पतङ्गा इत्यश्वनाम, निघ० १ १४, १३ १०. अग्निकणा इव वर्त्तमानानश्वान् ४ ४ २ **पतङ्गाय**=पतति गच्छतीति पतङ्गस्तस्मा सम्मै, भा०—पतन-पातनादिगुणप्रकाशिताय, भा०—तद्गुणप्रकाशाय ३ ८ **पतङ्गा.**=सूर्य इव देदीप्यमाना (आशव =अश्वा) १ १६८ ४ **पतङ्गै:**=अश्ववद् वेगिभि रथै १ १६६ ४ प्रतिपात वेगेन गन्तृभि (नर्यै) ऋ० भू० १६०, ऋ० १ ८८ ४ [पतङ्गा अश्वनाम निघ० १ १४ पत्लृ गतौ (भ्वा०) धातो 'पतेरङ्गच् पक्षिणि' उ० १ ११६ सूत्रेणाङ्गच्-प्रत्यय । बहुलवचनात् पक्षिणोऽन्यत्रापि । पतङ्ग =पततीव ह्येत्वङ्गेत्येति रश्मयुरीग्ने । पतङ्ग इत्याचक्षते जै० उ० ३ ३५ २ प्राणो वै पतङ्ग कौ० ८ ४]

पतङ्गर: य पतङ्गेऽग्नौ रमते, पतङ्ग ददाति वा स (राजा) ४ ४० २ [पतङ्गोपपदे रमु क्रीडायाम् (भ्वा०) धातो, रा दाने (अदा०) धातोर्वा ड प्रत्यय]

पततः पतनशीलस्य (मनुष्यस्य) ६ ४ ५ **पतताम्**= गच्छताम् (वीना=विमानाना सर्वलोकाना पक्षिणा वा) १ २५ ७ [पत्लृ गतौ (भ्वा०) धातो शतृप्रत्यय]

पतत्रि पतनशीलम्, भा०—सद्यो गमयितारम् (शिर =विमानम्) २६ १७ [पत्लृ गतौ (भ्वा०) धातो 'पतेरत्रिन्' उ० ४ ६६ सूत्रेणात्रिन् प्रत्यय]

पतत्रिणम् पतत्र. शीघ्र गन्तु बहुवेगो यस्यास्ति त (पक्षिणम्) १६ १० **पतत्रिण:**=पक्षिण १ ५८ ५ शत्रव पक्षिणो वा १ ६४ ११ पतनशीला (वय = पक्षिण) प्र०—अत्र 'पतेरत्रिन्' उ० ४ ६६ अनेनाऽय सिद्ध १ ४६ ३ **पतत्रिणौ**=पतत्राण्यूर्ध्वगमनानि सन्ति ययोस्तौ (पक्षौ=परिग्रहौ कार्यकारणरूपौ) १८ ५२ **पतत्रिभि:**=गमनशीलै (पक्षिभि) ६ ६२ ६ [पत्लृ गतौ (भ्वा०) धातो 'पतेरत्रिन्' उ० ४ ६६ सूत्रेणात्रिन् प्रत्यय । अथवा पत् धातो 'अमिनक्षि०' उ० ३ १०५ सूत्रेणात्रन्-प्रत्यय । ततो मत्वर्थ इनि]

पतत्रिणी पतितु विनाशयितु कुशिके १ १५८ ४ **पतत्रिणी:**=पतितु गन्तु शीला (सीरा =नदी) १२ ८३ [पतत्रिन् इति पूर्वपदे व्याख्यातम् । तत स्त्रिया 'ऋन्नेभ्यो ङीप्' इति ङीप्]

पतत्रैः गमनशीलै परमाण्वादिभि , भा०—अतिसूक्ष्मै कारणै १७ १६ पात होने वाले (गुरुत्व-द्रुत्व गुणों से) आर्याभि० २ ३८, १७ ६ [पत्लृ गतौ (भ्वा०) धातो 'अमिनक्षि०' उ० ३ १०५ सूत्रेणात्रन्-प्रत्यय]

पतन्ती गच्छन्ती (हरित =हरितवर्णा किरणा) ५ २६ ५ [पत्लृ गतौ (भ्वा०) धातो शत्रन्तात् ङीप् स्त्रियाम्]

पतयत् पतिरिवाऽऽचरति इति तत् (कवि.—विद्वान्) ५ ४५ ६. यत् पति करोतीति पतित्वसम्पादक तत् (विज्ञाना-

पत्यमाना: पतिरिवाऽऽचरन्ती (दिव =ज्योतीषि) ३ ५६ ५ प्राप्नुवन्त्य (स्त्रिय) ६ ६५ ३. [पतिपदादाचारेऽर्थे क्यङ् प्रत्ययान्ताच्छानच् । तत स्त्रिया टाप्]

पत्रम् पक्ष १९ ८६ [पत्लृ गतौ (भ्वा०) धातो 'दाम्नीशसयुयुज०' अ० ३ २ १८२ सूत्रेण करणे ष्ट्रन्-प्रत्यय]

पत्वभि: गमनै ५ ६ ७ **पत्वा**=पतति गच्छतीति स (अग्नि =विदुपो सुसन्तान) ११ ४६ योऽध पतति स. (अग्नि =सूर्यरूप) २२ १६ [पत्लृ गतौ (भ्वा०) धातो 'अन्येभ्योऽपि दृश्यन्ते' इति वनिप्]

पत्सुत:शी: य पादेषु अध शेते स (वृत्र =मेघ) प्र०—अत्र सप्तम्यन्तान् पादशब्दात् 'इतराभ्योऽपि दृश्यन्ते' अ० ५ ३ १४ इति तसिल् 'वाच्छन्दसि' इति विभक्त्यलुक्, शीङ्धातो क्विप् च १ ३२ ८

पथस्पथ: मार्गस्य मार्गस्य ३४ ४२ मार्गान् मार्गान् ६ ४६ ८ [पथ पदस्य वीप्साया द्वित्वम्]

पथ: धर्म-राज-प्रजा-मार्गात् १ ४२ २ मार्गान् २७ १२ उत्तममार्गान् १ ६०.४ **पथा**=उत्तममार्गेण ११०५ १८ गृहाश्रममार्गेण ५ ४७ ६ **पथाम्**=मार्गाणाम् ६ १४ **पथि**=व्यवहार-मार्ग मे आर्याभि० २ १८, ५ ३३ मार्गे ५ ३३ **पथिभि:**=सुमार्गै ६ ४८ ज्ञान-मार्गै, भा०—सर्वधर्म्यमार्गै. ३७ १७ **पन्था:**=देवप्रतिपादितो मार्ग ११०५ १६ मुक्ति का मार्ग आर्याभि० २ ८, ३१ १८ मार्गा, प्र०—अत्र वचनव्यत्ययेनैकवचनम् ३४ २७ धर्ममार्गा, प्र०—अत्र 'सुपा सुलुक्०' इति जस स्थाने सु १ ३५ ११ [पत्लृ गतौ (भ्वा०) धातो: 'पत स्थ च' उ० ४ १२ सूत्रेण इनि प्रत्यय । थकारान्तादेशश्च]

पथिकृत् सकलसुकृन्मार्ग-प्रचारक (बृहस्पति =परमेश्वरो) विद्वज्जनो वा २ २३ ६ य पन्थान करोति (इन्द्र =विद्वज्जन) ६ २१ १२ [पथिन्-उपपदे डुकृञ् करणे (तना०) धातो कर्त्तरि क्विप् । 'ह्रस्वस्य पिति कृति तुग्' इति तुगागम]

पथिरक्षय: ये पथिषु विचरता जनाना रक्षयो रक्षका (भा०—राजजना) १६ ६० [पथिन्-रक्षिपदयो समास । रक्षि=रक्ष पालने (भ्वा०) धातोरौणादिक इन्प्रत्यय]

पथीनाम् मार्गाणाम् ५ १ ११ मार्गे गन्तॄणाम्, भा०—गन्तुकानाम् (जनानाम्) २२ ३३ [पथिन्-प्राति० षष्ठ्या बहुवचने रूपम्]

पथेव पथा मार्गेणेव ११३६ ४ [पथिन्-इवपदयो समास । समासे विभक्तेरलुक् च]

पथेष्ठाम् यो धर्मे पथि तिष्ठति तम् (जनम्) ५ ५० ३ [पथोपपदे ष्ठा गति निवृत्तौ (भ्वा०) धातो' कर्त्तरि क्विप् । पथ =पथे गतौ (भ्वा०) धातो पचाद्यच्-प्रत्यय]

पथ्या पथोऽनपेता (स्त्री) ३ ५४ ५ स्वकक्षा विहायाऽन्यत्रागन्त्री (रात्रि) ३ ५५ १५ पथिषु साध्या (नीति) ७ १८ ३ **पथ्या:**=पथि साध्वीर्वीथी) ३ १२ ७ पथे हिता (वर्षा) ५ ५४ ६ पथि साधव (राय =श्रिय.) ६ १६ ५ पथिषु साध्वीर्गती ६ ६६ ७ या धर्मपथ्यानमर्हन्ति ता (प्रजा) ७.७ २ **पथ्याम्**=पथि साध्वी गतिम् ७ ४४ ५ धर्ममार्गम्, ऋ० भू० २०२, ऋ० ८ १ २३ ७. [पथिन्-प्राति० 'धर्मपथ्यर्थन्यायादनपेते' अ० ४ ४ ६२ सूत्रेणानपेतेऽर्थे यत् । तत. स्त्रिया टाप् । अथवा साध्वर्थे हितार्थे वा यत्]

पथ्याय पथि भवाय गन्तुकाय १६ ३७ **पथ्ये**=पथोऽनपेते कर्मणि ५ ५१ १४ [पथिन्-प्राति० भवार्थे यत् । अथवा अनपेतेऽर्थे पथिन्प्राति० यत्]

पथ्येव यथा पथि साध्वी गति , भा०—यथा धर्ममार्ग ११ ५ [पथ्या-इवपदयो समास । पथ्येति व्याख्यातम्]

पत्सु पादेषु ६ ८ **पद:**=प्राप्तव्यान् (चतुर =धर्मार्थकाममोक्षान्) २३ २० पदान् ११४६ २ **पदा**=पादेन ११३३ २ पदार्थप्राप्त्यो १ ८४ ८ प्रापकेण गमन-रूपेण ११६४ १७ पादाक्रमणेन १ ४२ ४ **पदि**=पद्यते जानाति प्राप्नोति येन व्यवहारेण तस्मिन्, प्र०—अत्र कृतो बहुलम्०' इति करणे क्विप् ४ १६ प्राप्तव्ये विज्ञाने ४ १२ ६ **पद्भ्याम्**=सेवा-निरभिमानाभ्याम् ३१ ११ पृथिवी-कारणसामर्थ्यात् ३१ १३ जो पग अर्थात् नीच अग के सदृश मूर्खत्वादि गुणो से स० प्र० ११४, ३१ ११ [पाद =पद गतौ (दिवा०) 'धातो पदरुजविशस्पृशो घञ्' इति घञ् । पादप्राति० शस्प्रभृतिषु परेषु 'पद्दन्नोमास्०' इत्यादिना पदादेश । पदा=पादेन नि० ५ १८]

पदज्ञा: ये पदानि प्राप्तव्यानि धर्मार्थकाम-मोक्षाख्यानि साधितु साधयितु वा जानन्ति ते (अङ्गिरस =प्राणविद्याविदो जना) १ ६२ २ ये पद प्राप्तव्य जानन्ति ते (पितर =विद्वासो जनका) ३ ५५ २ ये पद ज्ञातव्य प्रापणीयमात्मस्वरूप जानन्ति ते (पितर =ज्ञानिनो जना) ३४ १७ [पदोपपदे ज्ञा अवबोधने (क्र्या०) धातो क. प्रत्यय]

विद ज्ञाने (अदा०) धातोर्वा ल्युट्]

पतेम गच्छेम १८ ५२ [पत्लृ गतौ (भ्वा०) धातोर्लिङ्]

पत्तवे पत्तु प्राप्तुम् ४ १८ १ [पत्लृ गतौ (भ्वा०) धातोस्तुमर्थे तवेन्-प्रत्यय]

पत्तीनाम् नेनाऽङ्गानाम् १६ १६ [पद गतौ (दिवा०) धातो 'पदिप्रथिभ्या नित्' उ० ४ १८३. सूत्रेण नि प्रत्यय]

पत्नी स्त्री १६ ६४ भार्या म० वि० १२१, अथर्व० १४ १ ५१ पत्नीवद्वर्त्तमाना (उपा =प्रभातवेला) ३ ६१ ४ **पत्नीभिः**=स्वस्वस्त्रीभि १५ ५०. **पत्नीभ्यः**=भार्याभ्य २४ ५ पालिकाभ्य. क्रियाभ्य २४ ६ स्त्रीभ्य. २४ २४ **पत्नीम्**=स्त्रीवद् वर्त्तमानाम् (मही=भूमिम्) २१ ५ **पत्नीः**=यज्ञसम्वन्धिनी स्त्रिय १ १४० ६ द्रव्याणा शक्तय, प्र०—पत्युर्नो यज्ञसयोगे, अ० ४ १ ३३. अनेन ङीप् प्रत्ययो नकारादेशश्च। इय वै पृथिव्यदिति सेय देवाना पत्नी शत० ५ २ ५ ४ 'देवाना पत्न्य उशत्योऽवन्तु न प्रावन्तु न स्तुतयेऽपत्यजननाय चाऽन्न संसननाय च या पार्थिवासो या अपामपि व्रते कर्मणि ता नो देव्य सुहवा शर्म यच्छन्तु शरणम्। अपि च ग्ना व्यन्तु देवपत्न्य इन्द्राणीन्द्रस्य पत्न्य ग्नाय्यग्ने पत्न्यश्विन्यश्विनो पत्नी राड्राजते रोदसी रुद्रस्य पत्नी वरुणानी च वरुणस्य पत्नी व्यन्तु देव्य कामयन्ता च ऋतु कालो जायाना य ऋतुकालो जायानाम् नि० १२ ४६ देवाना विदुषा पालनयोग्याऽन्यादीना स्थित्यर्थेय पृथिवी वर्त्तते तस्माद् देवपत्नीत्युच्यते। यस्मिन् यस्मिन् द्रव्ये या या शक्तय सन्ति तास्तास्तेषा द्रव्याणा पत्न्य इवेत्युच्यन्ते १ २२ ६ स्त्री ११ ६१ भार्या युवतय १ ६२ ११ पत्न्य १ १०३ ७ दारान् १ १८६ ७ **पत्न्यः**=स्त्रिय २३ ३६ **पत्न्या**=युद्धादौ सगमनीये यज्ञे सयुक्तया स्त्रिया १ ८२ ६ **पत्न्यौ**=स्त्रीवद्वर्त्तमाने (अहोरात्रे) ३१ २२ [पतिप्राति० स्त्रियाम् 'पत्युर्नो यज्ञसयोगे' अ० ४ १ ३३ सूत्रेण ङीप् नकारान्तादेशश्च। श्रियै वा एतद्रूप यत् पत्न्य श० १३ २ ६ ७ गार्हपत्यभाजो वै पत्न्य कौ० ३ ६. अर्धो अर्द्धो वा एष आत्मन, यत्पत्नी तै० ३ ३ ५ जघनार्धो वा ऽएष यज्ञस्य यत्पत्नी श० १ ३ १ १२ पूर्वार्धो वै यज्ञस्याध्वर्युर्जघनार्ध पत्नी श० १ ६ २ ३ पत्नी धाय्या गो० उ० ३.३१ पत्नी स्थाली तै० २ १ ३ १ पत्नी भाजन वै नेष्टा ऐ० ६ ३ गो० उ० ४ ५ अन्तभाजो वै पत्न्य कौ० १६ ७ अर्धात्मा वा एष यजमानस्य यत् पत्नी जै० १ ८६ गृहा वै पत्न्यै प्रतिष्ठा श० ३ ३ १ १० पत्नी हि सर्वस्य मित्रम् तै० स० ६ २ ६ २ श्रद्धा पत्नी तै० आ० १० ६४ १ यद्वै पत्नी यज्ञे करोति तत् मिथुनम् तै० स० ६ २ १ १]

पत्नीवतः प्रशस्ता पत्नयो विद्यन्ते येषा तानस्मान् (सुगृहस्थान् जनान्) प्र०—अत्र प्रशसार्थे मतुप् १ १४ ७ प्रशस्ता यज्ञसम्वन्धिनी जाया यस्य तस्य (बृहस्पतिसुतस्य=गृहपत्यु पुत्रस्य) ८ ६ **पत्नीवद्भिः**=वहूच. पत्न्यो विद्यन्ते येषु तै (वरुथै =उत्तमैर्गृहे) ४ ५६ ४ **पत्नीवन्**!=प्रशस्ता यज्ञसम्वन्धिनी पत्नी यस्य तत्सम्बुद्धौ। (गृहपते) ८ १० **पत्नीवन्तः**=प्रशस्ता विद्यायुक्ता यज्ञसम्वन्धिन्य स्त्रियो विद्यन्ते येषान्ते (विद्वासो जना) १ ७२ ५ [पत्नीति व्याख्यातम्। तत प्रशसायामर्थे मतुप्]

पत्नीशालम् पत्न्या शाला पत्नीशालम् १६ १८ [पत्नीशाला पदयो समासे 'विभाषा सेनासुरा०' अ० २ ४ २५. सूत्रेण नपुसकत्वे ह्रस्वत्वम्]

पत्नीसंयाजान् ये पत्न्या सह समिज्यन्ते तान् (जनान्) १६ २६ [पत्नी-सयाजपदयो समास। सयाज = सम्+यज देवपूजादिषु (भ्वा०) धातोर्घञ् प्रत्यये कुत्वाभावे रूपम्]

पत्मन् धर्मात् पतनशील (दुराचारिन् पते!) हे चञ्चलचेत (दुराचारिन् पते) ८ ४८ पतन्ति यस्मिन् मार्गे तस्मिन् ५ ५ ७ पतन्ति गच्छन्ति यस्मिन् मार्गे तस्मिन् ६ ४.६ पत्मनि मार्गे ५ ४१ ३ [पत्लृ गतौ (भ्वा०) धातोर्बाहु० औणादिको मनिन्]

पत्मना उद्गमनेन ६ ३.७ [पत्मन् इति व्याख्यातम्]

पत्यते पतिं कुर्वते (विदुषे जनाय) २ ३७ २ [पतिपदाद् इच्छायामर्थे क्यजन्ताच् छतृप्रत्यय]

पत्यते पतिरिवाचरति ३ ५४ ८ **पत्यसे**=पतिभावमाचरसि २ १ ८ [पतिपदादाचारे 'उपमानादाचारे' सूत्रेण क्यङ्]

पत्यते प्राप्यते १ ८४ ६ प्राप्नोति ३ ३६ ४ **पत्येते**=श्रेष्ठे प्राप्येते ८ ५६ [पत्लृ गतौ (भ्वा०) धातो कर्मणि लट्]

पत्यमानम् गम्यमानम् (पतिम्) ६ ६६ १ **पत्यमान**·=ऐश्वर्यमिच्छन् (कवि =विद्वज्जन) ६ ४६ ४ पति स्वामीवाचरन् (इन्द्र =परमैश्वर्यो राजा) ३ ५४ १५ प्राप्नुवन् (विद्वज्जन) ३३ ५५ **पत्यमानाः**=स्वामित्व कुर्वाणा (विद्वज्जना) २७ १६ पतिरिवाचरन्त (सैनिका वीरपुरुषा) ६ २७ ६ [पत्लृ गतौ (भ्वा०) धातो कर्मणि शानच्। अथवा पति-पदादाचारे 'उपमानादाचारे' सूत्रेण क्यङ्। तत शानच्]

प्राप्तव्येन (रपसा=पापाचरणेन) ७.५०.३ [पद गतौ (दिवा०) धातोरर्हेऽर्थे यत्]

पद्वत् पद्भ्यां तुल्यम् ३.३९.६ [पादप्राति० तुल्यार्थे वति प्रत्यय । पादस्य पदादेश]

पद्वतीनाम् प्रशस्ता पादा विभागा विद्यन्ते यासां तासाम् (विद्यानाम्) १.१५२.३ **पद्वतीभ्यः**=पद्भ्यां कृताभ्यो गतिभ्य ६.५९.६ बहव पादा यासु प्रजासु ताभ्य सुप्ताभ्य प्रजाभ्य ३.३.९३ **पद्वतीम्**=पादा इव प्रशस्तानि चक्राणि विद्यन्ते यस्या ताम् (नावम्) १.१४०.१२ [पादप्राति० प्रशसाया मतुबन्तात् ङीप् । पादस्य पदादेश]

पद्वते पादौ विद्येते यस्य तस्मै (पक्षिणे) १.१४०.९ **पद्वन्तम्**=बहव पादा विद्यन्ते यस्मिँस्तम् (गर्भम्=कार्य-जगत्) १.१८५.२ [पादप्राति० भूम्न्यर्थे मतुप् पादस्य पदादेशश्च]

पनन्त स्तुवन्ति २.४.५ प्रशसेयु ३.३.२८ **पनय**= देहि १.९.६४ व्यवहारेण प्रापय ५.२०.१. [पन व्यवहारे स्तुतौ च (भ्वा०) धातोर्लङ् अडभाव । अन्यत्र लोट्]

पनयत् प्रशसेत् ४.३३.५ **पनयन्त**=पन व्यवहार कुर्वन्ति, प्र०—अत्र 'बहुल छन्दस्यमाङ्योगेऽपि' इत्यड-भाव । अत्र 'तत्करोति तदाचष्टे' इति णिजपि १.८७.३ प्रशसत ३.६.७ स्तुवन्ति व्यवहरन्ति वा. ७.१.१०. **पनयन्ति**=स्तावयन्ति ६.४.३ पनायन्ति प्रशसन्ति प्र०— अत्र 'वाच्छन्दसि' इति ह्रस्व ३.३४.६ व्यवहरन्ति स्तुवन्ति वा ४.३८.९ [पन व्यवहारे स्तुतौ च (भ्वा०) धातोरच्-प्रत्यये पन । पनप्राति० 'तत्करोति तदाचष्टे' इति णिजन्ताल् लड् । अन्यत्र लट्]

पनस्यते य पनायति व्यवहरति स पना इवाचरति १.५५.२ व्यवहरति ३.५१.३ स्तूयते ३.३.३९ [पनस् प्राति० आचारेऽर्थे 'उपमानादाचारे' इति क्यङ् । पनस्= पन व्यवहारे स्तुतौ च (भ्वा०) धातोर्गेणा० असुन्]

पनस्युम् पनायति व्यवहरति येन तदात्मन इच्छुम् (मारुत गणम्) प्र०—अत्र 'क्याच्छन्दसि' इत्यु प्रत्यय १.३८.१५ आत्मन पन स्तवनमिच्छुम् (कृतब्रह्मचर्य पतिम्) ५.५९.६ [पनस्-प्राति० आत्मन इच्छायामर्थे क्यच् । तत 'क्याच्छन्दसि' सूत्रेण उ प्रत्यय]

पनायत व्यवहरत स्तुत वा ६.७५.६ [पन व्यवहारे स्तुतौ च (भ्वा०) धातो 'गुपूधूप०' इति आयप्रत्ययान्ताल् लोट् । पनायत=पूजयत नि० ६.१६]

पनाय्यम् प्रशसनीयम् (अन्तरिक्षम्=आकाशम्) ६.६९.५ स्तोतुमर्हम् (ओज.=पराक्रमम्) १.१६०.५ [पन व्यवहारे स्तुतौ च (भ्वा०) धातो 'गुपूधूप०' इति आय प्रत्यय । तत 'सनाद्यन्ता धातव' इति धातुसज्ञाया यत्प्रत्यय]

पनितः! प्रशसित (विद्वज्जन) ५.४१.९ **पनि-तारम्**=स्तावक धर्म्येण व्यवहर्त्तारम् (देव=विद्वास जनम्) ५.४१.९ **पनितारः**=स्तोतारो व्यवहर्त्तारो वा (सज्जना) ३.५७.१ (पन व्यवहारे स्तुतौ च (भ्वा०) धातो कर्त्तरि तृच्]

पनिष्ट पन्यते स्तूयते ७.४५.२ [पन व्यवहारे स्तुतौ च (भ्वा०) धातोर्लुङ् । अडभावश्छान्दस]

पनिष्ठम् स्तोतुमर्हम् (विद्युद्रूपमग्निम्) ३.१.१३ **पनिष्ठः**=अतिशयेन प्रशसित (राजा प्रजाजनो वा) ६.५९.२ [पनितृप्राति० अतिशायनेऽर्थे 'तुश्छन्दसि' अ० ५.३.५९ सूत्रेण इष्ठन् । 'तुरिष्ठेमेयस्सु' इति तृचो लोप । पनितृ=पन व्यवहारे स्तुतौ च धातो कर्त्तरि तृच्]

पनीयसी अतीव प्रशसनीया (समित्) ५.६.४ अति-शयेन स्तोतुमर्हा व्यवहारसाधिका (तविषी=सेना) १.३९.२ अत्यन्त-प्रशसनीया (सेना) ऋ० भू० १५१, ऋ० १.३.१८.२ उत्तम-सेना आर्याभि० १.२२, ऋ० १.३.१८.२ [पनितृप्राति० अतिशायने 'तुश्छन्दसि' सूत्रेण ईयसुन् । तत 'तुरिष्ठेमेयस्सु' इति तृचो लोप । स्त्रिया ङीप्]

पनीयसे यथायोग्य व्यवहार कुर्वते स्तोतुमर्हाय (सभाध्यक्षाय) १.५७.३ [पनितृप्राति० अतिशायने ईयसुन्-प्रत्यये तृचोलोपे चतुर्थ्या एकवचनम्]

पन्थाम् धर्म्यं मार्गं, पन्थानम्, प्र०—अत्र वर्ण-व्यत्ययेन नस्य स्थानेऽकारादेश १.१२७.६ पन्थानम् प्र०— अत्र 'छान्दसो वर्णलोपो वा' इति नलोप १.११३.१६. न्यायमार्गम् ८.२३ [पथिन्प्राति० द्वितीयैकवचनम् । नलोपश्छान्दस]

पन्थासः मार्गा १.१००.३ [पथिन्प्राति० जसि रूपम् । वर्णव्यत्ययेन नकारस्य सकारादेश । पन्था पततेर्वा पद्यतेर्वा पन्थतेर्वा नि० २.२८]

पन्यतमाय अतिशयेन प्रशंसिताय (मित्राय=आप्ताय विदुषे) ३.५९.५ [पन व्यवहारे स्तुतौ च (भ्वा०) धातो-र्यत् प्रत्ययान्तादतिशायने तमप्]

पन्यसा शुद्धेन व्यवहारेण ६.१८.९ [पन व्यवहारे

पदपङ्क्तिः अयं लोकः १५.४

पदम् पद्यते गम्यते यत्तत् (परमाण्वादिरूपम्) प्र०—अत्र 'घञर्थे क-विधानम्०' इति क प्रत्ययः ५ १५ प्राप्तव्यं स्थानम् ३ ५ ५ यत् पद्यते प्राप्यते तत् (जगत्) १ २२.१७ अन्वेष्यं ज्ञातव्यं प्राप्तव्यं वा (मोक्षाख्यम्) १ २२ २०. प्रापणीयम् (जगदीश्वरम्) १ २२ २१ वेदितव्यम् (प्राण्यादिकं जगत्) १ १६४ २३ प्राप्तुमर्हम् (स्थानम्) ६ ५ पत्तुं योग्यम् (स्थानम्) ६ ३ पदनीयम् (स्थानम्) १ १४६ ४ पद्यते प्राप्नोऽस्ति चराचरं जगत्तम् (सवितारं=जगदीश्वरम्) १ २२ ५ विचारमयं शिल्पव्यवहारम् १ १०५ १. पदनीयं सर्वोत्तमोपायैर्मनुष्यैः प्रापणीयं मोक्षाख्यम् ऋ० भू० ४३, ऋ० १ २७ ५. पाद-चिह्नम् ४ ५ ३ पदनीय अर्थात् जानने के योग्य उस पद को कि जिसको प्राप्त होके पूर्णानन्द मे रहते हैं, वहा से फिर शीघ्र दुःख मे नहीं गिरते आर्याभि० १ २१ १ २७ २० पदनीयं गन्तव्यमार्गम् १ २५ ७ ऋ० **पदानि**=ज्ञातुं प्रापयितुं वा योग्यानि कारण-सूक्ष्म-स्थूलरूपाणि (जगन्ति) ३४ ४३ प्राप्तुमर्हाणि (लोकान्) १ १५४ ४ वेदितुं (योग्यानि चत्वारि नामाख्यातोपसर्गाख्यानि) १ १६४ ४५ ज्ञातुमर्हाणि (त्रीणि=उत्पत्तिस्थितिप्रलयाः कालाः वा) ३२ ६ पत्तुं प्राप्तुं ज्ञातुं योग्यानि (शास्त्राणि) १ १६४ ५ व्याप्तव्यानि (ज्ञानानि) १ ६७ ३ जगत् की उत्पत्ति, स्थिति और प्रलय करने के सामर्थ्य आर्याभि० २ २४, ३२ ६ **पदाय**=प्राप्तव्याय (ईश्वराय) ७ ४१.६ प्रापणीयाय (व्यवहाराय) ३४ ३६ **पदे**=तले स्थाने २ १० १ सर्वत्र प्राप्तेऽन्तरिक्षे १ २२ १४. प्रापणीये (मोक्षे) ५ ४३ १४ प्राप्ते (स्थाने) ३ २६ ४ प्रतिष्ठायाम्, भा०—अविकारे ३४ १५ प्रापणे १ १४६ १ गन्तव्ये मार्गे १ ४६ ६ सृष्टि मे स० प्र० ४२३, ६ ८३ २. प्राप्तव्ये गुणसमूहे १ ७२ ४ **पदेन**=प्राप्तव्येन विज्ञानेन १ १३६ ६ **पदेषु**=प्राप्तुं योग्येषु नामस्थानजन्माख्येषु २३ ५० **पदैः**=विभक्त्यन्तैः (शब्दैः) १६ २५ प्रत्यक्षेण प्राप्तैर्गुणनियमैः १ ६५ १ [पद गतौ (दिवा०) धातोर् 'घञर्थे कविधानम्' इति क प्रत्ययः । आत्मा वै पदम् कौ० २३ ६ पादः पद्यते । तन्निधानात्पदम् । पशुपादप्रकृतिः प्रभागपादसामान्याद् इतराणि पदानि नि० २ ८ पशवः पदम् मै० ३ ७ ७]

पदवीः यः पदानि व्येति प्राप्नोति स (जगदीश्वर) ३ ५६ ४ यः पदं व्येति स (इन=ईश्वर) ७ ३६ २. यः प्राप्तव्यानि पदानि व्येति व्याप्नोति स (विप्र=मेधाविजन) ३ ५ १ प्रतिष्ठा ३ ३१ ८ **पदव्यः**=सुखं प्राप्ता (जीवाः) १ ७२ २ [पदोपपदे वी गतिकान्त्यादिषु (अदा०) धातोः क्विप् । पदवी=पदं वेत्ति नि० १३ ७२]

पदा प्राप्तुमर्हाणि (साङ्गोपाङ्गांश्चतुरो वेदान् त्रीन् क्रियाकौशल-विज्ञानपुरुषार्थान्) १ ७२ ६. पदानि वेद्यानि प्राप्तव्यानि वा (धामानि), प्र०—अत्र 'शेश्छन्दसि बहुलम्' इति लोपः १ २२ १८ प्राप्ति-साधकान् मुहूर्त्तान् ३३ ६३ ज्ञातुं प्रापयितुं वा योग्यानि कारणसूक्ष्मस्थूलरूपाणि ३४ ४३ [पद गतौ (दिवा०) धातोर्घञर्थे क । पदप्राति० छन्दसि शेर्लोपः]

पदिम् पद्यते गम्यते या श्रीस्ताम् १ १२५.२ [पद गतौ (दिवा०) धातोः 'इक् कृष्यादिभ्यः' वा० सूत्रेण इक्-प्रत्ययः]

पदीष्ट पत्सीष्ट प्राप्नुयात्, प्र०—अत्र 'छन्दस्युभयथा' इति सार्वधातुकाश्रयणात् सलोपः १ ३८ ६ पद्यते प्र०—अत्र 'लिङः सलोपोऽन०' इति सकारलोपः 'अन्येषामपि०' इति दीर्घः १ ७६ ११ [पद गतौ (दिवा०) धातोर्लिङ्]

पदे इव यथा पादौ तथा (रात्रिदिने) ३ ५५ १५ [पदे-इवपदयोः समासः]

पदेभिः ज्ञातुमर्हैः (स्थूलसूक्ष्मातिसूक्ष्मैरवयवैः) १ १५४ ३ [पद-गतौ (दिवा०) धातोः 'घञर्थे कविधानम्' इति क । छन्दसि भिस ऐस् न भवति]

पदे-पदे- प्राप्तव्ये प्राप्तव्ये, वेदितव्ये वेदितव्ये, गन्तव्ये गन्तव्ये वा पदार्थे ५ ४१ १५ [पदे पदस्य वीप्सायां द्वित्वम्]

पदेव पद्यन्ते यैस्तानि पदानि चरणानीव (व्रतानि=सत्याचरणरूपाणि कर्माणि) ५ ६७ ३ [पदा-इवपदयोः समासः । पदा=पदप्राति० शेर्लोपः]

पदेव पद्भ्यामिव ४.३१ ५ [पदा-इवपदयोः समासः । पदा=पाद-प्राति० तृतीयैकवचने पदादेशः]

पद्यते प्राप्नोति ६ ५४ ३ अवगच्छति ४ १३.५ **पद्यस्व**=प्राप्नुहि १७.४५ **पद्ये**=प्राप्नोमि ३ ४३ प्राप्नुयाम् ३६ १ [पद गतौ (दिवा०) धातोर्लट् । अन्यत्र लोट्]

पद्या पादेषु अशेषु भवा (रात्रि) ३ ५५ १४ **पद्याभिः**=पत्तुं गन्तुं योग्याभिर्गतिभिः २ ३१ २ प्रापणीयाभिः क्रियाभिः २ ३२.३. [पादप्राति० भवार्थे यत्प्रत्यये 'पद् यत्यतदर्थे' अ० ६ ३ ५३ सूत्रेण पदादेशः । पद गतौ (दिवा०) धातोर्वा 'अर्हे कृत्यतृचश्च' इति यत्]

पद्येन प्राप्तुं योग्येन (रपसा=पापेन) ७ ५० १

पप्रथुः व्याप्नुत, प्र०—अत्र पुरुषव्यत्यय. ६ ७२.३ **पप्रथे**=भा०—विस्तीर्णा भवति ३३ ८३. प्रथते ३ ६१ ४ प्रथयति विस्तृणाति ६.७.७ प्रथताम् ३ ३० १६. प्रख्यापयति ५ ८७ ७ **पप्राथ**=प्राति पूरयति ६ १७ ७ [प्रथ प्रख्याने (भ्वा०) धातोर्लिट्]

पप्रा स्वविद्यापूर्ण (विद्वान् मनुष्य), प्र०—अत्र 'आद्गम०' इति कि 'सुपा सुलुक्०' इति सोर्डादेशश्च १ ६९ १ [प्रा पूरणे (अदा०) धातो. कि प्रत्ययो लिड्वच्च। पप्रिप्राति० सु स्थाने छान्दसो डादेश]

पप्रिणा परिपूर्णेन (विदुषा जनेन) २ २३ १०. **पप्रिम्**=पूर्णबलविद्य पालक वा (राजा सेनापतिर्वा) ३४ २० पालनशीलम् (सेनाद्यध्यक्षम्) १ ९१ २१ **पप्रिः**= पूरक (वव्र =कूप इव मेघ) १ ५२ ३ पूरयन् (द्यौ = सूर्य) ६ ५० १३ [प्रा पूरणे (अदा०) धातो 'आदृगमहन०' इति सूत्रेण कि प्रत्ययो लिड्वच्च]

पप्रितमम् प्राति प्रपूरयति सर्वाभिर्विद्याभिरानन्दैश्च जनान् स्वव्याप्त्या जगद्वा मूर्त्त वस्तु शिल्पविद्यासाध्याऽङ्गानि च य सोऽतिशयितस्तम्, भा०—पूर्णविद्याप्रदातारम् (ईश्वर भौतिक वा) १ ८ [प्रा पूरणे (अदा०) धातो 'आदृगमहन०' इति सूत्रेण कि प्रत्ययो लिड्वच्च। पप्रिप्राति० अतिशायने तमप्]

पप्रौ प्रपूर्त्ति १ ८१ ५ प्राति ३ ३० ११. व्याप्नोति ३ ५४ १५ [प्रा पूरणे (अदा०) धातो सामान्ये लिट्]

पयते गच्छति १ १६४.२८. [पयते प्रप्यायते नि० ११ ४२]

पयसः दुग्धस्य जलस्य वा १९ २३ उदकस्य दुग्धस्य वा ३८ २८ **पयसा**=पयन्ते विजानन्ति सर्वान् पदार्थान् येन ज्ञानेन तेन भा०—विज्ञानेन २ २४ जनेन प्र०—पय इत्युदकनाम निघ० १ १२, ३ ३३ १ अन्नादिना १७ ७४ दुग्धेन १९ ९५ दुग्धदानेन ५ ४३ १ जलेन दुग्धेन वा १२ ७० जलवर्षणेन २८ ३६ रसविशेषेण ६ ६१ १४. रात्र्या, प्र०—पय इति रात्रिनामसु पठितम् निघ० १ ७, ८ १६ जलेनान्नेन वा, प्र०—पय इत्यन्ननाम, निघ० २ ६, ८ १४ शब्दार्थसम्बन्धरसेन २० ४३ जलेनेव १३ ४१. दुग्धेनेव जलेन ३ ५५ १३ **पयः**=दुग्धमुदकमन्नं वा प्र०—पय इत्युदकनाम निघ० १ १२ अन्ननाम च निघ० २ ७, ६ ५२ १० रसादिकम् १ २२ १४ रसवत् (इन्द्रियधनम्) १९ ७६ सुखकारक रसम् १ २३ १६ रसनिमित्तम् (सूर्य) ४ ३ रसयुक्त जलम् १७ १ सुरसम् १९ ७६ सुखप्रदम् (इन्द्रिय=विज्ञानमाधारम्) १९ ७७ उत्तम अन्न दूध स० वि० १४५, अथर्व० १२.५ १०. सर्वोषधिरसः २१ ३५ पातुमर्हम् (रस=सारभूतम्) १९ ७५ सर्वपदार्थसार-विज्ञानयुक्तम् ऋ० भू० ३०६, १९ ७५ भा०—उत्तमाऽन्न रसश्च १८ ३६. **पयांसि**=जलान्यन्नानि वा १ ९१.१८ जलानि दुग्धानि वा १२.११३ **पयोभिः**= जलै. १ १६४.२८. उदकै. ४.२१.८ [पीयते तत् पय इति विग्रहे पा पाने (भ्वा०) धातोर्बाहु० औणादिकोऽसुन्। बहुलवचनाद् धातोरीत्वे गुणेऽयादेशे च रूपम्। पय. रात्रिनाम निघ० १ ७ पय· ज्वलतो नाम निघ० १ १७ पय उदकनाम निघ० १ १२ पय अन्ननाम निघ० २ ७. पय पिबतेर्वा प्यायतेर्वा नि० २ ५. पय.—यत्पयस्तत्रेत गो० उ० २ २६ क्षत्र वै पय श० १२ ७ ३ ८. (यज्ञस्य) प्राण पय श० ६ ५.४ १५ रसो वै पय श० ४.४.४ ८ आपो हि पय कौ० ५ ४ अपामेष ओषधीना रसो यत्पय श० १२ ८. २ १३. पयो वा ओषधय तै० ३ ७ १ ५ सोम. पय श० १२ ७ ३ १३ आपो हि पय कौ० ५ ४ गो० २ १ २२ एतत् सोमस्य (तेज) यत् पय तै० स० २ ५ २ ७ ऐन्द्र पय तै० स० ६ २ ५ ३ गो० २ १ २२ द्वादश वै पयासि मै० ४ ४ ८ पयो वै पुरुष तै० स० २.५ ५ १ पयो हि रेत श० ६ ५ १ ५६ परम वा एतत्पयो यदजक्षीरम् तै० स० ५ १ ७ ४ पशूना वा एतत् पयो यद् व्रीहियवौ मै० १ ८ २ प्राण पय. श० ६ ५.४ १५ कौ० १० ६. वायुर्वै पयस प्रदाता काठ० ३५.१७]

पयस्पाः पयस उदकस्य पातार (विद्युदादय) १ १८१ २ [पयस् इति व्याख्यातम्। तदुपपदे पा पाने (भ्वा०) धातो कर्त्तरि क प्रत्यय.]

पयस्या पयसि जले कुशलौ (विद्वांसौ जनौ) २९ ६० [पयस्प्राति० कुशलार्थे यत्। 'सुपा सुलुग्' इत्याकारादेश। योषा पयस्या रेतो वाजिनम् श० २ ४ ४ २१. पयो वै पयस्या काठ० १२ १ मित्रावरुणयो पयस्येति, प्राणापानौ वै मित्रावरुणौ मै० ३ १० ६]

पयस्वती पय प्रशस्तो रसो विद्यतेऽस्या सा रसवती (पृथिवी), प्र०—अत्र प्रशसार्थे मतुप् 'पयस्वती रसवती' शत० १.२ ५ ११, १ २७. बहूदकयुक्ता (भूमि) ४ ५७ ७. प्रशस्तानि पयाम्यन्नानि उदकानि वा यस्या सा (पत्नी) ८ ४२ जल, दूध रसादि से परिपूर्ण (शाला) स० वि० १६७, अथर्व० ९ ३ ३ १६ **पयस्वतीः**=पयो बहुरसो विद्यते यासु ता (प्रदिश =प्रकृष्टा दिश) १८ ३६ [पयस् इति व्याख्यातम्। तत प्रशसाया भूम्न्यर्थे वा मतुप्। तत

स्तुतौ च (भ्वा०) धातोरौणादिकोऽसुन्। अकारस्य यकारश्छान्दस]

पन्यसीम् प्रशंसनीयाम् (धीतिं धियम्) ६ ३८ १ [पनप्राति० अतिशायने ईयसुन्। तत स्त्रिया ङीप्। पन =पन व्यवहारे स्तुतौ च (भ्वा०) धातो घञर्थे क. प्रत्यय]

पन्यः स्तुत्य (इन्द्र =ऐश्वर्यमिच्छुजन) ३ ३६ ३. [पन व्यवहारे स्तुतौ च (भ्वा०) धातोर्ण्यत्। छान्दसो ह्रस्व]

पन्वा स्तुत्येन कर्मणा १ ६५ २ [पन व्यवहारे स्तुतौ च (भ्वा०) धातोर्बाहु० औणादिको वन्प्रत्यय]

पपथुः पिवतम् १ ४७ १० **पपिरे**=पिबन्ति २ २४ ४ (पा पाने (भ्वा०) धातोर्लिट्। अन्यत्र व्यत्ययेनात्मने पदम्]

पपानः पालयन् (राजा) ६ ४४ ७ पा रक्षणे (अदा०) धातोर्लिट स्थाने कानच्]

पपिवान् रसान् पीतवान् (वीरजन) १ ६१ ७ पाता (राजजन.) २ ११ १० पानकर सूर्य ५ २९ ३ य पिवति स (इन्द्र =सूर्य) ५ ३० ११ **पपिवांसम्**=रक्षकम् (राजानम्) ५ २९ २ पिबन्तम् (इन्द्र=राजादिक शूरवीरम्) ६ ४७ १ पीतवन्तम् (ऋषिम्=वेदमन्त्रार्थवेत्तारम्) ३ ४३ ५ **पपिवासः**=पीतवन्त (गृहस्था) ८ १९ [पा पाने (भ्वा०) पा रक्षणे (अदा०) धातोर्वा लिट स्थाने क्वसु। पपिवास =पीतवन्त। नि० १२ ४२]

पपिवांसा पीतवन्तौ (इन्द्राग्नी=धनाढ्य-युद्धविद्या-प्रवीणौ) १ १०८ १३ [पा पाने (भ्वा०) धातोर्लिट. स्थाने क्वसु। 'सुपा सुलुग्०' इत्याकारादेश]

पपिः पाता (राजा) ६ २३ ४ [पा रक्षणे (अदा०) धातो 'आदृगमहन०' अ० ३ २ १७१ सूत्रेण कि प्रत्यय। लिड्वद्भावाच्च द्वित्वम्]

पपीयात् वर्धेत ६ ३७ २ [ओप्यायी वृद्धौ (भ्वा०) धातोर्यङ्लुगन्ताल् लिङ्। धातो स्थाने पी-आदेशे छान्दस रूपम्]

पपुरि पालक पुष्टिकरम् (श्रव =अन्न श्रवण वा) ६ ४६ ५ **पपुरिम्**=पुष्टम् (पुत्रम्) १ १२५ ४ पालकम् (विद्यार्थिन राजजन वा) ४ २३ ३ **पपुरिः**=प्रपूरको विद्वान् १ १६ ४ (पॄ पालनपूरणयो (जु०) धातो 'आदृगमहन०' इति सूत्रेण कि प्रत्ययो लिड्वच्च। 'उदोष्ठ्यपूर्वस्य' इत्युत्वम्। पिपर्त्ति पपुरिरिति पृणाति निगमौ वा प्रीणाति-निगमौ वा नि० ४ २४.]

पपृक्षे सम्बध्नाति ४ ४३ ७ सम्बध्नातु ४ ४४.७ **पपृचासि**=सम्बध्नाति, प्र०—अत्र व्यत्ययेन मध्यमपुरुष १ १४१.११ **पपृच्यात्**=सयुज्येत ४ २४ ५ [पृची सम्पर्चने (अदा०) पृची सपर्के (रुधा०) धातोर्वा लिट्। अन्यत्र यङ्लुगन्ताल् लट्। अपरत्र च लिङ्-विकरणव्यत्ययेन श्लु। पपृक्षा अर्चतिकर्मा निघ० ३ १४]

पपृक्षेण्यम् प्रष्टु योग्यम् (ओज) ५.३३ ६. [पृची सम्पर्के (रुधा०) धातोर्यङ्लुगन्तात् कृत्यार्थे केन्य प्रत्यय सुडागमश्च छान्दस]

पपृचानासः सम्पर्क कुर्वाणा (जना) १ १४१ ६ [पृची सम्पर्के (रुधा०) धातोर्लिट कानच्। जसोऽसुक् च]

पपौ पिवति २५ ३८ [पा पाने (भ्वा०) धातोर्लिट्]

पप्तत उत्पतत १ ८८ १ **पप्तन्**=पतन्ति ६.६३ ६ पतेयु २ ३१ १ **पप्तः**=पततु, प्र०—अत्र लोडर्थे लुङ् १ २६ **पप्तुः**=प्राप्नुवन्ति ५ ५९ ७ पतन्ति २ २८.४ [पत्लृ गतौ (भ्वा०) धातोर्लुङ्। लृदित्वादङि 'पत पुम्' इति पुम्। अडभाव। पप्तता=अपतत नि० ११ १४]

पप्तिवांसः पतनशीला (वय) १ ४८ ६ (पत्लृ गतौ (भ्वा०) धातोर्लिट क्वसु। धातोरुपधालोपश्छान्दस]

पप्ने व्यवहारे ६ ६० ४ [पन व्यवहारे स्तुतौ च (भ्वा०) धातोश्छान्दस रूपम्]

पप्रथत् विस्तारयति २ १५ २ प्रथयति ७ ४२ ६ स्वतेजो विस्तार्य स्वेन तेजसा सर्व जगत् प्रकाशयति १ १०३ २ प्रख्यापयति २ २५ २ **पप्रथः**=प्रख्यापय ३ ३० २०. प्रख्यातो भव ३ ५० ४ **पप्रथन्**=विस्तारयेयु २ ११ ८ [प्रथ प्रख्याने (चुरा०) धातोर्लुङ्। अडभाव। 'अत् स्मृदृत्वर०' इति सूत्रेणाभ्यासस्याकारादेश]

पप्रथानः प्रख्यातविद्य (विद्वान् जन) ५ १५ ४ **पप्रथानाः**=प्रख्याता (कवय =मेधाविनो जना) ३ ५४ १० विस्तीर्णविद्यासौन्दर्यादिगुणा (देवी =विदुष्य) ४ ५१ ८ [प्रथ प्रख्याने (भ्वा०) धातोर्लिट कानच्]

पप्रथाना विस्तीर्णानि (अर्णांसि=उदकानि) ७ १८ ५ [प्रथ प्रख्याने (भ्वा०) धातोर्लिट कानच्। तत शेर्लोप]

पप्रथानेभिः भृश विस्तृतै (गुणै) ४ ५६ १ [प्रथ प्रख्याने (भ्वा०) धातोर्लिट कानच्। ततो भिस ऐसादेशो न भवति]

परशुम् कुठारम् ३ ५३ २२ [परान् शत्रून् शृणाति हिनस्ति येनेति विग्रहे परोपपदे शॄ हिंसायाम् (क्र्या०) धातो 'आङ्परयो खनिशॄभ्या डिच्च' उ० १ ३३ सूत्रेण कु प्रत्यय । परशु वज्रनाम निघ० २ २०]

परश्वेव यथा परशुना १ १३०.४ [परश्वा-इवपदयो समास । वज्रो वै परशु श० ३ ६ ४ १०]

परस्तात् परस्मिन् देशे ३ ५५ ६ उत्तरस्मात् (समात्) ८ ६ परा, भा०—उपरिस्था (जलानि वायवो वा) १२ ४९ परस्मिन् वर्त्तमान भा०—दूरे वर्त्तमानम् (ब्रह्म) ३१ १८ पृथग् वर्त्तमानम् (परमात्मानम्) ऋ० भू० १३३, रहितम् (परमात्मा को) आर्याभि० २.८, ३१ १८ परशब्दात् 'विभाषा परावराभ्याम्' अ० ५ ३ २९ सूत्रेण सप्तम्यन्तादस्ताति प्रत्यय]

परस्पा यौ परान् पातो रक्षतस्तौ (राजाना=राजाऽमात्यौ) ५ ६२ ५ [परोपपदे पा रक्षणे (अदा०) धातो कर्त्तरि क । 'सुपा सुलुग्०' इत्याकारादेश । पूर्वपदस्य सुगागम]

परस्पाय येन परानन्यान् पाति तस्मै (साधनप्राप्तये) ३८ १९ (परस्प इति व्याख्यातम् । ततश्चतुर्थी]

परस्पाः पारयिता रक्षकश्च (अग्नि=पावकवद् विद्वज्जन) २ ९ २ [परोपपदे पा रक्षणे (अदा०) धातो. क्विप् कर्त्तरि । पूर्वपदस्य सुगागमश्छान्दस]

परस्याः शत्रूणा सेनाया उपरि १८ ७१ प्रकृष्टाया कन्याया ११ ७१ [परप्राति० षष्ठ्या एकवचनम्]

परस्वतः मृगविशेषान् २४ २८

परा ऊर्ध्वाऽर्थे प्र०—प्रपरेत्यस्य प्रातिलोम्य प्राहु नि० १० ३, ३ ४९ उपरिभावे १ २५ ४ दूरार्थे ५ ६१ ४ पृथक् १ १ ४ प्रकृष्टार्थे १ २५ १६ दूरीकरणे १ ३३ ५ पश्चादर्थे ६ २० ११ पराजयार्थे, ६ ६९ ८ पराङ्मुख ६.७५ १६]

पराकात् दूरदेशात् १.३० २१ [पराके दूरनाम निघ० ३ २६]

पराके दूरे ३५ २० पराक इति दूर-नाम निघ० ३ २६, १ १२९ ६ [पराके दूरनाम निघ० ३ २६ पराके=पराक्रान्ते नि० ५ ६]

परागात् परागच्छति १ १६४ १७ **परागाः**=दूर गच्छे ३ ५३ २ [परा+इण् गतौ (अदा०) धातोर्लुङ् । 'इणो गा लुङि' इति गादेश । 'गातिस्था०' इति सिचो लोप]

पराचरन्तम् प्रागनुवन्तम् (गोपा=जगदीश्वरम्) ३७.१७ [परा+चर गतौ (भ्वा०) धातो शतृप्रत्यय]

पराचः पराङ्मुखान् (शत्रून्) ६ ४४ १७ परभागप्राप्तान् (पदार्थान्) १ १६४ १९ पराग्भूतान् दूरस्थान् (शत्रून्) ३ ३० ६. **पराचैः**=धर्मात् पराङ्मुखै (शत्रुजनै) प्र०—अत्र 'बहुल छन्दसि' इति भिस ऐस्भाव १ २४.९ बाह्यचिह्नै १ १०५ १. **पराञ्चः**=परत्वेन व्यपदिष्टा (पदार्था) १ १६४.१९ [परा+अञ्चु गतिपूजनयो (भ्वा०) धातो 'ऋत्विग्दधृग्०' इत्यादिना क्विन् । पराचै दूरनाम निघ० ३ २६]

पराचीना पराचीनानि दूरीभूतानि (मुखा=मुखानि) १६.५३ [पराच्प्राति० स्वार्थे 'विभाषाञ्चेरदिक् स्त्रियाम्' अ० ५ ४ ८ सूत्रेण ख । खस्येनादेश । पराच्=परा+अञ्चु गतिपूजनयो (भ्वा०) धातो क्विन्]

पराचीः या परागञ्चन्ति ता (विषजन्यव्याधय) १ १९१ १५ [परा+अञ्चु गतिपूजनयो (भ्वा०) धातो 'ऋत्विग्दधृग्०' इति क्विन् । तत स्त्रियाम् 'अञ्चतेश्चोपसख्यानम्' अ० ४ १ ६ वा० सूत्रेण ङीप्]

पराचैः दूरार्थे, प्र०—अत्र बाहुलकात् परोपपदादपि चिधातोर्डैसि प्रत्यय १ ६३.४ [पराचै दूरनाम निघ० ३ २६ पराचै =पराञ्चनैरचित नि० ११ २५]

पराजघ्नुः पराहता विनष्टा भवेयु, अ०—निवृत्ता भवेयु प्र०—अत्र लिङर्थे लिट् १ १३ [परा+हन हिंसागत्यो (अदा०) धातोर्लिट्]

पराजयातै शत्रुओ से पराजित हो स० प्र० १८३, अथर्व० ६ १० ९८ १ **पराजिग्ये**=पराजय को प्राप्त होता हूँ, स० प्र० २३८, १० ४८ ५ पराजितो भवति ६ ६९ ८ [परा+जि जये (भ्वा०) धातोर्लेट् । अन्यत्र लिट् । 'विपराभ्या जे ' इति सूत्रेणात्मनेपदम्]

पराणि उत्तरकालस्थानि (विज्ञानानि) ६ २१ ६ उत्कृष्टानि (प्रियाणि=सुखानि) ३ ३८ १

पराणुदस्व परास्त कर दे आर्याभि० १ २४, ५ ३ २१ २५ प्रेरय ७ ३२ २५ [परा+णुद प्रेरणे (तुदा०) धातोर्लोट्]

पराणुदे दुष्टाना शत्रूणा पराजयाय, ऋ० भू० १५१, ऋ० १ ३ १८ २ शत्रुओ के पराजय करने के लिए स० प्र० १८४, १ ३९ २ परान्नुदन्ति शत्रून् यस्मिन् युद्धे प्र०—अत्र 'कृतो बहुलम्०' इति अधिकरणे क्विप् १ ३९ २ [परा+णुद प्रेरणे (तुदा०) धातोः क्विप्]

स्त्रिया ङीप्। पयस्वती रात्रिनाम निघ० १ ७.]

पयस्वती प्रशस्तजलयुक्ते (उपासानक्ता=रात्रिदिने) २ ३ ६ बहूदकयुक्ते (रोदसी=सूर्यभूमी) ६ ७० २ रात्र्यन्धकारयुक्ते (उषासानक्ता=उषाश्च नक्तश्च ते) २० ४१ [पयस्वतीति व्याख्यातम्। तत प्रथमा द्विवचनस्य पूर्वसवर्णादेश । पयस्वती=उदकवत्यौ नि० ५ २ पयस्वती रात्रिनाम निघ० १ ७.]

पयस्वन्तम् बहुदुग्धादिमन्तम् (करदायम्) ६ ३०. **पयस्वन्तः**=प्रशस्तजल-दुग्धादियुक्ता (मधुश्चुत =खाद्यपदार्था) २१ ४२ **पयस्वान्**=प्रशस्तजलविद्यादियुक्त (जन) २० २२ रसवच्छरीरयुक्तो भूत्वा (जन) १.२३ २३ [पयस् इति व्याख्यातम्। तत प्रशसार्थे मतुप्]

पयोदुहाना अनेकरस-फलादिभि प्राणिन प्रपूरयती (भूमि) ऋ० भू० १३८, ऋ० ८ २ १० १ [पयस्-दुहानापदयो. समास । दुहाना=दुह प्रपूरणे (अदा०) धातो शानच्। तत स्त्रिया टाप्]

पयोधाः ये पयासि स्वगतानि दधति ते (मरुत = वलिष्ठा राजजना) ७ ५६ १६ [पयस् इत्युपपदे डुधाञ् धारणपोषणयो (जु०) धातो कर्त्तरि क प्रत्यय]

पयोवृधः ये पय उदक रात्रिं वा वर्धयन्ति ते (मरुत = वायव) १ ६४ ११ [पयस् इत्युपपदे वृधु वृद्धौ (भ्वा०) धातो कर्त्तरि क्विप्]

पर पालय ६ ३६ [पॄ पालनपूरणयो (जु०) धातोर्लोट्। 'बहुल छन्दसीति' शप श्लुर्न भवति]

परम् परभागस्थम् (अन्त=सीमानम्) २३ ६१ इष्टम् (असु=प्राणम्) १ १४० ८ शत्रुम् १ २५ विद्याशत्रुम् १ २६ शत्रुभूतम् १ २६ **परस्मात्**=श्रेष्ठात् (रजस =लोकात्) १३ ४४ **परस्य**=श्रेष्ठस्य (सज्जनस्य) ३ १८ २ **परः**=उत्तम (पदार्थ) ८ ३६ प्रकृष्ट (विद्वज्जन) २ ३५ ६ उपरिष्ठो द्वितीय (प्राप्तविद्यासुशिक्षमपत्यम्) ६ ६ ३. सर्वोत्तम (परमेश्वर) १७ २६. उत्कृष्ट (विद्वज्जन) ६ ४८ १६ प्रकृष्टगुण. (मह = महिमा) १ १६ २ अत्यन्तोत्कृष्ट (इन्द्र =सर्वजगद्राज) १ ८ ५ अ०—प्रकृष्टसामर्थ्य (रुद्र =शूरवीर सेनाध्यक्ष) ३ ६१ बडा, श्रेष्ठ (परमेश्वर) आर्याभि० २ १४, ८ ३६ अन्य (मर्त्य =मनुष्य) २० ८२ **पराणि**=उत्तरकालस्थानि (विषयान्) ६ २१.६ **परेषु**=सूक्ष्मेषु (व्रतेषु= सत्यभाषणादिनियमेषु) ३ ५४ ५ **परैः**=उत्तमैश्वर्यव्यवहारै ७ ५

परमम् सर्वोत्कृष्टम् (पद=प्राप्तुमर्ह स्थानम्) ६ ५. सर्वथोत्कृष्टम् (पद=पत्तु योग्य स्थानम्) ६ ३ प्रकृष्ट प्रापणीयम् (पदम्) ४ ५ १२ सर्वोत्तमगुणप्रकाशम् (पद= जगदीश्वरम्) १ २२ २१ अत्युत्तमम् (अन्तरिक्ष=विज्ञानम्) ८ ६ **परमस्य**=श्रेष्ठस्य (राय =धनस्य) ७.६० ११. अत्युत्तमस्य (राय =धनादेर्मध्ये) ४ १२ ३. **परमः**= अतीव श्रेष्ठ (विद्वज्जन) ५ ३० ५ सर्वोत्कृष्ट (परमात्मा) आर्याभि० २ ४०, १७.२६ **परमात्**=उत्कृष्टात् (सधस्थात्=समानस्थानात्) १२ ११५ **परमे**=अत्युत्तमे मोक्षे पदे १ १५४.५ अत्यन्तोत्कृष्टे (सधस्थे=स्थाने) १ १० १ ८ सर्वोत्कृष्टे योगसस्कारजे (जन्मन्=जन्मनि) १७.७५ **परमेण**=प्रकृष्टसुखयुक्तेन (धाम्ना=इहलोकेन परलोकेन) १ २ **प्रकृष्टेन**=पशुना ४ २६ [अन्तो वै परमम् ऐ० ५ २१]

परमस्याः अनुत्तमगुणरूपशीलाया (अ०—कन्याया) ११.७२ अतिश्रेष्ठाया (ईश्वर-सृष्टे) ५ ६१ १ **परमस्याम्**=उत्कृष्टगुणायाम् (पृथिव्याम्) १ १०८ ६ **परमा**=उत्कृष्टा नीति ४ ५० ३

परमा परमाणि उत्कृष्टानि (रजासि=लोकस्थानि) ३.३० २ श्रेष्ठानि (इष्टानि=कर्माणि) १७ २६ दूरस्थानि (रजासि=स्थानानि) ३४ १६ प्रकृष्टानि कर्माणि २ २७ ३. [परमप्राति० शेर्लोप]

परमाणि उत्कृष्टनि (विद्यासुशिक्षाकर्माणि) ४ १ १६

परमेष्ठिनम् प्रजापतिम् (परमेश्वरम्) ऋ० भू० २३७ अथर्व० ११ ३ ७ **परमेष्ठी**=परमे प्रकृष्टे स्वरूपे तिष्ठतीति (प्रजापति =ईश्वर) ८ ५४ परम आकाशेऽभिव्याप्य स्थित (परमेश्वर) १५ ५८ सर्वेषा स्वामी (विश्वकर्मा=राजा) १४ ६. परमेश्वररूपे आकाशे वाऽभिव्याप्य तिष्ठतीति (प्रजापति =प्रजापालक ईश्वर) १४ ३१ [परमोपपदे ष्ठा गतिनिवृत्तौ (भ्वा०) धातो. 'परमे कित्' उ० ४ १० सूत्रेण इनि प्रत्यय । सप्तम्या अलुक्। 'स्थास्थिन्स्थृणामिति वक्तव्यम्' अ० ८.३ ६७. वा० सूत्रेण स्थिन् सकारस्य मूर्धन्य । आपो वै प्रजापति परमेष्ठी, ता हि परमे स्थाने तिष्ठन्ति श० ८ २.३ १३. परमेष्ठी वा एष यदोदन तै० १ ७ १०.६ ऋतमेव परमेष्ठी तै० १ ५ ५ १ परमेष्ठी स्वाराज्यम् ता० १६ १३ ३ ४ तपसा परमेष्ठी काठ० ३५ १५ परमेष्ठी राजन्यो मनुष्याणाम् मै० २ २ ५ विश्वकर्मा वय परमेष्ठी छन्द तै० स० ४ ३ ५ २]

गमय ऋ० भू० ३, ३० ३ दूर कर दीजिए स० वि० ४, ३० ३. [परा+आङ्+णु प्रेरणे (तुदा०) धातोर्लोट्]

पराहता दूर प्राप्ता (पृथिवी) ५ ५६ ३ [परा+हन् हिंसागत्यो (अदा०) धातो क्त । तत स्त्रिया टाप्]

पराऽहन् पराहन्ति ४ १६ ७ दूरीकुर्या ६ २६ ३ [परा+हन हिंसागत्यो (अदा०) धातो सामान्ये लङ्]

परि पर्य्यायेण १ ६५ ६ उपरिभावे १ १०५ ३ निषेवे १ ५४ ५ सर्वतो भावे प्र०—परीति सर्वतो भाव प्राह नि० १ ३, १ ७ १० मध्ये १२ ४१ वर्जने ३८ २४ परित अ०—सर्वत १ १० १२ सर्वतस्त्यागे १ १६७ ६. अभित १ ६१ ८

परिक्रोशम् परित सर्वत क्रोशन्ति रुदन्ति यस्मिन् दु खसमूहे तम् १ २६ ७ [परि+क्रुश आह्वाने रोदने च (भ्वा०) धातोरधिकरणे घञ्]

परिक्षिता सर्वतो निवसन्ती (मातरा=जलाग्नी) ३ ७ १ [परि+क्षि निवासगत्यो (तुदा०) धातो क्त । तत 'सुपा मुलुग्०' इत्याकारादेश]

परिक्षितोः सर्वतो निवसतो, प्र०—अत्र तुमर्थे तोसुन् १ १२३ ७ [परि+क्षि निवासगत्यो (तुदा०) धातोस्तुमर्थे तोसुन्]

परिख्यत् सर्वतो वर्जयेत् ७ ३६ ७ **परिख्यतम्**=वर्जनपूर्वक निराकुरुतम् ५ ६५ ६ **परिख्यन्**=सर्वतो वर्जयेयु २५ २४ वर्जितु ख्यापयेयु १ १६२ १ [परि+चक्षिङ् व्यक्ताया वाचि (अदा०) धातोर्लुङ् । 'चक्षिङ ख्याञ्' अ० २ ४ ५४ सूत्रेण ख्याञ्-आदेश । 'अस्यति वक्ति०' अ० ३ १ ५२ सूत्रेणाङ् । अडभाव । 'वर्जने प्रतिषेध' अ० २ ४ ५४ वा० सूत्रेण ज्ञाप्यते यदय धातुर्वर्जनार्थेऽपि]

परिगत्य परित सर्वतो गत्वा २ १५ ४ [परि+गम्लृ गतौ (भ्वा०) धातो क्त्वा । समासे क्त्वो ल्यप्]

परिगधिता परित सर्वतो गधिता शुभैर्गुणैर्युक्ता नीति प्र०—गध्यतिर्मिश्रीभावकर्मा नि० ५ १५, १ १२६ ६ [परि+गध+क्त+टाप् । गध्यतिरिति नैरुक्तो धातु मिश्रीभावकर्मा]

परिगृहीतम् परित सर्वतो गृहीत ज्ञातम् (भूत-भुवनभविष्यत्-सम्बन्धिव्यवहारम्) ३४.४ त्रिकालिक व्यवहारो को स० प्र० २४७, ३४४ [परि+ग्रह उपादाने (क्र्या०) धातो क्त । ग्रहिज्यादिना सम्प्रसारणम् । 'ग्रहोऽलिटि दीर्घ' इतीटो दीर्घ]

परिगृह्णामि समन्तात् स्वीकरोमि १ २७ अभित सम्पादयामि १ २७ सर्वतो-भावेन सम्पादयामि, प्र०—परीति सर्वतोभाव प्राह नि० १.३, १ २७ [परि+ग्रह उपादाने (क्र्या०) धातोर्लट् । 'ग्रहिज्यावयिव्यधि०' इत्यादिना सम्प्रसारणम्]

परिगृह्य सर्वतो गृहीत्वा १७ ५५ [परि+ग्रह उपादाने (क्र्या०) धातो क्त्वा । समासे क्त्वो ल्यप्]

परिग्मन् परितो गच्छन्ति ४ ४३ ६ [परि+गम्लृ गतौ (भ्वा०) धातोर्लुङ् । 'मन्त्रे घसह्वरणश०' अ० २ ४ ८० सूत्रेण लेर्लुक् । 'गमहनजन०' अ० ६ ४ ९८ सूत्रेणोपधालोप.]

परिचक्षत सर्वतो चक्षीत, प्र०—अत्र शपो लुक् १ १२१ २ [परि+चक्षिङ् व्यक्ताया वाचि (अदा०) धातोर्लङ् । अटोऽभाव]

परिचक्ष्याणि परित सर्वत ख्यातु योग्यानि (वचासि=वचनानि) ६ ५२ १४ [परि+चक्षिङ् व्यक्ताया वाचि (अदा०) धातोर्ण्यत्]

परिचरति सर्वत सेवते १ ५२.६ **परिचरन्ति**=सर्वतो जानन्ति गच्छन्ति वा ७ १ १५ [परि+चर गतौ (भ्वा०) धातोर्लट्]

परिचराणि सर्वतो गतिमन्ति प्राप्तव्यानि वा (सैन्यानि) ५ २९ १३ **परिचराय**=यो धर्म, विद्या, मातापितरौ, स्वमित्रादींश्च सेवते तस्मै (भा०—सेवकाय) [परि+चर गतौ (भ्वा०) धातोर्मूलविभुजादित्वात् क प्रत्यय । यजमान परिचर ता० ३ १ ३]

परिचित् विद्या-परिचय प्राप्ता (कन्या) १२ ५३ **परिचितः**=परित सर्वत सञ्चेतार (विद्वासो जना) १२ ४६ [परि+चिञ् चयने (स्वा०) धातो कर्त्तरि क्विप्]

परिच्छिन्नाः छिन्नभिन्नविज्ञाना (अध्येतारो जना) ७ ३३ ६ [परि+छिदिर् द्वैधीकरणे (रुधा०) धातो क्त । 'रदाभ्याम्०' इति नकारादेश]

परिजग्रभत् सर्वतो गृह्णाति ३२ २ [परि+ग्रह उपादाने (क्र्या०) धातोश्छान्दस रूपम् । 'हृग्रहोर्भश्छन्दसि' इति हकारस्य भकार]

परिजजान सर्वतो जनयति १३ ४५ [परि+जनी प्रादुर्भावे (दिवा०) धातोर्लिट् । व्यत्ययेन परस्मैपदम्]

परिजरते परित स्तौति १२ १८ [परि+जरते अर्चतिकर्मा (निघ० ३ १४) धातोर्लट्]

परिजर्भुराणः परित सर्वतोऽतिशयेन पुष्यन् (विद्वान्

पराणुदे दूरे नुदति ७ १८ १६ [परा+णुद प्रेरणे (तुदा०) धातोर्लिट्]

परादादाति पूर्व प्रयच्छति १ ८१ ६ **परादा**=दूरे तिष्ठ प० वि० **पराऽदात्** =दूर गमयेत् ५ ३ १२ दूरीकुर्यात् ६ २७ ७ **परादाः**=परादद्या १ १०४ ८ दोरवखण्डयेर्विनाशये १ १०४ ५ दूरीकुर्या १ १८६ ५ पराङ्मुखान् कुर्या ७ १ १६ [परा+डुदाञ् दाने (जु०) धातोर्लेट् । अन्यत्र लुङ् । 'गातिस्थाघु०' इति सिचो लोप । दो अवखण्डने (दिवा०) धातोर्वा रूपम्]

परादादिः पराञ्छत्रूनादाता (सेनापति) १ ८१ २ [आददि =आङ्+डुदाञ् दाने (जु०) धातो 'आदृगमहन०' इति सूत्रेण कि प्रत्ययो लिड्वच्च । पर-आददिपदयो समास]

परादानम् परेभ्य आदानम् १८ ६४ [पर-आदानपदयो समास । आदानम्=आङ्+डुदाञ् दाने (जु०) धातोर्ल्युट्]

परादै पराशनाय त्यागाय त्यक्तव्याय ८ १६ ७

परापत ऊर्ध्वं पतति गच्छति अ०—ऊर्ध्वं द्रव्य गमयति प्र०—अत्र व्यत्ययो लडर्थे लोट् च 'परा इत्येतस्य प्रातिलोम्य प्राह निं० १ ३, ३ ४६ परायाहि १७ ४५ दूर गच्छ ४ ३४ [परा+पत्लृ गतौ (भ्वा०) धातोर्लोट्]

पराऽपरा या परोत्कृष्टा चाऽसावपराऽनुत्कृष्टा च सा (निर्ऋति =वायूना रोगकारिका दु खप्रदा गति) १ ३८ ६ [परा-अपरा पदयो समास]

परापुरः ये परागतानि स्वसुखार्थान्यधर्मकार्याणि पिपुरति ते (दुष्टा जना) २ ३० [परा+पृ पालनपूरणयो (जु०) धातो कर्त्तरि क्विप् । 'उदोष्ठ्यपूर्वस्य' सूत्रेणोत्वम्]

परापूतम् परागत पूत पवित्रत्व यस्मात्तत् (रक्ष =दुष्टस्वभावो मूर्ख) १ १६ **परापूताः**=परागत पूतः पवित्रस्वभावो येभ्यस्ते (अरातय =शत्रव) १ १६ [परापूतपदयो समास । पूत =पूञ् पवने (क्र्या०) धातो क्त]

परामृश विचारय १ १२६ ७ [परा+मृश आमर्शने (स्पर्शे) (तुदा०) धातोर्लोट्]

परायती परागच्छन्ती (प्राप्यमाणौषधी) १ १६१ २ **परायतीनाम्**=पूर्व गतानाम् (उपमाम्) १ ११३ ८. **परायतीम्**=म्रियमाणाम् (मातर=जननीम्) ४ १८ ३ [परा+या प्रापणे (अदा०) धातो शत्रन्तात् ङीप्]

परायन् परेत सन् (न्यायाधीशो राजा) १२ २३ [परा+इण् गतौ (अदा०) धातो शतृप्रत्यय]

परायन्ति परागच्छन्ति पुनरागच्छन्ति च १ १२३ १२ [परा+इण् गतौ (अदा०) धातोर्लट् प्रथमबहुवचनम्]

परायाहि दूर गच्छ ३ ५३ ५ [परा+या प्रापण (अदा०) धातोर्लोट्]

परार्धः अन्तो दशवार सङ्ख्यात परार्द्ध १७ २

परावत् परा गुणा विद्यन्ते यस्मिन् तत् (कर्म) ४ ५० ३ **परावतम्**=दूरदेशस्थम् (राजानम्) ३ ४० ६ **परावतः**=दूरदेशात् १८ ७२ विप्रकृष्टाद् देशात् ३ ६ ५ दूरस्था (दिश) १८ ३२ दूरस्थितस्य (विवस्वत =सूर्यस्य) ६ ८ ४ दूरत (स्थानात्) १ १३० ६ दूरमार्गान् १ ३५ ३ दूरस्थानानि प्र०—परावत प्रेरितवता. परागता नि० ११ ४८ 'परावत इति दूरनामसु पठितम्' निघ० ३ २६, १ ३४ ७ **परावति**=दूरे देशे ५ ३० ५ दूर दूर देश प्रति गमने कर्त्तव्ये १ ४७ ७ विप्रकृष्टे मार्गे १ १२२ १३ [परशब्दाद् मतुप् पूर्वस्य च दीर्घश्छान्दस । परावत दूरनाम निघ० ३ २६ परावत प्रेरितवत परागताद्वा नि० ७ २६ परा उपसर्गाद्वा गतार्थे वति प्रत्यय 'उपसर्गाच्छन्दसि धात्वर्थे' अ० ५ १ ११७ सूत्रेण । अतो वै परावत ऐ० ५ २]

परावप दूरे निक्षिप १६ ६ [परा+टुवप बीजसन्ताने (भ्वा०) धातोर्लोट्]

परावृक् य परावृणक्ति स (इन्द्र =सूर्य) २ १५ ७. **परावृजम्**=धर्मविरुद्धगामिनम् (पुरुषम्) १ ११२ ८ परागता वृजस्त्यागकारा यस्मात्तम् (अन्ध=चक्षुर्विहीन जनम्) २.१३ १२ [परा+वृजी वर्जने (रुधा०) धातो कर्त्तरि क्विप्]

परावृक्तम् अच्छिन्नवीर्यम् (पुत्रम्) ४ ३० १६

परावृणक्ति दूरे त्यजति ६ ४७ १७ [परा+वृजी वर्जने (रुधा०) धातोर्लट्]

पराशरः दुष्टाना हिंसक. (राजा) ७ १८ २१ [परा+शॄ हिंसायाम् (क्र्या०) धातो पचाद्यच्-प्रत्यय । पराशर =पराशीर्णस्य वसिष्ठस्य । इन्द्रोऽपि पराशर उच्यते परा शातयिता यातूनाम् नि० ६ ३०]

परास पराङ्मुखस्यति ४ १८ ८ [परा+असु क्षेपणे (दिवा०) धातोरण्-प्रत्यय]

परासः भविष्यन्त (पितर =जनका) ४ २ १६ प्रकृष्टा भा०—उत्तमा (पितर =रक्षितार पित्राद्य) १ ६ ४६

परासुव दूरे प्रक्षिप भा०—निवारय १६ ५ दूरे

परितसयध्यै सर्वतो भूपयितुम् ६ २२ ७ परित सर्वतस्तसयितु भूपयितुम् १ १७३ ७ [परि+तसि अलङ्कारे (चुरा०) धातोस्तुमर्थेऽध्यै प्रत्यय]

परितृढा: सर्वतो हिसिता (अमित्रा =शत्रव) १ १३३ १ [परि+तृहू हिंसार्थे (तुदा०) धातो. क्त]

परित्रिधातु अयस्ताम्ररजतादि-धातुत्रयेण सर्वतो रचनीयम् (यानम्) ऋ० भू० १९६, ऋ० १.३४.७ [परि-त्रिधातुपदयो समास]

परिददामि सर्वतो ददामि १८ ५६. [परि+डुदाञ् दाने (जु०) धातोर्लट्]

परिदधातु सर्वतोभावेन दधाति वा, प्र०—अत्र लडर्थे लोट् २ ३ [परि+डुधाञ् धारणपोषणयो (जु०) धातो-र्लोट्]

परिदधिरे सर्वतो दध्यु ५ १८ ४ सर्वतो दधति २ १३ १० [परि+डुधाञ् धारणपोषणयो (जु०) धातो-र्लिट्]

परिदधे सर्वतो धरामि ४ २ [परिपूर्वाद् दधातेर्लट्]

परिदर्षीष्ट सर्वतो विदारय ८ ५३ [परि+दृ विदारणे (क्र्या०) धातोर्लिङ् । व्यत्ययेनात्मनेपदम्]

परिदेहत् सर्वतो वर्धये ७ ५० २ [परि+दिह उप-चये (अदा०) धातोर्लेट् । विकरणव्यत्ययेन शप्]

परिदाय सर्वतो दत्त्वा १ १०५ २ [परि+डुदाञ् दाने (जु०) धातो क्त्वा । समासे क्त्वो ल्यप्]

परिदाशेम सर्वतो दद्याम ७ ३ ७ [परि+दाशृ दाने (भ्वा०) धातोर्लिङ्]

परिदीय सर्वत उपक्षयति प्र०—अत्र व्यत्ययेन परस्मैपदम् ५ ८३ ७ सर्वत क्षिणुमहि १७ ३६ **परि-दीयत्**=सर्वतो गच्छेत् प्र०—दीयतीति गतिकर्मा निघ० २ १४, १ १८० १ **परिदीयन्ति**=परिक्षयन्ति [परि+दीङ् क्षये (दिवा०) धातोर्लोट् । व्यत्ययेन परस्मैपदम् । अन्यत्र लेट् । दीयतीति गतिकर्मा निघ० २ १४]

परिधत्ताम् सब ओर से आच्छादित शोभायुक्त करो स० वि० १२१, अथर्व० १४ १ ५३ सर्वतो धारयतो वा प्र०—अत्र लडर्थे लोट् २ ३ [परि+डुधाञ् धारण-पोषणयो (जु०) धातोर्लोट्]

परिधय: परित सर्वत सूत्रवद्धीयन्ते ये ते (गाय-त्र्यादिछन्दासि) ३१ १५ परिधिर्हि गोलस्योपरिभागस्य यावता सूत्रेण परिवेष्टन भवति, ते समुद्रादय सप्त सन्त्येते समुद्र एकस्तदुपरि त्रसरेणु सहितो वायुर्द्वितीय , मेघमण्डल तस्मानो वायुस्तृतीय वृष्टिजल चतुर्थस्तदुपरि वायु पञ्चमो-ऽत्यन्तसूक्ष्मो धनञ्जयस्तस्य, सूत्रात्मा सर्वव्यापक, सप्त-मश्च ऋ० भू० १२८, ३१ १५ **परिधिना** =य परित सर्वतो धीयते तेन (यजुर्वेदेन) १८.९८ **परिधिम्** =सर्व-तोभावेनाऽऽवरणम् ७ ३३ ६. सर्वतो धीयन्ते नद्यो यस्मिंस्तम् (समुद्रम्) ३ ३३ ६. परित सर्वतो धीयते यस्मिंस्तम् (प्रभुत्वम्) २ १७ भा०—धर्मानुसरण कार्यमधर्माचरण त्याज्यमिति मर्यादाम् ३५ १५ **परिधि:**=परित. सर्वाणि वस्तूनि धीयन्ते येन स. (वायु) २ ३. विद्यापरिधानम् २ ३ विद्याऽवनि (अग्नि =प्रत्यक्षो भौतिक) २ ३ आवरण मर्यादा १ १२५ ७ अस्य सर्वस्य विश्वस्य पृष्ठा-वरणम् (गोलस्य पदार्थस्योपरि सर्वत सूत्रवेष्टन कृत्वा यावती रेखा लभ्यते स परिधिरित्युच्यते) ऋ० भू० १४३ **परिधीन्** = यत्र परित सर्वतो धीयन्ते तान् (मार्गान्) १९ ५३ [परि+डुधाञ् धारणपोषणयो (जु०) धातो 'कर्मण्यधिकरणे च' सूत्रेण कि प्रत्यय. । दिश: परिधय श० ५ २८ इमे वै लोका परिधय तै० ३ ८ १८ ४ गुप्त्यै वाऽभित परिधयो भवन्ति श० १ ३ ४ ८ आयासानि परिधय क० ४४ ६ परिधयो रश्मय म० ४ ५ ५]

परिधीनिव सर्वत उपस्थित गोलरेखा इव १ ५२ ५ [परिधीन्-इव पदयो समास.]

परिधेया: परित सर्वतो धातु धापयितुमर्हा (देवा = विद्वांसो दिव्या पदार्था वा) २ १८. [परि+डुधाञ् धारण-पोषणयो (जु०) धातो 'अचो यत्' इति यत् । 'ईद् यति' इति धातोरीकारादेश]

परिनक्षति सर्वतो व्याप्नोति ४ ४३ ५ [परि+णक्ष गतौ (भ्वा०) धातोर्लट् । नक्षते व्याप्तिकर्मा निघ० २ १८]

परिनयन्ति सर्वत प्राप्नुवन्ति २५ २७ [परि+णीञ् प्रापणे (भ्वा०) धातोर्लट्]

परिनिषेदथु परितो निषीदत ४ ५६ ७ [परि+नि+षद्लृ विशरणगत्यवसादनेषु (भ्वा०) धातोर्लिटि मध्यम-द्विवचनम्]

परिपतये परित सर्वत पतयो यस्मिँस्तस्मै (रक्ष-णाय) ५ ५ **परिपतिम्**=स्वामिनम् ३४ ४२ पति वर्जयित्वा वा सर्वत स्वामिनम् ६ ४९ ८ [परि-पतिपदयो समास । परिपतिम्=अधिपतिम् नि० १२ १८ मनो वै परिपति तै० स० ६ २ २ ३ गो० २ २ ३]

परिपन्थिनम् प्रतिकूल, पन्थान परित्यज्य स्तेनाय

जन) १ १४० १० [परि+डुभृञ् धारणपोषणयो (जु०) धातोर्यङ्लुगन्ताच्छानच् । व्यत्ययेनात्मनेपदम्]

परिजायते सर्वत उत्पद्यते ७ ५० ३ [परि+जनी प्रादुर्भावे (दिवा०) धातोर्लट् । 'ज्ञाजनोर्जा' इति धातोर्जा आदेश]

परिजिहीते परितो गच्छत ३ ३१ १७ [परि+ओहाङ् गतौ (जु०) धातोर्लट्]

परिज्मन् परित सर्वतो गच्छन्, उपर्य्यध सर्वान् पदार्थानितस्तत क्षेप्ता (अ०—वायु) प्र०—अयमजधातो प्रयोग 'श्वन्नुक्षन्०' उ० १ १५७ इति कनिन्-प्रत्ययान्तो मुडागमेनाऽकारलोपेन च निपातित १ ६ ९ परित सर्वतो गच्छति यस्मिन् मार्गे १ ११७ ६ परित सर्वतो वर्त्तमानाया भूमौ २ २८ ४ परित सर्वतो जहि हिनस्ति दुष्टाँस्तत्सम्बुद्धौ (इन्द्र=सभाध्यक्ष) १ ६३ ८ परित सर्वतो व्याप्त (वात =वायु) २ ३८ २ सर्वतो व्याप्तेऽन्तरिक्षे विस्तृताया भूमौ वा प्र०—ज्मेति पृथिवीनाम निघ० १ १, ४ २२ ४ **परिज्मनः**=परित सर्वतो व्याप्तस्य (अग्ने =पावकस्य) ३ २ ९. **परिज्मने**=परित सर्वतो ज्मा भूमिर्यस्य तस्मै (राज्ञे) ४ ३ ६ **परिज्मनोः**=य परित सर्वतोऽजत प्रक्षिपतो गच्छतस्तयो (सूर्याचन्द्रमसो) १ ४६ १४ **परिज्मा**=परित सर्वतो गन्ता वायु १ ११२ ४ य परित सर्वतो गच्छति स जीव १ ७९ ३ परितो जनत्यत्ति य सोऽग्नि १ १२२ ३ परित सर्वतो ज्माया भूमौ गच्छति त्यजति वा य स (भानु =सूर्य) ४ ४५ १ य परित सर्वतोऽजति गच्छति (अग्नि =यजमान सन्यासी) ७ १३ ३ **परिज्मानः**=परितो ज्मा भूमिर्येषान्ते (विद्वांसो जना) ५ १० ५ **परिज्मानम्**=परित सर्वतो भोक्तारम् (विप्र= विद्वज्जनम्) १ १२७ २ परित सर्वतोऽजन्ति मार्ग येन तम् (सुख रथम्) प्र०—अय परिपूर्वकाऽजधातो 'श्वन्नुक्षन्०' इत्यादिना निपातित १ २० ३ [परि+अज गतिक्षेपणयो (भ्वा०) धातोर्बाहु० 'श्वन्नुक्षन्०' उ० १ १५९ सूत्रेण कनिन्-प्रत्यये मुडागमोऽकारलोपश्च निपात्यते अथवा परि-ज्मन् पदयो समास । ज्मा इति पृथिवीनाम निघ० १ १ अथवा परि+जमु अदने (भ्वा०) धातो कनिन्-प्रत्यय । उपधालोपश्छान्दस]

परिज्मेव परित सर्वतो गन्ता वायुरिव ६ १३ २ **परिज्मामिव**=परित सर्वतो भोक्तारमिव [परिज्मा-इव पदयो समास । परिज्मेति व्याख्यातम्]

परिज्रय. ये परित सर्वतो जीर्णयन्ति ते (वात।) १ ६४ ५ ये परित सर्वतो गच्छन्ति ते (विद्वज्जना) ५ ५४ २ परित सर्वतो ज्रयो गतिमन्त । (विद्वांसो जना) ५ ५४ २ [परिपूर्वाद् ज्रयति गतिकर्मा (निघ० २ १४) धातोरच् । परि+ज्रि अभिभवे (भ्वा०) धातोर्वा अच्]

परिणयन्ति सर्वत प्रापयन्ति प्र०—अत्रान्तर्गतो ण्यर्थ १ ६५ २ सर्वत प्राप्नुवन्ति १ १६२ ४ [परि+णीञ् प्रापणे (भ्वा०) धातोर्लट्]

परिणशे परित सर्वतो नश्यन्त्यदृश्या भवन्ति यस्मिँस्तस्मिन् (अहसि=पापे) १ ५४ १ [परि+णश अदर्शने (दिवा०) धातो 'घञर्थे क-विधानम्' इति क प्रत्यय]

परिणीयते सर्वतो नीयते ४ ९ ३ सर्वत प्राप्यते ४ १५ १ [परि+णीञ् प्रापणे (भ्वा०) धातो कर्मणि लट्]

परितक्म्या आनन्दप्रदा (रात्रि) ५ ३० १४ **परितक्म्यायाम्**=रात्रौ प्र०—'परितक्म्या रात्रि परित एन तक्म 'तक्मेत्युष्णनाम तकत इति सत, नि० ११ २५, १ ११६ १५ परित सर्वतस्तकन्ति हसन्ति यस्या सृष्टौ तस्याम् ४ ४३ ३ निशि ६ २४ ९ परित सर्वतस्तक्माणि भवन्ति यस्या तस्या रात्रौ ५ ३१ ११. परितस्तक्मानोऽश्वा यस्या तस्याम् (राज्यभूम्याम्) ४ ४१ ६ **परितक्म्याया.**= परित सर्वत तकन्ति हसन्ति यैं कर्मभिस्तेषु भवाया (रात्रे) ५ ३० १३ [परि+तक गत्याम् धातोर्मनिन् तकति गतिकर्मा निघ० २ १४ प्रत्ययस्थमकारादनन्तर यकारोपजनश्छान्दस । परितक्म्या रात्रि, परित एना तक्म । तक्मेत्युष्णनाम तकते इति सत नि० ११ २५ परि+तके हसने (भ्वा०) धातोर्वा मनिन्-प्रत्यये छान्दस रूपम्]

परितक्म्ये परित सर्वतो हर्षनिमित्ते (व्यवहारे) १ ३१ ६ [परि+तके हसने (भ्वा०) धातोर्मनिन् । ततो भवार्थे यत्-प्रत्यये छान्दस रूपम्]

परितनुष्व सर्वतो विस्तृणु १ ६ ५० [परि+तनु विस्तारे (तना०) धातोर्लोट्]

परितप्तम् सर्वत सन्तप्तम् (विद्वांस जनम्) १ ११९ ६ [परि+तप सन्तापे (भ्वा०) धातो क्त]

परितस्थुषः सर्वतस्तिष्ठन्ति तान् सर्वान् स्थावरान् पदार्थान् मनुष्यान् वा प्र०—तस्थुष इति मनुष्यनाम, निघ० २ ३, १ ६ १ [परि+ष्ठा गतिनिवृत्तौ (भ्वा०) धातोर्लिट क्वसु: । अथवा परि-तस्थुषपदयो समास । त स्थुष मनुष्यनाम निघ० २ ३ इमे वै लोका परितस्थुष तै० ३ ९ ४ २]

गुप्त स्थितम् प्र०—अत्र 'छन्दसि परिपन्थिपरिपरिणौ पर्यवस्थातरि' अ० ५ २ ८६ अनेन पर्यवस्थाता विरोधी गृह्यते १ ४२ २ **परिपन्थिनः**=उत्कोचका दस्यव ४ ३४ [परिपन्थिन्शब्दो 'छन्दसि परिपन्थिपरिपरिणौ पर्यवस्थातरि' अ० ५ २ ८९ सूत्रेण इनि-प्रत्ययान्तो निपात्यते]

परिपन्थीव यथा दस्युस्तथा चोराणा प्राण-पदार्थ-हर्त्ता (शूर सेनापति) १ १०३ ६ [परिपन्थिन्-इवपदयो समास । परिपन्थिन् इति व्याख्यातम्]

परिपरिणः परित सर्वतश्छलेन रात्रौ वा परस्वादायिनश्चौरा प्र०—छन्दसि परिपन्थिपरिपरिणौ० अ० ५ २ ८९ अनेनैतौ शब्दौ स्तेनविषये निपात्येते ४ ३४ [परिपरिन् शब्दो निपात्यते 'छन्दसि परिपन्थिपरिपरिणौ०' अ० ५ २ ८९ सूत्रेण]

परिपश्यन्ति सर्वतोऽन्वीक्षन्ते २५ ३५ परित सर्वत प्रेक्षन्ते ऋ० भू० १ ३२ [परि+दृशिर् प्रेक्षणे (भ्वा०) धातोर्लट् । धातो पश्यादेश शिति]

परिपातम् सर्वतो रक्षतम् ३४ ३० **परिपात**= सर्वतो रक्षत १ १३६ ५ **परिपातु**=सर्वथा पालन करो, सदा सब उपद्रवो, पीडाओ से पृथक् रखो, यथावत् रक्षा करो आर्याभि० १ ४७, ऋ० ७ ८ १२ २ [परि+पा रक्षणे (अदा०) धातोर्लोट्]

परिपानम् परित सर्वत. पानम् ५ ४४ ११ [परि+पा पाने (भ्वा०) धातोर्भावे ल्युट्]

परिपासतः सर्वतो रक्षेताम् ७ ३४ २३ [परि+पा रक्षणे (अदा०) धातोश्छान्दस रूपम्]

परिपाहि परितो रक्ष ३३ ६९ सर्वतो रक्ष ३३ ८४ [परि+पा रक्षणे (अदा०) धातोर्लोट्]

परिपिन्वस्व सर्वतो सेवस्व भा०—प्रशंसितो भव १२ १० [परि+पिवि सेवने (भ्वा०) धातोर्लोट् । व्यत्ययेनात्मनेपदम्]

परिपूतः सर्वत पवित्र (सोम) १.१३५ २ [परि+पूञ् पवने (क्र्या०) धातो क्त]

परिप्रयाथ सर्वत प्राप्नुयात ४ ५१ ५ [परि+प्र+या प्रापणे (अदा०) धातोर्लट्]

परिप्ररोहन्ती सर्वत प्रकृष्टतया वर्द्धमाना (दूर्वा=ओषधी) १३ २० [परि+प्र+रुह बीजजन्मनि प्रादुर्भावे च (भ्वा०) धातो शत्रन्तात् ङीप्]

परिप्रासृजः सर्वत प्रासृज ३ ३२ ६ [परि+प्र+सृज विसर्गे (तुदा०) धातोर्लोडर्थे लङ्]

परिप्रीतः सर्वत प्रसन्न (मित्र) १ १६० ६ [परि+प्रीञ् तर्पणे कान्तौ च (क्र्या०) धातो क्त]

परिप्लवेभ्यः तारकेभ्य नक्षत्रेभ्य) २२ २९ [देवचक्र वा एतत् परिप्लवम् कौ० २० १]

परिबभूव सर्वथा तिरस्कार करता है स० वि० ६, १० १२१ १० **परिबभूवतुः**=सर्वतो भवत ५ १६ ४ **परिबभूवुः**=परितो भवन्ति ४ ३३ १ [परि+ भू सत्तायाम् (भ्वा०) धातोर्लिट्]

परिबाधमानः सर्वतो निरुन्धान (राजभृत्य) ६ ७५ १४ सर्वतो निवारयन् (पुमान्=पुरुषार्थी सेनापति) २९ ५१ [परि+बाधृ विलोडने (प्रतिघाते) धातो शानच्]

परिबाधः सर्वतो बाधनानि ५ २ १० [परि+बाधृ विलोडने (भ्वा०) धातोर्घञ् प्रत्यय]

परिबोभवीति सर्वतो भृश भवति ३ ५३ ८ [परि+भू सत्तायाम् (भ्वा०) धातोर्यङ्लुगन्ताल् लट्]

परिभुज समन्तात् पालय १६ ११ **परिभुजत्**= सर्वतो भुञ्ज्यात् पालयेत् प्र०—अत्र भुज धातोर्लिटि विकरणव्यत्ययेन श १ १०० १४ [परि+भुज पालनाभ्यवहारयो (रुधा०) धातोर्लोट् । विकरणव्यत्ययेन श]

परिभुवः परित सर्वतो विद्यासु भवन्ति ते (विपश्चित =विद्वासो जना) १ १६४ ३६ **परिभूः**=य परित सर्वत पदार्थेषु भवति स (अग्नि =परमेश्वरो भौतिको वा) प्र०—परीति सर्वतोभाव प्राह नि० १ १३, ११.४ सर्वतो भावयिता (विद्वान् जन) ५ ३ ६ सर्वोपरि विराजमान (जगदीश्वर) १ ९७ ६ परित सर्वतो भवतीति अ०—यज्ञप्रद (जगदीश्वर) ४ ३७ व्याप्त (परमेश्वर) वे० भा०, ऋ० १ १ १४ सर्वत सामर्थ्ययोगेन सर्वोपरि विराजमान (ईश्वर) प० वि० य सर्वतो भवति सर्वेषामुपरि विराजमान (सविता=परमेश्वर) ४ ५३ ५ सर्वत पुरुषार्थी (जगदीश्वर) १५ ४ सब दिशाओ और सब जगहो मे परिपूर्ण हो रहा सबके ऊपर विराजमान (ईश्वर) आर्याभि० २ २, ४० ८ यो दुष्टान् पापिन परिभवति तिरस्करोति स (ईश्वर) ४० ८ [परि+भू सत्तायाम् (भ्वा०) धातो क्विप् । सवत्सरेण परिभू (इन्द्र) तै० स० ४ ४ ८ १]

परिभूष सर्वतोभावेन भूषयति अलङ्करोति १ १५ ४. **परिभूषति**=सर्वतोऽलङ्करोति ३ ३ २ **परिभूषथः**= परितोऽलङ्कुरुथ ३ १२ ९ [परि+भूष अलकारे (भ्वा०)

परिषदः परिपीदन्ति यासु ता सभा ३ ३३ ९ [परि+षद्लृ विशरणगत्यवसादनेषु (भ्वा०) धातो सम्पदादित्वात् स्त्रियां क्विप्]

परिषद्यम् परिषदि सभाया भवम् (रेत्तस =धनम्) ७ ४ ७ **परिषदः**=परिषदि भव (भगवान् विद्वान्वा) ५ ३२ सभा का आज्ञापक, सभ्य, सभापति, सभाप्रिय, सभारक्षक, सभा से ही सुखदायक (ईश्वर) आर्याभि० २ १७, ५ ३२ [परिषद् इति व्याख्यानम्। ततो भवार्थे यत्। परिपद्य=परिहर्त्तव्य हि सोऽगर्त्तव्यम् नि० ३ २.]

परिषस्वजाते सर्वत स्वजेते, आश्रयत १ १६४ २० सर्वथा आश्रय करते हैं स० प्र० २८३, १.१६४ २० [परि+ष्वञ्ज परिष्वङ्गे (भ्वा०) धातोर्लिट्। 'श्रन्थि-ग्रन्थि०' अ० १ २ ६ वा० सूत्रेण लिट कित्वेनानुनासिक-लोप]

परिषस्वजाना परित सवत सङ्ग कुर्वाणा (योपा=स्त्री) २६ ४० परित कृतसङ्गा (योपा=पत्नी) ६ ७५ ३ [परि+ष्वञ्ज परिष्वङ्गे (भ्वा०) धातोर्लिट कानच्। स्त्रियां टाप्]

परिषिक्तम् सर्वत आर्द्रीभूत कृतम् (अन्ध =अन्नम्) ४ १ १९ सर्वत सिक्तम् (अन्ध =अन्नम्) ६ ६८ ११ परित सर्वत श्रेष्ठै पदार्थै संयोजितम् (आदित्यब्रह्मचर्यम्) ४ ३५ ६ **परिषिक्तः**=परित सर्वतोऽन्यै-रुत्तमैर्द्रव्यै सिक्त (सोम =ओषधिगण) ७ १८ ६ [परि+षिच् क्षरणे (तुदा०) धातो क्त]

परिषिक्ता परित सर्वत सिक्तानि (मधुराणि द्रव्याणि) १ १७७ ३ [परि+षिच् क्षरणे (तुदा०) धातो क्त । छन्दसि शेर्लोप]

परिषिक्तेभिः सर्वथा कृतसिञ्चनै (सेचनक्रियाभि) १ १०८ ४ [परि+षिच् क्षरणे (तुदा०)+क्त । 'बहुलं छन्दसी' ति भिस ऐसादेशो न भवति]

परिषिच्यते सर्वत सिच्यते १९ १५ [परि+षिच् क्षरणे (तुदा०) धातो कर्मणि लट्]

परिषूताः परित सर्वत सूता उत्पन्ना उत्पादिता वा पदार्था १ ५३ ८ [परि+षूङ् प्राणिगर्भविमोचने (अदा०) धातो क्त]

परिषूतेः परित सर्वतो द्वितीये विद्याजन्मनि प्रादुर्भूतान् (विद्वज्जनात्) १ ११६ ६ [परि+षूङ् प्राणिगर्भविमोचने (अदा०) धातो क्तिन्। तत पञ्चमी]

परिष्कन्दम् सर्वतो रेतस सेक्तारम् (पुरुषम्) ३० १२ [परि+स्कन्दिर् गतिशोषणयो (भ्वा०) धातोरच् कर्तरि]

परिष्कृतः सर्व गुण सम्पादित (पुरोळा =अन्न-विशेष) ३ २८ २ सुन्दर माला धारण किया हुआ (इन्द्र =ऐश्वर्यदायक सन्यासी) स० वि० १६६, ६.१३ ४ **परिष्कृता**.=परित शोभिता (मधुश्चुत =माधुर्ययुक्ता पदार्था) प्र०—सम्पर्य्यङ्गै (?) करोति भूषणे इति सुट् २१ ४२ [परि+डुकृञ् करणे (तना०) धातो क्त । 'सम्परिभ्या करोतौ भूषणे' इति कात्वं सुट्। यस्य परि-कात्. जै० १ ६०]

परिष्टिः परित सर्वत इष्टिरन्वेषण यस्या सा (गौ) प्र०—अत्र 'एकतादिषु परस्य वक्तव्यम्' ६ १.९४ इति वार्तिकेन पररूप एकादेश १ ६५ २ **परिष्टौ**= परित सन्तानकामनायाम् (प्रजायाम) ३ १६ २ [परि-इष्टि-पदयो. समासे 'एकतादिषु०' इति वा० सूत्रेण पररूपम्। इष्टि =यज देवपूजासंगतिकरणदानेषु (भ्वा०) धातो क्तिन्। अथवा इषु इच्छायाम् (तुदा०) धातो बाहु० क्तिन्]

परिष्टुतिः परित सर्वत स्तुति प्रशसा भा०—प्रशसादष्टान्त ३० २ परित सर्वत स्तूयते यया सा (स्वाहा=सत्या वाक्) ५.१८ परित सर्वत स्तुवन्ति यया सा (सत्यप्रशसा) ११ ४ परितो व्याप्ता सा स्तुति ५ ८१.१ [परि-स्तुतिपदयो समास । स्तुति =ष्टुञ् स्तुतौ (अदा०) धातो स्त्रियां क्तिन्]

परिष्टुभ. सर्वतो धर्तार (मरुत =वायव इव) १ १६६ १ [परि+ष्टुभु स्तम्भने (भ्वा०) धातो कर्त्तरि क्विप्]

परिष्टोभत सर्वत स्तम्भयत १ ८० ९ [परि+ष्टुभु स्तम्भने (भ्वा०) धातोर्लोट्]

परिष्ठात् सर्वतस्तिष्ठेत् ३.१५ ६. **परिष्ठा**= सर्वतस्तिष्ठति ४ ३० १२ [परि+ष्ठा गतिनिवृत्तौ (भ्वा०) धातोर्लुङ्। अडभाव सिचो लुक् च]

परिष्ठाम् य परितस्तिष्ठति तम् (अहिं=मेघम्) ६ ७२ ३ **परिष्ठाः**=सर्वत स्थिता (ओषधी =सोमयवाद्या) १२ ८४ [परि+ष्ठा गतिनिवृत्तौ (भ्वा०) धातो कर्तरि क्विप्]

परिष्ठितम् परित सर्वत स्थितम् (क्षोद =उदकम्) ६ १७ १२ [परि+ष्ठा गतिनिवृत्तौ (भ्वा०) धातो क्त। 'द्यतिस्यतिमास्थामि' तीत्वम्]

परिष्ठिताः परित सर्वत स्थिता (अप =जलानि) ७ २१ ३ [परि+ष्ठा गतिनिवृत्तौ (भ्वा०) धातो क्त]

लाभे (तुदा०) धातोर्लङ् । अडभाव]

परिविश्वानि विश्वस्थानि सर्वाणि वस्तूनि प्राणि जातानि च ऋ० भू० २१६, ऋ० ३ २ ३४ ६.. [परि-विश्वपदयो समास]

परिविष्टम् सर्वतो व्याप्नुतम् (राज्यम्) १ ११६ २० [परि+विष्लृ व्याप्तौ (जु०) धातोर्लोट् । 'बहुल छन्दसी' ति शपो लुक्]

परिविष्टी सर्वतो विद्या व्याप्नोति यया तया क्रियया ४ ३३ २ [परि+विष्लृ व्याप्तौ (जु०) धातो स्त्रिया क्तिन् । तत 'सुपा सुलुग्०' इति टा-स्थाने पूर्वसवर्णदीर्घ । विष्टी कर्मनाम निघ० २ १]

परिवीतम् परित सर्वतो वीत व्याप्त कमनीय च जलम् १ १३० ३ **परिवीतः**=परित सर्वतो व्याप्तशुभ-गुणकर्मस्वभाव (विद्वान् राजा) ४ १ ७ परित सर्वतो व्याप्तविद्य (विद्वज्जन) ३ ८ ४ परित आवृत (जीव) १ १६४ ३२ सब ओर से यज्ञोपवीत, उत्तम-ब्रह्मचर्य और उत्तम शिक्षा, विद्या से युक्त (पुरुष) स० प्र० १०६, ३ ८ ४ परित सर्वतो वीत प्राप्त विज्ञान येन स (मनुष =विद्वज्जन) १ १२८ १ [परि+वी गतिव्याप्ति-प्रजनकान्त्यसनखादनेषु (अदा०) धातो. क्त]

परिवीः यथा परित सर्वत सर्वा विद्या व्येति व्याप्नोति यथा अ०—सर्वविद्याव्यापकवत् (सभाध्यक्षो राजा) ६ ६ [परि+वी गतिव्याप्तिप्रजनादिषु (अदा०) धातो क्विप्]

परिवृङ्क्त सर्वत त्यजत १ १७२ ३ **परिवृङ्धि**=सर्वतो वर्जय ६ ७५ १२ सर्वतो वर्जय १३ ४१ **परिवृणक्ति**=सर्वतो दूरीकरोति ६ ५१ १६ परितस्त्यजति १ १२४ ६ सर्वतश्छिनत्ति ३ २६ ६ सर्वतो वर्जयति प्र०—अत्राऽन्तर्गतो ण्यर्थ ४ २६ परिवृणक्तु=परितो वर्जयतु ७ ४६ ३ परित्यजतु १६ १२ सर्वत पृथग् भवतु ७ ६० ६ सर्वत पृथक् करोतु १६ ५० सर्वतश्छिन्नो भवतु १३ ४५ **परिवृणक्षि**=सर्वतस्त्यजसि १ १२६ ३ [परि+वृजी वर्जने (रुधा०) धातोर्लोट् । अन्यत्र लट्]

परिवृज्याम् परितस्त्यजेयम् २ २७ ५ **परिवृज्या**=परिवृणक्तु ६ २८ ७ [परि+वृजी वर्जने (अदा०) धातोर्लिङ्]

परिवृणीमहे सर्वत स्वीकुर्महे ४ ४१ ७ [परि+वृञ् वरणे (क्र्या०) धातोर्लट्]

परिवृतम् सर्वत स्वीकृतम् (राध =धनम्) ७ २७ २ [परि+वृञ् वरणे (स्वा०) धातो क्त]

परिवृताः आच्छादिता विदुष्य (स्त्रिय) १ १४४ २ [परि+वृञ् आवरणे (चुरा०) धातो क्त । अनित्यण्यन्ताश्चुरादय इति णिच् न]

परिवेद सर्वतो जानीयाम् १२ ६४ [परि+विद ज्ञाने (अदा०) धातोर्लट् । 'विदो लटो वा' इति णल्]

परिवेष्टारम् परित सर्वतो व्याप्तविद्य विद्वासम् ३० १३ परिवेषणकर्त्तारम् (पुरुषम्) ३० १२ **परिवेष्टारः**=परितो व्याप्ता (विद्वास पतय) ६ १३ [परि+विष्लृ व्याप्तौ (जु०) धातो कर्त्तरि तृच्]

परिवोचे सर्वतो वदामि ७ ३३ १ [परि+ब्रूञ् व्यक्तायां वाचि (अदा०) धातोर्लुङ् । 'अस्यतिवक्ति०' सूत्रेणाङि प्रत्यये 'ब्रुवो वचि' इति वचिरादेश । 'वच उम्' इति धातोर् उमागमे आद्गुणे रूपम् । अडभावश्छान्दस.]

परिव्यत सर्वतो व्याप्नुत २ १७ २ [परि+वी गतिव्याप्त्यादिषु (अदा०) धातोर्लोट् । विकरणव्यत्ययेन श । व्यय गतौ (भ्वा०) धातोर्वा रूपम्]

परिव्ययन्ताम् सर्वतो विशिष्टतया प्राप्नुवन्तु जानन्तु वा ६ ६ [परि+व्यय गतौ (भ्वा०) धातोर्लोट् । व्यत्ययेनात्मनेपदम्]

परिव्ययामसि सर्वतो सवृणुम १७ ५ सर्वत प्राप्ता स्म १७ ४ [परि+व्यय गतौ (भ्वा०) धातोर्लट् । 'इदन्तो मसि' इति मस इदन्तता]

परिव्युच्छन्ती सर्वतो निवासयन्ती (दुहिता=कन्या) ४ ५२ १ [परि+वि+उच्छी विवासे (भ्वा०) धातो शत्रन्तात् ङीप्]

परिशयानम् योऽन्तरिक्षे सर्वत शेते तम् (अहि=मेघम्) ४ १६ २ सर्वत शयानमिव (अहिं=मेघम्) ६ ३० ४ सर्वत आकाशे शयानमिव वर्त्तमानम् (अहिं=मेघम्) ३ ३२ ११ [परि+शीङ् शये (अदा०) धातो शानच्]

परिशम् परित सर्वतोऽश्न लेशम् (अन्नम्) प्र०—अत्र 'छान्दसो वर्णलोपो वा' इत्यलोप १ १८७ ८ [परि-अशपदयो समास । अकारलोपश्छान्दस]

परिषदन् परिषीदन्ति ४ ३ ११ [परि+षद्लृ विशरणगत्यवसादनेषु (भ्वा०) धातोर्लङ् । अत्र छन्दसि सीदादेशोऽडागमश्च न भवत]

परिषदन्तः परिषदमाचरन्त (राजप्रजाजना) ४ २ १७ [परि+षद्लृ धातो शतृ-प्रत्यय । सीदादेशो न, छान्दसत्वात्]

विना अपर्याप्त (खाली) न रह कर आर्याभि० २ १०, ३२ ११ [परि+इण् गतौ (अदा०) धातो क्त्वा । समासे क्त्वो ल्यप्]

परीयानम् सर्वतो गच्छन्तम् (रथ=रमणीय विमानादियानम्) १ १८० १० [परि=या प्रापणे (अदा०) धातोर्ल्युट् करणे]

परीवापस्य पिष्टादे १६ २२ **परीवाप**=परित सर्वतो वापो बीजारोपण यस्मिन् स (क्षेत्रम्) १६ २१ [परि-वापपदयो समास । वाप =डुवप् बीजसन्ताने (भ्वा०) धातोर्घञ् प्रत्यय । अन्नमेव परिवाप ऐ० २ २४ भारत्यै परिवाप तै० १ ५ ११ २ सरस्वतीवान् भारतीवान् परिवाप ऐ० २ २४ मै० ३ १० ६ काठ० २६ १]

परीवृतम् सर्वत आवृतम् (अर्णव=समुद्रम्) २ १३ १८ **परीवृता:**=परीतोऽन्धकारेणाऽऽवृता (द्वार=द्वाराणि) १ १३० ३ परित सर्वतो वृता युक्ता प्रकाशयितार (सर्वे मनुष्या) ऋ० भू० १०१, अथर्व० १२ ५ २. सब ओर से सयुक्त (हे स्त्रीपुरुषो !) स० वि० १४३ अथर्व० १२ ५ २ परित आच्छादिता विदुष्य १ १४४ २. [परि+वृञ् आवरणे (चुरा०) धातो क्त । पूर्वस्य दीर्घश्छान्दस]

परीवृता परित सर्वतो वर्त्तन्ते यानि तानि (गोत्रा=गोत्राणि) २ १७ १ [परि+वृतु वर्त्तने (भ्वा०) धातोरिगुपधलक्षण क । तत शेर्लोपश्छन्दसि) पूर्वस्य दीर्घश्छान्दस]

परीहि सर्वत प्राप्नुहि ७ १३ [परि+इण् गतौ (अदा०) धातोर्लोट्]

परुष: परुष: मर्मणो मर्मण १३ २० ['परुष:' पदस्य वीप्साया द्वित्वम् । परुष् इति व्याख्यास्यते]

परुषा मर्मणा २० २७ परुषि=कठोरे व्यवहारे ७ ५० २ **परु**=मर्म २० २७ **परू षि**=मर्मस्थलानि १८ ३ कठोराणि वचनानि २३ ४१ कठोर स्वभाव आदि स० वि० २०८, अथर्व० ६ ६ ११ [पॄ पालनपूरणयो (जु०) धातो 'अर्त्तिपॄवपियजि०' उ० २ ११७ सूत्रेण उसि प्रत्यय]

परुषा: कठोरा (वाच) ५ २७ ५ **परुषे**=कठोरे व्यवहारे ६ ५६ ३ [पॄ पालनपूरणयो (जु०) धातो 'पॄनहिकलिभ्य उपच्' उ० ४ ७५ सूत्रेण उपच् । परुषे=पर्ववति भास्वतीत्यौपमन्यव नि० २ ६]

परुष्णीम् पालिकाम् (पृथिवी=भूमिम्) ७ १८ ८ विभागवतीम् (शत्रुसेनाम्) ४ ०० ० **परुष्ण्याम्**=पालनकर्त्र्याम् (पृथिव्याम्) ५ ५२ ९ [परुष् इति व्याख्यातम् । ततो मत्वर्थीयो न प्रत्यय । तत स्त्रिया छान्दसो ङीप् । इरावती परुष्णीत्याहु पर्ववती भास्वती कुटिलगामिनी नि० ९ २५]

परुष्परु: मर्म मर्म २५ ४१ प्रतिमर्म १.१६२ १८. [परुष्पदस्य वीप्साया द्वित्वम् । परुष् इति व्याख्यातम्]

परेता: सर्वत सुख प्राप्ता (जना) १३ ३१ [परा+इण् गतौ (अदा०) धातो क्त.]

परेहि पृथग् भव १ ४४ दूर गच्छतु अ०—परैतु ३५ ७ दूर गच्छ १७ ४४ [परा+इण् गतौ (अदा०) धातोर्लोट्]

परैतन दूर प्राप्नुत प्र०—अत्र 'इण् गतौ' इत्यस्माल्लोटि युष्मद्बहुवचने 'तप्तनप्तनथनाश्च' अ० ७ १ ४५ इति तनबादेश ५ ६१ ४ [परा+आङ् इण् गतौ (अदा०) धातोर्लोटि तप्रत्ययस्य तनबादेश]

पर्जन्य ! मेघ इव वर्त्तमान (राजपुरुष) ५ ८३ ४ **पर्जन्य:**=पालनजनक (मेघ) ५ ८३ ४ [पर्षति सिञ्चतीति विग्रहे पृषु सेचने (भ्वा०) धातो 'पर्जन्य' उ० ३ १०३ सूत्रेण अन्य प्रत्ययो निपात्यते । निपातनात् षकारस्य जकार । पर्जन्यस्तृपेराद्यन्तविपरीतस्य तर्पयिता जन्य । परो जेता वा । परो जनयिता वा । प्रार्जयिता वा रसानाम् नि० १० १० पर्जन्यो वा उद्गाता श० १२ १ १ ३ पर्जन्य सदस्य गो० पू० १ १३, पर्जन्य (सवत्सरस्य) वसोर्धारा तै० ३ ११ १० ३ पर्जन्यो वा अग्नि श० १४ ६ १ १३ पर्जन्यस्य विद्युत् (पत्नी) तै० आ० ३ ९ २ पर्जन्यो भूत्वा (प्रजापति) प्रजाना जनित्रमभवत् जै० १ ३१४ पर्जन्यो मे मूर्ध्नि श्रित तै० ३ १० ८ ८ वृषा पर्जन्य तै० स० २ ४ ९ ४]

पर्जन्य इव यथा मेघो गर्जन कुर्वन् वृष्टि तनोति १ ३८ १४ [पर्जन्य-इव पदयो समास । पर्जन्य इति व्याख्यातम्]

पर्जन्यरेतसे पर्जन्यस्य रेत उदकमिव रेतो वीर्य यस्यास्तस्मै (शूरवीराय राज्ञे) प्र०—रेत इत्युदकनाम निघ० १ १२, ६ ७५ १५ [पर्जन्य-रेतस्-पदयो समास]

पर्जन्यवाता पर्जन्यश्च वातश्च तौ ६ ५० १२ पर्जन्यस्थौ वायू ६ ४९ ६ [पर्जन्य-वातपदयो समास]

पर्णकम् य पर्णेषु पालनेषु कुत्सिततरतम् (भील-जनम्) ३० १६ [पर्णप्राति० 'कुत्सिते' अ० ५ ३ ७४ सूत्रेण

परिष्ठुः सर्वतस्तिष्ठन्ति ५ १५ ३ सर्वतस्त्यागे तिष्ठेयु १ १६७ ६ [परि+ष्ठा गतिनिवृत्तौ (भ्वा०) धातोर्लुङ्, अडभाव]

परिष्वजत् सर्वत सम्बध्नाति ६ ६० १० [परि+ष्वञ्ज परिष्वङ्गे (भ्वा०) धातोर्लङ्, अडभाव । 'दससञ्ज-स्वञ्जा शपि' इत्यनुनासिकलोप]

परिसदाम परित प्राप्नुयाम ७ ४ ६ [परि+षद्लृ विशरणगत्यादिपु (भ्वा०) धातोर्लङ् । सीदादेशोऽट् च न भवतश्छान्दसत्वात्]

परिसिञ्चत सर्वत सिञ्चत १६ २ [परि+षिच् क्षरणे (तुदा०) धातोर्लट्]

परिस्तरणम् जो सब ओर से शास्त्र, आसन आदि सामग्री स० वि० २०८, अथर्व० ६ ६ १ २ [परि+स्तृञ् आच्छादने (क्र्या०) धातोर्ल्युट्]

परिस्त: अभितो भवत १ ६१ ८ [परि+अस भुवि (अदा०) धातोर्लट् । 'श्नसोऽल्लोप ' इत्यल्लोप]

परिस्रव यथार्थ पुरुषार्थ कर स० वि० १६६ अथर्व० ६ ११३ ४ सब प्रकार से प्राप्त कर स० वि० १६६, अथर्व० ६ ११३ ६ सब ओर से गमन कर स० वि० १६५, अथर्व० ६ ११३ २ सर्वथा सत्योपदेश की वृष्टि कर स० वि० १६५, अथर्व० ६ ११३ १ करुणावृष्टि कीजिए, कृपा से सर्वथा प्राप्त हूजिए स० वि० १६७, अथर्व० ६ ११३ १०, ६ ११३ ६ [परि+स्रु गतौ (भ्वा०) धातोर्लोट्]

परिस्रुत् य परित सर्वत स्रवति प्राप्नोति स रस १६ १५ **परिस्रुतम्**=सर्वत प्राप्तम् (सोमम्=ओपधि-रसम्) १६ ४ परित- सर्वत स्रुत सुरसयोगेन परिपक्व फलादिकम् २ ३४ माक्षिक मधुकालपक्व फलादिक च ऋ० भू० २५४, २ ३४ **परिस्रुत**-=सर्वत स्रुत पक्वात् (अन्नात्=यवादे) १६ ७५ सर्वत प्राप्त (प्रजापति = राजा) १६ ७६ **परिस्रुता**=परित स्रुता प्राप्तेन (रसेन) २१ ३१ सर्वतोऽभिगतेन पुरुषार्थेन २१ ३८ सर्वतो मधु-रादिरसयुक्तेन (मासरेण=प्रमितेन मण्डेन) २० ६६ परित सर्वत सुता प्राप्तेन रसेन २१ २६ परित सर्वत स्रवति तेन (जलादिपदार्थेन) २० ६५ परित सर्वत स्रवन्ति येन तेन (जलप्रस्रवणेन) २० ६३ परित स्रवन्ति प्राप्नु-वन्ति येन (पयसा=दुग्धेन) १६ ६५ परित सर्वत सुतम् (रसम्=आनन्दम्) प्र०=अत्र 'सुपाम्०' इत्याकारादेश १६ ८३ [परि+स्रु गतौ (भ्वा०) धातो कर्त्तरि क्विप्]

परिस्रुता परित सर्वतो गच्छन्तावव्याहतगती (सरस्वती=प्रशसिता गृहिणी तथा पुरुष) प्र०—'स्रु गतौ' धातो क्विप्, तुक्, द्विवचनस्य 'सुपाम्०' इत्यात्वम् २० ५६ [परि+स्रु गतौ (भ्वा०) धातो क्विप् । 'सुपा सुलुग्' इति द्विवचनस्याकारादेश]

परिह्वयामहे सर्वत स्तुवीम १ ७ १० सर्वत स्वी-कुर्महे ५ ६४ १ [परि+हु दानादानयो (जु०) धातोर्लट् । 'बहुल छन्दसि' इति शप श्लुर्न भवति]

परिहितम् सर्वत सुखप्रदम् (ओज =बलम्) १ ११२ १० [परि+दधाते क्त । 'दधातेर्हि' इति हिरा-देश]

परिहिताः परित सर्वतो हिता हितकारिण (सर्वे मनुष्या) ऋ० भू० १०२, अथर्व० १२ ५ ३ सब के हित-कारी (स्त्रीपुरुषो !) स० वि० १४३, अथर्व० १२ ५ ३ [परिहित व्याख्यातम् । तत प्रथमाबहुवचनम्]

परिह्वृत् य परित सर्वतो ह्वरति कुटिला गति गच्छति स (दुर्जन) ६ ४ ५ [परि+ह्वृ कौटिल्ये (भ्वा०) धातो कर्त्तरि क्विप्]

परीणशे परित सर्वतो नश्यन्त्यदृश्या भवन्ति यस्मिँ-स्तस्मिन् (अहसि=पापे) प्र०—अत्र घञर्थे क प्रत्ययो 'अन्येपामपि०' इति दीर्घश्च १ ५४ १ [परि+णश अदर्शने (दिवा०) धातो 'घञर्थे कविधानम्' इति क प्रत्यय]

परीणसम् बहुविधम् (रयिं=धनम्) प्र०—परीणस इति बहुनाम निघ० ३ १, ३ २४ ५ **परीणसः**=बहून् (गृहान्) १ १३३ ७ बह्वृच (गूर्त्तय =उद्यमयुक्ता कन्या) १ ५६ २ **परीणसा**=बहुगुणया (राया=श्रिया) १ १२६ ६ बहुविधेन (राया=धनेन) ४ ३१ १२ [परी-णसा बहुनाम निघ० ३ १ अन्न वै परीणसम् जै० ३ १७४]

परीणहम् परितस्सर्वत प्रबन्धन सुखाच्छादकत्वेन व्यापन वा प्र०—'णह बन्धने' इत्यस्मात् 'क्विप् च' इति क्विप् 'नहिवृति०' अनेनाऽऽदेर्दीर्घ १ ३३ ८ [परि+णह बन्धने (दिवा०) धातो क्विप्प्रत्यये पूर्वस्य दीर्घ]

परीत्तः सर्वतो दत्त (जव =वेग) ६ ६ [परि+डुदाञ् दाने (जु०) धातो क्त । 'अच उपसर्गात्त ' इति तकारादेशे 'दस्ति' सूत्रेण दीर्घ]

परीत्य परित सर्वतोऽभिव्याप्य ३२ ११ सर्वत इत्वा प्राप्य विदित्वा च ऋ० भू० ८६, ३२ ११ व्यापक होकर स० वि० २१५, ३२ ११ एक कण भी उसके

निवृत्तौ (भ्वा०) धातोर्लुङ् । 'गातिस्था०' इति सिचो लुक्]

पर्य्यहृषत सर्वतो हरत ३५ १८ [परि+हृषु अलीके (भ्वा०) धातोर्लङ् । व्यत्ययेन श प्रत्यय]

पर्य्यागुः सर्वत आभिमुख्येन प्राप्नुवत १ ८८ ४. [परि+आङ्+इण् गतौ (अदा०) धातोर्लुङ् । 'इणो गा लुङी' ति गादेशे सिचो लुकि च रूपम्]

पर्य्यानयत् सर्वत आनयति ३ ६ ५. [परि+आङ्+णीञ् प्रापणे (भ्वा०) धातोर्लङ्]

पर्य्याभृतम् सर्वत आभिमुख्येन धृतम् (सह =बलम्) ६ ४७ २७ [परि+आङ्+डुभृञ् धारणपोषणयो (जु०) धातो क्त]

पर्य्याप सर्वत प्राप्नोति १ ७६ १ [परि+आप्लृ व्याप्तौ (स्वा०) धातोर्लिट्]

पर्य्यायन्ति सर्वत समन्तात् प्राप्नुवन्ति २ १३ २ [परि+आङ्+इण् गतौ (अदा०) धातोर्लट् । 'इणो यण्' इति यणादेश]

पर्य्यायिणीम् परित कालक्रमशाम् (स्त्रीम्) ३०.१५ [परि+इण् गतौ (अदा०) धातो ताच्छील्ये णिनि । स्त्रियां ङीप् । अथवा पर्यायप्राति० मत्वर्थ इनि । तत स्त्रियां ङीप्]

पर्य्यावर्त्तयाते सर्वत आवर्त्तयेत प्र०—लेट्-प्रथमैकवचन आडागमे णिजन्तस्य वर्त्ते प्रयोग ५ ३७ ३ [परि+आङ्+वृतु वर्त्तने (भ्वा०)+णिच्+लेट्]

पर्य्यावृतम् सर्वत आच्छादितम् (मेघम्) ६ ४७ २७ [परि+आङ्+वृञ् आवरणे (चुरा०) धातो क्त]

पर्य्यास सर्वतोऽस्यति ७ ३२ १० [परि+असु क्षेपणे (दिवा०) धातोर्लिट्]

पर्य्यासते सर्वत उपविशन्ति ३ ६ ३ [परि+आस उपवेशने (अदा०) धातोर्लट्]

पर्य्यासीत् सर्वतोऽस्ति ३२ १२ [परि+अस् भुवि (अदा०) धातोर्लङ्]

पर्य्युदगाम परित उत्कृष्टतया प्राप्नुयाम १ ५० १० सर्वत उत्कर्ष प्राप्नुयाम २७ १० [परि+उत्+गम्लृ गतौ (भ्वा०) धातोर्लुङि 'मन्त्रे घसह्वरणश०' अ० २ ४ ८० सूत्रेण लेर्लुक्]

पर्य्युद्बाधस्व सर्वतोऽपि निवर्त्तय ४ २८ [परि+उत्+बाधृ विलोडने (भ्वा०) धातोर्लोट्]

पर्य्युपस्थात् सर्वत समीप तिष्ठेत् १.६८.१. [परि+उप+ष्ठा गतिनिवृत्तौ (भ्वा०) धातोर्लुङ् । अडभाव सिचो लुक् च]

पर्य्यूढाः परित सर्वत ऊढा प्राप्यन्त. (सर्वे मनुष्या) ऋ० भू० १०२, अथर्व० १२ ५ ३ सब ओर से सदा सत्याचरण प्राप्त कराने वाले (स्त्री-पुरुषो !) स० वि० १४३, अथर्व० १२ ५ ३. [परि+वह प्रापणे (भ्वा०) धातो क्त]

पर्य्यूर्णोतु सर्वत ऊर्णोत्वाच्छादयतु, स्वीकरोतु १ ६८ १. [परि+ऊर्णुञ् आच्छादने (अदा०) धातोर्लोट् । आडभावश्छान्दस.]

पर्य्यूवुः परित सर्वतस्तन्तुवद् विस्तारयेयु १.६१.८. [परि+वेञ् तन्तुसन्ताने (भ्वा०) धातोर्लिट्]

पर्य्यूहामि परितो वितर्कतया तर्कयामि ६ ३ सर्वतो वितर्कयामि ५ २३ सर्वतस्तर्केण निश्चिनोमि ५ २५ [परि+ऊह वितर्के (भ्वा०) धातोर्लट् । व्यत्ययेन परस्मैपदम्]

पर्य्येता वर्जिता (जन) ७ ४०.३ सर्वत प्राप्त (इन्द्र=राजा) ६ २४ ५ सर्वतोऽनुग्रहीता (सहनशीलो विद्वान्) १ २७ ८ [परि+इण् गतौ (अदा०) धातो कर्त्तरि तृच् प्रत्यय]

पर्य्येति परित प्राप्नोति ६ ७५ १४ पर्य्यायेण प्राप्नोति १ ६५ ६ सर्वत प्राप्नोति गच्छति वा ६ ४८ २१ **पर्य्येमि**=भा०—सर्वतोऽनन्तस्वरूपेण पूर्णोऽस्मि, सर्वत प्राप्तोऽस्मि २३ ५० **पर्य्येषि** =तूने अपनी व्याप्ति से व्याप्त कर रखा है स० प्र० ४२३, ६ ८३ १ [परि+इण् गतौ (अदा०) धातोर्लट् । पर्येति =परिखिद्यति नि० ६.१५]

पर्व पालनम् २३ ४० पालनम् (राजानम्) ४ १९ ६ अङ्गमङ्गम् १ ६१ १२ **पर्वभिः**=पूर्णै साधनाङ्गै (नमोभि =अन्नै) १ ३ ४३ **पर्वाणि**=पूर्णानि पालनानि ४ २२ २ [पॄ पालनपूरणयो (जु०) धातो 'स्नामदिपद्यर्ति-पॄशकिभ्यो वनिप्' उ० ४ ११३ सूत्रेण वनिप् । पर्व पुन पृणाते प्रीणातेर्वा, अर्धमासपर्व, देवानस्मिन् प्रीणन्तीति । तत् प्रकृतीतरत् सन्धिसामान्यात् नि० १ २०]

पर्वणा पर्वणा पूर्णेन पूर्णेन साधनेन प्र०—अत्र 'नित्यवीप्सयो ' इति द्विर्वचनम् १ ६४ ४ [पर्वन् इति व्याख्यातम् । पर्वणा पदस्य वीप्सायां द्वित्वम्]

पर्वतच्युतः ये पर्वतान् मेघान् च्यावयन्ति ते (मरुत=मानवा) ५ ५४ ३ **पर्वतच्युते**=पर्वतान्मेघांश्च्युतो य पर्वत मेघ च्यावयति वा तस्मै (विदुषे शिल्पिने) ५ ५४ १

क प्रत्यय । पर्णमिति व्याख्यास्यते]

पर्णम् पत्रम् ४ २७ ४ पक्षम् १ ११६ १५ प्रजा-पालनम् ४ ४० ३ **पर्णाय**=य प्रतिपालयति तस्मै (पुरुषाय) १६ ४६ **पर्णे**=पर्णवच्चञ्चले जीवने भा०—क्षणभङ्गुरे जीवने ३५ ४ चलिते पत्रे १२ ७९ **पर्णैः**=पक्षै ११८३ १ [पृ पालनपूरणयो' (जु०) धातो 'धापॄवस्यज्यतिभ्यो न' उ० ३ ६ सूत्रेण न प्रत्यय । गायत्री वै पर्ण तै० ३ २ ११ सोमो वै पर्ण श० ६ ५ ५ १ ब्रह्म वै पर्ण तै० १ ७ १९ ३. राष्ट्र वै पर्ण श० ६ ५ १ १]

पर्णयम् पर्णानि परस्वानि वस्तूनि याति प्राप्नोति त चौरम् १ ५३ ८ [पर्णोपपदे या प्रापणे (अदा०) धातो कर्त्तरि क प्रत्यय]

पर्णशदाय य पर्णानि शीयते छिनत्ति तस्मै (पुरुषाय) १६ ४६ [पर्णोपपदे शद्लृ शातने (भ्वा०) धातोर्मूल-विभुजादित्वात् क कर्त्तरि]

पर्णा पर्णानि ११८२ ७ [पर्णप्राति० नपुसके जस शेर्लोपश्छन्दसि । पर्णमिति व्याख्यातम्]

पर्णिनः पक्षिण ६ ४६ ११ [पर्णप्राति० मत्वर्थे इनि प्रत्यय]

पर्तृभिः पालकै (शुभगुणै) ६ ४८ १० [पृ पालन-पूरणयो (जु०) धातो कर्त्तरि तृच्]

पर्यक्रमीत् परिक्राम्यति ४ १५ ३ [परि+क्रमु पादविक्षेपे (भ्वा०) धातोर्लुङ्]

पर्यगात् परित सर्वतोऽगाद् व्याप्तवानस्ति प० वि० सब मे व्यापक है स० प्र० २४४, ४० ८ सर्वतो व्याप्तो-ऽस्ति ४० ८ आकाश के समान सब जगह मे परिपूर्ण (व्यापक ईश्वर), आर्याभि० २ २, ४० ८ [परि+इण् गतौ (अदा०) धातोर्लुङ् । 'इणो गा लुङि' सूत्रेण गादेशे सिचो लोपे च रूपम्]

पर्यगृभ्णा. सर्वतो गृहाण ५ ३१ ७ [परि+ग्रह उपादाने (क्र्या०) धातो लङ् सामान्यकाले]

पर्यतिष्ठत् सर्वत आवृत्य स्थित १ ३२ ८ [परि+ष्ठा गतिनिवृत्तौ (भ्वा०) धातोर्लङ् । शिति धातोस् तिष्ठा-देश]

पर्यदधास्थाः सर्वतो दधासि दधाति वा प्र०—अत्र लडर्थे लङ् पक्षे व्यत्ययश्च २ १७ [परि+डुधाञ् धारण-पोषणयो (जु०) धातोर्लङ्]

पर्यनुवाति सर्वतोऽनुगच्छति ९ १५. [परि+अनु+वा गतिगन्धनयो (अदा०) धातोर्लट्]

पर्यनेषत सर्वतोऽनेपत ३५ १८ [परि+णीञ् प्रापणे (भ्वा०) धातोर्लङ् । 'व्यत्ययो बहुलम्' इति द्विविकरणता (शप् सिप् च)]

पर्यपश्यत् सर्वत पश्येत् ३ २६ ८ सर्वत पश्यति ३२ १२ **पर्यपश्यन्**=सर्वत पश्येयु ११६८ ९ **पर्य-पश्यन्त**=परित पश्यन्ति ११४६ ४ [परि+दृशिर् प्रेक्षणे (भ्वा०) धातोर्लङ् । 'पर्यपश्यन्त' प्रयोगे व्यत्ययेना-त्मनेपदम्]

पर्यभवत् सर्वतो भवति ३२ १२ **पर्यभूवन्**=परित-स्सर्वेनस्तिरस्कुर्वन्ति १ ३३ १० [परि+भू सत्तायाम् (भ्वा०) धातो सामान्ये लङ्]

पर्यभूषत् सर्वतो भूषत्यलङ्करोति २ १२ १ [परि+भूष अलकारे (भ्वा०) धातोर्लङ् । पर्यभूषत्=पर्यगृह्णात् पर्यरक्षद् अत्यक्रामदिति वा नि० १० १०]

पर्यभूषयन् सर्वतो भूषयेयु, भा०—सर्वत सुभूषिता भवन्ति ३३ २२ [परि+भूष अलङ्कारे (चुरा०) धातोर्लङ्]

पर्यमथ्नात् सर्वतो मथ्नाति १ ९३ ६ [परि+मन्थ विलोडने (क्र्या०) धातोर्लङ्]

पर्ययच्छत् सर्वतो यच्छेत् १ ६१ ११ [परि+यमु उपरमे (भ्वा०) धातोर्लङ् । 'इषुगमियमा छ' इति सूत्रेण छकारादेश]

पर्यवदन् सर्वत उपदिशन्तु भा०—विद्या प्रदद्यु १२ ९१ [परि+वद व्यक्ताया वाचि (भ्वा०) धातोर्लङ्]

पर्यवसृष्टा सर्वत शत्रुप्रेरिता (दिद्युत्=न्यायदीप्ति) ७ ४६ ३ [परि+अव+सृज विसर्गे (तुदा०) धातो क्त । तत स्त्रिया टाप्]

पर्यवृञ्जन् परिवृञ्जन्ति ३ ५६ ४ [परि+वृजी वर्जने (रुधा०) धातोर्लङ्]

पर्यश्नोतु सर्वतोऽश्नुताम्, व्याप्नोतु अ०—सर्वत प्राप्नोतु प्र०—अत्र व्यत्ययेन परस्मैपदम् ३ ३६ **पर्य-श्याम**=सर्वत प्राप्नुयाम ३ ११ ८ [परि+अशूङ् व्याप्तौ सघाते च (भ्वा०) धातोर्लोट् । व्यत्ययेन परस्मैपदम् । 'पर्यश्याम' प्रयोगे लिङ् । परस्मैपद तु व्यत्ययेनैव]

पर्यषस्वजत् परिष्वजति ११८२ ७ [परि+ष्वञ्ज परिष्वङ्गे (भ्वा०) धातोर्णिजन्ताल् लुङ्]

पर्यसर्पत् परित सर्वतो विजानीत ११६१ १२ [परि+सृप्लृ गतौ (भ्वा०) धातोर्लङ्]

पर्यस्थात् सर्वतस्तिष्ठेत् ४ ६ ४ [परि+ष्ठा गति-

[पर्वतोपपदे च्युङ् गतौ (भ्वा०) धातो कर्त्तरि क्विप्। पर्वतमिति व्याख्यास्यते]

पर्वतम् पर्वताकार मेघम् ५ ३२ १ पर्वतमिवोच्छ्रितम् (अश्मान=मेघम्) ४ ५६ ४ मेघाश्रित जलमिव पर्वताश्रित शत्रुम् १ ५७ ६ **पर्वतस्य**=प्र०—पर्वत इति मेघनाम निघ १ १०, १० १६ शैलस्य ५ ३६ २ **पर्वतः**=पर्वताऽऽकारो घनसमूहवान् मेघ १ ५४ १० पक्षीव पर्ववान् मेघ ५ ४५ ३ **पर्वतान्**=मेघान् शैलान् वा ५ ४६ ३ शैलानिवोच्छ्रितान् मेघान् ३ २६ ४ **पर्वताः**=जलप्रदा मेघा ५ ४१ ६ ह्रस्वा महान्त शैला १८ १३ **पर्वते**= गिरौ मेघे वा १ ५७ २ पर्वताकारे (अश्मन्=अश्मनि मेघे) १७ १ **पर्वतेन**=ज्ञानेन ब्रह्मचर्यादिना वा ३५ १५ **पर्वतेभिः**=मेघै सह ४ ३४ ८ **पर्वतेभ्यः**=गिरिभ्य ३० १६ **पर्वतेषु**=अभ्रेषु २ १२ ११ शैलेषु मेघावयवेषु वा १ ८४ १४ [पर्व पूरणे (भ्वा०) धातो 'भृमृदृशियजिपर्वि०' उ० ३ ११० सूत्रेणातच्प्रत्यय । पर्वत इति मेघनाम निघ० १ १० पर्ववान् पर्वत पर्व पुन पृणाते प्रीणातेर्वा नि० १ २० पर्वतम्=मेघम् नि० १० ६ 'तप् पर्वमरुद्भ्या वक्तव्य' इति पर्वन्प्राति० मत्वर्थे तप्]

पर्वता इव यथा मेघा शैला वा धर्त्तार सन्ति तथैव मूर्त्तद्रव्यधर्त्तार (रुद्रा=वायव) १ ६४.३ [पर्वता इव पदयो समास]

पर्वतासः मेघा ६ ५२ १ शैला ६ ५२ ४ पर्वताकारा मेघा ३ ३० ३ पर्वाण्युत्सवा विद्यन्ते येषान्ते (राजजना) ३३ ५० प्र०—अत्र 'पर्वमरुद्भ्या तप्' इति तप्प्रत्यय शैला इवोच्छ्रिता मेघा ४ १७ २ [पर्वत इति व्याख्यातम् । ततो जसोऽसुगागम । विष्णु पर्वताना (अधिपति) तै० स० ३ ४ ५ १]

पर्वती पर्वण=पर बहुज्ञान विद्यतेऽस्या क्रियाया सा पर्वती (धिषणा=धारणावती द्यौ), प्र०—अत्र सम्पदादित्वात् क्विप्, भूम्नि मतुप् 'उगितश्च' इति ङीप्। प प्रशस्त प्रापण यस्या सा (धिषणा=वाग्, वेदवाणी, बुद्धि), अ०—ब्रह्मज्ञानवती धिषणा प्र०—अत्र प्रशसार्थे मतुप् १ १६

पर्वतेष्ठाम् पर्वते मेघे स्थिता विद्युतमिव शुद्धस्वरूपम् (परमात्मानम) ६ २२ २ [पर्वतोपपदे ष्ठा गतिनिवृत्तौ (भ्वा०) धातो क्विप्। सप्तम्या अलुक्]

पर्वशः सन्धित (भा०—शरीराऽवयवान्) २३ ४२ अङ्गमङ्गम् १ ५७ ६ [पर्वन्प्राति० वीप्साया शस्-प्रत्यय । पर्वन् इति व्याख्यातम्]

पर्शवः परानन्यान् शृणन्ति हिंसन्ति ते पर्शव पार्श्वस्था मनुष्यादय प्राणिन १ १०५ ८ [परोपपदे शॄ हिंसायाम् (क्र्या०) धातो 'आङ्परयो शमिशॄभ्या डिच्च' उ० १ ३३ सूत्रेण कु प्रत्यय । पर्शु स्पृशते नि० ४ ३ पर्शवो बृहत्य श० ८ ६ २ १० पर्शव (बहुवचने) परशव उ ह वै पङ्क्तय कौ० १० ४]

पर्षणिम् सेचनीयाम् (नावम्) १ १३१.२ [पृषु सेचने (भ्वा०) धातोर्बाहु० औणादिकोऽनि प्रत्यय]

पर्षत् सिञ्चेत् १ १८६ ३ पार प्रापयतु ३ २० ४ सन्तारयति १ ६१ १ **पर्षति**=पारयति ५ २५ १ **पर्षथ**=सिञ्चत, दत्त १ ८६ ७ **पर्षथः**=सिञ्चथ ५ ७३ ८ **पर्षन्**=सिञ्चन्तु ४ ३६ १ पारयति ७ ६० ७ उल्लङ्घेयु ७ ४० ४ **पर्षि**=सिञ्चसि १ १२६ ५ पालयसि प्र०—अत्र विकरणाभाव ३ १५ ३ पिपूरय २ ७ २ पारयसि २ ३३ ३ पूरयसि ७ २३ २ [पृषु सेचने (भ्वा०) धातोर्लेट् । 'पर्षन्' प्रयोगे लङ् । अडभाव । 'पर्षि' प्रयोगे लट् । विकरणस्य शपो लुक् । पॄ पालनपूरणयो (जु०) धातोर्वा रूपम्]

पर्षि सिक्तमुदकम् १ १७४ ६ [पृषु सेचने (भ्वा०) धातोर्बाहु० औणादिक इन् प्रत्यय]

पलक्षी पले चञ्चले अक्षीणी यस्या सा (पक्षिणी) २४ ४ [पल-अक्षिपदयो समासे शकन्ध्वादित्वात्पररूपम्]

पलस्तिजमदग्नयः प्रजमिता विदिता अग्नय पलस्तयो वयोज्ञानवृद्धाश्च जमदग्नयो यैस्ते (सज्जना) ३ ५३ १६ [पलस्ति-जमदग्निपदयो समास । जमदग्नय प्रजमिताग्नयो वा प्रज्वलिताग्नयो वा नि० ७ २५]

पलिक्नीम् श्वेत-केशाम् (स्त्रियम्) ३० १५ **पलिक्नीः**=श्वेतकेशा (युवतय) ५ २ ४ [पलितप्राति० स्त्रिया 'छन्दसि क्नमित्येके' अ० ४ १ ३६ वा० सूत्रेण तकारस्य क्नम् ङीप् च । पलितमिति व्याख्यास्यते]

पलितस्य प्राप्तवृद्धाऽवस्थस्य (विदुषो जनस्य) १ १६४ १ **पलितः**=जातश्वेतकेश (युवा पुत्र) १ १४४ ४ श्वेत-केश (दूत=वृद्धो दूत इव परमात्मा) ३ ५५ ६ [पलितस्य=पालयितु नि० ४ २५ फल निष्पत्तौ (भ्वा०) धातो 'फलेरितजादेश्च प' उ० ५ ३४ सूत्रेणेतच् प्रत्यय आदेश्च पकारादेश]

पवताम् चलतु ३६ १० **पवते**=पवित्रीकरोति १६ ५ विजानीयात् प्र०—लेट्-प्रयोग, पूतो भवेत्, ज्ञान-

१४ ११ ११ पशव काल्यम् (नाम) ता० ११ ४ १० पशवो वै रयिष्ठम् (नाम) ता० १४.११ ३१ पशव शक्वर्यः ता० १३ १ ३ पशवो वै रेवत्यो मधुप्रियम् ता० १३ ७ ३ पशवो वै रैवत्य ता० १३ १० ११. रेवत्यो हि पशवस्तस्मादाह रेवती रमध्वम् इति श० २ ३ ४ २६ रन्तयो यज्ञ इति पशव इति श० ११ ६ ३ ६ पशवो वै बर्हि गो० २४ पशवो वै यूपमुच्छ्रयन्ति श० ३ ७ २ ४ पशवश्छन्दोमा गो० ५ १६ पशवो वै छन्दांसि श० ७ ५ २ ४२ पाङ्क्ता वै पशव श० १ ८ १ १२ गायत्रा पशव तै० ३ २ १ १ त्रैष्टुभा पशव कौ० १० २ पशवो जगती कौ० १६ २ पशवो बृहती कौ० १७ २ बार्हता पशव श० १३ ८ ३ १५ पशवो वा उष्णिक् ता० ८ १० ४ पशवो वालखिल्या ता० २० ६ २ पशवो वा अक्षरपङ्क्तय कौ० १६ ८ पशव पृष्ठ्यानि कौ० २१ ५ पशव प्रयाज गो० ३ १६ पशवो वै प्रयाजा कौ० ३ ४ पशव परिमाद श० १० १ २ ८ अथ यत्तृचि परिनिर्रष्टि ते पशव श० २ ३ २ १६ पशवो वै पुरीषम् श० १ २ ५ १७ पशवो वै वयासि श० ६ ३ ३ ७ वपुर्हि पशव गो० ५ ६ पुरुष पशूनाम् (अधिपति) ता० ६ २ ७ ओषधय पशव मै० २ ५ १]

पशुपतये पशूना पालकाय (रुद्राय=दुष्टाना रोदकाय) २४ ३ **पशुपतिम्**=पशूना पालक, जगद्धर्त्तार रुद्र सर्वप्राणम् ३६ ८ **पशुपतेः**=पशुरक्षकस्य पुरुषस्य ३६ ६ [पशु-पतिपदयो समास । 'पति समास एव' इति विभक्तत्वाद् गुण । पशुपति =ओषधयो वै पशुपतिस्तस्माद् यदा पशव ओषधीर्लभन्तेऽथ पतीयन्ति श० ६ १ ३ १२. यत्पशुपतिर्वायुस्तेन कौ० ६ ४]

पशुपाः य पशून् पाति स (जन) ४ ६ ४. य पशून् पाति रक्षति स (देव =विद्वज्जन) ६ ५८ २ [पशूपपदे पा रक्षणे (अदा०) धातो कर्त्तरि क्विप्]

पशुपा इव यथा पशुपालकस्तथा (पुरुष) १ ११४ ६ यथा पशुपालको गवादिभ्यो दुग्धादिक गृहीत्वा गोस्वामिने समर्पयति तथा १ १४४.६ [पशुपा-इवपदयो समास । पशुपा =पशूपपदे पा रक्षणे (अदा०) धातो कर्त्तरि क्विप्]

पशुमत् पशवो विद्यन्ते यस्मिँस्तत् (श्रव =श्रवणमन्न वा) ४ ३८ ५ [पशुप्राति० भूम्न्यर्थे प्रशसाया वा मतुप्]

पशुमत्यै बहव पशवो विद्यन्ते यस्या तस्यै (प्रजायै) ५ ४१ १७ [पशुप्राति० भूम्न्यर्थे मतुबन्तात् टीप्]

पशुमान् बहुपशुयुक्त (गातु =भूमि) ३ ५४ १८ [पशुप्राति० भूम्न्यर्थे मतुप् । य एव विद्वानग्निमुपतिष्ठते पशुमान् भवति तै० स० १.५ ६ ३]

पशुरक्षि पशूना रक्षक (मनुष्य) ६ ४६ १२ [पशु-रक्षिपदयो समास । रक्षि =रक्ष पालने (भ्वा०) धातोरौणादिक इन्]

पशुषः पशून् ५ ४१ १ **पशुषे**=बन्धकाय (अस्मै=उपदेशकाय) १ १७ १० [पशूपपदे षण् सम्भक्तौ (भ्वा०) धातो 'जनसनखन०' अ० ३ २ ६७ सूत्रेण विट् । 'विड्वनोरनुनासिकस्यात्' अ० ६ ४ ४१. सूत्रेणात्वादेश 'सनोतेरन' अ० ८ ३ १०८ सूत्रेण मूर्धन्य पशुषाप्राति० द्वितीयाबहुवचने रूपम्]

पशुसनि पशून् सनति सम्भजति येन त (अपत्यम्) १६ ४८ [पशूपपदे षण सम्भक्तौ (भ्वा०) धातो हि० औणादिक इन-प्रत्यय]

पशुसाधनी पशून् साध्नुवन्ति यया सा (पशुवर्धनक्रिया) ६ ५३ ६. [पशु-साधनीपदयो समास । साधनी= साध सत्सिद्धौ (स्वा०) धातो करणे ल्युट् । तत स्त्रिया ङीप्]

पश्चा पश्चिमा (दिक्) २ २७ ११ पश्चात् ४ १ १८ [अपरप्राति० अस्तातेरर्थे 'पश्चपश्चा च छन्दसि' अ० ५ ३ ३३ सूत्रेणा आप्रत्यय पश्चादेशश्च निपात्यते]

पश्चात् पश्चिमदेशात् ५ ११ पश्चिमाया दिशि वर्त्तमान (आदित्य) १३ ५६ पश्चिमत (देशात्) ३७ १२ [अपरप्राति० अस्तातेरर्थे (दिग्देशकालेषु) 'पश्चात्' अ० ५ ३ ३२ सूत्रेणाति. प्रत्यय पश्चादेशश्च निपात्यते]

पश्चात्सद्भ्यः ये पश्चात् सीदन्ति तेभ्य (देवेभ्य = दिव्यसुखप्रदेभ्यो जनेभ्य) ९ ३५. **पश्चात्सदः**=ये पश्चिमाया दिशि सीदन्ति ते (देवा =सर्वविद्याविदो विद्वज्जना) ६ ३६ [पश्चादिति व्याख्यातम्, तदुपपदे षद्लृ विशरणगत्यवसादनेषु (भ्वा०) धातो क्विप् कर्त्तरि]

पश्चादोषाय पश्चाद् दोषदानाय ३० १७ ['पश्चा' इति व्याख्यातम् । पश्चा-दोषपदयो समास]

पश्य समीक्षस्व ३ २३ २ **पश्यत्**=ज्ञानदृष्ट्या पश्यति भा०—जानाति ३२ ८. पश्येत् प्र०—अत्र लड्यडभाव. १ १६४ १६ **पश्यत**=सम्प्रेक्षध्वम् ६.४ सम्यग् विजानीत १ ७२ १६ **पश्यति**=प्रेक्षते १ २५ ११ **पश्यन्**=समीक्षन्ते १ १७४ ६ **पश्यन्ति**=सम्प्रेक्षन्ते

पवित्रवान् बहूनि पवित्राणि कर्माणि विद्यन्ते यस्य स (पावक) १ १६० ३. [पवित्रप्राति० भूम्न्यर्थे मतुप्]

पवित्रे पवित्रकरणहेतू प्राणाऽपानगती, अ०—शुद्धौ (वैष्णव्यौ=पवनपावकौ) १ १२ शुद्धाचरणे (वैष्णव्यौ=अध्येत्रध्यापकौ) १० ६ [पवित्र व्याख्यातम्। तस्य प्रथमाद्विवचने रूपम्]

पवीरवत् प्रशस्त पवीर फालो विद्यते यस्मिन् तत् (लाङ्गल=काष्ठम्) १२ ७१ [पवीरप्राति० प्रशसार्थे मतुप्। पवीर=पवि वज्रनाम (निघ० २ २०), तत इरन् मत्वर्थीयश्छान्दस। पवि शल्यो भवति यद् विपुनाति काय तद्वत् पवीरमायुधम्। तद्वान् इन्द्र पवीरवान् नि० १२ ३०]

पवीरवस्य वज्रध्वने १ १७४.४ [पवि-रव-पदयो समास। पूर्वस्य दीर्घ। पवि वज्रनाम निघ० २ २०]

पवीरवि यो धनादिरक्षार्थं पवीर शस्त्र वाति प्राप्नोति तस्मिन् (अर्ये=वैश्ये) ३३ ८२ [पवीरोपपदे वा गति-गन्धनयो (अदा०) धातो क प्रत्यय। सप्तम्यामकार-लोपश्छान्दस]

पवेथाम् प्राप्नुतम् ७ २७ प्रापयेयाम् ७ २८ [पवते गतिकर्मा (निघ० २ १४) धातोर्लोट्]

पशवः गवादय २० ६६ सिंहादय १४ ३० गाय आदि सब पशु स० वि० १४५ अथर्व० १२ ५ १० **पशु**=पशुमिव प्र०—अत्र 'सुपा सुलुक्०' इति विभक्ते-र्लुक् ३ ५३ २३ **पशुना**=व्यवहृतेन विक्रीतेन गवादिना ४ २६ **पशुभिः**=हस्त्यश्वगवादिभि ५ २८ **पशुभ्यः**=पशुओ के लिए स० प्र० १५२ अथर्व० १४ २ १८. **पशुम्**=प्रसिद्धम् (गवादिकम्) १३ ४७ द्रष्टव्यम् (अश्वादिकम् १३ ४८ पश्यन्तम् (कामासक्त स्वपतिम्) ५ ६१ ५ सर्वद्रष्टारम् (परमेश्वरम्) ऋ० भू० १२८, ३१ १५ **पशुः**=पश्यकश्चतुष्पात् सिंहादि ६ ६ यो दृश्यते भोग्य-पदार्थसमूह समक्षे स्थापित स प्र०—अत्र 'अर्जिदृशि-कमि०' उ० १ २७ इत्यौणादिक-सूत्रेणाऽस्य सिद्धि ३ ५७ दृश्य, द्रष्टव्य (अग्नि=वह्नि) २३ १७. **पशून्**=पशुवद् वर्त्तमानान् मूर्खत्वयुक्तान् गवादीन् वा १ ७२ ६ गोहस्त्यश्वादीन् ६ ३१ श्रिय प्रजा वा, प्र०—श्रीर्हि पशव शत० १ ८ ३ ३६ प्रजा वै पशव शत० १ ४ ६ १७ हरिणादीनारण्यान् ६ ३१ [दृशिर् प्रेक्षणे (भ्वा०) धातो 'अर्जिदृशिकम्यमि०' उ० १ २७. उ प्रत्यय धातोश्च पशिरादेश। पशु=पश्यते नि०

पशव (अग्नि) एतान् पञ्चपशूनपश्यत्। पुरुषमश्व गामवि-मज यदपश्यत्तस्मादेते पशव श० ६ २ १ २ तऽएते सर्वे पशवो यदग्नि। श० ६ २ १ १२ अग्निर्हि देवाना पशु ऐ० १ १५ योनिर्वै पशूनामाहवनीय (अग्नि) कौ० १८ ६ रौद्रा वै पशव श० ६ ३ २ ७ वायुप्रणेत्रा वै पशव. श० ४ ४ १ १५ त्वष्टुर्हि पशव श० ३ ८ ३ ११ पशवो वै सविता श० ३ २ ३ ११ अन्तरिक्षदेवत्या खलु वै पशव तै० ३ २ १ ३ पशवो वै वैश्वदेवम् (शस्त्रम्) कौ० १६ ३ सप्त ग्राम्या पशव सप्तारण्या श० ३ ८ ४ १६ पशवो वै घृतश्चुत ता० ६ १ १७. पशवो वै हविष्मन्त श० १ ४ १ ६ पशवो वै हविष्पङ्क्ति कौ० १३ २ पशवो वै हरिश्रिय ता० १५ ३ १० श्रीर्वै पशव ता० १३ २ २ पशवो यश श० १२ ८ ३ १ शान्ति. पशव ता० ४ ५ १८ इन्द्रिय वै वीर्य रस पशव ता० १३ ७ ४ पशवो वै वसु ता० ७ १० १७ पशवो वै रयि तै० १ ४ ४ ६ पशवो वै राय श० ३ ३ १ ८ पशवो वै रायस्पोष श० ३ ४ १ १३ पुष्टि पशव श० ३ १ ४ ६ पौष्णा पशव श० ५ २ ५ ६ साहस्रा पशव कौ० २१ ५ पशव सहस्रम् ता० १६ १० १२ पशव शिपि तै० १ ३ ८ ५ पशवो वै मरुत ऐ० ३ १६ पशुर्वै मेध ऐ० २ ६ वाजो वै पशव ऐ० ५ ८ पशवो वै वाजिनम् तै० १ ६.३ १० अन्न पशव श० ६ २ १ १५ पशवो वै धाना गो० उ० ४ ६ पशवो वा इडा कौ० ३ ७ प्राणा पशव श० ७ ५ २ ६ गृहा वै पशव श० १ ८ २ १४ पशवो वा उत्तरवेदि तै० १ ६ ४ ३ पशवो वै चतुरुत्तराणि छन्दासि ता० ४ ४ ६ आत्मा वै पशु. कौ० १२ ७ यजमान पशु तै० २ १ ५ २. वज्रो वै पशव श० ६ ४ ४ ६ पशवो वै ग्रावाण ता० ६.६ १३ पशवो वै उक्थानि कौ० २८ १० पशव ऊमा श० ७ १ १ ६ पशवो वै नियुत ता० ४ ६ ११ प्रजा पशव सूक्तम् कौ० १४ ४ स्तोमो वै पशु ता० ५ १० ८ पशवो वै सप्तदश ता० १६ १० ७ पशवो वै प्रतिहर्त्ता ता० ६ ७ १५ पशव स्वर गो० उ० ३ २२ पशवो वै बृहद्रथन्तरे ता० ७ ७ १ पशवो वै ज्यैत[illegible] (साम) ता० ७ १० १३ पशवो वै वामदेव्यम् (साम) ता० ४ ८ १५ वाम हि पशव ऐ० ५ ६ पशवो वै वैरूपम् (साम) ता० ५ ३.१२ पशवो वै लोम (साम) ता० १ ३ ११ ११ पशवो वै रौरवम् (साम) ता० ७ ५ ८. पशवो वै यण्वम् (साम) [illegible] १३ ३ ६ पशवो वै श्रद्धय (साम) पशूनाम-[illegible] १५ ३ ४ पशव सद्दो विशीवग [illegible] ता [illegible] पशवो वै सुरूप (साम) [illegible]

धातोर्लिट् । सम्प्रसारणमकारलोपश्च छान्दस]

पाकम् परिपक्वव्यवहारम् १.१६४.२१. पचन्ति परिपक्व ज्ञानं कुर्वन्ति यस्मिन् धर्म्ये व्यवहारे तम् १ ३१.१४ **पाकः**=ब्रह्मचर्यादितपसा परिपचनीयः (मनुष्य.) १.१६४.५. **पाकाय**=परिपक्वत्वाय ३ ६.७. परिपक्व-व्यवहाराय ४.५.२. [डुपचष् पाके (भ्वा०) धातोर्घञ् प्रत्यय । पाक. प्रशस्यनाम निघ० ३.४ पा पाने (भ्वा०) धातोर्वा 'अर्भकपृथुकपाका वयसि' उ० ५.५३. सूत्रेण कन् प्रत्ययो निपात्यते]

पाकारो: मुखादिपाकस्यारोर्मर्मच्छिदः शूलस्य च १२.९७ [पाक-अरुरादयो समास । पाकमिति व्याख्यातम् । अरु=ऋ गतौ (भ्वा०) धातोर् औणादिको बाहु० उ. प्रत्यय]

पाक्या विद्यायोगाभ्यामेव परिपक्वधिय (देवान्=विदुषो जनान्) प्र०—अत्र विभक्तेराकारादेश १ १२०.४. पाकोऽस्याऽस्तीति पाकी (विज्ञानपुरस्सर. परमात्मा) प्र०—अत्र 'सुपा सुलुक्०' इति ड्यादेश २ २७.११ [पाक इति व्याख्यातम् । ततो मत्वर्थ इनि. । पाकी प्राति० 'सुपा सुलुग्०' इति ड्यादेश]

पङ्क्तिराधसम् य. पङ्क्ती समुदायान् राध्नोति तम् (यज्ञम्) ३७.७. ['पङ्क्ति' इत्युपपदे राध समिद्धौ (स्वा०) धातोरौणादिकोऽसुन्-प्रत्यय.]

पाङ्क्तान् पङ्क्तिरूपेण गन्तॄन् पक्षिविशेषान् २४.२६. **पाङ्क्ताय**=पङ्क्तिषु साधवे (शाक्वराय=शक्तिजाय यस्माय) २९ ६०. **पाङ्क्तेन**=पङ्क्तिप्रकाशितेन (छन्दसा=स्वच्छेनाऽर्थेन) १३.५३. [पङ्क्तिप्राति० 'तत्र साधु ' इत्यर्थे भवार्थे वा अण् प्रत्यय']

पाजः बलम् प्र०—पाजस् इति बलनाम निघ० २ ६, १ ११५ ५ **पाजः**=बलम् ७ ३ ४ प्र० पातेर्बले जुट् च उ० ४.२०३. इत्यसुन् १३ ६ अन्नादिकम् ७.१० १. **पाजसा**=बलेन ११४६ [पा रक्षणे (अदा०) धातोः 'पातेर्बले जुट् च' उ० ४.२०३. सूत्रेणासुन्प्रत्यय' । पाज अन्ननाम निघ० २ ७ बलनाम निघ० २.९ पाज =पात-नात् नि० ६ १२]

पाजसी रक्षणनिमित्ते (द्यावाक्षामा=सूर्यपृथिव्यौ) प्र०—अत्र विभक्ते पूर्वसवर्ण. 'पातेर्बले जुट् च' उ० ४.२०३ अनेन पा धातोरसुन् जुडागमश्च १ १२१.११. [पाजस् इति व्याख्यातम्]

पाजस्यम् पाजस्वन्नेषु साधु (यवादिकमन्नम्) २५ ८. [पाजस् इति व्याख्यानम् । तत्र 'तत्र साधु' इत्यर्थ यत्]

पाञ्चजन्यम् पञ्चसु जनेषु प्राणादिषु भवा प्राप्त-योगसिद्धिम् (ऋषि=वेदपारगाध्यापकम्) १ ११७.३. पञ्चजना प्राणा बलवन्तो यस्य तदपत्यम् ५ ३२ ११. **पाञ्चजन्यः**=पञ्चसु सकलविद्येषु अध्यापकोपदेशक-राज-सभा-सेना-सर्वजनाधीशेषु जनेषु भव (इन्द्र=सेनाद्यधि-पति.) प्र०—अत्र 'बहिर्देवपञ्चजनेभ्यश्चेति वक्तव्यम्' अ० ४ ३ ५८. इति वार्त्तिकेन ञ्य प्रत्यय' १ १००.१२. पञ्चाना पञ्चसु वा जनेषु साधु. (अग्नि=विद्वज्जन) २६ ६. पांच प्राणों का जनक (ईश्वर) आर्याभि० १ ३४ ऋ० १ ७ १० १२. **पाञ्चजन्याः**=पञ्चजनेभ्यो हिता (अग्नय=आहवनीयादय पावका) प्र०—पञ्चजना इति मनुष्यनाम निघ० २ ३, १८.६७ [पञ्चन्-जनपदयो. समासे भवार्थे 'बहिर्देवपञ्चजनेभ्यश्चेति वक्तव्यम्' अ० ४ ३ ५८. वा० सूत्रेण ञ्य. प्रत्यय. । पाञ्चजन्यया=पञ्चजनीनया नि० ३ ८ पञ्चजना =गन्धर्वा पितरो देवा असुरा रक्षासीत्येके चत्वारो वर्णा निषाद पञ्चम इत्यौपमन्यव नि० ३.८. एष वा अग्नि पाञ्चजन्य तै० स० ५ ३ ११ ३]

पाञ्चजन्यासु पञ्चसु दिनेषु प्राणेषु भवासु (कृष्टिषु=मनुष्यादिप्रजासु) ३ ५३ १६ [पाञ्चजन्यमिति व्याख्यातम् । तत. स्त्रिया टाप्]

पाणिघ्नम् य. पाणिभ्या हन्ति तम् (पुरुषम्) ३० २० [पाणीत्युपपदे हन हिंसागत्यो (अदा०) धातो 'कृतो बहुल वा' इति वा० सूत्रेण टक्]

पाणिना स्तुतिसमूहेन १ २० किरणसमूहेन व्यव-हारेण १.१६ **पाणिभिः**=करै २ ३१ २ **पाणी**=बाहू ४ २१ ९ प्रशसनीयौ (बाहू=भुजौ) ६ ७१ १ [पाणि =पण व्यवहारे स्तुतौ च (भ्वा०) धातो 'पणिपणाय्योरुडाय-लुकौ च' उ० ४ १३३ सूत्रेण इण्प्रत्यय आयलुक् च । पाणि. पणायते पूजाकर्मण प्रगृह्य पाणी देवान् पूजयन्ति नि० २ २६ पाणी वै गभस्ती श० ४.१.१ ९]

पात् रक्षतु ४.५५ ५. **पात**=रक्षत २७ २८ **पातम्**=रक्षत, प्र०—अत्र व्यत्ययः ४ ९ रक्षतम् १ १२० ४. प्राप्नुतम् १.४६ ५ पालयत १ ९३ ८. पिबतम् १ १५३ ४ **पाताम्**=रक्षताम् १ १८५ १० **पाति**=रक्षति ५.१२.६. प्राप्नोति ३ ५ ५ पालयति ४.५ ८. **पातु**=रक्षति प्र०—अत्र लडर्थे लोट् २ ५. रक्षतु ४ १६ पालयतु पालयति वा ४ १५ **पाथ**=रक्षका भवथ १ ८६ १. प्राप्नुत ८ ३१. **पाथः**=रक्षथ. १.१५६.३ **पान्ति**=

१.२२ २० अवलोकन्ते ६ ५ देखते हैं आर्याभि० १ २१ ऋ० १ २ ७ २० **पश्यात्**=सम्प्रेक्षते ४ २५ ४ **पश्यात्**=पश्येयु १ ११३ ११ **पश्यामि**=सप्रेक्षे १ ३०. **पश्येम**=हम देखें आर्याभि० २ २७, २५ २१ [दृशिर् प्रेक्षणे (भ्वा०) धातोर्लोट् । शिति पश्यादेश । अन्यत्र लड्, लोट्, लट्, लेट् लिड् च]

पश्यद्भ्यः सप्रेक्षमाणेभ्य (मनुष्येभ्य) १ ११३ ५ **पश्यन्**=सत्याऽसत्यं प्रेक्षमाण (सुवीर पालको जन) १ ११६ २५ पर्य्यालोचमान (गोतम =विद्वज्जन) १ ८८ ५ विजानन् (परमेश्वर) ७.६० २. समीक्षमाण (वैश्वानर =ब्रह्मचारी जन) ६.६ ३ दर्शयन् (सविता= सूर्य) प्र०—अत्राऽन्तर्गतो ण्यर्थ ३३ ४३ देखता हुआ (पति) स० वि० १२२, अथर्व० १४ १ ५७ दिखाता हुआ (सविता=सूर्य) स० प्र० ३१३, ३३ ४३ **पश्यन्तौ**= समीक्षमाणौ (देवौ=देदीप्यमानौ विद्वज्जनौ) २६ ७ [दृशिर् प्रेक्षणे (भ्वा०) धातो शतृ-प्रत्यय । शिति पश्यादेश]

पश्व इष्टिः पशो सङ्गति १ १८० ४ [पश्व-इष्टि-पदयो समास. पश्व =पशुप्राति० षष्ठी। गुणाऽभाव-श्छान्दस 'जसादिषु छन्दसि वावचनम्' अ० ७ ३ १०९ (वा०) इति विकल्पनात् । इष्टि =यज देवपूजासगतिकरण-दानेषु (भ्वा०) धातो स्त्रिया क्तिन्]

पश्वयन्त्रासः पश्वानि दृष्टानि यन्त्राणि यैस्ते (मनुष्या) ४ १ १४. [पश्व-यन्त्रपदयो समासे जसोऽसु-गागम]

पश्वः पशून् ४ ६ ३ गवादीन् (पशून्) ६ १ १२. पशो ४ २ १८ **पश्वा**=अपहृतस्य पशो स्वरूपाङ्गपाद-चिह्नाऽन्वेषणेन १ ६५ १ **पश्वे**=पशुसमूहाय १ ४३ २ [पशव इति व्याख्यातम् । पशुप्राति० 'जसादिषु छन्दसि वा वचनम्' अ० ७ ३ १०९ वा० सूत्रेण गुणादीना विकल्पे यणादेशे रूपम्]

पश्विषे पशूनामिषे वृद्धीच्छायै १ १२१ ७ [पशूपपदे इषु इच्छायाम् (तुदा०) धातो सम्पदादित्वात् क्विप् स्त्रियाम्]

पष्ठवाट् य पष्ठेन पृष्ठेन वहति स उष्ट्रादि प्र०— वर्णव्यत्ययेन ऋकारस्याऽकारादेश १४ ९ प्र०—इद पद पृषोदरादिना सिद्धम् २१ १७ [पृष्ठोपपदे वह प्रापणे (भ्वा०) धातो 'वहश्च' अ० ३ २ ६४ सूत्रेण ण्वि प्रत्यय । ऋकारस्याकारश्छान्दस]

पष्ठौही वडवाऽऽदि १८ २७ [पष्टवाट् इति व्याख्या-तम् । तत. 'तस्येदम्' इत्यण्-प्रत्यये स्त्रिया ङीपि 'वाह ऊठ्' इत्यूठि 'एत्येधत्यूठ्सु' इति वृद्धि । प्रजनन वै पष्ठौही। प्रजनन ब्रह्मा जै० २ २०३ धात्रे द्वादशकपाल, पष्ठौह्य-प्रवीता दक्षिणा काठ० १५ ३]

पसः राष्ट्रम् २३ २२ लिङ्गम् २० ९. राष्ट्रं पस श० १३ २९ ६. भगस्सौभाग्य पस काठ० ३८ ४]

पस्त्यसदः ये पस्त्येषु गृहेषु सीदन्ति तान् (नॄन्= उत्तमविदुषो जनान्) ६.५१ ९. [पस्त्योपपदे षद्लृ विशरण-गत्यवसादनेषु (भ्वा०) धातो कर्त्तरि क्विप् । पस्त्य गृहनाम निघ० ३ ४]

पस्त्याभिः पस्त्यानि गृहाणि विद्यन्ते यासु भूमिषु ताभि प्र०–पस्त्यमिति गृहनाम निघ० ३ ४ तत 'अर्शआदि-भ्योऽच्' अ० ५ २ १२७. इत्यच्-प्रत्यय १ ४०.७ **पस्त्या-नाम्**=गृहाणा जीवशरीराणा वा १ १६४ ३० **पस्त्याम्**= गृहम् ४ ५५ ३ **पस्त्यासु**=पस्त्येभ्यो गृहेभ्यो हितास्वासु प्रजासु १ २५ १० गृहशालासु १० ७ न्यायगृहेषु १० २६ [पस्त्यम् गृहनाम (निघ० ३ ४) ततो मत्वर्थे 'अर्शआदिभ्यो ऽच्' अ० ५ २ १२७ सूत्रेणाच् । अथवा हितार्थे यत् । विशो वै पस्त्या श० ५ ३ ५ १९]

पस्त्यावत् गृहवत् २ ११ १६ **पस्त्यावतः**=प्रश-स्तानि पस्त्यानि गृहाणि विद्यन्ते यस्य (विदुषो जनस्य) १ १५१ २ प्रशमितानि पस्त्यानि विद्यन्ते येषु तान् (क्षयान्=निवासान्) ४ ५४ ५ [पस्त्यमिति गृहनाम निघ० ३ ४ तत प्रशसाया मतुप् । मतुपि पूर्वस्य दीर्घ-श्छान्दस]

पस्पशे स्पृशति कर्त्तुं शक्नोति वा प्र०—अत्र लडर्थे लिट् १ २२ १९ बध्नाति प्र०—अत्र लडर्थे लिट् ६ ४ समर्थ हुआ आर्याभि० १.२३ ऋ० १ २ ७ १९ [स्पश बाधनस्पर्शनयो (भ्वा०) धातोर्लिट् । व्यत्ययेनात्मनेपदम्]

पस्पृधानम् पुन. पुन स्पर्धमानम् (एतश=अश्वम्) १ ६१ १५ **पस्पृधानेभ्यः**=स्पर्द्धमानेभ्य ईप्समानेभ्यो वा (नृभ्य =मनुष्येभ्य) २ १९ ४ [स्पर्द्ध सङ्घर्षे (भ्वा०) धातो शानचि सम्प्रसारणमकारलोपश्च छान्दसम् । सुगा-गमोऽपि न आगमशासनस्याऽनित्यत्वात्]

पस्पृधानासः स्पर्धमाना (प्रजा) ७ १८ ३. [स्पर्ध संघर्षे (भ्वा०) धातो शानच् । ततो जसोऽसुक् । आगम-शासनस्याऽनित्यत्वात् मुग् आगमो न भवति]

पस्पृधे स्पर्द्धन्ते ६ ३४ १ [स्पर्ध संघर्षे (भ्वा०)

पाद ऋ० १३८३८ पाद पद्यते नि० २.= दिश पादा तै० म० ७ ५.२५ १]

पादा चरणौ प्र०—अत्राऽऽकारादेश ८ २३ पादौ ६ २९ ३ मूर्खत्वादिनीचगुणैरुत्पन्नौ (शूद्रौ) ऋ० भू० १२५,३१ १० पद्यते गम्यते याभ्या गमनागमनाभ्या तौ (चरणौ) प्र०—अत्र 'सुपा सुलुक्०' इत्याकारादेश १ २४ ८ [पद गतौ (दिवा०) धातोर्घञ् । 'सुपा सुलुग्०' इत्याकारादेश]

पादि गच्छ ११४६ प्रतिपद्यताम्, प्राप्यताम् ११०५ ३ पाद्येत ६ २० ५ [पद गतौ (दिवा०) धातोर्लुङि रूपम् । अडभावश्छान्दस]

पान्तम् रक्षन्तम् (इन्द्र=परमैश्वर्यम्) ७ ३३ २ [पा रक्षणे (अदा०) धातो शतृप्रत्यय । अर्हन्ते पान्तम् । ता० ६ १ ७ पान्तम्=पानीयम् । नि० ७ २५ पान्तो वै पुरुष जै० ३ ९५ रात्रि पान्तम् । जै० १ २१४]

पान्ता रक्षकौ (अध्यापकोपदेशकौ) ११२२ ४ [पा रक्षणे (अदा०) धातो शत्रन्तात् प्रथमाद्विवचनस्याकारादेश]

पापतीति प्रकर्षेण पुन पुन पतति गच्छति ६ ६ ५ [पतॢ गतौ (भ्वा०) धातोर्यङ्लुगन्ताल्लट्]

पापत्वाय पापस्य भावाय ७ ३२ १८ [पापप्राति० भावे त्व प्रत्यय]

पापया अधर्मरूपया (क्रियया) १ २९ ५ [पापप्राति० स्त्रिया टाप्]

पापस्य पापाऽऽचारस्य (रक्षस) ११२९ ११ **पापा:**=अधर्माऽऽचरणा (जना) ११९० ५ [पा रक्षणे (अदा०) धातो 'पानीविषिभ्य प.' उ० ३ २३ सूत्रेण प प्रत्यय । पान्ति रक्षन्त्यस्मादिति विग्रह । पापप्राति० मत्वर्थीयस्य लुक् । पाप पानाऽपेयाना पापत्यमानोऽवाङेव पततीति वा पापत्यतेर्वा स्यात् नि० ५ २]

पापास: अधर्माचारा (दुर्जना) ४ ५ ५ [पापप्राति० जसोऽसुगागम । पापास =पापा नि० ६ २५]

पाप्मना अधर्मात्मना जनेन ६४ पापेन १६ ११ **पाप्मने**=पापाऽऽत्मने (दुर्जनाय) ३० १८ पापाऽऽचरणाय ३० ५ **पाप्मा**=अपराध ६ ३५ **पाप्मानम्**=दुष्टकर्मकारिणम् (भा०—दुष्ट जनम्) २६ १० रोगादिकम् १२ ९६ [पा रक्षणे (अदा०) धातो पा पाने (भ्वा०) धातोर्वा 'नामन्-सीमन्व्योमन्०' उ० ४ १५१ सूत्रेण मनिन्-प्रत्यय पुगागमश्च निपात्यते । पाप्मा वाऽअशस्ति श० ६.३ २ ७ पाप्मा वै सपत्न श० ८.५ १ ६ पाप्मा वै वृत्र श० ११ ५ ७ १३ पाप्मा वै मृत्यु श० ६ ३ ३ ८ वरुणो वाऽएत गृह्णाति य पाप्मना गृहीतो भवति श० १२.७ २ १७. श्रमो वै पाप्मा श० ६ ३ ३ ७ पाप्मा वै वृत्र. श० ८.५ १ ६ पाप्मा मृत्यु काठ० १४ ६ भ्रातृव्यो वै पाप्मा जै० ३ २२२]

पायनाय पानाय १११६ ९ [पा पाने (भ्वा०) धातोर्णिजन्ताल् ल्युट् । योऽन्तादेश]

पायय पाययति वा अ०—लत्पाने हेतुरस्ति ११५४ ३ [पा पाने (भ्वा०) धातोर्णिजन्ताल्लोट् । व्यत्ययेन परस्मैपदम्]

पाययते रक्षा कारयते १ ५६ १ [पा रक्षणे (अदा०) धातोर्णिजन्ताल्लट् । लुगागमस्तु न छन्दसि सर्वविधीना विकल्पनात्]

पायव: रक्षका (आप्ता भृत्या) ४४.१३ पालका (राजपुरुषा) ५ १२ ४ **पायवे**=पालनाय ६ ४७ २८ गुह्यावयवदाहाय ३९ १० **पायुना**=पाय्विन्द्रियेण २५ ७ **पायुभि:**=रक्षणै रक्षकैर्वा ५ ३० २ रक्षणोपायै ११८९ ४ रक्षकै (विद्वद्भि) ११४३ ८ रक्षादिभि ३४ १३ **पायुम्**=पात्यनेन त गुह्येन्द्रियम् ६ १४ य पिबति तम् (जनम्) २ २ ४ **पायु:**=पालनकर्ता (परमेश्वर) १ ८९ ५ पालक (अग्नि =नृपति) २ १ ७ गुदेन्द्रियम् २० ८ सर्वस्य रक्षक (ईशान =ईश्वर) २५ १८. निरन्तर रक्षक (ईश्वर) आर्याभि० १ १० ऋ० १ ६ १५ ५ पालनहेतु (सभाध्यक्ष) प्र०—अत्र 'पा रक्षणे' इत्यस्मादुण् १ ३१ १३ [पा रक्षणे (अदा० धातो 'कृवापाजि०' उ० १ १ सूत्रेण उण्प्रत्यय]

पारत: पारात् ४ ३० १८ [पारप्राति० 'तसि प्रकरणे आद्यादिभ्य उपसंख्यानम्' अ० ५ ४ ४४ वा० सूत्रेण तसि]

पारम् परभागम् १ ४६ ११ सर्वदु खेभ्य पृथग्भूतम् (परतटम्) ३ १८ परतटम् ११८३ ६ **पार:**=य पारयिता स (इन्द्र =राजा) ५ ३१ ८ **पाराय**=मृगकर्मसमाप्त्यर्थम् ३० १६ **पारे**=अपरभागे १ ५२ १२ समुद्रभूमिपरभागे २ ११ ८ [पार कर्मसमाप्तौ (चुरा०) धातोरच्प्रत्यय । पार पर भवति नि० २ २४]

पारय दु खात्पार देश गमय ६ २० १२ पार प्रापय १ ९७ ७ दु खाचारात् पृथक्कृत्वा श्रेष्ठाचार नय ११८९ २ तीरे प्रापय ११७४ ९ **पारयतम्**=पारयत २.३९ ४

रक्षन्ति ५ ६७ ३ प्राप्नुवन्ति २ ११ १४ पालयन्ति ५ ५२ २ **पान्तु**=सतत रक्षन्तु ४ ११ पालयन्तु २ ३ ८ **पासतः**=रक्षेताम् ७ ३४ २३ **पासि**=रक्षसि १ १३४.५ पालयसि २ १ ६ **पाहि**=अ०—दूरे रक्ष ३ ४८ पाति रक्षति २ १६. रक्षय प्र०—अत्रान्तर्गतो ण्यर्थ ३ ३७ पाति वा ३ १७ पालय २ ६ रक्षा कीजिए स० वि० १४६, ३.३७ रक्षयति पाति वा १ २ १ पालन कर आर्याभि० २ ३३, ३ १७ **पाः**=रक्ष ४ २० ४ [पा रक्षणे (अदा०) धातोर्लेट् । अन्यत्र लोट् लट् लङ् च । पातमित्यत्र पा पाने (भ्वा०) धातोर्वा लुङ् अडभाव]

पातयति जागरयति १ ४८ ५ [पत्लृ गतौ (भ्वा०) धातोर्णिजन्ताल् लट्]

पातल्ये पतनशीले (प्राणिनि) ३ ५३ १७ [पाताल-प्राति० भवार्थे यत् । पाताल =पत्लृ गतौ (भ्वा०) धातो 'पतिचण्डिभ्यामालञ्' उ० १ ११७ सूत्रेण आलञ्]

पातवे पातुम् प्र०—अत्र पा-धातोस्तुमर्थे तवेन्-प्रत्यय २० ५९ पातु पान कर्त्तुम् १ २८ ६ रक्षितुम् २६ २५ [पा पाने (भ्वा०) धातोस्तुमर्थे तवेन्-प्रत्यय]

पातवै पातु रक्षितुम् ३ ४६ ५ [पा रक्षणे (अदा०) धातोस्तुमर्थे तवैप्रत्यय]

पाता रक्षक (इन्द्र =ऐश्वर्यकारी राजा) ६ २३ ३. पानकर्त्ता (इन्द्र =राजा) प्र०—अत्र तृन्-प्रत्यय ६ ४४ १५ [पा रक्षणे (अदा०) पा पाने (भ्वा०) धातोर्वा कर्त्तरि तृच् तृन् वा]

पात्नीवतः प्रशस्ता पत्नी यज्ञसम्बन्धिनी तद्वतोऽयम् भा०—विवाहितस्त्रीव्रत (जन) १८ २० [पत्नीशब्दात् प्रशसायामर्थे मतुप् । 'छन्दसीर' अ० ८.२ १४ सूत्रेण मतोर्मस्य वकार । पत्नीवत्-प्राति० 'तस्येदमिति' अण्-प्रत्यय । रेत सिक्तिर्वै पात्नीवतग्रह कौ० १६ ६ रेतो वै पात्नीवत. गो० उ० ४ ५ अग्निर्हि देवाना पात्नीवत नेष्ट-र्त्विजाम् कौ० २८ ३]

पात्रम् पिवति पाति वा येन ६ ४४ १६ दातु योग्यम् (प्रय =अन्नादिकम्) २ ३७ ४ पद्यते येन तत् (रथम्) १ ८२ ४ पान्ति रक्षन्ति तम् ३३ ८ य पातिस्तम् (राजा-नम्) ६ ७ १ पालनम् १ १२१ १ पत्राणा ज्ञानाना समूहम् १ ११० ५ पाति रक्षति समस्त शिल्पव्यवहार यस्तम् (अग्निम्) ७ २४ काष्ठादिक पात्रम् १ १७५ ३ **पात्राणि**= यै पिवन्ति तानि १९ ८६ **पात्रेषु**=पानसाधनेषु १६ ६२ [पा रक्षणे (अदा०) पा पाने (भ्वा०) धातोर्वा 'दादिभ्य-श्छन्दसि' उ० ४ १७० सूत्रेण त्रन्प्रत्यय । 'सर्वधातुभ्य ष्ट्रन्' उ० ४ १५९. सूत्रेण वा ष्ट्रन् पात्र पानात् नि० ५ १ पत्रप्राति० वा समूहार्थे अण्]

पात्रस्येव यथा पात्रस्य मध्ये १ ७५ १ [पात्रस्य-इव-पदयो समास]

पात्रा पात्राणि सुवर्णरजतादीनि १ १०४ ८ शत्रूणा यानानि ६.२७ ६ भोजनाद्यर्थ सुवर्णादि पात्रो को आर्याभि० १.४६ ऋ० १ ७ १९ ८ [पात्रप्राति० शेर्लोप-श्छन्दसि । पोत्रमिति व्याख्यातम्]

पाथन रक्षत १ १६६ ८ [पा रक्षणे (अदा०) धातो-र्लोट् । त-प्रत्ययस्य थनादेश 'तप्तनप्तनथनाश्च' इति सूत्रेण]

पाथसि अन्ने १३ ५३ **पाथः**=पालकमन्नम् २१ ४० रक्षणीयमाचरणम् प्र०—पाथ इति पदनाम, निघ० ४ ३, ८ ५० पृथिव्यादिकम् ७ ५ ७ अन्तरिक्षमार्गम् १ ११३.८ पृथिव्याद्यन्नम् ३.५५ १०. अन्नाद्यैश्वर्यम् ७ ४७ ३. वर्त्म १ १५४ ५ विज्ञानाचरणम् ८ ५० ज्ञातव्य कर्म्म ८ ५० मार्गम् ३ ८.९ रक्षकमन्नम् २ ३ ९ अन्नमुदक वा ३ ३१ ६ पाति शरीरमात्मानञ्च येन तदन्नम्, प्र०—'अन्ने च' उ० ४ २०५. अनेन पातेरन्नेऽसुन्प्रत्यय थुडागमश्च २ १७ उदकम् ७ ३४ १० **पाथांसि**=फलादीनि २१ ४७ अन्नानि २१ ४६. रक्षणीयान्याचरणानि प्र०—पाथ इति पदनाम निघ० ४ ३, ८ ५० ३ [पा रक्षणे (अदा०) धातो 'उदके थुट् च' उ० ४ २०४ 'अन्ने च' उ० ४ २०५ सूत्रेण वा असुन्प्रत्यय थुडागमश्च । पाथोऽन्तरिक्ष पथा व्याख्यातम् । उदकमपि पाथ उच्यते पानात् । अन्नमपि पाथ उच्यते पानादेव नि० ६ ६]

पाथ्यः पथिषु भव (वृषा=वर्षकस्सूर्य) ६ १६ १५ [पाथस् इति व्याख्यातम् । ततो भवार्थे यत् । पथिन्प्राति० वा भवार्थे यत्]

पादगृह्य पादान् ग्रहीतु योग्य (शत्रुर्जन) ४ १८ १२ [पादोपपदे ग्रह उपादाने (क्र्या०) धातो क्यप् प्रत्यय-श्छान्दस]

पादम् चरणम् ७ ३२.२ **पादः**=एकोऽगो भागो वा ३१ ३ प्रकाश्यमान जगदेकगुणम् ऋ० भू० १२१, ३१ ३ **पादाः**=पत्तव्या (कर्मोपासनाज्ञानानि काला सवनानि वा) ४ ५८ ३ पद्यन्ते गच्छन्ति यैस्ते २९ २० अधिगमसाधनानि १७ ९१. **पादौ**=नीचस्थानीयौ (पदार्थौ) ३१.१० चरणौ ६ ४७ १५ [पद गतौ (दिवा०) धातो. 'पदरुजविशस्पृशो घञ्' इति घञ्प्रत्यय । प्रतिष्ठा वै

योग्या (इक्षव =गुडादिनिमित्ता) २५ १ पालनीया (धिय =प्रज्ञा) ७ २७ १ **पार्ये**=पालयितव्ये (शूरसातौ=सङ्ग्रामे) ६ २६ १ पालनीये पूर्णे वा (दिवि=प्रकाशे) ७ ३२ १४ पालयितु पूरयितु योग्ये (दिवि=कामे) ७ ३२ २१ पूरयितव्ये (शर्मन्=गृहे) ६ ३३ ५ पारयितव्ये (भरद्वाजे=राज्यपोषकव्यवहारे) ६ १७ १४ [पार कर्मसमाप्तौ (चुरा०) धातोर्णिजन्ताद् यत् अथवा पृ पालनपूरणयो (जु०) धातो 'ऋहलोर्ण्यत्' इति ण्यत्-प्रत्यय]

पार्वतेयी पर्वतस्य मेघस्य दुहितेव या सा पार्वतेयी (धिषणा=धारण वती द्यौ) प्र०—पर्वत इति मेघनामसु पठितम्, निघ० १ १०, पर्वतस्येय घनपङ्क्ति पार्वती तस्याऽपत्य दुहितेव पार्वतेयी वृष्टि 'स्त्रीभ्यो ढक्' अ० ४ १ १२० अनेन ढक्-प्रत्यय १ १९ [पर्वत इति मेघनाम निघ० १ १० तत 'तस्येदम्' इत्यण्प्रत्ययान्तान् ङीप्। तत 'स्त्रीभ्यो ढक्' इत्यपत्यार्थे ढक्। 'टिड्ढाणञ्०' इति ङीप्]

पार्श्वत: समीपात्, उभयत इतस्ततोऽङ्गात् २१ ४४, ४३, ४५ [स्पृश सस्पर्शने (तुदा०) धातो 'स्पृशे श्वण्शुनौ पृ च' उ० ५ २७ सूत्रेण श्वण्प्रत्यय 'पृ' आदेशश्च। स्पृशति येन स पार्श्व । तत 'तसिप्रकरणे आद्यादिभ्य उपसख्यानम्' अ० ५ ४ ४४ वा० सूत्रेण तसि]

पार्श्वयो: वाम-दक्षिणभागयो २४ १ **पार्श्वे**=अग्रे पृष्ठे ३१ २२ [पूर्वपदे व्याख्यातम्। पार्श्वौ द्यावापृथिवीनाम निघ० ३ ३०]

पार्ष्ण्या पार्ष्णिषु कक्षासु साधूनि (ताडनानि) २५ ४० स्पर्शकारकेण (कशया) १ १६२ १७ [पर्षति सिञ्चतीति विग्रहे पृषु सेचने (भ्वा०) धातो 'घृणिपृश्निपार्ष्णि०' उ० ४ ५२ सूत्रेण नि प्रत्ययो वृद्धिश्च निपात्यते। पार्ष्णि प्राति० 'तत्र साधु' इत्यर्थे यत्। तत शेर्लोप]

पावक ! पवित्रकारक पवित्रताहेतोर्वा (विश्वेश्वर भौतिकाऽग्ने वा) १ १३ १ पवित्रकर्त्त शुद्धिहेतुर्वा (अग्ने=जगदीश्वर भौतिकोऽग्निर्वा) १ १२ १० पुनाति पवित्रता करोति तत्सम्बुद्धावीश्वर ! पवित्रताहेतुरग्निर्वा १ १२ ९ वह्निवत् पवित्रकारक (विद्वज्जन) ३ १० ८ जनाऽन्त करणशोधक (अग्ने=विद्याप्रकाशोपदेशक) १७ ८ **पावकम्**=पवित्रकारकम् (मरुता गणम्) १ ६४ १२ पवित्रकर वह्निम् ५ ४ ३ **पावक:**=पवित्रकर (अग्निरिव विद्वज्जन) ५ ७ ४ शुद्धिप्रचारक (विद्वान् राजा वा) १७ १५ शोधक (भा०—पवित्रो जन) १७ ११ पवित्रकारी (विद्वान् गृहस्थो जन) १७ ७ प्रकाशितयशा (राजा) ७ ३ ९ पवित्रीकर (विद्वज्जन) ७ ९ १ **पावका:**=पवित्रा पवित्रकरा (प्रजासेनाध्यक्षा) ३ ३१ २०. **पावके**=वह्निरिव पवित्रस्तस्मिन् (राजनि) ६ ५ २ [पूङ् पवने (भ्वा०) धातो कर्त्तरि ण्वुल्-प्रत्यय । यद्वै शिव शान्त तत्पावकम् श० ९ १ २ ३० अन्न वै पावकम् श० २ २ १ ७]

पावकया पावकस्य क्रियया ६ १५ ५ पवित्रकारिकया (कृपा=सामर्थ्येन) १७ ९१ **पावका**=पाव पवित्रकारक व्यवहार काययति शब्दयति या सा (सरस्वती=सर्वविद्याप्रापिका वाक्) प्र०—'पूञ् पवने' इत्यस्माद्भावार्थे घञ्, तस्मिन् सति 'कै शब्दे' इत्यस्माद् 'आतोऽनुपसर्गे क' अ० ३ २ ३ इति क प्रत्यय 'उपपदमतिङ्' अ० २ २ १९. इति समास. १ ३ १० पवित्रकारिका (सरस्वती=सुसस्कृता वाक्) २० ८४. पवित्रस्वरूप और पवित्र करने वाली सत्यभाषणमय मङ्गलकारक वाणी आर्याभि० १ ८ ऋ० १ १ ६ १० **पावकायै**=पवित्रकर्त्र्यै (सरस्वत्यै=वाचे) २२ २० **पावका:**=पवित्रकर्त्र्य (आप =जलानि) ७ ४९ २ पवित्रा (मिह =सेचका वृष्टय) ३ ३१ २० पवित्रकर्मकर्त्र्य (उपस =प्रभातवेलेव दुहितर) ४ ५१ २. वह्नय इव वर्त्तमाना (मरुत =मनुष्या) ७ ५६ १२ [पूङ् पवने (भ्वा०) धातो कर्त्तरि ण्वुल्। तत स्त्रिया टाप्। 'पावकादीना छन्दस्युपसख्यानम्' अ० ७ ३ ४५ वा० सूत्रेण इत्व न भवति। अथवा पाव-कपदयो समासे स्त्रिया टाप्। पाव =पूङ् पवने (भ्वा०) धातोर्घञ्। क =कै शब्दे (भ्वा०) धातो क प्रत्यय]

पावकवर्चा: पवित्रीकारिकाया विद्युतो वर्चो दीप्तिरिव वर्चोऽध्ययन यस्य स (पुत्र) १२ १०७ [पावकावर्चस्-पदयो समास । पूर्वपदस्य ह्रस्व]

पावकवर्णम् अग्निवत् प्रकाशमानम् (यज्ञ=गृहाश्रमाख्यम्) १७ ६ **पावकवर्णा:**=पावकवत् पवित्रो गौरो वर्णो येषा ते ब्रह्मवर्चस्विन (विपश्चित =विद्वासो जना) ३३ ८१ [पावक-वर्णपदयो समास]

पावकशोचिषम् पवित्रकरदीप्तिम् (विद्युदाख्य वह्निम्) ३ ९ ८ पावकस्य शोचिरिव शोचिर्दीप्तिर्यस्य तम् (अग्नि=वह्निम्) ४ ७ ५ **पावकशोचिष:**=पावकस्याऽग्ने शोचिर्दीप्तिरिव शोचिर्यस्य विदुषस्तस्य ३ ११ ७. **पावक-**

पारयथ=पार प्राप्नुथ २ ३४ १५. **पारयन्ति**=पार गमयन्ति १ १८२ ६ **पारयात्**=समुद्रपार गमयेत् १ १४० १२ [पार कर्मसमाप्तौ (चुरा०) धातोर्लोट्। अन्यत्र लटलेटावपि]

पारयन्ता पार गमयन्तौ (इन्द्राविष्णू=महाराजशिल्पिनौ) ६ ६९ १ [पार कर्मसमाप्तौ (चुरा०) धातो शतृप्रत्यय। 'सुपा सुलुग्०' सूत्रेण प्रथमाद्विवचनस्याकारादेश]

पारयन्ती विजय प्रापयन्ती (ज्या=प्रत्यञ्चा) २९ ४० पार प्रापयन्ती (योषा=पत्नी) ६ ७५ ३ [पार कर्मसमाप्तौ (चुरा०) धातो शत्रन्तात् ङीप्। पारयन्ती=पार नयन्ती नि० ९ १८]

पारयामसि रोगसमुद्रात् पार गमयेम १२ ९६ [पार कर्मसमाप्तौ (चुरा०) धातोर्लेट्। 'इदन्तो मसि' इति मस इदन्तता]

पारयिष्णवः रोगजदुःखेभ्य पार नेतु समर्था (ओषधी=सोमादीन्) १२ ७७ **पारयिष्णुः**=दुःखात् पारयिता (सेनाध्यक्षो राजा) ६ ९ [पार कर्मसमाप्तौ (चुरा०) धातो 'णेश्छन्दसि' अ० ३ २ १२७ सूत्रेण तच्छीलादिष्वर्थेषु इष्णुच्]

पारावतघ्नीम् पाराऽवारघातिनीम् (सरस्वती=विदुषी स्त्रियम्) ६ ६१ २ ['पारावत' इत्युपपदे हन हिंसागत्यो (अदा०) धातो टक् 'क्तो बहुल वा' इति वा० सूत्रेण। ततो ङीप्। पारावतघ्नीम्=पारावारघातिनीम् नि० २ २४]

पारावतान् कलरवान् (कपोतान्) २४ २५ **पारावताः**=परावति दूरदेशे भवा (चित्रा=रूपाणि) ५ ५२ ११ [परप्राति० मतुप्प्रत्यये परवत्। छान्दस पूर्वस्य दीर्घ। परावत्प्राति० भवार्थेऽण्। अथवा पारापतशब्दोऽयम्। पकारस्य वकार पृषोदरादित्वात्। पारापत=परोपपदे आङ्पूर्वात् पततेरच्प्रत्यय]

पारिषत् सुखे प्रजा पालयेत् प्र०—अत्र पॄ-धातोर्लेटि सिप् 'सिब्बहुल णिद्' इति वार्तिकेन णित्वाद् वृद्धि १ १०० १४ [पॄ पालनपूरणयो (जु०)धातोर्लेट्। 'सिब्बहुल लेटि' इति सिप्। तस्य च णित्वाद् वृद्धि]

पारुष्णान् पक्षिविशेषान् २४ २४

पार्जन्यः पर्जन्यवद्गुण (सुपर्ण=पक्षिविशेष) २४ ३४ मेघदेवताक (पशु) २४ ३ **पार्जन्याः**=मेघदेवताका (नभोरूपा=पशव पक्षिणो वा) २४ ६ [पर्जन्य इति व्याख्यातम्। तत 'साऽस्य देवता' इति सूत्रेण अण्प्रत्यय]

पार्थवानाम् पृथौ विस्तीर्णाया विद्याया भवाना राज्ञाम् ६ २७ ८ [पृथुप्राति० 'तत्र भव' इत्यर्थेऽण्प्रत्यय]

पार्थिवम् पृथिव्या सम्बन्धि (रज=लोक) ३४ ३२ पृथिव्या विकारम् (रज=द्व्यणुकादिरेणु) १३ २८ पृथिव्या विदितम् (रज=अणुत्रसरेण्वादि) १ ९० ७ पृथिवीमय पृथिव्यामन्तरिक्षे वा विदितम् (रज) १ ८१ ५ **पार्थिवस्य**=पृथिव्या विदितस्य पदार्थविज्ञानस्य १ १४४ ६ **पार्थिवः**=पृथिव्या विदित (पदार्थ) २७ ३६ **पार्थिवात्**=पृथिवीसयोगात (दिव=प्रकाशात्) प्र०—'सर्वभूमिपृथिवीभ्यामणञौ' अ० ५ १ ४१ इति सूत्रेण पृथिवीशब्दादञ्प्रत्यय १ ६ १० **पार्थिवानाम्**=पृथिव्यामन्तरिक्षे विदिताना मध्ये १ ९५ ३ **पार्थिवानि**=पृथिव्यामन्तरिक्षे भवानि विदितानि वा (परमाण्वादीन्) ६ ६१ ११ पृथिव्या विकारा अन्तरिक्षे विदितानि च (रजासि=लोकान्) प्र०—अत्र 'तत्र विदित इति च' अ० ५ १ ४३ अनेनाऽञ्-प्रत्यय ५ १८ पृथिवीविकारजातानि (शारीरिकबलादीनि) १ १५५ ४ अन्तरिक्षे विदितानि कार्याणि (रजासि=लोकान्) प्र०—पृथिवीत्यन्तरिक्षनाम निघ० १ ३, ५ ८१ ३ पृथिव्यादिकृतानि वा (कार्याणि) ६ ६ ६ **पार्थिवाः**=पृथिव्या विदिता राजानो बहुमूत्या पदार्था वा ७ ३५ ११ **पार्थिवे**=पृथिवीसम्बन्धिभूगर्भविद्यायाम् ऋ० भू० २६४ [पृथिवीप्राति० विदितार्थे 'तत्र विदित इति च' सूत्रेण निमित्ते सयोगोत्पातौ च 'सर्वभूमिपृथिवीभ्यामणञौ' सूत्रेणाञ्प्रत्यय। अथवाभवार्थेऽञ्]

पार्थिवा पृथिवीत्याख्यस्य कारणस्य विकारभूतानि भूगोलाख्यानि कार्याणि १ ६४ ३ पृथिव्या विदितानि (वसूनि=द्रव्याणि) ६ ४५ २० [पार्थिवप्राति० शेर्लोपश्छन्दसि। पार्थिव इति व्याख्यातम्]

पार्थिवासः पृथिव्या विदिता (अग्नय=पावका) ३५ ८ पृथिव्या भवा (पदार्था) ६ ५० ११ [पार्थिवप्राति० जसोऽसुगागम। पार्थिव इति व्याख्यातम्]

पार्यम् पार्य्यते समाप्यते कर्म येन तम् (वीरजनम्) १ १२१ १२ **पार्याणि**=परितु पूरयितु योग्यानि (पक्ष्माणि=कर्माणि नेत्रोर्ध्वलोमानि वा) २५ १ **पार्याय**=दुःखेभ्य पारे वर्त्तमानाय (जनाय) १९ ४२ पारभवाय (व्यवहाराय) ४ १६ ११ दुःखपार गमयते (अवसे=रक्षणायाय) ४ २५ १ **पार्याः**=परितु पालयित

२ ३१. विद्याऽऽनन्ददायकास्तत्सम्बुद्धौ (जनकादय) २ ३१ सेवितु योग्यास्तत्सम्बुद्धौ, ये पान्ति विद्यान्नादिदानेन तत्सम्बुद्धौ, अन्नभोगादि विद्याशिक्षकास्तत्सम्बुद्धौ, श्रेष्ठाना पालका दुष्टेपु क्रोधकारिणस्तत्सम्बुद्धौ, पापाऽऽपत्काल-निवारकास्तत्सम्बुद्धौ, प्रीत्या पालकास्तत्सम्बुद्धौ, विद्या-दातारस्तत्सम्बुद्धो, धर्म्यजीविकाज्ञापकास्तत्सम्बुद्धौ, दुःख-नाशकत्वेन रक्षकास्तत्सम्बुद्धौ (जनकादय) २.३२ पान्त्यन्नसुशिक्षाविद्यादानेन तत्सम्बुद्धौ (भ०—जनका विद्याप्रदाश्च जना) ३ ५५ विज्ञानवन्त (विद्वासो जनका) ३ ५५ २ ऋतव इव पालयितार (सज्जना) ७ १८ १ प्रजापालका (विद्वासो जना) १९ ४५. रक्षितार (जीवन्तो विद्वास) १९ ४६ पालनक्षमा (राजपुरुषा) २९ ४६ **पितरौ**=पालकौ मातापितरौ १५ ५३ माता पिता च द्वौ १९ ११ जननीजनकौ १ १२१ ५ **पितः!**= पालयितो रुद्र (सभाध्यक्ष) १ ११४ ९. पितृस्वरूप (सद्वैद्य) २.३३ १ **पिता**=प्रजापालको राजा १ १६६ १६ सर्वपालकेश्वर पालनहेतु सूर्यलोको वा २ ११ पालकोऽग्निर्विद्युद्वा १ १६० २ जगतो जनक (इन्द्र = ईश्वर) ४ १७ १७ ज्ञानप्रदानेनाऽऽस्तिकत्वेन वा रक्षक (विद्वान्) ३२ ९ पालयिता (सज्जन) १ १६४ अनूचानो-ऽध्यापक १ ८० १६ सर्वपालक ईश्वर २ ११ नित्य पालन करने वाला (जनक) आर्याभि० २ ४२, १७.२७ **पितुः**= जनकवद्वर्त्तमानस्याऽध्यापकस्य १ ११९ ८ जनकस्येश्वरस्य वा ३२ ९ मध्यलोकस्य ३४ ३२ उत्पादिकाया विद्युतः १७ ६० पालकस्य जनकस्य १ ८७ ५ **पितृभिः**=ज्ञानिभि ऋतुभिर्वा प्र०—त वा एते ऋतव शत० २ १ ३ २ अनेन पितृशब्दादृतवो गृह्यन्ते 'पितर इति पदनामसु पठितम्' निघ० ५ ५ अनेन ज्ञानवन्तो मनुष्या गृह्यन्ते ५ ११ **पितृभ्यः**=राज्यपालकेभ्यो वीरेभ्य १ ११९ ४ पालकेभ्यो जनकाऽध्यापकादिभ्य १९ ३६ जनकेभ्यो विद्यासुशिक्षा-दातृभ्यो वा ३५ २० पालनहेतुभ्य ऋतुभ्य प्र०—ऋतवो वै पितर शत० २ ५ २ ३२, २ ७. ये चतुर्विंशतिवर्ष-पर्यन्तेन ब्रह्मचर्येण विद्यामधीत्याध्यापयन्ति ते वसुसञ्ज्ञका पितरस्तेभ्य ऋ० भू० २६५, १९ ३६ **पितृभ्याम्**= जनकजननीभ्याम् ३ ७ ६ अधिष्ठातृ-शिक्षकाभ्याम् १ १११ १ **पितॄन्**=ऋतून् ८ ६० पूर्वोक्तान् (२९-३३) मन्त्रेषूक्त-गुणेभ्यो युक्तान् जनकान् विद्याप्रदांश्च २ ३४ भा०— विद्यावयोवृद्धान् पित्रादीन् १९ ६१ **पितॄणाम्**=जनकाना स्वामिना वा ६ ४६.१२ जनक-जननीनाम् २४ १८ पाल-काना विज्ञानवता विदुषा रक्षाऽनुयुक्तानामृतूना वा १ १०९ ३ **पित्रा**=पालकेनाऽऽचार्येण वा ६ ६ ३ वायुना २२ १९ **पित्रे**=विद्या-प्रकाशदानेन पालयित्रे (दिवे= प्रकाशाय) १ ७१ ५ **पित्रोः**=द्यावापृथिव्यो ३ ५ ८ वाय्वाकाशयो १ १६० ३ जनकजनन्यो ३ २६ ९ माता-पित्रोरिव विद्याऽऽचार्ययो ६ ७ ४ [पाति रक्षतीति पिता। पा रक्षणे (अदा०) धातो 'नप्तृनेष्टृत्वष्टृ०' उ० २ ९५ सूत्रेण तृजन्तो निपात्यते। माता च पिता चेति पितरौ। 'पिता मात्रा' अ० १ २ ७० सूत्रेण एकशेष। पिता पाता वा पालयिता वा नि० ४ २१ पिता=गोपिता नि० ६ १५ पितर =मनुष्या वै जागरित पितर सुप्तम् श० १२ ९ २.१. रात्रि पितर श० २ १ ३ १ तिर इव वै पितरो मनुष्येभ्य श० २ ४ २२ १. पितरो नमस्या श० १ ५ २.३ यानग्नि-रेव दहन्त्स्वदयति ते पितरो ऽग्निष्वात्ता श० २ ६.१ ७ ये वा यज्वानो गृहमेधिन। ते पितरोऽग्निष्वात्ता तै० १ ६ ९ ६ अर्धमासा वै पितरोऽग्निष्वात्ता तै० १ ६ ८ ३ अथ ये दत्तेन पक्वेन लोक जयन्ति ते पितरो बर्हिषद श० २ ६ १ ७ ये वै यज्वान, ते पितरो बर्हिषद तै० १ ६ ९.६ मासा वै पितरो बर्हिषद तै० १ ६ ८ ३. तद् ये सोमेने-जाना। ते पितर सोमवन्त श० २ ६ १ ७ सोमप्रयाजा हि पितर तै० १ ६ ९ ५ इन्दव इव हि पितर। मन इव ता० ६ ९ पितृदेवत्यो वै सोम श० २ ४ २ १२ ओषधि-लोको वै पितर श० १३ ८ १ २० षड् वा ऋतव पितर श० ९ ४ ३ ८ क्षत्र वै यमो विश पितर श० ७ १ १ ४ य (अर्धमास) अपक्षीयते स पितर श० २ १. ३ १ अपक्षयभाजो वै पितर कौ० ५ ६ अपराह्ण पितर श० २ १ ३ १ अन्तभाजो वै पितर कौ० १९ ८. मर्त्या पितर श० २ १ ३ ४ अनपहतपाप्मान पितर श० २ १ ३ ४ पितृलोक पितर कौ० ५ ७ पितर प्रजापति गो० उ० ६ १५ मन पितर श० १४ ४ ३ १३ ह्नीका हि पितर तै० १ ३ १० ६ हरणभासा हि पितर तै १ ३. १० ७ ऊष्मभागा हि पितर तै० १ ३ १० ६ देवा वा एते पितर गो० उ० १ २४ स्विष्टकृतो वै पितर गो० उ० १ २५ स्वधा वै पितॄणामन्नम् श० १३.८ १ ४ पितरा युवाना (यजु० १५ ५३) वाक् च वै मनश्च पितरो युवाना श० ८ ६ ३ २२ प्राणो वै पिता ऐ० २ ३८ एष वै पिता य एष (सूर्य) तपति श० १४ १ ४ १५ असौ (द्यौ) पिता तै० ३ ८ ९ १ श० १३ १ ६ १ एष वै पिता य एष (सूर्य) तपति श० १४ १ ४ १५ त्रयो वै पितर (सोमवन्त, बर्हिषद, अग्निष्वात्ता) श० ५ ५ ४ २८ पितरो नाराशस काठ० ३४ १६ सवत्सरो वै पिता वैश्वानर

शोचिषे=पावकस्य शोचि प्रकाश इव प्रकाशो यस्य तस्मै (विदुषे जनाय) ५ २२ १. **पावकशोचे**=पावकस्याऽग्ने शोचिर्दीप्तिरिव द्युतिर्यस्य तत्सम्बुद्धौ (अग्ने=विद्वज्जन) ३ २ ६ पवित्रप्रकाशक (परमेश्वर) ६ १५ १४ [पावक-शोचिष्पदयो समास । शोचिष् ज्वलतो नाम निघ० १ १७ पावकशोचिषम्=पावकदीप्तिम् नि० ४ १४ 'पावकशोचे' पदे 'शोचि' रितीकारान्त पद न तु सकारान्तम्]

पावकास. पवित्रकारका (मत्वान=वलपराक्रम-प्राणिभूतगणा) १ ६४ २ पवित्रकारिका (वाच) १ १४२ ६ [पावकप्राति० जसोऽसुगागमः]

पावकेभिः पवित्रै (मरुद्भि=मनुष्यै) ५ ६०.८ [पावकप्राति० भिस ऐसादेशो न भवति 'वहुल छन्दसि' सूत्रेण]

पावीरवी शोधयित्री (विदुषी कन्या) ६ ४६ ७ [पविरिति वज्रनाम (निघ० २ २०) ततो मत्वर्थीय इरन् छान्दस । पवीरमायुध तद्वान् पवीरवान् । पवीरवत्प्राति० 'सास्य देवता' इत्यण्प्रत्यये छान्दस रूपम् । पवि शल्यो भवति यद् विपुनाति काय तद्वत् पवीरमायुधम्, तद्वान् इन्द्र पवीरवान् । '' '''तद्देवता वाक् पावीरवी, पावीरवी च दिव्या वाक् नि० १२ ३० वाग्वै सरस्वती पावीरवी ऐ० ३ ३६]

पाशद्युम्नस्य पाशात् प्राप्त द्युम्न यशोधन येन तस्य (उत्तमजनस्य) ७ ३३ २ [पाश-द्युम्नपदयो समास । पाशमिति व्याख्यास्यते । द्युम्नम्=धननाम निघ० २ १०]

पाशम् वन्धनम् भा०—पापवन्धनम् १२ १२ धर्म्य वन्धनम् १२ ६५ वन्धन को, स० वि० १६६, अथर्व० २ ३ २४ **पाशान्**=वन्धनानि ५ २ ७ वन्धकान् (मोहादीन्) ७ ५६ ८ अधर्माचरणजन्यवन्धान् १ २४ १३ **पाशाः**=वन्धनानि २ २७ १६ **पाशैः**=वन्धनसाधनै प्र०—'पश वन्धने' इत्यस्य रूपम् १ २५ अ०—वन्धनहेतुभि किरणै १ २६ साम-दाम-दण्ड-भेदादिकर्मभि १ २६ [पश वन्धने (चुरा०) धातोर्घञ्प्रत्यय । पाश पाशयतेर्विपाशनात् नि० ४ २ वारुणो वै पाश तै० ३ ३ १० १ नैर्ऋतो वै पाश श० ७.२ १ १५]

पाशिनः वहुपाशयुक्ता व्याधा २० ५३ पाशवन्तो वन्धनाय प्रवृत्ता (जना) ३ ४५ १ [पाशमिति व्याख्यातम् । ततो भूम्न्यर्थ इनि प्रत्यय]

पाष्या पोषणयोग्यानि कर्माणि प्र०—अत्र पिष्लृ-धातोर्ण्यत्, वर्णव्यत्ययेन पूर्वस्याऽऽकार 'सुपा सुलुक्०' इत्याकारादेशश्च १ ५६ ६ [पिष्लृ सञ्चूर्णने (रुधा०) धातोर्ण्यत् । धातोरिकारस्याकारश्छान्दस । पाष्यप्राति० शेर्लोपश्छन्दसि]

पास्त्यस्य गृहे भवस्य (जनस्य) ४ २१ ६ [पस्त्य-प्राति० भवार्थेऽण् । पस्त्यमिति गृहनाम निघ० ३ ४]

पांसव्याय पांसुषु धूलिषु भवाय (जनाय) १६ ४५ [पांसुप्राति० भवार्थेऽण् । पांसु=पसि नाशने (चुरा०) धातो 'अर्जिदृशिकम्यमिपशि०' उ० १ २७ सूत्रेण कु. प्रत्ययो दीर्घश्च]

पांसुरे प्रशस्ता पासवो रेणवो विद्यन्ते यस्मिन्नन्तरिक्षे तस्मिन् प्र०—'नग-पासु-पाण्डुभ्यश्चेति वक्तव्यम्' अ० ५ २ १०७ अनेन वार्तिकेन प्रशसार्थे र प्रत्यय १ २२ १७ पासवो रेणवो रजासि रमन्ते यस्मिन्नन्तरिक्षे तस्मिन् ५ १५ [पासुरिति पूर्वपदे व्याख्यातम् । तत मत्वर्थे 'नगपासुपाण्डुभ्यश्चेति वक्तव्यम्' अ० ५ २ १०७ वा० सूत्रेण र प्रत्यय]

पिकः कोकिल २४ ३६ [अपि कायति शब्दायते इति विग्रहे 'अपि' उपपदे कै शब्दे (भ्वा०) धातो क प्रत्यय]

पिङ्गलः सुन्दर वर्णयुक्त (ब्रह्मचारी) स० वि० ६३ अथर्व० ११ ५ २६ [पिजि वर्णे (अदा०) धातोर्वाहु० औणादिक कल प्रत्यय]

पिङ्गाक्षम् पिङ्गे पीतवर्णेऽक्षिणी यस्य तम् (जनम्) ३० २१ पीताऽक्षन् (जनम्) ३० २१ [पिङ्ग-अक्षिपदयो समास]

पिठीनसे पिठीव नासिका यस्य तस्मै (वीरजनाय) ६ २६ ६ [पिठी-नासिकापदयो समासे नासिकाया स्थाने नस् आदेश]

पिणक् पिष्या ३ ३० ८ [पिष्लृ सञ्चूर्णने (रुधा०) धातोर्लङि छान्दस रूपम्]

पितरम् पालक जनक विद्वास वा १ १९४ ७ पालक सूर्यम् १ १६४ १८ परमात्मानम् १ १६४ २२ पितृवत् पालन-निमित्तम् (सूर्यम्) १ १६४ १२ पालयितार जनकमध्यापक वा प० वि० पितृवद्वर्त्तमानम् (विपश्चित=विद्वज्जनम्) ३ २६ ६ भा०—रक्षकम् (स्व=आदित्यम्) ३ ६ **पितरः**=ये पान्ति पितृवद् रक्षन्ति विद्यासुशिक्षादिदानैस्ते (अङ्गिरसः=विद्वासो जना) १ ६२ २. विज्ञान-वयोवृद्धा (धर्मिष्ठा जना) ६ ७५ ६. पान्ति पालयन्ति सद्विद्यासुशिक्षाभ्या ये ते तत्सम्बुद्धौ (भा०—विद्वासोऽध्यापका).

विशरणगत्यवसादनेषु (भ्वा०) धातो 'कृत्यल्युटो बहुलम्' इति कर्त्तरि ल्युट्]

पितृषदे पितरो विद्याविज्ञापका विद्वांस सीदन्ति यस्मिँस्तस्मै (राज्ञे) १ ११७ ७ ['पितृ' इत्युपपदे षद्लृ विशरणगत्यवसादनेषु (भ्वा०) धातोरधिकरणे क्विप्]

पितेव यथा दयमान पिता तथा १ १०४ ९ पितृवत् २ २९ ५. जनक इव ६ ५२ ६ [पिताऽइव-पदयो समास]

पित्तम् तेज १७ ६]

पित्र्या पितृषु भवा (धी =प्रज्ञा) ३ ३९ २ [पितृ-प्राति० भवार्थे यत्। तत स्त्रिया टाप्]

पित्र्याणि पितृभ्य आगतानि (सख्या=मित्रभाव-कर्माणि) १ ७१ १० पितृणा सेवनादीनि ७ ५६ २३ [पितृप्राति० आगतप्रार्थे 'पितुर्यच्च' अ० ४ ३ ७९ सूत्रेण यत्]

पित्र्यास: पितृभ्यो हिता (मर्त्ता =मनुष्या) ७ १ ९ [पितृप्राति० हितार्थे यत्। पित्र्यप्राति० जसोऽसुक्]

पित्व: अन्नादिकम् ६ २० ४ अन्नस्य ५ ७७ ४ सुरभिपानम् १९ ५६

पिद्व: मृगविशेष २४ ३२

पिनष्टि सघर्षयति १ १९१ २ [पिष्लृ सञ्चूर्णने (रुधा०) धातोर्लट्]

पिनाकम् पाति रक्षति आत्मान येन तद्धनुर्वर्मादिकम् प्र०—'पातेर्नुक् च' उ० ४ १५ इति पातेराक प्रत्यय १६ ५१ [पा रक्षणे (अदा०) धातो 'पिनाकादयश्च' उ० ४ १५ सूत्रेणाक प्रत्यय। पिनाक प्रतिपिनष्टयनेन नि० ३ २१.]

पिनाकावस: पिनष्टि शत्रून् येन तत् पिनाक तेनाऽवसो वा पिनाकस्यावसो रक्षण वा यस्मात् स (रुद्र = शूरवीर सेनाध्यक्ष) ३ ६१ [पिनाक-अवसपदयो समास.। पिनाकमिति व्याख्यातम्। अवस =अव रक्षणादिषु (भ्वा०) धातोरसच्प्रत्यय]

पिन्व पुष्णीहि सिञ्च १४ ८ सेवस्व ६.३९ ५ सुशिक्षया सिञ्च १४ १७ **पिन्वत**=सिञ्चत ५ ८३ ६ **पिन्वतम्**=सेवेथाम् १ ११८ २ तर्पयतम् ५ ६२ ३ सिञ्चतम् १ १५१ ६ सुखयतम् ६ ६३ ८ प्रीत्या सेवेथाम् १ ३४ ३ प्रापयतम् १ ३४ ४ **पिन्वताम्**=सुखयेताम् ६ ७० ६ **पिन्वते**=सेवते सिञ्चति वा प्र०—अत्र व्यत्ययेनाऽऽत्मनेपदम् १ ५४ ७ प्रीणाति १ १२५ ५ सेवन्ते ५ ८३ ४ **पिन्वथ**=प्रीणयतम् ५ ६२ २ सेवेथाम् १ ११२ ३ **पिन्वध्वम्**=सेवध्वम् ७ ३४ ३ **पिन्वन्त**=सिञ्चन्ति ७ ३४.३. **पिन्वन्ति**=सेवन्ते सिञ्चन्ति वा १ ६४ ६ प्रीणन्ति ५ ५४ ८ **पिन्वसि**=सेवसे १.१२९ ३ ददासि ७.५ ८ **पिन्वस्व**=तृप्नुहि भा०—सुख लभस्व ३८ ४. सन्तुष्टो भव ३८ ४ स्वतन्त्रतया सदैव पुष्टिमत प्रसन्नान् कुरु ऋ० भू० १५२, ३८ १४ यथावत् पुष्ट कर आर्याभि० २ ३१, ३८ १४ समर्थ कर पुष्ट और बल से युक्त कर, आर्याभि० २ ३१, ३८ १४. [पिवि सेवने सेचने च (भ्वा०) धातोर्लोट्। अन्यत्र लड् अपि]

पिन्वमानम् सिञ्चमानम् (समुद्रम्=अन्तरिक्षमिव-सागरम् १३.२ **पिन्वमान:**=सिञ्चन् (वाजी=वेग-वानश्व) १७ ९५ सेवमान (अग्नि =जातप्रज्ञो जन) २९.१ प्रसादयन् (विद्वज्जन) ४ ५८ ७ [पिवि सेवने सेचने च (भ्वा०) धातो शानच्। व्यत्ययेनात्मनेपदम्]

पिन्वमाना सयुक्ता (सरस्वती=नदी) ६ ५२.६ सिक्ता सेविता (सीता=काष्ठपट्टिका) १२ ७० **पिन्वमाना:**=सेवमाना प्रीतिहेतव (गुदा =गुह्येन्द्रियाणि) प्र०—पिवि सेवने सेचने च १९ ८६ सिञ्चमाना प्रीणन्त्य (नद्य) ७ ५० ४ *सिञ्चन्त्य (सिन्धव =नद्य)* ६ ५२ ४ **पिन्वमाने**=सेवन्त्यौ (नद्यौ) ३ ३३ २. [पिवि सेवने सेचने च (भ्वा०) धातो शानच्। तत स्त्रिया टाप्]

पिपर्त्तन पूरयन्तु १ १६६ ६ पिपृत, विद्याभि सेवया वा पूर्ण कुरुत १ १५६ ३. पालयन्तु १ १०६ १ [पृ पालन-पूरणयो (जु०) धातोर्लोट्। तप्रत्ययस्य तनबादेशश्छान्दस]

पिपर्त्ति पुष्टान् प्रसन्नान् करोति ऋ० भू० २३५, प्रपिपूर्त्ति १ १६४ पूर्ण करोति १ १५२ ३ तृप्त कर देता है स० वि० ८० अथर्व० ११ ५ ४ **पिपर्त्तु**=पालयतु पूरयतु वा १८ ५७ **पिपर्षि**=पालयसि, सद्गुणै पूरयसि वा ६ १५ ११ [पृ पालनपूरणयो (जु०) धातोर्लट्। अन्यत्र लोट्]

पिपिन्वथु: पिपूर्त्तम् १ ११२ १२. (पिवि सेवने सेचने च (भ्वा०) धातोर्लिट्]

पिपिशे पिश्यात् २ ३३ ९ पिनष्ट्यवयव इव वर्त्तते ६ ४९ ३ आश्रीयते ५ ५७ ६ **पिपिश्रे**=स्थूलाऽवयवानि कुर्वन्ति ५ ६० ४ [पिश अवयवे (तुदा०) धातोर्लिट्। 'पिपिश्रे'। प्रयोगे 'इरयो रे' सूत्रेण 'रे' आदेश। व्यत्ययेनात्मनेपदम्]

पिपिष्टे पिष्ट प्र०—अत्र व्यत्ययेनाऽऽत्मनेपदम् १ ३२ ६ [पिष्लृ सञ्चूर्णने (रुधा०) धातोर्लिट्। व्यत्येनात्मनेपदम्। षकारस्य शकारो वर्णव्यत्ययेन]

प्रजापति श० १५ १ १६]

पितरा मातापितृवद्वर्त्तमाने (भूमिमूर्यौ) १ १५९ २ विज्ञानवन्तावध्यापकोपदेशकौ ४ ३५ ५ सर्वथा पालकौ ४ ३४ ६ शरीरात्मपालनहेतू (अश्विनौ=जलाग्नी) १ २० ४१. [पितृप्राति० प्रथमाद्विवचने 'सुपा सुलुग्०' इत्याकारादेश]

पितरामातरा पिता च माता च ते (भा०—विद्वांसौ मातापितरौ) प्र०—अत्र 'पितरा-मातरा च छन्दसि' अ० ६ ३ ३३ इति पूर्वपदस्याऽऽनङ्, उत्तरपदस्याऽऽकारादेशश्च निपात्यते ६ १६ [पितृ-मातृपदयो समासे 'पितरा-मातरा च छन्दसि' अ० ६ ३ ३३ सूत्रेण पूर्वपदस्य अराङ् आदेश उत्तरपदस्याकारादेशश्च निपात्यते]

पितरेव जननीजनकाविव ३ ५८ २ यथा जनक-जनन्यौ तथा (राजाऽमात्यौ) ४ ४१ ७ [पितरा-इवपदयो समास]

पितामहेभ्यः ये पितॄणा पितरस्तेभ्य १९ ३६ ये पतुश्चत्वारिंशद्-वर्षपर्यन्तेन ब्रह्मचर्येण विद्या पठित्वा पाठयन्ति ते ऋ० भू० २६६, १९ ३६ [पितृप्राति० 'ताभ्या पितरि डामहच् मातरि पिच्च' अ० ४ २ ३६ सूत्रेण डामहच्-प्रत्यय]

पितुभाजः अन्नस्य विभाजका (नर=विवाहित-जना) १ १२४ १२ उत्तमाऽन्नसेविन (नर=नेतारो जना) ६ ६४ ६ [पितूपपदे भज सेवायाम् (भ्वा०) धातो-रण्प्रत्यय । पितुरित्यन्ननाम निघ० २ ७]

पितुम् अन्नम् प्र०—पितुरित्यन्ननामसु पठितम् निघ० २ ७, ३ ३७ अन्नादिकम् १२ ६५ सुसंस्कृतमन्नम् १ ६७ ७ **पितो**!=हे पालकाऽन्नदात (ईश्वर) १ १८७ ७ अन्नव्यापिन् पालकेश्वर १ १८७ ११ पालक (अन्न) १ १८७ २ पेयम् (अन्नम्) १ ८७ २ [पा रक्षणे (अदा०) धातोर्बाहु० औणादिक-तुन् प्रत्यय इकारादेशश्च बहुलवचना-देव। पितुरित्यन्ननाम पातेर्वा पिवतेर्वा प्यायतेर्वा नि० ९ २४ अन्न वै पितु श० १ ९ २ २० दक्षिणा वै पितु ऐ० १ १३]

पितुमत् सुसंस्कृतमन्नाद्यम् (वच) १ १० १ १ [पितु-प्राति० प्रशसायाम् मतुप् । पितुरिति व्याख्यातम्]

पितुमतीम् प्रशस्ताऽन्नयुक्ताम् (ऊर्ज=नीतिम्) १ ११६ ८ [पितुरित्यन्ननाम निघ० २ ७ तत प्रशसाया मतुबन्तात् ङीप् । पितुमतीम्=अन्नवतीम् नि० ६ ३६]

पितुमतीव प्रशसित- बह्वन्नाद्यैश्वर्ययुक्तेव (समत्=सम्राट्-सभा) ४ १ ८ [पितुमती-इवपदयो समास । पितुमतीति व्याख्यातम्]

पितुमान् बहूनि पितवोऽन्नादीनि विद्यन्ते यस्मिन् स (पन्था=मार्ग) ३ ५४ २१ [पितुरिति व्याख्यातम् । ततो भूम्न्यर्थे मतुप्]

पितुमानिव यथाऽन्नादियुक्त प्रासादस्तथा विद्यादि-सम्पन्नो विद्वान् १ १४४ ७ [पितुमान्-इवपदयो समास]

पितुषणिः स्वार्थी (दुर्जन) प० वि० [पितुरित्यन्न-नाम निघ० २ ७ तदुपपदे षण सम्भक्तौ (भ्वा०) धातो 'छन्दसि वनसनरक्षिमथाम्' अ० ३ २ २७ सूत्रेण इन्-प्रत्यय]

पितृकृतस्य जनककृतस्य (एनस=विरोधाचरणस्य) ८ १३ परमविद्यायुक्त जन के किए (एनस=पाप से) आर्याभि० २ १६, ८ १३ [पितृ-कृतपदयो समास]

पितृतमः अतिशयेन पालक (इन्द्र=ईश्वर) ४ १७ १७ [पितृप्राति० अतिशायने तमप्]

पितृमते पितर ऋतवो नित्ययुक्ता विद्यन्ते यस्मिन् तस्मै (सोमाय=ससाराय), प्र०—अत्र नित्ययोगे मतुप् 'ऋतव पितर' शत० २ ३ ४ २४, २ २६ पितर पालका विज्ञानिनो विद्यन्ते यस्मिँस्तस्मै (भा०—विदुषे जनाय) ३८ ९ [पितृप्राति० नित्ययोगे मतुबन्ताच्चतुर्थी । सवत्सरो वै सोम पितृमान् तै० १ ६ ८ २]

पितृवित्तस्य जनकभुक्तस्य (राय=धनस्य) १ ७३ ९ **पितृवित्तः**=पितृभ्योऽध्यापकेभ्यो वित्त प्रतीतो विज्ञात (रयि=निधिसमूह) १ ७३ १ [पितृ-वित्तपदयो समास । वित्त=विद ज्ञाने (अदा०) धातो, विदॢ लाभे (तुदा०) धातोर्वा क्त]

पितृश्रवणम् पितरो ज्ञानिनो श्रूयन्ते येन तम् (धेनु=वाणीम्) १ ९१ २० पितु सकाशाच्छ्रवण यस्य तम् (भा०—पुत्रपज्ञानम्) ३४ २१ ['पितृ' इत्युपपदे श्रु श्रवणे (भ्वा०) धातो करणे ल्युट् । पितृ-श्रवणपदयो समासो वा]

पितृषदनम् यथा विद्यावन्तो ज्ञानिन सीदन्ति यस्मिँस्तथा (सुशिक्षिताना स्थानम्) ५ २६ यथा विद्वत्स्थानम् (धाम) ६ १ [पितृ-सदनपदयो समास । सदनम् षदॢ विशरणगत्यवसादनेषु (भ्वा०) धातोरधिकरणे ल्युट्]

पितृषदनाः यथा पितृषु ज्ञानिषु सीदन्ति तथा (लोका=सर्व-जना) ५ २६ भा०—विद्यानिष्णाता (लोका=न्यायस्पृया विद्वास) प्र०—पितर इति पद-नामसु पठितम् निघ० ५ ५, ६ १ ['पितृ' इत्युपपदे षदॢ

पुष्टि =पुष पुष्टौ (क्र्या०) धातो स्त्रियां क्तिन्]

पुष्टिम्भराय शरीराऽऽत्मबलयुक्ताय (शिष्याय) ४ ३ ७ ['पुष्टि' इत्युपपदे डुभृञ् धारणपोषणयो (जु०) धातो 'फलेग्रहिरात्मम्भरिश्च' अ० ३ २ २६ सूत्रेण (चकारस्यानुक्तसमुच्चयार्थत्वात्) इन्-प्रत्यय पूर्वपदस्य च मुमागम]

पुष्टिवर्धनम् पुष्टे शरीरात्मबलस्य वर्द्धनस्तम् (त्र्यम्बक =उक्तार्थं रुद्र जगदीश्वरम्) प्र०—अत्र नन्यादित्वाल्ल्यु प्रत्यय ३ ६० य पुष्ट्या वर्धयति तम् (इन्द्र=परमैश्वर्यम्) २८ ३२ य पुष्टि वर्धयति तम् (त्र्यम्बक=रुद्र परमेश्वरम्) ७ ५६ १२ **पुष्टिवर्धनः**=शरीरात्मपुष्टेर्वर्धयिता (ईश्वरो विद्वान् वा) १ ६१ १२ वर्द्धयतीति वर्द्धन, पुष्टेर्वर्द्धन पुष्टिवर्धन (अग्नि =पूर्वोक्तो भौतिक) ३ ४० पुष्टि शरीरात्मबल धातुसाम्यञ्च वर्द्धयतीति (परमात्मा) ३ २६ य शरीरात्मनो पुष्टि वर्धयतीति (ब्रह्मणस्पति =जगदीश्वर) १ १८ २ शरीर, इन्द्रिय, मन और आत्मा की पुष्टि का बढाने वाला (ईश्वर) आर्याभि० १ ३८, ऋ० १ ६ २१ १२ [पुष्टि-वर्धनपदयो समास । पुष्टिरिति व्याख्यातम् । वर्धन =वृधु वृद्धौ (भ्वा०) धातो कर्त्तरि 'अनुदात्तेतश्च हलादे' अ० ३ २ १४६ सूत्रेण युच्]

पुष्टिवर्धना यौ पुष्टि वर्धयतस्तौ (इन्द्राग्नी=वाय्वग्नी) २१ २० [पुष्टिवर्धनम् इति व्याख्यातम् । तत प्रथमाद्विवचनस्य 'सुपा सुलुग्०' इत्याकारादेश । पुष्टिवर्धनम्=पुष्टिकारकम् नि० १३ ३५]

पुष्टीः पोषणानि २ १२ ५ [पुष्टिप्राति० द्वितीया-बहुवचनम् । पुष्टि =पुष पुष्टौ (भ्वा०) धातो क्तिन्-प्रत्यय]

पुष्णः प्रजापोषकस्य (विदुषो जनस्य) १ १३८ १ [पुष पुष्टौ (भ्वा०) धातोर्बाहु० औणा० कनिन्]

पुष्पम् पोषितु योग्यम् (विषयुक्त शरीरावयवम्) १ १६१.१२ [पुष्प विकसने (दिवा०) धातोरच् । पुष्प पुष्पते नि० ५ १४]

पुष्पवती श्रेष्ठानि पुष्पाणि यासा ता (ओषधी) ११.४८. प्रशस्तानि पुष्पाणि यासा ता (ओषधी =सोमादीन्) ११ ७७ [पुष्पप्राति० प्रशसाया मतुबन्तात् स्त्रिया ङीप्]

पुष्पिणी बहुपुष्पा (ओषधय) १२ ८६ बहूनि पुष्पाणि यासु ता (अवनी =पृथिवी) २ १३ ७ [पुष्प व्याख्यातम् । पुष्पप्राति० भूम्न्यर्थे इनि ,। तत स्त्रियां ङीप्]

पुष्यतम् पालन पोषण करो स० वि० १३६, अथर्व० १४ २ ३७ **पुष्यति**=पुष्ट करोति १ ६५ १३ पुष्टो भवति १ ८३ ३. **पुष्यन्ति**=आनन्दन्ति १ ८१.६. **पुष्यसि** =पोषयसि १ ६४ ६ **पुष्यसे** =पुष्टो भवे प्र०—अत्र व्यत्ययेनाऽऽत्मनेपदम्, लेट्-प्रयोगोऽयम् ४ ८ पुष्टो भवसि ५ ५० १ **पुष्यात्**=पुष्टङ्कुर्यात् २० ४७. पुष्टि कुर्यात् ५ ३७ ५ पुष्ट भवेत् ४ २११ **पुष्यास्म**=पुष्टा भवेम २६ १६ **पुष्येम**=पुष्टा भवेम १ ६४ १४ [पुष पुष्टौ (दिवा०) धातोर्लोट् । अन्यत्र लेटि, लटि, लङि च रूपाणि]

पुष्यता पुष्टिमाचरता (जनेन) ५.३४ ५. **पुष्यन्**=पुष्यन्तौ (स्त्रीपुरुषौ) प्र०—अत्र विभक्ति-लुक् २.२७.१५ पुष्ट कुर्वन् (जन) ४ २. [पुष पुष्टौ (दिवा०) धातो शतृ]

पुष्यन्ती पुष्ट कारयित्री (विट्=उत्तमा प्रजा) ७ ५६ ५ [पुष पुष्टौ (दिवा०) धातो शत्रन्तात् ङीप्]

पुष्यसे पुष्टये ७.५७ ५.

पुंश्चली या पुंभिश्चलितचित्ता व्यभिचारिणी (स्त्री) ३० २२

पुँश्चलूम् पुंभि सह चलितचित्तां व्यभिचारिणीम् (स्त्रीम्) ३० ५

पुसः पुरुषस्य ७ ६ १ पुरुषान् १.१६४.१६ पुंस्त्वयुक्तान् पुरुषार्थिन (पुत्रान्) २५ ४५ [पा रक्षणे (अदा०) धातो 'पातेर्डुम्सुन्' उ० ४ १७८ सूत्रेण डुम्सुन्]

पूतदक्षम् पूत पवित्र, दक्ष बल यस्मिँस्तम् (मित्र=सूर्यम्) प्र०—दक्ष इति बलनामसु पठितम् निघ० २ ६, १ २ ७ पवित्रबलम् (मित्रजनम्) ३३ ५७ **पूतदक्षः**=पवित्र दक्षो बल यस्य स (विद्वान् जन) ३ १.३ [पूत-दक्षपदयो समास । पूत =पूञ् पवने (क्र्या०) धातो क्त । दक्ष बलनाम निघ० २.६]

पूतदक्षसा पूत पवित्र दक्षो बल ययोस्तौ (अध्यापकोपदेशकौ) ५ ६६ ४ पवित्र बल याभ्यान्तौ (प्राणोदानवायू) प्र०—अत्र 'सुपा सुलुक्०' इत्याकारादेश १ २३ ४ [पूत-दक्षस्पदयो समासे प्रथमाद्विवचनस्याकारादेश. 'सुपा सुलुक्०' सूत्रेण]

पूतनाः शत्रुसेना ३ २४ १

पूतबन्धनी या पूतान् पवित्रान् गुणान् बध्नाति गृह्णाति सा (मति =प्रज्ञा) ५ ४४ ६ [पूत-बन्धनीपदयो,

पिपिष्वती पिपीपि बह्वोऽवयवा विद्यन्ते यस्या सा (राति=दानम्) १ १६८ ७ [पिपिष्प्राति० भूम्न्यर्थे मतुवन्तान् ङीप्। पिपिष्=पिश अवयवे (तुदा०) धातोश्छान्दस रूपम्]

पिपीळे पीडयति ४ २२ ८ [पीड अवगाहने (चुरा०) धातोर्लिट्। 'अनित्यण्यन्ताश्चुरादय' इति णिचोऽभाव]

पिपीषति सोमादिरसान् पातुमिच्छति प्र०—अत्र पीड् धातो सन् व्यत्ययेन परस्मैपदश्च १ १५ ६ [पीङ् पाने (दिवा०) धातोरिच्छायामर्थे सन्नन्ताल्लट्। व्यत्ययेन परस्मैपदम्]

पिपीषते पातुमिच्छते (विदुषे=आप्ताय विपश्चिते) ६ ४२ १ [पीड् पाने (दिवा०) धातोरिच्छायामर्थे सन्नन्ताच् छतृप्रत्यय]

पिपीषव: पातुमिच्छव *(नरा=नायका राजजना)* ७ ५६ ४ [पीड् पाने (दिवा०) धातोरिच्छायामर्थे सन्नन्तात् 'सनाशसभिक्ष उ' इति सूत्रेण उ प्रत्यय]

पिपृक्त सम्यक् प्राप्नुत ३ ५४ २१ **पिपृग्धि**=प्रीणीहि १६ ५ [पृची सम्पर्चने (अदा०) धातोर्लोट्। विकरणव्यत्ययेन शप स्थाने श्लु]

पिपृत पूर्णान् कुरुत ५ ३४ व्याप्नुत ३३ ४२ **पिपृतम्**=पूरयेताम् ६ ६० १२ पूरयतम् ७ ६० १२ पालयत प्र०—अत्र पुरुपव्यत्यय ३ २६ ६ प्रपिपूर्त्तम् १ ९३ १२ **पिपृताम्**=प्रपिपूर्त्त प्र०—अत्र लडर्थे लोट् १ २२ १३ पालयतम् १३ ३२ पिपूर्त्त ८ ३२ **पिपृहि**=पालय ७ १६ १०. पूर्ण कुरु ३ ३१ २० [पॄ पालनपूरणयो (जु०) धातोर्लोट्]

पिपेश पिशत्यवयवान् करोति १ ६८ ५ [पिश अवयवे (तुदा०) धातोर्लिट्]

पिप्पका पक्षिणी २४ ४०

पिप्पलम् उदकमिव निर्मल फल कर्मफल वा प्र०—पिप्पलमित्युदकनाम निघ० १ १२, १ १६४ २२ परिपक्वफल पापपुण्यजन्य सुखदु:खात्मक भोग वा १ १६४ २०. फलभोगम् ५ ५४ १२ पापपुण्य रूप फल को स० प्र० २८३, १ १६४ २० [पिप्पलम् उदकनाम निघ० १ १२]

पिप्यत् प्राप्नुत २ ३४ ६ **पिप्यतम्**=प्यायतो वर्द्धयत २ ३९ ६ वर्धयेतम् ५ ७१ २ **पिप्यताम्**=वर्धयेताम् ६ ५० १२ **पिप्यु:**=वर्द्धेथाम् प्र०—अत्र व्यत्ययेन परस्मैपदम् १ ११६ २२ वर्धयेतम् १ ११६ ६ वर्धयत ६ ६२ ७ **पिप्यु.**=वर्धन्ते ६ ६२ ७ वर्द्धयेयु ७ २३ ४ [ओप्यायी वृद्धौ (भ्वा०) धातोर्लेडि छान्दस पीभाव। अन्यत्र लिटि 'लिड्यङोश्च' इति पी-भाव। व्यत्ययेन परस्मैपदम्]

पिप्युषी पानकर्त्री (अन्तर्वेला) २ १३ १ वृद्धा (धेनु=गौ) २ १६ ८ प्याययन्ती (वृष्टि) ५ ७३ ८ **पिप्युषीम्**=प्रवृद्धा, वर्धयित्री वर्द्धयन्ती वा (धेनुं=वाणीम्) २ ३२ ३ [पीड् पाने (दिवा०) धातोर्लिट क्वसु। स्त्रिया ङीप्। ओप्यायी वृद्धौ (भ्वा०) धातोर्वा लिट क्वसु स्त्रिया ङीप् च]

पिप्रति पूरयन्ति ६ ४८ ५ [पॄ पालनपूरणयो (जु०) धातोर्लट्]

पिप्रती सर्वानन्द प्रपूरयन्त्यौ (द्यावापृथिव्यौ) ४ ५६ ७ [पॄ पालनपूरणयो (जु०) धातो शत्रन्तान् ङीप्। छन्दसि पूर्वसवर्णदीर्घ]

पिप्रतो: यौ पिपूर्त्तस्तयो (अश्विनो=सभासेनेशयो सकाशात्) १ ४६ १२ [पॄ पालनपूरणयो (जु०) धातो शतृप्रत्ययान्ताद् ओस्]

पिप्रयत् प्रीणीयात् ७ १७ ४ **पिप्रय:**=प्रीणासि २ ६ ८ **पिप्रिये**=प्रीणाति ३ ५१ ३ **पिप्रीहि**=प्राप्नुहि ५ ३३ ७ [प्रीञ् तर्पणे कान्तौ च (क्र्या०) धातोर्लेट्। छान्दस द्वित्व शप् च व्यत्ययेन। अन्यत्र लिट्। अपरत्र लोटि शप श्लु]

पिप्रियाणा: प्रियमाणा. (विद्वज्जना) ७.५७ २ [प्रीञ् तर्पणे कान्तौ च (क्र्या०) धातोर्लिट कानच्]

पिप्रीषति कमितुमिच्छति ४ ४ ७ [प्रीञ् तर्पणे कान्तौ च (क्र्या०) धातोरिच्छायामर्थे सन्नन्ताल् लट्]

पिप्रुम् व्यापनशीलम् (शम्बर=मेघम्) ६ १८ ८ उदरम्भरम् (मनुष्यम्) प्र०—अत्र पॄ-धातोर्बाहुलकादौणादिक कु प्रत्यय सन्वद्भावश्च १ १०१ २ व्यापकम् (शत्रूणा वलम्) ४ १६ १३ प्रपूरकम् (वृत्र=मेघ शत्रु वा) १ १०३ ८ पालकम् (राजानम्) २ १४ ५ **पिप्रो:**=न्यायपूर्त्ते कर्त्रो (न्यायाधीशयो) १ ५१ ५ [पॄ पालनपूरणयो (जु०) धातोर्बाहु० औणा० कु प्रत्यय सनूवच्च]

पिब पिबति गृह्णाति प्र०—अत्र व्यत्ययो लडर्थे लोट् १ १५ ५ प्र०—अत्र पुरुप-व्यत्यय १ १४ १० सेवस्व ७ ३७ पिबत्यन्तकरोति प्र० अत्र व्यत्ययो लडर्थे लोट् च १ २३ १ धारणशक्त्या गृहाण १ १० ११ **पिबत्**=पिबति ५ २९ ७ **पिबत**=पिबन्ति प्र०—अत्र व्यत्ययो लडर्थे लोट् च १ १५.२ **पिबतम्**=रक्षतम्

पूर्पतिम् पुरा पालकम् (सभेशम्) १ १७३ १० [पुर्-पतिपदयो समास । 'अन्येषामपि दृश्यते' इति पूर्वपदस्य दीर्घ]

पूर्भित् पुरा भेत्ता (इन्द्र =राजपुरुष) ३ ३४ १

पूर्भिदम्=शत्रूणा नगराऽभिदारकम् (इन्द्र=राजानम्) ३ ५१ २ [पुर् इत्युपपदे भिदिर् विदारणे (रुधा०) धातो कर्त्तरि क्विप्]

पूर्भिद्ये शत्रूणा पुराणि भिद्यन्ते यस्मिन् सङ्ग्रामे तस्मिन् १ ११२ १४

पूर्भि. पूर्णाभि पालनसमर्थाभि क्रियायुक्ताभिरन्न-मयादिभि (क्रियाभि) १.५८ ८ पूरणपालनसुखयुक्तैर्नगरै १ १६६ ८ नगरै ५ ६६ ४ **पूर्षु**=पुरीषु २ ३५ ६ **पू** =पुररूपा (पृथ्वी) १ १८९ ८ नगरीव रक्षिका (मही=राज्ञी) ७ १५ १४ [पॄ पालनपूरणयो (जु०) धातो क्विप्प्रत्यय]

पूर्येथाम् अ०—पूर्णं कुर्यातम् ५ २८ [पॄ पालन-पूरणयो (जु०) धातोर्लिङ् । 'बहुल छन्दसि' इति शपो लुक्]

पूर्व-ऋषय: येऽधीतवन्तो वेदार्थविदो विद्वास १ ४८ १४ [पूर्व-ऋषिपदयो समास]

पूर्वकृत् पूर्व करोतीति पूर्वकृत् (इन्द्र =सूर्य) २० ३६ [पूर्वोपपदे डुकृञ् करणे (तना०) धातो कर्त्तरि क्विप्]

पूर्वचित: पूर्वं प्राप्तविज्ञानादिभिर्वृद्धा (भा०—पूर्व-वृद्धजना) २७ ४ [पूर्वोपपदे चिञ् चयने (भ्वा०) धातो कर्त्तरि क्विप् । तुगागम]

पूर्वचित्तये पूर्वा चाऽसौ चित्तिश्चयन च तस्यै १ १५९ ३. पूर्वं कृतचयनाय १ ११२ १ पूर्वेषा सज्ञानाय सज्ञापनाय वा १.८४ १२ **पूर्वचित्तिम्**=पूर्वा चित्तिश्चयन यस्य तम् (अग्नि=विद्युतम्) १३ ४३ **पूर्वचित्ति:**=पूर्वा प्रथमा चित्ति सज्ञान यस्या सा (अप्सरा) १५ १६ पूर्वा चाऽसौ चित्तिश्च प्रथमा स्मृतिविषया (द्यौ =वृष्टि) २३ ११. प्रथम चयनम् भा०—प्रथमा परिणति (द्यौ = अतीव सूक्ष्मा विद्युत्) २३ ५४. पूर्वस्मिन्ननादौ सञ्चयना-ऽऽन्या (द्यौ =विद्युत्) २३ ५३ [पूर्व-चित्तिपदयो समास । चित्ति =चिती सज्ञाने (भ्वा०) स्त्रिया क्तिन्]

पूर्वजाय पूर्वं जाताय ज्येष्ठाय भ्रात्रे, ब्राह्मणाय वा १६ ३२ [पूर्वोपपदे जनी प्रादुर्भावे (दिवा०) धातोर्ड प्रत्यय]

पूर्वजे पूर्वस्माज्जाते (द्यावापृथिवी=भूमिविद्युतौ) ७ ५३ २ [पूर्वजप्राति० स्त्रिया टाप्]

पूर्वतराम् अतिशयेन पूर्वाम् (उषस=प्रभातसमयम्) १ ११३ ११ [पूर्वप्राति० अतिशायने तरबन्तात् स्त्रिया टाप्]

पूर्वथा पूर्वं प्रकारै १ १३२ ४ पूर्वमिव ५ ४४.१ पूर्वाणि (ब्रह्माणि=अन्नानि धनानि वा) १ ८० १६ पूर्वैरिव (शिल्पिभिरिव) ३ २९ १ पूर्वा इव ५ ८० ६ पूर्वेषा योगिनामिव ७ १२ पूर्व इव प्र०—अत्र प्रयत्न-पूर्वत्याकारकेण योगेनेवाऽर्थे थाल् प्रत्यय १ ९२ २ [पूर्व-प्राति० इवार्थे 'प्रत्नपूर्वविश्वेमात् थाल् छन्दसि' अ० ५ ३ १११ सूत्रेण थाल्प्रत्यय । पूर्वथा=पूर्व इव नि० ३ १६]

पूर्वपा: य पूर्वान् पाति स (विद्वान् जन) ४ ४६ १ [पूर्वोपपदे पा रक्षणे (अदा०) धातो कर्त्तरि क्विप्]

पूर्वपीतये पूर्व पीति पान सुखभोगो यस्मिन् तस्मा आनन्दाय १ १९ ९. पूर्वस्य पानाय १.१३५ १ पूर्वेषा पानायेव १ १३४ १ पूर्वेषा पीति पान तस्यै १ १३४ १. [पूर्व-पीतिपदयो समास । पीति =पा पाने (भ्वा०) धातो स्त्रिया क्तिन् । पूर्वपीतये पूर्वपानाय नि० १० ३६]

पूर्वपेयम् पूर्वं पातु योग्यम् (अन्धस =अन्नम्) १.१३५.४ [पूर्व-पेयपदयो समास । पेयम्=पा पाने (भ्वा०) धातोर्यत्]

पूर्वभाजम् पूर्वैर्भजनीयम् (बृहस्पतिं=सूर्यम्) ४ ५० ७ **पूर्वभाज:**=ये पूर्वान् भजन्ति ते (कवय = मेधाविजना) ५ ७७ १. [पूर्वोपपदे भज सेवायाम् (भ्वा०) धातो 'भजो ण्वि' इति ण्वि]

पूर्वम् प्रथमम् (धार्मिक जनम्) ६.४७ १५ प्राक् १ ३४ १० पुरस्सर पूर्णम् (ब्रह्म) ४० ४ **पूर्वस्य**=पूर्णस्य (पितु =विद्युत) १७ ६० **पूर्व:**=शुभगुणै पूर्ण (कण्व =मेधावी जन) १ १३९ ९. अर्वाग् वर्त्तमान (सूर्य) १ ६० २ पालक प्रथम (सूर्य) ३ ३८ ५ पूर्वविद्य (प्राचीनो विद्वान्) ३ १७ ५. **पूर्वाणि**=सनातनानि (अपासि=कर्माणि) ४ १९ १० प्राचीनानि (साधनानि) ५ ३१ ६ **पूर्वे**=सम्मुखे वर्त्तमाने (ससारे) १.१२४.५. पूर्वस्मिन् (काले) २२ २ **पूर्वेभ्य:**=अधीतपूर्वविद्येभ्य (विद्वज्जनेभ्य) १ १७५ ६ कृतयोगाभ्यासपुरस्सरेभ्य (जनेभ्य.) १ ७६ ६ **पूर्वेषाम्**=अतीताना विदुषाम् (जना-नाम्) ३४ ४९ [पूर्व पूरणे (भ्वा०) धातोरच्प्रत्यय]

समास । वन्धनी=वन्ध वन्धने (क्र्या०) धातोर्युडन्तात् ङीप्]

पूतवन्धू पूता पवित्रा वन्धवो ययोस्तौ (अध्यापकोपदेशकौ) ६.६७४ [पूत-वन्धुपदयो समास]

पूतभृत् येन पूत विभर्त्ति तच्छुद्धिकर शूर्पादिकम् १८२१ [पूतोपपदे डुभृञ् धारणपोषणयो (जु०) धातो क्विप्। वैश्वदेवो वै पूतभृत् श० ४४११२]

पूतम् पवित्रम् (कर्म) ४११६ शुद्धो निर्मलो वा (सोम=सोमलताद्योषधीना गणो रसो वा) १६३ **पूताय**=पवित्रकरणाय ३६२ [पूञ् पवने (क्र्या०) धातो क्त]

पूतासः शुद्धा शोधिताश्च(सुता=मूर्त्तिमन्त पदार्था) १३.४. पवित्रा (पदार्था) २०८७ [पूतप्राति० जसोऽसुगागम]

पूताः पवित्रकारिका (गिर) १७६१० [पूतप्राति० स्त्रिया टाप्प्रत्यय]

पूतेव पवित्रेव (स्वधिति=वज्र इव) ७३६ [पूता-इवपदयो समास]

पूयमानः पवित्रीकृत (शुक्र=वीर्यसमूह) ८५७ [पूञ् पवने (क्र्या०) धातो कर्मणि शानच्]

पूयमानाः पवित्रा सत्य (धेना=वाच) १७६४. भा०—पवित्रीभूता (धेना) १३३८ पवित्रता कुर्वाणा (धेना=विद्यायुक्ता वाच) ४५८६ [पूयमानप्राति० स्त्रिया टाप् । पूयमान व्याख्यातम्]

पूरवः मनुष्या ६.२०.१० हे जीवो स० प्र० २३८, १०४८.५ **पूरवे**=धार्मिकाय मनुष्याय प्र०—पूरव इति मनुष्यनाम निघ० २३, ४.२११० प्रपूरणाय सुखाय १६३७ अल साधनाय मनुष्याय ११३०७ **पूरुम्**=पालक सेनापतिम् ७८४ पालक धारक वा (सत्पुरुषम्) ७१६३ पूर्णप्रज्ञ मनुष्यम् ७१८१३ पूर्णवल सेनाध्यक्षम् १२३४ **पूरुः**=मनुष्य ४३८३ मरणशीलो मनुष्य ५१७१. **पूरौ**=पूर्ण-वले (जने=मनुष्ये) ६.४६८ [पूरव=पूरयितव्या मनुष्या नि० ७२२ पूरव मनुष्यनाम निघ० २.३]

पूरुष प्रयत्नशील (सुसन्तान) १२७८ पुरि देहे शयान देहधारक वा (भिषक्) १२८२ **पूरुषम्**=सर्वत्र पूर्ण परमात्मानम् ३५.४ अन्नादिना पूर्ण देहम् १२७६ **पूरुषः**=परिपूर्ण परमात्मा ३१५ पुमान् १२६१ [पुरुष इति व्याख्यातम्। 'अन्येषामपि दृश्यते' इति दीर्घ ।

पूरुषघ्नम् पुरुषाणा हन्तारम्(प्राणिनम्) १११४१० [पुरुषघ्न व्याख्यातम् । 'अन्येषामपि दृश्यते' इति दीर्घ]

पूरुषत्वता उत्तमा पुरुषा विद्यन्ते यस्मिंस्तेन (सत्कर्मणा) ४५४३ ['पुरुषत्वता' व्याख्यानम् । 'अन्येषामपि दृश्यते' इति दीर्घ]

पूर्णगभस्तिम् पूर्णा गभस्तयो रश्मयो यस्य सूर्यस्य तद्वद् वर्त्तमानम् (नरम्) ७४५४ [पूर्णा-गभस्तिपदयो समास । गभस्तय रश्मिनाम निघ० १५]

पूर्णतरम् अतिशयेन पूर्णाऽऽभरणादिकम् १८१० पूर्णप्राति० अतिशायने तरप्]

पूर्णवन्धुरः य पूर्णश्चाऽसौ वन्धुरश्च स, पूर्णस्य जगतो वन्धुरो वन्धनहेतुर्वा (इन्द्र=जगदीश्वर सूर्यो वा) ३५२ **पूर्णवन्धुरैः**=पूर्णै सत्यै प्रेमवन्धनैर्युक्त (इन्द्र=सेनाध्यक्ष) १८२३ [पूर्ण-वन्धुरपदयो समास । वन्धुर=वध्नाति मार्दवेनेति विग्रहे वन्ध वन्धने (क्र्या०) धातो 'मद्गुरादयश्च' उ० १४१ सूत्रेण उरच्]

पूर्णम् समग्रशस्त्राऽस्त्रसामग्री-सहितम् (रथम्) १८२४. अलङ्कारि (कर्म्म) १८१०. [पॄ पालनपूरणयो (जु०) धातोर्वाहु० नक्-प्रत्यय । सर्व वै पूर्णम् श० ४२.२.२. सर्वमेतद्यत्पूर्णम् श० ६२३४३ पूर्णमित्युदकनाम निघ० ११२ पूर्ण एष यत् सवत्सर जै० २३६३ पूर्ण प्रजापति तै० स० ५११]

पूर्णा पूर्णौ (गभस्ती=हस्तौ) ७३७३ [पूर्णप्राति० प्रथमाद्विवचनस्य 'सुपा सुलुक्०' इत्याकारादेश]

पूर्णा परिपूर्णा अ०—होतव्यद्रव्येण पूर्णा (दर्वि) ३४६ [पूर्णप्राति० स्त्रिया टाप्]

पूर्तम् पूर्तिकरम् (सत्याचारम्) ६१६१८ पूर्णा सामग्रीम् १८६४ ऐश्वर्यादि की पूर्णता स० वि० २१०, अथर्व० ६६३१ मनसा वाचा कर्मणा सम्यक् पुरुषार्थेनैव सर्ववस्तुसम्भारैश्चोभयाऽनुष्ठानपूर्त्तिम् ऋ० भू० १०५, अथर्व० १२५१० यज्ञ की सामग्री पूरी करना स० वि० १४५, अथर्व० १२५१० [पॄ पालनपूरणयो (जु०) धातो क्त । 'न ध्याख्याप्ृ०' इति निष्ठानत्वनिषेध]

पूर्धि पूरय ७२४६ पिपूर्ति प्र०—अत्र 'वहुल छन्दसि' इति शपो लुक् 'श्रुशृणुपॄ०' इति हेर्धि १३६१२ प्रीणीहि, सर्वाणि सुखानि सम्प्राप्नुहि १४२६ [पॄ पालनपूरणयो (जु०) धातोर्लोट् । 'वहुल छन्दसि' सूत्रेण शपो लुक् । पूर्धि याच्ञाकर्मा निघ० ३१६ पूर्द्धि पूरय देहीति वा नि० ४३]

११२ पूर्वकालाऽवस्थास्थैं कारणस्थैं प्राणैं (ऋषिभि.) ऋ० भू० ७८, ११२. विद्या पढे हुए प्राचीन (ऋषियो) से आर्याभि० १४, ऋ० ११११२ [पूर्वप्राति० तृतीया-बहुवचने भिस स्थाने 'वहुल छन्दसि' इति ऐस् न भवति]

पूर्वौ प्रथमाऽधीतविद्यौ (अध्यापकोपदेशकौ) ५ ६५.३ [पूर्वप्राति० प्रथमाद्विवचनम्]

पूर्व्य पूर्वैविद्वद्भि कृतो विद्वान् तत्सम्बुद्धौ (अग्ने=विद्वज्जन) २२६ **पूर्व्यम्**=पूर्वै कृत निष्पादितम् (पाथ=अन्नमुदक वा) ३३१६ पूर्वैर्योगिभि प्रत्यक्षीकृतम् (ब्रह्म=बृहद्व्यापकमीश्वरम्) ११५ पूर्वं लब्धम् (पाथ=अन्नम्) ३३५६ पूर्वैविद्वद्भिरुपदिष्टम् (वच:=वचनम्) ३१०५ पुरातन सनातनम् (ब्रह्म) ऋ० भू० १५७, ११५ पूर्वम् (वाज=वेगम्) ४.१६८ पूर्वै राजभि कृतसत्कारम् (राजानम्) ५३५६ सनातन (वसु=ज्ञानादि धन को) स० प्र० २३८, १०४६१ **पूर्व्य:**=पूर्वै साक्षात्कृत (जगदीश्वर) १७४१. पूर्वै कृतविद्य (विद्वज्जन) ३३४ पूर्वेषु विद्वत्सु कुशल (अग्निरिव विद्वान्) ३११३ सबसे पूर्व विद्यमान (ईश्वर) स० प्र० २३८, १०४८.१ **पूर्व्यान्**=पूर्वैनिष्पादितान् (सोमान्=सोमैश्वर्यादियुक्तान् रसान्) ३३६३. **पूर्व्याय**=पूर्वेषु कुशलाय (जनाय) ४४४३ पूर्वैविद्वद्भि सुशिक्षया निष्पादिताय (विद्यार्थिजनाय) ११५६२ पूर्वेषु लब्धविद्याय (विदुषे जनाय) ५१५१ पूर्वेषु भवाय (जनुषे=जन्मने) ५४५३ **पूर्व्या:**=पूर्वेषु कुशला (विद्वासो जना) ३५४४ पूर्वैविद्वद्भि सेविता (निविद=वाच) २३६६ **पूर्व्यम्**=पूर्वैर्योगिभि प्रत्यक्षीकृतम् (ब्रह्म) ६४४१३ पूर्वलब्धम् (पाथ=अन्नम्) ३३५६ **पूर्व्याणि**=पूर्वैविद्वद्भि कृतानि (कर्माणि) १११७२५ पूर्वै साक्षात्कृतानि (धामानि=जन्मनामस्थानानि) ४५५२ पूर्वनिर्मितानि वस्तूनि ६४३ (पूर्वप्राति० कृतार्थे कुशलार्थे लब्धार्थे वा यत् प्रत्ययश्छान्दस पूर्व्यमिति पुराणनाम निघ० ३२७ पूर्व-प्राति० वा 'पूर्वै कृतमिनयौ च' अ० ४४.१३३ सूत्रेण कृतार्थे य. प्रत्यय]

पूर्व्या पूर्वै कृतेषु कुशलौ (राजामात्यौ) ४४४५ [पूर्वप्राति० कृतार्थे कुशलार्थे वा यत् । पूर्व्यप्राति० प्रथमा-वहुवचनस्याकारादेश 'सुपा सुलुक्' सूत्रेण]

पूर्व्या पूर्वै कृतानि (विद्याप्रचाररूपाणि कार्याणि) १११७४ प्राचीनानि (कृतानि=कर्माणि) २११६ पूर्वै राजभि. कृतानि (व्रतानि=कर्माणि) ७६२ [पूर्व-प्राति० कृतार्थे 'पूर्वै कृतमिनयौ च' इति य. । तत. शेर्लोपश्छन्दसि]

पूर्व्या पूर्वैविद्वद्भिर्निष्पादिता (सुन्दरी स्त्री) ३३६.२ **पूर्व्याभि:**=पूर्वै सेविताभि (गीर्भि) ६.४४.१३. [पूर्व्य-मिति व्याख्यातम् । तत. स्त्रिया टाप्]

पूर्व्यास: पूर्वैराप्तै सेविता (पथ्या:=मार्गा.) ३४२७. [पूर्व्यमिति व्याख्यातम् । ततो जसोऽसुगागम]

पूर्व्येभि: पूर्वेषु साधुभि (स्तोमेभि=प्रशसितै कर्मभि.) ३३२१३ पूर्वै कृतै (विज्ञानादिभि) १११७१४. [पूर्व्यमिति व्याख्यातम् । ततो भिस ऐसादेशो न भवति 'वहुल छन्दसि' सूत्रेण]

पूषणम् पुष्ट्यौषध्यादिसमूहप्रापक चन्द्रलोकम् प्र०—पूषेति पदनामसु पठितम् निघ० ५६. अनेन पुष्टिप्राप्त्यर्थ-श्चन्द्रो गृह्यते ११४३ पुष्टिकर्मोपधिगणम् ७.४४१ पोषकम् (विद्वज्जनम्) ११८६.१०. पुष्टिकर्त्तारम् (ईश्वरम्) ३३४६ पुष्टिकर भोगम् ३४३४ पुष्टिम् २५३ शरीराऽऽत्मनो पोषयितारम् (सेनाध्यक्षम्) ११०६४ सभासेनाध्यक्षम् १४२१० **पूषन्**=विद्याशिक्षाभ्या पुष्टि-कर्त्त (विद्वज्जन) १६०५ पोषक (शिष्य जन) ११८४३ पालक (राजन्) ६५४.६ भूमिरिव पुष्टियुक्त (विद्वज्जन) ६५८३ पुष्टिकारक (अ०—परमेश्वराऽऽप्त-विद्वज्जन वा) ३४४१ हे वृद्धिकारक पुरुष स० वि० १३६ अथर्व० १४२३८. पोषयतीति पूषा सूर्यलोक प्र०—अत्राऽन्तर्गतो णिच् 'श्वन्नुक्षन्पूषन्-प्लीहन्' उ० ११५६ अनेनाऽय निपातित १.२३१३ **पूषा**=य स्वाभि-व्याप्त्या सर्वान् पदार्थान् पोषयति स परमेश्वर १.२३१४ पुष्टिकर्त्ता (परमेश्वर.) ऋ० भू० २०२, ऋ० ८.१२३.५ पुष्टिकरो दुग्धादि ५५१११ पुष्टिकरब्रह्मचर्यादि-व्यवहार ७३५६ पोषको वैद्य १०६. भूमिवत् पुष्ट पुष्टिकर्त्ता वा (युवा नर) ६५८४. भूमिरिव पोषिका (स्त्री) ३८३ चन्द्र इव सर्वस्य पोषक (भा०—सर्वस्य पालको राजा) ६३२ पोषणप्रद (ईश्वर) आर्याभि० २५०, २५१८ **पूष्ण:**=पृथिव्या प्र०—'पूषेति पृथिवी-नामसु पठितम्' निघ० ११, ६६ पुष्टिकर्त्र्या भूमे १४२५ पूर्णवलस्य (पुरुषस्य) २०३ पुष्टिनिमित्तस्य प्राणस्य ६१ पुष्टिकरस्याऽऽदित्यस्य ६१८ सोमाद्योषधि-गणस्य ६३० पुष्टिकर्त्तुर्वैद्यस्य ६३८ पुष्टिकारिकाया पृथिव्या ५२२ पुष्टिमतो वीरस्य ५२६ पुष्टे २५२७ पुष्टिकर्त्र्या (विद्युत) ११६ पुष्टिहेतो समानस्य वायो

पूर्वया पूर्वैः स्वीकृतया (निविदा=वेदवाचा) २५.१६. सनातन्या (वेदवाण्या) १ ८९ ३ प्राचीनया (वेदवाचा) १ ६९ २ **पूर्वाम्**=प्राचीम् (प्रदिशम्) १ ९५ ३ **पूर्वा**= प्रथमा भा०—पूर्वभाविनी (उषा) ३३ ९३. पूर्णाऽग्रस्था वा (विद्युत्) ६ ५६ ६ **पूर्वासाम्**=ज्येष्ठानाम (उषसाम्) १ १२४ ९ **पूर्वासु**=प्राचीनतमासु सनातनीषु प्रजासु ३ ५५ ५ **पूर्वाः**=अतीता (उषस) १ ४४ १० **पूर्वे**= प्रथमतो वर्त्तमाने (द्यावापृथिवी=प्रकाशभूमीव सगते) १७ २५. [पूर्वा=पुराणनाम निघ० ३ २७ पूर्वप्राति० स्त्रिया टाप्]

पूर्वयावा प्राचीनराजनीतिं प्राप्त (इन्द्र=सर्वाधीशो जन) ३ ३४ २ (पूर्वोपपदे या प्रापणे (अदा०) धातोर्वनिप् प्रत्यय]

पूर्ववत् यथा पूर्वे विद्वासो विद्यादानार्थं गच्छन्ति तद्वत् १ ३१ १७ [पूर्वप्राति० तुल्यार्थे वति प्रत्यय]

पूर्वसूनाम् या पूर्वमपत्यानि सूयन्ते तासाम् (स्त्रीणाम्) २ ३५ ५ प्रथम प्रसूत हुई स्त्रियो का स० वि० १०४, २.३५.५ [पूर्वोपपदे षूङ् प्राणिगर्भविमोचने (अदा०) धातो क्विप्]

पूर्वहूतिम् पूर्वा हूतिराह्वान यस्य तम् (पतिम्) १ २२ २ **पूर्वहूतौ**=पूर्वेषा सत्कर्त्तव्याना वृद्धानामाह्वाने ६ ६४ ५ पूर्वेषा हूति प्रशसा यस्मिन् येन वा तस्याम् (शिल्पविद्यायाम्) ७ ३५ ५ पूर्वेषा विद्यावृद्धाना हूतिराह्वान यस्मिन् गृहाश्रमे तस्मिन् १ १२३ २ पूर्वैर्विद्वद्भि कृताया स्तुतौ ७ ३९ २ [पूर्व-हूतिपदयो समास । हूति= ह्वेञ् स्पर्द्धाया शब्दे च (भ्वा०) धातो स्त्रिया क्तिन् । पूर्वहूतौ=पूर्वस्यामभिहूतौ नि० ५ २७]

पूर्वहूतौ पूर्वै. शब्दितौ (वायुसूर्यौ) ३३ ४४ पूर्वै शिष्टैर्विद्वद्भिराहूतौ (श्रेष्ठौ मनुष्यौ) ८ ५९ [पूर्व-हूतपदयो समास । हूत.=ह्वेञ् स्पर्धाया शब्दे च (भ्वा०) धातो. क्त.]

पूर्वः पूर्वः आदिम आदिम (यजमान=सज्जन) ५ ७७ २ [पूर्व पदस्य वीप्साया द्वित्वम्]

पूर्वा पूर्वौ (राजसेनाध्यक्षौ) ४ ३८ १ [पूर्वप्राति० प्रथमाद्विवचनस्य 'सुपा सुलुक्०' इत्याकारादेश]

पूर्वानिव यथा पूर्वास्तथा वर्त्तमानान् (सखीन्) ५.५३.१६ पूर्वान्-इवपदयो समास]

पूर्वासः अस्मत्तो वृद्धा (पितर=प्रजाशोधका जना) १९ ६८ [पूर्वप्राति० जसोऽसुगागम]

पूर्वी पूर्व्यौ (मातरा=मातापितरौ) ७ २ ५ [पूर्वी प्राति० प्रथमाद्विवचनस्य पूर्वसवर्णदीर्घ]

पूर्वी पूर्व्य सनातन्य (रातय=दानानि, ऊतय= रक्षणादीनि) प्र०—अत्र 'सुपा सुलुक्०' इति पूर्वसवर्णादेश १ ११ ३ पूर्वभूता प्रजा १ ७० १ प्राक्तनैर्धार्मिकै प्राप्तशिक्षा (प्रजा) ८ ४६ [पूर्वीप्राति० प्रथमाबहुवचनस्य पूर्वसवर्णदीर्घ]

पूर्वीभिः पुरातनीभि (शरद्भि) १ ८६ ६ प्राचीनाभि प्रजाभि सह ५ ५६ ४ **पूर्वीषु**=प्राचीनासु प्रजासु ५ ३५ ६ **पूर्वीः**=प्राचीना सनातनी प्रजा १ ५६ १ प्रागुत्पन्ना प्रजा ६.३९ ४ पूर्वे स्थिता (अप=जलानि) ७ २१ ३ पूर्वेणेश्वरेण कृता (प्रजा) ३ १५ ३ पूर्व वर्त्तमाना प्रजा. ३ ७ ९ पूर्वैर्न्यायाधीशै. प्रापिता (विश= प्रजा) १७ २४ पूर्णा बह्व्यो विद्या ३ ५ २ पूर्वै प्राप्ता (इष=इच्छा) ३ ३० १८ पूर्वं सम्पादिता (आहुतय) ३ ४ ५ पुरातनी (गिर) १ ५९ ४ पूर्वं प्राप्ता (इष= प्रजा) १ १८ १६ प्राचीना वेदोदिता (प्रणीतय= प्रकृष्टा नीतय) ६ ४५ ३ पूर्वतनी (उषस=प्रभातवेला) ४ १९ ८ पूर्वभूता (चर्षणी=मनुष्यादिप्रजा) ३ ४३ २ पूर्वेषा सम्बन्धिनी (पुर) १ ६३ २ प्राचीना पितापितामहादिभ्य प्राप्ता (विश=विदुषी प्रजा) ७ ३१ १० पुरातन्य (ऊतय=रक्षा) ७ २६ ४ पूर्वैर्विद्वद्भि सुशिक्षयोत्तमा कृता (तविषी=सेना) २० ४७ पूर्व वर्त्तमान (शरद=शरद् ऋतुओ को) स० प्र० ११०, १.१७९ १ पूर्णसुखान् (इष=अन्नादीन्) ६ ३९ ५ [पूर्वीशब्दस्य रूपाणि]

पूर्वे पूर्व विद्या अधीतवन्तोऽनूचाना विद्वास १ ६२ २ पूर्वजा (पितर=ज्ञानिनो जनका) १९ ५१ प्रथमजा (पितर) ३ ५५ २ इत पूर्वसम्भवा (देवा=विद्वास) ३१ १६ पूर्णविद्यया सर्वस्य पोषका (विद्वज्जना) १७ २८ अधीतपूर्णविद्या (देवा.=विद्वासो जना) १७ २९ शुभगुणै पूर्णा (मेधाविनो जना) १ १३९ ९ प्राक्तना जना १३ ३१ प्राचीना (विद्वास) ५ २५ २ आदिमा (आप्ता पुरुषा) ६ १९ ४ [पूर्वप्राति० प्रथमाबहुवचनम् । 'पूर्वपरावर०' अ० १ १ ३४ सूत्रेण सर्वनामसज्ञा]

पूर्वेभिः अधीतविद्यैर्वर्त्तमानै प्राक्तनैर्वा विद्वद्भि. (ऋषिभि=कारणस्थै प्राणै) १ १ २ ये वेदादिशास्त्राण्यधीत्य विद्वासो भूत्वाऽध्यापयन्ति ते प्राचीनास्तै ऋ० भू० ७५, १ १ २ प्रथमोत्पन्नै (ऋषिभि) ऋ० भू० ७७,

पृक्षयामेषु पृच्छ्यन्ते ये ते पृक्षास्तेषामिमे यामास्तेषु (जिज्ञासुषु) प्र०—अत्र पृच्छधातोर्बाहुलकादौणादिक क्स प्रत्यय १ १२२ ७ [पृक्ष-यामपदयो समास । पृक्ष=प्रच्छ ज्ञीप्सायाम् (तुदा०) धातोर्बाहु० क्स]

पृक्षासः आर्द्रीभूता (विद्वासो जना) ३ ७.८ सम्पर्का (व्रतपा = विद्वज्जना) ३.४७ सम्बद्धा (वायुजलविद्युत) ४ ४५ १ ससिक्ता (सूर्यकिरणा) ४ ४५ २ [पृक्ष इति व्याख्यातम् । ततो जसोऽसुगागम]

पृक्षुधः प्रकर्षेण क्षोधितु भोक्तुमिष्टा (वीरुध.=लता) प्र०—क्षुध बुभुक्षायाम्, अत कर्मणि क्विप्, पृषोदरादित्वात् पूर्वसम्प्रसारणञ्च १.१४१ ४ [प्र+क्षुध बुभुक्षायाम् (दिवा०) धातो कर्मणि क्विप् । पूर्वपदस्य सम्प्रसारण च पृषोदरादित्वात्]

पृङ्क्त बध्नीत, ससर्ग कुरुत १९ ११ **पृङ्क्तम्**=सम्बध्नीतम् ६.६८ ८ सयोजयतम् २ ३७ ५ स्पर्श कुरुतम् ६ ४ सम्पृङ्क्तम् १ १०९ ४ **पृङ्धि**=सम्बधान २ २४ १५ [पृची सम्पर्के (रुधा०) धातोर्लोट्]

पृचः कामना ५ ७४ १० [पृची सम्पर्के (रुधा०) धातो कर्मणि क्विप्]

पृचीमहि सम्बध्नीयाम १ १२९ ७ [पृची सम्पर्के (रुधा०) धातोर्लिङ् । व्यत्ययेनात्मनेपदम्]

पृच्छ सन्देहान् दृष्ट्वोत्तराणि गृहाण १ ४४. **पृच्छत**=प्रश्नो को पूछो आर्याभि० २ ३६, १७ २० **पृच्छम्**=पृच्छामि २३ ५७ **पृच्छसे**=पृच्छ (अत्र लेट्) ३३ २७ **पृच्छे**=पृच्छेयम् ४ १८ २ [प्रच्छ ज्ञीप्सायाम् (तुदा०) धातोर्लोट् । अन्यत्र लङ् लेट् च । लडि अटोऽभाव ।

पृच्यताम् सम्बध्यताम् २० २७ **पृच्यते**=सम्बध्यते ३ ३४ सयुज्यते १ १०३ १ **पृच्यन्ताम्**=परिपच्यन्ताम् १० ४ मेल्यन्ता पृच्यन्ते वा युक्त्या वैद्यकशास्त्ररीत्या १ २१ [पृची सम्पर्के (रुधा०) धातो कर्मणि लोट् ।

पृञ्चता सम्पर्चकौ (नरौ) १ ४७ ८. [पृची सम्पर्के (रुधा०) धातो शतृप्रत्यय]

पृञ्चतोः स्पर्शयन्त्य (अम्बय =रक्षणहेतव आप) प्र०—अत्र 'सुपा सुलुक्०' इति पूर्वसवर्णादेशोऽन्तर्गतो ण्यर्थश्च १ २३ १६ [पृची सम्पर्के (रुधा०) धातो शत्रन्तान् ङीप्]

पृञ्चते सम्बध्नाति १ १२८ ५ **पृञ्चन्ति**=सम्बध्नन्ति ५ ७४ १० **पृञ्चीत**=सम्बध्नीत १ ४० ८ [पृची सम्पर्के (रुधा०) धातोर्लेट् । अन्यत्र लिङ् । 'पृञ्चते' प्रयोगे व्यत्ययेनात्मनेपदम्]

पृण पूरयति ३ १७ पूरय प्र०—अत्राऽन्तर्भावितणिजर्थ ५ २७ योजय ६ २१ तर्पय १२ ५४. सुखय १५ ५९ पिपूर्द्धि १५.५९ **पृणत**=तृप्यत २ १४.१० पूरयत २ १४.११ **पृणताम्**=सुखयतु ३ ५० १. **पृणति**=सुखयति ३ ३६ ६. **पृणते**=पालयति ७ ३२.८ **पृणध्वम्**=पालयध्वम् ३.३३ १२ पूरयत ७.१६ ११ पूरयध्वम् १ १६२ ५ सुखयत २५.२८ **पृणन्ति**=सुखयन्ति २.३५ ३. पूरयन्ति ५ ८५.६ पिपुरति ३३ १३. सुखयेयु १ ५२ ४ पालयन्ति विद्या पूरयन्ति वा ५ ११ ५ **पृणस्व**=प्रीणीहि प्रीणय वा ५.१९. सुखय ६ ४१ ४. सुखी भव १७ ७९ **पृणात्**=पालयेत् ६.४७ १५ तर्पयेत् २ ३०.७ **पृणाति**=पालन करता है स० वि० ८०, अथर्व० ११ ५ ४ विद्या-सुशिक्षा-सस्कृताऽन्नाद्यै स्वय पुष्यति सन्तानान् पोषयति च १.१२५ ५ प्रसन्नान् करोति ऋ० भू० २३५, अथर्व० ११ ३ ५ ४ **पृणातु**=सुखयतु २३ ४३ [पृ पालनपूरणयो (क्र्या०) धातोर्लोट् । पृण प्रीणने (तुदा०) धातोर्वा लोट् । अन्यत्र लट् लङ् च । पृणाति दानकर्मा निघ० ३ २०]

पृणक् पृणक्ति ६ २० ६ **पृणक्तु**=सम्पर्क करोतु १.८४.१ सम्बध्नातु ४ ३८ १० **पृणक्षि**=सयुनक्षि १ ८३ १. सम्बध्नासि १२ १०७ [पृची सम्पर्के (रुधा०) धातोर्लङ् । अडभाव । अन्यत्र लोट् लट् च]

पृणध्यै सुखयितुम् ६ ६७ ७ [पृण प्रीणने (तुदा०) धातोस्तुमर्थे कध्यै प्रत्यय]

पृणतः विद्यादिभि प्रपूरकस्य (विदुष) १.१६८ ७. पालकस्य विद्यादिभि प्रपूरकस्य वा १.१६८ ७. पालयत पुष्टान् प्राणिन १ १२४ १० **पृणते**=सुखयते (प्रजाजनाय) ६ २८ २ **पृणन्**=पालयन् (विद्वज्जन) ७ ३२.८ **पृणन्तम्**=पुष्यन्तम् (पुत्रम्) १ १२५.४. **पृणन्तः**=स्वं स्वकीयाँश्च पुष्यन्त (जना) १ १२५ ७ सुखयन्त (रसा) २ ११ ११ [पृण प्रीणने (तुदा०) धातो शतृप्रत्यय]

पृणानः पूर्व कुर्वन् भा०—रक्षन् (जनः) २० ४५ [पृ पालनपूरणयो (क्र्या०) धातो शानच्]

पृणीत प्रपूरयन्ति प्र०—अत्र व्यत्ययो लडर्थे लोडन्तर्गतो ण्यर्थश्च १ २३ २१ **पृणीथाम्**=प्रपूरयेतम् ६ ६९ ७ **पृणीथे**=पूरयतम् ७ ६१ २ [पृ पालनपूरणयो (क्र्या०) धातोर्लोट्]

पृणीतन अलङ्कुरुत ५ ५ ५ [पृ पालनपूरणयो

२ ११ पुष्टिहेतोर्वायो प्र०—वृषा पूषा शत० २ ५ १ ११, १ २४ पोषकस्य वायोर्वारणपोषणाभ्यामिव ६ ३०. **पूषणा**=पृथिव्या प्र०—पूषेति पृथिवीनाम निघ० १ १, १० ३० पुष्टेन स्वीकीयेन सैन्येन ११ १५ **पूष्णे**=पुष्टिकरणाय ४ ७ पुष्टिकराय (पुरुषाय) ३८ १५ पोषणाय १ १२२ ५ प्राणपशुपालनाय १० ५ पोषकाय (शिष्याय) ४ ३.७ पुष्टिकर्त्रे (भा०—वायुशुद्धये) २२ २० पुष्टाय (पदार्थाय) २२ २० [पूष पुष्टौ (क्वचिद् वृद्धौ पाठ) (भ्वा०) धातो 'श्वनुक्षन्पूषन्०' इति कनिन् । पूषा पृथिवीनाम निघ० १ १ पदनाम निघ० ५ ६ पूषेत्यपर सोऽदन्तक । 'अदन्तक पूषा' इति च ब्राह्मणम् नि० ६ ३१ पूषा स शौद्र वर्णमसृजत पूषणमिय (पृथिवी) वै पूषेय हीद सर्वं पुष्यति यदिद किं च श० १४.४ २ २५ अय वै पूषा योऽय पवतेऽएष हीदं सर्व पुष्यति श० १४ २ १ ६ पूषाऽपोषयत् तै० १ ६ २ २ पुष्टिर्वै पूषा तै० २ ७ २ १ असौ वै पूषा योऽसौ (सूर्य) तपति कौ० ५ २ अन्न वै पूषा कौ० १२ ८ पशवो वै पूषा श० १३ १ ८ ६ पूषा जै पशूनामीष्टे श० १३ ३ ८ २ पूषा विशा विट्पति तै० २ ५ ७ ४ प्रजनन वै पूषा श० ५ २ ५ ८ पूषा वै पथीनामधिपति श० १३ ४ १ १४ पूषा वै श्लोण्यस्य भिषक् तै० ३ ९ १७ २ (श्रिय) भगम् योषा वै सरस्वती वृषा पूषा श० २ ५ १ ११ पूषा वै देवाना भागदुघ श० ५ ३ १ ६ इय पृथिवी वै पूषा मै० २ ५ ५ ३ श० ६ ३ २ ८ पूषा भग भगपति श० ११ ४ ३ १५ पूषा विश्ववेदा मै० २ ६ ९ पूषा पूषा वै श्लोण्यस्य भिषक् तै० ३ ९.१७ २ पूषा हि सनीनामीशे काठ० २३ ६ पूष्ण एकादशकपाल मै० २ ६ १३ पूष्ण करम्भ तै० १ ५ ११ १३ श० ४ २ ५ २२ प्रतिष्ठ पूषा तै० स० ५ ३ ४ ४ योषा वै सरस्वती वृषा पूषा श० २ ५ १ ११रेवती नक्षत्र, पूषा देवता तै० स० ४ ४ १० ३]

पूषणा सर्वेषा पोषकम् (सज्जनम्) ६ ५७ १. [पूषणमिति व्याख्यातम् । 'सुपा सुलुक्०' इत्याकारादेश]

पूषण्वते बहव पूषण पुष्टिकरा विद्यन्ते यस्य तस्मै (राज्ञे) ३ ५२ ७. बहव पूषण. पुष्टिकर्त्तारो गुणा विद्यन्ते यस्मिँस्तस्मै (इन्द्राय=धनाय) १ १४२ १२ **पूषण्वन्तम्**=बहुपुष्टियुक्तम् (इन्द्र=स्वकीय जीवस्वरूपम्) २८ २७ **पूषण्वन्त:**=बहव पूषणो विद्यन्ते येषान्ते (ऋभव=मेधाविसज्जना) ३ ५४ १२ **पूषण्वान्**=पूषण पुष्टिकरा गुणा विद्यन्ते यस्मिन् स (अग्नि=जन) २१ १५ अरिशक्तिनिरोधको वीर (सेनाध्यक्ष) १ ८२ ६ [पूषणमिति व्याख्यातम् । पूषन्प्राति० भूम्न्यर्थे मतुप्]

पूषरातय: पुष्टे राति दान येषा ते (मरुद्गणा=मनुष्याणा समूहा.) २ ४१ १५ पूष्ण सूर्याद्रातिर्दान येषान्ते (मरुद्गणा) १ २३ ८ [पूषन्-रातिपदयो समास । 'पूषन्' इति व्याख्यातम् । राति=रा दाने (अदा०) धातो स्त्रिया क्तिन्]

पूषेव पुष्टिकर्त्ता सूर्य इव १ १८१ ६ भूमिरिव ६ ६१ ६ [पूषा-इवपदयो समास]

पृक्षप्रयज: ये पृक्षेण शुभगुणैरार्द्रीभावेन प्रयजन्ति ते (विद्वासो जना) ३ ७ १० [पृक्षोपपदे प्रपूर्वाद् यज देवपूजासगतिकरणदानेषु (भ्वा०) धातो क्विप् । पृक्षमिति व्याख्यास्यते]

पृक्षम् सुखै सेचकम् (विद्वासम्) १ १२९ २ सम्पृक्तारम् (न्यायाधीशम्) १ १२७ ५ अन्नम् ६ ६२.४ सेचनीयम् (क्षेत्रम्) २ ३४ ३ **पृक्षस्य**=सर्वत्र सम्बद्धस्य सम्पृक्तस्य (विदुषो जनस्य) ६ ८ १ **पृक्ष:**=सम्पर्क ४ ४४ २ **पृक्षाय**=सेचनाय २ १३ ८ **पृक्षा:**=सम्पर्चनीया (प्रजाजना) ६ ३५ ४ **पृक्षे**=सम्पर्के १ १८३ २ पृचन्ति सयुञ्जन्ति यस्मिन् (आणौ=सङ्ग्रामे) १ ६३.३ जलादिभि सिक्ते (पृथिवीमण्डले) २ ३४ ४ [पृची सम्पर्के (रुधा०) धातोर्बाहु० औणा० क्स प्रत्यय । पृषु सेचने (भ्वा०) धातोर्वा क्स]

पृक्ष: सम्पर्का ५ ७३ ८ सम्बन्धिन (जना) ४ ४३ ५ सम्पर्चनीया (प्रजाजना) ६ ३५ ४ [पृक्ष इति व्याख्यातम् । वचनव्यत्यय]

पृक्ष: सम्पर्चनीयमन्नम् ७ ३६ ५ सम्पृक्तम् (शर्व=बलम्) २ १ ६. विद्यासम्पर्चनम् २ ११ ५ पृङ्क्ते येन तत् (अ०—विद्यासम्पर्कम्) प्र०—अत्र पृचीधातो (सर्वधातुभ्योऽसुन्' बाहुलकात् सुडागमश्च १.३४ ४ सुखसम्पर्कनिमित्त विज्ञानम् १ ४७ ६ सस्पृष्टव्यमन्नादिकम् ४ २३ ६ ज्ञापयितुमिष्टमन्नम् १ १७८ ४ प्रष्टव्यम् (वपु=सुन्दर रूपम्) १ १४१ २ [पृची सम्पर्के (रुधा०) धातोरौणादिकोऽसुन् बहुलवचनाच्च सुडागम । पृक्ष इत्यन्ननाम निघ० २ ७ पृक्षे इति सग्रामनाम निघ० २ १७]

पृक्ष: या पृचन्ते विद्यासम्पर्क कुर्वन्ति ता: पुत्र्य १ ७१ ७ सम्प्राप्तव्या (इष=अन्नाद्या) ६ ६३ ७ [पृची सम्पर्के (रुधा०) धातोर्बाहु० औणा० क्स । लिङ्गवचनयोश्च व्यत्यय]

सम्प्रसारण च' उ० १ १३७ सूत्रेणाजि. प्रत्यय]

पृथिम् विशालबुद्धिम् (सेनापतिम्) १ ११२.१५. [पृथ प्रक्षेपे (चुरा०) धातोर्बाहु० औणा० इनि. प्रत्ययो गुणाभावश्च। प्रथ प्रख्याने (भ्वा०) धातोर्वा उन्। बहुल-वचनात् सम्प्रसारणञ्च]

पृथिवि भूमिरिव पृथुविद्ये (देवि—विद्यायुक्ते पत्नि) ११ ६६ पृथुशुभगुणलक्षणे (मात—मान्यकर्त्रि जननि) १० २३ भूमिवत् क्षमाशीले (राज्ञि) ३ ५४ ४ भूमिरिव वर्त्तमाने स्त्रि ३५ २१ विस्तीर्णा सती विशालगुणाश्री भूमि प्र०—अत्र पुरुषव्यत्यय १ २२ १५ विस्तृताया भूमे अ०—देवयज्ञाग्निकरणाया प्र०—अत्र त्वलग १ २५ **पृथिवी**=भूमि ३३ ४२ अन्तरिक्षम् १ १०२ २ भूमिवद्वर्त्तमाना विदुषी स्त्री १२ ६१. विस्तीर्णा भूमि १ ८६ ४ भूमिरिव क्षमा ३ ५४ १६ अवनिरिव (माता) ११ ६१ ६ विस्तृतशीला क्षमाधारणादिशक्तिमती (स्त्री) ८ ३२ अप्रकाशगुणाना पृथिव्यादीना समूह १ २२ १३ विस्तृत (वसो =यज्ञ) १ २ पृथुसुखदात्री विद्या २ १० पृथुसुखनिमित्ता (अ०—विद्या) २ १० भूमिरिव शुभप्रदा (विदुषी प्रजापालिका राज्ञी) १३ १७ पृथुसुखकारिणी (ब्रह्मचारिणी कुमारिका) ११ ५८ विस्तीर्णा भूमि २५ १७ **पृथिवीम्**=भूमिराज्यम् ६ २ भूमि तत्स्थ पदार्थसमूह वा ५ १३ पृथिव्यादिकम् १२ ५ प्रकाशरहित भूगोलादिकम् १३ ४ भूमिमन्तरिक्ष वा ६ ४७ २६ भूमि-तलम् १२ ३६ विस्तीर्णाम् भा०—महतीम् (नावम्) २१ ६ प्रकाशरहित लोकलोकान्तर पदार्थ का स० प्र० ३१३ विस्तृता भूमि तत्स्थ प्राणिसमूहञ्च १ १७. विस्तृत-प्रजायुक्ताम् (भूमिम्) १ २८ स्वराज्यभूमिम् १३ १६ अन्तरिक्ष भूमि वा ३.३० ११ प्र०—पृथिवीत्यन्तरिक्षनामसु पठितम् निघ० १ ३, ५ १६ अन्तरिक्षस्थानन्यान्लोकान् १ ६७ ३ **पृथिव्या**=भूगर्भविद्यया १५ ६ भूम्या सह ७ १३ **पृथिव्याम्**=विस्तृताया भूमौ ५ ६ अन्तरिक्षे भूमौ वा ७.५ २ स्वराज्ययुक्ताया भूमौ ११ १०० १८. बहु-सुखप्रदायाम् १.२५ बहुपदार्थप्रदायाम् (भूमौ), बहुप्रजायुक्ता-याम् (भूमौ) १.२६ पृथिवी मे स० वि० ६३, अथर्व० ११ ५ २६ **पृथिव्या:**=अन्तरिक्षस्याऽवकाशस्य मध्ये प्र०—पृथिवीत्यन्तरिक्षनामसु पठितम् निघ० १ ३, ४ ३० भूमेरन्तरिक्षाद्वा ६ ४७ २७ विस्तृताया भूमे: १ ८० १ भूम्यादे पदार्थमात्रस्य ७ ६० ७ विस्तृतस्याकाशस्य १ ५२ १३ भूम्यादेश्च जगत ८ ५२ पृथिवीमारभ्य प्र०—पञ्चमीविधाने ल्यब्लोपे कर्मण्युपसङ्ख्यानम् अ० २ ३.२८ अनेन वार्तिकेन पञ्चमी १ २२.१६. प्रकाशरहितस्य पृथिव्या-देर्जगत. ३ १२. विस्तीर्णाया भूमे ३८ १५ भूम सकाशात् ५.१६. पृथिवीनामकस्यान्तरिक्षस्येव पृथिवीत्यन्तनाम प्र०—'पृथिवीत्यन्तरिक्षनाम' निघ० १.३. पदनामसु च निघ० ५ ३ अनेन सुखप्रापिकाया आकाशस्य मध्ये १.३३.१०. **पृथिव्यै**- भूमिराज्याय ६.१ विस्तृतायै भूम्यै ३ १८ पृथिव्या प्र०—अत्र पञ्चम्यर्थे चतुर्थी २२ ४५ पृथिवीवद् वर्त्तमानायै स्त्रियै ८ ३ ५. भूमिराज्यप्राप्तये ३.५८.२. अन्तरिक्षाय भूम्यै वा ५.५६.१ पृथिव्याम् प्र०—अत्र 'सुपा सुलुक्०' इति सप्तमी-स्थाने चतुर्थी १ २६ विस्तृतायै धरित्र्यै २२.२६ पृथिवीस्थपदार्थसमूहाय ५ २८ [प्रथ प्रख्याने (भ्वा०) धातो 'प्रथे. षिवन्सम्प्रसारण च' उ० १.१५० सूत्रेण षिवन्प्रत्यय सम्प्रसारणञ्च। पृथिवी अन्तरिक्षनाम निघ० १ ३ पदनाम निघ० ५ ३ पृथ्वी पृथिवीनाम निघ० १.१ पृथ्वी द्यावापृथिवीनाम निघ० ३ ३० प्रथनात् पृथिवीत्याहु. नि० १ १४. पृथिवी वा अन्नाना शमयित्री जै० ६ १४ परिमण्डल (=गोलाकार) उ वा इयम् (पृथिवीम्—) लोक श० ७ १ १ ३७ समुद्रो हैषा (पृथिवी) अग्नि विद्यते श० ७ ४ १ ६ पृथिव्य-प्स्वन्तु श्रिता तै० ३.११.१ ६ प्रथमा पृथिवी तै० स० २ १ २.३ अग्निगर्भा पृथिवी श० १४ ६ ४ २१ अयस्मयी पृथिवी गो० २ २ ९ आग्नेयी पृथिवी जै० ३ १८६. ता० १५ ४ ८ इय वा अग्निहोत्रस्य वेदि मै० १ ८ ७. इय विश्वधाया काठ० ३१ ८ इय वाऽस्य सर्वस्य प्रतिष्ठा श० ४ ५.२.१५. इय वै माता तै० ३.८ ६ १ श० १३ १.६ १ इय वै यज्ञायज्ञीयम् जै० १ १७३ इय वै रथन्तरम् ता० ६.८ १५ श० ५ ५ ३ ५ आधार विष्णु पृथिवीमभितो मयूखै तै० स० १२ १३ २ पृथिव्यामिमे लोका प्रतिष्ठिता जै० उ० १ २ ३ २]

पृथिविष्ठा: ये पृथिव्या तिष्ठन्ति ते (विद्वांसो जना) ७ १८ २३ ['पृथिवी' इत्युपपदे ष्ठा गतिनिवृत्तौ (भ्वा०) धातो क प्रत्यय। पूर्वपदस्य 'ङ्यापो०' अ० ६ ३ ६३ सूत्रेण ह्रस्व]

पृथिविसदम् पृथिव्या गच्छन्तम् (इन्द्र=सम्राजम्) प्र०—अत्र 'ङ्यापो सज्ञाछन्दसोर्बहुलम्' अ० ६ ३ ६३ इति पूर्वपदस्य ह्रस्व ६ २ ['पृथिवी' इत्युपपदे षद्लृ विशरणगत्यवसादनेषु (भ्वा०) धातो कर्त्तरि क्विप्]

पृथिवी विस्तीर्णे (द्यावाक्षामा=सूर्यभूमी) ३ ८ ८ [पृथिवीति व्याख्यातम्। तत प्रथमाद्विवचनस्य पूर्वसवर्ण-दीर्घ]

(क्र्या०) धातोर्लोट् । तप्रत्ययस्य तनवादेशश्छान्दस]

पृतनाज्ये पृतनाया सेनाया सङ्ग्रामे ३ ३७ ७ **पृतनाज्येषु**=सङ्ग्रामेषु ३ ८ १० [पृतनाज्यम्=सग्रामनाम निघ० २ १७ पृतनाज्यमिति सग्रामनाम, पृतनानाम अजनाद्वा जयनाद्वा नि० ६ २४]

पृतनायत: आत्मन पृतना सेनामिच्छत (भा०—शत्रून्) १२ ६६ **पृतनायन्तम्**=आत्मन पृतना सेनामिच्छन्तम् (मर्त्यं=मनुष्यम्) १ १६६ ७ [पृतनापदाद् आत्मन इच्छाया क्यजन्ताच्छतृ प्रत्यय । पृतना मनुष्यनाम निघ० २ ३ संग्रामनाम निघ० २ १७]

पृतनायून् पृतनासु सेनासु पूर्णमायुर्येषा तान् (अदेवान्=अविदुषो जनान्) ३ १ १६ सेना कामयमानान् (राजपुरुषान्) ७ १ १३ [पृतना-आयुपदयो समास । अथवा पृतनापदाद् आत्मन इच्छाया क्यजन्तात् 'क्याच्छन्दसि' सूत्रेण उ प्रत्यय । पृतना मनुष्यनाम निघ० २ ३]

पृतनाषहः ये पृतना शत्रुसेना सहन्ते ते (उत्तमाऽमात्या) ४ ४५ ८ [पृतनोपपदे षह मर्पणे (भ्वा०) धातो कर्त्तरि क्विप्]

पृतनाषाट् पृतना नृसेना सहते येन स (मद'=ओपधिसार) १ १७५ २ य पृतना सहते स (इन्द्र=सेनापति) १७ ३९ **पृतनाषाहम्**=य पृतना सेना सहते तम् (शुष्म=वलम्) ६ ७२ ५ [पृतनोपपदे षह मर्पणे (भ्वा०) धातो 'छन्दसि सह' अ० ३ २ ६३ सूत्रेण ण्वि प्रत्यय]

पृतनाषाह्याय ये मनुष्या पृतना सहन्ते ते पृतनासाहस्तेषु साधवे (शवसे=वलाय) १८ ६८ पृतना सह्या येन तस्मै (शवसे) ३ ३७ १ ['पृतनाषाट्' इति व्याख्यातम्, तत 'तत्र साधु' रिति यत् । पृतना-सह्यपदयोर्वा समास । छान्दसो दीर्घ]

पृतनासु मनुष्येषु, प्र०—पृतना इति मनुष्यनाम, निघ० २ ३, १ १३१ ५ शूरवीर-मनुष्यसेनासु ७ ५६ २२ वीरसेनासु ३ ४९ २ राजसेनाकार्येषु ऋ० भू० १६६, ऋ० १ ८ २१ १० स्वेषा शत्रूणा वा सेनासु १ १०२ ९ **पृतनाः**=वल-सुशिक्षाऽन्विता वीरमनुष्यसेना ६ ३७ स्वसेना मनुष्यान्वा ७ २० ३ वीरसेना ३ ३४ ४ [पृतना मनुष्यनाम निघ० २ ३ सग्रामनाम निघ० २ १७ युधो वै पृतना श० ५ २ ४ १६]

पृतनाहवेषु सेनाभि प्रवृत्तेषु युद्धेषु १ १०९ ६ [पृतना-आहवपदयो. समास । आहव=आङ्पूर्वाद् ह्वेञ्

स्पर्धाया शब्दे च (भ्वा०) धातो 'आङि युद्धे' इति अप्]

पृतन्यत: आत्मन पृतनामिच्छत शत्रून् ससेनान् प्र०—पृतना-शब्दात् क्यच् 'कव्यध्वर पृतनस्यर्चि लोप' अ० ७ ४ ३९ अनेन ऋचि=ऋग्वेद एवाऽऽकारलोप' १ ८ ४ पृतना मनुष्यास्तानिवाऽऽचरत. (मनुष्या.) १ १३२ १ आत्मन पृतना सेनामिच्छन्त (शत्रून्) १८ ७० आत्मन पृतनामिच्छतो जनस्य भा०—वीरसेनस्य ११ २० [पृतनापदाद् आत्मन इच्छायामर्थे क्यजन्ताच् छतृप्रत्यय । 'कव्यध्वरपृतनस्य०' इति क्यचि आकारलोप]

पृतन्यव. युद्धायाऽऽत्मन पृतना सेनामिच्छव (भा०—शत्रव) १५ ५१ **पृतन्युम्**=पृतना सेनामिच्छतीव पृतन्यति, पृतन्यतीति पृतन्युस्तम् (वृत्रमिव शत्रुम्) प्र०—'कव्यध्वरपृतनस्यर्चि लोप अ० ७ ४ ३९, १ ३३ १२ **पृतन्यून्**=आत्मन पृतना सेनामिच्छून् (राजप्रजाजनान्) ४ २० १ [पृतनापदाद् इच्छायामर्थे क्यजन्ताद् उ प्रत्यय 'क्याच्छन्दसि' सूत्रेण । क्यचि आकारलोप 'कव्यध्वर०' इति]

पृतन्यसि आत्मन पृतना सेनामिच्छसि १ ५४ ४ **पृतन्यात्**=आत्मन पृतना सेनामिच्छेत् ८ ५३ [पृतनापदाद् आत्मन इच्छायामर्थे क्यजन्ताल् लट् । अन्यत्र लिङ्]

पृत्सु सङ्ग्रामेषु प्र०—पृत्स्विति सङ्ग्रामनामसु पठितम् निघ० २ १७, ६ २६ पृतनासु प्र०—पदादिषु मास्पृत्स्नूनामुपसङ्ख्यानम् अ० ६ १ ६३ इति वार्त्तिकेन पृतना-शब्दस्य पृदादेश १ ६४ १४ स्पर्द्धमानेषु सङ्ग्रामेषु ३ ४९ ३ वीरमनुष्यसेनासु ६ ४४ १८ [पृत्सु इति सग्रामनाम निघ० २ १७ पृतनाप्राति० सप्तमीवहुवचने परे 'पदादिषु मास्पृत्स्नूनामुपसख्यानम्' अ० ६ १ ६३ वा० सूत्रेण पृतनास्थाने पृदादेश]

पृत्सुति: वीरसेना १ १६९ २ **पृत्सुतीः**=या सम्पर्ककारकाणा सुतय ऐश्वर्यप्रापिका सेनास्ता प्र०—अत्र पृचीधातो क्विपि वर्णव्यत्ययेन तकार, तदुपपदादैश्वर्यार्थात् सु-धातो सज्ञाया क्तिच् प्रत्यय १ ११० ७]

पृत्सुतूर्षु पृत्सु पृतनासु सेनासु त्वरमाणेषु हिसकेषु (शत्रुषु) ३ ३७ ७ [पृतना-तूर्पदयो समासे पूर्वपदस्य पृदादेश सप्तम्याश्चालुक् । तूर्=ञित्वरा सम्भ्रमे (भ्वा०) धातो कर्त्तरि क्विपि 'ज्वरत्वर०' इति वकारस्योपधायाश्च स्थाने ऊठ्]

पृथक् विभागेन ऋ० भू० १५८, १२ ६७ [पृथक्=प्रथते नि० २ ५ प्रथ प्रख्याने (भ्वा०) धातो 'प्रथे कित्

पृथ्वीः=भूमीः ७ ३४ ३. [प्रथ प्रख्याने (भ्वा०) धातो 'प्रथे पिवन्ष्पवन्ष्वन् सम्प्रसारण च' उ० १ १५० सूत्रेण ष्वन्प्रत्यय सम्प्रसारणञ्च]

पृथ्वी विस्तीर्णे (द्यावापृथिवी=भूमिसूर्यौ) ६.७० १ भूम्यन्तरिक्षे ४ २३ १० पृथ्वीति व्याख्यातम्। तत प्रथमाद्विवचनस्य पूर्वसवर्णदीर्घ]

पृदाकुः मूढवदभिमानी व्याघवद्वा हिंसक (विद्वज्जन) ६ १२ कुत्सितवाक् (अहि=विषधर) ८ २३ सर्प २४ ३३ [पर्द कुत्सिते शब्दे (भ्वा०) धातो 'पर्देर्निन् सम्प्रसारणमलोपश्च' उ० ३ ८० सूत्रेण काकु प्रत्यय सम्प्रसारणमकारलोपश्च]

पृशनायुवः आत्मन स्पर्शमिच्छन्त्य (धेनव=किरणा गावो वाचो वा) प्र०—अत्र 'छान्दसो वर्णलोपो वा' इति सलोप १ ८४ ११ [पृशनपदाद् आत्मन इच्छाया क्यजन्ताद् उ प्रत्यय । स्त्रियामूङ् । पृशनम्=स्पृश सस्पर्शने (तुदा०) धातोश्छान्दस रूपम्]

पृशन्यः पर्शिता (देव=सूर्य) १ ७१ ५

पृश्नयः प्रष्टव्या (पशव) २४ १४ विचित्रचिह्ना (प्राणिन) २४ १५ या स्पृशन्ति ता (धेनव=किरणा गावो वाचो वा) प्र०—अत्र 'घृणिपृश्नि०' उ० ४ ५४ अनेनास्य निपातित १ ८४ ११ सुस्पर्शास्तन्वङ्गय (भा०—स्वमदृश रूपगुणसम्पन्ना स्त्रिय) प्र०—अत्र स्पृशधातोर्नि प्रत्यय सलोपश्च १२ ५५ प्रष्ठ्य (विश=प्रजा) १५ ६०.

पृश्निम्=सूर्यम् १ १६० ३ अन्तरिक्षम् ५ ५२.१६ आकाशम् १ १६४ ४३ **पृश्निः**=स्पर्शव्य (पशु पक्षी वा) २४ ४ अन्तरिक्षमवकाश ७ ३५ १३ अन्तरिक्षमिव गम्भीराशयोऽक्षोभ. (धीर=मेधावी विद्वान्) ७ ५६ ४ अन्तरिक्षमिव वृद्धि ५ ६० ५ विचित्रवर्ण सूर्य १७ ६० अन्तरिक्षस्था (यज्ञे कृताऽऽहुति) प्र०—पृश्निरिति साधारणनामसु पठितम् निघ० १ ४, २ १६ आदित्य इव १ १६८ ९ अन्तरिक्षे प्र०—अत्र 'सुपा सुलुक्०' सप्तम्येकवचने प्रथमैकवचनम् ३ ६ जल के सहित सूर्य स० प्र० ३१३, ३६ **पृश्नेः**=अन्तरिक्षस्य मध्ये ६ ६ ४ [पृश्निरिति पृश्निगर्भा पदे द्रष्टव्यम् अन्न वै देवा पृश्नीति वदन्ति ता० १२ १० २४ अन्न वै पृश्नि श० ८ ७ ३ २१ इय (पृथिवी) वै पृश्नि तै० १.४.१ ५ त्रय पृश्नय सर्वदेवत्या काठ० ४९ १०. पृश्नयो मारुता मै० ३ १३ १२ पृश्नियै पयसो मरुतो जाता तै० स० २ २ ११ ४ पृश्नियै प्रियङ्गव तै० स० २ २ ११ ४ वाग्वै पृश्नि काठ० ३४ १ व्याघ्रम्प वै पृश्नि मै० ४ २.२४ यत् पृश्निस्तेन मारुत तै० स० २ १ ३.३ मारुती पृश्नि पष्ठौही गर्भिणी मै० २ ६ १३]

पृश्निगर्भाः पृश्निमन्तरिक्ष गर्भो येषा ते पृश्निगर्भा (लोका) ७ १६ [पृश्नि-गर्भपदयो समास । पृश्नि=स्पृश सस्पर्शने (तुदा०) धातो 'घृणिपृश्नि०' उ० ४ ५२. सूत्रेण नि प्रत्यय सलोपश्च निपात्यते । पृश्नि साधारणनाम निघ० १ ४ पृश्निगर्भाः प्राप्टवर्णगर्भा आप इति वा नि० १० ३९ पृश्निरादित्यो भवति प्राश्नुत एन वर्ण इति नैरुक्ता सस्पृष्टा रसान्। सस्पृष्टा भास ज्योतिषा सस्पृष्टो भासेति वा । अथ द्यौ सस्पृष्टा ज्योतिर्भि पुण्यकृद्भिश्च नि० २ १४]

पृश्निगावः पृश्निवदन्तरिक्षवद् गावो येषान्ते (नियत=निश्चिदगतयो वायव) ७ १८ १० [पृश्नि-गोपदयो समास । पृश्निपदं व्याख्यातम्]

पृश्निगुम् अन्तरिक्षे गन्तारम् (यानम्) १ ११२ ७ [पृश्निपद व्याख्यातम् । तदुपपदे गम्लृ गतौ (भ्वा०) धातो 'डुप्रकरणे मितद्र्वादिभ्य उपसख्यानम्' अ० ३ २.१८० वा० सूत्रेण डु प्रत्यय]

पृश्निनिप्रेषितासः पृश्नावन्तरिक्षे नितरा प्रेपिता यैस्ते (नियत.=निश्चिदगतयो वायव) ७ १८ १० [पृश्नि-निप्रेषितपदयो. समासे जसोऽसुगागम । निप्रेषित=नि+प्र+इष गतौ (दिवा०) धातोः क्त]

पृश्निमातरः पृश्निराकाशमन्तरिक्ष मातोत्पत्तिनिमित्त येषा ते (मरुत=शिल्पव्यवहारप्रापका वायव) प्र०—पृश्निरिति साधारणनामसु पठितम् निघ० १ ४, १ २३ १० आकाशादुत्पद्यमाना (मरुत=वायव) इव १.८९ ७ पृश्निरन्तरिक्ष माता येषा वायूना त इव १ ८५ २ अन्तरिक्षमातर (वायव) ५ ५७.३ [पृश्नि-मातृपदयो समास । पृश्निरिति व्याख्यातम् । पृश्निमातरो हि मरुत मै० २ ५ ७ मरुत पृश्निमातर इति वा आहु जै० २ १७६]

पृश्न्याः अन्तरिक्षे भवा सृष्टय ६ ४८ २२ पृश्नावन्तरिक्षे भवम् (ऊध.=पयोऽधिकरणम्) २ ३४ १० अन्तरिक्षस्य मध्ये २ २४ [पृश्निप्राति० भवार्थे यत् । पृश्निरिति व्याख्यातम्]

पृषतः स्थूलान् (पदार्थान्) २४ ११ मृगविशेष २४ ४० [पृषु सेचने (भ्वा०) धातो 'वर्त्तमाने पृषद्बृहन्०' उ० २ ८४ सूत्रेण अतिप्रत्यय शतृवच्च कार्यम्]

पृषतान् मृगविशेषान् २४ २७ [पृषु सेचने (भ्वा०)

पृथिवीद्यावा भूमिविद्युतौ ३ ४६.५

पृथु विस्तीर्णम् (ज्रय =तेज) प्र०—'प्रथिम्रदि-भ्रस्जा सम्प्रसारण सलोपश्च' उ० १ २८ इति प्रथधातो कु प्रत्यय सम्प्रसारणञ्च १.१०१७ विस्तीर्ण प्रख्यात वा (सद्म=गृहम्) ५ ८७ ७ सर्वर्त्तुस्थानाऽवकाशयोगेन विशालम् (छर्दि =गृहम्) १ ४८ ५ नानाविद्यासु विस्तीर्णम् (श्रव =सुवर्णादिधनम्) १ ९ ७ अतिविस्तीर्णम् (यान= रथ) ऋ० भू० १९६ **पृथूनि**=विस्तीर्णानि (सुखानि) ६ ६ २ [पथ प्रख्याने (भ्वा०) धातो 'प्रथिम्रदिभ्रस्जा मप्रसारणम्०' उ० १ २८ सूत्रेण कु प्रत्यय सम्प्रसारणञ्च। पृथु महान्त लोकम् नि० १२ २२]

पृथुः विस्तृतमुख (अर्वा=विज्ञानयुक्त पुत्र) ११ ४४ विस्तीर्णपुरुपार्थ (अग्नि =राजा) ४ २ १३ अतीव विस्तृतो व्यापक परमेश्वर ऋ० भू० १६२, अथर्व० १३ ४ ५२ विस्तीर्णवल (इन्द्र विद्याप्रकाशको राजा) २ २१ ४ महान् (अग्नि =विद्युत्) १० २९ **पृथू**=विस्तीर्णौ (गभस्ती= हस्तौ) ६ १९ ३ [पृथुरिति व्याख्यातम्। अदो वै पृथु यस्मिन् देवा श० १४.१ २७ श्रोत्र वै पृथु श्रवाय्यम् श० १ ४ ३ ४]

पृथुज्रयम् विस्तीर्णं वहुगतिम् (रथ=रमणीय यानम्) ४ ४४ १ **पृथुज्रयाः**=पृथुस्तीव्रो ज्रयो वेगो यस्य स (सर्ववलाध्यक्षो राजा) ३ ४९ २ [पृथु-ज्रयपदयो समास । पृथुरिति व्याख्यातम् । ज्रय =जि अभिभवे (भ्वा०) धातोरच्प्रत्यय । अन्यत्र औणादिकोऽसुन् । पृथुज्रया पृथुजव नि० ५ ९]

पृथुज्रयी वहुवेगा (असुर्येव=असुपु प्राणेपु भवा विद्युदिव) १ १६८ ७ [पृथुज्रय व्याख्यातम् । तत स्त्रिया ङीप् गौरादित्वात्]

पृथुपाजसः वहुवला (अश्वा =व्याप्ता किरणा) ३.६१ २ **पृथुपाजसा**=विस्तीर्णवलेन (रथेन=रमणीयेन यानेन) ४.४६ ५. **पृथुपाजसे**=वलावलाय (गातवे= स्तावकाय जनाय) ३ ३ १ **पृथुपाजाः**=वृहद्-वल (विप्र =मेधाविजन) ३ ५ १ विस्तीर्णवल (अग्नि = वह्नि) ३ २ ११ पृथु विस्तीर्ण पाजो वल यस्य स (अग्नि =वह्नि) ३ २७ ५ [पृथु-पाजस्पदयो समास । पाज =अन्ननाम निघ० २ ७ वलनाम निघ० २ ९ पा रक्षणे (अदा०) धातो 'पातेर्वले जुट् च' उ० ४ २०३. सूत्रेण असुन्]

पृथुपाणिः पृथवो विस्तीर्णा पाणिरिव किरणा यस्य स (सविता=जगदीश्वर) २.३८ २ [पृथु-पाणि-पदयो समास । पाणि =पण व्यवहारे स्तुतौ च (भ्वा०) धातो 'अशिपणायोरुडाय्यलुकौ च' उ० ४ १३३ सूत्रेण इण् आयप्रत्ययस्य च लुक्]

पृथुप्रगाणम् पृथूनि प्रकृष्टानि गानानि स्तवनानि यस्मिँस्तम् (अ०—स्वस्वभावाख्य गृहम्) ३.५ ७ [पृथु-प्रगानपदयो समास]

पृथुप्रगामा पृथुभिर्विस्तृतैर्यानै प्रकृष्टो गामो गमन यस्य स (सूनु =कार्यकारी सन्तान) प्र०—अत्र 'सुपा सुलुक्०' इति विभक्तेराकारादेश १ २७ २ [पृथु-प्रगाम-पदयो समास । विभक्तेराकारादेशश्छान्दस । प्रगाम = प्र+गम्लृ गतौ (भ्वा०) धातोर्घञ्]

पृथुबुध्नः पृथु विस्तीर्णं बुध्नमन्तरिक्ष निवासार्थं यस्य स (मेघ) प्र०—बुध्नमन्तरिक्ष वद्धा अस्मिन् धृता आप इति नि० १० ४४, १ १४ विस्तीर्ण-प्रवन्ध (अग्नि = विद्वान् जन) ४ २ ५ पृथु महद् वुध्न मूल यस्य स (ग्रावा=पाषाण) १ २८ १ [पृथु-बुध्नपदयो समास । बुध्न =वन्धवन्धने (क्र्या०) धातो 'वन्धे व्रधिवुधी च' उ० ३ ५ सूत्रेण नक् प्रत्ययो धातोश्च बुधादेश । बुध्नमन्तरिक्ष वद्धा अस्मिन् धृता आप इति वा । इदमपीतरद् बुध्नमेत-स्मादेव वद्धा अस्मिन् धृता प्राणा इति नि० १० ४४]

पृथुबुध्नासः विस्तीर्णाऽन्तरिक्षा (अ०—जना स्त्रियश्च) १ १६९ ६ [पृथुवुध्न इति व्याख्यातम् । ततो जसोऽसुगागम]

पृथुयामन् वहुप्रापक (ऋष्वे=महागुणयुक्त विद्वज्जन) ६ ६४ ४ [पृथूपपदे या प्रापणे (अदा०) धातोर्मनिन्-प्रत्यय]

पृथुश्रवसः पृथूनि विस्तृतानि श्रवास्यन्नानि यासा ता (अराती =शत्रुसेना) १ ११६ २१ [पृथु-श्रवस्पदयो समास । श्रवस्=अन्ननाम निघ० २ ७ धननाम निघ० २ १०]

पृथुष्टुके पृथुर्विस्तीर्णा ष्टुका स्तुति केशभार कामो वा यस्या तत्सम्बुद्धौ, महास्तुते, पृथुकेशभारे, पृथुकामे वा (देवि=कुमारि) ३४ १० विस्तीर्णजघने (सिनीवालि= विद्वत्कुलस्य कन्ये) २ ३२ ६ [पृथु-ष्टुकापदयो समास । ष्टुका=स्त्यै सघाते (भ्वा०) धातोरौणादिको डुकन्-प्रत्यय. । पृथुष्टुके पृथुजघने, स्तुक स्त्यायते सघात पृथु-केशस्तुके पृथुस्तुके वा नि० ११ ३२]

पृथ्वी भूमि १ ६५ ३ **पृथ्वीम्**=भूमिम् १३ ९

१० १६ **पृष्ठे**=उपरि अ०—पृष्ठोपरि ३ ५ परभागे १ १६४ १० पश्चाद्भागे २६ ४२ ज्ञीप्सिते (लोके=द्रष्टव्ये स्थाने) १५ ५० सेचके भागे १५ ११ तले १३ २४ [पृष्ठ स्पृशते सस्पृष्टमङ्गं नि० ४ ३ स्पृश सस्पर्शने (तुदा०) धातो 'तिथपृष्ठगूढयूथप्रोथ' उ० २ १२ सूत्रेण थक्प्रत्यय आदे सकारस्य च लोपो निपात्यते। प्रच्छ ज्ञीप्सायाम् (तुदा०) धातोर्वा रूपम्। पृपु सेचने (भ्वा०) धातोर्वा रूपम्। पृष्ठानि=पृष्ठैर्वै देवा स्वर्गं लोकमस्पृक्षन् कौ० २४ ८ स्वर्गो लोक पृष्ठानि ता० १६ १५ ६ तदाहुर्नाना लोकानि पृष्ठानि ता० १६ १५ ६ एतानि खलु वै सामानि यत्पृष्ठानि तै० १ ८ ८ ३ स्वराणि पृष्ठानि भवन्ति कौ० २४ ८ सर्वाणि हि पृष्ठानीन्द्रस्य निष्केवल्यानि ता० ७ ८ ५. पिता वै वामदेव्य पुत्रा पृष्ठानि ता० ७ ६.१ आत्मा वै पृष्ठानि कौ० २५ १२ ऋतवो वै पृष्ठानि श० १३ ३ २ १ सप्त पृष्ठानि श० ६ ५ २ ८ अन्न पशव पृष्ठानि ता० १६ १५ ८ वीर्यं वै पृष्ठानि ता० ४ ८ ७ तेजो ब्रह्मवर्च्चस श्रीर्वै पृष्ठानि ऐ० ६ ५ एषा ह वा उत्तरावती श्रीर्यत्-पृष्ठानि जै० २ ४२५ ऐन्द्राणि पृष्ठानि काठ० ३४ १६ ओज एव वीर्य पृष्ठानि तै० स० ७ ३ ५ ३ चक्रियौ पृष्ठानि मै० ४ ७ ३ पृष्ठानि वै यज्ञस्य दोह काठ० ३३ ८ यज्ञो वै पृष्ठानि काठ० ३२ ६]

पृष्ठयज्वने य पृष्ठेन यजति तस्मै (विदुषे जनाय) ५.५४.१ [पृष्ठ-यज्वन्पदयो समास। यज्वन्=यज देव-पूजादिषु (भ्वा०) धातो 'सुयजोर्ङ्वनिप्' अ० ३ २ १०३ सूत्रेण ङ्वनिप्प्रत्यय]

पृष्ठीः पृष्ठदेश पश्चाद्भाग प्र०—अत्र 'सुपा सुलुक्०' इति सो स्थाने सु २० ८

पृष्ठेव पृष्ठानीव ४ २ ११ [पृष्ठा-इव पदयो समास। पृष्ठा=पृष्ठप्राति० शेर्लोपश्छन्दसि]

पृष्ठ्येन पश्चाद्भवेन सुखेन ४ २० ४ पृष्ठे भवेन दिनेन ४ ३ १० [पृष्ठप्राति० भवार्थे यत्। पृष्ठमिति व्याख्यातम्। पृष्ठ्य =(आङ्गिरसा) सर्वे पृष्ठ्यै स्वर्ग लोकमभ्यस्पशन्त यदभ्यस्पशन्त तस्मात् स्पश्यस्तं वा एत स्पश्य सन्त पृष्ठ्य इत्याचक्षते परोक्षेण गो० पू० ४ २३ पिता वा अभिप्लव पुत्र पृष्ठ्य गो० पू० ४ १६ पृष्ठ्यानि—श्री पृष्ठ्यानि कौ० २१ ५ पशव पृष्ठ्यानि कौ० २१ ५]

पेचे पचति ४ १८ १३ [डुपचप् पाके (भ्वा०) धातोर्लिट्]

पेतथुः पतेतम् १.१८२ ५ [पत्लृ गतौ (भ्वा०) धातोर्लिट्]

पेत्वः पतनशील (कृष्ण पशु) २६ ५८ शीघ्रगामी (पशु) २६ ५६ **पेत्वेन**=प्रापणेन ७ १८ १७ [पत्लृ गतौ (भ्वा०) धातो पा पाने (भ्वा०) धातोर्वा 'अन्येऽपि दृश्यन्ते' उ० ४ १०५ सूत्रेण त्वन्। पतते तस्य लोप]

पेदवे गमनाय प्र०—अत्र पद-धातोरौणादिक उ० प्रत्यय वर्णव्यत्ययेनाकारस्य एकारश्च १ ११७ ६ प्राप्तु गन्तु वा १ ११६ १०. गमनाऽऽगमनाय १ ११८ ६ परमो-त्तमव्यवहारसिद्धि-प्रापणाय ऋ० भू० १६६ [पद गतौ (दिवा०) धातोरौणादिक उ प्रत्यय। धातोरकारस्य एकारो वर्णव्यत्ययेन]

पेयाः पिबे ५ २६ ३ [पा पाने (भ्वा०) धातोर्लिङ्]

पेरुके पालके (कर्मणि) ६ ६३ ६ [पेरुप्राति० स्वार्थे कन्। पेरुरिति व्याख्यास्यते]

पेरुम् पूरकम् (स्तुत्य जनम्) ५ ८४ २ **पेरुः**=पाता (विद्वज्जन) १ १५८ ३ पारयिता (नपात्=नौ) ७ ३५ १३ रक्षक (शिष्यो जन) ६.१० [पीङ् पाने (दिवा०) धातो 'मीपीभ्या रु' उ० ४ १०१ सूत्रेण रु प्रत्यय। पृ पालनपूरणयो (जु०) धातोर्वा रु प्रत्यय। धातोर्गुणे रपरत्वे च अकारस्य एकारादेशो वर्णव्यत्ययेन]

पेशलम् उत्तमाऽङ्गवत् (वपु=शरीरमुदक वा) १६ ८३ [पिश अवयवे (तुदा०) धातोरौणादिक कल् प्रत्यय]

पेशसा रूपेण २० ४१ **पेशः**=रूपम् १६ ८६ सु-रूपम् ७.४२ १ सुन्दर रूप हिरण्यञ्च प्र०—पेश इति रूपनाम निघं० ३ ७ हिरण्यनाम निघ० १ २, ४ ३६.७ हिरण्यादिधनम् श्रेष्ठ रूप वा १ ६ ३ **पेशांसि**=रूपाणि १ ६२ ४ [पेश रूपनाम निघ० ३ ७ हिरण्यनाम निघ० १.२ पेश इति रूपनाम पिंशतेर्विपिंशित भवति नि० ८ ११]

पेशस्कारीम् रूपकर्त्रीम् (व्यभिचारिणी स्त्रीम्) ३० ६ [पेशस् उपपदे डुकृञ् करणे (तना०) धातोरण्। तत स्त्रिया ङीप्। पेशस् व्याख्यातम्]

पेशस्वतीः प्रशस्तसुरूपवती (त्रिविधा वाच) २८ ३१ [पेशस्प्राति० प्रशसाया मतुवन्तान् ङीप्]

पेशितारम् विद्याऽवयवेत्तारम् भा०—विद्यान्याय-प्रकाशकम् (पुरुषम्) [पिश अवयवे (तुदा०) धातो कर्त्तरि तृच्]

धातो 'पृषिरञ्जिभ्या किन्' उ० ३ १ ११ सूत्रेण अतच् किच्च । पृषतो वैश्वदेव काठ० ४७ ७]

पृषती अङ्गै सुसिक्ता (पशु-जाति) २४ २ **पृषतीभिः**=स्वगमनागमनवेगादिगुणै १ ६४ ८ मरुद्गतिभि २ ३६ २ वेगादिभि ५ ५८ ६ वायुगतिसदृशगतिविशिष्टाभि-र्धाराभि २ ३४ ३ पर्षन्ति सिञ्चन्ति धर्मवृक्ष याभिरद्भि १ ३७ २ **पृषतीषु**=सेचनकर्त्रीषु (भा०—उत्तमासु विद्यासु) ५ ६० २ **पृषती:**=अग्निवायुयुक्ता अप १ ८५ ५ मरुत्सम्बन्धिनीरप १ ८५ ४ सेचननिमित्ता गती ३ २६ ४ सेचनकर्त्रीरुदकधारा ५ ५७ ३ वायुजलगती ५ ५५ ६ पर्षन्ति सिञ्चन्ति याभिर्नाडीभिर्नदीभिस्ता (अ०—नाडी-र्नदीर्वा) २ १६ पर्षन्ति सिञ्चन्ति याभिस्ता शीघ्रगती मरुता धारणवेगादयोऽश्वा प्र०—पृषत्यो मरुतामित्या-दिष्टोपयोजननामसु पठितम् निघ० १ १५, १ ३६ ६ [पृषदिति शत्रन्त व्याख्यातम् । तत स्त्रिया ङीप् । पृषती गौर्धेनुर्दक्षिणा, सा हि वैश्वदेवी मै० २ ३ २ वैश्वदेवी हि पृषती काठ० १२ २]

पृषती सेक्तारौ जलगुणौ १ १६२ २१ स्थूलौ (हरी=हरणशीलावश्वौ) २५ ४४ [पृषदिति व्याख्यातम् । ततो नपुसके प्रथमाद्विवचने रूपम् । लिङ्गव्यत्यय]

पृषदश्वः पृषदिव वेगवन्तस्तुरङ्गा यस्य स (सेना-पति) १ ८७ ४ **पृषदश्वान्**=सिञ्चकानाशुगामिन पदार्थान् वा ५ ४२ १५ **पृषदश्वाः**=सिक्तजलाग्निनाऽऽशु-गामिनो महान्त (मरुत =विद्वासो मनुष्या) ७ ४० ३ पृषत पुष्ट्यादिना ससिक्ताऽङ्गा अश्वा येषान्ते (मरुत = मनुष्या) २५ २० सेनाया पृषन्तोऽश्वा येषान्ते (देवा = विद्वज्जना) १ ८९ ७ [पृषद्-अश्वपदयो समास । पृषदिति व्याख्यातम्]

पृषदश्वासः पृषत स्थूला सिञ्चिता अश्वा यैस्ते (प्राज्ञा राजजना) २ ३४ ४ पृषत पुष्टा पुष्टा अश्वा येषान्ते (देवा =विद्वज्जना) १ १८६ ८ पृषत सेचका अश्वा वेगादयो गुणा येषु ते (गन्तार =वायव) ३ २६ ६ [पृषद्-अश्वपदयो समासे जसोऽसुगागम । पृषदिति व्याख्यातम्]

पृषदाज्यम् दध्याज्यादिभोज्य वस्तु ३१ ६ पर्षन्ति सिञ्चन्ति क्षुन्निवृत्त्यादिकारकमन्नादि वस्तु यस्मिँस्तत् पृषच्चा-ऽऽज्य घृत मधुदुग्धादिकञ्च तत् (भक्ष्याऽन्नोपलक्षण वस्तु) ऋ० भू० १२३, ३१ ६ [पृषद्-आज्यपदयो समास । पृष-दिति व्याख्यातम् । आज्यम्='आङ् पूर्वादञ्जे सज्ञायामुप-सख्यानम्' अ० ३ १ १०६ वा० सूत्रेण अञ्जेराङ्पूर्वात् क्यप् । अन्न हि पृषदाज्यम् श० ३ ८ ४ ८ प्राणो हि पृष-दाज्यम् श० ३ ८ ४ ८ पय पृषदाज्यम् श० ३ ८ ४ ८ पशवो वै पृषदाज्यम् तै० १ ६ ३ २ प्राणापानौ वै पृष-दाज्यम् मै० ३ १० २ ४ प्राणापानौ वा एतौ पशूना यत् पृषदाज्यम् तै० स० ६ ३ ६ ६ ऐन्द्राग्न पृषदाज्य देवतया काठ० ३६ २]

पृषद्योनिः स्पृपतिर्वृष्टिर्योनिर्यस्या सा (गी =वाक्) ५ ४२ १ [पृषद्-योनिपदयो समास । पृषद् इति व्याख्या-तम् । योनि =यु मिश्रणेऽमिश्रणे च (अ०) धातो 'वहि-श्रिश्रुयुद्रु०' उ० ४ ५१ सूत्रेण नि प्रत्यय । योनि = परियुतो भवति नि० २ ८]

पृषद्वत् सेचकवत् ७ २ ४ [पृषत्प्राति० तुल्यार्थे वति । पृषदिति व्याख्यातम्]

पृषन्तम् विद्यादिशुभगुणान् सिञ्चन्तम् (जनम्) ४ ५० २ **पृषन्तः**=स्थूलाऽङ्गा (त्र्यम्बका =गवादय) २४ १८ [पृषु सेचने (भ्वा०) धातोरौणादिकोऽति प्रत्यय शतृवच्च]

पृष्टबन्धो य पृष्टान् जनानुत्तरेषु बध्नाति तत्सम्बुद्धौ [अग्ने=प्रकाशात्मन् विद्वन्) ३ २० ३ [पृष्ट-बन्धुपदयो समास । पृष्ट =प्रच्छ ज्ञीप्सायाम् (तुदा०) धातो क्त]

पृष्टः विदुष प्रति य पृच्छ्यते प्रष्टव्यो वा स (अग्नि =विज्ञानस्वरूप ईश्वर विद्युदग्निर्वा) १ ६८ २ सिक्त स्थित (अग्नि =सूर्य) ३३ ६२ प्रष्टु योग्य (रथ =रमणीय यानम्) ३ ४६ ४ ज्ञातुमिष्ट (अग्नि = प्रसिद्ध पावक) १८ ७३ [प्रच्छ ज्ञीप्सायाम् (तुदा०) धातो क्त]

पृष्ट्यामयी पृष्टौ पृष्ठ आमय क्लेशरूपो रोगो विद्यते यस्य स (विद्वज्जन) १ १०५ १८ [पृष्टचामयी= पृष्ठरोगी नि० ५ २१]

पृष्ठम् ज्ञीप्सितम् (स्व =सुखम्) १७ ६५ उपरि-भागम् १ १६६ ५ भूम्याद्यधिकरणम् ऋ० भू० १५४ अर्वाग् व्यवहार ११ २० पृथिवी आदि सब लोक का आधार आर्याभि० २ १३, १८ २६ परभागम् (नाक= मोक्षसुखम्) ३ २ १२ ज्ञातुमिच्छा १८ २६ प्रश्न शिष्ट च २२ ३३ प्रच्छनीयम् (धनम्) ४ ५ ६ पश्चाद्-भागम् १ ११५ ३ प्रच्छन्नम् ६ २१ पृष्ठभागम् १ ५८ २. आधा-रम् २३ ५० अधिकरणम् (समुद्रम्=अन्तरिक्षमिव सागरम्) १३ २ **पृष्ठात्**=समीपात् १७ ६७ उपरिभागात्

पुम्पाणां समूहे साध्व्य (स्त्रिय) २१ ४३ [पौरुषेय इति व्याख्यातम्। तत स्त्रिया 'टिड्ढाणञ्०' इति ङीप्]

पौल्कसम् पुल्कसस्याऽन्त्यजस्याऽपत्यम् प्र०—अत्र पृषोदरादित्वादभीष्टसिद्धि ३० १७

पौष्णः पूष्ण पृथिव्या अय सम्बन्धी (प्रजापति = जीव) ३६ ५ पूषदेवताका (श्याम पशु) २६ ५८ **पौष्णाः**=पुष्टिनिमित्तमेघदेवताका (श्यामा पशव) २४ ७ पुष्टिकरमेघदेवताका (श्यामा पशव) २४.१४ पुष्टिकर-सम्बन्धिन (कुलुङ्गाऽज-नकुलादय) २४ ३२ **पौष्णी**=पूषदैवत्यौ (पिशङ्गौ=पीतवर्णौ पशू) २६ ५६ [पूषन् इति व्याख्यातम्। तत 'सास्य देवता' इत्यण्-प्रत्यये 'अन्' अ० ६ ४ १६७ सूत्रेण प्रकृतिभावे प्राप्ते 'षपूर्वहन्धृत-राज्ञामणि' अ० ६ ४ १३५ सूत्रेणाकारलोप.]

पौंस्यम् पुसु साधु (बलम्) ४.३० २३. पुम्भ्यो हितम् (वीर्यं=पराक्रमम्) ४ ३० ८ पुरुषार्थम् २ १३ १० पुरुषार्थस्य भावम् १ १५५ ४ पुसो भावम् १ १५५ ३ पुसो भाव कर्म बल वा १ ८० १० पुरुषार्थयुक्त बलम् १.१०१ ३ **पौंस्यानि**=वचनानि ६ ३६.३ **पौंस्याय**= पुसु भवाय बलाय ७ ३० १ **पौंस्ये**=पुसो भवे यौवने १ ५६ ३ [पौंस्यानि बलनाम निघ० २ ९ पौंस्ये सग्राम-नाम निघ० २ १७ पुसुप्राति० भावे कर्मणि वा ष्यञ् प्रत्यय। अथवा हितार्थे साध्वर्थे भवार्थे वा यत् छान्दस]

पौंस्या पुम्भ्यो हितानि बलानि ४ ३२ ११ पुसो बलानि प्र०—पौंस्यानीति बलनामसु पठितम् निघ० २.९ 'शेर्लुगत्र १ ५ ६ पुमामिमानि बलानि ५ ५६ ४ पुरुषार्थ-जानि बलानि ६ ४६ ७ पुसु साधूनि बलानि १ १३६ ८ पौंस्यमिति व्याख्यातम्। तत शेर्लोपश्छन्दसि]

पौंस्येभिः उत्कृष्टै शरीरात्मबलै १ १०० १० पुरुषार्थै १ १६५ ७ [पौंस्यमिति व्याख्यातम्, तत 'बहुल छन्दसी' ति भिस ऐसादेशो न भवति]

प्यायताम् सर्वतो वर्धताम् ३८ १८ वर्धयताम्, प्र०—अत्राऽन्तर्गतो ण्यर्थ ५.७ **प्यायध्वम्**=आप्यायामहे वा प्र०—अत्र पक्षे व्यत्यय १ १ **प्यायन्ताम्**=पुष्टा भवन्तु १ ९३ १२ **प्यायय**=वर्धय वर्धयति वा ५ ७ **प्यायस्व**=पुपाण ३८ २१ प्यायते वा २ १४ वर्धस्व वर्धयेद् वा ५ ७ [ओप्यायी वृद्धौ (भ्वा०) धातोर्लोट्]

प्यासिषीमहि स्तुवीमहि प्र०—अत्र 'प्यैङ् स्तुतौ' धातो 'सिब्बहुलं छन्दसि' अ० ३ १ ३४ अनेन वार्त्तिकेन सिप् प्रत्यय २ १४ सर्वतो वर्द्धेमहि ३८ २१ [प्यैङ् वृद्धौ (भ्वा०) धातोर्लिङ्। सिब्विकरणश्छान्दस]

प्र प्रकृष्टार्थे क्रियायोगे १ १०.११ गुणैर्यत्प्रकृष्ट तदर्थे क्रियायोगे २ ११ अत्यन्तम् ८ ३ प्रगत १० ३० प्रकृष्ट-तया २.१५ प्रकृष्टम् २ १२ प्रयत्नेन १७ ३९ अधिक आर्याभि० २ ११, ३४ ३६ [आ इत्यर्वागर्थे, प्र परेत्यस्य प्रातिलोम्यम् नि० १ ३ प्रेव नश्यसि पराचीव नश्यसि नि० ९ २८ अन्तरिक्ष वै प्र ऐ० २ ४१ प्राणो वै प्र ऐ० २ ४०]

प्रउगम् प्रयोगार्हम् (उक्थ्यम्=उपदेष्टु योग्य वचनम्) १५ ११ [प्राणा प्रउगम् कौ० १४ ४ आर्ति-च्छन्दस प्रउग कौ० २३ ६ ग्रहोक्थ वा एतद्यत्प्रउगम् ऐ० ३ १]

प्रकङ्कताः प्रकृष्टपीडाप्रदाश्चञ्चला (सर्पादय) १ १९१ ८ [प्र-कङ्कतपदयो समास। कङ्कतम्=ककि गतौ (भ्वा०) धातोर्बाहु० औणादिकोऽतच्]

प्रकरत् प्रकृष्टतया कुर्यात ४ २९ ३ [प्र+डुकृञ् करणे (तना०) धातोर्लुङ्। 'कृमृदृरुहिभ्य ०' इति च्ले स्थानेऽङ्]

प्रकरितारम् विक्षेप्तारम् (पुरुषम्) ३० १२ [प्र+ कॄ विक्षेपे (तुदा०) धातो कर्त्तरि तृच्]

प्रकलवित् य प्रकृष्ट कलन सङ्ख्या वेत्ति स (इन्द्र =राजा) ७ १८ १५ [प्रकलोपपदे विद ज्ञाने (अदा०) धातो कर्त्तरि क्विप्। प्रकलविद् वणिग् भवति, कलाश्च वेद प्रकलाश्च नि० ६ ६]

प्रकामाय प्रकृष्टकामनासिद्धये ३० १२ [प्र-काम-पदयो समास। काम =कमु कान्तौ (भ्वा०) धातोर्घञ्]

प्रकामोद्याय य प्रकृष्टै कामैरुद्यतस्तस्मै (पुरुषाय) ३० ९

प्रकुपितान् प्रकोपयुक्तान् शत्रूनिव वर्त्तमानान् (पर्वतान्=मेघान्) २ १२ २ [प्र+कुप क्रोधे (दिवा०) धातो क्त प्रत्यय]

प्रकृणुध्वम् प्रकुरुध्वम् १ १२२ ४ **प्रकृण्वे**=प्रकर्ष-तया करोमि १ १३८ २ [प्र+डुकृञ् करणे (तना०) धातोर्लोट्। विकरणव्यत्ययेन श्नु]

प्रकृथ प्रकर्षेण कुरुथ प्र०—अत्र लोडर्थे लट् विक-रणस्य लुक् च १ ११२ ८ [प्र+डुकृञ् करणे (तना०) धातोर्लट्। विकरणस्य लुक्]

प्रकेतम् प्रकृष्ट विज्ञानम् २ १७ ७ **प्रकेतः**=प्रकृष्टा केत प्रज्ञा यस्य स (भा०—अध्यापक उपदेष्टा च जन)

पेषी पेषाकार गर्भस्थ वीर्य क्रनवती (युवति) ५ २ २

पैङ्गराजः पक्षिविशेष २४ ३४

पैजवनस्य वेगयुक्तस्य (नप्तु =पौत्रस्य) ७ १८ २२ क्षमाशीलस्य पुत्रस्य ७ १८ २३ क्षमाशीलाज्जातस्य पुत्रस्य ७ १८ २५ [पैजवन पिजवनस्य पुत्र । पिजवन पुन. स्पर्द्धनीयजनो वाऽमिश्रीभावगतिर्वा नि० २ २४]

पैतृमत्यम् पितृमता भावमेव ७ ४६ [पितृमत्प्राति० भावे ष्यञ्-प्रत्ययो ब्राह्मणादित्वात् । अथवा 'वाङ्मतिपितृमता छन्दस्युपसख्यानम्' अ० ४ १ ८५ वा० सूत्रेण प्राग्दीव्यतीयेष्वर्थेषु ण्य प्रत्यय]

पैद्वः सुखेन प्रापक (वाजी=ज्ञानवान् जन) १ ११६ ६ यो यान मार्गे शीघ्रवेगेन गमयिता ऋ० भू० १६४, ऋ० १ ८ ६ १ [पैद्व अश्वनाम निघ० १ १४]

पोता पवित्रकर्त्ता (अग्नि =विद्वज्जन) ४ ६ ३ पवित्र पवित्रकर्त्ता वा (पुरोहित) १ ९४ ६ शोधक (सूर्य) २५ २ [पूञ् पवने (क्र्या०) धातो कर्त्तरि तृच्-प्रत्यय.]

पोत्रम् पवित्रम् (कर्म्म) २ १ २ पवित्रकारकम् (श्रेष्ठ वस्तु) १ ७६ ४ **पोत्रात्**=पुनाति येन गुणेन तस्मात् प्र०—अत्र 'सर्वधातुभ्य ष्ट्रन्' उ० ४ १६३ इति पूञ्धातो ष्ट्रन्-प्रत्यय स्वरव्यत्ययश्च १ १५ २ पवित्रकर्त्तु (विदुषो जनात्) २ ३७ २ [पूञ् पवने (क्र्या०) धातोरौणादिक ष्ट्रन्प्रत्यय । अथवा पूञ्धातो 'हलसूकरयो पुव' अ० ३ २ १८३ सूत्रेण करणे ष्ट्रन्-प्रत्यय]

पोषम् शरीरात्मपुष्टिकारकम् (सुवीर्यं=विद्याभ्यासम्) १ ९३ २ पुष्टिम् २३ ३१. आत्मशरीरयो पुष्ट्या सुखप्रदम् (रयिं=विद्यासुवर्णादि-सुधनम्) १ १ ३ पोषकम् (हिरण्य=तेजो सुवर्णं वा) ३४ ५० महापुष्टि करने वाले (रयिं=विद्यादि तथा सुवर्ण आदि धन को) आर्याभि० १.३ ऋ० १ १ १ ३ उत्तमाना धनाना भोगम् ३ २० **पोषस्य**=पोषकस्य जनस्य १२ ८ **पोषः**=बहुगुणयोगेन पुष्ट (पदार्थ) प्र०—भूमा वै रायस्पोष शत० ३ १ १ १२, ३ २० **पोषाय**=पुष्यन्ति प्राणिनो यस्मिन् व्यवहारे तस्मै ३ २३ पोषणकराय (पुरुषाय) ११ ७६ पुष्टिकराय (राये=धनाय) १ १४२ १० **पोषे**=पुष्टौ १७ ५४ पुष्यन्ति=यस्मिँस्तस्मिन् (यज्ञे) ५ ५ ६ पोषणे १७ ५४ **पोषेण**=पालनेन १२ ८ पोषणेन १७ ५० घृतदुग्धादिपुष्टिकारकपदार्थप्राप्त्या प० वि० । पुष्यन्ति येन तेन (पदार्थेन) ४ २२ **पोषैः**=पुष्टिकारकैराप्तविद्याजनितैर्वीर्ययुक्तैर्व्यवहारै ३ ३७ उत्तम पुष्टिकारक व्यवहारो से स० वि० १४६, ३ ३७ [पुष पुष्टौ (भ्वा०) धातोर्घञ् अथवा कर्त्तरि अच्]

पोषयत् पोषयेत् ५ ६ ७ [पुष पुष्टौ (दिवा०) धातोर्णिजन्ताल् लङ्]

पोषयित्नु पोषकम् (अध्यापनासनम्) ७ २ ९. पोषयित्री (धर्मशिक्षा) ३ ४ ९ पुष्टिकरम् (द्रव्यम्) ४ ५७.१ [पुष पुष्टौ (दिवा०) धातो 'स्तनिहृषिपुषि०' उ० ३ २९ सूत्रेण णिजन्ताद् इत्नुच् प्रत्यय । पोषयित्नु=पुष्ट पोषयितृ नि० १० १५]

पोष्या पोषयितुमर्हाणि (वार्याणि=धनादीनि) १ ११३ १५ [पुष पुष्टौ (दिवा०) धातोर्ण्यत् । तत शेर्लोपश्छन्दसि]

पोष्या पोषण करने योग्य पत्नी स० वि० १४७, अथर्व० १४ १ ५२. **पोष्याणाम्**=पोषितु योग्यानाम् (हरीणा=मनुष्याणाम्) ४ ४८ ५. [पुष पुष्टौ (दिवा०) धातोर्ण्यत् । तत स्त्रिया टाप्]

पोष्यावतः बहव पोष्या पोषणीया विद्यन्ते येषान्तान् (नॄन्) ५ ४१ ८ [पोष्यप्राति० भूम्न्यर्थे मतुप् । मतुप्प्रत्यये परे दीर्घश्छान्दस]

पौञ्जिष्ठम् पुल्कसम् ३०.८

पौर पुरोर्मनुष्यस्याऽपत्य तत्सम्बुद्धौ ५ ७४ ४ **पौरम्**=पुरि भव मनुष्यम् ५ ७४ ४ **पौरः**=पुरि भव (इन्द्र =वैद्य) २ ११ ११ **पौराय**=पुरि भवाय (मनुष्याय) ५ ७४.४ [पुरव मनुष्यनाम निघ० २.३ ततोऽपत्यार्थेऽण् । उकारलोपश्छान्दस । अथवा पुर्-प्राति० भवार्थेऽण्]

पौरुकुत्सिम् पुरवो बहव कुत्सा शस्त्राऽस्त्रविद्यायोगा यस्य तस्याऽपत्यम् (सत्पुरुषम्) ७ १९ ३ [पुरु-कुत्सपदयो समासे कृतेऽपत्यार्थे 'अत इञ्' इतीञ् प्रत्यय । पुरु=बहुनाम निघ० ३ १ कुत्स =वज्रनाम निघ० २ २०]

पौरुकुत्स्यस्य बहुवज्रादिशस्त्राऽस्त्रविदोऽपत्यस्य (सूरे =मेधाविनो जनस्य) ५ ३३ ८ [पुरु-कुत्सपदयो समासे कृतेऽपत्यार्थे यञ्-प्रत्यय]

पौरुषेयः पुरुषाणा समूह १५ १५ [पुरुषप्राति० समूहार्थे 'पुरुषाद् वधविकारसमूह तेनकृतेष्विति वक्तव्यम्' अ० ५ १ १० वा० सूत्रेण ढञ् । ढस्य एयादेश]

पौरुषेयीम् पौरुषेयस्य रीतिम् ७ ४ ३ **पौरुषेय्याः**=पुरुषसम्बन्धिन्या (युक्ताहारविहारक्रियाया) २१ ४४.

चिकित्सकौ) २८ ७ **प्रचेतः**=प्रकृष्ट-प्रज्ञ (विद्वज्जन) १.११३ १. प्रकृष्टविज्ञान (अग्ने=विद्वज्जन) ६ १३ ३ प्रकर्षेण प्रज्ञया युक्त (अध्यापक) ७ १७ ५ **प्रचेताः**=प्रकृष्ट चेत प्रज्ञा यस्य स, भा०—यो न मूढ (विद्वान् जन) २० ३७ य अयानान् प्रचेतयति स (अग्नि=विद्युत्) २ १० ३ प्रकृष्टञ्चेत सज्ञानमस्य स (कवि=क्रान्तप्रज्ञो मेधाविजन) २६ २५ प्रकृष्टयुक्तो विज्ञापको वा (अग्नि=विद्वान्) ३ २५ १ यथा प्राण प्रचेतयति तथा (जगदीश्वरो विद्वान् वा पुरुष) ५ ३१ प्राज्ञ प्रज्ञापक (अग्नि=विद्वान् जन) ४ ६ २ प्रज्ञापयिता (महाविद्वज्जन) ७.४ ४ प्रकर्षेण प्रज्ञापक (अग्निरिव गृहपालको मनुष्य) ७ १६ ५ प्रकृष्ट ज्ञानस्वरूप, प्रकृष्ट ज्ञान को देने वाला (ईश्वर) आर्याभि० २ १६, ५ ३१ य. प्रकृष्टविज्ञान (विश्वकर्मा=विद्वान् जन.) यया प्रकृष्टतया चेतन्ति सजानन्ति सा (वाक्) ५ ११ प्रकृष्टतया सदर्थज्ञापिका (स्त्री) ३.६१.१. [प्र-चेतस्पदयो समास । चेतस्=चिती सज्ञाने (भ्वा०) धातोरसुन् । चेत प्रज्ञानाम निघ० ३ ६ प्रचेता =प्रवृद्धचेता. नि० ८ ५. प्रचेतस=प्रवृद्धचेतस नि० ६.१६.]

प्रचेतसा प्रकृष्टतया प्रज्ञाननिमित्ते (क्षितिसूर्यौ) १ १५६.१ प्रकृष्टज्ञानौ (मित्रावरुणौ=अध्यापकोपदेशकौ) ५.७१ २ प्रकृष्ट चेतो विज्ञान ययोस्तौ (कवी=मेधाविनौ) २८ ३० [प्र-चेतस्पदयो समासे 'सुपा सुलुक्०' इति प्रसमाद्विवचनस्याकारादेश']

प्रचेतुने प्रचेतयन्त्यानन्देन यस्मिँस्तस्मिन् (पदे=प्राप्तु योग्ये व्यवहारे) १ २१ ६ [प्र+चिती सज्ञाने (भ्वा०) धातोश्छान्दस रूपम्]

प्रचोदयन् प्रज्ञापयन् (अध्यापक) ३ २७ ७. [प्र+चुद सञ्चोदने (चुरा०) धातो शतृप्रत्यय]

प्रचोदयन्ता प्रेरयन्तौ (काक्षु=शिरिपनी जनौ) २६ ३२ [प्र+चुद् सञ्चोदने (चुरा०)+शतृ। 'सुपा सुलुग्०' इत्याकारादेश । प्रचोदयन्ता=प्रचोदयमानौ नि० ८.१२.]

प्रचोदयात् सद्गुणकर्मस्वभावेषु प्रेरयतु ३ ६२ १० भा०—अधर्माचरणान्निवर्त्य धर्माचरणे प्रेरयेत् २२ ६. प्रकृष्ट प्रेरयेत भा०—नित्य प्रवर्त्तयेत् ३ ३५ प्रेरणा करे स० वि० ७५, ३६ ३ बुरे कामो से छुटाकर अच्छे कामो मे प्रवृत्त करे स० प्र० ५१, ३६ ३ [प्र+चुद सञ्चोदने (चुरा०) धातोर्लेट्]

प्रच्छत् प्रयत्नेन दुष्टस्वभावदूरीकरणार्थं कर्म्म १५ ५. [प्र+छद अपवारणे (चुरा०) धातो क्विप्]

प्रच्छिदम् य प्रच्छिनत्ति तम् (नरम्) ३०.१७ [प्रोपपदे छिदिर् द्वैधीकरणे (रुधा०) धातो कर्त्तरि क्विप्]

प्रच्यावयति प्रकर्षेण चालयति ७ १६ १ **प्रच्यावयन्ति**=प्रकृष्टतया प्रचालयन्ति १.६४ ३. निपातयन्ति ५.५६.४ **प्रच्यावयसि**=प्रापयसि ३ ४३.७ [प्र+च्युङ् गतौ (भ्वा०) धातोर्णिजन्ताल् लट्]

प्रच्यावयन्तः विमानादीनि यानानि प्रचालयन्त सन्त (सभाद्यध्यक्षादय) १ ८५ ४ [प्र+च्युङ् गतौ (भ्वा०) धातोर्णिजन्ताच् छतृप्रत्यय]

प्रजज्ञिवान् प्रजात सन् (अग्नि=वह्नि) ३.२ ११ [प्र+जनी प्रादुर्भावे (दिवा०) धातोर्लिट' क्वसु प्रत्यय]

प्रजज्ञे प्रकृष्टतया जायताम् १.१२१.६. [प्र+जनी प्रादुर्भावे (दिवा०) धातोर्लिट् । 'गमहन०' इत्युपधालोप]

प्रजननम् प्रजनयन्ति येन तत् (अपत्यम्) १६ ४८ प्रकटनम् ३ २६ १ **प्रजननाय**=सन्तानोत्पादनाय ३.६३ [प्र+जनी प्रादुर्भावे (दिवा०) धातो करणे ल्युट् । प्रजापति. प्रजननम् । जै० २ ६५. प्रजनन वै सोम जै० ३ १६१ प्रजनन सप्तदश काठ० २१ १ प्रजा वै पशव प्रजननम् जै २.१०८. यानि द्वादश (अक्षराणि) प्रजनन तत् जै० १ २०४ सवत्सरो वै प्रजननम् काठ० ७.१५.]

प्रजनय प्रकटय ३४ ३६ प्रकट कीजिए स० वि० १५६, ७ ४१ ३. अच्छे प्रकार मे उत्पन्न कर आर्याभि० २ ११, ३४ ३६ [प्र+जनी प्रादुर्भावे (दिवा०) धातार्णिजन्तात्लोट्]

प्रजनयन् निष्पादयन्नेव (योगी) ७ १३. परमेश्वर इव प्रकटयन् (न्यायाधीशो राजा) ७ १८ [प्र+जनी प्रादुर्भावे (दिवा०) धातोर्णिजन्ताच्छतृप्रत्यय']

प्रजभ्रुः प्रकर्षेण धरन्तु ३ ५४ १ [प्र+हृञ् हरणे (भ्वा०) धातोर्लिट् । 'हृग्रहोर्भश्छन्दसि' इति हकारस्य भकारादेश]

प्रजया सर्वेण ससारेण ८ ३६. स्वसन्तानादिना ८ १७ राज्येन सन्तानसमूहेन वा ५ २८ प्रजातया (सृष्ट्या) ३२.५ सुसन्तानाद्यया सह १ १३६ ६ सुपुत्रादियुक्तया १ ६३ ३ सुसन्तानै २० २२ सन्तानेन १२ ७ **प्रजा**=सुसन्ताना यज्ञसम्पादिका (सृष्टि) १ २३. **प्रजानाम्**=प्राणिमात्राणाम् ३४ २. उत्पन्नाना पदार्थानाम् ३७ १४. सर्वेषा व्यवहाराणाम् ३४ ५ मनुष्यादीनाम् १६ ४७ पालनीयानाम् (सन्तानानाम्) १८ २८. **प्रजाभिः**=प्रजातै

३४ १८ प्रकृष्टप्रज्ञ (वसिष्ठ =पूर्णविद्वान् जन) ७ ३३ १२ प्रकृष्टप्रज्ञावान् प्रज्ञापक (अग्नि =स्वप्रकाशस्वरूपो जगदीश्वर) ७ ११ १ **प्रकेतेन**=प्रकृष्टेन विज्ञानेन १५.६ **प्रकेतैः**=प्रकृष्टाभि प्रज्ञाभि ७ ३३ ९ [प्र+केतपदयो. समास । केत प्रज्ञानाम निघ० ३ ९ प्रकेत =प्रकेतनम् प्रज्ञाततमम् नि० २ १९]

प्रक्रमते प्रकर्षेण प्राप्नोति १ १५४ १ [प्र=क्रमु पादविक्षेपे (भ्वा०) धातोर्लट् । व्यत्ययेनात्मनेपदम्]

प्रक्रीळान् प्रकृष्टान् विहारान् ४ ४१ ११ **प्रक्रीडेन**= उत्तमक्रीडया ३९ ९ [प्र+क्रीडृ विहारे (भ्वा०) धातोर्घञ् प्रत्यय]

प्रक्रीळिनः प्रकृष्टा क्रीळा विद्यते येषान्ते (वत्सास = सद्यो जाता वत्सा) ७ ५६ १६ [प्रक्रीडाप्राति० प्रशसायाम् इनि प्रत्यय]

प्रखादः अतिभक्षक (इन्द्र =सेनेश) १ १७८ ४ [प्र+खादृ भक्षणे (भ्वा०) धातोरच् कर्त्तरि]

प्रखिदते प्रकृष्टतया क्षीणाय (जनाय) १६ ४६ [प्र+खिद दैन्ये (दिवा०) धातो शतृ । व्यत्ययेन श]

प्रगर्द्धिनः प्रकर्षोऽभिकाङ्क्षिण (श्येनस्य) ९ १५ प्रलुब्धस्य (श्येनस्य) ४ ४० ३ [प्र+गृधु अभिकाङ्क्षायाम् (दिवा०) धातोस्ताच्छील्ये णिनि]

प्रगाथाः ये प्रकर्षेण गीयन्ते ते (विद्वासो जना) १९ २४ [प्र+गाथपदयो समास । गाथ =गै शब्दे (भ्वा०) धातो 'उपिकुपिगार्त्तिभ्यस्थन्०' उ० २ ५ सूत्रेण थन् । मन प्रगाथ जै० उ० ३ १ ४ ३ प्राणापानौ वै वार्हत प्रगाथ कौ० १५ ४]

प्रगाय अधिक स्तुहि ६ ४० १ **प्रगायत**=प्रशसत ५ ६८ १. [प्र+गै शब्दे (भ्वा०) धातोर्लोट्]

प्रगाहमानः प्रयत्नेन विलोडन कुर्वन् (इन्द्र =सेनापति) १७.३९ [प्र+गाहू विलोडने (भ्वा०) धातो शानच्]

प्रगिरिभ्यः प्रकर्षेण शैलेभ्य १ १०९ ६ [प्र-गिरिपदयो समास]

प्रगूर्त्त उद्यच्छत १ १७३ २ [प्र+गुर्वी उद्यमने (भ्वा०) धातोर्लोट् । विकरणस्य शपो लुक्]

प्रघासिनः प्रघस्तुमत्तु शीलमेषा तान् (अ०—अतिथीन्) ३ ४४ **प्रघासी**=वहव प्रकृष्टा घासा भोज्यानि विद्यन्ते यस्य स (भा०—बह्वन्नसामर्थ्यो गृहस्थ-जन) १७ ८५ [प्र+घस्लृ अदने (भ्वा०) धातोस्ताच्छील्ये णिनि । अथवा प्र-घासपदयो समासे मतुवर्थे इनि]

प्रचक्षय प्रख्यापय १ १३४ ३ [प्र+चक्षिङ् व्यक्तायां वाचि (अदा०) धातोर्णिजन्ताल्लोट्]

प्रचर विजानीह्यनुतिष्ठ ४ ३७ [प्र+चर गतौ (भ्वा०) धातोर्लोट्]

प्रचर्षणी सम्यक् सुख-प्रापकौ (इन्द्राग्नी=विद्युद्भौतिकाग्नी) प्र०—चर्षणिरिति पदनाम निघ० ४ २, १ १०९ ५ [प्र-चर्षणिपदयो समास । चर्षणि =चायिना नि० ८ १४]

प्रचाकशत प्रकाशते ४ ५३ ४ [प्र+काशृ दीप्तौ (भ्वा०) धातोर्णिजन्ताल्लुङ् । अडभावश्छान्दस]

प्रचातयस्व प्रकर्षेण हिंस्य हिन्धि वा ५.४ ६ प्रकृष्टतया नाश प्रापय प्र०—चनतिर्गतिकर्मा निघ० २ १४, ७ १ ७ [प्र+चनति गतिकर्मा (निघ० २ १४) धातोर्णिजन्ताल्लोट्]

प्रचिकितः प्राप्तविज्ञान (पित्रादिजन) १९ ५२ [प्र-चिकितपदयो समास]

प्रचिकितुः विजानन्ति ७ ११ ३ [प्र+कि ज्ञाने (जु०) धातोर्लिट्]

प्रचिकित्स रोगनिवारणायेव विघ्ननिवारणोपाय कुरु ३४ २३ [कित निवासे रोगापनयने च (भ्वा०) धातो प्रपूर्वाद् 'गुप्तिज्किद्भ्य सन्' इति स्वार्थे सन्नन्ताल् लोट्]

प्रचेकिते प्रकृष्टतया जानाति १ ५५ ३ [प्र कि ज्ञाने (जु०) धातोर्लट् । व्यत्ययेनात्मनेपदम्]

प्रचेतयति प्रकृष्टतया सम्यङ् ज्ञापयति १ ३ १२ प्रज्ञापयति २० ८६ [प्र+चिती सज्ञाने (भ्वा०) धातोर्णिजन्ताल् लट्]

प्रचेतसम् प्रकर्षेण ज्ञापयितारम् (अध्यापकम्) ७ १६ १२ प्रकर्षेण सञ्ज्ञापकम् (अग्नि=पावकम्) ३ २९ ५ प्रकृष्टं चेतो विज्ञान यस्य यस्माद् वा तम् (विद्यावन्त जनम्) १ ४४ ११ प्रकृष्टप्रज्ञायुक्तम् (विद्वासम्) ४ १ १ विविधप्रज्ञानयुक्तम् (अग्नि=विद्वास जनम्) ४ ११ प्रकृतप्रज्ञम् (पुरुषम्) प्र०—चेता इति प्रज्ञानाम निघ० ३ ९, १२ ११० **प्रचेतसः**=प्रकृष्ट चेत सज्ञान येभ्यस्ते (वायव) १ ६४ ८ शिक्षया प्रकर्षेण विज्ञापितान् (अश्वान्=तुरङ्गान्) २९ ५० प्रकृष्ट चेतो विज्ञान यासा ता (सेना) १ ८४ १२ प्रकृष्ट चेतो ज्ञान यस्य तस्य (परमेश्वरस्य) २ २३ २ प्रज्ञापका (विद्वज्जना) ५ ८७ ९ **प्रचेतसे**=प्रकृष्ट चेत प्रज्ञा यस्य तस्मै (महाराजाय) ७ ३१ १० **प्रचेतसौ**=प्रकृष्टविज्ञानयुक्तौ (भिषजा=

पालकस्य (ईश्वरस्य) २१११ प्रजाना पति पालनहेतु सूर्यस्तस्य ४.२६. विश्वम्भरस्य जगदीश्वरस्येव धार्मिकस्य राज्ञ ६ २१ **प्रजापतौ**—प्रजाया पालके परमेश्वरे ३५ ६ [प्रजा-पतिपदयो समास । 'पति समास एव' इति घि-सञ्ज्ञकत्वेन गुणादय । प्रजापति यज्ञनाम निघ ३ १७. प्रजापति. पाता वा पालयिता वा नि० १० ४१ तद् यदग्रवीत् (ब्रह्मा) प्रजापते प्रजा सृष्ट्वा पालयस्वेति तस्मात् प्रजा-पतिरभवत् तत् प्रजापते प्रजापतित्वम् गो० पू० १ ४. एष वै प्रजापति, यदग्नि तै० १ १ ५.५ यो ह खलु वाव प्रजापति., स उ वेवेन्द्र तै० १ २ २ ५ एष प्रजापतिर्यद्-धृदयम् श० १४ ८ ४ १ य प्रजापतिस्तन्मन जै० उ० १ ३३ २ वाग्वै प्रजापति श० ५ १ ५ ६ स एष सवत्सर. प्रजापति षोडशकल श० १४ ४ ३ २२ प्रजापतिर्वै सप्तदश ता० २.१० ५ सवत्सरो वै पिता वैश्वानर प्रजापति श० १ ५ १ १६ एष वै प्रत्यक्ष यज्ञो यत्प्रजापति. श० ८.३ ४.३. प्रजापतिरश्वमेध श० १३ २ २ १३. एष ह प्रजाना प्रजा-पतिर्यद् विश्वजित् गो० पू० ५ १० यो ह्येव सविता स प्रजापति श० १२ ३ ५.१ प्राणो हि प्रजापति प्रजापति ह्येवेद सर्वमनु (प्रजायते) श० ४ ५ ५ १३ अन्न वा ऽयं प्रजापति श० ७ १ २ ४ वायुर्ह्येव प्रजापति ऐ० ४ २६ अर्धं ह प्रजापतेर्वायुरर्ध प्रजापति श० ६ २ २ ११ स एष वायु प्रजापति श० ८ ३ ४ १५ प्रजापति प्रणेता तै० २ ५ ७ ३ प्रजापतिर्वै भूत तै० ३.१ ६ ३ प्रजापतिर्बन्धु तै० ३ ७ ५ ५ प्रजापतिस्त्वातिरिक्तयो प्रतिष्ठा ऐ० ५.२४ एकविंशो वै प्रजापति ऐ० १ ३० हिरण्मय प्रजापति श० १० १ ४ ६ प्रजापतिर्वै हिरण्यगर्भ. श० ६ २ २ ५ प्रजा-पतिर्वै ब्रह्मा गो० उ० ५ ८ ब्रह्म वै प्रजापतिर्ब्राह्मो हि प्रजापति श० १३ ६ २ ८ प्रजापतिर्वै चन्द्रमा. श० ६ १ ३ १६ सोमो हि प्रजापति श० ५ १ ५ २६ प्रजापति स्वर ष० ३ ७ प्रजापति स्वरसामान कौ० २४ ४ सर्वाणि छन्दासि प्रजापति श० ६ २ १ ३० पाङ्क्त प्रजा-पति श० १० ४.२ २३ आनुष्टुभ प्रजापति तै० ३ ३. २ १. अतिच्छन्दो वै प्रजापति कौ० २३ ४,८ प्रजापतेर्वा एतदुक्थ यत्प्रातरनुवाक ऐ० २ १७ (योऽय चक्षुषि पुरुष) एष प्रजापति जै० उ० १ ४३ १० प्रजापति सदस्य गो० पू० ५ ४ प्रजापतिर्वाऽउद्गाता श० ४ ३ २ ३ प्रजापति-रुद्गीथ तै० ३ ८ २२ ३ अथर्वा वै प्रजापति गो० पू० १ ४ सत्य हि प्रजापति श० ४ २ १ २६ प्रजापतिर्वै गार्ह-पत्य कौ० २७ ४ घृतश्च वै मधु च प्रजापतिरासीत् तै० ३ ३ ४ १ प्रजापतिर्ह्यात्मा श० ६ २ २ १२ पुरुष प्रजा-पति श० ६ २.१ २३ एष उ एव प्रजापतिर्यो यज्ञो गो० २.१८ पिता प्रजापतिः गो० उ० ६ १५ मनुर्वै नाम प्रजा स प्रजापति श० ८ १ १.२ पशवो वै पशूना प्रजापति श० ५.२.५ १७ प्रजनन प्रजापति श० ५.१.३ १० स प्रजापतिरश्वमेधेन ... [illegible] को नाम प्रजापतिरभवत् को वै नाम प्रजापति गो० ३.२१ कम् वै प्रजापति श० ७ ५.२ १३ स (प्रजापति.) उ वाव भुवनस्य गोप्ता जै० उ० ३ ७ १४ प्रजापतिर्वै कृत्स्न. श० ८ ४ १.१४. प्रजापतिर्वै कृत्स्न विराट्स्य ६.३.१ १६ प्रजा-पतिर्वै वृषणा श० ६ ७ ४ ३ प्रजापतिर्वै वृषाता श० ६ ७ ४ ५ प्रजापतिरग्नि श० ६ ५ १ ३८ प्रजापतिर्वै यमदग्नि श० १३ २ २ १४ प्रजापतिर्वै चतुर्होता तै० २ २ ३ ५. प्रजापतिर्वै दशहोता तै० २.२ १ १ प्रजापति सप्तहोता होता तै० २.३ ५.६ प्रजापतिर्वै द्रोणकलश श० ४ ३ १ ६. प्रजापतिरेव निधनम् जै० उ० १ ५८.६ प्रजा-पतिर्वै क्षत्रम् श० ८.२.३ ११. प्रजापतिर्वै चितानि श० ३ १ ३ २२ इमे लोका प्रजापति. श० ७ ५ १ २७ प्रजा-पतिर्वा ऽमूल्लोकान् (त्रीन्) लोकाननुसृजत् श० ४.६ १ ४. द्यावापृथिवी हि प्रजापति श० ५ १ ५ २६ प्राजापत्यो वा ऽयं (भू) लोक. तै० १.३.७ ५ प्रजापतिर्वै पृथिव्यै जनिता श० ७ ३ १.२०. सप्तर्षयो वा ऽग्रे प्रजापतिर-सृजन्त श० १० २ ३ १८ स एव पुरुष प्रजापतिरभवत् । यान् वै तान् सप्तपुरुषान् एक पुरुषमकुर्वंस्ल प्रजापतिर-भवत् श० १० २.२ १ एक उ वै प्रजापति कौ० २६ ७ प्रजापति सर्वा देवता तै० ३ ३ ७ ३ उभयस्वैतत् प्रजा-पतिर्यच्च देवा यच्च मनुष्या श० ६ ८ १ ४ मातेव च हि पितेव च प्रजापति श० ५ १ ५ २६ रूप वै प्रजापति ... नाम वै प्रजापति तै० २ २ ७ १. सर्वमु ह्येवेद प्रजापति श० ५ १ १ ४ प्रजापतिर्वै विश्वजित् कौ० २५ १२ अपरि-मितो हि प्रजापति गो० उ० १ ७ उभयम्वेतत् प्रजापति-निरुक्तश्चानिरुक्तश्च परिमितश्चापरिमितश्च श० ६ ५ ३ ७. अनिरुक्त उ वै प्रजापति कौ० २३ २,६ प्रजापतिर्वै देवा-नामन्नादो वीर्यवान् तै० ३ ८ ७ १ प्रजापतिर्वै देवाना वीर्य-वत्तम श० १३ १ २.५ अथ यत्पर भा (सूर्यस्य) प्रजा-पतिर्वा स श० १ ६ ३.१० यत्पर भा प्रजापतिर्वा स इन्द्रो वा श० २ ३ १ ७. प्रजापतिर्वा अमृत श० ६ ३ १ १७ प्रजापतिश्चतुस्त्रिंशो देवानाम् ता० १७ ११ ३ पूर्ण इव हि प्रजापति तै० २ १ २ १ प्रजापतिर्हि स्वा-राज्यम् ता० १६ १३ ३ अन्तो वै प्रजापति श० ५.१ ३ १३ प्रजापतिर्विराजम् (साम) ता० १६ ५ १० साहस्र.

(पशुभि) ६ ७० ३ पालनीयाभि (सन्ततिभि) ५ ४ १०. अनुकूलाभि स्त्र्यौरसविद्यासन्तान-मित्र-भृत्य-राज्य-पश्वादिभि ३ ३७ भा०—सभ्यसैन्य-प्रजाजनै ७ २६ पुत्रपौत्रादि उत्तमगुणवाली प्रजाओ से आर्याभि० २ ३५, ३ ३७ **प्रजाभ्यः**=उत्पन्नाभ्य सृष्टिभ्य ४ २५ स्वसन्तानेभ्य १२.७२ पालनीयाभ्य (प्राणिभ्य) ११ ३८ प्रसिद्धाभ्य (मानुषीभ्य =मनुष्यादिभ्य) ११ ४५ प्रजाताभ्यो विद्युदादिभ्य १३ ५७ **प्रजाम्**=या प्रजायते ताम् (सृष्टिम्) ४ १३ स्वसन्तानान् सरक्षणीयान् जनान् ६ ३. पुत्रपौत्रप्रभृतिम् १६ ४८ पुत्रपौत्रादिकाम् ११२५ १. उत्तमान् सन्तानान् राष्ट्र वा ४ ३६ ६ सुसन्तानरूपाम् (सृष्टिम्) ३४ १० उत्पन्ना सृष्टिम् ५ १७ पालनीयाम् (सृष्टिम्) ६.२५ उत्पादनीयाम् (सन्ततिम्) ५ २७ सन्ततिम् २५ ७ सुसन्तानम् ११ ५८ सत्यबलधर्मयुक्ताम् (सृष्टिम्) ११ ५८ सुप्रजाताम् (सन्तानोत्पत्तिम्) ११ ५८ राज्यम् ११७६ ६ प्रजा को स० वि० १३८, अथर्व० १४ २.३१ **प्रजायाः**= मनुष्यादिसृष्टये प्र०—अत्र चतुर्थ्यर्थे षष्ठी १.१५६ २ विद्यमानाया (सृष्टे) ३ ३६ **प्रजायै**=प्रजासुखाय ७ ५७ ६ **प्रजासु**=प्रकृतिजीवादिषु ३२ ८ जनेषु ३४.३ प्रजाओ मे स० प्र० २४७, ३४ ३. **प्रजाः**=प्रादुर्भूता पालनीया (सृष्टय) १४३ ६ समुत्पन्ना (सृष्टय) १ ६७ ५. मनुष्यादिसृष्टय ४ २५ जगत्स्था (सृष्टय) ४ २५ प्रजननीया (प्रजाजना.) ६ २६ प्रजा एव ७ १८. सरक्षणीया (सृष्टय) ७.१७ प्रजायन्ते यास्ता (सन्ततय) १ ६६ २ पालनीया (सन्ततय) १४ २६ तदधीनपालना (सन्ततयः) ६ २१. प्रजाता. (सर्वलोका) ३ ५५.१६. [प्र+जनी प्रादुर्भावे (दिवा०) धातो 'उपसर्गे च सज्ञायाम्' अ० ३ २ ६६ सूत्रेण ड प्रत्यय । स्त्रिया टाप् । प्रजा अपत्यनाम निघ० २ २ प्रजा वै तोकम् श० ७ ५ २ ३६. प्रजा वै सूनु श० ७ १ १ २७. प्रजा वै तन्तु ऐ० ३ ११ प्रजा वा अप्नुरित्याहु गो० पू० ५.६ प्रजा वा ऽअरी श० ३ ६ ४ २१ प्रजा वा ऽइष श० १ ७ ३ १४ प्रजा वै भूतानि श० २ ४ २ १ प्रजा वै बर्हि कौ० ५ ७, १८ १० प्रजानुरूप ऐ० ३ २३ प्रजाशस्त्रम् श० ५ २ २ २० प्रजा पशव सूक्तम् कौ० १४ ४ प्रजा वा उक्थानि तै० १ ८ ७ २ प्रजा. सतो बृहती गो० उ० ६.८ आदित्या वा इमा प्रजा ता० १८ ८ १२ द्वय्यो ह वा ऽइदमग्रे प्रजा आसु । आदित्याश्चाङ्गिरसश्च श० ३ ५.१.१३ वैश्वदेव्यो वै प्रजा तै० १ ६ २ ५ आगस्त्यो वै प्रजा श० १३ ३ ४ ५, आयास्यो वै प्रजा तै० ३ ६ ११ ४. आद्या हीमा प्रजा विश श० ४ २ १ १७]

प्रजवः प्रकृष्टो वेग ७.३३ ८ [प्र+जु इति सौत्रो धातु, वेगिताया गती । तत 'जवसवौ छन्दसि वक्तव्यौ' अ० ३ ३ ५६ वा० सूत्रेण अच्प्रत्यय]

प्रजवेते प्रगच्छत ३ ३३ १ [प्र+जु इति सौत्रो धातु । ततो लट्]

प्रजातम् उत्पन्नम् (मन) १ १६४ १८ **प्रजातः**= प्रसिद्ध उत्पन्न (पुत्र =अध्येता) १ ६६ १ [प्र+जनी प्रादुर्भावे (दिवा०) धातो क्त । धातो स्थाने जादेश]

प्रजानतीव यथा विज्ञानवती विदुषी तथा (उषा) १ १२४ ३ [प्रजानती-इवपदयो समास । प्रजानती= प्र+ज्ञा अवबोधने (क्र्या०)+शतृ+ङीप्]

प्रजानन् प्रकृष्टतया जानीयु १ ७२.१० [प्र+ज्ञा अवबोधने (क्र्या०) धातोर्लङ् । अटोऽभाव]

प्रजानन् प्रज्ञावान् सन् (सम्राट्=चक्रवर्त्ती राजा) ६ २४ प्रकृष्टतया जानन् (पति) १३ ३४ प्रकर्षेण जानन् सन् (न्यायाधीश) ३५ १ प्रकृष्टतया बुद्ध्यमानः (इन्द्र =शिल्पिजन) ३ ३५ ४ प्रकर्षेण विदन्त्सन् (अश्व = शीघ्रगामी वह्नि) २६ १० प्रकर्षता से जानता हुआ गृहस्थ जन) स० वि० १८६, अथर्व० ६ ५ १ विद्वान् (पुरुषार्थिजन) ३ २६.१६. [प्र+ज्ञा अवबोधने (क्र्या०) धातो शतृ-प्रत्यय]

प्रजापतये प्रजापालकाय (विदुषे जनाय) २२ ५ प्रजाया पालकाय (विदुषे गृहस्थाय) २२ ४ प्रजास्वामिने (राज्ञे) २४ २६ प्रजारक्षकाय (राजपुरुषाय) १८ २८ **प्रजापतिम्**=विश्वस्य पालक स्वामिनम् (परमेश्वरम्) २३ ६४ **प्रजापतिः**=प्रजापालक ईश्वर १४ ३ प्रजापालको जीव १६ ७८ प्रजापालक सूर्य २३.६३ प्रजाया स्वामी (परमेश्वर) ८ ५४ विश्वस्याऽध्यक्ष (ईश्वर) ८ ३६ सन्तानादिपालक (गृहपति) ८ १०. सर्वस्या प्रजाया स्वामित्वात् (ईश्वर) ३२ १ प्रजाया पालकोऽधिष्ठाता (परमेश्वर) ३२ ५ प्रजापालक सभेशो राजा १६ ७५ सब जगत् का पति (स्वामी) और पालन करने वाला (परमात्मा) आर्याभि० २ ४, ३२ १ सब ससार का अधिष्ठाता पालक (ईश्वर) आर्याभि० २ ५४ सकल सृष्टि की उत्पत्ति और पालन करने हारा सर्वव्यापक स्वामी परमात्मा स० वि० १८७, १६ ७७ **प्रजापते**=प्रजाया स्वामिन्नीश्वर १० २० प्रजारक्षक (राजन्) २३ ८ **प्रजापतेः**=सन्तानादिरक्षकस्य (गृहपते) ८ १० प्रजाया

प्रणव गो० उ० ३ ११. ब्रह्म वै प्रणव कौ० ११.४]

प्रणिदधात प्रणिधरत ५.२२.२. [प्र+नि+डुधाञ् धारणपोषणयो (जु०) धातोर्लोट्]

प्रणिनाय प्रकर्षेण प्रापय ३ ८ ११ यथा त्व प्रणये-न्नया अ०—प्रापयनि ५ ४३ [प्र=णीञ् प्रापणे (भ्वा०) धातोर्लिट्]

प्रणीतयः प्रकृष्टा नीतय ६ ४५ ३ [प्र+णीञ् प्रापणे (भ्वा०) धातो स्त्रिया क्तिन्]

प्रणीतम् प्रकृष्टतया प्रापितम् (तम.=अन्धकाररूप दु खम्) १ ११७.१३ **प्रणीतः**=प्रकृष्टतया सम्मिलित. (अग्नि =पावक) १६ १७ [प्र+णीञ् प्रापणे (भ्वा०) धातो क्त]

प्रणीतिषु प्रकृष्टासु नीतिषु १ ११४ २ **प्रणीतिः**= प्रकृष्टा नीनि ६ ४८.२० **प्रणीतौ**=प्रकृष्टाया नीतौ ३ १५ १ प्रकृष्टाया धर्म्याया नीतौ ११ ४६ [प्र+णीञ् प्रापणे (भ्वा०) धातो स्त्रिया क्तिन्]

प्रणीती प्रकृष्टा चासौ नीतिस्तया प्र०—अत्र 'सुपा सुलुक्०' इति पूर्वसवर्णदीर्घ १६११. प्रकृष्टा नीतिम् प्र०—अत्र पूर्वसवर्णादेश ७ ३५ प्रकृष्टनीत्या ७ २८ ३. [प्रणीतिप्रानि० तृतीयैकवचनस्य पूर्वसवर्णदीर्घश्छान्दस]

प्रणीयते प्रकर्षेण प्राप्यते ३ २७ ८ **प्रणीयन्ते**= प्रयुक्त किये जाते हैं स० वि० २०६, अथर्व० ६ ६.१५ [प्र+णीञ् प्रापणे (भ्वा०) धातो कर्मणि लट्]

प्रणुद प्रकृष्टतया दूरे क्षिप १५.१ प्रकर्षेण हिन्धि १५ २. **प्रणुदाति**=प्रकर्षेण दूरीकरोतु २ ३०. [प्र+ णुद प्रेरणे (तुदा०) धातोर्लोट्। अन्यत्र लेटि आडागम.]

प्रणेतः प्रकर्षेण प्रापक (ईश्वर) ७.४१ ३ पुरुषार्थ प्रति प्रेरक (ईश्वर) ३४.३६. य सत्याऽनृते प्रणयति तत्सम्बुद्धौ (इन्द्र=परमैश्वर्ययुक्त जन) ३ ३०.१८. सर्वेषां नयनकर्त्त (विद्वत्पिन) २.२८ ३ सब के उत्पादक सत्याचार मे प्रेरक (ईश्वर) स० वि० १५६, ७ ४१ ३ **प्रणेता**= प्रकृष्टतया नेता (अग्नि =पावकवद्विद्वज्जन) २.६ २. प्रेरक (अग्नि.=पावक.) ३ २३ १ **प्रणेतारः**=प्रकृष्ट न्याय कुर्वन्त (विद्वज्जना.) ३ ५७.२ प्रनायका (देवा = वायुविद्यावेत्तृजना) १ १६६ ५ प्रेरका (मेधाविनो जना) ५ ६१ १५ [प्र+णीञ् प्रापणे (भ्वा०) धातो कर्त्तरि तृन्]

प्रणेनी प्रकर्षेण न्यायकृत् (इन्द्र =राजा) ६ २३ ३. [प्र पूर्वात् णीञ् प्रापणे (भ्वा०) धातोर्यङ्लुगन्तात् क्विप्]

प्रणेषत् प्रकृष्ट नय प्राप्नुयात् प्रापयेद् वा २ २०.३. [प्र+णीञ् प्रापणे (भ्वा०) धातोर्लेट् । 'व्यत्ययो बहुलम्' इति शप्सिपौ]

प्रणोनुमः प्रकृष्टमतिशयेन स्तुम., पुन पुनर्नमस्कुर्म्मः प्र०—अत्र 'णु स्तुतौ' इत्यस्य यङ्लुकि प्रयोग 'उपसर्गाद-समासेऽपि णोपदेशस्य' अ० ८.४.१४ इति णकारादेशश्च १ ११ २ प्रकर्षेण भृशन्नमेम ७.३१.४. [प्र+णु स्तुतौ (अदा०) धातोर्यङ्लुगन्ताल् लट्]

प्रण्यः प्रकृष्टा नीतिर्यासा ता (सत्स्त्रिय) ३ ३८.२ [नी=णीञ् प्रापणे (भ्वा०) धातो क्विप् । प्र-नीपदयो समास.]

प्रतक्वा यथा प्रतकति प्रकर्षेण हर्षतीति तथा (भगवान्) प्र०—अत्र 'अन्येषामपि दृश्यन्ते' इति वनिप् ५ ३२. सब का ज्ञाता, सत्यासत्यकारी जनो के कर्मो की साक्ष्य रखने वाला (ईश्वर) आर्याभि० २.१७, ५.३२. [प्र+तक हसने (भ्वा०) धातो. कर्त्तरि वनिप्]

प्रतताः विस्तीर्णा. स्वरूपगुणा. (प्रजासेनाध्यक्षा:) ३ ३१.२०. [प्र+तनु विस्तारे (तना०) धातो क्त । 'अनुदात्तोपदेश०' इत्यनुनासिकलोप]

प्रतनु प्रकृष्टतया विस्तृणुहि १३.२० [तनु विस्तारे (तना०) धातोर्लोट्]

प्रतरणः दु खान् प्रकृष्टतया तारक (विद्वान् जन) १ ६१ ६ य. प्रकृष्टतया दु खानि तरति (अग्नि =अध्या-पक) २ १.१२. प्रतरति दु.खानि येन स (यज्ञ) ४.३७ प्रतारक. (राजा) ६ ४७ २६ शत्रुबलस्योल्लङ्घक (वन-स्पति =वनादिपालको विद्वान् राजा) २६ ५२. **प्रतर-णाय**=नौकादिना परतटादर्वाचीनतटप्राप्ताय प्रापयित्रे वा (पुरुषाय) १६ ४२. [प्र+तॄ प्लवनसन्तरणयो (भ्वा०) धातो करणे ल्युट्। कर्त्तरि वा 'कृत्यल्युटो बहुलमि' ति ल्युट् । प्रतरण प्रतारयिता ऐ० ३ १३.]

प्रतरणी दोष और शोकादि से पृथक् रहने वाली (वरानना स्त्री) स० वि० १३८, अथर्व० १४.२ २६. **प्रतरणीम्**=प्रतरन्ति यया ताम् (विद्याम्) ५ ४६ १. [प्र+तॄ प्लवनसन्तरणयो (भ्वा०) धातोर्ल्युडन्तान् ङीप्]

प्रतरत दु खान्युल्लङ्घयत भा०—दु खसागर सहजत सन्तरत ३५ १०. [प्र+तॄ प्लवनसन्तरणयो. (भ्वा०) धातोर्लोट्]

प्रतरम् प्रकृष्टतया तरति प्लावयति दूरीकरोति दु ख येन तत् (आयु =जीवनम्) १ ५३ ११ प्रतरन्ति दु.ख येन

प्रजापति तै० स० ५ २ ८ ३]

प्रजापतिगृहीतया प्रजापतिर्गृहीतो यया स्त्रिया तया १३ ५४ [प्रजापति-गृहीतपदयो समास । गृहीत =ग्रह उपादाने (क्र्या०)+क्त]

प्रजापतिभक्षितस्य प्रजास्वामिनेश्वरेण सेवितस्य भक्षितस्य वा (पयस =उदकस्य दुग्धस्य वा ३८.२८ [प्रजापति-भक्षितपदयो समास]

प्रजायन्ते प्रकृष्टतयोत्पद्यन्ते ३ ३६ ५ **प्रजायेमहि**= प्रकृष्टतया जायेमहि १ ६७ ४ [प्र+जनी प्रादुर्भावे (दिवा०) धातोर्लट् । अन्यत्र लड् अडभावश्च]

प्रजावत् प्रजा विद्यन्ते यस्मिँस्तत् (ब्रह्म =धनमन्न वा) ६ १६ ३६ प्रशस्ता प्रजा भवन्ति यस्मात्तत् (आयु = अन्नम्) १ ११३.१७ वह्वच प्रजा विद्यन्ते यस्य तत् (सौभग =महदैश्वर्यम्) ५ ८२ ४ **प्रजावता**=प्रशस्ता प्रजा विद्यन्ते यस्मिँस्तेन (राधसा =विद्यासुवर्णादिधनेन) १ ६४ १५ **प्रजावतः**=प्रशस्ता प्रजा येषु तान् (वाजान्= सङ्ग्रामान्) १ ९२ ७ प्रशस्ता प्रजा विद्यन्ते यस्मिँस्तस्य (वाजस्य=अन्नादेर्विज्ञानस्य वा) ३ १६ ६ [प्रजाप्राति० प्रशसाया भूम्न्यर्थे वा मतुप्]

प्रजावती प्रजापालनतत्परा (विधवा स्त्री) ऋ० भू० २१४, अथर्व० १४ २ १८ उत्तम पुत्र-पौत्रादि से सहित (स्त्री) स० प्र० १५२, अथर्व० १४ २ १८ प्रजा को प्राप्त होने वाली (सौभाग्यप्रदा नारी) स० वि० १३९, अथर्व० १४ २ ३२. **प्रजावतीषु**=प्रशस्तप्रजायुक्तासु (रीतिषु) ७ १ ११ **प्रजावतीः**=वहुप्रजा विद्यन्ते यासु ता (उपस =प्रभातवेला) ६ २८ १ बहुप्रशसितप्रजायुक्ता (इष =अन्नादीच्छा) ६ ५२ १६ भूयस्य प्रजा वर्त्तन्ते यासु ता (अघ्न्या =गा) प्र०—अत्र भूम्न्यर्थे मतुप् १.१ प्रशस्ता प्रजा विद्यन्ते यासा ता (गा) ६ २८ ७ [प्रजा-प्राति० प्रशसाया भूम्न्यर्थे वा मतुवन्तान् ङीप्]

प्रजावतः वह्वच प्रजा उत्पन्ना विद्यन्ते येषु मासेषु तान् प्र०—अत्र भूमार्थे मतुप् १ २५ ८ **प्रजावन्तम्**= वहुप्रजायुक्तम् (रयिं=धनम्) ४ ५३ ७ वह्वच प्रजा विद्यन्ते यस्य तम् (रयिं=धनम्) ४ ५१ १० **प्रजावन्तः**= वह्वच सुसन्तानराष्ट्राख्या प्रजा विद्यन्ते येषान्ते (मनुष्या) प्र०—अत्र भूम्न्यर्थे मतुप् ३ ५६ **प्रजावान्**=सन्तानवान् (गातु =भूमि) ३ ५४ १८ वह्वच प्रजा विद्यन्ते यस्य स (परमेश्वर) ३ ५६ ३ वह्वय प्रजा विद्यन्ते यस्मिन् स (भग =ऐश्वर्यम्) ३ ३० १८ [प्रजाप्राति० भूम्न्यर्थे मतुप्]

प्रजासनि प्रजा सनति येन तत् (अपत्यम्) १ ६ ४८. [प्रजोपपदे पण सम्भक्तौ (भ्वा०) धातो 'छन्दसि वनसन-रक्षिमथाम्' अ० ३ २ २७ सूत्रेण इन् प्रत्यय.]

प्रजिगतः प्रकर्षेण भृश प्राप्नुत प्र०—अत्र यडन्तात् परस्य लट शतृ यडो लुक् 'वाच्छन्दसि' इत्यभ्यासस्येत्वम् १ १५० २ **प्रजिगाति**=प्रकर्षेण गच्छति ६ ६ १ प्रकृष्ट-तया प्रशसति १ ८७ ५ प्रकर्षेण स्तौति ३ २७ १ [प्रपूर्वाद् गा स्तुतौ (जु०) धातोर्यडन्ताच्छतृ । यडो लुक् च । अन्यत्र लट्]

प्रजिन्व प्रकृष्टतया प्रीणीहि ३ १५ ६ **प्रजिन्वन्**= प्रकृष्टतया तर्प्पयन्तु १ ७१ १ [प्रपूर्वाज् जिवि प्रीणनार्थे (भ्वा०) धातोर्लोट् । अन्यत्र लड् । अडभावश्छान्दस]

प्रजिहीते प्रकर्षेण प्राप्नोति १ १६६ ५ [प्रपूर्वाद् ओहाङ् गतौ (जु०) धातोर्लट्]

प्रजुजुषुः प्रकृष्टतया सेवेरन् १ १५२ ५ [प्रपूर्वाज् जुषी प्रीतिसेवनयो (तुदा०) धातोर्लिट् । व्यत्ययेन परस्मै-पदम्]

प्रजुहोमि प्रकर्षेण क्षिपामि १ १६२ १९

प्रज्ञानम् प्रजानाति येन तद् बुद्धिस्वरूपम् (मन) ३४ ३ उत्कृष्ट ज्ञान वाला (मन =मन) स० प्र० २४६, ३४ ३ **प्रज्ञानाय**=प्रकृष्टज्ञानवर्द्धनाय भा०—प्रज्ञादानाय ३० १० [प्र+ज्ञा अवबोधने (क्र्या०) धातो करणे ल्युट् । प्रज्ञान ब्रह्म ऐ० आ० २ ६]

प्रज्ञानीः प्रज्ञापिनी व्यवहारसाधिका (दिश) ऋ० भू० ५ [प्र+ज्ञा अवबोधने (क्र्या०) धातोर्ल्युडन्तान् ङीप्]

प्रज्ञेषम् प्रकर्षेण जानीयाम् प्र०—जानातेर्लेटि सिपि रूपम् २० २५ [प्र+ज्ञा अवबोधने (क्र्या०) धातोर्लेटि सिपि च रूपम्]

प्रणक् प्रणश्यतु प्र०—अत्र लोडर्थे लुड् 'मन्त्रे घस-ह्वरणश०' अ० २ ४ ८० अनेन सूत्रेण च्लेर्लुक् च १.१८ ३ प्रणष्टो भवेत् २ २३ १२ प्रणाशयेत् ७ ५६ ९ [प्र+णश् अदर्शने (दिवा०) धातोर्लुड् । 'मन्त्रे घसह्वरणश०' इति च्लेर्लुक्]

प्रणयति प्राप्नोति २ २९ ४ डालता है स० वि० २०९, अथर्व० ९ ६ १४ **प्रणयन्ति**=प्रकर्षेण प्राप्नुवन्ति १ ८३ २ **प्रणयन्तु**=प्रीणयन्तु ७ १७ **प्रणयसि**= प्रापयसि १ १२९ १ [प्र+णीञ् प्रापणे (भ्वा०) धातोर्लट्]

प्रणवैः ओङ्कारैं १९ २५ [प्रणव =अमृत वै

प्रतिचक्ष्येव प्रत्यक्ष दृष्ट्वेव १ १२४ ८. [प्रतिचक्ष्य-इवपदयो समास । प्रतिचक्ष्येति व्याख्यातम्]

प्रतिजन्यानि प्रत्यक्षेण जनितु योग्यानि (नानालोकान्तराणि) ४ ५० ७ [प्रतिपूर्वाज् जनी प्रादुर्भावे (दिवा०) धातो 'तकिशसि०' वा० सूत्रेण यत्प्रत्यय']

प्रतिजन्यानि जन जन प्रति योग्यानि (धनानि) ४ ५० ६ [प्रति-जन्यपदयो समास]

प्रतिजरन्ते स्तुवन्ति ५ ८० १ [जरते अर्चतिकर्मा निघ० ३ १४]

प्रतिजागरासि प्रत्यक्ष सब कामो मे जागती रहे स० वि० १३८, अथर्व० १४ २ ३१ [प्रति+जागृ निद्राक्षये (अदा०) धातोर्लेट् । 'लेटोऽडाटौ' इत्याडागम]

प्रतिजागृहि यजमान प्रबोधयाऽविद्यानिद्रा पृथक्कृत्य विद्याया जागरूक कुरु १८ ६१ अविद्यानिद्रा त्यक्त्वा विद्यया चेत १५ ५४ अविद्याऽन्धकारनिद्रात सर्वान् जीवान् पृथक्कृत्य विद्यार्कप्रकाशे जागृतवान् कुरु ऋ० भू० ३०५, १५ ५४ [प्रति+जागृ निद्राक्षये (अदा०) धातोर्लोट्]

प्रतिजानते प्रतिज्ञया व्यवहारस्य साधकाय (सज्जनाय) ३ ४५ ४ [प्रति+ज्ञा अवबोधने (क्र्या०) धातो. शतृ]

प्रतिजूतिवर्पस प्रतीत जूतिर्वेगवद् वर्पो रूप येषा ते (राजपुरुषा) ३ ६० १ [प्रति-जूति-वर्पस्-पदाना समास जूति =जु वेगितायां गतौ (सौत्रो धातु) धातो क्तिया 'ऊतियूतिजूति०' अ० ३ ३ ९७ सूत्रेण क्तिन् उदात्तश्च निपात्यते । वर्प =रूपनाम निघ० ३ ७]

प्रतितिष्ठामि प्रतिनिधिभावेन तिष्ठामि भा०—सर्वपूज्यो भवामि २०.१० [प्रति+ष्ठा गतिनिवृत्तौ (भ्वा०) धातोर्लट्]

प्रतिदधानेभ्य: ये शत्रून् प्रति शस्त्राणि दधति तेभ्य (सैनिकेभ्य) १६ २२ [प्रति+डुधाञ् धारणपोषणयो (जु०) धातो शानच्]

प्रतिदह प्रत्यक्ष भस्मीकुरु १५ ३७ पुन पुनर्दहति प्र०—अत्र व्यत्यय' १ १२ ५ [प्रति+दह भस्मीकरणे (भ्वा०) धातोर्लोट्]

प्रतिदीधिम प्रतीत्या प्रकाशयेम ३३ ४१ [प्रति+दीधीङ् दीप्तिदेवनयो (अदा०) धातोर्लिङ्]

प्रतिदुवस्व प्रत्यक्ष सेवस्व ५.४६ २ [प्रति+दुवस्यति परिचरणकर्मा (निघ० ३ ५) धातोर्लोट् । व्यत्ययेनात्मनेपदम्]

प्रतिदुहीयत् प्रतिपादयन् (इन्द्र =राजा) २ ११ २१ [प्रति+दुह प्रपूरणे (अदा०) धातो' शतरि छान्दस रूपम्]

प्रतिदृक्षत प्रत्यक्ष पश्यन्ति १ ४८.१३ [प्रति-दृशिर् प्रेक्षणे (भ्वा०) धातोर्लुङ् । क्सो विकरणश्छान्दस । व्यत्ययेनात्मनेपदञ्च]

प्रतिदोषम् यथा रात्रि रात्रि प्रति सुखम्वथा ६.७१ ४ प्रति-जन यो दोषस्तम् प्र०—अत्रोत्तरपदलोप ३४ ३६. रात्रि रात्रि प्रति, प्र०—अत्र रात्रेर्गमनदागुत्वाद् दिनस्यापि ग्रहणमस्ति प्रतिदिनमयमित्यर्थं 'दोषेति रात्रिनामसु पठितम्' निघ० १ ७, १.३५.१० [प्रति-दोषापदयो समास दोषेति रात्रिनाम निघ० १.७.]

प्रतिद्रवन्ती प्रत्यक्ष जानन्ती गच्छन्ती वा (देवी=विदुषी) ५ ४१ १२ [प्रति+द्रु गतौ (भ्वा०) धातो. शत्रन्तात् ङीप्]

प्रतिधत् प्रतिदधाति ४.२७.५. [प्रति+डुधाञ् धारणपोषणयो (जु०) धातोर्लेट् । विकरणव्यत्ययेन श]

प्रतिधर्ता प्रत्यक्ष धारक (मित्र =निपुण) १५ १० प्रतीत्या धर्ता (बृहस्पति =सूर्य) १५ १४ [प्रति+धृञ् धारणे (भ्वा०) धातो कर्तरि तृच्]

प्रतिधातवे प्रतिधर्त्तुम् ८ २३ प्रतिधातुम् प्र०—अत्र 'तुमर्थे सेसेन०' इत्यनेन तवेन्प्रत्यय. १ २४ ८ [प्रति+डुधाञ् धारणपोषणयो (जु०) धातोस्तुमर्थे तवेन्-प्रत्यय]

प्रतिधिना प्रतिदधाति यस्मिंस्तेन (पृथिव्या =भूगर्भविज्ञानेन) १५ ६ [प्रति+डुधाञ् धारणपोषणयो (जु०) धातो 'कर्मण्यधिकरणे च' इति कि प्रत्यय]

प्रतिधीयताम् प्रतिधीयन्ताम् प्र०—अत्र वचनव्यत्ययेनैकवचनम् ३६ ११ स्थापन करो आर्याभि० २ २३, ३६ ११ [प्रति+डुधाञ् धारणपोषणयो (जु०) धातो कर्मणि लोट्]

प्रतिधीयमानम् सम्यग् ध्रियमाणम् (ज्ञानम्) १ १५५ २ [प्रति+डुधाञ् धारणपोषणयो (जु०) धातो कर्मणि शानच्]

प्रतिपचता प्रत्यक्ष पचतानि पक्तव्यानि (खाद्यान्नानि) २१ ६० [प्रति-पचतपदयो समासे शेर्लोपश्छन्दसि पचत=डुपचष् पाके (भ्वा०) धातोरौणादिक अतच्]

प्रतिपत् पद्यते विचार्यते योऽर्थविषय स पत्, पत पत प्रतीति प्रतिपत् (इन्द्र =सभासेनापति) ७ ३८ प्रतिपद्यते प्राप्यते या सा (लक्ष्मी) १५ ८ [प्रति-पत्पदयो समास । पत्-पद गतौ (दिवा०) धातो कर्मणि क्विप्]

प्रतिपदे ऐश्वर्याय १५ ८ [प्रतिपूर्वात् पद गतौ

तम् (उत्तमाऽन्नम्) ५.३४.१. प्रकर्षेण दुःखात्तारक व्यवहारम् ५.५५ ३ पाकस्य सन्तारकम् (पाचकम्) भा०—पाक-कर्त्तारम् १२ २६ प्रतरन्ति येन तत् (आयु =जीवनम्) ४ १२.६ प्रकृष्टम् (पुरुषार्थमाश्रित्य) १ ६४ ४ पुष्कलम् (आयु =जीवनम्) २ ३२.१ शत्रूणा वलोल्लङ्घनम् ६ ४७ ७ प्रतरति शत्रुबलानि येन तत्सैन्यम् १ १४१ १३ पारस्य सन्तारकम् (पाककर्त्तार जनम्) १२ २६ [प्र+तॄ प्लवनसन्तरणयो (भ्वा०) धातो 'ॠदोरप्' इत्यप्प्रत्यय]

प्रतराम् प्रतरन्त्युल्लङ्घयन्ति शत्रुबलानि यया नीत्या ताम् १७ ५१ [प्रतर व्याख्यातम् । तत स्त्रिया टाप्]

प्रतवसः प्रकृष्टानि तवासि बलानि सैन्यानि येषा ते (नृतमास =नायका जना) १ ८७ १ **प्रतवसे**=प्रकृष्ट-वलाय (वाताय=विज्ञानाय) ४ ३ ६ [प्र-तवस्पदयो समास । तवस् वलनाम निघ० २ ६]

प्रतस्थुः प्रतिष्ठन्ते २ १५ ५ [प्र+ष्ठा गतिनिवृत्ती (भ्वा०) धातोर्लिट्]

प्रतारि प्रकर्षेण प्लूयते ४ १२ ६]प्र+तॄ प्लवन-सन्तरणयो (भ्वा०) धातो कर्मणि लुङ्]

प्रतारिषत् प्रकृष्टतया वर्द्धयेत् ४ ३६ ६ **प्रतारिषः**= सन्तारयसि ३४ ८ **प्रतारिष्टम्**=प्रकर्षेण वर्धयतम् ३४ ४७ प्रयत्नेन पारयतम् १ १५७ ४ **प्रतारीः**=प्रतारय उल्लङ्घय ६ ८ ७ [प्र+तॄ प्लवनसन्तरणयो (भ्वा०) धातोर्लेटि सिपि च रूपम् । 'सिव् वहुल णिद् वक्तव्य' इति वा० सूत्रेण सिपो णित्वेन वृद्धि]

प्रति आभिमुख्येन १ ४८ २ वीप्सायाम् १ १६६ ७ प्रतिनिधौ २ १ १५ क्रमाऽर्थे १ ६२ १ योगे १ ५५ १ क्रियार्थे पञ्चादर्थे १ १४ प्रत्यक्षे १५ ३७ इत्थभूताख्याने १ १६ व्याप्तौ २० ३७ प्रतीतार्थे १ २५.२० क्रियायोगे १ १६ वीप्सार्थे, अ०—पुन पुन १ १२ ५ प्राप्त्यर्थे १ ५७ ४ प्रतिवन्धने १ ८८ ६ इन्द्रियागोचरेऽर्थे अ०—इत्थभूतम् प्र०—प्रतीत्येतस्य प्रातिलोम्य प्राह नि० १ ३, १.६ ४ [अभि इत्याभिमुख्यम्, प्रतीत्यस्य प्रातिलोम्यम् नि० १ ३]

प्रतिकामम् काम काम् प्रति (सोम) ३ ४८.१ काम काम प्रतीति प्रतिकामम् भा०—प्रतिक्षण सुखम् १६ ५१ [प्रति-कामपदयो समास]

प्रतिक्षत्रे धर्मेण प्रतीते क्षत्रे विद्याधर्मप्रचारिते देशे ऋ० भू० २२०, २० १० [प्रति-क्षत्रपदयो समास]

प्रतिक्षियन्तम् प्रत्यक्ष निवसन्तम् (वायुम्) ११.२३ पदार्थ पदार्थ प्रति वसन्तम् (अग्निम्) २.१०.४ [प्रति-क्षियन्पदयो समास । क्षियन्=क्षि निवासगत्यो (तुदा०) धातो शतृप्रत्यय]

प्रतिख्यातः ख्यात ख्यात प्रतीति (वात =वाह्यो वायु) ८ ५८ [प्रति-ख्यातपदयो समास. । ख्यात =ख्या प्रकथने (अदा०) धातो क्त]

प्रतिगात् प्रत्येति १.१०४ ५ [प्रति+इण् गतौ (अदा०) धातोर्लुङ् । अटोऽभाव । 'इणो गा लुङी' ति गादेश]

प्रतिगृभाय प्रतीत्या गृहाण ६.४७ २८ प्रतिगृहाण ४ ४ १५ [प्रतिपूर्वाद् ग्रह उपादाने (क्र्या०) धातोर्लोट् । 'छन्दसि शायजपि' इति श्न स्थाने शायजादेश । धातोर्हकारस्य भकारो 'हृग्रहोर्भश्छन्दसि' वा० सूत्रेण]

प्रतिगृभ्णन्ति प्रतिगृह्णन्ति २५.३७ **प्रति-गृभ्णाति**=प्रतिगृह्णाति १ ५५ २ **प्रतिगृभ्णातु**=प्रति-गृह्णाति अ०—प्रतिगृभ्णाति प्र०—अत्र हृग्रहोर्भश्छन्दसि हस्य भत्व वक्तव्यम् अ० ५ २ ३२ इति हकारस्य स्थाने भकार लडर्थे लोट् च १ १६ **प्रतिगृभ्णीत**=स्वीकुर्वीत १२ ३५ [प्रति+ग्रह उपादाने (क्र्या०) धातोर्लट् । हस्य भकारादेश । अन्यत्र लोट् लिङ् चापि]

प्रतिगृह्णतः प्रतिग्रहण करने हारो (गृहस्थ जनो) को स० वि० १६७, अथर्व० ६ २.३ १६ [प्रति+ग्रह उपादाने (क्र्या०) धातो शतृप्रत्यय]

प्रतिगृह्णामि प्रतिग्रहण करता हूँ स० वि० १६७, अथर्व० ६ २ ३ १५ [प्रति+ग्रह उपादाने (क्र्या०) धातोर्लट्]

प्रतिगृह्य प्रत्यक्षेण दत्त्वा गृहीत्वा च १ १२५ १ [प्रति+ग्रह उपादाने (क्र्या०) धातो क्त्वा । समासे क्त्वो ल्यप्]

प्रतिचक्षणाय प्रत्यक्ष कथनाय ६ ४७ १८ [प्रति+चक्षिङ् व्यक्तायां वाचि (अदा०) धातोर्ल्युट् । 'वहुल सज्ञा-छन्दसोरिति वक्तव्यम्' अ० २ ४ ५४ वा० सूत्रेण ख्याञ्-आदेशस्य प्रतिषेध]

प्रतिचक्ष्य निषेध्य २ २४ ७ प्रत्यक्षेण प्रत्याख्याय २.२४ ६ [प्रति+चक्षिङ् व्यक्तायां वाचि (अदा०) धातो क्त्वा । समासे क्त्वो ल्यप् । 'वर्जने प्रतिषेधो वक्तव्य' इति ख्याञ् न भवति]

प्रतिचक्ष्या प्रत्यक्षेण द्रष्टु योग्या (उषा) १.११३ ११ [प्रति+चक्षिङ् व्यक्तायां वाचि (अदा०) धातोर्ण्यत् । स्त्रिया टाप्]

प्रतिरः=प्रकृष्टतया प्लव दु:खात्पार गच्छ ३.४०.३ **प्रतिरेत**=प्रवर्धये ७.५८.३ [प्र+तॄ प्लवनसन्तरणयो (भ्वा०) धातोर्लोट्। व्यत्ययेन शप स्थाने श। अन्यत्र लट्, लङ्, लिङ् च। 'प्रतिरते' प्रयोगे व्यत्ययेनात्मनेपदम्। प्रतिरन्तु प्रवर्धयन्तु। नि० १२.३७ प्रतिरते=प्रवर्धयते नि० ११.६]

प्रतिरक्षन् प्रत्यक्षतया पालयन् (गृहस्थो राजजन प्रजाजनो वा) ८.२४ [प्रति+रक्ष पालने (भ्वा०) धातो शतृप्रत्यय]

प्रतिरन् प्रकर्षेण दु:खात्तरन् (नमस्य=पूजितु योग्यो विद्वान्) १.४४.६ [प्र+तॄ प्लवनसन्तरणयो (भ्वा०) धातो शतृ। व्यत्ययेन श]

प्रतिरवेभ्यः ये रवान् प्रति रुवन्ति शब्दायन्ते तेभ्य (पुरुषेभ्य) ३८.१५ [प्रति+रु शब्दे (अदा०) धातोरच्-प्रत्यय। प्राणा वै प्रतिरवा प्राणान् हीद सर्वं प्रतिरतम् श० १४.२.२.३४]

प्रतिरूपः तदाकारवर्त्तमान (इन्द्र=जीव) ६.४७.१८ [प्रतिरूपपदयो समास। य आदित्ये (पुरुष) स प्रतिरूप जै० उ० १.८.२.४]

प्रतिलामि प्रत्यक्षतया स्निह्यामि २३.२४ [प्र+तिल स्नेहने (तुदा०) धातोर्लट]

प्रतिलोभयन्ती प्रत्यक्ष मोहयन्ती (स्वसेना) १७.४४ [प्रति+लुभ गार्ध्ये (दिवा०) धातोर्णिजन्ताच्छतृ। तत स्त्रिया ङीप्। प्रतिलोभयन्ती प्रतिलोभयमाना नि० ९.३१]

प्रतिवद प्रत्यक्षतयोपदिश १.१६ **प्रतिवदत्**= प्रतिवदेत् १.११९.६ [प्रति+वद व्यक्तायां वाचि (भ्वा०) धातोर्लोट्। अन्यत्र लेट्]

प्रतिवस्तोः दिन दिन प्रति अ०—प्रतिदिनम् भा०—नित्यम् प्र०—वस्तोरित्यहर्नामसु पठितम् निघ० १.९, ३.८ [प्रति-वस्तो पदयो समास। वस्तो अहर्नाम निघ० १.९]

प्रतिविध्य प्रतिताडय १३.१३ [प्रति+व्यध ताडने (दिवा०) धातोर्लोट्। 'ग्रहिज्या०' सूत्रेण सम्प्रसारणम्]

प्रतिवेत्तु प्रतिजानातु अ०—प्रतिजानन्तु १.१९ पश्चाद् जानातु ज्ञापयतु वा प्र०—प्रतीत्येतस्य प्रातिलोम्य प्राह नि० १.३, १.१४ अ०—यथावज्जानन्तु १.१९ [प्रति+विद ज्ञाने (अदा०) धातोर्लोट्]

प्रतिवेदयन् स्वगुण प्रत्यक्षतया प्रज्ञापयन् (प्राज्ञो जन) १.१६२.४ विज्ञापयन् (अज=पशुविशेष) २५.२७. [प्रति+विद ज्ञाने (अदा०) धातोर्णिजन्ताच्छतृ]

प्रतिवेशाः प्रतीता वेशा धर्मप्रवेशा येषा ते (राजजना) ११.७५ विरुद्ध-व्यवहारा. (अराजजना.) प० वि० प्रतिकूला: (प्रजाजना) ऋ० भू० २६८, अथर्व० १९.७.७ [प्रति-वेशपदया समास। वेश=विश प्रवेशे (तुदा०) धातोर्घञ्]

प्रतिवोचे प्रतिवदेयमुपदिशेय वा ४.५.१० [प्रति+वच परिभाषणे (अदा०) धातोर्लुङ्। अडभाव। व्यत्ययेनात्मनेपदम्]

प्रतिश्रवाय य प्रतिशृणोति प्रतिजानीते तस्मै (भा०—अव्यापकाय) १६.३४ [प्रति+श्रु श्रवणे (भ्वा०) धातोरच्]

प्रतिश्रुत्कायै प्रतिज्ञायै (स्त्रियै) ३०.१९. प्रतिश्राविकायै (ध्वन्याख्यायै क्रियायै) २४.३२

प्रतिश्रृणीहि प्रतिहिन्धि ३.३०.१७ (प्रति+शॄ हिंसायाम् (क्र्या०) धातोर्लोट्]

प्रतिष्कभे प्रतिष्कम्भते प्रतिबध्नाति शत्रून् येन कर्मणा तस्मै प्र०—अत्र सौत्रात् स्कम्भु-धातो प्रतिपूर्वात् क्विप् १.३९.२ प्रतिष्टम्भनाय पराङ्मुखतया पराजयकरणाय च ऋ० भू० १५१. शत्रुओं के वेग को थामने के लिए आर्याभि० १.२२, ऋ० १.३.१८.२ [प्रति+स्कम्भु (सौत्रो धातु) धातो क्विप्]

प्रतिष्टोभति प्रतिबन्धेन बध्नाति १.८८.६ **प्रतिष्टोभन्ति**=प्रत्यक्षतया स्तुवन्ति ५.८४.२ प्रस्तोभन्ति प्र०—अत्र व्यत्ययेन परस्मैपदम् १.१६८.८. [प्रति+ष्टुभु स्तम्भे (भ्वा०) धातोर्लट्]

प्रतिष्ठ प्रतिष्ठति वा प०—अत्राऽन्त्यपक्षे व्यत्ययो लडर्थे लोट् च अ०—कृपयेम यज्ञ विद्या च प्रतिष्ठापय २.१३ **प्रतिष्ठत**=प्रकृष्टतया प्रतिष्ठा प्राप्नुत अ०—प्रतिष्ठध्वम् प्र०—अत्र 'वाच्छन्दसि सर्वे विधयो भवन्ति, इति नियमात् 'समवप्रविभ्य स्थ' अ० १.३.२२ इत्यात्मनेपद न भवति १.१५.९ **प्रतिष्ठात्**=प्रतितिष्ठति २.१५.७ [प्र+ष्ठा गतिनिवृत्तौ (भ्वा०) धातोर्लोट्। 'पाघ्राध्मा०' इति शिति तिष्ठादेश। 'समवप्रविभ्य स्थ.' इत्यात्मनेपद न भवति छन्दसि सर्वविधीना विकल्पनात्। 'प्रतिष्ठात्' प्रयोगे लेट्]

प्रतिष्ठा प्रतिष्ठन्ति यस्या सा (सत्क्रिया) १४.२३ **प्रतिष्ठायै**=सर्वत्र सत्काराय १५.६४ सत्कृतये भा०—सत्काराय १३.१९ प्रतितिष्ठन्ति सत्कार प्राप्नुवन्ति यस्या तस्यै (सत्क्रियायै) २.२५ [प्रति+ष्ठा गतिनिवृत्तौ (भ्वा०)

(दिवा०) धातो सम्पदादित्वात् क्विप्]

प्रतिपप्रथे प्रत्यक्ष प्रख्याति २ २४ ११ [प्रति+प्रथ प्रख्याने (भ्वा०) धातोर्लिट्]

प्रतिपश्यति प्रत्यक्ष देखता है स० वि० २०६, अथर्व० ६.६ १ ३ [प्रति+दृशिर् प्रेक्षणे (भ्वा०) धातोर्लट्]

प्रतिपस्थानः य प्रस्थान गमन प्रति वर्त्तते स (व्यवहार) १८ १६ [प्रति-प्रस्थानपदयो समास। प्रस्थानम्=प्र+ष्ठा गतिनिवृत्तौ (भ्वा०) धातोर्ल्युट्। पापीय प्रतिप्रस्थानम् मै० ४ ६ २]

प्रतिप्रसिस्रते प्रत्यक्ष प्रसरन्ति गच्छन्ति ५ १ १ [प्रति+प्र+सृ गतौ (जु०) धातोर्लट्। अभ्यासस्येत्वमात्मनेपदञ्च छान्दसम्]

प्रतिबुद्धाः प्रतीतेन ज्ञानेन युक्ता (जना) १ १९१ ५ [प्रति+बुध अवगमने (दिवा०) धातो क्त]

प्रतिभूषति प्रत्यक्षतयाऽलङ्करोति १ ४६ १२, ६ ५२ ८ [प्रति+भूष अलङ्कारे (भ्वा०) धातोर्लट्]

प्रतिभृतस्य धृत धृत प्रति वर्त्तमानस्य (भृत्यवर्गस्य) ४ २० ४ [प्रति-भृतपदयो समास। भृतम्=डुभृञ् धारणपोषणयो (जु०) धातो क्त]

प्रतिमन्वानः प्रत्यक्षेण विजानन् (परमेश्वर) २३ ५२ [प्रति+मनु अवबोधने (तना०) धातो शानच्]

प्रतिमा प्रतिमीयन्ते परिमीयन्ते सर्वे पदार्था यया सा भा०—परिमाणसाधन पदार्थतोलनार्थम् (वस्तु) १५ ६५ प्रतिमीयते यया तत्परिमापक सदृश तोलनसाधन प्रतिकृतिराकृतिर्वा ३२ ३ प्रतिमीयते यया क्रियया सा १४ १८ परिमाण, सादृश्य वा मूर्त्ति स० प्र० ४३२, ३२ ३ प्रतिनिधि प्रतिकृति, प्रतिमान तोलनसाधन, परिमाण, मूर्त्यादिकल्पनम् ऋ० भू० ३००, ३२ ३. प्रतिमीयतेऽनया सा (यया परिमाण क्रियते) ऋ० भू० १४७, ऋ० ८ ७ १८० ३ **प्रतिमाम्**=प्रतीयन्ते सर्वे पदार्था यया ताम् (बुद्धिम्) भा०—परिमाणम् १३ ४१ [प्रति=माङ् माने शब्दे च (जु०) धातो स्त्रियाम् 'आतश्चोपसर्गे' इति अङ्, ततष्टाप्। असौ वै लोक प्रतिमैष ह्यन्तरिक्षलोके प्रतिमित इव श० ८ ३ ३ ५]

प्रतिमानम् परिमाणसाधनम् ४ १८ ४ सादृश्य परिमाण वा १ ३२ ७ समन्तात् प्रतिमीयते परिणीयते प्रतिमिमते येन तत् (स्व=सुखमन्तरिक्ष वा) १ ५२ १२ प्रतिमीयते यत् (जगत्) १ १०२ ८ अतिसमर्थानामुपमा १ १०२ ६ परिमाणसाधक (इन्द्र=परमेश्वरो विद्युद्वा) २ १२.६ परिमाणसाधकम् (ज्ञानम्) ३ ३१ ८ प्रतिमान अर्थात् परिमाण का कर्त्ता (ईश्वर) आर्याभि० १ १३, ऋ० १ ४.१४ १२. [प्रति+माङ् माने (जु०) धातो करणे ल्युट्]

प्रतिमिताम् प्रतिमान अर्थात् एक द्वार, कोण और कक्ष के सम्मुख दूसरे द्वार, कोण और कक्ष वाली (शाला) को स वि० १६६, अथर्व० ६ ३.३ १ [प्रति+माङ् माने (जु०) धातो क्त। 'द्यतिस्यति०' इतीत्वम्। स्त्रिया टाप्]

प्रतिमिमाति प्रतिगच्छति १ १६४ २६ [प्रति+माङ् माने (जु०) धातोर्लट्। व्यत्ययेन परस्मैपदम्]

प्रतिमिमीते प्रत्यक्षतया रचयति १ १६४ २४. [प्रति+माङ् माने (जु०) धातोर्लट्]

प्रतिमुचः प्रत्यक्षतया छोडे स० वि० १६६, अथर्व० ६ ३ ३ २४ [प्रति+मुच्लृ मोचने (तुदा०) धातोर्लङ्। अडभावश्छान्दस। 'शे मुचादीनाम्' इति नुमागमोऽपि न भवति, आगमशासनस्यानित्यत्वात्]

प्रतिमुचीष्ट प्रतिमुञ्चत ७ ५६ ८ [प्रति+मुच्लृ मोचने (तुदा०) धातोराशिषि लिङ्। 'छन्दस्युभयथे' ति सार्वधातुकत्वात् सलोप]

प्रतिमुच्यते प्रत्यक्षतया त्यजति ५ ८१ २ प्रकाश्यते १२ ३ [प्रति+मुच्लृ मोचने (तुदा०) धातो कर्मणि लट्]

प्रतिमुञ्चमानाः मुञ्चन्ते आभिमुख्य ये प्रतीत मुञ्चन्ते त्यजन्ति ते (असुरा=दुष्टा मनुष्या) २ ३० [प्रति+मुच्लृ मोचने (तुदा०) धातो शानच्]

प्रतिमै प्रतिमातुम् ३ ६० ४ (प्रति+माङ् माने (जु०) धातोरतुमर्थे कै प्रत्ययश्छान्दस]

प्रतिमोदध्वम् प्रत्यक्षतयाऽऽनन्दयत १२ ७७ [प्रति+मुद हर्षे (भ्वा०) धातोर्लोट्]

प्रतियन् प्राप्नुवन्ति ३ ४ ५ **प्रतियन्ति**=प्राप्नुवन्ति १.१८० ४. प्रापयन्ति १ ११६ २ [प्रति+इण् गतौ (अदा०) धातोर्लङ्। आटोऽभावश्छान्दस। अन्यत्र लट्]

प्रतिर प्रकृष्टतया तारय ५ ३३ सन्तारय १ ६४ १६ विस्तारय ३ १७ २ क्लेश मत होने दे आर्याभि० २ १८, ३ ५५ **प्रतिरत**=निष्पादयत ७ ५७ ५ **प्रतिरते**=प्रत्यक्ष प्लवते सन्तरति वा प्र०—अत्र व्यत्ययेनाऽऽत्मनेपदम् विकरणव्यत्ययेन शश्च १ १०४ ४ **प्रतिरन्तु**=सुशिक्षया वर्द्धयन्तु १.८६ २ पूर्णं भोजयन्तु २५ १५ **प्रतिरन्ते**=प्रकृष्टतया तरन्ति उल्लङ्घयन्ति १ ११३ १६ प्रकर्षेणोल्लङ्घयन्ते ३ ५३ ७ सन्तरन्ति १ १२५ ६.

प्रतीची दिक्सोमो देवता काठ० ७ २ तै० ३ ११ ५ २ प्रतीची दिङ् मरुतो देवता मै० १.५.४ प्रतीच्येव मह गो० १ ५ १५ या प्रतीची सा सर्पाणाम् श० ३ १ १ ७. सम्राडसि प्रतीची दिक् तै० स० ४ ३ ६ २]

प्रतीचीनम् अस्मान् प्रत्यभिमुख प्राप्नुवन्तम् (राजानम्) ५ ४४ १ अविद्यादिदोषेभ्य प्रतिकूलम् भा० — अविद्याध्वान्तौघध्वसनम् (वृजन =योगवलम्) ७ १२ पश्चाद्भूतम् (विश्व =सर्व जगत्) ३ ५५ ८ **प्रतीचीनः**= पूर्वाऽभिमुख (गृह) स० वि० १६८, अथर्व० ६ २ ३ २२. [प्रतीच इति व्याख्यातम् । तत 'विभाषाञ्चेरदिक् स्त्रियाम्' अ० ५ ४ ८ सूत्रेण स्वार्थे ख प्रत्यय]

प्रतीतये सुखप्राप्ताय ज्ञानाय वा १ ३६ २० [प्रति+ इण् गतौ (अदा०) धातो स्त्रिया क्तिन्]

प्रतीत्येन प्रतीतौ भवेन (वचसा =वचनेन) ४ ५ १४ [प्रतीतिप्राति० भवार्थे यत् । प्रतीति =प्रति+इण् गतौ (अदा०)+क्तिन्]

प्रतूर्तम् अतितूर्णम् भा०—शीघ्रम् ११ १२ [प्र+ ञित्वरा सम्भ्रमे (भ्वा०) धातो क्तप्रत्यये 'ज्वरत्वर०' सूत्रेण वकारस्य उपधायाश्च स्थाने ऊठ् । प्रतूर्तम्= यद्वै क्षिप्र तत् तूर्तम् यत् क्षिप्रात्क्षेपीयस्तत्प्रतूर्तम् श० ६ ३.२.२.]

प्रतूर्तये सद्योऽनुष्ठानाय १ १२९ २ **प्रतूर्तिषु**=हनन-कर्मसु सङ्ग्रामेषु ३३ ६६ **प्रतूर्तिः**=शीघ्रगति १४ २३ प्रकृष्टा तूर्णा गतिर्यस्य स: (पराक्रम) ६ ६ [प्र+ञित्वरा सम्भ्रमे (भ्वा०) धातो स्त्रिया क्तिन्प्रत्यये 'ज्वरत्वर०' इति सूत्रेण वकारस्योपधायाश्च स्थाने ऊठ् । सवत्सरो वाव प्रतूर्ति श० ८ ४.१ १३]

प्रतूर्वतः शीघ्र कर्त्तु (मित्रस्य) ५ ६५ ४ **प्रतूर्वन्**=हिसन् (स्वस्तिगव्यूति =राजा) ११ १५. [प्र+ञित्वरा सम्भ्रमे (भ्वा०) धातो शतरि छान्दस रूपम् । प्रतूर्वन्=(त्वरमाण) प्रतूर्वन्नेह्यपक्रामन्नशस्ती-रिति पाप्मा वा ऽअशस्तिस्त्वरमाण एह्यवक्रामन् पाप्मान-मित्येत् श० ६ ३ २ ७]

प्रतृदः प्रकर्षेणाऽविद्यादिदोषहिंसक (वसिष्ठो= आप्तो विद्वान् ७ ३३ १४ [प्र+उतृदिर् हिंसानादरयो (रुधा०) धातोरिगुपधलक्षण क]

प्रत्न प्राचीन दीर्घायुष्क (राजन्) ६ ३९ ५ **प्रत्नम्**=प्राक्तनम् (विद्युदाख्य वह्निम्) ३ ९ ८ पुरातनम् (सधस्थ=गर्भाशयम्) ११ ४८ प्राचीनम् (गृहाश्रमिणाम्) ५ ८ १ कारणरूपेणाऽनादिम् (अ०—विश्व राज्यम्) प्र०—नञ्च पुरा पुराणे प्राद् वक्तव्य अ० ५ ४ २५ इति पुराणार्थे प्र०—शब्दात् त्नप्-प्रत्यय. १ ३६ ४ **प्रत्नस्य**=पुरातनस्याऽनादे (पितु =जगदीश्वरस्य) १.८७ ५ प्राक्तनस्य (रेतस - वीर्यस्य) ३ ३१.१० **प्रत्नः**—प्राचीनविद्याऽध्येता (होता=गुणदाता राजा) १११७ १ प्रागधीतविद्य (मनुष्य)' ६ ६२ ४ प्राक्तन (अग्नि =भौतिकमग्निम्) २.७ ६ **प्रत्नाय**=प्राचीनाय (इन्द्राय=सभाद्यध्यक्षाय) १ ६१ २ [प्रप्राति० 'नञ्च पुराणे प्रात्' अ० ५ ४ २५ वा० सूत्रेण पुराणार्थे त्नप् प्रत्यय । प्रत्नम्=पुराणनाम निघ० ३ २७ प्रत्न पुराण नि० १२ ३१ प्रत्नम्=अय वा गर्भ—ऋत्विय प्रत्न सधस्थमासदद् इत्यय वो गर्भ ऋतव्य सनातनसधस्थमासदद् इत्येतत् श० ६ ४ ४.१७ स्वर्गो लोक प्रत्न तै० स० १ ५ ७ १]

प्रत्नथा प्रत्न. प्राचीन इव (इन्द्र =दुष्टविदारको राजा) ६ १७ ३ प्राक्तनाना योगिनामिव (योगिजना) ७ १२ प्राचीनम् (वा =जलमिव) १.१३२ ३ प्राचीनेनेव (वलेन) ५ ८ ५ प्रत्न प्राक्तन इव (वैश्वानर =पावक) ३ २ १२ प्रत्नमिव (वृजन =वलम्) ५ ४४.१ [प्रत्न व्याख्यातम् । तत इवार्थे 'प्रत्नपूर्व०' इति थाल्प्रत्यय । प्रत्नथा =प्रत्न इव नि० ३ १६]

प्रत्नवत् प्रत्न प्राचीनो निधिर्विद्यते यस्मिंस्तत् (रेवत्=प्रशस्तपदार्थगुक्त द्रव्यम्) १ १२४ ९ प्रत्न प्राचीन कारण विद्यते यस्मिंस्तद्वत् (आकाशवत्) ६ ६५ ६ प्राचीनवत् (सूर्यवत्) ६ १६ २१ पुरातनम् (परमात्मानम्) ६ २२ ७ [प्रत्न व्याख्यातम् । ततो मतुप् अथवा तुल्यार्थे वति प्रत्यय]

प्रत्ना पूर्वकालीनि (विज्ञानानि) ६ २१ ६ प्राचीनानि (वस्तूनि) १ १०५ ५ [प्रत्न व्याख्यातम् । तत शेर्लोप-श्छन्दसि]

प्रत्नानि प्राक्तनानि (सख्या=सख्यु कर्माणि) १ १०८ ५ [प्रत्न व्याख्यातम्]

प्रत्नाम् अनादिवर्त्तमाना पुराणीमनादिस्वरूपेण नित्याम् (द्युतम्=कारणस्था दीप्तिम्) प्र०—प्रत्नमिति पुराणनामसु पठितम् निघ० ३ २७, ३ १५ [प्रत्न व्याख्यातम् । तत स्त्रिया टाप्]

प्रत्नासः प्राक्तना पूर्वमधीतविद्या (विप्रा =मेधाविजना) ४ ५० १ प्राचीना (राजसुहृद) ६ २१ ५ भूता

धातोः स्त्रियाम् 'आतञ्चोपसर्गे' इत्यङ् । ततष्टाप् । प्रतिष्ठा ह्रस्वनाम निघ० ३ २ इमेऽउ लोका प्रतिष्ठा चरित्रम् श० ८.३ १ १० एषा वै कृत्स्ना प्रतिष्ठा यज्ज्योतिरतिरात्र । जै० २ ३१३ प्रतिष्ठा पुच्छ वयसाम् । ऐ० आ० १ ४ २ प्रतिष्ठा यज्ञायज्ञियम् मै० ३ ३ ५ प्रतिष्ठा वै रथन्तरम् ऐ० २ ४ प्रतिष्ठा वै स्विष्टकृत् ऐ० २ १० प्रतिष्ठोदरमन्नाद्यानाम् ऐ० आ० १ ५ १ याश्चतस्र प्रतिष्ठा इमा एव नाश्चतस्रो दिश जै० उ० १ ६ १ २ यत् प्रतिष्ठा त्रयस्त्रिंश इत्यन्तो हि स जै० ३ ३०६]

प्रतिष्ठितम् प्रतिष्ठित रहता हुआ स० प्र० १६, अथर्व० ११ २४ २ **प्रतिष्ठितः**=प्राप्तप्रतिष्ठ (सभेश) २० ६ **प्रतिष्ठिताः**=प्राप्तप्रतिष्ठा (मनुष्या) ऋ० भू० १०२, अथर्व० १२ ५ ३ प्रतिष्ठा को प्राप्त हुए (हे स्त्री-पुरुषो) स० वि० १४३, अथर्व० १२ ५ ३ [प्रति+ष्ठा गतिनिवृत्तौ (भ्वा०) धातो क्त । 'द्यतिस्यतिमा०' इतीत्वम्]

प्रतिष्ठिता प्रतिष्ठितानि (ऋग्यजु सामानि) ३४ ५ प्रतिष्ठित होते हुए (ऋग्, यजु, साम, अथर्व वेदो के ज्ञान) स० प्र० १८४, ३४ ५ [प्रतिष्ठितमिति व्याख्यातम् । तत शेर्लोपश्छन्दसि]

प्रतिष्ठित्यै प्रतिष्ठायै १५ १२ प्रतितिष्ठन्ति· यस्या तस्यै १५ १० [प्रति+ष्ठा गतिनिवृत्तौ (भ्वा०) धातो स्त्रिया क्तिन् । द्वाभ्या खनति प्रतिष्ठित्य तै० म० ५ १ ४ १ द्विपाद्वै यजमान प्रतिष्ठित्यै जै० ३ २६५]

प्रतिष्ठि: प्रतिष्ठित प्रतिष्ठावान् (सज्जन) ६ १८ १२ [प्रति+ष्ठा गतिनिवृत्तौ (भ्वा०) धातोरौणा० इन् किच्च बहुलवचनात्]

प्रतिसदृक्षासः आप्तसदृशा (मनुष्या) १७ ८४ [प्रति-सदृक्षपदयो समासे जसोऽसुक् । सदृक्ष·=समानोपपदे दृशिर् प्रेक्षणे (भ्वा०) 'दृशे क्सश्च वक्तव्य' अ० ३ २ ६० वा० सूत्रेण क्स । समानस्य सभाव]

प्रतिसदृङ् यस्त त प्रति सदृश पश्यति स (अ०—पुरुष) १७ ८१ [प्रति-सदृक्पदयो समास । सदृक्=समानोपपदे दृशिर् प्रेक्षणे (भ्वा०) धातो 'त्यदादिषु०' सूत्रेण क्विन् । 'क्विन्प्रत्ययस्य कु' इति कुत्वम्]

प्रतिसर्य्याय ये प्रतीते धर्मे सरन्ति तेषु भवाय (धार्मिकाय जनाय) १६ ३३. [प्रति+सृ गतौ (भ्वा०) धातोरच् प्रत्यय । प्रतिसरप्राति० भवार्थे यत्]

प्रतिस्पशः बाधनानि १३ ११ [प्रति+स्पश बाधन-स्पर्शयो (भ्वा०) धातो. क्विप्प्रत्यय । घञर्थे को वा । वचनव्यत्यय]

प्रतिस्फुर पुरुषार्थय ४ ३ १४ [प्रति+स्फुर सचालने (तुदा०) धातोर्लोट्]

प्रतिहर्य प्रत्यक्षतया कामयस्व १ १४४.७ प्रतिकाम-यते ५ ५७ १ **प्रतिहर्यन्ति**=प्रत्यक्ष कामयन्ते १ १६५ ४. **प्रतिहर्यथ**=पुन पुनर्विजानीथ १ ४० ६ [प्रति+हर्य-धातोर्लोट् । हर्यति कान्तिकर्मा निघ० २ ६ हर्यति गतिकर्मा निघ० २ २४ प्रतिहर्यते प्रतिकामयते नि० ११ १३]

प्रतिहिताभिः प्रत्यक्षेण धृताभि (सेनाभि) १७ ३५ **प्रतिहिताः**=प्रतीत्या वृता (ऋषय =विषय-प्रापका पञ्च ज्ञानेन्द्रियाणि मनो बुद्धिश्च ३४.५५ [प्रति-हितापदयो समास । हिता=डुधाञ् धारणपोषणयो (जु०) धातो क्तप्रत्ययान्ताट् टाप् । 'दधातेर्हि' इति हिरादेश]

प्रतीकम् प्रत्येति येन तत् सैन्यम् ७ ८ १. प्रतीति-करम् (ज्योति) ७ ३६ १ येन प्रत्येति तल्लिङ्गम् २६ ३८ विजयप्रतीतिकरम् (बलम्) ७ ३ ६ [प्रति+इण् गतौ (अदा०) धातो कक्-प्रत्ययो बाहु० औणादिक । प्रतीक प्रत्यक्त भवति प्रतिदर्शनमिति वा नि० ७ ३१ मुख प्रतीकम् श० १४ ४ ३ ७]

प्रतीचः पश्चात् स्थितान् (शत्रून्) ३ ३० ६ यत् प्रत्यग् गच्छति तस्य (तमस) १ १७३ ५ [प्रति+अञ्चु गतिपूजनयो (भ्वा०) धातो 'ऋत्विक्०' इति क्विन् । 'अनिदिताम्०' इति नलोपे द्वितीयाबहुवचने शस्-प्रत्यये 'अच' इत्यल्लोपे 'चौ' इति दीर्घे रूपम्]

प्रतीची प्रतीचीन गच्छन्ती (उषा) १ ६२ ६ प्रत्यञ्चतीति (उषा) १ १२४ ७ पश्चिमदिशा प्राप्ता (योषा) ५ ८०.६ पश्चिमा (दिक्) १५ १२ प्रत्यञ्चति प्राप्नोति सा (उष =उषा) ३ ६१ ३ **प्रतीचीम्**= पश्चिमा दिशम् १० १२ पश्चिमा क्रियाम् ५ १२ १ पश्चिम द्वार युक्त (गृह) स० वि० १६८, अथर्व० ६ २ ३ २२ **प्रतीचीः**=पश्चिमा (दिश.) १६ ६४. प्रतीतम[illegible] (प्रजा) ४ ३ २ प्रतिकूल वर्त्तमाना ([illegible]) ३ १८ १ **प्रतीच्यै**=या प्रत्यगञ्चति [illegible] पृष्ठभागा तस्यै (दिशे) २२ २४. [[illegible] नम् । तत स्त्रियाम् ' [illegible] । प्रतीची अभिमुखी नि०

५ ४४.१२ [प्रति+इण् गतौ (भ्वा०) धातोर्लट्]

प्रत्यैरयतम् प्रत्यक्षतया प्रापयताम् १ ११७ २२ [प्रति+ईर गतौ (अदा०) धातोर्णिजन्ताल्लङ्]

प्रत्यौहताम् प्रतीत्या वितर्केण प्राप्नुताम् २७ ६ [प्रति+ऊह वितर्के (भ्वा०) धातोर्लङ्। प्रत्यौहत=प्रत्यूहते नि० २ ९]

प्रत्वक्षसः प्रत्यक्षतया शत्रूणां छेत्तार (नृतमास = नायका जना) १ ८७ १ प्रत्यक्षेण सूक्ष्मकर्त्तार (मरुत = मनुष्या) ५ ५७ ४ [प्र+त्वक्षू तनूकरणे (भ्वा०) धातोरौणादिकोऽसुन्प्रत्यय]

प्रथताम् विस्तारयतु १ २२ **प्रथते**=विस्तृणोति १ १२४ ५ प्रकटयति २९ २९ **प्रथन्ताम्**=प्रख्यान्तु ७ ३ ५ **प्रथन्तु**=उपदिशन्तु प्र०—अत्र व्यत्ययेन परस्मैपदम् १५ १० [प्रथ प्रख्याने (भ्वा०) धातोर्लोट्। 'प्रथते' प्रयोगे लट्। 'प्रथन्तु' प्रयोगे व्यत्ययेन परस्मैपदम्]

प्रथमच्छत् य प्रथमान् विस्तृतान् छादयति स (परमेश्वर) १७ १७ विस्तीर्ण जगत् को रच के अनन्तरूप से आच्छादित करने वाला (परमात्मा) आर्याभि० २ ३०, १७ १७ [प्रथमोपपदे छद अपवारणे (चुरा०) धातो कर्त्तरि क्विप्। प्रथम =प्रथ प्रख्याने (भ्वा०) धातो 'प्रथेरमच्' उ० ५ ६८ इति अमच्प्रत्यय]

प्रथमजम् प्रथमे वयसि ब्रह्मचर्याश्रमे वा जातम् (ओज =बलपराक्रमम्) ३४ ५१ [प्रथमोपपदे जनी प्रादुर्भावे (दिवा०) धातोर्ड प्रत्यय]

प्रथमजान् प्रथमाद्विस्तीर्णात् कारणादुत्पन्नान् (पदार्थान्) २४ १६ **प्रथमजाम्**=य प्रथम जायते तम् (मेघम्) प्र०—अत्र 'जनसन०' इत्यादि अ० ३ २ ६७ अनेन जनधातोर्विट् प्रत्यय १ ३२ ३ सृष्टिकालयुगपदुत्पन्नमेवम् १ ३२ ४ यश्च प्रथमानि सूक्ष्मभूतानि जनयति त परमानन्दस्वरूप मोक्षाख्य परमेश्वरम् ऋ० भू० ८९, ३२ ११ सब महत्तत्त्वादि सृष्टि को धारण करके पालन कर रहे (ईश्वर) को स० वि० २१५, ३२ ११ **प्रथमजा**=प्रथमात्कारणाज्जाता (पूर्वोक्ता महत्तत्त्वादय) १ १६४ ३७ प्रथमे विस्तीर्णे ब्रह्मणि जाता प्रसिद्धा (ऋषय =वेदार्थविद पुरुषा) १८ ५२ य प्रथम जात स (सूर्य इव राजा) ६ ७३ १ प्रथमाद्विस्तीर्णात् कारणाज्जाता वायव १५ १२ अस्मदादौ जाता: (ऋषय =वेदविद्यापुरस्सरा परमयोगिन) १८ ५८ आदिजा (ऋषय =वायव प्राणा) १५ १४ प्रथमतो जाता वायव १५ १० आदौ जाता विद्वांस (जना) १५ ११ [प्रथमोपपदे जनी प्रादुर्भावे (दिवा०) धातोर्ड प्रत्यय। प्रथमजाम्=अत्र प्रथमोपपदे जनी प्रादुर्भावे (दिवा०) धातो 'जनसनखनक्रमगमो विट्' इति विट्। 'विड्वनोरनुनासिकस्यात्' अ० ६ ४ ४१ सूत्रेण नकारस्याकारादेश]

प्रथमजाम् प्रथमोत्पन्ना वेदचतुष्टयीम् भा०—धर्माचरण-वेद-योगाभ्यास-सत्सङ्गादिभि कर्मभिर्जाता शरीरपुष्टिमात्माऽन्त करणशुद्धि च ३२ ११ **प्रथमजाः**= प्रथमाज्जाता (दिव्य =सत्स्त्रिय) ३७ ४ [प्रथमज इति व्याख्यातम्। तत स्त्रिया टाप्]

प्रथमभाजम् य प्रथमान् भजति सेवते तम् (देव= दातार विद्वास जनम्) ६ ४९ ९ [प्रथमोपपदे भज सेवायाम् (भ्वा०) धातो 'भजो ण्वि' अ० ३ २ ६२ सूत्रेण ण्वि। अण् प्रत्ययो वा]

प्रथमम् आदिम कार्यम् १३ ३४ आदौ (दामान= दातार जनम्) ४ ५४ २ विस्तृतमनादि (गर्भ =प्रकृत्याख्यम्) १७ ३० प्रख्यातम् (अग्नि=पावकम्) ३ २९ ५ सब कार्यो मे पहले वर्त्तमान और सब के मुख्य कारण (ईश्वर) को आर्याभि० १ ४०, ऋ० १ ७ ३ ३ विस्तृत विस्तारयितृ (ब्रह्म=सर्वेभ्यो बृहत् परमेश्वरम्) १३ ३ विस्तीर्णम् (केतु=प्रज्ञाम्) १४ १ सर्वोत्कृष्टम् (सभाध्यक्षम्) १ ७७ ३ सब जगत् के आदि-कारण (ईश्वर) को आर्याभि० २ २८, १३ ३ सर्वेष्वग्रगन्तारम् (प्रजापतिम्) १ ३१ ११ जीवनस्याऽऽदिमनिमित्तम् (अग्नि=रूपगुणम्) १ ३५ १ पुर १ १८५ १० आदिम पृथिव्या गमनम् २ १८ २ **प्रथमस्य**= विस्तीर्णस्याऽऽदिमाऽवयवस्य वा १ १२३ ९ आदिमाऽऽश्रमब्रह्मचर्यस्य ३ १५ ४ अनादि सदा मुक्त परमात्मा का स० प्र० ३३०, १ २४ २ **प्रथमः**=प्रख्यातो विद्वान् (जन) १ ८३ ५ विस्तीर्णोऽग्नि १५ २६ आदिम प्रख्यातो वा (सभेश) १ १३४ ६ सर्वस्य प्रथयिता (इन्द्र =सेनापति) प्र०—अत्र 'प्रथेरमच्' उ० ५ ६८, १ १०१ ५ जन्मादे पूर्वगादिम (जगदीश्वर) १२ १०२ विस्तीर्णगुणकर्मा (अग्नि) २ १० १ यज्ञक्रियायामुपास्य आदिम साधन वा (अग्नि) ३ १५ प्रख्यातिमान् (गिल्पिजन) १ १६३ २. पहिला (विवाहित पति) स० प्र० १५३, १० ८५ ४० अनादिस्वरूपो जगत कल्पादौ सदा वर्त्तमान (अग्नि = विज्ञान स्वरूप ईश्वर) १ ३१ १ कारणरूपेणाऽनादिर्वा कार्येष्वादिम (अग्नि =ईश्वर सभाध्यक्षो वा) १ ३१ ३ अनादिस्वरूप पूर्वं मान्यो वा (अग्नि =ईश्वर) १ ३१ २

(पितर =जनका) ४ २ १६ [प्रत्नं व्याख्यातम् ततो जसोऽसुक्]

प्रत्ने पुरातन्यौ (रोदसी=भूमिसूर्यलोकौ) ६.१७ ७ [प्रत्न व्याख्यातम्। तत स्त्रिया टापि प्रथमाद्विवचने रूपम्]

प्रत्यक्षम् साक्षात्कारता से स० वि० २०८, अथर्व० ६ ६ ११ [प्रति-अक्षिपदयो समासे 'अव्ययीभावे शरत्-प्रभृतिभ्य' अ० ५ ४ १०७ सूत्रेण टच्प्रत्यय]

प्रत्यख्यत् प्रकाशयति ४ १३ १ [प्रति+ख्या प्रकथने (अदा०) धातोर्लुङि 'अस्यतिवक्तिख्यातिभ्य०' इति च्ले स्थाने अङ्]

प्रत्यग्रभीत् प्रतिगृह्णाति २८ २३ [प्रति+ग्रह उपादाने (क्र्या०) धातोर्लुङ्। 'हृग्रहोर्भश्छन्दसि' इति हस्य भकारादेश]

प्रत्यग्रभीष्म प्रतिगृह्णीयाम ६ ४७.२२ [प्रति+ग्रह उपादाने (क्र्या०) धातोर्लुङ्। हस्य भकारश्छान्दस]

प्रत्यङ् य प्रत्यञ्चति स (जगदीश्वर) १ ५० ५ प्रतिपदार्थमञ्चति प्राप्नोति य स (देव =ईश्वर) ३२.४ य प्रत्यक्षमञ्चति प्राप्नोति स (सोम =निष्पादितौषधिरस) १६ ३ प्रत्यञ्चतीति (विद्वज्जन) १ १४४ ७ पूजितो भव (अ०—राजप्रजाजन) १० ३१. **प्रत्यञ्चम्**=पश्चात्स्थितम् (सेनाध्यक्षम्) १० ८ य प्रत्यञ्चति तम् (अग्निं=विद्युतम्) ७ १२ १ प्रत्यञ्चन्तम् (अग्निम्) २ १० ५ प्रत्यगञ्चतीति शरीरस्थ वायुम् ११ २४ **प्रतीचः**=पश्चात् स्थितान् (जनान्) ३ ६० ६ य प्रत्यगञ्चति तस्य (तमस =अन्धकारस्य) १ १७३ ५ [प्रति+अञ्चु गतिपूजनयो (भ्वा०) धातो 'ऋत्विग्०' इति क्विन्प्रत्यये 'अनिदिताम्०' इति नलोपे 'उगिदचाम्०' नुमि हल्ङ्याबादिसयोगान्तलोपयो 'क्विन्-प्रत्ययस्य कु' इति कुत्वं रूपम्। 'प्रतीच' प्रयोगे तु शसि भसञ्ज्ञायाम् 'अच' इत्यल्लोपे 'चौ' इति दीर्घे रूपम्]

प्रत्यदर्शि प्रत्यक्षतया दृश्यते ४ ५२ १ प्रतियोक्तु दृश्यते १ ६२ ५ [प्रति+दृशिर् प्रेक्षणे (भ्वा०) धातो कर्मणि लुङ्]

प्रत्यदृक्षत प्रतिदृश्यन्ते ४ ५२ ५ [प्रति+दृशिर् प्रेक्षणे (भ्वा०) धातोर्लुङ्। छन्दसि सर्वविधीना विकल्पनात् 'न दृश' इति क्सप्रत्ययस्य प्रतिषेधो न भवति]

प्रत्यधत्तम् प्रत्यक्षतया भरतम् १ ११६ १५ [प्रति+डुधाञ् धारणपोषणयो (जु०) धातोर्लङ्]

प्रत्यधायि प्रतिध्रियते १ १८४ ६ [प्रति+डुधाञ् धारणपोषणयो (जु०) धातो कर्मणि लुङ्]

प्रत्यनुगृभ्णातु पश्चात् प्रतिगृह्णातु प्रतिगृह्णाति वा अ०—प्रत्यनुगृह्णातु प्रकृष्टतयाऽनुगत गृह्णाति प्र०—अत्र 'हृग्रहो०' इति हस्य भ., पक्षे लडर्थे लोट् च १ २० [प्रति+अनु+ग्रह उपादाने (क्र्या०) धातोर्लोट्। हस्य भकारश्छान्दस]

प्रत्यन्वमदन् प्रत्यक्षतया पुनर्हृष्यन्तु १ ५२ १५ [प्रति+अनु+मदी हर्षे (दिवा०) धातोर्लङ्। व्यत्ययेन शप्]

प्रत्यपद्महि प्रत्यक्षतया व्याप्त्या प्राप्नुयाम ४ २६ [प्रति+पद गतौ (दिवा०) धातोर्लङ्। 'बहुल छन्दसि' इति शपो लुकि श्यनोऽप्यभाव]

प्रत्यभूत्स्महि प्रत्यक्षतया विजानीयाम ४ ५२ ४ [प्रति+भू सत्तायाम् (भ्वा०) धातोश्छान्दस रूपम् व्यत्ययेनात्मनेपदम्]

प्रत्यस्तम् प्रतीक्षितम् (शिर =उत्तमाऽङ्गम्) १० १४ [प्रति+असु क्षेपणे (दिवा०) धातो क्त]

प्रत्यहन् प्रतिहन्ति १ ३२ १२ [प्रति+हन हिंसागत्यो (अदा०) धातोर्लङ्]

प्रत्यायम् प्रतीत्या प्राप्नुयाम् प्र०—अत्र लिङर्थे लङ् १ ११ ६ [प्रति+इण् गतौ (अदा०) धातोर्लङ्]

प्रत्याश्रावः य. प्रतिश्राव्यते स (विद्वान् जन) १६ २४ [प्रति+आङ्+श्रु श्रवणे (भ्वा०) धातोर्घञ्]

प्रत्युदायन् प्रत्युदायन्ति, उद्यन्ति प्रतियन्ति वा ३ ३१ ४ [प्रति+उत्+इण् गतौ (अदा०) धातोर्लङ्]

प्रत्युष्टम् प्रतिदग्धव्यम् (रक्ष =विघ्नकारी प्राणी) १ २६ यत् प्रतीत च तद्दुष्ट दग्ध च तत् (रक्ष =रक्ष-स्वभावो दुष्टो मनुष्य) १ ७ नित्य प्रजापालनाय तापनीय (रक्ष =परसुखासहो मनुष्य) १ २६ [प्रति+उष दाहे (अदा०) धातो क्त]

प्रत्युष्टाः प्रत्यक्षतया उष्टा दग्धव्यास्ते (अरातय =शत्रव) १ ७ प्रत्यक्ष ज्वालनीया (अरातय =परसुखासोढारो मनुष्या) १ २६ प्रतिदग्धव्या (अरातय) १ २६ [प्रति+उष दाहे (भ्वा०) धातो क्त]

प्रत्येतन प्रतीतिं कुरुत ६ ४२ ४ [प्रति+आङ्+इण् गतौ (अदा०) धातोर्लोट्। तप्रत्ययस्य तनबादेश]

प्रत्येति प्रतीत प्रापयति ८ ४ प्रत्यक्ष प्राप्नोति ३३ ६८ प्रतीत प्राप्नोति प्रापयति वा प्र०—अत्राऽन्तर्गतो ण्यर्थ १ १०७ १ प्रत्यक्ष प्राप्नोति विजानाति वा

प्रदधन्युः प्रधरन्त प्र०—अत्र 'नाच्छन्दसि' इति नुडागमो यागुडभाव ४ ३ १२ [प्र+डुधाञ् धारण-पोषणयो (जु०) धातोर्लिङि छान्दस रूपम्]

प्रदधिरे प्रकर्षेण दधति १ १५१ २ [प्र+डुधाञ् धारणपोषणयो (जु०) धातोर्लिट्]

प्रदरान् उदराऽवयवान् २५ ७ [प्र+दॄ विदारणे (क्र्या०) धातोरप् प्रत्यय 'ऋदोरप्' इति]

प्रदशस्यतम् प्रकृष्टतया दत्तम् १ १५८ १ [प्र+दाशृ दाने धातोर्लोट्। धातोर्ह्रस्वश्छान्दस। विकरण-व्यत्ययेन द्विविकरणता]

प्रदातारम् प्रकृष्टतया दानशीलम् (पुरुषम्) ७ ४६ [प्र+डुदाञ् दाने (जु०) धातो कर्तरि तृच्। ताच्छील्ये तृन् वा]

प्रदातुः प्रकृष्टतया शोधयतु (विदुषो जनस्य) प्र०—'दैप शोधने' इत्यस्य रूपम् १ १३ ११ [प्र+दैप् शोधने (भ्वा०) धातो कर्त्तरि तृच्]

प्रदिवः प्राचीन (अग्नि=विद्युत) ४ ७ ८ [प्रदिव पुराण नि० ८ १८ प्रदिव पुराणनाम निघ० ३ २७]

प्रदिवः प्रकृष्टप्रकाशस्य (परमेश्वरस्य) ६ ६२.८ प्रकृष्टा द्यौ प्रकाशो येषा ते (प्रियाचारा जना) ३ ४३ १ प्रकृष्टान् विद्याविनयप्रकाशान् ३ ३८ ५ सुप्रकाशान् (लोकान्) ४ ६ ४ प्रकर्षेण कमनीयान् (मघोन=धनाढ्यान् जनान्) ६.४४ १२ प्रकृष्टा द्यौ प्रकाशमाना विद्या येषान्ते (सोमा=पदार्था) ३ ३६ २ प्रकर्षेण विद्याविनयप्रकाशस्य ३.४७ २ प्रकृष्ट सूर्यात् १ १०९ ६ प्रकर्षेण विद्यादिसद्-गुणान् कामयमानान् (मेधाविजनान्) ४ ३४ ३ प्रकृष्टा द्यौ, प्रकाशिता विद्या २ ३ १ प्रकृष्टस्य न्यायप्रकाशस्य १ ५३ २ प्रकृष्टद्युतिमत (विदुषो जनस्य) १ १४१ ३ **प्रदिवा**=प्रकृष्टप्रकाशवता (केतुना=प्रज्ञया) ५ ६० ८ **प्रदिवि**=प्रद्योतनात्मकेऽग्नौ ५ ६२ ४ प्रकृष्टाया कामना-याम् ६ २१ ८ प्रकृष्ट-प्रकाशे ३ ४६ ४ प्रकर्षेण कमनीये व्यवहारे ६ ४१ ३ [प्र+दिव्पदयो समास। दिव्=दिवु क्रीडाविजिगीषाव्यवहारद्युतिस्तुतिमोदमदस्वप्नकान्ति-गतिषु (दिवा०) धातो क्विप्। प्रदिव=पूर्वेष्वप्यह सु नि० ४ ८]

प्रदिशम् प्रकृष्टा दिशम् १७ ६६ दिशोपदिग्युक्त देशम् २ ४२ २ प्रदिश्यते सर्वैर्जनैस्ताम् (दिशम्) १ ९५ ३ **प्रदिशः**=दिक्प्रदिक्स्याञ्छत्रून् ६ ७५ २ दिशोपदिश ३६ प्रकृष्टगुणयुक्ता दिश २७ १ आग्नेयाद्या उपदिश ३२ ११ ऐशान्यादि उपदिशाएँ, ऊपर नीचे आर्याभि० २ १०, ३२ ११ दिशो विदिशश्च २५ १२ अभ्यन्तरदिश ६ १९ प्रकृष्टा दिश' १८ ३६ पूर्वाद्या ऐशान्याद्या वा ७.३५.८. या. प्रदिश्यन्ते ता १८ ६२ उपदिशाओ को म० वि० २१५, ३२ ११ **प्रदिशा**=उपदिशा २० ३६ प्रदेशेन ज्ञानमार्गेण प्र०—अत्र 'घञर्थे कविधानम्' इति क 'सुपा सुलुक्०' इत्याकारादेशश्च १ १०१ ७. वेदादिशास्त्र-प्रदेशेन निर्देशेन प्रमाणेन २९ ३२ प्रकृष्टया दिशा निर्देशेन २९ २९ आज्ञया १ १६४ ३६ **प्रदिशि**=प्रदिशन्ति यया तस्याम् (वाचि=वाण्याम्) २९ ३६ उपदिशि २ १२ ७ [प्र-दिश्पदयो समास। दिश=दिश अतिसर्जने (तुदा०) धातो 'ऋत्विक्०' इत्यादिना कर्मणि क्विन् निपात्यते। प्रदिशाप्रयोगे-प्रपूर्वाद् दिश अतिसर्जने (तुदा०) धातो 'घञर्थे कविधानमि' ति क प्रत्यय, तृतीयैकवचनस्य चाका-रादेश। प्रदिशो दिगाश्रयाणि भूतानि नि० ११ ३७]

प्रदिशमानः प्रकर्षेणोपदिशन् (भा०=गुरुजन) प्र०—अत्र व्यत्ययेनाऽऽत्मनेपदम् ३ ३१ २१ [प्र+दिश अतिसर्जने (तुदा०) धातो शानच्। व्यत्ययेनात्मनेपदम्]

प्रदिशा प्रकर्षेण बोधयन्त्यौ (देवी=देदीप्यमानौ विद्वांसौ) २९.७ [प्र+दिश अतिसर्जने (तुदा०) धातो 'घञर्थे कविधानमि' ति क। 'सुपा सुलुग्०' इत्याकारादेश]

प्रदिष्टाः या प्रदिश्यन्ते ता (दिश=पूर्वाद्या) ३ ३० १२ [प्र+दिश अतिसर्जने (तुदा०) धातो क्त]

प्रदीध्याना प्रदीप्यमाना (उषा) १ ११३ १०. [प्र+दीधीङ् दीप्तिदेवनयो (अदा०) धातो शानच्, तत स्त्रिया टाप्]

प्रदृप्तिः प्रकृष्टो मोह. ६ ३ २ [प्र+दृप हर्षमोहनयो. (दिवा०) धातो स्त्रिया क्तिन्]

प्रदोधुवत् प्रकृष्टतया कम्पयन् (इन्द्र=वैद्य) २ ११ १७ [प्र+धूञ् कम्पने (क्र्या०) धातो शतृप्रत्यय। 'बहुल छन्दसी' ति शप श्लु। यङ्लुगन्ताद्वा शतृ]

प्रदोषम् रात्र्यारम्भे १ १९१ ५ [प्र+दोषापदयो' समास। दोषा रात्रिनाम निघ० १ ७]

प्रधनस्य प्रकृष्टस्य धनस्य १ १६९ २ **प्रधने**=प्रकृष्टानि धनानि यस्मात्तस्मिन् (आजा=सङ्ग्रामे) १ ११६ २ [प्र+धनपदयो समास। प्रधन इति सग्रामनाम, प्रकीर्णा-न्यस्मिन् धनानि भवन्ति नि० ९ २१]

प्रधयः धारिका धुर १.१६४ ४८ **प्रधीन्**=चक्रस्थानि तीक्ष्णानि कीलकानीव वर्त्तमानान् जगत्कण्टकान्

आदिम साधक (विद्वान् जन) ७ ४४ ८ **प्रथमाः**= आदिमा पृथिव्यादयोऽष्टौ वसव २० १२. पृथुवृद्धय. (विद्वांसो जना) २ ३४ १२ प्रख्याता आदिमा (विप्रा = धीमन्तो जना) ४ २ १५ [प्रथ प्रख्याने (भ्वा०) धातो 'प्रथेरमच्' उ० ५ ६८ सूत्रेण अमच्प्रत्यय । प्रथम इति मुख्यनाम, प्रतमो भवति नि० २ २२ प्रथमम्=परमम् नि० ३ ७]

प्रथमश्रवस्तमः अतिशयेन प्रथम श्रव श्रवणमन्न वा यस्मात् स (रयि =श्री) ४ ३६ ५ [प्रथम-श्रवस्पदयो समासे अतिशायने तमप् । श्रवम् अन्ननाम निघ० २ ७ धननाम निघ० २ १०]

प्रथमा विस्तारकौ (विद्वांसौ स्त्रीपुरुषौ) ३ ४ ७ आदिमौ विद्यावलविस्तारकौ (कवी=अध्यापकोपदेशकौ) १ १८८.७ प्रख्यातौ (विद्वदुपदेशकौ) ३.७ ८ [प्रथमप्राति० 'सुपा सुलुक्०' इति सूत्रेण प्रथमाद्द्विवचनस्याकारादेश]

प्रथमा आदिमा (क्रिया) २५ ६ विस्तृताऽऽदिमा (उषा) १ ११३ ८ प्रख्याता (वैद्या स्त्री) ३३ ५६ [प्रथमप्राति० स्त्रिया टाप् । प्रथम इति व्याख्यातम्]

प्रथमा प्रख्यातानि (धर्म=धर्माणि) ३ १७ १ आदिमानि (असुर्याणि=मेघादीनामिमानि चिह्नानि) ४ ४२ २ [प्रथम-प्राति० शेर्लोपश्छन्दसि]

प्रथमानम् प्रख्यातम् (यानम्) २६ ४. [प्रथ प्रख्याने (भ्वा०) धातोश्शानच्]

प्रथमानि अनादिभूतानि मुख्यानि (धर्माणि) भा०— अनादिकालीनधर्माणि ३१ १६ आदिमानि ब्रह्मचर्याख्यानि १ १६४ ४३ ब्रह्मचर्य-विद्याग्रहण-दानादीनि ६ ७२ १ [प्रथम व्याख्यातम् । ततो नपुंसके प्रथमाबहुवचनम्]

प्रथमानाः प्रख्याता (पुरुषा) २० ४० [प्रथ प्रख्याने (भ्वा०) धातो ताच्छील्यादिषु चानश्]

प्रथयन् विस्तारयन् (परमेश्वर) ४ ५३ २ ,प्रकटीकुर्वन् (अग्न्यादिपदार्थविद्यो मनुष्य) ३ १४ ४ **प्रथयन्तः**=प्रख्यापयन्त (विप्रा =मेधाविजना) ५ ४३ ७ [प्रथ प्रख्याने (भ्वा०) धातोर्णिजन्ताच्छतृप्रत्यय]

प्रथयस्व विस्तारय १२ १०६ [प्रथ प्रख्याने (भ्वा०) धातोर्णिजन्ताल्लोट्]

प्रथस्व प्रख्याता भव १३ १७ विस्तारय १ २२ प्रख्याहि ५ ५ ४ विस्तृतमुखो भव ११ २६ प्रख्यातो भव १३ २ [प्रथ प्रख्याने (भ्वा०) धातोर्लोट्]

प्रथस्वतीम् बहु प्रथ प्रख्याति प्रशसा विद्यते यस्या ताम् (सती स्त्रियम्) १५ ६४. प्रथा प्रख्याता कीर्त्तिर्विद्यते यस्यास्ताम् (विदुषी प्रजापालिका राज्ञीम्) १३ १७. उत्तम-विस्तीर्णविद्यायुक्ताम् (स्त्रीम्) १४ १२ [प्रथस्=प्रथ प्रख्याने (भ्वा०) धातोरौणा० असुन् । प्रथस्-प्राति० प्रशसाया भूम्यर्थे वा मतुबन्तात् ङीप्]

प्रथः सर्वजगत्-प्रसारक (ईश्वर) ऋ० भू० १६८ [प्रथ प्रख्याने (भ्वा०) धातो कर्त्तरि अच्]

प्रथानाम् विस्तीर्ण-सौन्दर्य-प्रख्याताम् (भार्याम्) ६ ६४ ३ **प्रथाना**=प्रथते तरङ्गै शब्दायमाना (सिन्धु = नदी) १ ६२ १२ पक्षिशब्दै शब्दायमाना (उषा) १ ६२ १२ [प्रथ प्रख्याने (भ्वा०) धातो शानच्प्रत्ययान्ताट् टाप् । 'आने मुग्' इति न भवत्यागमशासनस्यानित्यत्वाच्छान्दसत्वाद्वा]

प्रथिना पृथोर्भावस्तेन (अ०—सुविस्तृतेन स्वप्रकाशेन) प्र०—पृथुशब्दादिमनिच् 'छान्दसो वर्णलोपो वा' इति मकारलोप १ ८ ५ [पृथुप्राति० भावे कर्मणि वा 'पृथ्वादिभ्य ०' अ० ५ १ १२२ सूत्रेणेमनिच् । मकारलोपश्छान्दस । 'र ऋतोहलादेर्लघोरि' ति ऋकारस्य रेफादेश.]

प्रथिमा पृथोर्भाव (विस्तीर्णपदार्थसमूह) १८ ४ [पृथुप्राति० भावे इमनिज् इति पूर्वपदे व्याख्यातम् । पृथु महान्तम् नि० १२ २३]

प्रथिष्ट प्रथते ५ ५८ ७ [प्रथ प्रख्याने (भ्वा०) धातोर्लुङ् । अडभावश्छान्दस]

प्रथुयामन् बहुप्रापक (विवाहितजन) ६ ६४ ४ [प्रथूपपदे या प्रापणे (अदा०) धातो कर्त्तरि मनिन्]

प्रदक्षिणित् य प्रदक्षिणामेति स (शिल्पिजन) प्र०—अत्र व्यत्ययेनैकवचनम् २ ४३ १ य प्रदक्षिणमेति गच्छति स (जन), प्र०—अत्र इण्-धातो क्विप् 'छान्दसो वर्णलोपो वा' इत्यन्त्यस्याऽकारलोप ३ १६ २ य प्रदक्षिणां नयति स (विद्वान् जन) ५ ६० १ य प्रदक्षिणमेति स (आपूर्ण कलश) प्र०—अत्र शकन्ध्वादेराकृतिगणत्वात् पररूपमेकादेश ३ ३२ १५ या प्रदक्षिणमेति सा (घृताची= रात्रि) प्र०—अत्र 'वाच्छन्दसि' इत्यल्लोप ४ ६ ३ दक्षिणेन पार्श्वेनैति गच्छतीति (विद्वान् जन) ५ ३६ ४ [प्रदक्षिणोपपदे इण् गतौ (अदा०) धातो कर्त्तरि क्विप् । शकन्ध्वादित्वात् पररूप छान्दसो वर्णलोपो वेत्याकारलोप]

प्रदद्रिरे विदीर्णान् कुर्वन्ति भा०—विदृणन्ति प्र०— व्यत्ययेनाऽत्राऽऽत्मनेपदम् ३३ ७० [प्र+दॄ विदारणे (क्र्या०) धातोर्लिट् । व्यत्ययेनात्मनेपदम्]

पादपूरणे' अ० ८ १ ६ इति द्वित्वम् १ ४० ७ प्र०—अत्र पादपूरणाय द्वित्वम् १ १२६ ८ [प्र-पदस्य पादपूरणे द्वित्वम्। आ इत्यर्वागर्थे प्र परेत्येतस्य प्रातिलोम्यम् नि० १ ३]

प्रप्रधेहि अतिप्रकृष्टतया धेहि ११ ८३ [प्र+डुधाञ् धारणपोषणयो (जु०) धातोर्लोट्। प्र-पदस्य पादपूरणे द्वित्वम्]

प्रप्रपिब प्रकृष्टतया पिव ५ ३८ प्रकृष्टमिव पिब ५ ४१ [प्र+पा पाने (भ्वा०) धातोर्लोट्]

प्रप्रणीतन अतिप्रकर्षेणाऽलङ्कुरुत ५ ५ ५ [प्र+णीञ् प्रापणे (भ्वा०) धातोर्लोट्। तप्रत्ययस्य तनादेशश्छान्दस]

प्रप्ररोचते अतिप्रकर्षेण प्रकाशते १२ ३४ [प्र+रुच दीप्तावभिप्रीतौ च (भ्वा०) धातोर्लट्]

प्रप्रविवाय अतिप्रकर्षेण दूर गमयति ७ ६ ३ [प्र+वी गतिव्याप्तिप्रजनकान्त्यसनखादनेषु (अदा०) धातोर्लिट्]

प्रप्रशसिषम् अतिप्रकर्षेण प्रशसेयम् २७ ४२ [प्र+शसु स्तुतौ (भ्वा०) धातोर्लुड। अडभावश्छान्दस]

प्रप्राऽतियन्ति अतिप्रकर्षेण गच्छन्ति ३ ६ ३ [प्र+अति+इण् गतौ (अदा०) धातोर्लट्। 'इणो यण्' इति यणादेश]

प्रप्रुथ्य प्रपूर्य्य ३ ३२ १ [प्र+प्रोथृ पर्याप्तौ (भ्वा०) धातो क्त्वा। समासे क्त्वो ल्यप्। धातोरोकारस्य ह्रस्वश्छान्दस]

प्रप्रोथाय अत्यन्त पर्याप्ताय (पदार्थाय) २२ ७ [प्र+प्रोथृ पर्याप्तौ (भ्वा०) धातोर्घञ्]

प्रप्लुत: प्रकृष्टगुणै प्राप्त (समुद्र =अन्तरिक्षम्) ८ ५६ [प्र+प्लुङ् गतौ (भ्वा०) धातो क्त]

प्रफर्व्यम् प्रफर्वितु गमयितु योग्यम् (रथवाहनम्=रथवहनसाधनम्) १२ ७१ [प्र+फर्व गतौ (छान्दसो धातु) धातोर्ण्यत्]

प्रबभसत् प्रकर्षेण प्रदीप्येत् प्रभर्त्सेत् ४ ५ ४ [प्र+भस भर्त्सनदीप्त्यो (जु०) धातोर्लेट्]

प्रबुधाय प्रकृष्टज्ञानवते (जनाय) २२ ७ **प्रबुधे**=जागरिते (समये) ४ १४ [प्र+बुध अवगमने (भ्वा०) धातोरिगुपधलक्षण कर्त्तरि क। 'प्रबुधे' प्रयोगे घञर्थे क प्रत्यय]

प्रबुध्यस्व प्रकृष्ट-ज्ञान और उत्तम व्यवहार को यथावत् जान म० वि० १४०, अथर्व० १४ २ ७५ [प्र+बुध अवगमने (दिवा०) धातोर्लोट्]

प्रबोधयन्ती प्रकृष्टतया जागरण प्रापयन्ती (उषा) १ ११३ १४ जागरयन्ती (उषा =प्रभातवेला) ४ १४ ३ **प्रबोधयन्ती:**=जागरयन्त्य (उपस =प्रभाता) ४ ५१ ५ [प्र+बुध अवगमने (दिवा०) धातोर्णिजन्ताच्छन्तान्ताच्च डीप्]

प्रब्रवाम प्रकृष्टतयोपदिशेम ४.५८ २ प्रकर्षेणाऽध्यापयेमोपदिशेम वा भा०—वेदानध्यापयेम सत्यमुपदिशेम ३६ २४ **प्रब्रवीतु**=प्रकृष्टतया ब्रूयात् १ १६१ १३ **प्रब्रवीषि**=प्रकर्षेणोपदिशति ४ ४२ ७ [प्र+ब्रूञ् व्यक्तायां वाचि (अदा०) धातोर्लङ्। अडभावश्छान्दस.। 'बहुल छन्दसी' ति शपो लुङ् न। अन्यत्र लडि शपो लुक् 'ब्रुव ईट्' इतीडागम। 'प्रब्रवीषि' प्रयोगे लट्]

प्रब्रुवाण: य प्रकर्षेण वाचयत्युपदेशयति वा स (अध्यापक उपदेशको वा) १ ५५ ४ प्रकृष्टतया वदन् (उपदेशक) २ ४२ १ [प्र+ब्रूञ् व्यक्तायां वाचि (अदा०) धातो शानच्]

प्रब्रूहि प्रत्यक्ष कथय १ ६१ १३ [प्र+ब्रूञ् व्यक्तायां वाचि (अदा०) धातोर् लोट्]

प्रभञ्जन् य प्रभग्नान् करोति स भा०—हिंसन् (बृहस्पति =सेनापति) १७ ३६ [प्र+भञ्जो आमर्दने (रुधा०) धातो शतृप्रत्यय.]

प्रभर प्रकृष्टतया धर १ ६१ १२ **प्रभरत**=प्रकर्षेण दधाति ४ २६ ४ प्रधरत ३ १० ५ **प्रभरध्वम्**=प्रकृष्टतया धरत ३४ १७ प्रधरध्वम् १ १२२ १. **प्रभरध्वे**=प्रकृष्टतया धरत ५ ५६ ४ **प्रभरन्त**=प्रभरन्ति २ १३ २ प्रदधति १ १७३ ४ **प्रभरामहे**=प्रकृष्टतया पुष्येम २ २० १ प्रकर्षेण धरामहे १६ ४८ **प्रभरे**=प्रकृष्टतया धरे १ ५७ १ प्रकर्षेण धरामि ५ १२ १ [प्र+भृञ् भरणे (भ्वा०) धातोर्लोट्। अन्यत्र लङ्लटावपि]

प्रभर्ता प्रकृष्टाना विद्याना धर्त्ता (इन्द्र =सेनेश.) १ १७८ ३ [प्र+भृञ् भरणे (भ्वा०) धातो कर्त्तरि तृच्]

प्रभर्त्ति प्रकृष्टतया बिभर्त्ति प्र०—अत्र 'बहुल छन्दसि' इति शपो लुक् १ १७३ ६ [प्र+भृञ् भरणे (भ्वा०) धातोर्लट्। 'बहुल छन्दसी' ति शपो लुक्]

प्रभर्त्तुम् प्रकर्षेण धर्त्तुम् ३ ४८ १ [प्र+भृञ् भरणे (भ्वा०) धातोस्तुमुन्]

दुष्टान् ४ ३० १५ [प्र+डुधाञ् धारणपोषणयो (जु०) धातो 'उपसर्गे घो कि' अ० ३ ३ ९२ सूत्रेण कि प्रत्यय । प्रधि प्रहितो भवति नि० ४ २७]

प्रधाक् प्रकृष्टतया दहेत् प्र०—अत्र 'मन्त्रे घसह्वर०' इत्यादिना लेर्लुग् 'बहुल छन्दसि' इत्यडभाव १ १५८ ४ [प्र+दह भस्मीकरणे (भ्वा०) धातोर्लुङ् । मन्त्रे घसह्वर०' इति लेर्लुक् अटोऽभावश्च]

प्रधीव यथा सर्वस्य धर्त्री रथाऽवयवा २ ३९ ४ [प्रधी-इवपदयो समास । प्रधी=प्रधिप्राति० ङीप्]

प्रनक्षन्त प्रकर्षेण व्याप्नुवन्तु ७ ४२ १ [प्र+नक्षति व्याप्तिकर्मा निघ० २ १८ धातोर्लङ् अटोऽभावश्च]

प्रनय प्रकृष्टतया प्राप्नुहि १२ २६ [प्र+णीञ् प्रापणे (भ्वा०) धातोर्लोट्]

प्रपत प्रपातय १२ ८७ [प्र+पत्लृ गतौ (भ्वा०) धातोर्लोट्]

प्रपथिन् प्रकृष्ट पन्था विद्यते यस्य तत्सम्बुद्धौ (राजन्) ६ ३१ ५ [प्र—पथिन्पदयो समास]

प्रपथिन्तमम् अतिशयेन प्रकृष्टपथगामिनम् (इन्द्र = सेनेशम्) १.१७३ ७ [प्र-पथिन्पदयो समासेऽतिशायने तमप् । 'नाद् घस्य' अ० ८ २ १७ सूत्रेण नुडागम]

प्रपथेषु प्रकृष्टेषु सरलेषु मार्गेषु १ १६६ ९ [प्र-प्रथिन्पदयो समासे 'ऋक्पूर०' इति समासान्तोऽकार]

प्रपथ्याय प्रकृष्टेषु धर्मपथिषु साधवे (जनाय) १६ ४३ प्रकर्षेण पथ्यकरणाय २२ २० [प्रपथमिति पूर्वपदे व्याख्यातम् । तत साध्वर्थे यत्]

प्रपदैः प्रकृष्टै पदैर्गमनै ६ ७५ ७ प्रकृष्टै पारगमनै २९ ४४ [प्र+पद गतौ (दिवा०) धातोर् 'घञर्थे कविधानम्' इति भावे क]

प्रपद्यस्व प्राप्नुहि १७ ४५ **प्रपद्ये**=प्राप्नोमि ३ ४३ प्राप्नुयाम् ३३ १ यथावत् प्राप्त होऊ आर्याभि० २४९, ३ ४३ प्राप्त होता हूँ स० वि० १४७, ३ ४३ प्राप्नोमि ऋ० भू० २४०, ३ ४३ [प्र+पद गतौ (दिवा०) धातोर्लोट्]

प्रपश्यन् प्रकर्षेण समीक्षन्ते १ १७४ ६ [प्र+दृशिर् प्रेक्षणे (भ्वा०) धातोर्लङ् । अटोऽभावश्छान्दस]

प्रपा जलपान स्नान आदि का स्थान स० वि० १४२, अथर्व० ३ ३० ६ [प्र+पा पाने (भ्वा०) धातो 'घञर्थे कविधानम्' अ० ३ ३ ५८ वा० सूत्रेण क । स्त्रिया टाप्]

प्रपितामहेभ्यः ये पितामहाना पितरस्तेभ्य १९ ३६ येऽष्टाचत्वारिंशद्वर्षप्रमितेन ब्रह्मचर्येण विद्यापारावार प्राप्याऽध्यापयन्ति ते आदित्याख्या. प्रपितामहास्तेभ्य ऋ० भू० २९६, १९ ३६ [प्र—पितामहपदयो समास । पितामह =पितृप्राति० 'नाम्या पितरि डामहच्' अ० ४ २ ३६ वा० सूत्रेण पितरि डामहच्]

प्रपित्वम् प्रकृष्ट प्रापणम् ३ ५३ २४ प्राप्तिम् ५ ३१ ७ **प्रपित्वे**=प्राप्तव्ये समये स्थाने वा १.१०४ १ उत्तरस्मिन् (उत्तरायणे) १ १३० ९ पदार्थानां प्रापणे ३४ ३७ प्राप्तौ ६ ३१ ३ प्रकृष्टप्राप्ते (दिवसे) ४ १६ १२ प्रकर्षेण प्राप्ते समये १ १८९ ७ प्रकर्षेणैश्वर्यस्य प्राप्तौ ७ ४१ ४ प्रकर्षता उत्तमता की प्राप्ति मे स० वि० १५६, ७ ४१ ४ [प्रपित्वेऽभीक इत्यामन्नस्य । प्रपित्वे प्राप्ते नि० ३ २०. प्रपित्वे उत्तराणि पदानि निघ० ३.२९.]

प्रपिन्वध्वम् प्रकृष्टतया सेवध्वम् ३ ३३ १२ [प्र+पिवि सेवने सेचने च (भ्वा०) धातोर्लोट् । व्यत्ययेनात्मनेपदम्]

प्रपिस्पृशति प्रकर्षेणाऽत्यन्त स्पृशति ६ ४९ १२ [प्र+स्पृश सम्पर्शने (तुदा०) धातोश्छान्दस रूपम्]

प्रपीताः प्रकर्षेण पीता वृद्धा (उषास =प्रभाता) ३४ ४० प्रकर्षेण पीता वर्धयित्र्य (विदुष्य स्त्रिय) ७ ४१ ७ [प्र-पीतापदयो समास । पीता =ओप्यायी वृद्धौ (भ्वा०) धातो क्त । 'प्याय पी' इति पीभावे स्त्रिया टाप्]

प्रपीनम् प्रकृष्टतया स्थूलम् (स्तनम्=दुग्धाधारम्) १७ ८७ [प्र-पीनपदयो समास । पीनम्=ओप्यायी वृद्धौ (भ्वा०) धातो क्त । 'प्याय पी' इति पीभावे 'ओदितश्च' इति निष्ठानत्वम्]

प्रपीनाम् प्रवृद्धाम् (सुमर्ति=प्रज्ञाम्) १७ ७४ [प्रपीन व्याख्यातम् । स्त्रिया टाप्]

प्रपीपय प्रकर्षेण वर्द्धय ३ १५ ६ **प्रपीपयन्त**= प्रकृष्टतया वर्द्धयन्ति १ १८१ ६ (प्र+ओप्यायी वृद्धौ (भ्वा०) धातोर्यङ्लुगन्ताल्लोट् । व्यत्ययेन शप् । अन्यत्र लङचटोऽभाव]

प्रपृञ्चती प्रकृष्टा चाऽसौ पृञ्चती चाऽर्थसम्बन्धेन सकलविद्यासम्पर्क-कारयित्री शब्दोच्चारणसाधिका (वेना= वेदचतुष्टयी वाक्) १ २ ३ [प्र—पृञ्चतीपदयो समास । पृञ्चती=पृची सम्पर्के (रुधा०) धातो शत्रन्तात् ङीप्]

प्रप्र अतिप्रकर्षम् ७ ८ ४ अतिप्रकृष्टे १ १३८ १ अतिप्रकर्षेण ३ ९ ३ प्रत्यर्थे प्र०—अत्र 'प्रसमुपोद

प्रमा श० ८ ३ ३ ५ प्रमोपपदे गतौ देवशब्दे (चुरा०) धातोरच् कर्तरि नुम् छान्दस । प्रमिण=अन्तरिक्षे शब्दस्य गर्जनशीलस्येत्यर्थ । मगन्द कुसीदी, माङ्गदो मामागमिष्यतीति च ददाति, तदपत्य प्रमगन्दोऽत्यन्तकुसीदिकुलीन नि० ६ ३२]

प्रमतिम् प्रकृष्टा प्रज्ञाम् ४ १६ १८ प्रकृष्ट ज्ञानम् १ ७१ ७ **प्रमतिः**=प्रकृष्टा चाऽसौ मतिश्च प्रमति १ १०९ १ प्रकृष्टा गति २ २९ २ प्रकृष्टा बुद्धि १ ६४ १ [प्र-मतिपदयो समास । मति=मन ज्ञाने (दिवा०) धातो स्त्रियां क्तिन् । 'मन्त्रे वृषेषपचमन०' इत्युदात्त]

प्रमतिः प्रकृष्टा मतिर्ज्ञान यस्य स (सर्वमङ्गलकारक सभाध्यक्ष) १ ३१ ६ प्रकृष्टप्रज्ञ (वरतमोऽध्यापक) ७ २९ ४ प्रकृष्टा मतिर्भान यस्य स (अग्नि=सभाध्यक्ष) १ ३१ १०. [प्र-मतिपदयो समास । मतिरिति व्याख्यातम् । मतय=मेधाविनाम । निघ० ३ १५]

प्रमत्या प्रकृष्टा मतिर्मनन यस्या तया (देव्या सेनया १ ५३ ५ [प्र-मतिपदयो समास]

प्रमदे प्रमादाय ३० ६ [प्र+मदी हर्षे (दिवा०) धातो 'प्रमदसमदौ हर्षे' अ० ३ ३ ६८ सूत्रेण अप्प्रत्ययो निपात्यते]

प्रमन्द प्रशमय ६ १८ ९ **प्रमन्दते**=प्रकर्षेणानन्दयति १२ ६४ [प्र+मदि स्तुतिमोदमदस्वप्नकान्तिगतिषु (भ्वा०) धातोर्लोट् । अन्यत्र लट्]

प्रमन्दुः प्रकृष्टमानन्दमाप्नुवन्ति ७ ३३ १ [प्र+मदि स्तुतिमोदादिषु (दिवा०) धातोर्लिट् । 'वा छन्दसीति' द्वित्व न भवति]

प्रमन्महे याचामहे प्र०—मन्मह इति याच्ञाकर्मा निघ० ३ १६, ३४ १६ प्रकृष्टतया मन्यामहे याचामहे वा १ ६२ १ [मन्महे याच्ञाकर्मा निघ० ३ १९]

प्रमहसः प्रकृष्टस्य महत (राज्ञ) ५ २८ ४ [प्र—महस्पदयो समास महस्=मह पूजायाम् (भ्वा०) धातोरौणा० असुन् । मह=महन्नाम निघ० ३ ३]

प्रमा प्रमाण यथार्थविज्ञानम् १५ ६५ यया प्रमीयते सा प्रज्ञा १४ १८ यथार्थज्ञान यथार्थज्ञानवान् तत्साधिका बुद्धि ऋ० भू० ४७ [प्र+माङ् माने शब्दे च (जु०) धातो स्त्रियाम 'आतश्चोपसर्गे' इत्यङ् । ततष्टाप् । अन्तरिक्षलोको वै प्रमा, अन्तरिक्षलोको ह्यस्माल्लोकात् प्रमित इव श० ८ ३ ३ ५]

प्रमिनतः प्रकर्षेण हिंसन (वेशस्य=प्रवेशस्य) ४.३ १३. [प्र+मिनाति वधकर्मा (निघं० २ १९) धातोर्लट्]

प्रमिनती प्रकृष्टतया हिंसन्ती (उषा) १ ९२.११ [प्र+मिनाति वधकर्मा (निघ० २ १९) धातो शत्रन्तान् ङीप्]

प्रमिनन्ति परिमातु शक्नुवन्ति १ २४ ६ प्रकर्षेण हिंसन्ति ४ ५ ४ [प्र+मिनाति वधकर्मा (निघ० २ १९) धातोर्लट्]

प्रमिमय प्रक्षिपेयम् २ २९ ५ [प्र+डुमिञ् प्रक्षेपणे (स्वा०) धातोर्लिट् । 'मिनातिमिनोतिदीङा ल्यपि च' इति प्राप्तमात्व न भवति छान्दसत्वात्]

प्रमिमीतः प्रजनयत ५ ७६.२. [प्र+माङ् माने शब्दे च (जु०) धातोर्लट् । व्यत्ययेन परस्मैपदम्]

प्रमियम् प्रहिंसितुम् ४ ५५ ७ [प्र+मिनाति वधकर्मा (निघ० २ २९) धातोश्छान्दस रूपम्]

प्रमिये मरण प्राप्नुयाम् ४ ५४ ४ [प्र+मिनाति वधकर्मा (निघ० २ १९) धातोश्छान्दस रूपम्]

प्रमीनती प्रकृष्टतया हिंसन्ती (उषा) १ १२४ २ [प्र+मीञ् हिंसायाम् (क्र्या०) धातो शत्रन्तान् ङीप्]

प्रमीयसे प्रकर्षेण म्रियसे ५ ७९ १० [प्र+मीञ् हिंसायाम् (क्र्या०) धातो कर्मणि लट्]

प्रमुञ्च प्रकृष्टतया त्यज १६ ९ [प्र+मुच्लृ मोचने (तुदा०) धातोर्लोट् । 'शे मुचादीनाम्' इति नुम्]

प्रमुञ्चन् प्रकर्षेण मुक्ता कुर्वन् (अग्नि=राजा) २७ ७ प्रकृष्टतया हापयन् (विद्वान् पति) १.१४० ८ [प्र+मुच्लृ मोचने (तुदा०) धातो शतृ]

प्रमुदः प्रकृष्ट प्रसन्नताए स० वि० १६७, ६ ११३ ११ **प्रमुदा**=प्रकृष्टेन हर्षेण ३९ ९ **प्रमुदे**=प्रकृष्टाऽऽनन्दाय ३० १० [प्र+मुद हर्षे (भ्वा०) धातो सम्पदादित्वाद् भावे क्विप्]

प्रमुदितः प्रकृष्टत्वेन हर्षित (पुत्र) १९ ११ [प्र+मुद हर्षे (भ्वा०) धातो क्त]

प्रमुमुग्धि प्रमोचय २१ ३ प्रकृष्टतया मुञ्च पृथक्कुरु ४ १ ४ [प्र+मुच्लृ मोचने (तुदा०) धातोर्लोट् । 'बहुल छन्दसी' ति शप श्लु]

प्रमुषायति प्रकृष्टतया चोरयति ५ ४४ ४ [मुष स्तेये (क्र्या०) धातो प्रपूर्वाण् णिजन्ताल् लट् । गुणाऽभावश्छान्दस]

प्रमृक्ष. प्रकृष्टतया सिञ्च ४ ३० १३ [प्र+मृषु सेचने (भ्वा०) धातोर्लुङ् । अडभावश्छान्दस । क्सो विकरण]

प्रभर्मणि प्रकर्षेण बिभर्त्ति राज्यादीन् यस्मिँस्तस्मिन् (विदुषि राजनि) १ ७९ ७ (प्र+भृञ् भरणे (भ्वा०) धातोर्मनिन्प्रत्यय]

प्रभवति प्रकृष्टतया वर्त्तते १ ५५ ४ [प्र+भू सत्तायाम् (भ्वा०) धातोर्लट्]

प्रभवन्तम् उत्पद्यमानम् (पृष्ठम्=आधार) २ १३ ४ [प्र+भू सत्तायाम् (भ्वा०) धातो शतृप्रत्यय]

प्रभवः उत्पत्ति २ ३८ ५ [प्र+भू सत्तायाम् (भ्वा०) धातो 'ऋदोरप्' इति अप्प्रत्यय]

प्रभासि प्रदीप्यसे १ १२१ ७ [प्र+भा दीप्तौ (अदा०) धातोर्लट्]

प्रभिन्दन् यथा शत्रुदल विदारयँस्तथा (अग्नि=पापिना दग्धा वीरसेनापति) ५ ३७ [प्र+भिदिर् विदारणे (रुधा०) धातो शतृप्रत्यय]

प्रभु उत्तमप्रभावकारकम् (राध=धनम्) १.९ ५ समर्थम् (भा०—ब्रह्म) २ २४ १० [प्र+भू सत्तायाम् (भ्वा०) धातो 'विप्रसभ्यो ड्वसज्ञायाम्' अ० ३ २ १८० सूत्रेण डु प्रत्यय]

प्रभुञ्जती प्रकृष्ट पालन कुर्वती (उषा) १ ४८ ५ [प्र+भुज पालनाभ्यवहारयो (रुधा०) धातो शत्रन्तान् ङीप्]

प्रभुवत् प्रकृष्टतया भवेत् प्र०—अत्र लेट् १ ११९ ७ [प्र+भू सत्तायाम् (भ्वा०) धातोर्लेट् । विकरणव्यत्ययेन श]

प्रभुः समर्थ (ईश्वर) १ १८८ ९ सर्वसामर्थ्ययुक्त सर्वशक्तिमान् (परमात्मा) स० प्र० ४२३, ९ ८३ १ [प्र+भू सत्तायाम् (भ्वा०) धातो 'विप्रसभ्यो ड्वसज्ञायाम्' अ० ३ २ १८० सूत्रेण डु प्रत्ययस्ताच्छील्ये यज्ञ इव प्रभूर्भूयासम् ऐ० आ० ५ १ १]

प्रभूतम् पुष्कलम् (रत्न=सुवर्णहीरकादिकम्) ३ ५४ ३ [प्र+भू सत्तायाम् (भ्वा०) धातोरौणादिक क्त]

प्रभूती समर्थौ (राजाऽमात्यौ) ४ ४१ ७ [प्र+भू सत्तायाम् (भ्वा०) धातो स्त्रिया क्तिन् । तत द्विवचनम्]

प्रभूती बहुत्वेन (अभिमानेनाऽज्ञानेन वा) ४ ५४ ३ [पूर्वपदे द्रष्टव्यम्]

प्रभूतौ बहुत्वे (भावे) ३ १९ ३ [प्र+भू सत्तायाम् (भ्वा०) धातो सज्ञाया क्तिच् । तत सप्तमी]

प्रभूवरीः प्रभुत्वयुक्ता (वाच) २३ ३५ [प्र+भू सत्तायाम् (भ्वा०) धातो 'अन्येभ्योऽपि दृश्यन्ते' अ ३ २ ७५ सूत्रेण क्वनिप् । तत स्त्रिया 'वनो र च' अ० ४ १ ७ सूत्रेण ङीप् रेफश्चान्तादेश]

प्रभूवसो प्रभु सर्वसमर्थश्च वसु सुखेषु वासप्रदश्चासौ तत्सम्बुद्धौ (इन्द्र=जगदीश्वर) १ ५७ ४ य समर्थश्चाऽसौ वासयिता च तत्सम्बुद्धौ (इन्द्र=राजन्) ७ २२ २ [प्रभु—वसुपदयो समास । पूर्वपदस्य दीर्घश्छान्दस]

प्रभूषतः प्रकृष्टतयाऽलङ्कुरुत १ १५९ १ [प्र+भूष अलङ्कारे (भ्वा०) धातोर्लट्]

प्रभूषन् अलङ्कुर्वन् (अद्वितीय ब्रह्म) ३ ५५.१ [प्र+भूष अलङ्कारे (भ्वा०) धातो शतृ]

प्रभूः समर्थ (अग्नि=सूर्यरूप) २२ १९ [प्र+भू सत्तायाम् (भ्वा०) धातो कर्त्तरि क्विप्]

प्रभृतम् प्रकर्षेण धृतम् (तृण=घासविशेषम्) २५ ३१ **प्रभृतस्य**=प्रकर्षेण धारकस्य पोषकस्य वा (वचस) १२ ४२ **प्रभृतः**=प्रकर्षेण हवनादिना पोषित (अद्रि) ३३ ७८ **प्रभृताः**=प्रकृष्टतया धृता (अ०—विद्वासो जना) १ ५१.१२ [प्र+भृञ् भरणे (भ्वा०) धातो क्त]

प्रभृता प्रकर्षेण धारणे पोषणे वा ५ ३२ ५ [प्रभृत व्याख्यातम् तत 'सुपा सुलुक्०' इति सप्तम्या आकारादेश]

प्रभृतिम् प्रकृष्टा धारणा पोषण वा २ २४ १ **प्रभृतौ**=प्रकृष्टधारणे ५ ३२ ७ प्रकृष्टतया धारणे ७ ३८ २ [प्र+भृञ् भरणे (भ्वा०) धातो स्त्रिया क्तिन्]

प्रभृथस्य प्रकर्षेण ध्रियमाणस्य (आयो=जीवनस्य) ५ ४१ ९ **प्रभृथे**=प्रकृष्टे पालने २ ३४ ११ प्रकर्षेण धारिते जगति ७ ४० ५ शुद्धकरणे व्यवहारे ५ ४१ ४ **प्रभृथेषु**=प्रकर्षेण धर्त्तव्येषु (धर्मेषु) ५.३३ ५ [प्र+डुभृञ् धारणपोषणयो (जु०) धातोर्बाहु० औणादिक थक्प्रत्यय । प्रभृथस्य=प्रभृतस्य नि० ११ ४९]

प्रभेदति प्रकृष्टतया भिनत्ति ५ ८६ १ [प्र+भिदिर् विदारणे (रुधा०) धातोर्लट् । विकरणव्यत्ययेन शप्]

प्रभ्रियन्ते प्रकृष्टतया ध्रियन्ते १ १४ ४ [प्र+भृञ् भरणे (भ्वा०) धातो कर्मणि लट्]

प्रभ्वी समर्था (भा०—त्रिगुणात्मिका मात्रा) १ १८८ ५ [प्रभुरिति व्याख्यातम् । तत स्त्रियाम् 'वोतो गुणवचनात्' इति ङीष्]

प्रमगन्दस्य य कुलीनो मा गच्छति स तस्य (सज्जनस्य) ३.५३ १४ [प्रमीयते प्रकृष्ट निर्मीयते यस्मिन् मेघ प्रमा=अन्तरिक्षम् । अन्तरिक्षलोको वै

क्त । ततश्शेर्लोपश्छन्दसि]

प्रयतान् सुशिक्षितान् (अश्वान्=तुरङ्गान्) १ १२६ २ **प्रयताः**=प्रयतमाना (गाव =धेनव) ५ ३३ १० [प्र+यमु उपरमे (भ्वा०) धातो क्त । ततो द्वितीया]

प्रयतानि प्रयत्नेन सावितानि (हवींषि=अन्नादीनि) १६ ५६ [प्र+यती प्रयत्ने (भ्वा०) धातो क्त. । तलोपश्छान्दस । यमु उपरमे (भ्वा०) धातोर्वा प्रोपसर्गात् क्तः]

प्रयतासु नियतासु (अ०—वृष्टिषु) १ १६६ ४ [प्र+यमु उपरमे (भ्वा०) धातो क्तान्तात् टाप् स्त्रियाम्]

प्रयति प्रैति प्रकृष्ट ज्ञान ददातीति प्रयत् तस्मिन् (अध्वरे=यज्ञे) प्र०—'इण् गतौ' इत्यस्माल्लट स्थाने शतृ-प्रत्यय १ १६ ३ प्रयतन्ते यस्मिँस्तत्र (यज्ञे=सङ्गन्तव्ये यज्ञादिव्यवहारे) २८ १४ प्रयत्नसाध्ये (यज्ञे) ६ १० १ **प्रयत्सु**=प्रयत्नसाध्येषु वर्त्तमानेषु (अध्वरेषु=यज्ञेषु) २७ १४ **प्रयद्भ्यः**=प्रयत्न कुर्वद्भ्य (मरुद्भ्य = मनुष्यादिभ्य) ५ ५४ ६ **प्रयन्तम्**=प्रयत्न कुर्वन्तम् (विद्वास जनम्) ५ ६४ २ [प्र+इण् गतौ (अदा०) धातो शतृप्रत्यये 'इणो यण्' इति यणादेश । यती प्रयत्ने (भ्वा०) धातोर्वा प्रोपसर्गात् क्विप्]

प्रयति प्रकृष्ट सुखमेति येन तस्मिन् (अध्वरे=अहिंसनीये यज्ञे) प्र०—अत्र 'कृतो बहुलम्' इति करण-कारके कृत् ४ ५ प्रयत्यते जनैर्यस्तस्मिन् (यज्ञे) प्र०—'कृतो बहुलम्' अ० ३ ३ १३ इति वार्त्तिकेन कर्मणि क्विप् ८ २० प्रयतन्ते यस्मिँस्तत्र (यज्ञे=सङ्गन्तव्ये यज्ञादिव्यवहारे) २८ १४ [प्र+यती प्रयत्ने (भ्वा०) धातो 'कृतो बहुलम्' इति कर्त्तृ भिन्नकारकेष्वपि क्विप्]

प्रयतिम् प्रयतन्ते यया ताम् (सभाम्) १ १२६ ५ **प्रयतिः**=प्रयतन्ते यया सा (त्वक्) २० १२ प्रयतते येन स (भा०—यज्ञ) प्र०—अत्र 'सर्वधातुभ्य०' इत्यौणादिक इ-प्रत्यय १८ १ प्रयतनशील (रश्मि =किरणो दीप्ति) ३३ ७४ [प्र+यती प्रयत्ने (भ्वा०) धातोरौणादिक इ प्रत्यय]

प्रयती प्रयत्यै प्रदानाय प्र०—अत्र प्रपूर्वाद् यमधातो क्तिन्, तस्माच्चतुर्थ्येकवचने 'सुपा सुलुक्०' इतीकारादेश. १ १०६ २ [प्र०+यमु उपरमे (भ्वा०) धातो स्त्रिया क्तिन् । ततश्चतुर्थ्या स्थाने 'इयाड् डयाजीकाराणामुपसख्यानम्' अ० ७ १ ३६, वा० सूत्रेण ईकारादेश । प्रयती-प्रदानेव नि० ६.६]

प्रयत्येतन प्रनीर्ति कुरुत ६ ४२ २ ['प्रयति' उपपदे इण् गतौ (अदा०) धातोर्लोट् । तस्य तनवादेश]

प्रयन् प्रकृष्टतया गच्छन् (गौ =पृथिवीगोल) ३ ६ [प्र+इण् गतौ (अदा०) धातो. शतृ-प्रत्यय]

प्रयन्त प्रयच्छत प्र०—अत्र शपो लुक् ३३.४८ [प्र+यमु उपरमे (भ्वा०) धातोर्लोटि शपो लुक्]

प्रयन्तम् प्रयत्न कुर्वन्तम् (सूर्यम्) १ १५२ ४ [प्र+इण् गतौ (अदा०) धातो शतृप्रत्यय]

प्रयन्तः प्रकृष्टनियमकर्त्त (परमेश्वर विद्वन्वा) १ ७६ ४ **प्रयन्ता**=प्रकर्षेण नियन्ता (इन्द्र =राजा) ७ १६ १ प्रकर्षेण यमनकर्त्ता सन् (इन्द्र =सर्वाधीश) १ ५१ १४ [प्र+यमु उपरमे (भ्वा०) धातो कर्त्तरि तृच्]

प्रयन्तारा प्रयच्छन्ति याभ्या तौ (पाणी=बाहू) ४ २१ ६ [प्र+यमु उपरमे (भ्वा०)+तृच् । 'सुपा सुलुग्०' इत्याकारादेश]

प्रयन्ति प्रकृष्टतया गच्छन्ति १ ६७ ५ प्रकर्षेण प्राप्नुवन्ति ३.४० ४ **प्रयन्तु**=प्रकृष्टतया गच्छन्तु ७ ३४ १८ **प्रयन्धि**=प्रयच्छ ३.३६ ६ [प्र+इण् गतौ (अदा०) धातोर्लट् । अन्यत्र लोट् । 'प्रयन्धि' प्रयोगे प्रोपसर्गाद् यमु उपरमे (भ्वा०) धातोर्लोटि शपो लुकि च रूपम्]

प्रयम्यमानान् प्रकर्षेण प्रापितनियमान् (व्यवहारान्) ३ ३६ २ [प्र+यमु उपरमे (भ्वा०) धातो कर्मणि शानच्]

प्रययुः प्रकृष्टतया प्राप्नुवन्ति ५ ५३ १२ प्रयान्ति ४ १६ ५ [प्र+या प्रापणे (अदा०) धातोर्लिट्]

प्रयवयन् प्रकर्षेण सयोजयन् विभाजयन् वा (अ० राजा) ३ ४८ ३ [प्र+यु मिश्रणेऽमिश्रणे च (अदा०) धातोर्णिजन्ताच्छतृ । वृद्ध्यभावश्छान्दस]

प्रयष्टे प्रकर्षेण यष्टुम् ३ ७ १ [प्र+यज देवपूजासगतिकरणदानेषु (भ्वा०) धातोश्छान्दस रूपम्]

प्रयसः कमनीयस्य (अन्धस =अन्नस्य) २ १६ १ **प्रयसा**=येन प्रीणन्ति तृप्यन्ति कामयन्ते वा शिष्टान् विदुष शुभान् गुणान् तेन (अन्नेन) सह १ ७१ ३ प्रयत्नेन ३ ५४ ३ प्रीतेन (प्रयत्नेन) ४ ५ ६ **प्रयसे**=प्रयतमानाय (वरुणाय=उत्तमाय व्यवहाराय) ५ ६६ १ [प्र+यसु प्रयत्ने (दिवा०) धातो क्विप्, 'कृतो बहुलम्' इति वार्त्तिकेन]

प्रयस्ता प्रेरिता (उखा=पाकस्थाली) ३ ५३ २२ [प्र+यमु प्रयत्ने (दिवा०) धातो क्त । तत स्त्रिया टाप्]

प्रयस्वतीः प्रयो बहुविध तर्प्पण विद्यते यासु ता.

प्रमृण प्रकर्षेण बाधस्व ६ ४४ १७ प्रकृष्टतया हिन्धि ४.१६ १२. [प्र+मृण हिंसायाम् (तुदा०) धातोर्लोट्]

प्रमृणन् प्रकर्षेण हिंसन् (इन्द्र =सैनिकजन) ३ ३० ६ **प्रमृणन्तम्**=प्रकृष्टतया शत्रून् हिंसन्तम् (इन्द्र= सेनापतिम्) १७ ३८ [प्र+मृण हिंसायाम् (तुदा०) धातो शतृप्रत्यय]

प्रमृणः ये प्रकृष्टतया मृणन्ति हिंसन्ति तान् (शत्रुसेना-जनान्) १७ ३६ [प्र+मृण हिंसायाम् (तुदा०) धातो कर्त्तरि क्विप्]

प्रमृणीहि प्रकर्षेण हिन्धि १३ १३

प्रमृशाय प्रकृष्टविचारशीलाय भा०—सुविचाराय (जनाय) १६ ३६ [प्र+मृश आमर्शने (तुदा०) धातोरि-गुपधलक्षण कर्त्तरि क]

प्रमृषन्त प्रकृष्टतया सहन्ते ७ १८ २१ [प्र+मृष तितिक्षायाम् (दिवा०) धातोर्लङ् । विकरणव्यत्ययेन श । अटोऽभाव]

प्रमृषे सुखै सयोजये ३ ९ २ [प्र+मृष तितिक्षा-याम् (दिवा०) धातोर्लट् । व्यत्ययेन श । धातूनामनेकार्थ-कत्वेन गिश्रणेऽपि । प्रमृषे=प्रमृष्यते नि० ४ १५]

प्रमोदाः प्रकृष्टा आनन्दयोगा भा०—पराऽऽनन्दा २० ६ [प्र=मुद हर्षे (भ्वा०) धातोर्घञ्]

प्रमोषीः प्रकृष्टतया स्तेनयेः १ १०४ ८ प्रकर्षेण चोरये २१ २ प्रकृष्टतया मुष्णीयात् खण्डयेन् प्र०—अत्र लिङर्थे लुङ् ४ २३ प्रकर्षेण पृथक्कुरु प० वि० अ०—खण्डन कुर्य्यात् ४ २३ प्रत्यक्ष चुरा और चुरवा आर्याभि० १ ४६, ऋ० १ ७ १६ ८ [प्र+मुष स्तेये (क्र्या०) धातोर्लुङ्]

प्रम्लोचन्ती प्रकृष्टतया सर्वानोपध्यादिपदार्थान् म्लोच-यन्ती (दीप्ति) १५ १७ [प्र+म्लुचु गत्यर्थे (भ्वा०) धातो शत्रन्तात् ङीप्]

प्रय इव यथा प्रीतमन्नम् १.६१ २ [प्रय -इवपदयो समास । प्रय =अन्ननाम निघ० २ ७ उदकनाम निघ० १ १२]

प्रयक्षतमम् अत्यन्तपूजनीयम् (कर्म्म) १ ६२ ६ [प्र-यक्षपदयो समासेऽतिशायने तमप् । यक्ष =यजधातोरौणा० स प्रत्यय]

प्रयक्षन् प्रकृष्टतया यजन्ते २ ५ १ **प्रयक्षन्त**=प्रकृष्ट-तया गोपत हिंस्त १ १३२ ५ [प+यज देवपूजासगति-करणदानेपु (भ्वा०) धातोर्लङ् । अडभाव । विकरण-व्यत्ययेन सिप्]

प्रयक्षे प्रकर्षेण यष्टु सङ्गन्तुम् ३ ३१ ३ [प्र+यज-देवपूजासगतिकरणदानेषु (भ्वा०) धातोस्तुमर्थे से प्रत्यय]

प्रयच्छतु प्रकृष्टतया ददातु ६ २६ **प्रयच्छन्ति**= प्रकृष्ट ददति ३ ३३ [प्र+दाण् दाने (भ्वा०) धातोर्लट् । शिति प्रत्यये 'पाघ्रा०' इत्यादिना यच्छादेश]

प्रयज प्रकर्षेण सङ्गच्छस्व ३ १७ ५ **प्रयजे**=प्रकृष्ट-तया सङ्गच्छेयम् २ ६ ३ प्रकर्षेण सङ्गच्छे १७ ७५ [प्र+यज देवपूजासगतिकरणदानेषु (भ्वा०) धातोर्लोट्]

प्रयज्यवः प्रकर्षेण यज्ञसम्पादका (अमात्यजना) ६ ४८ २० प्रकर्षेण सङ्गन्तार (मरुत =गृहस्थिजना) ७ ५६ १४ प्रकृष्टयज्यव सङ्गन्तारो मनुष्या ५ ५५ १ प्रकृष्ट यज्यवो येपा तत्सम्बुद्धौ (मरुत =सभाध्यक्षादय) १ ८६ ७ प्रकृष्टो परोपकाराख्यो यज्ञो येपा राजपुरुषाणा तत्सम्बुद्धौ १ ३९ ९ **प्रयज्यवे**=प्रयजन्ति येन तस्मै (धीमते जनाय) ५ ८७ १ **प्रयज्यो**=यो यत्नेन यष्टु सङ्गन्तु योग्यस्तत्सम्बुद्धौ (परमेश्वर) ६ २१ १० य प्रकर्षेण यजति तत्सम्बुद्धौ (यजमान कवे) ६ ४९ ४ य प्रयजति तत्सम्बुद्धौ (अग्ने=विद्वन् जन) ३ ६ २ प्रकर्षेण यज्ञकर्त्त (देव=विद्वज्जन) ६ २२ ११ **प्रयज्योः**=प्रयोक्तु योग्यस्य अत्यस्य=अश्वस्य) १ १८० २ [प्र+यज देवपूजासगति-करणदानेपु (भ्वा०) धातो 'यजिमनिशुन्धि०' उ० ३.२०. सूत्रेण युच्प्रत्यय । प्रयज्युम्=प्रततयज्यम् नि० ५ २.]

प्रयतदक्षिणम् प्रयता प्रयत्नेन दत्ता दक्षिणा यस्मा-त्तत् (वसु=धनम्) ६ ५३ २ प्रयता प्रकृष्टतया यता विद्या-धर्मोपदेशरूपा दक्षिणा येन तम् (नर=विनयाभियुक्त मनुष्यम्) १ ३१ १५ [प्रयता-दक्षिणापदयो समास । प्रयता=प्र+यमु उपरमे (भ्वा०) धातो क्त, ततष्टाप् । दक्षिणा दक्षते समर्द्धयतिकर्मणो व्यृद्ध समर्द्धयतीति नि० १ ७]

प्रयतम् प्रयत्नसाध्यम् (विजयम्) ४ २७ ५ प्रयत्नेन सिद्धम् (यज्ञम्) ३ ३५ १०. **प्रयतस्य**=प्रयत्न कुर्वत (जीवस्य) ४ ५ १० **प्रयतः**=प्रयतमाना (भा०—अध्या-पका) ४ १५ ८ **प्रयता**=प्रयत्नेन ५ ३० १२ [प्र+यती प्रयत्ने (भ्वा०) धातो क्त । 'छान्दसो वर्णलोपो वा' इति तलोप । अथवा यमु उपरमे (भ्वा०) धातो क्त]

प्रयता प्रकर्षेण दत्तानि (धनानि) ५ ३४ ४ प्रयत्नेन साधितानि (हवीपि=अन्नानि) १ ६ ६६ प्रयत्नसाध्यानि (द्रव्याणि) ५ ४२ ३ [प+यमु उपरमे (भ्वा०) धातो

प्रयुच्छसि अत्यन्त प्रमाद्यसि ८ ३ [प्र+युच्छ प्रमादे (भ्वा०) धातोर्लट्]

प्रयुज्याताम् प्रयुक्तौ भवतः ७ ४२ १ [प्र+युजिर् योगे (रुधा०) धातोः कर्मणि लोटि प्रथमस्य द्विवचनम्]

प्रयुञ्जती प्रयोगं कुर्वती (माता) ५ ८७ १ [प्र+युजिर् योगे (रुधा०) धातोः शत्रन्तात् ङीप्]

प्रयुञ्जते प्रयुञ्जन्ति १ ४८ ४ [प्र-युजिर् योगे (रुधा०) धातोर्लट्। 'प्रोपाभ्यां युजेरयज्ञपात्रेषु' अ० १ ३ ६४ सूत्रेणात्मनेपदम्]

प्रयुतम् दश लक्षाणि (विनव — दुग्धदात्री गाव इव (प्र०—प्रयुतमिति कोटेरप्युपलक्षणम् १७ २. ना-लङ्कृत्याकम् (सङ्ख्यम्) ६ १८ बहुविधम् (अहि—मेघम्) ५ ३२ २ [अयुत नियुत प्रयुत तत्सङ्ख्याम् नि० ३ १०]

प्रयुतः विभक्त सन् मिलितः (राजा—प्राप्तमान भूयं) ३ ५५ ४. [प्र+यु मिश्रणेऽमिश्रणे च (अदा०) धातोः क्त]

प्रयुताम् अप्रकृष्टयोधाम् (विनु — वाचम्) ३ ५७ १ [प्रयुत व्याख्यातम्। ततष्टाप्]

प्रयुधः ये प्रकर्षेण युध्यन्ते ते (नर —नायका जना) ५ ५९ ५ [प्र+युध सम्प्रहारे (दिवा०) धातोः कर्तरि क्विप्]

प्रयुयुधुः प्रकृष्टतया सङ्ग्रामं कुर्युः ५ ५९ ५ [प्र+युध सम्प्रहारे (दिवा०) धातोर्लिट् व्यत्ययेन परस्मैपदम्]

प्रयै प्रयातुम् १ १४२ ६ [प्र+या प्रापणे (अदा०) धातोस्तुमर्थे 'प्रयै रोहिष्यै अव्यथिष्यै' पा० ३ ४ १० सूत्रेण कैं-प्रत्ययो निपात्यते]

प्रयोभि. कमनीयैर्लक्षणैः (अ०—पदार्थै सह) ७ ८ कमनीयैर्गुणकर्मस्वभावैः ३ ३ ५६ तृप्तिकरैस्सर्वैरभि पदार्थे सह प्र०—'प्रीञ् तर्पणे कान्तौ च' इत्यस्मादौणादिकोऽसुन् प्रत्ययः १ २ ४ [प्रीञ् तर्पणे कान्तौ च (क्र्या०) धातोरौणा० असुन्प्रत्ययः]

प्ररर्ष्शे प्रकर्षेणातिरिणक्ति ६ १८ १२]

प्रराध्यम् प्रकर्षेण साद्धुं योग्यम् (श्रुत—ज्ञानम) ५ ३९ ३ [प्र+राध संसिद्धौ (स्वा०) धातोर्ण्यत्]

प्ररिक्वा य सर्वा प्रजा प्रकृष्टतया निर्गाय व्याप्तवान् स (इन्द्र —जगदीश्वर) १ १०० १५ प्रकृष्टतया मे उनमें व्यापक होके इनसे अतिरिक्त—विलक्षण भिन्न ही परिपूर्ण हो रहा (जगदीश्वर) आर्याभि० १ ३२, ऋ० १.१०० १५ [प्र+रिचिर् विरेचने (रुधा०) रिच वियोजनसम्पर्चनयो (चुरा०) धातोरौणादिकः क्वनिप्। अत्राकारादेश उत्वम्]

प्ररिरिचे प्रकृष्टतयाऽतिरिच्यते पृथक्त्वे ७.२१.३ प्रकृष्टतया निर्गतो प्राणिन वर्तते १.६१ ६ परिपूर्णोऽसि १.१०२.२५ अतिरिच्यते ३ ४६ ३ पृथगसि तो अर्हो ६.३० १. प्रकृष्टतया निर्गतो १.५९.५ [प्र+रिचिर् विरेचने (रुधा०) धातोर्लिट्]

प्ररीयते प्रकृष्टतया निर्गच्छति ५ १८ [प्र+रीङ् श्रवणे (दिवा०) धातोर्लट्। अत्र श्रवणार्थो धातुर्गमन-भावेन ग्राह्यः। रीयते गतिकर्मा निघ० २.१४]

प्ररुज प्रकर्षेण भङ्ग्ध्वि १ १०३ ४ प्रभङ्ग्धि, नष्ट करके नष्ट कर ४ आर्याभि० १ ४२, ऋ० १.१३३.४ **प्ररुजन्ति**=प्रभञ्जन्ति ४.२ १० [प्र+रुजो भङ्गे (तुदा०) धातोर्लट्। अत्र लट्]

प्ररुरुहुः प्रादुर्भवेयु. ७.२४ ३ [प्र+रुह बीजजन्मनि प्रादुर्भावे च (भ्वा०) धातोर्लिट्]

प्ररेके प्रकृष्टा रेका शङ्का सम्भावितस्मिन् व्यवहार ३.३० १६ [प्र+रेकृ शङ्कायाम्. रेका शङ्का। रेकृ=रेकृ शङ्कायाम् (भ्वा०) धातोर्घञ्। ततष्टाप् स्त्रियाम्]

प्ररेचनम् प्रकृष्टतया रेचन पुरीषस्य त्यागम् १ १०६ [प्र+रिचिर् विरेचने (रुधा०) धातोर्ल्युट्]

प्ररेजयत् पालनेन कम्पयते ४.२२ ३. [प्र+रेजति गतिकर्मा (निघ० २.१४) धातोर्णिजन्ताल्लङ्]

प्ररोचि प्रकृष्टतया जगति प्रकाश्यते १ १२१ ३ [प्र+रुच दीप्तावभिप्रीतौ च (भ्वा०) धातोः कर्मणि लुङ्]

प्ररोहन्ती प्रकृष्टतया वर्धमाना (दूर्वे दूर्वावद्वर्त्तमानौषधि) १३ २० [प्र+रुह बीजजन्मनि प्रादुर्भावे च (भ्वा०) धातोः शत्रन्तात् ङीप्]

प्रवक्षणाः नदी ऋ० भू० २८३, १ ३२ १ [प्र+वह प्रापणे (भ्वा०) धातोर्युच्। स्त्रियां टाप्]

प्रवक्ष्यामः प्रवदिष्यामः २५ २४ [प्र+वच परिभाषणे (अदा०) धातोर्लृट्]

प्रवणे प्रवन्ते गच्छन्ति वीरा यस्मिन् तस्मिन् (रणे—सङ्ग्रामे) १ ११६ ३ निम्नप्रवाहे १ १०४ ३ निम्ने देशे ५ ५४ ४ निम्नमार्गे १ ५२ ५ गमने १ ५२ ६ **प्रवणेषु**=निम्नमार्गेषु १ ५४ १० [प्रुङ् गतौ (भ्वा०) धातोरधिकरणे ल्युट्। प्रवते गतिकर्मा निघ० २ १४.]

(विश=प्रजा) ३.६ ३ [प्रयम्प्राति० भूम्न्यर्थे मतुवन्तात् ङीप्। प्रयस् इति व्याख्यास्यते]

प्रयस्वन्तः प्रयतमाना (जना) ३ ५२ ६ बहुप्रयत्नशीला (राजप्रजाजना) १ १३० १ प्रशस्तानि प्रयासि प्रज्ञानानि विद्यन्ते येषा ते (मानुषास=१ ६० ३ **प्रयस्वान्**=प्रयत्नवान् (मर्त्त=मनुष्य) ३ ५६.२. [प्रयस्प्राति० प्रशसाया मतुप्। प्रयस्=प्र+यमु प्रयत्ने (दिवा०) धातो क्विप्]

प्रयंसत् प्रकर्षेण नियच्छेत् १ ६६ ८ प्रेरयेत् १ १६० ३ **प्रयंसि**=प्रकृष्टतया यच्छसि १ ६१ २ प्रकर्षेण प्राप्नोषि नियच्छसि वा ५ ३६ ४ [प्र+यमु उपरमे (भ्वा०) धातोर्लेट्। 'प्रयसि' प्रयोगे लटि शपो लुक्]

प्रयः प्रीणाति य स (शिल्पि-जन) प्र०—अत्रौणादिकोऽसुन्-प्रत्यय १ ११६ १ प्रियमाण स्यानम् १ ११८ ४ कमनीयम् (वस्तु) ४ ४६ ३ प्रीयते काम्यते यत्तत्सुखम् १ ३१ ७ प्रीणन्ति तृप्यन्ति येन तदन्नम् १ ४५ ८ प्रीतिम् १ १३४ १ प्रीतिकारक वच १ १३२ ३ तृप्तिकारकमन्नम् १ ६१ १ अन्नादिकम् ६ ६३ ७ अतीव प्रियम् (भा०—सुखम्) ५ ५१ ७ [प्रीञ् तर्पणे कान्तौ च (क्र्या०) धातोरौणादिकोऽसुन् प्रय अन्ननाम निघ० २ ७ उदकनाम निघ० १ १२]

प्रयाजेभिः प्रयजन्ति यैरतै (कर्म्मभि) १६ १६ [प्र+यज देवपूजासगतिकरणदानेषु (भ्वा०) धातोर्घञ्। 'प्रयाजानुयाजौ यज्ञाङ्गे' अ० ७ ३ ६२ सूत्रेण कुत्वाभावो निपात्यते। 'बहुल छन्दसी' ति भिस ऐसादेशो न भवति। अथ किन्देवता प्रयाजानुयाजा आग्नेया इत्येके। छन्दो देवता इत्यपरम्। ऋतुदेवता इत्यपरम्। पशुदेवता इत्यपरम् प्राणदेवता इत्यपरम्। आत्मदेवता इत्यपरम् आग्नेया इति तु स्थिति। भक्तिमात्रमितरत् नि० ८ २२. प्रजया ह वै नामैतद् यत्प्रयाजा इति श० १ ५ ३ १ ते (प्रयाजा) वाऽआज्यहविषो भवन्ति श० १ ५ ३ ४ ऋतवो ह वै प्रयाजा तस्मात् पञ्च (प्रयाजा) भवन्ति, पञ्च ह्यृतव श० १ ५ ३ १ प्रयाजा प्राञ्चो हूयन्ते तद्धि प्राणरूपम्। श० ११ २ ७ २७ य इमे शीर्षन्प्राणास्ते प्रयाजा ऐ० १ १७ प्राणा वै प्रयाजा ऐ० १ ११ रेत सिच्य वै प्रयाजा कौ० १० ३. पशवो वै प्रयाजा कौ० ३ ४ वसव प्रयाजेषु काठ० ३४ १६ यज्ञमुख वै प्रयाजा वीर्य वै प्रयाजा मै० १ ७ ३ पञ्च प्रयाजा। इमऽएवास्य ते शीर्षण्या पञ्च प्राणा श० ११ २ ६ ४ एकादश प्रयाजा मै० १ १० ८]

प्रयाणम् गमनम् ४ ४६ ७ प्रयान्ति सर्वाणि सुखानि येन तत् प्रकृष्ट प्राणम् ११ ६ प्रकृष्ट प्रापणम् १२ ३ यात्राम् ५ ४६ २ प्रकर्षेण याति गच्छति येन तत् (महिमानम्) ५.८१ ३ [प्र+या प्रापणे (अदा०) धातोर्ल्युट्]

प्रयातन प्राप्नुवन्तु १ १६५ १३ [प्र+या प्रापणे (अदा०) धातोर्लोट्। तप्रत्ययस्य तनबादेश]

प्रयातु प्रकृष्टतया गच्छतु २६ ८ **प्रयाथः**=प्रकर्षेण गच्छथ १ १८० ६ **प्रयासि**=प्रकृष्ट प्राप्नोषि प्रापयति वा अ०—प्रापयसि प्र०—अत्र पक्षे व्यत्यय ३ ५२ **प्रयाहि**=प्रयाण कुरु ६ ३२ ४ प्रकृष्टतया प्राप्नुहि १२ ३२ प्रकर्षेण गच्छ १ १६६ ६ [प्र+या प्रापणे (अदा०) धातोर्लोट्। 'प्रयाथ' प्रयोगे तु लट्]

प्रयाभिः कमनीयाभि (नियुद्भि=नियतैर्गुणै) २७ २७ [प्रीञ् तर्पणे कान्तौ च (क्र्या०) धातोरौणादिकोऽकार। तत स्त्रिया टाप्]

प्रयामनि प्रयाणे १ ११६ ३ [प्र+या प्रापणे (अदा०) धातोरौणादिको बहुलवचनात् मनिन्]

प्रयाः ये सद्य प्रयान्ति ते (जना) ३ २६ १५ [प्र+या प्रापणे (अदा०) धातो कर्त्तरि क्विप्]

प्रयांसि प्रीतानि कान्तानि वस्तूनि १ ८६ ७ प्रियतमानि (वस्तूनि) ६ १६ ४४ कमनीयानि (वस्तूनि) १ १६६ ३ कमनीयान्यन्नादीनि ३ ११ ७ कमनीयानि विज्ञानादीनि ३४ १८ [प्रीञ् तर्पणे कान्तौ च (क्र्या०) धातोरौणादिकोऽसुन्]

प्रयुक्ति प्रयुज्यते यस्मिंस्तत् कर्म ६ ११ १ [प्र+युजिर् योगे (रुधा०) धातो क्तिच् प्रत्यय]

प्रयुक्तिः प्रकृष्टा युक्तिर्यस्य. स (विद्वान् जन) १ १५३ २ **प्रयुक्तिषु**=प्रकृष्टेषु योजनेषु १ १५१ ८. [प्र-युक्तिपदयो समास। युक्ति=युजिर् योगे (रुधा०) धातो स्त्रिया क्तिन्]

प्रयुग्भ्यः ये प्रयुञ्जते तेभ्य (भा०—दुष्टेभ्यो जनेभ्य) ३० ८ ये प्रयुञ्जन्ति तेभ्य (दुर्जनेभ्य) ३० ८ **प्रयुजम्**=व्यवहारेषु प्रयुक्तम्, य सर्वान् युनक्ति त सम्प्रयुक्त वा (अग्नि=योगाभ्यासजनिता विद्युतम्) ११ ६ **प्रयुजः**=प्रकर्षेण युञ्जन्ति ते (राजान) १ १८६ ६ **प्रयुजे**=या धर्मक्रिया प्रकृष्टैर्गुणैर्युनक्ति, योजयति वा तस्यै ४ ७ [प्र+युजिर् योगे (रुधा०) धातो. 'सत्सूद्विषद्रुहदुह०' अ० ३ २ ६१ सूत्रेण क्विप्]

(जन्म) १ १५१ ३ प्रवक्तु योग्यम् (वीर्य=बलरूप कर्म) ३.३३.७ प्रकृष्टतया वक्तु योग्यं यथा स्यात् तथा (पन्था'= वेदप्रतिपादितो मार्ग) १ १०५ १६. [प्र+वच परिभाषणे (अदा०) धातोर्ण्यत्]

प्रवाच्य: प्रवक्तु योग्य (विद्यार्थिजन) ४ ३६.५ [प्र+वच परिभाषणे (अदा०) धातोर्ण्यत्]

प्रवाच्या प्रकृष्टतया वक्तु योग्या (मेना=वाणी) १.५१ १३ [प्रवाच्य इति व्याख्यातम् । तत स्त्रिया टाप्]

प्रवाच्या प्रकर्षेण वक्तु योग्यानि (राज्यानि) ४ २२ ५. [प्रवाच्य-प्राति० शेर्लोपश्छन्दसि]

प्रवावृजे प्रकृष्टतया व्रजति गच्छति ३३ ४४ प्रव्रजति ७ ३६ २ [प्र+व्रज गतौ (भ्वा०) धातोर्लिट् । तुजादित्वादभ्यासस्य दीर्घ । धातो रेफस्य ऋकारश्छान्दस.]

प्रवावृते प्रवर्त्तने १.१६१.१५. [प्र+वृतु वर्त्तने (भ्वा०) धातोर्लिट् । तुजादित्वादभ्यासस्य दीर्घ]

प्रवाहण: यथा वायुर्महानदो वा तथा (जगदीश्वरो विद्वान्वा) ५ ३१ स्व-स्व नियमपूर्वक चलाने वाला तथा सब का निर्वाह करने वाला (ईश्वर) आर्याभि० २.१६, ५ ३१ [प्र+वह प्रापणे (भ्वा०) धातोर्णिजन्तात् 'कृत्यल्युटो बहुलम्' इति ल्युट्]

प्रवाह्याय ये प्रवोढुं योग्यास्तेषु मावदे (जनाय) १६ ४३ [प्र+वह प्रापणे (भ्वा०) धातोर्ण्यत् । तत 'तत्र साधु' रिति यत्]

प्रविवक्ते प्रकर्षेण चलितव्ये (अध्वनि=मार्गे) ६ ५० ५

प्रविगृभ्णन्ति प्रविग्राहयन्ति प्र०—अत्र णिज्लोप. १.१६२ १५ [प्र+वि+ग्रह उपादाने (क्र्या०) धातोर्णिजन्ताल्लट् । णिचो लोपश्छान्दस । 'हृग्रहोर्भश्छन्दसि' इति वा० सूत्रेण धातोर्हकारस्य भकार]

प्रवितिरते प्रविवर्धयति ७ ५६ २. [प्र+वि+तृ प्लवनतरणयो (भ्वा०) धातोर्लट् । व्यत्ययेन श-प्रत्यय आत्मनेपदश्च । तिरते प्रवर्धयते नि० ११ ६]

प्रविदा प्रकृष्टविज्ञानेन ३ ७.६ [प्र+विद ज्ञाने (अदा०) धातो. 'कृतो बहुलम्' इति भावे क्विप्]

प्रविद्धम् प्रकर्षेण व्यथितम् (तौग्र्य=बलदातृषु भव जनम्) १ १८२ ६ [प्र+व्यध ताडने (तुदा०) धातो क्त: । 'ग्रहिज्या०' इति सूत्रेण सम्प्रसारणम्]

प्रविद्वान् प्रकर्षेण वेत्तीति प्रविद्वान् (मर्त्त=मनुष्य) २.१४७.५. प्रकृष्टो विद्वान् (पूर्णो विद्वज्जन) ७ ३३ १२ [प्र+विद ज्ञाने (अदा०) धातो शतृ । 'विदे शतुर्वसुरिति वसुरादेश:]

प्रविन्दसे प्रकृष्टतया लभसे २ १३ ११. [प्र+विद्लृ लाभे (तुदा०) धातोर्लट् । शे मुचादीनाम्' इति नुम्]

प्रविवक्मि प्रकृष्टतया विशेषेण वदामि प्र०—अत्र 'वाच्छन्दसि' इति कुत्वम् १ १६७ ७. [प्र+वि+वच् परिभाषणे (अदा०) धातोर्लट् । कुत्व छान्दसम्]

प्रविश प्रवेश कर स० वि० १३८, अथर्व० १४.२.२६. **प्रविशन्ति**=प्रविष्ट होने (डूबते) हैं, महाक्लेश भोगते हैं स० प्र० ३०६, ४० ६ [प्र+विश प्रवेशने (तुदा०) धातोर्लोट् । अन्यत्र लट्]

प्रविशत् प्रवेश कुर्वत् सत् (इन्द्रियम्=उपस्थ पुरुषलिङ्गम्) १६.७६ [प्र+विश प्रवेशने (तुदा०) धातो शतृ-प्रत्यय]

प्रविष्ट: प्रवेश कुर्वाण सन् (अग्नि=विद्वान् मनुष्य) ५ ४ (प्र+विश प्रवेशने (तुदा०) धातो क्त.]

प्रविहि प्राप्नुहि प्र०—अत्र विकरणव्यत्ययेन ह्रस्वम् २.२६ २ [प्र+वी गतिव्याप्तिप्रजनकान्त्यसनखादनेषु (अदा०) धातोर्लोट् । धातोर्ह्रस्वश्छान्दस]

प्रवीता कमिता (विद्वज्जन) ३४ १४ प्रकर्षेण व्याप्ता विद्युत् ३ २६ ३ [प्र+वी गतिव्याप्तिप्रजनादिषु (अदा०) धातो क्तान्तात् स्त्रिया टाप् । यद्वा वी धातो प्रोपसर्गात् कर्त्तरि तृच् । गुणाऽभावश्छान्दस । वेति कान्तिकर्मा निघ० २.६]

प्रवीय: प्रकृष्टतया व्याप्नुथ १ १५१ ३. [प्र+वी गतिव्याप्तिप्रजनादिषु (अदा०) धातोर्लट्]

प्रवीर: प्रकृष्टश्चाऽसौ वीरश्च (इन्द्र=सेनापति) १७ ३७. [प्र-वीरपदयो समास. । वीरो वीरयत्यमित्रान् वेतेर्वा स्याद् गतिकर्मणो वीरयतेर्वा नि० १ ७]

प्रवृक्तम् प्रवर्जितम् (नौकादिकम्) १ ११६ २४. **प्रवृक्त:**=शरीरात् पृथग्भूत. (प्रजापति=जीव) ३६ ५. [प्र+वृजी वर्जने (रुधा० अदा०) धातो क्त]

प्रवृजे प्रवृजते यस्मिंस्तस्मिन् (न्यायालये) ५ ३० १५. [प्र+वृजी वर्जने (रुधा०) धातोर्घञर्थे क प्रत्यय]

प्रवृञ्जते प्रकर्षेण त्यजन्ति ७ २.४ **प्रवृञ्जे**= प्रकृष्टतया छिनद्मि १ ११६ १. [प्र+वृजी वर्जने (रुधा०) धातोर्लट् । व्यत्ययेनात्मनेपदम्]

प्रवृणे स्वीकरोमि ३ १६.१. [प्र+वृञ् वरणे (स्वा०) धातोर्लट् । विकरणव्यत्ययेन श्ना]

प्रवृत् य प्रवर्त्तते स (सत्पुत्र) ३ ३१ ३ यत् कार्य-

प्रवणेभिः गमनादिभि ३ २२ ४ [प्रवणमिति व्याख्यातम् । ततो भिस ऐसादेशो न भवति 'बहुल छन्दसि' सूत्रेण]

प्रवतम् निम्न स्थलम् ५ ३१ १ **प्रवतः**=अधोमार्गान् ४ १६ ३ निम्नदेशान् ४ १७ ७ प्रवण प्राप्तान् बाणानिव १ १४४ ५. नम्रान् (निम्नदेशान्) ६ ४७ १४ निम्नान् (देशान्) ७ ३२ २७ अधस्ताद् वर्त्तमानान् (लोकान्) ४ २२ ४ गमनाऽर्हान् (देशान्) ७ ५० ४ **प्रवता**=निम्नमार्गेण ३.५ ८ अर्वाचीनेन मार्गेण ३ ३० ६ **प्रवताम्**=गच्छताम् (अपा=जलानाम्) २ १३ २ **प्रवत्सु**=निम्नासु (भूम्यादिषु) ६ ४७ ४ **प्रवद्भिः**=ये नीचमार्गे प्रवन्ते प्लवन्ते तै (अ०—मार्गे) १ ३३ ६ **प्रवद्भ्यः**=प्रयत्न कुर्वद्भ्य (मरुद्भ्य =मनुष्यादिभ्य) ५ ५४ ६ ['प्र' इत्युपसर्गाद् अव रक्षणगत्यादिषु (भ्वा०) इति धात्वर्थे 'उपसर्गाच्छन्दसि धात्वर्थे अ० ५ १ ११८ सूत्रेण वति प्रत्यय । यद्वा प्रोपसर्गाद् गत्यर्थकावधातो शतृप्रत्यये धातोरकारस्य लोपे रूपम् । प्रवत उद्वतो निवत इत्यवतिकर्मा नि० १० २० प्रवत गतिकर्मा० निघ० २ १४ सवत्सरो वै प्रवत शश्वतीरप ता० ४ ७ ६]

प्रवतः नम्रत्वादिगुणप्रदानाम् (विद्वज्जनानाम्) ७ ३७ ५. [प्रवतमिति पदे द्रष्टव्यम्]

प्रवतेव निम्नस्थलेनेव ४ ३८ ३ [प्रवता-इवपदयो समास]

प्रवत्वति प्रवणदेशयुक्ते ! (पृथिवि=भूमे !) ५ ८४ १ **प्रवत्वती**=निम्नदेशयुक्ता (पृथिवी) ५ ५४ ६ प्रवणवती (द्यौ =प्रकाश) ५ ५४ ६ **प्रवत्वतीः**=निम्नगामिनी (वर्षा) ५ ५४ ६ [प्रवत्प्राति० मतुबन्तान् ङीप् । प्रवत्वति प्रवणवति नि० ११ ३३]

प्रवत्वन्तः प्रवणशीला (पर्वता =मेघा) ५ ५४ ६ **प्रवत्वान्**=प्रशस्ता प्रवतो वेगादयो गुणा विद्यन्ते यस्मिन् स (रथ =यानम्) १ १८१ ३ [प्रवत्प्राति० प्रशसाया मतुप्]

प्रवदाति प्रवदेत् ७ ३३ १४ [प्र+वद व्यक्तायां वाचि (भ्वा०) धातोर्लिडर्थे लेट्]

प्रवदामसि प्रकृष्टतया वदाम अ०—उपदिशामो वा १ ८७ ५ [प्र+वद व्यक्तायां वाचि (भ्वा०) धातोर्लट् । 'इदन्तो मसि ' इति मस इदन्तता]

प्रवद्यामना प्रकृष्ट याति गच्छति यस्तेन (रथेन) १.११८ ३ [प्रवद् उपपदे या प्रापणे (अदा०) धातो कर्त्तरि मनिन् । 'अल्लोपोऽन.' इति लोपस्तु न भवति छान्दसत्वात् । प्रवत्=‘प्र’ उपसर्गाद् ‘उपसर्गाच्छन्दसि धात्वर्थे’ इति वति । प्रवतमिति व्याख्यातम्]

प्रवन्त गच्छन्तु ४.५८ ८ गच्छन्ति प्र०—अत्र लड्यडभाव १७ ९६ [प्रुङ् गतौ (भ्वा०) धातोर्लङ । अडभाव]

प्रवन्तवे प्रविभाग कर्त्तुम् १ १३१ ५ [प्र+वन सम्भक्तौ (भ्वा०) धातोस्तुमर्थे तवेङ् प्रत्यय]

प्रवया कान्तिमता (अह्ना=अर्हविद्यया) १५ ६ [प्र+वी गतिव्याप्तिप्रजनकान्त्यादिषु (अदा०) धातोश्छान्दस रूपम्]

प्रवयाः य प्रकर्षेण व्याप्नोति स (जगदीश्वर) २ १७ ४ [प्रवया पुराणनाम निघ० ३ २७ प्रपूर्वकाद् वय गतौ (भ्वा०) धातोरौणादिकोऽसुन्प्रत्यय]

प्रवर्त्तमानकः प्रकृष्टतया वर्त्तमान (नकुल) १ १९१ १६ [प्र+वृतु वर्त्तने (भ्वा०) धातो शानच् । प्रवर्त्तमान-प्राति० स्वार्थे कन्]

प्रवर्धयन्ति प्रकृष्टतयोन्नयन्ति १ ५४ ८ [प्र+वृधु वृद्धौ (भ्वा०) धातोर्णिजन्ताल्लट्]

प्रववाच प्रकृष्टतयोक्तवान् १ ६७ ४ [प्र+वच परिभाषणे (अदा०) धातोर्लिट् । 'लिट्यभ्यासस्य०' इति प्राप्त सम्प्रसारण न भवति छान्दसत्वात्]

प्रववृधे प्रकर्षेण वर्धते ३ ५ २ [प्र+वृधु वृद्धौ (भ्वा०) धातोर्लिट्]

प्रवसथानि प्रवासान् २ २८ ७ [प्र+वस निवासे (भ्वा०) धातोर्बाहु० औणादिकोऽथ प्रत्यय]

प्रवसन् प्रवास कुर्वन् (अ०—अतिथि) ३ ४२ परदेश को गया हुआ मनुष्य म० वि० १४६, ३ ४२ [प्र+वस निवासे (भ्वा०) धातो शतृ-प्रत्यय]

प्रवहत प्रकृष्टतया वहन्ति प्र०—अत्र व्यत्ययो लडर्थे लोट् च १ २३ २२ अ०—अपनयत ६ १७ **प्रवहन्ति**=प्रकर्षेण प्राप्नुवन्ति ४ २ [प्र+वह प्रापणे (भ्वा०) धातोर्लोट् । अन्यत्र लट्]

प्रवा गमयितारौ (अश्विना=वायुसूर्याविव शिल्पिनौ) १ ३४ ८ [प्रुङ् गतौ (भ्वा०) धातोरच् कर्त्तरि । तत 'सुपां सुलुग्०' इत्याकार]

प्रवाचनम् उपदेशनम् ४ ३६ १ [प्र+वच परिभाषणे (अदा०) धातोर्णिजन्ताल् ल्युट्]

प्रवाच्यम् प्रकर्षेण वक्तु योग्य शास्त्रम् १ ११७ ८ अध्यापनोपदेशार्थं विद्याज्ञापक वच. १ १०५ १० प्रवक्तुमर्हम्

रूपेण प्रवर्त्तते तस्य ज्ञाता (विद्वान् मनुष्य) १५ ६ [प्र+वृतु वर्त्तने (भ्वा०) धातो कर्त्तरि क्विप्]

प्रवृद्ध महोत्तमगुणविशिष्ट (इन्द्र=शत्रूणा दारयितो राजन्) १ ३३ ३ अतिशयेन विद्यया प्रतिष्ठित (ईश्वर) १.१६५ ६ सर्वेभ्यो महन् (ईश्वर) ३३ ७६ [प्र+वृधु वृद्धौ (भ्वा०) धातो क्त]

प्रवृह प्रकर्षेण पृथक् कुरु ६ ४४ ११ [प्र+वृहू उद्यमने (तुदा०) धातोर्लोट्।

प्रवृहतात् प्रवर्द्धयन्तु १ १७४ ५ [प्र+वृहू उद्यमने (तुदा०) धातोर्लोट्। 'तुह्योस्तातङ्०' इति आशिषि तातङ्]

प्रवेतु प्रकृष्टतया व्याप्नोतु प्राप्नोतु ७ ४२ १ [प्र+वी गतिव्याप्तिप्रजनादिषु (अदा०) धातोर्लोट्]

प्रवेपनी गच्छन्ती (भा०—व्यवहारधनविद्योन्नति) ५ ३४ ८ [प्र+टुवेपृ कम्पने (भ्वा०) धातोर्ल्युडन्तात् ङीप्]

प्रवेपयन्ति प्रकर्षेण कम्पयन्ति ३ २६ ४ [प्र+टुवेपृ कम्पने (भ्वा०) धातोर्णिजन्ताल्लट्]

प्रवोच उपदिशामि ६ ५९ १. **प्रवोचत्**=उपदिशेत् ३ ५४ ५ प्रोच्यात् ४ ५ ३ **प्रवोचति**=उपदिशति ५ २७ ४ **प्रवोचम्**=प्रकृष्टतया कथयेयम् अ०—आश्रये ५ १८ प्रकर्षेण वदेयम् २ २१ ३ प्रकृष्टतया वच्मि २ १५ १ उपदिशेयम् ५ ८५ ५ **प्रवोचाम**=उपदिशेम ४ ३२ १०. **प्रवोचेत्**=गुणकर्मस्वभावत उपदिशेत् ३२ ६ [प्र+वच परिभाषणे (अदा०) धातोर्लुङ्। अडभावश्छान्दस। 'प्रवोचेत्' पदे लिङ्। विकरणव्यत्ययेन अङ्। प्रवोचम्=मुब्रवीमि नि० ११ ३६]

प्रवोढृन् प्रकृष्टतया वहत (जनान्) २ १५ ४ [प्र+वह प्रापणे (भ्वा०) धातो तृच्]

प्रव्राजे प्रव्रजन्ति यस्मिँस्तस्मिन् देशे ७.६० ७ [प्र+व्रज गतौ (भ्वा०) धातोर्घञ्]

प्रशस्त प्रशसनीय (अ०—राजन्) १ ३६ ६ श्लाघ्य (अग्ने=विद्वत्तमाव्यापक) ११ ३७ **प्रशस्तम्**=उत्तमम् (गृहपतिम्) ७ १ १ उत्कृष्टम् (रयिं=राज्यश्रियम्) २०.७६. श्रष्ठतमम् (वह्निम्) १ ६० १ **प्रशस्तः**=अत्युत्कृष्ट (न्यायाधीशो जन) २ २७ १२ श्रेष्ठ (अ०—मनुष्य) १ ६६ २ उत्तम (विद्वज्जन) १ १८० ८ [प्र+शसु स्तुतौ (भ्वा०) धातो क्त प्रत्यय औणादिक]

प्रशस्तयः सत्कीर्त्तय ६ ४५ ३ प्रशसनीया. प्रजा १५ ३६ प्रशमा १५ ३८ **प्रशस्तये**=उत्कृष्टतायै १.१७४ ४ प्रशसायै ५ ३८ ४ प्रशसनाय १ ७४ ६ प्रशंसनीयसुखाय १ २१ ३ उत्कर्षाय १.२३ १६ प्रशस्ताय (रथवते सज्जनाय) १ १२२.११ **प्रशस्तिभिः**=प्रशसिताभि. क्रियाभिः १ १४८ ३ प्रशसनीयाभि धर्म्याभि क्रियाभि ६ १५.२. प्रशसाभि ५ ६ ६ **प्रशस्तिम्**=श्रैष्ठ्यम् २ ४१.१६ प्रशस्तव्यवहारम् १ ७० ५ प्रशसिताम् (वाचम्) ७.२२.३. प्रशमाम् ५ ५७ ७ **प्रशस्तिषु**=गुणाना प्रशसासु ६.६. [प्र+शसु स्तुतौ (भ्वा०) धातो स्त्रिया क्तिन्]

प्रशस्ता श्रेष्ठौ (विद्वासौ जनौ) ५.६८ २. [प्रशस्त इति व्याख्यातम्। तत 'सुपा सुलुक्०' इत्याकारादेश]

प्रशस्ताम् उत्तमाम् (धिय=प्रज्ञाम्) ७ १.१०. [प्रशस्त-प्राति० स्त्रिया टाप्]

प्रशस्तिकृत् प्रशसा विधात्री (स्त्री) १ ११३.१६. ['प्रशस्ति' इत्युपपदे डुकृञ् करणे (तना०) धातो क्विप्]

प्रशस्यते प्रशस्तो जायते २ ८ ३ [प्र+शसु स्तुतौ (भ्वा०) धातो. कर्मणि लट्]

प्रशस्यः सर्वत्र स्तुति करने योग्य (ईश्वर) आर्याभि० १ २६, ऋ० ५ ८ ३५ २ [प्र+शसु स्तुतौ (भ्वा०) धातो 'शसिदुहिगुहिभ्यो वेति वक्तव्यम्' अ० ३ १ १०६ वा० सूत्रेण क्यप्]

प्रशंसत प्रस्तुवीत तद्गुणान् प्रकाशयत प्र०—अत्रान्तर्गतो ण्यर्थ १ २१ २ **प्रशसात्**=प्रशसेत् ४ २ ८ **प्रशंसामः**=प्रकृष्टतया स्तुम १ ६० ५ **प्रशंसिषः**=प्रशसे १ ८४ १६ प्रशम प्र०—लेड्-मध्यमैकवचने ६ ३७ [प्र+शसु स्तुतौ (भ्वा०) धातोर्लोट्। अन्यत्र लेट् लट् च]

प्रशासत् प्रशासन कुर्वन् सन् (अ०—अहोरात्र) १ ६५ ३ [प्र+शासु अनुशिष्टौ (अदा०) धातो शतृ-प्रत्यय]

प्रशास्ता धर्म-सुशिक्षोपदेशप्रचारक (पुरोहितो जन.) १ ६४ ६ प्रशासनकर्त्ता (विद्वान् जन) २ ५ ४ **प्रशास्त्रोः**=सर्वस्य प्रशासनकर्त्रो (सभासेनेशयो) १० २१. [प्र+शासु अनुशिष्टौ (अदा०) धातो कर्त्तरि तृच्]

प्रशास्त्रम् प्रशासनम् २ १ २ [प्र+शासु अनुशिष्टौ (अदा०) धातोर्बाहु० औणादिक ष्ट्रन्प्रत्ययः]

प्रशिक्षति प्रकर्षेण विद्या गृह्णाति ग्राहयति वा प्र०—अत्र व्यत्ययेन परस्मैपदम् ३ ५९ २ [प्र+शिक्ष विद्योपादाने (भ्वा०) धातोर्लट्। व्यत्ययेन परस्मैपदम्]

प्रशिषम् प्रशासनम् भा०—कृता मर्यादा २५ १३. प्रत्यक्ष सत्यस्वरूप शासन और न्याय अर्थात् शिक्षा को स० वि० ५, २५ १३. अनुशासन शिक्षा, मर्यादा को

[प्र+षह मर्षणे (भ्वा०) धातोरण्प्रत्यय]

प्रसितयः प्रकृष्टानि प्रेमबन्धनानि ७ ३२.१३ **प्रसितिम्**=बन्धन जालम् १३.६ प्रकृष्ट सिनोति बध्नात्यनया ताम् (बन्धनरूपाम्) १.२० प्रबद्धाम् (पृथिवी=भूमिम्) ४४.१ भा०—अनेकविध पाशम् प्र०—प्रसयनात्तन्तुर्वा जाल वा नि० ६ १२, १३ ६ **प्रसितिः**=प्रकर्ष बन्धनम् ७.३४. प्रबन्ध १८ १ प्रकृष्ट बन्धनम् १८ १ **प्रसितौ**= प्रकर्षेण बन्धने ७ ४६ ४ **प्रसित्यै**=प्रकृष्टा चाऽसौ सिति-बन्धन यस्या तस्या (दुखप्रदाया क्रियाया) प्र०—अत्र पञ्चम्यर्थे चतुर्थी २ २० [प्र-सितिपदयो समास । सिति = षिञ् बन्धने (क्र्या०) धातो स्त्रिया क्तिन् । प्रसिति प्रसयनात् तन्तुर्वा जाल वा नि० ६ १२]

प्रसितस्य बद्धस्य (वे =पक्षिण) ४ २७ ४. [प्र+ षिञ् बन्धने (क्र्या०) धातो क्त]

प्रसिन्धुभ्यः प्रकृष्ट समुद्रेभ्य १ १०६ ६ [प्र-सिन्धु-पदयो समास । सिन्धु =स्यन्दू प्रस्रवणे (भ्वा०) धातो 'स्यन्दे सम्प्रसारण धश्च' उ० १ ११ सूत्रेण उ प्रत्यय]

प्रसिसर्त्ति प्रकृष्टतया गच्छति २ ३८ २ [सिसर्ति गतिकर्मा निघ० २ १४]

प्रसिसृतम् प्राप्नुतम् २१ ६ [प्र+सिसर्ति गतिकर्मा (निघ० २ १४) धातोर्लोट्]

प्रसिस्रते प्रसरन्ति २ ११ ३ [सिस्रति गतिकर्मा (निघ० २ १४) धातो प्रोपसर्गाल्लट् । व्यत्ययेनात्मनेपदम्]

प्रसीषधाति प्रकृष्टतया साध्नुयात् भा०—प्रददाति ३४.५२. प्रसाधयति ६ ४६ ८ [प्र+साध ससिद्धौ (भ्वा०) धातोर्लेटि छान्दस रूपम्]

प्रसुतिर प्रकर्षेण शोभनतया सन्तारय प्र०—तरते-र्विकरणव्यत्ययेन श 'ऋत इद्धातो' इतीकार १ १० ११ [प्र+सु+तृ प्लवनसन्तरणयो (भ्वा०) धातोर्लोट् । विकरणव्यत्ययेन श । सवितु प्रसूति (पत्नी) तै० आ० ३ ६ २]

प्रसुधक्षि प्रकृष्टतया सुष्ठु दहसि १ ७६ ३ [प्र+ सु+दह भस्मीकरणे (भ्वा०) धातोर्लट् । 'बहुल छन्दसी' ति शपो लुक्]

प्रसुभरे प्रकर्षेण सुष्ठु धरामि ५ ४२ १३ [प्र+ सु+भृञ् भरणे (भ्वा०) धातोर्लट्]

प्रसुव प्रेरय १८ ६३ प्रेर्ष्व ६ १ [प्र+षू प्रेरणे (तुदा०) धातोर्लोट्]

प्रसुवन् प्रसुवन्ति यस्मिँस्तदैश्वर्य्यम् ७ ४५ १ उत्पादयन् (सविता=सूर्य) २१.२१ [प्र+षू प्रेरणे (तुदा०) धातो. शतृप्रत्यय । षु प्रसवैश्वर्ययो (भ्वा०) धातोर्वा शतृ । व्यत्ययेन श प्रत्यय]

प्रसुवाति प्रेरयेत् ५ ८२ ६. प्रकाशयति ऋ० भू० १५७, [प्र+षू प्रेरणे (तुदा०) धातोर्लेट्]

प्रसूतः प्रेरित (जन) १० ३०. उत्पन्न. सन् धर्म-सभाऽधिकृत उपदेशक) ३ ५४ १६ [प्र+षू प्रेरणे (तुदा०) धातो क्त]

प्रसूता प्रेरिता सती (सेना) २६ ४८ उत्पन्ना (रात्री) १ ११३ १ [प्र+षू प्रेरणे (तुदा०) धातो क्तान्तात् टाप् स्त्रियाम्]

प्रसूरयः प्रकर्षेण मेधाविनो विद्वास १ ६७ ३ [प्र-सूरिपदयोः समास । सूरि स्तोतृनाम निघ० ३ १६]

प्रसूवरीः सुखप्रसाविका (ओषधी =सोमादीन्) १२ ७७ [प्र+षूङ् प्राणिप्रसवे (दिवा०) धातो क्वनिप् । 'वनो रचे' ति ङीप् स्त्रियाम्, रेफश्चान्तादेश]

प्रसूषु प्रसूयन्ते यास्तासु (नवासु=प्रजासु) १ ६५ १० येभ्यो ये वा प्रसूयन्ते तेषु (कार्यकारणद्रव्येषु) १ ६७ ५ **प्रसूः**=या प्रसूतमुत्पादयति सा (वृत्ति) १८ ७ **प्रस्वः**= या प्रसूयन्ते ता ओषधय ७ ३५ ७ प्रसावित्री (अवनी = पृथिवी) २ १३ ७ [प्र+षूङ् प्राणिप्रसवे (दिवा०) धातो क्विप्]

प्रस्कण्वस्य प्रकृष्टश्चाऽसौ कण्वो मेधावी च तस्य (विद्वज्जनस्य) १ ४४ ६ [प्र-कण्वपदयो समास । कण्व मेधाविनाम निघ० ३ १५ 'प्रस्कण्वहरिश्चन्द्रावृषी' अ० ६ १ १५३ सूत्रेण सुडागम । प्रस्कण्व —कण्वस्य पुत्र कण्वप्रभवो यथा प्राग्रम् । नि० ३ १७]

प्रस्तरेण आसनेन १८ ६३ [प्र+स्तॄञ् आच्छादने (क्र्या०) धातो 'ऋदोरप्' इत्यप् । यज्ञो वै प्रस्तर श० ३ ४ ३ १६ यजमाना वै प्रस्तरः श० १८ १ ४ ४ क्षत्र वै प्रस्तर श० १ ३ ४ १० अय वै स्तुप प्रस्तर । श० १ ३ ३ ७]

प्रस्तरेष्ठाः शुभे न्यायाविद्याऽऽसने तिष्ठन्ति ते (देवा =विद्वासो दिव्या पदार्था वा) प्र०—तत्पुरुषे कृति बहुलम्, अ० ६ ३ १४ इति सप्तम्या अलुक् २ १८. [प्रस्तरमिति व्याख्यातम् । तदुपपदे ष्ठा गतिनिवृत्तौ (भ्वा०) धातो क प्रत्यय । समासे सप्तम्या अलुक्]

प्रस्तवते प्रकृष्टतया स्तौत्युपदिशति प्र०—अत्र 'बहुल छन्दसि' इति शपो ह्यलुक् ५ २० [प्र+ष्टुञ् स्तुतौ

प्राणम् प्राणिति येन त जीवनहेतुम् ६ १४ शरीरस्थ वायुमिव प्रजाजनम् ६ ३१ वलयुक्त जीवनम् १३ ५४' नाभेरूर्ध्वगामिनम् (वायुम्) १४ ८ प्राण को आर्याभि० २.५, ३६ १ **प्राणः**=सर्वशरीरगामी वायु १ ६६ १ जीवनहेतु (वायु) १८ २२ येन प्राणिति स (प्राणवायु) १३ ५४ प्राणादिवायु ३०.५ शरीरधारक (प्राणवायु) ४ १५ शरीरस्थो वायुविशेष ६ २० जीवनहेतुर्वलकारी (वायु) ६ २१ योगसिद्धवलयुक्त (वायुविशेष) ७ ४७ हृदिस्थो वायु १८ २ जीवनमूलो वायु २२ ३३ जीवन-निमित्त (प्राणादिवायु) ३१ १२. शरीराद् वाह्यदेश यो वायुर्गच्छति स ऋ० भू० १०४, अथर्व० १२.५ ६ **प्राणात्**=ब्रह्माण्ड-शरीरयोर्मध्य ऊर्ध्वगमनशीलात् (वायो) ३ ७ **प्राणाय**=धनञ्जयगमनाय ३६ ३ शरीरस्याऽवयवान् जगत्प्राणो गमनाय ३६ ३ प्रकृष्टमन्यते जीव्यते येन तस्मै जीवनधारणहेतवे बलाय १ २० जीवनसुखाय १५ ६४. प्राणिति जीवयतीति प्राणो हृदयस्थो वायुस्तस्मै ७.२७ य आभ्यन्तराद् वहिर्निःसरति तस्मै (वायवे) २२ २३. प्राणिति मुख येन तस्मै (वायवे) १३ २४ प्राणपोषणाय २३ १८ सब शरीर और इन्द्रियो के वशी प्राण के समान सब जगत् के वशी परमेश्वर के लिए स० प्र० १६, अथर्व० ११.२४ २. **प्राणा.**=जीवसाधना (वायव) १७ ७१ **प्राणेन**=जीवनेन २० ८० बलेन ६ १८ **प्राणेभ्यः**= जीवनहेतुभ्य (वायुभ्य) ३६ १ [प्र+अन प्राणने (अदा०) धातो 'हलश्चे' ति करणे घञ्। प्राण यद्वै प्राणेनान्नमात्मन् प्रणयते तत्प्राणस्य प्राणत्वम् श० १२ ६ १ १४ प्रेति वै प्राण एति उदान श० १४ १ ५ प्राणो वा ऽअर्क श० १० ४ १ २३ प्राणो वै सविता ऐ० १ १९ प्राणो वै सावित्र-ग्रह कौ० १६ २ प्राण सोम श० ७ ३ १ २ चन्द्रमा वै प्राण जै० उ० ४ २२ ११ प्राणोऽमृत तद्ध्यग्ने रूपम् श० १० २ ६ १८ वायुर्वै प्राण कौ० ८ ४ यो वै प्राण स वात श० ५ २ ४ ६ प्राणो मातरिश्वा ऐ० २ ३८ प्राणो वनस्पति कौ० १२ ७ य प्राण स वरुण. गो० उ० ४ ११ प्राजापत्य प्राण तै० ३ ३ ७ २ प्राणा इन्द्रियाणि ता० २.१४ २ प्राणो वै यजम्योद्गाता श० १४ ३ १ ८ प्राण सामवेद श० १४ ४ ३ १२ प्राणो भरत ऐ० २.२४. प्राणो वृहत् ता० ७ ६ १४ प्राणो वाचम्पति श० ६ ३ १ १९ वाग्वाऽअदः कर्म प्राणो वाचस्पति श० ६ ३ १ १९ वाक् च वै प्राणश्च मिथुनम् श० १ ४ १ २ तस्या (वाच) उ प्राण एव रस जै० उ० १ १ ७ प्राणा दीक्षा तै० ३ ८ १०.२ प्राणा पशव तै० ३ २ ८ ६ प्राणा मनुष्या. श० १४ ४.३ १३. उपांश्वायतनो वै प्राण श० १० ३ ५ १५. त्रय इमे पुरुषे प्राणा श० १ ३ ५ १३ स वा अय त्रेधा विहित प्राण, प्राणोऽपानो व्यान इति कौ० १३.९ पञ्चधा विहितो वा ऽअय शीर्षन्प्राणो मनो वाक् प्राणश्चक्षु श्रोत्रम् श० ९ २.२ ५ षड् वा ऽइमे शीर्षन् प्राणा श० १२ ९ १ ६. षड्ढि प्राणा श० ६ ७ १ २० सप्त शिरसि प्राणा ता० २ १४ २ सप्त वै शीर्षन् प्राणा ऐ० १ १७ अष्टौ प्राणा श० ६ २ २ ६ नव प्राणा श० ६ ३.१ २१ नव वै प्राणा सप्त शीर्षन् नवाञ्चौ द्वौ श० ६ ४ २ ५ नव वै पुरुषे प्राणा नाभिर्दशमी तै० १ ३ ७ ४. दश प्राणा श० ६ ३ १ २१ दश वा ऽइमे पुरुषे प्राणा आत्मैकादशो यस्मिन्नेते प्राणा प्रतिष्ठिता श० ३ ८ १ ३ द्वादशेमे पुरुषे प्राणा गो० पू० ५ ५ त्रयोदशेमे पुरुषे प्राणा नाभिस्त्रयोदशी श० १२ ३ २ २ एतावन्त (त्रीणि च शतानि षष्टिश्च) एव पुरुषस्य प्राणा गो० पू० ५ ५ को हि तद्वेद यावन्त इमेऽन्तरात्मन् प्राणा श० ७ २ २ २० बहुधा ह्येवैष निविष्टो यत्प्राण जै० उ० ३ २ १३ तस्मात् सर्वे प्राणा प्राणोदानयोरेव प्रतिष्ठिता श० १२ ९ १ १० प्राणो वै हृदयमतो ह्ययमूर्ध्व प्राण सचरति श० ३ ८ ३ १५ प्राणो हृदये (श्रित) तै० ३ १० ८ ५ तस्मादयमात्मन् प्राणो मध्यत श० ७ ३ १ २ नासिके ऽउ वै प्राणस्य पन्था श० १२ ९ १ १४ वहिर्हि प्राण ता० ७ ६ १४ प्राणो वै ज्येष्ठश्च श्रेष्ठश्च श० १४ ९ २ १ प्राणा वै समिध ऐ० २ ४ लेखासु हीमे प्राणा श० ७ २ २ १८ शिरो वै प्राणाना योनि श० ७ ५ १ २२ प्राणो हि रेतसा विकर्ता श० १३ ३ ८ १ प्राणो रेत ऐ० २ ३८ अध्रुव वै तद् यत्प्राण. श० १० २ ६ १९ प्राणा वै रुद्रा जै० उ० ४ २ १ ६ प्राणो वा उपांशु मै० ४ ५ ५ प्राणो वै वसिष्ठ ऋषि श० ८ १ १ ६ प्राणो वै वाक् मै० ३ २ ८ प्राणो वै स्वर ता० २४ ११ ९ प्राणो वै हिंकार मै० ४ ६ ४]

प्राणाऽपानौ प्राणश्चाऽपानश्च तावुच्छ्वास-नि श्वासौ ३६ १ प्राण कि जिसमे ऊर्ध्व चेष्टा होती है और अपान कि जिसमे नीचे की चेष्टा होती है, ये दोनो आर्याभि० २ ५, ३६ १. प्राण दीर्घ-जीवन, अपान दु खो, क्लेशो का नाश स० वि० ८०, अथर्व० ११ ५.२४ [प्राण-अपानपदयो समास तौ मित्रावरुणौ प्राणापानौ जै० १ १०९ प्राणा-पानौ देव (ब्रह्म) गो० १ २ ११ प्राणो वै मित्रोऽपानो वरुण काठ० २१ १]

प्राणायनः प्राणा निर्वृत्ता यस्मात् स (वसन्तः= य सुगन्धादिभि वासयति) १३ ५४ [प्राण-अयनपदयो

इति नदीनाम निघ० १ १३, ४ १६ ७ [प्र-अग्रुवपदयो समास । अग्रुव नदीनाम निघ० १ १३]

प्राघर्मसत् य प्रकृष्ट समन्ताद् घर्म प्रताप सनति स (सूर्य इव राजा) ६ ७३ १ [प्र+आङ्+घर्म इत्युपपदे षरा सभक्तौ (भ्वा०) धातो क्विप् । नस्य तश्छान्दस]

प्राङ् य प्रकृष्टतयाऽञ्चति स (सोम =सोमलता-द्योषधिगण:) १६ ३. प्रकृष्टमञ्चतीति (जीव.) १ १६४ ३८ **प्राञ्चम्**=प्राक्प्रबन्धस्य कर्त्तारम् (राजानम्) १० ८ य प्रागञ्चति प्राप्नोति तम् (यज्ञ=सत्सङ्गाख्य व्यवहारम्) ३ १ २ य प्रकृष्टमञ्चति प्राप्नोति तम् (अध्वर=जगत्) १ १८ ८ **प्राञ्च:**=प्राक्तना चिरमायव (मनुष्या) ५ ४५ ५ प्राचीना (यतयो जना) १ ११० २ प्रकृष्ट-विद्यायुक्ता (देवा =विद्वासो जना) ३ ७ ७ [प्र+अञ्चु गतिपूजनयो (भ्वा०) धातो 'ऋत्विग्दधृग्गि०' त्यादिना क्विन् । प्राङ् पशु प्राणिति काठ० २० ६ भूपतये स्वाहेति प्राक् काठ० २५ ७]

प्राचाजिह्वम् प्राग् दुग्धप्रदानादित पूर्वं समन्ताज्जिह्वा यस्य तम् (शिशुम्) १ १४० ३ [प्राचा जिह्वापदयो समास । समाने तृतीयाया अलुक्]

प्राची या प्रागञ्चति सा पूर्वा दिक् ३ ६ १. यत्र स्वस्य मुख सा प्राची दिक् तथा यस्या सूर्य उदेति साऽपि प्राची दिक् प० वि०, अथर्व० ३ २७ १ **प्राचीम्**= पूर्वाम् (दिशम्) १७ ६६ **प्राची:**=या प्राणश्वन्ति ता (प्रजा) ७ ६ ४. **प्राच्यै**=या प्राञ्चति प्रथमादित्यसयोगात् तस्यै (दिशे) २२ २४. ['प्राङ्' इति व्याख्यातम् । प्राच्-प्राति० स्त्रियाम् 'अञ्चतेश्चोपसख्यानम्' इति ङीप् । इयमेव प्राची दिग् रथन्तरम् (साम) जै० २.२१. एषा (प्राची दिक्) दिशा वीर्यवत्तमा जै० १ ७२ तेजो वै ब्रह्मवर्चस प्राची दिक् ऐ० १८ प्राच्येव भर्ग गो० १ ५ १५ राज्ञ्यसि प्राची दिक् तै० स० ४ ३.६ २.]

प्राची प्रकृष्टमञ्चति याम्या ते रोदसी प्र०—अत्र 'सुपा सुलुक्०' इति प्रथमाद्विवचनस्य लुक् ५.१७. प्राग्वर्त्तमाने (द्यावापृथिवी) २ २.७ प्राक्तने (सूर्यभूमी) ३ ६ १०. [प्राचीति व्याख्यातम् । तत प्रथमाद्विवचनस्य लुक् पूर्वसवर्णदीर्घो वा । प्राचीम् प्रवृद्धाम् नि० ११ ६]

प्राचीनम् प्राक्तनम् (वर्हि =विज्ञानम्) १ १८८ ४ पुरातनम् (ज्योति =प्रकाशम्) २० ४२ प्राची दिक् २.२७ ११ **प्राचीन:**=य प्रागञ्चति स (यज्ञ) ७ ७ ३ **प्राचीनान्**=पूर्वतो वर्त्तमानान् (पर्वतानिव मेघान्) २ १७ ५ **प्राचीनेन**=सनातनेन (मनसा=विज्ञानेन) १ ५४ ५ [प्राच्-प्राति० 'विभाषाञ्चेरदिक् स्त्रियाम्' अ० ५ ४ ८ सूत्रेण स्वार्थे ख प्रत्यय । प्राच्=प्र+अञ्चु गतौ (भ्वा०)+क्विन्]

प्राचुच्युवु: प्रकृष्टतया च्यावयेयु. ५ ५६ ७ [प्र+च्युङ् गतौ (भ्वा०) धातोर्लिट् । पूर्वस्य दीर्घ.]

प्राऽचेतयत् प्रकर्षेण चेतयेत् सज्ञापयेत् ३ ३४ ५ [प्र+चिती सज्ञाने (भ्वा०) धातोर्णिजन्ताल् लङ्]

प्राचै: प्राचीनैर्विद्वद्भि १ ८३ २

प्राऽचोदयत् प्रकृष्टतया प्रेरयति ५ ३१ ३ [प्र+चुद सञ्चोदने (चुरा०) धातोर्लङ्]

प्राजापत्य: प्रजापतिदेवताक (चरु =स्थालीपाक) २९ ६० **प्राजापत्या:**=प्रजापति सूर्यो देवता येषान्ते (अश्वस्तूपरो गोमृगा पशव) २४ १ प्रजापतिदेवताका (अशूद्रा अब्राह्मणा) ३० २२ प्रजापतेरिमे ते (प्रजा—जना) ३०.२२ प्रजापति परमात्मा को जानने का आश्रम धर्मानुष्ठान रूप (यज्ञ =यतिधर्म) स० वि० २०६, अथर्व० ६ ६.२ ११ [प्रजापतिप्राति० 'सास्य देवता' इत्यर्थे 'दित्यदित्यादित्यपत्युत्तरपदाण्ण्य ' अ० ४ १ ८५ सूत्रेण ण्य]

प्राजापत्य: प्रजापतिदेवताक: (मयु =किन्नर) २४.३१ [प्रजापतिप्राति० 'सास्य देवता' इत्यर्थे ण्य प्रत्यय']

प्राऽऽजिगात प्रकृष्टतया समन्तात् स्तुत्यानि कर्म्माणि कुरुत १ ८५ ६ [प्र+आङ्+गा स्तुतौ (जु०) धातोर्लोट्]

प्राणत: जीवत (जगत) १ १०१ ५ प्राणिन (जगत =ससारस्य) २३ ३ चेतना वाले जगत् का आर्याभि० १ ४४, ऋ० १ ७ १२ ५. प्राण वाले (जगत = जगत् का) म० वि० ५ २३ [प्र+अन प्राणने (अदा०) धातो शतृ]

प्राणथेन येन प्राणन्ति सुखयन्ति तेन (प्राणवायुना) ११ ३६ [प्र+अन प्राणने (अदा०) धातोर्बाहु० औणादिकोऽथ प्रत्यय]

प्राणदा: या प्राण जीवन वल च ददाति ता (हेतय =शस्त्राऽस्त्रोन्नतय.) १७ १५ [प्राणोपपदे डुदाञ् दाने (जु०) धातो क । स्त्रिया टाप्]

प्राणनम् प्राणधारणम् १ ४८ १० [प्र+अन प्राणने (अदा०) धातोर्ल्युट्]

प्राणपा: य प्राण पाति रक्षति स (विद्वान् जन.) २० ३४ [प्राणोपपदे पा रक्षणे (अदा०) धातो कर्त्तरि क्विप्]

(भ्वा०) धातोर्लङ् । व्यत्ययेन श्नम् परस्मैपदश्च]

प्राऽऽनशुः प्राप्नुयु ५ १० ३ [प्र+अशूङ् व्याप्तौ (स्वा०) धातोश्छान्दस रूपम्]

प्राऽपशोशुचत् प्रकृष्टतया दूरीकुर्यात् १ ९७ ३ [प्र+अप+ईशुचिर् पूतीभावे (दिवा०) धातोर्यङ्लुगन्ताल्लेट्]

प्राऽभिदद्रुः प्रकृष्टतयाऽऽभिमुख्येन गच्छन्ति प्राप्नुवन्ति ४ १९ ५ [प्र+अभि+द्रु गतौ (भ्वा०) धातोर्लिटि छान्दस रूपम्]

प्रामिणात् प्रकर्षेण हिंस्यात् ३३ २६ प्रकृष्टतया हिंसेत् ३ ३४ ३ [प्र+मीञ् हिंसायाम् (क्र्या०) धातोर्लङ् । धातोर्ह्रस्वश्छान्दस]

प्रामुञ्चतम् प्रमुञ्चेतम् १ ११६ १०. [प्र+मुच्लृ मोचने (तुदा०) धातोर्लङ् । 'शे मुचादीनामि' ति नुम्]

प्राऽयच्छत् प्रयच्छति ददाति ८.१८.१७ प्रदद्यात् ११ ५९ [प्र+दाण् दाने (भ्वा०) धातोर्लङ् । शिति प्रत्यये 'पाघ्रा०' इत्यादिना यच्छादेश]

प्रायणीयस्य प्रकृष्ट सुखयन्ति येन व्यवहारेण तत्र भवस्य (जनस्य) १९ १३ [प्रायणीय (याग) स्वर्ग वा एतेन लोकमुपप्रयन्ति यत् प्रायणीयस्तत्प्रायणीयस्य प्रायणीयत्वम् ऐ० १ ७ आदित्य एव प्रायणीयो भवति श० ३ २ ३ ६ प्राणो वै प्रायणीय ऐ० १ ७ प्रायणीयम् (अह) प्रायणीयेन वा अह्ना देवा स्वर्ग लोक प्रायन्यत् प्रायँस्तत् प्रायणीयस्य प्रायणीयत्वम् ता० ४ २ २ त्रिवृत् प्रायणीयमह ता० १० ५ ४ ब्रह्म प्रायणीयमह ता० ११ ४ ६ ततिर्वै यज्ञस्य प्रायणीयम् कौ० ७ ९ प्राणोदानावेव यत् प्रायणीयोदयनीये कौ० ७ ५ अहरेव प्रायणीयो रात्रिरुदयनीय जै० ३ ३३७ गायत्र प्रायणीयमह तै० स० ७ २ ८ १ तद् यत् प्राणेन् तस्मादप्येतत् प्रायणीयमह जै० २.५७ प्राण एव प्रायणीय काठ० ३४ ६ यदवारे तीर्थं तत् प्रायणीयम् काठ० ३४ १६]

प्राऽऽयन् प्रकृष्टतयाऽऽगच्छन्ति ३ ३६ ६ [प्र+इण् गतौ (अदा०) धातोर्लङ्]

प्रायवे प्रापणाय १ १४० ८ [प्र+अय गतौ (भ्वा०) धातोरौणादिक उ प्रत्यय । ततश्चतुर्थी]

प्रायश्चित्यै पापनिवारणाय भा०—प्राणायामादिसाधनै सर्वं किल्विष निवारयितुम् ३९ १२. [प्राय-चित्ति-पदयो समासे 'पारस्करप्रभृतीनि च सञ्ज्ञायाम्, अ० ६ १.१५७ सूत्रेण सुट् । यज्ञो हि यज्ञस्य प्रायश्चित्ति मै० १ ८ ३]

प्रायासाय प्रयाणाय ३९ ११ [प्र+यसु प्रयत्ने (दिवा०) धातोर्घञ् । प्रयासप्राति० स्वार्थेऽण्]

प्राऽयासिष्ट प्रयातु ५ ५८ ६ [प्र+या प्रापणे (अदा०) धातोर्लुङ् पुरुषव्यत्यय । 'यमरमनमातामि०' ति सगागम इट् च]

प्राये प्राये कमनीये कमनीये (गभस्तौ=विज्ञानप्रकाशे) २.१८ ८ [प्राये-पदस्य वीप्सायाः द्वित्वम् । प्राय =प्रीञ् तर्पणे कान्तौ च (क्र्या०) धातोर्घञ्]

प्राऽरदः प्रकृष्टतया विलिखति ४ १९ २ [प्र+रद विलेखने (भ्वा०) धातोर्लङ् । पुरुषव्यत्यय]

प्रारन् प्रापयति १.४९ ३. [प्र+ऋ गतौ (जु०) धातोर्लुङ् । 'सर्तिशास्त्यर्तिभ्यश्च' इत्यङ् । 'ऋदृशोऽङि' इति गुण]

प्राऽऽरभामहे प्रकर्षेण समन्तादारम्भ कुर्याम ६ ५७ ५ [प्र+आङ्+रभ राभस्ये (भ्वा०) धातोर्लट्]

प्राऽरिच्यत् प्रकृष्टतया रिच्यतेऽतिरिक्तो भवति २ २२ २ [प्र+रिचिर् विरेचने (रुधा०) धातोर्लङ् । विकरणव्यत्ययेन श्यन्]

प्राऽरिणाः प्राप्नोषि २ २२ ४. [प्र+ऋ गतौ (क्र्या०) धातोर्लङ् । 'छन्दस्युभयथा' इत्यार्धधातुकत्वात् श्न इडागम]

प्राऽरुजः प्रकृष्टतया रुज १ ५१ ५ [प्र+रुजो भङ्गे (तुदा०) धातोर्लङ्]

प्राऽऽरुः प्रकर्षेण गच्छेयु ३ ७ १ [प्र+ऋ गतिप्रापणयो (भ्वा०) धातोर्लिट्]

प्राऽरोचत् प्रकृष्टतया प्रकाशते ३ २९ १४ [प्र+रुच दीप्तावभिप्रीतौ च (भ्वा०) धातोर्लङ् । व्यत्ययेन परस्मैपदम्]

प्राऽरोचयत् प्रकाशयेत् १ १४३ १ [प्र+रुच दीप्तावभिप्रीतौ च (भ्वा०) धातोर्णिजन्ताल्लङ्]

प्राऽर्च प्रकृष्टतया सत्कुरु ५ ५२ १ **प्राऽर्चत**=प्रदत्तेन पूजयत १ १० १ १ सत्कुरुत १ १५५ १ **प्राऽर्चत्**=प्रकृष्टतया सत्कुर्यात् १.१२० ३ **प्राऽर्चन्**=प्राऽर्चन्ति सत्कुर्वन्ति ७ ४३ १ **प्राऽर्चन्ति**=सत्कुर्वन्ति ३ १२ ५. प्रार्चान्=प्रकृष्टतया सत्कुर्य्यु ४.५५ २ [प्र+अर्च पूजायाम् (भ्वा०) धातोर्लोट् । अन्यत्र लङ्लटावपि । 'प्रार्चान्' प्रयोगे लेट्]

प्राऽर्णोः प्राप्नुया १ १७४ ९ [प्र+ऋ गतौ (क्र्या०) धातोर्लङ् । विकरणव्यत्ययेन श्नु]

समास । अयन.=अय गतौ (भ्वा०) धातोर्ल्युट्]

प्रातरित्वः प्रातःकालमारभ्य प्रयत्नकर्त्त ! (विद्वज्जन) १.१२५.२ **प्रातरित्वा**=यः प्रातरेव जागरणमेति स (जन) प्र०—अत्र प्रातरुपपदादिण्धातोः क्वनिप् १ १२५ १. [प्रातर्-उपपदे इण् गतौ (अदा०) धातोः क्वनिप् । प्रातरित्व प्रातरागामिन्नतिथे नि० ५ १६.]

प्रातर्जितम् प्रातरेव जेतुमुत्कर्षयितु योग्यम् (भगम्=ऐश्वर्यम्) ७ ४१ २ प्रातः प्रभाते स्वपुरुषार्थेन लब्धम् (भगम्=ऐश्वर्यम्) ३४ ३५ [प्रातर्-जितपदयोः समास । जितम्=जि जये (भ्वा०) धातो. क्त]

प्रातर्दनिः प्रातःकाले दनिर्दानं यस्य स (इन्द्र=राजा) ६ २६.८ [प्रातर्-दनिपदयोः समास । दनि=डुदाञ् दाने (जु०) धातोर्बाहु० औणा० अनि प्रत्ययः किच्च]

प्रातर्यावाणः ये प्रातर्यन्ति राजकार्याणि प्रापयन्ति ते (अमात्यादयो राजपुरुषा) ३३.१५ ये प्रातः प्रतिदिनं पुरुषार्थं यान्ति ते (देवा=विद्वांसो जना) १ ४४.१३. **प्रातर्यावभिः**=ये प्रातर्यान्ति तै (विद्वद्भिर्जनै) ५ ५१ ३ **प्रातर्याव्णः**=ये प्रातः प्रतिदिनं यान्ति पुरुषार्थं गच्छन्ति तान् (विदुषो जनान्) १ ४५ ६ [प्रातर् इत्यव्ययम्, तदुपपदे या प्रापणे (अदा०) धातो कर्त्तरि 'आतो मनिन्-क्वनिब्वनिपश्च' अ० ३ २ ७४ सूत्रेण वनिप् । एते वाव देवा प्रातर्यावाणो यदग्निरुषा अश्विनौ ऐ० २ १५]

प्रातर्यावाणा यौ सूर्योषसौ प्रातर्यातस्तौ ५ ७७ १. ['प्रातर्यावन्' इति व्याख्यातम् । ततः 'सुपा सुलुगि' त्याकार]

प्रातर्युजा प्रातः प्रथमं युङ्क्तस्तौ (अश्विनौ=द्यावापृथिव्यौ) प्र०—अत्र 'सुपा सुलुक्०' इत्याकारादेश १ २२ १ [प्रातर्-उपपदे युजिर् योगे (रुधा०) धातो 'सत्सूद्विषद्रुहे०' ति क्विप् । 'सुपा सुलुक्०' इत्याकार प्रातर्युजा प्रातर्योगिनौ नि० १२ ४]

प्रातः प्रातःकाले १ ६० ५ दिनाऽऽरम्भे १ ५८ ६ प्रभाते २० २६ प्रतिदिनम् १ १६ ३ प्रभातवेला मे स० वि० १५५, ७ ४१ १ पाच घडी रात्रि रहने पर स० वि० १५६, ७ ४१ २ प्रभातसमये ५ ७७ २ [प्र+अत सातत्यगमने (भ्वा०) धातो 'प्रात्तेररन्' उ० ५ ५६ सूत्रेण अरन् । स्वरादित्वाद् अव्ययम्]

प्रातःसवनम् प्रातःकाले सवन यज्ञ क्रियाप्रेरणम् १६ २६ [प्रात-सवनपदयो समास । सवनम्=षू प्रेरणे (तुदा०) धातोर्ल्युट् । षु प्रसवैश्वर्ययो (अदा०) धातोर्वा ल्युट् । अग्नेर्वै प्रातःसवनम् कौ १२.६. आग्नेयं वै प्रातस्सवनम् जै० उ० १ ३७ २ वसूना वै प्रातःसवनम् कौ० १६.१ अथेमं विष्णु यज्ञं त्रेधा व्यभजन्त । वसवः प्रातःसवनं रुद्रा माध्यन्दिनसवनम् आदित्यास्तृतीयसवनम् । ऐ० ६ २ ६ अयं वै लोक (पृथिवी) प्रातःसवनम् श० १२ ८ २ ८ तस्य (पुरुषस्य) य ऊर्ध्वा प्राणास्तत् प्रातःसवनम् कौ० २५ १२ ब्रह्म वै प्रातःसवनम् कौ० १६ ४ त्रिवृत् पञ्चदशौ (स्तोमौ) प्रातःसवनम् (वहत) ता० १६ १० ५ अनिरुक्तं प्रातःसवनम् ता० १८ ६ ७ पीतवद्वै प्रातःसवनम् ऐ० ४ ४ एकच्छन्द प्रातःसवनम् ष० १ ३. गायत्री प्रातःसवन सपद्यते जै० २ २० २ वज्र प्रातःसवनम् तै० स० ६ ६.११.३ वैश्वदेव प्रातःसवनमकुर्वत् (देवा) तै० स० ३ २ २ ३ म० ३ ६ १०]

प्रातःसावे य प्रातः सूयते निष्पद्यते तस्मिन् (यज्ञादिकर्मणि) ३ ५२ ४. प्रातःसवने ३ २८ १ [प्रातर्-उपपदे षु प्रसवैश्वर्ययो (अदा०) धातोर्घञ्]

प्राता व्यापिका (इळा=वाक्) ७ १६ ८ [प्र+अत सातत्यगमने (भ्वा०) धातोरौणादिकोऽञ् । स्त्रियां टाप् । प्रा पूरणे (अदा०) धातोर्वा बाहु० औणा० क्त । ततष्टाप्]

प्रातिपर्षि प्रकृष्टतयाऽतिपालयसि ६ २० १२ [प्र+अति+पॄ पालनपूरणयो (जु०) धातोर्लट् । 'बहुलं छन्दसी' ति शपो लुक्]

प्रातिरतम् प्रतरेतम् १ ११६.१० [प्र+तॄ प्लवनसन्तरणयो (भ्वा०) धातोर्लङ् । विकरणव्यत्ययेन श]

प्रातिरिरिचाथे प्रातिरिक्तौ भवत १ १०६ ६ [प्र+अति+रिचिर् विरेचने (रुधा०) धातोर्लिट्]

प्रादाः प्रदेहि १६ ६६ [प्र+डुदाञ् दाने (जु०) धातोर्लुङ्]

प्राऽऽदुः प्रकृष्टतया समन्ताद् दद्यु ५ ४६ ५ [प्र+आङ्+डुदाञ् दाने (जु०) धातोर्लुङ्]

प्राऽऽद्रव प्रकर्षेण समन्ताद् धाव ५ ३१ २ [प्र+आङ्+द्रु गतौ (भ्वा०) धातोर्लोट्]

प्राध्वने प्रकृष्टतया गन्तव्याय मार्गाय ४ ५८ ७ प्रकृष्टश्चाऽसावध्वा च तस्मिन् प्र०—अत्र सप्तम्यर्थे चतुर्थी १७.६५ [प्र-अध्वन्पदयो समास । अध्वन्=अद भक्षणे (अदा०) धातो 'अदेर्ध च' उ० ४ ११७ सूत्रेण क्वनिप्]

प्राऽऽनट् प्रकृष्टतयाऽश्नुवीत प्र०—व्यत्ययेन श्नम् परस्मैपद च १ १२१ २ [प्र+अशूङ् व्याप्तौ सघाते च

मिति वा गिम्मो निर्गतमिति वा नि० २ ८]

प्राऽऽनामि गुणैर्यत्प्रकृष्ट तदर्थेन भुञ्जे, प्र०—प्रपरेत्येतस्य प्रातिलोम्य प्राह नि० १ ३, २ ११. **प्राऽऽनोतु**=प्राप्नोतु प्र०—अत्र व्यत्ययेन परस्मैपदम् ३.५१ १२. प्रकृष्टतया व्याप्नोतु १.१७ ६ **प्राऽऽप्याः**=प्राप्नुया ५ ४२ १४. [प्र+अश (क्र्या०) धातोर्लट् । अन्यत्र अशूट् व्याप्तौ (स्वा०) धातोर्लोट् । व्यत्ययेन परस्मैपदम्]

प्राश्रयन्ते प्रकृष्टतया शिथिलीकुर्वन्ति ५ ५९ १ [प्र+आङ्+श्रथ दौर्बल्ये (चुरा०) धातोर्लट्]

प्रासहम् प्रकृष्टतया सहनशीलम्, प्रकर्षेण सोढारम् (राजानम्) ६ १७ ४ अतीव सोढारम् (योद्धृजनम्) १ १२९ ४ [प्र+षह मर्षणे (भ्वा०) धातो पूर्वपदस्य दीर्घश्छान्दस]

प्रासहाः या प्रकर्षेण शत्रुबलानि सहन्ते ता सेना ५ ३३ १. [प्रासहमिति व्याख्यातम् । तत. स्त्रिया टाप् । इन्द्रो वै प्रासहस्पतिस्तुविष्मान् ऐ० ३ २२ सेना वा इन्द्रस्य प्रिया जाया वावाता प्रासहा नाम ऐ० ३ २२.]

प्राऽसावीत् प्रसुवति १.१५७ १. प्रकृष्टतया सुनोति १ १२८.१ प्रकर्षेणोत्पादयति १२.३ [प्र+षुञ् अभिषवे (स्वा०) धातोर्लुङ्]

प्राऽस्थात् प्रतिष्ठते १ ७४ ८ **प्राऽऽस्थु:**=प्रकृष्टतयाऽतिष्ठन्तु ४ ३८ ३ [प्र+ष्ठा गतिनिवृत्तौ (भ्वा०) धातोर्लुङ् । 'गातिस्था०' इति सिचो लुक्]

प्रास्य प्रकृष्टतया प्रापय १ १२१ १३ [प्र+असु क्षेपणे (दिवा०) धातोर्लोट्]

प्राऽस्राक् प्रकर्षेण सृजति ४ ५३.४ [प्र+सृज विसर्गे (तुदा०) धातोर्लुङ् । लेर्लुक् छान्दसत्वात्]

प्राऽऽहु. प्रकृष्ट ब्रुवन्तु २ १२ [प्र+ब्रूञ् व्यक्तायां वाचि (अदा०) धातोर्लट् । 'ब्रुव' पञ्चानामादित आहो ब्रुव.' इति ब्रुव स्थाने आहादेशो णलादयश्च]

प्रियङ्गवः धान्यविशेषा १८ १२ [भोज्य वा एतदोषधीना यत् प्रियङ्गव श० ८ १६ पृश्निर्वै यद (पय) अदुहत स प्रियङ्गुरभवत् मै० २ १ ८ एतन्मरुता स्व पयो यत प्रियङ्गव काठ० १०.११]

प्रियतमम् अतिशयेन प्रियम् (रथ=विमानादियानम्) ४ ७५ १ [प्रियप्राति० अतिशायने तमप् । प्रियमिति व्याख्यास्यते]

प्रियधामाय प्रिय धाम यस्य तस्मै (अध्येत्रे पुरुषाय) १ १४० १ [प्रिय-धामपदयो समास. । धामानि त्रयाणि भवन्ति स्थानानि नामानि जन्मानीति नि० ९ २८]

प्रियपतिम् कमनीय पालकम् भा०—विधातारम् (जगदीश्वरम्) २३ १९ [प्रियपतिपदयो. समास.]

प्रियम् सर्वान् जनान् प्रीणन्तम् (जनम्=मनुष्यम्) १.३१.१७ य: प्रीणाति तम् (अग्निम्) १.१५१ १ कमनीय पतिम् ४ ५.२ ७ कमनीय प्रीतम् (अग्नि=सत्योपदेशकम्) ७ १६.१ प्रीत्युत्पादकम् (अग्निम्=अग्निविद्याम्) १५ ३२. प्रीतिविषय प्रसन्नकर प्रसन्न वा (परमेश्वरम्) ३२ १३. प्रीतिकारकम् (ब्रह्म यज्ञ वा) १ ३१ **प्रियस्य**=प्रसन्नकारकस्य (मारुतस्य=कलायन्त्रवायो प्राणस्य वा) १ ८७ ६ कमनीयस्य (मित्रस्य) ५ ६४ २ **प्रिय:**=प्रीत (मित्र) १ ९१.३. योऽन्यान् प्रीणाति स. (जन.) ४.२५ ५. हर्षशोकरहित (जन) ८ २५.५ प्रीतिविषय. (विश्पति सभाध्यक्ष) १.२६ ७. प्रीतिसम्पादक (यज्ञ =सङ्गतो व्यवहार) २ ३२.१२ य प्रीणाति कामयते आनन्दयति वा (आत्मा=स्वस्वरूपम्) २५ ४३ कामयमान प्रियकारी (विद्वज्जन) १ ७५ ४ कमनीय सेवनीयो वा (अतिथिजन) ५.१.९. कान्त भा०—सर्वस्य प्रिय (जन) १२ २७ **प्रियाणि**=कमनीयानि सेवनीयानि सुखानि ३.३८ १ **प्रियान्**=प्रसन्नान् (विदुषो जनान्) १ १२७.७. **प्रियाय**=प्रीत्यै ३० १३ **प्रिया:**=प्रीतियुक्ता सन्त (मेधाविनो जना) १ ८२ ७. स्त्र्यादे प्रीत्युत्पादकानि (तन्व =शरीराणि) १६ १५ प्रीतिविषया (वायव) २ ३६.२. **प्रिये**=कमनीये परमात्मस्वरूपे २८ २७. प्रीतिकामनासिद्धिकार्याम् (सदसि=सभायाम्) १ ४७.१० प्रसन्नताकारके (अहनि) १ ११०.७ प्रीतिकरे (बर्हिषि=अन्तरिक्षे) १ ८५ ७ कमनीये प्रीतिकारके (ऐहिकपारलौकिक-सुखे) ३ ३२ ७ **प्रियेण**=सुखैस्तर्पकेण कमनीयेन (धाम्ना=स्थानेन) २ ६ प्रीतिहेतुना (धाम्ना=स्थलेन) २ ६ प्रीतिसाधकेन (धाम्ना=हृदयेन) २ ६ **प्रियेषु**=प्रीतिकारकेषु (निधिषु=धनकोशेषु) १९.५७. इष्टेषु (धामसु=जन्मस्थाननामसु) १२ ११७ [प्रीञ् तर्पणे कान्तौ च (क्र्या०) धातो 'इगुपधज्ञाप्रीकिर क' इति कर्तरि क' प्रत्यय]

प्रियम् प्रीणाति यत्तत् (ब्रह्म=वेदचतुष्टयम्) १ ७५ २ प्रसन्नतासम्पादिसुखम् अ०—प्रेमोत्पादक सुखम् ६ ११. प्रीतये सुखयत्यारोग्येन यत्तत् (सद =औषधसेवन पथ्याचरण च) २ ६ प्रीणाति सुखयति यत्तत् (सद =गृहम्) २ ६ आनन्दकम् (सद =वस्तु) २ ६ प्रीति-

प्राऽऽर्त्त प्रकृष्टतया प्राप्नुया ४ १.१२ [प्र+ऋ गतौ (भ्वा०) धातोश्छान्दस रूपम्]

प्रार्पणः प्रापक भा०—प्रद (राजा=प्रकाशमानो जन) १२ २२ [प्र+ऋ गतौ (भ्वा०) धातोर्णिजन्तात् 'कृत्यल्युटो बहुलम्' इति कर्त्तरि ल्युट्]

प्रार्पयतु प्रकृष्टतया सयोजयतु १ १ [प्र+ऋ गतौ (भ्वा०) धातोर्णिजन्ताल्लोट् 'अर्तिह्रि०' इति सूत्रेण णिचि पुगागम]

प्राऽर्प्य प्रकर्षेणाऽर्पयित्वा १ ११३ ४ [प्र+ऋ गतौ (भ्वा०) धातोर्णिजन्तात् क्त्वा । समासे क्त्वो ल्यप्]

प्राऽव प्रकृष्टतया रक्ष १.४६ २ प्रापय १ १०२ ३ **प्राऽवत्**=प्रकृष्टतया रक्षेत् १ ६१ १५ प्ररक्षति ४ १६ ७. प्रकर्षेण रक्षेत् ७ ३३ ३ **प्राऽवतम्**=प्रवेशयतम् १ ११७.२३. पालयतम् १ ११२ ५ प्रकर्षेण हन्यातम् १ ११२ २३ **प्राऽवताम्**=प्रकृष्टतया रक्षणादिकं कुरुताम् १३ ३५ **प्राऽवन्**=प्रकर्षेण रक्षन्ति ३ ३०.१० **प्रावन्तु**= प्राप्नुवन्तु १ १२७ २. प्रकृष्टतया कामयन्ताम् १८ ७६ **प्राऽवः**=प्रकृष्टतया रक्ष, सदैव रक्षको भव १ ४ ८ प्रकर्षेण रक्षे ४ ३० ६. प्रकृष्ट रक्ष रक्षति वा प्र०—अत्र पक्षे व्यत्ययो लिड्लटोरर्थे लड् च १ ४ ८ प्रावेत् २ १५ ६ **प्राऽवाथः**=प्रकृष्ट रक्षेताम् ७ ६१ २ [प्र+अव रक्षणाद्यर्थकाद् (भ्वा०) धातोर्लोट् । अन्यत्र लेट् लड् च]

प्राऽवमृणीहि प्रकृष्टतयाऽवहिन्धि ४ ४ ५. [प्र+अव+मृ हिंसायाम् (क्र्या०) धातोर्लोट् । 'प्वादीना ह्रस्व ' इति ह्रस्व]

प्रावणेभिः विज्ञानैः १२ ५० [प्रुङ् गतौ (भ्वा०) धातोर्ल्युट् । प्रवणप्राति० भिस ऐसादेशो न भवति। 'अन्येषामपि दृश्यते' इति दीर्घ]

प्राऽवर्द्धयत् प्रवर्द्धयेत् २८ १२. (प्र+वृधु वृद्धौ (भ्वा०) धातोर्णिजन्ताल्लड्]

प्राविता प्रकृष्टतया ज्ञाता सुखप्रापको वा (अग्नि = परमेश्वरो भौतिको वा) १ १२.८. प्रकर्षेण रक्षक (अग्नि = महाविद्वज्जन) ३ २१.३ रक्षणादिकर्त्ता (सेनापति) १ ८७ ४ [प्र+अव रक्षणाद्यर्थकाद् (भ्वा०) धातो कर्त्तरि तृच्]

प्राऽविदत् प्राप्नुयात् ३ ५.७ १ (प्र+विद्लृ लाभे (तुदा०) धातोर्लुङ् । लृदित्त्वादङ्]

प्राऽविषत् प्रकृष्टतया रक्षादिक व्याप्नोतु १.८१.१ **प्राविषुः**=प्रकर्षेण व्याप्नुयु भा०—प्राप्नुयु २३ २६ [प्र+विष्लृ व्याप्तौ (जु०) धातोर्लेट् । 'बहुल छन्दसी' ति शप श्लुर्न भवति]

प्रावीत् प्रकर्षेण रक्षेत् ७ २० २ **प्रावीः**=प्रकृष्टतया देहि प्र०—अत्र लोडर्थे लुङभावश्च ३७ १८ [प्र+अव (भ्वा०) धातोर्लुङ्]

प्रावीः प्रकृष्टविद्याव्यापी (अग्नि =विद्वज्जन.) ४ ६ २ [प्र+अव (भ्वा०) धातोर्बाहु० औणादिक ई प्रत्यय]

प्रावृतस्य प्रकर्षेणाऽऽच्छादितस्य (मेघस्य) १ ६२ २ युक्तस्य (जनस्य) २५ २५ **प्रावृताः**=प्रकृष्टतयाऽऽवृता आच्छन्ना सन्त (अब्रह्मविदो जना) १७ ३१ [प्र+आङ्+वृञ् आवरणे (चुरा०) धातो क्त]

प्रावोचत् प्रकृष्टतया समन्ताद् वदति, प्र०—अत्र वचेर्लेट्यङ् 'वच उम्' इत्युमागम १६ ६५ **प्रावोचम्**= प्रकृष्टतयोपदिशेयम् ४ ४५ ७ [प्र+आङ्+वच परिभाषणे (अदा०) धातोर्लेट् । विकरणव्यत्ययेनाङ् । 'वच उम्' इत्युमागम । अन्यत्र लुङ्]

प्राऽऽशत प्रकृष्टतया व्याप्नुत ३ ४५ ३ [प्र+अशूङ् व्याप्तौ सघाते च (स्वा०) धातोर्लोट् । विकरणव्यत्ययेन शप्]

प्राऽशान प्रकर्षेण भुङ्क्ष्व ३ २१ १ [प्र+अश भोजने (क्र्या०) धातोर्लोट् । 'हल श्न शानज्झौ' इति श्न शानच्]

प्राशुषाट् य प्राशून् वेगवतश्शत्रून् सहते स (इन्द्र = राजपुरुष.) ४ २५ ६ [प्राशूपपदे षह मर्षणे (भ्वा०) धातो 'छन्दसि सह ' इति ण्वि प्रत्यय । प्राशु =प्र-आशुपदयो समास । आशु =अशूङ् व्याप्तौ (भ्वा०) धातो 'कृवापाजिमि०' उ० १ १ सूत्रेण उण् प्राशु क्षिप्रनाम निघ० २ १५]

प्राशूः य. प्राश्नाति स (ब्रह्मणस्पति विद्वज्जन) ३४ ५६ य प्राश्नुते प्रकृष्टतया व्याप्नोति स (बृहस्पति = परमेश्वर) १ ४० १. [प्र+अशूङ् व्याप्तौ (स्वा०) धातो अश भोजने (क्र्या०) धातोर्वा 'कृवापाजिमि०' उ० १ १ सूत्रेण उण्]

प्राशृङ्गाः प्रकृष्टानि शृङ्गाणि येषान्ते (सचग = मार्गा) २४ १७ [प्र-शृङ्गपदयो समास । पूर्वस्य दीर्घश्छान्दस । **शृङ्ग**=शॄ हिंसायाम् (क्र्या०) धातो 'शृणातेर्ह्रस्वश्च' उ० १ १२६ सूत्रेण गन्प्रत्ययो नुडागम किच्च । शृङ्ग श्रयतेर्वा शृणातेर्वा शम्नातेर्वा शरणायोद्गत-

प्रुष्णते पुष्टिं पूरयते (मिघाय) २२.२६. [प्रुष स्नेहनसेवनपूरणेषु (क्र्या०) धातो. अवन्ताच्चतुर्थी]

प्रुष्णवत् पुष्ट्यैश्वर्ययुक्तम् (वसु=धनम्) ३.१३.४ [प्रुष्णप्राति० मतुप्। प्रुष्णम=प्रुष स्नेहनसेवनपूरणेषु (क्र्या०) धातोर्बाहु० औणा० नक्प्रत्यय.]

प्रुष्णुते अभिवहति ६.७१.१ **प्रुष्णुवन्ति**= स्नेहयन्ति १.१६८.७. [प्रुषु दाहे (भ्वा०) धातोर्लट्। विकरणव्यत्ययेन श्नु]

प्रुष्वाभ्यः पूर्णाभ्य. (ह्रादुनीभ्य=विद्युद्भ्य) २२.२६. **प्रुष्वाः**=प्रुष्णन्ति सिञ्चन्ति याभिस्ता (क्रिया) ७५.६ [प्रुष स्नेहनसेवनपूरणेषु (क्र्या०) धातोर्बाहु० औणा० वन्प्रत्यय। स्त्रियां टाप्]

प्रेक्षते ज्ञान-दृष्टि से देखता है म० वि० २०६, अथर्व० ६.६.१.३ [प्र+ईक्ष दर्शने (भ्वा०) धातोर्लट्]

प्रेळे अध्यन्विच्छामि ४.५५.३. [प्र+ईड स्तुतौ (चुरा०) धातोर्लट्]

प्रेणिम् गन्तुमाचारं प्रेरितुमर्हम् (अव्यम्=तुरङ्गेषु वेगादिषु वा साधुम्) १.११२.१० [प्र+ई गतौ (अदा०) धातोरौणादिको नि.। शकन्ध्वादिन्यायेन पररूपम्]

प्रेत प्रकृष्टं प्राप्नुवन्ति प्र०—अत्र व्यत्ययो लडर्थे लोट् च ३.४७. प्राप्नुत ७.४५ **प्रेतम्**=प्रकृष्टतया प्राप्तौ भवत ५.१७ **प्रेताम्** प्राप्नुत. २.४१.१६ [प्र+इण् गतौ (अदा०) धातोर्लोट्]

प्रेतम् मृतम् (पतिम्) ऋ० भू० २११, अथर्व० १८.३.१.१ [प्र+इण् गतौ (अदा०) धातो क्त]

प्रेतारः प्रीतिकर्त्तारः (जना) १.१४८.५. [प्रीञ् तर्पणे कान्तौ च (क्र्या०) धातो. कर्त्तरि तृच्]

प्रेतारा प्राप्तारौ (इन्द्रावरुणा=अध्यापकोपदेशकौ) ४.४१.५ [प्र+इण् गतौ (अदा०) धातो कर्त्तरि तृच्। 'सुपां सुलुक्०' इति प्रथमाद्विवचनस्याकारादेशः। 'एङि पररूपम्' इति पररूपम्]

प्रेतिना प्रकृष्टविज्ञानयुक्तेन (धर्मेण=न्यायाचरणेन) १५.६ **प्रेतिम्**=प्रयन्ति म्रियन्ते येन त मृत्युम् १.३३.४. [प्र+इण् गतौ (अदा०) धातो स्त्रियां क्तिन्]

प्रेतीषणिम् प्रकर्षेण प्राप्तानामेषितारम् (पावकमग्निम्) ६.१.८. [प्रेति-इषणिपदयो समासः। प्रेति=प्र+इण् गतौ (अदा०) धातो स्त्रियां क्तिन्। इषणिम्=इष गतौ (दिवा०) धातोरौणादिकोऽनि. प्रत्यय]

प्रेत्य मरणं प्राप्य ४०.३ [प्र+इण् गतौ (अदा०) धातो क्त्वा। समासे क्त्वो ल्यप्]

प्रेत्यै प्रकर्षेण प्राप्त्यै भा०—प्रकर्षगमनाय प्रयत्न २७.४५ [प्रेतिप्राति० चतुर्थी। प्रेति=प्र+इण् गतौ (अदा०) धातो स्त्रियां क्तिन्]

प्रेद्धः प्रकृष्टतया प्रदीप्त भा०—शुद्धाऽऽत्मा (अग्नि=अग्निरिव शत्रुदाहको योगी) १७.७६ प्रकर्षेणेद्ध प्रदीप्त (अग्नि=विद्युदग्नि) ७.१.३ (प्र+ञिइन्धी दीप्तौ (रुधा०) धातो क्त]

प्रेयक्षसि प्रकृष्टतया सङ्गच्छसे व्याप्नोषि वा प्र०—इयक्षतीति गतिकर्मा निघ० २.१४, ६.४६.४ प्रकर्षेण यष्टुं सङ्गन्तुमिच्छसि ३३.५५ [प्र+इयक्षति गतिकर्मा (निघ० २.१४.) धातोर्लट्। यज देवपूजासङ्गतिकरणदानेषु (भ्वा०) धातोर्वा प्रोपसर्गाच्छान्दस रूपम्]

प्रेयर्मि प्रकृष्टतया प्राप्नोमि ३.१९.२ [प्र+ऋ गतौ (जु०) धातोर्लट्]

प्रेयः अतिशयेन प्रियम् (मन) १.१८०.११. [प्रियप्राति० अतिशायने ईयसुन्। 'प्रियस्थिर०' अ० ६.४.१५७ सूत्रेण प्रियस्य प्रादेश]

प्रेरय नियोजय ८.१६. [प्र+ईर क्षेपे (चुरा०) धातोर्लोट्]

प्रेव प्रकट यथा स्यात्तथा १.१०३.७ [प्र-इवपदयो समास। पेव=पराचीव नि० ६.२६]

प्रेषत् प्रीणीत प्र०—लेट्-प्रयोग तिपि १.१८०.६ [प्रीञ् तर्पणे कान्तौ च (क्र्या०) धातोर्लेटि सिपि च रूपम्]

प्रेषाः प्रेष्यन्ते प्रकृष्टमिष्यन्ते बोधनमूहास्ते १.६८.३ [प्र+इष गतौ (दिवा०) धातोर्घञ्। 'एङि पररूपम्' इति पररूपम्]

प्रेषितः प्रेरित (देव=विद्वज्जन) २१.६१ [प्र+इष गतौ (दिवा०) धातो क्त]

प्रेष्ठम् अतिशयेन प्रियम् (नम=अन्नादिकम्) ७.३६.५. [प्रियप्राति० अतिशायने इष्ठन्। 'प्रियस्थिर०' इत्यादिना प्रादेश]

प्रेष्ठः अतिशयेन प्रिय (धर्म.=यज्ञस्तापो वा) ५.४३.७ **प्रेष्ठौ**=प्रीणीत इति प्रियौ अतिशयेन प्रियौ=प्रेष्ठौ (अध्यापकोपदेशकौ) १.१८१.१ [पूर्वपदे द्रष्टव्यम्]

प्रेष्ठा अतिशयेन प्रियौ (सभासेनेशौ) ६.६३.१. प्रेष्ठ व्याख्यातम्। तत प्रथमाद्विवचनस्याकारश्छान्दसः]

प्रेष्ठा अतिशयेन प्रियाणि (सुम्ना=सुखानि) १.१६९.१. [प्रेष्ठ व्याख्यातम्। तत शेर्लोपश्छन्दसि]

जनकम् (पाथ=अन्नम्) २ १७ प्रीणन्ति यस्मिँस्तत् (अभीष्टस्थानम्) २६ १ सुखैस्तर्पकम् (पाथ=कर्म) ८ ५० कमनीय प्रीतिकरम् (ब्रह्म=जगदीश्वर) ५ ४२ २. [प्रियमिति व्याख्यातम् । प्रजा वै प्रियाणि पशव प्रियाणि ता० ८ ५ १५]

प्रियमेधवत् प्रिया तृप्ता कमनीया प्रदीप्ता मेधा बुद्धिर्यस्य तेन तुल्य (हव=अध्ययनाध्यापनाख्य व्यवहारम्) १ ४५ ३ [प्रिया-मेधापदयो समासे कृते तुल्यार्थे वति प्रत्यय । 'ङ्यापो सञ्ज्ञाछन्दसोरि०' ति ह्रस्व]

प्रियमेधः प्रिया मेधा प्रज्ञा यस्य स (कण्व=मेधाविजन) १ १३६ ६ **प्रियमेधाः**=सत्यविद्याशिक्षा-प्रापिका प्रिया मेधा येषान्ते (विद्वासो जना) १ ४५ ४ [प्रिया-मेधापदयो समास]

प्रियरथे कमनीये रथे १ १२२ ७ [प्रिय-रथपदयो समास]

प्रियस्तोत्रः प्रिय प्रति प्रियकारि स्तोत्र गुणस्तवन यस्य स (सोम=सत्कर्मसु प्रेरक परमेश्वर) १ ९१ ६ [प्रिय-स्तोत्रपदयो समास । स्तोत्रम्=ष्टुञ् स्तुतौ (अदा०) धातो 'दाम्नीशस०' इति करणे ष्ट्रन्]

प्रिया तर्पकाणि (पाथासि=फलादीनि) २१ ४७ कमनीयानि (धाम=जन्मस्थाननामानि) ४ ५ ४ प्रियाणि (धामानि=सुखानि) २१ ४७ कमनीयानि वस्तूनि सुखानि वा ५.४३ ५ अभीष्टानि (वस्तूनि) प० वि० [प्रियमिति व्याख्यानम् । तत शेर्लोपश्छन्दसि]

प्रिया यौ सर्वान् प्रीणीतस्तौ (मित्रावरुणा=अध्यापकोपदेशकौ) ६ ६७ ३ प्रसन्नताकरौ (सखाया=अध्यापकोपदेशकौ) ३ ४३ १ [प्रिय व्याख्यातम् । तत प्रथमाद्विवचनस्य 'सुपा सुलुगि०' त्याकारादेश]

प्रिया या प्रीणाति सर्वान् सा (उषा) १.४६ १ सुखकारिणी (क्षिति=पृथिवी) ११५१ ४ कमनीया (सरस्वती=सत्या वाणी) ३ ६१ १० **प्रियाम्**=प्रीति-कारिणीम् (जायाम्) १ ८२ ५ **प्रियासु**=सुखप्रदासु क्रियासु स्त्रीषु वा ६ ६१ १० **प्रियाः**=अभीप्सिता. (तन्व=शरीराणि) १.११४ ७ या तर्पयन्ति ता (धेनव=किरणा गावो वाचो वा) १.८४ ११ **प्रिये**=कमनीये प्रीतिकारिके (ऐहिकपारलौकिकसुखे) ३ ३२ ७. [प्रिय व्याख्यातम् । तत स्त्रिया टाप्]

प्रियासः प्रीतिमन्त प्रीता वा (प्रजाजना) ७ १६ ८ प्रीता कामयमाना (जना) २ १२ १५ कमनीया सेवनीया (पञ्चप्राण-मनोबुद्धय) ४ १ १२ प्रीतिकरा भा०—विद्वत्प्रिया मनुष्यप्रिया वा (जना) ३३ १४ प्रसन्ना (सदाचारिजना) ५ ८५ ८ प्रीतिमन्त (सूरय=धार्मिका विद्वास) ७ १६ ७ [प्रियप्राति० जसोऽसुगागम]

प्रियेभिः ग्वाऽऽत्मवत् प्रियै (ऋभुभि=मेधाविजनै) ३ ५४ १७ [प्रियप्राति० 'बहुल छन्दसी' ति भिस ऐसादेशो न भवति]

प्रीणानः प्रसन्न सत्याऽसत्यविज्ञापक (अतिथि) १ ७३ १ प्रसादयन् (अग्नि=राजा) ४ ३ १४ कामयमान (अग्नि=विद्वज्जन) २७ १३ तर्पयन् (इन्द्र=वैद्यो जन) २ ११ १७ [प्रीञ् तर्पणे कान्तौ च (क्र्या०) धातो शानच्]

प्रीणीते कामयते ७ ७ ३. [प्रीञ् तर्पणे कान्तौ च (क्र्या०) धातोर्लट्]

प्रीतम् प्रशस्तम् (वह्निम्) २६ ३ **प्रीतस्य**=कमनीयस्य (अ०—यज्ञस्य) १८ ५६ **प्रीतः**=कमित (विद्वज्जन) ५ ६ ३ कमनीय (अ०—मनुष्य) १ ६६ २ प्रसन्न (सभाध्यक्ष) १ ६६ ३ **प्रीताः**=प्रसन्ना (देवा=विद्वासो गुरव) ३.५७ २. [प्रीञ् तर्पणे कान्तौ च (क्र्या०) धातो क्त]

प्रीता प्रसन्ना (होत्रा=ग्राह्या क्रिया) ४ २ १० (प्रीत व्याख्यातम् । तत स्त्रिया टाप्]

प्रुषायत् प्रुष्णीयात् सिञ्चेत् प्र०—अत्र शायच् १ १२१ २ [प्रुष स्नेहनसेवनपूरणेषु (क्र्या०) धातोर्लेट् । 'छन्दसि शायजपि' अ० ३ १ ८४ सूत्रेण श्न शायच्]

प्रुषायन् छिन्दन्ति १ १८० १ प्राप्नुवन्ति ४ ४३.५ **प्रुषायन्त**=सेवन्ताम् १ १८६ ६ **प्रुषायन्ते**=मधूनि स्रवन्ति १ १३६ ३ [प्रुष दाहे (भ्वा०) प्रुष स्नेहन-सेवनपूरणेषु (क्र्या०) धातोर्वा लेट् 'छन्दसि शायजपि' इति शायच्]

प्रुषितप्सवः प्रुषित दग्ध प्सु इन्धनादिक यैस्ते (अश्वास=वेगादयो गुणा) ५ ७५ ६ **प्रुषितप्सुम्**=य प्रुषितान् स्निग्धान् पदार्थान् प्साति भक्षयति तम् (राजजनम्) ४ ३८ २ [प्रुषित-प्सुपदयो समास । प्रुषितम्=प्रुषु दाहे (भ्वा०) प्रुष स्नेहनसेवनपूरणेषु (क्र्या०) धातोर्वा क्त । प्सु रूपनाम निघ० ३ ७ प्सा भक्षणे (अदा०) धातोर्बाहु० औणादिक कु प्रत्यय]

प्रुषितस्य स्निग्धस्य (पूर्णस्यैश्वर्यस्य) मध्ये १ ५८ २ [प्रुषितमिति पूर्वपदे व्याख्यातम्]

ममष्टचे ना० १४ ५ १७]

प्लाशिभिः प्रकर्षेणाऽशनक्रियाभि २५ ८ [प्र+अश भोजने (क्र्या०) धातो 'इञ् अजादिभ्य' अ० ३ ३ १०८ वा० सूत्रेण इञ्प्रत्यय । रेफस्य लत्वम्]

प्लाशिः य प्रकृष्टतयाऽश्नुते स भा०—पुरुषार्थी (वीर्यवान् पुरुष) १९ ८७ [प्र+अश भोजने (क्र्या०) धातोर्बाहु० औणा० इञ्प्रत्यय]

प्लीहाकर्णः प्लीहेव कर्णो यस्य स (पशु पक्षी वा) २४ ४ [प्लीहा-कर्णपदयो समास । प्लीहन् इति व्याख्यास्यते]

प्लीह्ना हृदयस्थाऽवयवेन २५ ८ [प्लिह गतौ (भ्वा०) धातो 'श्वन्नुक्षन्प्लीहन्०' अ० १ १५९. सूत्रेण कनिन्-प्रत्यये धातोरुपधादीर्घत्व निपात्यते]

प्लुषी दाहकी दु खप्रदी (चञ्चलपुष्पी) १ १९१ १. **प्लुषीन्**=जन्तुविशेषान् २४ २९. [प्लुषु दाहे (भ्वा०) धातोर्बाहु० औणादिक इन् किच्च]

प्सरः य प्साति भुङ्क्ते स भोग १४१ ७ [प्सा भक्षणे (अदा०) धातोर्बाहु० औणा० अरन्प्रत्यय । बहुलवचनात् किच्च । प्सर रूपनाम निघ० ३ ७]

फट् विशीर्ण (शत्रु) ७ ३ ['फट्' इति निपातश्चादिषु पाठात्]

फलम् मेवाफलद शूद्रकुलम् भा०—ये जना आलस्य विहाय सर्वदा पुरुषार्थमेवाऽनुतिष्ठन्ते ते सच्छूद्रान् प्राप्य फलवन्तो जायन्ते १० १३ [फल निष्पत्तौ (भ्वा०) धातोरच्प्रत्यय]

फलवत्यः बहूत्तमफला भा०—मधुरफलयुक्ता (ओषधयः=यवादय) २२ २२ [फलप्राति० भूम्न्यर्थे मतुबन्तात् ङीप्]

फलिगम् मेघम् प्र०—फलिग इति मेघनाम निघ० १ १०, ४ ५० ५ फलीना गमयितार मेघम् १ ६२ ४ [फलिग मेघनाम निघ० १ १०]

फलिनीः बहुफला (ओषधय) १२ ८९ [फलप्राति० भूम्न्यर्थे प्रशमाया वा इनि । तत स्त्रिया ङीप्]

फल्गूः या फलानि गच्छति प्राप्नोति सा (मारुता—पवनगुणिनी पक्षिणी) २४ ४ [फल निष्पत्तौ (भ्वा०) धातो. 'फलिपाटिनमिमनिजनाम्०' उ० १ १८. सूत्रेण उप्रत्यये गुगागम. । फल्गुप्राति० स्त्रियाम् 'ऊङुत.' अ० ४.१ ६६ सूत्रेण ऊङ्]

फल्ग्वेन महता (वचसा=वचनेन) ४.५ १४ [फल्गू-रिति व्याख्यातम् । तस्य छान्दस रूपम्]

फालाः फलन्ति विस्तीर्णा भूमि कुर्वन्ति यैस्ते (कृषिसाधका) १२ ६९ अयोनिर्मिता भूमिविलेखनार्था (कृषिसाधनपदार्था) ४ ५७.८ [फल निष्पत्तौ (भ्वा०) धातो. 'हलश्च' इति करणे घञ्]

फेनम् चक्रवृद्ध्यादिना वर्धित धनम् १ १०४.३. **फेनेन**=वर्द्धनेन १९ ७१ [स्फायी वृद्धौ (भ्वा०) धातो. 'फेनमीनौ' उ० ३ ३ सूत्रेण नक्प्रत्यये धातो. 'फे' आदेशो निपात्यते स (फेन) यदोपहन्यते मृदेव भवति श० ६.१.३ ३]

फेन्याय फेनेषु बुदबुदाऽऽकारेषु साधवे (पुरुषाय) १६ ४२ [फेनमिति व्याख्यानम् । तत 'तत्र साधुरि' त्यर्थे यत्]

बकुरेण भासमानेन सूर्येण १ ११७.२१ [बकुर पदनाम निघ० ४ ३ बकुरो भास्करो भयकरो भासमानो द्रवतीति वा नि० ६ २६ बकुरेण ज्योतिषा नि० ६ २६]

बट् सत्यम् प्र०—बडिति सत्यनाम निघ० ३ १०, ५ ८४ १ अनन्तज्ञानम् (ईश्वरम्) ३३.३९ [बट् सत्यनाम निघ० ३ १० बट्=सत्यम् नि० १० ३७]

बदरम् बदरीफलवद्वर्णयुक्तम् (रूपम्) १९ २२ **बदरैः**=बदर्या फलै २१ ३० बदरीफलैरिव २१ ३१ बदरी-फलै १९ ९०. [बद व्यक्ताया वाचि (भ्वा०) धातोर्बाहु० औणा० अर प्रत्यय । बकारस्य बकारो वर्णव्यत्ययेन । बद स्थैर्ये (भ्वा०) धातोर्वा अर प्रत्यय. । यत् प्लीहा तद् बदरम् (अभवत्) श० १२ ७ १ ३]

बद्धम् लग्नम् (एन =कुपथ्यादिकमपराध वा) ६ ७४.३. **बद्धः**=नियुक्त (अग्नि) १ १५८ ४ नियमेन नियोजित (अ०—वायुलोक) १ २४ १३ [बन्ध बन्धने (क्र्या०) धातो क्त]

बद्बधानस्य बन्धकस्य (वृत्रस्य=मेघस्य) प्र०—अत्र बन्ध-धातोश्शानच् 'बहुल छन्दसि' इति शप श्लु, हलादिशेषाऽभावश्च १ ५२ १०. **बद्बधानान्**=प्र—बद्धान् (नदीकूलान्) ५.३२ १. सम्बद्धान् (उत्सान्=कूपान्) ५ ३२ २ [बन्ध बन्धने (क्र्या०) धातोश्शानश् । विकरणव्यत्ययेन श्लु । हलादिशेषश्च न भवति छान्दसत्वात् । बध सयमने (चुरा०) धातोर्वा यङ्लुगन्ताद् आत्मनेपदं कर्मणि कानच् छान्दस । बद्बधानान्=बाबध्यमानान् नि० १० ६]

बद्बधानाः बध कुर्वाणा (सीरा =नद्य) ४ १९ ८. प्रबन्धकर्त्र्य (विदुष्य स्त्रिय) ४ २२ ७ [बद्बधान इति व्याख्यातम् । तत स्त्रिया टाप्]

प्रेष्ठाम् अतिशयेन प्रियाम् (देवी=विदुषी स्त्रीम्) ४.४३.१ [प्रेष्ठ व्याख्यातम्। तत स्त्रिया टाप्]

प्रेष्ये प्राप्नोमि ४ ३३ १ [प्र+इष गतौ (दिवा०) धातोर्लट्। व्यत्ययेनात्मनेपदम्]

प्रेहि प्राप्नुहि १७ ६६ प्रकृष्टतयाऽऽप्नुहि १ ८०.३. [प्र+इण् गतौ (अदा०) धातोर्लोट्]

प्रैतन प्राप्नुत १.११० २ [प्र+इण् गतौ (अदा०) धातोर्लोट्। त-प्रत्ययस्य तनवादेश]

प्रैतु प्राप्नोतु ३३ ८६ **प्रैमि**=प्रकर्षता से प्राप्त होता हूँ स० वि० १६८, अथर्व० ६ २ ३ २२. [प्र+इण् गतौ (अदा०) धातोर्लोट्। अन्यत्र लट्। 'एत्येधत्यूठ्सु' इति सूत्रेण वृद्धि]

प्रैनोत् प्रकृष्टतया प्राप्नोति १ ६६.५ **प्रैनोः**= प्रकर्षेण प्रेरय ४ १६ ७ [प्र+इण् गतौ (अदा०) धातोर्लङ्। विकरणव्यत्ययेन श्नु]

प्रैषान् प्रैषणीयान् भृत्यान् भा०—सुशिक्षितसेवकान् १६ १६ [प्र+इष गतौ (दिवा०) धातोर्घञ्। प्रैषा = वार्हता वै प्रैषा श० १२ ८ २ १४]

प्रैषेभिः प्रैषणकर्मभि १६ १६ [प्रैषप्राति० भिस ऐसादेशो न भवति छान्दसत्वात्। प्रैष =प्र+इष गतौ (दिवा०) धातोर्घञ्। प्राहोढूढोढ्येषैष्येषु' इति एङि पररूपापवादो वृद्धि']

प्रो प्रकृष्टार्थे १ १६१ १२ त्वेशार्थे १ ३६.५.

प्रो अग्मन् प्रकृष्टतया प्राप्नुवन्ति ६ ३७ २ [प्रो इत्युपपदे गम्लृ गतौ (भ्वा०) धातोर्लुङ्। 'मन्त्रे घसह्वर'० अ० २४८० सूत्रेण लेर्लुक्]

प्रोक्षणीः प्रकृष्टतया सिञ्चन्ति याभि क्रियाभि. पात्रैर्वा ता १ २८ [प्र+उक्ष सेचने (भ्वा०) धातोर्ल्युट्। तत स्त्रिया ङीप्]

प्रोक्षामि शोधयामि २ १ शोधितेन घृतेनाऽऽर्द्रीकरोमि २ १. प्रकृष्टतया सिञ्चामि ५ २५ प्रकृष्टतयाऽभिसिञ्चामि २२५ सेचयामि प्रेरयामि वा १ १३ [प्र+उक्ष सेचने (भ्वा०) धातोर्लट्]

प्रोक्षितम् जलेन सिक्तम् (भौतिकमग्निम्) २२ १६ [प्र+उक्ष सेचने (भ्वा०) धातो क्त]

प्रोक्षिताः प्रकृष्टतया सिक्ता सेचिता वा (अप.) १ १३ [प्र+उक्ष सेचने (भ्वा०) धातो क्तान्तात् स्त्रिया टाप्]

प्रोढ. प्रकर्षेणोढ प्राप्त (कृतब्रह्मचर्यो जन) १ ११७ १५ [प्र-ऊढपदयो समास। ऊढ =वह प्रापणे (भ्वा०) धातो क्त]

प्रोतः तिर्य्यक्तन्तुषु पट इव (विभू =व्यापकेश्वर) ३२ ८. [प्र-उतपदयो समास। उत =वेञ् तन्तुसन्ताने (भ्वा०) धातो क्त। यजादित्वात् किति सम्प्रसारणम्]

प्रोथ जेतु पर्याप्तो भव शत्रूनसमर्थान् कुरु ६ ४७ ३० परिप्राप्नुहि २६ ५६ **प्रोथत्**=पर्याप्नुयात् १५ ६२ [प्रोथृ पर्याप्तौ (भ्वा०) धातोर्लोट्। अन्यत्र लेट्]

प्रोथत् शब्द कुर्वन् (अश्व =तुरङ्ग) ७ ३ २. **प्रोथते**=पर्याप्ताय (पदार्थाय) २२ ७ [प्रोथृ पर्याप्तौ (भ्वा०) धातो शतृप्रत्यय]

प्रोद्यच्छध्वम् प्रकर्षेणोद्यमिन कुरुत ७ ४३ २ [प्र+उत्+यमु उपरमे (भ्वा०) धातोर्लोट्। 'समुदाङ्भ्यो यमोऽग्रन्थे' इत्यात्मनेपदम्]

प्रोपेट्टे प्रकृष्टतयैश्वर्यवान् भवेत् ३ ५२ ५ [प्र+उप+ईश ऐश्वर्ये (अदा०) धातोर्लट्]

प्रोपेहि प्रकृष्टतया गच्छ ६ १२. [प्र+उप+इण् गतौ (अदा०) धातोर्लोट्]

प्रोर्णुवाथाम् प्रकृष्टतयाऽऽच्छादयताम् ६ १६ प्राप्नुयाथाम् २३ २० [प्र+ऊर्णुञ् आच्छादने (अदा०) धातोर्लोट्]

प्रोष्ठेशयाः या प्रोष्ठेऽतिशयेन प्रोढे गृहे शेरते ता (नारी =नरस्य स्त्रिय) ७ ५५ ८. [प्रोष्ठोपपदे शीङ् शये (अदा०) धातो 'अधिकरणे शेते' अ० ३ २ १५ सूत्रेण अच्]

प्रोहामि प्रकृष्टैर्विविधैस्तर्कै सुखानि प्राप्नोमि २ १५ प्रकर्षेण विविधशुद्धतर्केण योजयामि २ १५ [प्र+ऊह वितर्के (भ्वा०) धातोर्लट्। व्यत्ययेन परस्मैपदम्]

प्रोह्यमाणः प्रकृष्टतर्केणाऽनुष्ठित (सोम =ऐश्वर्यसमूह) ८ ५६ [प्र+ऊह वितर्के (भ्वा०) धातो कर्मणि शानच्]

प्रौक्षन् प्रकर्षेण सिञ्चन्ति ३१ ६ प्रकृष्टतया यस्यैवाऽभिषेक कृतवन्त कुर्वन्ति करिष्यन्ति च ऋ० भू० १२४, ३१.६ [प्र+उक्ष सेचने (भ्वा०) धातोर्लङ्]

प्लवम् प्लवन्ते पारावारौ गच्छन्ति येन त नौकादिकम् १.१८२.४. **प्लवः**=वर्त्तिका (पक्षिविशेष.) २४ ३४ [प्लुङ् गतौ (भ्वा०) धातो. 'ऋदोरप्' त्यप्प्रत्यय। प्लव वाव नो भूत्वेद साम स्वर्गं लोकमवाक्षीदिति। तदेवप्लवस्य प्लवत्वम् जै० ३ ११५ यत् प्लवो भवति स्वर्गस्य लोकस्य

बद्बधे बीभत्सते १ ८१ ५. प्र०—अत्र 'वाच्छन्दसि' इति सन् हलादिशेषो न भवति १ ८० १३ [वध सयमने (चुरा०) धातोर्लिटि छान्दस रूपम्]

बधस्नैः ये बधेन स्नान्ति पवित्रा भवन्ति ते (विद्वासो जना) ५ ४१ १३ [बधोपपदे ष्णा शौचे (अदा०) धातो 'आतोऽनुपसर्गे क' इति क प्रत्यय]

बधान बन्धय बध्नाति वा प्र०—अत्र पक्षे व्यत्यय. १ २६ [बन्ध बन्धने (क्र्या०) धातोर्लोटि 'हल श्न शानज्झौ' इति शानच्]

बधिरम् श्रोत्रविकलम् ३० १० [बधिरो बद्धश्रोत्र नि० १० ३९ बन्ध बन्धने (क्र्या०) धातो 'इषिमदिमुदि०' उ० १ ५१ सूत्रेण किरच्]

बधिरा बधिराणि (कर्णा=कर्णानि) ४ २३ ८ [बधिर व्याख्यातम् । तत शेर्लोपश्छन्दसि]

बधेत् हन्यात् १० ८ हन हिंसागत्यो (अदा०) धातोर्लिङि वधादेशश्छान्दस ।

बध्नन् बध्नन्ति २१ ५९ **बध्नीताम्**=बद्धा कुरुताम् ४ १९ [बन्ध बन्धने (क्र्या०) धातोर्लङ् अडभाव]

बध्नन् बद्ध कुर्वन् (यजमान) २८ २३ [बन्ध बन्धने (क्र्या०) धातो शतृ]

बध्यमाने ताड्यमाने (दौर्गहे=दुर्गहने, व्यवहारे) ४ ४२ ८ [बन्ध बन्धने (क्र्या०) धातो कर्मणि शानच्]

बन्धनात् लया-सम्बन्धात् ३ ६० [बन्ध बन्धने (क्र्या०) धातोर्ल्युट्]

बन्धनानि प्रयोजनानि १ १६३ ३ [बन्ध बन्धने (क्र्या०) धातोर्ल्युट्]

बन्धनासः बन्धका (विनाशका व्यवहारा) ५ १२.४. [बन्ध बन्धने (क्र्या०) धातो 'कृत्यल्युटो बहुलम्' इति कर्त्तरि ल्युट् । ततो जसोऽसुक्]

बन्धम् बध्नाति येन तम् (अज्ञानम्) १२ ६३ **बन्धानाम्**=दुःखकारकत्वेन निरोधकानाम् (व्यवहाराणाम्) १२ ६४ [बन्ध बन्धने (क्र्या०) धातोर्घञ्]

बन्धुक्षिद्भ्यः बन्धून् निवासयद्भ्य (पुरुषेभ्य) १.१३२ ३ [बन्धूपपदे क्षि निवासगत्यो (तुदा०) धातो क्विप् । 'ह्रस्वस्य पिति कृति तुग्' इति तुगागम]

बन्धुता बन्धूना भाव (भ्रातृत्वम्) ३ ६० १ [बन्धु-प्राति० भावे तल् । ततष्टाप्]

बन्धुपृच्छा यौ बन्धून् पृच्छन्तौ (सभासेनेशौ) ३ ५४ १ [बन्धूपपदे प्रच्छ ज्ञीप्सायाम् (तुदा०) धातो 'वा छन्दसि' इति श प्रत्यय । 'सुपा सुलुग्०' इत्याकारादेश]

बन्धुरे प्रेम-बन्धने ६ ४७ ९. दृढबन्धनयुक्ते (रथे) १ १३९ ४ **बन्धुरेषु**=यानयन्त्राणा बन्धनेषु १.६४ ९ [बध्नाति मार्दवेनेति विग्रहे बन्ध बन्धने (क्र्या०) धातो 'मद्गुरादयश्च' उ० १ ४१ सूत्रेण उरच्]

बन्धुरेव यथा बन्धुरे तथा ३ १४ ३ [बन्धुर-इवपदयो समास]

बन्धुः दु खविनाशकत्वेन सुखप्रद (ईश्वर) १ १५४ ५ भ्रातेव मान्य सहाय भा०—सर्वदा सहायकारी (ईश्वर) ३२ १० भ्रातृवत्प्राण १.१६४ ३३ भ्राता के समान सुखदायक (परमात्मा) स० वि० ६, ३२ १० दु खनाशक और सहायक (ईश्वर) आर्याभि० २ ६, ३२ १० [प्रेम्णा बध्नातीति विग्रहे बन्ध बन्धने (क्र्या०) धातो 'शृस्वृस्निहि०' उ० १ १० सूत्रेण उ प्रत्यय । बन्धु धननाम निघ० २ १० बन्धु सबन्धनात् नि० ४ २१]

बन्ध्वेषे बन्धूनामिच्छायै ५ ५२ १६ [बन्धूपपदे इषु इच्छायाम् (तुदा०) धातोस्तुमर्थे से-प्रत्यय । प्रत्ययसकारस्य लोपश्छान्दस]

बप्सतः भक्षयत (जनस्य) ७ ५५ २ [भस भर्त्सनदीप्त्यो (जु०) धातोर्लटि 'घसिभसोर्हलि' इति उपधालोपे 'खरि चे' ति चर्त्वम् । बप्सति अत्तिकर्मा निघ० २ ८]

बप्सता बप्सन्तौ (अ०—स्त्रीपुरुषौ) प्र०—अत्र 'भस भर्त्सनदीप्त्यो' इत्यस्माल्लट शत्रादेश 'घसिभसोर्हलि च' अ० ६ ४ १०० अनेनोपधालोप, सुगममन्यत् । भस धातोर्भर्त्सन इत्यर्थो नवीनो भक्षण इति प्राचीनोऽर्थ १ २८ ७. [भस भर्त्सनदीप्त्यो (जु०) धातो शतृ । तत प्रथमाद्विवचनस्याकारादेश । शेष स्पष्टम् । बप्सता=भुञ्जाते नि० ९ ३५]

बबाधे बाधते ४ २३ ७ [बाधृ विलोडने (भ्वा०) धातोर्लिट्]

बबृहाणस्य प्रवृद्धस्य (अद्रे =मेघस्य) ५ ४१ १२ [बृह वृद्धौ (भ्वा०) धातोर्लिटः कानच् । व्यत्ययेनात्मनेपदम्]

बभसत् दीपयेत् भर्त्सयेत् ४ ५ ४ [भस भर्त्सनदीप्त्यो (जु०) धातोर्लेट्]

ऽस्ति २६ २६ उत्तम सर्वेषा वर्धक कर्म्म ७ ३६ २ उत्तम घृतादिकम् ७ २ ४. उत्तम गृह शरीर वा ७ २ ८ अन्तरिक्ष-स्थमुत्तममासनम् ७ ५७ २ **बर्हीषि**=अन्तरिक्षाऽवयवा २८ २१ [बृहि वृद्धौ (भ्वा०) धातो 'बृहेर्नलोपश्च' उ० २ १०६ सूत्रेण इसि प्र० नलोपश्च। बर्हि अन्तरिक्षनाम निघ० १ ३ उदक नाम निघ० १ १२ पदनाम निघ० ५ २ बर्हि परिबर्हणात् नि० ८ ६ प्रजा वै बर्हि कौ० ५ ७ पशवो वै बर्हि ऐ० २ ४ ओषधयो बर्हि ऐ० ५ २८ अय लोको बर्हि श० १ ४ १ २४ शरद् वै बर्हिरिति श० १ ५.३ १२ क्षत्र वै प्रस्तरो विश इतर बर्हि श० १ ३ ४ १० भूमा वै बर्हि श० १ ५ ४ ४]

बर्हिष्ठम् बर्हिषि यज्ञे तिष्ठतीति (विद्वास जनम्) ३ १३.१ [बर्हिष् उपपदे ष्ठा गतिनिवृत्तौ (भ्वा०) धातो क । सलोपश्छान्दस । बर्हिष्ठ महन्नाम निघ० ३ ३]

बर्हिष्ठाम् यो बर्हिषि अन्तरिक्षे तिष्ठति तम् (सोमम्=ओषधिगणमिवैश्वर्यम्) ३ ४२ २ [बर्हिष् इति व्याख्यातम् तदुपपदे ष्ठा गतिनिवृत्तौ (भ्वा०) धातो. क्विप् । सलोपश्छान्दस]

बर्हिष्मतः अन्तरिक्षस्य सम्बन्धो विद्यते येषा तान् (भा०—वायुजलादिपदार्थान्) २८ १२ **बर्हिष्मते**=बर्हिष प्रशस्ता ज्ञानादिगुणा विद्यन्ते यस्मिन् व्यवहारे तन्निष्पत्तये १ ५१ ८ उत्तमगुणकर्मस्वभावविज्ञानप्राप्तये प० वि० विज्ञानवते (कारवे=कर्मकर्त्रे मनुष्याय) १ ५३ ६ प्रवृद्ध-विज्ञानाय (विद्वज्जनाय) ५ २ १२ सर्वोपकारक यज्ञ के विध्वस करने वाले (दुष्ट) के लिए आर्याभि० १ ४ [बर्हिष्-प्राति० मतुप्]

बर्हिष्मती प्रशस्त-वृद्धियुक्ता (राति =दत्ति) १ ११७ १ [बर्हिष्प्राति० मतुबन्तान् ङीप्]

बर्हिष्येषु बर्हिष्पूत्तमेषु साधुषु (निधिषु=धनकोशेषु) १६ ५७ [बर्हिष्प्राति० 'तत्र साधु' रिति यत्]

बर्हीत् बर्हति १ १०० १८ **बर्हीः**=उत्पाटय ४ १६ १२ [बृहू उद्यमने (तुदा०) धातोर्लुङ् । अडभाव-श्छान्दस]

बलगम् बलप्रापक, बल गच्छन्त, राज्यबलप्रापकम्, आत्मबलप्रापकम् (अ०—यज्ञम्) ५ २३ [बलोपपदे गम्लृ गतौ (भ्वा०) धातोर्ड प्रत्यय]

बलगहनम् यो बलानि गाहते तम् (बलवत्पुरुषम्) प्र०—अत्र गाहू-धातोर्बाहुलकादौणादिक क्यु प्रत्ययो ह्रस्वत्व च ५ २३ **बलगहनः**=यथा यो बलानि शत्रु-सैन्यानि गाहते तथाभूतोऽहम् (यजमान. पुरुष) ५ २५ यथाऽह बलानि स्वसैन्यानि गाहे तथा व्यूहशिक्षया विलोडयन् (यजमानपुरुष) ५ २५ **बलगहनौ**=यौ बलानि गाहेथे, तौ (प्रजासभाद्यध्यक्षौ) ५ २५ [बलोपपदे गाहू विलोडने (भ्वा०) धातोर्बाहु० औणा० क्यु, धातोर्ह्रस्वश्च]

बलदाः यो बल ददाति स (जगदीश्वर) २५ १३ शरीर, आत्मा और समाज के बल का देने वाला (परमात्मा) स० वि० ५, २५ २३. मानसिक-विज्ञानबल इन्द्रियसम्बन्धि-श्रोत्रादि की स्वस्थता तेजोवृद्धि शरीरसम्बन्धि-महापुष्टि दृढाङ्गता और वीर्यादिवृद्धि इन तीनो बलो का दाता (ईश्वर) आर्याभि० २ ४८ २५ १३ शरीरेन्द्रिय-प्राणाऽऽत्म-मनसा पुष्ट्युत्साहपराक्रमदृढत्वप्रद (ईश्वर.) ऋ० भू० ६, २५ १३ [बलोपपदे डुदाञ् दाने (जु०) धातो. कर्त्तरि क्विप्]

बलम् सामर्थ्यम् १ १ ८२ सर्वाऽङ्गदृढत्वम् १ ६ ६ बलयुक्त मेघम् १ ६२ ४ सेनादिकम् १ ३७ १२ बल पराक्रम वा ३ ५३ १८ ब्रह्मचर्यादिसुनियमाचरणेन शरीर-बुद्ध्यादि-रोगनिराकरण, दृढाङ्गतानिश्चलवुद्धित्वसम्पादन, भीषणादिकर्मयुक्तम् (व्यवहारम्) ऋ० भू० १०२, अथर्व० १२ ५ ७ महाबलेश्वर ऋ० भू० १४६, १६ ६ आवरक मेघम् २ २४.३ भा०—स्वाऽङ्गपुष्टिम् २५ ६ अनन्तबल-युक्त (ईश्वर) स० प्र० २४६, १६ ६ **बलस्य**=बलवत शत्रोर्मेघस्य १ ५२ ५ **बलाय**=योगसामर्थ्याय १६ ६१ बलवृद्धये ३०.६ पुष्टत्वाय २० ३ **बलेन**=सैन्येन पराक्रमेण वा ६ ६ भा०—ब्रह्मचर्येण शरीरात्मबल तेन २१ ३२. [डुभृञ् धारणपोषणयो (जु०) धातो पचाद्यच् । भकारस्य वकारो रेफस्य लकारश्च बाहुलकादेव। बल प्राणने (भ्वा०) धातोर्वा अच्प्रत्यय । बल कस्मात् बल भर भवति बिभर्ते नि० ३ ६ बल इति मेघनाम निघ० १ १० बल वा द्रविण यदेनेनाभिद्रवन्ति नि० ८ १ बल हृदये (श्रितम्) तै० ३ १०.८ ८ इन्द्रो बलपति श० ११ ४ ३ १२ बल वै मरुत काठ० २६ ६ बल वै सह श० ६ ६ २ १४ बल विश्वे देवा मै० ४ ७ ८ आत्मा वै बलम् काठसक० ७२ ५]

बलवान् बहुबलयुक्त (सेनाऽध्यक्षो राजा) ६ ६. [बलप्राति० भूम्न्यर्थे मतुप्]

बलविज्ञायः यो बल बलयुक्त सैन्य कर्त्तु जानाति स (इन्द्र =सेनापति) १७ ३७ [बलोपपदे विपूर्वाज् ज्ञा अवबोधने (क्र्या०) धातो क । युगागम]

पदनामसु पठितम् निघ० ४ ३ अनेन प्राप्त्यर्थो गृह्यते १ ५२ ११ वर्धनेन ६ ४४ ६ वृद्धियुक्तेन (व्यवहारेण) १ ५४ ३ [वृह वृद्धौ (भ्वा०) धातोरौणादिको बाहु० अन्। वर्हणा पदनाम निघ० ४.३. बर्हणा परिवर्हणा नि० ६.१८]

बर्हणा वर्धते या सा (दिद्युत्=विद्युत्) १ १६६ ६ **बर्हणाः**=वर्धमाना (तुज =सेना) ३ ३४ ५ [वृह वृद्धौ (भ्वा०) धातोश्छान्दस स्त्रिया युच् । ततष्टाप्]

बर्हणा वृह्यते येन तत् (रज =पृथिव्यादिलोकजातम्) १ ५६ ५ [वृह वृद्धौ (भ्वा०) धातोर्ल्युटि 'सुपा सुलुग्०' इत्याकारादेश]

बर्हणा वर्धकौ (मित्रावरुणौ=अध्यापकोपदेशकौ) ५ ७१ १ [वृह वृद्धौ (भ्वा०) धातो कर्त्तरि छान्दसो युच् । ततो द्विवचनस्याकारश्छान्दस.]

वर्हणावत् वर्हण वृद्धिकारक विज्ञान धन वा विद्यते यस्मिँस्तत् (ज्योति =विज्ञानदीप्ति) ३ ३९ ८ **वर्हणावता**=बहुविध वर्हण वर्द्धन विद्यते यस्य तेन (मनसा) प्र०—अत्र भूम्न्यर्थे मतुप् १ ५४ ५ [वर्हणेति व्याख्यातम्। ततो भूम्न्यर्थे मतुप्]

बर्हय वर्धय ७ ३१ १२ नितरामुत्पादय २ २३ ८ निस्सारय १ १३३ ५ [वृह वृद्धौ (भ्वा०) धातोर्णिजन्ताल्लोट्]

र्वाहिरिव परिवृहक छेदकमुदकमिव प्र०—वर्हिरित्युदकनाम निघ० १ १२, १ ११६ १. जलमिव ५ ६२ ५ कुशपिञ्जुली के समान स० वि० २०९, अथर्व० ६ ६ १ ८ [वर्हिष्-इवपदयो समास । वर्हिष् इति व्याख्यास्यते]

र्वाहिषदम् यो वर्हिष्याकाशे सीदति तम् (यज्ञम्) १९.३२ यो वर्हिरन्तरिक्षे सीदति तम् (वृजन=योगवलम्) ७.१२ **र्वाहिषदः**=ये वर्हिष्युत्तमाया सभाया सीदन्ति ते (पितर =न्यायेन पालका पित्रादय) १९ ५५ उत्तमाऽऽसने सीदन्ति ते (पितर) १९ ५६. ये वर्हिषि सर्वोत्तमे ब्रह्मणि विद्याया च निषण्णा (पितर) ऋ० भू० २६०, १९ ५६ **र्वाहिषदाम्**=ये वर्हिषि सभाया सीदन्ति ते (पितृणा=जनकजननीनाम्) २४ १८. **र्वाहिषदे**=य प्रजाया वर्धके व्यवहारे तिष्ठति तस्मै भा०—प्रजावर्धकाय (विद्वत्पुरुषाय) १७ १२ [वर्हिष् उपपदे षद्लृ विशरणगत्यवसादनेषु (भ्वा०) धातो क्विप् । पूर्वपदस्य षकारलोपश्छान्दस. । वर्हिष् इति व्याख्यास्यते]

र्वाहिषदम् वृहत्सु पदार्थेषु सीदन्तम् (शर्ध =वलम्) २ ३.३ वर्हिष्युत्तमाऽऽसनेऽन्तरिक्षे वा सीदन्तम् (राजानम्) ५ ४४ १ [व्याख्यातम् मासा वै पितरो वर्हिषद तै० १ ६.८ ३ वर्हिषत् महन्नाम निघ० ३ ३]

र्वाहिषदा ये वर्हिष्यन्तरिक्षे सीदतस्ते (उषासानक्ता=रात्रिप्रातर्वेले) ७ २ ६ [वर्हिषदिति व्याख्यातम् । ततो द्विवचनस्य 'सुपा सुलुग्०' इत्याकारादेश]

र्वाहिषः जलस्य २३ ३८ अवकाशस्य ६ १२ १ विद्यावर्धकान् (नृन्=नायकाञ्जनान्) ७ ३३ १ वृद्धा (विद्वत्पुरुषा) १० ३२ प्रवृद्धा (विद्वासो जना) ७ ४३ ३ अन्नादिप्रापका (यवमन्त =कृषीवला) १९ ६ **र्वाहिषा**=महता पुरुषार्थेन १९ १७ उत्तमेन कर्म्मणा १८ ६३ अन्तरिक्षेण २१ ४८ सुखवर्द्धकेन कर्मणा २० ५९ **र्वाहिषि**=वृहन्ते वर्धयन्ते येन तत् वर्हिर्ज्ञान प्राप्त कर्मकाण्ड वा तस्मिन् २ १८ उत्तमे व्यवहारे १ ८६ ४ उपवर्धयितव्ये (यज्ञे=शिल्पव्यवहारे) १ १०९ ५ उत्तम आसने स्थाने वा ६ ५२ १३ अत्युत्तमे (यज्ञे) १ १०१ ९ सभायाम् ७ १३ १ आकाशमिव व्याप्ते (प्रिये=कमनीये परमात्मस्वरूपे) २८ २७ अवकाशे ६ ६८ ११ हृदयाऽन्तरिक्षे ऋ० भू० १२४, ३१ ९ उत्तमे साधुनि (यज्ञे) २९ २३ उत्तमाया विद्वत्सभायाम् २८ ४ मानसे ज्ञानयज्ञे ३१ ९. यज्ञकुण्डे ६ ५२ १७. वृहन्ति वर्धन्ते सर्वे पदार्था यस्मिन्नन्तरिक्षे तस्मिन् प्र०—वृहेर्नलोपश्च उ० २ १०९ अनेन इसि प्रत्ययो नकारलोपश्च १ १६ ६ अन्तरिक्षस्थे जगति २ ६ ८ वृद्धिकरे व्यवहारे ७ ४४ २ **र्वाहिषे**=अन्तरिक्षगमनाय प्र०—वर्हिरित्यन्तरिक्षनामसु पठितम् निघ० १ ३, २ १ **र्वाहिः**=वृहन्ते सर्वे पदार्था यस्मिँस्तदन्तरिक्षम् २ २२. शुद्धमुदकम् २ १ सर्वाद्धितं तेज इव विज्ञानम् १ १८८ ४ उत्तममासनम् ४ ९ १ अतीव विशालम् (छर्दि =गृहम्) ६ ६७ २ वृहत् (गृहम्) १ १४२ ५ वर्द्धनम् १ १४४ ६ अन्तरिक्षमुत्तम वस्तुजातम् १ ४७ ८ उपगत वृद्धम् (व्यवहारम्) १ १४२ ९. उत्तम स्थानमाकाश वा ७ २४ ३ उत्तमा सभाम् २८ ४ अतीवोत्तममम् (सद =आसनम्) ३ २४ ३ वृद्धमुदकम् ३ ३५ ७ उपवर्द्धको दर्भसमूह १८ २१. उत्तम प्रवृद्ध हवि ७ ७ ३ घृतम् ६ ११ ५ प्रतिगृहादिकम् प्र०—वर्हिरिति पदनामसु पठितम् निघ० ५ २ तस्मादत्र ज्ञानार्थो गृह्यते १ १३ ९. निवासप्रापक स्थानम् प्र०—अत्र प्राप्त्यर्थो गृह्यते १.१३ ७ वर्द्धनम् १९ ९१ अन्तरिक्षवद् व्यापक ब्रह्म भा०—यथाऽऽकाश सर्वासु दिक्षु पृथिव्यादिषु च व्याप्तमस्ति तथा जगदीश्वर. सर्वत्र व्याप्तो-

बलः बलवान् (इन्द्रः=राजा) ३ ३० १० [बल-प्राति० मतुवर्थीयस्य लुक्]

बलाका विशेषपक्षिणी २४ ३३ **बलाकाः**=बलाकाना स्त्रिय २४ २२ [बलाकप्राति० स्त्रिया टाप्। सौरी बलाका मै० ३ १४ १४]

बलाशस्य आविर्भूतकफस्य १२ ९७

बलिम् भोग्य पदार्थम् ७ १८ १९ भक्ष्यभोज्यादि-पदार्थसमुदायम् ५ १ १० सवरणम् (स्व) १ ७० ५ [बल सवरणे सञ्चरणे च (भ्वा०) धातो. 'सर्वधातुभ्य इन्' उ० ४ ११८ सूत्रेण इन्। अथवा वर्णि सौत्रो धातु, तत. 'वर्णेर्वलिश्चाहिरण्ये' उ० ४ १२४ सूत्रेण इन्प्रत्ययो निपात्यते। वस्य वकारश्छान्दस]

बलिहृत. या बलि हरन्ति ता (विश=प्रजा) ७ ६ ५ ['बलि' इत्युपपदे हृञ् हरणे (भ्वा०) धातो क्विप्]

बल्मीकान् मार्गान् २५ ८ [बल सवरणे सञ्चरणे च (भ्वा०) धातोर्बाहु० औणा० कीकन् मुडागमश्च]

बष्कये द्रष्टव्ये (वत्से) १ १६४ ५ [बष्क दर्शने (चुरा०) धातोरौणा० इन्]

बष्किहान् चिरप्रसूतान् (भा०—पशून्) २४ १६

बस्तः आच्छादक (भा०—मूर्खो जडधी) १ १६१ १३ [वस आच्छादने (अदा०) धातोरौणादिक क्तो बहुलवचनात्। व-बयोरभेद]

बस्नि सुख-स्तम्भनात् प्र०—'वसु-स्तम्भे' इत्यस्मादौणादिको रिक्, विभक्ति-लुक् च १ १२० १२ [वसु स्तम्भे (दिवा०) धातोरौणा० रिक्। विभक्तेश्च लुक्]

बहवः अनेके (दभ्रा=हिंसका जना) ४.२५ ५ **बहुभ्यः**=अनेकेभ्य पदार्थेभ्य १ ९३ ४ **बहुम्**=अधिक कर्म्म १७ ५० **बहु.**=अधिक, भा०—अत्यन्त (सौमनस=आनन्द, सुहृद्भाव) ३ ४२ बहुगुण (इषुधि) २९ ४२ बहुत (प्रीति) स० वि० १४६, ३ ४२ **बहोः**=बहुविधस्य ससारस्य २९ ९ [बृहि वृद्धौ (भ्वा०) धातो 'लङ्घिबह्योर्नलोपश्च' उ० १ २९. सूत्रेण उ। अनन्तो वै बहु ऐ० ५ २]

बहिर्द्धा या बहिर्बाह्ये देशे धरति शब्दान् सा (वाक्) ५ ११ [बहिर्उपपदे डुधाञ् धारणपोषणयो (जु०) धातो क्विप्]

बहु अधिकम् (भा०—शूद्रकुलम्) २३ ३१ अनेक (शुभगुणकर्मस्वभाव) स० वि० ९३, अथर्व० ११.५ २६ [बहु कस्मात् प्रभवतीति सत नि० ३ १३]

बहुकार बहूना सुखाना कर्त्त (राजन्) १० २८ [बहूपपदे डुकृञ् करणे (तना०) धातोरण्]

बहुधा बहुप्रकारैं ३१ १९ बहुत प्रकार के स० वि० १८९, अथर्व० ९ ५ १ [बहुसंख्यावाचिन प्राति० 'सख्याया विधार्थे धा' अ० ५ ३ ४२ सूत्रेण धा]

बहुपाय्ये बहुभी रक्षणीये (स्वराज्ये=स्वकीये राष्ट्रे) ५ ६६ ६ [बहूपपदे पा रक्षणे (अदा०) धातोर्ण्यत्]

बहुप्रजाः बहुजन्मा (जीव) १ १६४ ३२ [बहूपपदे जनी प्रादुर्भावे (दिवा०) धातोर्ड। समासान्तोऽसिच् छान्दस]

बहुरूपाः बहूनि रूपाणि येषा ते (पशव) २४ १४ बहुवर्णयुक्ता (सञ्चराः=मार्गा) २४ १७ [बहु-रूपपदयो' समास]

बहुलम् पुष्कलम् (रयि=धनम्) ३ १ १९ बहुपदार्थान्वितम् (शर्म=गृहम्) ६ ५१ ५ [बहूपपदे ला आदाने (अदा०) धातो क]

बहुलः यो बहूनि सुखानि लाति स (अग्नि=अव्यापक) २ १ १२ **बहुलाः**=ये बहूनि सुखानि युद्धकर्माणि लान्ति प्रयच्छन्ति ते (चमूषद) १ ५४ ९ [बहुलमिति व्याख्यातम्]

बहुला या बहून् पदार्थान् लाति सा (पृथ्वी) १ १८९ २ **बहुलाम्**=बहूनि मुखानि ददाति या ताम् (प्रजा=पुत्रपौत्रप्रभृतिम्) १९ ४८ **बहुले**=ये बहूनि वस्तूनि लातो गृह्णीतस्ते (द्यावापृथिवी) १ १८५ ७ बहु-पदार्थयुक्ते (पृथ्वी=भूम्यन्तरिक्षे) ४ २३ १० बहूनर्थान् लान्ति याभ्यान्ते (अ०—विद्युदन्तरिक्षे) ११ ३० [बहुल व्याख्यातम्। तत स्त्रिया टाप्। बहुले द्यावापृथिवीनाम निघ० ३ ३०]

बहुला याभ्या बहून् लाति तौ (गभस्ती=हस्तौ) ६ १९ ३ [बहुलप्राति० प्रथमाद्विवचनस्याकारश्छान्दस]

बहुलाभिमानः बहुलो बहुविधोऽभिमानो यस्य स (बहुसुसभ्यावृतो राजा) ३३ ६४ [बहुल-अभिमानपदयो समास]

बहुसूवरी बहूनामपत्याना जनयित्री (सूत्तमा पत्नी) २ ३२ ७ [बहूपपदे षूङ् प्राणिगर्भविमोचने (अदा०) धातो क्वनिप्। 'वनो र च' इति स्त्रिया ङीप् रेफश्चान्तादेश]

बह्वीनाम् अनेकासा द्यावापृथिव्यादीना दिशा वा १ ९५ ४ **बह्वचः**=अनेका (वीतपृष्ठा=पूर्णविद्यासुशिक्षा-युक्ता बालिका) १९ ४४ **बह्वीः**=अनेका (त्रिगुणात्मिका मात्रा) १ १८८ ५ बह्व्य (अ०—गाव) प्र०—अत्र

धातो 'मानबधदान्०' इति स्वार्थे सन्नन्तात् स्त्रियाम् अ-प्रत्यय]

बीभत्सुः याऽभयस्य गा (गाना=पृथिवी) १ १६४ ८. [बध संयमने (चुरा०) धातो स्वार्थे सन्नन्ताद् उ]

बीभयत भयितु शक्नोति १ ८० १२. [ञिभी भये (जु०) धातोर्लेट् । विकरणव्यत्ययेन द्विविकरणता]

बीरिटे अन्तरिक्षे ७ ३९ २. [बीरिट तैटीकिरन्तरिक्ष-मेवमाह । पूर्व वयन्तेरुत्तरमिरन्तेर्वयांस्यस्मिन्नीरयन्ति भासि वा नि० ५ २७ बीरिटमन्तरिक्षं भियो वा भासो वा ततिः । बीरिटे गणो मनुष्याणाम् नि० ५ २७]

बुधन्त बोधयन्ति ८ ६ ४. [बुध अवगमने (भ्वा०) धातोर्लङ् । व्यत्ययेन श आत्मनेपदं च । अडभावश्च]

बुधानः बोधयन् (श्लोक=वाक्) ४ २३ ८ [बुध अवगमने (भ्वा०) धातो 'युधिबुधिदृशः किच्च' उ० २ ९० सूत्रेण आनच् किच्च बुध . अवगमने (भ्वा०) धातोर्वा शानच् । व्यत्ययेन श । मुकोऽभावश्च । बुधान =बोधयन् नि० १० ४०]

बुधानाः प्रबोधयन्त्यः (देवी =विदुष्यः स्त्रियः) ४ ५१.८ [बुधान इति व्याख्यानम् । तत स्त्रियां टाप्]

बुधि बोधे प्र०—अत्र सम्पदादिलक्षण क्विप् १ १३७ २ [बुध अवगमने (भ्वा०) धातो सम्पदादित्वात् क्विप्]

बुध्नम् प्राणवन्तमस्यन्विविज्ञानम् प्र०—इदमपीतरद् बुध्नमेतस्मादेव बद्धा अस्मिन् धृता प्राणा इति नि० १०.४४, १ ९५ ८ शरीरम् १ ५२ ६ **बुध्नः**=यो बोधयति सर्वान् पदार्थान् वेदद्वारा स (अग्नि =परमेश्वर.) १.९६ ६ **बुध्नम**न्तरिक्ष निवासस्थान विद्यते यस्य स (सूर्य) प्र०—अत्राऽर्शआदित्वादच् ३ ५५ ७ बद्धा आपो यस्मिन् स बुध्नो मेघ १ २४ ७ **बुध्नात्**=अन्तरिक्षात् १ १४२.३ **बुध्ने**=बध्नन्त्यापो यस्मिंस्तस्मिन्नन्तरिक्षे ३ ३९ ३ [बुध्नमन्तरिक्ष बद्धा अस्मिन् धृता आप इति वा । इदमपीतरद् बुध्नमेतस्मादेव बद्धा अस्मिन् धृता प्राणा इति नि० १० ४४ बन्ध बन्धने (क्र्या०) धातो 'बन्धेर्ब्रधि-बुधी च' उ० ३ ५ सूत्रेण नक् धातोर्बुधादेशश्च]

बुध्न्यम् बुध्नेऽन्तरिक्षे भवम् (अहि=मेघम्) १० १६ **बुध्न्य.**=अन्तरिक्षस्य (अहि =मेघ) १ १८६ ५ अन्तरिक्षे भव. (अहि) ६ ४९ १४ सब जगत् के मूल कारण और अन्तरिक्ष मे भी सदा पूर्ण (ईश्वर) आर्याभि० २ १८, ५ ३३ बुध्नेऽन्तरिक्षे व्याप्त (मेघ) २ ३१ ६ **बुध्न्याः**=अन्तरिक्षे भवाः [illegible] पदार्थाः आर्याभि० २ २८, १३ ३ बुध्ने अन्तरिक्षे भवा सर्वान्तर्भूमिगतास्यादयो [illegible]. १३ ३ बुध्नेऽन्तरिक्षे भवा मेघाः ७.५६.१४ **बुध्न्याय**–बुध्ने [illegible] मेघायेव वर्तमानाय [illegible] १६ ३८ [बुध्नशब्दात् [illegible] यत् । [illegible] बुध्न्य बुध्नमन्तरिक्ष तन्निवासात् नि० १० ४४. [illegible] (सूर्यस्य) बुध्न्या [illegible] विष्टा. नि० ७ ६.१.४४.]

बुध्न्या बुध्न्यानि [illegible] (वसूनि =धनानि) ७ ६ ७ [बुध्न्यानि [illegible] । [illegible]]

बुध्यमाना [illegible] (वनिता स्त्री) सं० वि० १३८, अथर्व० १४.२.३१. [illegible] हुई (वनिता स्त्री) सं० वि० १८०, अथर्व० १४ २ ७५ [बुध अवगमने (भ्वा०) धातो कर्मणि शानच् [illegible] स्त्रियां टाप्]

बुध्यस्व [illegible] १४ ५४ [illegible] सं० वि० १८०. अथर्व० १४ २ ७५. [बुध अवगमने (दिवा०) धातोर्लोट्]

बुबुधानः विजानन् (विद्वज्जन) ७ ४४ ३. **बुबु-धाना.**=सम्बोधयुक्ता (नर =नायका जना) ५.३० २ विजानन्त्य. (देवा =विद्वांसो जना) ४ १ १८ [बुध अवगमने (भ्वा०) धातोर्लिट कानच् । शानचि वा द्वित्व छान्दसम् । विकरणव्यत्ययेन श.]

बुबोध बुध्यते ८ २१ ६ [बुध अवगमने (भ्वा०) धातोर्लिट्]

बुभुजिरे भुञ्जते १ १३८.३. [भुज पालनाभ्यवहारयो (रुधा०) धातोर्लिट्]

बुभूषन् भवितुमिच्छन् (वृष.=मेघ) १ १२७ [भू सत्तायाम (भ्वा०) धातोरिच्छायामर्थे सन्नन्तात् शतृ]

बृबुम् मुख्य शिल्पिनम् ६ ४५ ३३ **बृबु.**=देता (शिल्पिजन) ६ ४५ ३१

बृसयस्य आच्छादकस्य (सूर्यस्य) प्र०—'वस आच्छा-दने' इत्यस्मात् पृषोदरादित्वादिष्टसिद्धि १ ९३ ४ अविद्या-च्छेदकस्य (मायिन =प्रशसितप्रज्ञस्य विदुषो जनस्य) ६ ६१ ३

बृहच्छरीरः बृहत् महच्छरीरं यस्य स (युवा जन) १ १५५.६. [बृहत्-शरीरपदयो समास]

बृहच्छ्रवाः बृहच्छ्रवणं यस्य स (अ०—विद्वन्मनुष्य.) १ ५४ ३ [बृहत्-श्रवस्पदयो समास]

बृहज्ज्योतिः अनन्तप्रकाशम् (दिवं=दिव्य स्वस्व-

बाहुशर्द्धा बाह्वो शर्द्धो बल-यस्य स (इन्द्र.= सर्वसेनाऽधिपति) १७ ३५ [बाहु-शर्ध्रपदयो समासे मत्वर्थे इनि । शर्ध =बलनाम निघ० २ ६]

बाह्यतः बहिरपि वर्त्तमान (ईश्वर) ४० ५ भा०— सर्वस्य प्रकृत्यादेर्बाह्याभ्यन्तराऽवयवानभिव्याप्त ब्रह्म ४० ५

बाह्यम् बहिर्भवम् (अङ्गम्) २५ २ [बहिर्प्राति० भवार्थे 'बहिषष्टिलोपश्च' अ० ४ १ ८५ वा० सूत्रेण यञ्]

बाह्वोजसः भुजबलस्य १ १३५ ६ [बाहु-ओजस्-पदयो समास]

बिभर्त्ति दधाति १ १०५ ४ धरति पुष्यति वा ३ ५५ २२ धारण करता है स० वि० ८०, अथर्व० ११ ५ २४ **बिभर्षि**=धरसि १.५५ ८ **बिभृत**=धरत पुष्यत ८ २६ धरत तेन पुष्यत वा १ ३६ १०. **बिभृतः**= धरत ३ ४६ ५ बिभृताम्=धरेताम् २६ ४१ **बिभृथः**= धरथ ५ ६२ ६ बिभ्रति=धरन्ति ५ ४७ ४ भरन्ति ६ १६ ४० धरन्ति पोषयन्ति वा १ १०२.२ [डुभृञ् धारणपोषणयो (जु०) धातोर्लट् । अन्यत्र लोडपि]

बिभाय बिभेति ५ ८३ २ **बिभीत**=भय कुरुत ३ ४१ डरो स० वि० १४६, ३ ४१ **बिभीयात्**=भय कुर्यात् १ ४१ ६ [ञिभी भये (जु०) धातोर्लिट् । अन्यत्र लोट् लिङ् च । बिभाय=बिभ्यति नि० १० ११]

बिभिद्रु भिन्दन्तु १ ८५ १० भिन्दन्ति ४ १६ ६ **बिभेद**=भिन्द्यात् ३ ३४ १० भिनत्ति २ ४१ ६ [भिदिर् विदारणे (रुधा०) धातोर्लिट्]

बिभृतम् सबका धारण और पोषण करने वाला (ब्रह्म) आर्याभि० २ २४, ३२ ६ [डुभृञ् धारणपोषणयो (जु०) धातोरौणादिके क्तप्रत्यये छान्दस द्वित्वम्]

बिभृतः यो विविध बिभर्त्ति स (अग्नि =पावक) २ १० २ विविधद्रव्यविद्याधारक (वायु) १ ७१.४ [डुभृञ् धारणपोषणयो (जु०) धातोश्छान्दस रूपम्]

बिभ्यतुः भीषयेते प्र०—अत्र लडर्थे लिडन्तर्गतो ण्यर्थश्च १ ६५ ५ **बिभ्युः**=भय प्राप्नुवन्तु १ ६४.११ [ञिभी भये (जु०) धातोर्लिट्]

बिभ्युषः यो बिभेति तस्य (शत्रो) ६ २३ २ **बिभ्युषे**=भय प्राप्ताय (कण्वाय=मेधाविने जनाय) १ ३६ ७ [ञिभी भये (जु०) धातोर्लिट- क्वसु]

बिभ्युषी भयप्रदा (उषा =प्रातर्वेला) ४ ३० १० [ञिभी भये (जु०) धातोर्लिट क्वसौ स्त्रिया ङीप्]

बिभ्रत् विद्या धरन् (वसिष्ठ =आप्तो विद्वान्) ७ ३३ १४. धरन्त्सन् (इन्द्र =राजा) ४ २२ १ धारयन् (पुरुष) ३ ४१ धारण करता हुआ स० वि० १४६, ३ ४१ **बिभ्रतम्**=धरन्तम् (इन्द्र=परमैश्वर्यम्) २८.३२ **बिभ्रतः**=विद्यासुखेन सर्वान् पुष्यत (विदुषो जनस्य) १.१२२ १३. धारकान् पोषकान् (भा०—शरीरात्मपुष्टि-करान् पदार्थान्) ६ ५५ ६. धारयन्त (गृहा =गृहाश्रमस्था मनुष्या) ३ ४१ धारयन्त पोषयन्तश्च (मनुष्या) ३ ५६ धरन्त (अ०—वीरजना) १७ ६५ **बिभ्रते**=धर्त्रे (वेधसे=मेधाविने जनाय) ३ १० ५ **बिभ्रतौ**=धरन्तौ (नरा=राजामात्यौ) ५ ६४ ७ [डुभृञ् धारणपोषणयो (जु०) धातो शतृ]

बिभ्रता धरन्तौ (अश्विनौ=सभासेनेशौ) १ ४६ ६ [डुभृञ् धारणपोषणयो (जु०) धातो शत्रन्ताद् प्रथमा-द्विवचनस्याकारादेशश्छान्दस]

बिभ्रती धरन्ती (इन्द्र =विद्युत्) ३ ३० १४ **बिभ्रतीः**=धरन्त्य पोषयन्त्य (आप =जलानि) २ १३.२ [डुभृञ् धारणपोषणयो (जु०) धातो. शत्रन्तान् ङीप्]

बिभ्रती धरन्त्यौ (भूमिसूर्यौ) ५ ५६ ८ [डुभृञ् धारणपोषणयो (जु०) धातो शत्रन्तान् ङीपि द्विवचनस्य पूर्वसवर्णदीर्घ]

बिलम् भरण धारणम् अ०—ब्रह्मचर्यधारणम् ११ ५६. जलसमूहम् १ ११ ५ गर्त्तम् १ ३२.११. [बिल भर भवति बिभर्त्ते नि० २ १७]

बिलिमने प्रगल्भ्तं बिलम धारण वा विद्यते यस्य तस्मै (पुरुषाय) १६ ३५ [बिलमप्राति० मत्वर्थे इनि]

बिल्मैः प्रदीप्तसाधनै २ ३५ १२ [बिल्म भिल्म भासनमिति वा नि० १ २०]

बिसखा इव यो बिस कमलतन्तु खनति तद्वद्वर्त्त-माना (विद्वासो जना) ६ ६१ २ [बिसखा-इवपदयो समास । बिसखा=बिसोपपदे खनु अवदारणे (भ्वा०) धातो 'जनसनखनक्रमगमो विट्' इति विट् । 'विड्वनोरनु-नासिकस्यात्' इत्याकारादेश । बिस बिस्यतेर्भेदनकर्मणो वृद्धिकर्मणो वा नि० २ २३]

बीजम् यवादिक सिद्धिमूल वा १२ ६८ वपनाऽर्हम् ५ ५३ १३ विज्ञानाऽऽख्यम् (सिद्धिमूलम्) ऋ० भू० १५६, १२ ६८ वीर्य को स० वि० १३६, अथर्व० १४ २.३८ [बीजमित्यपत्यनाम निघ० २ २]

बीभत्सायै भर्त्सनाय ३० १७ [बध सयमने (चुरा०)

बृहत्सुकीर्त्तिः महोत्तमप्रशस (विद्वज्जन) ५ १० ४. [बृहत्-सुकीर्त्तिपदयो समास]

बृहत्सुम्नः महत सुखम्य ४ ५३ ६ [बृहत् सुम्नपदयो समास । सुम्नम् सुखनाम निघ० ३ ६]

बृहथः वर्द्धयेथाम् २.३० ६ [बृह वृद्धौ (भ्वा०) धातोर्लट् व्यत्ययेन श]

बृहदुक्थम् बृहन्महदुक्थ प्रशसन यस्य तम् (जेतार= जयशील सेनापतिम्) ११ ७६ **बृहदुक्थः**=महत्प्रशसित (मनुष्य) ५ १९ ३ [बृहत्-उक्थपदयो समास । उक्थम्= वच परिभाषणे (अदा०) धातो 'पातृतुदिवचिरिचि०' उ० २.७ सूत्रेण थक्]

बृहदुक्ष बृहदुक्ष सेचन येभ्यस्ते (मरुत =वायव) ३.२६ ४ **बृहदुक्षाय**=यो बृहद्वीर्यमुक्षति सिञ्चति तस्मै (गृहपतये) प्र०—बृहदिति महन्नामसु पठितम् निघ० ३ ३, ८ ८ [बृहत्-उक्षपदयो समास । बृहत् =महन्नाम निघ० ३ ३ उक्ष =उक्ष सेचने (भ्वा०) धातोर्घञर्थे क । कर्त्तरि वा अच् । प्रजापतिर्वै बृहद् उक्ष श० ४ ४ १ १४]

बृहद्गिरयः बहुप्रशसा (कवय =विद्वासो जना) ५ ५७ ८ बृहन्तो गिरयो मेघा इवोपकारका गुणा येषान्ते (मरुत =मनुष्या) ५ ५८ ८ [बृहत्-गिरिपदयो समास गिरि मेघनाम निघ० १ १०]

बृहद्ग्रावा बृहच्चाऽसौ ग्रावा च स (यज्ञ) १.१५ [बृहत्-ग्रावापदयो समास । ग्रावा मेघनाम निघ० १ १०]

बृहद्दिवस्य बृहत प्रकाशमानस्य (राज्ञ.) ४ २९ ५ **बृहद्दिवेषु**=बृहती द्यौ प्रकाशो येषु तेषु (अमृतेषु= जीवेषु) २ २ ६ बृहत्सु दिव्येषु पदार्थेषु ४ ३७ ३ **बृहद्दिवैः**=बृहती द्यौर्विद्या येषा तै (अवोभि =रक्षणादिभि) १ १६७ २. [बृहत्-दिवपदयो समास । दिव= दिवु क्रीडाविजिगीषादिषु (दिवा०) धातोर्घञर्थे क]

बृहद्दिवः बृहत प्रकाशस्य ५ ४३ १३ [बृहत्-दिव्-पदयो समास]

बृहद्दिवा बृहती द्यौ प्रकाशो यस्या सा (उर्वशी= प्रज्ञा) ५ ४१ १९ बृहती द्यौर्विद्याप्रकाशो यस्या सा (सरस्वती=वाक्) ५ ४२ १२ [बृहद्दिवा महद्दिवा नि० ११ ४५ दिवा=दिवु क्रीडाविजिगीषादिषु (दिवा०) धातोर्घञर्थे क । तत स्त्रिया टाप्]

बृहद्भानुः बृहन्तो भानव प्रकाशा यस्य स (अग्नि) १ २७ १२ **बृहद्भानो !**=बृहन्ति भानवो विद्यैश्वर्यतेजासि यस्य तत्सम्बुद्धौ (अग्ने=सभाध्यक्ष महाराज) १ ३६ १५ अग्निवद् बृहन्तो महान्तो भानवो विद्याप्रकाशा यस्य तत्सम्बुद्धौ (अग्ने=विद्वज्जन) १२ १० ६ बृहन्तो भानव किरणा इव कीर्त्तयो यस्य तत्सम्बुद्धौ (इन्द्र=राजन्) ३३ ९५ हे महातेज (ईश्वर) आर्याभि० १ १२, ऋ० १ ३ १० १५ [बृहत्-भानुपदयो समास । भानु =अहर्नाम निघ० १.९ भानु =भा दीप्तौ (अदा०) धातो 'दाभाभ्या नु ' उ० ३ ३२ सूत्रेण नु:]

बृहद्भाः महाप्रकाश (अग्नि =सेनेश) १२ ३४. [बृहत्-भापदयो समास । बृहदुपपदे भा दीप्तौ (अदा०) धातोर्वा]

बृहद्रथन्तरे बृहद्भी रथैस्तरन्ति दु खानि याभ्या सामभ्या ते १२.४ बृहच्च रथन्तरञ्च ते १८ २३ [बृहत्-रथन्तरपदयो समास । प्राणापानौ वै बृहद्रथन्तरे ता० ७.६ १२ पशवो वै बृहद्रथन्तरे ता० ७ ७ १ बृहद्रथन्तरे (महाव्रतस्य) पक्षौ ता० १६ ११ ११ पक्षौ वै बृहद्रथन्तरे शिर एतद् आरम्भणीयम् अह ऐ० ४ १३ पादौ वै बृहद्रथन्तरे शिर एतद् (आरम्भणीयम्) अह ऐ० ४.१३ एते वै यज्ञस्य नावौ सपारिण्यौ यद् बृहद्रथन्तरे ताभ्यामेव तत्सवत्सर तरन्ति ऐ० ४.१३ बृहद्रथन्तरे छन्दो द्यावापृथिवी देवते पक्षौ श० १० ३ २ ४. बृहद्रथन्तरे (सामनी) अनड्वाहौ वा एतौ देवयानौ यजमानस्य यद् बृहद्रथन्तरे ता० १२.४.१४]

बृहद्रथम् बृहन्तो रथा रमणसाधका यस्य तम् (तुर्वीति=दुष्टजनम्) १ ३६.१८ [बृहत्-रथपदयो समास । रथ =रमु क्रीडायाम् (भ्वा०) धातो 'हनिकुषि०' उ० २ २ सूत्रेण क्थन्]

बृहद्रथा महान्तो रथा यस्या सा (उषा =प्रातर्वेला) ५ ८० २ [बृहत्-रथपदयो समासे स्त्रिया टाप्]

बृहद्रयिम् महान् रयिर्यस्मात् तम् (वायु =पवनम्) ६ ४९ ४ बृहन्तो रायो यस्मिँस्तम् (भा०—अखिल धनम्) ३३ ५५ **बृहद्रये**=बृहन्तो रायो धनानि यस्य तस्मै (महिष्ठाय सभाध्यक्षाय) प्र०—अत्र वर्णव्यत्ययेन ऐकारस्य स्थान एकार १ ५७ १ [बृहत्-रयिपदयो समास । बृहत्-रैपदयोर्वा समासे वर्णव्यत्ययेन ऐकारस्य एकारादेश । रयिरिति धननाम रातेर्दानकर्मण नि० ४ १७.]

बृहद्रवाः यथा बृहच्छब्दवान् (विद्वज्जन) ५ २२ [बृहत्-रवपदयो समास । रव =रु शब्दे (अदा०) धातोरप्]

बृहद्रेणुः बृहन्तो रेणवो यस्मिँस्स (राजकर्मचारी)

स्पम्) ऋ० भू० १५६, ११.४. [बृहत्-ज्योतिष्पदयो समास]

बृहत् महद्वस्तु ब्रह्म २ २ १३ महान्तम् (वह्नि=अग्निम्) प्र०—अत्र 'सुपा सुलुक्०' इत्यमो लुक् ३ २ १४ वर्धकम् (धनम्) ४ ५ ६ महाविद्यादिगुणयुक्तम् (ऋतम्) १ ७५ ५ महान् (अग्नि=सूर्य) ३३.९२ महदर्थम् (साम=एतदुक्त कर्म) १५ ११ महत्तमम् (श्रव=अन्नम्) १ ४४ २ विस्तीर्णम् (भग=धनम्) २ ११ २१ अनेकै शुभगुणैर्भोगैश्च महत् (श्रव=सुवर्णादिधनम्) १ ९ ७ उपबृहितम् (द्युम्न=ज्ञानम्) १ ९ ८ सर्वथा वृद्धम् (शूप=वल सुख च) १ ९ १० महदर्थयुक्तम् (वच=वचनम्) ३ १० ५. महत्सुखकारकम् (हवि) १ ४५ ८ महद्विधाज विज्ञानशास्त्रम् २ १७ ९ महद्विज्ञानम् २ ३९ ८ महत्साम २० ३० सव से वडे (परब्रह्म) को आर्याभि० १ ५३, ऋ० २ ८ १२ ३ **बृहत:**=महाशयान् (विदुषो जनान्) ५ ४३ ११ अतिवृद्धस्य (राज्यप्रकाशस्य) १ १५१ ४ महत सत्यशुभगुणयुक्तात् (दिव=प्रकाशमयान्न्यायात्) १ ५४ ४ महतो गुणान् प्राप्तस्य (विप्रस्य=सर्वशास्त्रविदो मेधाविजनस्य) ११ ४ महत कार्यस्य ३ २ ८ विद्यादि-शुभगुणैर्वृद्धस्य (अग्ने=विद्वुप) ३ १५ १ महाविषयस्य (क्रतो=प्रज्ञाया) १५ ४५ व्यापकस्य वा (विप्रस्य=जगदीश्वरस्य) ५ १४ महत्परिमाणयुक्तस्य (सूर्यस्य) २३ ९० **बृहता**=महागुणविशिष्टेन १ ४८ १ **बृहते**=वृद्धाय (विदुषे जनाय) ५ ४३ १५ वर्धमानाय (शर्धाय=बलाय) ४ ३.८ गुणैर्महते (महिष्ठाय=सभाध्यक्षाय) १ ५७ १ सर्वोत्कृष्टगुणैर्महते व्यापकाय (इन्द्राय=परमेश्वराय) १ ९ १० विद्यादिगुणैर्वृद्धाय (दिवे=राज्याय) १ ५४ ३. **बृहद्भ्रच:**=महद्भ्रच (पर्वतेभ्य=मेघादिभ्य) ४ ५४ ५ [बृह वृद्धौ (भ्वा०) धातो 'वर्त्तमाने पृषद्बृहन्-महज्जगच्छतृवच्च' उ० २ ८४ सूत्रेण अति । बृहत्=महन्नाम निघ० ३ ३ बृहदिति महतो नामवेय परिवृढ भवति नि० १ ७ बृहत=महत नि० ९ ६ बृहत् (साम) वर्ष्म वै बृहत् ता० ११ ९ ४ बृहद् विराट् तै० १ ३ ३ ३ एतद्वै बृहत स्वमायतन यत् त्रिष्टुप् ता० ४ ४ १० बृहन्मर्या इद स ज्योगन्तरभूदिति तद् बृहतो बृहत्त्वम् ता० ७ ६ ५ साम वै बृहत् ता० ७ ६ १७ भारद्वाज वै बृहत् ऐ० ८ ३ द्व्यक्षर बृहत् तै० २ १ ५ ७ बृहद् हि पूर्वं रथन्तरात् ता० ११ १ ४ यद् ह्रस्व तद्रथन्तर यद्दीर्घं तद् बृहत् कौ० ३ ५ यद्वै बृहत्तद्रैवतम् ऐ० ४ १३ बृहदेतत् परोक्ष यद्वैरूपम् (साम) ता० १२ ८ ४. यद्वै बृहत तद् वैराजम् (साम) ऐ० ४.१३. श्रैष्ठ्य वै बृहत् ऐ० ८ २ ज्यैष्ठ्य वै बृहत् ऐ० ८ २ यथा वै पुत्रो ज्येष्ठ एव बृहत् प्रजापते ता० ७ ६ ६ ऊर्ध्वमिव हि बृहत् ता० ८ ९ ११ द्यौर्वै बृहद् श० ९ १ २ ३७. स्वर्गो लोको बृहत् ता० १६ ५ १५ आदित्यो बृहत् ऐ० ५ ३० प्राणो बृहत् ता० ७ ६ १४ क्षेत्र बृहत् ऐ० ८ १ २ मनो वै बृहत् ता० ७ ६ १७.]

बृहती महदर्था (ककुप्=लालित्ययुक्त छन्द.) २३ ३३. महती (दिक्) १५ १४ महापुरुषार्थयुक्ता (विदुषी कन्या) ११ ६४ महासुखवर्धिका (स्त्री) १ ११३.१९ बृहद्-ब्रह्मादिवस्तुप्रकाशिका (गी=वाक्) ५ ४३ ८ महत्त्वम् (छन्द=पराक्रमम्) १४ ९ **बृहतीम्**=विस्तीर्णाम् (मही=भूमिम्) ३३ २८ बृहत्पदार्थविषयाम् (मही=वाचम्) ५ ४३ ६ **बृहती:**=बृहद्विषया (गिर=विदुषा वाच) ३ ५१ १ महत्य (आप=जलानि) ३२ ७ महती. (द्वार=अवकाशरूपा दिश) २९ ३० महागुण-विशिष्टा अ०—महत्य (आप=प्राणा जलानि वा) ४ ७ बृहत्य (आप) २७ २५ **बृहत्यै**=बृहती-छन्दोऽर्थाय २४ १३ महत्यै सेनायै ४ ३ ७ [बृहदिति व्याख्यातम् । तत्र शतृवद्भावेन ङीप् । बृहत्या=महत्या नि० २ २५ बृहती परिवर्हणात् नि० ९ ७ बृहती (छन्द) बृहती बृहतेर्वृद्धिकर्मण दे० ३ ११ बृहती मर्या ययेमान् लोकान् व्यापामेति तद् बृहत्या बृहत्त्वम् ता० ७ ४ ३ यस्य नवता बृहतीम् कौ० ९ २ षट्त्रिंशदक्षरा बृहती श० ८ ३ ८ ३ गोऽश्वमेव हि बृहती कौ० ११ २ पशवो बृहती कौ० १७ २ स्वाराज्य छन्दसा बृहती ता० २४ ९ ३ श्रीर्वै बृहती कौ० २८ ७ बृहती स्वर्गो लोक श० १० ५ ४ ६ अय मध्यमो (लोक.=अन्तरिक्षम्) बृहती ता० ७ ३ ९ बृहती हि सवत्सर श० ६ ४ २ १०. वाग्वै बृहती श० १४ ४ १ २२ मनो बृहती श० १० ३ १ १, प्राणा वै बृहत्य ऐ० ३ १४ व्यानो बृहती ता० ७ ३ ८. आत्मा वै बृहती ऐ० ६ २८ एतद्वै रथन्तरस्य स्वमायतन यद् बृहती ता० ४ ४ १० बृहती द्यावापृथिवीनाम निघ० ३ ३]

बृहती वर्धमाने उपासानक्ता २० ४१ महान्त्यौ (उषा-सानक्ता=रात्रिदिने) २९ ३१ [बृहतीशब्दाद् द्विवचनस्य पूर्वसवर्णदीर्घश्छान्दस]

बृहतीव यथा महागुणयुक्ता पूज्या माता १ ५९ ४ [बृहती-इवपदयो समास]'

बृहत्केतुम् महाप्रज्ञम् (गृहपतिम्) ५.८ २. [बृहत्-केतुपदयो समास । केतु प्रज्ञानाम निघ० ३ ९]

पदयो समासे 'तद्बृहतो करपत्योश्चोरदेवतयो सुट् तलोपश्च' अ० ६ १ १५७ वा० सूत्रेण सुट् तलोपश्च । बृहस्पति =बृहत पाता वा पालयिता वा नि० १० १२ बृहस्पतिर्ब्रह्मासीत् सोऽस्मै वाचमयच्छत् । बृहदुपव्याख्यातम् नि० २ १२ अय वै बृहस्पतिर्योऽय (वायु) पवते श० १४ २.२ १० एष (प्राण) उ एव बृहस्पति श० १४.४ १ २२ अथ यस्सोऽपान आसीत् स बृहस्पतिरभवत् जै० उ० २ २ ५ यच्चक्षु स बृहस्पति. गो० उ० ४ ११ द्युम्न हि बृहस्पति श० ३ १ ४ १६ बृहस्पतिर्वै सर्वं ब्रह्म गो० उ० १ ३ ४ ब्रह्म वै बृहस्पति ऐ० १ १ ३ बृहस्पतिर्ब्रह्म ब्रह्मपति तै० २ ५ ७ ४ बृहस्पते ब्रह्मणस्पते तै० ३ ११ ४ २ बृहस्पतिर्वै देवाना ब्रह्मा श० १ ४ १ १ बृहस्पतिर्वा आगिरसो देवाना ब्रह्मा गो० उ० १ १ बृहस्पति पुर एता तै० २ ५ ७ ३ बृहस्पतिर्वै देवाना पुरोहित ऐ० ८ २६ यजमानदेवत्यो वै बृहस्पति श० १.८ ३ १ मित्राबृहस्पती वै यज्ञपथ श० ५ ३ २ ४]

बृहस्पतिपुरोहिताः बृहस्पति सूर्य पुर पूर्वो हितो धृतो येषु ते (त्रयस्त्रिशा देवा पृथिव्यादय) २० ११. [बृहस्पति-पुरोहितपदयो समास । पुरोहित =पुर एनं दधति नि० २ १२]

बृहस्पतिप्रसूताः बृहता पतिनेश्वरेणोत्पादिता भा०--ईश्वरेण निर्मिता (ओषधय) १२ ८९ बृहत. कारणस्य पालकेश्वरस्य निर्माणादुत्पन्ना (ओषधी = ओषध्य) १२ ९३ [बृहस्पति-प्रसूतपदयो समास । प्रसूत =प्र+षूङ् प्राणिगर्भविमोचने (अदा०) धातो क्त]

बृहस्पतिसुतस्य बृहत्या वेदवाण्या. पते पालकस्य पुत्रस्य ८ ९ [बृहस्पति-सुतपदयो समास]

बोध जानीहि ७ २२ ३ अवगच्छ १२ ४२ विजानीहि ७ २२ ४ बोधय ७ २११ **बोधत्**=बोधय ४ १५ ७ **बोधतम्**=विजानीतम् २ ३६ ६ **बोधति**=विजानाति २ २५ २ **बोधतु**=जानातु २ ३२ ४ **बोधन्तु**=जानन्तु १ २६ ४ **बोधय**=प्रदीपय ५ १४ १ सचेतन कुरु २७ ८ बोधयति प्र०—अत्र व्यत्यय १ १२ ४. अवगमय १ २२ १ **बोधयत**=प्रदीपयत ऋ० भू० २ ४६, ३ १ चेतयत १२ ३० उद्दीपयत ३ १ **बोधाति**=जानीयात् १ ७७ २ **बोधि**=बुध्येत प्र०—अत्र लिङर्थे लुङडभावश्च १ ४४ ६ जानीहि १.७६ ४ विदितो भव, विदितगुणो वा भवति प्र०—अत्र लोडर्थे लङर्थे च लुङडभावश्च १ २४ ११. बोधय प्र०—अत्र लोडर्थे लङडभावोऽन्तर्गतो ण्यर्थश्च १ ३१ ८ जानाति २ ६.४ जानीहि २ २४.१६ बुध्यस्व ४ ३ ४ बुध्यसे ३ ४.१. बोधयति प्र०—अत्र लडर्थे लुङ् 'बहुल छन्दसि' इत्यडभावोऽन्तर्गतो ण्यर्थश्च ३.२९ विज्ञापय ६ ४६.४ [बुध अवगमने (भ्वा०) धातोर्लोट् । अन्यत्र लटि लुङि लेटि च रूपाणि । 'बोधय' एतदादिषु तु णिजन्ताल्लोट्]

बोधयन्ती जागरयन्ती (उषा स्त्री वा) १.१२४.४. चेतयन्ती (उषा) १ ९२ ९. [बुध अवगमने (भ्वा०) धातोर्णिचि शतरि स्त्रिया ङीपि च रूपम्]

बोधयितारम् ज्ञापयितारम् (प्राज्ञ जनम्) १ १६१ १३ [बुध अवगमने (भ्वा०) धातोर्णिजन्तात् तृच्]

बोधामसि बोधयेम ७ २१ १ [बुध अवगमने (भ्वा०) धातोर्लेटि 'इदन्तो मसि' इति मस इदन्तता]

बोधिन्मनसा बोधित मनो ययोस्तौ (अश्विना= विद्याध्यापकोपदेशकौ) ५ ७५ ५ [बोधित-मनस्पदयो समासे पूर्वपदस्यान्त्याकारलोपश्छान्दस । द्विवचनस्याकार]

बोभवीति भृश भवति ३ ५३ ८. [भू सत्तायाम् (भ्वा०) धातोर्यङ्लुकि लटि रूपम्]

ब्रजः यो ब्रजति गच्छेत् स (इन्द्र =राजा) ३ ३० १० [व्रज गतौ (भ्वा०) धातो कर्त्तरि अच् । वकारस्य बकारश्छान्दस]

ब्रज्याय व्रजिषु क्रियासु भवाय (भा०—मनुष्याय) १६ ४४ [व्रज गतौ (भ्वा०) धातो स्त्रिया 'इक् कृष्यादिभ्य' इतीक् । व्रजिप्राति० भवार्थे यत्]

ब्रध्नम् महान्त परमेश्वर शिल्पविद्यासिद्धय आदित्यमग्नि प्राण वा १ ६ १ महान्तम् (सूर्यम्) ७ ४४.३. सर्वानन्दवर्धक महान्त परमेश्वरम्, सर्वाङ्गवयववृद्धिकर प्राणम् ऋ० भू० १६३. ऋ० १ १ ११ **ब्रध्नस्य**=अश्वस्य ३० १२ सबसे बडे प्रकाशमान सूर्य का स० वि० १६७, ९ ११३.१० महत (परमेश्वरस्य) १८ ५१ [ब्रध्न. अश्वनाम निघ० १ १४ ब्रध्न महन्नाम निघ० ३ ३ बन्ध बन्धने (क्र्या०) धातो 'बन्धेर्ब्रधिबुधी च' उ० ३ ५ सूत्रेण नक् ब्रध्यादेशश्च]

ब्रन्दिनः निन्दिता ब्रन्दा सन्ति येषा तान् दुष्टान् १ ५४ ५ निन्दिता ब्रन्दा मनुष्यादि समूहा विद्यन्ते येषा तान् मायिन १ ५४ ४ [ब्रन्द-प्राति० निन्दायामर्थ इनि. । ब्रन्द =वृञ् वरणे (स्वा०) धातो 'अब्दादयश्च' उ० ४.९८ सूत्रेण दन् नुम् च । ऋकारस्य रेफश्छान्दस]

६ १८ २ [बृहत्-रेणुपदयो. समास । रेणु =री गति-रेषणयो (क्रया०) धातो 'अजिवृरीभ्य ०' उ० ३ ३८ सूत्रेण णु]

बृहद्वते प्रशस्तानि बृहन्ति कर्माणि यस्य तस्मै (इन्द्राय=सेनापतये) ७ २२ [बृहत्-प्राति० प्रशसाया मतुप् । बृहत्=महन्नाम निघ० ३ ३]

बृहन् वर्धमान (अग्नि=अध्यापक) २ १ १२ महान् (क्रतु=प्रज्ञा कर्म वा) ३ ५२ ४ वर्धमानो वर्धयन् (विद्वज्जन) ५ २२ **बृहन्तम्**=अतिप्रवृद्धम् (रयिं=धनम्) १.११७.२३ वर्धमानम् (रयिं=श्रियम्) २ ४ ८ सर्वदा वृद्धियोगेन महत्तमम् (रयिम्) १ ६२ ८ महान्तम् (क्रतु=सर्व सङ्गत ससाराख्य यज्ञम्) १ २.८ पृथिव्या. सकाशादतिविस्तीर्णम् (युवान जनम्) ६ १६ २ सर्वेभ्यो महान्त सुखवर्धकमीश्वर, बृहता कार्याणा साधक भौतिक वा (अग्निम्) २ ४ वर्धकम् (रुद्र=परमात्मानम्) ६ ४६ १० **बृहन्त:**=वर्धका (शवला=पश्वादय) २४ १० वर्धमाना वर्धयन्तश्च (देवा=विद्वासो ·दिव्या पदार्था वा) २ १८ [बृह वृद्धौ (भ्वा०) धातो शतृ । व्यत्ययेन श । 'वर्त्तमाने पृषद्वृहत्०' उ० २ ८४ सूत्रेण वा अति शतृवच्च । बृहन् एप ते शुक्रो य एप (सूर्य) तपत्येप उ ऽएव बृहन् श० ४.५ ६ ६]

बृहन्ता सद्गुणैर्महान्तौ (इन्द्रावरुणौ=राजसेनेशौ) ४ ४१.११ ['बृहत्' इति व्याख्यातम् । तत प्रथमा-द्विवचनस्य 'सुपा सुलुक्०' इत्याकारादेश]

बृहस्पतये बृहत्या वाचो बृहतामाकाशादीनाञ्च पति. स्वामी तस्मै जगदीश्वराय ४ ७ बृहत्या वेदवाण्या पालकाय (विदुषे जनाय) २ १२ बृहतामाप्ताना पालकाय (ईश्वराय) २६ ३ बृहता प्रकृत्यादीना पत्युरीश्वरस्य विज्ञानाय १० ५ अध्ययनाऽध्यापनाभ्या विद्याप्रचाररक्षकाय (राजपुरुषाय) ६ ११ चत्वारिंशद्वर्षपर्यन्त ब्रह्मचर्य सेवित्वा बृहत्या वेदविद्यावाच पालकाय (ब्रह्मचारिणे) ७ ४७ **बृहस्पतिना**=बृहता पालकेन चतुर्वेदविदा विदुषेव विद्यासुशिक्षाप्रचारेण १० ३० **बृहस्पतिम्**=बृहत शास्त्रबोधस्य पालकमतिथिम् १ १६० १ बृहतीना स्वामिनम् (विद्वास जनम्) ५ ५१ १२ वाग्विद्यारक्षकम् (वेदार्थविद्वज्जनम्) ३ ६२ ५ बृहता पालक राजानम् ३ ६२ ६ बृहत्या वाच स्वामिन विद्वासम् २५.३ महता पतिम् (वेधस=विद्वास जनम्) ५ ४३ १२ बृहत्या ऋग्वेदादिवेदवाच पालक परमात्मानम् ७ १० ४ बृहता पालनहेतु सूर्यप्रकाशम् प्र०—'तद्बृहतो करपत्योश्चोरदेवतयो सुट् तलोपश्च' अ० ६ १ १५७. अनेन वार्त्तिकेन 'बृहस्पति.' सिद्ध । 'पातेर्डति' उ० ४ ५८ अनेन पतिशब्दश्च १ १४ ३ सकलविद्याऽध्यापकम् (विद्वास जनम्) ६.२७. बृहता पालक वायुम् ३ २० ५ सम्राजमनूचानमध्यापक वा ६ ११. वेदशास्त्रपालकम् (वाज=सङ्ग्रामम्) ६ १२. **बृहस्पति:**=बृहत्या वेदवाच पालयिता (विद्वान्) १ १६० २. बृहता वेदानामध्यापनोपदेशाभ्या पालयिता (विद्वान् जन:) १ १६० ८ बृहता पालको वैश्य १४ २६ बृहता पति सूर्य इव (विद्वान् शिल्पिजन.) १ १६१ ६ बृहत्या वेदवाच पालिकाऽध्यापिका (विदुषी स्त्री) १२ ५४. बृहता पालको विद्युद्रूपोऽग्नि २८ १६ बृहत्या वाचो, बृहतो वेदशास्त्रस्य, बृहतामाकाशादीनाञ्च पतिरीश्वर प० वि० बृहतो वचनस्य ब्रह्माण्डस्य वा पालक (परमात्मा) १४ २५ बृहता प्रकृत्याकाशादीना पति पालको जगदीश्वर २ १३. बृहत् शब्दपूर्वक पा रक्षणे इस धातु से डति प्रत्यय, बृहत् के तकार का लोप और सुडागम होने मे बृहस्पति शब्द सिद्ध होता है 'यो बृहतामाकाशादीना पति स्वामी पालयिता स बृहस्पति 'जो बडो मे भी बडा और बडे आकाशादि ब्रह्माण्डो का स्वामी है, वह परमात्मा सब का अधिष्ठाता है स० प्र० २०, ३६ ६ बृहत्या सभाया सेनाया वा पालक (इन्द्र=सेनापति) १७ ४८ बृहता पालक सूत्रात्मा ३६ ६. बृहतामधिकाराणामध्यक्ष (सेनाध्यक्ष) १७ ४० बृहता महत्तत्त्वादीना स्वामी पालक (इन्द्र=ईश्वर) बृहना व्यवहाराणा रक्षक (जन) १८ १६ महाविद्यावाचोऽधिपति, सबसे बडे सुख का देने वाला परमात्मा आर्याभि० ११, ऋ० १ ६.१८.६ बडी प्रजा का पालन करने वाला श्रेष्ठ न्यायकारी राजा स० वि० १२२, अथर्व० १४ १ ५४ **बृहस्पते**=बृहत्या वेदवाच पते पात परमविद्वन् ६ ८ विद्याद्युत्तमपदार्थाना पालक (राजन्) ५ ४२ ८ बृहत्या वाच स्वामिन् (विद्वन्नध्यापक) २ २४ १. बृहत्सत्यप्रचारक (परमेश्वर विद्वन् वा) २ २३ ६ बृहत पापाद्वियोजक (परमेश्वर विद्वन्वा) २ २३ ७ बृहता प्रकृत्यादीनां जीवानाञ्च पालकेश्वर २६ ३ बृहता धार्मिकाणा वृद्धाना सेनाना वा पतिस्तत्सम्बुद्धौ (भा०—राजन्) १७.३६ बृहता विदुपा पालक अ०—परीक्षक (ईश्वर) १३ २३ **बृहस्पते:**=बृहता प्रकृत्यादीना पालकस्य (सवितु.=जगदीश्वरस्य) ६ १० बृहत्या सेनाया. स्वामिन (सेनापते) ६ १६ बृहत्या वेदवाच पालकस्य (ईश्वरस्य) १४ २५ बृहता पालकस्य महतत्त्वस्य २५ ४ महता वीराणा पालयितु सेनाध्यक्षस्य ६ ६ [बृहत्-पति-

१४.७.२ ३१ ब्रह्म वै भूताना ज्येष्ठम् तै० २ ८.८.१०. तस्मादाहुर्ब्रह्मैव देवाना श्रेष्ठमिनि श० ८ ४ १ ३. कतम एको देव इति स ब्रह्म इत्याचक्षते श० १४ ६ ६ १० तद् (ब्रह्म) इदमन्तरिक्षम् जै० उ० २ ६ ६ ब्रह्म वै त्रिवृत् ता० २ १६ ४]

ब्रह्मकाराः ये ब्रह्म धनमन्न वा कुर्वन्ति ते (सज्जना) ६ २६ ४ [ब्रह्मन्-उपपदे डुकृञ् करणे (तना०) धातोरण् कर्त्तरि]

ब्रह्मकृतः ये ब्रह्म धनमन्न वा कुर्वन्ति ते (धार्मिका विद्वास) ७ ३२ २ **ब्रह्मकृता**=येन ब्रह्म धनमन्न वा करोति तेन (गणेन=समूहेन) ७ ६ ५ ['ब्रह्मन्' उपपदे डुकृञ् करणे (तना०) धातो कर्त्तरि क्विप्]

ब्रह्मकृतिम् ब्रह्मण परमेश्वरस्य कृति ससारम् ७ २६.२ ब्रह्मणो धनस्य कृति क्रिया यस्य तम् (इन्द्र= दुष्टशत्रुविदारक राजानम्) ७ २८ ५ परमेश्वरोपदिष्टा प्रिया गाम् (वेदवाणीम्) ७ ३० ५ वेदोक्ता सत्यक्रियाम् ७ २६ ५ (ब्रह्मन्-कृतिपदयो समास । कृतिम्=डुकृञ् करणे (तना०) धातो स्त्रिया क्तिन्]

ब्रह्मचर्येण वेदाऽध्ययनेन ब्रह्मविज्ञानेन ऋ० भू० २३८ अथर्व० ११ ५ १६ ब्रह्मचर्य-सेवन से स० प्र० ६८, अथर्व० ३ १४ ११.१८ पूर्ण ब्रह्मचर्य रूप तप से स० वि० ८०, अथर्व० ११ ५ १७ ['ब्रह्मन्' उपपदे चर गतौ (भ्वा०) धातो. 'गदमदचर०' अ० ३ १ १ १०० इति यत्]

ब्रह्मचारिणम् ब्रह्मचारी को स० वि० ८०, अथर्व० ११ ५ ३ **ब्रह्मचारी**=ब्रह्मणि वेदे चरितु शील यस्य स ऋ० भू० २३५, अथर्व० ११ ३ ५ ५ [ब्रह्मन्नुपपदे चर गतौ (भ्वा०) धातोस्ताच्छील्ये णिनि]

ब्रह्मचोदनीम् विद्या-धनप्राप्तये प्रेरिकाम् (राज-नीतिम्) ६ ५३ ८ [ब्रह्मन्-चोदनीपदयो समास । चोदनी चुद सञ्चोदने (चु०) धातोर्ल्युडन्तान् स्त्रिया ङीप्]

ब्रह्मचोदनौ आत्माऽन्नप्राप्तिप्रेरकौ (घूर्षाहौ= सूर्यविद्वांसौ) ४ ३३ [ब्रह्मन्-चोदनपदयो समास । चोदन=चुद सञ्चोदने (चु०) धातो कर्त्तरि ल्युट् छान्दस]

ब्रह्मजूतः धनानि प्राप्त (इन्द्र=राजपुरुष) ३ ३४ १ ब्रह्मणा धनेनाऽन्नेन युक्त (इन्द्र=शत्रुविदारक सेनेश) ७ १६ ११ [ब्रह्मन्-जूतपदयो समास । जूत= 'जू' इति सौत्रो धातु, तत क्त]

ब्रह्मज्येष्ठम् ब्रह्मैव परमेश्वरो विद्या वा ज्येष्ठा सर्वोत्कृष्टा यस्य तम् (ब्रह्मचारिणम्) ऋ० भू० २३२, [ब्रह्मन्-ज्येष्ठपदयो समास । ज्येष्ठम्=प्रशस्यप्राति० अति-शायन इष्ठन्प्रत्यये 'ज्य च' इति ज्यादेश]

ब्रह्मणस्पतिम् ब्रह्माण्डस्य स्वामिन परमात्मानम् ७.४४ १ ब्रह्मणो वेदस्य ब्रह्माण्डस्य सकलैश्वर्यस्य वा स्वामिन जगदीश्वरम् ७ ४१ १. ब्रह्माण्डस्य वेदस्य वा पालकम् (ईश्वरम्) ३३.४६ अपने उपासक वेद और ब्रह्माण्ड के पालन करने वाले (ईश्वर) को स० वि० १५५, ७ ४१ १ **ब्रह्मणस्पतिः**=बृहत्या प्रजाया पालक (राजसेनाऽधीश) २ २४ २ धनस्य वेदस्य वा पालक स्वामी (ईश्वर) ३३ ८६ धनकोशेश (राजा) ६ ७५ १७ ब्रह्माण्डस्य पालयिता परमेश्वर) १ १८.४ वेदविद्याया पालक (अ०—परमात्मा) ३४ ५७ **ब्रह्मणस्पते**= ब्रह्माण्डस्य पालकेश्वर १ १८.५ वेदविद्याप्रचारक (अल-विद्यो जन) २ १ ३ ब्रह्माण्डस्य रक्षक (भा०—जगदीश्वर) ३४ ५८ वेदस्य ब्रह्माण्डस्य वा स्वामिन् (ईश्वर) प्र०— 'षष्ठ्या पतिपुत्र०' इति विसर्जनीयस्य सत्वम् १.१८ ३ सनातनस्य वेदशास्त्रस्य पालकेश्वर ३ २८ हे ब्रह्माण्ड और वेदो के पालन करने वाले (परमात्मन्) स० प्र० ४२३, ६ ८३ १ [ब्रह्मन्-पतिपदयो समास । षष्ठ्या अलुक् । 'षष्ठ्या पतिपुत्र०' अ० ८ ३ ५३. सूत्रेण विसर्जनीयस्य सत्वम् । ब्रह्मणस्पति =ब्रह्मण पाता वा पालयिता वा नि० १० १२ ब्रह्मणस्पति पदनाम निघ० ५ ४ एप वै ब्रह्मणस्पतिर्य एप (सूर्य) तपति श० १४.१.२ १५]

ब्रह्मण्यन्तः आत्मनो ब्रह्मेच्छन्त (यतस्रुच = ऋत्विज) २ ३४ ११ ब्रह्म महद्धन कामयमाना. (नर = विद्वज्जना) २ १६ १ ब्रह्म धन कामयन्त (विद्वज्जना) २ १६ ८ धन प्राप्तुमिच्छत (ज्ञान-वृद्धाञ्जनान्) ६ २१ ८ **ब्रह्मण्यते**=आत्मनो धर्मेण धनमिच्छते (मर्त्याय=मनुष्याय) ४ २४.२ ['ब्रह्मन्' इति व्याख्यातम् । तत आत्मन इच्छाया क्यजन्ताच्छतृ]

ब्रह्मद्विषम् धनस्य द्वेष्टारम् (दुर्जनम्) ६ ५२ २ **ब्रह्मद्विषः**=ये ब्रह्म वेद परमात्मान वा द्विषन्ति तान् (नास्तिकाञ्जनान्) ५ ४२ ६ वेदेश्वरविरोधिन (पापा-चारिणो जनस्य) २ २३ ४ **ब्रह्मद्विषे**=यो ब्रह्म परमा-त्मानं वेद वा द्वेष्टि तस्मै (दुष्टजनाय) ३ ३० १७ वेदविद्याद्वेष्ट्रे (दुर्जनाय) ६ ५२ ३ ['ब्रह्मन्' उपपदे द्विष अप्रीतौ (अदा०) धातो क्विप् कर्त्तरि । ब्रह्मद्विषे

ब्रवत् उपदिशेत् ६ ५४ १ ब्रूयात् ६ ५४ २ **ब्रवसि**=ब्रूया १ १३९ ७ **ब्रवः**=वद ७ ६० १ ब्रूया ४ ३ ६ **ब्रवाणि**=उपदिशानि ६ १६ १६ उपदिशेयम् २६ १३. **ब्रवाम**=अध्यापयेमोपदिशेम वा ३६ २४ वदेम ६ ५६ ४ **ब्रवामहै**=उपदिशेम ५ ५१ १२. **ब्रवावहै**=परस्परमुपदेशश्रवणे करवावहै १ ३० ६ **ब्रवीत्**=वदतु १ १६४ ७ **ब्रवीतु**=उपदिशतु १ ३५ ६ वदतु १ १६४ ७ **ब्रवीमि**=उपदिशामि ३ ५४ १० **ब्रवीषि**=उपदिशसि ४ ४२ ७ **ब्रवैते**=ब्रूयाताम् ६ २५ ४ [ब्रूञ् व्यक्तायां वाचि (अदा०) धातोर्लेट्। 'बहुलं छन्दसी' ति शपो लुङ् न। अन्यत्र लोट् लट् लिङ् लङ् च]

ब्रवीतन उपदिशत १ ८४ ५ [ब्रूञ् व्यक्तायां वाचि (अदा०) धातोर्लोट्। तप्रत्ययस्य तनबादेशः]

ब्रह्म बृहद्दिव्यं वेदचतुष्टयम् १९ ४१ बृहत् सर्वेभ्यो महदनन्तम् (परमेश्वरम्) २३ ४८. ब्राह्मणं विद्वांसम् १८ ४२ सर्वेषां सत्योपदेशेन वर्धकं ब्राह्मणकुलम् १८ ४१ वेदो जगदीश्वरो ब्रह्मवित्कुलं वा १० १० चतुर्वेदाखिलराजप्रजासुखनिमित्तानां पदार्थानां निर्माता भा०—वेदप्रवीण (राजा) १० २८ पूर्णविद्यादिसद्गुणयुक्त ब्राह्मण आर्याभि० २ ३१, ३८ १४ विद्या विद्वांस वा ५ २७ विद्वत्कुलम् १८ ३९ वेदेश्वरविज्ञानं तद्वत्कुलम् ३२ १६. सर्वेभ्यो महत्त्वादीश्वरं ३२ १ बृहद्धनम् ३ २९ १५. असङ्ख्यं धनम् ४ १६ २१ वेदविद्याम् १ १०.४ धनं ब्रह्माण्डं वा ३ ५३ १२ सच्चिदानन्द [illegible] चेतनं वाच्यम् ४ ११ शब्द, अर्थ और सम्बन्ध के ज्ञानपूर्वक साङ्गोपाङ्ग चारों वेदों को स० वि० ८०, अथर्व० ११ ५ २४ वेदविज्ञानम् भा०—विद्या, योगबल, धर्माचरणम् ११ ८१ ब्राह्मणवर्णम् ऋ० भू० १५२, ३८ १४ सर्वोत्तमविद्यागुणकर्मवत्त्वं सद्गुणप्रचारकरणत्वञ्च ब्राह्मणलक्षणम् ऋ० भू० १०४, अथर्व० १२ ५ ८ सर्वव्यापकं चेतनम् (परमेश्वरम्) ६ ७५ १९ विद्याधनम् ४ २१ ११ धनादियुक्तमन्नम् १ १५२ ५ बृहद्व्यापकम् (ईश्वरम्) ११ ५ धनमन्नं वा ३३ ९६ वेदचतुष्टयम् १ ७५ २ वेदाध्यापनम् १ ८८ ४ बडों से भी बडा (महीय ईश्वर) आर्याभि० २ २८, १३ ३ सर्वेभ्यो गुणकर्मस्वरूपतो बृहत् (ईश्वर) ४० १७ पूर्णविद्यादि शुभगुण और सबके उपकारक शमदमादि गुणयुक्त ब्रह्मकुल स० वि० १४४ अथर्व० १२ ५ १० ८ **ब्रह्मणः**=परमेश्वरस्य १७ १४ धनस्य, वेदस्य ३४ ३४ ब्रह्मविदः (भा०—विदुषो जनस्य) ३८ १९ ब्रह्माण्डस्य राज्यस्य वा २ २३ ९. धननिधेः २ २६ ४ बृहत्या प्रजायाः २ २४ २. सकलैश्वर्यस्य ७ ४१ १ विद्याधनस्य २ २४ ५ **ब्रह्मणा**=वेदेन धनेनाऽन्नेन वा ५ ४२ ४ बृहता बलेन २ २४ ३ अन्नादिमामाग्रया सह १ ८४ ३ वेदविज्ञानेन २१ २ वेदेश्वरविज्ञानप्रदेन (प्रचारेण) ११ ८२ अधीतचतुर्वेदेन (विद्वज्जनेन) १९ ७५ जलेन धनेन वा ८ ३३ बृहता वेदज्ञानेन ८ १५ परमेश्वरेण वेदचतुष्टयेन वा १९ ३१ वेदार्थज्ञानेन ज्ञापनेनेवोपदेशकेन १० ३० **ब्रह्मणि**=ब्राह्मणसभायाम् १ १०८ ७ **ब्रह्मणे**=परमेश्वराय वेदाय वा १ ११३ १९ चतुर्वेदाध्ययनेन ब्रह्मत्वाधिकारं प्राप्ताय (विदुषे जनाय) २ १२ बृहत्तमाय परमात्मने ब्रह्मविदुषे वा भा०—ईश्वर विद्वांस च सेवितुम् ३९.१३. सत्य वेदविद्या के लिए आर्याभि० २ ३१, ३८ १४ वेदेश्वरविज्ञानप्रसाराय ३० ५ **ब्रह्माणि**=बृहन्ति धनानि ७ १ २० महान्ति अन्नानि धनानि वा ७ १८ ४ विज्ञातवेदार्थान् ब्राह्मणान् प्र०—ब्रह्म वै ब्राह्मणः शत० १३ १ ५ ३, १ ३ ५ धनधान्यानि ७ २३ १ वेदस्थानि स्तोत्राणि १.३ ६ अधीतानि वेदवचांसि ७ २९ २ धर्म्येण प्राप्तव्यानि (धनानि) ८० ८९ सुसंस्कृतानि बृहत्सुखकराण्यन्नानि धनानि वा १ ६१ १ बृहत्तमानि अन्नानि १ ५२ ७ महान्ति धनानि ५ २ ६ प्रकृष्टान्यन्नानि धनानि वा १.८० १६ बृहन्ति यानि धनान्यन्नानि वा तानि १ १६५ २ [ब्रह्मन्=बृहि वृद्धौ (भ्वा०) धातोः 'बृंहेर्नोऽच्च' उ० ४ १४६ सूत्रेण मनिन् नकारस्य चाकारादेशः। ब्रह्म उदकनाम निघ० १ १२ अन्ननाम निघ० २ ७ धननाम निघ० २.१० ब्रह्मा सर्वविद्यः सर्वं वेदितुमर्हति। ब्रह्मा परिवृढः श्रुततो ब्रह्म परिवृढं सर्वतः नि० १ ८ ब्रह्माणि कर्माणि नि० १२ ३४ (वागिति) एतदेषां (नाम्नां) ब्रह्मैतद्धि सर्वाणि नामानि बिभर्ति श० १४ ४ ४ १ वाग् ब्रह्म गो० पू० २ १० ब्रह्म वै वाच. परमं व्योम तै० ३ ९ ५ ५ तस्यै वाचः सत्यमेव ब्रह्म श० २ १ ४ १० सत्यं ब्रह्म श० १४ ८ ५ १ ब्रह्म वै ब्रह्मणस्पतिः कौ० ८ ५ ब्रह्म ब्रह्माऽभवत् स्वयम् तै० ३ १२ ९ ३ चन्द्रमा वै ब्रह्म ऐ० २ ४१. असौ वा आदित्यो ब्रह्म श० ७ ४ १ १४ अग्निर्ब्रह्म श० ६ २ १ १५ मुखं ह्येतदग्नेर्यद् ब्रह्म श० ६ १ १ १० अयं वै ब्रह्म योऽयं (वायुः) पवते ऐ० ८ २८ प्राणो वै सम्राट् परमं ब्रह्म श० १४ ६ १० ३ प्राणापानौ ब्रह्म गो० पू० २ १०. ब्रह्म हि पूर्व्यं क्षत्रात् तां० ११ १ २ सैषा क्षत्रस्य योनिर्यद्ब्रह्म श० १४ ४ २ २३ अभिगन्तैव ब्रह्म कर्त्ता क्षत्रियः श० ४ १ ४ १ विद्युद् ह्येव ब्रह्म श० १४ ८.७ १ यदमृतं तद् ब्रह्म गो० पू० ३ ४ अभयं वै ब्रह्म श०

यो ब्रह्माणि धनानि वहति प्राप्नोति तस्मै (जनाय) ५ ३६ ५ [ब्रह्मन्-उपपदे वह प्रापणे (भ्वा०) धातोर्णिजन्ताद् औणा० असुन्]

ब्रह्मवाहः ये ब्रह्म धन धान्य प्रापयन्ति ते (विद्वासो जना) ६ २१ ६ अनन्तधनवेदविद्याप्रापक (विद्वज्जन) १ १०१ ६ धनप्रापिका (क्रिया) ३ ४१ ३ [ब्रह्मन्-उपपदे वह प्रापणे (भ्वा०) धातो 'वहश्च' अ० ३ २ ६४ सूत्रेण छान्दसो ण्वि । अन्यत्र 'कर्मण्यण्' इत्यण्]

ब्रह्मवाहस्तमम् अतिशयेन वेदेश्वरविद्याप्रापकम् (विद्वत्तम जनम्) ६ ४५ १६ [ब्रह्मवाहस्-प्राति० अतिशायने तमप्]

ब्रह्मसंशिते ब्रह्मणा वेदविदा सेनापतिना प्रशसिते (सेने) ६ ७५ १६ ब्रह्मभिश्चतुर्वेदविद्भि प्रशसिते शिक्षया सम्यक् तीक्ष्णीकृते (अ०—सेनानीपत्नि) १७ ४५ [ब्रह्मन्-सशितपदयो समास । सशित =सम्+शो तनूकरणे (दिवा०) धातो क्तप्रत्यये 'शाच्छोरन्यत०' इतीकारादेश]

ब्रह्महत्यायै ब्रह्मणो वेदस्येश्वरस्य विदुषो वा हनन-निवारणाय ३६ १३ ['ब्रह्मन्' उपपदे हन हिंसागत्यो (अदा०) धातो 'हनस्त च' अ० ३ १ १०८ सूत्रेण क्यप् तकारान्तादेशश्च । स्त्रिया टाप्]

ब्रह्मा धनानि प्र०—अत्राऽऽकारादेश २ २० ५. [ब्रह्मन् इति व्याख्यातम् । तत सु-स्थान आकारादेश-श्छान्दस]

ब्रह्माणेव यथा समग्रवेदविदौ (विद्वासौ पुरुषौ) २ ३६ १ [ब्रह्माणा० इवपदयो समास]

ब्राह्मणम् वेदेश्वरविदम् (विद्वज्जनम्) ३० ५ ब्रह्म-निष्ठात्वम् ऋ० भू० २०३, अथर्व० ७ ६ ६७ १ **ब्राह्मणः**= वेदोपवेदवित् भा०—विद्वत्तम (अ०—वैद्यो जन) १२ ६६ ब्रह्मणा वेदेन परमेश्वरस्योपासनेन च सह वर्त्त-मानो विद्याद्युत्तमगुणयुक्त पुरुष ऋ० भू० २२३, ६ ४० वेदेश्वरवित् (जन) २२ २२ वेदेश्वरविदनयो सेवक उपासको वा (पुरुष) ३१ ११ **ब्राह्मणात्**=ब्रह्मणो बृहतोऽवयवात् (राधस =पृथिव्यादिधनात्) प्र०—अत्र 'अनुदात्तादेश्च' अ० ४ ३ १४० इत्यवयवार्थेऽञ्प्रत्यय १ १५ ५ **ब्राह्मणानाम्**=ब्रह्मण परमेश्वरस्य वेदचतुष्ट-यस्य वा सेवकानाम् (जनानाम्) ६ ४०. ब्रह्मवेदभक्तानाम् (प्रजापुरुषाणाम्) १० १८. वेदविदा सभासदाम् ऋ० भू० २२२ **ब्राह्मणाः**=व्याकरणवेदेश्वरवेत्तार (विद्वासो जना) १ १६४ ४५ ब्रह्मविद (जना) २७ ३ [ब्रह्मन्प्राति० 'तदधीते तद्वेद' इत्यर्थेऽण् । 'अनुदात्तादेश्च' अ० ४ ३ १४० सूत्रेण वाऽवयवार्थेऽञ् । ब्राह्मण.=एते वै देवा अहुतादो यद् ब्राह्मणा गो० पू० १ ६ अथ हैते मनुष्यदेवा ये ब्राह्मणा. प० १ १. दैव्यो वै वर्णो ब्राह्मण तै० १ २ ६ ७. आग्नेयो ब्राह्मण ता० १५ ४ ८ सोमराजानो ब्राह्मणा तै० १ ७ ४ २ सोम्या हि ब्राह्मणा तै० २ ७ ३ १ तस्मा-दपि (दीक्षितम्) राजन्य वा वैश्य वा ब्राह्मण इत्येव ब्रूयाद्, ब्रह्मणो हि जायते यो यज्ञाज् जायते श० ३ २ १ ४०. स (क्षत्रिय) ह दीक्षमाण एव ब्राह्मणतामभ्युपैति ऐ० ७ २३ य उ वै कश्च यजते ब्राह्मणो भूयेवैव यजते श० १३ ४ १ ३ गायत्रो वै ब्राह्मण ऐ० १ २८. ब्राह्मणो मनुष्याणा (मुखम्) ता० ६ १ अस्य सर्वस्य ब्राह्मणो मुखम् श० ३ ६ १ १४ ब्राह्मणो हि रक्षसामपहन्ता श० १ १ ४ ६ वसन्तो वै ब्राह्मणस्यर्त्तु तै० १ १ २.६ सामवेदो ब्राह्मणाना प्रसूति. तै० ३ १२ ६ २ तस्माद् ब्राह्मणो वसन्तऽआदधीत ब्रह्म हि वसन्त (ऋतु) श० २ १ ३ ५ आग्नेयो हि ब्राह्मण काठ० २६ १० ब्राह्मणो व्रतभृत् तै० म० १ ८ ७ २]

ब्राह्मणासः वेदेश्वरवेत्तार (विद्वज्जना) ६ ७५ १० वेदेश्वरविद (अ०—विद्वासो जनाः) २६ ४७ [ब्राह्मण इति व्याख्यातम् । ततो जसोऽसुक्]

ब्राह्मम् ब्रह्मोपासकम् (विद्वज्जनम्) भा०—उपदेशना-ध्यापन-धार्मिकत्व-जितेन्द्रियत्व-शरीराऽऽत्मबलवर्द्धनम् ३१ २१ ब्रह्मण सकाशाज्जात ज्ञानम् ऋ० भू० १३३, [ब्रह्मन्-प्राति० जातार्थेऽण् । 'ब्राह्मोऽजातौ' इति टेर्लोप]

ब्राह्मये यो ब्रह्मण परमेश्वरस्याऽपत्यमिव तस्मात् (सूर्यात्) प्र०—अत्र पञ्चम्यर्थे चतुर्थी ३१ २० यो देवेभ्यो विद्वद्भ्यो ब्रह्मोपदेश प्राप्य वर्त्तमानस्तस्मै, ब्रह्मरुचिर्ब्राह्मि-स्तस्यै, ब्रह्मणोऽपत्यमिव वर्त्तमानो यस्तस्मै (ब्रह्मसेवकाय) ऋ० भू० १३३, ३१ २० [ब्रह्मन्प्राति० 'तस्येदम्' इत्यणि ब्राह्म, ततोऽपत्यार्थ इञ्]

ब्राह्मणवर्चसेन पूर्णविद्यया सह ऋ० भू० १६१, अथर्व० १६ ४.४६ [ब्राह्मण-वर्चस्पदयो समासे समा-सान्तोऽच्]

ब्रुवते परस्परमुपदिशन्ति १ ३७ १३ **ब्रुवन्ति**=उप-दिशन्ति ७ २६ ३ **ब्रुवन्तु**=उपदिशन्तु १ ७४ ३ उप-दिशन्त्वध्यापयन्तु वा १६ ५८ **ब्रुवाते**=वदत ३ ५४ ७ **ब्रुवीत**=उपदिशत ५ ४६ २ **ब्रुवे**=उपदिशामि ७ ३१ ६

ब्राह्मणद्वेष्ट्रे नि० ६ ११]

ब्रह्मन् चतुर्वेदविन् (शिक्षित-पुत्र) २३ २५ विद्यादिना सर्वेभ्यो महन् परमात्मन् २२ २२ ब्रह्मविद्विद्वन् २३ ५१ प्राप्तब्रह्मविद्य (राजन्) १० २८ विद्यया वृद्ध (विद्वज्जन) २२ ४. सकलवेदवित् (वसिष्ठ=पूर्णविद्वज्जन) ७ ३३ ११. **ब्रह्मा**=चतुर्वेदविद्विद्वान् (जन) १८ २६ महान् योगी विद्वान् २३ १४. चतुर्वेदज्ञाता यज्ञाऽनुष्ठानकर्त्ता (पुरुषार्थिजन) ऋ० भू० १५४ १८ २६ अखिलवेदाऽध्येता (अलविद्यो जन) २ १ ३ चतुर्वेदविज्जनश्चतुर्णां वेदाना प्रकाशक परमात्मा वा १ १६४ ३५ चारो वेदो का जानने वाला विद्वान् (पुरुष) स० वि० १६६, ९ ११३ ६ अन्तरिक्षस्थ पवन २१ १६ **ब्रह्माणम्**=अधीतसाङ्गोपाङ्गचतुर्वेदम् (राजानम्) ९ २६ **ब्रह्माणः**=चतुर्वेदाऽध्ययनेन 'ब्रह्मा' इति सज्ञा प्राप्ता (विद्वासो जना) १२ ४४. वेदान् विदित्वा क्रियावन्त (ईश्वरोपासका जना) १ १० १ ['ब्रह्मन्' इति व्याख्यातम्। ब्रह्मा सर्वविद्य सर्वं वेदितुमर्हति। ब्रह्मा परिवृढ श्रुतत नि० १ ७ यमेवामु त्रय्यै विद्यायै तेजो रस प्रावृहत् तेन ब्रह्मा ब्रह्मा भवति कौ० ६ ११ अथ केन ब्रह्मत्व क्रियत इति त्रय्या विद्ययेति ऐ० ५ ३३ एप ह वै विद्वान्त्सर्वविद् ब्रह्मा यद् भृग्वङ्गिरोविद् (अथर्ववेदविद्) गो० पू० २ १८ यज्ञस्य हैप भिपग् यद् ब्रह्मा यज्ञायैव तद् भेपज कृत्वा हरति ऐ० ५ ३४. शरद् ब्रह्मा तस्मात् यदा सस्य पच्य ब्रह्मण्वत्य प्रजा इत्याहु श० ११ २ ७ ३२ चन्द्रमा ब्रह्मा (आसीत्) गो० पू० १.१३. चन्द्रमा वै ब्रह्माऽधिदेव मनोऽध्यारमम् गो० पू० ४.२ मनो वै यज्ञस्य ब्रह्मा श० १४ ६ १ ७. हृदय वै (यज्ञस्य) ब्रह्मा श० १२ ८.२ २३. चक्षुर्ब्रह्मा तै० २ १ ५ ९. बल वै ब्रह्मा तै० ३ ८ ५ २ ब्रह्मा ब्रह्माऽभवत् स्वयम् तै० ३ १२.९ ३. प्रजापतिर्वै ब्रह्मा गो० उ० ५ ८. प्राणदेवत्यो वै ब्रह्मा प० २ ६]

ब्रह्मन् ब्रह्मणि धने ३ १३ ६ [ब्रह्मन् इति व्याख्यातम् तत 'सुपा सुलुक्०' इति सप्तम्या लुक्]

ब्रह्मपुत्र इव ब्रह्मणश्चतुर्वेदवेत्तु पुत्रस्तथा २ ४३ २ [ब्रह्मन्-पुत्रपदयो समासे कृते पुन इवपदेन समासः]

ब्रह्मप्रियम् ईश्वरो वेदो वा प्रियो यस्य तम्- (जनम्) १ ८३ २ ब्रह्म वेदाध्ययन प्रिय यस्य तम् (अपत्यम्) १ १५२.६ [ब्रह्मन्-प्रियपदयो समास]

ब्रह्मयुज. ब्रह्मणा युञ्जन्ति यैस्ते (अत्या=अश्वा) १ १७७ २. ['ब्रह्मन्' उपपदे युजिर् योगे (रुधा०) धातो क्विप्]

ब्रह्मयुजा यौ ब्रह्म वन योजयतस्तौ (हरी=जलाग्नी) ३ ३५.४ ['ब्रह्मयुज' इति व्याख्यातम्। ततो प्रथमाद्विवचनस्याकार]

ब्रह्मराजन्याभ्याम् ब्रह्म ब्राह्मणश्च राजन्य क्षत्रियश्च ताभ्याम् २६ २ ब्राह्मण और क्षत्रिय के लिए म० प्र० ६७, २६ २ [ब्रह्मन्-राजन्यपदयो समास। राजन्य.=राजन्प्राति० 'राज्ञोऽपत्ये जातिग्रहणम्' अ० ४ १.१३७ वा० सूत्रेण यत्]

ब्रह्मवनि यो ब्राह्मण विद्वास वनति तम् (परमेश्वरम्) प्र०—'छन्दसि वनसनरक्षिमथाम्' अ० ३ २ २७. अनेन ब्रह्मोपपदे वनवातोरिन् प्रत्यय 'सुपा सुलुक्०' इत्यमो लुक् च भा०—यो ब्रह्मभिर्वेदविद्भिर्ब्राह्मणैर्वन्यते ससेव्यते तम् (ईश्वरम्) १.१७. यो वेद वनयति तम् (परमेश्वर भौतिकमग्नि वा) १ १८ ब्रह्मणो वेत्तॄणा सविभक्तार तत्तथा (अ०—सभाध्यक्षम्) ९ ३ यथा वलविद्यासम्भाजितार तथा (परमविद्वज्जनम्) ५ २७. सर्वमनुष्यार्थं ब्रह्मणो वेदस्य विभाजितार ब्रह्माण्डस्य मूर्त्तद्रव्यस्य प्रकाशक वा (परमेश्वर भौतिकाग्नि वा) १ १८ ['ब्रह्मन्' उपपदे वन सम्भक्तौ (भ्वा०) धातो 'छन्दसि वनसनरक्षिमथाम्' अ० ३ २.२७ सूत्रेण इन्। विभक्तेश्च लुक्]

ब्रह्मवनिः यया ब्रह्मविदो मनुष्या ब्रह्म परमात्मान वेद वा वनन्ति सम्भजन्ति सा (स्वाहा=वाक्) ५ १२ [ब्रह्मन्-उपपदे वन सम्भक्तौ (भ्वा०) धातो 'कृतो बहुल वा' इति करणे इन्प्रत्यय]

ब्रह्मवर्चसाय वेदाऽध्ययनाय २० ३ पूर्णविद्याप्रचाराय ऋ० भू० २१८, २० ३ [ब्रह्मन्-वर्चस्पदयो. समासे 'ब्रह्महस्तिभ्या वर्चस' अ० ५ ४ ७८ सूत्रेण समासान्तोऽच्। गायत्री ब्रह्मवर्चसम् जै० १ ६३ तेजो ब्रह्मवर्चस गायत्री ऐ० आ० १ १ ३ ब्रह्मवर्चस वै रथन्तरम् तै० स० ३ ५ ९.३ सोमो वै शुक्रो ब्रह्मवर्चसम् मै० १ ६ ८ शुक्ला व्रीहय एवमिव वै ब्रह्मवर्चसम् काठ० ११ ५]

ब्रह्मवर्चसी वेदविद्या-प्रदीप्त (ब्राह्मण=वेदेश्वरविज्जन) २२ २२ [ब्रह्मन्-वर्चस्पदयो. समासे कृते सु-स्थाने 'इयाडियाजीकाराणामुपसख्यानम्' अ० ७ १ ३९ वा० सूत्रेण ईकार। समासान्ताऽभावश्च]

ब्रह्मवाहसम् वेदाना शब्दाऽर्थसम्बन्धस्वराणां प्रापकम् (आप्तं विद्वज्जनम्) ६ ४५ ७ **ब्रह्मवाहसे**=धनप्रापकाय (जनाय) ५ ३८ १ वेदेश्वरविज्ञानप्रापणाय ६ ४५ ४

सत्यभाषणयुक्ता वाणी, स० प्र० ४२०. [भग-प्राति० भूम्न्यर्थे मतुबन्तात् ङीप्। भग इति व्याख्यातम्]

भगवन् अत्यन्तैश्वर्यसम्पन्न (ईश्वर) ३६ २१. **भगवन्तः**=बहुतमैश्वर्ययुक्ता (जना) ७ ४१ ४ सकलैश्वर्ययुक्ता (जना) ३४ ३७ सकलशोभायुक्ता. (भा०—सिद्धा' श्रीमन्तो जना.) ३४ ३८ **भगवान्**=सकलैश्वर्यसम्पन्न (ईश्वर) ७ ४१ ५ प्रशस्तैश्वर्ययुक्त. (परमेश्वर) ३४ ३८ पूजनीय देव (परमात्मा) स० वि० १५६, ७.४१ ५ [भग इति व्याख्यातम्। ततो भूम्न्यर्थे मतुप्]

भगवः भाग्यवन् (सेनापते) १६ ५३ ऐश्वर्यसम्पन्न (भा०—सभेश राजन्) १६ ५२ ऐश्वर्ययुक्त (अ०—सेनापते) १६ ६ [भगप्राति० भूम्न्यर्थे मतुप्। तत सम्बुद्धौ 'मतुवसो रु सम्बुद्धौ छन्दसि' अ० ८ ३ १ सूत्रेण रुत्वम्]

भङ्गुरावताम् कुत्सिता भङ्गुरा प्रहता प्रकृतयो विद्यन्ते येषा तेषाम् (शत्रूणाम्) ११.२६ [भङ्गुराप्राति० निन्दाया मतुबन्तात् षष्ठ्या बहुवचनम्। भङ्गुरा=भञ्जो आमर्दने (रु०) धातो 'भञ्जभासमिदो घुरच्' अ० ३.२ १६१ सूत्रेण घुरच्। घित्वात् कुत्वम्। तत स्त्रिया टाप्]

भङ्गेन मर्दनेन ७ ३ [भञ्जो आमर्दने (रुधा०) धातोर्घञ्। चित्वात् कुत्वम्]

भज सेवस्व ७ ४६ ४ अभिलष १ १२१.१५. स्थापय ४ २८ **भजति**=भाग करोति ५ ३४ ७ **भजतु**=विभाग करोतु ६ ४५ **भजते**=सेवते १ १२३ ४ **भजन्त**=भजन्ते सेवन्ते १९ ५६ **भजन्तु**=सेवन्ताम् ऋ० भू० १६०, अथर्व० १९ १ ८.२ **भजस्व**=सेवस्व ४ ३२ ५१ **भजाति**=विभजे। २ २६ १. **भजामहे**=सेवामहे १ १८७.९ **भजेमहि**=सेवेमहि १ १५७ २ [भज सेवायाम् (भ्वा०) धातोर्लोट्। अन्यत्र लटि लङि लोटि लेटि च रूपाणि]

भजतन सेवध्वम् ७ ५६ २१ [भज सेवायाम् (भ्वा०) धातोर्लोट्। तप्रत्ययस्य तनबादेशश्छान्दस]

भद्रजानयः ये भद्र कल्याण जानन्ति ते (विद्वासो जना) ५ ६१ ४

भद्रम् भन्दनीय धर्माचरण सुख वा ३० ३. कल्याणकरम् (मोक्षमार्गम्) ४ १० १ जननीय सुखम् १२ ३ भन्दनीय कल्याणयुक्तम् (विश्व=जगत्) २ २४ १६. कल्याण सर्वदुःखरहित सत्यविद्याप्राप्त्याऽभ्युदयनि श्रेयससुखकरम् (धर्माचरणम्) ऋ० भू० ३, ३० ३ शरीराऽऽत्मसुखम् १ ८९ ८ कल्याण सर्वै शिष्टैर्विद्वद्भि सेवनीयम् (ऐहिकपारमार्थिक सुखम्) १ १ ६ वृष्ट्यादिद्वारा कल्याणकरम् (नाभ=जलम्) १ १०८ ३ कल्याणकारक शीलम् १.९४.१४ सेवनीयसुखप्रदम् (गृहम्) ५ ११० भन्दनीय वच २ ४३ ३ भजनीय कल्याणकारकम् (शर्म=गृहम्) ७.६० ८ भन्दनीय कल्याणकर शुद्धवायूदकवृक्षम् (गृहम्) ६ २८ ६ सत्यलक्षणकर वच २५ २७ कल्याणकारक गुण-कर्म-स्वभाव और पदार्थ को स० वि० ४ ३० ३ व्यावहारिक और पारमार्थिक सुख आर्याभि० १ ६, ऋ० १ १ २ १ **भद्रस्य**=आनन्दकरस्य (पुरुषस्य) १५ ४५ **भद्रः**=कल्याणकारक सेवनीयो वा (परमेश्वर ओषधिराजो वा) १ ९१ ५ भजनीय (अग्नि=पावक) १५ ३८ सुखकारी (भुवस्पतिर्विद्वान्) ५ ३४. भद्रस्वरूप भद्र करने वाला (ईश्वर) आर्याभि० १ १६, १ ६ १९ ५ **भद्राः**=कल्याणकारका (देवा=विद्वासो जना) १ ८९ १ कल्याणहेतव (विद्वासो जना) १ ११५ ३. भजनीया (गोपा=रक्षका जना) १ १६३ ५. कल्याणकरा (क्रतव=यज्ञा प्रज्ञा वा) २५ १४ **भद्रे**=कल्याणकरे व्यवहारे ऋ० भू० २५८, १९ ५० **भद्रेण**=भजनीयेन व्यवहारेण भा०—धर्माऽऽचरणेन १९ ११ सुखकारकेण (शवसा=शरीरात्मबलेन) १.९४ १५. [भदि कल्याणे सुखे च (भ्वा०) धातो 'ऋज्रेन्द्राग्र०' उ० २ २८ सूत्रेण रक्। अय वै लोको भद्र ऐ० १ १३ अन्न वै भद्रम् तै० १ ३ ३ ६. भद्रमेभ्योऽभूदिति कल्याणमेवैतन् मानुष्यै वाचो वदति श० ४ ६ ९ १९ भद्र भगेन व्याख्यात भजनीयम् भूतानामभिद्रवणीयम् भवद्रमयतीति वा भाजनवद्वा नि० ४ ९ श्रीर्वै भद्रम् जै० ३ १७२]

भद्रम्भद्रम् कल्याण-कल्याणकारकम् (क्रतु=कर्म) १ १२३ १३ [भद्रपदस्य वीप्साया द्वित्वम्]

भद्रया मङ्गलकारक रीति से स० वि० १४१, अथर्व० ३ ३० ३ **भद्रा**=कल्याणकारिणी (सन्दृक्=समानदृष्टि) ४ ६ ६ मङ्गलकारिणी (राति=दानक्रिया) ६ ४५ ३२ कल्याणकरी (सुमति=शोभना प्रज्ञा) २५ १५ कल्याणरूपा (सुमति) १ ११४ ९ सेवनीया (राति=दानम्) १५ ३८. **भद्रायाम्**=कल्याणकर्य्याम् (सन्दृष्टौ=सम्यग्दर्शने) ६.१ ४ **भद्राः**=शुभकरी (रशना=रज्जव) २९ १६ भन्दनीया (प्रशस्तय=प्रशसनीया प्रजा) १५ ३६ कल्याणप्रतिपादिका (प्रशस्तय=प्रशसा) १५ ३८ कल्याणकर्य्य (सर्गा=सृष्टय) ४ ५२ ५. [भद्र व्याख्यातम्।

कथयामि ३ ३७ ५ उपदिशेयम् १ १८५ ७. **ब्रूहि**=आज्ञापय १ ११४ १० कथय १ ६१ १३ उपदिश १ ३५ ११ [ब्रूञ् व्यक्ताया वाचि (अदा०) धातोर्लट्। अन्यत्र लोटि रूपाणि]

ब्रुवन् अधिक ब्रुवन्तु प्र०—लेट्-प्रयोगोऽयम् १७ ५२ [ब्रूञ् व्यक्ताया वाचि (अदा०) धातोर्लेट् लङ् वा]

ब्रुवन्तः उपदिशन्त (सखाय) ५ १२.५ [ब्रूञ् व्यक्ताया वाचि (अदा०) धातो शतृ]

ब्रुवाणः उपदिशन् (सज्जन) ६ ३८ २ उपदेशेन प्रेरयन् (मित्र =सुहृज्जन) ३ ५९ १ [ब्रूञ् व्यक्ताया वाचि (अदा०) धातो शानच्। ब्रुवाण =प्रब्रुवाण शब्द कुर्वन् नि० १० २२]

ब्रुवाणा उपदिशन्ती (माता) ५ ४७ १ [ब्रूञ् व्यक्ताया वाचि (अदा०) धातो शानजन्ताट् टाप् स्त्रियाम्]

ब्रूतात् उपदिशतु ब्रवीतु वा ४ २४ ब्रूहि ८ ४३ [ब्रूञ् व्यक्ताया वाचि (अदा०) धातोर्लोट्। 'तुह्योस्तातङ्०' इति तातङ्]

भक्तम् सेवितम् (आयु =जीवनम्) १ १२७ ५ [भज सेवायाम् (भ्वा०) धातो क्त]

भक्षणम् सूर्यप्रकाशस्याऽभ्यवहरणम् १ ११० ३ [भक्ष अदने (चुरा०) धातोर्ल्युट्]

भक्षत सेवध्वम् ३ ३ ४१ [भज सेवायाम् (भ्वा०) धातोर्लोट्। सिव् विकरण। भक्षत विभक्षमाणा नि० ६ ८]

भक्षम् भजन सेवनम् ८ ३७ **भक्ष** =सेवनीय (पदार्थ) ८ १२ भोज्यसमूह ८ ५८ **भक्षान्**=भक्षितुमर्हान् भोज्यान् पदार्थान् १९ २९ **भक्षाय**=भोजनाय १ १८७.७ [भज सेवायाम् (भ्वा०) धातोरौणादिक स। भक्ष अदने (चुरा०) धातोर्वा घञर्थे क। प्राणो वै भक्ष श० ४ २ १ २९]

भक्षयामि भुञ्जे भोजयामि वा १९ ३४ पालयामि ८ ३७ [भक्ष अदने (चुरा०) धातोर्लट्]

भक्षि सेवस्व ३४ ३५ भजेयम्, सेवेय ७ ४१ २ सेवन करता हूं स० वि० १५६, ७ ४१ २ [भज सेवायाम् (भ्वा०) धातोर्लट्। 'बहुल छन्दसी' ति शपो लुक्]

भक्षीय सेवेय अ०—स्वीकुर्याम् ३ २०. सेवेय भुञ्जीय वा ४ २१ १०. अद्याम् ३ २० भजेयम् ५ ५७.७ [भज सेवायाम् (भ्वा०) धातोर्लिङ्। 'बहुल छन्दसी' ति शपो लुक्। व्यत्ययेनात्मनेपदम्]

भक्ष्यमाणः भुज्यमान (भक्ष =भोज्यसमूह) ८ ५८. [भक्ष अदने (चुरा०) धातो कर्मणि शानच्]

भग सकलैश्वर्यप्रद (ईश्वर) ३४ ३८ अखिलशोभायुक्त (ईश्वर) ३४ ३८ विद्यैश्वर्यप्रद (ईश्वर) ३४ ३६ भजमान (ईश्वर) ३४ ३६ भजनीय (ईश्वर) ३४ ३६ ऐश्वर्ययुक्त (ईश्वर) ३४ ३६ भजनीयतम (सवित =जगदीश्वर) ३ ५६ ६ भजनीयस्वरूप (ईश्वर) स० वि० १५६, ७ ४१ ३ भजनीयवस्तुप्रद (ईश्वर) ७ ४१ ५ सर्वसामग्रीप्रद (ईश्वर) ७ ४१ ३ सत्याचरण करने वालो को ऐश्वर्यदाता (परमेश्वर) स० वि० १५६, ७.४१ ३. सेवनीयतम (ईश्वर) ७ ४१ ३ **भगम्**=भजते सुखानि येन तच्चक्रवर्त्यादिराज्यधनम् प्र०—अत्र भजधातो 'पुसि सञ्ज्ञाया घ प्रायेण' अ० ३ ३ ११८ अनेन घ प्रत्यय १ १४ ३ धर्मं सेवमानम् (अर्यमण=न्यायाधीशम्) १ १३६ ६ ऐश्वर्ययुक्तम् (व्यवहारम्) ३४ ३९ ऐश्वर्यवन्तम् (सोम =विद्वज्जनम्) १ ८९ ३ सेवनीयमैश्वर्यम् २८ ३३ ऐश्वर्य भजमानम् (धार्मिक जनम्) १ १४१ ११ विद्याश्रीसमूहम् १.६१ ७ सकलैश्वर्यप्रद व्यवहारम् ३ २० ५ भजनीयस्वरूप (ईश्वर) को स० वि० १५६, ७ ४१ २ ऐश्वर्यकारक राजानम् ३३ ४९ **भगस्य**=सूर्यस्येव १ १३६ २ सकलैश्वर्ययुक्तस्य (सवितु =जगदीश्वरस्य) ५ ८२ १ **भगः**=भजनीय पदार्थसमुदाय ४ ५५ १० सेवितुमर्हो धनसमूह १ २४ ४ ऐश्वर्यवान् (आप्तो जन) ३४ ५४ भजनीय सेवनीय (ईश्वर) ३४ ३८ ऐश्वर्यप्रद सूर्य ३ ५५ १७ सकलैश्वर्यसम्पन्न (परमेश्वर) ऋ० भू० २०८, ऋ० ८ ३ २७ १. ऐश्वर्यम् १ ६२ ७ प्रभावम् २ १९ ८ सौभाग्यवान् (विद्वज्जन) १ ९० ४ ऐश्वर्यकर्त्ता वायु ५ ५१ ११ ऐश्वर्ययोग (राजा) ५ ३३ ५ धनैश्वर्यम् ७ १५ १२ ऐश्वर्यभागी (सूर्य) २ ३१ ४ भगवान् ६ ४९ १४ ऐश्वर्यमिच्छु (सज्जन) ६ २८ ५ भजनीय प्राण ६ ५० १३ **भगाय**=धनाद्याय सेवनीयैश्वर्याय ८ ७ ऐश्वर्ययुक्ताय धनाय ३० १ अखिलैश्वर्याय ११ ७ [भज सेवायाम् (भ्वा०) धातो 'पुसि सञ्ज्ञाया घ प्रायेण' ति घ। भग धननाम निघ० २ १० भग पदनाम निघ० ५ ६ भगो भजते नि० १ ६ भगस्य भागधेयस्य नि० ९ ३१ स्त्रीभगस्तथा स्याद् भजते नि० ३ १६ यज्ञो भग श० ६ ३ १ १९ भगो व्याख्यात। तस्य काल प्रागुत्सर्पणात् नि० १२ १३ तस्य (भगस्य) चक्षु परापतन् तस्मादाहुरन्धो वै भग इति गो० २ १ २ श० १ ७ ४ ६]

भगवती बह्वैश्वर्ययुक्ता विदुषी (स्त्री) १ १६४ ४०.

धारय धारयन्ति वा १ १२ ११ **भरत्**=पुष्यात् ४ २६ ५ धरति ४ २६ ६ धरेत् ५ ३१ ११ भरेत् १ १७३ ३ भरे १ १२१ १३ दधाति ४ २६ ४ **भरत**=धरत २ १४ ६ स्वीकुरुत १ १३६ १ पुष्णीत २ १४ ७ धरत हरत वा ६ १६ ४१ **भरतम्**=धारयतम् १ १०६ ७. **भरति**=धरति ४ १६ १६ दधाति २ १६ २ **भरते**=धरति २ २४ ६ धरते १ १७३ २ दधाति २ २६ ३. अन्यायेन स्वीकरोति १ १०४ ३ **भरथः**=धरतम् १ ११२ २१ धरथ १ १५१ ३ **भरध्वम्**=धरध्वम् १ ६२ २ पोषयत ७ १३ १ पालयत ७ ४ १ **भरध्वे**=धरत ५ ५६ ४ **भरन्त**=भरन्ति २ १३ २ धरन्तु १ ७० ५ **भरन्ति**=पुष्यन्ति १ १५१ ८ अन्यायेन परपदार्थान् धरन्ति भा०—सञ्चिन्वन्ति २ ३० **भरन्तु**=पुष्णन्तु १२ ३१ धरन्तु १७ ५३ **भरन्ते**=धरन्ति पुष्णन्ति वा ३ ५५ ७ पुष्यन्ति प्र०—अत्र पक्षेऽन्तर्गतो ण्यर्थ १ १०४ ४ दधति १ १७३ ४ **भरस्व**=धर १ ७६ १० **भरात्**=धरेत् ४ २ ७ **भरः**=धर ६ २६ ४ **भराति**=धरति ५ ३ ७ भरेत् १ १८० २ **भरामः**=धराम ११ ४७ **भरामहे**=पुष्येम २ २० १ धरामहे १ ५३ १ **भरामि**=धरामि १ ६१ ३ पुष्णामि १ ६१ २ धारयामि २ १७ **भरिष्यामः**=धरिष्याम ११ १६ **भरे**=बिभृयात २ १६ १. धरामि ५ १२ १ [डुभृञ् धारणपोषणयो (जु०) धातोर्लोट्। व्यत्ययेन शप्। अन्यत्र लेटि. लटि लङि लृटि च रूपाणि। भृञ् भरणे (भ्वा०) धातोर्वा रूपाणि। भर आहर नि० ६ ३२]

भरतम् धारकम् (अग्निं=परमेश्वरम्) १ ६६ ३ पृथिवी आदि जगत् रूप अन्न के पोषण और धारण करने वाले (परमेश्वर) को आर्याभि० १ ४०, ऋ० १ ७ ३ ३. **भरतस्य**=पालितव्यस्य राज्यस्य १२ ३४ सेनाया धर्त्तू रक्षकस्य (राजादिसज्जनस्य) ३ ५३ २४ **भरतः**=धर्त्ता पोषक (सज्जन) ६ १६ ४ **भरताय**=धारणपोषणाय ५ ५४ १४ **भरता**.=देहधारकपोषका (भा०—धीमन्तो बालका) ७ ३३ ६ सर्वेषां धर्त्तारः पोषका (प्राज्ञा विद्वज्जना) ३ ३३ ११ **भरतेभ्यः**=धारणपोषणकृद्भ्यो मनुष्येभ्य ५ ११ १ आदित्येभ्य १५ २७ [डुभृञ् धारणपोषणयो (जु०) धातो 'भृमृदृशियजि०' उ० ३ ११० सूत्रेण अतच्। भरता ऋत्विङ्नाम निघ० ३ १८ प्रजापतिर्वै भरत स हीदं सर्वं बिभर्त्ति श० ६ ८ १ १४ अग्निर्वै भरत स वै देवेभ्यो हव्य भरति कौ० ३ २ प्राणो भरत ऐ० २ २४ भरत आदित्य नि० ८.१४. एष वो भरतो राजा तै० सं० १ ८ १० २]

भरद्वाजम् विद्यासद्गुणान् भरता वाज विज्ञापयितारम् (विप्रम्=मेधाविजनम्) १ ११२ १३ **भरद्वाजः**=वाजोऽन्न विज्ञान वा बिभर्त्ति येन श्रोत्रेण तत् (ऋषि=विज्ञापक कर्णा) १३ ५५ धृतविज्ञान (यजमानो जन) ६ ५१ १२ **भरद्वाजान्**=ये वाजानन्नादीन् भरन्ति तान् (उत्तमपुरुषान्) ६.४७ २५ **भरद्वाजाय**=भरन्त पुष्यन्त पुष्टिमन्तो वाजा वेगवन्तो योद्धारो यस्य तस्मै (सेनाध्यक्षाय) १ ११६ १८ धृतविज्ञानाऽन्नाय ६ १६ ३३ विज्ञानवत्रे (महाविदुषे जनाय) ६ ३१ ४. धृतविज्ञानाय (सज्जनाय) ६ १५ ३ **भरद्वाजाः**=धृतशुद्धविज्ञाना (भा०—सुभटा वीरा) ६ २५ ६ **भरद्वाजे**=विज्ञानादिधारके (व्यवहारे) ६.४८ ७ राज्यस्य पोषके पालके वा व्यवहारे ६ १७ १४ **भरद्वाजेषु**=ये भरन्ति ते भरत वज्यन्ते ज्ञायन्ते यैस्ते वाजा भरतश्च ते वाजाश्च तेषु पृथिव्यादिषु १ ५६ ७ ये वाजानन्नादीन् भरन्ति तेषु (परोपकारकेषु जनेषु) ६ १० ६ धृतविज्ञानेषु (विद्वज्जनेषु) ६ २३ १०. [भरतवाजपदयो समास। पूर्वपदस्यान्त्याकारलोपश्छान्दस। भरणाद् भारद्वाज नि० ३ १७ भरतमिति व्याख्यातम्। वाज अन्ननाम निघ० २ ७. वाज बलनाम निघ० २ ६ मनो वै भरद्वाज ऋषिरन्न वाजो यो वै मनो बिभर्त्ति सोऽन्न वाज भरति तस्मान्मनो भरद्वाज ऋषि श० ८ १ १ ६. भरद्वाजो ह वा ऋषीणामनूचानतमो दीर्घजीवितमस्तपस्वितम आस ऐ० आ० १ २ २ भरद्वाजो बृहदाचक्रे अग्ने ऐ० आ० ३ १ २ एष उ एव विश्रद्वाज प्रजा वै वाजस्ता एष बिभर्त्ति यद् बिभर्त्ति तस्माद् भरद्वाजस् तस्माद् भरद्वाज इत्याचक्षत एतम् (प्राणम्) एव सन्तम् ऐ० आ० २.२ २]

भरद्वाजवत् श्रोत्रवत् ६ ६५ ६ [भरद्वाजमिति व्याख्यातम्। ततस्तुल्यार्थे वति]

भरध्यै भर्त्तुम् ६ ६६ ३ [डुभृञ् धारणपोषणयो (जु०) धातोस्तुमर्थे अध्यैप्रत्यय]

भरन् धरन् (होता=आदातृजन) २१.३०

भरन्तम्=धरन्तम् (अग्निं=प्रसिद्ध विद्युत वा) ११ १३ **भरन्तः**=धरन्त पुष्णन्त (सिद्धिमन्तो राजप्रजाजना) ३ ३६ ७ धारयन्त (क्रियाकाण्डाऽनुष्ठातारो जना) ३ २२ [भृञ् भरणे (भ्वा०) धातो शतृ]

भरन्त यो भरति सर्वं विश्वं सर्वान् गुणास्तत्सम्बुद्धौ (जगदीश्वर) १ ७० ५ [भृञ् भरणे (भ्वा०) धातोर्गैणादिको बाहु० झच्। झस्यान्तादेश]

तत्र स्त्रिया टाप् । भद्रे-भन्दनीये भाजनवति वा कल्याणे मनसि स्यामेति नि० ११ १७. भद्रा=भाजनवती नि० १२ १६]

भद्रवाचः या भद्रा कल्याणकर्य्य सत्यभाषणान्विता वाचश्च ता ६ २८.६ [भद्रा-वाच्पदयो समास पूर्व-पदस्य ह्रस्व]

भद्रवाच्याय भद्र वाच्य यस्मै तस्मै (मनुष्याय) २१ ६१ [भद्र-वाच्यपदयो समास]

भद्रवादी भद्र कल्याण वदितु शील यस्य स (उपदेशक) २ ४२ २ [भद्रोपपदे वद व्यक्ताया वाचि (भ्वा०) धातोस्ताच्छील्ये णिनि]

भद्रशोचे भद्रा भजनीया शोचिर्दीप्तिर्यस्य तत्सम्बुद्धौ (अग्ने=विद्वन् पुरुष) १२ २६ कल्याणदीपक (अग्ने=वह्निरिव विद्वज्जन) ७ १४ २ कल्याणप्रकाशक (राजन्) ५ ४ ७ [भद्रा-शोचिपदयो समास । शोचि =ज्वलतो नाम निघ० १ १७]

भद्रहस्ता भद्रकरणहस्ताविव गुणा ययोस्तौ (इन्द्रा-ग्नी=विद्युद्भौतिकाग्नी) १ १० ९ ४ [भद्र-हस्तपदयो समासे 'सुपा सुलुक्०' इत्याकारादेश]

भद्रा कल्याणकर्मकरौ (पाणी=बाहू) ४ २१.९ [भद्रप्राति० प्रथमाद्विवचनस्याकारश्छान्दस]

भद्रा भजनीयमुखप्रदानि (द्रविणानि=धनानि यशासि वा) ४ ५८ १० सेवनीयानि कल्याणकराणि (वस्त्राणि) ३ ३९ २ भद्राणि (नामानि) १ १२३ १२ कल्याण-कारकाणि (तविषाणि=बलानि) १ १६६ ९ [भद्रप्राति० शेर्लोपश्छन्दसि]

भद्राणि कल्याणकराणि कर्म्माणि ७ २६ ४ **भद्रे**= सुखप्रदे (रात्रिदिने) १ ९५ ६ [भद्र व्याख्यातम् । तस्य नपुसके रूपम्]

भद्रेभिः कल्याणकारकैर्गुणै १ ४९ १ [भद्रप्राति० भिसि 'बहुल छन्दसि' इति ऐसादेशो न भवति]

भनक्ति शत्रुसेना मर्दयति ६ ६८ ६ [भञ्जो आमर्द्दने (रु०) धातोर्लट्]

भनति वदति ६ ११ ३ **भनन्त**=वदन्ति ४ १८ ७ भनन्तूपदिशन्तु ७ १८ ७ **भनन्ति**=शब्दयन्ति ४ १८ ६ [भण शब्दार्थे (भ्वा०) धातोर्लट् । 'भनन्त' प्रयोगे लङ् व्यत्ययेनात्मनेपदञ्च । भनति अर्चतिकर्मा नि० ३ १४.]

भन्त्स्यामि बद्ध करिष्यामि २२ ४ [बन्ध बन्धने (क्र्या०) धातोर्लृट्]

भन्दते सुखयति ३ ३ ४ [भदि कल्याणे सुखे च (भ्वा०) धातोर्लट् । भन्दते अर्चतिकर्मा नि० ३.१४. भन्दते इति ज्वलतिकर्मा निघ० १ १६]

भन्ददिष्टये कल्याणसुखसङ्गतये (धीमते जनाय) ५ ८७.१ [भन्दद्-इष्टिपदयो समास । भन्दन्=भदि कल्याणे सुखे च (भ्वा०) धातोरौणा० अति । इष्टि = यज देवपूजासगतिकरणदानेषु (भ्वा०) धातो क्तिन्]

भन्दनानाम् कल्याणाऽऽचरणानाम् (पत्नीनाम्) ८ ४८ [भदि कल्याणे सुखे च (भ्वा०) धातोर्ल्युट् । भन्दना भन्दतेः स्तुतिकर्मण नि० ५ २]

भन्दमानः कल्याण कुर्वाण (वैश्वानर =पावक) ३ २ १२ [भदि कल्याणे सुखे च (भ्वा०) धातो शानच्]

भन्दमाने सुखकारके (उषसौ=रात्र्यहनी) ३ ४ ६ कल्याणकारके (नक्तोषासा=रात्रिदिने) १ १४२ ७ [भदि कल्याणे सुखे च (भ्वा०) धातो शानच्]

भन्दिष्ठस्य अतिशयेन कल्याणाऽऽचरणस्य (नरस्य) ५ १ १० अतिशयेन कल्याणकारक (अग्नि =सेनापति) १ ९७ ३ [भदि कल्याणे सुखे च (भ्वा०) धातो कर्त्तरि तृजन्ताद् अतिशायन इष्ठन् । 'तुरिष्ठेमेयस्सु' इति तृचो लोप]

भयते बिभेति ४ १७ १० भय करोति ७ ५८ २ भय जनयति प्र०—अत्र 'बहुल छन्दसि' इति शपो लुक् व्यत्ययेनाऽऽत्मनेपदञ्च १ ५८ ५ कम्पते १ १६६ ५ **भयन्ते**=कम्पन्ते १ १६६ ४ बिभ्यति ४ ६ ५ [ञिभी भये (जु०) धातोर्लट् । 'बहुल छन्दसी' ति शप श्लुर्न भवति । व्यत्ययेनात्मनेपदञ्च]

भयमानः भय प्राप्नुवन् (राजपुरुष) प्र०—अत्र व्यत्ययेन शप् ३३ ७१ भय प्राप्त (इन्द्र =राजा) प्र०—अत्र व्यत्ययेन शानच् ३ ३० १० अधर्माचरणाद् भीत्वा पृथग् वर्त्तमानो दुष्टाना भयङ्कर (विद्वान् जन) १ १०० १७ [ञिभी भये (जु०) धातो शानच् । व्यत्ययेन शप् आत्मनेपदञ्च]

भयस्थे भये तिष्ठतीति तस्मिन् (स्थाने) २ ३० ६ [भयोपपदे ष्ठा गतिनिवृत्तौ (भ्वा०) धातो क]

भया भयानि ६ ६ ६ [भय-प्राति० शेर्लोपश्छन्दसि]

भये बिभेति यस्मात् तस्मिन् १.४० ८ [ञिभी भये (जु०) धातो 'एरच्' इत्यच्]

भर धर ४ २ १३ धेहि ३ ४५.४ सम्यग् धारय प्रदेहि १ ४ ७ समन्तात् पुष्णीहि ५ १६ ५ प्रापय १ ८१

५.१५. इन्द्रिय वै वीर्य भर्ग श० ७ ३.३ १ तच्छ्रीर्वै भर्ग जै० ३ २५८ वसन्त एव भर्ग गो० १ ५ १५]

भर्त्ति बिभर्ति प्र०—अत्र 'बहुल छन्दसि' इति शपो लुक् १ १७३ ६ दधाति ६ १३ ३ [डुभृञ् धारणपोषणयो (जु०) धातोर्लट्। 'बहुल छन्दसीति' शपो लुक्]

भर्वति हिनस्ति १ १४३ ५ [भर्व हिंसायाम् (भ्वा०) धातोर्लट्। भर्वति-अत्तिकर्मा निघ० २ ८]

भर्वन् भर्जन दहन कुर्वन् (अग्नि =पावक) ६.६.२ [भर्व हिसायाम् (भ्वा०) धातो शतृ]

भर्षत् बिभर्ति ६ ३८.१ [डुभृञ् धारणपोषणयो (जु०) धातोर्लेट्।.सिव् विकरण]

भलानसः भला परिभाषणीया नासिका येषा ते (आर्या राजजना) ७ १८ ७. [भला-नासिकापदयो समासे नासिकाया नसादेश । भला=भल परिभाषणहिंसादानेषु (भ्वा०) धातो रूपम्]

भव भवसि प्र०—अत्र लडर्थे लोट् ३ २४ भवतु प्र०—अत्र पुरुषव्यत्यय ३६.१३. निवर्त्तस्व १ ५१ ८. भव भवति वा १ १२ ८ सम्पद्यस्व ४ १३ निष्पद्यस्व ४ १७ होवे स० प्र० १८३, अथर्व० ६ १० ६८ १ **भवत**=स्त १ २३ १६ नित्य सम्पद्येरन् ४ १२ **भवतम्**=स्यातम् ५ ३ भवेतम् ५ ३ भवत, प्र०—अत्र लडर्थे लोट् १ ३४ १२ **भवति**=वर्त्तते १ १७ ५ होता है स० प्र० १०६, ३ ८ ४ **भवतु**=आप तत्पर होवो आर्याभि० १ ३२, ऋ० १ ७ १० १५ **भवथः**=भवतम् १ ११२ २० **भवन्तु**=भावयतु [प्रयच्छतु प० वि० **भवाति**=भवतु ६ २० भवेत् ४ १६ १७ **भवाथः**= तुम दोनो हूजिये स० वि० १३६, अथर्व० १४ २ ३७ **भवासि**=भवे २ ४२ १ [भू सत्तायाम् (भ्वा०) धातोर्लोटि लटि लेटि च रूपाणि]

भवतः वर्त्तमानस्य (कार्यकारणजगत) १.६६ ७ **भवन्तम्**=सन्त जगदीश्वर सभाद्यध्यक्ष वा १ ६७ ४ [भू सत्तायाम् (भ्वा०) धातो शतृ]

भवतात् भवेत् ३ २३ २ [भू सत्तायाम् (भ्वा०) धातोर्लोटि मध्यमपुरुषे 'तुह्योस्तातङ्०' इति तातङ्]

भवन्ती वर्त्तमाना (विद्युत्) १ १६४ २६ **भवन्तीः**= वर्त्तमाना (सुयमा प्रजा) ३ ७ ३ वर्त्तमाना होती हुई (युवतय.=स्त्रियः) स० प्र० ११०, ३ ५५ १६ [भू सत्तायाम् (भ्वा०) धातो शत्रन्तात् ङीप्]

भवम् य सर्वत्र भवति तम् (देव=परमात्मानम्) ३६.८ **भवस्य**=ससारस्य १६ १८ य प्रशसितो भवति तस्य (जनस्य) ३६.६ **भवाय**=यः शुभगुणादिषु भवति तस्मै (जनाय) १६ २८. **भवाः**=वर्त्तमाना (रुद्रा =जीवा वायवश्च) १६.५५ [भू सत्तायाम् (भ्वा०) धातोरच्। 'ऋदोरप्' इति वा अप्। पर्जन्यो वै भव पर्जन्याद्धीद सर्वं भवति श० ६ १.३ १५ एतान्यष्टौ (रुद्र, सर्व (शर्व) पशुपति', उग्र, अशनि, भव, महान्देव', ईशान) अग्निरूपाणि। कुमारो नवम श० ६ १.३ १८. यद्भव आपस्तेन अग्निर्वै स देवस्तस्यैतानि नामानि, शर्व इति यथा प्राच्या आचक्षते भव इति यथा वाहीका पशूना पती रुद्राग्निरिति श० १.७ ३ ८]

भवित्रम् भवितव्यम् (शम्=आनन्दम्) ७ ३५.६ [भू सत्तायाम् (भ्वा०) धातोरौणादिको बहुलवचनाद् इत्र]

भविष्यत् यदुत्पत्स्यमान भावि (वस्तुजातम्) ३४४ आगामि (अनुष्ठानम्) १८ ११ [भू सत्तायाम (भ्वा०) धातोर्लृट शतृ। असौ (द्युलोक) भविष्यन् तै० ३ १८ ६ उदकनाम निघ० १ १२.]

भवीत्वा भव्यानि (भुवनानि) २ २४ ५

भवीयसा यदतिशयित भवति तेन (वसुना=धनेन) १ ८३ १. [भव-प्राति० अतिशायन ईयसुन्]

भव्यस्य आगामिसमयस्य १२ ११७ **भव्याय**=यो विद्याग्रहणेच्छुर्भवति, तस्मै (जनाय) १ १२६ ६ [भू सत्तायाम् (भ्वा०) धातोर्यत्। परिमित वै भूतमपरिमित भव्यम् ऐ० ४.६]

भषम् परिभाषकम् (पुरुषम्) भा०—सवादादिव्यवहारम् ३० १६ [भष भर्त्सने (भ्वा०) धातोरच्]

भसत् दीपनम् २५ ८ भगेन्द्रियम् २० ६ [भस भर्त्सनदीप्त्यो (जु०) धातोरौणादिकोऽति]

भसत् भासयति ६ ३४ प्रकाशेत ६ १४ १ [भस भर्त्सनदीप्त्यो (जु०) धातोर्लेट्]

भसथः व्यर्थ वाद वदत ६ ५६ ४ [भसथ इति अत्तिकर्मा निघ० २ ८ भसथ अत्तनीय नि० ५ २२]

भस्म प्रदीपक तेज १२ ३५ दग्धदोष (विद्वान् जन) १२ ४६ **भस्मना**=दग्धेन (शरीरेण) १२ ३८ दग्धशेषेण निस्सारेण (वस्तुना) २५ ८ [भस भर्त्सनदीप्त्यो (जु०) धातो 'अन्येभ्योऽपि दृश्यन्ते' इति मनिन्]

भस्मन् भस्मन्यभ्रे प्र०—अत्र सप्तमी-लुक् १३ ५३ [भस्मन् -इति व्याख्यातम्।- तत 'सुपा सुलुग्०' इति सप्तम्या लुक्]

भरन्ति हरन्ति ३३ ३८ **भराम**=हरेम प्र०—अत्र हृस्य भत्वम् १ ६४ ४ [हृञ् हरणे (भ्वा०) धातोर्लट् अन्यत्र लोट्। 'हृग्रहोर्भश्छन्दसीति' हस्य भकार]

भरन्ती धरन्ती (गौ =पृथिवी) ३ ३१ ११ धरन्ती पोषयन्ती वा (रात्रि) ३ ६ १ [भृञ् भरणे (भ्वा०) धातो शत्रन्तान् ङीप्। भरन्ती हरन्ती नि० ११ ३६]

भरम् पालनम् ५ २६ ८ पोषणम् १ ११७ १८ **भराय**=धारकाय (राज्ञे) ४ २१ ७ पालनाय ६ २३ ६ भरणीयसङ्ग्रामाय ३ ५१ ८ **भरे**=देवाऽसुर-विद्वदविद्वत्सङ्ग्रामे ३ ४३ ८ पालनीये राज्ये ३ ३८ १० भरणीये ससारे ३ ३६ ६ बिभ्रति वनानि यस्मिँस्तस्मिन् (वाजसातौ=सङ्ग्रामे) ३ ३० २ भर्त्तव्ये राज्ये ३ ४८ ५ मूर्ख-विद्वदज्ञान-ज्ञानविपयविरोधरूपे युद्धे ३ ३४ ११ **भरेषु**=पालनपोपणनिमित्तेपु पदार्थेपु १ १०० १ [डुभृञ् धारणपोपणयो (जु०) धातोरप्। भर इति सग्रामनाम भरतेर्वा हरतेर्वा नि० ४ २४ भरे सग्रामनाम निघ० २ १७]

भरमाणा: विद्या धरन्त (विद्यार्थिजना) ७ २ ४ धरमाणा (गृहपतय) ८ १ - [भृञ् भरणे (भ्वा०) धातो शानच्]

भरहूतये भराणा पालकाना हूतये स्पर्द्धायै १ १२९ २ भरा पालिका धारिका हूत यस्यास्तस्यै (विशे=प्रजायै) ५ ४८ ४ **भरहूतौ**=भरे सङ्ग्रामे हूति राह्वान तत्र ३३ ५० [भर-हूतिपदयो समास। भरमिति व्याख्यातम्। हूति =ह्वेञ् स्पर्धाया शब्दे च (भ्वा०) धातो स्त्रिया क्तिन्]

भरामसि भरेम १२ १०४ भराम ६ १६.४७ स्वीकार करते है स० वि० १६६, अथर्व० ६ २ ३ [भृञ् भरणे (भ्वा०) धातोर्लट्। 'इदन्तो मसि' इति मस इदन्तत्वम्]

भरित्रै: धृतै पोपितै साधनै ३ ३६ ७. [डुभृञ् धारणपोपणयो (जु०) धातोरौणादिको बाहु० इत्र्। भरित्रे इति बाहुनाम नि० २ ४]

भरिभ्रत् भृश धरन् (अग्नि) २ ४ ४ अत्यन्त धरन् पुष्यन् (अग्नि =कारणाख्य ईश्वर) १२ २४ [डुभृञ् धारणपोपणयो (जु०) धातोर्यङ्लुगन्ताच्छतृ। दाधर्त्तिदर्द्धर्त्ति० अ० ७ ४ ६५ सूत्रेण 'भृञामिदि' तीत्त्वजश्त्वाऽभावोऽभ्यासस्य रिगागमश्च निपात्यते]

भरिष: धारणपोपणचतुर (राजा) ४ ४० २ [डुभृञ् धारणपोषणयो (जु०) धातोरौणादिको बाहु० इसन्]

भरिष्यन्ती सर्वान् पालयन्तौ (अ०—स्त्रीपुरुपौ) ११ ३१ [डुभृञ् धारणपोषणयो (जु०) धातोर्लृट शत्रन्तान् ङीप्]

भरीमभि: धारणपोपणाद्यै कर्म्मभि १३ ३२ धारणपोषणादिगुणयुक्तैर्व्यवहारैर्वा पदार्थे सह ८ ३२ धारणपोषणकरैर्गुणै प्र०—अत्र भृञ् धातोर्मनिन् प्रत्ययो 'वहुल छन्दसि' इतीडागम १ २२ १३ [डुभृञ् धारणपोषणयो. (जु०) धातोर्मनिन्। छन्दसीडागम]

भरे भरे धर्त्तव्ये धर्त्तव्ये पदार्थे युद्धे युद्धे वा ११०० २ सङ्ग्रामे सङ्ग्रामे ५ ४३.२ [भरे पदस्य वीप्साया द्वित्वम्। भरमिति व्याख्यातम्]

भरेषुजाम् बिभ्रति राज्य यैस्ते भरा, भराश्च ते इपवस्तान् भरेपून् जनयति तम् (सेनाद्यध्यक्षम्) प्र०—अत्र विट् प्रत्यय अनुनासिकस्याऽऽत्व च १ ६१.२१ भरेषु भरणीयेपु सङ्ग्रामेपु जेतारम् (राजान सेनापर्ति वा) ३४ २० [भर-इपुपदयो समासे कृते तदुपपदे जनी प्रादुर्भावे (दिवा०) धातोर्विट्। 'विड्वनोरनुनासिकस्यादि' त्यात्त्वम्]

भर्ग: भृज्जन्ति पापानि दु खमूलानि येन तत् (ईश्वरस्वरूपम्) प्र०—'अञ्च्यञ्जियुजि०' उ० ४ २१६ इनि भ्रस्ज-धातोरसुन्प्रत्यय कवर्गादेशश्च ३ ३५ सर्वदु खप्रणाशक तेज स्वरूपम् ३६ ३ भृज्जन्ति दु खानि यस्मात्तत् (स्वरूपम्) ३० २ शुद्ध तेज ११४ ११ यन्निरुपद्रव, निष्पाप, निर्गुण, शुद्ध, सकलदोपरहित, पक्व, परमार्थविज्ञानस्वरूपम् प० वि० सर्वदोपप्रदाहकम् (ईश्वरस्वरूपम्) २२ ९ सव क्लेशो को भस्म करने वाला शुद्ध-स्वरूप स० वि० ७५, ३६ ३ पवित्र करने वाला चेतन ब्रह्म-स्वरुप स० प्र० ५१, ३६ ३ [भृजी पाके (भ्वा०) धातोर् 'अञ्च्यञ्जियुजिभृजिभ्य कुश्च' उ० ४ २१६ सूत्रेण असुन् कुत्वञ्च। घञ्प्रत्यये वा कुत्वम्। अय वै (पृथिवी) लोको भर्ग श० १२ ३ ४ ७ ऋग्वेदो वै भर्ग श० १२ ३ ४ ६ होतैव भर्ग गो० पू० ५ १५ अग्निर्वै भर्ग श० १२ ३ ४ ८ वसव एव भर्ग गो० पू० ५ १५ वाग्वै भर्ग श० १२ ३ ४ १० वसन्तो भर्ग गो० पू० ५ १५ गायत्र्येव भर्ग गो० पू० ५ १५ प्राच्येव भर्ग गो० पू० ५ १५ आदित्यो वै भर्ग जै० उ० ४ २८ २ चन्द्रमा वै भर्ग जै० उ० ४ २८.२ भर्गो देवस्य कवयो अन्नमाहु गो० पू० १ ३२ वीर्यं वै भर्ग एप विष्णुर्यज्ञ श० ५ ४ ५ १ त्रिवृदेव भर्ग. गो० पू०

भान्तः प्रकोश १४ २३. [भा दीप्तौ (अदा०) धातो-रौणादिको बहुलवचनाद् झच् । भान्त पञ्चदश (यजु० १४ २३) वज्रो वै भान्तो वज्र पञ्चदशोऽथो चन्द्रमा वै भान्त पञ्चदश स च पञ्चदशाहान्यापूर्यते पञ्चदशा-पक्षीयते तद् यत्तमाह भान्त इति भाति इति चन्द्रमा. श० ८४ १ १०]

भामम् तेज ३ २६ ६ क्रोधम् २१ ३९ **भामः**=क्रोध १८ ४ भाति येन स (स्वराट्=वृद्धि) २० ६ [भाम क्रोधे (भ्वा०) धातोर्घञ् । अथवा भा दीप्तौ (अदा०) धातोरौणा० मन् । भाम क्रोधनाम निघ० २ १३]

भामासः क्रोधा ६ ६ ३ [भाममिति व्याख्यातम् । ततो जसोऽसुक्]

भामितः क्रुद्ध सन् (रुद्र =राजपुरुष) १ ११४ ८ पापाऽनुष्ठानेनाऽस्माभि क्रोधित (रुद्र =राजपुरुष) प० वि० [भाम क्रोधे (भ्वा०) धातो क्त । भामते क्रुध्यति-कर्मा निघ० २ १२.]

भामिनः क्रुद्धान् (वीरान् शत्रून्) १६ १६ शत्रूणा-मुपरि क्रोधकारिण (मयोभून्=सुवीरान् जनान्) १ ८४ १६ **भामिने**=प्रशस्तो भाम क्रोधो विद्यते यस्य तस्मै (विद्वज्जनाय) १.७७.१ [भामप्राति० भूम्न्यर्थे प्रशसाया वा । इन् भाम क्रोधनाम निघ० २ १३ भामिन = भानुमत नि० १३ ३८]

भायै दीप्त्यै ३० १२ [भाप्राति० चतुर्थी । भा दीप्तौ (अदा०) धातो क्विप्]

भारत धर्त्त (अग्ने=विद्वज्जन) ६ १६ ४५ धारक (अग्ने=विद्वज्जन) २ ७ १ **भारतम्**=भारत्या वाचोऽय वेत्ता धर्त्ता वा तम् (जन=प्रसिद्ध मनुष्या-दिकम्) ३ ५३ १२ **भारतः**=धारकत्याऽय धर्त्ता (अग्नि-रिवोत्तमजन) ४ २५ ४ धर्त्ता पोपको वा (अग्नि = सूर्य) ६ १६ १९ [डुभृञ् धारणपोषणयो (जु०) धातो-रौणा० अतच् णिच्च बहुलवचनात् । विभर्त्तेर्वाऽतच्-प्रत्यये भरत । तत इदमर्थेऽण् । भारतीप्राति० वा अध्येतृ-वेदित्रोरण् 'तस्येदम्' इत्यर्थे वा एष (अग्नि) उ वा ऽइमा प्रजा प्राणो भूत्वा विभर्त्ति तस्माद्वेवाह भारतेति श० १४ २ २]

भारता धारकपोषकौ (शिल्पविद्याऽध्येत्रध्यापकौ) २ २३ २ [भारत इति व्याख्यातम् । ततो प्रथमाद्विवचन-स्याकार छान्दस]

भारति सकलविद्याधारिके (विदुषि कन्ये) १ ८८ ८.

भारती=विद्याशिक्षावृता वाक् ३ ४ ८. सुष्ठु विद्याया धारिका पोषिका वा वाणी भा०—योगधारणायुक्ता वाक् २८ ८ सर्वविद्याधर्त्री सर्वथा पोषिका (भा०—वाणी) २९ ८. शिल्पविद्याधारिका क्रिया २१ ३३. सद्य शास्त्राणि धृत्वा सर्वस्य पालिका वागिव विदुषी (स्त्री) ७ २ ८ धारिका माता भा०—धी २०.६३ धारणपोषणकर्त्री (देवी=देदीप्यमाना शक्ति) २० ४३ शुभान् गुणान् धरन्ती (उपदेशिका स्त्री) २ ३ ८. सकलविद्या भरन्ती वाणी ३ ६२.३ धारणावती प्रज्ञा २१ ३७ सर्वशास्त्रधारिणी (भा०—सत्यव्यवहारधर्त्री वाणी २७ १९ धारणपोषण-कर्त्री (विद्यावाणी) १.१४२.९. **भारतीभिः**=सुशिक्षिताभि-र्वाणीभि ३.४ ८. **भारतीम्**=यो यया शुभैर्गुणैर्विभर्त्ति पृथिव्यादिस्थान् प्राणिन स भरत. तस्येमा भारतीम् (धिषणा=वाचम्) प्र०—भरत आदित्यस्तस्य भा इळा नि० ८ १३, १ २२ १० **भारतीः**=धारिका. (देवी = वाच) २८.३१ [भारतीति वाङ्नाम निघ० १ ११ भरत आदित्यस्तस्य भा इळा नि० ८.१३ डुभृञ्धातो-रौणा० अतच्प्रत्यये भरत । तत इदमर्थेऽण् । तत स्त्रियां ङीप्]

भारद्वाजः धृतविज्ञान (होता=होतृजन) ६ ५१.१२ [भरणाद् भारद्वाज नि० ३ १७]

भारम् पोषम् १ १५२ ३ **भारान्**=पञ्चतत्त्वानि महत्तत्वञ्च ३.५६ २ [डुभृञ् धारणपोषणयो (जु०) धातोर्घञ् । राष्ट्रं वै भार तै० ३ ९ ७ १ श्रीर्वै राष्ट्रस्य भार श० १३ २ ९ ३]

भारहारः डाली पत्ते फल फूल अन्य पशु और धान्य आदि भार का उठाने वाला (स्थाणु =वृक्ष) स० प्र० समु० ३, नि० १ १८. [भारोपपदे हृञ् हरणे (भ्वा०) धातोरण्]

भारि ध्रियते प्र०—अत्र लडर्थे लुङ् भृञ् धातोश्चिणि परेऽडभावो 'बहुल छन्दस्यमाङ्योगेऽपि' इत्यनेन सूत्रेण ६ ३ [डुभृञ् धारणपोषणयो (जु०) धातो कर्मणि लुङि अडभावे च रूपम्]

भार्वरस्य प्रजाभर्त्तृ-राज्ञ ४ २१.७ [डुभृञ् धारण-पोषणयो (जु०) धातोरौणा० ष्वरच् । बहुलवचनाद् वृद्धिश्च]

भाव्यम् उत्पत्स्यमानम् (जगत्) ऋ० भू० १२०, ३१.२ **भाव्यस्य**=भवितु योग्यस्य (विदुषो जनस्य) १ १२६ १ [भू सत्तायाम् (भ्वा०) धातोर्ण्यत् । भाव्यस्य भावयव्यस्य नि० ९ १०]

भस्मसा कृत्स्नं भस्मेति भस्मसा प्र०—अत्र 'छान्दसो वर्णलोपो वा' इति तलोप ११८० [भस्मन्-प्राति० कात्स्न्र्ये साति । तलोपश्छान्दस]

भस्मान्तम् भस्म अन्ते यस्य तत् (शरीरम्) ४० १५. भस्म-करने पर्यन्त (शरीर) स० वि० २१८, ४० १५ [भस्म-अन्तपदयो समास]

भाऋजीकम् भासु दीप्तिषु सरलम् (अग्नि=पावकम्) ३ १ १४ भाति प्रकाशयति या सा भा सभाकान्तिर्वा, ता योऽर्जयते तम् (दूतम्) १ ४४ ३ **भाऋजीकः**=भाभिर्विद्यादीप्तिभिर्ऋजु सरल (सुशिक्षको जन) ३ १ १२ [भा-ऋजीकपदयो समास । भा=भा दीप्तौ (अदा०) धातो क्विप् । ऋजीकम्=ऋज गतिस्थानार्जनोपार्जनेषु (भ्वा०) धातो 'ऋजेश्च' उ० ४ २२ सूत्रेण ईकन् किच्च । भाऋजीक =प्रसिद्धभा नि० ६ ४]

भाक् भजति ७ १८ १३ [भज सेवायाम् (भ्वा०) धातोर्लुङ् अडभावो लेर्लुक् च छान्दस]

भागदाः अंशप्रदा (राजभृत्या) १७ ५१ [भागोपपदे डुदाञ् दाने (जु०) धातो क]

भागदुघम् यो भागान् दोग्धि प्रपिपर्त्ति तम् (विद्वासम्) ३० १३. [भागोपपदे दुह प्रपूरणे (अदा०) धातो 'दुह कप् घश्च' अ० ३ २ ७० सूत्रेण कप् घकारश्चान्तादेश]

भागधेयम् भाग्यम् ३ २८ ४ [भागप्राति० स्वार्थे 'भागरूपनामभ्यो धेय' अ० ५ ४ २५ वा० सूत्रेण धेय]

भागधेयी विभागविज्ञानयुक्ता (ब्रह्मचारिण्य कन्या) प्र०—नामरूपभागेभ्य स्वार्थे धेय प्रत्यय अ० भा० वा० ५ ४ ३६ 'केवलमामकभागधेय०' अ० ४ १ ३० इत्यादिना ङीप् ६ २४ [भागधेयमिति व्याख्यातम् । तत 'केवलमामक०' इति स्त्रिया ङीप्]

भागम् भजनीयम् (स्थानम्) १ १२३ ३ सेवनीयम् (परमात्मानम्) १७ १३ भागाना धनाना ज्ञानाना वा भाजनम् (ईश्वरम्) ११ शुभगुणभाजन यज्ञम् १ ४ सेवनम् ९ ९ भगानामिमम् (धनम्) ५ ८२ ३ भागसमूहम् १ ७३ ५ **भागस्य**=भजनीयस्य (सज्जनस्य) २ ३६ ४ **भागः**= सेवितु योग्य (भजनीयो न्याय) ९ ३५ सेवनीयोऽश, स्वीकर्तुमर्हो वा (होतव्य पदार्थ) ४ २४ ऐश्वर्यसङ्घात १८ ८ भजनीयोऽविस्तार १ १८३ ४ विभजनीय (सवत्सर) १४ २४ भा०—प्रिय (विद्वज्जन) १४ २५ **भागे**=सेवने १ १५६ ५ [भज सेवायाम् (भ्वा०) धातोर्घञ् । अथवा भग-प्राति० 'तस्येदम्' इत्यर्थे समूहार्थे वा अण्]

भाजयत सेवयत ३६ १५ [भज सेवायाम् (भ्वा०) धातोर्णिजन्ताल्लोट्]

भाजयुः अर्थिप्रत्यर्थिना न्यायव्यवस्थया विभाजयिता (अ०—राजा) २ १ ४ [भाज पृथक्कर्मणि (चु०) धातोरौणादिके उप्रत्यये छान्दस रूपम् । भाज-प्राति० वा इच्छायामर्थे क्यजन्ताद् उ । भाज =भाज पृथक्कर्मणि (चु०) धातोर्घञर्थे क]

भाति प्रकाशते प्रकाशयति वा ५ ४४ १२ **भासि**= प्रकाशयसि ३३ ३६ **भाहि**=विविधतया प्रकाशते प्रकाशयति वा १ ६५ ११ प्रकाशय १ ६६ ९ [भा दीप्तौ (अदा०) धातोर्लट् । अन्यत्र लोट् । आभाति आभासयति नि० ७ २३]

भात्वक्षसः भा विद्याप्रकाशस्त्वक्ष वल यासा ता (सिन्धव =प्रवाहरूपा विद्याप्रकाशा) प्र०—त्वक्ष इति वलनाम निघ० २ ९, १ १४३ ३ [भा-त्वक्षस्पदयो समास । त्वक्ष वलनाम निघ० २ ९]

भानवः सूर्यस्य किरणा १ ९२ २ दीप्तय ५ १ १ प्रदीप्ता किरणा १ ९७ ५ किरणदीप्तय ३ १ १४ **भानवे**=विद्याप्रकाशाय ७ ४ १ प्रकाशाय ५ १९ १ **भानुना**=किरणेन ६ ४८ ६ दीप्त्या १७ १० तेजसा ३ २१ ४ प्रकाशेन २ ८ ४ किरणसमूहेन १२ २१ सूर्येण १ ४८ ९ प्रदीप्त्या २ १६ ४ सदर्थप्रकाशकत्वेन १ ४८ १५ धर्मप्रकाशेन १२ १०७ **भानुभिः**=दिवसै १ ८७ ६ विद्याप्रकाशकैर्गुणै १२ ३२ **भानुम्**=कान्तम् (पेश =रूपम्) १ ९२ ५ सूर्यम् १ ९२ २ सूर्यदीप्तिम् १ ९२ १ प्रकाशकम् (सूर्यम्) ६ ६२ २ प्रकाशयुक्तम् (राजानम्) ७ ३ ६ विद्याविनयदीप्तिमन्तम् (राजानम्) ७ ६ २ किरणम् ४ १३ २ कान्तिम् १ ९२ ५ **भानुः**=किरणयुक्त सूर्य ७ ३४ ७. दीप्ति ५ ५२ ६ प्रकाशमान (अ०—सूर्य) ४ १ १७ प्रभाकर (सूर्य) १२ ४८ दीप्तिमान् (अर्णव =समुद्र) ३ २२ २ [भा दीप्तौ (अदा०) धातो 'दाभाभ्या नु' उ० ३ ३२ सूत्रेण नु । भानुरिति अहर्नाम निघ० १ ९ भानुम्=भानुना निघ० १२ ७ अजस्रेण भानुना दीद्यतमित्यजस्रेणार्चिषा दीप्यमानमित्येतत् श० ६ ४ १ २. भानुना भात्यन्त तै० स० ४ २ १ २]

भानुमद्भिः बहवो भानव किरणा विद्यन्ते येषु तै (अर्कै =वज्रवच्छेदकै किरणै) ६ ४ ६ **भानुमन्तम्**= दीप्तिमन्तम् (रथम्) ५ १ ११ **भानुमः**=भानुवन् (अग्ने=विद्वज्जन) ५ १ ११ [भानुप्राति० भूम्न्यर्थे मतुप् । 'भानुम' प्रयोगे 'मतुवसो रु छन्दसि' इति रुत्वम्]

भिषजा औषधानि २७.९. चिकित्सकौ २८.७. वैद्यकशास्त्रविदौ (जनौ) १९.८२. आयुर्वेदविदौ (विद्वज्जनौ) १९.१२. सद्वैद्यवदरोगौ (अश्विना=सिद्धसाधकौ विद्वांसौ) १९.६३. सद्वैद्यौ (स्त्रीपुरुषौ) २०.५७. शरीरात्मरोगनिवारकौ (चिकित्सकोपदेशकौ) २०.७५. वैद्यकविद्यावेत्तारौ (अश्विना=स्त्रीपुरुषौ) २०.५६. वैद्यवद्रोगापहारकौ (अश्विना=अग्निवायू) २१.३६. रोगनिवारकौ (अश्विनौ=अध्यापकोपदेशकौ) १.१५७.६. [भिषज् चिकित्सायाम् (कण्ड्वा०) धातो क्विप्। ततः औजसोप-स्कन्दसि। प्रथमाद्विवचनस्याकारादेशश्छन्दसि। अपूतो ह्येषोऽमेध्यो यो भिषक् तै० स० ६.४.९.१.]

भिषज्यतः चिकित्सा कुरुत भा०—रोगान् निवारयत २८.७. [भिषज् चिकित्सायाम् (कण्ड्वा०) धातोर्लट्]

भिषज्यन् चिकित्सां कुर्वन् (सविता=सद्वैद्य) १९.८५. चिकित्सु सन् भा०—औषधानि दत्त्वाऽरोगयन् (वैद्यो जनः) १९.८० [भिषज् चिकित्सायाम् (कण्ड्वा०) धातो शतृ]

भीतः भय प्राप्त (कपोत) १.३२.१४ **भीताय**—प्राप्तभयाय (जनाय) ५.७८.६ [ञिभी भये (जु०) धातो क्त]

भीमम् भयङ्करम् (राजानम्) २१.३९. **भीमः**= दुष्टान् प्रति भयङ्कर, श्रेष्ठान् प्रति सुखकर (सभाध्यक्ष) १.५५.१. बिभेति यस्मात् स, भा०—भयप्रद, भय प्राप्त (सम्यग् प्राप्तो जीव) ३९.७. बिभेत्यस्मात् स (काल.) १.१५५.७. बिभ्यति जीवा अस्मादिति व्याघ्र प्र०—'भीमादयोऽपादाने' इति निपातनात् ५.२०. न्याय-आज्ञा को छोड़ने वालों पर भय देने वाला (ईश्वर) आर्याभि० १.३४, ऋ० १.७.१०.१२. **भीमाय**=बिभेति यस्मात्तस्मै भयङ्कराय (जनाय) १६.४०. [ञिभी भये (जु०) धातोः 'भियः षुग् वा' उ० १.१४८. सूत्रेण मक्। 'भीमादयोऽपादाने' अ० ३.४.७४. सूत्रेणापादाने निपात्यते]

भीमयुः यो भीमं भयङ्कर योद्धारं याति स (वीरजनः) ५.५६.३. [भीमोपपदे या प्रापणे (अदा०) धातो. 'मृगय्वादयश्च' उ० १.३७. सूत्रेण कु]

भीमलम् यो भीमान् भयङ्करान् लात्याददाति तम् (दुर्जनम्) ३०.६. [भीमोपपदे ला आदाने (अदा०) धातो. कर्त्तरि क.]

भीमसंदृशः भीम भयङ्करं सन्दृग् दर्शनं येषां ते (जना.) ५.५६.२. [भीम-सदृशुपदयो समासः। सदृग्=सम्+दृशिर् प्रेक्षणे (भ्वा०) धातो क्विन्]

भीमा बिभेति यस्मात् सा (सेना) ६.१८.१० भयङ्करे (धी=प्रज्ञा) ६.३.३ [भीम-प्राति० स्त्रियां टाप्। भीममिति व्याख्यातम्]

भीमासः बिभ्यति येभ्यस्ते (दुर्जना) ७.५८.२ [भीममिति व्याख्यातम्। ततो जसोऽसुक्]

भीरवे भयस्वभावाय (प्रजाजनाय) २.२८.१० **भीरुभिः**=कातरै (मनुष्यै) १.१०१.६ [ञिभी भये (जु०) धातोरस्ताच्छील्ये 'भियः क्रुक्लुकनौ' अ० ३.२.१७४ सूत्रेण क्रु:]

भीषा भयेन १.१३३.६. [ञिभी भये (जु०) धातो सम्पदादित्वात् क्विप्। षुगागमश्छान्दस]

भुज पालय १६.११ **भुजेम**=अभ्यवहरेम ४.३.१६ पालयेम ५.७०.४ [भुज पालनाभ्यवहारयो (रुधा०) धातोर्लोट्। अन्यत्र लिङ्। व्यत्ययेन श]

भुजन्ता पालकौ (विद्युत्पवनौ) ६.६२.६ [भुज पालनाभ्यवहारयो (रुधा०) धातो शतृ। व्यत्ययेन श]

भुजम् भोक्तव्या प्रजाम् १.१०४.६ यो भुनक्ति तम् (रयिम्) ५.२०.१ पालिकाम् (समिधम्) ३.२.६ **भुजः**= भोगक्रिया ५.७४.१०. **भुजे**=भोगाय ५.७३.२ पालनाय १.१२७.११ शरीर विद्यानन्दभोगाय १.१२७.८ भुज्यते य. स भुक् तस्मै (सुखाय) प्र०—अत्र 'कृतो बहुलम्०' इति कर्मणि क्विप् १.३०.२०. [भुज पालनाभ्यवहारयो (रुधा०) धातो 'कृतो बहुलमिति' वा० सूत्रेण क्विप्। प्राणो वै भुज. श० ७.५.१.२१]

भुजमः सुखाना भोजयिता (गिरि) १.६५.३ पालक सुखभोक्तार वा (पुरुषम्) १.११६.३. [भुज पालनाभ्यवहारयो (रुधा०) धातोरौणादिको मक्]

भुज्युम् भोक्तारम् (जनम्) ४.२७.४. भोगमर्हम् १.११९.४. भोक्तु योग्यमानन्दम् ६.६२.६ राज्यपालक सुखभोक्तार वा (नौयायिनं जनम्) १.११६.३ शरीराऽऽत्मपालक पदार्थसमूहम् १.११७.१४. सुखस्य भोक्तार पालक वा (सभाध्यक्षादिराजपुरुषम्) १.११२.२० भोगसमूहम् १.११६.५. पालनभोगमय धनादिपदार्थभोगम् ऋ० भू० १८९, अथर्व० १.८.८.३ **भुज्युः**=भुज्यते सुखानि यस्मात् स (यज्ञ=भा०—अग्निहोत्रादि) १८.४२ [भुज पालनाभ्यवहारयो. (रुधा०) धातो 'भुजिमृङ्भ्यां युक्त्युकौ' उ० ३.२१. सूत्रेण युक्। यज्ञो वै 'भुज्युर्यज्ञो हि सर्वाणि भूतानि भुनक्ति श० ६.४.१.११]

भासदौ यौ भास प्रकाश दद्याता तौ (कुञ्चौ=पक्षिविशेषौ) २५ ६. [भासोपपदे डुदाञ् दाने (जु०) धातो. क]

भासन् प्रकाशक सन् (ज्योतिष्मान् सूर्य) १२ ३२ [भासृ दीप्तौ (भ्वा०) धातो शतृ। व्यत्ययेन परस्मैपदम्]

भासः प्रकाशमानाया (विद्याया) ४ ३३.४. दीप्ती ६ १२ ५ **भासा**=प्रकाशेन ११ ४१. स्वकीयप्रकाशेन ७ ५ ४. दीप्त्या ६ १ ११ **भासे**=विज्ञानाय १३.३६ **भाः**=यो भाति प्रकाशयति स. (सूर्य) १ ४६ १० यो भाति प्रकाशते स (परमात्मा सभाध्यक्ष प्रजापुरुषो वा) ४ २५ या भान्ति प्रकाशयन्ति ता (क्रिया) १ ४५ ८ प्रकाशमान (अर्चि=विद्युत्तेज.) ४.७ ६. प्रकाश १२.३४. [भासृ दीप्तौ (भ्वा०) धातो 'भ्राजभास०' अ० ३ २.१७७ सूत्रेण ताच्छीलिक कर्त्तरि क्विप्। श्रीर्वै भा जै० उ० १ १ ४ १]

भासांसि प्रकाशान् ६ ४ ३ [भास् इति व्याख्यानम्। तस्य नपुसके रूपम्]

भाषथाः वदे. ४३.२३ [भाष व्यक्तायां वाचि (भ्वा०) धातोर्लङि अटोऽभावे रूपम्]

भास्वती दीप्तिमती (उषा) १ ६२ ७. प्रशस्ता भा कीर्तिर्विद्यते यस्या सा (उषा) १ ११३ ४ **भास्वतीम्**=देदीप्यमानाम् (स्त्रीम्) १५ ६३ [भास् इति व्याख्यातम्। तत प्रशसायामर्थे मतुबन्तात् स्त्रिया डीप्। भास्वतीति उषो नाम निघ० १ ८. भास्वत्य नदीनाम निघ० १ १३]

भिक्षते याचते ७ ३२ १७ **भिक्षन्त**=याचन्ते ३ ५६ ७ **भिक्षे**=याचे १ १७१ १ **भिक्षेत**=याचेत १ १५२ ६ [भिक्ष भिक्षायाम् अलाभे लाभे च (भ्वा०) धातोर्लट् अन्यत्र लङ् लिङ् च]

भिक्षमाणः याचमान (योगिजन) ३ ६१.६ **भिक्षमाणाः**=नित्य याचमाना उन्नतिशीला (जनास=उत्तमा धार्मिका विद्वज्जना) ७ ६ ६ लम्भमाना (यज्ञियास=यज्ञक्रिया कुशला विद्वास) १ ७३ ७ [भिक्ष भिक्षायाम् अलाभे लाभे च (भ्वा०) धातो शानच्]

भित्थाः भेद कुर्या ११ ६८ **भिनत्**=भिनत्ति प्र—अत्र लडर्थे लड् अटभावश्च १ ६२ ३ अभिनत् १ ६२ ३ विदृणाति १ ५४ ४ भिनत्ति १ ६२ ३. **भिनदत्**=भिन्द्यात् १२ २७ **भिनद्मि**=पृथक् करोमि १ १६१ १५ **भिन्त**=भिनत्सि १८ ५५ **भिन्दन्**=विदृणन्ति ४ ५८ ७ [भिदिर् विदारणे (रुधा०) धातोर्लुङ् अडभावश्च। अन्यत्र लङ् लट् च]

भिदः भिन्ना (शत्रूणा नगरी) १ १७४ ८ [भिदिर् विदारणे (रुधा०) धातो सम्पदादित्वात् क्विप्]

भिन्दन् विदारयन् (वाजी=वेगवानश्व) १७ ६५ **भिन्दन्तः**=विदारयन्त (पितर=जनकादय) १६ ६६ विदृणन्त (पितर=जनका) ४ २ १६ [भिदिर् विदारणे (रुधा०) धातो शतृ]

भिन्दानाः विदृणन्त वीरा राजपुरुषा) ६ २७ ६ [भिदिर् विदारणे (रुधा०) धातो शानच्]

भिन्दुः भेदक (इन्द्र=विद्वान् सेनापति सूर्यो वा) १ ११ ४ [भिदिर् विदारणे (रुधा०) धातो 'पृभिदि०' उ० १ २३. सूत्रेण कु। बहुलवचनान्नुम्]

भिन्नम् विदीर्णतटम् (नद=महाप्रवाहयुक्त नद्यादिकम्) १ ३२ ८ [भिदिर् विदारणे (रुधा०) धातो क्त]

भियसम् भयम् २ २८ ६ **भियसा**=भयेन ५ ५६ २ दु खभयेन १ ५२ ६ धारणेन ५ ३२ ६ **भियसे**=भयाय ५ २६ ४ [ञिभी भये (जु०) धातोर् औणा० असुन्। बहुलवचनात् कित्वाद् इयङ्]

भियः रोगदोषादिका (भीतय) २७ ७ **भिया**=भयेन १ ६१ १४ **भीः**=भयम् १ ३२ १४ [ञिभी भये (जु०) धातो सम्पदादित्वात् क्विप्]

भियानाः भय प्राप्ता (देवा=विद्वासो जना) ६ ६ ७ [ञिभी भये (जु०) धातोम् 'ताच्छील्यवयोवचनशक्तिषु चानश्' इति ताच्छील्ये चानश्। अथवा लट शानच्। व्यत्ययेनात्मनेपदम्]

भियाने भय प्राप्तौ (रोदसी=द्यावापृथिव्यौ) २.११ ६ [ञिभी भये (जु०) धातोः शानच्। व्यत्ययेनात्मनेपदम्]

भिषक् निदानादिविज्ञानेन रोगनिवारक (वैद्यो जन) १६ ५ यो भिषज्यति चिकित्सति स (वैद्य) प्र०—अत्र भिषज् धातो क्विप् १२ ८० चिकित्साद्यङ्गवित् (वैद्य) १६ १२ रोगनिवारक (वैद्य) २१ ३३ रोगविनाशक (वैद्य) २१ ५८ **भिषजम्**=वैद्यवरम् २१ ३८ **भिषजः**=सद्वैद्या ६ ५० ७ **भिषजाम्**=वैद्यानाम् २१ ४० **भिषजौ**=सद्वैद्यौ १ ११६ १६ [भिषज् चिकित्सायाम् (कण्ड्वा०) धातो कर्त्तरि क्विप्। अथवा ञिभी भये (जु०) धातो 'भिय षुग्घ्रस्वश्च' उ० १ १३८ सूत्रेण अजिः धातोर्ह्रस्व षुगागमश्च]

भिषक्तमम् वैद्यशिरोमणिम् २ ३३ ४. [भिषज् प्राति० अतिशायने तमप्]

जातानि ३१ १६ सर्वपदार्थाधिकरणानि १७ २७ निवासाऽधिकरणानि २६ ७ भा०—मूर्नद्रव्याणि ३३ ४३ लोकान् २६ ३४. माण्डलिकराजनिवासस्थानानि ६ २५ गृहाणि ६ २४ भवनाधिकरणानि वस्तूनि ३४ ३१ लोकजातानि भूताधिकरणानि ६ ५ २ भवन्ति येषु तानि वस्तूनि ११.२३ सब पदार्थो के निवासस्थान असख्यात लोको को आर्याभि० २ १४, ८ ३६ लोक-लोकान्तरो को आर्याभि० २ ६, ३२ १० **भुवनाय**=जाताय लोकाय १ ६२.४ **भुवनेषु**=स्थित्यधिकरणेषु (लोकलोकान्तरेषु) ३ २ १० निवासाधिकरणेषु १ १५७ ५ [भू सत्तायाम् (भ्वा०) धातो 'भूसूधूभ्रस्जिभ्यश्छन्दसि' उ० २ ८० सूत्रेण क्युन्। भुवनम् उदकनाम निघ० १ १२ भुवनस्य=भूतानाम् नि० ३ १२ भुवन विचष्टे भूतान्यभिविपश्यति नि० १०.४६ भुवनानि भूतान्युदकानि नि० १० ३३ भुवनाय=भावनाय नि० ७ २५ यज्ञो वै भुवनम् तै० ३ ३ ७ ५]

भुवना भवन्ति भूतानि येषु तानि गृहाणि प्र०—अत्र 'शेश्छन्दसि बहुलम्' अ० ६ १ ७० इति लुक् ८ ३० भुवनानि लोका १ ८५ ८ लोकस्थपदार्थान् १७ २७ भूताधिकरणानि (स्थानानि) ४.६ ५ सर्वाणि भूतानि लोकान् वस्तूनि वा ३ ६२ ६ लोका प्राणिनश्च १ १०१ ६ लोक-लोकान्तरान् ७ १३ ३ [भुवनमिति व्याख्यातम्। तत शेर्लोपश्छन्दसि। इमे वै लोका भुवनम्। काठमक० १४१ ७ यज्ञो वै 'भुवनस्य नाभि तै० ३ ६ ५ ५]

भुवन्तये यो भवत्याचारवांस्तस्मै (भृत्याय) १६ १६ [भू सत्तायाम् (भ्वा०) धातोश्छान्दस रूपम्]

भुवपतये भवन्त्युत्पद्यन्ते भूतानि यस्मिन् ससारे तस्य पतिस्तस्मै जगदीश्वराय आहवनीयास्याऽग्नये वा प्र०—अत्र बाहुलकाद् भूधातोरौणादिक क प्रत्यय २ २ [भुवपतिपदयो समास। भुव=भू सत्तायाम् (भ्वा०) धातोरौणादिक क। एतानि वै तेषामग्नीना नामानि यद् भुवपतिर्भुवनपतिर्भूताना पति श० १ ३ ३ १७]

भुवस्पते ! पृथिव्या स्वामिन् ४ ३४ [भुवस्पतिपदयो समास। भुवस्=भू सत्तायाम् (भ्वा०) धातो 'भूरञ्जिभ्या कित्' उ० ४ २१७ सूत्रेण असुन् किच्च]

भुवः अन्तरिक्षम् ३ ५ भुवरित्यपान. य सर्वं दु खमपनयति सोऽपान जो सब दुखो से रहित है जिसके सङ्ग मे जीव सब दु खो मे छूट जाते है वह (परमेश्वर) स० प्र० ५१, ३६ ३. उपासनाविद्याम् ३६ ३ वलनिमित्त उदान ३ ३७ यो भवति स (अ०—अग्नि) १३.५४ यो मुमुक्षूणा मुक्ताना स्वसेवकाना धर्मात्मना सर्व दु खमपानयति दूरी करोति सोऽपान ईश्वरो दयालुत्वात् प० वि०। वायु आदि पदार्थो को रचने वाला (ईश्वर) आर्याभि० २ ३५, ३ ३७ सब दु खो को दूर करने वाला (ईश्वर) स० वि० ११४, १० ८५ ४४ अन्तरिक्षवदवकाशरूपत्वाद् (ईश्वर) ऋ० भू० १६२, अथर्व० १३ ४ ५१ [भू सत्तायाम् (भ्वा०) धातो 'भूरञ्जिभ्या कित्' उ० ४.२१७ सूत्रेण असुन् किच्च। भुव इत्यन्तरिक्षलोक श० ८ ७ ४ ५ अग्निर्वै भुवोऽग्नेर्हीद सर्व भवति श० ८ १ १ ४ भुव इति व्याहृति जै० ३ ८७]

भुवः भवतीति तस्य (यज्ञस्य=व्यवहारस्य) १५ २३ भूमय १ ८६ ५ पृथिव्या मध्ये ४ १६ २ अन्तरिक्षस्य ७ २६ अन्तरिक्षस्थान् (लोकान्) २३ ८ भवतीति भूस्तस्या (भूम्या) १ ५२ १३ **भुवा**=पृथिव्या ३ ५५ १३ **भुवाम्**=पृथिवीनाम् ३७ १८ **भूः**=भूरिति वै प्राण य प्राणयति जीवयति सर्वान् प्राणिन स प्राण प्राणादपि प्रियस्वरूपो वा स ईश्वर प० वि०। प्रियस्वरूप प्राण ३ ३७ य प्राणयति चराचर जगत् स भू स्वयम्भूरीश्वर, जो सब जगत् के जीवन का आधार, प्राण से भी प्रिय और स्वयम्भू है वह प्राण का वाचक ईश्वर स० प्र० ५१, ३६ ३ प्राणदाता (परमात्मा) स० वि० ११४, १० ८५ ४४ भवतीति भू (भूमि) १३ १८ जो प्राणो का भी प्राण है वह ईश्वर स० वि० ७५, ३६ ३ हे सदा वर्त्तमान सर्वमङ्गलकारकेश्वर आर्याभि० २ ३५, ३ ३७ कर्मविद्याम् ३६ ३ इम लोकम् २३ ८ भूमि प्र०—भूरिति वै प्रजापतिरिमामजनयत श० २ १ ४ ११, ३ ५ सत्ताऽऽत्मिकाम् (प्रकृतिम्) २० २३ भूभे ७ २६ भूमौ भा०—पृथिव्यादिपदार्थविद्या २० १२ [भू० सत्तायाम् (भ्वा०) धातो क्विप्। भूर्हीय (पृथिवी) श० ७ ४ २ ७ भूरिति पृथिवीनाम निघ० १ १ भूरिति अन्तरिक्षनाम निघ० १ ३]

भूत् भवेत् प्र०—अत्र 'बहुल छन्दस्यमाङ्योगेऽपि' इत्यडभाव १ ३८ ५. वर्त्तते १ ७३ २ भवति प्र०—अत्र लडर्थे लुङ् अडभावश्च २ ६ भवतु ६ ६१ १० **भूत**=भवत प्र०—अत्र लेटि मध्यमबहुवचने 'बहुल छन्दसि' इति शपो लुक् १ १०६ २ **भूतम्**=भवत प्र०—अत्र 'बहुल छन्दसि' इति शपो लुक् १ ६३ ७ भवेताम् ६ ६८ ४ भवेतम् ६ ७४ १ **भूतु**=भवतु प्र०—अत्र शपो लुग् 'भूसुवोस्तिङी' ति गुणाऽभाव १२ ५१ **भूथः**=भवथ ६ ६७ ५ **भूम**=भवेम प्र०—अत्र लुङ्यडभावश्च १ ८८ २ **भूयाः**=भवे

भुञ्जीथाः भोगमनुभवे ४०.१ अपने आत्मा से आनन्द को भोग स० प्र० २३८, ४० १ **भुनक्तु**=परमानन्द का भोग कर आर्याभि० २ १. तै० ब्रह्मा० १०.१ [भुज पालनाभ्यवहारयो (रुधा०) धातोर्लिङ् । अन्यत्र लोट्]

भुरजन्त प्राप्नुवन्ति ४ ४३ ५

भुरणा सुखं धरन्तौ (अश्विनौ=राजप्रजाजनौ) १ ११७ ११ [भुरण धारणपोषणयो (कण्ड्वा०) धातोरच् । ततो द्विवचनस्याकारश्छान्दस]

भुरण्यति धरति ५ ७३ ६ [भुरण धारणपोषणयो (कण्ड्वा०) धातोर्लट्]

भुरण्यन् धरन् पुष्यन् वा (राजा) ४ २७ ३ **भुरण्यन्तम्**=पालयन्तम् (मनुष्यम्) ३३ ३२ धरन्तम् (लोकम्) १ ५० ६ [भुरण धारणपोषणयो (कण्ड्वा०) धातो शतृ]

भुरण्यवः धर्त्तारो गतिमन्तश्च (अग्न्यादय पदार्था) ३३ १ **भुरण्युम्**=पोषकम् (अग्निं=विद्युतम्) प्र०—अत्र भुरण-धातोर्यु प्रत्यय १३ ४३ **भुरण्युः**=धर्त्ता पोषको वा (जगदीश्वरो विद्युद्वा) प्र०—अत्र भुरणवानो कण्ड्वादित्वाद् यक् तत उ १ ६८.१. भर्त्ता (विद्वान् सभेश) १८ ५३ **भुरण्यू**=धारणपोषणकर्त्तारौ (पितरौ) १ १२१ ५ पोषयितारौ धारकौ वा (अध्यापकोपदेशकौ) ६ ६२ ७ [भुरण धारणपोषणयो (कण्ड्वा०) धातोरौणादिको युक् । कण्ड्वादित्वाद् यगन्ताद्वा उ प्रत्यय । भुरण्युरिति भर्त्तेत्येतत् श० ८ ६ ३ २०. भुरण्यु क्षिप्रनाम निघ० २ १५ भुरण्युरिति क्षिप्रनाम । भुरण्यु शकुनिर् भूरिमध्वान नयति स्वर्गस्य लोकस्यापि वोळ्हा तत्सम्पाती भुरण्यु नि० १२ २२ भुरण्यति गतिकर्मा निघ० २ २४]

भुरन्त धरन्ति ५ ६ ७ [डुभृञ् धारणपोषणयो (जु०) धातोर्लङ् । विकरणव्यत्ययेन श । 'बहुल छन्दसी' त्युत्व रपरत्व च]

भुरमाणम् पुष्टिकारकम् (भुज्यु=भोगमर्हं पदार्थम्) प्र०—अत्र डुभृञ्धातो शानचि व्यत्ययेन शो 'बहुलं छन्दसि' इत्युत्व च १ ११६ ४ [डुभृञ् धारणपोषणयो (जु०) धातो शानच् । व्यत्ययेन श । धातो ऋकारस्योत्वे रपरत्वे च रूपम्]

भुरिजोः धारकपोषकयो (भा०—प्रजाराज्ययो) ४ २ १४ [भुरिजौ बाहुनाम निघ० २ ४]

भुर्वणि धारणवति पोषणवति वा (व्यवहारे) १ १३४ ५ [डुभृञ् धारणपोषणयो (जु०) धातोरौणा० बाहु० क्वणि । तत 'सुपा सुलुक्०' इति सप्तम्या लुक्]

भुर्वणिः बिभर्ति य स (अध्यापक) प्र०—अत्र भृञ्धातोर्बाहुलकादौणादिक क्वणि प्रत्यय १ ५६ १

भुवत् भवति प्र०—अत्र लडर्थे लेट् 'बहुल छन्दसि' इति शपो लुक् 'भूसुवोस्तिङि' अ० ७ ३.८८ अनेन गुणनिषेध १ २३ ६ भूयात् प्र०—भू धातोराशिषि लिङि प्रथमैकवचने 'लिङ्याशिष्यङ्' अ० ३.१ ८६. इत्यङि सति 'किदाशिषि' इति कित्वे, आगमानित्यत्वे प्रयोग १ ५ ३ भवेत् प्र०—अत्र गुणनिषेधादुवङ्डादेश १ ५२ ११. **भुवन्**=भवन्ति ६ ३५ १ भवेयु १ १८६ २ भवन्तु ५ ४६ ६ **भुवम्**=हूँ स० प्र० २३८, १०.४६ १ **भुवः**=भव प्र०—अत्र लुङि विकरणव्यत्ययेन श प्रत्ययोऽडभावश्च १.१३८ ४ भवे ५ १६ ५ [भू सत्तायाम् (भ्वा०) धातोर्लेट् । विकरणव्यत्ययेन श । अन्यत्र लिङ् लुङ् च]

भुवनच्यवानाम् य भुवनान्युत्तमानि गृहाणि च्यवन्ते प्राप्नुवन्ति तेषाम् (देवाना=विदुषा पुरुषाणाम्) १७ ४१ [भुवनोपपदे च्युङ् गतौ (भ्वा०) धातोरच्]

भुवनपतये भुवनाना सर्वेषा लोकाना पति पालक ईश्वर पालनहेतुर्भौतिक (अग्नि) वा तस्मै २ २ सर्वजगत्स्वामिने (ब्रह्मणे) २२ ३२ [भुवन-पतिपदयो समास । 'पति समास एव' इति घिसञ्ज्ञकत्वाद् गुण । एतानि वै तेषामग्नीना नामानि यद् भुवपतिर्भुवनपतिर्भूताना पति. श० १ ३.३ १७]

भुवनम् भवन्ति भूतानि यस्मिन् जगति तत् (जगत्) १ १०२ ८. लोकजातम् २६ ६ सर्वेषामधिकरणम् १ १०८ २ उदकम् भा०—जीवनमूल जलम् २२ ३. भवतीति भुवन वर्त्तमानकालस्य सम्बन्धि (व्यवहारम्) प्र०—अत्रौणादिक क्यु ३४ ४ **भुवनस्य**=सर्वससारस्य ऋ० भू० ६०, अथर्व० १० २३ ४ ३८ जलादेर्लोकसमूहस्य ७ ५१ २ गृहस्य १८.४४ भवन्ति भूतानि यस्मिन् राज्ये तस्य १३ १८ भूताऽधिकरणस्य ३ ४६ २ ब्रह्माण्डस्य ५ ८५.३. लोकजातस्य १.१४३ ४ निवासाऽधिकरणस्य स्थावरस्य जगत प्राणिसमुदायस्य च २ २७ ४ लोकमात्रस्य १२ २३ अनेकभूगोलाऽलङ्कृतस्य (ससारस्य) ७ २५ जगतो मध्ये ५ ६३ २. अखिलससारस्य ५ ६२ ६ **भुवनात्**=जगत्पदार्थसमूहात् १ १२३ २ **भुवनानाम्**=लोकलोकान्तराणाम् ३४ ४५. भवन्ति भूतानि येषु तेषा गृहाणाम् १४.५. सब भुवनो का आर्याभि० १.३१, ऋ० १ ७ ६ १ **भुवनानि**=स्थानानि ८ ३६ भवन्ति येषु तानि लोक-

प्रतिष्ठेति तद्भूमिरभवन् श० ६ १ १ १५ यदभवत्तद् भूमि काठ० ८ २ कर्णिनी वै भूमिरिनि जै० १ १२६]

भूम्ना विभुना भा०—स्वव्याप्त्या ३ ५ **भूम्ने**= बहुत्वाय ३० १ ३ [बहुप्राति० भावे इमनिच्-प्रत्यये बहो. स्थाने भूरादेशे 'बहोर्लोपो भू च बहो' सूत्रेण रूपसिद्धि]

भूम्यस्य भूमौ भव य (रथस्य) ५ ४१ १० **भूम्याः**=भूमिषु साधव (व्यवहारा) १ ६२ ५ [भूमि-प्राति० भवार्थे साध्वर्थे वा यत्]

भूयसः बहून् ५ ३० ४ अधिकान् (सख्यानान्) १ १०२ ७ **भूयसा**=बहुना (राया=धनेन) ३ १६ ६ **भूय** =अधिक् (आनन्दम्) ५ ७६ १० बहु (वारम्) २ १४ १० अतिशयेन बहु (वसु) ४ १६ पुन ३ ३४ [बहुप्राति० अतिशायन ईयसुन् प्रत्यये 'बहोर्लोपो भू च बहो' सूत्रेण रूपसिद्धि]

भूयसीः अधिका (रातय =दानानि) प्र०—अत्र 'वाच्छन्दसि' इति जस पूर्वसवर्णत्वम् १ ११ ८ बह्वी (उपास =दिनानि) २ २८ ६ पुन -पुनरधिका (अ०—अण्व्यो मात्रा) १ १८८ ५ [बहुप्राति० अतिशायन ईयसुन् । तत स्त्रिया ङीप् । बहोर्लोपो भू च बहो' इति भूरादेश । विड् वै भूयसी मै० ४ २ ६]

भूयस्कर हे पुन पुनरनुष्ठात (राजन्) १० २८ [भूयमुपपदे डुकृञ् करणे (तना०) धातोस्ताच्छील्ये ट]

भूयामो भवेम प्र०—अत्र 'वाच्छन्दसि' इत्यस्योत्वम् ४ ३२ ६ [भू सत्तायाम् (भ्वा०) धातोर्लिङ् । अकारस्योत्व छान्दसम्]

भूयांसः तेभ्योऽप्यधिका (रुद्रा =प्राणजीवा) १६ ६३ [बहुप्राति० अतिशायन ईयसुन् । 'बहोर्लोप०' इति रूपसिद्धि]

भूयिष्ठम् अतिशयेन बहु (अन्नम्) ५ ७७ ४ **भूयिष्ठः**=अधिक (अग्नि =पावक) १.१६१ ६ [बहुप्राति० अतिशायन इष्ठन् । 'इष्ठस्य यिट् च' इति भूरादेश]

भूयिष्ठाम् अधिकाम् (उक्ति =स्तुतिम्) १ १८६ १. बहुनमाम् (नम उक्तिम् =नमोभिरुक्तिम्) ५ ३६ भूयसीम् (नम-उक्तिम्) ७ ४३ बहुत प्रकार की प्रशसा को स० वि० २१४, ४० १६ **भूयिष्ठाः**=अधिका (आप) १ १६१ ६ [बहुप्राति० अतिशायन इष्ठन् । 'इष्ठस्य यिट् च' अ० ६ ४.१५६ सूत्रेण बहो स्थाने भूरादेश प्रत्ययस्य च यिट् । तत स्त्रिया टाप्]

भूयोभूयः वार वारम् ६ २८ २ ['भूयस्' पदस्य वीप्साया द्वित्वम् । भूयस् =बहुप्राति० अतिशायने ईयसुन्]

भूरयः बह्वच (क्रतव =प्रज्ञा) १.५५ ८ [भूरि इति बहुनाम निघ० ३ १ भूरि इति बहुनो नामधेय प्रभवतीति सत नि० २ ८ भूरि बहूनि नि० ११ २१ भू सत्तायाम् (भ्वा०) धातो 'अदिशदि०' इत्युणादिसूत्रेण क्रिन्]

भूरि बहु (अर्थं =गुण द्रव्य वा) प्र०—अत्र 'अदि-शदिभू० उ० ४ ६५ अनेन भू-धातो क्रिन् प्रत्यय १.१० २ बहूनि बलानि ५ २६ १४ **भूरीणि**=बहूनि (वृत्रा= मेघाऽवयवान्) ४ १७ १६ **भूरेः**=बहुपदार्थान्वितस्य (क्षयस्य=गृहस्य) ८ ६ बहुविधस्यैश्वर्यस्य १ ६१ १५ बहो (जलस्य) १ ८४ ३६ व्यापकस्य (सत =कारणस्य) १ ६६ ७ बहुविधस्य (कवे =विदुषो जनस्य) २ २८ १ बहुरूपस्य (जनस्य) २ ३३ ६ [भू सत्तायाम् (भ्वा०) धातो 'अदिशदिभूशुभिभ्य क्रिन्' उ० ४ ६५ सूत्रेण क्रिन्]

भूरिकर्मणे बहुकर्मकारिणे (इन्द्राय=सेनापतये) १ १०३ ६ [भूरि-कर्मन्पदयो समास]

भूरिदात्र भूरि बहुविध दात्र दान यस्य स (इन्द्र = राजपुरुष) ३ ३४ १ [भूरि-दात्रपदयो समास । दात्रम्= डुदाञ् दाने (जु०) धातोरौणादिक ष्ट्रन्]

भूरिदावत्तरा अतिशयेन बहुधन-दानप्राप्तिनिमित्तौ (इन्द्राग्नी=विद्युद्भौतिकाग्नी) १ १०६ २ [भूरि-दावन्-पदयो समासेऽतिशायने तरप् । तत 'सुपा सुलुग्०' इत्या-कारादेश । तरप्प्रत्यये 'नाद् घस्य' अ० ८ २ १७ सूत्र-स्थेन 'भूरिदाव्नस्तुड् वक्तव्य' वा० सूत्रेण तुट् । भूरिदाव-त्तरा=बहुदातृतरौ नि० ६ ६]

भूरिदाव्नः बहुदातु (सर्वव्यापकस्येश्वरस्य) २ २७ १७ [भूरि-दावन्पदयो समास । दावन्=डुदाञ् दाने (जु०) धातोर्वनिप्]

भूरिदाः बहुदा (प्रजाजन) ४ ३२ २० बहूना दाता (दानशीलो मनुष्य) ४ ३२ १६ ['भूरि' इत्युपपदे डुदाञ् दाने (जु०) धातो कर्त्तरि क्विप्]

भूरिधारे भूरि बह्वचो धारा ययोस्ते (रोदसी=सूर्य-भूमी) ६ ७० २ (भूरि-धारापदयो समास । भूरिधारे बहुधारे नि० ५ २]

भूरिपोषिणः भूरि बहुविध पोष पुष्टिर्विद्यते येषा ते (विद्वज्जना) ३ ३ ६ (भूरि-पोषपदयो समासे मत्वर्थ इनि]

२ २७ भव नि० ६ ११ **भूयात्**=भवतु ५ ३३ भवेत् १ २३ **भूयाम**=समर्था भवेम प्र०—'शकि लिङ् च' अ० ३ ३ १७२ इति लिङ् 'बहुल छन्दसि' इति शपो लुक् च १ १७ ४ **भूयास्तम्**=भूयास्ताम् प्र०—अत्र व्यत्यय २ ७ **भूः**=भवे प्र०—अत्र लिडर्थे लुङ् ६ १२ भव प्र०—अत्राऽडभाव ७ १६ १० भवसि प्र०—अत्र लडर्थे लुङ् १ ६ १ २ भव प्र०—अत्र लोडर्थे लुङ् 'न माङ्योगे' इत्यडभाव १ ३३ ३ [भू सत्तायाम् (भ्वा०) धातोर्लुङ् । अडभावश्छान्दस । 'गातिस्थाघु०' इति सिचो लुक् । अन्यत्र शपो लुकि लोटि लटि लिङि लुङि च रूपाणि]

भूतन भवत ७ ५६ १० [भू सत्तायाम् (भ्वा०) धातोर्लोट् 'बहुल छन्दसी' ति शपो लुक् । तप्रत्ययस्य तनप् । भूतन भवत नि० ६ २२]

भूतम् उत्पन्न सर्व जगत् ५ १६ अतीतम् (वस्तुजातम्) ३४ ४ निष्पन्नम् (जगत्) १ १८५ ११ रूपम् १८ १४ पुष्कलम् (ऋत=प्राप्तु योग्य कारणम्) ३ ५४ ३ भूतस्थ (जगत्) को स० प्र० २८२, ३१ २ **भूतस्य**=उत्पन्नस्य कार्यरूपस्य (अ०—जगत) २३ १ उत्पन्न हुए सम्पूर्ण जगत् का स० वि० ४, १३ ४ **भूतानाम्**=पृथिव्यादीनाम् १४ २८ पृथिव्यादितत्त्वाना तत्कार्याणा लोकानाम् २० ३२ प्राण्यप्राणिनाम् १६ ५६ भूतान्युत्पन्नानि यावन्ति वस्तूनि तेषाम् २ २ **भूतानि**=पृथिव्यादीनि १४ २८ महान्ति तत्त्वानि १४ ३१ **भूताय**=उत्पन्नाना प्राणिना सुखाय १ ११ **भूतेभ्यः**=मनुष्यादिप्राणिभ्य ५ १२ [भू सत्तायाम् (भ्वा०) धातो क्त । भूतम् उदकनाम निघ० १ १२ अय वै (पृथिवी) लोको भूतम् तै० ३ ८ १८ ५ भूत ह प्रस्तोतैषा (विश्वसृजाम्) आसीत् तै० ३ १२ ६ ३ परिमित वै भूतमपरिमित भव्यम् ऐ० ४ ६ प्रजा वै भूतानि श० २ ४ २ १ तद् यानि तानि भूतानि ऋतवस्ते श० ६ १ ३ ८ देवा वै भूता मै० ३ ८ ५ भूत वाव रथन्तरम् तै० स० ३ १ ७ २]

भूतसाधनी भूताना साधिका (सत्क्रिया) २६ १ [भूत-साधनीपदयो समास । साधनी=साध समिद्धौ (स्वा०) धातोर्ल्युडन्तान् ङीप्]

भूतिम् ऐश्वर्यम् १ १६ १ १ **भूति**=ऐश्वर्यम् १८ १४ **भूत्यै**=ऐश्वर्याय ३० १७ ऐश्वर्यकारिकायै (स्त्रियै) १२ ६५ [भू सत्तायाम् (भ्वा०) धातो स्त्रिया क्तिन् । भूति—(प्राण) प्राण वा अनुप्रजापशवो भवन्ति जै० उ० २ ४ ६ योऽयम् (अग्नि) इदानी स भूति मै० ३ ८ ६]

भूत्वा भावयित्वा प्र०—अत्राऽन्तर्गतो ण्यर्थ २ १६ होकर स० वि० १४१, अथर्व० ३ ३० १ ७ [भू सत्तायाम् (भ्वा०) धातो क्त्वा]

भूत्वी भूत्वा ७ १०४ १८ [भू सत्तायाम् (भ्वा०) धातो क्त्वाप्रत्यये 'स्नात्व्यादयश्च' अ० ७ १ ४६ सूत्रेणेदन्तत्व निपात्यते]

भूना भूमना प्र०—अत्र पृषोदरादित्वान्मकारलोप. १७ २८ [बहुप्राति० भावे 'पृथ्वादिभ्य इमनिज्वा' इति इमनिच्प्रत्यये 'बहोर्लोपो भू च बहो' सूत्रेण भूमन् इति रूपम् । ततष्टाप्रत्यये मकारलोप]

भूमनः बहुरूपस्य (जगत) ६ ७१ २ **भूमना**=बहुत्वेन प्र०—अत्रोभयसञ्ज्ञान्यपीति भसञ्ज्ञाऽभावादल्लोपाऽभाव १ ११० २ [बहुप्राति० भावे इमनिच् । बहोश्च भूरादेश 'बहोर्लोपो भू च बहो' सूत्रेण । तत षष्ठ्येकवचनेऽल्लोपो न भवति छन्दसि]

भूमा भूमानि बहूनि (जन्मानि) १ ७० ३ भूमानि वस्तूनि १ १७३ ६ भूमिम् प्र०—अत्र पृषोदरादिना रूपसिद्धि ४ २२ ३ प्र०—अत्र 'सुपा सुलुक्०' इति डादेश १ ६२ ८ पृथिव्या ७ ५ ७ भूमौ ६ ५० ५ बहुविधम् (त्रिधातु=सर्वजगत्) ४४२ ४ भूम्ना (व्यवहारेण) २ ४ ७ व्यापक (हेड=अनादर) ६ ६२ ८ बहुत्वेन २४.२ [भूमन् इति पूर्वपदे व्याख्यातम् । अथवा भूमिप्राति० 'सुपा सुलुक्०' इति डादेश । पुष्टिर्वै भूमा तै० ३ ६ ८ ३ भूमा वै प्रजापति जै० २ २१८ भूमा वै सहस्रम् श० ३ ३ ३ ८ भूमा सूक्नम् जै० ३ २४१ श्रीर्वै भूमा श० ३ १ १ १२]

भूमि प्र०—अत्र सुपा सुलुक्०' इति विभक्तेर्लुक् २६ १६ **भूमिम्**=भूगोलम् भा०—भूम्याद्युपलक्षितम् (जगत्) ३१ १ सर्वाऽऽधारा क्षितिम् १ ५२ १२ पृथिवीम् १ ६४ ५ बहव पदार्था भवन्ति यस्या ताम् ३ ३० ६ पृथिवीराज्यम् ४ २६ २ भूमिमारभ्य प्रकृतिपर्यन्त सर्वं जगत् ऋ० भू० ११६, ३१ १ **भूमिः**=पृथिवीवत् १३ १८ भवन्ति भूतानि यस्या सा पृथिवी २३ ४६ जिसमे सब भूत (प्राणी) होते हैं वह (परमात्मा) स० प्र० १५, १३ १८ **भूमीः**=अध-ऊर्ध्व-मध्यस्था उत्तमाऽधममध्यमा क्षिती १ १०२ ८ **भूम्याम्**=पृथिव्याम् १६ ५४ [भू सत्तायाम् (भ्वा०) धातो 'भुव कित्' उ० ४ ४५ सूत्रेण मि । भूमि पृथिवीनाम निघ० १ १ अभूद् इव वा इदमिति तद्भूमेर्भूमित्वम् ता० २० १४ २ अभूद्वाऽइय

धातोर्व्यत्ययेनाऽऽत्मनेपदे शानच् 'छन्दस्युभयथा' इति शानच आर्धधातुकत्वाद् गुणः १ १२० ५

भृज्जाति भृज्जेत् ४ २४ ७ [भ्रस्ज पाके (तुदा०) धातोर्लेट्]

भृतम् धृतम् (हुत द्रव्यम्) २८ १२ [डुभृञ् धारण-पोषणयो (जु०) धातो क्त]

भृत्याम् भृत्येषु साध्वी सेनाम् १ ८४ १६. [भृत्य-प्राति० साध्वर्थे यत्। तत स्त्रियां टाप्। भृत्य =भिभर्त्ते क्यप्]

भृथे धारणे २ १४ ४ [डुभृञ् धारणपोषणयो (जु०) धातोरौणादिक क्थन् बहुलवचनात्]

भृमयः भ्रमणानि ३ ६२ १ **भृमिम्** =अनवस्थाम् भा०—अन्यायदशाम् २ ३४ १ भ्रमणशीलम् (विद्वज्जनम्) ७ ५६ २० **भृमि.** =यो नित्य भ्रमति स (विद्वान् मनुष्य) प्र०—'भ्रमे सम्प्रसारणं च' उ० ४ १२६ अनेन भ्रमु-धातोरिन् प्रत्यय सम्प्रसारणञ्च, स च कित् १ ३१ १६ भ्रमणशील (इन्द्र =राजा) ४ ३२ २ [भ्रमु चलने (भ्वा०) धातो 'भ्रमे सम्प्रसारणञ्च' उ० ४ १२१ सूत्रेण इन् सम्प्रसारणं च। भृमिर्भ्राम्यतेः नि० ६ २०]

भृमात् भ्रान्ते प्र०—अत्र वर्णव्यत्ययेन रेफस्य स्थाने ऋकारो 'वाच्छन्दसि' इति सम्प्रसारणं वा ७ १ २२ [भ्रमु चलने (भ्वा०) धातोर्घञर्थे क। वर्णव्यत्ययेन रेफस्य ऋकार]

भृष्टिमता भृज्जन्ति यया सा भृष्टि कान्तिरिव नीति सा प्रशस्ता विद्यते यस्मिँस्तेन १ १५ [भ्रस्ज पाके (तुदा०) धातो स्त्रियां क्तिन्। भृष्टिप्राति० प्रशसायां मतुप्]

भृष्टिः भृज्जन्ति परिपचन्ति यस्यां वृष्टौ सा १ ५६ ३ [भ्रस्ज पाके (तुदा०) धातो क्तिन् स्त्रियाम्]

भेकुरयः या भा दीप्ति कुर्वन्ति ता (अप्सरस =आकाशगता किरणा) प्र०—पृषोदरादिनाऽभीष्टसिद्धि १८ ४० [भेकुरयो नामेति भाकुरयो ह नामैते भाँ हि नक्षत्राणि कुर्वन्ति श० ९ ४ १ ९]

भेजाते भजत ७ ३९ १ **भेजिरे** =सेवन्ताम् ५ ५७ ५ सेवन्ते ७ १ ९ **भेजे** =भजति ७ १८ १६ [भज सेवायाम् (भ्वा०) धातोर्लिट्]

भेजानासः भजमाना (प्रजाजना) प्र०—अत्र वर्णव्यत्ययेनाऽस्यैत्वम् ४ २९ ५ [भज सेवायाम् (भ्वा०) धातो शानच्। वर्णव्यत्ययेन धातोरकारस्यैत्त्वम्]

भेत् भिनत्ति ७ १८ २० भिन्द्यात् १ ५९ ६ भिन्द्या प्र०—अत्र 'बहुल छन्दसि' इतीडभावो 'झलो झलि' इति सलोपो 'हल्ङ्याब्भ्यो०' इति सिब्लोपश्च १ १०४ ८ अलग कर, नष्ट कर आर्याभि० १ ४९, ऋ० १ ७ १९ ८ **भेदति** =भिनत्ति ५ ८६ १ [भिदिर् विदारणे (रुधा०) धातोर्लुङि छान्दस रूपम्। 'भेदति' प्रयोगे लटि व्यत्ययेन शप्। भेत् =अभिनत् नि० ७ २३]

भेम् बिभेति ७ १८ २० **भेम** =बिभयाम, भय करवाम प्र०—अत्र लोडर्थे लुङ् 'बहुल छन्दसि' इति च्लेर्लुक् 'छन्दस्युभयथा' इति लिङ आर्धधातुकसज्ञामाश्रित्य मसो ङित्वाऽभावाद् गुणश्च १ ११ २ **भेः** =बिभीहि प्र०—अत्र लोडर्थे लङ् 'बहुल छन्दसि' इति शपो लुक् १ २३ बिभीयाः, प्र०—अत्र लिङर्थे लुङ् ६ ३५ भय प्रापय १६ ४७ [ञिभी भये (जु०) धातोर्लुङि छान्दस रूपम्। अन्यत्र लडपि]

भेदम् विदारण भेदभाव वा ७ १८ १९ भेदनीय विदारणीयम् (शत्रुम्) ७ ३३ ३. **भेदस्य** =विदारणस्य द्वैधीभावस्य ७ १८ १८ [भिदिर् विदारणे (रुधा०) धातोर्घञ्]

भेदि भिद्यताम् ११ ६४ [भिदिर् विदारणे (रुधा०) धातोः कर्मणि लुङ्। अटोऽभावश्छान्दस]

भेषजम् शरीराऽन्त करणेन्द्रियाऽऽत्मना सर्वरोगाऽपहारकमौषधम् १ २३ २१ औषध-सेवनम् २१ ३२ रोगनिवारकम् (रुद्रम् =ईश्वरम्) ३ ५९ रोगनाशकव्यवहारम् १ २३ २१ रोगप्रणाशकमोषधिरूपम् (यज्ञ =सुखप्रद व्यवहारम्) भा०—पथ्यौषधिब्रह्मचर्य-सेवनम् १९ १२ अविद्यादिक्लेशनिवारकम् (ईश्वरम्) ३ ५९ चिकित्सकम् (जनम्) २१ ३१ चिकित्सनीयम् (जनम्) २१ ४० सर्वदु खनिवारकमौषधम् १ ८९.४ उदकम् प्र०—भेषजमित्युदकनाम निघ० १ १२, २१ ३३ **भेषजः** =भिषग् जन २ ३३ ७ **भेषजाय** =सुखाय भा०—सुखप्राप्तये प्र०—भेषजमिति सुखनाम निघ० ३ ६, ३९ १२ **भेषजैः** =जलैः २१ ३६ [भिषज् चिकित्सायाम् (कण्ड्वा०) धातोरच् कर्त्तरि। भेषजम् =भैषज्यानि नि० १० ३५ भेषजम् उदकनाम निघ० १ १२ भेषजम् सुखनाम निघ० ३ ६ यद् भेषज तदमृतम् गो० पू० ३ ४ शान्तिर्वै भेषजमाप कौ० ३ ६]

भेषजा भेषजानि २५ ४६ औषधानि प्र०—अत्र 'शेश्छन्दसि बहुलम्' इति लोप १.२३ २० रोगनिवारकाणि (वार्याणि =साधनानि) १.११४ ५ [भेषजमिति व्याख्यातम्। तत शेर्लोपश्छन्दसि]

भूरिभारः भूरि बहुर्भारो यस्मिन् स (काल) १ १६४ १३ [भूरि-भारपदयो समास]

भूरिम् विपुलम् (अद्रि=मेघम्) ४ १६ ८ बहुविधम् (राशि=समूहम्) ४ २० ८ [व्याख्यातम्]

भूरिरेतसा भूरीणि बहूनि रेतासि उदकानि यस्मिन्नन्तरिक्षे तेन ३ ३ ११ **भूरिरेताः**=बहुवीर्य (त्वष्टा=विद्युत्) २० ४४ [भूरि-रेतस्पदयो समास]

भूरिरेतसा भूरि बहुरेतो वीर्यमुदक वा याभ्या ते (द्यावापृथिवी=भूमिसूर्यौ) प्र०—रेत इत्युदकनाम निघ० १ १२, ६ ७० १ भूरि बहुरेत उदक ययोर्वा भूरीणि बहूनि रेतासि वीर्याणि याभ्या ते (द्यावापृथिवी=सूर्यभूमी) ३४ ४५ [भूरि-रेतस्पदयो समास । 'सुपा सुलुक्०' इति द्विवचनस्याकार । रेतस् उदकनाम निघ० १ १२ रेतस्=रि गतौ (तुदा०) धातो 'स्रुरिभ्या तुट् च' उ० ४ २०२ सूत्रेण असुन् तुडागमश्च]

भूरिवर्पसः बहूनि प्रशसनीयानि वर्पासि रूपाणि यासु ता (मात्रादयोऽध्यापिका) प्र०—वर्प इति रूपनाम निघ० ३ ७, १२ १० ८ [भूरि-वर्पस्पदयो समास । वर्पस् रूपनाम निघ० ३ ७ वर्पस्=वृङ् सभक्तौ (क्र्या०) धातो 'वृङ्शीङ्भ्या रूपस्वाङ्गयो पुट् च' उ० ४ २०१ सूत्रेण असुन् पुडागमश्च]

भूरिवर्पसा भूरि बहु च तद्वर्पश्च तेन (योगाभ्यासविज्ञानेन) सह ३ ३ ४ [भूरि-वर्पस्पदयो समास]

भूरिवाराः ये भूरि बहुविध सुख वृण्वन्ति ते (प्रजा ३ ५७ ४ ['भूरि' इत्युपपदे वृञ् वरणे (स्वा०) धातो 'कर्मण्यण्' इत्यण्]

भूरिश्रृङ्गाः भूरीणि श्रृङ्गाणि प्रकाशा यासु ता (गाव=रश्मय) प्र०—श्रृङ्गाणीति ज्वलतो नामसु पठितम् निघ० १ १७, ६ ३ भूरि बहु श्रृङ्गाणीवोत्कृष्टानि तेजासि येषु ते (गाव=किरणा) १ १५४ ६ [भूरि-श्रृङ्गपदयो समास । भूरिश्रृङ्गा बहुश्रृङ्गा । भूरीति बहुनो नामवेय प्रभवनीति सत श्रृङ्ग श्रयतेर्वा, श्रृणातेर्वा शरणायोद्गतमिति वा, शिरसो निर्गतमिति वा नि० २ ७]

भूर्णयः ये बिभ्रति ते (सारथय) १ ५५ ७ **भूर्णिम्**=धर्त्तारम् (अग्नि=वह्निम्) ३ ३ ५ **भूर्णि**=धर्त्ता (अग्नि=पावक) १ ६६ १ [डुभृञ् धारणपोषणयो (जु०) धातो 'घृणिपृश्निपार्ष्णिचूर्णिभूर्णय.' उ० ४ ५२. सूत्रेण नि]

भूर्यक्षाः भूरि बहून्यक्षीणि दर्शनानि येषान्ते (पूर्णविद्या परीक्षका जना) २ २७ ३ [भूरि-अक्षिपदयो समास]

भूवन् अभूवन्, भवन्तु प्र०—अत्राडभाव १ १३६ ८ भवेयु १ १८६ २ [भू सत्तायाम् (भ्वा०) धातोर्लुङ् । अडभावश्छान्दस]

भूष भूषयत्यलङ्करोति १ १५ ४ अलङ्कुरु ७ ७ **भूषतम्**=अलङ्कुरुतम् ३३ ८८ **भूषतः**=अलङ्कुरत ६ ६२ ४ **भूषति**=अलङ्करोति १ ४६ १२ **भूषथः**=अलङ्कुरुथ ३ ३२ ६. **भूषन्**=अलङ्कुर्य्यु १.१५१ ३ **भूषन्ति**=अलङ्कुर्वन्ति २५ ३६ **भूषसि**=अलङ्करोषि १ ३१ २ **भूषात्**=अलङ्कुर्य्यात् ४ १६ ११ [भूष अलङ्कारे (भ्वा०) धातोर्लोट् । अन्यत्र लटि लङि लेटि च रूपाणि]

भूषन् अलङ्कुर्वन् (सज्जन) १ १४० ६ [भूष अलङ्कारे (भ्वा०) धातो शतृ]

भृगवः विद्ययाऽविद्याया भर्जका निवारका (विद्वासो जना) प्र०—भृगव इति पदनाम निघ० ५ ५, १ १४३ ४ अविद्याऽधर्मनाशनशीला दुःखभर्जका वा (विद्वज्जना) १ १२७ ७ परिपक्वविज्ञाना मेधाविनो विद्वास (जना.) १ ५८ ६ परिपक्वज्ञाना (भा०—विद्वासो जना) ३३ ६ देदीप्यमाना शिल्पिन (जना) ४ १६ २० विद्वासो मनुष्या ६ १५ २ यज्ञविद्यावेत्तार (अ०—विद्वासो जना) प्र०—भृगव इति पदनामसु पठितत्वादत्र ज्ञानवत्त्व गृह्यते ३ १५ **भृगवे**=भर्जनाय परिपाचनाय १ ६०.१ **भृगुभिः**=परिपक्वविज्ञानैर्विपश्चिद्भि १७ ६६ **भृगुभ्यः**=भर्जमानेभ्य (पदार्थेभ्य) ३.५ १० **भृगूणाम्**=अविद्यादाहकानाम् (सज्जनानाम्) ३ २ ४ भृज्जन्ति यैस्तेषाम् (अङ्गिरसा=प्राणानाम्) १ १८ [भ्रस्ज पाके (तुदा०) धातो 'प्रथिम्रदिभ्रस्जा सम्प्रसारण सलोपश्च' उ० १ २८ सूत्रेण कु सम्प्रसारण सलोपश्च । भृगव पदनाम निघ० ५ ५ भृगु=अर्चिषि भृगु सम्बभूव भृगु भृज्यमानो न देहे नि० ३ १७ वायुरापश्चन्द्रमा इत्येते भृगव गो० पू० २ ८ तस्य (प्रजापते) यद् रेतस प्रथमम् उददीप्यत तदसावादित्योऽभवद् यद् द्वितीयमासीत्तद् भृगुरभवत् त वरुणो न्यगृह्णीत तस्मान् स भृगुर्वारुणि ऐ० ३ ३४]

भृगवाणम् परिपाककर्त्तारम् (अग्निम्) ४ ७ ४ **भृगवाणः**=भृज्जन्ति पदार्थविद्ययाऽनेकान् पदार्थानिति भृगवाणस्तद्वत् (गृहीतविद्या कुमार्य) १ ७१.४. **भृगवाणे**=यो भृगु परिपक्ववीर्यविद्वानिवाचरति तस्मिन् (घोषे=वाचि) प्र०—भृगु-शब्दादाचारे क्विप् ततो नाम-

(मरुत =शूरवीरा जना) ६ ६६ १० [भ्राजत्-जन्मन्-पदयो समास । भ्राजत्=भ्राजृ दीप्तौ (भ्वा०) धातो शतृ]

भ्राजत् प्रकाशमान होता हुआ (ब्रह्मचारी जन) स० वि० ८०, अथर्व० ११.५ २४ [भ्राजृ दीप्तौ (भ्वा०) धातो शतृ । व्यत्ययेन परस्मैपदम्]

भ्राजते प्रकाशते १ ५६ ३ **भ्राजन्ते**=प्रकाशन्ते ७ ५७ ३ प्रकाशयन्ते १ ८५ ४ [भ्राजृ दीप्तौ (भ्वा०) धातोर्लट्]

भ्राजदृष्टय: भ्राजन्त शोभमाना ऋष्टय आयुधानि येषान्ते भा०—प्रकाशिताऽऽत्मान (मरुत =मनुष्या:) ३४ १२ भ्राजन्त ऋष्टयो गतयो येषान्ते (मरुत =वायव) १ १६८ ४. प्रदीप्ताऽऽयुधा (धूतय =वीरा जना) १ ८७ ३ प्राप्तप्रकाशा (मरुत =विद्वज्जना) २ ३४ ५ भ्राजत् प्रकाशमाना विद्या ऋष्टिर्ज्ञान येषान्ते (कवय = विद्वासो जना) १ ३११ भ्राजन्त प्रदीप्ता ऋष्टयो व्यवहारप्रापिका कान्त्यो येभ्यस्ते (व्यवहारज्ञा पुमास) १ १६४ ११ भ्राजत्य प्रदीप्ता ऋष्टयो व्यवहारप्रापिका येभ्यस्ते (मरुत =वायव) १ ६४.११. भ्राजन्त ऋष्टयो विज्ञानानि येषान्ते (मरुत =मनुष्या) ५ ५५ १ **भ्राजदृष्टिम्**=भ्राजद् ऋष्टि दृष्टि सम्प्रेक्षण यस्य तम् (सूनु= पुत्रम्) ६ ६६ ११ [भ्राजद्-ऋष्टिपदयो समास । भ्राजत्= भ्राजृ दीप्तौ (भ्वा०) धातो शतृ । ऋष्टि:=ऋषी गतौ (तुदा०) धातो क्तिन्]

भ्राजन्त: अन्यान् प्रकाशयन्त. (विद्वासो जना) ५ १० ५ प्रकाशमाना (अग्नय =सूर्यविद्युत्प्रसिद्धास्त्रय) ८.४० [भ्राजृ दीप्तौ (भ्वा०) धातो शतृ । व्यत्ययेन परस्मैपदम्]

भ्राजन्ती प्रकाशमाना (उखा=पाकस्थाली) १ १६२ १५ [भ्राजृ दीप्तौ (भ्वा०) धातो शत्रन्तान् ङीप्]

भ्राजमान: प्रकाशमान (परमेश्वर) ४ ३२ [भ्राजृ दीप्ती (भ्वा०) धातो शानच्]

भ्राजसा दीप्त्या ३५ ३ तेजसा १० १७ [भ्राजृ दीप्तौ (भ्वा०) धातोरौणा० असुन् । भ्राजसा भ्राजमाना भ्राजस्वन्] नि० ३ १५]

भ्राजिष्ठ हे अतिशयेन सुशोभित (सूर्य=गृहपते राजन्) ८ ४० [भ्राजृ दीप्ती (भ्वा०) धातो कर्त्तरि तृजन्ताद् अतिशायन इष्ठन् । 'तुरिष्ठेमेयस्सु' इति तृचो लोप]

भ्रातरम् सहोदरम् ५ ३४ ४ प्रिय वन्धुमिव (वरुण=श्रेष्ठ जनम्) ४.१.२ भाई को स० वि० १४१, अथर्व० ३.३० ३ **भ्रातर:**=वन्धव १ १७० २ **भ्रात:**= बन्धो (विद्वज्जन) १ १६१ **भ्राता**=वन्धु ६ ९ वन्धु-वद्वर्त्तमान (शिल्पी जन) १ १६४ १ भाई स० वि० १४१, अथर्व० ३ ३०.३ **भ्रात्रा**=वन्धुनेव वर्त्तमानेन ४.१० ८ [डुभृञ् धारणपोषणयो (जु०) धातोस्तृच्-प्रत्यये 'नप्तृनेष्टृत्वष्टृ०' उ० २ ९५ सूत्रेण रूपसिद्धि । भ्राता भरतेर्हरतिकर्मणो हरते भाग भर्तव्यो भवतीति वा नि० ४ २६]

भ्रातरा बन्धू ६ ५९ २. [भ्रातृप्राति० प्रथमाद्विवचनस्य आकारादेश]

भ्रातृव्यस्य द्विषत शत्रो. १ १७ [भ्रातृप्राति० 'व्यन् सपत्ने' अ० ४ १ १४५ सूत्रेण व्यन्]

भ्रातेव सनाभिरिव १ ६५ ४ [भ्राता-इवपदयो समास]

भ्रात्रम् भ्रातृ-भावम् ४ २५ २ भ्रातुरिद कर्म तद्वद्-वर्त्तमानम् (सख्यम्) ४ २३.६ **भ्रात्राय**=वन्धुभावाय २ १ ९ [भ्रातृ-प्राति० 'तस्येदम्' इत्यर्थेऽण् । भावे वा अण्]

भ्रियन्ते ध्रियन्ते १ १४ ४ **भ्रियाते**=धरेतम् ५ ३१ १२ **भ्रियासम्**=धारयेयम् २ ८. [डुभृञ् धारणपोषणयो (जु०) धातो कर्मणि लट् । 'भ्रियासम्' प्रयोगे लिङ्]

भ्रीणन्ति भर्त्सयन्ति २ २८ ७. [भ्रीणातीति क्रुध्यतिकर्मा निघ० २ १२]

भ्रुवि नेत्रललाटयोर्मध्ये १९ ९१ **भ्रूभ्याम्**= नेत्रगोलकोर्ध्वाऽवयवाभ्याम् २५ १ [भ्रमु चलने (भ्वा०) धातो 'भ्रमेश्च डू' उ० २ ६८ सूत्रेण डू]

भ्रेषते प्राप्नोति ७ २० ६ [भ्रेषृ गतौ (भ्वा०) धातोर्लट् । व्यत्ययेनात्मनेपदम् । भ्रेषतीति क्रुध्यतिकर्मा निघ० २ १२]

मक्ष: मक्षिका ७ ३२ २ [मश शब्दे (भ्वा०) धातोर् औणा० स]

मक्ष: मक्षिराज ४ ४५ ४ [मशशब्दे रोषकृते च (भ्वा०) धातोर् औणा० बाहु० स]

मक्षिका मशति शब्दयति या सा मक्षिका प्र०—अत्र 'हनिमशिभ्या सिकन्' उ० ४ १५४ इति मशधातो सिकन् १ ११९ ६ [मश शब्दे रोषकृते च (भ्वा०) धातो 'हनिमशिभ्या सिकन्' उ० ४ १५४ सूत्रेण सिकन् । तत स्त्रिया टाप्]

भेषजानि औषधानि ६ ७४ ३ [भिषज् चिकित्सायाम् (कण्ड्वा०) धातो सञ्ज्ञाया घ]

भेषजी औषधानीव रोगनिवारिका, अधिविनाशिनी (तनू =धर्मनीति) १६ ४९ [भेषजप्राति० स्त्रिया ङीप्]

भेषजेभिः रोगाऽपहन्तृभिर्वैद्यै १ १५७.६ [भेपजमिति व्याख्यातम्। ततो 'बहुल छन्दसी' ति भिस ऐसादेशो न भवति]

भैषज्येन भिपजा वैद्याना भावेन २० ३ भिपजामोषधीना भावेन २० ३ सर्वरोगनिवारकेण (औषधिसमूहेन) ऋ० भू० २१८, २० ३ [भिषज्प्राति० भावे ष्यञ्। भिषज्=भिपज् चिकित्सायाम् (कण्ड्वा०) धातो क्विप्]

भोगैः सुखभोगै २९ ५१ [भुज पालनाभ्यवहारयो (रुधा०) धातो 'हलश्च' इति सञ्ज्ञाया घञ्]

भोग्घनः ये भोज्यन्ते ते भोजो, हन्यन्ते ते हन, भोजश्च ते हनो भोग्घन (रुद्रा =स्पर्शवन्तो वायव) ९ ६४ ३ [भोज्-हन्पदयो समास]

भोजते भुङ्क्ते प्र०—अत्र विकरणव्यत्ययेन शप् १.७२ ८ [भुज पालनाभ्यवहारयो (रुधा०) धातोर्लट्। व्यत्ययेन शप्। भोजते कृव्यतिकर्मा निघ० २ १२]

भोजन पालक (परमेश्वर) १ ४४ ५ **भोजनम्**=पालन भोक्तव्य वा ५ ८२ १ भक्षणम् ३ ४४ ३ भक्षणीय वस्तु २ १३ ४ भोग्यमानन्दम् १ ८३ ४ पालनमन्नादिकं वा ५ ३४ ७ **भोजनानि**=भोक्तव्यानि पालनानि वा ७ १९ ६ पालनव्यवहाराऽन्नानि वा १९ ६ भोजनवस्तूनि १ १०४ ८ प्रजापालनानि भोक्तव्यान्यन्नानि वा ५ ४ ५ पालनाऽर्थान्यन्नानि २३ ३८ भोगो को आर्याभि० १ ४९, ऋ०-१ ७ १९ ८ **भोजनाय**=पालनायाऽभ्यवहरणाय वा ३ ३० १४ [भुज पालनाभ्यवहारयो (रुधा०) धातोर्ल्युट्। 'कृत्यल्युटो बहुलम्' इति कर्त्तर्यपि ल्युट्। भोजनमिति धननाम निघ० २ १० भोजनानीति वा धनानीति वा नि० ४ ५]

भोजना भोजनानि पालनानि भोक्तव्यानि (वस्तूनि) वा ७ १८ १५ पालनान्यन्नानि वा ४ ३६.८ [भोजनमिति व्याख्यातम्। तत शेर्लोपश्छन्दसि]

भोजम् पालकम् (इन्द्र=शत्रुविनाशक राजानम्) ६ २३ ९ भोक्तारम् (विद्वास जनम्) २ १७ ८ भोक्तु योग्यम् (पदार्थम्) ४ ४५ ७ **भोजस्य**=पालनस्य भोजनस्य वा ७ १८ २१ **भोजान्**=पालकान् (जनान्) ५ ५३ १६ **भोजाः**=भोक्तार प्रजापालका (वीरा = व्याप्तयुद्धविद्या जना) ३ ५३ ७ [भुज पालनाभ्यवहारयो (रुधा०) धातोरच्। औणादिको वा अन्]

भोजम् भुञ्जे प्र०—अत्र विकरणव्यत्ययेन शब्डोऽभावश्च २ २८ ९ [भुज पालनाभ्यवहारयो (रुधा०) धातोर्लङ्। व्यत्ययेन शप्। अडभावश्च]

भोजसे पालनाय भोगाय वा १ ५५ ३ [भुज पालनाभ्यवहारयो (रुधा०) धातोरसुन्]

भोज्या भोक्तु योग्यानि (वस्तूनि) १ १२६ ६ पालयितु योग्यानि (वस्तूनि) १ १२८ ५ [भुज पालनाभ्यवहारयो (रुधा०) धातोर्ण्यत्। ततश्शेर्लोपश्छन्दसि]

भौमाः भूमिदेवताका (कृष्णा पश्वादय) २४ १० [भूमि-प्राति० 'सास्य देवता' इत्यर्थेऽण्]

भौमी पृथिवीदेवताका (श्वावित्=सेधा पशुविशेष) २४ ३३ [भूमि-प्राति० 'सास्य देवता' इत्यर्थेऽणन्तान् ङीप् स्त्रियाम्]

भौवनाय भुवने भवाय (सूर्याय) २२ ३२ भुवनेषु प्रभवाय (सूर्याय) ९ २० भुवनानामय सम्बन्धी तस्मै (जनाय) १८ २८ [भुवन-प्राति० भवार्थे 'तस्येदम्' इत्यर्थे वा अण्। ततश्चतुर्थी]

भौवायनः भुवेन सता रूपेण कारणेन निर्वृत्त. (प्राण) १३ ५४ [भुव-प्राति० निर्वृत्तार्थे ढक् छान्दस। भुव =भू सत्तायाम् (भ्वा०) धातोर्घञर्थे क]

भ्रजः भ्राजते प्रकाशते योऽग्नि स १५ ५ दीप्तम् (छन्द) प्र०—अत्र वर्णव्यत्ययेन ह्रस्वत्वम् १५ ४ [भ्राजृ दीप्तौ (भ्वा०) धातोरच् कर्त्तरि। वर्णव्यत्ययेन धातोरुपधाया ह्रस्व। अग्निर्वै भ्रजश्छन्द श० ८ ५ २ ५]

भ्रमः भ्रमणम् ६ ६ ४ [भ्रमु चलने (भ्वा०) धातोर्घञर्थे क]

भ्रमासः भ्रमणशीला वीरा (जना) १३ १० भ्रमणानि ४ ४ २ [भ्रम इति व्याख्यातम्। ततो जसोऽसुक्]

भ्रशत् नष्ट स्यात् १२ ११ [भ्रशु अध पतने (दिवा०) धातोर्लेट्। व्यत्ययेन श]

भ्राज यो भ्राजते प्रकाशते तत्सम्बुद्धौ (मित्र=विद्वन् सभाध्यक्ष) ४ २७ **भ्राजम्**=प्रकाशम् ४ १७ **भ्राजाय**=प्रकाशकाय (सूर्याय=प्राणाय सवित्रे वा) ८ ४१ जीवनादिप्रकाशाय ८ ४० सर्वत्र प्रकाशमानाय (सूर्याय=जगदीश्वराय) ८ ४० [भ्राजृ दीप्तौ (भ्वा०) धातो कर्त्तरि अच्। भावे घञ् वा]

भ्राजज्जन्मानः भ्राजद् देदीप्यमान जन्म येषान्ते

१ ८२ ३ पूजितैश्वर्य (राजन्) ५ ३१.६ धनाऽऽढ्य (राजन्) ५ ३६.४ परमधनप्रापक (धार्मिक मनुष्य) १ ८४ १६. परमपूजितैश्वर्येश्वर ७ ४१ ४ प्रशस्तवल (सेनापते) १.१०२ ४ प्रकृष्टधन (मनुष्य) २ ३६.५ परमधनवन् (अग्ने=विद्वज्जन) १ ५८ ६ ईश्वर इव समृद्ध (इन्द्र=सभापते राजन्) ६ २७ हे परम पूजित असख्य धन देने वाले (ईश्वर) स० वि० १५६, ७ ४१ ४ सभाध्यक्ष १ ३३ १५. **मघवा**=उत्तमधनसम्बन्धी (सभेश) १.१७४ ७ न्यायार्जितधनत्वात् पूजनीय (इन्द्र =राजा) ४ २० २ वहुपूजितधन (शूरवीरो जन) ४ २७.५ प्रशसितधनवान् (जन) ५ ३४ ३ बहुधन (मनुष्य) ५ ३४ २ मघ पूज्य वहुविध प्रकाशो धन विद्यते यस्मिन् स (सेनापति) १.३२ १३ वह्वैश्वर्ययुक्त (इन्द्र = सूर्यवद्राजा) ४ १७ १६ भूयासि मघानि धनानि विद्यन्ते यस्य स (वज्री=सेनापति.) १ १०३ ४ सूर्य १ १०३ २ प्रशस्तविद्याधनवान् (अध्यापक उपदेशको वा) १.५५ ४. मघ परम विज्ञानादिधन विद्यते यस्मिन् स (परमेश्वर) ऋ० भू० १४६, २ १० **मघवान्**=परमपूजितधनयुक्त (इन्द्र =राजा) ४ १६ १ **मघवानम्**=परमपूजितवहुधनम् (राजानम्) ४ ३१ ७ परमपूजितधनवन्तम् (इन्द्र=जीवात्मानम्) ७ २६ १ धर्म्येण बहुजातधनम् (गुरुजनम्) ७ २६ २ प्रशस्तविद्याधनवन्तम् (इन्द्रम्=अध्यापकम्) ७.२६ ५ वहुधनैश्वर्योपपन्नम् (इन्द्र=राजानम्) ७ ३० ५ **मघवानः**=मघ परमपूज्य विद्याधन विद्यते येषा विदुषा राजा वा ते १ ६८ ३ मघानि वहूनि धनानि विद्यन्ते येष्वैश्वर्ययोगेषु ते (जना) प्र०—अत्र भूम्न्यर्थे मतुप् मघमिति धननामधेयम् महतेर्दानकर्मरण नि० १ ७, २ १० नित्य धनाढ्या (राजप्रजाजना) ७ २१ १०. प्रशस्तधना (विद्वासो जना) १.७७ ४ **मघोनः**=प्रशस्तधनयुक्तस्य (सर्वव्यापकस्येश्वरस्य) २ २७ १७ परमधनयुक्तान् (मनुष्यान्) ५ २७.१ **मघोनाम्**=वह्वैश्वर्ययुक्तानाम् (चर्षणीनाम्=मनुष्यानाम्) ५.३८.४ वहुधनवताम् (नृणाम्) ५ ८२ ५ **मघोनोः**=वहुधनयुक्तयो (सेनापत्यध्यक्षयो) ५ ८६ ३ [मघमिति व्याख्यातम्। ततो भूम्न्यर्थे प्रशसाया वा मतुप्। 'मघोन' इत्यादिषु भसज्ञके प्रत्यये 'श्वयुवमघोनामतद्धिते' अ० ६ ४ १३३ सूत्रेण सम्प्रसारणम् इन्द्रो वै मघवान् श० ४ १ २ १५ स उ एव मख स विष्णु। तत इन्द्रो मखवान् अभवत्, मखवान् ह वै त मघवानित्याचक्षते परोक्षम् श० १४ १ १.१३]

मघवाना पूजितधनवन्तौ (प्रजाराजजनौ) २ २४ १२ वहुधनयुक्तौ राजप्रजाजनौ ४ २८ ५ [मघवत्-प्राति० प्रथमा द्विवचनस्याकारश्छन्दसि। मघवत्=मघप्राति० भूम्न्यर्थे प्रशसायामर्थे मतुप्]

मघेव यथा धनानि तथा १ १०४ ५. [मघा-इवपदयो समास। मघा=मघप्राति० शेर्लोपश्छन्दसि]

मघोनि! प्रशसितधनकारिके (विदुषि स्त्रि) ४.५५ ६ परमधनयुक्ते (स्त्रि) ३ ६१ १ **मघोनी**=प्रशस्तानि मघानि पूज्यानि धनानि प्राप्तानि यस्या सा (उषा) १.११३ ५ परमपूजितधनयुक्ता (राजनीति) २.११.२१ वहुधनादियुक्ता (दक्षिणा) २ २० ६ पूजनीया विद्या प्रतिष्ठा च २ १६ ६ प्रशस्तानि मघानि पूज्यानि धनानि यस्या सन्ति सा (उषा) १ ४८.८ प्रशस्तधनप्राप्तिनिमित्ता (उषा) १ ११३ १३ **मघोनीः**=सत्कृतधनाना स्त्रिय ४ ५१ ३ [मघप्राति० प्रशसाया मतुवन्तात् स्त्रिया डीपि 'श्वयुवमघोनामतद्धिते' इति सम्प्रसारणम्। मघोनी=मघवती। मघमिति धननामधेय महतेर्दानकर्मण नि० १ ६.]

मघोनी वहुधननिमित्ते (योषणे=विदुष्यौ स्त्रियौ) ७ २.६ [मघोनीति व्याख्यातम्। ततो द्विवचनस्य पूर्वसवर्णदीर्घश्छन्दसि]

मङ्गलीः शुभगुणयुक्त स्त्री लोग स० वि० १३४, १० ८५ ४३ [मगि गत्यर्थे (भ्वा०) धातो 'मङ्गेरलच्' उ० ५ ७०. सूत्रेण अलच्। तत स्त्रिया गौरादित्वान् ङीष्। मङ्गल गिरतेर्गृणात्यर्थे गिरत्यनर्थानिति वा। अङ्गलमङ्गवत्। मज्जयति पापकमिति नैरुक्ता। मा गच्छत्विति वा मा च त्वा काचिदभिभूति सर्वतो विदत् नि० ६ ३]

मज्जभ्यः अस्थ्यन्तर्गतेभ्यो धातुभ्य ३६ १०. तदन्तर्गतेभ्य (धातुभ्य) ३६.१.० [टुमस्जो शुद्धौ (तुदा०) धातो 'श्वनुक्षन्पूषन्०' उ० १ १५६ सूत्रेण कनिन्। हारिद्र इव हि मज्जा श० १३ ४ ४ ८ षष्टिश्च ह वै त्रीणि च शतानि पुरुषस्य मज्जान श० १० ५ ४ १२ मज्जा यजु श० ८ १ ४.५. मज्जानो ज्योतिस्तद्धि यजुष्मतीना रूपम् श० १० २ ६ १८ मज्जान स्वरूपम् ऐ० आ० ३ २ १]

मज्मना शुद्धि-धारण-क्षेपणाऽऽख्येन बलेन प्र०—अत्र मस्जधातोरौणादिको मनिन्प्रत्ययो वाहुलकात् सकारलोपश्च १.६४ २ अनन्तेन बलेन १ १४३ ४ स्वकीयेन शुद्धेन वलेन १ ५१ १० [टुमस्जो शुद्धौ (तुदा०) धातोरौणादिको मनिन्। मज्मना बलनाम निघ० २ ६]

मणिकारम् यो मणीन् करोति तम् (शिल्पिजनम्)

मक्षु शीघ्रम् १ ६० ५ सद्य: ७ ५६ १५ त्वरितगत्या प्र०—मक्षिवति क्षिप्रनामसु पठितम् निघ० २ १५, १ २ ६ [मक्षु क्षिप्रनाम निघ० २ १५]

मक्षूजवस्तमा सद्योऽतिशयेन वेगयुक्ता (ऊति.= रक्षाद्या क्रिया) ६ ४५ १४ [मक्षु-जवपदयो समासेऽतिशायने तमप्]

मक्षू मक्षू शीघ्र शीघ्रम् प्र०—अत्र निपातस्य च इति दीर्घ ३ ३१ २० [मक्षु क्षिप्रनाम निघ० २ १५ तस्य 'निपातस्ये' ति दीर्घ । ततो वीप्साया द्वित्वम्]

मखस्य प्राप्तस्य सङ्गतस्य व्यवहारस्य ३ ३४ २ सुखवर्द्धकस्य (पुरुषस्य) ३७ ७ साङ्गोपाङ्गस्य योगस्य ज्ञानस्य ३७ ८ प्रियाचरणाख्यस्य व्यवहारस्य विद्यावृद्धि-करस्य व्यवहारस्य ३७ ६ सुखरक्षणस्य धर्मरक्षणस्य सुखवर्धकस्य (पुरुषस्य) ३७ ७ ब्रह्मचर्याख्यस्य मननाख्यस्य गृहस्थसद्व्यवहारसिद्धे ३७ ८ शोधकस्य (यज्ञस्य) तत्त्ववोधस्य ३७ ९ भा०—सर्वोपकाराऽऽख्यस्य यज्ञस्य ३७ १० ऐश्वर्यप्रदस्य (व्यवहारस्य) ३७ ८ विद्यावृद्धि-करस्य व्यवहारस्य ३७ ६ सङ्गतिकरणस्य ३७ ५ **मख:**=यज्ञ इव सुखकर्त्ता (सविता=राजा) ६ ७१ १ पालनशिल्पाख्यो यज्ञ प्र०—मख इति यज्ञनामसु पठितम् निघ० ३ १७, १ ६ ८ यज्ञवद्वर्त्तमान (विद्वान्) १ १३८ १ प्राप्तविद्यो जन १ १३८ १ **मखाय**=सत्काराऽऽख्याय (यज्ञाय) ३७ ५ शिल्पयज्ञविधानाय विज्ञानोद्भावनाय धार्मिकाणा सत्कारनिमित्ताय (यज्ञाय) ३७ ६ विद्यावृद्धये सर्वसुखकारकाय धर्माचरणनिमित्ताय ३७ ७ विद्याग्रहणा-ऽनुष्ठानाय गार्हस्थ्यव्यवहाराय, गृहस्थकार्यसङ्गतिकरणाय, योगाभ्यासाय, ऐश्वर्यप्रदाय (यज्ञाय) ३७ ८ वायुशुद्धिकर-णाय, पृथिव्यादिविज्ञानाय, उपयोगाय (यज्ञाय) ३७ ९ विदुषा सत्काराय (यज्ञाय) ३७ १० न्यायानुष्ठानाय ३७ ११ भा०—सर्वसङ्गत्यधिष्ठानाय यज्ञाय ३७ ३ भा०—उत्तमशिक्षार्थं ३७.४ **मखा:**=यज्ञा इवोपकर्त्तार (वीरयोद्धजना) १ ११९ ३ यष्टुमर्हा यज्ञा १ ६४ ११ **मखेभ्य:**=सङ्ग्रामादिभ्य सङ्गन्तव्येभ्य ६ ६६ ९ [मख इति यज्ञनाम निघ० ३ १७ यज्ञो वै मख तै० ३ २ ८ ३ मख इत्येतद्यज्ञनामधेय छिद्रप्रतिषेधसामर्थ्यात्, छिद्र खमित्युक्त तस्य मेति प्रतिषेध । मा यज्ञ छिद्र करिष्यतीति गो० उ० २ ५ स उ एव मख स विष्णु श० १४ १ १ १३ एष वै मखो य एष (सूर्य) तपति श० १४ १.३ ५]

मखस्यन् आत्मनो मख यज्ञमिच्छन् (अर्य =मनुष्य) ३ ३१ ७ [मखमिति व्याख्यातम् । तत आत्मन इच्छाया क्यजन्ताच्छतृ । क्यचि 'सुग्वक्तव्य' अ० ७ १ ५१. वा० सूत्रेण सुक्]

मघत्तये धनदानाय ५ ७९ ५ पूजितधनप्राप्तये ४ ३७ ८ [मघोपपदे डुदाञ् दाने (जु०) धातो क्तिन् । 'वा छन्दसि' इत्यनुपसर्गादपि 'अच उपसर्गात्त' इति धातो-स्तकारादेश]

मघम् प्रकृष्ट विद्यासुवर्णादिधनम् १ ११ ३ महदै-श्वर्यम् १ १५१.९ परमपूजनीय धनम् ३ १३ ३ परम-पूज्यम् (बलम्) २० ६८ पूज्यम् (वसु) २० ६७ **मघस्य**=धनस्य ४ २० ७ **मघानि**=पूजितव्यानि धनानि ३ १९ १ विद्याधनादीनि ७ १९ १० **मघै:**= धनै ५ ७९ ४ [मघम् धननाम निघ २ १० मघमिति धननामधेय महतेर्दानिकर्मण नि० १ ७ मघा=धनानि नि० ५ १६]

मघा पूजनीयानि (रायासि=धनानि) ७ १६ १० मघानि धनानि ५ ३२ १२ [मघमिति व्याख्यातम् । ततश्शेर्लोपश्छन्दसि]

मघवत्त्वस्य बहुधनयुक्ताना भावस्य ६ २७ ३ [मघम् इति व्याख्यातम् । ततो भूम्न्यर्थे मतुवन्ताद् भावे त्व]

मघवत्सु प्रशस्तधनयुक्तेषु राजसु १.९४ १४ प्रशस्त-पूज्यधनयुक्तेषु स्थानेषु व्यवहारेषु विद्वत्सु वा १ ९३ १२ बहुधनयुक्तेषु प्रजाजनेषु ६ ८ ६ बहुधनेषु १ १४० १० पूजितेषु धनेषु १ १२३ ३ **मघवद्भि:**=बहुपूजितधनयुक्तै (नृभि.= नेतृभिर्जनै)४ १६ १९ **मघवद्भ्य:**=बहुधनेभ्य (जनेभ्य) ६ ४६ ९ विद्यादिधनयुक्तेभ्य (विद्वज्जनेभ्य) १ ५८ ९ प्रशसितधनेभ्य (धनाढ्यजनेभ्य) १ १२४ १० पूजितधनेभ्य (मनुष्येभ्य) २ ३३ १४ **मघवन्**=बहुधनयुक्त भा०— अखिलैश्वर्य (ईश्वर) ३३ ७९ परमपूजितधनयुक्त (इन्द्र= अध्यापकोपदेशक गृहपते वा) ८ १५ प्रशसितधनयुक्त (इन्द्र=पते) ८ २ हे सर्वशक्तिमन् (ईश्वर) आर्याभि० १ ४९ ऋ० १ ७ १९ ८ पूजनीयवित्त (राजन्) ३ ३१ १९ पूजनीयविद्याध्यापक (विद्वज्जन) ७ १९ ९ परमोत्कृष्टधन-युक्तेश्वर धनप्राप्तिहेतु (सूर्य) वा ३ ५२ प्रशस्तानि मघानि धनानि विद्यन्ते यस्य तत्सम्बुद्धौ (सेनापते) १७ ४२ बह्वैश्वर्य (इन्द्र=राजन्) ४ १६ १९ प्रशस्तगुण प्रापक (इन्द्र=सेनाद्यध्यक्ष) १ ८२ १ प्रशस्तगुणधनप्रापक (इन्द्र)

स्यन्। ततो जगोऽगुरु। मत्स्या=मत्सो उदके मन्दन्ते, मादयन्तेऽन्योन्य भक्षणायेति वा नि० ६ २७]

मथायति मन्नाति प्र०—अत्र 'छन्दसि शायजपि' इति शायच् १ १४१.३. [मन्थ विलोडने (क्रया०) धातो-र्लट्। 'छन्दसि शायजपि' इति हन शायजादेश]

मथायन् मन्थन कुर्वन् (सूर्य इव राजा) ५ ३० ८ [मन्थ विलोडने (क्रया०) धातो. शानचि छन्दसि हन शायजादेश]

मथितः विलोडित (सर्वाऽऽनन्दयाऽग्नि) ६.४८ ५. [मन्थ विलोडने (क्रया०) धातो क्त.]

मथीत् मथति १.७१ ४ मन्नाति १.१४८ १. [मन्थ विलोडने (क्रया०) धातोर्लुङ्। अडभावश्छान्दस । धातोर्न-कारस्य लोपश्छान्दस]

मथीः यो दुष्टान् मन्नाति स (विद्वज्जन) [मन्थ विलोडने (क्रया०) धातोरौणादिक इन् लिच्च]

मथ्नन्तः मन्थन कुर्वन्त (विद्वांसो जना.) १ १२७.७. [मन्थ विलोडने (क्रया०) धातो शतृ]

मथ्ना मथ्नानि मथितानि (रजांसि=लोकान्) १ १८१ ५ [मथिन्-प्राति० छान्दस रूपम्]

मथ्यमान. विलोड्यमान (विद्वान् जन) ५.११.६ सघृष्यमाण (अग्नि.) १५ २८. [मन्थ विलोडने (क्रया०) धातो कर्मणि शानच्]

मदच्युतम् मदा हर्षादयश्च्युता यस्मात्तम् (इन्द्र=सभेशम्) १ ५१ २ यो मद हर्षं च्योतति तम् (शत्रुनिरो-धक मनुष्यम्) १ ८५ ७ **मदच्युत**=ये मदान् च्यवन्ते ते (अत्यान्=अश्वान्) १ १२६ ४ [मद-च्युतपदयो समास]

मदच्युता यौ मदान् हर्षान् च्यवेते प्राप्नुतस्तौ (हरी=अश्वौ) १ ८१ ३ [मदच्युतप्राति० प्रथमा-द्विवचनस्याकारादेश । मदच्युत इति व्याख्यातम्]

मदत आनन्दत १ १८२ १ **मदताम्**=आनन्दतु १ १२१ ११ **मदति**=आनन्दति ४ ३८ ३ **मदत**=आनन्दत ४ ३४ ११ आनन्दय ५ ५४ १० **मदन्**=आनन्दयन्ति ६ १८ १४ **मदन्ति**=आनन्दयन्ति १ १५४ ५. हर्षयन्ति ३ ६ ८ मदन्ते कामयन्ते प्र०—अत्र 'वाच्छन्दसि सर्वे विधयो भवन्ति' इति नुमभावो व्यत्ययेन परस्मैपदञ्च १ १०६ ३ प्राप्नुवन्ति ७ ४६ ४ हृष्यन्ति ३ ४.७ परमा-नन्द मे रहते हैं आर्याभि० २ ४०, १७ २६ **मदन्तु**=आनन्दयन्तु १ १३६ ६ हर्षन्तु हृष्यन्तु वा ६ ७५ १८, हर्षयन्तु ९ ११ ११. [illegible] १०.८८. **मदय:**—हर्षय १ १०८ ७ [मदी हर्षे (दिवा०) धातोर्लेट्। [illegible] व्यत्ययेन शप्। [illegible] ['मदाम्'] प्रयोगे [illegible] । [illegible] (भ्वा०) धातो [illegible] । [illegible] मदी हर्षे [illegible] नि० ३.१४. [illegible] नि० १० २५]

मदन्तम् [illegible] ५ ३० ४ [illegible] **मदन्तः**=आनन्दन्त [illegible] ४.३३ १० [illegible] ३ ५४.२० [illegible] १६ ८४, [illegible] १.१८५.६. [illegible] ३.७३.१०. [illegible] ८.५०.२. [मदी हर्षे (दिवा०) धातो शतृ । [illegible] । [illegible] (भ्वा०) धातो. [illegible] । व्यत्ययेन [illegible]]

मदन्ता [illegible] विद्वांसौ ([illegible]) ३ ५३ १ [मदन्तौ [illegible] । [illegible] द्विवचन [illegible]]

मदन्ती आनन्दयन्तौ (मित्रौ) ३ ५४.२. [मदी हर्षे (दिवा०) धातो शत्रन्तात् ङीप् । व्यत्ययेन शप्]

मदन्ती हर्षन्ती (पृथिवी=भूमि) ५.५६.३. **मदन्तीः**=आनन्दन्ती (देवी=विदुष्य स्त्रिय.) ८ ४७ ३ [मदी हर्षे (दिवा०) धातो शत्रन्तात् ङीप् । विकरण-व्यत्ययेन शप् । [illegible] मं० ३ ७ १०]

मदपती आनन्दस्य पालकौ (सभासेनेशौ) ६ ६६.३ [मद-पतिपदयो. समास.]

मदम् आनन्दम् ४ ३३ ११. आनन्दकरम् (सोमम्=ऐश्वर्यम्) ४.२६.६ हर्षम् १ ८४ ४ हर्षकम् [सोमम्=ओषधिरस प्रेरणाख्यं व्यवहार वा) २० ६३. **मदः**=मदन्ति हर्षन्ति येनोषधेन वेनाऽसौ (पथ्योषधिसेवनम्) १ १७५ १ ओषधिसार १ १७५ २ आनन्दित (राजा) ६ २४.१ आह्लादकारक (सभाध्यक्ष) १.८० २ हर्षकर (इन्द्र=सूर्य) १ ४.२ आनन्दकर (सोम=ऐश्वर्यसमूह) ६ ४४.२ अतिहर्ष ६ १६ ७ आनन्दद (सोम=ऐश्वर्यम्) ६ ४४ १ **मदानाम्**=हर्षाणाम् २७ ४० **मदाय**=आनन्दप्रदाय (क्रत्वे=प्रज्ञानाय) ६ ४०.२ हर्षकरणाय १ ८१ १ रोगनिवृत्तेरानन्दाय १ ११७ १ नित्यानन्दाय ४.३५ ६ **मदाः**=आनन्दयुक्ता शुभटा ७ २३ ५

३०७ ['मणि' इत्युपपदे करोतेरण्]

मणिग्रीवम् मणयो ग्रीवाया यस्य तम् (अर्थ=वैश्यम्) १ १२२ १४ [मणि-ग्रीवापदयो समास]

मणिना आभूषणेन १ ३३ ८ [मण शब्दार्थे (भ्वा०) धातो 'सर्वधातुभ्य इन्' उ० ४.११८ सूत्रेण इन्]

मणिवालः मणिरिव वाला यस्य स (पशु) २४ ३ [मणि-वालपदयो समास । वकारस्य वकारश्छान्दस]

मण्डूकः मण्डूक २४ ६६ [मडि भूषायाम् (भ्वा०) धातो 'शलिमण्डिभ्यामूकण्' उ० ४ ४२ सूत्रेण ऊकण् । मण्डूका मज्जूका मज्जनात्, मदतेर्वा मोदयतिकर्मण. मन्दतेर्वा तृप्तिकर्मण, मण्डयतेरिति वैयाकरणा, मण्ड एषामोक इति वा । मण्डो मदेर्वा मुदेर्वा नि० ६ ५]

मण्डूकि सुभूषिते (अ०—स्त्रि) १७ ६ [मण्डूक इति व्याख्यातम् । तत स्त्रिया ङीप्]

मतय. मननशीला मनुष्या १ १६५ ४. प्रज्ञायुक्ता मनुष्या ३ ४१ ५ मेधाविन (जना) ३३ ७८ मनुष्या बुद्धयो वा ५ ८७ १ मन्यन्ते विजानन्ति ये ते विद्वास (जना) १ ६२ ११ प्रज्ञा इव वर्त्तमाना कन्या ७ १० ३. **मतिभिः**=विद्वद्भिस्सह ४ ३ १६ मननशीलैर्मनुष्यै ३ ३० २० बुद्धिभि ७ १६ **मतिम्**=भा०—प्रज्ञाम् २१ ५३ विज्ञानम् १ १०५ १५ मननशीलां प्रज्ञाम् ७ ४ १ यो वेदादिशास्त्रैर्विद्वद्भिश्च मन्यते तम् (सभाध्यक्षम्) ४ २५ **मतिः**=मननशीलाऽन्त करणवृत्ति ५ ६७ ५ प्रज्ञा ५ ६७ ५ मेधावी (परमात्मा) ३ ५५ ८ मननम् १८ ११ **मतीनाम्**=विदुषा मनुष्याणाम् १ ८६ २ मननशीलाना मेधाविना मनुष्याणाम् ३७ १४ विपश्चिताम् ३.५.३ **मतीः**=प्रज्ञा १ ११४ १ भा०—धीमन्त (जना) १६ ४८ **मत्यै**=प्रज्ञायै २४ ३६ [मनु अवबोवे (तना०) धातो स्त्रिया क्तिन् । मतय इति मेधाविनाम निघ० ३ १५ वाग्वै मतिर्वाचा हीद सर्वं मनुते श० ८ १ २ ७ प्रजा वै मतय तै० आ० ५ ६ ८]

मतवचसा मतानि वचासि वेदवचनानि याभ्या तौ (अश्विनौ=अध्यापकोपदेशकौ) १ १६ ५ [मत-वचस्-पदयो समासे प्रथमाद्विवचनस्याकारादेशश्छन्दसि । मतम्=मन्यते क्त]

मतस्नाभ्याम् हृदयपार्श्वाऽवयवाभ्याम् ३९ ८ ग्रीवोभयभागाभ्याम् २५ ८ **मतस्ने**=हृदयोभयपार्श्वस्थेऽस्थिनी १९ ८५]

मती मत्या प्र०—अत्र सुपा सुलुक्० इति पूर्वसवर्णादेश ३ ५१ वुद्धचा १ ८२ २ मत्या विज्ञानेन २.२४ ६. [मतिप्राति० 'सुपा सुलुक्०' सूत्रेण टा-स्थाने पूर्वसवर्णदीर्घ]

मतीविदे यो मति ज्ञान विन्दति तस्मै (देवाय=विद्या कामयमानाय जनाय) प्र०—अत्र 'सहितायाम्' इति दीर्घ २२ १२ ['मति' इत्युपपदे विद्लृ लाभे (तुदा०) धातो. क्विप् । पूर्वपदस्य सहिताया दीर्घ]

मत्कृतानि मया कृतानि (ऋणा=ऋणानि) २ २८ ६ [अस्मद्-कृतपदयो समास । 'प्रत्ययोत्तरपदयोश्च' इति पूर्वपदस्य मपर्यन्तस्य मादेश.]

मत्सत् आनन्देत् ५ ४० ४ आनन्दति ६ ४४ १६. आनन्दयेत् २७ ४० आनन्दयति ३६ ५ **मत्सथ**=आनन्दत ३३ ३४ **मत्सि**=आनन्दयसि १ १७६ १. हृप्यसि १ १७५ १ तृप्तो भव प्र०—मद तृप्तौ शपो लुक् ३३.२५ हर्षयिताऽसि भवसि वा प्र०—अत्र 'वहुल छन्दसि' इति श्यनो लुक् पक्षे पुरुपव्यत्ययश्च १ ६ १ **मत्स्व**=आनन्दितो भव अ०—हर्षितो भव ८ ५ आनन्द ३ ४१ ८ अस्माभि स्तुत सन् सदा हर्षय प्र०—वहुल छन्दसि इति श्यनो लुक् १ ६ ३ [मदी हर्षे (दिवा०) धातोर्लेटि सिव्-विक रणे रूपम् । 'वहुल छन्दसी' ति श्यनोरलुक् । मद-तृप्त योगे (चुरा०) धातोर्वा रूपम् । अन्यत्र लटि लोटि च रूपम्]

मत्सरस्य हर्षनिमित्तस्य (अशो =शरीरभागात्) १ १२५ ३ **मत्सरः**=आनन्द २ ४१ १४ सुखकर (ओपविसार) १ १७५ २ हर्षकर (मद =पथ्यौषधिसेवनम्) १ १७५ १. **मत्सराः**=माद्यन्ति हर्षन्ति यैस्ते (इन्दव =सोमाद्यौषधिगणा) प्र०—अत्र 'कृवृमदिभ्य कित्' उ० ३ ७१. अनेन मदे सरन् प्रत्यय १ १४.४ आनन्दयुक्ता (जना) १ १३७ १ आनन्दप्रापका (सोमास =सोमाद्योपधिसमूहा) १ १३७ १ [मदी हर्षे (दिवा०) धातो 'कृवृमदिभ्य कित्' उ० ३ ७३ सूत्रेण सरन् किच्च । मत्सर सोमो मन्दतेस्तृप्तिकर्मण । मत्सर इति लोभनाम, अभिमत्त एनेन धन भवति नि० २ ५]

मत्सरास. आनन्दन्त सन्त (राजप्रजाजना) ६.१७ ४ हर्षहेतव. (इन्दव =जलरसा) १ १५ १ [मत्सर इति व्याख्यातम् । ततो जसोऽसुक्]

मत्स्यासः समुद्रस्था मत्स्या इव ७ १८ ६ [मदी हर्षे (दिवा०) धातो 'ऋतन्यञ्जि०' उ० ४ २ सूत्रेण

प्र०—मन-धातोरय प्रयोग १ ११७ २२ मन्यन्ते प्राप्नुवन्ति सुखानि येन तत् मधुर-सुखकारकम् (रसम्) १ १९ ९ कर्म उपासन विज्ञान वा ३७ १३ मिष्टादिक रसम् २० ६५ मधुरविज्ञानम्=२० ९० ज्ञानवर्द्धक मधुरादिगुणयुक्तम् (भेषजम्=औषधम्) २० ५७ क्षौद्रम् १९ १३ मधुरमुदकम् २ ३६ ४ माधुर्यगुणोपेत विज्ञानम् ६ ११ ३ माधुर्यसुख-कारिका (द्यौ =सूर्यकान्ति) १ ९० ७ मधुरा (रात्रि) १ ९० ७ मधुनाम् १ ९० ६ मिष्टमन्नादिकम् १ ११२ २१ मधुर यथा स्यात्तथा मधुर्वा १३ २७ मधुर जलम् १ ११२ ११ **मधुनः**=मधुरस्य (घृतस्य=उदकस्य) ३ १ ८ मधुरादिगुणयुक्तस्य (सारवस्य) ३८ ६ ज्ञानजन्यस्य (यज्ञस्य) ४ ३५ ४ **मधुना**=मधुरगुणेन सह १ २३ १६ मधुरस्वभावेन ३ ८ १ माधुर्यादिगुणोपेतेन (व्यवहारेण) ४ ४५ ३ क्षौद्रेण शर्करादिना वा १२ ७० **मधुने**= विज्ञाताय मार्गाय ४ ४५ ३. **मधूनाम्**=मधुरादिगुण-युक्ताना पदार्थानाम् ३ ४३ ३ उदकानाम् १ ११७ ६ **मधूनि**=क्षौद्रादीनि ७ २४ २ मधुयुक्तानि रसविशेषाणि पेयानि (वस्तूनि) ३ ५७ ५ विज्ञानानि ५ ४३ ३ **मधोः**= मधुरम् (अन्नम्) ११८७ २ मधुर (पितो=पालकान्न-दातरीश्वर) ११८७ ७ [मधुरिति व्याख्यातम् । मधु उदकनाम निघ० १ १२ मधु सोममित्यौपमिक माद्यते । इदमपीतरन्मध्वेतस्मादेव नि० ४ ८ मधुनोदकेन···मधु धमतेर्विपरीतस्य नि० १० ३१ प्राणो वै मधु श० ६ ४ ३ २ ओषधीना वा ऽएष परमो रसो यन्मधु श० ११.५ ४ १८ रसो वा एष ओषधिवनस्पतिषु यन्मधु ऐ० ८ २० एतद्वै प्रत्यक्षान् सोमरूप यन्मधु श० १२ ८ २ १५ अन्न वै मधु ता० ११ १० ३ परम वा एतद् देवतायै रूप यन्मधु तै० ३ ८ १४ २ सर्व वाऽइद मधु यदिद किं च श० ३ ७ १ ११ अन्तो वै रसाना मधु जै० १ २२४ आत्मा वै पुरुषस्य मधु तै० स० २ ३ २ ९ एतद्वै देवाना मधु यद्घृतम् मै० ३ ९ ३ एतावेव (मधुश्च माधवश्च) वासन्तिकौ (मासौ) श० ४ ३ १ १४ परम वा एतदन्नाद्य यत् मधु ता० १३ ११ १७ परमो वै मधुनि रस जै० २ ४०५ प्रजा वै मधु जै० १ ८८ मिथुन वै मधु प्रजा मधु ऐ० आ० १ ३ ४ यज्ञो ह वै मधु सारघम् श० ३ ४ ३ १४ सौम्य वै मधु काठ० ११ २.],

मधुजिह्वम् मधुरगुणसम्पादिका जिह्वा ज्वाला यस्य तम् (अग्निम्) प्र०—'जिह्वा जोहुवा' नि० ५ २६. "काली कराली च मनोजवा च सुलोहिता या च सुधूम्रवर्णा स्फुलिङ्गिनी विश्वरूपी च देवी लेलायमाना इति सप्त जिह्वा" इति मुण्डकोपनिषदि मु० १ खण्ड० २ म० ४, १ १३ ३. मधुर्जिह्वम् (भोगम्) १ ६० ३ **मधुरजिह्वः**= मधुरगुणयुक्ता जिह्वा यस्य स (विद्वज्जन), प्र०—अत्र 'फलिपाटिनमि० उ० ११८ अनेन मनधातोरु प्रत्ययो नस्य धकारादेशश्च १ ४४ ६ मधुरगुणयुक्ता जिह्वा ज्वाला प्रयुज्यते यस्मिन् स. (कुक्कुट =यज्ञ) ११६ [मधु-जिह्वापदयोः समास]

मधुदुघे ये मधुनोदकेन दुग्ध कामान् प्रपूरयतस्ते (भूमिसूर्यौ) ६ ७० ५. ये मधूदक प्रपूरयतस्ते (द्यावा-पृथिवी=सूर्यभूमी) ३४ ४५ मधुरादिरसैं प्रपूरिके (भूमि-सूर्यौ) ६ ७० १ [मधूपपदे दुह प्रपूरणे (अदा०) धातो 'दुह कब् घश्च' अ० ३ २ ७० सूत्रेण कप् । घश्चान्तादेश]

मधुधा या मधूनि दधाति सा (उषा =प्रभातवेला) ३ ६१.५ [मधूपपदे डुधाञ् धारणपोषणयो (जु०) धातो क । ततष्टाप् स्त्रियाम्]

मधुधारम् मधुराणा रसाना धर्त्तारम् (अग्मास्य= मेघस्य मुख्यभागम्) २ २४.४ [मधूपपदे धृञ् धारणे (भ्वा०) धातो 'कर्मण्यण्' इत्यण्]

मधुन्तमानाम् अतिशयेन माधुर्यगुणोपेतानाम् (स्त्री-णाम्) प्र०—'वाच्छन्दसि सर्वे विधयो भवन्ति' इति नुडा-गम ८ ४८ [मधु-प्राति० अतिशायने तमप्-प्रत्यये नुडा-गमश्छान्दस]

मधुपम् यो मधूनि पाति तम् (मेघम्) ५ ३२ ८ **मधुपौ**=मधुर पिबन्तौ (स्त्रीपुरुषौ) १.१८० २. [मधूप-पदे पा रक्षणे (अदा०) पा पाने (भ्वा०) धातोर्वा क]

मधुपृचम् मधुरादिसम्बन्धिनम् (अग्नि=पावकम्) २ १० ६ [मधूपपदे पृची सम्पर्चने (अदा०) धातो कर्त्तरि क्विन्]

मधुपेभिः ये मधुरान् रसान् पिबन्ति तैं (वीरपुरुषैं) सह ४ ४५ ३ मधूनि जलानि पिबन्ति यैस्तै (आसभि = मुखैं) १.३४ १० [मधुप इति व्याख्यातम् । ततो 'बहुल छन्दसि' इति भिस ऐसादेशो न भवति]

मधुपेयम् मधुरैर्गुणैर्युक्त पातु योग्यम् (पदार्थम्) ३४ ४७ मधुभिर्गुणैर्युक्तं पेय द्रव्यम् १ ३४ ११ **मधुपेयः**= मधुना सह पातु योग्य (रस) ६ ४४ २१ **मधुपेयाय**= मधुरैर्गुणैं पातु योग्याय (पदार्थाय) ४.१४.४ [मधु-पेयपदयो समास । पेयम्=पा पाने (भ्वा०) धातोर्यत्]

मधुप्सरसः मधुप्सर स्वरूप सुन्दर येषान्ते (पितर) ४ ३३ ३. [मधु-प्सरस्पदयो समास । प्सर रूपनाम निघ० ३ ७.]

आनन्दिता आनन्दयितार (शूरवीरा) १ ५३.६ **मदे**=आनन्दनिमित्ते सति (प्रसर्गे=प्रकृष्ट उत्पादने) १ १२१ ४ आनन्दकारके (ब्रह्माणि) १ ८० १ माद्यन्ति हृष्यन्त्यानन्दन्ति यस्मिन् व्यवहारे तस्मिन् १ ४६.१२. आनन्दकरे रसे ६ ४४ १४ **मदेन**=आनन्दप्रदेन (रसेन) १६ ३३. **मदेषु**=हर्षेषु १ १३१ ५ [मदी हर्षे (दिवा०) धातो 'मदोऽनुपसर्गे' अ० ३ ३ ६७ सूत्रेण अप्। मदाय मदनीयाय जैत्राय नि० ४ ८ यो वा ऋचि मदो य सामत्रसो वै स श० ४ ३ २ ५ रसो वै मद. जै० १ २१५

मदासः आनन्दा (सभ्या जना) ४ १७ ६ [मदमिति व्याख्यातम्। ततो जसोऽसुक्]

मदे आनन्दाय ५ २ १० [मदी हर्षे (दिवा०) धातो. सम्पदादित्वात् क्विप्। ततश्चतुर्थी]

मदवृद्धः मदो हर्षो वृद्धो यस्य यस्माद्वा स (मेघ) १ ५२ ३ [मद-वृद्धपदयो समास]

मदासः आनन्दका (प्रजाजना.) ६ ३६ १. आनन्दा ४ ३५.१ [मदप्राति० जसोऽसुक्]

मदिन्तम मद प्रशस्तो हर्षो विद्यतेऽस्मिन् सोऽतिशयितस्तत्सम्बुद्धौ (विद्वज्जन) १.९१ १७ अतिशयेन मदितु हर्षितु शील (सोम=ऐश्वर्ययुक्त पुरुष) १२ ११४. **मदिन्तमः**=मदयतीति मदी सोऽतिशयित: (भाग) प्र०—'नाद् घस्य' अ०—८ २ १७ इति मदिन् शब्दान्नुडागम. ६ २७ **मदिन्तमानाम्**=अतिशयिताऽऽनन्दिताना परस्त्रीणा समीपे ८ ४८ [मद-प्राति० प्रशसायाम् इनि, ततोऽतिशायने तमप्प्रत्यये 'नाद् घस्ये' ति नुडागमः। मदिन्तम इति स्वादिष्ठ इत्येवैतदाह श० ३ ६ ३ २५]

मदिरम् आनन्दप्रदम् (सोम=सोमलतादिरसम्) २ १४ ९. मादक द्रव्यम् ६ २० ६ आनन्दकरम् (ईम्=उदकम्) ५ ६१ ११ **मदिरस्य**=आनन्दप्रदस्य रसस्य १ १६६ ७ **मदिराणि**=आनन्दकराणि (अन्धासि=अन्नानि) ६ ६९ ७ [मदी हर्षे (दिवा०) धातो 'इषिमदिमुदि०' उ० १ ५१ सूत्रेण किरच्]

मदिष्ठया अतिशयेनाऽऽनन्दप्रदया (धारया क्रियया) २९ २५ [मदिष्ठ इति व्याख्यातम्। तत स्त्रिया टाप्]

मदिष्ठः अतिशयेनाऽऽनन्दप्रद (ओषधिसार) ६ ४७ २ [मदी हर्षे (दिवा०) धातो तृजन्तादतिशायन इष्ठन्। 'तुरिष्ठेमेयस्सु' इति तृचो लोप]

मदे मदे हर्षे हर्षे १.८१ ७ [मदे पदस्य वीप्साया द्वित्वम्]

मदेम आनन्देम ६.५२ १४. हर्षेम १९ ३२. हृष्येम ७ २०. सुखयेम प्र०—अत्र विकरणव्यत्यय. ४ १. [मदी हर्षे (दिवा०) धातोर्लिङ्। विकरणव्यत्ययेन शप्]

मद्गुः जलकाक २४ ३४ **मद्गून्**=जलकाकान् २४ २२. [टुमस्जो शुद्धौ (तुदा०) धातो 'भृमृशीङ्तृचरि०' उ० १ ७. सूत्रेण उ। न्यङ्क्वादित्वात् कुत्वम्]

मद्यम् तृप्तिप्रदम् (अन्ध.=अन्नम्) ७ ७ येन माद्यति हृष्यत्यानन्दति तम् (सोम=महौषधिरसम्) ६ ६८ १० **मद्यः**=आनन्दयिता (राजा) ४ २२.८ [मदी हर्षे (दिवा०) धातो 'गदमदचरयमश्चानुपसर्गे' इति यत्। औणा० वा कर्त्तरि य]

मद्यासु हर्षणीयासु (प्रजासु) १ १५३ ४ [मद्यमिति व्याख्यातम्। तत स्त्रिया टाप्]

मद्रिक् यो मद्र काममञ्चति स (इन्द्र=राजा) १ १७७ १ अस्मानञ्चन् प्राप्नुवन् (राजा) १ १७७ ३. यो मामञ्चति स मदभिमुख (राजा) ६ ३१ ५. [अस्मदुपपदे अञ्चु गतिपूजनयो (भ्वा०) धातो क्विप्-प्रत्यये 'विष्वग्देवयोश्च टेरद्रि०' अ० ६ ३ ९२ सूत्रेण सर्वनाम्न टेरद्रिरादेश। अञ्चतेरकारलोपश्छान्दस]

मद्र्यक् मत्सदृश (सज्जन) ६ ३८ २ मामञ्चतीति मद्र्यक् (अन्नपानादि) ३ ४१ १ **मद्र्यञ्चम्**=मामञ्चन्तम् (तवस=बलम्) ७.२४ ३. [अस्मदुपपदे अञ्चु गतिपूजनयो (भ्वा०) धातो क्विप्-प्रत्यये सर्वनाम्न टेरद्रिरादेश]

मद्र्यद्रिक् मदभिमुख (देव=विद्वज्जन) ६ २२ ११.

मधवे मधुरादिगुणोत्पादकाय चैत्राय २२ ३१ चैत्रमासाय ७ ३० **मधुः**=मधुरसुगन्धयुक्तश्चैत्र १३ २५ **मधो.**=मधुरादिगुणयुक्तात् (आचरणात्) ५.४३ ६ मधुरगुणाशान् १ १४ ८ मधुरगुणान्वितस्य द्रव्यस्य १८ ६५. **मधौ**=मधुरे (सर्वार्थ-ऐश्वर्ये) ७ ५९ ६ [मन ज्ञाने (दिवा०) धातो 'फलिपाटिनमिमनिजनाम्०' उ० १ १८ सूत्रेण उ, धातोर्नकारस्य धकारश्च। 'मवोर्न च' अ० ४ ४ १२९ सूत्रेण मत्वर्थीयस्य प्रत्ययस्य लुक्]

मधु मधुरादिना गुणेन युक्तम् (ओषधिरसम्) ३३ ३०. मधुरगुणान्वितमन्नम् १९ ८६ माधुर्यगुणोपेतम् (वस्तु) १९ ७८ विज्ञानम् १९ ९१ येन मन्यते तत् (इन्द्रिय=धनम्) १९ ७६ मन्तव्यम् (इन्द्रिय=विज्ञानसाधकम्) १९ ७७ मधुविद्यासमन्वितम् (इन्द्रिय=जीवेन जुष्ट सुखम्) १९ ७४ मधुरादिगुणयुक्त घृतादि ३८ १६ ज्ञात सत् (इन्द्रिय=ईश्वरेण सृष्ट धनम्) १९ ७९ मधुरम् (विज्ञानम्)

शक्नोतेर्वा नि० १४]

मधुश्चुतम् मधुरादिगुणयुक्तम् (विज्ञानम्) ४ ५७ २ [मधु-श्चुतपदयो समास । श्चुतम् = श्चुतिर् क्षरणे (भ्वा०) धातोर् घञर्थे क । श्चोतति गतिकर्मा निघ० २ १४]

मधुश्चुतः मधुरादिगुणा विश्लिष्यन्तो येभ्यस्ते (पदार्था) २१.४२ [मधूपपदे श्चुतिर् क्षरणे (भ्वा०) धातो क्विप् । पशवो मधुश्चुत जै० १.२२४]

मधुश्चुतः मधुरादिगुणैर्निष्पन्ना. (आ । = जलानि) ७ ४९.३ या मधुनो मधुराद् रसात्प्राप्ता (सत्यस्त्रिय) १७ ३. [मधु-श्चुतपदयो समास]

मधुश्चुता मधूदकस्य वर्षयित्र्यौ (भूमिसूर्यौ) ६ ७० ५. [मधुश्चुत इति व्याख्यातम् । ततो द्विवचनस्याकारश्छान्दस]

मधुषत् यो मधूनि मधुराणि सनोति स (अग्नि = राजा) ४ ३ ३ [मधूपपदे षणु दाने (तुदा०) धातो कर्त्तरि क्विप्]

मधुषुत्तमः यो मधूनि सुनोति सोऽतिशयित (सोम = ऐश्वर्यलाभ) ३ ५८ ६ [मधुषुत्प्राति० अतिशायने तमप् । मधुषुत् = मधूपपदे षुञ् अभिषवे (स्वा०) धातो कर्त्तरि क्विप्]

मधुहस्त्यः मधुहस्तेषु साधु (कवि = मेधाविजन) ५ ५ २ [मधु-हस्तपदयो समासे 'तत्र साधु ' इति यत्]

मधुयुवा माधुर्यगुणोपेतौ (विद्वज्जनौ) ५ ७४.६ यो मधूनि यावयतस्तौ (अश्विनौ = सूर्यवायू) ५.७३ ८ [मधूपपदे यु मिश्रणेऽमिश्रणे च (अदा०) धातो क्वनिप् । ततो द्विवचनस्याकारादेश]

मध्यतः मध्ये भवात् (व्यवहारात्) २१ ४४ मध्यात् २१ ४३ [मध्यप्राति० तसि]

मध्यन्दिनात् मध्यदिने वर्त्तमानात्तापात् ४ २८ ३ **मध्यन्दिने** = मध्याह्ने ५ ६९ ३ [मध्य-दिनपदयो समास । अथवा मध्यप्राति० 'मध्यो मध्य दिनण् चास्मात्' इति वा० सूत्रेण भवादन्यत्राप्यर्थे दिनण् । आत्मा मध्यन्दिन कौ० २५.१२ २८ ६ आत्मा यजमानस्य मध्यन्दिन ऐ० ३ १८ मध्यन्दिनो मनुष्याणाम् श० २ ४ २ ८]

मध्यम् मध्ये भवम् ३ ३० ७ **मध्ये** = अन्त १.३२ १० **मध्येन** = मध्यमाऽवस्थाविशेषेण ६ २ [मध्यप्राति० भवार्थे यत् । श्रीर्वै राष्ट्रस्य मध्यम् श० १३ २ ९ ४ प्रजा वै पशवो मध्यम् श० १६.१.१७. त्रिष्टुप्छन्द इन्द्रो देवता मध्यम् श० १० ३ २ ५]

मध्यमम् मध्ये भवम् (वसु = द्रव्यम्) ७ ३२ १६. मध्यस्थम् (पाश = बन्धनम्) १२ १२ उत्कृष्टाऽनुत्कृष्टयोरन्तर्भवम् (पाश = बन्धनम्) १ २५ २१. उत्तमाऽधमयोर्मध्यस्थम् (पाश = बन्धनम्) १.२४ १५ मनुष्यदेहाद्याकाशपर्यन्तम् (जगत) ऋ० भू० १३५, अथर्व० १० ४ ८ **मध्यमः** = मध्ये भव पृथिव्यादिस्थो द्वितीय (अग्नि) १.१६४ १ **मध्यमाय** = मध्ये भवाय बन्धवे क्षत्रियाय वैश्याय वा १६ ३२. **मध्यमेन** = मध्यमाऽवस्थाविशेषेण ६ २ **मध्यमेषु** = मध्यममुखविशिष्टेषु (वाजेषु = युद्धेषूत्तमेष्वन्नेषु वा) १.२७ ५ [मध्यप्राति० 'मध्यान्म ' अ० ४ ३ ८ सूत्रेण भवार्थे (शैषिको) म]

मध्यमस्याम् मध्यमगुणायाम् (पृथिव्याम्) १ १०८ ९ [मध्यमप्राति० सप्तमी । 'वा छन्दसी' ति सर्वनामकार्यम्]

मध्यमा मध्यमानि मध्यस्थानि (धामानि = जन्मस्थान-नामानि) १७ २१ [मध्यमप्राति० शेर्लोपश्छन्दसि]

मध्यमवाट् यो मध्ये पृथिव्या भवान् पदार्थान् वहति स' (रथ = रमणीय यानम्) २ २९ ४ [मध्यमप्राति० वह प्रापणे (भ्वा०) धातो 'वहश्चे' ति ण्वि]

मध्यमशीरिव यो मध्यमानि मर्माणि शृणाति स (जन) इव १२ ८६ मध्यमशीर्-इवपदयो समास । मध्यमशी = मध्यमोपपदे]

मध्यमस्थाः मध्ये भवा मध्यमा पक्षपातरहितास्तेषु तिष्ठतीति (अग्नि' = न्यायप्रकाशको राजा) २७ ५ [मध्यमोपपदे ष्ठा गतिनिवृत्तौ (भ्वा०) धातो क]

मध्यमासः मध्ये भवा (राजसुहृद) ६ २१ ५ पक्षपातरहिता (विद्वासोऽविद्वासश्च जना) ४ २५ ८ [मध्यमप्राति० जसोऽसुक्]

मध्यमेभिः मध्ये भवै (साधुभि) ३ ३२ १३. [मध्यमप्राति० 'बहुल छन्दसी' ति भिस ऐस् न]

मध्यमेष्ठ्याय मध्ये पक्षपातरहिते भवे न्याये तिष्ठति तस्य भावाय १० २९ [मध्यमेष्ठप्राति० भवार्थे यत् । मध्यमेष्ठ = मध्यमोपपदे तिष्ठते क]

मध्या पूर्णाऽऽयुषो भोगस्य मध्ये २५ २२ प्र०—अत्र 'सुपा सुलुक्०' इति सप्तम्या स्थाने डाऽऽदेश १ ८९ ९. अत्र सप्तम्येकवचनस्याकार १ ११५ ४ [मध्यप्राति० सप्तम्या डादेशश्छान्दस । मध्यम्-मन ज्ञाने (दिवा०) धातो 'अघ्न्यादयश्च' उ० ४ ११२ सूत्रेण यक् । नकारस्य च धकार]

मधुमत् मधुरगुणयुक्तम् (रज =द्व्यणुकादि रेणु) १३ २८ मधुरमवत् (वच) १ ७८ ५. मधुराणि विज्ञानानि वर्त्तन्ते यस्मिँस्तत् (मुखम्) ३ ७ २. प्रशस्तविज्ञानयुक्तं कर्म्म ८ ५८ १० बहूनि मधुरादिगुणयुक्तानि वस्तूनि विद्यन्ते यस्मिँस्तत् (भोगम्) ३ ३२ ४ मधवो मधुरादय प्रशस्ता गुणा विद्यन्ते यस्मिँस्तत् (अ०—वस्तु) प्र०—अत्र प्रशसार्थे मतुप् १ २८ ८ मधुराणि विज्ञानानि वर्त्तन्ते यस्मिँस्तत् (मुखम्) ३.७ २ **मधुमतः**=मधुरादिगुण-युक्तस्य (पयस =उदक कुर्वं वा) ३८ २८ **मधुमता**=स्वादिष्ठगुणेन (मोमेन=सोमलताद्योपधिसमूहेन) १६ १ बहूदकयुक्तेन (पथा=मार्गेण) २१ ३०. **मधुमद्भिः**= बहुभिर्मधुरादिगुणयुक्तै (अर्णोभि =जलै) ४ ३.१२ [मधुप्राति० भूम्न्यर्थे प्रशसाया वा मतुप्]

मधुमती प्रशस्तमाधुर्यगुणयुक्ता (कशा=वाणी) ७ ११ मधुरगुणा (कशा=वाक्) १.२२.३ बहूनि मधूनि सत्यभापणानि विद्यन्ते यस्या सा (जिह्वा=वाणी) ३ ५७ ५ **मधुमतीभिः**=मधुर्बहुविधो रसो वर्त्तते यासु ताभिरोपधीभि प्र०—अत्र भूम्न्यर्थे मतुप् १ २१ मधुरादिगुणयुक्ताभिर्वसन्तादिभिर्ऋतुभि. १० ४. **मधुमतीम्**= प्रशस्त-मधुरगुणयुक्ताम् (अ०—ओपधीम्) १६.१. माधुर्य-गुणयुक्त (वाणी) को म० वि० १४१, अथर्व० ३ ३० २ **मधुमतीः**=मधुरगुणवती (इप =अन्नानि) ७.२. मधु प्रशस्तो रसो विद्यते यासु ता मधुमत्य आप प्र०—अत्र प्रशसार्थे मतुप् 'सुपा सुलुगि' नि पूर्वसवर्णादेशश्च १ २१ प्रशस्तमधुरादिगुणयुक्ता (आप =जलानि प्राणान् वा) १० १ प्रशस्ता मधवो मधुरादयो गुणा विद्यन्ते यासु ता. (अप =जलानि) ११.३८ **मधुमत्या**=बहुजलवाष्प-वेगयुक्तया (कशया=गत्या शिक्षया वा) १.१५७ ४. [मधु-प्राति० प्रशसाया मतुबन्तात् ङीप्]

मधुमत्तमम् अतिशयेन मधुरादिगुणयुक्तम् (ऊर्मि= तरङ्गम्) ७ ४७ २ अतिशयेन प्रशस्तैर्मधुरादिगुणैरुपेतम् (सोमम्=वीररसादिकम्) १ ४७ ३ **मधुमत्तमस्य**= अतिशयेन मधुरादिगुणयुक्तस्य (सोमस्य=महौपधिरसस्य) ६ ६८ ११. **मधुमत्तमः**=प्रशस्ता मधुरादयो गुणा विद्यन्ते यस्मिन् सोऽतिशयित (सोम =ओपधीरस) १.४७ १. **मधुमत्तमैः**=अतिशयेन मधुरजलादियुक्तै (पथिभि.= धर्म्यैर्मार्गै) २८ २ [मधुप्राति० मतुबन्तादतिशायने तमप्]

मधुमन्तम् मधव प्रशस्ता रसा विद्यन्ते यस्य तम् (यज्ञम्) १.१३ २. प्रज्ञ-तमश्वादि-पदार्थयुक्तम् (अध्वरं= निष्कौटिल्यम्) ६.३०. बहूनि मधूनि हवींपि विद्यन्ते यस्मिँस्तम् (यज्ञम्) ३ ४.२ **मधुमन्तः**=प्रशस्तविज्ञान-युक्ता भा०—विज्ञानवन्त (राजप्रजाजना.) ३३ ७० प्रशस्तमधुरगुणयुक्ता (पदार्था) १.१३५ १. बहूनि मधुराणि कर्माणि विद्यन्ते येपान्ते (त्र्प्मा.=मेवा)- ५ ६३.४. मधुरादयो गुणा विद्यन्ते येपु ते (विद्वज्जना.) ७ ६० ४. मधुगत्योपेता. (हसास =अश्वा) ४ ४५.४ **मधुमान्**= मधुरगुणयुक्त (ऊर्मि.=तरङ्ग.) १७ ८६ मधुरगुण. (ऊर्मि) ४ ५८ १ विज्ञानसम्बन्धी (मत्सर =आनन्द) २.४१ १४ प्रशस्ता मधवो गुणा विद्यन्ते यस्मिन् स. (वनस्पति =अश्वत्थादि) १३ २९ प्रशस्तो मधु प्रतापो विद्यते यस्य स (सूर्य =सविता) १३ २९ प्रशस्तानि मधूनि सुखानि विद्यन्ते यस्मिन् स (वनस्पति) १ ९०.८. प्रशस्तो मधुर प्रकाशो विद्यते यस्मिँस्स (सूर्य) १.९०.८. [मधुमदिति व्याख्यातम्]

मधुला माधुर्यप्रदा मधुविद्या १ ११९ ११. मधु लात्याददाति सा (विपहरणविद्या) १ ११९ १०. [मधूप-पदे ला आदाने (अदा०) धातो क्विप्]

मधुवचाः मधुरवाक् (अग्नि.=परमात्मा) ४.६.५. मधु वचो यस्य यस्या वा स सा वा (पिता माता वा) ५.४३ २ मधूनि मधुराणि वचासि यस्य स (राजा) ७ ७ ४. [मधुवचस्पदयो समास]

मधुवर्णम् यन्मधुरञ्च वर्णोपेतञ्च तत् (घृतम्= उदकम्) १ ८७.२ [मधु-वर्णपदयो समास]

मधुवर्णः मधुद्वेष्टव्यो वर्णो यस्य स (रथ = विमानादियानम् ५ ७७ ३ [मधु-वर्णपदयो समास]

मधुवाहनः मधुना जलेन वाहनीय (रथ) प्र०— मध्विति उदकनाम निघ० १.१२, १ १५७ ३. **मधु-वाहने**=मधुरगुणयुक्ताना द्रव्याणा वेगाना वा वाहनं प्रापण यस्मात्तस्मिन् (रथे) १ ३४ २. मधुरगतिमति रथे ऋ० भू० १९४, ऋ० १ ३४.१. [मधु-वाहनपदयो समास । वाहनम्=वह प्रापणे (भ्वा०) धातोर्णिजन्ताल्ल्युट्]

मधुव्रते मधूनि व्रतानि कर्म्माणि ययोस्ते (भूमि-सूर्यौ) ६ ७० ५. [मधु-व्रतपदयो. समास । व्रतमिति कर्म-नाम वृणोतीति सत नि० २ १३]

मधुशाखः मधुरा शाखा यस्य स (वनस्पति = किरणाना पालक) २८ २०. [मधु-शाखापदयो समास । शाखा=शाखा शक्नोते नि० ६ ३२ शाखा खशया

ऽभिलापेच्छादि विकल्पोऽप्रीतिविक्षेपादि सत्तात्मकम् ऋ० भू० ६३, ऋ० ८८४९ ३ मनस्तत्त्वात्मक चित्तम् ३ ५४ **मनांसि**=अन्तःकरणानि ७ ५६ ८ [मन ज्ञाने (दिवा०) धातोरौणा० असुन्। मनु अवबोधने (तना०) धातोर्वा असुन्। मनो मनोते नि० ४ ५ मनो ह वायुर्भूत्वा दक्षिणतस्तस्थौ श० ८ १ १ ७ मनो ह वाऽअस्य सविता श० ४४१७ मन गायत्रम् कौ० १६ ४ यन्मन स इन्द्र गो उ० ४ ११ मन प्रजाति जै० उ० ३४.३ न मन हृद. कामानाम्पूर्णो यन् मन जै० उ० १ ५८ वाग्वै समुद्रो मन समुद्रस्य चक्षु ता० ६ ४ ७. न च (मनस) एषा चुल्या यद् वाक् जै० उ० १ ५८ ३ काम सङ्कल्पो विचिकित्सा श्रद्धाऽश्रद्धा धृतिरधृतिर्ह्रीर्धीर्भीरित्येतत् सर्वं मन एव श० १४ ४ ३ ६ नैव हि मन्मनो नेत्यानत् श० १० ५ ३ २ अनिरुक्त हि मनो अनिरुक्त तोऽद्यत् तूष्णीम् श० १४ ४ ५ अपरिमिततरमिव हि मन परिमिततरेव हि वाक् श० १४ ४ ७ अनन्त वै मन श० १४ ६ १ ११ मनो देव गो० पू० २ १० वृषा हि मन श० १४ ४ ३ वाक् च वै मनश्च देवाना मिथुनम् ऐ० ५ २३ वाग्मिति मन जै० उ० ४ २२ ११ वाक् च वै मनश्च हविर्धाने कौ० ६ ३ मनो हि पूर्वं वाचो यद्धि मनसाभिगच्छति तद्वचा वदति ता० ११ १ ३ वाग् वै मनसो ह्रसीयसी श० १४ ४ ७ वाचो मनो देवता मनन पशव जै० उ० १५६ १४ न ह्ययुक्तेन मनसा किञ्चन सम्प्रति शक्नोति कर्तुम् श० ६ ३ १ १४ अन्यत्र मना अभूव नादर्शमन्यत्र-मना अभूव नाश्रौषमिति मनसा ह्येव पश्यति मनसा शृणोति श० १४ ४ ३ ८ अर्द्धभाग्वै मन प्राणानाम् ष० १५ मनसि हि सर्वे प्राणा प्रतिष्ठिता श० ७ ५ २ ६ मनो वै प्राणानामधिपतिर्मनसि हि सर्वे प्राणा प्रतिष्ठिता श० १४ ३ २ ३ अन्तरेपित वा इद मन ऐ० ६ २ मनो हृदये (श्रितम्) तै० ३ १० ८ ६ मनसि हृदयमात्मा प्रतिष्ठित श० ६ ७ १ २१ मनो वा अध्वर्यु श० १ ५ १ २१. मनो वाव साम्नश्श्री जै० उ० १ ३६ २ तयो (मनसतो) यत् सत् तत् साम तन्मनस्स प्राण जै० उ० १ ५३ २ चन्द्रमा मनसि श्रित तै० ३ १० ८ ५. मनश्चन्द्रमा जै० उ० ३ २ ६. मनो वै देववाहन मनो हीद मनस्विन भूयिष्ठ वनीवाह्यते श० १ ४ ३ ६]

मनस्वान् मनो विज्ञान विद्यते यस्य स (इन्द्र = सूर्य) २ १२ १ [मनस्प्राति० मतुप्। मनस्वान् मनस्वी नि० १० १०]

मन सदम् मनसि विज्ञाने तिष्ठन्तम् (इन्द्र = सम्राजम्) ६ ९. [‘सद’ इत्यस्मात् पदात् क्विप्रत्ययान्तात्... (भ्वा०) धातो क्विप]

मना ज्ञानवती स्त्री (वार्चिक्नुदस्य) ४ १६ **मनायै** = मननशीलायै स्त्रियै ४ ३३ ८. मननवत्यै प्रज्ञायै ७ ३३ ५. [मन ज्ञाने (दिवा०) धातोरौणा० ... । ... स्त्रियाम्]

मनाना मन्यमाना मनन कुर्वाणा (विज्ञानवन्त) ६ ६७ १० [मन ज्ञाने (दिवा०) धातो शानच्। विकरणव्यत्ययेन शप्]

मनाम् मननशीलानाम् (विदुषा ... मनुष्याणाम्) १ १७३ २ [मन ज्ञाने (दिवा०) धातो ...]

मनामहे याचामहे २२ १४ जानीमहे ५ ४८.१ विजानीम ११५९ ५ विजानीयाम ४ ३५ ८. जानीमहि ४.११ जाने म० प्र० ३३०, १.५४ ७ विजानीयाम प्र०— स्व प्रज्ञायै वेद ... । ... ११४.१. [मन ज्ञाने (दिवा०) धातोर्लट्। विकरणव्यत्ययेन शप्। मनामहे इति याच्ञाकर्मा नि० ३ १९ मनामहे मन्यामहे। नि० ६.२५]

मनायत मननशीलस्य मन आचक्षाण (जनान्) ७ २६ ७ [मनस्प्राति० ... ... मनोऽस्य]

मनायति आत्मनो मन इच्छन्ति १.१३३ ४. [मनस् प्राति० ‘छन्द सदृ मनोन्त’ ... व्यत्ययेन परस्मैपदम्]

मनायु यो मन इवाचरति स (जन) ४.२४ ४ मनोविज्ञान कामयमान (विद्वज्जन) ४ २५ ४. **मनायो**= मनसा कामयमानस्य (राजपुरुषस्य) ४.२४ ७. यो मान इवाचरति तस्य (विज्ञानस्य=प्राणिजातस्य) प्र०—मन मान-शब्दस्य ह्रस्वत्वं पृषोदरादित्वात् १ ६२ ६. [मनन् पदादाचारेऽर्थे क्यङ्। तत. ‘क्याच्छन्दसि’ नि उ]

मनावसू यौ मनो वासयतस्तौ (अश्विना=व्याप्तविद्यौ विद्वांसौ) ५.७४ १ [मनन्-उपपदे वस निवासे (भ्वा०) धातोरौणा० बहुलवचनाद् उ]

मनिष्ये विचारं करिष्ये ६ ९ ६ [मन ज्ञाने (दिवा०) धातोर्लृट्। व्यत्ययेन शप्]

मनीषया विद्याक्रियया सुशिक्षाजातया प्रज्ञया १ ६४.१ मनन ईषणकर्त्र्या प्रज्ञया २३.३६ **मनीषा**= मेधा ३३ ३४ प्रिया (स्त्री) ८ २४ २ विद्यासुशिक्षायुक्ता प्रज्ञा ६ ६७ २ मनो विज्ञानमीषते यया प्रज्ञया सा १ ५४ ८

मध्या याऽऽकाशस्य मध्ये भवा सा (वयन्ती=गच्छन्ती पृथिवी) २ ३८ ४ [मध्यप्राति० स्त्रिया टाप्]

मध्यायुवः य आत्मनो मध्य मध्यस्थमिच्छवो विद्वास १ १७३ १०. [मध्यप्राति० इच्छायामर्थे सन्नन्ताद् उ]

मध्वदः ये मधूनि कर्मफलानि वाऽदन्ति ते (जीवा) १ १६४ २२ [मधूपपदे अद भक्षणे (अदा०) वातो क्विप्]

मध्वर्णसः मधूनि मधुराण्युदकानि यासु ता (नद्य) १ ६२ ६ [मधु-अर्णस्पदयो समास। अर्णस् उदकनाम निघ० १ १२]

मध्वः मधुरगुणयुक्तानि जलानि प्र०—मध्वित्युदकनामसु पठितम् निघ० १ १२ अत्र लिङ्गव्यत्ययेन पुंस्त्वम् 'वा छन्दसि सर्वे विधयो भवन्ति' इति पूर्वसवर्णप्रतिषेधात् यणादेश १ ३४.१० माधुर्यादिगुणोपेता (योगिन्यो विदुष्य) ७ १५ मधूनि (वस्तूनि) ११८१६ मधुरस्य विज्ञानस्य १ १३५ ८ विज्ञानयुक्तस्य (विदुषो जनस्य) १ १४१ ३ उत्पन्नस्य मधुरादिगुणयुक्तस्य पदार्थसमूहस्य रसभोगम् १ १४ ७ मधुरगुणवन्त (इन्दव =सोमाद्योपधिगणा) १ १४ ४. मधुरस्य रसस्य २१ ११ मन्यमाना (विद्वज्जना) ७ ५७ १ मधुर वैद्यशास्त्रसिद्ध रसम् प्र०—अत्र कर्मणि षष्ठी ३३ ८८ मधुरस्वभावाञ्जनान् ३ ३१ १६ मधुनो मधुरस्य रसस्य प्र०—अत्र कर्मणि षष्ठी ६ १८ माधुर्यादिगुणोपेतस्य (भृत्यवर्गस्य) ४ २ ४ विज्ञेयस्य (जगत) मध्ये २ १६ २ मधुना प्र०—अत्र तृतीयार्थे षष्ठी ११८२ २ **मध्वा**=माधुर्येण २६.२६ कोमलसामग्र्या ३३ ३३ मधुरेण विज्ञानेन २८ १० मधुना जलेन २१ ८ क्षौद्रेण ४ ३८ १० [मधु इति व्याख्यातम्। व्यत्ययेन पुंस्त्वम्। 'जसादिषु छन्दसि वा वचनम्०' अ० ७ ३ १०६ वा सूत्रेण गुणो न भवति]

मननाः मन्तु विज्ञातु योग्या (कारव =कारुका शिल्पिन) ३ ६ १ [मन ज्ञाने (दिवा०) धातोर्बहुलवचनादौणादिको युच् 'कृ यल्युटो बहुलम्' इति ल्युड् वा]

मनवः मननशीला विद्वास १५ ४६ **मनवे**=मन्यते येन ज्ञानेन तस्मै बोधाय अ०—प्राणाय ५ १६ मननशीलाय (वैश्वानराय=जगदीश्वराय) ११ ६६ मननशीलधार्मिकमनुष्यरक्षणाय १ १३० ८ धार्मिकप्रजापतये राज्ञे १ ११२ १६ मनुष्याय ४ २६ ४ **मनुना**=मननशीलेन विदुषा ७ २ ३ **मनुम्**=मननशील मनुष्यम् ६ २१ ११ युद्धज्ञातारम् (शूर=शूरवीर जनम्) १ ११२ १८ **मनुः**=विज्ञानवान् (अध्यापक) १ ८० १६ मननशीलो विद्वानिव सर्वविद्याविज्ञापक (सृष्टिकर्त्तेश्वर) ४ २६ १ ज्ञाता (विद्वज्जन) १ १३६.६ मान्यकारक (परमेश्वर) आर्याभि० १ ४५, ऋ० १ ८ ५ २ विद्वद्भि क्रियासिद्ध्यर्थ यो मन्यते स (भौतिकोऽग्नि) १ १३.४ वैद्यकविद्यावित् (जन) २ ३३ १३ [मन ज्ञाने (दिवा०) धातो 'शृस्वृस्निहि०' उ० १ १० सूत्रेण उ। मनु पदनाम निघ० ५ ६ मनु मननात् नि० १२ ३४. प्रजापतिर्वै मनु स हीद सर्वममनुत श० ६ ६ १ १६ अश्वा ह वा ऽइय (पृथिवी) भूत्वा मनुमुवाह सोऽस्या पति प्रजापति श० १४ १ ३ २५ ये विद्वासस्त मनव श० ८ ६.३ १८ आयुर्वै मनु कौ० २६ २७]

मनसपते ! विज्ञानस्य पालक भा०—सर्वसाक्षिन् (देव=सर्वजगत्प्रकाशकेश्वर) २ २१ निगृहीतमना (पतिगृहस्थजन) ८ २१ [मनस्-पतिपदयो समासे षष्ठ्या अलुक् छान्दसम्]

मनसस्य यन्मन्यते तस्य (क्षत्रस्य=राष्ट्रस्य) ५ ४४ १० [मन ज्ञाने (दिवा०) धातोरौणा० बहुलवचनाद् असच्]

मनसः सकल्पविकल्पाऽऽत्मकात् १८ ५८ मननशीलात् सामर्थ्यात् ३१ १२ अन्त करण-पुरुषार्थात् ७ ३३ ११ विज्ञानात् ४ ६ सङ्कल्पविकल्पादिवृत्तियुक्तस्याऽन्त करणस्य ३७ १८ मननशीलाद्वेगवत्तरात् १ ११७ २ चित्तस्य १ ७६ १ **मनसा**=मन्यन्ते ज्ञायन्ते सर्वे व्यवहारा येनाऽन्त करणेन तेन २ २४ शुद्धाऽन्त करणेन १७ ६४ सुविचारेण ७ २६ विज्ञानवता चित्तेन १३ ३८ भावेन ३४ २३ स्वाऽन्तेन १.६६ ८ विज्ञानेनेश्वरध्यानेन वा ऋ० भू० २५२, १६ ३६ प्रज्ञया १ १३८ २ शिल्पादिविचारेण १ ६१.२३ **मनसे**=विज्ञानवृद्धये ४ ७ विज्ञानवतेऽन्त करणाय ३७ १६ सदसन्मननाय ६ २५ विज्ञापयितुम् १ १०८.२ मनननिमित्ताय सकल्पविकल्पात्मने २२ २३ मननशीलाय (सज्जनाय) ६ २१ ४ **मनः**=मननात्मिकाऽन्त करणवृत्ति ११ १ अन्त करणस्याऽहङ्कारादिवृत्तिम् ३ ५६ योगमननम् ७ ६ मननशील ज्ञानसाधनम् २ १३ सकल्पविकल्पात्मकम् ३७ २ मननात्मक चित्तम् ६ १६ १७ ज्ञानसाधनमन्त करणम् १८ ४३ धारणावती बुद्धिम् ३ ५५ शुद्ध विज्ञानम् ७ ३. मननशील प्रेरक कर्म्म १३ ५५ इच्छासाधनम् ११ ६६ स्वाऽन्तम् ६ ७ सङ्कल्पो विकल्प १५ ४ सर्वकर्मसाधनम् ३४ ३ सङ्कल्पो-

शीला समन्तात् ते ४.१.७३ मनुष्य लोग स० वि० १३६, अथर्व० १४ २ ३८ **मनुष्ये**=मनुष्येभ्यो हिते (द्वे पुरुष स्त्री च) ३ ११० **मनुष्येषु**=मनस्विषु प्र०—मनुष्या कस्मात्? मत्वा कर्माणि सीव्यन्ति, मनस्यमानेन सृष्टा मनस्यति पुनर्मनस्वीभावे मनोरपत्य मनुष्यो वा नि० ३.७, ८ ३८ विद्यान्यायाचरणे प्रकाशमानेषु मानवेषु ८.४० [मनुप्राति० 'मनोर्जातावञ्यतौ षुक् च' अ० ४ १ १६१. सूत्रेण यत् षुक् चागम । मनुष्या मनुष्यनाम निघ० २ ३ मेधाविनाम निघ० ३ १५ मनुष्या कस्मान्मत्वा कर्माणि सीव्यन्ति, मनस्यमानेन सृष्टा । मनस्यति पुनर्मनस्वीभावे । मनोरपत्य मनुषो वा नि० ३ ७. देवाना वै विधामनु मनुष्या. श० ६ ७ ४ ९ स (प्रजापति) पितॄन् सृष्ट्वा मनस्यैत् । तदनु मनुष्यानसृजत । तन्मनुष्याणा मनुष्यत्वम् । य एव मनुष्याणा मनुष्यत्व वेद, मनस्व्येव भवति, नैन मनु (मननशक्ति) जहाति तै० २ ३ ८ ३ अनृतसहिता वै मनुष्या इति ऐ० १ ६ बहि प्राणो वै मनुष्य. तै० स० ६ १ १ ४ मनुष्या वै विश्वे देवा काठ० १९ १२. रयिरिति मनुष्या (उपासते) श० १० ५ २ २० वर्षं मनुष्या (उपजीवन्ति) मै० १ ६ ५]

मनुष्या मनुष्याणा सम्बन्धीनि (युगानि) १ ९२ ११ मानुषसम्बन्धीनि (युगानि=वर्षाणि) १ १२४ २ [मनुष्य-प्राति० शेर्लोपश्छन्दसि]

मनुष्यासु मनुष्यसम्बन्धिनीषु (प्रजासु) १ १४८ १ [मनुष्प्राति० भवार्थे यत् । तत स्त्रिया टाप्]

मनुष्येभि: मननशीलै (जनै) ३ ४ ८ अनृतवादिभि-र्जनै प्र०—अनृत मनुष्या शत० १ १ १ ४, ७.२ ८ [मनुष्य-प्राति० 'बहुल छन्दसी' ति भिस ऐस् न]

मनुष्वत् मनुष्येण तुल्यम् ३ १७ २ मनुष्येण तुल्य (यज्ञ=शिष्य) ६ ६८ १ मननशालिना विदुषा तुल्य (सज्जन) ३ ३२ ५ मननशील विद्वद्वत् (जन) ४ ३४ ३ मनुषु मनुष्येष्विव १ १०५ १३ यथोत्तमा मनुष्या श्रेष्ठानि कर्माण्यनुष्ठाय पापानि त्यक्त्वा सुखिनो भवन्ति तथा १ १०५ १४ मननशीलेन मनुष्येण तुल्यम् १ ४४ ११. यथा मनुष्या रक्षन्ति तद्वत् १ ४६ १३. मानववत् २९.३३. [मनुष्-प्राति० तुल्यार्थे वति । नभोऽङ्गिरो मनुषा वत्युप-सख्यानम्' अ० १ ४ १८ वा० सूत्रेण भसज्ञकत्वाद् रुत्व न भवति]

मनै मन्यै भा०—जानीयाम् प्र०—अत्र विकरण-व्यत्ययेन शप् १२ ७५ [मन ज्ञाने (दिवा०) धातोर्लोट् । विकरणव्यत्ययेन शप् । मनै मन्ये नि० ६.२८]

मनोजवसा मनोवद्वेगेन गच्छता (रथेन) १ ११७ १५. [मनस्-जवस्पदयो समास]

मनोजवा: मनसो जवो वेग इव जवो वेगो येषान्ते (पादा) २६ २०. मनोवद्वेगा (सेना) ४ २६ ५ मनोवद् गतय (अश्वास=अग्न्यादय) ६ ६३.७ मन इव वेग-वन्त (अग्न्यादय) ५.७७ ३ [मनस्-जवपदयो समास । जव=जुरिति सौत्रो धातुर्वेगितायां गतौ, ततोऽप् । मनो-जवेषु=मनसा प्रजवेषु नि० १ ९]

मनोजवा: मनोवज्जवो वेगो यस्य यस्या स सा वा (विश्वकर्मा=विद्वान् वाग्वा) ५ ११. [मनोजव-प्राति० स्त्रिया टाप् । अथवा मनस् जवस्-पदयो समास]

मनोजवेभि: मनोवद्वेगवद्भि (भा०—वायुविद्युद्गुणै) ६ ६२ ३ [मनोजवप्राति० भिस ऐस् न भवति छान्दसत्वात्]

मनोजाता: ये मनसा विज्ञानेन जायन्ते ते (देवा=विद्वज्जना) ४ ११. [मनस्-जातपदयो समास]

मनोजुवम् मनोवद् वेगवन्तम् भा०—अनलसम् (सर्वाधिपतिं राजानम्) १७ २३ मनोगतिम् (ईश्वर सभेश वा) ८ ४५ **मनोजुव:**=मनस इव जूर्वेगो येषान्ते (विद्यु-दादय) १.१८१ २. मनोवद् गतय (सभाद्यध्यक्षादय) १ ८५ ४. मनसो जूर्वेग इव वेगो येषा ते विद्युदादय १ १८६ ५ **मनोजुवा**=मनोवद्वेगेन ६ २२ ६ [मनस्-जूपदयो समास । जू=जुरिति सौत्रो धातु, तत 'भ्राज-भास०' अ० ३ २ १७७ सूत्रेण क्विप् ताच्छील्यादिषु जवतेर्दीर्घत्व च । अथवा 'क्विब् वचिप्रच्छि०' अ० ३ २ १७८ वा० सूत्रेण क्विप् दीर्घश्च]

मनोजुवा यौ मनोवद् वेगेन जवेते तौ (इन्द्रवायू=विद्युत्पवनौ) प्र०—अत्र 'सुपा सुलुक्०' इत्याकारादेश 'क्विप् चे' ति क्विप् प्रत्यय १ २३ ३ [मनोजू-प्राति० द्विवचनस्याकारादेश]

मनोतरा अतिशयित मनो ययोस्तौ (वसुविदौ=अध्यापकोपदेशकौ) १ ४६ २ [मनस्-प्राति० अतिशायने तरप् । ततो द्विवचनस्याकारादेशश्छान्दस]

मनोता प्रज्ञापक (अग्नि=विद्वज्जन) प्र०—अत्र मनधातोर्बाहुलकादौणादिक ओतन् प्रत्यय २ ९ ४ मनो-वद्गन्ता (अग्नि=अग्निरिव विद्वान् जन) ६ १ १ [मन ज्ञाने (दिवा०) धातोर्बाहु० औणा० ओतन् । मनोता=तिस्रो वै देवाना मनोतास्तासु हि तेषा मनास्योतानि, वाग्वै देवाना मनोता तस्या हि तेषा मनास्योतानि, गौर्वै देवाना मनोता

सुसंस्कृतया प्रज्ञया प्र०—अत्र 'वाच्छन्दसि' इत्येकारादेशो न १९५२ बुद्ध्या ११२६१ मनीषया प्रशस्तबुद्ध्या प्र०—अत्र' 'सुपा सुलुगि०' ति तृतीयाया एकवचनस्याऽऽकारादेश ११०१७ मनस ईषया प्रज्ञाऽनुरूपया प्र०—अत्र 'सुपा सुलुक्०' इति तृतीयास्थाने डादेश १९११ मनीषया विज्ञानेन १७०१ **मनीषाणाम्**=प्रज्ञानाम् याभिर्मन्यन्ते जानन्ति ता मनीषा प्रज्ञास्तासाम् १२.२२ मनस ईषिणीम् (उत्तमप्रज्ञाम्) ३५८२ योगविज्ञानवती बुद्धिम् १११२२४ **मनीषाः**=प्रमा ४११३ ये मनासि विज्ञानानीषन्ते ते (मतय =विद्वासो जना) प्र०—अत्र शकन्ध्वादित्वात् पररूपम् १.६२११ मनस्विन (सज्जना) ६६६११ मनस ईषिणो गमनकर्त्तार (योग्या जना) ६३४१ [मनस् ईषापदयो समासे शकन्ध्वादित्वात् पररूपम्। मनीषया=मनस ईषया स्तुत्या प्रज्ञया वा नि० २२५ नि० ६१० ईषा=ईष गतिहिंसादर्शनेषु (भ्वा०) धातो 'गुरोश्च हल' इत्यङ् स्त्रियाम्। ततष्टाप्]

मनीषिणः मेधाविनो विद्वास ११३५ मनस ईषिणो योगिन १७२० मनसो दमनशीला (विद्वास) ११६४४५ प्र०—अत्र शकन्ध्वादिना पररूपम् ३१०१ जितमनस्का (नर =विद्वज्जना) २१९१ मनस ईषिणो दमनकर्त्तार (धीरा =मेधाविजना) ३४२ **मनीषिभिः**= मेधाविभि विद्वद्भि शिल्पिभि १३४१ **मनीषी**=य सर्वेषा मनसामीषी साक्षी ज्ञाताऽस्ति स (ब्रह्म=परमेश्वर) ऋ० भू० ३६, ४०८ सर्वेषा जीवाना मनोवृत्तीना वेत्ता (ब्रह्म=परमेश्वर) ४०८ मेधावी (बुद्धिमज्जन) ७२२६ सब जीवो के मन=विज्ञान का साक्षी, सबके मन का दमन करने वाला (परमात्मा) आर्याभि० २२, ४०८ सबका अन्तर्यामी (परमात्मा) स० प्र० २४४, ४०८ सर्वाऽऽत्मना साक्षी (ईश्वर) प० वि० [मनीषी इति मेधाविनाम निघ० ३१५ मनस्-ईषिन्पदयो समासे कृते शकन्ध्वादित्वात् पररूपम्। ईषिन्=ईष गतिहिंसादर्शनेषु (भ्वा०) धातोस्ताच्छील्ये णिनि]

मनुजातम् यो मनोर्मननशीलान्मनुष्यादुत्पन्नस्तम् (जनम्) १४५१ [मनु-जातपदयो समास। जातम्=जनी प्रादुर्भावे (दिवा०) धातो क्त]

मनुताम् विजानातु ६४७२९ [मनु अवबोधने (तना०) धातोर्लोट्। मनुताम् मन्यताम् नि० ९१२]

मनुर्हितम् मनुष्याणा हितकारकम् (विद्वास जनम्) ३२१५ मनुष्येभ्यो हितम् (घृतम्=उदकम्) ६७०२ मनुषो मनसो हितकारिणम् (श=सुखम्) ११०६५ **मनुर्हितः**=मनुषो मननकर्त्तारो मनुष्यादयो हिता धृता येन स (जगदीश्वर) ११४११ मनुष्याणा हितकारी (अग्नि =विपश्चिद्राजा) ६१६९ मनु.=विद्वद्भि क्रियासिद्ध्यर्थे यो मन्यते हितो धृतो येन स हितकारी (भौतिको ऽग्नि) ११३४ [मनुष्-हितपदयो समास। मनुष्=मन ज्ञाने (दिवा०) धातोर्बाहु० औणा० उसि। मनुष मनुष्यस्य नि० ८५ हित =डुधाञ् धारणपोषणयो (जु०) धातो क्त। 'दधातेर्हि' इति धातोर्हिरादेश]

मनुवत् विद्वद्वत् २१०६ [मनु-प्राति० तुल्यार्थे वति]

मनुषः मन्यन्ते जानन्ति ये सभ्या मर्त्यास्ते, प्र०—अत्र मनधातोर्बाहुलकादौणादिक उसि प्रत्यय १२६४ मनुष्या ४६११ मानवान् ४२१ मननशीलस्य मानवस्य १७६५ मननधर्माण (विद्वासो जना) ३२६२ अमात्यप्रजाजनान् ४१९ मनुष्यजातस्य पदार्थसमूहस्य २१८२ **मनुषे**=जनाय ५२९३ मानवाय १५२.८. [मन-ज्ञाने (दिवा०) धातोर्बाहु० औणा० उसि। मनुष मनुष्यस्य नि० ८५]

मनुषः मनुष्य ६४१ **मनुषाय**=मननशीलाय १११७२१ [मनु अवबोधने (तना०) धातोर्बाहु० औणा० उषच्। मनुषाय=मनुष्याय नि० ६२९]

मनुषेव मनुष्यवत् ११३०९ [मनुषा-इवपदयो समास। मनुषा=मनुष्-प्राति० तृतीया]

मनुष्यकृतस्य साधारणजनेन रचितस्य (एनस = अपराधस्य) ८१३ [मनुष्य-कृतपदयो. समास]

मनुष्यजाः चतुर्थमारभ्य दशमपर्यन्ता नियुक्तपतय, ऋ० भू० २१४, ऋ० ८३२८५ मनुष्य नाम से कहाने वाले (पतय =पति लोग) स० प्र० १५३, १०८५४० [मनुष्योपपदे जनी प्रादुर्भावे (दिवा०) धातोर्ड]

मनुष्यराजाय नरेशाय २४३० [मनुष्य-राजन्पदयो समासे 'राजाहसखिभ्यष्टजि' ति समासान्तष्टच्]

मनुष्यलोकाय मनुष्यत्वदर्शनाय ३०१२ [मनुष्यलोकपदयो समास। लोक =लोकृ दर्शने (भ्वा०) धातोर्घञ्]

मनुष्यः मानव १५९.४ मननशील (सज्जन) २१८१ **मनुष्यान्**=मननशीलान् (जनान्) ५३९ मनुष्यग्रहणमुभयलक्षक प्राणिमात्रस्य, तस्मात् सर्वप्राणिन. ३४९ **मनुष्याः**=साधारणा जना ११६४४५ ये मनन-

कान्तिगतिषु (भ्वा०) धातोर्लोट् व्यत्ययेन परस्मैपदम्। अन्यत्रलडपि। मन्दस्व=मन्दस्व धीतिभिर्हित इति दीप्यस्व धीतिभिर्हित इत्येतत् श० ७ ३ १.३३]

मन्दध्यै मन्दितुमानन्दितुम् ४ १६.२. [मदि स्तुतिमोदादिषु (भ्वा०) धातोरतुमर्थे अध्यैप्रत्यय]

मन्दमानाय आनन्दस्वरूपाय भा०—आनन्दमयाय (ईश्वराय) ३३ २३ **मन्दमानाः**=आनन्दन्त प्राप्तसत्कारा स्तुवन्तो वा (देवास=आप्ता विद्वांसो जना) ६ ६७ ५. [मदि स्तुतिमोदमदादिषु (भ्वा०) धातो शानच्। ताच्छील्ये चानश् वा। मन्दमानाय मोदमानाय स्तूयमानाय शब्दायमानायेति वा नि० ११ ७]

मन्दमाने कल्याणकारके (रात्रिदिने) १ १४२ ७ [मन्दमानमिति व्याख्यातम्। ततो द्विवचन नपुसके]

मन्दय हर्षय ३ ३० २० प्रापय ३ ५० ४ [मदि स्तुतिमोदमदादिषु (भ्वा०) धातोर्णिजन्ताल्लोट्]

मन्दयत्सखम् मन्दयन्तो विद्याज्ञापका सखायो यस्मिंस्तद् (अ०—विज्ञानादिधनम्) १ ४ ७ [मन्दयत्-सखिपदयो समास। मन्दयत्=मदि स्तुत्यादिषु धातोर्णिजन्ताच्छतृ]

मन्दयध्यै आनन्दयितुम् ४ २९ ३ [मदि स्तुतिमोदादिषु (भ्वा०) धातोस्तुमर्थे अध्यै]

मन्दयुः आत्मनो मन्द प्रशसनमिच्छु (यजत्र=विद्वज्जन) १ १७३ २ [मन्दप्राति० आत्मन इच्छायामर्थे क्यजन्ताद् उ]

मन्दसानम् स्तूयमानम् (राजानम्) ५ २९ २ **मन्दसानः**=स्तुत सर्वस्य ज्ञाता सन् (इन्द्र=सर्वानन्दस्वरूप ईश्वर) प्र०—'ऋञ्जिवृधिमन्दि०' उ० २ ८४. अनेन मन्देरसानच् प्रत्यय १ १० ११ प्रशसित (इन्द्र=राजा) २ ११ ३. कामयमान (इन्द्र=वैद्य) २ ११.१७ आनन्दित (इन्द्र=बलप्रदो विद्वज्जन) २ ११ १५ आनन्दन् (राजा) ४ १७ ३ आनन्दस्वरूप आनन्दयिता (ईश्वर) ४ २६ ३ प्रशस्यमान (इन्द्र=सभापती राजा) २ ३० ५ प्रशसादियुक्त (इन्द्र=सभाद्यध्यक्ष) १ १०० १४ **मन्दसानाः**=आनन्दन्त (मानवा) ५.६० ७ कामयमाना (ऋभव=प्राज्ञा जना) ४ ३५ ६. कामयमाना आनन्दित सन्त (मरुत=विद्वांसो मनुष्या) ७ ३६ ७. [मदि स्तुतिमोदमदस्वप्नकान्तिगतिषु (भ्वा०) धातो 'ऋञ्जिवृधिमन्दि०' उ० २ ८७ सूत्रेण असानच्]

मन्दानम् आनन्दन्तम् (इन्द्र=राजानम्) २६ ११ **मन्दानः**=स्तुवन् आनन्दन् (इन्द्र=वैद्यराज) ६ ४३.४. प्रकाशित (इन्द्र=दुष्टविदारको राजा) ६.४४ १७ आनन्दयन् (इन्द्र=राजा) १ ८२ ५ कामयमानो हर्षयन् वा (राजा) १ ८० ६ प्राप्त (इन्द्र=सूर्य) २ १९ २ [मदि स्तुतिमोदमदादिषु (भ्वा०) धातो शानच्। आगमशासनस्यानित्यत्वान् मुग् न]

मन्दाना आनन्दप्रदौ (सभासेनाध्यक्षौ अध्यापकोपदेशकौ) प्र०—अत्र विभक्तेर्डादेश ३३ ७६ [मन्दानमिति व्याख्यातम्। ततो द्विवचनस्याकारश्छान्दस]

मन्दिनम् कमनीयम् (हरि=हयम्) १ १२१ ८ स्तुत्य जनम् १ १२१ १२ **मन्दिनः**=स्तोतुमर्हा (ग्ना) २ ११ ११ सर्वस्याऽऽनन्दस्य जनयितु (राजजनस्य) २.११ २० सुख कामयमाना (मनुष्या) १ १३४ २ आनन्दयितार (हरयः=अश्वा) ४ ४५ ४ **मन्दिना**=हर्षकारेण बलिना (परमेश्वरेण) १ ५४ ४. **मन्दिने**=आनन्दिन आनन्दप्रदाय (पुरुषाय) १ १० ११ मन्दितु मन्दयितु शीलवते (इन्द्राय=ऐश्वर्यमिच्छवे जीवाय) १.९ २. **मन्दिभिः**=तज्ज्ञापकैर्हर्षकरैश्च गुणै. (स्तोमेभि=स्तोत्रै) १ ९ ३ [मदि स्तुतिमोदमदस्वप्नकान्तिगतिषु (भ्वा०) धातोस्ताच्छील्ये णिनि। मन्दिने=मन्दी मन्दते स्तुतिकर्मण नि० ४ २४.]

मन्दिनिस्पृशः आनन्दस्य स्पर्शयितार (हसास=अश्वा) ४ ४५ ४ [मन्दिन्-उपपदे नि+स्पृश सस्पर्शने (तुदा०) धातो क्विप्]

मन्दिम् मन्दन्ति हर्षयन्त्यस्मिंस्तम् (चक्रि=यानशीघ्रचालनस्वभावम्) १ ९ २ [मन्दप्राति० मत्वर्थ इनि। नकारलोपश्छान्दस]

मन्दिषीमहि शयीमहि ४ १४. [मदि स्तुत्यादिषु (भ्वा०) धातोर्लिङ्]

मन्दिष्ठ अतिशयेन मन्दिता तत्सम्बुद्धौ (सभाऽध्यक्ष) १ ५१ ११ [मदि स्तुतिमोदमदादिषु (भ्वा०) धातो तृजन्तादतिशायन इष्ठन्। तृचो लोप]

मन्दू आनन्दितावानन्दकारकौ (वायुसूर्यौ) प्र०—मन्दू इति पदनामसु पठितम् निघ० ४ १, १ ६ ७ [मदि स्तुतिमोदादिषु (भ्वा०) धातो उ। मन्दू मदिष्णू नि० ४ १२]

मन्दे आनन्देय आनन्दयामि वा ५ ४ १ [मदि स्तुतिमोदमदादिषु (भ्वा०) धातोर्लट्]

मन्द्रजिह्वम् मन्द्रा आनन्दजनिका जिह्वा वाणी यस्य तम् (अग्नि=परमविद्वज्जनम्) ४ ११ ५ मन्द्रा मोद

तस्या हि तेषा मनास्योतानि, अग्निर्वै देवाना मनोता तस्मिन्हि तेषा मनास्योतान्यग्नि' सर्वा मनोता, अग्नौ मनोता सगच्छन्ते ऐ० २ १०]

मनोधृतः मनो विज्ञान धृत यैस्ते (सत्पुरुषा) ३.३८ २ [मनस्-धृतपदयो समास]

मनोयुजः मनसा विज्ञानेन युज्यन्ते ते (वह्नय =विद्युदादय) प्र०—अत्र 'सत्सूद्विष०' अ० ३ २.६१ अनेन 'कृतो वहुल' इति कर्मणि क्विप् १ १४ ६ ये मनसा सदसद्विज्ञानेन युञ्जन्ति योजयन्ति वा ते (देवा =विद्वज्जना) ४ ११. ये मनसा युज्यन्ते ते भृत्या १ ५१ १० ये मनसा ब्रह्म युञ्जते ते (आप्तजना) ४ ४८ ४ ये मन इव युञ्जते ते वेगवत्तरा (अश्वास =वेगादयो गुणा) ५ ७५ ६ [मनसुपपदे युजिर् योगे (रुधा०) धातो 'सत्सूद्विष०' इति क्विप् । 'कृतो वहुलमि' ति कर्मणि क्विप्]

मनोवाताः मन इव वातो वेगो यासा ता (सत्स्त्रिय) ३ ३८ २ [मनस्-वातपदयो समास]

मन्तवः ज्ञातु योग्या (वस्त्रादय पदार्था) १ १५२ १ [मन ज्ञाने (दिवा०) धातो 'कमिमनिजनि०' उ० १ ७३ सूत्रेण तु]

मन्तवे विज्ञातुम् १ ११२.२ [मन ज्ञाने (दिवा०) धातोस्तुमर्थे तवेन्]

मन्तवै मन्तु योग्य (अन्यगोत्रजोऽनौरसो वा पुत्र) ७ ४ ८ [मन ज्ञाने (दिवा०) धातोस्तुमर्थे तवै । मन्तवै मन्तव्य नि० ३ ३]

मन्तुमः प्रशस्तविज्ञानयुक्त (विद्वज्जन) ६ ५६ ४ मन्तु प्रशस्त ज्ञान विद्यते यस्य तत्सम्बुद्धौ (अ०—विद्वज्जन) १ ४२ ५ [मन्तुप्राति० प्रशसाया मत्वर्थे म प्रत्ययश्छान्दस । मन्तु =मन ज्ञाने (दिवा०) धातोस्तु]

मन्त्रम् उच्चार्यमाण वेदाऽवयव विचार वा १ ३१ १३ वेदस्थ विज्ञानहेतु (भा०—वेदमन्त्रम्) ३ ११ वेदाख्यम् (भा०—सर्वेपा जीवाना हितसाधक वेदोपदेशम्) ३४ ५७ वेदस्थमन्त्रसमूहम् १ ४० ५ मन्वते गुप्तान् पदार्थान् परिभाषन्ते येन तम् (श्रुतिसमूहम्) प्र०—मन्त्रा मननात् नि० ७.१२, १ ४०.६ **मन्त्रः**=ईश्वरमारभ्य पृथिवीपर्यन्ताना गुप्तप्रसिद्धसामर्थ्यगुणाना पदार्थाना भाषणमुपदेशन ज्ञान वा भवति यस्मिन् येन वा स (वेदोपदेश) ऋ० भू० ६३, ऋ० ८ ८४६ ३ विचार १ १५२ २ विचारवान् (गुरु) १ १४७ ४ **मन्त्रान्**=वेदाऽवयवान् विचारान् वा १ ६७ २ **मन्त्राः**=विचारसाधका (वेदोपदेशा) ३४ ५३. वेदस्य श्रुतयो विचारा वा ६ ५० १४ [मत्रि गुप्तभाषणे (चुरा०) धातोर्घञ् । मन्त्रा मननात् नि० ७ १२ वाग् वै मन्त्र श० ६ ४ १ ७ ब्रह्म वै मन्त्र श० ७ १ १ ५]

मन्त्रयन्ते गुप्त भाषन्ते १ १६४.१० [मत्रि गुप्तभाषणे (चुरा०) धातोर्लट् । मन्त्रयते अर्चतिकर्मा निघ० ३ १४]

मन्त्रिणे विचारकर्त्रे राजपुरुषाय (अमात्याय) १६ १६. [मन्त्र-प्राति० मत्वर्थे इनि । अथवा मत्रि गुप्तभाषणे (चुरा०) धातो 'वा छन्दसि' नियमेन निरुपपदादपि ताच्छील्ये णिनि]

मन्त्रेभिः ज्ञानयुक्तैर्विचारै १ ६७ ३ [मन्त्र-प्राति० भिस ऐस् न छान्दसत्वात्]

मन्थत मन्थन कुरुत ३ २९ ५. **मन्थन्ति**=विलोडयन्ति ३ २९ ६ **मन्थामि**=विलोड्य निवारयामि, विलोडनादिक्रियया निष्पादयामि ५ २ [मन्थ विलोडने (भ्वा०) धातोर्लोट् । अन्यत्र लट्]

मन्थाम् घृतादि निस्सारण मन्थानम् प्र०—अत्र 'छान्दसो वर्णलोपो वा' इति नकारलोप १ २८.४ [मन्थ विलोडने (भ्वा०) धातोर्बाहु० औणा० आनच् । न लोपश्छान्दस । अथवा मथिन्प्राति० द्वितीयैकवचनम्]

मन्थिनम् मन्थितु शील यस्य तम् (सोमम्=ऐश्वर्यकारक पेयम्) ३ ३२ २. **मन्थिनः**=न्यायकारिण (पुरुषस्य) ७ १८ **मन्थी**=मथितु शील (पदार्थ) १८ १९ मन्थितु शीलमस्य न्यायाधीशस्य स (राजा) ७ १८ पदार्थाना मन्थनसाधन १३ ५७ मथ्नातीति (पदार्थ) ८ ५७ [मन्थ विलोडने (भ्वा०) धातोस्ताच्छील्ये णिनि । मन्थी=अत्तैव शुक्र आद्यो मन्थी श० ४ २ १ ३ चन्द्रमा एव मन्थी श० ४ २ १ १ मन्थी सक्तुश्री तै० स० ४ ४ ६ १]

मन्थिपाः ये मन्थन्ति शत्रून् तान् वीरान् पान्ति ते (देवा =विद्वासो जना) ७ १७ ['मन्थिन्' उपपदे पा रक्षणे (अदा०) धातो क]

मन्थिशोचिषा सूर्यदीप्त्येव ७ १८ [मन्थिन्-शोचिप्पदयो समास]

मन्द प्रशसय ६ १८ ९ **मन्दतु**=आनन्दयतु ७ २२.१ प्रशसतु ६ १७ ३ **मन्दन्तु**=कामयन्तु १ १३४ २ **मन्दसे**=हर्षसि १ ५१ १२ सर्वत्राऽऽनन्दयसि ३६ ७ **मन्दस्व**=आनन्दय २ ३६ ३ आनन्द ६ २३ ८. **मन्दामहे**=स्तुम १.१२२ १३ [मदि स्तुतिमोदमदस्वप्न-

यति वा ५ ६ **मन्यते**=जानाति मन्यते वा २३.३१ **मन्यथाः**=जानीया १ १२६ ७ **मन्यसे**=जानासि १ १२६ ५ **मन्यासै**=मन्यस्व ३४ ८ **मन्ये**=जानीयाम् १ १२७.१ सत्करोमि १५ ४७ विजानीयाम् १ १०४.७ [मन ज्ञाने (दिवा०) धातोर्लङ् । छन्दसि अटोऽभाव । अन्यत्र लोटि लटि च रूपाणि । मन्यते इति कान्तिकर्मा निघ० २ ६ मन्यते इति अर्चतिकर्मा निघ० ३ १४ मन्यासै मन्यस्व नि० ११ २७]

मन्यमानम् अभिमानिनम् (जनम्) ६ १९ १२ **मन्यमानस्य**=विज्ञातु (विदुषो जनस्य) ३ ३२ ४ **मन्यमानः**=विजानन् (ईश्वर) ३४ ३५ सत्याभिमानी (राजा) ४ २९ २ जानने वाला (ईश्वर) स० वि० १५६, ७ ४१.२ अभिमानी (राज्यशासक) २ २३ १२ **मन्यमानान्**=अभिमानिन (शूरान् जनान्) १ १७८ ५. **मन्यमानाः**=विजानन्त (जनास =युद्धवीरा जना) ३ ५३ २३ **मन्यमानैः**=विद्याऽऽर्जवयुक्तैर्दुराग्रहरहितै-र्मनुष्यैर्ज्ञानसम्पादकै किरणैर्वा १ ३३ ९ [मन ज्ञाने (दिवा०) धातो शानच् । 'ताच्छील्यवयोवचनशक्तिषु चानश्' इति शक्तौ चानश् वा]

मन्यव. क्रोधादयो व्यवहारा ४ ३१ ६ **मन्यवे**=आन्तर्यक्रोधाय ३०.१४ न्यायव्यवस्थापालनहेतवे १ ८० ११ शत्रूणामुपरि क्रोधाय १३.३६ क्रोधयुक्ताय वीराय १६.१ क्रोधात् प्र०—अत्र पञ्चम्यर्थे चतुर्थी ३३ ६७ मन्यन्तेऽभि-मान कुर्वन्ति यस्मिन् स मन्यु क्रोधो दुष्टाचरणेषु दुष्टेषु तद्भावनाय प्र०—यजिमनि० उ० ३ २०. अनेन मन्यते-र्युच् प्रत्यय २ ३२ **मन्युना**=दुष्टाचारिण पाप च प्रति वर्त्तमानेन क्रोधेन ३९ ८ **मन्युभिः**=क्रोधादिभि ७ ५६ २२ **मन्युम्**=मननम् भा०—आज्ञाम् २१ ५७ **मन्युः**=अभि-मान १८ ४ दुष्टकाम और दुष्टो पर क्रोधकारी (ईश्वर) स० प्र० २४६, १९ ९ दुष्टानामुपरि क्रोधकृत् (ईश्वर) आर्याभि० २ ६, १९ ९ दुष्टाचारोपरि क्रोधकृत् (मन) भा०—दुष्टेषु क्रोधाविष्करणम् २० ६ [मन ज्ञाने (दिवा०) धातो 'यजिमनिशुन्धि०' उ० ३ २० सूत्रेण युच् । मन्युरिति क्रोधनाम निघ० २ १३ मनधातोर्दीप्त्यर्थाद्वा युच् । मन्यते कान्तिकर्मा निघ० २ ६ मन्यु =मन्यतेर्दीप्तिकर्मण क्रोध-कर्मणो वधकर्मणो वा मन्यन्त्यस्माद् इषव नि० १० २९ पशूना वा एष मन्युर्यद्वराह तै० १ ७ ९ ४]

मन्याभिः विज्ञानक्रियाभि २५ २ [मन ज्ञाने (दिवा०) धातो 'वा छन्दसि' इति स्त्रिया श । ततष्टाप्]

मन्युमत्तमः प्रशसितो मन्यु क्रोधो यस्य सोऽतिशयित (राजा) ४.३०.७. [मन्युप्राति० प्रशसाया मतुप् । ततो ऽतिशायने तमप्]

मन्युमीः यो मन्यु मीनाति हिनस्ति स (इन्द्र =सेना-पति.) १.१००.६. यो मन्यु मिनोति स (जगदीश्वरो विद्वान् वा) २.२३.४. ['मन्यु' इत्युपपदे मीञ् हिंसायाम् (क्र्या०) धातो. कर्त्तरि क्विप्]

मन्ये सत्करोमि १५.४७ विजानीयाम् १.१०४.७. **मन्येथाम्**=विजानीतम् ३ ५८ ४. [मन ज्ञाने (दिवा०) धातोर्लट् । मन्यते इति अर्चतिकर्मा निघ० ३ १४]

मन्वत मन्यन्ते ४१.१६ [मनु अवबोधने (तना०) धातोर्लङ् । अडभावश्छान्दस]

मन्वानः मननशील (विद्वत्सङ्गप्रियो जन) ५ ५२ १५ [मनु अवबोधने (तना०) धातोस्ताच्छील्ये चानश्]

ममकस्य मादृशस्य (पितु =जनकस्य) प्र०—अत्र बाहुलकान्मन्धातोर्डमकन् प्रत्यय. १ ३१ ११. **ममकाय**= ममाऽय ममकस्तस्मै (सूनवे=औरसाय विद्यापुत्राय वा) प्र०—अत्र 'सज्ञापूर्वको विधिरनित्य अ० ६ ४ १४६. इति वृद्ध्यभाव १.३४ ६ [अस्मत्प्राति० शैषिकेऽण्-प्रत्यये 'तवकममकावेकवचने' अ० ४ ३ ३. सूत्रेण ममकादेश । वृद्ध्यभावश्छान्दस. । 'सज्ञापूर्वको विधिरनित्य' इति वा वृद्धिर्न । अन्यत्र मन ज्ञाने (दिवा०) धातोर्बाहु० औणा० उमकन्]

ममत् प्रमादयन्ती (युवति =प्रमदा) ४ १८ ८ हर्षन् (विरोधिजन) ४ १८ ९ [मदी हर्षे (दिवा०) धातो शतृ । विकरणव्यत्ययेन श्लु]

ममतुः परिमीयेते ३ ३२ ७ [माङ् माने (जु०) धातोर्लिट् । वचनव्यत्यय । परस्मैपद च व्यत्ययेन]

ममत्तु आनन्दतु ३ ५१ ११ आनन्दयतु ७ २२ २ हर्षयतु १.१२२ ३. आनन्द प्र०—अत्र विकरणस्य श्लु १ १२१ ९ **ममत्सि**=हर्षयसि ४ २१ ९ **ममदन्**=हर्षन्ति ४ ४२.६. **ममदः**=आनन्द ७ २४ १ **ममन्द**=मन्दते कामयते २ ३३ ६ **ममाद**=हृष्येत् २ २२ १ हर्षति ६ ४७.२ हर्षयति ७ २९ १. [मदी हर्षे (दिवा०) धातो-र्लोट् । 'बहुल छन्दसी' ति शप श्लु । शपोऽभावे तत्स्थानीय-श्यनोऽप्यभाव । अन्यत्र लटि लङि लिटि च रूपाणि । 'ममन्द' प्रयोगे मदि स्तुतिमोदमदादिषु (भ्वा०) धातोर्लिटि व्यत्ययेन परस्मैपदम्]

ममन्दुषी प्रशंसनीयाऽऽनन्दकरी (स्त्री) ५ ६१ ९

कारिणी जिह्वा यस्य तम् (अतिथिम्) १ १६० १ मन्द्रा प्रशसनीया जिह्वा यस्य तम् (राजानम्) ५ २५ २ मन्द्रा आनन्ददा कल्याणकारी जिह्वा यस्य त विद्वासम् ४ ५० १ **मन्द्रजिह्वः**=मन्द्रा आनन्दप्रदा कमनीया जिह्वा वाणी यस्य स (सविता=विद्वान्राजा) ६ ७१ ४ [मन्द्रा-जिह्वा-पदयो समास । मन्द्रा=मदि स्तुतिमोदमदादिपु (भ्वा०) धातो 'स्फायितञ्चि०' उ० २ १३ सूत्रेण रक् । ततष्टाप् । मन्द्रजिह्व मन्दनजिह्व मोदमानजिह्वमिति वा नि० ६.२३]

मन्द्रजिह्वा मन्द्रा प्रशसिता जिह्वा ययोस्तौ (अध्यापकोपदेशकौ) १ १४२ ८ [मन्द्रा-जिह्वापदयो समास । ततो द्विवचनस्याकारादेश]

मन्द्रतमम् अतिशयेन प्र ासादिसत्कृतम् (विद्वज्जनम्) ३३ १३ अतिशयेनाऽऽनन्दकरम् (सज्जनम्) ६ ४ ७ **मन्द्रतमः**=अतिशयेनाऽऽनन्दयुक्त (विद्वज्जन) ५ २२ १ अतिशयेनाऽऽनन्दयिता (होता =दातृ-जन) ६ ११ २ [मन्द्रप्राति० अतिशायने तमप् । मन्द्र =मदि रतुतिमोदा-दिपु (भ्वा०) धातोरौणा० रक्]

मन्द्रतरः अतिशयेनाऽऽह्लादक (विद्वान् जन) ३ ७ ६ [मन्द्रप्राति० अतिशायने तरप्]

मन्द्रम् प्रशसनीयम् (सोमम्=ऐश्वर्यम्) ४ २६ ६ आनन्दप्रदम् (अतिथि=सत्योपदेशक जनम्) ४ २ ७ **मन्द्रस्य**=आनन्दत आनन्दयत (वचनस्य) ६ ३९ १ आनन्दप्रदस्य (विदुप पुरुषस्य) ३ ६ ७ **मन्द्रः**= प्रशसित (होता=विद्यादाता जन) १.१४१ १२ आनन्दित (अग्नि =विद्यार्थिजन) ५ ११ ३ आनन्दप्रद आनन्दित (अग्नि =परमात्मा) ४ ६ ५ कमनीयो हर्षयिता (वेधा = मेधाविजनः) ३ १४ १ आह्लादक (अग्नि =विद्वज्जन) ३ १० ७ स्तुत आनन्दप्रद (राजा) ३३ ६४ स्तोतुमर्हो धार्मिक (सज्जन) प्र०—अत्र 'स्फायितञ्चिवञ्चि०' उ० २ १३ इति रक्प्रत्यय १ २६ ७ पदार्थप्रापकत्वेन हर्षहेतु (राजदूत) १ ३६ ६ **मन्द्राः**=आह्लादयितार (उपदेशका जना) १ १२२ ११ **मन्द्रैः**=प्रशसितै (हरिभि =अश्वै) २० ५३ आनन्दप्रदै (हरिभि = अश्वै किरणैर्वा) ३ ४५ १ [मदि स्तुत्यादिपु (भ्वा०) धातो 'स्फायितञ्चि०' उ० २ १३ इति रक्]

मन्द्रया विज्ञानानन्दप्रदया (वाण्या) ५ २६ १ प्रश-सितयाऽऽनन्दप्रदया (जिह्वया=वाचा) ७ १६ ९ आह्लाद-कामना विज्ञानप्रदया स्तुत्या १ ७६ ५. आनन्दसाधिकया (जिह्वया=सत्यप्रियया वाचा) १७.८ **मन्द्रा**=आनन्द-प्रदा (अग्नेर्ज्वाला) १ १०० १६ **मन्द्राभिः**=आनन्द-कारिकाभि (जिह्वाभि =वाग्भि) ६ १६ २ [मन्द्रमिति व्याख्यातम् । तत स्त्रियां टाप् । मन्द्रा वाङ्नाम निघ० १.११]

मन्द्रा आनन्दप्रदानि हवींपि २७ १५ [मन्द्र-प्राति० शेर्लोपश्छन्दसि]

मन्धातारम् यानेन सद्यो दूरदेश गमयितार मेधा-विनम् १ ११२ १३ [मन्धाता मेधाविनाम निघ० ३ १५]

मन्म मन्तव्य विज्ञानम् ७ १० २ विज्ञानजनक शास्त्रम् १ १३१ ६ मन्तु योग्य ज्ञानम् १.१२९ ६ ज्ञातु योग्यम् (ज्ञानम्) १ १२९ ६ ज्ञानोत्पादक कारणम् ५ १२ २ मन्तव्यम् (अनेकविध सुखम्) २ १९ ८ मन्तव्य वेदोक्त ज्ञानम् १ १२० ३ **मन्मना**=येन मन्यते विजानाति तेन (मनसा=विज्ञानेन) १८ ७५ मन्यते जानाति येन तेन (ज्ञानेन) १ १४० १ विज्ञानवता (मनसा=चित्तेन) ३ १४ ५ **मन्मभिः**=ज्ञानविशेषै सह ३ ११ ८ मन्यन्ते जानन्ति यैस्तै (भा०—गुणप्रकाशै विद्यासाक्षात्कारै) प्र०—अत्र सर्वधातुभ्यो मनिन् उ० ४ १४५ इति मनिन्-प्रत्यय. ३ ५३ विद्वद्भि ४ ३ १५ विज्ञानैर्मन्यमानैर्वा (विप्रेभि =विपश्चिद्भि) १ १२७ २ **मन्मानि**= विज्ञानानि १.१६५ १३ मन्तव्यानि विज्ञानानि ७ ६१ २ यानानि २९ २६ [मन ज्ञाने (दिवा०) धातोरौणादिको मनिन् । मन्म मन नि० ६ २२ मन्म मननानि नि० १० ४२ मन्मभि मननीयै नि० १० ५]

मन्मनः मम मन १ १४०.११ [अस्मद्-मनस्-पदयो समास । 'प्रत्ययोत्तरपदयोश्च' इति अस्मदो मादेश]

मन्मनाम् मन्यमानाम् (प्रज्ञाम्) १ १५१ ६

मन्मसाधनः यो मन्मानि विचारयुक्तानि कार्याणि साधयति स (परमेश्वर) १ ९६ ६. मन्म विज्ञान साधन यस्य स (विद्वज्जन) १.१५१ ७ [मन्म इति व्याख्यातम् । तदुपपदे साध ससिद्धौ (स्वा०) धातोर्ल्युट् । 'कृत्यल्युटो वहुलम्' इति कर्त्तर्यपि ल्युट्]

मन्महे विजानीम ५ ५८ ३ मन्यामहे याचामहे वा १ ६२ १ [मन ज्ञाने (दिवा०) धातोर्लट् । 'वहुल छन्दसि' सूत्रेण शपो लुकि श्यनोऽप्यभाव । मन्महे याञ्चाकर्मा निघ० ३ १९]

मन्यत मन्येत ४ १७ ४ मन्यसे ४.१७.१. **मन्य-ताम्**=विज्ञापयनु स्वीकुरुताम् ४ २० स्वीकरोतु स्वीकार-

कारिका (ऊतय =रक्षणादिक्रिया) १ ६१ ६ सुखस्य भावयितार (वैद्या) १ ८६ ४ या मय सुख भावयन्ति ता (आप =सत्स्त्रिय) प्र०—मय इति सुखनाम निघ० ३.६, ३६ १४ **मयोभुवा**=सुख भावुकेन (अवसा= अन्नादिना) ६ ७६ ५ सुखसाधकेन (अवसा=रक्षणादिना) ५ ७७ ५ या मय सुख भावयति तया सत्यप्रियमङ्गल-कारिण्या (वाचा=वेदवाण्या) प्र०—अत्राऽन्तर्गतो ण्यर्थ 'क्विप् चे' ति क्विप् ३ ४७ **मयोभूः**=मय सुख भावयन् (स्वस्तिगव्यूति =राजा) ११ १५ यो मय आनन्द भावयति स भा०—सुखकारी (विद्वज्जन) १८.४५ सुख भावुक (विद्वज्जन) १८ ४५ मय सुख भावयति या सा (ऊति =नीति) १ ११७ १६. [मयस्-उपपदे भू सत्तायाम् (भ्वा०) धातो क्विप्। मयोभुव सुखभुव नि० ६ २५]

मयोभुवा सुख भावयितारौ (अश्विनौ=वाय्वग्नी) १ ६२ १८. सुख भावुकौ (अश्विनौ=अध्यापकोपदेशकौ) ५ ४२ १८ ['मयोभू' रिति व्याख्यातम्। ततो द्विवचनस्याकारादेश]

मयोभुः सुख भावुक (राजा) ६ ५२ ६ [मयस्-उपपदे भू सत्तायाम् (भ्वा०) धातोर्डु]

मयोभून् मय सुख भावुकान् (सुवीरान्) १ ८४ १६ [मयस्-उपपदे भू सत्तायाम् (भ्वा०) धातो क्विप्। मयोभून्=सुखभूनि नि० १३ ३६]

मराति म्रियते १ १६१ १० **मराम**=म्रियेमहि १ १६१ १० **मरामहे**=अकालमृत्यु क्षणभङ्गुर-देहे प्राग्नुयाम प्र०—अत्र विकरणव्यत्यय १ ६१ ६ [मृङ् प्राणत्यागे (तुदा०) धातोर्लेट्। विकरणव्यत्ययेन शप् परस्मैपद च। अन्यत्र लडपि। मरते=म्रियते नि० ११ ३८]

मरीचयः किरणा प्र०—'मृकणिभ्यामीचि' उ० ४ ७०, १६ ३६ **मरीचीः**=किरणान् २५ ६ [मृङ् प्राणत्यागे (तुदा०) धातो. 'मृकणिभ्यामीचि' उ० ४ ७० सूत्रेण ईचि। मरीचि एता वाऽआप स्वराजो यन्मरीचय श० ५ ३ ४.२१ सूर्यस्य मरीचि (पत्नी) तै० आ० ३ ६ २]

मरीचिपेभ्यः रश्मिभ्य ७ ६ किरणरक्षितृभ्य (देवेभ्य =वाय्वादिभ्य) ऊव ७ ३ ['मरीचि' इत्युपपदे पा रक्षणे (अदा०) धातो क। मरीचिपा. रश्मिनाम निघ० १ ५]

मरुतः वायव प्र०—'मृग्रोरुति' उ० १ ६४ इति मृङ्-धातोरुतिप्रत्यय मरुत इति पदनामसु पठितम् निघ० ५ ५ अनेन गमनागमनक्रियाप्रापका वायवो गृह्यन्ते १.१५ २. सभाद्यध्यक्षादयो मनुष्या १ ८७ २ मरणधर्माण (मर्या.=मनुष्या) ३ ५४ १३ विद्वासो मनुष्या ५ ५८ ६ सुशिक्षिता मानवा ५ ५८ ४ मननशीला (मनुष्या) ५ ५६ ४ मरणधर्माणो मनुष्यास्तत्सम्बुद्धौ १ ८५ १२ पुरुषार्थिनो मनुष्या ५ ५४ १४ शिल्पिनो मनुष्या ५ ६३.५. विद्वत्तमा (जना) १ १६५ १५ मरुद्वत्सुचेष्टा (जना) १ १६६ ६. महाबलिष्ठा (जना) १ १६७ ६ ब्रह्माण्डस्था अन्ये वायव १८ १७ हिरण्यानि रूपाण्यृत्विजो विद्वासश्च (गृहस्था) ८ ३१. मरणधर्मयुक्ता (विद्वासो जना) २ ३४.१. मरणधर्मस्य (देवस्य=विदुषो जनस्य) ६ ४८ २० उत्तमा मनुष्या ६ ६६ ८ परीक्षका विपश्चित १ ८६.२. प्राणादय १ ५२ ६ प्राण इव प्रिया सभासद १ १७१ ४ प्राणवायुवत्प्रिया (विद्वज्जना) २ ३४ ७ वायव इव व्याप्तविद्या मनुष्या ७.५७ ७. वायव इव वेगबलयुक्ता (धार्मिका विद्वज्जना) ३ ३२.४ वायुवद् बलिष्ठा शूरवीरा १७ ४० पवना १ १०७ २ सूक्ष्माऽवयवा १ १६१ १४ वायव इव ज्ञानयोगेन शीघ्र गन्तारो मनुष्या १ ८५ ६ युक्त्या सेविता वायव १ ६४ १३ वायुवच्छीघ्रगमनकारिणो जना १ ३८ ३ योगाभ्यासिनो व्यवहारसाधका वा जना १.३८ ११ प्राण इव नेतार (मनुष्या) ७ ५६ १ शरीरत्यागहेतव (वायव) १ ६४ ६ वायुविद्यावेत्तार (जना) १ १६६ ५ प्राण इव प्रियाचरणा (मनुष्या) ५.५५ ४ मरणशीला (मनुष्या) ५ ५७ ८ ज्ञानक्रियानिमित्तेन शिल्पव्यवहारप्रापकान् (वायून्) प्र०—मरुत इति पदनामसु पठितम् निघ० ५ ५ अनेन प्राप्त्यर्थो गृह्यते १ २३ १० मननशीलान् मनुष्यान् ३३ ४६. विदुपाऽतिथीन् अ०—ऋत्विज भा०—यज्ञसम्पादका मनुष्या ३ ४४. **मरुताम्**= विदुषाम् (जनानाम्) १८ ४५. मनुष्याणा वायूना वा ५ ५३ १ पशूनाम् १४ २५ ऋतावृती यजता विदुषाम् १ ११४ ६ प्राणानामृत्विजा वा १० २३. पूर्णविद्याबलयुक्ताना पुरुषाणाम् १७ ४१ प्राणादि पवनो के ग्रार्याभि० १.२७, ऋ० ५ ३ २७ २५ **मरुत्सु**=मनुष्येषु ४ १ ३ स्तावकेषु (जनेषु) १ १४२ ८ **मरुद्भिः**=वायुभिरिव स्वमित्रै सह ३ ४७ ४ प्राणैरिव वर्त्तमानै श्रेष्ठैर्जनै सह १ १३६ ७ दिव्यगुणैर्देवै सह १ १६ ६ धनञ्जयाख्यै सूक्ष्मै १ १६ ८ अनेकविधैर्निमित्तभूतैर्वायुभि १ १६ ६ उपर्यधोगमनशीलैर्वायुभि १.१६ ७. प्राप्तहेतुभि सह १ १६ ५. विद्वद्भि पवनैर्वा १ १०७ २ **मरुद्भ्यः**= पश्वादिभ्य प्रजाभ्य ३० ५ वायुवद् वर्त्तमानेभ्यो मनुष्येभ्य २४.१६ वायूनामाधारबलाकर्षणेभ्य १ ८५ ८ मनुष्येभ्य

[मदि स्तुतिमोदादिषु (भ्वा०) धातोर्लिट क्वसु । ततो ङीप्]

ममहन्त सत्कुर्वन्तु प्र०—अत्र 'तुजादीनाम्०' इत्यभ्यासदैर्घ्यम् ७ ५२ २ **ममहन्ताम्**=वर्धन्ताम् प्र०—व्यत्ययेनाऽत्र शप श्लु १ ९४ १६ सत्कारेण वर्धयन्ताम् १ १०० १९ सत्कारहेतवो भवन्तु १ ९६ ९ **ममहस्व**=भृश सत्कुरु ३ ५२ ६ **ममहे**=मह्यति प्र०—अत्र 'मह पूजायाम्' इत्यस्माल्लटि 'बहुल छन्दसि' इति श्लुर्विकरणो व्यत्ययेनाऽऽत्मनेपद तुजादित्वाद् दीर्घ १ ६५ १३ सत्कुर्याम् ५ २७ १ **ममुः**=मान कुर्वन्ति १ ११०.५ [मह पूजायाम् (भ्वा०) धातोर्लङ् । व्यत्ययेन श्लुरात्मनेपदश्च । अन्यत्र लोटि लटि च रूपाणि]

ममाते मिमाते परिछिन्त प्र०—अत्र 'बहुल छन्दसि इत्यभ्यासेत्वप्रतिषेध ३ ३२ ७ **ममिरे**=निर्मिमते ७ २१ ७ मिमीते १ ५७ ५ व्याप्नुवन्ति ५ ५५ २ निर्मिमीरन् ३ ३८.३ मिनुयु २९ १९ **ममे**=सृजति ५ ८५ ५ मिमीते १ ५७ ५ मापयति १ १६० ४ [माङ् माने शब्दे च (जु०) धातोर्लट् । 'वा छन्दसी' त्यभ्यासेत्वप्रतिषेध । अन्यत्र लिट्]

ममृड्युः सुखयन्ति ४ १८ ८ [मृड सुखने (तुदा०) धातोर्लिटि छान्दस रूपम्]

ममृवान् मृत सन् १ ११६ ३ योगक्षेमविरह ऋ० भू० १८९, १ ११६ ३ [मृङ् प्राणत्यागे (तुदा०) धातोर्लिट क्वसु]

मम्नाते अभ्यासाते ७ ३१ ७ [म्ना अभ्यासे (भ्वा०) धातोर्लिट् । व्यत्ययेनात्मनेपदम् । कर्मणि वा रूपम्]

मम्रुषीः=म्रियमाणा (स्त्रिय) १ १४० ८ [मृङ् प्राणत्यागे (तुदा०) धातोर्लिट क्वसु । तत स्त्रिया ङीप्]

मय इव सुखमिव १ १७५ ६ [मय-इवपदयो समास]

मयः ऐहिक सुखम् १८.८ सुखकारी (अग्नि=भौतिक सूर्यरूप) २२ १९ सुख सुखविशेषो वा ७ ४७ [मय इति सुखनाम निघ० ३ ६ यद्वै शिव तन्मय तै० २ २ ५ ५]

मयन्दम् यन्नय सुख ददाति तम् (छन्दः=विद्याधर्मशमादिकर्म) १४ ९ ['मयम्' इत्युपपदे डुदाञ् दाने (जु०) धातो क । मयन्दम्=यद्वा अनिरुक्त तन्मयन्दम् श० ८ २ ३ १३]

मयस्कराय य सर्वेषा प्राणिना मय सुख करोति तस्मै (परमेश्वराय सेनाधीशाय वा) १६ ४१ मन, इन्द्रिय, प्राण और आत्मा को सुख करने वाले (ईश्वर) के लिए आर्याभि० २ २६, १६ ४१ सुखकारकाय प० वि० [मयस्-उपपदे डुकृञ् करणे (तना०) धातो 'कृञो हेतुताच्छील्यानुलोम्येषु' अ० ३ २ २० सूत्रेण ट । मयस् सुखनाम निघ० ३ ६]

मयुम् जाङ्गलम् (पशु=चतुष्पाद गवादिकम्) १३ ४७. शस्यादिहिंसकम् पशुम् १३ ४७ **मयुः**=किन्नर २४ ३१ [डुमिञ् प्रक्षेपणे (भ्वा०) धातो 'भृमृशीङ्तॄ०' उ० १ ७ सूत्रेण उ]

मयूखैः ज्ञानप्रकाशादिगुणै रश्मिभिर्वा प्र०—मयूखा इति रश्मिनामसु पठितम् निघ० १ ५, ५ १६ [माङ् माने शब्दे च (जु०) धातो 'माङ ऊखो मय च' उ० ५ २५ सूत्रेण ऊखो मयादेशश्च । मयूखा रश्मिनाम निघ० १ ५]

मयूररोमभिः मयूराणा लोमानीव लोमानि येषान्तै (हरिभि=अश्वै किरणैर्वा) ३ ४५ १ मयूरस्य रोमाणीव रोमा येषान्तै (हरिभि=अश्वै) २० ५३ [मयूररोमन्-पदयो समास]

मयूर्यः मयूराणा स्त्रिय १ १९१ ४ [मयूरप्राति० स्त्रिया ङीप् । प्रथमाबहुवचने रूपम् । मयूर=मीञ् हिंसायाम् (क्र्या०) धातो 'मीनातेरूरन्' उ० १ ६७ सूत्रेण ऊरन्]

मयोभवाय मय सुख भवति यस्मात्तस्मै (परमेश्वराय सेनाधीशाय वा) १६ ४१ सर्वोत्तमसौख्यप्रदाय (ईश्वराय) प० वि० सासारिक सुख के करने वाले (ईश्वर) के लिए आर्याभि० २ २६, ३६ ४१ [मयस्-उपपदे भू सत्तायाम् (भ्वा०) धातो 'ऋदोरप्' इत्यप्]

मयोभु मय सुख भवति यस्मात्तत् (सज्ज्ञानम्) २ २७ ५ परमसुख भवति यस्मात्तत् (भेषजम्=औषधम्) १ ८९ ४ सुख भावुकम् (ब्रह्म=जगदीश्वरम्) ५ ४२ २ सुखकारि (भेषजम्=औषधम्) २५ १७ **मयोभुना**=यो मयासि सुखानि भावयति तेन (राया=धनेन) ३ १६.६ [मयस्-उपपदे भू सत्तायाम् (भ्वा०) धातो 'डुप्रकरणे मितद्र्वादिभ्य उपसख्यानम्' अ० ३ २ १८० वा० सूत्रेण डु]

मयोभु सुख भावुकानि (भेषजा=रोगनिवारकौषधानि) २ ३३ १३. ['मयोभु' इति व्याख्यातम् । तत शे 'सुपा सुलुक्०' इति लुक्]

मयोभुवम् सुखकारकम् (देव=विद्वास जनम्) १ १३८ २. सुख भावुकम् (विदुष जनम्) १ १३८.१ **मयोभुवः**=सुख भावुका (मनुष्या) ५ ५८ २ सुख-

मरुद्वृधः मनुष्यैर्वर्धमानान् (भा०—वर्नैश्वर्योपायान्) ३.१३ ६ [मरुदुपपदे वृधु वृद्धौ (भ्वा०) धातो क्विप्। मरुद्वृध =सर्वा नद्य , मरुत एना वर्धयन्ति नि० ९ २४]

मरुन्नेत्राः मरुति ब्रह्माण्डस्थे वायौ नेत्र नयन येषा ते (देवा =सर्वेभ्य सुखदातारो विद्वज्जना) ९ ३६ **मरुन्नेत्रेभ्यः**=मरुतामृत्विजा प्रजास्थाना सज्जनाना वा नेत्रमिव नायकत्व येषा तेभ्य (देवेभ्य =दिव्यन्याय-प्रकाशकेभ्यो विद्वद्भ्य) ९ ३५ [मरुत्-नेत्रपदयो समास । मरुत इति व्याख्यातम्। नेत्रम्=णीञ् प्रापणे (भ्वा०) धातोरौणा० ष्ट्रन्। ये देवा पश्चात्सदो मरुन्नेत्रा मैं० २ ६ ३]

मर्कटः वानर २४ ३० [मर्क इति सौत्रो धातु । ततो बाहु० औणा० अटन्]

मर्कः मृत्युनिमित्त खल्वन्यायकारी (दुर्जन) ७ १८ मरणदु खदो दुर्नय ७ १७ **मर्काय**=मृत्युनिमित्ताय वायवे अ०—दुष्टाना प्रशमनाय श्रेष्ठव्यवहारस्थापनाय ७ १६ [मर्च इति सौत्रो धातु चेष्टायामर्थे। तत 'इण्-भीकापा०' उ० ३ ४३ इति कन्]

मर्चयति शब्दयति १ १४७ ५ उच्चरति १ १४७ ४. बाधते ५ ३ ७ **मर्चयात्**=सुमार्गे नयेत् २ २३ ७ [मर्च शब्दार्थे (चुरा०) धातोर्लेट्। अन्यत्र लिङ्]

मर्जयध्वम् शोधयत ७.२४ **मर्जयन्त**=शोधयन्तु ५ ३.३ शोधयन्ति १ ६१ २. घर्षणादिना शोधयन्तु ७ ३.५ **मर्जयेम**=शोधयेम ४ ४ ८ [मृजू शौचालङ्करणयो (चुरा०) धातोर्लोट्। अन्यत्र लङि लिङि च रूपाणि। वृद्ध्यभावश्छान्दस]

मर्जयन्तः शोधयन्त (गोतमासो जना) १ ६० ५. [मृजू शौचालकरणयो (चुरा०) धातो शतृ। वृद्ध्यभाव । मर्जयन्त गमयन्त नि० १२ ४२]

मर्डिता सुखप्रदाता (धार्मिको मनुष्य) १ ८४ १९ सुखयिता (इन्द्र =ईश्वर) ४ १७ १७ **मर्डितारम्**= सुखकरम् (इन्द्र=राजानम्) ४ १८ १३ [मृड सुखने (तुदा०) धातो कर्त्तरि तृच्। मर्डिता सुखयिता नि० १३ २८]

मर्त्त मरणधर्मयुक्त (मनुष्य) ५ ६६ १ **मर्त्तम्**=मनुष्यम् १ १३६ ५ **मर्त्तस्य**=मरणधर्मसहितस्य प्राणिजातस्य १ ९२ १०. मननशीलस्य नरस्य ६ २८ ४ **मर्त्ता.**=मनुष्य ४ ८ **मर्त्ताः**=अविद्वांसो मनुष्या ४ १७ १९ मरणधर्माणो मनुष्या ३ ९ ६. साधारणमनुष्या १ १०० १५ **मर्त्तेषु**=मरणधर्मेषु कार्येषु ५ १८ १ [मर्त्त इति मनुष्यनाम निघ० २ ३ मृङ् प्राणत्यागे (तुदा०) धातो 'हसिमृग्रिण्०' उ० ३ ८६ सूत्रेण तन्]

मर्त्तभोजनम् मर्त्तेभ्यो मनुष्येभ्यो भोजन मर्त्ताना पालन वा १ ८१ ६ मर्त्तेभ्य इद भोजनम् ७ ३८ २. मर्त्ताना मनुष्याणा भोज्य वस्तु १ ११४ ६. [मर्त्त-भोजनपदयो समास । भोजनम्=भुज पालनाभ्यवहारयो (रुधा०) धातोर्ल्युट्]

मर्त्तभोजना मर्त्ताना मनुष्याणा भोजनानि पालनानि ७ १६ ४ [मर्त्त-भोजनपदयो समासे शेर्लोपश्छन्दसि]

मर्त्तासः शरीरयोगेन जन्म-मरणसहिता (मनुष्या) २ १.१४ मननशीला मनुष्या. ३ ९ १ मरणधर्माण (मनुष्या) १ १०५ १६ [मर्त्तप्राति० प्रथमाबहुवचने जसो ऽसुक्]

मर्त्यकृतम् साधारणमनुष्याऽऽचरितम् (एन = दुष्टाचरणम्) ८ २७ मर्त्यैराचरितम् (एन =पापम्) २० १८ अनित्यदेहेन निष्पादितम् भा०—अज्ञानादनुष्ठितम् (एन =पापम्) ३ ४८ [मर्त्य-कृतपदयो समास]

मर्त्यम् प्रजास्थ मनुष्यम् ६ ३७ पृथिव्यात्मक लोकम् ऋ० भू० १४२, ३३ ४३ मनुष्य-लोकम् ऋ० भू० १४२, ३३ ४३ मनुष्यशरीरधारिणम् (शत्रुम्) ५ ३५ ५ नाशसहित कार्य्यम् ३४ ३१ मनुष्यादिप्राणिजातम् ३३ ४३ विद्वास मनुष्यम् १.१८ ५ कर्म्म, प्रलयप्राप्तिव्यवस्थया कालव्यवस्थया वा मरणधर्मयुक्त प्राणिनम् १ ३५.२ **मर्त्यस्य**=साधारणमनुष्यस्य ६ ४८ २० मरणधर्मकस्य विश्वस्य मनुष्यस्य ऋ० भू० १३०, ३१ १७ अविदुष. (पुरुषस्य) २ ७ २ पीडितस्य मनुष्यस्य मर्त्तस्य ७ २५ ३. **मर्त्यः**=सुशिक्षितो धार्मिको भृत्यो मनुष्य १ ८३ १. अविद्वान् मनुष्य १ १९ २ **मर्त्यान्**=मरणधर्मान् मनुष्यादीन् ४ ५८ ३ **मर्त्यानाम्**=अविदुषाम् (जनानाम्) ४ १२ ५ मरणधर्माणा शत्रूणाम् ५.४ १ विद्याविज्ञानरहिताना मनुष्याणाम् ऋ० भू० २०५, १९ ४७ **मर्त्याय**= मरणधर्माय (मनुष्याय) ४ १२ ३ मनुष्यसुखाय ५ ४१ ७. नराय पतये १ १२४ १२ मनुष्य के लिए मं० वि० १०५, ५ ४१ ७ **मर्त्ये**=मर्त्यलोके ३ २९ **मर्त्येन**=मरणधर्मेण शरीरेण १ १६४ ३० मरणधर्मसहितेन शरीरादिना १ १६४ ३८ **मर्त्येषु**=नश्यमानेषु पदार्थेषु १ ७७ १. मरणधर्मेषु मनुष्येषु कार्येषु वा ४ १६ **मर्त्यैः**=अविद्वद्भिर्मनुष्यैः २० १८ मृत्युधर्मैं (मनुष्यैः) ८ २७ मरणधर्मैं

५ ५ ११ प्राण इव प्रियेभ्य (भा०—विद्वज्जनेभ्य) २४ १६ [मृङ् प्राणत्यागे (तुदा०) धातोः 'मृग्रोरुति' उ० १ ६४. सूत्रेण उति । मरुत ऋत्विङ्नाम निघ० ३ १८ पदनाम निघ० ५ ५ मरुत् हिरण्यनाम निघ० १ २ मरुत् रूपनाम निघ० ३.७ मरुतो मितराविणो वा मितरोचिनो वा महद् द्रवन्तीति वा नि० ११ १४ मरुतो रुग्मय ता० १४.१२ ९ युञ्जन्तु त्वा मरुतो विश्ववेदस इति युञ्जतु त्वा देवा इत्येवैतदाह श० ५ १ ४ ९ गणशो हि मरुत ता० १९ १४ २ मरुतो गणाना पतय तै० ३ ११ ४ २ सप्त सप्त हि मारुता गणा श० ९ ३ १ २५ मारुत सप्त-कपाल (पुरोडाश) ता० २१ १० २३ मरुतो वै देवाना भूयिष्ठा ता० १४ १२ १. मरुतो ह वै देवविशो ऽन्तरिक्ष-भाजना ईश्वरा कौ० ७ ८. अहुतादो वै देवाना मरुतो विट् श० ४ ५ २ १६ मरुतो वै देवानामपराजितमायतनम् तै० १ ४ ६ २ अप्सु वै मरुत श्रित गो० उ० १ २२ आपो वै मरुत ऐ० ६ ३० पङ्क्तिश्छन्दो मरुतो देवताष्ठीवन्त श० १० ३ २ १० मरुत् स्तोमो वा एप (षोडशस्तोम) ता० १७ १ ३ ओजो वै वीर्यं मरुत जै० ३ ३०९ कीनाश (कृषी कर्मकरा) आसन्मरुत सुदानव तै० २ ४ ८ ७ चत्वारिंशन्मरुतो देवा जै० १ ३४ मरुतो गणाना पतय तै० ३ ११ ४ २ वीर्यं मरुत जै० १ ३०३]

मरुत्तमा अतिशयेन विद्वद्युक्तौ (अश्विना=अध्यापको-पदेशकौ) १ १८२ २ [मरुत्प्राति० अतिशायने तमप् । ततो द्विवचनस्याकारश्छान्दस]

मरुत्वतः प्रशसितविद्वद्युक्तस्य (राज्ञ) ५ ४२ ६ **मरुत्वते**=मरुतो वहवो मनुष्या कार्यसाधका विद्यन्ते यस्य तस्मै (शिल्पिजनाय) ३ ३५ ७. प्रशस्तानि मरुदस्त्राणि विद्यन्ते यत्र तस्मै (इन्द्राय=रणाय) ७ ३८ प्रजासम्वन्धाय प्र०—अत्र सम्वन्धे मतुप् 'भय' इति मस्य वत्वम् ७ ३५ प्रशसितप्रजायुक्ताय (इन्द्राय=सभापतये) ७ ३६ प्रजापालन-सम्बद्धाय (राज्यैश्वर्याय) ७ ३८ प्रशसिता मनुष्या यस्मिन् तस्मै (विद्युद्रूपाग्नये) ५ ८७ १ **मरुत्वन्तम्**=प्रशस्त-प्रजायुक्तम् (इन्द=सम्राज प्रजापतिम्) ७ ३६ प्रशस्ता मरुतो मनुष्या विद्यन्ते यस्य तम् (इन्द्र=परमैश्वर्यवन्त राजानम्) ३ ४७ ५ सर्वप्राणियुक्तमृत्विग्युवत वा (इन्द्र= जगदीश्वर सभाध्यक्ष वा) ११०१ ३ प्रशस्ता मरुतो विद्यावन्त ऋत्विजोऽध्यापका विद्यन्ते यस्मिँस्तम् (अ०— अध्यापकम्) ११०११ मरुत सम्वन्धिनो विद्यन्ते यस्य तम् (इन्द्र=विद्युतम्) प्र०—अत्र सम्बन्धार्थे मतुप् 'तसौ मत्वर्थे' अ० १ ४ १९ इति भत्वाज्जश्त्वाऽभाव १ २३ ७

मरुत्व: ।=प्रशस्तविद्यायुक्त (विद्वज्जन) ११०१.८. प्रशसितवनयुक्त (इन्द्र=राजन्) ३ ५१ ७ मरुत प्रशस्ता धर्मसम्वद्धा. प्रजा यस्य तत्सम्बुद्धौ (इन्द्र=सम्राट्) ७.३५. **मरुत्वान्**=मरुतो वहवो वायवो विद्यन्ते यस्मिन् स (सूर्य) ६ ४७ ५ प्रशस्ता मरुत प्रजा सेना वा विद्यन्ते यस्य स (इन्द्र =शत्रुजित् सेनापति) ७ ३८ प्रशस्तवायु-मान् (इन्द्र =सूर्य) १ ८०.११ यस्य सृष्टौ सेनाया वा प्रशस्ता वायवो मनुष्या वा विद्यन्ते स (इन्द्र =परमेश्वर. सभाध्यक्षो वा) ११०० २ प्रशस्तरूपवान् (इन्द्र =विद्यु-दादिरूपोऽग्नि) ३ ४ ६ मनुष्यादिवहुप्रजायुक्त (वैद्यो जन) २.३३ ६ अत्यन्त वलवान् (इन्द्र =परमात्मा) आर्याभि० १ ३२ ऋ० १ ७ १० १५. [मरुत्-प्राति० सम्बन्धार्थे प्रश-साया भूम्न्यर्थे वा मतुप् । 'भय' इति मतुपो मस्य वत्वम् । 'तसौ मत्वर्थे' इति भत्वाज्जश्त्व पदकार्य न भवति । मरुत्वान्=मरुद्भिस्तद्वान् नि० ४ ८]

मरुत्वती प्रशस्तरूपयुक्ता (राज्ञी) २ ३० ८ प्रशस्ता मरुतो मनुष्या विद्यन्ते यस्या सा (वाणी=सकलविद्या-युक्ता वाक्) ७ ३१ ८ **मरुत्वतीः**=मनुष्यादिप्रजा-सम्बन्धिनी (अप =जलानि) १ ८० ४ [मरुत्-प्राति० मतुवन्तात् स्त्रिया ङीप्]

मरुत्वतीयम् वहवो मरुतो व्याख्यातारो मनुष्या विद्यन्ते यस्मिँस्तत्र भवम् (उक्थ=वाच्यम्) १५ १२ [मरुत्-प्राति० भूम्न्यर्थे=मतुप् । तत 'सास्य देवता' इत्यर्थे 'द्यावापृथिवी शुनासीर०' अ० ४ २ ३२ सूत्रेण छ । छस्येयादेश । छन्दसि भवार्थेऽपि]

मरुत्वतीयाः मरुता सम्वन्धिनो व्यवहारा १८.२० [मरुत्वत्-प्राति० भवार्थे छ । मरुद्वतीयम्—(शस्त्रम्) पवमानोक्थ वा एतद् यत् मरुत्वतीयम् ऐ० ८ १ तदेतद् वार्त्रघ्नमेवोक्थ यन्मरुत्वतीयमेतेन इन्द्रो वृत्रमहन् । कौ० १५ २ तदेतत् पृतनाजिदेव सूक्त यन्मरुत्वतीयमेतेन ह इन्द्र पृतना अजयत् कौ० १५ ३ वज्रो वै मरुत्वतीया (ग्रहा.) मै० ४ ६ ८]

मरुत्स्तोत्रस्य मरुता वेगादिगुणै स्तुतस्य (वृजनस्य= व्यवहारस्य) ११०१ ११ [मरुत्-स्तोत्रपदयो समास]

मरुद्गण मरुता मनुष्याणा वायूना वा गण समूहो वा यस्य तत्सम्बुद्धौ भा०—न्यायाधीश (इन्द्र=राजन्) ३३ ६५ **मरुद्गणः**=मरुतामुत्तमाना मनुष्याणा गण. समूहो यस्य स (इन्द्र =राजा) ६ ५२ ११ **मरुद्गणाः**= मरुता मनुष्याणा समूहा २ ४१ १५ [मरुत्-गणपदयो समास]

क्विप्-प्रत्यये पृषोदरादित्वाद् रूपसिद्धि]

मलिम्लुचाय स्तेनाय प्र०—मलिम्लुच इति स्तेननाम निघ० ३ २४, २२ ३० [मलिन्-उपपदे म्लुचु गत्यर्थे (भ्वा०) धातो क]

मशर्शारस्य यो मशान् दुष्टान् शब्दान् शृणाति हिनस्ति तस्य (राज्ञ) प्र०—अत्र पृषोदरादिना पूर्वपदस्य रुगागम १ १२२ १५ [मशोपपदे शॄ हिंसायाम् (क्र्या०) धातोरण्]

मस्तिष्केण शिरस्स्थमज्जातन्तुसमूहेन २५ २ [मस्त मस्तकम् इष्यति स्वाधारत्वेन प्राप्नोतीति विग्रहे मस्तोपपदे इषु गतौ (दिवा०) धातो क । पृषोदरादित्वाद् रूपसिद्धि]

महत् पुष्कलम् (वीर्यं=पराक्रमम्) २ १७ ३. सर्वेभ्यो वृहत् (चेतनमात्रस्वरूप ब्रह्म) ३ ५५ ५ -पूज्य वृहत् (यश) ३२ ३ विस्तीर्णम् (आवपन=क्षेत्रम्) २३ ६ वडे (असुरत्वम्=चेतनमात्र ब्रह्म) स० प्र० ११०, ३ ५५ १६ वडा (यश=धर्मयुक्त कामो का करना) स० प्र० ४५५, ३२ ३ महोत्तमगुणविशिष्टम् (पौंस्य=पुरुषार्थयुक्त वलम्) १ १०१ ३ **महान्ति**=विज्ञानादीनि ५ ५९ ४ [महत् उदकनाम निघ० १ १२ महत् महन्नाम निघ० ३ ३ महति पूजयति पूज्यते वा तन्महदिति विग्रहे मह पूजायाम् (भ्वा०) धातो 'वर्त्तमाने पृषद्वृहन्महत्'० उ० २ ८४ सूत्रेण अति । महान् कस्मान् मानेनान्याञ्जहानीति शाकपूणि । महनीयो भवतीति वा नि० ३ १३ महद्वा अन्तरिक्षम् ऐ० ५ १८,१९ अन्तो वै महत् ऐ० ५ २, १२ एप ह वै महान् देवा यद्यज्ञ गो० १ २ १६.]

महत पूज्यस्य व्यापकस्य वा (सत्यस्य=जगदीश्वरस्य) २ १५ १ पूजनीयस्य (राज्ञ) ४ २२ ५ प्रवलान् (शत्रून्) १ १७८ ५ आकाशादे २० ३२ **महति**=विशाले (सधस्थे=सहस्थाने) ११ १८ व्यापकत्वादिमहागुणविशिष्टे (अन्तरिक्षे=अन्तरिक्षय आकाशे) १६ ५५ **महते**=वृहते पूजिताय वा (इन्द्रियाय=धनाय) १ १०४ ६ वहुविधाय (धनाय) १.१०४ ७ वडे (क्षत्राय=चक्रवर्त्ति राज्य के लिए) स० प्र० १८३, ६ ४० विशिष्टाय पूज्यतमाय (सौभगाय=सुष्ठु ऐश्वर्याणा भावाय) ५ ४३ सत्कर्त्तव्याय (क्षत्राय=क्षत्रियकुलाय) १० १८ **महत्सु**=महाप्रवलेषु (आजिषु=सङ्ग्रामेषु) १.८१ १ **महद्भि**=महाशयै (राजप्रजाजनै) ४ ४१ २ महासुखकारकैर्गुणै १.७२ ६ महागुणविशिष्टै (वाजेभि=मेध्यै) ४ २२ ३. **महद्भ्य**=महाशयेभ्यो विद्यावयोभ्या वृद्धेभ्य पूज्येभ्य (राजपुरुषेभ्य) १६ २६ **महद्भ्याम्**=पूज्याभ्याम् (पित्राचार्यादिभ्याम्) ३ ७ ६ **महान्**=सर्वोत्कृष्ट पूज्यतमश्च (इन्द्र=भगवान् जगदीश्वर) ७ ३६ महागुणकर्मस्वभाव (इन्द्र=ईश्वर) ७ ४० महाशय (इन्द्र=राजा) ६ ४५ १३ सर्वेभ्यो ज्येष्ठ (विद्युद्रूपोऽग्नि) ३८.२२ सर्वेभ्यो वरीयान् सर्वै पूज्यश्च (ईश्वर) १३.२ गुणैर्महत्त्वयुक्त (वर) १ ५६ ३ पूज्यतमो महाशय (इन्द्र=ऐश्वर्यवान् विद्वज्जन) ३ ३६ ५ सर्वोत्कृष्ट (सेनापति) १ ८१ ४ सर्वेभ्यो महत्तम (इन्द्र=परमेश्वर) १४.१० सर्वोत्कृष्ट ईश्वर सूर्यलोको वा परिमाणेन महत्तम १ ६ १ सर्वथाऽनन्तगुणकर्मस्वभावसामर्थ्येन युक्त (इन्द्र=सर्वजगद्राज) १ ८ ५ महत्त्वपरिमाणत सर्वेभ्योऽधिक (वेदविद् आप्तो विद्वज्जन) ३ ५३ ६. महत्त्वादिगुणविशिष्ट (ईश्वर) ३३ ३९ पूजनीयतम (राजा) ३३ ६५ व्याप्त सन् (परमात्मा) ३ ५५ ६ अतिविस्तीर्ण (अग्नि=विद्युत्) ४ ७ ७ व्याप्त्यादिमहागुणविशिष्ट (कवि=काल) १ ६५ ४ महत्त्वपरिमाण (अग्नि=सूर्यलोक) ३ ६ ४ **महान्तम्**=विद्यावयोवृद्ध जनम् प० वि० । १ ११४ ७ वृद्धतमम् (परमेश्वरम्) ऋ० भू० १३१, ३१ १८ महागुणविशिष्ट पूज्य जनम् १६ १५ महत्परिमाणम् (कोश=मेघम्) ५ ८३ ८ वडो से भी वडे (ईश्वर) को आर्याभि० २ ८, ३१ १८ **महान्त**=परिमाणेनाऽधिका (विद्वासो=जना) १ १६६ ११ [महदिति व्याख्यातम् । 'महान्' इत्येवमादौ 'सान्तमहत सयोगस्ये' ति दीर्घ । प्रजापतिर्वाव महान् ता० ४ १०.२ अग्निर्वै महान् जै० उ० ३ ४ ७ प्राण एव महान् श० १० ४ १ २३]

महय पूजयोपकुरु वा १ ५२ १ **महयसे**=सत्क्रियसे ६ १५ २ **महयन्**=सत्कुर्वन्ति ७ ४२ ३ **महयन्त**=पूजयेयु ३ ३ ३ **महेत्**=पूजयेत् १.१११ ३ **महेम**=सत्कुर्याम ७ २ ३ [मह पूजायाम् (भ्वा०) धातोर्णिजन्ताल्लोट् । अन्यत्र लट् लङ् च । 'महेत्' इत्यादौ लिङ् मह पूजायाम् इति चुरादावपि । महयति अर्चतिकर्मा निघ० ३ १४]

महयते महते (राये=धनाय) ७ ३२ १६ **महयन्**=सत्कुर्वन् (प्रजाजन) १ ५४ २ **महयन्तम्**=सत्कर्त्तव्यम् (कामम्) १ १७८ १ **महयन्त**=महानिवाऽऽचरन्त (प्रजाजना) ४ १७ १८ पूजयन्त (विद्वासो जना) ५ ३१ ४ [मह पूजायाम् (चुरा०) धातो शतृ । महत्-प्राति० वा 'उपमानादाचारे' सूत्रेणाचारे क्यजन्ताच्छतृ]

शरीरे ३ ४८ [मर्त्य इति मनुष्यनाम निघ० २.३ अनात्मा हि मर्त्य श० २ २ २ ८ मर्त्यान्=मनुष्यान् नि० १३ ७]

मर्त्यत्रा मर्त्येषूपदेशका (जना) ७ ५२ १ मर्त्येषु मनुष्येषु ६ ६२ ८ [मर्त्यप्राति० 'देवमनुष्यपुरुषपुरुमर्त्येभ्य०' अ० ५ ४ ५६ सूत्रेण सप्तम्यन्तात् त्रा प्रत्यय]

मर्त्यासः मनुष्या १.११३ ११ [मर्त्यप्राति० प्रथमा बहुवचने जसोऽसुक्]

मर्त्येषितः मर्त्यै सेनास्थैरितरैश्चेषितो विजय १.३९ ८. [मर्त्य-इषितपदयो समास । इषित =इषु इच्छायाम् (तुदा०) धातो क्त]

मर्धतः हिंसत ६ ६० ४ **मर्धति**=हिंसति ७ ५६ ४ **मर्धन्ति**=योधयन्ति ११६६ २ हिंसन्ति ३.५४ १४ **मर्धिषत्**=अभिकाङ्क्षेत् ७ ३२ ५ **मर्धिष्टम्**=हिंस्तम् ३३ ८८ **मर्धीः**=अभिकाङ्क्षे ७ २५ ४ उन्दितान् कुरु ४.२० १० [मृधु उन्दने (भ्वा०) धातोर्लेट् । धातूनामनेकार्थकत्वादत्र हिंसने । अन्यत्र लेट् लुङ् च]

मर्म जीवननिमित्तम् १ ६१ ६ गुह्याऽवयवम् ५ ३२ ५. यस्मिन् प्रहते म्रियते तत् ३ ३२ ४ **मर्माणि**=शरीरस्थान् जीवनहेतूनवयवान् ६ ७५.१८ यानि ताडितानि सन्ति सद्यो मरणजनकान्यङ्गानि १७ ४९ [मृङ् प्राणत्यागे (तुदा०) धातोर्मनिन् । 'कृतो बहुल वे' ति वार्तिकेन कर्त्तृ भिन्ने कारकेऽपि मनिन्]

मर्मर्त्तु भृश प्राप्नोतु २ २३ ६ मृङ् प्राणत्यागे (तुदा०) धातोर्यङ्लुगन्ताल्लोट्]

मर्मृजत शुद्धा भूत्वा शोधयन्ति ४ ११ १४ **मर्मृजतः**=भृश शोधयत ४ २ १६ **मर्मृजन्त**=अत्यन्त मार्जयन्तु शोधयन्तु १.१३५ ५ [मृजू शौचालकरणयो (चुरा०) धातोर्यङ्लुगन्ताल्लोट् । अन्यत्र लटि लङि च रूपाणि]

मर्मृजेन्यः अत्यन्तमलङ्करणीय (विद्वान् राजा) ११८९ ७ भृश शोधक (अग्नि) २ १० १. [मृजू शौचालकरणयो (चुरा०) धातोर्यङ्लुगन्तात् कृत्यार्थे केन्य]

मर्मृजमा भृश शुद्ध शोधयिता (अग्निः=वैद्यराजो विद्वान्) ३ १८ ४ [मृजू शौचालकरणयो (चुरा०) धातोर्यङ्लुगन्तान् मनिन्]

मर्मृज्यते अतिशयेन शुद्ध्यते १ ६५ ८ **मर्मृज्यन्ते**=शोधयन्ति ४ १५ ६ [मृजू शौचालकरणयो (चुरा०) धातो क्रियासमभिहारे यङन्ताल् लट्]

मर्मृज्यमानाः भृश शुद्धा (युवतय =स्त्रिय) २ ३५ ४. उत्तम ब्रह्मचर्यव्रत और सद्विद्याओ से अत्यन्त युक्त (युवतिया) स० वि० १०४, २.३५ ४ [मृजू शौचालकरणयो (चुरा०) धातोर्यङन्ताच्छानच् । तत स्त्रिया टाप्]

मर्मृशत् अतिशयेन सहमान (मज्जन) ११४० ५ भृश विचारयन् (विद्वज्जन) ३.३८ १ [मृश आमर्शने (तुदा०) धातोर्यङ्लुगन्ताच्छतृ]

मर्य इव यथा मनुष्य १ ६१ १३ प्राप्त होने वाले पति के समान स० वि० १३६, अथर्व० १४ २ ३७ **मर्या इव**=यथा विद्वासो मनुष्या ५ ५९ ३. [मर्य-इवपदयो. समास]

मर्यः मनुष्य ४ २० ५. मरणधर्मा मनुष्य १.१६३ ८. पतिर्मनुष्य १ ११५ २ **मर्याः**=मरणधर्माण (नर = नेतारो जना) ५ ५३ ३ मरणधर्मशीला मनुष्यास्तत्सम्बोधने प्र०—मर्या इति मनुष्यनामसु पठितम् निघ० २ ३, १.६ ३ मरणधर्मका (वायव) १ ६४ २ [मर्य इति मनुष्यनाम निघ० २ ३ मर्यो मनुष्यो मरणधर्मा नि० ३ १४ मर्या इति मनुष्यनाम । मर्यादाभिधान वा स्यात् नि० ४ २]

मर्यकम् मर्यम् (अपत्यम्) ५ २ ५ [मर्य-प्राति० स्वार्थे कन्]

मर्यश्रीः मर्याणा श्री शोभा यस्मात् स (अग्नि = पावक) २ १० ५ मर्याणा मनुष्याणा श्रीरिव ११ २४ (मर्य-श्रीपदयो समास]

मर्यादायै न्यायाऽन्यायव्यवस्थायै भा०—प्रश्नोत्तरकरणसामर्थ्याय ३० १० [मर्यादा=मर्यैरादीयते । मर्यादामर्यादिनोर्विभाग नि० ४ २]

मर्यासः मनुष्या ५ ६१ ४ [मर्यप्राति० जसोऽसुक्]

मर्षिष्ठाः विनाशये १ ७१ १० [मृङ् प्राणत्यागे (तुदा०) धातोर्लिङ्]

मलम् अशुद्धिकरम् अ०—अविद्यारूपम् ६ १७ [यन् मृज्यते शोध्यत इति विग्रहे मृजू शौचालकरणयो (चुरा०) धातो 'मृजेष्टिलोपश्च' उ० १ ११० सूत्रेण कल धातोष्टिलोपश्च]

मलादिव यथा मलिनताया २० २० [मलाद्-इव पदयो समास]

मलिम्लवः ये मलिना सन्तो म्लोचन्ति गच्छन्ति ते (स्तेनास =गुप्ताश्चौरा) ११ ७९ **मलिम्लून्**=मलिनाचारान् सिंहादीन् भा०=गवादिहिंसकान् पशून् पुरुषान् वा ११ ७८ [मलिन्-उपपदे म्लुचु गत्यर्थे (भ्वा०) धातो

बलादिगुणविशिष्टमनीकम्) १ ५७ ६ महत्तमम् (सिन्धु=समुद्रम्) २ ११ ६ महान्त महाशय सर्वाऽव्यक्षम्) ६ २६.१ [महत्-प्राति० षष्ठ्या बहुवचने 'छान्दसो वर्णलोपो वे' ति तलोपे रूपम्]

महामनसाम् महान्ति मनांसि विज्ञानानि येषा तेषाम् (देवाना=विद्वत्पुरुषाणाम्) १७ ४१ [महत्-मनस्पदयो समास]

महारथः महान्तो रथा वीरा वा यस्य स (राजन्य=राजपुत्र) २२ २२ [महत-रथपदयो. समास]

महावद्रिणा महावर्णयुक्तेन (पदा=पादेन) १.१३३.२. [महत्-वद्रिपदयो समास]

महावधः महान् वधो नाशन येन स (महारोग) ५.३४ २ **महावधात्**=महतो हननात ५ ८३ २. [महत्-वधपदयो समास । वध=हन हिंसागत्यो (अदा०) धातो 'हनश्च वध' अ० ३ ३ ७६. सूत्रेणाप् वधादेशश्च । महावधात्=महान् ह्रस्य वध नि० १० ११ वध. बलनाम निघ० २ ९ वज्रनाम निघ० २ २०]

महावीरम् महांश्चासौ वीरश्च तमिव महाकर्षण-प्रकाशादिना युक्त सूर्यलोकम् १ ३२ ६ **महावीरस्य**=महांश्चासौ वीरश्च तस्य (सेनापते) १६ १४. [महत्-वीरपदयो. समास]

महावैलस्थे महागर्त्तयुक्ते (स्थाने) १ १३३.३. [महत्-वैलपदयो समास । ततो महावैलोपपदे तिष्ठते क । वैलम्=विल-प्राति० स्वार्थेऽण्]

महावैश्वदेवः महता विश्वेषा सर्वेषामय व्यवहार १८ २० [महत्-वैश्वदेवपदयो समासः । वैश्वदेव=विश्व-देव-प्राति० स्वार्थेऽण् । देव=दिवु क्रीडाविजिगीषाव्यव-हारादिषु (दिवा०) धातोर्घञ्]

महाव्राताः महान्तो व्राता व्रतेषु कुशला जना सखायो यस्य स (इन्द्र=परमैश्वर्ययुक्तो जन) ३ ३०.३ [महत्-व्रातपदयो समास । व्रात=व्रतप्राति० कुशलार्थेऽण् । व्रतमिति कर्मनाम वृणोतीति सत नि० २ १३]

महासेनासः महती सेना येषान्ते (वीरजना.) ७ ३४ १६ [महतीसेनापदयो. समास । ततो जसोऽसुक्]

महि पूज्य महत् (श्रव=श्रवणम्) १२ १०६ महत् पूजितम् (जात=विज्ञानम्) १ १५६ २. महत्तम पूजनीयम् (शर्म=गृह गृह वा) १ ६३ ८. महासुखप्रद पूज्यतमम् (क्षत्रम्) १ ५४ ११ महागुणविशिष्टम् (क्षत्रम्=राज्यम्) १ ५४ ८ महत् (नम=अन्नम्) १ ६२ २ महान्तम् (श्रेष्ठ-जनम्) ४ ३ १४ महान् (वृद्धो जन) ५ ६० ३ महते पूजिताय (पूरवे=मनुष्याय) १.१३० ७ महान्त. (अर्चय=दीप्तय) ५.६ ७ [महि महत् नि० ११ ९ महि=मह पूजायाम् (भ्वा०) धातोरौणा० इन्]

महिकेरवः महयो महान्त केरव. कारव शिल्पविद्या-साधका येषान्ते (प्रियमेधा=महाविद्वांसो जना) प्र०—अत्र कृञ्-धातोरुण् प्रत्ययो वर्णव्यत्ययेनाकारस्य एकारश्च १ ४५.४ [महि-केरुपदयो समास । 'महि' व्याख्यातम् । केरु.=करोतेरुण्, वर्णव्यत्ययेनाकारस्य एकार]

महिक्षत्रौ महत्क्षत्र ययोस्तौ (अध्यापकोपदेशकौ) ५ ६८ १ [महि-क्षत्रपदयो समास । क्षत्रम् धननाम निघ० २ १०]

महित्वनम् महिमानम् ५ ५५.४. महत्वम् (वीर्यं=सामर्थ्यम्) ५ ५४.५ महत्त्वम् ४ ३६ ३ महिमा २ २३.४ **महित्वना**=महिम्ना प्र०—महित्वनेनेति प्राप्ते 'वा छन्दसि सर्वे विधयो भवन्ति' इति विभक्तेराकारादेश । समीक्षा—अत्र सायणाचार्येण व्यत्ययेन नाभाव कृत सोऽशुद्ध. १ ८५ ७ महत्त्वेन ५ २ ९ स्वमहिम्ना प्र०—अत्र बाहुलकादौणादिक इत्वनि प्रत्यय ११ ६ [मह पूजा-याम् (भ्वा०) धातोर्बाहु० औणा० इत्वनि । 'महित्वना' प्रयोगे महित्वन्-प्राति० टास्थाने आकारादेश]

महित्वम् महेर्महतो भावम् १ ११६ १ महत्वम् १ ५९ ६ महागुणस्वभावम् (प्रभावम्) १ ५६ ४ महत्त्वम् ७.४० ५ मह्यते पूज्यते सर्वैर्जनैरिति महिस्तस्य भाव प्र०—अत्रौणादिक 'सर्वधातुभ्य इन्' इति इन्प्रत्यय ततो भावार्थे त्व-प्रत्यय. १ ८ ५ महिमानम् ३३.३७ महिमा १ १३८ १ पूज्यत्व महागुणविशिष्टत्व परिमाणेनाधिक-त्वञ्च १ ६१ ९ [महि-प्राति० भावे त्व । महि=मह-पूजायाम् (भ्वा०) धातोरौणा० इन् । महित्वम्=माहा-भाग्यम् नि० ७ २३]

महित्वा महत्त्व प्राप्य ५ ५८ ३ प्रशसय्य १.१०६ ६. सत्कृत्य १ ६७ ५ पूजितो भूत्वा १ ६८ १ सत्कार को प्राप्त होकर स० वि० १३९, अथर्व० १४ २ ३२ पूजयित्वा ४ ४२ ३ सत्कार प्राप्य ७ २०.४ महत्या व्याप्त्याऽभिव्याप्य १ ५२.१३ [मह पूजायाम् (भ्वा०) धातो क्त्वा]

महित्वा स्वमहिम्ना २३ ३ महागुणवत्त्वेन प्र०—अत्र 'सुपा सुलुक्०' इत्याकारादेश १ ६१ २ महत्त्वेन पूज्येन १ १६४.२५ अपनी अनन्त महिमा से स० वि० ५, २३ ३. ['महित्वम्' इति व्याख्यातम् । ततो विभक्तेराकारादेश]

महयमानः पूज्यमान (अग्नि=आप्तो विद्वज्जन) ३ २५ ५ [मह पूजायाम् (चुरा०) धातो शानच्]

महयामसि पूजयाम ३ ३७ ४ [मह पूजायाम् (चुरा०) धातोर्लट्। 'इदन्तो मसि' रितीदन्तता मस्प्रत्ययस्य]

महसा महता (बलेन) १ १६२ १७ महत्त्वेन २५ ४०. बड़े प्रेम से स० वि० १४०, अथर्व० १४ २ ४३, **महसे**= महते (व्यवहाराय) ३० १९ पूजनाय ३० २० **महः**= महस्त्वयुक्त पूज्य वस्तु १८ ५ महत्सुखम् २ ३२ १ महद्विज्ञानम् ६ २९ १ महिमा १ १९.२ महान्तम् भा०—सत्यम् (धर्माणाम्) ३४ ७ महत् (अनीक=विजयमान सैन्यम्) ४ १२ २ महसे (सूर्याय=परमेश्वराय) सूर्यलोकाय वा) प्र०—अत्र 'सुपा सुलुक्०' इति डेर्लुक् ४ ३५ महता (शर्मणा=गृहसम्बन्धिमुखेन) प्र०—अत्र 'सुपा सुलुक्०' इति विभक्तेर्लुक् १ २२ ११ महान्ति पूजनीयानि (वपूंषि=रूपवन्ति शरीराणि) ३ ५७ ३ महते (सख्याय=मित्रत्वाय) ४ ३१ ११ पूज्यवेदशास्त्रवोधयुक्ता (वाड्) २० ६ महतीम् (धिय=प्रजाम्) १ १० २ १ महान् पूजनीय (देव=परमात्मा) ४ ५८ ३ महत्तरम् (भा०—महान्तमानन्दम्) ३ ४६ कीर्त्तियोगान्महत् (नाम=प्रख्यातिम्) ६ ४४ ८ महत्तत्वात् अ०—अव्यक्तात् ५ १९ महत् (अर्ण=शब्दसमुद्रम्) प्र०—अत्र 'सर्वधातुभ्योऽसुन्' इत्यसुन् प्रत्यय १ ३ १२ अ०—महासि क्रियासिद्धिकराणि (वस्तूनि) ३ २० महति (वुध्ने=अन्तरिक्षे) ४ १ ११ महागुणसमूहम् ३ २० महान् (अध्यापक) १ १९० ८. महागुणविशिष्टस्य (नृम्णस्य=धनस्य) १ ५५ ३ **महांसि**=महान्ति सैन्यानि ५ २८ ३ तेजांसि ३३ १२ **महोभिः**=महद्भिर्गुणकर्मस्वभावै ३ ४६ वृहद्भिर्गुणै ५ ६२ ३ सुपूजितैर्गुणै २० ४० सत्कारै ७.३७ १. [मह पूजायाम् (भ्वा०) धातोरौणादिकोऽसुन्। मह उदकनाम निघ० १ १२. महन्नाम निघ० ३ ३ महो महत नि० ९ २५ पशवो वै महस्तस्माद् यस्यैते वहवो भवन्ति भूयिष्ठमस्यकुले महीयन्ते श० ११ ८ १ ३ यज्ञो वै देवाना मह श० १ ९ १ ११ अध्वर्युरेव मह गो० पू० ५ १५ यजुर्वेदो मह श० १२ ३ ४ ९ वायुर्मह श० १२ ३ ४ ८ प्राणो मह श० १२ ३ ४ १० प्रतीच्येव मह गो० पू० ५ १५ सुवर्गो वै लोको मह तै० ३ ८ १८.५ रुद्रा एव मह गो० पू० ५ १५ ग्रीष्म एव मह गो० पू० ५ १५ त्रिष्टुवेव मह गो० पू० ५ १५ पचदश एव मह गो० पू० ५ १५]

महस्वन्तः महासि पूजनानि सत्करणानि विद्यन्ते येषा ते (सोमा=सभासद पुरुषा) २१ ४२ [महस् इति व्याख्यातम्। तत प्रशसायां मतुप्]

महाकुलः महत्कुल यस्य स (विद्वज्जन) १.१६१.१ [महत्-कुलपदयो समास]

महागयम् महान्तो गया गृहाणि, प्रजा धन वा यस्य तम् (विद्वास जनम्) प्र०—गयमिति गृहनाम निघ० ३ ४ 'अपत्यनाम' निघ० २ २. धननाम च निघ० २ १०, २६ ९. [महत्-गयपदयो समास]

महाञ्जिः महागति २४.४ [महत्-अञ्जिपदयो समास.। अञ्जि=अञ्जू (गत्यर्थे) धातोरौणा० इन्]

महादेवम् महांश्चाऽसौ देवश्च त परमात्मानम् ३९ ८ **महादेवस्य**=महतो विदुष (पुरुषस्य) ३९ ९. [महत्-देवपदयो समास। 'आन्महत समानाधिकरणजातीययो' अ० ६ ३ ४६. सूत्रेणाकारादेशो महत। देवाश्च महादेवा' तै० आ० १ ९ ३]

महाधने महान्ति धनानि प्राप्नुवन्ति यस्मिँस्तस्मिन् सङ्ग्रामे ७ ३२ २५ महान्ति धनानि यस्मात्तस्मिन् सङ्ग्रामे प्र०—महाधन इति सङ्ग्रामनामसु पठितम् निघ० २ १७, १७ ५ युद्ध मे आर्याभि० १ २४, ऋ० ५ ३ २१ २५ [महत्-धनपदयो समास। महाधने सग्राम नाम निघ० २ १७]

महानाम् महता पूज्यानाम् (देवाना=विदुषा जनानाम्) १.१८७ ६ [महत्-प्राति० षष्ठ्या वहुवचनम्। छान्दसो वर्णलोपो वे' ति तलोप]

महानाम्न्यः महन्नाम यासा ता भा०—महाकीर्त्तय (वाच) २३ ३५ [महत्-नामन्पदयो समासे स्त्रिया ङीबन्तात् प्रथमावहुवचनम्]

महानि पूजनीयानि वृहत्तमानि (कृतानि=कर्माणि) २.११ ६ महान्ति (व्रता=शीलानि) ३ ६ ५ महान्ति पूज्यानि (करणानि=कर्माणि) २ १५ १ [महत्-प्राति० नपुसके प्रथमावहुवचने रूपम्। तलोपश्छान्दस]

महान्ता महागुणौ (इन्द्राग्नी=वाय्वग्नी) प्र०—अत्र 'सुपा सुलुक्०' इत्याकारादेश १ २१ ५ महान्तौ पूजनीयौ (अश्वा=तुरगौ महान्तौ जनौ वा) ६ ६७ ४ [महत्-प्राति० द्विवचनस्य 'सुपा सुलुक्०' इत्याकारादेश]

महाम् महताम् (पुरुषाणाम्) प्र०—अत्र 'छान्दसो वर्णलोपो वा' इति तलोप ४ ५ ९ महान्तम् (अग्निम्) प्र०—अत्र 'वाच्छन्दसि' इति नकारतकारलोप सवर्णदीर्घत्वेनाऽस्य सिद्धि ३ २ ३ पूज्यं (तेनापतिम्) १ ११२ १४ पूजनीयम् (इन्द्र=राजानम्) ३ ४९ १ पूज्यतमम् (उरू=

सूत्रेण तृच् । स्वस्रादित्वाट्टाप्न । मातर नदीनाम निघ० १ १३ माता ग्रन्तरिक्षम्, निर्मीयन्तेऽस्मिन् भूतानि नि० २ ८]

मातरा जलाऽग्नी ३ ७ १ मातृवन्मान्यकर्त्र्यौ (रोदसी=भूमिसूर्यलोकौ) ६ १७ ७ मानकारकौ (ग्रध्यापकोपदेशकौ) १ १२२ ४ मातरौ धातृजनन्यौ १ १४० ३. मातापितरौ १२ १० ७ मान्यप्रदे (रात्रिदिने) ५ ५ ६ मानयित्र्यौ (नक्तोपासा=रात्रिदिने) १ १४२ ७ मान्यकर्त्तारौ मातापितरौ १ ५५ ३ जनकजनन्यौ ३ १ ७ जनकौ ७ ७.३ मातापितृरूपौ राजप्रजाजनौ ग्र०—द्यावाभूमी ४ २२ ४ मातृवद्वर्त्तमाने (धेनू=दुग्धदात्र्यौ गावौ) २८ ६ [मातृ-प्राति० द्विवचनस्याकारादेश 'सुपा सुलुक्०' इति सूत्रेण]

मातरापितरा जनकजनन्यौ ४ ६ ७ [मातृ-पितृपदयो समासे द्विवचनस्याकारादेश । पूर्वपदस्य च ग्रराङ् ग्रादेशश्छान्दस]

मातरिश्वा यो मातर्यन्तरिक्षे श्वसिति स वायु १ ७१ ४ प्राण १ १४१ ३ ग्रन्तरिक्षशयान (ग्रग्नि) ३ ५ १० ग्राकाशे शयिता वायु १ ६० १ ग्रन्तरिक्षे शयानो वायु १ १४८ १ यो वायौ श्वसिति स (भौतिकोऽग्नि) ३ २९ ११ ग्रन्तरिक्षस्थ वायु स० वि० १२२, ग्रथर्व० १४ १ ५४ मातर्यन्तरिक्षे श्वसिति प्राणान् धरति वायुस्तद्वद्वर्त्तमानो जीव ४० ४ **मातरिश्वनः**=मातर्यन्तरिक्षे श्वसिति ग्राश्वनिति वा तस्य वायो प्र०—'श्वन्नुक्षन्०' उ० १ १५७ ग्रनेनाऽय शब्दो निपातित १ २ **मातरिश्वने**=ग्रन्तरिक्षस्थाय वायवे १ १४३ २ **मातरिश्वानम्**=मातरिश्वा वायुस्तल्लक्षणम् (ईश्वरम्) १ १६४ ४६ यो मातरिश्वा वायुरिव बलवान् तम् जो वायु के समान ग्रत्यन्त बलवान् हे उस (ईश्वर) को स० प्र० १५, १ १६४ ४६ यो मातरि वायौ श्वसिति तम् (ग्रग्नि=विद्युदादिरूप वह्निम्) ३ २९ २ [मातरि ग्रन्तरिक्षे श्वयति गच्छति वर्धते वेति विग्रहे 'मातरि' इति सप्तम्यन्तोपपदे टुग्रोश्वि वृद्धौ (भ्वा०) धातो 'श्वन्नुक्षन्पूषन्०' उ० १ १५९ सूत्रेण कनिन् । ग्रथवा मातरि श्वसिति जीवयति शेते वेति विग्रहे 'मातृ' इत्युपपदे श्वस प्राणने (ग्रदा०) धातो कनिन्-प्रत्यये निपातनाद्रूपसिद्धि । शीङ् शये (ग्रदा०) धातोर्वा कनिन् । मातरिश्वा वायुर्मातर्यन्तरिक्षे श्वसिति मातर्याशु ग्रनितीति वा नि० ७ २६ प्राणो मातरिश्वा ऐ० २ ३८ ग्रय वै वायुर्मातरिश्वा योऽय पवते श० ६ ४ ३ ४]

मातवै मानाय १ १६४ २८ [माङ् माने (जु०) धातोस्तुमर्थे तवैप्रत्यय.]

मातृतमाम् ग्रतिशयेन मातरो मातृवत्पालिका नद्य प्र०—मातर इति नदीनाम निघ० १.१३, ग्रत्र 'सुपा व्यत्यय ३ ३३.३. **मातृतमासु**=ग्रतिशयेन शास्त्रोक्तशिक्षया मानकर्त्रीषु धात्रीषु १० ७ **मातृतमाः**=ग्रतिशयेन मातर इव वर्त्तमाना (नद्य) १ १५८ ५. ग्रतिशयेन मातृवत् कृपालव (जनित्री=जनन्य.) ६.५०.७. [मातृ-प्राति० ग्रतिशायने तमबन्तात् स्त्रिया टाप्]

मातृमृष्टेव विदुष्या मात्रा सत्यशिक्षाप्रदानेन शोधितेव (युवति) १ १२३ ११ [मातृमृष्टा-इवपदयो समास । मातृमृष्टा='मातृ' उपपदे मृजू शौचे (चुरा०) धातो क्तान्तात् टाप्]

मात्या मतेर्भाव कर्म वा (वाक्=वक्ति यया सा) १३ ५८ [मतिप्राति० भावे कर्मणि वा ष्यञ् । तत. स्त्रिया टाप्]

मात्रया यया सर्व मिमीते तया (बुद्ध्या) १३ २ भागेन १५ ११ लेशविशेषेण १५ १० **मात्रा**=मीयते यया सा भा०—परिमाणम् २३ ४७ भा०—व्यवहारसाधक वस्तु २३ ४८ **मात्राभिः**=शब्दादिभि सूक्ष्मैर्व्यवहाराऽवयवै ३ ४६ ३. सूक्ष्माऽवयवै ३ ३८ ३ [माङ् माने (जु०) धातो 'हुयामाश्रुभसिभ्यस् त्रन्' ४ १६८ सूत्रेण त्रन् । तत स्त्रिया टाप् । मात्रा मानात् नि० ४ २५ यद्वेव मिमीते तस्मान्मात्रा श० ३ १ ४ ८]

मादनम् ग्रानन्दनम् ७ ३१ १ [मदी हर्षे (दिवा०) धातोर्णिजन्ताल् ल्युट्]

मादयध्यै मोदयितुम् प्र०—ग्रत्र 'मदी हर्षग्लेपनयो इति' णिजन्तादध्यै प्रत्यय ३ १३ मादयितुमानन्दयितुम् ६ २२ ३.

मादयध्वम् सुखयत ६ ५२ १७ परस्परानानन्दयत ४ ३४ ८. ग्रानन्द प्रापयत १ ८५ ६ हर्षयत ३३ ५३ हर्षयध्वम् २ १८ **मादयन्ताम्**=ग्रानन्दयन्तु ७ ३९ ५ ग्रानन्दयन्ताम् ७ ५१ २. तृप्ता भूत्वाऽस्मानानन्दयन्तु २० ४६ हृष्यन्तु भा०—सुखिनो भवन्तु भावयन्तु वा २ १३ **हर्षयन्तु**=३ ४ ११ **मादयन्तु**=हर्षयन्तु ७ ३३ ५ **मादयन्ते**=हर्षयन्ति १ ५९ १ **मादयस्व**=ग्रानन्द प्रापय १ ८१ ८ हर्षयस्व १७ ८८ ग्रानन्दयस्व २७ २८ ग्रानन्दय हर्षितो वा भव १ १० १ ९ ग्रानन्दानन्दय वा ६ ४१ ५ **मादयाते**=मादये हर्षयेत् ७ ४७ २ **मादयाध्यै**=ग्रानन्दत १ १६१ ८. मादयध्वम् प्र०—लेट्

महिन महत्तम (इन्द्र=सर्वसुखप्रद राजन्) ६ २६ ८. **महिनस्य**=महत (राज्ञ) ६ ३३ ५ [मह पूजायाम् (भ्वा०) धातो 'महेरिनण् च' उ० २ ५६ सूत्रेण चकारेणानुवृत्त इनन्]

महिनः महान्त (देवा =दिव्यगुणा विद्वासो जना) ६ ५२ १५ [महिन्-प्राति० जस् महिन्=महिनि महत्युदकवतीति वा नि० ११ ३७ महिन्=मह पूजायाम् (भ्वा०) धातोरौणा० इन्]

महिना महिम्ना प्र०—अत्र 'छान्दसो वर्णलोपो वा' इति मकारलोप १ ३२.८ महत्त्वेन १ १२२ ११ स्वस्य महिम्ना व्यापकत्वेन २७ २६. अपनी महिमा से आर्याभि० २.३२, १७ १८ **महिने**=सत्कर्त्तव्याय (राज्ञे) ७ ३१.११. [महिमन्-प्राति० टा-प्रत्यये मकारलोपश्छान्दस । महिमन्=महत्-प्राति० भावे 'पृथ्वादिभ्य इमनिज्वा' इतीमनिच्]

महिना महती (सरस्वती=वाक्) ६ ६१ १३ [महिन-प्राति० स्त्रिया टाप् । महिनः=मह पूजाया धातोरौणा० इनन्]

महिनि पूज्ये (पृथिवि=भूमे) ५ ८४ १ [मह पूजायाम् (भ्वा०) धातोरौणा० इन् । तत स्त्रिया ङीपि सम्बुद्धौ रूपम्]

महिनी महत्यौ (द्यावापृथिवी) १ १६० २. [महिनीति व्याख्यातम् । ततो द्विवचनस्य पूर्वसवर्णदीर्घ]

महिमघस्य महन्मघ पूज्य धन यस्य तस्य (पुरुपार्थिनो जनस्य) १ १२२ ८ महि-मघपदयो. समास । 'महि' इति व्याख्यातम् । मघम् =धननाम निघ० २ १०]

महिमनः महिम्न ६ २७ ३ [महत्-प्राति० भावे पृथ्वादित्वाद् इमनिच् । तत षष्ठ्यादौ विभक्तौ अकारलोपाऽभावश्छान्दस]

महिमा महतो भाव १८ ४ महती प्रशसा ७ ४५ २ माहात्म्यम् भा०—महत्त्वम् ३१ ३ प्रशसासमूह. ७ २८ २ प्रताप ६ ५६ २ **महिमानम्**=स्तुत्यस्य, पूज्यस्य, व्यवहारस्य भावम् १ ६१ ८ उत्तमप्रतिष्ठाम् १ ८५ २ स्तुतिविषयम् (प्रयाण=प्रकृष्ट प्राणम्) ११ ६ पूज्य ब्रह्मचर्यजितेन्द्रियत्वादिशुभकर्म सत्कारजन्यम् (अपत्यम्) ८ ३० स्वप्रभावम् २ १७ २ महत्त्वम् २९ २७ **महिमानः**=महत्त्वयुक्ता (देवा =विद्वासो जना) ३१ १६ पूज्यमाना (मनुष्या) ३३ ७४ पूज्या सन्त (देवा =देवगणा) ऋ० भू० १२९, ३१ १६ पूज्यता प्राप्नुवन्त (देवा =विद्वासो जना) १ १६४ ५० **महिम्नः**=महतो भावस्य सकाशात् २३ ६४ **महिम्ने**=महतो भावाय २३ २ [मह पूजायाम् (भ्वा०) धातोरौणा० अतिप्रत्यये महत् । महत्-प्राति० भावे 'पृथ्वादिभ्य इमनिज्वा' इतीमनिच् । प्राणा हि महिमान काठ० ३७ १६ यज्ञो वै महिमा श० ६ ३ १ १८ राजा महिमा तै० ३ ९ १० १. श० १३ २ ११ २]

महिरत्न पूज्यैर्गुणै रमणीय (विद्वज्जन) १ १४१ १० [महि-रत्नपदयो समास । 'महि' इति व्याख्यातम् । रत्नम्=रमु क्रीडायाम् (भ्वा०) धातो 'रमेस्त च' उ० ३ १४ सूत्रेण न तकारश्चान्तादेश]

महिवृधे महता वर्धकाय (महाराजाय) ७.३१ १०. ['महि' इत्युपपदे वृधु वृद्धौ (भ्वा०) धातो क्विप्]

महिव्रतः महान्ति व्रतानि धर्म्याणि कर्माणि यस्य स. (महाराज) ६ ६८ ९ **महिव्रत**=महि महद्व्रत शील यस्य तत्सम्बुद्धौ (विद्वज्जन) १ ४५.३ [महि-व्रतपदयो समास । व्रतमिति कर्मनाम वृणोतीति सत नि० २ १३]

महिष पूजनीयतम (महाराज) ३.४६ २ **महिषम्**=महान्तम् (पुत्र=सन्तानम्) ४ १८ ११ **महिषस्य**=महतो लोकसमूहस्य १ ९५ ९ **महिषः**=महान् (सूर्य) १ १२१ २ सर्वगुणैर्महान् (अग्नि) ३ ७ **महिषाणाम्**=महता पदार्थानाम् ५ २९ ८ **महिषान्**=महत (पदार्थान्) ६ १७ ११. **महिषाः**=महान्त (असुरा =विद्वासो जना) ७ ४४ ५ महान्त पूजनीया (यजमाना) १९ ३२. [मह पूजायाम् (भ्वा०) धातो 'अविमह्योष्टिषच्' उ० १ ४५ सूत्रेण टिषच् । महिष महन्नाम निघ० ३.३ महिषा महान्त नि० ७ २६ अग्निर्वै महिष स हीद जातो महान्त्सर्वमैव्णात् श० ७ ३ १ २३ प्राणा वै महिषा श० ६ ७ ४ ५ ऋत्विजो वै महिषा श० १२ ८ १ २]

महिषा महिषाणा महता पशूनाम् ५ २९ ७ [महिष इति व्याख्यातम् । तत षष्ठ्या स्थाने आकारादेशश्छान्दस]

महिषासः पूजितगुणा महान्त (गिरय =मेघा) १ ६४ ७ [महिषप्राति० जसोऽसुक्]

महिषी महारूप-बल-शीलादियोगेन पूजनीया (युवति) ५ २ २ **महिषीम्**=महाशुभगुणाम् (पत्नीम्) ५ ३७ २ उत्तम कुल मे उत्पन्न हुई विद्या-शुभगुण-रूप-सुशीलतादियुक्त (विदुषी स्त्री) स० वि० १०५, ५ ३७ ३ [महिष इति व्याख्यातम् । तत स्त्रिया टित्त्वात् ङीप् । महिषीयैव प्रथमा वित्ता (भार्या) सा महिषी श० ६ ५ ३ १.

मनुष्य २१ ६१ मनुष्याऽऽकृति (पुरोहित.) १ ४४ १० सभापतिर्मनुज १.३७ ४ **मानुषात्**=मानवात् २ ३.३. **मानुषाणाम्**=नराणाम् १ १२७.८ मानुषेषु भवानाम् (जनाना=मनुष्याणाम्) ४ ६ ५ मनुष्यजातिस्थानाम् (राज्यपालनाऽर्हगुणानाम्) ६ १६ ६ **मानुषाय**=मनुष्याणामस्मै (क्षयाय=गृहाय) १ १२३ १ **मानुषे**=मनुष्याणामस्मिन् सग्रामे ७ १८.६ **मानुषेषु**=मनुष्यसम्बन्धिषु (यज्ञेषु=सत्सु कर्मसु) ७ २ ७ युवत्याऽऽहारविहारकर्तृषु (विक्षु=प्रजासु) १ ६० ४. अविद्वत्सु (जनेषु) ४ ५४ ३ **मानुषान्**=मनुष्यादीन् १ ४८ ७ [मनुप्राति० 'मनोर्जातावञ्यतौ षुक् च' अ० ४ १ १६१ सूत्रेण अञ् षुगागमश्च। मनुष्यप्राति० वा भवार्थेऽण्। मानुषम्=यदत्रुवन्मेद प्रजापते रेतो दुषदिति तन्मादुषमभवत् तन्मादुषस्य मादुषत्व मादुष ह वै नामैतद् यन् मानुष तन्मादुष सन् मानुषम् इत्याचक्षते। (इद मे मादुषत्) ता० ८ २ १० पशवो मानुषा क० ४१ ६. यन्मन्द्र मानुष तत् तै० स० २ ५ ११ १]

मानुषप्रधना. मनुष्याणा प्रकृष्टानि धनानि याभ्यस्ता (मरुत) १ ५२ ६ [मानुष-प्रधनपदयो समास]

मानुषा मनुष्याणामिमानि (युगा=वर्षाणि) ५ ५२ ४ मनुष्यसम्बन्धीनि (युगा=वर्षाणि वर्षसमुदितानि वा) ६ १६ २३ मनुष्येषु भवानि (युगानि=वर्षाणि) १ १०३ ४ मनुष्याणा हिनकारकाणि (वस्तूनि) १ ५१.१ मनुष्यैर्निर्मितानि (कर्माणि) ७ ४ १ [मानुषप्राति० शेर्लोपश्छन्दसि। मानुषमिति व्याख्यातम्]

मानुषास. मननशीला मानवा १ ६० ३ मनुष्या ७ ७ ४ [मानुषप्राति० जसोऽसुक्]

मानुषी मानुषाणामियम् (प्रजा) १ ७२ ८ **मानुषीणाम्**=मनुष्यसम्बन्धिनीनाम् (विशा=प्रजानाम्) ३ ११ ५ मनुष्यादिरूपाणाम् (प्रजानाम्) ५.१ ६ **मानुषीभ्य.**=मनुष्यादिभ्य (प्रजाभ्य) ११ ४५ **मानुषीषु**=मनुष्याणामिमासु (विक्षु=प्रजासु) ३ ५ ३. **मानुषीः**=मनुष्याणामिमा प्रजा ६ ६५ १ मनुष्यसम्बन्धिन्य (प्रजा) ५ ८ ३ मानुषाणामविदुषामिमा (विश=प्रजा) १७ ८६ [मानुषप्राति० स्त्रिया ङीप्। मानुषम्=मनुष्यप्राति० 'तस्येदमि' त्यण्]

मानुषेभिः मनुष्यै ७ ३८ १ [मानुषप्राति० भिस ऐस् न 'बहुल छन्दसि' सूत्रेण]

मानेभिः ये मन्यन्ते तैर्विद्वद्भि १ १८४.५ [मानप्राति० भिस्। ऐस् न भवति छान्दसत्वात्]

मान्थालः जन्तुविशेष २४ ३८.

मान्दार्यस्य मान्दस्य स्तोतुर्मङ्गलतमगुणकर्मस्वभावस्य च (कारो.=शिल्पिनो जनस्य) १.१६५ १५. प्रशसनीयकस्य शिल्पिन ३४ ४८. सर्वेभ्य आनन्दप्रदस्योत्तमस्य (कारो=क्रियाकुशलजनस्य) १.१६८ १० आनन्दिनो धार्मिकस्य (कारो.) १ १६६.१५ [मान्द-आर्यपदयो समास.। मान्द.=मदि स्तुतिमोदमदादिषु (भ्वा०) धातो-रच्प्रत्यये मन्द। तत स्वार्थिकेऽणि मान्द.। आर्य.=ऋ गतिप्रापणयो (भ्वा०) धातो 'ऋहलोर्ण्यत्' इति ण्यत्]

मान्दाः ये जनान् मदन्त्यानन्दयन्ति त एव मान्दा (राजपुरुषा) १० ४ [मान्द इति पूर्वपदे व्याख्यातम्]

मान्यमानम् मान्याना मान सत्कारो यस्मात्तम् (धार्मिक प्राज्ञम्) ७ १८ २०. [मान्य-मानपदयो. समास। मान्य=मान पूजायाम् (चुरा०) धातोर्ण्यत्। मान=मान+घञ्]

मान्यस्य प्रशसितु योग्यस्य (कारो=शिल्पिजनस्य) १.१८४ ४. सत्कर्तव्यस्य (कारो=शिल्पिनो जनस्य) ३४ ४८ माननीयस्य योग्यस्य (शिल्पिन) १.१६५ १४ सत्कर्तु योग्यस्य (कारो=शिल्पिन) १ १६७ ११ मातु योग्यस्य (कारो) १.१६८ १० [मान पूजायाम् (चुरा०) धातोर्ण्यत्]

मामकाः मदीया (जीवा) १६.४६ **मामकानाम्**=मदीयाना वीराणाम् (सत्वनाम्=प्राणिनाम्) १७ ४२ [अस्मद्-प्राति० शैषिकेऽण्प्रत्यये 'तवकममकावेकवचने' इति ममकादेश]

मामतेयम् ममताया प्रजाया अपत्यम् १ १४७ ३ मम भावो ममता, तस्या इदम् (कार्यम्) ४ ४ १३ **मामतेयः**=ममताया कुशल (लोभातुरो जन) १ १५८ ६ [ममताप्राति० अपत्यार्थे 'तस्येदमि' त्यर्थे कुशलार्थे वा ढक्। ममता=मम+तल्। मम=अस्मद्+ङस्]

मामहन्त सत्कुर्वन्तु प्र०—अत्र 'तुजादिना०' इत्यभ्यासदैर्घ्यम् ७ ५२ २ **मामहन्ताम्**=सत्कारेण वर्धयन्ताम् १.१००.१६ सत्कारहेतवो भवन्तु १ ६६.६ वर्धन्ताम् प्र०—व्यत्ययेनाऽत्र शप श्लु १ ६४ १६ सत्कुर्वन्तु भा०—भूपका सन्ति ३३ ४२ **मामहे**=सत्कुर्याम् ५ २७ १ महयति प्र०—अत्र 'मह पूजायाम्' इत्यस्माल्लटि 'बहुल छन्दसि' इति शपुविकरणो व्यत्ययेनात्मनेपद तुजादित्वाद् दीर्घ १ १६५ १३ [मह पूजायाम् (भ्वा०) धातोर्लङ्। अडभाव। 'बहुल छन्दसि' इति शप श्लु। तुजादित्वादभ्यासस्य दीर्घ।

प्रयोगोऽयम् १ ३७ १४ **मादयासे**=हर्षयसे १.१०१ ८ **मादयेथाम्**=हर्षयेतम् ४.४६.६ आनन्दयतम् ४ १४ ४. आनन्दयेथाम् १ १८४ २ मादयेते हर्षयत. १ १०६ ५ **मादयेथे**=हर्षयत १ १०८ १२ **मादयैते**=सुखयेताम् ४.४१ ३ [मदी हर्षे (दिवा०) धातोर्णिजन्ताल्लोट्। अन्यत्र लट् लेट् चापि]

मादयिष्णवः हर्षनिमित्ता (इन्दव =सोमाद्योषधिगणा) प्र०—अत्र 'णेश्छन्दसि' अ० ३ २ १३७ अनेन ण्यन्तान्मदेरिष्णुच् प्रत्यय १ १४ ४ [मदी हर्षे (दिवा०) धातोर्णिजन्तात् 'णेश्छन्दसि' सूत्रेण इष्णुच् तच्छीलादिषु]

माद्भिः मासैः २ २४ ५ [मासप्राति० भिस्प्रत्यये 'पदन्नोमास्०' अ० ६ १ ६३ सूत्रेण मास् आदेश। 'स्ववस्वतवसोर्मास उषसश्च तकारादेश इष्यते छन्दसि भकारादौ' इत्युपसख्यानात् तकारादेश]

माधवः मधुरादिफलनिमित्तो वैशाख १३ २५ **माधवाय**=वैशाखमासाय ७ ३०. [मधुप्राति० मत्वर्थे 'मधोर्ञ च' अ० ४ ४ १२६. सूत्रेण ञ.]

माधूचीभ्याम् यौ मधुविद्यामञ्चतस्ताभ्याम् (अध्यापकोपदेशकाभ्याम्) ३७ १८ [मधूपपदे अञ्चु गतिपूजनयो. (भ्वा०) धातो 'ऋत्विग्दधृग्०' इति क्विन्। 'अनिदिताम्' इति नकारलोपे 'अञ्चतेश्चोपसख्यानम्' इति स्त्रिया ङीपि भसज्ञाया सत्याम् 'अच' इत्यकारलोपे 'चौ' सूत्रेण पूर्वस्य दीर्घत्वे रूपम्। पूर्वस्य दीर्घश्च छान्दस]

माध्यन्दिनम् मध्ये भवम् (सवन=भोजनम्) प्र०—अत्र 'मध्योमध्य दिनण् चाऽस्मात्' इति वार्त्तिकेन मध्यशब्दो मध्यमिति मान्तमापद्यते भवेऽर्थे दिनण् च प्रत्यय ३ ३२ १ मध्ये दिने भव भोजनादिकम् ४ ३५ ७. मध्याह्ने भवम् (सवनं=आरोग्यकर होमादिकम्) १६ २६ **माध्यन्दिने**= मध्य दिने भवे (सवने=प्रेरणे) ६ ४७ ६ मध्याह्ने ५ ४० ४ [मध्यप्राति० भवार्थे 'मध्यो मध्य दिनण् चास्मात्' इति वार्त्ति० सूत्रेण दिनण्। मध्यस्य च मध्य भाव। इद (अन्तरिक्षम्) माध्यन्दिन सवनम् जै० ३ ५७ त्रैष्टुभवार्हतो वै माध्यन्दिन जै० २ ३८३ त्रिच्छन्दा माध्यन्दिन पवमान प० १ ३ मरुत्वद्धि माध्यन्दिन सवनम् ता० ६ ७ २ माध्यन्दिन सवनाना तपस्वितमम् काठ० २३ १०. रुद्राणा माध्यन्दिन सवनम् कौ० १६ १ श० ४ ३ ५.१ वाजवन्माध्यन्दिन सवनम् ता० १८ ६ ७ स्वर्गो वै लोको माध्यन्दिन सवनम् मै० ४ ८ ३ गो० २ ३ १७]

माध्वी मधुरादिगुणयुक्ता (राति =दानम्) १ १८४ ४ मधुरा नीति ४.४३ ५ **माध्वीभ्याम्**= सुनीति-योगरीतिभ्याम् ७.११२ मधुरादिगुणयुक्ताभ्या विद्यासुशिक्षाभ्याम् ३७ १८ **माध्वीः**=माध्व्य (गाव = किरणा) १ ६० ८ मधुविज्ञाननिमित्त विद्यते यासु ता. (ओषधी) प्र०—'मधोर्ञ च' अ० ४ ४ १२८ अनेन मधुशब्दाञ्ञ 'ऋत्व्यवास्त्व्य०' इति यणादेशनिपातनम् 'वाच्छन्दसि' इति पूर्वसवर्णादेश १ ६० ६. माध्व्यो मधुरगुणयुक्ता (ओषधी =ओषधय) प्र०—अत्र 'ऋत्व्यवास्त्वय०' इति मधुशब्दादणि यणादेशनिपात: १३ २७. [मधुप्राति० 'मधोर्ञ चे' ति मत्वर्थे ञप्रत्यये भवार्थे वा अण्-प्रत्यये स्त्रिया ङीपि 'ऋत्व्यवास्त्व्य०' अ० ६ ४ १७५ सूत्रेण यणादेशो निपात्यते]

माध्वी माधुर्यादिगुणोपेतौ (अश्विना=अध्यापकोपदेशकौ) ४ ४३ ४ मधुरगतिमन्तौ (अश्विना=शिल्पकार्यविदौ) ५ ७५ २ मधुरादिगुणप्रापकौ (अश्विनौ=अध्यापकपरीक्षकौ) ५ ७५ १ [माध्वीति व्याख्यातम्। ततो द्विवचनस्य पूर्वसवर्णदीर्घश्छान्दस]

मानम् सत्कारम् १ १०० १४ **मानस्य**=विज्ञानवतो जनस्य १ १८६ ८. परिमाण के योग मे बनाई हुई का स० वि० १६८, अथर्व० ६ २ ३ २१. **मान:**=यो मन्यते स (विद्वज्जन) ७ ३३ १३ **मानैः**=परिमाणै २ १५ ३ [माङ् माने (जु०) धातोर्ल्युट्। माने निर्माणे- नि० २ २२]

मानवस्यते मानवानात्मन इच्छते (विदुषे जनाय) १ १४० ४ [मानवपदाद् आत्मन इच्छाया क्यचि सुगागमे शतरि च रूपम्]

मानवेभ्यः मननशीलेभ्य (जनेभ्य.) ४ ५४ १ [मनुप्राति० अपत्यार्थेऽण्]

मानसः मनस ऊष्मेव वर्त्तमान (ग्रीष्म) १३ ५५ [मनस्प्राति० भवार्थेऽण्]

मानस्कृतम् मनस्कृतेषु विचारेषु कुशलम् (पुरुषम्) ३० १४ [मनस्-कृतपदयो समासे कुशलार्थेऽण्]

मानासः विचारवन्त (विद्वासो जना) १ १७१ ५ [मानप्राति० जसोऽसुक्]

मानुष मननशील (विद्वन्नुपदेशक) ३ ६ ६ मनुष्यस्वभावयुक्त (धार्मिक जन) १ ८४ २० **मानुषम्**=मनुष्याणामिदम् (स्व =सुखम्) ५ ६६ २ **मानुषस्य**=मनुष्यजातस्य १ १२१ ४ मनुष्यजातौ भवस्य (जनस्य) १ ७० १ **मानुषः**=सर्वशास्त्रमननशील (अध्यापको गुरु) ६ ८

मध्ये वर्त्तमान (विष्णु =प्रधानपुरुष) ३३ ४८ **मारु-ताय**=मरुता मनुष्याणामस्मै (स्वभानवे=स्वप्रज्ञा प्रदीप्तये) ६ ४८ १२ **मारुताः**=मनुष्यदेवताका (पृश्नय पशव) २४ १४ मरुद्देवताका (भा०—वायुगुणा पशव पक्षिणो वा) २४ ४ **मारुतेन**=मनुष्याणामनेन (शर्द्धेन=बलेन) २ ३१ ३ हिरण्यादिसम्बन्धेन (गणेन=समूहेन) प्र०—मरुदिति हिरण्यनाम निघ० १ २, ३ ३२ २ [मरुत्-प्राति० समूहार्थे 'अनुदात्तादेरञ्' अ० ४ २ ४४ सूत्रेण अञ्। विकारार्थे 'तस्येदमि' त्यर्थे, 'सास्य देवते' त्यर्थे वा अञ्। मरुत्=हिरण्यनाम निघ० १ २ रूपनाम निघ० ३ ७ मरुत्=मृङ् प्राणत्यागे (तुदा) धातो 'मृग्रोरुति.' उ० १ ९५ सूत्रेण उति। अन्तरिक्षलोको वै मारुतो मरुता गणः श० ९ ४ २ ६ मारुतम्=मेघम् नि० ११ ५० सप्त हि मारुतो गण श० ५ ४ ३ १७ सप्त सप्त मारुता गणा मै० ३ ३ १०, श० ९ ३ १.२५ विण्मारुता मै० ३ ३ १० ये ते मारुता (पुरोडाशा) रश्मयस्ते श० ९ ३ १ २५ मारुतो हि वैश्य (वायु) मै० ३ ४ ३ काठ० ३७ ३ तै० २ ७ २ २ मारुतस्सप्तकपाल मै० १ १० १ मारुत कल्माष काठ० ४८ १ मारुत सप्तकपालम् तै० स० १ ८ २ १ एकविंशतिर्वै मारुता गणा काठ० ११ १]

मारुताश्वस्य (मरुतामिवाश्वानामय तस्य (भृत्य-जनस्य) ५ ३३ ९ [मारुत-आश्वपदयो समास। मरुत् प्राति० अश्वाच्चेदमर्थेऽण्]

मारुतीः मारुत्यो मरणधर्माणो मरुत्प्रधाना वा (प्रजा) ऋ० भू० १४०, ऋ० ६ १ ६ ४ [मरुत्प्राति० समूहार्थेऽञ्प्रत्ययान्तात् स्त्रिया ङीप्]

मार्गारम् यो मृगाणामरिर्व्याधस्तस्याऽपत्यम् ३० १६ [मृग-अरिपदयो समासेऽपत्यार्थेऽण्]

मार्जालीय. शोधक (भगवान्) प्र०—'स्याचतिमृजे-रालज्वालञालीयच' उ० १ ११६ अनेन सूत्रेणाऽत्र मृजूष् शुद्धौ इत्यस्मादीयच्-प्रत्यय ५ ३२ पाप का मार्जन=निवारण करने वाला (ईश्वर) आर्याभि० २ १७, ५ ३२ [मृजूष् शुद्धौ (अदा०) धातो 'स्याचतिमृजेरालज्वालञ्-आलीयच' उ० १ ११६ सूत्रेण आलीयच्]

मार्जाल्यः सशोधक (अतिथिर्जन) ५ १ ८. [मृजूष् शुद्धौ (अदा०) धातोर्बाहु० औणा० आल्यञ्]

मार्ज्मि शुद्धो भवामि शोधयामि वा २.१४ मार्ष्टि वा प्र०—अत्र पक्षे पुरुषव्यत्यय २ ७. [मृजूष् शुद्धौ (अदा०) धातोर्लट्]

मार्डीकम् मृडीकाना सुखानामिम साधकम् (रयिम्) १ ७९ ९ **मार्डीके**=सुखकरे (व्यवहारे) ४ १८.१२ [मृडीकप्राति० 'तस्येदम्' इत्यर्थेऽण्। मृडीकम्=मृड सुखने (तुदा०) धातो 'मृड कीकच्कङ्कणौ' उ० ४ २४ सूत्रेण कीकच्]

मार्त्तण्डः मार्त्तण्डे सूर्ये भव (वरुण=वरो जीव) प्र०—अत्र 'अन्येषामपि०' इति दीर्घ २ ३८ ८ [मार्त्तण्ड-प्राति० भवार्थेऽण्। 'अन्येषामि' ति सूत्रेण दीर्घ मार्त्तण्ड। स (मार्त्तण्ड) वाव विवस्वान् आदित्य मै० १ ६ १२]

मार्ष्टु पुन पुन शुन्धन्तु ८ १४ [मृजूष् शुद्धौ (अदा०) धातोर्लोट्]

मावतः मद्विधस्य (विप्रस्य=मेधाविन पण्डितस्य) प्र०—'अत्र वतुप्प्रकरणे युष्मदस्मद्भ्या छन्दसि सादृश्य उपसङ्ख्यानम्' अ० ५.२ ३९ अनेन वार्त्तिकेनाऽस्मच्छब्दात् सादृश्ये वतुप् प्रत्यय 'आ सर्वनाम्न' अ० ६ ३ ९१ इत्या-कारादेशश्च १ १७ २ मत्सदृशस्य (विप्रस्य=मेधाविजनस्य) १ १२९.११ **मावते**=मत्सदृशाय (दाशुषे=विदुषे जनाय) १ ८ ९ [अस्मद्-प्राति० सादृश्ये 'वतुप्प्रकरणे युष्मदस्मद्भ्या छन्दसि सादृश्य उपसख्यानम्' अ० ५ २ ३९ वा० सूत्रेण वतुप्। 'प्रत्ययोत्तरपदयोश्चे' ति मादेश.। 'आ सर्वनाम्न' इत्याकारान्तादेश]

मासकृत् मामेकवारम्, अथवैकपद्य—मासाना चाऽर्द्धमासादीना च कर्त्ता (अरुण=विद्याप्रकाशकरणे विद्वान्) अत्र मासकृदित्येक पद निरुक्तप्रामाण्यादनुमीयते। अथ शाकल्यस्तु 'मा सकृत्' इति पदद्वयमभिजानीते १ १०५ १८ [मासोपपदे करोते कर्त्तरि क्विप् मासकृत्=मासाना चार्द्धमासाना च कर्त्ता नि० ५ २१]

मासरम् येनाऽतिथयो मासेषु रमन्ते तत् (आतिथ्य-रूप=अतिथीना भाव कर्म वाऽऽतिथ्य तद्रूप च तत्) १९ १४ ओदनम् उपलक्षणमेतत् तेन सुसंस्कृतमन्नमात्र गृह्यते २१ ३५ सस्कृतभोज्यमन्नम् २१.३८ **मासरेण**=प्रमितेन मण्डेन प्र० अत्र माङ्-धातोरौणादिक सरन् प्रत्यय २० ६६ **मासरैः**=परिपक्वौषधिसस्रावै १९ ८२ [माङ् माने (जु०) धातोरौणा० सरन्। अथवा मासोपपदे रमु क्रीडायाम् (भ्वा०) धातोर्ड]

मासः चैत्राऽऽदि ५ ४५ ७ **मासान्**=मासानाम् प्र०—अत्र विभक्ति-व्यत्यय २४ ३७ [माङ् माने (जु०) धातोर्बाहु० औणा० स। मासा मानात् नि० ४.२७ मासा (सवत्सरस्य) कर्मकारा तै० ३ ११ १० ३ मासा

अन्यत्र लोट् लट् च । व्यत्ययेनात्मनेपदश्च]

मामहः पूज्यान् (सज्जनान्) २ १७ ७ [मह पूजायाम् (भ्वा०) धातोर्यङ्लुगन्तादच्]

मामहानम् दत्तवन्तम् (प्रजाजनम्) १ ११७.१७ **मामहानः**=अतिशयेन महान् पूजनीय (धर्म =अग्निहोत्रादिको यज्ञ) १७ ५५ [मह पूजायाम् (भ्वा०) धातो 'ताच्छील्यवयोवचनशक्तिपु चानश्' इति चानश् । विकरणव्यत्ययेन शप श्लु । तुजादित्वादभ्यासस्य दीर्घ. । यजमानो वै मामहान श० ६ २ ३ ६]

मामृजे मृजति शोधयति प्र०—अत्र 'तुजादीनाम्०' इत्यभ्यासदीर्घ ७ २६ ३ [मृजूष् शुद्धौ (अदा०) धातोर्लिट् । तुजादित्वादभ्यासस्य दीर्घ]

मायया प्रज्ञया २३ ५२ आडम्बरेण ५ ६३ ७ आच्छादनादिना प्रज्ञया वा ५ ६३ ३ कपटयुक्तया (वाचा) ऋ० भू० ३१७, १० ७१ ५. **माया**=प्रज्ञा ३ ६१ ७ **मायाभिः**=प्रज्ञा-विशेषव्यवहारै १ ११ ७ प्रज्ञानोपायै १ ५१ ५ गर्जनाऽन्धकारविद्युदादिवत् कपटधूर्त्तताधर्म्मादिभि १ ३३.१० **मायायै**=प्रज्ञावृद्धये ३० ७ **मायाः**=छलयुक्ता प्रज्ञा २ ११ १० कपटानि ६ ४५ ६ कपटादियुक्ता क्रिया १ ११७ ३ अन्धकाराद्या इव १ ३२ ४ **मायाम्**=प्रज्ञापिका विद्युतम् १३ ४४ मेधाम् ५ ८५ ६ [मा माने (मानमिहान्तर्भाव) (अदा०) धातो 'मा छाशसिभ्यो य' उ० ४ १०६ सूत्रेण य । तत स्त्रिया टाप् । माया प्रज्ञानाम निघ० ३ ६ मायया वाक्प्रतिरूपया नि० १ २० मायाम्=प्रज्ञाम् निघ० ७ २७ माया प्रज्ञानानि नि० १२ १७]

मायावान् कुत्सितप्रज्ञायुक्त (दस्यु =दुष्टस्वभावो जन) ४ १६ ६ [मायाप्राति० निन्दायामर्थे मतुप्]

मायाविनम् दुष्टप्रज्ञम् (दुष्टाचारिण जनम्) २ ११ ६ [मायाप्राति० निन्दायामर्थे 'अस्मायामेधास्रजो विनि' अ० ५ २ १२१ सूत्रेण विनि]

मायिनम् प्रशस्ता माया प्रज्ञा विद्यते यस्य तम् (विद्वास जनम्) ५ ५८ २ कुत्सिता माया प्रज्ञा विद्यते यस्य तम् (अहि=मेघम्) ५ ३० ६ छलादिदोषयुक्तम् (मृग=परस्वाऽपहर्त्तार जनम्) १ ८० ७ छलकपटयुक्त दुष्टकर्मकारिण मनुष्यम् १ ५३ ७ माया निन्दिता प्रज्ञा विद्यते यस्य तम् (दुष्टस्वभाव प्राणिनम्) प्र०—अत्र निन्दाऽर्थे इनि १ ११ ७ **मायिनः**=प्रशसिता माया प्रज्ञा विद्यन्ते येपान्ते (कवय =विद्वासो जना) १ १५९ ४ कुत्सिता माया प्रज्ञा विद्यते यस्य तस्य (दानवस्य=दुष्टकर्मकर्त्तुर्जनस्य) २ ११ १० प्रशस्तप्रज्ञा (राजादयो जना) ३.३८ ६ अन्यायकारिण (मनुष्यस्य) ऋ० भू० १५१, ऋ० १ ३ १८२. कपटादिदोषयुक्तांश्छत्रून् १ ५४ ४ कपटाधर्माचरणयुक्तस्य (दुर्जनस्य) प्र०—अत्र निन्दार्थ इनि १ ३९ २ **मायिनाम्**=येपा मायानिर्माण घनाकार सूर्यप्रकाशाच्छादक वा बहुविध कर्म विद्यते तेषाम् (मेघानाम्) प्र०—अत्र भूम्न्यर्थे इनि १.३२ ४ माया कुत्सिता प्रज्ञा विद्यते येषान्तान् (दुष्टाश्छत्रून्) प्र०—अत्र कर्मणि षष्ठी ३३ ५६ **मायी**=उत्तमा प्रज्ञा विद्यते यस्य स (इन्द्र = सत्पुरुष) ७ २८ ४ [मायाप्राति० प्रशसाया निन्दार्थे वा (मत्वर्थे) इनि]

मायिना प्राज्ञौ (राजसभासेनेशौ) ६ ६३ ५ [माया प्रज्ञा नाम निघ० ३ ६ ततो मत्वर्थ इनि । ततो द्विवचनस्य 'सुपा सुलुक्०' इत्याकारादेश]

मायिनी माया प्रज्ञा विद्यते यस्या सा (विदुषी स्त्री) ५ ४८ १ [मायाप्राति० मत्वर्थे इनिप्रत्ययान्तात् स्त्रिया ङीप्]

मायुम् परिमित मार्गम् १ १६४ २९ वाणीम् प्र०—मायुरिति वाङ्नाम निघ० १ ११, १ १६४ २८ **मायोः**=शृगालविशेषस्य २४ ३२ [डुमिञ् प्रक्षेपणे (स्वा०) धातो 'कृवापाजिमिस्वदि०' उ० १ १ सूत्रेण उण् । 'मिनातिमिनोतिदीडा ल्यपि च' त्यात्त्वम् । मायु वाङ्नाम निघ १ ११ मायुमिवादित्यमिति वा, वागेपा माध्यमिका नि० २ ६]

मारुत मरुता मनुष्याणा मध्ये विदित (विद्वज्जन) ५ ४६ २ मनुष्याणा मध्ये वर्त्तमान (विद्वज्जन) ३३ ४८ **मारुतम्**=मरुता मनुष्याणामिद कर्म्म २२ ११ १४ मरुता वायूनामिमम् (गणम्) १ ६४ १२ महद्विपयम् (शर्ध =बलम्) २ १ ६ मरुत्सम्बन्धिनम् (गणम्) ३३ ४५ मरुता समूहस्तम् प्र०—अत्र 'मृग्रोरुति' उ० १ ६५ इति मृङ्धातोरुति प्रत्यय 'अनुदात्तादेरञ्' अ० ४ २ ४४ इत्यञ् प्रत्यय । समी०—इद पद सायणाचार्येण मरुता सम्बन्धि तस्येदमित्यण् व्यत्ययेनाऽऽद्युदात्तत्वम् इत्यशुद्ध व्याख्यातम् १ ३७ १ मरुतो विकारो मारुतस्तम् १ ३७ ५ **मारुतस्य**=कलायन्त्रवायो. प्राणस्य वा १ ८७ ६ मरुतामय तस्य (वेधस =विधातु) १ १५६ ४ **मारुतः**=मरुद्देवताक (कल्माप. पशु) २९ ५८ वायूना समूह ५ ६१.१३ मरुता पवनानामय सम्बन्धी ज्ञाता (विद्वज्जन) १८ ४५. मनुष्यदेहानामयम् (प्रजापति.=जीव) ३९ ५ मनुष्याणा

['मित' इति व्याख्यातम् । तत्र शेलोपश्छन्दसि]

मिता परिमाणयुक्त (शाला) स वि० १६७, अथर्व० ९ ३ १६ **मिताम्**=प्रमाणयुक्त अर्थात् माप मे ठीक=जैसी चाहिये वैसी (शाला) को स० वि० १६७, अथर्व० ९ ३ १६ [मितप्राति० स्त्रिया टाप्]

मिता इव विद्यया सकलपदार्थवेदिन्य (कन्या) इव ४ ५१ २ [मिता-इवपदयो समास]

मितास: परिमितविज्ञाना (मनुष्या) १७ ८४ [मितप्राति० जसोऽसुक्]

मित्र! सुहृत् (उपदेशक जन) १ १२२ ७ सखे (वरुण=राजन्) ४ १ १८ सर्वसुहृदुपदेशक ४ ५५ १ **मित्रम्**=सर्वव्यवहारसुखहेतु ब्रह्माण्डस्य सूर्य्य शरीरस्य प्राण वा । प्र०—मित्र इति पदनामसु पठितम् निघ० ५ ४ अत्र प्राप्त्यर्थ "मित्रो जनान् यातयति ब्रुवाणो मित्रो दाधार पृथिवीमुत द्याम् । मित्र कृष्टिरनिमिषाभिष्टे मित्राय हव्य घृतवज्जुहोत" ऋ० ३ ५९ १ अत्र मित्रशब्देन सूर्य्यस्य ग्रहणम् 'प्राणो वै मित्रोऽपानो वरुण' शत० ८ २ ५ ६ अत्र मित्रवरुणशब्दाभ्या प्राणाऽपानयोर्ग्रहणम् १ २.७ प्राण इव प्रियम् (अग्नि=पावकम्) ६ ५० १ सर्वप्राण सर्वसुहृद वा (इन्द्र=सभाध्यक्षम्) १ १०६.१. बाह्याऽभ्यन्तरस्थ जीवनहेतु प्राणम् १ २३ ४ **मित्रयो:**=सुहृदोरध्यापकाऽध्येत्रोर्वाह्याभ्यन्तरस्थयो प्राणयोर्वा ६ ५१ १ **मित्रस्य**=सर्वजगतसुहृद. प्रकाशकस्य वा (दिव=परमेश्वरस्य सूर्यलोकस्य वा) ४ ३५ द्रोहरहितस्य मनुष्यस्य, सूर्यलोकस्य, प्राणस्य वा प० वि० । सर्वगतस्य सर्वप्राणिभूतस्य (वायो) १ १४.१० सुहृद्भाव की स० वि० २१४, ३६ १८ **मित्र:**=सूर्य, प्र०—अत्र 'अमिचिमिदिश०' उ० ४ १३८ अनेन क्त्र प्रत्यय १ २३ ६ सर्वसुखकारी (ईश्वरो विद्वज्जनो वा) १.९० ९ प्राण इव प्रिय (ईश्वर) ५ ४६ ५ वायु ४ १३.२ प्राणवद्वर्त्तमान (देव=विद्वज्जन) १ १८६ २ सखेव प्रियाचार (दार) ७ ४० ७ सुखप्रद (उपदेशक) १० १६ सर्वथा सवका निश्चित मङ्गलप्रद (ईश्वर) आर्याभि० १ १, ऋ० १ ६ १८ ९ पक्षपातरहित सर्वेषा सुहृत् (राजा) ३३ १५ सर्वहित-कारी (अर्यमा=न्यायाधीश) १ ४४ १३ बहुसुखकारी, सर्वदु खविनाशक (ईश्वर सभाध्यक्षो वा) १ ९४ १३ सर्वोपकारी (ईश्वर आप्तमनुष्यो वा) १ ९० १ ब्रह्मचर्येण प्राप्तबल प्राण १ ६६ ९ सूर्य इव परमात्मा, सर्वस्य सुहृद्राजा वा ३ ५९ १ यो मेद्यति स्निह्यति स्निह्यते वा स मित्र 'जो सब से स्नेह करके सबको प्रीति करने योग्य सब का सुहृत् अविरोधी है वह (ईश्वर) प्र०—'ञिमिदा स्नेहने' इस धातु से औणादिक क्त्र प्रत्यय के होने से मित्र शब्द सिद्ध होता है स० प्र० २०, ३६ ९ सत्तार्गाहित (परमात्मा) आर्याभि० १ १८, ऋ० १ ९ १७ १ **मित्राय**=सर्वोपकारकाय [मित्राय सभाध्यक्षाय वा) १ १३६ ५ सख्ये ४ ३ ५ वह्नये ३ ५९ १ सर्वसुहृदे (वरुणाय=विद्वज्जनाय) १ १३६.४ **मित्रे**=प्राणे ५ ४२ २ **मित्रेण**=धार्मिकेण विदुषा सह भा०—सत्यधर्मप्रियेणाऽमात्येन सह २७ ५ [ञिमिदा स्नेहने (भ्वा०) धातो' 'अमिचिमिदिशसिभ्य क्त्र' उ० ४ १६४ सूत्रेण क्त्र । मित्र पदनाम निघ० ५ ४ मित्र=मित्र प्रमीतेस्त्रायते । सम्मिन्वानो द्रवतीति वा । मेदयतेर्वा नि० १० २१ सर्वस्य ह्येव मित्रो मित्रम् श० ५ ३ २ ७ मित्र! सत्यानामधिपतये ! तै० ३ ११.४ १ ब्रह्मैव मित्र श० ४ १ ४ १. मित्र क्षत्र क्षत्रपति श० ११ ४ ३ ११ प्राणो वै मित्र श० ६ ५ १ ५ अय वै वायुर्मित्रो योऽय पवते श० ६ ५. ७ १४ अहर्मित्र ता० २५ १० १० य (अर्द्धमास) आपूर्य्यते स मित्र. ता० २५ १० १० यो (अर्धमास) ऽपक्षीयते स मित्र श० २ ४.४.१८ मित्रेणैव यज्ञस्य स्विष्ट शमयति तै० १.२ ५ ३. प्राणो मित्रम् जै० उ० ३.३ ६ मित्र क्षीरश्री (सोम) तै० स० ४ ४ ९ १. मित्रमह मै० १ ८ ९ मित्रो वै यज्ञस्य शान्ति काठ० ३५ १९ मित्रो वै शिवो देवानाम् तै० स० ५ १ ६ १. य (अर्द्धमास) आपूर्यते स मित्र ता० २५ १०.१० यो (अर्धमास) ऽपक्षीयते स मित्र श० २ ४.४ १८. सत्य वै मित्र. मै० ४ ३ ९]

मित्र इव सखेव २ ४ १ [सखा-इवपदयो समास]

मित्रधितये मित्राणा धितिर्धारण यस्मात्तस्मै (राये=धनाय) १ १२० ९ [मित्र-धितिपदयो समास: । धिति=धि धारणे (तुदा०) धातो स्त्रिया क्तिन्]

मित्रधेये मित्रैर्वर्त्तव्ये व्यवहारे भा०—मन्त्रे सुसन्धौ २७ ५ [मित्र-धेयपदयो समास । धेयम्=दधातेर्यत्]

मित्रपते मित्राणा पालक (ईश्वर) १ १७० ५ [मित्र-पतिपदयो समास]

मित्रमह य सर्वमित्रै पूज्यते तत्सम्बुद्धौ (विद्वज्जन) १ ५० ११ मित्र सखा मह पूजनीयो यस्य तत्सम्बुद्धौ (अग्ने=विद्वज्जन) ६ २ ११ यो मित्रेषु महाँस्तत्सम्बुद्धौ (अग्ने=परमेश्वर) ७ ५ ६ मित्राणा मह सत्कारस्य

वे रश्मय ता० १४.१२ ६ मासा हवींषि ग० ११ २ ७ ३ यव्या मासा. ग० १ ७ २ २६ मासा देवा अभिद्यव गो० पू० ५ २३ मासा उपसद श० १० २ ५६ एष (चन्द्रमा) मास जै० २ ३ त्रिंशन्मासो रात्रय काठ० ३४ ६ त्रिंशिनो मासा तै० स० ७ ५ २० १ दक्षिणावृतो मासा तै० स० ५ ३ २ ४. मासा वै वाजा तै० स० २ ५ ७ ४. मासा सन्धानानि तै० स० ७ ५ २५ १.]

मासि मासे २ १७ ७ [मासप्राति० सप्तम्याम् 'पदन्नोमास्०' इत्यादिना 'मास्' आदेश । मासि=मासे नि० ६ ३५]

मासि परिमिमीषे १ ४२ प्रापयसि १ ६२ ७ **माहि**=सत्कुरु ७.२६ ५ मन्यस्व ४ २२ १० [मा माने (अदा०) धातोर्लट् । अन्यत्र लोट्]

माहिनम् महत् (श्रव=श्रवणमन्न वा) ४ १७ २ अत्यन्त पूज्य महच्च (रेवत्=प्रशस्तधनवदैश्वर्यम्) १ १५१ ६ महत्तमम् (दत्रम्=दानम्) ३ ३६ ६ [मह पूजायाम् (भ्वा०) धातो 'महेरिनण् च' उ० २ ५६ सूत्रेण इनन्]

माहिनः महिमायुक्त (विद्वज्जन) प्र०—अत्र महेरिनण् च इत्युणादौ सिद्ध १ १६५ ३ महान् (इन्द्र=विद्युत्) २ १६ ३ पूज्यमानो महत्त्वेन युक्त (इन्द्र=सभेश) ३३ २७ **माहिनाय**=उत्कृष्टयोगान्महते (इन्द्राय=सभाद्यध्यक्षाय) १ ६१ १ [माहिन इति व्याख्यातम् । माहिन महन्नाम निघ० ३ ३ इय पृथिवी वै माहिनम् ऐ० ३ ३८]

माहिनः पूज्या महत्त्वगुणविशिष्टा (दिव=दिव्यगुणसमूहा) १ ५६ ६ **माहिना**=महत्त्वेन १ १८० ५ **माहिने**=महिम्ने ३ ६ ४ [मह पूजायाम् (भ्वा०) धातोस् ताच्छील्ये णिनि]

माहिना सत्कर्त्तव्या (गी=वाणी) ३ ७ ५ **माहिनायाः**=महत्त्वयुक्ताया (उपस) ५ ४५ ८ [माहिनमिति व्याख्यातम् । तत स्त्रिया टाप्]

माहिनावान् बहूनि माहिनानि सत्करणानि विद्यन्ते यस्य स (परमात्मा) ३ ५६ ३ प्रशस्तानि माहिनानि पूजनानि विद्यन्ते यस्य स (सज्जन) ३ ३६ ४ [माहिनप्राति० भूम्न्यर्थे प्रशसाया वा मतुप् । मतुप्-प्रत्यये पूर्वस्य दीर्घ]

माहेन्द्राः=महेन्द्रदेवताका (सञ्चरा=मार्गा) २४ १७ [महेन्द्रप्राति० 'सास्य देवते' त्यर्थेऽण् । माहेन्द्रे सर्वे कामा मै० ४ ६ ८ माहेन्द्र दधिवास क्षौम दक्षिणा मै० २ ६ १]

माः रचये ५ २६ ८ [मा माने (अदा०) धातोर्लुङ् । अटोऽभाव. सिचो लुक् च छान्दसम्]

मांसभिक्षाम् मासस्य भिक्षामलाभम् १.१६२ १२ मासयाचनाम् भा०—मासमत्तुमिच्छान् २५ ३५ [मास-भिक्षापदयो समास । माससमिति व्याख्यास्यते । भिक्षा=भिक्ष भिक्षायामलाभे लाभे च (भ्वा०) धातो 'गुरोश्च हल' इति अकार । तत स्त्रिया टाप्]

मांसम् मृतकशरीराऽवयवम् १ १६१.१ **मांसेभ्यः**=शरीराऽन्तर्गतेभ्य (शरीरावयवेभ्य) ३६ १० वहिस्थेभ्य (शरीरावयवेभ्य) ३६ १० [मन ज्ञाने (दिवा०) धातो. 'मनेर्दीर्घश्च' उ० ३.६४ सूत्रेण स । धातोर्दीर्घश्च । मास=मास माननं वा मानस वा मनोऽस्मिन् सीदतीति वा नि० ४ ३. मास वै पुरीषम् श० ८ ६ २ १४ मास सादनम् श० ८ १ ४ ५]

मांसपचन्याः मासानि पचन्ति यस्या तस्या (उखाया=पाकसाधिकाया) प्र०—अत्र 'मासस्य पचियुड्घञो' इत्यन्तलोप १ १६२ १३ मास पचन्ति यस्या तस्या (उखाया=स्थाल्या) २५ ३६ [मास-पचनीपदयो समासे मासस्यान्त्यलोप 'मासस्य पचियुड्घञो' अ० ६.१ १४४ वा० सूत्रेण । पचनी=डुपचष् पाके (भ्वा०) धातोरधिकरणे ल्युट्]

मितज्ञवः मितानि जानूनि येषान्ते (ब्रह्मचारिणो जना) ३ ५६ ३ **मितज्ञुभिः**=सङ्कुचितजानुभिरासीनैर्विद्वद्भि ६ ३२ ३ [मित-जानुपदयो समासे जानुशब्दस्य ज्ञुरादेशश्छान्दस]

मितद्रवः ये मित द्रवन्ति गच्छन्ति ते (अश्वा योद्धारो वा) ७ ३८ ७ ये मित शास्त्रप्रमित विषय द्रवन्ति ते (राजपुरुषा) ६ १७ **मितद्रुः**=यो मित द्रवति गच्छति स (अग्नि=परमेश्वर) ४ ६ ५ यो मित शास्त्रसम्मित द्रवति प्राप्नोति स (विद्वज्जन) ७ ७ १ [मितोपपदे द्रु गतौ (भ्वा०) धातो 'द्रुप्रकरणे मितद्र्वादिभ्य उपसंख्यानम्' अ० ३ २ १८० वा०सूत्रेण डु । मितद्रव सुमितद्रव नि० १२ ४४ अथवा मितोपपदे द्रु गतौ (भ्वा०) धातो 'हरिमितयोर्द्रुव' उ० १ ३४ सूत्रेण कु, डिच्च]

मितः मान प्राप्त (अ०—पुरुष) १७ ८१ [माङ् माने (जु०) धातो. क्त । 'द्यतिस्यतिमास्थाम्०' इतीकारादेश]

मिता मितानि (सद्म=स्थानानि) १ १७३ ३

मिथती: शत्रुसेना हिंसन्ती (स्पृध =सङ्ग्रामान्) ६.२५ २. **मिथत्या**=हिंसया ७ ४८ ३ [मिथृ मेथृ मेधाहिंसनयो (भ्वा०) धातो शत्रन्तान् डीप्]

मिथस्तुर: या मिथस्त्वरयन्ति ता (ऊतय =रक्षा) ७.२६ ४ [मिथस् उपपदे ञित्वरा सम्भ्रमे (भ्वा०) धातो क्विप्प्रत्यये 'ज्वरत्वर०' इति वकारस्य उपधायाश्च स्थाने ऊठ्। ऊकारस्य ह्रस्वश्छान्दस । अथवा तुर्वी हिंसायाम् (भ्वा०) धातो क्विपि 'राल्लोप' इति वलोपे रूपम्]

मिथस्तुरा मिथो हिंसके (अहोरात्रे) ६ ४६ ३. [मिथस्तुर इति व्याख्यातम्। ततो द्विवचनस्याकारश्छान्दस]

मिथस्पृध्येव यथा परस्पर पृत्सु सङ्ग्रामेषु भवा सेना तद्वत् १ १६६ ६ [मिथस्पृध्या-इवपदयो समास.। मिथस्पृध्या=मिथस्पृध्प्राति० भवार्थे यत्, ततष्टाप्। मिथस्पृध्=मिथस्-पृध्पदयो समास । पृत्सु सग्रामनाम निघ० २.१७]

मिथ: परस्परम् ७ ३८ ५ अन्योऽन्यम् ७ ५६ ३ [मिथस् इति स्वरादिपाठादव्ययम्]

मिथुना मिथुनौ परस्परसङ्गतौ (सूर्याचन्द्रमसौ) ३ ३६ ३ दम्पती १ १४८ ४. द्वौ (अध्यापकोपदेशकौ) १ १५६ ४ विरोध विहाय मिलितौ (विद्वासौ) १ ८३ ३. [मिथुनप्राति० 'सुपा सुलुक्०' इति द्विवचनस्याकार । मिथुनम्=मिथृ मेधाहिंसनयो (भ्वा०) धातो 'क्षुधिपिशिमिथिभ्य कित्' उ० ३ ५५ सूत्रेण उनन्। मिथुनौ सरण्यू मध्यम च माध्यमिका च वाचमिति नैरुक्ता । यम च यमी चेत्यैतिहासिका नि० १२ १० मिथुनौ कस्मात् ? मिनोति श्रयतिकर्मा, थु इति नामकरणस्थकारो वा नयति परो वनिर्वा, समाश्रितावन्योन्य नयत, वनुतो वा। मनुष्यमिथुनावप्येतस्मादेव, मेथन्तावन्योन्य वनुत इति वा नि० ७ २६ मिथुन वा अग्नीच्च पत्नीश्च मै० ४ ७ ४ मिथुन वा आपश्च पयश्च मै० १ ८ ३ मिथुन वै घृत च सोमश्च मै० ४ ७ ४. मिथुन वै पशव ऐ० ४ २१ मिथुन चक्षु (प्राणापानौ) काठ० १० १]

मिथुना मिथुनानि स्त्रीपुरुषाख्यद्वन्द्वानि १ १३१ ३ [मिथुनप्राति० शेर्लोपश्छन्दसि]

मिथुनानि युग्मानि ३ ५४ ७ [मिथुनमिति व्याख्यातम्]

मिथुनास: सयोगेनोत्पन्ना (पुत्रा =तनय इव तत्त्वानि) १ १६४ ११ सपत्नीका (विद्वासो जना) ५ ४३ १५ [मिथुनप्राति० जसोऽसुक्]

मिथुना: द्वन्द्वा द्वौ द्वौ मिलिता (वायुजलविद्युत) ४ ४५ १ **मिथुनौ**=स्त्रीपुरुषौ १.१०६.३ [मिथुनमिति व्याख्यातम्। द्वन्द्व वै मिथुनम् ऐ० ३ ५०]

मिथू परस्परम् १.१६२.२०. मिथ २५ ४३ ['मिथू' इत्यव्ययम्। अथवा मिथृ मेधाहिंसनयो (भ्वा०) धातो कु]

मिथूदृशा परस्परदर्शयितारौ (उषासानक्ता=प्रत्यूषरात्र्यौ) २ ३१.५. यौ मिथू विषयासक्तिप्रमादौ हिंसन च दर्शयतस्तौ (अ०—शरीर-मनसी) प्र०—अत्र 'मिथृ मेथृ मेधाहिंसनयो, इत्यस्मादौणादिक कु प्रत्यय:। तदुपपदाद् दृशे कर्त्तरि क्विप् 'सुपा सुलुग्०' इत्याकारादेशो 'अन्येषामपि दृश्यते' इति दीर्घश्च १ २६ ३. [स्पष्टम्]

मिनत् हिंस्यात् ४ ३०.२३ **मिनन्ति**=हिंसन्ति ७.३१.११ **मिनवाम**=हिसेम ५ ४५ ५ **मिनाति**=त्यजति १ १२४ ३ हिनस्ति १ १२३ ६ हन्ति १ ७१ १० दूर कर देता है स० प्र० ११०, १ १७६ १ **मिनीमसि**=हिंस्म प्र०—अत्र 'इदन्तो मसि' इति मसेरिदागम १ २५ १ [मिनाति वधकर्मा निघ० २ १६ गतिकर्मा निघ० २ १४ ततो लेटि लटि लोटि च रूपाणि]

मिनत् हिंसत् (अनीक=बल सैन्यम्) ५ २ १ [मिनाति वधकर्मा (निघ० २ १६) धातो शतृ]

मिनन् हिंसन् (जगदीश्वर) २ १३ ३ [मिनाति वधकर्मा निघ० २ १६) धातो शतृ]

मिनन्ता हिसन्तौ (नरौ=विद्यानेतारौ) १ ११७ ३ [मिनाति वधकर्मा (निघ० २ १६) धातो शतरि द्विवचनस्याकारादेश]

मिनान: मान कुर्वाण (अ०—मनुष्य) ५ ४२ १३. [माङ् माने (जु०) धातो शानच्। विकरणव्यत्ययेन श्ना]

मिनोति प्रक्षिपति ५ २७ **मिन्वन्**=विशेषेण प्रक्षिपन्ति ३ ३१ १२ **मिमाय**=प्रक्षिपेयम् २ २६ ५. [डुमिञ् प्रक्षेपणे (स्वा०) धातोर्लट्। अन्यत्र लङ् लिट् च]

मिमाति मिमीते प्र०—अत्र व्यत्ययेन परस्मैपदम् १ १६४ २८. गच्छति १ १६४ २६ मिमीते जनयति १ ३८ ८ **मिमाथाम्**=रचयेतम् ४ ४१ ४ विवक्तम् ४ ४४ ६ **मिमाय**=मिमीते २ १५ ३ शब्दायते १ १६४ ४१ [माङ् माने शब्दे च (जु०) धातोर्लट्। व्यत्ययेन परस्मैपदम्। 'भृञामित्' इत्यभ्यासस्येत्त्वम्। अन्यत्र लोटि लिटि च रूपाणि]

मिमानम् धर्त्तारम् (कुमारम्) ५.२.३. **मिमान:**=प्रक्षिपन् विभजन् (सविता=सूर्य) १.५० ७ योऽनेकानुत्त-

कारयित (अग्ने=विद्वन्) १ ५८ ८ यो मित्राणि महति सत्करोति तत्सम्बुद्धौ (राजन् शिष्यजन वा) २ १ ५ यो मित्राणि महयति पूजयति तत्सम्बुद्धौ (विद्वज्जन) २६ २५ **मित्रमहः**=यो मित्राणा मह पूज्य (विद्वान् जन) १.४४ १२ [मित्र-महपदयो समास । मह=मह पूजायाम् (भ्वा०) धातोर्घञर्थे क । कर्त्तरि अच् वा]

मित्रमहः ये मित्राणि महन्ति सत्कुर्वन्ति ते (राजाऽमात्या) ४ ४ १५ [मित्रोपपदे मह पूजायाम् (भ्वा०) धातो कर्त्तरि क्विप्]

मित्रमहाः यो मित्राणि पूजयति स (विद्वान् जन) ६ ३ ६ [मित्रमह इति व्याख्यातम्]

मित्रयुजः ये मित्रै सह युञ्जन्ति ते (देवा=विद्वज्जना) १ १८६ ८ [मित्रोपपदे युजिर् योगे (रुधा०) धातो 'सत्सूद्विषद्रुहयुज०' अ० ३ २ ६१ सूत्रेण क्विप्]

मित्रराजाना प्राणविद्युतौ ५ ६२ ३ [मित्र-राजन्-पदयो समासे द्विवचनस्याकारादेशश्छान्दस]

मित्रा मित्र प्राणम् प्र०—अत्र विभक्तेराकारादेश ३३ ४५ सखायौ ५ ६६ ६ [मित्रप्राति० विभक्तेराकारादेश]

मित्रायुवः य आत्मनो मित्राणीच्छन्त (विद्वासो जना) १.१७३ १० [मित्रपदाद् इच्छायामर्थे क्यजन्तात् 'क्याच्छन्दसी' ति उ']

मित्रावरुणनेत्रा प्राणोदानवन् सर्वान् धर्म्म नयन्त (देवा=सर्वेभ्य सुखदातारो विद्वास) ६ ३६ **मित्रावरुणनेत्रेभ्यः**=प्राणाऽपानतुल्येभ्य (देवेभ्य=दिव्यन्यायप्रकाशकेभ्यो विद्वज्जनेभ्य) ६ ३५ [मित्र-वरुणयो समासे ततो नेत्रेण सह समास । नेत्रम्=णीञ् प्रापणे (भ्वा०) धातोरौणा० ष्ट्रन्]

मित्रावरुण मित्रश्च वरुणश्च तौ प्राणोदानौ प्र०—अत्र 'सुपा सुलुक्' इति विभक्तेराकारादेशो व्यत्ययेन ह्रस्वत्व च १ १५ ६ [मित्र-वरुणपदयो समासे पूर्वपदस्यानङ्, विभक्तेश्च लुक्]

मित्रावरुणयोः सभासेनेशयो १० २१ प्राणोदानयो ६ २४ **मित्रावरुणाभ्याम्**=सख्युत्कृष्टाभ्याम् (पुरुषाभ्याम्) ७ २३ **मित्रवरुणौ**=प्राणोदानवद्वर्त्तमानौ (विद्युत्पवनौ) १ १३६ २ बलपराक्रमकारकौ प्राणोदानौ १ ७५ ५ य सर्वप्राणो वहिस्थो वायुर्वरुणोऽन्तस्थमुदानो वायुश्च तौ २ १६ प्राणोदानाविवाध्यापकाध्येतारौ ५ ४१ १ सूर्यवायू प्र०—अत्र 'देवताद्वन्द्वे च' अ० ६ ३ २६ अनेनाऽऽनङादेश १.२ ८. **मित्रावरुणा**=मित्रश्च वरुणश्च द्वौ सूर्यवायू प्र०—अत्र 'सुपा सुलुक्०' इत्याकारादेश. १ २३ ५ प्राणोदानौ २८ १६ सुहृद्वरावध्यापकोपदेशकौ १ १५२ ३ प्राणोदानवद्राजप्रधानाऽमात्यौ ४ ३६ ५ य सर्वमित्र सर्वेश्वरश्च तौ १ ७१ ६ अध्यापकोपदेशकौ ७ ३३ १० प्राणोदानाविव सखिराजानौ ७ ४१ ४ वायुसवितारौ ५ ६३ ३ यज्ञशिल्पकारिणौ ५ ६३ ५ वायुसूर्याविव (राजामात्यौ) ५ ६३ २ मातापितरौ ५ ४७ ७ सर्वसुहृदुत्कृष्टौ (अश्विना=अध्यापकाऽध्येतारौ) १ ११ १४ सखायावुत्तमौ जनौ ७ १० स्त्रीपुरुषौ ७ ४२ ५ सत्योपदेशकौ (विद्वज्जनौ) १ ५३ ३ मित्र सर्वेषा सखा वरुण श्रेष्ठश्च तौ (सज्जनौ) ५ ६७ ३ प्राण उदान के समान प्रिय और सर्वशक्तिमान् (ईश्वर) स० वि० १५५, ७ ४१ १ प्राण और उदान, स० वि० १२२, अथर्व० १४ १ ५४ [मित्र-वरुणपदयो समासे 'देवताद्वन्द्वे च' अ० ६ ३ २६ सूत्रेणानङ् । मित्रावरुणा=मित्रावरुणौ नि० ११ २३ प्राणापानौ मित्रावरुणौ ता० ६ १० ५ प्राणो वै मित्रोऽपानो वरुण श० ८ ४ २ ६. प्राणोदानौ वै मित्रावरुणौ श० १ ८ ३ १२ अहोरात्रौ वै मित्रावरुणौ ता० २५ १० १० अहर्वै मित्रो रात्रिर्वरुण ऐ० ४ १० अर्द्धमासौ (शुक्लकृष्णपक्षौ) वै मित्रावरुणौ ता० २५ १० १० अथैतावेवार्धमासौ मित्रावरुणौ, य एवापूर्यते स वरुणो योऽपक्षीयते स मित्र श० २ ४ ४ १८ बाहू वै मित्रावरुणौ श० ५ ४ १ ३५ द्यावापृथिवी वै मित्रावरुणयो प्रिय धाम ता० १४ २ ४० गोसस्तवौ वै मित्रावरुणौ कौ० १८ १३ चक्षुश्च मनश्च मैत्रावरुण काठ० २७ ५ मनो मैत्रावरुण श० १२ ८ २ २३ यज्ञो वै मैत्रावरुण कौ० १३ २]

मित्रासः सर्वस्य सुहृद. (सम्राज=राजान) ७ ३८ ४ सखाय ३ ५८ ४ [मित्रप्राति० जसोऽसुक्]

मित्रिणः मित्राणि यस्य सन्ति तस्य (राज्ञ) १ १७८ ४ [मित्रप्राति० भूम्न्यर्थे इनि]

मित्रियात् मित्रात् ४ ५५ ५ [मित्रप्राति० पचमी । वर्णव्यत्ययेनाकारस्येयादेश]

मित्रेरून् मित्रहिंसकान् शत्रून् प्र०—अत्र मित्रोपपदाद् रुपधातोर्बाहुलकादौणादिको डु प्रत्यय १ १७४ ६ [मित्रोपपदे रुष हिंसार्थे (भ्वा०) धातोर्बाहु० औणा० डु]

मित्र्यम् मित्रेषु भवम् (प्रमादम्) ५ ८५ ७ **मित्र्यः**=मित्रेषु साधु (अग्नि=जगदीश्वर) २ ६ ७ [मित्रप्राति० भवार्थे यत्]

घञर्थे को वा । अन्यत्र क्विप् अपि]

मीढुषः वीर्यसेचकस्य (पूर्णब्रह्मचारिजनस्य) ६ ६६ ३. विद्यादिसद्गुणसेचकान् (मरुत =ऋत्विजो जनान्) ३ ४६ जलेनेव सुखसेचकस्य (विष्णो =ईश्वरस्य) ७ ४० ५ वीर्यवत (सेनापते) ४ १५ ५ **मीढुषे**=सुख सिञ्चते (रुद्राय=राज्ञे) ५ ४१ २ वारिणेव सत्योपदेशैः सेचकाय (यतिरूपायाऽतिथये) ७ १५ १ वीर्यवते (सेनापतये) १६.८ सज्जनान् प्रति सुखसेचकाय (रुद्राय= सेनाध्यक्षाय) १ १२२ १ स्निग्धाय सेचनसमर्थाय (राज्ञे) २८ ५ सुखवर्धकाय (विदुषे जनाय) ४ ३ ५ **मीढ्वः**= सुखसेचक (वैद्यराज) २ ३३ १४ सुखैः सिञ्चन् (रुद्र= सभाध्यक्ष १ ११४ ३ सुखाना सेचक (अग्ने=राजन्) ३ १६ ३ वीर्यदानकर्त्त (इन्द्र=विवाहितपते) ऋ० भू० २१३, ऋ० ८ ३ २८ ५ वीर्यसेचन मे समर्थ (इन्द्र= ऐश्वर्ययुक्त पुरुष) स० प्र० १४८, १० ८५ ४५ हे सत्य से सब के अन्त करण को सीचने वाले (सन्यासिन्) स० वि० १६५, ६ ११३ २ **मीढ्वान्**=विद्याया सेचक (सखा= सुहृज्जन) २ २४ १ वृष्टिद्वारा सेचक (सूनु =कार्यकारी सन्तान) प्र०—अत्र 'दाश्वान्साह्वान्०' अ० ६ १ १२. इति निपातनात् द्वित्व न १ २७ २ [मिह सेचने (भ्वा०) धातोर्लिट क्वसु । 'दाश्वान्साह्वान्मीढ्वाश्च' अ० ६ १.१२ सूत्रेणाद्वित्वमनिट्त्वमुपधादीर्घत्व ढत्व च निपात्यते]

मीढुषी सेचनकर्त्री (भा०—कृतब्रह्मचर्या स्त्री) ५ ५६ ६ [मिह-सेचने (भ्वा०) +लिट क्वसु+स्त्रिया ङीप्]

मीढुष्टम योऽतिशयेन मीढ्वान् वीर्यवाँस्तत्सम्बुद्धौ (सभासेनेश) १६ ५१ अतिशयेन वीर्यस्य सेचक सेनापते १६ ११ **मीढुष्टमाय**=अतिशयेन वृक्षोद्यानक्षेत्रादिसेचकाय कृषीवलाद्याय १६ २६ प्रसेक्तृतमाय (रुद्राय=परमेश्वराय जीवाय वा) १ ४३ १ [मीढुष्प्राति० अतिशायने तमप् । मीढुष् इति व्याख्यातम्]

मीढुष्मतीव मीढु सेक्ता वीर्यप्रद प्रशस्त पतिविद्यते यस्या (पृथिवी=भूमि) तद्वत् (पृथिवी) ५ ५६ ३ [मीढुष्मती-इवपदयो समास । मीढुष्मती=मिह सेचने (भ्वा०)+लिट क्वसु +मतुप्+स्त्रिया ङीप्]

मीढुष्मन्तः मीढुषो बहवो वीर्यसेचकादयो गुणा येषान्ते पृथिव्यादय पदार्था प्राणिनश्च) ६ ५० १२ [मिह सेचने (भ्वा०) धातोर्लिट क्वसु । ततो भूम्न्यर्थे मतुप्]

मीढे सङ्ग्रामे ६.४६.४ [मीळ्हे=सग्रामनाम निघ० २ १७]

मीयते हिंस्यते २ ८.३ [मीञ् हिंसायाम् (क्र्या०) धातो कर्मणि लट्]

मीयमानः सत्क्रियमाण (पुरुषार्थिजन) ३ ८ ३. [माङ् माने (जु०) धातो कर्मणि शानच्]

मीवता हिंसता (कुमारेण=अकृतविवाहजनेन) २८ १३ [मीव स्थौल्ये (भ्वा०) धातो शत्रन्तात् तृतीया]

मुक्षीजयेव मुक्ष्या मुञ्जाया जायते सा मुक्षीजा तयेव १ १२५.२. [मुक्षीजया-इवपदयो समास । मुक्षीजया= मुक्षीजाप्राति० तृतीया । मुक्षीजा='मुक्षी' इत्युपपदे जायतेर्ड । मुक्षीजा मोचनाच्च सयनाच्च ततनाच्च नि० ५.१९]

मुक्षीय मुक्तो भवेयम् ७ ५९ १२ पृथग् भूयासम् अ०— श्रद्धारहितो भूयासम्, मुक्तो भूयासम् ३ ६० [मुच्लृ मोचने (तुदा०) धातोर्लिङ् । मुक्षीय=मुञ्चस्व नि० १३ ३५.]

मुखतः अग्रत २५ २५ [मुखप्राति० तसि]

मुखम् मुखस्थानीय श्रेष्ठम् (भा०—उत्तमाङ्गम्) ३१ १० मुखमिवोत्तम. (ब्राह्मण =वेदेश्वरविदनयोरुपासको जन) ३१ ११ आस्यम् २० ५ मुख्यगुणेभ्य उत्पन्नम् (पुरुषाऽङ्गम्) ऋ० भू० १२५, ३१ १० सृष्टि मे मुख के सदृश सबसे मुख्य उत्तम (ब्राह्मण =वेदेश्वरवित्) स० प्र० ११४, ३१ ११ **मुखात्**=मुख्यज्योतिर्मयाद्ब्रह्मणरूपात् ३१ १२ [खनु अवदारणे (भ्वा०) धातो 'डित्खनेर्मुट् चोदात्त' उ० ५ २० सूत्रेण अल् अच् वा डित्वाट्टेर्लोपो मुडागमश्च । मुख प्रतीकम् श० १४ ४ ३ ७]

मुखा मुखेन सहचरितानि श्रोत्रादीनीन्द्रियाणि प्रति ४.३९ ६ मुखानि २३ ३२ [मुखप्राति० शेर्लोपश्छन्दसि]

मुग्धः मूढ (अविद्वज्जन) ५ ४० ५ **मुग्धाय**= प्रापितमोहाय मोह प्राप्ताय वा (जनाय) प्राप्तमोहनिमित्ताय (अह्ले) मूर्खाय वा ६ २० [मुह वैचित्ये (दिवा०) धातो क्त]

मुच त्यज प्र०—अत्र 'वाच्छन्दसि' इत्युपधानकारलोप १ १७७ ४ **मुचध्वम्**=त्यजत १ १७१ १ **मुचाति**=मुच्यात् प्र०—अत्र लेटि 'छान्दसी वर्णलोपो०' इति नलोप २ ३८.३ **मुचीष्ट**=मुञ्चत ७ ५९ ८. **मुच्यध्वम्**=मुक्ता भवत प्र०—अत्र विकरणव्यत्ययेन श्यन् ६ १२ त्यजत १२ ७३ **मुच्यन्ताम्**=त्यजन्ताम् ३५ ३ **मुच्यसे**=मुक्तो भवसि १ ३१ ४ **मुच्ये**=मुक्तो

मान् पदर्थान् मिमीते स (विद्वज्जन) २ ० ३ ७ निर्माता सन् (जगदीश्वर) २ १ ७ २ मान कुर्वाण (मनुष्य) ५ ४२ १३ **मिमाना:**=शत्रून् प्रक्षेपमाणा (जना) ६ १३ उत्पादयन्त (दुर्मित्रास=शत्रुसेना) ७ १८ १५ [डुमिञ् प्रक्षेपणे (स्वा०) धातो शानच्। व्यत्ययेन शप श्लु। माङ् माने (जु०) धातोर्वा शानच्। धातूनामनेकार्थकत्वादत्र प्रक्षेपणेऽपि]

मिमाना विदधतौ (कारु=शिल्पनौ) २९ ३२ निर्मातारौ ६ ६२ २ निश्चेतारौ (देवौ=विद्वांसौ जनौ) २९ ७ [मिमाना=निर्मिमानौ नि० ८ १२ मिमानमिति व्याख्यातम्। ततो द्विवचनस्याकारादेशश्छन्दसि]

मिमाने निर्माणकर्तृण्यौ द्यावापृथिव्यौ १ १४६.३ [मिमानमिति व्याख्यातम्]

मिमिक्षतम् सेक्तुमिच्छतम् १ २२ ३ प्रापयितुमिच्छतम् १ १५७ ४ मेढु सेक्तुमिच्छतम् १ ४७ ४ **मिमिक्षताम्**=मुखै सेक्तुमिच्छताम् १ २२ १३ मेढुमिच्छताम् ६ ७० ५ सेक्तुमिच्छेताम् १३ ३२ **मिमिक्षति**=मेढु सिञ्चितुमलङ्कर्तुमिच्छति १ १४२ ३ **मिमिक्षः**=ससिञ्च ६ ३४ ४ **मिमिक्षिरे**=मेढुमिच्छन्ति १ ८७ ६ **मिमिक्षुः**=सिञ्चन्ति १ १६५ १ आसिञ्चन्ति ६ २९ ३ सम्बध्नन्ति ६ २९ २ **मिमिक्षे**=मेढु सेक्तुमिच्छेयम् २ ३ ११ सिञ्चितुमिच्छ १७ ८८ **मिमिक्ष्व**=मेढुमिच्छ १ ४८ १६ [मिह सेचने (भ्वा०) धातोरिच्छायामर्थे सन्नन्ताल्लोट्। अन्यत्र लट् लिट् च। इम यज्ञ मिमिक्षतामितीम यज्ञमवत्तामित्येतत् श० ७ ५ १ १०]

मिमिक्षन् सुखै सेक्तुमिच्छन् (इन्द्र=सूर्यवद्राजन्) ७ २० ४ [मिह सेचने (भ्वा०) धातोरिच्छायामर्थे सन्नन्ताच्छतृ]

मिमिक्षुम् सेक्तुमिच्छम् (इन्द्र=विद्वास जनम्) ३ ५० ३ [मिह सेचने (भ्वा०) धातोरिच्छायामर्थे सन्नन्तात् 'सनाशसभिक्ष उ' इति ताच्छील्य उ]

मिमीतन् मन्येथाम् १ १२० ९ **मिमीत**=जनयत ५ ७६ २ **मिमीताम्**=मृजेथाम् ५ ५१ ११ **मिमीते**=रचयति १ १६४ २४ जनयति ३ १ ५ **मिमीहि**=मन्यस्व ६ १९ ३ मान्य कुरु ७ १९ ११ निर्मिमीहि प्र०—माङ् माने शब्दे च इत्यस्य रूपम्, व्यत्ययेन परस्मैपदम् १ ३८ १४ **मिमीहे**=सम्पादय ३ १ १५ [माङ् माने शब्दे च (जु०) धातोर्लोट्। अन्यत्र लट् लोट् च। व्यत्ययेन परस्मैपदम्। मिमीहि याच्ञाकर्मा निघ० ३ १९]

मिमृक्षु सहन्ते प्र०—अत्र 'बहुल छन्दसि' इत्यभ्यासस्येत्वम् १ ६४ ४ [मृष तितिक्षायाम् (भ्वा०) धातोश्छान्दस रूपम्। मृक्ष सघाते (भ्वा०) धातोर्वा लिट्]

मिम्यक्ष तूर्ण गच्छ ६ ५० ५ प्राप्नुहि १.१६७ ३ [म्यक्षति गतिकर्मा (निघ० २ १४) धातोर्लोट्। द्वित्वमित्व च छान्दसम्]

मियेधः येन मिनोति दुख प्रक्षिपति स (यज्ञ=सङ्गतो व्यवहार) प्र०—अत्र बाहुलकादौणादिक एधप्रत्यय ३ ३२ १२ मियेन प्रक्षेपणेनैध प्रदीपन यस्य स (यज्ञ) १ १७७ ४ **मियेधे**=घृतादि-प्रक्षेपणेन प्रशसनीये यज्ञे ३ १९ १ प्रापणीये यज्ञे ३ १९ ५ परिमाणयुक्ते यज्ञे ७ १ १७ **मियेधैः**=प्रेरकै (ऋत्विग्भि) ६ ५१ १२. [डुमिञ् प्रक्षेपणे (स्वा०) धातोर्बाहु० औणा० एधप्रत्यय किच्च। अथवा मिय-एधपदयो समास। मिय=मिनोतेर्घञर्थे क। एध=इन्धे रूपम्]

मियेध्य मिनोति प्रक्षिपति अन्तरिक्ष प्रत्यग्निद्वारा पदार्थास्तत्सम्बुद्धौ (अ०—होतर्यजमान वा) प्र०—अत्र डुमिञ्धातोरौणादिको बाहुलकात् केध्यच्प्रत्यय १ २६ १ दुखाना प्रक्षेप्त (ईश्वर) १ ४४ ५ दुष्टाना क्षेपणशील (अग्ने=विद्वज्जन) ३८ १७ यो मिनोति प्रक्षिपति दुष्टान् तत्सम्बुद्धौ (अग्ने=तेजस्विन् विद्वन्) प्र०—अत्र बाहुलकात् औणादिक एध्यच्प्रत्यय किच्च ११ ३७ [डुमिञ् प्रक्षेपणे (स्वा०) धातोर्बाहु० औणा० केध्यच्]

मिश्राः मिलिता (वीरा जना) १७ ६५. [मिश्र सम्पर्के (चुरा०) धातोर्घञर्थे क]

मिषतः सहजस्वभावेन प० वि०। ऋ० ८ ८.४८.२]

मिषति सिञ्चति ३ २९ १४ [मिषु सेचने (भ्वा०) धातोर्लट्। विकरणव्यत्ययेन श]

मिषन्तम् शब्दयन्तम् (वत्सम्) १ १६४ २८ [मिष स्पर्द्धायाम् (तुदा०) धातो शतृ]

मिहम् वृष्टिम् २ ३० २ **मिह**=वृष्ट्या १ ७९ २ वृष्टे ५ ३२ ४ सेचका (पावका=पवित्रा पवित्रकरा जना) ३ ३१ २०' सेचनकर्त्तार (अ०—मरुत) प्र०—अत्र इगुपवलक्षण क प्रत्यय, 'सुपा सुलुग्०' इति जस सु १ ३७ ११ **मिहे**=वीर्यसेचनाय वेगाय वा १ ६४.६ [मिह सेचने (भ्वा०) धातोरिगुपधलक्षण कर्त्तरि क।

धातो 'मुहे' किच्च' उ० २ १२० सूत्रेण उसि । पौन पुन्ये वार्येऽव्ययम् । मूढ इव कालो यावदभीक्ष्ण चेति नि० २ २५]

मुहूर्त्तम् कालाऽवयवम् ३ ३३ ५ घटिकाद्वयम् ३ ५३ ८ [ह्रूर्च्छति कुटिल भवतीति विग्रहे हुर्छा कौटिल्ये (भ्वा०) धातोर् बाहु० औणा० (उ० ३ ८६) क्त । धातोर्मुडागम । 'रात्लोप' अ० ६ ४ २१ सूत्रेण छलोप । मुहूर्त्ता न (प्रजापति) पञ्चदशाह्नो रूपाण्यपश्यदात्मन-स्तन्वो मुहूर्त्तां लोकम्पृणा पञ्चदशैव रात्रेस्तद्यन् मुहु त्रायन्ते तस्मान्मुहूर्त्ता श० १०.४ २ १८ चित्र' केतुर्दाता प्रदाता सविता प्रसविताभिशस्तानुमन्तेति एतेऽनुवाका मुहूर्त्ताना नामधेयानि तै० ३ १०.१० ३ मुहूर्त्तो मुहुर्ऋतु नि० २ २५]

मुहे मुग्धो भवति ६ १८ ८ [मुहे वैचित्ये (दिवा०) धातोर्लट् । विकरणव्यत्ययेन श, आत्मनेपदञ्च]

मूकम् अवाचम् (जनम्) ३० १६ [मूर्व्यते वध्यतेऽसौ मूक इति विग्रहे मूर्वी बन्धने (भ्वा०) धातोर्बाहु० औणा० (३ ४१) कक् । रेफवकारयोर्लोप]

मूजवतः बहवो मूजा घासादयो विद्यन्ते यस्मिन् तस्मात् पर्वतात् प्र०—मूजवान् पर्वत नि ६ ८, ३ ६१ [मूजवान् पर्वतो मुञ्जवान् नि० ६ ८]

मूत्रम् प्रस्राव १६ ७६ **मूत्रात्**=मूत्राऽऽधारेन्द्रियात् १६ ८४ [मुच्यते यत्तद् इति विग्रहे मुचॢ मोचने (तुदा०) धातो 'सिविमुच्योष्टेर' च' उ० ४ १६३ सूत्रेण ष्ट्रन् । मूत्र प्रस्रवणे (चुरा०) धातोर्वा वञ्]

मूराः मूढा (शत्रुजना) ४ २६ ७ [मुह वैचित्ये (दिवा०) धातो क्त । वर्णव्यत्ययेन ढकारस्य रेफ । मूरा मूढा निघ० ६ ८]

मूर्द्धन् मूर्द्धनि २० ४४ उत्तमाङ्गे २ ३ २ ['मूर्द्धन्' इति व्याख्यास्यते । तत सप्तम्या लुक्]

मूर्द्धनि उत्तमाङ्गे १ ५४ ५ **मूर्द्धा**=शिर इव सूर्य-रूपेण वर्त्तमान (अग्नि =प्रसिद्ध पावक) १५ २० मूर्द्धावदुत्तम ब्राह्मणकुलम् १४ ६. उत्तम (सभाद्यध्यक्ष) १.४३ ६ सर्वेषा शिर इव (अग्नि =सूर्य) १३ १४ उत्कृष्ट (वैश्वानर =जगदीश्वर) १ ५६ २ सर्वोपरि विराजमान' (अग्नि =सर्वस्वामीश्वर, प्रकाशादिगुणवान् भौतिको वा) ३ १२ **मूर्द्धानम्**=शिरोवदुन्नतप्रदेशे सूर्यरूपेण वर्त्तमानम् (अग्नि =विद्युतम्) ३ ३ ८ मूर्द्धेव वर्त्तमान सूर्यम् १५ २३. आकर्षेण बद्धारम् (अग्नि =वह्निम्) ३ २ १४ सर्वोपरि विराजमानम् (अग्निम्) ६ ७.१ मस्तकम् १ १६४.२८ शिर १३ १५ **मूर्द्धनः** =उपरि वर्त्तमानस्य (विश्वस्य= सर्वस्य जगत) ६ १६ १३ **मूर्द्धना**=मस्तकेन २५.२. **मूर्द्धने**=मस्तकशुद्धये भा०—मूर्द्धशोधनाय २२.३२ [मूर्वति बध्नाति स मूर्द्धेति विग्रहे मूर्वी बन्धने (भ्वा०) धातो 'श्वन्नुक्षन्पूषन्०' उ० १ १५६ सूत्रेण कनिन्-प्रत्यये वकारस्य धकारो निपात्यते । मूर्द्धनि प्रधानाङ्गे नि० ६ ३१ मूर्धा मूर्त्तमस्मिन् धीयते नि० ७ २७ प्रजापतिर्वै मूर्द्धा श० ८ २ ३ १०. एष वै मूर्धा य एष (सूर्य.) तपति श० १३ ४ १ १३]

मूलम् वृद्धिहेतुकम् अ०—वृद्धिहेतुम् १ २५ [मव बन्धने (भ्वा०) धातो 'मूशक्यविभ्य क्ल' उ० ४.१०८ सूत्रेण क्ल । मूल मोचनाद्वा मोषणाद्वा मोहनाद्वा नि० ६ ३.]

मूषः आखव प्र०—अत्र जातिपक्षमाश्रित्यैकवचनम् १ १०५.८ [मुष स्तेये (क्र्या०) धातोरिगुपधलक्षण क । वर्णव्यत्ययेनोकारस्य दीर्घः । मूषो मूषिका''''''मूषोऽप्येन-स्मादेव नि० ४.६.]

मृक्तवाहसे शुद्धविज्ञानप्रापकाय (आप्तायाऽतिथये) ५ १८ २ [मृक्त वाहस्पदयो समास । मृक्त =मृजूष् शुद्धौ (अदा०) धातो क्त । वाहस्=वह प्रापणे (भ्वा०) धातोर्णिजन्ताद् असुन्]

मृक्षतम् मार्जयतम् ३ ४४ ७ शोधयतम् १ १५७ ४ **मृक्षः**=निश्चय ४ ३० १३ **मृक्षीष्ट**=शोधयतु १ १४७ ४ [मृजूष् शुद्धौ (अदा०) धातोर्लुट्, क्सो विकरणश्छान्दस । अटोऽभावश्च । अन्यत्र लिट् । मृक्ष सघाते (भ्वा०) धातोर्वा रूपाणि]

मृगम् परस्वाऽपहर्त्तारम् (मायिन जनम्) १ ८०.७ सिहम् २ ३३ ११ **मृगस्य**=मार्जयितु योग्यस्य (अर्णवस्य) १ १८२ ७ सद्योगामिन (मेघस्य) ५ ३२ ३. **मृगः**=यो मार्ष्ट्यन्विच्छति वधाय जीवानिति स (अ०—सिह) ईश्वरपक्षे तु यो मार्ष्टि व्यवस्थापनाय जीवानिति स ५ २० मृगेन्द्र सिह १८ ७१ यो मार्ष्टि कस्तूर्या स (कुरङ्ग) २६ ४८ हरिण १ ३८ ५ [मृजूष् शुद्धौ (अदा०) धातो 'पुसि सज्ञाया घ ०' इति घ । मृगो मार्ष्टेर्गतिकर्मण नि० १ २०. मार्ष्टि गतिकर्मा निघ० २.१४ मृगाणा मार्गण-कर्मणामादित्यरश्मीनाम् नि० १३ ७२ मृग अन्वेषणे (चुरा०)+क' प्रत्ययो वा । मृग =मृगमय नि० ६ १६]

मृगयम् मृगमाचक्षाणम् (शत्रुजनम्) ४.१६.१३

भवामि ५ ३६ **मुञ्च**=पृथक्कुरु २० १८. त्यज १६ ६ **मुञ्चत**=त्यजत ४ १२ ६ **मुञ्चतम्**=मुञ्चेतम् ६ ७४ ३ **मुञ्चति**=त्यजति प्रक्षिपति वा २ २३. **मुञ्चतु**=निवारयतु २० १६ पृथक्करोतु ६ १७. **मुञ्चते**=त्यजति ४ ५३ २ **मुञ्चन्ति**=उपरमन्ति २ २८ ४ **मुञ्चन्तु**=मोचयन्तु १२ ८६ **मुञ्चामि**=प्रक्षिपामि अ०—परित्यजामि ४.१३ [मुच्लृ मोचने (तुदा०) धातोर्लोट् । आगमशासनस्यानित्यत्वान्नुमोऽभाव । नकारलोपो वा छान्दस । अन्यत्र लेट्, लिड्, लट् च]

मुचा यौ दुःख विमुञ्चतस्तौ (सखाया=सुहृदौ) ६ ४० १ [मुच्लृ मोचने (तुदा०) धातोरिगुपधलक्षण क । ततो द्विवचनस्य आकारादेश]

मुञ्जनेजनम् मुञ्जैर्नेजन शुद्धीकृतम् (उदकम्) १ १६१ ८ [मुञ्ज-नेजनपदयो समास । मुञ्ज =मुच्लृ मोचने (तुदा०) धातोरिगुपधलक्षणे क-प्रत्यये धातो स्थाने मुञ्जादेशश्छान्दस । मुञ्जो विमुच्यत इपीकया नि० ६ ६ नेजनम्=णिजिर् शौचपोपणयो (जुहो०) धातोर्ल्युट्]

मुद मोदन्ते यासु ता (ओषधय) १८ ३८ सम्पूर्ण प्रसन्नताए स० वि० १६७, ६ ११३ ११ **मुदे**=हर्षाय ५ ४३ ५ मोदनाय १ १४५ ४ [मुद हर्षे (भ्वा०) धातो क्विप् । ओषधयो वै मुद ओषधिभिर्हीद सर्व मोदते श० ६ ४.१ ७]

मुनिरिव यथा मननशीलो विद्वाँस्तथा ७ ५६ ८ [मुनि-इवपदयो समास]

मुमुक्ष्व: मोक्तुमिच्छन्त (जना) प्र०—अत्र 'जसादिपु वा वचनम्' इति गुणाऽभाव १ १४० ४ [मुच्लृ मोचने (तुदा०) धातोरिच्छायामर्थे सन्नन्ताद् उ प्रत्यय । गुणाऽभावश्छान्दस]

मुमुग्धि त्यज मोचय वा प्र०—अत्र 'बहुल छन्दसि' इति शप श्लु १ २४ ६ **मुमुच:**=मोचये ३ ४१ ८ **मुमोक्तु**=मुञ्चतु मोचयतु वा १ २४ १३ मोचयति प्र०—अत्राऽन्यपक्षे लडर्थे लोट् 'बहुल छन्दसि' इति शप श्लु । अन्तर्गतो ण्यर्थश्च १ २४ १२ [मुच्लृ मोचने (तुदा०) धातोर्लोट् । 'बहुल छन्दसी' ति शप श्लु]

मुमुचान: पृथग्भूत (फलादिपदार्थ) २० २० [मुच्लृ मोचने (तुदा०) धातोर्लिट कानच्]

मुषायत् आत्मनो मुष स्तेयमिच्छत् (विष्णु=सेनाध्यक्ष) प्र०—अत्र 'घञर्थे कविधानम्०' इति क प्रत्यय । तत 'सुप आत्मन क्यच्' इति क्यच्प्रत्यय 'न छन्दस्यपुत्रस्य' अ० ७ ४ ३५ इतीत्वप्रतिषेध १ ६१ ७ **मुषाय:**=यो मुष इवाऽऽचरति (चोर-जन) ४ ३० ४. [मुषप्राति० आत्मन इच्छायामर्थे क्यजन्ताच्छतृ । अन्यत्र कर्त्तरि अच् । मुष =मुष स्तेये (क्र्या०) धातोर्घञर्थे क]

मुषायत् मुष्णाति ७.१८ १६ **मुषायति**=मुष खण्डक इवाचरति १ १३०.६ चोरयति ५.४४ ४. **मुषाय:**=चोरय ६ ३१ ३ [मुष स्तेये (क्र्या०) धातोर्घञर्थे कप्रत्यये मुष । तत आचारेऽर्थे क्यजन्ताल् लट्]

मुषीवाणम् स्तेयकर्मणा भित्तिं भित्त्वा दृष्टिमावृत्य परपदार्थापहर्त्तारम् (स्तेनम्) प्र०—मुषीवानिति स्तेयनामधेयम्, निघ० ३ २४, १ ४२ ३

मुषे चोराय ५ ३४ ७ [मुष स्तेये (क्र्या०) धातो. कर्त्तरि क्विप्]

मुष्कौ मूषकौ २३ २८ [मुष स्तेये (क्र्या०) धातो 'सृवृभूशुषिमुषिभ्य कक्' इति कक्]

मुष्टिम् मुष्ट्या धनग्राहक राज्यम् प्र०—राष्ट्र मुष्टि ० शत० १३ २ ६ ७, २३ २४ **मुष्टि:**=मुष्टिवद् दुष्टाना हन्ता (राजा) ६ ४७ ३० मुष्टिरिव (गर्जितसेनो वीरपुरुष) २६ ५६ [मुष स्तेये (क्र्या०) धातो क्तिच् । मुच्लृ मोचने (तुदा०) धातोर्वा क्तिच् । मुष्टिर्मोचनाद्वा मोषणाद्वा मोहनाद्वा नि० ६ १ राष्ट्र मुष्टि तै० ३ ९ ७ ५ श० १३ २.९ ७]

मुष्टिहत्यया हनन हत्या मुष्टिभिर्हत्या मुष्टिहत्या तया १ ८ २ [मुष्टि-हत्यापदयो समास । मुष्टीति व्याख्यातम् । हत्या=हन्ते 'हनस्त चे' ति क्यप् तकारश्चादेश]

मुष्टिहा यो मुष्टिना हन्ति स (वीरपुरुष) ५ ५८ ४ यो मुष्ट्या हन्ति स (इन्द्र =राजा) ६ २६ २ [मुष्टि इत्युपपदे हन हिंसागत्यो (अदा०) धातो कर्त्तरि क्विप्]

मुष्णताम् स्तेयकर्मकारिणाम् (प्रजापुरुषाणाम्) १६ २१ **मुष्णन्**=चोरयन् (इन्द्र =पुरुषार्थी सेनेश) २ २०.५ [मुष स्तेये (क्र्या०) धातो शतृ]

मुहुके मोहप्रापके महुर्मुहु करणीये सङ्ग्रामे ४ १६ १७ **मुहुकै:**=मुहुर्मुहु कुर्वद्भि (जनै) ४ १७ १२ [मुह वैचित्ये (दिवा०) धातोर् बाहु० औणा० (उ० ५ ५४) कुकन्]

मुहुर्गी: मुहुर्मुहु गिर प्राप्त (विद्वज्जन) १ १२८ ३ [मुहुस्-उपपदे गॄ निगरणे (तुदा०) धातो क्विप्]

मुहु: वार वारम् ४ २० ९ [मुह वैचित्ये (दिवा०)

११ ५५. [मृद क्षोदे (क्र्या०) धातो सम्पदादित्वात् क्विप्]

मृद्वीम् मृदुगुणस्वभावाम् (कन्याम्) ११ ५५. [मृदु-प्राति० स्त्रियाम् 'वोतो गुणवचनात्' इति ङीप्। मृदु=म्रद मर्दने (भ्वा०) धातो 'प्रथिम्रदि०' उ० १ २८ सूत्रेण कु। सम्प्रसारण च]

मृधः सङ्ग्रामान् ११८२४ मर्द्धन्ति उन्दन्ति परसुखं स्वमनासि येषु तान् सङ्ग्रामान् ७ ३७ हिंस्रान् (पुत्रान्) ७ ४३ १३ सङ्ग्रामेषु प्रवृत्तान् दुष्टान् ६ ५३ ४ मर्द्धन्त्यार्द्रीभवन्ति येषु तान् सङ्ग्रामान् प्र०—मृध इति सङ्ग्रामनाम निघ० २ १७, १८ ७० सङ्ग्रामस्थान् शत्रून् ११३१ ६ परपदार्थाऽभिकाङ्क्षिण शत्रून् ११ ७२ कुत्सितान् (शत्रून्=अरीन्) ५ ३७ हिंसकान् (शत्रून्) ३३ ६१ **मृधि**=युद्धे ११७४ ७ [मृध सग्रामनाम निघ० २ १७ मृधु उन्दने (भ्वा०) धातोरधिकरणे क्विप्। गृधु अभिकाक्षायाम् (दिवा०) धातोर्वा कर्त्तरि क्विप्। वर्णव्यत्ययेन गकारस्य मकार। पाप्मा वै मृध श० ६ ३ ३ ८ अग्ने त्व तरा मृध इत्यग्रे त्व तर सर्वान् पाप्मन इत्येतत् श० ६ ६ ३ ४]

मृधाति हिंस्यात् ६ २३ ६ **मृध्याः**=हिंस्या ३ ५४ २१ [मृधु उन्दने (भ्वा०) धातोर्लेट्। अन्यत्र लिङ्। धातूनामनेकार्थकत्वादत्र हिंसने]

मृध्रवाचम् हिंसितवाचम् (मेघम्) ५ ३२.८ मृध्रा हिंसिका वाग् यस्य तम् (पूर्णप्रज्ञ मनुष्यम्) ७ १८ १३ **मृध्रवाच**=हिंस्रवाचो जनान् ५.२९ १० मृध्रा हिंस्राऽनृता वाग् येषा ते (दुर्जना) ७ ६ ३ **मृध्राः**=प्रवृद्धा वाणी ११७४ २ [मृध्रा-वाच्पदयो समास। मृध्र-वाच=मृदुवाच नि० ६ ३१]

मृन्मयीम् मृद्विकाराम् (उखा=पाकस्थालीम्) ११ ५६ [मृदमिनि व्याख्यातम्। ततो विकारे 'नित्य वृद्धशरादिभ्य' इति मयट्। तत स्त्रिया ङीप्]

मृश विचारय ११२६ ७ [मृश आमर्शने (तुदा०) धातोर्लोट्]

मृषन्त सहन्ते ७ १८ २१ **मृष्ठाः**=सहे प्र०—अत्र व्यत्ययेनात्मनेपदम् ३ ३३ ८ [मृष तितिक्षायाम् (दिवा०) धातोर्लङ्। अडभावश्छान्दस। 'बहुल छन्दसी' ति शो लुक्]

मृषा मिथ्या १.१७९ ३. [स्वरादिपाठाद् अव्ययम्]

मृष्ट मार्जय ११४० २ [मृजूष् शुद्धौ (अदा०) धातोर्लोटि मध्यमबहुवचनम्]

मृष्ट शत्रुबल सह (इन्द्र=सेनेश) ११८४ ४ **मृष्टः**=यो मर्षति मर्षयति वा सः (भगवान् विद्वान् वा) ५ ३२ शुद्धस्वरूप सब पापो का मार्जक शोधक (ईश्वर) आर्याभि० २ १७, ५ ३२ [मृष तितिक्षायाम् (दिवा०) धातो' मृजूष् शुद्धौ (अदा०) धातोर्वा औणा० बहुलवचनात् क्त]

मृष्यते सगय्यते ११४५ २ सहते ६ ५४ ४. **मृष्यन्ते**=सहन्ते ६ ६७ ७ **मृष्ये**=विचारये ७ २२ ५ [मृष तितिक्षायाम् (दिवा०) धातोर्लट्]

मेखलया ब्रह्मचर्यचिह्नधारणेन ऋ० भू० २३५, अथर्व० ११ ३ ५ ४ [मीयते प्रक्षिप्यते कायमध्यभाग इति विग्रहे डुमिञ् प्रक्षेपणे (स्वा०) धातोर्बाहु० औणा० खल। तत स्त्रिया टाप्। ऊर्ग् वै मेखला क० ३ ६ १ मेखला पुसो भवति, योक्त्र स्त्रिया काठ० २३.४ वज्रो वै मेखला काठ० २३ ४ सा (मेखला) वै शाणी भवति श० ३.२ १ ११.]

मेघाय यो मेहति सिञ्चति तस्मै २२ २६ [मिह सेचने (भ्वा०) धातो कर्त्तरि अच्। न्यङ्क्वादित्वात् कुत्वम्। मेघ कस्मान् मेहतीति सत नि० २ २१ अथा-प्यन्तव्यापत्तिर्भवति ओघो मेघ नि० २१ मेघ मेघनाम निघ० १ १० मेघो हविर्धान यज्ञस्य तै० आ० २ १४.१]

मेडिम् सङ्गमम् ४ ७ ११ सुशिक्षिता वाचम् ३ २६ ६ मेळि वाङ्नाम निघ० १ ११]

मेढ्रम् मेहत्यनेन तदुपस्थेन्द्रियम् ६ १४ [मिह सेचने (भ्वा०) धातो. करणे 'दाम्नीशस०' अ० ३ २ १८२ सूत्रेण ष्ट्रन्]

मेतेव प्रमातेव (चन्द्र इव) ४ ६ २ [मेता-इवपदयो समास। मेता=माङ् माने (जु०) धातो कर्त्तरि तृच्। आकारस्यैकारश्छान्दस]

मेथामसि हिंस्म १ ४२ १० (मेथृ मेधाहिंसनयो-रित्येके (भ्वा०) धातोर्लट्। 'इदन्तो मसि' रितीदन्तता मस]

मेथेते हिंस्त ११११ ३ (मेथृ मेधाहिसनयोरित्येके (भ्वा०) धातोर्लट्]

मेदयथ स्नेहयथ स्निग्धा मधुरा कुरुत ६ २८ ६ ञिमिदा स्नेहने (भ्वा०) धातोर्णिजन्ताल्लोट्]

मेदसः स्निग्धा (कुल्या) ३५ २० स्निग्धस्य (शरीरस्य) २८ ११ स्नेहयुक्तस्य पदार्थस्य २१ ४१ स्नेहस्य २१ ४१ **मेदोभ्यः**=स्निग्धेभ्यो धातुविशेषेभ्य ३९ १० सर्वशरीरावयवाऽऽर्द्रीकरेभ्य (अवयवेभ्य) ३९ १०

[मृगोपपदे या प्रापणे (अदा०) धातो क]

मृगयसः मृगादय २ ३८ ७

मृगयुभ्यः य आत्मनो मृगान् कामयन्ते तेभ्य (जनेभ्य) १६ २७ **मृगयुम्**=य आत्मनो मृगान् हन्तुमिच्छति त व्याधम् ३० ७ [मृगपदाद् आत्मन इच्छाया क्यजन्ताद् उ । अथवा मृगोपपदे या प्रापणे (अदा०) धातो 'मृगय्वादयश्च' उ० १ ३७ सूत्रेण कु]

मृगासः श्वापदादय १ १९१ ४ [मृगप्राति० जसोऽसुक् । मृगमिति व्याख्यातम्]

मृजन्ति शुन्धन्ति ३ ४६ ५ शोधयन्ति ५ ४३ १४ **मृजे**=शुन्धामि ५ ५२.१७ [मृजूष् शुद्धौ (अदा०) धातोर्लट् । 'मृजेरजादौ सक्रमे विभाषा वृद्धिरि' ति वा० सूत्रेण वृद्धिर्न । 'मृजे' प्रयोगे व्यत्ययेनात्मनेपदम्]

मृज्यते शुद्ध्यते ५ १ ८ [मृजूष् शुद्धौ (अदा०) धातो कर्मणि लट्]

मृड मृडय प्र०—अत्राऽन्तर्गतो ण्यर्थ. १ ११४ १० आनन्दय १ ९४ १२ सुखय भा०—रञ्जय १६ ४९ सुखय सुखयति वा १ १२ ६ **मृडन्तु**=सुखयन्तु ७ ५६ १७ **मृडयन्तु**=सुखयन्तु १५ १६ आनन्दयन्तु १५ १५ **मृडयाति**=सुखयतु १६ ७ सुखयेत २ ४१ ११ **मृडातः**= सुखयत भा०—सुखप्रदौ भवत ३३ ९१ **मृडाति**= सुखयति ४ ४३ २ [मृड सुखने (तुदा०) धातोर्लोट् । अन्यत्र णिजन्ताल्लोट् । अन्यत्र लेट् चापि]

मृडयत्तमः अतिशयेन सुखयिता (ईश्वरोऽग्निर्वा) १ ९४ १४ मृड सुखने (तुदा०)+णिच्+शतृ+तमप् । गुणाऽभावश्छान्दस]

मृडयत्तमा अतिशयेन सुखकर्त्री (सुमति) १ ११४ ९. [मृड सुखने (तुदा०) धातोर्णिजन्ताच्छतरि अतिशायने तमप् । ततष्टाप्]

मृडयद्भ्याम् सुखयद्भ्याम् (मातापितृभ्याम्) १ १३९ १ **मृडयन्तः**=आनन्दयन्त (विद्वांसो जना) १ १०७ १ सुखयन्त (पूर्णविद्याराजपुरुषा) ३३ ९८ [मृड सुखने (तुदा०) धातोर्णिजन्ताच् छतृ गुणाऽभावश्छान्दस । मृड शब्दाद्वा क्यजन्ताच्छतृ]

मृडयन्ती सुखयन्ती (देवी=विदुषी स्त्री) ५ ४१ १८. [मृड सुखने (तुदा०) धातोर्णिजन्ताच् छतरि स्त्रिया ङीप् । गुणाऽभावश्छान्दस । मृड शब्दाद्वा क्यजन्ताच् शतरि ङीप्]

मृडयाकुः सुखयिता (अध्यापको वैद्य) २ ३३ ७ [मृड सुखने (तुदा०) धातोर्णिजन्ताद् बाहु० औणा० आकु । गुणाऽभावश्च]

मृडयत्तमः अत्यन्त सुखकारकौ (अश्विना=अध्यापकोपदेशकौ) ५ ७३ ९ [मृड सुखने (तुदा०) धातो कप्रत्यये मृड । ततो मतुवन्तादतिशायने तमप्]

मृडीकम् सुखप्रदम् (ज्ञानम्) २१ ४ सुखकरम् (श्रेष्ठमार्गम्) ४ १ ३. **मृडीकः**=सुखकर्त्ता (इन्द्र=राजा) ६ ३३ ५ **मृडीकाय**=उत्तमसुखाय प्र०—अत्र 'मृड कीकच् कङ्कणौ' उ० ४ २५ अनेन कीकच्प्रत्यय १ २५ ३ **मृडीके**=सुखकारके व्यवहारे ६ ४८ १२ [मृड सुखने (तुदा०) धातो 'मृड कीकच्०' उ० ४ २४ सूत्रेण कीकच्]

मृण हिंसय प्र०—अत्राऽन्तर्गतो ण्यर्थ १ २९ ५ **मृणीहि**=हिन्धि ४ ४ ५ [मृण हिंसायाम् (तुदा०) धातोर्लोट् । अन्यत्र विकरणव्यत्ययेन श्ना]

मृतम् मृतमिव सुप्तम् (जीवम्) १ ११३ ८ **मृतस्य**= मरणस्वभावस्य (जगत) १ १६४ ३० [मृङ् प्राणत्यागे (तुदा०) धातो 'तनिमृङ्भ्या किच्च' उ० ३ ८८ सूत्रेण तन्]

मृत्तिका प्रशसिता मृत् १८ १३ [मृद्प्राति० 'मृदस्तिकन्' अ० ५ ४ ३९ सूत्रेण तिकन् । ततष्टाप्]

मृत्यवे प्राणत्यागकारिणे समयाय ३९ १३ मृत्युकरणाय ३०.७ मारणाय ३० १८ **मृत्युम्**=मृत्यु को आर्याभि० २ ८, ३१ १८ दुखप्रद मरणम् भा०—मरणाद्यगमाधदुखसागरम् ३१ १८ जन्ममृत्युप्रभव-दुखम् ऋ० भू० २३८, अथर्व० ११ ३ १९ शरीरवियोगजन्य दुखम् ४० ११ मरणदुखमयम् ४० १४ **मृत्युः**=भा०— आयुक्षय अ०—ईश्वराज्ञा-भङ्ग २५ १३ महाक्लेशदायक (मरण) आर्याभि० २ ४८, २५ १३ **मृत्योः**=मृत्यु प्र०—अत्र व्यत्यय ३५ ७ **मृत्योः**=प्राण-शरीराऽऽत्मवियोगात् ३ ६० मरणात् १०.१५ अल्पमृत्युना प्राणत्यागात् २० २ [मृङ् प्राणत्यागे (तुदा०) धातो 'भुजिमृङ्भ्या युक्त्युकौ' उ० ३ २१ सूत्रेण त्युक् । मृत्यु=मृत्युर्मारयतीति सत । मृत च्यावयतीति वा शतवलाक्षो मौद्गल्य नि० ११ ६ एष वै मृत्युर्यत् सवत्सर श० १० ४ ३ १ मृत्युरग्नि. काठ० २१ ७ मृत्युर्वै यम मै० २ ५ ६ मृत्योर्वा एतद्रूप यद् व्याघ्र मै० ४ ४४ एष एव मृत्यु । य एष (सूर्य) तपति श० २ ३ ३ ७ अपानान्मृत्यु. ऐ० आ० २ ४.१]

मृदम् मृत्तिकाम् २५ १ कोमलाऽङ्गीम् (कन्याम्)

यस्य तम् (गिरिपजनम्) १ ३६ १७ **मेध्यातिथिः**= मेध्यैरतिथिभिर्युक्तोऽध्यापक १ ३६ १० पवित्रै पूजकै. शिष्यवर्गैर्युक्तो विद्वान् १ ३६ ११ [मेध्य-अतिथिपदयो समास । मेध्य.=मेधृ सगमे (भ्वा०) धातोर्ण्यत् । अतिथि =अत सातत्यगमने (भ्वा०) धातो 'ऋतन्यञ्जि०' उ० ४ २ सूत्रेण इथिन्]

मेध्यासः पवित्रा सन्त (देवा =विद्वासो जना) १३ ५१ [मेध्य-इति व्याख्यातम् । ततो जसोऽसुक्]

मेनका यया मन्यते सा (अप्सरा) १५ १६. [मेना-प्राति० स्वार्थे कन् । मेनका (यजु० १५ १६) (वायो) मेनका च सहजन्या चाप्सरसाविति दिक् चोपदिशा चेति ह स्माह माहित्थिरिमे तु ते द्यावापृथिवी श० ८ ६ १ १७]

मेना वाणी १ ५१ १३ **मेनाम्**=विद्यासुशिक्षान्या लब्धा वाचम् १ १२१ २ **मेने**=वत्सने स्त्रियाविव (रात्रिदिने) १ ९५ ६ प्रक्षेप्ये (भा०—न्यायविदे) प्र०—अत्र बाहुलकाद् डुमिञ्धातोर्न प्रत्यय आत्वनिषेधश्च १ ६२.७ [मेना वाङ्नाम निघ० १ ११ मेना उत्तराणि पदानि निघ० ३ २९ मेना ग्ना इति स्त्रीणाम् ।'' '''मेना मानयन्त्येना नि० ३ २१ मान पूजायाम् (चुरा०) धातो 'गुरोश्च हल' इत्यड् । पुनष्टाप् स्त्रियाम् । धातोरुपधाया एकारादेशश्छान्दस]

मेने इव यथा मेने पक्षिण्यौ २ ३९ २. [मेने इव-पदयो समास । मेने=मेनाप्राति० प्रथमा-द्विवचनम्]

मेम्यत् भृश हिंसन् (विद्वान् जन) १ १६२ २ प्राप्नुवन् (अज =जन्मादिरहितो जीव) २५ १५ [मीञ् हिंसायाम् (क्र्या०) धातोर्यङन्ताच्छतृ । व्यत्ययेन परस्मैपदम् । मी गतौ (चुरा०) धातोर्वा यङन्ताच्छतृ]

मेषम् सेचनकर्त्तारम् (जनम्) २१ ४०. वृष्टिद्वारा सेक्तारम् (इन्द्र=राजानम्) १ ५१ १ अविम् २१ ५९ सुख-जलाभ्या सर्वान् सेक्तारम् (इन्द्र=सेनाध्यक्षम्) १ ५२.१ **मेषस्य**=उपदिष्टस्य (अवे) २१.४४. **मेष**.=पशु-विशेष २४ ३८ यो मिषति स्पर्द्धते स (पशु) १९ ९०. अविजातिविशेष (पशु) २४ ३० उपदेष्टा (जन) २१ ३१ **मेषान्**=स्पर्द्धकान् (भा०—लम्पटान् जनान्) १ ११६ १६ **मेषाय**=मेषजातये १ ४३ ६ [मिष स्पर्द्धायाम् (तुदा०) धातो कर्त्तर्यच् । मिषु सेचने (भ्वा०) धातोर्वाच् प्रत्यय. । मेष इति भूतोपमा,''''''मेषो मेषते. नि० ३ १६ एष वै प्रत्यक्ष वरुणस्य पशुर्यन्मेष श० २ ५ २ १६ मारस्वत मेषम् (आलभते) तै० १ ८ ५ ६]

मेषी सेचनकर्त्री मेषस्य स्त्री २४ १. [मिषु सेचने (भ्वा०) धातो पचाद्यच् । ततो मेषस्य स्त्री मेषीति स्त्रिया जातिवाचकत्वात् ङीष्]

मेहना वर्षणेन ५ ३८.३ [मिह् सेचने (भ्वा०) धातोर्ल्युट् । तत 'सुपा सुलुक्०' इति तृतीयास्थान आकारादेश]

मेहना वृष्टि ५ ३९ १ धनादिदानेन (राजना) प्र०—अत्राऽऽकारादेश ३३.५० [मेहना पदनाम निघ० ४ १. मेहना मंहनीय धनम् । यन्म इह नास्तीति वा त्रीणि मध्यमानि पदानि नि० ४ ४. मिह सेचने (भ्वा०) धातो 'कृत्यल्युटो बहुलमि' ति ल्युट् । विभक्तेराकारादेश]

मेहनावत: प्रशस्तानि मेहनानि वर्षणानि यस्मात्तस्य (बृहस्पते =सूर्यस्य) २ २४ १० **मेहनावान्**=मेहनानि सेचनानि बहूनि विद्यन्ते यस्य स (सुन्दो भूपति.) ३.४९ ३. [मेहनप्राति० प्रशसाया मतुप् । मन्त्रे सोमाश्वेन्द्रिय.... दीर्घ । मेहनम्=मिह सेचने (भ्वा०) धातोर्ल्युट्]

मैघी: मेघानामिमा. भा०—मेघस्था (विद्युत) २३ ३५ [मेघप्राति० 'तस्येदमि' त्यर्थेऽण् । तत स्त्रिया ङीप्]

मैत्र: मित्रस्यायम् सम्बन्धी (प्रजापति =जीव) ३९.५. **मैत्रा**:=प्राणदेवताका (पक्षिविशेषा) २४ ३३ [मित्रप्राति० 'तस्येदम्' इत्यर्थेऽण् । 'सास्य देवता' इत्यर्थे वा अण्]

मैत्रावरुण. प्राणोदानयोरय सहचारी (वायु) १८ १९ मित्रावरुणयो प्राणोदानयोरय वेत्ता (वनिष्ठ = पूर्णविद्वान्) ७ ३३ ११ [मित्रावरुणप्राति० 'तस्येदम्' इत्यर्थेऽण् । मित्रावरुण =मित्र-वरुणपदयो समासे 'देवताद्वन्द्वे चे' ति पूर्वपदस्यानङ् । (ऋत्विग् विशेष) प्रणेता वा एष होत्रकाणा यन्मैत्रावरुण ऐ० ६.६ यज्ञो वै मैत्रा-वरुण कौ० १३ २ मनो वै यज्ञस्य मैत्रावरुण. ऐ० २ ५ चक्षुश्च मनश्च मैत्रावरुण ऐ० २ २६ चक्षुर्मैत्रावरुण कौ० १३ ५ गायत्री मैत्रावरुण ता० ५ १ १५ वामदेव्य मैत्रावरुणसामभवति श० १३ ३ ३ ४]

मैत्रावरुण्य: प्राणोदानदेवताका (चन्द्रगुणयुक्ता पशव) २४ २ [मित्रावरुणप्राति० 'सास्य देवता' इत्यर्थे छान्दसो ण्य]

मैत्र्य: मित्रस्य प्रिये वर्त्तमाना (वशा =वन्ध्या गाव) २४ ८ [मित्रप्राति० भवार्थेऽणन्तात् स्त्रिया ङीप्]

मैत्रावरुण यो मैत्र कामदेवमुपैति वारयति त जितेन्द्रि-

[ञिमिदा स्नेहने (दिवा०) धातोरौणा० असुन्। मेदो मेद्यते नि० ४ ३ मेदो वै मेध श० ३ ८ ४ ६]

मेदस्तः मेदस स्निग्धान् (खाद्यपदार्थान्) २ १ ६० मेदस स्निग्धान् (पदार्थात्) २८ २३ [मेदस् इति व्याख्यातम्। तत 'आद्यादिभ्य उपसख्यानम्' इति तसि सार्वविभक्तिक]

मेद्यन्तु आत्मनो मेद स्नेहमिच्छन्तु २ ३७ ३. [ञिमिदा स्नेहने (दिवा०) धातोर्लोट्]

मेधपतिम् यो मेधाना पवित्राणा पुरुषाणा वा पालयिता तम् (रुद्रम्=परमेश्वरम्) प्र०—मेध इति यज्ञनामसु पठितम् निघ० ३ १७, १ ४३ ४ [मेध-पतिपदयो समास। यजमानो मेधपति ऐ० २ ६ देवतैव मेधपतिरिति कौ० १०.४. अथो खल्वाहुर्यस्यै वाव कस्यै च देवतायै पालयति सैव मेधपतिरिति ऐ० २ ६]

मेधम् ज्ञानक्रियामय शुद्ध यज्ञम् सर्वैर्विद्वद्भि शुभैर्गुणै कर्मभिर्वा सह सङ्गमम् १ ३ ९ पवित्रम् (शृतपाक=सुसस्कृत पाकम्) २५ ३३ सङ्गतम् (अन्नम्) १ १६२ १० पवित्रकारकम् (पशु=चतुष्पाद गवादिकम्) १३ ४७ **मेधाय**=सुखसङ्गमाय १३ ४७ बुद्धिप्रापणाय दुष्टहिंसनाय वा २२ १९ अध्ययनाऽध्यापनसङ्ग्रामादियज्ञेषु १ ७७ ३ [मेधृ मगमे (भ्वा०) धातोर्घञ्। मेध यज्ञनाम निघ० ३ १७ धननाम निघ० २ १० मेधायेत्यन्नायेत्येतत् श० ७ ५ २ ३२ सर्वेषा वा ऽएष पशूना मेधो यद् व्रीहियवौ श० ३ ८ ३ १ मेदो वै मेध श० ३ ८ ४ ६ पशुर्वै मेध ऐ० २ ६ मेधो वा एष पशूना यत् पुरोडाश कौ० १० ५ मेधो वा आज्यम् तै०३ ९ १२ १]

मेधया धारणावत्या बुद्ध्या ऋ० भू० १४९, ३२ १४. **मेधा**=पवित्रकारिका प्रज्ञा समीक्षा—केचिद् भ्रान्ता मेधा इत्यत्र मेध्या इति पदमाश्रित्याद्युदात्तेन मेध्यपदार्थायैतत्पदमिच्छन्ति तच्चाऽसमञ्जसमेव कुत ? मेधा इत्यन्तोदात्तस्य दर्शनात् भट्टमोक्षमूलरोऽपि 'मेधा' इति सविसर्ग पद मत्वा बुद्धिपदार्थायैनत् पद विवृणोति तच्चाऽप्यसमञ्जसमेव। कुत ? मेधा इति निर्विसर्जनीयस्य पदस्य जागरूकत्वात् १ ८८ ३ **मेधाम्**=प्रज्ञा धन वा ३२.१४ सङ्गता प्रज्ञाम् ३२ १३ धारणावती बुद्धिम् १ १८ ६ भा०—शुद्ध विज्ञान धर्मज धन वा ३२ १४ शुद्धा धियम् ३२ १५. सर्वविद्यासम्पन्न बुद्धि को आर्याभि० २ ५४, ३२ १४ यथार्थधारणा वाली बुद्धि को आर्याभि० २ ५३, ३२ १४ **मेधायै**=प्रज्ञोन्नतये ४ ७ [मेधा धननाम निघ० २ १० मेधा मतौ धीयते नि० ३ १९ मेधृ सगमे (भ्वा०) धातो मेधा आशुग्रहणे (कण्ड्वा०) धातोर्वा 'षिद्भिदादिभ्योऽङ्' इति स्त्रियाम् अङ्]

मेधयुम् मेध हिंसा कामयमानम् (शूरवीरम्) ४ ३८ ३ [मेधपदात् 'छन्दसि परेच्छायामिति वक्तव्यम्' अ० ३ १ ८ वा० सूत्रेण क्यजन्ताद् नाच्छील्य उ। मेध = मेधृ मेधाहिंसनयो (भ्वा०) धातोर्घञ्]

मेधसातये मेधाना पवित्राणा सविभागाय १ १२९ १ [मेध-सातिपदयो समास। मेध इति व्याख्यातम्। साति = षण सभक्तौ (भ्वा०) धातो स्त्रिया क्तिन्। 'जनसनखनाम्०' इत्याकारान्तादेश]

मेधसाता शुद्धसङ्ग्रामविभक्ते ४ ३७ ६ मेधाना सङ्गमाना सातिर्दान येषु (समियेषु=सङ्ग्रामेषु) प्र०—अत्र सप्तमी-बहुवचनस्य 'सुपा सुलुक्०' अ० ७ १ ३९ इति डादेश ९ १७ [मेधसातिरिति व्याख्यातम्। तत सप्तम्या स्थाने डादेश]

मेधाविनम् प्रशस्ता मेधा विद्यते यस्य तम् (मनुष्यम्) ३२.१४ मेधया भाषयान्वितम् प० वि०। [मेधाप्राति० प्रशसायामर्थे 'अस्मायामेधास्रजो विनि' रिति विनि। मेधावी कस्मात् मेधया तद्वान् भवति नि० ३ १९.]

मेधिर मेधाविन् (अग्ने=सत्पुरुष) ३ २१ ४ **मेधिरः**=सङ्गमक (विद्वज्जन) ३ १ २ मेधावी (विद्वान्) प्र०—अत्र 'मेधारथाभ्यामिरन्निरचौ' अ० ५ २ १०९ इति वार्त्तिकेन मत्वर्थीय इरन्प्रत्यय १ १०५ १४ सङ्गमयिता (विद्वज्जन) १ १४२ ११ सङ्गन्ता (इन्द्र=राजा) ६ ४२ ३ **मेधिराय**=धीमते (इन्द्राय=विद्वज्जनाय) १ ६१ ४ **मेधिराः**=ये मेधन्ते शास्त्राणि ज्ञात्वा दुष्टान् हिंसन्ति ते (मेधाविनो मनुष्या) प्र०—अत्र मिधृ मेधृ मेधाहिंसनयो इत्यस्माद् बाहुलकादौणादिक इरन्प्रत्यय १ ११ ७ [मेधाप्राति० मत्वर्थे 'मेधारथाभ्यामिरन्निरचौ वक्तव्यौ' अ० ५ २ १०९ वा०सूत्रेण इरन्। अथवा मेधृ मेधाहिंसनयो (भ्वा०) धातोर्बाहु० औणा० इरन्]

मेध्यः सङ्गमनीयः (सप्ति=शिल्पी विद्वज्जन) २९ ३ **मेध्याय**=पवित्राय (विदुषे जनाय) ५ १ १२ मेधेषु भवाय (पुरुषाय) १६ ३८ सर्वशुभलक्षणसङ्गताय पवित्राय भा०—सुशीलाय (कवये=मेधाविविद्यार्थिने) १५ २५ [मेधृ सगमे (भ्वा०) धातोर्ण्यत्। अथवा मेधप्राति० भवार्थे यत्। मेध्या वा आप श० १ १ १ १]

मेध्यातिथिम् मेध्या सङ्गमनीया पवित्रा अतिथयो

यजासि=यजे ३ २६ ८ याजये ११ ३५ यजेत् ६ ४ १ **यजे**=सङ्गच्छे १७ ७५ सङ्गच्छेय २ ६ ३ **यजेत**=सङ्गच्छेत ७ ६० ६ [यज देवपूजादिषु (भ्वा०) धातोर्लेट्। 'सिब् बहुल लेटी' ति सिप्। अन्यत्र लङ्, लुङ्, लट्, लोट्, लिङ् च। यजि यज नि० ६ १३]

यक्षदृशः ये यक्षान् पूजनीयान् पश्यन्ति ते (मर्त्त = बलिष्ठा राजजना) ७ ५६ १६ [यक्षोपपदे दृशिर् प्रेक्षणे (भ्वा०) धातो क्विन्]

यक्षभृत् यो यक्षान्पूज्यान् विदुषो बिभर्त्ति स. (विद्वान् जन) १ १९० ४ [यक्षोपपदे डुभृञ् धारणपोषणयोः (जु०) धातो. क्विप्]

यक्षम् दानम् ५.७० ४. पूजनीय सङ्गत वा (मन) प्र०—अत्रौणादिक. सन् प्रत्यय ३४ २. सङ्गन्तव्यम् (सद = वस्तु) ४ ३ १३ [यज देवपूजासंगतिकरणदानेषु (भ्वा०) धातोर्बाहु० औणा० सन्। यक्ष पूजायाम् (चु०) धातोर्वा घञ्]

यक्षुः सङ्गन्ता (सज्जन) ७ १८.६. [यज देवपूजासंगतिकरणदानेषु (भ्वा०) धातोर्बाहु० औणा० सन्-प्रत्ययान्तात् । यक्ष पूजायाम् (चुरा०) धातोर्वा बाहु० औणा० उ]

यक्ष्म राजरोग १२ ८७ **यक्ष्मस्य**=क्षयस्य, राजरोगस्य भा०—यक्ष्मादिरोगस्य १२ ८५ **यक्ष्माणाम्**=महारोगाणाम् १२ ९७ **यक्ष्मात्**=क्षयादिरोगात् १२.९८. [यक्ष पूजायाम् (चुरा०) धातो 'अर्तिस्तुसु०' उ० १ १४०. सूत्रेण मन्]

यक्ष्यमाणम् यज्ञ करिष्यमाणम् (पुत्रम्) १ १२५.४ **यक्ष्यमाणान्**=यज्ञ निर्वर्त्स्यत. (मानुषान्) १ ११३ ९. [यज देवपूजासंगतिकरणदानेषु (भ्वा०) धातो 'लृट सद्वा' इति शानच्]

यच्छ यच्छति फलादिभिर्ददाति प्र०—अत्र व्यत्ययो लडर्थे लोट् १.२२ १५. देहि ३५ २१ निगृहाण ७ ४ उपगृह्णीहि ६ २५ गृहाण १३ २४ प्रदेहि १.५८ ८. निगृह्णीहि ७ १६.८ निधेहि ६.२१. उपगृहाण ७ १६ ८ ददातु ३६ १३. **यच्छत**=दत्त ७.५६ १ ददत २.२७ ६ गृह्णीत ४ ५१ १० **यच्छतम्**=दद्यातम् ३४ २८. दत्त. प्र०—अत्र व्यत्ययो लडर्थे लोट् च १ २१.६. विस्तारयत. प्र०—अत्र पुरुषव्यत्ययो लडर्थे लोट् च १.१७ ८. यच्छतो यमनं कुरुत १.९२.१६. **यच्छताम्**=सत्यापयतम् २ ४१ २०. **यच्छति**=ददाति ५.८० २. **यच्छतु**=गृह्णातु ६ २४ ददातु भा०—दद्यात् २६ १०. अनुगृह्णातु ४ ५७ ७ निगृह्णातु ४.३२ १५ **यच्छध्वम्**=उद्यमिन कुरुत ७ ४३ २ **यच्छन्ताम्**=निगृह्णन्तु १.६ **यच्छन्ति**=प्रददति ७ ९०.८ निगृह्णन्ति ६ ७५ ६ **यच्छन्तु**=ददतु ७.३६ ७. **यच्छसे**=ददामि १ ८४ ६ **यच्छस्व**=विस्तारय विस्तारयति वा प्र०—अत्र पक्षे लडर्थे लोट् 'आङो यम हन.' अ० १ ३ २८ अनेनात्मनेपदम् आङ्पूर्वको यमधातुर्विस्तारार्थे ३ ३८ सर्वतो देहि आयच्छति विस्तारयति वा प्र०—अत्र पक्षे व्यत्यय मिद्धिश्च पूर्ववत् ३.३६ **यच्छामि**=गृह्णामि ३८ ६ [यमु उपरमे (भ्वा०) धातोर्लोट्। 'इषुगमि यमा छ' इति शिति छादेश । अन्यत्र लङ् अपि। 'यच्छध्वम्' इत्यादौ 'आङो यमहन' सूत्रेण 'वा छन्दसी' ति नियमेन निरुपपदपि आत्मनेपदम्। यच्छताम्=नियच्छताम् नि० ६.३८ यच्छतु=यच्छन्तु नि० १२ ४५]

यच्छतात् देहि १ ४८ १५ [यमु उपरमे (भ्वा०) धातोर्लोट्। तुह्योस्तातङ्०' इति तातङ्]

यच्छमानाः निग्रहीतार (मर्त्त =बलिष्ठा योद्धृजना) ७.५६ १३ [यमु उपरमे (भ्वा०) धातोस्ताच्छील्ये चानश्]

यजतम् सङ्गन्तव्यम् (निष्क=सुवर्णाभूषणम्) २.३३ १० सङ्गतम् (गर्त =बलम्) ५ ४६.५ पूजनीयम् (गृहपतिम्) ५ ८.१. **यजतस्य**=यजन्ति सङ्गच्छन्ते येन तस्य (क्षत्रस्य=राष्ट्रस्य) ५ ४४ १० सङ्गन्तु योग्यस्य (अ०—व्यवहारस्य) २६ २७ **यजतः**=सङ्गन्ता पूजनीय (विद्वान् जन) ५ ४१.६ सत्कर्त्ता (जन) ५ ४४.१२ यष्ट सङ्गन्तुमर्ह (अग्नि =ईश्वर) १ ५६.७ सङ्गतिप्रकाशादयो दाता (सविता=सूर्यो वायुर्वा) १ ३५ ४ **यजताय**=सङ्गमाय २ १६ ४. सत्सङ्गन्त्रे (इन्द्राय=विद्वत्सभासेनेशाय) २.२११ **यजताः**=ये सर्वा विद्या सङ्गच्छन्ते ते (विद्वासो जना) ६ ५० २ **यजतेभ्यः**=विद्वत्सेवकेभ्य २.५ ८. [यज देवपूजासगतिकरणदानेषु (भ्वा०) धातो 'भृमृदृशियजि०' उ० ३ ११० सूत्रेणातच्। यजते=यजिये नि० ८ ११. यजतस्य=यजियस्य नि० ८ ७]

यजतः सङ्गतान् (जनान्) २ १४ १० **यजते**=यो यज्ञं करोति तस्मै (जनाय) १ ३१ १५ **यजन्**=सङ्गच्छमान (त्वष्टा=विद्युत) २० ४४ **यजन्तौ**=सत्कुर्वन्तौ (स्त्रीपुरुषौ) २ ३ ७ [यज देवपूजासगतिकरणदानेषु (भ्वा०) धातो शतृ]

यजता सङ्गन्तव्या (सरस्वती=वाक्) ५ ४३ ११

यम् (जनम्) ३० १६ [मैनोपपदे अल भूषणपर्याप्तिवारणेषु (भ्वा०) धातोरण्]

मो निषेधार्थे ३ ४६ निवारणे ४ २३

मोकी रात्रि ३ ३८ ३ [मोकी रात्रिनाम निघ० १ ७]

मोदते हर्षति २ ५ ६ **मोदध्वम्**=सुखयत ११ ४७ [मुद हर्षे (भ्वा०) धातोर्लट्। अन्यत्र लोट्]

मोदमानः हर्षोत्साहयुक्त (पुरुष) ३ ४१ आनन्दित (पति) सं० वि० १४६, ३ ४१ **मोदमानौ**=अत्यन्त प्रसन्न हुए (स्त्री पुरुष) स० वि० १४०, अथर्व० १४ २ ४३ **मोदमानाः**=आनन्दिता सन्त (देवा =विद्वासो जना) २० ४६ [मुद हर्षे (भ्वा०) धातोस्ताच्छील्ये चानश्। अथवा लट शानच्]

मोदमानाः आनन्दयन्त्य (वध्व =स्त्रिय) ५ ४७ ६ [मुद हर्षे (भ्वा०)+शानच्+टाप्]

मोदः हर्ष १८ ५ **मोदाय**=आनन्दाय २२ ६ **मोदाः**=हर्षा उत्साहा २० ६ सम्पूर्ण हर्ष स० वि० १६७, ६ ११३ ११ [मुद हर्षे (भ्वा०) धातोर्घञ्]

मोषथ चोरयत ५ ५४ ६ [मुष स्तेये (क्र्या०) धातोर्लट्। विकरणव्यत्ययेन शप्]

मोषीः नाशय विनाशयेद्वा प्र०—अत्र लोडर्थे लिडर्थे च लुङभावोऽन्तर्गतो ण्यर्थश्च १ २४ ११ स्तेनये १ १०४ ८ मुष्णीयात् खण्डयेत् प्र०—अत्र लिडर्थे लुङ् ४ २३ [मुष स्तेये (क्र्या०) धातोर्लुङ्। अडभावश्छान्दस]

मोहः मूढाऽवस्था ४० ७ [मुह वैचित्ये (दिवा०) धातोर्घञ्]

मौक् मोचय प्र०=अत्र 'मुच्लृ मोक्षणे' इत्यस्माल्लोडर्थे लुङभावे च्ले सिजादेशे 'बहुल छन्दसि' इतीडभाव 'वदव्रज०' इति वृद्धि 'सयोगान्तस्य लोप' इति सिज्लुक् १ २५ त्यज, त्यजतु १ २६

मौञ्जा. मुञ्जानामिमे (मुञ्जपादपस्था जीवा) १ १६१ २ [मुञ्जप्राति० 'तस्येदम्' इत्यर्थेऽण्। मुञ्जो विमुच्यत इषीकया नि० ६ ८]

म्यक्ष गमय २ २८ ६. [म्यक्षति गतिकर्मा निघ० २ १४ ततो लोट्]

म्रद दण्डय ६ ५३ ३ [म्रद मर्दने (भ्वा०) धातोर्लोट्]

यकृत् हृदयाद् दक्षिणे स्थित मासपिण्डम् १६ ८५ हृदयस्थो रोहित पिण्ड ३६ ६ **यक्ना**=यकृना शरीराऽवयवेन ३६ ८ [यकृद् यथा कथा च कृत्यते नि० ४ ३ यजतीति यकृदिति विग्रहे यज, देवपूजासगतिकरणदानेषु (भ्वा०) धातोर्बाहु० औणा० ऋतिन् प्रत्यय। बहुलवचनाद् जकारस्य ककार। 'यक्ना' प्रयोगे यकृत्प्राति० शस्प्रभृतिषु 'पद्दन्नोमास्०' इति 'यकन्' आदेश। यकृत् सविता ऋ० १२ ९ १ १५]

यक्षत् यजेत् दद्यात् १७ ६२ सत्कुर्यात् १६ ६५. सङ्गच्छेत ७ १७ ४ सङ्गमयेत् २१ ३७ **यक्षतः**=सङ्गच्छत २ ३ ७ **यक्षताम्**=सयच्छेते १.१४२ ८ सङ्गमयताम् ११८८ ७ यजत सङ्गमयत प्र०—अत्र 'सिब् बहुल लेटि' इति बहुलसग्रहणात् लेटि प्रथमपुरुषस्य द्विवचने शप पूर्व सिप् १ १३ ८ **यक्षन्त**=रोपत हिंस्त १.१३२ ५. **यक्षि**=सङ्गच्छस्व ६ ४ १ यजसि प्र०—अत्र लडर्थे लुङ् १ ७५ ५ सत्करोषि सङ्गच्छसे ५.२६ १ ददासि २ ६ ८ यज सुख सङ्गमय ६ १६ ६ प्र०—अत्र 'बहुल छन्दसि' इति शपो लुक् १७ ८ यजामि प्र०—अत्राऽडभावो लुङ् आत्मनेपद उत्तमपुरुषैकवचने प्रयोगो लडर्थे लुङ् च १ १३ १ याजय प्र०—अत्र सामान्यकाले लुडभावश्च १ ३१ १७ सङ्गमयामि १ १४ १ **यक्ष्व**=सङ्गमय प्राप्नुहि वा ५ ४२ ११ सत्कुरु सङ्गच्छस्व १ ४५ १० **यज**= यज्ञ कुरु २८ १५ सङ्गमयाऽस्य सिद्धि सम्पादय १ १४ ११ यजति शिल्पविद्याया सङ्गमयति प्र०—अत्र व्यत्ययो लडर्थे लोट् च १ १५ १२ गमय १ १८८ ६ सङ्गच्छस्व १ २६ १ प्राप्नुहि २८ ७ सत्कुरु देहि उपदिश वा ३३ ३. एकीभव ६ ११ यजते २१ ४८ **यजत**=सङ्गच्छध्वम् ३८ ६ पूजयत ४ ११ **यजतम्**=सङ्गच्छेतम् ६ ५८ १ सङ्गच्छेथाम् ५ ६७ १ **यजतः**=सङ्गच्छेते २० ४१ **यजताम्**=गृह्णातु २१ ४७ सङ्गमयतु ६ १५.१३ **यजति**=यजेत् प्र०—लेट्, प्रयोगोऽयम् १ १३६ १० सङ्गच्छते १ १३३ ७ सत्करोति १ १५१ ७ पूजयति १ १२० ५ **यजध्वम्**=सत्कुरुत ६ २६ १ सङ्गच्छध्वम् ५ ७७ १ **यजन्ति**=पूजयन्ति सङ्गमयन्ति वा ४ ३७ ददति १६ ६ सङ्गच्छन्ते १० ३२ **यजन्ते**=पूजयन्ति सगतिं कुर्वते १ २८ **यजसि**=सङ्गच्छसे २९ २५ **यजस्व**=सङ्गच्छस्व १७ २१ सुखानि देहि १ ७ ५ सङ्गमय ६ ११ १ **यजाति**=यजेत् ३ ४ १०. सङ्गच्छेत १ ७७ २ **यजाते**=यजेत १ ८४ १८ **यजातै**=यजेत १ ८४ १८. **यजाम**=प्रेरयेम ५ ६० ६ दद्याम १ २७ १३ **यजामः**=पूजयाम ३ ३२ ७ **यजामहे**=प्राप्नुयाम १ ४० ४ सत्कुर्महे १ १५३ १ पूजयामहे १ १५.१० सङ्गच्छामहे १ २६ ६ प्र०—सत्कुर्वीमहि ३ ६०

१६ ३२ सर्वेभ्य सुखदातार (सर्वोपकारिजना) १७.६६ **यजमाने**=यज्ञानुष्ठातरि (जने) ६ ११. सङ्गत-धर्म्यव्यवहारकर्त्तरि (सज्जने) ३ २६ ८ [यज देवपूजासंगतिकरणदानेषु (भ्वा०) धातो 'पूङ्यजो शानन्' अ० ३ २.१२८. सूत्रेण शानन्। ताच्छील्ये वा चानश्। यद् यजते तद् यजमान श० ३ २ १ १७. यजमानो ह्येव स्वे यज्ञे प्रजापति श० १ ६ १ २० इन्द्रो वै यजमान श० २.१ २ ११ यजमानो मेधपति ऐ० २ ६ यजमानो वै मेधपति' कौ० १० ४ यजमानो हि यज्ञपति श० ४ २.२ ६०. यजमानो वै यज्ञपति श० ११ २ १२, १ २ २ ८ यजमानोऽग्नि. श० ६ ३ ३ २१ स उ ऽ एव यजमानस्तस्मादाग्नेयो भवति श० ३ ६ १ ६ आहवनीयभाग्यजमान. क० ३.६ मनो यजमानस्य (रूपम्) श० १२ ८ २ ४ यजमानो वै दाश्वान् श० २ ३ ४ ३८ यजमानो वै मामहान (यजु० १७ ५५) श० ६ २ ३ ६ यजमानो वै सुम्नयु. श० १४ १ २१. यजमानो वै हव्यदाति. श० १४ १ २४ यजमान पशु तै० २ १ ५ २ यजमानो वै यूप ऐ० २ ३ श० १३.२. ६ ६ एप वै यजमानो यद् यूप तै० १.३ ७ ३. यजमानो वाऽ एप निदानेन यद् यूप श० ३ ७ १ ११ यजमानदेवत्यो वै यूप तै० ३ ६ ५ २ यजमानो वै प्रस्तर ऐ० २ ३ श० १ ८ १ ४४, १ ८ ३ ११ तै० ३ ३ ६ ७ ता० ६ ७ १७. यजमानो प्रस्तर तै० ३ ३ ६ २ यजमानो यज्ञ श० १३ २ २ १ यजमानो वै यज्ञ ऐ० १ २८ आत्मा वै यज्ञस्य यजमान श० ६ ५ २ १६. सवत्सरो यजमान श० ११ २ ७ ३२ एप वै यजमानो यत्सोम तै० १ ३ ३ ५ यजमानो वाऽ अग्निष्ठा श० ३ ७ १ १६ यजमानो हि सूक्तम् ऐ० ६ ६ यजमान स्रुच तै० ३ ३ ६ ३. यजमानदेवत्या वै वपा तै० ३ ६ १० १ यजमानच्छन्दसामेवोष्णिक् कौ० १७ २ यजमानच्छन्दस पक्ति कौ० १७ २ यजमानच्छन्दस द्विपदा (ऋक्) कौ० १७ २ यजमानो वै द्वियजु (इष्टका) श० ७ ४ २ १६ या वै काश्च यज्ञ ऽऋत्विज ऽआशिषमाशासते यजमानस्यैव सा श० १ ६ १ २१ त्वङ्मासस्नाय्वस्थिमज्जा एतमेव तत्पश्चधा विहितमात्मान वरुणपाशान्मुञ्चति (यजमान) तै० १ ५ ६ ८ स ह सर्वतनूरेव यजमानोऽमुष्मिँल्लोके सम्भवति य एव विद्वान् निष्क्रीत्या यजते श० ११ १ ८ ६ यशो वै यजमान जै० १ २५६]

यजमानासः विद्यासङ्गतिविद (विद्वासो जना) ३ ३५ ५ सम्यग् ज्ञातार (जना) २ १८ ३ [यजमानमिति व्याख्यातम्। ततो जसोऽसुक्]

यजिष्ठम् सुखानामतिशयित दातारम् (ईश्वरम्) १.४४ ५. अतिशयेन सङ्गमयितारम् (अग्निं=विद्युदग्निम्) ४ ८.१ **यजिष्ठः**=अतिशयेन यष्टा सङ्गमयिता (विद्वज्जन) १.७७ १. पूजितुमर्ह. (आप्तो जन) ४ २.१. अतिशयेनानन्दशिल्पविद्ययां सङ्गतिहेतु (अग्नि) ३ १५.१.८. अतिशयेनेष्टा (अध्यापक उपदेशको वा जन) ४ १ ४ **यजिष्ठेन**=अतिशयेन यष्ट्रा सङ्गन्त्रा तेन (मनसा=विज्ञानेन) १८.७५ [यज देवपूजासंगतिकरणदानेषु (भ्वा०) धातोस्तृजन्तादतिशायन इष्ठन्। 'तुरिष्ठेमेयस्सु' इति तृचो लोप]

यजीयान् अतिशयेन यष्टा सङ्गन्ता (विद्वज्जन) ३ १७.५ अतिशयेन यज्ञकर्त्ता (यजमान.) ५ १ ५ [यजदेवपूजासंगतिकरणदानेषु (भ्वा०) धातोस्तृजन्तादतिशायन ईयसुन्। 'तुरिष्ठेमेयस्सु' इति तृचो लोप.। यजीयान् यष्टृतर: नि० ८ ८]

यजुर्भिः यजन्ति सङ्गच्छन्ते यैर्यजुर्वेदविद्यावयवैर्मन्त्रै १६ २८ यजुर्वेदस्थमन्त्रोक्तै कर्मभि ४.१. **यजुर्भ्यः**= याजकेभ्यो यजुर्वेदविभागेभ्यो वा ३८ ११ **यजुषा**= सत्सङ्गेन क्रियया वा ५ ६२.५. **यजुः**=यजति येन स यजुर्वेद. १८ २६ **यजूंषि**=यजुर्मन्त्रा १८ ६७ यजुश्श्रुतय १२.४. [यज देवपूजासंगतिकरणदानेषु (भ्वा०) धातो 'अर्तिपृवपियजि०' उ० २ ११७ सूत्रेण उसि। यजुर्यजते नि० ७.१२ यजो ह वै नामैतद् यद् यजुरिति श० ४ ६ ७ १३ एप (वायु) हि यन्नेवेद सर्वं जनयत्येत यन्तमिदमनुप्रजायते तस्माद् वायुरेव यजु। अयमेवाकाशो जू। यद् इदमन्तरिक्षमेत ह्याकाशमनुजवते तदेतद् यजुर्वायुश्चान्तरिक्ष च यच्च जूश्च तस्माद् यजु श० १० ३ ५ २ यजुरित्येप (पुरुष) हीद सर्वं युनक्ति श० १० ५ २ २० प्राणो वै यजु प्राणे हीमानि सर्वाणि भूतानि युज्यन्ते श० १४.८ १४.२. प्राण एव यजु श० १० ३ ५ ४. अष्टौ (बृहतीसहस्राणि ८००० × ३६= २८८००० अक्षराणि) यजुषाम् श० १० ४ २ २४ व्यृद्धमु वा ऽएतद् यज्ञस्य। यदयजुष्केण क्रियते श० १३ १ २ १ (प्रजापति) यजुर्भ्योऽधिविष्णुम् (असृजत) तै० २ ३ २ ४ यजूंषि विष्णु (स्वभागरूपेणाभजत) श० ४ ६ ७ ३ आज्याहुतयो ह वा ऽएता देवानाम्। यद् यजूंषि श० ११ ५ ६ ५ अन्नमेव यजु श० १० ३ ५ ६ (सूर्य) यजुर्वेदे तिष्ठति मध्ये अह्न तै० ३ १२ ६ १ (आदित्यस्थ) पुरुषो यजूंषि श० १० ५ १ ५ आदित्यानीमानि शुक्लानि यजूंषि वाजसनेयेन याज्ञवल्क्येनाख्यायन्ते श० १४ ६ ४ ३३ आदित्यानीमानि यजूंषीत्याहु श० ४ ४ ५ १६ अथ य एष एतस्मिन् मण्डले पुरुष सोऽग्निस्तानि यजूंषि स यजुषा

यजते=सङ्गन्तव्ये (द्यावापृथिव्यौ) ४ ५६ २ [यज देवपूजादिषु (भ्वा०) धातोरौणा० अतच् । तत स्त्रिया टाप्]

यजता दातारावध्यापकोपदेशकौ ४ १५ ८. [यज देवपूजादिषु (भ्वा०) धातोरौणा० अतच् । ततो द्विवचनस्याकारादेश]

यजतेभिः सङ्गतैरश्वादिभि ५ १ ११ [यजतमिति व्याख्यातम् । ततो भिस ऐस् न भवति छान्दसत्वात्]

यजत्र पूजनीयतम (इन्द्र=शत्रुविदारक राजन्) ६ २५ ८ सङ्गन्त (अग्ने=विद्युदाख्य तेज) ६ २२ २ सङ्गच्छमान (वैद्य जन) १ १८९ ३ पूजनीय. (इन्द्र=ऐश्वर्यवज्जन) ३ ३५ १० सङ्गन्तु योग्य (अग्ने=विद्वज्जन) १२ ४८ दात (परमेश्वर विद्वन्वा) १ ७६ ४ **यजत्रम्**=सङ्गन्तव्यम् (सेनापतिम्) ११ ७६ **यजत्रः**=सङ्गमकर्त्ता (पुरुष) १ १२१ १ सङ्गन्तव्यो ध्येय (ईश्वर) ७ ५२ ३ सङ्गन्ता (मर्य=मनुष्य) १ १७३ २ **यजत्रान्**=यष्टु सङ्गमयितुमर्हान् (देवान्=विद्वज्जनान्) प्र०—अत्र 'अमिनक्षियजिवधि०' उ० ३ १०५ अनेन यज धातोरत्रन् प्रत्यय १ १४ ७ **यजत्राः**=सङ्गन्तार पूजनीया (विद्वासो जना) ३ ३ ५३ सङ्गमयितु योग्या (मनुष्या) १ १४ ८ विदुषा सत्कर्त्तार सङ्गतिकर्त्तार भा०—पूज्या (देवा=विद्वासो जना) ३ ३ ५१ सङ्गता (अश्वा=किरणा) ३ ६ ८ पूजका, उपदेशका, सङ्गतिकर्त्तारो दातारश्च (धीरा=मेधाविजना) १ ६५ १ सङ्गतिकरणशीला (प्राज्ञा जना) २ २७ १६ यजन्ति सङ्गच्छन्ते ये ते (देवा=विद्वज्जना) १ ८९ ८ सङ्गमयितार (विद्वासो जना) ६ ५२ १७ सङ्गन्तव्या (विद्वासो जना) ६ ५२ १३ सुसङ्गते कर्त्तार (विद्वज्जना) २ २९ ६ सद्व्यवहार सङ्गच्छमाना (सज्जना) ६ ५१.९ **यजत्रैः**=यज्ञसाधकैविद्वद्भि सह ६ १० [यज देवपूजासगतिकरणदानेषु (भ्वा०) धातो 'अमिनक्षियजिवधिपतिभ्योऽत्रन्' उ० ३ १०५ सूत्रेणात्रन् । यजत्रमिति यज्ञियमित्येतत् श० ६ ६ ३ ९]

यजत्रा सङ्गमयितारौ (स्त्रीपुरुषौ) १ १८० ५ सङ्गम्य सत्कर्त्तव्यौ (इन्द्राग्नी=स्वामिशिल्पिनौ) १ १०८ ७ ['यजत्र' इति व्याख्यातम् । तत 'सुपा सुलुक्०' इति द्विवचनस्याकारादेश]

यजत्रे सङ्गते (द्यावापृथिव्यौ) ३ ३१ १७ सङ्गन्तव्ये (सूर्यभूमी) ७ ५३ १ [यज देवपूजादिषु (भ्वा०) धातोरौणा० अत्रन् । तत स्त्रिया टाप्]

यजथाय यजनाय सङ्गमनाय ३.५.९ समागमाय ३ ४ १ सत्करणाय २.२८ १. विद्यासङ्गमनाय ३ १९ ५ [यज देवपूजादिषु (भ्वा०) धातोर्बाहु० औणा० अथ प्रत्यय]

यजध्यै यष्टु सङ्गन्तुम् ४ २१ ५. [यज देवपूजादिषु (भ्वा०) धातोस्तुमर्थेऽध्यैन् । यजध्यै यजनाय नि० ८ १२]

यजमानम् विद्यासुशिक्षाभ्या सुखदातारम् (भा०—अध्यापकोपदेशकम्) १७ ८६ विद्यादातारम् (विद्वास जनम्) १ १५६ ५ सत्याऽनुष्ठानस्य यज्ञस्य कर्त्तारम् (जनम्) २० ७३ सर्वेभ्य. सुख ददमानम् (सज्जनम्) १९ ३३ अभयस्य दातारम् (आर्यम्=उत्तमगुणकर्मस्वभावम्) १ १३० ८ सुखप्रदम् (पुरुषम्) ७ १८ यज्ञानुष्ठातारम् (सभाध्यक्ष राजानम्) ६ ६ सङ्गन्तारम् (विद्वासम्) ५.४५ ५ **यजमानस्य**=यज्ञाऽनुष्ठातु (पुरुषस्य) २ ३ य परमेश्वर सर्वोपकार धर्म्म च यजति तस्य विदुष (अ०—जीवस्य) १ १ शिल्पविद्या चिकीर्षो, सर्वमित्रस्य वा (पुरुषस्य) २ ३ सुखप्रदातु (धनाढ्यजनस्य) २ ३० ६ यज्ञनिष्पादकस्य (सज्जनस्य) १ ५१ ८ सर्वेषा सुखाय यज्ञकर्त्तु (सत्पुरुषस्य) ७ ५७ २ यो यजने देवान् विदुष सत्करोति, सङ्गच्छते, सुखानि ददाति वा तस्य (राज्ञ) २२ २२ यष्टु सङ्गन्तु विदुष पूजितु च शील यस्य तस्य (पुरुषस्य) १२ ४४ सङ्गम कर्त्तु योग्यस्य पूज्यस्य मनुष्यस्य ४ ३४ शिल्पक्रियाविद (विद्वज्जनस्य) ४ १० धार्मिकस्य जीवस्य ४ ३३ सत्पुरुष का स० प्र० २३८, १० ४९ १ **यजमानः**=त्रिविधस्य यज्ञस्याऽनुष्ठाता (सज्जन) १ २४ ११ यो यजते स (विद्वज्जन) १८ ४८ विद्वत्सेवासङ्गते कर्त्ता (मनुष्य) ३ ३ ३ यज्ञकर्त्ता (सज्जन) ६ ५१ १२ सङ्गन्ता (मनुष्य) ३ ११ ५ योगप्रद आचार्य १७ ७३ **यजमानात्**=धर्म्येण सङ्गतात् (मर्त्तात्=मनुष्यात्) ४ १० ७ **यजमानाय**=सङ्गतिकरणविद्याविदे (सत्पुरुषाय) ६ १५ १६ उपदेश्याय पालकाय वा (सज्जनाय) १ ८३ ३ सङ्गच्छमानाय (जनाय) २० ७१ परोपकारार्थं यज्ञ कुर्वते (सत्पुरुषाय) ७ १६ ६ यजति विदुष पूजयति सद्गुणान् सङ्गच्छते ददाति च तस्मै (पुरुषाय) ५ १२ परोपकारार्थयज्ञानुष्ठात्रे (प्रजाजनाय) ६ ३३ सत्योपदेशकाय विद्यासङ्गमयित्र आचार्याय साङ्गोपाङ्गवेदाऽध्यापकाय, क्रियाकौशलसहिताना सर्वासा विद्याना प्रवक्त्रे, धर्मेण सङ्गन्तु शीलाय वा (परमविदुषे) ११ ५८ पुरुषार्थिने (विद्वज्जनाय) २८ १५ सङ्गत्यै प्रवर्त्तमानाय जीवाय २८ १६ **यजमानाः**=ये यजन्ति ते विद्वास

विज्ञानस्य ७ २३ इज्यतेऽसौ यज्ञस्तस्य महिम्न कर्म्मणो वा । विदुषां सत्कारस्य सङ्गतस्य सत्सङ्गत्योत्पन्नस्य विद्याऽऽदिदानस्य शिल्पक्रियोत्पाद्यस्य वा (व्यवहारस्य) १ १ १ ज्ञानक्रियाभ्यामनुष्ठेयस्य (भा०—क्रियाकाण्डस्य) २ १९ **यज्ञः**=इज्यते यस्मिन् स (व्यवहार) १ २३. सङ्गन्ता (सेनाध्यक्ष) १७ ४० अभिधेय (अग्निसङ्गको व्यवहार) ४ ११ स्त्रीपुरुषाभ्यां सङ्गमनीय (गृहाश्रम) ८ ४० पूजनीय (अ०—ईश्वर) १७ ६२ सङ्गत ससार १ १८ ७ राजपालनीयो व्यवहार ७ ३४ १७ सत्सङ्गत्यादिस्वरूप ६ ३८ ४ अनुष्ठातुमर्हो व्यवहार ४ ५८ ९ अध्यापनोपदेशाख्य (व्यवहारः) ४ ३४ ३. सङ्गमनीय. शिल्प ६.६८ १. रेखागणिते व्यासाख्यो मध्यरेखाख्य ऋ० भू० १४७, २३ ६२ यष्टुं सङ्गन्तुमर्हं सूर्य १ १६४.३५ व्यापक. परमेश्वर २२ ३३ सर्वैः पूजनीयो जगदीश्वर २३ ६२. सत्य सङ्गतो व्यवहार ५ २६ ८ अग्निष्टोमादिर्विज्ञानमयो व्यवहारो वा ३४ ४ सम्पूजनीय प्रजारक्षणनिमित्तो विद्याप्रचारार्थो गृहाश्रम ८ २२ य इज्यते सङ्गम्यते स (भा०—अग्निहोत्रादि) १८ ४२ यजनीय (अग्नि) १ १८८ ? यजधातोरर्थ (देवपूजा-सङ्गतिकरण-दानाख्य) ९ २१ राजधर्म्मशिल्पकार्यसङ्गत्योन्नत (व्यवहार) १ १७३ ४ सङ्गन्तव्यो धर्म्म १८ २९ अच्छे प्रकार करने योग्य यतिधर्म स० वि० २०६, अथर्व० ९ ६ ११. योगरूप (व्यवहार) स० प्र० २४७, ३४४ जो जो अच्छा काम है आर्याभि० २ १३, १८ २९ सद्विद्याव्यवहारवर्धको व्यवहार ६ ४० ४. सङ्गन्तुमर्हो ब्रह्मचर्याख्य (व्यवहार) १ १५६ १ **यज्ञात्**=सच्चिदानन्दादिलक्षणात् पूर्णात् पुरुषात् (परमेश्वरात्) ऋ० भू० ९, ३१ ६ अध्ययनाऽध्यापनाद्धोमलक्षणाद्वा ५ ११ पूजनीयात् पुरुषात् (जगदीश्वरात्) ३१ ६ पूजनीयतमात् (पुरुषात्) ३१ ७ **यज्ञान्**=विद्यादिप्रापकान् व्यवहारान् ३ ९ ६ **यज्ञानाम्**=अग्निहोत्राद्यश्वमेधान्तानां योगजातशिल्पोपासनाज्ञानानाम् १ ४८ ३ सङ्गतानां व्यवहाराणाम् ३ ३ ३ सङ्गन्तव्यानां पदार्थानाम् २९ ६ **यज्ञाय**=यो यजति सत्येन सङ्गच्छते तस्मै (विद्वज्जनाय) ६ ४० १ ज्ञानक्रियामयाय यागाय १ ९३ ६ विद्वत्सत्काराद्यनुष्ठानाय ३ ३९ ८ सङ्गतिविज्ञानाय ३ ३० १५ **यज्ञाः**=सत्या व्यवहारा ४ ३७ २ अग्निहोत्राद्याः शिल्पान्ता (व्यवहारा) ७ ३५ ७ **यज्ञे**=सङ्गन्तव्ये कर्त्तव्ये १ १२ ७ व्यापके परमेश्वरे सर्वोपकारकेऽश्वमेधादौ शिल्पविद्याक्रियाकुशलत्वे च ऋ० भू० १०८, अथर्व० १२ ५ ३ विद्यादानाख्ये (व्यवहारे) १.१४२.५. वर्षादिजलव्यवहारे ४ ५८.२ सम्यग् ज्ञातव्ये (गृहाश्रमे) ५ ७५ ८ अग्निहोत्रादौ धर्म्ये सङ्गतव्यवहारे योगाभ्यासे वा ३४ २ विद्वत्सेवा-सङ्ग-विद्यादानादिक्रियाख्ये २० १०. शिल्पसम्पाद्ये व्यवहारे ३.३५ ६. विद्वानों के सत्कार शिल्पविद्या और शुभगुणों के दान में स० वि० १४३, अथर्व० १२ ५ ३ यष्टव्ये (अ०—ससारे) १ १३.३ **यज्ञेन**=सत्यभाषणादिव्यवहारेण १८ ६ सुनियमानुष्ठानाख्येन भा०—सुनियमपालनेन १८ ७ सुखसिद्धिकरेणेश्वरेण १८ ८ धर्मपालनेन १८ ४. सत्कर्त्तव्येन परमात्मना १८ ३. पूजनीयेन परमेश्वरेण जगदुपकारकेण व्यवहारेण वा १८ १ सत्यधर्मोन्नतिकरेणोपदेशाख्येन १८.५ होमादिना ६ ५२ १ सङ्गत्याख्येन २.२१ ५. ब्रह्मचर्याद्याचरणेन धर्मेणेश्वराज्ञापालनेन धर्मेण विद्याभ्यासेन शिष्टाचरितेन प्रत्यक्षविषयेण शब्दप्रमाणाभ्यासेन वा ९ २१ विद्वत्सत्काराख्येन ६ ५ ५ योगाभ्यासादिना २२ ३३ सङ्गमनेन १२ १०३ स्तुतिप्रार्थनोपासनरीत्या पूजनेन ऋ० भू० १२९ परमेश्वरस्य विदुषां च सत्करणेन सङ्गतेन कर्मणा विद्यादिदानेन सह २२ ३३ अग्न्यादिदिव्यपदार्थसमूहेन १.१६४ ५०. विद्यैश्वर्योन्नतिकरणेन १८ १६. सङ्गतिकरणेन योगेन दानेन वियोगेन वा अ०—योगतो विपरीतेन दानरूपेण मार्गेण उक्त पुनःपुनर्योगेन गुणनेन मार्गेण भा०—यजधातोर्हि य सङ्गतिकरणार्थस्तेन सङ्गतिकरणं कस्याश्चित् सङ्ख्याया कयाचित् सह योगकरणम् यश्च दानार्थस्तेनैव सम्भाव्य कस्याश्चिद् दानं व्ययीकरणमिदमेवम् । एवं गुणन-भाग-वर्ग-वर्गमूल-घन-घनमूल-भागजाति-प्रभागजातिप्रभृतयो ये गणितभेदा सन्ति, ते योगवियोगाभ्यामेवोत्पन्नत्वाद्यज्ञस्तेन १८ २४ सङ्गतिकरणयोग्येन परमात्मना १८ २२ सर्वपदार्थवर्धकेन कर्म्मणा १८ ९ शमदमादियुक्तेन योगाभ्यासेन १८.११ वायुविद्याविधानेन १८ २३ कालचक्रज्ञानधर्माद्यनुष्ठानेन १८ २३. पशुपालनविधिना १८ २६ सर्वान्नप्रदेन परमात्मना १८ १२ पुरुषार्थानुष्ठानेन १८.१५ पृथिवी-कालविज्ञापकेन (व्यवहारेण) १८ १८ प्रशस्तधनप्रापकेणेश्वरेण १८ १० **यज्ञेभिः**=कर्मोपासनाज्ञाननिष्पादकैः कर्म्मभि प्र०—अत्र 'बहुल छन्दसि' इति भिस ऐस् न १ २४ १४ विद्वत्सेवासत्यभाषणादिभि. ६ ३ २ **यज्ञेषु**=सत्कारेषूपासनादिष्वग्निहोत्रादिषु शिल्पेषु वा ४ १६ विद्याधर्मप्रचाराख्येषु व्यवहारेषु ६ १६ ३ क्रियाकाण्डादिविज्ञानान्तरेषु सङ्गमनीयेषु १ १४ ११ सन्ध्योपासनादिषु सत्कर्मसु ६ १४ २ **यज्ञैः**=विद्वत्सङ्गादिभि ७.२१ १ विद्याविज्ञानप्रचारैः

लोक श० १०.५.२.१ अग्निर्यजुषाम् (समुद्र) श० ९.५.२.१२ अथ यन्मनो यजुष्टत् जै० उ० १.२५.६ मनो यजुर्वेद श० १४.४.३.१२ मन एव यजूंषि श० ४.६.७.५ मनो वै यजु श० ७.३.१.४० (प्रजापति) भुव इत्येव यजुर्वेदस्य रसमादत्त तदिदमन्तरिक्षमभवत्। तस्य यो रस प्राणेदत् स वायुरभवद् रसस्य रस जै० उ० १.१.४ भुवरिति यजुर्भ्योऽक्षरत् सोऽन्तरिक्षलोकोऽभवत् ष० १.५ यजुषा वायुर्देवत तदेव ज्योतिस्त्रैष्टुभ छन्दोऽन्तरिक्ष स्थानम् गो० पू० १.२९. वायोर्यजुर्वेद (अजायत) श० ११.५.८.३ अन्तरिक्ष वै यजुषामायतनम् गो० पू० २.२४. अन्तरिक्षलोको यजुर्वेद ष० १.५ अन्तरिक्ष यजुषा (जयति) श० ४.६.७.२ यजुर्वेद क्षत्रियस्याहुर्योनिम् तै० ३.१२.९.२. दक्षिणाम् (दिशम्) आहुर्यजुषामपाराम् तै० ३.१२.९.१ सर्वा गतिर्याजुषी हैव शश्वत् तै० ३.१२.९.१ यजुर्वेदो मह श० १२.३.४.९ यजुर्वेद एव मह गो० पू० ५.१५ श्रद्धा वै तद् यद् यजु श० १३.८.२.७ तस्माद् यजूंषि निरुक्तानि सन्त्यनिरुक्तानि श० ४.६.७.१७ मज्जा यजु श० ८.१.४.५ (दक्षिणनेत्रस्य) यदेव ताम्रमिव बभ्रुरिव तद् यजुषाम् (रूपम्) जै० उ० ४.२४.१२ अथ यत्कृष्ण तदपा रूपमन्नस्य मनसो यजुष जै० उ० १.२५.९ न (प्रजापति) यजूंष्येव हिङ्कारमकरोत् जै० उ० १.१.३.३ तस्य (यमस्य) पितरो विश ··· 'यजूंषि वेद ······ यजुषा-मनुवाक व्याचक्षाणइवानुद्रवेत् श० १३.४.३.६ वज्री वै यजु ष्याशी श० १.२.१.७, ३.५.२.११, ३.६.१.१७]

यजुषे यजुषे यजन्ति येन तस्मै तस्मै प्रति १.३०. [यजुषे पदस्य वीप्साया द्वित्वम्। यजुष् इति व्याख्यातम्]

यज्ञ य सङ्गम्यते तत्सम्बुद्धौ (भ०—सम्पादक विद्वन्) ८.६२ यो यजति सङ्गच्छते स यज्ञो गृहस्थस्तत्सम्बुद्धौ प्र०—अत्रौणादिको न प्रत्यय ८.२२ इज्यते सर्वैर्जनै स यज्ञ ईश्वरस्तत्सम्बुद्धौ क्रियासाध्यो वा प्र०—अत्राऽन्त्यपक्षे 'सुपा सुलुक्०' इति सोर्लुक् २.१९ **यज्ञम्**=यजति सङ्गच्छते येन तम् (विद्यासुशिक्षाव्यवहारम्) १.१७०.४ पूजनीयं सर्वरक्षकमग्निवत्तपनम् (ईश्वरम्) ३.१.१६ यजनीयम् (भा०—विद्याज्ञानबलवर्धक कर्म) १.१३.२ क्रियाकौशलम् १.१०.४ सङ्गन्तव्यम् (भा०—आनन्दम्) १७.६८ प्रथममन्त्रोक्तम्—इज्यतेऽसौ यज्ञस्त महिमान कर्म वा १.१.४ विद्वत्सत्कार-सत्सङ्ग-शुभगुण-दानाख्यम् ३.२.११ सम्पूजनीयम् (पुरुषम्=ईश्वरम्) ३१.९ शिल्पविद्यामहिमान कर्म च १.३.१० धर्म्यं व्यवहारम् ७.११.५ राजधर्मानुष्ठानाख्यम् ४.२०.३ सर्वपूज्य परमेश्वरम् ऋ० भू० १२४, ३१.९ अग्निहोत्राद्यश्वमेधान्त शिल्पविद्यामय च ऋ० भू० १२७ ३.१.१४ सङ्गतिकरणम् ५.४३.१७ सुखदान-साधक व्यवहारम् ३४.६ अन्नाद्युत्तमपदार्थदानम् ५.४.५ गृहाश्रमव्यवहारम् ५.५.५ सुखाना सङ्गमक व्यवहारम् ११.७ धर्मार्थकाममोक्षव्यवहारम् १.१६४.५० क्रिया-काण्डजन्य समारम् २.२१ यानाख्य सङ्ग्रामाख्य हवनाख्य वा ३३.३३ मानस ज्ञानमयन् ३१.१५ पूर्व्यं द्वितीय-मन्त्रोक्त त्रिविधम्—विद्याज्ञान-धर्मानुष्ठानवृद्धाना देवाना विद्वुषामैहिकपारमार्थिक-सुखसम्पादनाय सत्करण सम्यक् पदार्थ-गुणसमेल-विरोधज्ञानसङ्गत्या शिल्पविद्याप्रत्यक्षीकरण नित्य विद्वत्समागमानुष्ठान शुभविद्या-सुखधर्मादिगुणाना नित्य दानकरणमिति २.६ सुखाय यष्टुमर्हम् (व्यवहारम्) २.१२ सङ्गन्तुमर्हं व्यवहारम् १९.८० सङ्गन्तव्य सत्कर्त्तव्य वा गृहाश्रमम् १७.५४ कर्मोपासनाज्ञानाख्यम् २.५८ सुशिक्षोपदेशाख्यम् १.२२.३ रागद्वेषरहित न्यायदयामयम् ३.१.२२ विद्यावृद्धिकर व्यवहारम् ४.३४.६ सत्सङ्गाख्य व्यवहारम् ३.१.२ अध्ययनाध्यापनादिकम् ४.३३.३ विद्याप्रज्ञावर्द्धकम् (सत्कर्म्म) ४.३४.१ सर्वविद्यामयम् (ऋत=सत्यमुदक वा) १.१०५.४. सत्यजनक व्यवहारम् ५.८७.९ परोपकाराख्यम् ६.१०.६ प्रजापालनाख्यम् ४.२०.२ विद्याविनयाभ्या सङ्गत पालनाख्यम् ३.४०.३ विज्ञानसङ्गतिमयम् ५.८७.३ सङ्गन्तव्य धर्म्मम् १२.६० योगम् ७.११ विद्याप्रचाराख्य व्यवहारम् ५.५.२ विद्याधर्म-सङ्गमयितारम् (व्यवहारम्) ११.८ राजप्रजासम्बद्ध व्यवहारम् '७.१९ विज्ञानशिल्पसङ्गमनीयम् (व्यवहारम्) ५.१७ सर्वशास्त्रबोध और पूजनीयतम (ईश्वर) को आर्याभि० १८ ऋ० १.१६.१० धनादिसङ्गमकम् (सद्व्यवहारम्) १.१८८.७ प्राप्तव्यमानन्दम् २९.८ सर्व-सुखावह गृहाश्रमम् ८.२१ सङ्गत योग्य बोधम् २९.८ अनेकविधव्यवहारम् २९.३६ विद्वत्सत्कारादिमय व्यवहारम् ३.२५.४ सर्वं सङ्गत व्यवहारम् ६.६२.२ पुरुषार्थसाध्यम् (व्यवहारम्) १.२०.२ सर्वेषा सुखजनक राजधर्मम् ९.१

यज्ञस्य=शिल्पविद्यासिद्धस्य (व्यवहारस्य) ४.९ सङ्गन्तु-मर्हस्य जगत २.५.२ सत्यव्यवहारस्य २०.३७ सङ्गम-नीयस्य विद्याबोधस्य १.६६.६ अग्निहोत्राद्यश्वमेधान्तस्य क्रियासमूहजन्यस्य सर्वजगदुपकारकस्य (व्यवहारस्य) यद्वा परमेश्वरस्य सामर्थ्यात् प्रकृत्यादिपृथिव्यन्तकार्यकारणसङ्ग-त्योत्पन्नस्य जगतोऽथवा सत्सङ्गतिकरणादुत्पन्नस्य विद्यादि-विज्ञानयोगादे वे० भा० न० सयोगादुत्पन्नस्य जगत २३.५७. यजनकर्म्मणे १९.३१ योगविद्याप्रापकस्य

४ १७ ते वै पश्चान्यद् भूत्वा पश्चान्यद् भूत्वा कल्पेतामाहावश्च हिंकारश्च प्रस्तावश्च प्रथमा च ऋगुद्गीथश्च मध्यमा च प्रतिहारश्चोत्तमा च निधनञ्च वषट्कारश्च ते यत् पश्चान्यद् भूत्वा पश्चान्यद् भूत्वा कल्पेता तस्मादाहु' पाङ्क्तो यज्ञ पाङ्क्ता पशव इति ऐ० ३ २३ गो० उ० ३ २० पाङ्क्तो यज्ञ श० १ ५ २ २६, ३ १ ४ २० गो० पू० ४ २४ गो० उ० २ ३ पाङ्क्तो वै यज्ञ ऐ० १ ५ कौ० १ ३ ४ तै० १ ३ ३ १ श० १ १ २ १ ६ पाङ्क्तो यज्ञ ता० ६ ७ १२ ऐ० ३ २३ यज्ञो वा आश्रावणम् श० १ ५ १ १ एप वै यज्ञो यदग्नि श० २ १ ४ १६ अग्निर्यज्ञ श० ३ २ २ ७ अग्निरु वै यज्ञ श० ५ २ ३ ६ अग्निर्वै यज्ञ श० ३ ४ ३ १६ ता० ११ ५ २ अग्निर्वै योनिर्यज्ञस्य श० १ ५ २ ११ शिर एतद् यज्ञस्य यदग्नि श० ९ २ ३ ३१ अग्निर्वै यज्ञमुखम् तै० १ ६ १ ८ एप हि यज्ञस्य सुक्रतुर् (ऋ० १ १२ १) यदग्नि श० १ ४ १ ३५ वाग्घि यज्ञ श० १ ५ २ ७ वाग्वै यज्ञ ऐ० ५ २४ श० १ १ २ २ वागु वै यज्ञ श० १ १ ४ ११ वाग्यज्ञस्य (रूपम्) श०. १२ ८ २ ४ अय वै यज्ञो योऽय (वायु) पवते ऐ० ५ ३ ३ श० १ ९ २ २८ अय वाव यज्ञो योऽय (वायु) पवते जै० उ० ३ १ ६ १ अयमु वै य (वायु) पवते स यज्ञ गो० पू० ३ २ वान्तो वै यज्ञ श० ३ १ ३ २६ सवत्सरो यज्ञ श० ११ २ ७ १ सवत्सरो यज्ञ प्रजापति श० २ २ २ ४ सवत्सरसमितो वै यज्ञ पञ्च वा ऽऋतव सवत्सरस्य त पञ्चभिराप्नोति तस्मात् पञ्च जुहोति श० ३ १ ४ ५ यज्ञ एव सविता गो० पू० १ ३३ जै० उ० ४ २७ ७ स य स यज्ञो ऽसौ स आदित्य श० १४ १ १ ६ यज्ञो वै यजमानभाग ऐ० ७ २६ यजमानो वै यज्ञ ऐ० १ २८ यजमानो यज्ञ श० १३ २ २ १ आत्मा वै यज्ञ श० ६ २ १ ७ पुरुपो वै यज्ञ कौ० १७ ७ गो० उ० ५.४ श० १ ३ २ १ तै० ३ ८ २३ १ जै० उ० ४ २ १ गो० पू० ४ २४ गो० उ० ६ १२ स (पुरुप) यज्ञ गो० पू० १ ३९ पुरुषो सम्मितो यज्ञ श० ३ १ ४ २३ पशवो यज्ञ श० ३ २ ३ ११ कतमो यज्ञ इति पशव इति श० ११ ६ ३ ९ शतोन्मानो वै यज्ञ श० १२ ७ २ १३ यज्ञो वै भुवनज्येष्ठ कौ० २५ ११ यज्ञो वै भुवनस्य नाभि तै० ३ ९ ५ ५ यज्ञो वै भुवनम् तै० ३ ३ ७ ५ यज्ञो वा अन्न श० १ १.२ ७ आपो वै यज्ञ ऐ० २.२० श० ३ ८ ५ १ यज्ञो वा ऽआप कौ० १२ १ श० १ १ १ १२ तै० ३ २ ४ १ ऋतेरक्षा वै यज्ञ ऐ० २ ७ परोक्ष यज्ञ श० ३ १ ३ २५ अयज्ञो वा एप योऽपत्नीक त० २ २ २ ६ पूर्वार्धो वै यज्ञस्याध्वर्युर्जघनार्घ पत्नी श० १ ९ २.३ अथ श्रीणि वै यज्ञस्येन्द्रियाणि। अध्वर्युर्होता ब्रह्मा तै० १ ८ ६ ६. ज्येष्ठयज्ञो वा एप यद् द्वादशाह ऐ० ४ २५ यज्ञ वा ऽअनुप्रजा श० १.८ ३ २७ यज्ञाद् वै प्रजा प्रजायन्ते श० ४.४.२ ९ रेतो वा ऽअत्र यज्ञ श० ७.३ २ ९ (यज्ञस्य) प्राणो धूम श० ६.५ ३ ८ एतच्छिरो यज्ञस्य यद् विपुवान् कौ० २६ १ शिरो वै यज्ञस्यातिथ्यम् श० ३ २ ३ २० शिरो वा एतद् यज्ञस्य यदातिथ्यम् ऐ० १ १७.२५. कौ० ८ १. एतद्वै यज्ञस्य शिरो यन्मन्त्रवान् ब्रह्मौदन. गो० पू० २ २६ शिरो वै यज्ञस्योत्तर आघार श० १४ ५ ५ उत्तरत उपचारो हि यज्ञ श० ८ ६ १ १६ चक्षुपी वा ऽएते यज्ञस्य यदाज्यभागी श० ११.७ ४ २ एतद्वै प्रत्यक्षाद् यज्ञरूप यद् घृतम् श० १२ ८ २ १५ मृगधर्मा (=पलायनशील) वै यज्ञ ता० ६ ७ १० यज्ञो वै मैत्रावरुण कौ० १३ २ मनो (वै यज्ञस्य) मैत्रावरुण. श० १२ ८ २ २३ ऐ० २ ५ विराड् वै यज्ञ श० १ १ १ २२ वैराजो यज्ञ गो० पू० ४ २४ गो० उ० ६ १५ यज्ञो वै स्तोम श० ८ ४ ३ २ नासामा यज्ञो अस्ति श० १ ४ १ १ एते वै यज्ञा वागन्ता ये यज्ञायज्ञीयान्ता ता० ८ ६ १३ यद्वै यज्ञस्यान्यूनातिरिक्त तच्छिवम् श० ११ २ ३ ९ यद्वै यज्ञस्यान्यूनातिरिक्त तत् स्विष्टम् श० ११ २ ३ ९ विष्णुर्वै यज्ञस्य दुरिष्ट पाति ऐ० ३ ३८ यद्वै यज्ञस्य दुरिष्ट तद्वरुणो गृह्णाति ता० १३.२ ४ यज्ञो यज्ञस्य प्रायश्चित्ति ऐ० ७ ४ यद् यज्ञेऽभिरूप तत् समृद्धम् कौ० ९ ६ गो० उ० ४ १८ एतद्वै यज्ञस्य समृद्ध यद् रूपसमृद्ध यत्कर्म क्रियमाणमृगभिवदति ऐ० १ ४ व्यृद्ध वै तद् यज्ञस्य यन्मानुपम् श० १ ४ १ ३५ हवीपि ह वा ऽआत्मा यज्ञस्य श० १ ६ ३ ३९ आहुतिर्हि यज्ञ श० ३ १ ४ १ यज्ञो विककत श० १४ १ २ ५ यज्ञो वा अवति ता० ६ ४ ५ भैपज्ययज्ञा वा एते यच्चातुर्मास्यानि तस्माद् ऋतुसन्धिपु प्रयुज्यन्ते ऋतुसन्धिषु वै व्याधिर्जायते गो० उ० १ १९ कौ० ५ १ एष ह वै यजमानस्यामुष्मिँल्लोक ऽआत्मा भवति यद् यज्ञ श० ११ १ ८ ६ यज्ञेन वै देवा दिवमुपोदक्रामन् श० १ ७ ३ ७ स्वर्गो वै लोको यज्ञ कौ० १४ १ यज्ञेन वै तद् देवा यज्ञमयजन्त यदग्निनाऽग्निमयजन्त ते स्वर्गं लोकमायन् ऐ० १.१६]

यज्ञकेतुः यज्ञस्य प्रापक (विद्वान् जन) ४ ५१ ११ [यज्ञ-केतुपदयो समास । केतु प्रज्ञानाम निघ० ३ ९]

यज्ञनीः यज्ञ त्रिविध नयति प्रापयतीति स (भौतिको ऽग्नि) प्र०—अत्र 'सत्सूद्विषद्रुह०' इति क्विप् १ १५ १२

१ ८ ३ ५ सत्कर्मानुष्ठाने ६ २४ ६ विद्वत्सत्कार-सङ्ग-दाने ६ ३४ २ सङ्गन्तव्यै साधने ७.२ २ विद्वत्सत्कार-शिल्प-क्रिया-विद्यादिदानाख्यैर्व्यवहारै ३ ३ २ ५ [यज देवपूजा-सगतिकरणदानेषु (भ्वा०) धातो 'यजयाचयतविच्छप्रच्छ-रक्षो नङ्' अ० ३ ३ ९० इति नङ्। बहुलवचनादौणादिको वा न । यज्ञ =यज्ञ नाम निघ० ३ १७ यज्ञ कस्मात् ? प्रख्यात यजतिकर्मेति नैरुक्ता । याच्ञ्यो भवतीति वा यजुरुन्नो भवतीति वा बहुकृष्णाजिन इत्यौपमन्यवो यजूष्येन नयन्तीति वा नि० ३ १९ यज्ञ.=यज्ञोखा नि० १० ४५ स (सोम) तायमानो जायते स यन् जायते तस्माद् यञ्जो यञ्जो ह वै नामैतद् यद् यज्ञ इति श० ३ ९ ४ २३ प्राण (यज्ञस्य) सोम कौ० ९ ६ अध्वरो वै यज्ञ श० १ २ ४ ५ यज्ञो वै मख श० ६ ५ २ १ तै० ३ २ ८ ३ ता० ७ ५ ६ मख इत्येतद् यज्ञनामधेयम् गो० उ० २ ५ यज्ञो वै नम श० ७ ४ १ ३०, २ ४ २ २४, २ ६ १ ४२ यज्ञो वै स्वाहा-कार श० ३ १ ३ २७ यज्ञो वै भुज्यु (यजु० १८ ४२) यज्ञो हि सर्वाणि भूतानि भुनक्ति श० ९ ४ १ ११ यज्ञो भग (यजु० ११ ७) श० ६ ३ १.१९ गातु वित्त्वेति यज्ञ वित्त्वेत्येवैतदाह । (गातु =यज्ञ) श० १ ९ २ २८, ४ ४ ४ १३ यज्ञो वा ऽऋतस्य योनि (यजु० ११ ६) श० १ ३ ४ १६. यज्ञो ह वै मधुसारघम् श० ३ ४ ३ १३ यज्ञो वै महिमा (यजु० ११ ६) श० ६ ३ ११८ यज्ञो वै देवाना मह श० १ ९ १ ११ एष ह वै महान् देवो यद् यज्ञ गो० पू० २ १६ यज्ञो वै बृहन्विपश्चित् श० ३ ५ ३ १२ यज्ञो वा अर्यमा तै० २ ३ ५ ४ यज्ञो वै तार्प्यम् तै० १ ३ ७ १, ३ ९ २० १. यज्ञो वै वसु (यजु० १ २) श० १ ७ १ ९ यज्ञो विदद्वसु ता० १५ १० ४ यज्ञो वै विदद्वसु ता० ११ ४ ५ यज्ञोऽसुरेषु विदद्वसु ता० ८ ३ ३ यत् सयद्वसु (यजु० १५ १८) इत्याह यज्ञ हि सयन्तीतीद वस्विति श० ८ ६ १ १९ यज्ञो वै सुतर्मा नौ कृष्णाजिन वै सुतर्मा नौ ऐ० १ १३ यज्ञो वै स्व (यजु० १ ११) अहर्देवा सूर्य श० १ १ २ २१ यज्ञो वै सुम्नम् (यजु० १२ ६७) श० ७ २ २ ४, ७ ३ १ ३४ यज्ञो वै श्रेष्ठतम कर्म (यजु० १ १) श० १ ७ १ ५ यज्ञो हि श्रेष्ठतम कर्म तै० ३ २ १ ४ यज्ञो वै विट् (यजु० ३८ १९) श० १४ ३ १ ६ यज्ञो वै विशो यज्ञे हि सर्वाणि भूतानि विष्टानि श० ८ ७ ३ २१ ब्रह्म यज्ञ श० ३ १ ४ १५ ब्रह्म हि यज्ञ श० ५ ३ २ ४ ब्रह्म वै यज्ञ ऐ० ७ २२ सैषा त्रयी विद्या (=ऋक्सामयजूषि) यज्ञ श० १ १ ४ ३ एष वै प्रत्यक्ष यज्ञो यत् प्रजापति श० ४ ३ ४ ३ यज्ञ प्रजापति श० ११ ६ ३ ९. यज्ञ उ वै प्रजापति कौ० १० १ १३ १ तै० ३ ३ ७ ३ एष वै यज्ञ एव प्रजापति श० १ ७.४ ४. प्रजापतिर्यज्ञ ऐ० २ १७, ४ २६. श० १ १ १ १ १३, १ ५ २ १७ तै० ३ २ ३ १ गो० उ० ३ ८, ४ १२, ६ १ प्रजापतिर्वै यज्ञ गो० उ० २ १८ तै० १ ३ १० प्राजापत्यो यज्ञ तै० ३ ७ १.२ इन्द्रो यज्ञस्यात्मा श० ९ ५ १ ३३ इन्द्रो यज्ञस्य देवता ऐ० ५ ३४, ६ ९ श० २ १ २ ११ इन्द्रो वै यज्ञस्य देवता श० १ ४ १ ३३, १ ४ ५ ४ तदाहु किन्दैवत्यो यज्ञ इति ऐन्द्र इति ब्रूयात् गो० उ० ३ २३ एते वै यज्ञस्यान्त्ये तन्वौ यदग्निश्च विष्णुश्च ऐ० १ १ विष्णुर्यज्ञ गो० उ० १ १२ तै० ३ ३ ७ ६ यज्ञो वै विष्णु स यज्ञ श० ५ २ ३ ६ स य स विष्णुर्यज्ञ स, स य स यज्ञोऽसौ स आदित्य श० १४ १ १ ६ विष्णुर्वै यज्ञ ऐ० १ १५ यज्ञो विष्णु ता० १३ ३ २ गो० उ० ६ ७ पवित्रे स्थो वैष्णव्यौ (यजु० १ १२) इति यज्ञो वै विष्णुर्यज्ञिये स्थ इत्येवैतदाह श० १ १ ३ १ यज्ञो वै विष्णु (यजु० २२ २०) श० १ ३ १ ८ ८ यज्ञो वै विष्णु कौ० ४ २ ता० ९ ६ १० श० १ १ २ १३ गो० उ० ४ ६ तै० १ २ ५ १ यज्ञो वै विष्णु शिपिविष्ट ता० ९ ७ १० विष्णवे हि गृह्णाति यो यज्ञाय (हवि) गृह्णाति श० ३ ४ १ १४ अथेम विष्णु यज्ञ त्रेधा व्यभजन्त, वसव प्रात सवन रुद्रा माध्यन्दिन सवन-मादित्यास्तृतीयसवनम् श० १४ १ १ १५ तद् यदेनेन (यज्ञेन विष्णुना) इमा सर्वां (पृथिवीम्) समविन्दन्त तस्माद् वेदिर्नाम श० १ २ ५ ७ त (यज्ञ) वेद्यामन्वविन्दन् ऐ० ३ ९ यज्ञो वै वैष्णुवारुण कौ० १६ ८. मित्रा-बृहस्पती वै यज्ञपथ श० ५ ३ २ ४ यज्ञमुख वा ऽउपाशु श० ५ २ ४ १७ देवा यज्ञिया श० १ ५ २ ३ एतद्वै देवा-नामपराजितमायतन यद् यज्ञ तै० ३ ३ ७ ७ सर्वेषा वा ऽएष भूताना सर्वेषा देवानामात्मा यद् यज्ञ श० १४ ३ २ १ यज्ञ उ देवानामात्मा श० ८ ६ १ १० यज्ञो वै देवानामात्मा श० ९ ३ २ ७ (प्रजापतिर्देवानब्रवीत्) यज्ञो वोऽन्नम् श० २ ४ २ १ यज्ञ उ देवानामन्नम् श० ८ १ २ १० देवरथो वा एष यद् यज्ञ ऐ० २ ३७ कौ० ७ ७ एते वै यज्ञमवन्ति ये ब्राह्मणा शुश्रुवाꣳसो ऽनूचानो एते ह्येन तन्वत ऽएतऽएन जनयन्ति श० १ ८ १ २८ एतैर्ह्यत्र (यज्ञे) उभयैरर्थो भवति यद् देवैश्च ब्राह्मणैश्च श० ३ ३ ४ २० यज्ञो वै देवेभ्योऽपाक्रामत्स सुपर्णरूप कृत्वाचरत् त देवा एतै (सौपर्णै) सामभिरारभन्त ता० १४ ३ १० वय इव ह वै यज्ञो विधीयते श० ४.१ २ २५ त्रिवृद्धिर्यज्ञ श० १ १ ४ २३ त्रिवृत्प्रायणा हि यज्ञास् त्रिवृदुदयना श० २ ३

यज्ञायज्ञियम् श० ६ १ २ ३६. स्वर्गो वै लोको यज्ञायज्ञियम् श० ६ ४ ५ १० (साम) योनिर्वै यज्ञायज्ञियम् ता० ८ ६ ३ देवा वै ब्रह्म व्यभजन्त तस्य यो रसोऽत्यरिच्यत तद् यज्ञायज्ञियमभवत् ता० ८ ६ १ एषा वै प्रत्यक्षमनुष्टुब् यद् यज्ञायज्ञियम् ता० १५ ६ १५ यज्ञायज्ञीय ह्येव महाव्रतस्य पुच्छम् ता० ५ १ १८ अतिशय वै द्विपदा यज्ञायज्ञीयम् ता० ५ १ १६ वाचो रसो यज्ञायज्ञीयम् ता० १८ ५ २१ वाग् यज्ञायज्ञीयम् ता० ५ ३ ७ एते वै यज्ञा वागन्ता ये यज्ञायज्ञीयान्ता ता० ८ ६ १३ एषा वै शिशुमारी यज्ञपथेऽप्यस्ता यज्ञायज्ञीयम् ता० ८ ६ ६ पशवोऽन्नाद्य यज्ञायज्ञीयम् ता० १५ ६ १२ पन्था वै यज्ञायज्ञीयम् ता० ४ २ २१ कथमिव यज्ञायज्ञीयङ्गेयमित्याहुर्यथाऽनड्वान् प्रस्तावयमाण इत्थमिव चेत्थमिव चेति ता० ८ ७ ४]

यज्ञायते यज्ञ कामयमानाय (जनाय) ५ ४१ १ [यज्ञपदाद् आत्मन इच्छायामर्थे क्यजन्ताल्लट् । व्यत्ययेनात्मनेपदम्]

यज्ञास: सर्वे धर्म्या व्यवहारा ६.२३ ८ सङ्गन्तव्या (विद्वासो जना) ५ ६ २ [यज्ञप्राति० जसोऽसुक्]

यज्ञियम् यज्ञकर्माऽर्हतीति यज्ञियो देशस्तम् प्र०— तत्कर्माऽर्हतीति उपसख्यानम् अ० ५ १ ७१ इति वार्त्तिकेन घ प्रत्यय १ ६ ४ यज्ञ कर्त्तुमर्हम् (विद्वज्जनम्) ६ १६ ४ राज्यव्यवहारनिष्पादकम् (स्तोम=स्तुति प्रशसाम्) ३ ६० ७ यज्ञाऽर्हम् (भागम्) ३ ६० १ यज्ञसम्बन्धिनम् (भागम्) २ २३ २ यज्ञाऽनुष्ठानार्ह स्वरूपम् १२ १०४ यो यज्ञमर्हति तम् (भागम्) १ १६१ ६ यज्ञाऽङ्गसमूहनिष्पादकम् (तेज) ५ ६ यथायोग्य देश गन्तुमर्हम् (रथ=यानम्) १ ११६ १ यज्ञनिष्पन्नम् (सुखम्) १ २० ८ यज्ञसम्पादकम् (अग्नि=पावकम्) ३.२ १३ **यज्ञियस्य**=यज्ञमर्हत (सज्जनस्य) ३ १ २१ यज्ञमनुष्ठातुमर्हस्य (राज्ञ) २० ५२ पूजनार्हस्य (परमेश्वरस्य) ३ ३२ ७ विद्वत्सेवा-सङ्ग-विद्यादानानि कर्त्तुमर्हस्य (राज्ञ) ६ ४७ १३ **यज्ञिय.**=यज्ञ कर्त्तुमर्ह (विद्वज्जन) १ १४२ ३ यो यज्ञमर्हति स (अग्नि=विद्वान्) ४ १५ १ यज्ञेषु कुशल (इन्द्र= परमैश्वर्यप्रापको (जन) ३ ३२ १२ **यज्ञियान्**=यज्ञसाधकान् (देवान्=विदुषो जनान् १ १८८ ३ **यज्ञियानाम्**=यज्ञ सम्पालितुमर्हाणाम् (प्रजाजनानाम्) ६ ४१ १ यज्ञस्य साधकानाम् (प्राज्ञाना विद्वज्जनानाम्) ३ ३३ ११ सत्सङ्गतिमर्हाणाम् (विदुषा जनाना) ६ ६३ ५ यज्ञसिद्धिकर्तॄणाम् (सज्जनानाम्) ४ ४३ १ ये यज्ञमर्हन्ति तेषाम् (पित्रादीनाम्) १६ ५० यज्ञस्य पर्नि विधातुमर्हाणाम् (देवानाम्=आप्ताना विपश्चिताम्) ८ १५ यज्ञसम्पादनकुशलानाम् (विद्वज्जनानाम्) १७ १३ **यज्ञियाय**=यज्ञाऽर्हाय (वैदिक कर्मणे) ३८ ११. यज्ञकर्मार्हतीति यज्ञियो योद्धा तस्मै ११२७ १० **यज्ञिया:**=यज्ञ सम्पादितुमर्हा (विद्वज्जना) ५ ८७ ६ विद्यावृद्धिमययज्ञप्रचाराऽर्हा (देवा= विद्वासो जना) २.४१ २१ ये यज्ञ कर्त्तुमर्हन्ति ते (देवा.= विद्वत्तमा जना) ७ ३५ १५ ये सत्सङ्गति कर्त्तुमर्हा (देवा=विद्वासो जना) ६ ५२ १४ यज्ञकर्त्तार (विद्वज्जना.) ५ ५२ १ यज्ञसाधनाऽर्हा (विद्याविजना) ११४२ ६ **यज्ञिये**=यज्ञसम्बन्धिनि कर्मणि ७ २ ६ **यज्ञियेभ्य:**=यज्ञमनुष्ठातु योग्येभ्य (विद्वज्जनेभ्य) ११३६ ७ यज्ञसिद्धिकरेभ्य (देवेभ्य=विद्वद्भ्य) ३३ ५४ सत्यभाषणादियज्ञाऽनुष्ठातृभ्य (देवेभ्य=जीवेभ्य) ४ ५४ २ **यज्ञियेषु**=राजपालनादिसङ्गतेषु व्यवहारेषु ७.३२ १३ [यज्ञप्राति० 'तदर्हतीत्यर्थे' यज्ञर्त्विग्भ्या घखञौ' अ० ५ १ ७१ वा०सूत्रेण घ । 'तत्कर्मार्हतीत्युपसख्यानम्' अ० ५ १ ७१ वा०सूत्रेण दा घ । घस्येयादेश यज्ञियाय यजनाय नि० १०.८ यज्ञियानाम्=यज्ञसम्पादिनाम् नि० ७ २७ यज्ञिया देवा यज्ञसम्पादिन नि० ६ २७ वनस्पतयो हि यज्ञिया नहि मनुष्या यजेरन् यद्वनस्पतयो न स्यु श० ३ २ २ ६.]

यज्ञिया या यज्ञमर्हति सा (भा०—सर्वोत्तमा वाग् विद्युद्वा) ४ १६ **यज्ञियाम्**=या यज्ञमर्हति ताम् (अरमतिं=पूर्णा प्रज्ञाम्) ७ ४२ ३ [यज्ञियमिति व्याख्यातम् । तत स्त्रिया टाप्]

यज्ञियानि कर्मोपासनाज्ञानसम्पादनाऽर्हाणि कर्म्माणि १ ७२ ३ यज्ञसिद्धयेऽर्हाणि (नामानि=जलानि सज्ञा वा) ६ १४ शिल्पादियज्ञार्हाणि (नामानि=जलानि) १ ८७ ५. [यज्ञियमिति व्याख्यातम्]

यज्ञियास: या यज्ञमर्हन्ति ता अ०—यज्ञिया' (आशिष=इच्छा) ४५ ये यज्ञमर्हन्ति ते (देवास= विद्वास) ४५ यज्ञक्रियाकुशला (विद्वासो जना) १ ७३ ७ यज्ञसम्पादने योग्या (विद्वासो जना) १ ७२ ६ यज्ञसिद्धिकरा (देवा=विद्वज्जना) ७ ३६ ४ अहिसया यज्ञस्याऽनुष्ठातार (विद्वज्जना) ३ ५४ १८ शिल्पव्यवहारकर्त्तार (विद्वासो जना) ३ ५४ १३ ये शिल्पाख्य यज्ञमर्हन्ति ते (जना) १ १४८ ३ ये सत्यप्रिय व्यवहार कर्त्तुमर्हन्ति ते (जगद्धितैषिणो जना) ६ ४६ ११ [यज्ञियमिति

[यज्ञोपपदे णीञ् प्रापणे (भ्वा०) धातो 'सत्सूद्विषद्रुह०' इति क्विप्]

यज्ञन्यम् यज्ञ नयति प्रापयतीति यज्ञनीस्तम् (यज्ञपति=यजमानम्) प्र०—अत्र 'अमि पूर्व' अ० ६ १ १०६. इत्यत्र 'वा छन्दसि' इत्यनुवर्त्तनात्पूर्वरूपादेशो न भवति २ ६ [यज्ञोपपदे णीञ् प्रापणे (भ्वा०) धातो क्विप्। ततोऽमि पूर्वरूपैकादेशो न भवति छान्दसत्वात्]

यज्ञपतिम् यज्ञस्याऽनुष्ठातार स्वामिन यज्ञस्य कामयितार वा (मनुष्यम्) १ १२ उपदेशेन धर्मरक्षकम् भा०—पूर्णविद्य प्रगल्भ निष्कपटमाप्त जनम् १२ ६० एतस्य यज्ञस्य पालकम् (जनम्) ११ ७ राज्यपालकम् (अ०—स्वामिनम्) १७ ५४ सङ्गम्याना गृहाश्रमिणा पालक राजानम् ८ २२ गृहाश्रमस्य पालक पुरुषम् पालिका स्त्रिय वा ८ ७ सङ्गतस्य न्यायस्य पालकम् (पुरुषम्) ७ २० यथा होत्रादयो यज्ञपति रक्षन्तो यतन्ते तथा ५ ३८ यज्ञपालयितारम् (यजमान यज्ञसम्पादक विद्वास वा) ५ ३ यज्ञस्य राज्यस्य पालकम् (राजानम्) ३० १ **यज्ञपतिः**=यज्ञस्य स्वामी यज्ञकर्त्ता यजमान समीक्षा—धात्वर्थाद्यज्ञार्थस्त्रिविधो भवति—विद्याज्ञानधर्मानुष्ठानवृद्धाना देवाना विदुषामैहिक पारमार्थिक-सुखसम्पादनाय सत्करण सम्यक् पदार्थगुणसम्मेलविरोधज्ञानसङ्गत्या शिल्पविद्या-प्रत्यक्षीकरण नित्य विद्वत्समागमाऽनुष्ठान शुभविद्या-सुख-धर्मादिगुणाना नित्य दानकरमिति १ २ यज्ञस्य स्वामी पालक (देव =जगदीश्वर सूर्यलोको वा) १ २२ **यज्ञपते**=राजधर्माऽग्निहोत्रादिपालक (गृहपते) ८ २२ गृहाश्रमस्य पालक (गृहपते) ८ २५ **यज्ञपतौ**=यज्ञस्य युक्तस्य व्यवहारस्य पालके स्वामिनि ३३ ३० [यज्ञ-पतिपदयो. समास । यजमानो हि यज्ञपति श० ४ २ २ १० यजमानो वै यज्ञपति श० १ १ २ १२. वत्सा उ वै यज्ञपति वर्धन्ति यस्य ह्येते भूमिष्ठा भवन्ति स हि यज्ञपतिर्वर्धते श० १ ८ १ २८]

यज्ञप्री. यो यज्ञ प्राति पूरयति स (विद्वज्जन) २७ ३१ [यज्ञोपपदे प्रा पूरणे (अदा०) धातो क्विप्। आकारस्येकारश्छान्दस]

यज्ञबन्धुः यज्ञस्य न्यायव्यवहारस्य भ्रातेव वर्त्तमान (अग्नि =राजा) ४ १ ६ [यज्ञ-बन्धुपदयो समास]

यज्ञ यज्ञम् प्रतिव्यवहारम् ३ ६ १० [यज्ञम् पदस्य वीप्साया द्वित्वम्]

यज्ञवनसम् यज्ञस्य विद्याव्यवहारस्य विभाजक राज्यव्यवहारस्य विभक्तारम् (अध्यापक राजान वा) ४ १ २ [यज्ञ-वनस्पदयो समास । वनस्=वन सम्भक्तौ (भ्वा०) धातोरौणादिकोऽसुन्]

यज्ञवन्तः प्रशस्ता यज्ञा प्रयत्ना येषा ते (जना) ३ २७ ६ [यज्ञप्राति० प्रशसाया मतुप्]

यज्ञवाहसम् या यज्ञ परमेश्वरस्योपासन शिल्पविद्यासिद्ध वा वहति प्रापयति ताम् (धियम्) ४ ११ **यज्ञवाहसः**=यज्ञान् वोढु शील येषा ते (मरुत =परीक्षका विपश्चितो जना) १ ८६ २ **यज्ञवाहसि**=यज्ञान् सङ्गतान् राजधर्मादीन् वहन्ति यस्मिन् राज्ये तस्मिन् ६ ३७ **यज्ञवाहसे**=यज्ञस्याऽध्ययनाऽध्यापनस्य प्राप्तये ३ ८ ३ यज्ञस्य प्रापकाय (सज्जनाय) ३ २४ १ [यज्ञोपपदे वह प्रापणे (भ्वा०) धातोर्णिजन्ताद् औणा० असुन्]

यज्ञवाहसा यज्ञान्. हुतद्रव्यान् वहत प्रापयतस्तौ (अश्विनौ=सूर्याचन्द्रमसौ) प्र०—'अत्र सुपा सुलुक्०' इत्याकारादेश १ १५ ११ यज्ञप्रापकौ (इन्द्रवायू=राजाऽमात्यौ) ४ ४७ ४ ['यज्ञवाहम्' इति व्याख्यातम्। ततो द्विवचनस्याकारादेशश्छान्दस]

यज्ञवृद्धम् यज्ञे पूज्य विद्वासम् ६ २१ २ [यज्ञ-वृद्धपदयो समास]

यज्ञश्रियम् चक्रवर्त्तिराज्यादेर्महिम्न श्रीलक्ष्मी शोभा ताम् प्र०—राष्ट्र वा अश्वमेध शत० १३ १ ६ ३ अनेन यज्ञशब्दाद्राष्ट्र गृह्यते 'यज्ञो वै महिमा' श० ६ २ ३ १८, १४ ७ [यज्ञ-श्रीपदयो समास]

यज्ञसाधनः यज्ञस्य विद्वत्सत्कारस्य साधनानि यस्य स (विद्वज्जन) १ १४५ ३ [यज्ञ-साधनपदयो समास]

यज्ञसाधम् यो यज्ञ प्रजापालन साध्नोति तम् (रुद्र=सभाध्यक्षम्) १ ११४ ४ यो यज्ञैर्विज्ञानादिभिर्ज्ञातु शक्यस्तम् (अग्नि=परमेश्वरम्) १ ९६ ३ यज्ञ साध्नुवन्तम् (विद्वास जनम्) १ १२८ २ सब ससार और विज्ञानादि यज्ञ का साधक सब का जनक (ईश्वर) आर्याभि० १ ४०, ऋ० १ ७ ३ ३ [यज्ञोपपदे साध ससिद्धौ (स्वा०) धातो 'कर्मण्यण्' इत्यण्]

यज्ञायज्ञा यज्ञे यज्ञे प्र०—अत्र 'सुपा सुलुक्०' इत्याकारादेश २७ ४२ [यज्ञे पदस्य वीप्साया द्वित्वम्। सप्तम्या आकारादेशश्छान्दस]

यज्ञायज्ञियम् यज्ञा सङ्गतव्या व्यवहारा अयज्ञास्त्यक्तव्याश्च तान् यदर्हति तत् (साम=तृतीयो वेद) १२ ४ [यज्ञ-अयज्ञपदयो समासे 'तदर्हती' त्यर्थे घ । चन्द्रमा वै

(जीवाय) २२ ८ गच्छते (जनाय) १ १८८ २ **यन्**=गच्छन् (रथ =यानम्) प्र०—अत्र 'इण' धातो' शतृप्रत्ययो यणादेशश्च १ १८३.२ य एनि रा (अग्नि =भौतिक) ६.३ ७ **यन्तम्**=गच्छन्त प्राप्नुवन्त वा (विद्यार्थिजनम्) १ १०५ १८ प्रयत्न कुर्वन्तम् (सज्जनम्) ५ ६४ २ **यन्त:**=उपयन्त (अ०—मुविद्वास) १७ ६८ प्राप्नुवन्त (पुरुषार्थिमनुष्या) १ १४० १३ **यन्तौ**=गमयन्तौ (अध्यापकोपदेशकौ) १ १३६ ४ [इण् गतौ (अदा०) धातो शतरि यणादेशे रूपम्]

यता प्राप्ता (घृताची=रात्रि) ४ ६ ३ [यतते गति-कर्मा (निघ० २ १४) धातोरौणा० अन्। तत स्त्रिया टाप्]

यताना प्रयतमाना (हसा =पक्षिविशेषा) ३ ८ ६ [यती प्रयत्ने (भ्वा०) धातो शानच्। मुकोऽभावश्छान्दस]

यति या सङ्ख्या येषान्तान् अ०—यावत (पितॄन्) १६ ६७ [यत्सर्वनाम्न सख्यापरिमाणे डतिश्छान्दस]

यती गच्छन्ती (भूमि) ५ ५६ २ यतमाना (विदुषी स्त्री) ५ ४५ ७ **यतीषु**=नियतासु सेनासु ४ ३८ ७ [इण् गतौ (अदा०) धातो शत्रन्तान् ङीप्]

यतीरिव प्रयत्नसाध्या क्रिया इव ५ ५३ ५ [यती-इवपदयो समास]

यतुनस्य यत्नशीलस्य (विद्वज्जनस्य) ५ ४४ ८ [यती प्रयत्ने (भ्वा०) धातोर्बाहु० औणा० उनन्]

यतोजा: यस्माज्जात भा०—यस्मादुत्पन्न (चन्द्रमा) २३ ५६ भा०—उपादानकारणम् (प्रकृति) २३ ६० [यतस्-उपपदे जनी प्रादुर्भावे (दिवा०) धातोर्ड। यतस्=यत्सर्वनाम्न पञ्चम्यन्तात् तसिल्]

यतोयत: यस्माद्यस्मात् स्थानात् ३६ २२ [यतस्-पदस्य वीप्साया द्विर्वचनम्। यत =यत्सर्वनाम्नस् तसिल्]

यत्काम. य कामो यस्य स (जन) ४४ **यत्कामा:**=य पदार्थ कामो येषान्ते (अस्मदादिजना) २३ ६५ यस्य यस्य काम कामना येषान्ते (प्रजाजना) १० २० जिस जिस पदार्थ की कामना वाले हम लोग स० वि० ६, १० १२१ १० [यत्-कामपदयो समास]

यत्र यस्मिन् ब्रह्मणि १७ ३० यस्मिन् देशे १ ८३ ६ यस्मिन् समये २ २४ ८ येषु ६ ३ जिस परमात्मा के सामर्थ्य से आर्याभि० २ ४०, १७ २६ [यत्सर्वनाम्न 'सप्तम्यास्त्रल्' इति त्रल्]

यथा येन प्रकारेण १२ ८५ जिस प्रकार से आर्याभि० १ ५३, ऋ० २ ८ १२ ३ जैसे आर्याभि० २ ५०, २५ १८ [यत्सर्वनाम्न 'प्रकारवचने थाल्' अ० ५ ३ २३ सूत्रेण थाल्। यथा=इव नि० ३ १५]

यथाकृतम् येन प्रकारेणाऽनुष्ठितम् (कर्म-फलम्) ७ १८.१० [यथा-कृतपदयो समास]

यथापूर्वम् जैसे पूर्व कल्प मे स० प्र० २६६, १० १९० ३ यथा पूर्वकल्पसृष्टौ प० वि०। १ १९० ३ [यथा-पूर्वपदयो समास]

यथाभागम् भागमनतिक्रम्य कुर्वन्तीति भा०—यथा-योग्य भोगम् २ ३१ भाग भाग प्रतीति प्र०—अत्र वीप्सार्थे प्रति २ ३१ [यथा-भागपदयो समास]

यथायथम् यथायोग्यम् २१ ५८ यथाऽर्थम् ५ ४०. [यथा-पदस्य 'यथास्वे यथायथम्' अ० ८ १ १४ सूत्रेण द्वित्व नपुसकता च निपात्यते]

यथावशम् वश कामनामनतिक्रम्य करोतीति १६ ६० वशमनतिक्रम्य वर्त्तते तत् ३ ४८ ४ वशमनतिक्रम्य करोति ५ ३४ ६ वशमनतिक्रम्य यथा स्यात्तथा २ २४ १४ [यथा-वशपदयो समास]

यदवे मनुष्याय ५ ३१ ८ **यदुम्**=इतरधनाय यततेऽसौ यदुर्मनुष्यस्तम् प्र०—अत्र यती प्रयत्ने इत्यस्माद् बाहुलका-दौणादिक उ प्रत्ययस्तकारस्य दकार १ ३६ १८ यत्नशील मनुष्यम् ६ २०.१२ प्रयतमानम् (नरम्) ६.४५ १ **यदुषु**=प्रयत्नकारिषु मनुष्येषु प्र०—यदु इति मनुष्यनाम निघ० २ ३, १ १०८ ८ [यदव =मनुष्यनाम निघ० २ ३ यती प्रयत्ने (भ्वा०) धातोरौणा० उ। तस्य दकारादेश]

यदा यस्मिन् काले ४ २४ ८ [यत्सर्वनाम्न 'सर्वै-कान्यकियत्तद काले दा' इति दा]

यदि आकाङ्क्षार्थे १ ११ ३ सामर्थ्यानुकूलविचारे १ २७ १३ चेत् ४ ५ ११

यदिव सङ्गतमिव १ १६४ ३७ [यत्-इवपदयो समास। यत्=इण् गतौ (अदा०) धातो शतृ]

यन् गच्छेयु प्र०—अत्राऽडभाव १ १७३ ३ प्राप्नु-वन्ति ३ ४५ **यन्त**=प्राप्नुवन्ति ५ ४६ १२ ददति ६ ५१ ५ **यन्ति**=प्राप्नुवन्ति गच्छन्ति वा १७ २७ यान्ति प्राप्नुवन्ति १ ५५ प्रापयन्ति १ ११६ २ इच्छन्ति १ १२३ १२ **यन्तु**=प्राप्नुवन्तु २० ४० गच्छन्तु १७ ४० आगच्छन्तु १६ ५८ गमयन्तु ५ ६२ ४ [इण् गतौ (अदा०) धातोर्लङ्। आडभावश्छान्दस। अन्यत्र लट् लोट् च। यन्ति याच्ञाकर्मा निघ० ३ १६]

यन्त प्रयच्छत प्र०—अत्र यम-धातो. 'बहुल छन्दसि'

व्याख्यातम् । ततो जसोऽमुक्]

यज्ञे यज्ञे प्रतियज्ञम् १.१३६ १. सङ्गन्तव्ये सङ्गन्तव्ये व्यवहारे ५ ५ ६ [यज्ञे पदस्य वीप्साया द्वित्वम्]

यज्ञेषम् यज्ञकरणेच्छाविशिष्टम् (लोक=देशम्) ऋ० भू० २१६, २० २५ [इषु इच्छायाम् (तुदा०) धातोर्घञर्थे कप्रत्यये सति 'इष' इति रूपम् । यज्ञ-इषपदयो. समास]

यज्यवः सत्कर्त्तव्या (जनास =सज्जना) ३ १६ ४. सङ्गन्तार (नर =नायका जना) २ १४ ८ **यज्यवे**= यज्ञानुष्ठानाय यजमानाय वा ५ ४१ ३ सङ्गताय (वरुणाय= श्रेष्ठाय) २६ १७ होमादिशिल्पविद्यासाधकाय विदुषे प्र०— अत्र 'यजिमनिशुन्धिदसि०' उ० ३ २० अनेन यजधातोर्युच् प्रत्यय १ ३१ १३ **यज्यून्**=सत्यभाषणादियज्ञाऽनुष्ठातॄन् (विदुषो जनान्) ५ ३१ १३ यज्यो =सङ्गन्तुमर्हस्य सत्यव्यवहारस्य ४ २३ २ [यज देवपूजासगतिकरणदानेषु (भ्वा०) धातो 'यजिमनिशुन्धि०' उ० ३ २० सूत्रेण युच्]

यज्वनः विदुषां सेवकस्य सङ्गच्छमानस्य (सज्जनस्य) ६.२८ ४ यज्ञाऽनुष्ठातु (सज्जनस्य) प्र०—अत्र 'सुयजोर्ङ्वनिप्' अ० ३ २ १०३ अनेन यजधातोर्ङ्वनिप्प्रत्यय. १ १३ १२ यज्ञ करने वाले (प्रजाजन) का स० प्र० २३८, १० ४६ १ **यज्वने**=यज्ञस्य कर्त्रे (सज्जनाय) ६ २८ २ **यज्वा**=सङ्गन्ता (परमेश्वर) ६ १५ १४ [यज देवपूजासगतिकरणदानेषु (भ्वा०) धातो 'सुयजोर्ङ्वनिप्' अ० ३ २ १०३ सूत्रेण ङ्वनिप् । कर्त्तरि वनिप् वा]

यज्वरी. शिल्पविद्यासम्पादनहेतून् १ ३ १ [यज देवपूजासगतिकरणदानेषु (भ्वा०) धातोर्वनिप् ङ्वनिप् वा तत स्त्रिया 'वनो र च' इति ङीप् रेफश्चान्तादेश]

यतङ्करः य प्रयत्न करोति स (मनुष्य) ५ ३४ ४ [यतोपपदे डुकृञ् करणे (तना०) धातो कर्त्तरि खच् छान्दस । यत =यती प्रयत्ने (भ्वा०) धातोर्घञर्थे क । यमु उपरमे (भ्वा०) धातोर्वा क्त.]

यतति यतते प्र०—अत्र व्यत्ययेन परस्मैपदम् ७.३६ २ **यतथः**=यतेथे ५ ७४ २ प्रेरयथः ५ ६५ ६ [यती प्रयत्ने (भ्वा०) धातोर्लट् । व्यत्ययेन परस्मैपदम्]

यतते व्यवहारयति १ ६५ ७ सयतो भवति १ ६८ १ साध्नोति ३ १६ ४ यत्न करोति १ १८६ ११ **यतन्ते**=यातयन्ति प्र०—अत्र भावितण्यर्थ १ १६३ १०. **यतस्व**=प्रयत्न कुरु ७ ४५ **यतेम**=प्रयत्न कुर्याम ६ १ १० [यती प्रयत्ने (भ्वा०) धातोर्लट् । अन्यत्र लोट् लिङ् च । यतते गतिकर्मा निघ० २ १४]

यतन् यत्न कुर्वन् (राजा) ५ ४८ ५ [यती प्रयत्ने (भ्वा०) धातो शतृ । व्यत्ययेन परस्मैपदम्]

यतमानः प्रयतमान (राजा) ५ ४४ [यती प्रयत्ने (भ्वा०) धातो शानच्]

यतमानाः प्रयत्न कुर्वन्त्य (उषस) १ १२३ १२ [यती प्रयत्ने (भ्वा०) धातो शानच्-प्रत्ययान्तात् स्त्रिया टाप्]

यतयः सन्यासी लोग स० वि० १६८, १०.७२ ७. **यतये**=यतमानाय सन्यासिने ७ १३ १ [यमु उपरमे (भ्वा०) धातो सज्ञाया क्तिच् । यती प्रयत्ने (भ्वा०) धातोर्वोणा० इन्]

यतरश्मयः यता निगृहीता रश्मय किरणा रज्जवो वा येषान्ते (अश्वास =अश्वाद्यास्तुरङ्गा वा) ५ ६२ ४ [यत-रश्मिपदयो समास । यत =यमु उपरमे (भ्वा०) धातो क्त]

यतस्रुक् उद्यतक्रियासाधन (मनुष्य) ४ २ १० यता उद्यता स्रुचो येन स (अग्नि =विद्वज्जन) ४ १२ १ **यतस्रुचः** यता गृहीता स्रुचो यैस्ते (ऋत्विजो मनुष्या) ३ २ ५ यता स्रुक् यज्ञसाधन यैस्ते ऋत्विज ३ ८ ७ यता स्रुचो यज्ञपात्राणि यैस्तान् ऋत्विज २ ३४ ११ प्राप्तोद्यमा (जना) १ १४२ ५ उद्यता कर्मसाधनानि यैस्ते (जना) ३ २७ ६ **यतस्रुचे**=उद्यतयज्ञपात्राय यजमानाय १ १४२ १ [यत-स्रुच्पदयो समास । यत =यमु उपरमे (भ्वा०) धातो क्त । यत =यमु उपरमे (भ्वा०) धातो क्त । यतस्रुच ऋत्विङ्नाम निघ० ३ १८]

यतस्रुचा यता नियता स्रुच साधनानि याभ्यामुपदेशाभ्या तौ (विद्वासौ जनौ) १ ८३ ३ यता उद्यता स्रुच स्रुग्वत्कलादयो ययोस्तौ (इन्द्राग्नी=वायुविद्युतौ) १ १०८ ४ [यतस्रुगिति व्याख्यातम् । ततो द्विवचनस्याकारश्छान्दस]

यतः जिस सामर्थ्य से आर्याभि० १ ११, ऋ० १ २ ७ १६ जिस देश से आर्याभि० २ ७, ३६.२२. यस्मात् १२ ५२ यस्य प्रकृत्याख्यकारणस्य सकाशात् १७ २० येन विज्ञानेन ६ ४ हेत्वर्थे १ २५ १७. [यत्सर्वनाम्न 'पञ्चम्यास्तसिल्' इति तसिल्]

यतः प्रापकान् (देवान्=दिव्यान् गुणान्) ११ ३ [इण् गतौ (अदा०) धातो शत्रन्ताद् द्वितीयाबहुवचनम्]

यति प्रयतन्ते यस्मिन् तस्मिन् (सन्मार्गे) ७ ४३ ४ **यते**=यत्नशीलाय (विद्यार्थिने) ५ २७ ४ प्रयतमानाय

एष वै यमो य एष (सूर्य) तपति श० १४.१ ३.४. अथैष एव गार्हपत्यो यमो राजा श० २ ३ २ २ अग्निर्वाव यम गो० उ० ४ ८ अग्निर्वै यम श० ७ २ १ १० यमो ह वा ऽअस्या (पृथिव्या) अवसानस्येष्टे श० ७ १ १ ३, अय वै यमो योऽय (वायु) पवते श० १४ २ २ ११. यम पन्था तै० २ ५ ७ ३ (यमाय) दण्डपाणये स्वाहा प० ५ ४. याम शुक हरितमालभेत गो० उ० २ १ क्षत्र वै यमो विश पितर श० ७ १ १ ४ यमो वैवस्वतो राजेत्याह तस्य पितरो विश श० १३ ४ ३ ६ पितृलोको यम कौ० १६ ८ कि देवतोऽस्या दक्षिणाया दिश्यसीति यमदेवत इति श० १४ ६ ६ २२ अनुराधा प्रथम अपभरणीरुत्तम तानि यमनक्षत्राणि तै० १ ५ २ ७]

यमराज्यम् यमस्य न्यायाधीशस्य स्थानम् ३५ १६. **यमराज्ये**=यमस्य सभाधीशस्य राष्ट्रे १६ ४५ राजसभायाम् ऋ० भू० २५८, १६ ४५ [यम-राज्यपदयो समास]

यमसानः नियन्ता सन् (अश्व =तुरङ्ग) ६ ३ ४. [यमु उपरमे (भ्वा०) धातोर्बाहु० औणा० असानच्]

यमसूम् या यमान् नियन्तॄन् सूते ताम् (स्त्रियम्) ३० १५ **यमसूः**=या यम सूर्य सूते सा विद्युत् ३ ३६ ३ [यमोपपदे पूङ् प्राणिगर्भविमोचने (अदा०) धातो कर्त्तरि क्विप्]

यमा यमौ उपरतौ (सूर्याचन्द्रमसौ) ३.३६ ३ [यमप्राति० द्विवचनस्य 'सुपा सुलुक्०' इत्याकारादेश]

यमितवा इव निग्रहीतुमर्हे इव (सूर्यो वा सारथिरिव) प्र०—अत्र यमधातोस्तवै प्रत्यय 'वाच्छन्दसि सर्वे विधयो भवन्ति' इतीडागम १ १८४ [यमितवै-इवपदयो समास । यमितवै=यमु उपरमे (भ्वा०) धातोस्तुमर्थे तवै । इडागमश्छान्दस]

यमिष्ठा अतिशयेन यन्तारौ (मित्रावरुणा=अध्यापकोपदेशकौ) ६ ६७ १ [यमु उपरमे (भ्वा०) धातोस्तृजन्तादतिशायन इष्ठन् । 'तुरिष्ठेमेयस्सु०' इति तृचो लोप । द्विवचनस्याकार]

यमिष्ठासः अतिशयेन नियन्तार (सारथय) १ ५५ ७ [यमिष्ठप्राति० जसोऽसुक् । यमिष्ठ इति व्याख्यातम्]

यमुना नियन्तार (राजादयो जना) ७ १८.१६ [यमु उपरमे (भ्वा०) धातो 'अजियमि०' (उ० ३ ६१) इत्युणादिसूत्रेण उनन् । विभक्तेर्लुक्]

यमुनायाम् यमनियमान्वितायां क्रियायाम् ५ ५२ १७ [यमु उपरमे (भ्वा०) धातो 'अजियमि०' उ० ३ ६१ सूत्रेणोनन् ततष्टाप् स्त्रियाम्]

यमे यच्छन्ति बलपराक्रमौ याभ्या ते (अन्नजले) २ ७ [यमु उपरमे (भ्वा०) धातो 'यम समुपनिविषु च' इति चानुकृष्टानुपसर्गेऽप्यप्]

यम्यः यमाय न्यायकारिणे हित (भा०—राजा) ५ ४४ ४ [यमप्राति० हितार्थे यत्]

यम्या या सर्वान् प्राणिनो निद्रया नियच्छति सा रात्रि प्र०—यम्येति रात्रिनाम निघ० १ ७, ३ ५५ ११ रात्रिदिने ५.४७ ५ [यम्या रात्रिनाम निघ० १.७]

यम्या न्यायकर्त्र्या (स्त्रिया) १२ ६३ **यम्यै**=यमस्य न्यायकर्त्तु स्त्रियै २५.५.

यय गच्छन् ५ ६१ २. **ययथुः**=यातम् १ ११७ १३ **ययन्थ**=यच्छति १ ५६ १. **ययाथ**=प्राप्नुया ३ ३३ १० गच्छ ६ ७० ४. प्राप्नुत ५ २६.६ **ययाम**=प्राप्नुयाम ७ ३८.१ **ययुः**=प्राप्नुवन्ति ६ ६५ २. गच्छन्ति ५ ८६ ३ यान्ति २३ १६ प्राप्नुयु २ ५ ५ **ययौ**=याति गच्छति ४.२६ ५ प्राप्नोति ३ ३३ ६ [या प्रापणे (अदा०) धातोर्लिटि मध्यमबहुवचने रूपम् । 'ययन्थ' प्रयोगे यमु उपरमे (भ्वा०) धातोर्लिट् । अन्यत्र लिट्लकारे रूपाणि । 'ययाम' प्रयोग इडभावश्छान्दस]

ययातिवत् यथा प्रयत्नवन्त पुरुषा. कर्माणि प्राप्नुवन्ति प्रापयन्ति च तद्वत् प्र०—अत्र 'यती प्रयत्ने' इत्यस्मादौणादिक इन्प्रत्यय स च बाहुलकाण्णित् सन्वच्च । समीक्षा—इद सायणाचार्येण भूतपूर्वस्य कस्यचित् ययाते राज्ञ कथासम्बन्धे व्याख्यात तदशुद्धम् १ ३१.१७ [ययातिप्राति० तुल्यार्थे वति । ययाति=यती प्रयत्ने (भ्वा०) धातोरौणा० इन् । स च बहुलवचनात् णित् सन्वच्च]

ययिम् प्राप्तव्य मार्गम् १ ८७ २ याति सोऽय मेघस्तम् १ ५१.११. **ययिः**=यो याति स (नियमपालको जन) ५.७३.७. याता (विद्वज्जन) ५ ८७ ५ [या प्रापणे (अदा०) धातो 'आदृगमहन०' इति किर्लिट्वच्च]

ययुः यो याति स (अग्नि=सूर्यरूपः) २२ १६ [या प्रापणे (अदा०) धातो 'यो द्वे च' उ० १ २१ सूत्रेण उ सन्वच्च]

ययम् ययिं यातारम् (रथम्) प्र०—अत्र 'आदृगमहन०' इति कि प्रत्यय 'अमि पूर्व' इत्यत्र 'वाच्छन्दसि' इत्यनुवर्त्तनात् पूर्वसवर्णाऽभावपक्षे यणादेश २ ३७ ५ [या प्रापणे (अदा०) धातो 'आदृगमहन०' इति कि ।

इति शपो लुक् १ ८५ १२ [यमु उपरमे (भ्वा०) धातोर्लोट् । 'बहुल छन्दसी' ति शपो लुक्]

यन्तन वियच्छत ५ ५५ ६ [यमु उपरमे (भ्वा०) धातोर्लोटि शपो लुकि च रूपम् । तप्रत्ययस्य तनबादेश]

यन्ता नियमकर्त्ता (परमेश्वर) ५ ३५ नियामक (विद्वज्जन) १८ २८ निग्रहीता (अग्नि =पावक इव सज्जन) ३ १३ ३ नियन्ता (मनुष्य) ६ २२ **यन्तारम्**= नियन्तारमुपरतम् (वेतन=परमात्मानम्) ३ ३ ८ **यन्तारः**=ये यान्ति प्राप्नुवन्ति ते (सूरय =धार्मिका विद्वास) ७ १६ ७ निगृहीतेन्द्रिया (वीरा पुरुषा) ३३ १४ [यमु उपरमे (भ्वा०) धातो कर्त्तरि तृच् । यन्ता=अपानो वै यन्ताऽपानेन ह्यय यत प्राणो न पराङ् भवति ऐ० २ ४० वायुर्वै यन्ता ऐ० २ ४१]

यन्ता यन्तौ प्राप्नुवन्तौ (जनौ) १ १३१ ३ [इण् गतौ (अदा०) धातो शतृ । द्विवचनस्याकारादेशश्छान्दस]

यन्तारा नियन्तारौ (कालसृष्टिक्रमौ) १ १६२ १६ [यमु उपरमे (भ्वा०) धातो. कर्त्तरि तृच् । द्विवचनस्याकारादेशश्छान्दस]

यन्तुरम् यन्तारम् (अग्नि=विद्वासम्) प्र०—अत्र यम-धातोर्बाहुलकात्तुर प्रत्यय ३ २७ ११ [यमु उपरमे (भ्वा०) धातोर्बाहु० औणा० तुर]

यन्त्रम् यन्त्रयति सङ्कुचति चालयति निबध्नाति वा येन तत् (कलायन्त्रम्) ४ १८ यन्त्र्यते, यन्त्रयन्ति सङ्कोचयन्ति विलिखन्ति चालयन्ति वा येन तत् (भा०—यानकलाकीलयन्त्रादिकम्) १ ३४ १ **यन्त्रेण**=कलाकौशलतयोत्पादितेन (साम्राज्येन) १८ ३७ [यमु उपरमे (भ्वा०) धातो 'गुधृवीपचि०' उ० ४ १६७ सूत्रेण स्त्र । अथवा यत्रि सकोचने (चुरा०) धातोर्घञ्]

यन्त्रिये शिल्पविद्यासिद्धाना यन्त्राणामर्हे योग्ये निष्पादने ६ ३० [यन्त्रप्राति० अर्हत्यर्थे घश्छान्दस]

यन्त्री यन्त्रनिमित्ता भा०—यन्त्रवज्जितेन्द्रिया अ०—भूमिरिव (स्त्री) १४ २२ यन्त्रवत्स्थिता (भा०—भूमिवत् क्षमान्विता स्त्री) १४ २२ [यत्रि सकोचने (चुरा०) धातोरौणा० इन् । तत स्त्रियाम् 'कृदिकारादक्तिन' इति ङीप्]

यन्धि नियच्छ ६ २४ ६ प्रयच्छ ४ ३२ ७ यच्छ १ १२१ १४ [यमु उपरमे (भ्वा०) धातोर्लोट् । शपो लुक् । यन्धि याच्ञाकर्मा निघ० ३ १६]

यमत् उपरमेत १२ ११. नियच्छेत् ५ ३४ २ यच्छति ५ ४६ ५ यमति=नियमयति प्र०—अत्र 'छन्दस्युभयथा' इति शप आर्धधातुकत्वाण् णिलोप १ १०० ६ यच्छेत् प्र०—अत्र लेटि 'बहुल छन्दसि' इति शत्रभाव १ १४१ ११ **यमतुः**=सयच्छत ६ ६७ १ **यमते**=यच्छति प्र०—'वाच्छन्दसि' इति छादेशो न १ १२७ ३ **यमन्**=निग्रह कुर्वन्तु ५ ४४ ५ यच्छन्तु ३ ४५ १ **यमसे**=निगृह्णामि ५ ३३ ३ नियच्छसि १० २० **यमिष्ट**=नियच्छेत् ५ ३२ ७ **यमुः**=नियच्छेयु ५ ६१ ३ [यमु उपरमे (भ्वा०) धातोर्लेट् । 'वा छन्दसी' ति छादेशो न । अन्यत्र लट् लङ् लुङ् लिट् च]

यमनः य सद्गुणान् यच्छति स, भा०—जितेन्द्रिय (विद्वज्जन) १८ २८ उपरन्ता (मनुष्य) ६ २२ [यमु उपरमे (भ्वा०) धातो 'कृत्यल्युटो बहुलम्' इति कर्त्तरि ल्युट्]

यमनी आकर्षणेन नियन्तु शीला आकाशवद् दृढा (स्त्री) १४ २२ [यमु उपरमे (भ्वा०) धातोर्ल्युडन्तात् स्त्रिया ङीप्]

यमनेत्राः यमेष्वहिंसादिषु योगाङ्गेषु नीतिषु वा नेत्र प्रापण येषा ते (देवा.=योगिनो न्यायाधीशा) ६ ३६ **यमनेत्रेभ्यः**=यमस्य वायोर्नेत्र नयनमिव नीतिर्येषा तेभ्य (देवेभ्य =विपश्चिद्भ्य) ६ ३५ [यम-नेत्रपदयो समास । यममिति व्याख्यास्यते । नेत्रम्=णीञ् प्रापणे (भ्वा०) धातोरौणा० ष्ट्रन्]

यमम् नियन्तारम् (वीरजनम्) २ ५ १ यच्छति येन तम् (श्रव =सर्वविद्याश्रवणम्) १ ७३ १० सुनियमम् ३ २७ ३ वेगवाला होने से वायु को स० वि० २१६, ८ २४ २२ **यमस्य**=उपरतस्य मृत्योरिव शत्रुसमूहस्य १.११६ २ न्यायाधीशस्य (राज्ञ) २५ ४ सर्वनियन्तु (ईश्वरस्य) १ ८३ ५ वायो १ ३५ ६ **यमः**=सर्वोपरत (सेनेश) १ ६६ ४ नियन्ता न्यायाधीश इव (अर्वा=वेगवान् वह्निरिव वर्त्तमानो जन) २६ १४ यन्ता (परमेश्वर) ३५ १ वायु, विद्युत् और सूर्य स० वि० २१६, ८ ५७ न्यायो सयमी सन्तान १६ ५१ यच्छति सोऽय सूर्य ८ ५७ सत्यविद्याव्यवस्थापक (परमेश्वर) ऋ० भू० २६०, १६ ५१ **यमाय**=नियन्त्रे न्यायाधीशाय वायवे वा ३६ १३. दण्डदानाय ३० १४. **यमेन**=नियामकेन (वायुना) १ १६३ २ वायुना विद्युता वा सह ७ ३३ १२. नियन्त्रा जगदीश्वरेण ७ ३३ ६ न्यायाधीशेन १२ ६३. [यमु उपरमे (भ्वा०) धातो कर्त्तरि पचाद्यच् । यम = यच्छतीति सत नि० १० १६. यम पदनाम निघ० ५ ४

यद् यविष्ठ इति यद्वै जात इद सर्वमयुवत तस्माद् यविष्ठ श० ७ ५ २ ३८]

यविष्ठ्य यो वेगेन पदार्थान् यौति सयुनक्ति सहतान् भिनत्ति वा स युवाऽतिशयेन युवा यविष्ठो यविष्ठ एव यविष्ठ्यस्तत्सम्बुद्धौ (अग्ने=सुखप्रदात सभेश) १ ३६ ६ येऽतिशयेन युवानस्तेषु साधो (राजन्) ७ १६ १० अतिशयेन ब्रह्मचर्यविद्याभ्या प्राप्तयौवन (विद्वदुपदेशक) ३ ९ ६ यविष्ठ्येष्वतिशयेन युवसु कुशलस्तत्सम्बुद्धौ (अग्ने=विद्वज्जन) ३ २८ २ योऽतिशयेन युवा पदार्थानाममिश्रीकरणे वलवान् स यविष्ठ यविष्ठ एव यविष्ठ्यस्तत्सम्बुद्धौ (अग्ने) प्र०—अत्र युवन्-शब्दादिष्ठन् प्रत्ययस्ततो 'नवसूर्त्तमर्त्तयविष्ठेभ्यो यत्' अ० ५ ४ ३६ इति वार्त्तिकेन स्वार्थे यत्प्रत्यय ३ ३ हे वलवत्तम (ईश्वर) आर्याभि० १ १२

यविष्ठ्यम्=योऽतिशयितेषु युवसु भवम् (ऋत्विजम्) ५ २६ ७ [यविष्ठ=युवन्प्राति० अतिशायन इष्ठन्। यविष्ठप्राति० 'नवसूर्त्तमर्त्तयविष्ठेभ्यो यत्' अ० ५ ४ ३६ वा०सूत्रेण स्वार्थे यत्। साध्वर्थे कुशलार्थे वा यत्। यविष्ठो ह्यग्नि श० १ ४ १ २६]

यव्यम् यवाना भवन क्षेत्रम् १ १४० १३ [यवप्राति० 'यवयवकषष्टिकाद् यत्' अ० ५ २ ३ सूत्रेण भवने क्षेत्रे ऽभिधेये यत्]

यव्या यवेषु साधूनि हवींषि यव्यानि प्र०—अत्र 'शेश्छन्दसि०' इति शेर्लोप ३ ४६ [यवप्राति० 'तत्र साधु' रित्यर्थे यत्। यव्यप्राति० शेर्लोपश्छन्दसि]

यव्या नदीव १ १७३ १२ [यव्या नदीनाम निघ० १ १३ यव्या मासा श० १ ७ २ २६]

यव्या मिश्रिताऽमिश्रितगत्या १ १६७ ४ [यव्यप्राति० तृतीयैकवचनस्य 'सुपा सुलुग्०' इति डादेश । यव्यमिति व्याख्यातम्]

यव्यावत्याम् यवे भवा यव्या पाका विद्यन्ते यस्या सेनायाम् ६ २७ ६ [यव्यप्राति० मतुवन्तात् स्त्रियां ङीप् तत सप्तमी। यव्य=यवप्राति० भवार्थे यत्]

यशसम् अतिकीर्तियुक्तम् (रयिम्) १ ९२ ८ यशस्विनम् (पतिम्) ५ ३२ ११ कीर्तिकारकम् (रयिं=श्रियम्) ३ १ १९ सर्वोत्तमकीर्तिवर्धकम् (रयि=विद्यासुवर्णाद्युत्तमधनम्) १ १ ३ यश कीर्त्तिर्विद्यते यस्य तम् (देव=दातार विद्वासम्) ६ ४९ ९ शिष्टाचारादिकीर्त्तिमत् (धनम्) वे० भा० न० १ १ ३ **यशसः**=यशस्विन (मनुष्या) ४ ५१ ११ **यशसे**=प्रशसिताय (विदुषे जनाय) ५ १५ १

यशसौ=कीर्त्तिधनयुक्ते (द्यावापृथिवी=द्यौर्भूमिश्च) ५ ४३ २. [यशस्प्राति० प्रशसाया मतुवर्थे 'अर्शादिभ्योऽच्' अ० ५.२ १२७ सूत्रेणाच्। यशस् इति व्याख्यास्यते]

यशसा सत्कीर्त्या १ १२२ ४ उत्कृष्ट गुणग्रहण सत्याचरण यशस्तेन ऋ० भू० १०१, अथर्व० १२ ५ २ सर्वोत्तमसत्कर्मानुष्ठानोद्भूतसत्यकीर्त्या ऋ० भू० १९१, अथर्व० १३ ४ ४९ उदकेनाऽन्नेन धनेन वा ५ ८ ४ **यशसे**=सत्कीर्त्यै २० ३ **यशः**=कीर्त्तिकर धर्म्यकर्माचरणम् भा०—ईश्वराज्ञापालनम् ३२ ३ परमकीर्त्तिसाधकम् (राध=धनम्) जल वा १ १० ७ कीर्त्ति १८ ८ सत्कीर्त्तिकथनम् २० ५ धर्मयुक्त कामो का करना स० प्र० ४५५, ३२ ३ [अशूङ् व्याप्तौ सघाते च (स्वा०) धातो 'अशेर्देवने युट् च' उ० ४ १९१. सूत्रेणासुन् युडागमश्च। यश उदकनाम निघ० १ १२ अन्ननाम निघ० २ ७ धननाम निघ० २ १० सामवेद एव यश. गो० पू० ५ १५ सामवेदो यश श० १२ ३ ४ ९ उद्गातैव यश गो० पू० ५ १५ आदित्यो यश श० १२ ३ ४.८ आदित्य एव यश गो० पू० ५ १५ चक्षुर्यश श० १२ ३ ४ १० चक्षुरेव यश गो० पू० ५ १५ प्राणा वै यश श० १४ ५ २ ५ द्यौर्यश श०१२ ३ ४ ७ द्यौरेव यश गो० पू० ५.१५ वर्षा एव यश गो० पू० ५ १५ जगत्येव यश गो० पू० ५ १५ सप्तदश (स्तोम) एव यश गो० पू० ५ १५ उदीच्येव यश गो० पू० ५.१५ पशवो यश श० १२ ८ ३ १ यशो वै सोमो राजा ऐ० १ १३ यशो वै सोम श० ४ २ ४ ९. सोमो वै यश तै० २ २ ८ ८ यश उ वै सोमो राजान्नाद्यम् कौ० ९ ६ यशो हि सुरा श० १२ ७ ३ १४ यशो वै हिरण्यम् ऐ० ७ १८ यशो देवा श० २ १ ४ ९ तस्माद् (देवा) यश श० ३ ४ २ ८ श्रीर्वै यश जै० ३ २५८]

यशस्तमम् अतिशयेन कीर्त्तिकारकम् (अग्निम्) ७ १६ ४ **यशस्तमस्य**=अतिशयेन यशस्विनो बहुजलयुक्तस्य वा (अग्ने=पावकस्य) २ ८ १ [यशस्प्राति० अतिशायने तमप्। 'यशस्' इति व्याख्यातम्]

यशस्वतः यशो विद्याधर्मसर्वोपकाराख्या प्रशसा विद्यते येषा तान् (मनुष्यान्) प्र०—अत्र प्रशसार्थे मतुप् १ ९ ६ **यशस्वता**=बहु यशो विद्यते यस्मिँस्तेन (राया=धनेन) ३ १६ ६

यशस्वतीः पुण्यकीर्त्तिमत्या (कुमारिका) १ ७९ १ [यशस्प्राति० प्रशसाया मतुवन्तात् स्त्रिया ङीप्]

यशोभगिन्यै यशासि सत्यवचनादीनि कर्माणि

लिट्वच्च । ततो 'अमि पूर्व' इति पूर्वसवर्णादेशो न भवति छान्दसत्वात्]

यवन्त वियोजयेयु ५ २ ५ [यु मिश्रणेऽमिश्रणे च (अदा०) धातोर्लङ् । अटोऽभाव, शपश्च लुङ् न छान्दसत्वात्]

यवम् अन्नविशेषम् ७ ३ ४ धान्यसमूहम् २३ ३८ यवादिधान्यम् १६ ६ **यवस्य**=उत्तमस्य यवादेरन्नस्य १ ५३ २ **यव**=सुखकारी धान्यविशेष १ ६६ २ मिश्राऽमिश्रव्यवहार १ १३५ ८ मिश्रणाऽमिश्रणकर्त्ता (पुरुष) ५ २६ सयोगविभागकर्त्ता (सभाध्यक्ष) ६ १ **यवानाम्**=मिश्रितानाम् (पदार्थानाम्) १४ २६ [यु मिश्रणेऽमिश्रणे च (अदा०) धातो 'ऋदोरप्' इत्यप् । यदयुवत तस्माद् यवा नाम श० ३ ६ १, ८ ६ निर्वरुणत्वाय एव यवा ता० १८ ६ १७ वरुण्यो यव श० ४ २ १ ११ वरुण्यो ह वा ऽअग्रे यव श० २ ५ २ १ वारुण यवमय चरु निर्वपति तै० १ ७ २ ६ वारुणो यवमयश्चरु श० ५ २.४ ११ तस्य (सोमस्य) अश्रु प्रास्कन्दत् ततो यव समभवत् श० ४ २ १ ११ स य सर्वासामोषधीना रसऽआसीत्त यवेष्वदधुस्तस्माद् यत्रान्या ऽओषधयो म्लायन्ति तदेते मोदमाना वर्धन्ते श० ३ ६ १ १० सैनान्य वा एतदोषधीना यद् यवा ऐ० ८ १६ देवा त (मेधम्) खनन्त इवान्वोपुस्तमन्वविन्दस्ताविमौ व्रीहियवौ श० १ २ ३ ७ सर्वेषा वा एष पशूना मेधो यद् व्रीहियवौ श० ३ ८ ३ १ विड् वै यव श० १३ २ ६ ८ राष्ट्र यव तै० ३ ६ ७ २ अथ ये फेनास्ते यवा श० १२ ७ १.४ ते (पूर्वपक्षा) हीद सर्वं युवते श० ८ ४ २ ११ स यो देवानाम् (अर्धमास =शुक्लपक्ष) आसीत् । स यवायुवत हि तेन देवा श० १ ७ २ २५ योऽसुराणाम् (अर्धमास =कृष्णपक्ष) स यवायुवत हि त देवा श० १ ७ २ २६ पूर्वपक्षा वै यवा श० ८ ४ २ ११]

यवमन्तः बहवो यवा विद्यन्ते येषा ते (अ०—कृषीवला) १६ ६ बहुयवादिधान्ययुक्ता (अ०—कृषीवला) २३ ३८ [यवप्राति० भूम्न्यर्थे मतुप्]

यवय प्र०—अत्र 'वाच्छन्दसि' अ० १ ४ ६ इति भाष्यवार्त्तिकेन वृद्ध्यभाव ६ १ श्रेष्ठैर्गुणै सह मिश्रय दोषेभ्यश्च दूरीकारय ५ २६ वियुहि ६ १ मिश्रय प्र०—'प्रातिपदिकाद्धात्वर्थे बहुलमिष्ठवच्च' इति यवशब्दाद्धात्वर्थे णिच् १ ५ १० [यवप्राति० 'प्रातिपदिकाद् धात्वर्थे बहुलम् इष्ठवच्चे' ति वा०सूत्रेण णिजन्तात्लोट् । वृद्ध्यभावश्छान्दस]

यवसप्रथमानाम् यवसो यवाऽन्न प्रथम येषा तेषाम् (अग्निष्वात्ताना=गृहीताग्निजनानाम्) २ १ ४३. यवसस्य विस्तारकाणाम् (अवत्तानाम्=उदारचेतोजनानाम्) २ १ ४५ मिश्रिताऽमिश्रिताद्यानाम् (शतक्रियाणा=विद्वद्विशिष्टातृजनानाम्) २ १ ४४ [यवस-प्रथमपदयो समास । यवस =यु मिश्रणेऽमिश्रणे च (अदा०) धातो 'वहियुभ्या णित्' उ० ३ ११६ सूत्रेण असच् । बहुलवचनात् णित्व न]

यवसम् धान्यपलादिकम् ३ ४५ ३ सोमलताम् ५ ८७ २ **यवसात्**=भक्षणीयाद् घासाद्यात् ७ १८ १० **यवसे**=घासे ७ ३ २ बुषादौ ५ ५३ १६ **यवसेन**=बुसादिनेव ४ ४२ १० अभीष्टेन तृणबुसादिना ७ १० [यु मिश्रणेऽमिश्रणे च (अदा०) धातोर्वहि० औणा० असच्]

यवसाद ये यवसमन्नादिकमदन्ति ते (द्रप्सा =भृत्या ज्वालादयो गुणा वा) १ ६४ ११. [यवसोपपदे अद भक्षणे (अदा०) धातोरण्]

यवसे अद्याय घासाय ५ ६ ४ बुसाद्याय ६ २ ६ [यु मिश्रणेऽमिश्रणे च (अदा०) धातोरौणा० असुन्]

यवसेव बुसादिनेव ४ ४१ ५ [यवसा-इवपदयो: समास । यवसा=यवस्प्राति० तृतीया]

यवाशिरम् यो यवानश्नाति तम् (सोम=रसम्) २ २२ १. यवा अश्यन्ते यस्मिँस्तम् (भोजनम्) ३ ४२ ७ **यवाशिर:**=यवाद्योषधिसयोगेन सस्कृतस्य (अन्नस्य) १ १८७ ६. [यव-अशिरपदयो समास । अशिर =अश भोजने (क्र्या०) धातो 'अशेर्नित्' उ० १ ५२ सूत्रेण किरच्]

यविष्ठ अतिशयेन युवन् (अग्ने=श्रोतृजन) १२ ४२. अतिशयेन प्राप्तयौवन (अग्ने=विद्याविनयप्रकाशितजन) ४ १२ ४ अतिशयेन सङ्गमयितो विभाजक वा (अग्ने=जगदीश्वर) ६ १५ १४ यौति मिश्रयति विविनक्ति वा सोऽतिशयितस्तत्सम्बुद्धौ (अग्ने=पदार्थविद्यावेत्तविद्वन्) १ २२ १० शरीरात्मबलाभ्या युक्त (अग्ने=राजन्) ६ ४८ ८ **यविष्ठम्**=बलवत्तरम् (अग्नि=विद्वज्जनम्) १ ४४ ४ अतिशयेन विभाजकम् (अग्नि=विद्युतम्) ७ १२ १ **यविष्ठ:**=अतिशयेन युवा (जन) १ १४१ ४ अतिशयेन यौवन प्राप्त (प्रशसमानो जन) ७ ७ ३ [युवन्-प्राति० अतिशायन इष्ठन् । 'स्थूलदूरयुव०' अ० ६ ४ १५६ सूत्रेण यणादिपरस्य लोप पूर्वस्य च गुण । युवन्=यु मिश्रणेऽमिश्रणे च (अदा०) धातो 'कनिन् युवृषितक्षि०' उ० १ १५६ सूत्रेण कनिन् । एतद्धाम्य (अग्ने) प्रिय धाम

गच्छामि २ १६ ७. प्राप्नोमि १ २४ ११ **यासत्**=उपागच्छेत् ५ ४० ५ प्राप्नुयात् ४ २० १ प्रापयेत् ६ ६६ ५ प्राप्नोति १७ १६ यायात् २० ४८ प्रापयति १ ७१ ६ प्रयतेत ६ १६ २८ **यासिष्टम्**=प्राप्नुत ७ ४० ५ यातम् १ ११६ ४ **यासिसीष्ठाः**=प्रेरयेथा, प्र०—अत्र 'वा छन्दसि' इति मूर्धन्यादेशाभाव ४ १ ४ याया प्राप्नुया २१ ३ **यासीष्ट**=प्राप्नुयात प्र०—अत्र व्यत्ययेनात्मनेपदम् १ १६५ १५ **याहि**=प्राप्तो भव भवति वा १ ३ ४ गच्छ गच्छति वा प्र०—अत्र पक्षे व्यत्यय १ २ १ याति समन्तात् प्रापयति १ ३ ६ **यासि**=गच्छसि ४ १६ ११ प्राप्नोपि प्रापयति वा प्र०—अत्र पक्षे व्यत्यय ३ ५२ याति प्र०—अत्र पुरुषव्यत्यय १ १२ ४ [या प्रापणे (अदा०) धातोर्लेट्। अन्यत्र लङ्, लोट्, लट्, लिङ् च। याति गतिकर्मा निघ० २ १४]

यात् यावन्ति (विज्ञानानि) प्र०—'छान्दसो वर्णलोपो वा इति वलोप। 'शेश्छन्दसि बहुलम्' इति शेर्लोप ६ २१ ६ [यत् सर्वनाम्न परिमाणे 'यत्तदेतेभ्य परिमाणे वतुप्' अ० ५ २ ३६ सूत्रेण वतुप्। आ सर्वनाम्न इति वतुपि प्रत्यय आकारादेशे यावदिति रूपम्]

यातन प्राप्नुत ४ ३४ ६ प्राप्नुवन्तु १ १६५ १३ [या प्रापणे (अदा०) धातोर्लोटि म० बहुवचने तस्य तनबादेश]

यातयज्जनः यातयन्त प्रयत्नकारयितारो जना यस्य स (अर्यमा=न्यायाधीश) १ १३६ ३ प्रेरयन् (मित्र = आप्तो विद्वज्जन) ३ ५६ ५ पुरुषार्थवत्पुरुप (अर्यमा= न्यायेश) १ १३६.३ [यातयत्-जनपदयो समास। यातयत्=यती प्रयत्ने (भ्वा०) धातोर्णिजन्ताच्छतृ]

यातयज्जना यातयन्तो जना ययोस्तौ (मित्रावरुणौ= अध्यापकोपदेशकौ) ५ ७२ २. ['यातयज्जन' इति व्याख्यातम्। ततो द्विवचनस्याकारादेशश्छान्दस]

यातयति पुरुपार्थयति ३ ५६ १ [यती प्रयत्ने (भ्वा०) धातोर्णिजन्तात्लट्। यातयति वधकर्मा निघ० २ १९]

यातयन्तम् सन्तानाय प्रयतन्तम् (पतिम्) ५ ३२ १२ [यती प्रयत्ने (भ्वा०) धातोर्णिजन्ताच्छतृ]

यातयमानः दण्ड प्रयच्छन् (अग्नि=विद्वज्जन) ६ ६ ४ [यती प्रयत्ने (भ्वा०) धातोर्णिजन्ताच्छानच्]

यातयासे: प्रेरये ५ ३ ६ [यती प्रयत्ने (भ्वा०) धातोर्णिजन्ताल्लिडि छान्दस रूपम्]

यातवः सङ्ग्राम ये यान्ति ते (योद्धृजना) ७ २१ ५ [या प्रापणे (अदा०) धातो 'कमिमनिजनि०' उ० १ ७३. सूत्रेण तु.]

यातवे यातु प्राप्नुम् प्र०—अत्र 'तुमर्थे से०' इति तवेन् प्रत्यय १.४४ ४ यातु गन्तुम् १ १५७ १ [या प्रापणे (अदा०) धातोस्तुमर्थे तवेन्]

यातः गमनादिव्यवहारप्रापक (अ०—नृपापति) १ ३२ १५ प्राप्त (रथ=रमणीय यानम्) १ १४१ ८ **याताः**=ये प्राप्तास्ते (नर=नायका जना) ५ ३३ ५ [या प्रापणे (अदा०) धातो 'गत्यर्थाकर्मक०' अ० ३ ४ ७२ सूत्रेण कर्तरि क्त]

यातारम् देशान्तरे प्रापयितारम् (सूर्यादिव्य कमप्यर्थम्) १ ३२ १४ [या प्रापणे (अदा०) धातो कर्त्तरि तृच्]

यातुजूनाम् ये यान्ति ये च जवन्ते तेषाम् (दुष्टधर्माचारिणा जनाना) १३ १३ प्रापकवेगानाम् (जनानाम) ४ ४ ५ [यातु-जूपदयो समास। यातु=या प्रापणे (अदा०) धातोरौणा० तु। जू=जु (सौत्रो धातु) धातो 'भ्राजभासधुर्विद्युत्०' अ० ३ २ १७७ सूत्रेण क्विप्]

यातुधानान् अन्यायेन परपदार्थधारकान् (रक्षस= दुष्टाञ्जनान्) ३४ २६ यातवो यातना पीडा धीयन्ते येषु तान् दस्यून् १ ३५ १० **यातुधानानाम्**=ये यान्ति परपदार्थान् दधति तेषाम् (भा०—उत्कोचकानाम्) १३ ७ **यातुधानाः**=प्रजापीडकाः (जना) १५ १६ **यातुधानेभ्यः**=यान्ति येषु ते यातवो मार्गास्तेभ्यो धन येषा तेभ्य (महात्मजनेभ्य) ३० ८ [यातूपपदे डुधाञ् धारणपोषणयो (जु०) धातो 'कृत्यल्युटो बहुलम्' इति कर्त्तरि ल्युट्। यातुरिति व्याख्यातम्। यातुधाना हेति मं० २८ १०]

यातुधान्यः रोगकारिण्यो व्यभिचारिण्यश्च स्त्रिय १६ ५ यातूनि दुराचरणशीलानि दधति ता (दुर्व्यथा) १ १६१ ८ [यातुधानमिति ल्युडन्त व्याख्यातम्। तत स्त्रिया ङीप्]

यातुम् गन्तुम् ५ १२ २ [या प्रापणे (अदा०) धातोस्तुमुन्]

यातुमतीनाम् बहवो यातवो हिंसका विद्यन्ते यासु सेनासु तासाम् १ १३३ २ हिंस्राणा सेनानाम् १ १३३ ३ [यातुप्राति० भूम्न्यर्थे मतुप्-प्रत्ययान्तात् स्त्रिया ङीप्। यातु=या प्रापणे (अदा०) धातोरौणा० तु। यातयति वधकर्मा निघ० २.१९]

यातुमावतः यान्ति प्राप्नुवन्ति ते यातव मत्सदृशा

भजितु शील यस्यास्तस्यै भा०—कीर्त्तिहेतुभूतायै (सरस्वत्यै=वेदवाण्यै) २ २० ['यशस्' इत्युपपदे भज सेवायाम् (भ्वा०) धातोस्ताच्छील्ये णिनिप्रत्यये छान्दस रूपम्। अथवा यशस्-भगिनीपदयो समास। भगिनी=भगप्राति० मत्वर्थ इनि। तत स्त्रिया ङीप्]

यष्टवे यष्टुम् प्र०—अत्र यजवातोस्तवेन्प्रत्यय १ १३ ६ सङ्गन्तुम् ४ ३७ ७ [यज देवपूजासगतिकरणदानेषु (भ्वा०) धातोस्तुमर्थे तवेन्]

यष्टा सङ्गन्ता, सुष्ठु विज्ञाता दाता वा (गोपा=गवा पाता जन) २ ६ ६ [यज देवपूजासगतिकरणदानेषु (भ्वा०) धातो कर्त्तरि तृच्]

यह्वो क्रियाकौशलयुक्तस्याऽपत्य तत्सम्बुद्धौ प्र०—यहुरित्यपत्यनामसु पठितम् निघ० २ २, १ २६ १० सुसन्तान १५ ३५ पुत्र १ ७४ ५

यह्व हे महागुणविशिष्ट (अग्ने=पावकवत्पवित्र राजन्) २६ २८ **यह्वम्**=गुणैर्महान्तम् (अग्नि=परमेश्वरम्) १ ३६ १ **यह्वः**=महान् (अग्नि) ३ १ १२ [यह्व=महन्नाम निघ० ३ ३ यह्व इति महतो नामधेय यातश्च हूतञ्च भवति नि० ८ ८ यज देवपूजासगतिकरणदानेषु (भ्वा०) धातो 'शेवायह्वजिह्वा०' उ० १ १५४ सूत्रेण वन्प्रत्यय जकारस्य हकारो निपात्यते]

यह्वतीः यह्वान् महत इवाऽऽचरन्ती (अप=जलानि) प्र०—यह्व इति महन्नाम निघ० ३ ३ यह्व-शब्दादाचारे क्विप् १ १०५ ११ बडे व्यापक आकाशस्थ (आप=प्राणप्रद वायुए) स० वि० १६६, ६ ११३ ८ [यह्व आचारे क्विबन्तात्छतृ। तत स्त्रिया ङीप्]

यह्वा इव महान्तो वृक्षा इव ५ १ १ महान्तो धार्मिका जना इव १५ २४ [यह्वा इवपदयो समास]

यह्वाः महत्य (सिन्धो प्रवाहा) ४ ५८ ७ [यह्वप्राति० स्त्रिया टाप्]

यह्वी महती महत्यौ (उपे=स्त्रियौ) २१ १७ कारणमूनू (रात्रिदिने) १ १४२ ७ बडे ही शुभ गुण कर्म स्वभाव वाले दोनो स्त्रीपुरुप स० वि० १०५, ५ ४१ ७ [यह्वप्राति० स्त्रिया ङीप् छान्दस। ततो द्विवचनस्य पूर्वसवर्णश्छान्दस]

यह्वी महती (विदुपी स्त्री) ५ ४१ ७ **यह्वीः**=महत्य स्त्रिय ३ १४ महती (गिर) १ ५६ ४ महाविद्यागुणस्वभावयुक्ता (युवतय=प्राप्तयौवना स्त्रिय) ३ १ ६ महत्यो रुधिरविद्युदादिगतय १ ७१ ७ [यह्व महन्नाम निघ० ३ ३ तत: स्त्रिया ङीप्]

यसत् ददाति ६ ४६ ७ यच्छेत् प्राप्नुयात् ४ २५ ४. यच्छन्तु प्रददतु प्र०—अत्र वचनव्यत्ययेन बहुवचनस्थाने एकवचनम् १ १०७ २ प्रदद्यात् ४ ५४ ६ दद्यात् ५ २ २ नियच्छेत् १ ६६ ८ प्रेरयेत् १ १६० ३ **यंसते**=रक्षति १ १४३ ७ यच्छन्ति १ ८० ३ **यसन्**=प्रयच्छन्ति प्र०—अत्र 'वाच्छन्दसि' इत्युसभावो लुङ्यडभावश्च १ ३६ ७ यच्छन्तु ददतु १ ६० ३ **यंसि**=दुष्टाचारान्निरुणत्सि, प्र०—अत्र शपो लुक् १ ६३ ८ प्राप्नोपि नियच्छसि वा ५ ३६ ४ यच्छ, दुष्टेभ्य कर्मभ्य उपरतोऽसि प्र०—अत्र लोडर्थे लट् १ ४२ ६ [यसन्=यच्छन्तु नि० ६ १८ यमु उपरमे (भ्वा०) धातोर्लेटि सिपि च रूपम्। अन्यत्र लुङ् लट् च]

याचति याचना करता है स० वि० २०६, अथर्व० ६ ६ १.४ [टुयाचृ याच्ञायाम् (भ्वा०) धातोर्लट्। याचति वधकर्मा निघ० २ १६]

याच्छ्रेष्ठाभिः शत्रुवधकर्मण्युत्तमाभि (ऊतिभि=रक्षादिभि) ३ ५३ २१

याज्याभिः याभि क्रियाभिरिज्यन्ते ताभि १६ २० यज्ञसम्बद्धक्रियाभि २० १२ **याज्याः**=यज्ञक्रिया २० १२ [याज्यम्=यज देवपूजासगतिकरणदानेषु (भ्वा०) धातोर्ण्यत्। तत स्त्रिया टाप्। यजूंष्यपि याज्या काठ० ११ १० वृष्टिर्वै याज्या ऐ० २ ४१]

यात् यायात् प्र०—लेट्-प्रयोग १ ८० १५ **यात**=गच्छत भा०—अर्थकाममोक्षान् प्राप्नुत २१ ११ गमयत १ ८६ १० अभीष्ट स्थान प्राप्नुत १ ३७ १४ समन्तात्प्राप्नुत १ १७१ २ **यातम्**=प्राप्नुतम् ४ १३ १ आगच्छतम् ६ ६७ ३ प्राप्नुयातम् ७ ५३ २ उपागतम् १ ११८.११ गच्छत प्र०—अत्र व्यत्यय १ २ ५ प्राप्नुत १.२ ६ गमयत १ ३ ३ प्रापयतम् १ ३० १७ गच्छतम् १ ४७ २ **यातः**=गमयत आगमयतञ्च ऋ० भू० १६६, ऋ० १ ३ ५ ७ **याताम्**=गच्छताम् ४ २८ ३ **याति**=प्राप्नोति प्रापयति वा। प्र०—अत्र पक्षेऽन्तर्गतो ण्यर्थ १ ३५ २ **यातु**=गच्छतु १ ११८ १ आगच्छतु ४ १६ १ प्राप्नोति प्राप्नोतु वा १ ३५ १० **याथ**=गच्छत ६ ५० २ प्राप्नुथ २ ३४ ३ प्राप्नुत १ ३६ १ गच्छथ ३ ६० ४ **याथः** गच्छथ १ १८३ ३ प्राप्नुतम् १ ३४ २ प्राप्नुथ १ १३५ ७ **यान्ति**=गच्छन्ति १ ८८ २ **यान्तु**=प्राप्नुवन्तु १ १६७ २ **यामः**=प्राप्नुयाम ३ ३३ ६ **यामि**=

[या प्रापणे (अदा०) धातोर्मनिन् । 'वा छन्दसी' ति दीर्घ-[illegible] न]

यामकोशाः यान्ति [illegible] ते यामा मार्गास्तेषा कोशा. [illegible] ३०.१५ [याम-कोशपदयो समास । कोश मेघनाम नि० १ १०]

यामयन्ति नियमयन्ति २५ ३६ [यमु उपरमे (भ्वा०) धातोर्णिजन्ताल्लट्]

यामश्रुतेभिः यामा श्रुता यैस्तै (सूरिभि.=[illegible]) ५ ५२ १५ [याम-श्रुतपदयो समास]

यामहूतमा यौ यामानाह्वयतस्तावतिशयितौ ([illegible]=अध्यापकोपदेशकौ) ५ ७३ ६ [यामहूप्राति० [illegible] तमप्। ततो द्विवचनस्याकारश्छान्दस । [illegible] = यामोपपदे [illegible] स्पर्द्धाया शब्दे च (भ्वा०) धातो कर्त्तरि क्विप्]

यामहूतिषु उपरमाऽऽह्वानरूपकर्म्मसु ५ ६१ १५ [याम-हूतिपदयो समास । 'याम' इति व्याख्यातम् । [illegible] =[illegible] स्पर्द्धायाम् (भ्वा०) धातो. स्त्रिया क्तिन्]

यामास. यम-नियमान्विता (अध्यापकोपदेशका) ५ [illegible].१२ [यामप्राति० जसोऽसुक्]

याम्याय यो यामेषु न्यायकारिषु साधुस्तस्मै (न्याया-धीशाय) १६ ३३ [यामप्राति० 'तत्र साधु' रित्यर्थे यत । 'याम' इति व्याख्यातम्]

यावत् यावत्परिमाणा (सिन्धव =समुद्रा) ३८ २६. **यावती**=यावत्परिमाणे (द्यावापृथिवी) ३८ २६ [यत् सर्वनाम्न 'यत्तदेतेभ्य. परिमाणे वतुप्' इति वतुप् । आ सर्वनाम्न ' इत्या [illegible] प्रत्यय आकारादेश]

यावय वियोजय प्र०—अत्र तुजादीना० इत्यभ्यास-दीर्घम् ६ ४८ १२ वियोजय ६ ४६ ६ **यावयन्तु**=दूरी-कुर्वन्तु प्र०—अत्र 'मन्त्रितापाम्' इत्यादिना दीर्घत्वम् ७.४४ ३ **यावयस्व**=पृथक्कुरु [illegible] ५ ४२ ६ **यावी:**=अयावी [illegible] १.१२६ ३ [यु मिश्रणेऽमिश्रणे च (अदा०) धातोर्णिजन्ताल्लोट् । 'यावी' प्रयोगे लुङ्]

यावयद्द्वेषसम् यावयन्त द्वेष्टार द्वेषस द्वेष्टार पृथ-[illegible] ([illegible]) ६ ५ [illegible].४ **यावयद्द्वेषाः**= [illegible] द्वेषाकर्षणकर्माणि ययो [illegible] [illegible]) १ ११२ १२ [यावयत्-द्वेषस्पदयो समास । यावयत् [illegible] यु मिश्रणेऽमिश्रणे च (अदा०) धातो-[illegible] । द्वेषस्=द्विष [illegible] (अदा०) धातोरसुन्० [illegible]]

यावा यो याति स (विद्वज्जन) ७ १.५ [या प्रापणे (पदा०) धातो कर्त्तरि वनिप्]

याशूनाम् प्रयतमानानाम् (सज्जनानाम्) प्र०—अत्र यसु प्रयत्ने धातोर्बाहुलकादुण्प्रत्यय सस्य शश्च १ १२६ ६

यासिषत् यातुमिच्छतु १ १७४ ५. [या पापणे (अदा०) धातोरिच्छायामर्थे सन्नन्ताल्लेट् । 'वा छन्दसी' ति द्वित्व न]

युक्तग्रावा युक्तो ग्रावा मेघो येन स (पावक) ५ ३७ २. युक्तो ग्रावा मेघो यस्मिन् स (वीर-सन्तान) ३ ४ ६ युक्तो योजितो ग्रावा मेघो येन स (वीरपुरुष) ७ २ ६ **युक्तग्राव्णः**=युक्ता ग्रावाणो मेघा पाषाणो वा यस्मिस्तस्य (महत पदार्थस्य) २ १२.६ [युक्त-ग्रावन्पदयो समास । ग्रावा मेघनाम निघ० १ १० ग्रावाण पदनाम निघ० ५ ३ ग्रावाणो हन्तेर्वा गृणातेर्वा गृह्णातेर्वा नि० ६ ८]

युक्तः सहित. (विद्वज्जन.) १.६६ ४ कृतप्रयोजन (अश्वः) १ ८२ ५ **युक्तान्**=नियुक्तान् (अध्यक्षान्) १ २६ ५ सुखसम्पादकान् (वसन्तादीनृतून्) १.२३ १५. **युक्तानाम्**=समाहितानाम् (प्रजाजनानाम्) ४ ३२.१७ **युक्ताः**=सम्बद्धा (पदार्था) १ १६४ १६ एकीभूता: (ग्रावाण.=मेघा) ३४.१६ उद्युक्ता. (ग्रावाण.=मेघाः) ३ ३०.२ कृतयोगा (हरय.=मनुष्या) ७.२८.१. योजिता (हरय =मनुष्या) ३ ५३ ४ **युक्तेन**=कृतयोगाभ्यासेन (मनसा=विज्ञानेन शक्त्या=सामर्थ्येन च) .११ २. योग-युक्तेन (मनसा) ऋ० भू० १५६, ११.३ [युजिर् योगे (रुधा०) युज समाधौ (दिवा०) धातोर्वा क्त]

युक्ता सम्यक् सम्बद्धौ (हरी =अश्वौ) १ ८४ ३ युक्तौ (हरी) ८ ३३ कृतयोगाभ्यासौ (अश्विनौ=सभासेना-धीशौ) १ ११६ १८ युक्तेन (राया=धनेन) ७.४३.५ [युक्तप्राति० द्विवचनस्याकारादेशश्छान्दस.]

युक्ताऽश्वम् युक्ता अश्वा येन तत् (रयि=धनम्) ५.४१.५. [युक्त-अश्वपदयो समास]

युक्तासः सयोजिता. (अश्वा =अश्वा) १ ११८ ४ नियोजिता. (हरय =नियतिनो मनुष्या) ६ ३७ १ [illegible] योगाभ्यासा (आसा जना) ४.४८ ४ [युक्तप्राति० जसो असुक्]

युक्त्वा सयोज्य १ १७७ १ [युजिर् योगे (रुधा०) धातो क्त्वा]

युक्त्याय समाधाय युक्त्वा ऋ० भू० १५६, ११.४

इति मावन्त यातवश्च ते मावन्तश्च तान् (प्रजाजनान्) समी०—अत्र सायणाचार्येण यातुरिति पूर्वपद मावानित्युत्तर-पद चाऽविदित्वा यातुमावत्पदान्मतुप् कृतस्तदिद पदपाठाद् विरुद्धत्वादशुद्धम् १ ३६ २० **यातुमावान्**=गच्छन्मत्सदृश (विद्वज्जन) ७ १ ५ [यातु-मावत्पदयो समास । यातुरिति व्याख्यातम् । मावत्=अस्मत्प्राति० 'वतुप्-प्रकरणे युष्मदस्मद्भ्या छन्दसि सादृश्य उपसख्यानम्' अ० ५ २ ३६ वा०सूत्रेण सादृश्ये वतुप् । 'आ सर्वनाम्न' इत्याकारादेश । 'प्रत्ययोत्तरपदयोश्च' इति मपर्यन्तस्यास्मदो मादेश]

यातेव यथा दण्डप्रापक (भा०—राजा) १ ७० ६ गच्छन्निव (पथिक इव) ७ ३४ ५ [याता-इवपदयो समास]

याथन प्राप्नुत प्र० अत्र तकारस्य स्थाने थनादेश १ २३.११ गच्छथ ५ ५७ २ प्राप्नुथ प्र०—अत्र 'तप्तनप्तन०' इति थस्य स्थाने थनादेश १ ३६ ३. [या प्रापणे (अदा०) धातोर्लोटि तस्य थनादेश]

याथातथ्यतः यथार्थतया ४० ८. यथावत् रीतिपूर्वक स० प्र० २७३, ४० ८ [यथातथप्राति० भावे ष्यञ् । तत सार्वविभक्तिक तसि]

यादमानः याचमान (विद्वज्जन) प्र०—अत्र वर्ण-व्यत्ययेन चस्य द ,३ ३६ १ [टुयाचृ याच्ञायाम् (भ्वा०) धातो शानच् । वर्णव्यत्ययेन चकारस्य दकार]

यादमानाः अभिगच्छन्त्य (सिन्धव =नद्य) ६ १६ ५ [यती प्रयत्ने (भ्वा०) धातो शानजन्तात् स्त्रिया टाप् । धातोर्वृद्धि तस्य च दकारश्छान्दस]

यादसे जलजन्तवे ३० २० [याद =उदकनाम निघ० १ १२]

यादुरी प्रयत्नशीला (नीति) प्र०—अत्र यतधातो-र्बाहुलकादौणादिक उरी-प्रत्यय तस्य द १ १२६ ६]

यादृश्मिन् यादृशे व्यवहारे ५ ४४ ८ [यादृश्मिन्= यादृशे नि० ६.१५]

याद्राध्यम् ये यान्ति ते यातस्तैराध्य याद्राध्य ससाध-नीयम् (योनिं=कारण वह्निम्) २ ३८ ८ [यात-राध्य-पदयो समास । यात =या प्रापणे (अदा०) धातो कर्त्तरि क्त । राध्यम्=राध ससिद्धौ (स्वा०) धातोर्ण्यत्]

याद्वम् ये यान्ति तान् यो याति तम् (सज्जनम्) ७ १६.८ [या प्रापणे (अदा०) धातोरौणा० तुप्रत्यये यातु । तत 'वा छन्दसी' ति पूर्वसवर्णो न भवति । तस्य दकारश्छान्दस]

यानान् यान्ति येषु तान् (पथ =मार्गान्) २६ २६ [या प्रापणे (अदा०) धातोरधिकरणे ल्युट्]

यान्तम् गच्छन्तम् (सज्जनम्) ३ ३२ १४ **यान्तः**= प्राप्नुवन्त (जना) ४.२५ ८ [या प्रापणे (अदा०) धातो शतृ]

यान्ता गच्छन्तौ (अश्विना=शिल्पिनौ) १ ११७ १२ [या प्रापणे (अदा०) धातो शतरि द्विवचनस्याकार-श्छान्दस]

याम प्राप्तव्य कर्म २ ३४ १० **यामनि**=प्रापणीये मार्गे ३ ५४ १४ यान्ति यस्मिँस्तस्मिन् वर्त्तमाने समये ७ ३२ २६ यातरि (मर्त्ते) १ १३८ ३ **यामभिः**=प्रहरै यमोद्भवै कर्मभिर्वा ५ ६६ ५ यान्त्यायान्ति यैस्तै स्वकीयै गमनागमनै १ ३७ ११ [या प्रापणे (अदा०) धातोरौणा० मनिन्]

यामः याति गच्छति येन स यामो रथ १ ३४ १ यान्ति यस्मिँस्तस याम प्रहर ६ ६६ ७ यो याति स (पुरुष) ४ ५१ ४ मर्यादा १ १०० २ गमनम् प्रापणम् १ १६६ ४ **यामम्**=प्रहर प्राप्तव्य वा (सुखम्) ७ ५६ ६ **यामाय**=यथार्थव्यवहारप्रापणाय प्र०—अर्त्तिस्तुसु० उ० १ १३६ इति या-धातोर्म-प्रत्यय १ ३७ ७ **यामाः**= वायुदेवताका (कर्णा =पशव) २४ ३ **यामे**=यान्ति येन यानेन तस्मिन् ११ १३ **यामेन**=उपरतेन (भा०—विद्यादिशुभगुणदानेन) ५ ५३ १२ **यामेषु**=यमादियुक्त-शुभव्यवहारेषु प्रहरेषु वा ५ ५६ ७ स्व-स्वगमनरूपमार्गेषु १ ३७ ८ यान्ति येषु मार्गेषु तेषु १ ८७ ३ [या प्रापणे (अदा०) धातो 'अर्त्तिस्तुसुहु०' उ० १ १४० सूत्रेण मन् । अथवा यमप्राति० 'साम्य देवते' त्यर्थेऽण्]

यामन् याति गच्छति प्राप्नोति स यामा तस्मिन्नस्मिन् ससारे प्र०—अत्र 'सुपा सुलुक्०' इति विभक्तेर्लुक् १.३३ २ यान्ति यस्मिन् मार्गे तस्मिन् प्र०—अत्र 'सर्वधातुभ्यो मनिन्' इत्यौणादिको मनिन्प्रत्यय १ ८५ १ याम्ने सुख-प्राप्तये प्र०—अत्र या-धातोरौणादिको मनिन् १ ११६ १३ यामनि मार्गे १ १६६ १ यान्ति येन यस्मिन् वा तस्मिन् (रथे मार्गे वा) ७ ५८ २ यामनि मार्गे प्रहरे वा १७ १०. यान्ति गच्छन्ति यस्मिन् मार्गे ३ २ १४ [या प्रापणे (अदा०) धातो कर्त्तरि मनिन् । औणादिको वा मनिन् अधिकरणे]

यामनः ये यान्ति ते (वायव इव मनुष्या) ५ ५७ ३

युज्यमानः समाहित सन् (वाजी=राजा) ६ ८ [युज समाधौ (दिवा०) धातो शानच्]

युज्यमाना सयुक्तौ (हरी=अश्वौ) ३ ३५ १ ['युज्यमान' इति व्याख्यातम् । ततो द्विवचनस्याकारादेश]

युज्यसे समादधासि १ २८ ५ **युज्याताम्**=युक्तौ भवत ७ ४२ १ **युज्येथाम्**=युज्येते युक्तौ कुरुत ४ ३३ [युज समाधौ (दिवा०) धातोर्लट् । अन्यत्र लोट्]

युज्याभिः योजनीयाभि (विद्याभि) ७ ३७ ५ [युजिर् योगे (रुधा०) धातोर्बाहु० औरणा० क्यप् । तत स्त्रिया टाप्]

युज्येभिः योजनीयैं कर्म्मभि १ १६५ ७ योजितु योग्यैं (गुणैं) १ १४५ ४ योक्तव्यैं (शुष्मैं =वलैं) ६ ३ ८ [युज्यप्राति० भिसि 'बहुल छन्दसी' ति ऐस् न । युज्य =युजिर् योगे (रुधा०) धातोरौणा० क्यप्]

युञ्जते स्थिरा कुर्वते ५ १४ समादधते ५ १४ समादधति ३७ २ युक्त कुर्वन्ति ऋ० भू० १५६, ११ १ अभ्यस्यन्ति १.४८ ४ **युञ्जन्ति**=युक्त कुर्वन्ति २३ ५ युञ्जन्तु प्र०—अत्र लोडर्थे लट् १ ६ २ योजयन्ति १ ६ १ परमानन्द प्राप्नुवन्ति ऋ० भू० १५६, १२ ६७ **युञ्जन्तु**=प्रेरताम् ६ ८ **युञ्जाथे**=नियुक्तौ भवत १ १५१ ४ [युजिर् योगे (रुधा०) धातोर्लट्]

युञ्जा युञ्जानौ (हरी=धारणाकर्पणगुणौ) १ १६२.२१ योजकौ (हरी=हरणशीलावश्वौ) २५ ४४ [युजिर् योगे (रुधा०) धातो 'ऋत्विग्दधृग्०' इत्यादिना क्विन् । ततो द्विवचनस्याकारादेश]

युञ्जानः योग कुर्वाण सन् (मनुष्य) ऋ० भू० १५६, ११ १ योगाभ्यास भूगर्भविद्या च कुर्वाण (सविता=ऐश्वर्यमिच्छुर्मनुष्य) ११ १ [युजिर् योगे (रुधा०) धातो शानच्]

युतद्द्वेषसः युता अमिश्रिता पृथग्भूता द्वेषा येभ्यस्ते (भा०—सर्वप्रजामनुष्या) १ ५३ ४ [युत-द्वेषस्पदयो समास । युत'=यु मिश्रणेऽमिश्रणे च (अदा०) धातो क्त । द्वेषस्=द्विष अप्रीतौ (अदा०) धातोरसुन्]

युत्कारेण यो व्यूहैर्युतो मिश्रितानमिश्रितान् भृत्यान् करोति तेन भा०—युद्धविद्याकुशलेन (इन्द्रेण=सेनापतिना) १७ ३४ ['युत्' इत्युपपदे डुकृञ् करणे (तना०) धातोरण् । युत्=यु मिश्रणेऽमिश्रणे च (अदा०) धातो क्विप्]

युत्सु मिश्रिताऽमिश्रितकरणेषु युद्धेषु १७ ३६ सङ्ग्रामेषु प्र०—अत्र सम्पदादिलक्षण. क्विप् १ ६२ २१. [यु मिश्रणेऽमिश्रणे च (अदा०) धातो सम्पदादिलक्षण क्विप्]

युधम् युध्यमानम् (शत्रुजनम्) १.५३ ७ **युधः**=यो युध्यते स (इन्द्र =सर्वसेनाधिपति) १७ ३५ युध सम्प्रहारे (दिवा०) धातोरिगुपधलक्षण क]

युधः ये युध्यन्ते ते (नरा =नायका मनुष्या) १७ ३४ **युधा**=यो योधयति तेन (ओजसा) १ ५३.७ युध्यन्ते यस्मिन् सङ्ग्रामे तेन १.५६ ५ युध्यमानेन सैन्येन ५ २५ ६ सम्प्रहारेण २ २२ २ युद्धेन १ १७४.४ **युधि**=युद्धे २ २४ ६ **युधे**=युध्यन्ति यस्मिन् सङ्ग्रामे तस्मै १ ६१ १३ [युध सम्प्रहारे (दिवा०) धातो क्विप्]

युधये युद्धाय ५ ३० ४ सङ्ग्रामाय ५ ३० ६ [युध सप्रहारे (दिवा०) धातो. 'इक् कृष्यादिभ्य ' अ० ३ ३.१०८ वा० सूत्रेण इक्]

युध्मस्य योद्धु शीलस्य (इन्द्रस्य=राज्ञ) ३ ४६ १ **युध्मः**=यो युध्यते स (इन्द्र =सूर्य इव सभाध्यक्ष) १ ५५ २ अविद्याकुटुम्बस्य प्रहर्त्ता (उपदेशक) १ ५५ ५ योद्धा (इन्द्र =विद्युदिव राजा) ७ २० ३. [युध सम्प्रहारे (दिवा०) धातो 'इषियुधीन्धि०' उ० १.१४५. सूत्रेण मक्]

युध्य युध्यस्व प्र०—अत्र व्यत्ययेन परस्मैपदम् १ ६१ २३ योधय गमय प्र०—अत्राऽन्तर्भावित ण्यर्थ, युध्यतिर्गतिकर्मा निघ० २ १४, ३४ २३ **युध्यन्**=युद्ध कुर्वन्ति प्र०—अत्र व्यत्ययेन परस्मैपदमडभावश्च १ ६३ ७ **युध्यै**=युद्ध कुर्याम ४ १८ २ **युयुधाते**=युध्येते १ ३२ १३ **युयुधुः**=सङ्ग्राम कुर्यु ५ ५६ ५ युध्यन्ते ४ ३० ३ **युयोध**=युध्येत् ६ २५ ५ [युध सम्प्रहारे (दिवा०) धातोर्लोट् । व्यत्ययेन परस्मैपदम् । अन्यत्र लङ्, लोट्, लिट् च । युध्यते गतिकर्मा निघ० २ १४]

युध्यतः युद्ध कुर्वत (शत्रो) १ ५२.५ प्रहरत (योद्धृजनस्य) प्र०—अत्र. व्यत्ययेन परस्मैपदम् ३ ५५ ८ युद्धमाचरत (सैनिकस्य) १ ५२ १४ **युध्यते**=युद्धङ्कुर्वते (जनाय) ४ ३० ४ **युध्यन्तम्**=युद्धे प्रवर्त्तमानम् (वृषभ=मेघम्) १ ३३ १४ [युध सम्प्रहारे (दिवा०) धातो शतृ । व्यत्ययेन परस्मैपदम्]

युध्यमानाः युद्ध कुर्वन्त (राजपुरुषा) ४ २५ ८ [युध सम्प्रहारे (दिवा०) धातो शानच्]

युध्यामधिम् यो युधि सङ्ग्राम आमम् रोग दधाति त

युक्त कृत्वा ११ ३ [युजिर् योगे (रुधा०) धातो क्त्वा। 'क्त्वो यक्' अ० ७ १ ४७ सूत्रेण क्त्वो यगागम]

युक्ष्व सर्वविद्याप्रकाशाय युङ्क्ष्व योजय प्र०—अत्र 'छान्दसो वर्णलोपो वा' इति नलोप १ १० ३ युनक्ति प्र०—अत्र 'वहुल छन्दसि' इति विकरणस्य लुक् १.६२ १५ योजय ३३ ४ प्र०—अत्र 'वहुल छन्दसि' इति शपो लुकि श्नमभाव १ १४ १२ सयोजय ६ १६ ४३ [युजिर् योगे (रुधा०) धातोर्लोट् । 'वहुल छन्दसी' ति शपो लुकि श्नमोऽप्यभाव]

युगम् वर्षम् ३ ५३ १७ **युगानि**=वर्षाणि कृतत्रेता-द्वापर-कलिसज्ञानि वा १ ११५ २ सवत्सरादीनि १.९२ ११ **युगे**=अपरजन्मनि १ १६६ १३ [युजिर् योगे (रुधा०) धातोर्घञ् । उञ्छादिपाठादगुणत्वम्]

युगा युगानि १२ १११ वर्षाणि वर्षसमुदितानि वा ६ १६ २३ वर्षसमूहा. ५ ७३ ३ योगयुक्तानि कर्म्माणि ऋ० भू०१५६, १२.६७ [युगप्राति० शेर्लोपश्छन्दसि]

युगे युगे वर्षे वर्षे सत्ययुगादौ वा ६ १५ ८ वर्ष-समुदाये वर्षसमुदाये ६ ८.५ ['युगे' पदस्य वीप्साया द्विर्वचनम्]

युगेव अश्वादिवत्सयोजितौ (वायुविद्युतौ) २ ३९ ४ [युगा-इवपदयो समास । युगा=युगाद् द्विवचनस्याकार]

युङ् समाधाता (ब्रह्म) १० २५. [युजिर् योगे (रुधा०) धातो' 'ऋत्विग्दधृक्०' इत्यादिना क्विन्]

युङ्क्ते युक्तो भवति १ ८४ १६ कलाकौशलेन प्रेरित सम्पर्चयति १ १४ ३. समवैति १ १२४ ११ **युङ्क्ष्व**= युक्तो भव ७ ४२.२ **युङ्ग्ध्वम्**=सयोजयत ५ ५६ ६ **युजन्त**=युञ्जते ६ ६६ ६ [युजिर् योगे (रुधा०) धातो-र्लट् । अन्यत्र लोट् लङ् च]

युच्छतः हर्षं कुरुत ५ ५४ १३ **युच्छति**=प्रमाद्यति ५ ५४ १३ **युच्छसि**=अत्यन्त प्रमाद्यसि ८.३. [युच्छ प्रमादे (भ्वा०) धातोर्लट्]

युजम् योक्तुमर्हम् भा०—प्रशसनीयम् (रयिं= ऐश्वर्यम्) १९ ६४ योजकम् (विद्वत्तम जनम्) ६ ४५ १६ युक्तम् (अग्नि=विद्युतम्) २ २५ १ योक्तारम् (योद्धृजनम्) १ १२९.४. योगयुक्तम् (सखायम्) १ १२९ ४ यो युज्यते तम् (सखाय=मित्रम्) प्र० अत्र क्विप् १.३३ १०. समाधातुमर्हम् (रयिम्) ४.३७ ५ **युजः**=यो युञ्जते तान् (प्रजाजनान्) ४ ३२ ६ समाहिता (स्त्रिय) २३ ३७ प्रियस्य यो युनक्ति स युक् सखा तस्य सख्यु प्र०—अत्र युजिर् योगे इत्यस्माद् 'ऋत्विग्दधृग्० इति क्विन् १ १० ६. **युजा**=कृपया धार्मिकेषु स्वसामर्थ्यसयोजकेन (इन्द्रेण= युद्धोत्साहप्रदेश्वरेण) १ ८ ४ योगयुक्तया (पुरन्ध्या= प्रज्ञया) ७ ३२ २० यो न्यायेन युनक्ति तेन (विदुषा राज्ञा) ७ ३१ ६ यो युनक्ति मूहुर्त्तादिकालाऽवयवपदार्थै मह तेन (इन्द्रेण=सूर्येण (विद्युता वा) १ २३ ९ युक्तेन (सेनाधीशेन) १ १०२ ४ यो युङ्क्ते तेन राज्ञा ६ ४४ २२ युनक्ति यया तया (सेनया) प्र०—अत्र 'कृतो वहुलम्' इति करणे क्विप् १ ३९ ४ [युजिर् योगे (रुधा०) धातो कर्त्तरि क्विप् । 'कृतो वहुलमि' ति वा करणे क्विप्]

युजा समाहितौ (भिषजा=सद्वैद्यौ) २१ १८ [युजमिति व्याख्यातम् । ततो द्विवचनस्याकारादेशश्छान्दस]

युजानम् समादधानम् (नम =सत्कारम्) प्र०—अत्र वाहुलकादौणादिक आनच्प्रत्यय किच्च १ ६५ १ **युजानः**= धारयन् (सूर्य) ६ ३९ २ युक्त सन् (इन्द्र =यानम्) २ १८ ५ **युजानाः**=समाहितात्मान (हरय =राज्य-कर्माधिकारिजना.) ६ ४४ १९ [युजिर् योगे (रुधा०) धातोर्वाहु० औणा० आनच् किच्च । शानचि वा विकरणस्य लुक्]

युजाना युक्ता (प्रातर्वेला) ५ ८०.३ [युजानमिति व्याख्यातम् । तत स्त्रिया टाप्]

युजे युनज्मि ७ २३ ३ आत्मनि समादवे ११ ५ **युज्महे**=समादधीमहि प्र०—अत्र 'वहुल छन्दसि' इति श्यनो लुक् १ १६५ ५ [युज समाधौ (दिवा०) धातोर्लटि विकरणस्य लुक्]

युजेव यथा सयुक्तौ (अश्वौ) २ २४ १२ [युजा-इव-पदयो. समास । युजेति व्याख्यातम्]

युज्यम् योक्तुमर्हम् (रयिं=धनम्) ७ ३६ ७ समा-धातुमर्हम् (पय =दुग्धमुदकमन्न वा) ६ ५२ १० **युज्यः**=युञ्जन्ति व्याप्त्या सर्वान् पदार्थान् ते युजो देश-कालाकाशादयस्तत्र भव (विष्णु =व्यापकेश्वर) १ २२ १९ उपयुक्ताऽऽनन्दप्रद (परमेश्वर) १३ ३३ युक्त (राजप्रजाजन) १० ३१ युनक्ति सदाचारेणेति युज्य (सभाध्यक्ष) प्र०—अत्रौणादिक क्यप् ६ ४ युक्त समाधातुमर्हो वा (सोम =ओषधिरस) १९ ३ योग्य (परमेश्वर) आर्याभि० १ २३, ऋ० १ २ ७.१९ **युज्याय**=योक्तु योग्याय व्यवहाराय ७ १९ ९ [युजिर् योगे (रुधा०) धातोरौणा० क्यप् । अथवा=युजिर-धातो कर्त्तरि क्विपि युज् । ततो भवार्थे यत्]

युवते ब्रह्मचर्येणाधीत्यविद्ये पूर्णयुवावस्थे (कन्ये) ५ २ २

युवते युनक्ति ७ ४ २ [यु मिश्रणेऽमिश्रणे च (अदा०) धातोर्लट् । विकरणव्यत्ययेन श । व्यत्ययेन चात्मनेपदम्]

युवद्रिक् युवा प्रापक' (कामः=इच्छा) ४.४४.७ युवा प्राप्नुवन् (काम =इच्छा) ४ ४३.७ [युष्मदुपपदे अञ्चु गतौ (भ्वा०) धातो क्विप् । 'विष्वग्देवयोश्च०' अ० ६ ३ ६२ सूत्रेण टेरद्र्यादेश । युष्मदो युवादेश-श्छान्दस]

युवधिता युवयोर्हितानि (धाम=धामानि) ६ ६७.६. [युष्मद्-धितपदयो समासे शेर्लोपश्छन्दसि । युष्मदो युवादेशश्छान्दस । धित.=दधाते क्त । 'दधातेर्हि' रिति हिरादेशो न भवति छान्दसत्वात्]

युवन् यौवन प्राप्नुवन् (विद्वज्जन) १.१४१ १०. **युवभिः**=प्राप्तयुवावस्थै (मनुष्यै) ३ ३१.७. **युवा**= प्राप्तयौवन (जन) २२ २२ बलिष्ठ (विद्वज्जन) ५ १ ६. युवाऽवस्थास्थ (पुत्र) १.१४४ ४ सुखै सयोजको दुखैर्वि-योजकश्च (इन्द्र =परमेश्वर आप्तो जनो वा) २ २० ३. शरीरात्मबलयुक्त (इन्द्र =राजा) ६.४५.१ पूर्णेन ब्रह्म-चर्येण युवावस्था प्राप्य कृतविवाह' (गृहपति) ७.१५.२ मिश्रणाऽमिश्रणकर्त्ता (इन्द्र =विद्वान् सेनापति. सूर्यो वा) १ ११ ४ यौति मिश्रयति पदार्थै. सह पदार्थान् वियोजयति वा (अग्नि =प्रसिद्धो रूपवान् दहनशील) १ १२ ६. तरुणावस्थ (इन्द्र =सभापति) ७ ३२. विभाजकः (अग्नि =पावक) ३ २३ १ **युवानम्**=युवत्वसम्पादकम् (रेत) ३३ ११ सर्वस्य जगत सयोजक विभाजक वा (इन्द्र=परमेश्वरम्) ३ ३२ ७ बलवन्तम् (तौग्र्य=राज-पुत्रम्) १ ११८.६ पूर्णबलम् (वीरपुरुषम्) २ ३३ ११ सम्प्राप्तयौवनम् (पतिम्) २ ३५ ४ सम्पादितयौवनम् (पतिम्) १ ११७ १३ भेदकम् (इन्द्र =विद्युतम्) २ १६ १. **युवानः**=प्राप्ताऽऽत्मशरीरयौवना (नर =नायका जना) ५.५८ ८ मिश्रणामिश्रणकर्त्तृत्वेन बलिष्ठा (रुद्रा = वायव) १.६४ ३ [यु मिश्रणेऽमिश्रणे च (अदा०) धातो 'कनिन् युवृषितक्षि०' उ० १ १५६ सूत्रेण कनिन् । युवा प्रयौति कर्माणि नि० ४ १६ प्राणो वै युवासा ऐ० २ २]

युवन्यून् आत्मनो मिश्रितानमिश्रितान् पदार्थानिच्छून् (विद्वद्गणान्) ५ ४२ १५ [युवन्-पदाद् आत्मन इच्छाया क्यजन्ताद् उ]

युवमानः संयोजको भेदकश्च (जीवात्मा) प्र०— अत्र व्यत्ययेन श आत्मनेपदञ्च १ ५८.२ [यु मिश्रणेऽमिश्रणे च (अदा०) धातो शानच् । विकरणव्यत्ययेन श । आत्मनेपदञ्च व्यत्ययेन]

युवयुजम् युवाभ्या युज्यते तम् (रथम्) प्र०—अत्र 'वाच्छन्दसि सर्वे विधयो भवन्ति' इति अप्राप्तोऽपि युवादेश १ ११६ ५ [युष्मदुपपदे युजिर् योगे (रुधा०) धातो क्विप् । युष्मदो युवादेशश्छान्दस.]

युवयुः युवा कामयमानः (सज्जन) ६.६३.३. [युष्मत्पदाद् आत्मन इच्छायामर्थे क्यजन्ताद् उ. । युवा-देशश्छान्दस]

युवयूः युवा कामयमाना. (प्रजा) ४.४१.८ [युव-युरिति व्याख्यातम् । तत स्त्रियामूङ्प्रत्यय]

युवशा युवानो विद्यन्ते ययोस्तौ (शिल्पिनौ) प्र०— अत्र लोमादिपामादिना मत्वर्थीय श १ १६१ ७. युवैर्मि-श्रितामिश्रितैस्तद्वल्कृतानि विस्तृतानि (कर्त्तव्यानि) १ १६१.३ [युवन्प्राति० मत्वर्थे 'लोमादिपामादिपिच्छा-दिभ्य. शनेलच.' अ० ५ २.१०० सूत्रेण श.]

युवसे सयोजयसि ६.६०.२ मिश्रय प्र०—अत्र विकरणात्मनेपदव्यत्यय. १५ ३० **युवस्व**=सयोजय ७ ५.६ कर्म्मसु प्रेर्ष्व ४ ४८ ५ प्रेरयस्व ४ ४८ ५ मिश्र-यस्व २७ २७ **युवामहे**=विभजामहे ६ ५७ ६. **युवासे**= मिश्रय ६.३५ ३ **युवेथे**=सङ्गमयथ १ १८०.६ [यु मिश्रणेऽमिश्रणे च (अदा०) धातोर्लट् । व्यत्ययेन श आत्मने-पदञ्च । अन्यत्र लोट् लेट् चापि]

युवाकवः सम्पादितमिश्रितामिश्रितक्रिया. (वृक्त-बर्हिष =शिल्पविद्याविदो विद्वास) प्र० 'यु मिश्रणेऽमिश्रणे च' इत्यस्माद्धातोरौणादिक आकु प्रत्यय. १ ३ १ ये युवा कामयन्ते ते (विद्वास) ३ ३ ५८ **युवाकुः**=सुसयोजक (विद्वज्जन) ७ ६० ३ मिश्रिताऽमिश्रित (सोम =ऐश्वर्य-लाभ) ३ ५८ ६ यो यावयति मिश्रयति सयोजयति सर्वा-भिर्विद्याभि सह जनान् स (अध्यापक उपदेशको वा) १ १२० ३ [यु मिश्रणेऽमिश्रणे च (अदा०) धातोर्बाहु० औणा० आकु । स च कित्]

युवाकु मिश्रीभाव पृथग्भाव वा प्र०—अत्र बाहुल-कादौणादिक काकु प्रत्यय 'सुपा सुलुक्०' इति विभक्तेर्लुक् च १ १७ ४. सुखेन मिश्रिताय दुखै पृथग्भूताय वा (राये= धनाय) १ १२० ६. [यु मिश्रणेऽमिश्रणे च (अदा०) धातो-र्बाहु० औणा० काकुः]

शत्रुम् ७ १८ २४ [युधि-ग्रामधिपदयो समासे सप्तम्या अलुक्। ग्रामधि =ग्रामोपपदे डुधाञ् धारणपोषणयो (जुहो०) धातो 'कृतो बहुल वे' ति कर्त्तरि कि]

युनक्त युङ्ग्ध्वम् भा०—कृषि योग च कुरुत १२ ६८ **युनक्ति**=नियुक्त करोति योजयति भा०—आदिशति प्र०—अत्र सर्वत्राऽन्तर्गतो ण्यर्थ प्रयोजनाय १ ६ **युनजत**= युनक्ति ७ ३६ ४ **युनजते**=युञ्जते प्र०—अत्र 'बहुल छन्दसि' इत्यलोपो न ७ २७ १ **युनज्मि**=समादधे १० २१. सयोजयामि ७ १६ ६ सुगन्धैर्द्रव्यैर्युक्त करोमि १८.५१ नियुक्त करता हूँ स० वि० १४३, अथर्व० ३ ३० ६ [युजिर् योगे (रुधा०) धातोर्लङ्। अडभाव। अन्यत्र लङ् लट्। 'वा छन्दसी' त्यल्लोपोऽपि न भवति]

युनजन् युञ्जन् (जन.) ६ ६७ ११ [युजिर् योगे (रुधा०) धातो. शतृ। अल्लोपस्तु न 'वा छन्दसीति' नियमेन]

युयवन् युवन्तु पृथक्कुर्वन्तु प्र०—अत्र लेटि शप श्लु ६ १६ वियुज्यन्ताम् ७ ३८ ७ [यु मिश्रणेऽमिश्रणे च (अदा०) धातोर्लेडि शप श्लौ सति छान्दस रूपम्। युयवन् यावयन्तु नि० १२ ४४.]

युयुजानसप्ती युयुजानौ सप्ती वेगाकर्षणौ ययोस्तौ (वायुविद्युतौ) ६ ६२ ४ [युयुजान-सप्तिपदयो. समास। 'युयुजान' इति व्याख्यास्यते। सप्ति अश्वनाम निघ० १ १४]

युयुजानः समादधन् (अग्नि =विद्वान् पुत्र) ४ २ २ युक्तान् कुर्वन् (विद्युद्विद्याविज्जन) ६ ५६ ५ [युज समाधौ (दिवा०) धातोर्लिट कानच्]

युयुजे युञ्जीत १ १६१ ६ **युयुज्रे** =युञ्जते ५ ५३ १ युञ्जन्ति ६ २५ ३ योज्यन्ताम् प्र०—अत्र लोडर्थे लिट् 'इरयो रे' अ० ६ ४ ७६ इति रे आदेश १ ४६ ८ [युजिर् योगे (रुधा०) धातोर्लिट्। 'युयुज्रे' प्रयोगे 'इरयो रे' इति 'रे' आदेश]

युयुतम् विभाजयतम् ६ ५६ ८ [यु मिश्रणेऽमिश्रणे च (अदा०) धातोर्लोटि 'बहुल छन्दसी' ति शप श्लौ सति रूपम्]

युयुत्सन्तम् योद्धुमिच्छन्तम् (शत्रुम्) ५.३२ ५ [युध सम्प्रहारे (दिवा०) धातोरिच्छायामर्थे सन्नन्ताच्छतृ]

युयुधयः साधु युद्धकारिण. (पुरुषा) प्र०—'उत्सर्गश्छन्दसि सदादिभ्यो दर्शनात्' अ० ३ २.१७१ अनेन वार्तिकेनाऽत्र युधधातो किन्प्रत्यय १ ८५ ८ [युध सम्प्रहारे 'किकिनावुत्सर्गश्छन्दसि सदादिभ्यो दर्शनात्' अ० ३ २ १७१ वा० सूत्रेण कि। लिट्वच्च]

युयूषतः सविभाजयत ६ ६२.१. मिश्रयितुमिच्छत १ १४४ ३ [यु मिश्रणेऽमिश्रणे च (अदा०) धातोरिच्छायाया सन्नन्ताल्लट्]

युयूषन् मिश्रयितुमिच्छन् (राजा) ४.१६ ११. [यु मिश्रणेऽमिश्रणे च (अदा०) धातोरिच्छायामर्थे सन्नन्ताच्छतृ]

युयोत प्रापयत त्याजयत ३ ५४ १८. गृह्णीत वा पृथक्कुरुत २ २६ २ पृथक्कुरुत प्र०—अत्र 'बहुल छन्दसि' इति शप श्लु 'तप्तनप्तन०' इति तबादेश १ ३६ ८ **युयोतन**=सयोजयत ५ ८७ ८ [यु मिश्रणेऽमिश्रणे च (अदा०) धातोर्लोटि, शप श्लौ च रूपम्]

युयोति मिश्रयति १ ६२ ११ **युयोतु**=वियोजयतु ५ ५० ३ पृथक्करोतु ६ ४७ १३ **युयोथाः**=पृथक्कुर्या २ ३३ १ **युयोधि**=वियोजय ७.४३ पृथक्कुरु १ १८६ ३ दूरीकुरु प्र०—अत्र 'बहुल छन्दसि' इति शप श्लु ५ ३६ पृथक्करोषि २ ३३ ३ अधर्माचरण से सदा दूर रखिये स० वि० २१४, ४० १६ [यु मिश्रणेऽमिश्रणे च (अदा०) धातोर्लेट्। 'बहुल छन्दसी' ति शप श्लु। अन्यत्र लोट्]

युयोप युप्यति विमोह करोति १ १०४ ४. [युप विमोहने (दिवा०) धातोर्लिट्]

युवत् मिश्रणाऽमिश्रणयुक्तम् (भा०—कारणम्) प्र०—अत्र यु-धातोरौणादिको बाहुलकात् कतिन्प्रत्यय १ ११ ११ मिश्रयित्रमिश्रकौ वा (इन्द्राग्नी=विद्युद्भौतिकावग्नी) १ १०६ १ [यु मिश्रणेऽमिश्रणे च (अदा०) धातोर्बाहु० औणा० कतिन्]

युवतयः मिश्रामिश्रत्वकर्मणा सदाऽजरा (दशदिश) १ ६५ २ प्राप्तयौवनावस्था ब्रह्मचारिण्य (कन्या) ३ ५५ १६ प्रौढयौवना (कन्या) २ ३५ ११ पूर्णायुवावस्थास्थस्त्रिय स० प्र० ११०, ३ ५५.१६. बीसवे वर्ष से चौबीसवें वर्ष वाली कन्याएँ स० वि० १०४, २ ३५ ४ **युवतिः**=नवयौवना (दुहिता) १ ११८ ५ प्राप्तयौवनाऽवस्था (स्त्री) ५ ६१ ६ युवाऽवस्थाया विद्यामधीत्य कृतविवाहा (माता) ५ ४७ १ चतुर्विंशतिवार्षिकी (कन्या) १ १२३ १० पूर्णाऽवस्था सती कृतविवाहा (माता) ५ २ १ **युवती**=प्राप्तयौवनाऽवस्थे (स्वसारा=भगिन्यौ) ३ ५४ ७ **युवत्योः**=युवावस्था प्राप्तयो स्त्रीपुरुषयो. ६ ४६ २ [युवन्प्राति० स्त्रिया 'यूनस्ति' अ० ४ १ ७७ सूत्रेण ति। 'युवन्' इति व्याख्यास्यते। युवति प्रयुवतीम् नि० १० २६]

यावद्वा श० १ २ ४ १ यजमानो वै यूप ऐ० २ ३. श० १३ २ ६ ६ यजमानदेवत्यो वै यूप तै० ३ ६.५ २ यजमानो वाऽएष निदानेन यद् यूप श० ३ ७ १ ११]

यूपवाहाः ये यूपं वहन्ति प्रापयन्ति ते (मनुष्या) १ १६२ ६ [यूपोपपदे वह प्रापणे (भ्वा०) धातो. कर्त्तर्यण्]

यूपव्रस्काः यूपस्य स्तम्भस्य छेदका (शिल्पिनो जना) २५.२६. यूपाय स्तम्भाय ये वृश्चन्ति ते (मनुष्या) १ १६२ ६ [यूपोपपदे ओव्रश्चू छेदने (तुदा०) धातो क्विप्]

यूपेव स्तम्भ इव दृढौ (पितरा=पितरौ) ४ ३३ ३. [यूपा-इवपदयो समास । यूपा=यूपप्राति० द्विवचनस्याकारादेशश्छान्दस]

यूयवन् पृथक्कुर्वन्तु २११० [यु मिश्रणेऽमिश्रणे च (अदा०) धातोर्लङि छान्दसे द्वित्वे तुजादित्वाद् अभ्यासस्य दीर्घत्वे रूपम् । 'बहुल छन्दसी' ति शपो न लुक्]

यूयुविः विभागकर्त्ता (विद्वज्जन) ५.५० ३ [यु-मिश्रणेऽमिश्रणे च (अदा०) धातोर्बाहु० औणा० क्विन्। बहुलवचनाद् धातोर्द्वित्वेऽभ्यासस्य च दीर्घत्वे रूपम्]

यूष्णः वर्द्धकस्य (पुरुषस्य) २५ ३६ रसस्य १ १६२ १३ **यूष्णा**=क्वथितेन रसेन २५ ६ [यूषप्राति० शस्प्रभृतिषु 'पद्दन्नोमास्हृत्०' अ० ६ १ ६३ सूत्रेण 'यूषन्' आदेश । यूप=यूष हिंसायाम् (भ्वा०) धातोरच्]

येजे यजति ६ ३६ २ [यज देवपूजासगतिकरणदानेषु (भ्वा०) धातोर्लिट्]

येतिरे प्रयतन्ते १ ८५ ८ यतन्ते ५ ५६ २ [यती प्रयत्ने (भ्वा०) धातोर्लिट्]

येमतुः नियच्छत ५.६१ ६ गमयतम् ५ ७३ ३ देशान्तरे यच्छथ प्र०—अत्र लडर्थे लिट् १ ३० १६ **येमाते**=नियमेन गच्छत ४४८ ३ **येमिरे**=सयम कुर्वन्ति ३३ ६५ प्राप्नुवन्तु १२ ११६ नियमेन धारयन्ति ऋ० भू० १३६, ऋ० ६ १ ६ ३ आकर्षणधारणनियम प्राप्नुवन्ति ऋ० भू० १४०, ऋ० ६ १.६ ४ स्थितिं लभन्ते ऋ० भू० १४० यच्छन्ति ३ ५६ ८ यच्छेयु १ १३५ १. उद्युञ्जन्ति ११० १ **येमुः**=नियच्छन्ति ६ २१ ६ यच्छेयु ४ २१ ४ **येमे**=यच्छति ५ ३२ १० [यमु उपरमे (भ्वा०) धातोर्लिट् । 'येमे' एतदादिषु व्यत्ययेनात्मनेपदम्]

येमानम् नियन्तारम् (दृढज्ञानम्) ४ १ १५ **येमानः**= नियच्छन्त (सज्जना) ४ ४४ ३ नियमयन्त (धार्मिका जना) ४ २३ १० [यमु उपरमे (भ्वा०) धातोर्लिट कानच् । 'अत एकहल्मध्ये०' इत्यकारस्यैकारादेशोऽभ्यासलोपश्च]

येषन्ती स्रवन्ती (उखा=पाकस्थाली) ३ ५३.२२ [यसु प्रयत्ने (दिवा०) धातो शत्रन्तान् ङीप् । अकारस्यैकार]

येषम् प्रयतेयम् २ २७.१६. [यसु प्रयत्ने (दिवा०) धातोर्लङ् । धातोरकारस्य एकारश्छान्दस । अटोऽभाव. । 'यसोऽनुपसर्गादि ति श्यनो विकल्पे शप्]

येष्ठः अतिशयेन याता (शिल्पी जन) ५.७४ ८. [या प्रापणे (अदा०) धातो तृजन्तादतिशायन इष्ठन्प्रत्यये तृचो लोप]

येष्ठा अतिशयेन नियन्तारौ (अश्विनौ=अध्यापकोपदेशकौ) ५ ४१.३. ['येष्ठ' इति व्याख्यातम् । ततो द्विवचनस्याकारादेश.]

यो या समी—अत्र महीधरेण 'या' इत्यशुद्धं व्याख्यातम् ५ ६. [यद् सर्वनाम्न. स्त्रिया प्रथमैकवचने 'या' इति रूपम् । अकारस्यौकारो वर्णव्यत्ययेन]

योक्तारम् योजकम् भा०—योगाभ्यासकर्त्तारम् (पुरुषम्) ३० १४ [युजिर् योगे (रुधा०) धातो कर्त्तरि तृच्]

योक्त्रम् योजनम् ५ ३३.२ **योक्त्रे**=अश्वादि यान के जोटे स० वि० १४२, अथर्व० ३ ३० ६ [योक्त्राणि अङ्गुलिनाम निघ० २ ५ योक्त्राणि योजनानि निघ० ३ ६. युजिर् योगे (रुधा०) धातो 'दाम्नीशसयुयुज०' अ० ३.२.१८२ सूत्रेण करणे ष्ट्रन्]

योगक्षेमः अप्राप्तस्य प्राप्तिलक्षणो योगस्तस्य रक्षण क्षेम (भा०—काम०) २२.२२ [योग-क्षेमपदयो. समास योगक्षेम =यद् योक्त्र स योग । यदास्ते स क्षेम । योगक्षेमस्य क्लृप्त्यै तै० ३ ३ ३ ३]

योगम् सयोजनम् ११८ ७ **योगः**=युज्यते यस्मिन् स १ ३४ ६ **योगाय**=युञ्जन्ति यस्मिँस्तस्मै ३० १४ **योगे**=सर्वसुखसाधनप्राप्तिसाधके (व्यवहारे) १.५ ३ अप्राप्तस्य प्राप्तिलक्षणे २२ २२ अनुपात्तस्योपात्तलक्षणे ७ ५४ ३ समागमे यमाद्यनुष्ठाने वा ४ २४ ४ [युजिर् योगे (रुधा०) धातोर्घञ् । योग =यद् योक्त्र स योग तै० ३ ३ ३ ३]

योगे योगे युञ्जते यस्मिन् यस्मिन् (वाजे वाजे= सङ्ग्रामे सङ्ग्रामे) ११.१४ अनुपात्तस्योपात्तलक्षणे योग तस्मिन् प्रति योगे १ ३० ७ [योगे-पदस्य वीप्साया द्वित्वम्]

योग्याभिः पृथिवीभि ३ ६ ६ [युजिर् योगे (रुधा०)

युवाना सयोजकौ वायुविद्युतौ ६ ६२४ युवानौ युवसदृशौ (पितरा=मातापितरौ) १ ११० ८ पूर्णयुवावस्थास्थौ (मातापितरौ) १५.५३ मिश्रितामिश्रितयो कर्त्तारौ (अध्यापकोपदेष्टारौ) २१ ६ [युवन्प्राति० प्रथमाद्विवचनस्याकारादेशश्छान्दस]

युवायव: युवामिच्छव (सोमास =ऐश्वर्ययुक्ता जना १ १३५ ६ [युष्मत्प्राति० आत्मन इच्छायामर्थे क्यजन्ताद् उ । अस्मदो युवादेशश्छान्दस]

युवायुजम् युवाभ्या युज्यते तम् (रथ=सैन्यादियुक्त यानम्) प्र०—अत्र 'वाच्छन्दसि सर्वे विधयो भवन्ति' इत्यप्राप्तोऽपि युवादेश १ ११६ ५ [युष्मदुपपदे युजिर् योगे (रुधा०) धातो कर्मणि क्विप् । युष्मदो युवादेशश्छान्दस]

युवावते त्वा रक्षते (राजपुरुषाय) ३ ६२ १ [युष्मद्-अवत्पदयो समास । युवादेशश्छान्दस । अवत्=अव रक्षणे (भ्वा०) धातो शतृ]

युष्मयन्ती: या युष्मानाचक्षते ता (गिर =सुशिक्षिता वाणी) २ ३६ ७ [युष्मत्प्राति० 'तत्करोति तदाचष्ट' इति वा० सूत्रेण णिजन्ताच्छत्रन्ताच्च ङीप्]

युष्माकाभि: युष्माभिरनुकम्पिताभि सेनाभि १ ३६ ८ [युष्मत्प्राति० अनुकम्पायामर्थे 'अव्यय सर्वनाम्नामकच् प्राक् टे' इति सूत्रेणाकच्]

युष्माकेन युष्माक सम्बन्धेन प्र०—अत्र 'वाच्छन्दसि' इत्यनण्यपि युष्माकादेश १ १६६ १४ [युष्मत्प्राति० शैषिकेऽणि 'तस्मिन्नणि च युष्माकास्माकौ' अ० ४ ३ २. इति विहितो युष्माकादेशोऽनण्यपि भवति छान्दसत्वात्]

युष्मादत्तस्य युष्माभिर्दत्तस्य (राय =धनस्य) ५ ५४ १३ [युष्मद्-दत्तपदयो समासे पूर्वपदस्याकारादेशश्छान्दस]

युष्मानीत: युष्माभिरानीत (सज्जन) २ २७ ११. [युष्मद्-आनीतपदयो समासे पूर्वपदस्याकारादेशश्छान्दस]

युष्मावत्सु युष्मत्सदृशेषु (विद्वज्जनेषु) २ २६ ४ [युष्मत्प्राति० 'वतुप्प्रकरणे युष्मदस्मद्भ्या छन्दसि सादृश्ये उपसख्यानम्' अ० ५ २ ३६ वा०सूत्रेण वतुप् । 'आ सर्वनाम्न' इत्याकारादेश]

युष्मे युष्मान् ४ १० ८ युष्माकम् ६.१८ ५ [युष्मत्प्राति० 'सुपा सुलुक्०' इति सुपा स्थाने 'शे' आदेश]

युष्मेषित: यो युष्माभिर्जेतुमिषित स (अ०—शत्रुजन) प्र०—अत्र 'छान्दसो वर्णलोपो वा' इति दकारलोप समी०–इद सुगमपक्ष विहाय सायणाचार्येण प्रत्ययलक्षणादि- कोलाहल कृत १ ३६ ८ [युष्मद्-इषितपदयो समास । पूर्वपदस्य दकारलोपश्छान्दस । इषित =इष गतौ (दिवा०) धातो क्त]

युष्मोत: युष्माभि पालित सरक्षितो रक्षितो वा (अर्वा=अश्व इव सहनशीलो जन) सम्राट विप्रो वा ७ ५८ ४ [युष्मद्-ऊतपदयो समासे पूर्वपदस्य दकारलोपश्छान्दस । ऊत =अव रक्षणादिषु (भ्वा०) धातो क्त । 'ज्वरत्वरस्त्रिव्यविमवामुपधायाश्च' इत्युपधाया ऊठ्]

यूथम् समूहम् ४ ३८ ५ सेनासमूहम् ५ २ ४ **यूथेन**=सुखप्रापकपदार्थसमूहेनाऽथवा वायुगणेन सह प्र०—'तिथपृष्ठयूथगूथप्रोथा' उ० २.१२ अनेन यूथ-शब्दो निपातित १ १० २ [यु मिश्रणेऽमिश्रणे च (अदा०) धातो 'तिथपृष्ठगूथयूथप्रोथा' उ० २ १२ सूत्रेण थक् निपात्यते]

यूथा समूहान् १ ८१ ७ [यूथमिति व्याख्यातम् । तत शेर्लोपश्छन्दसि]

यूथेव यूथानि समूहा इव ७.६० ३ सैन्यानीव ४ २ १८ गोसमूहान् वृषभ इव १ ७८ समूह इव ६ ४६ १२ [यूथा-इवपदयो समास]

यूप: स्तम्भ १ ५१ १४ मिश्रितो व्यवहारयत्नोदय १६ १७ **यूपात्**=मिश्रितादमिश्रिताद् बन्धनात् ५ २७ **यूपे**=स्तम्भ मे स० वि० २०६, अथर्व० ६ ६ २ ५ [यु मिश्रणेऽमिश्रणे च (अदा०) धातो 'कुयुभ्या च' उ० ३ २७ सूत्रेण प प्रत्ययो दीर्घश्च । यूथ यौते. समायुत भवति नि० ४ २४ (देवा) त वै (य) यूपेनैवायोपयस्तद् यूपस्य यूपत्वम् ऐ० २ १ (देवा) यदेनेन (यूपेन यज्ञ) अयोपयस्तस्माद् यूपो नाम श० १ ६ २ १ तस्माद् यूपऽएव पशुमालभन्ते नऽर्त्ते यूपात् कदाचन श० ३ ७ ३ २ पशवो वै यूपमुच्छ्रयन्ति श० ३ ७ २ ४ गर्तन्वान् यूपोऽतीक्ष्णाग्रो भवति श० ५ २ १ ७ अष्टाश्रिर्यूपो भवति श० ५ २ १ ५ सप्तदशारत्निर्यूपो भवति तै० १ ३ ७ २ खादिरो यूपो भवति श० ३ ६ २ १२ स्तुप एवास्य (यज्ञस्य) यूप श० ३ ५ ३ ४. यूप स्थाणु श० ३ ६ २ ५ खलेवाली यूपो भवत्येतया हि त रसमुत्कूपन्ति ता० १६ १३ ८ वैष्णवो हि यूप श० ३ ६ ४ १ असौ वा अस्य (अग्निहोत्रस्य कर्त्तु) आदित्यो यूप ऐ० ५ २८ आदित्यो यूप तै० २ १ ५ २ वज्रो यूप श० ३ ६ ४ १६ वज्रो वा एष यद् यूप कौ० १० १ ऐ० २ १ वज्रो वै यूप प० ४ ४ वज्रो वै यूपशकल श० ३ ८ १ ५ एष वै यजमानो यद् यूप तै० १.३ ७ ३ (चतुर्द्धा विभक्तस्य वज्रस्य) यूपस्तृतीय वा

योनिर्वाऽउत्तरवेदि श० ७ ३ १ २८. योनिर्वै गार्हपत्या चिति श० ७ १ १ ८ योनिरेव वरुण श० १२ ९ १ १७ योनिर्वै पुष्करपर्णम् श० ६ ४ १ ७ योनिर्मुञ्जा श० ६ ६ २ १५ परिमण्डला हि योनि श० ७ १ १ ३७ अन्धमिव वैतमो योनि जै० उ० ३ ९ २ मासेन वा ऽउदर च योनिश्च सहिते श० ८ ६ २ १४ योनिरुलूखलम् श० ७.५ १ ३८. योनिर्वै वामदेव्यम् जै० ३ ३०१]

योषण: मिश्रणशीला युवतय १ १४१ २ भार्य्या ४ ५ ५ [यु मिश्रणेऽमिश्रणे च (अदा०) धातोर्बाहु० औणा० युच्, पुगागमश्च। 'युष' इति सौत्रो धातु । ततो युजन्ताट् टाप् स्त्रियाम्]

योषणा स्त्री ५ ५२ १४ **योषणाम्**=स्वपत्नीम् ३ ६२ ८ भार्य्याम् ४ ३२ १६ स्वस्त्रियम् ३ ५२ ३ **योषणा:**=योषा इव वर्त्तमाना (दिव =ज्योतीषि) ३ ५६ ५ **योषणे**=स्त्रियाविव (उषासानक्ता=रात्रिदिने) २९ ३१ ['युष' इति सौत्रो धातु । ततो वाहु० औणा० युच् । स्त्रिया टाप्]

योषत् वियोजये २ ३३ ९ विनश्येत् २ १८ ८ युज्येत ४.२ ९ [यु मिश्रणेऽमिश्रणे च (अदा०) धातोर्लेट् । सिब्-विकरण]

योषा प्राप्तयौवना (युवति) १ १२३ ११ विवाहिता स्त्री ऋ० भू० २११, ऋ० ७.८ १८ २ विद्याभिर्मिश्रिता-ऽविद्याभि पृथग्भूता स्त्री प्र०—अत्र यु-धातोर्बाहुल-कात्कर्मणि स प्रत्यय १.१०१ ७ विदुषी स्त्री २९ ४१ कामिनी स्त्रीव (उषा) १ ९२ ११ भार्य्या १ १२३ ९ प्रौढा ब्रह्मचारिणी युवति १ ११९ ५ **योषाम्**=स्वभार्याम् १ ११५ २ युवतिं कन्याम् १ ११७ २० **योषे**=कृतपूर्वा-परविवाहे परस्पर विरुद्धे स्त्रियाविव १ १०४ ३ [यु मिश्रणेऽमिश्रणे च (अदा०) धातोर्बाहु० औणा० स । तत स्त्रिया टाप् । योषा यौते नि० ३ १५ योषा वाऽइय वाग्य-देन न युवता श० ३ २ १ २२ योषा हि वाक् श० १ ४ ४.४ वागिति स्त्री (योषा) जै० उ० ४ २२ ११ योषा वै वेदि श० १ ३ ३ ८ योषा वै वेदिर्वृषाग्नि श० १ २ ५ १५. योषा वाऽअग्नि श० १४ ९ १ १६ योषा हि स्रुक् श० १ ४४.४ योषा वै स्रुग्वृषा स्रुव श० १ ३ १ ९ योषा वै पत्नी श० १ ३ १ १८ न वै योषा कचन हिनस्ति श० ६ ३ १ ३९ तस्मात्पुमान् दक्षिणतो योषामुपशेते जै० उ० १ ५३ ३ दक्षिणतो वै वृषा योषामुपशेते श० ६ ३ १.३०. अरत्निमात्राद्धि वृषा योषामुपशेते श० ६ ३ १ ३० तस्माद् यदा योषा रेतो धत्तेऽथ पयो धत्ते श० ७ १ १ ४४ पुरन्धिर्योषा (यजु० २२ । २२) इति । योषित्येव रूप दधाति तस्माद्रूपिणी युवति प्रिया भावुका श० १३ १ ९ ६ पुरन्धिर्योषेत्याह । योषित्येव रूप दधाति तस्माद्रूपिणी युवति प्रिया भावुका तै० ३ ८ १३ २ योषा वै सिनीवाली (यजु० ११ । ५६) एतद्वु वै योषायै समृद्धरूप यत् सुकपर्दा सुकुरीरा स्वौपशा श० ६.५ १.१० पश्चाद् वरीयसी पृथु-श्रोणिरिति वै योषा प्रशसन्ति श० ३ ५ १ ११.]

यो: गच्छतो गमयितु (रगस्य) प्र०—अत्र या प्रापणे इत्यस्माद्धातोर्बाहुलकादौणादिक कु प्रत्यय १ ७४ ७ त्यक्तव्यस्य (रोगस्य) २ ३३ १३ [या प्रापणे (अदा०) धातोर्बाहु० औणा० कु । तत षष्ठी]

यो: पदार्थाना पृथक्करणम् प्र०—अत्र युधातोर्डोसि. प्रत्ययोऽव्ययत्वञ्च १ ९३ ७ धर्मार्थकाममोक्षप्रापणम् १ १०६ ५ प्रापक. (परमेश्वर) १ १८९.२ मिश्रितम् (भेषजम्=औषधम्) ५ ५३ १४ दु खात्पृथग्भूतम् (श= सुखम्) ५ ४७ ७ सयुक्तम् (शम्) ५ ६९ ३. सुखनिमित्तौ (इन्द्रापूषणा=विद्युद्वायू) ७ ३५.१ दूरीकरणे १९ ५५. दु खवियोजनम् १ ११४ २ दु खवियोजक सुखसयोजक (अग्नि =वैद्यराजो विद्वज्जन) ३ १८ ४ मिश्रयिता भेदको वा (विद्वान् जन) ३ १७ ३ सुकृताज्जनितम् (श=सुखम्) ४ १२ ५ [यु मिश्रणेऽमिश्रणे च (अदा०) धातोर्बाहु० औणा० डोसि]

यो: प्रापयति ६ ५० ७ प्रजा के रोगो का नाश कर आर्याभि० १ ४५, ऋ० १ ८ ५ २ **यौमि**=मिश्रयाम्यग्नौ प्रक्षिप्य वियोजयामि वा १ २२ **यौष्म**=युक्ता भवेम ४ २२ **यौ:**=पृथक् कुर्य्या २ ३२ २ [यु मिश्रणेऽमिश्रणे च (अदा०) धातोर्लङ् अडभाव । वृद्धेरभावश्च । अन्यत्र लट् लुड् लड् च]

रक्ष पालय ३ ३० रक्षति ४१४ रक्षा करो आर्याभि० १ २०, ऋ० १ ९ २० ८ **रक्षतम्**=रक्षत १ ९३ ८ **रक्षताम्**=आप दोनो रक्षा करें स० वि० १६७, अथर्व० ९ २ ३ १९ **रक्षध्वम्**=सतत पालयत प्र०—अत्र व्यत्ययेनात्मनेपदम् ४ २७ **रक्षन्ति**=पालयन्ति १ ४१ १ **रक्षन्ते**=रक्षन्ति प्र०—अत्र व्यत्ययेनात्मनेपदम् १ ९० २ पालयन्ति १ ६२ १० **रक्षसि**=पालयसि ३ ३६ **रक्षस्व**=पालय प्र०—अत्र व्यत्ययेनात्मनेपदम् ५ ३९ **रक्षिषत्**=रक्षेत् ७ १२ २ **रक्षथे**=रक्षतम् प्र०—अत्र लोडर्थे लट् व्यत्ययेनात्मनेपदञ्च १ ३४ ८,

धातोर्ण्यत् । ततष्टाप् स्त्रियाम्]

योज योजयति अ०—सयोजय, प्र०—अत्र विकरणव्यत्ययेन शप् लडर्थे लोडन्तर्गतो ण्यर्थ ३ ५१ युक्तान् कुरु १.८२ १. योजय युङ्क्ते वा ३ ५२ **योजते**=युनक्ति प्र०—अत्र व्यत्ययेन शप् १५ ३३ **योजम्**=युनज्मि २ १८ ३ [युजिर् योगे (रुधा०) धातोर्लोट्। विकरणव्यत्ययेन शप् अन्यत्र लट् लङ् च]

योजनम् योक्तुमर्हं विमानादियानम् १ ८८ ५. युजन्ति येन तदाकर्षणाख्यम् (वीर्यं=सामर्थ्यम्) ५ ५४.५. **योजनानि**=क्रोशान् १ १२३ ८ **योजनेन**=योगेन १ ९२ ३ **योजनेषु**=वन्धनेषु १.१६४ ९ [युजिर् योगे (रुधा०) धातोर्ल्युट् । योजनानि अंगुलिनाम निघ० २ ५]

योजना योजनानि वहून् क्रोशान् ९ १३ युज्यन्ते सर्वाणि वस्तूनि येषु भुवनेषु तानि प्र०—अत्र 'शेश्छन्दसि०' इति शेर्लोप १ ३५ ८ [योजनप्राति० शेर्लोपश्छन्दसि]

योजनेभिः अनेकैर्योजनैर्युक्तै (रजोभि =ऐश्वर्यप्रदैर्मार्गै.) ६ ६२ ६ [योजनप्राति० 'वहुल छन्दसी' ति भिस ऐसादेशो न भवति]

योजि अयोजि २ १८ १ [युजिर् योगे (रुधा०) धातो कर्मणि लुङ् । अडभावश्छान्दस]

योतोः मिश्रिताऽमिश्रितकर्त्तु (निर्णायकस्य राज्ञ) ६ १८ ११ [यु मिश्रणेऽमिश्रणे च (अदा०) धातोर्वाहु० औणा० तु । तत षष्ठी]

योत्सि युध्यसे प्र०—अत्र 'वहुल छन्दसि' इति श्यनभाव १ १३२ ४ [युध सम्प्रहारे "(दिवा०) धातोर्लट् । 'वहुल छन्दसी' ति शपो लुकि श्यनोऽप्यभाव]

योधत् युध्यते ६ ३९ २ [युध सम्प्रहारे (दिवा०) धातोर्लेट् । व्यत्ययेन शप्]

योधम् युद्धकर्त्तारम् (युद्धकुशल वीरम्) ६ २६ ४ **योधः**=प्रहर्त्ता १ १४३ ५ योद्धा (निरभिमानी राजा) ७.३१ ६ [युध सम्प्रहारे (दिवा०) धातोरिगुपधलक्षण क कर्त्तरि]

योधानः योद्धु शील (वीरपुरुष) १ १२१ ८ [युध सप्रहारे (दिवा०) धातोस्ताच्छील्ये चानश् । विकरणव्यत्ययेन शप्]

योधि वियोजय ५ ३ ८ [यु मिश्रणेऽमिश्रणे च (अदा०) धातोर्लोट् । 'अडितश्च' अ० ६ ४ १०३. सूत्रेण हेर्धिरादेश]

योधिष्टम् युध्येयाताम् ६ ६० २ [युध सम्प्रहारे (दिवा०) धातोर्लुङ् । अडभावश्छान्दस]

योधीयान् अतिशयेन योद्धा (सेनापति) १ १७३ ५ [युध सम्प्रहारे (दिवा०) धातोस्तृजन्ताद् ईयसुन् । 'तुरिष्ठेमेयस्सु' इति तृचो लोप]

योना गर्भाशये १ १६४ ३२ जन्मनिमित्ते (दम्पती) १ १४४ ४ योनौ निमित्ते सति १ ६५ २ गृहे ४ १ ११२ [योनिप्राति० 'सुपा सुलुक्०' सूत्रेण सप्तम्या प्रथमाद्विवचनस्य च स्थाने डादेश]

योनिम् सुखसाधक दु खविच्छेदकमुपदेशम् १२ ५९ गृहम् ६ १५ १६ कारणम् १७ ६० परमात्माख्य गृहम् १७ ७३ जन्मस्थानम् १९ ७६. स्वरूपम् ३१ १९ उदकम् ३ ३३ ४ मिश्रिताम् (उखा=पाकस्थालीम्) ११ ५९ स्थानमाकाशम् १३ ३ राजधर्मासनम् १२ १७ सत्यधर्मानुष्ठान वेदविज्ञानमेव प्राप्तिकरणम् ऋ० भू० १३२, ३१ १९ देहधारणकारणम् भा०—गर्भाशयम् १२ ३८ प्रकृति, स्वात्मस्वभावम् ८ २२ आदिकारण (परमात्मा) को आर्याभि० २ २८, १३ ३ **योनिषु**=युवन्ति मिश्रीभवन्ति येषु कार्येषु कारणेषु वा तेषु प्र०—अत्र 'वहिश्रिश्रुयु०' उ० ४ ५३ अनेन यु-धातोर्नि प्रत्ययो निच्च १ १५ ४ निमित्तेषु २ ३९ ४ **योनिः**=दु खवियोजक सुखसंयोजको व्यवहार १२ ५२ वसति ७ २१ स्थित्यर्थ स्थानविशेष ७ २२ ऐश्वर्यकारणम् ८ ३९ निवसति ९ २ न्यायासनम् १ १०४ १ निमित्त प्रयोजनम् ११ १२ जगत्कारण प्रकृति ३३ २ विद्यासम्वन्ध २० ३३ गृहे न्यायकर्त्री (राजपत्नी) १० २६. असम प्रमाणम् ८ ४१ राज्यभूमि ८ ३८ सन्ताननिमित्ता ३ ५३ ४ सयोगवियोगवित् (अ०—विद्वज्जन) ११ २९ जलम् २३ ४ **योनीः**=चिती १७ ७९. **योनेः**=स्वकारणात् २ ३५ १० **योनौ**=जन्मनि स्थले वा ३ २१ यज्ञे प्र०—'यज्ञो वा ऋतस्य योनि ' श० १ ३ १ १६, २ ९ कालाख्ये कारणे २९ ३१ युवन्ति यस्या सा योनिर्गृह जन्मान्तर वा तस्याम् २ २० आधारे ३ १ ७ समुद्रे १३ ५३ वन्धच्छेदके मोक्षप्रापके (विद्यावोधे) १२ ५४ क्षेत्रे १२ ६८ गृहाश्रमे १५ ५९ **योन्याम्**=गर्भाऽऽधारे १९ ८७ [यु मिश्रणेऽमिश्रणे च (अदा०) धातो. 'वहिश्रिश्रुयु०' उ० ४ ५१. सूत्रेण नि । योनि =उदकनाम निघ० १ १२ गृहनाम निघ० ३ ४ योनिरन्तरिक्ष महानवयव परिवीतो वायुना । अयमपीतरो योनिरेतस्मादेव परियुतो भवति नि० २ ८ योनिर्वाऽउखा श० ७ ५ २ २.

दुष्टगुणकर्मस्वभावहन्ता (विद्वज्जन) १.१२९.६. [रक्षस्-उपपदे हन हिंसागत्यो (अदा०) धातो. क्विप् । 'इन्हन्-पूषार्यम्णा शौ, सौ च' इति नियमादुपधाया न दीर्घ । अग्निर्वै देवाना रक्षोहा मै० २ १ ११ साम वै रक्षोहा तै० स० ६ ६.३.१ तै० ब्रा० ५ ६ ४]

रक्षोहत्याय दुष्टाना हननाय ६ ४५ १८ [रक्षस्-हत्यपदयो समास । हत्यम्=हन हिंसागत्यो. (अदा०) धातो 'हनस्त च' इति क्यप् तान्तादेशश्च]

रघवः सद्य कारिण (मनुष्या:) ४.५.१३ **रघुः**= लघु (श्येन इव सूर्य) ५ ४५ ६. [लघुप्राति० जस् । 'बालमूल०' अ० ८ २ १८ वा० सूत्रेण वा लत्वम्]

रघुद्रुवः ये रघून्यास्वादनीयान्यन्नानि द्रवन्ति ते (कृपीवला) १ १४० ४ ये रघु लघु द्रवन्ति गच्छन्ति ते (सूरय =विद्वासो जना) प्र०—अत्र कपिलकादित्वा-ल्लत्वम् १५ ४२ [लघूपपदे द्रु गतौ (भ्वा०) धातोर् क्विप् । 'बालमूललघ्वसुरालमङ्गुलीना वा रो लत्वमापद्यत इति वक्तव्यम्' अ० ८.२.१८ इति वा० सूत्रेण वा लत्वम्]

रघुपत्मजंहाः यो लघुपतन जहाति स (अग्नि) ६ ३.५ [रघुपत्मोपपदे ओहाक् त्यागे (जु०) धातोश्छान्दस श । रघुपत्म=रघु-पत्मपदयो समास । रघु =लघु । पत्म=पत्लृ गतौ (भ्वा०) धातोरौणा० मन्]

रघुपत्वानः ये रघून् पथ पतन्ति ते (सप्तय = अश्वा) प्र०—अत्र 'अन्येभ्योऽपि०' इति वनिप्प्रत्यय १ ८५ ६ [रघूपपदे पत्लृ गतौ (भ्वा०) धातो कर्त्तरि वनिप् । रघु =लघु]

रघुमन्यवः लघुक्रोधा (वीरयोद्धार) प्र०—अत्र वर्णव्यत्ययेन लस्य र १ १२२ १ [लघु-मन्युपदयो समास लस्य रेफ । मन्यु क्रोधनाम निघ० २ १३]

रघुयत् सद्योगन्त्री (भा०—गौरिव वस्तु) ४ ५ ६ [रघूपपदे इण् गतौ (अदा०) धातो शतृ]

रघुया रघव क्षिप्र गन्तार (वय =पक्षिण) प्र०—अत्र 'सुपा सुलुक्०' इति जस स्थाने याजादेश २ २८ ४ [लघुप्राति० जस स्थाने याच् 'सुपा सुलुक्०' सूत्रेण]

रघुष्यत् सद्य स्यन्दमानम् (सैन्यम्) ४ ५ ६. **रघुष्यदम्**=यो रघु लघु स्यन्दति तम् (अग्नि=विद्यु-दादिरूप वह्निम्) ३ २६ २ लघुगमनम् ५ २५ ६ यो लघु स्यन्दति तम् (रथ=विमानादियानम्) ५ ७३ ५ **रघुष्यदः**= ये रघुपु स्यन्दन्ते ते (कृषीवला) १ १४०.४ ये मार्गान् स्यन्दन्ते ते (सप्तय =अश्वा) प्र०—गत्यर्थाद्विधानो-बाहुलकादौणादिक उ. प्रत्ययो नकारलोपश्च १ ८५ ६. [रघूपपदे स्यन्दू प्रस्रवणे (भ्वा०) धातो कर्त्तरि क्विप्]

रघुस्पदः रघव आशुगा स्यन्दन प्रस्रवणानि प्रकृष्टगमनानि येषा ते (गिरय) १ ६४.७. [रघु-स्यद् पदयो समास । वर्णव्यत्ययेन यस्य पकार । स्यद्=स्यन्दू प्रस्रवणे (भ्वा०) धातो क्विप्]

रघ्वी लघ्वी (क्रिया) ६ ६३ ६ **रघ्वीः**=गमनशीला नद्य. १ ५२.५ [लघुप्राति० स्त्रिया ङीप् । लघु =लघि गतौ (भ्वा०) धातो 'लङ्घिबंह्योर्नलोपश्च' उ० १ २६. सूत्रेण उ. । नलोपश्च । लकारस्य रेफ]

रघ्वीरिव लघ्व्यो ब्रह्मचारिण्य इव ४ ४१ ६. यथा गमनशीला नद्य १ ५२ ५ [रघ्वी-इवपदयो समास । रघ्वी =रघु+ङीप्+जस्प्रत्यये पूर्वसवर्णदीर्घ:]

रजतनाभी रजतवर्णनाभियुक्तौ (पिशङ्गौ= पीतवर्णौ पशू) २९ ५९ [रजत-नाभिपदयो समास]

रजतम् रागविषयमानन्दस्वरूपम् (ब्रह्म) ऋ० भू० १९२ [रञ्ज रागे (भ्वा०) धातो: 'पृषिरञ्जिभ्या कित्' उ० ३ १११. सूत्रेण अतच् किच्च]

रजता. अनुरक्ता भा०—पत्न्यास्सिन् प्रीता (स्त्रिय) २३.३७. [रजतमिति व्याख्यानम् ततो जस्]

रजयित्रीम् विविधरागकारिणीम् (ओषधिम्) ३०.१२ [रञ्ज रागे (भ्वा०) धातोर्णिजन्तात् तृच् । तत स्त्रिया ङीप् । णिचि रञ्जेर्णौ मृगरमणे अ० ६ ४ २४. वा०सूत्रेण नलोप.]

रजसः लोकस्यैश्वर्यस्य वा १३ १५ लोकसमूहस्य ४.१ ११ लोकान् १ १६ ३ रागविषयस्य १.५२.१४ अन्तरिक्षस्य मध्ये १ ५२ ६. लोकजातस्य ७ ३५ ५. भूगोल-स्य १ ६२ १ उस घर का स० वि० १६७, अथर्व० ६ २ ३ १५ पृथिवीलोकस्य १.३३.७ **रजसा**=अन्धकार-लक्षणेन ३४ २५ लोकसमूहेन ३३ ४३ रजोरूपेण रजतरूपेण वा (रथेन) प० वि० । किरण द्वारा स० प्र० ३१३, ३३ ४३ **रजसि**=ऐश्वर्ये २ २ ४ **रजसी**=रात्र्यहनी ६ ९ १ रजोभिर्निर्मिते (द्यावापृथिवी=सूर्यभूमी) ४.५६ ३ **रजः**= सकारण लोकसमूहम् १ ५८ ५. लोकलोकान्तरम् ५ ४८ २ अणुत्रसरेण्वादि १ ६० ७ ऐश्वर्यम् ३ १ ५ पृथिव्यादि-लोकजातम् १.५६ ५ सूक्ष्म सर्वलोककारण परमाण्वादिकम् १ ८३ २ द्व्यणुकादिरेणु १३ २८ कण १ १४१ ७ सर्वलोकैश्वर्यसहितम् (ब्रह्म) ऋ० भू० १९२, अथर्व०

रक्षेथे ३ ५४ १६ [रक्ष पालने (भ्वा०) धातोर्लोट् । अन्यत्र लट् लेट्, व्यत्ययेनात्मनेपदमपि]

रक्षणेभिः अनेकविधैरुपायैः ४ ३.१४. [रक्ष पालने (भ्वा०) धातोर्ल्युट् । ततो भिस ऐस् न भवति छान्दसत्वात्]

रक्षमाणः रक्षन् सन् (अ०—सभेश्वर) प्र०—अत्र व्यत्ययेन शानच् १ ३१ १२ **रक्षमाणाः**=रक्षा कुर्वन्त (विद्वासो जना) १.७२ ५ ये रक्षन्ति ते (विद्वास.) १.१४६ ४ [रक्ष पालने (भ्वा०) धातो शानच् । व्यत्ययेनात्मनेपदम्]

रक्षमाणा यौ रक्षतस्तौ (प्राणोदानतुल्यौ विद्वासौ) ५ ६२ ५ [रक्ष+शानच्=रक्षमाण । ततो द्विवचनस्याकारादेश]

रक्षमाणासः ये रक्षन्ति ते (देवा=विद्वज्जना) १ ६६ ६ [रक्षमाणप्राति० जसोऽसुक्]

रक्षसः दस्युचोरादीन् ३४ २६ दुष्टान् मनुष्यान् दोषान् वा १ ७६ ३ दुष्टाचारान् मनुष्यान् ५ ४२ १० दुष्टा (द्विप=व्यभिचारिणीर्वृषली) ११ ४६ परपीडकस्य (दुर्जनस्य) १ १२६ ११ राक्षस, हिंसाशील, दुष्टस्वभाव-देहधारी से आर्याभि० १ १२, ऋ० १ ३ १० १५ **रक्षसाम्**=दुष्टकर्मकारिणा प्राणिनाम् ५ २६ रक्षन्ति परार्थहननेन स्वार्थमिति रक्षासि तेषाम् (स्वार्थिजनानाम्) ६ १६ **रक्षसे**=दुष्टाना विनाशाय ५ २ ६ **रक्षः**=दुष्टकर्मकारी मनुष्य १ ८६ ६ दुर्गन्धादिदु खजालम् १ ६ रक्ष स्वभावो दुष्टो मनुष्य १ ७ दुष्ट-व्यवहारान् प्र०—अत्र व्यत्ययेनैकवचनम् १ २१ ५ विघ्नकारी प्राणी परसुखाऽसहो मनुष्य, बन्धनेन रक्षितव्यम् १ २६ दुष्टाचारम् राक्षसम् ६ ३८ रक्षति सर्वत स्वार्थनिमित्तीभूत कर्म अ०—दुष्टस्वभाविनम् ६ १६ सर्वथा स्वार्थरक्षक परार्थहन्ता (दुष्टो जन) ६ १६ दस्युस्वभाव ११६. दुःख निवारणीयम् ११६ दुष्टस्वभावो जन्तु ११४ **रक्षांसि**=दुष्टान् दोषान्वा १८ ५२ रक्षयितव्यानि (कार्याणि) ७ १५ १० दुष्टानि कर्माणि दुष्टस्वभावान् प्राणिन १ ७६ १२ हिंसकान् दस्यून् ६ १६ दुष्टाचारान् ६ १६ २६ परपीडका स्वार्थिन (असुरा) २ २६ पालयितव्यानि (अन्ना=रुधिराणि) २५ ६ अन्यान् प्रपीड्य स्वात्मानमेव ये रक्षन्ति ते (भा०—चोरा) ३४.५१ [रक्ष पालने (भ्वा०) धातो 'सर्वधातुभ्योऽसुन्' उ० ४ १८६ इत्यसुन् । रक्षो रक्षितव्यमस्माद् । रहसि क्षणोतीति वा । रात्रौ नक्षत इति वा नि० ४ १८ अग्निर्वै रक्षसामपहन्ता श० १ २ १ ६. अग्निर्वै रक्षसामपहन्ता कौ० ८ ४ अग्निर्वै ज्योतीरक्षोहा श० ७ ४ १ ३४ ते (देवा) ऽविदु । अय (अग्नि) वै नो विरक्षस्तम. श० ३ ४ ३ ८ अग्नेर्वा ऽएतद्रेतो यद्धिरण्य नाष्ट्राणा रक्षसामपहन्ता श० १ ३ ४ ८ तत् (रक्ष.) सीसेनापजघान । तस्मात् सीस मृदु सृतजव हि श० ५ ४ १ १०. ते (देवा) एत रक्षोहण वनस्पतिमपश्यन् कार्ष्मर्य्यम् श० ७ ४.१ ३७ देवा ह वा ऽएत वनस्पतिषु रक्षोघ्न ददृशुर्यत् कार्ष्मर्य्यम् श० ३.४ ११६ यदापामार्गहोमो भवति रक्षसामपहत्यै तै० १.७ १८ अपामार्गैर्वै देवा दिक्षु नाष्ट्रा रक्षांस्यपामृजत श० ५ २ ४ १४ ब्राह्मणो हि रक्षसामपहन्ता श० १ १ ४ ६ साम हि नाष्ट्राणा रक्षसामपहन्ता श० ४ ४ ५ ६ स या वै दृप्तो वदति यामुन्मत्त सा वै राक्षसी वाक् ऐ० २ ७ आपो वै रक्षोघ्नी तै० ३ २ ३ १२ वज्रो वाऽआपस्तद्वज्रेणैवैतन्नाष्ट्रा रक्षांस्यतोऽपहन्ति श० १ ७ १.२ असृग् भाजनानि ह वै रक्षासि कौ० १० ४ रक्षसा हि स भाग. (असृग् रूप) श० १ ६ २ ३५]

रक्षस्विनः रक्षासि दुष्टस्वभावा निन्दिता मनुष्या विद्यन्ते येषु सङ्घातेषु तान् १ १२ ५ रक्षासि निन्दिता पुरुषा सन्ति येषु व्यवहारेषु ते प्र०—अत्र निन्दितार्थे विनि १ ३६ २० **रक्षस्विने**=पापी हिंसक दुष्टात्मा के लिए आर्याभि० १ २६ [रक्षस्प्राति० निन्दाया मत्वर्थे विनि । पुरुष पुरुषो हि रक्षस्वी तै० आ० ५ ६ ४]

रक्षिता रक्षणकर्त्ता (ईशान=ईश्वर) २५ १८ रक्षा करने मे तत्पर (ईश्वर) आर्याभि० १ १०, ऋ० १ ६ १५ ६ [रक्ष पालने (भ्वा०) धातो कर्त्तरि तृच्]

रक्षो रक्षैव १ १७४ ३ [रक्ष पालने (भ्वा०) धातोर्लोट् । वर्णव्यत्ययेनाकारस्योकारादेश]

रक्षोयुजे यो रक्षासि दुष्टान् मनुष्यान् युनक्ति तस्मै (अवमात्मने जनाय) ६ ६२ ८ [रक्षमुपपदे युजिर् योगे (रुधा०) धातो क्विप्]

रक्षोहणम् रक्षसा दुष्टाना हन्तारम् (विद्वज्जनम्) २ २३ ३ यया येन धार्मिकेण पुरुषेण रक्षासि हन्यन्ते तथा (पुरुषम्) ५ २३ **रक्षोहणः**=यथा यूय रक्षासि दुष्टान् दस्य्वादीन् हथ तथा तान् ५ २५ **रक्षोहणौ**=यथा रक्षसा हन्तारौ प्रजासभाद्यध्यक्षौ तथाऽहम् ५ २५ यथा रक्षसा शत्रूणा हन्तारौ भवथस्तथाऽहम् ५ २५ **रक्षोहा**=यो रक्षासि दुष्टान् हन्ति स (सूर्यो विद्वज्जनो वा) ५ २४ यो दुष्टाना रोगाणा हन्ता स (भिषक्=वैद्य) १२ ८०

वा नि० ६ ३३.]

रण्यानि रमणीयानि लोकजातानि ३ ५५ ७ रणेषु साधूनि कर्म्माणि १८५ १० [रमु क्रीडायाम् (भ्वा०) धातोर्यत्प्रत्यये मकारस्य नकारश्छान्दसः। रण-शब्दाद्वा साध्वर्थे यत्]

रण्वभिः रमणीयैः (धनैः) ५ ४४ १० [रमु क्रीडायाम् (भ्वा०) धातोर्बाहु० औणा० व । ततो भिस ऐसादेशो न छन्दसि]

रण्वम् उपदेशकम् ११२६७ शब्दायमानम् (अग्नि=पावकम्) ३ २६.१ रमणीयम् (उपदेशकम्) ६.२६ १ **रण्वः**=रमयिता (जगदीश्वरः) २ २४ ११ रमणीयस्वरूप (अग्नि=राजा) ४ १ ८ रममाण (सूनु=अपत्यम्) ६ २ ७ शब्दविद्यावित् (विद्वज्जन) १ १४४ ७ रमणीय (वाजी=अश्व) प्र०—अत्र रमधातो-र्बाहुलकादौणादिको व प्रत्यय १ ६६ ३ [रमु क्रीडायाम् (भ्वा०) धातोरौणा० बहुलवचनाद् व । मकारस्य नकारो वर्णव्यत्ययेन]

रण्वया रमणीयया (गातुमत्या=प्रशस्तवाग्भूमि-युक्तया) ७ ५४ ३ **रण्वा**=या रण्वति सुख प्रापयति सा (पुष्टि) १ ६५ ३ प्रशसनीया (पुष्टि=धातुवृद्धि) २ ४ ४ रमणीया (पुष्टि) ४ १६ १५ (रण्वमिति व्या-ख्यातम्, ततष्टाप् स्त्रियाम्। अथवा रवि गत्यर्थे (भ्वा०) धातो 'गुरोश्च हल' इत्यकार । ततष्टाप्]

रण्वसन्दृक् या रण्वान् रमणीयान् पदार्थान् सन्दर्श-यति सा (उषा=प्रभातवेला) ३ ६१ ५ रमणीय य सम्यक् पश्यति स (वीरपुरुष) ७ १ २१ **रण्वसन्दृशम्**= रमणीयसदृशम् (विद्वज्जनम्) ६ १६ ३७ [रण्वोपपदे सम्पूर्वाद् दृशिर् प्रेक्षणे (भ्वा०) धातो क्विन्। रण्वमिति व्याख्यातम्]

रण्विते शब्दायमाने (उपासानक्ता=रात्रिदिने) २ ३.६. [रवि गत्यर्थे (भ्वा०) धातो. क्त]

रताः ये रमन्ते ते (सम्भोगिजना) ४० ६ रममाणा ४० १२ [रमु क्रीडायाम् (भ्वा०) धातोर्बाहु० औणा० क्त । 'गत्यर्थाकर्मक०' इति वा कर्त्तरि क्त]

रतिः [illegible]णम् ८ ५१ [रमु क्रीडायाम् (भ्वा०) धातो स्त्रिया क्तिन्]

रत्नधातमम् रत्नानामतिशयेन धर्त्तारम् (राजानम्) ५ ८ ३ रमणीयानि पृथिव्यादीनि सुवर्णादीनि च रत्नानि दधाति धापयतीति रत्नधा अतिशयेन रत्नधा इति रत्नधातम-स्तम् (अग्नि=परमेश्वर भौतिक वा) १ १ १ रत्नानि सर्वजनै रमणीयानि प्रकृत्यादिपृथिव्यन्तानि ज्ञान-हीरक-सुवर्णादीनि च जीवेभ्यो दानार्थं दधातीति रत्नधा अतिशयेन रत्नधा स रत्नधातमस्तम् (अग्निम्) वे० भा० न० १ १ १. रत्न अर्थात् रमणीयपृथिव्यादिकों को अपने सेवकों के लिए धारण करने वाले (ईश्वर) को आर्याभि० १ २, ऋ० १ १ १ १ **रत्नधातमः**=रत्नानि रमणीयानि सुखानि दधाति येन सोऽतिशयित. (स्तोम=स्तुतिसमूह) १ २० १ [रत्नधाप्राति० अतिशायने तमप्। रत्नधा=रत्नोपपदे डुधाञ् धारणपोषणयो (जु०) धातो क्विप् कर्त्तरि। रत्न-धातमम्=रमणीयाना धनाना दातृतमम् नि० ७ १५.]

रत्नधाभिः या रत्नानि द्रव्याणि दधति ताभि (स्वपत्नीभि) ४ ३४ ७ **रत्नधाम्**=यो रत्नानि रमणी-यानि विज्ञानानि हीरकादीनि भुवनानि वा दधातीति तम् (परमेश्वरम्) ४ २५ **रत्नधाः**=यो रत्नानि दधाति स (पुरुष पतिर्वा) ३८ ५. रत्नानि रमणार्थानि पृथिव्यादीनि वस्तूनि दधातीति स (विद्युदग्नि) १ १५ ३ रत्नानि रमणीयानि वस्तूनि दधाति स (सुपुत्र) १ १६४ ४६ रमणीयवस्तु धर्त्ता (विद्वज्जन) २६ २१ [रत्नोपपदे दधातेर्धातो कप्रत्ययान्तात् टाप् स्त्रियाम्। अथवा रत्नोपपदे दधाते कर्त्तरि क्विप्]

रत्नधेभिः ये रत्नानि दधति तैः [ऋभुभि= मेधाविभिर्जनैः) ४ ३५ ७ ये रत्नानि द्रव्याणि दधति तैः (सिन्धुभि=नदीभि समुद्रैर्वा) ४ ३४ ८ [रत्नोपपदे डुधाञ् धारणपोषणयो (जु०) धातो क । ततश्छन्दसि भिस ऐसादेशो न]

रत्नधेयम् रत्नानि धीयन्ते यस्मिँस्तत् (पात्रम्) ४.३४ ४ रत्नानि धेयानि यस्मिँस्तत् (दुरोण=गृहम्) ४.१३ १ रत्नानि धेयानि येन तम् (जनम्) ५ ४२ ७. **रत्नधेयानि**=रत्नानि धीयन्ते येषु तानि (धनाधिकरणानि) ७.५३ ३ **रत्नधेयाय**=रत्नानि धीयन्ते यस्मिन् कोषे तस्मै ४ ३४ ११ [रत्न-धेयपदयो समास । रत्नमिति व्याख्यास्यते। धेयम्=डुधाञ् धारणपोषणयो (जु०) धातो 'अचो यत्' इति यत्]

रत्नधेया रत्नानि धनानि धीयन्ते यया तस्यै (प्रज्ञायै) ४ ३४ १ [रत्नधेयमिति व्याख्यातम्। ततष्टाप् स्त्रियाम्]

रत्नम् सुवर्णहीरकादिकम् ३ ५४ ३ रमन्ते जनाना मनासि यस्मिँस्तत् (वसु=उत्तमद्रव्यम्) १ ४१ ६ धनम् ३ ८ ६ रमणीय सुवर्णादिकम् १ ५३ १ रमणीय ज्ञान

११४.५१. **रजांसि**=लोकविशेषाणि ६ ३० ३. उत्तम-मध्यम-निकृष्टानि (लोकलोकान्तराणि) ४ ५३ ५ स्थानानि ३४ १६ लोकानैश्वर्याणि वा ४ ४५ ७ लोकस्थानानि २ ३६ ७ पृथिव्यादीनि स्थूलानि तत्त्वानि १ १६४ ६ **रजोभिः**=ऐश्वर्यप्रदैर्मार्गैः ६ ६२ ६ परमाणुभिर्लोकैर्वा सह ६ ६२ २ [रञ्ज रागे (भ्वा०) धातो 'भूरञ्जिभ्या कित्' उ० ४ २१७ सूत्रेणासुन् किच्च । रज =रात्रिनाम निघ० १ ७ पदनाम निघ० ४ १ रजसी =द्यावापृथिवीनाम निघ० ३ ३० रजतेर्ज्योती रज उच्यते, उदक रज उच्यते, लोका रजास्युच्यन्ते, असृगहनी रजसी उच्येते नि० ४ १९ रजस =अन्तरिक्षलोकस्य नि० १२ ७ रजस्सु= उदकेषु नि० १० ४४ इमे वै लोका रजासि श० ६ ३ १ १८ द्यौर्वै तृतीय रज श० ६ ७ ४ ५]

रजस्तुरम् यो रजासि लोकान् तुरति त तूर्णगमनागमनहेतुम् (मरुता गणम्) १ ६४ १२ **रजस्तूः**=यो रज उदक तौति वर्धयति स (वीरजन) ६ ६६ ७ यो रजासि लोकान् वर्धयति स (विद्वज्जन) ६ २ २ ['रजस्' इत्युपपदे तुर त्वरणे (जु०) धातो क्विप्]

रजस्याय रज सु लोकेषु परमाणुषु वा भवाय (जनाय) १६.४५ [रजस्प्राति० भवार्थे यत्]

रजःशया या रज सु सूर्यादिलोकेषु शेते सा (तनू = व्याप्ति) ५ ८ [रजस्-उपपदे शीङ् शये (अदा०) धातो 'अधिकरणे शेते' अ० ३ २ १५ सूत्रेणाच् । तत स्त्रिया टाप्]

रजिम् पङ्क्तिम् ६ २६ ६. [रञ्ज रागे (भ्वा०) धातो 'इक् कृष्यादिभ्य' इति वासूत्रेण स्त्रियाम् इक्]

रजिष्ठम् अतिशयेन ऋजु कोमलम् (पन्थाम्= पन्थानम्) प्र०—अत्र ऋजु-शब्दादिष्ठनि 'विभाषर्जोश्छन्दसि' अ० ६ ४ १६२ इति ऋकारस्य रेफादेश १ ९१ १ **रजिष्ठाः**=अतिशयेन रजितार (देवा =आदित्यादय) ७.५१ २ **रजिष्ठैः**=अतिशयेन रजस्वलैः (मार्गैः) १ ७९ ३ [ऋजुप्राति० अतिशायन इष्ठन्-प्रत्यये 'विभाषर्जोश्छन्दसि' अ० ६ ४ १६२ सूत्रेण ऋजोर् ऋकारस्य रेफ । रजस्प्राति० वा अतिशायन इष्ठन रजस्-शब्दान् मतुवर्थकप्रत्ययस्य लोपश्छान्दस । रजिष्ठैः =ऋतुतमैः रजस्वलतमैः प्रपिष्टतमैरिति वा नि० ८ १९]

रज्जुसर्जम् यो रज्जु सृजति तम् (शिल्पिजनम्) ३० ७ [रज्जूपपदे सृज विसर्गे (तुदा०) धातो 'कर्मण्यण्' इत्यण्]

रज्जुः रज्जु १ १६२ ८ [सृज विसर्गे (तुदा०) धातो 'सृजेरसुम् च' उ० १ १५ सूत्रेण उ प्रत्ययोऽसुमागम आदिसकारलोपश्च । पुनर्ऋकारस्य यणादेश आगम सकारस्य जश्त्व च । अथाप्याद्यन्तविपर्ययो भवति नि० २ २ वरुण्या वै यज्ञे रज्जु श० ६ ४ ३ ८ वरुण्या रज्जु श० १ ३ १ १४ वरुण्या वा ऽएपा यद्रज्जु श० ३ २ ४ १८]

रण उपदिश ५ ५१ ८. **रणन्**=उपदिशन्तु ४ ३३ ७ **रणन्त**=रमध्वम् ७ ५७ ५ **रणन्ति**=शब्दायन्ते ३.७.५ [रण शब्दे (भ्वा०) धातोर्लोट् । अन्यत्र लङ् लट् च । रणऽशब्दाद्वाचारे क्विप् तता लङि 'रणन्त' इति रूपम्]

रणन् उपदिशन् (विद्वज्जन) ५ ५३ १६ [रण शब्दे (भ्वा०) धातो शतृ]

रणयन् शब्दयन्तु स्तुवन्तु प्र०—अत्र लड्यडभाव १ १०० ७ **रणयन्त**=शब्दयन्ति ४ ७ ७ रण सङ्ग्राम इवाचरन्ति ३ ५७.२ रमेरन् रमयेयुर्वा ६ १ ४ शब्दयेयु १ १४७ १ **रणयन्तु**=शब्दयन्तु ६ २८ १ [रण शब्दे (भ्वा०) धातोर्णिजन्तात्लङ् अडभाव । रणप्राति० वा आचारे क्यच्-प्रत्यये छान्दस रूपम्]

रणाय सङ्ग्रामाय ३६ १४ युद्धाय १ ६१ ६ **रणाः**=रममाणा (गृहस्था जना) ६ २७ १. [रण शब्दे (भ्वा०) धातो 'वशिरण्योरुपसख्यानम्' अ० ३ ३ ५८ वा० सूत्रेण कर्त्तरि कारके अप् । रण सग्रामनाम निघ० २ १७ रमु क्रीडायाम् (भ्वा०) धातोर्वा बाहु० औणा० नक् । रणाय रमणीयाय सग्रामाय नि० ४ ८ रणाय रमणीयाय नि० ९ २७]

रणिष्टन शब्दयत २ ३६ ३ वदत २९ २४ [रण शब्दे (भ्वा०) धातोर्लङ् अडभाव । तस्य तनबादेश]

रणे रणे युद्धे युद्धे १ ७४ ३ ['रणे' पदस्य वीप्साया द्वित्वम्]

रण्यति रमते ५ १८ १ उपदिशति प्र०—अत्र विकरणव्यत्यय १ ८३ ६ **रण्यथः**=रमयथ ५ ७४ ३ **रण्यन्ति**=रणन्ति शब्दयन्ति प्र०—अत्र व्यत्ययेन शप स्थाने श्यन् १ ३८ २ [रण-शब्दे (भ्वा०) धातोर्लट् । विकरणव्यत्ययेन शप श्यन्]

रण्यवाचः रमणीयभाषा ३ ५५ ७ [रण्या-वाच्-पदयो समासे पूर्वपदस्य ह्रस्व । रण्या=रमु क्रीडायाम् (भ्वा०) धातो 'पोरदुपधाद्' इति यत्, ततष्टाप् स्त्रियाम् । मकारस्य नकारो वर्णव्यत्ययेन । रमु धातोर्वा बाहु० औणा० डण्यन्प्रत्यय । रण्यी रमणीयौ सग्राम्यौ

रथन्तराय यो रथैः समुद्रादीस्तरति तस्मै (अग्नये—पावकाय) २९.६० **रथन्तरे**=अन्तरिक्षे १.१६४.२५. **रथन्तरेण**=यत्र रथेन तरति तत्र तेन (तेजसा=सूर्य-प्रकाशेन) २१.२३ [रथोपपदे तॄ प्लवनसन्तरणयो (भ्वा०) धातो. 'ऋतोरप्' इत्यप् । नुडागमश्छान्दस । इय (पृथिवी) वै रथन्तरम् कौ० ३.५. प० २.२ ता० ६.८.१८. श० ५.५.३.५ अय वै (पृथिवी) लोको रथन्तरम् ऐ० ८.२. रथन्तरो वा अय (भू०) लोक तै० १.१.८.१ रथन्तर हीयम् (पृथिवी) श० १.७.२.१७ उपहूत रथन्तर सह पृथिव्या तै० ३.५.८.१ श० १.८.१.१९ वाग्वै रथन्तरम् ऐ० ४.२८. वाग् रथन्तरम् ता० ७.६.१७ ब्रह्मवर्चस वै रथन्तरम् तै० २.७.१.१. ब्रह्म वै रथन्तरम् ऐ० ८.१.२ ता० ११.४.६ ऋग् रथन्तरम् ता० ७.६.१७. अपानो रथन्तरम ता० ७.६.१४ यद्धृस्व तद् रथन्तर यद्दीर्घ तद् बृहत् कौ० ३.५. देवरथो वै रथन्तरम् ता० ७.७.१३ अन्न वै रथन्तरम् ऐ० ८.१ राथन्तरी वै रात्री ऐ० ५.३० गायत्री वै रथन्तरस्य योनि ता० १५.१०.५. गायत्र वै रथन्तरम् ता० ५.१.१५. गायत्र वै रथन्तर गायत्रश्छन्द ता० १५.१०.६ एतद्वै रथन्तरस्य स्वमायतन यद् बृहती ता० ४.४.१० अग्निर्वै रथन्तरम् ऐ० ५.३०. उप वै रथन्तरम् ता० १६.५.१४ ऐद् रथन्तरम् ता० ७.६.१७ त्रिवृच्च त्रिणवश्च राथन्तरी तावजश्चाश्वश्चान्वसृज्येता तस्मात्तौ राथन्तर प्राचीन प्रधूनुत ता० १०.२.५ चतुरक्षर रथन्तरम् तै० २.१.५.७ प्रजनन वै रथन्तरम् ता० ७.७.१६ यद्रथन्तर तच्छ्यावरम् ऐ० ४.१३ रथन्तरमेतत् परोक्ष यच्छ्यैतम् ता० १३.२.८ यद्वै रथन्तर तद्वैरूपम् (साम) ऐ० ४.१३. रथन्तरमेतत्परोक्ष यद् वैरूपम् (साम) ता० १२.२.५. रथन्तर ह्येतत् परोक्ष यच्छ्यैतम्(साम)ता० ७.१०.८ रथन्तर वै सम्राट् तै० १.४.४.६. रथन्तर साम्नाम् (प्रतिष्ठा) ता० ६.३.४. तेजो रथन्तर साम्नाम् ता० १५.१०.६ वसन्तेनर्तुना देवा वसव स्त्रिवृतास्तुतम् । रथन्तरेण तेजसा । हविरिन्द्रे वयो दधु तै० २.६.१९.१ (सामवेद उवाच) रथन्तर नाम ते सामाघोरश्चाक्रूरश्च गो० पू० २.१८ श्रीरेषा यद् रथन्तरम् जै० १.३३० समुद्र एष यद् रथन्तरम् जै० १.३३२]

रथप्राम् यो रथानि यानानि पूर्यते तम् (वायु=पवनम्) ६.४९.४ यो रथान् यानानि प्राति व्याप्नोति तम् (वायु=प्राणादिलक्षणम्) ३३.५५ [रथोपपदे प्रा पूरणे (अदा०) धातोः क्विप्]

रथप्रोतः रथो रमणीयस्तेजसमूह प्रोतो व्यापितो येन स (सेनापति) १५.१७. [रथ-प्रोतपदयो समास प्रोत =प्र+वेञ् तन्तुसन्ताने (भ्वा०) धातो क्त । तस्य (आदित्यस्य) रथप्रोतश्चासमरथश्च सेनानीग्रामण्याविति वार्षिकौ तावृतू श० ८.६.१.१८]

रथयुजम् रथेन युक्तम् (पवनम्) ५.४१.६. **रथयुजः**=ये रथ युञ्जते ते (शिल्पिनो जना) १.१३६.४ [रथोपपदे युजिर् योगे (रुधा०) धातो क्विप्]

रथयुः आत्मनो रथमिच्छुः (इन्द्र =सर्वाऽधीशः, १.५१.१४ रथ कामयमान (जन.) ७.२.५ [रथपदाद् आत्मन इच्छायामर्थे क्यजन्ताद् उ । क्यचि प्राप्ते त्वस्य 'न छन्दस्यपुत्रस्य' इति निषेध.]

रथवत् प्रशस्तरथादियुक्तम् (परमैश्वर्यम्) ७.२७.५ प्रशसितरथसहितम् (राध.=धनम्) ५.५७.७ [रथप्राति० प्रशसायामर्थे मतुप्]

रथवते बहवो रथा विद्यन्ते यस्य तस्मै (महाशय-जनाय) १.१२२.११. [रथवदिति व्याख्यानम् । ततश्चतुर्थी]

रथवाहनम् रथान् वहन्ति गमयन्ति येन तत् [हवि =आदातव्याग्नीन्धनजलकाष्ठधात्वादि) २९.४५ रथ वहति येन तत् (साधनम्) १२.७१ [रथोपपदे वह प्रापणे (भ्वा०) धातोर्णिजन्ताल्ल्युट् करणे]

रथवीतिः यो रथेन व्याप्नोति मार्ग स (विद्वज्जन) ५.६१.१९ **रथवीतौ**=रथाना गतौ ५.६१.१८ [रथ-वीतिपदयोः समास । वीति =वी गतिव्याप्तिप्रजनकान्त्य-सनखादनेषु (अदा०) धातो स्त्रिया क्तिन् औणा० वा ति किच्च]

रथस्पतिः रथस्य स्वामी ५.५०.५ [रथ-पतिपदयो समास । सुडागमश्छान्दस]

रथस्वनः रथस्य स्वन शब्द इव शब्दो यस्य स (सेनापति.) १५.१६ [रथ-स्वनपदयो समास । स्वन =शब्दे (भ्वा०) धातो 'स्वनहसोर्वा' सूत्रेणाप् । तस्य (वायो) रथस्वनश्च रथेचित्रश्च सेनानीग्रामण्याविति ग्रैष्मौ तावृतू श० ८.६.१.१७.]

रथा जलस्थलाऽन्तरिक्षेषु गमयितारौ (यानविशेषौ) ७.१८.२२ [रथप्राति० 'सुपा सुलुक्०' सूत्रेणाकारादेश]

रथासः रमणीयानि यानानि भा०—रमणीया गतय २७.३२ रमणसाधना (विमानादियानविशेषा) २.१२.७ रमणीया (वायुवेगा) २.४१.१ [रथप्राति० जसोऽसुक्]

रथाँ इव यथा रथानधिष्ठाय १.१३०.५ [रथान्-

साधन वा १ १४१ १० रमणीयस्वरूपम् १.५८ ७ रम्यानन्द वस्तु १ १२५ १ रमणीय जगत् २ ३८ १ [रमु क्रीडायाम् (भ्वा०) धातो 'रमेस्त च' उ० ३ १४. सूत्रेण न । तकारश्चान्तादेश । रत्न धननाम निघ० २ १०.]

रत्नवन्तम् बहूनि रत्नानि धनानि विद्यन्ते यस्मिँस्तम् (अध्वरम्=अहिंसादिलक्षण धर्म्यं व्यवहारम्) ३ २८ ५ [रत्नप्राति० भूम्न्यर्थे मतुप्]

रत्ना विद्यादिरमणीयप्रज्ञाधनानि ७ १७.७. [रत्न-प्राति० शेर्लोपश्छन्दसि]

रत्निनः बहूनि रत्नानि धनानि विद्यन्ते येषु तान् (प्रजाजनान्) ७ ४० १ [रत्नप्राति० भूम्न्यर्थे इनि]

रत्निनीम् रमणीयाम् (वाचम्) १ १८२ ४ [रत्न-प्राति० भूम्न्यर्थे इनिप्रत्ययान्तात् स्त्रिया ङीप्]

रत्सि रमसे ५ १० १ [रमु क्रीडायाम् (भ्वा०) धातोर्लेटि शपो लुकि वर्णव्यत्ययेन च तादेशे रूपम् । पर-स्मैपदमपि व्यत्ययेनैव]

रथ रमणीयस्वरूप (विद्वज्जन) २६ ५४ **रथम्**=विमानादियानविशेषम् ६ ४७ २७ रमणीयस्वरूप ससारम् १ ७० ४ रमणसाधन यानम् १ ११२ २ रमणीय विद्या-प्रकाश यान वा ८ ३३. रमणीय सूर्यलोकम् ६.४४ २४ रमणीय भू-समुद्राकाशयानम् १७ ३७ रमते येन तद् विमानादियानम् ५ ७५ १ रमणस्याधिकरणम् (यानम्) १ ५४ ६ रमणीय किरणम् ६ ६३ ५ ज्ञानम् १ ८२ ४ विद्याप्रकाशम् ८ ३३ **रथः**=रयते जानाति येन स रथ. अ०—विज्ञानम् ३ ३६ रमणीयो व्यवहार ६ ४९ ५. रमणाय तिष्ठति यस्मिन् स १ १२० ११ रन्तु योग्यः (यानविशेषः) १ १८३ २ रमणसाधन. २३ १४ वाहनम् १ १२३ १ गमनसाधन यानम् २ १८ १ युद्धक्रीडासाधक-तम १ ११७ २ सद्यो गमयिता विमानादियानविशेष ४ ३१ १४ **रथाय**=समुद्रादिषु रमणाय १ १४० १२ विमानादियानसमूहसिद्धये १ १११ ३ **रथे**=रमणीये यान इव शरीरे ६ ४७ १६ रमणीये जगति ६ ५५ ६ गमनहेतौ रमणसाधने विमानाऽऽदौ १ १३.४ भूजलाकाशगमनार्थे याने प्र०—यज्ञसयोगाद्राजा स्तुति लभेत० नि० ९ ११ रथ इति पदनाम निघ० ५ ३. आभ्या प्रमाणाभ्या रथशब्देन विशिष्टानि यानानि गृह्यन्ते १ ६ २ रमयति येन तस्मिन् (याने) १ १६ २ रमणीये लोके १ ५० ८ **रथेन**=रमणहेतुना यानेन ३३ ७३ गमकेन यानेन ३३ ३३. रमणानन्दादि-व्यवहारसाधक-ज्ञानतेजोरूपेण (यानेन) ऋ० भू० १४२, ३३ ४३ रम्येण स्वरूपेण १ १२३ ७ रमणीयेनानन्दस्व-रूपेण प० वि० । [रमु क्रीडायाम् (भ्वा०) धातो 'हनिकुषि-नीरमिकाशिभ्य क्थन्' उ० २ २ सूत्रेण क्थन् । रथ पदनाम निघ० ५ ३ रथ.=रहतेर्गतिकर्मण । स्थिरतेर्वा स्याद् विपरीतस्य रममाणोऽस्मिंस्तिष्ठतीति वा, रपतेर्वा, रसतेर्वा नि० ९.११ वज्रो वै रथ तै० स० ५ ४ ११ २ काठ० २१ १२ वैश्वानरो वै देवतया रथ तै० २ २.५ ४ त वा एत रस सन्त रथ इत्याचक्षते गो० १ २ २१]

रथ इव रमणीयाऽऽकाश इव ६ ६१ १३ [रथ-इवपदयो समास]

रथकारम् विमानादिरचक शिल्पिनम् ३० ६ **रथकारेभ्यः**=ये रथान् विमानादियानसमूहान् कुर्वन्ति तेभ्य शिल्पिभ्य १६ २७ [रथोपपदे डुकृञ् करणे (तना०) धातोरण्]

रथक्षयाणि रथस्य निवासरूपाणि गृहाणि ६ ३५ १ [रथ-क्षयपदयो समास । क्षयम्=क्षि निवासगत्यो (तुदा०) धातो. 'एरच्' इत्यच्]

रथगृत्सः रथस्य प्रवेता गृत्सो मेधावीव वर्त्तमान (सारथि) प्र०—गृत्स इति मेधाविनाम निघ० ३.१५ गृत्सो मेधावी गृणाते स्तुतिकर्मण नि० ९ ५, १५ १५ [रथ-गृत्सपदयो समास । गृत्स मेधाविनाम निघ० ३ १५. गृत्स इति मेधाविनाम गृणाते स्तुतिकर्मण नि० ९ ५]

रथतुरम् यो रथेन सद्यो गच्छति तम् (शत्रुम्) ४ ३८ ३ **रथतूर्भिः**=यो रथान् विमानादियानानि तूर्वन्ति शीघ्र गमयन्ति तै (अश्वै) १ ८८ २ [रथोपपदे तुर्वी हिंसायाम् (भ्वा०) धातो क्विप् । 'राल्लोप ' सूत्रेण वलोप । अथवा रथोपपदे तुर त्वरणे (जु०) धातो क्विप्]

रथनाभाविव यथा रथस्य रथचक्रस्य मध्यमे काष्ठे सर्वेऽवयवा लग्ना भवन्ति तथा ३४ ५ जैसे रथ के मध्य धुरा मे स० प्र० २४७, ३४ ५ [रथनाभौ-इव-पदयो समास । रथ-नाभौ=रथ-नाभिपदयो समासे कृते सप्तमी]

रथन्तरम् रथैस्तरन्ति येन तत् (साम) १० १० यद्रथै रमणीयैस्तारयति तत् (सुखम्) १३ ५४ रथै रमणीयैं-र्यानैस्तरन्ति येन तत् (मार्गम्) ११ ८ यदस्मिन् लोके तारक वस्त्वस्ति तत् १५ ५ रथैस्तारकम् (साम=एत-द्वत कर्म) १५ १० सामस्तोत्रविशेष १८ २९ क्रिया-सिद्धिफलभोग शिल्पविद्याजन्य वस्तु च ऋ० भू० १५४,

रथेष्ठाम् यो रथे तिष्ठति तम् (शिल्पिनम्) ६ २१ १ रथे तिष्ठन्तम् (इन्द्र=हृद्य पतिम्) ६ २२ ५ **रथेष्ठाः**= यो रथे तिष्ठति स (युवा=प्राप्तयौवनजन) २२ २२ ये रथे तिष्ठन्ति ते (वीरजना) ६ २९ २ [रथोपपदे ष्ठा गतिनिवृत्तौ (भ्वा०) धातो कर्त्तरि क्विप्। सप्तम्या अलुक्]

रथौजाः रथेनौजो बल यस्य स (सूर्य-रश्मि) १५ १५ [रथ-ओजस्पदयो-समास]

रथ्यम् रथेभ्यो हितमश्वमिव प्रापकम् (पतिं= जगदीश्वरम्) ७ ५ ५ रथ वोढुमर्हम् (अग्निम्) ६ ७ २ रथाय हितम् (अश्व=तुरङ्गम्) ६ ४६ २ रथस्य वोढारम् (अश्वम्) २७ ३८ रथेपु विमानादियानेपु हितम् (रयिं= श्रियम्) ६ ४९ १५ **रथ्यस्य**=रथे याने भवस्य (वातस्य= वायो.) ५ ४१ ३ रथेपु रमणीयेपु साधो (पुष्टे) ४ ४१ १० **रथ्यः**=यो रथ वहति स (सप्ति=अश्व) २ ३१ ७ रथाय हितोऽश्व ७ २१ ३ रथे साधू रथ्य सारथि भा०—सुशिक्षित सारथि ३४ ४६ बहुरथादियुक्त (मरुत=प्राणवत्प्रिया जना) ५ ५४ १३ रथस्य वोढा (इन्द्र=सभाव्यक्ष) १ १२१ १४ [रथप्राति० हितार्थे भवार्थे साध्वर्थे वा यत्। रथप्राति० वा वहत्यर्थे 'तद्वहति-रथयुगप्रासङ्गम्' अ० ४ ४.७६ सूत्रेण यत्। रथे योगाय रथ्या नि० १० ३]

रथ्यः बहुरथवन्त (अमात्यादिजना) ४ १७ २१ रमणीयबहुरथादियुक्ता (राजपुरुषा) ४ १६ ११ रथेपु साधव (तुरङ्गा) १ १४८ ३ बहवो रथा विद्यन्ते येपा ते (वीरजना) ७ ५६ २१ [रथीप्राति० जस्। रथी=रथ-प्राति० मत्वर्थे 'छन्दसीवनिपौ वक्तव्या' विति ईकार प्रत्यय]

रथ्या यो रथ वहति तेन (चक्रेण) १ ५३ ९ [रथ-प्राति० वहतीत्यर्थे यत्। तत 'सुपा सुलुक्०' सूत्रेण टा-स्थाने डादेश]

रथ्या रथेपु साधू (अश्विना=अध्यापकोपदेशकौ) ५ ७५ ५ [रथ्यमिति व्याख्यातम्। ततो द्विवचनस्याकारा-देशश्छान्दस]

रथ्यासः रथेपु साधव (अश्वा=तुरङ्गा) ६ ३७ ३ [रथ्यमिति व्याख्यातम्। ततो जसोऽसुक्]

रथ्येव यथा रथेपु साधू अश्वौ ७.३९ १ यथा रथाय हितावश्वौ २ ३९ २ रथेपु साधूनीव (उत्तमरथानानि) ४ १ ३ यथा रथेपु साधूनि (चक्राणि) १ १८० ४ यथा रथाय हितानि (वस्तूनि) २ ३९ ३ [रथ्या-इवपदयो समास। रथ्या=रथ्यप्राति० द्विवचनस्याकारादेश शेर्लोपो वा छन्दसि]

रथ्येव रथेपु साध्वी गतिरिव ३ ३६ ६ रथाय हितेव (ध्वनि) २ ४ ६. [रथ्या-इवपदयो समास। रथ्या= रथ्यमिति व्याख्यानम्। ततष्टाप् स्त्रियाम्]

रद विलिख १ १६९ ८ ससेध १ ६१.१२ **रदति**= विलिखति १ १६६ ६. [रद विलेखने (भ्वा०) धातोर्लोट् अन्यत्र लट्]

रदन्ता सुष्ठु लिखन्तौ (अश्विनौ=राजप्रजाजनौ) १ ११७ ११ (रद विलेखने (भ्वा०) धातो शत्रन्ताद् द्विवचनस्याकारादेशश्छान्दस.]

रदन्ती लिखन्ती (उषा=प्रातर्वेला) ५ ८० ३ **रदन्तीः**=भूमिं विलिखन्त्य (धुनय=रश्मिगतय) २ ३० २ [रद विलेखने (भ्वा०) धातो शत्रन्तात् ङीप्]

रदावसो यो रदेपु विलेखनेपु वसति तत्सम्बुद्धौ (इन्द्र=राजन्) ७ ३२.१८ [रदोपपदे वस निवासे (भ्वा०) धातोर्बाहु० औणा० उ। तत सम्बुद्धौ रूपम्। संहिताया दीर्घ]

रधम् हिंसेयम् १ ५० १३ [रध हिंसासराध्यो (दिवा०) धातोर्लङ् अटोऽभाव। व्यत्ययेन शप्]

रध्य सराध्नुहि १० २८ [रध हिंसासराध्यो (दिवा०) धातोर्लोट्]

रध्रचोदनम् धनस्य प्राप्तये प्रेरकम् (राजानम्) ६ ४४ १० [रध्र-चोदनपदयो समास। रध्रम्=रध हिंसा-सराध्यो (दिवा०) धातोर्बाहु० औणा० रक। चोदनम्= चुद सञ्चोदने (चुरा०) धातो. 'कृत्यल्युटो बहुलमि' ति ल्युट्]

रध्रचोदः यो रध्रान् सरोधकान् चुदति प्रेरयति स (इन्द्र=विद्याप्रकाशको जन) २ २१ ४ [रध्रोपपदे चुद सञ्चोदने (चुरा०) धातो 'कर्मण्यण्' इत्यण्]

रध्रतुरः हिंसकहिंसक (राजा) ६ १८ ४ [रध्रो पपदे तुर्वी हिंसार्थे (भ्वा०) धातो क्विप्। वचनव्यत्यय]

रध्रम् सराधनम् २ ३४ १५ समृद्धिमन्तम् (अदारि-द्रयम्) ७ ५६ २० **रध्रस्य**=सराध्नुवत (यजमानस्य= धनाढ्यजनस्य) २ ३० ६ हिंसकस्य (दुर्जनस्य) २ १२ ६ [रध हिंसासराध्यो (दिवा०) धातोर्बाहु० औणा० रक्]

रन् ददमानौ (वसू=अध्यापकोपदेशकौ) प्र०—दन्व-दस्य सिद्धि १ १२० ७ [डुदाञ् दाने (जु०) धातो शतृ। 'बहुल छन्दसी' ति शपो लुक्। वर्णव्यत्ययेन दस्य रेफ]

रन्त रमन्ते प्र०—अत्र लङि 'बहुल छन्दसि' इति

इवपदयो समास]

रथिनः प्रशस्ता रथा येषान्ते (नर =नायका जना) ६ ४७ २१ प्रशस्तरथयुक्ता वीरा (जना) २६ ५७ प्रशस्तरथस्य (महिमघस्य जनस्य) १ १२२ ८ **रथीनाम्**= नित्ययुक्ता रथा विद्यन्ते येषा योद्धॄणा तेषाम् प्र०—अत्र 'अन्येषामपि दृश्यते' अ० ६ ३ १३७ अनेन दीर्घ १ ११ १ प्रशस्ताना वीराणाम् प्र०—अत्र 'छन्दसीवनिपौ' इतीकार १२ ५६ **रथिभ्यः**=प्रशस्ता रथा विद्यन्ते येषा तेभ्य (राजपुरुषेभ्य) २२ १६ **रथीः**=रथस्वामी (सज्जन) प्र०—अत्र 'वा छन्दसि सर्वे विधयो भवन्ति' इति सोर्लोपो न १ २५ ३ प्रशस्ता रथा यस्य सन्ति स (अग्नि =विद्वज्जन) प्र०—अत्र 'छन्दसीवनिपौ च वक्तव्यौ' अ० ५ २ १०६ अनेन रथ-शब्दान्मत्वर्थं ई-प्रत्यय १ ४४ २ बहवो रथा विद्यन्ते यस्य स (अग्नि =पावक) ३ ३ ६ बहुरथवान् (विद्वज्जन) ६ ५५ १ प्रशस्ता रथा रमणसाधनानि यानानि विद्यन्ते यस्य स (अग्नि =विद्वज्जन) १५ ४५ बहुप्रशसितरथ (अग्नि =विद्वज्जन) ६ ४८ ६ [रथप्राति० प्रशसाया नित्यसम्बन्धे वा मत्वर्थं इनि । 'रथीनाम्' प्रयोगे छान्दस दीर्घत्वम् । अथवा=रथप्राति० मत्वर्थे 'छन्दसीवनिपौ' वक्तव्यौ' अ० ५ २ १०६ वा० सूत्रेण ईकार प्रत्यय]

रथिनीः बहवो रमणसाधका रथा विद्यन्ते यासु ता (इष =सेना) प्र०—अत्र भूम्न्यर्थे इनि 'सुपा सुलुक्०' इति पूर्वसवर्णादेशश्च १ ६ ८ [रथप्राति० भूम्न्यर्थे इनि । तत स्त्रिया ङीप्, तत शस पूर्वसवर्णदीर्घश्छान्दस ।

रथियन्तीव आत्मनो रथिन इच्छन्तीव सेना १ १६६ ५ [रथिन्-शब्दाद् आत्मन इच्छायामर्थे क्यजन्ताच् छतरि ङीपि रथियन्तीति रूपम् । रथियन्ती-इवपदयो समास]

रथिरम् यो रथिषु रमते तम् (राजानम्) ७ ७ ४ रथा रमणीयानि यानानि भवन्ति यस्मिँस्तम् (अग्नि= पावकम्) ३ २६ १ **रथिरः**=रथादियुक्त (इन्द्र =राजा) ३ ३१ २० प्रशस्ता रथा विद्यन्ते यस्य स (मनुष्य) ३ १ १७ ['रथिन्' इत्युपपदे रमु क्रीडायाम् (भ्वा०) धातोर् कर्त्तरि ड । अन्यत्र रथप्राति० प्रशसाया भूम्न्यर्थे वा मत्वर्थे 'मेधारथाभ्यामिरन्निरचौ' अ० ५ २ १०६ वा०सूत्रेण इरन्]

रथीतमम् बहवो रथा रमणाधिकरणा पृथिवी-सूर्यादयो लोका विद्यन्ते यस्मिन् स रथीश्वर सोऽतिशयितस्तम् । रथा प्रशस्ता रमणविजयहेतवो विमानादयो विद्यन्ते यस्य सोऽतिशयित शूरस्तम् (इन्द्रम्=परमात्मान वीरपुरुष वा) प्र०—'रथिन ईद्वक्तव्य' अ० ८ २ १७. इत्यत्र पठितेनाऽनेन वार्त्तिकेनेकारादेश १ ११ १ अतिशयेन प्रशस्तरथयुक्तम् (इन्द्र=परमैश्वर्यम्) १२ ५६ अतिशयेन रथी यस्तम् (इन्द्र=सभेशम्) १५ ६१ प्रशस्ता रथा सुखहेतव पदार्था विद्यन्ते यस्मिन् सोऽतिशयितस्तम् (इन्द्र= परमात्मानम्) १७ ६१ **रथीतमः**=अतिशयेन रथयुक्त (इन्द्र =सूर्येणेव राजा) ६ ५६ २ बहवो रथा विद्यन्ते यस्य सोऽतिशयित (राजा) ६ ४५ १५ [रथप्राति० मत्वर्थे 'छन्दसीवनिपौ' अ० ५ २ १०६ वा०सूत्रेण ईकारप्रत्यये रथी । ततोऽतिशायने तमप् । अथवा रथिन्प्राति० अतिशायने तमप्-प्रत्यये घसञ्ज्ञके परे 'ईद्रथिन' अ० ८ २ १७ वा० सूत्रेण रथिन ईकारादेश]

रथीतमा प्रशसितरथयुक्तौ (अश्विना=अध्यापकोपदेशकौ) १ १८८ २, प्रशस्ता रथा विद्यन्ते ययो सकाशात्तावतिशयितौ (अश्विनौ=अग्निजले) १ २२ २ [रथीतममिति व्याख्यातम् । ततो द्विवचनस्याकारादेशश्छान्दस]

रथीतरः अतिशयेन रथयुक्तो योद्धा (इन्द्र =सेनेश) १ ८४ ६ [रथीप्राति० अतिशायने तरप् । रथी=रथप्राति० मत्वर्थे 'छन्दसीवनिपौ वक्तव्यावि' ति ईकार]

रथीरिव प्रशसितो रथवान् यथा ५ ६१ १७ यथा सारथिस्तथा ३३ ४ प्रशस्तरथादियुक्त सेनेश इव ४ १५ २ यथा शत्रुभि सह बहुरथादिसेनाङ्गवान् योद्धा युध्यति तथा भा०—महारथिवत् १३.३७ [रथी-इवपदयो समास । रथी =रथप्राति० मत्वर्थे 'छन्दसीवनिपौ वक्तव्यौ' इति वा० सूत्रेण ईकार]

रथीव बहवो रथा विद्यन्ते यस्य तद्वत् (सारथि) ५.८३ ३ [रथी-इवपदयो समास । रथी=रथप्राति० मत्वर्थे ईप्रत्यय]

रथेचित्रः रथे रमणीये चित्राण्याश्चर्यरूपाणि चिह्नानि यस्य स (ग्रामणी) १५ १६ [रथ-चित्रपदयो समासे सप्तम्या अलुक्]

रथेशुभम् यो रथे शुम्भते तम् (शर्ध=बलम्) ५ ५६ ६ रमते गच्छति येन तस्मिन् विमानादियाने शोभनम् (शर्ध =बलम्) १.३७ १ [रथे सप्तम्यन्तोपपदे शुभ दीप्तौ (भ्वा०) शुभ शोभार्थे (तुदा०) धातोर्वा इगुपधलक्षण कर्त्तरि क । घञर्थे को वा भावे]

(विदुषो जनान्) प्र०—अत्र रमधातोर्मतुप् प्रत्ययः ततो मतुप्, तत ईयसुनि 'विन्मतो०' इति मतुल्लोप 'टे' इति टिलोप. 'छान्दसो वर्णलोपो वा' इतीकारलोप. १ १२०.४.]

रम रमस्व प्र०—अत्राऽऽत्मनेपदे व्यत्ययेन परस्मैपदम् ६ ८ **रमताम्**=क्रीडन्तु ७२ १६ **रमते**=क्रीडते २ ३८ ७ **रमध्वम्**=रमण कुर्वन्तु प्र०—अत्र व्यत्यय. ३ २१. क्रीडध्वम् ३ ३३ ५ **रमस्व**=क्रीडस्व १३ ३५ रमता रमयतु वा ४ २२ **रमेयाम्**=अ०—अनुतिष्ठत ५ १७ [रमु क्रीडायाम् (भ्वा०) धातोर्लोट्। व्यत्ययेन परस्मैपदम्। अन्यत्र यथा प्राप्तात्मनेपदे लोट्]

रमय क्रीडयाऽऽनन्दय ५ ५२ १३. **रम्णातु**=रमयतु प्र०—अत्राऽन्तर्गतो ण्यर्थो विकरणव्यत्ययश्च ४ २१ [रमु क्रीडायाम् (भ्वा०) धातोर्णिजन्ताल्लोट्। अन्यत्र रमतेर्लोट्। विकरणव्यत्ययेन श्ना]

रम्भिणीव यथाऽऽरम्भिका गृहकार्येषु चतुरा स्त्री १ १६८ ३ [रभ राभस्ये (भ्वा०) धातोस्ताच्छील्ये णिन्यन्तात् ङीपि रम्भिणीति रूपम्। 'रभेरशब्लिटो.' अ० ७ १.६३ सूत्रेण नुम्। रम्भिणी-इवपदयो. समास]

रम्भी आरम्भी (पुरुषार्थी जन) २ १५ ६ [रभ राभस्ये (भ्वा०) धातोस्ताच्छील्ये णिनि। नुमागम]

रयिदौ श्रीप्रदौ (सभासेनेशौ) ३ ५४ १६ [रयि-इत्युपपदे डुदाञ् दाने (जु०) धातो क.]

रयिन्तमः अतिशयेन धनाढ्य (प्रजाजन.) ६ ४४ १. [रयिप्राति० अतिशायने तमप्। नुडागमश्छान्दस]

रयिपतिः धनस्वामी (अग्नि =पावकवद्विद्वज्जन.) २ ६ ४. धनरक्षक (सोम =पदार्थसमूह) २ ४० ६ धनाना पालयिता (अग्नि =भौतिक) १.६० ४ श्रीश: (वेदविज्जन.) १.७२ १ **रयिपते**=धनस्वामिन् (इन्द्र= राजश्रीश्वर वा) ६ ३१ १. [रयि-पति-पदयो. समास]

रयिभिः चक्रवर्त्तिराज्यश्रियादिभि १ ६४.१० **रयिम्**=द्रव्यम् २ १५ ५ विद्याराज्यश्रियम् १ ६२ ८ चक्रवर्त्तिराज्यसिद्ध धनम् १ ३४ १२ ऐश्वर्यम १६ ६४ विद्यासुवर्णादियुक्तम धनम् १ १ ३ प्रशस्तद्रव्यसमूहम् १ ७३.८ सम्पत्तिम् १५ ५६ धर्म-मोक्ष-विद्या-चक्रवर्त्तिराज्याऽऽरोग्यादिरूप धनम् ऋ० भा० न० १.१ ३. धर्मश्रियम् २० ५८ विद्यादि तथा सुवर्णादि धन को आर्याभि० १ ३, ऋ० १.१.१ ३. **रयिः**=निधिसमूह १ ७३ १ श्रियाश्री १८ १० द्रव्यरूप (अग्नि =अध्यापक) २.१ १२ द्रव्यसमूह १ ६६ १. **रयीणाम्**=राज्यश्रियादिधनानाम् १.६८.४. परमोत्तमाना चक्रवर्त्तिराज्यादिधनानाम् ३.१३. वर्त्तमाना पृथिव्यादिकार्यद्रव्याणाम् १ ६६.७. विद्याचक्रवर्त्तिराज्योत्पन्नश्रियाम् १० २०. धनैश्वर्यो के सं० वि० ६,१०.१२१ १०. [रयि =उदकनाम निघ० १ १२. धननाम निघ० २ १०. रयिरिति धननाम रातेर्दानकर्मण. नि० ४.१७. रयिरिति मनुष्या (उपासते) श० १०.५२.२०. वीर्य वै रयि श० १३.४२.१३ पुष्ट वै रयिः श० २.३.४.१३. पशवो वै रयि तै० १४४६ एष वै रयिर्वैश्वानर. श० १०.६.१.५ रयि सोमो रयिपतिर्दधातु तै० २.८.१.६]

रयिमान् प्रशस्ता रययो धनानि विद्यन्ते यस्मिन् स (अग्नि.=भौतिक. पावक) प्र०—अत्र प्रशमार्थे मतुप् 'रयिरिति धननामसु पठितम्' निघ० २.१०, ३ ४०. विद्याविज्ञानधनयुक्त (अग्नि.=उपदेशको विद्वज्जन.) १२ ५६ [रयि प्राति० प्रशंसाया मतुप्]

रयिमिव यथोत्तमा श्रियम् १ ६० १ [रयिम्-इवपदयो समास.]

रयिवतः बहुधनवत (जनान्) ६ ६८ ५ **रयिवः**= प्रशस्ता रययो विद्यन्ते यस्य तत्सम्बुद्धौ (सेनेश) प्र०— अत्र 'छन्दसीर' इति मस्य व १८ ७४ बहुधनयुक्त (विद्वन्राजन्) ६ ५ ७. श्रीमन् (जिज्ञासो) ११२६ ७ [रयिप्राति० मतुप् प्रशंसायामर्थे भूम्न्यर्थे वा। 'छन्दसीर' इति मतुपो मस्य वकार। 'रयिव' प्रयोगे सम्बुद्धौ मतुवसो रु सम्बुद्धौ छन्दसि' अ० ८ ३.१. सूत्रेण रुत्वम्]

रयिवित् द्रव्यवेत्ता (विद्वज्जन) ३ ७.३ पदार्थविद्यायुक्त (अलंविद्यो जन) २ १ ३ [रयि इत्युपपदे विद ज्ञाने (अदा०) धातो क्विप्]

रयिवृधः ये रयिं वर्धयन्ति ते (स्वपत्यानि=सुसन्ताना.) २७ २३ [रयि इत्युपपदे वृधु वृद्धौ (भ्वा०) धातो कर्त्तरि क्विप्]

रयिषाच ये रयिणा सह समवयन्ति ते (मनुष्या) १.१८० ६. [रयि इत्युपपदे षच समवाये (भ्वा०) धातो 'कर्मण्यण्' इत्यण्]

रयिषाट् यो रयिं द्रव्य सहते स (देव =जीवात्मा) १ ५८ ३ ['रयि' इत्युपपदे षह मर्षणे (भ्वा०) धातो 'छन्दसि सह' इति ण्वि]

रयिस्थानः रायस्तिष्ठन्ति यस्मिन् स (इन्द्र = सेनेश.) ६ ४७ ६ [रयि-स्थानपदयो समास। स्थानम्= ष्ठा गतिनिवृत्तौ (भ्वा०) धातोरधिकरणे ल्युट्]

शपो लुक् १.६१.११ रमन्ताम् ७.३६ ३ **रन्ते**=रमते ७ ३६ ३ [रमु क्रीडायाम् (भ्वा०) धातोर्लेट्। शपो लुक्। अन्यत्र लोट् लट् च। रन्त=अरमन्त नि०। १२ ४३]

रन्तयः रमु रमन्ते ते (वायव) ७ १८ १० **रन्ति**=रमणम् २२ १६ **रन्ते**=हे रमणीये (पत्नि) ८ ४३ [रमु क्रीडायाम् (भ्वा०) धातो' क्तिच्। 'न क्तिचि दीर्घश्च' अ० ६ ४.३६ सूत्रेण दीर्घस्यानुनासिकलोपस्य च निषेध। क्तिनि वा छान्दसो दीर्घानुनासिकलोपयोर्निषेध]

रन्धय निवारय ३.५३ १० ताडय ६ ५३ ७ हिंसय ६ १८ १२ हिन्धि १ १३२.४ समापय प० वि०, समूलेन विनाशय, मूलसहित नष्ट कर दीजिये आर्याभि० १ १४, **रन्धयत्**=समाप्नोति २ १६ ६ **रन्धयस्व**=ताडयस्व ३ ३० १६. **रन्धयः**=हिंसय ६.४३ १ **रन्धि**=नाशय ४ २२ ९ **रन्धीः**=संराध्नुहि, प्र०—अत्राडभाव. १.१७४ २ हिंस्या ४.१६ १३ [रध हिंसासंराध्यो (दिवा०) धातोर्णिजन्तात्लोट्। 'रधिजभोरचि' अ० ७ १ ६१ सूत्रेण नुम्। अन्यत्र लङ् लुङ् लोट् च। रन्धय=रध्यति। नि० ६ ३२]

रन्धयन् हिंसन् (विद्वान् राजा) १ ५० १३ सेनया ग्रामादिभिर्वा हिंसयन् (इन्द्र=सभासेनाशालान्यायाधीश) १.५१ ६ [रध हिंसासंराध्यो. (दिवा०) धातोर्णिजन्ताच्छतृ। 'रधिजभोरची' नि नुम्]

रन्धिम् वशीकरणम् ७ १८ १८ [रध हिंसासंराध्यो (दिवा०) धातोरौणा० इन्]

रपत् व्यक्तं वदेत् १ १७४ ७ [रप व्यक्तायां वाचि (भ्वा०) धातोर्लेट्]

रपसा पापेन ७.५० १ अपराधेन ७ ५० २ **रपः**=प्राणेन्द्रियचाञ्चल्यजन्यमपराधम् २५ ११ पापफलमिव रोगाख्य दुःखम् १२.८४. **रपांसि**=हिंसनानि ६ ३१.३ व्यक्तोपदेशप्रकाशकानि शोभनानि वचनानि १.६६.४ पापानि दुःखप्रदानि १.३४ ११ [रप=रपो रिप्रमिति पापनामनी भवत नि० ४ २१]

रप्शते विशेषेण राजते ४ ४५ १

रप्शदूधभिः व्यक्तशब्दस्पर्शै २ ३४ ५ [रप्शत्-ऊधन्-पदयो समास। रप्शत्=रप व्यक्तायां वाचि (भ्वा०) धातो शतृ। शपो शस्य न लोपश्छान्दसत्वात्। ऊधन्=ऊध उद्धततर भवति उपोन्नद्धमिति वा। स्नेहानुप्रदाना-सामान्याद् रात्रिरप्यूध उच्यते नि० ६ १९]

रप्सुदा ये रूपम् रूप ददाते (मही=द्यावापृथिव्यौ) ३३ १६ सुरूपप्रदे (पृथिवीसूर्यौ) ३३ ७१. [रप्सु-उपपदे दुदाञ् दाने (जु०) धातो. क.। ततो द्विवचनस्याकारादेश.]

रभध्वम् प्रारम्भ कुरुत ३५.१० युद्धारम्भ कुरुत १७ ३८. **रभन्ते**=प्रवर्त्तयन्ति ३ २९ १३ **रभस्व**=आरम्भ कुरु २७ ५ **रभामहे**=आरम्भ कुर्याम ६ ५७ ५ **रभे**=आरम्भ कुर्वे ४ ६ **रभेमहि**=आरम्भ कुर्वीमहि १ ५३ ४. शत्रुभिस्सह युध्येमहि आरम्भ कुर्याम १ ५३ ५. [रभ राभस्ये (भ्वा०) धातोर्लोट्। अन्यत्र लट्, लिङ् च]

रभसम् वेगम् ६ ६१ १. वेगवन्तम् (वायुम्) ११.७३ वेगवन्तम् (अग्निम्) २.१० ४ **रभसः**=वेगम् प्र०—अत्र द्वितीयार्थे प्रथमा २१ ३८ **रभसाय**=वेगयुक्ताय (केतवे—विज्ञानाय) १ १६६.१ [रभ राभस्ये (भ्वा०) धातो 'अत्यविचमि०' उ० ३ ११७ सूत्रेणासच्। व्यतिष्ठमन्नै रभस स्थानमित्यवकाशवन्तमन्नैरन्नाद दीप्यमानमित्येतत् श० ६ ३ ३ १६]

रभः महान् (शिशु) १ १४५ ३ [रभस - महन्नाम निघ० ३ ३ रभ राभस्ये (भ्वा०) धातोरौणा० असुन्]

रभसा रोगरहितानि (वपूंषि=रूपवन्ति शरीराणि) ३.१ ८ [रभसमिति व्याख्यातम्। ततो द्विवचनस्याकारा-देश]

रभसानः वेगवान् (राजा) ६ ३ ८ [रभ राभस्ये (भ्वा०) धातोर्बाहु० औणा० असानच्]

रभसासः वेगवन्त (क्षुरा=धर्म्यसम्बद्धा) १ १६६ १० [रभसमिति व्याख्यातम्। ततो जसोऽसुक्]

रभसाः वेगयुक्ता (सुनाम=सुशिक्षिता भृत्या) १ ८२ ६ [रभसमिति व्याख्यातम्। ततो जस्]

रभस्वतः कार्यारम्भं कुर्वत आलस्यरहितान् पुरुषा-र्थिन (मनुष्यान्) ६ १ ६ [रभस्-प्रा-नि० मतुबन्तात् द्वितीयाबहुवचनम्]

रभिष्ठाः अतिशयेनाऽऽरब्धार (मनुष्या) ५ ५८ ५ [रभ राभस्ये (भ्वा०) धातो तृजन्तादतिशायन इष्ठन्। इष्ठन्-प्रत्यये तृचो लोप]

रभीयस इव अतिशयेनाऽऽरब्धस्येव २१ ४६ [रभीयस-इवपदयोर्लोप। रभीयस=रभ राभस्ये (भ्वा०) +तृन्+ईयसुन्+ङस्]

रभोदाम् रभसो वेगयुक्तस्य दातारम् (इन्द्र=दल पतिम्) ६ २२ ५ [रभस उपपदे दुदाञ् दाने (जु०) धातो कर्त्तरि क्विप्]

रभ्यस [illegible]

ये रश्मयस्ते विश्वे देवा श० ४ ३ १ २६ एते वै विश्वे देवा रश्मय श० २ ३ १ ७ एते वै रश्मयो विश्वे देवा श० १२ ४ ४ ६ तस्य (सूर्यस्य) ये रश्मयस्ते सुकृत श० १ ९ ३ १० रश्मय एव हिंकार जै० उ० १ ३३ ६ रश्मयो वाव होत्रा गो० उ० ६ ६ रश्मयो वै दिवाकीर्त्यानि (सामानि) तै० १ २ ४ २ रश्मयो वा एत आदित्यस्य यद् दिवाकीर्त्यानि ता० ४ ६ १३ तस्य (सूर्यस्य) ये रश्मयस्ते ते देवा मरीचिपा श० ४ १ १ १५ मासा वै रश्मयो मरुतो रश्मय ता० १४.१२ ९ ये ते मारुता (पुरोडाशा) रश्मयस्ते श० ९ ३ १ २५ अन्न रश्मि श० ८ ५ ३ ३ प्राणा रश्मय तै० ३ २ ५ २ एते वा ऽउत्पवितारो यत् सूर्यस्य रश्मय श० १ १ ३ ६ एते वै पवितारो यत्सूर्यस्य रश्मय श० ३ १ ३ २२ तद् यदेकैकस्य रश्मेर्द्वौ द्वौ वर्णौ भवत गो० उ० ६ ६ (सविता) रश्मिभिर्वर्षं (ममदधात्) गो० पू० १ ३६]

रश्मीरिव यथा किरणान् तथा १ १४१ ११. [रश्मी -इवपदयो समास]

रश्मीवतीम् प्रशस्तविद्याप्रकाशयुक्ताम् (स्त्रीम्) १५ ६३ [रश्मिप्राति०प्रशसायामर्थे मतुवन्तात् डीप्]

रश्मेव किरणवद् रज्जुवद् वा ६ ६७ १ [रश्मा-इवपदयो समास । रश्मा=रश्मिप्राति० 'सुपा सुलुक्०' सूत्रेण डादेश]

रसम् आनन्दम् १९ ८३ विद्याऽऽनन्दम् १९ ७९ सारभूतम् १९ ७५ सारम् ९ ३ विद्यौषधिफलम् १.७१ ५ स्वादिष्ठमोषध्यादिभ्यो निष्पन्न सारम् १ १०५ २ **रसस्य**=भुक्ताऽन्नत उत्पन्नस्य शरीरवर्द्धकस्य १ ३७ ५ **रसः**=सर्वद्रव्यसार १८ ९ आनन्दवर्धक स्नेहरूप (भा०—होमादिना शुद्धजलम्) ३९ १५ दुग्ध-घृतादि ऋ० भू० १०४, अथर्व० १२ ५ १० मधुरादि ३९ ४ वीर्य धातु ९ ३ **रसात्**=जिह्वाविषयात् ३१ १७ **रसानाम्**=मधुरादीनाम् १ १८७ ५ **रसाय**=रसभूताय विज्ञानानन्दप्रापणाय २ ३१ **रसाः**=स्वाद्वन्नानि षड्विधा १ १८७ ४ **रसेन**=स्वाभाविकेन रसगुणेन सह १ २३.२३. सारेणाऽऽर्द्रेणाऽऽनन्दकारकेण १ २१ [रस =वाङ्नाम निघ० १ ११ उदकनाम निघ० १ १२ अन्ननाम निघ० २ ७ रस आस्वादनस्नेहनयो (चुरा०) धातोरच् । घञर्थे को वा । रसो वै मधु श० ६ ४ ३ २ अपो देवा मधुमतीररसानित्यपो देवा रसवतीरगृह्णन्नित्येवैतदाह (मधु=रस) श० ५ ३ ४ ३ स्वधायै त्वेति रसाय त्वेत्येवैतदाह (स्वधा=रस) श० ५ ४ ३ ७ रसो वा आप श० ३ ३ ३ १८]

रसवत् बहुरसयुक्तम् (पय =दुग्धम्) ५ ४४ १३ [रसप्राति० भूम्न्यर्थे मतुप्]

रसवान् महौषधिप्रशस्तरसप्रचुर (ओषधिसार) ६ ४७ १ [रसप्राति० प्रशसायामर्थे मतुप्]

रसा रसाऽऽनन्दप्रदा जना प्र०—अत्र 'सुपा सुलुक्०' इति डादेश ३३ २१ [रसप्राति० जस स्थाने डादेशश्छान्दस]

रसा रसादिगुणयुक्ता (मही=वाग् भूमिर्वा) ५ ४१.१५ पृथिवी ५ ५३ ९ **रसाम्**=प्रशस्त रस जल विद्यते यस्या ताम् (नदीम्) प्र०—रस इत्युदकनाम निघ० १ १२. अर्शआदित्वान्मत्वर्थीयोऽच्प्रत्यय १ ११२ १२. [रसप्राति० मत्वर्थेऽर्शादित्वादच् । तत स्त्रिया टाप् । रसा-नदी रसते. शब्दकर्मण नि० ११ २५]

रसाशिरः यो रसानश्नाति स (सूर्य) ३ ४८ १ [रसोपपदे अश भोजने (क्र्या०) धातो 'अशेर्नित्' उ० १ ५२ सूत्रेण किरच्]

रसिनः प्रशस्तो रसो विद्यते यस्मिँस्तस्य (पदार्थस्य) १९ ३५ [रसप्राति० प्रशसायामर्थे इनि]

रहसूरिव या रह एकान्ते सूते सा (जननी) २ २९ १. [रहसू -इवपदयो समास । रहसू =रहस्-उपपदे षूङ् प्राणिगर्भविमोचने (अदा०) धातो क्विप् । पूर्वपदस्य सकारस्य लोपश्छान्दस]

रहूगणाः रहवोऽधर्मत्यागिनो गणा सेविता यैस्ते (विद्वासो जना) १ ७८ ५ [रहु-गणपदयो समास । पूर्वपदस्य दीर्घ सहितायाम् । रहु =रह त्यागे (भ्वा०) धातोर् उ]

रंसु रमणीयम् (अभ्वम्=उदकम्) २ ४ ५ [रमु क्रीडायाम् (भ्वा०) धातोर्बाहु० औणा० सु प्रत्यय । रमु धातोर्वा विच् । ततो रम्प्राति० सप्तमी । रमु रमणीयेषु नि० ६ १७]

रंसुजिह्वः रमणीयवाक् (अग्नि =राजा) ४ १.८ [रसु-जिह्वपदयो समास]

रँहमाणः गच्छन् (भौतिकोऽग्नि) २२ १८ [रहि गतौ (भ्वा०) धातो शानच् । व्यत्ययेनात्मनेपदम्]

रंहयन्तः गमयन्त (मरुत =वायव) १ ८५ ५ [रहि गतौ (भ्वा०) धातोर्णिजन्ताच्छतृ]

रह्यः गमयितु योग्य (रथ) २ १८ १. [रहि गतौ

रयीयन् आत्मनो रयिमिच्छन् (राजा) ३.६२ २. [रयिशब्दाद् आत्मन इच्छायामर्थे क्यजन्ताच्छतृ]

रय्या धनेन १२ १० विद्याश्रिया १२.७ प्राश्रीपिकया (धारया=सस्कृतया वाचा) १२.४१ **रय्यै**= लक्ष्म्यै १४ २२ श्रियै ६ २२ [रयिप्राति० तृतीया। अन्यत्र चतुर्थी]

ररक्ष रक्षेत् १ १४७ ३ पालय ४ ४.१३ [रक्ष पालने (भ्वा०) धातोर्लिट्]

ररते राति ददाति ५ ७७ ४ **राथाम्**=दद्यातम् प्र०—अत्र रा-धातोर्लोटि 'वहुल छन्दसि' इति शप श्लु व्यत्ययेनात्मनेपदश्च १.११७ २३. **रराथे**=रातम् ६.७२ ५ **ररिम**=दद्याम ३ ३५.१ रमेमहि २ ५ ७ दद्म प्र०—अत्र रा दाने लिट् १८ ७५ **ररिषे**=प्रयच्छसि २ १ ५ **ररीथाः**=दद्या ६ ४४ ११ **ररीध्वम्**=दत्त ५ ८३ ६ **ररे**=दद्याम् ७ ३६.६ ददामि ७ ५६ ५ [रा दाने (अदा०) धातोर्लट्। 'बहुल छन्दसी' ति शप श्लु। व्यत्ययेनात्मनेपदश्च। अन्यत्र लिट्]

ररप्शे अतिरिणक्ति ६ १८ १२. स्तूयते प्र०—अत्र रभ-धातोर्लिटि सस्य श ४ २० ५ [रभ राभस्ये (भ्वा०) धातोर्लिटि थास्। तस्य स्थाने 'से' इत्यादेश। तस्य सस्य शकारो वर्णव्यत्ययेन। 'अत एकहल्मध्ये०' इत्येत्वमभ्यासलोपश्च छान्दसत्वान्न भवति]

रराटम् परिभाषित जगत् ५ २१ **रराटे**=ललाटे २४ १]

रराणता रममाणेन मनसा १ १७१ १]

रराणः विद्या ददत् सन् (देव =विद्वज्जन) ७ २ ६ रममाण (विद्वान् जन) ३ ४ ६ दाता (वैद्य) ५ ४१ ८ ददन् (इन्द्र =ऐश्वर्यधर्त्ता सज्जन) ६ २३ ७ दाता सन् (अग्नि =विद्वज्जन) ३ १ २२ भृश दाता (अग्नि = विद्वान्) ४ २ १० **रराणाः**=ददमाना (ऋभव =मेधाविजना) ४ ३६ ८ [रा दाने (अदा०) धातो शानच्। व्यत्ययेनात्मनेपदम्। 'वहुल छन्दसी' ति शप श्लु। लिट कानज्वा। रराण रातिरभ्यस्त नि० २ १२]

रराणा दातारौ (अश्विनौ=सभासेनेशौ) १ १७७ २४ [रा दाने (अदा०)+लिट कानच्। ततो द्विवचनस्याकारादेश]

रराणा सुष्ठु-दात्री (सुलक्षणा विदुषी स्त्री) २ ३२.५ ['रराणा' इति व्याख्यातम्। तत. स्त्रिया टाप्]

ररद विलिखति वर्षयति ७ ४६ १ [रद विलेखने (भ्वा०) धातोर्लिट्]

ररिवान् दाता (विद्वान् पुरुष) १.१३८.४ [रा दाने (अदा०) धातोर्लिट क्वसु]

रवथः महाशब्दकारी (वज्र =शस्त्रास्त्रसमूह) १ १०० १३ [रु शब्दे (अदा०) धातो 'शीङ् शपिरुगमि०' उ० ३ ११३. सूत्रेण अथ प्रत्यय.]

रवम् शब्दम् ३ ३१.६ **रवः**=ध्वनि १ ६४ १० **रवेण**=विद्युत शब्देन १ ६२ ४ स्तुतिसमूहेन १ ७१ २ [रु शब्दे (अदा०) धातो 'ऋदोरप्' इत्यप्]

रशनया रश्मिना २१ ४६ **रशना**=व्याप्नुवती (रज्जु) २५ ३७ व्यापिका (रज्जु) १ १६२ ८ **रशनाम्**=स्नेहिका क्रियाम् १.१६३ २ रशनावत् किरणगतिम् २६ १३ अङ्गुलिम् २८ ३३ व्यापिका रज्जुमिव २२ २. **रशनाः**=रज्जव २६ १६ आस्वादनीया (गोप =रक्षका जना) १ १६३ ५ [अशूङ् व्याप्तौ (स्वा०) धातो 'अशेरश् च' उ० २ ७५ सूत्रेण युच् धातोरशादेशश्च। स्त्रिया टाप्। रशना अङ्गुलिनाम निघ० २ ५ ऊर्ग् वै रशना तै० स० ६ ३ ४ ५ ओषधयो रशना काठ० ३४ १५]

रश्मयः रज्जव किरणा वा २६ ४२ **रश्मये**= शोधनाय ३८ ६ **रश्मिना**=किरणसमूहेन १५ ६ **रश्मिभिः**=प्रकाशकैर्गुणै किरणैर्वा १ ३१ अन्त प्रकाशकैर्गुणै १ ३१ प्रकाशैर्गमनागमनै ४ ४ सूर्यकिरणै सह १ १६ ८ **रश्मिम्**=प्रकाशम् ५ ७ ३ सूर्यप्रकाशम् ४ २२ ८ **रश्मिः**=येनाऽश्नाति स (व्यवहार) प्र०—अत्र 'अश भोजने' धातोर्बाहुलकान् मि प्रत्ययो रशादेशश्च उ० ४ ४६, १८ १६ किरणो दीप्ति ३३ ७४ प्रकाशक प्रकाशमयो वा (सूर्य =जगदीश्वरो विद्वान् जीवो वा) २ ४६ ज्योति १ ३५ ७ **रश्मीन्**=विद्याविज्ञानतेजासि १ १०६ ३ अश्वनियमनार्था रज्जू १० २२ **रश्मे**= रश्मिवद्वर्त्तमान (विद्वज्जन) ५ ६६ ५ [अशूङ् व्याप्तौ (स्वा०) धातो 'अश्नोतेरश् च' उ० ४ ४६ सूत्रेण मि प्रत्ययो रशादेशश्च। अश भोजने (क्र्या०) धातोर्वा बाहु० औणा० मि रशादेशश्च। रश्मय रश्मिनाम निघ० १ ५ रश्मि = यमनात् नि० २ १५ अथ य कपाले रसो लिप्त आसीत्ते रश्मयोऽभवन् श० ६ १ २ ३ युक्ता ह्यस्य (इन्द्रस्य) हरय शता दशेति। सहस्र हैत आदित्यस्य रश्मय जै० उ० १ ४४ ५ अभीशवो वै रश्मय श० ५ ४ ३ १४ रश्मयो ह्यस्य (सूर्यस्य) विश्वे देवा श० ३ ६ २ ६ तस्य (सूर्यस्य)

सुराद्यत्' अ० ४ १.१३७. सूत्रेणापत्ये यत् । 'राज्ञोऽपत्ये जातिग्रहणम्' अ० ४ १ १३७ वा०सूत्रेण जातौ यत् । 'राजेरन्य' उ० ३ १०० सूत्रेणान्य प्रत्ययो वा । चतुरक्षर प्रजापतिश्चतुरक्षरो राजन्य. श० ५ १.५.१४. तस्माद् बाहुवीर्यो (राजन्य) बाहुभ्या हि सृष्ट ता० ६ १ ८ क्षत्र राजन्य ऐ० ८ ६ श० १३ १ ५ ३ क्षत्रस्य वा ऽएतद्रूप यद्राजन्य श० १३ १.५ ३ ओज क्षत्र वीर्यं राजन्य । ऐ० ८ २ वृषा वै राजन्य ता० ६ १० ९. युद्ध वै राजन्यस्य वीर्यम् श० १३ १ ५.६ युद्ध वै राजन्यस्य तै० ३ ९.१४.४. तस्माद् राजन्यस्य पञ्चदश स्तोमस्त्रिष्टुप् छन्द इन्द्रो देवता ग्रीष्म ऋतु ता० ६ १ ८ त्रिष्टुप् छन्दा वै राजन्य. तै० १ १ ९ ६ आनुष्टुभो राजन्य तै० १ ८.८.२ ता० १८ ८ १४ ऐन्द्रो वै राजन्य' तै० ३ ८ २३ २. ऐन्द्रो राजन्य ता० १५ ४ ८ औदुम्बरेण राजन्य अभिषिञ्चति तै० १ ७ ८ ७. पार्थरश्म राजन्याय ब्रह्मसाम कुर्वीत ता० १३ ४ १८ तस्मादपि (दीक्षित) राजन्य वा वैश्य वा ब्राह्मण इत्येव ब्रूयात् ब्रह्मणो हि जायते यो यज्ञाज् जायते श० ३ २ १ ४०]

राजपुत्रा राजा पुत्रो यस्या सा (अदिति'=मातेव) २ २७ ७ [राजन्-पुत्रपदयो समास]

राजयातै प्रकाशमान हो स० वि० १८३, अथर्व० ६ १० ९८ १ [राजृ दीप्तौ (भ्वा०) धातोर्णिजन्ताल् लेट्]

राजस्व: राजवीरप्रसविका (अध्यापिका परिचारिका अध्येत्र्यश्च स्त्रिय) १० ६ राजजनिका. (अप = जलानि प्राणान् वा) १० १ [राजसूप्राति० प्रथमाबहुवचनम् । राजसू =राजोपपदे षूङ् प्राणिगर्भविमोचने (अदा०) धातो कर्त्तरि क्विप्]

राजाना देदीप्यमानावध्यापकोपदेशकौ २ ३९ ६ प्रकाशमानौ सभासेनेशौ १ १३६ ४ विद्यादिशुभगुणैः प्रकाशमानौ राजप्रजाजनौ ३ ३८ ६ राजमानौ (सभासेनेशौ, राजामात्यौ) ५ ६२ ९ [राजन्प्राति० द्विवचनस्याकारादेशश्छान्दस]

राजासन्द्यै राजान सीदन्ति यस्या तस्यै (वेद्यै= यज्ञस्थल्यै) १९ १६ [राजासन्दीप्राति० चतुर्थी । राजासन्दी=राजन्-आसन्दीपदयो समास]

राजेव यथा सभाध्यक्ष १ ६७ १ प्रकाशमानो नृप इव ६ ४.४ [राजा-इवपदयो समास]

राज्ञी राजमाना (स्त्री) १४ १३ राजमाना प्रधाना भा०—उत्तमा (स्त्री) १५ १० [राजन्प्राति० स्त्रिया ङीप्]

राट् यो राजते स (राजा) १ १२१ ३ या राजते सा (नीति') १८.२८. प्रकाशमाना (स्त्री) १४ २२ राजमाना (स्त्री) १४.२१. [राजृ दीप्तौ (भ्वा०) धातो 'सत्सूद्विषद्रुह०' अ० ३.२ ६१ सूत्रेण क्विप्]

राततमा अतिशयेन दातव्यानि (ब्रह्माणि धनानि अन्नानि वा) १ ६१ १ [राततमप्राति० शेर्लोपश्छन्दसि । राततम =रा दाने (अदा०)+क्त+अतिशायने तमप्]

रातम् दत्तम् (औषधम्) २५ ३४ [रा दाने (अदा०) धातो क्त]

रातहविषे दत्तदानव्याय (जनाय=सत्पुरुषाय) २ ३४ ८ [रात-हविष्पदयो समास]

रातहव्यस्य दत्तदानव्यस्य (विदुषो जनस्य) ५.६६ ३ **रातहव्य:**=प्रदत्तहवि (राजा) १ ११८ ११ रातानि दत्तानि हव्यानि येन स (सत्पति.=सभाध्यक्षो जन) १.५४ ७ रात गृहीतु योग्य हव्य दत्त येन स (अग्नि= विद्युत्) ४ ७ ७ [रात-हव्यपदयो समास । रातम्=रा दाने (अदा०) धातो क्त । हव्यम्=हु दानादानयो (जु०) धातोर्यत्]

रातहव्या रात दत्त हव्य गृहीतु योग्य वस्तु याभ्या तौ (इन्द्रावरुणा=विद्युज्जले) ७ ३५ १ दातव्यदानौ (इन्द्राविष्णू=वायुसूर्यौ) ६ ६९ ६ रात दत्त हव्यमादातव्य सुख याभ्यान्तौ (इन्द्रावरुणा=विद्युज्जले) ३६ ११ [रात-हव्यमिति व्याख्यातम् । ततो द्विवचनस्याकारादेश.]

रातहव्याम् रातानि हव्यानि दातव्यानि दानानि यया ताम् (मही=वाचम्) ५ ४३ ६ [रात-हव्यपदयो समासे स्त्रिया टाप्]

राता दत्तानि (हवींषि=अन्नादीनि) ३ ३५ ७ [रातप्राति० शेर्लोपश्छन्दसि । रातम्=रा दाने (अदा०)+क्त]

रातानि दत्तानि (ऐश्वर्याणि) १ १३१ १ [रातप्राति० नपु० प्रथमाबहुवचनम्]

रातिनी बहवो राता दातारो विद्यन्ते यस्या सा (घृताची=रात्रि) ४ ६ ३ **रातिनीम्**=रातानि दत्तानि विद्यन्ते यस्या ताम् (घृताची=रात्रिम्) ३ १९ २ [रातप्राति० भूम्न्यर्थे इनि । तत स्त्रिया ङीप् । रातम्=रा दाने (अदा०) धातो क्त]

रातिम् दातारम् (वह्निम्) १ ६०.१ विद्यादान-

(भ्वा०) धातोर्ण्यत्]

रह्या गमनीयानि (उन्नमस्थानानि) ४.१ ३ [रहि गतौ (भ्वा०) धातोर्ण्यत्। तत शेर्लोपश्छन्दसि]

रंह्यै गत्यै अ०—युद्धभूमिषु गत्यै यथार्थतया युद्ध-कर्मणि प्रवृत्त्यै ६ १८. [रहि गतौ (भ्वा०) धातो 'इक् कृष्यादिभ्य' इति वा० सूत्रेण इक्। ततश्चतुर्थी। रहि:= गति नि० १०.२९]

राका राति ददाति सुख या सा (सरस्वती=वाक्) प्र०—राकेति पदनाम निघ० ५.५, ५ ४२.१२ पौर्णमासी-वद्वर्त्तमाना (विदुषी स्त्री) २ ३२ ८ **राकाम्**=पूर्णप्रकाश-युक्तेन चन्द्रेण युक्ता रात्रीम् २ ३२ ४ **राके**=सुखप्रदे रात्रिरिव (विदुषि स्त्रि) २ ३२.५ [रा दाने (अदा०) धातो 'कृदाधारार्चिकलिभ्य क' उ० ३ ४० सूत्रेण क। तत. स्त्रिया टाप्। राका पदनाम निघ० ५ ५ अनुमती राकेति देवपत्न्याविति नैरुक्ता, पौर्णमास्याविति याज्ञिका, या पूर्वा पौर्णमासी साऽनुमतिर्योत्तरा सा राकेति विज्ञायते नि० ११ ३०. राका रातेर्दानकर्मण नि० ११ ३० योत्तरा (पौर्णमासी) सा राका ऐ० ७ ११. प० ४ ६ गो० उ० १ १० योषा सा राका ऐ० ३ ४८ या राका सा त्रिष्टुप् ऐ० ३ ४७]

राजति प्रकाशते १ १४३ ४ प्रकाशयति प्र०—अत्राऽन्तर्भावितो ण्यर्थ १ ३ १२ **राजथ:**=प्रकाशेते ५ ३८ ३ प्रकाशेथे ५ ६३ २ **राजसि**=प्रकाशयसि १ १४४ ६ प्रकाशसे १ १८८ १ **राजामि**=प्रकाशे ४ ४२.२ [राजृ दीप्तौ (भ्वा०) धातोर्लट्। राजति ऐश्वर्य-कर्मा निघ० २ २१]

राजन् प्रकाशमान (राजपुरुष) १२ ९६ सभापते ६ २२ विद्याविनयाभ्या प्रकाशमान (नृप) ६ ४६ ६ सत्य-प्रकाशक (राजपुरुष) २ २७ १७ सर्वाधिपते (परमेश्वर विद्वन् वा) १ ९१ ४ सब ओर से प्रकाशयुक्त (सन्यासिन्) स० वि० १९५, ९ ११३ ४ **राजनि**=राजसभायाम् १ १०८ ७ **राजभ्य:**=न्यायप्रकाशकेभ्य सभासद्भ्य २ २७ १२ न्यायाधीशेभ्य १ १३९ ७ नृपेभ्य ३४ ५४. **राजसु**=क्षत्रियेषु राजपुत्रेषु १८ ४८ राजाओ मे स० प्र० १८३, अथर्व० ६ १० ९८ १ **राजा**=यो राजते प्रकाशते स (वरुण=जलसमूह सूर्यलोको वा) प्र०—अत्र 'कनिन्युवृषितक्षि०' उ० १ १५६ अनेन कनिन्प्रत्यय १ २४ ७ शरीरात्ममनोभिस्तेजस्वी (नृप) २ १ ४ सर्वत्र विद्याधर्मसुशिक्षाप्रकाशक (अधिष्ठाता) १०.१८. प्रशस्त-गुणकर्मस्वभावै प्रकाशमान (सभेश्वरो गृहपतिर्वा) ८.२३ सर्वप्रकाशक (जगदीश्वर) ४ ५० ७. अधिष्ठाता (परमात्मा) २३ ३ सर्वाध्यक्षो विद्याध्यक्षो रोगनाशकगुणप्रकाशको वा (परमेश्वर ओषधिराजो वा) १ ९१ ५ न्यायविनयाभ्या प्रकाशमान (परमात्मा) ७ ४९ ४ सर्वेषा न्यायकर्त्ता (परमेश्वर) ६ १५ १३ देदीप्यमान (प्रेरको जन) १९ ७२ प्रकाशमानो राजन्य १२.९८. न्यायविनयाभ्या राजमान (नृप) १ १७४ १ विराजमान (ईश्वर) स० वि० ५, २३ ३ न्यायाधीश सर्वाधिपतिरीश्वर प्रकाशमानो विद्युदग्नि. १ ९८ १ **राजानम्**=राजानमिव सूर्यम् ६ ८ ४ प्राण जीव वा १ २३.१४ **राजान**=क्षात्रधर्म-युक्ता वीरा १२ ८० **राजानौ**=प्रकाशमानौ सूर्याचन्द्रम-साविव सभासेनेशौ ६ ६२ ९ **राज्ञ:**=सर्वस्य जगतोऽधि-पतेर्विद्याप्रकाशवतो वा (परमेश्वरस्य विदुषो वा) १ ९१ ३ **राज्ञा**=प्रधानेन १२ ९६ **राज्ञाम्**=धार्मिकाणा राजा-विराजाना मध्ये २७ ५ **राज्ञे**=न्यायविनयविद्यागुणैर्देदीप्य-मानाय (राजपुरुषाय) १ ५३ १० [राजृ दीप्तौ (भ्वा०) धातो 'कनिन् युवृषितक्षि०' उ० १ १५६ सूत्रेण कनिन्। राजा राजते नि० २ ३ स राजसूयेनेष्ट्वा राजेति नामा-धत्त गो० पू० ५ ८ राजा वै राजसूयेनेष्ट्वा भवति श० ५ १ १ १२ राज्ञ एव राजसूयम् श० ५ १ १ १२ यो वै राजा ब्राह्मणादबलीयानमित्रेभ्यो वै स बलीयान् भवति श० ५ ४ ४ १५ तस्माद्राजा बाहुबली भावुक श० १३ २ २.५ तस्माद् राजोरुबली भावुक श० १३ २ २ ८ राजानो वै राष्ट्रभृतस्ते हि राष्ट्राणि बिभ्रति श० ९ ४ १ १ नाऽ-राजकस्य युद्धमस्ति तै० १.५ ९ १ तद् यथा महाराज पुरस्तात् सेनानीकानि प्रत्युह्याभय पन्थानमन्वियात् कौ० ५ ५ राजा महिमा तै० ३ ९ १० १ श० १३ २.११ २. तस्माद् राजा दण्ड्य श० ५ ४ ४ ७ एतद्ध वै सजन यद् राजा जै० २.१८३. यद् राजा करोति तद् विट् करोति मै० १ १० १३]

राजन्तम् प्रकाशमानम् (जगदीश्वर भौतिकमग्निं वा) ३ २३ [राजृ दीप्तौ (भ्वा०) धातो शतृ]

राजन्ती प्रकाशमाने (रोदसी=सूर्यभूमी) ६ ७० २ [राजृ दीप्तौ (भ्वा०) धातो शत्रन्तान् ङीप्। ततो द्विव-चनस्य पूर्वसवर्णदीर्घ]

राजन्य: राजपुत्र वीर २२ २२ क्षत्रिय (राजपुत्र) स० प्र० ११४, ३१ ११ भा०—योऽधिकवीर्यो बाहुवत् कार्यसाधक स क्षत्रिय ३१ ११ [राजन्प्राति० 'राजश्व-

कार्यरूपस्य धनस्य प्र०—अत्र शेषत्वात्कर्मणि षष्ठी १.८१ ६ समृद्धस्य (राय =धनस्य) ७ २८ ५ **राधसा**=राध्नुवन्ति ससिद्धि प्राप्नुवन्ति येन तेन (चन्द्रेण=सुवर्णेन) १ १३५ ४ **राधसे**=राध्नुवन्ति ससेधयन्ति सुखानि येन तस्मै धनाय १ १७ ७ ससिद्धिकराय धनाय ३ ४१ ६ ससिद्धाय धनाय १ ८१ ८ धनैश्वर्याय ४ २४ १ **राधः**=द्रव्यम् ५ ३६ १ राध्नुवन्ति सुखानि येन तद् विद्यासुवर्णादिधनम् १ १० ७ ससिद्धिकर धनम् १ १२१ ५ विद्या-राज्यसिद्ध धनम् १ ५७ १ सुखसाधन धनम् १५ ३४ **राधांसि**=समृद्धिकराणि धनानि ७ १५ ११ **राधोभिः**=धनै ६ ६० ३ [राध ससिद्धौ (स्वा०) धातोरौणा० असुन्। राध = धननाम निघ० २ १० राधसा धनेन नि० ११.२४]

राधसो राधसः धनस्य धनस्य ६ २७ ३ [राधस पदस्य वीप्साया द्वित्वम्]

राधोगूर्त्ताः धनवर्द्धिन्य एव (पत्नी =विद्वत्स्त्रिय) ६ ३४ [राधस्-गूर्त्तापदयो समास। गूर्त्ता=प्राति० स्त्रिया टाप्। गूर्त्त =गुर्वी उद्यमने (भ्वा०) धातो क्त]

राधोदेयाय धन दातु योग्याय व्यवहाराय ४ ५१.३. [राधस्-देयपदयो समास। देयम् दा+यत्]

राध्यताम् ससेध्यताम् १ ५ सम्यक् सिद्ध क्रियताम् ऋ० भू० ६६, १ ५ सम्यक् सिद्ध करे आर्याभि० २ ४७, १ ५ [राध ससिद्धौ (स्वा०) धातो कर्मणि लोट्]

राध्यम् राद्धु ससाद्धु योग्यम् (कर्म्म) १.११६ ११ [राध ससिद्धौ (स्वा०) धातोर्ण्यत्]

राध्यः सशोधितु योग्य (यज्ञ =ब्रह्मचर्याग्य) १ १५६.१. [राध ससिद्धौ (स्वा०) धातोर्ण्यत्]

राध्या सुखानि साधयितुमर्हाणि (वस्तूनि) २ २४ १० [राध्यमिति व्याख्यातम्। तत शेर्लोपश्छन्दसि]

राध्यानि ससाधनीयानि (द्रव्याणि) ४ ११ ३ [राध ससिद्धौ (स्वा०) धातोर्ण्यत्। तत प्रथमाबहु० रूपम्]

राध्यासम् ससाधयेयम् ३७ ३ सम्यक् सिद्धो भवेयम् २२ ४ [राध ससिद्धौ (स्वा०) धातोर्लिङ्]

रान्द्रया रान्द्रयाणि रन्तु योग्यानि (आचरणानि) ६ २३ ६ [रान्द्रयप्राति० शेर्लोपश्छन्दसि। रान्द्रयम्=रमु क्रीडायाम् (भ्वा०) धातोर्बाहु० औणा० द्रयण्]

रामयत् राम रमण कारयितृ (शव) १ ५६ ३ [रमु क्रीडायाम् (भ्वा०) धातोर्णिजन्ताच्छतृ]

रामयः आनन्देन क्रीडय प्र०—अत्र 'अन्येषामपि०' इति दीर्घ १ १२१ १३ **रामयन्ति**=रमयन्ति ७ ५६ १६ [रमु क्रीडायाम् (भ्वा०) धातोर्णिजन्ताल्लोट्। 'वा छन्दसी' ति सिपो हिर्न भवति। अन्यत्र लट्]

रामीः आरामप्रदा रात्री २ ३४ १२ [रमु क्रीडायाम् (भ्वा०) धातोर्निरुपपदादण्। तत स्त्रिया ङीप्]

राम्याणाम् रात्रीणाम् ७.६ २ रमणीयानाम् (विद्यावाचा जनानाम्) ३ ३४ ३. रमयन्ति आनन्दयन्ति तेषाम् (विदुषा जनानाम्) ३३.२६ **राम्यासु**=रात्रिषु ६ ६५ १ **राम्याः**=रात्री २ २ ८ [राम्या रात्रिनाम निघ० १ ७]

राय रामु धनेषु साधो (गृहस्थजन) ७ ५५ ३ [राप्राति० साध्वर्थे यत्। तत सम्बुद्धौ रूपम्। रा=रा दाने (अदा०) धातोर्घञ्। क्विप् कर्मणि वा]

रायतः शब्दयत (दुष्टान् जनान्) १ १८२ ४ [रै शब्दे (भ्वा०) धातो शतृ]

रायसि रा इवाचरसि ७ ५५ ४ शब्दयसि ७ ५५ ३ [रै शब्दे (भ्वा०) धातोर्लट्। राप्राति० वा क्यजन्ताल्लट्]

रायस्कामः रायो धनस्य काम इच्छा यस्य स (विद्वान् जन) यो धनानि कामयते स (प्रजाजन) ७ ३२ ३ धनमीप्सु. (विद्वज्जन) १ ७८.२ [राय =कामपदयो समासे षष्ठ्या अलुक्]

रायस्पोषदे यो रायो विद्याधनसमूहस्य पोष पुष्टि ददाति तस्मै (हवन-कर्मणे) ५ १ धनस्य पुष्टिप्रदाय (सभापतये राज्ञे) प्र०—अत्र 'सुपा सुलुक्०' इति ङे स्थाने 'शे' इत्यादेश ६ ३२ [रायस्-पोषपदयो समासे षष्ठ्या अलुक्। पोषद =पोषोपपदे डुदाञ् दाने (जु०) धातो क। चतुर्थ्या एकवचनस्य स्थाने 'सुपा सुलुक्०' इति शे आदेश]

रायस्पोषम् उत्तमाना धनाना भोगम् अ०—बहुशुभगुणै पोषम् ३ २० **रायस्पोषः**=या बहुगुणभोगेन पुष्टय अ०—बहुगुणसमूहयुक्ता पदार्था ३ २० **रायस्पोषाय**=विज्ञानादिधनस्य पुष्टये १३ १ रायो विद्यासुवर्णादिधनस्य पोषाय पुष्यन्ति यस्मिँस्तस्मै ३.६३ **रायस्पोषेण**=चक्रवर्तिराज्यलक्ष्म्या ऋ० भू० २६८, अथर्व० १६ ७ ७ [रायस्पोषपदयो समासे षष्ठ्या अलुक्। राय =रैप्राति० षष्ठ्या एकवचनम्। भूमा वै रायस्पोष श० ३ ५ २ १२]

रायस्पोषवनि रायो धनस्य पोषो दृढता तस्या सविभाजिनम् (सभाध्यक्षम्) ६ ३ यथा रायो धनसमूहस्य पोष पुष्टि वनन्ति सेवन्ते यस्मात्तथा (परमविद्वासम्) ५ २७ [रायस्-पोष-वनिपदाना समास। पूर्वपदस्य षष्ठ्या अलुक्। वनि =वन सभक्तौ (भ्वा० धातो 'छन्दसि वनसनरक्षिमथाम्' अ० ३.२ २७ सूत्रेण इन्]

क्रियाम् २ १ १६ धनम् १ १६६४ **रातौ**=सुपात्रेभ्यो दाने ७ १.२५ [रा दाने [अदा०) धातो. स्त्रिया 'मन्त्रे वृषेषपच०' अ० ३ ३ ९६ सूत्रेण क्तिन्, स चोदात्त । राति =दत्ति । नि० १२ १० इहैव रातय. सन्त्वितीहैव नो धनानि सन्त्वित्येवैतदाह (रातय.=धनानि) श० १४.२ २ २६]

रातिः विद्यादानम् प्र०—अत्र 'मन्त्रे वृषेपपचमन-विदभूवीरा उदात्त' अ० ३ ३ ९६ अनेन भावे क्तिन् स चाऽन्तोदात्त. १ ८९ २. दानक्रिया ३ ३० ७ विद्यादिदानम् २५ १५. दत्ति १ ११७ १ सर्वेभ्य सुखदायक (गृहपति = गृहस्थो जन) ८.१७. या राति ददाति सा (स्त्री) १ १२२ ७ वेगादीना दानम् १ ३४ १

रातिषाचम् दानसम्बन्धिनम् (वाज=विज्ञानम्) ७ ३६.८ **रातिषाचः**=ये राति षचन्ते सम्बध्नन्ति ते (विद्वासो राजपुरुषा) ७ ३४ २२ या राति दान सचन्ते ता (आप =जलानि) ७ ३४ २३. ये राति विद्यादिदान सचन्ते ते (राजान) ७ ३५.११ दानकर्त्तार (आप्ता जना) ७ ४० ६ दान सेवमाना (विद्यार्थिजना) २ १ १३ दानस्य दातु (विद्वज्जनस्य) ७ ३८ ५ [राति इत्युपपदे षच समवाये (भ्वा०) धातो 'कर्मण्यण्' इत्यण्]

रात्रि रात्रि प्र०—अत्र लिङ्ग-व्यत्यय ३४ ३२ [रा दाने (अदा०) धातो 'राशदिभ्या त्रिप्' उ० ४ ६७ सूत्रेण त्रिप् । लिङ्गव्यत्ययेन नपुसकम्]

रात्रिः रात्रिम् प्र०—अत्र विभक्तिव्यत्यय ३८ १६ रात्रिवद्वर्त्तमान· प्रलय· २३ ५४ [रात्रिरिति व्याख्यातम्]

रात्री या प्रलयाऽनन्तर भवति सा प० वि० । रात्रीवत् ३३ ३७ **रात्रीम्**=रजनीम् १५ ६ **रात्रीः**=रात्रय ३६ ११ रात्रियो को ग्रार्याभि० २ २३, ३६ ११ **रात्र्या**=रात्रिविद्यया १५ ६ तमोरूपया ३ १० [रात्रि-प्राति० स्त्रिया 'रात्रेश्चाजसौ' अ० ४ १ ३१ सूत्रेण ङीप् । रात्रि प्ररमयति भूतानि नक्तञ्चारीण्युपरमयतीतराणि ध्रुवीकरोति दातेर्वा स्याद् दानकर्मण प्रदीयन्तेऽस्याम-वश्याया नि० २ १८ अन्धो रात्रि ता० ९ १ ७ तम पाप्मा रात्रि कौ० १७.६ ९ गो० उ० ५ ३ तम इव हि रात्रिर्मृत्युरिव ऐ० ४ ५ मृत्योस्तम इव हि रात्रि. गो० उ० ५ १ रात्रिर्वरुण ऐ० ४ १० ता० २५ १० १० वारुणी रात्रि तै० १ ७ १० १ सगरा रात्रि श० १ ७ २ २६ अहर्वै शवलो रात्रि श्याम कौ० २ ९ रात्रिरेव श्री श० १० २ ६ १६. रात्रिर्वै व्युष्टि· श० १३ २.१ ६ रात्रि सावित्री गो० पू० १ ३३. रात्रिव कृष्णा शुक्लवत्सा तस्या अमावादित्यो वत्स श० ९ २ ३ ३०. रात्रिर्वात्सप्रम् (सूक्तम्) श० ६ ७ ४ १२ अहोरात्रे वात्सप्रम् (सूक्तम्) श० ६ ७ ४.१० रात्रिर्वै पिशङ्गिला तै० ३ ९ ५ ३ रात्रय क्षपा ऐ० १ १३ रात्रिर्वै सयच्छन्द श० ८ ५ २ ५ रजता (कुशी) रात्रिः (अभवत्) तै० १ ५ १० ७ अथ यदस्तमेति (आदित्य) एतामेव तद्रजता कुशीमनुसविशति (रजता कुशी-रात्रि.) तै० १ ५ १० ७ एतत् (रजत) रात्रिरूपम् ऐ० ७ १२ सोमो रात्रि श० ३ ४ ४ १५ क्षेमो रात्रि श० १३ १ ४ ३ ब्रह्मणो वै रूपमह क्षत्रस्य रात्रि तै० ३ ९ १४.३ यजमानदैवत्य वा अह । भ्रातृव्यदैवत्या रात्रि तै० २ २ ६ ४ आग्नेयी वै रात्रि तै० १ १ ४ २ आग्नेयी रात्रि तै० १ ५.३ ४ राथन्तरी वै रात्री ऐ० ५ ३० पञ्चच्छन्दासि रात्री शसत्यनुष्टुभ गायत्रीमुष्णिह त्रिष्टुभ जगतीमित्येतानि वै रात्रिच्छन्दासि कौ० ३०.११ एषा वा अग्निष्टोमस्य सम्मायद् रात्रि द्वादशस्तोत्राण्य-ग्निष्टोमो द्वादशस्तोत्राणि रात्रि तां० ९ १ २३ एषा वा उक्थस्य सम्मायद् रात्रि ता० ९ १ २५-२६

राथ्यः रथेषु हिता रथ्यास्तासु कुशल (वृषा=अश्व) २३ १३ [रथ्यप्राति० कुशलार्थेऽण् । रथ्य =रथप्राति० हितार्थे यत्]

राथ्येभिः रथवाहकै (अश्वै) प्र०— अत्र 'अन्येषा-मपि दृश्यते' इत्याद्यचो दीर्घ १ १५७ ६ [रथप्राति० वहत्यर्थे 'तद् वहति रथयुगप्रासङ्गम्' इति यत् । दीर्घश्छान्दस भिस ऐस् न भवति]

राधत् राध्नुयात् १ १२० १ **राधसि**=ससाध्नोसि ४ ३२ २१ **राधाम**=साध्नुयाम प्र०—अत्र विकरण-व्यत्ययः १ ४१ ७ **राध्नुहि**=सम्यक् सिद्धो भव २२ ४ **राध्य**=सराध्नुहि १० २८ [राध ससिद्धौ (स्वा०) धातोर्लेट । विकरणव्यत्ययेन शप् । अन्यत्र लट् लोट्, लिङ् च । राध्य-प्रयोगे श्यन्]

राधसः पृथिव्यादिधनात् प्र० —अत्र 'सर्वधातुभ्योऽसुन्' इत्यसुन्प्रत्यय १ १५ ५ विद्यासुवर्ण-चक्रवर्त्तिराज्यादि-धनस्य १ २२ ७ राध्नुवन्ति सम्यङ् निर्वर्त्तयन्ति सुखानि येभ्य साधनेभ्यस्तानि धनानि ३ १३ शरीरात्मबलवर्धकस्य (राय =विद्याधनस्य) ७ २९ ५ सुसमृद्धिकरस्य (राय = धनस्य) ७ ३० ५ धनाऽन्नस्य ४ २० ७ वृद्धिकारकस्य

६ ४६ ८ **रासते**=रातु ददातु प्र०—लेट्-प्रयोगो व्यत्ययेनात्मनेपदम् १ ६६ ८ ददाति ४ ५५ ८ **रासन्**=प्रयच्छन्ति ७ ४० ६ प्रदद्यु ७ ३४ २२ **रासन्ताम्**=ददतु ७ ३५ १५ **रासाथाम्**=दद्यातम् १ ४६ ६ **रास्व**=राहि देहि प्र०—अत्र व्यत्ययेनाऽऽत्मनेपदम् २ २७.१० ददाति ४ १६ **रासि**=ददासि १ १४० १२ **रासीय**=दद्याम् ७.३२ १८ [रा दाने (अदा०) धातोर्लेटि सिपि च विकरणे रूपम् । रासति दानकर्मा निघ० ३ २०. अन्यत्र लट्, लङ्, लोट्, लिङ् च । रासत्=ददातु नि० १२ १८]

रासभम् जलाग्न्योर्वेगगुणाख्यमश्वम् ११ १३ **रासभस्य**=रासन्ति शब्दयन्ति येन वेगेन तस्य, प्र०—रासभावश्विनोरित्यादिष्टोपयोजननामसु पठितम् निघ० १ १५, १ ३४ ६ अश्वसम्बन्धस्य २५ ४४ विद्युदादिसम्बन्धिन (रथस्य) ३ ५३ ५ शब्दायमानस्य (रथस्य) १.१६२ २१. **रासभः**=आदिष्टोपयोजनपृथिव्यादिगुणसमूहवत् पुरुष १ ११६ २ दातु योग्य (अग्नि=विद्वत्सन्तान) ११ ४६ [रासृ शब्दे (भ्वा०) धातो 'रासिवल्लिभ्या च' उ० ३ १२५ सूत्रेणाभच् । रासभावश्विनो=आदिष्टोपयोजननामसु पठितम् निघ० १ १५ रासभ=यदरसदिव स रासभोऽभवत् श० ६ १ १ ११ यत्तदरसदिवैष रासभ श० ६ ३ १.२८ वैश्य च शूद्र चानुरासभ श० ६ ४ ४ १२]

रास्ना दात्री (विदुषी स्त्री) ३८ १ रसहेतुभूता क्रिया प्र०—'रास्नासास्ना-स्थूणा-वीणा' उ० ३ १५ अनेन रसधातोर्निपातनात् न प्रत्यय १ ३० [रासृ शब्दे (भ्वा०) धातो 'रास्नासास्नास्थूणावीणा' उ० ३ १५ सूत्रेण न । तत स्त्रिया टाप् । रासति दानकर्मा (निघ० ३ १५) धातोर्वा न । रस शब्दे (भ्वा०) धातो, रस आस्वादनस्नेहनयो (चुरा०) धातोर्वा न । 'रास्नासास्ना०' इति निपातनाद् रूपसिद्धि । रास्ना=हिरो वै रास्ना श० १ ३ १ १५]

रास्पिनस्य आदातुमर्हस्य (आयो=जीवनस्य) १ १२२ ४ [रास्पिनो रास्पी रपतेर्वा रमतेर्वा नि० ६ २१]

रास्पिरासः ये रा दानानि स्पृणन्ति ते (आयव=मनुष्याः) ५ ४३ १४ [रा इत्युपपदे स्पृ प्रीतिपालनयो (स्वा०) धातो मूलविभुजादित्वात् क । ततो जसोऽसुक्]

रिक्थम् धनम् प्र०—रिक्थमिति धननाम निघ० २ १०, ३ ३१ २ [रिचिर् विरेचने (रुधा०) धातो 'पातृतुदिवचि०' उ० २ ७ सूत्रेण थक्]

रिक्था. अतिरिणक्षि प्र०—अत्र 'वाच्छन्दसि' इति विकरणाऽभाव ३ ६ २ [रिचिर् विरेचने (रुधा०) धातोर्लट् 'वा छन्दसी' ति विकरणो न भवति]

रिख लिख ६ ५३ ७ [लिख अक्षरविन्यासे (तुदा०) धातोर्लोट् । वर्णव्यत्ययेन लकारस्य रेफ]

रिच्यते अधिको भवति ७ ३२ **रिच्यसे**=पृथग्भवसि २.१ १५ [रिचिर् विरेचने (रुधा०) धातोर्लट् । विकरणव्यत्ययेन श्यन्]

रिणक् हिनस्ति २ १५ ८ रिणक्ति २.१६ ५. [रिचिर् विरेचने (रुधा०) धातोर्लङ् । अटोऽभाव]

रिणते गच्छन्ति ५.५८ ६ **रिणाति**=गच्छति १ १६६ ६ हिनस्ति ३३ ८० प्राप्नोति १.१८७ ४ **रिणा**:=हिंस्या ४ १६ ३ **रिणीते**=प्राप्नोति १ १२४ ७ गच्छति ५ ८० ६ **रिणीथः**=हिंस्तम् १.११७.१६ [रिणाति गतिकर्मा निघ० २ १४ रि हिंसायाम् (स्वा०) धातोर्लट् । व्यत्ययेन श्ना । रि गतौ (तुदा०) धातोर्वा लट् । व्यत्ययेन श्ना]

रिणन् प्राप्नुवन् (इन्द्र=जीव) २ २२ ४ [रिणाति गतिकर्मा (निघ० २ १४) धातो शतृ]

रितः गन्त्री (मही=भूमी) ६ ५७ ४

रिपवः अरय १ १४७ ३ शत्रव ४ ४ १३ **रिपुणा**=शत्रुणा स्तेनेन १७ ६३ **रिपुम्**=विद्याशत्रुम् (स्तेन=चोरम्) ६ ५१ १३ [रिपु स्तेननाम । निघ० ३ २४ रप व्यक्ताया वाचि (भ्वा०) धातो 'रपेरिच्चोपधाया' उ० १ २६ सूत्रेण कु-प्रत्यय उपधाया इकारादेश]

रिपः पृथिवी, प्र०—रिप इति पृथिवीनाम निघ० ११, २ ३२ २ पृथिव्या ३ ५ ५

रिपः शत्रव ७ ३२ १२ पापात्मिका क्रिया ७ ६० ६

रिप्तम् लिप्त प्राप्तम् (रसयुक्तपदार्थभागम्) प्र०—अत्र लकारस्य रेफादेश १६ ३५ [लिप उपदेहे (तुदा०) धातो क्त । वर्णव्यत्ययेन लकारस्य रेफ । लीङ् श्लेषणे (दिवा०) धातोर्वा 'लीरीडोर्ह्रस्व०' उ० ५ ५५ सूत्रेण त प्रत्यय पुडागमश्च]

रिप्रम् व्यक्तवाणीप्राप्तव्य वेदितव्यम् (सुखम्) प्र०—अत्र 'लीरीडोर्ह्रस्व' उ० ५ ५५ अनेनाय सिद्ध ४ २ [रिप्रम्=पापनाम । नि० ४ २१. तद यदमेध्य रिप्रं तत् श० ३ १ २ ११ रीङ् श्रवणे (दिवा०) धातो 'लीरीडोर्ह्रस्व पुट् च०' उ० ५ ५५ सूत्रेण र प्रत्यय पुडागमश्च]

रायस्पोषवनिः यया रायो विद्याधनसमूहस्य पोष पुष्टि वनति सभजति सा (स्वाहा=वाक्) ५.१२. [पूर्वपदे व्याख्यातम्]

रायः धनस्य ८५१ धर्म्यस्य धनस्य ११६६.३ अ०—विद्याधनसमृद्धी ४२२ ऋद्धिसिद्धिधनानि ७४ सर्वविद्याजनितस्य बोधधनस्य ७१४ विद्याराज्यसमृद्धय ४२२ श्रिय ११७६ साधारणधनस्य ६५५२ रातु दातु योग्यस्य (धनस्य) २६५ समग्रैश्वर्यस्य ११५८ द्रव्यस्य ५१५१ प्रशस्तलक्ष्म्या १८१० विद्याचक्रवर्त्ति-राज्यश्रियादीनि धनानि २२४ **राया**=विद्यादिधनेन १७१६ राज्यश्रिया ६१६१३. **राये**=परमोत्तमधन-लाभाय प्र०—राय इति धननाम निघ० २१०, १५३ योग विज्ञानरूप धन की प्राप्ति के लिए स० वि० २१४, ४०१६ परमश्री-मोक्षसुखप्राप्तये ५३६ उत्तमश्रिये १८४१७ [राय पशवो वै राय श० ३३१८ रैप्राति० षष्ठी। अन्यत्र तृतीया चतुर्थी च। रै=रा दाने (अदा०) धातोर्बाहु० औणा० डै प्रत्यय]

रारक्षाणः भृश रक्षन् सन् (अग्नि=राजा) ४.३१४ [रक्ष पालने (भ्वा०) धातोर्यङ्लुगन्ताच्छानच्। व्यत्ययेनात्मनेपदम्]

ररणत् उपसवदते प्र०—अत्र रण धातो 'बहुल छन्दसि' इति शप स्थाने श्लु लडर्थे लेट् च तुजादित्वाद् दीर्घ १६११४ अतिशयेनोपदिशति प्र०—यङ्लुगन्तस्य रणधातोर्लेट्-प्रयोग ११०५ [रण शब्दार्थे (भ्वा०) धातोर्यङ्लुगन्ताल्लेट्]

रारधु. हिंसन्ति ७१८१८ **रारन्धि**=रन्धय हिन्धि प्र०—अत्र 'तुजादीनाम्०' इत्यभ्यास-दैर्घ्यम् ६२५६ [रध हिंसासराध्यो (दिवा०) धातोर्लिट्। 'रधिजभोरचि' सूत्रेण प्राप्तो नुम् न भवति, छान्दसत्वात् अन्यत्र लोट्]

रारन् दद्यु ११२२१२ [रा दाने (अदा०) धातो-र्लङ्। 'बहुल छन्दसी' ति शप श्लु]

रारन्त रमन्ते ५५४१३ **रारन्तु**=भृश रमताम् ३४२८ **रारन्धि**=रमस्व रमय वा ३४१४ रमस्व रमेत वा, प्र०—अत्र रमधातोर्लोटि मध्यमैकवचने 'बहुल छन्दसि' इति शप स्थाने श्लु व्यत्ययेन परस्मैपदम् 'वाच्छन्दसि' इति हे पित्त्वाद् 'अडितश्च' इति धि १६११३]

रारपीति भृश शब्दयति ६३६ [रप व्यक्ताया वाचि (भ्वा०) धातोर्यङ्लुगन्ताल्लट्]

रारभे रेभे ११६८३. [रभ राभस्ये (भ्वा०) धातो-लिट्। एत्वाभ्यामलोपौ न भवतश्छान्दसत्वात्]

ररहाणाः त्यक्तार. (वायव) प्र०—अत्र 'तुजादी-नाम्०' इत्यभ्यासदीर्घ ११३४१ गच्छन्त (अश्वा) ११४८.३. [रह त्यागे (भ्वा०) धातोर्लिट कानच्]

रावा दाता (प्रजाजन) ६.३० [रा दाने (अदा०) धातोर्वनिप् कर्त्तरि]

राशिम् समूहम् ४२०८ [अशूङ् व्याप्तौ (स्वा०) धातो 'अशिपणाय्योरुडायलुकौ च' उ० ४१३३ सूत्रेण इण् रुडागमश्च]

राष्टि राजते प्र०—अत्र विकरणस्य लुक् ११०४४ [राजृ दीप्तौ (भ्वा०) धातोर्लटि शपो लुकि च रूपम्]

राष्ट्रदाः राज्ञा कर्मप्रदा राज्यप्रदा राष्ट्र ददातीति भा०—राज्याधिकार राज्यश्रिय ददाति स चक्रवर्त्ती राजा १०२. राज्यप्रदा सभासद १०३ [राष्ट्रोपपदे डुदाञ् दाने (जु०) धातो क]

राष्ट्रम् राज्यम् १२११ राजमानम् (राज्यम्) २०८ सत्पुरुषसभया सुनियमै सर्वगुणाढ्य शुभगुणान्वित च राज्यम् ऋ० भू० १०४, अथर्व० १२५८ राज्य की इच्छा स० वि० १८६, अथर्व० १६४११ **राष्ट्राणाम्**=राज्या-नाम् प्र०—अत्र 'वाच्छन्दसि' इति णत्वाऽभाव ७३४११ **राष्ट्रे**=प्रकाशमाने राज्ये २०१० [राजृ दीप्तौ (भ्वा०) धातोरौणा० ष्ट्रन्। श्रीर्वै राष्ट्रस्य मध्यम् तै० ३६७१ श० १३२६४ श्रीर्वै राष्ट्रमश्वमेध श० १३२६२ तै० ३६७१ राष्ट्र वाऽश्वमेध श० १३१६३ तै० ३८६४ राष्ट्र सान्नाय्यम् (हवि) श० ११२७१७ अष्टौ वै वीरा राष्ट्र समुद्यच्छन्ति राजभ्राता च राजपुत्रश्च पुरोहितश्च महिषी च सूतश्च ग्रामणी च क्षत्ता च सग्रहीता चैते वै वीरा राष्ट्र समुद्यच्छन्त्येतेष्वेवाध्यभिषिच्यते ता० १६१४ क्षत्र हि राष्ट्रम् ऐ० ७.२२ राष्ट्र पस तै० ३६७४ श० १३२६६ राष्ट्र मुष्टि श० १३२६७ तै० ३६७५ राष्ट्र हरिण (यजु० २३३०) श० १३२६८ राष्ट्राणि वै विश ऐ० ८२६ राष्ट्र सप्तदश (स्तोम) तै० १८८५ सविता राष्ट्र राष्ट्रपति श० ११४३.१४. तै० २५७४ श्रीर्वै राष्ट्रम् श० ६७३७]

राष्ट्री ईश्वर प्र०—राष्ट्रीतीश्वरनाम निघ० २२२, ६४५ [राष्ट्रप्राति० मत्वर्थ इनि। राष्ट्री ईश्वरनाम निघ० २२२ वाग् वै राष्ट्री ऐ० १६.]

रासत् ददाति ५२५१ ददातु ३४.४२ दद्यात्

श्छान्दस. 'तप्तनप्तनथनाश्चे' ति । विकरणव्यत्ययेन श]

रिष्टम् हिंसितम् (दुष्ट जनम्) १ १३१.७. [रिष हिंसायाम् (भ्वा०) धातो क्त]

रिष्यति हिनस्ति ६ ५४ ३ विनश्यति १ १८४ **रिष्यथ**=हिंस्यथ ५ ५४ ४ **रिष्यसि**=हिंसि २३ १६ हंसि २५ ४४ **रिष्याति**=रोगैर्हिंसितो भवेत् १२ ६१ **रिष्येत्**=हिंसितो भवेत् १ ६१ ८ विनष्ट होता है आर्याभि० १ २०, ऋ० १ ६ २० ८ **रिष्येम**=हिंस्याम ६ ५४ ६ [रिष हिंसायाम् (दिवा०) धातोर्लट् । अन्यत्र लेट् लिङ् च]

रिहती घ्नन्ती (रात्रि) ३ ५५ १२

रिहन्ति लिहन्ति आस्वादन्ते प्र०—अत्र व्यत्ययेन लस्य रेफ २ ३५ १३ प्राप्नुवन्ति १ १८६ ७ आददते श्लाघन्ते वा १ २२ १४ सत्कुर्वन्ति प्र०—रिहन्तीत्यर्चतिकर्मसु पठितम् निघ० ३.१४, ७ १६ अथवा लिह आस्वादने (अदा०) धातोर्लट् । वर्णव्यत्ययेन लस्य रेफ]

रिहन् परित्यजन् (त्रय =त्रेगयुक्तोऽग्नि.) १ १४० ६ [रह त्यागे (भ्वा०) धातो शतृ । वर्णव्यत्ययेनाकारस्येकारादेश]

रिहाणाः अर्चका. (जना) प्र०—रिहतीत्यर्चतिकर्मसु पठितम् निघ० ३ १४, २ १६ [रिहति अर्चतिकर्मा धातोस्ताच्छील्ये चानश्]

रिहाणे आस्वदिष्यौ (गावौ=वेनुवृषभौ) प्र०—अत्र वर्णव्यत्ययेन लस्य स्थाने र ३ ३३.१ स्वादयन्त्यौ (मातरा=मातापितरौ) ७ २ ५ [रिहाणे सरिहाणे नि० ६ ३६ लिह आस्वादने (अदा०) धातो शानच् । व्यत्ययेनात्मनेपदम् । लस्य च रेफ.]

रीतिः श्रेष्ठा नीति २ २४ १४. श्लिष्टो गन्ता गमयिता वा (रयि=धनम्) ६ १३ १ श्लेषणम् २ ३६ ५ [रीङ् श्रवणे (दिवा०) धातो स्त्रियां क्तिन्]

रीत्यापा रीतिश्चापश्च ययोस्तौ (वायुविद्युतौ) ५ ६८ ५ [रीति-अप्-पदयो समासे द्विवचनस्याकारादेश । अपोऽकारस्य दीर्घश्छान्दस]

रीयते श्लिष्यते सम्बध्यते १.१३५ ७ गच्छति ३५ १० विजानाति १ ३० २. श्लिष्यति ५ ७ ८ [रीयते गतिकर्मा निघ० २ १४ ली श्लेषणे (क्र्या०) धातो कर्मणि लट् । वर्णव्यत्ययेन लस्य रेफ । अथवा री गतिरेषणयो (दिवा०) धातोर्लट् । व्यत्ययेन श्यन् आत्मनेपद च]

रीयमाणाः चालनेन गच्छन्त्य (नाव =विमानानि) १० १६ [रीयते गतिकर्मा (निघ० २ १४) धातो. शानजन्ताट् टाप् स्त्रियाम्]

रीरधत् हिंस्यात् २.३३ ५ **रीरधत**=भृश हिंसत ६ ५१ ६ [रध हिंसासंराध्यो (दिवा०) धातोर्णिजन्तात्लुङ् । अटोऽभावश्छान्दस]

रीरधः सराधय प्र०—अत्र रध हिंसासंराध्यो इत्यस्माण्णिजन्तात्लोडर्थे लुट् १ २५ २ हिंस्यात् २ ३२ २ रध्या हिंस्या ३ १६ ५ [रध हिंसासंराध्यो (दिवा०) धातोर्णिजन्तात्लुङ्]

रीरमत् रमयेत् १.१६५.२ रमयति ७ ३२ १० **रीरमन्**=रमन्ताम् ७ ३२ १ रमयन्ति २.१८.३ **रीरमाम**=सर्वान् रमयेम १ १६५ २ [रमु क्रीडायाम् (भ्वा०) धातोर्णिजन्ताल् लुट्]

रीरिषत् हिंस्यात् ३.५३ २० **रीरिषत**=घ्नत २५ २२ हिंस्त १ ८९ ९. **रीरिषः**=हिंस्या प्र०—अत्र लिडर्थे लुङडभावश्च १६ १५ हिंसको भव १६ १६ जहि प्र०—अत्र तुजादित्वाद् दीर्घ १ ११४ ७ विनाशय प० वि० । **रीरिषीष्ट**=भृश हिंस्यात् ६ ५१ ७ [रिष हिंसायाम् (दिवा०) धातोर्णिजन्ताल्लुङ् । अडभावश्छान्दस । अन्यत्र लिङ् अपि]

रीषतः हिंसकात् व्याघ्रादे प्राणिन १ ३६ १५ हिंसाहेतुदोषात् १ १२ ५ **रीषन्तम्**=हिंसन्तम् (दुर्जनम्) प्र०—अत्र 'अन्येषामपि०' इति दीर्घ २ ३० ६. [रिष हिंसायाम् (भ्वा०) धातो शतृ । धातोर्दीर्घश्छान्दस । विकरणव्यत्ययेन श]

रीषते हिनस्ति ५ ३ १२ [रिष हिंसायाम् (भ्वा०) धातोर्लट् । व्यत्ययेन शप्रत्यये धातोरुपधाया दीर्घश्छान्दस]

रुक्म इव रुचिकर सुवर्णादिपदार्थो यथा ५ ६१ १२ [रुक्म-इवपदयो समास]

रुक्मम् रुचिकर भास्वरम् (कर्म्म) ५ १ १२ सुवर्णम् प्र०—रुक्ममिति हिरण्यनाम निघ० १ २, १ ११७ ५ आदित्यम् १५ २५ **रुक्मः**=देदीप्यमान (विद्वान् शिल्पी) १ ८८ २ दीप्तिमान् (जन) १२ १ रोचमान. सूर्य. ७ ३ ६ स्वप्रकाशस्वरूप (प्राण) १ ६६ ५ **रुक्मान्**=विद्युज्जाठराग्निप्रकाशान् १ ६४ ४ **रुक्माः**=सुवर्णाऽलङ्कारा ५ ५४ ११ **रुक्मेषु**=सुवर्णादिषु ५ ५३.४ **रुक्मैः**=रोचमानै प्रदीप्तै (सद्व्यवहारै) ५ ५२ ६ [रुच दीप्तावभिप्रीतौ च (भ्वा०) धातो 'युजिरुचितिजा कुश्च' उ० १ १४६ सूत्रेण मक कुत्वञ्च । असौ वाऽआदित्य

रिप्रवाहः ये रिप्र पाप वहन्ति तान् (दुष्टान् जनान्) ३५ १६ [रिप्रोपपदे वह प्रापणे (भ्वा०) धातो. 'वहश्च' अ० ३ २.६४ सूत्रेण ण्वि]

रिरिक्वांसः अधर्माद् विनिर्गता. (विद्वांसो जना) १ ७२ ५ रेचन कारयन्त (सेनाजना.) ४.२४ ३ [रिचिर् विरेचने (रुधा०) धातोर्लिट क्वसु.। न्यङ्क्वादित्वात् कुत्वम्]

रिरिक्षतः- हन्तुमिच्छतो दुष्टाच्छत्रो ७ ३६ ४ **रिरिक्षन्तम्**=रेष्टु हिंसितुमिच्छन्तम् (प्राणिनम्) १ १२६ १० रिष हिंसायाम् (भ्वा०) धातोरिच्छायामर्थे सन्नन्ताच्छतृ]

रिरिक्षो. हिंसितुमिच्छो (प्राणिन.) १ १८९ ६ [रिष हिंसायाम् (भ्वा०) धातोरिच्छायामर्थे सन्नन्ताद उ]

रिरिचथुः रेचताम् ४ २८ ५ **रिरिचाथे**=अतिरिक्तौ भवत १ १०९.६ **रिरिचे**=अतिरिच्यते १ १०२ ७. रिणक्तयविक वर्त्तते १ ६१ ९ **रिरिच्यात्**=अतिरिच्यात् ४ २४ ५ **रिरेच**=रिणक्ति ४ १६ ६ [रिचिर् विरेचने (रुधा०) धातोर्लिट्। अन्यत्र लिङ् अपि]

रिरिपुः आरोपयन्ति ५ ८५ ८

रिरिषेः हिन्धि प्र०—अत्र 'बहुल छन्दसि' इति श्लु १ १२६ १० प्रयच्छसि २ १ ५ [रिष हिंसायाम् (भ्वा०) धातोर्लिङ्]

रिरीहि याचस्व ६ ३६ ५ [रिरीहि याच्ञाकर्मा निघ० ३ १९]

रिरेभ रेभ उपदिशानि प्र०—अत्र व्यत्ययेन परस्मैपदम् १ १२० ६. [रेभृ शब्दे (भ्वा०) धातोर्लिट्। व्यत्ययेन परस्मैपदम्]

रिशन्तीः भक्षयन्ती (गा) ६ २८ ७ [रिश हिंसायाम् (तुदा०) धातो शत्रन्तान् ङीप्]

रिशादसम् शत्रुनिवारकम् (विद्वज्जनम्) ५ ६४ १ रिशा रोगा. शत्रवो वा हिंसिता येन तम् (वरुण=बहि स्थ प्राणम्) १ २ ७, हिंसकाना हिंसकम् (वरुण=धार्मिक जनम्) ३३ ५७ **रिशादसः**=रिशान् दोषान् शत्रूंश्चादन्ति हिसन्ति तान् (प्रवासिन=अतिथीन्) ३ ४४ हिंसकाना नाशका (मरुत=मानवा) ५ ६० ७ रिशाना हिंसकाना रोगाणा वा दस उपक्षयितार (अ०—दुष्टहिंसका सभ्या जना) १ २६ ४ ये रिशान् शत्रून् दसन्ति नाशयन्ति ते (देवा=विद्वज्जना) १ १८६ ८ हिंसकहिंसका (विद्वांसो जना) ५ ६१.१६ रिशा रोगा अदसोऽत्तारो येस्ते (मरुत=वायव) १ १९ ५. **रिशादाः**=यो रिशान् हिंसकान् शत्रूनत्ति नाशयति स (सभाध्यक्ष), प्र०—अत्राऽदधातोरसुन् १ ७७ ४ [रिशादस=रेशयदासिन नि० ६ १४ रिशोपपदे दसु उपक्षये (दिवा०) धातो क्विप्। अथवा रिशोपपदे अद भक्षणे (अदा०) धातोरौणा० असुन्। रिश=रिश हिंसायाम् (तुदा०) धातोरिगुपधलक्षण क]

रिशादसा अविद्यादिदोषनाशकावध्यापकोपदेशकौ ३३ ७२ दुष्टहिंसकौ (अध्यापकोपदेशकौ) ५ ७१.१ [रिशादस् इति व्याख्यातम्। ततो द्विवचनस्याकारादेशश्छान्दस]

रिषण्यति आत्मना हिंसितुमिच्छति २.२३ १२ **रिषण्यः**=हिंस्या ७ ९ ५ [रिष्टपदादात्मन इच्छायामर्थे क्यजन्ताल्लट्। 'दुरस्यु' रिषण्यति' अ० ७ ४ ३६ सूत्रेण रिषण्भाव]

रिषण्यवः आत्मनो रेषणमिच्छव (शत्रव) १.१४८ ५. [रेषणपदाद् इच्छायामर्थे क्यजन्ताद् उ.। 'दुरस्यु ···रिषण्यति' अ० ७ ४ ३६ सूत्रेण रिषण्भावो निपात्यते]

रिषत् हिंस्यात् २७ २ **रिषः**=हिंस्या ११ ६८ **रिषाथ**=हिंसथ ७ ३३ ४ **रिषाम**=हिंस्याम ४.१२ ५ रुष्टा भवेम ६ ४४ ११ हिंसिता भवेम १ ९४.१. पीडयेम ऋ० भू० २६८ [रिष हिंसायाम् (भ्वा०) धातोर्लेट्। व्यत्ययेन श । अन्यत्र लिङ्]

रिषतः हिसाहेतुदोषान् १ १२ ५ **रिषते**=हिंसकाय (प्राणिने) १ १८८ ५ [रिष हिंसायाम् (भ्वा०) धातो शतृ। विकरणव्यत्ययेन श]

रिषयध्यै रिषयितुम् १ १२९ ८ [रिष हिंसायाम् (भ्वा०) धातोर्णिजन्तात् तुमर्थेऽध्यै-प्रत्यय । गुणाऽभावश्छान्दस.]

रिषः हिंसकाद्धिसाया वा ५ ६७ ३ हिंसकात् (प्राणिन) ५ ५२ ४ दुष्टाचारात् ६ २४ १० धर्मस्य हिंसनात् ८ २७ हिंसकाच्छत्रो पापाच्च अ०—हिंसालक्षणात्पापात् भा०—मनोवच कर्मभि कृतात् पापात् ३ ४८ हिंसकान् (जनान्) २ २६ ४ हिंसका (शत्रुजना) ६ ६३ २ **रिषे**=हिंसनाय ७ ३४ १७ अन्नाय ५ ४१ १६. [रिष हिंसायाम् (भ्वा०, दिवा०) धातो क्विप्। रिपे=रेपणाय नि० १० ४५]

रिषाथन अलग होओ स० प्र० २३८, १० ४८ ५ [रिष हिंसायाम् (भ्वा०) धातोर्लोट्। तस्य थनादेश-

रुद्र दुष्टाना शत्रूणा रोदयित (राजन्) प्र०—'रोदेर्णि-लुक् च' अनेनोणादिगणसूत्रेण रोदिधातो रक्प्रत्ययो णिलुक् च १६ १. रोदयत्यन्यायकारिणो जनान् स रुद्रः स्तोता तत्सम्बुद्धौ, प्र०—रुद्र इति स्तोतृनामसु पठितम् निघ० ३ १६ रुद्र इत्यस्य त्रयस्त्रिंशद् देवव्याख्याने प्राण-गणेत्युक्तम् ३ ५७ रुत सत्योपदेशान् राति ददाति तत्स-म्बुद्धौ (सभाध्यक्ष) १ ११४ ३ राजवैद्य १६ ४९ सर्वरोग-निवारक (सद्वैद्य) २ ३३ १५ युद्धसेनाधिकृतविद्वन् (सेना-पते) १६ १५ रोगाणा प्रलयकृत् (सद्वैद्य) २ ३३ ३ दुष्टाना भयङ्कर, श्रेष्ठाना सुखकर (भा०—शिक्षक) १६ २ दुष्टाना रोदक (राजन्) ७ ४६ २ दुष्टो के रुलाने वाले ईश्वर आर्या-भि० १ ४५, ऋ० १ ८५ २ हे परमेश्वर प्राणादि वायु, जीव, अग्नि स० प्र० ४ २०, १६ १ दुष्ट-रोग-दोष-पापिजन-निवारकेश्वर प० वि० । **रुद्रम्**=यो रुद् रोग द्रावयति तम् (परमात्मानम्) ६.४९ १० पापफलदानेन पापिना रोदयि-तारम् (ईश्वरम्) पापफलभोगेन रोदक जीव वा ७ ४१ १ दुष्टाना भयप्रदम् (पितरम्) ५.५२ १६ **रुद्रस्य**=शत्रुरोदक-स्य स्वसेनापते १ १ १५. रोगाणा द्रावकस्य निस्सारकस्य (सज्जनस्य) ७ ५६ १ प्राणादिरूपस्य वायो ५ ४२ १५. वायुवद्बलिष्ठस्य (कृतब्रह्मचर्यस्य जनस्य) ६ ६६ ३ सभेशस्य १६.५० रोदयितू रोगस्य २ ३३ १३ रौद्रकर्मकर्त्तु (वीर-जनस्य) ६ २८ ७ अन्यायकारिणो रोदयितु (जनस्य) ५ ५९.८. समष्टिप्राणस्य १ ६४ २ **रुद्रः**=दुष्टाना रोदयिता विद्वान् ४ २१ परमेश्वरश्चतुश्चत्वारिंशद्वर्षकृतब्रह्मचर्यो विद्वान् वा ४ २० दुष्टदण्डक (विद्वज्जन) ५ ५१ १३ दुष्टाना भयङ्कर (विद्वान् राजा वा) ५ ४६ २ जीव **रुद्रान्**=आचरितचतुश्चत्वारिंशद्वर्षब्रह्मचर्यान् ८ ५९ महा-बलान् विदुष १ ४५ १ प्राणान् ३ २० ५. **रुद्राणाम्**= प्राणादीना मध्यमाना विदुषा वा १४ २५ **रुद्राय**=शत्रुपू-राय (विदुषे वीरपुरुषाय) ४.३ ७ शत्रुरोदकाय (सेनापतये) १६.४८ **रुद्राः**=मध्यमस्था (विद्वास) १२ ४४ दश प्राणा एकादश आत्मा मध्यमविद्वासो वा २१ २४ रुद्रसञ्ज्ञका विद्वास (जना) ११ ५८ प्राणाऽपानव्यानोदानसमाननाग-कूर्मकृकलदेवदत्तधनञ्जयाख्या दश प्राणा एकादशो जीवश्चे-त्येकादश रुद्रा २ ५ सजीवाऽजीवा प्राणादयो वायव १६ ५४. मध्यमकल्पा विद्वास २३ ८ मरणज्वरादिपीडा-हेतुत्वाद् रोदयितार (वायव) १.६४ ४ चतुश्चत्वारिंशद्-वर्ष-प्रमितेन-ब्रह्मचर्येणाऽधीतविद्या (विद्वज्जना.) ७ ३५ १४ **रुद्रेभ्यः**=प्राणजीवेभ्य २२ २८ **रुद्रैः**= मध्यकक्षास्थै (विद्वद्भिर्जनै) २८ ४ [रुदिर् अश्रुविमोचने

(अदा०) धातोर्णिजन्ताद् 'रोदेर्णिलुक् च' २ २२. सूत्रेण रक् णेर्लुक् च । रुत् इत्युपपदे वा द्रु गतौ (भ्वा०) धातोर्डः 'अन्येष्वपि दृश्यते' सूत्रेण । रुत्=रु शब्दे (अदा०) धातो क्विपि तुगागमे रूपम् । रुद्र =रौतीति सत रोरूयमाणो द्रवतीति वा रोदयतेर्वा यदरुदत् तद् रुद्रस्य रुद्रत्वम् इति काठकम् । यदरोदीत् तद् रुद्रस्य रुद्रत्वम् इति हारिद्रविकम् नि० १०.६ अग्निरपि रुद्र उच्यते नि० १० ७ रुद्रः स्तोतृ-नाम निघ० ३.१६ अग्निर्वै रुद्र श० ५.३ १ १०. रुद्रो-ऽग्नि ता० १२ ४ २४. यो वै रुद्र सोऽग्नि श० ५ २.४ १३ एष रुद्र यदग्नि तै० १ १.५.८ तान्येतान्यष्टौ (रुद्र, शर्व, पशुपति, उग्र, अशनि, भव, महादेव, ईशान) अग्नि-रूपाणि कुमारो नवम श० ६ १ ३ १८. अथ यत्रैतन्.प्रथम समिद्धो भवति । धूप्यत ऽइव तर्हि हैष (अग्नि) भवति रुद्र । श० २ ३ २.९ रुद्र पशूना पते तै० ३ ११.४ २. रुद्र (एवैन राजान) पशूना (सुवते) तै० १ ७.४ १ रुद्र हि नाति पशव श० ३ २ ४ २० रौद्रा वै पशव श० ६.३ २ ७. रौद्री वै गौ. तै० २ २.५ २ यद् गौस्तेन रौद्री श० ५ २ ४.१३. यद् रुद्रश्चन्द्रमास्तेन कौ० ६ ७ अथ देव (रुद्र) पशूनामीष्टे श० १ ७ ३ १ वास्तव्यो वाऽएष देव (रुद्रः) श० ५.२ ४ १३ य उ एव मृगव्याध स (रुद्र) उ एव स ऐ० ३.३३ रुद्रो वै स्विष्टकृत् कौ० ३ ६ रुद्र स्विष्टकृत् श० १३.३ ४ ३ कौ० ३ ४ रुद्रो वै ज्येष्ठश्च श्रेष्ठश्च देवानाम् कौ०—२५ १३. घोरो वै रुद्र कौ० १६.७ रुद्रो ह वा एष देवानामशान्त सञ्चितो भवति तमेवैतच्छ-मयति कौ० १९ ४ अम्बिका ह वै नामास्य (रुद्रस्य) स्वसा श० २.६.२ ९ शूलपाणये (रुद्राय) स्वाहा प० ५ ११ शरद्वा अस्य (रुद्रस्य) अम्बिका स्वसा तै० १ ६ १० ४ आखुस्ते (रुद्रस्य) पशु श० २ ६.२ १० तै० १ ६ १० २ रौद्रो गावेधुकश्चरु श० ५ २ ४ ११ उच्छेषणभागो वै रुद्र. तै० १ ७ ८ ५ (रुद्र) त (प्रजापतिम्) अभ्यायत्याविध्यत् ऐ० ३.३३ त (प्रजापतिम्) रुद्रोऽभ्यायत्य विव्याध श० १.७ ४ ३ स (रुद्र) यज्ञमभ्यायत्याविध्यत् गो० उ० १.२. तद् यद्रुदितात् समभवस्तस्माद्रुद्रा श० ९ १.१ ६. एषा (उदीची) वै रुद्रस्य दिक् तै० १ ७ ८ ६ एषा (उदीची) ह्येतस्य देवस्य (रुद्रस्य) दिक् श० २ ६ २ ७. उत्तरार्द्धे जुहोत्येषा ह्येतस्य देवस्य (रुद्रस्य) दिक् श० १.७ ३ २० रौद्री वै प्रतिहर्त्ता गो० उ० ३ १९ एतद्ध वा ऽस्य (रुद्रस्य) जान्धित प्रज्ञातमवसान यच्चतुष्पथम् श० २ ६.२.७. प्राणा वै रुद्रा । प्राणा हीद सर्व रोदयन्ति जै० उ० ४ २ ६. कतमे रुद्रा इति । दशेमे पुरुषे प्राणा आत्मैकादशस्ते यदस्मा-

एप रुक्म एप ह्यीमा सर्वा प्रजा अतिरोचते रोचो ह वै त रुक्म इत्याचक्षते परोक्षम् श० ७ ४ १ १० आदित्यस्य (रूप) रुक्म तै० ३ ६ २० २ असौ वाऽआदित्य एप रुक्म श० ६ ७ १ ३ तस्य (अश्वस्य श्वेतस्य) रुक्म पुरस्ताद् भवति। तदेतस्य रूप क्रियते य एप (आदित्य) तपति श० ३ ५ १ २० सत्य हेतद् रुक्म।......तद् यत् सत्यम् असौ स आदित्य श० ६ ७ १.१-२ प्रजातिस्तेजो वीर्यं रुक्म श० ६ ७ १ ६ रुक्मो वै समुद्र (यजु० १३ १६) श० ७ ४ २ ५ सत्य रुक्म तै० आ० १.२५ १]

रुक्मवक्षस: रुक्ममिव वक्षो येषान्ते (मरुत =विद्वासो मनुष्या) २ ३४ ८ रुक्म रोचक वक्षो हृदय येषान्ते (मरुत) २ ३४ २ रुक्माणि सुवर्णादियुक्तान्याभूषणानि येषान्ते (मरुत) ५ ५५ १ रुक्माणि जटितान्याभूषणानि वक्ष सु येषान्ते (विद्वज्जना) ५ ५७ ५ [रुक्म-वक्षसूपदयो समास]

रुक्मी प्रशस्तानि रुक्माणि रोचकानि कर्माणि गुणा वा सन्ति यस्य स (अग्नि) १ ६६ ३ [रुक्ममिति व्याख्यातम्। तत प्रशसायामर्थे इनि]

रुक्मेभि: रोचमानै सुवर्णादिभिर्वा ५ ५६ १

रुक्ष: तेजस्वी (अग्नि) ६ ३ ७ [रुच दीप्तावभिप्रीतौ च (भ्वा०) धातोर्बाहु० औणा० स]

रुग्णम् रोगाऽऽविष्टम् (पतिम्) ३ ३१ ६ रोगिणम् (जनम्) ३३ ५६ [रुजो भङ्गे (तुदा०) धातो क्त। 'ओदितश्चे' ति निष्ठातकारस्य नकार]

रुचम् कामनाम् १३ २३. रुचिकरम् भा०—वेदेश्वर-धर्मादिकम् ३१ २१ प्रेम प्रीतिम् १८ ४८ **रुच:**=रुचय प्रीतयो वा १३ २३ दीप्तय १३ २२ **रुचाय**=रुचिकराय (ब्रह्मणे) ऋ० भू० १३३, ३१ २०. रुचिकरात् (सूर्यात्) प्र०—अत्र पञ्चम्यर्थे चतुर्थी ३१.२० [रुच-दीप्तावभिप्रीतौ च (भ्वा०) धातोर्घञर्थे क। इगुपधलक्षणो वा क प्रत्यय कर्त्तरि]

रुचयन्त रुचिमाचक्षते ३ ६ ७ [रुचिप्राति० 'तत्क-रोति तदाचष्टे' इति णिचि लङि अटोऽभावे च रूपम्]

रुचा रुचिकर्य्यौ (द्यावापृथिवी=सूर्यभूमी) ४.५६.१. [रुच दीप्तावभिप्रीतौ च (भ्वा०) धातोरिगुपधलक्षण क। रुचप्राति० द्विवचनस्याकारश्छान्दस]

रुचान: प्रीतिमान् (अग्नि =विद्वज्जन) ३ १५ ६ प्रकाशयन् (सूर्य) ६ ३६ ४ प्रदीपक (अमृत =नाशरहित ईश्वर) १२ २५ रोचक (जन) १२ १ **रुचाना:**= रोचमाना (मरुत =बलिष्ठा योद्धृजना) ७ ५६ १३ [रुच दीप्तावभिप्रीतौ च (भ्वा०) धातो 'बहुलमन्यत्रापि' उ० २ ३७. सूत्रेण क्वुन्। शानचि वा शपो लुकि रूपम्]

रुचाना: रुचिकर्य्य (उपस =प्रभातवेला) ४ ५१ ६. [रुचान इति व्याख्यातम्। तत स्त्रिया टाप्]

रुचे रुचिकारकाय (जनाय=प्रसिद्धाय मनुष्याय) १३ २२ प्रीतिकराय भा०—मत्ये रुचिजनकाय (जनाय) १८ ४६ प्रीतये १३ ३६ [रुच दीप्तावभिप्रीतौ च (भ्वा०) धातो कर्त्तरि क्विप्। सम्पदादित्वाद्वा भावे क्विप्]

रुज प्रभग्न कुरु ४ ३ १४ रुग्णान् कुरु ३ ३० १६ **रुजत्**=रुजति ६ ३२ २ भनक्ति ६ ३६ २ **रुजन्**= भञ्जन्ति १ ७१ २ भञ्जति १ ७१ २ **रुजन्ति**=भञ्जन्ति ४.१८ ६ [रुजो भङ्गे (तुदा०) धातोर्लोट्। अन्यत्र लेट् लङ् लट् च]

रुजन् भग्नानि कुर्वन् (सेनापति) ४ १६ ८ **रुजन्त:**=शत्रून् भग्नान् कुर्वन्त (विद्युद्वत्पवित्रा जना) ६ ६ ३ [रुजो भङ्गे (तुदा०) धातो शतृ]

रुज: रोगान् ६ २२ ६ [रुजो भङ्गे (तुदा०) धातो क्विप्]

रुजा शत्रूणा रोगकारक (राजा) प्र०—अत्रौणा-दिक कनिन् १० ८ [रुजो भङ्गे (तुदा०) धातोर्बाहु० औणा० कनिन्। रुजा (इपु) अथ यया विद्ध शयित्वा जीवति वा म्रियते वा सा द्वितीया तदिदमन्तरिक्ष सैपा रुजा नाम श० ५ ३ ५ २६]

रुजाना: नद्य १ ३२.६ [रुजो भङ्गे (तुदा०) धातो-रौणा० बहुलवचनाद् आनच् किच्च। तत स्त्रिया टाप्। रुजाना =नदीनाम निघ० १ १३ पदनाम निघ० ४ ३ रुजाना नद्यो भवन्ति रुजन्ति कूलानि नि० ६ ४]

रुजामि प्रभग्नान् करोमि ४४ ११ **रुजेम**=प्र-भग्नान् कुर्य्याम ४ २ १५ [रुजो भङ्गे (तुदा०) धातोर्लट्। अन्यत्र लिङ्]

रुणधामहै निरुन्ध्याम १ ८.२ [रुधिर् आवरणे (रुधा०) धातोर्लेटि रूपम्]

रुतस्य रुग्णस्य (जनस्य) प्र०—अत्र पृपोदरादित्वा-ज्जलोप १६ ४६ [रुजो भङ्गे (तुदा०) धातो क्तप्रत्यये पृपोदरादित्वाज्जलोपे रूपम्]

रुदत: रोदन कुर्वत (अ०—दुष्टकर्मकारिणो जीवान्) १ ३३ ७ [रुदिर् अश्रुविमोचने (अदा०) धातो शत्रन्ताद् द्वितीया]

४.५ १५. [रुच दीप्तावभिप्रीतौ च (भ्वा०) धातोर्लङ्। 'वहुल छन्दसी' ति शप श्लौ द्वित्वम्। अन्यत्र लिट् लिङ् च]

रुरुचानम् शुम्भमानम् (अग्निम) ३ २ ३. [रुच दीप्तावभिप्रीतौ च (भ्वा०) धातोर्लिट कानच्]

रुरुशीर्ष्णी रुरो शिर इव शिरो यस्या सा (शूरवीरा राज्ञी) ६ ७५ १५ [रुरु-शिरस्पदयो समासे 'शीर्षंश्छन्दसी' ति शिर शब्दस्य शीर्षन् आदेश। तत स्त्रिया ङीपि रूपम्]

रुरुहुः प्रादुर्भवन्ति ६ ७ ६ प्रादुर्भवेयु ६ २४ ३ वर्धन्ते ५ ७ ५ [रुह वीजजन्मनि प्रादुर्भावे च (भ्वा०) धातोर्लिट्]

रुरुः मृगविशेष २४ ३६ **रुरून्**=मृगविशेषान् २४ २७ [रु शब्दे (अदा०) धातो 'रु-शातिभ्या क्रुन्' उ० ४ १०३ सूत्रेण क्रुन्]

रुरोज रुजति भनक्ति ६ ३२ ३ रुजेत् ४ ५० ५. **रुरोजिथ**=भनक्षि ६ १६ ३६ [रुजो भङ्गे (तुदा०) धातोर्लिट्]

रुरोधिथ रुद्धवानसि १ १०२.१० [रुधिर् आवरणे (रुधा०) धातोर्लिट्]

रुव शब्दविद्या प्रकाशय १ १० ४ **रुवत्**=शब्दायते १ १७३ ३ [रु शब्दे (अदा०) धातोर्लोट्। विकरणव्यत्ययेन श अन्यत्र लेटि शविकरणे च रूपम्]

रुवण्युम् सुशब्दायमानम् (उत्तमोपदेशम्) १ १२२.५. [रु शब्दे (अदा०) धातोर्वाहु० औणा० कन्यु प्रत्यय]

रुवत् प्रशस्तशब्दवत् (विद्वज्जन) ४ ५६.१ [रु शब्दे (अदा०) धातो क्विवन्तात् प्रशसाया मतुप्]

रुवन्तम् शब्दयन्तम् (मेघम्) ५ ४२.१४ [रु शब्दे (अदा०) धातो शतृ]

रुशत् सुन्दर रूपम् ४ ५ १५. सुरूपम् ३४.१४. सुस्वरूपम् (नाकम्=अविद्यमानदु खम्) ५ ५४ १२ तमो हिंसत् (अर्चि=दीप्ति) १ ६२ ५. ज्वलितवर्णम् (पाज=वलम्) १ ११५ ५ शुक्ल शुद्धस्वरूपम् (पाज=वलम्) ३३ ३८ हिंसन् (पुत्र) ३ २६ ३ **रुशतः**=सुरूपस्य रुचिकरस्य (विदुषो जनस्य) ४ ७ ६ प्रकाशितस्य (वप्सस=सुरूपस्य विदुप) १ १८१ ८ **रुशता**=सुस्वरूपेण (पयसा=दुग्धेन, धासिना=अन्नेन) ४ ३ ६ रूपेण ६ ६५ १ **रुशद्भिः**=प्रापकैं रूपादिगुणै १ ६२ ८ हिंसकैर्गुणै ४ ५१ ६ **रुशन्तम्**=हिंसन्तम् (भानु=सूर्यम्) १ ६२ २. **रुशन्तः**=चोरदस्यूवन्धकारादीन् हिंसन्त (अर्चय) १ ४८.१३ [रुशत् वर्णनाम रोचतेर्ज्वलतिकर्मण नि० २ २० नि० ६ १३ रुच दीप्तौ (भ्वा०) धातोरौणा० अतिप्रत्यये गुणाऽभावे वर्णव्यत्ययेन चकारस्य शकारे रूपम्। अथवा=रुश हिंसायाम् (तुदा०) धातो शतृ]

रुशती रक्तवर्णयुक्ता (उषा) १ ११३ २ **रुशतीम्**=प्रकाशिका विद्याम् १ ११७ ८. [रुशदिति व्याख्यातम्। तत स्त्रिया ङीप्]

रुशत्पशुः पालित पशुर्येन स (ऋत्विय=ऋतुयाजको जन) प्र०—रुशदिति पशुनाम निघ० ४.३, ५ ७५ ६ [रुशत्-पशुपदयो समास]

रुशदूर्मे रुशन्त्य ऊर्मयो ज्वाला यस्य तत् सम्बुद्धौ (अग्ने) १ ५८ ४ [रुशद्-ऊर्मिपदयो. समास। ऊर्मि=ऊर्णोतेर्नो प्रणोतव्या भवति नमतेर्वा नि० ५ २३]

रुशद्गवि प्रकाशमानरश्मियुक्ते (देवक्षत्रे=देवाना धने राज्ये वा) ५ ६४.७ [रुशद्-गोपदयो समास]

रुशद्वत्सा रुशोज्ज्वलित सूर्यो वत्सो यस्या सा (उषा) १.११३.२ [रुशद्-वत्सपदयो समास। ततष्टाप् स्त्रियाम्। रुशद्वत्सा सूर्यवत्सा। रुशदिति वर्णनाम रोचतेर्ज्वलतिकर्मण.। सूर्यमस्या वत्समाह साहचर्याद्रसहरणाद्वा नि० २ २०]

रुशमानाम् हिंसकमन्त्रीणाम् ५ ३० १४ **रुशमाः**=ये रुशान् हिंसकान् मिन्वन्ति ते (हिंसकहिंसकजना) ५ ३० १२ **रुशमासः**=हिंसकहिंसका जना) ५ ३० १३ [रुश हिंसायाम् (तुदा०) धातोर्वाहु० औणा० अम। वहुलवचनादेव गुणाऽभाव। रुशमास प्रयोगे जसोऽसुक्। अथवा रुशोपपदे डुमिञ् प्रक्षेपणे धातो क्विप्। 'मीनातिमिनोतिदीङाम्०' इत्यात्त्वम्। रुश=रुश हिंसायाम् (तुदा०) धातोरिगुपधलक्षण क.]

रुशमे हिंसके (अर्ये=धनस्वामिनि वैश्यादौ) ३३ ८२. **रुशमेषु**=हिंसकमन्त्रिषु ५ ३०.१५ [पूर्वपदे व्याख्यातम्]

रुहत् रोहेत् प्र०—अत्र 'कृमृदृरुहिभ्यश्छन्दसि' इति च्लेरङ् 'वहुल छन्दस्यमाङ्योगेऽपि' इत्यडभावो लिङर्थे लुङ् च १ ३४ ५ रोहति ५ ३६ २ [रुह वीजजन्मनि प्रादुर्भावे च (भ्वा०) धातोर्लुङि कृमृदृरुहिभ्य०' इति च्लेरङि अटोऽभावे च रूपम्]

रुहः नाड्यङ्कुरा १२ ७६ [रुह वीजजन्मनि प्रादुर्भावे च (भ्वा०) धातो क्विप्]

रुहाणाः प्रादुर्भवन्त (मनुष्या) ११ २२ रोहत (मनुष्या) १८ ५१ [रुह वीजजन्मनि प्रादुर्भावे च (भ्वा०)

न्मर्त्याच्छरीरादुत्क्रामन्त्यथ रोदयन्ति । तद् यद्रोदयन्ति तस्माद्रुद्रा इति श० ११ ६ ३ ७ रुद्रा एकादशकपालेन माध्यन्दिने सवने तै० १ ५ ११ ३ रुद्राणा माध्यन्दिन सवनम् कौ० १६ १ श० ४ ३ ५ १ अथेम विष्णु यज्ञ त्रेधा व्यभजन्त, वसव प्रात सवन रुद्रा माध्यन्दिन सवनमादित्यारतृतीयसवनम् श० १४ १ १ १५ त्रिष्टुव् रुद्राणा पत्नी गो० उ० २ ६ रुद्रास्त्रिष्टुभ समभरन् जै० उ० १.१८ ५ रुद्रास्त्वा त्रैष्टुभेन छन्दसा संमृजन्तु ता० १ २.७ रुद्रास्त्वा दक्षिणतोऽभिषिञ्चन्तु त्रैष्टुभेन छन्दसा तै० २ ७ १५ ५ अथैन (इन्द्र) दक्षिणस्या दिशि रुद्रा देवा अभ्यषिञ्चन् ऐ० ८ १४ रुद्रा एव मह गो० पू० ५ १५ वसवो वै रुद्रा आदित्या सत्रावभागा तै० ३.३ ९ ७ सोमो रुद्रै (व्यद्रवत्) श० ३ ४ २ १ रुद्राणा वा ऽएतद् रूप यत् पृथुका तै० ३ ८ १४ ३]

रुद्रवते प्रशस्ता: कृतचतुश्चत्वारिंशद्वर्षब्रह्मचर्या विद्वासो वीरा शत्रुरोदयितारो रुद्रा भवन्ति यत्र तस्मै (कर्मणे) ६ ३२ वहवो रुद्रा प्राणा विद्यन्ते यस्मिँस्तस्मै (इन्द्राय=दु खविदारकाय पुरुषाय) ३८ ८ [रुद्रप्राति० प्रशंसायां मतुप्]

रुद्रवर्तनी रुद्रस्य प्राणस्य वर्त्तनिरिव वर्त्तनिर्मार्गो ययोस्तौ (अश्विना=विद्याव्यापिजनौ) १९ ८२ रुद्रस्य प्राणस्य वर्त्तनिर्मार्गो ययोस्तौ (अश्विनौ=अग्निजले) १ ३ ३ [रुद्र-वर्त्तनिपदयो समास]

रुद्रहूतये रुद्रा प्राणा जीवा वा हूयन्ते स्तूयन्ते येन तस्मै भा०—प्राणाना जीवनस्य समाजस्य च रक्षणाय ३८ १६ [रुद्र-हूतिपदयो समास । हूति =ह्वेञ् स्पर्धाया शब्दे च (भ्वा०) धातो क्तिन्]

रुद्रा या प्राणवायुसम्बन्धिनी-चतुश्चत्वारिंशद्वायनाऽवधिमेवितब्रह्मचर्यं स्वीकृता सा (वाग् विद्युद्वा) ४.२१ [रुद्रप्राति० स्त्रिया टाप्]

रुद्रा रुतो रोदनाद् द्रावयितारौ (अध्यापकोपदेशकौ) ५ ७० २ दुष्टाना भयङ्करौ (अश्विना=विद्यायुक्तौ महाविद्वज्जनौ) ५.७५ ३ चतुश्चत्वारिंशद्वर्षप्रमितब्रह्मचर्येणाधीतविद्यौ (सभाशासेशौ) १ १५८ १ [रुद्रप्राति० द्विवचनस्याकारादेशश्छान्दस]

रुद्रास: वायव १ ८५ २ मध्यमा विद्वास ५ ८७ ७ दुष्टाना रोदयितार (विद्वज्जना) ५ ५७ १ [रुद्रप्राति० जसोऽसुक्]

रुद्रियम् रुद्रस्येद कर्म्म प्र०—अत्र पृषोदराद्याकृतिगणान्तर्गतत्वादिदमर्थे घ १ ४३ २ प्राणसम्बन्धि (महित्व=महिमानम्) ७ ४० ५ **रुद्रियाय**=रुद्रैर्लब्धाय (विद्यार्थिने) ५ ४१ ११ **रुद्रिया:**=रुद्रस्य मध्यमस्य विदुष सम्बन्धिन (मरुत =विद्वज्जना) २ ३४ १०. रुद्रेऽग्नौ भवा. (सिहा =व्याघ्रा) ३ २६ ५ शत्रून् दुष्टान् रोदयता सम्बन्धिनो रुद्रा (विद्वासो जना) १ ७२ ४ **रुद्रियेषु**=रुद्राणा प्राणाना प्रतिपादकेषु (उक्थेषु=वाक्येषु) २ ११ ३ [रुद्रप्राति० 'तस्येदमि' त्यर्थे शैषिको घश्छान्दस । 'शेषे' सूत्र लक्षणमधिकारश्चेति वा घ. प्रत्यय]

रुद्रियास: रुद्र इवाऽऽचरन्त (मरुत =शूरा मनुष्या) ७ ५६ २२. रुद्राणा जीवानामिमे जीवननिमित्ता रुद्रिया वायव प्र०—'तस्येदम्' इति शैषिको घ 'आज्जसेरसुक्' इत्यसुगागम १ ३८ ७ रुद्रेषु दुष्टरोदयितृषु भवा (विद्वासो जना) ५ ५८ ७ रुद्रेषु साधनकर्तृषु भवा (मरुत = मनुष्या) ५ ५७ ७ प्राणा जीवाश्च ६ ६२ ८ [रुद्रप्राति० 'तस्येदमि' त्यर्थे शैषिको घ । 'शेषे' इति सूत्र लक्षणमधिकारश्च । रुद्रियप्राति० जसोऽसुक्]

रुद्रेभि: प्राणैर्विद्यार्थिभि सह १ १०१ ७ दुष्टान् रोदयद्भिर्वीरै ३ ३२ ३ जीवै प्राणैर्वा ७ ३५ ६ [रुद्रप्राति० 'वहुल छन्दसी' ति भिस ऐसादेशो न भवति]

रुधत: रेतो निरोद्धु (नदस्य=वृषभादे) १ १७९ ४ [रुधिर् आवरणे (रुधा०) धातो शतृ । विकरणव्यत्ययेन श । रुवत सरुद्धप्रजनस्य नि० ५ २]

रुधिक्राम् यो रुधीनावरकान् क्रामति तम् (राजद्रोहिण जनम्) २ १४ ५ [रुधि इत्युपपदे क्रमु पादविक्षेपे (भ्वा०) धातो 'जनसनखनक्रमगमो विट्' इति कर्त्तरि विट् । 'विड्वनोरनुनासिकस्यात्' अ० ६ ४ ४१ सूत्रेणाकारादेश]

रुप: आरोपणकर्त्तु (ईश्वरस्य) प्र०—अत्र कर्त्तरि क्विप् ४ ५ ७ पृथिव्या प्र०—रुप इति पृथिवीनाम निघ० १ १, ४ ५ ८ [रुप विमोहने (दिवा०) धातो क्विप् । रुह बीजजन्मनि प्रादुर्भावे च (भ्वा०) धातोर्वा क्विप् । वर्णव्यत्ययेन हस्य पकार]

रुरुक्वान् रुचिमान् (विद्वान् जन) १ १४९ ३ [रुच दीप्तावभिप्रीतौ च (भ्वा०) धातोर्लिट क्वसु । न्यङ्क्वादित्वात् कुत्वम्]

रुरुचन्त सुशोभन्ते ४ ५५ २ **रुरुचु:**=रोचन्ते ४ १६ ४ **रुरुचे**=प्रदीप्यते ६ १५ ५ रोचते १७ १० **रुरुच्या:**=रुचितवान् कुर्या ६ ३५ ४ **रुरोच**= रोचते

विज्ञानम् ७ ३३.१३ विद्याशिक्षाज शरीरात्मवीर्यम् १६८४ पराक्रमम्, अ०—वीर्यम् २३२० वीर्यकर जलम् ३३ ११ **रेतांसि**=भा०—बलानि ३ १२ [रि गतौ (तुदा०) धातो 'स्रुरिभ्या तुट् च' उ० ४ २०२ सूत्रेणा-सुन् तुडागमश्च। रेत =उदकनाम निघ० १ १२ रेतो वै प्रजाति श० १४ ९ २ ६ उभयत परिगृहीत वै रेत प्रजा-यते श० २ ३ १ ३२ रेत पुरुषस्य प्रथम सम्भवत. सम्भवति ऐ० ३ २ रेतो हृदये (श्रितम्) श० ३ १० ८ ७ अर्वाग्वै नाभे रेत श० ६ ७ १ ६. रेतो वै नाभा नेदिष्ठ ऐ० ६ २७ गो० उ० ६ ८ रेतो वै वृष्ण्यम् श० ७ ३ १ ४६ सोमो वै वृष्णो अश्वस्य रेत तै० ३ ९ ५ ५ रेत सोम श० ३ ३ २ १ तै० २ ७ ४ १ कौ० १३ ७ रेतो वै सोम श० १ ९ २ ६ सोमो रेतोऽदधात् तै० १ ६ २ २ आपो रेत प्रजननम् तै० ३ ३ १० ३ आपो मे रेतसि श्रिता तै० ३ १० ८ ६ आपो हि रेत ता० ८ ७,९ रेतो वा आप, ऐ० १ ३ यत्पयस्तद्रेत गो० उ० २ ६ पयो हि रेत श० ६ ५ १ ५६ रेत पय श० १२ ४ १ ७. रेतो वै घृतम् श० ९ २ ३ ४४ रेत आज्यम् श० १ ३ १ १८ एतद् रेत यदाज्यम् तै० १ १ ९ ४ रेतो वा ऽओदन श० १३ १ १ ४ तै० ३ ८ २ ४ रेतो वा अन्नम् गो० पू० ३ २३ प्राणो रेत ऐ० २ ३८ रेतो वै तनूनपात् श० १ ५ ४ २ रेतो हिरण्यम् तै० ३ ८ २ ४ वागु हि रेत श० १ ५ २ ७ वाग् रेत श० १ ७ २ २१ शुक्ल वै रेत ऐ० २ १४ योषा पयस्या रेतो वाजिनम् श० २ ४ ४ २१ रेतो वाजिनम् तै० १ ६ ३ १० रेत सिक्तिर्वै पात्नीवतग्रह कौ० १६ ६ रेतो वै पात्नीवत (ग्रह) ऐ० ६ ३ गो० उ० ४ ५ रेतो वा अच्छिद्रम् ऐ० २ ३८ सौर्य रेत तै० ३ ९ १७ ५ द्रप्सीव हि रेत श० ११ ४ १ १५ त्रिवृद्धि रेत ता० ८ ७ १४ पञ्चविश हि रेत श० ७ ३ १ ४३ रेतो वा ऽअत्र यज्ञ श० ७ ३ २ ९ सवत्सरे सवत्सरे वै रेत सिक्तिर्जायते कौ० १९ ९ कामात्तो वै रेत सिञ्चति गो० उ० ६ २५ आण्डौ वै रेत सिचौ। यस्य ह्याण्डौ भवत. स एव रेत सिञ्चति श० ७ ४ २ २४ पृष्ट्यो वै रेत सिचौ श० ७ ५ १ १३ दक्षिणतो हि रेत सिच्यते ता० ८ ७ १० दक्षिणतो वा उदगृयोनौ रेत सिच्यते श० ६ ४ २ १० आनुतुन्नाद्धि रेतो धीयते ता० १२ १० ११ हिंकृताद्धि रेतो धीयते ता० ८ ७ १३ उपाशु वै रेत सिच्यते श० ९ ३ १ २ उपाश्विव वै रेतस सिक्ति ऐ० २ ३८ यदा वै स्त्रियै च पुसश्च संतप्यतेऽथ रेत सिच्यते श० ३ ५ ३ १६ अन्ततो हि रेतो धीयते श० ६ ५ १ ५६ वायुर्वै रेतसा विकर्त्ता श० १३ ३ ८ १ प्राणो हि रेतसा विकर्त्ता श० १३ ३ ८ १ प्राणोदानाऽउ वै रेत सिक्त विकुरुत श० ६ ५ १ ५६]

रेतोधसः पराक्रमधारकस्य (गृहपते) ८ १० **रेतो-धाम्**=वीर्यधारकमिति पराक्रमवन्त पुत्रम् ८ १० **रेतोधाः**=यो रेत श्लेषमाऽऽलिङ्गन दधाति स (वाजी=राजा) २३ २०. यो रेत उदकमिव वीर्यं दधाति स (सूर्य) ३ ५६ ३ यो रेतो वीर्य दधाति स (वरुण =उत्तमकर्मकारी पति) ५ ६९ २ [रेतस् उपपदे डुधाञ् धारणपोषणयो. (जु०) धातो कर्त्तरि क्विप्। रेतोवस =रेतस्-उपपदे+डुधाञ् (जु०) धातोरसुन्। वहुलवचनात् किच्च। वायुर्वै रेतोधा जै० २ १९८ सोमो वै रेतोधा तै० स० १ ७ ४]

रेतोधाः ये रेतो वीर्य दधाति ते (मनुष्या) ३३ ७४ [रेतस्-उपपदे दधाते क। तत प्रथमावहुवचनम्]

रेपः अपराधम् ४ ६ ६ [रप व्यक्ताया वाचि (भ्वा०) धातो: 'रपेरत एच्च' उ० ४ १९० सूत्रेणासुन् धातोर-कारस्य-एकारादेश]

रेभति अर्चति १ १०५ ९ **रेभन्**=स्तुवन्ति ७ १८ २२ [रेभृ शब्दे (भ्वा०) धातोर्लट्। अन्यत्र लङ्। व्यत्ययेन परस्मैपदम्। रेभति अर्चतिकर्मा नि० ३ १४]

रेभम् सकल विद्यागुणस्तोतारम् (ऋषिम्) १ ११७ ४ **रेभः**=वहुश्रोता (पति) प्र०—अत्र रीङ् धातोरौणादिको भ-प्रत्यय १ ११३ १७ पूजनीयो विद्वान् विदुषा सत्कर्त्ता वा, प्र०—रेभतीत्यर्चतिकर्मा निघ० ३ १४, ६ ३ ६ उपदेशक. १ १२७ १० **रेभाः**=विदितशब्दविद्या: (कवय =मेधाविन) १ १६३ १२ सर्वविद्यास्तोतार (कवय) २९ २३ [रेभ स्तोतृनाम निघ० ३ १६ रेभति अर्चतिकर्मा (निघ० ३ १४) धातोरच्। रीङ् श्रवणे (दिवा०) धातोर्वौणा० भ]

रेरिहत् अतिशयेन त्यजेत् १ १४० ९ ताडयति १२ २१ भृश युध्यस्व १२ ३३ भृश फलानि ददाति भा०—बहुफलप्रदा वर्त्तते १२ ६

रेरिहाणा आस्वादयन्त्यौ (सेनाराजनीती) ६ २७ ७ [लिह आस्वादने (अदा०) धातोर्लिट कानच्। शानचि वा शप 'वहुल छन्दसी' ति श्लौ द्वित्वे द्विवचनस्याकारादेशे च रूपम्। वर्णव्यत्ययेन लकारस्य रेफ]

रेरिहाणा भृश लिहन्ती (उषा) ३ ५५ १४ [रेरिहाण इति व्याख्यातम्। तत स्त्रिया टाप्]

रेवत् प्रशस्तपदार्थयुक्त द्रव्यम् १ १२४ ९ प्रश-तधन-वत् नित्य सम्बद्ध धन वा १ १२४ १० वहवो रायो विद्यन्ते

धातोर्बाहु० औरणा० आनच्, स च कित् । अथवा शानचि मुकोऽभावे विकरणव्यत्ययेन च शप्रत्यये रूपम्]

रुहाणाः प्रादुर्भवन्त्यश्चलन्त्यो नद्य १.३२ ८ [रुहाणप्राति० स्त्रिया टाप्]

रुहेम अधितिष्ठेम २१ ६ वर्धेमहि ५ ४३ [रुह बीजजन्मनि प्रादुर्भावे च (भ्वा०) धातोर्लिङ् । व्यत्ययेन श.]

रूपम् स्वरूपम् १६ ८१ आकृतिम् २१ ५५ रूपवद्वस्तु १ ७१ १० सच्चिदानन्दस्वरूपम् (ब्रह्म) १८ ६० चक्षुर्विषयम् (वस्तु) २१ ३७. सुरूपकरणम् १६ १४ सुक्रिया रूप वा १६ १६ चक्षुर्ग्राह्य गुणम् १ ११५ ५ विषयासक्ति कुपथ्य रोग और अधर्माचरण को छोड कर अपने स्वरूप को स० वि० १४४, अथर्व० १२ ५ ६ **रूपाणि**=शिल्पसिद्धानि चित्ररूपाणि यानादीनि वस्तूनि १ १०८ ५ इच्छारूपादिगुणविशिष्टानि १० २० स्वरूपयुक्तानि (अ०—वस्तूनि) भा०—पृथिव्यादीनि भूतानि २३ ६५ सर्वाणि विविधस्वरूपाणि स्थूलानि वस्तूनि १ १८८ ६ अन्तस्थानि ज्ञानमध्ये यादृशानि ज्ञानानि सन्ति तानि २० ३० सूर्यादीनि ५ ८१ २ **रूपाय**=सुरूपनिर्मापकाय (शिल्पिजनाय) ३० ७ **रूपे**=सत्यानृतस्वरूपे (सुतासुतौ=धर्माधर्मौ) १६ ७८ प्रसिद्धाऽप्रसिद्धलक्षणौ (धर्माधर्मौ) ऋ० भू० ६७, १६ ७७ भिन्न-भिन्न स्वरूप वाले (धर्म, अधर्म) को स० वि० १८७, १६ ७७ निरूपिते (सत्यानृते=सत्यञ्चानृत च ते) १६ ७७ **रूपैः**=विचित्राभिराहूतिभि २६ ३४ सुखस्वरूपै (पशुभि.=गवादिभि) १० ३० शुक्लादिभि १ १६० २ [रु शब्दे (अदा०) धातो 'खष्पशिल्पशष्पबाष्परूपपर्पतल्पा' उ० ३ २८ सूत्रेण प-प्रत्यये दीर्घत्व निपात्यते । रूप रोचते नि० २ ३ रूपाणि प्रज्ञानानि नि० १२ १३ अन्न वै रूपम् श० ६ २ १ १२ कुमारी रूप (गच्छति) गो० पू० २ २ योषित्येव रूप दधाति श० १३ १ ६ ६. तै० ३ ८ १३.२. रूप हिरण्यम् मै० ४ ८ २]

रूपं रूपम् प्रतिरूपम् ३ ५३ ८ प्र०—अत्र वीप्साया द्वित्वम् २० ६४ [रूपम् पदस्य वीप्साया द्वित्वम्]

रूपशः रूपै सह १ १६४.५ [रूपप्राति० बह्वल्पार्थात्०' अ० ५ ४ ५२ सूत्रेण 'वा छन्दसि' नियमाच्छस्]

रूपा रूपाणि १२ ६६ [रूपप्राति० शेर्लोपश्छन्दसि]

रूपेभिः रूपै ५ ४३ १० [रूपप्राति० 'बहुल छन्दसी' ति भिस ऐसादेशो न भवति]

रेकु शङ्कितम् (वस्तु) ४ ५ १२ [रेकृ शङ्कायाम् (भ्वा०) धातोर्बाहु० औणा० उ]

रेक्णसा धनेन २५ २५ **रेक्णः**=धनम् प्र०—'रिचेर्धने घिच्च' उ० ४ १६६ अनेन रिच्धातोर्धनेऽर्थेऽसुन् प्रत्यय स च घिन्नुडागमश्च १ ३१ १४ प्रगम्त धनमिव (पय=दुग्धम्) १ १२१ ५ [रिचिर् विरेचने (रुधा०) धातो 'रिचेर्धने घिच्च' उ० ४ १६६ सूत्रेणासुन् नुडागमो घित्वात्कुत्वञ्च । रेक्ण धननाम निघ० २ १० रेक्ण इति धननाम, रिच्यते प्रयत नि० ३ २]

रेचि विरिच्यते ४ १६ ५ [रिचिर् विरेचने (रुधा०) धातो कर्मणि लुङि चिणि अटोऽभावे च रूपम्]

रेजत् रेजते कम्पते ४ १७ २ **रेजत**=कम्पयति ४.२२ ४ रेजते ४ १७ २ कम्पते ५ ६० ३ **रेजति**=कम्पते १ १६८ ५ उपार्जति १.१२६ ६ **रेजते**=कम्पते चलति १ ३७ ८. **रेजथ**=कम्पध्वम् ५ ५६ ४ **रेजन्ते**=कम्पन्ते गच्छन्ति वा ६ ५० ५ [भ्यसते रेजत इति भयवेपनयो नि० ३ २१ रेजति कम्पयति नि० १० ४२ रेजति गतिकर्मा निघ० २ १४ रेजते उत्तराणि पदानि निघ० ३ २६]

रेजमानः कम्पमान (सत्पुत्र) ३ ३१ ३ **रेजमानाः**=कम्पमाना गच्छन्त (शत्रव) ७ ६० १० [रेजते वेपने (नि० ३ २१) धातो शानच्]

रेजमाने चलन्त्यौ भ्रमन्त्यौ (क्रन्दसी=द्यावापृथिव्यौ) ३२ ७ [रेजमानप्राति० स्त्रिया टाप् । ततो द्विवचनम्]

रेजयत् कम्पयते ५ ८७ ५ **रेजयन्ति**=कम्पयन्ति ७ ५७ १ [रेजते वेपने (नि० ३ २१) धातोर्णिजन्ताल्लेट् । अन्यत्र लट्]

रेट् शत्रु-हिंसक (वीरमनुष्य) प्र०—अत्र रिषतेहिंसार्थात् कर्त्तरि विच् ६ १८ [रिष हिंसार्थे (भ्वा०) धातो 'अन्येभ्योऽपि दृश्यन्ते' इति विच्]

रेणुककाटम् रेणुकैर्युक्त कूपम् २८ १३ **रेणुककाटः**=रेणुकाकूप इवाऽन्धकारहृदय (दुर्जन) ६ २८ ४, [रेणुकाकाटपदयो समास । काट कूपनाम निघ० ३ २३]

रेणुम् धूलिम् ४ ३८ ७ अपराधम् ४ १७ १३ विद्यादिशुभप्राप्तम् १ ५६ ४ रज ४ ४२ ५ **रेणुः**=धूलि १ ३३ १४. [रि गतौ (तुदा०) धातो 'अजिवृरीभ्यो निच्च' उ० ३ ३८ सूत्रेण णु]

रेतसः वीर्यस्य १ १०० ३ **रेतसा**=जलेन ५ ८३ ४ **रेतसे**=वीर्यस्य वर्द्धनाय १ १५५ ३ **रेतः**=उदकमिव

(विश्व=सर्व जगत्) १.५० ४ देदीप्यमान रुचिकरम् (विश्व=सर्व जगत्) १ ४६ ४ **रोचनस्य**=दीप्तिमत (रजस =लोकस्य) ५.६६ ४ **रोचनात्**=सूर्यप्रकाशाद्रुचिकरान्मेघमण्डलाद्वा १ ६ ६ प्रकाशनात् १ १४ ६. रुचिविषयात् ५.५६ १, देदीप्यमानात् (भा०—सूर्यप्रकाशात्) १ ४६ १ **रोचनानि**=सूर्यविद्युद्भूमिसम्बन्धीनि तेजासि १ १४६ ४ **रोचने**=रुचिनिमित्ते (दिवि=सूर्यप्रकाशे) १.१६ ६ दीप्तौ १३ ८ **रोचनेन**=प्रदीपनेन २७ १ स्वप्रकाशेन ३ ५५ ६ [रुच दीप्तावभिप्रीतौ च (भ्वा०) धातोरधिकरणे ल्युट्। अन्यत्र भावे कर्त्तरि च ल्युट्। रुच दीप्तौ (भ्वा०) धातोर्वा 'वहुलमन्यत्रापि' उ० २.७८. सूत्रेण युच्। रोचनः (यजु० १२ ४६) रोचनो ह नामैष लोको यत्रैष (सूर्य) एतत् तपति श० ७ १ १ २४ नक्षत्राणि वै रोचना दिवि तै० ७ ६ ४ २]

रोचनस्थाम् रोचने प्रदीपने तिष्ठतीति तम् (अग्नि=(वह्निम्) ३ २ १४ **रोचनस्थाः**=रोचने प्रदीपने तिष्ठतीति (अग्नि =पावक) ६ ६ २ [रोचनोपपदे ष्ठा गतिनिवृत्तौ (भ्वा०) धातो कर्त्तरि क्विप्]

रोचना रोचनानि प्रदीपनानि ६ ७ ७ विद्युद्भौतिकसूर्यरूपाणि ज्योतींषि ४ ५३ ५ प्रकाशनानि १ १४६ १. प्रदीपकानि ज्ञानानि २ २७ ६ प्रकाशकानि (कर्मोपासनाज्ञानानि) ५ २६ १ विद्याशब्दसूर्यादीनि न्यायवलराज्यपालनादीनि च १ १०२ ८ रुचिकराणि (कर्माणि) ३ १२ ६ [रोचनमिति व्याख्यातम्। ततो द्विवचनम्याकारादेशश्छान्दस]

रोचना रुचिकरी (उषा =प्रभातवेला) ३ ६१ ५ सूर्यादिदीप्ति १ ८१ ५ **रोचनाः**=प्रकाशिता प्रकाशकाश्च (अ०—मनुष्या) १ ६ १ दीप्तय २३ ५ [रुच दीप्तौ (भ्वा०) धातोर्वाहु० औणा० युच्। तत स्त्रिया टाप्]

रोचमानः रुचि कुर्वन् (इन्द्र =विद्युद्रूपोऽग्नि) ३.४६ ३. प्रकाशमान (पावक =अग्नि) ७ ३ ६ **रोचमानाः**=रुचिमन्त (सज्जना) ३ ७ ५ प्रकाशमाना (विद्वास) ४ १४ १ [रुच दीप्तावभिप्रीतौ च (भ्वा०) धातो शानच्]

रोचमाना विद्याविनयाभ्या प्रकाशमाना (देवी=विदुषी स्त्री) ६ ६४ २ **रोचमानाम्**=रुचिकारिकाम् (उषसम्) १ ११५ २ **रोचमानाः**=रुचिमत्य (वरा स्त्रिय) ६ ६४ १ [रुच दीप्तावभिप्रीतौ च (भ्वा०) धातो शानच्। तत. स्त्रिया टाप्]

रोचयत् रोचयेत् प्र०—अत्राऽडभाव ३.२ २ प्रकाशयति ६.३६ ४. [रुच दीप्तावभिप्रीतौ च (भ्वा०) धातोर्णिजन्ताल्लड्। अडभावश्छान्दसः]

रोचिषा प्रकाशेन १७ ८ अतिरुचियुक्तया (वाण्या) ५.२६.१. [रुच दीप्तौ (भ्वा०) धातोर्वाहु० औणा० इसिन्]

रोचिष्णु विषयासक्तिविरहत्वेन देदीप्यमानौ (विवाहितस्त्रीपुरुषौ) १२.५७ [रुच दीप्तौ (भ्वा०) धातो 'अलङ्कृञ्निराकृञ्०' अ० ३ २.१३६ सूत्रेण ताच्छीलादिषु इष्णुच्]

रोदसी द्यावापृथिव्यौ २०.६० भूमिसूर्यौ ३ २६ ६. सूर्यादिप्रकाशक पृथिव्याद्यप्रकाशकं द्विविध जगत् ७ ५ ४ प्रकाशभूमी १२ २३. प्रकाशपृथिवी-लोकसमूहौ ५ १६ सूर्यभूलोकौ ४ ४२ ३. भूमिराज्य विद्याप्रकाश वा १ ७२ ४ द्यावापृथिव्याविव राजप्रजे जनसमूहौ १ १०५.१ द्यावापृथिव्याविव विद्याविनयौ ३ ३४ १. अग्निभूमी १२ ३३ प्रकाशाऽप्रकाशे जगती ३ ५६ ७ भूमिविद्याप्रकाशौ ३ ३८ ३. न्यायभूमिराज्ये ३ ५४ १५ रोदननिमित्ते (द्यावापृथिव्यौ) २.१.१५ विद्यानयौ ३ ३६ ८ अहोरात्राविव १ १८५ ३. राजप्रजाव्यवहारौ ३.३८ ८ विद्युद्भूमी ६ ५० ३ रोदस्यो=प्रकाशाऽप्रकाशयोर्भूमिसूर्ययो १ ५६ २ [रोदसी द्यावापृथिव्योर्नाम निघ० ३ ३० रुधिर् आवरणे (रुधा०) धातोरौणा० असुन्। वर्णव्यत्ययेन धकारस्य दकार। पदनाम निघ० ५ ५ रोदसी रुद्रस्य पत्नी नि० ११ ४६ रोदसी द्यावापृथिव्यौ नि० ५ २१ रोदसी रोधसी द्यावापृथिव्यौ विरोधनात् नि० ६.१ यदरोदीत्(प्रजापति)तदनयो (द्यावापृथिव्यो) रोदस्त्वम् तै० २ २ ६ ४ इमे वै द्यावापृथिवी रोदसी श० ६ ४.४ २ इमे (द्यावापृथिव्यौ) ह वाव रोदसी जै० उ० १ ३२ ४ द्यावापृथिवी वै रोदसी ऐ० २ ४१]

रोधचक्राः रोधाश्चक्राणि च यासु ता नद्य १ १६० ७ [रोधस्-चक्रपदयो समासे पूर्वपदस्यान्त्यलोप। रोधचक्रा नदीनाम निघ० १ १३]

रोधत् निरुणद्धि स्वीकरोति १ ६७ ५ [रुधिर् आवरणे (रुधा०) धातोर्लेट्। विकरणव्यत्ययेन शप्]

रोधना रक्षणार्थानि (कृतानि) १.१२१.७ रोधनानि २ १३ १० [रुधिर् आवरणे (रुधा०) धातोर्ल्युट्। ततश्शेर्लोपश्छन्दसि]

रोधस्वतीः रोधो वहुविधमावरण विद्यते यासा

यस्मिँस्तदैश्वर्यम् १ १५१ ८ द्रव्यवत् ३ ७ १० प्रशस्तधनेन तुल्यम् ३ २३ ४. प्रशस्तधनयुक्तम् (सह =बलम्) ५.२३ ४ परमोत्तमधनवते (श्रवसे=श्रवणायाऽन्नाय वा) प्र०—अत्र 'सुपा सुलुक्०' इति चतुर्थ्या एकवचनस्य लुक् १ ६५ ११ राज्यादिप्रशस्ताय श्रीमते १ ६६ ६ प्रशस्तानि रायो धनानि विद्यन्ते यस्मिन् सुखे तत् १.६२ १४ श्रीमत् (अपत्यम्) २ ३५ ४ **रेवतः**=पदार्थप्राप्तिमतः पुरुषार्थिनो जीवस्य प्र०—अत्र 'छन्दसीर' इति वत्वम् १ ४ २ **रेवता**=प्रशस्तधनवता (परिणा=वणिग्जनादिना) ४ २५ ७ [रयिप्राति० प्रशसाया मतुप्। 'रयेर्मतौ बहुलम्' अ० ६ १ ३७ वा०सूत्रेण सम्प्रसारणम्। 'छन्दसीर' अ० ८ २ १४ सूत्रेण मतोर्मकारस्य वत्वम्]

रेवती प्रशस्तधनकारिणी (उषा =प्रातर्वेला) ३ ६१ ६ **रेवतीः**=रयिश्शोभा धन प्रशस्त विद्यते यासु ता प्रजा प्र०—अत्र प्रशसार्थे मतुप् 'रयेर्मतौ बहुलम्' अ० ६ १ ३७ अनेन सम्प्रसारण 'छन्दसीर' इति मस्य वत्व 'सुपा सुलुक्०' इति पूर्वसवर्णादेशश्च १ ३० १३ राय प्रशस्तानि धनानि विद्यन्ते यासु ता प्रजा ६ ८ विद्याधनसहिता प्रशस्ता नीतयो गाव इन्द्रियाणि पशव पृथिवीराज्यादियुक्ता यासु ता अ०—प्रशस्ता नीतयो रेवत्य ३ २१ रेवत्य आप १ २१ बहुधनशोभायुक्ता (उपस = प्रभातवेला) ४ ५१ ४ प्रशस्तश्रीयुक्ता (पुरन्धी =धिय) १ ५८ २ धनवती शत्रुसेनोल्लङ्घिका प्रजा २१ २८ [रेवदिति रयिप्राति० मतुपि व्याख्यातम्। तत. स्त्रियाम् 'उगितश्च' इति ङीप्। रेवत्य =नदीनाम निघ० १ १३ रेवती (नक्षत्रम्) रेवत्यामरवन्त तै० १.५ २ ६ पूष्णो रेवती। गाव परस्ताद् वत्सा अवस्तात् तै० १ ५ १ ५ पूषा रेवत्यन्वेति पन्थाम् तै० ३ १ २ ६ (रैवत साम) स (प्रजापति) रेवतीमसृजत तद् गवा घोषोऽन्वसृज्यत ता० ७ ८ १३ ज्योती रेवती साम्नाम् ता० १३.७ २ यद् बृहत् तद् रैवतम् ऐ० ४ १३ गायत्री वै रेवती ता० १६.५ १६ या हि का च गायत्री सा रेवती ता० १६.५ २७ रेवत्यो मातर ता० १३ ६ १७ रेवत्य आप श० १ २ २ २ आपो वै रेवती तै० ३ २ ८ २ आपो वै रेवत्य ता० ७ ६ २०. अपा वा एष रसो यद्रेवत्य ता० १३ १० ५ रेवन्तो हि पशवस्तस्मादाह रेवती रमध्वमिति श० ३ ७ ३ ११ पशवो वै रेवत्य ता० १३ १० ११ वाग्वै रेवती श० ३ ८ १ १२ रेवत्य सर्वा देवता ऐ० २ १६ वज्रो वै रेवती श० ३.८ १ १२]

रेवान् विद्याद्यनन्तधनवान् (ब्रह्मणस्पति =जगदीश्वर) प्र०—अत्र भूम्न्यर्थे मतुप् 'रयेर्मतौ बहुल सम्प्रसारणम्' अ० ६ १ ३७ इति वार्त्तिकेन सम्प्रसारणम् 'छन्दसीर' अ० ८ २.१५ इति मकारस्य वकार १ १८ २ बहुधनवान् (मर्त्त =विद्वज्जन) ७ १ २३ प्रशस्ता रायो विद्यन्ते यस्य स (न्यायाधीशो जन) २ २७ १२ [रयिप्राति० प्रशसाया मतुपि रेवदिति व्याख्यातम्। तत. पुंसि सौ 'रेवान्' इति रूपम्]

रेषणाः हिंसका (शत्रव) १ १४८ ५ [रिष हिंसायाम् (भ्वा०) धातो 'कृत्यल्युटो बहुलमि' ति कर्त्तरि ल्युट्]

रेषत् हिनस्ति ७ २० ६ [रिष हिंसार्थे (भ्वा०) धातोर्लेट्]

रेषयन्ति हिंसयन्ति १ १४८ ५ [रिष हिंसार्थे (भ्वा०) धातोर्णिजन्ताल् लट्]

रेष्माणम् हिंसकम् अ०—अविद्यादिरोगम् २५ २ [रिष हिंसार्थे (भ्वा०) धातो कर्त्तरि मनिन्]

रेष्म्याय रेष्मेषु हिंसकेषु भवाय (जनाय) १६ ३६. [रेष्मप्राति० भवार्थे यत्। रेष्म =रिष हिंसार्थे (भ्वा०) धातोरौणा० बहुलवचनात् मन्]

रैवताय धनसम्बन्धिने (व्यवहाराय) २६ ६० [रेवदिति व्याख्यातम्। तत 'तस्येदम्' इत्यर्थेऽण्। रैवत मेघनाम निघ० १ १०]

रैवतासः रेवतीषु पशुषु भवा (मनुष्या) ५ ६० ४ [रेवतीप्राति० भवार्थेऽण्। ततो जसोऽसुक्। पशवो वै रेवत्य ता० १३ १० ११]

रोक् रोग कुर्य्या १६ ४७ [रुजो भङ्गे (तुदा०) धातोर्लुङि लेर्लुकि अटोऽभावे च रूपम्]

रोकः शब्दायमान (तेजस्विजन) ६ ६६ ६ **रोकाः**=रुचिकरा प्रकाशा ३ ६ ७ [रुच दीप्तावभिप्रीतौ च (भ्वा०) धातोरौणा० बहुलवचनात् क]

रोचत रोचन्ते ४ १० ६ प्रकाशते ४ १ १७ **रोचते**=प्रकाशते ४ १० ५ दीप्यते १ १८८ ११ प्रदीप्यते ३ २६ ७ रुचिकारी वर्त्तते १ ४३ ५ प्रकाशमान होता है स० वि० ६३, अथर्व० ११ ५ २६ **रोचन्ते**=परमानन्देन प्रकाशन्ते ऋ० भू० १६३, रुचिहेतवो भवन्ति १ ६ १ **रोचसे**=प्रकाशसे २ ७४ **रोचस्व**=प्राप्तो भव, अभित प्रीतो भव ३८ १७ [रोचते ज्वलतिकर्मा निघ० १ १६ रुच दीप्तावभिप्रीतौ च (भ्वा०) धातोर्लङ्। अडभाव.। अन्यत्र लट् लोट् च। रोचते ज्वलतिकर्मण नि० २ २०]

रोचनम् रोचन्ते यस्मिँस्तत् (विश्वम्) ३.४४ ४ रुचिकरम् (विश्व=सर्वराज्यम्) ३३ ३६ अभिप्रीतम्

रोहित् अधस्तादक्तवर्णा (अग्नेर्ज्वाला) १ १०० १६ रक्तगुणविशिष्टो मृगविशेष २४ ३० **रोहितः**=नद्य ७ ४२ २. रोहयन्त्यारोहयन्ति यानानि यास्ता (अरुपी = गमनहेतवो ज्वाला) प्र०—अत्र 'हृसृरुहियुषिभ्य इति.' उ० १ ९७. अनेन रुहधातोरिति प्रत्यय १ १४.१२ रक्त-गुणविशिष्टा (ज्वाला) ५ ५६ ६. [रुह बीजजन्मनि प्रादुर्भावे च (भ्वा०) धातो 'हृसृरुहियुषिभ्य इति' उ० १.९७ सूत्रेण इति । रोहित =नदीनाम निघ० १ १३ रोहित =अगुलिनाम निघ० २ ५]

रोहितम् प्रादुर्भूतम् (रसम्=आनन्दम्) १९ ८३. **रोहितः**=रक्तवर्ण (पशु) २४ २ रक्तगुणविशिष्टस्याग्ने-र्वेगादिगुणसमूह प्र०—रोहितोऽग्नेरित्यादिष्टोपयोजननामसु पठितम् निघ० १ १५, १ ३९ ६ **रोहिताय**=वृद्धिकराय (सेनापतये) १६ १६ **रोहिताः**=रक्तवर्णा. (पशव पक्षिणो वा) २४ ६ **रोहितौ**=विद्युत्प्रसिद्धवह्नी ५ ३६ ६ [रुह बीजजन्मनि प्रादुर्भावे च (भ्वा०) धातो 'रुहेरश्च लो वा' उ० ३ ९४ सूत्रेण इतन्प्रत्यय । रोहितम् (छन्द) रोहित वै नामैतच्छन्दो यत् पारुच्छेपमेतेन वा इन्द्र सप्त स्वर्गाल्लोकानरोहत् ऐ० ५ १० एतद्वा आसा (गवाम्) बीज यद्रोहित रूपम् मै० ४ २ १४]

रोहिता रोहितानि रक्तगुणविशिष्टान्यग्न्यादीनि द्रव्याणि १.१३४ ३ रक्तादिगुणविशिष्टौ (अश्विनौ= धारणाकर्षणा-ख्यौ गुणौ) २ १० २ रोहितेन वह्निगुणेन सहितौ (वाय्व-ग्नी) ४ २.३ दृढबलादिगुणोपेतौ (अश्वौ) प्र०—अत्र द्विवचनस्याकारादेश १ ९४ १० रक्तगुणविशिष्टावश्वौ ३ ६.६ [रोहितमिति व्याख्यातम् । ततो द्विवचनस्याकारा-देश]

रोहिता रोहणकर्त्री (युवति स्त्री) ५ ६१ ९ **रोहिताः**=रक्तवर्णा (भा०—पृथिव्यादीना धारणक्रिया २४ ६ [रोहितमिति व्याख्यातम् । तत स्त्रिया टाप्]

रोहिताञ्जिः रोहिता रक्ता अञ्जयो लक्षणानि यस्य स (अनड्वान्=वृषभ) २९ ५९ [रोहित-अञ्जि-पदयो. समास]

रोहितासः वर्द्धिका (हरित =अङ्गुलय) ४ ६ ९ [रोहितप्राति० जसोऽसुक्]

रोहिदश्व रोहितोऽश्वा वेगादयो गुणा यस्य तत्सम्बुद्धौ (अग्ने) १ ४५.२. **रोहिदश्वः**=रोहितोऽग्न्यादयोऽश्वा वाहनानि यस्य स (अग्नि =पति) ११ ७२ रोहिता रक्तादिगुणविशिष्टा अग्न्यादयोऽश्वा आशुगामिनो यस्य स (अग्नि =राजा) ४.१.८ [रोहित्-अश्वपदयो समास । रोहिदिति व्याख्यातम्]

रौद्रः रुद्रदेवताक. (रुरु =मृगविशेष) २४.३९ **रौद्राः**=प्राणादिदेवताका. (पशव) २४ ३ **रौद्रेण**= शत्रुरोदयितॄणामिद तेन (अनीकेन=सैन्येन) ५ ३४. [रुद्रप्राति० 'सास्य देवते' त्यर्थेऽण् 'तस्येदमि' त्यर्थे वाऽण्]

रौहिणम् रोहणशील मेघम् २ १२ १२ रोहिण्या प्रादुर्भूतम् (मेघम्) १ १०३.२ [रुह बीजजन्मनि प्रादुर्भावे च (भ्वा०) धातोस्ताच्छील्ये णिनि । वर्णव्यत्ययेनोकार-स्यौकार । अथवा 'रोहिणी' शब्दाद् भवार्थेऽण् । रोहिणीति व्याख्यातम् । रौहिण मेघनाम निघ० १ १० (पुरोडाशौ) अग्निश्च ह वा आदित्यश्च रौहिणावेताभ्या हि देवताभ्या यजमाना स्वर्ग लोकम् आरोहन्ति श० १४ २.१ २ अहो-रात्रे वै रौहिणौ श० १४.२ १.३ इमौ वै लोकौ (द्यावा-पृथिव्यौ) रौहिणौ श० १४ २ १ ४ चक्षुषी वै रोहिणौ श० १४.२.१ १५]

लक्षम् लक्षितु योग्यम् (भा०—कर्म्म) २ १२ ४. [लक्ष दर्शनाङ्कनयो (चुरा०) धातोर्बाहु० औणा० अन्]

लक्ष्मण्यस्य सुलक्षणेषु भवस्य (विदुषो जनस्य) ५ ३३ १०. [लक्षण-लक्ष्मणशब्दौ समानार्थौ । लक्ष्मणप्राति० भवार्थे यत् । लक्ष्मणम्=लक्ष दर्शनाकनयो (चु०) धातो 'लक्षेरट् मुट् च' उ० ३ ७ सूत्रेण न प्रत्ययो मुडागमश्च]

लक्ष्मीः सर्वमैश्वर्य्यम् ३१ २२ विद्या शोभा और चक्रवर्ती राज्यश्री प० वि०। शुभलक्षणवती धनादिश्च ऋ० भू० १३४, ३१ २२ [लक्ष दर्शनाकनयो (चु०) धातो 'लक्षेर्मुट् च' उ० ३ १६० सूत्रेण ई प्रत्ययो मुडागमश्च । लक्ष्मी =लाभाद्वा लक्षणाद्वा (लप्स्यनाद्वा) लाञ्छनाद्वा लषते-र्वा स्यात् प्रेप्साकर्मणो लग्यतेर्वा स्यादाश्लेषकर्मणो लज्जते-र्वा स्यादश्लाघाकर्मण नि० ४ ९ तस्माद् यस्य मुखे लक्ष्म भवति त पुण्यलक्ष्मीक इत्याचक्षते श० ८ ४.४ ११ तस्माद् यस्य दक्षिणतो लक्ष्म भवति त पुण्यलक्ष्मीक इत्याचक्षते श० ८.४.४ ११ तस्माद् यस्य सर्वतो लक्ष्म भवति त पुण्य-लक्ष्मीक इत्याचक्षते श० ८ ५.४ ३]

लघुः छोटा (भार =भार) स० वि० १६९, अथर्व० ९ २ ३ २४ [लघि गत्यर्थे (भ्वा०) धातो 'लङ्घिवह्योर्न-लोपश्च' उ० १ २९ सूत्रेण कु । धातोर्नकारस्य च लोप]

लभते प्राप्नोति २४ ११. [डुलभष् प्राप्तौ (भ्वा०) धातोर्लट्]

नदीना नाडीना वा ता रोधस्वत्य १ ३८ ११ [रोधस्-प्राति० मतुबन्तान् स्त्रिया डीप्। रोधस्वत्य =नदीनाम निघ० १ १३]

रोधः रोधनम् ४ ५.१ **रोधांसि**=आवरणानि २ १५ ८ रोधनानि ४ २२ ४ [रुधिर् आवरणे (रुधा०) धातोरौणा० असुन्। रोध कूल निरुणद्धि स्रोत नि० ६ १]

रोपणाकासु रोपण समन्तात् कामयन्ति तासु क्रियासु लिप्तास्वोषीषु १ ५० १२ [रोपणोपपदे कमु कान्तौ (भ्वा०) धातोर्ड । तत स्त्रिया टाप्। रोपणम्=रुह वीजजन्मनि प्रादुर्भावे च (भ्वा०) धातोर्णिजन्ताल् ल्युट्। 'रुहे पोऽन्यतरस्याम्' इति धातोर्हस्य पकारादेश]

रोपुषीणाम् विमोहयन्तीनाम् (विषसम्बन्धिपीडातरङ्गानाम्) १ १९१ १३ [रुप विमोहने (दिवा०) धातोर्लिट क्वसु । तत स्त्रिया डीप्। 'वा छन्दसी' ति धातोर्द्वित्व न]

रोमशा प्रशस्ता लोमा (राज्ञी) १.१२६.७. [लोमन्-प्राति० प्रशसायाम् मत्वर्थे 'लोमादिपामादि०' सूत्रेण श. तत स्त्रिया टाप्। वर्णव्यत्ययेन लकारस्य रेफ । कपिलकादित्वाद्वा लत्वम्]

रोमा रोमाणि ओषध्यादीनि १.६५.४. [लोमन्-प्राति० शेर्लोपश्छन्दसि। कपिलकादित्वाद् वा लत्वम्]

रोमाणि लोमानि १ १३५ ६ [लोमन्प्राति० प्रथमा वहुवच०। कपिलकादित्वाद् वा लत्वम्। लोमन्=लूञ् छेदने (क्र्या०) धातो नामन्सीमन्०' उ० ४ १५१ सूत्रेण मनिन्]

रोरवीति ऋग्वेदादिना सवनक्रमेण वा शब्दायते १७ ६१ भृशमुपदिशति ४ ५८ ३ भृश शब्दायते ३ ५५ १७ विद्युदादिना भृश शब्द करोति ६ ७३ १ [रु शब्दे (अदा०) धातोर्यङ्लुगन्ताल् लट्]

रोराभ्याम् कथनश्रवणाभ्याम् २५ ३ [रु शब्दे (अदा०) धातोर्विट्, प्रत्यये रो शब्द रीङ् श्रवणे (दिवा०) धातोश्च क्विपि रा शब्दश्छान्दस । तयो समास]

रोरुचानः भृश देदीप्यमान (विद्वान् राजा) ४ १ ७ [रुच दीप्तौ (भ्वा०) धातोर्यङ्लुगन्तादौणा० युच्]

रोरुवत् पुन पुनरारोह १ ५४ १ भृश रौति शब्द करोति ६ ६१ ८ [रु शब्दे (अदा०) धातोर्यङ्लुगन्ताच्छतृ]

रोरुवत् अतिशयेन शब्दयन् (जन) १ १४०.६ पुन पुना रोदन कारयन् सन् (सभाध्यक्षा विद्वान्) १ ५४ ५ [रु शब्दे (अदा०) धातोर्यङ्लुगन्ताच्छतृ। रोरुवन् रोरूयमाण नि० ५ १६]

रोह उन्नति गमय गमयति वा ३ १४ आरूढो भव १२.५ वर्धयस्व ३ ८ ११ दर्शयसि दर्शयति वा ४ ३२ प्रादुर्भव ५ ४३ प्रसिद्धो भव १० १०. **रोहति**=वर्धते १.१४१ ४. **रोहते**=वर्द्धते २ ५ ४ [रुह वीजजन्मनि प्रादुर्भावे च (भ्वा०) धातोर्लोट्। अन्यत्र लट्। रोहते प्रयोगे व्यत्ययेनात्मनेपदम्]

रोहणम् आरोहन्ति येन तत् (भा०—विद्याधनम्) १.५२.६ [रुह वीजजन्मनि प्रादुर्भावे च (भ्वा०) धातो करणे ल्युट्]

रोहम् प्रादुर्भावम् १३ ५१ [रुह वीजजन्मनि प्रादुर्भावे च (भ्वा०) धातोर्घञ्। स्वर्गो वै लोको रोह श० ७.५.२.३६]

रोहय सन्तानो से वढा स० वि० १७० वेदार्थे अथर्व० १४ २.३७ **रोहयत्**=उपरि स्थापितवान् १.७ ३ [रुह वीजजन्मनि प्रादुर्भावे च (भ्वा०) धातोर्णिजन्ताल्लोट्। अन्यत्र लङ् अटोऽभाव]

रोहांसि आरोहणानि ६ ७१ ५ [रुह वीजजन्मनि प्रादुर्भावे च (भ्वा०) धातोरौणा० असुन्]

रोहिणीषु रोहणशीलासु (ओषधीषु) १ ६२ ६

रोहिण्यः=आरोढुमर्हा (त्र्यवय) २४ ५ [रुह वीजजन्मनि प्रादुर्भावे च (भ्वा०) धातो. 'रुहेश्च' उ० २ ५५ सूत्रेण इनन् जातिवाचकत्वात् स्त्रिया डीप्। अथवा रुह-धातोस्ताच्छील्ये णिनि । तत स्त्रिया डीप्। रोहिणी (नक्षत्रम्) सा (विराट्) तत ऊर्ध्वारोहत्। सो रोहिण्यभवत्। तद्रोहिण्यै रोहिणीत्वम् तै० १ १ १० ६ विराट् सृष्टा प्रजापते । ऊर्ध्वारोहद्रोहिणी । योनिरग्ने प्रतिष्ठिति तै० १ २ १ २७ प्रजापती रोहिण्यामग्निमसृजत त देवा रोहिण्यामादधत तनो वै ते सर्वान् रोहानरोहन् तद्रोहिण्यै रोहिणीत्वम् तै० १ १ २ २ ता अस्य (प्रजापते) प्रजा सृष्टा रुकरूपा उपलब्धास्तस्थू रोहिण्य इवैव तद्वै रोहिण्यै रोहिणीत्वम् श० २ १ २ ६ या (प्रजापतेर्दुहिता) रोहित् सा रोहिणी (अभूत्) ऐ० ३ ३३ प्रजापते रोहिणी तै० १ ५ १ १ रोहिणी देव्युदगात् पुरस्तात्'' प्रजापति हविषा वर्धयन्ती तै० ३ १ १ २ इन्द्रस्य रोहिणी तै० १ ५ १ ४ आत्मा वै प्रजा पशवो रोहिणी श० ११.१.१ ७ यद् ब्राह्मण (ब्राह्मणनक्षत्रम्) एव रोहिणी। तस्मादेव तै० २ ७ ६ ४]

'नामन्सीमन्व्योमन्०' उ० ४ १५१ सूत्रेण मनिन्-प्रत्ययान्तो निपात्यते । लोम लुनातेर्वा लीयतेर्वा नि० ३ ५ लोमानि हृदये (श्रितानि) तै० ३.१०८८ छन्दांसि वै लोमानि श० ६ ४ १ ६ ओषधिवनस्पतयो मे लोमसु श्रिता तै० ३ १० ८ ७ लोमैव हिंकार जै० उ० १ ३६.६ भरद्वाजस्य लोम (साम) भवति ता० १३ ११ ११ तदु (लोम-साम) दीर्घमित्याहु ता० १३ ११ १२ पशवो वै लोम (साम) ता० १३ ११ ११]

लोमशसक्थौ लोमानि विद्यन्ते यस्य तल्लोमश सक्थि ययोस्तौ (पशू) २४.१. [लोमश-सक्थिपदयो. समास । लोमश =लोमन्प्राति० मत्वर्थे 'लोमादिपामादि०' इति शः]

लोहम् सुवर्णम् प्र०—लोहमिति सुवर्णनाम निघ० १ २, १८ १३ [लोहम्=हिरण्यनाम निघ० १ २ रजतेन लोहम् (सन्दध्यात्) गो० पू० १ ४४ लोहेन सीसम् (सन्दध्यात्) गो० पू० १ १४ दिशो वै लोहमय्य (सूच्य) श० १३ २ १० ३]

लोहिताय रक्ताय हृदयस्थाय लोहितपिण्डाय ३९.१० **लोहितेन**=शुद्धेन रक्तेन भा०—रुधिरेण ३९.६ [रुह बीजजन्मनि प्रादुर्भावे च (भ्वा०) धातो 'रुहेरश्च लो वा' उ० ३.९४. सूत्रेण इतन् । रेफस्य च लकारादेश]

लोहिताहिः लोहितश्चासावहिश्च २४ ३१ [लोहित-अहिपदयो समास]

लोहितोर्णी लोहिता ऊर्णा यस्या सा (भा०—सूर्यगुणा पशू) २४४ [लोहिता-ऊर्णापदयो समासे मत्वर्थे 'छन्दसीवनिपौ' इति वा०सूत्रेण ईकार]

वक्तवे वक्तव्याय ७ ३१.५. [वच परिभाषणे (अदा०) धातोस्तुमर्थे तवेन्]

वक्त्वानाम् वक्तु समुचितानां वाक्यानाम् ३ २६ ९. **वक्त्वानि**=वक्तु योग्यानि (वचनानि) ६.६ २ [वच परिभाषणे (अदा०) धातोर्बाहु० औणा० त्वन्]

वक्मनि उपदेशे १ १३२.२ [वच परिभाषणे (अदा०) धातोर्बाहु० औणा० मनिन्]

वक्मराजसत्याः वक्मेषु वक्तृषु राजसु सत्यप्रतिपादका (महाविद्वज्जना) ६ ५१ १० [वक्मराज-सत्य-पदयो समास । वक्मराज =वक्मन्-राजन्पदयो समासे समासान्तष्टच् । वक्मन् इति व्याख्यातम्]

वक्म्यः वक्तु योग्य (सत्यो महिमा) १ १६७ ७.]

वक्वरी प्रशसिते (द्यावापृथिव्यौ) १.१४४ ६. [वच परिभाषणे (अदा०) धातोरौणा० वनिप् । बहुलवचनात् कुत्वम् । 'वनो र च' इति ङीप् रेफश्च । द्विवचनस्य पूर्वसवर्ण-दीर्घश्छान्दस.]

वक्वरी वचन-शक्तिमती (कन्या) ६.२२.५. [वच परिभाषणे (अदा०) धातोर्वनिप् । ततः स्त्रियां 'वनो र च' इति ङीप् रेफश्च]

वक्वा वक्ता (विद्वज्जन) १ १४१ ७ [वच परि-भाषणे (अदा०) धातोर्बाहु० औणा० वनिप् । बहुलवचनात् कुत्वम्]

वक्वाः वक्रा. (ध्वस्रा =ध्वसिका सेना) ४ १९ ७. [वच परिभाषणे (अदा०) धातोर्बाहु० औणा० वन्]

वक्षणा वहनेन ५.५२.१५. [वह प्रापणे (भ्वा०) धातोर्ल्युट् सुडागमश्छान्दसः । 'सुपा सुलुक्०' इति टास्थाने डादेश]

वक्षणानि प्रापकाणि (आचरणानि) ६ २३ ६ [वह प्रापणे (भ्वा०) धातो 'कृत्यल्युटो बहुलम्' इति कर्त्तरि ल्युट् । सुडागमश्छान्दस]

वक्षणाभ्यः वोढृभ्यो नदीभ्य १ १३४ ४ वहमाना-भ्य. (नदीभ्य) १ १३४ **वक्षणाः**=नदी २५ २८ वहन्ति जलानि यास्ता. (नद्य) १ ३२ १ [वक्षणा = नदीनाम निघ० १ १३ वक्षणप्राति० स्त्रियां टाप् । वक्ष-णम्=वह प्रापणे (भ्वा०) धातो कर्त्तरि 'कृत्यल्युटो बहुलमि' ति ल्युट् । सुडागमश्च छान्दस]

वक्षणेस्थाः या वाहने तिष्ठन्ति ता (रश्मय) ५ १९ ५. [वक्षणोपपदे ष्ठा गतिनिवृत्तौ (भ्वा०) धातो क । ततष्टाप् स्त्रियाम्]

वक्षत् वहेत् प्रापयेत् ६ २२ ७ प्रापयति २८ १९ **वक्षतः**=वहत प्र०—अत्र लिडर्थे लेट् १ १६ २ **वक्षति**= प्राप्ता भवतु १ १२९ ८ उह्यात् १.१२९ ८ प्राप्नोति प्रापयति वा १ १४ ९ **वक्षन्**=वहन्तु प्रापयन्तु १ १०४ २ **वक्षः**=प्राप्नुहि ५ ३३ २ **वक्षि**=वह ६ १५ १८. वहसि प्रापयसि ५ ४ ४ कामयसे प्राप्नोषि वा १७.८८ वदसि ३ १ १ प्रापय ३ ७ ९ आवह ५ ४३ १० उपदिशति १७ ८. **वक्ष्व**=प्रापय, वह ८ २६ [वह प्रापणे (भ्वा०) धातोर्लेटि सिपि च रूपम् । अन्यत्र लोटि विकरणव्यत्ययेन सिपि च रूपम् । वक्षि =वह नि० ८ ९]

वक्षथः रोष ७ ३३ ८ **वक्षथेन**=रोषेण ४ ५ १. [वक्ष रोषे (भ्वा०) धातोर्बाहु० औणा० अथ प्रत्यय]

वक्षस्सु उरस्सु १ १६६ १० हृदयदेशेषु ७ ५६ १३.

लयः लीयन्ते यस्मिन् स (विषयो विद्यादिगुणो वा) १८ ७ [लीङ् श्लेषणे (दिवा०) धातो 'एरच्' इत्यच्]

ललामगुम् येन न्यायेनेप्सा गच्छन्ति प्राप्नुवन्ति तम् अ०—न्यायम्, भा०—प्राप्तव्य सुखम् २३ २६. [ललामोपपदे गम्लृ गतौ (भ्वा०) धातो 'डुप्रकरणे मितद्रवादिभ्य उपसख्यानम्' अ० ३ २ १८ वा०सूत्रेण डु । ललाम = लल ईप्सायाम् (चुरा०) धातोर्बाहु० औणा० आमन्]

ललामीः शिरोवदुपरिभाग प्रशस्तो यस्या सा (अग्नेर्ज्वाला) १ १०० १६ ['ललाम इति पूर्वपदे व्याख्यातम् । तत प्रशसाया मत्वर्थे 'छन्दसीवनिपौ' इति वा०सूत्रेण ई प्रत्यय]

लाङ्गलम् सीरापश्चाद्भागे दार्ढ्याय सयोज्य काष्ठम् १२.७१ हलाऽवयव ४ ५७.४ [लगि गत्यर्थे (भ्वा०) धातो 'लङ्गेर्वृद्धिश्च' उ० १ १०८ सूत्रेण कल' प्रत्ययो वृद्धिश्च । लाङ्गल लङ्गतेर्लाङ्गूलवद्वा । लाङ्गल लगतेर्लङ्गतेर्लम्बतेर्वा नि० ६ २६]

लाजाः प्रफुल्लिता व्रीहय १६ १३ लाजै =प्रफुल्लितैरन्नै २१ ३२ भर्जितै (अन्नै) २१ ४२ [लाज भर्जने (भ्वा०) धातोर्घञ्। लाजा-लाजते नि० ६ ६. लाजा =आदित्याना वा एतद्रूप यल्लाजा' तै० ३ ८ १४.४ नक्षत्राणा वा ऽएतद्रूप यल्लाजा श० १३ २ १ ५]

लाजीन् स्वस्वकक्षाया चलितान् (लोकान्) २३.८ [लजति गतिकर्मा (निघ० २ १४) धातोर्बाहु० औणा० इण्प्रत्यये लाजि]

लिप्यते लिप्यमान होता है स० वि० १४५, ४०.२ [लिप उपदेहे (तुदा०) धातो कर्मणि लट्]

लेखीः लिखे ५ ४३ [लिख अक्षर विन्यासे (तुदा०) धातोर्लुङ् । अटोऽभावश्च]

लोकम् दृश्यमान भुवनसमूहम् १ ६३.६ द्रष्टव्यसुख लोक वा ६ ७३ २ सर्वस्य द्रष्टारम् (ईश्वरम्) २० २६ दर्शनीयम् (भा०—विद्याप्रकाशम्) २३ ४३ द्रष्टु योग्यम् (राज्यम्) २ ३० ६ द्रष्टव्यमानन्दम् भा०—ब्रह्म १८.५२ दर्शनसुखसङ्घात मोक्षपद वा १८ ५८ दर्शनमभ्युदय वा ६ ४७ ८ कर्मानुकूल सुखदु खप्रापकम् (लोकलोकान्तरम्) ३५ २ सम्प्रेक्षितव्यम् (भा०—समावर्त्तनानन्तर स्वयवर (विवाहम्) १२.५४ आर्ष दर्शनम् १२ ४५ जीवात्मानम् ३४ ५५ द्रष्टव्य जन्मान्तरे लोकान्तर वा ७ २० २ देखने योग्य वानप्रस्थाश्रम को स० वि० १८६, अथर्व० ६ ५ १ **लोकः**=निवासस्थानम् ३ ३७ ११ लोक्यते सर्वैर्जनैर्लोकयति सर्वान् वा (ईश्वर) ऋ० भू० १६२, सभा दर्शन वा १६.४५ लोकनीय पुत्रपत्यादिसम्बन्धसुखकरो गृहाश्रम ८ २६ राष्ट्र राज्यस्थानम् ६ ६. दर्शनीय (यम =परमेश्वर) ३५ १ मनुष्यलोक अथर्व० १२ ५ ३, स० वि० १७५, **लोकात्**=स्थानादस्मद्दर्शनाद्वा २.३० **लोकान्**=द्रष्टव्यान् सृष्टिस्थान् भूगोलान् ३२ १२ दर्शनीयान् (भूगोलान्) ६.३२. सर्वान् प्राणिन ऋ० भू० २३५, अथर्व० ११ ३ ५ ४ **लोकाय**=दर्शनाय सङ्घाताय वा ३० १३. **लोकाः**=न्यायदृष्ट्या समीक्षणीया (विद्वासो जना.) ६.१. **लोके**=द्रष्टव्ये स्थाने १५ ५० विज्ञातव्ये (देशे) १५ ११. दर्शने ३ २६ ८ ससारे ३ २१ द्रष्टव्य अपने स्वरूप मे स० वि० १६६, ६ ११३ ७ ज्ञान से देखने योग्य (ईश्वर) मे स० वि० १६६, ६ ११३ ७ **लोकेभ्यः**=सहतेभ्य (स्थानेभ्य) ३० १२ [लोकृ दर्शने (भ्वा०) धातोर्घञ् । छन्दासि वै सर्वे लोका जै० १ ३३२ त्रयो वाव लोका । मनुष्यलोक पितृलोको देवलोक इति श० १४ ४ ३ २४. इमे वै लोका (पृथिवी, अन्तरिक्षम्, द्यौ) देवास्साध्या मै० ३ ७ १० इमे वै लोका विश्वा सद्मानि श० ६ ७ ३.१० इमे वै लोका विष्णोर्विक्रमण विष्णोर्विक्रान्त विष्णो. क्रान्तम् श० ५ ४ २ ६ इमे वै लोकास्सतनय. ऐ० ४ १६ इमे वै लोका सरिरम् तै० ३.३ १ २ श० ७ ५ २ ३४. इमे वै लोका सर्पास्ते हानेन सर्वेण सर्पन्ति यदिद किं च ७ ४ १ २५]

लोकसनि लोकान् सनति सम्भजति येन तत् (अपत्यम्) १६ ४८ [लोकोपपदे षण सम्भक्तौ (भ्वा०) धातो 'छन्दसि वनसनरक्षिमथाम्' अ० ३ २ २७ सूत्रेण इनि]

लोधम् लोभधारम् (दुर्जनम्) प्र०—अत्र वर्णव्यत्ययेन भस्य घ ३ ५३ २३ [लुभ विमोहने (तुदा०) धातो पचादिलक्षणोऽच् । भस्य धश्छान्दस]

लोपामुद्रा लोप एव आमुद्रा समन्तात्प्रत्ययकारिणी यस्या सा (स्त्री) १ १७६.४ [लोप-आमुद्रापदयो समास]

लोपाशः वनचरपशुविशेष २४ ३६ [अर्यम्णो लोपाश काठ० ४७ ११]

लोप्याय लोपेषु छेदनेषु साधवे (पुरुषाय) १६ ४५ [लोप-प्राति० 'तत्र साधु ' इत्यर्थे यत् । लोप =लुप्लृ छेदने (तुदा०) धातोर्घञ्]

लोम अनुकूल वचनम् २३ ३६ **लोमभ्यः**=त्वगुपरिस्थेभ्यो वालेभ्य ३९ १० नखादिभ्य ३९ १०. **लोमानि**=रोमाणि १६ ८१, [लूञ् छेदने (क्र्या०) धातो

धातो कर्मणि शानजन्ताट् टाप् स्त्रियाम्। सम्प्रसारणाऽभावश्छान्दस]

वज्रदक्षिणम् वज्रा अविद्याच्छेदका दक्षिणा यस्मात्तम् (अध्यापकम्) १ १०१ १ [वज्रा-दक्षिणापदयो समास]

वज्रबाहुम् वज्रा शस्त्राणि बाह्वोर्यस्य तम् (इन्द्र=सेनापतिम्) १७ ३८ वज्रवद्भुजम् (इन्द्र=शत्रुविदारक राजानम्) २० ५४ शस्त्राऽस्त्रभुजम् (राजपुरुषम्) ४ ३६ ४ वज्र प्राणो बल बाहुर्यस्य तम् (राजानम्) ऋ० भू० २२४, अथर्व० ६ १० ६७ ३ **वज्रबाहु:**=वज्रमिव दृढौ बाहू यस्य स (इन्द्र=राजा) २० ४८ वज्रो बाहौ यस्य स (इन्द्र=सूर्य) २० ३६ वज्र शस्त्रसमूहो बाहौ यस्य स (इन्द्र=सभासेनापति) १ ३२ १५ बाहुवत् किरणबल (इन्द्र=सूर्य) २ १२ १३ शस्त्रहस्त (राजा) ४ २६ ४ बाहुरिव वज्र किरणसमूहो यस्य स (इन्द्र=सूर्यलोक) २ १२ १२ शस्त्रपाणि (राजपुरुष) ७ १८ १२ शस्त्रभुज (इन्द्र=राजा) ३ ३३ ६ **वज्रबाहू**=वज्रौ बलवीर्य्ये बाहू ययोस्तौ (इन्द्राग्नी=अध्येत्रध्यापकौ) १ १०६ ७ **वज्रबाहो**=वज्रवदौषध बाहौ यस्य तत्सम्बुद्धौ (सद्वैद्य) २ ३३ ३ [वज्र-बाहुपदयो समास । वज्र इति व्याख्यास्यते]

वज्रभृत् यो वज्र शस्त्रास्त्र बिभर्त्ति स (इन्द्र=सेनाद्यधिपति) १ १०० १२ जो अच्छेद्य अर्थात् दुष्टो के छेदक सामर्थ्य से सर्वशिष्टहितकारक, दुष्टविनाशक न्याय को धारण कर रहा है वह (ईश्वर) आर्याभि० १ ३४, ऋ० १ ७ १० १२ [वज्रोपपदे डुभृञ् धारणपोषणयो (जु०) धातो कर्त्तरि क्विप्]

वज्रम् शस्त्राऽस्त्रम् ४ २२ ३ विद्युद्रूपम् ४ २० ६ छेदक शस्त्रम् २ १६ ३ तापसमूह किरणसमूह वा १ ८४ ११ किरणरूपम् ४ १६ ७ शस्त्रसमूहम् १ ६१ १२ शस्त्रमिवाऽज्ञानच्छेदकमुपदेशकम् १ ५५ ५ स्वकिरणजन्य विद्युतम् ऋ० भू० २७३, ४ २० ६ तीव्र शस्त्रम् १ १३० ४ प्रकाशसमूहम् १ ५२ ७ मेघम् १ ५२ ८ दुष्टाना वज्रमिव दण्डप्रदम् (परमेश्वरम्) १ १३१ ३ शत्रूणा बलच्छेदकमाग्नेयादिशस्त्रास्त्रसमूहम् १ ८ ३ कुलिशमिव (रथ=यानम्) २६ ५३ शस्त्रविशेषम् ६ १७ १० प्रहारम् ६ ४७ २७ आज्ञापनम् १ ६३ २ **वज्रस्य**=शस्त्रप्रहारस्य ५ ३२ ७ **वज्र:**=किरणनिपात २ ११ १० किरणसमूह १ ८०.३ प्रहार शब्दो वा ६ ४७.२८ किरण इव शस्त्रसमूह ३ ३० ६ विज्ञापक (राजा) १० २१ प्रापक (राजा) १० २८ ऊष्मसमूह १ ५७ २. वज्र इव शत्रुच्छेदक (वीरसेनापति) ६ ५ **वज्रात्**=विद्युत्पातशब्दात् २ ११ ६ विद्युत्प्रहारात् ६.१७ ६ **वज्रेण**=शस्त्रास्त्रविद्याबलेन ८ ५३. तीव्रेण तेजसा १ ८०.५. प्रापणेन १ ८० १३ शस्त्रेणेवोपदेशेन १ १३० ७ विज्ञानेन २ १५ ३ किरणाग्न्येन वज्रेण २ १५.६ शस्त्रसमूहेन तेजोवेगेन वा १.६१ १० गतिमता तेजसा १ ३२ १३. [वज गतौ (भ्वा०) धातो 'ऋज्रेन्द्राग्रवज्रविप्र०' उ० २ २८ सूत्रेण रन्। वज्र=वर्जयतीति सत निं० ३ ११ वृजी वर्जने (भ्वा०, रुधा०, चुरा०) धातोर्वा 'ऋज्रेन्द्राग्र०' सूत्रेण रन्-प्रत्ययान्तो निपात्यते। वज्रो वा ऽअश्रि' श० ३ ५.४ २ वज्रो वै परशु श० ३ ६ ४.१० वज्र शास श० ३ ८ १ ५ निवृद्धै वज्र कौ० ३ २ वज्रो वा ऽआप. श० ११ ११७. तै० ३ २ ४ २ पञ्चदश (स्तोम.) वै वज्र. श० १ ३ ५.७ कौ० ७ २ ष० ३ ४. तै० २ २ ७ २ ता० २ ४ २ वज्रो वै भास्न (यजु० १४ २३.) वज्र पञ्चदश श० ८ ४ १.१०. वज्रो वै स्फ्य तै० १ ७ १० ५ श० १.२ ५ २० वज्रो वै शर. श० ३ १ ३.१३. वज्रो यूप श० ३ ६ ४ १६ वज्रो वा एष यद् यूप कौ० १० १. ऐ० २.१ ष० ४.४ वज्रो वै यूपशकल श० ३ ८ १ ५ वज्रो वै रथ तै० १ ३ ६ १ श० ५ १ ४ ३ वज्रो वै विकंकत श० ५ २ ४ १८ वज्रो वै पशव श० ६ ४ ४ ६ वज्रो वा ऽअश्व श० ४ ३ ४ २७ वज्रो वै चक्रम् तै० १ ४ ४ १०. वज्रो वै ग्रावा श० ११ ५ ६ ७ वज्रो वा ऽआज्यम् श० १ ४ ४ ४ वज्रो वै त्रिष्टुप् श० ७ ४ २ २४ वज्र एव वाक् ऐ० २ २१ वाग्घि वज्र ऐ० ४ १ वज्रो वै वषट्कार ऐ० ३ ८ कौ० ३ ५ श० १ ३ ३.१४ गो० उ० ३ १ ५ वज्रो वा एष यद् वषट्कार ऐ० ३ ६ वज्रो वै हिंकार कौ० ३ २ वज्रो वै महानाम्न्य (ऋच) ष० ३ ११ वज्रो वै सामिधेन्य कौ० ३ २ वज्रो वै वैश्वानरीयम् (सूक्तम्) ऐ० ३ १४ वज्रो वै यौधाजयम् (साम) ता० ७ ५ १२ शाक्वरो वज्र तै० २ १ ५ ११ वज्रा वा ऽउपसद. श० १० २ ५ २. वज्रो वै त्रिणव (स्तोभ) ता० ३ १.२. आनुष्टुभो वा एष वज्रो यत् षोडशी (शस्त्रम्) कौ० १७ १ वज्रो वा एष यत्षोडशी ऐ० ४ १ वज्र षोडशी ष० ३ ११. वज्रो वै षोडशी गो० उ० २ १३ ता० १२ १३ १४ सवत्सरो वज्र श० ३.६ ४ १६ सवत्सरो हि वज्र श० ३ ४.४ १५ वीर्य वज्र श० १ ३.५ ७ वीर्य वै वज्र श० ७ ३.१ १६ वज्रो वा ऽओज श० ८ ४.१ २०. अष्टाश्रिर्वै वज्र ऐ० २ १ पुरो गुरुरिव हि वज्र ता०

हृदयेषु १ ६४.४ **वक्षः**=वक्षस्थलम् १ ६२.४. प्राप्त **वक्षांसि**=उरासि १ १२३.१० [वच परिभाषणे (अदा०) धातो 'पचिवचिभ्या सुट् च' उ० ४.२२०. सूत्रेणासुन् सुट् च। वक्षो भासोऽध्यूढमिदमपीतरद् वक्ष एतस्मादेवाध्यूढं काये नि० ४.१६]

वक्षः प्राप्त वस्तु प्र०—वक्ष इति पदनाममु पठितम् निघ० ४ २, १.१२४.४. [वह प्रापणे (भ्वा०) धातोरौणा० स । लिङ्गव्यत्यय]

वक्ष्यः वोढव्य (रश्मय) ५ १६ ५.

वक्ष्यन्तीव यथा वदिष्यन्ती विदुषी स्त्री तथा २६ ४० यथा कथयिष्यन्ती विदुषी स्त्री ६ ७५ ३ [वक्ष्यन्ती-इव-पदयो समास । वक्ष्यन्ती=वह प्रापणे (भ्वा०) धातोर्लृट. शतृप्रत्यये स्यविकरणे च रूपम् । तत स्त्रियां ङीप्]

वग्नुना वाण्या १.८४ ३. अ०—वेदवाचा ८ ३३ [वच परिभाषणे (अदा०) धातो 'वचेर्गश्च' उ० ३ ३३ सूत्रेण नु । गश्चान्तादेश । वग्नु वाङ्नाम निघ० १ ११]

वङ्कुतरा अतिशयेन कुटिलौ (अ०—शत्रूदासीनौ मनुष्यौ) १.५१.११ [वङ्कुप्राति० अतिशायने तरप् । ततो द्विवचनस्याकारादेश]

वङ्कुम् दुष्टशत्रून् प्रति कुटिलम् (सभाध्यक्षम्) १ ११४ ४ **वङ्कुः**=धनेच्छु (वणिक्=व्यापारी) ५ ४५ ६ **वङ्कू**=कुटिलौ शत्रूदासीनौ १.५१.११ [वकि कौटिल्ये (भ्वा०) धातोर्बाहु० औणा० उ]

वङ्क्रीः कुटिला गती २५ ४१ [वकि कौटिल्ये (भ्वा०) धातो 'वङ्क्र्यादयश्च' उ० ४.६६ सूत्रेण क्रिन्]

वङ्गृदस्य यो वङ्गृन् वक्रान् विषादीन् पदार्थान् व्यवहारान् ददात्युपदिशति वा तस्य दुष्टस्य १ ५३ ८ [वङ्गृ इत्युपपदे डुदाञ् दाने (जु०) धातो क । वङ्गृ=वगि गतौ (भ्वा०) धातोर्बाहु० औणा० ऋ]

वचसम् सर्वे स्तुत्या परिभाषित मनुष्यम् १ ११२ २ [वचस्प्राति० मत्वर्थेऽर्शआदित्वादच्]

वचसः वचनात् ५ १२ ४ वचनस्य ४.५ ८ **वचसा**=परिभाषणीयौ (वायुविद्युतौ) ६ ६२ ५ भाषणेन २ १८ ३ वेदोक्तन्यायोपदेशकवचनेन ६ ५ **वचसे**=गृहाश्रमवाग्व्यवहाराय ८ ५ **वचः**=उपदेशकारक वेदवचनम् १ ५७ ४ विद्या-शिक्षा-सत्यप्रापक वचनम् १ ५४ ३ परिभाषणम् (वचनम्) ५ ८ वचसा प्र०—अत्र 'सुपा सुलुक्०' इति टालोप २.३१ ५. विद्यायुक्त स्तुतिसम्पादक वचनम् १ २६.१० **वचोभिः**=स्तुतिवाक्यै १.१८७ ११. [वच परिभाषणे (अदा०) धातोरौणा० असुन् । वच वचनानि नि० २ २७]

वचस्यते परिभाष्यते सर्वत स्तूयते १.५५.४. [वचस्-शब्दाद् आचारे क्यङ्]

वचस्यया अतिशयितया प्रशसया ४ ३६ ६ **वचस्या**=वचसा वचनेन प्र०—अत्र 'सुपा सुलुक्०' इति सूत्रेण विभक्तेर्यादेश ३४ ४२ वचसि भवा (विभूति = ऐश्वर्यम्) ६ २१ १ वचनै सुसाध्या (जुह्वा=ग्रहणसाधनया क्रियया) २ १० ६. **वचस्याम्**=वचसि उदके भवाम् (क्रियाम्) २ ३५.१. [वचस्-शब्दादाचारे क्यङ् । तत 'अ-प्रत्ययाद्' इत्यप्रत्यये स्त्रिया टाप् । अन्यत्र वचस्प्राति० भवार्थे यत् । ततष्टाप् । वचस्या वचनेन नि० १२ १८]

वचस्यवे आत्मनो वच शास्त्रोपदेशमिच्छवे (जनाय) १.५१ १३ आत्मनो वच इच्छवे (विप्राय=मेधाविजनाय) १ १८२ ३ **वचस्युभिः**=आत्मनो वचनमिच्छुभि (जनै) ५ १४ ६ **वचस्युवम्**=आत्मनो वच इच्छन्तम् (शिल्पिनम्) २.१६ ७ [वचस्-पदादात्मन इच्छाया क्यजन्तात् 'क्याच्छन्दसि' सूत्रेण ताच्छील्य उ]

वचस्या वचसि साधूनि (प्रवचनानि) ६ ४६ ८. [वचस्प्राति० साध्वर्थे यत् । तत शेर्लोपश्छन्दसि]

वचोयुजा वचोभिर्युक्तौ (हरी=गमनधारणगुणौ) १ २० २ वाणीर्योजयितो (इन्द्रयो =वायुसूर्ययो.) प्र०—अत्र 'सुपा सुलुक्०' इति षष्ठीद्विवचनस्याऽऽकारादेश १ ७ २ यौ वचसा युङ्क्तस्तौ (हरी=अश्वौ) ६ २० ६ [वचस्-उपपदे युजिर् योगे (रुधा०) धातो कर्त्तरि क्विप् । ततो द्विवचनस्याकारादेशश्छान्दस]

वचोविदः विदितवेदितव्या (विद्वासो जना) १ ६१ ११. शास्त्रवित् (विद्वान् लोग) आर्याभि० १ ३६, ऋ० १.६ २१ ११ ['वचस्' उपपदे विद ज्ञाने (अदा०) धातो. कर्त्तरि क्विप्]

वच्यते उच्यते १ १४२ ४ **वच्यन्ताम्**=उच्यन्ताम् ३ ६ ३ **वच्यन्ते**=स्तुवन्ति प्र०—अत्र व्यत्ययेन श्यँश्च १ १८४ ३ उच्येरन् प्र०—'सम्प्रसारणाच्च' इत्यत्र 'वाच्छन्दसि' इत्यनुवृत्ते पूर्वरूपाऽभावाद्यणादेश १ ४६ ३. [वच परिभाषणे (अदा०) धातो कर्मणि लट् । अन्यत्र लोट् । 'वा छन्दसी' ति नियमेन पूर्वरूपाऽभावे यणादेश]

वच्यमाना उच्यमाना प्र०—अत्र 'वाच्छन्दसि' इति सम्प्रसारणाऽभाव ३ ३६ १ [वच परिभाषणे (अदा०)

जनाय) १६ २१ [वञ्चु प्रलम्भने (चुरा०) धातोर्णिचो ऽभावे शत्रन्ताच्चतुर्थी]

वट्टूरिणा वेष्टितेन (पदा=पादेन) प्र०—अत्र वट वेष्टने इति धातोर्बाहुलकादौणादिक ऊरि प्रत्यय १.१३३ २ [वट वेष्टने (भ्वा०) धातोर्बाहु० औणा० ऊरि]

वणिक् व्यापारी, वैश्य ५ ४५ ६ **वणिजे**=व्यवहर्त्तुं शीलाय (मेधाविपुत्राय) १ ११२ ११ [वणिक्=पथ्या नेनेक्ति नि० २ १७]

वतन्तः वनन्त सम्भजन्त (जना)· प्र०—अत्र वर्णव्यत्ययेन नस्य त ७ ६० ६ [वन सम्भक्तौ (भ्वा०) धातो शतृ । वर्णव्यत्ययेन धातोर्नस्य त]

वतेम सम्भजेम ७ ३ १० [वन सम्भक्तौ (भ्वा०) धातोर्लिङ् । वर्णव्यत्ययेन धातोर्नस्य त]

वत्सतर्य्यः अतिशयेन वत्सा अल्पवयस. (गाव) २४ ५ ह्रस्वा वत्सा यासा ता (गाव) २४ १४ [वत्स-प्राति० तनुत्वे द्योत्ये 'वत्सोक्षाश्वर्षभेभ्यश्च तनुत्वे' अ० ५ ३ ९१ सूत्रेण ष्टरच् । तत स्त्रिया ङीप्]

वत्सम् वसन्ति भूतानि यस्मिँस्त ससार, वदनि सततमिति वत्सो वालस्त वा ३३ ५ महत्तत्त्वादिकम् ३ ५५ ४ जात ससारम् १ ९५ १ प्रसूत मनुष्यादिक समारम् १ १६४ १७ वत्सवद्वर्त्तमानोऽहोरात्र १ १४६ ३ सुखेषु निवासयन्त व्यक्तवाच प्रसिद्ध वेदचतुष्टयम् प्र०—अत्र 'वृतृ०' उ० ३ ६१ इति सूत्रेणास्य सिद्धि १ ७२.२ वत्सवत्पालनीयम् (भा०—पृथिवीम्यपदार्थम्) ३ ५५ १३. स्वाऽपत्यम् १ ३८ ८ **वत्सस्य**=यो वदति तस्य (स्तोतु) ७ ४० **वत्सः**=स्वव्याप्त्या सर्वाऽऽच्छादक (कवि.=काल) १ ९५ ४. **वत्साय**=सन्तानाय १ १११.१ **वत्से**=अपत्ये १ १६४ ५ **वत्सेन**=वालेन १.११० ८ वत्सवद्वर्त्तमानेन (कुमारेण=अकृतविवाहजनेन) २८ १३ [वद व्यक्ताया वाचि (भ्वा०) वस निवासे (अदा०) धातोर्वा 'वृतृवदिवचि०' उ० सूत्रेण स । वत्सा वै दैव्या अध्वर्य्यव श० १ ८ १ २७ मन एव वत्स श० ११ ३ १ १ अयमेव वत्सो योऽय (वायु) पवते श० १२ ४ १ ११ अग्निर्हं वै ब्रह्मणो वत्स जै० उ० २ १३ १ वत्सा उ वै यज्ञपतिं वर्धन्ति यस्य ह्येते भूयिष्ठा भवन्ति स हि यज्ञपतिर्वर्धते श० १ ८ १ २८]

वत्समिव यथा गोर्वत्सम् ३ ३३ ३ [वत्सम्-इव-पदयो समास]

वत्सरः वर्ष २७ ४५ **वत्सराय**=सामान्याय (संवत्सराय) ३०.१५. [वग निवासे (भ्वा०) धातो 'वसेश्च' उ० ३ ७१ सूत्रेण सरन्]

वत्सास सद्यो जाता वत्सा. ७ ५६.१६ [वत्समिति व्याख्यातम् । ततो जसोऽसुक्]

वद सत्यमुपदिश ६ २८. वद वादय वा प्र०—अत्र पक्षेऽन्तर्गतो ण्यर्थ १ २८ ५ **वदत्**=वदेत् १ ११६ ९. बोला करो स० वि० १४१, अथर्व० ३ ३० ३. **वदत**=अध्यापयतोपदिशत वा ६.११ **वदतम्**=उपदिशत ५ १७ **वदति**=उपदिशति १ १३५.७ **वदन्ति**=उच्चारयन्ति १ १६४.४५ **वदः**=वदे २३ २५ **वदाति**=वदेत् ६ ६ २. **वदान्**=वदेयु १ ३७ ३ **वदामि**=उपदिशामि १ १०५ ७ **वदेम**=उपदिशेम ३४ ५८. अध्यापयेम २.३६ ८ [वद व्यक्ताया वाचि (भ्वा०) धातोर्लोट् । अन्यत्र लेट् लट् लिङ् च । वदति गतिकर्मा निघ० २ १४. यद्वै वदति शसतीति वै तदाहु श० १ ८ २ १२]

वदन् उपदिशन् (इन्द्र =ऐश्वर्यवान्नर) ५ ३१.१२ उपदेश करता हुआ (सन्यासी) स० वि० १६५, ६.११३.४. **वदन्तः**=उच्चरन्त (शिल्पिन) १ १६१ ९ कहते हुए (गृहस्थादि मनुष्यो) स० वि० १४२, अथर्व० ३ ३०.५ [वद व्यक्ताया वाचि (भ्वा०) धातो शतृ]

वदामसि वदेम १६ ४ वदाम १ ८७ ५ [वद व्यक्ताया वाचि (भ्वा०) धातोर्लट् । 'इदन्तो मसि' रिति मस इदन्तता]

वद्मा सत्यहितोपदेष्टा (अग्नि =विद्वज्जन) ६.१३ ६ यो वदति स. (अग्नि =ईश्वर) ६ ४४ [वद व्यक्ताया वाचि (भ्वा०) धातोर् मनिन् । इटोऽभावश्छान्दस]

वधत्रैः वधै ४ २८ ४. [हन हिंसागत्यो (अदा०) धातो 'अमिनक्षियजिवधिपतिभ्योऽत्रन्' उ० ३ १०५. सूत्रेणात्रन् । हन स्थाने वधादेशश्च निपात्यते]

वधनम् हननम् १ ५.१० ताडनम् २ ३०.३. [हन हिंसागत्यो (अदा०) धातोर्ल्युट् । 'बहुल सज्ञाछन्दसोरिति वक्तव्यम्' अ० २ ४ ५४ वा०सूत्रेण हन्तेर्वधादेश]

वधः वधम् प्र०—अत्र हन्तेर्बाहुलकादौणादिकेऽमुनि वधादेश १.३२ ९ नाश २ २१ ४ घ्नन्ति यस्मिन् स (राजव्यवहार.) ५ ३२ ३ वध्यन्ते शत्रवो यस्मात्तच्छस्त्रम् २.१९ ७ वज्र इव प्र०—वध इति वज्रनामसु पठितम् निघ० २ २०, १.१०१ ४ वध-साधनम् ४ २२ ९ हन्ति येन स (दण्ड) ७ ५६ १७ **वधाय**=विनाशाय ६ ३८

८.५.२ दक्षिणत उद्यामो हि वज्रं श० ८.५.१.१३. वज्रेणैवैतद्रक्षांसि नाष्ट्रा अपहन्ति श० ७.४.१.३४]

वज्रवाहः शस्त्राऽस्त्रविद्यावोढारः (राज्यकर्माधिकारि-जनाः) ६.४४.१६ [वज्रोपपदे वह प्रापणे (भ्वा०) धातो 'वहश्च' ति ण्वि]

वज्रहस्त शस्त्राऽस्त्रपाणे (इन्द्र = शिल्पिजन) ६.४६.२ वज्रतुल्यानि शस्त्राणि हस्तयोर्यस्य तत्सम्बुद्धौ [इन्द्र = सभेश राजन्] १०.२२ शस्त्रास्त्रवाहो (राजन्) ५.३३.३. **वज्रहस्तम्** = शस्त्रास्त्रपाणिम् (इन्द्र = हृद्यपतिम्) ६.२२.५ **वज्रहस्तः** = किरणपाणिः (इन्द्र = सूर्य) २.१६.२ वज्रा किरणा हस्ता यस्य स (सूर्य) २.१२.१३. वज्राणि शस्त्रास्त्राणि हस्ते यस्य स (देव = विद्वान् राजा) २८.३ वज्रो हस्तयोर्यस्य स (राजा) २६.१० शस्त्राऽस्त्रशासनपाणि (इन्द्र = सभेश) ११७३.१० [वज्र-हस्तपदयो समास । वज्र इति व्याख्यातम्]

वज्रहस्ता वज्रहस्तौ वज्र विद्यारूप वीर्य हस्त इव ययोस्तौ (इन्द्राग्नी = उपदेश्योपदेष्टारौ) प्र०—वज्रो वै वीर्यम् शत० ७.४.२.२४ अत्र 'सुपा सुलुक्०' इत्याकारा-देश १.१०६.८ [वज्र-हस्तपदयो समासे कृते द्विवचनस्या-कारश्छान्दस]

वज्रासः शस्त्रकलासमूहा १.८०.८. [वज्रप्राति० जसोऽसुक्]

वज्रिन् वज्र सर्वदु खनाशनो बहुविधो दृढो बोधो यस्याऽस्तीति तत्सम्बुद्धौ (सभाध्यक्ष) १.३०.१२ वज्रो-ऽविद्यानिवारक प्रशस्तो बोधो यस्य तत्सम्बुद्धौ (सभा-सेनाध्यक्ष) प्र०—अत्र वजेर्गत्यर्थाद् ज्ञानार्थे औणादिको रन्, तत प्रशसाया मतुवर्थे इनि १.३०.११ शस्त्रास्त्रभृत् (इन्द्र = राजन्) ६.२२.१० बहुशस्त्रास्त्रयुक्त (राजन्) ५.४०.३ शस्त्रास्त्रसम्पन्न (सभाध्यक्ष) १.६३.७ प्रशस्तो वज्र शस्त्रसमूहो विद्यते यस्य तत्सम्बुद्धौ (इन्द्र = राजन्) १.६३.५ प्रशमितशस्त्रास्त्र (राजन्) ४.१६.१ शस्त्रास्त्र-धारिन् (राजन्) १.५७.६ शस्त्राऽस्त्रविन् (राजन्) ५.३६.५ प्रशस्तवज्रवन् (राजन्) ५.३२.२ **वज्रिणम्** = किरणवन्त जलवन्त वा (इन्द्र = सूर्य वायु वा) प्र०—वज्रो वै भानव शत० ८.२.४.१० अनेन प्रकाशरूपा किरणा गृह्यन्ते । वज्रो वा आप शत० ७.४.२.४१, १.७.५ **वज्रिणः** = वज्र बहुविध शस्त्र विद्यते यस्य तस्य (राज) ३.४८.१ वज्रोऽनन्त प्रशस्त वीर्यमस्यास्तीति तस्य (इन्द्रस्य = ईश्वरस्य) प्र०—अत्र भूमार्थे प्रशसार्थे च मतुप् वीर्यं वै वज्र । शत० ७.४.२.१४, १.७.७. वज्रिन. (सर्वसभाध्यक्षस्य) ४०.८ **वज्रिणे** = धनुर्वेदविदे (इन्द्राय = राज्ञे) ३.५३.१३ वज्रो न्यायाख्यो दण्डोऽस्या-स्तीति तस्मै (इन्द्राय = ईश्वराय) प्र०—वज्रो वै दण्ड शत० ३.१.५.३२, १.८.५ **वज्री** = प्रशस्तशस्त्राऽस्त्रयुक्त (वीरसेनेश) ५.३२.४ प्रशस्तशस्त्रविद्याशिक्षित (इन्द्र = सेनाधीश) २०.४६ वज्र प्रकाश प्राणो वाऽस्यास्तीति (सूर्य) ऋ० भू० २८३, १.३२.१. वज्रो दण्ड शासनार्थो यस्य स (इन्द्र = ईश्वर) १.१३०.३ वज्रा प्राप्तिच्छेदन-हेतवो बहव शस्त्रसमूहा किरणा वा विद्यन्ते यस्य स (इन्द्र = सेनापति सूर्यो वा) प्र०—अत्र भूम्न्यर्थे इनि १.११.४ प्रशस्तो वज्र शत्रुच्छेदक शस्त्रसमूहो विद्यते यस्य स (इन्द्र = राजा) १.५२.५ वज्र सवत्सरस्तापो वाऽस्यास्तीति स (इन्द्र = सूर्यलोक) प्र०—सवत्सरो हि वज्र शत० ३.३.५.१५, १.७.२ शस्त्रवाहु (राजकर्म-चारी) ६.१८.६ प्रशस्तशस्त्रविद्याशिक्षक (सेनाधीश) २०.४६ सर्वपदार्थविच्छेदक किरणवानिव शत्रुच्छेदी (सेनापति) १.३२.१ [वज्र इति व्याख्यातम् । तत प्रशसाया भूम्न्यर्थे वा मत्वर्थ इनि । अश्वेन च रथेन च वज्री (इन्द्र) तै० स० ४४.८.६]

वज्रिणा प्रशस्तशस्त्राऽस्त्रयुक्तौ (इन्द्राग्नी = वायु-विद्युतौ) ६.५६.३ [वज्रप्राति० प्रशसायाम् इन्नन्ताद् द्विवचनस्याकारादेश]

वज्रिवः प्रशस्ता वज्रयो विज्ञानयुक्ता नीतयो विद्यन्ते ऽस्य तत्सम्बुद्धौ (इन्द्र = सभाध्यक्ष) प्र०—वज धातोरौणा-दिक इ' प्रत्ययो रडागमश्च ततो मतुप् च १.१२१.१४ प्रशस्तैर्शस्त्रास्त्रप्रयोगकुशल (इन्द्र = राजन्) ६.४५.१८ प्रशस्तशस्त्रास्त्रयुक्त (राजन्) ६.३८.४ [वज गतौ (भ्वा०) धातोर् इ 'प्रत्ययो रट् च । ततो वज्रिप्राति० प्रशसाया मतुबन्तात् सम्बुद्धौ 'मतुवसो रु०' इति रुत्वे रूपम् । वज्रिन्-प्राति० वा 'छन्दसीवनिपौ च वक्तव्यौ' इति मत्वर्थ नानु-कृष्टो व]

वञ्चति प्रलम्भते २३.२२ वञ्चितो भवति २३.२३ [वञ्चु गतौ (भ्वा०) धातोर्लट् । वञ्चु प्रलम्भने (चुरा०) धातोर्वा लट् । णिचोऽभाव वञ्चति गतिकर्मा निघ० २.१४]

वञ्चते छलेन परपदार्थाना हर्त्रे भा०—छलाने (प्रजाजनाय) १६.२१ वापट्येन वर्तमानाय (अधार्मिक-

वनधितिः वनाना धृतिः १.१२१ ७ [वन-धितिपदयो समास । धिति =दधाते. स्त्रियां क्तिन्]

वनपम् जङ्गल-रक्षकम् (पुष्पम्) ३० १६. [वनोपपदे पा रक्षणे (अदा०) धातो. कर्त्तरि क]

वनम् सम्भजनीय कारणवनम् १७ २० जङ्गलम् ५ ७८ ८ **वनस्य**=वननीयस्य ममारस्य १.२४ ७ **वनानाम्**=सम्भजनीयाना पदार्थाना रश्मीना वा १ ७० २. **वनानि**=वनन्ति सम्भजन्ति सुखानि यैस्तानि ३ ५१ ५ भजनीयानि (दिनानि) १ १७१ ३ सूर्यकिरणानिव वनानि ७ ७ २ अरण्यानि १.६५ ४ **वने**=एकान्ते १ ५५ ४ **वनेषु**=सम्यग् विभाजकेषु किरणेषु १ ७०.५. वननीयेषु जङ्गलेषु ४ ७ १ रश्मिषु वृक्षसमूहेषु वा, प्र०—वनमिति रश्मिनामसु पठितम् निघ० १ ५, ४ ३१. [वन शब्दे (भ्वा०) वन सम्भक्तौ (भ्वा०) वनु याचने (तना०) धातोर्वा बाहुलकात् क । वनम् रश्मिनाम निघ० १.५ उदकनाम निघ० १ १२ वन वनोते. नि० ८.३ वनानाम्=रश्मीनाम् नि० १३ ७२]

वनर्गुः वनगामी (मृगः) प्र०—अत्र वनोपपदादृजुधातोरौणादिक उ-प्रत्ययो बाहुलकात् कुत्व च १.१४५.५. [वनोपपदे ऋज गतिस्थानार्जनोपार्जनेषु (भ्वा०) धातोर्बाहु० औणा० उ । बहुलवचनादेव च कुत्वम् । अथवा वनोपपदे गम्लृ गतौ (भ्वा०) धातोर्मितद्र्वादित्वाट् डु । रुडागमश्छान्दस । वनर्गु स्तेननाम निघ० ३ २४. वनर्गू वनगामिनौ नि० ३ १४]

वनर्षदः ये वनेषु रश्मिषु सीदन्ति ते (वायव = पवना) प्र०—अत्र 'वाच्छन्दसि' इति रुडागम ३३ १. ये वने सीदन्ति ते (वय =पक्षिण) २ ३१ १ [वनोपपदे षद्लृ विशरणगत्यवसादनेषु (भ्वा०) धातो कर्त्तरि क्विप्] रुडागमश्छान्दस]

वनवत् किरणवत् २ २६ १ वनेन जङ्गलेन तुल्यम् (रयि=श्रियम्) २ २५ २ [वनप्राति० तुल्यार्थे वति । वनमिति रश्मिनाम निघ० १ ५]

वनवत् याचते ६ ३३ १ सम्भजते ५ ३७ २ सेवयसि ५ ३ ५ सम्भजसे ५ ३७ २ संविभाजयेत ५ ४४ ७ **वनवसे**=सम्भज ६ १६ १८ [वनु याचने (तना०) धातोर्लेटि अडागमे च रूपम् । अथवा 'व्यत्ययो बहुलम्' इति द्विविकरणता उ, शप च]

वनसदे यो वनेषु सीदति तस्मै भा०—अरण्यस्थाय (विद्वज्जनाय) १७ १२ [वनोपपदे षद्लृ विशरणगत्यवसादनेषु (भ्वा०) कर्त्तरि क्विप्]

वनस्पतयः वनस्य किरणसमूहस्येव न्यायस्य पालका (इन्द्रा =राजान) प्र०—वनमिति रश्मिनाम निघ० १ ५, ६.१२ अश्वत्थादय १४ ३१ वटादय ३६ १७ वनाना जङ्गलाना पालका (इन्द्रा =राजान) ६ १२ **वनस्पतये**= वनाना पालकायाऽश्वत्थप्रभृतये १० २३ **वनस्पतिम्**= वनाना पालकम् (प्रजासु सर्वमका मनुष्या) २१ ४० वनाना किरणाना पालक स्वामिन सूर्यम् २८ १० **वनस्पतिः**= सम्भक्तस्य पदार्थसमूहस्य जङ्गलस्य वा पालक श्रेष्ठतमो वा (परमेश्वर ओषधिराजो वा) १ ६१ ६ वनाना पालयिताऽग्निसञ्ज्ञक (ब्रह्म, सूर्य) ४ ११ अश्वत्थादि १३.२६. वनस्य वृक्षसमूहस्य पति पालक (आजस्त: पुरुष.) २०.४५ रश्मिपालक (सूर्य) २१ ५६ वनस्य किरणसमूहस्य पालक सूर्य २८ २३ पिप्पलादि २१ ५८ वनाना मध्ये रक्षणीयो वटादिवृक्षसमूहो मेघो वा १ ६० ८ **वनस्पती**=काष्ठमयौ (भा०—मुसलोखलौ) १ २८.८. **वनस्पतीन्**=वटाश्वत्थादीन् [illegible] **वनस्पतीनाम्**=पिप्पल्यादीनाम् ६ ३६ **वनस्पते**=किरणाना रक्षक सूर्य इव वनादीना पालक विद्वन् राजन् २६ ५२ यो वनाना वृक्षौषध्यादिसमूहानामधिकवृष्टिहेतुत्वेन पालयिताऽस्ति सोऽपुष्पफलवान् (अ०—वनस्पति), प्र०—अपुष्पा फलवन्तो ये ते वनस्पतय स्मृता मनु० १ ४७, १ १३ ११ वनस्य सम्भजनीयस्य शास्त्रस्य पालक (जिज्ञासु-विद्वन्) २७.२१ वननीयस्य धनस्य रक्षक (पुरुषार्थिजन) ३ ८ ३ वनस्य रश्मिसमूहस्य पालक सूर्यस्तद्वद्वर्त्तमान (विद्वज्जन) ३ ८ १ वनाना विद्याप्रकाशकाना पति पालयिता तत्सम्बुद्धौ (अ०—विद्वज्जन) ४ १० [वन-पतिपदयो समासे 'पारस्करप्रभृतीनि च सञ्ज्ञायाम्' अ० ६ १ १५७ सूत्रेण सुडागम वनस्पति पदनाम निघ० ५ २ वनस्पति =वनाना पाता वा पालयिता वा नि० ८ ३ अग्निर्वै वनस्पति कौ० १० ६ प्राणो वनस्पति कौ० १२ ७ प्राणो वै वनस्पति ऐ० २ ४ स (वनस्पति) उ वै पयोभाजन कौ० १० ६ वनस्पतयो वै द्रु तै० १ ३.६ १ यद्दुग्रो देव ओषधयो वनस्पतयस्तेन कौ० ६ ५. भोज्य वा एतद् वनस्पतीना (यदुदुम्बर) ऐ० ७ ३२ अथो एव ऽएते वनस्पतयो यदुदुम्बर श० ७ ५ १ १५ तेजो ह वा ऽएतद् वनस्पतीना यद् बाह्या शकलम् तस्माद् यदा बाह्या शकलमपतक्ष्णुवन्त्यथ शुष्यन्ति श० ३ ७ १ ८ वनस्पतयो हि यज्ञिया , नहि मनुष्या यजेरन् यद् वनस्पतयो न स्यु श० ३ २ २ ९ सोमो वै वनस्पति मै० १ १० ६ श० ३ ८.३ ३३ वायुर्गोपा वै वनस्पतय मै० ३ ६ ४ ओषधयो

वधैः=गोहिंस्राणां मारणोपायैः १ १२१ ६. [हन हिंसा-गत्योः (अदा०) धातोरौणा०असुन्-प्रत्यये बहुलवचनाद् वधादेशः अथवा=हनधातोः 'हनश्च वध.' अ० ३.३ ७६ सूत्रेणाप् वधादेशश्च वध बलनाम निघं० २ ९ वज्रनाम निघं० २ २०]

वधर्यन्तीम् भूमिम् १ १६१.६ [वृधु वृद्धौ (भ्वा० धातोर्णिजन्ताच्छत्रन्तात् स्त्रिया ङीप्]

वधस्नैः यानि वधेन स्नापयन्ति शस्त्राणि तैः. १ १६५ ६. वधेन शोधकैर्भृत्यैर्न्यायाधीशैः ७ ६ ५ ये वधेन स्नान्ति पवित्रा भवन्ति तैः (क्षुद्वैर्मनुष्यैः.) ५ ४१.१३. [वधोपपदे ष्णा शौचे (अदा०) धातोः क]

वधिषः हन्या ६ १७ १. **वधिष्टम्**=हन्यातम् ४ ४. **वधीत्**=हन्ति ४.१७ ३ नाशयतु, प्र०—अत्र लोडर्थे लुङन्तर्गतो ण्यर्थश्च १ ३८ ६ हन्यात् २ ४२.२ **वधीम्**=हन्मि १ १६५ ८ **वधीः**=हिन्धि प्र०—अत्र लोडर्थे लुङ्ड-भावश्च १ ३३ ४ हन्या ६ ३३ ३ हसि ४ ३०.८. हिंस्या १६ १५ दूरे प्रक्षिप प० वि० । नष्ट करो आर्याभि० २१ १८, ऋ० १ ८ ६ ७ वध कर आर्याभि० १ ४६, ऋ० १ ७ १६ ८ वियोजय प० वि० । हिंसा अर्थात् ताडना कर स० प्र० ४३६, १६ १५ हिंसय प० वि० । **वधेत्**=हन्यात् १० ८ **वध्यासम्**=हन्याम् १ २६ [हन हिंसागत्योः (अदा०) धातोर्लुङ् 'लुङि च' इति हन्तेर्वधादेशः । अन्यत्र लिङ्]

वधूमन्तः प्रशस्ता वध्वो विद्यन्ते येषान्ते (योद्धृजना) ६ २७ ८ प्रशस्ता वध्व स्त्रियो विद्यन्ते येषु ते (रथास = यानानि) १ १२६ ३ [वधू-प्राति० प्रशसाया मत्वर्थे मतुप्]

वधूमन्ता प्रशस्ते वध्वौ विद्येते ययोस्तौ (रथौ) ७ १८ २२ [वधूप्राति० प्रशसाया मतुप् । ततो द्विवचन-स्याकारादेश]

वधूमिव स्त्री के समान स० वि० १६६, अथर्व० ६ २ ३ २४ [वधूम्-इवपदयो. समास.]

वधूयुरिव यथाऽऽत्मनो वधूमिच्छु (जन) ३ ५२ ३ पतिरिव ४ ३२ १६ आत्मनो वधूमिच्छन्निव (स्त्रीकाम पतिरिव) ३ ६२ ८ [वधूयु -इवपदयो समास । वधूयु = वधूपपदादात्मन इच्छाया क्यजन्ताद् उ]

वधूयुः वधू की कामना करने वाला पति स० वि० १३७, अथर्व० १४ १ ६ [वधूपपदादात्मन इच्छाया क्यज-न्तात् 'क्याच्छन्दसी' ति सूत्रेण उ]

वधूः भार्या ५.३७ ३ स्त्री स० वि० १०५, ५.३७.३. **वध्वः**=युवत्य स्त्रिय. ५ ४७.६ [वह प्रापणे (भ्वा०) धातो. 'वहेर्धश्च' उ० १.८३ सूत्रेण ऊ । वध्व. नदीनाम निघं० १ १३]

वध्यमाने ताड्यमाने (दुर्जने) ४ ४२ ८ [हन हिंसा-गत्योः (अदा०) धातो कर्मणि शानच् । वधादेशश्छान्दस]

वध्रिमत्याः वर्धिकाया विद्याया १.११७ २४ वध्रय प्रशस्ता वृद्धयो विद्यन्ते यस्यास्तस्या सन्ति प्र०—अत्र वृधु-धातोरौणादिको रिक्-प्रत्ययो बाहुलकाद् रेफ लोप. १ ११६.१३ बहवो वध्रयो वर्धनानि विद्यन्ते यस्या तस्या भूमेरन्तरिक्षस्य वा ६ ६२ ७ [वध्रिप्राति० प्रशसाया (मत्वर्थे) मतुप् । तत पष्ठी । वध्रि =वृधु वृद्धौ (भ्वा०) धातोर्बाहु० औणा० रिक् रेफलोपश्च]

वध्रिवाचः वध्रयो वर्धिका वाचो येषान्ते (विद्वज्जना) ७ १८ ९ [वध्रि-वाच्पदयो. समास]

वध्रिः वध्यते स वध्रि निर्वीर्यो नपुंसक इव प्र०—अत्र वन्ध-धातोर्बाहुलकादौणादिक क्रिन्-प्रत्यय. १ ३२ ७ **वध्रीन्**=वृद्धान् वृषभान् २.२५ ३ [वन्ध वन्धने (क्र्या०) वृधु वृद्धौ (भ्वा०) धातोर्बौणा० रिक् । वृधुधातो रेफ-लोपश्च]

वध्र्यश्वाय वध्रयो वर्धिका अश्वा यस्य तस्मै (जनाय) ६ ६१.१ [वध्रि-अश्वपदयो. समास । वध्रिरिति व्याख्याते वध्रिमत्या पदे]

वनतम् यौ सम्यक् वाणीसेविनौ स्त , प्र०—अत्र व्यत्यय १ ३ २ **वनते**=सम्भजमानाय (राये=धनप्राप्तये) ३ १६ १ [वन सम्भक्तौ (भ्वा०) धातो शतृ । अमि नुमो ऽभावश्छान्दस]

वनतम् सम्भजत १.९३ ९. **वनताम्**=सम्भजताम् २५.४५. सेवताम् १ १६२ २ **वनते**=सम्भजति ६.१५ ६ सम्भजसि ५.४१ १७ **वनथः**=समेवेथाम् ४ ४४ २. सवि-भजथ ७ २७. सम्भजेयाम् १.४६ १४ **वनन्ति**=समे-वन्ते ६ ६ ३ **वनसे**=सम्भजसि १ १४० ११ **वनाति**= सम्भजेत् ७ १५ ४ **वनामहे**=सम्भजामहे प्र०—अत्र व्यत्ययेनाऽऽत्मनेपदम् १.१५ ८ याचामहे २६.१८ सम्भ-जाम ५ ७ ३ **वनेम**=विभज्य दद्याम, सम्भजेम १ १२९ ७ सविभागेनानुतिष्ठेम १ ७० १ [वन सम्भक्तौ (भ्वा०) धातोर्लोट् । अन्यत्र लट् लिङ् च । वनु याचने (तना०) धातो-र्वा रूपम् । विकरणव्यत्ययेन शप्]

वनदः प्रशसितार (विद्वासो जना) २ ४.५]

वनेराट् या वने सेवनीये किरणे वा राजते सा (दीप्ति) ६ १२ ३ [वनोपपदे राजृ दीप्तौ (भ्वा०) धातोः क्विप्। सप्तम्या अलुक्]

वनेव रश्मय इव, प्र०—वनमिति रश्मिनाम निघ० १ ५, १ १२७ ४ यथा वनानि तथा १ १२७ ३ [वन-इव-पदयो समास]

वने वने जङ्गले जङ्गले अग्नाविव जीवे जीवे ५.११ ६ रश्मौ रश्मौ पदार्थे पदार्थे वा १५ २८ [वने-पदस्य वीप्सायां द्वित्वम्]

वन्त सम्भजत, प्र०—अत्र 'बहुल छन्दसि' इति शपो लुक् १ १३९ १०. [वन सम्भक्तौ (भ्वा०) धातोर्लोट्। शपो लुक् 'बहुल छन्दसि' सूत्रेण]

वन्तारः सम्भाजकाः (प्रजाजना) ७ ८ ३ विभाजका (राय =धनानि) ३ ३० १८ [वन सम्भक्तौ (भ्वा०) धातो कर्त्तरि तृच्। इटोऽभावश्छान्दस]

वन्दते कामयते ४ ५० ७ स्तौति तद्गुणान् प्रकाशयति ३ ४६ **वन्दस्व**=कामय १ ३८ १५ **वन्दामहे**=कामयामहे ४ ५७.६ **वन्दे**=प्रशसामि सत्करोमि वा ५ ८८ ४ नमस्करोमि ७ ६ १ स्तौमि २.३५ १२ अभिवादये १ ४७ २ स्तुवे १२ ४२ [वदि अभिवादन-स्तुत्यो (भ्वा०) धातोर्लट्। अन्यत्र लोट् चापि। वन्दते अर्चतिकर्मा निघ० ३ १४]

वन्दयध्यै अभिवन्दितु स्तोतुम् १ ६१.५ वन्दितुम्, प्र०—अत्र 'तुमर्थे सेसेनसे०' इति कध्यै प्रत्यय १ २७ १ [वदि अभिवादनस्तुत्यो (भ्वा०) धातोर्णिजन्तात् तुमर्थे कध्यै प्रत्यय]

वन्दनम् स्तुत्य यानम् १ ११८ ६ वन्दनीयम् (विप्र=मेधाविजनम्) १ ११९.७ गुणकीर्त्तनम् १ ११२ ५. **वन्दनः**=स्तोतुमर्ह. (विद्वज्जन) १ ११९.६ **वन्दनानि**=अभिवादनानि स्तवनानि वा ३ ४३ ४ **वन्दनाय**=अभित सत्काराऽर्हायाऽपत्याय प्रशसायै वा १ ११६ ११ स्तवनाय १ ११७ ५ [वदि अभिवादनस्तुत्यो' (भ्वा०) धातोर्ल्युट्]

वन्दनश्रुत् येन वायुना वन्दन स्तवन शृणोति श्रावयति वा तत्सम्बुद्धौ (इन्द्र=सभाद्यध्यक्ष) १ ५५ ७ [वन्दनोपपदे श्रु श्रवणे (भ्वा०) धातो क्विप्]

वन्दना वन्दनानि स्तुत्यानि कर्म्माणि ७ २१ ५ [वन्दनमिति व्याख्यातम्। ततश्शेर्लोपश्छन्दसि]

वन्दनेष्ठा. स्तवने तिष्ठति य (इन्द्र =मित्र) १ १७३ ९ [वन्दनोपपदे ष्ठा गतिनिवृत्तौ (भ्वा०) धातो क्विप्। सप्तम्या अलुक्]

वन्दमानम् स्तूयमानम् (अध्यापकम्), प्र०—अत्र कर्मणि शानच् २.३३ १२. **वन्दमानः**=स्तुवन्नभिगायन् (मनुष्य) १ २४.११. [वदि अभिवादनस्तुत्यो (भ्वा०) धातो शानच्]

वन्दारु वन्दनशीलम् (स्वभावम्) ४ ४३ १. प्रशसनीय धर्म्यम् (वच) ५ १ १२ प्रशसनीयवचनम् १५ २५. [वदि अभिवादनस्तुत्यो (भ्वा०) धातो. 'शृवन्द्योरारु' अ० ३ २ १७३ सूत्रेण ताच्छील्य आरु.]

वन्दारुः अभिवादनशील. (अध्यापको जन) १२ ४२. [पूर्वपदे व्याख्यातम्। वन्दारुष्टे तन्व वन्देऽग्नऽइति वन्दिता तेऽह तन्व वन्देऽग्नऽइत्येतत् श० ९ ८ २ ९]

वन्दितारम् स्तावकम् (सज्जनम्) २ ३४ १५ [वदि अभिवादनस्तुत्यो. (भ्वा०) धातो कर्त्तरि तृच्]

वन्दिषीमहि नमस्कुर्म १ ८२ ३ नमेम स्तुवीमहि ३.५२ [वदि अभिवादनस्तुत्यो (भ्वा०) धातोर्लिङ्]

वन्द्य अभिवदितु प्रशसितु योग्य (सभाध्यक्ष) १ ७९.७ वन्दितु स्तोतु योग्य (राजन्नीश्वर वा) ३४ १३ **वन्द्यः**=स्तोतुमर्ह (अग्नि =विद्वज्जन) २.७ ४ पूजनीय (परमेश्वर) ऋ० भू० २२२, अथर्व० ६.१०.९८ १ प्रशसनीय (सविता=परमात्मा) ४ ५४ १ नमस्कर्त्तु योग्य, भा०—मान्य (सप्ति =शिल्पिजन) २९ ३ सत्करणीय (सभापति राजा) स० प्र० १८३, अथर्व० ६ १० ९८ १ नमस्करणीय, भा०—धर्मात्मा सन् सर्वत्र सत्कृत (अग्नि =पावकवत्पवित्रो विद्वान्) २९ २८ [वदि अभिवादनस्तुत्यो (भ्वा०) धातोर्ण्यत्। वन्द्य =वन्दितव्य नि० ८ ८]

वन्द्यासः वन्दितु कामयितुमर्हा (गाव =धेनव) १ १६८ २ स्तोतव्या सत्कर्त्तव्याश्च (मरुत =मनुष्या) १ ६० ४ [वन्द्य इति व्याख्यातम्। ततो जसोऽसुक्]

वन्द्येभिः वन्दितु स्तोतु योग्यै (शूपै =वलै.) ५ ४१ ७ कामना के योग्यो (विद्यायुक्त सन्तानो) से स० वि० १०५, ५ ४१ ७ [वन्द्यमिति व्याख्यातम्। 'बहुल छन्दसी' ति भिस ऐसादेशो न भवति]

वन्धुरः वन्धनविशेषा, प्र०—अत्र 'सुपा सुलुक्०' इति जस स्थाने सु १ ३४ ९ **वन्धुरे**=प्रेमवन्धने ६ ४७ ९ दृढवन्धनयुक्ते (रथे) १ १३९ ४ **वन्धुरेषु**=यन्त्राणा वन्धनेषु १ ६४ ९ [वन्ध वन्धने (क्र्या०) धातो.

वै वनस्पतय. काठ० २६ ३ चराचरा हि वनस्पतय मै० २ ३ २ वनस्पतयो वाला तै० स० ७ ५ २५ १.]

वना सम्भक्तानि वस्तूनि १ ५४ १. सम्भजनीयानि (सुखानि) ६ ६.३ अरण्यानि किरणान् वा १ ६६ १ जङ्गलानि ५ ५७ ३ वनानि याचनीयानि (ज्ञानानि) ३ ६.२ जलानि १ ६४ ७ [वनमिति व्याख्यातम्। तत शेर्लोपश्छन्दसि। वना वनानि नि० ४ १५.]

वनाः किरणा ६ ४८ ५ [वनमिति रश्मिनाम निघ० १ ५ लिङ्गव्यत्यय]

वनिता याचक (जन) ३ १३ ३. [वनु याचने (तना०) धातो कर्त्तरि तृच्]

वनिनम् वनानि किरणा विद्यन्ते यस्मिँस्तत् (किरण-सयुक्त मेघम्) ६ ८.५ वन वहूदक विद्यते यस्मिँस्तम् (रथ=यानम्), प्र०—वनमित्युदकनाम निघं० १.१२, १ ११६ १ सम्भक्तारम् (मारुत गणम्) १ ६४.१२ **वनिनः**=रश्मिमत (सूर्यस्य) १ १८०.३ वनसम्वन्धो विद्यते येपान्ते (गृहस्था जना.) ७ ४३ १ वनस्य सविभाग-स्य रश्मीना वा प्रशस्त सम्वन्धो विद्यते यस्य तस्य (विदुष शिल्पिजनस्य), प्र०—अत्र सम्वन्धार्थे इनि १ ६४ १० याच्ञावन्त (सज्जना) ३ ४० ७ वनानि सन्ति येपु ते वृक्षा ७ ३५ ५ किरणवन्त (विद्युदादय पदार्था) ७ ३४ २५ वनानि वहव किरणा विद्यन्ते येपु तान् (धर्म-प्रकाशकानाचारान्) ७ ४ ५ वहुकिरणयुक्ता वनस्था वृक्षा-दय ७ ५६ २५ वनसम्वन्धिन (वया=पक्षिण) ६ १३ १ वनानि जलानि १ १४० २ वनानि प्रशस्तविद्यारश्मयो विद्यन्ते येपान्ते (अध्यापका जना) १ १३६ १० प्रशस्ता रश्मयो वनानि वा येषा येपु वा तान् (प्राणान्) १ ५८ ४ वन रश्मिसम्वन्धो विद्यते येपा ते वायव, प्र०—अत्र सम्वन्धार्थे इनि १ ३६ ३ [वनप्राति० सम्वन्धार्थे भूम्न्यर्थे प्रशसायामर्थे वा मत्वर्थ इनि। वनमिति व्याख्यातम्]

वनिषीष्ट याचेत १ १२७ ७ [वनु याचने (तना०) धातोराशिपि लिङ्]

वनिष्ठः अतिशयेन वनिता सविभाजक (इन्द्र= राजा) ७ १८ १ [वन सम्भक्तौ (भ्वा०) धातो कर्त्तरि तृजन्ताद् अतिशायन इष्ठन्-प्रत्यये तृचो लोप]

वनिष्ठुना याचनेन २५ ७ आन्त्रविशेपेण ३६ ८ **वनिष्ठुः**=सम्भाजी (भा०—वीर्यवान् पुरुप), प्र०—अत्र वन सम्भक्तौ इत्यस्मादौणादिक इष्ठुप् प्रत्यय १६ ८७ आन्त्रविशेप, प्र०—अत्र 'सुपा सुलुक्०' इत्यम स्थाने सुरा-देश ३६ ६ [वनु याचने (तना०) वन सभक्तौ (भ्वा०) धातोर्वा औणा० इष्ठुप् वाहुलकात्]

वनीयान् अतिशयेन विभाजक. (सज्जन) ५ ७७ २. [वन सम्भक्तौ (भ्वा०) धातोस्तृजन्तादतिशायन ईयसुन्। तृचो लोप। वनीयान् वनयितृतम नि० १२.७]

वनुथः याचेथाम् २ ३० ६ कामयेथे ७ १७ **वनुयाम**=सम्भजेम १ १३२ १ याचेमहि ५ ३ ६ इच्छेम याचेम १ ७३ ६ **वनुषे**=याचसे ४ ४४ ३ **वनुष्यात्**= याचेत ६ ५ ४ **वनुष्व**=प्रयच्छ १ १६६ १. **वनोति**= याचते, प्र०—अत्र व्यत्ययेन परस्मैपदम् १ १३३ ७. **वनोषि**=याचसे सम्भजसि वा १ ३१ १३ [वनु याचने (तना०) धातोर्लट्। व्यत्ययेन परस्मैपदम्। अन्यत्र लिङ् लोट् च। वनोति कान्तिकर्मा निघ० २ ६]

वनुषः याचमानस्य (पाखण्डिजनस्य) ७ २५ ३ याचका (विप्रा=मेधाविजना) ३ २७ ११ सविभाज-कस्य (विदुषो जनस्य) १ १५० ३ सेवमानस्य (मर्त्यस्य= मनुष्यस्य) ४ २२ ६ सेवनीयान् (सज्जनान्) ६ ६ ६ सविभाजकान् (गुप्तचरान् जनान्) ६ २५ ३ **वनुषाम्**= राज्यस्य, याचकाना शत्रूणा जनानाम् ६ ६८ ६ [वनु याचने (तना०) वन सम्भक्तौ (भ्वा०) धातोर्वा वाहु० औणा० उसि]

वनुष्यतः याचमानान् (मनुष्यान्) ६ १५ १२ हिंसन्तम् (अग्निं=विद्युतम्), प्र०—अत्र विभक्तिव्यत्यय वनुष्यतिर्हन्तिकर्मेति निरुक्ते २ २५ १ हिसत (दुर्जनात्) २ २६ १ सम्भक्तान् (जनान्) १ १३१ १ क्रुध्यत (उत्तम-जनस्य), प्र०—वनुष्यतीति क्रुध्यतिकर्मा निघ० २ १२, ७ ५६ १६ **वनुष्यताम्**=क्रुध्यता वाधमानाना वा (दुष्टाना शत्रूणाम्) ६ ६२ १० **वनुष्यन्**=सेवयन् (विद्वान् राजा) ६ ६ ६ [वनु याचने (तना०) वन सम्भक्तौ (भ्वा०) धातोर्वा शतृ। 'व्यत्ययेन उ-स्य-विकरणौ परस्मैपदञ्च। वनुष्यति क्रुध्यतिकर्मा निघ० २ १२ वनुष्यति पदनाम निघ० ४ २ वनुष्यतिर्हन्तिकर्मानिवगतमस्कारो भवति नि० ५ २]

वनून् अधर्मसेविन (जनान्) ४ ३० ५ [वन सम्भक्तौ (भ्वा०) धातोर्वाहु० औणा० उ। ततो द्वितीयावहु० रूपम्]

वनेजाः किरणसमुदाये जायते स (विद्वान् जन) ६ ३ ३. [वनोपपदे जनी प्रादुर्भावे (दिवा०) धातोर्ड। सप्तम्या अलुक्। वनमिति रश्मिनाम निघ० १ ५]

गत्यर्थे (भ्वा०) धातोरच्]

वभ्रम् रोगनिवृत्तये वमनकर्त्तारम् (सद्वैद्यम्) १.११२.१५ **वभ्रः**=उद्गिरकस्त्यक्ता (धार्मिको जन) १५१ ६. [टुवम उद्गिरणे (भ्वा०) धातोर्बाहु० औणा० रक्]

वभ्रीभि उद्गीर्णाभि (वर्पाभि) ४.१६.६. **वभ्रच.**=अल्पवयस्य: (देव्य =स्त्रिय) ३७.४ [वभ्रमिति व्याख्यातम्। तत स्त्रियां ङीप् छान्दस। वभ्रचो वमनात् नि० ३ २० वभ्रीभिरुपजिह्विका इति सीमिकानाम् नि० ३ २०]

वय इव यया पक्षिणस्तथा १.८७ २. [वयस्-इव-पदयो समास]

वयत: प्राप्नुवत (विद्यार्थिजनस्य) २ २८.५. **वयन्त:**=व्याप्नुवन्त (वसिष्ठा =विद्वज्जना) ७ ३३ ६ [वय गतौ (भ्वा०) धातो शतृ। व्यत्ययेन परस्मैपदम्]

वयति सन्तनोति १६ ८२ विस्तृणाति १६.८३ **वयन्ति**=व्याप्नुवन्ति ६ ६ २. निर्मिमते १६ ८०. [वेञ् तन्तुसन्ताने (भ्वा०) धातोर्लट्। अथवा वी गतिव्याप्ति-प्रजनादिषु (अदा०) धातोर्लट् 'बहुलं छन्दसी' ति शपो न लुक्]

वयन्ती गच्छन्ती (पृथिवी) २ ३८ ४ [वय गतौ (भ्वा०) धातो शत्रन्तान् ङीप्। व्यत्ययेन परस्मैपदम्]

वयसा व्याप्त्या १८ ५१. जीवनेन ११ २३ कमनीयेन (जीवनेन) २ १० ४ **वय:**=प्रजननात्मकम् (अश्व =महत्तत्त्वम्) २३.५३ कमनीय जीवन विज्ञान वा ६ ४५ २ यो वेति गच्छति स पक्षी २३ ११ कामम् २ ४ ६. आयु १११ १ २ कमनीय धनम् ४ १७ १८ प्रदीपक तेज ५ १६ १ अवस्थात्रये सुखभोग जीवनम्, चिरञ्जीवसुख वा ७ ४७ प्रजनन प्रापण वा १४ १० तृप्तिम् २१ १४ येन व्येति व्याप्नोति तत् (तर्पणम्) २१ १५ गमनम् २८ २८. विद्या कामयमाना, प्राप्तविद्या वा (राजप्रजाजना) १ १२७ ८ व्यापिन (पदार्था) ४ ४३ ६ पक्षिण इव गायत्र्यादीनि छन्दासि २ १६ ज्ञानिन (जना) १ १० ३ ७ पराक्रमम्, कमनीय कर्म, विविधव्यवहारव्यापी (छन्द =स्वाधीन्यम्), सुखप्रापकम् (छन्द), कमिता (छन्द) बलवान् (पुरुष), प्रजनक (छन्द =स्वाधीन पुरुष), न्याय-विनयपराक्रमव्याप्तम् (छन्द =विद्याधर्मशमादिकर्म), बलिष्ठ (पुरुष) १४ ६ बलम्, इच्छाम्, कामनाम् १४ १० व्याप्तिशीला (अश्वास =वेगादयो गुणा) ५ ७५ ६ शत्रु-बलव्यापकम् (भूप =बलम्) २८ ४१ व्याप्तव्यम् (चिरञ्जीवनम्) २१ २१ आयुर्वर्धकम् (भा० —वानन्तिक गुणम्) २१.२३. प्राप्तव्य वस्तु २१.१६. कालविज्ञानम् २१.२५. प्राणधारणम् २८ ३७. कमितार (जना) १ १३६ २. **वयांसि**=कमनीयान्यन्नानि ३ ३ ७ **वयोभि:**=व्यापकै-र्गुणै. १२.२५. यावज्जीवनं १२ १ [वी गतिव्याप्ति-प्रजनकान्त्यसनखादनेषु (अदा०) धातोरौणा० असुन्। वय.=अन्ननाम निघ० २.७ वयो वेर्बहुवचनम् नि० ४ ३. वय =अन्नम् नि० ६ ४. एतद्वै वयसामोजिष्ठ बलिष्ठ यच्छ्येन श० ३ ३ ४.१५ स (श्येन) हि वयसामाशिष्ठ ता० १३ १०.१४ श्येनो वै वयसा क्षेपिष्ठ. प० ३ ८. पशवो वै वयांसि श० ६.३ ३.७ निर्ऋतेर्वा एतन्मुख यद्वयासि यच्छकुनय. ऐ० २ १५ देवाननु वयांस्योपधयो वनस्पतय श० १ ५ २ ४ प्राणो वै वय ऐ० १ २८ पृथु तिरश्चा वयसा बृहन्तम् (यजु० ११ २३) इति पृथुर्वाऽएष (अग्नि) तिर्यङ् वयसो बृहन्धूमेन (वय =धूम) श० ६ ३. ३.१६ धूमो वाऽअस्य (अग्ने) श्रवो वय श० ७ ३ १.२६. दिव्य सुपर्ण वयसा बृहन्तम् (यजु० १८ ५१.) इति दिव्यो वाऽएष (अग्नि) सुपर्णो वयसो बृहन्धूमेन (वय.=धूम) श० ६ ४ ४ ३. अथ यदश्रु सक्षरितमासीत्तानि वयास्यभवन् श० ६ १ २ २ तार्क्ष्यो वै पश्यत राजेत्याह तस्य वयासि विश श० १३ ४ ३ १३ उरस एवास्य (इन्द्रस्य) हृदयात्त्विपिरस्रवत् स श्येनोऽपाष्ठिहाभवद् वयसा राजा श० १२ ७ १.६]

वयस्कृत् यद्वयस्करोति तज्जीवनसाधनम् १५ ५ यो वयो वृद्धावस्थापर्यन्त विद्यासुखयुक्तमायु करोति स (सभाध्यक्ष) १ ३१ १० **वयस्कृतम्**=यो वय करोति तम् (जगदीश्वर भौतिकमग्नि वा) ३ १८ [वयस् इति व्याख्यातम्। तदुपपदे डुकृञ् करणे (तना०) धातो कर्त्तरि क्विप्]

वयस्वन्त: प्रशस्तं वयो जीवन विद्यते यस्य तस्य राय =धनस्य) ५ ५४ १३ प्रशस्त वयो जीवन विद्यते यस्मिँस्तस्य (राय =धनस्य) २ २४ १५ प्रशस्त पूर्णमायु-विद्यते येषान्ते (जना), प्र०—अत्र प्रशसार्थे मतुप् ३ १८. **वयस्वते**=बहुजीवन विद्यते यस्य तस्मै (इन्द्राय=सेना-पतये) ७.२२. [वयस्प्राति० मतुप्। तत प्रथमाबहुवचनम्]

वया इव यथा विस्तीर्णा शाखा. २ ५ ४ **वया-मिव**=यथा वृक्षस्य सुदृढा विस्तीर्णा शाखाम् ६ ५७ ५. [वयस्-इवपदयो समास]

'मद्गुरादयश्च' उ० १४१ सूत्रेण उरच् । वर्णव्यत्ययेन वस्य वकार]

वन्धुरायुः वन्धुरमायुर्यस्य स. (सज्जन) ४४४.१. [वन्धुर-आयुपदयो समास]

वन्धुरेष्ठाः यो वन्धुरे बन्धने तिष्ठति सः (रथ) ३.४३.१ [वन्धुरोपपदे ष्ठा गतिनिवृत्तौ (भ्वा०) धातो. क्विप्]

वन्याय वने जङ्गले भवाय (पुरुषाय) १६.३४ [वनप्राति० भवार्थे यत्]

वन्वन् याचन्ते ७ ४८ ३ **वन्वन्तु**=याचन्ताम् ७ २१ ६ [वनु याचने (तना०) धातोर्लङ् । अटोऽभाव. । अन्यत्र लोट्]

वन्वन् सम्भजन् (जन.) ६ १२४ धर्म्मं सेवमान (विद्वत्सन्तान) १९ ५३. सम्भजमान (सूर्य=प्रजापालक) १ १२१ ६ **वन्वते**=सत्याऽसत्ययोर्विभाजकाय (इन्द्राय=सभासेनेशाय) २ २१ २ **वन्वन्तः**=विभजन्त (दुर्जना) ६ १६ २७ [वन सम्भक्तौ (भ्वा०) धातोः शतृ । विकरण-व्यत्ययेन उ]

वन्वानः सम्भजमान (सज्जन) ३ ८ २ याचमान (राजा) ५ २९ ८ **वन्वानाः**=याचमाना (सज्जना) १० ४ [वनु याचने (तना०) धातो शानच्]

वप निक्षिप १९ ६ **वपतु**=स्थापयतु ३५ ५ **वपते**=बीजानि सन्तनुते १ १६४ ४४ **वपन्त**=वपन्ति ७ ५६ ३ **वपन्ति**=बोते हैं स० वि० १३६, अथर्व० १४ २ ३८ **वपन्तु**=छिन्दन्तु १६ ५२ विस्तारयन्तु २ ३३ ११ **वप**=सन्तनुहि ४ १६ १३. **वपामि**=विस्तारयामि १ २१ [डुवप् बीजसन्ताने (भ्वा०) धातो-र्लोट् । अन्यत्र लट् चापि]

वपन्ता वपन्तौ (अश्विना=सभासेनाधीशौ) १ ११७ २१ [डुवप् बीजसन्ताने (भ्वा०) धातो शतृ । ततो द्विवचनस्या-कारादेश वपन्ता निवपन्तौ नि० ६ २६]

वपस् यो वपनि क्षेत्राणि कृपीवल इव विद्यादिशुभान् गुणास्तम् (अहिमक जनम्) ३० ७. [डुवप् बीजसन्ताने (भ्वा०) धातो कर्त्तरि पचाद्यच्]

वपाम् वपन्ति यस्या भूमौ ताम् ३५ २० वपनम् १२ १०३ **वपायाः**=वर्द्धिकाया रीत्या २१.४१ बीज-तन्तुसन्तानिकाया क्रियाया बीजवर्द्धिकाया क्रियाया वा २१ ४१ **वपाः**=वपन्ति याभि क्रियाभिस्ता. २१ ३१. [डुवप् बीजसन्ताने (भ्वा०) धातोर्घञर्थे क । तत स्त्रिया टाप् । शुक्ला वपा ऐ० २ १४ आत्मा वपा कौ० १०.५ यजमानदेवत्या वै वपा तै० ३.९ १०.१. हुत्वा वपामेवाग्रे ऽभिधारयति श० ३ ८.२.२४ प्रात पशुमालभन्ते तस्य वपया प्रचरन्ति ता० ५ १० ६]

वपावन्तम् विद्याबीज विस्तारयन्तम् (विद्यार्थिजनम्) ५ ४३ ७ बहूनि वपनाधिकरणानि विद्यन्ते यस्मिँस्तम् (अग्नि=विद्यादिरूपम्) ६ १ ३ **वपावान्**=वपन्ति यया क्रियया सा वपा सा प्रशस्ता विद्यते यस्य स (विद्वज्जन) २० ३७ [वपेति व्याख्यातम् तत प्रशसायामर्थे भूम्न्यर्थे वा मतुवन्ताद् द्वितीयैकवचनम्]

वपुर्भिः स्वाऽऽकृत्यादिभि शरीरै १ ६२ ८ **वपुषः**=सुरूपस्य १ ११८ ५ **वपुषाम्**=रूपवता शरीराणाम् ४ ७ ६ **वपुषे**=शरीरधारणपोपणाऽग्निरूपप्रकाशाय १ ६४.४ रूपाय १ १४८ १ शरीरहिताय ३० १४ **वपुः**=सुरूप शरीरम् ६ ४४ ८ शरीरमुदक वा १९ ८३ **वपूंषि**=रूपवन्ति शरीराणि ३ १ ८ रूपाणि ४ २३ ९ [डुवप् बीजसन्ताने (भ्वा०) धातो 'अर्त्तिपृवपियजि०' उ० २ ११७ सूत्रेण उसि । वपु उदकनाम निघ० १ १२ रूपनाम निघ० ३ ७ वपुर्हि पशव ऐ० ५ ६]

वपुषाय वपूषि रूपाणि विद्यन्ते यस्मिँस्तस्मै व्यव-हाराय, प्र०—अत्र 'अर्श आदिभ्योऽच्' इति वेद्यम् ३ २ १५. [वपुष्प्राति० मत्वर्थे 'अर्श आदिभ्योऽच्' इत्यच्]

वपुष्टरा अतिशयेन रूपलावण्ययुक्तौ (स्त्रीपुरुषौ) २ ३ ७ [वपुष्प्राति० अतिशायने तरप् । ततो द्विवचन-स्याकारश्छान्दसः]

वपुष्यन् आत्मनो वपू रूपमिच्छन् (विद्वज्जन) ३ १ ४ [वपुष्पदा॰ात्मन इच्छाया क्यजन्ताच्छतृ]

वपुष्यः वपुष्षु रूपेषु भव (अग्नि=राजा) ४ १ ८ वपुषि सुन्दरे रूपे भव (अतिथि) ५ १ ९ वपुष्षु साधु (अग्नि=विद्वज्जन) ४ ११ २ [वपुष् इति व्याख्यातम् । ततो भवार्थे साध्वर्थे वा यत्]

वपुष्या वपुषि भवानि (सुरूपाणि यानानि) १ १८३ २ [वपुष्य इति व्याख्यातम् । ततश्शेर्लोप-श्छन्दसि]

वपुष्ये वपुषि रूपे भवे (भूमिसूर्यौ) १ १६० २ [वपुष्प्राति० भवार्थे यत् । ततो द्विवचने रूपम्]

वप्ससः सुरूपस्य (विद्वज्जनस्य) १ १८१ ८ [वप्स=रूपनाम निघ० ३ ७]

वभ्रः उद्गलितोदान (प्राणवायु) ११ ७४ [वभ्र

काय (जनाय) २.१३ १२. प्राप्तव्याय सुखाय ४ १६ ६.

वय्येव पदसाधिका नलिकेव २ ३ ६ [वय्या-इवपदयो. समास]

वरत् वृणुयात् ६ ४५ २४. **वरते**=स्वीकरोति ४ ४२ ६ **वरथः**=स्वीकुरुथ ५ ३१ ६ **वरन्त**=वारयन्ति ३ ३२ ६ वृण्वन्तु, प्र०—अत्र विकरणव्यत्ययेन शप् १ १२१ १५ निवारयन्ति ४ ६ ६. वरयन्ति २ २४ ५. स्वीकुर्यु १ १४० १३ **वरन्ते**=स्वीकुर्वन्ति ४ ३२ ८ **वराते**=वृणुयाताम् ५ ३२ ६ वृणुते १ ६५ ३ [वृञ् वरणे (स्वा०) धातोर्लेट् । व्यत्ययेन शप् । अन्यत्र लट् लङ् चापि वरन्ते=वारयन्ति नि० १० २६]

वरत्राः रश्मय ४ ५७ ४. [वृञ् वरणे (स्वा०) धातो. 'वृञश्चित्' उ० ३ १०७ सूत्रेणात्रन्]

वरम् अतिश्रेष्ठम् (सूरिं=युद्धविद्याकुशल जनम्) १.११६ ३. परमोत्तम विज्ञानधनम् १ ४४ वरणीय वस्तुसमुदायम् २ ५ ५ रत्नादिकम् १ १४० १३ **वराय**= स्वीकरणाय १ १४३ ५ श्रैष्ठ्याय १ ७६ १ श्रेष्ठत्वाय ७ ५६.२ [वृञ् वरणे (स्वा०) धातोरच् । अथवा वृणोतेः 'ग्रहवृदृनिश्चिगमश्च' अ० ३ ३ ५८ सूत्रेण घञोपवादोऽप् । वरो वरयितव्यो भवति नि० १ ७ वर इव वै स्वर्गो लोक जै० २ ६६ वरो न प्रतिगृह्य तै० म० ७ १ ६ ५ सर्वं वै वर श० २.२.१ ४]

वरशिखस्य वरा श्रेष्ठा शिखा यस्य तस्य (सूर्य इव राज्ञ) ६ २७ ४ वरा शिखा यस्य तद्वत् मेघस्य ६ २७.५ [वरा-शिखापदयो समास]

वरसत् यो वरेषूत्तमेषु पदार्थेषु सीदति स (परमेश्वर) १० २४ यो वरेषु श्रेष्ठेषु सीदति स (जीवात्मा) ४ ४० ५. य उत्तमेषु विद्वत्सु सीदति स (ईश्वरो जीवो वा) १२ १४ [वरोपपदे षद्लृ विशरणगत्यवसादनेषु (भ्वा०) धातो कर्त्तरि क्विप् । एष (सूर्य) वै वरसद् वर वा एतत् सद्मना यस्मिन्नेष आसन्नस्तपति ऐ० ४ २०]

वरस्या अतिशयेन वरौ (भा०—स्त्रीपुरुषौ) ५ ७३ २. [वरपदाद् इच्छायामर्थे क्यच्प्रत्ययान्तात् कर्त्तर्यच् । ततो द्विवचनस्याकार । क्यचि च 'सुग् वक्तव्य ' अ० ७ १ ५१ वा०सूत्रेण सुगागम]

वरस्याम् स्वीकर्त्तव्या प्रशसाम् ६ ४६ ११ [वरस्येनि पूर्वपदे व्याख्यातम् । तत स्त्रियाम् । 'अ प्रत्ययादि' त्यकार । ततष्टाप्]

वरा श्रेष्ठ तुल्य गुण कर्म स्वभाव वाले (स्त्रीपुरुष) स० वि० १३७, अथर्व० १४.१ ६ श्रेष्ठौ श्रोतृश्रावकौ ५ ४४.१२. [वरप्राति० 'सुपा सुलुक्०' इति द्विवचनस्याकारादेश]

वरा इव यया प्रशस्तविद्याधर्मकर्मस्वभावा' (विद्वांसो जना.) १.८३.२ वरैस्तुल्या (मनुष्या) ५ ६०.४ [वरा-इवपदयो. समास]

वराहम् मेघम् १ ६१.७. [वराहो मेघो भवति वराहार , 'वरमाहारमाहार्षी ' इति च ब्राह्मणम् नि० ५.४ अङ्गिरसोऽपि वराहा उच्यन्ते नि० ५.४ वराह मेघनाम निघ० १ १०. पशूना वा एष मन्युर्यद् वराह तै० १.७ ६ ४ ता (पृथिवी प्रजापति) वराहो भूत्वाऽहरन् तै० म० ७ १. ५ १ अग्नौ ह वै देवा घृतकुम्भ प्रवेशयाचक्रुस्ततो वराह सम्बभूव श० ५ ४ ३ १६ आण्डाभ्या वराहौ (अजायेताम्) जै० २.२६७]

वराहुम् वराणा धर्म्याणा व्यवहाराणा धार्मिकाणा जनानाञ्च हन्तार दस्यु शत्रुम् १ १२१ ११. **वराहून्**= वरमाह्वयत शब्दायमानान् (रथान्) १ ८८ ५ [वरोपपदे हन हिंसागत्यो. (अदा०) धातो 'दुप्रकरणे मितद्र्वादिभ्य उपसङ्ख्यानम्' अ० ३ २ १८० वा०सूत्रेण दु । वरोपपदे ह्वेञ् स्पर्धाया शब्दे च (भ्वा०) धातोर्वा दु । अथाप्येते माध्यमिका देवगणा वराहव उच्यन्ते नि० ५ ४]

वरांसि वरणीयानि धर्म्याणि कर्माणि ४ २१ ८ वराणि (कर्म्माणि) १ १६० २ उत्तमानि वस्तूनि ६ ६२.१. [वृञ् वरणे (स्वा०) धातोरसुन् । वरस्प्राति० प्रथमाबहुवचने रूपम्]

वरिमता बहुस्थूलत्वेन सह १ १०८ २ [उरु बहुनाम निघ० ३ १ ततो भाव इमनिच्-प्रत्यये वरादेशे च छान्दस रूपम्]

वरिमन् बहुगुणयुक्त (विद्वज्जन) ४ ५४-४ अतिशयेन श्रेष्ठे (सुम्ने=सुखे) ६ ६३ ११ बहुशीलसत्ययुक्तम् (व्रत= स्वीकृतक्षमादिगुणम्) ३ ५६ ३ **वरिमा**=वरस्य श्रेष्ठस्य भाव. १८.४ **वरिम्णा**=श्रेष्ठगुणसमूहेन ३ ५ बहोर्भावेन १५ ११ अतिशयेनोरुर्बहुस्तेन व्यापकत्वेन १३ २. महापुरुषार्थेन १५ १० [उरु बहुनाम (निघ० ३ १) उरुप्राति० भावे 'पृथ्वादिभ्य इमनिज्वा' अ० ५ १ १२२. सूत्रेणेमनिच् । ततश्च 'प्रियस्थिर०' इत्यादिना वर्-आदेश]

वरिवस्यन् सेवमान (इन्द्र.=विद्वान् राजा) ६ २०.११ **वरिवस्यन्तः**=परिचरन्त (मरुत =उत्तम-

वयाकिनम् व्यापिनम् (विद्वज्जनम्) ५ ४४ ५ [वी गतिव्यप्तिप्रजनादिषु (अदा०) धातोर्बाहु० औणा० आकिन् प्रत्यय]

वयाम् वयसामवस्थावता प्राणिनाम्, प्र०—अत्राऽऽमि टिलोपश्छान्दस ३४ ४८ व्यापिका सुखनीतिम् १५ २४ शाखाम् ५ १ १ **वयाः**=शाखा २ ३५ प्रापक (रुद्र = शूरवीरजन) ७ ४०.५ पक्षिण ६ १३ १ [वयस् इति व्याख्यातम् । तत आमि टिलोपश्छान्दस. । वया. शाखा वेतेर्वातायना भवन्ति नि० १ ४]

वयावन्तम् बहुपदार्थयुक्तम् (क्षय=गृहम्) ६ २ ५

वयिष्यन् व्यय करिष्यन् (वसिष्ठ =पूर्णविद्वज्जन) ७ ३३ १२ [वय गतौ (भ्वा०) धातोर्लृट शतृ । व्यत्ययेन परस्मैपदम्]

वयुनम् कर्म्म प्रज्ञान वा ५ ४८ २ प्रज्ञाम् ३ ३ ४ **वयुनानि**=विज्ञानानि, भा०—विद्या २९ ५१ ज्ञानानि ६ ७५ १४ प्रशस्तानि कर्माणि प्रज्ञाश्च ५ ३६. प्रज्ञान और उत्तम कर्म स० वि० ७, ४० १६ **वयुनेषु**=पृथिवीमारभ्य परमेश्वरपर्यन्ताना विज्ञानेषु ६_७ ५ प्रज्ञापनेषु २ ३४ ४ [अज गतिक्षेपणयो (भ्वा०) धातो 'अजियमिशीङ्भ्यश्च' उ० ३ ६१ सूत्रेण उनन् । 'अजेर्व्यघञपो ' अ० २ ४ ५६ सूत्रेणाजेर्वीत्ययमादेश । वयुनम्=प्रशस्यनाम निघ० ३ ८ प्रज्ञानाम निघ० ३ ९ पदनाम निघ० ४ २. वयुन वेते कान्तिर्वा प्रज्ञा वा नि० ५ १५ वयुनानि प्रज्ञानानि नि० ८ २०]

वयुनवत् प्रज्ञावत् ६ २१ ३ [वयुनमिति व्याख्यातम् । ततो मतुप्]

वयुनशः प्रज्ञानेन ६ ५२ १२ [वयुनप्राति० 'बह्वल्पार्थाच्छस्०' अ० ५ ४ ४२ सूत्रेण शस्]

वयुना प्रज्ञानानि कर्माणि वा १ १६२ १८ वयुनानि प्रशस्यानि कमनीयानि वा कर्म्माणि १ ९२ ६ [वयुनप्राति० शेर्लोपश्छन्दसि]

वयुनावत् प्रज्ञानवत् ४ ५१ १ [वयुनप्राति० मतुप् । सहिताया दीर्घ । वयुनावत् प्रज्ञानवत् नि० ५ १५]

वयुनावित् यो वयुनानि प्रज्ञानानि वेत्ति स , भा०—सर्वज्ञ. (अ०—जगदीश्वर) ३७ २ यो वयुनानि प्रशस्तानि कर्म्माणि वेत्ति स '(योगिजन), प्र०—वयुनमिति प्रशस्यनामसु पठितम् निघ० ३ ८ अत्र 'अन्येषामपि दृश्यते' इति दीर्घ ५ १४ सर्वेषा जीवाना शुभाऽशुभानि यानि प्रज्ञानानि प्रजाश्च तानि यो वेद स (परमेश्वर) ऋ० भू० १५६ [वयुनोपपदे विद ज्ञाने (अदा०) धातो कर्त्तरि क्विप् । 'अन्येषामपि दृश्यते' इति दीर्घ । वयुनाविदित्येष (प्रजापति) हीद वयुनमविन्दत् श० ६ ३ १.१६]

वयोधसम् चिरायुर्धारकम् (इन्द्र=राजानम्) २८.३१. चिरञ्जीविनम् (इन्द्रम्) २८.४२ प्राणधारिणम् (इन्द्र=जीवम्) २८ ३९ आयुषो धर्त्तारम् (इन्द्रम्) २८.४५ बहुवयो धारकम् (इन्द्र=राजानम्) २८ ४४ जीवनधारकम् (इन्द्रम्) २८ ४१ कमनीयसुखधारकम् (इन्द्र=परमैश्वर्यम्) २८ ३० वयोवर्धकम् (इन्द्र=सूर्यम्) २८ ३५ कमनीयाना विद्यावोधादीना धातारम् (इन्द्र=विद्वज्जनम्) २८ २८ कामनाधारकम् (इन्द्र=परमैश्वर्यम्) २८ २९ वय कर्मोपासनाज्ञानानि वत्सा इव यस्य तम् (जीवस्वरूपम्) २८ २७ **वयोधसा**=वयो जीवन दधाति येन तेन (आधीतेन=अध्ययनेन) १५ ७ **वयोधाः**=यो वय प्रजनन दधाति स (मनुष्य) २ ३ ९ यो वय कमनीयमायुर्दधाति स (वैद्य) ५ ४३ १३ अ०—जितेन्द्रियत्वेन जीवनवर्धयिता (अग्नि = पावक इव सेनापति) १५ ५२ यो वयो जीवन कमनीय वस्तु दधाति स (इन्द्र =ईश्वर) ४ १७.१७ य कमनीयानि वयासि जीवनधनादीनि दधाति स (अग्नि =विद्युदिव राजा) ४ ३ १० [वयस् इति व्याख्यातम् । तदुपपदे डुधाञ् धारणपोषणयो (जु०) धातो 'वयसि धाञ ' उ० ४ २२९ सूत्रेण असि । वयोधा इति श्रोत्रम् तै० स० ५ ३ ६ २]

वयोनाधैः वयासि विज्ञानानि नह्यन्ति यैर्विद्वद्भि, वेदादिशास्त्रप्रज्ञापनप्रबन्धकै (देवै =विद्वद्भि), वयासि जीवनादीनि गायत्र्यादिछन्दासि वा नह्यन्ति यै प्राणैस्तै, पूर्णविद्याविज्ञानप्रचारप्रबन्धकै (देवै), ये वय कामयमान जीवन नह्यन्ति तै (देवै) १४ ७ [वयस् इति व्याख्यातम् । तदुपपदे णह बन्धने (दिवा०) धातो 'कर्मण्यण्' इत्यण् 'नहो ध ' इति ह्रस्य ध]

वयोवयः कमनीय जीवन जीवनम् ५ १५.४ [वयस्पदस्य वीप्साया द्विर्वचनम्]

वयोवृधः ये वयसा वर्धन्ते, वयो वर्धयन्ति वा (विद्वज्जना) ५ ५४ २ [वयस् इत्युपपदे वृधु वृद्धौ (भ्वा०) धातो कर्त्तरि क्विप्]

वयोवृधा ये वय कमनीय जीवन वर्धयतस्ते (रात्रिदिने) ५ ५ ६ [वयस् इत्युपपदे वृधु वृद्धौ (भ्वा०) धातो क्विप् । ततो द्विवचनस्याकारश्छान्दसम्]

वय्यम् यो वयते जानाति तम् (विद्वज्जनम्), प्र०—अत्र वयधातोर्बाहुलकादौणादिको यत्प्रत्यय १ ५४ ६ ज्ञातारम् (विद्वास जनम्) १ ११२ ६ **वय्याय**=तन्तुसन्तान-

३.३१. आह्लादकस्य जलचन्द्रादे १ ११५ १. वरस्य (परमेश्वरस्य विदुषो वा) १ ६१ ३ सर्वोत्कृष्टस्य (राज्ञ) १७.४१. सर्वेभ्यो वरस्य श्रेष्ठस्य जगदीश्वरस्य ३४ ४५ वरेषु श्रेष्ठेषु कर्मसु गुणेषु वर्त्तमानस्य (ईश्वरस्य) प० वि० मेघस्य, प्र०—वरुण इति पदनाम निघ० ५ ६, २ २८ ४ वीरगुणोपेतस्य (राज्ञ) ८ २३. उदानस्येव बलवतो रोगस्य ६ ७४ ४ सूर्यस्य वायोर्वा ६ ७० १ दु खेनाच्छादकस्य तिरस्कर्त्तु (सभाध्यक्षस्य राज्ञ) ५ ३६ वरितु प्राप्तु योग्यस्य श्रेष्ठस्य जगत वरपदार्थसमूहस्य उत्कृष्टगुणसमूहस्य, वायो, प्र०—अनेन ज्ञानप्राप्तिर्गमधातोरर्थस्य ग्रहणम् ४ ३६ वरस्य प्राप्तव्यस्य सुखस्य १३ ५० सम्बन्धस्योत्तमस्य (कृष्टे =मनुष्यस्य) ४ ४२ २ उत्कृष्ट व्यवहार के स० वि० १२२ अथर्व० १४ १.५७ अग्नेर्विद्युतो वा ७ ४२ **वरुणः**=जल वायुश्चन्द्रो वा १ १७ ५ बाह्याऽभ्यन्तरस्थो वायु १ २३ ६ श्रेष्ठतम उत्तमव्यवहारहेतुर्वा (राजा=परमेश्वर सूर्यो वा) १ २४ १३ उदान इव श्रेष्ठ (इन्द्र =राजा) २५ २४ शमादिगुणान्वित (महाविद्वज्जन) ६ ६२ ६ आप २ ३८ ६ वरणीय (विद्वज्जन) ५ ६८ २ दुष्टाना बन्धकृच्छ्रेष्ठ (राजा) ५ ३ १ सर्वोत्तमोऽधिपति परमेश्वर प० वि०। जलाधिपति (राजपुरुष) ७ ५६ २५ जलमिव शान्तिप्रद (दार) ७ ४० ७ वरो विद्वान् ७ ३८ ४ वरस्वभाव (राजा) १० २८ धर्माचरणेन श्रेष्ठ (मित्र =सर्वस्य सुहृज्जन) ६.३६ पुरुषोत्तम (सम्राट्) १० २७ जलसमूह ८ ५६ श्रेष्ठाचार (ऋभुक्षा =महाविद्वज्जन) ५ ४१ २ सर्वोत्कृष्ट स्वीकरणीय, परमोत्तम (ईश्वर) आर्याभि० ११ ऋ० १ ६ १८ ६ वरगुणाढ्योऽर्थ १४ २० सर्वोत्तमप्रबन्धकर्त्ता (जगदीश्वर) ४ ४२ २ विविधपाशै शत्रूणा बन्धक (राजा) १ २५ १३ सकलविद्यासु वर (मनुष्य) १ २६ ४ चन्द्रसमुद्रतारकादिसमूह १ ४० ५ उत्तमगुणयोगेन श्रेष्ठत्वात् सर्वाध्यक्षत्वाऽर्ह (भा०—सभासेनाध्यक्ष) १,४१ १ वरो जीव २ ३८.८. वरगुणप्रद वर, सर्वोत्तम, प्रशस्तविद्योऽनूचानो विद्वानध्यापक, सत्योपदेष्टाऽऽप्ता ७.४७ जल यस्याऽवयव. स (मेघ) २६ १ य सर्वान् शिष्टान् मुमुक्षून् धर्मात्मनो वृणोति, अथवा य शिष्टैर्मुमुक्षुभिर्धर्मात्मभिर्व्रियते वर्य्यते वा स वरुण परमेश्वर, जो आत्मयोगी, विद्वान्, मुक्ति की इच्छा करने वाले, मुक्त और धर्मात्माओ से ग्रहण किया जाता है, वह ईश्वर, अथवा 'वरुणो नाम वर श्रेष्ठ' जिसलिए परमेश्वर सबसे श्रेष्ठ, सर्वोत्तम है इसलिए उसका नाम वरुण है, प्र०—वृञ् वरणे, वर ईप्सायाम् इन धातुओ से औणादिक उनन्-प्रत्यय होने से वरुण शब्द सिद्ध होता है स० प्र० २०, ३६ ६ **वरुणाय**=समुद्रादिषु गमनाय ३६ २ उत्तमाय व्यवहाराय ५ ६६ १ प्रशस्तैश्वर्याय ८ २३ **वरुणे**=स्वीकर्त्तव्ये जने ३३ १७ **वरुणेन**=वरेण पुरुषार्थेन ४ ३४.७. [वृञ् वरणे (स्वा०) धातो 'कृवृदारिभ्य उनन्' उ० ३ ५३ सूत्रेण उनन्। वरुणो वृणोतीति सत नि० १० ३ वरुण पदनाम निघ० ५ ४ (आप) यच्च वृत्वाऽतिष्ठस्तद्वरुणोऽभवत्त वा एत वरण सन्त वरुण इत्याचक्षते परोक्षेण। परोक्षप्रिया इव हि देवा भवन्ति प्रत्यक्षद्विष गो० पू० १.७ वरुणो वै जुम्बक (यजु० २५ ६) श० १३ ३ ६ ५ तै० ३.६.१५ ३ रात्रिर्वरुण ऐ० ४ १० ता० २५.१० १० वारुणी रात्रि तै० १ ७ १०.१. य प्राण स वरुण गो० उ० ४ ११ यो वै वरुण सोऽग्नि श० ५ २ ४ १३. यो वा ऽग्नि स वरुणस्तदप्येतद् ऋषिणोक्त त्वमग्ने वरुणो जायसे यदिति ऐ० ६ २६ अथ यत्रैतत् प्रदीप्ततरो भवति तर्हि हैष (अग्नि) भवति वरुण श० २ ३ २ १० स यदग्निर्घोरसस्पर्शस्तदस्य वारुण रूपम् ऐ० ३ ४ वरुण्यो वाऽएष योऽग्निना शृतोऽथैष मित्रो य ऊष्मणा शृत श० ५ ३ २.८ य (अर्द्धमास) अपक्षीयते स वरुण ता० २५ १० १० य. (अर्द्धमास) एवापूर्यते स वरुण श० २ ४.४ १८ क्लोमा वरुण श० १२ ६.१ १५ श्रीर्वै वरुण कौ० १८ ६ वरुण (श्रिय) साम्राज्यम् (आदत्त) श० ११ ४ ३ ३ द्यावापृथिवी वै मित्रावरुणयो प्रिय धाम ता० १४ २.४ अय वै (पृथिवी) लोको मित्रोऽसौ (द्युलोक) वरुण श० १२ ६ २ १२ व्यानो वरुण श० १२ ६ १.१६ अपानो वरुण श० ८ ४ २ ६. योनिरेव वरुण श० १२.६ १ १७ वरुणो दक्ष श० ४.१ ४ १ वरुण एव सविता जै० उ० ४.२७ ३ स वा एषो (सूर्य) ऽप प्रविश्य वरुणो भवति कौ० १८ ६. वरुण आदित्यै (उदक्रामत्) ऐ० १.२४ वरुण आदित्यै (व्यद्रवत्) श० ३ ४ २ १ सवत्सरो वरुण श० ४ ४ ५ १८ सवत्सरो हि वरुण श० ४.१ ४.१० क्षत्र वरुण श० ४ १ ४ १ गो० उ० ६ ७ क्षत्र वै वरुण श० २ ५.२ ६ कौ० ७ १० क्षत्रस्य राजा वरुणोऽधिराज तै० ३ १ २ ७ इन्द्र उ वै वरुण स उ वै पयोभाजन कौ० ५ ४ इन्द्रो वै वरुण स उ वै पयोभाजन गो० उ० १ २२ तद् यदेवात्र पयस्तन्मित्रस्य सोम एव वरुणस्य श० ४ १ ४ ६ वारुण यवमय चरु निर्वपति तै० १ ७ २ ६ वारुणो यवमयश्चरु श० ५ २ ४.११. वरुण्यो ह वा ऽग्रे यव श० २ ५ २-१ वरुण्यो यव श० ४ २ २ ११ निर्वरुणत्वाय एव यवा ता० १८ ६.१७

राजजना) ७ ५६ १७. [वरिवस्प्राति० परिचर्यायामर्थे 'नमोवरिवश्चित्रङ क्यच्' अ० ३ १ १९ सूत्रेण क्यच्। तत शतृ]

वरिवस्यन्तु सेवन्ताम् ६ ५२ १५ परिचरन्तु १ १२२ ३ [वरिवस्प्राति० परिचर्याया क्यच् ततो लोट्]

वरिवस्या वरिवसि परिचर्याया भवानि सेवनकर्माणि १ १८१ १ [वरिवस्प्राति० भवार्थे यत्। तत शैर्लोप-श्छन्दसि]

वरिवः विद्वत्परिचरणम् १५ ५ सुखकारक सेवनम् ७ ४४ सत्यसेवनम् १५ ४. भृश रक्षणम् ५ ३७ चक्रवर्त्ती राज्य और साम्राज्य धन को आर्याभि० १ ४३ [वरिव धननाम। निघ० २ १०]

वरिवोदाः सत्यधर्मविद्वत्सेवाप्रापिका हेतय =शस्त्रास्त्रोन्नतय) १७ १५ [वरिवस् इत्युपपदे डुदाञ् दाने (जु०) धातो क। तत स्त्रिया टाप्]

वरिवोधाम् वरिव परिचरण सुखसेवन दधाति येन तम् (रथ=यानम्) १.११९ १ [वरिवस् उपपदे डुधाञ् धारणपोपणयो (जु०) धातो करणे क्विप्]

वरिवोवित् परिचरणवेत्ता (विद्वज्जन) २६ १७ **वरिवोविदम्**=येन वरिव परिचरण विन्दति तम् (रयिं=धनम्) २० ८३ वरिव सेवन विन्दति येन तम् (रयिम्) २.४१ ९ **वरिवोविदः**=ये वरिव परिचरण विन्दन्ति जानन्ति यद्वा वरिवो धन वेदयन्ति प्रापयन्ति ते (भा०—समर्था विद्वासो जना) ३३.९४ **वरिवोविदा**—परिचरण विन्दति प्राप्नोति येन तेन पराक्रमेण १ १७५ ५ [वरिवस् उपपदे विद् ज्ञाने (अदा०) धातो क्विप् कर्त्तरि। विद्लृ लाभे (तुदा०) धातोर्वा क्विप्]

वरिवोवित्तरा याऽतिशयेन परिचरणलब्ध्री (सुमति =शोभना प्रज्ञा) ३३ ६८ वरिव सेवन विद्वद्वन्दन वा यया सुमत्या साऽतिशयिता ६ १०७.१ वरिव' सत्य व्यवहार वेत्त्यनया साऽतिशयिता (सुमति) ८ ४ [वरिवो-विदिति व्याख्यातम्। ततोऽतिशायने तरबन्ताट् टाप्]

वरिष्ठम् अतिश्रेष्ठम् (वज्र =शस्त्रविशेषम्) ५ ४८ ३ **वरिष्ठः**=अतिशयेन वरिता (इन्द्र =राजा) ६ ३७ ४ **वरिष्ठे**=अतिशयेन वरे (बन्धुरे=प्रेमबन्धने) ६ ४७ ९ [वरप्राति० अतिशायन इष्ठन्। वृञ् वरणे (स्वा०) धातोस्तृजन्तादतिशायन इष्ठनि तृचो लोप। वरिष्ठ वर्पिष्ठम्। नि० ५ १]

वरिष्ठया अतिशयेन स्वीकर्त्तव्यया (सुमत्या) ५.२५ ३. **वरिष्ठा**=अतिशयेनोत्तमा (काकुत्=सुशिक्षिता वाक्) ६ ४१ २ **वरिष्ठाम्**=अतिशयेन वरा गतिम् ११ १२ [वरिष्ठमिति व्याख्यातम्। तत स्त्रिया टाप्। इय (पृथिवी) वै वरिष्ठा सवत्। श० ६ ३ २ २]

वरीमन् अतिशयेन वरे (सुखे) ६ ६३ ३ [वृञ् वरणे (स्वा०) धातोर्बाहु० औणा० ईमनिन्]

वरीमभिः वृण्वन्ति ये तैः शिल्पिभि १ ५५ २ स्वीकर्त्तुमर्हैं (गुणैः) १ १५९ २. वरणीयै (ऐश्वर्यै) १ १३१ १ [वृञ् वरणे (स्वा०) धातोर्बाहु० औणा० ईमनिन्]

वरीयसी अतिशयेन वरा (गातु =भूमि) १ १३६ २ [वरप्राति० अतिशायन ईयसुन्। तत स्त्रिया ङीप्]

वरीयः अतिशयेन वरणीय वरम् (स्योन=सुखम्) २९ २९ अत्युत्तम धनादिकम् ५ ४९ ५ अतिशयित बह्वैश्वर्य्यम् १७ ४९ अतिशयेन बहु (अन्तरिक्षम्= आकाशम्) २ १२ २ [वरप्राति० अतिशायन ईयसुन्। बहु-वाचिन उरुशब्दाद्वातिशायन ईयसुन्। प्राति० वरादेश। वरीयः वरतरम् उरुतर वा नि० ८ ९]

वरीवर्त्ति समन्ताद् भृशमावृणोति समन्ताद्वर्त्तते वा ३७ १७ [वृञ् वरणे (स्वा०) धातोर्यङ्लुगन्ताल्लट्]

वरीवृजत् भृश वर्जय ७ २४ ४ [वृजी वर्जने (अदा०) धातो शतरि 'दाधर्त्तिदर्धर्त्ति०' अ० ७ ४ ६५ सूत्रेण श्लौ रीगागमोऽभ्यासस्य निपात्यते]

वरुण सर्वोत्कृष्ट जगदीश्वर १ ५० ६ शत्रुच्छेदक उत्कृष्टमेनापते १० १६. वरतम (राजन्) २.२७ १० प्रशस्त (राजन्) ६ २२ न्यायकारिन् (राजन्) ६.२२ उत्तमकर्मकारिन् (मित्र) ५ ६९ २ उदान इवोत्तम विद्वन् (जन) ३३ ४६ अतिश्रेष्ठ (विद्वज्जन) ३३ ४८ अत्युत्तम (अ०—विद्वज्जन) २१ २. वायुरिव वर्त्तमान (सत्पुरुष) २ २८ ७ शत्रूणा बन्धक (भा०—धार्मिक जन) १२ १२ वरप्रापक (विद्वज्जन) २० १८ श्रेष्ठ सचिव ४ ४१ ६

वरुणम्=बहि स्थ प्राण शरीरस्थमपान वा १ २ ७ ऊर्ध्वगमनबलहेतुमुदान वायुम् १ २३ ४ ईप्सितव्यम् (अर्यमण=न्यायेशम्) ६ ५१ ३ जलमिव शान्त्यादिगुणम् (राजपुरुषम्) ४ ३९ ४ श्रेष्ठगुणम् (मित्र=सखायम्) ४ २ ४ क्रियाहेतुमुदान वरगुणयुक्त विद्वास वा १ १०६ १

वरुणयोः=उदान इव वर्त्तमानयो (अध्यापकाध्येत्रो) ६ ५१ १ **वरुणस्य**=वायोर्जलस्य वा, प्र०—वरुण इति पदनामसु पठितम् निघ० ५ ४. अनेन प्राप्तिसाधनो गृह्यते

वृनम् श० ६ ५ ४ ६]

वरूथम् गृहम् ७ ३० ४ स्वीकर्त्तुमर्हम् (पदार्थम्) ११८९ ६ प्रशस्त गृहम् ७ ३२ ७ वरणीयमुत्तमम् (कर्म्म) १ ११६ ११ वर श्रेष्ठम् (भेपज =रोगनाशक-व्यवहारम्) प्र०—अत्र 'जॄवृभ्यामूथन्' उ० २.६ अनेन वृञ्-धातोरूथन् प्रत्यय १ २३ २१ वर्त्तुमर्ह गृहम् ५ ३५ [वृञ् वरणे (स्वा०) धातो 'जॄवृञ्भ्यामूथन्' उ० २ ६ सूत्रेण ऊथन्। वरूथम्=गृहनाम निघ० ३ ४]

वरूथिने प्रशस्तानि वरूथानि गृहाणि विद्यन्ते यस्य तस्मै (जनाय) १६ ३५ [वरूथप्राति० प्रशसाया मत्वर्थे इनि । ततश्चतुर्थी । वरूथमिति व्याख्यातम्]

वरूथ्यम् वरूथे गृहे भवम् (छर्दि) ६ ६७ २ गृहेषु साधु (शर्म =गृहम्) ५ ४६ ५ [वरूथमिति व्याख्यातम् । ततो भवार्थे साध्वर्थे वा यत्]

वरूथ्य उत्तमेषु गृहेषु भव (राजा) ५ २४ १२ वर (विद्वान्) १५ ४८ यो वरूथ्येषु श्रेष्ठेषु गुणकर्मस्वभावेषु भव. (अग्नि =सर्वाभिरक्षकेश्वर:) ३ २५ वरूथ्येषु गृहेषु साधु (अग्नि =वेदविदध्यापकोपदेशक) २५ ४७ [पूर्वपदे व्याख्यातम्]

वरेण्यम् अतिश्रेष्ठम् (भर्ग =सकलदोषनाशक परमात्मस्वरूपम्) प्र०—अत्र 'वृञ एण्य' उ० ३ ९८ अनेन वृञ्-धातोरेण्य प्रत्यय ३ ३५ वर्त्तुमर्हमत्युत्तमम् (भर्ग शुद्धस्वरूपम्) ३० २ स्वीकर्त्तव्यम् (भर्ग =सर्वदु खप्रणाशक तेज स्वरूपम्) ३६ ३ अतिशयेन वर्त्तव्यम् (गृहपतिम्) ५ ८ १ सर्वेभ्य उत्कृष्ट प्राप्तु योग्यम् (भर्ग =दु खमूल-भर्जक-परमात्मस्वरूपम्) ३ ६२ १० स्वीकर्त्तुमर्हम् (वसु= द्रव्यम्) ६ १६ ३३ प्रशस्तगुणकर्मस्वभावकारकम् (रयिम्) १.७९ ८ स्वीकार करने योग्य, अतिश्रेष्ठ (भर्ग =शुद्धस्वरूप) स० प्र० ५१, ३६ ३ अतीवोत्तमम् (अव =रक्षणादिक कर्म्म) ५ ३५ ३ यद्वर वर्त्तुमर्हमतिश्रेष्ठम् (भर्ग = परमात्मस्वरूपम्) प० वि० । वरितु स्वीकर्त्तुमर्हम् (सुत= पुत्र विद्यार्थिन वा) ३ १२ १ स्वीकर्त्तु भोक्तुमर्हम् (सोम= महौषधिविशिष्टमन्नम्) ३ ४० ५. वरीतुमर्ह श्रेष्ठम् (शेव= सुखस्वरूप जीवम्) १ ५८ ६ अतिश्रेष्ठ, ग्रहण और ध्यान करने योग्य (भर्ग =परमात्मस्वरूप) स० वि० ७५, ३६ ३ **वरेण्य:**=वर्त्तु स्वीकर्त्तुमर्ह (अोपविसार) १ १७५ २ वरणीयो जन २१ १२ वरितुमर्होऽतिश्रेष्ठ (विद्वज्जन) ३ २७ ६ सर्वत उत्कृष्टतम (परमेश्वर) १.२५ ३ स्वीकर्त्तु योग्य (विश्पति =सभापती राजा) १ २६ ७. [वृञ् वरणे (स्वा०) धातो 'वृञ एण्य' उ० ३ ९८ सूत्रेण एण्य. वरेण्य =वरणीय नि० १२.१३. अग्निर्वै वरेण्यम् जै० उ० ४ २८ १ आपो वै वरेण्यम् जै० उ० ४ २८ १ चन्द्रमा वै वरेण्यम् जै० उ० ४ २८ १]

वर्क् वर्जयसि, प्र०—अत्र 'मन्त्रे घसह्वर०' इति च्लेर्लुक् १ ६३ ७ छिनत्सि ६ २६ ३ **वर्क्तम्**=त्यजेताम् ६ ५९ ७. त्यजतम् १ १८३ ४ [वृजी वर्जने (अदा०) धातोर्लुङि 'मन्त्रे घसह्वर०' अ० २ ४ ८० सूत्रेण च्लेर्लुक् । अडभावश्छान्दस]

वर्चसा वर्चन्ते दीप्यन्ते सर्वे पदार्था यस्मिन् वेदाध्ययने तेन २ २४ तेजसा ८ १६ प्रकाशेन ३५ ३ विद्यादीप्त्या १३ ४०. साङ्गोपाङ्गवेदाध्ययनेन २० २२ अन्नाऽध्ययनादिना १२.७ **वर्चसे**=अध्यापनाय २६ ९ स्वप्रकाशाय वेदप्रवर्त्तकाय (अग्नये=विज्ञानमयाय न्यायव्यवहाराय) ८ ३८ निजात्मप्रकाशाय, योगबलप्रकाशाय, सद्गुणप्रकाशाय, रोगाऽपहारकायौषधाय ७ २८ शब्दार्थसम्बन्धविज्ञानाय, शुद्धसिद्धान्तप्रकाशाय, प्रागल्भ्याय, अध्ययनदीप्त्यै, पराक्रमाय, अन्नाय ७ २७ **वर्च:**=वर्चन्ते दीप्यन्तेऽनेन तद्वर्चो विद्याप्रापणम्, अ०—वेदचतुष्टयम्, विद्याव्यवहारप्रापकम्, अ०—शरीरात्मबलम्, प्रकाशक विद्युत्सूर्यप्रसिद्धाग्न्याख्य तेज ३ ९ अध्यापनतेज ३ ८ ३ अन्नम् ३ २४ १ विद्याप्राप्ति दीप्ति वा ३ १७ विज्ञान तेजो वा ४ १७ विज्ञानप्रकाश १२ ४८ य सर्वविदा ज्योतिषा, ज्ञानवता जीवाना वर्चोऽन्तर्यामितया सत्योपदेष्टा (परमेश्वर), ऋ० भू० २४८, ३ ९ सद्विद्याप्रचार सम्यगध्ययनाऽध्यापनप्रबन्ध कर्म ऋ० भू० १०४, अथर्व० १२ ५ ८ विद्याबलन्यायदीपनम् ९ ३७ पढी हुई विद्या का विचार स० वि० १४४, अथर्व० १२ ५ ८ **वर्चांसि**=प्रकाशमानाऽध्ययनानि ९ २२ [वर्च दीप्तौ (भ्वा०) धातोरौणादिकोऽसुन् । वर्च अन्ननाम निघं० २ ७ सूर्यस्य वर्चसा ता० १ ३ ५ सूर्यस्य वर्चसा (त्वाभिषिञ्चामीति) श० ५ ४ २ २. ततोऽस्मिन् (अग्नौ) एतद् वर्च आस श० ४ ५ ४ ३ वर्च्चो वा ऽएतद् हिरण्यम् श० ३ २ ४ ९ वर्चो वै हिरण्यम् तै० १ ८ ९ १ यद् वै वर्चस्वी कर्म चिकीर्षति शक्नोति वै तत् कर्त्तुम् श० ५.२. ५ १२ वर्चो द्वाविंश (यजु० १४ २३) सवत्सरो वाव वर्चो द्वाविंशस्तस्य द्वादश मासा सप्तर्त्तवो द्वेऽहोरात्रे सवत्सर एव वर्चो द्वाविंशस्तद् य तमाह वर्च इति सवत्सरो हि सर्वेषा भूताना वर्चस्वितम श० ८ ४ १ १६]

वर्चस्यम् वर्चसेऽध्ययनाय हितम् (हिरण्य =तेजोमय

वरुण पर्णानि ऐ० १ २५ यत् पञ्चाद्वासि वरुणो राजा भूतो वासि जै० उ० ३ २१ २ एषा (उत्तरा) वै वरुणस्य दिक् तै० ३ ८ २० ४ यद्वै यज्ञस्य दुरिष्ट तद्वरुणो गृह्णाति तां० १३ २ ४ यद्वस्य (ईजानस्य) दुरिष्ट भवति वरुणो ऽस्य तद् गृह्णाति श० ४ ५ १.६ वरुणेन (यज्ञस्य) दुरिष्ट (शमयति) तै० १ २ ५ ३ वरुण (यज्ञस्य) स्विष्टम् (पाति) ऐ० ३ ३८ सत्यानृते वरुण तै० १ ७ १०.४ अनृते खलु वै क्रियमाणे वरुणो गृह्णाति तै० १ ७ २ ६ वरुणो वा एत गृह्णाति य पाप्मना गृहीतो भवति श० १२ ७ २ १७ वरुण धर्मणा पते तै० ३ ११ ४ १ वरुण (एवैन) धर्मपत्तीना (सुवते) तै० १ ७ ४ २ वरुणो वा ऽआर्पयिता श० श० ५ ५ ४.३१ सवो वै देवाना वरुण श० ५ ३ १ ५ वरुणो ऽन्नपति श० १२ ७ २ २० वरुण सम्राट् सम्राट्पति तै० २ ५ ७ ३ श० ११ ४ ३ १० वरुणो वै देवाना राजा श० १२ ८ ३ १० विराड् वरुणस्य पत्नी गो० उ० २ ९ अथ यदप्सु वरुण यजति स्व एवैन तदायतने प्रीणाति कौ० ५ ४ अप्सु वै वरुण तै० १ ६ ५ ६ वरुण्यो वा अवभृथ श० ४ ४ ५ १० वरुण्या वाऽएता आपो भवन्ति या स्यन्दमानाना न स्यन्दन्ते श० ५ ३ ४ १२. वरुणस्य वा अभिषिच्यमानस्याप इन्द्रिय वीर्य निरघ्नन्। तत् सुवर्णं हिरण्यमभवत् तै० १ ८ ६.१ वरुण्यो वै ग्रन्थि श० १ ३ १ १६ वरुण्यो हि ग्रन्थि श० ५ २ २ १७ वरुण्या वा ऽएषा यद्रज्जु श० ३ २ ४ १८ वरुण्या वै यज्ञे रज्जु श० ६ ४ ३ ८ वरुण्या रज्जु श० १ ३ १ १४ वारुणो वै पाश तै० ३ ३ १० १ श० ६ ७.३ ८ वारुणम् एककपाल पुरोडाशो भवति श० ४ ४ ५ १५ वारुणो दशकपाल (पुरोडाश) तां० २१.१० २३ तद्धि वारुण यत्कृष्ण (वास) श० ५ २ ५ १७. वरुणस्य सायम् (काल) आमवोऽपान तै० १ ५ ३ १ खलतेर्विक्लिधस्य शुक्लस्य पिङ्गाक्षस्य मूर्द्धन् जुहोति। एतद्वै वरुणस्य रूपम् तै० ३ ९ १५ ३. वारुणो वा अश्व तै० २ २ ५ ३ (प्रजापति) वारुणमश्वम् (आलिप्सत) श० ६ २ १ ५ स हि वारुणो यदश्व श० ५ ३ १.५ एष वै प्रत्यक्ष वरुणस्य पशुर्यन्मेष श० २ ५.२.१६. वारुणी च हि त्वाष्ट्री चावि श० ७ ५ २.२० यज्ञो वै वैष्णुवारुण कौ० १६ ८ वरुणसवो वा ऽएप यद् राजसूयम् श० ५ ३ ४.१२ यो राजसूय स वरुणसव तै० २ ७ ६ १ मैत्रो वै दक्षिण वारुण सव्य तै० १ ७ १० वरुण्या वा ऽएता ओपधयो या कृष्टे जायन्ते श० ५ ३ ३ ८ वरुण्या वा ऽएषा (शाखा) या परशुवृक्णाथैषा मैत्री (शाखा) या स्वयम्प्रशीर्णा श० ५ ३ २ ५ वरुण्य वा ऽएतद् यन् मथितम् (आज्यम्) अथैतन् मैत्र यत् स्वयमुदितम् श० ५ ३ २ ६]

वरुणध्रुतः वरुणेन ध्रुत स्थिरीकृत (अर्यमा=न्यायाधीश) ७ ६० ९ [वरुण-ध्रुतपदयो समास। ध्रुत = ध्रु गतिस्थैर्ययो (तुदा०) धातो क्त]

वरुणमिव पार्श्वैर्न्वक व्याघ्रमिव ६.४८ १४ प्राणोदानाविव वर्त्तमानौ राजाऽमात्यौ ५ ६२ ८ [वरुणम्-इवपदयो समास]

वरुणशेषसः वरुण उत्तमो जन शेपो येपान्ते (मनुष्या) ५ ६५ ५ [वरुण-शेपपदयो समास]

वरुणा श्रेष्ठौ (होतृयजमानौ) ८ ५९ उत्तमौ (अध्यापकोपदेशकौ) ५ ६४ ६ [वरुण इति व्याख्यातम्। ततो द्विवचनस्याकारादेश]

वरुणानी वरस्य भार्य्या ५ ४६ ८ **वरुणानीम्**=श्रेष्ठस्य स्त्रियम् २ ३२ ८ यथा वरुणस्य जलस्येव शान्तिमाधुर्यादिगुणयुक्ता शक्तिरतथाभूतम् (स्त्रियम्) १ २२ १२ [वरुणप्राति० स्त्रियाम् 'इन्द्रवरुणभव०' अ० ४ १ ४९ सूत्रेण स्त्रिया ङीप् आनुक् च। वरुण इति व्याख्यातम्। वरुणानी वरुणस्य पत्नी नि० १२ ४६]

वरुणानी जलादिपदार्थयुक्ते (रोदसी=द्यावापृथिव्यौ) ७ ३४ २२. [वरुणानीति व्याख्यातम्। ततो द्विवचनस्य पूर्वसवर्णदीर्घश्छान्दस]

वरुण्यात् वरुणेपु वरेपु भवादपराधात्, भा० श्रेष्ठापराधात् १२ ९०. [वरुणप्राति० भवार्थे यत्]

वरूता वरिता स्वीकर्त्ता (इन्द्र=विद्वज्जन), प्र०—'असित०' इत्यादिषु निपात १ १६९ १ श्रेष्ठ (इन्द्र = परमैश्वर्यप्रदो राजा) ६ २५.७ वारयिता (इन्द्र =विद्वज्जन) २ २० २ [वृञ् वरणे (स्वा०) धातो 'असितस्कभित०' अ० ७.२ ३४ सूत्रेण तृच्-प्रत्यय ऊडागमो निपात्यते]

वरूत्री वर्त्तुमर्हा (वरणीया विद्या) ७ ४० ६ वरणीया नीतियुक्ता माता ७ ३८ ५ वरसुखप्रदा (माता) ५ ४१ ५ **वरूत्रीभिः**=वरणीयाभिर्विद्याभि ७ ३४ २२ **वरूत्रीम्**=वरयित्रीम्, भा०—आकर्पणसम्बन्धनीम् (माया=प्रज्ञापिका विद्युतम्) १३ ४४ वरितु स्वीकर्त्तुमर्हाम् (धिषणा=वाचम्) १ २२ १० **वरूत्रीः**=अत्यन्त वरा (श्रीमन्तो विद्वास) ३ ६२ ३ वरा (देवी =कमनीया स्त्रिय) ११.६१ [वृञ् वरणे (स्वा०) धातो कर्त्तरि तृजन्तात् स्त्रिया ङीप्। 'असितस्कभित०' अ० ७ २ ३४. सूत्रेणोडागम। अहोरात्राणि वै वरूत्रयोऽहोरात्रैर्हीद सर्वं

(गरुजन) ५ २६ १४ निवारक (प्रतिरोधिजन.) ४ २० ७ विपरिवर्तयिता (भा०—राजपुरुष), प्र०—अत्र वृणोतेस्तृच् 'छन्दस्युभयथा' इति सार्वधातुकत्वादिडभाव १ ४० ८ [वृतु वर्त्तने (भ्वा०) वृतु वरणे (दिवा०) धातो. कर्त्तरि तृच्। वृणोतेर्वा कर्त्तरि तृच्। 'छन्दस्युभयथे' ति सार्वधातुकत्वाद् इटोऽभाव]

वर्तिका सङ्ग्रामे प्रवर्त्तमाना (सेना) १ ११७ १६ 'वत्तख' इति भाषायाम् २४ ३० **वर्त्तिकाम्**=विनयादि-सहिता नीतिम् १.११८ ८ चटकापक्षिणीम् १ ११६.१४. शकुनि-स्त्रियम् १ ११२.८ **वर्तिकाः**=पक्षिविशेषा २४ २० [वृतु वर्त्तने (भ्वा०) धातो कर्त्तरि ण्वुल्। तत स्त्रिया टापि 'वर्त्तका शकुनौ प्राचामुपसंख्यानम्' अ० ७ ३ ४५ वा०सूत्रेण वेत्वम्]

वर्ति. वर्त्तन्ते व्यवहरन्ति यस्मिन्मार्गे तम्, प्र०—'हृपिषिरुहिवृति०' उ० ४ ११६ इत्यधिकरण इ-प्रत्यय 'सुपा सुलुक्०' इति द्वितीयैकवचनस्य स्थाने सुरादेश १ ३४.४ वर्तन्ते यस्मिन् गमनाऽऽगमनकर्मणि तत् (रय=रमणयानम्) १ ६२ १६ मार्ग ६ ४६ ५ वर्त्तमान (मार्गम्) २० ८१ सन्मार्गम् १ १८४ ५ [वृतु वर्त्तने (भ्वा०) धातो 'हृपिषिरुहिवृति०' उ० ४.११६ सूत्रेणाधिकरण इ]

वर्तोभ्याम् गमनाऽऽगमनाभ्याम् २५ १ [वृतु वर्त्तने (भ्वा०) धातोरौणा० असुन्। ततस्तृतीयाया द्विवचने रूपम्]

वर्त्मानि मार्गान् १ ८५ ३. [वर्त्मन्प्राति० प्रथमाबहुवचनम्। वर्त्मन्=वृतु वर्त्तने (भ्वा०) धातोरौणा० बाहु० मनिन्]

वर्ध वर्धस्व, प्र०—अत्र व्यत्ययेन परस्मैपदम् ६ १८ १ वर्धय ५ ५६ २ **वर्धत्**=वर्धते ५.६२ ५ वर्धयेत् ५ ६२ ५ **वर्धतम्**=वर्धयाम् ४ ५० ११ **वर्धतु**=वर्द्धताम् ४ ५३ ७ **वर्धन्**=वर्धयन्तु ६ ५१ ११ **वर्धन्त**=वर्धन्ते ५.१६ ३. **वर्धन्ति**=वर्धन्ते ५ ३६ ५ वर्धयन्ति ६ १ ५ **वर्धन्तु**=वर्धयन्तु, प्र०—अत्र व्यत्ययेन परस्मैपद णिजर्थोऽन्तर्गत ३ १० ६ वर्धन्ताम् ३ ५२ ८ [वृधु वृद्धौ (भ्वा०) धातोर्लोट्। व्यत्ययेन परस्मैपदम्। अन्यत्र लेट्, लोट्, लङ्, लट् च। वर्धन्तु वर्धयन्तु नि० १ ११]

वर्धत. यो गुणैर्दोषैर्वा वर्धते तस्य (वृद्धस्य सज्जनस्य) १ ५१ ६ [वृधु वृद्धौ (भ्वा०) धातो शतृ। तत षष्ठ्या एकवचनम्]

वर्धनम् विद्यादिगुणाना वर्धकम् (उक्थ=स्तोत्रम्) १ १० ५ येन वर्धयन्ति तत् (सुखोन्नयनम्) १ ८० १ वर्धते येन तत् (ब्रह्म=धनम्) ६ २३ ५ वृद्धिकरम् (वच=वचनम्) १ ११४ ६ वर्द्धयितारम् (शिशु=बालकम्) १ १४० ३ सब का ज्ञान बढाने वाले (ईश्वर) को स० प्र० २३८, १०.४६ १. **वर्धनः**=उन्नेता (यज्ञ=सङ्गतो ससार) ३ ३२ १२ **वर्धनेन**=वृद्धिनिमित्तेन न्यायेन सह ८.४६ [वृधु वृद्धौ (भ्वा०) धातो 'नन्दिग्रहिपचादिभ्य०' अ० ३ १ १३४ सूत्रेण ल्यु। करणे ल्युट् वा। 'अनुदात्तेतश्च हलादे' अ० ३ २ १४९ सूत्रेण वा तच्छीलादिषु युच्]

वर्धना सुखाना वर्द्धनानि १.५२ ७. यानि वर्धन्ते तानि (ब्रह्माणि=धनान्यन्नानि वा) ५ ७३ १० उन्नतिकराणि कर्माणि ७ २२.७ [वर्धन इति व्याख्यातम् तत प्रथमाबहुवचने शेर्लोप]

वर्धनानि वृद्धिकराणि (ब्रह्माणि=धनानि) ६ २३ ६ [वृधु वृद्धौ (भ्वा०) धातोर्ल्युट् करणे]

वर्धनेभिः वर्धकै साधनै ३ ३६ १ [वृधु वृद्धौ (भ्वा०) धातोर्ल्युट्। वर्धनप्राति० 'बहुल छन्दसी' ति भिस ऐस् न भवति]

वर्धमानम् हानिरहितम् (जगदीश्वर भौतिकमग्नि वा) ३ २३ ह्रासरहितम् (अग्नि=परमेश्वरम्) ११ ८ अत्यन्त वृद्धिमन्तम् (अग्नि=परमेश्वरम्) वे० भा० न० **वर्धमानः**=यो वर्धते स (जीव.) ६ ६ ४ सर्वथोत्कृष्ट (ईश्वर) १३ २ यो विद्यया क्रियाकौशलेन नित्य वर्धते स (विद्वज्जन) ११.२६ [वृधु वृद्धौ (भ्वा०) धातो शानच्]

वर्धमानाः वृद्धिशीला (सत्स्त्रिय) ३ ३८ २ [वर्धमानमिति व्याख्यातम्। ताच्छील्ये चानश् वा]

वर्धय उन्नय १ १२५ ३ सर्वोत्कृष्टता सम्पादय सम्पादयति वा, अ०—वर्द्धयति ३ १४ उत्कृष्ट सम्पादय ११०४ **वर्धयन्ति**=उन्नयन्ति १ ५४ ८ **वर्धयन्तु**=बढाया करो स० वि० १२२, अथर्व० १४.१ ५४ **वर्धयाति**=वर्द्धयेत् १८ ३४ [वृधु वृद्धौ (भ्वा०) धातोर्णिजन्ताल् लोट्। अन्यत्र लट् लेट् चापि]

वर्धयन् उन्नयन् (सोम=सखा) ३ ६२ १५ [वृधु वृद्धौ (भ्वा०) धातोर्णिजन्ताच्छतृ]

वर्धयन्तीः उन्नयन्त्य (कुमार्य्य) १ ७१ ३ [वृधु वृद्धौ (भ्वा०) धातोर्णिजन्ताच्छतृ। तत स्त्रिया ङीप्]

वर्धयमानः विद्यासुशिक्षयोन्नयमान (जन) १ १२५ १

सुवर्णम्) ३४ ५० [वर्चस्प्राति० हितार्थे यत्]

वर्चस्वत् प्रशस्तानि वर्चांस्यन्नानि यस्मात्तत् (हिरण्य=तेजोमय सुवर्णम्) ३४ ५० [वर्चस्प्राति० प्रशसाया मत्वर्थे मतुप्। मतुप्सूत्र 'इतिकरणस्ततश्चेद् विवक्षा' इति नियमेन पञ्चम्यर्थेऽपि मतुप्]

वर्चस्वान् विद्याविज्ञानवान् (विद्वज्जन.) १३ ४० सर्वविद्याऽध्ययनयुक्त (सभापती राजा) प्रशस्तविद्याध्ययन (प्रजासभासेनाजन) ८ ३८ [वर्चस्प्राति० प्रशसाया भूम्न्यर्थे वा मतुप्]

वर्चस्विन् बहु वर्चोऽध्ययन विद्यते यस्मिन् तत्सम्बुद्धौ (अग्ने=तेजोमय सभापते) ८ ३८. [वर्चस्-प्राति० भूम्न्यर्थे (मत्वर्थे) 'अस्मायामेधास्रजो विनि' अ० ५ २ १२१ सूत्रेण विनि]

वर्चिनम् देदीप्यमानम् (शम्बर=मेघम्) ६.४७ २१. **वर्चिनः**=बह्वधीतस्य (दासस्य=सेवकस्य) ४ ३० १५ प्रदीप्तस्य (सर्ववलस्य राज्ञ) २ १४ ६ [वर्च दीप्तौ (भ्वा०) धातोस्ताच्छील्ये णिनि]

वर्चोदसौ सूर्याचन्द्रमसाविवाऽतिथ्याध्यापकौ ७ २७ न्यायप्रकाशकौ सर्वाधिष्ठातारौ सभापतिन्यायाधीशाविव योगाऽऽरुढ-योगजिज्ञासू ७ २८ **वर्चोदाः**=योगब्रह्मविद्याप्रद, विद्याप्रद, वर्चो वल ददातीति तत्सम्बुद्धौ भा०—पूर्णविद्य (अ०—विद्वज्जन) ७ २८ दीप्ति ददातीति (सूर्य) ४ ३. सकलविद्याध्ययनप्रदा (हेतय =शस्त्रास्त्रोन्नतय) १७ १५ यो वर्चो विज्ञान ददातीति, तत्प्राप्तिहेतुर्वा (अग्नि =सर्वविद्यामयेश्वरो विद्याहेतुर्भौतिकोऽग्निर्वा) ३ १७ वर्चो विद्या दीप्ति वा ददातीति, भा०—प्रकाशहेतुर्विद्याप्रदो वा (सूर्य =जगदीश्वरो विद्वान् जीवो वा) २ २६ यथायोग्य प्रकाश ददाति तत्सम्बुद्धौ, दीप्तिप्रदो जाठराग्निरिव, वर्चो विद्यावल ददातीति, सत्यवक्तृत्वप्रद, तज्ज्ञानद, विज्ञानप्रद (अध्येताऽध्यापको वा) ७ २७ विद्यादि तेज अर्थात् विज्ञान देने वाला (ईश्वर) आर्याभि० २.३३, ३ १७ [वर्चस् इत्युपपदे डुदाञ् दाने (जु०) धातोरौणा० असुन्]

वर्चोधाम् या वर्चो विद्या दीप्ति दधाति ताम् (धियम्) ४ ११ [वर्चस् इत्युपपदे डुधाञ् धारणपोषणयो (जु०) धातो क । तत स्त्रिया टाप्]

वर्णम् रूपम् २ १२ ४ स्वीकर्त्तव्यम् (आर्य= धार्मिक जनम्) ३ ३४ ६ आज्ञापालन-स्वीकरणम् १.१०४ २ स्वीकर्त्तुमर्हमतिसुन्दरम् (रूपम्) ४.२ स्वीकरणीयम् (इद=जलम्) २ ५ ५ स्वीकारम् ३ ३४ ५ चक्षुर्विषयम् (वस्तुस्वरूपम्) १ ७३ ७. स्वस्वरूपम् १ ११३ २ **वर्णः**=वरीतु योग्य (सूर्य-प्रकाश) ४.२६ **वर्णाय**= स्वीकरणाय ३० ६. सुरूपसम्पादनाय ३० १७ **वर्णे**= शुक्लादिगुणे २.१ १२ **वर्णेन**=तेजसा ४ ५ १३. **वर्णौ**=परस्परेण व्रियमाणौ सुन्दरस्वरूपौ (स्त्रीपुरुषौ) १.१७२ ६. [वृञ् वरणे (स्वा०) धातो 'कृवृजृ०' उ० ३ १०. सूत्रेण न प्रत्यय । वर्ण वृणोते नि० २ ३ चत्वारो वै वर्णा । ब्राह्मणो राजन्यो वैश्य शूद्र श० ५ ५ ४ ६]

वर्त वर्त्तते १.१०५ १४. **वर्तस्व**=वर्तस्व वर्त्तते वा १२.१०३. **वर्ते**=वर्त्तमानो भवेयम् २ २७ [वृतु वर्त्तने (भ्वा०) धातोर्लोट् । पुरुषव्यत्यय । परस्मैपदञ्च व्यत्ययेन। अन्यत्र लोट् लट् च]

वर्तनिम् वर्त्तन्ते यस्मिँस्त मार्गम् ३ ७ २ स्वकीयमार्गम् ऋ० भू० १३८, ऋ० ८.२ १० १ वर्त्तन्ते यस्मिँस्त न्यायमार्गम् ७ १८ १६ **वर्तनिः**=वर्त्तमान (श्येनी) १ १४० ६. [वृतु वर्त्तने (भ्वा०) धातोरधिकरणे 'वृतेश्च' उ० २.१०६. सूत्रेणानि]

वर्तनी गमनागमनसत्क्रिया १ ५३ ८ वर्त्तते यया क्रियया सा १ ५३ ८ **वर्तनीम्**=मार्गम् ५ ६१ ६ **वर्तनीः**=मार्गान् ४ १६ २ [वृतु वर्त्तने (भ्वा०) धातो करणे ल्युट् । ततो ङीप् स्त्रियाम्]

वर्तम् वर्त्तयतम् ६ ६२ ११ **वर्तयतु**=प्रवृत्त कारयतु ४ २०. **वर्तयथ**=निष्पादयथ १ ३६ ३ **वर्तया**=दूरीकुरु २ २३ ७ **वर्तयाते**=वर्तयेत, प्र०—प्रथमैकवचनस्य आडागमे णिजन्तस्य वर्ते प्रयोग. ५ ३७ ३ **वर्तयासि**=वर्तये २३.७. [वृतु वर्त्तने (भ्वा०) धातोर्णिजन्ताल् लोट् । 'छन्दस्युभयथेति' आर्धधातुकत्वान् णेर्लोप । अन्यत्र लट् लेट् च]

वर्तमानः वर्ततेऽसौ वर्त्तमान (पदार्थ) १ ३५ २. [वृतु वर्त्तने (भ्वा०) धातो शानच्]

वर्तयध्यै वर्तयितुम् ५ ४३ २ [वृतु वर्त्तने (भ्वा०) धातोर्णिजन्तात् तुमर्थेऽध्यै प्रत्यय]

वर्तयामसि प्रवर्तयाम १८ ६८ [वृतु वर्त्तने (भ्वा०) धातोर्णिजन्ताल्लट् । 'इदन्तो मसि' रिति मस इदन्तता]

वर्तवे वरितु स्वीकर्त्तुम् ३.३३ ४ [वृञ् वरणे (स्वा०) धातोस्तुमर्थे तवेन् प्रत्यय.]

वर्ता वर्तयिता (असाधुजन) ६.६६ ८. स्वीकर्त्ता

[वर्षोपपदे ह्वेञ् स्पर्धाया शब्दे च (भ्वा०) धातो क्विप्]

वर्षिमा वृद्धस्य भाव १८४ [वृद्धप्राति० भाव इमनिच् प्रत्यये 'प्रियस्थिर०' अ० ६ ४ १५७ सूत्रेण वर्षिरादेश]

वर्षिष्ठम् अतिशयेन वृद्धम् (ऋत=सत्य कारणम्) ३ ५६ २ वृद्धिकारकम् (रयिं=धनम्), प्र०—अत्र वृद्ध-शब्दादिष्ठन् वर्षिरादेशश्च १८१ **वर्षिष्ठाय**=अति-वृद्धाय श्रेष्ठाय (नाकाय=अविद्यमानदुःखाय मोक्षाय) ३०.१२ अतिशयेन वृष्टिकराय (विदुषे जनाय) ५ ७ १. **वर्षिष्ठे**=अतिशयेन वृद्धो वर्षिष्ठस्तस्मिन् विशाले सुख-स्वरूपे (नाके=मोक्षे) १ २२ [वृद्धप्राति० अतिशायन इष्ठन्-प्रत्यये 'प्रियस्थिर०' अ० ६ ४ १५७ सूत्रेण वर्षि-रादेश.। वृषु सेचने (भ्वा०) धातोर्वा तृजन्ताद् इष्ठन्प्रत्यये तृचो लोप]

वर्षिष्ठया अतिशयेन वृद्धया (इषा=उत्तमान्नादि-समूहेन) १८८१. **वर्षिष्ठा**=अतिशयेन वृद्धा (तनू) ५.८ [वर्षिष्ठमिति व्याख्यातम्। तत स्त्रिया टाप्]

वर्षिष्ठा अतिशयेन वृद्धानि (नृम्णानि=धनानि) ४ २२ ६ [वर्षिष्ठप्राति० प्रथमावहुवचने शेर्लोपश्छन्दसि]

वर्षीयसि सर्वसुखमभिवर्षति (यज्ञे) ६ ११ **वर्षीयसे**=अतिशयेन विद्यावृद्धाय (विदुषे जनाय) १६ ३० **वर्षीयान्**=अतिशयेन वृद्धो महान् (इन्द्र=सूर्य) २३ ४८ [वृद्धप्राति० अतिशायन ईयसुन्प्रत्यये 'प्रिय-स्थिर०' अ० ६ ४ १५७ सूत्रेण वर्षिरादेश]

वर्षीयः अतिशयेन श्रेष्ठम् (वय=कमनीयमायु) ६ ४४ ६ वृद्धम् (इन्द्र=सूर्य) २३ ४७. [वृद्धप्राति० अतिशायन ईयसुन्प्रत्यये 'प्रियस्थिर०' इति वर्षिरादेश]

वर्षः यज्ञकर्मणा सर्वसुखसेचक (यजमान वातो वा) ६ ११. [वृषु सेचने (भ्वा०) धातोरौणा० असुन्]

वर्ष्मन् यो वर्षति तत्सम्बुद्धौ (विद्वज्जन) ४ ५४ ४ सद्गुणाना सेचक (पुरुषार्थिजन) ३ ८ ३ **वर्ष्माणम्**= वर्षकम् (सूर्यकिरणसमूहम्) ६ ४७ ४ वर्ष के मेघमण्डले २८ १ सेचने ३ ५ ६ सुखवृष्टिनिमित्ते (अ०—जगति) ५.१७ [वृषु सेचने (भ्वा०) धातो कर्त्तरि मनिन्]

वर्ष्यम् वर्षासु भवम् (नभ=अन्तरिक्षम्) ५ ८३ ३ **वर्ष्यान्**=वर्षासु साधून् (मेघान्) ५ ८३.३ [वर्षाप्राति० भवार्थे यत्]

वर्हि उत्सन्नाऽभूत् ३ ५३ १७]

वलम् वक्रगतिम् ४ ५० ५ मेघम् ६ १८ ५ वलयुक्तम् (मेघम्) १ ६२ ४ वलम् २ १४ ३. **वलस्य**=वलवत. शत्रो १ ५२ ५ **वलः**=वल, वलवान् (इन्द्र=विद्वज्जन) ३ ३० १० [वल मेघनाम निघ० १.१०. वलम्=वृञ् वरणे (स्वा०) धातो कर्त्तर्यच्। छान्दस लत्वम्। वलो वृणोते नि० ६ २]

वलंरुजः यो वल मेघ रुजति स (इन्द्र=सूर्य) ३.४५ २ [वलोपपदे रुजो भङ्गे (तुदा०) धातोश्छान्दस खश्]

वल्गते गच्छते (जनाय) २२ ७ [वल्ग् गत्यर्थे (भ्वा०) धातो शतृ]

वल्गू अत्युत्तमौ (वायुविद्युतौ) ६.६२ ५ शोभनवाचौ (सभासेनेशौ), प्र०—वल्गु इति वाङ्नाम निघ० १.११, ६.६३.१ [वल सवरणे सञ्चरणे च (भ्वा०) धातो 'वलेर्गुक्' च उ० १.१६ सूत्रेण उ । गुणागमश्च। वल्गु वाङ्नाम निघ० १.११.]

वल्गूयति सत्करोति ४ ५० ७ [वल्गूयति गतिकर्मा निघ २ १४ अर्चतिकर्मा निघ० ३ १४]

वल्मीकान् मार्गान् २५ ८. [वल सवरणे सञ्चरणे च (भ्वा०) धातो: 'अलीकादयश्च' उ० ४ २५ सूत्रेण कीकन्। वहुलवचनात् मुडागमश्च। श्रोत्र ह्येतत् पृथिव्या यद् वल्मीक तै० ११३४ ऊर्ज वा एत रस पृथिव्या उपदीका उद्दि-हन्ति यद् वल्मीकम् तै० ११३.४ प्राजापत्यो वै वल्मीक । तै० ३ ७ २ १ सर्पाणा वल्मीको गृहा मै० ४ १.१३.]

वल्हामसि प्रधाना भवाम भा०—प्रधानपुरुषा भवेम २३ ५१ [वल्ह प्राधान्ये (भ्वा०) धातोर्लट्। व्यत्य-येन परस्मैपदम्]

ववक्ष वहतु, प्र०—अत्र वर्त्तमाने लिटि 'वाच्छन्दसि' इति सुडागम ३ ७ ६ वहति ४.७ ११. **ववक्षिथ**= वोढु प्राप्तुमिच्छथ २ २४ ११. वोढुमिच्छ ३ ६ ३ वहति, प्र०—अत्र पुरुषव्यत्यय २ २२ ३. वोढुमिच्छसि, प्र०— अत्र लडर्थे लिट्, सन्नन्तस्य वहधातोरय प्रयोग 'वहुल छन्दसि' इत्यनेनाऽभ्यासस्येत्त्वाऽभाव ११०२८ **वव-क्षिरे**=रुष्टा स्यु २ ३४ ४ **ववक्षे**=रुष इव विरुध्यति ३ ५ ८ वक्षति रोष सङ्घात करोति १ ६१.६ सहन्ति, प्र०— अय वक्ष सङ्घाते इत्यस्य प्रयोग ११४६ २ वहति ७८ २ **ववक्षुः**=वक्षयन्ति रोपयन्ति १ ६४ ३. [वह प्रापणे (भ्वा०) धातोर्लिटि छान्दस सुट्। अथवा वक्ष रोपे सघाते च (भ्वा०) धातोर्लिट्। ववक्षिथ महन्नाम निघ० ३ ३ ववक्षे प्रब्रूपे नि० ५ ८]

[वृधु वृद्धौ (भ्वा०) धातोर्णिजन्ताच्छानच्]

वर्धयामसि वर्द्धयाम, अ०—प्रदीपयाम, प्र०—अत्र 'इदन्तो मसि' इनीकारादेश ३.३ [वृधु वृद्धौ (भ्वा०) धातोर्णिजन्ताल्लट् 'इदन्तो मसि' इति मस इदन्तत्वम्]

वर्धसे शमादिषु स्वात्मानमुन्नयसि ७ १२ **वर्धस्व**=वर्धस्व वर्धते वा, अ०—वर्धय, प्र०—अत्राऽन्त्यपक्षे व्यत्ययो लडर्थे लोट् च २ १४ **वर्धान्**=वर्द्धयेत् ६ ३८ ४ **वर्धान्**=वर्धयेयु, प्र०—अत्र व्यत्ययेन परस्मैपदम् १ ७० ४ वर्धयेरन् ६ ३८ ४ **वर्धासे**=वर्धसे ६ १६ १६ वृद्धो भव २६ १३ **वर्धिषीमहि**=पूर्णां वृद्धिं प्राप्नुयाम ३८ २१. [वृधु वृद्धौ (भ्वा०) धातोर्लेट्। अन्यत्र लोट्, लेट्, लङ्, लिङ् च]

वर्धः यो वर्धयति तत्सम्बुद्धौ (अग्ने=विज्ञानप्रद जन) १ ७१ ६. [वृधु वृद्धौ (भ्वा०) धातोरौणा० असुन्]

वर्पणीतिः वर्पस्य रूपस्य नीतिर्नायक (इन्द्र=राजा), प्र०—अत्र नीतौ कर्त्तरि क्तिच् ३ ३४ ३ वर्पाणि नानाविधाना रूपाणि नीति प्राप्तिर्यस्य स (सभेशो राजा) ३३.२६ [वर्प-नीतिपदयो समास। वर्प रूपनाम निघ० ३ ७ नीति=णीञ् प्रापणे (भ्वा०) धातो क्तिन् कर्त्तरि क्तिच् वा]

वर्पसः रूपस्य, प्र०—वर्प इति रूपनाम निघ० ३ ७, १ १४१ ३ **वर्पः**=रूपयुक्त (राजसेनाधीशरथ.) ३ ५८.६ रूपम् १ १४० ५ **वर्पांसि**=सुन्दराणि रूपाणि ६ ४४ १४ [वृङ् सम्भक्तौ (क्र्या०) धातो 'वृङ्शीङ्भ्या रूपस्वाङ्गयो पुट् च' उ० ४ २०१ सूत्रेणासुन्। वर्प इति रूपनाम वृणोतीति सत नि० ५ ८.]

वर्म कवचम् २६ ४५ रक्षकम् (कवचम्) १८ ३ सर्वतो रक्षणम् ११ ३० वर्म इव रक्षकम् (ईश्वरम्) ६ ७५ १६ [वर्म गृहनाम निघ० ३ ४ वृञ् वरणे (स्वा०) धातोर्मनिन्]

वर्मिणः कवचिन (वीरराजपुरुषा) ६ २७ ६ **वर्मिणे**=बहूनि वर्माणि शरीररक्षासाधनानि विद्यन्ते यस्य तस्मै (पुरुषाय) १६ ३५ **वर्मी**=कवचवान् (योद्धृजन) २६.३८ कवचधारी (सैनिक) ६ ७५ १ [वर्मन्-प्राति० मत्वर्थे इनिश्छान्दस]

वर्मेव कवचमिव १ १४१ १० [वर्मन्=इवपदयो समास]

वर्वर्त्ति भृश वर्तते १ १६४ ११ [वृतु वर्त्तने (भ्वा०) धातोर्यङ्लुगन्तात्लट्]

वर्वृतति भृश गच्छति ६ ४६ १४ [वृतु वर्त्तने (भ्वा०) धातोर्यङ्लुगन्तात् लट्। व्यत्ययेन श]

वर्षतु शब्दविद्याया वृष्टिं करोतु १ २६ सिञ्चतु १ २६ [वृषु सेचने (भ्वा०) धातोर्लोट्]

वर्षते यो वर्षति तस्मै (मेघाय) २२ २६. [वृषु सेचने (भ्वा०) धातो शतृ]

वर्षनिर्णिजः वर्षस्य वृष्टे शोधका पोषका वा (वाय्वादिपदार्था.) ३ २६ ५ ये वर्ष निर्णेनिजन्ति ते (मरुत=मनुष्या) ५ ५७ ४ [वर्षोपपदे निरुपसृष्टान् णिजिर् शौचपोषणयो (जु०) धातो क्विप्]

वर्षम् वृष्टिरिव १६ ६४ [वृषु सेचने (भ्वा०) धातो 'अज्विधौ भयादिभ्य उपसख्यानम्०' इति वा०सूत्रेण अच्]

वर्षवृद्धम् शस्त्राऽस्त्राणा वर्धयितारम् वृष्टेवर्द्धक यज्ञम् १ १६ [वर्षोपपदे वृधु वृद्धौ (भ्वा०) धातोर्बाहु० औणा० क्त]

वर्षाभिः वर्षन्ति मेघा यासु ताभि (वृष्टिभि) २१ २५ **वर्षाभ्यः**=वर्षर्त्तौ कार्यसाधनाय २४.११. **वर्षाः**=यासु मेघा वर्षन्ति ता (वृष्ट्य) १३ ५६ [वृषु सेचने (भ्वा०) धातो 'अज्विधौ भयादिभ्य उपसख्यानम्०' इत्यच्। तत स्त्रिया टाप्। वर्षा वर्षत्यासु पर्जन्य नि० ४ २७ (ऋतु) यद् वर्षति तद् वर्षाणाम् (रूपम्) श० २ २ ३ ८ यदा वै वर्षा पिन्वन्ते ऽथैना सर्वे देवा सर्वाणि भूतान्युपजीवन्ति श० १४ ३ २ २२ मरुतो वै वर्षस्येशते श० ६ १ २ ५ षड्भि पार्जन्यैर्वा मारुतैर्वा (पशुभि) वर्षासु (यजते) श० १३ ५ ४ २८ वर्षं सावित्री गो० पू० १ १३ वर्षा वै सर्व ऽऋतव श० २ २ ३ ७ वर्षा ह त्वेव सर्वेषामृतूना रूपम् श० २ २ ३ ७ वर्षा पुच्छम् (सवत्सरस्य) तै० ३ ११.१० ४ वर्षा उत्तर (पक्ष सवत्सर) तै० ३ ११ १० ३ वर्षा एव यश गो० पू० ५ १५ वर्षा उद्गाता तस्माद् यदा बलवद् वर्षति साम्न इवोपब्दि क्रियते श० ११ २ ७ ३२ (प्रजापतिः) वर्षामुद्गीथम् (अकरोत्) जै० उ० १.१२ ७ वर्षा उद्गीथ प० ३ १ वर्षाशरदौ सारस्वताभ्याम् (अवरुन्धे) श० १२ ८ २ ३४ वर्षाभिर्ऋतुनादित्या स्तोमे सप्तदशे स्तुत वैरूपेण विशौजसा तै० २ ६ १६ १ वर्षा ह्यस्य (वैश्यस्य) ऋतु. ता० ६ १ १० तस्माद् वैश्यो वर्षास्वादधीत विड्ढि वर्षा श० २ १ ३ ५ तस्य (आदित्यस्य) रथप्रोतश्चासमरथश्च (यजु० १५ १७ सेनानीग्रामण्याविति वार्षिकौ तावृतू श० ८ ६ १ १८]

वर्षाह्वः या वर्षा आह्वयति सा भेकी २४ ३८

४ ४२ २ स्वीकर्त्तु (मनुष्यस्य) ६ २०.२. [वृञ् वरणे (स्वा०) धातो 'आद्गमहन०' अ० ३.२ १७१. सूत्रेण कि । लिड्वद्भावेन द्वित्वञ्च । वव्रि =रूपनाम निघ० ३.७ वव्रिरिति रूपनाम वृणोतीति सत नि० २ ८]

वव्रिवांसम् विभजन्तम् (अहिं=मेघम्) ६ २० २. आवरकम् (वृत्र=मेघम्) २ १४ २ विवृतम् (वृत्रम्) ४ १६ ७. व्रियमाणम् (शत्रुम्) ३.३२ ६ [वृञ् वरणे (स्वा०) वृञ् आवरणे (चुरा०) धातोर्वा लिट क्वसु]

वव्रुः विवृण्वति ४ १ १५ वृणुयु १२ २८ **वव्रे**= वृणोति ३ ३८ ८ व्रियते १ ६२ ७ [वृञ् वरणे (स्वा०) धातोर्लिट्]

वशम् स्वाधीनताम् १ ११६ २१. कमनीयम् (अश्व्यम्=अश्वेषु साधुम्) १ ११२.१० **वशस्य**= वशवर्त्तिन (प्रजाजनस्य) ६ २४ ५ **वशः**=कामयमान (विद्वज्जन) १ १२६ १ वशित्वगुणप्रापक (परमेश्वर ओषधिराजो वा) १ ६१ ६ **वशान्**=शमदमादियुक्तान् धार्मिकाञ्जनान् १ ८२ १३ कामयमानान् पदार्थान्, अ०— उत्कृष्टव्यवहारसाधकान् कामान् ३ ५२ वशवर्त्तिन (जनान्) १ १८१ ५ **वशानाम्**=कमनीयानाम् (विद्वज्जनानाम्) ३ ६० ४ **वशाः**=देदीप्यमाना (पशव.) २४ १४ **वशे**=प्रकान्ते यस्मिँस्तस्मिन्, प्र०—अत्र बाहुलकादौणादिकोऽन् प्रत्यय ४ ११. वश मे स० प्र० १६, अथर्व० ११ २४ २ [वश कान्तौ (अदा०) धातो 'वशिरण्योरुपसख्यानम्' अ० ३ ३ ५८ वा०सूत्रेण भावेऽप्। बाहु० औणा० वा अन्। वष्टि कान्तिकर्मा निघ० २ ६.]

वशा कमनीयानि (धना=धनानि) २ २४ १३. [वशमिति व्याख्यातम्। तत शेर्लोपश्छन्दसि]

वशा वन्ध्या गौ १८ २७ अप्रसूता (गौ) २१ २१ कमिताऽऽहुति २ १६ **वशाभिः**=कमनीयाभिर्गोभि २ ७ ५ **वशाः**=देदीप्यमाना (द्यावापृथिवीया पशव.) २४ १४ [वश कान्तौ (अदा०) धातोरच्। ततष्टाप्। यद् वशमस्रवत्सा वशाऽभवत् तस्मात्सा हविरिव ऐ० ३ २६ यदा न कञ्चन रस पर्यशिष्यत तत एषा मैत्रावरुणी वशा समभवत्तस्मादेषा न प्रजायते श० ४ ५ १ ६ सा हि मैत्रावरुणी यद् वशा श० ५ ५ १ ११ वशामनूवन्ध्यामालभते श० २ ४ ४ १४ इयं (पृथिवी) वै वशा पृश्नि श० १ ८ ३ १५ इयं (पृथिवी) वै वशा पृश्निर्यदिदमस्या मूल चामूल चान्नाद्य प्रतिष्ठित तेनेय वशा पृश्नि श० ५ १ ३ ३.]

वशाम कामयेमहि १ १६५ ७ **वश्मि**=कामये २ ३१ ७. [वश कान्तौ (अदा०) धातोर्लेट्। अन्यत्र लट्]

वशासः ये वशं प्राप्ता (महाढ्या जना) ६ ६३.६ [वशमिति व्याख्यातम्। ततो जसोऽसुक्]

वशिम् वशकर्त्तारम् (इन्द्र=जीवम्) २८ ३३. [वश कान्तौ (अदा०) धातोर्बाहु० औणा० इन्]

वशी वशं कर्त्तुं शील (इन्द्र=सभाध्यक्ष) १ १०१ ४ जितेन्द्रिय (राजा) ८.५० वशीकर्त्तुं समर्थ (सविता=परमेश्वर) ४ ५३ ६ वशं कर्त्तुं शीलमस्य स (ईश्वर) प० वि०। जितेन्द्रियोऽन्तःकरण (इन्द्र.=सेनापति) १७.३५ [वश कान्तौ (अदा०) धातोरस्मात्छीलार्थे णिनि]

वषट् क्रियाकौशलम् ११ ३६.

वषट्कारान् ये वषट् धर्म्या क्रिया कुर्वन्ति तान् (भा०—सत्क्रियान् मनुष्यान्) १६ २०. **वषट्काराः**= उत्तमा क्रिया. २० १२ **वषट्कारेण**=होम क्रिया के तुल्य स० वि० २०६, अथर्व० ६ ६ २ ५ **वषट्कारैः**= श्रेष्ठै कर्म्मभि २१ ५३. उत्तमकर्म्मभि २० १२ [वषट् इत्युपपदे डुकृञ् करणे (तना०) धातोरण्। स यै वौगिति करोति। वाग्वै वषट्कारो वाग्रेतो रेत एवैतत् सिञ्चति षडित्यृतवो वै षट् तद् ऋतुष्वेवैतद् रेत सिच्यते तद् ऋतवो रेत सिक्तमिमा. प्रजा प्रजनयन्ति तस्मादेव वषट् करोति श० १ ७ २ २१ वाक् च वै प्राणापानौ च वषट्कार ऐ० ३ ८ वाक् च ह वै प्राणापानौ च वषट्कार गो० उ० ३ ६ तस्यै (वाचे) द्वौ स्तनौ देवा उपजीवन्ति स्वाहाकार च वषट्कार च श० १४ ८ ९ १ प्राणो वै वषट्कार श०, ४ २.१.२९ एष एव वषट्कारो य एष (सूर्य) तपति श० १.७ २ ११ एष वै वषट्कारो य एष (सूर्य.) तपति श० ११.२ २ ५ य. सूर्य स धाता स उ एव वषट्कार ऐ० ३.४८ यो धाता स वषट्कार ३ ४७. निमेषो वषट्कार तै० २.१.५ ६. त्रयो वै वषट्कारा वज्रो धामच्छद् रिक्त ऐ० ३ ७ त्रयो वै वषट्कारा वज्रो धामच्छद् रिक्त । स यदेवोच्चैर्बलवषट्करोति स वज्र ··· । अथ य सभ सन्ततो निर्हाणच्छत्स्व धामच्छत् ······ । अथ येनैव षट् पराप्नोति स रिक्त गो० उ० ३ ३ वज्रो वै वषट्कार ऐ० ३ ८ कौ० ३ ५ गो० उ० ३ ५ वज्रो वषट्कार श० १ ३.३ १४ वज्रो वा एष यद् वषट्कारो य द्विष्यात्त ध्यायेद् वषट्करिष्यस्तस्मिन्नेव त वज्रमास्थापयति ऐ० ३ ६ देवेपुर्वा एषा यद् वषट्कार ता० ८ १ २ देवपात्र वाऽएष यद् वषट्कार श० १ ७ २ १३ देवपात्र वा एतद्

ववन्द वन्दति नमस्करोति ६ ६३ ३ प्रशसति ६ ५१ १२ **ववन्दिम**=प्रणमेम ५ २५ ६ **ववन्दिरे**=प्रणमन्तु ३ ५४ ४ आनन्दन्तु ३ ५४ ४ [वदि अभिवादन-स्तुत्यो (भ्वा०) धातोर्लिट् , व्यत्ययेन परस्मैपदम्]

ववन्म याचामहे ७ ३७ ५ [वनु याचने (तना०) धातोर्लिट् । व्यत्ययेन परस्मैपदम्]

ववर्जुषीणाम् भृश दोपान् वर्जयन्तीनाम् (विशा=प्रजानाम्), प्र०—अत्र यङ्नुगन्ताद् व्रजे क्विवन्त रूपम् १ १३४ ६ [वृजी वर्जने (अदा०) धातोर्लिट क्वसु । तत स्त्रिया ङीप्]

ववर्त वर्त्तने, प्र०—अत्र शप श्लुस्तस्य स्थाने तप् च १ १६५ २ **ववर्तत्**=वर्तने ४ ४४ ३ वर्तयेत् ४ २४ १ **ववर्थ**=वर्तते ३ ४३ ७ [वृतु वर्त्तने (भ्वा०) धातोर्लट् । 'बहुल छन्दसी' ति शप श्लु । तप्रत्ययस्य च स्थाने तवादेशश्छान्दस । अन्यत्र लङि छान्दस द्वित्वम् । ववर्थ प्रयोगे लिटि वृतुधातोर्तलोपश्छान्दस]

ववर्थ वृणोपि, प्र०—अत्र वर्तमाने लिट् १ ६१ २२ [वृञ् वरणे (स्वा०) धातोर्लिटि 'बभूथाततन्थ०' अ० ७ २.६४ सूत्रेण निपातनाद् इडभावे रूपम्]

ववर्ध वर्धते ५ २.२ [वृधु वृद्धौ (भ्वा०) धातोर्लिट् व्यत्ययेन परस्मैपदम्]

ववर्ह वर्धयति २ २३ १३ [वृह वृद्धौ (भ्वा०) धातोर्लिट्]

ववव्रुषः रूपवत (तमसः=अन्धकारस्य), प्र०—अत्र वव्रिरिति रूपनाम धातोर्लिट क्वसु १ १७३.५]

ववाच उक्तवान् प्र०—'सम्प्रसारणाच्च' इत्यत्र 'वाच्छन्दसि' इत्यनुवर्त्तनाद् यजादेश १ ६७ ४ [वच परिभाषणे (अदा०) धातोर्लिट् । 'वा छन्दसी' ति पूर्वरूपाऽभावे यणादेशे च रूपम्]

ववार वृणात्युद्घाऽटयति, प्र०—अत्र वर्त्तमाने लिट् १ ३२ ११ [वृञ् वरणे (स्वा०) धातोर्लिट्]

ववाशिरे शब्दायन्ते २ २ २ [वाशृ शब्दे (दिवा०) धातोर्लिट्]

ववृक्तम् छिन्तम् ६ ६२ १० [वृजी वर्जने (अदा०) धातोर्लोट् । 'बहुल छन्दसी' ति शप श्लु । व्यत्ययेन परस्मैपदञ्च]

ववृजु. त्यक्तवन्त १ ३३ ५. [वृजी वर्जने (अदा०) धातोर्लिट् । व्यत्ययेन परस्मैपदम्]

ववृतत् वर्त्तते ६ १७ १० **ववृतीमहि**=भृश वर्त्तेमहि १ १३८ ४ **ववृतीय**=वर्त्तेयम् १ १८६ १० वर्त्तेयामि, प्र०—अत्र 'बहुल छन्दसि' इति साऽभ्यासत्वम् १ १८० ५. **ववृत्यात्**=वर्त्तेत, प्र० —अत्र व्यत्ययेन, परस्मैपदम्, शप स्थाने श्लुश्च १ १०७ १ वर्त्तयेत् ६ १७ १३ वर्त्तताम् ८ ४ वर्त्तेत, १ १०७ १ आवर्त्तताम् प्र०—वृतुधातोर्लिङि विकरणाऽऽत्मनेपद व्यत्ययेन श्लुर्द्वित्वञ्च ३३ ३८ **ववृत्याम्**=वर्त्तयेयम् लिङ्-प्रयोगोऽय 'बहुल छन्दसि' इत्यादिभिर्द्वित्वादिकम् १ ५२ १ **ववृत्याम**=वर्त्तयेम ७ २७ ५ **ववृत्याः**=वर्त्तये ६ १११ वर्त्तेथा १ १७३ १३ प्रवर्त्तये ६ ५० ९ प्रवर्त्तय ७ ४२ ३ **ववृत्युः**=वर्त्तेरन् १ १३५ ५ **ववृत्स्व**=वर्त्तस्व ३ ६१ ३ वर्त्तते ३ ३२ ५ वर्त्तताम् २ १६ ८ [वृतु वर्त्तने (भ्वा०) धातोर्लुङ् । अटोऽभाव । 'वा छन्दसी' ति द्वित्वम् । 'वृद्भ्य स्यसनो ' इति परस्मैपदम् । अन्यत्र लिङ् लोट् च]

ववृतन वर्त्तन्ते ५ ६१.१६ [वृतु वर्त्तने (भ्वा०) धातोर्लोट् व्यत्ययेन परस्मैपदम् । शप स्थाने श्लु , तस्य च तनप्]

ववृधन्त वर्धयन्ति ४ २ १७ [वृधु वृद्धौ (भ्वा०) धातोर्लङ् । 'बहुल छन्दसी' ति शप श्लु]

ववृधध्यु: वर्धयितुम्, प्र०—अत्र 'बहुल छन्दसि' इति शप. श्लुस्तुजादित्वाद् दीर्घश्च १ १२२ १

ववृमहे वृणुयाम ३ ९ १ स्वीकुर्महे ६ ४ ७ [वृञ् वरणे (स्वा०) धातोर्लिट्]

वव्ने सम्भजति ५ ७४ ७ याचते, प्र०—वनु याचने इत्यस्माल्लडर्थे लिट्, वन सम्भक्तौ इत्यस्माद् वा 'छान्दसो वर्णलोपो वा' इत्यनेनोपधालोप १ ३६ १७

वव्रम् वरणीयम् (मेघम्) ५ ३२ ८ **वव्रः**=कूप १ ५२ ३ [वव्र कूपनाम निघ० ३ २३]

वव्राज व्रजति प्राप्नोति ३ १ ६ [व्रज गतौ (भ्वा०) धातोर्लिट्]

वव्रासः सद्यो गन्तार (भा०—धन्या मनुष्या), प्र०—अत्र व्रजधातोर्बाहुलकादौणादिको ड प्रत्ययो द्वित्वञ्च १ १६८.२ [व्रज गतौ (भ्वा०) धातोर्बाहु० औणा० डो द्वित्वञ्च । ततो जसोऽसुक्]

वव्रिणा रूपेण १ ५४ १० **वव्रिम्**=सविभक्तारम् (दातृजनम्) १ १११ १० रूपयुक्त पदार्थममूहम् १.४६ ९ वर्त्तुमर्हम् (पदम्) १ १६४ ७ स्वकीय रूपम् १ १६४ २९. रूपम् ५ ७४ ५ **वव्रिः**=अङ्गीकर्त्ता (भा०—प्राणी) ५ १९ १ **वव्रे**:=स्वीकर्त्तव्यस्य (कृष्टे =मनुष्यस्य)

यद् वषट्कार ऐ० ३ ५. देवपात्र वै वषट्कार गो० उ० ३ १. एत एव वषट्कारस्य प्रियतमे तनूर्यदोजश्च सहश्च कौ० ३ ५ ओजश्च ह वै सहश्च वषट्कारस्य प्रियतमे तन्वौ ऐ० ३ ८ तस्य वाऽएतस्य ब्रह्मयज्ञस्य चत्वारो वषट्-कारा यद् वातो वाति यद् विद्योतते यत् स्तनयति यदव-स्फूर्जति तस्मादेव विद्वान् वाति विद्योतमाने स्तनयत्यव-स्फूर्जत्यधीयीतैव वषट्काराणामच्छम्बट्काराय श० ११ ५ ६ ९ वषट्कारो हैष परोक्ष यद् वेट्कार श० ९ ३ ३ १४]

वषट्कारेभिः भा०—श्रेष्ठकार्य्यै, कर्म्मभि १ ९ १९ [वषट्कारप्राति० 'बहुल छन्दसी' ति भिस ऐस् न भवति]

वषट्कृतम् क्रियया निष्पादितम् (सोम=सदोषधि-रसम्) २ ३६ १ सङ्कल्पितमिव (यज्ञपदार्थसमूहम्) ७ २६ क्रियासिद्धम् (अश्वम्) २५ ३७ **वषट्कृतस्य**=क्रिया-निष्पादितस्य शिल्पविद्याजन्यस्य (विज्ञानस्य) १ १२० ४ [वषट्-कृतपदयो समास]

वषट्कृति वषट् करोति येन यज्ञेन तस्मिन्, प्र०—अत्र 'कृतो बहुलम्' इति वार्तिकमाश्रित्य करणे क्विप् १ १४ ८ [वषट् इत्युपपदे डुकृञ् करणे (तना०) धातो करणे क्विप् तत सप्तमी]

वषट्कृतिम् सत्यक्रियाम् ७ १४ ३ सत्क्रियाम् ७ १५ ६ वषट् क्रिया क्रियते यया रीत्या ताम् १ ३१ ५ [वषट् इत्युपपदे करोते क्तिन्]

वष्टयः कामयमाना (किरणसमूहा) ५ ७९ ५ [वश कान्तौ (अदा०) धातो क्तिन्]

वष्टि कामयते २ ३७ १ प्रकाशते १ ३३ ३ **वष्टु**= प्रकाशयतु २० ८४ कामयताम् २९ ८ कामसिद्धिप्रकाशिका भवतु १ ३ १० कामना-युक्त हो आर्याभि० १ ८, ऋ० १ १ ६ १० [वश कान्तौ (अदा०) धातोर्लट्। अन्यत्र लोट्। वष्टि कान्तिकर्मा निघ० २ ६]

वसतः निवसत ६ ३८ २ **वसः**=निवासय ७ ८ ३ **वसाते**=वसेताम् १९ ८९ **वसाथाम्**=आच्छादयतम् ११ ३० **वसाथे**=आच्छादयथ १ १५२ १ [वस निवासे (भ्वा०) धातोर्लट्। अन्यत्र लड् लेट् च। वस आच्छादने (अदा०) धातोर्वा रूपम्]

वसतिम् निवासम् ५ २ ९ **वसतिः**=निवसति ३५ ४ यत्र वसन्ति सा १८ १५ यो निवसति स (विद्वान् जन) ६ ३ ३ **वसत्या**=वसन्ति यस्या तया १ ६६ ५ [वस निवासे (भ्वा०) धातो 'वहिवस्यर्तिभ्यश्चित्' उ० ४ ६० सूत्रेणाति]

वसना आच्छादनानि १ ९५ ७ [वस आच्छादने (अदा०) धातोर्ल्युट्। तत प्रथमाबहुवचने शेर्लोपश्छन्दसि]

वसन्तः य सुगन्धादिभिर्वासयति स (ऋतु) १३ ५४ **वसन्ताय**=वसन्तर्त्तौ सुखाय २४ ११ **वसन्तेन**= वसन्ति सुखेन यस्मिँस्तेन (ऋतुना) २१ २३ [वस निवासे (भ्वा०) धातो 'तॄभूवहिवसिभासि०' उ० ३ १२८ सूत्रेण झच्। एतौ (मधुश्च माधवश्च) एव वासन्तिकौ (मासौ) स यद् वसन्तऽओषधयो जायन्ते वनस्पतय पच्यन्ते ते नो हेतौ मधुश्च माधवश्च श० ४ ३ १ १४ तस्य (अग्ने) रथगृत्सश्च रथौजाश्च (यजु० १५ १५) सेनानीग्रामण्याविति वासन्तिकौ तावृतू श० ८.६ १ १६ यदेव पुरस्ताद् वाति तद् वसन्तस्य रूपम् श० २ २ ३ ८ तस्य (सवत्सरस्य) वसन्त एव द्वार हेमन्तो द्वार त वाऽएत सवत्सर स्वर्गं लोक प्रपद्यते श० १ ६ १ १९ मुख वा एतद् ऋतूना यद् वसन्त तै० १ १ २ ६ तस्य (सवत्सरस्य) वसन्त शिर तै० ३ ११ १० २ ऊर्ग् वै वसन्त ऐ० ४ २६ वसन्त आग्नीध्रस्तस्माद् वसन्ते दावाश्चरन्ति तद् ह्यग्निरूपम् श० ११ २ ७ ३२ वसन्त समिद्धोऽन्यानृतून् समिन्धे श० १ ३ ४ ७ वसन्तो वै समित् श० १ ५.३ ९ समिधो यजति वसन्तमेव वसन्ते वा इद सर्व समिध्यते कौ० ३ ४ वसन्तो हिंकार। प० ३ १ स (प्रजापति) वसन्तमेव हिकारमकरोत् जै० उ० १ १२ ७ षड्भिराग्नेयै (पशुभि) वसन्ते (यजते) श० १३ ५ ४ २८ वसन्तेनर्त्तुना देवा वसवस्त्रिवृता स्तुतम्। रथन्तरेण तेजसा। हविरिन्द्रे वयो दधु तै० २ ६ १९ १ वसन्त एव भर्ग गो० पू० ५ १५ वसन्तो वै ब्राह्मणस्यर्त्तु तै० १ १. २ ६ श० १३ ४ १ ३ तस्माद् ब्राह्मणो वसन्तऽआदधीत ब्रह्म हि वसन्त श० २ १ ३ ५]

वसया निवासहेतुना जीवनेन २५ ९ **वसाम्**= वीररसनीतिम् ६ १९ [वस निवासे (भ्वा०) धातोरौणा० अन्। ततष्टाप् स्त्रियाम्]

वसर्हा वसाना वासहेतूनामर्हक (परिज्मा=अग्नि), प्र०—अत्र शकन्ध्वादिना पररूपम् १ १२२ ३ [वस-अर्हन्-पदयो समासे शकन्ध्वादिना पररूपम्। वस=वस निवासे (भ्वा०) धातोरौणा० अन्। अर्हन्=अर्ह पूजायाम् (भ्वा०)+शतृ]

वसवः ये वसन्ति तत्सम्बुद्धौ (देवा=विद्वासो जना) ४ ५५ १ पृथिव्यादय इव प्रथमविद्याकल्पा, (अ०—विद्वासो जना) ३८ ६ वसु-सज्ञका (मरुत=विद्वज्जना) २ ३४ ९. सुखवासप्रदा (पिता, माता, भ्राता च) ६ ५१ ५

१.५३ ३ वस्तु १८ १५ धनप्रदम् (भौतिकमग्निम्) १५ ४७ विद्यादिधनसमूहम् १ ४७ ६ कार्यकारणद्रव्यम् १ ४७ ६ वस्तुजातम् १ ८१ ६ जलाख्य द्रव्यम् ६ ४७ २२ **वसुना**=प्रशस्तेन धनेन १ ८३ १ **वसूनाम्**=पृथिव्यादितत्त्वाना धनाना वा ७ ७ ७ पृथिव्यादिपदार्थानाम् १२ ६६ **वसूनि**=विज्ञानादिधनानि १ ८४ २० विद्याचक्रवर्त्तिराज्यप्राप्त्याणि उत्तमानि धनानि १ १५ ८. [वसुरिति वसव पदे व्याख्यातम्]

वसु वसूनि धनानि ६ ७ द्रव्याणि २७ ४० विज्ञानानि धनानि वा ६ ४८ १५. वासस्थानानि १ ८१ ७ [वसुरिति व्याख्यातम्। तत 'सुपा सुलुक्०' इति जसो लुक्]

वसुता वसूना द्रव्याणा भाव ६ १ १३ [वसुप्राति० भावे तल्। ततष्टाप् स्त्रियाम्]

वसुतातिम् धनमेव १ १२२ ५ **वसुतातिः**=धनाद्यैश्वर्ययुक्त (सभाध्यक्ष) १ १२२ १२ [वसुप्राति० स्वार्थे तातिल् छान्दस]

वसुदानः उत्तमोत्तमपदार्थस्य दाता (परमेश्वर) ऋ० भू० २४६, [वसूपपदे डुदाञ् दाने (जु०) धातो कर्त्तरि ल्युट् 'कृत्यल्युटो बहुलम्' इति सूत्रेण]

वसुदावन् यो वसूनि द्रव्याणि ददाति तत्सम्बुद्धौ (विद्वज्जन) २ ६ ४ यो वसूनि धनानि सुपात्रेभ्यो ददाति तत्सम्बुद्धौ (सूरे=विद्वज्जन) १२ ४३ **वसुदावा**=यो वसूनि ददाति स (न्यायाधीशो जन) २ २७ १२ [वसूपपदे डुदाञ् दाने (जु०) धातो कर्त्तरि वनिप्]

वसुदेयाय वसूनि द्रव्याणि देयानि येन तस्मै (विद्वज्जनाय) ६ ३६ ५ देय वस्तु यस्य तस्मै (विदुषे जनाय) २ ३५ ७ दातव्यधनाय १ ५४ ६ [वसु-देयपदयो समास। वसुरिति व्याख्यानम्। देयम्=डुदाञ् दाने (जु०) धातोर्यत्]

वसुधातम योऽतिशयेन वसूनि दधाति स, भा०—अतिधनी (अग्नि=पावक) २७ १५ [वसूपपदे डुधाञ् धारणपोषणयो (जु०) धातो क्विप्। ततोऽतिशायने तमप्]

वसुधितिम् पृथिव्यादिवसूना धितिर्यस्मात्तम् (वायुम्) २७ २४ वसूना द्रव्याणा धारकम् (अग्नि=विद्युदग्निम्) ४ ८ ३ वसूना धितयो यस्य तम् (विद्वास जनम्) १ १२८ ८ **वसुधिती**=यौ वसूनि धरतस्तौ (अध्यापकोपदेशकौ) १ १८१ १ वसूना पदार्थाना धर्त्र्यौ द्यावापृथिव्यौ ३ ३१ १७ विद्याधारिके (भा०—अध्यापिकोपदेशिके स्त्रियौ) २८ ३८ वसूना धितिर्ययोर्द्यावापृथिव्योस्ते (द्यावापृथिवी) ४ ४८ ३ द्रव्यधारिके (उपासानक्ता) २८ १५ [वसु-धितिपदयो समास। वसुरिति व्याख्यातम्। धिति=डुधाञ् धारणपोषणयो (जु०) धातो क्तिन्। औणादिको वा नि.। 'दधातेर्हि' रिति न भवति छन्दसि सर्वविधीना विकल्पनात्। धातोरित्त्वमपि छान्दसम्। वसुधिती वसुधान्यौ नि० ६ ४१]

वसुधेयस्य वसुधेय यस्मिँस्तस्य (विदुषो जन य) २१ ४८ कोपस्य २८ १४ ससारस्य २१ ५८ पृथिव्याद्याधारस्य (भा०—ससारस्य) २१ ५७ द्रव्याधारस्य (ससारस्य) २८.३५ धनाऽऽधारस्य कोपस्य २८ ३६. वसूनि धेयानि यस्मिँस्तस्य जगत २८ १२ अन्तरिक्षस्य मध्ये २८ १५ वस्वैश्वर्यं धेय यत्र तस्यैश्वरस्य २८ १६ सर्वपदार्थाधारस्य ससारस्य २१ ५६ धनकोशस्य २१.४६ [वसु-धेयपदयो समास। धेयम्=डुधाञ् धारणपोषणयो (जु०) धातोर्यत्। वसुधेयस्य वसुधानाय नि० ६ ४१ इन्द्रो वसुधेय श० १ ८ २ १६]

वसुनीथ वेदादिशास्त्र-बोधाख्य सुवर्णादिधनञ्च यो नयति तत्सम्बुद्धौ (अध्यापक श्रोतर्वा) १२ ४४ [वसूपपदे णीञ् प्रापणे (भ्वा०) धातो कर्त्तरि 'हनिकुषिनीरमिकाशिभ्य क्थन्' उ० २ २ सूत्रेण क्थन्]

वसुपतिम् वसूनामग्निपृथिव्यादीना पति पालक स्वामिनम् (इन्द्र=धारकमीश्वरम्), प्र०—कतमे वसव इति? अग्निश्च पृथिवी च वायुश्चान्तरिक्ष चाऽऽदित्यश्च द्यौश्च चन्द्रमाश्च नक्षत्राणि चैते वसव, एतेषु हीद सर्वं वसु हितम्, एते हीद सर्व वासयन्ते, तद्यदिद सर्व वासयन्ते तस्माद्वसव इति श० १४ ५ ७ ४, १ ६ ६ धनस्वामिनम् (विद्वज्जनम्) ३.३६ ६ **वसुपतिः**=धनपालक (विद्वज्जन) ७ ४५ ३ वसूना पदार्थाना पालक (विद्वान् जन) ६ ५२ ५ पृथिवी आदि वासहेतु भूतो का पति (ईश्वर) आर्याभि० १ ३०, ऋ० ६ ३ ४० २४.

वसुपत्नी वसूना पालिका (पृथिवी) १ १६४ २७ [वसु-पत्नीपदयो समास। पत्नी=पतिप्राति० स्त्रिया 'पत्युर्नो यज्ञसयोगे' अ० ४ १ ३३ सूत्रेण ङीप् नकारादेशश्च]

वसुमता प्रशस्तानि सुवर्णादीनि विद्यन्ते यस्मिँस्तेन (रथेन) १ ११८ १० प्रशसितधनयुक्तेन (रथेन) १ १२५ ३ बहुधनयुक्तेन (रथेन=यानेन) ४ ४ १० **वसुमते**=बहवो वसवश्चतुर्विंशतिवर्षब्रह्मचर्यसम्पन्ना विद्वासो विद्यन्ते यत्र तस्मै कर्मणे ६ ३२ **वसुमन्तम्**=बह्वैश्वर्यम् (जनम्) ६ ६८ ६ बहुविधद्रव्यसहितम् (रयि=धनम्) ४ ३४ १०.

वाना:=स्वगुणैं सर्वानाच्छादयन्त (विद्वासो जना), प्र०—अत्र 'वहुल छन्दसि' इति शपो लुड् न शानचि व्यत्ययेन मकारस्य वकार १ ६० २ [वस निवासे (भ्वा०) धातो शानच्। व्यत्ययेनात्मनेपदम्। मकारस्य वकारो वर्णव्यत्ययेन। वस आच्छादने (अदा०) धातोर्वा शानचि छान्दस रूपम्। अन्यत्र वसु आनपदयो समासे छान्दस रूपम्]

वसव्यम् वसुपु द्रव्येषु भवम् (राध =धनम्) २ १३ १३ वसुपु पृथिव्यादिपु भवम् (राध) २ १४ १२. **वसव्यस्य**=वसुपु धनेपु साधो (सौभगस्य=महदैश्वर्यस्य) ४ ५५ ८ [वसुप्राति० भवार्थे साध्वर्थे वा यत्]

वसव्या वसुपु धनेपु साध्वी (सूनृता=सत्यप्रियवाणी) ७ ३७ ३ [वसव्यम् इति व्याख्यातम्। तत स्त्रिया टाप्]

वसानम् आच्छादय तम् (सूर्यम्) १ १५२ ४ **वसान:**=प्राप्त (वैश्वानर =राजा) ४ ५ १५ वासयन् (सूर्य) १३ ३१ शरीरमाच्छादयन् (सभासेनेश) १६ ५१ आच्छादित (विद्वज्जन) ३ १ ५ धारयन् (राजा) ६.२९ ३. स्वीकुर्वाण (विश्वरूपोऽग्नि) ३३ २२ धरन् (राजा) ५.४८ ५ आच्छादक (अग्नि) २ १० १ गृह्णन् (सूर्य) ३ ३८ ४ [वस आच्छादने (अदा०) धातो शानच्]

वसाना परिदधती (पत्नी) १ १२२ २ स्वीकुर्वती (उपा) १ १२४ ३ धारयन्ती (सुन्दरी स्त्री) ३ ३९ २ **वसाना:**=वस्त्राभूषणैराच्छादिना (विदुष्य स्त्रिय) १०,७ [वस आच्छादने (अदा०) धातो शानजन्तात् स्त्रिया टाप्]

वसापावान वसा निवास पान्ति ते (वीरजना) ६ १९ [वसोपपदे पा रक्षणे (अदा०) धातो कर्त्तरि वनिप्। वसा=वस निवासे (भ्वा०) धातोरच्। ततष्टाप्]

वसाम् वसता प्राणिनाम् ५ २ ६ [वस निवासे (भ्वा०) धातो क्विप्। तत पष्ठी विभक्ति].

वसिष्ट वसेत् २ ३६ १ **वसिष्व**=धर, प्र०—अत्र 'छन्दस्युभयथा' इत्यार्धधातुकमाश्रित्य लोट्यपि वलादिलक्षण इट् १ २६ १ [वस निवासे (भ्वा० धातोर्लुड्। अटोऽभाव। व्यत्ययेनात्मनेपदम् इडागमश्च छान्दस। अन्यत्र लोट्]

वसिष्ठ अतिशयेन वसो (अग्ने=वह्निरिव राजन्) ७ १ ८ प्रशस्तविद्वन् (जन) ७ ३३ १० **वसिष्ठम्**=यो वसति धर्मादिकर्मसु सोऽतिशयितस्तम् (नर्य्यं=नृपु साधु सत्पुरुपम्) १ ११२ ९ उत्तम विद्वासम् ७ ३३ १३ **वसिष्ठस्य**=अतिशयेन विदुप ७ ३३ ५ **वसिष्ठ**=अतिशयेन वसुमोन् (पूर्णविद्वज्जन) ७ ३३ १२ अतिशयेन विद्यादिधनयुक्त (आप्तो विद्वान्) ७ ३३ १४ अतिशयेन वसु. (विद्वज्जन) ७ ४२ ६ अतिशयेन विद्यासु कृतवास (विद्वज्जन) ७ २६ ५ अतिशयेन धनाढ्य (मनुष्य:) ७ ९ ६ अतिशयेन वासयिता (ऋपि) १३ ५४ **वसिष्ठा:**=धनेऽत्यन्त वास कुर्वन्त (नर =नेतारो जना) ७ ३३ ४ अतिशयेन सद्गुणकर्मसु निवासिन (सज्जना) ७ ३७ ४ येऽतिशयेन धनिन (पितर =ज्ञानिनो जनका) १९ ५१ अतिशयेन वसव (विद्वास पितर) ७ ७ ७ अतिशयेन ब्रह्मचर्ये कृतवासा (विद्वज्जना) ७ ३३ ३ सर्वविद्यायुत्तमगुणेष्वतिशयेन रममाणा (पितर) ऋ० भू० २६०, [वस निवासे (भ्वा०) धातो कर्त्तरि तृजन्तादतिशायन इष्ठन्। 'तुरिष्ठेमेयस्सु' इति तृचो लोप। यद्वै नु श्रेष्ठस्तेन वसिष्ठोऽथो यद् वस्तृतमो वसति तेनोऽएव वसिष्ठ श० ८ १ १ ६ येन वै श्रेष्ठस्तेन वसिष्ठ (हिंकार) गो० उ० ३ ९ एप (प्रजापति) वै वसिष्ठ श० २ ४ ४ २ प्रजापतिर्वै वसिष्ठ कौ० २५ २ प्राणा वै वसिष्ठ ऋपि श० ८ १ १ ६ सा ह वागुवाच। (हे प्राण) यद्वा ऽह वसिष्ठाऽस्मि त्व तद् वसिष्ठोऽसीति श० १४ ९ २ १४ अग्निर्वै देवाना वसिष्ठ ऐ० १ २८ वसिष्ठस्य जनित्रे (सामनी) भवतो वसिष्ठो वा एते पुत्रहत सामनी अपश्यत् स प्रजया पशुभि प्राजायत ता० १९ ३ ८ ततो वै वसिष्ठपुरोहिता भरता प्राजायन्त ता० १५ ५ २४ ये वै ब्राह्मणा शुश्रुवासस्ते वसिष्ठा जै० २ २,४२ रथन्तरमाजभार वसिष्ठ ऐ० आ० ३ १ ६]

वसिष्ठहनु: वसिष्ठस्याऽतिशयेन वासहेतोर्हनुरिव हनुर्यस्य तम् (राजतुल्य जनम्), प्र०—अत्र 'सुपा सुलुक्०' इत्यम स्थाने सु ३९ ८ [वसिष्ठ-हनुपदयो समास]

वसिष्ठास: अतिशयेन वासयितार (सेनाजना) ७ २३ ६ अतिशयेन वसव (प्रजाजना) २० ५४ [वसिष्ठ इति व्याख्यातम्। ततो जसोऽसुगागम]

वसीय: अतिशयेन वस्तृ वसीय (प्राण) १८ ८ [वस निवासे (भ्वा०) धानो तृजन्तादतिशायन ईयसुन्। तृचो लोप]

वसु सुखेपु वसन्ति येन तद्धन विद्याऽऽरोग्यादिसुवर्णादिक वा, प्र०—वस्विति धननामसु पठितम् निघ० २ १०, १ १० ६ वसन्ति सुखेन यत्र तद् विज्ञानम् १ ५५ ८ सुखेपु वासयितृ (राध.=धनम्) २ २२ ३ पर प्रकृष्ट द्रव्यम्

सा (भार्या) ७ १ ६ [वसु सुबन्ताद् आत्मन इच्छायामर्थे क्यजन्तात् 'क्याच्छन्दसि' सूत्रेण उ.। अथवा वसूपपदे यु मिश्रणेऽमिश्रणे च (अदा०) धातो क्विप्। 'अन्येषामपि०' इति दीर्घ.। वसूयव वसुकामा नि० ६ ५.]

वस्त वस्ते आच्छादयति, प्र०—अत्र वर्त्तमाने लङट्-भावश्च १ २५ १३ **वस्तम्**=निवास कुर्याताम् ऋ० भू० २०६, ऋ० ८ ३ २८ २ **वस्ताम्**=आच्छादयताम् १७ ४६ छादयतु ६ ७५ १८ **वस्ते**=आच्छादयति ३ ५५ १४ कामयते ४ २५ २ धरति २६ ४८ [वस आच्छादने (अदा०) धातोर्लेट् अटोऽभावश्च। अन्यत्र लोट् लट् च। व्यत्ययेन परस्मैपदञ्च]

वस्तवे निवस्तुम् १ ४८ २ [वस निवासे (भ्वा०) धातोस्तुमर्थे तवेन्]

वस्तः व्यवहारैराच्छादितो युक्त (पुरुष) १४.६ आच्छादक (प्राज्ञो जन) १ १६१ १३ दिन मे म० प्र० १५१, १० ४० २ [वस आच्छादने (अदा०) धातो क्त औणादिको बहुलवचनात्]

वस्ता आच्छादयिता (परमात्मेव राजा) ३ ४६ ४ [वस आच्छादने (अदा०) धातोस्तृच्। उडभावश्छान्दस]

वस्तिना नाभेरधोभागेन २५ ७ **वस्तिः**=वासहेतु (पुरुष) १६ ८८ [वस आच्छादने (अदा०) वस निवासे (भ्वा०) धातोर्वा 'वसेस्ति' उ० ४ १८० सूत्रेण ति]

वस्तो. दिनम् ६ ४ २ दिनात् २६ २६ दिने २८ १२ दिवसस्य मध्ये ६ २५ ६ प्रतिदिनम् १ १७७ ५ दिन दिनम् ३ ८ [वस्तो अहर्नाम निघ० १ ६ वस्तो दिवा नि० ३ १५]

वस्तोः वासयितुम् १ १७४ ३. [वस निवासे (भ्वा०) धातोस्तुमर्थे तोसुन्]

वस्तोः वसथ ऋ० भू० २१०, [वस निवासे (भ्वा०) धातोर्लेट्। शपो लुक्। वर्णव्यत्ययेना-कारस्योकार]

वस्त्रदाः ये वस्त्राणि ददति ते (धनाढ्या जना) ५ ४२ ८ [वस्त्रोपपदे डुदाञ् दाने (जु०) धातो क]

वस्त्रमथिम् यो वस्त्राणि मथ्नाति तम् (तायु=तस्करम्) ४ ३८ ५ [वस्त्रोपपदे मथे विलोडने (भ्वा०) धातो 'छन्दसि वनसनरक्षिमथाम्' इति इन्। वस्त्रमथिम्=वस्त्रमाथिनम् नि० ४ २४]

वस्त्रा वस्त्राणि ५ ४७ ६ आच्छादनानि १ १३४ ४ [वस्त्रप्राति० शेर्लोपश्छन्दसि]

वस्त्राणि शरीराच्छादकानि १.१५२ १ कार्पासौर्ण-कौषेयकादीनि १.२६ १. **वस्त्रैः**=वासोभि ७ १४ ३ [वस आच्छादने (अदा०) धातोरौणा० ष्ट्रन्। वस्त्र वस्ते नि० ४ २४]

वस्त्रेणेव यथा पटेन १.१४० १ [वस्त्रेण-इव-पदयो समास]

वस्त्रेव यथा वस्त्राणि प्राप्यन्ते तथा ५ २६.१५ [वस्त्रा-इवपदयो समास। वस्त्रा=वस्त्रप्राति० शेर्लोप-श्छन्दसि]

वस्नम् हट्टव्यस्तरम् (विविधव्यापारम) ४.२४ ६. [वस निवासे (भ्वा०) धातो 'धापृवस्य०' उ० ३ ६ सूत्रेण न.]

वस्नयन्ता वस्नमिवाचरन्तौ राजप्रजाजनौ ६ ४७ २१ [वस्नप्राति० आचारेऽर्थे क्यच्। तत शत्रन्ताद् द्विवचन या-कारादेश]

वस्नेव पण्यक्रियेव ३ ४६ [वस्ना-इवपदयो समास]

वस्म निवास-स्थानम् ४.१३ ४ **वस्मनः**=निवसन्त (वय=पक्षिण) २.३१ १. [वस निवासे (भ्वा०) धातोर्बाहु० औणा० मनिन्]

वस्यःइष्टये वसीयसोऽतिशयितस्य धनस्य सङ्गमनाय १ १७६ १ वसीयस इष्टये सङ्गतये, प्र०—अत्र वसु-शब्दा-न्मतुप् ततोऽतिशय ईयसुनि 'विन्मतोर्लुक्' अ० ५ ३ ६५ इति मतोर्लुक् 'टे.' अ० ६ ४ १५५ इति टेर्लोपस्तत 'छान्दसो वर्णलोपो वा' इतीकारस्य लोपश्च १.२५ ४ [वस्यस्-इष्टिपदयो=समास। इष्टि=यज देवपूजासंगति-करणदानेषु (भ्वा०) धातो स्त्रियां क्तिन्। यजादित्वात् किति सम्प्रसारणम्]

वस्यसः येऽतिशयेन वसन्ति ते वसीयासस्तान् (भा०—सुजननिवासान्), प्र०—अत्र 'छान्दसो वर्णलोपो वा' इतीकारलोप ३ ५८ अतिशयेन वसीयसो वसुमत (जनान्) २ १७ ८ [वसुप्राति० प्रशसाया मतुवन्तादति-शायन ईयसुन्। अन्यत् पूर्वपदे व्याख्यातम्]

वस्यसी अतिशयेन वसुमती (स्त्री) ५ ६१ ६ [वस्यस् इति व्याख्यातम्। तत स्त्रियां ङीप्]

वस्यः अतिशयेन वासहेतुम् (धनधान्यादिकम्) ६ ४४ ७ अतिशयेन धनम्, प्र०—अत्र वसुशब्दादीयसुन् प्रत्यय 'छान्दसो वर्णलोपो वा' इतीकारलोप १ ३१ १८ वसुषु साधु (विद्वज्जन) १.१०६ १ वशीय (स्वस्वामिन राजानम्) ७ ३२ १६ अत्युत्तम धनम् २ ३६ ५ वसीयसो-

प्रशस्तधनप्रापक देशम् २ २४ २ [वसुप्राति० प्रशंसायां मतुप् । भूम्न्यर्थे वा]

वसुमती बहूनि वसूनि द्रव्याणि विद्यन्ते यस्या सा (इडा=प्रशसनीया वाणी) २८ १८ **वसुमतीम्**=वसूनि बहूनि वस्तूनि भवन्ति यस्या ताम्, भा०—बहु-सुखप्रापिकाम् (छायाम्=आश्रयम्), प्र०—अत्र भूम्न्यर्थे मतुप् २.८ [वसु-प्राति० भूम्न्यर्थे मतुप् । तत स्त्रिया ङीप्]

वसुमती बहवो वसवो विद्यन्ते ययोस्ते (द्यावापृथिवी) ३ ३० ११ [वसुमतीति व्याख्यातम् । ततो द्विवचनस्य पूर्वसवर्णदीर्घश्छान्दस]

वसुवनिम् धनाना सम्भाजनम् ७ १ २३ [वसूपपदे वन सम्भक्तौ (भ्वा०) धातो 'छन्दसि वनसनरक्षिमथाम्' इति सूत्रेण इन् । अग्निर्वै वसुवनि श० १ ८ २ १६]

वसुवने ऐश्वर्यसेवकाय (जनाय) २१ ५८ धनसेविने (पुरुषाय) २८ ३६ द्रव्ययाचिने (पुरुषाय) २८ ३६ धन-विभाजकाय (मनुष्याय) २८ ३५ धनसेवनाय २१ ४६ वसुप्रदाय जीवाय २८ २० पदार्थविद्यायाचिने (भा०—सुपात्राय याचमानाय) २८ २१ यो वसूनि वनुते याचते तस्मै (पुरुषाय) २८ १६ धनेच्छुकाय (नृपाय जनाय वा) २१ ५६. पृथिव्यादिसेवकाय (जीवाय) २१ ५७ धनप्रापणाय २१.४८ [वसूपपदे वन सम्भक्तौ (भ्वा०) धातो कर्त्तरि क्विप् । वनु याचने धातोर्वा क्विप् । वसुवने वसुवननाय नि० ६ ४१]

वसुवने पृथिव्यादीना सविभागे जगति २८ १५ धनदानाधिकरणे (जगति) २८ १६ [वसूपपदे वन सम्भक्तौ (भ्वा०) धातोर्घञर्थे क]

वसुवाहनम् वसूना द्रव्याणा वाहनम् (रथ=विमाना-दियानम्) ५ ७५ १ [वसु-वाहनपदयो समास । वाहनम्= वह प्रापणे (भ्वा०) धातोर्णिजन्ताल् ल्युट्]

वसुवित् यो वसूनि धनानि विन्दति प्राप्नोति स (पुरुष पतिर्वा) ३८ ५ वसूनि सर्वाणि द्रव्याणि विदन्ति ये येन वा (ईश्वरो विद्वान्वा) १ ९१ १२ यो वसूनि सर्वाणि वस्तूनि यथावद्वेत्ति वेदयति वा स (परमात्मा) ३ २६ सब पृथिवी आदि वसुओं का जानने वाला, सर्वज्ञ और विद्यादि धन का दाता (ईश्वर) आर्याभि० १ ३८, ऋ० १ ६ २१ १२ [वसूपपदे विद ज्ञाने (अदा०) धातो कर्त्तरि क्विप्]

वसुवित्तमम् वसून् पृथिव्यादिलोकान् वेत्ति सोऽति-शयितस्तम्, पृथिव्यादिलोकान् वेदयति सूर्यरूपेणाग्निरेतान् प्रकाश्य प्रापयति स वसुवित्, अतिशयेन वसुविदिति वसु-वित्तमो वा तम् (परमेश्वर भौतिकमग्निं वा) ३ ३८ योऽतिशयेन वसु वेत्ति तम् (देव=दातार जनम्) ६ १६.४१ यो वसूनि विन्दति स वसुवित्, सोऽतिशयितस्तम् (अग्नि= बहुश्रुत सज्जनम्) १ ४५ ७ **वसुवित्तमः**=यो वसूनि द्रव्याणि वेदयति प्रापयति सोऽतिशयित , भा०—पदार्थ-प्राप्तये साधकतम' (अग्नि=ईश्वरो भौतिकोऽग्निर्वा) ३ ३६ [वसुविदिति व्याख्यातम् । ततोऽतिशायने तमप्]

वसुविदा बहुधनप्रदौ (अ०—अध्यापकोपदेशकौ) १ ४६ २ वसुविदावग्निजलवद् वर्त्तमानावध्यापकोपदेशकौ १ ४६ २ [वसुविद्प्राति० प्रथमाद्विवचनस्य 'सुपा सुलुक्०' इत्याकारादेश । वसुविद्=वसूपपदे विद्लृ लाभे (तुदा०) विद सत्तायाम् (दिवा०) धातोर्वा क्विप्]

वसुश्रवाः वसूनि सर्वाणि श्रवासि श्रवणानि यस्य स (अग्नि=सर्वाभिरक्षकेश्वर) ३.२५ वसूनि धनानि श्रवणे यस्य स (अग्नि=वेदविदध्यापकोपदेशक) २५ ४७ धनधान्ययुक्त (राजा) ५ २४ २ वसूनि धनानि श्रवास्य-न्नानि च यस्मात् स (अग्नि=भौतिक) १५ ४८ [वसु-श्रवस्पदयो समास । वसु धननाम निघ० २ १० श्रव अन्ननाम निघ० २.७]

वसूयन्तः आत्मनो वसूनि विज्ञानादीनि धनानीच्छन्त: (आयव=विद्वासो जना) १ १३० ६ [वसु सुबन्ताद् आत्मन इच्छाया क्यजन्ताच्छतृ]

वसूया आत्मनो वसूना धनानामिच्छया १ १६५ १ आत्मनो वसूनीच्छन्ति तया (सुक्षेत्रिया=सुनीत्या) १ ९७ २ [वसुसुबन्ताद् आत्मन इच्छायामर्थे क्यच् । तत स्त्रिया 'अ प्रत्ययाद्' इत्यकार । ततष्टाप्]

वसूयवः आत्मनो वसूनि विद्याधनानीच्छन्त (मतय=विद्वज्जना) १ ६२.११ ये वसून् पृथिव्यादीन् युवन्ति मिश्रयन्त्यमिश्रयन्ति ते विद्वास १ ४६ ४ आत्मनो वस्विच्छव (मनुष्या) ५ २५ ६ वसूनि धनानि कामय-माना (धार्मिका मनुष्या) ७ ३२ २ य आत्मनो वसूनि द्रव्याणीच्छन्ति ते (मनुष्या), प्र०—अत्र वसु-शब्दात् 'सुप आत्मन क्यच्' इति क्यच् प्रत्यय 'क्याच्छन्दसि' उयु प्रत्यय 'अन्येषामपि०' इति दीर्घ १ १२८ ८ ये वसूनि युवन्ति मिश्रयन्ति ते (विद्वासो जना) ३.२६ १ **वसूयुम्**= आत्मनो वसु द्रव्यमिच्छुम् (सज्जनम्) ४ ४४ १ **वसूयु** = आत्मनो धनमिच्छु (जन) ५ २६.१५ वसूनि धनानि कामयमान (राजा) ७ ३४.२१ या वसूनि द्रव्याणि कामयति

वहमानाः प्राप्नुवत्य (उषस) १.१२३ १२. [वह प्रापणे (भ्वा०) धातो शानच् । तत स्त्रिया टाप्]

वहिष्ठयोः अतिशयेन वोढ्रो (अश्वयो) ६ ४७.६ **वहिष्ठान्**=अतिशयेन वोढॄन् विद्याधर्मप्रापकान् (नॄन्) १ १२१ १२ **वहिष्ठाः**=अतिशयेन वोढार (अग्न्यादि-पदार्था) ५ ५६ ६ [वह प्रापणे (भ्वा०) धातो कर्त्तरि तृजन्तादतिशायन इष्ठन् । 'तुरिष्ठेमेयस्सु' इति तृचो लोप.]

वहिष्ठा अतिशयेन वोढा (वायु =पवन), प्र०—अत्राऽऽकारादेश १ १३४ ३ [वहिष्ठ इति पूर्वपदे द्रष्टव्यम्, नत 'सुपा सुलुक्०' इति सोराकारादेश]

वहिष्ठेभिः अतिशयेन वोढृभि. (किरणाकर्षणादिभि) ४ १३ ४ [वहिष्ठ इति व्याख्यातम् । ततो भिस ऐस् न भवति छन्दसि]

वहीयसः सद्यो देशान्तरे प्रापकानग्न्यादीन् १ १०४ १. [वह प्रापणे (भ्वा०) धातो कर्त्तरि तृजन्तादतिशायन ईयसुन् । तृचो लोप]

वहेन प्रापणेन २५ ३ [वह प्रापणे (भ्वा०) धातो-र्घञर्थे क]

वह्नयः वहन्ति प्रापयन्ति वार्त्ता पदार्थान् यानानि च यैस्ते (अ०—विद्युदादय), प्र०—अत्र वहिश्रिश्रुयु०' उ० ४.५१ अनेन करणे नि प्रत्यय १ १४ ६ सुखस्य वोढार (विश्वेदेवास =समस्ता वेदपारगा विद्वास) १ ३.६ शुभकर्मगुणाना वोढार (ऋभव =मेधाविजना) १ २० ८ विद्वासो जितेन्द्रिया सुशीला मनुष्या) १ ४८ ११ वोढारो-ऽश्वा २ २४.१३ अग्नय इव वर्त्तमाना (विद्वज्जना) ५ ७६ ४ **वह्नये**=राज्यभार वोढ्रे (वेधसे =विवेकिजनाय) २ २१ २ **वह्निभिः**=वोढृभिर्मरुद्भिस्सह १ ६ ५ वहनसमर्थै (देवै =विद्वद्भि) १ ४४ १३ कार्यनिर्वाहकै (देवै =विद्वज्जनै) ३३ १५ **वह्निम्**=प्रापकम् (अपत्यम्) ३ ३१ २ वाहकम् (मनुष्यम्) ३ १ १ पदार्थाना वोढारम् (अग्निम्) १ ६० १ **वह्निः**=पावकवद् वोढा विद्वान् १ ११३ १७ वोढा वायु ३ २० १ विद्याया वोढा (विद्वज्जन) २७ १४ सद्यो वोढाऽग्नि ३५ १३ वोढा विद्यासुखप्रापक (अग्नि =राजा) ७ १६ ६ सुखाना प्रापक (परमेश्वरो विद्वान् वा) १ ७६ ४ स्वप्रकाशक, सर्वरसवाहक (ईश्वर) आर्याभि० २ १६, ५ ३१ [वह प्रापणे (भ्वा०) धातो 'वहि श्रिश्रुयुद्रुग्लाहात्वरिभ्यो नित्' उ० ४ ५१ सूत्रेण नि । वह्नि अश्वनाम निघ० १ १४ वह्नि वोळ्हा नि० ३४ वह्निम् पुत्रम् नि० ३ ६ वह्नय =वोढार नि० ८ ३ वह्निर्वा अनड्वान् तै० १ १ ६.१० वह्निर्होता तै० म० २ २ १० ५ वह्निरग्नि हव्यवाहन मै० १ २ १२ काठ० २ १३ वह्निना हि तत्र गच्छति यत्र जिगमिषति जै० २ ८६]

वह्नितमम् वहनि प्रापयति यथायोग्य सुखानि स वह्नि सोऽतिशयितस्तम् (ईश्वर भौतिकमग्नि वा) १ ८ **वह्नितमः**=अतिशयेन वोढा (विद्वज्जन) २१.३. **वह्नितमान्**=अतिशयिता वह्नयो वोढारस्तान् (विदुषो जनान्) ६.७. [वह्निरिति व्याख्यानम् । ततोऽतिशायने तमप्]

वह्येशयाः या वह्ये प्रापणीये शेरते ता (नारी.=स्त्रिय ७ ५५ ८ [वह्योपपदे शीङ् शये (अदा०) धातो 'अधिकरणे शेते.' सूत्रेणाच् । सप्तम्या अलुक् । वह्यम्=वह प्रापणे (भ्वा०) धातो 'वह्य करणम्' अ० ३ १ १०२ सूत्रेण करणे यत् । वहधातोर्वा बाहु० 'अघ्न्यादयश्च' उ० ४ ११२ सूत्रेण यक्]

वशनर्तिनम् वशे नर्त्तितु शील यस्य तम् (शैलूष नट वा) ३० २१ [वशोपपदे नृती गात्रविक्षेपे (दिवा०) धातोस्ताच्छील्ये णिनि]

वंशमिव यथोत्कृष्टैर्गुणै शिक्षणैश्च स्वकीय वश-मुद्यमवन्त कुर्वन्ति तथा १ १० १. [वशम्-इवपदयो समास]

वंसगः यो वस सम्भजनीय गच्छति गमयति वा स वृषभ १ ५५ १ यो वसान् सत्यासत्यविभाजकान् गच्छति स (राजा) ५ ३६ १ सम्भक्ता (इन्द्र =सभेश) १.१३०.२२ वस धर्मसेविन, सविभक्तपदार्थान् गच्छतीति (इन्द्र =ईश्वर सूर्यो वा) १ ७ ८ यो वस सम्भजनीय व्यवहार गच्छति स (उग्र =तेजस्विजन) ६ १६ ३६ [वसोपपदे गम्लृ गतौ (भ्वा०) धातोर्ड प्रत्यय 'अन्येष्वपि दृश्यते' सूत्रेण । वसा =वन सम्भक्तौ (भ्वा०) धातोरौणा० बाहु० स]

वंसत् विभजेत् ६ ६८ ५ **वंसाम**=विभजेम ६.१६.८ **वंसि**=सम्भजसि ५ ७० १ **वंसीमहि**=विभजेम ६ १६ १० **वंस्व**=सम्भज १ ४८ ११ [वन सम्भक्तौ (भ्वा०) धातोर्लेट् । सिब् विकरणश्छन्दसि । 'व्यत्ययो बहुलम्' इति द्विविकरणता । अन्यत्र लटि शपो लुक् । लोटि चाप्यग्रे शपो लुक् । व्यत्ययेनात्मनेपदञ्च]

वा पक्षान्तरे १ ८ ६ चाऽर्थे १८ ३२ अथवा ५ ८५ ७ यद्वा आर्याभि० २ ३६, ३६ २ व्यवहाराऽन्तरे

ऽतिधनाढ्यान् (जनान्) ५ ५५ १० वसीयोऽतिशयेन सुष्ठु धनम् ६ ४७ ७ वसीयान् (राजा) ५ ३१ २ अतिशयेन वासयितृ (महद्वस्तु ब्रह्म) २ २ १३ अत्युत्तम वास स्थानम् २ १ १६ वस्तु योग्य (विद्वान् जन) १ १४१ १२ अतिशयेन वसु तत् (अपूप=भोज्य पदार्थम्) १२ २६ अतिशयेन श्रेष्ठ धनम् ४ २१ ४ [वसुप्राति० अतिशायन ईयसुन्। ईकारलोपश्छान्दस। अथवा वसुप्राति० 'तत्र साधु' रिति यत्]

वस्यान् अतिशयेन वासकर्त्ता (सोम=महैश्वर्ययोग) ६ ४१ ४ [वस निवासे (भ्वा०) धातो कर्त्तरि तृजन्ताद् अतिशायन ईयसुन्। 'तुरिष्ठेमेयस्सु' इति तृचो लोप 'छान्दसो वर्णलोपो वे' ति प्रत्ययस्येकारस्य लोप]

वस्वः धनानि ४ १७ ११ वसुनो धनस्य १९ ६३ वसुना सुखेन वासहेतोर्धनस्य ३ १९ ३ वसोर्धनस्य १ ५१.१ वसूनि १ ७१ ९ द्रव्याणि, प्र०—'वाच्छन्दसि सर्वे विधयो भवन्ति' इति नुमभावे 'जसादिषु छन्दसि वा वचनम्' इति गुणाभावे च यणाऽऽदेश १ ९० २ पृथिव्यादे ५ १५ १

वस्वी याऽग्न्यादिपदार्थाख्यवसुविद्यासम्बन्धिनी वसुभिश्चतुर्विंशतिवर्षकृतब्रह्मचर्यै प्राप्ता सा (वाग् विद्युद्वा) ४ २१ पृथिव्यादिवसुसम्बन्धिनी (सन्दृष्टि=विद्यादर्शनम्) ६ १६ ७५ वसूनामियम् (दक्षिणा) ६ ६४ १ धनसम्बन्धिनी (शक्ति=सामर्थ्यम्) ७ २० १० धनकारिणी (शक्ति) ७ २१ १० **वस्वीभिः**=धनप्रापिकाभि क्रियाभि ३ १३ ५ **वस्वीः**=बहुपदार्थयुक्ता (पुरन्धी=द्यावापृथिव्य) ५ ४१ ६ [वसुरिति वसव पदे द्रष्टव्यम्। तत स्त्रियाम् 'वसुशब्दाद् गुणवचनाद् ङीब्राद्युदात्तार्थम्' अ० ४ १ ४४ वा०सूत्रेण ङीप्। वस्वी रात्रिनाम निघ० १.७]

वह प्राप्नुहि ३५ २० प्रापय ३३ ७० प्राप्नोतु ६ ६४ ५ गमय ६ ६४ ४ वहसि प्रापयसि, वहति प्रापयति वा, प्र०—अत्र पक्षान्तरे पुरुषव्यत्यय १ १३ १ **वहत**=वहन्ति, प्र०—अत्र व्यत्ययो लडर्थे लोट् च १ २३ २२ **वहतम्**=प्रापयतम् १ ४७ ६ प्राप्नुतम् ३ ५३ १ प्राप्नुत १ ३४ १२ **वहताम्**=प्रापयताम् ३ ४१ ९ **वहति**=प्राप्नोति प्रापयति वा ३ ५८ १ **वहतु**=प्राप्नोतु १३ ३४ **वहते**=प्राप्नोति प्रापयति वा ५ ३० ३ **वहथ**=प्राप्नुथ ६ ६५ ४ **वहथः**=प्राप्नुथ १ ११९ ३ **वहध्वे**= प्राप्नुत ५ ६० ७ वहत ५ ५२ १३ **वहन्ति**=चालयन्ति १ १६४ ३ प्रापयन्ति १ १६४ १४ प्राप्नुवन्ति १ ५० १ **वहन्तु**=प्राप्नुवन्तु प्रापयन्तु वा ६ ४४ १९ गमयन्तु ५ ३१ ९ **वहन्ते**=प्राप्नुवन्ति ५ ५८ १ **वहसि**=धारण करता है स० वि० २०८, अथर्व० ९ ५ १७ प्राप्नोषि १८ ६२ **वहसे**=प्राप्नोषि प्रापयसि वा ५ ३९ ५ **वहातः**=प्राप्नुत ३ ४३ ४ वहेताम् ३ ३५ २ **वहाते**=वहेताम् ५ ३७ ३ उठा सकते है स० वि० १०५, ५ ३७ ३ **वहान्**=वहन्तु प्राप्नुवन्तु २० ५६. समन्तात् प्राप्नुयु १ ८४ १८ **वहामि**=प्राप्नोमि प्रापयामि वा ५ ४६ १ **वहासि**=प्राप्नुया १ ७४ ६ **वहेथे**=प्राप्नुथ १ १८० ९ प्रापयत १ १३५ ८ प्रापयेताम्, प्र०—अत्र पुरुषव्यत्यय ४ ४५ ३ **वहेयुः**=प्राप्नुवन्तु ६ ३७ ३ **वहतः**=प्रापयत ३३ ७८ प्राप्नुत १ ८४ २ धरत ५ ४१ ७ [वह प्रापणे (भ्वा०) धातोर्लोट्। अन्यत्र लट्, लेट्, लिङ, लङ् च। वहते गतिकर्मा निघ० २ १४]

वहतः वहनशीला (शक्तय) ३ ७ ४ [वह प्रापणे (भ्वा०) धातो शतृ। विभक्तिव्यत्यय]

वहतुम् वहति प्राप्नोति स्त्रियमिति वहतुर्भर्त्ता तम्, भा०—स्वाभीष्ट पतिम् १७ ९७ वोढारम् (भा०—स्वसदृश पतिम्) ४ ५८ ९ प्रापकम् (जनम्) १ १८४ ३

वहतू=प्रापकौ (यजमानपुरोहितौ (७ १ १७ [वह प्रापणे (भ्वा०) धातो 'एधिवह्योश्चतु' उ० १ ७७ सूत्रेण चतु। वहतुम्=वहनम् नि० १२ ११]

वहन् प्राप्नुवन् प्रापयन्वा (रथ=विमानादियानम्) ५ ७७ ३ **वहन्तः**=उपदेशेन प्राप्नुवन्त (मनुष्या) १ ६९ ५ ब्रह्मचर्यादि तप का आचरण करते हुए (मनुष्य लोग) स० प्र० ४२३, ९ ८३ १ [वह प्रापणे (भ्वा०) धातो शतृ]

वहन्ता प्रापयन्तौ (वायुविद्युतौ) ६ ६२ ४ प्राप्नुवन्तौ (अश्विनौ=सभासेनेशौ) १ ११६ १९ [वह प्रापणे (भ्वा०) धातो शत्रन्ताद् द्विवचनस्याकारादेश]

वहन्ती प्रवाह प्रापयन्त्य (नद्य) २ ३५ ९ प्रापयन्ती स्वादिष्ठा आप २ ३४ [वह प्रापणे (भ्वा०) धातो शत्रन्तात् ङीप् स्त्रियाम्]

वहमानः प्राप्नुवन् प्रापयन् वा (सूर्य) ७ ४५ १

वहमाना=नयन्तो धूर्त्ता (शत्रव) १ १७४ ६ [वह प्रापणे (भ्वा०) धातो शानच्]

वहमाना प्रापयन्तौ (विद्युदाघातौ) ५ ३१ ९ [वह प्रापणे (भ्वा०) धातो शानच्। ततो द्विवचनस्याकारादेशश्छान्दस]

त्वष्टा वाग्वीद सर्व ताष्टीव ऐ० २ ४ वाग्वै दध्यङ्ङाथर्वणः (यजु० ११ ३३) श० ६ ४ २ ३ वाग्वा अर्बुदम् तै० ३ ८ १६ ३ वाग्वै भर्ग श० १२ ३ ४ १० वागेव भर्ग गो० पू० ५ १५ वाग्वा उत्तरनाभि श० १४ ३ १ १६ वागुदय-नीयम् कौ० ७ ६ वाग् वामभृत् श० ७ ४ २.३५ वाग्वै शर्म (ऋ० ३ १३ ४) ऐ० २ ४० वाग्वै स्रक् श० ६ ३ १ ८ वागेवादाभ्य (ग्रह) श० ११ ५ ६ १ वाग्वै सीताममर श० ७ २ ३ ३ वागिति श्रोत्रम् जै० उ० ४ २२ ११ वाग्वा इन्द्र कौ० २ ७ वाग्वैन्द्री ऐ० २ २६ एतद्ध वा इन्द्राग्न्यो प्रिय धाम यद् वागिति ऐ० ६ ७ गो० उ० ५ १३ अग्निर्मे वाचि श्रित तै० ३० १० ८ ४ सा या सा वागग्निस्स जै० उ० १ २८ ३ सा या सा वाग् आसीत् सोऽग्निरभवत् जै० उ० २ २ १ या वाक् सोऽग्नि गो० उ० ४ ११ वागेवाऽग्नि श० ३ २ २ १३ वाग्वाऽअग्नि श० ६ १ २ २८ जै० उ० ३ २ ५ तपो मे तेजो मे ऽन्नम् मे वाङ् मे । तन्मे त्वयि (अग्नौ) जै० उ० ३ २० १६ वाग्वाऽअग्न्य (अग्ने) स्वो महिमा श० १४ २ १७ वाग्वा ऽअस्य (प्रजापते) स्वो महिमा श० २ २ ४ ४ प्रजापतिर्वा इदमेक आसीत्तस्य वागेव स्वमासीद् वाग् द्वितीया स ऐक्षते मामेव वाच विसृजा इय वा इद सर्व विभवन्त्येष्यतीति स वाच व्यसृजत काठकसहितायाम् १२ ५ प्रजापतिर्हि वाक् तै० १ ३ ४ ५ वाग्वि प्रजापति श० १ ६ ३ २७ वाग्वै प्रजापति श० ५ १ ५ ६ प्रजापतिर्वै वाक्पति श० ३ १ ३ २२ तदेता वा ऽअस्य (प्रजापते) ता पञ्च मर्त्यास्तन्व आसन् लोम त्वङ् मासमस्थि मज्जाथैता अमृता मनो वाक् प्राणश्चक्षु श्रोत्रम् श० १० १ ३ ४ वाग्वा ऽइद कर्म प्राणो वाचस्पति श० ६ ३ १ १६ नमो वाचे प्राणपत्न्यै स्वाहा ष० २ ६ वाक् च वै प्राणश्च मिथुनम् श० १ ४ १ २ सा ह वागुवाच हे प्राण यद्वा ऽअह वसिष्ठा ऽस्मि त्व तद् वसिष्ठोऽसीति श० १४ ६.२.१४ वाग्वातस्य पत्नी गो० उ० २ ६ वाग्वै वायु तै० १ ८ ८ १ ता० १८ ८ ७ तस्मात् सर्वे प्राणा वाचि प्रतिष्ठिता श० १२ ८ २ २५ तस्या (वाच) उ प्राण एव रस जै० उ० १ १ ७ यावद्वै प्राणेष्वापो भवन्ति तावद्वाचा वदति श० ७ ३.५.१६ वाक् च वै मनश्च देवाना मिथुनम् ऐ० ५ २३ तस्य (मनस) एषा कुल्या यद्वाक् जै० उ० १ ५८ ३ वाग्दैवत्य साम वाचो मनो देवता जै० उ० १ ५६ १४ वाग्वै मनसो ह्रसीयसी श० १ ४ ४ ७ अपरिमिततरमिव हि मन परिमिततरेव हि वाक् श० १.४ ४ ७ मनो ह पूर्वं वाचो यद्धि मनसाभिगच्छति तद्वाचा वदति ता० १ १ १ ३ वागिति मन जै० उ० ४ २२ ११ वाक् च वै मनश्च हविर्धाने कौ० ६ ३ सा या सा वागसौ स आदित्य श० १० ५ १ ४ वागिति चन्द्रमा जै० उ० ३ १३ १२ वाग्घ चन्द्रमा भूत्वोपरिष्टात् तस्थौ श० ८.१.२ ७. वाग् वै देवाना मनाना गो० २ १०. कौ० १० ६ वाग्यज्ञस्य (रूपम्) श० १२ ८ २.४. वाग्घि यज्ञ श० १ ५ २ ७ वाग्वै यज्ञ गो० ५ २४ श० १.१.२ २. वागु वै यज्ञ श० ११.४ ११ वाचो रसो यज्ञायज्ञीयम् (साम) ता० १८ ५.२१. वाग् यज्ञायज्ञीयम् (साम) ता० ५.३ ७ वाग्वै रूपम् (साम) ता० १६.५ १६ वाग्यज्ञस्य होता गो० २ ५ २८ वाग्वै यज्ञस्य होता श० १२.८.२ २३ वाग्घोता श० १ ५ १ २१ गो० उ० ५.४. वागेव होता गो० पू० २ १०. गो० उ० ३.८ वाग् वै होता (यजु० १३ ७) कौ० १३ ६ वाग्घोता षड् होतृणाम् तै० ३ १२ ५ २ अग्निर्वै होताधिदेवत वागध्या-त्मम् श० १२ १ १ ४ गो० पू० ४.४ वाग्वै हविष्कृत् श० १ १ ४ ११. उद्गातारो वै वाचे भागधेय कुर्वन्ति ता० ६.७ ५ वाक् सर्व ऋत्विज. गो० उ० ३.८ वाचा पशून् दाधार तस्माद् वाचा सिद्धा वाचाहूता आयन्ति तस्माद्ध नाम जानते ता० १०.३ १३ त्र्यावृद् वै० वाक् ता० १० ४ ६.६ त्रेधा विहिता हि वाग्-ऋचो यजूꣳषि सामानि श० ६ ५ ३.४ सा वाऽएषा वाक् त्रेधा विहिता ऋचो यजूꣳषि सामानि श० १० ४ ५ २ वागिति सर्वे देवा जै० उ० १.६ २ वागेव देवा श० १४ ४ ३.१३ वाग् देव. गो० पू० २ १० वज्र एव वाक् ऐ० २ २१ वाग्वि वज्र ऐ० ४ १ वज्रस्तेन यद् वाक् ऐ० २ १६ वाक् च ह वै प्राणापानौ च वषट्कार गो० उ० ३ ६ वाक् च वै प्राणापानौ च वषट्कार ऐ० ३ ८ वाग्वै वषट्कारो वाग्रेत श० १ ७ २ २१ वागु हि रेत श० १ ५ २ ७ शीर्ष्णो ह्ययमधि वाग् वदति श० १ ४ ४ ११ वाग्घृदये (श्रिता) तै० ३ १० ८ ४ तदेतत् तुरीय वाचो निरुक्त यन्मनुष्या वदन्ति श० ४ १ ३ १६ वाग्वै देवाना (पुरान्नमास) तै० १ ३ ५ १ वाग् वै वाजस्य प्रसव तै० १ ३ २ ५ वाग् योनि ऐ० २ ३८ उदीचीमेव दिशम् । पथ्यया स्वस्त्या प्राजानस्तस्मादत्रोत्तरा हि वाग् वदति कुरु पचालत्रा श० ३ २ ३ १५ तस्मादुदीच्या दिशि प्रज्ञाततरा वागुद्यत उदञ्च उ एव यन्ति वाच वाच शिक्षितु यो वा तत आगच्छति तस्य वा शुश्रूषन्त इति कौ० ७ ६. अयातयाम्नी वा ऽइय वाक् श० ४५ ८ ३ वागु सर्वं भेषजम् श० ७ २ ४ २८ प्रादेशमात्र हीदमभिवाग्

१ ८ ६ समुच्चये ७ २६ विकल्पे १ ७१ ६ अन्यत्र १ १० ८ ७ विचारणे १ ८ ३ ६. [वा विचारणार्थे समुच्चयार्थे नि० १ ५]

वाक् वक्ति यया सा वाणी १८ २६ उच्यते यया सा ३ ८. यो वदति स (प्रजापति =जीव) ३९ ५ कर्मेन्द्रियाणामुपलक्षणम् २२ ३३ सब शास्त्र के उपदेशक, अनन्तविद्यास्वरूप (ईश्वर) आर्याभि० २ १८, ५ ३३ सत्य प्रिय वाणी अथर्व० १२ ५ ७, स० वि० १४४ **वाचम्**= वचन्ति वाचयन्ति सर्वा विद्या यया ताम्, सत्यलक्षणा वेदचतुष्टयीम् २ १८ वक्त्यनया ता वाणीम् ६ १४ विद्याधर्मसत्यान्विता वाणीम् १ १ ३० ६ उत्तम वाणी को स० वि० ८०, अथर्व० ११ ५ २४ उपदेशम् ६ २१ ११ ऋग्वेदादि चारो वेदो की वाणी को स० प्र० ६७, २६ २ सुखदायक वाणी को स० वि० १४१, अथर्व० ३ ३० ३ **वाचा**=वेदवाण्या स्वकीयया वा ३ ४७ **वाचे**= वागिन्द्रियहोमाय ३९ ३ वेदार्थसुशिक्षायुक्तवाणीविज्ञानाय ९ ३९ [वच परिभाषणे (अदा०) धातो 'क्विब् वचिप्रच्छिश्रि०' उ० २.५७ सूत्रेण क्विप् धातोर्दीर्घत्व सम्प्रसारणाऽभावश्च। वाक् कस्माद् वचे नि० २ २३ वाचि आस्ये नि० ८ २१ वाक् वाङ्नाम निघ० १ ११. वाक् पदनाम निघ० ५.५ वाग्वै गौ (यजु० १२ ६८ श० ७ २ २ ५ वाग्वै धेनु गो० पू० २ २१ ता० १८ ९ २१ वाच धेनुमुपासीत। तस्याश्चत्वार स्तना स्वाहाकारो वषट्कारो हन्तकार स्वधाकारस् तस्यै द्वौ स्तनौ देवा उपजीवन्ति स्वाहाकार च वषट्कार च हन्तकार मनुष्या स्वधाकार पितरस्तस्या प्राण ऋषभो मनो वत्स श० १४ ८ ९ १. वाग्वै शबली ता० २१ ३ १ वाक् तु सरस्वती ऐ० ३ १ वागेव सरस्वती ऐ० २ २४ वाग्घि सरस्वती ऐ० ३ २ वाग्वै सरस्वती कौ० ५ २ ता० ६ ७ ७ श० २ ५ ४ ६. तै० १ ३ ४ ५ गो० उ० १ २० ऐ० ६ ७ वाग्वै सरस्वती पावीरवी ऐ० ३ ३७ सरस्वती वाचमदधात् तै० १ ६ २ २. अथ यत् स्फूर्जयन् वाचमिव वदन् दहति तदस्य (अग्ने) सारस्वत रूपम् ऐ० ३ ४. सा (वाक्) ऊर्ध्वो दातनोद् यथापा धारा सततैवम् (सरस्वती= वाक्) ता० २० १४ २ वाग्वै समुद्र ता० ७ ७ ९ वाग्वै समुद्रो मन =समुद्रस्य चक्षु ता० ६ ४.७ वाग्वै समुद्रो (ऋ० ४ ५८ १) न वै वाक् क्षीयते न समुद्र क्षीयते ऐ० ५ १६ वाग्वै सरिर छन्द (यजु० १५ ४) श० ८ ५ २ ४ वाग्वै सरिरम् (यजु० १३ ५३) श० ७ ५ २ ५३. वाग्वै सोमक्रयणी (गौ) निदानेन श० ३ २ ४.१० वाग्वाऽएषा निदानेन यत्साहस्री (गौ) तस्य। एतत् सहस्र वाच प्रजातम् श० ४ ५ ८ ४ तदाहु किं तत् सहस्रम् (ऋ० ६ ६९ ८) इतीमे लोका इमे वेदा अथो वागिति ब्रूयात् ऐ० ६.१५ वाग्वै सिनीवाली (यजु० ११ ५५) श० ६ ५ १ ९ वाक् सावित्री गो० पू० १ ३३ जै० उ० ४ २७ १५ वाग्वै सार्पराज्ञी कौ० २७ ४ वागेव सुपर्णी (माया) श० ३ ६ २ २ वाग्वाव शतपदी ष० १ ४ वाग्वै रेवती श० ३ ८ १ १२ वागषाढा श० ६ ५ ३ ४ वाग्वाऽअषाढा श० ७ ४ २ ३४ वाग्वै पथ्या स्वस्ति कौ० ७ ६ श० ३ २ ३ ८ वाग्घ्येषा (पथ्या स्वस्ति) श० ३ २ ३ १५ जूरसि (यजु० ४ १७) (जू) इत्येतत् ह वा अस्या (वाच) एक नाम श० ३ २ ४ ११ तस्यै (वाचे) जुहुयाद् वेकुरा नामासि ता० ६ ७ ६ वाग्वै धिषणा (यजु० ११ ६१) श० ६ ५ ४ ५ वाग्वै मति (यजु० १३ ५८) वाचा हीद सर्व मनुते श० ८ १ २ ७ वाग्वै बृहती श० १४ ४ १ २२ यदस्यै वाचो बृहत्यै पतिस्तस्माद् बृहस्पति जै० उ० २ २ ५ बृहस्पति (एवैन) वाचा (सुवते) तै० १ ७ ४ १ अथ बृहस्पतये वाचे नैवार चरु निर्वपति श० ५ ३.३ ५ वाग्वै राष्ट्री ऐ० १ १९ इय (पृथिवी) वै वागदो (अन्तरिक्षम्) मन ऐ० ५ ३३ इय (पृथिवी) वै वाक् श० ४ ६ ९ १६ वागिति पृथिवी जै० उ० ४ २२ ११ वागेवाय (पृथिवी) लोक श० १४ ४ ३ ११ वागित्यन्तरिक्षम् जै० उ० ४ २२ ११ वागिति द्यौ जै० उ० ४ २२ ११ वाग्वै लोकम्पृणा (इष्टका) श० ८ ७ २ ७ वाग्वै विराट् श० ३ ५ १ ३४ वाग्वै विश्वामित्र कौ० १० ५ वाग्वै विश्वकर्मऽर्षि (यजु० १३ ५८) वाचा हीद सर्वं कृतम् श० ८ १ २ ९ वागेव सस्तुत् छन्द (यजु० १५ ५) श० ८ ५ २ ५ वाग्वा अनुष्टुप् ऐ० १ २८ श० १ ३ २ १६ गो० उ० ६ १६ वागनुष्टुप् कौ० ५ ६ श० १० ३ १ १ तै० १ ८ ८ २ ता० ५ ७ १ महिषी हि वाक् श० ६ ५ ३ ४ वागित्यृक् जै० उ० १ ९ २ वागृक् जै० उ० ४ २ ३ ४ सा या सा वागृक् सा जै० उ० १ २५ ८ वागेवऽर्ग्वेद श० १४ ४ ३ १२ वागेवऽर्चश्च सामानि च मन एव यजूꣳषि श० ४ ६.७ ५ वाग् ब्रह्म गो० पू० २ १०, वाग्घि ब्रह्म ऐ० २ १५ वाग्वै ब्रह्म ऐ० ६ ३. श० २ १ ४ १० वागिति तद् ब्रह्म जै० उ० २ ९ ६ सा या सा वाग् ब्रह्मैव तत् जै० उ० २ १३ २ ब्रह्मैव वाच परम व्योम तै० ३ ९ ५.५ वाग्वै ब्रह्म च सुब्रह्म चेति ऐ० ६ ३ वाग्वै सुब्रह्मण्या ऐ० ६ ३ वागुक्थम् ष० १ ५ वाग्घि शस्त्रम् ऐ० ३ ४४ वाक् शस ऐ० २ ४ गो० उ० ६ ८ वाग्वै रथन्तरम् ऐ० ४ २८. वाग्वै

वदति श० ६ ३ १ ३३ सेय वागृतुपु प्रतिष्ठिता वदति श० ७ ४ २ ३७ तस्मात् सवत्सरवेलाया प्रजा (शिशव) वाच प्रवदन्ति श० ७ ४ २ ३८ स (प्रजापति) वाचमयच्छत् स सवत्सरस्य परस्ताद् व्याहरद् द्वादशकृत्व ऐ० २ ३३ वाक् सवत्सर सा० १० १२ ७ सर्वां वाच पुरुषो वदति ता० १३ १२ ३ ता वनस्पतयश्चतुर्द्धा वाच विन्यदधुर्दुन्दुभौ वीणायामक्षे तूणवे तस्मादेषा वदिष्ठैषा वल्गुतमा वाग्या वनस्पतीना देवाना ह्येषा वागासीत् ता० ६ ५ १३. परमा वा एषा वाग्या दुन्दुभौ ता० १ ३ ६ २ एषा वै परमा वाग् या सप्तदशाना दुन्दुभीनाम् श० ५ १.५ ६ एतद् वाचश्छिद्र यदनृतम् ता० ८.६ १३ वाचो वा एतौ स्तनौ सत्यानृते वाव ते गो० उ० ४ १६ वाचो वाव तौ स्तनौ सत्यानृते वाव ते ऐ० ४ १ एतद्वै वाचो जित यद् ददामीत्याह ऐ० ८ ६ एकाक्षरा वै वाक् ता० ४ ३ ३ योषा हि वाक् श० १ ४ ४ ४ योषा वा ऽइय वाग् यदेन'न युविता श० ३ २ १ २२ वागिति स्त्री जै० उ० ४ २२ ११]

वाकम् अथर्ववेदम् यजु १ १६४ २४ **वाकाः**=उच्यन्ते यास्ता (आशिष =इच्छासिद्धय) १७ ५७ **वाकेन**=यजुषा १ १६४.२४ [वच परिभाषणे (अदा०) धातोर्घञ् । 'चजो कु ०' इति कुत्वम्]

वाक्पतिः यो वाचो वेदविद्याया पति स्वामी पालयिता स (परमात्मा) ४४ [वाच्-पतिपदयो. समास । प्रजापतिर्वै वाक्पति श० ३ १ ३ २२ वाक्पतिर्होता तै० आ० ३ ११ अय वाव वाक्पतिर्योऽय (वायु) पवते श० ४ १ ३ १५]

वाघतः यज्ञविद्यानुष्ठानेन सुखसम्पादिन ऋत्विज १ ३ ५ मेधावी (सज्जन), प्र०—वाघत इति मेधाविनाम निघ० ३ १५, ३ २ १ ये वाचा दोषान् घ्नन्ति ते मेधाविन (ऋत्विजो जना) ३ ३७ २ सुशिक्षिताभिर्वाग्भिरविद्या हन्यते येन स मेधावी (अ०—विद्वान् जन) १५ २२ यश्शिक्षितया वाचा हन्ति जानाति स (इन्द्र =विद्वान् जन) २० ८२ वाग्विद्यायुक्ता (ऋभव =मेधाविनो जना) १ ११० ४ **वाघते**=वाक् हन्यते ज्ञायते येन तस्मै विदुष ऋत्विजे मनुष्याय १ ३१ १४ [वाघत मेधाविनाम निघ० ३ १५ ऋत्विङ्नाम निघ० ३ १८ वाघत वोढारो मेधाविनो वा नि० ११ १६]

वाचस्पतिम् वाचो वेदवाण्या पालकम् (राजानम्) १७ २३ [वाच्-पतिपदयो समासे षष्ठ्या अलुक् । वाचस्पति =वाच पाता वा पालयिता वा नि० १० १७ वाचस्पतिर्होता मै० १ ६ १ यो वै वाचो ऽध्यक्ष स वाचस्पति मै० २ २ ५.]

वाच्यः वाचो भाव कर्म्म वा १३ ५८ [वाच्प्राति० भावे कर्मणि वा ब्राह्मणादित्वात् ष्यञ् । ब्राह्मणादिराकृतिगण]

वाजजठरः वाजो क्षुद्रवेगो जठरे यस्मात् स (घर्म =प्रताप) ५.१६.४. [वाज-जठरपदयो समास । वाज इति व्याख्यास्यते]

वाजजित् वाजमन्न जयति येन स. (अग्नि), प्र०—वाज इत्यन्ननामसु पठितम् निघ० २ ७. अत्र 'कृतो बहुलम्०' इति करणे क्विप् २ ७ वाज सर्वस्य वेग जयति स ईश्वर. वाज जयति येन वा स भौतिक (अग्नि) २ १४ सङ्ग्राम विजयमान (सेनाध्यक्षो राजा) ६ ६ **वाजजितम्**=वाज युद्ध जयति येन तम् (भौतिकमग्निम्) २ ७ यो येन वा वाज सङ्ग्राम जयति तम् (ईश्वर भौतिकमग्नि वा) २ १४ **वाजजितः**=सङ्ग्राम जेतु शीला (जना) ६ ६ सङ्ग्राम जयन्त (वाजिन =योद्धृजना) ६ ६ विजितसङ्ग्रामा (विद्वासो राजपुरुषा) ६ १६ [वाजोपपदे जि जये (भ्वा०) धातो क्विप् । वाजजिद् (साम) भवति सर्वस्याप्त्यै सर्वस्य जित्यै ता० १३ ६ २०]

वाजदा विज्ञानप्रदौ (अध्यापकोपदेशकौ) १ १३५ ५ [वाजोपपदे डुदाञ् दाने (जु०) धातो क । ततो द्विवचनस्याकार]

वाजदाव्नाम् वाजस्य विज्ञानस्याऽन्नस्य दातॄणामुपदेशकाना वा १ १७ ४ [वाजोपपदे डुदाञ् दाने (जु०) धातो कर्त्तरि वनिप् । तत षष्ठी]

वाजदाः यो वाजमन्नादिक ददाति स (इन्द्र =ऐश्वर्यवान् विद्वान्) ३ ३६ ५ [वाजोपपदे डुदाञ् दाने (जु०) धातो कर्त्तरि क्विप्]

वाजपतिः अन्नाद्यधिष्ठाता, भा०—अन्नवान् (भा०—पुरुष) १८ ३३ अन्नादिरक्षक (जन) १८ ३४ अन्नादीना स्वामी (अग्नि) ४ १५ ३ अन्नादिरक्षको गृहस्थ इव ११ २५. [वाज-पतिपदयो समास । वाज इति व्याख्यास्यते एष (अग्निः) हि वाजाना पति ऐ० २ ५]

वाजपस्त्यः वाजानि अन्नानि पस्त्ये गृहे यस्य स (देव =विद्वज्जन) ६ ५८ २ [वाज-पस्त्यपदयो समास । पस्त्य गृहनाम निघ० ३.४ वाजपस्त्यम्=वाजपतनम् नि० ५ १५]

वाजपेशसम् वाजस्य विज्ञानस्य पेशो रूप यस्या ताम्

अन्नाना सम्भक्ततमे नि० ६ ३५]

वाजसातये वाजस्य वेगस्य सम्भजनाय ३३ ७५ युद्धविभागाय पदार्थविभागाय वा १ १३०.१ वाजस्य सङ्ग्रामस्य सम्यक् सेवनाय २ ३१.३ धनादिसविभागाय ३ ३७ ५ सङ्ग्रामान्नादीना विभागाय वा ५ ३५ ६ विज्ञानस्य धनस्य वा प्राप्तायाऽथवा सङ्ग्रामाय ६ ५३ ४ अन्नादीना विभागो यस्मिँस्तस्मै (न्यायव्यवहाराय) ६ ५७ १ सङ्ग्रामविभाजिकायै (धिये=प्रज्ञायै) ६ ५३ १ वाजाना वेगादीना सम्भागाय ३३ ९१ परोपकार के अर्थ विज्ञान और अन्न आदि के दान के लिए स० वि० १४०, अथर्व० १४ २ ७२ **वाजसातौ**=वाजान् धनाद्यान् पदार्थान् सनन्ति विभजन्ति यस्मिँस्तस्मिन् सङ्ग्रामे ३ ३० २२ विज्ञानाविज्ञान-सत्यासत्यविभाजके (भरे=युद्धे) ३ ३४ ११ पदार्थाना विभागविद्यायाम् ३ ३९ ९ वाजानामन्नादीना विभागो यस्मिँस्तस्मिन् (भरे=पोषणे) ३ ३६ ११ वाजान्यन्नानि सम्भजन्ति यया तस्या युधि ३६ ११ स्वस्य स्वस्याऽशस्य दानमये व्यवहारे ३ ४९ ५ [वाज-साति-पदयो समास । वाज इति व्याख्यातम् । साति=षण सम्भक्तौ (भ्वा०) धातो स्त्रिया क्तिन् । 'जनसनखना सञ्झलो' अ० ६ ४ ४२ सूत्रेणाकारादेश । वाजसातौ सग्रामनाम निघ० २ १७ वाजसातये अपत्यजननाय चान्नससननाय च नि० १२ ४५]

वाजसाम् वाजस्याऽन्नादेर्विभाजिकाम् (धिय=प्रज्ञाम्) ६ ५३ १० [वाजोपपदे षण सम्भक्तौ (भ्वा०) धातोर्विट् । 'विड्वनोरि' त्याकारादेश । स्त्रिया टाप्]

वाजसाः वाजान् सङ्ग्रामान् सनन्ति सम्भजन्ति येन स (पराक्रम) ९ ६ यो वाजान् सग्रामान् विभजति स (वीरसेनापति) ९ ५ [वाजोपपदे षण, सम्भक्तौ (भ्वा०) धातो कर्त्तरि विट् । 'विड्वनोरि' त्याकारादेश]

वाजा अन्नानि ६ ४८ ४ [वाज इति व्याख्यातम् । ततश्शेर्लोपश्छन्दसि]

वाजासः अन्नाद्यैश्वर्ययोगा ४ ८ ७ वेगवन्त (विद्वज्जना) ५ ९ २ विज्ञानवन्त (ऋभव=प्राज्ञा) ४ ३५ ६ [वाजप्राति० जसोऽसुक्]

वाजिन् जिज्ञासो (विद्या पिपठिषुछात्र) २३ १५ वेगवन् (अ०—सेनाध्यक्ष राजन्) ९ ६ शास्त्रोक्तक्रिया-कुशलताबोधयुक्त (राजन्) ९ ८ प्रशस्तज्ञानयुक्त विद्वन् ११ १२ प्रशस्तविज्ञानवन् (अ०=विद्वन्सभेश राजन्) ११ १६ प्राप्तैश्वर्य (अ०—विद्वज्जन) ११ २१ अश्व इव वेगादिगुण सेनाधीश २९ १६. प्रशस्तशास्त्रयोगाभ्यासकृत्य-सहित (अ०—सेनाध्यक्ष राजन्) ९ ९. **वाजिनम्**=वाजिना विज्ञानवतामिदमवयवभूत विज्ञानम् १३ ३९ ज्ञानबल-प्रदम् (आदित्यम्) ६ ५५ ४ विज्ञानयुद्धविद्याकुशलम् (सेनाध्यक्षम्) १.१०९ ४ बहूनि वाजा अन्नादीनि यस्मिँस्त-माहारम् १ १६२ १२ बहुवेगवन्तम् (राजजनम्) ४ ३८ २ अश्वम् १ १२९ २ धार्मिक शूरवीर मनुष्य प्राप्तिनिमित्त सूर्यलोक वा. प्र०—वाजिन इति पदनाम निघ० ५ ६ अनेन युद्धेषु प्राप्तवेगहर्षा शूरा सूर्यलोका वा गृह्यन्ते १ ४ ८ प्रशस्तज्ञानवन्तम् (जनम्) १ १२९ १ वेगवन्तमश्वम् २५ ३५ विजयप्रापकम् (इन्द्र=ईश्वरम्), प्र०—वाजिन इति पदनामसु पठितत्वात् प्राप्त्यर्थोऽत्र गृह्यते १ ४ ९. प्रशस्तो वाजो वेगो यस्यास्ति तम् (पुरुषम्) १ ६४ ६ बलवन्तम् (सेनेशम्) १ १७६ ५ वाजा प्रशस्तानि अन्नानि विद्यन्ते येषु तेषामिद सार वस्तु १९ २१ बह्वन्नसाररूपम् १९ २३. वाजिन=गन्तु योग्यस्य (सूर्यस्य) २ २४ १० वेगगुणवतो जलादय १ १६२ १८ प्रकृष्टविज्ञानवन्त (सूरय=विद्वासो जना) २ २ ११ वाज प्रशस्त. परा-क्रमो बल वा येषा ते (अश्वा=अश्व इव वेगवन्तो जना) ९ ६ बहुविज्ञानाऽन्नबलवेगयुक्ता (विप्रा=मेधावि-जना) ७ ३८ ८ तुरङ्गा ३४ ३९ वाज परमोत्कृष्ट-विद्याबलाभ्यामात्मनो देहस्य प्रशस्तो बलसमूहो येषामस्ति ते विजानन्त (भा०—मनुष्या) १ ११ २ प्रशस्तो बोधो येषामस्ति ते (देवा=विद्वज्जना), प्र०—अत्र प्रशसार्थे इनि, गत्यर्थाद् विज्ञान गृह्यते १ २३ १९ प्रशस्तयुद्ध-विद्याविद सुशिक्षितास्तुरङ्गा ९ १६ प्रशस्तप्रज्ञा (राजपुरुषा) ९ १७ अश्वानग्न्यादीन्वा २९ ४३ ज्ञानवन्तो योद्धार ७ ३८ ७ **वाजी**=वेगवानश्व ११ १८ विज्ञान-वान् (औरस स्वगोत्रजो वा पुत्र) ७.४ ८ वेगबलादि-युक्त (तनय=पुत्र) ७ १ १४ बलवानश्व इव (अग्नि=विद्वज्जन) ४ १५ १ प्रशस्तविज्ञान (ब्रह्मणस्पति=राजपुरुष) २ २४ १३ विज्ञापको दिवस ५ १ ४ प्राप्त-नीति (अर्वा=विज्ञानयुक्त पुत्र) ११ ४४ बह्वन्नवान् (धार्मिको जन) ४ ३ १२ प्रशस्तो वेगोऽस्याऽस्तीति (अग्नि) १ ७४ ८ महाबलवान् और वेगवान् (ईश्वर) आर्याभि० १ ५२ ऋ० २ ८ १२ २ प्रशस्तो वाजो शास्त्र-बोधो यस्य स (इन्द्र=सेनापति) १७ ३७ वेग १ १६२ २१ [वाज इति व्याख्यातम् । ततो भूम्न्यर्थे प्रशसायामर्थे वा इनि । वाजिनम्=अन्नवन्तम् । नि० १० २८ वाजी अश्वनाम निघ० १ १४ वाजी वेजनवान्

वाजयन्ता वाजमन्नादिकमिच्छन्तौ (इन्द्राग्नी=वायु-विद्युतौ) ६ ६० १. गमयन्तौ (हरी=किरणौ) २ ११ ७ [वज गतौ (भ्वा०) धातोर्णिजन्ताच्छतृ । ततोद्विवचनस्याकारश्छान्दस । अथवा वाज अन्ननाम निघ० २ ७ बलनाम निघ० २ ९ तत इच्छायामर्थे क्यजन्ताच्छतृ]

वाजयन्ती प्रापयन्ती (विदुषी स्त्री) ५ १ ३ **वाजयन्तीम्**=सवलाना विद्याना प्रज्ञापिकाम् (धिय=प्रज्ञाम्) १ १०९१ सत्याऽसत्यविज्ञापयन्तीम् (गिर=वाचम्) ३ ६२ ८ **वाजयन्तीः**=ज्ञापयन्त्य (धिय =प्रज्ञा कर्माणि वा) ४ ४१ ८ [वज गतौ (भ्वा०) धातोर्णिजन्ताच्छतृ । तत. स्त्रिया ङीप्]

वाजयन्ती प्रज्ञापयन्त्यौ (उपसा=प्रात साय सन्धिवेले) ३ १४ ३ [वाजयन्तीति व्याख्यातम् । ततो द्विवचनस्य पूर्वसवर्णदीर्घश्छान्दस]

वाजयन्निव यथा गमयन् (अग्नि =विद्वज्जन) २ ८ १ [वाजयन्-इवपदयो समास]

वाजयुम् यो वाजयति वेगेन गच्छति तम् (रथम्) २ ३१ २ **वाजयुः**=यो वाज वेग कामयते स (सज्जन) २ २० १ य आत्मनो वाजमिच्छु (अपान्नपात्=सूर्याख्योऽग्नि) २ ३५ १ वाजमन्न कामयमान (मनुष्य) ५ १९ ३ वाज प्रशस्तमन्न धन वाऽऽत्मन इच्छति (धर्मात्माऽऽप्तो-विद्वान् राजाऽध्यापक परीक्षको वा) ७ ३१.३ [वज गतौ (भ्वा०) धातोर्णिजन्तादौणा० वाहु० उ । अथवा वाज-शब्दाद् इच्छायामर्थे क्यजन्तात् 'क्याच्छन्दसी' उयु प्रत्यय.]

वाजरत्ना वाजो वोधो रत्न धन ययोस्तौ (अध्यापकोपदेशकौ) ४ ४३ ७ [वाज रत्नपदयो समासे द्विवचनस्याकारादेशश्छान्दस]

वाजरत्ना विज्ञानधनप्राप्तिसाधिका (सुमति) ४ ४४ ७ **वाजरत्नाः**=धनधान्योन्नतिकरी (धिय =प्रज्ञा उत्तमानि कर्माणि वा) ६ ३५ १ [वाज-रत्नपदयो समासे स्त्रिया टाप्]

वाजरत्नाः विज्ञानादीनि रत्नानि येषान्ते (ऋभव =मेधाविजना) ४ ३४ २ वाजा अन्नादयो रत्नानि सुवर्णादीनि च येषान्ते (ऋभव) ४ ३५ ५ विज्ञानधनवन्त (पतय =स्वामिन) ५ ४९ ४ [वाज-रत्नपदयो समास । वाज अन्ननाम निघ० २ ७ वाज वलनाम निघ० २ ९]

वाजवत् वाजो वहुविध भोक्तव्यमन्नमस्त्यस्मिन् तत् (श्रव =विद्यासुवर्णादिधन च), प्र०—वाज इत्यन्ननाम निघ० २ ७ अत्र भूम्न्यर्थे मतुप् १ ९ ७ [वाजप्राति० भूम्न्यर्थे मतुप्]

वाजवतीः प्रशस्ता वाजा वेगादयो गुणा विद्यन्ते यासु नौकादिपु ता , प्र०—अत्र प्रशसार्थे मतुप् १ ३४ ३ प्रशस्तविज्ञानयुक्तान् (इप =अन्नादीन्) ६ ६० १२ **वाजवत्या**=वाज प्रशस्तमन्न युद्ध वा विद्यते यस्या तया (शक्ती=शक्त्या) १ ३१ १८ **वाजवत्यै**=वाज प्रशस्त ज्ञान विद्यते यस्या तस्यै (इपे=इच्छायै) १ १२० ९ [वाजप्राति० प्रशसायामर्थे मतुवन्तात् स्त्रिया ङीप्]

वाजवन्तम् वह्वन्नविज्ञानसाधकम् (रयिं=धनम्) ४ ३४ १० वाजा शुष्कान्नविशेपा विद्यन्ते यस्य तम् (विद्वासमध्यापकम्) ३ ५२ ६ [वाजप्राति० भूम्न्यर्थे मतुप्]

वाजश्रवसम् वाजो वेग श्रवोऽन्न यस्मात्तम् (अग्नि=पावकम्) ३ २ ५ **वाजश्रवसः**=वाजोऽन्न विद्या श्रवण च पूर्ण येषान्ते (प्रजाजना) ६ ३५ ४ [वाज-श्रवस्पदयो समास । श्रव अन्ननाम निघ० २ ७ धननाम निघ० २ १०]

वाजश्रुतासः वाज विज्ञान श्रुत यैस्ते (नर =नायका विद्यार्थिजना) ४ ३६ ५ [वाज-श्रुतपदयो समासे जसो ऽसुक्]

वाजसनिम् वाजस्य सनिर्विभागो यस्य तम् (रयिं=राज्यश्रियम्) २० ७९ अन्नविज्ञानविभाजकम् (इन्द्र=राजानम्) ३ ५१ २ [वाजोपपदे पण सम्भक्तौ (भ्वा०) धातो 'छन्दसि वनसनरक्षिमथाम्' अ० ३ २ २७ सूत्रेण इन् । अथवा वाज-सनिपदयो समास । सनि =पण सम्भक्तौ (भ्वा०) धातोरौणा० इन्]

वाजसातम अतिशयेन वाजाना विज्ञानादिपदार्थाना विभाजक (विद्वज्जन) ५ २० १ **वाजसातमम्**=यो वाजान् प्रशस्तान् वोधान् सम्भजते सोऽतिशयितस्तम् (विद्वज्जनम्) १ ७८ ३ वाजाना विज्ञानाना वेगानामतिशयेन विभाजकम् (विद्वास जनम्) ५ १३ ५ [वाजसाप्राति० अतिशायने तमप् । वाजसा =वाजोपपदे पण सभक्तौ (भ्वा०) धातो 'जनसनखनक्रमगमो विट्' अ० ३ २ ६७ सूत्रेण विट् । 'विड्वनोरनुनासिकस्यात्' अ० ६ ४ ४१ सूत्रेणाकारादेश]

वाजसातमा वाजस्य विज्ञानस्य धनस्य वाऽतिशयेन विभक्तारौ (इन्द्राग्नी=सभासेनेशौ) ३ १२ ४ वाजान् युद्धसमूहान् सनन्ति सम्भज्य विजयन्ते याभ्या तावतिशयितौ (अ०—स्त्रीपुरुषौ) १ २८ ७ [वाजसातम इति व्याख्यातम् । ततो द्विवचनस्याकारादेशश्छन्दसि । वाजसातमा=.

वाजेध्यायै वाजेनान्नेन युद्धेन वा इध्या दीपनीया सेना यज्ञपात्रे वा यया क्रिया तस्यै (सेनायै) वाजेन बहुसाधनसमूहेन सङ्ग्रामेण सेनया यज्ञेन वा प्रकाशनीयायै सत्यनीत्यै १ २६. [वाज-इध्यापदयो समास । इध्या= ञिइन्धी दीप्तौ (रुधा०) धातोर्बाहु० औणा० यक्। स्त्रिया टाप्]

वाजेभिः वाजैरन्नादिसामग्रीभि १ ११० ९ विज्ञानैरन्नै सङ्ग्रामैर्वा १ ११० ७ सर्वविद्याप्राप्तिनिमित्तैरन्नादिभि सह, प्र०—वाज इत्यन्ननाम निघ० २ ७, १ ३ १० विमानादियानै सह १ ५ ३. वेगविज्ञानादिगुणवद्भि. (महाशयै) ६ ३२ ४ [वाज इति व्याख्यातम् । ततो 'बहुल छन्दसी' ति भिस ऐसादेशो न भवति]

वाजे वाजे सङ्ग्रामे सङ्ग्रामे ७.३८ ८ युद्धे-युद्धे २१ ११ व्यवहारे व्यवहारे ६ ६१ १२ [वाजे पदस्य वीप्साया द्वित्वम् । वाजे सग्रामनाम निघ० २ १७]

वाञ्छन्तु अभिलषन्तु, भा०—अनुकूला स्यु १२ ११ [वाञ्छि इच्छायाम् (भ्वा०) धातोर्लोट् वाञ्छति कान्तिकर्मा निघ० २ ६]

वाट् वहन्ति सुखानि यया क्रियया सा वाट्, प्र०—निपातोऽयम् २ १८ क्रियार्थे २ २० सुष्ठु ३८ ६ [वाट् निपातोऽस्य चादिषु पाठात्]

वाट् येन वहति स (अग्नि) १८ ३८ वहनम् १८ ३६ अ०—धर्मप्रापणम् १८ ४३ **वाहः**=ये वहन्ति ते (विप्रा =मेधाविजना) ३ ३० २० [वह प्रापणे (भ्वा०) धातो 'वहश्च' सूत्रेण निरुपपदादपि ण्वि]

वाढे प्रापणे १ १८१ ७]

वाणम् वाणादिशस्त्राऽस्त्रसमूहम् १ ८५ १० वाणीम् ४ २४ ९ [वण शब्दार्थे (भ्वा०) धातो 'हलश्च' इति सज्ञाया घञ् । वाण वाङ्नाम निघ० १ ११ (वाण) शततन्त्रीको भवति ता० ५ ६ १३ अन्तो वै वाण. (वाद्य नाम) ता० ५ ६ १२ वाण. शततन्तुर्भवति तै० स० ७ ५ ९ २]

वाणिजम् वणिगपत्यम् ३० १७ **वाणिजाय**= वणिजा व्यवहारेषु कुशलाय (पुरुषाय) १६ १९ [वणिज्-प्राति० अपत्यार्थे कुशलार्थे वाऽण् । वणिक् पण्य नेनेक्ति नि० २ १७]

वाणी वाक् ७ ३१ ८ वेदवाक् ६ ६३.६ **वाणीः**= सप्तद्वारावकीर्णा वाच ३ ७ १ वेदचतुष्टयी १ ७ १ वेदवाच १ १६४ २४ [वण शब्दार्थे (भ्वा०) धातो 'इण् अजादिभ्य' अ० ३ ३ १०८ वा०सूत्रेण इञ् । तत स्त्रियां 'कृदिकारादक्तिन' इति ङीष् । वाणी वाङ्नाम निघ० १.११ वाणी =बहुनाद् वाचो वा वदनात् नि० ६.२]

वाणी उपदेशकाविव, प्र०—इञ् वपादिभ्य इति शब्दार्थाद् वणधातोरिञ् १.११९ ५. [वाणीति व्याख्यातम्]

वाणीची वाक् ५ ७५ ४ [वाणीची वाङ्नाम नि० १ ११]

वात इव वायुवत् २६ २२ [वात-इवपदयो समास]

वातचोदितः वायुना प्राणेन वा प्रेरित (विद्वज्जन) १ १४१ ७ [वात-चोदितपदयो समास. । चोदित = चुद सञ्चोदने (चुरा०) धातो क्त]

वातजूतः वायुना वेग प्राप्त (अग्नि) १ ६५ ४ वायुना प्राप्तवेग (अ०—सूर्य) ३३ ३० वातेन वायुना जूत. प्राप्तवेग (अग्नि =विद्युद्वद्वर्त्तमानो जीव) १.५८.४

वातजूताः=वात इव जूत शीघ्रगमन येषान्ते (कृषीवला) १ १४० ४ वायुना प्राप्ततेजस्का, भा०—येषा वायु प्रदीपकस्ते (अग्नय =पावका) ३३ २ वायुप्रेरितास्त्रसरेण्वादिपदार्था ४ ३३ १ [वात-जूतपदयो समास. । जूत =जवति गतिकर्मा (निघ० २ १४.) धातो क्त]

वातजूता वायुवद्वेगौ (अश्वौ) १ ९४ १० [वात-जूतपदयो समासे द्विवचनस्याकारादेशश्छान्दस]

वातजूतासः वायुरिव वेगवन्त (भामास =क्रोधा) ६ ६ ३ [वातजूत इति व्याख्यातम् । ततो जसोऽसुक्]

वातत्विषः वातस्य त्विट् कान्तिर्येषान्ते (मरुत = मनुष्या) ५ ५७ ४ वातविद्यया त्विष कान्तयो येषान्ते (मरुत) ५ ५.४३ [वात त्विष्पदयो समास । त्विष्= त्विष दीप्तौ (भ्वा०) धातो सपदादित्वात् क्विप्]

वातप्रमियः वातेन प्रमातु ज्ञातु योग्या (तरङ्गा) १७ ९५ या वात वायु प्रमिन्वन्ति ता (नदीप्रवाहा) ४ ५८.७ [वातोपपदे प्रोपसृष्टात् माङ् माने (जु०) धातो क्विप् । धातोरीकारादेशश्छान्दस । अथवा 'वातप्रमी' उ० ४ १ सूत्रेण वातोपपदे डुमिञ् प्रक्षेपणे (क्र्या०) धातोर्निपातनाद् रूपसिद्धि]

वातम् वायुम् २५ २ प्राप्तम् (रेत =वीर्यम्) १९ ८४ **वातस्य**=प्राणस्य १ १८१ १२ **वातः**=वाति गच्छतीति (वायु) १८ ४१ पवन १४ २० गन्ता (भृत्य) १५ ६२ बाह्यो वायु ८ ५८ मध्यो वायु १ १६१ १४ **वातान्**=वायुवद् वेगयुक्तान् (अराती =शत्रून्) ४ २७ २

नि० २ २८ यत् मद्ये वाजान्त्समजयत् तस्माद् वाजीनाम तै० ३ ६ २१ २ (हे ऽश्व त्व) वाज्यसि ता० १ ७ १ वाजिनो ह्यश्वा श० ५ १ ४ १५ (ग्रश्वो) वाजी (भूत्वा) गन्धर्वान् (ग्रवहत्) १० ६ ४ देवाश्वा वै वाजिन कौ० ५ २ देवाश्वा वै वाजिनो ऽत्र देवा साश्वा ग्रभीष्टा प्रीता भवन्ति गो० उ० १ २० ग्रग्निर्वायु सूर्य । ते वै वाजिन तै० १ ६ ३ ६ ग्रादित्यो वाजी तै० १ ३ ६ ४ इन्द्रो वै वाजी ऐ० ३ १८ पशवो वै वाजिन गो० उ० १ २० ऋतवो वै वाजिन कौ० ५ २ श० २ ४ ४ २२ गो० उ० १ २० छन्दासि वै वाजिन गो० उ० १ २० तै० १ ६ ३ ६ उक्थ्या वाजिन गो० उ० १ २२ इन्द्रिय वै वीर्य वाजिनम् ऐ० १ १३ योषा पयस्या रेतो वाजिनम् श० २ ४ ४ २१ रेतो वाजिनम् तै० १ ६ ३ १० पशवो वै वाजिनम् तै० १ ६ ३ १० एप (तार्क्ष्य) वै वाजी देवजूत ऐ० ४ २०]

वाजिन इव सुशिक्षितानश्वानिव ३ ४ ६ [वाजिन-इवपदयो समास । वाजी ग्रश्वनाम निघ० १ १४]

वाजिना ज्ञान-गमन-प्राप्तिरूपाणि (भा०—ब्रह्म-चर्याध्ययनमननानि) ३ २० २ वहुवेगविज्ञानयुक्तौ (तुरङ्गौ, ग्रध्यापकोपदेशकौ वा) ६ ६७ ४ वेगवन्तावश्वौ २ २४ १२ [वाजप्राति० मत्वर्थ इनि. ततस्तृतीया । विभक्तिव्यत्यय । ग्रथवा वाजिन्प्राति० द्विवचनस्याकारादेश]

वाजिनानि शीघ्रगमनानि १७ ४२ **वाजिनेषु**= वाजिनाना सङ्ग्रामाणामवयवेषु कर्मसु १३ ४८ [वाजिन्-प्राति० 'तस्येदम्' इत्यर्थेऽण् । तत प्रथमावहुवचनम् । वाजिन पदनाम निघ० ५ ६ वाजिनेषु वाग्ज्ञेयेषु वलवत्स्वपि नि० १ २०]

वाजिनि प्रशस्तविज्ञानयुक्ते (सरस्वति=विदुषि स्त्रि) ६ ६१ ६ विज्ञानवति (उपर्वद्वर्त्तमाने स्त्रि) ३ ६१ १. **वाजिनी**=वजितु प्राप्तु शील यस्या सा (प्राची=पूर्वा दिक्) ३ ६ १ **वाजिनीम्**=वलवेगवतीम् (ग्र०—सेनाम्) १.२६ [वाजप्राति० प्रशसायामर्थे इनि । तत स्त्रिया ङीपि सम्बुद्धौ रूपम् । ग्रथवा वज गतौ (भ्वा०) धातो-स्ताच्छील्ये णिनि । ततो ङीप् । वाजिनी उषोनाम निघ० १ ८]

वाजिनीवति वहवो वाजिन्य क्रिया विद्यन्ते यस्या-स्तत्सम्बुद्धौ (विदुषि स्त्रि) १ ४८ १६ वाजयन्ति ज्ञापयन्ति गमयन्ति वा यासु क्रियासु ता प्रशस्ता वाजिन्यो विद्यन्ते ऽस्या तत्सम्बुद्धौ (उप) १.९२.१५. विज्ञानक्रियायुक्ते सरस्वति=विद्यायुक्ते स्त्रि) ६ ६१ ४ वह्वन्नाद्यैश्वर्ययुक्ते (उष =प्रभातवेले) ३ ४ ३ ३ **वाजिनीवती**=प्रशस्त-विद्यायुक्ता (सरस्वती=सुसस्कृता वाक्) २० ८४ सर्वोत्तम क्रिया, विज्ञानयुक्त (वाणी) ग्रार्याभि० १ १८ ऋ० १ १ ६ १० प्रशस्तविज्ञानक्रियासहिता (देवी= विदुषी माता) ६ ६१ ४ सर्वविद्यासिद्धक्रियायुक्ता, वाजिन क्रियाप्राप्तिहेतवो व्यवहारास्तद्वती (सरस्वती=सर्वविद्या-प्रापिका वाक्), प्र०—वाजिन इति पदनाम निघ० ५ ६ ग्रनेन वाजिनी इति गमनार्था प्राप्त्यर्था च क्रिया गृह्यते १ ३ १० [वाजनीति पूर्वपदे व्याख्यातम् । ततो भूम्न्यर्थे प्रशसाया वा मतुवन्तात् स्त्रिया ङीप् । तत सम्बुद्धौ रूपम् । वाजिनीवती उषो नाम निघ० १ ८ वाजिनीवती ग्रन्नवति नि० १२ ६ वाजिनीवती ग्रन्नवती नि० ११ २६]

वाजिनीवतोः प्रशस्ता विज्ञानादियुक्ता सभा सेना च विद्यते ययोस्तयो (सभासेनेशयो) १ १२० १० **वाजिनी-वान्**=प्रशस्तवेगक्रियायुक्त (शिल्पिजन) १ १२२ ८ वेगक्रियाज्ञानयुक्त: (शिल्पी जन) ५ ३६ ६ [वाजिनी-शब्दात् प्रशसायामर्थे मतुन् । वाजिनीति व्याख्यातम्]

वाजिनीवसू यौ वाजिनीमन्नादियुक्ता सामग्री वास-यतस्तौ (ग्रश्विना=विद्यायुक्तौ महाविद्वासौ) ५ ७५ ३ धनधान्यप्रापकौ (सज्जनौ ५ ७४ ७ यौ विज्ञानक्रिया वास-यतस्तौ (ग्रश्विना=ग्रध्यापकोपदेशकौ) ५ ७८ ३ यौ वाजिनी वेगवती क्रिया वासयतस्तौ (शिल्पिजनौ) २ ३७ ५ उषोवत्प्रकाशवेगयोर्वसत (इन्द्रवायू=सूर्यपवनौ), प्र०— वाजिनीत्युषसो नामसु पठितम् निघ० १ ८, १ २ ५ यौ वाजिनी वह्वन्नादिक्रिया वासयतस्तौ (ग्रध्यापकोपदेशकौ) ५ ७४ ६ वाजिनीवसो=यो वाजिनीमुपस वासयति तत्सम्बुद्धौ (इन्द्र=विद्वन् जन) ३ ४२ ५ [वाजिनीति व्याख्यातम् । तदुपपदे वस निवासे (भ्वा०) धातोर् ग्रौणा० उ]

वाजिनेय. वाजिन्या ज्ञानवत्या ग्रपत्यम् (वाजी= ज्ञानी जन) ६ २६ २ [वाजिनीति व्याख्यातम् । ततोऽप-त्यार्थे 'स्त्रीभ्यो ढक्' ग्र० ४ १ १२० सूत्रेण ढक् । ढस्य स्थान एयादेश]

वाजिन्तमम् प्रशसिता वहवोऽतिशयिता वाजिनो विद्यन्ते यस्मिँस्तम् (रयि=धनम्) ४ ३७ ५ [वाजी ग्रश्वनाम निघ० १ १४ वाजिन्प्राति० ग्रतिशायने तमप् । 'नाद्घस्ये' ति नुडागम]

१ ३ ३ ४. प्राणो वै वामदेव्यम् श० ६ १ २.३८ पशवो वै वामदेव्यम् तां० ४ ८ १५ इद वा वामदेव्य यजमानलोको ऽमृतलोक स्वर्गो लोक ऐ० ३ ४६. उपहूत वामदेव्य सहान्तरिक्षेण श० १.८ १.१९ अन्तरिक्ष वै वामदेव्यम् तैं० १.१ ८ २ तां० १५ १२ ५ अन्तरिक्ष वामदेव्यम् श० २.१ ५ ७]

वामनम् ह्रस्वाङ्गम् ३० १० **वामनः**=वक्राङ्ग (पशु) २४ ७ **वामनाय**=वाम प्रशस्त विज्ञान विद्यते यस्य तस्मै पुरुषाय, प्र०—वाम इति प्रशस्यनाम निघ० ३ ८ अत्र 'पामादित्वान्न' अ०—५ २ १ १०, १६ ३० **वामना:**=वक्रावयवा (पशव पक्षिणो वा) २४ ८ [वाम प्रशस्यनाम निघ० ३ ८ ततो मत्वर्थे 'लोमादि-पामादि०' अ० ५ २ १०० सूत्रेण न । वामनो ह विष्णु-रास श० १ २ ५ ५ स हि वैष्णवो यद् वामन (गौ) श० ५ २ ५ ४ वैष्णवो वामन (पशु) श० १३ २ २ ६ वैष्णव वामनम् (पशुम्) आलभन्ते तैं० १ २ ५ १]

वामनीतिः वामा प्रशसिता नीतिर्यस्य स (इन्द्र = राजा) ६ ४७ ७ [वामा-नीतिपदयो समास । वामा= वामप्रशस्यनाम निघ० ३ ८ तत स्त्रिया टाप्]

वामभाजः प्रशस्यकर्मसेविन, भा०—माङ्गलिका सन्त (गृहपतय) ८ ६ ये वाम भजन्ति ते (प्रजाजना) ६ ७१ ६ प्रशस्तकर्मसेविनश्श्रेष्ठभोगा वा (सखाय = सुहृज्जना (३ ५५ २२ [वामोपपदे भज सेवायाम् (भ्वा०) धातो 'भजो ण्वि अ० ३ २ ६२ सूत्रेण ण्वि । वाम प्रशस्यनाम निघ० ३ ८]

वामम् वमत्युद्गिरति येन तम् (भा०—वायुम्), प्र०— 'टुवम उद्गिरणे' अस्माद्धातो 'हलश्च' इति घञ् उपधा-वृद्धिनिषेधे प्राप्ते 'अनाचमिकमिवमीनामिति वक्तव्यम्' अ० ७ ३ ३४ इति वार्त्तिकेन वृद्धि १ ३३ ३ प्रशस्य गृहाश्रम धर्म्मम् ८ ५ प्रशस्त-वस्तु ४ ५ १३ अत्युत्कृष्टम् (सुखम्) ६.३१ ६ श्रेष्ठ विज्ञानम्, भजनीय धनम्, प्राप्तव्यम् (न्यायम्) ४ ३० २४ प्रशस्त गुणकर्मसमूहम् ४ ५ सुरूपम् (प्रकाशात्मानम्) १ १४१ १२ अत्युत्कृष्टम् प्रशसनीयम्, प्रशस्यसुखम् (भा०—सुखम्) ६ ७१ ६ **वामस्य**=शिल्पगुणैः प्रशस्तस्य (विदुषो जनस्य) १ १६४ १ **वामानि**=वननीयानि सम्भजनीयानि धनानि ५ ८२ ६. **वामेन**=प्रशसितेन प्रकाशेन १ ४८.१ [टुवम उद्गिरणे (भ्वा०) धातो हलश्चे' ति घञ् । वाम प्रशस्यनाम निघ० ३ ८ वामम्=वननीयम् नि० ६ २२ वामम् वसूनि वननीयानि नि० ११ ४६. प्राणा वै वामम् श० ७.४.२.३५ वाम हि पशव ऐ० ५ ६ य वै गां यमश्व य पुरुष प्रश-मन्ति वाम इति न प्रशमन्ति तां० १३ ३ १६]

वामं वामम् प्रशस्य प्रशस्यम् (सत्यमुपदेशम्) ४ ३० २४. [वामम् पदस्य वीप्सायां द्वित्वम् । वाम प्रशस्यनाम निघ० ३ ८]

वामा प्रशस्ता वाक् १ ४०.६ [वाम. प्रशस्यनाम निघ० ३ ८ तत स्त्रिया टाप्]

वामा प्रशस्यानि कर्म्माणि ६ १.६ [वाम प्रशस्य-नाम निघ० ३ ८ तत. शेर्लोपश्छन्दसि]

वामी बहुप्रशस्तकर्म्मा (आप्तो राजा) ६ ४८ २० **वामी.**=प्रशस्ता (इष =अन्नाद्या) ३ ५३ १ [वाम प्रशस्यनाम निघ० ३ ८ ततो भूम्न्यर्थे (मत्वर्थे) इनि]

वायतस्य विज्ञानवत (उत्तमजनस्य) ७ ३३.२.

वायवः सर्वक्रियाप्राप्तिहेतव स्पर्शगुणा भौतिका प्राणादय, अ०—प्राणान्त करणेन्द्रियाणि, प्र०—वायुरिति पदनाम निघ० ५ ४ अनेन प्राप्तिसाधका वायवो गृह्यन्ते वा गतिगन्धनयो इत्यस्मात् 'कृवापा०' उ० १ १ अनेना-ऽप्युक्तार्थो गृह्यते १ १ विज्ञानबलयुक्ता (जना) २.११ १० **वायवे**=वायुवद् गत्यादिसिद्धये यद्वा वाति प्रापयति योगबलेन व्यवहारानिति वायुर्योगविचक्षणस्तस्मै तादृश-सम्पन्नाय ७ ८ बलवते (इन्द्राय=पुरुषाय) ५ ५१ ४ वायुवद्बलाय ५ ५१ ७. प्राप्तु योग्याय (इन्द्राय=धनाय) १ १४२ १२. वायुस्पर्शाय ३० २१ वायुविद्यायै २७.२३. पवनाय २२ ५ **वायुना**=स्पर्शवता गतिमता पवनेन सह १ १४ १० **वायुम्**=प्राणादिलक्षणम् ३३ ५५ वातम् ३३ १३ प्राणादिकम् ६ ४ ७ वेगवन्तम् (पवनम्) ५.४१ ६. **वायुः**=यो वाति स (पवन) ६ ४ ५ पवन इव बलवान् (परमात्मेव राजा) ३ ४६ ४ गमनागमनशील पवन १ २४ विज्ञानवान् अनन्तबल (ईश्वर) आर्याभि० २ ५४, ३२ १५ प्राण इव प्रिय. (अधिपति =स्वामीश्वरः) १४.१४ सूक्ष्म पवन, स्थूल पवन १ १३४ ३ बलिष्ठो बलप्रद. (ईश्वर) ३२ १५ अनन्तबलवत्त्वसर्ववातृत्वाभ्या परमेश्वरो वायुशब्दवाच्य (ईश्वर) ३२ १ धनञ्जयादि-स्वरूप पवन २०.२६ सब जगत् का धारण करने वाला, अनन्त बलवान्, प्राणो से भी प्रियस्वरूप (ईश्वर) आर्याभि० २ ४, ३२.१ **वायो**=वाति जानाति सूचयति सदसत्-पदार्थानिति वा वायुस्तत्सम्बुद्धौ, अ०—हे गुणग्राहक सद-सद्विवेचनशील शिष्य ६ १६ ज्ञानस्वरूपेश्वर १.२.५

वाताय=विज्ञानाय ४ ३ ६ यो वाति तस्मै (वायवे) २२ २६ वायो शुद्धये सुखवृद्धये वा १ ६. गृहस्थाय वायवे ओषधिस्थवायुविज्ञानाय, वायुवेगगतिविज्ञानाय, वायुविद्यार्थै वायो शोधनाय वा, उदानाय, प्राणशक्तिविज्ञानाय ३८ ७ **वाते**=विज्ञातव्ये व्यवहारे, प्र०—वात इति पदनामसु पठितम् निघ० ५ ४, ८ २१. वायाविव ६ ६ [वात =वा गतिगन्धनयो (अदा०) धातो क्त । 'निर्वाणोऽवाते' इति प्रतिषेधान् निष्ठानत्व न भवति अथवा 'हसिमृ०' उ० ३ ८६ सूत्रेण तन् । वात पदनाम निघ० ५ ४ वात =वातीति सत नि० १० ३४ वातो हि वायु श० ८ ७ ३ १२ यो वै प्राण स वात श० ५ २ ४ ६ प्राणो वै वात श० ११ २ १४ एप (वात.) हीद सर्वं व्यच करोति श० ६ ४.१ १० न वै वातात् किञ्चनाशीयोऽस्ति न मनस किञ्चनाशीयोऽस्ति तस्मादाह वाता वा मनो वेति श० ५ १ ४ ८ वातो वै यज्ञ श० ३ १ ३ २६ युक्तो वातोऽन्तरिक्षेण ते सह ता० १ २ १ वाग् वातस्य पत्नी गो० उ० २ ६ तस्मादेपोऽर्वाचीनमेव वात पवते श० ८ ७ ३ ६ मनसा सकल्पयति तत् प्राणमभिपद्यते, प्राणो वात वातो देवेभ्य आचष्टे श० ३ ४ २ ६. वातो हि वायु श० ८ ७ ३ १२]

वातयामसि वात इव प्रेरयेम १ १२८ २ [वात-प्राति० 'तत्करोति तदाचष्टे' वा० सूत्रेण णिजन्ताल्लट् । 'इदन्तो मसि' इतीदन्तत्वम् । वात सुखसेवनयो (चुरा०) धातोर्वा लट्]

वातरंहसः वातस्य रहो गमनमिव गमन येषान्ते (विद्युदादय.) १ १८ २ **वातरंहाः**=वात इव रहो गमन यस्य स (रथ) १ ११८ १ वायुवद्वेगवन्तोऽग्न्यादय ५ ७७ ३ [वात-रहस्पदयो समास । रहस्=रहि गतौ (भ्वा०) धातोरौणा० असुन् । वातरहा क्षिप्रनाम निघ० २ १५]

वातस्वनसः वातस्य स्वन शब्द इव शब्दो येषान्ते (गृहस्था) ७ ५६ ३ [वात-स्वनस्पदयो समास । स्वनस्=स्वन शब्दे (भ्वा०) धातोरौणा० असुन्]

वातापे वात इव सर्वान् पदार्थान् व्याप्नोति यस्तत्-सम्बुद्धौ (परमेश्वर) १ १८७ ८ वातवत्सर्वव्यापिन् (ईश्वर) १ १८७ ६ [वातोपपदे आप्लृ व्याप्तौ (स्वा०) धातोरौणा० इन् । तत सम्बुद्धि । इन्द्र उ वै वातापि स हि वातमाप्त्वा शरीराण्यर्हन् प्रति प्रैति कौ० २७ ४ वातापयो हवनश्रुत मै० १ ६ १]

वाताप्यम् वातेन शुद्धेन वायुनाऽऽप्तु योग्यम् (गोरभस=गवा महत्त्वम्) १ १२१ ८, [वात-आप्यपदयो समास । आप्यम्=आप्लृ व्याप्तौ (स्वा०) धातोर्ण्यत् । वाताप्य पदनाम निघ ४ ३ वाताप्यमुदक भवति वात एतदाप्याययति नि० ६ २८]

वाति गच्छति ६ ३५ **वातु**=प्रापयतु १ ८६ ४ गच्छतु ७ ३५ ४ **वान्ति**=गच्छन्ति ५ ८३ ४ [वा गति-गन्धनयो (अदा०) धातोर्लट् । अन्यत्र लोडपि । वाति गतिकर्मा निघ० २ १४]

वात्याय वायुविद्याया भवाय (जनाय) १६ ३६ [वातप्राति० भवार्थे यत्]

वादिष्टम् वदतम् ५ १७ [वद व्यक्तायां वाचि (भ्वा०) धातोर्लुङ् । अटोऽभावश्छान्दस]

वानस्पत्यः वनस्पतेर्विकारो रसमय (अद्रि =मेघ) १ १४ यो वनस्पतेर्विकारस्त हवि सस्कारार्थम् (मूसलादि) १ १५ [वनस्पतिप्राति० विकारेऽर्थे 'दित्यदित्यादित्यपत्युत्तर-पदाण्ण्य ' अ० ४ १ ८५ सूत्रेण ण्य]

वापुषः वपुषि भव (पृक्ष =अन्नम्) ५ ७५ ४ [वपुष्प्राति० भवार्थेऽण् । वपुष् रूपनाम निघ० ३ ७ उदकनाम निघ० १ १२]

वामजाताः वामेषु प्रशस्येषु कर्मसु वा जाता प्रसिद्धा (गात्रादय.), प्र०—वाम इति प्रशस्यनाम निघ० ३ ८, १२ १०८ [वाम-जातपदयो समास । वाम प्रशस्यनाम निघ० ३ ८]

वामदेवस्य गुरुणयुक्तस्य विदुष ४ १६ १८ [वाम-देवपदयो समास । वाम प्रशस्यनाम निघ० ३ ८]

वामदेव्यम् वामदेवेन दृष्ट विज्ञात विज्ञापित वा (साम=तृतीयो वेद) १२ ४ [वामदेवप्राति० दृष्ट सामेत्य-स्मिन्नर्थे 'वामदेवाड् ड्यड्ड्यौ' अ० ४ २ ६ सूत्रेण ड्यत् । तौ (मित्रावरुणौ) अब्रूता वाम सर्वा इद देवेभ्य-जानीति तस्माद् वामदेव्यम् (साम) ता० ७ ६ १ पिता वै वामदेव्य पुत्रा पृष्ठानि ता० ७ ६ १ वामदेव्य वै साम्ना सन् ता० ४ ८ १० सत् वै वामदेव्य साम्नाम् ता० १५ १२ २ वामदेव्यमात्मा (महाव्रतस्य) ता० १६ ११ ११ शान्तिर्वै वामदेव्यम् तै० ११ ८ २ शान्तिर्वै भेषज वामदेव्यम् कौ० २७.२ सर्वदेवत्य वै वामदेव्यम् ता० ७ ८ २ प्राजापत्य वै वामदेव्यम् ता० ४ ८ १५ प्रजापतिर्वै वामदेव्यम् श० १३ ३.४ प्रजनन वै वामदेव्यम् श० ५.१ ३ १२ वामदेव्य मैत्रावरुणसाम भवति श०

ह्रीमाँल्लोकान्तद्यस्तरति ऐ० ४ २० वायुर्वाऽआशुस्त्रिवृत्स एष त्रिषु लोकेषु वर्त्तते श० ८.४ १ ६ वायुर्वै देवानामाशु सारसारितम तै० ३ ८ ७.१ वायुर्वै देवानामाशिष्ठ श० १३ १ २ ७ (वायो) त्व वै न (देवानाम्) आशिष्ठोऽसि श० ४ १ ३ ३ एष (वायु) हि सर्वेषा भूतानामाशिष्ठ श० ८ ४ १ ६ वायुर्वै तूर्णिर्हव्यवाड् वायुर्देवेभ्यो हव्य वहति ऐ० २ ३४ वायुर्वै तूर्णिर् वायुर्हीद सर्व सद्यस्तरति यदिद कि च ऐ० २ ३४. वायु सप्ति तै० १ ३ ६ ४ वायुर्वै चरन् तै० ३ ६ ४ १ अय वै सरिर (यजु० ३८ ७) योऽय (वायु) पवत एतस्माद्वै सरिरात् सर्वे देवा सर्वाणि भूतानि सहेरते श० १४ २ २ ३ अय वै समुद्र (यजु० ३८ ७) योऽय (वायु) पवतऽएतस्माद्वै समुद्रात्सर्वे देवा सर्वाणि भूतानि समुद्द्रवन्ति श० १४ २ २ २ य एवाय (वायु) पवत एष एव स समुद्र एत हि सद्रवन्त सर्वाणि भूतान्यनुसद्रवन्ति जै० उ० १ २५ ४ अय वै साधु (यजु० ३७ १० योऽय (वायु) पवतऽएष ह्रीमाँल्लोकान्त्सिद्धोऽनुपवते श० १४ १ २ २३. वायुरेव सविता गो० पू० १ ३३ जै० उ० ४ २७ ५ अय वै सविता (यजु० ३८ ८.) योऽय (वायु) पवते श० ११ २ २ ६ (वायु) यदुत्तरतो वाति। सवितैव भूत्वोत्तरतो वाति तै० २ ३ ६ ७ तस्मादुत्तरत पश्चादय भूयिष्ठ पवमान (=वायु) पवते सवितृप्रसूतो ह्येष एतत् पवते ऐ० १ ७ वायुर्वै वसुरन्तरिक्षसत् (यजु० १२ १४) श० ६ ७.३ ११ अयमेव वत्सो योऽय (वायु) पवते श० १२.४ १ ११ योऽय वायु पवतऽएष सोम श० ७ ३ १ १ एष (वायु) वै सोमस्योद्गीथो यत्पवते ता० ६ ६ १८ अय वै वायुर्विश्वकर्मा (यजु० १३ ४४) योऽय पवतऽएष हीद सर्व करोति श० ८ १ १ ७ एष वै पृथग्वर्त्मा वैश्वानर (यद् वायु) श० १० ६ १ ७ प्राणस्त्वाऽ एष वैश्वानरस्य (यद् वायु) श० १० ६ १ ७ वायुर्वै मध्यमा विश्वज्योति (इष्टका) श० ८ ३ २ १ वायुर्वै विकर्णी (इष्टका) श० ८ ७ ३ ६ तस्माद् वायुरेव साम जै० उ० ३ १ १२ अयमेव स्तुवो योऽय (वायु) पवते श० १ ३ २ ५ वायुर्वै स्तोता तै० ३ ६ ४ ४ श० १३ २ ६ २ वायुरेव हिंकार जै० उ० १ ३६ ६. वायुरेकपात्तस्याकापाद गो० पू० २ ८ वायुर्धिष्ण्या जै० उ० ३ ४ २ वायुरापश्चन्द्रमा इत्येते भृगव गो० पू० २ ८ यस्स प्राणो वायुस्स। जै० उ० १ २६ १ प्राणा उ वा वायु श० ८ ४ १ ८ वायुर्वै प्राण कौ० ८ ४ जै० उ० ४ २२ ११ वायुर्हि प्राण ऐ० २ २६ प्राणो हि वायु ता० ४ ६ ८ प्राणो वै वायु कौ० ५ ८ श० ४ ४ १ १५ गो० उ० १ २६ य स प्राणोऽयमेव स वायुर्योऽय पवते श० १० ३ ३ ७ प्राणो वै वायव्या (ऋक्) कौ० १६ ३ ४ वायुर्मे प्राणे श्रित तै० ३ १०.८ ४. प्राणापानौ मे श्रुतम्मे। तन्मे त्वयि (वायौ) जै० उ० ३ २१ १० न (वायु) यत्पुरस्ताद् वाति। प्राण एव भूत्वा पुरस्ताद् वाति। तस्मात् पुरस्ताद् वान्त सर्वा प्रजा प्रतिनन्दन्ति तै० २ ३ ६ ४ वायुर्वै प्रणीर्यज्ञाना यदा हि प्राणित्यथ यज्ञोऽथाग्निहोत्रम् ऐ० २ ३४ वायुप्रणेत्रा वै पशव श० ४ ४ १.१५ यत्पशुपतिर्वायुस्तेन कौ० ६ ४ ते (पशव) अब्रुवन् वायुर्वा अस्माकमीशे जै० उ० १ ५.२ ४ एताभि (एकोनविंशतिभी रात्रिभि) वायुरारण्याना पशूनामाधिपत्यमाश्नुत ता० २३ १३ २ वायुर्वाऽउग्र श० ६ १ ३ १३ वायुर्वाव पुरोहित ऐ० ८ २७ वायुर्वा उपश्रोता गो० उ० २ १६ तै० ३ ७ ५.४ वायुरेव गह गो० पू० ५ १५ वायुर्मह श० १२ ३ ४ ८ मनो ह वायुर्भूत्वा दक्षिणतस्तस्थौ श० ८ १ १ ७ इमे वै (त्रयो) लोका पूरयमेव पुरुषो योऽय (वायु) पवते सोऽस्या पुरि शेते तस्मात् पुरुष श० १३ ६ २ १ अय वै यज्ञो योऽय (वायु) पवते ऐ० ५ ३३ श० १ ६ २ २८ अय वाव यज्ञो योऽय (वायु) पवते जै० उ० ३.१६ १ अयमु वै य (वायु) पवते स यज्ञ गो० पू० ३ २ वाग्वै वायु तै० १ ८ ८.१ ता० १८ ८ ७ वायुर्वै रेतसा विकर्त्ता श० १३ ३ ८ १ वायुर्वै पयस प्रदापयिता तै० ३ ७ १ ५ वायुर्वै सर्वेषा देवानामात्मा श० १४ ३ २ ७ सर्वेषामु हैष देवानामात्मा यद् वायु श० ६ १ २ ३८ एका ह वाव कृत्स्ना देवताऽर्धदेवता एवाऽन्या। अयमेव (वायु) योऽयम्पवते जै० उ० ३ ११ द्यौरसि वायुश्रिता तै० ३ ११ १ १० वायुरस्यन्तरिक्षे श्रित। दिव प्रतिष्ठा तै० ३ ११ १ ६ वायुर्वै नभसस्पति गो० उ० ४ ६ वायुर्वा अन्तरिक्षस्याध्यक्ष तै० ३ २ १ ३. (प्रजापति) भुव इत्येव यजुर्वेदस्य रसमादत्त। तदिदमन्तरिक्षमभवत्। तस्य यो रस प्राणेदत् स वायुरभवद्रसस्य रस जै० उ० १ १ ४ वायुर्दिशा यथागर्भ श० १४ ६ ४ २१ वायुरेव यजु श० १० ३ ५ २ वायोर्यजुर्वेद (अजायत) श० ११ ५ ८.३ यजुषा वायुर्देवत तदेव ज्योतिस्त्रैष्टुभ छन्दोऽन्तरिक्ष स्थानम् गो० पू० १ २६ त्रैष्टुभो हि वायु श० ८ ७ ३ १२ वायुरध्वर्यु गो० पू० १ १३ वायुर्वा अध्वर्यु। गो० पू० २ २४ वायुर्वा एत (आदित्य) देवतानामानशे ता० ४ ६.७ तदसावादित्य इमाल्लोकान्त्सूत्रे समावयते तद् यत् तत् सूत्रवायु स श० ८ ७ ३ १० एष वाऽपा रसो योऽय पवते स

वायुरिव कमनीय (विद्वन्) १ १३४ २ परमबलयुक्त (विद्वन् वैद्यजन) ५ ५ १५ वायुरिव वर्त्तमान (योगिन्) ७ ७ वेदवाणी-प्रकाशकेश्वर १ २ ३ अनन्तबलेश्वर गमनशीलो विमानादिशिल्पविद्यानिमित्त पवन १ २ २ दुष्टाना हिंसक (सेनेश) १ १३५ ४ भा०—वायुरिव सर्वशोधक सर्वत्र गन्त सर्वप्रियेश्वर २७ २६ बलिष्ठ राजन् ४ ४८ ४ अनन्तबल सर्वप्राणाऽन्तर्यामिन्नीश्वर तथा सर्वमूर्त्तद्रव्याऽधारो जीवनहेतुभौतिको वा, प्र०—प्र वायुजे सुप्रया बर्हिरेपामा० यजु० ३३ ४४ अस्योपरि निरुक्तव्याख्यानरीत्येश्वरभौतिकौ पुष्टिकर्त्तारौ नियन्तारौ द्वावर्थौ वायुशब्देन गृह्येते । तद्यथा—'अथातो मध्यस्थाना देवतारतासा वायु प्रथमगामी भवति, वायोर्वातेर्वेत्तेर्वा स्याद् गतिकर्मण एतेरिति स्थौलाष्ठीविरनर्थको वकारस्तस्यैपा भवति (वायवा याहि०) वायवा याहि दर्शनीयेमे सोमा अरङ्कृता अलङ्कृतास्तेपा पिव शृणु नो हानमिति' निरु० १० १ २ अन्तरिक्षमध्ये ये पदार्था सन्ति तेपा मध्ये वायु प्रथमगाम्यस्ति । वाति सोऽय वायु सर्वगतत्वादीश्वरो गमनत्वाद्भौतिकोऽपि गृह्यते । वेति सर्व जगत् स वायु परमेश्वरोऽस्ति, तस्य सर्वज्ञत्वात् । मनुष्यो येन वायुना तन्नियमेन प्राणायामेन वा परमेश्वर शिल्पविद्यामय यज्ञ वा वेत्ति जानाति इत्यर्थेन भौतिको वायुर्गृह्यते । एवमेवैति प्राप्नोति चराचर जगदित्यर्थेन परमेश्वररयैव ग्रहणम्, तथा एति=प्राप्नोति सर्वेपा लोकाना परिधीनित्यर्थेन भौतिकस्यापि कुत ? अन्तर्यामिरूपेणेश्वरस्य मध्यस्थत्वात्प्राणवायुरूपेण भौतिकस्यापि । मध्यस्थत्वादेतद्द्वयार्थस्य वाचिका वायवा याहीत्यृक् प्रवृत्ताऽस्तीति विज्ञेयम् । 'वायु सोमस्य रक्षिता०' निरु० ११ ५ वायु सोमस्य सुतस्योत्पन्नस्याऽस्य जगतो रक्षकत्वादीश्वरोऽत्र गृह्यते । कस्मात् ? सर्वेण जगता सह साहचर्य्येण व्याप्तत्वात् सोमवल्ल्यादेरोषधिगणस्य रसहरणात्तथा समुद्रादेर्जलग्रहणाच्च भौतिको वायुरप्यत्र गृह्यते ।

"वायुर्वा अग्नि सुपमिद्वायुर्हि स्वयमात्मान समिन्धे० हव्य वहति" ऐत० २ ३४ वायुर्भौतिकोऽग्निदीपनरग सुपमिदिति ग्राह्य । वायुसज्ञोऽहमीश्वर स्वयमात्मान यदिद किञ्चिज्जगद्वर्त्तते तदिद सर्व स्वय समिन्धे=प्रकाशयामि तथा स एवान्तरिक्षलोके भौतिकमिम वायुमायातयति=विस्तारयति स एव वायुर्भौतिको वा यज्ञाना प्रापकोऽस्ती यत्र वायुशब्देनेश्वरश्च । तथा वायुर्वै तूर्णिरित्यादिना भौतिको गृह्यत इति १ २ १ [वायु=वा गतिगन्धनयो (अदा०) धातो 'कृवापाजि०' उ० १ १ सूत्रेण उ । वायु पदनाम निघ० ५ ४ वायुर्वातेर्वेत्तेर्वा स्यात् गतिकर्मण, एतेरिति स्थौलाष्ठीवि अनर्थको वकार नि० १० १ वायु सोमस्य रक्षिता, वायुमस्य रक्षितारमाह साहचर्याद् रसहरणाद्वा नि० ११ ५ अय वै वायुर्योऽय पवते श० २ ६ ३ ७ अय वै वायुर्योऽय पवत ऽएप वा इद सर्व विविनक्ति यदिद किञ्च विविच्यते श० १ १ ४ २२ वातो हि वायु श० ८ ७ ३ १२ वायुर्वाग्निहोमा श० ९ ४ २ १ वायुर्वा उगन् ता० ७ ५ १९ वायुरनुवत्सर ता० १७ १३ १७ तै० १ ४ १० १ वायुर्वै निकायश्छन्द (यजु० १५ ५) श० ८ ५ २ ५ अय वा ऽअवस्युरशिमिदो यो ऽय (वायु) पवते श० १४ २ २ ५ वायुर्वै देव जै० उ० ३ ४ ८ अय वै ब्रह्म योऽय (वायु) पवते ऐ० ८ २८ अय वै बृहस्पति (यजु० ३८ ८) योऽय (वायु) पवते श० १४ २ २ १० अय वै पवित्र (यजु० १ १२) योऽय (वायु) पवते श० ११.३ २ पवित्र वै वायु तै० ३ २ ५ ११ अय वायु पवमान श० २ ५ १ ५ (वायु) यत् पश्चाद् वाति । पवमान एव भूत्वा पश्चाद् वाति तै० २ ३ ९ ६ वायुर्ह्येव प्रजापतिस्तदुक्तमृपिणा पवमान प्रजापतिरिति ऐ० ४ २६ स योऽय (वायु) पवते स एप एव प्रजापति जै० उ० १ ३४ ३ स एप वायु प्रजापतिरस्मिँस्त्रैष्टुभेऽन्तरिक्षे समन्त पर्यक्त श० ८ ३ ४ १५ एतद्वै प्रजापते प्रत्यक्ष रूप यद् वायु कौ० १९ २ अर्ध ह प्रजापतेर्वायुरर्ध प्रजापति, श० ६ २ २ ११ यो वै वायु स इन्द्रो य इन्द्र स वायु श० ४ १ ३ १९ अय ते वायुमित्रो (यजु० ११ ६४) यो ऽय पवते श० ६ ५ ४ १४ अय वै यमो (यजु० ३८ ९ यो ऽय (वायु) पवते श० १४ २ २ ११ वायुर्वै यन्ता (ऋ० ३ १३ ३) वायुना हीद यतमन्तरिक्ष न समृच्छति ऐ० २ ४१ अय वै वायुर्मातरिश्वा यो ऽय पवते श० ६ ४ ३ ४ (वायु) यद् दक्षिणतो वाति मातरिश्वैव भूत्वा दक्षिणतो वाति तै० २ ३ ९ ४ वायुर्वै जातवेदा वायुर्हीद सर्व करोति यदिद किंच ऐ० २ ३४ वायुर्वा अग्ने स्वो महिमा कौ० ३ ३ तेजो वै वायु तै० ३ २ ९ १ अय वै पूपा (यजु० ३८ ३) योऽय (वायु) पवत ऽएपा हीद सर्व पुष्यति श० १४ २ १ ९ यो वा ऽय पवत ऽएप द्युतानो मारुत श० ३ ६ १ १६ यो वा ऽअय (वायु) पवत ऽएप तनूनपाच्छाक्वर साऽय प्रजानामुपद्रष्टा प्रविष्टस्ताविमौ प्राणोदानौ श० ३ ४ २ ५ यो वा ऽअय (वायु) पवत ऽएप तनूनप्ता शाक्वर श० ३ ४ २ ११ वायुर्वै तार्क्ष्य कौ० ३० ५ अय वै तार्क्ष्यो योऽय (वायु) पवते एप स्वर्गस्य लोकस्याभिवोढा ऐ० ४ २० एप (तार्क्ष्य=वायु) वै महावास्तरुता (ऋ० १० १७८ १) एप

वारुण: वरुणदैवत्य (पेत्व =कृष्ण पशु) २६.५८ जलगुण (पेत्व:=शीघ्रगामी पशु) २६ ५६ **वारुणा:**= वरुणदेवताका (कृष्णा प्राणिन) २४ १५ [वरुणप्राति० 'सास्य देवता' इत्यर्थेऽण्]

वाकीर्याम् जलमिव निर्मला सम्प्रापत्तव्याम् (धिय=प्रज्ञाम्) १ ८८ ४ [वार्-कार्यापदयो समास । वार् उदकनाम निघ० १ १२ कार्या=डुकृञ् करणे (तना०)+ण्यत+टाप्]

वार्त्रघ्नम् मेघविनाशकम् (भा०—विद्यावर्धन कर्म) १० ८ [वार्त्रोपपदे हन हिंसागत्यो (अदा०) धातोर्मूलविभुजादित्वात् क । वार्त्र =वृत्र मेघनाम निघ० १ १० तत स्वार्थेऽण्]

वार्त्रहत्याय वृत्रहत्याया इद तस्मै (शवसे=बलाय) ३.३७ १ विरुद्धभावेन वर्त्ततेऽसौ वृत्र, वृत्र एव वार्त्र, वार्त्रस्य वर्त्तमानस्य शत्रोर्हत्या हनन तत्र साधुस्तस्मै (शवसे) १८ ६८ [वृत्र-हत्याशब्दाद् भवार्थऽण् । 'तत्र साधु'-रित्यर्थे वाण् । वृत्रहत्या=वृत्रोपपदे 'हनस्त च' अ० ३.१ १०८ सूत्रेण भावे क्यप् तकारश्चान्तादेश]

वार्ध्रीनस: कण्ठे स्तनवान् महानज २४ ३६

वार्भ्य: वरणीयेभ्य (अद्भ्य =जलेभ्य) २२ २५ [वृञ् वरणे (स्वा०) धातोर्घञ् । वारप्राति० भ्यस्प्रत्यये ऽकारलोपश्छान्दस]

वार्यम् वरितुमर्हं पदार्थसमूहम् १ २६ ८ वर्त्तुमर्हं धनम् ३ २१ २ वरणीयेषु वा जनेषु भवम् (छर्दि =गृहम्) ४ ५३ १ वरेषु पदार्थेषु भव विद्युदग्निम् ५ १७ ५ स्वीकर्त्तुमर्हम् (जगत्) १ ८१ ६ वरणीय व्यवहारम् ६ १५ ६ वर्त्तुं योग्यमुपदेशम् ५ ४८ ५ **वार्याणाम्**+वराणा वरणीयानामत्यन्तोत्तमाना मध्ये (पुरुणा=बहूनामाकाशादि-पृथिव्यन्ताना पदार्थानाम्) १ ५ २ स्वीकर्त्तुमर्हाणा पृथिव्यादिपदार्थानाम् १ २४ ३ **वार्याणि**=वरितुमर्हाणि (अपत्यानि) ३८ ५. वारिषूदकेषु साधूनि (भा०—सुखानि) २८ १५ वर्त्तुमर्हाण्युदकानि २८ १७ स्वीकार्याणि भोग्यवस्तूनि २६ २४ ग्रहीतु योग्यानि साधनानि १ ११४ ५ [वृञ् वरणे (स्वा०) धातोर्ण्यत् । अथवा वारिप्राति० साध्वर्थे यत् । वार्यं वृणोतेरथापि वरतमम् नि० ५ १ वार्याणाम् अश्वनाम निघ० १ १४]

वार्या वर्त्तुमर्हाणि वस्तूनि ४ ५५ ६. स्वीकर्त्तुमर्हाणि (वस्तूनि) ६ १६ ५ [वार्यमिति व्याख्यातम् । तत शेर्लोपश्छन्दसि]

वार्षागिरा: वृषस्योत्तमस्य गीर्भिर्निष्पन्ना पुत्रा १.१०० १७ [वृष-गिर्पदयो. समासे 'तेन निर्वृत्तम्' अ० ४ २ ६८. सूत्रेणाण् । 'वृषो हि भगवान् धर्म' इति मनोर्वाक्याद् वृषो धर्म । गी वाङ्नाम निघ० १.११]

वार्षिकौ वर्षासु भवौ (ऋतू) १४ १५ [वर्षाप्राति० भवार्थे 'छन्दसि ठञ्' अ० ४ ३ १६ सूत्रेण ठञ्]

वार्षी वर्षाणा व्याख्यात्री (जगती=जगद्गता) १३ ५६ [वर्षप्राति० 'तस्य व्याख्यान०' अ० ४ ३ ६६. सूत्रेणाण् । तत स्त्रिया ङीप्]

वाल: वालक १६ ८८ [वाल पर्व, वृणोते नि० ११ ३१]

वावक्रे वक्रा गच्छन्ति ७ २१ ३.

वावदत् भृश वदति ३३ ६३ [वद व्यक्तताया वाचि (भ्वा०) धातो क्रियासमभिहारे यङ्लुगन्तात्लट् । अटोऽभावश्छन्दसि]

वावदीति भृश वदति ६ ४७ २१ [वद व्यक्तताया वाचि (भ्वा०) धातोर्यङ्लुगन्ताल्लट्]

वावन: सम्भज ४ ११ २ [वन सम्भक्तौ (भ्वा०) धातोर्लोटि लङि वा छान्दस रूपम्]

वावन्धि वध्नन्ति ५ ३१ १३

वावशती: भृश कामयमाना प्रजा ४ ५० ५ [वश कान्तौ (अदा०) धातोर्यङ्लुगन्ताच्छत्रन्तात् ङीप्]

वावशन्त पुन पुन प्रकाशयन्त १ ६२ ३ **वावशु:**= कामयन्ते ६ ५१ १४ **वावशे**=भृश कामयते २ १४ ६ [वश कान्तौ (अदा०) धातो क्रियासमभिहारे यङ्लुगन्तात्लङ् । अडभाव । व्यत्ययेनात्मनेपदम् । अन्यत्र लिट् । तुजादित्वादभ्यासस्य दीर्घ]

वावशान: भृश कामयमान (जन) १२ ४७ **वावशाना:**=कमनीया (गिर =वाच) ७ ५ ५ [वश कान्तौ (अदा०) धातोर्लिट कानच् । यङ्लुगन्ताद्वा शानच् । व्यत्ययेनात्मनेपदम्]

वावशाना भृश कामयमाना (उषा) १ ११३ १० **वावशाना:**=कमनीया (गिर =वाच) ७ ५ ५ अत्यन्त कामयमाना (गाव) १ ७३ ५ [वावशान इति व्याख्यातम् । तत स्त्रिया टाप् । वावशान पदनाम निघ० ४ २ वावशानो वष्टेर्वा वाश्यतेर्वा नि० ५ १]

वावसानस्य आच्छादकस्य (अ०—अरिपक्षस्य), प्र० – अत्र यङ्लुगन्ताद् 'वस आच्छादने' धातो कर्त्तरि ताच्छीलिक चानश् 'बहुल छन्दसि' इति श्लु १ ५१ ३

एष (वायु) सूर्ये समाहित सूर्यात् पवते श० ५ १.२ ७ अय वै वायुर्योऽय पवतऽएष वाऽइद सर्व प्रप्यायति यदिद किच वर्षत्येष वाऽएतासा (गवा) प्रप्यायिता श० १ ७ १ ३ अय वै वर्षस्येष्टे योऽय (वायु) पवते श० १ ८ ३ १२ तस्माद् या दिश वायुरेति ता दिश वृष्टिरन्वेति श० ८ २ ३ ५ यस्माद् गायत्रमध्यो द्वितीय (त्रिरात्र) तस्मात् तिर्यङ् वायु पवते ता० १० ५ २ तस्मादेष (वायु) दक्षिणैव भूयिष्ठ वाति श० ८ १ १ ७ शुक्लो हि वायु श० ६ २ २ ७ तथेति वायु पवते जै० उ० ३ ६ २ अनिरुक्तो हि वायु श० ८ ७ ३ १२ शान्तिर्हि वायु ता० ४ ६ ९ वायोर्निष्टचा तै० १ ५ १ ३ (वायो) मेनका च सहजन्या (यजु० १५ १६) चाप्सरसाविति दिक् चोपदिशा चेति ह स्माह माहित्थिरिति तु ते द्यावापृथिवी श० ८ ६ १ १७ तस्य (वायो) रथस्वनश्च रथेचित्रश्च (यजु० १५ १५) सेनानीग्रामण्याविति ग्रैष्मौ तावृतू श० ८ ६ १ १७ तम् (वायु) एता पञ्च देवता परिस्त्रियन्ते विद्युद् वृष्टिश्चन्द्रमा आदित्योऽग्नि ऐ० ८ २८ सोऽय (वायु) पुरुषेऽन्त प्रविष्टस्त्रेधा विहित प्राण उदानो व्यान इति श० ३ १ २ २०]

वायव्य वायौ भव (प्रजापति =जीव) ३९ ५ वायुदेवताक (श्वेत पशु) २४ १ **वायव्यान्**=वायुवद् गुणान् (पशून्) ३१ ६ वायुसहचरितान् पक्षिण, ऋ० भू० १२३, ३१ ६ **वायव्या**:=वायुवद् दिव्यगुणा (पशव) २४ १६ **वायव्यै**:=वायुषु भवैर्वायुदेवताकैर्वा (पदार्थै) १९ २७ वायुषु साधुभिर्मार्गै १९ ८५ [वायुरिति व्याख्यातम्। ततो भवार्थे यत्। साध्वर्थे वा यत्। वायुप्राति० वा 'साऽस्य देवता' इत्यर्थे 'वाय्वृतुपित्रुषसो यत्' अ० ४ २ ३१ सूत्रेण यत्]

वायव्यानि वायुषु भवानि वायुदेवताकानि वा (कर्माणि) १९ २७ वायुषु साधूनि (वस्तूनि) १८ २१ [वायव्यमिति व्याख्यातम्। ततो नपुसके प्रथमाबहुवचने रूपम्]

वायसम् अतिगन्तारम् (सूर्यम्), प्र०—वा गतिगन्धनयो इत्यतोऽसुन् युगागमश्चौणादि १ १६४ ५२ [वा गतिगन्धनयो (अदा०) धातोरौणा० असुन्। बहुलवचनाद् युगागम]

वायुकेशान् वायुरिव केशा प्रकाशा येषान्तान् (आप्तान् विदुष) ३ ३८ ६ वायुवद् दूतप्रचारेण विदितसर्वव्यवहारान्, केशा सूर्यरश्मयस्तद्वत्सत्यन्यायप्रकाशकान् (सभासद) ऋ० भू० २१६ [वायु-केशपदयो समास। केशा रश्मय। काशनाद्वा प्रकाशनाद्वा नि० १२ २५]

वाय्ये ज्ञापनीये (साध्वि स्त्रि) ५ ७९ २ तन्तुसद्ध्ये सन्तानीये विस्तारणीये सन्ततिरूपे (स्त्रि) ५ ७९ १ गमनीये (दुहित =विदुषि स्त्रि) ५ ७९ ३ [वा गतिगन्धनयो (अदा०) धातोर्ण्यत्। अथवा वेञ् तन्तुसन्ताने (भ्वा०) धातोर्ण्यत्]

वारणम् वरणीयम् (अन्नम्) ६ ४.५ **वारण**:=सर्वदोषनिवारक (विद्वज्जन) १ १४० २ **वारणेषु**=वारयन्ति यैर्युद्धैस्तेषु वा वारयन्ति ये चोरदस्युव्याघ्रादयो येषु तेषु ३ ३२ [वृञ् वरणे (स्वा०) वृञ् आवरणे (चुरा०) धातोर्वा णिजन्ताल्ल्युट्। अन्यत्र कर्त्तरि युच् औणादिक। 'कृत्यल्युटो बहुलम्' इति कर्त्तरि ल्युट् वा]

वारम् वर्त्तुमर्हम् (दुग्धम्) १ १५१ ५ वरणीयम् (हव्यम्) ५ १६ २ **वार**:=वरीतुमर्ह (देव =मेघ) १.३२ १२ **वारान्**=वालानिव वरणीयान् लोकान् २ ४ ४ [वृञ् वरणे (स्वा०) धातोर्घञ्]

वारम् पुन पुनर्वर्त्तुम् १ १२८ ६ [वृञ् वरणे (स्वा०) धातोराभीक्ष्ण्ये णमुल्]

वारयन्ते निषेधयन्ति ४ १७ १९ [वृञ् आवरणे (चुरा०) धातोर्णिजन्ताल्लट्]

वारवन्तम् वालवन्तम् (अश्व=वेगवन्त वाजिनम्), प्र०—एतद्यास्कमुनिरेव व्याचष्टे—"अश्वमिव त्वा वालवन्त, वाला दशवारणार्था भवन्ति, दशो दशते" नि० १ २०, १ २७ १

वारि जलम् २१ ६१ [वृञ् आवरणे (चुरा०) धातो 'वसिवपियजिराजि०' उ० ४ १२५ सूत्रेण इञ्। वारि उदकनाम निघ० १ १२]

वारितीनाम् वरणीयाना पदार्थानाम् मध्ये २८ २१ वारिणि जले इतिर्गतिर्येषा तेषाम् (जनानाम्) २१ ५७ अन्तरिक्षस्थसमुद्राणाम् २८ ४४ [वारि-इतिपदयो समास। शकन्ध्वादित्वात् पररूपम्। इति =इण् गतौ+क्तिन्। अथवा वृञ् वरणे (स्वा०) धातोर्णिजन्तादौणा० बाहु० इति प्रत्यय]

वारिव जलमिव ४ ५ ८ [वार्-इवपदयो समास। वा उदकनाम निघ० १ १२]

वारिवस्कृताय वरिव सेवन कृत येन तस्मै (भृत्याय), प्र०—अत्र स्वार्थेऽण् १६ १९ [वरिवस्-कृतपदयो समास। तत स्वार्थेऽण्]

वाश्रेव यथा शब्दायमाना गावो वत्सानभितो गच्छन्ति तथा १ ३७ १० यथा कामयमाना धेनु १ ३८ ८ कमनीय इव (स्तावको जन इव) २ ३४ १५ [वाश्रा-इवपदयो समास]

वासन्तिकौ वसन्ते भवौ (चैत्रवैशाखमासौ) १३ २५ [वसन्तप्राति० भवार्थे 'वसन्ताच्च' अ० ४ ३ २० सूत्रेण ठञ्]

वासन्ती वसन्तस्य व्याख्यात्री (गायत्री) १३.५४. [वसन्तप्राति० 'तस्य व्याख्यान०' इत्यर्थे 'सन्धिवेलाद्यृतु-नक्षत्रेभ्योऽण्' अ० ४ ३ १६ सूत्रेण अण्। तत स्त्रिया ङीप्]

वासय आच्छादय १ १४० १ कलायन्त्रादिषु स्थापय, विद्युद्विद्यया स्थापय वा १ १३४ ३ **वासयः**=वासये ६ ३५.१ [वस आच्छादने (अदा०) धातोर्णिजन्ताल् लोट्। अन्यत्र वस निवासे धातोर् णिजन्ताल् लट्। अटोऽभाव]

वासरीम् निवासयित्रीम् (धेनुमिव सोमवल्लीम्) १ १३७.३ [वस निवासे (भ्वा०) धातोर्णिजन्ताद् 'अर्त्ति-कमि०' उ० ३.१३२ सूत्रेण अर प्रत्यय । स्त्रिया ततो ङीप् छान्दस । वासरम् अहर्नाम निघ० १ ९]

वासस वसन्ति यस्मिंस्तद्वासो दिन तस्य मध्ये, प्र०—दिवसोपलक्षणेन रात्रिरपि ग्राह्या १ ३४.१ [वस निवासे (भ्वा०) धातो 'वसेर्णित्' उ० ४ ११९ सूत्रेणासुन् णिच्च]

वासः आच्छादनम् ३३.३७ वसत आच्छादयन्ते शरीर येन तद्वस्त्रादिकम् २ ३२ वस्त्रादिक निकेतन वा १२ ७८ वसनम् १.११५ ४ [वस आच्छादने (अदा०) धातो 'वसेर्णित्' उ० ४ २१९ सूत्रेणासुन् णिच्च। णिद्वद्भावेन वृद्धि । स्प वाऽएतत् पुरुषस्य यद् वास श० १३ ४ १.१५. तस्मात् सुवासा इव बुभूषेत् श० ३ १ २ १६ ओषधयो वै वास श० १ ३ १ १४ सर्व-दैवत्य वै वास तै० ११.६ ११ सर्वदैवत्य वास ऐ० ७.३ सौम्य हि देवतया वास तै० १.६ १ ११. तस्य वा ऽएतस्य वासस.। अग्ने पर्यासो भवति वायोरनुछादो नीवि श० ३ १ २ १८ त्वगेव वास श० ४ ३ ४ २६ तद्वै निष्पेष्ट वै ब्रूयाद् यदेवास्य (वासस) अत्रामेध्या (स्त्री) कणति वा वयति वा तदस्य (वासस) मेध्यमसदिति श० ३ १.२.१९.]

वासः पल्पूलीम्=वाससां शुद्धिकरीम् (ओषधिम्), भा०—वस्त्रादिपवित्रताम् ३०.१२ [वासस्-पल्पूलीपदयो समास । पल्पूली=पल्पूलवनपवनयो (चुरा०) धातोरट प्रत्ययो हेतौ छान्दस । तत स्त्रिया ङीप्। वर्णव्यत्ययेन यकारस्य पकार]

वास्तव्याय वास्तुनि निवासस्थाने भवाय (जनाय) १६ ३९. [वास्तुप्राति० भवार्थे यत् । अथवा वस निवासे (भ्वा०) धातो. 'वसेस्तव्यत् कर्त्तरि णिच्च' अ० ३ १.९६ वा०सूत्रेण कर्त्तरि तव्यत् । णिद्वद्भावाद् धातोर्वृद्धिश्च। वास्तु=वस निवासे (भ्वा०) धातो 'वसेरगारे णिच्च' उ० १ ७०. सूत्रेण तुन् । णिद्वद्भावाद् वृद्धिश्च]

वास्तुपाय वास्तुनि निवासस्थानानि पाति तस्मै (जनाय) १६ ३९ [वास्तु इत्युपपदे पा रक्षणे (अदा०) धातो कर्त्तरि क]

वास्तूनि वासाधिकरणानि १.१५४ ६ **वास्तोः**=निवासस्थानस्य ५ ४१ ८. वासहेतोर्गृहस्य ७ ५४ १ [वस निवासे (भ्वा०) धातो 'वसेरगारे णिच्च' उ० १ ७० सूत्रेण तुन् । णिद्वद्भावाद् वृद्धिश्च। अवीर्यं वै वास्तु श० १ ७ ३ १७]

वास्यम् आच्छादयितु योग्य सर्वतोऽभिव्याप्यम् (जगत्) ४० १ [वस आच्छादने (अदा०) धातोर्ण्यत्]

वाहवा वाहू, प्र०—'सुपा सुलुक्०' इत्याकारादेश २ ३८ २. [वाहुप्राति० 'सुपा सुलुक्०' इति द्विवचनस्याकार । वर्णव्यत्ययेन वस्य वकार]

वाहसः अजगर सर्पविशेष २४ ३४ [वह प्रापणे भ्वा०) धातो 'वहियुभ्या णित्' उ० ३ ११९ सूत्रेणासच्]

वाहाः वृषभादय ४.५७ ४. **वाहैः**=वहन्ति यैस्तै-र्वृषभादिवाहनै १२ ६९ [वह प्रापणे (भ्वा०) धातो करणे 'हलश्च' अ० ३.३ १२१. सूत्रेण घञ्]

वाहिष्ठम् अतिशयेन वाहयितारम् (राजानम्). २६ १२ **वाहिष्ठः**=अतिशयेन वोढा (रथ=रमणीय यानम्) ७ ३७ १ [वह प्रापणे (भ्वा०) धातोर्णिजन्तात् कर्त्तरि तृजन्तात् 'तुश्छन्दसि' सूत्रेणातिशायन इष्ठन्। 'तुरिष्ठेमेयस्सु' सूत्रेण तृचो लोप । वाहिष्ठ वोढृतम नि० ५ १]

वाहे सर्वान् सुख प्रापयित्रे (तेजस्विजनाय) ७ २४ ५ [वह प्रापणे (भ्वा०) धातो 'वहश्च' इति निरुपपदा-दपि ण्वि]

वाः वारि १ ११६ २२ वाह्यमुदकम्, प्र०—वा इत्युदकनामसु पठितम् निघ० १ १२, ५ ११ [वा उदक-नाम नि० १ १२]

वावसानाः=आच्छाद्यमाना (सज्जना) ६ ११ ६ [वस आच्छादने (अदा०) धातो 'ताच्छील्यवयोवचनशक्तिषु चानश्' इति कर्त्तरि चानश्। शप श्लुश्छान्दस]

वावसाना सुखेष्वतिशयेन वस्तारौ (अ०—अध्यापकोपदेशकौ) १४६ १३ [वस निवासे (भ्वा०) धातोर्यङ्लुगन्तात् कर्त्तरि ताच्छीलिक चानश्। ततो द्विवचनस्याकारादेश। तुजादित्वादभ्यासस्य दीर्घ]

वावाता दोषहन्त्री विद्याजनयित्री (गौ=वाणी) ४४ ८ [ओवै शोषणे (भ्वा०) धातोरौणा० वाहु० कर्त्तरि क्त। तत स्त्रियां टाप्। द्वित्व छान्दसं दीर्घत्व च]

वावान वनते, प्र०—अत्र 'तुजादीनाम्०' इत्यभ्यासदैर्घ्यम् ६ २३ ५ [वन सम्भक्तौ (भ्वा०) वनु याचने (तना०) धातोर्वा लिट्। तुजादित्वादभ्यासस्य दीर्घ]

वावृजे व्रजति गच्छति ३३ ४४ [वृजी वर्जने (अदा०) धातोर्लिट्। तुजादित्वादभ्यासस्य दीर्घत्वम्। धातूनामनेकार्थकत्वादत्र गत्यर्थ]

वावृतुः वर्त्तेरन् ४ ३० २ वर्त्तन्ते, प्र०—अत्र वर्त्तमाने लिट् व्यत्ययेन परस्मैपदम् 'तुजादीना दीर्घो०' इति दीर्घत्वम् १ १०५ १० **वावृते**=वर्त्तते १ १६६ ६ प्रवर्त्तते १ १६१.१५ पुन पुनरावर्त्तते १ १६४ १४ [वृतु वर्त्तने (भ्वा०) धातोर्लिटि व्यत्ययेन परस्मैपदम् तुजादित्वाच्चाभ्यासदीर्घ]

वावृधध्यै अतिशयेन वर्धयितुम् ६ ६७ १ पुन पुनर्वर्धयितुम् १ ६१ ३ वर्धयितुम्, प्र०—अत्र 'बहुल छन्दसि' इति शप श्लु तुजादित्वाद् दीर्घश्च १ १०२ २ [वृधु वृद्धौ (भ्वा०) धातोर्यङ्लुगन्तात् तुमर्थेऽध्यै प्रत्यय। अभ्यासदीर्घश्च तुजादित्वात्]

वावृधन्त भृश वर्धन्ते ५ ५२ ७ प्र०—अत्र 'तुजादीनाम्०' इत्यभ्यासदैर्घ्यम् ६ ६६ २ **वावृधस्व**=भृशमेधस्वैधय वा, प्र०—अत्र वृधु धातोर्लेटि मध्यमैकवचने विकरणव्यत्ययेन श्लु 'अन्येषामपि दृश्यते' इति दीर्घ १ ३१ १८ वृद्धो भव ६ १७ ३ **वावृधाति**=वर्धयेत्, प्र०—अत्राऽन्तर्गतो ण्यर्थ १ ३३ १ **वावृधाते**=वर्धयत ७ ७ ५ **वावृधीथाः**=वर्धेथा, प्र०—अत्र 'वाच्छन्दसि' इत्युपधागुणो न १ १३० १० **वावृधु.**=वर्धेरन् २ २० ४ वर्धन्ते २ ३४ १३ वर्धयन्ति २ ८ ५ वर्धयेयु ५ १४ ६ वर्धन्ताम् ५ ५६ ५ वर्धयन्तु ५ ५५ ३ **वावृधे**=वर्द्धयति ३३ ६७ पुन पुनर्वर्धते १ ५२ २ वर्धेत ३ ३६ १ अतिशयेन वर्धते १ ५२ २ अत्यन्त वर्धते ७ ४० [वृधु वृद्धौ (भ्वा०) धातोर्यङ्लुगन्ताल् लङ्। व्यत्ययेनात्मनेपदम्। अभ्यासदीर्घञ्च तुजादित्वात्। अन्यत्र लोट् लेट्, लिट् च। वृधु धातोर्वा लोटि तु शप श्लु]

वावृधा वर्द्धमानौ (किरणौ अश्वौ वा) ऋ० भू० १३६. [वृधु वृद्धौ (भ्वा०) धातोर्यङ्लुगन्ताद् इगुपधलक्षण क। ततो द्विवचनस्याकारादेश]

वावृधानम् अतिशयेन शुभगुणकर्मसु वर्द्धमानम् (इन्द्र=सम्राजम्) ७ ३६ वर्द्धयितारम् (इन्द्रम्) ३ ४७ ५ अतिवर्द्धमानम् (इन्द्रम्) ६ १६ ११ वर्धयन्तम् (क्षय=गृहम्) ७ ११२ **वावृधानः**=अत्यन्त वर्धयमानो जन २० ४७ भृश वर्धन (अग्नि) ५ ८ ७ सदा वर्धयिता (अग्नि=स्वप्रकाश ईश्वर) ७ ५ २ **वावृधानान्**=विवर्धमानान् (अविद्वज्जनान्) ५ ४२ ६ [वृधु वृद्धौ (भ्वा०) धातोर्लिट कानच्। शानच्-प्रत्यये वा 'बहुल छन्दसी' ति शप श्लौ रूपम्। वावृधान वर्धयमान नि० १०.२७]

वावृधाना शुद्ध्या [वर्द्धमानौ वर्द्धकौ (वायुसूर्यौ) ६ ६६ ६ [वावृधानमिति व्याख्यातम्। ततो द्विवचनस्याकारादेश]

वावृषाणाः वृष बल कुर्वाणा (विश=मनुष्यादिप्रजा) ६ २६ १. [वृष शक्तिबन्धने (चुरा०) धातोर्लिट कानच्]

वाशति वाणीवाऽऽचरन्ति ५ ५४ २ [वाशी वाङ्नाम निघ० १.११ तत आचारेऽर्थे क्विप्। ततो लटि रूपम्]

वाशाः य उशन्ति कामयन्ते ते, भा०—शुभगुणै कमनीया. (राजपुरुषा) १० ४ [वश कान्तौ (अदा०) धातो 'वा छन्दसि' नियमेन 'कर्मण्यण्' इत्यण् निरुपपदादपि भवति]

वाशीमन्तः प्रशस्ता वाशी वाग् विद्यते येषान्ते (मनीषिण=विद्वासो जना) ५ ५७ २ [वाशीप्राति० प्रशसायामर्थे (मत्वर्थे) मतुप्। वाशी वाङ्नाम निघ० १ ११ वाशी वाङ्नाम वाश्यत इति सत्या नि० ४ १६]

वाशीः वेदविद्यायुक्ता वाणी १ ८८ ३ [वाशृ शब्दे (दिवा०) धातोरौणा० इन्। तत स्त्रिया ङीप्। वाशी वाङ्नाम निघ० १ ११ वाशीभिरश्ममयीभिरिति वा वाग्भिरिति वा नि० ४ १६]

वाश्राः वत्सान् कामयमाना (गाव) १ ६५ ६ [वश कान्तौ (अदा०) धातोरौणा० रक्। बहुलवचनाद् धातोर्दीर्घ। वाशृ-शब्दे (दिवा०) धातोर्वा रक्]

शोगा० इन् । बहुलवचनादेव हन्तेर्घनादेश.]

विघृते विशेषेण प्रकाशिते (स्त्रियौ) ३ ५४ ६ [वि+घृ क्षरणदीप्त्योः (जु०) धातोः क्त । ततो द्विवचनम्]

विचक्र विदधथ ४ ३५ ४ कुर्वन्ति ४ ३५ २. विदधति ४ ३५ ४ **विचक्रिरे**=विविधतया कुर्वन्ति १ ८५ १० [वि+डुकृञ् करणे (तना०) धातोर्लिट् मध्यमबहु० । अन्यत्र प्रथमपुरुषे बहु०]

विचक्रमाणः यथायोग्य जगद्रचनाय कारणपादान् प्रक्षिपन् नियोजयन् (विष्णु =परमेश्वर) ५.१८ [वि+क्रमु पादविक्षेपे (भ्वा०) धातोर्लिट कानच् । शानचि वा शपः श्लु]

विचक्रमे विविधतया क्रमते १७ ६० विक्रामति ३४४३ विक्रान्तवान्, विक्षिप्तवान्, विक्राम्यति, विक्रमिष्यति वा, प्र०—अत्र सामान्येऽर्थे लिट् ५ १५ विविधतया रचितवान् १ २२ १६ विविधतया विहितवान् १ २२ १८. विक्रमते ५ ४७ ३. विस्तृत विद्यायुक्त वेद को बनाया, लोकों को विविध प्रकार से रचा आर्याभि० १ ११. ऋ० १.२७ १६ [वि+क्रमु पादविक्षेपे (भ्वा०) धातोर्लिट् । व्यत्ययेनात्मनेपदम् । विचक्रमे विक्रमते नि० १२.१६]

विचक्षणः विविधान् दर्शक (सूर्य) १ ५०.८ प्राज्ञ (जिज्ञासो) ४ ३२.२२ अतिचतुर (वैश्वानर=प्रधानपुरुष) ३ ३ १० **विचक्षणम्**=वाग्विषयम् १ १६४ १२ **विचक्षणः**=अतीव धीमान् (जन.) ४.४५ ५ विविधपदार्थानां प्रकाशक (परमेश्वर) ४ ५३ २ प्रशस्तचातुर्यादिगुणोपेत (विद्वज्जन) १ १०१ ७ विविधतया दर्शक (विद्वान्) १.११२ ८ यो विविधान् सत्योपदेशान् चष्टे स (बृहस्पति =परमेश्वरो विद्वज्जनो वा) २ २३ ६ [चक्षिङ् व्यक्तायां वाचि (अदा०) अयं दर्शनेऽपि, ततो विपूर्वाद् 'अनुदात्तेतश्च हलादेः' अ० ३ २ १४९. सूत्रेण कर्त्तरि युच् । 'कृत्यल्युटो बहुलं वे' ति कर्मणि ल्युट् । 'असनयोः प्रतिषेधो वक्तव्य' अ० २ ४ ५४ वा०सूत्रेण ख्याञ् आदेशस्य प्रतिषेध । विचष्टे पश्यतिकर्मा निघ० ३ ११ चक्षुर्वै विचक्षण वि ह्येनेन पश्यतीति श० १ ६ चक्षुर्वै विचक्षण चक्षुषा हि विपश्यति कौ० ७ ३ सोमो राजाऽसि विचक्षण । शा० श्रा० ४.९ सोमो वै विचक्षण जै० २ ६४]

विचक्षते विविधतया दर्शयति १ १६४ ४८ **विचक्षे**=प्रकाशयति ४ १६.४ **विचचक्षिरे**=व्याख्यातवन्त ४० १३ व्याचक्षते ८० १० [वि+चक्षिङ् व्यक्तायां वाचि, अयं दर्शनेऽपि (अदा०) धातोर्लट् । वचनव्यत्यय । 'बहुल छन्दसी' ति वा शपो लुङ् न । अन्यत्र विचक्षे प्रयोगे लिट् । 'वा छन्दसी' ति द्वित्व न 'विचचक्षिरे' प्रयोगे तु लिटि प्रथमपुरुषे बहुवचनम्]

विचक्षे विख्यापयितुम् १ ११६ १४. विविधदर्शनाय २ २७ १० विविधप्रकटत्वाय १ ११३ ५ [चक्षिङ् व्यक्तायां वाचि अयं दर्शनेऽपि (अदा०) धातोस्तुमर्थे के-प्रत्ययश्छान्दस]

विचयत् विचिनोमि ५ ६० १ **विचयेम**=विचिनुयाम १ १३२ १ [वि+चिञ् चयने (स्वा०) धातोर्लङ् विकरणव्यत्ययेन शप् । अडभावश्च । अन्यत्र लिङ्]

विचयिष्ठः अतिशयेन वियोजक विद्वज्जन) ४ २० ६ [वि+चिञ् चयने (स्वा०) धातो कर्त्तरि तृजन्तात् 'तुश्छन्दसि' सूत्रेणातिशायन इष्ठन् । 'तुरिष्ठेमेयस्सु' सूत्रेण तृचो लोप]

विचरति विविधतया गच्छति १ ११३ १३ **विचरन्त**=विचरन्तु, प्र०—अत्र व्यत्ययेनात्मनेपदम् ३ ४ ५ **विचरन्ति**=विचलन्ति ५ ६३ ५ **विचारीत्**=विशेषेण चरति ७.२५ १ [वि+चर गत्यर्थे (भ्वा०) धातोर्लट् । अन्यत्र लङ् लुट् च]

विचरन्ती विविधगत्या प्राप्नुवन्ती (रात्रि) ६ ४९ ३ [वि+चर गत्यर्थे (भ्वा०) धातो शत्रन्तात् ङीप् स्त्रियाम्]

विचर्मणीव चर्मण्याकर्षितानि लोमानीव ऋ० भू० १४१ [विचर्मणि-इवपदयो समास]

विचर्षणिम् विलेखकम् (मारुत गणम्) १ ६४ १२ **विचर्षणे**=तेजस्विन् (राजन्) ६ १६ २९ **विचर्षणिः**=विलेखनस्वभावेन विच्छेदक (सविता=सूर्यलोक), प्र०—'कृषेरादे' उ० २ १०४. इति कृष विलेखने धातोरनि प्रत्यय १ ३५ ९ विविधविद्याप्रद=ईश्वर १६ ४२ साक्षाद् द्रष्टा (परमेश्वर) १ ७९ १२. पश्यक (अग्नि =पावक) ३ २ ८ विचक्षणो द्रष्टा (इन्द्र =वीरपुरुषो राजा) ६ ४५ १६ सर्वद्रष्टव्यद्रष्टा मनुष्य. ४ ३६ ५ विद्याप्रकाशयुक्तो विद्वान् २ २२ ३ प्रकाशक (अग्नि =वह्नि) ३ ११ १ दर्शक (इन्द्र =सूर्य), प्र०—विचर्षणिरिति पश्यतिकर्मा निघ० ३ ११, २४ १ १० [विचर्षणि पश्यतिकर्मा निघ० ३.११ वि+कृष विलेखने (तुदा०) धातो 'कृषेरादेश्च०' उ० २ १०४ सूत्रेणानि आदेश्च चकारो बाहु०]

वि क्रियायोगे १ ११ ३. विविधार्थे १.१२४ अन्छे प्रकार ३ ३ १ स० वि० २०२ वेदार्पे। विशेषेण ४० ८ [वि इत्येकीभावस्य प्रातिलोम्यम् नि० १ ३]

विककरान् विकिरकान् पक्षिविशेषान् २४ २०

विकस्तम् विविधतया कस्यते शिष्यते यत्तत् (हृदयम्=अन्त करणम्) ११ ३९ विविधतया शासितारम् (सज्जनम्) १ ११७.२४ [वि+कसि गतिशासनयो (अदा०) तत्रैव कस इत्येके पठ्यते। तत क्त। 'असितस्कभित०' अ० ७ २ ७४ इति निपातनाद् रूपम्]

विकिरिद्र विशेषेण किरि सूकर इव द्रायति शेते, विशिष्ट किरिं द्राति निन्दति वा तत्सम्बुद्धौ (सभेश राजन्) १६ ५२ [विपूर्वात् किरि इत्युपपदे द्रा कुत्साया गतौ (अदा०) धातो क। द्रे स्वप्ने (भ्वा०) धातोर्वा क]

विकृतम् प्राप्तविकारम् (अप =कर्म्म २ ३८ ६ विकृतानि=विकारमवस्थान्तर प्राप्तानि (तत्त्वानि) १ १६४ १५ [वि+डुकृञ् करणे (तना०) धातो क्त]

विकृन्तन्तम् विच्छेदयन्तम् (पुरुषम्) ३० १८ [वि+कृती छेदने (तुदा०) धातो शतृ]

विकृन्तानाम् विविधोपायैर्ग्रन्थि छित्वा परस्वाऽपहर्त्तृणाम् (प्रजापुरुपाणाम्) १६ २१ [वि+कृती छेदने (तुदा०) धातोरौणा० बाहु० अन्। नुमागमोऽपि छान्दस]

विकृषन्तु भा०—विचारेण कृपिं कुर्वन्तु १२ ६९ [वि+कृष विलेखने (तुदा०) धातोर्लोट्]

विक्त वियुज्यात् पृथक्कुर्यात् १.१६२ १५ विजानीत २५ ३७ **विक्था**=भय कम्पन च कुर्य्या ६ ३५ चल, प्र०—ओविजी भयचलनयो इत्यस्माल्लोडर्थे लङ्, लङि मध्यमैकवचने 'बहुल छन्दसि' इति विकरणाभावश्च १ २३. [ओविजी भयचलनयो (तुदा०) धातोर्लङ्। 'बहुल छन्दसीति' शपो लुकि श्नप्रत्ययस्याप्यभाव। अटोऽभावश्चापि छान्दस]

विक्रमणम् विक्रमतेऽस्मिँस्तत् १० १९ विक्रमन्ते यस्मिन् जगति तत् १९ ५६ विविधक्रमेण जगद्रचनम् ऋ० भू० २६०, १९ ५६ **विक्रमणेषु**=विविधक्रमेषु ५ २० विविधेषु सृष्टिक्रमेषु १ १५४ २ [वि+क्रमु पादविक्षेपे (भ्वा०) धातोरधिकरणे ल्युट्। भावे वा ल्युट्]

विक्रमस्व पुरुपार्थी भव ४ १८ ११ पादै विद्याऽङ्गै सम्पद्यस्व ५ ४१ विविधतया गच्छ ५ ३८ [वि+क्रमु पादविक्षेपे (भ्वा०) धातोर्लोट्। 'वृत्तिसर्गतायनेपु क्रम' इत्यात्मनेपदम्]

विक्रमान् सत्याचारो को स० वि० २१०, अथर्व० ९ ६ २.१२. [वि+क्रमु पाद विक्षेपे (भ्वा०) धातोर्घञ्। 'नोदात्तोपदेश०' इति वृद्धिप्रतिषेध.]

विक्रान्तम् विविधतया क्रान्तम् (यानम्) १० १९ [वि+क्रमु पादविक्षेपे (भ्वा०) धातो क्त]

विक्रीणावहै विशेषेण व्यवहारयोग्यानि वस्तूनि दद्याव गृह्णीयाव वा ३ ४९ [वि+डुक्रीञ् द्रव्यविनिमये (क्र्या०) धातोर्लोटि उत्तमपुरुषस्य द्विवचने रूपम्]

विक्षिणत्केभ्यः ये शत्रून् विक्षयन्ति तेभ्य (जनेभ्य) १६ ४६ [वि+क्षणु हिंसायाम् (तना०) धातोरौणा० बाहु० क्त्कन्]

विक्षिपः यो विक्षिपति विक्षेप प्राप्नोति स (मरण प्राप्तो जीव) ३९ ७ [वि+क्षिप (तुदा०) धातोर् इगुपधलक्षण कर्त्तरि क]

विक्षु प्रजासु ४ ३१ उत्पन्नासु प्रजासु १ ६६ २ मनुष्यादिप्रजासु ४ ३७ ३ **विट्**=प्रजा १ ७२ ८ वणिग्जन १० १२ [विश मनुष्यनाम निघ० २ ३]

विख्यन् प्रकाशयन्ति ३ ३१ १२ [वि+ख्या प्रकथने [अदा०) धातोर्लुङ्। 'अस्यतिवक्तिख्यातिभ्योऽङ्' इति च्लेरङ्। अटोऽभावश्छान्दस]

विख्याय प्रसिद्धीकृत्य ११ २० [वि+ख्या प्रकथने (अदा०) धातो क्त्वा। समासे क्त्वो ल्यप्]

विगात् विशेषेण प्राप्नोति ५ ४५ १ [वि+इण् गतौ (अदा०) धातोर्लुङ्। 'इणो गा लुङी' ति गादेश। अडभावश्छान्दस]

विगामभिः विविधप्रशसायुक्तै (सत्वादिगुणै) १ १५५ ४

विगाहम् विविधान् पदार्थान् गाहन्ते विलोडयन्ति येन तम् (अग्नि=वह्निम्) ३ ३ ५ [वि+गाहू विलोडने (भ्वा०) धातो हलश्चे' ति करणे घञ्]

विग्रम् मेधाविनम् (इन्द्र=विद्वास जनम्), प्र०—'वेर्ग्रो वक्तव्य' इति वे परस्या नासिकाया स्थाने ग्र समासान्तादेश 'उपसर्गाच्च' अ० ५ ४ ११९ इति सूत्रस्योपरि वार्त्तिकम्। विग्र इति मेधाविनामसु पठितम् निघ० ३ ५ १४४ [वि नासिकापदयो ममासे 'वेर्ग्रो वक्तव्य' अ० ५ ४ ११९ वा०सूत्रेण नासिकास्थाने ग्र समासान्तादेश।

विघनिना विशेषेण हन्तारौ (सभासेनाधीशौ) ३३.६१ [वि+हन हिंसागत्यो (अदा०) धातोर्बाहु०

विजगृभ्रे विशेषेण गृह्णन्ति ८ १८ ८ [वि+ग्रह [illegible] (क्र्या०) धातोर्लिट्। 'हृग्रहोर्भश्छन्दसी' ति हस्य [illegible]। '[illegible] रे' सूत्रेण रे-आदेश]

विजघान विविधतया हन्ति ३ ३३ ७ विशेषेण [illegible] ७ २१ ४ [वि+हन हिंसागत्यो (अदा०) धातो-[illegible]। '[illegible]' अ० ७ ३ ५५ सूत्रेण कुत्वम्]

विजभ्रिरे विशेषेण हरन्ति १ १६१.१४ [वि+हृञ् [illegible] (भ्वा०) धातोर्लिटि प्रथमबहुवचने रूपम्। हस्य [illegible]]

विजरेथाम् विशेषेण स्तुयातम् ३ ५८ २. [वि+जरते अर्चतिकर्मा (निघ० ३ १४) धातोर्लोट्]

विजर्जराम् विशेषेण जर्जरीभूताम् (स्त्रीम्) ३० १५ [वि+जॄष् वयोहानौ (दिवा०) धातोर्यङ्लुगन्तात् स्त्रियाम् [illegible]। [illegible]]

विजर्भृतः विविध [illegible] १ २८ ७ [वि+हृञ् [illegible] (भ्वा०) धातोर्यङ्लुगन्तात् लट्। प्रथमद्विवचने रूपम्। विजर्भृतः = विह्रियेते नि० ६ ३६]

विज[illegible] [illegible] पक्षिण १ ९२ १० [ओविजी [illegible] (तुदा०) धातो कर्त्तरि क्विप्]

विजानत विशेषेण समीक्षमाणस्य (योगिजनस्य) [illegible] ३ [illegible] म० वि० २१५, ४० ७

विजानन्=सर्वविद्या अनुभवन् (विद्वज्जन) १ ६९ २. विशेषेण [illegible] (विद्वान् जन) ३ २९ ७ [वि+ज्ञा अवबोधने (क्र्या०) धातो शतृ। 'ज्ञाजनोर्जा' इति शित्प्रत्यये जादेश]

विजानात् विशेषेण जानीयात् १ १६४ १६ **विजानाति**=जानता है म० प्र० नि० १ १८ **विजानीहि**= [illegible] १ ५१ ८ [वि+ज्ञा अवबोधने (क्र्या०) धातो [illegible]। [illegible] लोट् च। शिति प्रत्यये धातोर्जादेश]

विजानन् विजानन् (मनुष्य) ७ ५० २. [वि+[illegible] गतिकर्मा (निघ० २ १४) धातो शतृ। वर्णव्यत्ययेन [illegible]]

विजामातु. [illegible] जामाता न तस्मात् ([illegible]) १ १०९ २ [वि-जामातृपदयो समास। [illegible]। विजामातेति [illegible]। अनुसमाप्त इव [illegible]। [illegible] निरुक्त नि० ६ ९ [illegible] (जुहो०) धातो. '[illegible]' [illegible]। विजामातृ पदनाम

निघ० ४.३]

विजायते विशिष्टतया प्रकटो भवति ३ १ १९. विशेषेणोत्पद्यते ३ २९ ११ [वि+जनी प्रादुर्भावे (दिवा०) धातोर्लट्। 'ज्ञाजनोज' सूत्रेण जादेश]

विजावा विशेषेण जात (सूनु =अपत्यम्) ३ ५ ११ विशिष्टतया प्रादुर्भूत (सूनु.) ३ १ २३ विशेषेण प्रसिद्ध (सूनु) ३ ७ ११ विशिष्टतया सर्वेषां सुखजनक (शिष्य) ३ २३ ५ विविधैश्वर्यजनक (तनय =पुत्र.) १२ ५१. सत्याऽसत्ययोर्विभाजक (सूनु) ३ २२ ५ विजयशील (तनय.=धार्मिक पुत्र), प्र०—अत्र जिधातोरौणादिको वन् प्रत्ययो बाहुलकादाकारादेशश्च ३ १५ ७ [वि+जनी प्रादुर्भावे (दिवा०) धातो कर्त्तरि 'अन्येभ्योऽपि दृश्यन्ते' अ० ३ २ ७५ सूत्रेण वनिप्। 'विड्वनोरनुनासिकस्यात्' अ० ६ ४.४१ सूत्रेणात्वम्। अथवा वि+जि जये (भ्वा०) धातोर्बाहु० ओणा० वन्। बहुलवचनादेव चात्वम्]

विजिहीत विशेषेण गच्छति ५ ४५.३ **विजिहीष्व**= विशिष्टतया त्यज ५ ७८ ५ [वि+ओहाङ् गतौ (जु०) धातोर्लोट्। अन्यत्र 'ओहाक् त्यागे' (जु०) धातोर्लोट्]

विजुहुरे विरुद्धतया कुटिलयन्ति ५ १९ २ [वि+ह्वृ कौटिल्ये (भ्वा०) धातोर्लिट्। सम्प्रसारण छान्दसम्। 'इरयो रे' इति रे-आदेश। जुहुरे पदनाम निघ० ४ १]

विजृम्भमाणाय विशेषेणाऽङ्गविनामकाय (जनाय) २२ ७ [वि+जृभि गात्रविनामे (भ्वा०) धातो शानच्]

विजेन्यम् विजेतु योग्यम् (सैन्यम्) १ ११९ ४ [वि+जि जये (भ्वा०) धातोर्यत्। नुगागमश्छान्दस]

विजेहमानः शब्दायमान (अश्व =तुरङ्ग.) ६ ३ ४ [वि+जेहते गतिकर्मा (निघ० २ १४) धातो शानच्]

विज्ञानम् सम्यग्ज्ञान विविधज्ञान वा २० ८ [वि-ज्ञानपदयो समास। ज्ञानम्=ज्ञा अवबोधने (क्र्या०) धातोर्ल्युट्]

विज्यम् विगता ज्या यस्मात्तत् (धनु) १६ १० [वि-ज्यापदयो समास। ज्या पदनाम निघ० ५ ३]

विञ्चन्ति विभञ्जन्ति १ ३९ ५ [विचिर् पृथग्भावे (रुधा०) धातोर्लट्]

वितक्षत् विशेषेण तक्ष्नु १ १५८ ५ [वि+तक्षू तनूकरणे (भ्वा०) धातोर्लट्। लङ्गि वाऽडोऽभावे रूपम्]

विततन्थ वितनोषि ६ ४९ [वि+तनु विस्तारे (तना०) धातोर्लिटि 'बभूथाततन्थ०' अ० ७.२ ६४ सूत्रेण निपात्यते]

विचष्टे दर्शयति १ ६८ १ विख्यापयते ५ १६ १ विशेषेणोपदिशति ३ ५५ ६ प्रकाशयति २६ ७ [वि+चक्षिङ् व्यक्तायां वाचि, अयं दर्शनेऽपि (अदा०) धातोर्लट्]

विचाकशत् विशिष्टतया प्रकाशमान (चन्द्रमा = चन्द्रलोक) १ २४ १० [वि+काशृ दीप्तौ (भ्वा०) धातो शतरि 'बहुल छन्दसी' ति शप श्लु । तुजादित्वादभ्यासस्य दीर्घ । 'बहुल छन्दसीति वक्तव्यम्' अ० ७ ३ ८७ वा० सूत्रेण धातोरुपधाह्रस्वत्वम्]

विचारिणि विचारितु शील यस्यास्तत्सम्बुद्धौ (विदुषि स्त्रि) ५ ८४ २ [वि+चर गत्यर्थे (भ्वा०) धातोर्णिजन्तात् ताच्छील्ये णिनि । नत स्त्रिया ङीपि सम्बुद्धौ रूपम्]

विचिकिते विशेषेण जानाति २ २७ ११ विशेषेण ज्ञापयति १ ७१ ७ **विचिकेतत्**=विजानाति १ १५२ २ [वि+कि ज्ञाने (जु०) धातोर्लट् । व्यत्ययेनात्मनेपदम् । अन्यत्र कित निवासे रोगापनयने च (भ्वा०) धातोर्लेटि छान्दसद्वित्वे च रूपम् । अत्र जानात्यर्थे धातु]

विचिकित्सति संशय को प्राप्त होता है स० वि० २१५, ४० ६ [वि+कित निवासे रोगापनयने च (भ्वा०) धातो 'गुप्तिज्किद्भ्य सन्' अ० ३ १.५ सूत्रेण स्वार्थे सन्नन्ताल् लटि रूपम्]

विचितन विज्ञापयत ४ ३७ ७ [वि+चिती सज्ञाने (भ्वा०) धातोर्लोट् । शपो लुक् । मध्यमबहुवचने तप्रत्ययस्य तनबादेश]

विचितः विविधविद्याशुभगुणधनादिभिश्चित सयुक्त (शिष्य) ४ २४ [वि+चिञ् चयने (स्वा०) धातो क्त]

विचिनवत् विचिनुयात् ४ २ ११ **विचिन्वन्तु**= विविधतया वर्धयन्तु, प्र०—अत्रान्तर्गतो ण्यर्थ ४ २४ विशेषेण सञ्चित कुर्वन्तु, भा०—प्राप्नुवन्तु २३ ३६ [वि+चिञ् चयने (स्वा०) धातोर्लिङर्थे लेट् । 'लेटोऽडाटाव्' इति सूत्रेणाडागम]

विचिन्वत्केभ्यः ये विचिन्वन्ति तेभ्य (जनेभ्य) १६ ४६ [वि+चिञ् चयने (स्वा०) धातो शत्रन्तात् स्वार्थे क]

विचियन्तु विशेषेण चिन्वन्तु, प्र०—अत्र 'बहुल छन्दसि' इति विकरणलुक्, इयङादेशश्च १ ६० ४ [वि+चिञ् चयने (स्वा०) धातोर्लट् । 'बहुल छन्दसी' ति शपो लुकि श्नोरपि लुक्]

विचृतन्ति विशेषेण ग्रथ्नन्ति १ ६७ ४ [वि+चृती हिंसाग्रन्थनयो (तुदा०) धातोर्लट्]

विचृतामसि अच्छे प्रकार हम ग्रन्थित अर्थात् वन्धन युक्त करते है म० वि० १६६, अथर्व० ६ २ ३ १. [वि+चृती हिंसाग्रन्थनयो (तुदा०) धातोर्लट् । 'इदन्तो मसि' इति मस इदन्तता]

विचृत्ताय ग्रन्थकाय (जनाय) २० ७ **विचृत्ताः**= विस्तृता (माया =प्रज्ञा) २ २७ १६ [वि+चृती हिंसाग्रन्थनयो (तुदा०) धातो क्त । औणा० वा कर्त्तरि क्त]

विचृत्य विविधतया ग्रन्थित्वा बद्ध्वा ३२.१२ [वि+चृती हिंसाग्रन्थनयो (तुदा०) धातो क्त्वा । क्त्वो ल्यप् समासे]

विचेतत् विचेतेत् १ १६४ १६ **विचेति**=विजानाति ४ ५५ ४ [वि+चिती सज्ञाने (भ्वा०) धातोर्लेट् । अन्यत्र लटि तलोप]

विचेतसम् विगत चेतो यस्मात्तम् (अग्नि=परमेश्वरम्) ४ ७ ३ **विचेतसः**=विविध चेत शास्त्रोक्तबोधयुक्ता प्रज्ञा येषा ते (देवा =विद्वासो जना) १ ४५ २ विगत चेत सञ्ज्ञान=याभ्यस्ता (आप) १ ८३ १ विविधप्रज्ञायुक्ता (मानुषास =मनुष्या) ७ ७ ४ विज्ञापकस्य (विद्वज्जनस्य) ५ १७ ४ **विचेताः**=विविधानि चेतासि सज्ञानानि ज्ञापनानि वा यस्य स (वैश्वानर =राजा) ४ ५ २ विविध चेतो ज्ञान यस्मात् स (अग्नि =पावक) २ १० २ विविधाश्चेता प्रज्ञा यस्य स (विद्वान्), प्र०—चेत इति प्रज्ञानाम निघ० ३ ६, १ १६० ४ विगत चेतो विज्ञान यस्मात् स जड (अग्नि) २ १० १ विविधप्रज्ञ (राजा) ६ २४ २ [वि-चेतस्पदयो समास । चेतम्=चिती सज्ञाने (भ्वा०) धातोरौणा० असुन् । चेत प्रज्ञानाम निघ० ३ ६]

विचेतसा विविधविज्ञानौ (विद्वज्जनौ) ५ ७४ ६ [विचेतस् इति व्याख्यातम् । ततो द्विवचनस्याकारादेश]

विचछन्दाः विविधानि छन्दास्यूर्जनानि यासु ता (प्रजा) २३ ३४ [वि-छन्दस्पदयो समास । छन्दस्= चदि आह्लादने दीप्तौ च (भ्वा०) धातो 'चन्देरादेश्च छ' उ० ४ २२० सूत्रेणासुन्]

विच्युताः विशेषेण चलिता (शूरा जना) २ १७ ३ [वि+च्युङ् गतौ (भ्वा०) धातो क्त]

विज इव भयेन सञ्चलित इव (दुर्जन) २ १२ ५ [विज-इवपदयो समास । विज =ओविजी भयचलनयो (तुदा०) धातोरिगुपधलक्षण क]

वित्तधम् यो वित्त धन दधाति तम् (धनिक जनम्) ३० ११ [वित्तोपपदे डुधाञ् धारणपोषणयो (जु०) धातो क]

वित्तम् विजानीतम् १ १०५ १ **विद**=बुद्ध्यध्वम् १८ ६० विजानीत १ १५६ ३ वित्थ १ ८६ ८ **विदत्**=प्राप्नोतु, प्राप्नुयात १ ६२ ३ जानाति १ ७२ ४ विद्यात् १ ८४ १४ विन्दति १ १०० ८ लभते ५ ४४ ८ वेत्ति ५ ४५ ८ विन्देत ५ ३२ ५ लभते १ ७२ ८ जानीयात्, प्र०—अत्राऽडभाव ३ ३ ५९ लभेत ५ ७ ६ **विदतम्**=प्राप्नुतम् १ १५१ २ **विदथुः**=विजानीथ १ १८२ ४ **विदन्**=लभन्ताम्, विन्दन्तु, प्राप्नुवन्तु, प्र०—अत्र 'वा छन्दसि' इति नुमटोरभावो लोडर्थे लुङ् च ४ ३४ **विदन्त**=जानन्ति ४ १ १४ **विदन्ति**=जानन्ति १ ६७ २ व्याप्नुवन्ति ७ ४३ १ **विदम्**=प्राप्नुयाम् २ २७ १७ **विदः**=लभस्व १ १७३ १३ वेदय ५ ३० ४ प्राप्नुया ४ १ ३ प्राप्नुहि, प्र०—अत्र 'वाच्छन्दसि' इति गुणविकल्पो लेट्-प्रयोगोऽन्तर्गतो ण्यर्थश्च । समी०—सायणाचार्येणेदम-डागमेन साधितम् । गुणप्राप्तिर्न बुद्धाऽनोऽभ्यानभिज्ञता दृश्यते १ ४२ ७ **विदाः**=विज्ञापय १ ७१ ७ लम्भय, प्र०—अत्र लोडर्थे लेट् १ ३६ १४ **विदात्**=प्राप्नुयात् २ २२ ४ **विदाथ**=जानीथ, प्र०—लेट् प्रयोग १७ ३१ **विदाम्**=विदताम्, प्र०—विद ज्ञाने इत्यस्माल्लटि प्रथमबहुवचने 'लोपस्त आत्मनेपदेषु' अ० ७ १ ४८ अनेन तकारलोपे सवर्ण-दीर्घे विदामिति रूपम् ६ ३६ **विदुः**=जानीयु २ २३ १६ जानन्ति १ १९ ३ जानते हैं स० वि० २१५, १ १६४ ३९ **विदे**=प्राप्नुयाम १ १२० १२ वेद्मि, प्र०—अत्र व्यत्ययेना-त्मनेपदम् १ १३२ ३ प्राप्नोमि ७ ४० ५ **विदेत्**=प्राप्नुयात् विजानीयात् ५ ९ **विदेय**=अन्यायेन विन्देय, समी०—अत्र वैयाकरणेन महीधरेण भ्रान्त्या विदॢ लाभे इत्यस्य व्यत्ययेन 'तुदादिभ्य श' इति प्रत्ययेन लिङि रूपमित्यशुद्ध व्याख्यातम् । कुत ? विदॢ लाभे धातो स्वत एव तुदादित्व वर्त्तते ४ २३ **विदेयम्**=प्राप्नुयाम, प्र०—अत्र 'छान्दसो वर्णलोपो वा' इति नलोप ७ ४६ **विद्धि**=जानीहि २ २० १ **विद्म**=जानीयाम, प्र०—अत्र 'विदो लटो वा' इति णलादय आदेशा १२ १९ विजानीम १ ८१ ८ विजानीयाम ३ ४२ ६ विजानीम १२ १९ विद्यते=भवति २३ ४८ **विद्यात्**=वेत्ति, प्र०—अत्र लडर्थे लिङ् १२३ २४ विजानीयात् ३१ २१ **विद्याम्**=जानीया लभेय वा २ २७ ५ **विद्याम**=प्राप्ता भवेम १ १६८ १० लभेमहि १ १६५ १५ जानीयाम १ ४ ३ **विद्युः**=विदन्ति, प्र०—अत्र लडर्थे लिङ् १ २३ २४ [विद ज्ञाने (अदा०) धातोर्लोट् । अन्यत्र लेट्, लट्, लिङ् चापि । वित्तम्=जानीतम् नि० ४ ६]

वित्तम् धन भोग वा ५ ४२ ९ **वित्ते**=भोगने योग्य धनादि के प्रयत्न मे स० वि० १४३, [विदॢ लाभे (तुदा०) धातो क्त । 'वित्तो भोगप्रत्यययो' इति नत्वप्रति-षेध । एतावान् खलु वै पुरुषो यावदस्य वित्तम् तै० १ ४ ७ ७ वित्त धननाम निघ० २ १०]

वित्तम् लब्धम् (धनम्) १८ १४ विचारितम् (विषयमात्रम्) १८ ११. [विदॢ लाभे (तुदा०) विद विचारणे (रुधा०) धातो क्त]

वित्तात् विजानीहि ६ २ [विद ज्ञाने (अदा०) धातोराशिषि लोट् 'तुह्योस्तातङ्०' इति तातङ्]

वित्तायनी या वित्ताना भोगाना प्रतीताना पदार्थाना-मयनी प्रापिका सा (अ०—विद्युत्), प्र०—'वित्तो भोग-प्रत्यययो' अ० ८ २ ५८ अनेन वित्त-शब्द प्रतीतार्थे भोगार्थे च निपातित ५ ९ [वित्त-अयनीपदयो समास । अयनी=अय गतौ (भ्वा०) धातोर्ल्युट् । ततो ङीप्]

वित्ति प्राप्ति १८ १४ [विदॢ लाभे (तुदा०) धातो स्त्रियाम् क्तिन्]

वित्वक्षणः विशेषेण दु खस्य विच्छेत्ता (आर्य= राजा) ५ ३४ ६ [वि+त्वक्षू तनूकरणे (भ्वा०) धातो 'कृत्यल्युटो बहुलमि' ति कर्त्तरि ल्युट् । छान्दसो युज् वा]

वित्वा विज्ञाय ८ २१ लब्ध्वा २ २१ [विद ज्ञाने (अदा०) विदॢ लाभे (तुदा०) धातोर्वा क्त्वा । इडागम-स्तु न छान्दसत्वात्]

विथुरा व्यथायुक्तानि (पिन्दना=शत्रुसैन्यानि) ६ ४६ ६ व्यथकानि (गवासि=बलानि) ६ २५ ३ [व्यथ भयसञ्चलनयो (भ्वा०) धातो 'व्यथे सम्प्रसारण ध किच्च' उ० १ ३९ सूत्रेण उरच् । सम्प्रसारणञ्च । विथुरप्राति० शेर्लोपश्छन्दसि]

विथुरेव यथा व्यथितानि (वस्तूनि) १ १६८ ६ [विथुरा-इवपदयो समास । विथुरेति व्याख्यातम्]

विथुरेव शीतज्वरव्यथितोद्विग्ना कन्येव १ ८७ ३ [विथुरा-इवपदयो समास । विथुरेति व्याख्यातम्]

विदत् लम्भयन् (ईश्वर) १ ९६.४ प्राप्नुवन् १ ६१ ६ लभमान (राजभृत्य) ४ २१ ८ [विदॢ लाभे (तुदा०) धातो शतृ]

विदथम् विज्ञानकारकमध्ययनाध्यापन यज्ञम्

विततम् व्याप्तम् (अन्तरिक्षम्) २ ३८ ४ विस्तृतम् (घोष=वाचम्) ५ ५४ १२ व्यापक (स्वरूप) स० प्र० ४२३, ६ ८३ १ **विततः**—विस्तीर्ण (दोह =सामग्री-समूह) ८ ६२ [वि+तनु विस्तारे (तना०) धातो क्त । 'अनुदात्तोपदेश०' इत्यनुनासिकलोप]

वितता विस्तृतानि तेजांसि १ १५२ ४ [विततम् इति व्याख्यातम् । तत शेर्लोपश्छन्दसि]

वितता विस्तृता (ज्या=प्रत्यञ्चा) २६ ४० [विततमिति व्याख्यातम् । तत स्त्रिया टाप्]

विततान विशेषेण विस्तारितवान् विस्तारयत वा ४ ३१. **वितत्निरे**=विविधतया विस्तृणन्ति १ १६४ ५ विस्तारयन्ति ८ ६१ **वितनुध्वम्**=विविध विस्तृणीत १२ ६८ **वितनोति**=विस्तीर्णां करोति ५ ४८ १ **वितन्वते**=विस्तृणन्ति १२ ६७ विस्तारयन्ति १ १११५ २ [वि+तनु विस्तारे (तना०) धातोर्लिट् । अन्यत्र लोट् लट् च । वितत्निरे प्रयोगे 'तनिपत्योश्छन्दसि' अ० ६ ४ ६६. सूत्रेणोपधालोप]

वितन्तसाय्यः भृश विस्तारणीय (राजकर्मचारी) ६ १८ ६ यो वितन्तस्यति विजयते स (इन्द्र =राजा) ६ ४५ १३ [वि+तनु विस्तारे (तना०) धातोश्छान्दस रूपम्]

वितन्तसैते भृश युध्येताम् ६ २५ ६

वितपति विशेषेण सन्तापयति ३ ५३ २२ [वि+तप सन्तापे (भ्वा०) धातोर्लट्]

वितरम् विविधानि दु खानि तरन्ति येन कर्मणा तत् १ १२४ ५ विशेषेण तरणीयमुल्लङ्घनीयम् (अह =पाप कुपथ्यादिक वा) २ ३३ २ विविधप्रकारेण तरितु योग्यम् (अज्ञानम्) ४ १८ ११ विविधतया तरन्ति येन तम् (अग्निम्) ६ १ ११ सुखदातारम् (पतिम्) १ १२३ ११ विशेषेण सन्तारकम् (स्योनम्=सुखम्) २६ २६ विशेषेण प्लवनम् ५ २६ ४ [वि+तॄ प्लवनसन्तरणयो (भ्वा०) धातो 'ऋदोरप्' इत्यप् । कर्त्तरि वा विपूर्वात् तरतेरच् । वितरम् विकीर्णतरमिति वा विस्तीर्णतरमिति वा नि० ८ ६]

वितरित्रता विविधतयाऽतिशयेन तरितुमिच्छन्तौ सम्पादयितुमिच्छन्ती (सच्छिप्यौ), प्र०—अत्र विभक्तेराकारादेश १ १४४ ३ [वि+तॄ प्लवनसन्तरणयो (भ्वा०) धातो 'दाधर्त्तिदर्धर्त्ति०' अ० ७ ४ ६५. सूत्रेण शतरि निपात्यते । विभक्तेराकारादेश]

विततुरम् अतिशयेन विविधप्लवे तरणार्थम्, प्र०—अत्र यङ्लुगन्तात्तॄधातोरच्प्रत्ययो 'वहुल छन्दसि' इत्युत्वम् १ १०२ २ [वि+तॄ प्लवनसन्तरणयो (भ्वा०) धातोर्यङ्लुगन्तादच् । धातोरुत्व छान्दसम्]

वितर्तुराणः विशेषेण भृश हिंसन् (इन्द्र =सूर्य इव राजा) ६ ४७ १७ [वि+तुर्वी हिंसायामर्थे (भ्वा०) धातोर्लिट कानच् । छान्दसत्वादभ्यासस्योकारस्याकार]

वितस्तम्भ विशिष्टतया धरेत् ४ ५० १ विशेषेण स्तभ्नाति १ १६४.६ [वि+स्तम्भु स्तम्भार्थे सौत्रो धातु । ततो लिट्]

वितस्थानाम् विशेषेण स्थिताम् (नदीम्) ४ ३० १२ [वि+ष्ठा गतिनिवृत्तौ (भ्वा०) धातोर्ल्युटि छान्दसद्वित्वे टापि च रूपम् । वितस्नाऽविदग्धा विवृद्धा महाकूला नि० ६ २५]

वितस्थिरे विविधतया तिष्ठन्ति १६ ६३ **वितस्थुः**=विशेषेण तिष्ठन्ति ५ ६६ २ विविधतया तिष्ठेयु २७ २३ **वितस्थे**=विशेषेण तिष्ठामि १ ७२ ६ वितिष्ठते ६ २१ ७ **वितिष्ठते**=विशेषतया वर्त्तते १ ५८ ४ आक्रमते, व्याप्नोति ३४ ३२ [वि+ष्ठा गतिनिवृत्तो (भ्वा०) धातोर्लिट् । अन्यत्र लड् अपि । 'समवप्रविभ्य स्थ' अ० १ ३ २२. सूत्रेणात्मनेपदम्]

वितार्ढि आजहि १८ ७१ [वि+तृहू हिंसार्थे (तुदा०) धातोर्लोटि छान्दस रूपम् । 'वहुल छन्दसी' ति विकरणस्य लुक्]

वितारीत् विशेषेण दु खात् सन्तारयेत् १ ६६ ३ विशिष्टतया सुखानि ददाति १ ७३ १ [वि+तॄ प्लवनसन्तरणयो (भ्वा०) धातोर्लुङ् । अडभावश्छान्दस]

वितिराति विहन्ति ७ ५८ ३

वितृषन् विरुद्धतया तृपिता भवन्तु, प्र०—अत्र लोडर्थे लुङ् ६ ३१ [वि+ञितृप् पिपासायाम् (दिवा०) धातोर्लुङ् । अटोऽभाव । पुषादित्वाच्च्लेरङ्]

वितेनिरे विशेषेण विस्तृत कुर्वन्ति, भा०—विस्तारयन्ति १७ ६८ [वि+तनु विस्तारे (तना०) धातोर्लिट्]

वित्तजानिम् वित्ता प्रतीता जाया हृद्या स्त्री येन तम् (सद्वैद्यम्), प्र०—अत्र 'जायाया निङ्, अ० ५ ४ १३४ इति जायाशब्दस्य समासान्तो निङादेश १ ११२ १५ [वित्ता-जायापदयो समासे 'जायाया निङ्' सूत्रेण समासान्तो निङ् । वित्ता=वित्तप्राति० स्त्रिया टाप् । वित्तम्=विद्लृ लाभे (तुदा०) विद ज्ञाने (अदा०) धातोर्वा क्त । 'वित्तो भोगप्रत्यययो ' अ० ८ २ ५८ सूत्रेण नत्वाभाव]

स्वरूप) २ ६ १ विद्वान्, भा०—अनन्तविद्य (परमेश्वर) ३३ ७६ जानन् (विद्वज्जन) ६ २१ २ विविदिपु रान् (कुलदेशोद्दीपको जन) ११ ३६ **विदानाः**=लभमाना (सोमा =पदार्था) ३ ३६ २ [वि+विद सत्तायाम् (दिवा०) धातो शानच् विकरणस्य लुक्। अन्यत्र विद ज्ञाने (अदा०) विद्लृ लाभे (तुदा०) धातो शानच्-प्रत्यये छान्दस रूपम्]

विदाना ज्ञापयन्ती (उपा) ५ ८० ५ **विदाने**= विज्ञायमाने (उपासानक्ता=रात्रिदिने) १ १२२ २ [विद ज्ञाने (अदा०) धातो शानच्। व्यत्ययेनात्मनेपदम्। तत स्त्रिया टाप्। विद ज्ञाने धातोर्वा वाहु० औणा० आनच् ततष्टाप्]

विदानासः विद्वास सन्त (आप्ता जना) १.१६६ २ ज्ञानवन्तो विद्याग्रहणाय कृतप्रतिज्ञा (ऋभव =मेधाविजना) ४ ३४.२ [विद ज्ञाने (अदा०) धातोर्वाहु० औणा० आनच् ततो जसो ऽसुक्। विदान इति विद्वानित्येतत् ग० ६ ४ २ ७]

विदासीत् विगतदानो भवेत् ७ १ २१ [वि+दुदाञ् दाने (जु०) धातोर्लुङ्। अटोऽभाव 'वा छन्दसि' इति सिचो लुङ् न]

विदाः विद्वास (जना) ५ ४५ १ विज्ञानवन्त (विद्वास) ६ ४८ ६ [विद ज्ञाने (अदा०) धातो कर्त्तरि इगुपधलक्षण क]

विदित्वा विज्ञाय, भा०—ज्ञात्वा ३१ १८ जान कर आर्याभि० २ ८, ३१ १८ [विद ज्ञाने (अदा०) धातो क्त्वा]

विदिद्युतः विद्योतमानान् (उसप =दिवसान्) २ २ ७ विशेषेण प्रकाशयत (सेनाऽमात्यजनान्) ५.३० ४ [वि+ द्युत दीप्तौ (भ्वा०) धातो 'द्युतिगतिजुहोतीना द्वे च' अ० ३ २ १७८ वा०सूत्रेण क्विप् द्वित्वञ्च। 'द्युतिस्वाप्यो सम्प्रसारणम्' अ० ७ ४ ६७ सूत्रेण अभ्यासस्य सम्प्रसारणम्]

विदिद्युतानः विशेषेण प्रकाशमान (परमेश्वर) ६ १६ ३५ [वि+द्युत दीप्तौ (भ्वा०) धातो शानच्। 'वहुल छन्दसी' ति शप श्लु 'द्युतिस्वाप्यो०' इत्यभ्यासस्य सम्प्रसारणम्]

विदिशः विरुद्धदिश ६ १६ [वि+दिश्पदयो समास]

विदीद्ये विशेषेण प्रकाशयेयम्, प्र०—दीदयतीति ज्वलतिकर्मा निघ० १ १६, ३ ५५ ३ [वि+दीदयति ज्वलतिकर्मा (निघ० १ १६) धातोर्लट्]

विदुक्षः विदूपये. ७ ४ ७ [वि+दुप वैकृत्ये (दिवा०) धातोर् लुङ्। च्लेः क्सादेश। विदुक्षः=अदूदुप नि० ३ २.]

विदुषः विपश्चित (जनान्) ३ १४.२ **विदुषा**= आप्तेन विपश्चिता (जनेन) १.१५६ १ **विदुषे**=आप्त-विद्याय (जनाय) १ ११७ १० [विद ज्ञाने (अदा०) धातो. शतृ। 'विदे शतुर्वसु' इति वसु। 'वसो सम्प्रसारणम्' इति सम्प्रसारणम्]

विदुषीव पूर्णविद्या स्त्रीव ५.४१ ७ जैसे विदुषी स्त्री स० वि० १०५, ५ ४१.७. [विदुषी-इवपदयो. समास। विदुषी=विद्वस्प्राति० स्त्रिया ङीपि सम्प्रसारणे च रूपम्]

विदुष्टरम् अतिशयितमीश्वरम् ६ १५ १० **विदुष्टरः**=विज्ञानवत्तम (अग्नि =तिरश्चिद्राजा) ६.१६ ६ अतिशयेन विद्वान् (राजा) ७ १६.६ अतिशयेन वेत्ता (विद्वज्जन) १ १०५ १४ यो विविधानि दुरितानि तारयति प्लावयति स (न्यायाधीश) १ ३१ १४ [विदुस्-प्राति० अतिशायने तरप्। विदुप्=विद ज्ञाने (अदा०) धातोर्वाहु० औणा० उसि किच्च। अथवा वि+दुष्-पूर्वात् तॄ प्लवनसन्तरणयो (भ्वा०) धातो कर्त्तरि अच्]

विदुष्टरा अतिशयेन विद्वासौ (स्त्रीपुरुषौ) २ ३ ७ [विदुष्टरमिति व्याख्यातम्। ततो द्विवचनस्याकारादेश]

विदुह्रे विशेषेण प्रपिपर्ति १ १३६ ७ [वि+दुह प्रपूरणे (अदा०) धातोर्लट्। 'आत्मनेपदेष्वनत' अ० ७ १ ५. सूत्रेण झस्यादादेशे 'बहुल छन्दसि' अ० ७ १ ८ सूत्रेण रुडागमे 'लोपस्त आत्मनेपदेषु' अ० ७ १ ४१. सूत्रेण तलोप]

विदुः विद्वान् (मघवा=राजा) ७ १८ २ वेत्ता (विद्वज्जन) १ ७१ १० [विद् ज्ञाने (अदा०) धातोर्वाहु० औणा० उ प्रत्यय कर्त्तरि]

विदूधोत् विशेषतयाऽकम्पयत् ७ २१ ४ [वि+धूञ् कम्पने (क्रया०) धातोर्लङ्। 'वहुल छन्दसी' ति श्लु]

विदध्यद्भ्यः शस्त्रै दुष्टाँस्ताडयद्भ्य (राजपुरुषेभ्य) १६ २३ [वि+दध घातने पालने च (स्वा०) धातो शतृ। व्यत्ययेन श्यन्]

विद्मना वेत्ति येन तेन विज्ञानेन १ ११० ६ [विद ज्ञाने (अदा०) धातोर्वाहु० औणा० मनिन्]

विद्मना विज्ञातव्यानि (जनूषि=जन्मानि) ७ ४ १

१ ११७ २५ विज्ञानस्वरूपम् (परमेश्वरम्) २ १२ १५ **विदथस्य**=विज्ञानयुक्तस्य (विदुष सकाशात्) १ ५६ २ लब्धु योग्यस्य (भृत्यस्य) ५ ३३ ६ विज्ञानकरस्य (व्यवहारस्य) ३ ३८ ५ विज्ञातव्यजगतो मध्ये १ ६० १ पदार्थविज्ञानस्य ३ ३ ३ **विदथानि**=विज्ञातव्यानि (कार्याणि) ४ १६ ३ विज्ञानानि ३ १ १८ वेदितु योग्यानि कर्मोपासनाज्ञानानि ६ ५१ २ **विदथे**=विज्ञानमये यज्ञे ६ ५२ १७ विद्याप्रचारे २ १८ ६ यज्ञे २ १५ १० विज्ञान-सङ्ग्राममये यज्ञे २ १४ १२ विज्ञानप्रापके व्यवहारे ३ ३८ ६ विद्वत्सत्काराख्ये यज्ञे ३ ११ युद्धे ऋ० भू० २१५, ऋ० ३ २ १४ ६ विज्ञापनीये व्यवहारे ३३ ३४ शिल्पाख्ययज्ञे २.३६ १ सुखप्राप्ति और विज्ञान वृद्धिकारक राजा प्रजा के सम्बन्धरूप व्यवहार मे स० प्र० १८१, ३ ३८ ६ औपधिविज्ञानव्यवहारे २ ३४ १५ **विदथेषु**=विज्ञातव्येषु पृथिव्यादिषु ३ ५५ ७ वेदितव्येषु पदार्थेषु १ १५६ १ यज्ञो और युद्धो मे आर्याभि० १ २६, ऋ० ५ ८ ३५ २ धर्म्येषु व्यवहारेषु १ १६७ ६ [विद ज्ञाने (अदा०) विद्लृ लाभे (तुदा०) धातोर्वा 'रुविदिभ्या डित्' उ० ३ ११५ सूत्रेण अथ प्रत्यय । डित्वाच्च गुणप्रतिषेध । विदथ यज्ञनाम निघ० ३ १७ विदथानि पदनाम निघ० ४ ३ विदथानि वेदनानि नि० ६ ७ विदथा वेदनेन नि० ३ १२ विदथेषु यज्ञेषु नि० ८ १२]

विदथा विज्ञानानि २३ ५७ विदथे विज्ञानमये (परमेश्वरे) १ १६४ २१ विविधानि विज्ञानानि ३ १ २ [विदथम् इति व्याख्यातम् । तत शेर्लोपश्छन्दसि]

विदथानीव सङ्ग्रामानिव १ १३० १ [विदथानि इव-पदयो समास । विदथमिति व्याख्यातम्]

विदथ्यम् विदथेषु यज्ञेषु युद्धेषु वा साधुम् (व्यवहारम्) १ ६१ २० सङ्ग्रामेषु साधुम् (शूरवीरजनम्) ७ ३६ ८. सङ्ग्रामविज्ञानादिषु भवम् (रयि=धनम्) ६ ८ ५ **विदथ्यः**=विज्ञातु योग्य (क्रतु=प्रज्ञा राज्यपालनाख्यो यज्ञो वा) ४ २१ २ [विदथमिति व्याख्यातम् । ततो भवार्थे साध्वर्थे वा यत्]

विदथ्या विदथेषु सङ्ग्रामादिषु व्यवहारेषु भवा (विदुषी माता) ७ ४० १ **विदथ्याम्**=गृहेषु साध्वी नीतिम् ७ ४३ ३ [विदथमिति व्याख्यातम् । ततो भवार्थे साध्वर्थे वा यत् । तत स्त्रिया टाप्]

विदथ्येव विदथेषु सङ्ग्रामेषु विज्ञानेषु भवेव (सभावती वाक्) १ १६७.३ [विदथ्या-इवपदयो समास । विदथ्येति व्याख्यातम्]

विदद्दृशे विशेषतया दृश्यते १ १३५ ७ [वि+दृशिरे प्रेक्षणे (भ्वा०) धातोर्लिट्]

विदद्वसुम् विद्वद्भि सुखज्ञापकैर्वसुभिर्युक्ताम् (मति=बुद्धिम्) १ ६ ६ **विदद्वसुः**=विदन्ति सुखानि येन स (इन्द्र=राजपुरुष) ३ ३४ १ **विदद्वसो**=लब्धधन (राजन्) ५ ३६ १ [विदद्-वसुपदयो समास । विदद्=विद ज्ञाने (अदा०) विद्लृ लाभे (तुदा०) धातोर्वा शतृ । विदद्वसु वित्तधन नि० ४ ४ यज्ञोऽसुरेषु विदद्वसु ता० ८ ३ ३ यज्ञो वै विदद्वसु ता० ११ ४ ५ यज्ञो विदद्वसु ता० १५ १० ४ विदद्वसु वै तृतीयसवनम् ता० ८ ३ ६]

विदधत् विधान कुर्वन् (त्वष्टा=तनूकर्त्तेश्वर) ३१ १७ [वि+डुधाञ् धारणपोषणयो (जु०) धातो शतृ]

विदधः विदधाति ७ १७ ७ **विदधाति**=विशेषेण निष्पादयति ७ ३८ १ **विदधातु**=करोतु ८ १४ **विदधुः**=विदध्यासु ४ ५१ ६ विदध्यु ४ ५५ २ **विदधे**=विविधतया धृतवान्, अ०—विहितवानस्ति १ २२ १७ विदधाति ३७ २ [वि+डुधाञ् धारणपोषणयो (जु०) धातोर्जडि छान्दस रूपम् । अन्यत्र लट् लोट् च]

विदयते विविध दापयति १ ८४ ७ **विदयसे**=विशेषेण दया करोषि ३३ १८ [वि+दय दानगतिरक्षणहिंसादानेषु (भ्वा०) धातोर्लट्]

विदर्दः विशेषेण विदारय ४ १६ १३ विशिष्टतया विदारये ६ २० ७ विदृणाति ७ १८ १३ [वि+दृ विदारणे (क्र्या०) धातोर्लोट् 'बहुल छन्दसी' ति शप श्लु]

विदलकारीम् या विगतान् दलान् करोति ताम् ३० ८ [विदलोपपदे डुकृञ् करणे (तना०) धातो कर्त्तरि अण् तत स्त्रिया ङीप्]

विदसत् विशिष्टतया क्षयेत् १ १२ **विदसाम**=विशेषेणोपक्षयेम १० २२ विदस्यन्ति विशेषेणोपक्षयन्ति १ ११ ३ [वि+दसु उपक्षये (दिवा०) धातोर्लेट् विकरणव्यत्ययेन शप्]

विदा विदन्ति येन ज्ञानेन प्र०—अत्र 'कृतो बहुलम्' इति करणे क्विप् १ ३१ १८ **विदे**=विदन्ति युद्धविद्याविजयान् यया क्रियया तस्यै, प्र०—अत्र सम्पदादित्वात्क्विप् १ १०० १० ज्ञानवते (विद्वज्जनाय) १ १३२ २ [विद ज्ञाने (अदा०) धातो सम्पदादित्वात् क्विप्]

विदान. विद्यमान (अग्नि=विद्युदादिकार्यकारणाख्य

(सज्जन) ६ १५ १० सत्याऽसत्यवेत्ता (मनुष्य) ३ १९.३. [विद ज्ञाने (अदा०) धातो शतृ । 'विदे' शतुर्वसुरि' ति शतृस्थाने वसुरादेश । विद्वांसो हि देवा श० ३.७.३.१०. ये वै विद्वासस्ते पशिणो ये ऽविद्वांसस्ते ऽपक्षाग्निवृत्-पञ्चदशावेव स्तोमौ पक्षौ कृत्वा स्वर्गं लोकं प्रयन्ति ता० १४ १ १३. विद्वान् प्रजानन् नि० ८ २०]

विद्वांसा पूर्णविद्यायुक्तावध्यापकोपदेशकौ १ १२० ३. सर्वशुभगुणविद्याविज्ञापकौ (अध्यापकोपदेशकौ) १ १२० ३ [विद्वान् इति व्याख्यानम् । ततो द्विवचनस्याकारादेश]

विद्विषते परस्पर विद्वेष करते हैं स० वि० १४२, अथर्व० ३ ३० ४ **विद्विषामहै**=परस्पर हम विद्वेष अप्रीति करते हैं आर्याभि० २ १ तै० आ० १० १. [वि+द्विष अप्रीतौ (अदा०) धातोर्लटि प्रथमबहुवचनम्]

विधतः परिचरत (मित्रस्य) ५ ६५ ४ यो विधान करोति तस्य (विद्वज्जनस्य) १ ७३ १. ताडयितॄन् (विद्युद्ग्नीन्) १ १६७ ५ सेवकान् (जनान्) ७ १ ६ **विधते**=विधात्रे (मनुष्याय) १ ११६ ७ सेवमानाय (मर्त्याय=मनुष्याय) ६ ६५ ३ विधान कुर्वते (जनाय=परोपकारे प्रसिद्धायाध्यापकाय) ७ १६ १२ सत्कर्मे (सज्जनाय) ६ ५ ३ पुरुषार्थं कुर्वते (जनाय) ४ ४४ ४ विविधव्यवहार यथावत् कुर्वते (वाघते=मेधाविजनाय) ४ २.१३ **विधन्तः**=परिचरन्त (भृगव=विद्वांसो जना) २ ४.२. [वि+डुधाञ् धारणपोषणयो (जु०) धातो शतृ । 'वा छन्दसी' ति द्वित्व न भवति]

विधन् विदधतु १ १४९ ७ **विधन्त**=सेवन्ते ३ ३ १ [वि+डुधाञ् धारणपोषणयो (जु०) धातोर्लट् । छन्दसि द्वित्वाऽभावे झेर्जुसादेशोऽपि न भवति]

विधर्त्तः यो विविधान् शुभान् गुणान् धरति तत्सम्बुद्धौ (विद्वन् पते) २ १ ३ **विधर्त्ता**=विविधाना लोकाना धर्त्ता (परमात्मा) ७ ४१ २ यो विविधान् पदार्थान् धरति स (ईश्वर) ३४ ३५ विशेषेण धर्त्ता (वीर=रक्षको मनुष्य) ७ ५६ २४ विविधाऽऽकर्षणेन पृथिव्यादिधारक, अ०—पोषक (सूर्य) १५ ११ विविधस्य शीतस्य धर्त्ता (सोम=चन्द्र) १५ १३ विविधाना रत्नाना धारक (राजा) १५ १२ [वि+डुधाञ् धारणपोषणयो (जु०) धातो कर्त्तरि तृच् । विधर्त्ता विधारयिता नि० १२ १४]

विधर्मणि विशिष्टे धर्मे ६ ७१ १ विविधश्च तद्धर्म च तस्मिन् ३ २ ३ विरुद्धधर्मण्याकाशे १ १६४ ३६

विधर्मन् विशेषधर्माऽनुष्ठाने (विद्वज्जन) ५ १३ ८. [वि-धर्मन्पदयोः समासः । धर्मन् धृञ् धारणे (भ्वा०) धातोर्मनिन्]

विधवाम् जिसको पति नहीं, पतिविहीनानाम् (मानव = जननीम्) ४ १८ १२. [वि-धवापदयोः समासः । विधवा विधातृका भवति, विधवनाद्वा विधावनाद्वा इति चर्मशिरा, अपि वा धव इति मनुष्यनाम, तद्वियोगाद् विधवा नि० ३ १५]

विधाता विधानकर्ता (ईश्वर) ६ ५० १२ निर्माता (ईश्वर) १० ८२ सर्वेषां पदार्थानां कर्मफलानाञ्च विधानकर्ता (परमेश्वर) ३२ १०. कर्मानुसारेण फलप्रदाता जगन्निर्माता (परमेश्वर) १० ८२. सब कामों का पूर्ण करने वाला (परमात्मा) स० वि० ६, ३२.१०. भिन्न भिन्न जगत् का उत्पादक (ईश्वर) आर्याभि० २.४०, १० ८२. सब मोक्षसुखादि कामों का विधायक सिद्धिकर्ता (ईश्वर) आर्याभि० २.४२, १०.८२ [वि+डुधाञ् धारणपोषणयो (जु०) धातो. कर्तरि तृच् । विधाता मेधाविनाम निघ० ३ १५ चन्द्रमा मन धाता न विधाता न गो० उ० १.१०. विधाता धाता व्याख्यात. नि० ११ ११]

विधाति विदध्यात् १.१२० १ **विधा.**=विविधाया दधामि १ ७२ ३ विधेहि ४ ६ ११ **विधिषे**=विशेषेण दधासि १ ७०.५ **विधेम**=कुर्याम १.१८६ १. विशेषेण १९.३ विधान कुर्याम ४.७. वदेम ५ ३६ परिचरेम १३ ४ प्राप्नुयाम सेवेमहि वा, प्र०—विदधेमहि गतिकर्मा निघ० २ १४, २ ३५.१२ सत्कुर्याम ६ १ १० निष्पादयेम ८ २५ क्रिया करें स० वि० ७, ४० १६ [वि+डुधाञ् धारणपोषणयो (जु०) धातोर्लट् । 'वा छन्दसी' ति द्वित्व न भवति । अन्यत्र मुड् लिङ् च । विधेम परिचरणकर्मा निघ० ३.५. विधतिर्दानकर्मा नि० १०.२३]

विधाभिः अद्भि, विविधानि वस्तूनि दधति याभि प्राणचेष्टाभि ताभि, विविधाभि सत्कियाधारिकाभि क्रियाभि, सत्यरक्षाभि गुणव्यापिकाभिर्वा (क्रियाभि) १४ ७ [वि+डुधाञ् धारणपोषणयो (जु०) धातो 'आतश्चोपसर्गे' अ० ३ ३ १०६ सूत्रेण क्रियामङ् । ततष्टाप्]

विधायि विशिष्टतया ध्रियते १ १५८.३. [वि+डुधाञ् धारणपोषणयो (जु०) धातो कर्मणि लुङ् । अडभावश्छान्दस]

[विघ्नन् इति व्याख्यातम् । विभक्तिव्यत्यय]

विघ्नापसः विज्ञानेन युक्तानि कर्माणि येषान्ते (ऋभव =मेधाविनो जना), प्र०—अत्र तृतीयाया अलुक् १.१११ १ वेदन विघ्न तद्विद्यते येषु तानि विज्ञाननिमित्तानि समन्तादपासि कर्माणि येषा ते (अ०—मनुष्या) १ ३१ १ विघ्ननानि विन्निनान्यपासि कर्माणि येषान्ते, भा०—विज्ञाननिमित्तानि कर्माणि येषान्ते (मरुत = मनुष्या) ३४ १२ [विघ्नना-अपस्पदयो समास । समासे तृतीयाया अलुक् । विघ्ननेति व्याख्यातम् । अपस् कर्मनाम निघ० २ १ विघ्नापसम् =विदितकर्माणाम् नि० ११ ३३]

विद्यद्भिः विद्यमानै (ग्रावभि =मेघै), प्र०—अत्र व्यत्ययेन परस्मैपदम् २६ ४ [विद सत्तायाम् (दिवा०) धातो शतृ । व्यत्ययेन परस्मैपदम्]

विद्यया यथार्थ ज्ञान से स० प्र० ३१३, ४० १४ आत्मशुद्धाऽन्त करणमयोगधर्मजनितेन पदार्थदर्शनेन ४० १४ **विद्यायाम्** =शब्दार्थसम्बन्धविज्ञानमात्रेऽवैदिकाचरणे ४०.१२ [विद ज्ञाने (अदा०) धातो 'सज्ञाया समजनिपदनिपत०' अ० ३ ३ ९९ सूत्रेण स्त्रिया क्यप् । ततष्टाप् । विद्या वै धिपणा तै० ३ २ २ २ विद्या ह वै ब्राह्मणमाजगाम नि० २ ४ विद्यया देवलोक (जय्य) देवलोको वै लोकाना श्रेष्ठस्तस्माद् विद्या प्रशसन्ति श० १४ ४ ३ २४. विद्यया सह म्रियेत न विद्यामूपरे वपेद् । मनु० २ ११३]

विद्युत् स्तनयित्नु १ ६४ ९. विद्युतम् २५ १ विशेषेण द्योतमानाम् २५ २ **विद्युतः**=सौदामिन्य १ १०५ १ विशेषेण द्योतमानान् (पुरूपात्=ईश्वरात्) ३२ २ विविधतया द्योतयन्ते याम्ना १ २३ १२ **विद्युता**= विद्युन्निष्पन्नेनाऽस्त्रसमूहेन १ ८६ ९ **विद्युते**=विद्युदिवाऽभिव्याप्ताय (भगवते=परमेश्वराय) ३६ २१ [वि+द्युत दीप्तौ (भ्वा०) धातो क्विप् 'भ्राजभासधुर्विद्युत०' अ० ३ २ १७७ सूत्रेण । (प्रजापति) तान् (देवान्) व्यद्यत् । यद् व्यद्यद् तस्माद्विद्युत तै० ३ १० ९ १ विद्युद् ब्रह्मेत्याहु । दिदानाद् विद्युत्० श० १४ ८ ७ १ विद्युद् वाऽशनि श० ६ १ ३ १४ विद्युत् सावित्री जै० उ० ४ २७ ९ विद्युदेव सविता गो० पू० १ ३३ अथैतस्याम् उदीच्यान्दिशि भूयिष्ठ विद्योतते प० २ ४ वृष्टिर्वै याज्या विद्युदेव, विद्युद्धीद वृष्टिमन्नाद्य सप्रयच्छति ऐ० २ ४१ वृष्टिर्वै विराट् तस्या एते घोरे तन्वौ विद्युच्च ह्रादुनिश्च श० १२ ८ ३ ११. विद्युद्वाऽअपा ज्योति श० ७ ५ २ ४९ (वसोर्धारायै) विद्युत्स्तन श० ९ ३ ३ १५ यो विद्युति (पुरुष) स सर्वरूप । सर्वाणि ह्येतस्मिन् रूपाणि जै० उ० १ २७ ६]

विद्युतयन्त विद्युतयन्तु २ ३४ २ [विद्युदिति व्याख्यातम् । तत 'तत्करोति तदाचष्टे' इति णिजन्ताल् लड् । अडभाव]

विद्युत्याय विद्युति भवाय (पुरुषाय) १६ ३८ [विद्युत्प्राति० भवार्थे यत्]

विद्युद्रथः विद्युता चालितो रथ. ३ १४ १ **विद्युद्रथाः**=विद्युद्युक्ता रथा यानानि येषान्ते (मर्या = मनुष्या) ३ ५४ १३ [विद्युत्-रथपदयो समास]

विद्युन्मद्भिः तारयन्त्रादिसम्बद्धा विद्युतो विद्यन्ते येषु तै (रथेभि =विमानादिभिर्यानै) १ ८८ १ [विद्युत्प्राति० सम्बन्धे (मत्वर्थे) मतुप्]

विद्युन्महसः ये विद्युद्विद्याया महसो महान्त (मरुत =मनुष्या) ५ ५४ ३ [विद्युत्-महस्पदयो समास महस्=मह पूजायाम् (भ्वा०) धातोरौणा० असुन् । मह महन्नाम निघ० ३ ३].

विद्योत् दीप्यमानाऽऽग्नेयास्त्रादे, प्र०—अत्र द्युत्धातोर्विच्, पञ्चम्येकवचनञ्च व्यत्ययेन २० २ [वि+द्युत् दीप्तौ (भ्वा०) धातोर्विच् । विभक्तिव्यत्यय]

विद्योतमानाय विद्युत प्रवर्त्तकाय (मघन-मेघाय) २२ २६ [वि+द्युत दीप्तौ (भ्वा०) धातो शानच्]

विद्रधे विशेषेण दृढे (विज्ञानकर्मणी) ४ ३२ २३ [विद्रधे पदनाम निघ० ४ १ विद्रधे विद्धे नि० ४ १५]

विद्रे विन्दन्ति लभन्ते, प्र०—अत्र 'छन्दसि वा द्वे भवत ' अ० ६ १ ८ इत्यनेन वार्तिकेन द्विर्वचनाऽभाव १ ८७ ६ [विद्लृ लाभे (तुदा०) धातोर्लिटि प्रथमबहुवचनम् । द्वित्व न भवति छान्दसत्वात् । 'इरयो रे' इति रे-आदेश]

विद्वान् यो वेत्ति स (राजा) १२ १५ सकलविद्यावित् (पूर्णविद्यो जन) ४ ४२ ३ साङ्गोपाङ्गा विद्या विदन् (इन्द्र =शिल्पिजन) ३ ३५ ४ यो वेत्ति सर्वा विद्या स (विद्वज्जन) १ ४५ ५ सकलविद्याप्रापक, परिमितविद्याप्रदो वा (परमेश्वरो वैद्यो वा) १ ९४ १६. सकलशास्त्रवित् (इन्द्र =विद्वज्जन) २ १५ ७ ज्ञानवान् (विद्वज्जन) १ २४ १३ अनन्तविद्य ईश्वर आप्तमनुष्यो वा १ ९० १ जानन् सन् (गृहपति) ८ १३ पण्डित ३२ ९ सबको जानने वाला (परमात्मा) स० प्र० २४७, ४० १६. सर्वविद्याऽऽधार (ईश्वर) २ ६.८ आविर्विद्यः

विविधानि यन्त्रकलाजलचक्रभ्रमणयुक्तानि पक्षांसि पार्श्वे स्थितानि ययोस्तौ (रथे=याने), प्र०—अत्र 'सुपा सुलुक्०' इति आकारादेशः १/६ २ [वि-पक्षस्पदयो समासे प्रथमा-द्विवचनस्याकारादेशश्छान्दस । पक्षस्=डुपचष् पाके (भ्वा०) धातो 'पचिवचिभ्या सुट् च' उ० ४ २२१ सूत्रेणा-सुन् । सुडागमश्च]

विपरिण: व्यवहर्त्ता (जन) १ १८० ७ [वि+पण व्यवहारे स्तुतौ च (भ्वा०) धातोरौणा० इन्]

विपतथ विशेषेणाऽथ आगच्छथ १ १६८ ६ [वि+पतॢ गतौ (भ्वा०) धातोर्लट्]

विपतयत: विशिष्टतया पतिरिवाऽऽचरत (कर्णा=कर्णौ) ६ ६ ६. [वि-पतिपदयो समासे कृत आचारेऽर्थे क्विप् । ततो लट्]

विपतमन: विशेषेण गमनशीलस्य (अत्यस्य=अश्वस्य) १ १८० २. [वि+पतॢ गतौ (भ्वा०) धातोर्मनिन् । तत षष्ठी]

विपथय: विविधा विरुद्धा वा पन्थानो येषान्ते (विद्या-धर्ममार्गा) ५ ५२ १० [वि-पथिपदयो समास । पथि=पथे गतौ (भ्वा०) धातोर्बाहु० औणा० इन्]

विपन्यया विशेषव्यवहारयुक्तया (क्रियया) ३३ ९. विशिष्टोद्यमेन ६.१६ ३४ विशेषेण स्तुत्या प्रशसितया प्रज्ञया क्रियया वा ३ २८ ५ स्तोतु योग्यया धर्म्यया नीत्या १.११६ ७ **विपन्या**=विपणौ विविधव्यवहारे साध्व्या (प्रशसया) ४१.१२ [वि+पण व्यवहारे स्तुतौ च (भ्वा०) धातो 'अवद्यपण्यवर्या०' अ० ३ १ १०१. सूत्रेण यत् । तत स्त्रिया टाप् । णकारस्य नकारो वर्णव्यत्ययेन । पनधातोर्वा यत्]

विपन्यव: विशेषेण प्रशसिता (विप्रा =मेधावि-जना.) ३ १० ६ विशेषेणाऽऽत्मन पन स्तवनमिच्छव. (जना) १ १३८ ३ विशेषेण स्तावका. (आयव =मनुष्या) ५ ४३ १४ विशेषेण स्तुत्या व्यवहर्त्तार. (सत्पुरुषा) २ २० १ विविध जगदीश्वरस्य गुणसमूह पनायन्ति स्तुवन्ति ये ते (विप्रास =मेधाविन), प्र०—अत्र बाहुलकादौणादिको युच् प्रत्यय. १.२२ २१ *विविधव्यवहारकुशला* (मेधाविन) १ १०२ ५ विशेषेण स्तोतुमर्हा ईश्वरस्य वा स्तावका विप्रास =मेधाविजना) ३४ ४४ [वि+पन व्यवहारे स्तुतौ च (भ्वा०) धातोर्घञर्थे क-प्रत्यये विपनम् । तत आत्मन इच्छायामर्थे क्यजन्ताद् उ-प्रत्यये विपन्यु । अथवा व्यवहारस्तुत्यर्थकात पनधातोर्बाहु० औणा० युच् ।

विपन्यव मेधाविनाम निघ० ३ १५]

विपन्यामहे विशेषेण स्तुमहे १ १८० ७ [वि+पन व्यवहारे स्तुतौ च (भ्वा०) धातोर्लट् । विकरणव्यत्ययेन श्यन्]

विपपृच्यात् विशेषेण सयुज्येत ४ २४ ५ [वि+पृची सम्पर्के (रुधा०) धातोर्लिङ् । द्विर्वचन छान्दसम्]

विपयन्ति विशेषतया गच्छन्ति ७ २१ २ [वि+पि गतौ (तुदा०) धातोर्लट् । विकरणव्यत्ययेन शप्]

विपरेतन विरुद्ध चली जावें, फिर पास कभी न आवें स० वि० १३८, अथर्व० १४ २.२६. [वि+परा+इण् गतौ (अदा०) धातोर्लोट् । तस्य तनबादेश]

विपर्वम् विविधैरङ्गोपाङ्गै पूर्णम् (वृत्र=धनम्) १ १८७ १ विगतानि पर्वाणि ग्रन्थयो यस्य तम् (वृत्र=मेघम्) ३४ ७. [वि-पर्वन्पदयो समास. । न लोपश्छान्दस । पर्वन्=पॄ पालनपूरणयो (जु०) धातो 'स्नामदिपद्यर्ति-पॄशकिभ्यो वनिप्' उ० ४ ११४ सूत्रेण वनिप् । विपर्वम् विपर्वाणम् नि० ६.२५.]

विपश्चितम् पण्डितम् ३ २७ २ विद्वासम्, य आप्त सन्नुपदिशति तम् (इन्द्र=विद्यापरमैश्वर्ययुक्त मनुष्यम्) १४४ **विपश्चित:**=अनन्तविद्यात् (सदसस्पते=परमेश्वरात्) १ १८.७ अनन्तविद्यस्य (ईश्वरस्य) ३७.२ अखिलविद्यायुक्तस्याऽऽप्तस्यैव वर्त्तमानस्य (विप्रस्य=मेधाविजनस्य) ११.४ सदसद्विवेका विद्वास (उपदेशका जना) ४ ३६ ७ [विपश्चित् मेधाविनाम निघ० ३ १५ यज्ञो वै बृहन् विपश्चित् श० ३ ५.३ १२]

विपश्य विविधतया प्रचक्ष्व ७ ४५ **विपश्यति**=विविधतया प्रेक्षते ३ ६२ ६ [वि+दृशिर् प्रेक्षणे (भ्वा०) धातोर्लोट् । अन्यत्र लट् । शिति प्रत्यये धातो पश्यादेश]

विप: मेधावी (सज्जन), प्र०—विप इति मेधावि-नाम निघ० ३.१५, ६ ४४ ६ विविध पातीति विपो मेधावी (प्रजाजन) ७ १७ **विपाम्**=मेधाविनाम् (जनानाम्), प्र०—अत्र 'वाच्छन्दसि' इति नुडभाव ३ १० ५ [वि+पा रक्षणे (अदा०) धातो 'आतश्चोपसर्गे' अ० ३ १ १३६ सूत्रेण क । विप. मेधाविनाम निघ० ३ १५]

विपा यौ विविधप्रकारेण पातस्तौ (अध्यापकोपदेशकौ) ५ ६७.१ [विप इति व्याख्यातम् । ततो द्विवचनस्या-कारादेश]

विपाका विविधगुणै परिपक्वा (त्वेषा=प्रदीप्त)

विधारयः यो विशेषेण धारयति स (अ०—परमात्मा) १७८२ [वि+धृञ् धारणे (भ्वा०) धातोर्णिजन्ताद् 'अनुपसर्गाल्लिम्पविन्दधारि०' अ० ३ १.१३८ सूत्रेण छन्दसि सोपसर्गादपि श । छन्दसि सर्वविधीना विकल्पनात्]

विधारे विधारयामि २२ १८ [वि+धृञ् धारणे (भ्वा०) धातोर्णिजन्ताल्लट् । 'छन्दस्युभयथा' सूत्रेणार्धधातुकत्वान् णेर्लोप]

विधावतः विविधान् मार्गान् धावत (रथान्) १ ८८ ५ [वि+धावु गतिशुद्ध्यो (भ्वा०) धातो शतृ]

विधूताय येन विविध धूत कम्पित तस्मै (जीवाय) २२ ८ [वि+धूञ् कम्पने (क्र्या०) धातो क्त । ततश्चतुर्थी]

विधूनुथ विशेषेण कम्पयथ ५ ५४ १२ [वि+धूञ् कम्पने (क्र्या० धातोर्लट्]

विधून्वानाय यो विविध धुनोति तस्मै (जीवाय) २२ ८ [वि+धूञ् कम्पने (क्र्या०) धातो शानच् । ततश्चतुर्थी ।

विधृतिम् विशेषेण धारणाम् २५ ६ विविध धारणाम् (अग्नि=योगाभ्यासजनिता विद्युतम्) ११ ६६ **विधृतिः**=विविधा धारणा यस्या सा (पत्नी) ३७ १२. [वि+धृतिपदयो समास । धृतिम्=धृञ् धारणे (भ्वा०) धातो स्त्रिया क्तिन् । तस्मात् (द्वे तृणे) तिरश्ची निदधाति तस्माद्वेव (अनयो) विधृती (इति) नाम श० १ ३ ४ १०]

विध्य ताडय २ ३० ४ **विध्यत्**=विध्यति १ ६१ ७ **विध्यताम्**=ताडयतम् ६ ७५ ४ ताडयेताम् २६ ४१ **विध्यति**=ताडयति ४ ८ ८ [व्यध ताडने दिवा०) धातोर्लोट् । 'ग्रहिज्या०' सूत्रेण सम्प्रसारणम् । अन्यत्र लेट् लट् च ।

विध्यता ताडनकर्त्रा (सभाध्यक्षादिजनेन) १ ८६ ६ [व्यध ताडने (दिवा०) धातो शतृ । 'ग्रहिज्या०' सूत्रेण सम्प्रसारणम्]

विनक्तु वेचयति वेचयतु वा, प्र०—अत्राऽऽद्ये पक्षे लडर्थे लोडन्तर्गतो ण्यर्थश्च १ १६ [विचिर् पृथक्भावे (रुधा०) धातोर्लोट्]

विनयन्ति विविधतया प्राप्नुवन्ति १ ६४ ६ [वि+णीञ् प्रापणे (भ्वा०) धातोर्लट्]

विनयः विविधो नयो यस्य स (राजपुरुष) २ २४ ६ [वि+नयपदयो समास । नय.=णीञ् प्रापणे (भ्वा०) धातो 'एरच्' इत्यच्]

विनशन् व्याप्नुवन्ति, अ०—प्राप्नुवन्ति, प्र०—नशतीति व्याप्तिकर्मा निघ० २ १८, २ ३५ ६ विनाश कर सकते है स० वि० १०४, २ ३५ ६ [वि+नशत् व्याप्तिकर्मा (निघ० २ १८) । ततो लङ्, अडभावश्छान्दस । अथवा वि+णश अदर्शने (दिवा०) धातोर्लङ् । विकरणव्यत्ययेन शप् । अथवा लुङि पुषादित्वाच् च्लेरङि रूपम्]

विनशिने विनष्टु शीलाय (दुर्जनाय) ६ २० [वि+णश अदर्शने (दिवा०) धातोस्ताच्छील्ये णिनि । ततश्चतुर्थी]

विनाशम् विनश्यन्त्यदृष्टा पदार्था भवन्ति यस्मिन् तम् ४० ११ **विनाशेन**=नित्यस्वरूपेण विज्ञातेन कारणेन सह ४० ११ [वि+णश अदर्शने (दिवा०) धातोर्घञ्]

विनाशयन् अविद्याऽदर्शन प्रापयन् (सभाद्यध्यक्ष) १ ५५ ६ [वि+णश अदर्शने (दिवा०) धातोर्णिजन्ताच्छतृ]

विनिक्षे विनाशाय ५ २ ६ [विनिक्षे विनिक्षणाय नि० ४ १८ वि+नि+क्षणु हिंसायाम् (तना०) धातोस्तुमर्थे के]

विनिश्चक्रुः विशेषेण नितरा कुर्याम ४ ३६ ४ [वि+निस्+डुकृञ् करणे (तना०) धातोर्लिट्]

विनीनशः विशिष्टतया भृश नाशये ६ ४८ १७ [वि+णश अदर्शने (दिवा०) धातोर्णिजन्ताल् लुङ्]

विनुदः विविधतया प्रेरकस्य (जगदीश्वरस्य) २ १३ ३ [वि+णुद प्रेरणे (तुदा०) धातो कर्त्तरि क्विन्]

विन्द प्राप्नुहि ७ १३ ३ लभेम् ७ १८ १८ **विन्दत्**=विन्दति ६ ४४ २३ **विन्दते**=प्राप्नोति ७ ३२ २१ लभते ४ २६ प्राप्त होवे स० प्र० ६८, अथर्व० ३.२४ ११ १८. **विन्दन्**=जानन्ति ४ १ १६ लभन्ते १ १०५ १ **विन्दन्ति**=लभन्ते १ १०५ १ **विन्दसि**=लभसे १ १७६ १. **विन्दसे**=लभसे २ १३ ११ **विन्धे**=विन्दामि, प्र०—अत्र वर्णव्यत्ययेन दकारस्य धकार १ ७ ७ [विद्लृ लाभे (तुदा०) धातोर्लोट् । 'शे मुचादीनाम्' इति नुम् । अन्यत्र लङ् लट् च]

विन्दमानः प्राप्नुवन् (वीर=पुरुषार्थिजन) ३ ५५.२०. [विद्लृ लाभे (तुदा०) धातो शानच् । 'शे मुचादीनाम्' इति नुम्]

विपक्षसा विविधं परिगृहीतौ (हरी=हयौ) २३.६

प्रख्याने (भ्वा०) धातोर्लिट्]

विप्रमन्मनः विप्रस्य मन्म विज्ञान यस्मिँस्तस्य (वचनस्य) ६ ३६ १ [विप्र-मन्मनृपदयो समास । मन्मन्= मन ज्ञाने (दिवा०) धातोर्मनिन्]

विप्रयच्छतात् विषशेतया प्रत्यक्ष देहि १.४८ १५ [वि+प्र+दाण् दाने (भ्वा०) धातोर्लोटि 'पाघ्रा०' सूत्रेण यच्छादेशे 'तुह्योस्तातङ्०' इत्याशिपि तातङ्]

विप्रराज्ये विप्राणा मेधाविना राज्ये राष्ट्रे ३३ ८३ [विप्र-राज्यपदयो समास]

विप्रवाहसा यौ विद्वद्भि प्रापणीयौ (सज्जनौ) ५ ७४ ७ [विप्र-वाहसपदयो समासे द्विवचनस्याकारश्छान्दस । वाहस् =वह प्रापणे (भ्वा०) धातो 'वहियुभ्या णित्' उ० ३ ११६ सूत्रेणासच्]

विप्रासः भा०—योगाभ्यासादिना शुद्धाऽन्त करणात्मान (जना) ३४ ४४ [विप्र इति व्याख्यातम् । ततो जसोऽसुक्]

विप्रेभिः विपश्चिद्भि १ १२७ २ मेधाविभि (ऋभुभि =मेधाविमनुष्यै) १ २० १ [विप्रप्राति० 'बहुल छन्दसि' सूत्रेण भिस ऐसादेशो न भवति]

विप्रुतम् विविधाना व्यवहाराणा वेत्तारम् (ऋपिम्= अध्यापकम्) १ ११७ ४ विप्रवमाणम् (नौकादिकम्) १ ११६ २४ **विप्रुद्भिः**=विशेपेण पूर्णै (पदार्थै) २५ ६ [वि+प्रुड् गतौ (भ्वा०) धातो क्विप्]

विबध्नते विशिष्टतया बध्नन्ति, प्र०—अत्र व्यत्ययेनात्मनेपदम् १ २८ ४ [वि+बन्ध बन्धने (क्र्या०) धातोर्लट् । व्यत्ययेनात्मनेपदम्]

विबभाज विशेपेण भजेत सेवेत ७ १८ २४ [वि+ भज सेवायाम् (भ्वा०) धातोर्लिट्]

विबलम् विविध बल यस्मात् तत् (छन्द =स्वाधीन्यम्) १४ ६ [वि-बलपदयो समास]

विबाधते विशेपतया विलोडयन्ति १ ५१ १० **विबाधसे**=निवारयसि २ २३ ५ **विबाधिष्ट**=विशिष्टतया बाधयन्तु ७ २३ ३ [वि+बाधृ विलोडने (भ्वा०) धातोर्लट् । अन्यत्र लुङ्, अटोऽभावश्छान्दस]

विबाध्य नि सार्य २ २३ ३ [वि+बाधृ विलोडने (भ्वा०) धातो क्त्वा । समासे क्त्वो ल्यप्]

विबाल्यम् विगत बाल्य यस्य तम् (सिन्धु=नदम्) ४ ३० १२ [वि+बाल्यपदयो समास]

विबीभयत् विशेपेण भयितु शक्नोति १ ८० १२ [वि+ञिभी भये (जु०) धातोर्णिजन्ताल्लुङ् । अडभावश्छान्दस]

विबोधय विविधतया बोधयति, प्र०—अत्र व्यत्यय १.१२४ विशिष्टतयाऽवगमय १ २२ १ [वि+बुध अवगमने (भ्वा०) धातोर्णिजन्ताल्लोट्]

विभक्ता सत्याऽसत्ययोर्विभाजक (इन्द्र =परमैश्वर्ययुक्तो राजा) ७ २६ ४ विभज्य दाता (विद्वज्जन) ५ ४६ ६ विविधाना पदार्थाना सभागकर्त्ता (विद्वज्जन) १.२७ ६ विभागकर्त्ता (राजा) ४ १७.११. **विभक्तारम्**=जीवेभ्यस्तत्तत्कर्मानुकूलफलविभाजयितारम् विविधपदार्थाना पृथक् पृथक् कर्त्तार वा (सवितार=परमेश्वर सूर्य वा) १ २२ ७. [वि+भज सेवायाम् (भ्वा०) धातो कर्त्तरि तृच्]

विभक्ता विभाग प्राप्ता (प्रजाजना) ६ ३६ १ भिन्ने-भिन्ने (रोदसी=द्यावापृथिव्यौ) ७ १८ २४ [वि+ भज सेवायाम् (भ्वा०) धातो क्त । ततो द्विवचनस्याकारादेशश्छान्दस]

विभज विशेपेण सेवस्व १ ८१ ६ **विभजतु**= विभाग करोतु ७ ४५ **विभजाति**=विभजेत् २ २६ १ **विभजामि**=पालन के लिए विभाजित करता हूँ स० प्र० २३८, १० ४८ **विभजासि**=विभजे १ १२३.३. [वि+ भज सेवायाम् (भ्वा०) धातोर्लोट् । अन्यत्र लेट् लट् च]

विभजन् विभाग कुर्वन् (शूर =निर्भयो जन) १ १०३ ६ **विभजन्तः**=विविधतया सेवमाना (जना) २ १३ ४ [वि+भज सेवायाम् (भ्वा०) धातो शतृ]

विभञ्जनुः शत्रूणा विभञ्जक (इन्द्र =राजा) ४ १७ १३ [वि+भञ्जो आमर्द्दने (रुधा०) धातोर्बाहु० औणा० अनुङ्]

विभरन्ते विशेषेण धरन्ति ५ ११ ४ [वि+भृञ् भरणे (भ्वा०) धातोर्लट्]

विभरा. ये विशेपेण भरन्ति पोषयन्ति ते (विद्वज्जना) ५ ३१ ६ [वि+भृञ् भरणे (भ्वा०) धातो कर्त्तर्यच्]

विभवः व्यापका (अश्वा =किरणा) ३ ६ ६ **विभुभिः**=सद्गुणादिपु व्याप्तै (सज्जनै) ७ ४८ २ **विभुवे**=व्यापकाय वायवे २२ ३० **विभुः**=सर्वव्यापक सर्वसभामेनाङ्गै शत्रुबलेषु व्यापनशीलो वा (जगदीश्वरः सभाध्यक्षो वा) १ ३१ २ सर्वमार्गव्यापनशील (याम = रथ) १ ३४ १. व्यापक ईश्वर १ १४१ ६ **विभून्**= व्यापकान् (भा०—आकाशकालदिश) २० २३ [वि+

१ १६८ ७. [वि-पाकपदयो समासे स्त्रिया टाप् । पाक = पच् + घञ्]

विपाट् या विविध पटति गच्छति विपाटयति वा सा (नदी) ३ ३३ १ **विपाशम्**=विगता पाड् बन्धन यस्या ताम् (विदुषीम्) ३ ३३ ३ **विपाशि**=विगतपाशे बन्धन-रहिते (मार्गे) ४ ३०.११ [वि+पट गतौ (भ्वा०) धातोश्छान्दसो ण्वि: । अथवा-वि+पश बन्धने (चुरा०) धातो ण्वि । विपाड् विपाटनाद्वा विप्राशनाद्वा विप्रापणाद्वा पाशा अस्या व्यपाश्यन्त वसिष्ठस्य मुमूर्षतस्तस्माद् विपाड् उच्यते पूर्वमासीदुरुञ्जिरा नि० ९ २५]

विपानम् विविध पान रक्षण यस्मात्तत् (अमृतम्) १९ ७५ विविध पान येन तत् (इन्द्रिय=जिह्वादिकम्) १९ ७६ विशिष्टेन पानेन युक्तम् (इन्द्रिय=विदुषा जुष्टमात्मबलम्) १९ ७९ विविधरक्षाऽन्वितम् (इन्द्रिय=प्रज्ञानम्) १९ ७४ विविधशब्दार्थसम्बन्धयुक्ताम् (इन्द्रिय=दिव्या वाचम्) १९ ७३ विविधपाननिमित्तम् (इन्द्रिय=धनम्) १९ ७८ विविधराजधर्मरक्षणम् ऋ० भू० ३०६, [वि-पानपदयो समास । पानम्=पा रक्षणे (अदा०) पा पाने (भ्वा०) धातोर्वा ल्युट्]

विपिपानम्=औषधरसाना विविध पान कर्तुं शीलम् (सद्वैद्यम्) १ ११२ १५ **विपिपानस्य**=विविधानि पानानि यस्मात्तस्य (अद्रे=मेघस्य) ७ २२ ४ **विपिपान:**=विशेषेण रक्षन् (विद्वज्जन) ४ १६ ३ **विपिपाना:**=विविधरक्षादिकर्त्तार (अध्यापकोपदेशका) २० ७६ [वि+पा रक्षणे (अदा०) धातोर्लिट कानच् । अभ्यासस्येकारादेशश्छान्दस]

विपिपाना विविध राज्य रक्षमाणौ (अश्विना=सभासेनेशौ) १० ३३ [विपिपानमिति व्याख्यातम् । ततो द्विवचनस्याकारादेशश्छान्दस]

विपीपयन्त व्याप्याययन्ति १ १८१ ५ [वि+ओप्यायी वृद्धौ (भ्वा०) धातोर्णिजन्ताल् लुङि धातो पी इत्यादेशे छान्दस रूपम्]

विपृक्त: विशेषेण सम्बद्ध (अर्वा=वह्निरिव वर्त्तमानो जन) २९ १४ स्वरूपेण सम्पर्करहित (अग्नि) १ १६३ ३ [वि+पृची सम्पर्के (रुधा०) धातो क्त]

विपृक्वत् विशेषेण सम्बद्धम् (अमृतम्) ५ २ ३ [वि+पृची सम्पर्के (रुधा०) धातोर्भावे क्विप्प्रत्यये विपृच् । तत सम्बन्धे (मत्वर्थे) मतुप् । 'झय' इति मतोर्मस्य वकार]

विपृङ्क्त विससर्ग कुरुत १९ ११ [वि+पृची सम्पर्के (रुधा०) धातोर्लोट्]

विपृच: ये वियुञ्जते वियुक्ता भवन्ति ते (मनुष्या) १९ ११ **विपृचे**=वियोजनाय ४ १३ ३ **विपृचौ**=विगत-सम्पर्कौ (राजप्रजाजनौ) ९ ४ [वि+पृची सम्पर्के (रुधा०) धातो कर्त्तरि क्विप्]

विप्र मेधाविन् (जन) १ १२७ २ विविधज्ञानेन पदार्थान् प्राति पूरयति स विद्वान् तत्सम्बुद्धौ १ १४ २ **विप्रम्**=आप्त मेधाविनम् (जनम्) १५ ४७ विद्यासुशिक्षा-योगेन मेधाविनम् १ ११९ ७ विद्याविनयाभ्या धीमन्तम् (सज्जनम्) ६ १५ ७ **विप्रस्य**=विशेषेण प्राति व्याप्नोति तस्य (सवितु=परमात्मन) ५ ८१ १ अनन्तप्रज्ञाकर्मणो जगदीश्वरस्य ५ १४ सर्वशास्त्रविदो मेधाविन (जनस्य) ११४ **विप्र:**=मेधावीव सर्ववेत्ता (ईश्वर) ४ २६ १ **विप्रा:**=विविधमेधाव्यापिनो मेधाविन (योगिन) ३७ २ विद्यासुशिक्षाजातप्रज्ञा (राजपुरुषा) ९ १८ **विप्रै:**=विविधान् पदार्थान् प्रान्ति तै किरणै १ ६२ ४ [वि+प्रा पूरणे (अदा०) धातो 'आतश्चोपसर्गे' अ० ३ १.१३६ सूत्रेण कर्त्तरि क । अथवा—वपति धर्ममिति विग्रहे डुवप बीजसन्ताने छेदने च (भ्वा०) धातो 'ऋज्रेन्द्राग्रवज्रविप्र०' उ० २ २९ सूत्रेण रन्प्रत्ययान्तो निपात्यते । बहुलवचनाद् धातोरुपधाया इत्वम् । विप्रा मेधाविन नि० ७ १८ ये वै ब्राह्मणा शुश्रुवासोऽनूचानास्ते विप्रा श० ३ ५ ३ १२ विप्रा ह्येते यच्छुश्रुवास तै० २ ५ ९ २ विप्र मेधाविनाम निघ० ३ १५ (यजु० ११४) विप्रा विप्रस्येति प्रजापतिर्वै विप्रो देवा विप्रा श० ६ ३ १ १६ एते वै विप्रा यद् ऋषय श० १ ४ २ ७]

विप्रजूत: विप्रैर्मेधाविभिर्जूत शिक्षित (विद्वज्जन) २० ८८ विप्रैर्मेधाविभिर्विद्वद्भिर्ज्ञात (इन्द्र=परमेश्वर) १ ३ ५ [विप्र-जूतपदयो समास । विप्र इति व्याख्यातम् । जूत=जू सौत्रो धातु, वेगिताया गतावर्थे, तत क्त]

विप्रतम: अतिशयेन योगी (मर्य=मनुष्य) ३ ३१ ७ [विप्रप्राति० अतिशायने तमप्]

विप्रथन्ताम् विशेषेण प्रख्यान्तु २ ३ ५ **विप्रथस्व**=विशेषतया प्रख्याहि ५ ५ ४ [वि+प्रथ प्रख्याने (भ्वा०) धातोर्लोट्]

विप्रदुहन्ति विशिष्टतया पूरितान् कुर्वन्ति ४ २४ ९ [वि+प्र+दुह प्रपूरणे (अदा०) धातोर्लट्]

विपप्रथे विविधतया प्रथते १ ५५ १ [वि+प्रथ

भू सत्तायाम् (भ्वा०) धातो 'विप्रसम्भ्यो ड्वसञ्ज्ञायाम्' अ० ३ २ १८० सूत्रेण डु]

विभाक् यो विभजति (इन्द्र =राजा) ७ १८ १३ [वि+भज सेवायाम् (भ्वा०) धातो 'भजो ण्वि' इति ण्वि]

विभागे विभजन्ति यस्मिँस्तस्मिन् व्यवहारे ७ ५६.२१ विशेषेण भजनीये व्यवहारे ७ ४० १ सेवनव्यवहारे १ १०६ ५ [वि+भज सेवायाम् (भ्वा०) धातोर्घञ्]

विभाति विशेषेण प्रकाशते ३७ १६ विशेषेण प्रकाशयन् प्रकाशयिता भवति ३२ ७ विविधतया प्रकाशते १ ६२ ६ प्रदीप्यते १२ २२ विशिष्टतया प्रकाशयति १ ६२ ११ **विभासि**=विविधान् दीपयति १ ६२ ८ **विभाहि**=प्रकाशय १ ७ ६६ विविधतया भाहि १ ११३ १६ [वि+भा दीप्तौ (अदा०) धातोर्लट्। अन्यत्र लोडपि]

विभाती विविधानि मूर्त्तद्रव्याणि प्रकाशयन्ती (उषा) १ ६२ ६ विविधतया सद्गुणैः प्रकाशमाना (युवति) १ १२३ १० प्रकाशन्ती (उषा) १.१२४.६ **विभातीनाम्**=प्रकाशयन्तीना सूर्यकान्तीनाम् १ ११३ १५ **विभातीः**=विशेषेण प्रकाशयन्ती (उषस) ३ ६.७. विविधतया प्रकाशवती (उषस) १ ११३.१७ प्रकाशयन्त्य (उषस) ४ ५१ १ विशेषेण दीप्तिमत्य (उषस) ७ ३५ १० विशिष्टप्रकाशान् १ १२३ ६ [वि+भा दीप्तौ (अदा०) धातो शत्रन्तात् स्त्रिया ङीप्]

विभावम् विशेषेण भावुकम् (विद्युतम्) १ १४८ १ [वि+भू सत्तायाम् (भ्वा०) धातो 'कर्मण्यण्' इत्यण्]

विभावरि विविधा दीप्तयो यस्यास्तत्-सम्बुद्धौ (देवि) १ ४८ १ प्रशस्तविविधप्रकाशयुक्ते (स्त्रि) ४ ५२ ६ या विविधतया भाति प्रकाशयति तत्सम्बुद्धौ (उषः) १ ४८ १० प्रकाशमाने (स्त्रि) ५ ७६ १० प्रकाश-युक्तोषर्वद्वर्त्तमाने (विदुषि स्त्रि) ५ ७६ ४ विविध जगत् भाति दीपयति सा विभावरी, प्र०—अत्र 'वनो र च' अ० ४ १ ६ अनेन ङीप् रेफादेशश्च १ ३० २० [विभाप्राति० मत्वर्थे 'छन्दसीवनिपौ' अ० ५ २ १०६ वा०सूत्रेण वनिप् अथवा वि+भा दीप्तौ (अदा०) धातो कर्त्तरि वनिप्। तत उभयत्रापि स्त्रिया 'वनो र च' इति ङीप् रौ। विभावरी उषो नाम निघ० १ ८]

विभावसुम् प्रकाशयुक्त वसु धन यस्य तम् (राजानम्) ५ २५ २ **विभावसुः**=यो विविधा भा वासयति स (अग्नि) ३ २ २ यो विविधासु भासु विद्याप्रकाशेषु वा वसति स (अग्नि =सभेशो विद्वज्जन) १७ ५३ येन विविधा भा विद्यादीप्तिर्वास्यते स (अग्नि =विद्वज्जन) १२ ३१ **विभावसो**=विशिष्टा भा दीप्ति वासयति तत्सम्बुद्धौ (अग्ने) १ ४४ १० यो विविधाया भाया वसति तत्सम्बुद्धौ (अग्ने=विद्वज्जन) १२ १०६ विविधतया भाया दीप्त्या सहित वसु धन यस्य तत्सम्बुद्धौ (अग्ने= गृहपते) ११ ४० प्रकाशितधन (राजन्) २६ २ स्वप्रकाश (विद्वज्जन) ५ २५ ७ [विभा-वसुपदया समास। विभा= वि+भा दीप्तौ (अदा०) धातो स्त्रियाम् 'आतश्चोपसर्गे' अ० ३ ३ १०६ सूत्रेणाङ्। ततष्टाप्। वसुरिति व्याख्यातम् (यजु० १२ १०६) (प्रभूवसु) महि भ्राजन्ते अर्चयो विभावसविति महतो भ्राजन्ते ऽर्चय प्रभूवसवित्येतन् श० ७ ३ १ २६]

विभावः विभावय १ ५८ ६ [वि+भू प्राप्तौ (चुरा०) धातोर्लङ्। णेर्लोपो ऽडभावश्च छान्दसत्वात्]

विभावा यो विविधान् पदार्थान् भाति प्रकाशयति स (अग्नि) १ ६६ १ विशेषेण प्रकाशक (परमेश्वर) ६ १० १ यो विशेषेण भाति प्रकाशयति स (अग्नि) १ ५६.७ य सर्वं विभातीति स (विद्वान् सूर्यो वा) १ ६६ ५ विशेषेण भानवान् (अतिथि) ५ १ ६ विभववान् (अग्नि =राजा) ४ १ ८ विविधविद्याप्रकाशयुक्त (अग्नि =विद्वज्जन) ४ १ १२ विशेषदीप्तिमान् (जन) ६ ११ ४. यो विभाति स. (अग्नि) १ १४८ ४ [वि+भा दीप्तौ (अदा०) धातो 'आतो मनिन्क्वनिब्वनिपश्च' अ० ७ २ ७४ सूत्रेण वनिप्]

विभाः यो विभाति स (अग्नि =पावक) ७ ८ २ [वि+भा दीप्तौ (अदा०) धातो कर्त्तरि क्विप्]

विभिदुः विदृणन्ति ६ ६५ ५ **विभिनत्**= विभिनत्ति २ १५ ८ [वि+भिदिर् विदारणे (रुधा०) धातोर्लिट्। 'वा छन्दसी' ति द्वित्व न भवति]

विभिन्दन् विदारयन् सन् (विद्वान् सेनाद्यध्यक्ष) १ १०३ ३ [वि०+भिदिर् विदारणे (रुधा०) धातो शतृ]

विभिन्दुना विविधभेदकेन (रथेन) १ ११६ २० [वि+भिदिर् विदारणे (रुधा०) धातोर्बाहु० औणा० उ। बहुलवचनाच्च नुमागम]

विभिः वयन्ति गच्छन्ति ये ते वय पक्षिणस्तैः. १ ११६ ३ वियति गन्तृभि पक्षिभिरिव (अश्वै =यानै)

विमुच्य विशेषेण त्यक्त्वा ३ ३२.१ [वि+मुच्लृ मोचने (तुदा०) धातो क्त्वा । समासे क्त्वो ल्यप्]

विमुच्यध्वम् विमुक्ता भवत, प्र०—विकरणव्यत्ययेन श्यन् ६ १२. **विमुच्यन्ताम्**=विशेषेण त्यजन्ताम् ३५ ३ [वि+मुच्लृ मोचने (तुदा०) धातोर्लोट् । व्यत्ययेन श्यन्]

विमुञ्च विशेषेण त्यज २७ ३३ **विमुञ्चति**= विशिष्टतया त्यजति, विविच्य प्रक्षिपति, विविधतया त्यजति २ २३. [वि+मुच्लृ मोचने (तुदा०) धातोर्लोट् । अन्यत्र लट्]

विमुमुग्धि विशेषेण मोचय ५ २ ७. **विमुमुचः**= विमोचये ३ ४१ ८ [वि+मुच्लृ मोचने (तुदा०) धातोर्लोट् । 'बहुल छन्दसी' ति शप श्लु]

विमृधे विशिष्टा मृध शत्रवो यस्मिँस्तस्मै सङ्ग्रामाय, विगतशत्रवे (इन्द्राय=परमानन्दप्राप्तये) ८ ४४ [वि-मृध्पदयो. समास । मृध. सग्रामनाम निघ० २ १७]

विमोक्तारम् दु खाद्विमोचकम् (पुरुषम्) ३० १४. [वि+मोक्तृपदयो समास । मोक्तृ=मुच्लृ मोचने (तुदा०) धातो तृच्]

विमोचनम् पृथक्करणम् ३ ५३ ५ [वि+मुच्लृ मोचने (तुदा०) धातोर्ल्युट्]

वियत् विविधै प्रकारैर्यतते येन तत् (छन्द =धैर्यम्) १५ ५ **वियतम्**=अजितेन्द्रियम् (दुर्जनम्) ४ १६ ३. [वि+यती प्रयत्ने (भ्वा०) धातो क्विप् करणे । अन्यत्र विपूर्वाद् यमु उपरमे (भ्वा०) धातो क्त । वियत् अन्तरिक्षनाम निघ० १ ३]

वियन्त विशिष्टतया ददति ६ ५१ ५ प्रयच्छत १ ८५ १२ [वि+यमु उपरमे (भ्वा०) धातोर्लोट् । विकरणस्य लुक्]

वियन्तन वियच्छत ५ ५५ ६ [वि+यमु उपरमे (भ्वा०) धातोर्लोट् । 'बहुल छन्दसी' ति शपो लुक् । तप्रत्ययस्य तनबादेश]

वियन्तः विशेषेण प्राप्नुवन्त (विद्वज्जना) ४.३८ ६ [वि+इण् गतौ (अदा०) धातो शतृ]

वियन्ता विविधान् प्राप्नुवन्तौ (जडचेतनौ) १.१६४ ३८, [वि+इण् गतौ (अदा०) धातो शतृ । द्विवचनस्याकारादेशश्छान्दस]

वियन्ति व्याप्नुवन्ति ७.४३ १ [वि+इण् गतौ (अदा०) धातोर्लट्]

वियमुः विशेषतया नियच्छेयु ५.६१.३ **वियेमिरे**= विशेषेण नियच्छन्ति ४ ५४ ५. **वियंसत्**=विशेषेण यच्छेत् १ १८९ ६ [वि+यमु उपरमे (भ्वा०) धातोर्लिट् । अन्यत्र लिट् लेट् च । 'बहुल छन्दसीति' शपो लुक्]

वियययुः विशिष्टतया यातम् १ ११७ १६ **वियात**=विगमयत विनष्ट कुरुत १ ८६ १० **वियाति**= विविक्ततया प्राप्नोति १ ४८ ७. **वियासि**=विशेषेण प्राप्नोषि ६ १२ ६ **वियाहि**=विशेषेण प्राप्नुहि, अ०— दूरीकुरु ३.३१ १६ [वि+या प्रापणे (अदा०) धातोर्लिट् । अन्यत्र लोट् लट् च]

वियवन्त वियोजयेयु ५ २ ५. **वियोषत्**=वियुज्येत् ४ २ १० विनश्येत् २ १८ ८ सन्दधीत ४ १६ २० **वियौष्टम्**=वियुक्तौ भवेतम् ऋ० भू० २०६, ऋ० ८ ३ २८ २. वियुक्त होवो म० वि० १३७, अथर्व० १४ १ २२ विरोधी वा पृथक् पृथक् भाव वाले करो स० वि० १४२, अथर्व० ३.३० ५. **वियौष्म**=वियुक्ता मा भवेम, वियुक्ता भवेम ४.२२ [वि+यु मिश्रणेऽमिश्रणे च (अदा०) धातोर्लङ् । शपो न लुक् । अडभावश्च । अन्यत्र लेट् लुङ् च]

वियासाय विविधप्राप्तये ३९ ११ [वि+या प्रापणे (अदा०) धातोर्बाहु० औणा० असच् । ततश्चतुर्थी]

वियुता वियुक्तानि (शरीराणि) ४.७ ७ [वियुतप्राति० शेर्लोपश्छन्दसि । वियुत =वि+यु मिश्रणेऽमिश्रणे च (अदा०) धातो क्त]

वियुताः वियुक्ता (गाव) ५ ३० १० **वियुते**= मिश्रितामिश्रिते (द्यावापृथिव्यौ) ३ ५४ ७ [वि+यु मिश्रणेऽमिश्रणे च (अदा०) धातो क्त । स्त्रियां टाप् । वियुते द्यावापृथिव्यौ वियावनात् निघ० ४ २५]

वियुयुवत् वियोजयति ६ ४४ १६ [वि+यु मिश्रणेऽमिश्रणे च (अदा०) धातोर्णिजन्ताल् लुङ्]

वियूय पृथक्कृत्य, अ०—सत्यासत्ये विविच्य १० ३२ विभज्य १६ ६ वियोज्य सम्मिश्र्य च २३ ३८ [वि+यु मिश्रणेऽमिश्रणे च (अदा०) धातो क्त्वा । समासे क्त्वो ल्यप्]

वियोतारः विभाजका (आप्ता विद्वज्जना) ४ ५५ २ [वि+यु मिश्रणेऽमिश्रणे च (अदा०) धातो कर्त्तरि तृच्]

विरक्षति विविध प्रकार से पालन करता है

समास । तक्षति करोतिकर्मा (नि० ४ १९) तत क्तप्रत्यये तष्टम्]

विभ्वने विभुत्वाय ६ ६१ १३ [वि+भू सत्तायाम् (भ्वा०) धातोर्बाहु० औणा० कनिन्]

विभ्वान्=विभून् विद्याव्याप्तानमात्यान् ७ ४८ ३ [वि+भू सत्तायाम् (भ्वा०) धातोर्बाहु० औणा० वन् । स च डित्]

विभ्वासहम् यो विभूनासहते तम् (रयिं=धनम्) ५ १० ७ [विभूपपदे आङ्+षह मर्षणे (भ्वा०) धातो कर्त्तरि क्विप्]

विभ्वीः व्यापिका (त्रिगुणात्मिका मात्रा) १.१८८.५ [विभूरिति व्याख्यातम् । तत स्त्रिया 'भुवश्च' सूत्रेण ङीप्]

विमदाय विविधाऽऽनन्दाय १ ११२.१९ विविधा मदा हर्षा यस्मिन् व्यवहारे तस्मै १ ५१ ३. विशेषमद-युक्ताय (शयवे=शयानाय पुरुषाय) १ ११७ २० विशिष्टो मदो हर्षो यस्मात्तस्मै (अर्भकाय=ह्रस्वाय- बालकाय) १.११६ १ [वि-मदपदयो समास । मद =मदी हर्षे (दिवा०) धातो 'मदोऽनुपसर्गे' अ० ३ ३ ६७. सूत्रेण अप् । विमदेन वै देवा असुरान् व्यमदन् कौ० २२ ६]

विमध्ये विशेषाऽन्धकारे ४ ५१ ३ [वि-मध्यपदयो समास]

विमनाः विविध मनो विज्ञान यस्य स (परमेश्वर) १७ २६ विविध अनन्त विज्ञान वाला (परमात्मा) आर्याभि० २ ४०, १७ २६ [वि-मनस्पदयो समास मनस् इति व्याख्यातम् । विमना विभूतमना नि० १० २६]

विममिरे व्याप्नुवन्ति ५ ५५ २ **विममुः**=मान कुर्वन्ति १ ११० ५ **विममे**=विविधतया मिमीते ५ १८. विशिष्टतया मापयति १ १६० ४ विशेषेण रचयति १.१५४.१ विशिष्टतया सृजति ५ ८५ ५ विशेषेण विधत्ते ५ ८१ ३ विमानयानवन्निर्मिमीते ११ ६ [वि+माङ् माने शब्दे च (जु०) धातोर्लिट् । 'विममु.' प्रयोगे मा माने (अदा०) धातोर्लिटि रूपम्]

विमहसः विविधतया पूजनीया (मरुत =विद्वासो गृहस्था) ८ ३१ विशेषेण महागुणविशिष्टान् (विद्वज्-जनान्) ५ ८७.४. विविधानि महासि पूज्यानि कर्माणि येषा तत्सम्बुद्धौ (विद्वासो जना) १ ८६ १ [वि-महस्पदयो समास । महस् महन्नाम निघ० ३ ३ महस्=मह पूजा-याम् (भ्वा०) धातोरौणा० असुन्]

विमानम् वियतिगमकम् (रथ=रमणीय यानम्) २.४० ३ विशेष मान परिमाणयुक्त (लम्बी ऊँची छत) स० वि० १६७, अथर्व० ९ २ ३ १५ **विमानः**=विमान-मिव स्थित (सूर्य) १७ ५९ विविध मान यस्य स (अर्वा=वज्रो विद्युद्वा) ३ २९ ७ विमानयानमिव धर्त्ता (धर्म =यज्ञ) १८ ६६ विविध मान यस्मिन् स (देव = ईश्वर.) ३२ ६ विशेष मानयुक्त, सब लोको का निर्माण-कर्त्ता (ईश्वर) स० वि० ८, ३२.६ **विमाने**=विगत मान परिमाण यस्याऽन्तरिक्षस्य तस्मिन् ७ १६ [वि-मानपदयो. समास । मानम्=माङ् माने शब्दे च (जु०) धातोर्ल्युट्]

विमितानि विशेषेण परिमितानि (सानूनि=प्रान्त-देशान्) ६.७.६. [वि-मितपदयो समास । मितम्=माङ् माने शब्दे च (जु०) धातो क्त]

विमिन्वन् विशेषेण प्रक्षिपन् (विद्वज्जन) ४ ५६ १. [वि+डुमिञ् प्रक्षेपणे (स्वा०) धातो शतृ]

विमिन्वन् विशिष्टतया प्रक्षिपन्ति ३ ३१ १२. [वि+डुमिञ् प्रक्षेपणे (स्वा०) धातोर्लङ् । अडभाव-श्छान्दस]

विमिमानः विशेषेण निर्माता सन् (शिल्पिजन) १.१८६ ४. [वि+माङ् माने शब्दे च (जु०) धातोर्लिट कानच् । लट शानज्वा । 'भृञामित्' इत्यभ्यासस्येत्वम्]

विमिमाय विमिमीते २ १५ ३ [वि+डुमिञ् प्रक्षेपणे (स्वा०) धातोर्लिट् । मा माने (जु०) धातोर्वा विपूर्वाल् लिटि छान्दस रूपम्]

विमुच विशिष्टतया त्यज, प्र०—अत्र 'वाच्छन्दसि' इत्युपधा-नकारलोपः १.१०७ ४ **विमुचध्वम्**=विशेषतया त्यजत १ १७१ १ **विमुचन्ति**=उपरमन्ति २ २८ ४ त्यजन्ति ५ ६२ १ **विमुच.**=विमुञ्च १ ४२ १ मोचय ६ ५५ १ [वि+मुच्लृ मोचने (तुदा०) धातोर्लोट् । अन्यत्र लट् लङ् चापि । 'शे मुचादीनामि' ति प्राप्तो नुम् न भवति 'वा छन्दसी' ति नियमात्]

विमुचम् विमुचन्ति येन तम् (अज्ञानम्) ५ ४६ १. [वि+मुच्लृ मोचने (तुदा०) धा तोर्घञर्थे क]

विमुचा यौ दुख विमुञ्चतस्तौ (राजप्रजाजनौ) ६ ४० १. [वि-मुचपदयो समासे द्विवचनस्याकारादेश. मुच.=मुच्लृ मोचने (तुदा०) धातोरिगुपधलक्षण क. कर्त्तरि]

त्रिंशदक्षरा वा एषा विराट् तै० ३ ८.१० ४ ता० १० ३.१२. तै० १ ६ ३ ४. सा विराट् त्रयस्त्रिंशदक्षरा भवति ऐ० २ ३७. त्रयस्त्रिंशदक्षरा वै विराट् कौ० १४.२. श० ३ ५ १ ८ एषा वै परमा विराड् यच्चत्वारिंशद् रात्रय पङ्क्तिर्वै परमा विराट् ता० २४ १० २. सहस्राक्षरा वै परमा विराट् ता० २५ ६ ४ विराड् वाऽनाधृष्ट छन्द. (यजु० १४ ६) श० ८ २.४ ४. स (प्रजापति) पुरुषमेधेनेष्ट्वा विराडिति नामाधत्त गो० पू० ५ ८ बृहद् विराट् तै० १ ४ ४ ६]

विराषाट् वीरान् ज्ञानवता प्राप्तिशीलान् जीवान् सहते स (विद्युदाख्या दीप्ति), प्र०—अत्र वर्णव्यत्ययेन दीर्घेकारस्य स्थाने ह्रस्वेकारोऽकारस्थाने आकारश्च 'स्फायित चि०' उ० २ १३ इत्यजधातोरक्-प्रत्यय 'छन्दसि सह' अ० ३ २ ६३ इति ण्वि 'सहे साढ स' अ० ८ २ ५६ इति षत्वम् १ ३५ ६ [वीरोपपदे षह मर्षणे (भ्वा०) धातो 'छन्दसि सह' इति ण्वि । वर्णव्यत्ययेन दीर्घेकारस्य ह्रस्वेकार, अकारस्य चाकारादेश । वीर =अज गतिक्षेपणयो (भ्वा०) धातो 'स्फायितञ्चि०' उ० २ १३ सूत्रेण रक् । 'अजेर्व्यघञपो' अ० २.४ ५६ सूत्रेणाज्धातो स्थाने वीरित्यादेश]

विरिष्यथ विशेषेण हिंस्यथ ५ ५४ ४ [वि+रिष हिंसायामर्थे (भ्वा०) धातोर्लट् । विकरणव्यत्ययेन श्यन्]

विरुक्मता विविधा रुचो भवन्ति यस्मात्तेन (ओजसा=बलेन) १ १२७ ३ **विरुक्मन्तः**=प्रशस्ता विविधा रुचो दीप्तयो विद्यन्ते येषु ते (वीरजना) १ ८५ ३ **विरुक्मान्**=विविधदीप्तियुक्त (योगिजन) ६ ४९ ५ [वि-रुच्पदयो समासे कृते तत. प्रशंसायामर्थे मतुप् । रुच्=रुच दीप्तावभिप्रीतौ च (भ्वा०) धातो क्विप्]

विरुज विशेषेण प्रभग्न कुरु ४ ३ १४ [वि+रुजो भङ्गे (तुदा०) धातोर्लोट्]

विरुद्धे विरुद्धस्वरूपे (रात्र्युषसौ) १ ११३ ३ [वि+रुधिर् आवरणे (रुधा०) धातो क्त । ततो द्विवचनम्]

विरुद्रस्य विविधा रुद्रा प्राणा यस्मिंस्तस्य (प्रस्रवणस्य=वातस्य) १ १८० ८ [वि-रुद्रपदयो समास । रुद्र इति व्याख्यातम्]

विरुरुचुः विरोचन्ते प्रकाशन्ते १५ २६. विशेषेण दीपयेयु ३३ ६ विदीपयन्ति, प्र०—अत्र लडर्थे लिट् ३.१५ [वि+रुच दीप्तावभिप्रीतौ च (भ्वा०) धातोर्लिट् । व्यत्ययेन परस्मैदम्]

विरुहेम विविधतया वर्द्धेमहि ५ ४३. विशेषेण वर्द्धेमहि ३ ८ ११ [वि=रुह बीजजन्मनि प्रादुर्भावे च (भ्वा०) धातोर्लिङ् । 'लिङ्याशिष्यङ्' अ० ३ १ ८६ सूत्रेण अङ्]

विरूपम् विविधानि रूपाणि यस्मिंस्तम् (विद्युदग्निम्) ३ १ १३. **विरूपान्** विविधस्वरूपान् (पदार्थान्) ३० २२ **विरूपेभ्यः**=विविधानि रूपाणि येषा तेभ्य (राजपुरुषेभ्य) १६ २५ [वि-रूपपदयो समास । विरूपो नानारूप नि० ३ १७]

विरूपवत् विविधानि रूपाणि यस्य तद्वत् १ ४५.३ [वि-रूपपदयो समासे कृते ततस्तुल्यार्थे वति]

विरूपा विविधानि रूपाणि येषु तानि (वस्तूनि) ३ ३८ ९ [वि-रूपपदयो समास । तत्र शेर्लोपश्छन्दसि]

विरूपाः विविधरूपा विकृतरूपा वा (वीरा =व्याप्तयुद्धविद्याजना) ३ ५३.७ विविधानि रूपाणि दाना ता (प्रजा) १ ७० ४ **विरूपे**=विविध रूप ययोरह्नो रात्रेश्च ते १ ६२.८. तम प्रकाशाभ्या विरुद्धरूपे (द्यावाक्षामा=प्रकाशभूमी) १२ २. विरुद्धस्वरूपे (रात्रिदिने) ५ १ ४ विविधरूपे विरुद्धरूपे वाऽहोरात्रे ६ ४९ ३ [वि-रूपपदयो समासः । विरूपास. बहुरूपा नि० ११ १७]

विरेचि विरिच्यते ४ १९ ५ [वि+रिचिर् विरेचने (रुधा०) धातो कर्मणि लुङ् । अटोऽभावश्छान्दस]

विरोकिणः विविधो रोको रुचिर्विद्यते येषु ते (रश्मय =किरणा) ५.५५ ३ [वि-रोकपदयो समासे विरोक । ततो मत्वर्थ इनि. । रोक =रुच दीप्तौ (भ्वा०) धातोर्घञ्]

विरोके अभिप्रीते प्रदीपने वा ३ ५ २ विविधतया रुचिकरे व्यवहारे १० १६ [वि-रोकपदयो समास । रोक =रुच दीप्तावभिप्रीतौ च (भ्वा०) धातोर्घञ्]

विरोचते विशेषेण प्रकाशते ३ २९ ६ [वि+रुच दीप्तावभिप्रीतौ च (भ्वा०) धातोर्लट्]

विरोचमानम् विविधदीप्तियुक्तम् (बुध्न=विज्ञानम्) १ ९५ ९. विविधप्रकारेण प्रकाशमानम् (अहोरात्रव्यवहारम्) १ ९५ २ **विरोचमानः**=प्रकाशमान (राजा) ५.४४ २ [वि+रुच दीप्तावभिप्रीतौ च (भ्वा०) धातो शानच्]

विरोधत् विशेषेण निरुणद्धि स्वीकरोति १ ६७ ५ [वि+रुधिर् आवरणे (रुधा०) धातोर्लट् । विकरणव्यत्ययेन शप्]

स० वि० ८०, अथर्व० ११ ५ १७ [वि+रक्ष पालने (भ्वा०) धातोर्लट्]

विरद विशेषतया ससेध १६११२ [वि+रद विलेखने (भ्वा०) धातोर्लोट्। राध ससिद्धौ (स्वा०) धातोर्वा लोटि छान्दस रूपम्]

विरप्शम् महान्त ससारम् ४ ५० ३ [विरप्शी महन्नाम निघ० ३ ३]

विरप्शिन् महागुणविशिष्टेश्वर वा महैश्वर्यमिच्छुक मनुष्य, प्र०—विरप्शीति महन्नामसु पठितम्, निघ० ३ ३, १ २८ महन् (इन्द्र=राजन्) ६ ४० २ **विरप्शिनः**= सर्वसामग्र्या महान्त (नृतमास) १ ८७ १. पूर्णविद्या शिक्षावीर्या (मरुत=वायव इव विद्वज्जना) १ १६६ ८ **विरप्शिने**=प्रशसिताय (वीरपुरुषाय) ६ ३२ १. **विरप्शी**=महान् (इन्द्र=सेनाधीश) २० ४६. महाविद्यायुक्ता (मही=वेदचतुष्टयी पृथिवी वा) १ ८८ विविधा प्रसिद्धा उपदेशा विद्यन्ते यस्य स (पुरुषोत्तम) ३ ३६ ४ [विरप्शी महन्नाम निघ० ३ ३]

विररप्शे=विशेषेण स्तूयते, प्र०—अत्र रभधातोर्लिटि सम्य श ४ २० ५.

विराजतः विशेषेण देदीप्येते ११८८ ६ **विराजति**=विशेष प्रकाशयति, प्र०—अत्राऽन्तर्गतो ण्यर्थ ३ ८ विशेषेण प्रकाशते ३३ ३० अ०—विविधतया प्रकाशयति १.३ १२ **विराजथ**=विशेषेण प्रकाशध्वम् १ १८८ ४ **विराजथः**=विशिष्टतया प्रकाशेथे ५ ६३ ७ [वि+राजृ दीप्तौ (भ्वा०) धातोर्लट्]

विराजम् विविधाना पदार्थाना प्रकाशकम् (छन्द) २८ ३१ विविधै पदार्थै राजमानम् (गा=पृथिवीम्) १३ ४३ विराट्छन्दो वाच्यम् (अर्थम्) ६ ३३ **विराजः**= विविधैर्गुणै राजमाना प्रकाशमाना (सत्यस्त्रिय.) १७ ३ विविधोत्तमराजपालिता (प्रजा) ऋ० भू० २२२, अथर्व० ६ १० ६८ २ **विराजा**=विशेषेण प्रकाशेन ३८.२७ **विराजे**=विराट्छन्दसे २४ १३ **विराट्**=यद् विविध राजते तत् (छन्द=बलम्) २१ १६ विविधशास्त्रश्रवणयुक्तम् (श्रोत्रम्) २० ५ यो विविधतया राजते (अग्नि=पावक) २० ५५ विशेषेण राजमान (अग्नि= राजा) २७ ७ विविधै पदार्थै राजमाना (स्त्री) १५ ११ विविधविद्याविनयप्रकाशयुक्ता (स्त्री) १४ १३ विविधविद्याप्रकाशनम् १४ १८ या विविधासु राजते (अ०— स्त्री) १३.२४ विविधै पदार्थै राजते प्रकाशते स विराट् ब्रह्माण्डरूप, भा०—सर्व समष्टिरूप जगत् ३१ ५ यो विविधेषु गुणेषु कर्मसु वा राजते स (विद्वज्जन) १ १८८ ५ सूर्यचन्द्रनेत्रा वायुप्राण पृथिवीपाद इत्याद्यलङ्कारलक्षणलक्षितो हि सर्वशरीराणा समष्टिदेह (ब्रह्माण्डशरीर) ऋ० भू० १२२, ३१ ५ [वि+राजृ दीप्तौ (भ्वा०) धातो कर्त्तरि क्विप्। विराट् विराजनाद्वा विराधनाद्वा विप्रापणाद्वा। विराजनात् सम्पूर्णाक्षरा, विराधनादूनाक्षरा, विप्रापणादधिकाक्षरा नि० ७ १३ वृष्टिर्वै विराट् तस्या एते घोरे तन्वौ विद्युच्च ह्रादुनिश्च श० १२ ८ ३ ११ विराडग्नि श० ६ २ २ ३४ वाग्वै विराट् श० ३ ५ १ ३४ विराड्ढीयम् (पृथिवी) श० २ २ १ २० इय (पृथिवी) वै विराट् श० १२ ६ १ ४०. गो उ० ६ २ (यजु० १३ २४) अय वै (पृथिवी) लोको विराट् श० ७ ४ २ २३ (यजु० १३ ४३) विराड् वै गौ श० ७ ५ २ १६ एषा वै स्तनवती विराड् य काम कामयते तमेता दुग्धे। अन्न विराट् कौ० ६ ६ तै० १ ६ ३ ४ ता० ४ ८ ४ अन्न वै विराट्, तस्माद् यस्यैवेह भूयिष्ठमन्न भवति स एव भूयिष्ठ लोके विराजति तद् विराजो विराट्त्वम् ऐ० १ ५ अन्न विराट् श० ७ ५ २ १६ ऐ० १ ५ विराडन्नम् ऐ० ५.१६ अन्न वै श्रीर्विराट् गो० पू० ५ ४ गो० उ० १ १६ श्रीर्विराडन्नाद्यम् कौ० ११ श्रीर्वै विराड् यशोऽन्नाद्यम् गो० पू० ५ २० गो० उ० ६ १५ एतद्वै कृत्स्नमन्नाद्य यद् विराट् कौ० १४.२ विराडन्नाद्यम् ऐ० ४ १६ ऊर्ग्विराट् तै० १ २ २ २ वैराजीर्वा आप कौ० १२ ३ वैराजो वै पुरुष तां० २.७ ८ तै० ३ ६ ८ २ विराड् वै यज्ञ श० ११ १ २२ वैराजो यज्ञ गो० पू० ४ २४ गो० उ० ६ १५ विराड् वाऽग्निष्टोम कौ० १५ ५ वैराज सोम कौ० ६ ६ श० ३ ३ २ १७ विराड् वरुणस्य पत्नी गो० उ० २ ६ अथैतद् वामेऽक्षणि पुरुषरूपम्। एषाऽस्य पत्नी विराट् श० १४ ६ ११ ३ सा (विराट्) तत ऊर्ध्वारोहत्। सा रोहिण्यभवत् तै० १.१ १० ६ विराट् सृष्टा प्रजापते। ऊर्ध्वारोहद् रोहिणी योनिरग्ने प्रतिष्ठिति तै० १ २ २ २७ सर्वदेवत्य वा एतच्छन्दो यद् विराट् श० १३ ४ १ १३ सत् विराट् छन्दसा ता० १५ १२ २ विराड् वै छन्दसा ज्योति ता० ६ ३ ६ विराड् हि छन्दसा ज्योति ता० १० २ २ विराजो वा एतद् रूप यदक्षरम् ता० ८ ६ १४ दशाक्षरा वै विराट् श० १ १ १ २२ दशाक्षरा विराट् ऐ० ६ २० गो० पू० ४.२४ गो० उ० १.१८ ता० ३ १३ ३ दशदशिनी विराट् कौ० २ ३ दश च ह वै चतुर्विराजोऽक्षराणि गो० पू० ५ २० त्रिंशदक्षरा वै विराट् ऐ० ४ १६. श० ३ ५ १ ७

विवहन्ति विशेषेण प्रापयन्ति ४ २१ ८ [वि+वह प्रापणे (भ्वा०) धातोर्लट्]

विव: विशेषेण वृणोषि १ ६२ ५ विवृणोति, प्र०—अत्र 'मन्त्रे घसह्वर०' इति च्लेर्लुगडभावश्च १३ ३ विवृत विभक्त करता है आर्याभि० २ २८, १३ ३ [वि+वृञ् वरणे (भ्वा०) धातोर्लुङ्। 'मन्त्रे घसह्वर०' सूत्रेण च्लेर्लुक्। अडभावश्छान्दस। विव व्यवृणो नि० १० ६]

विंशति: एतत्सङ्ख्याकानि (शता=शतानि सैन्यानि) १ ८० ९ **विंशती**=चत्वारिंशत् (शतय) २७ ३३ [विंशति द्विदशन नि० ३ १० प्रजापतेर्विस्रस्तादाप आयस्ताम्वितान्वविंशद् यदविशन् तस्माद् विंशति श० ७ ५ २ ४४]

विवाच: विविधा वाणी ३ ३४ १० विविधविद्या-शिक्षायुक्ता वाचो येषान्ते (चर्षणय=मनुष्या) ६ ३१ १ **विवाचि**=विरुद्धा वाचो यस्मिन् सङ्ग्रामे भवन्ति तस्मिन् ७ ३० २ विविधविद्यानुशिक्षायुक्ते (वाग्-व्यवहारे) १ १७८ ४ विविधासु विद्यासु प्रवृत्ता वाक् तस्याम् ७ २३ २ विविधार्थसत्यार्थप्रकाशिका वाचो यस्मिन् व्यवहारे ६ ४५ २६ [वि-वाच्पदयो समास। विवाक् सग्रामनाम निघ० २ १७]

विवाय सवृणोति १ ७१ ४ दूर गमयति ७ ६.३ गच्छेत् १ १५६ ५ [वि गतिव्याप्तिप्रजनादिषु (अदा०) धातोर्लिट् अथवा अज गतिक्षेपणयो (भ्वा०) धातोर्लिट्। 'अजेर्व्यघञपोरि' ति वी-आदेश]

विवावृते विशेषेण पुन पुनरावर्तते, प्र०—अत्र 'तुजादीनाम्०' इति दीर्घ १ १६४ १४ [वि+वृतु वर्त्तने (भ्वा०) धातोर्लिट्। तुजादित्वादभ्यासस्य दीर्घ.]

विवावृधु: विशिष्टतया वर्धन्ते ५ ५९ ६. **विवावृधे**=विशेषेण वर्द्धते १ १४१ ५ [वि+वृधु वृद्धौ (भ्वा०) धातोर्लिट्। तुजादित्वादभ्यासस्य दीर्घ]

विवास विवसति ५ ५३ १ **विवासत**=परिचरत ६ १५ ६ **विवासते**=परिचरति १.११७ १ **विवासथ:**=सेवेथाम् १ ११६ ६ **विवासन्ति**=परिचरन्ति ७.३५. **विवाससि**=परिचरसि १.७४ ६ **विवासान्**=सेवेरन् १ १७३.१ **विवासे**=परिचरामि १.४१ ८ वासयामि ७.५८.५. **विवासेत्**=सेवेत ६.१६ ४६ **विवासेम**=नित्य परिचरेम ६ ३८ ५ **विवासेयम्**=परिचरेयम् २.३३.६. [विवासति परिचरणकर्मा निघ० ३ ५ विवाससि परिचरसि। विवासनि परिचर्यायाम् नि० ११ २३ विवासेम परिचरेम नि० २ २४]

विवासाय विविधप्राप्तये ३९ ११. [विवासति परिचरणकर्मा निघ० ३ ५ ततो भावे घञन्ताच्चतुर्थी वि+वस निवासे (भ्वा०) धातोर्वा घञ्। प्राप्त्यर्थे ऽपि वसिर् धातूनाम अनेकार्थकत्वात्]

विविक्त. पृथक्कुरुत ३ ५४ ८ [विचिर् पृथग्भावे (रुधा०) धातोर्लट्। विकरणव्यत्ययेन श्लु]

विविक्त्यै विवेकाय ३० १३ [वि+विचिर् पृथग्-भावे (रुधा०) धातो क्तिन्। ततश्चतुर्थ्या एकवचनम्]

विविक्वान् विविक्त (मनुष्य) ३ ५७ १ [विचिर् पृथग्भावे (रुधा०) धातोर्लिट क्वसु]

विविचिम् विवेचक विभागकर्त्तारम् (राजानम्) ५ ८ ३ [वि+विचिर् पृथग्भावे (रुधा०) धातोरौणा० इन् कर्त्तरि]

विविड्ढि व्याप्नुहि, प्र०—अत्र 'वाच्छन्दसि सर्वे विधयो भवन्ति' इति नियमात् 'निजा त्रयाणां गुण: श्लौ' अ० ७ ४ ४५. अनेनाभ्यासस्य गुणनिषेध १ २७ १० [विप्लृ व्याप्तौ (जु०) धातोर्लोट्। गुणाऽभावश्छान्दस। विविड्ढि कुरु नि० १० ८]

विवित्से विशेषेण प्राप्नोषि, प्र०—अत्र व्यत्ययेनात्मने-पदम् १ ३२ ४ **विविदत्**=प्राप्नोति ७ २१ ६ **विविदयु.**=विन्दत, प्र०—अत्र व्यत्यय ६ ७२ १ **विविदु:**=वेदयन्ति १ ७१ २ **विविदे**=विन्देत २ १५ ६. लभते ४ १८ १३. विज्ञायते ७ ७ १ विन्दति ४ २६ ५ प्राप्त होता है स० प्र० १५३, १० ८५ ४० [विद्लृ लाभे (तुदा०) धातोर्लट्। 'बहुल छन्दसी' ति श्लु:। अन्यत्र लेट् लिट् च। आत्मनेपद व्यत्ययेन]

विविद्रिरे लभन्ते २ २१ ५. **विविद्रे**=लभन्ते ६ २७ २ विदन्ति ६ २७.१. [विद्लृ लाभे (तुदा०) धातोर्लिट्। आत्मनेपद व्यत्ययेन। रुडागमश्छान्दस। अन्यत्र 'इरयो रे' इति रे-आदेश]

विविद्वान् विशेषेण विपश्चित् ४ ५ ३ विशेषतया वेत्ता (जन) ३ ३१ १५. [वि+विद ज्ञाने (अदा०) धातो शतृ। 'विदे शतुर्वसुरि' ति वसुरादेश]

विविध्यन्ति बाणा इव सक्षतान् कुर्वन्ति, भा०—विपादिना घ्नन्ति १६ ६२ [वि+व्यध ताडने (दिवा०) धातोर्लट् 'ग्रहिज्यावयिव्यधि०' इति सम्प्रसारणम्]

विविध्यन्तीभ्य: शत्रुवीरान् निहन्त्रीभ्य (स्त्रीभ्य)

विरोह विविधतया प्रादुर्भव ५ ४३ विशेषेण वर्द्धस्व ३ ८ ११ [वि+रुह बीजजन्मनि प्रादुर्भावे च (भ्वा०) धातोर्लोट्]

विरोहिता विरोहणकर्त्री (युवति =स्त्री) ५ ६१ ६ [वि+रुह बीजजन्मनि प्रादुर्भावे च (भ्वा०) धातोर्णिजन्तात् क्त । ततष्टाप्]

विलायकः येन विविधतया लीयते श्लिष्यते स (विद्वज्जन) २० ३४. [वि+लीङ् श्लेषणे (दिवा०) धातो कर्त्तरि ण्वुल्]

विलिष्टम् परिपूर्णम् (सर्वव्यवहारशोधनम्), प्र०—अत्र विरुद्धार्थे वि-शब्द २ २४ विरुद्धमल्पमपि व्यसनम् २३ ४१. विशेषेण न्यूनमङ्गम् ८ १४ रोमादिमललेशम् ८.१६ [वि+लिश अल्पीभावे (दिवा०) धातो क्त]

विलोहित विविधान् पदार्थानारूढस्तत्सम्बुद्धौ (सभेश राजन्) १६ ५२ **विलोहितः**=विविधं शुभगुणकर्मस्वभावं रोहितो वृद्ध (रुद्र =सेनेश) १६ ७. **विलोहिताः**=विविधरक्तवर्णा (भा०=वृद्धिजीवना सर्पादय) १६ ५८ [वि-लोहितपदयो समास । लोहित =रुह बीजजन्मनि प्रादुर्भावे च (भ्वा०) धातो. 'रुहे रश्च लो वा' उ० ३ ९४ सूत्रेण इतन् रेफस्य च लकार]

विल्मैः प्रदीप्तसाधनै (अन्नै) २ ३५ १२. [विल्म भिल्म भासनमिति वा नि० १ २०.]

विवक्तन वदत, उपदिशत १ १५६.३. [वि+वच परिभाषणे (अदा०) धातोर्लोट् । तस्य तनबादेश । कुत्वञ्च छान्दसम्]

विवक्मि विशेषेण वदामि, प्र०—अत्र 'वाच्छन्दसि' इति कुत्वम् १ १६७ ७ विशेषेणोपदिशामि ३ ५७ ४ विवेकेन परीक्षयामि ७ २२ ५ [वि+वच् परिभाषणे (अदा०) धातोर्लट् । कुत्व छान्दसम्]

विवक्षत इव वक्तुमिच्छोरिव (जनस्येव) २३ २३. [विवक्षत-इवपदयो समास । विवक्षत =वच परिभाषणे (अदा०) धातोरिच्छायामर्थे सन्नन्ताच्छतृ]

विवधः विशेषेण बध्नन्ति पदार्था यस्मिंस्तदन्तरिक्षम् १५ ५ [वि-बन्ध बन्धने (क्र्या०) धातो 'हलश्च' त्यधिकरणे घञ् । वर्णव्यत्ययेन बकारस्य वकार]

विवधीत् विशिष्टतया हन्ति ५ ४४ १२ [वि+हन हिंसागत्यो (अदा०) धातोर्लुङ् । अडभाव । 'लुङि च' सूत्रेण वधादेश]

विवरे अवकाशे १ ११२ १८

विवर्त्तनम् विशेषेण वर्त्तन्ते यस्मिंस्तत् (कार्यम्) २५ ३८ विविधं वर्त्तनम् १ १६२ १४ [वि+वृतु वर्त्तने (भ्वा०) धातोरधिकरणे ल्युट्]

विवर्त्तमानाय विशेषेण वर्त्तमानाय (पदार्थसमूहाय) २२ ८. [वि+वृतु वर्त्तने (भ्वा०) धातो शानच्]

विवर्त्तः विविधं वर्त्तते यस्मिन्त्स (सवत्सर) १४ २३ [वि+वृतु वर्त्तने (भ्वा०) धातोरधिकरणे घञ्]

विवर्हि उत्पन्नाभूत् ३ ५३ १७.

विवलम् विविध वल यस्मात् तत् (छन्द.=आनन्दम्) १४ ६ [वि-बलपदयो समास । बकारस्य वकारो वर्णव्यत्ययेन]

विववर्थ विगन्तु वृणोषि, प्र०—अत्र वर्त्तमाने लिट् 'बभूथाततन्थ०' अ० ७ २ ६४ सूत्रेण निपातनाच्च साधु १ ६१.२२ [वि+वृञ् वरणे (स्वा०) धातोर्लिटि 'बभूथाततन्थ०' अ० ७.२.६४ सूत्रेण निपात्यते]

विववार विगतार्थत्वेन विवृणोति २० ३६ **विवव्रुः**=विशेषेण वृणुयु १२ २८ **विवव्रे**=विशेषतया व्रियते १ ६२ ७ [वि+वृञ् वरणे (स्वा०) धातोर्लिट्]

विववृते विशिष्टतया वर्त्तते १ १६६ ९ [वि+वृतु-वर्त्तने (भ्वा०) धातोर्लिट्]

विवष्टि विशेषेण कामयते ७ १६ ११ [वि+वश कान्तौ (अदा०) धातोर्लट्]

विवसः विशेषतया निवासय ७.८ ३. **विवस्व**=विशेषेण वस, प्र०—अत्र व्यत्ययेनात्मनेपदम् १ १८७ ७. [वि+वस निवासे (भ्वा०) धातोर्लोट् । व्यत्ययेनात्मनेपदम् । अन्यत्र लङि मध्यमैकवचनेऽटोऽभावे च रूपम्]

विवस्वतः सूर्यस्य ३ ५१ ३ सवितु ३ ३४ ७ प्रकाशमानस्य (सूर्यस्य) १.५३ १ परमेश्वरस्य १.५८ १. **विवस्वते**=सूर्यलोकाय १ ३१ ३ **विवस्वन्**=विविधे स्थाने वसति तत्सम्बुद्धौ (विद्वन् गृहपते) ८ ५ **विवस्वान्**=सूर्य इव ७ ९ ३ [विवस्वन आदित्यात । विवस्वान् विवासनवान् नि० ७ २६ असौ वाऽआदित्यो विवस्वानेष ह्यहोरात्रे विवस्ते तमेष वस्ते सर्वतो ह्येनेन परिवृत' श० १०.५ २ ४. विवस्वानादित्य एष ते सोमपीथ श० ४.३ ५.१८. (देवा आदित्या) य (मार्तण्डम्) उ ह तद् विचक्रु स विवस्वानादित्यस्तस्येमा प्रजा. श० ३ १.३ ४]

विवस्वत्याः या विवस्वति साध्व्य (उषस = प्रभातान्) ३ ३० १३ [विवस्वत्प्राति० साध्वर्थे यत् । तत स्त्रियां टाप्]

प्रविशतु १२ १०५ **विशन्ति**=प्राप्नुवन्ति ६ ३६ ३ प्रविशन्ति ३ ४६ ४ **विशन्तु**=आविष्टा भवन्तु १ ५ ७ प्राप्नुवन्तु ४ ५० १० **विशस्व**=प्रवेश कुरु १८ ३ [विश प्रवेशने (तुदा०) धातोर्लोट्। अन्यत्र लडपि। विशस्व प्रयोगे व्यत्ययेनात्मनेपदम्]

विशतात् विशतु, तिष्ठतु ३४ ५० विशताम् ८ ४२ [विश प्रवेशने (तुदा०) धातोर्लोटि 'तुह्योस्तातङ्०' इति तातङ्]

विश् वैश्यवर्ग प्रजा व ३८ १४ ऋ० भू० १५२ उत्तम प्रजा को श० वि० १४४, अथर्व० १२ ५ ८. अनेक विद्योद्यम, बुद्धि, विद्या, धन और धान्य आदि वलयुक्त प्रजा को आर्याभि० २ ३१, ३८ १४ **विशः**=प्रजा भा०—सुसन्ताना १२ ५५ प्रजाय। १३ ११ मनुष्या ६ १४ २ धनानि २ २४ १० या निशन्ति ता (प्रजा) १५.६० मनुष्याद्या प्रजा २१ १६ **विशाम्**=पालनीयानाम् (प्रजानाम्) ११२१ ३ **विशे**=प्रजा के अर्थ स० वि० १३८, अथर्व० १४ २ २७ [विश मनुष्यनाम निघ० २ २ विशाम् मनुष्याणाम् नि० ५ २७ यज्ञो वै विशो यज्ञे हि सर्वाणि भूतानि विष्टानि श० ८ ७ ३ २१ यज्ञो वै विट् श० १४ ३ ३ ६ निडुक्थानि ता० १८ ८.६ विट् शस्त्रम् प० १४ विट् सूक्तानि ऐ० २ ३३ विशो ग्रावाण श० ३ ९ ३ ३ विड् वै ग्रावाण ता० ६ ६ १ विड् वै गर्भ श० १३ २ ९ ६ तै० ३ ९ ७ ३ विड् वै शकुन्तिका (यजु० २३ २२) श० १३ २ ९ ६ तै० ३ ९ ७ ३ विड् वै हरिणी तै० ३ ९ ७ २ विशो वै पस्त्या श० ५ ३ ५ १९ विशो वै सूच्य श० १३ २ १० २ विशो होत्राशसिन ऐ० ६ २१ गो० उ० ६ ३ विट् सप्तदश ता० १८ १०.९ विड् वै सप्तदश ता० २ ७ ५ विश सप्तदश ऐ० ८ ४. वर्षाभिर्ऋतुनादित्या स्तोमे सप्तदशे स्तुत वैरूपेण विशौजौसा तै० २ ६ १९ १ राष्ट्राणि वै विश ऐ० ८ २६ विट् सुरा श० १२ ७ ३ ८ आया हीमा प्रजा विश श० ८ २ १ १७ अन्न वै विश श० ४ ३ ३ १२ अन्न विश श० २ १ ३ ८ अन्न वै क्षत्रियस्य विट् श० ३ ३ २ ८ तस्माद् राष्ट्री विश घातुक श० १३ २ ९ ६ तस्माद् राष्ट्री विशमत्ति श० १३ २ ९ ८ दैव्यो वा ऽएता विशो यत्पशव श० ३ ७ ३ ९ अपरजना ह वै विशो ऽदेवी गो० उ० ६ १६ क्षत्र वै -प्रस्तरो विश इतर वर्हि श० १ ३ ४ १० तस्माद् ब्रह्म च क्षत्र विशि प्रतिष्ठते श० १२ २ ७ १६ स्वरिति (प्रजापति) विशम् (अजनयत) श० २ १ ४ १२ स विशमसृजत यान्येतानि देवजातानि गणश आख्यायन्ते वसवो रुद्रा आदित्या विश्वे देवा मरुत इति श० १४.४ २ २४. पूषा विशा विट्पति तै० २ ५ ७ ४. तस्या (विश) राजा गर्भ ता० २ ७ ५. अहुतादो वै विश श० २ ५ २ २४ भूमो वै विट् श० ३ ९ १.१७ अनिरुक्तेव हि विट् श० ९ ३ १ १५.]

विशल्यः विगतानि शल्यानि यस्य स. (सेनापति) १६ १० [वि-शल्यपदयो समास.]

विशस्त विशेषेण ताडयत हिंस्त ११६२ १८ विशिष्टतया छिन्त २५ ४१ [वि+शसु हिंसायाम् (भ्वा०) धातोर्लोट्। 'बहुल छन्दसी' ति शपो लुक्]

विशस्ता विच्छेदक (ऋतु'=वसन्तादि) २५ ४२ [वि+शसु हिंसायाम् (भ्वा०) धातो कर्त्तरि तृच]

विशारि विशेषतया हिंस्यात् ३ ५३ १७ [वि+शॄ हिंसायाम् (क्र्या०) धातो कर्मणि लुङ् अटोऽभाव]

विशालम् विस्तीर्णम् (छन्द) १४.९ विस्तीर्ण कर्म्म १५ ५

विशासतु उपदिशन्तु, भा०—शिक्षेयु २३ ४२ **विशास्ति**=विशेषेणोपदिशति २३ ३६. [वि+शासु अनुशिष्टौ (अदा०) धातोर्लोट्। अन्यत्र लट्]

विशिक्षुः सुशिक्षक (अग्नि=राजा) २.११० [वि+शिक्ष विद्योपादाने (भ्वा०) धातो कर्त्तरि बाहु० औणा० कु]

विशिखासः विगतशिखा सन्यासिन, भा०—परिव्राज १६ ५९ [वि-शिखापदयो समास। ततो जसोऽसुक्]

विशिखा इव शिखारहिता (कुमारा) इव ६ ७५ १७ यथा विगतशिखा विविधशिखा वा (कुमारा=बालका.) १७ ४८ [विशिखा-इवपदयो समास। विशिखा=वि-शिखापदयो समास]

विशिप्रियाणाम् विविधे धर्म्ये कर्म्मणि हनु-नासिके येषा तेषाम् (गृहाश्रमिणाम्), प्र०—शिप्रे हनुनासिके वा नि० ६ १७, ६ ४ [वि-शिप्रपदयो समास। शिप्रे हनुनासिके वा नि० ६ १७]

विशिशिप्रम् विशी शिप्रे शोभने हनुनासिके यस्य तम् (मखायम्) ५ ४५ ६ [विशिन्-शिप्रपदयो. समास शिप्रे हनुनासिके वा नि० ६ १७]

विशिश्नथ विशिष्टतया हिन्धि २ २८ ७

विश्रृण्विरे विश्रृण्वन्ति ४ ८ ६ [वि+श्रु श्रवणे (भ्वा०) धातोर्लिट्। 'छन्दस्युभयथा' अ० ३ ४ ११७ सूत्रेण लिट सार्वधातुसज्ञाया 'श्रुव. शृ च' इति श्नु शृ

१६ २४ [वि+व्यध ताडने (दिवा०) धातो शत्रन्तान् ङीप्]

विविनक्तु विशेषेण वेचयति वेचयतु वा, अ०—पृथक्करोति प्र०—अत्राऽऽद्ये पक्षे लडर्थे लोडन्तर्गतो ण्यर्थश्च १ १६ [वि+विचिर् पृथग्भावे (रुधा०) धातोर्लोट्]

विविप्रे विशेषतया क्षिपन्ति ३ ३२ ४

विविवर्ह विशेषेण वर्द्धयति २ २३ १३ [वि+वृह वृद्धौ (भ्वा०) धातोर्लिट्। अभ्यासस्येत्व छान्दसम्]

विविशुः आविशन्ति ५ १९ २. प्रविशेयु ३ ७.१ [विश प्रवेशने (तुदा०) धातोर्लिट्]

विविषुः व्याप्नुवन्ति ६.३२ ५ **विविष्मः**=व्याप्नुमः ६.२३.५ [विष्लृ व्याप्तौ (जु०) धातोर्लिट्]

विवृक्णा विविधतया छिन्नानि (अ०—स्कन्धासि), प्र०—अत्र ओव्रश्चू छेदने इत्यस्मात्कर्मणि निष्ठा 'ओदितश्च' इति नत्व निष्ठादेश 'षत्वस्वरप्रत्ययेड्विधिपु सिद्धो वक्तव्य' अ० ८ २.६ इति वार्त्तिकेन झलि षत्वे कर्त्तव्ये झत्परत्वाभावात् षत्व न भवति 'चो कु' इति कुत्व 'शेश्छन्दसि०' इति शेर्लोप १ ३२ ५ विविधच्छेदन-साधनेन वज्रेण १ ३२ ३ ऋ० भू० २८४ [वि+ओव्रश्चू छेदने (तुदा०) धातो क्त । तत शेर्लोपश्छन्दसि]

विवृत् यद्विविधैराकारैर्वर्त्तते तज्जगदुपकर्त्ता (विद्वज्जन) १५ ९. **विवृते**=जगदुपकाराय १५ ९ [वि+वृतु वर्त्तने (भ्वा०) धातो क्विप्]

विवृत्ताय विविधतया कृतवर्त्तमानाय (जीवाय) २२ ८ [वि+वृतु वर्त्तने (भ्वा०) धातो क्त । ततश्चतुर्थी]

विवृश्चत् विविधतया छिनत्ति १ ६१ १० **विवृश्चति**=विशेषेण छिनत्ति ३ ५३ २२ **विवृश्चः**=विशेषतया छिन्धि ४ १७ ७ [वि+ओव्रश्चू छेदने (तुदा०) धातोर्लेट् अन्यत्र लट् लङ् च]

विवृश्चन् विविधतया छिन्दन् (इन्द्र=सूर्य) २ १५ ६ [वि+ओव्रश्चू छेदने (तुदा०) धातो शतृ]

विवेक्षि व्याप्नोषि ७ ३ ४ [विष्लृ व्याप्तौ (जु०) धातोर्लट्]

विवेति विशेषतया व्याप्नोति १ ४८ ६ **विवेषि**=प्राप्नोषि १ १८९ ७ **विवेः**=प्राप्नोषि, प्र०—अत्र 'बहुल छन्दसि' इति श्लु १ ६९ ४ [वी गतिव्याप्तिप्रजनादिषु (अदा०) धातोर्लट् 'बहुल छन्दसी' ति शप श्लु । अन्यत्र लट् लङ् च]

विवेद विन्दति ३ ३९ ५ वेत्ति ४ ५ ९ विजानाति १ १८५ १ विजानीयात् ३ ३२ ४ [विद्लृ लाभे (तुदा०) धातोर्लिट्। विद ज्ञाने (अदा०) धातोर्वा लटि 'विदो लटो वा' इति तिपो णल्। विवेद जानाति नि० ३ २२]

विवेनतम् विरुद्ध कामयेथाम् ५ ७८ १ **विवेनः**=कामये ५ ३१ २ विरोधेन कामयथा ६ ४४ १०

विवेश विशति १ १६४ २१ प्रविष्टवान् ३ ३ ४ प्रविष्टोऽस्ति १ ९८ २ विशेत् ३ ३४ ५. विश ३ ३१.५ व्याप्नोति ४ ५८ ३ **विवेशुः**=विशन्ति ४ २३ ९. [विश प्रवेशने (तुदा०) धातोर्लिट्। विवेश विशति नि० १० ४६]

विवेष वेवेष्टि ५ ७७ ४ व्याप्नोति २ ३५ १३. व्याप्नुयात् ७.२१ ४ **विवेषः**=व्याप्नोति ७ ३७ ५ [विष्लृ व्याप्तौ (जु०) धातोर्लिट् । अन्यत्र लङ्]

विवोचति विविच्योच्याद्वदेत्, प्र०—अत्र लेटि वचधातोर्व्यत्ययेनौकारादेश १ १०५ ४ **विवोचन्**=विशेषेणोपदिशन्ति ४ १ १४ **विवोचः**=उपदिश ४ ५ १२ व्यवोचो विवदे ६ २२ ४ **विवोचेः**=विशेषतया ब्रूया १ १३२ ३ [वच परिभाषणे (अदा०) धातोर्लेट्। विकरणव्यत्ययेनाडि 'वच उम्' इत्युमागमे गुणे च रूपम् । अन्यत्र लुङ। तत्र 'अस्यतिवक्ति०' सूत्रेण अङ्। अन्यत्र लिङि 'लिङ्याशिष्यङ्' अ० ३ १ ८६ सूत्रेणाङ्। विवोचत् विवक्ष्यति नि० ७ ३०]

विव्यक् व्याप्नुयात् ७ २१ ६

विव्ययुः सन्तनुत वेष्टयतम् ६ ७२ ५ [वी गतिव्याप्तिप्रजनादिषु (अदा०) धातोर्लिटि मध्यमद्विवचने रूपम्]

विव्याच छलयति ३ ३९ ४. [व्यच व्याजीकरणे (तुदा०) धातोर्लिट्]

विव्ये कामयते ४ २२ २ सवृणोति १ १७३ ६ [वी गतिव्याप्ति कान्त्यादिषु (अदा०) धातोर्लिट् । व्यत्ययेनात्मनेपदम्]

विव्रता विविधानि व्रतानि शीलानि याभ्या तौ (हरी=सेनान्यायप्रकाशौ) १ ६३ २ [वि-व्रतपदयो समास । ततो द्विवचनस्याकारादेश]

विश विशति, अ०—प्रविशति ३ २२ प्राप्नुहि १ १७९ १ **विशत**=प्रवेश कुरुत ४ १३ **विशतु**=

नवकर्मेष्टक्रिय (पति) १४ १४ **विश्वकर्माणम्**=अखिलेषु कर्मसु कुशलम् (अ०—महात्मानम्) १७ २३ विश्वानि सर्वाणि धर्म्याणि कर्म्माणि यस्य तम् (ईश्वर सभेश वा) ८ ४५ [विश्व-कर्मन्पदयो समास । विश्वम् बहुनाम निघ० ३ १ विश्वकर्मा पदनाम निघ० ५ ४ विश्वकर्मा सर्वस्य कर्त्ता नि० १० २५ विश्वम् सर्वम् नि० ३ २२. यद्वै विश्व सर्व तत् श० ३ १ २ ११ तदन्न वै विश्वम्प्राणो मित्रम् जै० उ० ३ ३ ६ कर्मन् इति व्याख्यातम् । अथो विश्वकर्मणे । विश्व वै तेषा कर्म कृत सर्व जित भवति ये सवत्सरमासते श० ४ ६ ४ ५ वाग्वै विश्वकर्मर्षिर्वाचा हीद सर्व कृतम् श० ८ १ २.९. प्रजापतिर्वै विश्वकर्मा। श० ७ ४ २ ५ सवत्सरो विश्वकर्मा ऐ० ४ २२. असौ वै विश्वकर्मा योऽसौ (सूर्य.) तपति कौ० ५ ५. गो० उ० १ २३ विश्वकर्मा त्वादित्यैरुत्तरत पातु । श० ३ ५.२ ७ असौ (द्यौ) विश्वकर्मा तै० ३ २ ३ ७ (इन्द्र) विश्वकर्मा भूत्वाऽभ्यजयत् तै० १ २ ३.३ इन्द्रो वै वृत्र हत्वा विश्वकर्माऽभवत् प्रजापति प्रजा सृष्ट्वा विश्वकर्माऽभवत् ऐ० ४ २२. विश्वकर्माऽयमग्नि श० ९ २ २ २ अय वै वायुर्विश्वकर्मा योऽय पवतेऽएष हीद सर्व करोति श० ८ १ १ ७ वैश्वकर्मण एककपाल पुरोडाशो भवति । विश्व वा एतत् कर्म कृत सर्व जित देवानामासीत् साकमेधैरीजानाना विजिग्यानानाम् श० २ ५ ४ १० (प्रजापति) वैश्वकर्मण पुरुषम् (आलिप्सत) श० ६ २ १.५]

विश्वकाय विश्वस्याऽनुकम्पकाय (विद्वज्जनाय) १ ११६ २३ अनुकम्पिनाय समग्राय राज्ञे १ ११७.७ [विश्वमिति व्याख्यातम् । तत 'अनुकम्पायाम्' अ० ५ ३ ७६ सूत्रेण क प्रत्यय]

विश्वकृष्टय: विश्वा कृष्टिर्येभ्यस्ते (मरुत =वायव) ३.२६ ५ **विश्वकृष्टिम्**=विश्वे सर्वे कृष्टयो मनुष्या विजयिनो यस्मात्तम् (राजपुरुषम्) ४ ३८ २ **विश्वकृष्टि:**=विश्वा सर्वा कृष्टीर्मनुष्यादिका प्रजा १ ५९ ७ [विश्वा-कृष्टिपदयो समास । कृष्टय. मनुष्यनाम निघ० २ ३]

विश्वगूर्त्त: विश्व सर्वं भोज्य वस्तु निगलित येन स (इन्द्र =सूर्य सभाध्यक्षो वा) १.६१ ९ [विश्व-गूर्त्तपदयो समास) गूर्त्तम्=गुर्वी उद्यमने (भ्वा०) धातो क्त । गॄ निगरणे (तुदा०) धातोर्वा क्त. प्रत्यय]

विश्वगूर्त्ती समग्रोद्यमौ (स्त्रीपुरुषौ) १ १८० २ [विश्वोपपदे गुर्वी उद्यमने (भ्वा०) धातो. क्तिन्]

विश्वचक्षसे विश्वस्य चक्षुर्दर्शन यस्मात्तस्मै सूराय=सूर्यलोकाय) १ ५० २ **विश्वचक्षा:**=यो विश्व सर्वं जगच्चष्टे पश्यति स (अ०—जगदीश्वर) १७ १८ सब ससार का द्रष्टा (ईश्वर) आर्याभि० २ ३२ १७ १८ [विश्वचक्षस्पदयो समास । चक्षस्=चक्षिङ् व्यक्तायां वाचि, अय दर्शनेऽपि (अदा०) धातोरौणा० असुन्]

विश्वश्चन्द्रा: विश्वानि समग्राणि चन्द्राणि सुवर्णादीनि येषा ते (अप =जलानीव व्याप्तविद्या), प्र०—अत्र 'ह्रस्वाच्चन्द्रोत्तरपदे मन्त्रे' इति सुडागम ३.३१.१६ विश्वानि चन्द्राणि सुवर्णादीनि याभ्यस्ता (श्रिय) १ १६५ ८ [विश्व-चन्द्रपदयो समास । चन्द्रम् हिरण्यनाम निघं० १ २ 'ह्रस्वाच्चन्द्रोत्तरपदे मन्त्रे' इति सुडागम]

विश्वचर्षणिम् सर्वदर्शकम् (तनय=विद्वास पौत्रम्) १ ६४.१४. विश्वे चर्षणयो धार्मिका मनुष्या कार्यद्रष्टारो यस्य तम् (इन्द्र=दुष्टाचारिशत्रुविनाशक नृपम्) ६ ४४ ४ विश्वप्रकाशकम् (अग्निम्) ५ १४ ६ **विश्वचर्षणि:**=विश्वे सर्वे चर्षणयो मनुष्या रक्ष्या यस्य स (सेनाध्यक्ष), प्र०—अत्र 'कृषेरादेश्च च' उ० २ १०० अनेनाऽनि प्रत्यय आदेश्चकारादेशश्च १ २७ ९ विश्वप्रकाशक (अग्नि) ५ ९.३ अखिलविद्याप्रकाश ५ २३ ४ विश्वे चर्षणयो मननशीला मनुष्या यस्य स (विद्वज्जन) ६ २.२ **विश्वचर्षणे**=समस्तद्रष्टव्यदर्शन (राजन्) ५ ३८ १ विश्वस्य सर्वस्य जगतश्चर्षणिर्द्रष्टा तत्सम्बुद्धौ (इन्द्र=भगवन्) १.९.३ [विश्व-चर्षणिपदयो समास । चर्षणय मनुष्यनाम निघ० २ ३ चर्षणि=कृष विलेखने (भ्वा०) धातो 'कृषेरादेश्च च' उ० २ १०० सूत्रेण अनि । कृष्धातोश्चादे ककारस्य चकारादेश । विश्वचर्षणि पश्यतिकर्मा निघ० ३ ११]

विश्वजनस्य विश्वस्मिन् जगति सर्वस्य जनसमूहस्य ५.२८ [विश्व-जनपदयो समास]

विश्वजन्यम् विश्वाञ्जनितु योग्य विश्वसुखजनक वा (राध.=धनम्) ६ ४७ २५ [विश्व-जन्यपदयो समास । विश्वजन्यम् सर्वजन्यम् नि० ११ १० जन्यम्=जनी प्रादुर्भावे (दिवा०) धातो 'तकिशसिचतियतिजनीनाम्०' अ० ३ १ ९७ वा०सूत्रेण यत् । 'भव्यगेय०' अ० ३ ४ ६८ सूत्रेण कर्त्तरि यत्]

विश्वजन्या या विश्व जनयन्ति ता (अ०—अप), प्र०—अत्र 'भव्यगेय०' इति कर्त्तरि जन्यशब्द 'सुपा

आदेशश्च । 'वा छन्दसी' ति द्वित्व न भवति । व्यत्ययेनात्मनेपदञ्च]

विशे विशे प्रजायै प्रजायै १५ २६ विशोविश = प्रजाया प्रजाया मध्ये ६ ४६ २. [विशे पदस्य वीप्साया द्वित्वम् । अन्यत्र विश पदस्य वीप्साया द्वित्वम्]

विशौजाः विशा प्रजया सहौज पराक्रमो यस्य स (राजा) १० २८ [विशा-ओजस्पदयो समास । समासे तृतीयाया अलुक्]

विश्पतिम् प्रजाया पालकम् (सूर्यम्) १ १६४ १ विशिष्टाना पालकम् (राजानम्) ३ १३ ५ विशः प्रजास्तासा स्वामिन पालनहेतु वा (अग्नि=परमेश्वर विद्युदग्नि वा) १ १२ २ प्रजापति ७ ५५ ५ **विश्पतिः** = विशा प्रजाना पालक सभापती राजा, प्र०—अत्र 'वाच्छन्दसि सर्वे विधयो भवन्ति' इति नियमाद् 'व्रश्च-भ्रस्जसृज०' इति षत्व न भवति १ २६ ७ [विश-पति-पदयो समास । 'व्रश्चभ्रस्ज०' इति प्राप्त षत्व न भवति छान्दसत्वात् । विश मनुष्यनाम निघ० २ ३ विश्वपति सर्वस्य पातार वा पालयितार वा नि० ४ २६]

विश्पतीव प्रजापालकाविव (वायुसूर्यौ) ३३ ४४ [विश्पती-इवपदयो समास । विश्पतिरिति व्याख्यातम्]

विश्पत्नीम् प्रजाया पालिकाम् (शक्तिम्) ३ २६ १ **विश्पत्न्यै** = विश प्रजाया पालयित्र्यै (उत्तमपत्न्यै) २ ३२.७ [विश्पतिप्राति० स्त्रिया 'विभाषा सपूर्वस्य' अ० ४ १ ३४ सूत्रेण नकारादेशो ङीप्]

विश्पलाम् विशा पालिका विद्याम् १ ११७ ११ विश प्रजा पात्यनेन सैन्येन तल्लाति यया ताम् (सेनाम्) १ ११२ १०, **विश्पलायाः** = प्रजाया १ ११८ ८. **विश्पलायै** = विशा प्रजाना पलायै सुखप्रापिकायै नीत्यै। १ ११६ १५ [विश्पोपपदे ला आदाने (अदा०) धातो क ततष्टाप् स्त्रियाम् । विश्पा = विश् इत्युपपदे पा रक्षणे (अदा०) धातो क । तत स्त्रिया टाप्]

विश्पलावसू विशा पालयितारौ च तौ वासकौ (अध्यापकोपदेशकौ) १ १८२ १ [विश्पल-वसुपदयो समास । विश्पलेति व्याख्यातम् पूर्वपदे]

विश्या इव यया विक्षु प्रजासु साधवो वणिग्जना १ १२६ ५ [विश मनुष्यनाम निघ० २ ३ तत' साध्वर्थे यत् । तत स्त्रिया टापि विश्या रूपम् । विश्या-इवपदयो. समास]

विश्येषु विक्षु प्रजासु भवेषु वणिग्जनेषु १८.४८, [विश. मनुष्यनाम निघ० २ ३ ततो भवार्थे यत्]

विश्रथय विशेषेण हिन्धि २ २८ ५ [वि+श्रथ दौर्बल्ये (चुरा०) धातोर्लोट्]

विश्रयध्वम् विशिष्टतया सेवध्वम् ५ ५ ५ **विश्रयन्ताम्** = विविधतया सेवन्ताम् १ १३.६ **विश्रयाति** = विशेष कर आश्रय करती है स० वि० १३६, अथर्व० १४ २.३८ [वि+श्रिञ् सेवायाम् (भ्वा०) धातोर्लोट् । अन्यत्र लेट्]

विश्रिता विविधैराप्तै श्रिता सेविता (गी = वाक्) १ ११७ १ विश्रिता = विविधप्रकारै सेवमाना (नद्य) १.५५ २. [वि+श्रिञ् सेवायाम् (भ्वा०) धातो क्त । तत' स्त्रिया टाप्]

विश्रुतम् यद्विविध श्रूयते तद्यश १.५२ ११ [वि+श्रु श्रवणे (भ्वा०) धातो क्त]

विश्रुताय विशेषेण श्रुता गुणा यस्मिँस्तस्मै (नरे = नायकाय) ३४ १६ यो विविधैर्गुणै श्रूयते तस्मै (सभाद्यध्यक्षाय) १ ६२ १ [वि-श्रुतपदयो समास । श्रुतम् = श्रु श्रवणे (भ्वा०) धातो क्त]

विश्रुति विविधा श्रुतय श्रवणानि तद्वति (पत्नि) ८ ४३ [वि-श्रुतिपदयो समास । श्रुति = श्रु श्रवणे (भ्वा०) धातो स्त्रिया क्तिन्]

विश्वकर्मणः विश्व सर्वं कर्म्म क्रियमाणमस्य स विश्वकर्मा तस्य परमेश्वरस्य ऋ० भू० १३०, ३१.१७ विश्वानि सर्वाणि सत्यानि कर्माणि यस्याऽऽश्रयेण तस्मात् सूर्यात् ३१ १७ **विश्वकर्मणा** = विश्वानि समग्राणि धर्म्यकर्माणि यस्य पत्युस्तेन १३ १६ **विश्वकर्मणे** = विश्व कर्म क्रियमाण कृत येन तस्मै (पत्ये = जगदीश्वराय) १७ ७८ अखिलकर्मणोत्पादनाय (इन्द्राय = ऐश्वर्याय), अखिलकर्मसाधनाय (इन्द्राय) ८ ४५ अखिलशुभकर्मानुष्ठानाय १२ ४३ **विश्वकर्मन्** = अखिलशुभकर्मसेविन्) (सर्वसभेश) १७ २४ समग्रोत्तमकर्मकारिन् (अ०—जगदीश्वर) १७ २१ **विश्वकर्मा** = विश्वानि सर्वाणि कर्माणि यस्या यस्य वा सा वाक्, स विद्वान् वा ५ ११ विश्व सम्पूर्ण क्रियाकाण्ड सिध्यति यया सा (वाक्) १४ अखिलोत्तमक्रिय' (प्रजापति = परमेश्वर) १२ ६१ विश्वान्यखिलानि कर्म्माणि यस्मात् स (अ०—वायु) १३ ५५ सर्वोत्तमकर्मा सभापति ८ ५४ विश्व सर्व जगत् कर्म्म क्रियमाण यस्य स., भा०—सर्वजगत्स्रष्टा (परमेश्वर) १७.२६. अखिलशुभक्रियाकुशल. (पति.) १४.११.

विश्वमिव ५ ४४ १ सर्वेषामिव ७ १२ [विश्वसर्वनाम्न. 'प्रकारवचने थाल्' अ० ५ ३ २३ सूत्रेण थाल्। अथवा इवार्थे 'प्रत्नपूर्वविश्वेमात् थाल् छन्दसि' अ० ५.३ १११. सूत्रेण थाल्। विश्वथा=विश्व इव नि० ३ १६.]

विश्वदर्शतम् विश्वस्य प्रकाशकम् (राजानम्) ५ ८ ३ सर्वविद्यावोधस्य द्रष्टारम् (अग्नि=विद्वास जनम्) १२ १११. सर्वैविद्वद्भिर्द्रष्टव्य जगदीश्वरम्) १.२५ १८ **विश्वदर्शतः**=यो विश्वस्य दर्शयिता (सूर्य) १ ५० ४ यो विश्वै सर्वै सम्प्रेक्षितु योग्य (विद्वज्जन) १ ४४ १०. विश्वेन द्रष्टव्य (राजपुरुष) ३ ३ ३६ [विश्व-दर्शतपदयो समास। दर्शत =दृशिर् प्रेक्षणे (भ्वा०) धातो. 'भृमृदृशि०' उ० ३ ११० सूत्रेणातच्]

विश्वदानीम् विश्व समग्र दान यस्यास्ताम् (विद्वद्-वृत्तिम्) १ १६४ ४० [विश्व-दानपदयो समासे स्त्रिया ङीप्। दानम्=डुदाञ् दाने (जु०) धातोर्ल्युट्]

विश्वदानीम् सर्वदा ६ ५२ ५ सर्वस्मिन् काले ४ ५० ८. [विश्वसर्वनाम्न सप्तम्यन्ताद् काले वर्त्तमानाद् दानी छान्दस। विश्वदानीम् सर्वदा नि० ११ ४४]

विश्वदृष्टः विश्वेन दृष्ट (सूर्य) १ १९१ ८ सर्वैर्दृष्ट (भिषग्जन) १.१९१ ६ **विश्वदृष्टाः**=विश्वैस्सर्वैर्दृष्टा ये ते (जना) १.१९१ ६ [विश्व-दृष्टपदयो समास]

विश्वदेवनेत्राः विश्वेषु देवेषु नेत्र प्रज्ञान येषान्ते (देवा =विद्वास) ६ ३६ **विश्वनेत्रेभ्यः**=सर्वविद्वत्तुल्या नेत्रा नीतिर्येषा तेभ्य. (देवेभ्य) ६ ३५ [विश्वदेवपदयो समासे ततो विश्वदेव-नेत्रपदयो समास। नेत्रम्=णीञ् प्रापणे (भ्वा०) धातोरौणा० ष्ट्रन्]

विश्वदेवम् विश्वस्य प्रकाशकम् (सवितार=परमात्मानम्) ५ ८२ ७ **विश्वदेवः**=विश्वेषा सर्वेषा देव. प्रकाशक (आप्तो जन) ६ ६७ ६ **विश्वदेवाय**=विश्वेऽखिला देवा विद्वासो यस्मिँस्तस्मै (इन्द्राय=धनाय) १ १४२ १२ विश्वस्य प्रकाशाय ४ ५० ६ **विश्वदेवाः**=सर्वे विद्वास ७ ३५ ११ [विश्वदेवपदयो समास। देव = दिवु क्रीडाविजिगीषाव्यवहार द्युतिस्तुतिमोदमदस्वप्नकान्ति-गतिषु (दिवा०) धातो कर्त्तरि अच्। भावे वा घञ्]

विश्वदेवेभिः स्वकीयै रश्मिभि, प्र०—'रश्मयो ह्यस्य विश्वे देवा श० ३ ७ ३ ६, २ २२ [विश्व-देवपदयो समासे 'बहुल छन्दसी' ति भिस ऐसादेशो न भवति]

विश्वदेव्य विश्वेषु देवेषु साधो (विद्वज्जन) ३ ६२ ४ **विश्वदेव्यम्**=विश्वेषु देवेषु पृथिव्यादिषु भवम् (अग्नि=विद्युतम्) १ १४८ १ विश्वेभ्यो देवेभ्यो हितम् (भगम्=ऐश्वर्यम्) २२ १४ **विश्वदेव्यः**=विश्वान् समग्रान् देवान् दिव्यगुणानर्हति (समुद्र) १ ११० १ विश्वेषु सर्वेषु देवेषु दिव्यगुणेषु साधु (छाग=छागदुग्धम्) १ १६२ ३. [विश्वदेवप्राति० साध्वर्थे भवार्थे हितार्थे वा यत्]

विश्वदेव्यावती विश्वेषु देवेषु विद्वत्सु भव विज्ञान प्रशस्त विद्यते यस्या सा (अदिति =अध्यापिका), प्र०—अत्र 'सोमाश्वेन्द्रियविश्वदेव्यस्य मतौ' अ० ६ ३ १३१ इति दीर्घत्वम् ११.६१ [विश्वदेव्यप्राति० प्रशसायामर्थे मतुप्। तत स्त्रिया ङीप्। 'मन्त्रे सोमाश्वेन्द्रिय०' इति मतौ परे पूर्वस्य दीर्घ]

विश्वदेव्यावते विश्वानि देव्यानि विद्यन्ते यस्मिँ-स्तस्मै (सर्वरक्षकाय पुरुषाय) ३८ ८ [विश्वदेव्यमिति व्याख्यातम्। ततो मतुवन्ताच् चतुर्थी]

विश्वदोहसम् विश्व सर्वविज्ञानान् दोग्धि यया ताम् (धेनु=विद्या-युक्ता वाचम्) ६ ४८ १३ [विश्वोपपदे दुह प्रपूरणे (अदा०) धातो. करणे औणा० असुन्]

विश्वदोहसः विश्व सर्व जगद् गुणैर्दुहन्ति पिपुरति ते, विश्वस्मिन् सुखप्रपूरका (विद्वासो जना) १ १३० ५ [पूर्वपदे व्याख्यातम्]

विश्वध विश्व दधातीति तत्सम्बुद्धौ (इन्द्र=ईश्वर) १ ६३ ८ यो विश्व दधाति स (राजा सेनेशो वा), प्र०—अत्र 'छान्दसो वर्णलोपो वा' इति सलोप ७ २२ ७. [विश्वो-पपदे डुधाञ् धारणपोषणयो (जु०) धातोर्क]

विश्वध विश्वै सर्वै प्रकारैरिति विश्वध, प्र०—अत्र छान्दसो ह्रस्व १ १७४ १० [विश्वप्राति० प्रकारे धाप्रत्ययश्छान्दस। ह्रस्वश्च वर्णव्यत्ययेन]

विश्वधायसम् सर्वव्यवहार-धनधर्त्तारम् (गृहपतिम्) ५ ८ १ विश्वस्य धारणसमर्थम् (भा०—परमेश्वरम्) २ १७ ५. यो विश्वा समग्रा विद्या दधाति तम् (ब्रह्म-चारिणम्) ७ ४ ५ **विश्वधायाः**=यो विश्व दधाति स (विद्वज्जन), प्र०—अत्र विश्वोपपदाद् बाहुलकादसुन् युडा-गमश्च १ ७३ ३ या विश्व सर्वं जगद्विद्यागुणै सह दधाति सा (वाक्), प्र०—अत्र विश्वोपपदे डुधाञ्-धातोरसुन् प्रत्ययो बाहुलकाण्णिच्च १ ४ या विश्व सर्वं गृह्णाति गृहाश्रम राजव्यवहार दधाति सा (राजपत्नी) १३ १८ [विश्वोप-पदे डुधाञ् धारणपोषणयो (जु०) धातोरौणा० असुन्, स च णित्। णित्त्वाद् युगागम। विश्वधाया (यजु० १३ १८) (=पृथिवी) अस्या हीद सर्वं हितम् श० ७ ४ २,७

सुलुक्०' इति जस स्थाने आकारादेश. १ १६६ ८
विश्वजन्याम्=या विश्वमखिल जगज्जनयति प्रकटयति ताम् (सुमतिं=प्रज्ञाम्) १७ ७४ विश्व समग्रमपत्य जायते यस्यास्ताम् (सुमतिं=शोभनप्रज्ञा स्त्रियम्) ३ ५७ ६. विश्व जन्य यया ताम् (अदितिं=कालविद्याम्) ७ १० ४
विश्वजन्ये=सर्वस्य जनयित्र्यौ (द्यावापृथिवी=प्रकाशभूमी) ३ २५ ३ [विश्व जन्यपदयो समास । तत स्त्रिया टाप् । 'सुपा सुलुक्०' इति जस स्थाने आकार]

विश्वजन्याः विश्वानि जन्यानि सुखानि येषु ते (प्रजाजना) ६ ३६ १ [विश्व-जन्यपदयो समास । जन्यम्=जनी प्रादुर्भावे (दिवा०) धातो 'तकिशसि०' इति यत्]

विश्वजिते यो विश्व जयति तस्मै (इन्द्राय=विद्वत्सभासेनेशाय) २ २१ १ [विश्वोपपदे जि जये (भ्वा०) धातो कर्त्तरि क्विप् । विश्वजित् (यज्ञ) (देवा) विश्वजिता विश्वमजयन् ता० २२ ८ ४ विश्वजिता वै प्रजापति सर्वा प्रजा अजनयत् सर्वमुदजयत् तस्माद् विश्वजित् कौ० २५ १३ एष ह प्रजाना प्रजापतिर्यद् विश्वजित् गो० पू० ५ १० प्रजापतिर्विश्वजित् कौ० २५ ११ ततो वा इदमिन्द्रो विश्वमजयद् यद् विश्वमजयत्तस्माद् विश्वजित् ता० १६ ४ ५ इन्द्रो विश्वजिद् इन्द्रो हीद सर्वं विश्वमजयत् कौ० २४ १ अथ यद् विश्वजितमुपयन्ति । इन्द्रमेव देवता यजन्ते श० १२ १ ३.१५ सर्वं विश्वजित् कौ० २५ १४ सर्वं वै विश्वजित् श० १० २ ५ १६ स वा एष विश्वजिद् य सहस्रसवत्सरस्य प्रतिमा गो० पू० ५ १० एकाहो वै विश्वजित् कौ० २५ ११ स कृत्स्नो विश्वजिद् योऽतिरात्र कौ० २५ १४ चक्रीवान् वा एष (विश्वजित्) यज्ञ कामाय ता० १६ १५ ४]

विश्वजिन्व विश्व-पोषक (महाविद्वज्जन) ६ ६७ ७. [विश्वोपपदे जिवि प्रीणनार्थे (भ्वा०) धातो कर्त्तरि अच्]
विश्वजुवम् समग्रवेगाम् (वेनु=वाचम्) ४ ३३ ८ [विश्व-जूपदयो समास । जू=जूरिति सौत्रो धातु । तत क्विप्]

विश्वतश्चक्षुः विश्वत सर्वस्मिञ्जगति चक्षुर्दर्शन यस्य स (परमेश्वर) १७ १६ सब जगत् मे जिसकी दृष्टि है, जिससे अदृष्ट कोई वस्तु नही है वह (ईश्वर) आर्याभि० २ ३४, १७ १६ [विश्वतस्-चक्षुस्पदयो समास । विश्वत=विश्वप्राति० आद्यादित्वात् तसि । चक्षुस्=चक्षिङ् व्यक्ताया वाचि अय दर्शनेऽपि (अदा०) धातो 'चक्षे शिच्च' उ० २ १२१ सूत्रेण उसि]

विश्वतस्पात् विश्वत सर्वत्र पात् गतिर्व्याप्तिर्यस्य स, भा०—सर्वत्राऽभिव्याप्त (परमेश्वर) १७ १६ [विश्वतस्-पादपदयो समास । विश्वत=विश्व+तसि । पाद=पद गतौ (दिवा०) धातो भावे घञ् । 'पादस्य लोपोऽहस्त्यादिभ्य' इति समासान्तो अन्त्यलोप]

विश्वतः सर्वत सर्वेषा जलपृथिवीमयाना पदार्थाना विविधाश्रयात्, प्र० —षष्ठ्या व्याश्रये अ० ५ ४ ४८ इत्यनेन तसि प्रत्यय १ १४ सर्वा, प्र०—अत्र प्रथमान्तात्तसि ५ २६ सर्वेभ्य (जनेभ्य) १ ७ १० विश्वस्य मध्ये १ १० १२ सब प्राणियो से, आर्याभि० १ २०, ऋ० १ ६ २० ८ सर्वाभ्यो दिग्भ्यः १ ८६ १ [विश्वमिति व्याख्यातम् । तत 'आद्यादिभ्य उपसख्यानमि' ति तसि]

विश्वतुरा यद्विश्व सर्वं तुरति त्वरयति तेन (राया=प्रशस्तधनेन) १ ४८ १६ [विश्वोपपदे तुर त्वरणे (जु०) धातो क्विप् । तत तृतीयैकवचनम्]

विश्वतूर्त्तिः विश्वस्मिँस्त्वरमाणा (सरस्वती=प्रशस्तज्ञानवती वाक्) २० ४३ या विश्व सर्वं जगत् त्वरति (उपदेशिका स्त्री) २ ३ ८ [विश्व-तूर्त्तिपदयो समास । तूर्त्ति=ञित्वरा सम्भ्रमे (भ्वा०) धातो स्त्रिया क्तिन् । 'ज्वरत्वर०' सूत्रेण ऊठ् उपधावकारयोश्च लोप]

विश्वतूः विश्वान् शत्रून् तूर्यति हिनस्ति स (युद्धविद्यासु कुशलो राजा) ३३ ६६ [विश्वोपपदे तूरी गतित्वरणहिंसनयो (दिवा०) धातो कर्त्तरि क्विप्]

विश्वतोधारम् विश्वत सर्वतो धारा सुशिक्षिता वाचो यस्मिँस्तम् (यज्ञम्) १७ ६८ [विश्वतस्-धारापदयो समास । धारा वाङ्नाम निघ० १ ११ विश्वतोधार सर्वतोधारम् नि० १३.८]

विश्वतोबाहुः सर्वतो बाहुर्बलं वीर्यं वा यस्य स, भा०—अनन्तसामर्थ्य (परमेश्वर) १७ १६ [विश्वतस्-बाहुपदयो समास]

विश्वतोमुख सर्वत्र व्यापकत्वादन्तर्यामितया सर्वोपदेष्ट (जगदीश्वर) १ ६७ ६ विश्वत सर्वतो मुखमुत्तममैश्वर्यं यस्य तत्सम्बुद्धौ (परमात्मन्) १ ६७ ७ स्वशक्ति से सब जीवो के हृदयो मे नित्य सत्योपदेश करने वाले (ईश्वर) आर्याभि० १ ३६, ऋ० १ ७ ५ ६ **विश्वतोमुखः**=विश्वत सर्वतो मुखमुपदेशनमस्य स (परमेश्वर) १७ १६ [विश्वतस्-मुखपदयो समास]

विश्वथा सर्वथा १ १४१ ६ विश्वस्मिन् २ २४ ११

मिन्वे=विश्वतर्पके (रोदसी) १ ७६ २ विश्वव्यापिके (रोदसी=राजप्रजाव्यवहारौ) ३ ३८ ८ [विश्वोपपद इवि व्याप्तौ (भ्वा०) धातोरच् कर्त्तरि । औणादिको वा अन् । विभक्तेरलुक् । विश्वमिन्वप्राति० स्त्रिया टाप् । विश्व-मिन्वा. विश्वमाभिरेति नि० ८ १०.]

विश्वमिन्वेभिः सर्व जगद्व्यवहार प्रापयद्भिः (मरुद्भिः=मनुष्यैः) ५ ६० ८ [विश्वमिन्व इति व्याख्यातम् । ततो भिस ऐसादेशो न भवति 'बहुल छन्दसी' ति सूत्रेण]

विश्वयत् यो विश्व करोति स (सत्पुरुष) ७ ५० १. [विश्वप्राति० 'तत्करोति तदाचष्टे' वा०सूत्रेण णिच् । तत. शतृ]

विश्वरूपम् विश्वस्य रूप यस्मिन् परमात्मनि वा विश्व. सर्वो रूप गुणो यस्य तम् (भौतिकमग्निम्) १ १३.१० विश्वानि बहूनि रूपाणि यस्मिन् प्रकाशे तम् १.३५ ४ विचित्रस्वरूपम् (निष्क=सुवर्णाभूषणम्) २ ३३.१०. विश्वानि कर्माणि वस्तूनि वा रूपयन्तम् (बृहस्पति=राजानम्) ३ ६२.६. विविधस्वरूपम् (प्रजानुखम्) २.११.१९ सर्वरूपवत्पदार्थदर्शकम् (आदित्य=सूर्यम्) १३ ४१ **विश्वरूपः**=विश्व रूप यस्य स (अज=जन्मादिरहितो जीव) २५.२५ विश्व समग्रं रूप यस्य स (भा०—सर्वपदार्थस्थो विद्युदाख्योऽग्नि) ३३ २२. विश्वानि रूपाणि यस्मात् स (सूर्य) ३ ३८.४. अखिल रूप यस्मिन् यस्माद्वा स (ईश्वर) ३ ५६.३. [विश्व-रूपपदयो समास । विश्वरूप सर्वरूप नि० १० ३४. स (इन्द्र) यत्र त्रिशीर्षाण त्वाष्ट्र विश्वरूप जघान श० १.२ ३ २ त्वष्टुर्ह वै पुत्र । त्रिशीर्षा षडक्ष आस तस्य त्रीण्येव मुखान्यासुस्तद् यदेव रूप आस तस्माद् विश्वरूपो नाम श० ५.५ ४ २. तस्य (विश्वरूपस्य) सोमपानमेवैकं मुखमास । सुरापाणमेकमन्यस्माऽअशनायैक तमिन्द्रो विद्वेष तस्य तानि शीर्षाणि प्रचिच्छेद श० १ ६ ३ २.]

विश्वरूपा विविध सुन्दर रूप को धारण करने वाली (स्त्री) स० वि० १३६, अथर्व० १४ २ ३२. **विश्वरूपाम्**=समग्रशास्त्रवरूपविदम् (धेनु=वाचम्) ४ ३३ ८. विश्वानि सर्वाणि रूपाणि यस्या पृथिव्या ताम् १ १६१.६. **विश्वरूपाः**=नानारूपा. (धेनव=गाव.) ३ १.७. विविधरूपगुणा. (द्वार=द्वाराणि) २९ ५ [विश्व-रूप-पदयो. समासे स्त्रिया टाप् । विश्वरूपमिति व्याख्यातम्]

विश्वरूपी विश्व सर्व रूप यस्या सा (महिता=विद्युत्), प्र०—अत्र 'जातेरस्त्रीविषयादयोपधात्' अ० ४ १.६३. इति ङीप् प्रत्यय ३.२२ [विश्व-रूपपदयो समासे कृते तत. स्त्रियां 'जातेरस्त्रीविषयाद्०' इति ङीप् । विश्वरूपी (=कामधेनु) इय (पृथिवी) वै देव्यदितिर्विश्वरूपी (विश्व-रूपा धेनु कामदुघा मे अस्तु अथर्व० ४.३४.८. विश्व-रूपा धेनु कामदुघाऽस्येका अथर्व० ९ ५ १०.) तै० १ ७ ६ ७.]

विश्वरूप्यम् विश्वेष्वखिलेषु रूपेषु भवम् (पदार्थ-विद्याभावम्) १.१६४ ९ [विश्व-रूपप्राति० भवार्थे यत्]

विश्ववार विश्वैः सर्वैर्वरणीय (अग्ने=विज्ञान-स्वरूपेश्वर) ७.५ ८. विश्वान् सर्वानानन्दान् वृणोति तत्सम्बुद्धौ (योगिजन) ७.७ **विश्ववारम्**=यो विश्व सर्व-मुत्तम व्यवहार वृणोति तम् (वायु=पवनम्) ६ ४९ ४ यो विश्व सर्व सुख करोति तम् (रयम्) ६ ३७ १. **विश्व-वारस्य**=विश्वे सर्वे वारा. स्वीकारा यस्मिँस्तस्य (राय.=धनस्य) ६ २३.१० समग्रस्वीकरणीयस्य (वित्तुप) ५.४४.११. समग्र सुख स्वीकृत यस्मात्तस्य (राय) २ ३६ १०. **विश्ववारः**=यो विश्व वृणोति स (अग्नि.=पावक) ३.१७.१. [विश्वोपपदे वृञ् वरणे (स्वा०) धातो 'कर्मण्यण्' इत्यण्]

विश्ववारम् येन विश्व सर्व वृणोति तत् (रयिम्) १.४८ १३. अखिलवरपदार्थयुक्तम् (रयि=श्रियम्) ५.४ ७ **विश्ववाराणि**=विश्वैः सर्वैर्वरणीयानि (द्रविणानि=द्रव्याणि) ६ ५ १. [विश्व-वारपदयो समास । वार=वृञ् वरणे (स्वा०) धातोर्घञ्]

विश्ववारा विश्वस्मिन् वारो वरण यस्या सा (दीधिति=दीप्ति) ३.४ ३. सर्वैरेव स्वीकर्त्तुं योग्या (संस्कृति=विद्यासुशिक्षाजनिता नीति) ७ १४. सर्वै-र्मनुष्यैर्वरणीया (उषा) ५.८०.३. **विश्ववाराभिः**=सर्वै स्वीकरणीयाभिर्गतिभि ६ २२ ११ **विश्ववारायाः**=चारो ओर की वायु को स्वीकार करने वाले द्वार के स० वि० १६६, अथर्व० ९ ३ ३ १. **विश्ववाराः**=या सर्वं जगद् वृण्वन्ति ना (उषस) १ १२३ १२. **विश्ववारे**=सर्वसुखवरितारौ (मातरा=जनकौ) ७ ७.३ या विश्व सर्व भद्र वृणोति तत्सम्बुद्धौ (कुमारि!) १ ११३.१९. सर्वतो वरणीये (उपर्वद्वर्त्तमाने स्त्रि) ३ ६१.१ [विश्व-वारपदयो समासे कृते तत स्त्रिया टाप् । विश्वोपपदे वृञ् वरणे (स्वा०) धातोर्वाऽण् । तत. स्त्रिया टाप् छान्दस]

विश्वविदम् यो विश्वानि सर्वाणि शास्त्राणि वेत्ति

वृष्टिर्वै विश्वधाया तै० ३ २ ३ २]

विश्वधाः विश्व दधातीति, अ०—ससारस्य सुखधारक (वसो =यज्ञ) १ २ [विश्वोपपदे दधाते कर्त्तरि क्विप्]

विश्वधेनाम् समग्रवाचम् ४ १९.६, **विश्वधेनाः**= विश्वा सर्वा धेना वाचो येषान्ते (देवा =विद्वास) ४ १९ २ [विश्वा-धेनापदयो समास । धेना वाङ्नाम निघ० १ ११]

विश्वपिशः विश्वस्याऽवयवभूता (शूरवीरा विद्वज्जना) ७ ५७ ३ [विश्व-पिशपदयो समास । पिश = पिश अवयवे (तुदा०) धातोर्घञर्थे क]

विश्वपेशसम् विश्वानि सर्वाणि पेशासि रूपाणि यस्या ताम् (धियम्) १ ६१ १६ **विश्वपेशसा**=विश्वानि सर्वाणि पेशासि रूपाणि यस्मात्तेन (राया) १ ४८ १६ सर्वस्वरूपेण ४.४८ ३ [विश्व-पेशस्पदयो समास । पेशस् रूपनाम निघ० ३ ७ हिरण्यनाम निघ० १ २]

विश्वप्स्न्या विश्व सर्व योग्य वस्तु प्सायते भक्ष्यते यया (धारया=वाचा) १२ १०. विश्वान् सर्वान् भोगान् यया प्साति तया (धारया=वाचा) १२.४१ [विश्वोपपदे प्सा भक्षणे (अदा०) धातोर्न्हु० औणा० अनि किच्च बाहुलकात् । तत स्त्रिया 'कृदिकारादक्तिन ' इति ङीप्]

विश्वप्सु विविधरूपम् (ब्रह्म=धनम्) ६.३५ ३. [विश्वप्सुपदयो समासः । प्सु रूपनाम निघ० ३ ७]

विश्वप्स्न्यस्य विश्वेषु समग्रेषु प्स्नुषु स्वरूपेषु भवस्य (अग्ने) ७.४२ ६. **विश्वप्स्न्याय**=विश्वस्य पालनाय ।

विश्वभरसम् ससारस्य धारकम् (अग्नि=विद्युद्रूपम्) ४ १ १९ **विश्वभराः**=यो विश्व बिभर्त्ति स (विद्वज्जन) ११ ३२ [विश्वोपपदे भृञ् भरणे (भ्वा०) धातोरौणा० असुन्]

विश्वभानुषु विश्वस्मिन् भानुषु सूर्येष्विव प्रकाशकेषु (मरुत्सु=मनुष्येषु) ४ १ ३ [विश्व-भानुपदयो समास]

विश्वभृतः ये विश्व बिभ्रति ते, भा०—विश्वम्भरा (राजपुरुषा) १० ४ [विश्वोपपदे भृञ् भरणे (भ्वा०) धातो क्विप्]

विश्वभेषजीः विश्वा सर्वा भेषज्य ओषध्यो यासु ता (आप =जलानि), प्र०—अत्र 'केवलमामक०' अ० ४ १ ३० अनेन भेषजशब्दात् ङीप् प्रत्यय' १ २३ २० [विश्वा-भेषजीपदयो समास । भेषजी=भेषजप्राति० स्त्रिया 'केवलमामक०' इति ङीप् । भेषजम् उदकनाम निघ० १ १२ सुखनाम निघ० ३ ६]

विश्वभोजसम् विश्वस्य समग्रस्य जनस्य पालकम् (इषम्=अन्नम्) ६ ४८ १३. **विश्वभोजाः**=यो विश्व भुनक्ति पालयति स (विद्वान् शिल्पी) ५ ४१ ४ [विश्वोपपदे भुजपालनाभ्यवहारयो (रुधा०) धातोरौणा० असुन् 'विदिभुजिभ्या विश्वे' उ० ४ २३९ सूत्रेण]

विश्वभोजसा विश्वस्य पालकौ (अरुषा=जलाग्नी) ७ १६ २ [विश्वभोजस् इति व्याख्यातम् । ततो द्विवचनस्याकारादेश]

विश्वम् जगत् १ ८१ ९ कृतप्रवेशम् (गर्भ=प्रधान प्रकृतिम् २७ २५ विशन्ति परम्मिँस्तत्सर्वम् (भुवनम्) ५ ६३ ७ **विश्वस्य**=सर्वप्राणिसमूहस्य २ ३ ससारस्य ३९ ८. अखिलपदार्थजातस्य १५ ३३ [विश प्रवेशने (तुदा०) धातो 'अशूप्रुषिलटिकणि०' उ० १ १५१ सूत्रेण क्वन् । सर्वादिगणे पाठाच्च सर्वनामसज्ञश्चापि । यद्वै विश्व सर्व तत् श० ३ १ २ ११ तदन्न वै विश्वम्प्राणो मित्रम् जै० उ० ३ ३ ६]

विश्वमायुः विविधसुखरूपमायु ऋ० भू० २०६, ऋ० ८ ३ २८ २ शतवार्षिक सुखयुक्तमायु ऋ० भू० २२५, अथर्व० १९ ७ ५५ ६ [विश्व-आयुपदयो समास । विभक्तेरलुक् । इय (पृथिवी) वै विश्वायु तै० ३ २ ३ ७]

विश्वमिन्व यो विश्व मिनोति तत्सम्बुद्धौ (इन्द्र= राजन्) ७ २८ १ विश्व सर्वं जगन्मिन्व व्याप्त येन तत्सम्बुद्धौ (अग्ने=परमेश्वर) ३ २० ३ **विश्वमिन्वः**= विश्व मिनोति व्याप्नोति यस्स (सोम =पदार्थसमूह) २ ४० ६ [विश्वोपपदे मिनोति गतिकर्मा (निघ० २ १४) धातोरच्-प्रत्यये छान्दस रूपम् । अथवा मिवि सेवने (भ्वा०) धातोरच् । धातूनामनेकार्थकत्वादत्रव्याप्तिरर्थ । अथवा विश्वोपपद इवि व्याप्तौ (भ्वा०) धातोरच् कर्त्तरि । विभक्तेरलुक्]

विश्वमिन्वम् यद्विश्व सर्वं विज्ञानमिन्वति प्राप्नोति तत् (स्तोमम्) प्र०—अत्र विभक्त्यलुक् १ ६१ ४ [विश्वोपपदे इवि व्याप्तौ (भ्वा०) धातोरच् कर्त्तरि । विभक्तेरलुक्]

विश्वमिन्वा या विश्व सर्वं जगन्मिनोति सा (उषा =प्रातर्वेला) ५ ८० २ **विश्वमिन्वाः**=विश्वव्यवहारव्यापिन्य (जनय =जाया) २९ ३० **विश्व-**

विश्वसामन् विश्वानि सामानि यस्य तत्सम्बुद्धौ (विद्वज्जन) ५ २२ १ **विश्वसामा**=विश्व सर्वं साम सन्निधौ समीपे यस्य स (राजा) १८ ३९ [विश्व-सामन् पदयो समास]

विश्वसाहम् यो विश्वानि सर्वाणि शत्रुसैन्यानि सहते तम् (इन्द्र=नृपम्) ६ ४४ ४ सर्वसहम् (इन्द्र=राजानम्) ३ ४७ ५ [विश्वोपपदे षह मर्षणे (भ्वा०) धातो 'छन्दसि सह' इति कर्त्तरि ण्वि]

विश्वसुविदः विश्वानि सर्वाणि सुष्ठुतया विदन्ति याभ्यस्ता (सूनृता =सुष्ठुसत्यप्रियवाच) १ ४८ २ [विश्वोपपदे सुपूर्वाद् विद ज्ञाने (अदा०) धातो 'कृतो बहुलमि ति अपादाने क्विप्]

विश्वसौभग विश्वेषा सर्वेषा सुभगाना श्रेष्ठाना-मैश्वर्याणा भावो यस्य तत्सम्बुद्धौ (पृथिवीराज्यादियुक्त सभाध्यक्ष) १ ४२ ६ **विश्वसौभगः**=विश्वे सुभगा शोभनैश्वर्या भोगा येन स (रथ) १ १५७.३ [विश्व-सौभगपदयो समास । सौभग =सुभगप्राति० 'तस्येदम्' इत्यण्]

विश्वह विश्वेष्वहस्सु, प्र०—अत्र 'छान्दसो वर्णलोपो वा' इत्यलोप 'सुपा सुलुक्०' इति विभक्तेर्लुक् २ १२ १५ [विश्व-अहन्पदयो समासः । अह्नोऽकारलोपश्छान्दस]

विश्वहा सर्वाणि दिनानि २.३२ ३ प्र०—अत्र 'कृतो बहुलम्' इत्यधिकरणे क्विप् 'सुपा सुलुक्०' इत्य-धिकरणस्य स्थाने आकारादेश १ १११.३ विश्वानि च तान्यहानि च विश्वहानि, प्र०—अत्र 'छान्दसो वर्णलोपो वा' इत्युत्तरपदादिलोप २ ३५ १४ बहूनि च तानि अहानि च प्र०—अत्र 'शेश्छन्दसि०' इनि लुक् 'विश्वमिति बहुनाम' निघ० ३ ९, ८ ५

विश्वहा विश्व हन्ति जानाति प्राप्नोति वा स (सज्जन) २ १४ १५ विश्वान् सर्वान् हन्ति स (इन्द्र =सभाध्यक्ष) १ १०२ ११ [विश्वोपपदे हन हिंसागत्यो (अदा०) धातो क्विप् । 'सौ चे' ति दीर्घ]

विश्वाची या विश्व सर्व जगदञ्चति व्याप्नोति सा (दीप्ति) १५ १८ **विश्वाचीः**=या विश्वमञ्चन्ति प्राप्नुवन्ति ता द्युती १७ ५९ [विश्वोपपदे अञ्चु गति-पूजनयो (भ्वा०) धातो 'ऋत्विक्०' इति क्विन् । 'अनि-दिताम्०' इति नलोपे 'अञ्चतेश्चोपसख्यानम्' इति स्त्रिया ङीपि भसञ्ज्ञायाम् 'अच ' इत्यकारलोपे 'चौ' इति पूर्वपदस्य दीर्घ । वेदिरेव विश्वाची श० ८.६.१.१९ [अप्सरा वेदि यजु० १७ ५९) विश्वाचीरभिचष्टे घृताचीरिति स्त्रुचश्चैतद वेदीश्चाह श० ९ २ ३ १७]

विश्वानरः यो विश्वानि सर्वाणि भूतानि नयति स (सविता=ईश्वर) १ १८६ १. विश्वेषा नायक (उपदेशक) ३३ ३४ **विश्वानराय**=विश्वे नरा नायका यस्मात्तस्मै, भा०—सर्वाव्यभाय (परमेश्वराय) ३३ २३ [विश्व-नरपदयो समासे पूर्वपदस्य दीर्घश्छान्दस । विश्वानर कस्माद् विश्वान् नरान्नयति । विश्व एन नरा नयन्तीति वा । अपि वा विश्वानर एव स्यात् प्रत्यृत सर्वाणि भूतानि तस्य वैश्वानर. नि० ७ २]

विश्वापुषम् समग्रपुष्टिकरम् (रयि=धनम्) २५ ४५ सर्वपुष्टिप्रदम् (रयिम्) १ १६२ २२. [विश्वोपपदे पुष पुष्टौ (दिवा०) धातो क्विप् । पूर्वपदस्य दीर्घ]

विश्वाप्सुम् विश्वं समग्र रूप गुणो यस्य तम् (अग्निम्) १.१४८ १. [विश्व-प्सुपदयो समास । प्सु रूपनाम निघ० ३ ७]

विश्वाभुवे यो विश्वे भवते प्राप्नोति विश्वाभूर्यस्य वा विश्व भवति यस्मादिति वा तस्मै भा०—सर्वव्याप्ताय (ईश्वराय) ३३ २३ [विश्वोपपदे भू सत्तायाम् (भ्वा०) धातो, भू प्राप्तौ (चुरा०) धातोर्वा क्विप् । पूर्वपदस्य सहिताया दीर्घ । विश्वाभुवे=सर्व विभूताय नि० ११ ९.]

विश्वामित्रः विश्व मित्र येन भवति स (ऋषि.) १३ ५७. सर्वेषां सुहृत् (भा० वेदविदाप्तजन) ३ ५३ ९ **विश्वामित्राय**=विश्व सर्व जगन्मित्र यस्य तस्मै (सज्ज-नाय) ३ ५३ ७ [विश्व-मित्रपदयो समास । पूर्वपदस्य 'मित्रे चर्षौ' अ० ६ ३.१३०. सूत्रेण दीर्घ । विश्वामित्र सर्वमित्र नि० २.२४ विश्वस्य ह वै मित्र विश्वामित्र आस, विश्व हास मित्र भवति य एव वेद ऐ० ६.२० (यजु० १३ ५७) श्रोत्र वै विश्वामित्र ऋषिर्यदेनेन सर्वत शृणोत्यथो यदस्मै सर्वतो मित्र भवति तस्माच्छ्रोत्र विश्वा-मित्र ऋषि श० ८ १ २ ६ तदन्न वै विश्वम्प्राणो मित्रम् जै० उ० ३ ३ ६ वाग्वै विश्वामित्र कौ० १० ५ राष्ट्र आहिंसन्त स विश्वामित्रो जाह्नवो राजैतम् (चतूरात्रम्) अपश्यन् स राष्ट्रमभवदराष्ट्रमितरे ता० २१ १२ २]

विश्वायु विश्व सम्पूर्णमायुर्यस्मात्तत् (क्षत्र=धन राज्य वा) ७ ३४ ११ सम्पूर्णमायुष्करम् (राध =धनम्) ५ ५३ १३ सर्व जीवनम् ६ २० ५ [विश्व-आयुपदयो समास । आयु अन्ननाम निघ० २ ७]

विश्वायुम् प्राप्तसमग्रशुभगुणम् (सखायम्) १ १२९ ४

तम् (अग्नि=मेधाविजनम्) ३.१६१ य समग्र विन्दति तम् (अग्निम्) ३ २६ ७ विश्वे विदन्ति ताम् (वाचम्) १ १६४ १० [विश्वोपपदे विद ज्ञाने (अदा०) धातो कर्त्तरि क्विप्]

विश्वविदा विश्व सर्व सुख विन्दति याभ्या ते रोदसी=द्यावापृथिव्यौ) ६ ७० ६ [विश्वोपपदे विद्लृ लाभे (तुदा०) धातो कर्त्तरि क्विप्। ततो द्विवचनस्याकारादेश]

विश्ववेदसम् विश्वानि सर्वाणि सुखानि विन्दति यस्मात्तम् (विद्वज्जनम्) १ ४४ ७ विश्वस्मिन् विद्यमानम् (विद्युदग्निम्) ४ ८ १ समग्रविदितारम् (अग्निम्=ईश्वरम्) १ ४३ ४ यो विश्व वेत्ति स विश्ववेदा परमेश्वर विश्व सर्व सुख वेदयति प्रापयति स भौतिकोऽग्निर्वा तम्, प्र०—अत्र 'विदिभुजिभ्या विश्वे' उ० ४ २३८ अनेनाऽसि प्रत्यय ३ ३८ विश्वानि सर्वाणि शिल्पादिसाधनानि विन्दन्ति यस्मात्त सर्वप्रजासमाचारज्ञ वा (अग्निम्) १ ३६ ३ **विश्ववेदस:**=सकलविद्यावेनार (मरुत = विद्वासो मनुष्या) ६ ८ समग्रैश्वर्य्या (मरुत) ५ ६० ७ ये विश्वानि सर्वाणि कर्माणि वेदयन्ति प्रापयन्ति ते (वायव) १ ६४ ८ विश्वानि सर्वाणि वस्तूनि विदन्ति येभ्यस्ते (नर =नायका जना.) १ ६४ १० यैर्विश्व विन्दन्ति ते (मरुत =वायव) ३ २६ ४ **विश्ववेदा:**=विश्वस्य वेदो विज्ञान विश्वेषु सर्वेषु पदार्थेषु वेद स्मरण वा यस्य स (ईश्वर) १ ८९ ६ विश्व सर्वमौषध विदित येन स (पूषा=पोषको वैद्य) १० ६ समग्रधन (इन्द्र =राजा) २० ५१ यथा सूत्रात्मा पवनस्तथा ५ ३१ समग्रवित् (अग्नि =राजा) ४४ १३ यो विश्व धन विन्दति स (अग्नि =विद्वज्जन) ३ २५ १ विश्व सर्व जगद्वेदो धन यस्य स (इन्द्र =परमेश्वर) २५ १६ सत्र जगत् मे विद्यमान प्राप्त और लाभ कराने वाला (परमात्मा) आर्याभि० २ १६, ५ ३१ [विश्वोपपदे विद्लृ लाभे (तुदा०) विद ज्ञाने (अदा०) विद सत्तायाम् (दिवा०) विद विचारणे (रुधा०) विद चेतनाख्याननिवासेषु (चुरा०) धातोर्वा 'विदिभुजिभ्या विश्वे' उ० ४ २३६ सूत्रेण असुन्। विश्व-वेदस्पदयोर्वा समास । वेद धननाम निघ० २ १०]

विश्ववेदसा विश्व वेदो विज्ञान ययोस्तौ (विद्वासौ जनौ) १ १३६ ३. विश्वान्यखिलान्यन्नानि धनानि वा ययोस्तौ (अश्विनौ=क्षत्रधर्मव्यापिनौ सभासेनेशौ) १ ४७ ४ [विश्ववेदसमिति व्याख्यातम् । ततो द्विवचनस्याकारादेश]

विश्वव्यचसम् विश्वव्यापकम् (इन्द्र=विद्युतम्) ३ ४६ ४ **विश्वव्यचा:**=यथा विश्वस्मिन् व्यचो व्याप्तिर्यस्यास्ति तथा (ईश्वर) ५ ३३ विश्व व्यचति प्रकाशेनाऽभिव्याप्य प्रकटयति स (सूर्य) १३ ५६ विश्व व्यचति व्याप्नोति स विद्युद्रूपोऽग्नि १५ १७ सहज से सब जगत् को विस्तृत करने वाला (परमात्मा) आर्याभि० २ १८, ५ ३३ [विश्व-व्यचस्पदयो समास । व्यचस्=व्यच व्याजीकरणे (तुदा०) धातोरौणा० असुन् । (यजु० १३ ५६) असौ वा ऽआदित्यो विश्वव्यचा या ह्येवैष उदेत्यथेद सर्व व्यचो भवति श० ८ १ २ १ (यजु० १८ ४१ वात) एष (वात) हीद सर्व व्यच करोति श० ६ ४ १ १० अन्तरिक्ष विश्वव्यचा तै० ३ २ ३ ७]

विश्वशम्भुवम् य सर्वस्मै जगते श सुख भावयति प्रकटयति तम् (अग्नि=विद्युदाख्यम्), प्र०—अत्राऽन्तर्गतो ण्यर्थ 'क्विप् च' इति क्विप्प्रत्यय १ २३ २० **विश्वशम्भुव:**=या विश्वस्मै श सुख भावयन्ति ता (आप = प्राणा जलानि वा) ४ ७ **विश्वशम्भुवा**=विश्वस्मिन् श सुख भावुकेन (धर्म्मेण) १ १६० ४ **विश्वशम्भू:**= विश्वस्मै श सुख भावुक, भा०—पूर्णशरीरात्मबल (सर्वाधिपती राजा) १७ २३ विश्व सर्व श सुख भावयति स (सभापति) ८ ४५ [शम्भू =शम् उपपदे भू सत्तायाम् (भ्वा०) धातो =कर्त्तरि क्विप्। अन्तर्गतो ण्यर्थ । शम् सुखनाम निघ० ३ ६ ततो विश्व-शम्भूपदयो समास]

विश्वशर्धसौ समग्रबलयुक्तौ (अध्यापकोपदेशकौ) ५ ३४ ८ [विश्व-शर्धस्पदयो समास । शर्धस् बलनाम निघ० २ ६]

विश्वशुचे यो विश्व सर्व जगच्छोधयति तस्मै (यतये=सन्यासिने) ७ १३ १ [विश्वोपपदे ईशुचिर् पूतीभावे (दिवा०) धातो कर्त्तरि क्विप्। शोचति ज्वलतिकर्मा निघ० १.१६]

विश्वश्चन्द्रा. विश्वानि चन्द्राणि सुवर्णानि याभ्यस्ता (श्रिय) १ १६५ ८. समग्राणि सुवर्णादीनि येषान्ते (व्याप्तविद्या विद्वज्जना) ३ ३१ १६ [विश्व-चन्द्रपदयो समास । चन्द्रम् हिरण्यनाम निघ० १ २]

विश्वश्रुष्टि. विश्वा. श्रुष्टयस्त्वरिता गतयो यस्य स (मनुष्य) प्र०—अत्र श्रुधातोर्बाहुलकादौणादिक क्तिन् प्रत्यय १ १२८ १ [विश्व-श्रुष्टिपदयो समास । श्रुष्टीति पदनाम निघ० ४ ३ श्रुष्टि इति क्षिप्रनाम । आशु अष्टीति नि० ६ १२]

स (इन्द्र =शूरवीरजन), प्र०—अत्राऽन्तर्गतो ण्यर्थ १ ३३.४ [विपूपपदे शाृ अदर्शने (दिवा०) धातो क्विन् छान्दस । विपु =विष्लृ व्याप्तौ (जु०) धातोर्बाहु० औणा० कु]

विपुराम् यो विष्वगगच्छति तम् (ध्रुवम्=अन्तरिक्षम्) ३ ५४ ८ **विपुरास्य**=विषमस्य (समाचारस्य) ४.६ ६ शरीरे व्याप्तस्य (जन्तो =जीवस्य) ७ २१ ५ **विपुराः**=व्याप्ताविद्यस्य (मनुष्यस्य) ५ ३४ ६ **विपुराः**=विद्या व्याप्नुवन्त (सखाय) ५ १२ ५ [विपुण. पदनाम निघ० ४ १ विपुरास्य विषमस्य नि० ४ १६ विष्लृ व्याप्तौ (जु०) धातोर्बाहु० औणा० उनन् स च कित्]

विपुरूपम् व्याप्तस्वरूपम् (धनम्) ७ २७ ३ व्यापक विविधरूप वा (नलदम=परम्पर युद्धलक्षणम्) ६ २०. **विपुरूपः**=प्राप्तविद्य (विद्वज्जन) ५ १५.४ विपूरिण व्याप्तानि रूपाणि येन स (गृहस्थो जन) ८ ३० **विपुरूपे**=विरुद्धस्वरूपे (पयसि=उदके) १ १८६ ४ [विपुरूपपदयो. समास । विपु=विष्लृ व्याप्तौ (जु०) धातोर्बाहु० औणा० कु । विपुरूपे विषमरूपे नि० १२ १७]

विपुरूपाणि व्याप्तरूपाणि (सव्रता=समानकर्माणि) ६ ७० ३. **विपुरूपे**=व्याप्तस्वरूपे (अहनी=रात्रिदिने) ६ ५८.१ [पूर्वपदे व्याख्यातम्]

विषुवतः प्रगस्ता विपुर्व्याप्तिर्यस्य तस्य (मध्व=मधुरादिगुणयुक्तस्य रसस्य) १ ८४ १० **विषुवता**=व्याप्तिमता (धूमेन) १ १६४ ४३ [विपुप्राति० प्रशसायामर्थे मतुप् । विपुरिति विष्लृ व्याप्तौ (जु०) धातोरौणा० बाहु० कुप्रत्यये रूपम्]

विषूचः व्याप्तान् (अश्वान्=विद्युदादीन्) ६ ५६ ५. [विपूपपदे अञ्चु गतिपूजनयो (भ्वा०) धातो. 'ऋत्विक्०' इति क्विन् । 'अनिदिताम्' इति नलोप । शस्-प्रत्यये भसज्ञायाम् 'अच' इत्यकारलोपे 'चौ' इति दीर्घत्वे रूपम्]

विषूचिका या विविधानर्थान् सूचयति सा (विदुषी राज्ञी) १६ १० [वि+सूच पैशुन्ये (चुरा०) धातोर् ण्वुल् । तत स्त्रिया टाप् । अथवा 'रोगाख्यायां ण्वुल्-बहुलम्' इति ण्वुल् । ततष्टाप्]

विषूची या विपून् व्याप्तानञ्चति सा (रात्रि) ३ ५५ १५ **विषूचीम्**=विपूच्यादिरोगम् ६ ७४ २ **विपूचीः**=व्याप्नुवती (विश =प्रजा) ६ २५ २ समग्रशरीरव्यापकान् रोगान् २ ३३ २ विविधा गती १ १६४ ३१ [विपूपपदे अञ्चु गतिपूजनयो (भ्वा०) धातो क्विन् । 'अञ्चतेश्चोपसख्यानम्' इति ङीप्]

विषूचीना विष्वगञ्चितारौ (जङ्घेऽरनी) १ १६४ ३८ [विषूच इति व्याख्यातम् । तत विभाषाऽञ्चे०' अ० ५.४.८ सूत्रेण स्वार्थे ख । तत स्त्रियां टाप्]

विषूचीनान् विरुद्धमाचरत. (सपत्नान्=अरीन्) १७ ६४ [विपूपपदे अञ्चुधातो क्विन् । तत स्वार्थे ख]

विषूचोः व्याप्तविद्या-धर्म-सुशीलयोर्द्वयो (सुहृज्जनयो) ७ १८.६ [विपूपपदे अञ्चु गतिपूजनयो (भ्वा०) धातो 'ऋत्विक्०' इति क्विन् । विपुरिति व्याख्यातम्]

विषूवृतम् विपुणा व्यापकेन गमनेन वृतम् (रथम्) २ ४० ३ [विपु-वृतपदयो. समास । पूर्वपदस्य सहितायां दीर्घ]

विष्कभायत् विशेषेण दधाति ६ ४४ २४ विशेषेण स्कभ्नाति ५ २९ ४ [वि+स्कम्भु धारणार्थे सौत्रो धातु । ततो लङ् । 'स्तम्भुस्तुम्भु०' इति प्राप्तस्य श्नु-विकरणस्य 'छन्दसि शायजपि' अ० ३ १ ८४. सूत्रेण शायजादेश । अडभावश्छान्दस]

विष्कभिते विशेषेण धृते दृढीकृते (द्यावापृथिवी=सूर्यभूमी) ३४ ४५ [वि+स्कम्भु धारणार्थे सौत्रो धातु । तत क्त]

विष्कभ्नन्तः ये विशेषेण स्कभ्नन्ति धरन्ति ते (कृतकृत्या विद्वज्जना) ३ ३१.१२ [वि+स्कम्भु धारणार्थे सौत्रो धातु । तत शतरि 'स्तम्भुस्तुम्भु०' इति श्ना]

विष्टपम् व्याप्तिम्, प्र०—अत्र विषधातोर्बाहुलकादौणादिकस्तप प्रत्यय १४ २३. विष्टान् प्रविष्टान् पाति येन तत् (नाक=सुखम्) १८ ५१ विशिष्ट सुख स० वि० १६७, **विष्टपाय**=विशन्ति यत्र तस्मै मार्गाय ३० १२ **विष्टपि**=अन्तरिक्षे १ १६ ३ [विष्लृ व्याप्तौ (जु०) धातोर्बाहु० औणा० तप प्रत्यय । अथवा विष्टोपपदे पा रक्षणे (अदा०) धातो 'कृतो बहुलम्' इति करणे कः । विष्ट.=विश प्रवेशने (तुदा०) धातो क्त । अथवा विश प्रवेशने (तुदा०) धातोर्बाहु० औणा० तप । विष्टपि प्रयोगेऽकारलोपश्छान्दस. । विष्टपम्=साधारणनाम निघ० १ ४.

विष्टवादित्यो भवति आविष्टो रसान् । आविष्टो भास ज्योतिषाम् । आविष्टो भासेति । अथ द्यौराविष्टा ज्योतिर्भि पुण्यकृद्भिश्च नि० २ १४]

विष्टम् व्याप्तम् (सत्यम्) ३ ३०.६ [विष्लृ व्याप्तौ (जु०) धातो क्त.]

यो विश्व सर्व बोधयति तम् (पुरुषम्) १ १२८ ८

विश्वायुः=पूर्णमायुर्यस्या सा (वाक्) १ ४ विश्व सम्पूर्ण-मायुर्यस्मात् स (धर्म =यज्ञ) १ २२ विश्व शतवार्षिकम-धिक वाऽऽयुर्यस्मात् स (श्रव =धनम्) १.९७ अखिल जीवन यस्य स (विद्वज्जन) १ ७३४ विश्व सर्वमायु र्यस्माद्यस्य वा (१ ६८ ३) पूर्णायु (इन्द्र =राजा) ३ ३१ १८ [विश्व-आयुपदयो समास । आयु =इण् गतौ (अदा०) धातो 'छन्दसीण ०' उ० १ २ सूत्रेण उण् । 'एते-र्णिच्च' उ० २ १२०. सूत्रेण वा उसि । इय (पृथिवी) वै विश्वायु तै० ३ २ ३ ७]

विश्वायुपोषसम् अखिलाऽऽयु पुष्टिकारकम् (रयिम्) १ ७९ ९ समग्रायु पुष्टिकराम् (रयि=श्रियम्) ६ ५९ ९ [विश्वायूपपदे पुष पुष्टौ (दिवा०) धातोरौणा० असुन्]

विश्वावसुः विश्व वासयति य स (अग्नि = परमेश्वर) २ ३ [विश्वोपपदे वस निवासे (भ्वा०) धातो 'शृस्तृ०' उ० १ १० सूत्रेण उ । पूर्वपदस्य सहिताया दीर्घ]

विश्वासाहम् विश्वान् सर्वान् सहते तम् (इन्द्र= सम्राजम्), प्र०—अत्र विश्वपूर्वात् सहधातो. 'छन्दसि सह ' अ० ३ १ ६३ इति ण्वि 'अन्येषामपि०' इति दीर्घश्च ७ ३६ [विश्वोपपदे षह मर्षणे (भ्वा०) धातोर्ण्वि]

विश्वाहा सर्वाणि दिनानि ७ १० [विश्व-अहन्-पदयो समासे शेर्लोपश्छन्दसि]

विश्वे अन्तरिक्षे प्रविष्टे (रोदसी=द्यावापृथिव्यौ) ४ ५६ ४ [विश प्रवेशने (तुदा०) धातो 'अशूप्रुषि०' उ० १ १५१ सूत्रेण क्वन्]

विश्वेदेवासः सर्वे विद्वास २.१३ विश्वे सर्वे च ते देवा विद्वासश्च ते, प्र०—विश्वेदेवा इति पदनाम निघ० ५ ६, १ ३ ७ समस्ता विद्यावन्तो विद्वास (जना) १ ३ ८ [विश्व-देवपदयो समासे जसो ऽसुक् । विभक्तेरलुक् । अर्थेष स्वर्ग एव लोको विश्व एव देवा जै० १ ३३५ अनन्ता विश्वेदेवा श० १४ ६ १.११ एते वै विश्वेदेवा यत् सर्वे देवा गो० २ १ २० ता (दिश) उ एव विश्वे-देवा जै० उ० २ १ २ श्रोत्र विश्वेदेवा श० ३ २ २ १३ सर्वं वै विश्वेदेवा श० १ ७ ४ २२ विशो विश्वेदेवा श० २ ४ ३ ६]

विश्वेदेवाः सर्वे दिव्यगुणयुक्ता मनुष्या पदार्थाश्च १४ २० विश्व प्रकाशका ईश्वरगुणा सर्वे विद्वासो वा प० वि० । सब विद्वान् द्योतक वेदमन्त्र, इन्द्रिया, सूर्यादिकरणे तथा तत्रस्थ गुण आर्याभि० २ ३५, ३६ १७ [विश्व-देवपदयो समास । विभक्तेरलुक् । विश्वेदेवा पदनाम निघ० ५ ६]

विश्व्या विश्वस्मिन् भवा (अभिभा=अभित कान्ति) २ ४२ १ [विश्वप्राति० भवार्थे यत् । तत स्त्रिया टाप् । विश्व्या सर्वत नि० ६ ३]

विषक्ताम् विविधै पदार्थैर्युक्ताम् (गा=पृथिवीम्) १ ११७ २० [वि+षस्ज गतौ (भ्वा०) धातो षच् समवाये (भ्वा०) धातोर्वा क्त । तत स्त्रियां टाप्]

विषम् व्याप्नोत्यङ्गानि यत्तत् १ १६१ ११ प्राण-हरम् (वस्तु) १ १९१ १४ उदकम् ६ ६१ ३ **विषेण**= विपर्ययकरेण निजवलेन १ ११७ १६ [विष्लृ व्याप्तौ (जु०) धातोरिगुपधलक्षण क । विष विप्रयोगे (क्र्या०) धातोर्वा क । विषम् उदकनाम निघ० १ १२ विषमित्युदकनाम विष्णातेर्विपूर्वस्य स्नाते शुद्धयर्थस्य, विपूर्वस्य वा सचने नि० १२ २६ यवमात्र वै विषस्य न हिनस्ति गो० उ० १ ३]

विषमेभ्यः विकटदेशेभ्य ३० १६ [वि-समपदयो समास । 'सुविनिर्दुर्भ्य सुपिसूतिसमा' अ० ८ ३ ८८ इति षत्वम्]

विषह्य विशेषेण सोढ्वा ७ २१ ७ [वि+षह मर्षणे (भ्वा०) धातो क्त्वा । समासे क्त्वो ल्यप्]

विषाणम् प्रविष्टम् (दुष्टजनम्) ५ ४४.११

विषाणिनः विपाणमिव तीक्ष्णा हस्ते नखा येषान्ते (राजजना) ७ १८ ७ [विषाणप्राति० मत्वर्थ इनि]

विषाहि विशेषेण कर्मसमाप्ति कुरु ४ ११ २ [वि+ षोऽन्त कर्मणि (दिवा०) धातोर्लोट् । 'बहुल छन्दसी' ति शपो लुक्]

विषितस्तुका विविधतया सिता बद्धा स्तुका स्तुति-र्यया सा (प्रवरा स्त्री) १ १६७ ५ [विषिता-स्तुकापदयो समास । विषित =वि+षिञ् बन्धने (स्वा०) धातो क्त । स्तुका=ष्टुञ् स्तुतौ (अदा०) धातोर्बाहु० औणा० कन् । तत स्त्रिया टाप् । बहुलवचनादेव गुणाऽभाव । विषिते विमुक्ते नि० ६ ३६]

विषितः व्याप्त (वायु =स्तेन) ६ १२ ५ [विष्लृ व्याप्तौ (जु०) धातो क्त । इडागमश्छान्दस]

विषितासः व्याप्ता (आप्ता पुष्पा) ६ ६ ४ [विषित इति व्याख्यातम् । ततो जसो ऽसुक्]

विषिते विद्याशुभगुणकर्मव्याप्ते (अध्यापिकोपदेशिके) ३ ३३ १ [विषित इति व्याख्यातम् । ततष्टाप् स्त्रियाम्]

विषुणक् वेविषत्यधर्मेण ये ते विषवस्तान् नाशयति

वैष्णव रूपम् कौ० ८ २ यो वै विष्णु स यज्ञ श० ५ २ ३ ६ विष्णुर्यज्ञ गो० उ० १ १२ तै० ३ ३ ७ ६ विष्णुर्वै यज्ञ ऐ० १ १५ पवित्रे स्थो वैष्णव्यौ (यजु० १ १२) इति यज्ञो वै विष्णुर्यज्ञियै स्थ इत्येवैतदाह श० १.१ ३ १ यज्ञो वै विष्णु श० १३ १ ८ ८ यज्ञो वै विष्णु कौ० ४ २ श० १ १ २ १३ गो० उ० ४ ६ तै० १ २ ५ १ यज्ञो वै विष्णु शिपिविष्ट ता० ९ ७ १० यज्ञो वै वैष्णुवारुण कौ० १६ ८ यज्ञो विष्णु श० १ ६ ३ ६ ता० १३.३ २. गो० उ० ६ ७ विष्णवे हि गृह्णाति यो यज्ञाय (हवि) गृह्णाति श० ३ ४ १ १४ अथेम विष्णु त्रेधा व्यभजन्त। वसव प्राप्त सवन रुद्रा माध्यन्दिन सवनमादित्यास्तृतीय-सवनम् श० १४.१ १ १५ स य स विष्णुर्यज्ञ स। स य स यज्ञोऽसौ स आदित्य श० १४ १.१ ६ स उ एव मख स विष्णु श० १४ १ १ १३ (प्रजापति) यजुर्भ्योऽधि विष्णुम् (असृजत)। तद् विष्णु यश आर्च्छत्। तम् (विष्णुम्) आलभत। विष्णोरध्योषधीरसृजत तै० २ ३ २ ४ यजूंषि विष्णु श० ४ ६ ७ ३ यो वै विष्णु सोम स श० ३ ३ ४ २१ यत्तदन्नमेष स विष्णुर्देवता श० ७ ५ १ २१ वीर्य्यं विष्णु तै० १ ७ २ २ प्रादेशमात्रो वै गर्भो विष्णु श० ६ ५ २ ८ अग्निर्वाऽग्रह सोमो रात्रि-रथ यदन्तरेण तद् विष्णु श० ३ ४ ४ १५ यदह दीक्षते तद्विष्णुर्भवति श० ३ २ १ १७ विष्णु सर्वा देवता ऐ० १ १ तस्माद् आहुर्विष्णुर्देवाना श्रेष्ठ इति श० १४ १ १.५ अग्निर्वै देवानामवमो विष्णु परम ऐ० १ १. अन्तो विष्णुर्देवतानाम् ता० २१ ४ ६ अग्निर्वै देवानामवराध्यो विष्णु परार्ध्य कौ० ७ १ अग्निर्वै यज्ञस्यावराध्यो विष्णु परार्ध्य श० ५ २ ३ ६ एते वै यज्ञस्यान्त्ये तन्वौ यदग्निश्च विष्णुश्च ऐ० १ १ अग्नाविष्णू वै देवानामन्तभाजौ कौ० १६ ८ आग्नावैष्णवमेकादशकपाल पुरोडाश निर्वपति श० ३ १ ३ १ यज्ञो विष्णु श० १ ६ ३ ९ यज्ञो वै विष्णु श० १.१ २ १३ इमे वै लोका विष्णोर्विक्रमण विष्णो-र्विक्रान्त विष्णो क्रान्तम् श० ५ २ २ ६ स (विष्णु) इमाँल्लोकान् विचक्रमेऽथो वेदानथो वाचम् ऐ० ६ १५ वामनो ह विष्णुरास श० १ २ ५ ५ स हि वैष्णवो यद् वामन (गौ) श० ५ २ ५ ४ वैष्णव वामनम् (पशुम्) आलभन्ते तै० १ २ ५ १ वैष्णवो वामन (पशु) श० १३ २ २ ६ चक्रपाणये (विष्णवे) स्वाहा प० ५ १० विष्णुर्वै देवाना द्वारप ऐ० १ ३० विष्णवागाना पते तै० ३ १ १ ४ विष्णुर्वै यज्ञस्य दुरिष्ट पाति ऐ० ३ ३८. पक्ति-विष्णो पत्नी गो० उ० २ ९ विष्णो श्रोणा तै० १ ५ १४ यच्छ्रोत्र स विष्णु गो० उ० ४ ११. वैष्णवा पुरुषा श० ५ २ ५ २ वैष्णवो हि यूप श० ३ ६ ४.१ वैष्णवस्त्रिकपाल (पुरोडाश) ता० २१ १० २३ अथ यद् वैष्णव। त्रिकपालो वा पुरोडाशो भवति चरुर्वा श० ५ २ ५ ४. तान् (पशून्) विष्णुरेकविंशेन स्तोमेनाप्नोत् तै० २.७ १४ २ विष्णुस्तेजनम् ऐ० १ २५ तथैवैतद् यजमानो विष्णुर्भूत्वेमाँल्लोकान् क्रमते। स य स विष्णु-र्यज्ञ स श० ६ ७ २ १० तद् यदेनेन (यज्ञेन विष्णुना) इमा सर्वां (पृथिवी) समविन्दन्त तस्माद् वेदिर्नाम श० १ २ ५ ७ यन्वेवात्र विष्णुमन्वविन्दँस्तस्माद् वेदिर्नाम श० १ २ ५ १० वैष्णव हि हविर्धानम् श० ३ ५ ३ १५ या सा द्वितीया (ओकारस्य) मात्रा विष्णुदेवत्या कृष्णा वर्णेन यस्ता ध्यायते नित्य स गच्छेद् वैष्णव पदम् गो० पू० १ २५ पक्तिर्विष्णो पत्नी गो० उ० २ ९ विष्णुर्वै यज्ञस्य दुरिष्ट पाति ऐ० ३ ३८]

विष्णाप्वम् विष्णानि कृषिव्याप्तानि कर्माण्याप्नोति येन पुरुषेण तम् १ ११७ ७. विष्णान् विद्याव्यापिनो विदुष आप्नोति बोधस्तम्, प्र०—अत्र विष्लृ-धातोर्नक् तत आप्लृ-धातोरु 'वाच्छन्दसि' इति पूर्वसवर्णप्रतिषेधात् यण् १ ११६ २३ [विष्णोपपदे आप्लृ व्याप्तौ (स्वा०) धातो-र्बाहु० औणा० उ। विष्ण =विष्लृ व्याप्तौ (जु०) धातो-र्बाहु० औणा० नक्]

विष्णुपत्न्यै विष्णुना व्यापकेन पालितायै (अन्त-रिक्षरूपायै) २९ ६० [विष्णु-पत्नीपदयो समास। पत्नी=पा रक्षणे (अदा०) धातो 'पातेर्डति' उ० ४ ५८ इति डति। तत स्त्रिया ङीप् नकारश्च]

विष्पट् यो विषो व्याप्नुवत पटति प्राप्नोति स (विद्वज्जन) १ १८९ ६ [विष् इत्युपपदे पट गतौ (भ्वा०) धातो क्विप्। विष्=विष्लृ व्याप्तौ (जु०) धातो क्विप्]

विष्पतिम् प्रजापालकम् (अग्नि=पावकम्) ३ २ १० विश सर्वस्या प्रजाया पालक स्वामिनम् (चेतन=परमात्मानम्) ३ ३ ८ **विष्पते**=प्रजास्वामिन् (विद्वज्जन) ६ २ १० [विश्-पतिपदयो समास। विश मनुष्यनाम निघ० २ ३]

विष्पतीव विशा प्रजाना पालको राजेव ७ ३९ २ [विष्पति-इवपदयो समास]

विष्पर्धस ये विशेषेण स्पर्द्धन्ते तान् (विद्वज्जनान्) ५ ८७ ४ परस्पर विशेषत स्पर्द्धमाना (विद्वास) १ १७३ १० **विष्पर्धा**:=विशेषेण य स्पर्द्धते स

विष्टम्भनीम् आधारभूताम् (स्त्रियम्) १४.५ [वि+स्तम्भु धारणार्थे सौत्रो धातु । ततो ल्युट्-प्रत्ययान्तात् स्त्रिया ङीप् । 'स्तम्भे' अ० ८ ३ ६७ सूत्रेण षत्वम्]

विष्टम्भः विशो वैश्यस्य विष्टम्भो रक्षण येन स (अधिपति) १४ ६ **विष्टम्भेन**=विशेषेण स्तभ्नोति शरीर येन तेन (आहार-रसेन) १५ ६ [वि+स्तम्भु धारणार्थे सौत्रो धातु । ततो घञ् । प्रजापतिर्वै विष्टम्भ श० ८ २ ३ १२]

विष्टः प्रविष्ट (वायु) १ १४८ १ [विश प्रवेशने (तुदा०) धातो क्त]

विष्टारपङ्क्तिः सर्वा दिश १५ ४ [(यजु० १५ ४) दिशो वै विष्टारपङ्क्तिश्छन्द श० ८ ५ २ ४.]

विष्टारः प्रसार ५ ५२.१० [वि+स्तॄञ् आच्छादने (क्र्या०) धातो 'छन्दोनाम्नि च' अ० ३ ३ ३४ सूत्रेण घञ् । 'छन्दोनाम्नि च' अ० ८ ३ ९४ सूत्रेण षत्वम्]

विष्टिभिः व्याप्तिभि १.९२ ३ [विष्लृ व्याप्तौ (जु०) धातो स्त्रिया क्तिन्]

विष्टिरः ये विशेषेण तरन्ति ते ऋतव २ २३ १० [वि+तॄ प्लवनसन्तरणयो (भ्वा०) धातो क्विप् । 'ॠत इद्धातो' इतीत्व रपरत्वञ्च । सुडागमश्छान्दस]

विष्टी व्यापनशीलावश्विनौ, प्र०—अत्र 'क्तिच्-क्तौ च सज्ञायाम्' अ० ३ ३.१७४ अनेन क्तिच्प्रत्यय १ २० ४ [विष्लृ व्याप्तौ (जु०) धातो क्तिच् । विष्टी कर्मनाम निघ० २ १]

विष्टीमिनम् विशिष्टा बहव ष्टीमा आर्द्रीभूता पदार्था विद्यन्ते यस्मिँस्तम्, भा०—आर्द्रीभावम्, अ०—लालामगु=न्यायम् २३ २६ [विष्टीमप्राति० भूम्न्यर्थ इनि । विष्टीम =वि+ष्टीम आर्द्रीभावे (दिवा०) धातोर्घञ्]

विष्टुतीः विविधाश्च ता स्तुतयश्च ता १६ २८ [वि-स्तुतिपदयो. समास]

विष्ट्वी कर्म्म ३ ६० ३ व्यापनशीलानि (शमी=कर्माणि) १ ११० ४ [विष्ट्वी कर्मनाम निघ० २ १ कृत्वा नि० ११ १६ विष्लृ व्याप्तौ (जु०) धातो क्त्वा । 'स्नात्व्यादयश्च' अ० ७ १ ४६ सूत्रेण निपातनाद् ईत्वम्]

विष्ठाः या विविधेषु स्थानेषु तिष्ठन्ति ता (वुध्न्या = सूर्यादयो लोका) १३ ३ विशेषेण तिष्ठति यज्ञो यासु ता (ऋतव) २३ ५७ भा०—स्थितिसाधिका (षड्तव) २३ ५८ निवासो के स्थान आर्याभि० २ २८, १३ ३. [वि+ष्ठा गतिनिवृत्तौ (भ्वा०) धातो क । ततष्टाप् स्त्रियाम् । क्विप्-प्रत्ययान्त वा]

विष्ठितम् व्याप्तम् (जगत्) २९ ५५ विशेषेण स्थितम् (जगत्) ६ ४७ २९ [वि-स्थितपदयो समास । स्थितम्=ष्ठा गतिनिवृत्तौ (भ्वा०) धातो क्त । विष्ठितम् स्थावरम् नि० ६ १३.]

विष्ठिता विशेषेण स्थितानि (शृङ्गाणि=सेनाङ्गानि) २९ २२ [विष्ठितमिति व्याख्यातम् । ततश्शेर्लोपश्छन्दसि]

विष्णवि व्यापके परमेश्वरे, प्र०—अत्र 'वाच्छन्दसि' इति घिसज्ञाकार्याऽभावे गुणादेशेऽवादेश ३३ ९७ [विष्णु-प्राति० सप्तम्या एकवचने 'वा छन्दसि' इति नियमेन घिसज्ञाकार्ये 'अच्च घे' इत्यस्याभावे गुणेऽवादेशे च रूपम्]

विष्णवे व्यापकाय विद्युद्रूपाय (अग्नये) २२ ६. व्यापनशीलाय, यज्ञाय, अ०—उपासनादियज्ञाय ५ १८ सर्वविद्याकर्मव्यापनस्वभावाय (सोमभृते=यजमानाय) ५ १ व्याप्तिशीलाय विज्ञानप्राप्तिलक्षणाय वा यज्ञाय ५ १ **विष्णुना**=व्यापकेन परमेश्वरणेव शुभगुणकर्मस्वभावेन १० ३० **विष्णुम्**=व्यापक व्यान धनञ्जय वा हिरण्य-गर्भम् ६ २१ ६ **विष्णुः**=वेवेष्टि व्याप्नोति चराचर जगत् स परमेश्वर, प्र०—'विषे किच्च' उ० ३ ३८ अनेन विष्लृधातो नु प्रत्यय किच्च १ २२ १६ सर्वविद्याङ्ग-व्यापनशील (योग्य सेनाध्यक्ष) १ ६१ ७ सकलविद्या-योगाङ्गव्यापी योगिराज ११ ६० स्वदीप्त्या व्यापक सूर्य १ १५६.४. सर्वशुभगुणकर्मसु व्याप्त (गृहपति) ८ १७ व्यापिका विद्युत् ८ ५७ यो वेवेष्टि व्याप्नोत्यन्तरिक्षस्थल-वाय्वादिपदार्थान् स यज्ञ, प्र०—यज्ञो वै विष्णु श० १ १ २ १३, २ २५ विश्वान्तर्यामीश्वर १ २२ १८ परमेश्वर इव न्यायकारी (अ०—सर्वप्रधानपुरुष) ६ ३१ शिल्पविद्या-व्यापनशीलो मनुष्य १ ८५ ७ चर और अचर रूप जगत् मे व्यापक परमात्मा स० प्र० २१, ३६ ६ **विष्णो**= सर्वाऽन्त प्रविष्ट (जगदीश्वर) ५ १६ सर्वव्यापिन् जगदीश्वर व्यापनशील प्राणो वा ५ १६ **त्रिष्णोः**=व्याप्तु शीलस्य विद्युद्रूपाग्ने १२ ५ [विष्लृ व्याप्तौ (जु०) धातो 'विषे किच्च' उ० ३ ३८ सूत्रेण नु प्रत्यय । विष्णु यज्ञनाम निघ० ३ १७ पदनाम निघ० ४.२ पदनाम निघ० ५ ६ यद् विषितो भवति तद् विष्णुर्भवति, विष्णुर्विशतेर्वा व्यश्नोतेर्वा नि० १२ १८ यज्ञो वै विष्णु शिपिविष्ट ता० ९ ७ १० तद् यदेवेद क्रीतो विशतीव तद् हास्य (सोमस्य)

४ १६.५ [वि+सृ गतौ (भ्वा०) धातो कर्त्तरि क्विबन्ताच्छस्]

विसृपः योद्धृभिर्विविध यत् सृप्यते तस्य (क्रूरस्य= युद्धस्य), प्र०—'सृपितृदो कसुन्' अ० ३ ४ १७. अनेन भावलक्षणे सृपि-धातो कसुन् १ २८ [वि+सृप्लृ गतौ (भ्वा०) धातो 'सृपितृदो कसुन्' अ० ३ ४ १७ सूत्रेण कसुन्]

विसृष्टधेना विविधविद्यायुक्ता धेना वाग् यस्या सा (स्त्री) ७ २४ २ [विसृष्टा-धेनापदयो समास । धेना वाङ्-नाम निघ० १ ११ विसृष्टा=वि+सृज विसर्गे(तुदा०)+क्त+टाप्]

विसृष्टरातिः विविधा सृष्टा रातयो दानादीनि येन स (शूरजन) १ १२२ १० (विसृष्टा-रातिपदयो समास । राति=दानकर्मा (निघ० ३ २०) धातो क्तिन् स्त्रियाम्]

विसृष्टिः विविधा सृष्टि ऋ० भू० ११६, ऋ० १० १३० ७ [वि+सृज विसर्गे (तुदा०) धातो क्तिन् स्त्रियाम्]

विस्तिरः सुखविस्तारक (विद्वज्जन) १ १४० ७ [वि+स्तॄ आच्छादने (क्र्या०) धातोर् मूलविभुजादित्वात् कर्त्तरि क । 'ऋत इत्०' इतीत्व रपरत्वञ्च । विसस्रे विवृणुते नि० १ १६.]

विस्तृणीताम् वितनोतु ७ १७ १ [वि+स्तॄ आच्छादने (क्र्या०) धातोर्लोट्]

विस्पन्दमाने विशेषेण गम्यमाने (मरुति) ३९ ५ [वि+स्पदि किञ्चिच्चलने (भ्वा०) धातो शानच्]

विस्रसः जीर्णावस्थाया २ ३९ ४ [वि+स्रंसु अवस्रंसने (भ्वा०) धातो क्विप् सम्पदादित्वात् स्त्रियाम्]

विस्रुतिः विविधतया स्रवण गमन यस्मिन् स (मार्ग) १ ४६ ११ [वि+स्रुतिपदयो समास । स्रुति=स्रु गतौ (भ्वा०)+क्तिन्]

विस्रुहः विसरन्ति विशेषेण गच्छन्ति ता (आप) ६.७ ६ [विस्रुह आपो भवन्ति विस्रवणात् नि० ६ ३. वि+स्रु गतौ (भ्वा०) धातो क्विप् । तुक्स्थाने हुक् आगमश्छान्दस]

विस्रुहा यो विश्रून् रोगान् हन्ति स (राजा) ५ ४४ ३. [विस्रु इत्युपपदे हन हिंसागत्यो (अदा०) धातो क्विप् 'नौ चे' ति दीर्घ]

विहत्य विनिवर्त्य हत्वा ५ ४ ५ [वि+हन हिंसा-गत्यो (अदा०) धातो क्त्वा । समासे क्त्वो ल्यप्]

विहन् विहन्ति ६ ४७ २ [वि+हन् हिंसागत्यो (अदा०) धातोर्लङ् । अडभावश्छान्दस]

विहन्ता विशेषेण नाशक (सूर्य इव योद्धृजन) १ १७३ ५. [वि+हन हिंसागत्यो (अदा०) धातो कर्त्तरि तृच्]

विहरन् विचरन् (सविता=सूर्य) ४ १३ ४ [वि+हृञ् हरणे (भ्वा०) धातो शतृ]

विहवन्त विशेषेणाऽऽह्वयन्ति ७ २८ १ [वि+ह्वेञ् स्पर्द्धायाम् शब्दे च (भ्वा०) धातोर्लङ् । अडभावश्छान्दस । 'बहुल छन्दसि' अ० ६ १ ३४ सूत्रेण सम्प्रसारणम्]

विहवे विशेषेण ह्वयति शब्दयति यस्मिँस्तस्मिन् उत्तमाङ्गमस्तके) ३ ८.१० [वि+ह्वेञ् स्पर्द्धाया शब्दे च (भ्वा०) धातो 'ह्व सम्प्रसारण च न्यभ्युपविषु' अ० ३ ३ ७२ सूत्रेण अप् सम्प्रसारणञ्च]

विहव्यः विहोतुमर्ह (इन्द्र =धनकामो जन) २ १८ ७ विविधै साधनैरादातुमर्ह (मन्त्री) १७.२४ विविधतया ग्रहीतु योग्य (सोम =उत्पन्न) पदार्थसमूह १ १०८ ६ विविधानि हव्यानि साधनानि यस्य स (राजा) ८ ४६ विशेषेण स्तोतु योग्य (अग्नि =राजा) २७.५. [वि+हु दानादानयो (जु०) धातो 'अचो यत्' सूत्रेण यत् । 'वान्तो यि प्रत्यय' इति वान्तादेश । विहव्यम् (सूक्तम्) जमदग्नेर्त्त्व वा ऋषीणाञ्च सोमौ ससुतावास्ता तत एतज् जमदग्निर्विहव्यमपश्यत् तमिन्द्र उपावर्त्तत यद् विहव्य होता शमतीन्द्रमेवैषां वृङ्क्ते ता० ९ ४ १४]

विहायाः योऽनर्थान् विजहाति स (ऋभु.=मेधा-व्याप्तो जन) ३ ३६ २ विजिहीते सद्यो गच्छति येन स (विद्युदादिस्वरूपोऽग्नि) ४ ११ ४ विविधेषु पदार्थेषु व्याप्त (परमेश्वर), प्र०—अत्र ओहाङ् गतौ इत्यस्मादसुन् णित्कार्यञ्च १७ २६ महान् (अग्नि =विद्वज्जन), प्र०—विहायेति महन्नाम निघ० ३ ३, ६ १३ ६ महती (अर्या= वैश्यकन्या) १ १२३ १ [वि+ओहाक् त्यागे (जु०) धातो, ओहाङ् गतौ (जु०) धातोर्वोणा० असुन् णिच्च । णित्वाद् युगागम । विहाया व्याप्ता नि० १०.२६ विहाया महन्नाम निघ० ३ ३]

विहि व्याप्नुहि, प्र०—अत्र 'वाच्छन्दसि' इति ह्रस्व ४ ४८ १ प्राप्नुहि ३.२१ ५ [वी गतिव्याप्तिप्रजनादिषु (अदा०) धातोर्लोट् । धातोर्ह्रस्वश्छान्दस]

विहितानि रचितानि (तत्त्वानि) १ १६४ १५

(छन्द =प्रकाश) १५ ५ [वि+स्पर्द्ध (भ्वा०) धातोरौणा० असुन्]

विष्पितस्य व्याप्तस्य कर्म्मण ७ ६० ७ [विष्पितो विप्राप्त नि० ६ २०]

विष्पुलिङ्गकाः ह्रस्वा पक्षिण १ १९१ १२ [विष्पुलिङ्गप्राति० 'ह्रस्वे' अ० ५ ३ ८६ सूत्रेण क]

विष्फुरन्ती विशेषेण चालयन्त्यौ (धनुर्ज्ये) २६ ४१ कम्पयन्त्यौ (योषा=पत्न्यौ) ६.७५ ४ [वि+स्फुर सचलने (तुदा०) धातोः शत्रन्तान् स्त्रिया ङीप् । 'स्फुरतिस्फुलत्योर्निनिविभ्य' इति षत्वम् । विष्फुरन्ती विघ्नत्यौ नि० ६ ४०]

विष्य अन्त कुरु ५ ८५ ८ **विष्यताम्**=अन्ते भवताम् २ ४० ४ **विष्यतु**=विमुञ्चतु २७ २० **विष्यन्**=व्याप्नुवन्ति ५ ४५ १ **विष्यन्ति**=विशेषेण कार्याणि समापयन्ति १ ८५ ५ **विष्यस्व**=स्वराज्येन विशेषत प्राप्नुहि १ १० १ १०. **विष्यामि**=व्याप्त होता हू स० वि० १२२, अथर्व० १४ १ ५७ [वि+षोऽन्त कर्मणि (दिवा०), धातोर्लोट् । अन्यत्र व्यत्ययेनात्मनेपदम्]

विष्वक् सर्वश ४ ४ २ सर्वत ४ १२.४ विषु व्याप्तमञ्चतीति ७ ४३ १ व्याप्तम् (रप =अपराधम्) ७ ३४ १३ य सर्वमञ्चति (सज्जन) ६.६ ३. [विषूपपदे अञ्चु गतिपूजनयो (भ्वा०) धातो क्विप् । विषु=विष्लृ व्याप्तौ (जु०) धातोर्बाहु० औणा० उ किच्च]

विष्वङ् यो विषु सर्वत्राऽञ्चति प्राप्नोति स (पुरुष =परमेश्वर) ३१ ४ **विषूचोः**=व्याप्तविद्याधर्मसुशीलयोर्द्वयो (सुहृज्जनयो) ७ १८ ६ [विषूपपदे अञ्चु गतिपूजनयो (भ्वा०) धातो 'ऋत्विग्दधृक्०' अ० ३ २ ५९ सूत्रेण क्विन्]

विष्वद्र्यक् यद् विष्वगञ्चति व्याप्नोति तत् (मन = चित्तम्) ७ २५ १ [विष्वक् इत्युपपदे अञ्चु गतिपूजनयो (भ्वा०) धातो कर्त्तरि क्विप् । 'विष्वग्देवयोश्च टेरद्रि०' अ० ६ ३ ९२ सूत्रेण विष्वक् शब्दस्य टेरद्रिरादेश]

विष्वाचः विविधगतिमत (शत्रुमण्डलस्य)१ ११७ १६ [विषूपपदे अञ्चु गतिपूजनयो (भ्वा०) धातो क्विप् । अकारस्य वर्णव्यत्ययेनाकारादेश]

विसदृशा विविधधर्म्यव्यवहारैस्तुल्यानि (जीविता= जीवनानि) १ ११३ ६ [वि-सदृशपदयो समासात् 'शेर्लोपश्छन्दसी' ति शेर्लोप । सदृश =समानोपपदे दृशिर् प्रेक्षणे (भ्वा०) धातो 'समानान्ययोश्चेति वक्तव्यम्' अ० ३.२ ६०, वा०सूत्रेण कञ् । 'दृग्दृशवतुपु' अ० ६ ३ ८९ सूत्रेण समानस्य सादेश]

विसर्जनम् यजमानेन होतृभिश्च हविषस्त्यागो मौन वा १ १५ [वि+सृज विसर्गे (तुदा०) धातोर्भावे ल्युट्]

विसर्पत विशेषेण गच्छत १२ ४५ **विसर्पति**= विविधतया गच्छति, भा०—सर्प इव गच्छति २३ ५६ [वि+सृप्लृ गतौ (भ्वा०) धातोर्लोट् । अन्यत्र लट्]

विसर्माणम् यो विसृजति तम् (वित्त=धन भोग वा) ५ ४२ ६ [वि+सृप्लृ गतौ (भ्वा०) धातो कर्त्तरि मनिन्]

विसस्रे विशेषेण सरति गच्छति ७ ३६ १ विविधतया प्रकाशयति ऋ० भू० ३१७, ऋ० १० ७१ ४. [वि+सृ गतौ (भ्वा०) धातोर्लिट् । व्यत्ययेनात्मनेपदम् । विसस्रे विवृणुते नि० १ १६]

विसात् विभजति ५ ४५ २ [वि+षण सम्भक्तौ (भ्वा०) धातोर्लेडि छान्दस रूपम्]

विसारे विशेषेण स्थिरत्वे १ ७९ १ [वि+सृ गतौ (भ्वा०) धातो 'सृ स्थिरे' अ० ३ ३ १७ सूत्रेण घञ्]

विसीमतः विशेषेण सीमातो मर्य्यादात, भा०— सुनियमेन स्वकक्षाया, प्र०—अत्राऽऽह यास्क अपि वा सीमेत्येतदनर्थकमुपबन्धमाददीत पञ्चमीकर्माणि सीम्न सीमत सीमातो मर्यादात सीमा मर्यादा विषीव्यति देशाविति नि० १ ७, १३ ३ [वि-सीमन्पदयो समासे पञ्चम्यन्तात् तसि । सीमत सर्वत नि० १ ७ सीमिति परिग्रहार्थीयो वा पदपूरणो वा नि० १ ७ अपि वा सीमेत्येतद् अनर्थकमुपबन्धमाददीत पञ्चमीकर्माणम्-सीम्न सीमत सीमातो मर्यादात । सीमा मर्यादा विसीव्यति देशाविति नि० १ ७]

विसृज विसर्जय ३८ १७ निष्पादय १३ ६० **विसृजति**=विविधतया सृजति १ ४८ ६ [वि+सृज विसर्गे (तुदा०) धातोर्लोट् । अन्यत्र लट्]

विसृजद्भ्यः शत्रूणामुपरि शस्त्रादिक त्यजद्भ्य (राजजनेभ्य) १६ २३ [वि+सृज विसर्गे (तुदा०) धातो शतृ]

विसृजानः उत्पादयन् (सविता=जगदीश्वर) ७ ३८ २ [वि+सृज विसर्गे (तुदा०) धातो शानच् । व्यत्ययेनात्मनेपदम्]

विसृतः ये विशेषेण सरन्ति तान् (सिन्धून्=नदी.)

वीणावादम् वाद्यविशेषम् ३०.१९. [वीणा-वाद-पदयोः समासः । वीणा=वी गतिव्याप्त्यादिषु (अदा०) धातोः 'रास्नासास्ना०' उ० ३.१५ सूत्रेण न-प्रत्ययान्तो निपात्यते । ततः स्त्रियां टाप्]

वीत विविधतया प्राप्नुत १२.४५ **वीतम्**=व्याप्नुत १ ६३ ७ प्राप्नुत व्याप्नुत वा ६ ६० १५. **वीताम्**=व्याप्नुताम् २८ १४ प्राप्नुताम् २८ ७ **वीथः**=व्याप्नुथ १ १५१ ३ कामयेथाम् १ १५१ ७ **वीहि**=प्राप्नुहि कामय वा ६ ५० २ व्याप्नुहि १ ४. [वी गतिव्याप्ति-प्रजनकान्त्यसनखादनेषु (अदा०) धातोर्लोट् वीथ प्रयोगे लडपि]

वीततमानि अतिशयेन व्याप्तुं समर्थानि (उत्तम-हवींषि) ७ १ १८ [वीतप्राति० अतिशायने तमप् । वीतम्=वी गतिव्याप्तिप्रजनादिषु (अदा०) धातोः क्त]

वीतपृष्ठः वीतं व्याप्तं पृष्ठं यस्य सः (अ०—यज्ञ) २५.३० वीता व्याप्ता पृष्ठा विद्यासिद्धान्ता येन सः (विद्वज्जन) १ १६२ ७ **वीतपृष्ठाः**=वीतं व्याप्तं पृष्ठं पृथिव्यादितलं यैस्ते (विद्युदादयोऽश्वा) १ १८१ २ विविधानीतानि विदितानि पृष्ठानि प्रच्छन्नानि याभिस्ता (पूर्णविद्या-सुशिक्षायुक्ता वालिका) १६ ४४ वीतानि व्याप्तानि लोकलोकान्तराणां पृष्ठानि यैस्ते (हरित=किरणाः) ५ ४५ १० [वीत-पृष्ठपदयोः समासः । वीतम्—वी गतिव्याप्त्यादिषु (अदा०) धातोः क्त । अथवा वि+इण् गतौ (अदा०) धातोः क्त. । पृष्ठम्=पृषु सेचने (भ्वा०) धातोः 'तिथपृष्ठगूथयूथप्रोथा' उ० २ १२ सूत्रेण थक्-प्रत्ययान्तो निपात्यते]

वीतपृष्ठा वीते व्याप्तिशीले पृष्ठे ययोस्तौ (अश्वौ) ३.३५ ५ [वीतपृष्ठमिति व्याख्यातम् । ततो द्विवचनस्या-कारादेशः]

वीतम् प्राप्तम् (अश्वम्) २५ ३७. गमनशीलम् (हवि) १७ ५७ व्याप्तिशीलम् (अग्निम्) १ १६२ १५ व्याप्तम् (अग्नि=विद्युदाख्यम्) ४ ७ ६ [वी गतिव्याप्ति-प्रजनादिषु (अदा०) धातोः क्त । वीतम् अश्नीतम् नि० ४ १९]

वीतये विज्ञानादिप्राप्तये ५ ५१ ५ ज्ञानाय भोगाय वा, प्र०—वी गति-व्याप्ति-प्रजनकान्त्यसनखादनेषु इत्यस्मात् 'मन्त्रे वृषेष-पच-मन-विद-भू-वी-रा उदात्तः' अनेन क्तिन्—प्रत्यय उदात्तत्वं च १ ५ ५. विद्यादिशुभगुणव्याप्तये ६ १६ १०. विज्ञानाय १.७४.४. धर्मप्रवेशाय, आनन्द-प्राप्तये १.१३५.४. कामनायै १.१३५ ३ [वी गतिव्याप्ति-प्रजनकान्त्यसनखादनेषु (भ्वा०) धातोः 'मन्त्रे वृषेष०' सूत्रेण क्तिन् । वीतये पानाय नि० ५ १८ वीनि (यजु० ११ ४६) अग्नआयाहि वीतयऽइत्यपि वितवऽइत्येतत् श० ६ ४.४ ९]

वीतहव्यम् प्राप्तप्राप्तव्यम् (मनुष्यम्) ७ १९ ३ **वीतहव्ये**=वीतं व्याप्तं हव्यं ग्रहीतव्यं वस्तु येन तस्मिन् (व्यवहारे) ६.१५.२ [वीत-हव्यपदयोः समासः । वीतम्=वी गतिव्याप्त्यादिषु (अदा०) +क्त. । हव्यम्=हु दाना-दानयोः (जु०) धातोर्यत्]

वीता वीतानि प्राप्तानि (वृजिना=बलानि) ४ २ ११ [वीतप्राति० शेर्लोपश्छन्दसि । वीतमिति व्याख्यातम्]

वीतिहोत्रम् वीतयो विज्ञापिता होत्राख्या यज्ञा येनेश्वरेण तं यद्वा वीतयः प्राप्तिहेतवो होत्राख्या यज्ञक्रिया भवन्ति यस्मात्तं परमेश्वरं भौतिकं वा (अग्निम्), प्र०—वी गतिव्याप्ति०' इत्यस्य रूपम् २ ४ गृहीतेश्वरव्याप्ति (जगत्) २ ३८ १. वीतेर्व्याप्तेर्होत्रं ग्रहणं यस्मात्तम् (विद्वज्जनम्) ५.२६ ३ **वीतिहोत्रः**=वीनानां शुभगुण-व्याप्तानां विद्यानां होत्रं स्वीकरणं यस्य सः (अग्नि.=विद्वज्जन) ३ २४ २ प्राप्ताऽप्राप्तविज्ञान (ऋत्विग्जन) १ ८४ १८. **वीतिहोत्राः**=वीतिः सर्वतः प्रकाशितो होत्रो यज्ञो येषां ते (देवा=कामयमाना विद्वांस) १७.७८. [वीति-होत्रपदयोः समासः । वीतिः=वी गतिव्याप्ति-प्रजनादिषु (अदा०) धातोः 'मन्त्रे वृषेषपच०' सूत्रेण क्तिन् । होत्रम्=हु दानादानयोः (जु०) धातोरौणा० ष्ट्रन् । होत्रा यज्ञनाम निघ० ३ १७. वाङ्नाम निघ० १ ११]

वीती कामनया ६ १६.४६ वीत्या व्याप्त्या ६ ६ १. [वीतिप्राति० 'सुपां सुलुक्०' सूत्रेण टा-स्थाने पूर्वसवर्ण-दीर्घः । वीतिपदं व्याख्यातम्]

वीध्र्याय विविधेषु ईधेषु दीपनेषु भवाय (भृत्याय), प्र०—अत्र विपूर्वकादिन्धिधातोरौणादिको रक् प्रत्ययः १६.३८ [वीध्रप्राति० भवार्थे यत् । वीध्रम्=वि+ञिइन्धी दीप्तौ (रुधा०) धातोः 'वावितन्ते' उ० २ २६ सूत्रेण रक् प्रत्ययः]

वीनुहि विशेषतया व्याप्नुहि ६ १० ७ **वीनोषि**=प्रेरयसि ६ ५ ३ **वीनोति**=विशेषेण प्राप्नोति, प्र०—इन्वतीति गतिकर्मा निघ० २ १८, ६ ४ ३ [वि+इन्वति गतिकर्मा (निघ० २ १८) व्याप्तिकर्मा निघ० २ १८ ततो लोट्, अन्यत्र लट् । अथवा-वी गतिव्याप्तिप्रजनादिषु (अदा०) धातोर्लोट्लटौ । विकरणव्यत्ययेन श्नु.]

[वि+डुधाञ् धारणपोषणयो (जु०)+क्त । 'दधातेर्हि' रितिधातोर्ह्यादेश] ,

विहुतमतीनाम् जुह्वति स्वीकुर्वन्ति याभिस्ता विहुतो, विहुतो मतयो यासु तासाम् (विशा=प्रजानाम्) १ १३४ ६ [विहुत्मतिपदयो समास । विहुत्=वि+हु दानादानयो (जु०) धातो क्विप् करणे]

विहोत्राः विविधतया ये जुह्वत्याददति वा ते (विप्रा.=मेधाविजना) ५ १४ [वि+हु दानादानयो (जु०) धातोर्बाहु० औणा० ष्ट्रन् । अथवा वि-होत्रापदयो समास । होत्रा वाङ्नाम निघ० १ ११ यज्ञनाम निघ० ३ १७]

विह्रुत विशेषेण कुटिलान् (अ०—सर्पान्) २५ ७ [वि+ह्वृ कौटिल्ये (भ्वा०) धातो क्तप्रत्यये पृषोदरादिना रूपम्]

विह्वयन्ते विशेषतया स्पर्द्धन्ते ४ २४ ३ विशेषेण प्रशसेयु ४ ३९ ५ विह्वयामहे=विविधै शब्दै स्तुम १ ३६ १३ विशेषेण स्पर्द्धामहे ११ ४२ **विह्वयेते**=विस्पर्द्धेते २ १२ ८ [वि+ह्वेञ् स्पर्द्धाया शब्दे च (भ्वा०) धातोर्लट्]

विंशतिम् एतत्सख्याताम् (सेनाम्) ७ १८ ११ विंशती =चत्वारिंशत् (गतय) २७ ३३ [विंशति द्विदशत: नि० ३ १० प्रजापतेर्विस्रस्तादाप आयस्तास्वितास्वविशद् यदविशत् तस्माद् विंशति श० ७ ५ २ ४४ द्वौ दशतौ परिमाणमस्य सघस्येति विग्रहे 'पक्तिविंशति०' अ० ५ १ ५९ सूत्रेण द्वयोर्दशतोर्विन्भाव शतिच् प्रत्ययश्च निपात्यते]

वीक्षिताय विशेषेण कृतदर्शनाय (जीवाय) २२ ८ [वि+ईक्ष दर्शने (भ्वा०) धातो क्त]

वीडयस्व दृढान् कारय ६ ४७ २९ प्रेरयस्व ३ ५३ १९ बलयस्व ६ ४७ ३० स्तुहि २ ३७ ३ **वीडये-थाम्**=दृढबलौ भवेताम् ६ ३५ [वीडयस्व सस्तम्भस्व नि० ६ १२ वीडयति व्रीडयतिश्च सस्तम्भकर्माणौ नि० ५ १६ वीडयस्व=दृढीभव नि० ८ ३]

वीडवे प्रशसनीयाय बलाय ६ २४ ८ **वीडु:**=प्रशसित (इन्द्र =ऐश्वर्यवान् जन) ३ ५३ १७ **वीडो:**=बलवन् प्रशसितस्वभाव (आचार्य) ३ ५३ १९ **वीडो:**=बलवत (अमुन्वत =यज्ञकर्त्तुर्विरोधिजनस्य) १ १०१ ४ **वीडौ**=प्रशसनीये वने ३ ३१ ५ [वीडु बलनाम निघ० २ ९ वि+ईड स्तुतौ (चुरा०) धातोर्बाहु० औणा० उ]

वीडित: विविधैर्गुणै स्तुत (इन्द्र.=राजा) २ २१ ४ [वि+ईड स्तुतौ (चुरा०) धातो क्त]

वीडिता स्तुतानि (कर्म्माणि) ६ २२ ६ प्रशसितानि (वस्तूनि) २ २४ ३ [वीडित इति व्याख्यातम् । ततो शेर्लोपश्छन्दसि]

वीडु दृढ बलम् १ ६ ५ **वीडूनि**=दृढानि बल-कारीणि (आयुधा=अस्त्रशस्त्राणि), प्र०—अत्र ईषा अक्षादित्वात् प्रकृतिभाव १ ३९ २ अत्यन्त दृढानि प्रशसितानि च (शस्त्रास्त्राणि) ऋ० भू० १५१, [वीळु बलनाम निघ० २ ९]

वीडुजम्भम् वीडु बलवज्जम्भो मुखमिव ज्वाला यस्य तम् (अग्निम्) ३ २९ १३ [वीडु-जम्भपदयो समास]

वीडुद्वेषा दृढद्वेषा (दुष्टाचारिजना) २ २४ १३ [वीडु-द्वेषपदयो समास । द्वेष =द्विष अप्रीतौ (अदा०) धातोर्घञ्]

वीडुपत्मभि: बलेन पतनशीलै (जूतिभि =युद्ध-क्रियाभि) १ ११६ २ [वीडु-पत्मन्पदयो समास । पत्मन्=पत्लृ गतौ (भ्वा०) धातोर्मनिन्]

वीडुपविभि: दृढचक्रै (रथेभि) ५ ५८ ६ [वीडु-पविपदयो समास । पवि वज्रनाम निघ० २ २०]

वीडुपाणिभि: वीडूनि दृढानि बलानि पाण्यो ग्रहणसाधनव्यवहारयोर्येषा तै (अ०-पवनै) प्र०—वीडिवति बलनाम निघ० २ ९, १ ३८ ११ **वीडुपाणि:**=वीडु बल पाण्यो यस्य स (तनय =पुत्र) ७ १ १४. [वीडु-पाणिपदयो समास]

वीडुहर्षिण: बलेन बहु हर्षो विद्यते यस्य तस्य (कुपुरुषस्य) २ २३ ११ [वीडु-हर्षिन्पदयो समास । हर्षिन्=हर्षप्रीति० भूम्न्यर्थ इनि]

वीड्वङ्गम् वीडूनि बलयुक्तानि दृढानि अङ्गानि यस्य तम् (अर्वं=विद्युतम्) १ ११८ ९ **वीड्वङ्ग:**=वीडूनि दृढानि बलिष्ठान्यङ्गानि यस्य स (अर्वा=विज्ञानयुक्त पुत्र) ११ ४४ प्रशमिताङ्ग (वनस्पति =वनादिपालको विद्वान् राजा) २९ २२ [वीडु-अङ्गपदयो समास । वीडु बलनाम निघ० २ ९ वीड्वङ्ग दृढाङ्ग नि० ९ १२]

वीड्वी बलवती (स्त्री), प्र०—वीड्वीति बलनाम निघ० २ ९, ६ ३५ **वीड्वी.**=विशेषेण स्तोतु योग्या (द्वार =द्वाराणि) २८ १३ [वीडु बलनाम निघ० २ ९ ततो 'वोतो गुणवचनात्' सूत्रेण स्त्रिया ङीप् । अथवा वि+ईड स्तुतौ (चुरा०) धातोर्बाहु० औणा० क्विन्]

वीरवत्तमम् वीरा विद्वांस. शूराश्च विद्यन्ते यस्मिन् तदतिशयित वीरवत्तमम् (रयिं=विद्यासुवर्णा-द्युत्तम-धनम्) १ १ ३ विद्या, शौर्य, धैर्य, चातुर्य, बल, पराक्रम, दृढाङ्गता, धर्मात्मता और न्याययुक्त अत्यन्त वीर-पुरुष को आर्याभि० १ ३, ऋ० १ १ १ ३. प्रतिदिन वृद्धि बलवीर्यशौर्यधैर्यादिगुणयुक्ता. पुत्रबन्धुमित्रभृत्यादयो वीरा भवन्ति यस्मिन् धने तत् वे० भा० न० । [वीरवत्-प्राति० अतिशायने तमप् । वीरवत्=वीरप्राति० भूम्न्यर्थे प्रशसायां वा मतुप्]

वीरवन्तम् प्रशस्ता वीरा विद्यन्ते यस्मिँस्तम् (रयिम्) १.६४ १५ बहुवीराऽऽढ्यम् (धनम) ५ ४ ११ वीरा भवन्ति यस्मात् तम् (रयिं=श्रियम्) २ ११ १३ **वीरवन्तः**= वीरपुत्रा (जना) ४ ५० ६ [वीरप्राति० प्रशसायामर्थे मतुप् । ततो द्वितीयैकवचनम्]

वीरवाहः ये वीरान् वहन्ति प्रापयन्ति ते (देवा = विद्वांस) ७ ४२ २ [वीरोपपदे वह प्रापणे (भ्वा०) धातो 'वहश्च' अ० ३ २ ६४ सूत्रेण ण्वि]

वीरशुष्मया वीराणां योद्धॄणां शुष्माणि बलानि यस्या तया सेनया सह १ ५३ ५ [वीर-शुष्मपदयो समासात् स्त्रिया टाप् । शुष्मम् बलनाम निघ० २ ९.]

वीरसूः वीरसन्तानोत्पादिका (स्त्री) ऋ० भू० २१४, शूरवीर पुत्रों को जनने वाली (स्त्री) स० प्र० १५२, अथर्व० १४ २ १८ [वीरोपपदे षूङ् प्राणिगर्भविमोचने (अदा०) धातो 'सत्सूद्विष०' अ० ३ २ ६१ सूत्रेण क्विप्]

वीरहणम् यो वीरान् हन्ति तम् (जनम्) ३० ५ [वीरोपपदे हन हिंसागत्यो (अदा०) धातो क्विप्]

वीरा विक्रान्तकर्माणौ (अध्यापकाऽध्येतारौ) २ ३९ १ [वीरप्राति० द्विवचनस्याकारादेशश्छान्दस]

वीरासः व्याप्तविद्याबला (मर्यास =मनुष्या) ५ ६१ ४ शूरवीरा (जना) ६ ७ ३ [वीरप्राति० प्रथमाबहुवचने जसोऽसुगागम]

वीरिटे अन्तरिक्षे ३३ ४४ [वीरिट तैटीकिरन्तरिक्ष-मेवमाह पूर्वं वयतेरुत्तरमिरतेर्वयासीरयन्त्यस्मिन् भासि वा नि० ५ २७ वीरिटम् अन्तरिक्ष भियो वा भासो वा तति नि० ५ २७]

वीरुत्सु सत्तारचनाविशेषेण निरुद्धेषु कार्यकारण-द्रव्येषु, प्र०—वीरुध इति पदनाम निघ० ४ ३, १ ६७ ५, **वीरुधः** अतिविस्तृता लता: १.१४१.४. ओषधय. २.३५.८. सोमादीन् (ओषधी) १२ ७७ वृक्षप्रभृतय (ओषधय) १२ ६४ गुल्मविशेषा १८ १४ वनस्थान् वृक्षान् १२.३३. **वीरुधाम्**=लतावृक्षादीनां मध्ये २ ११४ [वि+ रुधिर् आवरणे (रुधा०) धातो क्विप् । रुह बीजजन्मनि प्रादुर्भावे च (भ्वा०) धातोर्वा क्विप् । उपसर्गस्य दीर्घत्व धातोर्हकारस्य धकारश्च । वीरुध ओषधयो भवन्ति विरोहणात् नि० ६ ३ वीरुध पदनाम निघ० ४ ३]

वीरेभिः वीरैः (पुरुषैः) १९ ५३ [वीरप्राति० 'बहुलं छन्दसी' ति भिस ऐसादेशो न भवति]

वीर्यकृतः यो वीर्यं करोति तस्य (इन्द्रस्य= परमैश्वर्यस्य) १० २५ [वीर्योपपदे डुकृञ् करणे (तना०) धातो कर्तरि क्विप् । ह्रस्वस्य तुगागम]

वीर्यम् पृथिव्यादिलोकाना बलम् १ ६३ ४ पराक्रम बल वा १ ५७ ५. सर्वाऽङ्ग-स्फूर्त्ति १९ ९ अनन्तपराक्रम-वान् (परमात्मा) १९ ९ सामर्थ्य को म० वि० १९५, ९ ११३.१ वीरस्य कर्म्म पराक्रम वा २८ शरीरबलकर घृतादि २० ५८ वीरेषु साधु (भा०—बलारोग्यम्) २१ ३१ विद्याधर्माभ्यां सुष्ठ्वात्मबलम् १.१२९ ७ **वीर्यस्य**= वीरकर्म्मण, प्र०—अत्र 'अधिगर्थदयेशा कर्मणि' अ० २ ३ ५२. इति कर्मणि षष्ठी ३४ २३ वीरस्य कर्मण ३ ४६ १ **वीर्याणि**=आकर्षणप्रकाशयुक्तादिवत्कर्माणि १ ३२ १ पराक्रमयुक्तानि कर्म्माणि ११०८ ५ वीरेषु साधूनि बलानि ३ ३० ३. **वीर्याय**=योगबलाय १९ ९० पराक्रमसम्पादनाय १ ६१ १४ वीर्यवृद्धये ३० ११ **वीर्यैः**=पराक्रमविज्ञानादिभि २ २२ ३ [वीरप्राति० भवार्थे साध्वर्थे हितार्थे वा यत् । वीर्याय वीरकर्मणे नि० १० १९. वीर्यं विष्णु तै० १ ७ २ २ वीर्यं वा इन्द्र ता० ९ ७ ५ ८ गो० उ० ६ ७ वीर्यं वा अग्नि तै० १ ७ २ २ गो० उ० ६ ७ वीर्यं षोडशी ता० २१ २ २ ७ इन्द्रिय वीर्यं षोडशी ता० २१ ५ ६ इन्द्रियं वै वीर्यं वाजिनम् ऐ० १ १३ वीर्यं त्रिष्टुप् श० ७ ४ २ २४ तिष्ठन्वै वीर्यवत्तर श० ६ ६ २ ११]

वीर्या वीर्ययुक्तानि सैन्यानि ५ २९ १३ विद्यादि-वीर्याणि १ ८० १५ बलपराक्रमयुक्तानि कर्माणि ४ ३२ १० वीरेषु शत्रुप्रक्षेपकेषु विद्वत्सु साधूनि (वस्तूनि) २ १९ २ वीरेभ्यो हितानि धनानि २ ३०.१० पराक्रमयुक्तानि कर्म्माणि २ २१ ३ [वीर्यमिति व्याख्यातम् । ततश्शेर्लोप-श्छन्दसि]

वीव पक्षीव ७ ५५ २. [वि-इवपदयो. समास. ।

वीयते विशेषेण गच्छति ५ १८ ३ [वि+वी गति-व्याप्त्यादिषु (अदा०) धातोर्लट्। अथवा वी धातावीकार-प्रश्लेष । व्यत्ययेन यगात्मनेपदश्च]

वीर शुभगुणेषु व्यापनशील (विद्वज्जन) २ २६ २ शौर्यादिगुणोपेत (इन्द्र=विद्वज्जन) ६ २१ ६ अजति वेद्य जानाति प्रक्षिपति विनाशयति सर्वाणि दुःखानि वा यस्तत्सम्बुद्धौ (विद्वन् सभासेनाध्यक्ष), प्र०—अत्र 'स्फायि-तञ्चिवञ्चि०' उ० २ १२ अनेनाजेरक्प्रत्यय १ ३० ५ **वीरम्**=पूर्णशरीरात्मबलप्रदम् (यज्ञ=पठनपाठन-श्रवणोपदेशाख्यम् १ ४० ३ उत्तम-सन्तानम् २ ३२ ४ प्राप्तविज्ञानादिगुणम् (राध=धनम्) २७ २७ शत्रूणा हन्तार युद्धकुशल निर्भयम् (राजानम्) ऋ० भू० २८४, बलवन्तम् (पुरुषम्) २० ४० शत्रुबलानि व्याप्नुवन्तम् (राजाऽध्यापकोपदेशकजन) विक्रान्त जनम् ४ २३ वीरवन्तम् (जनम्) ६ ५० ६ दोग्धारम् (राजपुरुषम्) ७ ३४ ६ सर्वदुःखप्रक्षेप्तारम् (यज्ञम्) ३७ ७ **वीरः**=अजति व्याप्नोति शत्रुबलानि य. (वायु परमेश्वर, सोम-लतादिसमूहरसो वा) १ १८ ४ अजति सकलविद्या प्राप्नोति स (मनुष्य) २ ३ ९ विद्यमानबल (पुरुषार्थि-जन) ३ ५५ २० विज्ञानवान् शत्रूणा प्रक्षेप्ता (जन) २२.२२ विद्यया प्राप्तशरीरात्मबल (विद्यार्थी राजपुरुषो वा) ४ २३ २ व्याप्तविद्याशौर्यादिगुण (पुत्र) ४.२४ १ शत्रूणा सेनाबल व्याप्तु शील (सेनापति) १ ८१ २. शुभगुणकर्मस्वभावव्यापक (इन्द्र=सूर्य इव राजा) ७ २० २. निर्भय (राजा) ७ ३२ ६ बलिष्ठ (इन्द्र= राजपुरुष) ४ २५ ६ शत्रूणा दारिता (इन्द्र=सेनापति) १७ ३९ **वीराः**=क्षात्रधर्मयुक्ता (जना) ३ ५५ २१ प्राप्तविज्ञाना (जना) ७ १ १५ **वीरेषु**=सुभटेषु (वीर-जनेषु) २ २४ १५ **वीरैः**=प्रशस्तवलैः (जनैः) २६ ९ शौर्य-धैर्य-विद्या-शत्रुनिवारण-प्रजापालनकुशलैः (जनैः) ३ ३७ [अज गतिक्षेपणयो. (भ्वा०) धातो 'स्फायितञ्चि०' उ० २ १२ सूत्रेण रक्। 'अजेर्व्यघञपो' सूत्रेण धातोर्वी-आदेश । अथवा वी गतिव्याप्तिप्रजनादिषु (अदा०) धातोर्बाहु० औणा० रक्। वीरो वीरयत्यमित्रान् वेतेर्वा स्याद् गतिकर्मणो वीरयतेर्वा नि० १ ७ अथवा वीर विक्रान्तौ (चुरा०) धातो कर्त्तर्यच्। पुत्रो वै वीर श० ३ ३ १ १२ अत्ता हि वीर श० ४ २ १ ९ प्राणा वै दशवीरा (यजु० १९ ४८) श० १२ ८ १ २२]

वीरतमः वेति स्वबलेन शत्रुबल व्याप्नोति सोऽति-शयित (अग्नि=पावक इव सेनापति) १५ ५२ **वीरतमाय**=अत्युत्तमाय वीराय (राज्ञे) ३ ५२ ८ [वीरप्राति० अतिशायने तमप्]

वीरतमा अतिशयेन वीरौ (होतृ-यजमानौ), प्र०—अत्राऽऽकारादेशः ८ ५९ [वीरप्राति० अतिशायने तमप्। ततो द्विवचनस्याकारादेशः]

वीरताम् वीरस्य भावम् ७ १२ [वीरप्राति० भावे तल्। ततष्टाप् स्त्रियाम्]

वीरपत्नी वीर पतिर्यस्या सा (कन्या=विदुषी पत्नी) ६ ४९ ७ [वीर-पतिपदयो समासे स्त्रिया ङीप् नकारादेशश्च]

वीरपस्त्यः वीरा पस्त्ये गृहे यस्य स (तनय= जन) ५ ५० ४ [वीर-पस्त्यपदयो समास । पस्त्य गृहनाम निघ० ३ ४]

वीरपेशाः वीराणा पेशो रूपमिव रूप येषान्ते (मनुष्या) ४ ११ ३ [वीर-पेशपदयो समास । पेश रूपनाम निघ० ३ ७]

वीरयध्वम् विक्रमयध्वम् १७ ३८ **वीरयस्व**= आरब्धस्य कर्मण समाप्तिमाचर ११ ६८ [वीर विक्रान्तौ (चुरा०) धातोर्लोट्]

वीरया वीरयुक्तया (सेनया) ३३ ७० [वीरप्राति० स्त्रिया टाप्]

वीरवक्षणम् वीराणा वहनम् (वयुन=कर्म प्रताप वा) ५ ४८ २ [वीर-वक्षणपदयो समास । वक्षणम्= वह प्रापणे (भ्वा०) धातोर्ल्युट्। सुगागमश्छान्दस । अथवा वक्ष रोषे (भ्वा०) धातोर्ल्युट्]

वीरवत् प्रशस्तवीरसदृगमन्नादिपदार्थमय यज्ञम्, प्र०—अत्राऽर्श आदित्वादच् ८ ६३ बहवो वीरा विद्यन्ते यस्मिन् विज्ञाने तत् १ १९० ८ वीरा विद्यन्ते यस्मिंस्तत् (यश=कीर्त्तिम्) ५ ७९ ६ प्रशस्तवीरकारकम् (श्रव= अन्न श्रवण वा) ४ ३६ ८ वीरैस्तुल्यम् (सुदेवम्=शोभन विद्वज्जनम्) २८ १२ शूरवीरतुल्या (स्त्रिय) ६ ६५ ३ वीरैर्युक्तम् (राज्यम्) २० ५४ [वीरप्राति० प्रशसाया मतुप्]

वीरवतीम् प्रशस्ता वीरा विद्यन्ते यस्या ताम् (इष=सत्क्रियाम्), प्र०—अत्र प्रशसाया मतुप् १ १२ ११. **वीरवतीः**=बहवो वीरा सन्ति यासु ता (उपास= प्रभाता) ३४ ४०. [वीरप्राति० प्रशसायामर्थे मतुबन्तान् ङीप्]

१ २७ १३. [वृजी वर्जने (अदा०) धातोर्लुङि छान्दस रूपम्]

वृङ्क्त त्यजत १ १७२ ३ [वृजी वर्जने (रुधा०) धातोर्लोट्]

वृङ्धि वर्जय १३ ४१ वर्धय ६ ७५ १२ वर्चय २६ ४६ [वृजी वर्जने (रुधा०) धातोर्लोट्]

वृच्चयाम् छेदन-भेदन-प्रकाराम् (अर्भाम्=शिल्पक्रिया वाच वा) १ ५१ १३ [ओव्रश्चू छेदने (तुदा०) धातोश्छान्दस रूपम्]

वृचीवतः वृचिरविद्याछेदन प्रशस्त यस्य तस्य (विद्वज्जनस्य) ६ २७ ५ छेदनवत (शिल्पिजनस्य) ६ २७ ७ **वृचीवन्तः** रोगाच्छादितवन्त (वीरा राजपुरुषा) ६ २७ ६ [वृचिप्राति० प्रशसाया मतुप्। वृचि=ओव्रश्चू छेदने (तुदा०) धातोरौणा० इन् किच्च]

वृजध्यै वर्जितुम् ३ ३१.१७ [वृजी वर्जने (अदा०) धातोस्तुमर्थेऽध्यैप्रत्यय]

वृजनम् वर्जन्ति दुखानि येन तद् बलम् ३४ ४८. शरीरात्मबलम् १ १८४ ६ सन्मार्गम् १ १७३.१३ गमनम् १ १८०.१० वर्जनीय बलम् ६ ११ ६ दुखत्यागम् १ १७६ ६. सद्गतिम् १ १७७ ५ धर्म्यं मार्गम् १ १७४ १० शत्रुनिकन्दन बलम् १ १६८.१० व्रजन्ति येन यस्मिन् वा (बलम्) ६ ३५ ५ योगबलम् ७ १२ **वृजनस्य**=दुखवर्जितस्य व्यवहारस्य १ १० १ ११ बलस्य पराक्रमस्य १ ६१ २१ **वृजनाः**=वृजन्ति येषु यैस्सह वा ते (नौकादय) ७ ३२.२७ **वृजने**=वर्जन्ति दुखानि येन बलेन तस्मिन् १ ५१ १५ अनित्ये कार्ये जगति २ २४ ११ वर्जन्ति दुखानि जना यत्र तस्मिन् व्यवहारे १ १० १ ८ वृजते शत्रून् येन तस्मिन् (आजौ=सङ्ग्रामे) १ ६३ ३ [वृजी वर्जने (अदा०) धातो 'कृपृवृजिमन्दि०' उ० २ ८१ सूत्रेण क्यु'। वृजन बलनाम निघ० २ ६]

वृजना वृजन्ति यैस्तानि (यानानि) ५ ५४ १२ [वृजनमिति व्याख्यातम्। तत शेर्लोपश्छन्दसि]

वृजनीषु वर्जनीयासु कक्षासु १ १६४ ६ [वृजी वर्जने (अदा०) 'कृपृवृजि०' उ० २ ८१ सूत्रेण क्यु। स्त्रिया ङीप् छान्दस]

वृजिनम् वर्जनीयम् (स्तेन=चोरम्) ६ ५१ १३. **वृजिनानि**=धनानि बलानि वा ५ १२ ५ बाधकानि (बलानि) ६ ५२ २ [वृजी वर्जने (अदा०) धातो 'वृजे किच्च' उ० २ ४७ सूत्रेण इनच्। वृजिनानि=वर्जनीयानि निघ० १० ४१]

वृजिनवर्त्तनिम् वृजिनस्य बलस्य वर्त्तनिर्मार्गो यस्य तम् (नर=मनुष्यम्), प्र०—अत्र 'सह सुपा' इति समास १.३१ ६ [वृजिन-वर्त्तनिपदयो समास]

वृजिना वृजिनानि बलानि ४ २ ११ वर्जितव्यानि पापानि २ २७ ३ [वृजिनमिति व्याख्यातम्। ततश्शेर्लोपश्छन्दसि]

वृजिनान् पापान् ३ ३४.६ **वृजिनाः**=पापाऽऽचारा वर्जनीया (चौरा) ५ ३ ११. [वृजी वर्जने (अदा०) धातो 'वृजे किच्च' उ० २ ४७ सूत्रेण इनच्]

वृज्यते त्यज्यते १ ८३.६ **वृज्याम्**=त्यजेयम् २ २७ ५ **वृज्याः**=वृणक्तु ६ २८ ७ [वृजी वर्जने (अदा०) धातो कर्मणि लट्। अन्यत्र लिङ्]

वृज्याः वर्जनीया पीडा २ ३३ १४ [वृजी वर्जने (अदा०) धातो 'ऋदुपधाच्च०' अ० ३ १ ११०. सूत्रेण क्यप्। ततष्टाप्]

वृञ्जते त्यजन्ति ७ २४ **वृञ्जन्ति**=त्यजन्ति, प्र०—अत्र व्यत्ययेन परस्मैपदम् ६ ३६ २ **वृञ्जे**=वृञ्जते, प्र०—अत्र 'लोपस्त आत्मनेपदेषु' इति तलोपो व्यत्ययेनाऽऽत्मनेपदञ्च १ १४२ ५ त्यजामि ६ ११ ५ छिनद्मि १ ११६ १ [वृजी वर्जने (रुधा०) धातोर्लट्। व्यत्ययेनात्मनेपदम्]

वृणक् वृणक्ति ७ १८ १२ छिनत्ति ६ १८ ८ **वृणक्ति**=छिनत्ति ३ २६ ६ सम्भजति ४ ७ १० वर्जयति, प्र०—अत्राऽन्तर्गतो ण्यर्थ ४ २६ दूरीकरोतु ६ ५१ १६ त्यजति १ १२४ ६ **वृणक्तु**=पृथक्करोतु १६ ५० परित्यजतु १६ १२ छिन्नो भवतु १३ ४५ **वृणक्षि**=त्यजसि १ ५४ ५ [वृजी वर्जने (रुधा०) धातोर्लट्। अडभावश्छान्दस'। अन्यत्र लोट्। वृणक्ति वधकर्मा निघ० २ १६]

वृणते स्वीकुर्वन्ति ६ १७ ८. सम्भजन्ति १ १४१ ६ सम्भजन्ते १ ५८ ७ **वृणीत**=स्वीकुर्यात् ४ ८ वृणीते, प्र०—अत्र लडर्थे लङ् १ १३ **वृणीते**=स्वीकुरुते ४ २५ ३ **वृणीध्वम्**=स्वीकुरुत ५ २८ ६ **वृणीमहि**=सम्भरेमहि १ १३६ १ **वृणीमहे**=स्वीकुर्महे १ १२ १ **वृणीष्व**=स्वीकुर्य्या ४ ३१ ११ **वृणे**=स्वीकरोमि ३ १२ ३ शुभगुणैराच्छादयामि ३ ३७ ६. प्राप्नुयाम् ३ १२ ५ **वृण्वते**=सम्भजन्ते १ ५ ४ स्वीकुर्वन्ति ७.३२.१६ **वृण्वे**=स्वीकुर्य्याम् ४.२१ ८. [वृञ् वरणे

विरिति शकुनिनाम वेनेर्गतिकर्मणः नि० २ ६]

वीः व्यापक (विद्वज्जन) १ ४३ ६. [वी गति-व्याप्तिप्रजनादिषु (अदा०) धातो क्विप्]

वुरीत वृणुयात्, प्र०—अत्र व्यत्ययेनात्मनेपद 'बहुल छन्दसि' इति शपो लुक्, लिङ्-प्रयोगोऽयम् २२ २१ वृणीयात् ४ ८ स्वीकुर्यात् ११ ६७ [वृञ वरणे (क्र्या०) धातोर्लिडि छान्दस रूपम्]

वृकतातिः वृको वज्र एव २ ३४ ६ [वृकप्राति० स्वार्थे तातिल् छान्दस । वृक वज्रनाम निघ० २ २०]

वृकतिः वृकवच्छत्रुहिंसक (शत्रुजन) ४ ४१ ४. [वृकप्राति० प्रशसायामर्थे 'वृकज्येष्ठाभ्याम्०' अ० ५ ४ ४१ सूत्रेण तिल्]

वृकद्वरसः वृकस्य मेघस्य द्वाराणि २ ३० ४ [वृक-द्वरस्पदयो समास । वृक पदनाम निघ० ४ २.]

वृकम् अजादीना हन्तारम् (पशुविशेषम्) १६ १० विद्युतम् ११०५ ११ स्तेनम् ७ ३८ ७ चोरम् ६ १६ **वृकस्य**=वृक इव वर्त्तमानस्य चोरस्य २ २९ ६ व्याघ्रस्य ३३ ५१ वन्यस्य पशुन १ ११७ १६ यो वृञ्चति छिनत्ति तस्य (पशुविशेषस्य) १६ ६२ **वृकः**=स्तेनो व्याघ ११०५ ७ चित्रक २४ ३३ वृकवदुत्कोचकश्चोर २ २८.१० वज्र २१ ३८ यथा चन्द्रमा शान्तगुणस्तथा ११०५ १८ **वृकेन**=छेदकेन शस्त्राऽस्त्रादिना १ ११७ २१ [वृञ् वरणे (स्वा०) धातो 'सृवृभूशुषिमुषिभ्य कक्' उ० ३ ४१ सूत्रेण कक् । वृक वज्रनाम निघ० २ २० स्तेन-नाम निघ० ३ २४ पदनाम निघ० ४ २ वृकश्चन्द्रमा भवति विवृतज्योतिष्को वा विकृतज्योतिष्को वा विक्रान्त-ज्योतिष्को वा । आदित्योऽपि वृक उच्यते यदा वृङ्क्ते । श्वापि वृक उच्यते । विकर्त्तनात् नि० ५.२०-२१ वृको लागल भवति विकर्त्तनात् नि० ६ २६ अथ यत् कर्णा-भ्यामद्रवत् ततो वृक समभवत् श० ५ ५ ४ १० मूत्रा-देवास्यौजोऽस्रवत् । स वृकोऽभवद् आरण्याणा पशूना जूति श० १२ ७ १ ८]

वृकीः स्तेनस्त्री, प्र०—अत्र 'सुपा सुलुक्०' इति सो स्थाने सु १ ११७ १८ [वृद्धवाशिन्यपि वृक्युच्यते नि० ५ २१ वृकप्राति० स्त्रिया ङीप् । जातिवाचित्वात्]

वृक्कः रोगादिवर्जयिता (ईश्वर) १ १८७ १० **वृक्काभ्याम्**=याभ्या वर्जन्ति ताभ्याम् (क्रियाभ्याम्) २५ ८ [वृजी वर्जने (अदा०) धातोर्बाहु० औणा० कन् स च कित्]

वृक्णास. छिन्नाऽविद्या (ऋत्विज) ३.८ ७ [ओव्रश्चू छेदने (तुदा०) धातो क्त । 'ओदितश्चे' ति निष्ठानत्वम् । 'ग्रहिज्या०' इत्यादिना सम्प्रसारणम् । ततो जसोऽसुक्]

वृक्तबर्हिषः वृक्त वर्जित बर्हिर्यैस्ते (विद्वज्जना) ३३ ५८ वृक्त छेदित धूमेन बर्हिरन्तरिक्ष यैस्ते ऋत्विज ३ २ ५ शिल्पफलनिष्पादिन ऋत्विज १ ३ ३ वृक्त विदीर्णीकृत हुतपदार्थैरन्तरिक्ष यैस्त ऋत्विज ५ ३५ ६ वृक्त छेदित बर्हिरुदक येन तस्य (विद्युत इवाऽध्यापकस्य), प्र०—बर्हिरित्युदकनाम निघ० १ १२, ६ ६८ १ श्रोत्रिया ऋत्विज इव सर्वविद्यासु कुशला ५ २३ ३ वृक्त वर्जित बर्हिर्यस्मिन् तस्य (निवासस्य) ५ ६ २ [वृक्त-बर्हिष्पदयो समास । वृक्तम्=वृजी वर्जने (अदा०) धातो क्त । बर्हिष्—बर्हि अन्तरिक्षनाम निघ० १ ३ उदकनाम निघ० १ १२ पदनाम निघ० ५ २ वृक्तबर्हिष ऋत्विङ्नाम निघ० ३ १८]

वृक्ये वृकेषु स्तेनेषु भवे व्यवहारे ६ ५१ ६ वृकस्य स्तेनस्य स्त्रियै स्तेन्यै १ ११६ १६ [वृकप्राति० भवार्थे यत् । वृकीप्राति० वा चतुर्थी । आटोऽभावश्छान्दस]

वृक्षकेशा वृक्षा केशा इव येषा शैलाना ते ५ ४१ ११ [वृक्ष-केशपदयो समास]

वृक्षम् यो वृश्च्यते छिद्यते त कार्यकारणाख्य वा (जगत्) १ १६४ २० वृश्चनीय जल स्थल वा २ ३९ १ वटादिकम् ५ ५४ ६ अनादिमूलरूप कारण और शाखा-रूप कार्ययुक्त (जगत्) स० प्र० २८३, १ १६४ २० **वृक्षस्य**=छेद्यस्य (तरो) ६ ५७ ५ व्रश्चितु छेत्तु योग्यस्य ससाराख्यस्य राज्यस्य २३ २४ **वृक्षः**=यो वृश्च्यते छिद्यते स समार १७ २० **वृक्षे**=व्रश्चनीये छेदनीये शत्रुसैन्ये १६ ५१ **वृक्षेभ्यः**=ये शत्रून् वृश्चन्ति छिन्दन्ति तेभ्य (जनेभ्य) पादपेभ्यो वा १६ ४० **वृक्षान्**=छेत्तुमर्हान् (वटादिकान्) ५ ८३ २ [ओव्रश्चू छेदने (तुदा०) धातो 'स्नुव्रश्चिकृत्युषिभ्य कित्' उ० ३ ६६ सूत्रेण स प्रत्यय । कित्त्वाद् गुणो न भवति । वृक्ष व्रश्चनात् । वृत्वा क्षा तिष्ठतीति वा नि० २ ६ श्रीर्वै वृक्षस्याग्रम् तै० ३ ६ ७ ४]

वृक्षि वर्जयेयम्, प्र०—अत्र वृजी वर्जने, इत्यस्मा-ल्लिडर्थे लुङ् 'छन्दस्युभयथा' इति सार्वधातुकाश्रयणादिण् न । समीक्षा—वृजीत्यस्य सिद्धे सति सायणाचार्येण ओव्रश्चू इत्यस्य व्यत्यय मत्वा प्रमादादेवोक्तमिति

रक् । वृत्र मेघनाम निघ० १ १० वृत्र धननाम निघ० २ १० वृत्रो वृणोतेर्वा वर्त्ततेर्वा वर्धतेर्वा । यदवृणोत्तद् वृत्रस्य वृत्रत्वमिति विज्ञायते । यदवर्त्तत तद् वृत्रस्य वृत्रत्वमिति विज्ञायते । यदवर्धत तद् वृत्रस्य वृत्रत्वमिति विज्ञायते नि० २.१७ तत्को वृत्र ? मेघ इति नैरुक्ता । त्वाष्ट्रोऽसुर इत्यैतिहासिका नि० २ १६ वृत्रो ह वाऽइद सर्व वृत्वा शिश्ये । यदिदमन्तरेण द्यावापृथिवी स यदिद सर्व वृत्वा शिश्ये तस्माद् वृत्रो नाम श० १ १ ३ ४ स यद् वर्त्तमान समभवत् तस्माद् वृत्र श० १ ६ ३ ६ तथैवैतद् यजमान पौर्णमासेनैव वृत्र पाप्मान हत्वापहतपाप्मैतत् कर्मारभते श० ६ २.२ १६ पाप्मा वै वृत्र श० ११ १ ५ ७ (यजु० ११ ३३) वृत्रहण पुरन्दरमिति पाप्मा वै वृत्र पाप्महन पुरन्दरमित्येतत् श० ६ ४ २ ३. इन्द्रो वै वृत्रहा कौ ४ ३ वृत्रशङ्कु दक्षिणतोऽश्मस्यैवानत्ययाय श० १३ ८ ४ १. (यजु० १० ८) त्वयाय वृत्र वधेदिति त्वयाय द्विषन्त भ्रातृव्य वधेदित्येवैतदाह श० ५ ३ ५ २८ यदिमा प्रजा अशनमिच्छन्तेऽस्माऽएवैतद् वृत्रायोदराय बलि हरन्ति श० १ ६ ३.१७ (इन्द्र) त (वृत्र) द्वेधान्वभिनत्तस्य यत् सौम्य न्यक्तमास त चन्द्रमस चकाराथ यदस्या सूर्यमास तेनेमा प्रजा. उदरेणाविध्यत श० १ ६ ३ १७ वृत्रो वै सोम आसीत् श० ३ ४ ३ १३ अथैष एव वृत्रो यच्चन्द्रमा श० १ ६ ४ १३ महनाम्नीभिर्वा इन्द्रो वृत्रमहन् कौ० २३ २ (इन्द्र.) एताभि (अद्भि) ह्येनम् (वृत्रम्) अहन् श० ११ ३ ८ वृत्रतुर (यजु० ६ ३४) इति वृत्र ह्येता (आप) अघ्नन् श० ३ ६ ४ १६ आपो ह वै वृत्र जघ्नुस्तेनैवैतद् वीर्येणाप स्यन्दन्ते श० ३ ६ ४ १४. महाहविषा ह वै देवा वृत्र जघ्नु श० २ ५.४ १ एतैर्वै (साकमेधै) देवा वृत्रमघ्नन्नेतैर्वेव व्यजयन्त येयमेषा विजितिस्ताम् श० २ ५ ३ १ (वृत्रस्य वधसमये) महान् घोष आसीत् ता० १३ ४ १ तस्य (वृत्रस्य) एतच्छरीर यद् गिरयो यदश्मान श० ३.४ ३ १३ वृत्रस्य ह्येष कनीनक (यदाञ्जनम्) श० ३ १ ३ १५ मरुतो ह वै सातपना मध्यन्दिने वृत्र सन्तेपु. स, सतप्तोऽनन्नेव प्राणन् परिदीर्ण: शिश्ये श० २ ५ ३ ३ मरुतो ह वै क्रीडिनो वृत्र हनिष्यन्तमिन्द्रमागत तमभित परिचिक्रीडुर्महयन्त श० २ ५ ३ २० स यो हैवमेत वृत्रमन्नाद वेदान्नादो हैव भवति श० १.६ ३ १७ वार्त्रघ्न वै पौर्णमास (हवि) इन्द्रो ह्येतेन वृत्रमहन्नथैतदेव वृत्रहत्य यदामावास्य (हवि) वृत्र ह्यस्माऽएतज्जघ्नुषऽआप्यायनमकुर्वन् श० १.६.४ १२.]

वृत्रहणम् यो वृत्र मेघ सूर्य इव शत्रून् हन्ति तम् (वीरपुरुषम्) ६ १७ ११ येन वृत्र हन्ति तम् (वज्रम्) ६ २० ६ शत्रूणा हन्तारम् (इन्द्र=शालाध्यक्षम्) प्र०—अत्र 'हन्तेरत्पूर्वस्य' अ० ८ ४ २२ इति णत्वम् १ १० ६ ६ **वृत्रहणौ**=वृत्रस्य मेघस्य हन्तारौ (इन्द्राग्नी=वायुसवितारौ) १ १० ८ ३ **वृत्रहन्**=मेघहन्ता सूर्य इव शत्रुहन्त सेनापते १७ ४२ यो वृत्र धन हन्ति प्राप्नोति तत्सम्बुद्धौ (राजन्) ३.४० ८ प्राप्तधन (राजन्) ४ ३२ ११ **वृत्रहभि:**=यै कर्मभिर्वृत्र हतस्तै ६ ६० ३ **वृत्रहा**=यो वृत्र मेघ हन्ति स (इन्द्र =वायु), प्र०—अत्र 'ब्रह्मभ्रूणवृत्रेषु क्विप्' अ० ३ २ ८७ अनेन हनधातो क्विप् १ १६ ८ यो दु खप्रदान् शत्रून् मेघदोषान्वा हन्ति स (परमेश्वर ओषधिराजो वा) १.६११ ५ मेघहन्ता सूर्य इवाऽविद्याऽन्धकारनाशक ईश्वर १ ७४ ३. तत्तत्पापफलदानेन यो वृत्रान् धर्माऽवरकान् हन्ति स (इन्द्र = परमेश्वर सभाध्यक्षो वा) १ १००.२ यो वृत्र मेघ हन्ति स सूर्य २० ७५. मेघ का नाश करने वाला (सूर्य) स० वि० १६५, ६ ११३ १ [वृत्रमिति व्याख्यातम् । तदुपपदे हन हिंसागत्यो (अदा०) धातो 'ब्रह्मभ्रूणवृत्रेपु क्विप्' अ० ३ २ ८७ सूत्रेण क्विप् । वृत्रहणम्=मेघहनम् नि० ७ २३]

वृत्रहणा वृत्र दुष्टमसुरप्रकृति हन्तारौ सभासेनेशौ ३ १२ ४ यौ वृत्र मेघ हतस्तौ (विद्युतौ=राजाऽमात्यौ) ६ ६० ३. [वृत्रहणमिति व्याख्यातम् । ततो द्विवचनस्याकारादेशश्छान्दस]

वृत्रहत्याय मेघस्य हननाय ५.२६ ७ सङ्ग्रामाय ६ १८ ६ **वृत्रहत्ये**=वृत्रस्य हत्या हननमिव शत्रुहनन यस्मिन्त्सङ्ग्रामे तस्मिन् ४ १६ १ महासङ्ग्रामे ४ २४.२ वृत्रस्य शत्रुसमूहस्य मेघस्य वा हत्या हनन येन तस्मिन् सङ्ग्रामे १.१०६ ५. [वृत्रोपपदे हन हिंसागत्यो (अदा०) धातो 'हनस्त च' अ० ३.१ १०८ सूत्रेण क्यप् तकारश्चान्तादेश]

वृत्रहत्ये वृत्रस्य दुष्टस्य हत्ये हननाय ३३.५० [वृत्रोपपदे हन हिंसागत्यो (अदा०) धातो 'हनस्त च' सूत्रेण क्यप्]

वृत्रहथानाम् वृत्रा मेघा इव वर्त्तमाना शत्रवो हथा हता यैस्तेषाम् (पुरुषार्थिजनानाम्) ३ १६ १ [वृत्र-हथपदयो समास । हथ =हन हिंसागत्यो (अदा०) धातो 'हनिकुषि०' उ० २ २ सूत्रेण क्थन्]

वृत्रहन्तम यो वृत्र धन हन्ति प्राप्नोति सोऽतिशयित-

(क्र्या०) धातोर्लट्। अन्यत्र लिड् लोट् च। वृण्वते प्रयोगे वृञ् वरणे (स्वा०) धातोर्लट्]

वृणानः स्तूयमान (सोम =उत्पन्न पदार्थसमूह) १ १०८ ६ **वृणानाः**=स्वीकुर्वाणा (प्रजापुरुषा) ७ १८ १२ [वृञ् वरणे (क्र्या०) धातो शानच्]

वृतञ्चयः यो वर्त्तते त चिनोति स (शमादिशुभकर्माचारिजन) २ २१ ३ [वृतोपपदे चिञ् चयने (स्वा०) धातो खश्छान्दस। वृतम्=वृतु वर्त्तने (भ्वा०) धातोर्वाहु० औणा० क]

वृतम् स्वीकृतम् (क्षोद =उदकम्) ६ १७.१२ स्वीकर्त्तव्यम् (ग्रश=सेवाविभागम्) १ १०२.४. **वृताः**= कृतस्वीकारा (नर =नायका जना) ४ ४२ ५ [वृञ् वरणे (स्वा०) धातो क्त। वृतम् धननाम निघ० २ १०]

वृतया आवरकया क्रियया ५ ४८ २ [वृतप्राति० स्त्रिया टाप्। वृतम् इति व्याख्यातम्। वृञ् आवरणे (चुरा०) धातो क्त]

वृता या वर्त्तते तया (शचिष्ठया=अतिशयितया क्रियया) २७ ३६ संयुक्तया (शचिष्ठया) ४ ३१ १ वर्त्तमानया (शचिष्ठया=प्रज्ञया) ३ ६ ४ [वृतु वर्त्तने (भ्वा०) धातोर्वाहु० औणा० क। तत स्त्रिया टाप्]

वृतासः स्वीकृता (सूर्यवज्जना) ७ ३३ ५ [वृतमिति व्याख्यातम्। ततो जसोऽसुक्]

वृतेव वर्त्तन्ते यस्मिँस्तेन मार्गेण ६ १ ३. [वृत+इव-पदयो समास]

वृतौ सवृतावाच्छादने ५ ३७ ५ [वृञ् आवरणे (चुरा०) धातो क्त]

वृत्तम् सर्वतो दृढम् (चक्रम्) ४ ३१ ४ [वृतु वर्त्तने (भ्वा०) धातो क्त। 'णेरध्ययने वृत्तम्' अ० ७ २ २६ सूत्रेण वाऽध्ययने णेर्लुक् इडभावश्च निपात्यते]

वृत्रखादः यो वृत्र मेघ खादति किरणो वायुर्वा ३ ४५ २ यो वृत्र खादति स्थिरीकरोति (राजा) ३ ५१ ९ [वृत्रोपपदे खाद भक्षणे (भ्वा०) धातो 'कर्मण्यण्' इत्यण् वृत्र मेघनाम निघ० १ १०]

वृत्रघ्ना वृत्र मेघ हन्ति यस्तेन सूर्येणेव (पराक्रमेण) १ १७५ ५ **वृत्रघ्ने**=य सूर्यो वृत्र मेघ हन्ति तद्वद्वर्त्तमानाय (सज्जनाय) ३ ३१ १४ [वृत्रोपपदे हन हिंसागत्यो (अदा०) धातोर् मूलविभुजादित्वात् क। टक् वा 'कृतो वहुल वे' ति वार्तिकेन। या रोहिणी (गौ) सा वार्त्रघ्नी यामिद राजा सग्राम जित्वोदाकुरुते श० ३ ३.१ १४ वार्त्रघ्न वै धनु श० ५ ३ ५ २७]

वृत्रघ्नी मेघहन्त्री विद्युदिव (सरस्वती=वाणी) ६ ६१ ७ [वृत्रोपपदे हन्ते कर्त्तरि टक्। तत स्त्रिया ङीप्]

वृत्रतरम् अतिशयेनाऽऽवरकम् (वृत्र=मेघम्) १ ३२ ५ अत्यन्तवलवन्तम् (वृत्रम्=मेघम्) ऋ० भू० ३०३ १ ३२ ५ [वृत्रप्राति० अतिशायने तरप्]

वृत्रतुरम् यो वृत्र मेघ धन वा त्वरयति तम् (इन्द्र=सूर्यम्) ४ ४२ ८ वृत्रानिव शत्रूँस्तुर्वति हिनस्ति येन तम् (श्रेष्ठ विजयम्) ६ २० १ **वृत्रतुरः**=वृत्र मेघ तूर्वति यास्ता विद्युत इव ६ ३४ [वृत्रोपपदे तुर्वी हिंसार्थे (भ्वा०) धातो क्विप्। ञित्वर सम्भ्रमे (भ्वा०) धातोर्वा क्विप्। (यजु० ६ ३४) वृत्रतुर इति वृत्र ह्येता (आप) अघ्नन् श० ३ ९ ४ १४]

वृत्रतुरा यौ वृत्राणा मेघवदुन्नताना शत्रूणा तुरौ हिंसकौ (सभासेनेशौ) ६ ६८ २ [वृत्रतुरमिति व्याख्यानम्। ततो द्विवचनस्याकारादेश]

वृत्रतूर्ये वृत्रस्य मेघस्य तूर्यो वधस्तस्मिन्, प्र०—वृत्र इति मेघनामसु पठितम् निघ० १ १० तूरी गतित्वरणहिंसनयो इत्यस्मात् कर्मणि ण्यत् वृत्रतूर्य इति सङ्ग्रामनाम निघ० २ १७, १ १३ शत्रुवधे २ २६ २ वृत्रस्य मेघस्य तूर्यं हनन यत्र तद्वद्वर्त्तमाने सङ्ग्रामे ६ १३ १ मेघस्य हिंसने ६ ६१ ५ वृत्रस्य तूर्ये शीघ्रवेगे १ १३ **वृत्रतूर्येषु**=वृत्राणा शत्रूणा मेघावयवाना वा तूर्येषु हिंसनकर्मसु सङ्ग्रामेषु १ १०६ २ [वृत्र-तूर्यपदयो समास। वृत्रमिति व्याख्यास्यते। तूर्यम्=तूरी गतित्वरणहिंसनयो (दिवा०) धातोर्ण्यत्। वृत्रतूर्ये सग्रामनाम निघ० २ १७]

वृत्रपुत्रा वृत्र पुत्र इव यस्या सा (सू =माता) १ ३२ ९ [वृत्र-पुत्रपदयो समास]

वृत्रम् मेघमिव न्यायाऽऽवरक शत्रुम् १० ८ मेघमिवाऽविद्याम् ४ १८ ११ प्रकाशाऽऽवरक मेघमिव धर्माऽऽवरकम् (दुष्ट शत्रुम्) ३ ३ २६ आच्छादकम् (अहिं=मेघम्) ६ २० २ जल स्वीकुर्वन्त प्रजासुख स्वीकुर्वन्त वा (मेघ शत्रु वा) १ ८० २ धनम् ७ ४८ २ वरणीयम् (धनम्) १ १८७ १ **वृत्राणाम्**=धर्माऽऽवरकाणाम् (दुर्जनानाम्) ६ २६ ८ वृत्रवत् मुखावरकाणा शत्रूणा मेघाना वा १ ४८ **वृत्राणि**=आवरका घना इव शत्रुसैन्यानि ३ ३०.२२ प्रेमास्पदवस्तूनि ३ ५० ५ वृत्रसम्वन्धिभूतानि जलानि १ ८४ १३ शत्रूणामावरकाणि कर्माणि १ ५३ ६ [वृतु वर्त्तने (भ्वा०) धातो 'स्फायितञ्चि०' उ० २ १३ सूत्रेण

वर्धकस्य (राय=धनस्य राज्यस्य वा) ७ ३० १ **वृधे**= वृद्धये ४ २३ २ वर्धनाय ४ २ १८ वृद्धि वा रक्षा के लिए आर्याभि० १ १०, ऋ० १ ६ १५ ५ [वृधु वृद्धौ (भ्वा०) धातो कर्त्तरि क्विप्]

वृधसानः यो वृधान् वर्द्धकान् विभजति सः (अग्नि= राजा) ४ ३ ६ वर्धमान (तोद=व्यथनम्) ६ १२ ३ [वृधमिति व्याख्यातम्। तदुपपदे पण् सम्भक्तौ (भ्वा०) धातो 'कर्मण्यण्' इत्यण्। अथवा वर्धतेर्वा 'ऋञ्जिवृधिमन्दि०' उ० २ ८७ सूत्रेण असानच्]

वृधसानासु वर्धमानासु प्रजासु २ २ ५ [वृधसान इति व्याख्यातम्। ततष्टाप् स्त्रियाम्]

वृधसे वर्धितुम् ५ ६४ ५ [वृधु वृद्धौ (भ्वा०) धातो-स्तुमर्थे कसेन्]

वृधस्नू यौ वृधान् प्रस्नवतस्तौ (वाय्वग्नी) ४ २ ३ [वृधोपपदे ष्णु प्रस्नवणे (अदा०) धातो क्विप्]

वृधातः वर्द्धेताम्, प्र०—अत्र, लेटि विकरणव्यत्ययेन श परस्मैपदञ्च २० ४२ [वृधु वृद्धौ (भ्वा०) धातोर्लेट्। व्यत्ययेन श परस्मैपदञ्च]

वृधानः वर्द्धमानो वर्धयिता वा (कालो विद्युदग्निर्वा) १.६५ ११ वृद्ध कुर्वन् (जगदीश्वर) १७ २१ वर्द्धमान (घृतयोनि=अग्नि), प्र०—अत्र 'वहुल छन्दसि' इति शानचि शपो लुक् ३५ १७ [वृधु वृद्धौ (भ्वा०) धातो शानच्। 'वहुल छन्दसी' ति शपो लुक्]

वृधासः सुखवर्द्धका (विश्वेदेवा=विद्वज्जना) १ ८६ २ वर्धमाना वर्द्धयितारो वा (मरुत=विद्वासो जना) १ १७१ २ [वृधप्राति० जसोऽसुक्। वृध=वृधु वृद्धौ (भ्वा०) धातोर्वाहु० औणा० क]

वृधि उद्घाटयोद्घाटयति वा, प्र०—अत्र वृञ् धातो प्रयोग 'वहुल छन्दसि' अ० २ ४.७३ अनेन श्नोर्लुक् 'श्रुशृणुपृकृवृभ्यश्छन्दसि' अ० ६ ४ १०२ अनेन हेर्धि १ ७ ६ दूरी कुरु ७ १७ २ वर्धय ४ ३१ १३ वृणु वृणोति वा, प्र०—अत्र पक्षान्तरे सूर्यस्य प्रत्यक्षत्वात् प्रथमाऽर्थे मध्यम १.१० ७ [वृञ् वरणे (स्वा०) धातोर्लोट्। 'वहुल छन्दसी' ति शपो लुकि श्नोरपि लुक्। हेर्धिरादेश-श्छान्दस]

वृश्च छिन्धि १ ५१ ७ **वृश्चत्**=छिनत्ति १ ६१ १० **वृश्चति**=छिनत्ति ३ ५३ २२ **वृश्चन्ति**=छिन्दन्ति ६ २.६ **वृश्चसि**=छिनत्सि १ १३० ४ **वृश्चः**=छिन्धि ४ १७ ७ [ओव्रश्चू छेदने (तुदा०) धातोर्लोट्। 'ग्रहिज्या०' इति सम्प्रसारणम्। अन्यत्र लङ् लट् च। वृश्चति वधकर्मा निघ० २ १६ वृश्चति दानकर्मा निघ० ३ २०]

वृश्चद्वनम् वृश्चन् छिन्दद्वन यस्मिन् तत् (रोगरहित-मपत्यम्) ६ ६१ १ [वृश्चद्-वनपदयो समासः। वृश्चत्= ओव्रश्चू छेदने (तुदा०) धातो. शतृ]

वृश्चिक यो वृश्चति छिनत्त्यङ्गानि तत्सम्बुद्धौ (प्राणिन्) १.१६१ १६ [ओव्रश्चू छेदने (तुदा०) धातो 'वृश्चिकृपो किकन्' उ० २ ४० सूत्रेण किकन्]

वृषकर्मन् वृषस्य मेघस्य कर्माणीव कर्माणि यस्य तत्सम्बुद्धौ (इन्द्र=सभेश) १.१३० १० वृषस्य श्रेष्ठस्येव कर्माणि यस्य तत्सम्बुद्धौ (इन्द्र=सभाध्यक्ष) १ ६३.४ [वृष-कर्मन्नुपदयो समास। वृष=वृषु सेचने (भ्वा०) धातोरिगुपधलक्षण क]

वृषक्रतुः वृषा वलवती क्रतु प्रज्ञा यस्य स (इन्द्र= वीरपुरुषो राजा) ६ ४५.१६ **वृषक्रतो**=वृषाणा वलवता प्रज्ञाकर्माणीव प्रज्ञाकर्माणि यस्य तत्सम्बुद्धौ (राजन्) ५.३६ ५ [वृषा-क्रतुपदयो समास.। क्रतु प्रज्ञानाम निघ० ३ ६]

वृषखादयः ये वृषान् रसवर्षकान् पदार्थान् खादयन्ति ते (नर=नायका जना) १ ६४ १० [वृष-खादिपदयो समास। खाद् भक्षणे (भ्वा०) धातो 'इक् कृष्यादिभ्य' इतीक्। अन्तर्भावितण्यर्थ]

वृषजूतिः वृषस्येव जूतिर्वेगो यस्य स (इन्द्र=राजा) ५.३५ ३ [वृष-जूतिपदयो समास। जूति=जु इति सौत्रो धातु। तत 'ऊतियूति०' सूत्रेण क्तिन् दीर्घश्च]

वृषणम् यो वर्षति जल स वृषा तम् (मेघम्), प्र०— अत्र 'कनिन्युवृषि०' उ० १ १५६. इति कनिन् प्रत्यय 'वा षपूर्वस्य निगमे' अ० ६.४.६ इति विकल्पाद् दीर्घाऽभाव १ १६.१. वर्षयितारम् (अग्नि=सूर्याख्यम्) ११ ४६ विद्यावृष्टिकर्तारम् (अध्यापकम्) १ १०११ वलकरम् सोम=सोमलताद्योषधिरसम्) २ १६ ५ वृष्टिकर यज्ञम् ३४.१४ वलिष्ठम् (इन्द्र=शत्रुविदारक राजानम्) २० ५४ सुखवर्षकम् (रथ=विमानादियानम्) ५ ७५ १ सेचकम् (इन्द्र=परमेश्वरम्) १.१३१ ३. वीर्याधारम् २५ ७ अग्निजलवर्षणयुक्त यानसमूहम् १ ८५ ७ शत्रुसेनाया उपरि शस्त्राऽस्त्रवर्षानिमित्तम् (अश्व=विद्युतम्) १ ११८ ६ शत्रूणा शक्तित्ववन्धकम् (रथम्) १ ८२ ४. शत्रुसामर्थ्यप्रतिवन्धकम् (शुष्म=वलम्) ६ १६ ८ दृढम् (रथम्) १ १७७ ३ वीर्यवन्तम् (पतिम्) १ १७६ ४.

स्तत्सम्बुद्धौ (राजन्) ५ ३५ ६. अतिशयेन शत्रुविनाशक (राजन्) ५ ४० २ **वृत्रहन्तमम्**=यो वृत्र मेघ हन्ति तमतिशयित सूर्यमिव (साम) २० ३० [वृत्रहन् इति व्याख्यातम् । ततोऽतिशायने तमप्]

वृत्रहन्तमा अतिशयेन वृत्राणामावरकाणा पापिना हन्तारौ (अ०—सभासेनाध्यक्षौ) ३ ३ ७६ [वृत्रहन्तम इति व्याख्यातम् । ततो द्विवचनस्याकारादेश]

वृत्रहम् शत्रुनाशकम् (शव =वलम्), धनप्रापकम् (शव) ६ ४८ २१ [वृत्रोपपदे हन हिंसागत्यो (अदा०) धातो कर्त्तरि डश्छान्दस]

वृत्रा वृत्राणि मेघाऽवयवान् ४ १७ १६ मेघावयवरूपाणि धनानि ३ ३० ४ [वृत्रमिति व्याख्यातम् । ततो द्विवचनस्य 'सुपा सुलुक्०' इत्याकारादेश]

वृत्वाय स्वीकृत्य, प्र०—अत्र 'क्त्वो यक्' इति यगागम ११ १६ [वृञ् वरणे (स्वा०) धातो क्त्वा । क्त्वो यक्' अ० ७ १ ४७ सूत्रेण यगागम]

वृत्वी आवृत्य १ ५२ ६ [वृञ् आवरणे (चु०) धातो क्त्वा । 'स्नात्व्यादयश्च' अ० ७ १ ४६ सूत्रेण क्त्व ईकारान्तादेश]

वृथक् पृथक्, प्र०—अत्र वर्णव्यत्यय ३ ३ २ [पृथक् इति स्वरादिषु पाठादव्ययम् । पकारस्य वकारो व्यत्ययेन]

वृथा व्यर्थम् १ ५८ ४ मिथ्या १ १४० ५ निष्प्रयोजनाय १ १३० ५ [वृञ् वरणे (स्वा०) धातो था प्रत्ययश्छान्दस । अव्ययमेतत्]

वृथाषाट् यो वृथाऽनायासेन सहते स (इन्द्र = सभाध्यक्ष) १ ६३ ४ [वृथोपपदे षह मर्पणे (भ्वा०) धातो 'छन्दसि सह ' अ० ३ २ ६३ सूत्रेण ण्वि]

वृद्धम् प्रभूत वहुरूप धनादिकम् १८ ४ वयोविद्याभ्यामधिकम् (राजाऽमात्यम्) ७ १८ १२ मुक्ताऽऽयुष्क विद्यया महान्त वा (इन्द्र=परमेश्वरम्) ३ ३२ ७ विद्यावयोभ्या ज्येष्ठम् (अ०—आत्मानम्) ३ १ १४ सर्वेभ्यो विस्तीर्णम् (राजानम्) ४ १६ १ **वृद्धस्य**=ज्ञानादिगुणै श्रेष्ठस्य (सज्जनस्य) १ ५१ ६ **वृद्धः**=ज्ञानादिसर्वगुणग्रहणेन सर्वोपकारकरणे च श्रेष्ठ (इन्द्र =विद्वज्जन) १ ५ ६ स्थविर (इन्द्र =राजा) ६ ४४ ३ [वृधु वृद्धौ (भ्वा०) धातो क्त]

वृद्धमहाः वृद्धै पूजित (इन्द्र =राजा) ६ ३७ ५ वृद्धा महान्ता सहाया यस्य स (राजा) ६ २० ३ [वृद्धमहस्पदयो. समास । मह महन्नाम निघ० ३.३]

वृद्धयः वर्ध्यन्ते यास्ता (प्रशसा) १ १० १२ वृद्धयन्ते यास्ता) गिर =स्तुतिवाचः) ५ २६ [वृधु वृद्धौ (भ्वा०) धातो स्त्रिया क्तिन्]

वृद्धवयाः वृद्ध वयो जीवन यस्य स (राजा) २ २७ १३ [वृद्ध-वयस्पदयो समास । वय अन्ननाम निघ० २ ७]

वृद्धशवसः वृद्ध शवो वल येषा तत्सम्बुद्धौ (विद्वज्जना) ५ ८७ ६ [वृद्ध-शवस्पदयो. समास । शव उदकनाम (निघ० १ १२) वलनाम (निघ० २ ६) धननाम (निघ० २ १०]

वृद्धशोचिषः वृद्धा शोचिर्दीप्तिर्यस्य स (मित्र) ५ १६ ३ [वृद्धा-शोचिष्पदयो समास । शोचि ज्वलतोनाम निघ० १ १७]

वृद्धश्रवाः वृद्ध श्रव श्रवणमन्न वा सृष्टौ यस्य स (इन्द्र =परमेश्वर) १ ८६ ६ वृद्ध श्रव सर्वशास्त्रश्रवण यस्य स (इन्द्र =सेनाधीश) १० ६ [वृद्ध-श्रवस्पदयो समास । श्रव अन्ननाम निघ० २ ७ धननाम निघ० २ १० वृद्धोपपदाद्वा श्रु श्रवणे (भ्वा०) धातो 'गतिकारकोपपदयो पूर्वपदप्रकृतिस्वरत्वञ्च' उ० ४ २२७ सूत्रेणाऽसुन्]

वृद्धसेना. वृद्धा-प्रौढा सेना येषान्ते (देवा = विद्वज्जना) १ १८६ ८ [वृद्धा-सेनापदयो समास]

वृद्धायुम् आत्मनो वृद्धमिच्छतीति तम् (इन्द्रम्= ईश्वरम्) १ १० १२ वृद्ध इवाऽऽचरन्तम् (ईश्वर सभाध्यक्ष वा), प्र०—अत्र 'क्याच्छन्दसि' इत्यु ५ २६ [वृद्धपदाद् इच्छायामर्थे क्यजन्ताद्, आचारेऽर्थे वा क्यङन्तात् 'क्याच्छन्दसि' सूत्रेण उ]

वृद्धिः वर्द्धन्ते यया सत्क्रियया सा १८ ४ **वृद्ध्या**= वर्द्धनेन २३ १३ [वृधु वृद्धौ (भ्वा०) धातो स्त्रिया क्तिन्]

वृधन्तम् वर्धमान वर्धयन्त वा (सूनु=पुत्रम्) ६ ६६ ११ **वृधन्तः**=वर्धमाना (मरुत =जगद्धितैषिणो जना) ६ ४६ ११ [वृधु वृद्धौ (भ्वा०) धातो शतृप्रत्यय । 'वहुल छन्दसी' ति शपो लुक् । व्यत्ययेन परस्मैपदञ्च]

वृधम् वर्द्धक व्यवहारम् ३ १६ २ वर्धनम् १ १६७ ५ **वृधः**=वृद्धिकर (राजा) ६ ४८ २ वर्धक (राजा) ७ ३२ २५ [वृधु वृद्धौ (भ्वा०) धातोर्वाहु० औणा० क]

वृधः ये युद्धे वर्द्धन्ते तान् (वीरजनान्) १ ८१ २

'अन्मयादीनि छन्दसि' १४२०. इत्यनेन मतत्वया नलोपाऽभाव. 'उभनसन्नान्यपि छन्दसि दृश्यन्ते' इति पद-संज्ञाऽऽश्रयणात् टिलोपाऽभाव १.१०१० **वृषन्तमस्य**=अतिशयेन बलिष्ठस्य (राज.) ५ ३५ ३. अतिशयेनोत्तमाना कामानामभिवर्षयितुस्तव (इन्द्रस्य=ईश्वरस्य) १.१०.१०. **वृषन्तमः**=अतिशयेन सुखवर्षक (इन्द्र =परमेश्वर. सभाध्यक्षो वा) १ १०० २. अतिशयेन वृष्टिकर्त्ता (इन्द्र=विद्युत्) ६.५७४ [वृषन् इति व्याख्यातम् । ततोऽति-शायने तमप् । तस्य 'तरप्तमपौ घ.' इति घसंज्ञाया 'नाद् घस्य' अ० ८.२.१७. सूत्रेण नुट्]

वृषन्धिन् बलिष्ठाना धारकम् (चतुरश्रि=सेनाम्) ४ २२ २ [वृषन् इत्युपपदे डुधाञ् धारणपोषणयो (जु०) धातोः 'कृतो बहुलम्' इति कर्त्तरि क्वि । वृषन्धि. मेघनाम निघ० १.१०.]

वृषपर्वा वृषाणि समर्थानि पर्वाणि पालनानि यस्य स. (ऋभु=मेधाव्याप्तजन) ३ ३६ २ [वृष-पर्वन्पदयोः समास । पर्वन्=पॄ पालनपूरणयो (जु०) धातो 'स्नाम-दिपद्यर्ति० उ० ४.११३ सूत्रेण वनिप्]

वृषपाणयः वृषस्येव पाणिर्व्यवहारो येषान्ते (अश्वा =तुरङ्गा बलवद्यो वा) ६ ७५ ७. रक्षका वृषा बलिष्ठा वृषभादय उत्तमा प्राणिन पाणिवद् येषान्ते (राजपुरुषा) २९ ४४ [वृष-पाणिपदयो समास । पाणि.=पण् व्यवहारे स्तुतौ च (भ्वा०) धातो 'इण् अजादिभ्य.' इतीण्]

वृषपाणासः वर्षन्ति यैस्तानि वृषाणि पानानि येषान्ते (ओषधय=ओषधय) १.१३९ ६ [वृषपानपदयो समासे जसो ऽसुक् । पानम्=पा पाने (भ्वा०) धातोर्ल्युट्]

वृषपाणेषु ये वर्षन्ति पोषयन्ति ते वृषा सोमादय. पदार्थास्तेषा पानेषु १.५१ १२. [वृष-पानपदयो समास । 'वा भावकरणयो.' अ० ८.४ १०. सूत्रेण णत्वम्]

वृषप्रभर्मा यो वर्षणशील मेघं प्रबिभर्त्ति स. (सूर्य) ५.३२.४. [वृषोपपदे प्रोपसृष्टाद् डुभृञ् धारणपोषणयो (जु०) धातोर्मनिन्]

वृषभ श्रेष्ठ (सज्जन) २.३.११. उपदेशवर्षक (विद्वज्जन) १.१९५ ७. प्राप्तशरीरात्मबल (अग्ने=विद्वज्जन) ३ १५ ३ यो वर्षति तत्सम्बुद्धौ (जन) १७.८८. रोगनिवारणेन बलप्रद (रुद्र=वैद्य) २.३३.१५ परशक्ति-बन्धकत्वेन बलिष्ठ (राजन्) १.१७७ ३ **वृषभम्**=अत्युत्त-मम् (बृहस्पति=राजानम्) ३.६२.६. प्रशस्तम् (विद्वांसम्) ३.४.३ सर्वाभीष्टवर्षकम् (इन्द्र=परमेश्वरम्) १ ९.४ सर्वोत्कृष्ट बलिष्ठम् (इन्द्र=राजानम्) २८ ४. वृषभ इव बलिष्ठम् (राजानम्) ४ १८ १०. सर्वलोकस्तम्भकम् (सूर्यम्) १.१६० ३. **वृषभस्य**=वर्षकस्य सूर्यस्य ४ १.११. यज्ञादिद्वारा वृष्टिकरस्य (विद्वज्जनस्य) १.१४१.२ सुखाभि-वर्षकस्य सभापते: ८.४९ पुष्टिकरस्य (सोमस्य=रसस्य) २.१६.६ **वृषभः**=यो वृषान् वृष्टिनिमित्तानि भानि स. (सूर्य:) १.५४.२. जलवद् वर्षयति शत्रुसमूहम् १ ३३ १० बलीवर्द इव (मेघ.) ५.८३ १. अनन्तबल (परमात्मा) ३.५६ ३. दुष्टसामर्थ्य-हन्ता (अलविद्यो जन) २.१.३ सुखाना वर्षणात् (परमात्म-बोधो धर्मव्यवहारो वा) ४ ५८.३. मेघशक्तिनिरोधक. (इन्द्र =सूर्यलोक) २ १२ १२. शरीरात्मबलैश्वर्ययुक्त (इन्द्र=सेनापति) ७ ३८ सुखानामभिवर्षक (अ०—यज्ञ शब्दो वा) १७ ९१ अत्यन्त कर्त्ता (इन्द्र.=राजा) ६.४४.२१. अतीव बलवान् (राजा) १ १७७ १. विद्वच्छिरोमणि. (अध्यापक:) १ १६० ८ यो वर्षति सुखानि स (जगदीश्वर) १.३१.५. [वृषु सेचने (भ्वा०) धातो 'ऋषिवृषिभ्या कित्' उ० ३.१२३ सूत्रेणाभच् कित्त्व । वृषभ पदनाम निघ० ५.३. वृषभ वर्षितापाम् नि० ९ ८. वृषभ. प्रजां वर्षतीति वाति-बृहति रेत इति वा तद् वृषकर्मा वर्षणाद् वृषभ. नि० ९ २२. वृषभ इति । एष (आदित्य) ह्येवाऽऽसाम्प्रजानाम् ऋषभ: जै० उ० १.२९.८ स एष (आदित्य) सप्तरश्मि-र्वृषभस्तुविष्मान् (ऋ० २ १२.१२. जै० उ० १.२८.२]

वृषभान्नाय वृषभमन्नं यस्मात्तस्मै (सूर्याय) २.१६.५ [वृषभ-अन्नपदयो समास]

वृषभासः वर्षका (अद्रय =मेघा.) २ १६ ५. परशक्तिबन्धका (अश्वा) १.१७७.२. [वृषभप्राति०-जसोऽसुक् । वृषभ इति व्याख्यातम्]

वृषभेव बलिष्ठवृषभवत् (राजपुरुष:) ६.४६.४. [वृषभ-इवपदयोः समास]

वृषमणः वृषेषु शूरवीरेषु मनो विज्ञानं यस्य तत्सम्बुद्धौ (इन्द्र=सभाध्यक्ष) १.६३.४. वृषस्य बल-युक्तस्य मन इव मनो यस्य तत्सम्बुद्धौ (इन्द्र=राजन्) ४.२२.६. **वृषमणाः**=वृषे वीर्यसेचने मनो यस्य स (कुमार) १ १६७ ७ [वृष-मनस्पदयो. समास.]

वृषमन्यवः वृषस्य मन्युरिव मन्युर्येषान्ते (जना.) १ १३१.२. [वृष-मन्युपदयो समास:]

वृषरथः बलिष्ठा वृषभा रथे यस्य स (राजा)

वृषणः=वृष्टिकरा (पर्वतास=मेघा) ३ ५४.२० वीर्य सींचने में समर्थ पूर्ण-युवावस्थायुक्त पुरुष-गण स० प्र० ११०, ११७६ १. बलवन्त (शिल्पिजना) ११०९ ३ वर्षन्ति ये तत्सम्बुद्धौ (सभाद्यध्यक्षादय) १८५ १२ प्रबला युवान (अत्या=अश्वा) ११७७ २. **वृषणे**=वीर्यसेचनसमर्थाय प्राप्तचत्वारिंशद्वर्षाय ब्रह्मचारिणे ३ ५७ ३ **वृषन्**=वर्षति सुखानि तत्सम्बुद्धौ वर्षयति जल स वा (इन्द्र=परमेश्वर सूर्यो वा) १ ७ ६ शक्तिमन् (न्यायाधीश राजन्) २३ २१ तेजस्विन् (इन्द्र=नृप) ६.३३ १ **वृषभ्याम्**=बलयुक्ताभ्याम् (हरिभ्या=हस्ताभ्याम् ५ ३६ ५ **वृषा**=रसादिपूर्ण (राजा) ११७७ ३ परशक्तिबन्धक (इन्द्र=विद्वज्जन) २ १६ ४ वेगवान् (रथ=यानम्) २ १६ ६ वृष्टिहेतु (विद्युद्रूपोऽग्नि) ३ ६१ ७ शुभगुणवर्षणकर्त्ता (इन्द्र=ईश्वर सूर्यो वा) १.७ ८ सत्योपदेशवर्षक समर्थ (अध्यापक उपदेशको वा) १.५५ ४ कृषिकर्मकुशल (वृषभ) ११७६ २ वीर्यकारी (अग्नि.) ३ २११ वर्षक सूर्य इव वीर्यसेचक (पति) ६ १६ १५ उत्तम गुणो और पदार्थों की वृष्टि करने वाला (ईश्वर) आर्याभि० १ ५२, ऋ० २८ १२ २ **वृषणौ**=बलिष्ठौ राजाऽमात्यौ ७ ६० ९ [वृषु सेचने (भ्वा०) धातो. 'कनिन् युवृषि०' उ० ११५६ सूत्रेण कनिन्। वृषा वर्षिता नि० ११ ४७. वृषा (यजु० ३८ २२) एष वै वृषा हरिर्य एष (सूर्य) तपति श० १४ ३ १ २६ इन्द्रो वै वृषा ता० ९.४ ३ इन्द्रो वृषा श० १ ४ १ ३३ समग्निरिध्यते वृषा श० १ ४ १ २९ योषा वै वेदिर्वृषाग्नि श० १ २ ५ १५ वृषा हि मन श० १ ४ ४ ३ योषा वै स्रग्वृषा स्रुव श० १ ३ १ ९ वृषा हि स्रव श० १ ४ ४ ३ वृषा वै राजन्य ता० ६ १० ९ (हे ऽश्व त्व) वृषासि ता० १ ७ १ आण्डाभ्या हि वृषा पिन्वते श० १४ ३ १ २२ पश्चाद्वै परीत्य वृषा योषामधिद्रवति तस्या रेत सिञ्चति श० २ ४ ४ २३ वृषा हिङ्कार गो० पू० ३ २३]

वृषणा विद्यावर्षयितारौ (अध्यापकोपदेशकौ) ११५१ ३ वृषवद् बलिष्ठौ (हरी=अश्वौ) ८ ३४ वरौ (अध्वर्यू=विद्वज्जनौ) २ १६ ५ सुबलौ (अश्विनौ=दम्पती) ११७७ १५ पोषकौ (इन्द्राग्नी=वायुसवितारौ) ११४८ २ वृष्टिकरौ वायुविद्युतौ ३ ४३ ४ यौ वर्षयतो दुष्टाना शक्ति बन्धयतस्तौ (अध्यापकोपदेशकौ) ११५१ २ बलिष्ठावश्वौ ११७७ १ [वृषन् इति व्याख्यातम्। ततो द्विवचनस्याकारादेश। 'वा षपूर्वस्य निगमे' अ० ६ ४ ९ सूत्रेण विकल्पाद् दीर्घाऽभाव। वृषोपपदे णह बन्धने (दिवा०) धातोर्डश्छान्दस]

वृषणश्वस्य वृषणो वृष्टि-हेतवो यानगमयितारो वा ऽश्वा यस्य तस्य (शिल्पक्रियामिच्छुजनस्य), प्र०—अत्र 'वृषण्वस्वश्वयोश्च' अ० १४ १८ अनेन वार्त्तिकेन भसंज्ञाकरणान्नलोपो न णत्व च भवति १ ५१ १३ [वृषन्-अश्वपदयो समास। 'वृषण्वस्वश्वयोश्च' अ० १ ४,१८. वा०सूत्रेण भत्वान्नलोपो न भवति णत्व च भवति]

वृषण्वन्तम् वेगवन्तम् (रथम्) ११०० १६ [वृषन् प्राति० मतुप्। 'अनो नुट्' अ० ८ २ १६ सूत्रेण मतोर्नुडागम]

वृषण्वसू वृष्ण वर्षयित्रीणा वासयितारौ (वह्निवायू) २.४१ ८ यौ वृष्णौ बलिष्ठौ देहौ वासयतस्तौ (स्त्रीपुरुषौ) ५ ७५ ९ वृषाणो विद्याक्रियाबलयुक्ता वसवो वासकर्त्तारो मनुष्या ययोस्तौ (हरी=जलाग्न्याख्यौ) ११११ १ वर्षकौ वसन्तौ च (सूर्यवायू इव शिल्पिनौ) ११ १३ यौ वृष्णो बलिष्ठान् वीरान् वासयतस्तौ (राजराजोपदेशकौ) ४ ५० १० [वृषन्-वसुपदयो समास। 'वृषण्वस्वश्वयो' अ० १ ४ १८ वा०सूत्रेण भत्वान्नलोपो न भवति]

वृषण्वान् अन्ययानाना वेगशक्तिबन्धयिता (रथ=यानम्) ११८२.१ वृष्टिहेतु (वात) ११२२ ३ बलवान् (योधीयान् नर) ११७३ ५ **वृषण्वन्तम्**=वेगवन्तम् (रथ=विमानादियानसमूहम्) ११०० १६ [वृषन्प्राति० मतुप्। 'अनो नुट्' अ० ८ २ १६ सूत्रेण नुडागम]

वृषत्वा सुखवर्षकाणा भावस्तानि (तत्त्वानि), प्र०—अत्र 'शेश्छन्दसि बहुलम्' इति शिलोप १ ५४ २ **वृषत्वेभिः**=विद्यासुखवर्षणै. १ ६१ २ [वृषप्राति० भावे त्व। तत शेर्लोपश्छन्दसि]

वृषदंशः मार्जाल २४ ३१.

वृषधूतस्य वृषै सेचनैर्यो धूतो विलोडितस्तस्य (ओषधे) ३ ३६ २. वृषा बलिष्ठा पदार्था धूता. कम्पिता येन तस्य (मित्रस्य) ३ ४३ ७ [वृष-धूतपदयो समास। धूतः=धूञ् कम्पने (क्र्या०) धातो क्त]

वृषन् वृष इवाऽऽचरन् (इन्द्र=ऐश्वर्यमिच्छुकजन) ५.४० १ आनन्द वर्षयन् (विद्वज्जन) ११३१ ५ [वृषप्राति० आचारे क्विबन्ताच्छतृ। अथवा वृषु सेचने (भ्वा०) धातो शतृ 'बहुल छन्दसी' ति शपो लुक्]

वृषन्तमम् सर्वानभीष्टान् कामान् वर्षतीति वृषा सोऽतिशयितस्तम् (इन्द्र=परमेश्वरम्), प्र०—कनिन्युवृषि०' उ० ११५४ अनेन वृषधातो कनिन्प्रत्यय

सेचने (भ्वा०) धातो 'सुवृषिभ्या कित्' उ० ४ ४९ सूत्रेण नि]

वृष्णिः वर्षति, सुखानि वर्षयति वा (अ०—सूर्य-किरणसमूह), प्र०—'सुवृषिभ्या कित्' उ० ४ ५१. अनेन वृषधातोर्नि प्रत्यय स च कित् १ १० २ सुखसेचक. (पुरुष) १४.९ [पूर्वपदे व्याख्यातम्]

वृष्णेः वृष्टिकर्त्तु (सूर्यस्य) ऋ० भू० १४७, २३ ६२ [वृषु सेचने (भ्वा०) धातोर्बाहु० औणा० नु किच्च]

वृष्ण्यम् वृष्णो वीर्यवत कर्म १२ ११२ शत्रु-सामर्थ्यप्रतिबन्धकेभ्यो हितम् (क्षत्रम्) १.५४.८ वृषमु वीर्यवत्सु भवम् (शरीरात्मपोषणम्), प्र०—वृषन्-शब्दात् 'भवे छन्दसि' इति यत् 'वा छन्दसि' इति प्रकृतिभावनिषेध पक्षेऽल्लोप १ ९१ १६ वृषसु भव साधु वा (जगत्) ६ ८ ३ वृषा समर्थस्तस्येमम् (शव =बलमुदक वा) ३३ ९७ वृषसु हित बलम् ६ ४६ ८ **वृष्ण्यानि**=दुष्ट-शक्तिनिरोधकानि (पौंस्यानि वचनानि) ६ ३६ ३ पुरुषार्थ-युक्तानि कर्म्माणि १ १०८ ५ वीर्याणि १२ ११३ बलि-ष्ठानि (स्वसैन्यानि) ६ २५ ३ बलेषु साधूनि (सैन्यानि) ४ २१ २ बलकराणि (अपासि=कर्म्माणि) ४ १९ १० वीर्यप्रापकानि (पयासि=जलान्यन्नानि वा) १ ९१ १८ [वृषन् इति व्याख्यातम्। ततो भवार्थे, हितार्थे 'तस्येदम्' इत्यर्थे, साध्वर्थे वा यत्। 'वाछन्दसि' इति प्रकृतिभावस्य विकल्पेनाल्लोप पक्षे भवति। वृष्ण्यम् (यजु० २.११२) रेतो वै वृष्ण्यम् श० ७.३ १ ४६]

वृष्ण्या वृषभ्यो वीरेभ्यो हितानि बलानि १.५१ ७ सुखसेचन-समर्थानि (कर्म्माणि) १ ५३ ६ [वृष्ण्यमिति व्याख्यातम्। तत शेर्लोपश्छन्दसि]

वृष्ण्या वृष्णा वर्षकारणा शस्त्रवृष्ट्ये हितया सेनया १ १०२ ४ [वृष्ण्यमिति व्याख्यातम्। ततष्टा-स्थाने डादेशश्छान्दस]

वृष्ण्यवतः वृष्ण्यानि वर्षित योग्यानि अभ्राणि विद्यन्ते येषु तान् (वायून्) ५ ८३ २ **वृष्ण्यवान्**= बलादिबहुप्रियुक्त (परमेश्वर) ६ २२ १ [वृष्ण्यप्राति० भूम्न्यर्थे मतुप्। वृष्ण्यमिति व्याख्यातम्। वृष्ण्यावत वर्ष-कर्मवत नि० १० ११]

वृष्ण्येभिः वृषसु भवै किरणै, प्र०—'वाच्छन्दसि सर्वे विधयो भवन्ति' इति प्रकृतिभावाऽभावेऽल्लोप १ १०० १ वृषेषु बलिष्ठेषु भवैर्गुणै (पराक्रमै) ३ ४६.२ [वृष्ण्यमिति व्याख्यातम्। ततो 'बहुल छन्दसी' ति भिस ऐसादेशो न भवति]

वृह उच्छिन्धि ६ ४५ ९. वर्धस्व ३ ३० १७ पृथक्कुरु ६ ४४ ११ **वृहतम्**=छेदयतम् ६ ७४ २ **वृहथः**=वर्धयेथाम् २ ३० ६. **वृहः**=उच्छेदये ६ ४८ १७ [वृह वृद्धौ (भ्वा०) धातोर्लोट्। अन्यत्र लट् लङ् च। वृहू उद्यमने (तुदा०) धातोर्वा लोट्]

वृहतात् छिन्द्यात् ४.१६ १२. वर्धयन्तु १.१७४ ५ [वृह वृद्धौ (भ्वा०) वृहू उद्यमने (तुदा०) धातोर्वा लोटि 'तुह्योस्तातङ्०' इति तातङ्]

वेट् यो न्यायासने विशति स (न्यायाधीश), प्र०—अत्र विशधातो 'अन्येभ्योऽपि दृश्यते' इति विच्प्रत्यय १७ १२ अधिष्ठाता (सभेश) १७ १२ [विश प्रवेशने (तुदा०) धातो कर्त्तरि 'अन्येभ्योऽपि दृश्यन्ते' इति विच्]

वेट् सत्क्रियया १८ २९. सदा ऋ० भू० १५४, १८ २९. आज्ञा का पालन आर्याभि० २ १३, १८ २९

वेतसवे व्याप्तैश्वर्य्ये ६ २६ ४ [वेत-सवपदयो समास. । वेत =वी गतिव्याप्त्यादिषु (अदा०) धातोर्बाहु० औणा० क्त. । बहुलवचनादेव गुणश्च सव =षु प्रसवै-श्वर्ययो (अदा०) धातो 'ऋदोरप्' इत्यप्]

वेतसः कमनीय (विद्वज्जन) ४ ५८ ५ **वेतसे**= पदार्थविस्तारे १७ ६ [वी गतिव्याप्तिप्रजनकान्त्यसनखाद-नेषु (अदा०) धातोर्बाहु० औणा० असच् तुडागमश्च]

वेतसः वेगवत्य, भा०—सम विषम चलन्त्य. (सरित =नद्य), प्र०—अत्र वीधातोर्बाहुलकादौणादि-कस्तसि प्रत्यय १३ ३८ [वी गतिव्याप्त्यादिषु (अदा०) धातोर्बाहु० औणा० तसि । वेतस तस्माद् वेतसो वनस्पती-नामनुपजीवनीयतमो यातयामा हि स श० ९ १ २.२४ ता (आप) प्रजापतिमब्रुवन्। यद् वै न कमभूदवाक्तदगा-दिति सोऽब्रवीदेष व एतस्य वनस्पतिर्वेत्त्विति वेत्तु सवेत्तु सोऽह वै त वेतस इत्याचक्षते परोऽक्षम् श० ९ १ २ २२ अप्सुयोनिर्वै वेतस श० १२ ८ ३ १५ अप्सुजा वेतस श० १३ २ २ १९ अप्सुजो वेतस तै० ३ ८ ४ ३.]

वेतसुम् व्यापनशीलम् (इभ=हस्तिनम्) ६ २० ८. [वी गतिव्याप्तिप्रजनादिषु (अदा०)धातोर्बाहु० औणा० असच् तुडागमश्च। वर्णव्यत्ययेनाकारस्योकारादेश । अथवा बाहु० औणा० तसु]

वेति कामयते ५ ३४ ४ अस्तमेति ३४ २५ प्रजनयति, प्र०—अत्राऽन्तर्गतो ण्यर्थ १.३५ ९ नश्यति ५ ६१ १८

५.३६ ५. [वृष-रथपदयो समास]

वृषरथासः वृषा शक्तिबन्धका रथा रमणसाधनानि येषान्ते (अत्या =अश्वा) १ १७७ २ वृषा बलयुक्ता रथा सेनाङ्गानि येषान्ते (राजपुरुषा) ६ ४४ १६ [वृष-रथ-पदयो समासे जसोऽसुक्]

वृषरश्मयः रश्मय इव विजयसुखवर्षकास्तेजस्विन. (राजपुरुषा) ६ ४४ १६ [रश्मि-वृषपदयो समासे वृषस्य पूर्वनिपातश्छान्दस]

वृषव्रातासः वृषा शस्त्राऽस्त्रवर्षयितारो व्रातासो मनुष्या येषान्ते (सभाद्यध्यक्षादय) १ ८५ ४ [वृष-व्रात-पदयो समास । व्राता मनुष्यनाम निघ० २ ३]

वृषशुष्मम् वृषणा बलिना बलम् (वाज =विज्ञानम्) ४ ३६ ८ [वृषन्-शुष्मपदयो समास । शुष्मम् बलनाम निघ० २ ९]

वृषसेनः वृषा बलयुक्ता सेना यस्य स (राजा) १० २. [वृषा-सेनापदयो समास]

वृषस्व वृष इव बलिष्ठो भव ३ ३२ २. सिञ्चस्व १ १०४ ९ **वृषेथाम्**=वर्षत, प्र०—अत्र व्यत्ययेन श प्रत्यय आत्मनेपदञ्च १.१०८ ३ बलिष्ठौ भवेथाम् ६ ६८ ११ [वृषु सेचने (भ्वा०) धातोर्लोट् । व्यत्ययेन श, आत्मने-पदञ्च]

वृषायते वृष इवाऽऽचरति १.५५ २ **वृषायध्वम्**= आनन्दसेक्तारो वृषा इवाऽऽचरत, प्र०—'कर्त्तु क्यङ् स-लोपश्च' अ० ३ १.११ अनेन क्यङ्प्रत्यय २ ३१ **वृषा-यन्ते**=वृष इवाचरन्ति ३ ७ ९ **वृषायसे**=वृष इवाऽऽचर-सि १ ५८ ४ **वृषायिषत**=विद्याधर्मशिक्षया हर्षकारका भवत, प्र०—अत्र लोडर्थे लुङ् २ ३१. [वृषपदाद् आचारे-ऽर्थे क्यङ् । ततो धातुसञ्ज्ञाया लट् । अन्यत्र लोट् लुङ् चापि]

वृषायमाणः बलिष्ठ सन् (शूर =शत्रुहिंसको जन) २० ४६ वृष बल कुर्वाण (राजपुरुष) ३ ५२ ५ वृष इवाचरन् (इन्द्र =सूर्यलोक) १.३२ ३ [वृषप्राति० आचारेऽर्थे क्यङन्ताच्छानच्]

वृषायुधः ये वृषेण वीर्यवता शूरवीरेण सह युध्यन्ते ते (मनुष्या =मानवा), प्र०—वृषोपपदे 'क्विप् च' इति क्विप् 'अन्येषामपि०' इति दीर्घ १ ३३.६ [वृषोपपदे युध सम्प्रहारे (दिवा०) धातो कर्त्तरि क्विप् । पूर्वपदस्य च दीर्घ]

वृष्टयः वर्षा ५ ५३ ६ **वृष्टचा**=वृष्टिविद्यया १५ ६ **वृष्टिम्**=वर्षणम् ५ ५८ ३ वर्षम् २ ६ ५ जल-समूहम् २.१६. **वृष्टिः**=दुष्टाना शक्तिर्बन्धिका शक्ति १ १५२ ७ जलवर्षम् १८ ६ अन्तरिक्षाज्जलस्याऽव. पत-नम् १ ३८ ८ [वृषु सेचने (भ्वा०) धातो 'मन्त्रे वृषेष-पच०' अ० ३ ३ ९६ सूत्रेण क्तिन् उदात्तश्च । वृष्टि (प्रजापति) तम् (पाप्मानम्) अवृञ्चन् । यदवृञ्चन् तस्माद् वृष्टि तै० ३ १० ९ १ (सविता) रश्मिभिर्वर्षं (समदधात्) गो० पू० १ ३६ वृष्टिर्वै याज्या विद्युदेव विद्युद्धीद वृष्टिमन्नाद्य सप्रयच्छति ऐ० २ ४१ वृष्टिर्वै विराट् तस्या एते घोरे तन्वौ विद्युच्च ह्लादुनिश्च श० १२ ८ ३.११ तौ (अनड्वाहौ) यदि कृष्णौ स्याता-मन्यतरो वा कृष्णस्तत्र विद्याद् वर्षिष्यत्यसम पर्जन्यो वृष्टिमान् भविष्यतीत्येतद्व विज्ञानम् श० ३ ३ ४ ११ अन्न वृष्टि गो० पू० ४.४ ५ वृष्टिर्वै विश्वधाया तै० ३ २ ३ २. तस्माद्या दिश वायुरेति ता दिश वृष्टिरन्वेति श० ८ २ ३ ५ मित्रावरुणौ त्वा वृष्ट्यावताम् (यजु० २ १६) श० १ ८.३ १२ इत प्रदाना वै वृष्टिरितो ह्यग्निर्वृष्टि वनुते श० ३ ८ २ २२ अर्वाचीनाग्रा हि वृष्टि तै० ३.३ १.३. वृष्टि सम्मार्जनानि तै० ३ ३ १ २ यदा वै द्यावापृथिवी सञ्जानायेऽथ वर्षति श० १ ८ ३ १२ वृष्टिर्वै वृष्ट्वा चन्द्रमसमनुप्रविशति ऐ० ८ २८]

वृष्टिद्यावा वृष्टिश्च द्यौश्च याम्यान्तौ (वायुविद्युतौ) ५.६८ ५ [वृष्टि-दिव्पदयो समास । 'दिवो द्यावा' अ० ६ ३.२९ सूत्रेण दिवो द्यावादेश]

वृष्टिमानिव बह्वयो वृष्ट्यो विद्यन्ते यस्मिँस्तद्व १ ७ ४० [वृष्टिमान्-इवपदयो समास]

वृष्टिवनये वृष्टे सविभाजकाय (रश्मये =शोधनाय) ३८ ६ [वृष्टि इत्युपपदे वन सम्भक्तौ (भ्वा०) धातो 'छन्दसि वनसन०' अ० ३ २ २७ इतीन् । वृष्टिवनिम् वृष्टि-याचिनम् नि० २ १२]

वृष्टीव यथा वृष्ट्या, प्र०—अत्र टा-स्थाने पूर्व-सवर्णादेश २ ५ ६ [वृष्टी-इवपदयो समास । वृष्टी-प्राति० टास्थाने 'सुपा सुलुक्०' इति पूर्वसवर्णदीर्घ]

वृष्ट्वी वृष्ट्वा वर्षित्वा ५ ५३.१४ [वृषु सेचने (भ्वा०) धातो क्त्वा । 'स्नात्व्यादयश्च' अ० ७ १.४९ सूत्रेणेदन्तत्वम्]

वृष्णम् जलेन सुसिक्तम् (धूम =वाष्पाख्यम्) ३ २९ ९ **वृष्णात्**=निकृष्टवर्णात् तमस १ १२३ ९ [वृषु सेचने (भ्वा०) धातोर्बाहु० औणा० न किच्च]

वृष्णि सुखवर्षकम् (शव =बलम्) ५ ३५ ४ [वृषु

वेदिर्भवत्येतत् (स्थान) वा ग्रस्या (पृथिव्याः) वीर्यवत्तमम् ता० १६ १३ ६ वेदिर्वै देवलोक श० ८ ६ ३ ६ वेदिर्वै सलिलम् श० ३ ६.२ ५ वेदिरेव विश्वाची (ग्रप्सरा) (यजु० १५ १८) श० ८ ६ १ १६. स विश्वाचीरभिचष्टे घृताची (यजु० १७ ५९) इति स्रुचश्चैतद् वेदीश्चाह (विश्वाची=वेदि । घृताची=स्रुक्) श० ९ २ ३.१७ योषा वै वेदि श० १ ३ ३ ८ योषा वै वेदिर्वृषा वेद श० १.९ २ २१ योषा वै वेदिर्वृषाग्नि श० १ २ ५ १५ सा वै (वेदि) पश्चाद् वरीयसी स्यात् । मध्ये सह्वारिता पुन. पुरस्तादुर्वी श० १ २ ५ १६ व्याममात्री (वेदि) पश्चात्स्या-दित्याहु. । एतावान् वै पुरुष पुरुषसम्मिता हि त्र्यरत्नि प्राची श० १ २ ५ १४ तस्मात् त्र्यगुला वेदि स्यात् श० १ २ ५ ९ (वेदि) चतुरगुल गेया तै० ३ २ ९ ११ सा वै (वेदि) प्राक् प्रवणा स्यात् श० १ २ ५ १७. अथो (वेदि) उदक्प्रवणा श० १ २ ५ १७]

वेदिषत् यो वेद्या पृथिव्या सीदति स (परमेश्वर) १० २४ यो वेद्या जगत्या यज्ञशालाया वा सीदति स (जीवो ब्रह्म वा) १२ १४ **वेदिषदः**=ये वेद्या पृथिव्या सीदन्ति ते (असुरा=दुष्टस्वभावा प्राणिन) प्र०—यावती वेदिस्तावती पृथिवी श० १ २ ३ ७, २ २६ [वेदि इति व्याख्यातम् । तदुपपदे षद्लृ विशरणगत्यवसादनेषु (भ्वा०) धातो क्विप्]

वेदी विन्दन्ति सुखानि यस्या सा (यज्ञस्थली) ६ १ १० वेद्याम्, प्र०—अत्र 'सुपा सुलुक्०' इति ङेर्लोप २ ३ ४ **वेद्या**=यस्या हूयते तया (यज्ञभूम्या) १८.६३ यज्ञसामग्र्या १९ १७ सुखप्रापिकया (विद्यया) ६ १३.४. **वेद्याम्**= हवनाऽऽधारे कुण्डे २८ १२. [वेदि इति व्याख्यातम् । तत 'कृदिकारादक्तिन' इति ङीप्]

वेद्यम् विचार्य्यम् (विषयमात्रम्) १८.११ **वेद्यः**= वेदितु योग्य. (परमेश्वर) ६ ४ २ [विद विचारणे (रुधा०) विद ज्ञाने (अदा०) धातोर्ण्यत्]

वेद्याभिः वेदितव्याभि (क्रियाभिः) ६ ९ १ वेत्तु योग्याभि प्रजाभि ३ ५ ९ १ ज्ञातव्याभिर्नीतिभि ७.२१ ५ [विद ज्ञाने (अदा०) धातोर्ण्यत् । ततष्टाप् स्त्रियाम्]

वेधसः मेधाविन (विद्वज्जना) ५ ५२ १३. सकल-विद्याधातुर्विधातु (परमात्मन) १ ७२ १. प्राज्ञान् (नॄन्= नायकाञ्जनान्) ४ २ १५ **वेधसे**=धारणाय (सुमखाय) १ ६४ १ प्राज्ञाय (इन्द्राय=सभासेनेशाय) २.२१ २. **वेधः**=अनन्तविद्य (इन्द्र=जगदीश्वर) ४.४२.७. प्रज्ञाप्रद (जगदीश्वर) १.७३.१० **वेधाः**=विविधशास्त्रजन्यमेधायुक्त (विश्पति=प्रजापति), प्र०—'विधाञो वेध च' उ० ४ २३२ अनेनाऽसुन्प्रत्ययो वेधादेशश्च १ ६० २. ज्ञान-वान् (जन) १.६९ २ पोषक. (पशु=गवादि) १ ६५ ५. [वेधा' मेधाविनाम निघ० ३.१५ डुधाञ् धारणपोषणयो (जु०) धातोर् 'विधाञो वेध च' उ० ४ २२५ सूत्रेणासुन् वेधादेशश्च इन्द्रो वै वेधा ऐ० ६ १० गो० उ० २ २० वेधसे विधात्रे नि० १० ६.]

वेधसा प्राज्ञौ (अश्विनौ=अध्यापकोपदेशकौ) १ १८१.७. [वेधस् इति व्याख्यातम् । ततो द्विवचनस्या-कारादेशश्छान्दस]

वेधस्तम अतिशयेन सर्वविद्याधर (विद्वज्जन) १ ७५ २. **वेधस्तमः**=विद्वत्तम (जन) ६ १४ २ [वेधस् इति व्याख्यातम् । ततोऽतिशायने तमप्]

वेन काम्यस्वरूप (ईश्वर) १ ४३ ९ **वेनस्य**=मेधा-विन (सभाद्यध्यक्षस्य) १ ६१.१४ **वेनः**=कमनीयश्चन्द्र ७ १६. आनन्दस्वरूप, कामना करने योग्य, प्राप्त करने योग्य अनन्तविद्यायुक्त (ईश्वर) आर्याभि० २.२८, १३.३ कामयमान (राजा) ५ ३६ ४. पण्डितो विद्वान् (जन) ३२ ८ कमनीय (ईश्वर), प्र०—वेनतीति कान्तिकर्मा निघ० २.६, १३ ३ [अज गतिक्षेपणयो (भ्वा०) धातो 'धापॄवस्यज्यतिभ्यो न' उ० ३ ६ इति न । 'अजेर्वी०' इति व्यादेश । वी गतिव्याप्तिप्रजनकान्त्यादिषु (अदा०) धातोर्वा बाहु० औणा० न । वेनतीति कान्तिकर्मा निघ० २ ६ वेन मेधाविनाम निघ० ३ १५ यज्ञनाम निघ० ३ १७ वेन (ऋ० १० १२३ १.) अय वै वेनोऽस्माद्वा ऊर्ध्वा अन्ये प्राणा वेनन्त्यवाञ्चोऽन्ये तस्माद् वेन ऐ० १ २० (यजु० १३ ३) असावादित्यो वेनो यद्वै प्रजिजनिषमाणो ऽवेनत्तस्माद् वेन श० ७ ४ १ १४ (ऋ० १० १२३ १) इन्द्र उ वै वेन कौ० ८.५ आत्मा वै वेन कौ० ८ ५]

वेनतम् कामयतम् ५ ७५ ७ **वेनः**=कामये ५ ३१ २ कामयथा ६ ४४ १० कामयस्व १ ४३ ९ [वेनति कान्ति-कर्मा निघ० २ ६ ततो लोट् । अन्यत्र लङ्]

वेनतः सर्वशास्त्रै श्रुतस्य कमनीयस्य (विद्वज्जनस्य), प्र०—अत्र वेनृधातोर्बाहुलकादौणादिकोऽतन् प्रत्यय १ ८६ ८ [वेनृ गतिज्ञानचिन्तानिशामनवादित्रग्रहणेषु (भ्वा०) धातो शतृ । वेनति कान्तिकर्मा निघ० २ ६]

वेनन्ता वादित्रवादकौ (शिल्पिजनौ), प्र०—अत्र वेनृ धातोर्वादित्रार्थो गृह्यते 'सुपा सुलुक्०' इत्याकारादेशः

व्याप्नोति ६ १५ १ प्राप्नोति १ १४१ ६ **वेतु**=विद्यादि-सद्गुणेषु जातविज्ञानान् करोतु ऋ० भू० २४६, ३ १० व्याप्नोति, प्र०—अत्र लडर्थे लोट् ३ १० प्राप्नोतु ७ १५ ६ व्याप्नोतु १० २६ कामयताम् १ ७७ ४ [वी गतिव्याप्ति-प्रजनकान्त्यसनखादनेषु (अदा०) धातोर्लेट्। अन्यत्र लोट्। वेति कान्तिकर्मा निघ० २ ६ गतिकर्मा निघ० २ १४ अत्तिकर्मा निघ० २ ८]

वेत्तु जानातु ज्ञापयतु वा, अ०—कृपया वेदयतु १ १४ **वेत्थ**=जानासि ३५ २० **वेद**=जानासि वेत्ति वा २ २१. जानाति १ १०५ ६ जानीयात् ३ ४ १० जानामि ३१ १८ जानीयाम् २ १४ १० विदन्ति ७ ५६ २ विजानीत ४० १४ जानीहि ५ १२ ३ **वेदत्**=प्राप्त होवे स० वि० १२२, अथर्व० १४ १ ५७ विजानीयात् ५ ३० ३ विद्यात् २ ३५ २ [विद ज्ञाने (अदा०) धातोर्लोट्। अन्यत्र लट् लेट् च]

वेदः प्राप्नुहि १ ४३ ६ (विद्लृ लाभे (तुदा०) धातोर्लोटि छान्दस रूपम्]

वेदनम् विज्ञानम् ४ ३० १३ धनम् १ १७६ ४ प्रापणम् ७ ३२ ७ [विद ज्ञाने (अदा०) विद्लृ लाभे (तुदा०) धातोर्वा ल्युट्]

वेदम् वेदः ज्ञापको, वेदयिता, वेत्ति चराचर जगत् स जगदीश्वर, विदन्ति येन स ऋग्वेदादिर्वा २ २१

वेदेन=ईश्वरप्रकाशितेन वेदचतुष्टयेन १६ ७८. [विद ज्ञाने (अदा०) धातो कर्त्तर्यच्। 'हलश्च' अ० ३ ३ १२१ सूत्रेण करणे वा घञ्। (वेद =दर्भमुष्टि) प्राजापत्यो वेद तै० ३ ३ २ १ प्राजापत्यो वै वेद तै० ३ ३ ७ २ प्रजापतेर्वा एतानि श्मश्रूणि यद् वेद तै० ३ ३ ६ ११ योषा वै वेदिर्वृषा वेद श० १ ६ २ २१ वृषा वै वेदो योषा पत्नी कौ० ३ ६ अथो सर्वेषा वा एष वेदाना रसो यत् साम श० १२ ८ ३ २३ अनन्ता वै वेदा तै० ३ १० ११ ३ तदाहु किं तत् सहस्रम् (ऋ० ६ ६९ ८) इतीमे लोका इमे वेदा अथो वागिति ब्रूयात् ऐ० ६ १५ वेदो ब्रह्म जै० उ० ४ २५ ३ ते सर्वे त्रयो वेदा। दश च सहस्राण्यष्टौ च शतान्यशीतीनाम् (१०८००×८०=८६४००० अक्षराणि) अभवन् श० १० ४ २ २५ चत्वारोऽस्यै (स्वाहायै) वेदा शरीर षडङ्गान्यङ्गानि ष० ४ ७ चत्वारो वा इमे वेदा ऋग्वेदो यजुर्वेद सामवेदो ब्रह्मवेद इति गो० पू० २ १६ स इमानि त्रीणि ज्योतींष्यभितताप। तेभ्यस्तप्तेभ्यस्त्रयो वेदा अजायन्ताग्नेर्ऋग्वेदो वायोर्यजुर्वेद सूर्यात् सामवेदं श० ११ ५ ८ ३ नाऽवेदविन्मनुते त बृहन्तम् तै० ३ १२ ९ ७ एतानि ह वै वेदानामन्त श्लेषणानि यदेता (भूर्भुव स्वरिति) व्याहृतय ऐ० ५ ३२ वेदा सोऽपहतपाप्मानन्ता श्रियमश्नुते य एव वेद यश्चैव विद्वान् एवमेता वेदाना मातर सावित्री सम्पदमुपनिषदमुपास्ते गो० पू० १ ३६ एवमिमे सर्वे वेदा निर्मिता गो० पू० २ १०]

वेदयामसि वेदयाम प्रज्ञापयाम ४ ३६.२ [विद ज्ञाने (अदा०) धातोर्णिजन्ताल्लट्। 'इदन्तो मसि' इति मस इदन्तता वेदयामसि वेदयाम नि० ६ ३१]

वेदसः धनाद्विज्ञानाद्वा २ १७ ६ **वेदसा**=वित्तेन ३ ६० १ **वेदसाम्**=विद्यादिधनानाम् १ ८६ ५ **वेदः**=विदन्ति सुखानि येन तद्धनम्, विज्ञानधनम् १ ८१ ६ द्रव्यम् ४ २५ ७ [वेद धननाम निघ० २ १०. विद ज्ञाने (अदा०) विद्लृ लाभे (तुदा०) धातोर्वा असुन्]

वेदि विज्ञायते ४ १६ ४ [विद ज्ञाने (अदा०) धातो. कर्मणि लुङ्। अडभावश्छान्दस]

वेदिम् वेत्ति यया ता प्रज्ञाम् १ १७० ४. हवनार्थं कुण्डम् ७ ६० ६ अग्निस्थानम् ५ ३१ १२ **वेदिः**=विदन्ति शब्दान् यस्या साऽऽकाशवायुस्वरूपा (भा०—ब्रह्माण्डाख्या) १ १६४ ३५ विदन्ति सुखान्यनया सा (यज्ञस्थली) २ १. यत्र हूयते सा (यज्ञस्थली) १८ २१ मध्यरेखा, भा०—यद्यस्य भूगोलस्य मध्यस्था रेखा क्रियेत तर्हि उपरिष्टाद् भूमेरन्त प्राप्नुवती सती व्यास-सज्ञा लभते, अयमेव भूमेरन्तोऽस्ति २३-६२ यज्ञभूमि १६ १७ कुण्डादिकम् ७ ३५ ७ [विद ज्ञाने (अदा०) धातो 'हृपिषिरुहिवृति०' उ० ४ ११९ सूत्रेण इन्। त (यज्ञ) वेद्यामन्वविन्दन् यद् वेद्यामन्वविन्दस्तद् वेदेर्वेदित्वम् ऐ० ३ ६ यन्न्वेवात्र विष्णुमन्वविन्दस्तस्माद् वेदिर्नाम श० १ २ ५ १० तद् यदेनेन यज्ञेन विष्णुना) इमा सर्वा (पृथिवी) समविन्दन्त तस्माद् वेदिर्नाम श० १ २ ५ ७ वेदिर्देवेभ्योऽनिलायत। ता वेदेनान्वविन्दन् तै० ३ ३ ६ १० पृथिवी वेदि ऐ० ५ २८ तै० ३ ३ ६ २, इय (पृथिवी) वै वेदि श० ७ ३ १ १५ एतावती वै पृथिवी यावती वेदि तै० ३ २ ६ १२ यावती वै वेदिस्तावती पृथिवी श० ३ ७ २ १ तस्मादाहुर्यावती वेदिस्तावती पृथिवीति श० १ २ ५ ७ यावती वै वेदिस्तावतीयम्पृथिवी जै० उ० १ ५ ५ तस्या (पृथिव्या) एतत् परिमित रूप यदन्तर्वेद्यथैष भूमाऽपरिमितो यो बहिर्वेदि ऐ० ८ ५ वेदिर्वै परोऽन्त पृथिव्या तै० ३.६ ५ ५. उर्वरा

वेषाय सर्वशुभगुणविद्याव्याप्तये भा०—सर्वविद्यासुखेषु व्याप्ताय, सर्वा विद्या सम्यक् पठित्वा तासां सर्वत्र प्रचारीकरणाय १६ [विष्लृ व्याप्तौ (जु०) धातोर्भावे घञ्]

वेष्पः वेवेष्टि व्याप्नोति पृथिवीमन्तरिक्षं वा स यज्ञोदयो वाष्पो ज्ञानसमूहो वा, प्र०—'पानीविषिभ्यः पः' उ० ३ २३ इत्यनेन विषेः पः प्रत्ययः १३०. [विष्लृ व्याप्तौ (जु०) धातोः 'पानीविषिभ्यः प.' उ० ३.२३. इति प]

वेहत् अकाले वृषभोपगमनेन गर्भघातिनी (गौ) २४ १. यस्य वीर्यं यस्या गर्भो वा विहन्यते स सा च (गौ) १८ २७ या प्रसवं विहन्ति सा (गौ) २१ २१ **वेहतम्**=गर्भस्राविकाम् (गाम्) २८ ३३ [विशेषेण हन्तीति विग्रहे विपूर्वाद् हन हिंसागत्योः (अदा०) धातोः 'सञ्चत्तृपद्वेहत्' उ० २ ८५ सूत्रेण अति प्रत्ययान्तो निपात्यते। निपातनाद् वेरुपसर्गस्यैकारादेशो धातोश्च टिलोपः]

वेः प्राप्नुयाः ४ ३ १३ निश्चि वेदयति प्रापयति वा, प्र०—अत्र लडर्थे लट् 'वी गति०' इत्यस्य प्रयोगोऽडभावश्च २६ आवहति १ ७७ २ स्वीकुर्याः १ १७३ १ जानाति २ ५ ३ [वी गतिव्याप्तिप्रजनादिषु (अदा०) धातोर्लङ्। अडभावश्च]

वेः व्याप्तस्य (अध्वरस्य=शिल्पिजनस्य) ४ ७ ८ गन्त्याः (रिपः=पृथिव्याः) ३ ५ ५ कमनीयस्य (यज्ञस्य=विद्याबोधस्य) १ ६६ ६ व्यापकस्य परमेश्वरस्य ३ ७ ७. प्राप्तस्य (मनुष्यस्य) ३ ५ ६ विहगस्य पक्षिण इव ६ १५ १४ [वी गतिव्याप्तिप्रजनादिषु (अदा०) धातोः, वा गतिगन्धनयोः (अदा०) धातोर्वा 'वातेर्डिच्च' उ० ४ १३४ सूत्रेण इण्। डित्वाट् टेर्लोपः]

वै खलु १ १० ५ २ निश्चये २ ३३ ६. निश्चयेन २५ ४४ निश्चय करके स० वि० २१०, अथर्व० ६ ६ ३.१. ही स० वि० २०६, ६ २ ६ [चादिषु पाठान्निपातः। 'स्वरादिनिपातमव्ययम्' इत्यव्ययसञ्ज्ञा]

वैकर्णयोः विविधेषु कर्णेषु श्रोत्रेषु भवयोर्व्यवहारयोः ७ १८ ११ [वि-कर्णपदयोः समासे भवार्थेऽण्]

वैदथिनाय विदथिना सङ्ग्रामकर्त्रा निर्मिताय (युद्धव्यवहाराय) ५ ३६ ११ विज्ञानवतोऽपत्याय ४ १६ १३ [विदथिन्प्राति० अपत्यार्थे कृतार्थे वाण्। प्रकृतिभावश्च। विदथिन्=विदथप्राति० मत्वर्थे इन्। विदथ यज्ञनाम निघ० ३ १७. विदथानि पदनाम निघ ४.३]

वैददश्विः योऽश्वान् विदन्ति न विददश्वस्तस्यापत्य वैददश्वि (ऐश्वर्यवान् पुरुष) ५ ६१ १० [विददश्वप्राति० अपत्यार्थे इञ्। विददश्व. विदद्-अश्वपदयोः समासः। विदद्=विद्लृ लाभे (तुदा०) धातोः शतृ। 'बहुलं छन्दसि' इति शपो लुकि प्राप्तेऽपि लुङ्। ततो नुमपि न भवति]

वैद्युताः विद्युद्देवताकाः (पश्वः=पश्वादयः) २४ १० [विद्युत्प्राति० 'सास्य देवता' इति अण्]

वैनंशिनाय विनष्टं शीलं यस्य तस्यायं बोधन्तस्मै (जनाय) १८.२८ विनाशशीलेषु कर्मसु भवाय (सुग्णाय=सुगर्भजनाय) ६.२० [वि+णश अदर्शने (दिवा०) धातोः ताच्छील्ये णिनि। ततो विनशिन्प्राति० 'तस्येदम्' इत्यर्थेऽण्]

वैन्दम् निषादस्यापत्यम् ३०.१६

वैरदेये वैरं देयं येन तस्मिन् (अनल्पकर्मणि) ५ ६१.८ [वैर-देयपदयोः समासः]

वैरहत्याय वैरं हत्या च यस्मिन् कर्मणि तस्मै ३० १३ [वैर-हत्यापदयोः समास.]

वैराजम् यद्विविधैरर्थैः राजते तदेव (साम) १० १३ विविधानां पदार्थानामिदं प्रकाशकम् (साम=सामवेदस्य ज्ञानम्) १३ ५७ विराट् प्रतिपादकम् (साम) १५.१३. **वैराजेन**=विराजि भवेनाऽर्थेन २१ २६ **वैराजाभ्याम्**=विराट्छन्दोज्ञापिताभ्याम् (मित्रावरुणाभ्याम्=प्राणोदानाभ्याम् २६ ६० [विराज्प्राति० स्वार्थे भवार्थे वा अण्। विराज्=वि+राजृ दीप्तौ (भ्वा०) धातोः क्विप्। वैराजम् (साम) ऐ० ४.१३ स वैराजमसृजत तदग्नेर्घोषोऽन्वसृज्यत ता० ७.८.११ यद् बृहत्तद् वैराजम् ऐ० ४ १३ प्रजापतिर्वैराजम् ता० १६ ५ १७]

वैरिणाः वीरिणेषु भवाः (कीटविशेषाः) १ १९१ ३ [वीरिणप्राति० भवार्थेऽण्]

वैरूपम् विविधानि रूपाणि प्रकृतानि यस्मिंस्तत् (साम) १५ १२ विविधानि रूपाणि यस्मात्तस्येदम् (जगज्ज्ञानम्) १३ ५६ **वैरूपेण**=विविधानां रूपाणां भावेन (ओजसा=बलेन) २१ २५ **वैरूपेभ्यः**=विविधस्वरूपेभ्यः (देवेभ्यः=दिव्यगुणेभ्यो जनेभ्यः) २६ ६० [वि-रूपपदयोः समासे ततः 'तस्येदम्' इत्यर्थे स्वार्थे वा अण्। वैरूपम् (साम) देवा वै तृतीयेनाह्ना स्वर्गं लोकमायँस्तानसुरा रक्षांस्यन्ववारयन्त ते विरूपा भवत विरूपा भवतेति भवन्त आयन्स्ते यद् विरूपा भवत विरूपा भवतेति भवन्त आयंस्तद् वैरूपं सामाऽभवत्तद् वैरूपस्य वैरूपत्वम्

१ २५ ६ [वेनइ् इति व्याख्यातम् । ततो द्विवचनस्याकारादेश]

वेनाम् कमनीया कामसिद्धिम् ऋ० भू० १६४, ऋ० १ ३ ४ १ कामिना यात्राम्, प्र०—'धापृवस्यज्यतिभ्यो न.' उ० ३ ६ इत्यजधातोर्न प्रत्यय १.३४२ [वेन इति व्याख्यातम् । तत स्त्रिया टाप्]

वेन्यस्य कमितु योग्यस्य (सूर्यस्य) २ २४ १० **वेन्यः**=कमनीय (वेधा =मेधावी जन) ६ ४४ ८ [वेनति कान्तिकर्मा निघ० २ ६ ततो ण्यत्]

वेपते कम्पने ५ ३६ ३ **वेपध्वम्**=कम्पध्वम् ३ ४१ कम्पायमान होवो स० वि० १४६, ३ ४१ **वेपेते**=चलत. १ ८० ११ [टुवेपृ कम्पने (भ्वा०) धातोर्लट् । अन्यत्र लोट्]

वेपयन्ति कम्पयन्ति ३ २६ ४ चालयन्ति १ ३९ ५ [टुवेपृ कम्पने (भ्वा०) धातोर्णिजन्ताल्लट् । 'निगरणचलनार्थेभ्य' इति परस्मैपदम्]

वेपसा वेगेन १ ८० १२ राज्यपालनादिकर्म्मणा, प्र०—वेपस इति कर्मनामसु पठितत् निघ० २ १, ४.११ २ [टुवेपृ कम्पने (भ्वा०) धातोरौणा० असुन् । वेप कर्मनाम निघ० २ १]

वेपिष्ठः अतिशयेन कम्पक (विप्र =मेधाविजन) ६ ११ ३ [टुवेपृ कम्पने (भ्वा०) धातो तृजन्तादतिशायन इष्ठन् । 'तुरिष्ठेमेयस्सु' इति तृचो लोप]

वेपी धीमती (कन्या) ६ २२ ५

वेम्र प्रजनम् १९ ८३ [वी गतिव्याप्तिप्रजनकान्त्यादिषु (अदा०) धातोर्बाहु० औणा० मन्]

वेरिव उड्डीयमानस्य पक्षिण इव १ ११६ १५ [वे-इवपदयो समास]

वेविजानः कम्पमान (वि =पक्षी) ४ २६ ५ [ओविजी भयचलनयो (तुदा०) धातोर्लिट कानच् । शानचि वा छान्दस श्लु]

वेविजे भृश विभीत, प्र०—ओविजी भयचलनयो इत्यस्माद् यङ्लुगन्ताद् व्यत्ययेनात्मनेपदमेकवचनञ्च १ १४० ३

वेविज्यते अत्यन्त सम्यग् विभेति १ ८० १४ [ओविजी भयचलनयो (तुदा०) धातोर्यङन्ताल्लट्]

वेविदानः विज्ञापयन् (विद्युदग्नि) ५ १६ ५ **वेविदानाः**=अतिशयेन विज्ञानवन्त (विद्वासो जना) १ ७२ ४, भृश प्रतिजानन्त. (विद्वज्जना) ३.५४ ४ [विद ज्ञाने (अदा०) धातोर्यङ्लुगन्ताच्छानच् । व्यत्ययेनात्मनेपदम्]

वेविदाम यथावल्लभेमहि ७ २४.६ प्राप्नुयाम ७ २५ ६ [विद्लृ लाभे (तुदा०) धातोर्लेट् । 'बहुल छन्दसी' ति श्लु]

वेविषत् भृश व्याप्नोति ३ २ १० [विष्लृ व्याप्तौ (जु०) धातोर्यङ्लुगन्ताल्लट्]

वेविषतः व्याप्नुवत (सम्बन्धिजनस्य) ६ २१ ५ [विष्लृ व्याप्तौ (जु०) धातो शतृ]

वेविषाणाः शत्रुबलानि व्याप्नुवन्त (वीरराजपुरुषा) ७ १८ १५ [विष्लृ व्याप्तौ (जु०) धातो शानच् । व्यत्ययेनात्मनेपदम्]

वेवेति भृश व्याप्नोति, प्र०—अत्र 'वाच्छन्दसि' इत्यडभाव ३ ५५ ९ गच्छति ४ ३८ ६ [वी गतिव्याप्तिप्रजनादिषु (अदा०) धातोर्यङ्लुगन्ताल्लट्]

वेशम् यो विशति तम् (प्रमादम्) ५ ८५ ७. **वेशस्य**=प्रवेशस्य ४ ३ १३ [विश प्रवेशने (तुदा०) धातोरच् कर्त्तरि । भावे वा घञ् । 'पदरुजविशस्पृशो घञ्' अ० ३ ३ १६ सूत्रेण वा कर्त्तरि घञ् । वेश कर्मनाम निघ० २ १]

वेशय प्रापय १ १७६ २ [विश प्रवेशने (तुदा०) धातोर्णिजन्ताल्लोट्]

वेश्मनि घर अर्थात् स्थान मे स० वि० २१०, अथर्व० ९ ६ २ १३ [विश प्रवेशने (तुदा०) धातोर्बाहु० औणा० मनिन्]

वेश्यम् वेशेषु प्रवेशेषु भवम् (सर्वहितम्) ४ २६ ३ [वेशमिति व्याख्यातम् । ततो भवार्थे यत्]

वेश्या वेशी प्रवेशयित्री सूची तया ७ १८ १७ उपदेष्टु योग्येन (सख्या=मित्रत्वेन) ६ ६१ १४ [विश प्रवेशने (तुदा०) धातोर्ण्यत् । तत स्त्रिया टाप्]

वेषणा व्याप्तेन पदार्थेन ४ ३३ २ [विष्लृ व्याप्तौ (जु०) धातोर्बाहु० औणा० युच्]

वेषणे व्याप्ते व्यवहारे ५ ७ ५ [विष्लृ व्याप्तौ (जु०) धातोर्ल्युट्]

वेषत् अभिगच्छतु, प्र०—तिपि लेट्-प्रयोग १ १८० ६ **वेषि**=व्याप्नोषि १ ७६ ४ प्राप्नोषि २.२४ १५ कामयसे १ १७३.८ [वी गतिव्याप्तिप्रजनकान्त्यादिषु (अदा०) धातोर्लेट् । अन्यत्र लट्]

वेषन्ती. व्याप्नुवन्त्य. (नद्य) १.१८१ ६ [विष्लृ व्याप्तौ (जु०) धातो शत्रन्तात् ङीप् । 'बहुल छन्दसी' ति शप. श्लुत्]

विदुषी (रत्री) १६ ४४ [विश्व-देवपदयो समासाद् भवार्थे ऽण्णन्तान् ङीप्]

वैश्वदेव्यः विश्वदेवदेवताका (वत्सतर्या =वत्सा) २४.५. [विश्वदेवप्राति० 'सास्य देवता' इत्यर्थे 'देवाद् यञञौ' इति यञ्]

वैश्वव्यचसम् प्रकाशकम् (चक्षु =नयनम्) १३ ५६ [विश्व-व्यचस्पदयो समासात् 'तस्येदम्' इत्यर्थे ऽण्]

वैश्वानर प्रधानपुरुष ३ ३ १० विश्वस्मिन् राजमान (ईश्वर) ७ ५ ८ यो विश्वान् नरान् धर्मकार्येषु नयति तत्सम्बुद्धौ (राजन्) ६ ७ ४ सर्वनेत (जगदीश्वर सभाध्यक्षो वा) १ ५९ ५ सर्वेषु मनुष्येषु विद्याप्रकाशक (ईश्वर विद्वन्वा) १ ६८ ३ विश्वस्मिन् विद्याधर्मप्रकाशनेन नायक (राजन्) ६ ७ ५ **वैश्वानरम्**=सर्वत्र प्रकाशमानम् (अग्नि =विद्युतम्) ६ २१ सर्वेषु नरेषु नीतिषु प्राप्तेषु पदार्थेषु व्याप्तम् (अग्निम्) ३ ३ ५ विश्वेभ्यो नरेभ्यो हितम् (अग्निम्) ३३ ८ विश्वेषु नायकेषु विराजमानम् (अग्निम्) ३ २६ २ विश्वेषु वस्तुषु नायकम् (अग्निम्) २२ ३ यो विश्वान्नरानानन्दान् नयति तम् (अग्निम्) ७ २४ **वैश्वानरस्य**=विश्वेषु नरेषु जीवेषु भवस्य (ईश्वरस्य) १ ६८ १ **वैश्वानरः**=शरीरनेता जाठराग्नि सर्वस्य नेता परमेश्वरो वा ४ १५ पावक ३.२ १२ विद्युदग्नि २६ ७ विश्वस्य नेता स एव (अग्नि =विद्युत्) १८ ७३ विश्वेषु नरेषु यो राजते स एव (अग्नि =सूर्य) १८ ७२ विश्वस्मिन् नरे नेतव्ये प्रकाशमान (अग्नि) ६ ६ १ य सकलस्य जगतो नयनकर्त्ता स (परमेश्वर) ऋ० भू० २०३, सर्वनियन्ता (परमात्मा) १ ५९ ६ विश्वेषा सर्वेषा नराणामय सत्कार १८ २० सर्वेषा जीवाना नेता (ईश्वर) १ ६८ १ विश्वेषा नराणा हित (अग्नि =सूर्य) ३३ ६२ विश्वेषु नरेषु प्रकाशमान (राजा) ४ ५ २ विश्वे सर्वे नरा यस्मिन् स एव (ईश्वर) १२.२६ विश्वस्य ससारस्य प्रकाशक (परमेश्वर) ६ ६ ७ **वैश्वानरात्**=सर्वनरहितकरात् (ईश्वरात्) ३३ ६० **वैश्वानराय**=अखिलपदार्थाना नयनाय प्रापणाय (पावकाय) १४ ७ परब्रह्मोपासकाय १ ५९ ४ विश्वेषा नराणामिद सुखसाधक तस्मै (अग्नये =शास्त्रविज्ञानाय) १४ ७ अग्निकर्मसाधनाय २६ ७ **वैश्वानराः**=सर्वेषु मनुष्येष्विमे सत्यधर्मविद्याप्रकाशका (देवा =विद्वासो जना) ११ ६० ये विश्वेषु नरेषु राजन्ते (देवा =उपदेशका जना) ११ ५८ [विश्व-नरपदयो समासाद् भवार्थे हितार्थे 'तस्येदम्' इत्यर्थे वा अण्। वैश्वानर कस्मात् ? विश्वान् नरान् नयति। विश्व एन नरा नयन्तीति वा। अपि वा विश्वानर एव स्यात् प्रत्यृत सर्वाणि भूतानि तस्य वैश्वानर नि० ७.२१ तत्को वैश्वानर ? मध्यम इत्याचार्या। अथासावादित्य इति पूर्वे याज्ञिका।... अथापि वैश्वानरीयो द्वादशकपालो भवति।......अथापि ब्राह्मण भवत्यसौ वा आदित्यो ऽग्निर्वैश्वानर इति अथापि निविन् सौर्य वैश्वानरी भवति नि० ७ २३ अग्निर्वा एष वैश्वानरो यत् सवत्सर जै० २ ३७६ आत्मा वैश्वानर (अग्ने) तै० स० ५ ६ ६ ३ प्राणो वै पूर्वो वैश्वानरो ऽपान उत्तर जै० ३ ८. वैश्वानरो द्वादशकपाल (पुरोडाश) श० ६ ६ १ ५ शिर एव वैश्वानर श० ६ ६.१६ सवत्सरो वैश्वानर मै० ३ ४ ४ श० ५.२ ५ १५ स एषो ऽग्निर्वैश्वानरो यत्पुरुष श० १० ६ १ ११ वैश्वानर द्वादशकपाल निर्वपति हिरण्य दक्षिणा तै० ब्रा० १ ८ ८ १]

वैश्वानरज्योतिः विश्वेषु नरेषु प्रकाशमान वैश्वानर, वैश्वानर च तज्ज्योतिश्च वैश्वानरज्योति (अ०=ब्रह्म) २०.२३ [वैश्वानर-ज्योतिष्पदयो समास]

वैष्णवम् यद् विष्णोर्यज्ञस्येद साधन साधक वा तत् (जगत्) ५.२१. विष्णोरिद विज्ञानम् ५ २५ **वैष्णवः**= विष्णुदेवताक (वामन =वक्राङ्ग. पशु) २४ १. **वैष्णवान्**=यज्ञाऽनुष्ठातॄन् विष्णुर्यज्ञो देवता येषान्तान् विष्णोर्यज्ञस्येमान् (सभाद्यध्यक्षादिजनान्) ५ २५ **वैष्णवाः**=विष्णोर्व्यापकस्येश्वरस्येमे उपासका (सभाद्यध्यक्षादिजना) ५ २५ [विष्णुप्राति० 'तस्येदम्' इत्यर्थे 'सास्य देवता' इत्यर्थे वाऽण्]

वैष्णवी विष्णोरिय क्रिया ५ २५ विष्णुदेवताका (जहका=जोक इति भाषायाम्) २४ ३६ **वैष्णवीम्**= विष्णोर्व्यापकस्येमा वाचम् ५ २३ विष्णो समग्रविद्याव्यापकस्येय रीतिस्ताम् ५ २५ [वैष्णवमिति व्याख्यातम् तत. स्त्रिया ङीप्]

वैष्णव्यौ यज्ञस्येमौ व्याप्तिकर्त्तारौ पवनपावकौ तौ १ १२ सकलविद्यासुशिक्षाशुभगुणस्वभावव्यापिनौ (अध्येत्र-ध्यापकौ १० ६ [विष्णु यज्ञनाम निघ० ३ १७ तत 'तस्येदम्' इत्यर्थे ण्यश्छान्दस]

वोच उपदिशामि ६ ५९ १ उपदिश ११३२ १ **वोचत्**=वक्ति ६ १५ १० उच्यात् ४ ५ ३ उपदिशेत् १ ११७ २२ **वोचत**=वदत, प्र०—प्रत्राऽडभाव २ २१ २ **वोचति**=उच्याद् वदेत् १ १०५ ४ उच्या ११२३ ३ वदति, प्र०—वचेर्लेट्यट् 'वच उम्' इत्युमागम १६ ६५

ऐ० ५ १ (यद् द्याव इन्द्र ते शतम् ऋ० ८ ७० ५) इत्यस्यामृच्युत्पन्न वैरूप साम इति ऐ० ४ १३ यद्वै रथन्तर तद् वैरूपम् ऐ० ४ १३. रथन्तरमेतत् परोक्ष यद् वैरूपम् ता० १२ २ ५ ६ बृहदेतत् परोक्ष यद् वैरूपम् ता० १२ ८ ४ वाग् वैरूपम् ता० १६ ५ १६ पशवो वै वैरूपम् ता० १४ ९ ८ दिशा वा एतत् माम यद् वैरूपम् ता० १२ ४ ७ वर्षाभिर्ऋतुनादित्या स्तोमे सप्तदशे स्तुत वैरूपेण विशौजसा तै० २ ६ १९ १-२ आदित्यास्त्वा जागतेन छन्दसा सप्तदशेन स्तोमेन वैरूपेण साम्नाऽऽरोहन्तु तानन्वारोहामि स्वाराज्याय ऐ० ८ १२]

वैलस्थानके वैलानि विलयुक्तानि स्थानानि यस्मिँस्तस्मिन् (महावैलस्थे=महागर्त्तयुक्ते स्थाने) १ १३३ ३ [वैल-स्थानपदयो समासे समासान्त कप्]

वैलस्थानम् विलानामिद वैल तदेव स्थान वैलस्थानम् १ १३३ १ [वैल स्थानपदयोः समास । वैलम्=विलप्राति० 'तस्येदम्' इत्यण्]

वैवस्वतः सूर्य का प्रकाश स० वि० १६६, ९ ११३ ६ [विवस्वन्प्राति० 'तस्येदम्' इत्यण् । विवस्वत आदित्याद् विवस्वान् विवासनवान् प्रेरितवत नि० ७ २६]

वैशन्तम् वेशन्तस्य विशतो जनस्येमम् (इन्द्र= परमैश्वर्यम्) ७ ३३ २ **वैशन्ताय**=वेशन्तेषु क्षुद्रेषु जलाशयेषु भवाय (जनाय) १६ ३७ [वेशन्तप्राति० भवार्थेऽण् । 'तस्येदम्' इत्यर्थे वा । वेशन्त=विश प्रवेशने (तुदा०) धातो 'जृविशिभ्या झच्' उ० ३ १२६ सूत्रेण झच्]

वैशन्ताभ्यः वेशन्ता अल्पजलाशयास्ता एव ताभ्य ३० १६ [वेशन्तप्राति० स्वार्थेऽण् । वेशन्त इति पूर्वपदे व्याख्यातम्]

वैश्यम् विक्षु प्रजासु भवम् (अपत्यम्) ३० ५ **वैश्यः**=यो यत्र तत्र विशति प्रविशति (तदपत्यम्) स (भा०—व्यवहारविद्याकुशलो जन) ३१ ११ [विश मनुष्यनाम निघ० २ ३ ततो भवार्थे यत् । तत स्वार्थे ऽण् । विश्प्राति० वा अपत्यार्थे यञ्-प्रत्ययश्छान्दस । वैश्यो वै पुष्यतीव कौ० २५ १५ वैश्यो वै ग्रामणी श० ५ ३ १ ६ जगतीच्छन्दा वै वैश्य तै० १ १ ९ ७ जगतो वै वैश्य ऐ० १ २८ वैश्वदेवो हि वैश्य तै० २ ७ २ २ विड् उ विश्वे देवा श० १० ४ १ ९ शरद् वै वैश्यस्यर्त्तु तै० १ १ २ ७ तस्मादु बहुपशुर्वैश्वदेवो हि जागतो (वैश्य) वर्षा ह्यस्य (वैश्यस्य) ऋतुस्तस्माद् ब्राह्मणस्य च राजन्यस्य चाद्योऽधरो हि सृष्ट ता० ६ १ १० तस्माद् वैश्यो वर्षास्वादधीत विड्ढि वर्षा श० २ १ ३ ५ तस्माद् वैशीपुत्र नाभिषिञ्चति श० १३ २ ९ ८ अथ यदि दधि वैश्याना स भक्षो वैश्यास्तेन भक्षेण जिन्विष्यसि वैश्यकल्पस्ते प्रजायामाजनिष्यते ऽन्यस्य बलिकृदन्यस्याऽऽद्यो यथाकाम ज्येयो यदा वै क्षत्रियाय पाप भवति वैश्यकल्पोऽस्य प्रजायामाजायन ईश्वरो हास्माद् द्वितीयो वा तृतीयो वा वैश्यतामभ्युपैतो स वैश्यतया जिज्यूषित ऐ० ७ २९ तस्मादपि (दीक्षितं) राजन्य वा वैश्य वा ब्राह्मण इत्येव ब्रूयाद् ब्राह्मणो हि जायते यो यज्ञाज् जायते श० ३ २ १ ४० वैश्य च शूद्र चानु रासभ श० ६ ४ ४ १२ मारुतो हि वैश्य तै० २ ७ २ २ एतद् वै वैश्यस्य समृद्ध यत् पशव ता० १८.४ ६. विड् वै यव श० १३ २ ९ ८ ऋग्भ्यो जात वैश्य वर्णमाहु तै० ३ १२ ९ २ विट् तृतीयसवनम् कौ० १६ ४ रायोवाजीय (साम) वैश्याय (कुर्यात्) ता० १३ ४ १८]

वैश्वकर्मणम् यस्माद्विश्वानि निर्वृतानि भवन्ति तत् (मन=मननशील प्रेरक कर्म्म) १३ ५५ **वैश्वकर्मणः**= विश्वान्यखिलानि कर्माणि यस्मात् स एव, भा०—सर्वरोगनिहन्ता (अग्नि=पावक) १८ ६५ विश्वानि समग्राणि कर्माणि यस्य स एव (अग्नि=गृहस्थो जन) १८ ६४ **वैश्वकर्मणाः**=विश्वकर्मदेवताका (मञ्चरा=मार्गा) २४ १७ [विश्व-कर्मन्पदयो समासात् स्वार्थे 'सास्य देवते' त्यर्थे वा ऽण्]

वैश्वदेवम् विश्वेषा देवानामिदम् (सवनम्=आरोग्यकर हवनादिकम्) १९ २६ यद्विश्वेषा देवाना विदुषामिद तत् (यन्त्रम्) ४ १८ यथा विश्वेषा देवानामिदमन्तरिक्षमधिकरण तथा ५ ३० **वैश्वदेवः**=विश्वदेवदेवताक (शिल्प पशु) २९ ५८ विश्वेषा देवानामय सम्बन्धी (विचार) १८ २० विश्वेषा देवाना दिव्याना जीवाना पदार्थाना वा य सम्बन्धी स (प्रजापति=जीव) ३९ ५ [विश्व-देवपदयो. समासे 'तस्येदम्' इत्यर्थे 'सास्य देवते' त्यर्थे वाऽण् । वैश्वदेवम् (पर्व) यद् विश्वे देवा समयजन्त तद् वैश्वदेवस्य वैश्वदेवत्वम् तै० १ ४ १० ५ प्रजापतिर्वै वैश्वदेवम् कौ० ५ १ (शस्त्रम्) पाञ्चजन्य वा एतदुक्थ यद् वैश्वदेवम् ऐ० ३ ३१ पवमानोऽस्य वा एतद् यद् वैश्वदेवम् कौ० १६ ३. पशवो वै वैश्वदेवम् कौ० १६ ३]

वैश्वदेवाग्निमारुते वैश्वदेवाग्निमरुद्व्याख्यायिके (वेदस्य द्वयवचने) १५ १४ [वैश्वदेव-अग्निमरुद्प्राति० 'तस्य व्याख्यान०' इत्यण्]

वैश्वदेवी विश्वासा देवीना विदुषीणा मध्य इय

व्यचरत् विचरति १ १०३.३ [वि+चर गतौ (भ्वा०) धातोर्लङ्]

व्यचस्वतीम् प्रशस्त व्यचो विज्ञान सत्करण विद्यते यस्यास्ताम् (स्त्रियम्) १४ १२ प्रशस्तविद्याव्यापिकाम् (सती स्त्रियम्) १५ ६४ बहु व्यचो व्यञ्चन विद्यागमन सत्करण वा विद्यते यस्यास्ताम् (विदुषी प्रजापालिका राज्ञीम्) १३ १७ **व्यचस्वतीः**=गमनाऽवकाशयुक्ता (द्वार =द्वाराणि) २८ २८ व्याप्तिमती (पतिव्रता. स्त्रिय) २ ३ ५ व्याप्तिमत्य (दिश) २० ६० शुभगुणेषु व्यापिका (जनय =जाया) २६ ३० [व्यचस्प्राति० प्रशसायामर्थे मतुबन्तान्डीप्। व्यचस्=वि+अञ्चु गति-पूजनयो (भ्वा०) धातोरसुन् औणा०। बहुलवचनात् किच्च]

व्यचस्वती सुखव्याप्तियुक्ते (अ०—विद्युदन्तरिक्षे) ११ ३० [व्यचस्वतीम् इति व्याख्यातम्। ततो द्विवचनस्य पूर्वसवर्णदीर्घ। व्यचस्वती व्यञ्चनवत्य नि० ८ १०]

व्यचस्वन्ता व्याप्नुवन्तौ (प्रजासेनाजनौ) ६ २५ ६. [व्यचस्प्राति० मतुबन्ताद् द्विवचनस्याकारादेश]

व्यच: शुभगुणव्याप्ति १५ ४ विविध जलादि-वस्त्वञ्चन्ति ता (भा०—अनेका क्रिया), प्र०—अत्र व्युपपदादचे क्विन् ततो जस् १ ३० ३ व्याप्ते १ ५२ १४ यो विविधतया सर्वं जगज्जानाति तस्य (ईश्वरस्य) ऋ० भू० १६२. [वि+अञ्चु गतिपूजनयो (भ्वा०) धातो: 'ऋत्विक्०' इति क्विन्]

व्यचिष्ठम् अतिशयेन व्याप्तम् (अग्निम्) २ १० ४ अतिशयेन विचितार प्रक्षेप्तारम् (वायुम्) ११ २३ **व्यचिष्ठे**=अतिशयेन व्याप्ते (स्वराज्ये) ५ ६६ ६ [वि+अञ्चु गतिपूजनयो (भ्वा०) धातोस्तृजन्तादतिशायन इष्ठन्। तृचो लोप। व्यचिष्ठ (यजु० ११ २३) व्यचिष्ठ-मन्नेरभस इत्यानमित्यवकाशवन्तमन्नेरन्नाद दीप्यमानमित्येतत् श० ६ ३ ३ १६]

व्यचेत् विचेतयति ४ २४ ८ [वि+चिती सज्ञाने (भ्वा०) धातोर्लङ्। 'बहुल छन्दसी' ति शपो लुक्। तत 'हल्ङ्याब्भ्य०' इति तिपो लोप]

व्यच्यमानम् विविधप्रकारेण पालनीयम् (गवादिक, वीर्यसेचक वृषभम्) १३ ४६ [वि+अञ्चु गतिपूजनयो (भ्वा०) धातो कर्मणि शानच। व्यच्यमान (यजु० १३ ४६) (उपजीव्यमान) व्यच्यमान सरिरस्य मध्यऽइतीमे वै लोका सरीरमुपजीव्यमानमेषु लोकेष्वित्येतत् श० ७ ५ २ ३४]

व्यजथ विशेषेण गच्छथ ५ ५५ ४ [वि+अज गति-क्षेपणयो (भ्वा०) धातोर्लट्]

व्यजन: विशेषेण जनयति २ १३ ७. [वि+जनी प्रादुर्भावे (दिवा०) धातोर्लङ्। व्यत्ययेन शप्, जादेशा-ऽभावश्च]

व्यजिहीत विविधतया प्राप्नोति २ २३ १८ [वि+ओहाङ् गतौ (जु०) धातोर्लङ्]

व्यञ्जते विशेषेण गच्छन्ति १ ६४ ४ [वि+अञ्जू व्यक्तिम्रक्षणकान्तिगतिषु (रुधा०) धातोर्लट्। व्यत्यये-नात्मनेपदम्]

व्यतिष्ठिप: विशेषतया सस्थापये १.५६ ५. [वि+ष्ठा गतिनिवृत्तौ (भ्वा०) धातोर्णिजन्ताल्लुङ्। 'तिष्ठतेरित्' अ० ७ ४ ५ सूत्रेणोपधाया इत्वम्]

व्यतीन् विशेषेण प्राप्तबलान् (योद्धृजनान्) १ १५५ ६ **व्यतीनाम्**=गमनकर्तॄणाम् (प्रजाजनानाम्) ४ ३२ १७ [वि+अत सातत्यगमने (भ्वा०) धातोर्बाहु० औणा० इन्]

व्यथते भय पीडा प्राप्नोति ५ ३७ ४ पीड्यते ५ ५४ ७ [व्यथ भयसञ्चलनयो (भ्वा०) धातोर्लट्]

व्यथमानाम् चलन्तीम् (पृथिवीम्) २ १२ २ [व्यथ भयसञ्चलनयो (भ्वा०) धातो शानजन्तात् स्त्रिया टाप्]

व्यथय पीडय ६ २५ २ [व्यथ भयसञ्चलनयो (भ्वा०) धातोर्णिजन्ताल्लोट्]

व्यथितात् भयात् सञ्चलनात् ५.६ [व्यथ भयसञ्चलन-यो (भ्वा०) धातो क्त। तत पञ्चमी]

व्यथिषत् व्यथते ६ १८ **व्यथेते**=स्वस्वपरिधेरित-स्ततो न चलत ३ ५४ ८ [व्यथ भयसञ्चलनयो (भ्वा०) धातोर्लेट्। अन्यत्र लट्]

व्यथि: या व्यथते सा (भूमि) ५ ५६ २ व्यथक शत्रु भा०—प्रजाभ्यो दु खप्रदो जन १३ ११. पीडा ४ ४ ३ व्यथा ६ २८ ३. [व्यथ भयसञ्चलनयो (भ्वा०) धातोरौणा० बाहु० इन्। व्यथि क्रोधनाम निघ० २ १२]

व्यदधात् विदधाति १७ ३२ विधत्तवान् ऋ० भू० ३६, ४० ८ वेदोपदेशेनोपदिष्टवान् प० वि० वेदद्वारा उपदेश करता है स० प्र० २७३, ४० ८ सिद्ध करे स० वि० १२१, अथर्व० १४ १ ५३ **व्यदधु:**=विविध-प्रकारेण धरन्ति ३ १ १० विविधसामर्थ्यकथनेनाऽदधुरर्थात् अनेकविध तस्य व्याख्यान कृतवन्त, कुर्वन्ति करिष्यन्ति च,

वोचतु=उपदिशतु ३ ५४ १९ **वोचन्**=उपदिशन्ति ४ १ १४ **वोचन्त**=उपदिशेयु ब्रुवन्ति ५ ५२ १६. **वोचम्**=उपदिशेयम्, प्र०—अत्र लिङर्थे लुङडभावञ्च १ ३२ १ उच्याम् १ १३६ ६ कथयेयम् १ ५६ ६ वच्मि २.१५.१ **वोचः**=उपदिशे ६ २ ११ ब्रूहि ६ १४ ६ प्रोक्तवान, प्र०—अत्र वचधातोर्वर्त्तमाने लुङडभावश्च १ २७ ४ उच्या, प्र०—अत्र लिङर्थे लुङ् 'छन्दस्यमाङ्योगेऽपि, इत्यडभाव ६ ३३ **वोचाम**=उपदिशेम १ १६६ १ वदेम २ ३० ७ **वोचावहै**=परस्परमुपदिशेव, प्र०—लेट्-प्रयोगोऽयम् १ २५ १७ **वोचासि**=उच्या, प्र०—अत्र लेटि मध्यमैकवचने 'वाच्छन्दसि सर्वे विधयो भवन्ति' इति उमागम २३ ५१ **वोचे**=वदेयमुपदिशेय वा ४ ५.११ वदामि ७ ३३ १ **वोचेत्**=गुणकर्मस्वभावत उपदिशेत् ३२ ६ **वोचेनम्**=ब्रूतम् १ १२० ३ **वोचेम**=उपदिशेम ७ २८ ५ वदेम ७ २६ ५ उच्याम, प्र०—अयमाशिषि लिङ्युत्तमबहुवचने प्रयोग 'लिङ्याशिष्यङ्' इत्यङि कृते 'छन्दस्युभयथा' इति सार्वधातुकमाश्रित्येयुस्कारलोपौ 'वच उम्' अ० ७ ४ २० इत्यङि उमागमश्च ३ ११ **वोचेमहि**=वदेम, प्र०—अत्राडभाव १ १६७ १० **वोचेय**=उपदिशेय ४ १ १९ कथयेयम् १ १२२ ५ **वोचेयम्**=उपदिशेयम् १ १२९ ६ **वोचेयुः**=सम्प्रीत्या सर्वा विद्या सर्वान् प्रत्युपदिश्यासु, प्र०—वचेराशिषि लिङि प्रथमस्य बहुवचने प्रयोग १ ४६ **वोचेः**=उच्या १ १६५ ३ वदे ३३ २७ ब्रूया १ १३२ ३ [ब्रूञ् व्यक्ताया वाचि (अदा०) धातोर्लुङ् । 'ब्रुवो वचि' इति वचिरादेश । 'अस्यतिवक्ति०' इत्यङ् । 'वच उम्' इत्युमागम । वच परिभाषणे (अदा०) धातोर्वा लुङ् । अन्यत्र लेट् लट् लिङ् च । वोच प्रब्रूहि नि० ८ २० वोचत् विवक्षयनीति नि० ७ ३० वोचे आह्वयामि नि० ५ ७ वोचेयम् प्रब्रवीमि नि० १० ४२ वचधातोर्लिङि तु 'लिङ्याशिष्यङ्' अ० ३ १ ८६ सूत्रेण अङ् । व्यत्ययेन चान्येषु लकारेषु अङ्]

वोचतात् उपदिशतु ५ ६१ १८ [वच परिभाषणे (अदा०) धातोर्लोट् । व्यत्ययेनात्राङ् । 'तुह्योस्तातङ्०' इति तातङ्]

वोढ्वम् स्वयवरविवाहविधिं प्राप्नुत, प्र०—अत्र 'वह प्रापणे' इत्यस्माल्लोटि मध्यमबहुवचने 'बहुल छन्दसि' इति शपो लुकि कृते 'सहिवहोरोदवर्णस्य' अ० ६ ३ ११२ इत्यनेनोकार, वर्त्तमाने च लोट् ६ १३ [वह प्रापणे (भ्वा०) धातोर्लोट् । 'बहुल छन्दसी' ति शपो लुक्]

वोढ्वे विद्याप्रापणाय १.४५ ६ वोढुम्, देशान्तरे वहनाय वा, प्र०—अत्र तुमर्थे तवेन्-प्रत्यय १ १३४ ३ वोढु प्राप्तु प्रापयितु वा ३४ १५ विमानादियानाना वाहनाय ६ ६० १२ [वह प्रापणे (भ्वा०) धातोस्तुमर्थे तवेन्]

वोढा विवाहिता (स्त्री) ६ ६४ ३ [वह प्रापणे (भ्वा०) धातो कर्त्तरि तृच्]

वोढुः वाहक याऽऽयाऽऽदे १ १४४ ३ [वह प्रापणे (भ्वा०) धातो कर्त्तरि तृच् । तत्र षष्ठी]

वोढम् वहत २४१ ६ वहतम् २० ८३ [वह प्रापणे (भ्वा०) धातोर्लुङ् । अडभावश्छान्दस]

वोढा वाहक (अनड्वान्=वृषभ) २२.२२ [वह प्रापणे (भ्वा०) धातो कर्त्तरि तृच्]

व्यकल्पयन् विशेषेण कथयन्ति ३१ १० सामर्थ्यगुणकल्पन कुर्वन्ति ऋ० भू० १२५, ३१ १० [वि+कृपू सामर्थ्ये (भ्वा०) धातोर्णिजन्ताल्लङ् सामान्यकाले]

व्यकृतः विविधतया कृन्तसि १ ६३ ४ [वि+कृती छेदने (तुदा०) धातोर्लङ् । विकरणव्यत्ययेन श]

व्यक्तम् प्रसिद्धम् (अवसान=अवकाशम्) ३५ १ **व्यक्तः**=विविधाभि पुष्टिभि प्रसिद्ध (वीर्यवान् पुरुष) १९ ८७ **व्यक्ताः**=विशेषेण प्रसिद्धा कमनीया (श्रेष्ठा मनुष्या) ७ ५६ १ [वि+अञ्जू व्यक्तिम्रक्षणकान्तिगतिषु (रुधा०) धातो क्त]

व्यक्रँस्त विविधसुखप्राप्तिहेतुना क्रमते, विविधतया क्रमते, प्र०—अत्र लडर्थे लुङ्, विविधतया गच्छति २ २५

व्यक्रामत्=विशेषेण व्याप्नोति, भा०—व्याप्य तिष्ठति ३१ ४ [वि+क्रमु पादविक्षेपे (भ्वा०) धातोर्लुङ् । व्यत्ययेनात्मनेपदम् । अन्यत्र लङ्]

व्यख्यत् विविधतया ख्यापयति, प्र०—अत्र लडर्थे लुङन्तर्गतो ण्यर्थश्च ३ ७ प्रख्याति १ ११३ ४ विख्याति १२ २१ विविधतया प्रसिद्धतया प्रकाशेत १ ४६ १० प्रकाशयति १२ ३ धर्म्यानुपदेशान् प्रकथय १२ ३३ प्रख्यापय १ १६१ १३ **व्यख्यन्**=विशेषेणोपदिशन्तु ४ १ १८ **व्यख्यम्**=विविधतयाऽन्यान् प्रति कथयेयम् १ १०९ १ **व्यख्यः**=विशेषेण प्रकाशयति ७ १३ ३ [वि+ख्या प्रकथने (अदा०) धातोर्लुङ् । 'अस्यतिवक्तिख्यातिभ्योऽङ्' इत्यङ्]

व्यचक्षयत् विविधतया दर्शयति २ २४ ३ [वि+चक्षिङ् व्यक्ताया वाचि, अय दर्शनेऽपि (अदा०) धातोर्णिजन्ताल् लङ्]

हिंसागत्योः (अदा०) धातोर्लुङ् । 'लुङि चे' ति धातोर्वधादेश.]

व्यवर्त्तयत् विशेषेण वर्त्तयति ६ ८.३. विविधतया वर्त्तमान कारयति ऋ० भू० १४१, ऋ० ४ ५ १० ३ [वि+वृतु वर्त्तने (भ्वा०) धातोर्णिजन्ताल्लङ्]

व्यवसाययात् निश्चयवत कुर्यात, प्र०—अत्र व्यवपूर्वात् 'षोऽन्त कर्मणि' इति णिजन्ताद्धातो प्रथमपुरुषैकवचने तिपि लेट्-प्रयोग ३ ५८

व्यवस्थिरन् विविधतया तिष्ठेरन्, प्र०—अत्र लिङर्थे लुङ् 'वा छन्दसि' इति झस्य रनादेश. 'छान्दसो वर्णलोपो वा' इति सिच सलोप १ ६४ ११ [वि+अव+ष्ठा गतिनिवृत्तौ (भ्वा०) धातोर्लुङ् । झस्य रन् छान्दस सिचो लोपश्च]

व्यव: विशेषेण रक्ष ५ ३१.३ विशेषतयाऽवति १ १५७ १ [वि+अव रक्षणगत्यादिषु (भ्वा०) धातोर्लङ्]

व्यवोचन्त विशिष्टतया वदन्ति ६ ३१ १. [वि+ब्रूञ् व्यक्तायां वाचि (अदा०) धातोर्लुङ् । धातोर्वचिरादेश']

व्यशाय: विशायय ६ ३३ १ [वि+शो तनूकरणे (दिवा०) धातोर्णिजन्ताल्लट्]

व्यशिश्रयु: विश्रयन्ति ७ २ ५ [वि+श्रिञ् सेवायाम् (भ्वा०) धातोर्लुङ् । 'णिश्रिद्रु०' अ० ३ १ ४८ सूत्रेण चङ्]

व्यशेम विविधतया प्राप्नुयाम, प्र०—अत्र अशूङ्धातो लिङ्याशिष्यङ्' इत्यङ् सार्वधातुकसंज्ञया 'लिङ सलोपो०' इति सकारलोप, आर्धधातुकसंज्ञया शपोऽभाव १.८६ ८ **व्यशेमहि**=प्राप्नुयाम २५ २१ विविध सुखपूर्वक प्राप्त हो आर्याभि० २ २७, २५.२१ **व्यश्नवै**=विविधतया प्राप्नुयाम्, प्र०—लेट्प्रयोगोऽयम् १६.३७. **व्यश्नुतम्**=प्राप्नुतम् ऋ० भू० २०६, ऋ० ८ ३ २८.२. **व्यश्नुहि**=विविधतया व्याप्नुहि १ ५४ ६ **व्यश्यु:**=विशेषेण प्राप्नुयु १ ७३.६. **व्यश्वैत्**=व्याप्नोति १.६२ १२. [वि+अशूङ् व्याप्तौ (स्वा०) धातोर्लिङ् । 'लिटचाशिष्यङ्' इत्यङ्-विकरण । अन्यत्र लेट् लोट् लट् च]

व्यश्नुविने=व्यापिने वीर्याय २२ ३२ [वि+अशूङ् व्याप्तौ (स्वा०) धातोर्बाहु० औणा० क्विन् । 'छन्दस्युभयथा' इति सार्वधातुकत्वात् श्नु]

व्यश्वम् विविधा विगता वा अश्वास्तुरङ्गा अस्यादयो वा यस्मिन् सैन्ये याने वा तम् १ ११२.१५ [वि-अश्वपदयो समास.]

व्यसन् विशेषेण प्रक्षिपन्ति ४ ३ ११ [वि+असु क्षेपणे (दिवा०) धातोर्लङ् । व्यत्ययेन शप् । आटोऽभावश्च]

व्यस्कभ्ना: विशेषतया प्रतिबध्नामि प्रतिबध्नाति वा ५ १६. [वि+स्कम्भु (सौत्रो धातु.) धातोर्लङ् । 'स्तम्भुस्तुम्भु०' इति श्नु]

व्यस्तभ्नात् विशेषेण स्तभ्नाति धरति ६ ८ ३ विस्तभितवान् ऋ० भू० १४१, ६ ८ ३ [वि+स्तम्भु (सौत्रो धातु) धातोर्लङ् । 'स्तम्भुस्तुम्भु०' इति श्नु]

व्यस्थात् विशेषेण तिष्ठेत् १ १० १ ७. विविधतया तिष्ठति १ ६५ ४. [वि+ष्ठा गतिनिवृत्तौ (भ्वा०) धातोर्लुङ् । गातिस्था०' इति सिचो लुक्]

व्यस्यताम् उत्क्षिपताम् १७.६४ **व्यस्यथ**=प्रचालयत ५ ५५ ६ [वि+असु क्षेपणे (दिवा०) धातोर्लोट् । व्यत्ययेनात्मनेपदम् । अन्यत्र लट्]

व्यस्यन् विविधतया प्रक्षिपन् (वैद्य) ११ ४७ [वि+असु क्षेपणे (दिवा०) धातो शतृ]

व्यहन् विशेषेण हन्ति १ १०३ २ [वि+हन् हिंसागत्यो (अदा०) धातोर्लङ्]

व्यंसम् विगता असा भुजमूलानि यस्य तम् (दुष्ट शत्रुम्) ३३ २६ छिन्नस्कन्धम् (वृत्रम्=मेघम्) ऋ० भू० २८४, १ ३२ ५ विगता असा स्कन्धा यस्य तम् (शत्रुम्) १ १०१ २ विगता असा स्कन्धवदवयवा यस्य तम् (शत्रुम्) १ ३२ ५. **व्यंस:**=विप्रकृष्टा असा बलादयो यस्य स (राजविरोधिजन) ४ १८ ६ [वि-असपदयो समास । अस = अम गत्यादिषु (भ्वा०) धातो 'अमे सन्' उ० ५ २१ सूत्रेण सन्]

व्याकरोत् व्याकरोति १६ ७७. भिन्न-भिन्न निश्चित करता है स० वि० १८७, १६.७७ [वि—आङ्+डुकृञ् करणे (तना०) धातोर्लङ्]

व्याघ्रम् यो विशेषेणाऽऽजिघ्रति तम् (पशुविशेषम्) १६ १० सिहम् २१ ३६ **व्याघ्र:**=यो विविधान् समन्ताज्जिघ्रति स (जन्तु) १४.६ [वि+आङ्+घ्रा गन्धोपादाने (भ्वा०) धातो. कर्त्तरि 'जिघ्रते सज्ञाया प्रतिषेधो वक्तव्य ' अ० ३ १ १३७ वा०सूत्रेण शस्य निषेधात् 'आतश्चोपसर्गे' इति क । व्याघ्र इति पूजायाम् नि० ३ १८. क्षत्र वा एतदारण्यानां पशूना यद् व्याघ्र ऐ० ८ ६ ऊवध्यादेवास्य मन्युरस्रवत् स व्याघ्रोऽभवदारण्याना पशूना राजा श० १२ ७ १ ८ व्याघ्रो व्याघ्राणाद् व्यादाय हन्तीति वा नि० ३ १८ पुरो व्याघ्रो जायते पश्चात् सिंह काठ०

ऋ० भू० १२५, ३१.१०. [वि+डुधाञ् धारणपोषणयो (जु०) धातोर्लङ्]

व्यदन्ति विविधतया विच्छिद्य भक्षयन्ति १ १०५ ८. [वि+अद भक्षणे (अदा०) धातोर्लट्]

व्यदर्दः पुन पुनर्भृश विदारयति २.२४ २ [वि+दृ विदारणे (क्र्या०) धातोर्यङ्लुगन्ताल्लङ्]

व्यदर्शि विविधतया दृश्यताम् १.४६.११ [वि+दृशिर् प्रेक्षणे (भ्वा०) धातो कर्मणि लुङ]

व्यदृश्रम् विशेषेण पश्येयम्, प्र०—अत्र लिङर्थे लुङ् ८ ४० [वि+दृशिर् प्रेक्षणे (भ्वा०) धातोर्लुङ् । 'इरितो वा' इति च्लेरङ् । 'बहुल छन्दसि' अ० ७ १ ८ सूत्रेण रुडागम । 'ऋदृशोऽङि' इति प्राप्तो गुणोऽपि छान्दसत्वादेव न भवति]

व्यद्यौत् विविधतया प्रकाशते ३ १ १८ प्रकाशयति ६ ५१ १ विद्योतयति १२ १ [वि+द्युत दीप्तौ (भ्वा०) धातोर्लुङ् । छान्दसत्वात् च्लेर्लुक्]

व्यधमत् विशेषेण धमति निराकरोति ४ ५०.४. [वि+धमति गतिकर्मा निघ० २ १४ वधकर्मा निघ० २ १९ ततो लङ्]

व्यध्वनः विरुद्धोऽध्वा यस्य सः (अग्ने रज =कण) १ १४१ ७ [वि+अध्वन्पदयो समास]

व्यनक् विशेषेण प्रकटीकरोति २ १५ ७ [वि+अञ्जू व्यक्तिम्रक्षणकान्तिगतिषु (रुधा०) धातोर्लङ् । आडागमस्तु न छन्दसि]

व्यनतः प्राप्नुवन्त्य (जनय =जाया) ४ ५ ५ [वि+अनिति गतिकर्मा निघ० २ १४ तत शतृ]

व्यनिनस्य=यत्प्रशस्त प्राणनिमित्त तस्य (विद्वज्जनस्य) १ १५० २ [वि+अन प्राणने (अदा०) धातोर्बाहु० औणा० इनच्]

व्यनुधिरे विशेषतयाऽनुदधिरे दधति, प्र०—अत्र छान्दसोऽभ्यासस्य लुक् १ १६६ १० [वि+अनु+डुधाञ् धारणपोषणयो (जु०) धातोर्लिट् । अभ्यासलोपश्छान्दस]

व्यन्तः वेदविद्यासु व्याप्नुवन्त. (ग्रहा =गृहाश्रमिण) ६ ४ व्याप्तविद्या क्रिया (विद्वज्जना) ६ १४ कामयमाना (प्रजाजना) १ १२७ ५ प्राप्नुवन्त (राजादिजना) ७ २७ ५ [वी गतिव्याप्त्यादिषु (अदा०) धातो शत्रन्ताज्जस् । व्यन्त इत्येषोऽनेककर्मा । 'पद देवस्य नमसा व्यन्त' इति पश्यतिकर्मा । 'वीहि शूर पुरोडाशम्' इति खादतिकर्मा नि० ४ १९]

व्यन्ता विविधवलोपेतौ (अध्यापकोपदेशकौ) १ १२२ ४ [वि गतिव्याप्त्यादिषु (अदा०) धातो शतृ । द्विवचनस्याकार]

व्यन्ति प्राप्नुवन्ति ५ २३ ३ कामयन्ताम्, प्र०—'वाच्छन्दसि सर्वे विधयो भवन्ति' इतीयङभावे यणादेश, लेट्प्रयोगोऽयम् १ १०५ ७ **व्यन्तु**=कामयन्ताम् ५ ४६ ८ व्याप्नुवन्तु प्राप्नुवन्तु वा ७ ५७ ६ व्यन्ति प्राप्नुवन्ति, अ०—गच्छन्ति, प्र०—अत्र लडर्थे लोट् २ १६ [वी गतिव्याप्तिप्रजनकान्त्यादिषु (अदा०) धातोर्लट् । लेट् वा । अन्यत्र लोट्]

व्यपिबत् गृह्णीयात् १९ ७८ विशेषेण पिबेत् १९ ७९ **व्यपिबः**=विविधतया पिब १० ३४ [वी+पा पाने (भ्वा०) धातोर्लङ् । शिति पिबादेश]

व्यप्रथयः विविधतया प्रथय १ ६२ ५ **व्यप्रथिष्ट**=विप्रथताम् २ ११ ७ [वि+प्रथ प्रख्याने (चुरा०) धातोर्लङ् । अथवा प्रथ प्रख्याने (भ्वा०) धातोर्णिजन्ताल्लङ् अन्यत्र लुङ्]

व्यब्रवीत् विशेषेणोपदिशति १ १४५ ५ [वि+ब्रूञ् व्यक्तायां वाचि (अदा०) धातोर्लङ् । 'ब्रुव ईट्' इतीडागम]

व्यमिमीत विशेषेण निर्मिमीते ६ ७ ७ विरचयति ६ ८.२ [वि+माङ् माने शब्दे च (जु०) धातोर्लङ्]

व्ययन्ताम् विशिष्टतया प्राप्नुवन्तु जानन्तु वा ६ ६ **व्ययस्व**=धरस्व ११ ४० व्यय कुरु ३ ५३ १९ [वि+अय गत्यर्थे (भ्वा०) धातोर्लोट्]

व्ययातम् प्राप्नुयातम् १ ११६ २० [वि+या प्रापणे (अदा०) धातोर्लङ्]

व्ययेयम् व्यय कुर्याम् २ २९ ६. [व्यय गतौ (भ्वा०) धातोर्लिङ्]

व्ययामसि प्राप्ता स्म १७ ४ सवृणोमि १७ ५ [व्यय गतौ (भ्वा०) धातोर्लट् । 'इदन्तो मसि' इति मस इदन्तत्वम्]

व्यरुजः विशेषतयाऽऽमर्दय १ ५६ ६ [वि+रुजो भङ्गे (तुदा०) धातोर्लङ्]

व्यर्दय विशेषेण नाशय २ २३ १४ **व्यर्दयत्**=विशेषतयाऽर्दयति नाशयति ३४ ७ [वि+अर्द हिंसायाम् (चुरा०) धातोर्लोट् । अन्यत्र लङ् । आटोऽभाव । अथवा वि+अर्द गतौ याचने च (भ्वा०) धातोर्णिजन्ताल्लोट्]

व्यवधीः विशिष्टतया हसि १ १०३ ८ [वि+हन

कुरु १ ११३ १६ विविधतया विवस १ ४८ १ **व्युच्छति**=विवासयति १ ६२.१४ **व्युच्छन्ति**=दुःख विवासयन्ति १ ११३ १८ **व्युच्छसि**=विविधप्रकारेण विवसमि १ ४६ १ **व्युच्छात्**=प्राप्नुयात् १ १२४ ११ विवसेत् १ ११३ १३ **व्युच्छान्**=निवसेयु ७ १८ २१ निवासयेयु ४ ५५ २ **व्यौच्छः**=विवासयति ५.७६ २ निवासितवती वर्त्तते ५ ७६ ३ [वि+उच्छी विवासे (भ्वा०) धातोर्लोट् अन्यत्र लट् लेट् लड् च]

व्युच्छन्ती निवास कुर्वन्ती (उपा) १.४८ ६ विविधानि तमांसि विवासयन्ती (उपा) १ ११३ ७. तमो नाशयन्ती (उपा) विविधतया वासयन्ती (उपा) १ ४६ ४ **व्युच्छन्तीम्**=निद्रा विवासयन्तीम् (उपसम्) १ ११३ ११ [वि+उच्छी विवासे (भ्वा०) धातो शत्रन्तात् ङीप्]

व्युच्छान् व्युच्छन्ति तान् (पदार्थान्) १.११३ १० विवासितान् (देवान्=विद्वज्जनान्) ७ ३० ३ [वि+उच्छी विवासे (भ्वा०) धातो कर्त्तरि मूलविभुजादित्वात् क]

व्युतम् विविधतयोत विस्तृत वस्त्रम् १ १२२ २ **व्युते**=विगताऽऽवरणे प्रसिद्धे (पथि=मार्गे) ३ ५४ ६ [वि-उतपदयो समास । उतम्=वेञ् तन्तुसन्ताने (भ्वा०) धातो क्त । यजादित्वात् किति सम्प्रसारणम्]

व्युद्यते विशेषेण क्लिद्यते १ १६४ ४७ [वि+उन्दी क्लेदने (रुधा०) धातो कर्मणि लट्]

व्युनत्ति विशेषेण क्लेदयति ५ ८५ ३ **व्युन्दन्ति**=विशिष्टतया क्लेदन्ति १ ८५ ५ **व्युन्धि**=विशेषेणोन्दयति क्लेदयति ५ ८३ ८ [वि+उन्दी क्लेदने (रुधा०) धातोर्लट् । अन्यत्र लोडपि]

व्युनोति विशेषेण प्रेरयति ५ ३१ १

व्युन्दनम् विविधानामोषध्यादीनामुन्दन क्लेदन येन तत् (यज्ञ-काण्डम्) २ २ [वि+उन्दी क्लेदने (रुधा०) धातोर्ल्युट्]

व्युप्तकेशाय विशेषतयोप्ताश्छेदिता केशा येन तस्मै सन्यासिने १६ २६ [व्युप्त-केशपदयो समास । व्युप्त=वि+डुवप् बीजसन्ताने (भ्वा०) धातो क्त । यजादित्वात् सम्प्रसारणम् । अथ छेदनेऽपि दृश्यते केशान् वपतीति]

व्युप्रथते विस्तृणोति १ १२४ ५ [वि+उ+प्रथ प्रख्याने (भ्वा०) धातोर्लट् । उ इति वितर्के]

व्यूर्णोति निष्पादयति १ १०५ १५ [वि+ऊर्णुञ् आच्छादने (अदा०) धातोर्लट्]

व्युषि सेवसे ५.३ ८. **व्यूषुः**=विवसन्ति ३ ५५.१ [व्युष विभागे (दिवा०) धातोर्लटि शपो लुकि सिप सलोपे च रूपम् । अन्यत्र वि+वस निवासे (भ्वा०) धातोर्लिट्]

व्युषि विशिष्टे विवासे ५ ४५ ८ विशेषेण दाहे ६ ६२ १ [व्युष दाहे (दिवा०) धातो. सम्पदादित्वात् क्विप्]

व्युष्टिषु विविधा उष्टय कामनाश्च तासु १ ४४ ३ विशिष्टासु कामनास्वव्योषितासु सतीषु १ ४४ ४ कामनासु १ ४४ ८ विविधासु सेवासु ४ ४५ २ विविधासु वसतिषु १ १७१ ५. विशेषेण दहन्ति यासु क्रियासु तासु ३ २० १ प्रतापेषु २ ३४ १२ **व्युष्टौ**=विविधरूपाया सेवायाम् ४ ३६ ३ विशेषेणोप्यन्ते दह्यन्ते यया कान्त्या तस्याम् १ ४८ ६ विशेषदीप्तौ ४ २३ ५ विशेषेण दाहे ४ १ ५ विशिष्टप्रतापे ४ १४४ विशिष्टे निवासे १ १२४ १२ प्रभातवेलायाम् ५ ३० १३ विविधैर्गुणै सेवमानायामुषसि ६ ४४ ६ विशेषेण काममाने समये १ ११८ १ **व्युष्ट्यै**=प्रदीप्तायै दाहक्रियायै २२ ३४ [वि-उष्टिपदयो समास । उष्टि=वश कान्तौ (अदा०) धातो स्त्रियां क्तिन् । ग्रहिज्यादिना सम्प्रसारणम् । अथवा वि+वस निवासे (भ्वा०) धातो क्तिन् । यजादित्वात् सम्प्रसारणम् । अथवा व्युष दाहे (दिवा०) धातोर्वा क्तिन् । व्युष विभागे (दिवा०) धातोर्वा क्तिन् । व्युष्टिर्वै दिवा, व्येवास्मै वासयति ता० ८ १ १३ व्युष्टिर्वा एष द्विरात्रो व्यवास्मै (यजमानाय) वासयति ता० १८ ११ ११ अहर्व्युष्टि तै० ३ ८.१६ ४ रात्रिर्वै व्युष्टि श० १३ २ १ ६]

व्यूर्णुते आच्छादयति ६ ५० ८. **व्यूर्णुषे**=स्वव्याप्त्याऽऽच्छादयसि ४ ५४ २ विस्तारयसि ३३ ५४ **व्यौर्णोत्**=विशेषेण स्वीकरोति १ ६८ ५ विविधतयोर्णुत आच्छादयति १७ १८ [वि+ऊर्णुञ् आच्छादने (अदा०) धातोर्लट् । अन्यत्र लड्]

व्यूर्ण्वती विविधान् पदार्थानाच्छादयन्ती (उपा) १ ६२ ११ विशेषेणाऽऽच्छादयन्ती (योषा) ५ ८० ६ [वि+ऊर्णुञ् आच्छादने (अदा०) धातो शत्रन्तात् ङीप्]

व्यृण्वति विशिष्टतया कर्माणि साध्नोति १ ५८ ३ [वि+ऋण्वति गतिकर्मा (निघ० २ १४) धातोर्लट्]

व्यृण्वन् विशेषेण हिंसन्ति १ ६६ ५ [वि+ऋणोति गतिकर्मा (निघ० २ १४) धातो शतृ]

२० १० व्याघ्रे णारण्यान् पशून् (अन्वाभवत्) काठ० ४३ ४]

व्याघ्रलोम व्याघ्रस्य लोम व्याघ्रलोम १९ ९२ [व्याघ्र-लोमन्नुपदयो समास]

व्याजानन् विशेषेणाऽभितो जानन्ति १ ७२ ८ [वि+ज्ञा अववोधने (क्र्या०) धातोर्लङ्]

व्यातिरत् उल्लङ्घयतु ३ ३४ १ [वि+आङ्+तॄ प्लवनसतरणयो (भ्वा०) धातोर्लङ् । व्यत्ययेन श]

व्यात्तम् विकासित मुखमिव, प्र०—अत्र वि आङ्-पूर्वकाद् डुदाञ्धातो त ३१ २२ विकाशितम् (मुखम्) ऋ० भू० १३४, ३१ २२ [वि+आङ्+डुदाञ् दाने (जु०) धातो क्त । 'अच उपसर्गात्त' इति तादेश]

व्याद्रवत् व्याधावन् (अग्नि =पावक इव विपश्चिज्जन) ७ १० २ [वि+आङ्+द्रु गतौ (भ्वा०) धातोर्लङ्]

व्याधिने रोगिणे (जनाय) १६ १८ [व्याधप्राति० सम्वन्धे (मत्वर्थे) इनि: । व्याध =वि+आङ्+डुधाञ् धारणपोषणयो (जु०) धातो 'आतश्चोपसर्गे' इति क]

व्यानञ्रे विशेषेणाऽजन्तुशत्रून् प्रक्षिपन्तु, प्र०—अत्र व्यत्ययेनाऽऽत्मनेपदम् १ ८७ १ [वि+अज गतिक्षेपणयो (भ्वा०) धातोर्लिट् । व्यत्ययेनात्मनेपदम् । 'इरयो रे' इति रे-आदेश]

व्यानट् व्याप्तोऽस्ति १२ १० २ विशेषेणाऽश्नोति व्याप्नोति ७ २८ २ [वि+अशूङ् व्याप्तौ (स्वा०) धातोर्लङ् । 'वहुल छन्दसी' ति विकरणलुक् । 'अश्नोतेश्चे' ति नुट् छान्दसत्वादनभ्यासादपि]

व्यानदा. या व्याप्तिविज्ञान ददति (हेतय =शस्त्रास्त्रोन्नतय १७ १५ [व्यानोपपदे डुदाञ् दाने (जु०) धातो क । ततष्टाप्]

व्यानम् यो विविवेपु शरीरसन्धिष्वनिति तम् (वायुम्) १४ ८ विविधमनन्ति येन तम् (प्राणम्) १९ ९० **व्यान:**=सर्वसन्धिपु व्याप्तश्चेष्टानिमित्त (वायु) २२ ३३ **व्यानाय**=विविधोत्तमव्यवहाराय १३ १९ विविधविद्याव्याप्तये १५ ६४ यो विविधेष्वङ्गेपु अनिति व्याप्नोति तस्मै (वायवे) २२ २३ व्यानिति सर्वान् शुभगुणकर्मस्वभावान् येन तस्मै (वायवे) १३ २४. विविधमन्यते व्याप्यते येन तस्मै सर्वेपा शुभगुणाना कर्मविद्याऽङ्गाना च व्याप्तिहेतवे (वायवे) १.२० सर्वशरीरगतवायवे ७ २७ विविधमानयति यस्मा इव (वायवे) ७ ३ **व्याना:**=चेष्टानिमित्ता. सर्वशरीरस्था वायव १७ ७१ [वि+अन प्राणने (अदा०) धातो 'हलश्चे' ति घञ् । व्यानो ह्युपाशुमवनोऽन्तरिक्ष ह्येव व्यनन्नभिव्यनिति श० ४ १ २ २७ (यज्ञस्य) व्यान उपाशु सवन: श० ४ १ १ १ व्यानो वरुण श० १२ ९ १.१६ व्यान प्रतिहर्त्ता कौ० १७ ७ गो० उ० ५.४ व्यानो वृहती ता० ७ ३ ८ आपो व्यान जै० उ० ४ २२ ९ (प्रजापति) व्यानादमु (द्यु-लोकम्) (प्रावृहत्) कौ० ६ १० (त सज्ञप्त पशुम्) दक्षिणा दिग्व्यानेत्यनुप्राणाद्व्यानमेवास्मिंस्तदधात् श० ११ ८ ३ ६ द्विर्ऋतुनेति (यजन्ति) उपरिष्टाद् व्यानमेव तद् यजमाने दधति कौ० १३ १९ निश्रीडित इव ह्यय व्यान प० २ २ व्यान शस्या (ऋक्) श० १४ ९ १ १२ व्यानस्त्रिष्टुप् मै० ३ ४ ४]

व्यानशि: व्याप्त (भग =ऐश्वर्ययोग) ३ ४९ ३ [वि+अशूङ् व्याप्तौ (स्वा०) धातो 'किकिनावुत्सर्गश्छन्दसि०' इति किर्लिड्वच्च । व्यानशि वहुनाम निघ० ३ १]

व्याप्रा: व्याप्नोति ४ १४ २ [वि+आङ्+प्रा पूरणे (अदा०) धातोर्लुङ् । 'मन्त्रे घसह्वर०' इति लेर्लुक्]

व्याभ्राजन्ते विशेषेण समन्तात् प्रकाशन्ते १ ८५.४ [वि+आङ्+भ्राजृ दीप्तौ (भ्वा०) धातोर्लट्]

व्याममे विशेषतया सर्वतो मिमीते १ ५८ १ [वि+आङ्+माङ् माने (जु०) धातोर्लिट्]

व्यार विशेषतया गच्छति ३ ३० १० [वि+ऋ गतिप्रापणयो (भ्वा०) धातोर्लिट्]

व्याव: विरक्ष ४ ५२ ६ विविधतया वृणोति १ ९२ ४ अभितो वृणोपि ,१ ६३ ५ विविध नियमो से पृथक् पृथक् यथायोग्य वर्त्ता रहे हो आर्याभि० २ २८, १३ ३ [वि+अव रक्षणगत्यादिपु (भ्वा०) धातोर्लङ् । अन्यत्र वि+वृञ् वरणे (स्वा०) धातोर्लुङ् । 'मन्त्रे घसह्वर०' अ० २ ४ ८० सूत्रेण लेर्लुक्]

व्याश व्यश्नाति ३ ३६ ८. [वि+अश भोजने (क्र्या०) धातोर्लिट्]

व्यास्यत् व्यसेच्छिन्द्यात् ४ ३० २० [वि+असु क्षेपणे (दिवा०) धातोर्लङ्]

व्याहृतायाम् उपदिष्टाया सत्याम् (वाचि=वेदवाण्याम्) ८ ५४ [वि+आङ्+हृञ् हरणे (भ्वा०)+क्त +स्त्रिया टाप्]

व्युच्छ दु खानि विवासय १ ११३ ७. सुखे स्थिरी-

वा पालक (अग्ने=स्वप्रकाशस्वरूपेश्वर), प्र०—व्रतमिति कर्म्मनाम निघ० २ १, २०.२४ व्रताना वेदादिविद्याना पालयित पालननिमित्तो वा (अग्ने=परब्रह्मन् विद्युद्वा) ५.६ नियमपालकेश्वर स० वि० १८६, २० २४ [व्रत-पतिपदयो समास.। व्रतमिति कर्मनाम निघ० २ १ अग्निर्वै देवाना व्रतपति गो० उ० १ १४]

व्रतनी: व्रत स्वकीयभ्रमणादिसत्यनियम प्रापयन्ती (गौ=पृथिवीगोल) ऋ० भू० १३८, ऋ० ८ २ १० १ [व्रतोपपदे णीञ् प्रापणे (भ्वा०) धातो क्विप्]

व्रतपा: यो व्रतानि कर्माणि रक्षति स (सूर्यरूप) ६ ८ २ सत्यनियमरक्षक (नर) १ ८३ ५ यो व्रत सत्य धर्माचरणनियम पाति रक्षतीति (ईश्वरोऽग्निर्वा) ४ १६ व्रतानि सत्यभाषणादीनि पाति यस्माद्यया वा, व्रतानि सुशीलादीनि पाति येन यया वा स (अग्नि=ईश्वरो-ऽध्यापको विद्युद्वा) ५ ६ यथा सत्यपालको विद्वास्तथा तत्सम्बुद्धौ (अग्ने=विज्ञानोन्नतविद्वन्) ५ ४० सुशील-रक्षका (विद्वज्जना) ३ ४ ७ सत्यनियमरक्षका (विद्वास) १.८३ ५ सत्याचाररक्षका (विद्वासो जना) ३ ७ ८ [व्रतोपपदे पा रक्षणे (अदा०) धातो क्विप्]

व्रतम् नियमपूर्वक धर्म्यानुचरणम् ४ ११ सत्यलक्षणम् २ २८ सत्यमान, सत्यभाषण, सत्यकरणञ्च १ ५ क्षमा न्यायप्रकाश वा कर्म्म ३ ५६ ३ सत्याचरणनियमपालनम् १८ २३ सत्यधर्मम् ऋ० भू० ६६, १ ५ सत्याचरणशीलम् १ १४४ १ सुशील सुशीलता वा १ १३६ ५ कर्म शील वा ५ ६६ १ शील नियम वा २ ३८ ३ सामर्थ्य शील वा १ १० १ ३ तत्तद्धर्म्यनियमम् १ ३१ २ ब्रह्मचर्य, गृहस्थ, वानप्रस्थ, सन्यासादि सत्याचार को आ० २ ४७, १ ५ ब्रह्मचर्यादि आश्रमो के धारण को स० वि० १८६, २० २४ **व्रतानि**=सत्यपालनादीनि कर्म्माणि १ ६१ ३ नियतधर्म-युक्तानि कर्म्माणि गुणस्वभावाश्च १ २२ ६. वर्त्तमानानि सत्यानि वस्तूनि कर्माणि वा १ १२४ २ ब्रह्मचर्यादीनि ५ ६ नियमानुगतानि धर्म्याणि कर्माणि १ ८४ १२ [व्रतम् इति कर्मनाम निघ० २ १ व्रत कर्मनाम वृणोतीति सत नि० २ १३ इदमपीतरद् व्रतमेतस्मादेव निवृत्तिकर्म वारयतीति सत । अन्नमपि व्रतमुच्यते यदावृणोति शरीरम् नि० २ १३ अन्न वै व्रतम् श० ७ ५ १ २५ ता० २२ ४ ५ अन्न व्रतम् ता० २३ २७ २ अन्न हि व्रतम् श० ६ ६ ४ ५ तदु हापाढ सावयसो ऽनशनमेव व्रत मेने श० १ १ १ ७ एतत् खलु वै व्रतस्य रूप यत् सत्यम् श० १२ ८ २ ४ सवत्सरो वै व्रत तस्य वसन्त ऋतुर्मुख ग्रीष्मश्च वर्पाश्च पक्षौ शरन्मध्य हेमन्त पुच्छम् ता० २१ १५ २ वीर्यं वै व्रतम् श० १३ ४ १ १५ अमानुप इव वाऽएतद् भवति यद् व्रतमुपैति श० १ ६.३ २३ न ह वा ऽअव्रतस्य देवा हविरश्नन्ति ऐ० ७ ११. कौ० ३ १. श्रीर्वै व्रतम् जै० २.४१४ एतत् खलु वै व्रतस्य रूप यत् सत्यम् श० १२ ८ २ ४ सवत्सर हि व्रत नाति तै० स० २ ५ ४ ४]

व्रता शरीरात्म-मनोजानि धर्म्याणि कर्म्माणि २ २७ ८ गुण-कर्म-शीलानि २.३८ ७ विद्या-धर्मानुष्ठान-शीलानि १.७० १ [व्रतप्राति० शेर्लोपश्छन्दसि । व्रतमिति व्याख्यातम्]

व्रतेभि· सत्कर्म्मभि ७.३५ ६ [व्रतप्राति० 'बहुल छन्दसी' ति सूत्रेण भिस ऐसादेशो न भवति]

व्रतेव कर्म्माणीव ५ ६६ २ [व्रता-इवपदयो समास]

व्रन् वृण्वन्ति ४ ५५ ६ वृणुयु ४ २.१६. अपवृणोति ४ ५ ८ [वृञ् वरणे (स्वा०) धातोर्लङ् । अटोऽभाव । 'बहुल छन्दसी' ति विकरणलुक्]

व्रन्दिन: निन्दिता व्रन्दा सन्ति येपा तान् दुष्टान् १ ५४ ५ निन्दिता व्रन्दा मनुष्यादिसमूहा विद्यन्ते येषा तान् (मायिन=शत्रून्) १ ५४ ४ [व्रन्दप्राति० निन्दाया मत्वर्थ इनि । व्रन्दी व्रन्दतेर्मृदुभावकर्मण नि० ५ १५]

व्रय: वर्जनीया (दुर्जना), प्र०—व्रय 'बहुलमेतन्नि-दर्शनम्' इति व्रीधातुर्ग्राह्य २ २३ १६ [व्री वर्जने 'बहुल-मेतन्निदर्शनम्' इत्यपठितोऽपि धातु । तत 'एरच्' इत्यच्]

व्राणा: आवृता (जलानि) १.६१ १० [वृञ् आवरणे (चुरा०) धातो क्तप्रत्यये पृषोदरादिना रूपम्]

व्रातपतिभ्य. मनुष्याणा पालकेभ्य (राजपुरुषेभ्य) १६ २५. [व्रात-पतिपदयो समास । व्राता मनुष्यनाम निघ० २ ३]

व्रातम् व्रताना सत्यभाषणादीना समूहस्तत् ३ ५५ [व्रतप्राति० 'तस्य समूह' इति समूहार्थेऽण्]

व्रातं व्रातम् वर्त्तमान वर्त्तमानम् (गण गण=समूह समूहम्) ३ २६ ६ [व्राता मनुष्यनाम निघ० २ ३]

व्रातसाहा: ये व्रातान् शत्रुसमूहान् सहन्ते ते (राज-पुरुपा) ६ ७५ ६ ये व्रातान् वीराणा समूहान् सहन्ते ते (पितर=पालनक्षमा राजपुरुषा) २६ ४६ [व्रातोपपदे षह मर्षणे (भ्वा०) धातो 'कर्मण्यण्' इत्यण् । व्राता मनुष्यनाम निघ० २ ३],

व्यृद्ध्यै विगता चाऽसौ ऋद्धिश्च व्यृद्धिस्तस्यै ३० १७ [वि ऋद्धिपदयो समास]

व्येति निस्सरति ३२ ८ **व्येतु**=व्याप्नोतु ऋ० भू० १५७ **व्येषि**=विशेषेण प्राप्तोऽसि १ ५० ७ [वि+इण् गतौ (अदा०) धातोर्लट् । अन्यत्र लोडपि]

व्येनसा विनष्टपापाचरणेन ३ ३३ १३. [वि-एनस्-पदयो समास]

व्येनी या विशिष्टा मृगीवद् वेगवती (उषा) ५ ८० ४ [वि-एनीपदयो समास । एनी=एतप्राति० 'वर्णादनुदात्तात्०' अ० ४ १ ३९ सूत्रेण ङीप् । तकारस्य च नकारादेश]

व्यैताम् विविधतया प्राप्नुत १४ ३० [वि+इण् गतौ (अदा०) धातोर्लङ्]

व्यैरत् विशिष्टतयैरयति २ १९ ६ **व्यैरम्**=प्रेरयेयम् ४ २६ ३ [वि+ईर गतौ कम्पने च (अदा०) धातोर्लङ् । वचनव्यत्यय]

व्यैरयत् विविधतया वीरयत्, वीरयत्यूर्ध्वमधोगमयति प्र०—अत्र लडर्थे लङ् १ ७ ३ विशेषेण प्रेरयति २ २० ७ विशिष्टतया गमयति १ ५१ ११ [वि+ईर गतौ कम्पने च (अदा०) धातोर्णिजन्ताल्लङ्]

व्योम स्थानम् २३ ६२ व्यापकमवकाशम् १ १६४ ३४ आकाशरूप स्थानम् २३ ६१ अवकाश १ १६४ ३५ **व्योमनः**=आकाशस्य १ ५२ १२ **व्योमनि**=व्योमेव प्रकाशिते व्यापके परमात्मनि ५ ६३ १ व्योमवद् व्यापके सर्वरक्षणादिगुणान्विते ब्रह्मणि १ १४३ २ [व्ययति सत्वृणोतीति विग्रहे व्यय गतौ (भ्वा०) धातो 'नामन्सीमन्व्योमन्०' उ० ४ १५१ सूत्रेण मनिन् निपातनाच्च रूपसिद्धि । व्योम अन्तरिक्षनाम निघ० १ ३ व्योमन् व्यवने नि० ११ ४० व्योम दिङ्नाम निघ० १ ६ उदकनाम निघ० १ १२ इमे वै लाका परम व्योम श० ७.५ २ १८ एष उ ह वै व्योमा ये ऽत्रीश्च प्रजापतेर् देवा जै० २ ८८]

व्योमन् व्योम्नि व्यापके परमेश्वरे १ १६४ ३९ व्योमवद् व्याप्तेऽक्षुव्वे (परमेश्वरे) १ १६४ ४१ बुद्ध्यवकाशे १९ ७ व्याप्तेऽन्तरिक्षे १३ ४९ [व्योमन् पूर्वपदे व्याख्यातम् । तत सप्तम्या 'सुपा सुलुक्०' इति लुक्]

व्योमसत् यो व्योमनि सीदति स (परमेश्वर) १० २४ यो व्योमवद् व्यापके परमेश्वरे सीदति स (जीव) १२ १४ **व्योमसदम्**=विमानैर्व्योमनि गच्छन्तम् (इन्द्र=सम्राजम्) ९ २ [व्योमन् इत्युपपदे षद्लृ विशरण-गत्यवसादनेषु (भ्वा०) धातो क्विप् । व्योमसद् एष (सूर्य) वै व्योमसद् व्योम वा एतत् सद्मना यस्मिन्नेष आसन्नस्तपति ऐ० ४ २०]

व्योमा व्योमवद् विस्तृत (भान्त=प्रकाश) १४ २३ [व्योमन् इति व्याख्यातम् । व्योमा (यजु० १४ २३) व्योमा हि सवत्सर श० ८ ४ १ ११ प्रजापतिर्वै व्योमा श० ८.४ १ ११]

व्रजनम् गमनम् ७ ३ २ [व्रज गतौ (भ्वा०) धातोर् भावे ल्युट्]

व्रजन्तीः गच्छन्ती (आप=प्राणा) ३ ५६ ४ [व्रज गतौ (भ्वा०) धातो शत्रन्तान् ङीप्]

व्रजम् व्रजन्ति जानन्ति जना येन त सत्सङ्गम्, व्रजन्ति विद्वासो यस्मिन् सन्मार्गे तम् १ २६ व्रजन्ति गच्छन्ति प्राप्नुवन्त्यापो यस्माद् यस्मिन् वा त व्रज मेघम् १ २५ निवासस्थानम् १ ६२ ४ गोस्थानम् १२ ८४ व्रजन्ति यस्मिस्तम् (गोष्ठम्) ६ ४५ २४ यो व्रजति तम् (अद्रि=मेघम्) ४ १ १५ प्राप्त देशम् १ १५६ ४ ज्ञातव्यम् (जनम्) १ १३२ ४ अधर्ममार्गम् १ १३२ ४ समूह ज्ञान वा १ १० ७ गोष्ठानम् २ ३८ ८ शस्त्राऽस्त्रम् ४ २० ८ **व्रजस्य**=व्रजितु गन्तु योग्यस्य (गव्यस्य) १ १३१ ३ व्रजन्ति घना यस्मिँस्तस्य मेघस्य ६ १० ३ **व्रजः**=यो व्रजति गच्छति स (इन्द्र=विद्वज्जन) ३ ३० १० **व्रजे**=गवा स्थित्यधिकरणे ५ ३४ ५ [व्रज गतौ (भ्वा०) धातो 'गोचरसचर०' अ० ३ ३ ११९ सूत्रेण करणाधिकरणयोर्घ । व्रज मेघनाम निघ० १ १० व्रज=व्रजत्यन्तरिक्षे नि० ६ २]

व्रजश्रितः व्रजान् गवादिस्थित्यर्थान् देशान् श्रियन्ति निवासयन्ति ते (राजपुरुषा) १० ४ [व्रजोपपदे श्रिञ् सेवायाम् (भ्वा०) धातो क्त]

व्रजा वेगान् ५ ६ ७ [व्रज गतौ (भ्वा०) धातो-र्घञर्थे क । तत 'सुपा सुलुक्०' इति शस आकारादेश]

व्रजिनीः वर्जनक्रिया ५ ४५ १ [व्रज गतौ (भ्वा०) धातोर्बाहु० औणा० इनि तत स्त्रिया ङीप्]

व्रजेव व्रजन्ति यया गत्या तद्वत् ५ ६४ १ [व्रजा-इव-पदयो समास]

व्रतपते व्रत नियत यन्न्याय कर्म्म तत्पतिस्तत्सम्बुद्धौ (अग्ने=सत्यस्वरूपेश्वर) २ २८ सत्यपते (परमेश्वर) ऋ० भू० ९९, १५ सत्यभाषणादीना व्रताना कर्मणा

शकुन्ते=शक्तिमन् (सदुपदेशक जन) २४२३ [शक्लृ शक्तौ (स्वा०) धातो 'शकेरुनोन्तोन्त्युनय.' उ० ३४६ सूत्रेण उन्ति]

शकुन्तिका अल्पा पक्षिणीव निर्बला, भा०—क्षीणा (प्रजा) २३ २२ कपिञ्जली ११६१११ [शकुन्तिप्राति० अल्पार्थे क, तत स्त्रिया टाप्। शकुन्तिरिनि पूर्वपदे व्याख्यातम्]

शकुलाविव ह्रस्वौ मत्स्याविव २३ २८ [शकुलौ-इवपदयो समास। शकुल =शक्नोति तरितुमिति विग्रहे शक्लृ शक्तौ (स्वा०) धातोर् 'मद्गुरादयश्च' उ० १४१ सूत्रेण उरच्। प्रत्ययरेफस्य लत्वम्]

शकृत् विष्ठेव ११६११० **शक्ना**=शकृता दुर्गन्धादिनिवारणसामर्थ्येन धूमादिना ३७ ९ [शक्लृ शक्तौ (स्वा०) धातो 'शकेर्ऋतिन्' उ० ४५८ सूत्रेण ऋतिन्। शक्ना' प्रयोगे शकृन्प्राति० तृतीयैकवचने 'पद्दन्नोमास्०' अ० ६१६३ सूत्रेण शकन् आदेश]

शक्तम् समर्थम् (क्षत्र=राज्य धन वा) ५६८.३ [शक्लृ शक्तौ (स्वा०) धातो क्त]

शक्तिम् तीक्ष्णाग्राम् २३९७ **शक्ति**=सामर्थ्यम् ४२२८ समर्थता १८३३ **शक्तीः**=सामर्थ्यानि ३३११४ **शक्त्या**=पाकविद्यासामर्थ्येन ११५७ योगबलोन्नत्या ऋ० भू० १५६, ११३ [शक्लृ शक्तौ (स्वा०) धातो स्त्रिया क्तिन्। शक्ति कर्मनाम निघ० २१]

शक्तिवन्तः सामर्थ्ययुक्ता (पितर=पालनक्षमा राजपुरुषा), प्र०—अत्र 'छन्दसीर' इति वत्वम् २९४६. प्रशस्ता बह्वी शक्ति सामर्थ्य विद्यते येषान्ते (राजपुरुषा) ६७५९ [शक्तिप्राति० भूमन्यर्थे मतुप्। 'छन्दसीर' इति मतोर्मस्य वकार। शक्तिभि कर्मभि नि० ७२८]

शक्ती आत्मसामर्थ्येन, प्र०—अत्र 'सुपा सुलुक्०' इति तृतीयैकवचनस्य पूर्वसवर्णादेश १३११८ [शक्लृ शक्तौ (स्वा०) धातो स्त्रिया क्तिन्। तत सुपा सुलुक्०' इति पूर्वसवर्णदीर्घादेश]

शक्तीवः शक्तिर्बहुविध सामर्थ्य विद्यते यस्य तत्सम्बुद्धौ (राजन्) ५३१६ [शक्तिप्राति० भूमन्यर्थे मतुप्। 'छन्दसीर' अ० ८२१४ सूत्रेण मतोर्मस्य वकार। शक्तिवन्प्राति० सम्बुद्धौ 'मतुवसो०' अ० ८३१ सूत्रेण रुत्वम्। पूर्वस्य दीर्घ संहितायाम्]

शक्म शक्यं कर्म्म २३८४ **शक्मना**=कर्मणा २२१८ [शक्लृ शक्तौ (स्वा०) धातो 'अत्तिशकिभ्या छन्दसि' ४१४७ सूत्रेण मनिन्। शक्म कर्मनाम निघ० २१.]

शक्र शक्नोति सर्वं व्यवहार कर्त्तु तत्सम्बुद्धौ (इन्द्र=सभापते) १.१०४८ शक्तिमन् (इन्द्र) ६३५५ समर्थ (पुत्र), आर्याभि० १४६, ऋ० १७१६८ **शक्रम्**=शक्तिमन्तम् (राजानम्) ऋ० भू० २२०, २०५०. मद्य सर्वजगत्कर्त्ताऽनन्तवीर्यवान् (ईश्वर) प० वि०। आयुकर्त्तारम् (इन्द्र=राजानम्) २०५०. **शक्रः**=समर्थ शक्तिमान् कृपायमाण सन् (जगदीश्वर) ११०५ दातु समर्थ (इन्द्र=परमात्मा) ११०६ [शक्लृ शक्तौ (स्वा०) धातो 'स्फायितञ्चि०' उ० २१३ सूत्रेण रक्]

शक्रा शक्तिनिमित्ता (मात्रा) ५४११५ [शक्रप्राति० स्त्रिया टाप्। शक्र =शक्लृ शक्तौ (स्वा०) धातोरौणा० रक्]

शक्रा शक्तिमन्तौ (अग्निवायू) २३९३ [शक्र इति व्याख्यातम्। ततो द्विवचनस्याकारादेश]

शक्वने शक्तिमद्वीरसैन्यप्राप्तये ५५ [शक्लृ शक्तौ (स्वा०) धातोर्मत्वर्थे 'छन्दसीवनिपौ' इति वा०सूत्रेण वनिप्]

शक्वरयः शक्तय १८२२ **शक्वरीषु**=शक्तिमतीषु सेनासु ७३३४ **शक्वरी**=शक्तिनिमित्ता गा २१२७ शक्तिमत्य (राजपुरुषाणा स्त्रिय) १०४ [शक्लृ शक्तौ (स्वा०) धातोर्मत्वर्थे 'छन्दसीवनिपौ' इति वनिप्। तत स्त्रिया 'वनो र च' सूत्रेण ङीप् रेफश्चान्तादेश। 'शक्वरय' प्रयोगे छान्दसो ह्रस्व। शक्वरी बाहुनाम निघ० २४ गोनाम निघ० २११ शक्वर्य ऋच शक्नोते। तद् यद् आभिर्वृत्रमशकद् हन्तु तच्छक्वरीणा शक्वरीत्वमिति विज्ञायते नि० १८ शक्लृ धातोर्वा 'स्नामदिपद्यर्त्तिपृशकिभ्यो वनिप्' उ० ४११३ सूत्रेण वनिप्। शक्वर्य (ऋच) यदिमाँल्लोकान् प्रजापति सृष्ट्वेद सर्वमशक्नोद् यदिद किं च तच्छक्वर्योऽभवँस्तच्छक्वरीणा शक्वरीत्वम् ऐ० ५७ इन्द्र प्रजापतिमुपाधावद् वृत्र हनानीति तस्मा एतच्छन्दोभ्य इन्द्रिय वीर्यं निर्माय प्रायच्छदेतेन शक्नुहीति तच्छक्वरीणा शक्वरीत्वम् ता० १३४१ एताभिर्वा इन्द्रो वृत्रमशकद् हन्तु तद् यदाभिर्वृत्रमशकद् हन्तु तस्माच्छक्वर्य कौ० २३२. एताभि (भूरिरिभि शक्वरीभि) वा इन्द्रो वृत्रमहन् क्षिप्र वा एताभि पाप्मान हन्ति क्षिप्र वसीयान् भवति ता० १२१३२३ पशव शक्वर्य ता० १३१३ पशवो वै

व्रातासः व्रतेषु सत्याचारेषु भवा (विद्वांसो जना) १ १६३ ८ मनुष्या २६ १६ वेगवन्ति यानानि ऋ० भू० १६६, ऋ० १ ६ ६ ४ [व्रातप्राति० जसोऽसुक्। व्रात = व्रतप्राति० भवार्थेऽण्। व्राता मनुष्यनाम निघ २ ३ विषम इव वै व्रात ता० १७ १ ५ ११]

व्रात्यम् असम्कृतम् (दुष्टजनम्) ३० ८ [व्रातात् समूहात् च्यवतीति विग्रहे व्रातप्राति० यत्। सावित्रीपतिता व्रात्या इति स्मृति]

व्रात्यः महोत्तमगुणविशिष्ट सेवनीयोऽतिथि ऋ० भू० २७१ [व्रातप्राति० 'तत्र साधु' रिति यत्]

व्राधतः अतिवृद्धान् शत्रून् १ १०० ९ विरोधिन (जनान्) १ १२२ १० [व्राधत् महन्नाम निघ० ३ ३]

व्राधन्त वर्धन्ते ५ ६ ७ [वृधु वृद्धौ (भ्वा०) धातो-र्लट्। पृषोदरादिना ऋकारस्य रेफोऽकारस्य चाऽऽकारादेश]

व्राधन्तम् व्याधमिव प्रजाहिंसकम् (शत्रुम्) ४ ३२ ३

व्राधन्तः=वर्धमाना, (जना) प्र०—अत्र पृषोदरादिना पूर्वस्याऽऽकारादेशो व्यत्ययेन परस्मैपदश्च १ १३५ ९ [वृधु वृद्धौ (भ्वा०) धातो शतृ। व्यत्ययेन परस्मैपदम्। पृषोदरा-दिना रूपम्। व्राधत् महन्नाम निघ० ३ ३]

व्राधन्तमः अतिशयेन वर्द्धमान (विद्वज्जन) १ १५० ३ [व्राधन् महन्नाम (निघ० ३ ३) ततोऽतिशायने तमप्। अथवा व्राधम् महन्नाम निघ० ३ ३ ततोऽतिशायने तमप्। नुडागमश्छान्दस]

व्राम् वरीतुमर्हाम् (मेना=वाचम्), प्र०—वृञ् धातो-र्घञर्थे क १ १२१ २ **व्राः**=या वृणोति सा (उषा) १ १२४ ८ ये व्रजन्ति ते (पश्वा=धनसम्पन्ना जना), प्र०—अत्र व्रजधातोर्बाहुलकादौणादिको ड प्रत्यय व्रा इति पदनाम निघ० ४ २, १ १२६ ५ या व्रियन्ते ता (वाणी) ४ १ १६ [वृञ् वरणे (स्वा०) धातोर्घञर्थे क। व्रज गतौ (भ्वा०) धातोर्वा बाहु० औणा० ड। व्रा व्रात्या नि० ५ ३]

व्रिशः प्रजा, प्र०—अत्र वर्णव्यत्ययेन वस्य स्थाने व्र १ १४४ ५ [विश मनुष्यनाम निघ० २ ३ वकारस्य व्रादेशो वर्णव्यत्ययेन। व्रिश अङ्गुलिनाम निघ० २ ५]

व्रीहयः तण्डुला १८ १२ [व्री वरणे (क्र्या०) धातोर्बाहु० औणा० हि। व्रीहय शक्वर्य जै० १ ३३३]

व्रेशीनाम् दिव्यानामपामिव निर्मलविद्या सुशीलव्या-प्तानाम् (अ०—पत्नीनाम्), प्र०—एता वै दैवीरापस्तद्या-श्चैव दैवीरापो याश्चेमा मानुष्यस्ताभिरेवास्मिन्नेतदुभयीभी रस दधाति श० ११ ५ ९ ८, ८ ४८

शकत् शक्नोति, प्र०—अत्र लडर्थे लुङडभावश्च १ १० ६ **शकः**=समन्ताच्छक्नुहि ७ २० ९ **शकेम**= समर्थयेम २ ५ १ शक्नुयाम, प्र०—अत्र विकरणव्यत्ययेन श ३ २७ ३ **शकेयम्**=शक्नुयाम ४४ यथा समर्थो भवेयम् १५ **शक्नवाम**=समर्था भवेम १ २७ १३ [शक्लृ शक्तौ (स्वा०) धातोर्लुङ्। 'अडभावश्छान्दस। लृदित्वादङ्। अन्यत्र लिङ् लेट् च। 'लिङ्याशिष्यङ्' अ० ३ १ ८६ सूत्रेण लिङ्यङ्]

शकपिण्डैः शक्ते सङ्घातै २५ ७ [शक-पिण्डपदयो समास। शक =शक्लृ शक्तौ (स्वा०) धातोर्घञर्थे क। शक उदकनाम निघ० १ १२]

शकमयम् शक्तिमयम् (धूमम्) १ १६४ ४३ [शक-प्राति०—'तत्प्रकृतवचने मयट्' अ० ५ ४ २१ सूत्रेण मयट्]

शका शक शक्तिमान् (पशुविशेष), प्र०—अत्र 'सुपा सुलुक्०' इत्याकारादेश २४ ३२ [शक्लृ शक्तौ (स्वा०) धातोर्घञर्थे क। तत 'सुपा सुलुक्०' इति सोराकारादेश]

शकुनः पक्षी ४ २६ ६ शक्तिमान् (विद्वान् सभेश) १८ ५३ [शक्लृ शक्तौ (स्वा०) धातो 'शकेरुनोन्तो-न्त्युनय' उ० ३ ४९ सूत्रेण उन प्रत्यय]

शकुनिसादेन येन शकुनीन् सादयन्ति तेन (व्यव-हारेण) २५ ३ [शकुन्युपपदे षद्लृ विशरणगत्यवसादनेषु (भ्वा०) धातोर्णिजन्तात् 'कृतो बहुल वे' ति वार्तिकेन करणे मूलविभुजादित्वात् क]

शकुनिः पक्षी २४ ४० **शकुने**=पक्षिवच्छक्तिमन् (वेदपाठिजन) २ ४३ २ शकुनिवद्वर्त्तमान (उपदेशक जन) २ ४२ १ वक्तृत्वशक्तियुक्त उपदेशक जन) २ ४३ २ सर्वशक्तिमन्नीश्वर आर्याभि० १ ५२, ऋ० २ ८ १२ २ [शक्लृ शक्तौ (स्वा०) धातो 'शकेरुनोन्तोन्त्युनय' उ० ३ ४९ सूत्रेण उनि। शकुनि शक्नोत्युन्नेतुमात्मान, शक्नोति नदितुम् इति वा, शक्नोति तकितुमिति वा, सर्वत शकरोऽस्त्विति वा शक्नोतेर्वा नि० ९ ३]

शकुन्तकः निर्बल पक्षीव (अध्वर्यु =राजा) २३ २३ [शकुन्तप्राति० अल्पार्थे ह्रस्वार्थे वा क। शकुन्त =शक्लृ शक्तौ (स्वा०) धातो शकेरुनोन्तोन्त्युनय' उ० ३ ४९ सूत्रेण उन्त]

शकुन्तयः शक्तिमन्त (वय =पक्षिण) २ ४३ १

सभाद्यध्यक्षाय) १ ५४ २ **शचीवः**=शची प्रशस्ता वाक्प्रज्ञा कर्म वा विद्यतेऽस्मिन् तत्सम्बुद्धौ (इन्द्र=सभाध्यक्ष) १ ६२ १२ शची बहुविध कर्म बह्वी प्रज्ञा वा विद्यते यस्य तत्सम्बुद्धौ (इन्द्र=न्यायाधीश), प्र०—शचीति प्रज्ञानामसु पठितम् निघ० ३ ९ कर्मनामसु च निघ० २ १ अत्र 'छन्दसीर' इति मतुपो मस्य व 'मतुवसो रु०' अ० ८ ३ १ इति रुत्वञ्च १ २९ २ **शचीवान्**=बहुप्रजावान् (राजा) ४ २२ २ [शचीति व्याख्यातम् । तत प्रशसायामर्थे मतुप् । 'छन्दसीर' इति वत्व मतोर्मस्य । शचीव कर्मवन् नि० ५ ११]

शचीवसू शची प्रज्ञा वासयितारौ (अध्यापकोपदेशकौ) १ १३९ ५ [शची-वसुपदयो समास । शचीति व्याख्यातम्]

शण्डः शमादिसहित (योगिजन) ७ १३ शमाऽन्वित, भा०—शमादिगुणप्रसक्त पुरुष ७ १२ [शमु उपशमने (दिवा०) धातोर्बाहु० औणा० ड]

शण्डिकानाम् शत्रूणा तस्याऽवयवभूतानाम् २ ३० ८

शतक्रतुम् असङ्ख्यप्रज्ञ बहुकर्माण वा (राजानम्) २१ ३९ अनेककर्मप्रज्ञायुक्तम् (इन्द्र=सेनेशम्) १ ५१ २ अमितप्रज्ञम् (इन्द्र=राजानम्) ३ ५१ २ **शतक्रतुः**=शतमसङ्ख्याता क्रतव प्रज्ञा कर्माणि वा यस्य स (सेनापति) ३३ ९६ अतुलप्रज्ञ (विद्वज्जन) २० ७५ **शतक्रतो**=शतान्यसङ्ख्याता क्रतव कर्माणि यस्य शूरवीरस्य सूर्यलोकस्य वा तत्सम्बुद्धौ, प्र०—शतमिति बहुनाम निघ० ३ १ क्रतुरिति कर्मनाम निघ० २ १, १ ४ ८ शत बहूनि कर्माणि प्रज्ञानानि वा यस्य तत्सम्बुद्धौ (इन्द्र=परमेश्वर) १ १० १ शतेष्वसख्यातेषु वस्तुषु क्रतु. प्रज्ञा यस्य तत्सम्बुद्धौ (इन्द्र), प्र०—क्रतुरिति प्रज्ञानाम निघ० ३ ९, १ ४ ९ असङ्ख्यप्रज्ञोत्तमकर्मन्त्रा (इन्द्र=रक्षक राजन्) ६ ४१ ५ शतविधप्रज्ञाकर्मयुक्त सभेश राजन् १ ३० १५ अमितवृद्धे (इन्द्र=राजन्) ३ ३७ ९ बहुप्रज्ञान (इन्द्र=राजन्) ३ ३७ ३ असङ्ख्यातोत्तमप्रज्ञ बहूत्तमकर्मन्वा न्यायाध्यक्ष १ १०५ ८ हे अनन्तक्रियेश्वर आर्याभि० १ ३५, ऋ० १ १ ३१ ९ शतमसख्यातानि क्रतव कर्माण्यनन्ता प्रज्ञा वा यस्य तत्सम्बुद्धौ सर्वकामप्रदेश्वर १ १६ ९ [शत-क्रतुपदयो समास । शत दशदशत नि० ३ १० शतम् बहुनाम निघ० ३ १ क्रतु कर्मनाम निघ० २ १ प्रज्ञानाम निघ० ३ ९ शतक्रतु इन्द्र आसीत् सीरपति शतक्रतु तै० २ ४ ८ ७]

शतग्विनम् शतग्वोऽसङ्ख्याता गावो विद्यन्ते यस्मिँस्तम् (रयिं=धनम्) ४ ४९ ४ शतानि गावो विद्यन्ते यस्मिँस्तम् (रयिम्) १ ५९ ५ [शतगुप्राति० . भूम्न्यर्थे इनि । शतगु =शत-गोपदयो समास]

शततमम् अतिशयेनाऽसङ्ख्यातम् (वेश्म=सर्वहित पदार्थम्) ४ २६ ३ [शतप्राति० अतिशायने तमप् । शतम् बहुनाम निघ० ३ १]

शततमा अतिशयेन शतानि (अब्दलानि) ७ १९ ५ [शततमम् इति व्याख्यातम् । तत शेर्लोपश्छन्दसि]

शततेजाः शतानि बहूनि तेजासि यस्मिन्त्स सूर्य, प्र०—शतमिति बहुनाम निघ० ३ १ १ २४ [शत-तेजस् पदयो समास]

शतदायम् असङ्ख्यदायभागिनम् (जनम्) २ ३२ ४ [शत-दायपदयो समास । दाय =डुदाञ् दाने (जु०) धातो 'ददातिदधात्योर्विभाषा' अ० ३ १ १३९ सूत्रेण ण । आतो युगागम]

शतदाव्नि असङ्ख्यदाने (राज्यपालनाख्ये व्यवहारे) ५ २७ ६ [शतोपपदे डुदाञ् दाने (जु०) धातो 'क्तनो बहुल वे' नि भावे वनिप्]

शतदुरेषु शतावरेषु मेघाऽवयवेषु घनेषु १ ५१ ३

शतद्वसुम् शतान्यसङ्ख्यातानि वसूनि यस्मिँस्तम् (रथ=यानम्), प्र०—अत्र पृषोदरादित्वात् पूर्वपदस्य तुगागम १ ११९ १ [शत-वसुपदयो समास । पूर्वपदस्य तुगागमश्छान्दस]

शतधन्यम् असङ्ख्ये धने साधुम् (सोमम्=ओषधिसारम्) ४ १८ ३ [शत-धनयो समासात् साध्वर्थे यत्]

शतधन्वने धनुर्विद्याद्यसङ्ख्यशास्त्रविद्याशिक्षकाय (विद्वज्जनाय) १६ २९ [शत-धन्वन्पदयो समास । धन्वन् धनुषि नि० ९ १८ धन्वान्तरिक्ष धन्वन्त्यस्मादाप नि० ५ ५]

शतधारम् शत बहुविधमसङ्ख्यात विश्व धरतीति तम्, अ०—शतधा (वसो =यज्ञ), प्र०—शतमिति बहुनाम निघ० ३ १, १ ३ शतधा धारा सुशिक्षिता वाग् यस्य तम् (विपश्चित=विद्वज्जनम्) ३ २६ ९ शतमसङ्ख्याता दुग्धधारा यस्मात्तम् (गवादिक वीर्यसेचक वृषभ वा) १३ ४९ **शतधारः**=शतशो धारा वाचो यस्य स (वीर्यवान् पुरुष) १९ ८७ **शतधारेण**=बहुविद्याधारकेण परमेश्वरेण वेदेन वा १ ३ [शतोपपदे धृञ् धारणे (भ्वा०) धातो 'कर्मण्यण्' इत्यण् । अथवा शतधारापदयो समास ।

शक्वर्य ता० १३ ४ १३ पशवो वै शक्वरी तै० १ ७ ५ ४ पशव शक्वरी ता० १६ ७ ६ श्री शक्वर्य ता० १३ २ २ शाक्वरो वज्र तै० २ १ ५ ११ वज्र शक्वर्य ता० १२ १३ १४ रथन्तरमेतत् परोक्ष यच्छक्वर्य ता० १३ २ ८ ब्रह्म शक्वर्य ता० १६ ५ १८ सप्तपदा वै तेपा (छन्दसा) परार्घ्या शक्वरी श० ३ ६ २ १७ सप्तपदा शक्वरी तै० २ १ ५ ११ ता० १६ ७ ६ स (प्रजापति) शक्वरीरसृजत तदपाङ्घोषोऽन्वसृज्यत ता० ७ ८ १२ व्रीहय =शक्वर्य जै० १ १३३ आपो वै शक्वर्य जै० ३ ६२]

शग्धि दातु शक्नुहि, प्र०—अत्र 'वाच्छन्दसि' इति विकरणलुक् २ २ १२ देहि ४ २१ १०. समर्थो भव ५ १७ ५ सुखदानाय समर्थोऽसि, प्र०—अत्र 'वहुल छन्दसि' इति श्नोर्लुक् १ ४२ ६ [शक्लृ शक्तौ (स्वा०) धातोर्लोट्। 'वहुल छन्दसि' सूत्रेण शपो लुकि तत्स्थानभूतस्य श्नोरपि लुक्]

शग्मम् सुखम्, भा०—चक्रवर्त्तिराज्यादिकमैहिक सुखम् ३ ४३ सासारिकमाभ्युदयिकम् (सुखम्) ऋ० भू० २४०, ३ ४३ [शग्मम् सुखनाम निघ० ३ ६ शग्म कर्मनाम निघ० २ १]

शग्मः शग्म सुख विद्यते यस्य स (सोम =ऐश्वर्यसमूह) प्र०—अत्र 'अर्श आदिभ्योऽच्' इत्यनेन मत्वर्थीयोऽच्प्रत्यय ६ ४४ २ **शग्मैः**=सुखप्रापकै (विद्वज्जनै) १ १४३ ८ [शग्मम् सुखनाम (निघ० ३ ६) । ततो मत्वर्थे 'अर्श आदिभ्योऽच्' इति सूत्रेणाच्]

शग्मया सुखरूपया (गातुमत्या=प्रशस्तवाग्भूमियुक्तया सभया) ७ ५४ ३ **शग्माम्**=सुखरूपाम् (तनू = शरीरम्) ४ २ सुखमयीम् (वाच=वाणीम्) ५ ४३ ११ [शग्मम् सुखनाम निघ० ३ ६ तत स्त्रिया टाप्]

शग्मानि सुखकारकाणि (इन्द्रियादीनि अष्टविंशानि) ऋ० भू० १६०, अथर्व० १६ १ ८ २ [शग्मम् सुखनाम निघ० ३ ६ ततो नपुसके प्रथमावहुवचनम्]

शग्मासः वहुसुखयुक्ता (पुत्रा) ७ ६० ५ [शग्मप्राति० जसोऽसुक् । शग्म =शग्मम् सुखनाम निघ० ३ ६ ततो मत्वर्थेऽच्]

शग्म्येन शग्मेपु सुखेपु भवेन (मनसा=अन्त करणेन) ३ ३१ १ [शग्ममिति व्याख्यातम् । ततो भवार्थे यत् । शग्म्यम् सुखनाम निघ० ३ ६]

शङ्कराय य सर्वेपा सुख करोति तस्मै (परमेश्वराय) सेनाधीशाय वा) १६ ४१ कल्याणकारकाय (ईश्वराय) प० वि० [शम् इत्युपपदे डुकृञ् करणे (तना०) धातो 'कृञो हेतुताच्छील्यानुलोम्येपु' अ० ३ २ २० सूत्रेण ताच्छील्ये ट । शम् सुखनाम निघ० ३ ६]

शङ्कव: कीला १ १६४ ४८ यन्त्रकला ऋ० भू० १६८ [शकि शङ्कायाम् (भ्वा०) धातो 'खरुशङ्कुपीयु०' उ० १ ३६ सूत्रेण कु-प्रत्ययान्तो निपात्यते । शङ्कु (साम) तद् (शकुमाम) उ सीदन्तीयमित्याहु ता० ११ १० १२ शकु भवत्यह्नो धृत्यै यद्वा अधृत शकुना तद् दाधार ता० ११ १० ११]

शङ्खध्मम् य शङ्खान् धमति तम् (पुरुषम्) ३० १६ [शखोपपदे ध्मा शब्दाग्निसयोगयो (भ्वा०) धातो क । शख =शमु उपशमने (दिवा०) धातो 'शमे ख' उ० १ १०२ सूत्रेण ख]

शङ्गय: श सुख गमयति स (राजा शिष्यो वा) २ १ ६ [शम् इत्युपपदे गम्लृ गतौ (भ्वा०) धातोर्वाहु० औणा० डि प्रत्यय । अन्तर्भावितो ण्यर्थ]

शङ्गवे श सुख गच्छति प्राप्नोति तस्मै (जनाय) १६ ४० [शम् इत्युपपदे गम्लृ गतौ (भ्वा०) धातो 'मितद्र्वादिभ्य उपसख्यानम्, अ० ३ २ १८० वा०सूत्रेण कर्त्तरि डु]

शचिष्ठया अतिशयितया क्रियया २७ ३६ अतिशयेन श्रेष्ठया वाचा प्रज्ञया कर्मणा वा ४ ३१ १ अतिशयेन शची प्रज्ञा तया वृता वर्त्तमानया (युक्तया) ३६ ४ [शचीति व्याख्यास्यते । ततोऽतिशायन इष्ठन् । तत स्त्रिया टाप्]

शचिष्ठः अतिशयेन प्राज्ञ (विद्वज्जन) ४ २० ६ [शचीप्राति० अतिशायन इष्ठन्]

शचीनाम् वाणीना सत्कर्म्मणा वा १ १७४ प्रज्ञाना वाचा वा ४ ४३ ३ **शचीभिः**=कर्मभि प्रज्ञाभिर्वा २७ ६ **शच्या**=प्रज्ञया प्रजया वा ६ १७ ६ [शच व्यक्ताया वाचि (भ्वा०) धातोरौणा० इन् । तत स्त्रिया 'कृदिकारादक्तिन' इति ङीष् । शची वाङ्नाम निघ० १ ११ कर्मनाम निघ० २.१ प्रज्ञानाम निघ० ३ ६ शचीभि =कर्मभि नि० १२ २७]

शचीपतिम् वेदवाच पालकम् (इन्द्र=शालाध्यक्षम्) १ १०६ ६ **शचीपतिः**=प्रजापतिर्वाक्पतिर्वा (इन्द्र = राजा) ४ ३० १७ **शचीपते**=प्रजास्वामिन् (उत्तमराजन्) ६ ४५ ६ वाच प्रज्ञाया पालक (राजन्) ४ ३१.७ [शची-पतिपदयो समास । शचीति व्याख्यातम्]

शचीवते प्रशस्ता प्रज्ञा विद्यते यस्य तस्मै (शक्राय=

शतविचक्षणाः शतमसङ्ख्या विचक्षणा गुणा यासु ता (ओषधी =सोमाद्या) १ ९ ९२ [शत-विचक्षणपदयो समास । विचक्षण =वि+चक्षिङ् व्यक्तायां वाचि (अदा०) धातोर्युच् । 'असनयोश्च प्रतिषेध' इति ख्याञ् न भवति]

शतव्रजा अपरिमितगतय (धारा) ४ ५८ ५ शतम-सङ्ख्याता व्रजा मार्गा यासा ता, भा०—अनेकमार्गा (वाच) १७ ६३ [शत-व्रजपदयो समास । व्रज =व्रज गतौ (भ्वा०) धातो 'गोचरसञ्चर०' इति घ]

शतशारदाय शत शरदो जीवनाय ३४ ५२ शत वर्ष पर्यन्त जीवन के लिए स० वि० १४०, अथर्व० १४ २ ७५ [शत-शारदपदयो समास । शारदम् =शरच्छब्दाद् भवार्थेऽण्]

शतसाः य शतानि सनति विभजति स (सभेशो राजा) ७ ८ ६. [शतोपपदे षण सम्भक्तौ (भ्वा०) धातो 'जनसनखन०' अ० ३ २ ६७ सूत्रेण विट् । 'विड्वनोरनु-नासिकस्यात' इत्याकारादेश । शतसा शतसानिनी नि० १० २९]

शतसेयाय शतादिसङ्ख्यापरिमितधनावसानाय ३.१८ ३ [शत-सेयपदयो समास । सेयम् =षोऽन्त-कर्मणि (दिवा०) धातोर्यत्]

शतस्वी शतमसङ्ख्य स्व धन विद्यते यस्य स (विप्र =मेधाविजन) ७ ५८ ४ [शत-स्वपदयो समासान् मत्वर्थ इनि]

शतहिमा शत हिमानि यस्या आयुषि सा (इडा= शास्त्रपारङ्गता वाणी) २ १ ११ **शतहिमाः**=यावच्छत वर्षाणि तावत् ६ ४ ८ शत हिमानि येषान्ते (सुवीरा जना) ६ १२ ६ शतवर्षजीविन (वीरपुरुषा) ६ १७ १५ शत हिमानि यासु समासु ता १ ७३ ९ शत हिमा हेमन्तर्त्तवो गच्छन्ति येषु सवत्सरेषु ते ऋ० भू० २४७, अथर्व० १९ ७४ [शत-हिमपदयो समासे स्त्रिया टाप् । हिमम्= हन हिंसागत्यो (अदा०) धातो 'हन्तेर्हि च' उ० १ १४७ सूत्रेण मक् । धातोश्च हिर देश]

शता शतान्यसङ्ख्यातानि वस्तूनि १ १२६ ६ [शत-प्राति० शेर्लोपश्छन्दसि]

शताऽऽत्मा शतेष्वसङ्ख्यातेषु पदार्थेष्वात्मा विज्ञान यस्य स (विद्वज्जन) १ १४९ ३ [शत-आत्मन्पदयो समास । आत्मन्=आत्माऽततेर्वाप्तेर्वा, अपि वाप्त इव स्याद् यावद् व्याप्तिभूत इति नि० ३ १५]

शतानीकाय शतान्यनीकानि सैनिकानि यस्य तस्मै (राज्ञे) ३४ ५२ [शत-अनीकपदयो समास । अनीकम्= अन प्राणने (अदा०) धातो 'अनिहृषिभ्या किच्च' उ० ४ १७ इति सूत्रेण ईकन्]

शतायुषम् शतवर्षजीविनम् (मनुष्यम्) ६ २.५ शतवर्षपरिमितजीवनम् (तनयम्) १३ ४१ **शतायुषा**= शत वर्षाणि यस्मिन्नायुषि तेन १९ ३० [शत-आयुष्-पदयो समास]

शतारित्राम् शतसङ्ख्याकान्यरित्राणि जलपरिमाण-ग्रहणार्थानि स्तम्भनानि वा यस्या ताम् (नावम्) १ ११६ ५ शतान्यरित्राणि लोहमयानि समुद्रस्थलान्तरिक्ष-मध्येस्तम्भ-नार्थानि गाधग्रहणार्थानि च भवन्ति यस्या ताम् (नावम्) ऋ० भू० १३३, १ ११६ ५ [शत-अरित्रपदयो समास । अरित्रम्=ऋ गतिप्रापणयो (भ्वा०) धातो करणे कारके 'अर्तिलूधू०' अ० ३ २ १८४ सूत्रेण इत्र प्रत्यय]

शतावयम् शतान्यवयवा यस्मिँस्तम् (पशुम्) ५ ६१ ५ [शत-अवयवपदयो समास । वलोपश्छान्दस]

शताश्रिम् य शतान्याश्रयति तम् (वज्रम्) ६ १७ १० [शतोपपदे आङ्पूर्वात् श्रिञ् सेवायाम् (भ्वा०) धातो कर्त्तरि क्विप्]

शतिनम् शतशो विद्यायुक्तम् (वाज=बोधम्) १ १२४ १३ अपरिमितमसङ्ख्यम् (पदार्थविज्ञानम्) २ २ ९ शतधा योद्धृसेनासहितम् (वाज=सङ्ग्रामम्) ६ ८ ६ **शतिनः**=प्रशस्तगुणै सह शतधा वर्त्तमानस्य (वाजस्य=अन्नस्य) १५ २१ शतमसङ्ख्यात बल येषा-मस्ति ते (मरुत =व्याप्तविद्या जना) ७ ५७ ७ शतम-सङ्ख्याता प्रशसिता विद्याकर्माणि वा विद्यन्ते येषा ते (विद्वासो मनुष्या), प्र०—अत्र प्रशसाऽर्थे इनि १ ३१ १० [शतम् बहुनाम निघ० ३ १ ततो भूम्न्यर्थे प्रशसाया वा मत्वर्थ इनि]

शतिनीभिः शतानि बहवो वीरा विद्यन्ते यासु सेनासु ताभि १ १३५ १ प्रशस्तसङ्ख्यातसेनाङ्गयुक्ताभि चमूभि १ १३५ ३ शतसङ्ख्याता प्रशस्ता गतयो यासु क्रियासु ताभि १ ५९ ७ शत बहूनि कर्माणि विद्यन्ते यासु ताभि (गतिभि) २७ २८ [शतप्राति० भूम्न्यर्थे मत्वर्थ इनि । तत स्त्रिया ङीप्]

शतेषुधे शतमसङ्ख्या शस्त्रास्त्रप्रकाशा यस्य तत्सम्बुद्धौ (अ०—सेनाध्यक्ष) १६ १३ [शत-इषुधिपदयो समास । इषुधि =इषूपपदे दधाते 'कर्मण्यधिकरणे च' ति कि]

धारा वाङ्नाम निघ० १ ११]

शतनीथम् शतं प्राप्तव्यम् (आजि=सङ्ग्रामम्) १ १७९ ३ **शतनीथः**=शतानि नीथानि यस्य स (इन्द्र=सेनाद्यधिपति) १ १०० १२ सैकडो असङ्ख्यात पदार्थों की प्राप्ति कराने वाला (ईश्वर) आर्याभि० १ ३४, ऋ० १ ७ १० १२ [शत-नीथपदयो समास:। नीथ=णीञ् प्रापणे (भ्वा०) धातो 'हनिकुषिनीरमि०' उ० २ २ सूत्रेण क्थन्]

शतपद्भिः शतैर्गमनशीलै पादवेगै (रथै) १ ११६ ४ शतेनाऽसङ्ख्यातेन वेगेन पद्भ्या यथा गच्छेत् तादृशैरत्यन्त-वेगवद्भि (यानै) ऋ० भू० १९०, १ ११६ ४. [शत-पादपदयो समासे 'पद्दन्नोमास्०' अ० ६ १ ६३ सूत्रेण पदादेश]

शतपयाः शतानि पयासि दुग्धादीनि वस्तूनि यस्य स (अ०—यजमान) १७ ५६ [शत-पयस्पदयो समास]

शतपर्वणा शतान्यसङ्ख्यातानि पर्वाण्यलङ्कर्माणि वा यस्मात्तेन (वज्रेण) १ ८० ६ शतस्याऽसङ्ख्यातस्य जीवजातस्य पर्व पालन यस्मात्तेन (वज्रेण) ३३ ९६ [शत-पर्वन्पदयो समास । पर्वन्=पॄ पालनपूरणयो. (जु०) धातो 'स्नामदिपद्यर्त्तिपॄशकिभ्यो वनिप्' उ० ४ ११३ सूत्रेण वनिप्]

शतपवित्राः शतैरुपायैर्ये शुद्धा (देवी=विदुष्य स्त्रिय) ७ ४७ ३ [शत-पवित्रपदयो समास । शतपवित्रा बहूदका नि० ५ ६]

शतभुजिः शतमसङ्ख्याता भुजय पालनानि यस्या सा (मही=राज्ञी) ७ १५ १४ **शतभुजिभिः**=शतम-सङ्ख्य सुख भोक्तु शील येषा तै (पूर्भि=नगरै) १ १६६ ८ [शत-भुजिपदयो समास । भुजि=भुज पालनाभ्यवहारयो (रुधा०) धातो 'इक् कृष्यादिभ्य' इति इक्]

शतम् शतसङ्ख्याकान् (हिमा=वर्षाणि) १ ६४ १४ शतवार्षिकम्, भा०—यदा शतवार्षिकमायुर्व्यतीत तदा शरीरस्य जराऽवस्था भवेत् २५ २२ असङ्ख्याना (प्राणा) १७ ७१ शतादधिकानि वा (हिमा=हेमन्तर्त्तव) २ २७ सौ (साल) स० वि० १२१, अथर्व० १४ १ ५२ असङ्ख्यम् (राध=धनम्) ४ ३१ ९ अनेकानि (धामानि=मर्मस्थानानि) १२ ७५ भा०-शतश (आवृत=क्रिया) १२ ८ **शतस्य**=शतेकेषाम् (यक्ष्माणा=महारोगाणाम्) १२ ९७ **शतानि**=बहूनि (आशून्=अश्वान्) ४ २९ ४ **शतैः**=शतमङ्ख्याकैरसङ्ख्यैर्वा (वधै=हननै) ६ २० ४ [शतम् बहुनाम निघ० ३ १ । एषा वाव यज्ञस्य मात्रा यच्छतम् ता० २० १५ १२]

शतमन्युः शतधा मन्यु क्रोधो यस्य स (इन्द्र=सेनापति) १७ ३९ [शत-मन्युपदयो समास । मन्यु क्रोधनाम निघ० २ १३.]

शतमानम् शतमसङ्ख्य मान यस्य तत् (आयु=जीवनम्) १९ ९३ [शत-मानपदयो समास । मानम्=माङ् माने शब्दे च (जु०) धातोर्ल्युट्]

शतमूतिः शतमसङ्ख्याता ऊतयो रक्षणादिका-क्रिया यस्य स (सेनापति), प्र०—अत्र 'वाच्छन्दसि सर्वे विधयो भवन्ति' इति सुपो लुगभाव १ १०२ ६. शतमसङ्ख्याता, ऊतयो रक्षा यस्मात् स (इन्द्र=राजा) १ १३०.८ **शतमूते**=असङ्ख्यरक्षाकर्त्त (इन्द्र=शूरवीर राजन्) ७ २१ ८ [शत-ऊतिपदयो समास । ऊति=अव रक्षणादिषु (भ्वा०) धातोः स्त्रियाम् 'ऊतियूतिजूति०' इति क्तिन् उदात्तश्च]

शतमूर्द्धन् शतेष्वसङ्ख्यातेषु मूर्द्धा मस्तक यस्य तत्सम्बुद्धौ (अ०—अग्ने=योगिराज) १७.७१ [शत-मूर्द्धन्पदयो समास । मूर्द्धन्=मूर्धा मूर्त्तमस्मिन् धीयते नि० ७ २७]

शतयातुः य शतं सह याति स (वीरसैनिक) ७.१८ २१ [शतोपपदे या प्रापणे (अदा०) धातो 'कमि-मनि०' उ० १ ७३ सूत्रेण तु]

शतरुद्रियाणाम् शताना रुद्राणा दुष्टरोदकानाम् (अवत्तानाम्=उदारचेतोजनानाम्) २१ ४५ बहूना मध्ये विद्वदधिष्ठातॄणाम् (जनानाम्) २१ ४४ शत रुद्रा शतरुद्रा, शतरुद्रा देवता येषा तेषाम् (अग्निष्वात्ताना=गृहीताऽग्नि-जनानाम्) २१ ४३ [शत-रुद्रपदयो समासे 'साऽस्य देवते' त्यर्थे 'शतरुद्राच्छश्च घश्च' अ० ४ २ २८ वा० सूत्रेण छ । अहोरात्रे (सवत्सरस्य) शतरुद्रीयम् तै० ३ ११ १० ३]

शतवन् शतानि वल्गानि विद्यन्ते यस्य तत्सम्बुद्धौ (इन्द्र=राजन्) ६ ४७ ९ [शतप्राति० मतुप्]

शतवल्शः शतानि वल्शा अङ्कुरा यस्य स (वटादि-वृक्षविशेष) ३ ८ ११ यथा बहुङ्कुरो वृक्षस्तथा ५ ४३ [शत-वल्शपदयो समास]

शतवल्शा शतमसङ्ख्याता वल्शा अङ्कुरा यस्या सा (ओषधी) १२ १०० [शतवल्श इति व्याख्यातम् । तत स्त्रिया टाप्]

कारिणी (स्त्री) १२.६२. सुखकारी, आरोग्यसुखद, शान्तिप्रद, ऐश्वर्यसौम्यप्रद, विद्याव्याप्तिप्रद (ईश्वरो विद्वज्जनो वा) १.९० ६ सुखकारक, सुखस्वरूप, सुखप्रचारक, सकल ऐश्वर्यदायक, विद्याप्रद, कल्याणकारक (परमात्मा) म० प्र० १६, ३६ ६ सुखरूपम् (राज्यम्) ७ ६ २ सुखकारिणौ, सुखकर्त्तारौ (सोमारुद्रौ=राजवैद्यौ) ६ ७४ १ सुखकारकौ (इन्द्राग्नी=विद्युत्पावकौ) ७ ३५ १ [शम् सुखनाम निघ० ३ ६ शम् सुखम् नि० ११.३०]

शमम् शाम्यन्ति येन तम् (शान्तिव्यवहारम्) १ ३३ १५ **शमस्य**=शाम्यन्ति येन तस्य शान्तियुक्तस्य मनुष्यस्य १ ३२ १५ [शमु उपशमने (दिवा०) धातोर्घञ् 'नोदात्तोपदेशस्य मान्तस्य०' अ० ७ ३ ३४ इति वृद्धिनिषेध]

शमाये शममिवाचरामि ३ ११ [शममिति व्याख्यातम्। आचारेऽर्थे क्यङन्ताल्लट्]

शमि कर्म्माणि ३ ५५ ३ कर्म्मणि, प्र०—अत्र वर्णव्यत्ययेन ह्रस्व 'सुपा सुलुक्०' इति सुलोप २ ३१ ६ **शमी**= उत्तम कर्म्म ४.२२ ८ [शमी कर्मनाम निघ० २ १ शमी= कर्माणि नि० ११ १६ शमी (वृक्ष) प्रजापतिरग्निमसृजत सो ऽबिभेत्प्र मा धक्ष्यतीति त शम्यागमयत्। तच्छम्यै शमीत्वम् तै० १ १ ३ ११ तद् यदेत शम्यागमयँस्तस्माच्छमी श० ९ २ ३ ३७ शमीमय (शकु) उत्तरत, श मेऽसदिति श० १३ ८ ४ १. श वै प्रजापति प्रजाभ्य शमीपलाशैरकुरुत श० २.५ २ १२ यया ते सृष्टस्याग्ने हेतिमशमयत्प्रजापति तामिमामप्रदाहाय शमी शान्त्यै हराम्यहम् तै० १ २ १ ६]

शमितम् उपशान्तम् (हवि) १७ ५७ [शमु उपशमने (दिवा०) धातोर्णिजन्तात् क्त। 'निष्ठाया सेटि' सूत्रेण णेर्लोप]

शमिता यज्ञ २० ४५ यज्ञस्य कर्त्ता (यजमान) २३ ३९ उपशमादिगुणयुक्त (गृहाश्रमी जन) १७ ५७ उपशमक (विद्वज्जन) २ ३ १० शान्तिप्रद, भा०—सर्वरोगप्रणाशक (सविता=सूर्य) २१ २१ यज्ञसम्बन्धी (अग्नि=पावक) २७ २१ शान्तिकर (देव=मेघ) २९ ३५ **शमितारम्**=शान्तिकरम् (वनस्पतिं=किरणपालक सूर्यम्) २८ ३३ यजमानम् २८ १०. **शमितारः**= अध्ययनाऽध्यापनाख्ये यज्ञे शमादिगुणाना प्रापका (भा०—ब्राह्मणा, क्षत्रिया, वैश्या) २३ ४० सन्नुताऽन्नस्य निष्पादिन ") (विद्वासो जना) १ १६२ १० **शमितुः**= यज्ञानुष्ठातु (जनस्य) १.१६२ ९ [शमु उपशमने (दिवा०) धातो कर्त्तरि तृच्। शमिता अध्रिगुश्चापापश्च। उभौ देवाना शमितारौ तै० ३ ६ ६ ४ मृत्युस्तदभवद्धाता शमितोग्रो विशा पति तै० ३ १२ ९ ६ मृत्यु शमिता ता० २५ १८ ४]

शमितारा शान्त्या यज्ञकर्मकर्त्तारौ (बाहू) ५.४३ ४ [शमु उपशमने (दिवा०)+तृच्। ततो द्विवचनस्याकारादेश]

शमितेव यथा यज्ञमय (यजमान) ५ ८५.१ [शमिता-इवपदयो समास]

शमी उत्तम कर्म्म ४.२२ ८ कर्माणि १ ११० ४ **शमीभिः**=क्रियाभि ४ १७ १८ श्रेष्ठै कर्म्मभि ४.३३ ४ **शमीम्**=कर्म्म ५ ४२ १० **शम्या**=शान्तियुक्तक्रियया १ ८३ ४ [शमी कर्मनाम निघ० २ १ शमी कर्माणि नि० ११ १६]

शमीष्व दुःखनिवृत्तये सुखसम्पादनार्थं कुरुष्व, प्र०—शमु उपशमे इत्यस्माद् 'बहुल छन्दसि' इति श्यनो लुक् 'तुरुस्तुशम्यम' सार्वधातुके अ० ७ ३ ९५. इतीडागमः। समीक्षा—महीधरेणाऽत्र शपो लुगित्यशुद्ध व्याख्यातम् १ १५ [शमु उपशमने (दिवा०) धातोर्लोट्। श्यनो लुक् छन्दसि। 'तुरुस्तु०' इतीडागम]

शम्बरम् श सुख वृणोति यस्मात्त मेघम् ४ ३० १४ बलम् १ ५१ ६ शङ्करम् (दास=सेवकम्) ६ २६ ५. अधर्मसम्बन्धिनम् (शत्रुम्), प्र०—अत्र शम्बधातोरौणादिकोऽरन् प्रत्यय १ १०१.२ श सुख वृणोति येन त मेघमिव शत्रुम् १ ५४ ४ **शम्बरस्य**=मेघस्य बलवत शत्रोर्वा, प्र०—शम्बर इति मेघनाम निघ० १ १० बलनामसु च निघ० २ ९, १ १०३ ८ **शम्बराणि**=शम्बरस्य मेघस्य सम्बन्धीनि अभ्राणि २ २४ २ [शम्बर मेघनाम निघ० १ १० शम्बरम् उदकनाम निघ० १ १२ बलनाम निघ० २ ९ शम् सुखनाम निघ० ३ ६ शम्-वरपदयो समास। वर=वृञ् वरणे (स्वा०) धातो 'ग्रहवृदृनिश्चिगमश्च' अ० ३ ३ ५८ सूत्रेणाप्। वकारस्य बकारो वर्णव्यत्ययेन। शम्ब सबन्धने (चुरा०) धातोर्वा बाहु० औणा० रन्। शम्बर मेघम् नि० ७ २३]

शम्बरहत्ये शम्बरस्य बलस्य हत्या हनन यस्मिन् युद्धादिव्यवहारे तस्मिन् १ ११२ १४. [शम्बर-हत्या-पदयो समास। हत्या=हन हिंसागत्यो (अदा०) धातोर्भावे 'हनस्त च' अ० ३ १.१०८ सूत्रेण क्यप्]

शम्भवाय श सुख भावयति तस्मै परमेश्वराय

शतोतिम् शतान्यूतयो येन तम् (रथ=किरणम्) ६ ६३ ५ [शत-ऊतिपदयो समास । ऊति =अव रक्षण-गत्यादिषु (भ्वा०) धातो स्त्रियाम् 'ऊतियूति०' इति क्तिन् । स चोदात्त]

शत्रवः अमित्रा (जना) १ ५ ४ **शत्रुम्**=विरोधिनम् (जनम्) १ १२९ ४ शातयितारम् (दुर्जनम्) २ २३ ११ वैरिणम् (दुर्जनम्) २ ३० ३ **शत्रून्**=सत्य-न्यायविरोधे प्रवर्त्तमानान् (कुपुरुषान्) ७ ३७ धर्मविरोधिन (असज्जनान्) ६ ४४ १७ अरीन् १३ ११ दुष्टकर्मकर्त्तॄन् (जनान्) ३ ३० ६ अस्माक शातकान् सुख-विच्छेदकान् (जनान्) २ ३० ८ मेघाऽवयवान् १ ३३ १३ [शद्लृ शातने (भ्वा०) धातो 'रु-शातिभ्या क्रुन्' उ० ४ १०३ सूत्रेण क्रुन् । शत्रु =शमयिता शातयिता वा नि० २ १६]

शत्रिम् दु खविच्छेदकम् (केतु=प्रज्ञाम्) ५ ३४ ९. [शद्लृ शातने (भ्वा०) धातो 'राशदिभ्या त्रिप्' उ० ४ ६७ सूत्रेण त्रिप्]

शत्रुतूर्याय शत्रूणा हिंसनाय ६.२२.१० [शत्रु-तूर्य-पदयो समास । तूर्यम्=तूरी गतित्वरणहिंसनयो (दिवा०) धातोर्ण्यत्]

शत्रूयतः आत्मन शत्रुमाचरत (पुरुषस्य) १२ ५ **शत्रूयताम्**=शत्रूणामिवाचरताम् (सैनिकानाम्) ५ ४ ५ शत्रुत्वमिच्छताम् (जनानाम्) ३३ १२ **शत्रूयन्तम्**= शत्रून् कामयमानम् (राजद्रोहिजनम्) ७ २० ३ [शत्रु-पदादाचारेऽर्थे, आत्मन इच्छायामर्थे वा क्यच्]

शन्तमम् अतिशयित सुखम् १ ४३ १ **शन्तमानि**= अतिशयेन कल्याणकराणि (वचासि) ६ ३२ १ अतिशयेन सुखकराणि (आचरणानि) ६ २३ ६ [शम् सुखनाम निघ० ३ ६ ततोऽतिशायने तमप्]

शन्तमया अतिशयेन सुखप्रापिकया, भा०—धर्म्यया (नीत्या) १९ २ **शन्तमा**=अतिशयेन सुखप्रापिका (प्रज्ञा) १ ७६ १. अतिशयेन सुखकरी (गी =वाक्) ५ ४२ १ अतिशयेन कल्याणकारिणी (गी) ५ ४३ ८. [शन्तमम् इति व्याख्यातम् । तत स्त्रिया टाप्]

शन्तमः अतिशयेन सुखकारी (जन) १ १३९ ४ अतिशयेनाऽऽनन्दप्रद (विद्वज्जन) १ ७७ २ श सुखमतिशयित यस्मिन्त्स (स्तोम) प्र०—शमिति सुखनाम निघ० ३ ६, १ १६ ७ **शन्तमेन**=अतिशयित श सुख तेन (अवसा=रक्षाद्येन) १९ ५५ अत्यन्तसुखरूपेण कर्म्मणा १३ १९. अतिशयसुखेन १५ ६४. अतिशयेन सुखकारकेण (विज्ञानेन) १४ १२ [शम् सुखनाम निघ० ३ ६ ततोऽतिशायने तमप् । ततो मत्वर्थे अर्श आदित्वाद् अच्]

शन्तमा अतिशयेन शङ्कराणि (शर्माणि), सुखकराणि (औषधानि) ३ १३ ४, २ ३३.१३ [शन्तमम् इति व्याख्यातम् । तत शेर्लोपश्छन्दसि]

शन्तमेभिः अतिशयेन सुखकारकै. (भेषजेभि = औषधै) २ ३३ २ [शन्तममिति व्याख्यातम् । ततो भिस ऐसादेशो न भवति छन्दसि]

शन्ताती श सुखस्य कर्त्तारौ (अश्विना=सभासेनेशौ), प्र०—अत्र 'शिवशमरिष्टस्य करे' अ० ४.४ १४३ इति तातिल्-प्रत्यय १ ११२ २० [शम् सुखनाम निघ० ३ ६ तत करोत्यर्थे 'शिवशमरिष्टस्य करे' सूत्रेण तातिल्]

शपथ्यात् शपथे भवात् कर्मण १२ ९० [शपथ-प्राति० भवार्थे यत् । शपथ =शप आक्रोशे (दिवा०) धातो 'शीङ्शपिरुगमि०' उ० ३ ११३ सूत्रेण अथ]

शपन्तम् आक्रोशन्तम् (मनुष्यम्) १ ४१ ८ [शप आक्रोशे (भ्वा०) धातो शतृ]

शपामहे उपालम्भामहे २० १८ शपामहे ६ २२ [शप आक्रोशे (भ्वा०) धातोर्लट्]

शफच्युतः शफेषु गवादिखुरचिह्नेषु च्युत पतित आसिक्तो य स (रेणु =धूलि) १ ३३ १४ [शफ-च्युत-पदयो समास]

शफवत् शफा विद्यन्ते यस्मिन् पदे तत् ३ ३९ ६ शफेन तुल्यम् ५ ८३ ५ [शफप्राति० मतुप् । शफप्राति० वा तुल्यार्थे वति]

शफात् खुरात्, श फणति प्रापयतीति शफो वेगस्त-स्माद्वा, प्र०—अत्र 'अन्येभ्योऽपि दृश्यते' इति ड , पृषोदरादि-त्वान्मलोपश्च १ ११७ ६ खुरादिव जलसेकस्थानात् १ ११६ ७ **शफानाम्**=श फणन्ति तेषाम् (वेगानाम्) १ १६३.५ [शम् उपपदे फण गतौ (भ्वा०) धातो 'अन्येभ्योऽपि दृश्यते' इति ड । पृषोदरादिना पूर्वस्य मलोप]

शफाविव यथा खुरौ परस्परेण सम्बद्धौ २ ३९ ३. [शफौ-इव-पदयो समास]

शबलाः किञ्चिच्छ्वेता (पश्वादय) २४ १० [शप आक्रोशे (भ्वा० दिवा०) धातो 'शमेर्बश्च' उ० १ १०५. सूत्रेण कल बकारश्चान्तादेश]

शम् कल्याणकारक ज्ञानम् ८ २६ रोगनिवारणम् ८ २६ सुख कल्याण वा ५ ७४ ९ सुखकर (भग = ऐश्वर्य्यम्) ७ ३५ २ सुखकरम् (वच) ५ ११ ५ कल्याण-

दिषु) ३.५५.४ [शीङ् स्वप्ने (अदा०) धातो 'सञ्ज्ञाया समजनिषदनिपत०' अ० ३ ३ ६६ सूत्रेण क्यप्। तत स्त्रिया टाप्। 'अयङ् यि क्ङिती' ति अयङ्। यलोपश्छान्दस। शीङ् स्वप्ने (अदा०) धातो 'एरच्' इत्यच्। ततष्टाप्]

शयुत्रा यौ शयून् शयानान् त्रायतस्तौ (अश्विनौ=शिल्पिजनौ) १ ११७ १२ [शयुत्रप्राति० द्विवचनस्याकारादेश शयुत्र =शयूपपदे त्रैङ् पालने (भ्वा०) धातोर्ड। शयुरिति व्याख्यातम्]

शयुत्रा शयनस्थानम् ऋ० भू० २१०, ऋ० ७ ८ १८ २ [शयुत्रा शयने नि० ३ १५]

शये शयन कुर्याम् ४ ३० ११ [शीङ् स्वप्ने (अदा०) धातोर्लटि उत्तमैकवचनम्]

शये शेते, प्र०—अत्र 'लोपस्त आत्मनेपदेषु' अ० ७ १ ४१ इति तलोप १ ३२ ६ गर्भाशय मे ठहरता है अथर्व० ६ ३ ६ स० वि० २०४, [शीङ् स्वप्ने (अदा०) धातोर्लट्। 'लोपस्त आत्मनेप्रदेषु' इति तलोप शये आशेते नि० ११ ४८]

शरणम् आश्रयितु योग्यम् (छर्दि गृहम्) ६ ४६ ६ आश्रयम् २ ३ ८ **शरणे**=शरणागतपालने कर्म्मणि ७ १६ ८ गृहे १ १५० १ **शरणैः**=दु खादीना हिसनै ३.६२ ३ [शरणम् गृहनाम निघ० ३ ४ शरणा शरणम् नि० ५ २२]

शरणा शरणो शत्रूणा हिंसकौ (वाहू=भुजौ) ६ ४७ ८. [शरणप्राति० द्विवचनस्याकारादेश। शरण = शॄ हिंसायाम् (क्र्या०) धातोर्बाहु० औणा० युच्]

शरणिम् अविद्यादिदोषहिंसिका विद्याम्, प्र०—अत्र शॄधातोर्बाहुलकादौणादिकोऽणि प्रत्यय १ ३१ १६ [शॄ हिंसायाम् (क्र्या०) धातोर्बाहु० औणा० अनि]

शरत् शृणाति येन सा (ऋतु) १३ ५७ शरदृतु १० १३ अर्द्धरात्र ३१ १४ **शरदः**=शरदृत्वन्तान् सवत्सरान् १ ७२ ३ शरदाद्यृतून् २ ४७ १७ शरदृतूपलक्षितान् सवत्सरान् १ ८६ ६ शरदृतव २ २७ १० शत वर्षाणि ३ ३६ १० शत वर्ष पर्यन्त स० वि० १२१, अथर्व० १४ १ ४२ **शरदे**=शरदृतौ सुखाय २४ ११ **शरद्भिः**=शरदादिभि ऋतुभि १ ८६ ६ [शॄ हिंसायाम् (क्र्या०) धातो 'शॄदृभसोऽदि उ० १ १३० सूत्रेणादि। शरद =शरच्छ्ना अस्यामोषधयो भवन्ति शीर्णा आप इति वा नि० ४ २५ शरद् वै बर्हिरिति हि शरद् वर्हियां इमा ओषधयो ग्रीष्महेमन्ताभ्या नित्यक्ता भवन्ति ता वर्षा वर्धन्ते ता शरदि वर्हिषो रूप प्रस्तीर्णा शेरे तस्माच्छरद् वर्हि श० १ ५ ३ १२ बर्हिर्यजति शरदमेव शरदि हि वर्हिष्ठा ओषधयो भवन्ति कौ० ३ ४ शरदि ह खलु वै भूयिष्ठा ओषधय पच्यन्ते जै० उ० १ ३५.५ तस्माच्छरदमोषधयो ऽभिसपच्यन्ते ता० २१ १५ ३ स्वधा वै शरद् श० १३ ८ १ ४ शरत् प्रतिहार प० ३ १ (प्रजापति) शरदम् प्रतिहारम् (अकरोत्) जै० उ० १ १२ ७ शरद् वै वैश्यस्यर्त्तु तै० १ १ २ ७ शरद्वा अस्य (रुद्रस्य) अम्बिका स्वसा तै० १ ६ १० ४ शरदुत्तर पक्ष (सवत्सरस्य) तै० ३ ११ १० ४ शरत्पुच्छम् (सवत्सरस्य) तै० ३ ११ १० ३ यद् विद्योतते तच्छरद (रूपम्) श० २ २ ३ ८ षड्भिर्मैत्रावरुणै (पशुभि) शरदि (यजते) श० १३ ५ ४ २८ वर्षा शरदौ सारस्वताभ्याम् (अवरुन्धे) श० १२ ८ २ ३४ शरद्ब्रह्मा तस्माद् यदा सस्य पच्यते ब्रह्मण्वत्य प्रजा इत्याहु श० ११ २ ७ ३२ शरदेव सर्वम् गो० पू० ५ १५. अन्न वै शरद् मै० १ ६ ६]

शरद्वान् शरदो या ऋतवस्ता विद्यन्ते यस्मिन् स (वृषभ =सूर्य) १ १८१ ६ [शरद्प्राति० मतुप्]

शरभम् शल्यकम्, अ०—शल्यकीम् १३ ५१ [शॄ हिंसायाम् (क्र्या०) धातो 'कॄशॄशलिकलिगर्दिभ्योऽभच्' ३ १२२ सूत्रेणाभच्]

शरवे हिसनाय ६ २७.६ दुष्टाना हिसकाय (सेनापतये) ४ ३ ७ **शरुः**=दुष्टाना हिंसका ऋष्टि १ १७२ २ हिंसक (सैनिकजन) १ १८६ ६ [शॄ हिसायाम् (क्र्या०) धातो 'शॄस्वृस्निहित्रपि०' उ० १ १० सूत्रेण उ]

शरव्यायै शराणा निर्माणाय ३० ७ शरवीषु कुशलायै (स्त्रियै) २४ ४० **शरव्ये**=ये शरान् व्याप्नुवन्ति तत्र साध्वि (सेने) ६ ७५ १६ शरेषु बाणेषु साध्वी स्त्री तत्सम्बुद्धौ (सेनानीपत्नि) १७ ४५ [शरवीप्राति० 'तत्र साधु' रित्यर्थे कुशलार्थे वा यत्। तत स्त्रिया टाप् शरवी =शरोपपदे वी गतिव्याप्त्यादिषु (अदा०) धातो क्विप् शरुप्राति० वा कुशलार्थे छान्दसो यत्। ततष्टाप् स्त्रियाम्]

शरसि तडागे ३६ ५ [शरस्प्राति० सप्तमी। सरस्-शॄ हिंसायाम् (क्र्या०) धातोरौणा० असुन्। सरस्प्राति० वा सप्तमी। वर्णव्यत्ययेन सकारस्य शकार]

शरसे हिंसकाय (पुरुषाय) ३८ १५ [शॄ हिसायाम् (क्र्या०) धातोरौणा० असुन्]

शरस्य हिंसकस्य (दुष्टजनस्य) सकाशात् १ ११६ २२ [शॄ हिसायाम् (क्र्या०) धातो पचाद्यच् कर्त्तरि]

सेनाधीशाय वा, प्र०—अत्राऽन्तर्भावितो ण्यर्थ १६ ४१ सुखस्वरूपाय (परमेश्वराय) प० वि०, १६ ४१ कल्याणस्वरूप, कल्याणकर, मोक्षसुखस्वरूप, मोक्षसुख के करने वाले (ईश्वर) के लिए आर्याभि० २ २६, १६ ४१ [शम् इत्युपपदे भू सत्तायाम् (भ्वा०) धातो कर्त्तरि पचाद्यच् । अन्तर्भावितो ण्यर्थ]

शम्भविष्ठः योऽतिशयेन श भावयति स (जन) ५ ४२.७. सुखस्य भावयितृतम (विद्वज्जन) १ १७१ ३ अतिशयेन कल्याणकारक (परमेश्वर) ४ ४३ २ [शम्-भविष्ठपदयो समास । भविष्ठ+भू सत्तायाम् (भ्वा०) धातोस्तृजन्तादतिशायन इष्ठन् । अन्तर्भावितो ण्यर्थ]

शम्भविष्ठा अतिशयेन सुख भावुकौ (जलाग्नी) २.३९ ५ अतिशयेन सुखस्य भावयितारौ (अश्विना+स्त्रीपुरुषौ) ५ ७६ २ [शम्भविष्ठ इति व्याख्यातम् । ततो द्विवचनस्याकारादेश]

शम्भु य श सुख भावयति स (पति स्वामीश्वरो राजा वा) ७ ३५ १० सुखसम्पादकम् (क्षोद =जलम्) १ ६५ ३ [शम्-उपपदे भू सत्तायाम् (भ्वा०) धातो 'मितद्र्वादिभ्य उपसख्यानम्' अ० ३ २ १८० वा०सूत्रेण डु । शम्भु सुखभू नि० ५ ३]

शम्भुवः ये श सुख भावयन्ति ते (आदित्या देवा) १ १०६ २ सुख भवति यस्मात्तस्य (विदुष), प्र०—अत्र 'कृतो वहुलम्०' इत्यपादाने क्विप् १ १०५ ३ [शम् उपपदे भू सत्तायाम् (भ्वा०) धातो क्विप्]

शम्भुवा यौ श सुख सम्भावयतस्तौ (स्त्रीपुरुषौ) २ ४१ १९. यौ सुख भावयतस्तौ (इन्द्राग्नी=सभासेनेशौ) ६ ६० ७. [शम्भूरिति व्याख्यातम् । ततो द्विवचनस्याकारादेश]

शम्भू श सुख भावुकौ (राजामात्यौ) ४ ४७ ७ [शम्भुरिति व्याख्यातम् । ततो द्विवचने रूपम्]

शम्भूः य श सुख भावयति स, श कल्याण भावयति स (विद्वज्जन) १८ ४५ सुख भावुक (छन्द =आनन्दकरोऽनुभव) १५ ४ सुखकर्त्ता (वरानना स्त्री) स० वि० १३८, अथर्व० १४ २ २६ [शम् उपपदे भू सत्तायाम् (भ्वा०) धातो क्विप् । अन्तर्भावितो ण्यर्थ]

शम्यति शाम्यति शम प्रापयति, प्र०—अत्र 'वाच्छन्दसि' इति दीर्घत्वाऽभाव २३ ३९ **शम्यन्तु**=भा०—शान्त्या जितेन्द्रियत्व प्रापयन्तु २३ ३५ अ०—शम प्रापयन्तु २३ ३४ आनन्दन्तु २३ ३७ [शमु उपशमने (दिवा०) धातोर्लट् । अन्यत्र लोट् । 'शमामष्टानाम्०' इति दीर्घत्व न भवति छान्दसत्वात्]

शम्यन्तः शान्ति प्रापयन्त (मरुत =मनुष्या.) २३ ४१ [शमु उपशमने (दिवा०) धातो शत्रन्ताज्जस् । दीर्घत्वाऽभावश्छान्दस]

शम्यन्तीः दुष्टस्वभाव निवारयन्त्य (मातर) २३ ४२ शम प्राप्नुवती प्रापयन्त्यो वा (स्त्रिय) २३ ३७ [शमु उपशमने (दिवा०) धातो शत्रन्तान् ङीप् । दीर्घत्वाऽभावश्छान्दस]

शम्याः शम्या कर्मणि भवा (आप =जलानि) ३ ३३ १३ [शमी कर्मनाम निघ० २ १ ततो भवार्थे यत् । ततष्टाप् । जिह्मेव शम्या श० १ २ १ १७]

शयते शेते, प्र०—अत्र 'वहुल छन्दसि' इति शपो लुङ् न १ ३२ ५ **शयथे**=शयन करोति ६ १७ ९ [शीङ् स्वप्ने (अदा०) धातोर्लट् । 'वहुल छन्दसी' ति शपो लुग् न भवति । शयथे प्रयोगे तकारस्य थकारो वर्णव्यत्ययेन]

शयथाय शयनाय ६ १८ ८ 'शीङ्शपि०' उ० ३ ११३ सूत्रेण [शीङ् शये (अदा०) धातोर् अथ प्रत्यय]

शयध्यै शयितुम् ६ ६२.३. [शीङ् स्वप्ने (अदा०) धातोस्तुमर्थेऽध्यैप्रत्यय]

शयवे शयानाय (जसुरये=हिंसकाय जनाय) १ ११६ २२ सुखेन शयनशीलाय (मनवे=राज्ञे) १ ११२ १६ **शयुम्**=य शेते तम् (पुत्रम्) ४ १८ १२ **शयुः**=योऽभिव्याप्य शेते (वरुण =परमात्मा) ३ ५५ ६ य प्रलये सर्वाणि भूतानि शाययति स (ईश्वर) [शीङ् स्वप्ने (अदा०) धातो 'भृमृशीङ्तॄचरि०' उ० १ ७ सूत्रेण उ]

शयाण्यकः पक्षिविशेष २४ ३३ [शीङ् स्वप्ने (अदा०) धातोर्वाहु० औणा० अण्डन् । अकारस्याकारश्छान्दस]

शयानम् कृतशयनमिव वर्त्तमानम् (अहि=मेघम्) २ १२ ११ शयानमिवाचरन्तम् (मेघम्) ५ ३२ २ **शयानाय**=यो शेते तस्मै (जनाय) २२ ७ **शयानेभ्यः**=प्राप्तनिद्रेभ्य (राजपुरुपेभ्य) १६ २३ [शीङ् स्वप्ने (अदा०) धातो शानच् । अथवा शयानप्राति० वा आचारे क्विप्]

शयाना यौ शयाते तौ (पितरा=पितरौ) ४ ३३ ३. [शयानमिति व्याख्यातम् । ततो द्विवचनस्याकारादेश]

शयासु शेरते यासु विद्युदादय पदार्थास्तासु (प्रकृत्या-

शर्यातम् शरो हिंसकान् प्राप्तम् (सेनाध्यक्षम्) १ ११२ १७ [शर्-यातपदयो समास । शर्=शॄ हिंसायाम् (क्र्या०) धातो 'अन्येभ्योऽपि दृश्यन्ते' इति विट् । यातम्=या प्रापणे (अदा०) धातो कर्त्तरि क्त]

शर्याभिः गतिभि ७ १७ **शर्याम्**=वायुताडनाऽऽख्या क्रियाम् १ १४८ ४ [शॄ हिंसायाम् (क्र्या०) धातोर्यत् तत. स्त्रिया टाप् । औणा० वा यत् । शर्या अङ्गुलिनाम निघ० २ ५ शर्या अङ्गुलयो भवन्ति । सृजन्ति कर्माणि । शर्या इषव शरमय्य नि० ५ ४]

शर्यैः हिंसतु ताडितुमर्हैर्यन्त्रै १ ११९ १० पुन पुनर्हननप्रेरणगुणै ऋ० भू० १९९, ऋ० १.८.२१.१०, [शॄ हिंसायाम् (क्र्या०) धातोर्यत्]

शर्वम् विज्ञातारम् (परमेश्वरम्) ३९ ८ **शर्वस्य**=सुखप्रापकस्य (जनस्य) ३९ ९ **शर्वाय**=दुष्टाना हिंसकाय (राजपुरुषाय) १६ २८ **शर्वाः**=हिंसका (जना) १६ ५७ [शॄ हिंसायाम् (क्र्या०) धातोर्वाहु० औणा० वन् प्रत्यय]

शर्वरीः रात्री ५ ५२ ३ [शॄ हिंसायाम् (क्र्या०) धातो 'कृगॄशॄ०' उ० २ १२१ सूत्रेण ष्वरच् । पित्त्वान् ङीप् स्त्रियाम् । शर्वरी रात्रिनाम निघ० १ ७]

शर्वा शासनवज्रेण २ १२ १० [शॄ हिंसायाम् (क्र्या०) धातो. कर्त्तरि वनिप् । 'सुपा सुलुक्०' सूत्रेण टास्थाने सु]

शर्वा सर्वदुःखहिंसक (सभाद्यध्यक्ष) १ १०० १८ [पूर्वपदे व्याख्यातम्]

शर्वा शर्वाणि हिंसनानि ४ २८ ३ [शर्वन् इति व्याख्यातम् । तत शेर्लोपश्छन्दसि]

शर्वाः हिंसका १६ ५७ [शॄ हिंसायाम् (क्र्या०) धातोर्वाहु० औणा० वन् । यच्छर्वोऽग्निस्तेन कौ० ६ ३ अग्निर्वै स देवस्तस्यैतानि नामानि । शर्व इति यथा प्राच्या आचक्षते भव इति यथा वाहीका, पशूना पती रुद्रोऽग्निरिति श० १ ७ ३ ८ आपो वै शर्व, अद्भ्यो हीद सर्व जायते श० ६ १ ३ ११ एतान्यष्टौ (रुद्र, शर्व, पशुपति, उग्र, अशनि, भव, महान्देव, ईशान) अग्निरूपाणि । कुमारो नवम श० ६ १ ३ १८]

शल्मलिः वृक्षविशेष २३ १३ **शल्मलौ**=शल्मलिवृक्षादौ ७ ५० ३ [शल्मलि सुशरो भवति शरवान् वा नि० १२ ८ शल्मलिर्वनस्पतीना वर्षिष्ठ वर्धते श० १३ २ ७ ४]

शल्यकः कण्टकपक्षयुक्त श्वावत् (पशु) २४ ३५. [शल्यप्राति० सज्ञाया कन् । शल्य =शल चलनसवरणयो. (भ्वा०) धातो 'सानसिवर्णसि०' उ० ४.१०७ सूत्रेण यत् निपात्यते । शल्यक तस्या (गायत्र्या) अनु विसृज्य कृशानु सोमपाल सव्यस्य पदो नखमच्छिदत् तच्छल्यकोऽभवत् तस्मात् स नखमिव ऐ० ३ २६]

शल्यानाम् शस्त्राणाम् १६ १३ [पूर्वपदे व्याख्यातम्]

शवसः अनन्तवलस्य प्रमितवलस्य वा १ ११ २. वलस्य सैन्यस्य ६.४४.४ वलवन्त (सूरय =विद्वज्जना) ४ ३४.६ **शवसा**=विद्यासुशिक्षावलेन १ ११० ७. शरीरात्मवलेन १.१०० १४ वलेन परिचरणेन वा, प्र०—शवतीति परिचरणकर्मा निघ० ३ ५ अस्मादसुनि कृति रूपसिद्धि ५ ११ ५ वलयुक्तेन सैन्येन १ १०० १२ **शवसे**=सैन्यबलाय १ ५७ १ **शवः**=वलमुदक वा ३३ ९७ वलहेतुम् (रसमन्न वा) ६ ४३ ४ गमनम् ५ ५८ ७ **शवोभिः**=सेनाद्यैर्वलै १ १३० ४ [शव गतौ (भ्वा०) शवति गतिकर्मा निघ० २ १४ परिचरणकर्मा निघ० ३ ५ तत औणा० असुन् । शव उदकनाम निघ० १ १२ धननाम निघ० २ १० वलनाम निघ० २ ९ शवसा वलेन नि० १० २९ शवसो महतो वलस्य । नि० १२ २१ (यजु० १२ १०६) वल वै शव श० ७ ३ १.२९]

शवलाः किञ्चिच्छ्वेता (पशव) २४ १० [शप आक्रोशे (भ्वा०) धातो 'शमेर्वश्च' उ० १ १०५ सूत्रेण कल । वकारश्चान्तादेश]

शवसान वलयुक्त (इन्द्र=सभाध्यक्ष) १ ६२ १३ **शवसानम्**=वलवन्तम् (इन्द्र=राजानम्) ६ ३७ ३ **शवसानाय**=विज्ञानाय ३४ १६ ज्ञानवते (सभाद्यध्यक्षाय) १ ६२ २ ज्ञानवलयुक्ताय (सभाद्यध्यक्षाय) १ ६२ १ ब्रह्मचर्यसुशिक्षाभ्या शरीरात्मवलयुक्ताय (पुरुपाय) ३४ १७ [शवस् वलनाम निघ० २ ९ ततस्तत्करोति इत्यर्थे क्विप् । तत क्विवन्तात् शवस्धातो शानच् । शवसानम् अभिबलायमानम् नि० १० ३ शव गतौ (भ्वा०) धातोर्वा 'छन्दस्य मानच् शुजृभ्याम्' उ० २ ८६ सूत्रेणासानच्]

शवसावन् वलयुक्त (सभापते) १ ६२ ११ [शवस् वलनाम निघ० २ ९ ततो मतुप्-प्रत्यये छान्दस रूपम्]

शवसिन् वहुविध शवो वल विद्यते यस्य तत्सम्बुद्धौ (इन्द्र=राजन्) ७ २८ २ [शवस् वलनाम निघ० २ ९. ततो मत्वर्थ इनि]

शवस्यानि शवसु धनेषु साधूनि वीरसैन्यानि

शरासः वेणुदण्डसदृशा अन्तश्छिद्रास्तृणविशेषस्था (दर्भास =कुशा) १ १९१ ३ [शरप्राति० जसोऽसुक्। शॄ हिंसायाम् (क्र्या०) धातो 'ऋदोरप्' त्यप्। कर्त्तरि वाऽच्। शर शृणाते नि० ५ ४]

शरिरस्य अन्तरिक्षस्य १३ ४६ [शॄ हिंसायाम् (क्र्या०) धातोर्बाहु० औणा० इरच्]

शरीतोः शरीतु दुष्टस्वभाव हिंसितु शक्नोति य (इन्द्र =ऐश्वर्यवान् राजा) ३ ५३ १७ [शॄ हिंसायाम् (क्र्या०) धातो- 'कृतो बहुल वा' इति कर्त्तरि तोसुन्। इटो दीर्घश्च छान्दस]

शरीरम् शीर्यते हिंस्यते यत्तत् (वपु) १ ३२ १० **शरीराणि**=आश्रयान् ३५ ५. देहा १८.३ [शॄ हिंसायाम् (क्र्या०) धातो 'कॄशॄपॄकटि०' उ० ४ ३० सूत्रेण ईरन्। शरीर शृणाते शम्नातेर्वा नि० २ १६ शरीरे आदित्ये नि० १२ ३७ अथ यत्सर्वमस्मिन्नश्रयन्त तस्मादु शरीरम् श० ६ १ १ ४ अशरीर वै रेतोऽशरीरा वपा यद्वै लोहित यन्मास तच्छरीरम् ऐ० २ १४ शरीर हृदये (श्रितम्) तै० ३ १० ८ ७]

शर्ध प्रशंसितबलयुक्त (विद्वज्जन) ५.२८ ३. दुष्टगुण-शत्रुनाशक बलम्, प्र०—अत्र 'सुपा सुलुक्०' इति सोर्लुक् ३३ १२ **शर्धम्**=बलयुक्तम् (धाम=स्थानम्) १ १२२ १२. बलहेतुम् (रेत) ३३ ११. बलिनम् (युवानम्) १ ७१ ८ **शर्धः**=शरीराऽऽत्मबलम् ७ ४४ ५ सैन्यम् १ ७ ४१ [शर्ध बलनाम निघ० २ ९ शृधु प्रसहने (चुरा०) धातो पचाद्यच्]

शर्धत् उत्सहेत् ७ २१ ५ [शर्धत्=उत्सहताम् नि० ४ १९ शृधु प्रसहने (चुरा०) धातोर्लेट्]

शर्धतः बलवत (दुर्जनस्य) २ २३ १२ **शर्धताम्**=बल कुर्वताम्, (वीरजनानाम्), प्र०—बलवाचिशर्धशब्दात् करोत्यर्थे क्विप् तत शतृ १५ ४०. **शर्धते**=य शर्द्धं करोति तस्मै (दुर्जनाय) २ १२.१० बलाय ६ २४ ८ **शर्धन्तम्**=बल कुर्वन्तम् (दुष्कर्म) ७ १८ ५ **शर्धन्तः**=बलयन्त (अर्य =अरयदशत्रव) ७ ३४ १८ [शर्ध बलनाम निघ० २ ९. तत करोत्यर्थे क्विवन्ताच्छतृ]

शर्धनीतिः शर्द्धस्य बलस्य नीतिर्नयन प्रापण यस्य स (सभेश) ३३ २६ बलस्य सैन्यस्य नीतिर्नायिक (सेनापति), प्र०—अत्र नीतौ कर्त्तरि क्तिच् ३ ३४ ३ [शर्ध-नीतिपदयो समास। शर्ध बलनाम निघ० २ ९ नीति =णीञ् प्रापणे (भ्वा०) धातो स्त्रिया क्तिन्। कर्त्तरि क्तिज् वा]

शर्धमानः सहमान (विद्वज्जन) २० ३८ [शृधु प्रसहने (चुरा०) धातो शानच्। व्यत्ययेनात्मनेपदम्]

शर्धस्तरः अतिशयेन बलवान् (शूरवीरो जन) १ १२२ १० [शर्ध बलनाम निघ० २ ९ ततोऽतिशायने तरप्]

शर्ध्यम् शर्द्धेषु बलेषु भवम् (रथ =यानम्) १ ११९ ५ [शर्ध बलनाम निघ० २ ९ ततो भवार्थे यत्]

शर्म शृण्वन्ति दुखानि यस्मिन् तद् गृहम् २६ १०. सर्वदुखरहित सुखम्, शृणाति हिनस्ति दुखानि यत्तत् (सुखम्) १ १७ ८ सुख निवास वा १ ४६ १५ गृहस्वरूप सुखकारक वा (यानम्) १ ३४ ६ श्रेष्ठ शरण सुख वा ३४ २८. सुखसाधक गृहम् १७ ४८. सुखहेतु, अ०—सुखद (यज्ञ) १ १९ **शर्मणा**=विग्रहेण ७.५१ १ गृहसम्बन्धि-सुखेन १ २२ ११ **शर्मणि**=नित्यसुखे, अ०—खल्वाज्ञा-पालनाख्ये व्यवहारे १ ४ ६ आश्रये ३३ १७ [शॄ हिंसायाम् (क्र्या०) धातो 'सर्वधातुभ्यो मनिन्' उ० ४ १४५ सूत्रेण मनिन्। शर्म गृहनाम निघ० ३ ४ सुखनाम निघ० ३ ६ शर्म शरणम् नि० ९ १९ चर्म वाऽएतत् कृष्णस्य (मृगस्य) तन्मानुष शर्म देवत्रा श० ३.२ १ ८ (ऋ० ३ १३ ४) वाग्वै शर्म ऐ० २ ४० (ऋ० ३ १३ ४) अग्निर्वै शर्माण्यन्ना-द्यानि यच्छति ऐ० २ ४१]

शर्म शर्माणि सुखानि १.८५ १२ गृहाणि ६ ४६ १२ [शर्मन् इति व्याख्यातम्। ततो जस 'सुपा सुलुग्०' इति लुक्]

शर्मन् न्यायगृहे, प्र०—अत्र 'सुपा सुलुक्०' अ० ७ १ ३९. इति ङेर्लुक् 'न ङि-सम्बुद्धचो' अ० ८ २ ८ इति नलोपाभाव ७ ३५ [शर्मन् इति व्याख्यातम्। तत 'सुपा सुलुग्०' इति ङेर्लुक्]

शर्मसदः ये शर्मणि सुखे सीदन्ति ते (वीरजना) १ ७३.३ ये गृहे सीदन्ति ते (वीरा =क्षात्रधर्मयुक्ता जना) ३ ५.५ २१ [शर्मन् इत्युपपदे पद्लृ विशरणगत्यवसादनेषु (भ्वा०) धातो कर्त्तरि क्विप्। शर्मन्निति व्याख्यातम्]

शर्यणावति शर्यणोऽन्तरिक्षदेशस्तस्याऽदूरभवे (स्थाने) १ ८४ १४ हिंसनीय पदार्थों से युक्त भूमितल मे स० वि० १९५, ९ ११३ १ [शर्यणप्राति० अदूरभवार्थे मतुप् छान्दस। पूर्वस्य च दीर्घ]

शर्यहा हन्ताऽव्यहन्ता (तिग्मश्रृङ्ग =सूर्य) ६ १६ ३९ [शर्योपपदे हन हिंसागत्यो. (अदा०) धातो क्विप्। शर्यम्=शॄ हिंसायाम् (क्र्या०) धातोर्यत्]

शश्रमाणः भृश श्रम कुर्वन् (बलाध्यक्षो न्यायाधीश) ४ १२ २ [श्रमु तपसि खेदे च (दिवा०) धातोर्यङ्-लुगन्ताच्छानच् । व्यत्ययेनात्मनेपदम्]

शश्रमाणा तपोऽन्विता (विदुषी स्त्री) १ १७९.१ [शश्रमाण इति व्याख्यातम् । तत स्त्रिया ङीष्]

शश्वचै परिष्वङ्गाय ३ ३३.१० [शश्वचै परिष्वजनाय नि० २.२७]

शश्वच्छश्वत् व्यापक व्यापक वस्तु ३ ३६ १. [शश्वत्पदस्य वीप्साया द्वित्वम् । शश्वदिति निपातश्चादिषु पठ्यते]

शश्वत् निरन्तरम् ६ २१ ८. अनादिरूपम् (क=सुख-सम्पादक ज्ञानम्) १ ४७ १० अनादिस्वरूपत्वाज्जगत्कारणात् १ ३० १६ **शश्वतः**=निरन्तरान् (पथिकान्) ५ ५२ २ सनातन जगत्कारण का स० प्र० २३८, १० ४८ १ सनातनविद्यायुक्तान् (विद्वज्जनान्) १ १३५ ७ अनादिभूतस्य (प्रजाजनस्य) ७ १९.१ अनादिस्वरूपान् पदार्थान् २ १२ १०. अनादिस्वरूपस्य परमेश्वरस्य सम्बन्धात् १ ७२ १ **शश्वता**=सनातनेन गुणेन १९ ४ **शश्वन्तम्**=अनादिभूत वेदविद्याविषयम् ६ ६ १ १ **शश्वन्तः**=निरन्तर वर्त्तमाना (वाजा=विज्ञानवन्तो जना) १७ ७६ अनादिभूता जीवा ५ १४ ३ अनादिभूता. प्रवाहेप्यनित्या पृथिव्यादय ७ १ ३ निरन्तरा (शत्रव) ७ १८ १८ [शश्वन्तौ शश्वद्गामिनौ विश्वगामिनौ बहुगामिनौ वा नि० १३ ३७ शश्वत् बहुनाम निघ० ३ १. शश्प्राति० मतुप् । शश्=शश प्लुतगतौ (भ्वा०) धातो क्विप्]

शश्वतः निरन्तरो व्याप्त धर्म ५ १२.४

शश्वतीनाम् अनादिभूताना घटिकानाम् १ ११३ १५ सनातनीनामुषसा प्रकृतीना वा १ १२४ २ प्रवाहरूपेणानादीनाम् (उषसाम्) १ ११३ ८ अनादिभूताना प्रकृति-जीवाख्याना प्रजानाम् ३ ५६ ३ **शश्वतीः**=सनातन्य (प्रजा) ३ ९ ४ अविनश्वरा (इष=प्रजा) ६ २९ अनादिस्वरूपा (प्रजा) १ २७ ७ [शश्वत्प्राति० स्त्रिया ङीप्]

शश्वत्तमम् अतिशयेनाऽनादिभूतम् (सोमम्=ऐश्वर्य-योगम्) ३ ३५ ६ अनादिस्वरूपमनुत्पन्न कारणम् २ ८ १ अतिशयितमनादिरूप वेदबोधम् १२ ५१ सदैव वर्त्तमानम् (विज्ञानम्) ३ ७ ११ [शश्वत्प्राति० अतिशायने तमप् । शश्वत्तमा शाश्वतिकतमा नि० ४ १९]

शश्वत्तमा याऽतिशयेन सनातनी (उषा) १ १२४ ४ [शश्वत्तममिति व्याख्यातम् । तत स्त्रिया टाप्]

शश्वधा शश्वदेव ३ ३३ ७

शश्वन्ता सनातनौ (जडचेतनौ) १ १६४ ३८ [शश्वन्तौ शश्वद्गामिनौ नि० १३ १७ द्विवचनस्याकारश्छान्दस]

शश्वान् शीघ्रगतिमान् (विद्वज्जन), प्र०—शश प्लुतगतौ इति धातो क्विबन्तान्मतुप् २.३८ ६ [शश प्लुतगतौ (भ्वा०) धातो क्विप्-प्रत्यये शश् इति रूपम् । ततो मतुप्]

शष्पाणि आहृत्य सशोध्य ग्राह्याणि धान्यानि १९ १३ **शष्पैः**=हिंसकै (जनै), प्र०—अत्रौणादिको बाहुलकात् कर्त्तरि प २१ ४२ हिंसनै २१ २९ दीर्घलोमभि १९ ८१ [शष हिंसायामर्थे (भ्वा०) धातो खष्पशिल्पशष्प०' उ० ३ २८ सूत्रेण प्रत्ययान्तो निपात्यते]

शष्पिञ्जराय पड्डुत्प्लुत पिञ्जर बन्धन येन तस्मै (सेनाधीशाय) १६ १७ **शष्पिञ्जराः**=पड्ढसक पिञ्जरो वर्णो येषान्ते (सर्पादय) १९ ५८ [शष् पिञ्जरपदयो समास । शष्=शश प्लुतगतौ (भ्वा०) शष हिंसायामर्थे (भ्वा०) धातोर्वा क्विप् । पिञ्जर=पिजि वर्णे (अदा०) धातोर् बाहु० औणा० अर]

शष्प्याय शष्पेषु तृणादिषु साधवे (पुरुषाय) १६ ४२ [शष्पप्राति० साध्वर्थे यत् । शष्पमिति व्याख्यातम्]

शसनम् हिंसन ताडनम् १ १६३ १२ शसन्ति हिंसन्ति यस्मिँस्तद् युद्धम् २९ २३ [शसु हिंसायाम् (भ्वा०) धातोरधिकरणे ल्युट्]

शसा प्रशसया ५ ४१ १८ [शसु प्रशसायाम् (भ्वा०) धातो सम्पदादित्वात् क्विप् । ततस्तृतीयैकवचनम्]

शस्त प्रशसत ४ ३७ ८ छिन्त २५ ४१ ताडयत हिंस्त १ १६२ १८ [शसु स्तुतौ (भ्वा०) धातोर्लोट् । 'बहुल छन्दसी' ति शपो लुक् । अथवा शसु हिंसायाम् (भ्वा०) धातोर्लोट् । शपो लुक्]

शस्तम् प्रशसनीयम् (श=सुखम्) ५ ४७ ७ प्रशसितम् (बर्हि=उत्तमस्थानम्) ३ ५३ ३ स्तुत्य कर्म ३३ २४ **शस्ते**=प्रशसिते (उक्थे=वक्तव्ये) ४ २० १० [शसु स्तुतौ (भ्वा०) धातो क्त]

शस्तिम् प्रशसाम् ४ ३ ३ [शसु स्तुतौ (भ्वा०) धातो स्त्रिया क्तिन्]

१.१०० ५ [शवस् धननाम निघ० २ १ तत साध्वर्थे यत्]

शविष्ठ बहु शवो बल विद्यते यस्य स शवस्वान् सोऽतिशयितस्तत्सम्बुद्धौ (सभापते), प्र०—अत्र शवशब्दाद् भूम्न्यर्थे मतुप् तत इष्ठन् 'विन्मतोर्लुक्' अ० ५ ३ ६५ इति मतुपो लुक् 'टे' अ० ६ ४ १५५ अनेन टिलोप ६.३७ अतिशयेन बलवत्, प्राप्तविद्य (विद्वज्जन) १ १२७ १. **शविष्ठाः**=अतिशयेन बलवन्त (अ०—राजपुरुषा) १० ४ [शवस् बलनाम निघ० २ ९ ततो मतुवन्तादतिशायन इष्ठन् । 'विन्मतोर्लुक्' अ० ५ ३ ६५ इति मतुपो लुक्]

शविष्ठा अतिशयेन नित्यबलसाधकौ (होतृयजमानौ) ८ ५९ अतिशयेन बलवन्तौ (सभासेनेशौ) ६ ६८ २ [शविष्ठ इति व्याख्यातम् । ततो द्विवचनस्याकारादेश]

शवीरया वेगवत्या (धिया=क्रियया प्रज्ञया वा), प्र०—शव गतौ इत्यस्माद्धातो रन्-प्रत्यये टापि च शवीरेति सिद्धम् १ ३ २ देशान्तरप्रापिकया गत्या, प्र०—शु गतौ इत्यस्माद्धातोर्बाहुलकादौणादिक ईरन्प्रत्यय १ ३० १७ [शव गतौ (भ्वा०) धातोर्बाहु० औणा० ईरन् । तत. स्त्रिया टाप्]

शशमते शाम्येत् ६ २ ४१ **शशमे**=शाम्यति निरुपद्रवो भवति, प्र०—अत्र एत्वाऽभ्यासलोपाऽभावश्छान्दस ३३ ८७ प्रशसामि, प्र०—शशमान इति अर्चतिकर्मा निघ० ३ १४, ६ १ ९ [शमु उपशमने (दिवा०) धातोर्लेट् । विकरणव्यत्ययेन शप् । द्वित्व छान्दसम् । अन्यत्र लिट् । 'अत एकहल्मध्ये०' इति प्राप्तावेत्वाऽभ्यासलोपौ न भवतश्छान्दसत्वात् । शशमान इति अर्चतिकर्मा निघ० ३ १४]

शशमानम् अन्यायमुल्लङ्घमानम् (सज्जनम्) २ २० ३ अधर्ममुल्लङ्घमानम् (सत्पुरुषम्) २ १२ १४ **शशमानस्य**=विज्ञातव्यस्य (विद्वज्जनस्य), प्र०—अत्र 'अधिगर्थ०' इति शेषत्वविवक्षाया षष्ठी १ ८६ ८ प्रशसितस्य (यज्यो=सत्यव्यवहारस्य) ४ २३ २ दु खमुल्लङ्घत (मेधाविजनस्य) १ १४२ २ **शशमानः**=प्रशसन् (देव=विद्वज्जन) ४ २३ ४ प्लवमान (मनुष्य) ४ २ १० प्राप्तप्रशस सन् (पुरुष) ४ ५ १ ७ स्तोतुमर्ह: (भग=धनसमूह) १ २४ ४ वर्द्धमान (वनस्पति) २०.६५ **शशमानाय**=विज्ञानवते (मनुष्याय) १ ८५ १२. अधर्ममाप्लुत्य धर्मं प्राप्नुवते (जनाय) १ १४१ १० सर्वेषा दु खानामुल्लङ्घकाय (वाघते=मेधाविजनाय) ४ २ १३ प्रशसिताय (विदुषे जनाय) ४ ३ १ ८ **शशमानाः**=अविद्या उल्लङ्घमाना (नर=नायका जना) ५.२९ १२ **शशमानेभ्यः**=प्रशसमानेभ्य (नृभ्य=मनुष्येभ्य) ४ ४१ ३ **शशमानेषु**=भोगाभ्यासोल्लङ्घमानेषु ३ १८ ४ [शश प्लुतगतौ (भ्वा०) धातो शानच् । व्यत्ययेनात्मनेपदम् । शशमान इति अर्चतिकर्मा निघ० ३ १४ शशमान शसमान नि० ६ ८]

शशमानासः शत्रुबलस्योल्लङ्घका (सेनाऽमात्यादिजना) ४ १९ १५ [शशमानमिति व्याख्यातम् । ततो जसो ऽसुक्]

शशयम् खशय मेघम्, प्र०—अत्र वर्णव्यत्ययेन खस्य श ३ ५७ २ **शशयः**=शेते यस्मिन् स (स्तन=दुग्धाधारमङ्गम्) ३८ ५ शयान इव (स्तन=शुद्धो व्यवहार) १ १६४ ४९ **शशयाः**=कुमारी अवस्था को उल्लङ्घन करने वाली (युवतय=स्त्रिया) स० प्र० ११०, ३ ५५.१६ शयाना इव (धेनव=वाच) ३ ५५ १६ [खोपपदे शीङ् स्वप्ने (अदा०) धातो 'अधिकरणे शेते' अ० ३ २.१४ सूत्रेणाऽच् । वर्णव्यत्ययेन खस्य शकार । अन्यत्र शीङ् स्वप्ने (अदा०) धातो 'एरच्' इत्यच् । 'वा छन्दसी' ति धातोर्द्वित्वम् । अथवा शश प्लुतगतौ (भ्वा०) धातोर्वाऽच् । द्वित्व छान्दसम्]

शशयानः कृतशयन (कुमार) ५ ७८ ९ [शीङ् स्वप्ने (अदा०) धातोर्लिट कानच् । 'वा छन्दसी' ति गुण । शशयाना शिश्याना नि० ९ ६]

शशः पशुविशेष इव वायु २३ ५६ [शश प्लुतगतौ (भ्वा०) धातो पचाद्यच्]

शशाधि शिक्षय ७ १ २० **शशास**=शाधि २ २९ ५ **शशासुः**=शासति ४ २ १२ अनुशासतु ३ १.२ [शासु अनुशिष्टौ(अदा०) धातोर्लोट् । द्वित्व छान्दसम् । अन्यत्र लिट् शशा=उत्प्लवस्व १ ८० १ [शश प्लुतगतौ (भ्वा०) धातोर्लङ् । अटोऽभाव]

शशीयसी अतिशयेन दु ख प्लावयन्ती (स्त्री) ५ ६१ ६ [शश प्लुतगतौ (भ्वा०) धातो कर्त्तरि तृजन्तात् 'तुश्छन्दसि' अ० ५ ३ ५९ सूत्रेणातिशायन ईयसुन् । तत स्त्रिया ङीप् । तृचो लोप]

शशीयांसम् धर्ममुत्प्लवमानम् (शत्रुजनम्) ४ ३२ ३ [शश प्लुतगतौ (भ्वा०) धातोस्तृजन्तादतिशायन ईयसुन् । तृचो लोप]

(भ्वा०) धातो कर्त्तरि तृच् 'तृन्तृची शंसिक्षदादिभ्य.' उ० २ ९४ सूत्रेण]

शंस्तिभिः प्रशंसाभि १ १८६ ३ [शंसु स्तुती (भ्वा०) धातो स्त्रिया क्तिन् । नलोपाऽभावश्छान्दस । औणा० वा ति]

शंस्य शंसितु सर्वथा स्तोतुमर्हं (अ०—जगदीश्वर) ३ ३७ **शंस्यम्**=स्तुत्य ममिद्धिकरम् (कर्म) १ ११६.११. प्रशंसनीयम् (कर्म) १ ११७ ६ स्तोतु योग्यम् (वच.) ५ ३६ ५ शंसितु योग्यम् (उक्थ=स्तोत्रम्) १.१० ५. [शसु स्तुती (भ्वा०) धातो 'शंसिदुहिगुहिभ्यो वेति वक्तव्यम्' अ० ३.१ १०९ वा० सूत्रेण क्यपो विकल्पेन ण्यत्]

शंस्या प्रशंसनीये कर्मणी १ ८ १० [शस्यम् इति व्याख्यातम् । ततो द्विवचनस्याकारादेश]

शाका: शक्तिमत्य (गाव) ६ २४ ४. [शाकप्राति० मत्वर्थे अर्श-आदित्वादच् । ततष्टाप् स्त्रियाम् । शाक = शक्लृ शक्ती (स्वा०) धातोर्घञ् । अथवा शो तनूकरणे (दिवा०) धातोर्बाहु० औणा० कन्]

शाकिनम् शक्तिमन्तम् (इन्द्र=राजानम्) ३ ५१ २. **शाकिने**=प्रशस्ता शाका शक्तिगुणयुक्ता गुणा विद्यन्ते यस्मिंस्तस्मै (शक्राय=सभाद्यध्यक्षाय) १ ५४.२ शक्तिमते (वीरपुरुषाय) ६ ४५ २२ **शाकी**=अवश्य शक्तु शील. भा०—बहुबलसामर्थ्य (गृहस्थ) १७ ८५ प्रशस्त शाक शक्तिर्विद्यते यस्य स (सभाध्यक्ष) १ ५१ ८ परमशक्तियुक्त, शक्ति देने वाला (ईश्वर) आर्याभि० १ १४ [शाकप्राति० प्रशंसायामर्थे भूम्न्यर्थे वा इन् । अथवा शाकीप्राति० मत्वर्थे 'शाकीपलालीदद्द्वा ह्रस्वत्व च' अ० ५ २ १००, वा० सूत्रेण न प्रत्ययो ह्रस्वत्व च । शाकी=शाकप्राति० स्त्रिया गौरादित्वान् ङीप् । शाकमिति व्याख्यातम्]

शाके शक्तिनिमित्ते (धर्मे) ५ १५ २ **शाकैः**= शक्तिविशेषै ६ १९ ४ शक्तिभि ४ १७ ११ [पूर्वपदे व्याख्यातम्]

शाक्वररैवते शाक्वरञ्च रैवतञ्च ते १० १४ शक्त्यैश्वर्यप्रतिपादिके (सामनी=एतदुक्ते कर्मणी) १५ १४ शक्तिधनप्रतिपादिके (पदार्थसमूहे) १३ ५८ [शाक्वररैवतपदयो समास । शाक्वर =शक्वरप्राति० भवार्थेऽण् । शक्वर =शक्लृ शक्ती (स्वा०) धातोर्बाहु० औणा० वरट् । छान्दसो वा वरच् । रैवतम्=रैप्राति० मतुबन्ताद् 'तस्येदम्' इत्यर्थेऽण्]

शाक्वराय शक्तिजाय (यन्त्रशिल्पविज्जनाय) २९ ६०. शक्तिजननाय ५ ५ [शक्वरप्राति० भवार्थेऽण् । शक्वर = शक्लृ शक्ती (स्वा०) धातोर्बाहु० औणा० वरट् । वरच् छान्दसो वा]

शाखा. या: खेऽन्तरिक्षे शेरते ता ७ ४३ १ वृक्षाऽवयवा १ ८ ८. [शाखा अङ्गुलिनाम निघ० २ ५ शाखा खशया शक्नोतेर्वा नि० १ ४]

शाचीन् व्यक्तान् (लोकान्) २३ ८ [शच व्यक्ताया वाचि (भ्वा०) धातो 'उणादिभ्य' अ० ३.३ १०८ वा० सूत्रेण इण्]

शाण्डः य श्यति तनूकरोति तथाऽयम् (विद्वज्जन.), प्र०—अत्र शो तनूकरणे इत्यस्मादौणादिकोऽडच् प्रत्यय ६ ६३ ९

शातवनेये शतान्यसङ्ख्यातानि वनय सम्भक्तयो येषान्ते शतवनयस्तैर्निर्वृत्ते (जगति) १ ५९ ७ [शतवनिपदयो समासे निर्वृत्तेऽर्थे ढञ्]

शादम् शीयते छिनत्ति यस्मिंस्त शादम् २५ १ [शद्लृ शातने (भ्वा०) धातोर्घञ् । शो तनूकरणे (दिवा०) धातोर्वा 'शाशपिभ्या ददनौ' उ० ४ ९७ सूत्रेण द]

शाधि शिक्षस्व २ २८ ९ नाट्य प० वि० । [शासु अनुशिष्टौ (अदा०) धातोर्लोट् । 'शा हौ' इति शादेश]

शान्तमया अतिशयेन सुखप्रापिकया (तन्वा=देहेन विस्तृतोपदेशनीत्या वा) १९ २. [शम् सुखनाम निघ० ३ ६ ततोऽतिशायने तमबन्तात् स्त्रिया टाप् । वर्णव्यत्ययेनाकारस्याकार]

शान्तमेन अतिशयेन सुखकारकेण (विज्ञानेन) १४ १२ अतिशयसुखेन १५ ६४ अत्यन्तसुखरूपेण कर्मणा १३ १९ [शम् सुखनाम निघ० ३.६ ततोऽतिशायने तमप् । अकारस्याकारो वर्णव्यत्ययेन]

शान्तिः शान्तिकरम् (अन्तरिक्षम्=आकाशम्) ३६ १७ दुष्टक्रोधादि उपद्रव रहित (जन) आर्याभि० २ २५, ३६.१७ शान्त निरुपद्रव सुखकारक (द्युलोकादि) आर्याभि० २ २५, ३६ १७ आध्यात्मिक शरीर मे ज्वरादि पीडा से होने वाले, आधिभौतिक शत्रु, सर्प, चौरादिको से होने वाले, आधिदैविक मन, इन्द्रिय, अग्नि, वायु, अतिवृष्टि, अनावृष्टि, अतिशीत, अत्युष्णतादि से होने वाले सन्ताप की निवृत्ति आर्याभि० २ १, त० आ० १० १ **शान्त्यै**=सुखाय, भा०— विज्ञानधर्मपुरुषार्थैरैहिकपारमार्थिकसुखससाधनाय ३ ४३ निरुपद्रवता के लिए स० वि० १४७, ३ ४३

शस्तोक्थस्य शस्तानि प्रशसितानि उक्थानि ऋक्सूक्तानि येन तस्य (वीरगृहपते) ८ १२ [शस्त-उक्थ-पदया समास । शस्तम्=शसु स्तुतौ (भ्वा०)+क्त । उक्थम्=वच परिभाषणे (अदा०) 'पातृतुदिवचि०' उ० २.७ धातो थक्]

शस्त्राणाम् शसन्ति यैस्तेषाम् १९ २५ [शसु स्तुतौ (भ्वा०) धातोर्बाहु० औणा० क्त्र । शस्त्र तद् यदेनच्छ्यति तस्माच्छस्त्र नाम श० ४ ३ २ ३ विट् शस्त्रम् ष० १ ४ प्रजा शस्त्रम् श० ५ २ २ २० वाग् हि शस्त्रम् ऐ० ३ ४४]

शस्मन् स्तोतुमर्हे (प्रयामनि=प्रयाणे) १.११९ २ [शसु स्तुतौ (भ्वा०) धातोर्मनिन् । किच्च वहुलवचनात् । डेर्लुक् च छन्दसि]

शस्यते स्तूयते १ ८६ ४ उच्चार्यते ३ ६२ ७ प्रशसितो भवति १ ५३ १ **शस्यन्ते**=स्तूयन्ते ७ ५६ २३. **शस्यसे**=स्तूयसे ६.५ ६ [शसु स्तुतौ (भ्वा०) धातो कर्मणि लट्]

शस्यमानम् प्रशसित सत् (नाम=पदार्थाना सज्ञा) १७ ९० प्रशसितव्यम् (स्तोम=यश) ४ ४ १५ प्रशस-नीयम् (सिद्धान्तम्) ४ ५८.२ **शस्यमाने**=प्रशसनीये (उक्थे=वचने) ६ २३ १. [शसु स्तुतौ (भ्वा०) धातो कर्मणि शानच्]

शस्यमानः स्तूयमान (सज्जनो राजा) ७ ८ ३ [शसु स्तुतौ (भ्वा०) धातो कर्मणि शानच्]

शस्यमाना स्तवनीया (तनू=शरीरम्) ६ २४.७ [शसु स्तुतौ (भ्वा०) धातो कर्मणि शानजन्तात् स्त्रिया टाप्]

शस्यमानासः प्रशसिता (स्तोमास=स्तुतय) ६ ६६ ३ [शस्यमान इति व्याख्यातम् । ततो जसोऽसुक्]

शंयुना सुखमयेन (व्यवहारेण) १९ २९ **शंयोः**=सुखस्य ऋ० भू० ३०८, ३६ १२ कल्याणवत साधनात् कर्मण सुखवतो वा, सुखात्, प्र०—अत्र 'कशभ्या वभयुस्ति-तुतयस अ० ५ २ १३८ इति शमो युस्प्रत्यय ३ ४३ श लौकिक पारमार्थिक सुख यस्मिँस्तस्य (मोक्षस्य) १ ४३ ४ भा०—सुखाऽमृतस्य ३६ १२ [शम् सुखनाम निघ० ३ ६ ततो मत्वर्थे 'कशभ्या वभयुस्तितुतयस' अ० ५ २ १३८ सूत्रेण युस् प्रत्यय । शयु सुखयु नि० ४ २१]

शंस स्तुहि ४ ३ ३ अनुशाधि १ ३७ ५ प्रशस ७.३१ २ **शसत्**=शसेत् ६ २३ ५ **शंसत**=प्रशसत ४ ३५. स्तुवीत तद्गुणान् प्रकाशयत, प्र०—अत्राऽन्तर्गतो ण्यर्थ १ २१.२ **शंसन्ति**=प्रशसन्ति ५ ७७ १ स्तुवन्ति ३ ३ ८ **शंसन्तु**=सुखकारका भवन्तु १ ५ ७ **शंससि**=स्तौषि २ ४३ २ **शंसा**=प्रशसे ४ ४ १४ **शंसाति**=प्रशसेत् ४ ६ ११ **शसामः**=स्तुम १ ६० ५ **शंसामि**=प्रशसामि ४ ३२ २२ **शंसाव**=प्रशसेव, ३ ५३ ३ **शंसि**=स्तौषि २ ४ ८ **शंसिषम्**=प्रशसेयम् ६ ४८ १६ **शंसिषः**=प्रशसे १ ८४ १९ प्रशस, प्र०—लोड्मध्य-मैकवचनप्रयोग ६ ३७ **शसे**=प्रशस ७ ३१ २ [शसु स्तुतौ (भ्वा०) धातोर्लोट् । अन्यत्र लेट्, लट् चापि]

शंसते प्रशसकाय (जनाय) ५ ४२ ७ **शंसन्**=प्रशसन् (पुरुष) ४ ५१ ७ **शसन्तम्**=प्रशसा कुर्वन्तम् (सज्जनम्) २ १२ १४ **शंसन्तः**=स्तुवन्त (व्रतपा=विद्वास) ३ ४ ७ उपदिशन्त (सज्जना) ६ २९ ४ [शसु स्तुतौ (भ्वा०) धातो शतृ]

शंसन्तीम् गुण-कीर्त्तन करने वाली वधू स० वि० १३७, अथर्व० १४ १ ९ [शसु स्तुतौ (भ्वा०) धातो शत्रन्तान् ङीप्]

शंसम् प्रशसनम् ७ ३४ १२ प्रशसाम् ३ १८ २ प्रशस्तम् (व्यवहारम्) १ १२२ ५ शसन्ति येन तम् (अग्निम्) ५ ३ ४ स्तुतिम् १ १८२ ४ प्रशसितम् (मर्त्त=मनुष्यम्) १ १४१ ६ प्रशसनीयम् (सवितार=परमा-त्मानम्) ५ ४६ ३ शसन्ति येन तं स्तुतिसमूहम् १ २७ ३ शसन्ति येन शास्त्रबोधेन तम् १ ३३ ७ प्रशसकम् (सज्जनम्) ७ ५६ १९ **शंसः**=शसन्ति स्तुवन्ति यस्मिन् स ३ ३० शसन्ति यत्र स १ १८ ३ स्तुत्य (विद्वज्जन) २ २६ १ शस्यते य स (विद्वान् जन) १ ९४ ८ अनु-शासन प्रशसा वा ७ ३५ २ स्तुति २ ३४ ६ **शंसाः**=प्रशसा ७ २५ ३ [शसु स्तुतौ (भ्वा०) धातोर्घञर्थे क]

शंसय प्रकृष्टगुणवत कुरु १ २९ २ प्रशसायुक्तान् कुरु १ २९ ४ प्रशस्तान् कुरु १ २९ १ प्रकृष्टज्ञानवत कुरु १ २९ ३ सत्याननपराधान् सम्पादय १ २९ ५ प्रशसय १ २९ ६, सुखिन सम्पादय १ २९ ७ [शसु (भ्वा०) धातोर्णिजन्ताल्लोट्]

शंसा प्रशसिनौ (मातापितरौ) १ १८५ ९ [शसु स्तुतौ (भ्वा०) धातोर्घञ् । ततो द्विवचनस्याकारादेश]

शंस्ता प्रशसक (अध्वर्यु=अहिंसायज्ञमिच्छुर्जन) २५ २८ प्रशसित (विद्वज्जन) १ १६२ ५ [शसु स्तुतौ

शास्महे=इच्छाम १ ३० १० **शास्व**=शिक्ष २१.६१. **शास्सि**=उपदिशसि १ ३१ १४. [शासु अनुशिष्टौ (अदा०) धातोर्लट्। अन्यत्र लोट् लट् लङ् च। अथवा आङ शासु इच्छायाम् (अदा०) धातोर्लटि शास्ते, शास्महे इत्येते रूपे। शासत् प्रशास्ति नि० ३ ४]

शासत् शासन कुर्वन् (सभाध्यक्ष) १.५१.८. [शासु अनुशिष्टौ (अदा०) धातो. शतृ]

शासनम् शमन्ति हिंसन्ति यस्मिँस्तद्युद्धम् २९ २३ **शासने**=शिक्षायामाज्ञाया वा ३ ७ ५ [शासु अनुशिष्टौ (अदा०) धातोरधिकरणे ल्युट् भावे वा। अथवा शसु हिंसायाम् (भ्वा०) धातोरधिकरणे ल्युट्। दीर्घश्छान्दस]

शासनीम् शास्ति सर्वान् विद्याधर्माचरणशीलान् यया सत्यनीत्या ताम्। समी०—अत्राऽपि सायणाचार्येण मनो पुत्री गृहीता तदप्यशुद्धमेव १ ३१ ११. [शासु अनुशिष्टौ (अदा०) धातोर्ल्युडन्तात् स्त्रिया टीप्]

शासम् शासितारम् (इन्द्र=सम्राजम्) ७ ३६ शास्ति येन त न्यायम् १ ५४.७ शासनम् १ ६८ ५ पक्षपात विहाय शासनकर्त्तारम् (इन्द्रम्) ६.१९.११. **शासा**= शासनेन ७ ४८ ३ **शासाम्**=शासनकर्त्रीणाम् (राज्य-शासकानाम्) २ २३ १२ [शासु अनुशिष्टौ (अदा०) धातो कर्त्तरि क्विप्। घञर्थे को वा। वज्र शास. श० ३ ८.१ ५ असि र्व शास इत्याचक्षते श० ३ ८.१ ४]

शासुरिव यथा पूर्णविद्यस्याऽध्यापकस्य सकाशात् १ ११६.१३ [शासु-इवपदयो समास। शासु=शासु अनुशिष्टौ (अदा०) धातोर्बाहु० औणा० ऋ]

शासुः न्यायेन प्रजाया प्रशासितु (राज्ञ) १ ६० २ [शासु अनुशिष्टौ (अदा०) धातोर्बाहु० औणा० ऋ]

शासुः शासनकर्त्तोपदेष्टा (मनुष्य) १ ७३ १ [शासु अनुशिष्टौ (अदा०) धातोर्बाहु० औणा० उ]

शास्य शासितु योग्य (दुष्टजन) १ १८९ ७ [शासु अनुशिष्टौ (अदा०) धातोर्ण्यत्]

शिक्वभिः कीलकबन्धनादिभि १ १४१.८. **सेचनैः** प्र०—शीकृधातो क्वनिपि 'वाच्छन्दसि' इत्याद्यचो ह्रस्वत्वम् २ ३५ ४ वीर्यादि मे स० वि० १०४, २ ३५.४ **शिक्वसः**=प्रकाशमानस्य (विद्वज्जनस्य) ६ २ ९ शक्ति-मन्त (रुद्रा=वायव) ५ ५४ ४ [शीकृ सेचने (भ्वा०) धातो 'अन्येभ्योऽपि दृश्यन्ते' इति क्वनिप्। धातोर्ह्रस्वत्व छान्दसम्]

शिक्ष अनुशास्ति २ ११ २१. सर्वा विद्या ग्राहय १.२७.५. उपदिश २.१७.६ **शिक्षतम्**=विद्यापादान कारयतम् १ १० ६ ७ सुशिक्षया विद्या ग्राह्यतम् १ ३४ ४ **शिक्षति**=विद्या गृह्णाति ग्राहयति वा, प्र०—अत्र व्यत्ययेन परस्मैपदम् ३ ५९ २. **शिक्षतु**=विद्या-मुपाददातु १ ८१.६ **शिक्षते**=विद्या ग्राहयति १ २८ ३ **शिक्षन्ति**=शिक्षा प्रददति १ १७३.१०. **शिक्षसि**= विद्या ददासि १ ८१ २ **शिक्षात्**=साध्वी शिक्षा कुर्यात् १ ६८ १ **शिक्षाः**=शिक्षस्व, प्र०—अत्र व्यत्ययेन परस्मै-पदम् ३ ४३ ५ **शिक्षेयम्**=सुशिक्षा कुर्याम् ७ ३२.१९. [शिक्ष विद्योपादाने (भ्वा०) धातोर्लोट्। व्यत्ययेन परस्मै-पदम्। अन्यत्र लट्, लेट् लङ्, लिङ् च। शिक्षति दानकर्मा नि० ३.२० शिक्ष देहि नि० १.७]

शिक्षन् विद्योपार्जन कारयन् (इन्द्र=राजा) ७ १९ २ विद्या ददन् (विद्वज्जन) ६ २७ ५. विद्यामुपादा-पयन् (इन्द्र=अध्यापकजन) १ १३२ ४ विद्याग्रहण कारयन् (विद्वान्) ७.२० ७ [शिक्ष विद्योपादाने (भ्वा०) धातो शतृ। व्यत्ययेन परस्मैपदम्]

शिक्षा विद्याग्रहणसाधिका (सत्क्रिया) २.१५ १० शासनम् ७.२७ २ [शिक्ष विद्योपादाने (भ्वा०) धातो 'अ प्रत्ययात्' अ० ३ ३ १०२ सूत्रेण स्त्रियामकार। ततष्टाप्]

शिक्षानरः य. शिक्षा नृणाति प्राप्नोति स शिक्षाया नर. (इन्द्र=विद्वज्जन) १ ५३ २ विद्योपादानेन नेता (इन्द्र=राजा) ४ २० ८ [शिक्षा-नरपदयो समास]

शिक्षिते विद्वद्भिरुपदिष्टे (उपासानक्ता रात्रिदिने) २८ १६ कृतशिक्षे सत्यौ (उपासानक्ता) २८ १५ [शिक्ष विद्योपादाने (भ्वा०) धातो. क्त। तत स्त्रिया टाप्]

शिक्षितौ विज्ञापितौ (देवा=वायुवह्नी) २८ १७ [शिक्ष विद्योपादाने (भ्वा०) धातो क्त.]

शिक्षोः शिक्षकस्य (पूर्णविद्याप्रकाशवत पुरुषस्य) ३ १९ ३ [शिक्ष विद्योपादाने (भ्वा०) धातोर्बाहु० औणा० उ]

शिग्रवः अव्यक्तशब्दकर्त्तार (राजादयो जना), प्र०—अत्र शिजिधातोरौणादिको रुक्-प्रत्यय ७ १८ १९ [शिजि अव्यक्ते शब्दे (अदा०) धातोर्बाहु० औणा० रुक्]

शिङ्क्ते अव्यक्त शब्द करोति ६ ७५ ३ [शिजि अव्यक्ते शब्दे (अदा०) धातोर्लट्। विकरणव्यत्ययेन श्नम्। शिङ्क्ते शब्दायते नि० २ ९.]

[शमु उपशमने (दिवा०) धातो स्त्रिया क्तिन् । 'अनुनासिकस्य क्विझलो क्ङिति' सूत्रेणोपधाया दीर्घः । शान्तिराप ऋ० १ २ २ ११]

शापम् शपन्त्याक्रुश्यन्ति येन तम् (निन्दितवचनम्) ७ १८ ५ [शप् आक्रोशे (भ्वा०) धातोर्घञ् । शाप नैन शप्तम् । नाभिचरितमागच्छति य एव वेद तै० ३ १२ ५.१]

शाबल्याम् शबलस्य कर्बुर-वर्णस्य सुताम् (दोषिनी वैश्याम्) ३० २० [शबलप्राति० 'तस्येदम्' इत्यणन्तात् स्त्रिया ङीप्]

शाम्बरम् शम्बरे मेघे भवम् (वसु=जलाख्य द्रव्यम्) ६.४७ २२ **शाम्बरे**=शम्बरस्याऽय सङ्ग्रामस्तस्मिन् ३ ४७ ४. [शम्बरप्राति० भवार्थेऽण् । शम्बरम् मेघनाम निघ० १ १०]

शारदी शरदो व्याख्यात्री (अनुष्टुप्) १३.५७ **शारदीः**=शरत्सुसम्बन्धिनी (पुरः=शत्रुनगर्य) १.१७४ २. शरदि भवा (दासी =सेविका) ६ २० १० शरद इमा (अपः=जलानि) १ १३१ ४ [शरद्प्राति० व्याख्यानार्थे तस्येदमर्थे भवार्थे वाऽणन्तात् ङीप् स्त्रियाम्]

शारदेन शरदि भवेन (ऋतुना) २१ २६ **शारदौ**= शरदि भवौ (आश्विनकार्तिकौ) १४ १६ [शरद्प्राति० भवार्थेऽण् । शरद् इति व्याख्यानम्]

शारि हिंस्यात् ६.५४.७ हिंस्या २ २८.५ [शॄ हिंसायाम् (क्र्या०) धातो कर्मणि लुङ् । अटोऽभावश्छान्दस]

शारिः शुकी २४ ३३ [शॄ हिंसायाम् (क्र्या०) धातो 'अ' शकुनौ' उ० ४ १२८ सूत्रेण इञ्]

शारी: शराणामिमा शती १ ११२.१६ [शॄ हिंसायाम् (क्र्या०) धातो 'ऋदोरप्' इत्यप्-प्रत्यये शर । तत तस्येदमर्थेऽणन्तात् स्त्रिया ङीप्]

शार्गः शारङ्गश्चातक प्र०—अत्र 'छान्दसो वर्णलोपो वा, इति इलोप २४ ३३ [शॄ हिंसायाम् (क्र्या०) धातो 'शॄण् शकुनौ' उ० १.१२७ सूत्रेण गण्-प्रत्यये नुडागमे गण्-प्रत्ययस्य णित्वाद् वृद्धौ न शार्ङ्ग । 'छान्दसो वर्णलोपो वा' इति डकारलोप]

शार्दूलः व्याघ्रविशेष २४ ३३ **शार्दूलाय** = महासिंहाय २४ ३० [शॄ हिंसायाम् (क्र्या०) धातो 'शर्जिशिञ्जादिभ्य ऊरोलचौ' उ० ४ ९० सूत्रेण ऊलच् । बहुलवचनाद् धातोर्दुक् आगम]

शार्यातस्य यो वीरसमूह शत्रून् हिनस्ति योद्धान् समन्तान्निरन्तरमतति व्याप्नोति तस्य (वीरपुरुषस्य) १ ५१.१२ **शार्याते**=य शरीरे हिंसकान् यात्ति प्राप्नोति तस्याऽस्मिन् व्यवहारे ३ ५१ ७ शर्याभिरङ्गुलिभिर्निर्वृत्तानि कर्माणि शार्याणि, तान्यतति व्याप्नोति स शार्यातस्तस्मिन् (पुरुषार्थे) प्र०—शर्या इत्यङ्गुलिनामसु पठितम् निघ० २ ५, ७ ३५ [शार्योपपदे अत सातत्यगमने (भ्वा०) धातो 'कर्मण्यण्' इत्यण् । शार्यम्—शॄ हिंसायाम (क्र्या०) धातोर्ण्यत् अथवा शार्यम्=शर्या अङ्गुलिनाम निघ० २ ५ ततो निर्वृत्तार्थेऽण्]

शाला शाला को स० वि० १६७, अथर्व० ९ २ ३.१९ **शाले**=हे शालागृह स० वि० १६८, अथर्व० ९ २ ३ २२

शाशदानः अतिशयेन शीयते शातयति छिनत्ति स स (इन्द्रः=सूर्य) १ ३३ १३ [शद्लृ शातने (भ्वा०) धातोर्यङ्लुगन्ताच्छानच् । व्यत्ययेनात्मनेपदम्]

शाशदाना छेदकौ (सभासेनापती) १ ११६ २ [शाशदान इति व्याख्यानम् । ततो द्विवचनस्याकारादेश]

शाशदाना अतीव सुन्दरी (विदुषी स्त्री) १.१२४.६ व्यवहारेष्वतितीक्ष्णमाचरन्ती (देवी=विदुषी स्त्री) १.१२३ १० [शाशदान इति व्याख्यानम् । तत स्त्रियां टाप्]

शाशदुः दुष्टान् छिन्द्यु २ २० ४ [शद्लृ शातने (भ्वा०) धातोर्यङ्लुगन्तात् लिट्]

शाशद्रे शातये १.१४१.६ [शद्लृ शातने (भ्वा०) धातोर्यङ्लुगन्तात् लिट् । 'इरयो रे' इति रे-आदेश । व्यत्ययेनात्मनेपदम्]

शाश्वतीभ्यः सनातनीभ्योऽनादिस्वरूपाभ्य स्वस्वरूपेणोत्पत्तिविनाशरहिताभ्य (समाभ्य =प्रजाभ्य) ४० ८ सर्वदैकरससमानाभ्य (प्रजाभ्य) प० वि० । नित्याभ्य (समाभ्य =प्रजाभ्य) ४० ८ ऋ० भू० ३२०, [शश्वत् प्राति० भवार्थेऽणन्तात स्त्रिया ङीप्]

शाश्वसद्भिः अतिशयेन प्राणवद्भिर्नरै (पशुभि) १ ३० १६ [श्वस प्राणने (अदा०) धातोर्यङ्लुगन्ताच्छतृ]

शासत् शिष्यात् ३ ३१ १ शिक्षाशिक्षामयासन शादि प० वि० । यथायोग्य शासन (दण्डनिपातन) करोति आर्याभि० १ १४, ऋ० १ ५ १० ८ शासत्=शासितान् २३.४० **शासते** शासा कुर्वन्ति ३३ २८ उपदिशन्ति १.१६५ ४ **शासः**=शिष्या १ १३१ ४ **शास्ति** विशेषेणोपदिशति २३ ३६. **शास्ते**=उपदिशति ३ १ २

सुशोभिते (हनू=सुरानासिके) ५ ३६ २ [शिप्रे हनू नासिके वा नि० ६ १७]

शिफाया: नद्या, प्र० अत्र शिञ् निशाने धातो- रौणादिक फक्-प्रत्यय १ १०४ ३ [शिञ् निशाने (भ्वा०) धातोर्बाहु० औणा० फक् । तत स्त्रियां टाप्]

शिमीवत: प्रशस्तकर्मयुक्तान् (मयोभून्=सुखीगान्) १ ८४ १६. **शिमीवान्** प्रशस्तानि कर्माणि भवन्ति यस्य सकाशात् (वज्र =शस्त्राऽस्त्रसमूह.) प्र०—अत्र 'छन्दसीर' इति मतुपो मकारस्य वत्वम् 'शिमीति कर्मनाम' निघ० २ १, १ १०० १३ प्रशस्तकर्मयुक्त (शिल्पविद्या- विज्जन) २ २५ ३ प्रशस्तकर्मवान् (जन) ५ ५६ ३ [शिमी कर्मनाम निघ० २.१ तत प्रशंसायाम् मतुप् । 'छन्दसीर' इति मतुपो मकारस्य वत्वम् । शिमीति कर्मनाम । शमयतेर्वा शक्नोतेर्वा नि० ५ १२ शिमीवत कर्मवत नि० १३ ३६]

शिम्बलम् शल्मलीपुष्प पत्र वा ३ ५३.२२

शिम्या सुकर्मयुक्तया (क्रियया) १ १५१.३. कर्मणा १ १५१ १ [शिमी कर्मनाम निघ० २.१]

शिम्युम् आत्मन शिमि कर्म कामयमानम् (दुष्ट- जनम्) ७ १८ ५ **शिम्यून्**=शान्तान् प्राणिन १ १०० १८ [शिमी कर्मनाम निघ० २ १ तत इच्छायाम- र्थे क्यजन्तात् 'क्याच्छन्दसि' इत्यु]

शिर: यच्छीयते तदुत्तमाऽङ्गम् १ १६३ ६ श्रृणाति हिनस्ति दु खानि येन तत् (उत्तमाङ्गम्) १२ ४ मूर्द्धेव (विद्वान्) ३७ ८. घनाऽऽकारमुपरिभागम् १६ ७१ शिरोवद्वर्त्तमान घनम् ५ ३० ८ मस्तकम् ६ २० ६ दूराच्छिर इव लक्ष्यमाणम् (आत्मानम्) २६.१७ शिरो- वन्मुख्य वचनम् ६ ५६ ६ उत्तमगुणम् ३७ ५ [श्रिञ् सेवायाम् (भ्वा०) धातो 'श्रयते स्वाङ्गे शिर किच्च' उ० ४ १६४ सूत्रेणासुन् शिरादेशश्च । अपि वा शिर आदित्यो भवति यदनुशेते सर्वाणि भूतानि मध्ये चैषा तिष्ठति । इदमपीतरच्छिर एतस्मादेव समाश्रितान्येतद् इन्द्रियाणि भवन्ति नि० ४ १३ यच्छ्रिय समुदौहंस्तस्मा- च्छिरस्तस्मिन्नेतस्मिन् प्राणा अश्रयन्त तस्मादेवैतच्छिर श० ६ १ १ ४ शिरो वै प्राणाना योनि श० ७ ५ १ २२ प्राणोऽग्नि शीर्षम् कौ० ८ १ गायत्री छन्दोऽग्निर्देवता शिर श० १० ३ २ १ गायत्र हि शिर श० ८ ६ २ ६ शिरस्त्रि- वृतम् जै० उ० ३ ४ त्रिधातु हि शिर इति । तै० ३ २.७.११. त्रिवृद्धि शिर. श० ८.४.४.४. त्रिवृद् स्तोम शिरो नोम स्वर्गस्य ता० ५.१.३ शिर एवास्य त्रिवृत् । तस्मात् त्रिविधं भवति त्वगस्थिमस्तिष्क. श० १२ २.४.६ त्रिवृत स्तोम शिरो भवति त्वगस्थिमज्जामस्तिष्कम् गो० पू० ५.३ शिरो वा अग्रे सम्भवत सम्भवति चतुर्धा विहितं वै शिर, प्राणश्चक्षु. श्रोत्र वाक् ता० २२ ६ ४ शिरो वै प्रथम जायमानस्य जायते श० ८ २ ४ १८ शीर्षतो वाऽग्रे जायमानो जायते श० ३.४.१.१६ तस्माच्छीर्षतोऽग्रे पलितो भवति श० ११ ४.१.६. [?]कपालं हि शिर श० १०.५.४.१२ तस्मादष्टाकपालं पुरुषस्य शिर सं० ३ २ ७ ८ प्रादेशमात्रमिव हि शिर श० ८ ५ १.२३ सर्वे सम्भृतमिव हि शिर श० १४ १.२ १७ तस्माच्छिरो उन्नानि सेवन्ति नानुसेवन्ति न कुर्वन्त्यनुकुर्वन्ति ता० ५ १ ६ अर्वाग् बिलश्चमस ऊर्ध्वबुध्न. । इदं तच्छिर श० १४ ५ २.५. शिर एतद् यज्ञस्य यदुखा श० ६ ५.३.८ शिर एव षष्ठी चिति श० ८ ७ ४ २१ श्री (=उत्कृष्ट वस्तु) वै शिर श० १ ४ ५ ५]

शिरिणायाम् हिंसितायाम् (पृथिव्याम्) २ १०.३. [शिरिणा रात्रिनाम निघ० १ ७ शॄ हिंसायाम् (क्र्या०) धातोर्बाहु० औणा० इनन् किच्च । ततष्टाप् स्त्रियाम्]

शिपः नानानगा (पशु) २६.५८ [शिल्पम् रूपनाम निघ० ३ ७]

शिल्पाः सुरूपा शिल्पकार्यसाधिका (विश्वदेव- देवता तास्त्ववय) २८.५ **शिल्पे**=मानसप्रसिद्धक्रियया सिद्धे (विश्व) ४.६ [शिल्पम् कर्मनाम निघ० २ १ रूपनाम निघ० ३ ७. शील समाधौ (भ्वा०) धातो 'खष्पशिल्प०' उ० ३ २८ सूत्रेण प-प्रत्ययान्तो निपात्यते । निपातनादेव धातोर्ह्रस्वादेश]

शिवतमः अतिशयेन सुखकारी (रस =आनन्द) ११ ५१ अतिशयेन मङ्गलकारी (अग्नि =जीव) १२ ३६ **शिवतमाः**=अतिशयेन शिवा कल्याणकारक कर्म्म कुर्वन्त कारयन्तश्च (सखाय) १ ५३ ११ [शिवप्राति० अतिशायने तमप् । शिवम् सुखनाम निघ० ३ ६ शीङ् स्वप्ने (अदा०) धातो 'सर्वनिघृष्व०' उ० १ १५३ सूत्रेण वन्- प्रत्ययान्तो निपात्यते । धातोर्ह्रस्वत्व निपातनात्]

शिवतमाम् अतिशय कल्याण करने वाली स्त्री को स० वि० १३६, अथर्व० १४ २ ३८ **शिवतमाः**=अतिशयेन सुखकरा (दिश) ३५ ६ [शिवप्राति० अतिशायने तमप् ।

शिङ्गीनि ज्ञात प्राप्तु योग्यानि (वस्तूनि), प्र०—अत्र स्नगिधातो पृषोदरादिनाऽभीप्टरूपसिद्धि ३९ ८

शिताम् तीक्ष्णधाराम् (अशनि=विद्युतम्) १.५४.४. [शिञ् निशाने (स्वा०) धातो क्तान्तात् स्त्रिया टाप्]

शितामतः तीक्ष्णस्वभावात् २१ ४४ शितस्तीक्ष्ण आमोऽपरिपक्व यस्मिँस्तस्मात् (अङ्गादङ्गात्=प्रत्यङ्गात्) २१ ४३ तीक्ष्णत्वेनोच्छिन्नरोगात् २१ ४५ [शित-आम-पदयो समास । तत तसि । दो शिताम भवति । दो-र्द्रवते । योनि शितामेति शाकपूणि विपितो भवति। श्यामतो, यकृत्त इति तैटीकि । श्याम श्यायते यकृद् यथाकथा च कृत्यते । शितिमासतो मेदस्त इति गालव नि० ४ ३]

शितिकक्षः शिती श्वेतौ कक्षौ पार्श्वौ यस्य स (पशु पक्षी वा) २४ ४ [शिति-कक्षपदयो समास]

शितिकण्ठाय शितिस्तीक्ष्णीभूत कृष्णो वा कण्ठो यस्य तस्मै (पक्षिणे) १६ २८ **शितिकण्ठाः**=शिति श्वेत कण्ठो येषान्ते (शर्वा =हिंसका जीवा) १६ ५७ शितयस्तीक्ष्णा श्वेता वा कण्ठा येषान्ते (रुद्रा =जीवा वायवो वा) १६ ५६ [शिति-कण्ठपदयो समास । शिति =शो तनूकरणे (दिवा०) धातो क्तिच् औणादिक । शिञ् निशाने (स्वा०) धातोर्वा क्तिन् । शिति श्यते नि० ४ ३]

शितिपादः शितय शुक्ला पादा अशा येषा किरणाना ते १ ३५ ५ [शिति-पादपदयो समास । समा-सान्तलोप]

शितिपृष्ठस्य शिति (सूक्ष्म) पृष्ठ प्रश्नो यस्य तस्य (वह्ने) ३ ७ १ **शितिपृष्ठः**=शितिस्तनूकरण पृष्ठ यस्य स (पशु) २४ ७ कृष्णपृष्ठ (पशु) २९ ५८ **शिति-पृष्ठानाम्**=शितयस्तीक्ष्णा गतय पृष्ठे येषा तेषाम् (पशू-नाम्) २८ १९ [शिति-पृष्ठपदयो समास]

शितिबाहुः शितयो बाह्वोर्यस्य स (पशु) २४ २ शिती तनूकर्त्तारौ बाहू इव बल यस्य स (पशु) २४ ७ [शिति-बाहुपदयो समास]

शितिभ्रुवः शितिश्श्वेता भ्रू र्भ्रुकुटिर्यासा ता पक्षिण्य २४ ६ [शिति-भ्रूपदयो समास]

शितिरन्ध्रः शिति श्वेतता रन्ध्रे यस्य स (पशु) २४ २ [शिति-रन्ध्रपदयो समास]

शिथिरा शिथिलौ स्थौ (बाहू=भुजौ) ७ ४५ २ [श्रन्थ विमोचनप्रतिहर्षयो (क्र्या०) धातो 'अजिरशिशिर-शिथिल०' उ० १ ५३. सूत्रेण किरच् निपात्यते । धातोरुप-धाया इत्व रेफस्य लोप निपातनात् । ततो द्विवचनस्या-कारश्छान्दस.]

शिथिराम् शिथिलाम् (पदार्थविद्याम्) ६.५८ २ [पूर्वपदे शिथिर इति व्याख्यातम् । तत स्त्रिया टाप्]

शिपिविष्टः शिपिषु पदार्थेषु प्रविष्ट (विष्णु = धनञ्जय) ८ ५५ **शिपिविष्टाय**=शिपिष्वाक्रोशत्सु प्राणिषु व्याप्त्या प्रविष्टाय (विष्णवे=परमेश्वराय) २२ २० शिपिषु पशुषु पालकत्वेन विष्टाय प्रविष्टाय वैश्यप्रभृतये १६ २९ [शिपि-विष्टपदयो समास । शिपि-विष्टो विष्णुरिति विष्णोर्द्वे नामनी भवत नि० ५ ८. शिपयोऽत्र रश्मय उच्यन्ते तैराविष्टो भवति नि० ५ ८ यज्ञो वै विष्णु शिपिविष्ट ता० ९ ७ १० एषा वै प्रजापते पशुष्ठा तनूर्यच्छिपिविष्ट ता० १८ २ २६ यमुपैत्सीत् तमपाराप्सीत् तच्छिपितमिव यज्ञाय भवति तस्माच्छिपि-विष्टायेति श० ११ १ ४४]

शिप्रवान् शिप्रे सुन्दरे हनुनासिके विद्येते यस्य स (इन्द्र =राजा) ६ १७ २ [शिप्रप्राति० प्रशसायामर्थे मतुप् । शिप्रे हनू नासिके वा नि० ६ १७]

शिप्राः उष्णिष ५ ५४ ११ [शिप्रे हनू नासिके वा नि० ६ १७]

शिप्रिणीनाम् शिप्रे ऐहिकपारमार्थिकव्यवहारज्ञाने विद्येते यासा ता विदुष्य स्त्रियस्तासाम्, प्र०—शिप्रे इति पदनाम निघ० ४ ३ अनेनात्र ज्ञानार्थो गृह्यते १ ३० ११ [शिप्रे इति पदनाम (निघ० ४.३) ततो मत्वर्थ इनि । तत स्त्रिया ङीप् । तत षष्ठा]

शिप्रिणे उत्तमहनुनासिकाय (वीर-पुरुषाय) ६ ४४ १४ **शिप्रिन्**=शोभनहनुनासिक (इन्द्र=आप्त-विद्वन्) ३ ३६ १० सुमुख (राजन्) ७ २५ ३ शिप्रे प्राप्तुमर्हे प्रशस्ते व्यावहारिकपारमार्थिके सुखे विद्येते यस्य सभापते तत्सम्बुद्धौ, प्र०—अत्र प्रशसार्थ इनि शिप्रे इति पदनाम निघ० ४ १, ३ ३६ १० **शिप्री**=शत्रूणामा-क्रोशक (सेनापति) १ ८१ ४ [शिप्रे हनू नासिके वा नि० ६ १७ । तत प्रशसायामर्थ इनिप्रत्ययान्ताच् चतुर्थी]

शिप्रे हनुनासिके, हनुप्रभृत्यङ्गानि, प्र०—शिप्रे इत्युप-लक्षणमन्येषाञ्च नि० ६ १७, ८ ३६ मुखावयवाविव ३ ३२ १ सर्वसुखप्रापिके द्यावापृथिव्यौ १ १०१ १०.

शिशा:=शिक्षय ६ १८ १३ **शिशीत**=तीक्ष्णीकरोति ६ ३ ५ तीक्ष्णीकुरुत ६ १६ ४२ **शिशीतम्**=तीक्ष्णीकुर्यानाम् २ ३६ ७ तीक्ष्णावुद्धियुक्तान् कुरुतम् १ १२२.३ **शिशीते**=तनूकरोति ५ ६ ५ तेजते ५ २ ६ कृश करोति, प्र०—शो तनूकरणे इत्यस्माल्लटि विकरणव्यत्ययेन श्यन स्थाने श्लुरात्मनेपद 'बहुल छन्दसि' इत्यभ्यासस्येत्वम् 'ई हल्यघो' अ० ६ ४ ११३ इत्यनभ्यासस्येकारादेश १ ३६ १६. **शिशीहि**=तीक्ष्णान् सम्पादय ३ २४.५ तीक्ष्णप्रज्ञान् कुरु ७ १८ २ सुखेन शयन कुरु, प्र०—अत्र व्यत्ययेन परस्मैपदम् १ ४२ ६ शिनु, प्र०—अत्र 'बहुल छन्दसि' इति श्लु 'अन्येपामपि०' इति दीर्घश्च १ ८१ ७ तीव्रोद्योगिन कुरु ७ १६ ६ [शो तनूकरणे (दिवा०) धातोर्लट्। विकरणव्यत्ययेन श्लु। 'बहुल छन्दसी' त्यभ्यासस्येत्वम्। अन्यत्र लोट् चापि। 'शिशाधि' इत्यादौ शासु अनुशिष्टौ (अदा०) धातोर्लोट्। शप श्लुश्छन्दसि। शिशीहि=शिशीतिर्दानकर्मा निघ० ५ २३]

शिशान: तनूकर्त्ता (वृषभ =बलीवर्द) १७ ३३ [शो तनूकरणे (दिवा०) धातोर्लिट कानच्। अभ्यासस्येत्व छान्दसम्]

शिशिराय शिशिरर्त्तौ व्यवहारसाधनाय २४ ११ शिशिराय ऋतवे २४ २० [शश प्लुतगतौ (भ्वा०) धातो 'अजिरशिशिर०' उ० १ ५३ सूत्रेण किरच् निपात्यते। शिशिर शृणाते शम्नातेर्वा नि० १ १० षड्भिरैन्द्रावार्हस्पत्यैं (पशुभि) शिशिरे यजते श० १३ ५ ४ २८]

शिशीते उदके १ ५५ १

शिशीमसि शत्रून् सूक्ष्मान् जीर्णान् कुर्म्म, प्र०—अत्र शो तनूकरणे इत्यस्माल्लटि श्यन स्थाने व्यत्ययेन श्लु 'छन्दस्युभयथा' इति श्लोरार्धधातुकत्वादाकारादेश १.१०२ १० [शो तनूकरणे (दिवा०) धातोर्लट्। व्यत्ययेन श्यन श्लु। छन्दसि श्लोरार्धधातुकत्वादाकारादेश। 'इदन्तो मसि' इति मस इदन्तता]

शिशुमती प्रशस्ता शिशवो विद्यन्ते यस्या सा (अश्वा=वडवा) २१ ३३ शिशुमती=प्रशस्ता बालका विद्यन्ते यासा ता (स्त्रिय) १ १४० १० [शिशुरिति व्याख्यातम्। ततो मतुबन्तात् स्त्रिया ङीप्]

शिशुमार: बालहन्ता (पक्षिणी) २४ ३० **शिशुमारान्**=ये स्वशिशून् मारयन्ति तान् (जलचरजन्तून्) २४ २१ [शिशूपपदे मृङ् प्राणत्यागे (तुदा०) धातो 'कर्मण्यण्' इत्यण्]

शिश्नथत् हिंसति, प्र०—श्नथतीति हिंसाकर्मा निघ० २ १६, २ २० ५ प्रलयं करोति ६ ४ ३ शिथिलीकरोति ४.३० १० **शिश्नथे**=श्नथति हिनस्ति, प्र०—अत्र व्यत्ययेनात्मनेपदम् ३ ३१ १३ [श्नथति वधकर्मा निघ० २ १६ ततो लेट्। द्वित्वमभ्यासस्येत्व च छान्दसम्]

शिश्नदेवा:=अब्रह्मचर्या कामिनो ये शिश्नेन दीव्यन्ति क्रीडन्ति ते (लम्पटा कामातुरा जना) ७ २१ ५ [शिश्नोपपदे दिवु क्रीडाविजिगीषादिषु० (दिवा०) धातो 'कर्मण्यण्' इत्यण्। शिश्नदेवा अब्रह्मचर्या। शिश्न श्नथते शिश्ना=अस्नानानि सूत्राणि नि० ४ ६]

शिश्ना अशुद्धानि सूत्राणि १ १०५ ८ [शिश्न पूर्वपदे व्याख्यातम्। तत शेर्लोपश्छन्दसि। शिश्न वै शोचिष्केश (ऋ० ३ २७ ४) शिश्न हीद शिश्निन भूयिष्ठ शोचयति श० १.४.३ ६ वृत्तमिव हि शिश्नम् श० ७ ५.१ ३८. योनिरुलूखलम्······शिश्न मुसलम् श० ७ ५.१ ३८]

शिश्रथ: शिथिलीकुरु वियोजय ४ १२ ४ विज्ञानदानेन शिथिलानि करोतु १ २४.१४ प्रयतस्व हिन्धि वा ५ ८५ ७ श्रथ्नाति ४ ३२.२२ **शिश्रथत्**=श्रथयेत, प्र०—अत्राडभाव १ १२८ ६ [श्रथि शैथिल्ये (भ्वा०) श्रन्थ विमोचनप्रतिहर्षयो (क्र्या०) श्रथ प्रयत्ने (चुरा०) धातोर्वा लेटि लङि वा छान्दसानि रूपाणि]

शिश्रियाणम् श्रयन्तम् (अग्निम्) १५ २८ व्याप्तम् (परमेश्वरम्) ५ ११ ६ विविधाश्रयम् १ ३२ २ [श्रिञ् सेवायाम् (भ्वा०) धातो शानच्। 'बहुल छन्दसी' ति शप श्लु]

शिश्रियाणाम् मेघाऽवयवाना मध्ये स्थिता विद्युतम् १७ १ [शिश्रियाणमिति व्याख्यातम्। तत स्त्रिया टाप्]

शिश्रिये समाश्रये ६ २४ श्रयति ५ ४४ १३. **शिश्रीत**=श्रयेत १ १४६.२ [श्रिञ् सेवायाम् (भ्वा०) धातोर्लट्। विकरणव्यत्ययेन श्लु। अन्यत्र लिङ्, शप श्लुश्च]

शिश्व: शासनीया (अध्यक्षप्रजाभृत्या) १ १२२ १५ **शिश्वा**=शिशुना वत्सादिना १ ६५ ५ **शिश्वे**=वत्साय २ ३४ ८ [शिशुरिति व्याख्यातम्। 'जसादिषु छन्दसि वेति वक्तव्यम्' अ० ७ ३ १०६ वा०सूत्रेण गुणादिनामभावे यणादेशे च रूपाणि]

शिष: शिष्ट त्यजेत् १७ ४५ शिष्ट त्यज ६ ७५.१६ [शिष असर्वोपयोगे (चुरा०) धातोर्लङ्। व्यत्ययेन श]

तत. स्त्रिया टाप् । शिवम् सुखनाम निघ० ३ ६]

शिवतराय अतिशयेन मङ्गलस्वरूपाय (भा०—सर्व-मङ्गलप्रदाय परमेश्वराय) १६ ४१ अत्यन्त कल्याणस्वरूप और कल्याणकारक (परमेश्वर) के लिए आर्याभि० २ २६, १६ ४१ [शिवप्राति० अतिशायने तरप् । शिवम् सुखनाम निघ० ३ ६]

शिवम् कल्याणम्, भा० =पारमार्थिक सुखम्, प्र०—शिव शग्म चेति सुखनामसु पठितम् निघ० ३ ६, ३ ४३ कल्याणकारकम् (यज्ञ =गृहाश्रमाख्य शुभाचरणम्) १७ ६ सुखकरम् (अन्तरिक्षम्) ३५ ६ मङ्गलकारिणम् (अग्नि= विद्युतम्) ११ ४७ निःश्रेयस सुखम् ऋ० भू० २४०, ३ ४३. मोक्ष-सुख को आर्याभि० २ ४६, ३ ४३ **शिवः**= कल्याणकारी (अग्नि =वेदविदध्यापकोपदेशक) २५ ४७ मङ्गलस्वरूपो ज्ञाननयो विज्ञानप्रद (रुद्र =उपदेशको जन) ३ ६३ मङ्गलमयो जीवाना मङ्गलकारी (अग्नि =सर्वा-भिरक्षकेश्वर) १ ३११ न्यायकारी (सभापति) १७ ११ मङ्गलाचारी (अग्नि =शत्रुविदारको राजा) १२ १७ सुखप्रद (रुद्र =सेनाध्यक्ष) ३ ६१ **शिवेन**=सर्वसुख-निमित्तेन (मनसा =अन्त करणेन) २ २४ [शिवम् सुखनाम निघ० ३ ६ (यजु० १२ १७) शिव शिव इति शमयत्ये-वैनम् (अग्निम्) एतद् हिंसायै तथो हैष (अग्नि) इमाल्लो-कान्छान्तो न हिनस्ति (शिव =रुद्र =शान्तोऽग्नि) श० ६ ७ ३ १५ श्यति पापमिति विग्रहे शो तनूकरणे (दिवा०) धातोर्वाहु० औणा० वन् । पृषोदरादिना रूपसिद्धि । शिवु कल्याणे (बहुलमेतन्निदर्शनम् इति धातुष्वपठिता अपि धातवो गृह्यन्ते) धातोरौणा० क । कर्त्तरि वा इगुपधलक्षण क । स (परमात्मा) ब्रह्मा स शिव सेन्द्र सोऽक्षर परम स्वराट् तै० आ० १० ११ २]

शिवसङ्कल्पम् शिव कल्याणकारी धर्मविषय सङ्कल्प इच्छा यस्य तत् (मन =सङ्कल्पविकल्पात्मकम्) ३४ १ धर्मेष्टम् (मन =मननविचारात्मकम्) ३४ २. शिवे कल्याणकरे परमात्मनि सङ्कल्प इच्छाऽस्य तत् (मन =सर्वकर्मसाधनम्) ३४.३ शिवो मोक्षरूपसङ्कल्पो यस्य तत् (मन =योगयुक्त चित्तम्) ३४ ४ शिव कल्याणकरो वेदादिसत्यशास्त्रप्रचारसङ्कल्पो यस्मिँस्तत् (भा०—मन =विद्याधर्माचरणेन पवित्रम्) ३४ ५ मङ्गलनियमेष्टम् (भा०—मन =यज्जित सिद्धिप्रदम्) ३४ ६ कल्याणप्रिय सत्यार्थप्रकाशकञ्च (मन) ऋ० भू० १०७, ३४ १ कल्याणेष्टधर्मशुभगुणप्रियम् (मन) ऋ० भू० १५२, ३४ १ अपने और दूसरो के लिए कल्याण की इच्छा करने वाला, धर्म, कल्याण का सङ्कल्प करने वाला, शुद्ध गुणो की इच्छा करके दुष्ट गुणो मे पृथक् रहने वाला, योग-विज्ञान मे युक्त होकर अविद्यादि क्लेशो से वियुक्त, अविद्या का अभाव करके विद्याप्रिय, अधर्माचरण से रोक कर इन्द्रियो को धर्म-पथ मे सदा चलाने वाला (मन =मन) ३४ १ ६ स० प्र० २४६-४७. [शिव-सकल्पपदयो समास । शिवम् सुखनाम निघ० ३ ६ सकल्प =सम्+क्लृप् सामर्थ्ये (भ्वा०) धातोर्घञ् । 'कृपो रो ल' इति लत्वम्]

शिवा मङ्गलप्रदा (पृथिवी) १ २७ प्रियदर्शना, सुखप्रदा, कल्याणकारिणी च (तनू धर्मनीति) १६ ४६ **शिवाम्**=मङ्गलमयीम् (जरा=वृद्धावस्थाम्) ५ १४१ १७ कल्याणकारिकाम् (तनू =शरीरम्) ४ २ **शिवे**= मङ्गलकारिण्ये (द्यावापृथिवी=सूर्यभूमी) ६ ७५ १० कल्याणसाधिके (क्रिये), प्र०—सर्वनिघृष्व० उ० १ १५१ इत्यय सिद्ध २ १६ [शिव इति व्याख्यातम् । ततष्टाप् स्त्रियाम्]

शिवानि मङ्गलमयानि (सख्यु कर्माणि) १.१०८ ५ [शिव इति व्याख्यातम्]

शिवासः मङ्गलाचरणा (सखाय) ५ १२ ५ [शिव इति व्याख्यातम् । ततो जसोऽसुक्]

शिवेभिः सुखकारकैर्मङ्गलविधायकैः (पायुभि = रक्षणैः) ६ ७१ ३ [शिवप्राति० 'बहुल छन्दसी' ति भिस ऐस् न भवति]

शिशवे पुत्राय ४ १८ ८ **शिशुम्**=शासनीय कुमार वालकम् ७ १६ वत्सम् ११८६ ७ वालकमिव वर्त्तमान जगत् १७ ७० **शिशुः**=अविद्यादिदोषाणा तनूकर्त्ता (विद्वज्जन) ११४५ ३ य श्यति तनूकरोति स (अग्नि.=सूर्यरूप) २२ १६. **शिश्वः**=शासनीया (वर्णा आश्रमा अध्यक्षप्रजाभृत्याश्च) ११२२ १५ [शो तनूकरणे (दिवा०) धातो 'श कित् सन्वच्च' उ० १ २० सूत्रेण उं । सन्वद्भावेन द्वित्वादिकम् । शिशु शमनीयो भवति । शिशीतेर्वा स्याद् दानकर्मण । चिरलब्धो गर्भो भवति नि० १०.३९ अय वाव शिशुर्योऽय मध्यम प्राण श० १४ ५ २ २]

शिशाति तीक्ष्णीकरोति ७ १८ ११ **शिशातु**= क्षयतु, प्र०—अत्र शो तनूकरणे इत्यस्मात् श्यन स्थाने 'बहुल छन्दसि' इति श्लु, तत 'श्नो' इति द्वित्वम् ११११ ५ **शिशाधि**=सम्यक्तया शिक्षय ६ १५ १६.

वीर्यवन् (अग्ने=वह्निरिव राजन्) ७.१ ८. आशुकर्त्त (अग्ने=विद्वन्) ६ ४८ ७ **शुक्रम्**=वीर्यकरमुदकम् २१ ३४ वीर्यम् ३ ६ ३ शीघ्र सुखकरम् (सोम=महौषधि-रसम्) १९ ७९ शुद्ध शुद्धिहेतुर्वा (ब्रह्म यज्ञो वा) १ ३१. पराक्रमप्रदम् (इन्द्रिय=धनम्) १९ ७८ शुद्धिकरम् (इन्द्रिय=चित्तम्) १९ ७७ पवित्राम् (इन्द्रिय=दिव्या वाचम्) १९ ७३ आशु कार्यकरम् (इन्द्रियम्) १९ ७२ वीर्यवत् (भा०—विदुषा जुष्ट शरीरात्मबलम्) १९.७९ सर्वजगत्कर्तृ शुद्धम् (ब्रह्म) प० वि०। वीर्यवन्तम् (पतिम्) ८ ४८ आशुकारित्वाच्छुद्धभावाच्च (ब्रह्म) ३२ १ क्षिप्र कार्यकरम् (वर्ण=स्वीकारम्) ३ ३४ ५ अनन्त सामर्थ्यम् (ब्रह्म) ऋ० भू० १४०, ऋ० ६ १ ६.५ **शुक्रस्य**=शोधकस्य योगस्य ७ १३ शोषकस्योदकस्य २ ४० ३. शुद्धिकरस्य (वचस=वचनस्य) २ ६ ४ शुद्धस्य धर्मस्य ८ ४६ **शुक्रः**=आशुकारी (अग्नि=विद्युत्) ६ १६ ३४ वीर्यवान् (योगिजन) ७ १३ पवित्र पवित्रकारको वा (विद्वानुपदेशक) ४ २४ शीघ्रकर्त्ता शुद्धस्वरूपो वा (अ०—ईश्वर) १७ ८० भास्वर (भानु=सूर्य) ११ ५४ य आशु पासु-वर्षा-तीव्रतापाभ्यामन्तरिक्ष मलिन करोति स ज्येष्ठ (मास) १४ ६ तेजस्वी (सूर्य) १ ४३ ५ वीर्यसमूह ८.५७ वायु १८ ५० शुद्धस्वभाव (विद्वज्जन) ४ ४७ १ पावक सूर्य आशुकारी बालश्च ३३ ५ शुद्ध पवित्रो बलिष्ठो वा जन ६ ४ ३ [शुक्रम् उदकनाम निघ० १ १२ ईशुचिर् पूतीभावे (दिवा०) धातो 'ऋज्रेन्द्राग्रवज्र०' उ० २.२८ सूत्रेण रन्। शुक्र शोचतेर्ज्वलतिकर्मण नि० ८ ११ (यजु० १८ ५०) असौ वा आदित्य शुक्र श० ९ ४ २.२१ ता० १५ ५ ६ एप वै शुक्रो य एप (आदित्य) तपति श० ४.३ १ २६ एप वै शुक्रो य एप (आदित्य) तपत्येप उऽएव बृहन् श० ४ ५ ६ ६ तद्वाऽएप एव शुक्रो य एप (आदित्य) तपति तद् यदेष तपति तेनैप शुक्र श० ४ २ १ १ तत्र ह्यादित्य शुक्रश्चरति गो० पू० २ ९ अस्य (अग्ने) एवैतानि (घर्म, अर्क, शुक्र, ज्योति, सूर्य) नामानि श० ९ ४.२.२५ अत्ता वै शुक्र (ग्रह.) श० ५ ४ ४ २० अत्तैव शुक्र आद्यो मन्थी (ग्रह) श० ४ २ १ ३ शुक्र सोमः ता० ६ ६ ९ एतौ (शुक्रश्च शुचिश्च) एव ग्रैष्मौ (मासौ) स यदेतयोर्बलिष्ठ तपति तेनो हैतौ शुक्रश्च शुचिश्च श० ४.३.१ १५ ज्योति शुक्रमसौ (आदित्य) ऐ० ७ १२ शुक्र हिरण्यम् तै० १ ७ ६ ३ ज्योतिर्वै शुक्र हिरण्यम् ऐ० ७ १२ शुक्र ह्येतच्छुक्रेण क्रीणाति यत् सोम हिरण्येन श० ३ ३ ३ ६ (यजु० १ ३१) तेजोऽसि शुक्रमस्यमृतमसि (आज्य) श० १ ३ १ २८. शुक्रा ह्याप. तै० १ ७ ६ ३ सत्य वै शुक्रम् श० ३ ९ ३ २५]

शुक्रज्योतिः शुक्र शुद्ध ज्योतिर्यस्य स (अ०—ईश्वर) १७.८० शुक्र शुद्धाचरण ज्योति प्रकाशो यस्य स (विद्वान् राजा) १२ १५ [शुक्र-ज्योतिष्पदयो समास]

शुक्रदुघस्य आशु पूर्त्तिकर्त्र्या (धेनो=वाच) ६ ३५ ५ [शुक्रोपपदे दुह प्रपूरणे (अदा०) धातो 'दुह कप् घश्च' अ० ३ २ ७० सूत्रेण कप् घश्चादेश]

शुक्रपाः शुक्र योगवीर्य योगबल वा पान्ति ते (देवा=योगिजना) ७ १२ **शुक्रपेभ्यः**=शुक्र वीर्य रक्षन्ति तेभ्य (देवेभ्य=विद्वद्भ्य) ६ २७ [शुक्रोपपदे पा रक्षणे (अदा०) धातो. क]

शुक्रपिशम् शुक्र भास्वर, पिश तद्विपरीत कृष्णञ्च (भा०—विलक्षणस्वरूपमहोरात्रम्) २९ ३१ [शुक्र-पेशपदयो समास। एकारस्येकारश्छान्दस। पेश रूपनाम निघ० ३ ७ शुक्रपिश शुक्रपेशस श्रियम्। शुक्र शोचतेर्ज्वलतिकर्मण। पेश इति रूपनाम, पिंशतेर्विपिशित भवति नि० ८ ११.]

शुक्रवर्चाः शुक्रस्य सूर्यस्य प्रकाश इव वर्चो न्यायाचरण यस्य स. (पुत्र) १२ १०७ [शुक्र-वर्चस्पदयो समास। वर्चस्=वर्च दीप्तौ (भ्वा०) धातोरौणा० असुन्]

शुक्रवर्णम् शुद्धस्वरूपम् (रथम्) १ १४० १ [शुक्र-वर्णपदयो समास]

शुक्रवर्णाम् शुद्धस्वरूपाम् (धिय=प्रज्ञाम्) १ १४३ ७ [शुक्र-वर्णपदयो समासे स्त्रिया टाप्]

शुक्रवासाः शुक्राणि शुद्धानि वासासि यस्या सा शुद्धवीर्या वा (उषा) १ ११३.७ [शुक्र-वासस्पदयो समास]

शुक्रशोचिषम् शुक्रमाशुकर शोचिस्तेजो यस्मिँस्तम् (अग्नि=विद्युदादिस्वरूपम्) २ २ ३ **शुक्रशोचिषा**=शुक्रस्य शोधकस्य सूर्यस्य शोचिर्दीपन तेनेव ७.१३ **शुक्रशोचिषे**=शुक्रेण वीर्येण शोचिर्दीप्तिर्यस्य तस्मै (देवाय=विदुषे यतये) ७ १४ १ **शुक्रशोचिः**=शुद्धतेजस्क (अग्नि=राजा सेनेशो वा) ७ १५ १० [शुक्र-शोचिष्पदयो समास। शोचि ज्वलतोनाम निघ० १ १७ शुक्र इति व्याख्यातम्]

शुक्रसद्मनाम् शुद्धस्थानानाम् ६ ४७ ५ [शुक्र-सद्मन्-पदयो समास। सद्मन्=गृहनाम निघ० ३ ४]

शिष्टम् शिष्यते यस्तम् (सोमम्=उत्तमौषध्यभिपवम्) १ २८ ६ [शिष अ्रसर्वोपयोगे (चुरा०) धातो क्त]

शिंशपायाम् एतत्काष्ठे वृक्षविशेषे ३.५३ १६ [शिवोपपदे पा रक्षणे (अदा०) धातो क-प्रत्यये टापि च पृषोदरादिना रूपसिद्धि]

शिंशुमारः शिंशून् धर्मोल्लङ्घिन शत्रून् मारयति येन स (रथ=रमणीयो यानादि) १ ११६ १८ [शिंशूपपदे मृङ् प्राणत्यागे (तुदा०) धातो 'कर्मण्यण्' इत्यण् । शिशु शिशुपदेन विज्ञेयम् । शिशु शसनीयो भवति नि० १०.३९.]

शीकायते य शीक सेचन करोति तस्मै (मेघाय) २२ २६ [शीकशब्दादाचारेऽर्थे क्यजन्ताच्छतृ । शीक = शीकृ सेचने (भ्वा०) धातोर्घञर्थे क]

शीघ्रम् तूर्णम् २२ २६.

शीघ्र्याय शीघ्रगतौ साधवे (जनाय) १६ ३१. [शीघ्रप्राति० साध्वर्थे यत्]

शीनम् सङ्कुचितम् (घृतम्) २५ ९ [श्यैङ् गतौ धातो क्तप्रत्यये 'द्रवमूर्त्तिस्पर्शयो श्य' अ० ६ १ २४ सूत्रेण सम्प्रसारणम् 'श्योऽस्पर्शे' इति निष्ठानत्वम्]

शीभम् क्षिप्रम् ३ ३३ १२ [शीभम् क्षिप्रनाम निघ० २ १५]

शीभ्याय शीभेषु क्षिप्रकारिषु भवाय (जनाय), प्र०—शीभ इति क्षिप्रनाम निघ० २ १५, १६ ३१ [शीभम् क्षिप्रनाम निघ० २ १५ ततो भवार्थे यत्]

शीरम् विद्युद्रूपेण सर्वत्र शयानम् (वह्निम् ३ ९ ८ [शीङ् स्वप्ने (अदा०) धातो 'स्फायितञ्जि०' उ० २ १३ सूत्रेण रक् । शीरम् अनुशयिनमिति वा शिनमिति वा नि० ४.१४]

शीर्यते हिंस्यते १ १६४ १३ [शॄ हिंसायाम् (क्र्या०) धातो कर्मणि लट्]

शीर्षणि शिरसि २ १६ २ **शीर्षसु**=शिरस्सु ५ ५४ १ मस्तकेषु ५ ५७ ६ **शीर्षाणि**=शिरासि ७ १८ १९ **शीर्षे**=शिरसी प्रायणीयोदयनीये नित्य कार्यञ्च शब्दात्मानौ वा १७ ९१ शिरसी इव (अभ्युदयनिश्रेयसे) ४ ५८ ३ **शीर्ष्णः**=शिर इवोत्तमसामर्थ्यात् ३१.१३. शिरस १ १६४ ७ शिरोवदुत्तमसामर्थ्यात् प्रकाशमयात् ऋ० भू० १२७, ३१ १३ **शीर्ष्णा**=शिरोवत् कर्मणा १ ११६ १२ **शीर्ष्णे**=उत्तमाङ्गाय (मखाय यज्ञाय) ३७ ३ उत्तमव्यवहाराय (मखाय=गृहस्थकार्यसङ्गतिकरणाय) ३७.८ उत्तमगुणप्रचारकाय (मखाय=शिल्पयज्ञविधानाय) ३७ ६ शिरोवत्सर्वोपरिवर्त्तमानाय (मखाय) ३७ ८ उत्तमसुखप्रदाय (मखाय) ३७ ७ सर्वोत्कर्षाय ३७ ८ शिर सम्बन्धिने वचसे (मखाय) ३७ ६. उत्तमत्वाय (मखाय) ३७ ५ [शिरस्प्राति० सप्तम्या विभक्तौ 'शीर्षंश्छन्दसि' अ० ६ १.६०. सूत्रेण शीर्षन् इत्यादेश]

शीर्षण्या शिरसि भवा (रज्जु) २५ ३१ या शीर्ष्णि साधु सा (रज्जु) १ १६२ ८. [शिरस्प्राति० भवार्थे साध्वर्थे वा यत्प्रत्यये 'ये च तद्धिते' अ० ६ १ ६१ सूत्रेण शीर्षन्नादेश]

शीर्षन् शिरसि १६ ६२ [शिरस्प्राति० सप्तम्येकवचनस्य 'सुपा सुलुक्०' सूत्रेण लुक् । शिरस' शीर्षन्नादेशश्च]

शीर्षा शीर्षाणि १ १३३ २ शिरासि ६ ६२.१०. [शिरस् शब्दस्य जसि शीर्षन्नादेश । शेर्लोपश्छन्दसि]

शीर्ष्णा शीर्ष्णा शिरसा शिरसा १.१३२.२ [शीर्ष्णापदस्य वीप्सायां द्वित्वम् । शीर्ष्णा=शिरस शीर्षन्नादेशष्टा-विभक्तौ परत]

शीर्ष्णे शीर्ष्णे शिरोवदुत्तमायोत्तमाय सुखाय ७ १८ २४. [शीर्ष्णेपदस्य वीप्सायां द्वित्वम् । शीर्ष्णे=शिरसश्चतुर्थ्येकवचने शीर्षन्नादेश]

शीलाय जितेन्द्रियत्वादिशीलिने (पुरुषाय) ३० १४ [शील समाधौ (भ्वा०) धातोरिगुपधलक्षण क]

शुक् शोचन्ति विचारयन्ति यया सा प्रदीप्ति, सूर्यस्येव प्रदीप्तिर्वा ३८ १८ शोक, प्र०—अत्र भावे क्विप् १३ ४७ **शुचा**=होमसाधनेन ३ ४ १ **शुचे**=पवित्राय (व्यवहाराय) ३९ ११. [शुच शोके (भ्वा०) धातो सम्पदादित्वात् क्विप् । शोचति ज्वलतिकर्मा निघ० १ १६]

शुकबभ्रुः शुकस्येव बभ्रुर्वर्णो यस्य स (पशु) २४ २ [शुक-बभ्रुपदयो समास । शुक=शुभ दीप्तौ (भ्वा०) धातो 'शुकवल्कोल्का' उ० ३ ४२ सूत्रेण कक्प्रत्ययान्तो निपात्यते । बभ्रु=भृञ् भरणे (भ्वा०) धातो 'कुर्भ्रश्च' उ० १ २२. सूत्रेण कु प्रत्ययो द्वित्वञ्च]

शुकरूपाः शुकस्येव रूपमिव रूप येषान्ते (पशव) २४.७ [शुक-रूपपदयो समास]

शुकः शुद्धिकृत् पक्षिविशेष २४ ३३ **शुकेषु**=शुकवत् कृतेषु कर्मसु १ ५० १२ [शुभ दीप्तौ (भ्वा०) धातो 'शुकवल्कोल्का' उ० ३ ४२. सूत्रेण कक्-प्रत्ययान्तो निपात्यते । याम शुक हरितमालभते गो० उ० २ १]

शुक्र शक्तिमन् (विद्वज्जन) ५ २१ ४ आशुकारिन्

पालक (योगिजन) ७ ७ [शुचि इत्युपपदे पा रक्षणे (अदा०) धातो क्विप्]

शुचिपेशसम् पवित्ररूपाम् (धियम्) १ १४४ १ [शुचि-पेशस्पदयो समास । पेशस् रूपनाम निघ० ३ ७]

शुचिप्रतीकम् पवित्रप्रतीतिकरम् (विद्वज्जनम्) १ १४३ ६ [शुचि-प्रतीकपदयो समास । प्रतीकम् प्रत्यक्तम् नि० ७ ३१]

शुचिभ्राजाः शुचय पवित्रा भ्राजा प्रकाशा यासान्ता (कुमारिका) १ ७६ १ [शुचि-भ्राजपदयो समास । भ्राज.=भ्राजृ दीप्तौ (भ्वा०) धातोर्घञ्]

शुचिवर्णम् पवित्रस्वरूपमतिसुन्दर वा (कुमारम्) ५ २ ३ [शुचि-वर्णपदयो समास]

शुचिव्रतः पवित्रधर्माचरणशील (जन) २१ १३ [शुचि-व्रतपदयो समास]

शुचिव्रता पवित्रकर्म्माणौ (मित्रावरुणा=अध्यापकोपदेशकौ) ३ ६२ १७ पवित्रशीलौ (अध्यापकोपदेशकौ) १ १८२ १ शुचि पवित्रकर व्रत शील ययोस्तौ (अश्विनौ=सूर्याचन्द्रमसौ) १ १५ ११ [शुचि-व्रतपदयो समास । ततो द्विवचनस्याकारश्छान्दस । व्रतम् कर्मनाम निघ० २ १]

शुचिव्रते पवित्रकर्मयुक्ते (रोदसी=सूर्यभूमी) ६.७० २ [शुचि-व्रतपदयो समास । व्रतम् कर्मनाम निघ० २ १]

शुचिषत् य शुचिषु पवित्रेषु पदार्थेषु सीदति स (परमेश्वर) १० २४ पवित्रेषु व्यवहारेषु वर्त्तमान (ब्रह्म जीवो वा) १२ १४ य पवित्रेषु विद्वत्सु रा (हस=विवेकी जन) १६.७४ [शुचि इत्युपपदे पद्लृ विशरणगत्यवसादनेषु (भ्वा०) धातो क्विप्]

शुचिष्मः दीप्तिमन् (अग्ने=विद्वज्जन) ६ ६ ४ [शुचिष्प्राति० मतुप् । 'मतुवसो रु०' अ० ८ ३ १ इति रुत्वम्]

शुची पवित्रे (द्यावापृथिवी) ४ ५६ ५ [शुचिरिति व्याख्यातम् । ततो प्रथमाद्विवचनम्]

शुची शुचीनि पवित्राणि (धर्माचरणानि) ७ ५६ १२ [शुचिरिति व्याख्यातम् । तत शेर्लोपश्छन्दसि]

शुचीनि पवित्राणि (भेषजा=रोगनिवारकौषधानि) २ ३३.१३ [शुचिप्राति० प्रथमाबहुवचनम्]

शुण्ठाकर्णाः शुण्ठौ शुष्कौ कर्णौ यस्य स (पशु पक्षी वा) २४ ४ [शुण्ठ-कर्णपदयो समास । शुठि शोषणे (भ्वा०) धातोर्घञ् पूर्वपदस्य सहिताया दीर्घ]

शुतुद्री शु शीघ्र तुदति व्यथयति सा (नदी) ३ ३३ १. [शु क्षिप्रनाम निघ० २ १५ शु इत्युपपदे तुद व्यथने (तुदा०) धातो छान्दसष्ट्रक् । तत स्त्रिया ङीप् । रुडागमश्च छान्दस. । शुतुद्री शुद्राविणी क्षिप्रद्राविण्याशुतुन्नेव द्रवतीति वा नि० ९ २६]

शुद्धम् अविद्यादिदोषरहितत्वात् सदा पवित्रम् (ब्रह्म) ४० ८ अविद्यादिदोषेभ्य. सर्वदा पृथग् वर्त्तमानम् (ब्रह्म) ऋ० भू० ३६, ४० ८ अविद्यादि दोष, जन्म-मरण, हर्ष-शोक, क्षुधा-तृषा आदि दोषोपाधियों से रहित सदैव निर्मल (परमात्मा) आर्याभि० २ २, ४० ८ निर्दोषम् (ब्रह्म) ४० ८, ऋ० भू० ३२०, [शुध शौचे (दिवा०) धातो क्त]

शुद्धवालः शुद्धा वाला यस्य स (पशु) २४ ३ [शुद्ध-वालपदयो समास]

शुद्धाः सत्कर्माऽनुष्ठानपूता (देवी=विदुष्य सत्स्त्रिय) ६ १३. निर्मला (अप=जलानि) ६ २८ ७ [शुध शौचे (दिवा०) धातो क्त । तत स्त्रिया टाप्]

शुद्धयतु शुद्धयतु ६ १५ [शुध शौचे (दिवा०) धातोर्लोट् । 'व्यत्ययो बहुलम्' इति द्विविकरणता । तेन श प्रत्यय]

शुनम् ज्ञानवृद्धम् (प्रजास्वामिनम्) ३ ३० २२. वर्धकम् (वीरजनम्) ३.३१ २२ सुखम् १२ ६९. सुखप्रदम् (राजानम्) ३ ३४ ११ [टुओश्वि गतिवृद्धचो (भ्वा०) धातो क्त. । यजादित्वात् सम्प्रसारणम् । 'ओदितश्चे' ति निष्ठानत्वम् । 'हल.' अ० ६.४ २ सूत्रेण प्राप्त दीर्घत्वमपि छान्दसत्वान्न भवति । शुनम् सुखनाम निघ० ३ ६ यद् वै समृद्ध तच्छुनम् श० ७.२ २ ९ या वै देवाना श्रीरासीत् साकमेधैरीजानाना तच्छुनम् श० २.६ ३ २]

शुनहोत्रेषु शुन सुख जुह्वति ददति तेषु (द्रव्येषु) २ १८.६ शुनाना विज्ञानवृद्धाना होत्रेषु दानेषु २.४१.१४ प्राप्तयोगजविद्याद्येषु (सर्वविद्वत्पतिषु) २ ४१ १७ [शुन-होत्रपदयो समास । शुन सुखनाम निघ० ३ ६ शुनमिति व्याख्यातम् । होत्रम्=हु दानादानयो (जु०) धातो. 'हुयामाश्रुभसिभ्यस्त्रन्' उ० ४ १६८ सूत्रेण त्रन्]

शुनः कुक्कुरान् १.१८२ ४ कुक्कुरस्य ४ १८ १३ [श्वन्=टुओश्वि गतिवृद्धचो (भ्वा०) धातो 'श्वन्नुक्षन्-पूषन्०' उ० १ १५९ सूत्रेण कनिन् । श्वन्प्राति० शस् । अन्यत्र ङस्]

शुनःशेपम् सुखस्य प्रापकमिन्द्रियाऽऽरामम् (जनम्) ५ २ ७ शुन शेप.=शुनो विज्ञानवत इव शेपो विद्यास्पर्शो

शुक्रा शुद्धाऽन्त करणा आशुकारिणी (कन्या) ७ ३४.१ शुद्धिकरी (उषा) १ १२३ ६ **शुक्राः**= प्रदीप्ता (उषस =प्रभातवेला) ४ ५१ ६ शुद्धा (किरणा) १ १३५ ३ [शुक्रप्राति० स्त्रिया टाप् । शुक्र इति व्याख्यातम्]

शुक्रा शुद्धानि (शोचीपि=तेजासि) २७ ११ शुक्राणि उदकानि ३ ८ ६ शरीरात्मवीर्याणि ३ १ ८ [शुक्रप्राति० शेर्लोपश्छन्दसि । शुक्र इति व्याख्यातम्]

शुक्रासः शुद्धवीर्या (जना) १ १३४ ५ [शुक्रप्राति० जसोऽसुगागम]

शुक्रेभिः शुद्धैरुदकैर्वीर्यैर्वा २.३५.४ वीर्यवद्भि (अङ्गैः) ३ १ ५ [शुक्रप्राति० 'बहुल छन्दसि' सूत्रेण भिस ऐसादेशो न भवति]

शुक्लम् शुद्धम् (पिङ्गाक्ष=पीतवर्णाक्ष जनम्) ३० २१. [ईशुचिर् पूतीभावे (दिवा०) धातो 'ऋज्रेन्द्राग्र०' उ० २ २८ सूत्रेण रन् । 'कपिलकादीना सज्ञाछन्दसोर्वा रो लमापद्यते' अ० ८ २ १८ वा०सूत्रेण लत्वम् । शुक्लम् तद् यच्छुक्ल तद् वाचो रूपमृचोऽग्नेर्मृत्यो जै० उ० १.२५ ८]

शुचतः शोकाऽऽतुरस्य (विद्वज्जनस्य) ६ ३ ३ **शुचन्त.**=पवित्राचरण कुर्वन्त, कारयन्त (राजप्रजाजना) ४ २ १७ विद्याविनयाभ्या पवित्रा प्रशसिता (जना) ४ २ १५ [शुच शोके (भ्वा०) धातो शतृ । विकरणव्यत्ययेन श । शुचन्तम् जाज्वल्यमानम् नि० ५ ३]

शुचते पवित्रयति विचारयति वा ४ २३ १ [शुच शोके (भ्वा०) ईशुचिर् पूतीभावे (दिवा०) धातोर्वा लट् । व्यत्ययेनात्मनेपद श-प्रत्ययश्च]

शुचद्रथाः शुचन्त पवित्रा रथा यानानि येषान्ते (राजपुरुषा.) ४ ३७ ४. [शुचद्-रथपदयो समास]

शुचध्यै शोचितु पवित्रीकर्त्तुम् ४ २ १ [शुच शोके (भ्वा०) ईशुचिर् पूतीभावे (दिवा०) धातोर्वा तुमर्थेऽध्यै-प्रत्यय]

शुचन्तिम् पवित्रकारकम् (विद्वज्जनम्) १ ११२ ७ [शुच शोके (भ्वा०) ईशुचिर् पूतीभावे (दिवा०) धातोर्वा वाहु० औणा० झिच् किच्च]

शुचमानः पवित्र पवित्रयन् (गुरुवत् जन) ४ २३ ८ [शुच शोके (भ्वा०) ईशुचिर् पूतिभावे (दिवा०) धातोर्वा शानच् । विकरणव्यत्ययेन श । व्यत्ययेनात्मनेपदञ्च । शुचमान दीप्यमान नि० १० ४०.]

शुचयद्भिः पवित्रयद्भि (गुणैः) ४ ५६ १. शुचिमाचक्षाणैः (देवेभि =विद्वद्भिर्दिव्यैर्गुणैर्वा) ४.५६ २ **शुचयन्तः**=ये शुचीनात्मन इच्छन्ति (देवा =विद्वासो जना) १ १४७ १ [शुचिपदाद् आत्मन इच्छायामर्थे क्यजन्ताच्छतृ । 'तत्करोती' ति वा णिजन्ताच्छतृ]

शुचयः पवित्रकारका (जना) १ १३४ ५ पवित्रा (उषास =प्रभातवाता) १ १३४ ४ पवित्रीभूता (विपश्चितो जना) ३३.८१ **शुचये**=पवित्रकरायाऽऽपाढाय २२ ३१ **शुचिः**=पवित्र पवित्रकारको वा (परमेश्वरो विद्वान्वा) १ ६१ ३ **शुचीनाम्**=पवित्राऽऽचाराणाम् (जनानाम्) ७ ५६ १२. **शुचे**=विद्याविनयाभ्या प्रकाशित (अग्ने=राजन्) ६ ४८ १३ [ईशुचिर् पूतीभावे (दिवा०) धातो 'इगुपधात् कित्' उ० ४ १२० सूत्रेण इन् किच्च । शुचि शोचतेर्ज्वलतिकर्मण । अयमपीतर शुचिरेतस्मादेव । निष्षिक्तमस्मात् पापकमिति नैरुक्ता नि० ६ १ एतौ (शुक्रश्च शुचिश्च) एव ग्रैष्मौ (मासौ) स यदेतयोर्बलिष्ठ तपति तेनो हैतौ शुक्रश्च शुचिश्च श० ४ ३ १ १५. यत् (अग्ने) शुचि (रूपम्) तद्दिवि (न्यधत्त) श० २ २ १ १४ वीर्य वै शुचि यद्वाऽअस्य (अग्ने) एतदुज्ज्वलत्येतदस्य वीर्य शुचि श० २ २ १ ८]

शुचाशुचा होमसाधनेन ३ ४ १

शुचि पवित्र शुद्धिकरम् (ऋत=सत्य न्यायम्) ४ २ १६ पवित्र कर्म्म ४ १ १६ [ईशुचिर् पूतीभावे (दिवा०) धातो 'इक् कृष्यादिभ्य' इतीक् । 'इगुपधात् कित्' उ० ४ १२० इति वा इन् किच्च]

शुचिजन्मनः शुचे पवित्राज्जन्म यस्य तस्य (विद्वज्जनस्य) १ १४१ ७ शुचे रवेर्जन्म यस्यास्तस्या (उषस =प्रभातवेलाया) ६ ३६ ३ **शुचिजन्मानः**= पवित्रजन्मवन्त (मरुत =मनुष्या) ७ ५६ १२ [शुचि-जन्मन्पदयो समास]

शुचिजिह्वः शुचि पवित्रा जिह्वा यस्मात् स (अग्नि) २ ६ १ शुचि पवित्रा सत्यभाषणेन जिह्वा वाग् यस्य स (भा०—कुलदेशोद्दीपको नर) ११ ३६ [शुचि-जिह्वापदयो समास । जिह्वा जोहुवा नि० ५ २७]

शुचिदन् पवित्रदन्त (पुत्र) ७ ४ २ शुचय पवित्रा दन्ता यस्य स (मेधावी राजा) ५ ७ ७ [शुचि-दन्तपदयो समास । 'छन्दसि च' अ० ५ ४ १४२ सूत्रेण दन्तस्य दतृ-आदेश]

शुचिपाः शुचि पवित्रता पालयतीति शुचिपा पवित्र-

शुभः कल्याणकरस्य व्यवहारस्य १० ३३ शुम्भमाना (वीरजना) ५ ५४ ११ कल्याणकरस्य कर्मण शुभगुणसमूहस्य वा ५ ७५ ८ यत्कल्याणकारक मनुष्याणा कर्म तस्य, प्र०—अत्र सम्पदादित्वात् क्विप् १ ३४ ६. **शुभा**=शोभनेन (आचरणेन) ७ ५६ ६. शुभगुणकर्मणा १ १६५ १. **शुभे**=कल्याणाय भा०—सुखाय १८ ७६ श्रेष्ठाय व्यवहाराय १ ८८ २ शुभ्यते यस्तस्मै शुभाय विजयाय, प्र०—अत्र कर्मणि क्विप् १ ८७ ३ शुभगुणप्राप्तये १ ११६ ३ शुभाचरणाय ३० ७ उदकाय ५.५७ ३ [शुभ शोभार्थे (तुदा०) धातो सम्पदादित्वात् क्विप् । शुभम् उदकनाम निघ० १ १२]

शुभानैः मङ्गलमयैर्वचनैस्सह, भा०—मृदुवचनै ३३ २७ [शुभ शोभार्थे (तुदा०) धातोर्बाहु० औणा० आनच् स च कित्]

शुभ्र शुद्धाचरण (राजन्) ५ ५ ४ **शुभ्रम्**=भास्वरम् (शुष्म=बलम्) २ ११ ४. **शुभ्रः**=शुद्ध प्रशसनीय (वलयुक्तो देह) ७ ५६ ८. **भ्राः**=शुद्धाऽऽचारा (देवा=विद्वज्जना) ७ ३६ ३ शुद्धस्वरूपाचारा (पत्नी=भार्या) ५ ४२ १२. श्वेता (पुर=नगराणि) ५ ४१ १२ स्वगुणै शोभमाना (मरुत=वायव) १ १६ ५ शुद्धधर्मा (वीरजना) १ ८५ ३ स्वच्छा (मरुत=वायव) १ १६७ ४ विद्युत २ ११ ३ **शुभ्रे**=शोभमाने सुखे १.५७ ३ शोभायमाने (अध्यापकोपदेशिके) ३ ३३ २ [शुभ शोभार्थे (तुदा०) धातो 'स्फायितञ्चि०' उ० २ १३ सूत्रेण रक्। शुभ्रा शोभायमाना नि० १२ ४३]

शुभ्रयामा शुभ्रा शुद्धा यामा दिवसा यया सा (धेनु=वाक्) ३ ५८ १ [शुभ्र-यामपदयो समासे स्त्रिया टाप्]

शुभ्रा श्वेतवर्णा (उषा) ५ ८० ५ [शुभ्र इति व्याख्यातम् । तत स्त्रिया टाप् । शुभ्रे शोभने नि० ६ ३६]

शुभ्रासः श्वेतवर्णा (वायव) २ ३६ २ [शुभ्रप्राति० जसोऽसुगागम]

शुभ्रिषु शुभगुणेषु ५ ३४ ८ शुद्धेषु व्यवहारेषु १.२६ ६ शोभनसुखप्रदेषु (गोष्वश्वेषु) १ २६ १ शोभनेषु विमानादियानेषु तत्साधकतमेषु वा १ २६ २ शुभ्रा प्रशस्ता गुणा विद्यन्ते येषु तेषु (गोष्वश्वेषु) १ २६ ३ शुद्धभावेन धर्मव्यवहारेण गृहीतेषु (गोष्वश्वेषु) १ २६ ५ [शुभ्रप्राति० प्रशसायाम् (मत्वर्थे) इनि]

शुम्वा सुशोभमान (महाराज) ४ ३८ ६ [शुभ शोभार्थे (तुदा०) धातो कर्त्तरि क्वनिप्]

शुम्भत सर्वत्र यानादिकृत्येषु प्रदीपयत १ २१ २. **शुम्भति**=शोभयति १ २२ ८ **शुम्भते**=सुशोभते, प्र०=अत्र व्यत्ययेनाऽऽत्मनेपदम् १ १४० ६ **शुम्भन्ति**=शुभाचरणयन्ति ५ ३६.५. पवित्रयन्ति ५.२२ ४ विराजन्ते ५ १०.४. **शुम्भन्ते**=शोभन्ते १ ८५ १ **शुम्भस्व**=शोभायुक्तान् कुरु ५ १० [शुम्भ शोभार्थे (तुदा०) धातोर्लोट् । अन्यत्र लट् चापि]

शुम्भन्तः=प्राप्तशोभा (विद्वज्जना) १ १३० ६ [शुम्भ शोभार्थे (तुदा०) धातो शतृ]

शुम्भमाना सुशोभायुक्ता (देवी=विदुषी स्त्री) ६ ६४.२ प्रकाशवन्ती (उषा) १ ६२ १० **शुम्भमानाः**=शोभमाना (तन्व.=शरीराणि) ७ ५६ ११. सुशोभिता (द्वार=गृहद्वाराणि) २६ ५ [शुम्भ शोभार्थे (तुदा०) धातो शानच् । ततष्टाप् स्त्रियाम् । व्यत्ययेनात्मनेपदम्]

शुम्भमानाः शोभायुक्ता (हसास=हसा) ७ ५६ ७. शुभगुणाढ्या सम्पादयन्त (मनुष्या) १ १६५.५ [शुम्भ शोभार्थे (तुदा०) धातो. शानच् । व्यत्ययेनात्मनेपदम् । शुम्भमाना. सुशोभिषमाणा नि० ८ १०]

शुम्भमाने सुशोभिते (दम्पती=भार्यापती) २ ३६ २. [शुम्भ शोभार्थे (तुदा०) धातो शानजन्तात् स्त्रिया टाप्]

शुरुधः य शुरुमन्धकारनाशक तेजो दधाति स सूर्य. ६ ३.३ [शुरूपपदे डुधाञ् धारणपोषणयो (जु०) धातो क]

शुरुधः सद्यो रोधिका (वाच) ६ ४६ ८ या शुरुधो दु खानि रुन्धन्ति ता (चन्द्राग्रा साधनानि) ३४ ४२ या शु' सद्यो रुन्धन्ति ता स्वसेना, प्र०—शुरुध इति पदनाम निघ० ४ ३, ४ २३ ८. ये सद्यो रुन्धन्ति ते (विद्वज्जना) ७ २३ २ प्राप्तव्यानि सुखानि १ ७२ ७ ये शुरून् हिंसकान् सूर्यकिरणान् दधति धरन्ति ते गो अग्रा अप) १ १६६ ८ [शु इत्युपपदे रुधिर् आवरणे (रुधा०) धातो क्विप् । शु क्षिप्रनाम निघ० २ १५ शुरूपपदे वा दधाते क्विप्। शुरुध आपो भवन्ति। शुच सरुन्धन्ति नि० ६ १६]

शुशुक्वनम् अतिशयेन प्रदीप्तम् (क्षय=निवासम्) १ १३२.३ [शोचति ज्वलतिकर्मा (निघ० १ १६) धातोर्यङ्लुगन्तादौणा० क्वनिप् । ल्युट् प्रत्यये वा वकारोपजन]

शुशुक्वान् विद्याविनयाभ्या प्रकाशित (विद्वान् सद्वैद्य) १ १८६ ४ शोचक (जार=वयोहन्ता सूर्य)

यस्य स (विद्वान् पुरुष) प्र०—शेप शपते स्पृशतिकर्मणः नि० ३ २१, १ २४ १२ [शुन-शेपपदयो समास । 'शेपपुच्छलाङ्गूलेषु शुन सञ्ज्ञाया षष्ठ्या अलुग् वक्तव्य' अ० ६ ३ २१ वा०सूत्रेण छन्दस्यसञ्ज्ञायामपि षष्ठ्या अलुक्। शुन सुखनाम निघ० ३ ६ श्वन्प्राति० षष्ठ्या एकवचने रूपम् । शुन वायु शु एत्यन्तरिक्षे नि० ९ ३९ शेप शपते स्पृशतिकर्मणः नि० ३ २१]

शुनासीरा यथा वायुसूर्यौ, प्र०—शुनासीरौ शुनो वायु सरन्त्यन्तरिक्षे, सीर आदित्य सरणात् नि० ९ ४०, १२ ६६ सुखदस्वामिभृत्यौ, कृषीवलौ ४ ५७ ८ [शुन-सीरपदयो समासे द्विवचनस्याकारश्छान्दस । पूर्वपदस्य 'देवताद्वन्द्वे च' इत्यनङ्। शुनासीरौ=शुनो वायु शु एत्यन्तरिक्षे । सीर आदित्य सरणात् नि० ९ ४० सवत्सरो वै शुनासीर । गो० २ १ २६]

शुनासीरीया: शुनासीरदेवताका कृषिसाधका (पशव) २४ १९ [शुनासीराव् इति व्याख्यातम् । तत 'सास्य देवता' इत्यर्थे 'द्यावापृथिवीशुनासीर०' अ० ४ २ ३२ सूत्रेण छ]

शुनासीरौ क्षेत्रपतिभृत्यौ ४ ५७ ५ [व्याख्यातम् । शुनासीर्यो द्वादशकपाल पुरोडाशो भवति श० २ ६ ३ ५. शान्तिर्वै भेषज शुनासीरौ कौ० ५ ८. सवत्सरो वै शुनासीर गो० उ० १ २६ अथ यस्माच्छुनासीर्येण यजेत । या वै देवाना श्रीरासीत् साममेधैरीजानाना विजिग्यानाना तच्छुनम्, अथ य सवत्सरस्य प्रजितस्य रस आसीत् तत् सीरम् श० २ ६ ३ २]

शुन्धध्वम् शुन्धन्ति शोधयत् वा, प्र०—अत्र व्यत्यय आत्मनेपदञ्च १ १३ पवित्रीकुरुत २९ २४ **शुन्धन्ताम्**= पवित्रीकुरुताम् ५ २६ **शुन्धन्तु**=पवित्रयन्तु २० २० **शुन्धस्व**=शोधय ५ १० **शुन्धामि**=निर्मलीकरोमि पवित्रीकरोमि वा १ १३ [शुन्ध शुद्धौ (भ्वा०) धातोर्लोट् । व्यत्ययेनात्मनेपदम् । अन्यत्र लडपि]

शुन्धयन्तु बाह्यदेश पवित्र कुर्वन्तु ४ २. [शुन्ध शुद्धौ (भ्वा०) धातोर्णिजन्ताल्लोट्]

शुन्ध्युव: पवित्रहेतवो रश्मयोऽश्वा, प्र०—अत्र 'तन्वादीना छन्दसि बहुलमुपसङ्ख्यानम्' अ० ६ ४ ७० अनेन वार्त्तिकेनोवडादेश १ ५० ९ शोधिका (विद्युत) ५ ५२ ९ आदित्यकिरणा' १ १२४ ४ **शुन्ध्यू:**=शुद्ध (भगवान्) ५ ३२ शुद्धस्वरूप और सबका शोधक (ईश्वर) आर्याभि० २ १७, ५ ३२ [शुन्ध शुद्धौ (भ्वा०) धातो 'यजिमनि-शुन्धि०' उ० ३ २० सूत्रेण युच् । शुन्ध्युप्राति० जसि 'तन्वादीना छन्दसि बहुलमुपसङ्ख्यानम्' अ० ६.४ ७० वा० सूत्रेणोवङ् । शुन्ध्युरादित्यो भवति शोधनात् । शकुनिरपि शुन्ध्युरुच्यते शोधनादेव । ···आपोऽपि शुन्ध्यव उच्यन्ते शोधनादेव नि० ४ १६]

शुप्तौ शयने कृते सति, प्र०—अत्र वर्णव्यत्ययेन श १ ५१ ५ [ञिष्वप् शये (अदा०) धातो क्त । 'वचि-स्वपि०' इति किति सम्प्रसारणम् । वर्णव्यत्ययेन सकारस्य शकार]

शुभम्=कल्याणयुक्त सुखम् १ २३.११ कल्याणम् ४ ५१ ६ उदकम् ६ ६२ ४. धर्म्यं व्यवहारम् ५.५५.१. कल्याण सङ्ग्राम वा ५ ५७.२ **शुभे**=शोभनाय (वपुषे) १ ६४ ४ कल्याणाय ५ ६३ ५ [शुभम् उदकनाम निघ० १ १२ शुभ शोभार्थे (तुदा०) धातोर्घञर्थे क । शुभे प्रयोगे क्विप् कर्मणि]

शुभयद्भि: शुभमाचरद्भि (मरुद्भि =मनुष्यै) ५ ६०.८ [शुभमिति व्याख्यातम् । तत आचारेऽर्थे-क्यजन्ताच्छतृ]

शुभयन्त शुभ इवाऽऽचरन्ति ७ ५६ १६. **शुभयन्ते**= शुभमाचक्षते १ ८५ ३ [शुभप्राति० 'तत्करोति०' इति णिजन्ताल्लङ् । अडभावश्छान्दस । अन्यत्र लट्]

शुभस्पती धर्मस्य पालकौ (अश्विनौ=अध्यापको-पदेशकौ) १ १२० ६ कल्याणकरव्यवहारस्य पालकौ (अश्विना=प्राप्तविद्यौ स्त्रीपुरुषौ) ५ ७५ ८ शुभस्य शिल्प-कार्यप्रकाशस्य पालकौ (अश्विनी=जलाग्नी), प्र०—शुभ शुम्भ दीप्तौ इत्येतस्य रूपमिदम् १ ३ १ [शुभ-पतिपदयो समास । सकारोपजनश्छान्दस]

शुभंयावा य शुभ जल याति स (मनुष्यगण) ५ ६१ १३ **शुभंयावान:**=ये शुभ कल्याण यान्ति प्राप्नु-वन्ति ते (देवा =विद्वासो जना), प्र०—अत्र 'वाच्छन्दसि सर्वे विधयो भवन्ति' इति द्वितीयाया अलुक् २५ २०. शुभस्य प्रापका (देवा), प्र०—अत्र 'तत्पुरुषे कृति बहुलम्' इति बहुलवचनाद् द्वितीयाया अलुक् १ ८९ ७ [शुभमित्युपपदे या प्रापणे (अदा०) धातो 'अन्येभ्योऽपि दृश्यन्ते' इति क्वनिप् वनिव् वा । द्वितीयाया अलुक् । शुभम् उदकम् निघ० १ १२]

शुभंये य शुभ याति प्राप्नोति तस्मै (राज्ञे) ४ ३ ६ [शुभमित्युपपदे या प्रापणे (अदा०) धातोर्ट । द्वितीया या अलुक्]

रक्षणाद्या प्रजा) १ ५२ ४ [शुष्ममिति व्याख्यातम् । तत स्त्रिया टाप्]

शुष्मिणम् बहुबलयुक्तम् (सेनापतिम्) ७ २३.५. **शुष्मिणः**=वहु शुष्म वल भवति यस्मात्तस्य (अन्नस्य) ११ ८३ **शुष्मिणे**=शुष्यति वलयति येन व्यवहारेण स बहुर्विद्यते यस्मिँस्तस्मै (प्रकाशमानाय यशसे) प्र०—अत्र भूम्न्यर्थे इनि १ ३७ ४ **शुष्मिन्**=प्रशसितवलयुक्त (इन्द्र=न्यायाधीश राजन्) ६ २५ १ अनन्तवलवन् पूर्ण-वलवन् वा (इन्द्र=जगदीश्वर सुवीरजन वा) ३ ४६ **शुष्मिभिः**=वलिष्ठै (वीरपुरुषै) १ १३३ ६ **शुष्मी**= महाबलिष्ठ (इन्द्र =राजा) ४ २२ १ बहुबली विद्वज्जन) ७ ४० ३ शुष्म वलिष्ठ सैन्य विद्यते यस्य स (राजा) ५.४० ४ [शुष्ममिति व्याख्यातम् । तत प्रशसायामर्थे भूम्न्यर्थे वा इनि]

शुष्मिणा वलिष्ठौ (राजाऽमात्यौ) ४ ४७.३. [शुष्मिन् इति व्याख्यातम् । ततो द्विवचनस्याकारादेश]

शुष्मिणी बहु शुष्म वल यस्यामस्ति सा (सुरा= सोमवल्ल्यादिलता) १९ ७ [शुष्मिन् इति व्याख्यातम् । तत स्त्रिया ङीप्]

शुष्मिन्तमम् प्रशसित बहुविध वा वल विद्यते यस्य तमतिशयितम् (राजाध्यक्षम्) ३ ३७ ८. अतिशयेन बलवन्तम् (रयिं=श्रियम्) २ ११ १३ **शुष्मिन्तमः**= अतिशयेन बलवान् (विद्वज्जन) १ १२७ ९. [शुष्मिन्-प्राति० अतिशायने तमप् । 'तरप्तमपौ घ' इति तमपो घसज्ञकत्वान् 'नाद् घस्य' अ० ८ २ १७ सूत्रेण नुट् । शुष्मिन्=शुष्मम् बलनाम निघ० २ ९ ततो मत्वर्थ इनि]

शूकरः सूकर २४ ४० **शूकराय**=क्षिप्रकारिणे (जीवाय) २२ ८ [शूपपदे डुकृञ् करणे (तना०) धातो कर्त्तर्यच् । शू क्षिप्रनाम निघ० २ १५]

शूकृतस्य शीघ्र निष्पादितस्य (विद्युदग्ने) १ १६२ १७ शीघ्र शिक्षितस्य (अश्वस्य), प्र०—श्विति क्षिप्रनाम निघ० २ १५, २५ ४० **शूकृताय**=क्षिप्र कृताय (जीवाय) २२ ८ क्षिप्रकारिणे (सज्जनाय) २२ ८ [शू-कृतपदयो समास । शू क्षिप्रनाम निघ० २ १५]

शूघनासः आशु गन्त्र्य (नदीप्रवाहा) ४ ५८ ७ क्षिप्रगमना , भा०—तूर्णगामिन (वातप्रमय =तरङ्गा) १७ ९५ [शूघनास क्षिप्रनाम निघ २ १५]

शूद्रम् प्रीत्या सेवक शुद्धिकरम् (जनम्) ३० ५ **शूद्रः**=मूर्खकुलोत्पन्न (जार =व्यभिचारेण वयोहन्ता जन) २३.३१. मूर्खत्वादि गुण वाला (जन) स० प्र० ११४, ३१ ११ मूर्खत्वादिगुणविशिष्टो मनुष्य , भा०—य सेवाया साधुर्विद्याहीन पादाविव मूर्खत्वादिनीचगुणयुक्त स ३१ ११ **शूद्राय**=चतुर्थवर्णाय (जनाय) २६ २ **शूद्रे**=अनार्य अर्थात् अनाडी मे स० प्र० ३०८, [शुच शोके (भ्वा०) धातो 'शुचेर्दश्च' उ० २ १९ सूत्रेण रक् धातोरुकारस्य दीर्घो दकारश्चान्तादेश । असुर्य शूद्र तै० १ २ ६ ७. वैश्य च शूद्र चानु रासभ श० ६ ४ ४ १२. तस्मात् पुरस्तात् प्रत्यञ्च शूद्रा अवस्यन्ति तै० ३ ३ ११.२ स शौद्र वर्णमसृजत पूषणमिय (पृथिवी) वै पूषा श० १४ ४ २ २५. अनृत स्त्री शूद्र श्वा कृष्ण. शकुनिस्तानि न प्रेक्षेत श० १४ १ १ ३१ असतो वा एष सम्भूतो यच्छूद्र' तै० ३ २ ३ ९ अयज्ञियान् वा ऽएतद् यज्ञेन प्रसजति शूद्रास्त्वद्यास्त्वत् श० ५ ३.२.४ अथ यद्यप शूद्राणा स भक्ष शूद्रास्तेन भक्षेण जिन्विष्यसि शूद्रकल्पस्ते प्रजायामाजनिष्यतेऽन्यस्य प्रेष्य कामोत्थाप्यो यथाकाम-वध्यो यदा वै क्षत्रियाय पाप भवति शूद्रकल्पोऽस्य प्रजाया-माजायत ईश्वरो हास्माद् द्वितीयो वा तृतीयो वा शूद्रतामभ्यु-पेत स शूद्रतया जिज्यूषित ऐ० ७ २९ स पत्त एव प्रति-ष्ठाया एकविंशमसृजत तमनुष्टुप् छन्दोऽन्वसृज्यत न काचन देवता शूद्रो मनुष्यस्तस्माच्छूद्र उत बहुपशु-रयज्ञियो विदेवो हि नहि त काचन देवतान्वसृज्यत तस्मात् पादावनेज्यन्नातिवर्धते पत्तो हि सृष्ट ता० ६ १ ११.]

शूद्रा शूद्रस्य स्त्री, भा०—दासी २३.३० [शूद्र-प्राति० स्त्रिया 'शूद्राच्चामहत्पूर्वा जाति ' अ० ४.१.४ वा०सूत्रेण टाप्]

शूद्राऽऽर्यौ शूद्रश्चाऽऽर्यो द्विजश्च तौ १४ ३० [शूद्र-आर्यपदयो समास । शूद्रमिति व्याख्यातम् । आर्य =ऋ गतिप्रापणयो (भ्वा०) धातोर्ण्यत्]

शूनम् वर्द्धनम २ २७ १७ सुखम्, प्र०—शूनमिति सुखनाम निघ० ३ ६, २ २९ ७ **शूने**=शू सद्य करण विद्यते यस्मिँस्तस्मिन् सैन्ये, प्र०—अत्र शू इति क्षिप्रनाम निघ० २ १५ तस्मात् पामादित्वान्मत्वर्थीयो न प्रत्यय ७ १ ११ [टुओश्वि गतिवृद्ध्चो (भ्वा०) धातो' भावे क्त । यजादित्वात् सम्प्रसारणम् 'ओदितश्च' इति निष्ठा तस्य नत्वम्, 'हल ' अ० ६ ४ २ सूत्रेण दीर्घत्वम् । अन्यत्र शू क्षिप्रनाम (निघ० २ १५) ततो मत्वर्थे पामादित्वान् न । अथवा शुनम् सुखनाम निघ० ३ ६]

शूर शृणाति शत्रून् तत्सम्बुद्धौ (सभापते) ८ ५३

१.६९ १ **शुशुक्वांसः**=शोकयुक्ता (दुर्जना) ५ ८७ ६ [शोचति ज्वलतिकर्मा (निघ० १ १६) शुच शोके (भ्वा०) धातोर्वा लिट क्वसु]

शुशुग्धि शोधय प्रकाशय, प्र०—अत्र विकरणव्यत्ययेन श्लु १ ९७ १ **शुशुचीत**=शुन्वत २ २ १० **शुशोच**=शोचने प्रकाशते ७ ८ ४ शोचति ७ ४ ३ शोच १ १३३ ६ [शुच शोके (भ्वा०) धातोर्लोट्। विकरणव्यत्ययेन श्लु। अन्यत्र लिङ् लिट् च]

शुशुचान पवित्रकारक (अध्यापकोपदेशक वा) ४ १ ३ **शुशुचानम्**=शुद्धगुणकर्मस्वभावम् (अग्निं=विद्युद्रूपम्) ४ ११ ९ **शुशुचानस्य**=भृश शोधकस्य (गो=स्तावकस्य जनस्य) ४ २२ ८ **शुशुचानः**=प्रकाशयन् (विद्युदिव विद्वज्जन) १ १४९ ४ **शुशुचानाः**=शुद्धा शोधका वा (मरुत=विद्वज्जना) २ ३४ १ [शुच शोके (भ्वा०) धातो शानच्। विकरणव्यत्ययेन श्लु]

शुशुचानासः भृश पवित्रकारका (अग्नय=पावका) १ १२३ ६ [शुशुचान इति व्याख्यातम्। ततो जसोऽसुक्]

शुशूवांसम् सर्वसुखज्ञापक प्रापक वा (रयिम्) १ ६४ १५ [टुओश्वि गतिवृद्ध्यो (भ्वा०) धातोर्लिट क्वसु। यजादित्वात् सम्प्रसारणम्]

शुश्रव शृणोमि १ १०९ ५ **शुश्रवत्**=श्रुत्वा श्रावयेत् १ ८४ ८ **शुश्राव**=श्रावयति ५ ५३ २ श्रुतवान् १ १०५ १७ **शुश्रुम**=शृणुम ४० १० श्रुतवन्त ४० १३ **शुश्रुयातम्**=प्राप्नुयातम् ५ ७४ १० [श्रु श्रवणे (भ्वा०) धातो सामान्ये लिट्। अन्यत्र लेट् लिङ् च। विकरणव्यत्ययेन श्लु। शुश्रवत् श्रोष्यति नि० ५ १७]

शुश्रूषमाणः श्रोतुमिच्छमानो विद्याश्रवणाय सेवा कुर्वाण (इन्द्र=राजा) ७ १९ २ सेवमान (राजा) ४ ३८ ७ **शुश्रूषमाणाय**=श्रोतुमिच्छते (जीवाय) २२ ८ [श्रु श्रवणे (भ्वा०) धातोरिच्छायामर्थे सन्नन्ताच्छानच्। 'ज्ञाश्रुस्मृदृशा सन' अ० १ ३ ५७ सूत्रेणात्मनेपदम्]

शुषन्तम् द्वेषेण प्रतापेन क्षीणम् (वृत्र=मेघमिव न्यायावरक शत्रुम्) १ ६१ १० [शुष शोषणे (दिवा०) धातो शतृ। विकरणव्यत्ययेन श]

शुष्ककण्ठेन शुष्केन कण्ठेन २५ २ [शुष्क-कण्ठपदयो समास]

शुष्कम् अस्नेहम् (पदार्थम्) २ १३ ६ अनाऽऽर्द्रम् (अतस=काष्ठम्) १३ १२ जलार्द्रभावरहितम् (अतस=कूपम्) ४ ४ **शुष्कात्**=धर्माऽनुष्ठानतपसो नीरसात्काष्ठादे १ ६८ २. [शुष शोषणे (दिवा०) धातो क्त। 'शुष क' सूत्रेण निष्ठातकारस्य ककार। अथवा शुष शोषणे (दिवा०) धातो 'मृवृभूशुषिमुषिभ्य कक्' उ० ३ ४१. सूत्रेण कक्]

शुष्क्याय शुष्केषु नीरसेषु भवाय (जनाय), भा०—शोषणकारकाय वायवे १६ ४५. [शुष्कप्राति० भवार्थे यत्। शुष्कमिति व्याख्यातम्]

शुष्णम् बलवन्तम् (मायिन=प्रशसितप्रज्ञादियुक्त जनम्) १ ५६ ३ शोषक बलवन्तम् (दुर्जनम्) ७ १९ २. बलम् २ १९ ६ शुष्कम् (पदार्थम्) २ १४ ५ शोषणकर्त्तारम् (मेघम्) १ ३३ १२ शोककर दु खम् ३ ३१ ८. शोषयति धार्मिकाञ्जनान् त दुष्टस्वभाव प्राणिनम् १ ११.७ नीरसम् (अशुषम्=असुर दु खम्) ४ १६ १२ **शुष्णस्य**=बलिष्ठस्य (जनस्य) ६ २० ४ **शुष्णाय**=परेषा हृदयस्य शोषकाय (दुर्जनाय) १ १७५ ४ [शुष शोषणे (दिवा०) धातो 'तृपिशुषिरसिभ्य कित्' उ० ३ १२ सूत्रेण न किच्च। शुष्णम् बलनाम निघ० २ ९ शुष्णस्य आदित्यस्य नि० ५ १६ शुष्णो दानव प्रत्यङ् पतित्वा मनुष्याणाम क्षीणि प्रविवेश स एष कनीनक कुमारक इव परिभासते श० ३ १ ३ ११]

शुष्णहत्येषु शुष्णाना बलाना हत्या हनन येषु सङ्ग्रामेषु तेषु १ ५१ ६ [शुष्ण-हत्यापदयो समास]

शुष्मम् बलम् २० ४४ बलिष्ठम् (भोजनम्) ४ २४ ७ शत्रूणा शोषक बलम् ३३ ६७ **शुष्मः**=बलयुक्तो देह ७ ५६ ८ बलवान् (राजभृत्य) ४ २१ ७ शुष्म बल विद्यते यस्मिन् स (रस=आनन्द) १९ ३३ प्रशस्तानि शुष्माणि बलानि विद्यन्तेऽस्मिन् (इन्द्र=ईश्वर सभाध्यक्षो वा) १ १०० २ बलकर (अद्रि=मेघ) ३३ ७८ उत्तमबल (वृषभ=बलिष्ठो जन) ६ १९ ९ पुष्कलबलयुक्त (सेनापति) ७ २७ २ **शुष्मात्**=बलाच्छोषणात् ६ २७ ४ **शुष्मैः**=प्रशसितबलै (महाशयै.) ६ ३२ ४ [शुष शोषणे (दिवा०) धातो 'अविसिविसिशुषिभ्य कित्' उ० १ १४४ सूत्रेण मन् किच्च। शुष्मम् बलनाम निघ० २ ९ शुष्ममिति बलनाम शोषयतीति सत नि० २ २४]

शुष्मासः अतिबलवन्त (विद्वज्जना) ५ ३८.३ [शुष्ममिति व्याख्यातम्। ततो जसोऽसुक्]

शुष्माः प्रशस्तबलकारिण्य (गाव=धेनव किरणा वा) १२ ८२ बलवत्य शोषणकारिण्यो वा (ऊतय=

निघ० २.९. तत साध्वर्थे यत्]

शृङ्गम् उपरिभागम् ५ ५९ ३ **शृङ्गाणि**=शृङ्ग इवोच्छ्रितानि कर्माणि १ १६३ ११ शृङ्गाणीवोच्छ्रितानि सेनाङ्गानि २९ २२ [शॄ हिंसायाम् (क्र्या०) धातो शृणातेर्ह्रस्वश्च उ० १.१२६ सूत्रेण गन् । धातोर्ह्रस्वो नुडागमश्च । शृङ्गाणि ज्वलतो नाम निघ० ११७ शृङ्गम्=श्रयतेर्वा शृणातेर्वा शम्नातेर्वा शरणायोद्गतमिति वा शिरसो निर्गतमिति वा नि० २ ७]

शृङ्गा शृङ्गाणि ११४० ६ शृङ्गाणीव चत्वारो वेदा नामाख्यातोपसर्गनिपाता वा १७ ९१ [शृङ्गमिति व्याख्यातम् । ततश्शेर्लोपश्छन्दसि]

शृङ्गा-इव शृङ्गवत् सम्बन्धिनौ हिंसकौ (अग्निवायू) २ ३९ ३ [शृङ्गौ-इवपदयो समास । शृङ्गा प्रयोगे द्विवचनस्याकारश्छान्दस]

शृङ्गिणम् शृङ्गवदुन्नतविद्युद्गर्जनाकारणघनीभूत मेघम् १ ३३ १२ **शृङ्गिणः**=शृङ्गयुक्तस्य गवादे पशुसमूहस्य १ ३२ १५ [शृङ्गमिति व्याख्यातम् । ततो मत्वर्थ इन्नन्ताद् द्वितीयैकवचनम्]

शृङ्गिणाम् महिषादीनाम् ३ ८ १० [शृङ्गमिति व्याख्यातम् । ततो मत्वर्थ इन्नन्तात् षष्ठी]

शृणवत् शृणोति ७ २६ १ शृणुयात् ३ ४३ ४ **शृणवन्**=शृण्वन्तु ३ ५४ १० **शृणवः**=शृणुया ६ ४० ४ शृणु ७ २९ २ **शृणोहि**=हिन्धि ३.३०.१७ **शृणुतम्**=श्रवण कुरुतम् १ ८९ ४ **शृणुधि**=शृणुहि, प्र०—अत्र हेर्ध्यादेश १३ ५२ **शृणुहि**=शृणु १ १०४ ९ **शृणोति**=शब्दविद्या गृह्णाति १ ३७ १३ **शृण्वन्तु**=प्रख्यातौ जानन्तु ऋ० भू० १५७, ११ ५ **शृण्विरे**=शृण्वन्ति ५ ८७ ३ श्रूयन्ते, प्र०—अत्र श्रुधातो 'छन्दसि लुङ्लङ्लिट' इति लडर्थे लिट् 'छन्दस्युभयथा' इति सार्वधातुकत्वेन श्नुविकरण आर्धधातुकत्वाद्यगभाव । विकरणव्यवहितत्वाद् द्वित्व च न भवति १ १५ ८ **शृण्विषे**=शृणोषि ४ ४२ ७ **शृण्वे**=शृणुयाम् ४ २०.९ शृणोमि, प्र०—अत्र व्यत्ययेनाऽऽत्मनेपदम् १ ३७ ३ [श्रु श्रवणे (भ्वा०) धातोर्लेट् । अन्यत्र लोट्, लट्, लिट् च । शृण्वद् 'श्रवद्व इन्द्र शृण्वद्वोऽग्नि' (यजु० २८ ६) शृणोतु व इन्द्र शृणोत्वग्निरित्याशिषमेव तद् वदते कौ० २८ ६]

शृण्वते य शृणोति तस्मै (जनाय) ३५ ७ श्रवण कुर्वते (अग्ने=परमेश्वराय) १ ७४ १ भा० —सर्व शृण्वन् वर्त्तते तस्मै (अग्नये=जगदीश्वराय) ३ ११. **शृण्वन्**=सुनता हुआ (अविद्वान् जन) स० प्र० ६०, १०७१४

शृण्वन्तम्=सकलशास्त्रश्रोतारम् (इन्द्र=राजानम्) ३ ३६ ११ सत्याऽसत्ये निश्चित्याज्ञापयन्तम् (इन्द्रम्) ३ ४८ ५ सम्यक् परीक्षा कुर्वन्तम् (इन्द्र=विद्वज्जनम्) ३ ४३ ८ [श्रु श्रवणे (भ्वा०) धातो शतृ । 'श्रुव शृ च' इति धातो शृ इत्यादेश]

शृतपाकम् शृतश्चासौ पाकश्च तम् (अन्नम्) १ १६२ १०. शृत पक्व पाको यस्य तत्, भा०—सुसस्कृत पाकम् २५.३३ [शृत-पाकपदयो समास । शृत =श्रा पाके (भ्वा०) धातो क्त । 'शृत पाके' अ० ६ १.२७. सूत्रेण शृभाव । पाक =डुपचप् पाके (भ्वा०) धातोर्घञ्]

शृतपाम् य शृतं परिपक्व पयस पिबति तम् (सेनेशम्) ७ १८ १६ [शृत पूर्वपदे व्याख्यातम् । तदुपपदे पा पाने (भ्वा०) धातो कर्त्तरि क्विप्]

शृतासः पूर्वोक्त ब्रह्मचर्यादि तप से शुद्ध (मनुष्य लोग) स० प्र० ४२३, ९ ८३.१ [शृतप्राति० जसोऽसुक् । शृतम्=श्रा पाके (भ्वा०) धातो क्त । धातो. शृभाव]

शृतेन परिपक्वेन (पदार्थेन) १९ ८९ [श्रा पाके (भ्वा०) धातो क्त । 'शृत पाके' सूत्रेण शृभाव]

शृध्याम् शब्दकुत्साम् २ १२ १० [शृधु शब्दकुत्सायाम् (भ्वा०) धातो 'ऋदुपधाच्चाक्लृपिचृते' इति क्यबन्ताट् टाप् स्त्रियाम्]

शेक सद्यो गामिनो भवत ५ ६१ २ [शक्लृ शक्तौ (स्वा०) धातोर्लिटि मध्यमबहुवचने रूपम्]

शेपः उपस्थेन्द्रियम् १९ ८८ **शेपेन**=लिङ्गेन २५ ७ [शेप वैतस इति पुस्प्रजननस्य । शपते स्पृशतिकर्मण नि० ३ २१]

शेपे आक्रुश्यामि ६ १७ कश्चित् साधुजनमाक्रुष्टवान् १ २३ २२ [शप आक्रोशे (भ्वा०) धातोर्लिटि रूपम्]

शेरते भा०—स्वपन्ति १३ ७ [शीङ् स्वप्ने (अदा०) धातोर्लट्, प्रथमबहुवचनम् । 'शीङो रुट्' अ० ७ १ ६ सूत्रेण झादेशस्यातो रुडागम]

शेवधिपाः य शेवधि निधि पाति रक्षति धर्मादिकार्ये करे च न व्येति स शेवधिपा, भा०—धनादिकरस्य दाता (शत्रु प्रजाजनो वा), प्र०—निधि शेवधिरिति यास्क नि० २ ४, ३३ ८२ [शेवधि इत्युपपदे पा रक्षणे (अदा०) धातो कर्त्तरि क्विप् । निधि शेवधि नि० २ ४]

शत्रुहिंसक (राजन्) १ १७४.९. निर्भय निर्भयहेतुर्वा (इन्द्र=राजन्) १.६३ ८. पापाचाराणा हिंसक (इन्द्र=परमात्मन्) ७ ३२ २२ दुष्टदोषविनाशक (अग्ने=परमेश्वर) ६ १५.११. तमोहिंसक सवितेव शत्रुहिंसक (इन्द्र=प्रकाशमान राजन्) २ ११ ३. शत्रुहन्त (राजन्) ४ ३२.२१ निर्भयत्वादिगुणोपेतम् धार्मिक, दुष्टनिवारक, विद्यावलपराक्रमवन् सभाध्यक्ष १.११ ६ **शूरम्**=निर्भयत्वादिगुणोपेतम् (इन्द्र=राजानम्) ६ ४७.११ भा०—श्रेष्ठनम पुरुषम् २०.४१. **शूरः**=निर्भयो वीर शत्रुहन्ता (वीरपुरुप) ५ ६३ ५ विक्रान्त (वीरजन) १ १५८ ३ शूरवीर (सभाध्यक्षः) १.७० ६ वलपराक्रमादियोगेन निर्भय (वीरपुरुप) ६.६४ ३ **शूराय**=शौर्यादिगुणोपेताय (विद्वज्जनाय) १.१५५ १ [शु इति सौत्रो धातु । तत 'शुसिचिमीना दीर्घश्च' उ० २.२५ सूत्रेण क्रन् धातोर्दीर्घश्च । शूर' शवतेर्गतिकर्मण नि० ४ १३. शूर विक्रान्तौ (चुरा०) धातोर्वा कर्त्तर्यच् । अथवा शॄ हिंसायाम् (क्र्या०) धातोर्बाहु० औणा० अच् किच्च । 'बहुल छन्दसि' अ० ७ १ १०३. सूत्रेणोत्व रपरत्व च । उकारस्य दीर्घश्छान्दस]

शूरणासः हिंसका कलायन्त्रताडनेन प्रकाशमाना (अश्वा=अग्न्यादय) १.१६३.१० सद्यो रणो युद्धविजयो येभ्यस्ते, भा०—विजयहेतव (अश्वा) २९ २१ [शूरणास.=शूरा नि० ४ १३. अथवा शू-रणपदयो समासे जसोऽसुक् । शू क्षिप्रनाम निघ० २ १५.]

शूरपत्नीः शूराणा स्त्रिय १ १७४ ३ [शूर-पत्नीपदयो समास । पत्नी=पतिप्राति० स्त्रिया 'पत्युर्नो यज्ञसयोगे' अ० ४ १.३३ सूत्रेण ङीप् नकारान्तादेश]

शूरसाता शूरै सम्भजनीये सङ्ग्रामे १ १५७ २ शूराणा साति सम्भजन यस्मिंस्तस्मिन् सङ्ग्रामे १ ३१ ६ [शूर-सातिपदयो समासे 'सुपा सुलुक्०' सूत्रेण सप्तम्या स्थाने डादेश । शूर इति व्याख्यातम् । साति=पण सम्भक्तौ (भ्वा०) धातो क्तिन् । शूरसातौ सग्रामनाम निघ० २ १७.]

शूरसातौ शूराणा विभागे (समिथे=सङ्ग्रामे) ३ ५४.४ शूरैर्विभक्ते सङ्ग्रामे ६ २३ २ शूरा सनन्ति विभजन्ति यस्मिन् सङ्ग्रामे तस्मिन् ६ १६ १२ [शूरसाताविति पूर्वपदे व्याख्यातम्]

शूरस्येव यथा शत्रून् हिंसत (योद्धृजनस्य) ३ ५५ ८ यथा शूरवीरस्य १ १४१ ८ [शूरस्य-इवपदयो समास]

शूरा निर्भयौ शत्रुहिंसकौ (राजाऽमात्यौ) ४ ४१ ७ शूरप्राति० द्विवचनस्याकारादेश]

शूरा इव यथा शस्त्रास्त्र-प्रक्षेप-युद्धकुशला पुरुषास्तथा १ ८५ ८ [शूरा इवपदयो समास]

शूरेभिः सर्वोत्कृष्टशूरवीरैर्योद्धृभि १ ८ ४ [शूरप्राति० 'बहुल छन्दसि' इति भिस ऐसादेशो न भवति]

शूर्ताः विमर्दिता (शत्रवो जना) १ १७४ ६ [शूरी हिंसास्तम्भनयो (दिवा०) धातो. क्त । शूर्त्ता क्षिप्रनाम निघ० २ १५]

शूलम् शु शीघ्र लाति बोध गृह्णाति येन तद् वच प्र०—पृषोदरादित्वात्सिद्धम् २५ ३४ शूलमिव पीडाकर शत्रुम् १ १६२ ११ [शू क्षिप्रनाम निघ० २ १५ तदुपपदे ला आदाने (अदा०) धातो क । शूल रुजाया सघाते च (भ्वा०) धातो. कर्त्तर्यच्]

शूशवाम वर्धेमहि १ १६६ १४ **शूशुवत्**=विजानाति, प्र०—अत्राऽडभावो लडर्थे लुङ् च २ २५ १ ज्ञापयति वर्धयति वा, प्र०—अथ ण्यन्तस्य श्विधातोर्लुङि प्रयोगेऽडभावश्च १ ५४ ७ **शूशुवे**=उपगच्छति ७ ३२ ६. [टुओश्वि गतिवृद्धयो (भ्वा०) धातोर्णिजन्ताल्लुङ् अडभावश्छान्दस । 'णौ च सश्चङो' अ० ६ १ ३१ सूत्रेण सम्प्रसारणम् । शूशुवे प्रयोगे लिट्]

शूशुचन् भृश शोक कुर्य्यु २५ ८ [शुच शोके (भ्वा०) धातोर्णिजन्ताल्लुङ् । अटोऽभावश्छान्दस]

शूशुवानः=भृश वर्धमान (इन्द्र=सूर्य इव राजा) ७ २० २ [टुओश्वि गतिवृद्धयो (भ्वा०) धातोर्लिट कानच् । यजादित्वात् सम्प्रसारण तुजादित्वादभ्यासस्य दीर्घ]

शूशुवांसम् व्याप्नुवन्तम् (इन्द्र=सूर्यम्) ६ १९ २ वलेन वृद्धम् (शत्रूणा वलम्) ४ १६ १३ शुभगुणव्यापिनम् (सन्तानम्) ६ १९ ७ सर्वसुखज्ञापक प्रापक वा (रयिम्) १ ६४ १५ **शूशुवांसः**=वर्धमाना (वीरपुरुषा) १ १६७ ९ [टुओश्वि गतिवृद्धयो (भ्वा०) धातोर्लिट क्वसु । यजादित्वात् सम्प्रसारणम् तुजादित्वादभ्यासस्य दीर्घश्च]

शूषम् वल सुख वा २१ ५४. **शूषस्य**=वलवत (पुरुषस्य) १ १३१ २ **शूषाय**=वलाय सैन्याय २२ ३० **शूषैः**=शरीराऽऽत्मवलो मे स० वि० १०५, ५ ४१ ७ [शूषम् वलनाम निघ० २ ९ सुखनाम निघ० ३ ६]

शूष्यम् शूषे वले साधु यत्तत् (वच) १ ५४ ३ शूषे वले भवम् (अन्न=अन्नम्) ५ ८६ ६ [शूषम् वलनाम

केशा' प्रकाशका यस्य तम् (अग्निविद् विद्वज्जनम्) १ ४५.६ शोचीषि न्यायव्यवहारप्रकाशा केशा इव यस्य तम् (गृहपतिम्) ५ ८ २ **शोचिष्केशः**=शोचीषि तेजासि केशा इव यस्य स (अग्नि =विद्युदिव विद्वज्जन) ३ २७ ४. प्रदीप्तविज्ञान (शिल्पिजन) ५ ४१ १०. तेजासि केशा इव ज्वाला यस्य स (अग्नि) ३ १४.१. [शोचिष्-केशपदयो समास । शोचिष् इति व्याख्यातम् । केशा रश्मय । ...काशनाद्वा प्रकाशनाद्वा नि० १२ २६. (ऋ० ३.२७.४.) शिश्न वै शोचिष्केश शिश्न ह्यीद शिश्निन भूयिष्ठ शोचयति श० १ ४ ३ ६ शोचन्तीव ह्येतस्य (अग्ने.) केशा श० १.४ १ ३८]

शोचिष्ठ सद्गुणै' प्रकाशमान (दीदिव =विद्वज्जन) २५ ४८ पवित्रतम (जगदीश्वर) ३.२६ अतिशयेन शोधक (राजन्) ५ २४ ३ अतिशयेन तेजस्विन् (विद्वन्) १५.४८. शोचिष्प्राति० अतिशायन इष्ठन् । 'टे' अ० ६ ४ १५५. सूत्रेण इष्ठन्प्रत्यये टेर्लोप । शोचिष् इति व्याख्यातम् । अथवा शोचिष्मत्प्राति० अतिशायन इष्ठन् । 'विन्मतोर्लुक्' अ० ५ ३ ६५. सूत्रेण मतुपो लुक् । टे इति टिलोपे रूपम्]

शोचिष्मान् वहूनि शोचीषि विद्यन्ते यस्मिन् स (अग्नि) २ ४ ७ [शोचिष्प्राति० भूम्न्यर्थे मतुप्]

शोणा रक्तगुणविशिष्टौ (अश्वौ) ३ ३५ ३ वर्ण-प्रकाशकौ गमनहेतू च (रथे=याने) १ ६ २. [शोणप्राति० द्विवचनस्याकारादेश । शोण =शोणृ वर्णगत्यो (भ्वा०) धातोरच्प्रत्यय]]

शोणाः रक्तगुणविशिष्टा अश्वाः १ १२६ ४ [पूर्वपदे व्याख्यातम्]

शोभसे शोभितुम् १ ८४ १०. [शुभ दीप्तौ (भ्वा०) धातोस्तुमर्थेऽसेन्]

शोभसे शोभा प्राप्नुया ५ ४४ ५ **शोभे**=प्रदीप्तो भवेयम् १ १२०.५ [शुभ दीप्तौ (भ्वा०) धातोर्लेट्]

शोभिष्ठाः अतिशयेन शोभायुक्ता (पतिव्रता स्त्रिय) ७ ५६ ६ [शोभावत्प्राति० अतिशायन इष्ठन् । 'विन्मतोर्लुक्' इति मतोर्लुक् । 'टे' इति टिलोपे च रूपम्]

शोशुचत् भृश शोधयतु ३५ २१. दूरीकुर्यात्, शोशुच्यात् वा १ ९७ १ भृश शोपयतु ३५ ६ **शोशुचन्**=शोधयन्ति ६ ६६.२ **शोशुचन्त**=शोधयन्ति ७ १ ४ [शुच शोके (भ्वा०) ईशुचिर् पूतीभावे (दिवा०) धातोर्वा यङ्लुगन्ताल्लेट् । अन्यत्र लङ्]

शोशुचत् भृश पवित्रयन् (अग्नि' =राजा) ६ ४८.३. **शोशुचता**=अत्यन्त प्रकाशमानेन (रथेन) १ १२३.७. [शुच शोके (भ्वा०) धातोर्यङ्लुगन्ताच्छतृ । शोचति ज्वलति-कर्मा निघ० १ १६]

शोशुचानः भृश प्रकाशमान. (अध्यापक उपदेशको वा) ४.१ ४ भृश पवित्र सन् (विद्वज्जन) ३.१५ १. शुद्ध शोधयन् सन् (विद्वान्) २१ ३. भृश शुचि (पति.) ११ ४६ शुद्ध रागोधक (अग्नि') ७ १० १ पवित्र विज्ञानम् ७.५ ३ भृश पवित्राचरण' (अग्नि =सेनापति) १३ १० [शुच शोके (भ्वा०) धातोर्यङ्लुगन्ताल् लिट कानच् । अथवा शानच् । व्यत्ययेनात्मनेपदम् (यजु० ११ ४६) विपाजसा पृथुना शोशुचान इति । विपाजसा पृथुना दीप्यमान इत्येतत् श० ६ ४ ४.२१]

शोषाय दु'खाना शत्रूणा वा निवारणाय २ ३२ [शुष शोषणे (दिवा०) धातोर्घञ्]

शौचद्रथे पवित्रे रथे ५ ७९ २ [शौचत्-रथपदयो समास । शौचत्=शुच शोके (भ्वा०) ईशुचिर् पूतीभावे (दिवा०) धातोर्वा शतृ । ओकारस्य वर्णव्यत्ययेन औकार]

शौष्कलम् य शुष्कलैर्मत्स्यैर्जीवति तम् (मात्सिक जनम्) ३० १६ [शुष्कलप्राति० जीवत्यर्थेऽण् छान्दस । शुष्कल =शुष्कोपपदे ला आदाने (अदा०) धातो क]

श्चम्नन् हिंसन्तु, प्र०—श्चमुधातुर्हिंसार्थ १ १०४ २ [श्चमु हिंसार्थे छान्दसो धातु । तत' शतृ]

श्चोतन्ति रक्षन्तु, सञ्चलन्तु १ ८७ २ सिञ्चन्ति ३ २१ ५ स्रवन्ते ३ १ ८ [श्चोतति गतिकर्मा नि० २ १४ श्च्युतिर् क्षरणे (भ्वा०) (श्चुतिर् इत्यपि पाठ) धातोर्लट् । श्चुतिरासेचने (भ्वा०) धातोर्वा लट्]

श्नथत् हिनस्ति ६ ६०.१ **श्नथिहि**=हिंसय ७ २५ २ हिन्धि १ ६३ ५ [श्रथ हिंसार्थे (भ्वा०) धातोर्लेट् । अन्यत्र लोट् । 'छन्दस्युभयथा' इत्यार्धधातुकत्वाद् इडागम । वर्णव्यत्ययेन रेफस्य नकार । अथवा श्नथति वधकर्मा निघ० २ १९]

श्नथनः दुष्टाना हिंसक (इन्द्र =विद्याप्रकाशको राजा) प्र०—अत्र वर्णव्यत्ययेन रस्य न २ २१ ४. [श्रथ हिंसार्थे (भ्वा०) धातो 'कृत्यल्युटो बहुलम्' इति कर्त्तरि ल्युट् । रेफस्य नकारश्छान्दस]

श्नथयन् हिंसयन् (इन्द्र =परमविद्यादैश्वर्यवान् मनुष्य) १ ५१ ६ [श्रथ हिंसार्थे (भ्वा०) धातोर्णिजन्ताच्छतृ । रेफस्य नकारश्छान्दस.]

शेवधिभ्यः सुख के आधारभूत अनेक कक्षाओं से स० वि० १६७, अथर्व० १४ ३ १५ **शेवधिम्**=शेव सुख धीयते यस्मिँस्तं निधिम् १८ ५९ [शेवोपपदे डुधाञ् धारण-पोषणयो (जु०) धातो 'कर्मण्यधिकरणे च' इति कि । शेवम् सुखनाम निघ० ३ ६]

शेवम् सुखम् ३ ७ ५ सुखस्वरूपम् (जीवम्) १ ५८ ६ **शेवः**=सुखकारी (भा०—विद्वज्जन) १ ६९ २ [शीङ् स्वप्ने (अदा०) धातो. 'इण्शीभ्या वन्' उ० १ १५२ इति वन् । शेव सुखनाम निघ० ३ ६ शेव सुखनाम शिष्यते-र्वकारो नामकरणोऽन्तस्थान्तरोपलिङ्गी नि० १० १७]

शेवृधम् सुखम् १ ५४ ११ **शेवृधः**=सुखवर्धकान् (विद्वज्जनान्) ५ ८७ ४ [शेवृ इत्युपपदे डुधाञ् धारण-पोषणयो (जु०) धातोर्मूलविभुजादित्वात् क । अन्यत्र क्विप् । अथवा शेव इत्युपपदे वृधु वृद्धौ (भ्वा०) धातो क्विप् । वलोपश्छान्दस । शेवृधम् सुखनाम निघ० ३ ६]

शेवृधासः शेवृन् सुखानि दधति येभ्यस्ते (राय = श्रिय) ३.१६.२ [शेवृधमिति व्याख्यातम् । ततो जसोऽसुक्]

शेव्यः सुखयितु योग्य (मित्र =विद्वज्जन) १.१५६ १ [षेवृ सेवने (भ्वा०) धातोर्ण्यत् । सकारस्य शकारो वर्णव्यत्ययेन]

शेषन् शयेरन्, प्र०—अत्र लेटि व्यत्ययेन परस्मैपदम् १.१७४ ४ **शेषे**=स्वपिषि १२ ३९ [शीङ् स्वप्ने (अदा०) धातोर्लेटि सिपि विकरणे च रूपम् । अन्यत्र लट्]

शेषसा अपत्यै सह ५ ७० ४ शेपीभूतेन (स्वजन्मना) ७ १ १२ [शेप अपत्यनाम निघ० २ २ शेष इत्यपत्यनाम । शिष्यते प्रयत नि० ३ २]

शेषः अवशिष्टो भाग १ ९३ ४ य शिष्यते स (निवास) ५ १२ ६ **शेषे**=बाकी (पुरुषगण) मे मे स० प्र० १५२, १० १८ ८ [शिष असर्वोपयोगे (चुरा०) धातोर्घञ्]

शैलूषम् गायनम् ३० ६ [शिलूषप्राति० भवार्थेऽण्]

शैशिरेण शिशिरेण (ऋतुना) २१ २८ **शैशिरौ**=शिशिरऋतु-सम्पादकौ, शिशिरर्त्तौ भवौ (माघ-फाल्गुनमासौ) १५ ५७ [शिशिरप्राति० भवार्थेऽण्]

शोकः मरणम् २ ३८ ५ परिताप ४०.७, सं० वि० २९२ **शोकात्**=शोषकात् (दिव =सूर्यात्) १३ ४५ **शोकाय**=शोचन्ति यस्मिँस्तस्मै (सद्व्यवहाराय) ३९ ११ **शोकाः**=प्रकाशा ४ ६ ५ विलापा १ १२५ ७ [शुच शोके (भ्वा०) धातोर्घञ् । शोचति ज्वलतिकर्मा निघ० १ १६]

शोच शोचति प्रकाशते, प्र०—अत्र व्यत्ययेन लडर्थे लोट् ३ ३ विचारय, प्रापय ३ १३ ६ पवित्रीकुरु ७.२ १ **शोचस्व**=प्रकाशितो भव, प्र०—शुचि दीप्तौ इत्यस्मा-ल्लोट् १ ३६ ६ विचारय ४ २.२०. पवित्रो भव ११ ३७ **शोचीः**=शोक कुर्य्या. ११ ४५ शोकयुक्ता कुर्या १२ १५ [शुच शोके (भ्वा०) धातोर्लोट् । अन्यत्र लुङ् । शोचति ज्वलतिकर्मा निघ० १ १६ ईशुचिर् पूतीभावे (दिवा०) धातोर्वा लोट् । व्यत्ययेन शप्]

शोचतः पवित्रस्य (यज्ञस्य=व्यवहारस्य) ७ १५ ५ **शोचते**=शुद्धिकर्त्रे (सद्व्यवहाराय) ३९ ११ **शोचद्भिः**=पवित्रकारकै (गुणकर्मस्वभावै) ५ ७९.८ **शोचन्**=पवित्रीकुर्वन् (अग्नि) ७ ५० २ [शुच शोके (भ्वा०) धातो शतृ]

शोचमानाय विचारप्रकाशाय ३९ ११ [शोचति ज्वलतिकर्मा निघ० १ १६ तत शानच् । शुच शोके (भ्वा०) धातोर्वा शानच् । व्यत्ययेनात्मनेपदम्]

शोचय शोक प्रापय ६ २२ ८ [शुच शोके (भ्वा०) धातोर्णिजन्ताल्लोट्]

शोचिषः प्रकाशस्य ५ ६ ५ प्रकाशमानस्य (सूर्यस्य) ४ ५ १० **शोचिषा**=प्रदीप्तयाऽग्निज्वालया १ १७५ ३ ज्योतिषा ६ १६ २८ तेजसा ३ १८ ४ न्यायेनाप्रकाशेन १ १२७ ४ पवित्रेण विज्ञानेन १ ४५ ४ **शोचिषे**=शोधिते दोषनिवारके, अ०—शोचिषि (रूपादिगुणस्वभावे) ३ २ पवित्रकराय (अग्नये) ५ ५ १ पवित्राय (सभापतये) १७ ११ **शोचिः**=सूर्यज्योति १ ३९ १ विद्युद्रूपा दीप्तिम् ५ २८ १ उत्तमा नीति ६ ६४ २ भा०—तेजस्वी (विद्वज्जन) ३७ ११ प्रदीप्तम् (रूपम्) ४ ७ १० प्रदीप-नम् ७ ३ २ दीप्तिमन्तम् (अग्निम्) ७ ३ ५ प्रकाश १५ ६२ **शोचींषि**=तेजासि २७ ११ [शोचि ज्वलतो-नाम निघ० १ १७ शुच शोके (भ्वा०) धातो 'अर्चिशुचि-हुसृ०' उ० २ १०८ सूत्रेण इसि प्रत्यय (यजु० २७ ११) (=अर्चींषि) ऊर्ध्वा शुक्रा शोचीष्यग्नेरित्यूर्ध्वानि ह्येतस्य (अग्ने) शुक्राणि शोचिष्यर्चींषि भवन्ति श० ६ २ १ ३२]

शोचिष्केशम् शोचीषीव केशा यस्य तम् (विप्र=विद्वज्जनम्) १ १२७ २ शोचिष केशा सूर्यस्य रश्मय इव तेजासि यस्य तम् (अग्निम्)१५ ३१ शोचींषि केशा दीप्तयो रश्मयो यस्य त सूर्यलोकम् १ ५० ८, शोचिष शुद्धाचारा

श्नथयन्त श्नथयन्ति, हता भवन्ति, प्र०—अत्राऽड-भाव· ३३ ६७ [श्नथ हिंसार्थे (भ्वा०) धातोर्णिजन्ताल्लङ्। अटोऽभाव । रेफस्य नकार.]

श्नथितम् शिथिलीकृत नौकादिकम् १ ११६ २४ [श्रथ दौर्बल्ये (चुरा०) धातो क्त । रेफस्य नकारादेश]

श्नथिता हिंसिता (वज्र =ऊष्मसमूह) १ ५७ २ [श्रथ हिंसार्थे (भ्वा०) धातो तृच् । रेफस्य नकार]

श्नप्त्रे शुद्धे इव (अ०—जडचेतनसमूहौ इव) ५ २१. [ष्णा शौचे (अदा०) धातोश्छान्दस रूपम्]

श्मश्रुभि. मुखाऽभित केशै. २५ १ **श्मश्रुषु**= चिबुकादिषु २ ११ १७. **श्मश्रूणि**=मुखकेशा २० ५ [श्मनि मुखे श्रयतीति विग्रहे श्मन् इत्युपपदे श्रिञ् सेवायाम् (भ्वा०) धातो 'श्मनि श्रयतेर्डुन्' उ० ५ २८ सूत्रेण डुन् । श्मश्रु· लोम श्मनि श्रित भवति नि० ३ ५]

श्मसि कामयेमहि २ ३१ ६ [वश् कान्तौ (अदा०) धातोर्लट् लकारस्योत्तमबहुवचने रूपम् । आद्योकारस्य लोपश्छान्दस । मरा इदन्तता च छन्दसि]

श्यत् तनूकरोति १ १३० ४ [शो तनूकरणे (दिवा०) धातोर्लेट् । 'ओत. श्यनि' सूत्रेणोकारस्य लोप]

श्यामम् श्याममणि १८ १३ [श्यैङ् गतौ (भ्वा०) धातो. 'इषुयुधि०' उ० १ १४५ सूत्रेण मक्]

श्याम: कृष्णवर्ण (पशु) २४ १ श्यामवर्ण (पशु) २९ ५८ [श्यैङ् गतौ (भ्वा०) धातो 'इषियुधि०' उ० १ १४५ सूत्रेण मक् । श्याम श्यायते नि० ४ ३ द्वे वै श्यामस्य (पशो) रूपे शुक्ल चैव लोम कृष्ण च श० ५.१ ३ ६ स पौष्णो यच्छ्याम (पशु) श० ५ २ ५ ८ अहर्वै शवलो रात्रि श्याम कौ० २ ९]

श्यामाका: समा इति भाषायाम् १८ १२ [श्यैङ् गतौ (भ्वा०) धातोर्बाहु० औणा० आको मुगागमश्च । लोमभ्य एवास्य चित्तमस्रवत् । ते श्यामाका अभवन् श० १२ ७ १ ६ तासाम् (ओषधीनाम्) एष उद्धारो यच्छ्यामाक गो० उ० १ १७ सौम्य श्यामाक चरु निर्वपति तै० १ ६ १.११. अथ सोमाय वनस्पतये श्यामाक चरु निर्वपति श० ५ ३ ३ ४ स (सोम) एत सोमाय मृगशीर्षाय श्यामाक चरु पयसि निरवपत् । ततो वै स ओषधीना राज्यमभ्यजयत् । तै० ३ १ ४ ३ एते वै सोमस्यौषधीना प्रत्यक्षतमा यच्छ्यामाका श० ५ ३ ३ ४]

श्यावम् प्राप्तविद्यम् (विद्वज्जनम्) १ ११७ २४ **श्यावाय**=ज्ञानिने (जनाय), प्र०—अत्र श्यैङ्धातोरौणादिको वन्प्रत्यय· १ ११७ ८ श्याववर्णयुक्तायाऽश्वाय ५ ६१ ९ **श्यावा:**=श्यायन्ते प्राप्नुवन्ति ते (किरणा) प्र०—श्यावा सवितुरित्यादिष्टोपयोजननामसु० निघ० १ १५, १ ३५ ५ सवितुर्वेगवन्त किरणा. ६ ४८ ६ [श्यैङ् गतौ (भ्वा०) धातोर्बाहु० औणा० वन् । श्यावा सवितुरिति निघण्टौ(१ १५)आदिष्टोपयोजननामसु पठितम्]

श्यावा प्राप्तिसाधकौ धारणाकर्षणाख्यावश्विनौ (अग्निविद्युतौ) २ १० २ [श्यैङ गतौ (भ्वा०) धातोर्बाहु० औणा० वन् । द्विवचनस्याकारश्छान्दस]

श्यावा उपरिष्टाच्छ्यामवर्णा (अग्नेर्ज्वाला) १ १०० १६ **श्यावासु**=कृष्णासु (ऊर्म्यासु=रात्रीषु ६ ४८ ६ [श्यैङ् गतौ (भ्वा०) धातोर्बाहु० औणा० वन् । तत स्त्रियां टाप्]

श्यावाऽश्व श्यावा कृष्णशिखाऽग्नयोऽश्वा यस्य तत्सम्बुद्धौ (विद्वज्जन) ५ ५२ १ **श्यावाश्व:**=सूर्यलोक ५ ८१ ५ [श्याव-अश्वपदयो समास । श्यावा सवितुरिति निघण्टौ (१.१५)आदिष्टोपयोजननामसु पठितम् । (साम) श्यावाश्वमार्चनानस सत्रमासीन धन्वोदवहन् स एतत् सामापश्यत्तेन वृष्टिमसृजत ततो वै स प्रत्यतिष्ठत् ततो गातुमविन्दत गातुविद्धा एतत् साम ता० ८ ५ ६]

श्यावाश्वस्तुताय श्यावैरश्वै प्रशसिताय (वीरजनाय) ५ ६१ ५ [श्यावाश्व-स्तुतपदयो समास । श्यावाश्व इति पूर्वपदे व्याख्यातम्]

श्यावी अन्धकाररूपा (याम्या=रात्रि) ३ ५५.११ **श्यावीम्**=अल्पकृष्णवर्णाम् (उषसम्) १ ७१ १ [श्यावी रात्रिनाम निघ० १ ७]

श्याव्याभ्य: श्यावीषु रात्रिषु भवाभ्य क्रियाभ्य, प्र०—श्यावीति रात्रिनाम निघ० १ ७, ६ १५ १७ [श्यावीप्राति० भवार्थे यत् । तत स्त्रियां टाप् । श्यावी रात्रिनाम निघ० १ ७]

श्येतम् श्वेत शुभ्रम् (दुरोक=शत्रुभिर्दु सेव राज्यम्) ७ ४.३ **श्येत:**=प्राप्त (वायु) १ ७१ ४ श्वेतवर्ण (पशु) २४ ३ [श्यैङ् गतौ (भ्वा०) धातो 'हृश्याभ्यामितन्' उ० ३ ९३ सूत्रेण इतन् । श्वेतशब्दस्य वा वकारस्य यकारे कृते रूपम्]

श्येताक्ष. श्येते अक्षिणी यस्य स (पशु) २४ ३ [श्येत-अक्षिपदयो समास । समासान्तोऽच् छान्दसत्वात्]

श्येतास: श्वेतवर्णा अश्वा ५ ३३ ८ [श्येतप्राति० जसोऽसुक् । श्येतमिति व्याख्यातम्]

मनुष्या) २.३१ ७ **श्रवस्युम्**=आत्मन. श्रव इच्छुम् (रथम्) ५.५६ ८ **श्रवस्युः**=श्रव इवाऽऽचरति इति सर्वस्य श्रोता (परमेश्वर) ऋ० भू० २२२, अथर्व० ६ १०.६८ २ [श्रवस् इति व्याख्यातम्। तत इच्छायामर्थ आचारे वार्थे क्यच्। नत 'क्याच्छन्दसि' सूत्रेण तच्छीलादिपु उ। श्रवस्युम्=श्रवणीयम् नि० ११ ५०]

श्रवस्य: श्रोतुमर्हं (अग्नि) ६ १ ११ अन्नेपु साधु (अग्नि) २ १० १ **श्रवरया:**=श्रवस्सु श्रवणेपु साधव (सुवीरा =सज्जना) २ १३ १३ **श्रवस्यात्**=य आत्मन श्रव इच्छति तस्मात् (विद्वज्जनात्) ५ ३७ ३ [श्रवस् इति व्याख्यातम्। ततोऽर्हत्यर्थे साध्वर्थे वा यत्। श्रवस्यात्-प्रयोगे श्रवस्पदाद् इच्छायामर्थे क्यजन्ताद् कर्त्तर्यच्]

श्रवस्या श्रवस्यन्ने भवानि (प्रयोजनानि) ६ २७ ६ श्रोतु योग्यानि (वचनानि) २ १६.७ श्रवस्स्वन्नादिपु साधूनि (कर्माणि) १.११७ १० श्रव स्वन्नेपु श्रवणेपु भवानि (ब्रह्माणि=धनधान्यानि) ७ २३ १ श्रवसि श्रवणे भवानि (ज्ञानानि) १ १४६ ५. [श्रवस् इति व्याख्यातम्। ततो भवार्थे साध्वर्थे वा यत्प्रत्ययान्ताच्छेर्लोपश्छन्दसि]

श्रवस्यात् आत्मन श्रवणमिच्छेत् ४ ४० २ [श्रवस्-पदाद् इच्छायामर्थे क्यजन्ताल्लेट्]

श्रवः ये शृण्वन्ति ते (विद्वांसो जना) ६ ३७ ३ [श्रु श्रवणे (भ्वा०) धातो कर्त्तर्यच्]

श्रवाय श्रोत्रे, श्रवणहेतवे वा (भा०—अध्येत्रे) १६ ३४ [श्रु श्रवणे (भ्वा०) धातो 'ऋदोरवि' त्यप्]

श्रवाय्यम् श्रोतुमर्हम् (सुवीर्य=सुबलम्) ६.१६ १२ श्रोतु योग्यम् (रयिम्) ५ २०.१ श्रावयितुमर्हम् (रयिम्=ऐश्वर्यम्), प्र०—श्रुदक्षीत्यादिना आय प्रत्यय, उ० ३ ६६ १६ ६४ [श्रु श्रवणे (भ्वा०) धातो 'श्रुदक्षिस्पृहिगृहिभ्य आय्य' उ० ३.६६ सूत्रेण आय्य]

श्रवाय्या प्रशसनीयौ (इन्द्राग्नी=नरेशसेनापती) ५ ८६.२. [श्रवाय्यमिति व्याख्यातम्। ततो द्विवचनस्या-कारादेश]

श्रवाय्यान् श्रोतुमिष्टान् (अर्वत =अश्वान्) ६ ४५ १२. [श्रवाय्यमिति व्याख्यातम्]

श्रविष्ठाः अतिशयेन बलवन्त (सभासद.) १ ७७ ४. [श्रव धननाम निघ० २ १०. ततो मतुवन्तादतिशायन इष्ठन्। विन्मतोर्लुक् इति मतोर्लुक्। 'टेरि' ति सूत्रेण टेर्लोप]

श्रान्तम् खिद्यन्तम् (मूढ विद्यार्थिनम्) १ १७६ ३

श्रान्तस्य=तपसा हतकिल्बिपस्य (विद्वज्जनस्य) ४.३३ ११ [श्रमु तपसि खेदे च (दिवा०) धातो क्त। अनुनासिकस्य क्विझलो अ० ६.४.१५ सूत्रेणोपधाया दीर्घ]

श्रापय भा०—उन्नतिभाव नय। ऊर्ध्व नय २३.२६

श्राम्यन्ति स्थिरा भवन्ति २.२८ ४ [श्रमु तपसि खेदे च (दिवा०) धातोर्लट्]

श्रायन्त इव समाश्रयन्त इव, भा०—सेवमाना इव, प्र०—अत्र गुणे प्राप्ते व्यत्ययेन वृद्धि' ३०.४१ [श्रायन्त-इवपदयो समास। श्रायन्त =श्रिञ् सेवायाम् (भ्वा०) धातो शतृ। वृद्धिश्छान्दस.। श्रायन्त समाश्रिता नि० ६ ८.]

श्रायाः ये शृण्वन्ति श्रावयन्ति वा ते (मनुष्या) ५.५३ ४ [श्रु श्रवणे (भ्वा०) धातोर्णिजन्तात् कर्त्तरि अच्। वकारस्य यकारो वर्णव्यत्ययेन]

श्रावय विद्योपदेशान् कुरु १६.२४ [श्रु श्रवणे (भ्वा०) धातोर्णिजन्ताल् लोट्]

श्रावयत्पतिम् श्रावयन्पतिर्यस्य तम् (पुत्रम्) ५ २५ ५ श्रावयत् पतिपदयो समास। श्रावयत्=श्रु+णिच्+शतृ]

श्रितम् सेवमानम् (सिंह=व्याघ्रम्) ३.६.४ स्थितम् (भुवन=जगत्) ४ ५८ ११ **श्रितः**=सेवित (योनि = कारणम्) २ ३ ११. आश्रित (काम =इच्छा) ४ ४३ ७. सयुक्त (विद्वज्जन) ३ ६ ३ **श्रिताः**=चलने वाले सदा बने रहो स० वि० १४३, अथर्व० १२ ५ १ आश्रिता सेवमाना (रसा) १.१८७ ४ [श्रिञ् सेवायाम् (भ्वा०) धातो क्त]

श्रियम् शोभा लक्ष्मी च ३२ १६ राज्यलक्ष्मीम् २० ७२ विद्याराज्यैश्वर्यशोभाम् १ ७२ १० लक्ष्मी, विद्या, भोगान्, धन वा १ ४३ ७ शोभायुक्तम्, भा०—सौन्दर्यादिगुणयुक्तम् (सभापतिम्) ३३ २१ **श्रियः**=चक्रवर्त्यादिराज्यलक्ष्मी १ ८५ २ शोभाधनानि वा ३ १ ५ सम्पत्तय ३ ४४ २ **श्रिया**=शुभगुणाचरणोज्ज्वलया चक्रवर्त्तिराज्यसेवमानया प्रकृष्टया लक्ष्म्या ऋ० भू० १०१, अथर्व० १२ ५ १ शोभायुक्तया राज्यलक्ष्म्या देदीप्यमानया राज्या वा ६ ८ लक्ष्म्या, शोभया, विद्यया सेवया वा १ ११७ १३ शुभलक्षणया लक्ष्म्या १ ११६ १७ **श्रिये**=लक्ष्मीप्राप्तये ४ १० ५ सेवायै धनाय वा ४ २३ ६ धनाय शोभायै वा ५ ४४ २ विद्याराज्यलक्ष्मीप्राप्तये १ ६२.६

र्धातो क्विप् भावे]

श्रपयतु श्रपयति पाचयति, अ०—मुखयुक्ता करोतु, प्र०—अत्र लडर्थे लोट् १ २२ **श्रपयन्तु**=पाचयन्तु ११ ६१ **श्रपयान्**=श्रपयन्तु परिपाचयन्तु अ०—अन्नादि-पाक कुर्वन्तु ११ ५६ [श्रा पाके (अदा०) धातोर्णिज-न्तात्लोट् । घटादिपु पाठान् मित्त्वाद् 'मिता ह्रस्व' ६ ४.९२ सूत्रेण ह्रस्व । अन्यत्र लेड् अपि]

श्रमत् श्राम्याच्छ्रम प्रापयेत्, प्र०—अत्र विकरण-व्यत्ययेन शप् २ ३० ७ [श्रमु तपसि खेदे च (दिवा०) धातोर्लेट् । विकरणव्यत्ययेन शप्]

श्रमयुवः श्रमेण युक्ता. (जीवा) १.७२ २ [श्रमोप-पदे यु मिश्रणेऽमिश्रणे च (अदा०) धातो क्विप् दीर्घश्च]

श्रमः प्रयत्न पुरुपार्थ उद्यम इत्यादि ऋ० भू० १०१, अथर्व० १२ ५ १ **श्रमेण**=परिश्रमेण ऋ० भू० २३५, अथर्व० ११ ३ ५ ४ सद्गुण और आनन्द से स० वि० ८०, अथर्व० ११ ५ ४ [श्रमु तपसि खेदे च (दिवा०) धातोर्घञ्]

श्रमिष्म श्रम कुर्याम, प्र०—अत्राऽडभाव २ २९ ४ [श्रमु तपसि खेदे च (दिवा०) धातोर्लुङ् । अटोऽभाव । पुपादित्वादन च्लेरडि प्राप्ते छान्दसत्वान्न भवति]

श्रयतात् उच्छ्रित कुर्यात् २३ २७ [श्रिञ् सेवायाम् (भ्वा०) धातोर्लोट् । 'तुह्योस्तातङ्०' इति तातङ्]

श्रयताम् सेवताम् ३९ ४ **श्रयतु**=सेवताम् १५ ११ **श्रयध्वम्**=सेवध्वम् १२ ४६ **श्रयन्ताम्**=सेवन्ताम् ११३ ६ **श्रयन्ते**=तदाधारेण तिष्ठन्ति ऋ० भू० ९०, **श्रयस्व**=सेवस्व सेवते वा ४ १० **श्रयेताम्**=सेवेयाताम् ७ २ ६ [श्रिञ् सेवायाम् (भ्वा०) धातोर्लोट् । अन्यत्र लडपि]

श्रयमाणः सेवमान. (सज्जन) ३ ८ २ [श्रिञ् सेवायाम् (भ्वा०) धातो शानच्]

श्रवत् शृणोति ४ ४३ १ शृणुयात्, प्र०—अत्र श्रुधातोर्लेट् 'वहुल छन्दसि' इति श्नोर्लुक् १ ३० ८ **श्रवथः**=शृणुथ ५ ७४ १ [श्रु श्रवणे (भ्वा०) धातोर्लेट् 'श्रुव शृ च' इति विहितश्नुप्रत्ययस्य लुक् । अथवा व्यत्ययेन शप् । अन्यत्र लट् । श्रवद्व इन्द्र शृण्वद्वोऽग्निरिति (यजु० २८.६) शृणोतु वै इन्द्र शृणोत्वग्निरित्याशिषमेव तद् वदते कौ० २८ ६]

श्रवय श्रावय ६ ३१ ५. **श्रवयतम्**=श्रावयतम्, प्र०—वृद्ध्यभावश्छान्दस २१ ९ [श्रु श्रवणे (भ्वा०) धातोर्णिज-न्तात्लोट् । वृद्ध्यभावश्छान्दस]

श्रवयन् श्रवण कारयन् (शिल्पिजन) २ १३ १२ **श्रवयन्तः**=श्रावयन्त १ ११० ३ [श्रु श्रवणे (भ्वा०) धातोर्णिजन्ताच्छतृ । वृद्ध्यभावश्छान्दस]

श्रवसः अन्नस्य ४ ४१ ९ **श्रवसा**=श्रवणेनाऽन्नेन वा ३८ १७ यशसा धनेन वा ३३ ४० **श्रवसे**=विद्या-श्रवणाय ७ १८ २३ सर्वाऽन्नप्राप्तये १ ९६ ६. श्रूयते येन यशसा तस्मै १ ७३.५ श्रोतुमर्हाय (मेधाविजनाय) १ ३१ ७ **श्रवः**=श्रूयमाण यश १.१२६ २ कीर्त्तन श्रवण धन वा १ १०२ ७ सामर्थ्यमन्न वा १ १०२ २ पृथिव्यन्नादिकम् ६ १ ४ सर्वविद्या श्रवणनिमित्तमन्नम् १ ४४ २. विद्याश्रवणमन्न वा १ ४३ ७ शृण्वन्त्यनेका विद्या सुवर्णादि च धन यस्मिँस्तत् १ ९ ७. शृण्वन्ति सर्वा विद्या येनाऽन्नेन तत् १ ४० ४ प्रशसनीयम् (शर्म=गृहम्) २६ १६ **श्रवांसि**=अन्नादीनि वस्तूनि, विद्यमाना-ऽन्नादिपदार्थान् १ ११ ७ अध्ययनाऽध्यापनादीनि कर्माणि ५ ४ २ **श्रवोभिः**=श्रवण-मनन-निदिध्यासनै १ १५६.२ [श्रु श्रवणे (भ्वा०) धातोरौणा० असुन् । श्रव अन्ननाम निघ० २.७ धननाम निघ० २ १० श्रव श्रवणीय यश नि० ११ ९ श्रव प्रशसाम् नि० ४ २४ श्रव इत्यन्ननाम श्रूयत इति सत नि० १० ३]

श्रवस्यतः आत्मन श्रव इच्छत (अर्वत =अश्वादीन्) ६ ४६ १३ **श्रवस्यताम्**=आत्मन श्रवो धनमिच्छताम् (जनानाम्) १ १३८ ४ **श्रवस्यते**=श्रोष्यमाणाय (सज्जनाय) १ १२८ १ विद्या, विज्ञान, अन्नाद्यैश्वर्य युक्त राजा और धनाढ्य जन के लिए आर्याभि० १ २९, ऋ० ६ ४ ९ १२ **श्रवस्यन्**=आत्मन श्रवोऽन्नमिच्छन् (राजा) १ १७७ १ [श्रवम् पदादात्मन इच्छायामर्थे क्यजन्ताच्छतृ । श्रवस् इति व्याख्यातम्]

श्रवस्यम् श्रवस्यन्ने पृथिव्यादौ भवम् (अश्व=विद्युदाख्यमग्निम्) १ ११७ ९ **श्रवस्यानि**=श्रव सु धनेपु साधूनि वीरमैन्यानि १ १०० ५ [श्रवस् इति व्याख्यातम् । ततो भवार्थे साध्वर्थे वा यत् । श्रवस्यानि यशासि नि० ५.२५]

श्रवस्यया आत्मन श्रव इच्छया १ १२८ ६ **श्रवस्या**=आत्मन श्रव श्रवणमिच्छा १ १८४.४ [श्रवस् पदादात्मन इच्छाया क्यजन्तात् स्त्रियाम् 'अ प्रत्ययात्' इत्यकार । ततष्टाप्]

श्रवस्यवः स्वय श्रोतुमिच्छव (विद्वामो जना) १ १२५ ४ आत्मन श्रवोऽन्न श्रवण वेच्छन्त. (आयव =

प्र०—अत्र सुब्व्यत्ययेन तृतीयार्थे चतुर्थी २ २ ७ [श्रु श्रवणे (भ्वा०) धातो स्त्रिया क्तिन्]

श्रुत्कर्ण अर्थिवच श्रोतारौ कर्णौ यस्य तत्सम्बुद्धौ (अग्ने=विद्वन् राजन् वा) ३ ३ १ ५ य शृणोति कर्णाभ्या तत्सम्बुद्धौ (विद्वज्जन) १ ४४ १ ३ **श्रुत्कर्णम्**=श्रुतौ श्रवणसाधकौ कर्णौ यस्य बहुश्रुतस्य तम् (अग्नि=विद्वज्जनम्) १२ १ ११ य सकला विद्या शृणोति तम् (बहुश्रुत सज्जनम्) १ ४५ ७ **श्रुत्कर्णः**=श्रुतौ कर्णौ यस्य स (सत्पुरुष) ७ ३२ ५ [श्रुत-कर्णपदयो समास । पूर्वपदस्यान्त्याकारलोपश्छान्दस]

श्रुत्यम् श्रुतौ श्रवणे भवम् (नाम=सज्ञाम्) ५.३० ५ श्रुतिषु श्रवणेषु (रयि=धनम्) २ ३० ११ श्रुतिषु श्रवणेषु साधु (शरीरात्मबलम्) ६ ७२ ५ श्रोतुमर्हम् (रयि=धनम्) ७ ५ ९ श्रोतु योग्यम् (रयिम्) १ ११७.२३ [श्रुतिप्राति० भवार्थे साध्वर्थेऽर्हत्यर्थे वा यत्]

श्रुत्या श्रुतौ भवानि (विज्ञानानि) ६ २१ ६ [श्रुतिप्राति० भवार्थे यत् । ततश्शेर्लोपश्छन्दसि]

श्रुधि शृणु, प्र०—अत्र 'बहुल छन्दसि' इति श्नोर्लुक् 'श्रुशृणु०' इति हेर्ध्यादिशश्च ३ २६ शृणु श्रावय वा, प्र०—अत्रैकपक्षेऽन्तर्गतो ण्यर्थ १ २६ ५ श्रावयति वा १ २ १ [श्रु श्रवणे (भ्वा०) धातोर्लोट् । 'बहुल छन्दसी' ति शपो-लुकि तत्स्थानप्राप्तस्य श्नोरप्यभाव । श्रुधी शृणु नि० १० २]

श्रुधीयतः आत्मन श्रुधिमन्त्रमिच्छत (जनकस्य) ६ ६७ ३ [श्रुधिपदाद् इच्छायामर्थे क्यजन्ताच्छतृ]

श्रुवत् य शृणोति स (शत्रुविजयी जन) १ १२७ ३ [श्रु श्रवणे (भ्वा०) धातो शतृ । 'बहुल छन्दसी' ति शपो लुक्]

श्रुवन्तु शृण्वन्तु, प्र०—अत्र विकरणव्यत्ययेन श १६ ५८ [श्रु श्रवणे (भ्वा०) धातोर्लोट् । व्यत्ययेन श]

श्रुष्टये शीघ्रत्वाय २ ३८ २. **श्रुष्टिम्**=क्षिप्रम् ७ १८ १० सद्य २ ३२ ३ क्षिप्रकारिणम् (भा०—विद्वत्सङ्गम्) १ ६७ १ प्राप्तव्य वस्तु १ १६६ १३ **श्रुष्टिः**=श्रोतव्या विद्या १ १७८ १ शीघ्रम्, प्र०—श्रुष्टिरिति क्षिप्रनाम निघ० ६ १२, १२.६८ आशुकारी (विदुषी माता) ७ ४० १ **श्रुष्टौ**=प्राप्तव्ये सुखे २ १३ ६ [श्रुष्टीति क्षिप्रनाम आशु अष्टीति नि० ६ १३]

श्रुष्टिमन्तम् श्रुष्टि प्रशस्त क्षिप्रकर यस्मिंस्तम् (राजानम्) ५ ५४ १४ शीघ्र बहुसुखहेतुम् (अध्वर=व्यवहार-यज्ञम्) १.९३ १२ [श्रुष्टीति व्याख्यातम् । ततो मतुप् प्रशसायाम्]

श्रुष्टी शीघ्रम् २.३ ९ सद्य २.१४.८ क्षिप्रम् ४ ३६ ४ [श्रुष्टीति क्षिप्रनाम, आशु अष्टीति नि० ६ १३]

श्रुष्टीवानम् श्रुष्टी क्षिप्रगतीर्वनति भाजयति यस्तम् (रथ=यानम्) प्र०—अत्र वनधातोर्ण्यन्तादच् १ ११६ १ आशुगन्तार गमयितार वा (अग्नि=पावकम्) ३ २७.२ **श्रुष्टीवानः**=ये श्रुष्टी शीघ्र वनन्ति सम्भजन्ति ते (देवा =विद्वज्जना) १ ४५ २ शीघ्रक्रियायुक्ता (जना) १ १२७ ९ [श्रुष्टीत्युपपदे वन सम्भक्तौ (भ्वा०) धातो 'कर्मण्यण्' इत्यण् । अथवा णिजन्ताद् वनधातोरच्]

श्रूयाः शृणुया २ १० २ [श्रु श्रवणे (भ्वा०) धातोराशिषि लिङ्]

श्रेणिभिः पङ्क्तिभि ४ ३८ ६. **श्रेणिम्**=पङ्क्तिम् १.१२६ ४ [श्रिञ् सेवायाम् (भ्वा०) धातो 'वहिश्रिश्रुयुद्रु०' उ० ४ ५१ सूत्रेण नि । श्रेणि श्रयते समाश्रिता भवन्ति नि० ४ १३.]

श्रेणिशः पङ्क्तिवद्वर्त्तमाना (अश्वा =अग्न्यादय) १ १६३ १०. बद्धपङ्क्तय (हसा) २६ २१ कृतश्रेणयो विहितपङ्क्तय (हसा) ३ ८ ९ [श्रेणीति व्याख्यातम् । तत 'बह्वल्पार्थाच्छस्०' अ० ५ ४ ४२ सूत्रेण शस्]

श्रेत् आश्रयेत् १.१७४ ७ [श्रिञ् सेवायाम् (भ्वा०) धातोर्लेट् । 'बहुल छन्दसी' ति शपो लुक्]

श्रेयसः अतिशयेन प्रशस्तान् (जनान्) ३ ५८. **श्रेयसे**=धर्मार्थकामप्राप्तये ३० ११ **श्रेयः**=मुक्तिसुखम् १८ ८ [प्रशस्यप्राति० अतिशायन ईयसुन् । 'प्रशस्यस्य श्र' अ० ५ ३ ६० सूत्रेण श्रादेश]

श्रेयस्कर कल्याणकर्त्त (राजन्) १० २८ [श्रेयस् इति व्याख्यातम् । तदुपपदे डुकृञ् करणे (तना०) धातो. 'कृञो हेतुताच्छील्यानुलोम्येषु' अ० ३ २ २० सूत्रेण ट]

श्रेयान् अतिशयेन प्रशस्त (विद्वज्जन) ३ ८ ४ अतिशयेन श्रेय (सोम =महैश्वर्ययोग) ६ ४१ ४ अतिशय शोभायुक्त मङ्गलकारी (पुरुष) स० प्र० १०९, ३ ८ ४ **श्रेयांसः**=अतिशयेन श्रेय इच्छन्त (मनुष्या) ५ ६०.४ [प्रशस्यप्राति० अतिशायन ईयसुन् । 'प्रशस्यस्य श्र' इति श्रादेश]

श्रेषाम सेवेम ४ ४३ १ [श्रिञ् सेवायाम् (भ्वा०) धातोर्लोट् । 'बहुल छन्दसी' ति शपो लुक् । सिप् विकरण.]

विद्याशिक्षाराज्यधनप्राप्तये १.६४ १२ सुशोभितायै राजलक्ष्म्यै २० ३ **श्रीः**=धन शोभा वा ५ ५७ ६ राज्यलक्ष्मी भा०—धनादिवस्तु १६ ४६ शोभनैश्वर्यम्, भा०—प्रजाधनधान्यादिकम् ३६ ४ [श्रीशब्दस्य रूपाणि। श्री श्रिञ् सेवायाम् (भ्वा०) धातो 'क्विब् वचिप्रच्छिश्रि०' उ० २ ५७ सूत्रेण क्विप्, धातोरिकारस्य च दीर्घ । अथ यत् प्राणा अश्रयन्त तस्माद् प्राणा श्रिय श० ६ १ १ ४ इय (पृथिवी) वै श्री ऐ० ८ ५ तस्या (श्रिय) अग्निरन्नाद्यमादत्त। सोमो राज्य वरुण साम्राज्य मित्र क्षत्रमिन्द्रो वल बृहस्पतिर्ब्रह्मवर्चस सविता राष्ट्र पूषा भग सरस्वती पुष्टि त्वष्टा रूपाणि श० ११ ४ ३ ३ श्रीर्वा एकशफम् (अश्वाश्वतरगर्दभरूपम्) तै० ३ ९ ८ २. श्रीर्वै पशव श्री शक्वर्य ता० १३ २ २ श्रीर्वै आयन्तीयम् (साम) ता० १२ ४ ५ श्री पृष्ठ्यानि कौ० २१ ५ श्रियै वा ऽएतद् रूप यद् वीणा श० १३ १ ५.१ यदा वै पुरुष श्रिय गच्छति वीणास्मै वाद्यते श० १३ १ ५ १ श्रीर्वै स्वर श० ११ ४ २ १० रात्रिरेव श्रीः श्रिया हैतद् रात्र्या सर्वाणि भूतानि सवसन्ति श० १० २ ६ १६ श्रीर्वै राष्ट्रम् श० ६.७ ३.७ श्रीर्वै राष्ट्रस्य भार श० १३ २ ९ ३ श्रीर्वै राष्ट्रस्याग्रम् श० १३ २ ९ ७ श्रीर्वै पिलिप्पिला श० १३.२ ६ १६ तै० ३ ९ ५ ३ श्रीर्वै वरुण कौ० १८ ६ (सविता) श्रिया स्त्रियम (समदधात्) गो० पू० १ ३४ श्रीर्देवा श० २ १ ४ ९ श्रियै पाप्मा (निवर्त्तते) श० १० २ ६ १६ वहिर्ध्वेव वै श्री जै० उ० १ ४.६ एकस्था वै श्री कौ० १८ ९ (एकस्था) वै श्री गो० उ० ६ १ ३ श्रीर्वै साम मै० १ ११ ६ श० ४ १ ३ ९ षड् वा ऋतवस्सवत्सरश्री जै० २ १४२]

श्रियसे श्रयितुम् १ ८७ ६ श्रयितुमाश्रयितु सेवितु वा ५ ५९ ३ [श्रिञ् सेवायाम् (भ्वा०) धातोस्तुमर्थे कसेन्]

श्रीणन् परिपक्व कुर्वन् (मनुष्य.) १ ६८ १ [श्रीञ् पाके (क्र्या०) धातो शतृ]

श्रीणन्ति परिपक्व कुर्वन्ति १२ ५५ पचन्ति १ ८४.११ **श्रीणातु**=परिपचतु ६ १८ **श्रीणीषे**=पचसि ५ ६ ९ [श्रीञ् पाके (क्र्या०) धातोर्लट्। अन्यत्र लोडपि]

श्रीणानः आश्रय कुर्वाण (राजा) ३३ ८५ [श्रीञ् पाके (क्र्या०) धातो शानच्। धातूनामनेकार्थकत्वादत्र सेवायामर्थे]

श्रीमनाः श्रियि मनो यस्य स (अ०—यजमान) १७ ५६ [श्री-मनस्पदयो समास]

श्रीयस्व सेवस्व, प्र०—अत्र विकरणव्यत्ययेन श्यन् ३७ १३ [श्रीञ् पाके (क्र्या०) धातोर्लोट्। व्यत्ययेन श्यन्। सेवायामत्र धातु]

श्रुत शृणु २ ४१ १५ श्रावयन्ति, प्र०—अत्र व्यत्ययो लडर्थे लोडन्तर्गतो ण्यर्थ 'बहुल छन्दसि' इति शपो लुक् १ २३ ८ **श्रुतम्**=शृणुतम् ७ ९ शृणु ५ ७८ ५ पठितम् १ ११६ १३ अशृणुतम् ६ ६२ ७. [श्रु श्रवणे (भ्वा०) धातोर्लोट्। 'बहुल छन्दसी' ति शपो लुक्]

श्रुतम् सर्वशास्त्रश्रवणकथनम् १.६ ६ यश्श्रुतवान् तम् (वीरपुरुषम्) २.३३ ११ प्रख्यातम् (इन्द्र=परमेश्वरमध्यापक वा) १ १० १ ७ श्रवणम् १५ ७ **श्रुतस्य**=प्रसिद्धस्य (राज्ञ) ३ ४६ १ **श्रुतः**=सकलशास्त्रश्रवणेन कीर्त्तिमान् (राजा) ४ ३० २ सर्वत्र प्रसिद्धकीर्त्ति (राजा) ४ ३२ २१ य श्रूयते स (इन्द्र =सभाव्यक्ष.) १ ५५.८ योऽश्रावि स (पूषा=पुष्टिकर्त्ता (विद्वज्जन) ६ ५६ ५ य श्रूयते स (सभाव्यक्ष) १ ५३ ९ **श्रुताय**=प्रशसितश्रुतिविषयाय (इन्द्राय=सभेशाय) २ १४ ८ अखिलविद्याना कृतश्रवणाय (महाविद्वज्जनाय) ६ ३८ ५ य शुभगुणेषु श्रूयते तस्मै (पुरुषाय) १६ ३५ विपिद्धकीर्त्तये (सम्राजे=सुराजाय) ५.८५.१ [श्रु श्रवणे (भ्वा०) धातो क्त 'नपुसके भावे क्त' सूत्रेण। अन्यत्र क्वचिद् वर्त्तमाने क्त, क्वचिद् भूते]

श्रुतरथाय श्रुता रथा यस्य तस्मै (विदुषे शिल्पिने) ५ ३६ ५ **श्रुतरथे**=श्रुते रमणीये रथे १.१२२ ७ [श्रुत-रथपदयो समास]

श्रुतर्यम् श्रुतानि अर्याणि विज्ञानशास्त्राणि येन तम् (नर्यम्=नृषु साधु पुरुषम्) प्र०—अत्र शकन्ध्वादिना ह्यकारलोप १ ११२ ९ [श्रुत-अर्यपदयो समास। श्रुत इति व्याख्यातम्। अर्यम्=ऋ गतिप्रापणयो (भ्वा०) धातोर्यत्। शकन्ध्वादिना पररूपम्]

श्रुतवित् य श्रुत वेत्ति स (जन) ५ ४४ १२ [श्रुतोपपदे विद ज्ञाने (अदा०) धातो क्विप्]

श्रुतसेनाय श्रुता प्रख्याता सेना यस्य तस्मै (सेनापतये) १६ ३५ [श्रुता-सेनापदयो समास]

श्रुतासु विद्यासु ५ ६० २ [श्रु श्रवणे (भ्वा०) धातो क्त। तत स्त्रिया टाप्]

श्रुतिः शृण्वन्ति सकला विद्या यया सा वेदाख्या १८ १ **श्रुत्या**=श्रवणेन ६ ३६ ५ **श्रुत्यै**=श्रवणेन,

श० १० ३.११ श्रोत्र वै सम्पच्छ्रोत्र हीमे सर्वे वेदा अभिसम्पन्ना श० १४.६ २ ४]

श्रोत्री श्रोत्रस्येय सम्वन्धिनी (शरत्) १३ ५७ [श्रोत्रमिति व्याख्यातम् । तत स्त्रिया डीप्]

श्रोमतम् श्रोतव्य विज्ञानमन्नादिक वा ७.२४ ५. **श्रोमताय**=प्रशस्तकीर्त्तियुक्ताय व्यवहाराय १.१८२ ७ [श्रु श्रवणे (भ्वा०) धातोर्बाहु० औणा० अतच् । वाहु० मुडागमश्च]

श्रोमतेभिः श्रावणीयैर्वचनै ६ १६ १० [श्रोमत-प्राति० 'वहुल छन्दसी' ति भिस ऐसादेशो न भवति]

श्रोषन् शृण्वन्तु १ ८८ ५ **श्रोषन्तु**=शृण्वन्तु, प्र०—अत्र विकरणव्यत्ययेन शप् लेटि सिप् १ ८६ ५ **श्रोषि**=शृणोषि, प्र०—अत्र विकरणस्य लुक् ३३ १३ [श्रु श्रवणे (भ्वा०) धातोर्लेट् । व्यत्ययेन शप् । लेटि सिव्-विकरणश्च]

श्रोषमाणाः शृण्वन्त (विद्वज्जना), प्र०—अत्र 'वाच्छन्दसि' इति द्वित्वाऽभाव ३ ८.१० श्रवण कुर्वन्त (मनुष्या) ७ ५१ १ [श्रु श्रवणे (भ्वा०) धातो सन्नन्ता-च्छानच् । द्वित्वाभावश्छान्दस]

श्रौषट् हविर्दात्रीम् (अग्नि=विद्युतम्) १ १३९ १.

श्लोकम् विद्यासहिता वाचम् १.८३ ६. श्लाघनीया वाचम् ४.५३ ३ उत्तमा वाणीम् १ ९२ १७ सर्वाऽवयवै सहिता वाचम् १ ५१ १२ यश १ १३९ ३. सत्या वाणीम् १ १९० ३ सुलक्षणा वाचम् ३ ५३ १० सत्यकीर्त्ति ऋ० भू० १५७. ११ ५ **श्लोकः**=प्रशसिता शिक्षिता वाक् १८ १ सत्यवाक्-सयुक्त (योगारूढो विद्वज्जन) ११ ५ **श्लोकाय**=तत्त्वसङ्घातसत्काव्य-गद्य-पद्य-छन्दोनिर्माणा-दिविज्ञानाय १० ५ [श्लोक वाड्नाम निघ० १ ११ श्लोक शृणोते नि० ९ ९ श्लोकृ सघाते (भ्वा०) धातोर्घञ्]

श्लोकय शास्त्रश्रवणाय सम्वन्धय १४ ८ [श्लोकृ सघाते (भ्वा०) धातोर्णिजन्ताल्लोट् । श्लोकशव्दाद्वा 'सत्यापपाश०' अ० ३ १ २५ इति णिजन्ताल्लोट्]

श्लोक्याय श्लोके वेदवाण्या साधवे (विद्वज्जनाय) १६ ३३. [श्लोकप्राति० साध्वर्थे यत् । श्लोक वाड्नाम निघ० १ ११]

श्वघ्नीव या शुनो हन्ति तद्वत् २ १२ ४. वृकीव ४ २० ३ यथा वृकी शुन श्वादीन् मृगान् कृन्तन्ती तथा (उषा) १ ९२ १० [श्वघ्नी-इवपदयो समास । श्वघ्नी= श्वन् इत्युपपदे हन्धातो 'कृतो वहुल वे' ति टक् । ततो डीप् । श्वघ्नी कितवो भवति स्वं हन्ति नि० ५ २२]

श्वनिनम् वहुश्वपालम्, भा०—श्वपालिन चण्डाला-दिकम् ३० ७ **श्वनिभ्यः**=ये शुनो नयन्ति शिक्षयन्ति तेभ्य (जनेभ्य) १६.२७ [श्वन्प्राति० भूम्न्यर्थे 'वा छन्दसी' त्यनकारान्तादपि इनि । अथवा 'वहुल छन्दसि' अ० ५ २ १२२ सूत्रेण विनि । वकार-लोपश्छान्दस]

श्वपतिभ्यः शुना पालकेभ्य (जनेभ्य) १६ २८ [श्वन्-पतिपदयो समास । श्वन्निति व्याख्यास्यते]

श्वभ्यः कुक्कुरेभ्य. १६ २८ **श्वा**=कुक्कुर २२ ५ **श्वानम्**=प्रेरकम् (प्राज्ञ जनम्) १ १६१ १३ [टुओश्वि गतिवृद्ध्यो. (भ्वा०) धातो 'श्वनुक्षन्पूपन्०' उ० १ १५६ सूत्रेण कनिन् । अनृत स्त्री शूद्र श्वा कृष्ण शकुनिस्तानि न प्रेक्षेत श० १४ १ १ ३१.]

श्वभ्रेव गर्त्तमिव २.२७.५ [श्वभ्र-इवपदयो समास । श्वभ्र =श्वभ्र गत्याम् (चुरा०) धातोरच्]

श्वशुराय श्वशुर के लिए स० वि० १३८, अथर्व० १४ २ २६. [शूपपदे अशूङ् व्याप्तौ (स्वा०) धातो 'शावशे-राप्तौ' उ० १ ४४. सूत्रेण उरन् । शू क्षिप्रनाम निघ० २ १५.]

श्वश्री सासु स० वि० १३८, अथर्व० १४ २ २६ [श्वशुरप्राति० स्त्रियाम् 'श्वशुरस्योकाराकारलोपश्च' अ० ४ १ ६८. वा०सूत्रेण ऊङ् । वर्णव्यत्ययेनोकारस्येकार]

श्वसनस्य श्वसन्ति येन प्राणेन तस्य १ ५४ ५ [श्वस प्राणने (अदा०) धातो करणे ल्युट्]

श्वसन्तम् प्राणयन्तम् (पतिम्) १ १७९ ४ [श्वस प्राणने (अदा०) धातो शतृ]

श्वसिति अग्निना प्राणाऽपानचेष्टा करोति १ ६५ ५ [श्वस प्राणने (अदा०) धातोर्लट् । 'रुदादिभ्य सार्वधातुके' इतीडागम । श्वसिति वधकर्मा निघ० २ १९

श्वसीवान् प्राणवान् (विद्वान् पुरुप) १ १४० १०. [श्वस प्राणने (अदा०) धातोर्घञर्थे क । तत श्वसप्राति० मतुप् । वर्णव्यत्ययेनाकारस्येकारादेश]

श्वः आगामिदिने ६ ५६.६ परस्मिन् दिने ८.६. [श्वस् इति स्वरादिपाठादव्ययम् । श्व उपाशसनीय काल । नि० १ ६ न श्व श्वमुपासीत को हि मनुष्यस्य श्वो वेद श० २.१.३ ९.]

श्वात्रः ज्ञानवान् (जगदीश्वरो विद्वज्जनो वा), प्र०—श्वात्रतीति गतिकर्मसु पठितम् निघ० २ २४, ५ ३१ शीघ्र व्यापनशील परमात्मा आर्याभि० २ १६, ५ ३१ **श्वात्राः**=

श्रेष्ठतमा अतिशयेन प्रशसिता (उपा) १ ११३ १२ [श्रेष्ठतम इति व्याख्यातम् । तत स्त्रिया टाप्]

श्रेष्ठतमाय अतिशयेन प्रशस्त सोऽतिशयितस्तस्मै यज्ञाय (कर्मणे=क्रियायै) १ १ **श्रेष्ठतमाः**=अतिशयेन श्रेयस्कर (नर =नायका जना) ५ ६१ १. [श्रेष्ठप्राति० अतिशायने तमप् । श्रेष्ठ =प्रशस्यप्राति० अतिशायन इष्ठन् । 'प्रशस्यस्य श्र' इति आदेश]

श्रेष्ठम् अतिशयेन प्रशस्यम् (पेश=सुन्दर रूप हिरण्यश्च) ४ ३६ ७ अतिशयेन प्रशास्तम् (धनम्) ३ २१ २ अत्युत्तमम् (द्रविण=धन यशो वा) ४ ५४ १ अतिशयेन श्रेयस्करम् (रयिं=श्रियम्) २ ७ १ **श्रेष्ठः**=धर्म्यगुण-कर्मस्वभावाऽतिशययुक्त (अग्नि.=विद्वज्जन) ६ १६ २६ श्रेयान् (अग्नि) ३ २१ ३ अतिशयेन प्रशसित (सद्वैच) २ ३३ ३ **श्रेष्ठे**=उत्तमे (मित्रे) ३ ३ १७ [प्रशस्यप्राति० अतिशायन इष्ठन् । 'प्रशस्यस्य श्र' सूत्रेण आदेश]

श्रेष्ठया अत्युत्तमया (सुमत्या) ५ २५ ३ [श्रेष्ठमिति व्याख्यातम् । तत स्त्रिया टाप्]

श्रेष्ठवर्चसः श्रेष्ठ वर्चोऽध्ययन येषान्ते (महा-विद्वज्जना) ६ ५१ १० [श्रेष्ठ-वर्चस्पदयो समास]

श्रेष्ठवर्चसा श्रेष्ठ वर्चोऽध्ययन ययोस्तौ (अध्यापको-पदेशकौ) ५ ६५ २ [श्रेष्ठ-वर्चस्पदयो समासे द्विवचनस्या-कारादेश]

श्रेष्ठा श्रेष्ठानि कर्माणि ४ १ ६ धर्मजानि (द्रविणा-नि=धनानि) २ २१ ६ [श्रेष्ठमिति व्याख्यातम् । तत शेर्लोपरछन्दसि]

श्रोणम् खञ्जम् (प्रजाजनम्) ४ ३० १६ वधिरवद्वर्त्त-मान पुरुषम् १ ११२ ८ वधिरम् (जनम्) २ १३ १२ **श्रोणः**=श्रोता (इन्द्र =विद्वज्जन) २ १५ ७ [श्रु श्रवणे (भ्वा०) धातोर्वाहु० औणा० न]

श्रोणाम् श्रोतव्याम् (गा=भूमिम्) १.१६१ १० [श्रोणमिति व्याख्यातम् । तत स्त्रिया टाप्]

श्रोणितः कटिप्रदेशात् २१ ४३ क्रमश २१ ४५ [श्रु श्रवणे (भ्वा०) धातो 'वहिश्रिश्रुयुद्रु०' उ० ४ ५१ सूत्रेण नि । श्रोणिप्राति० तसि]

श्रोणिभ्याम् कटिप्रदेशाभ्याम् २५ ६ **श्रोणी**=कटिप्रदेशौ २० ८ [पूर्वपदे व्याख्यातम् । श्रोणि श्रोणते-र्गतिचलाकर्मण । श्रोणिश्चलतीव गच्छत नि० ४ ३ जगती-छन्द आदित्यो देवता श्रोणी श० १० ३ २ ६ श्रोणी द्वियजु. (इष्टका) श० ७ ५ १ ३५]

श्रोत शृणुत, प्र०—अत्र तस्य स्थाने 'तप्तनप्तन-थनाश्च' अ० ७ १ ४५ अनेन तबादेश 'वहुल छन्दसि' अ० २ ४ ७३ इति श्नुलोपश्च ६ २६ **श्रोतु**=शृणोतु ५ ४६ ६ [श्रु श्रवणे (भ्वा०) धातोर्लोट् । मध्यमवहु० तप्रत्ययस्य 'तप्तनप्तनथनाश्च' सूत्रेण तबादेश: । तस्य पित्त्वान् ङित्वा-ऽभावाद् गुण । श्नुविकरणस्य लुक् । श्रोता शृणुत नि० १२ ४३]

श्रोता विवादाना वचनाना श्रवणकर्त्ता (राजा) ६ २४ २ [श्रु श्रवणे (भ्वा०) धातो कर्त्तरि तृच्]

श्रोतुरातिः श्रोतु श्रवण रातिर्दान यस्य स (विद्वज्जन) १ १२२ ६ [श्रोतु-रातिपदयो समास । श्रोतु =श्रु श्रवणे (भ्वा०) धातोर्वाहु० औणा० तु । राति =रा दाने (अदा०)+क्तिन्]

श्रोत्रपाः य श्रोत्रं पाति स (विद्वान् पुरुष) २० ३४ [श्रोत्रोपपदे पा रक्षणे (अदा०) धातो कर्त्तरि क्विप्]

श्रोत्रम् शृणोति शब्दान् येन तच्छब्दग्राहकमिन्द्रियम् ४ १५ शब्दश्रावकम् (इन्द्रियम्) २८ ३८ शब्दविषयम् (इन्द्रियम्) १६ ६१ सत्यविद्यादिगुणाना विविधप्रकाश-करणम् (इन्द्रियम्) ऋ० भू० २१८, २०५ ज्ञानेन्द्रियाणा-मुपलक्षणम् २२ ३३ श्रवणेन्द्रियम् १८ २६ श्रवणम् १४ १७ शब्दजन्य प्रत्यक्षम् ऋ० भू० १०४, अथर्व० १२ ५ ६ कर्णम् १३ ५७ **श्रोत्रात्**=अवकाशमयात् (इन्द्रियात्) ३१ १३ शब्दाकाशकरणमयात् ऋ० भू० १२७, ३१ ३१ श्रोत्राऽवकाशरूपसामर्थ्यात् ३१ १२ **श्रोत्रा-भ्याम्**=शृणोति याभ्या गोलकाभ्या ताभ्याम् २५ २ **श्रोत्राय**=शब्दज्ञानाय ७.२७ [श्रु श्रवणे (भ्वा०) धातो 'हुयामाश्रुभसिभ्यस्त्रन्' उ० ४ १६८ सूत्रेण त्रन् करणे । श्रोत्र हृदये (श्रितम्) तै० ३ १० ८ ६ श्रोत्र वै ब्रह्म श्रोत्रेण हि ब्रह्म शृणोति श्रोत्रे ब्रह्म प्रतिष्ठितम् ऐ० २ ४० श्रोत्र वै सम्राट् परम ब्रह्म श० १४ ६ १० १२. श्रोत्र वा अपा सन्धि (यजु० १३ ५३) श० ७ ५ २ ५५. श्रोत्र वै पर रजो दिशो वै श्रोत्र दिश पर रज । श० ७ ५ २ २० यत्तच्छ्रोत्र दिशा एव तत् श० १० ३.३ ७ तद् यत्तच्छ्रोत्र दिगस्ता जै० उ० १ २८ ६ श्रोत्र वै विश्वा-मित्र ऋषिर्यदेनेन सर्वत शृणोत्यथो यदस्मै सर्वतो मित्र भवति तस्माच्छ्रोत्र विश्वामित्र ऋषि (यजु० १३ ५७) श० ८ १ २ ६ श्रोत्र विश्वे देवा श० ३ २ २ १३ विश्व हि श्रोत्रम् श० ७ ५ २ १२ यच्छ्रोत्र स विष्णु गो० उ० ४ ११ वागिति श्रोत्रम् जै० उ० ४ २२ ११ श्रोत्र पङ्क्ति

षट् पञ्च-तत्त्वानि महत्तत्त्वञ्च ३ ५६.२. षड्विधा (उर्वी =भूमी) ६ ४७ ३ वसन्तादीन् ऋतून् १ २३ १५ ऋतव २३.५८ [षट् पुन राहते नि० ४ २७]

षट्त्रिंशत् षडुत्तरा त्रिंशत् (सख्या) १८ २५ [षट्-त्रिशत्पदयो समासे 'सख्याया अल्पीयस्या पूर्वनिपातो वक्तव्य' इति षष पूर्वनिपात]

षट्त्रिंशः षट्त्रिशत् प्रकार (विवर्त्त=सवत्सर) १४ २३ [षट्-त्रिशत्पदयो समासे तत पूरणार्थे डट्]

षट्पक्षा एक बीच मे बडी और दो दो पूर्व पश्चिम तथा एक एक उत्तर दक्षिण मे शाला स० वि० १६८, अथर्व० ६ २ ३ २१ [षट्-पक्षपदयो समासे स्त्रिया टाप्]

षट्पदाः षट् पदानि यासु ता (प्रजा) २३ ३४ [षट्पदपदयो समासे स्त्रिया टाप्]

षडक्षरेण दैव्या त्रिष्टुभा (छन्दसा) ९ ३२. [षट्-अक्षरपदयो समास]

षडरे षट् ऋतवोऽरा यस्मिन् तस्मिन् (सूर्ये) १ १६४.१२ [षट्-अरपदयो समास । अरा प्रत्यृता नाभौ नि० ४ २७]

षडश्वैः षडश्वा आशुगमका कलायन्त्रस्थितप्रदेशा येषु तै (रथै) १ ११६ ४ षडश्वा आशुगमनहेतवो यन्त्राण्यग्निस्थानानि वा येषु तै (यानै) ऋ० भू० १६०, [षट्-अश्वपदयो समास]

षष्टिः एतत्सङ्ख्याका (वीरास =योद्धृजना) ७.१८ १४ [षड् दशत परिमाणमस्येति विग्रहे 'पङ्क्ति-विंशतित्रिंशत्०' अ० ५ १ ५९ सूत्रेण षण्णा दशता षड्भावस्ति प्रत्ययोऽपदत्व च निपात्यते]

षष्ठी षण्णा पूरणा (क्रिया) २५ ४ [षष् सख्या-वाचिन प्राति० पूरणार्थे डट्प्रत्यये परत 'षट् कतिकति-पयचतुरा थुक्' इति थुगागम । तत स्त्रिया ङीप्]

षाट् सहनशील (इन्द्र =सभाध्यक्ष) प्र०— 'वाच्छन्दसि' इति केवलादपि ण्वि १ ६३ ३ [षह मर्षणे (भ्वा०) धातो 'छन्दसि सह' अ० ३ २ ६३ सूत्रेण 'वा छन्दसी' ति नियमेन निरुपपदादपि ण्वि 'सहे साढ स' इति मूर्धन्य]

षोडश षडधिका दश (सख्या) १८ २५ **षोडशम्**= प्रमाणादिपदार्थसमूहम् (स्तोमम्) ९ ३४ [षट्-दशन्-पदयो समासे 'षष उत्व' दतृदशधासूत्तरपदादेष्टुत्व च' अ० ६ ३ १०९ वा०सूत्रेण षकारस्योत्व ष्टुत्व च । षोडश (स्तोम) हीना वा एते हीयन्ते ये व्रात्या प्रवसन्ति न हि ब्रह्मचर्यञ्चरन्ति न कृषिन्न वाणिज्या षोडशो वा एतत् स्तोम समाप्तुमर्हति ता० १७ १ २. मरुत्स्तोमो वा एष (षोडश स्तोम) ता० १७ १ २]

षोडशाऽक्षरेण साम्न्यानुष्टुभा (छन्दसा) ९ ३४. [षोडश-अक्षरपदयो समास']

षोडशिने प्रशस्ता षोडश कला विद्यन्ते यस्मिँस्तस्मै (इन्द्राय=परमैश्वर्याय) ८ ३३ **षोडशी**=येन षोडश कला जगति रचितास्ता विद्यन्ते यस्मिन् यस्य वा स (परमेश्वर.) ऋ० भू० ४४, ८ ३६. प्रशस्ता षोडश कला विद्यन्ते यस्मिन् स (परमेश्वर), प्र० इच्छा, प्राण, श्रद्धा, पृथिव्यापोऽग्निर्वायुराकाशमिन्द्रियाणि, मनोऽन्न, वीर्य, तपो, मन्त्रो, लोको, नाम चैता कला प्रश्नोपनिषदि षष्ठे प्रश्ने प्रतिपादिता ८ ३६ सोलह कला (१ ईक्षण=विचार, २ प्राण, ३ श्रद्धा, ४ आकाश, ५ वायु, ६ अग्नि, ७ जल, ८ पृथिवी, ९ इन्द्रिय, १० अन्न, ११ मन, १२ वीर्य=पराक्रम, १३ तप=धर्मानुष्ठान, १४ मन्त्र= वेदविद्या, १५ कर्मलोक=चेष्टास्थान, १६ लोको के नाम) वाला ईश्वर आर्याभि० २ १४, ८ ३६ षोडशकला-युक्त (इन्द्र =राजा) २६ १० भा०—येन प्राणादीनि षोडश वस्तूनि सृष्टानि स (ईश्वर) ३२ ५ [षोडश इति व्याख्यातम् । ततो मत्वर्थ इनि । षोडशी (शस्त्र स्तोत्र ग्रह) अथो षोडश वा एतत् स्तोत्र षोडश शस्त्र तस्मात् षोडशीत्या-ख्यायते कौ० १७ १. षोडश स्तोत्राणा षोडश शस्त्राणा षोडशभिरक्षरैरादत्ते षोडशभि प्रणौति षोडशपदाम् निविद दधाति तत् षोडशिन षोडशित्वम् ऐ० ४ १ कि षोडशिन षोडशित्व षोडश स्तोत्राणि षोडश शस्त्राणि षोडशभिरक्ष-रैरादत्त गो० उ० ४ १९ वृषण्वद्वै षोडशिनो रूपम् ऐ० ४४ सर्वेभ्यो वा एष सवनेभ्य सन्निर्मितो यत् षोडशी ऐ० ४ ४ सर्वेभ्यो वा एष छन्दोभ्य सन्निर्मितो यत् षोडशी ऐ० ४ ३-४) सर्वेभ्यो वा एष लोकेभ्य सन्निर्मितो यत् षोडशी ऐ० ४ ४ त्रिवृद् वै षोडशी कौ० १७ ३ आनुष्टुभो वै षोडशी कौ० १७ २ ३ आनुष्टुभो वा एष वज्रो यत्-षोडशी कौ० १७ १ वज्रो वा एष यत् षोडशी ऐ० ४ १ वज्र षोडशी ता० १९ ६ ३ वज्रो वै षोडशी ता० १२ १३ १४ गो० उ० २ १३ वज्र षोडशी ष० ३.११ (इन्द्रिय वीर्यं षोडशी ता० २१ ५ ६ वीर्यं षोडशी श० १२ २ २ ७ अतिरिक्तो वै षोडशी ता० ६ १ ५ अपच्छि-दिव वा एतद् यज्ञकाण्ड यत् षोडशी (साम) ता० १८ ६ २३ एकविंशायतनो वा एष यत् षोडशी सप्त हि प्रात सवने होत्रा वषट् कुर्वन्ति सप्त माध्यन्दिने सवने सप्त तृतीये

श्वात्र शीघ्र कर्मविज्ञान वर्त्तते यासा ता (पत्नी =विदुष्य स्त्रिय), प्र०—अर्शादित्वादच्, श्वात्रमिति क्षिप्रनाम निघ० ५ ३, ६ ३४ श्वात्र प्रशस्त विज्ञान धन वा विद्यते यासा ता (आप =प्राणा), प्र०—अत्र अर्शादित्वात् प्रशसार्थेऽच् । श्वात्रमिति पदनामसु पठितम् निघ० ४ २, धननामसु च निघ० २ १०, ४.१२ **श्वात्रेण**=धनेन विज्ञानेन वा १ ३१ ४ [शूपपदे अत सातत्यगमने (भ्वा०) धातोर्बाहु० औणा० रक् बहुलवचनाच्च णित्वम् । शू क्षिप्रनाम निघ० २ १५ श्वात्रमिति क्षिप्रनामाशु अतन भवति नि० ५ ३ श्वात्रम् धननाम निघ० २.१० पदनाम निघ० ४ २ श्वात्रति गतिकर्मा निघ० २ १४ (यजु० ६ ३४) शिवा ह्यापस्तस्मादाह (हे आपो यूयम्) श्वात्रा स्थेति (श्वात्रा =शिवा) श० ३ ९ ४ १६]

श्वात्रास: श्वात्र प्रवृद्ध धन येभ्यस्ते (अग्न्यादय पदार्था), प्र०—श्वात्रमिति धननाम निघ० २ १०, ३३ १. [श्वात्र इति व्याख्यातम् । ततो जसोऽसुक्]

श्वानेव यथा चोरादिभ्यो रक्षको कुक्कुरौ २ ३९ ४. [श्वाना-इवपदयो समास । श्वाना=श्वन्प्राति० द्विवचन-स्याकारादेश]

श्वान्तम् श्रान्त परिपक्वज्ञानम् (विद्वज्जनम्), प्र०—अत्र वर्णव्यत्ययेन रेफस्य स्थाने व १ १४५ ४ [श्रमु तपसि खेदे च (दिवा०) धातो क्त । वर्णव्यत्ययेन रेफस्य वकार]

श्वावित् सेधा (पशुविशेष) २४ ३३ शल्यक , सेह, इति भाषायाम् २४ ३५ पशुविशेष २३ ५६ [शुना आविध्यत इति विग्रहे श्वन् इत्युपपदे आङ्पूर्वाद् व्यध ताडने (दिवा०) धातो क्विप् । ग्रहिज्यादिना सम्प्र-सारणम्]

श्वासय प्राणय २९ ५५ [श्वस प्राणने (अदा०) धातोर्णिजन्ताल्लोट्]

श्वितानः शुभ्रवर्ण (पावक) ६ ६ २ [श्विता वर्णे (भ्वा०) धातोर्बाहु० औणा० आनच् स च कित्]

श्वितीचय: ये श्विति श्वेतवर्णं चिन्वन्ति ते (अग्न्यादय पदार्था) ३ ३ १ [श्वित्युपपदे चिञ् चयने (स्वा०) धातो पचाद्यच् प्रत्यय । श्विति =श्विता वर्णे (भ्वा०) धातोरौणा० इन् किच्च]

श्वितीची या श्विर्ति श्वेतवर्णमञ्चति सा (उषा) १.१२३ ९ [श्वितीच् इति व्याख्यास्यते । तत स्त्रियाम् 'अञ्चतेश्चोपसख्यानम्' इति ङीप्]

श्वितीचे य श्वितिमावरणमञ्चति तस्मै (सद्वैद्याय) २ ३३ ८ **श्वित्यञ्च:**=ये श्विर्ति वृद्धमञ्चन्ति प्राप्नुवन्ति ते (अध्यापकाऽध्येतार) ७ ३३ १ [श्विति इत्युपपदे अञ्चु गतिपूजनयो (भ्वा०) धातो 'ऋत्विग्दधृक्०' इति क्विन् । 'अनिदिताम्०' इति नलोपे चतुर्थ्येकवचने भसज्ञा-याम् 'अच ' इत्यकारलोपे 'चौ' इति पूर्वस्य दीर्घे च रूपम्]

श्वित्न्येभि: श्वेतवर्णयुक्तैस्तेजस्विभि (सखिभि.) १ १०० १८ [श्विता वर्णे (भ्वा०) धातोर्बाहु० औणा० अन्यप्रत्यये कित्वेऽकारलोपे च रूपम्]

श्वित्र. विचित्र पशुविशेष २४ ३९ [श्विता वर्णे (भ्वा०) धातो 'स्फायितञ्चि०' उ० २ १३ सूत्रेण रक्]

श्वित्र्यम् श्वित्राया भूमेरावरणे साधु (वृषभ =मेघम्) १ ३३ १५ [श्वित्र व्याख्यातम् । तत स्त्रिया टापि श्वित्रा । तत साध्वर्थे यत्]

श्वेतनायै प्रकाशाय १ १२२ ४ [श्विता वर्णे (भ्वा०) धातोर्बाहु० औणा० युच् । तत स्त्रिया टाप्]

श्वेतम् वृद्धम्, भा०—बलादिगुणयुक्तम् (पुरुषम्) २७ २४ श्वेतवर्णम् (अरुषम्=अश्वम्) ३ १ ४. प्रवृद्धम् (अश्वम्=अग्निम्) १ ११६ ६ सतत गन्तु प्रवृद्धम् (विद्यु-द्यानम्) १ ११९ १० अग्निगुणविद्युन्मय शुद्धधातुनिर्मितम् (तारम्) ऋ० भू० १९९, ऋ० १ ८२११० **श्वेत:**= भास्वर-स्वरूपत्वाच्छुद्ध (अग्नि) १ ६६ ३, गन्ता वर्द्धको वा (अ०—वायु) २७ २३, [टुओश्वि गतिवृद्धचो (भ्वा०) धातोर्बाहु० औणा० त । अथवा श्विता वर्णे (भ्वा०) धातोर्घञ्]

श्वेत्या शुभ्रस्वरूपा (उषा) १ ११३ २ [श्वेत्या उषोनाम निघ० १ ८ श्वेत्या श्वेतते नि० २ २१. श्विता वर्णे (भ्वा०) धातो 'अघ्न्यादयश्च' उ० ४ ११२ सूत्रेण यक्]

श्वैतरीम् अतिशयेन शुद्धाम् (वेनु =धारणाम्) ४ ३३ १, [श्वेतप्राति० अतिशायने तरप्-प्रत्यये श्वेततर । तत 'तस्येदम्' (इत्यण्-प्रत्ययान्तात् स्त्रिया ङीप् । तलोप-श्छान्दस]

श्वैत्रेयस्य श्वित्रास्वन्तरिक्षस्थासु दिक्षु भवस्य जलस्य ५.१९ ३ **श्वैत्रेय:**=श्वित्राया वर्णकर्त्र्या भूमेरपत्य श्वैत्रेय (मेघ) १ ३३ १४ [श्वित्राप्राति० अपत्यार्थे 'स्त्रीभ्यो ढक्' अ० ४ १ १२० इति ढक् । ढस्यैयादेश । श्वित्रा= श्विता वर्णे (भ्वा०) धातो 'स्फायितञ्चि०' उ० २ १३ सूत्रेण रक् । तत स्त्रिया टाप्]

(राजप्रजाजन) १० ३१. सुहृत् (इन्द्र=राजपुरुष) ४.२५.६. सर्वदुःखविनाशनेन सहायकारी (अग्नि=जगदीश्वरः) १.३१.१ **सखायम्**=सर्वसुहृदम् (विद्वत्तम जनम्) ६ ४५ १६ सुहृद्वद्वर्त्तमानम् (पतिम्) २६ ४० सर्वहितकारी मित्र (ईश्वर) को प० वि०। सखाय=परस्पर सुहृद परोपकारका: (मनुष्या) १ २२ ८ परस्परस्य सहायिन (जना) १७ ३८ भा०—सर्वे सह मैत्रीमाचरन्त (सज्जना) ३४ १८. मित्रभाव रखने वाले (सज्जन) प० वि० **सखिभि:**=धर्मानुकूल-स्वाऽऽज्ञापालकैः मित्रैः १ १०० २ **सखिभ्य:**=मित्रभावेभ्य मित्रशीलेभ्य. (जनेभ्य) १.४४ [समान ख्यातीति विग्रहे समानोपपदे ख्या प्रकथने (अदा०) धातो 'समाने ख्य स चोदात्त' उ० ४.१३७ सूत्रेण इण्प्रत्यये यलोपे समानस्य च 'समानस्य छन्दसि०' इति सादेशे सखि इति रूपम्। सखिप्राति० सौ 'अनङ् सौ' इत्यनङादेशे सखेति रूपम् अन्यत्र 'सख्युरसम्बुद्धौ' अ० ७ १.९२ सूत्रेण सर्वनामस्थानस्य णिद्वद् भावे वृद्धौ च रूपाणि। सखाय समानख्याना नि० ७ ३० सखाय. सप्तपदा अभूम तै० ३ ७ ७ ११]

सखाया सुहृदौ (भिषजा=चिकित्सकौ) २८ ७. मित्रवद्वर्त्तमानौ (जीवेशौ) १ १६४.२०. परस्पर मित्रता युक्त (ब्रह्म और जीव) स० प्र० २८३, १ १६४ २० [सखिप्राति० प्रथमाद्विवचनस्याकारादेशे रूपम्। सखीति सखा-पदे व्याख्यातम्]

सखित्वनाय सख्युर्भावाय ६.५१ १४ [सखिप्राति० भावे त्वः। पृषोदरादिना रूप साधनीयम्]

सखित्वम् सख्युर्भावम् ३ १ १५ **सखित्वे**= सखीना सुखायाऽनुकूल वर्त्तमानाना कर्मणा भावस्तस्मिन् १ १० ६ [सखिप्राति० भावे त्व]

सखिवान् वहवो मरुत सखायो विद्यन्ते यस्य स (विष्णु=सूर्य) १ १२६ ४ [सखिप्राति० भूमन्यर्थे मतुप्। छन्दसीर इति मतोर्वत्वम्]

सखिविदम् सखीन् सुहृदो विदन्ति येन तम् (यज्ञम्) ११ ८ [सखीत्युपपदे विद ज्ञाने (अदा०) धातो करणे क्विप्]

सखीयत: सखेवाऽऽचरत (जनात्) १ १३१.५ **सखीयताम्**=सखेवाऽऽचरताम् (प्रजाजनानाम्) ४ १७ १८ [सखिप्राति० उपमानादाचारे इत्याचारे क्यजन्ताच्छतृ]

सखीयन् आत्मन सखायमिच्छन् (मर्य=मनुष्य) ३ ३१.७ सखेवाऽऽचरन् (जन) ५ ४९ १. [सखिप्राति० आत्मन इच्छायामर्थे क्यजन्ताच्छतृ। आचारे वा क्यजन्ताच्छतृ]

सख्यम् मित्रभावम् ८ २५.७. सख्युर्भाव कर्म वा ४.२३ ५ मित्रत्वम् १.६२.६ **सख्याय**=सखित्वाय ११३८ २. **सख्येषु**=सखीना कर्मसु, भावेषु, पुत्रस्त्रीभृत्यवर्गादिषु वा १.१०.५ **सख्यैः**=मित्रकर्मभि. ६.१६ १३. [सखिप्राति० भावे कर्मणि चार्थे 'सख्युर्य.' अ० ५ १.१२६ सूत्रेण य]

सख्या सख्यु कर्माणि ७ ३२ २ सख्यानि सख्यु: कर्माणि १ १०८ ५ मित्रभावकर्माणि १.७१ १०. [सख्यमिति व्याख्यातम्। तत शेर्लोपश्छन्दसि]

सख्येभि: सखिभि कृतै कर्मभि ३ १ १६. सखीना कर्मभि ३ ३१ १८ [सख्यमिति व्याख्यानम्। ततो भिस ऐस् न भवति 'बहुल छन्दसि' ति सूत्रेण]

सगण: गणैर्विद्यार्थिना समूहै सह वर्त्तमान (विद्वज्जन) १ १०१.६ गणेन वीरसमूहेन सहित (इन्द्र=राजा) ३ ४७ ४ गणेन सह वर्त्तमान (इन्द्र) ३ ३२ ३ गणेन स्वजनसेनापरिकरेण सहित: (इन्द्र=सेनापति) ७.३७ [गणै सहेति विग्रहे सह-गणपदयो समास। 'वोपसर्जनस्य' इति सह शब्दस्य सादेश.]

सगरा: सगरोऽन्तरिक्षमवकाशो येषान्ते (अग्नय= नेतारो विद्वज्जना), प्र०—अर्श आदित्वादच् ५ ३४ सगरोऽन्तरिक्ष विद्योपदेशावकाशो येषान्ते (अग्नय) ५ ३४. **सगरेण**=अन्तरिक्षेण सह ५ ३४ [सगरप्राति० अर्श आदित्वादच् सगर अन्तरिक्षनाम निघं० १ ३ सगरा रात्रि श० १.७ २ २६]

सगर्भ्य: समानश्चासौ गर्भ सगर्भस्तस्मिन् भव (भ्राता=बन्धु), प्र०—अत्र 'सगर्भसयूथसनुताद्यन्' अ० ४ ४ ११४ इति सूत्रेण भवाऽर्थे यन् प्रत्यय ४ २० सोदर (भ्राता=बन्धु) ६ ९ [समान-गर्भपदयो समासे 'समानस्य छन्दसि०' सूत्रेण समानस्य सादेशे सगर्भ इति रूपम्। ततो भवार्थे 'सगर्भसयूथसनुताद् यन्' अ० ४ ४ ११४ सूत्रेण यन्]

सग्धिम् समान भोजनम् २८ १६ **सग्धि:**=समान-भोजनम् १८ ९ [समाना-ग्धिपदयो समासे 'समानस्य छन्दसि०' सूत्रेण समानस्य सादेश। ग्धि=अद भक्षणे (अदा०) धातो स्त्रिया क्तिन्। 'बहुल छन्दसि' अ० २ ४ ३९ सूत्रेण घस्लृ-आदेश। 'घसिभसोर्हलि चे' त्युपधालोपे, 'झलो झलि' इति सलोपे, 'झषस्तथोर्धोऽध'

सवने ता० १२.१३८ असौ वै षोडशी योऽसौ (सूर्य) तपति कौ० १७ १]

षोढा षट् प्रकारा (देवा =विद्वांसो जना) ३ ५५ १८ [षष् सख्यावाचिन प्राति० 'सख्याया विधार्थे धा' अ० ५ ३ ४२ सूत्रेण धा । तत 'षष उत्व दतृदशधासूत्तरपदादेष्टुत्व च' इति धा प्रत्यय उत्व ष्टुत्व च]

सकलम् सम्पूर्ण (भद्र =आनन्द को) स० प्र० ३ समु०, नि० ११८ [कलया सहेति विग्रहे सह-कला पदयो समासे 'वोपसर्जनस्य' अ० ६ ३ ८२ सूत्रेण सहस्थाने सादेश]

सकामान् समानस्तुल्य कामो येषान्तान् (अध्वन = मार्गान्) २६ १ [समान-कामपदयो समासे 'समानस्य 'छन्दस्यमूर्द्ध०' अ० ६ ३ ८४ सूत्रेण समानस्य सादेश]

सकृत् एकवारम् ६ ४८ २२ [सख्यावाचिन एकशब्दस्य क्रियागणने 'एकस्य सकृच्च' अ० ५ ४ १९ सूत्रेण सकृदादेश]

सकृत्स्वम् या सकृदेकवार सूते ताम् (मही =भूमिम्) ३३ २८ [सकृदुपपदे षूङ् प्राणिगर्भविमोचने (अदा०) धातो क्विप्]

सकेता: समान केत प्रज्ञा येषान्ते (देवा =श्रोत्रादीनीन्द्रियाणि) ६ ९ ५ [समान-केतस्पदयो समास । 'समानस्य छन्दसि०' अ० ६ ३ ८४ सूत्रेण सादेश । केत प्रज्ञानाम निघ० ३ ९]

सक्तव: सत्तू इति भाषायाम् १९.२१ [सच्यन्ते समवेता क्रियन्ते इति विग्रहे षच समवाये (भ्वा०) धातो 'सितनिगमिमसि०' उ० १ ६९ सूत्रेण तुन् । सक्तु सचतेर्दुर्धावो भवति । कस्तेर्वा स्याद् विपरीतस्य विकसितो भवति नि० ४ ९ देवाना वा ऽएतद् रूप यत्सक्तव श० १३ २.१ ३ प्रजापतेर्वा एतद् रूप यत् सक्तव तै० ३ ८ १४ ५]

सक्तुमिव जैसे सत्तू को, प० वि० । [सक्तुम्-इवपदयो समास । सक्तुरिति व्याख्यातम्]

सक्तुश्री: य सक्तूनि समवेतानि द्रव्याणि श्रयति स (विद्युदादिपदार्थसमूह) ८ ५७ [सक्तूपपदे श्रिञ् सेवायाम् (भ्वा०) धातो 'क्विब्वचिप्रच्छि०' अ० ३ २ १७८ वा० सूत्रेण क्विप् दीर्घश्च]

सक्थानि सक्थीनि ५ ६१ ३ **सक्थ्ना**=शरीराऽवयवेन २३ २९ **सक्थ्यो:**=पादाऽवयवयो २४ १ [षञ्ज सङ्गे (भ्वा०) धातो. 'असिसञ्जिभ्या क्थिन्' उ० ३ १५४ सूत्रेण क्थिन् । सक्थिप्राति० तृतीयादौ विभक्तौ 'अस्थिदधि०' अ० ७ १ ७५ सूत्रेणानङ् । 'अल्लोपोऽन.' इत्यल्लोपे रूपाणि भवन्ति । सक्थि सचतेरासक्तोऽस्मिन् काय नि० ९ २०]

सक्मन् य सचति तत्सम्बुद्धौ (अग्ने =सेनापते) १ ३१ ६ [षच् समवाये (भ्वा०) धातो कर्त्तरि मनिन्]

सक्म्यम् सचति सयुनक्ति यस्मिँस्तत्र भवम् (असुर्यं= असुरस्य मेघस्य स्वम्) ३ ३८ ७ [षच् समवाये (भ्वा०) धातोर्मनिन् । ततो भवार्थे यत्]

सक्रतव: समाना क्रतु प्रज्ञा येषान्ते (आदित्यास = पूर्णविद्या अध्यापका) २ २७ २ **सक्रतू**=समानक्रियौ (भा०—वायुविद्युतौ) १ ९३ ५ [समान-क्रतुपदयो समासे 'समानस्य छन्दसि०' अ० ६ ३ ८४ सूत्रेण समानस्य सादेश]

सक्षण: सोढा (मेधाविजन) ५ ४१ ४ [षह मर्षणे (भ्वा०) धातो 'कृत्यल्युटो बहुलम्' इति कर्त्तरि ल्युट् । पृषोदरादित्वात् सकारागम]

सक्षणिम् सोढारम् (शत्रुम्) १ १११ ३ **सक्षणि:**= समवेता (सूर्य), प्र०—अत्र सच-धातोरनि प्रत्यय २ ३१ ४ [षह मर्षणे (भ्वा०) धातोर्बाहु० औणा० अनि । पृषोदरादिना सकारागम । षच समवाये (भ्वा०) धातोर्वाऽनि सकारोपजनश्च]

सक्षत् सम्बध्नीयात् १ १२९ १० समवैति ५ ३० ६ **सक्षि**=सम्बध्नासि ५ ३३ २ **सक्षीमहि**=सम्बध्नीयाम ७ ५४ ३ प्राप्नुयाम ७ ३९ ३ **सक्ष्व**=सक्तो भव १ ४२ १ [षच समवाये (भ्वा०) धातोर्लेट् । सिव्-विकरण । शपो लुक् च । अन्यत्र लट् लिङ् लोट् च । सक्षति गतिकर्मा निघ० २ १४]

सक्षन्त: सहन्त (स्त्रीपुरुषा). प्र०—अत्र सहधातो पृषोदरादिवत्सकारागम १ १३१ ३ [षह मर्षणे (भ्वा०) धातो शतृ । व्यत्ययेन परस्मैपदम् । पृषोदरादिना च सकारागम]

सक्षित: समाननिवासा (ऊनय =रक्षणादीनि कर्माणि) ६ ४४ ६ **सक्षितौ**=सह निवसन्त्यौ (मातरा= धात्रीजनन्यौ) १ १४० ३ [समान-क्षितपदयो समासे 'समानस्य छन्दसि०' अ० ६ ३ ८४ सूत्रेण समानस्य सादेश । क्षित.=क्षि निवासगत्यो (तुदा०) धातोर्भावे क्त]

सखा सुखप्रद (विद्वज्जन) १ ७५ ४ सर्वस्य मित्र सर्वसुखसम्पादकत्वात् (विष्णु =व्यापकेश्वर) १ २२ १९ सौहार्देन सुखप्रद (इन्द्र =परमेश्वर) १ ४ १० मित्र.

लिडि 'वाच्छन्दसि सर्वे विधयो भवन्ति' इतीडागम 'गमहन जन०' ग्र० ६ ४ ९८ इत्युपधालोपश्च ३ १९ [सम्+ गम्लृ गतौ (भ्वा०) धातोराशिषि लिङ्]

सङ्ग्रहीतृभ्यः ये युद्धार्थास्सामग्री सम्यग् गृह्णन्ति तेभ्य (राजपुरुषेभ्य) १६ २६ [सम्+ग्रह उपादाने (क्र्या०) धातो कर्त्तरि तृच्। 'ग्रहोऽलिटि दीर्घ' इतीटो दीर्घ]

सङ्घातं सङ्घातम् सम्यग्घन्यन्ते जना यस्मिन् त सङ्ग्राम सङ्ग्रामम् १ १६ [सङ्घातम्-पदस्य वीप्साया द्वित्वम्। सङ्घात इति सग्रामनाम निघ० २ १७ सम्+ हन हिसागत्यो (ग्रदा०) धातोर्घञ्]

सङ्घाते सम्बन्धे २८ १३ [पूर्वपदे व्याख्यातम्]

सचत प्राप्नुत ४ ५ ९ **सचताम्**=समवैतु १३ ३० समवेतान् करोतु ऋ० भू० १४९, २ १० समवैति, भा०—सेवताम् १३ ३० **सचते**=समवैति १ ९१ १४ प्राप्नोति १ १४० ९ सम्बध्नाति १ १८० ५ **सचन्त**=प्राप्नुत १ १५६ ४ सङ्गमयन्ति २ ५ ५ सेवन्ताम् १ ७३ ४ लभन्ते १ १६४ ५० समवयन्ति ३ १ १४ सम्बध्नन्ति ५ १७ ५ **सचन्ताम्**=सयुञ्जन्तु १७ ४४ समवयन्तु १३ १ समवेता: प्राप्ता भवन्तु २ १० **सचन्ते**=सेवन्ते १ १०० १३ समवयन्ति १ ६० २ **सचसे**=युनक्षि १५ २३ समवैषि १३ १५ सम्बध्नामि ४ ११ ६ **सचस्व**=समवेहि प्राप्नुहि १ १२९ ६ सयोजय ३ २४ **सचावहै**=सम्बध्नीयाव ६ ५५ १ **सचेत**=सम्बध्नीत ५ ५२ १५ **सचेताम्**=प्राप्नुताम् १ १८५ ६ **सचेते**=सम्बध्नीत २४१ ६ समवेत १ १३६ ३ **सचेथे**=सवेते १ १८० १ सङ्गच्छेथाम् १ ११६ १७ सयुङ्क्थ १ १८३ २ सङ्गच्छेथे १ १५२ १ सेवेथे १ १८० १ सम्बध्नीथ २ ३९ २ **सचेमहि**=समवेयाम ३ ५५ व्याप्नुयाम १ १३६ ६ सङ्गता भवेम २ ८ ६ सयुञ्ज्महि ५ ५० २ **सचेवहि**= कटिबद्ध सदा रहे स० वि० १४०, ग्रथर्व० १४ २ ७२ [षच् समवाये (भ्वा०) धातोर्लोट्। सचति गतिकर्मा निघ० २ १४ पच् सेचने सेवने च (भ्वा०) धातोर्वा लोट्। ग्रन्यत्र लट् लिङ् च। सचता ग्रासेवध्वम् नि० ९ २६ सचते द्विश उत्तरनाम निघ० ३ २९ सचन्ताम्= ससेव्यन्ताम् नि० ९ ३३ सचन्ते सेवन्ते नि० ७ २३ सचस्वा सेवस्व नि० ३ २१]

सचथाय प्राप्तसम्बन्धाय (विद्वज्जनाय) १ १५६ ५ [पच् समवाये (भ्वा०) धातोर्वाहु० ग्रौणा० ग्रथ]

सचथ्यैः सचयेषु समवायेषु भवै (जनै) ५.५०.२ [सचथ इति व्याख्यातम्। ततो भवार्थे यत्]

सचध्यै सचितु सयोक्तुम् १ १६७ ५ [पच् समवाये (भ्वा०) धातोस्तुमर्थेऽध्यैन्]

सचनस्य समवेतस्य (परमविद्वज्जनस्य) ६ ३९ १ **सचन:**=सर्वै सेनाङ्गै स्वाङ्गैश्च समवेत (रथ) १ ११९ १८ **सचना:**=समवैतु योग्या (राय=धनानि) १ १२७ ११ [पच् समवाये (भ्वा०) धातोर्ल्युट्]

सचमाना: सम्बध्नन्त (धनाढ्या जना) ५ ४२ ८ **सचमानौ**=सम्बद्धौ (रोहितौ=विद्युत्पावकौ) ५ ३६ ६ [षच् समवाये (भ्वा०) धातो शानच्। व्यत्ययेनात्मनेपदम्]

सचा ज्ञानेन, सत्कर्मसु समवायेन वा १ १० ४ शिष्टसमवायेन सह १ ६३ ३ सत्यसयोगेन ४ १ ३ सत्येन ४.५ १० सम्बन्धेन ३ ५४ २ प्रसङ्गेन ४ ३ ९ विज्ञानेन ३ ६० ४ समवेतेन सत्येन ६ ४५ २२ मुखसमवेतेन (बलेन) १ ८१ ८ सत्यसमवायेन ३४ ५६ सङ्गत्या १ ७१ ४ सत्याचारेण ४ ३२ ४ विज्ञानप्रापकेण गुणसमूहेन १ ५१ ११ ग्रत्यन्त प्रेम से ग्रार्याभि० १.९, ऋ० १ १ ९ २ [पच समवाये (भ्वा०) पच सेचने सेवने च (भ्वा०) ग्रथवा सचति गतिकर्मा (निघ० २ १४) धातो क्विप्। ततस्तृतीयैकवचने रूपम्]

सचा सचन्ति ये ते सचास्तान् सचानग्मान् विदुष', प्र०—ग्रत्र शस स्थाने 'सुपा सुलुक्०' इत्याकारादेश सचेति पदनामसु पठितम् निघ० ४ २ ग्रनेन ज्ञानप्राप्त्यर्थो गृह्यते १ ९ ३ समवेता (शुक्रा=शुद्धा किरणा) १ १३५ ३ सचयो समवेतयो (इन्द्रयो=वायुसूर्ययो) १ ७ २ समूहे ३ ५३ १० सम्बन्धी (जन) ५ ४४ १२ सम्बद्ध (विद्वज्जन) ५ १६ ५ समवेता (राजा) ६ २४ १ यज्ञविज्ञानयुक्तान् (विदुष) १ ९३ ११ सयुक्तान् (शिष्यान्) १ १६१.५ समवेतम् (सद्गुणसम्बद्धम्) १ १४० ७ सम्बन्धि (क्षय=निवासस्थानम्) ५ ४८ ४ समवाये ५ ७४ २ [षच् समवाये (भ्वा०) धातो कर्त्तरि पचाद्यच्। तत शसो जसो ङे सोश्च स्थाने 'सुपा सुलुक्०' सूत्रेणाकारादेश]

सचा सत्यसमवेतौ (ग्रश्विना=सभासेनेशौ) १० ३३ सयुक्तौ (ग्रश्विना=ग्रध्यापकोपदेशकौ) २० ६८. सम्बन्धिनौ (इन्द्राग्नी=ग्रध्यापकोपदेशकौ) ३ १२ २ सम्बद्धौ (रोदसी=भूमिसूर्यौ) ५ ५६ ८. [षच् समवाये (भ्वा०)

इनि धत्वे 'न पदान्तद्विर्वचन०' इत्युपधालोपस्य स्थानिवद्-भावनिषेधाद् 'झला जश् झशि' अ० ८ ४ ५३ सूत्रेण जश्त्वे ग्धिरिति रूपम् । सग्धिम् सहजग्धिम् नि० ६.४३]

सग्मे गच्छतीति ग्मा पृथिवी तया सह वर्त्तते तस्मिन् यज्ञे, भा०--परमेश्वरस्योपासनादिलक्षणे यज्ञे, प्र०--ग्मेति पृथिवीनामसु पठितम् निघ० १ १, ४ २६ [ग्मया सहेति विग्रहे सह-ग्मापदयो समासे 'वोपसर्जनस्ये' ति सादेशे रूपम् । ग्मा पृथिवीनाम निघ० १ १ सग्मन् सग्रामनाम निघ० २ १७]

सघत् हिंसन् (इन्द्र =जगदीश्वर), प्र०--अत्र 'बहुल छन्दसि' इति श्नोर्लुक् १ ५७.४ [षघ हिंसायाम् (स्वा०) धातो शतृ । विकरणव्यत्ययेन शप्]

सङ्काः सङ्ग्रामस्थान् (पृतना =शत्रुसेना) ६ ७५ ५ समवेता विकीर्णा वा (पृतना) २६ ४२ [सङ्का सग्राम-नाम निघ० २ १७ सङ्का सचते सम्पूर्वाद्वा किरते नि० ६ १४.]

सङ्किर सम्यग् विक्षिप ६ ४६ २ प्रापय २७ ३८ [सम्+कृ विक्षेपे (तुदा०) धातोर्लोट्]

सङ्क्रन्दनः सम्यक् शत्रूणा रोदयिता (इन्द्र =सेनेश) १७ ३३ [सम्+क्रदि आह्वाने रोदने च (भ्वा०) धातो नन्द्यादित्वाल् ल्यु]

सङ्क्रमः सम्यक् क्रमन्ते यस्मिँस्तस्य विज्ञापक (विद्वन्मनुष्य) १५ ६ **सङ्क्रमाय**=पदार्थज्ञानाय १५ ६. [सम्+क्रमु पादविक्षेपे (भ्वा०) धातोर्घञ्]

सङ्क्रोशमानाः आक्रोश कुर्वाणा (नद्य) ४ १८ ६ [सम्+क्रुश आह्वाने रोदने च (भ्वा०) धातो शानच् । व्यत्ययेनात्मनेपदम्]

सङ्क्रोशैः सम्यगाह्वानै २५ २ [सम्+क्रुश आह्वाने रोदने च (भ्वा०) धातोर्घञ्]

सङ्गच्छतु मिश्रीभावेन गच्छति २ २२ **सङ्गच्छ-ध्वम्**=सम्यक् प्राप्नुताऽर्थात् तत्प्राप्त्यर्थं सर्वविरोध विहाय परस्पर सङ्गता भवत ऋ० भू० ९२, १० १९१ २ सम्यक् मिलकर प्राप्त होवो स० वि० १८७, १० १९१ २ **सङ्गमे-महि**=सङ्गच्छेमहि ५ ५१ १५ [सम्+गम्लृ गतौ (भ्वा०) धातोर्लोट् । 'समो गम्यृच्छिभ्याम्' अ० १ ३.२९ सूत्रेण 'वा छन्दसि' इति विकल्पेनात्मनेपदम् । अन्यत्र लिङ्]

सङ्गच्छमाने सहगामिन्यौ (जामी=कन्ये) १.१८५.५. [सम्+गम्लृ गतौ (भ्वा०) धातो शानच् । ततष्टाप् स्त्रियाम् । 'समो गम्यृच्छिभ्याम्' इत्यात्मनेपदम्]

सङ्गत सम्यग् विजानीत ३७ १५ एकीभावेन प्राप्नुत प्र०--अत्र लोटि शपो लुक् ३७ १४ [सम्+गम्लृ गतौ (भ्वा०) धातोर्लोट् । 'बहुल छन्दसी' ति शपो लुक्]

सङ्गतेभ्यः योग्येभ्य (पुरुषेभ्य) २१ ६१ [सम्+गम्लृ गतौ (भ्वा०) धातो क्त]

सङ्गत्य एकीभूय १२ ६४ [सम्+गम्लृ गतौ (भ्वा०) क्त्वा । समासे क्त्वो ल्यप्]

सङ्गथे सङ्ग्रामे १ ६१ १६ [सगथे सग्रामनाम निघ० २ १७]

सङ्गमनः य सम्यग् गमयति स (परमेश्वर) १ ९६ ६ सम्यग् गन्ता (पुरुष) १२ ६६ [सम्+गम्लृ गतौ (भ्वा०) धातो 'कृत्यल्युटो बहुलम्' इति कर्त्तरि ल्युट्]

सङ्गमे सङ्ग्रामे समागमे वा ३३ ८६ मेलने २६ १५ [सगमे सग्रामनाम निघ० २ १७ सगमे सगमने नि० १०.३६]

सङ्गवे सङ्गच्छन्ति गावो यस्मिन् सायसमये तस्मिन् ५ ७६ ३ [सम्+गम्लृ गतौ (भ्वा०) धातोर्डु । सङ्गु-प्राति० चतुर्थी । विभक्तिव्यत्यय । अथवा सम्-गोपदयो समासे सङ्गु । ततश्चतुर्थी । विभक्तिव्यत्यय]

सङ्गृणीते सम्यगुपदिशति ४ २५ ७ [सम्+गॄ शब्दे (क्र्या०) धातोर्लट् । व्यत्ययेनात्मनेपदम्]

सङ्गृभाय सम्यग् गृहाण १ ८१ ७ **सङ्गृभायति**=सङ्गृह्णाति, प्र०--अत्र हस्य भ., श्न शायच् १ १४० ७ [सम्+ग्रह उपादाने (क्र्या०) धातोर्लोट् । 'छन्दसि शायजपि' इति श्न शायच् । अन्यत्र लटि श्न शायच् । 'हृग्रहोर्भश्छन्दसी' ति धातोर्हकारस्य भकार]

सङ्गृभीता सम्यग् गृहीतानि सेनाङ्गानि, प्र०--अत्र ग्रह-धातोर्हस्य भत्वम् १ १०० ६ [सम्+ग्रह उपादाने (क्र्या०) धातो क्तान्ताच्छेर्लोपश्छन्दसि । धातोर्हस्य भकार । 'ग्रहोऽलिटि दीर्घ' इतीटो दीर्घत्वम्]

सङ्गृभ्णाः सङ्गृह्णीया ३ ३० ५ [सम्+ग्रह उपादाने (क्र्या०) धातोर्लङ् । अटोऽभावो हस्य च भकार । सङ्गृभ्णा सङ्गृभ्णासि नि० ६ १]

सङ्गृभ्य सम्यग् गृहीत्वा ३ ५४ १५ [सम्+ग्रह उपादाने (क्र्या०) धातो क्त्वा । समासे क्त्वो ल्यप् । धातोर्हस्य भकार]

सङ्गे सह २० ४८ [सम्+गम्लृ गतौ (भ्वा०) धातोर्डश्छान्दस]

संगिमषीय सम्यक् प्राप्नुयाम्, प्र०--अत्राऽऽशिषि

समासे 'वोपसर्जनस्ये' ति सादेशे रूपम् । जित्वरी=जि जये (भ्वा०) धातोस्तच्छीलादिषु 'इण्नशजिसर्तिभ्य: क्वरप्' इति क्वरप् । तत स्त्रियाम् 'टिड्ढाणञ्०' अ० ४.१.१५ सूत्रेण ङीप्]

सजित्वानम् समानानां शत्रूणां विजयकारकम् (रयिं=धनम्), प्र०—अत्र 'अन्येभ्योऽपि दृश्यते' अ० ३ २ ७५ अनेन जि-धातोः क्वनिप् प्रत्ययः १ ८ १. [समान-जित्वन्पदयोः समासे समानस्य सादेशे रूपम् । जित्वन्=जि जये (भ्वा०) धातोः कर्त्तरि क्वनिप्]

सजित्वाना जयशीलैः वीरैः सह वर्त्तमानौ (इन्द्राग्नी=सभासेनेशौ) ३ १२ ४ [सजित्वन् इति पूर्वपदे व्याख्यातम् ततो द्विवचनस्याकारादेशः]

सजूः समानं सेवनं यस्य सः (इन्द्र:=विद्युदग्निः), प्र०—इदं जुषी इत्यस्य क्विबन्तं रूपम् 'समानस्य छन्दस्य०' इति समानस्य सकारादेशश्च १ २३ ७. यः समानं जुषते प्रीणाति सः (अग्नि:=भौतिकः) ३ १० समानप्रीतिसेवी (विद्वज्जनः) ५ ६० ८ यः समानान् जुषते सः (विद्वज्जनः) १ ४४ २ सह वर्त्तमानः (उषा:=प्रभातः) १२ ७४ सहितः (सूर:=सूर्यः) १२ ७४ सयुक्तः (विद्वज्जनः) ६.४७ १९ मित्रमिव ६ ११. [समान-जुष्पदयोः समासे समानस्य सादेशे च रूपम् । जुष्=जुषी प्रीतिसेवनयोः (तुदा०) धातोः क्विप् । सजुष्प्राति० सुलोपे रुत्वे च 'र्वोरुपधाया दीर्घ इकः' अ० ८ २ ७६ सूत्रेणोपधाया इको दीर्घः । सजूः=सह जोषेण नि० ६ १३ सजूः (यजु० १४ ७) अर्थैवैतद् यजमानः एताभिर्देवताभिः (ऋत्वादिभिः) सयुग्भूत्वैताः प्रजाः प्रजनयति तस्माद् सर्वास्वेव राजूः सजूरित्यनुवर्त्तते श० ८ २ २ ७]

सजोषस: समानप्रीतिसेविनः (विद्वांसो जनाः) ५ २१ ३ समानसेवाप्रीतयः, भा०—परस्परं प्रीतिमन्तः (अग्नयः=विद्वांसो जनाः) १२ ५० समानोत्तमगुणकर्मस्वभावसेविनः (ऋभवः=मेधाविनः) ४ ३४ ८ समानं धर्मं सेवमानाः (विद्वज्जनाः) १ १३६ ४ समानो जोषः प्रीतिः सेवनं वा येषान्ते (सर्वविद्वांसः) १ ४३ ३ **सजोषसौ**=समानसेवनौ (अश्विना=प्राणापानाविव दम्पती) १२ ७४. **सजोषा:**=समानप्रीतिसेवनः (विद्वज्जनः) १ १८६ २ समानप्रेमा (राजा) १ ११८ ११ समानप्रीतिसेवी (ईश्वर आप्तमनुष्यो वा) १ ६०.१. उत्तमप्रीतियुक्तः (ईश्वरः) आर्याभि० १ १८, ऋ० १ ६ १७ १. समानैः सेविता (इडा=स्ताविका वाक्) २९ ८ समानप्रीतिः (सप्तिः=शिल्पी विद्वज्जनः) २९.३ आत्मसमानप्रीतिं सेवमानः सन् (इन्द्र=दुःखविदारकः सज्जनः) ३ ३२.२ समानसेवनप्रीतिः ३ ४ ८ सह वर्त्तमानः (इन्द्र:=सूर्यः) २०.३९ व्याप्तः सन् प्रीतः प्रसन्नः (अग्नि:=जगदीश्वरः) ७ ५ ९. समानप्रीत्या सेवनीयः (मित्र:=प्राणः) ७ ६० ४ समानप्रीतिसेविका (कन्या=कमनीया पत्नी) ६ ४९ ७. स्वात्मवदन्येषां प्रीत्या सेवकः (यज्ञः=शिष्यः) ६ ६८ १. समानं जोषः प्रीतिर्यस्य सः (इन्द्र:=सेनापतिः) ७ ३७ समानप्रीतिसेवनी (धिषणा=प्रज्ञा) ५ ४१ ८ सहैव सेवमानः (विद्वज्जनः) ५ ४१ ४. समानप्रीतिसेविनः (देवास:=विद्वांसो जनाः), प्र०—अत्र वचनव्यत्ययेन जसः स्थाने सुः ७ ४८.४ सर्वत्र समानप्रीतिसेवनाः (धीरा जनाः) १ ६५ १. समानसुखदुःखप्रीतयः २ ३१ ४ सह वर्त्तमानः (इन्द्र:=सूर्यः) २० ३९ **सजोषोभ्याम्**=यौ जोषसा सेवनेन सह वर्त्तमानौ ताभ्याम् (इन्द्रवायूभ्याम्=विद्युत्प्राणाभ्याम्) ७ ८ [समान-जोषस्पदयोः समासे समानस्य सादेशे जसि रूपम् । जोषस्=जुषी प्रीतिसेवनयोः (तुदा०) धातोरौणा० असुन् । अथवा सह-जोषस्पदयोः समासे 'वोपसर्जनस्य' सूत्रेण सादेशे रूपम् । सजोषाः=सहजोषणः नि० ८ ८ सजोषसः=सहजोषणाः नि० ११ १५]

सजोषसा समानं जोषं सेवनं ययोस्तौ (अश्विना=अध्यापकोपदेशकौ) २० ९० समानप्रीतिकामौ (इन्द्रवायू=अध्यापकोपदेशकौ) ४ ४६.६ [सजोषस् इति व्याख्यातम् । ततो द्विवचनस्याकारादेशश्छान्दसः]

सजोष: समानप्रीतिसेविनः (नर:=नायकाः जनाः) ६ २ ३ [समान-जोष्पदयोः समासे समानस्य सादेशे च रूपम् । जोष्=जुषी प्रीतिसेवनयोः (तुदा०) धातोः 'अन्येभ्योऽपि दृश्यन्ते' अ० ३ २ ७५ सूत्रेण विच्]

सञ्चकान: सम्यक् कामयमानः (राजा) ५ ३० ७. [सम्+चक तृप्तौ प्रतिघाते च (भ्वा०) धातोः शानच्]

सञ्चक्षाण: सम्यक् कामयन्नुपदिशन्वा (देव:=विद्वज्जनः) ६.५८ २ [सम्+चक्षिङ् व्यक्तायां वाचि (अदा०) धातोः शानच्]

सञ्चक्षि समक्षे ६ १४ ४ [सम्+चक्षिङ् व्यक्तायां वाचि, अयं दर्शनेऽपि (अदा०) धातोः क्विप् भावे]

सञ्चक्षे सम्यक् प्रख्यातुम् ७ १८ २० सम्यगाख्यानाय १ १२७.११ [सम्+चक्षिङ् व्यक्तायां वाचि (अदा०) धातोस्तुमर्थे एश् छान्दसः]

सञ्चक्ष्य सम्यगध्याप्योपदिश्य वा १ १६५ १२.

धातो पचाद्यच् । ततो द्विवचनस्याकारादेश । सचा पदनाम निघ० ४.२]

सचा सहार्थे १ १३६ ७ [सचा सह नि० ५ ५.]

सचा समवेता (स्त्री) ५ ५६ ६ [पच् समवाये (भ्वा०) धातो पचाद्यच् । तत स्त्रिया टाप् । औणा० वा अन् प्रत्यय]

सचानः समवेत (सूर्य) ६ २० २ [पच् समवाये (भ्वा०) धातोर्बाहु० औणा० आनच्]

सचाभुवम् सचा विज्ञानादिना भावयन्तीम् (मातर=जननीम्) १ १११ १ य समवाये भवति तम्, सत्य भावुकम् (परमेश्वरम्) १ १३१ ३. **सचाभुवः**=ये सचा परस्पर सङ्गचनुपङ्गिनो भवन्ति ते (कर्मकृत=पुरुषार्थिजना) ३ ४७ [सचा पदनाम निघ० ४ २. षच् समवाये (भ्वा०) धातोर्भावे क्विबन्तात् टापि सचेति रूपम् । तदुपपदे भू सत्तायान् (भ्वा०) धातो क्विप्]

सचाभुवा यौ सत्येन पुरुषार्थेन सह भवतस्तौ (अश्विना=राजप्रजाजनौ) ३४ ४७ *यौ* सचा समवाय भावयतस्तौ (अश्विना=जलाग्नी), प्र०—अत्राऽन्तर्गतो ण्यर्थ १ ३४ ११. सहकारिणौ (अश्विना=अध्यापकोपदेशकौ) १ १५७ ४ सचेन गुणसमवायेन सह भवन्तौ (मित्रावरुणा=राजप्रजाजनौ) २ ३१ १ [सचा इत्युपपदे भू सत्तायाम् (भ्वा०) धातो क्विप् । ततो द्विवचनस्याकारादेश । सचा=पच् समवाये (भ्वा०) धातोः क्विप् । ततष्टाप्रत्यय । सचभुवा सहभुवौ नि० ५ ५]

सचिविदम् सब से प्रीति प्रेमभाव से सब को सुख प्राप्त कराने वाले (मित्र परमेश्वर) को प० वि० । [सचा इत्युपपदे विद्लृ लाभे (तुदा०) धातो क्विप् । पूर्वपदस्येत्व वर्णव्यत्ययेन]

सचेतसः ये चेतसा प्रज्ञया सह वर्त्तन्ते ते (देवा.=विद्वज्जना) १८ ७६ **सचेतसौ**=समान चेतस ज्ञान सज्ञापन ययोस्तौ (अध्येत्रध्यापकौ) ५ ३ समानसज्ञानौ (विवाहितस्त्रीपुरुषौ) १२ ६० **सचेताः**=समान चेतो विज्ञान सज्ञापन वा यस्य स (इन्द्र=सेनाधिपति) १ ६१ १० चेतसा प्रज्ञया सहित (सूर्यवद्राजा) ४ १६ ७ [समान-चेतस्पदयो समासे 'समानस्य छन्दसि०' इति समानस्य सादेशे रूपम् । चेतस् प्रज्ञानाम निघ० ३ ९]

सच्छन्दाः समानानि छन्दासि यासु ता (प्रजा) २३ ३४. [समान-छन्दस्पदयो समासे समानस्य सादेशे रूपम्]

सजन्या समानैर्जन्यै सह वर्त्तमानानि (अन्नानि) ४ ५० ६ [सजन्यप्राति० शेर्लोपश्छन्दसि । सजन्यम्=समान-जन्यपदयो समास । जन्यम्=जनी प्रादुर्भावे (दिवा०) धातो 'तकिशसिचतियनिजनीनाम्०' इनि वा० सूत्रेण यत्]

सजातवनि जात जात वनति स जातवनि, समानश्चाऽसौ जातवनिस्तम्, भा०—य समानजन्मभिर्मनुष्यैर्वन्यते ससेव्यते तम् (परमेश्वरम्), प्र०—'समानस्य छन्दस्यमूर्द्धप्रभृत्युदर्केषु' अ० ६ ३ ८४ अनेन समानस्य सकारादेश, अत्राऽसो लुक् व १ १७ समाना जाता विद्या, समान जात राज्य वा वनयति येन तम् (परमेश्वर भौतिकमग्नि वा) १ १८, समानान् जातान् वेदान्, क्षत्रधर्मान्, मूर्त्तान् जगत्स्थान् पदार्थान्वा वनयति प्रकाशयति तम् (परमेश्वर भौतिकमग्नि वा) १ १८ [समान-जातवनिपदयो समासे समानस्य सादेश । जातवनि=जातोपपदे वन सम्भक्तौ (भ्वा०) धातो 'छन्दसि वनसनरक्षिमथाम्' इतीन् । अथवा समान-जातपदयो समासे सजात । तदुपपदे वन सम्भक्तौ (भ्वा०) धातोरिन्]

सजातः सहैव जात (व्यक्ति) ५ २३ **सजातान्**=सहोत्पन्नान् (विद्यार्थिजनान्) १ १०९ १ समानात्प्रादुर्भावादुत्पन्नान् (पुत्रान्) ११ ५८ **सजातानाम्**=जातै सह वर्त्तमानानाम् (राजप्रजाजनानाम्) १० २९ समानजन्मनाम् (देवानाम्=विदुषा योद्धॄणाम्) १७ ५१ **सजाताः**=समानदेशे जाता उत्पन्ना (सखाय=सुहृज्जना) १७ ३८ [समान-जातपदयो, सह-जातपदयोर्वा समास । सह-समानयो स्थाने सादेश क्रमश 'वोपसर्जनस्य, 'समानस्य छन्दसि०' सूत्राभ्याम् । जात=जनी प्रादुर्भावे (दिवा०) धातो क्त । प्राणा वै सजाता प्राणैर्हि सह जायते श० १ ९ १ १५ भूमा वै सजाता श० १ २ १ ७]

सजात्यम् समानजातौ भवम् (नाम) ३ ५४ १६ समानासु जातिषु भवम् (प्रेम) २ १ ५ **सजात्यानाम्**=अस्मद्विधानाम् (मनुष्याणाम्) ३३ ४७ [समान-जातिपदयो समासे समानस्य सादेशे सजाति । ततो भवार्थे यत् । सजात्य समानजातिता नि० ६ १४]

सजामि सयुनज्मि १ १६१ १० [षञ्ज सङ्गे (भ्वा०) धातोर्लट् । 'दससञ्जस्वञ्जा शपि' अ० ६ ४ २५ सूत्रेणोपधाया नकारस्य लोप]

सजित्वरीः शरीरै सह सयुक्तान् रोगान् जेतु शीला (ओषधी=सोमादीन्) १२ ७७. [सह-जित्वरीपदयो

शत्रवो येन तम् (इन्द्रम्) ३ ३२ १७ सम्यग् जयति येन तम् (इन्द्र=विद्युतम्) ३ ३९ ९ **सञ्जितः**=सम्यग् जेता (इन्द्र=सूर्य.) ५ ४२ ५ [सम्+जि जये (भ्वा०) धातो क्त]

सञ्जिहानम् अधिकरण त्यजन्तम् (सज्जनम्) ७ ३३ १० [सम्+ओहाक् त्यागे (जु०) धातो शानच् व्यत्ययेनात्मनेपदम्]

सञ्जुषताम् भा०—युक्त्या सेवताम् ३८ १६ [सम्+जुषी प्रीतिसेवनयो (तुदा०) धातोर्लोट्]

सञ्ज्ञातरूपः सम्यग् ज्ञात येन स (विद्वज्जन) १ ६९ ५ [सम्-ज्ञातपदयो समास । तत 'प्रशसाया रूपप्' अ० ५ ३.६६ सूत्रेण रूपप्]

सञ्ज्ञानम् सम्यग्विज्ञानम् १२ ४६ अच्छे प्रकार चिताना स० वि० १४२, अथर्व० ३ ३० ४ **सञ्ज्ञानाय**= सम्यग् ज्ञान कामप्रबोध तरमै ३० ९ [सम्+ज्ञा अवबोधने (क्र्या०) धातोर्ल्युट्]

सत् प्रकृत्यात्मकमव्यक्त सत्सञ्ज्ञक जगत्कारणम् ऋ० भू० ११६ यद् वर्त्तते तत् (हवि) ५ ४४ ३ वर्त्तमानम् (ब्रह्म) ४ ५ १० प्रमादरहित सत्य ज्ञानम् ६ २७ २ नित्यम् (ईश्वरम्) ३२ ६. यथार्थम् ६ २७ २ विद्यमानम् (ब्रह्म) १ १६४ ४६ **सतः**=अनादिवर्त्तमानस्य विनाशरहितस्य कारणस्य १ ६६ ७ सत्पुरुषस्य ४ ६ ६ विद्यमानस्य व्यक्तस्य (कार्यजगत) १३ ३ विद्यमानानुत्तमान् पदार्थान् २.३२ सत्यस्वरूपस्य (ईश्वरस्य) ३३ ३६ [अस् भुवि (अदा०) धातो शतृ । सत् उदकनाम निघ० १ १२ तयो (सदसतो) यत् सत् तत् साम तन्मनस्स प्राण जै० उ० १ ५३ २ सदमृतम् श० १४ ४ १ ३१]

सतः सतः विद्यमानस्य विद्यमानस्य (कार्यकारणरूपाया सृष्टे) ३ ३१ ८ [सत पदस्य वीप्साया द्वित्वम् । सत =अस भुवि (अदा०) धातो शत्रन्तात् षष्ठी]

सती सद्गुणयुक्ता (स्त्री) ६ ३५ वर्त्तमाना (भूमि) ६ ४७ २० पतिव्रता (स्त्री) ४ ३ ६ **सतीः**=विद्यमाना प्रकृती ३ ३१ ५ विद्यासुशिक्षादिशुभगुणसहिता (स्त्रिय) १ १६४ १६ [सती=अस भुवि (अदा०) धातो शत्रन्तान् ङीप्]

सतीनकङ्कतः सतीनमिव चञ्चल (जन), १ १९१ २ [सतीन-कङ्कतपदयो समास । सतीनम् उदकनाम निघ० १ १२ कङ्कत =ककि गत्यर्थे (भ्वा०) धातोर्बाहु० औणा० अतच्]

सतीनसत्वा य सतीन जल सादयति स (इन्द्र= सूर्यलोक) १ १०० १ [सतीनोपपदे षद्लृ विशरणगत्यवसादनेषु (भ्वा०) धातोर्वनिप् । सतीनम् उदकनाम निघ० १ १२]

सतेन विभक्तेन कर्मणा १९ २७ उत्तमाऽवयवैर्विभक्तेन शिरसा १९ ८८ [सत इत्युत्तरनाम निघ० ३ ३९ सत इति प्राप्तस्य ··· सत ससृत भवति नि० ३ २०]

सतोवीराः सतो विद्यमानस्य सैन्यस्य मध्ये वीरा प्राप्तयुद्धविद्याशिक्षा राजपुरुषा. २९ ४६ सत्त्वबलोपेता. (राजपुरुषा) ६ ७५ ९ [सत-वीरपदयो समासे षष्ठ्या अलुक् छान्दस । सत =अस भुवि (अदा०) धातो शत्रन्तात् षष्ठी]

सत्तः अविद्यादिदोषान् हिंसित्वा विज्ञानप्रद (विद्वज्जन), प्र०—अत्र बाहुलकात् षद्लृधातोरौणादिक क्त प्रत्यय १ १०५ १३ निषण्ण (मनुष्य) ७ ४२ २ प्रतिष्ठित (होता=दातृजन) २ ३६ ६ विज्ञानवान् दुःखहन्ता (विद्वज्जन) १ १०५ १४ [षद्लृ विशरणगत्यवसादनेषु (भ्वा०) धातोर्बाहु० औणा० क्त]

सत्ता दत्त (विद्वज्जन) ३ १७.५ [षद्लृ विशरणगत्यवसादनेषु (भ्वा०) धातो तृच् । क्तो वा । तत्राकारस्याकारादेश]

सत्त्वभिः पदार्थै ५ ३४ ८ [सत्प्राति० भावे त्व । सत्=अस भुवि (अदा०) धातो शतृ । सत्त्वै कर्मभि नि० ६ ३० सत्त्व तु मध्ये विशुद्ध तिष्ठति नि० १३ १६]

सत्पतिम् सदीश्वरस्य वेदस्य धर्मस्य जनस्य वा पालकम् (इन्द्र=परमैश्वर्यम्) १२ ५६ सदविनाशी चाऽसौ पति पालकश्च तम्, यद्वा सतामविनाशिना कारणाना जीवानाञ्च पालकस्तम् (इन्द्र=परमात्मानम्) १७ ६१ य सता सद्व्यवहाराणा सत्पुरुषाणा वा पति पालकस्त न्यायाधीश राजानम् १ ११ १ सत्यस्य प्रचारेण पालकम् (इन्द्र=राजानम्) २७ ३७ सता पात्रम् (राजानम्) ६ २९ २ **सत्पतिः**—सता पालयिता जन १ ५४ ७ सतोऽविनाशिन कारणस्य, विद्यमानस्य, कार्यस्य, सत्यपथ्यकारिणा वा पालक (परमेश्वर ओषधिराजो वा) १ ९१ ५ सता धार्मिकाणा पति सत्याचाररक्षको वा (इन्द्र=राजा) १ १३० १ वेदाना सत्पुरुषाणा वा पालक (राजा) १ १७४ १ सत उदकस्य पालक (सूर्य), ६ १३ ३ सता पुरुषाणा वा पालक (इन्द्र =सेनापति) १ १०० ६ [सत्-पतिपदयो समास]

[सम्+चक्षिङ् व्यक्तायां वाचि (अदा०) धातो क्त्वा समासे क्त्वो ल्यप्]

सञ्चरणीः या सम्यक् चरन्ति ता भूमय ६ २४ ४ [सम्+चर गतौ (भ्वा०) धातोर्ल्युडन्तान् स्त्रिया डीप्]

सञ्चरणे सङ्गमने १ ५६ २ सम्यग् गमने ४ ५५ ६. [सम्+चर गतौ (भ्वा०) धातोर्ल्युट्]

सञ्चरन्ति सम्यग् गच्छन्ति, प्राप्नुवन्ति ५ १ ४ **सञ्चरन्तु**=सविलसन्तु ४ ८ ७ [सम्+चर गतौ (भ्वा०) धातोर्लट् । अन्यत्र लोट्]

सञ्चरन्ती सम्यग् गच्छन्ती (अ०—द्यावापृथिव्यौ) १ १४६ ३ सम्यग्गच्छन्त्यौ जानन्त्यौ (मातरा=मातृवद्वर्त्तमानेऽव्यापिकोपदेशिके) ३ ३३ ३ [सम्+चर गतौ (भ्वा०) धातो शत्रन्तात् डीप् । ततो द्विवचनस्य पूर्वसवर्णदीर्घश्छान्दस.]

सञ्चराः ये सम्यक् चरन्ति ते, भा०—नानादेशसञ्चारिण प्राणिन २४ १५ सञ्चरन्ति येषु ते मार्गा भा०—पश्वादिपालनमार्गा २४ १७ [सम्+चर गतौ (भ्वा०) धातो कर्त्तरि पचाद्यच् । अन्यत्राधिकरणे 'गोचरसचरवहव्रज०' अ० ३ ३ ११९ सूत्रेण घ]

सञ्चरेण्यम् सम्यक् चरितु ज्ञातु योग्यम् (चित्तम्) १ १७० १ [सम्+चर गतौ (भ्वा०) धातो कृत्यार्थे केन्य]

सञ्चिकित्वान् सम्यक् चिकीर्षक (विद्वज्जन) ४ ७ ८ [सम्+कित निवासे रोगापनयने च (भ्वा०) धातोर्लिट कानच् । धातूनामनेकार्थकत्वादत्र करोत्यर्थे कित]

सञ्चित्तानि सज्ञप्तानि धर्म्याणि कर्माणि १२ ५८ [सम्-चित्तपदयो समास । चित्तम्=चिती सञ्ज्ञाने (भ्वा०) धातो क्त]

सञ्चोदय सम्यक् प्रेरय प्रापय १ ९ ५ [सम्+चुद सञ्चोदने (चुरा०) धातोर्लोट्]

सञ्जग्मानः सङ्गतवान् (योगिजन) ७ १३ धीरतादिशुभगुणेष्वासक्त (न्यायाधीशो राजा) ७ १८ सम्यक् सङ्गत (वायु) १ ६ ७ [सम्+गम्लृ गतौ (भ्वा०) धातोर्लिट कानच्]

सञ्जग्मानासु सङ्गच्छन्तीषु (मनुष्यादिप्रजासु) १ ७४.१ [सम्+गम्लृ गतौ (भ्वा०) धातोर्लिट कानच् । ततष्टाप् स्त्रियाम्]

सञ्जग्मिरे सङ्गच्छन्ते ६ १९ ५ **सञ्जग्मुः**= सम्यग् जानीयु प्राप्नुयुर्वा ३ १ १३ **सञ्जग्मे**=सम्यक् सङ्गच्छते १ १६४ ८. [सम्+गम्लृ गतौ (भ्वा०) धातोर्लिट् । 'समो गम्यृच्छिभ्याम्' इत्यात्मनेपदम् । 'वा छन्दसी' ति क्वचिन्नाप्यात्मनेपदम्]

सञ्जनयन् सम्यक् कार्यरूपेण प्रकटयन् सन् (परमेश्वर) १७ १९ [सम्+जनी प्रादुर्भावे (दिवा०) धातोर्णिजन्ताच्छतृ]

संजितः सम्यग् जेता (इन्द्र=सूर्य) ५ ४२ ५ [सम्+जि जये (भ्वा०) धातो कर्त्तरि क्त औणादिक]

सञ्जभार सम्यग्धरति १ ११५ ४ सञ्जहार ३३ ३७ [सम्+हृञ् हरणे (भ्वा०) धातोर्लिट् । 'हृग्रहोर्भश्छन्दसी' ति हस्य भकार]

सञ्जर्भुराणः सम्यक् पालयन् धरन् (विद्वज्जन) ५ ४४ ५ [सम्+डुभृञ् धारणपोषणयो (जु०) धातोर्यङ्लुगन्तात् कानच् । अभ्यासस्य कुत्व छान्दसम् । जर्भरी भर्त्तारौ नि० १३.५]

सञ्जयामि सम्यग् विजय करने वाला हूं स० प्र० २३८, १० ४८.१ [सम्+जि जये (भ्वा०) धातोर्लट्]

सञ्जरताम् सस्तुयात् ४ ४ ८ [सम्+जरते अर्चतिकर्मा (निघ० ३ १४) धातोर्लोट्]

सञ्जानताम् आत्मा से धर्माऽधर्म, प्रियाऽप्रिय को सम्यग् जानने वाले (देवा=विद्वान् लोग) स० वि० १८६, १० १९१ २. [सम्+ज्ञा अवबोधने (क्र्या०) धातो शतृ । 'ज्ञाजनोर्जा' इति शित्प्रत्यये जादेश]

सञ्जानाथाम् सम्यग् जानीत, प्रादुर्भूतविद्यासाधिके भवत प्र०—अत्र व्यत्ययो लडर्थे लोट् च २ १६ [सम्+ज्ञा अवबोधने (क्र्या०) धातोर्लोट् । 'ज्ञाजनोर्जा' इति जादेश]

सञ्जानानाः सम्यग् ज्ञानवन्तो (देवा=विद्वासो जना) ऋ० भू० ९२, १० १९१ २ सम्यग् जानन्त (देवा), प्र०—अत्र व्यत्ययेनाऽऽत्मनेपदम् १ ७२ ५ सम्यग् जानने वाले (विद्वान् लोग) स० वि० १८६, १० १९१ २ [सम्+ज्ञा अवबोधने (क्र्या०) धातो शानच् । व्यत्ययेनात्मनेपदम्]

सञ्जिगीवान् सम्यग् विजेता सन् (अग्नि=विद्वान् राजपुरुष) ३ १५ ४. [सम्+जि जये (भ्वा०) धातोर्लिट क्वसु । 'सन्लिटोर्जे' इत्याभ्यासादुत्तरस्य कुत्व गकार]

सञ्जितम् सम्यग् जयशील शूरवीरम् (इन्द्र=राजानम्) ३ ३८ १० सम्यक् पालक दातार वा (इन्द्रम्) ३ ४८ ५ सम्यगुत्कर्षप्रापकम् (इन्द्रम्) ३ ३४ ११ सम्यग् जिता

सूर्येण च ऋ० भू० १४३, अथर्व० १४ १ १ अविनाशिस्वभावेन कारणेन १ २१ ६ **सत्यैः**=सत्यप्रकाशोज्ज्वलैर्नित्यैः (मन्त्रेभि=ज्ञानयुक्तैर्विचारैः) १ ६७ ३ [अस् भुवि (अदा०) धातो शतरि सदिति रूपम्। सत्प्राति० साध्वर्थे भवार्थे यत्। सत् उदकनाम (निघ० १ १२) ततो वा भवार्थे यत्। सत्यम् उदकनाम निघ० १ १२ सत्य कस्मात् सत्सु तायते सत्प्रभव भवतीति वा नि० ३.१३ सत्यम् तदेतत् त्र्यक्षर सत्यमिति स इत्येकमक्षर तीत्येकमक्षरमित्येकमक्षर प्रथमोत्तमे अक्षरे सत्य मध्यतोऽनृतम् श० १४ ८ ६ २ तद् यत् तत् सत्यम्। त्रयी सा विद्या श० ६ ५ १ १८ सत्य वा ऋतम् श० ७ ३ १ २३ तै० ३ ८ ३ ४ ऋतमिति (यजु० १२ १४) सत्यमित्येतत् श० ६ ७ ३ ११ यो वै सधर्म सत्य वै तत् तस्मात् सत्य वदन्तमाहुर्धर्मं वदतीति धर्मं वा वदन्त सत्य वदतीति श० १४ ४ २ २६ सत्य वै सुकृतस्य लोक तै० ३ ३ ६ ११ एतत् खलु वै व्रतस्य रूप यत्सत्यम् श० १२ ८ २ ४ एक ह वै देवा व्रत चरन्ति सत्यमेव ३.४ २ ८ एक ह वै देवा व्रत चरन्ति यत्सत्य तस्माद् सत्यमेव वदेत् श० १४ १ १ ३३ सत्यसहिता वै देवा ऐ० १ ६ सत्यमया उ देवा कौ० २ ८ सत्यमेव देवा अनृत मनुष्या. श० १ १ १ ४ सत्य देवा अनृत मनुष्या श० १.१ २ १७ एक ह वा ऽअस्य जितमनपजय्यमेव यशो भवति य एव विद्वान्त्सत्य वदति श० ३ ४ २ ८ स य सत्य वदति यथाग्नि समिद्ध त घृतेनाभिषिञ्चेदेव हैन स उद्दीपयति तस्य भूयो भूय एव तेजो भवति श्व श्व श्रेयान् भवत्यथ योऽनृत वदति यथाग्नि समिद्ध तमुदकेनाभिषिञ्चेदेव हैन स जासयति तस्य कनीय कनीय एव तेजो भवति श्व श्व पापीयान् भवति तस्माद् सत्यमेव वदेत् श० २ २ २ १९ तस्माद् हैतद् य आसक्ति सत्य वदत्यैषा वीरतर इवैव भवत्यनाढचतर इव सह त्वेवान्ततो भवति देवा ह्येवान्ततो भवन् श० ६ ५ १ १६ (उद्दालक) तस्मै (प्राचीनयोग्याय) हैता शोकतरा व्याहृतिमुवाच यत् सत्य तस्माद् सत्यमेव वदेत् श० ११ ५ ३ १३ स य सत्य वदति स दीक्षित कौ० ७ ३ सत्ये ह्येव दीक्षा प्रतिष्ठिता भवति श० १४ ६ ९ २४ तस्यै वाच सत्यमेव ब्रह्म श० २ १ ४ १० सत्य ब्रह्म श० १४ ८ ५ १ सत्य ब्रह्मणि (प्रतिष्ठितम्) ऐ० ३ ६ गो० उ० ३ २ आप सत्येन (प्रतिष्ठिता) ऐ० ३ ६ गो० उ० ३ २ तद् यत् तत् सत्यम् आप एव तदापो हि वै सत्यम् श० ७ ४ १ ६ सत्य वा एतत् यद् वर्षति तै० १ ७ ५ ३ असावादित्य सत्यम् तै० २ १ १ १ १ तद् यत् सत्यम्। असौ स आदित्य श० ६ ७ १ २ तद् यत् तत् सत्यम्। असौ स आदित्यो य एष एतस्मिन् मण्डले पुरुष श० १४ ८ ६.३. सत्यमेव य एष (आदित्य.) तपति श० १४ १ २.२२ (यजु० ११ ४७.) अय वा ऽअग्निर्ऋतमसावादित्य सत्य यदि वासो (आदित्य) ऋतमय (अग्नि) सत्य मुभयम्वेतदयममग्नि श० ६ ४ ४ १० सत्य वै शुक्रम् श० ३ ९ ३ २५. सत्य सत्य वै हिरण्यम् गो० उ० ३.१७ प्राणा वै सत्यम् श० १४ ५.१.२३ चक्षुर्वै सत्यम् तै० ३ ३ ५ २ एतद्ध मनुष्येषु सत्य यच्चक्षु गो० उ० २ २३ इय (पृथिवी) एव सत्यमिय ह्येवैषा लोकानामद्धा तमाम् श० ७.४ १.८ नामरूपे सत्यम् श० १४ ४ ४ ३. श्रद्धा पत्नी सत्य यजमान ऐ० ७ १० सत्य ह होतैषामासीत् यद् विश्वसृज आसत तै० ३ १२.९ ३]

सत्यमन्त्राः सत्यो यथार्थो मन्त्रो विचारो येषान्ते (ऋभव=मेधाविजना) १ २० ४ [सत्य-मन्त्रपदयो समास। मन्त्र=मत्रि गुप्तभाषणे (चुरा०) धातोर्घञ्]

सत्यमन्मा य सत्य मन्यते विजानाति विज्ञापयति स (पूर्णविद्यो जन) १ ७३ २ [सत्योपपदे मन ज्ञाने (दिवा०) धातो कर्त्तरि मनिन्]

सत्ययजम् य सत्यमेव यजति सङ्गच्छते तम् (अग्नि=सूर्यमिव राजानम्) ४ ३ १ यस्सत्य यजति सङ्गमयति तम् (अग्नि=परमात्मानम्) ६ १६.४६. [सत्योपपदे यज देवपूजासगतिकरणदानेषु (भ्वा०) धातो कर्त्तरि पचाद्यच्]

सत्ययोनिः सत्यमविनाशि योनि कारण गृह वा यस्य स (इन्द्र=महाराज) ४ १९ २ [सत्य-योनिपदयो समास.। योनि गृहनाम निघ० ३.४.]

सत्यराजन् सत्यप्रकाशक (सभेश) २० ४ हे सत्यप्रकाशक, सत्यराज्यप्रदेश्वर ऋ० भू० २१८, २० ४ सत्यकर्त्ता, पक्षपातरहित सबका न्यायकर्त्ता, धर्मराज परमात्मा स० प्र० ४८०, २० ४ [सत्य-राजन्पदयो समास]

सत्यराधसम् सत्य राध्नोति यया ताम् (सुमतिं=शोभना प्रज्ञाम्) २२ ११ **सत्यराधसे**=सत्य राधो धन यस्य तस्मै (सत्पुरुषाय) ७ ३१ २ **सत्यराधः**=सत्य राध प्रकृत्याख्य धन यस्य तत्सम्बुद्धौ (ईश्वर) ७ ४१ ३. सत्यानि राधासि विद्यादिधनानि यस्य तत्सम्बुद्धौ (विद्वज्जन) १ १०१ ८ सत्सु साधूनि राधासि धनानि यस्य तत्सम्बुद्धौ (ईश्वर) ३४ ३६ **सत्यराधाः**=न्यायोपार्जितसत्यधन (इन्द्र=राजा) ४ २४ २. सत्येन राधो धन यस्य स

सत्यकर्मन् सत्य वेदोक्त कर्म करने वाले सन्यासिन्, स० वि० १६५, ६ ११३ ४ [सत्य-कर्मन्पदयो समास]

सत्यगिर्वाहसम् सत्याया गिर प्रापकम् (पतिं=राजानम्) १ १२७ ८ [सत्य-गिर्पदयो समासे ततो वाहसपदेन समास । गी वाङ्नाम निघ० १ ११ वाहस=वह प्रापणे (भ्वा०) धातो 'वहियुभ्या णित्' उ० ३ ११६ सूत्रेणासच्]

सत्यजित् सत्य कारण धर्मञ्चोन्नयति, भा०—य सत्यकर्मोन्नयति स (गण=गणनीयो विद्वज्जन) १७ ८३ [सत्योपपदे जि जये (भ्वा०) धातो कर्त्तरि क्विप्]

सत्यज्योतिः सत्यमविनाशि ज्योति प्रकाशो यस्य स (ईश्वर) भा०—सत्योपदेश १७ ८० [सत्य-ज्योतिष्-पदयो समास]

सत्यतर अतिशयेन सत्यस्वरूप (परमात्मन् विद्वन्वा) १ ७६ ५ **सत्यतर**.=अतिशयेन सत्य (विद्वज्जन) ३ ४ १० य सत्येन दुख तरति स (वनस्पति=विद्वज्जन)- ७ २ १० [सत्यप्राति० अतिशायने तरप् । अथवा सत्योपपदे तॄ प्लवनसतरणयो (भ्वा०) धातो पचाद्यच् कर्त्तरि]

सत्यताते सत्याऽऽचरक (राजन्) ४ ४ १४ [सत्य-प्राति० भावे तातिल् छान्दस]

सत्यधर्मा सत्यो धर्मो यस्य स (देव=ईश्वर) १२ ६६ **सत्यधर्माणम्**=सत्यो नाशरहितो धर्मो यस्य तम् (अग्नि=परमेश्वर भौतिक वा) १ १२ ७ [सत्य-धर्म-पदयो समास । 'धर्मादनिच् केवलात्' अ० ५ ४ १२४ सूत्रेण समासान्तोऽनिच]

सत्यप्रसवसः सत्योऽविनाशी प्रसव प्रकटो बोधो यस्मात्तस्य (बृहस्पते=जगदीश्वरस्य) ६ १० सत्याना न्याय्यविजयादीना प्रसवो यस्मात्तस्य (इन्द्रस्य=सेनापते) ६ १० सत्यानि प्रसवासि जगत्स्थानि कारणरूपेण नित्यानि यस्य तस्य (देवस्य=जगदीश्वरस्य) ६ १३ सत्य प्रसव ऐश्वर्य जगत कारण कार्यं यस्य तस्य, सत्यन्याययुक्तस्य (परमेश्वरस्य) ६ १० [सत्य-प्रसवस्पदयो समास । प्रसवस्=प्र+षु प्रसवैश्वर्ययो (भ्वा०) धातोरौणा० असुन्]

सत्यप्रसवः सत्येन कर्मणा प्रसव ऐश्वर्य यस्य स (राजा) १० २८ [सत्य-प्रसवपदयो समास । प्रसव=प्र+षु प्रसवैश्वर्ययो (भ्वा०) धातो 'ऋदोरप्' त्यप्]

सत्यम् यद्वेदविद्यया, प्रत्यक्षादिभि प्रमाणै, सृष्टिक्रमेण विदुषा सङ्गेन, सुविचारेणाऽऽत्मशुद्ध्या वा निर्भ्रम, सर्वहित, तत्त्वनिष्ठ, सत्यप्रभव, सम्यक् परीक्ष्य निश्चीयते तत् (व्रत=सत्यमान, सत्यभाषण, सत्यकरणञ्च) १ ५ सत्सु पदार्थेषु सुखस्य विस्तारक, सत्प्रभव, सद्भिर्गुणैरुत्पन्न व्रतम् १ १६ जलम् १ १०५ १२ अव्यभिचारिकर्म १५ ६ यथार्थम् ४ ३३ ६ अव्यभिचारि सुपरीक्षित वेदचतुष्टय-जन्यञ्च (कर्म) १ ५२ १३ सत्सु धर्माचरणेषु साधु (इन्द्रिय=धनम्) १६ ७८ सतीष्वोषधीषु भवम् (रसम्) १६ ७६ सत्सु परमेश्वरादिपदार्थेषु साधु (इन्द्रिय=प्रज्ञानम्) १६ ७४. अविनश्वराम् (इन्द्रिय=दिव्या वाचम्) १६ ७३ वर्त्तमाने साधु (इन्द्रिय=जिह्वादिकम्) १६ ७६ सत्सु नित्येषु पदार्थेषु व्यवहारेषु वा साधुस्त परमेश्वर धर्म वा १६ ३० सत्यभाषणादिक्रियोज्ज्वलम् (महित्व=महिमानम्) ३ ३२ ६ सत्सु साधु वच, भा०—सत्यवचनम् ३ ६ ४ नित्यम् (अध्वर=यज्ञम्) ७ ५६ १२ अविनाशिनम् (इन्द्र=सूर्यम्) २ २२ १ अविनश्वरम् (भा०—ब्रह्म) ११ ४७ व्रतम् १ ६८ ३ त्रैकाल्याऽबाध्यम् (विद्यासुशिक्षा सत्यधर्माचरणम्) ४ ११८ मोक्षम्, ऋ० भू० १०० नाशरहित पदम् १ १५६ ३ सत्सु पुरुषेषु साधु सत्य मान भाषण कर्म च, भा०—अव्यवत, जीवाख्य, सत्यभाषणा-दिकम् ११ ४७ स्थूलस्य सूक्ष्मस्य जगत कारण त्रिगुणमय प्रकृत्यात्मकमव्यक्तम् प० वि० । यथार्थ जिसका कभी व्यभिचार विनाश नही होता उस विद्यादि लक्षण धर्म को आर्याभि० २ ४७, १ ५ अविनाशि गमनागमनाख्य कर्म १ ३८ ७ **सत्यः**=सन्तीति सन्त, सद्भ्यो हितस्तत्र साधुर्वा (अग्नि=परमेश्वर भौतिको वा) १ १ ५ सत्सु साधुर्जीवस्वरूपेणाऽनादिस्वरूपो वा (इन्द्र=सभाध्यक्ष) १ ६३ ३ सत्सु पुरुषेषु साधु (इन्द्र=महाराज) ४ २१ १० अस्तीति सत्, सति साधु सत्य सर्वदा विनाश-रहित (ईश्वर) वे० भा० न० १ १ ५ सत्पुरुषेषु भव (मित्र=सर्वसुहृज्जन) ६ ३६ सत्सु व्यवहारेषु विद्वत्सु वा साधु (सभेशो राजा) ३३ ८३ सता वेदाना सत्पुरुषाणा वा पालक (परमेश्वर) १ १७४ १ **सत्याय**=सति वर्त्तमाने भवाय स्थूलाय पदार्थसमूहाय, अ०—नित्यसुखाय १५ ६ **सत्ये**=वेदशास्त्रप्रतिपादिते, प्रत्यक्षादिभि प्रमाणै परीक्षिते पक्षपातरहिते न्याय्ये धर्मे ऋ० भू० ६७, १६ ७७ **सत्याः**=सत्सु कर्मसु साधव (आशिष=सिद्धा इच्छा) १ १७६.६ सत्सु धर्मेषु साधव (कामा=अभिलाषा) १२ ४४ ये प्रतिज्ञा कुर्वन्ति ते (विद्वासो जना) ६ ५० २ **सत्येन**=नित्यस्वरूपेण ब्रह्मणा, वायुना

वा) ५.२४. [सत्र व्याख्यातम्। तदुपपदे राजृ दीप्तौ (भ्वा०) धातोः कर्त्तरि क्विप्]

सत्रसदौ सता जीवात्मना त्राणं सत्रं, तत्र सीदतस्तौ, भा०—जीवात्मरक्षणतत्परौ (देवौ=प्राणापानौ) ३४ ५५ [सत्रसदौ च देवौ वाय्वादित्यौ नि० १२ ३७ सत्रसदौ च देवौ प्राज्ञश्चात्मा तैजसश्चेत्यात्मगतिमाचष्टे नि० १२ ३७ सत्रोपपदे षद्लृ विशरणगत्यवसादनेषु - (भ्वा०) धातोः कर्त्तरि क्विप्]

सत्रा नित्यानि सत्यार्थप्रतिपादकानि (काव्यानि) १ ७२ १ सत्यान् गुणकर्मस्वभावान् १ ७१ ६ सत्यकारणरूपेणाऽविनाशि (विश्वम्) १ ५७.६ सत्या (मदासः=आनन्दका प्रजाजना) ६ ३६ १. सत्यम् ७ ३२ १६ सत्येन कारणेन ६ ३४.४ सत्याचारस्य ४ ३० २ सत्यानि (नृम्णानि=धनानि) ४.२२ ९ सत्या (सभ्या जना) ४ १७ ६ [सत्रमिति व्याख्यातम्। ततः शेर्लोपश्छन्दसि]

सत्राकरः सत्रा सत्यं करोतीति (नायकः सेनेशः) १ १७८ ४ [सत्रोपपदे डुकृञ् करणे (तना०) धातोः 'कृञो हेतुताच्छील्य०' अ० ३ २ २० इति ताच्छील्ये ट.। अथवा कर्त्तरि पचाद्यच्। सत्रा सत्यनाम निघ० ३.१०]

सत्राचीम् या सत्रा सत्यमञ्चति प्रापयति ताम् (रातिं=दानम्) ७.५६ १८ [सत्रा सत्यनाम (निघ० ३.१०) तदुपपदे अञ्चु गतिपूजनयोः (भ्वा०) धातोः 'ऋत्विग्दधृक्०' इति क्विन्। ततः स्त्रियाम् अञ्चतेश्चोपसंख्यानम्' इति ङीप्]

सत्राजितम् सत्रा सत्यं जयत्युत्कर्षति येन तम् (यज्ञम्) ११ ८ **सत्राजिते**=यः सत्येनोत्कर्षति तस्मै (इन्द्राय=विदुषे सभासेनेशाय) २ २१ १ [सत्रोपपदे जि जये (भ्वा०) धातोः क्विप्। 'ह्रस्वस्य पिति कृति०' सूत्रेण तुगागमः। सत्रा सत्यनाम निघ० ३.१०]

सत्रादावन् सत्यं ददातीति तत्सम्बुद्धौ, सत्रं वृष्ट्याख्यं यज्ञं समन्ताद् ददातीति स वा (इन्द्र=परमेश्वर, सूर्यो वा) १ ७ ६ [सत्रेति व्याख्यातम्। तदुपपदे डुदाञ् दाने (जु०) धातोः कर्त्तरि 'आतो मनिन्क्वनिब्वनिपश्च' इति वनिप्]

सत्राषाट् यः सत्राणि बहून् यज्ञान् कर्त्तुं सहते सः (इन्द्र=राजा) ७ २० ३ [सत्रोपपदे षह मर्षणे (भ्वा०) धातोः 'छन्दसि सहः' अ० ३ २ ६३ सूत्रेण ण्वि.]

सत्रासाहम् सत्यसहम् (राजानम्) ३ ५१ ३ सत्यानि सह्यन्ते येन तम् (रयिम्) १ ७९ ८ यः सत्रा सत्यानि सहते तम् (इन्द्र=राजानम्) ३ ३४ ८ **सत्रासाहः**=यः सत्यं सहते सः (शुभकर्माचारिजनः) २.२१ ३. **सत्रासाहे**=यः सत्रा सत्येन सहते तस्मै (इन्द्राय=सभासेनेशाय) २ २१.२. [सत्रा सत्यनाम निघ० ३.१० तदुपपदे षह मर्षणे (भ्वा०) धातोः 'कर्मण्यण्' इत्यण्]

सत्राहणम् यः सत्येनाऽसत्यं हन्ति तम् (इन्द्र=राजानम्) ४ १७ ८. [सत्रोपपदे हन हिंसागत्योः (अदा०) धातोः कर्त्तरि क्विप्]

सत्राहम् सत्यधर्माचरणदिनम् ५ ३५ ४ [सत्रा-अहन्पदयोः समासः। 'राजाहःसखिभ्यष्टच्' इति समासान्तष्टच्]

सत्राहा सत्यदिनानि ६ ४६.३ [सत्रा-अहन्पदयोः समासे शेर्लोपश्छन्दसि]

सत्वनाम् सेनाया सीदतां प्राणिनाम् १ ७ ४२ प्राप्तानां पदार्थानाम् १९ २० **सत्वने**=शुद्धान्तःकरणाय (सज्जनाय) ६.४५ २२ **सत्वनैः**=रथादिद्रव्यैः ५.३३.४ **सत्वभिः**=विज्ञानवद्भिः (जनैः) १.१३३.६. पदार्थैः १ १३३.६. प्राणिभिः १.१४०.९ शत्रून् सीदयद्भिर्वीरैः सह ३.४९ २ **सत्वा**=सर्वत्र स्थितः (परमेश्वरः) ६ २२ १ सत्वगुणोपेतः (सूरिः=विद्वज्जनः) ६ ३७ ५ बलवान् (राजपुरुषः) ६ १८ २ गन्ता (सविता=सूर्यमण्डलम्) ४ १३ २ प्रापकः (राजा) ४.४० २ यः सीदति सः पुरुषार्थी (इन्द्रः=ईश्वरोपासको राजा) ६.२९ ६ बलिष्ठः (योद्धा) १.१७३ ५. **सत्वानः**=बलपराक्रमप्राणिभूतगणाः १ ६४ २. सत्त्वगुणबलोपेता (भा०—सेनास्था भृत्या) १६.८. [षुञ् अभिषवे (स्वा०) धातोः 'सुयजोर्ङ्वनिप्' अ० ३.२.१०३ सूत्रेण ङ्वनिप्। षद्लृ विशरणगत्यवसादनेषु (भ्वा०) धातोर्वा कर्त्तरि वनिप्। दकारस्य तकारश्छान्दसः]

सत्सि सभायाम् १ ७६ ४ **सदसः**=सीदन्ति यस्मिँस्तस्माद् गृहात् २ १७ ७. सभ्यान् (पुरुषान्) ४ ५१ ८ सभायां ३२ १३ सभासदः ४ १७ ४ सभा ३ ३६.६ सभातः १ १८२ ८ सीदन्ति विद्वांसो धार्मिका न्यायाधीशा यस्मिँस्तत्सदः सभा तस्य, प्र०—अत्राऽधिकरणेऽसुन् प्रत्ययः १ १८ ६ **सदसि**=सीदन्ति बुद्धिविषया यस्मिन्निति तत्सदोऽध्ययनाऽध्यापननिमित्ता सभा तत्र ६ २४ **सदः**=सीदन्ति प्राप्नुवन्ति सुखानि यस्मिँस्तद् गृहम्, सीदन्ति घ्नन्ति दुःखानि येन तदौषधसेवनं पथ्याचरणञ्च (तद्वस्तु) सीदति जानाति येन तद् ज्ञानं वा २ ६ रहने के लिए उत्तम घर स० वि० १६७, अथर्व०' ६ २ ३ १९ स्थापनम्

(इन्द्र) ४ २६ १ सत्याचरणेन सत्य वा राधो धन यस्य स (राजा) ५ ४० ७ [सत्योपपदे राध ससिद्धौ (स्वा०) धातोरौणा० असुन्। अथवा सत्य-राधस्पदयो समास। राधस् धननाम निघ० २ १०]

सत्यवाचम् सत्या वाग् यस्य तम् (विपश्चित=विद्वज्जनम्) ३ २६.६ सत्या यथार्था वाग् येषान्ते (विद्वज्जना) ३ ५४ ४ [सत्या-वाच्पदयो समास। पूर्वपदस्य ह्रस्वादेश]

सत्यशवसम् सत्य शवो वल यस्य तम् (ऋभ्वस=मेधाविजनम्) ५ ५२ ८ **सत्यशवसः**=नित्यदृढवलस्य (विदुष) १ ८६ ८ नित्य वल येषा तत्सम्बुद्धौ (सभाद्यध्यक्षादय) १ ८६ ६ [सत्य-शवस्पदयो समास। शवस् वलनाम निघ० २ ६ धननाम निघ० २ १० उदकनाम निघ० १ १२]

सत्यशुष्मः सत्यं शुष्म वल यस्मिन् स (विद्युदादिस्वरूपोऽग्नि) ४ ११ ४ सत्यवल (सत्याचारशीलो विद्वज्जन) ३ ३० २१ **सत्यशुष्माय**=सत्यमविनश्वर शुष्म वल यस्य तस्मै (अ०—जगदीश्वराय) १ ५१.१५ नित्यवलाय (इन्द्राय=सेनापतये) १ १०३ ६ [सत्य-शुष्मपदयो समास। शुष्म वलनाम निघ० २ ६]

सत्यश्रवसि सत्याना श्रवणे सत्येऽन्ने वा ५ ७६ १ सत्यस्य श्रवो यस्मिन् तस्मिन् (भा०—आनन्दयुक्ते गृहाश्रमे) ५ ७६ २ सत्येन व्यवहारेण प्राप्ताऽन्नाद्यैश्वर्ये (दुहित=विदुषि स्त्रि) ५ ७६ ३ [सत्य-श्रवस्पदयो समास। श्रव अन्ननाम निघ० २ ७ धननाम निघ० २ १०]

सत्यश्रुतः ये सत्य शृण्वन्ति ते (कवय=विद्वासो जना) ६ ४६ ६ ये सत्य श्रुतवन्त शृण्वन्ति वा ते (कवय) ५ ५७ ८ ये सत्य यथार्थं शृण्वन्ति ते (नर=नायका जना) ५ ५८ ८ [सत्योपपदे श्रु श्रवणे (भ्वा०) धातो कर्त्तरि क्विप्। ह्रस्वस्य पिति कृति तुगिति तुगागम]

सत्यसत्वन् सत्यानि सत्त्वान्यन्त करणादीनि यस्य तत्सम्बुद्धौ (राजन्) ६ ३१ ५. [सत्य-सत्त्वपदयो समासान् मतुप्। वलोपश्छान्दस। अथवा सत्य-सत्पदयो समासान् मतुप्]

सत्यसवम् सत्योऽविनाशी सव सामर्थ्ययोगो यस्य तम् (सवितार=परमात्मानम्) ५ ८२ ७ सत्य सव ऐश्वर्यं जगद्वा यस्मिन् यस्य वा तम् (ईश्वरम्) ४.२५ **सत्यसवसः**=सत्यन्याययुक्तस्य (इन्द्रस्य=सम्राज) ६ १० सत्य सव ऐश्वर्यं जगत कारण कार्यञ्च यस्य तस्य (सवितु=जगदीश्वरस्य) ६ १० [सत्य-सवपदयो समास। सव=पु प्रसवैश्वर्ययो (भ्वा०) धातो 'ऋदोरवि' त्यप्]

सत्या सत्सु साधूनि त्रैकाल्याबाध्यानि कर्म्माणि २७.१ अविनश्वराणि (कर्माणि) ४ १७ २० सत्यधर्मोज्ज्वलितानि (अपासि=कर्माणि) १ ७० ४ [सत्यमिति व्याख्यातम्। तत शेर्लोपश्छन्दसि]

सत्या सत्सु पदार्थेषु साध्वी (स्त्री) ६ ६५ ५ यथार्थोक्ता (सवाक्=राजनीतिनिष्ठा सम्यग् वाणी) ६.१२ **सत्याभिः**=सत्याचरणान्विताभि (आह्वानै) १ १२६ ७ **सत्याः**=सत्सु गुणकर्मस्वभावेषु भवा (कुमारिका) १ ७६ १ सिद्धा (आशिष=कामना) २ १० सत्सु साध्व्य (आशिष) ३५ २० **सत्ये**=सत्सु साध्व्यौ हिते कारणरूपे नित्ये वा, (सूर्यभूमी) ३ ६.१० [सत्यमिति व्याख्यातम्। तत स्त्रिया टाप्]

सत्यानि सत्स्वर्थेषु साधूनि (प्रवचनानि) ६ ६७ १० [सत्यप्राति० नपु० प्रथमाबहुवचने रूपम्]

सत्यानृते सत्यञ्चाऽनृतञ्च ते, भा०—धर्माधर्मौ १६ ७७ [सत्य-अनृतपदयो समास। सत्यानृते वाचो वा एतौ स्तनौ, सत्यानृते वाव ते (द्वे अक्षरे) गो० उ० ४ १६]

सत्योक्तिः सत्य आज्ञा आर्याभि० १ ४७, ऋ० ७ ८ १२ २ [सत्या-उक्तिपदयो समास। उक्ति=वच परिभाषणे (अदा०) धातो स्त्रिया क्तिन्]

सत्यौजाः सत्यमोजो वल यस्य स (राजा) १० २८ [सत्य-ओजस्पदयो समास]

सत्रम् सत्रा सत्य विद्यते यस्मिन् विज्ञाने तत् १५ ४६ **सत्रस्य**=सङ्गतस्य राजव्यवहाररूपस्य यज्ञस्य ८ ५२. **सत्रे**=दीर्घे यज्ञे ७ ३३ १३. [सत्रा सत्यनाम निघ० ३ १० सीदन्ति यत्रेति विग्रहे षद्लृ विशरणगत्यवसादनेषु (भ्वा०) धातो 'गुधृवीपचि०' उ० ४ १६७ सूत्रेण स्त्र। सत सत्पुरुषान् त्रायते तत् सत्रमिति विग्रहे सदोपपदे त्रैङ् पालने (भ्वा०) धातोर्ड। सत्रा सत्यम्, ततो मत्वर्थे वा अर्श आदित्वाद् अच्। आत्मदक्षिण वै सत्रम् कौ० १५ १ आत्मदक्षिण वा एतद् यत्सत्रम् ता० ४ ६ १६ सर्वान् लोकानहीनेन अथो सत्रेण (अभिजयति) तै० ३ १२ ५ ७ सर्वं वै सत्रम् श० ४ ६ १ १५ सद्दै सत्रिणस्स्पृण्वन्ति तत् सत्रस्य सत्रत्व, प्राणा वै सत्, प्राणानेव तत् स्पृण्वन्ति सर्वासा वा एते प्रजाना प्राणैरासते ये सत्रमासते काठ० ३४ ८]

सत्रराट् य सत्रेषु यज्ञेषु राजते स (सूर्यो विद्वज्जनो

४.११. सदा ११८५८. [षद्लृ विशरणगत्यवसादनेषु (भ्वा०) धातोरविकरणे घ । 'पुंसि संज्ञायां घः प्रायेण' सूत्रेण 'वा छन्दसि' नियमेनासंज्ञायामपि घो भवति । वलर्थे को वा । सदम् संवत्सरम् नि० १२ ३७. सदम्=सदा नि० ४ १९]

सदमादः समानस्थाना (हरय =अग्न्यादय) ३ ४३.६. [सह-मादपदयोः समासे 'सधमादस्थयोश्छन्दसि' सूत्रेण सहस्य सधादेश । धस्य दकारश्छान्दस]

सदमित् य सद वेगमिदेति प्राप्नोतीतीदृशोऽश्वोऽग्नि ऋ० भू० १९४, ऋ० १८९१ [सद इत्युपपदे इण् गतौ (अदा०) धातो क्विप् । विभक्तेश्चालुक् पूर्वपदस्य । सद =षद्लृ विशरणगत्यवसादनेषु (भ्वा०) धातोर्घञर्थे क]

सदश्वः सन्त समीचीना अश्वा यस्य स (सुवीरजन) ५ ५८ ४ [सत्-अश्वपदयो समास]

सदसस्पतिम् सभापति, सभाध्यक्ष, राजा (ईश्वर) को आर्याभि० २ ५२, ३२ १३ **सदसस्पती**=सीदन्ति गुणा येषु द्रव्येषु तानि सदासि तेषां यौ पालयितारौ तौ (इन्द्राग्नी=वाय्वग्नी) १ २१ ५ [सदस्-पतिपदयो समास । षष्ठ्या अलुक् । सदस् इति व्याख्यातम्]

सदस्या सदसि सभाया भवा (शुक्=प्रदीप्ति.) ३८.१८ [सदस्प्राति० भवार्थे यत् । तत स्त्रियां टाप्]

सदस्यैः सदसि भवै सभ्यैर्जनै सह ७ ४५ [सदस् प्राति० भवार्थे यत् । सदस् इति व्याख्यातम् । (पुरुषस्य) प्रजाति सदस्य कौ० १७ ७ (पुरुषस्य) प्रजापति सदस्य गो० उ० ५ ४ सदस्या ऋतवोऽभवन् तै० ३ १२ ९ ४]

सदःसदः सीदन्ति यस्मिन् यस्मिन् तत्तद् गृहम् १९.५९ प्रतिगृह प्रतिसभा च ऋ० भू० २९२, १९ ५९ [सद -पदस्य वीप्सायां द्वित्वम्]

सदा सर्वस्मिन् काले ६ ५. सर्वेषु कालेषु ऋ० भू० ४४. निरन्तरम् ५ ७३ ५ यथावत् आर्याभि० १ ११, [सर्वसर्वनाम्न सप्तम्यन्तात् काले वाच्ये 'सर्वैकान्यकियत्तद काले दा' अ० ५ ३ १५ सूत्रेण दा । 'सर्वस्य सोऽन्यतरस्यां दि' अ० ५ ३ ६ सूत्रेण सर्वस्य सादेश]

सदानः दानेन सह वर्त्तमान (वसिष्ठ =पूर्णविद्वज्जन) ७ ३३ १२ [सह-दानपदयो समासे 'वोपसर्जनस्य' सूत्रेण सहस्याने सादेश]

सदापृणः य. सदा पृणाति तर्प्पयति स (जन) ५ ४४ १२ [सदोपपदे पॄ पालनपूरणयो (ऋया०) धातोर्मूलविभुजादित्वात् क]

सदावृध सदैव वर्धक (राजन्) ५ ३९ ३ **सदावृधः**=सदैव वर्धमान (राजा) ४ ३१ १ सदाऽऽनन्देन वर्धमान (ईश्वर) ऋ० भू० ३०८, २७.३९ [सदोपपदे वृधु वृद्धौ (भ्वा०) धातोर्मूलविभुजादित्वात् क]

सदावृधः य सर्वदा वर्धते तस्य (पुरुषस्य) २७ ३९. [सदोपपदे वृधु वृद्धौ (भ्वा०) धातो कर्त्तरि क्विप्]

सदासहम् सर्वदा दुष्टाना शत्रूणा हानिकारक दु खाना च सहनहेतुम् (रयि=धनम्) १ ८ १ [सदोपपदे षह मर्षणे (भ्वा०) धातो क्विप्]

सदासातमम् सदाऽतिशयेन विभजनीयम् (रयिं=धनम्) ४ ३७ ५ [सदासाप्राति० अतिशायने तमप् । सदासा =सदोपपदे षण सविभक्तौ (भ्वा०) धातो 'जनसनखनक्रमगमो विट्' इति विट् । 'विड्वनोरनुनासिकस्यात्' इत्यात्त्वम्]

सदासाम् सदा ससेवनीयम् (रयिं=धनम्) ७ ३९ ६ [सदोपपदे षण सविभक्तौ (भ्वा०) धातो 'जनसनखन०' इति विट् । 'विड्वनोरनुनासिकस्यात्' इत्याकारान्तादेश]

सदासाः दासै सेवकै सह वर्त्तमाना (प्रजाजना) ४ १६ २१ ससेवका (राजपुरुषा) ४ १९ ११ भृत्यै सहिता (राजपुरुषा) ४ २४ ११ समानदानसेवका (अमात्यसेनाप्रजाजना) ४ २० ११. [सह-दासपदयो समास । 'वोपसर्जनस्ये' ति सहस्थाने सादेश । दास = दस्यतेरुपदासयति कर्माणि नि० २ १७.]

सदिवः द्यावा सह वर्त्तमानम् (कुयव=कुत्सितसङ्गमम्) २ १९ ६. [सह-दिव्पदयो समासे सहस्य सादेश]

सदृक्षासः पक्षपात विहाय समानदृष्टय (मनुष्या) १७ ८४ [समानोपपदे दृशिर् प्रेक्षणे (भ्वा०) धातो 'दृशे क्सश्च वक्तव्य ' अ० ३ २ ६० वा०सूत्रेण क्स । ततो जसोऽसुक् । 'दृक्षे चेति वक्तव्यम्' अ० ६ ३ ८९ सूत्रेण समानस्य सादेश]

सदृङ् य समान पश्यति स (अ०—पुरुष) १७ ८१. समानदर्शन (देव =सभाध्यक्ष) १ ९९ ७. [समानोपपदे दृशिर् प्रेक्षणे (भ्वा०) धातो 'त्यदादिषु दृशोऽनालोचने कञ् च' अ० ३ २ ६० सूत्रेण क्विन् । 'दृग्दृशवतुषु' अ० ६ ३ ८९ सूत्रेण समानस्य सादेश]

सदृशीः सदृश्यो रात्र्य उषसश्च १ १२३ ८ समान स्वरूपा रात्री ६ ४७ २१. समाना गती ३ ३५.३.

४ ३० मुखस्थानम् १ ८५ ७ स्थिरम् (महिमानम्) १.८५ २ यज्ञशाला स० वि० २०९, अथर्व० ९ ६ ७. स्थित्यर्हमासनम् ३ २४ ३ सदनम् १३ ८ प्राप्तव्यम् (वर्हि =विज्ञानम्) ७ ११ २ छेद्य वस्तु ५ ६१.२. **सदांसि**=सभा ३ ३८ ६ सीदन्ति येषु तान्यधिकरणानि ३४ ३२ [षद्लृ विशरणगत्यवसादनेषु (भ्वा०) धातोर-धिकरणे 'सर्वधातुभ्योऽसुन्' उ० ४ १८९ सूत्रेणासुन्। सदसी द्यावापृथिवीनाम निघ० ३ ३० सत्सि प्रयोगे 'छान्दसो वर्णलोपो वे' ति नियमेनाकारलोप। तस्य पृथिवी सद तै० २ १ ५ १ तस्मादुदीचीनवंश सदो भवति श० ३ ६ १ २३ ऐन्द्र हि सद श० ३ ६ १ २२ तस्मात्सदस्यृक्-सामाभ्या कुर्वन्त्यैन्द्र हि सद श० ४ ६ ७ ३ प्रजापतेर्वा एतदुदर यत्सद ता० ६ ४ ११ (पुरुषस्य) उदर सद कौ० १७ ७ उदरमेवास्य (यज्ञस्य) सद श० ३ ५ ३ ५ उदर वै सद कौ० ११ ८ यदस्मिन् विश्वे देवा असीदस्तस्मात्सदो नाम तऽउऽएवास्मिन्नेते ब्राह्मणा विश्वगोत्रा सीदन्ति श० ३ ५ ३ ५]

सत्सि समवैषि ६ १६ १० निषीदसि ३ १४ २. आसन्नोऽसि २ ६.८ दोषान् हिनस्ति १ १२ ४ **सद**=सीद ७ ११ १ स्थिरो भव २.३६ ४ **सदत्**=सीदति १.१२८ १ प्राप्नुयात् ३ १३ १ **सदत**=आसीदत ७ ५७ २ उपविशत ७ ५९ ६ **सदतम्**=सीदतम् ५ ७२ १ तिष्ठतम् ४ १६ १० **सदताम्**=निषीदतम् ५ ७२ ३ आसीदेत ७ ४२ ५ गच्छत २९ ३१ **सदन्**=परिषीदन्ति ४ ३ ११ **सदन्तु**= तिष्ठन्तु ३ ४ ८ प्राप्नुवन्तु १ १८६ ८ आसीदन्तु ७ ४३ ३ प्रापयन्तु २९ ३३ अवस्थापयन्ति २५ **सदः**=सीद १३ ३७ स्थिरो भव ३३ ४ **सदाम**=प्राप्नुयाम ७ ४ ६ सीदेम ७ १ ११ **सदेम**=सीदेम ६ १ ६ प्राप्नुयाम ६ ७५ ८ [षद्लृ विशरणगत्यवसादनेषु (भ्वा०) धातो-र्लेट्। 'बहुल छन्दसि' सूत्रेण शपो लुकि सीदादेशोऽपि न। अन्यत्र लोट्, लेट्, लङ्, लिङ् च। लोडादिषु सत्यपि शपि 'वा छन्दसी' ति सीदादेशो न भवति। लङ्यडभाव-श्छान्दस। सदन्तु आसीदन्तु नि० ८ १३]

सदतन सीदत २६ २४ [षद्लृ विशरणगत्यवसादनेषु (भ्वा०) धातोर्लोट्। सीदादेशश्छान्दसत्वान्न भवति। तस्य तनवादेशश्छान्दस]

सदनम् उत्पत्ति-स्थिति-भङ्गस्य निमित्तकारणम् (ब्रह्म) १ ६६ ७ सीदन्ति यत्र तत् (गृह, मोक्षाख्य स्थानम्) ३.३१ ६ अधिकरणम् (ब्रह्म) १ ११७ १० स्थानम् १ १२९.११ अवस्थितिम् १.१०४ ५ गर्भस्थानम् १२ ३९ रहने का घर स० वि० १६६, अथर्व० ९ २ ३ २७. सीदन्ति गच्छन्ति यत्र तत् (स्थानम्) १७ ८७ **सदनानि**= स्थानान्युदकानि वा १ ५५ ६ भुवनानि १ १८१ ५ सीदन्ति यस्मिँस्तस्मिन् (स्थाने) ७ ३६ ३ **सदनाय**= स्थितिमते (दिवे=कामयमानाय विदुषे) ५ ४७ ७ **सदने**=उत्तमे स्थले ७ २४ १ मण्डले ३ ३४ ७ सीदन्ति यस्मिन्नाकाशे तस्मिन् १ १४८ ३ सभास्थाने ५.४३.१२ सदसि सभायाम् १ १२२ ६ सर्वस्थित्यर्थे जगति ४ ४२ ४ गृहे १४ २ प्राप्तव्ये (सरिरे=वाचि) १३ ५३ अध्ययन-स्थाने, भा०—न्यायासने १२ १६ दिवि १३ ५३ स्यातव्ये (प्राणे) गन्तव्ये (समुद्रे=मनसि) १३ ५३ सीदन्ति ययोस्ते (द्यावापृथिवी=भूमिविद्युतौ) ७ ५३ २ [षद्लृ विशरण-गत्यवसादनेषु (भ्वा०) धातोरधिकरणे ल्युट्। सदनम् उदकनाम निघ० १ १२ सदनात् सहस्थानात् नि० ७ २४]

सदना सीदन्ति गच्छन्ति पुरुषार्थेन येषु तानि गृहाणि ८ १८ [सदनमिति व्याख्यातम्। ततश्शेर्लोपश्छन्दसि]

सदनी दुःखविनाशनेन सुखप्रदा (विद्या) १ १८६ ११ [षद्लृ विशरणगत्यवसादनेषु (भ्वा०) धातोर्भावे ल्युडन्तात् स्त्रिया ङीप्]

सदन्तः निवासयन्त (राजादयो मनुष्या) ४ २१ ६ [षद्लृ विशरणगत्यवसादनेषु (भ्वा०) धातो शतृ। सीदा-देशो न भवति छान्दसत्वात्]

सदन्यम् सदन गृहमर्हति (पितृश्रवण व्यवहारम्) १ ९१ २०. [सदनप्राति० अर्हत्यर्थे यत्। सदनमिति व्याख्यातम्]

सदम् सीदन्ति सुखानि यस्मिँस्त शिल्पव्यवहार, देहादिक वा १ २७ ३ विज्ञान गृह वा १ ८९ १ सीदन्ति विद्वासो यस्मिँस्तत् सत्य वच ६ ६७ ८ प्राप्त वस्तु ४.३ १२ प्राप्तव्यम् (वस्तु) ६ ५० ६ स्थानम् २ ३४.४ ज्ञानस्वरूपम् (रुद्रम्=ईश्वरम्) प० वि०। स्थिर वर्त्तमान ज्ञानमात्मम् १ ११४ ८ शत्रुहिंसकसैन्यम् १ १२२ १० सद्यते विज्ञायते प्राप्यते यस्तम् (हव्य पदार्थम्) ५ ४ सीदन्ति यस्मिन् याने तत् १ ११६ ६ प्राप्त दुःखम् ५ ७७.४ यो न्याये सीदति तम् (सेनापतिम्) १६ १६ अवस्थितम् (वह्निम्) ३ २ १५ सीदन्ति प्राप्नुवन्ति यस्या ताम् (सभाम्) २५ १४ य सीदति तम् (अग्नि=पावक इवेश्वरम्) ७ ११.२ गृहमिव स्थितिपदम् (अग्नि=विद्वज्जनम्)

सधवीर समानस्थाने वर्त्तमान वीरपुरुष (इन्द्र=राजन्) ६ २६ ७ [सह-वीरपदयो समास । हस्य धकारश्छान्दस]

सधस्तुति सह प्रशसितम् (विज्ञानम्) ५.१८.५ [सह-स्तुतिपदयो समास.। हस्य धकारश्छान्दस']

सधस्तुतिम् स्तुत्या सह वर्त्तते ताम् (शिल्पक्रियाम्), प्र०—अत्र वर्णव्यत्ययेन हकारस्य धकार १ १७ ६ सह-कीर्त्तिम् ४ ४४ ६ [सह-स्तुतिपदयो. समास । हस्य धश्छान्दस]

सधस्थ समानस्थान (सभ्यजन) १८ ५६ **सधस्थम्**=सहस्थानम् (अ०—गर्भाशयम्) ११ ४८ यत्सह तिष्ठति तत्कारणम् ५.१८ तत्त्वावयवै सहस्थानम् १ १५४ ३ **सधस्थात्**=सहस्थानात्तलात् ११.६. **सधस्थे**=सह तिष्ठति यत्र (दुरोणे=गृहे) ३३ ७२. समान शय्या मे स० प्र० १० ४० २ समानस्थाने मेघमण्डले ६ ५२.१५ अन्तरिक्षे १३ ५३ लोके शरीरे च ऋ० भू० ३०५, १५ ५४ [सहोपपदे ष्ठा गतिनिवृत्तौ (भ्वा०) धातो क । हकारस्य धकारश्छान्दस । सधस्थे सहस्थाने नि० ३ १५ (यजु० १८ ५६) स्वर्गो वै लोक' सधस्थ श० ६ ५ १ ४६ 'सधमादस्थयोश्छन्दसि' अ० ६.३ ६६ सूत्रेण सहस्य सधादेश]

सधस्था सहस्थानानि (जलस्थलान्तरिक्षाणि) ३.५६ ५. समानस्थानानि ३ २० २ [सधस्थ इति व्याख्यातम् । ततश्शेर्लोपश्छन्दसि]

सधस्थानि समानस्थानानि (तविषाणि=वलानि) ३ १२.८ [सधस्थ इति व्याख्यातम् । तत प्रथमाबहुवचन नपुसके]

सधिषि समानान् शब्दान् शृणोति येन तस्मिन् श्रोत्रे १३ ५३ [समान-धिषपदयो समासे समानस्य सादेश । धिष्=धिप शब्दे (जु०) धातो क्विप् करणकारके]

सधि: पोढा (अग्नि =विद्वान् जीव) प्र०—अत्र वर्णव्यत्ययेन हस्य ध, इश्च प्रत्यय १२ ३६ [षह मर्षणे (भ्वा०) धातोर्बाहु० औणा० इ । हस्य धो वर्णव्यत्ययेन]

सधुरा: धुरन्धर हुए (हे गृहस्थादिमनुष्यो !) स० वि० १४२, अथर्व० ३ ३० ५ [सह-धुर्पदयो समासे समासान्तोऽकार]

सध्रीः समानस्थाना (आप =जलानि) २ १३ २. **सध्रेः**=सहस्थानस्य (क्षत्रस्य=राष्ट्रस्य) ५ ४४ १०. ['सहस्य सध्रि ' अ० ६ ३ ६५ सूत्रेण 'वा छन्दसि' सहायेनाऽप्रत्ययेऽपि सहशब्दस्य सध्रिरित्यादेश:]

सध्रीचीना सहाऽञ्चन्ती (रात्रि) ३ ५५ १५ [सहोपपदे अञ्चु गतिपूजनयो (भ्वा०) धातो 'ऋत्विग्दधृक्०' इति क्विन् । 'अनिदिताम्०' इति नलोपे 'सहस्य सध्रि ' अ० ६ ३ ६५ सूत्रेण सहस्य सध्रिरादेशे 'विभाषाञ्चेरदिक् स्त्रियाम्' अ० ५ ४ ८ सूत्रेण स्वार्थेऽञ्च्यन्तात् ख । खस्य ईन इत्यादेश । तत 'अच ' इत्यकारलोपे 'चौ' इति पूर्वस्य दीर्घे सध्रीचीन इति रूपम् । तत स्त्रिया टाप्]

सध्रीचीना सहाऽञ्चत सङ्गतौ भवत (इन्द्राग्नी=वायुसवितारौ) १.१०८ ३ [सध्रीचीनेति व्याख्यातम् । ततो द्विवचनस्याकारादेशश्छान्दस]

सध्रीचीनान् समान लाभाऽलाभ से एक दूसरे के सहायक (गृहस्थ मनुष्यो) को स० वि० १४२, अथर्व० ३ ३० ५ सह वर्त्तमान (गृहस्थ मनुष्यो) को स० वि० १४३, अथर्व० ३ ३० ७ **सध्रीचीना:**=सहवर्त्तमाना (गुणा) १.१०५ १० सहाऽञ्चन्त (विद्वासो जना) १ १३४ २ **सध्रीचीनेन**=सहाऽञ्चति गच्छति तत्सध्रयङ्, सध्रयङ् एव सध्रीचीन तेन (मनसा =मनोवद्वेगेन), प्र०—'सहस्य सध्रि ' अ० ६ ३.६५ अनेन सध्र्यादेश 'चौ' अ० ६ ३.१३८ इति दीर्घत्वम् १ ३३.११. सज्ञापकेनाऽनुष्ठापकेन वा (मनसा=अन्त करणेन) ४ २४ ६ [सध्रीचीनेति व्याख्यातम् । तत शसि रूपम्]

सध्रीचीः सहवर्त्तमाना (दिश) ३७ १७ सहैवाऽञ्चन्ती (व्याप्तविद्या जना) ३ ३१ १६ सह गच्छन्ती (विविधा गती) १ १६४ ३१ या सहाऽञ्चन्ति ता (ऊतय =रक्षाद्या क्रिया) ६ ३६ ३ [सहोपपदे अञ्चु गतिपूजनयो (भ्वा०) धातो 'ऋत्विक्०' इति क्विन् । अनिदिताम्०' इति नलोपे 'सहस्य सध्रि ' इति सध्रिरादेश । तत स्त्रियाम् 'अञ्चतेश्चोपसख्यानम्' इति डीप् । तत 'अच ' इत्यकारलोपे 'चौ' इति पूर्वस्य दीर्घत्वे सध्रीचीति रूपम् । ततो जस स्थाने पूर्वसवर्णदीर्घ 'सुपा सुलुक्०' इति सूत्रेण]

सध्र्यक् य सध्रि समान स्थान प्राप्नोति स (विद्वज्जन) २ १७ ३ य सहाऽञ्चति स (यजमान) ४ ४७ २ सह सेवमानम् (राध =धनम्) १ ५१ ७ यत्सहाऽञ्चति (पाथ =अन्नमुदक वा) ३ ३१ ६ **सध्रयञ्च:**=सहाऽञ्चन्त (मरुत =मनुष्या) ५ ६० ३ ये सहाऽञ्चन्ति ते (राजभृत्या) ४ ४ १२ [सहोपपदे अञ्चु गतिपूजनयो. (भ्वा०) धातो कर्त्तरि क्विप् । 'सहस्य सध्रि'

[समानोपपदे दृशिर् प्रेक्षणे (भ्वा०) धातो. 'त्यदादिषु दृशोऽनालोचने कञ् च' इति कञ्। 'दृग्दृशवतुषु' इति समानस्य सादेश । तत स्त्रिया 'टिड्ढाणञ्०' सूत्रेण ङीप्]

सद्म सीदन्ति यस्मिन् गृहे तत् १ ३८ १० स्थानम् ७ १८ २२ गृहवद्वर्त्तमान शरीर वा १ ७३ १ **सद्मनोः**=सर्वेषा निवासस्थानयो (विद्युदाकाशरूपयो प्रकृत्यो) ३ ५५.२. **सद्मनी**=सर्वेषा निवासाधिकरणे (द्यावापृथिवी) १ १८५.६ **सद्मानि**=प्राप्तव्यानि (वस्तूनि) १ १३६.१० साकाराणि स्थानानि १२ १३ [षद्लृ विशरणगत्यवसादनेषु (भ्वा०) धातोरविकरणे मनिन्। सद्म उदकनाम निघ० १ १२ गृहनाम निघ० ३ ४ सग्रामनाम निघ० २ १७]

सद्म सद्मानि स्थानानि १ १७३ ३ उत्तमानि कर्माणि स्थानानि वा ४.१८ [सद्मन् इति व्याख्यातम्। तत 'सुपा सुलुक्०' सूत्रेण जसो लुक्]

सद्मन् सीदन्ति यस्मिँस्तस्मिन् गृहे ७ १८ ११ [सद्मन्-प्राति० 'सुपा सुलुक्०' सूत्रेण ङेर्लुक्। सद्मनी द्यावा-पृथिव्योर्नाम निघ० ३ ३०.]

सद्मबर्हिषः सद्म स्थान बर्हिरुत्तम यासा ता (भा० सरित इव प्रजा) १ ५२ ३ [सद्मन्-बर्हिष्पदयो. समास.। बर्हिष्=अन्तरिक्षनाम निघ० १ ३ उदकनाम निघ० १ १२ पदनाम निघ० ५ २]

सद्ममखसम् सीदन्ति यस्मिँस्तत् सद्म जगत्, तन्मख प्राप्त यस्मिन्निति तम् (सदसस्पतिं=परमेश्वरम्) १ १८ ६. [सद्मन्-मखस्पदयो समास । मख. यज्ञनाम निघ० ३ १७ मखस्=मख गत्यर्थे (भ्वा०) धातोरसुन् औणादिक]

सद्मानम् सीदन्ति यस्मिँस्तम् (गोशालम्) १ १७३ १ यस्मिन् सीदति तम् (गृहम्) ६ ५१ १२ [सद्मन् इति व्याख्यातम्। ततो द्वितीयैकवचनम्]

सद्मेव गृहमिव सङ्ग्राममिव १.६७ ५ [सद्म-इव-पदयो समास]

सद्य पूर्ण करके स० वि० ८०, अथर्व० ११.५ ६

सद्य-ऊतयः क्षिप्राणि रक्षणादीनि येपान्ते (मरुत=मनुष्या) ५ ५४ १५ [सद्यस्-ऊतिपदयो समास । सद्यस् इति व्याख्यास्यते। ऊति=अव रक्षणगत्यादिषु (भ्वा०) धातो स्त्रिया क्तिन्]

सद्यः क्षिप्रम् ४ ७ १० शीघ्रमेव, प्र०—'सद्य परुत्परारि०' अ० ५ ३ २२, 'समानेऽहनि इति सद्य' इति भाष्यवचनात् समानेऽहन्येतस्मिन्नर्थे सद्य इति शब्दो निपातित १ ८ ६ तूर्णम् १ १२२ १४ [अहन्यभिधेये समानस्य सभावो द्यश्च प्रत्ययो निपात्यते 'सद्यः परुत्०' अ० ५ ३ २२ सूत्रेण]

सद्यो अर्थम् शीघ्रगामिपृथिव्यादिद्रव्यम् १ ६० १ [सद्यस्-अर्थपदयो समास]

सद्योवृधम् य सद्यो वर्धयति तम् (परमात्मानम्) ३ ३१ १३ [सद्यस् इत्युपपदे वृधु वृद्धौ (भ्वा०) धातो कर्त्तरि क्विप्]

सधनित्वम् धनिना भावेन सह वर्त्तमान राज्यम् ४ १ ६ [सह-धनित्वपदयो समास । 'वोपसर्जनस्ये' ति सभाव । धनित्वम्=धनिन्प्राति० भावे त्व]

सधन्यः समान धन विद्यते येपान्ते (राजभृत्या) प्र०—अत्र मत्वर्थीय ईप् ४ ४ १४. [समान-धन्यपदयो समासे समानस्य सादेश । धन्य=धनप्राति० यत्]

सधन्यः धन्यै सह वर्त्तमान (सज्जन) ६.५१.३ [सह-धन्यपदयो समास । सह स्थाने सादेश । धन्य=धनप्राति० अर्हत्यर्थे यत्]

सधमात् समानस्थानात् २० ४७ [सहोपपदे मदी हर्षे (दिवा०) धातोश्छान्दसो ण्वि । हस्य धकार]

सधमात् समानस्थानाद् य सह माद्यति ४ २१ १ **सधमादम्**=सहाऽऽनन्दम् ४ २३ २ यत्र सह माद्यन्ति आनन्दन्ति तम् (सुखम्) ७ ३२ १ सह मादयितारम् (ईश्वरम्) १ १८७ १ **सधमादः**=समानस्थाना (प्रजा-जना) ७ ४३ ५ या सह माद्यन्ति हृष्यन्ति ता (विदुष्य स्त्रिय) १० ७ महाऽऽनन्दिताः (सद्गुणकर्मस्वभावा मनुष्या) १ १२१ १५ समानस्थानानि ६ ६६.४ सह-स्थाना (जना) ५ २०.४ **सधमादेषु**=सुखेन सह वर्त्तमानेषु स्थानेषु १ ५१ ८ महस्थानेषु १६ ४४ उत्कृष्ट स्थानो मे आर्याभि० १ १४, [सहोपपदे मदी हर्षे (दिवा०) धातोश्छान्दसो ण्वि । हकारस्य धकारादेश । सहमादेषु प्रयोगे सहोपपदे मदी हर्षे (दिवा०) धातो 'कर्मण्यण्' इत्यण्। 'सधमादस्थयोश्छन्दसि' सूत्रेण महस्य सधादेश । सधमादम् सहमदनम्। नि० ७ ३१ (यजु० १० ७.) अनतिमानिन्य इत्येवैतदाह सधमाद इति श० ५ ३ ५ १६]

सधमाद्यानि सहस्थानेषु साधूनि (सत्या=कर्माणि भावा वा) ४.३ ४ [सधमादिति व्याख्यातम् । तत साध्वर्थे यत्]

सधमाः समानस्थाने मन्यमान (इन्द्र=राजा) ७ १८ ७ [सहोपपदे मन ज्ञाने (दिवा०) धातो क्विप्। नस्याकारादेशश्छान्दस]

(दिवा०) धातो क्विप्। 'बहुल छन्दसि' अ० ७.१ १०३. सूत्रेण ऋकारस्योत्व रपरत्व च। ततो द्विवचनस्याकारादेश]

सनाजुवः सनातनी जूर्वेगो यासा ता (ओषधी.) १.१४१ ५ [सना-जूपदयो समास । सनेति व्याख्यातम्। जू =जु गतौ (सौत्रो धातु) तत 'भ्राजभास०' इति क्विप्]

सनात् सम्भजनात् १ ५१ ६ **सनानि**=सविभागयुक्तानि वस्तूनि १ ६५ १० कर्मभि सभक्तानि (ऐश्वर्यधनानि) ३ १ २० [षण सभक्तौ (भ्वा०) धातोर्घञर्थे क । तत पञ्चम्येकवचने रूपम्]

सनात् सर्वदा १ ५५ २ सनातनात् कारणात् १ ६२ ८ सनातन (इन्द्र =जीवात्मा) ७ ३२ २४ नित्यम् ३४.५४ निरन्तरम् २ १६ १ [सनादित्यव्यय स्वरादिषु पाठात्। सनात् चिरम् नि० १२ ३६]

सनाभिः समाना नाभिर्बन्धन यस्य स. (काल) १ १६४ १३. [समाना-नाभिपदयो समासे पूर्वपदस्य ह्रस्वादेशे 'ज्योतिर्जनपदरात्रिनाभि०' अ० ६ ३ ८५ सूत्रेण समानस्य सादेशे रूपम्। सनाभय' अगुलिनाम निघ० २ ५ नाभि सन्नहनान् नाभ्या सनद्धा गर्भा जायन्त इत्याहुरेतस्मादेव ज्ञातीन्त्सनाभय इत्याचक्षते सबन्धव इति च नि० ४ २१]

सनायते सना सनातन इवाचरति १ ६२ १३ [सनेति व्याख्यातम्। तत आचारेऽर्थे क्यङन्ताल्लट्]

सनायुवः सनातनस्य कर्मण. कर्त्तार इवाचरन्त (मतय =विद्वज्जना) १.६२ ११ [सनेति व्याख्यातम्। तत आचारेऽर्थे क्यङ्। तत 'क्याच्छन्दसि' सूत्रेण उ। 'जसादिषु छन्दसि 'वा वचनम्' इति गुणस्य विकल्पेन तदभाव उवङ्]

सनाः भोक्त्र्य (युवतय स्त्रिय) ३ १ ६ [षण सभक्तौ (भ्वा०) धातो पचाद्यच्। ततष्टाप् स्त्रियाम्]

सनिता विभाजक (न्यायाधीशो राजा) २.२३ १३ सविभाजक (इन्द्र =सेनेश) १ १२९ २ सविभक्ता (सेनेश) १ १७५ ३ विभक्ता (जन) ५ ५० ४ ज्ञानस्य सुखस्य विभक्ता (सेनाध्यक्ष) १ २७ ९ **सनितुः**=रक्षणानि यमस्य, भा०—शफाना रक्षणायायसो निर्मितस्य (क्षुरस्य) २९ १६. [षण सभक्तौ (भ्वा०) धातो कर्त्तरि तृच्। सनितु हस्तग्राहस्य नि० ३ ६]

सनिता सभक्तानि (धनानि), प्र०—अत्र वन सन सभक्तौ इति धातोर्बाहुलकात्तन् प्रत्यय १ १०० ९ [सनितप्राति० शेर्लोपश्छन्दसि]

सनितौ भोगसविभाग लाभे, प्र०—अत्र 'नितुन्नतथ०' अ० ७.२ ९. प्रत्ययस्य 'अग्रहादीनामिति वक्तव्यम्' इति वार्त्तिकेनेडागम' १ ८ ६ [षण सम्भक्तौ (भ्वा०) धातोर्बाहु० तन्]

सनिषन्त विभजन्ते ५ १२ ४. **सनिषामहे**—सभज्य प्राप्नुयाम ३ ११ ९ [षण सम्भक्तौ (भ्वा०) धातोर्लेटि सिपि च रूपम्। व्यत्ययेनात्मनेपदम्]

सनिष्णत सभजेयु, सभजन्तु वा १ १३१.५. [षण सभक्तौ (भ्वा०) धातोर्लोट्। 'व्यत्ययो बहुलम्' इति द्विविकरणता सिप् श्ना च]

सनिष्यति सभजेत् ५ ३१ ११ **सनिष्यसि**=सभजिष्यसि ४ २० ३. [षण सम्भक्तौ (भ्वा०) धातोर्लृट्]

सनिष्यन् सभक्ष्यमाण (यजमान सज्जन) ३ २ ३. **सनिष्यन्तः**=सविभाग करिष्यन्त (सज्जना) ३ २ ४. सेवन करिष्यमाणा (सज्जना) ३ १३ २ [षण सम्भक्तौ (भ्वा०) धातो. 'लृट सद्वा' सूत्रेण लृट स्थाने शतृ]

सनिष्यन्तीनाम् सभजन्तीनाम् (ओषधीना=सोमयवादीनाम्) १२.८२ [षण सभक्तौ (भ्वा०) धातोर्लृट शत्रन्तात् स्त्रिया ङीप्]

सनिष्यवः विभाग करिष्यमाणा (नद्य =सरित) ४.५५ ६. सम्भजमाना (जना) १ १३१ २ सविभागमिच्छव: (गूर्तय =उद्यमयुक्ता कन्या.) १ ५६ २ आत्मन सनि सविभागमिच्छव (राजपुरुषा), प्र०—सनिशब्दात् क्यचि लालसाया सुक्, नत उ ६ १७ [सनि =षण सभक्तौ (भ्वा०) धातोरौणा० इ। सनिपदाद् आत्मन इच्छायामर्थे क्यजन्तात् 'क्याच्छन्दसि' इत्यु.। क्यचि 'सुग्वक्तव्य' अ० ७ १ ५१ वा०सूत्रेण सुगागम]

सनीडाः समाना नीडा बन्धनाधारा गृहविशेषा अग्न्यागारविशेषा वा येषु ते (बन्धुरा =बन्धनविशेषा) १ ३४ ९ समीपस्था (विद्वासो जना) १ १६५ १ समान नीड प्रशसनीय गृह येषान्ते (नर =श्रेष्ठा मनुष्या) ७ ५६ १ समानस्थाना (विश =प्रजाजना) १ ६९ ३ एकेश्वराधिकरणसमानस्थाना (जनय =प्रजा) १ ७१ १ समीपे वर्त्तमाना (अमृता.=विद्वज्जना) १ ६२ १० **सनीडे**=समीपे १ ६२ ७ **सनीडेभिः**=समीपवर्त्तिभि (रुद्रेभि.=वीरजनै) १ १०० ५ [समाननीडपदयो समासे 'समानस्य छन्दसि०' अ० ६.३ ८४ सूत्रेण समानस्य सादेश। नीड = नितराम् इलन्ति स्वपन्ति यत्रेति विग्रहे नि+इल स्वप्न-

रिति सहस्य सध्रिरित्यादेश]

सध्र्यञ्चा सह प्रशसनीयौ (इन्द्राग्नी=वायुसवितारौ) १ १०८ ३ [सध्र्यक् इति व्याख्यातम् । ततो द्विवचनस्याकारादेशश्छान्दस । 'उगिदचा सर्वनामस्थाने०' इति नुम्]

सन् वर्त्तमान (विद्वज्जन) १ ७६.५ भवन् (परमेश्वर सभाध्यक्षो वा) १ १०० ४ [अस् भुवि (अदा०) धातो शतृ]

सनकात् सनातनात्कारणात् ३ २९ १४ **सनकाः**=सनन्ति सेवन्ते परपदार्थान् ये ते (दस्यवो जना), प्र०—अत्र 'क्वुन् शिल्पिसञ्ज्ञयोरपूर्वस्यापि' उ० २ ३२, १ ३३ ४ [षण सम्भक्तौ (भ्वा०) धातो 'क्वुन् शिल्पिसञ्ज्ञयोरपूर्वस्यापि' उ० २ ३२ इति क्वुन् । सनात्=चिरम् नि० १२ ३६]

सनजा या सनेति सनातनाज्जायते सा (द्विता) १ ६२ ७ सनेन विभागेन जाता (धी=प्रज्ञा) ३ ३९.२ [सनोपपदे जनी प्रादुर्भावे (दिवा०) धातोर्ड । तत स्त्रिया टाप् । सनेत्यव्यय सदार्थे । अथवा षण सम्भक्तौ (भ्वा०) धातोर्घञर्थे क]

सनत् सनातनम् (अश्वादिपशुम्) ५ ६१ ५ सदा, यथावन्निरन्तर वा १ १०० १८ [सनदिति स्वरादिपाठादव्ययत्वम्]

सनत् सेवेत १ १०० १८. सम्भजेत्, प्र०—लेट्प्रयोगोऽयम् १ १०० ६ [षण सम्भक्तौ (भ्वा०) धातोर्लेट्]

सनता सनतानि सनातनानि (रत्ना=रमणीयानि धनानि) ३ ३ १ नतेन सह वर्त्तमानानि (अपासि=कर्माणि) २ ३ ६ [सन् इत्यव्यय स्वरादिपु पाठात् । सन् इत्युपपदे अत सातत्यगमने (भ्वा०) धातोर्घञर्थे क । सनतप्राति० शेर्लोपश्छान्दस । अथवा सह-नतपदयो समासे 'वोपसर्जनस्ये' ति सहस्य सादेश । ततश्शेर्लोपश्छन्दसि]

सनन्तः सेवमाना (मनुष्या) ७.५२.१ [षण सम्भक्तौ (भ्वा०) धातो शतृ]

सनयः सनातना (पृथिव्यादिपदार्था) ३ २० ४ उत्तमा सेवा १ १००.१३ विभक्तय (उपस) ४ ५१ ४ सम्भक्तय (वाजा=व्यवहारा) ३ ३० २१ **सनये**=सविभागाय ४ २० ३ विभागाय ६ २६ ८ राज्यसेवनाय १ ११६ २१. सुखाना सम्भोगाय १ ३० १६ सुखसेवनाय १.११६.१२ **सनिम्**=सेवनीया सत्यासत्ययोर्विभाजिका वाणीम् ५ २७ ४ पापपुण्याना विभागेन फलप्रदातारम् (परमेश्वरम्) १ १८ ६ सत्यासत्यविभाजिका धियम् ६ ६१ ६ सनन्ति सम्भजन्ति सुखानि यस्मिन् व्यवहारे तम् प्र०—अत्र सनधातो 'खनिकष्यज्यसिवसिवनिसनि०' उ० ४ १४५ इति अविकरण इ प्रत्यय १ २७ ४ सम्भजमानाम् (इडा=वाचम्) ३ ७ ११ विभक्ताम् (इडाम्) ३ १ २३ सनन्ति सविभजन्ति सत्यासत्ये यया ताम् (मेधा=प्रज्ञाम्) ३२ १३ विद्यादिशुभगुणदानम् ३ २३.५ याचमानम् (लक्ष्यम्) ३ २२ ५ सम्यग् भजनीय और सेव्य (ईश्वर) को आर्याभि० २ ५२, ३२ ३ सविभागम् ६ ७० ६ सविभाजकम् (सर्वविद्यामन्थनसारम्) ३.५ ११. [षण् सम्भक्तौ (भ्वा०) धातो 'खनिकष्य' उ० सूत्रेण इ । सनये सवनाय नि० ६ २२ सनय पुराणम् नि० ४ १९]

सनरस्य सभज्यमानस्य (पदार्थस्य व्यवहारस्य वा), प्र०—अत्र सनधातोर्बाहुलकादौणादिकोऽरन्-प्रत्यय १ ९६ ८ [षण सम्भक्तौ (भ्वा०) धातोर्बाहु० औणा० अरन्]

सनवथ ओषधिदानेन सेवध्वम्, प्र०—अत्र विकरणद्वयम् १२ ७९ [षण सम्भक्तौ (भ्वा०) धातोर्लट् । 'व्यत्ययो बहुलम्' इति द्विविकरणता । तेन उ-शप्-विकरणौ]

सनवित्तः य सनातनेन वेगेन वित्तो लब्ध (अध्वा=मार्ग) ७.४२ २ [सन-वित्तपदयो समास । सनेत्यव्यय सदार्थे । वित्त=विद्लृ लाभे (तुदा०) धातो. क्त]

सनश्रुत सत्यासत्यविवेकिना सकाशाच्छ्रुत येन यद्वा सन सत्यासत्यविभाजक वचन श्रुत तत्सम्बुद्धौ (इन्द्र=विद्यैश्वर्ययुक्त राजन्) ३ ५२ ४ **सनश्रुतम्**=य सनातनानि शास्त्राणि शृणोति तम् (सन्तानम्) ३ ११ ४ [सन-श्रुतपदयो समास । सन=षण सभक्तौ (भ्वा०) धातोर्घञर्थे क । अथवा सनेत्यव्ययम् सदार्थे । मनोपपदे श्रु श्रवणे (भ्वा०) धातो कर्त्तरि क्विप् । ह्रस्वस्य तुगागमे द्वितीयैकवचने सनश्रुतमिति रूपम्]

सना सनानि प्रसिद्धानि शौर्याणि १ १७४ ८ सनातनानि (पौस्यानि=बलानि) १ १३९ ८ सदा ५ ७५ २ सनातनम् (महदनादिभूत ब्रह्म) ३ ५४ ९. [सदा इति व्याख्यातम् । दस्य नकारो वर्णव्यत्ययेन]

सना ससेविनौ (पितरा=पितरौ) ४ ३३ ३. [षण सभक्तौ (भ्वा०) धातो पचाद्यच् । ततो द्विवचनस्याकार]

सनाजुरा सदा जरावस्थास्थौ (पितरा=पितरौ) ४ ३६ ३ [सना इति व्याख्यातम् । तदुपपदे जॄष् वयोहानौ

क्षेपणयो (तुदा०) धातोर्घञर्थे क । लम्य डकारो वर्ण-व्यत्ययेन]

सनुतरः सनातनविद्य (राज्याधिकारिजन) ४ ३८ ४ [सनुत निर्णीतान्तर्हितनाम निघ० ३'२५ सनुतर् स्वरादिषु पाठादव्ययम् । तत अर्ग आदित्वान् मत्वर्थेऽच्]

सनुतः सदैव ६ ४७ १३. नैरन्तर्ये २ २६ २ सततम् १ ६२ ११ सनातनात् (कालात्) ५ २ ४ सदा २० ५२ [सनुतर् स्वरादिषु पाठादव्ययम्]

सनुत्यः सनुतेषु नम्रादिगुणै सह वर्त्तमानेषु भव (प्रजारक्षको जन) २ ३० ६ निर्णीतान्तर्हितेषु सिद्धान्तेषु भव साधुर्वा (महाविद्वज्जन), प्र०—सनुतरिति निर्णीतान्त-र्हितनाम निघ० ३ ५, ६ ५ ४ **सनुत्येन**=सत्प्रेरणीयेन (त्यजसा=त्यागेन) ६ ६२ १० [सनुतर् निर्णीतान्तर्हित-नाम निघ० ३ २५ ततो भवार्थे साध्वर्थे वा यत् । रेफस्य लोपश्छान्दस]

सनुत्री विभाजिका (युवति स्त्री) १ १२३ २ [षण सभक्तौ (भ्वा०) धातोर्वाहु० औणा० उत्र । तत स्त्रिया ङीप् छान्दस]

सनुयाम दद्याम, सभजेम, प्र०—अत्र पक्षे विकरण-व्यत्यय १ १०० १९ सभजेमहि १ १०१ ११ याचेम ७.२५ ५ **सनेत्**=सम्यक् सेवयेत्, अ०—ससेवयेत् १ ५ ६ **सनेम**=विभजेम ७ ५२ १ सभजेम १ १८६.८ अन्येभ्यो दद्याम १ १२४ १३ सुखानि भजेम १ १७ ६ [षण सभक्तौ (भ्वा०) धातोर्लिङ् । विकरणव्यत्ययेन उ । अथवा षणु दाने (तना०) धातोर्लिङ्]

सनेन विभक्तेन (वस्तुना) २ २६ ३ [षण सभक्तौ (भ्वा०) धातोर्घञर्थे क]

सनेमि सनातनम्, पुराणम् (श=सुखकारका विद्वास) २१.१० पुरातनम् (दिद्यु=शस्त्राऽस्त्रम्) ७ ५६ ६ सनातनेन नेमिना धर्मेण सह वर्त्तमान राज्यमण्डलम् ६ २५ [सनेमि पुराणनाम निघ० ३ २७ सनेमि क्षिप्रम् निघ० १२ ४४ अथवा सह-नेमिपदयो समास । नेमि वज्रनाम निघ० २ २० णीञ् प्रापणे (भ्वा०) धातो 'नियो मि' उ० ४ ४३ सूत्रेण मि]

सनेमि समानो नेमिर्यस्मिँस्तत् (चक्रम्) १ १६४ १४ [समान-नेमिपदयो समास । नेमिरिति पूर्वपदे व्याख्यातम्]

सनेयम् सभजेयम् १८ ३५ [षण सम्भक्तौ (भ्वा०) धातोर्लिङ्]

सनोति सम्पन्न करोति ४ १७ ६ प्राप्नोति ६ ६० १ विभजति, ददाति ३ २५ २ **सनोतु**=ददातु ६ ५४ ५ [षण संभक्तौ (भ्वा०) धातोर्लट् । विकरणव्यत्ययेन उ । अथवा षणु दाने (तना०) धातोर्लट्]

सन्तनिः सम्यक् विस्तारक. (नियमपालको जन) ५ ७३ ७ [सम्+तनु विस्तारे (तना०) धातोर्वाहु० औणा० इ]

सन्तपन्ति सम्यक् क्लेशयन्ति १ १०५ ८ [सम्+तप सन्तापे (भ्वा०) धातोर्लट्]

सन्तम् वर्त्तमानम् (चतुर्वय व्यवहारम्) १ ११० ३ विद्यमानम् (अग्नि=विद्युदाख्यम्) ४ ७ ६ अभिव्याप्य स्थितम् (राजानम्) ५ ८ २. **सन्तः**=वर्त्तमाना (असुरा = दुष्टा मनुष्या) २ ३० [अस भुवि (अदा०) धातो शतृ । सत्प्राति० द्वितीयैकवचनम् । अन्यत्र जस्]

सन्तरन्तः दुःखस्याऽन्त प्राप्नुवन्त (जना) ४ १ [सम्+तॄ प्लवनसन्तरणयो (भ्वा०) धातो शत्रन्ताज्जस्]

सन्तराम् अतितराम् २७ ८ [सन्=अस भुवि (अदा०) धातो शत्रन्तात् सु । सन् सुबन्तादतिशायने तरप् । सन्तरप्राति० आमु-प्रत्ययश्छान्दस. । 'किमेत्तिङ-व्ययघाद्०' इति सूत्रेणाप्राप्तोऽपि 'वा छन्दसि' नियमेनामु]

सन्तरुत्रम् दुःखात् सम्यक् तारकम् (रयिं=श्रियम्) ३ ११६ [सम्+तॄ प्लवनसन्तरणयो (भ्वा०) धातो कर्त्तरि तृचि 'असितस्कभित०' अ० ७ २ ३४. सूत्रेण उडागम]

सन्तवीत्वत् वहुवल सन् (वाजी=तुरङ्ग) ४ ४०.४ [सम्+तनु विस्तारे (तना०) धातोर्लिङ् । धातोरनुनासिक-लोप, प्रत्ययतकारस्य त्वद् आदेशश्छान्दस । अथवा सम्+तनु विस्तारे (तना०) धातो शतृ । 'वहुल छन्दसि' सूत्रेण श्लौ, अभ्यासस्य वीगागम, धातोश्च अनुभागस्य लोपश्छान्दस]

सन्तः सत्पुरुषा ६ ६६ ४ [अस भुवि (अदा०) धातो शत्रन्ताज् जस् । अथवा षण सम्भक्तौ (भ्वा०) धातोर्वाहु० औणा० तन्]

सन्ता वर्त्तमानौ (इन्द्राग्नी=वाय्वग्नी) १ २१ ४ विद्यमानौ (पितरा=पितरौ) ४ ३६ ३ [अस् भुवि (अदा०) धातो शत्रन्ताद् द्विवचनस्याकारादेश]

सन्ताप्तम् सम्यक् तपे, प्र०—अत्र लिडर्थे लुङ् ५ ३३ सन्ताप युक्त रखो आर्याभि० २ १३, ५ ३३ [सम्+तप सन्तापे (भ्वा०) धातोर्लुङ् । अडभावश्छान्दस]

सन्ताप्यमाने सम्यक् विस्तार्यमाणे पाल्यमाने वा

सन्निनेथ सम्यक् नयसि ७ २८.३ **सन्नेषि**= उत्तमतया नयसि ५ ४२.४ [सम्+णीञ् प्रापणे (भ्वा०) धातोर्लिट् । अन्यत्र लटि शपो लुक्]

सन्नुद सबको प्रसिद्धि से प्रेरणा कीजिए स० वि० १४०, अथर्व० १४ २ ६४ [सम्+णुद प्रेरणे (तुदा०) धातोर्लोट्]

सन्न्या समानान् पदार्थान् नयति यया तया (मेधया=प्रज्ञया) ५ ७ सर्वासा विद्याना सविभागकर्त्र्या (मेधया) १ २ ७ **सन्याम्**=सत्य नीयते यया तस्याम् (वाचि=वेदवाण्याम्) ८ ५४ [सम्+णीञ् प्रापणे(भ्वा०) धातो क्विप् । सन्नीप्राति० टा]

सन्न्यसे सना विभजता मध्ये प्रयत्नाय ३ ३१ १६ [सन्-यस्पदयो समास । सन्=षण सम्भक्तौ (भ्वा०) धातो क्विप् । यस्=यसु प्रयत्ने (दिवा०) धातोर्भावे क्विप् । ततश्चतुर्थी]

सन्वन्तु सभजन्तु १ १२२ १२ [षण सम्भक्तौ (भ्वा०) धातोर्लोट् । विकरणव्यत्ययेन उ]

सपत्नक्षित् सपत्नान् शत्रून् क्षयति यया सा, अ०—सपत्नक्षिता (अनिशिता=क्रियया) १ २६ समी०—अत्र 'कृतो बहुलमि' ति वार्त्तिकेन करणकारके क्विप् । क्षि क्षये इत्यस्य रूपम् । एतदुव्वटमहीधराभ्या क्षिणु हिसायामित्यस्य भ्रान्त्या व्याख्यातम् । सपत्नान् शत्रून् क्षयति येन स (सङ्ग्राम) १ २६ [सपत्नोपपदे क्षि क्षये (भ्वा०) धातो 'कृतो बहुलमि' ति करणे क्विप् । ह्रस्वस्य पिति कृति तुगागम]

सपत्नदम्भनम् य. सपत्नान् दम्भयतीति तम् (जगदीश्वर भौतिकमग्निं वा) ३ १८ [सपत्नोपपदे दम्भु दम्भने (स्वा०) धातो 'कृत्यल्युटो बहुलम्' कर्त्तरि ल्युट्]

सपत्नसाही यया सपत्नान् दोपान् सहन्ते मृष्यन्ति दूरीकुर्वन्ति सा, यया दुष्टानि शीलानि सहन्ते सा, यया शत्रून् सहन्ते सा (अ०—वाक्) ५ १० [सपत्नोपपदे षह मर्षणे (भ्वा०) धातो 'कर्मण्यण्' तत स्त्रिया ङीप्]

सपत्नहा य सपत्नानरीन् हन्ति स (विद्वज्जन) १२ ५ शत्रुदोपहन्ता विद्वज्जन २७ ३ य सपत्नान् शत्रून् मेघाऽवयवान् वा हन्ति स (सूर्य सभाद्यध्यक्षो वा) ५ २४ [सपत्नोपपदे हन हिसागत्यो (अदा०) धातो क्विप् । तत सौ 'सौ च' इति दीर्घ]

सपत्नान् सपत्नीव वर्त्तमानानरीन् १५ १ विरोधे वर्त्तमानान् सम्बन्धिन १५ २ **सपत्नाः**=शत्रव १७ २२ [सह एकार्थे पततीति विग्रहे सहोपपदे पत्लृ गतौ (भ्वा०) धातोर्न प्रत्यय औणादिक । सहस्य सादेश । सपत्नो वा ऽभिमाति (यजु० ६ ३७) श० ३ ६ ४ ६. पाप्मा वै सपत्न श० ८ ५ १.६ इम देवा असपत्न सुवध्वमितीम देवा अभ्रातृव्य सुवध्वमित्येव तदाह श० ५ ४ २ ३]

सपत्नी समाना पत्नी यस्या सा (स्त्री) ३ १ १० [समाना-पत्नीपदयो समासे समानस्य सभाव]

सपत्नी सपत्नी इव वर्त्तमाने (अहोरात्रे) ३ ६ ४ [व्याख्यातम् पूर्वपदे]

सपत्नीरिव यथाऽनेका पत्न्य समानमेक पतिं दु ख-यन्ति तद्वत् १ १०५ ८ [सपत्नी-इवपदयो समास]

सपन्त आक्रोशन्ति ५ ३ ४ **सपन्ते**=आक्रुश्यन्ति ७.३८ ५. **सपामि**=आक्रुशामि ५ १२ २, **सपेम**= शपथैर्नियमयेम ५ ४३ १२ आक्रुश्याम निन्द्येम ४ ४ ६ आक्रुश्येम ६ १५ १० सम्बन्ध कुर्याम ३७ २० [शप आक्रोशे (भ्वा०) धातोर्लङ् । अटोऽभाव । अन्यत्र लट् लिङ् च । 'शप उपलम्भन इति वक्तव्यम्' इत्यात्मनेपद व्यत्ययेन वा । शस्य सकारो वर्णव्यत्ययेन । षप् समवाये (भ्वा०) धातोर्वा रूपम्]

सपन्तः दुष्टानाक्रोशन्त (सज्जना) २ ११ १२. सम-वयन्त (विद्वासो जना) १ ६८ २ [शप आक्रोशे (भ्वा०) धातो शतृ । अथवा षप समवाये (भ्वा०) धातो शतृ । सपति परिचरणकर्मा निघ० ३ ५ अर्चतिकर्मा निघ० ३ १४]

सपर्य प्रीत्या सम्यक् सेवय, ऋ० भू० २१४ अथर्व० १४ २ १८ सेवन किया कर, स० प्र० १५२ अथर्व० १४ २ १८ **सपर्यत**=सेवध्वम् ५ १४ ५ परिचरत ४ ३५ **सपर्यतः**=सेवेते ६ ४४ ५ **सपर्यति**=सेवते १ १२.८ **सपर्यन्**=परिचरन्ति १ ७० ५ **सपर्यन्ति**= सेवन्ते १ ८४ १२ **सपर्यात्**=सेवेत १ ६३ ८ **सपर्यान्**= परिचरेयु , सेवेरन् १ ७२ ३ **सपर्यामि**=परिचरामि १ ५८ ७ सेवयामि ३ ५४ ३ **सपर्येम**=सेवेमहि २ ६.३ [सपर्यति परिचरणकर्मा निघ० ३ ५ ततो लोट् । अन्यत्र लट् लङ् लेट् लिङ् च । सपर्यत =परिचरत नि० ११ ६]

सपर्यजित् य सपर्यान् सङ्ग्रामान् जयति स (ऋभु =प्रशस्तो विद्वज्जन), प्र०—सपर्य इति सङ्ग्राम-नाम निघ० २ १७, १ १११ ५ [सपर्योपपदे जि जये (भ्वा०) धातो क्विप् । सपर्य सग्रामनाम निघ० २ १७. मस्य पकारो वा]

धातोर् धी-स्थाने दि इत्यादेश पृषोदरादित्वात्]

सन्दृक् सम्यग् दर्शयिता (अग्नि) १ ६६ १ समान-दृष्टि ४ ६ ६ य. सम्यक् पश्यति (अग्नि =विद्वज्जन) ४ १ ६ यथावत् सब के पाप-पुण्यों को देखने वाला (परमात्मा) आर्याभि० २ ४०, १७ २६ **सन्दृशम्**= सम्यग्दर्शनम् ६ १६ ८ **सन्दृशि**=समीचीन दिग्दर्शन यस्मिन् व्यवहारे तस्मिन् ४ २३ सम्यग्-दर्शने समान-दर्शनविषये वा ३६ १६ साङ्ख्ये ५ ७४ ६. सम्यग् द्रष्टव्ये (वर्णे=शुक्लादिगुणे) २ ११ २ [सम्+दृशिर् प्रेक्षणे (भ्वा०) धातो 'त्यदादिषु दृशोऽनालोचने कञ् च' सूत्रेण 'वा छन्दसि' नियमेनालोचनेऽपि क्विन् । सदृक् सद्रष्टा नि० १० २६ सन्दृशि सन्दर्शनाय नि० १० ४०]

सन्दृशे सम्यग् दर्शनाय ३ ३८ १ सम्यग् द्रष्टुम् २ १३ ५ [सम्+दृशिर् प्रेक्षणे (भ्वा०) धातोस्तुमर्थे 'दृशे विख्ये च' अ० ३ ४ ११ सूत्रेण के-प्रत्यय]

सन्दृक्षसे सम्यग् दृश्यसे, अ०—सङ्गत्य दृश्यते, दृष्टिपथमागच्छति, प्र०–अत्र लडर्थे लेट् मध्यमैकवचन-प्रयोग 'अनित्यमागमशासनम्' इति वचनप्रामाण्यात् 'सृजि-दृशो०' इत्यम् न भवति १ ६ ७ [सम्+दृशिर् प्रेक्षणे (भ्वा०) धातोर्लेट् । सिब्विकरण । 'सृजिदृशोर्झल्यम्०' इत्यमागमो न भवति छान्दसत्वात्]

सन्दृष्टिः सम्यक् पश्यन्ति यया सा (विद्या) ६ १६ २५ सम्यग् दृष्टि प्रेक्षणम् ४ १० ५ **सन्दृष्टौ**= सम्यग्दर्शने ६ १ ४ [सम्+दृशिर् प्रेक्षणे (भ्वा०) धातो स्त्रिया क्तिन्]

सन्द्युम्नेन श्रेष्ठतया विद्याधर्मादिगुणप्रकाशवता (राया) १ ४८ १६. [सत्-द्युम्नपदयो समास । द्युम्नम् धननाम निघ० २ १०]

सन्द्रवन्ति सम्यग् गच्छन्ति २६ ४८ [सु+द्रु गतौ (भ्वा०) धातोर्लट्]

सन्धमति सम्यक् प्राप्नोति १७ १६ यथायोग्य जन्ममरणादि को प्राप्त करा रहा है आर्याभि० २ ३४, १७ १६. [सम्+धमति गतिकर्मा (निघ० २ १४) धातोर्लट्]

सन्धये परस्त्रीसमागमनाय ३०.६ [सम्+डुधाञ् धारणपोषणयो (जु०) धातो 'उपसर्गे घो कि' अ० ३ ३ ९२ सूत्रेण भावे कि]

सन्धिना सन्धानेन (अन्तरिक्षेण=आकाशेन) १५ ६ [सन्धिरिति व्याख्यातम् पूर्वपदे । सन्धि (स्तोत्रम्) एषा वा उक्थस्य सम्मायद् रात्रि (=सन्धिस्तोत्रम्) त्रीण्युक्थानि, (अग्निरुषा अश्विनाविति) त्रिदेवत्य सन्धि ता० ९ १.२५-२६]

सन्धिध्व सम्यक्तया धर १ ९१.१८ [सम्+डुधाञ् धारणपोषणयो (जु०) धातोः 'सुधितवसुधित०' अ० ७ ४ ४५ सूत्रेण लोटि मध्यमैकवचने दधातेरित्त्वमिडागमो वा प्रत्ययस्य, द्विर्वचनाभावश्च निपात्यते]

सन्धुः सम्यग् धरन्ति १ ७३ ७ [सम्+डुधाञ् धारणपोषणयो (जु०) धातोर्लुङ् । अटोऽभाव]

सन्धूनुहि सम्यक् प्रेरय १ १० ८ [सम्+धूञ् कम्पने (क्र्या०) धातोर्लोट् । विकरणव्यत्ययेन श्नु]

सन्धेहि सम्यक् सयोजय १ ९ ७. [सम्+डुधाञ् धारणपोषणयो (जु०) धातोर्लोट् । 'ध्वसोरेद्धावभ्यास-लोपश्च' इत्येकारादेशोऽभ्यासलोपश्च]

सन्नते अनुकूले २६ १ [सम्+णम प्रह्वत्वे शब्दे (भ्वा०) धातो क्त]

सन्नद्धः तत्पर सम्बद्धो वा (वनस्पति =राजा) २९ ५२. सम्यग् बद्ध (जीव) १ १६४ ३७ सम्यक् सज्ज (=राजा) ६ ४७ २६ [सम्+णह बन्धने (दिवा०) धातो क्त]

सन्नद्धा सम्यग् बद्धा (विगवती भूमि) ६ ७५.११ [सम्+णह बन्धने (दिवा०) धातो क्त तत स्त्रिया टाप्]

सन्नमन्त सन्नमन्ति ७ ३१ ९. **सन्नमन्ताम्**= सम्यक् प्राप्नुवन्तु, भा०—सर्वतो वर्द्धन्ताम् ३५ २० [सम्+णम प्रह्वत्वे शब्दे (भ्वा०) धातोर्लङ् अडभाव, व्यत्ययेन आत्मनेपदश्च]

सन्नयथः प्रापयथ ५ ६५ ६ [सम्+णीञ् प्रापणे (भ्वा०) धातोर्लट्]

सन्नयः सम्यक् नयो नीतिर्यस्य स (राजपुरुष) २ २४ ९ [सम्-नयपदयो समास । नय =णीञ् प्रापणे (भ्वा०) धातो 'एरच्' इत्यच्]

सन्नवन्त सस्तुवन्ति ६ ७ २ **सन्नवन्ते**=सम्यक् स्तुवन्ति ६ ७ ४ [सम्+ष्टुञ् स्तुतौ (अदा०) धातोर्लङ् । अडभावश्छान्दस । अन्यत्र लट् । व्यत्ययेनात्मनेपद शप् च]

सन्नशे सम्यक् नश्येत् २३ १५ [सम्+णश अदर्शने (दिवा०) धातोर्लिङ् । त्-लोपश्छान्दस शप् च]

सन्नः अवस्थापित (समुद्र =अन्तरिक्षम्) ८ ५९ [षद्लृ विशरणगत्यवसादनेषु (भ्वा०) धातो क्त । 'रदा-भ्याम्०' अ० ८ २ ४२ सूत्रेण दकारतकारयोर्नकारौ]

ता० २ १० ५ सप्तदश प्रजापति तै० १ ३ ३.२. सप्तदशो वै प्रजापति ऐ० १ १६ कौ० ८ २ श० १ ५ २ १७ गो० उ० १ १९. सप्तदशो वै प्रजापतिर्द्वादश मासा पञ्चर्त्तवो हेमन्तशिशिरयोः समासेन तावान्त्संवत्सर संवत्सर' प्रजापति ऐ० १ १ द्वादश वै मासा सवत्सरस्य पञ्चर्त्तव एष एव प्रजापति सप्तदश श० १ ३.५ १० संवत्सर एव सप्तदश-स्यायतन द्वादशमासा पञ्चर्त्तव एतदेव सप्तदशस्यायतनम् ता० १० १.७ सप्तदशो वै संवत्सरो द्वादशमासा पञ्चर्त्तव श० ६ २ २ ८ संवत्सर सप्तदश ता० ६ २ २ तस्माऽएतस्मै सप्तदशाय प्रजापतये एतत् सप्तदशमन्न समस्कुर्वन् य एष सौम्योऽध्वरोऽथ या अस्य ता. षोडश कला एते ते षोडशर्त्विज श० १० ४ १ १९ तद्वै लोमेति द्वे अक्षरे। त्वगिति द्वेऽसृगिति द्वे मेद इति द्वे मांसमिति द्वे स्नावेति द्वेऽस्थीति द्वे मज्जेति द्वे ता षोडश कला अथ य एतदन्तरेण प्राण सञ्चरति स एव सप्तदश प्रजापति श० १० ४ १ १७ अन्न वै सप्तदश । ता० २ ७ ७ सप्तदश ह्यन्नम् श० ८ ४.४७ प्रजाति सप्तदश ऐ० ८ ४ त (सप्तदशस्तोम) उ प्रजातिरित्याहु ता० १० १ ६. सप्त-दश एव स्तोमो भवति प्रतिष्ठायै प्रजात्यै ता० १२ ६ १३ विट् सप्तदश ता० १८ १० ६ विड् वै सप्तदश ता० २ ७ ५ विश सप्तदश ऐ० ८ ४ पशवो वै सप्तदश ता० १९ १० ७. तान् (पशून्) विश्वे देवा सप्तदशेन स्तोमेन नाप्नुवन् तै० २ ७ १४ २ सप्तदशो वै पुरुषो दश प्राणा-श्चत्वार्यङ्गान्यात्मा पचदशो ग्रीवा षोडश्य शिर सप्तदशम् श० ६ २ २ ९ उर सप्तदश । अष्टावन्ये जत्रवोऽष्टावन्य उर सप्तदशम् श० १२ २ ४ ११ वर्षाभिरृतुनादित्या स्तोमे सप्तदशे स्तुत वैरूपेण विशौजसा तै० २ ६ १९ १-२ गायत्र सप्तदशस्तोम ता० ५ १ १५ उदर वा एष स्तोमाना यत्सप्तदश ता० ४ ५ १५ राष्ट्र सप्तदश तै० १ ८ ८ ५. सप्तदश (स्तोम) एव यश गो० पू० ५ १५ यत् सप्तदशो यदेवास्य (यजमानस्य) मध्यतोऽपूत तत्तेना-पहन्ति ता० १७ ५ ६ सर्व सप्तदशो भवति ता० १७ ५ ६]

सप्तदशाक्षरेण निचृदाख्यया गायत्र्या (छन्दसा) ६ ३४ [सप्तदशन्-अक्षरपदयो समास.]

सप्तधा सप्तभि प्रकारै १७ ७६ [सप्तन्प्राति० विधार्थे 'सख्याया विधार्थे धा' अ० ५ ३.४२ सूत्रेण धा]

सप्तधातु सुवर्णादय सप्त धातवो यस्मिँस्तत् (धनम्) ४ ५ ६ [सप्तन्-धातुपदयो समास । ततो नपुसके प्रथमैकवचने रूपम्]

सप्तधातुः सप्त प्राणादयो धातवो यस्या सा (वाक्) ६ ६१ १२ [सप्तन्-धातुपदयो समास । तत. प्रथमैक-वचनम्]

सप्तनामा सप्तनामानि यस्य स. (अश्व'=वायु-रग्निर्वा) १.१६४ २ [सप्तन्-नामन्पदयो समास'। सप्तनामा=आदित्य सप्तास्मै रश्मयो रसानभिसन्नामयन्ति सप्तैनमृषय स्तुवन्तीति वा नि० ४ २७]

सप्तपुत्रम् सप्तविधैस्तत्त्वैर्जातम् (सूयम्) १.१६४.१. [सप्तन्-पुत्रपदयो समास । सप्तपुत्रम्=सप्तमपुत्र सर्पण-पुत्रमिति वा नि० ४.२६.]

सप्तमातृभिः सप्ताऽर्वाग् पृथिव्यग्निसूर्यवायु-विद्युदुदकाऽऽकाशा मातरो जनका याभि ताभि (निर्मातृभि-र्गुभिरङ्गुलिभिर्वा) १ ३४.८ [सप्तन्-मातृपदयो समास]

सप्तमी सप्ताना पूरणी (क्रिया) २५ ४ [सप्तन्-प्राति० पूरणार्थे डट् । तत 'नान्तादसख्यादेर्मट्' इति मडागम । तत स्त्रिया ङीप्]

सप्तय. सयुक्ता शीघ्र गमयितारोऽग्निवायुजलादयो ऽश्वा १ ८५ ६. वाणादयोऽश्वा येषान्ते (अध्वरश्रिय = नानर्त्तिराज्यलक्ष्मी) १ ४७ ८ **सप्तिम्**=अश्वम् १२ ४७ **सप्तिः**=मूर्त्तद्रव्यसम्बन्धी (अग्नि =सूर्यरूप.) २२ १९ **सप्ती**=सद्य सर्पन्तौ (हरी=हरणशीलावश्वौ), प्र०—अत्र 'वाच्छन्दसि' इति सुगे कृते रेफलोप ३ ३५.२ **सप्ते**=अश्व इव पुरुषार्थिन् (अ०—शिल्पविज्जन) २९ ३ अश्व इव वेगकारक (विद्वज्जन) २९ २. [सप्ति = अश्वनाम निघ० १ १४ सप्ते सरणस्य नि० ६.२ षृप गतौ (भ्वा०) धातोर्बाहु० औणा० ति । रेफस्य लोप-श्छान्दस । सप्ति (हेऽश्व त्व) सप्तिरसि ता० १ ७ १ सप्ति =आयु सप्तिरित्याह। अश्व एव जव दधाति। तस्मात् पुरा क्षुरश्वो ऽजायत तै० ३ ८ १३ २ सप्ति= वायु सप्ति तै० १ ३ ६ ४]

सप्तरश्मिम् सप्तसु छन्दस्सु लोकेषु वा रश्मयो यस्य तम् (अग्नि=विद्वास जनम्) १ ४६ १ सप्तविधा विद्यारश्मयो यस्मिँस्तम् (रथ=सूर्यलोकम्) ६ ४४ २४ **सप्तरश्मिः**=सप्तविधा रश्मय किरणा यस्य स (रथ = सूर्य) २ १८ १ सप्तविधकिरण (बृहस्पति =सूर्य) ४ ५० ४ [सप्तन्-रश्मिपदयो समास । रश्मिरश्मि स एष (आदित्य) सप्तरश्मिर्वृषभस्तुविष्मान् जै० उ० १.२८.२ (ऋ० २ १२ १२) यत्सप्तरश्मिरिति सप्त ह्येव

सपर्यन् सेवमान (विद्वज्जन) ३.३१ १. **सपर्यन्तः**=परिचरन्त (विद्वांसो जना) ५.२१ ३ [सपर्यति परिचरण-कर्मा निघ० ३ ५ तत शतृप्रत्यय । सपर्यन् पूजयन् नि० ३.४ सपर्यत परिचरत नि० ११ ९]

सपर्यवः सेवका (देवा'=विद्वज्जना) ३ ५ २ सत्य सेवमाना (विद्यार्थिजना) ७ २ ४. आत्मन सपर्यामिच्छव (सज्जना) २ ६.३.. **सपर्यू**=सेवकौ (जनौ) ३ ५० २ [सपर्याशब्दाद् आत्मन इच्छायामर्थे क्यच् । तत 'क्या-च्छन्दसि' इति उ]

सपर्येण्यः सेवितुमर्हे (अग्नि =पावक) ६ १ ६ [सपर्यति परिचरणकर्मा निघ० ३ ५ तत कृत्यार्थे केन्य]

सपित्वम् समानश्च ततपित्व प्रापण वा विज्ञान च तत्, प्र०—अत्र पि गतौ इत्यस्माद्धातोरौणादिकस्त्वन् प्रत्यय १ १०६ ७ [समान-पित्वपदयो समास । 'समानस्य छन्दसि०' सूत्रेण समानस्य सभाव । पित्वम्=पि गतौ (तुदा०) धातोर्बाहु० औणा० त्वन्]

सपीतिम् पानेन सह वर्त्तमानम् (सग्धि=समान-भोजनम्) २८ १६. **सपीतिः**=समाना पीति पान यस्या सा (सग्धि) १८ ९ [सह-पीतिपदयो समासे सहस्य सभाव. । समाना पीतिपदयो समासे वा समानस्य सभाव - पीति'=पा पाने (भ्वा०) धातो स्त्रिया भावे क्तिन् 'स्था-गापापचो भावे' सूत्रेण । 'घुमास्थागापाजहातिसा हलि' इतीत्त्वम् । सपीतिम्=सहपीतिम् नि० ६ ४३]

सप्त सप्तसंख्याकान् (सिन्धून्) १ ३५ ८ सप्त-विधा किरणा १ ५०.८ षडृतवो वायुश्च सप्तम (पितर=पालका) ४.४२ ८ सप्तत्वविशिष्टा गणना १८ २४ सप्तसङ्ख्याका (पत्नीयजमानाभ्या सहिता विप्रा=मेधाविजना) ३ ७ ७. सप्तछन्दोऽन्विता (पुर= शत्रुनगर्य) १.१७४.२ गायत्र्यादीनि सप्त छन्दोऽन्विता (वाणी.=वेदवाच) १ १६४ २४ पृथिवीजलाग्निवायु-विराट्-परमाणु-प्रकृत्याख्यै सप्तभि (धामभि =पदार्थै) प्र०—अत्र 'सुपा सुलुक्०' इति विभक्तेर्लुक् १ २२ १६. सप्तसंख्याकानि गायत्र्यादीनि छन्दांसि १७ ७९ सप्त-तत्त्वाङ्गमिश्रितस्य भावा सप्तधा १ १०५ ९ साङ्गोपाङ्गां-श्चतुरो वेदान् त्रीन् क्रियाकौशल-विज्ञानपुरुषार्थान् १ ७२ ६ सप्तविधे (रोदसी=द्यावापृथिव्यौ) ७ १८ २४ **सप्तभिः**= नाग-कूर्म-कृकल देवदत्त-धनञ्जयेच्छाप्रयत्नै १४ २८ [सप्त सृप्ता सख्या, सप्तादित्य रश्मय इति वदन्ति नि० ४.२६]

सप्त ऋषयः पञ्च मुख्य-प्राणा महत्तत्त्वमहङ्कार-श्चेति १४ २८ **सप्त ऋषीन्**=सप्तप्राणादीन् (प्राणादय पञ्च, सूत्रात्मा धनञ्जयश्चेति) १७ २६ [सप्तन्-ऋषि-पदयो समास । सप्त ऋषय रश्मिनाम निघ० १ ५ पदनाम निघ० ५ ६ सप्त ऋषय =रश्मय आदित्ये सप्त । नि० १२ ३७ षड् इन्द्रियाणि विद्या सप्तमी नि० १२ ३७]

सप्तचक्रम् सप्त चक्राणि यस्मिँस्तम् (रथ=रमणीय यानम्) २ ४० ३ **सप्तचक्रे**=सप्तविधानि चक्राणि भ्रमणपरिधयो यस्मिँस्तस्मिन् (सूर्ये) १ १६४ १२. [सप्तन्-चक्रपदयो समास.]

सप्तजिह्वाः काल्यादय सप्त जिह्वा इव ज्वाला येषा ते (वह्नय=वोढार' पावका) ३ ६ २ [सप्तन्-जिह्वा-पदयो समास]

सप्तथम् सप्तमम् (महत्तत्त्वम्) १.१६४.१५ [सप्तन्प्राति० पूरणार्थे डट्प्रत्यये 'थट् च छन्दसि' अ० ५ २ ५० सूत्रेण थडागम । सप्तथम्=सप्तम नि० १३ ३२]

सप्तथी सप्तमी (सरस्वती=उत्तमा वाणी), प्र०—अत्र 'वाच्छन्दसि' इति मस्य स्थाने थ ७ ३६ ६ [सप्तन्-प्राति० पूरणार्थे डट् प्रत्यये 'थट् च छन्दसि' सूत्रेण थडागम । तत स्त्रिया ङीप्]

सप्तदश सप्ताधिका दश (गव्या) १८ २४ **सप्तदशभिः**=दश पाद्या अङ्गुलयश्चत्वार्यूर्वष्ठीवानि, द्वे प्रतिष्ठे यदर्वाङ् नाभेस्तत्सप्तदश तै १४ २९. [सप्तन्-दशन्पदयो समास]

सप्तदशम् चत्वारो वर्णाश्चत्वार आश्रमा श्रवण-मनन-निदिध्यासनानि कर्माणि, अलब्धस्य लिप्सा, लब्धस्य प्रयत्नेन रक्षण, रक्षितस्य वृद्धिर्वृद्धस्य सन्मार्गे सर्वोपकारके सत्कर्मणि व्ययकरणमेष चतुर्विध पुरुषार्थो, मोक्षानुष्ठान-ञ्चेति सप्तदशम् (स्तोम=अतिप्रशसनीय व्यवहारम्) ९ ३४ **सप्तदशः**=सप्तदशाना पूरण (स्तोम =स्तावको मित्रस्य भाग) १४ २४. सप्तदशविध (वरुण.=वारुणगुण) १४ २३ सप्तदशाना पूरक (विज्ञानम्) १३ ५६ पञ्च कर्मेन्द्रियाणि, पञ्च विषया, पञ्च महाभूतानि, कार्य, कारणञ्चेति सप्तदशाना पूरक (स्तोम =स्तुतिसमूह) १० १२ [सप्तन् दशन्-पदयो समासात् पूरणार्थे 'तस्य पूरणे डट्' अ० ५ २ ४८ सूत्रेण डट् । सप्तदश (स्तोम) प्रजापतिर्वै सप्तदश । गो० उ० २ १३ तै० १ ५.१०.६.

आदित्यस्य रश्मय (सप्तरश्मि'=इन्द्र =आदित्य) जैं० उ० १.२९ ८]

सप्तवध्रये पञ्च ज्ञानेन्द्रियाणि मनो बुद्धिश्च सप्त हता यस्य तस्मै (जनाय) ५ ७८ ६ **सप्तवध्रिम्**=हत-सप्तेन्द्रियम् (भा०—अन्त करणादविद्याम्) ५ ७८ ५ [सप्तन् वध्रिपदयो' ' समास.। वध्रि =हन हिंसागत्यो (अदा०) धातोरिन्। रेफागमश्छान्दस धातोर्वधादेशश्च]

सप्तविंशतिः सप्ताऽधिका विंशति (सख्या) १८.२४ एतत्सख्याका (गन्धर्वा =वायव इन्द्रियाणि च), भा०— प्राणापानव्यानोदानसमान-नाग-कूर्म-कृकल-देवदत्त-धनञ्जया दश, जीवो, द्वादश मन, तत्सहचरितानि श्रोत्रादीनि दशेन्द्रियाणि, पञ्चसूक्ष्मभूतानि च मिलित्वा सप्तविंशति ६.७. **सप्तविंशत्या**=आरण्यपशुगुणै १४ ३० [सप्तन्-विंशतिपदयो समास]

सप्तशिवासु सप्तविधासु कल्याणकारिणिषु (मातृषु) १ १४१.२ [सप्तन्-शिवापदयो समास। शिवा=शिव-प्राति० स्त्रियां टाप्]

सप्तशीर्षाणम् सप्तविधानि शिरासि किरणा यस्मिँस्तम् (अग्निम्) ३ ५ ५ [सप्त-शिरस्पदयो समास। 'शीर्षश्छन्दसि' सूत्रेण शिरस शीर्षन् आदेश]

सप्तस्वसा सप्तार्थात् पञ्च प्राणा मनो बुद्धिश्च स्वसेव यस्या सा (सरस्वती—सत्या वाणी) ६ ६१ १० [सप्तन्-स्वसृपदयो समास। सप्तस्वसा=सप्तस्वसारम् नि० १० ५]

सप्तहोता सप्त प्राणा होतार आदातारो यस्य स. (अग्नि) ३ २९.१४ (अग्निष्टोम (यज्ञ) ३४ ४ [सप्तन्-होतृपदयो समास। होतृ=हु दानादानयो (जु०) धातो कर्त्तरि तृच्। सप्तहोता=सप्तास्मै रश्मयो रसानभिसन्नामयन्ति, सप्तैनमृषय स्तुवन्तीति वा नि० ११ २३ तस्मै (ब्रह्मणे) सप्तम हूत प्रत्यशृणोत्। स सप्तहूतोऽभवत्। सप्तहूतो ह वै नामैष। त वा एत सप्तहूत सन्तम्। सप्त-होतेत्याचक्षते परोक्षेण। परोक्षप्रिया इव हि देवा तै० २ ३ ११ २ इन्द्रिय वै सप्तहोता तै० २ २ ८ २ इन्द्र सप्तहोता तै० २ ३ ११ इन्द्र सप्तहोत्रा तै० २ २ ८.५ सौम्योऽध्वर सप्तहोतु (निदानम्) तै० २ २ ११ ६ अर्यमा सप्तहोतॄणा होता तै० २ ३ ५ ६.]

सप्ताक्षरेण दैव्या जगत्या (छन्दसा) ९ ३२ [सप्तन्-अक्षरपदयो समास]

सप्ताश्वः सप्तविधा अश्वा आशुगामिन किरणा यस्य स (सूर्य) ५.४५.९. [सप्तन्-अश्वपदयो समास]

सप्तास्यः सप्त किरणा आस्यानि यस्य स (बृह-स्पति =सूर्य) ४ ५० ४ **सप्तास्ये**=सप्त प्राणा आस्ये यस्य तस्मिन् (पत्यौ) ४ ५१ ४ [सप्तन्-आस्यपदयो समास]

सप्तिमिव यथा वेगवानश्व १.६१ ५ [सप्तिम्-इव-पदयो समास]

सप्ती इव यथा युग्मावश्वौ ६ ५९ ३ [सप्ती-इव-पदयो' समास। सप्ती=सप्तिप्राति० प्रथमाद्विवचनम्। सप्तिरिति व्याख्यातम्]

सप्रथसम् प्रख्यातेन सह वर्त्तमानम् (अग्नि= पावकम्) २२.३. **सप्रथाः**=प्रथसा विस्तृतेन जगता सह वर्त्तमान (मित्र =जगदीश्वर) ३ ५९ ७ प्रसिद्धकीर्त्ति (विद्वान् जन) ५ १३ ४ सप्रख्याति (विद्वज्जन) १ १५९ १. सुकीर्त्तिप्रख्यातियुक्त (अग्नि =विद्वज्जन) ३८ १७ विस्तीर्णसुख (विद्वज्जन ईश्वरो वा) ३८ २० विस्तरेण सह वर्त्तमान (विद्वान् परमेश्वरो वा) ३८ २० विस्तारेण सह वर्त्तमाना (स्त्री) ३६.१३ प्रथसा प्रख्यया सह वर्त्तमान (विद्वज्जन) १८ ५४ विस्तीर्णेन प्रशसनेन सह वर्त्तमाना (गृहिणी) ३५ २१ सर्वसामर्थ्य से विस्तीर्ण (ईश्वर) आर्याभि० २ ४१, ३८ २० [सह-प्रथस्पदयो समासः। 'वोपसर्जनस्य' सूत्रेण सहस्य सादेश। सप्रथा सर्वत पृथु नि० ६ ७ प्रथस् प्रथ प्रख्याने (भ्वा०) धातोर् औणा० असुन्]

सप्रथस्तमम् य प्रथोभिर्विस्तृतैराकाशादिभि महाऽभि-व्याप्तो वर्त्तते सोऽतिशयितस्तम् (सदसस्पति=परमेश्वरम्) १.१८ ६ य प्रथसा विद्याविस्तरेण सह वर्त्तते सोऽतिशयितस्तम् (बहुश्रुत सज्जनम्) १ ४५ ७ अतिशयेन विस्तारयुक्त व्यवहारम्) १ ७५ १ प्रथसा विस्तरेण सह वर्त्तमान, सप्रथास्तमतिशयितम् (अग्नि=विद्वाम जनम्) १२ १११. **सप्रथस्तमः**=अतिशयेन विस्तृतसुखकारक (सखा=मित्रजन) १२ ११४ **सप्रथस्तमे**=अतिविस्तार-युक्ते (अवसि=रक्षणादौ कर्मणि) ५ ६५ ५ अतिशयितै प्रथोभि सुविस्तृतै श्रेष्ठैर्गुणकर्मस्वभावैस्सह वर्त्तमाने (शर्मन्=सुखे) १ ९४ १३ [सप्रथम् इति व्याख्यातम्। ततोऽतिशायने तमप्]

सप्रथः प्रख्यात्या सह वर्त्तमान (अग्नि =सद्गृहस्थ-जन) ६.१६ ३३ सत्कीर्त्या प्रख्यात (महाराज) ६ ६८ ९ प्रख्यातगुणै सह वर्त्तमानम् (शर्म=गृहम्)

सम्यक् स्वेच्छया गृह्णामि १ ६४ १ [सम्+अञ्जू व्यक्ति-म्रक्षणकान्तिगतिषु । (रुधा०) धातोर्लट् । विकरणव्यत्ययेन शप् । अन्यत्र लङ्, लोट्, लेट् लट् च । लेटि लटि च व्यत्ययेनात्मनेपदम् । समञ्जन्ति समश्नुवन्ति नि० ६ ३५]

समञ्जन् सम्यक् प्रकटीभवन् (भौतिकोऽग्नि) २६ २ सम्यक् प्रकटयन् (शमिता=यजमान) २८ १० सम्यक् मिश्रीकुर्वन् (विद्वज्जन) २६ ३५ सम्यग्रक्षन् (अग्नि=विद्वान् राजा) १२ ३३ सम्पृचान (शमिता=यज्ञ) २० ४५ सम्यग् व्यक्तीकुर्वन् (विद्वज्जन) २० ३७ सम्यक् प्रकाशयन् (सविता=सूर्य) १२ ६. [सम्+अञ्जू व्यक्तिम्रक्षणकान्तिगतिषु (रुधा०) धातो शतृ]

समत्ति सम्यक्तया भक्षयति ७ ४ २ [सम्+अद भक्षणे (अदा०) धातोर्लट्]

समत्सु युद्धेषु १ ५ ४ सङ्ग्रामेषु २६ ५० धार्मिका-ऽधार्मिकविरोधाख्येषु युद्धेषु ३ ४३ ८ धर्म्यसङ्ग्रामेषु ३ ४८ ५ **समदः**=सङ्ग्रामान् ६ ७५ २ **समदाम्**= सह मदेन हर्षेण वर्त्तन्ते यत्र युद्धेषु तेषाम् २६ ३८ मदैस्सह वर्त्तन्ते येषु तेषा सङ्ग्रामाणाम् ६ ७५ १ [समत्सु सग्रामनाम निघ० २ १७ समदो वार्त्ते, सम्मदो वा मदते नि० ६ १७]

समदनस्य मदन हर्षण यस्मिन्नस्ति तेन सहितस्य (भा०—सैनापत्याधिकारस्य) १ १०० ६ [सह-मदनपदयो समासे सहस्य सादेश । मदनम्=मदी हर्षे (दिवा०) धातोर्ल्युट् । तत अर्श-आदित्वादच्]

समदः मदेन सह वर्त्तमाना (शत्रूणा सेना) २६ ३६ [सह-मदपदयो समासे सहस्य सादेश । वचनव्यत्यय]

समद्यौत् सम्यग् द्योतयति ३ ५ २ [सम्+द्युत दीप्तौ (भ्वा०) धातो[illegible] । च्नेर्लुक्]

समद्वा यो मदेन सह वर्त्तमानान् वनति सम्भजति स (इन्द्र=राजा) ७ २० [illegible] य सम्यगत्ति स्वादु भुङ्क्ते स (राजकर्मचारी जन) [illegible]६ १८ २ [सम्+अद् भक्षणे (अदा०) धातो कर्त्तरि व[illegible]निप् । अथवा समद इत्युपपदे वन सम्भक्तौ (भ्वा०) धातो कर्त्तरि विच् । 'विड्वनोरनुनासिकस्यात्' इत्याकारान्तादे[illegible]श । पूर्वपदस्यान्त्यलोपश्छान्दस]

समधत्त सम्यग् धरत १ १[illegible]६५ ६ **समधात्**= समादधाति १६ ६३ **समधातम्**=भा०—सगृह्णीतम् २० ६६ [सम्+डुधाञ् धारणपोषणयो (जु०) धातोर्लङ् ।

मध्यमबहुवचनम् । अन्यत्र लुङ् । 'गातिस्थाघु०' इति सिचो लुक्]

समनक्तु सम्यक् कामयताम् २०.४४ उत्तम सुख को प्राप्त कर म० वि० १३४, १० ८५ ४३. [सम्+अञ्जू व्यक्तिम्रक्षणकान्तिगतिषु (रुधा०) धातोर्लोट्]

समनगा इव समनमवधारित स्थान गच्छन्तीव (उषा) १ १२४ ८ [समगा-उपपदयो समास । समनगा इति व्याख्यास्यते]

समनगाः य समन सङ्ग्राम गच्छति स (नरोत्तम) ७.६ ४ [समनोपपदे गम्लृ गतौ (भ्वा०) धातोर्ड । वचनव्यत्यय । समनम् सग्रामनाम निघ० २ १७]

समनम् समीचीन सङ्ग्रामम् १ ४८ ६ [समनम् सग्रामनाम निघ० २ १७ समननाद्वा सम्माननाद्वा नि० ७ १७]

समनमन्त एकीभावेन नमन्तु १७ ८४ सनमन्ते, प्र०—अत्र लडर्थे लङ् ८ ४६ [सम+णम प्रह्वत्वे शब्दे (भ्वा०) धातोर्लङ् । व्यत्ययेनात्मनेपदम्]

समनसः समान मन स्वान्त यासा ता (विश=प्रजा) ७ २५. समानविज्ञाना (नर=नायका जना) २७ २३. [समान-मनस्पदयो. समासे समानस्य सादेशश्छान्दस]

समनसः समान मनो येभ्यस्ते (जना) १४ २७ मनसा सह वर्त्तमाना (अग्नय=पावका) १४ ६ समान मनो विज्ञान येषान्ते (पितर=प्रजापालका जना) १६ ४५ समानमनोनिमित्ता (अग्नय) १५ ५७ सज्ञाना समानमनस (विद्वज्जना) ७ ४३ २ समाने धर्मे मनो येषान्ते (जीवा) १६ ४६ समान सहकारि साधन मनो येषान्ते (देवा=श्रोत्रादीनीन्द्रियाणि) ६ ६ ५ **समनसौ**=समानविचारौ (स्त्रीपुरुषौ) १२ ६० [समान-मनस्पदयो समासे समानस्य सादेश । सह-मनस्पदयोर्वा समास । सहस्य सादेशश्छान्दस]

समनसा समानेन मनसा विचारेण सह वर्त्तमानौ (अश्विनौ=अग्निजले) १ ६२ १६ समान मनो विज्ञान ययोस्तौ (अश्विनौ=सभा[illegible]) १ ११६ १६ समानमनस्कौ दृढप्रीती (स्त्रीपुरुषौ) [illegible] [समान-मनस्पदयो समासे समानस्य सादेश । ततो [illegible] वचनस्याकारादेश]

समना सङ्ग्रामे, प्र०—अत्र विभक्तेराकारादेश ६ ४१ समाना (देवी=विदुष्य स्त्रिय), प्र०—अत्र 'सुपा सुलुक्०' इति जसो लुक् ४ ५१ ८ सदृशी (कन्या)

सभास्थाणुम् सभाया स्थितम् (पुरुपम्) ३० १८ [सभा-स्थाणुपदयो समास । स्थाणुम्=ष्ठा गतिनिवृत्तौ (भ्वा०) धातो 'स्थो णु' उ० ३ ३७ सूत्रेण णु]

सभृतयः समाना भर्त्तारो यासा ता (युवतय स्त्रिय) ६ ६७ ७ [समान-भृतिपदयो समासे समानस्य सादेश । भृति =डुभृञ् धारणपोपणयो (जु०) धातोर्वाहु० औणा० ति किच्च]

सभेयम् सभाया साधुम् (राजानमध्यापकमुपदेशक वा) ३४ २१ [सभाप्राति० साध्वर्थे 'ढश्छन्दसि' अ० ४४ १०६ सूत्रेण ढ सभेयो युवा (यजु० २२ २२) एप वै सभेयो युवा य प्रथमवयसी तस्मात् प्रथमवयसी स्त्रीणा प्रियो भावुक श० १३ १ ९ ८ सभेयो यो वै पूर्ववयसी । स सभेयो युवा । तस्माद युवा पुमान् प्रियो भावुक तै० ३ ८ १३ ३]

सभ्य हे सभा के योग्य (सभापते राजन्), स० वि० १८२, अथर्व० १९ ५५ ६ **सभ्याः**=सभा के योग्य (धार्मिक आप्त लोग) स० वि० १८२, अथर्व० १९ ५५ ६ [सभाप्राति० साध्वर्थे 'सभाया य' अ० ४ ४ १०५ इति य]

सम् सम्यगर्थे १ ९ ५ क्रियार्थे १ ८ ३ सङ्घाते २.१ १५ एकीभावे ८ १६ अच्छा अथर्व० १४ २ ३७ स० वि० १७० वेदार्पे [समित्येकीभावम् नि० १ ३]

समकृण्वन् सम्यक् शिक्षितान् कुर्यु १७ २८ [सम्+डुकृञ् करणे (तना०) धातोर्लङ् । विकरणव्यत्ययेन श्नु । समकृण्वन्=कुर्वन्ति नि० ६ १५]

समक्तम् सहतम् (हवि =होतव्य द्रव्यम्) २ ३ १० **समक्तः**=सम्यक् प्रकटयन् (अश्व =आशुगामी वह्नि) २९ १० [सम्+अञ्जू व्यक्तिम्रक्षणकान्तिगतिपु (रुधा०) धातो क्त । 'यस्य विभापा' इत्यनिट्त्वम्]

समक्तुभिः सम्यग् रात्रिभि ३ १७ १ [सम्-अक्तु-पदयो समास । अक्तु रात्रिनाम निघ० १ ७]

समख्ये समक्तया प्रकथयामि, प्र०— अत्र व्यत्ययेनाऽऽत्मनेपद, लडर्थे लुङ् च ४ २३ अ०—प्रख्याता कुर्याम् ४ २३ [सम्+ख्या प्रकथने (अदा०) धातोर्लुङ् । 'अस्यति-वक्तिख्यातिभ्योऽङ्' इत्यङ् । व्यत्ययेनात्मनेपदम्]

समगच्छन्त सम्यक् प्राप्नुवन्ति १७ ३० **समगथाः**=समागमेन गच्छसि प्राप्नोति वा, अ०—सङ्गतो भूत्वा राजते, प्र०—अत्र पक्षे व्यत्यय, वर्त्तमाने लुङ् 'मन्त्रे घसह्वर०' अ० २ ४ ८० अनेन च्लेर्लुक् च ३ १९

समगन्महि=एकीभावेन प्राप्नुयाम ८ १६ सम्यक् प्राप्नुम २ २४ **समगस्महि**=सम्यक् सगच्छामहे, प्र०—अत्र लडर्थे लुङ्, वर्णव्यत्ययेन मकारस्थाने सकारादेशश्च १ २३ २३ **समग्मत**=प्राप्नुन १२ ८० प्राप्नुवन्तु ४ ३४ २ सगच्छत १ १११ ३ [सम्+गम्लृ गतौ (भ्वा०) धातोर्लङ् । 'समो गम्यृच्छिभ्याम्' इत्यात्मनेपदम् । अन्यत्र लुङि 'मन्त्रे घसह्वर०' इति च्लेर्लुक् च । 'समगन्महि' प्रयोगे 'म्वोश्च' अ० ८ २ ६५ सूत्रेण मकारस्य नकार 'समगस्महि' प्रयोगे मकार य सकारश्छान्दस । समग्मत= सङ्गच्छन्ताम् नि० १२ ३४]

समग्निः सम्यक् प्रकाशक (विद्वज्जन) ३७ १४. [सम्+अग्निपदयो समास]

समग्रभम् सम्यग् गृहीतवानस्मि ९ ४ [सम्+ग्रह उपादाने (क्र्या०) धातोर्लङ् । व्यत्ययेन शप् । हकारस्य भकारश्छान्दस]

समङ्क्ताम् एकीभावेन सयोजयतु, सयुक्तभावेन सयोजयतु २ २२ मेलनेन प्रकट सयोजयति २ २२ [सम्+अञ्जू व्यक्तिम्रक्षणकान्तिगतिपु (रुधा०) धातोर्लोट् । व्यत्ययेनात्मनेपदम्]

समङ्धि सम्यक् शोधय १३ ४१ [सम्+अञ्जू व्यक्तिम्रक्षणकान्तिगतिपु (रुधा०) धातोर्लोट्]

समच्यन्त सम्यक् प्राप्नुत ५ ५४ १२ [सम्+अञ्चु गतिपूजनयो (भ्वा०) धातो कर्मणि लङ्]

समज विज्ञापय ६ २५ ९ **समजाति**=सम्यक् प्राप्नुयात् ५ २ १२ सजानीयात् १ १०० ११ **समजासि**=सम्यक् प्राप्नुया ७ ३२ ७ [सम्+अज गति-क्षेपणयो (भ्वा०) धातोर्लोट् । अन्यत्र लेट्]

समजयत् सम्यग् जयेत् ४ १७ ११ [सम्+जि जये (भ्वा०) धातोर्लङ्] ... ... नच् । शपो लुक् ।

समजीगमम् सम्यक् प्राप्नुय गम्लृ गतौ (भ्वा०) धातोर्णिजन्तात् ... युवन्तु, प्र०—रिणातीति

समज्यताम् एकीभावेन ६, ६ १८ **समरिणीतम्**= **ज्यते**=सम्यग् व्यज्यते १ ... म्+रिणाति गतिकर्मा निघ० क्षेपणयो (भ्वा०) धातो क

समञ्जतः सम्यक् प्रकाशते ३७ १५ [सम्+रुच सम्यक् प्रकटीकुर्यु ... न्तात्लुङ्] करके जानें स० वि० भा०—युद्धे, प्र०—समर इति सम्यक् प्रकाशयत २ १७, १२ ६६. [सम्+ऋ गति-प्रकटयतम् ३३ ७३ धातो 'ऋदोरप्' इत्यप् । धातोर्वाहु० औणा० अर

समरोचिष्ट सम्यक् प्रकाशते ३७ १५ [सम्+रुच दीप्तावभिप्रीतौ च (भ्वा०) धातोर्लुङ्]

समर्थयस्व समर्थ कुरु २ १३ १३ सम्यगर्थं कुरु २ १४ १२ [सम्+अर्थ उपयाश्चायाम् (चुरा०) धातोर्लोट्। अथवा समर्थप्राति० 'तत्करोति तदाचष्टे' इति णिजन्ताल्लोट्]

समर्यजित् य समर्यान् सङ्ग्रामान् जयति स (मेधावी नर), प्र०—समर्य इति सङ्ग्रामनाम निघ० २ १७, १ १११ ५ [समर्योपपदे जि जये (भ्वा०) धातो क्विप्। समर्ये सग्रामनाम निघ० २ १७]

समर्यता समरमिच्छता (मनसा=चित्तेन) ५ ४४ ७ [समरपदाद् इच्छाया क्यजन्ताच्छतृ]

समर्यम् सङ्ग्रामम् ४ २४ ८ **समर्यः**=युद्धकुशल (राजा) ७ ८ १ सङ्ग्राममिच्छु (शूरो जन) ५ ३३ १ **समर्ये**=सम्यगर्य्ये वाणिजि १ १७८ ४ [समर्ये सग्रामनाम निघ० २ १७ समरप्राति० वा कुशलार्थे यत्। समरपदाद्वा इच्छायामर्थे क्यजन्तादच् कर्त्तरि। अथवा सम्+अर्य-पदयो समास। अर्य =='अर्य स्वामीवैश्ययो' सूत्रेण ऋधातोर्यत् निपात्यते वैश्येऽभिधेये]

समवदन्त परस्पर सवाद कुर्यु १२ ६६. [सम्+वद व्यक्ताया वाचि (भ्वा०) धातोर्लङ्। 'विभाषा विप्रलापे' इत्यात्मनेपदम्]

समवर्त्तत सम्यगुत्पन्न सन् वर्त्तते ऋ० भू० १२७, समभवत् १३ ४ सम्यगवर्त्तत २३ १ विद्यमान था स० प्र० २८२, १० १२ ११ वर्त्तमान था स० वि० ५, १३ ४ [सम्+वृतु वर्त्तने (भ्वा०) धातोर्लङ्]

समवावशीताम् सम्यग् भृश कामयेथाम्, प्र०—वश कान्तौ इत्यस्य यङ्लुगन्त लडि रूपम् १ १८१ ४ [सम्+वश कान्तौ (अदा०) धातोर्यङ्लुगन्ताल्लङ्]

समविन्दन्त सम्यग् विन्दन्ते प्राप्नुवन्ति १ ८३ ४ [सम्+विद्लृ लाभे (तुदा०) धातोर्लङ्]

समवृक्त सम्यग् वृङ्क्ते ७ ३ ४ [सम्+वृजी वर्जने (अदा०) धातोर्लङ्]

समवेत् प्राप्नुयात् ५ ३४ ८ [सम्+वी गतिव्याप्ति-प्रजनादिपु (अदा०) धातोर्लङ्]

समव्यत् सम्यग् व्याप्नोति, प्र०—अत्र 'बहुल छन्दसि' इति शपो लुक् २ ३८ ४ सर्वत् सवृणोति २ १७ ४ [सम्+व्येञ् सवरणे (भ्वा०) धातोर्लुङ्। व्यत्ययेनाड्]

समशीत सम्यग् व्याप्नुयात्, प्र०—अत्र 'बहुल छन्दसि' इति श्नोर्लुक् १ ५७ २ [सम्+अशूङ् व्याप्तौ (स्वा०) धातोर्लिङ्। श्नुविकरणस्य लुक् छन्दसि]

समश्रेत् सम्यगाश्रयेत्, प्र०—अत्र शपो लुक् ३ १६ २ [सम्+श्रिञ् सेवायाम् (भ्वा०) धातोर्लङ्। शपो लुक्]

समसुस्रोत् सम्यक् प्राप्नुयात्, प्र०—अत्र 'बहुल छन्दसि' इति शप श्लु १८ ५८ [सम्+स्रु गतौ (भ्वा०) धातोर्लङ्। शप श्लुः 'बहुल छन्दसि' सूत्रेण]

समसृक्ष्महि ससृजेम, प्र०—अत्र व्यत्ययेनात्मनेपदम् २० २२ **समसृजत्**=ससृजति २ १५ ४ [सम्+सृज विसर्गे (तुदा०) धातोर्लङ्। सिव्-विकरणो व्यत्ययेनात्मनेपदश्च]

समसृपत् ससर्पति १३ ३१ [सम्+सृप्लृ गतौ (भ्वा०) धातोर्लङ्। व्यत्ययेन श]

समस्पृशन्त अच्छी प्रकार स्पर्श करते है स० वि० १३६, अथर्व० १४ २ ३२ [सम्+स्पृश सस्पर्शने (तुदा०) धातोर्लङ्। व्यत्ययेनात्मनेपदम्]

समस्य तुल्यस्य (जगदीश्वरस्य) ६ २७ ३ [समस्य सर्वस्य नि० ५.२३. समशब्द सर्वनाम तुल्यवाची च]

समह सत्कारसहित (विद्वज्जन) ५ ५३.१५ यो महेन सत्कारेण सह वर्त्तते तत्सम्बुद्धौ (विद्वज्जन) १ १२० ११ [सह-महपदयो समास। सहस्य सादेश 'वोपसर्जनस्य' सूत्रेण। मह महन्नाम निघ० ३ ३]

समह्यन् सम्यग् व्याप्नुवन् (इन्द्र=राजा) ६ ४० २ [सम्+अह व्याप्तौ (स्वा०) धातो शतृ। व्यत्ययेन श्यन्]

समाकृणुष्व सम्यक्तया समन्तात् कुरुष्व ३३ १२ [सम्+आङ्+डुकृञ् करणे (तना०) धातोर्लोट्। व्यत्ययेन श्नु]

समागमेम सम्यक् प्राप्नुयाम ५ ४३ १७ [सम्+आङ्+गम्लृ गतौ (भ्वा०) धातोर्लिङ्]

समाचक्रे समाकरोति ३ ३६ ५ [सम्+आङ्+डुकृञ् करणे (तना०) धातोर्लिट्]

समादधिरे समादधति ५ ४४ ६ [सम्+आङ्+डुधाञ् धारणपोषणयो (जु०) धातोर्लिट्]

समानजे सम्यग् व्यक्तीकरोति १ १८८ ६ [सम्+अञ्जू व्यक्तिम्रक्षणकान्तिगतिपु (रुधा०) धातोर्लिट्। व्यत्ययेनात्मनेपदम्]

समानट् सम्यक्तया व्याप्नोति ३ ३० १२ **समानश**=सम्यग् व्याप्नुत ३ ६० २ **समानशुः**=

४ ५ ७. समनानि सङ्ग्रामान् २ ११ ७. समनस्कौ (अध्यापकोपदेशकौ) ४.४३.७ सान्त्वनादिगुणयुक्ता (सुमति) ४ ४४ ७ सङ्ग्रामान् २६ ४२ तुल्ये (व्यवहारे) ११६८ १ **समनाः**=समानगुणकर्मस्वभावा (उपम = प्रातर्वेला) ४ ५१ ८ [समनम् सग्रामनाम निघ० २ १७ समना समनसौ नि० ६.४० समना=समनस इव योषा । समन समननाद्वा सम्माननाद्वा नि० ७ १७. समना समानया नि० १० ५ समने सग्रामे नि० ६ १८]

समनुमार्ष्टु मिश्रीभावेन पश्चात् शोधयतु २ २४ [सम्+अनु+मृजूष् शुद्धौ (अदा०) धातोर्लोट्]

समनेव समानमना इव (माता), प्र०—अत्र छान्दसो वर्णलोपो वा इति सलोप ६ ७५.४ समान मनो यासा ता इव (योषा =स्त्रिय) १७ ६६ यथा युद्धे प्रवृत्ता सेना तथा ११०३ १ समानमनस्का पतिव्रतेव ४ ५८.८ सम्यक् प्राण इव प्रिया (योषा=विदुषी स्त्री) २६ ४१ [समना-इवपदयो समास । समना इति व्याख्यातम्]

समन्तम् सर्वतो दृढाङ्गम् (रथम्) ५ १ ११ [समन्तम् (साम) समन्तेन पशुकाम स्तुवीत, पुरोधाकाम समन्तेन स्तुवीत ता० १५ ४ ७]

समन्तशितिबाहुः समन्ताच्छितयो बाह्वोर्भुजस्थानयोर्यस्य स (पशु) २४ २ [समन्त-शिति-बाहुपदाना समास]

समन्तशितिरन्ध्रः समन्ततो रन्ध्राणीव शितय श्वेतचिह्नानि यस्य स (पशु) २४ २ [समन्त-शिति-रन्ध्र-पदाना समास]

समन्ते सम्यगन्तो ययोस्ते (स्वसारा=भगिन्यौ) ११८५ ५ [सम्+अन्तपदयो समास]

समन्यवः समानो मन्यु क्रोधो येषान्ते, भा०—ये दुष्टानामुपरि क्रोध कुर्युस्ते (देवास =विद्वज्जना) ३३ ६४ मन्युना सह वर्त्तमाना (राजजना) २ ३४ ३ [समान-मन्युपदयो समासे समानस्य सादेश । सह मन्युपदयोर्वा समासे सहस्य सादेश]

समपश्यन्त सम्यक् पश्यन्ति १७ २६ [सम्+दृशिर् प्रेक्षणे (भ्वा०) धातोर्लङ । 'दृशेश्चे ति वक्तव्यम्' अ० १ ३ २६ वा० सूत्रेणात्मनेपदम्]

समपृच्यन्त सम्पृच्यन्ति १ ११० ४ [सम्+पृची सम्पर्चने (अदा०) धातोर्लङ् । व्यत्ययेन श्यन्]

समभक्त सम्यग् भजेत ३ ३३.१२ [सम्+भज सेवायाम् (भ्वा०) धातोर्लुङ्]

समभूम अ०—सयुक्ता भवेम २ २५ [सम्+भू सत्तायाम् (भ्वा०) धातोर्लुङ् । 'गातिस्थाघुपाभूभ्य०' इति सिचो लुक्]

सममदः सम्यगानन्द १ ८२ ६ [सम्+मदी हर्षे (दिवा०) धातोर्लङ् । विकरणव्यत्ययेन शप्]

समयन्त सम्यक्तया प्राप्नुवन्ति ६ २६ १ [सम्+अय गतौ (भ्वा०) धातोर्लङ् । अडभावश्छान्दस]

समयंस्त सम्यग् यच्छत ११४४ ३ उपयच्छति ११३६ २ [सम्+यमु उपरमे (दिवा०) धातोर्लुङ् । व्यत्ययेनात्मनेपदम्]

समया यथासमयम् १ ५६ ६ काले १११३ १०. सामीप्ये १ ७३ ६ [सम्+इण् गतौ (अदा०) धातो 'आ समिण्निकपिभ्याम्' उ० ४ १७५ सूत्रेण आ प्रत्यय । स्वरादिपु पाठादव्ययम्]

समयोधयः सम्यग् योधयसि १ ८० १३ [सम्+युध सम्प्रहारे (दिवा०) धातोर्णिजन्ताल् लङ्]

समरणम् सम्यक्तया प्रापकम् (प्रकाशम्) १ १५५ २ [सम्+ऋ गतिप्रापणयो (भ्वा०) धातो 'कृत्यल्युटो बहुलमिति' कर्त्तरि ल्युट्]

समरणे सङ्ग्रामे १ १७० २. [समरण सग्रामनाम निघ० २ १७ समरणेपु सग्रामेपु नि० ६ २०]

समरन्त सरमन्ते ४ १६ ६ सम्यग् गच्छन्ति ७ २५ १ [सम्+रमु क्रीडायाम् (भ्वा०) धातोर्लङ् । शपो लुक् । वचनव्यत्ययश्च । अथवा सम्+ऋ गतिप्रापणयो (भ्वा०) धातोर्लुङ् । 'सर्तिशास्त्यर्तिभ्यश्चे' त्यङ् । 'अर्तिश्रुदृशिभ्यश्च' अ० १ ३ २६ वा०सूत्रेणात्मनेपदम्]

समराण सम्यक् प्राप्नुवन् (विद्वज्जन) ११६५.३ सम्यग् गच्छन् (इन्द्र =सभाध्यक्ष) ३३ २७ [सम्+ऋ गतिप्रापणयो (भ्वा०) धातो शानच् । शपो लुक् । 'अर्तिश्रुदृशिभ्यश्चे' त्यात्मनेपदम्]

समरिणन् सम्यक् प्राप्नुवन्तु, प्र०—रिणातीति गतिकर्मसु पठितम् निघ० २ १४, ६ १८ **समरिणीतम्**= सङ्गच्छतम् १ ११७ ११ [सम्+रिणाति गतिकर्मा निघ० २ १४. धातोर्लङ्]

समरुरुचत सम्यक् प्रकाशते ३७ १५ [सम्+रुच दीप्तौ (भ्वा०) धातोर्णिजन्तात्लुङ्]

समरे सङ्ग्रामे, भा०—युद्धे, प्र०—समर इति सङ्ग्रामनाम निघ० २ १७, १२ ६६. [सम्+ऋ गति-प्रापणयो (भ्वा०) धातो 'ऋदोरप्' इत्यप् । अथवा षम वैक्लव्ये (भ्वा०) धातोर्बाहु० औणा० अर. प्रत्यय]

६.८३ १ [सम्+अशूङ् व्याप्तौ (स्वा०) धातोर्लङ्। व्यत्ययेन शप्]

समाशिराम् सम्यगभित श्रियन्ते सेव्यन्ते सद्गुणैर्ये तेषाम् (पच्यमानाना, पदार्थानाम्), प्र०—अत्र 'श्रयते. स्वाङ्गे शिर किच्च' उ० ४ २०० अनेनाऽसुन्प्रत्यय. शिर आदेशश्चाऽसुनि १.३० २ [सम्+आङ्+श्रिञ् सेवायाम् (भ्वा०) धातो 'श्रयते स्वाङ्गे शिर किच्च' उ० ४ १९४. सूत्रेणासुन् शिरादेशश्च। प्रत्ययसकारस्य लोपश्छान्दस]

समासते सम्यगुपविशन्ति ३ ६ ७ सम्यक् प्राप्नुवन्ति ७ १ ४ सम्यगासते १ १६४ ३६ अच्छे प्रकार समाधियोग से स्थिर होते हैं म० वि० २१५, १.१६४.३९ [सम्+आस उपवेशने (अदा०) धातोर्लट्]

समासदसि समन्तात् सीदसि, प्र०—अत्र 'बहुल छन्दसि' इति शपो लुक् ३ ३० १८ [सम्+आङ्+षद्लृ विशरणगत्यवसादनेषु (भ्वा०) धातोर्लट्। शपो लुक्]

समाहितम् सम्यक् सर्वतो धृतम् (रस=सारम्) ६ ३ [सम्+आङ्+डुधाञ् धारणपोषणयो (जु०) धातो क्त। 'दधातेर्हि' रिति हिरादेश]

समाहुः सम्यक्तया कथयन्ति १५ २६ [सम्+ब्रूञ् व्यक्ताया वाचि (अदा०) धातोर्लट्। 'ब्रुव पञ्चानामादित आहो ब्रुव' सूत्रेणाहादेश]

समिङ्गयति सम्यक् चालयति ५ ७८ ७ [सम्+इगि गत्यर्थे (भ्वा०) धातोर्णिजन्ताल्लट्]

समिच्छन्त सम्यक्तयेच्छन्तु १ ६८ ४ [सम्+इषु इच्छायाम् (तुदा०) धातोर्लङ्। आडभावश्छान्दस। व्यत्ययेनात्मनेपदम्]

समिडाभिः एकीभावेन भूमिवाणीनीतिभि १ ४८ १६ [सम्+इडापदयो समास। इडा पृथिवीनाम निघ० १ १. वाङ्नाम निघ० १ ११ अन्ननाम निघ० २ ७. गोनाम निघ० २ ११]

समित् सम्यगिध्यते दीप्यतेऽनया सा विद्या काष्ठादिर्वा अ०—वेदविद्या २ १४ सम्यक् प्रदीप्तेव (ईश्वर) ३८ २५ अग्नेरिन्धनमिव मनुष्याणामात्मना प्रकाशक (जगदीश्वर) २० २३ सम्यक् प्रदीप्त (पति) ८ २७ सम्यगिध्यतेऽनयाऽनेन वा सा समिदग्निप्रदीपक काष्ठादिक वसन्त-ऋतुर्वा २ ५ प्रदीप्ता (भा०—अग्न्यादिविद्या) ५ ६ ४ यथा सम्यगिध्यते तथा (परमेश्वर) ५ ३५ **समिधम्**=समिध्यते प्रकाश्यतेऽर्थतत्त्वमनया क्रियया ताम् ८ २४ काष्ठमिव शत्रुम् ५ ४.४ इन्धनम् २ ६ १ प्रदीपिकाम् (विद्युदग्निम्) २ ३७ ६ काष्ठविशेषम् ७ २ १ **समिधः**=सम्यक् प्रदीपिका. (काष्ठादिसामग्री) २७.११ काष्ठादिसामग्री ३.४. शब्दार्थसम्बन्धै सम्यग् दीपिता (धारा=वाच) १७ ६६ समिध्यते प्रदीप्यते ज्ञान याभिरता (भा०—ज्ञानादिप्रकाशिकास्त्रिविधा विद्या) २३.५८ सामग्रीभूता (त्रि सप्तप्रकृत्यादीनि) ३१ १५ **समिधा**=ज्ञानप्रकाशेन २८ १ सम्यक्प्रदीप्तेन स्वभावेन प्रदीपकेनेन्धनादिना वा १ ६५ १ प्रदीपनसाधनेन ७ १४.१. सम्यक् प्रदीप्त्या नीत्या सह ४.४ १५ सम्यगिध्यते प्रदीप्यते यया तया, भा०—इन्धनेन, प्र०—अत्र सम्पूर्वादिन्धे. 'कृतो बहुलम्' इति करणे क्विप् ३ १ सम्यक् प्रकाशेन २१.१२. सम्यगग्निसस्कृतेनाऽन्नादिना १२ ३० सम्यक् प्रदीप्तेन स्वभावेन १ ६५ ११. **समिधे**=सम्यक् प्रदीपनाय १ ११३ ६ [सम्+ञिइन्धी दीप्तौ (रुधा०) धातो 'कृतो बहुलम्०' इति करणे क्विप्। समिध (यजु० १७ ३६) प्राणा वै समिध, प्राणा ह्येत समिन्धते श० ६ २ ३ ४४ प्राणा वै समिध ऐ० २ ४ श० १ ५ ४ १. यदेन समयच्छन् तत्समिध समित्त्वम् तै० २ १ ३.८ समिधो यजति वसन्तमेव वसन्ते वा इद सर्व समिध्यते कौ० ३ ४ वसन्तो वै समित् श० १ ५ ३ ६ गर्भ समित् श० ६ ६.२ १५ अस्थीनि वै समिध श० ६ २ ३.४६]

समितम् एकीभाव प्राप्नुतम् १२ ५७ [सम्+इण् गतौ (अदा०) धातो क्त]

समितिम् सङ्ग्राम को स० वि० १८२, अथर्व० १५ ६.२ **समितिः**=विज्ञानमर्यादा १ ६५ ८ सामाजिक-नियमव्यवस्थाद्यान्यायप्र चाराढ्या, सर्वमनुष्याणा मान्य-ज्ञानप्रदा, ब्रह्मचर्यविद्याभ्यासशुभगुणसाधिका शिष्टसभया राज्यप्रबन्धाद्याऽह्लादिना परमार्थव्यवहारशोधिका बुद्धि-शरीरबलारोग्यवर्धिनी शुभमर्यादा ऋ० भू० ६३, ऋ० ८ ८ ४६ ३ सङ्ग्रामादि की व्यवस्था स० प्र० १८२, अथर्व० १६ ७ ५५ ६ **समितौ**=सङ्ग्रामे १२ ८० [सम्+इण् गतौ (भ्वा०) धातो स्त्रिया क्तिन्। समिति सग्रामनाम निघ० २ १७]

समित्समित् प्रतिसमिधम् ३ ४ १ [समित् पदस्य वीप्साया द्विर्वचनम्। समित् इति व्याख्यातम्]

समिथानि सम्यग् यन्ति यानि विज्ञानानि तानि १ ५५ ५ **समिथे**=सङ्ग्रामे ६ २५ ६ [सम्+इण् गतौ (अदा०) धातो 'समीण' उ० २ ११ सूत्रेण थक्। समिथे सग्रामनाम निघ० २ १७]

सम्यक् प्राप्नुयु, प्र०—अत्र व्यत्ययेन परस्मैपदम् ३ ६०.३

समानश=सम्प्राप्नोति ४ २३ २ [सम्+अशूङ् व्याप्तौ (स्वा०) धातोर्लिट्। तप्रत्ययस्य 'लोपस्त आत्मनेपदेषु' अ० ७ १ ४१ सूत्रेण लोप। अन्यत्र व्यत्ययेन परस्मैपदम्]

समानत: सदृशेभ्य पतिभ्य ४ ५१ ८ [समानप्राति० पञ्चम्यन्तात् तसि]

समानदक्षा समान दक्षो वल विद्याचातुर्यं येषान्ते (पुत्रा) ७ २६ २ [समान-दक्षस्पदयो समास। दक्षस् वलनाम निघ० २ ९]

समानबन्धू यथा सह वर्त्तमानौ मित्रौ भ्रातरौ वा १ १३३ २ [समान-बन्धुपदयो समास। समानबन्धू समानबन्धने नि० २ २०]

समानम् तुल्यम् (वत्सम्=अहोरात्र) १ १४६ ३ पक्षपातरहितम् [पति=राजानम्) १ १२७ ८. सर्वत्रैव स्वव्याप्त्यैकरसम् (परमेश्वरम्) १ १३१ २ वैसा ही (वृक्षम्=अनादिमूलरूप कारण और शाखारूप कार्ययुक्त वृक्ष नामक जगत्) स० प्र० २८३, १ १६४ २० (राजा) ४ ३० २२ एक (राजा=सूर्य) ३ ५५ ४ सदृश (व्यक्ति) ५ २३ समानयति रस येन स (वायु) २२ ३३ **समाना:**=सदृग्गुणकर्मस्वभावा (जीवा) १९ ४६ [सह-मानपदयो समासे सहस्य सादेश। समान सम्मानमात्र भवति नि० ४ २५ दिश समान जै० उ० ४ २२ ९ निरुक्ता निरुक्त इव ह्यय समान ष० १.२ त (सञ्ज्ञप्त पशु) ऊर्ध्वा दिवसमानेत्यनुप्राणत् समानमेवास्मिँ-स्तदधात् श० ११ ८ ३ ६]

समानयोजन: समान तुल्य योजन सयोगकरण यस्मिन्त्स (रथ=नौकादियानम्) १ ३० १८. [समान-योजनपदयो समास। योजनम्=युजिर् योगे (रुधा०) धातोर्ल्युट्]

समानवर्चसा समान तुल्य वर्चो दीप्तिर्ययोस्तौ (वायुसूर्यौ) १ ६ ७ [समान-वर्चस्पदयो समासे द्विवचन-स्याकारादेशश्छान्दस]

समानस्मात् तुल्यात् (सदस=गृहात्) ५ ८७ ४. [समानप्राति० पञ्चमी। सर्वेषा वाचकत्वात् सर्वनामत्वम्]

समानी सर्वमनुष्यस्वतन्त्रदानसुखवर्धनायैकरसा (समिति) ऋ० भू० ९३, ऋ० ८ ८ ४९ ३ एकसी (प्रपा=जलपान स्नान आदि स्थानादि व्यवहार) स० वि० १४२, अथर्व० ३ ३० ६ **समान्या**=तुल्यया (क्रियया) ५ ४८ २ सम वर्त्तमानया (दिशा) १ १३२ ४ [सह-मानपदयो समासात् स्त्रिया ङीप्]

समानृचे सम्यक्तया स्तौमि १ १६० ४ [सम्+ऋच स्तुतौ (तुदा०) धातोर्लिट्। व्यत्ययेनात्मनेपदम्]

समान्या समानस्वभावे (द्यावापृथिव्यौ) ३ ५४ ७ [समानीशब्दात् प्रथमाद्विवचनस्याकारादेशश्छान्दस]

समाप्यते सम्यक् प्राप्यते १९.१७ [सम्+आप्लृ व्याप्तौ (स्वा०) धातो कर्मणि लट्]

समाभर सम्यक्तयाऽऽधर १ ५७ ३ [सम्+आङ्+भृञ् भरणे (भ्वा०) धातोर्लोट्]

समाभ्य: प्रजाभ्य ४० ८ जीवरूपाभ्य प्रजाभ्य, प० वि०। **समाम्**=शुद्धाम् (सीता=भूमिकर्षिकाम्) ४ ५७ ७ वेलाम् ३८ २८ **समा:**=वर्षाणि १४ १९ सवत्सरा १९ ४६ क्षणादय १८ १८ [समाना सवत्सरा-णाम् नि० ११ ५.]

समायजन्त सङ्गच्छेरन् १७ २८ [सम्+आङ्+यज देवपूजासगतिकरणदानेषु (भ्वा०) धातोर्लङ्]

समायन्ति सम्यक्तयाऽऽगच्छन्ति ५ ६ २ [सम्+आङ्+इण् गतौ (अदा०) धातोर्लट्]

समायुषा समीचीनेन जीवनेन ३ १९ [सम्+आयुष्पदयो समास]

समारत सम्यक् प्राप्नुत १ ५४ १ [सम्+ऋ गतौ (जु०) धातोर्लुङ्। 'सर्त्तिशास्त्यर्त्तिभ्यश्च' इत्यङ्। 'ऋदृशो ऽङि' इति गुण]

समारभेमहि सम्यक्तयाऽऽरम्भ कुर्वीमहि १ ५३ ४ [सम्+आङ्+रभ राभस्ये (भ्वा०) धातोर्लिङ्]

समाराणे सम्यक् समन्ताद्राण दान ययोस्ते (अध्या-पिकोपदेशिके) ३ ३३ २ [सम्+आङ्+राणपदाना समास। राणम्=रा दाने (अदा०) धातोर्ल्युट्]

समारिरीहि सम्यक् समन्तात्प्रापय ६ ४६ ८ [सम्+आङ्+री गतिरेषणयो (क्र्या०) धातोर्लोट्। 'बहुल छन्दसी ति' श्लु]

समावतम् सम्यग् रक्षतम् १ ११२ १८ [सम्+अव रक्षणगत्यादिषु (भ्वा०) धातोर्लोट्]

समाववर्त्ति सम्यगावर्तते, प्र०—अत्र व्यत्ययेन परस्मैपद, शप श्लुश्च २० २३ सम्यगववर्त्यते २ ३८ ६ [सम्+वृतु वर्त्तने (भ्वा०) धातोर्लट्। व्यत्ययेन शप श्लु परस्मैपदञ्च]

समाशत अच्छे प्रकार प्राप्त होते हैं स० प्र० ४२३,

प्रथमाद्विवचनस्य छन्दसीकारादेशे भसञ्ज्ञायाम् 'अच.' इत्यकारलोपे 'चौ' इति पूर्वस्य दीर्घत्वे रूपम्]

समीची ,या सम्यगञ्चति प्राप्नोति सा भूमि. १.६६.१ या दीप्ति सम्यगञ्चति सा (विदुषी स्त्री) २ २७ १५ **समीचीः**=याः समान सत्यमञ्चन्ति ता (गिरः= विविधविद्यायुक्ता वाण्य) ३ ३१.१३. या. सम्यगच्यन्ते ता (दिश) १४.२५. या सम्यगञ्चन्ति शिक्षा प्राप्नुवन्ति ता सेना ४ १७ ६ [सम्यक्+अञ्चु गतिपूजनयो. (भ्वा०) धातो क्विन् । 'अञ्चतेश्चोपसङ्ख्यानम्' इति स्त्रिया ङीप् । 'अनिदिताम्' इति नलोपे 'अच ' इत्यकारलोपे 'सम समि' इति सम्यादेशे, 'चौ' इति पूर्वस्य दीर्घत्वे रूपम्]

समीजमानः सम्यक्तया सङ्गच्छमान (सूरि = विद्वज्जन) ६ २६ ५ [सम्+यज देवपूजासगतिकरणदानेषु (भ्वा०) धातो शानच् । विकरणव्यत्ययेन श । तस्य ङित्वात् सम्प्रसारणम् । धातोरिकारस्य दीर्घश्छान्दस]

समीयसे सम्यक्तया व्याप्नोषि ६ १५ ६ [सम्+ ईङ् गतौ (दिवा०) धातोर्लट् । अथवा वी गतिव्याप्त्यादिषु धातावीकारप्रश्लेषो वा । तत कर्मणि लट्]

समीहसे सम्यक् चेष्टसे, भा०—सर्वत्राऽभिव्याप्तोऽसि ३६ १२ सम्यक् चेष्टा करते हो आर्याभि० २ ७, ३६.२२. [सम्+ईह चेष्टायाम् (भ्वा०) धातोर्लट्]

समुक्षितम् सम्यक् सिक्तम् (सोमम्=ऐश्वर्यम्) ३ ६० ५ **समुक्षितानाम्**=सम्यक् सेक्तॄणाम् (मनुष्याणाम्) ५ ५६.५. [सम्-उक्षितपदयो समास । उक्षितम्= उक्ष सेचने (भ्वा०) धातो क्त]

समुच्यसि सम्यक्तया वदसि ५ ८१ ४ [सम् वच परिभाषणे (अदा०) धातोर्लट् । विकरणव्यत्ययेन श्यन् । तस्य ङित्वात् सम्प्रसारणम्]

समुद्र इव समुद्रवन्त्यापो यस्मिँस्तद्वत् १ ८ ७ सागर इवान्तरिक्षमिव वा ३३ ८३. [समुद्र-इवपदयो समास]

समुद्रज्येष्ठाः समुद्र ज्येष्ठो यासा ता (आप = जलानि) ७ ४६ १ [समुद्र-ज्येष्ठपदयो समास । ज्येष्ठ = वृद्धप्राति० अतिशायन इष्ठन् । 'वृद्धस्य चे' ति ज्यादेश]

समुद्रतः अन्तरिक्षात् ५ ५५ ५ [समुद्रप्राति० पञ्चम्यन्तात् तसि]

समुद्रम् अर्णवम् १ ७१ ७ अन्तरिक्ष जलमय वा १ १६ ८ समुद्रवन्त्यापो यस्मिन् तदन्तरिक्षम् १ १६ ७ सागरम् १ ५६ १ मेघ सागर वा ३ ३ २ **समुद्रस्य**=सम्यग् द्रवन्त्यापो यस्मिँस्तस्यान्तरिक्षस्य १ ११६.४. **समुद्रः**= सम्यग् द्रवन्त्यापो यस्मात् स. (सागर) १७.६०. भा०— समुद्रवद् गम्भीरो रत्नाढ्य १ ८ ४५ सागर इव गाम्भीर्यम् १५ ४. सम्यगापो द्रवन्ति यस्मिँस्तदन्तरिक्ष मेघो वा ६.६६ ६ उदधि. ८ २८ समुद्रवन्त्यापो यस्मिन् स सागर ७ ३५.१३ सब भूत-मात्र जिसमे डूबे हैं, वह द्रवणीय स्वरूप सबका कारण (ईश्वर) आर्याभि० २.१८, ५ ३३ समुद्द्रवन्ति कामुका यस्मिन् व्यवहारे स. १३ १६. समुद्द्रवन्ति भूतानि यस्मात् स· (ईश्वर) ५ ३३ **समुद्रात्**= जलद्रावाऽऽधारात् (सागरात्) १ ११७.१४ **समुद्रान्**= समुद्द्रवन्ति पदार्था येषु तान् भूत-भविष्यद्वर्त्तमानान् समयान्, अ०—लोकान् १३ ३१ **समुद्राय**=महाजलाशयाय २४.२१ अन्तरिक्षे गमनाय ३८ ७ **समुद्राः**=शब्दार्णवा १ १६४ ४२ **समुद्रे**=अन्तरिक्षवद् व्याप्ते परमेश्वरे १८ ५५ आकाशमिव व्याप्तस्वरूपे (परमेश्वरे) १७ ६६ मनसि १३.५३. सम्यग् द्रवीभूते व्यवहारे ८ २५ [उन्दी क्लेदने (रुधा०) धातो सम्पूर्वकात् 'स्फायितञ्चि०' उ० २ १३ सूत्रेण रक् । 'अनिदिताम्०' इति नलोप । समुद्र अन्तरिक्षनाम निघ० १ ३ पदनाम निघ० ५ ६ समुद्र कस्मात् ? समुद्द्रवन्त्यस्मादाप समभिद्रवन्त्येनमाप सम्मोदन्तेऽस्मिन् भूतानि समुदको भवति समुनत्तीति वा नि० २ १० समुद्र आदित्य नि० १३ १६ समुद्रम्=समुदितारम् नि० १० ३२. समुद्र (यजु० ३८ ७) अय वै समुद्रो योऽय (वायु) पवतऽएतस्माद्वै समुद्रात् सर्वे देवा सर्वाणि भूतानि समुद्रवन्ति श० १४ २.२.२. य एवाय (वायु) पवत एष एव स समुद्र एत हि सद्रवन्त सर्वाणि भूतान्यनुसद्रवन्ति जै० उ० १ २५ ४. तद् यत् (आप) समुद्रवन्त तस्मात्समुद्र उच्यते गो० पू० १.७ तद् वस्तिमभिनत् । स समुद्रोऽभवत् । तस्मात् समुद्रस्य (जल) न पिबन्ति । प्रजननमिव हि मन्यन्ते तै० २ २ ६ २-३ आपो वै समुद्र श० ३ ८ ४.११. समुद्रो वाऽपा योनि श० ७ ५ २ ५८ समुद्रो वाऽवभृथ तै० २ १ ५ २ (यजु० १३ ५३) मनो वै समुद्र श० ७ ५ २ ५२. वाग्वै समुद्रो मन समुद्रस्य चक्षु ता० ६ ४.७ (ऋ० ४ ५८ १) वाग्वै समुद्रो न वै वाक् क्षीयते न समुद्र क्षीयते ऐ० ५ १६ वाग्वै समुद्र ता० ७ ७.६ पुरुषो वै समुद्र जै० उ० ३ ३५ ५. (यजु० १३ १६) रुक्मो वै समुद्र । श० ७ ४ २ ५ एष वाव स समुद्र यच्चात्वाल तै० १ ५ १० १. तेजोऽसि तपसि श्रितम् । समुद्रस्य प्रतिष्ठा तै० ३.११ १.३ समुद्रोऽसि तेजसि श्रित । अपा प्रतिष्ठा तै० ३ ११ १.४ समुद्र एवास्य (अश्वस्य मेध्यस्य) बन्धु समुद्रो योनि श० १०.६ ४ १.

समिद्धम् प्रदीप्तम् (अग्नि=पावकम्) ७ ४४ १ प्रदीपनीकृतम् (अग्निम्) ७ २ ३ **समिद्धस्य**=प्रकाशमानस्य (राज्ञ) ५ २८ ४ **समिद्धः**=सुप्रकाशित (अग्नि) १ ६४ १४ सम्यक् प्रदीप्त (अग्नि.) २१ १२ अग्निरिव प्रदीप्त (राजा) १ १८८ १ विद्यया प्रदीप्तोऽध्यापक १ १४२ १ सम्यक् प्रकाशित (मित्रमह=विद्वज्जन) २६.२५ **समिद्धे**=प्रसिद्धे (अग्नौ=पावके) ४ २५ १ [सम्+ञिइन्धी दीप्तौ (रुधा०) धातो क्त]

समिद्धः ज्ञानादिप्रकाशका समिद्रूपा (भा०—त्रिविधा विद्या), प्र०—अत्र छान्दसो वर्णागमस्तेन धस्य द्वित्व सम्पन्नम् २३ ५७ [सम्+ञिइन्धी दीप्तौ (रुधा०) धातो क्विप्। ततो जसि धस्य द्वित्वे रूपम्]

समिद्धाग्निः प्रदीप्त पावक ५ ३७ २ [समिद्ध-अग्निपदयो समास.। समिद्व=सम्+ञिइन्धी दीप्तौ (रुधा०)+क्त]

समिधान सम्यक् तेजस्विन् (अग्ने—सभाध्यक्ष राजन्) १३ १२ सम्यक् प्रकाशमान (अग्ने) ४ ४४ देदीप्यमान (अग्ने) ४ ६ ११ **समिधानम्**=सम्यक् प्रकाशमानम् (महद्यश=अतुला कीर्तिम्) २८ २४ **समिधानस्य**=सम्यक् प्रदी तस्य (विदुषो जनस्य) १.१४३ २ समिधान=शुभगुणैर्देदीप्यमान (अग्निरिव विद्वज्जन) ७ २ ११ **समिधाने**=समिध्यमाने (अग्नौ=पावके प्र०—अत्र यको लुक् ३४ १६ प्रदीप्यमाने (अग्नौ) ३ ३० २ [सम्+ञिइन्धी दीप्तौ (रुधा०) धातो शानच्]

समिधीमहि सम्यक् प्रकाशयेमहि, प्र०—अत्र 'बहुल छन्दसि०' इति श्नमो लुक् २ ४ सम्यक् प्रकाशयेम ३ २७ १५ प्रकाशितान् कुर्याम ५ २१ १ एकीभावेन दीपयेम १६ ७१ सम्यक्तया जीवेम वा, अ०—प्रकाशयेम ३ १८ **समिध्यस्व**=सम्यक् प्रदीप्तो भव २७ २ **समिन्धते**=सम्यक् प्रकाशयन्ते १ २२ २१ प्रदीपयन्ति ३ १० ६ प्रकाशयन्ति ३४ ४४ सम्यक् प्रदीप्यन्ते १ ४४ ७ सम्यक् प्रदीपयेयु ३ २७ ११ **समिन्धे**=सम्यक् प्रकाशयते ७ १ १६ **समीधिरे**=सम्यक् प्रदीपयेयु ५ ८ १ सम्यक् प्रदीपयन्ति ५ ८ ७ **समीधे**=प्रापयति ६ १६ १५ प्रदीपयेय ३.५ १० [सम्+ञिइन्धी दीप्तौ (रुधा०) धातोर्लिड्। श्नमो लुक् छान्दस। अन्यत्र लोट् विकरणव्यत्ययेन श्यन्। ततो लट्-लिटौ चापि]

समिध्यते सम्यक् प्रकाश्यते ३ २७ १४ प्रदीप्यते ४ १५ ४ **समिध्यसे**=सम्यक् प्रदीप्यसे १५ ३० [सम्+ञिइन्धी दीप्तौ (रुधा०) धातो कर्मणि लट्]

समिध्यमानः सम्यग् देदीप्यमान (विद्वज्जन) ५.२८ २ सम्यक्तया प्रदीप्यमान (अग्नि=विद्वज्जन) ३ २७ ४ [सम्+ञिइन्धी दीप्तौ (रुधा०) धातो कर्मणि शानच्]

समिन्व सम्यक्तया व्याप्नुहि ५ ४ ७ **समिन्वथः**=सम्यक् प्राप्नुतम् १ ११६ ७ **समिन्वतम्**=सम्यक्तया वर्द्धयतम् १ १६० ५ **समिन्वतु**=सम्यग् ददातु ४ ५३ ७ सम्+इवि व्याप्तौ (भ्वा०) धातोर्लोट्। अन्यत्र लट् चापि]

समिषा सम्यग् धर्मेच्छयाऽन्नादिना वा १ ५३ ५ सम्यगिष्यते या सा समिट् तया श्रद्धया ऋ० भू० २६८, अथर्व० १६ ७ ७ [सम्+इषु इच्छायाम् (तुदा०) धातो क्विप्। ततष्टाप्रत्यय। इषम् अन्ननाम निघ० २ ७]

समिष्टयजुषा सम्यगिष्ट येन भवति तेन (यजुकर्मणा) १६ २६ [सम्-इष्टपदयो समासे ततो यजुषा सह समास]

समीके सम्यक् प्राप्ते सङ्ग्रामे ४ २४ ३ समीपे ३ ३० ११ [समीके सग्रामनाम निघ० २ १७ [सम्+इण् गतौ (अदा०) धातोर्बाहु० औणा० ईकन्]

समीक्षन्ताम् सम्यक् प्रेक्षन्ता, पश्यन्तु ३६.१८ **समीक्षामहे**=हम देखते रहे स० वि० २१४, ३६.१८ सुखसम्पादनार्थं सदा वर्त्तामहे ऋ० भू० ६८, ३६ १८. **समीक्षे**=सम्यक् पश्येयम् ३६ १८ सम्यक् पश्यामि ऋ० भू० ६८, ३६ १८ अपने प्राणवत् प्रिय जानू आर्याभि० २ २३, ३६ १८ [सम्+ईक्ष दर्शने (भ्वा०) धातोर्लोट्। अन्यत्र लट्]

समीक्षयत् सम्यक्तया दर्शयेत् १ १३२ ५ [सम्+ईक्ष दर्शने (भ्वा०) धातोर्णिजन्ताल्लेट्]

समीची ये सम्यगञ्चत समान प्राप्नुतस्ते (द्यावापृथिव्यौ) ३ ३० ११ ये एकीभावमिच्छतस्ते (मातृधात्र्यौ) १७ ७० प्राप्तसङ्गती (द्यावाक्षामा=प्रकाशभूमी) १ ६६ ५ सम्यगञ्चन्त्यौ (मातरा=जनकजनन्यौ) ३ १ ७ सम्यगञ्चती (उपासानक्ता=रात्रिदिने) २ ३ ६ सम्यक् प्राप्ते (द्यावापृथिव्यौ) ३ ५५ २० सम्यक् प्राप्नुवत्यौ (रात्रिदिवसौ) ३ ५५ १२ [सम्=अञ्चु गतिपूजनयो (भ्वा०) धातो 'ऋत्विग्दधृक्०' इति क्विन्। 'अनिदिताम्०' इति नलोपे 'सम समि' अ० ६ ३ ६३ सूत्रेण सम्यादेशे

[सम्+ईर गतौ कम्पने च (अदा०) धातोर्लङ्। छन्दसि शपो लुङ् न। अन्यत्र=सम्+आङ्+ईर गतौ कम्पने च (अदा०) धातोर्णिजन्ताल्लोट् लङ् च]

समोकसः सम्यगोको निवासस्थान येभ्यस्ते (नर = नायका जना) १ ६४ १० **समोकाः**=सम्यगोकासि निवासस्थानानि यस्मिन् स (इन्द्र =सूर्यलोक) १ १०० १ एकस्थान (राजजन) ६ १८ ७ [सम्-ओकस्पदयो समास। ओकस्=वच परिभाषणे (अदा०) धातोर्बाहु० औणा० असुन्। न्यङ्क्वादित्वात् कुत्वम्

समोकसा समीचीनमोको निवसन ययोस्तौ (अध्यापकोपदेशकौ) १ १५६ ४ समानगृहेण सह वर्त्तमानौ (दम्पती) १ ११४ ४ [सम्-ओकस्पदयो समासे द्विवचनस्याकारादेश]

समोहम् सम्यग् गूढम् (रेणुम्=अपराधम्) ४ १७ १३ **समोहे**=सङ्ग्रामे १ ८ ६ [समोहे सग्रामनाम निघ० २ १७]

सम्पत् सम्यक् प्राप्यते या सा (सम्पत्ति) १५.८. **सम्पदे**=ऐश्वर्याय १५ ८ [सम्+पद गतौ (दिवा०) सम्पदादित्वात् क्विप्। श्रोत्र वै सम्पच्छ्रोत्रे हीमे सर्वे वेदा अभिसम्पन्ना श० १४ ६ २ ४]

सम्पर्यत एक दूसरे का हित सिद्ध किया करो स० वि० १४३ अथर्व० ३ ३० ६]

सम्पश्यन् सम्यक् प्रेक्षमाण (विद्वज्जन) १७ ५८ [सम्+दृशिर् प्रेक्षणे (भ्वा०) धातो शतृ। शिति पश्यादेश]

सम्पश्यमानाः सम्यक् प्रेक्षमाणा (सुविद्वासो जना) ३ ३१ १० [सम्+दृशिर् प्रेक्षणे (भ्वा०) धातो शानच्। 'दृशेश्चेति वक्तव्यम्' अ० १ ३ २९ वा०सूत्रेण सम्पूर्वकाद् दृशेरात्मनेपदम्]

सम्पारणम् सम्यग् दुःखस्य पार गच्छति येन तत् (वसु=धनम्) ३ ४५ ४ [सम्+पार कर्मसमाप्तौ (चुरा०) धातो करणे ल्युट्]

सम्पिणक् सपिनष्टि ४ ३० ६ सञ्चूर्णय ४ ३० १३ सम्यक् पिष्या ३ ३० ८ [सम्+पिष्लृ सञ्चूर्णने (रुधा०) धातोर्लङ् अडभावश्छान्दस। सपिणक् सम्पिण्ढि नि० ६ १]

सम्पिपृक्त सम्यक् प्राप्नुत ३ ५४ २१ [सम्+पृची सम्पर्चने (अदा०) धातोर्लोट्। 'बहुल छन्दसी' ति शप श्लु]

सम्पिपेश सम्पिनष्टि २ १५ ६ सम्पिष्यात् ३ ३४ ६. [सम्+पिष्लृ सञ्चूर्णने (रुधा०) धातोर्लिट्। पस्य शकारो वर्णव्यत्ययेन]

सम्पिष्टात् सञ्चूर्णितात् ४ ३० १० [सम्+पिष्लृ सञ्चूर्णने (रुधा०) धातो क्तान्तात् पञ्चमी]

सम्पृङ्क्त सम्बध्नीत १६ ११. [सम्+पृची सम्पर्के (रुधा०) धातोर्लोट्]

सम्पृचः ये सम्पृचन्ति ते (मनुष्या) १६ ११. सयुक्तात् (शत्रुजनात्) २ ३५ ६ सम्बन्ध करने वाले (स्त्री-पुरुष) स० वि० १०४, २ ३५ ६ **सम्पृचौ**=राजगृहाश्रमव्यवहाराणा सम्यक् पृङ्क्तारौ राजप्रजाजनौ ६ ४ [सम्+पृची सम्पर्के (रुधा०) धातो कर्त्तरि क्विप्]

सम्पृच्छसे सम्यक्तया पृच्छ, प्र०—अत्र लेट् ३३ २७ [सम्+प्रच्छ ज्ञीप्सायाम् (तुदा०) धातोर्लेट्। 'समो गमादिषु विदिप्रच्छिस्वरतीनामुपसख्यानम्' अ० १ ३ २९. वा०सूत्रेणात्मनेपदम्]

सम्पृच्यन्ताम् श्रेष्ठयुक्त्या वैद्यकशिल्पशास्त्ररीत्या मेल्यन्ताम् १.२१ सम्मेल्यन्ताम्, सम्पृच्यन्ते वा १.२१ [सम्+पृची सम्पर्के (रुधा०) धातो कर्मणि लोट्]

सम्पृञ्चानः सम्पर्क कुर्वन् कारयन् वा (कवि = क्रान्तदर्शन काल) १ ६५ ८ [सम्+पृची सम्पर्के (रुधा०) धातो शानच्। व्यत्ययेनात्मनेपदम्]

सम्पृणक्तु सम्बध्नातु ४ ३८ १० [सम्+पृची सम्पर्के (रुधा०) धातोर्लोट्]

सम्प्रच्यवध्वम् सम्यग् गच्छत १५ ५३ [सम्+प्र+च्युङ् गतौ (भ्वा०) धातोर्लोट्। धातोरुकारलोपश्छान्दस]

सम्प्रजया श्रेष्ठेन सन्तानेन राज्येन वा ३ १६. [सम्-प्रजापदयो समास। प्रजा=प्र+जनी प्रादुर्भावे (दिवा०) ड +टाप्]

सम्प्रयात सम्यक् प्राप्नुत १५ ५३ [सम्+प्र+या प्रापणे (अदा०) धातोर्लोट्]

सम्प्रश्नम् सम्यक् पृच्छन्ति यस्मिँस्तम् (ब्रह्म तत्सृष्टिश्च) १७ २७ [सम्+प्रच्छ ज्ञीप्सायाम् (तुदा०) धातो 'यजयाच०' इति नङ्। सम् प्रश्नपदयो समासो वा]

सम्प्रसारयाव विस्तारयाव २३ २० [सम्+प्र+सृ गतौ (भ्वा०) धातोर्णिजन्ताल्लोट्]

सम्प्रियेण एकीभावेन प्रसन्नताकारकेण (सवर्चसा= विद्याऽध्ययन-प्रकाशेन) ३ १६ **सम्प्रियौ**=परस्पर सम्यक् प्रीतियुक्तौ, भा०—अन्योऽन्यस्य प्रियाचरणे रतौ (स्त्री-पुरुषौ) १२ ५७ [सम्+प्रीञ् तर्पणे कान्तौ च (क्र्या०

तस्मादिम लोक (=पृथिवीम्) दक्षिणावत् समुद्र पर्येति श० ७ १ १ १ ३ तस्मादिमॉल्लोकान्दक्षिणावृत् समुद्र पर्येति श० ६ १ २ ३ तस्मादिम लोक (=पृथिवी) सर्वत समुद्र पर्येति श० ७.१ १ १ ३ तस्मादिमाँल्लोकान्त्सर्वत समुद्र पर्येति श० ६.१ २ ३]

समुद्रव्यचसम् समुद्रेऽन्तरिक्षे व्यचा व्याप्तिर्यस्य त सर्वव्यापिनमीश्वर समुद्रे नौकादिविजयगुणसाधनव्यापिन शूरवीर वा (इन्द्र=ईश्वर राजान वा) १ ११ १ समुद्रस्य व्यचसो व्याप्तय इव यस्मिँस्तम् (इन्द्र=परमैश्वर्यम्) १२ ५६ समुद्रस्यान्तरिक्षस्य व्यचा व्याप्तिरिव व्याप्तिर्यस्य तम् (इन्द्र=परमात्मानम्) १७ ६१ [समुद्र व्यचस्पदयो समास । व्यचस्=वि+अञ्चु गतौ (भ्वा०) धातो 'मिथुनेऽसि' उ० ४ २२३ सूत्रेणासि । बाहु० किच्च]

समुद्रसमम् समुद्रेण समानम्, भा०—मेघेन तुल्यम् (सर =तडाग) २३ ४८ [समुद्र-समपदयो समास]

समुद्रार्थाः समुद्रायेमा (आप =जलानि) ७ ४६ २ [समुद्र अर्थपदयो समास]

समुद्रियम् सागरे भवम् (सदनम्) १७ ८७ **समुद्रियः**=समुद्रे भवो नौसमूह १ ५५ २ समुद्रेऽन्तरिक्षे जलमये वा भव (स्वपुरुषार्थयुक्तो विद्वज्जन) प्र०=अत्र 'समुद्राभ्राद् घ' अ० ४ ४ ११८ इति समुद्रशब्दाद् घ प्रत्यय १ २५ ७ [समुद्रप्राति० भवार्थे 'समुद्राभ्राद् घ' अ० ४ ४ ११८ सूत्रेण भवार्थे घ । घस्येयादेश]

समुद्रियाणि समुद्राऽर्हाणि (अर्णांसि=उदकानि) ४ १६.७ [समुद्रप्राति० अर्हत्यर्थे घश्छान्दस]

समुनप् सम्यगुम्भति पूरयति २ १३ ६ [सम्+उम्भ पूरणे (तुदा०) धातोश्छान्दस रूपम्]

समुन्नयामि उत्कृष्टतया नयामि ६ २८ [सम्+उत्+णीञ् प्रापणे (भ्वा०) धातोर्लट्]

समुढ्धम् समत्वेन गूढम् (कुमारम्) ५ २ १

समूढम् यत् सम्यगुह्यते तर्क्यते तर्केण विज्ञायते तत् (पद=मध्यस्थ जगत्) १ २२ १७ मोहेन सह वर्त्तमान ज्ञानवर्जित्त जडम् (परमाणुमय जगत्) ऋ० भू० २६३, ५ १५ सम्यगुह्यतेऽनुनीयते शब्द्यते यत्तत् (परमाण्वादि-रूपम्) ५ १५ [सम्+ऊह वितर्के (भ्वा०) धातो क्त । अथवा=सह-मूढपदयो समास । मूढ =मुह वैचित्ये (दिवा०) धातो क्त]

समूहसि सम्यक् चेतयसि १ १३१ ३ [सम्+ऊह वितर्के (भ्वा०) धातोर्लट् । व्यत्ययेन परस्मैपदम्]

समृञ्जते सम्यक् प्रसाध्नुवन्ति, प्र०—ऋञ्जति प्रसाधनकर्मा नि० ६ २१, १ ६ ६ [सम्+ऋञ्जति प्रसाधनकर्मा (नि० ६ २१) धातोर्लट्]

समृण्वति सम्यक् प्राप्नोति, प्र०—ऋण्वतीति गति-कर्मा निघ० २ १४, ३ २ १ सम्यक्तया गच्छति जानाति वा ३ ११ २ [सम्+ऋण्वति गतिकर्मा (निघ० २ १४) धातोर्लट्]

समृतः सम्यक् सत्यस्वरूप (पूर्णकामो जन) ४ १४ ५ **समृते**=सम्यक् सत्ये व्यवहारे ३ ३८ ३ **समृतेषु**=सम्यक् सत्यन्यायप्रकाशचिह्नेषु (ध्वजेषु) १७ ४३ [सम्+ऋतपदयो समास । ऋतम् सत्यनाम निघ० ३ १० उदकनाम निघ० १ १२ धननाम निघ० २ १०]

समृता सम्यग् ऋत सत्य येषु तानि (अ० —कर्माणि) प्र०—शे स्थाने डादेश १ ३१ ६ [सम्-ऋतपदयो. समासे शेर्लोपश्छान्दस]

समृतिः सम्यक् सत्क्रियावान् (विद्वज्जन) ७ ६० १०. युद्धम् ४ १६ १७ **समृतौ**=सम्यक् ऋति प्राप्तिर्यया तस्याम् (सेनायाम्) १ १२७ ३ सम्यग् यथार्थबोधयुक्ताया प्रज्ञायाम् ५ ७ २ [सम्-ऋतिपदयो समास । ऋति = ऋ गतौ (जु०) धातो स्त्रिया क्तिन्]

समृधः सम्यगृधिमन्त (जना) ६ २ १० [सम्+ऋधु वृद्धौ (दिवा०) धातो कर्त्तरि क्विप्]

समेति सम्यग् गच्छति, भा०—नयति २५ ४१ सम्यगेति ७ १ १४ सम्यक् प्राप्नोति ऋ० भू० २०५, **समेतु**=सङ्गच्छेताम् १२ ११२ [सम्+इण् गतौ (अदा०) धातोर्लट् । अन्यत्र लोट्]

समेद्धारम् सम्यक् प्रकाशकम् (अग्निम्) ६ ४८ ८ य सम्यगिन्धयति प्रदीपयति तम् (यजमानम्) ७ १ १५ [सम्+ञिइन्धी दीप्तौ (रुधा०) धातो कर्त्तरि तृच् । धातोर्नलपोश्छान्दस]

समेयथुः सम्यक् प्राप्नुयातम्, प्र०—अत्र पुरुष-व्यत्यय ५ ७३ ४ [सम्+आङ्+इण् गतौ (अदा०) धातोर्लिट्]

समैरत् सम्यक्तया कम्पयति, यथाक्रम चालयति ४ ५६ ३ प्रेरयति ३ ५५ २० सम्यक् प्रेरयेत्, प्र०—अत्र व्यत्ययेन परस्मैपद 'बहुल छन्दसि' इति शपो लुङ् न ३ ३१ १५ **समैरयध्वम्**=सम्यक् समन्तात्प्रापयतम् ४.३४ २ **समैरयम्**=एकीभावेन प्रेरयेयम् ४ ४२ ३

सम्महेत् सम्यक्तया पूजयेत् १ १११ ३. **सम्महेम**=सम्यक् सत्कुर्याम १.६४ १ [सम्+मह पूजायाम् (भ्वा०) धातोर्लिङ्]

सम्माय सम्यङ्मान कृत्वा १ ६७ ५ [सम्+माङ् माने शब्दे च (जु०) धातो क्त्वा । समासे क्त्वो ल्यप्]

सम्मार्जिम सम्यक् प्रकारेण सशोधयामि २.३५ १२. सम्यक् शिक्षया शोधयामि १.२६ सम्यङ् मार्ष्टि वा, प्र०—अत्र पक्षे पुरुपव्यत्यय २ ७ सम्यक् शुद्धो भवामि शोधयामि वा २ १४ [सम्+मृजूष् शुद्धौ (अदा०) धातोर्लट्]

सम्मितः सम्यक् परिमित (अ०—पुरुप) १७.८१. [सम्-मितपदयो समास । मित =माङ् माने (जु०)+क्त]

सम्मितासः तुलावत् सत्यविवेचका (मरुत = विद्वज्जना) १७ ८४ [समितमिति व्याख्यातम् । ततो जसोऽसुक्]

सम्मिमिक्षिरे सम्यग् मेढुमिच्छन्ति १ ८७.६. **सम्मिमिक्षुः**=सम्यक्तया सिञ्चन्ति १ १६५ १. [सम्+मिह सेचने (भ्वा०) धातोरिच्छायामर्थे सन्नन्ताल् लिट् । व्यत्ययेनात्मनेपदम्]

सम्मिमीहि सम्मन्यस्व ६ १६ ३ सम्मिमीष्व ३ ५४ २२ सम्यग् विधेहि ५ ४ २ [सम्+माङ् माने शब्दे च (जु०) धातोर्लोट् । व्यत्ययेन परस्मैपदम्]

सम्मिश्लः पदार्थेपु सम्यक् मिश्रो मिलित सन् (इन्द्र =वायु) प्र०—'सञ्ज्ञाछन्दसोर्वा कपिलकादीनामिति वक्तव्यम्' अ० ८ २ १८ अनेन वार्त्तिकेन रेफस्य लत्वादेश १ ७ २ **सम्मिश्लाः**=सम्यक् मिश्रा (वायव) २ ३६ २ सम्यक् मित्रत्वेन मिश्रिता (पतिव्रता स्त्रिय) ७ ५६ ६ सम्मिश्रा सयुक्ता (पृषती =सेचननिमित्ता गती) ३ २६ ४ [सम्-मिश्रपदयो समास । रेफस्य लत्व कपिलकादित्वात्]

सम्मिश्लासः अग्न्यादितत्त्वै सम्यक् मिश्रा (नर = नायका जना) १ ६४.१० [सम्-मिश्रपदयो समासे जसोऽसुक् । रेफस्य लत्वम्]

सम्मील्य सम्यक् निमेपण कृत्वा १ १६१ १२ [सम्+मील निमेपणे (भ्वा०) धातो क्त्वा । समासे क्त्वो ल्यप्]

सम्मृण सम्यक्तया हिन्धि १.१३३ ५ [सम्+मृण हिंसायाम् (तुदा०) धातोर्लोट्]

सम्यक् यत्समीचीनमञ्चति तत् (क्षत्र=धन राज्य वा) ५ ६६ २ साधुरीत्या ४ ५८ ६ **सम्यञ्चम्**=य समीचीनमञ्चति तम् (इपम्=अन्नम्) १५.२९ समीचीनम् ५.७ १ **सम्यञ्चः**=सम्यक् प्राप्ति वाले (स्त्री पुरुषो) स० वि० १४३, अथर्व० ३ ३० ६. सम्यक् प्रेमादि गुणो से युक्त (भाई बहिन आदि) स० वि० १४१, अथर्व० २ ३० ३ [सम्+अञ्चु गतिपूजनयो' (भ्वा०) धातो 'ऋत्विग्दधृक्०' इति क्विन् । 'अनिदिताम्०' इति नलोपे 'सम समि' सूत्रेण च सम्यादेशे रूपम्]

सम्यञ्चा सम्यगञ्चतौ (मिथुनौ=स्त्रीपुरुषौ) १ १७९ ३ यथावद् विज्ञानयुक्तावविरुद्धौ (ब्रह्म क्षत्रञ्च=ब्राह्मणक्षत्रियौ) ऋ० भू० २१६, सम्यगेकीभावेनाऽञ्चतस्तौ (ब्रह्म च क्षत्रञ्च) २० २५ [सम्यक् इति व्याख्यातम् । ततो द्विवचनस्याकारादेश]

सम्राजम् भूगोलस्य राजानम् ६ ७ १ य सम्यग्राजते तम् (विद्युदाख्यमग्निम्) ३३ ८ चक्रवर्तिनमिव (अग्निम्) ७ २४ **सम्राजः**=सम्यग्राजमानश्चक्रवर्तिनो राजान ७ ३८ ४ **सम्राजे**=य. सम्यक् सूर्यवद् विद्याविनयाभ्या राजते तस्मै (राज्ञे) ६.६८.९ **सम्राजो**:=यौ सम्यग् राजेते दीप्येते तयो (इन्द्रावरुणयो =सूर्याचन्द्रमसो) १.१७ १ **सम्राट्**=य सूर्य सम्यग्राजते तद्वद् वर्त्तमानश्चक्रवर्त्ती राजा ७.५८ ४ सम्यक् प्रकाशमानम् (चक्षु = नेत्रम्) २० ५ यश्चक्रवर्त्तीव विद्यासु सम्यग्राजते स (विद्वज्जन) १ १८८ ५ या सम्यक् प्रदीप्यते सा (स्त्री) १५ १२ सम्यक् सुखे भूगोले राजमाना (स्त्री) १४ १३ सार्वभौमो राजा ४ २१ १० यो राजधर्मे सम्यग्राजते स (भा०—चक्रवर्त्ती राजा) ९ २४ सम्यक् प्रकाशक (अद्वितीय परमेश्वर) १२ ११७ [सम्+राजृ दीप्तौ (भ्वा०) धातो 'सत्सूद्विप०' इत्यादिना कर्त्तरि क्विप् । 'मो राजि सम क्वौ' सूत्रेण मकारस्य मकारोऽनुस्वारबाधनार्थ । सम्राट्=स यदाह सम्राडसीति सोम वा एतदाहैष ह वै वायुर्भूत्वान्तरिक्षलोके सम्राजति तद् यत् सम्राजति तस्मात् सम्राट् तत् सम्राज सम्राट्त्वम् । गो० पू० ५ १३ तस्य यो रसो व्यक्षरत्त पाणिभि सममृजुस्तस्मात् सम्राट् श० १४ १ १ ११ सम्राङ् वाजपेयेन (इष्ट्वा भवति) श० ५ १ १ १३ स वाजपेयेनेष्ट्वा सम्राडिति नामाधत्त गो० पू० ५ ८ यो वै वाजपेय स सम्राट्त्सव तै० २.७ ६ १ रथन्तर वै सम्राट् तै० १ ४ ४ ९]

धातो 'इगुपधज्ञाप्रीकिर क' इति कर्त्तरि क । ततस्तृतीयैकवचनम्]

सम्बभूव सम्भूतोऽस्ति २३ २ [सम्+भू सत्तायाम् (भ्वा०) धातोर्लिट्]

सम्बोधि सम्यक्तया बुध्यसे ५ ४ ६ [सम्+बुध अवगमने (भ्वा०) धातो कर्मणि लुड् । अडभाव]

सम्भरणम् सम्यग् धारण पोषण वा ७ २५ २ [सम्+भृञ् भरणे (भ्वा०), डुभृञ् धारणपोषणयो (जु०) धातोर्ल्युट्]

सम्भरणः सम्यग् धारक (गुण) १४.२३. [सम्+डुभृञ् धारणपोषणयो (जु०) धातो 'कृत्यल्युटो वहुलम्' इति कर्त्तरि ल्युट्]

सम्भरन्ति सम्यग् धारयन्ति पोषयन्ति वा १ १६२ ६ सम्यक्तया हरन्ति ३३ ३८ सम्यग् धरन्ति पुष्णन्ति वा २५ २६ [सम्+भृञ् भरणे (भ्वा०) धातोर्लट् । हृञ् हरणे (भ्वा०) धातोर्वा सम्पूर्वकाल्लट् । हस्य भकारश्छान्दस । अथवा सम्पूर्वकाद् डुभृञ् धारणपोषणयो (जु०) धातोर्लट् । व्यत्ययेन शप्]

सम्भर य. सम्भरति स (इन्द्र =राजा) ४ १७ ११ [सम्+भृञ् भरणे (भ्वा०) धातो कर्त्तर्यच्]

सम्भव अ०—एकीभव, न द्वैधमाचर ६ ११ अच्छे प्रकार हो स० वि० १३६, अथर्व० १४ २ ३२ सम्यग् भव ४.१७ सम्यक् सम्पद्यस्व ४ १३ सम्यक् निष्पद्यस्व ४ १७ [सम्+भू सत्तायाम् (भ्वा०) धातोर्लोट्]

सम्भवात् सयोगजन्यात् कार्य्यात् (जगत) ४० १० [सम्+भू सत्तायाम् (भ्वा०) धातो 'ऋदोरप्' इत्यप्]

सम्भाराः होम करने के साकल्य स० वि० २०८, अथर्व० ९ ६ १ [सम्+भृञ् भरणे (भ्वा०) धातोर्घञ्]

सम्भिदन्तः सम्यक्तया विदारयन्त' (अङ्गिरस = वायव) ४ ३ ११ [सम्+भिदिर् विदारणे (रुधा०) धातो शतृ । व्यत्ययेन श]

सम्भुजम् सम्भोक्तुम् २ १ ४ [सम्+भुज पालनाभ्यवहारयो (रुधा०) धातोर्घञर्थे क । 'भाववचनाश्चे' ति तुमुन्नपवादो घञ्]

सम्भूतिम् सम्भवन्ति यस्या ता कार्याख्या सृष्टिम् ४०.११ **सम्भूत्या**=शरीरेन्द्रियाऽन्त करणरूपयोत्पन्नया कार्यरूपया, धर्म्ये प्रवर्त्तयित्र्या सृष्ट्या ४० ११ **सम्भूत्याम्**=महत्तत्त्वादिस्वरूपेण परिणताया सृष्टौ, भा०—अनित्य सयोगजन्य कार्य कारणादुत्पन्न पृथिव्यादिस्थूल सूक्ष्म कार्यकारणाख्य जगत् ४० ९ जो कारण से उत्पन्न हुए कार्यरूप पृथिवी आदि भूत, पाषाण, वृक्षादि अवयव और मनुष्यादि के शरीर मे स० प्र० ४३२, ४० ९ [सम्+भू सत्तायाम् (भ्वा०) धातो स्त्रिया क्तिन् । सम्भूति (=प्राण) प्राण वा अनुप्रजा पशवम्सम्भवन्ति जै० उ० २४५ प्राणा उह वाव राजन् मनुष्यस्य सम्भूतिरेवेति जै० उ० ४७४]

सम्भृतक्रतो सम्भृता धारिता क्रतव क्रिया प्रज्ञा वा येन तत्सम्बुद्धौ (इन्द्र=सभेश) १ ५२ ८ [सम्भृत-क्रतुपदयो समास । सम्भृत =सम्+डुभृञ् धारणपोषणयो (जु०) धातो क्त । क्रतु =कर्मनाम निघ० २ १ प्रज्ञानाम निघ० ३ ९]

सम्भृतम् सम्यक् सिद्ध जातम् (पृषदाज्य=दध्याज्यादिभोज्यम्) ३१ ६ सम्यग् धृतम् (सत्यासत्यनिर्णयम्) १८ ५८ सम्यग् धृत पोषित वा (वस्तु) ३ ३० १४. **सम्भृतः**=सम्यक् पुष्ट (ससार) ३१ १७ सम्यक् पोषितो धृतो वा (प्रजापति =जीव) ३९ ५ [सम्+डुभृञ् धारणपोषणयो (जु०) धातो क्त]

सम्भ्रियमाणः सम्यक् पोषित (वायु =प्राण) ८ ५७ सम्यक् पोष्यमाणो भ्रियमाणो वा (प्रजापति = जीव) ३९ ५ [सम्+डुभृञ् धारणपोषणयो (जु०) धातो कर्मणि शानच्]

सम्भ्रियासम् सम्यक्तया धारयेयम्, भा०—पुष्कल भार सदा चयेयम् २ ८ [सम्+डुभृञ् धारणपोषणयो (जु०) धातोर्लिङ् आशिषि]

सम्मदथः सम्यगानन्दत ४ ३४ ११. **सम्मदन्ति**= सम्यग् हर्षन्ति १७ २६ **सम्मदेम**=सम्यक्तया सुखयेम प्र०—अत्र विकरणव्यत्यय ४ १ **सम्ममदः**=सम्यगानन्द ४ २० ४. [सम्+मदी हर्षे (दिवा०) धातोर्लट् । व्यत्ययेन शप् । अन्यत्र लिङ्]

सम्मदन्तः सम्यक्तया हर्षन्त (प्रजाजना) ११ ७५ [सम्+मदी हर्षे (दिवा०) धातो शतृ । व्यत्ययेन शप्]

सम्मनसः परस्पर के लिए हितैषी (स्त्रीपुरुष लोग) स० वि० १४३, अथर्व० ३ ३० ७ एक मति वाले स० वि० १४२, अथर्व० ३ ३० ५ **सम्मनाः**=सम्यक् प्रीतियुक्त मन वाला (पुत्र) स० वि० १४१, अथर्व० ३ ३० २ [सम्-मनस्पदयो समास]

सम्मनांसि एकस्मिन् धर्मे सङ्कल्पविकल्पाद्या अन्त -करणवृत्तय १२ ५८ [सम्-मनस्पदयो समास]

सरानाप्तान् मानयति सा (विदुषी स्त्री) ५ ४५ ८ यथा सरान् विद्याधर्मबोधान् मिमीते तथा (माता), प्र०—अत्र 'आतोऽनुपसर्गे क' इति क प्रत्यय १ ६२ ३ या सरति सा सरला नीति ४ १६ ८ समान रमा रमणमस्या सा (वैद्या स्त्री) ३३ ५६ या सरान् गतिमत पदार्थान् मिनाति सा (विदुषी स्त्री) ३ ३१ ६ [समान-रमापदयो समास । अथवा सरोपपदे माङ् माने (जु०) डुमिञ् प्रक्षेपणे (स्वा०) धातोर्वा क । तत स्त्रिया टाप् । सरमा सरणात् नि० ११ २५]

सरयन्ते सरयन्ति गमयन्ति ४ १७ २ [सृ गतौ (भ्वा०) धातोर्णिजन्तात्लट्]

सरया स्नेहेन २५ १२

सरयु. य सरति स (पदार्थ) ५ ५३ ९ [सृ गतौ (भ्वा०) धातो 'सरतेरयु' उ० ३ २२ सूत्रेणायु]

सरयो: गच्छतो (दुर्जनयो) ४ ३० १८ [सरयुरिति व्याख्यातम् । तत ओसि रूपम्]

सरश्मिभि: रश्मिभि प्रकाशै सह १ १३५ ३ **सरश्मि:**—रश्मिभि प्रकाशै सह वर्त्तमान (भाग) १ १३५ ३ [सह-रश्मिपदयो समासे सहस्य सादेश]

सरस्याय सरसि तडागे भवाय (पुरुषाय) १६ ३७ [सरस्प्राति० भवार्थे यत्]

सरस्वति प्रशस्त सरो विज्ञान गमन वा विद्यते यस्या तत्सम्बुद्धौ (विदुषि कन्ये) १ १८८ ८ बहुविज्ञानयुक्ते (स्त्रि) ३८ ५ बहुविद्यायुक्त मात. २० ६२ या प्रशस्त-विज्ञानयुक्ता प्रजा तत्सम्बुद्धौ २० ७६ विज्ञानवति (विदुषी राज्ञि) २ ३० ८ ब्रह्मविज्ञानयुक्ते (विदुषि स्त्रि) २ ४१ ८ परमविदुषि (स्त्रि) २ ४१ १७ वागिव वर्त्तमाने (विदुषि स्त्रि) १ १६४ ४९ **सरस्वती**—सरस प्रशसिता ज्ञानादयो गुणा विद्यन्ते यस्या सा सर्वविद्याप्रापिका वाक्, प्र०—'सर्वधातुभ्योऽसुन्' उ० ४ १८९ अनेन गत्यर्थात् सृधातो-रसुन् प्रत्यय । सरन्ति प्राप्नुवन्ति सर्वा विद्या येन तत्सर, अस्मात्प्रशसाया मतुप् 'सरस्वती अन्नैरन्नवती' नि० ११ २६, १ ३ १० विज्ञानाढ्या (विदुषी कन्या) ६ ४९ ७ अ०—वेदविद्या सस्कृता वाक् १ ३ ११ विज्ञानवती स्त्री २१ ४६ प्रशस्त सरो विज्ञान विद्यते यस्या सा (विदुषी स्त्री) १९ ८३ प्रशस्तज्ञानयुक्ता पत्नी १९ ८२ योगिनी स्त्री १९ ९३ प्रशस्तविज्ञानसम्बन्धिनी (वाणी) १ १४२ ९ विद्यासुशिक्षया युक्ता वागिव विदुषी स्त्री १ ८९ ३ विदुषी शिक्षिता माता २० ६४ शास्त्र-विज्ञानयुक्ता वाक् २० ५५ प्रशस्तविद्यासुशिक्षायुक्ता वाङ्-मती (स्त्री) २१ ५३ सर प्रशस्त-आयुर्वेदबोधो विद्यते यस्या सा (विदुषी स्त्री) १९ १२ शुद्धा वाणी ७.४० ३ प्रशस्त सरो वेगो यस्या सा नदी ६ ५२ ६. विद्यासुशिक्षिता वागिव पत्नी १०.३४ प्रशस्तविज्ञानकारिका वागिव स्त्री २ ३ ८ सकलविद्यायुक्ता वाणी ३ ५४ १३ सरो बहुविध विज्ञान विद्यते यस्या सा (नीति), प्र०—अत्र भूम्न्यर्थे मतुप् १ १३ ९ विज्ञानयुक्तया वाचाऽऽढ्या (देवी—विदुषी माता) ६ ६१ ४ सरो बह्वन्तरिक्ष सम्बद्ध विद्यते यस्या सा (सत्या वाक्) ६ ६१ १० विज्ञाननिमित्ता (स्त्री) २१ ५१ विशेषज्ञानवती (स्त्री) २१ ५२ प्रशस्तबोध शिक्षायुक्ता वाणी वा १८ १६ प्रशसिता गृहिणी तथा पुरुष २० ५९ सुसस्कृता वाक् २० ८४ वैद्यकशास्त्रवित् प्रशस्तज्ञानवित् स्त्री २१ ३६ प्रशस्तविद्यासुशिक्षायुक्ता, वाङ्मती (स्त्री) २१ ५३-५४ **सरस्वतीम्**—बहुविध सरो वेदादिशास्त्रविज्ञान विद्यते यस्यास्ता विज्ञानयुक्ता-मध्यापिका स्त्रियम् ९ २७ विज्ञानवती वाचम् २१ ४२ प्रशस्तविद्यायुक्ता स्त्रियम् १९ ३३ **सरस्वत्या**—प्रशस्त-विद्याविज्ञानयुक्तया पत्न्या १९ १५ सुशिक्षितया वाचा २१ ५५ प्रशस्तविज्ञानक्रियायुक्तया (वाचा—वेदवाण्या) १०.३० गतिमत्या नीत्या २१ ५६ उत्तमवाण्या २१ ५७ **सरस्वत्याम्**—विज्ञानवत्या वाचि २१ ४६ **सरस्वत्या:**—नद्या २१ ४६ वाण्या २१ ४७ **सरस्वत्यै**—सरन्ति जानन्ति येन तत्सरो ज्ञान तत्प्रशस्त विद्यते यस्या वाचि तस्यै २ २० विद्यासुशिक्षासहितायै वाचे ४ ७ विज्ञान सुशिक्षायुक्ताया (वाच—वेदवाण्या), प्र०—अत्र षष्ठ्यर्थे चतुर्थी ९ ३० विद्यासुशिक्षितवाणीयुक्तायै स्त्रियै १९ १ प्रशस्तगुणायै विदुष्यै २० ३३ वेदार्थसुशिक्षाविज्ञापिकायै वाचे १० ५ सरो विज्ञान विद्यते यस्यास्तस्या (वाच—वाण्या) १८ ३७ कृषिकर्मप्रचारिकायै वाचे १९ ६ नद्यै २४ ३३ प्रशस्तविज्ञानवत्यै वाचे २५ १ [सृ गतौ (भ्वा०) धातो 'सर्वधातुभ्योऽसुन्' इत्यसुन्प्रत्यये सरस् इति रूपम् । तत प्रशसायामर्थे भूम्नि वा मतुप् । तत स्त्रिया ङीप् । सरस्वती—सरस् इत्युदकनाम सर्त्तेस्तद्वती नि० ९ २६ सरस्वती वाङ्नाम निघ० १ ११ सरस्वत्य नदीनाम निघ० १ १३ सर वाङ्नाम निघ० १ ११ ततो मतुबन्तान् ङीप् । वाक् सरस्वती श० ७ ५ १ ३१ वाग्वै सरस्वती कौ० ५ २ ता० ६ ७ ७ श० २ ५ ४ ६ तै० १ ३ ४ ५ गो० उ० १ २० वाग्वै सरस्वती पावीरवी ऐ० ३ ३७ वागेव सरस्वती ऐ० २ २४ वाग्घि सरस्वती ऐ० ३ २.

सम्राजा सम्यग्राजमानौ चक्रवर्त्तिनृपवद्वर्त्तमानौ (सूर्याचन्द्रमसौ) २४१६ [सम्राज् इति व्याख्यातम्। ततो द्विवचनस्याकारादेशश्छान्दस]

सम्राज्ञी प्रीति मे प्रकाशमान (राजपत्नी) सम्यक् प्रकाशमान (चक्रवर्त्तिराजपत्नी स० वि० १३५, १० ८५४६ [सम्-राज्ञीपदयो समास । राज्ञी=राजन्-प्राति० स्त्रिया ङीप्]

सयावभिः ये समान यान्ति ते सयावानस्तै (देवै = विद्वज्जनै) १ ४४ १३ ये सह यान्ति तै (देवै =विद्वद्भि) ३३ ५ **सयावानम्**=सेनादिना सह गच्छन्तम् (रथम्) ५ ३५ ७ [समान-यावन्पदयो समासे समानस्य सादेश । सह-यावन्पदयोर्वा समासे सहस्य सादेश । यावन्=या प्रापणे (अदा०) धातो कर्त्तरि वनिप्]

सयावरी या सहैव याति सा (वाणी=सकलविद्यायुक्ता वाक्) ७ ३१ ८ **सयावरीः**=या समान यान्ति ता (गौर्य =शुभ्रा किरणा इवोद्यमयुक्ता सेना) १ ८४ १० [सयावन् इति व्याख्यातम् । तत स्त्रिया 'वनो र च' सूत्रेण स्त्रिया ङीप् रेफश्चान्तादेश]

सयुग्भिः ये सह युञ्जन्ते तै (वसु-रुद्राऽऽदित्यै) २८ ४ **सयुजः**=ये समान युञ्जते ते (प्रजाजना) ३ ३० ११ **सयुजा**=यत्समान युनक्ति तेन (स्वकीयेन सैन्येन) ११ १५ [सह-युज्पदयो समासे 'वोपसर्जनस्ये' ति सहस्य सादेश । युज्=युजिर् योगे (रुधा०) धातो 'सत्सूद्विष्०' सूत्रेण क्विप्]

सयुजा यौ सहैव युङ्क्तस्तौ (कवी=मेधाविजनौ) २८ ३० यौ समानसम्बन्धौ व्याप्यव्यापकभावेन सहैव युक्तौ वा तौ (जीवेशौ) १ १६४ २० [सयुज् इति व्याख्यातम् । ततो द्विवचनस्याकारादेश]

सयूथ्यः समानश्चाऽसौ यूथ समूहस्तस्मिन् भव (सखा=मित्र) ४ २० ससैन्य (सेनापति) ६ ६ [सयूथ-प्राति० भवार्थे 'सगर्भसयूथ०' अ० ४ ४ ११४ सूत्रेण यत्]

सयोनिः समानस्थान (जीव) १ १६४ ३८ **सयोनीः**=समाना योनिर्विद्या निमित्त वा तौ (अध्यापकोपदेशकौ) १ १५६ ४ [समान-योनिपदयो समासे समानस्य सादेश 'समानस्य छन्दसि०' अ० ६ ३ ८४ सूत्रेण]

सयोनीः समाना योनिर्यासा ता (युवतय स्त्रिय) ३ १ ६ [समान-योनिपदयो समासे स्त्रियाम् कृदिकाराद-क्तिन ' इति वा०सूत्रेण ङीप्]

सरङ्भ्यः युद्धे विजयकर्तृ सेनाजनादिभ्य १ ११२ २१ [सृ गतौ (भ्वा०) धातो 'सर्त्तेरटि' उ० १ १३४ सूत्रेणाटि]

सरण्यन् आत्मन सरण गमन विज्ञान वेच्छन् (इन्द्र =राजा) ३ ३१ १८ प्राप्नुवन् (विद्वज्जन) ३ १ १६ [सरणपदादात्मन इच्छायामर्थे क्यजन्ताच्छतृ । सरणम्=गतौ (भ्वा०) धातोर्ल्युट्]

सरण्यान् सरण प्राप्तान् (जनान्) ४ २१ ६ [सरणप्राति० भवार्थे यत् । सरणम्=सृ गतौ (भ्वा०) धातोर्यत्]

सरण्युभिः आत्मन सरण गमनमिच्छुभि (यज्ञै = व्यवहारै) ३ ३२ ५ सर्वेषु शास्त्रेषु विज्ञानगतिभि (विप्रै =मेधाविजनै) प्र०—अत्र 'मृयुवचि०' इति सूत्रेणान्युच्प्रत्यय १ ६२ ४ [सरणपदादात्मन इच्छायामर्थे क्यजन्तात् 'क्याच्छन्दसि' सूत्रेण उ । अथवा सृ गतौ (भ्वा०) धातो 'सृयुवचिभ्य०' उ० ३ ८१ सूत्रेणान्युच् सरण्यू सरणात् उ० १२ ११]

सरत् सरति ४ ३० १० **सरन्**=गच्छन्ति, प्र०—अत्राऽडभाव ४ १७ ३ [सृ गतौ (भ्वा०) धातोर्लङ् । अडभावश्छान्दस]

सरथम् रथै रमणीयै कर्मभिर्गुणैर्यानैर्वा सह वर्त्तमानस्तम् (मनुष्य रथ वा) १ ७१ ६ रथेन सह वर्त्तमानम् (राजानम्) ५ २६ ८ रथै सह वर्त्तमान सैन्यमुत्तमा सामग्री वा १ १०८.१ रथादिभि सहित सैन्यम् ४ १६ ११. समान यानम् ४ ५७ ३ रमणीयेन स्वरूपेण सह वर्त्तमानम् (सुखम्) ७ ११ १ रथेन यानसमूहेन सहितम् (विद्वज्जनम्) ५ ११.२ [सह-रथपदयो समासे 'वोपसर्जनस्य' सूत्रेण सहस्य सादेश]

सरथा रथादिभि सह वर्त्तमानौ (अश्विना= अध्यापकोपदेशकौ) ५ ४३ ८ [सरथमिति व्याख्यातम् । ततो द्विवचनस्याकार]

सरथिना रथिभि सह वर्त्तमानौ (देवौ=विद्वज्जनौ) २६ ७ [सह-रथिन्पदयो समासे द्विवचनस्याकारादेशः । रथिन्=रथप्राति० मत्वर्थ इनि]

सरपसः सराणि सृतान्यपासि पापानि येन तस्य (शिल्पिजनस्य) २ १३ १२ [सर-अपस्पदयो समास । शकन्धुन्यायेन पररूपम् । अप कर्मनाम निघ० २ १]

सरम् प्राप्तव्यम् (व्यक्त-शब्दम्) २२ २ [सृ गतौ (भ्वा०) धातोरच्]

सरमा समानरमणा (विदुषी स्त्री) ५ ४५ ७ या